जातक

अंतर्वस्तु

जातक
जातक कथाएँ बुद्ध के जन्म वृत्तांत हैं, जिनमें उनके बोधिसत्व जीवन के दौरान ज्ञान और बुद्धत्व की प्राप्ति के लिए किए गए 547 जन्मों का वर्णन है। ये केवल उनके अतीत की कहानियाँ नहीं हैं, बल्कि बुद्ध ने इनका उपयोग अपने कई शिष्यों को ज्ञान के मार्ग पर प्रेरित करने के लिए भी किया। ज्ञान और निर्वाण ही बुद्ध का सर्वोपरि लक्ष्य था, जिसे वे अनेक लोगों में प्रज्वलित करना चाहते थे। इनसे हमें यह भी पता चलता है कि भगवान बुद्ध, भगवान राम थे (जैसा कि दशरथ जातक 461 में वर्णित है); पिछले जन्म में, भगवान कृष्ण के समय में, वे उनके नौवें भाई घट पंडित थे (घट जातक 454 में वर्णित है); वे अगस्त्य ऋषि भी थे (अकित्त जातक 480 में वर्णित है); और वे मातंग ऋषि भी थे (मातंग जातक 497 में वर्णित है)। यह भी उल्लेख किया गया है कि वह राजा ओक्काका (531 में इक्ष्वाकु। कुसा-जातक) का पुत्र था। वह कृष्णदीपायन ऋषि (444 में कान्हादीपायन-जातक) और महाजनक (539 में महाजनक-जातक) के रूप में भी प्रकट होते हैं।

पुनर्जन्म की अवधारणा बौद्ध धर्म (और हिंदू धर्म जैसे कई अन्य भारतीय धर्मों) का केंद्रबिंदु है; इसके अनुसार, प्रत्येक प्राणी वास्तव में अमर है, लेकिन अपने कर्मों के अनुसार अनेक जन्मों और नियतियों का सामना करता है, चाहे वे अच्छे हों या बुरे; अनेक लोकों में और विभिन्न प्रकार के प्राणियों के रूप में जन्म लेता है। अच्छे कर्मों से मनुष्य, देवदूत (ईश्वर) या प्रधान देवदूत (ब्रह्मा) जैसे उच्च कोटि के प्राणी के रूप में पुनर्जन्म होता है। बुरे कर्मों से दुख के चार लोकों में पुनर्जन्म हो सकता है, जैसे पशु (पक्षी, मछली, कीट आदि), प्रेत (पेटा, प्रेत), असुर (हिंसा और बुराई करने वाले) और नरक (अनेक प्रकार के नरक)। बुद्ध कहते हैं कि दुख के लोकों में बुरे प्राणी दूसरों को हानि पहुँचाते हैं, उनका विनाश करते हैं और उन्हें भस्म कर देते हैं। किसी भी लोक में, अच्छे निर्णय (दूसरों की सहायता करना) उत्थान की ओर ले जाते हैं और जो दूसरों को हानि पहुँचाते रहते हैं, उनका पतन और अधिक होता जाता है। नीचे दिए गए सूत्रों में ऐसा प्रतीत होता है कि नरक पृथ्वी की सतह के नीचे, संभवतः पिघली हुई चट्टानों (लावा) में, अदृश्य आयामों में स्थित हैं; और स्वर्ग ऊपरी दिशाओं में (अदृश्य आयामों में) स्थित हैं। हमें यह समझना होगा कि दृश्य जगत 5 प्रतिशत से भी कम है और शेष अदृश्य आयाम हैं जिन्हें विज्ञान डार्क मैटर और डार्क एनर्जी भी कहता है। निर्वाण/मोक्ष: अंततः जब अच्छे नैतिक आचरण, अच्छे कर्मों और ध्यान के अभ्यास से सभी बुरे गुण समाप्त हो जाते हैं, तब पूर्ण व्यक्ति को अरहत/अरिहंत कहा जाता है और वह किसी भी जन्मलोक में पुनर्जन्म नहीं लेगा; बल्कि वह निर्वाण की उस अवस्था में विलीन हो जाएगा जो अनंत, शाश्वत और शाश्वत परम आनंद है।

(कहानियों में प्रयुक्त कई सामान्य शब्दों को इस पृष्ठ के अंत में प्रस्तुत किया गया है।)
पुस्तक I.--एकनिपात:

1. अपाण्णक-जातक - पथभ्रष्ट लोगों के लिए सलाह; दो व्यापारियों की पिछली जन्म की कहानी, एक नासमझ जिसने गलत सलाह मानकर सब कुछ खो दिया और मर गया, और दूसरा (बुद्ध अपने पिछले जन्म में) जिसने बुद्धिमानी से बिछाए गए जाल को पहचान लिया।

2. वन्नुपथ-जातक - उस भिक्षु को सलाह जिसने मार्ग पर दृढ़ रहने का प्रयास छोड़ दिया। बुद्ध के पूर्व जीवन की कथा, रेगिस्तान में, जब उन्होंने कुआँ खोदने का प्रयास जारी रखा, पानी पाया और सभी को बचाया।

3. सेरिवाणिज-जातक - एक भिक्षु को सलाह जिसने मार्ग पर दृढ़ रहने का प्रयास छोड़ दिया। एक फेरीवाले (देवदत्त) की पूर्व जन्म कथा, जिसने एक लाख सिक्कों के मूल्य का एक सोने का कटोरा खो दिया था।

4. चुल्लक-सेट्ठी-जातक - कैसे एक निराश भिक्षु को बुद्ध द्वारा ध्यान में चमत्कारिक रूप से सहायता मिली, थोड़े समय में ही उसे ज्ञान प्राप्त हुआ और जब सभी भिक्षु मठ से दूर थे, तब उसने स्वयं को हजार गुना बढ़ाने का चमत्कार प्रदर्शित किया।

5. तांडुलनाली-जातक - एक मंदबुद्धि भिक्षु जिसने भोजन का उचित वितरण नहीं किया; पिछले जन्म में भी उसने 500 घोड़ों और पूरे राज्य को चावल के एक माप के बराबर महत्व दिया था।

6. देवधम्म-जातक - भिक्षुओं के लिए विनम्रता के बारे में; एक धनी व्यक्ति, भिक्षु बनने पर, घर से लाई गई प्रचुरता में रहने लगा। जब उससे पूछा गया, तो उसने क्रोध में अपने वस्त्र उतार दिए और लंगोटी पहनकर कहा कि वह इसी तरह रहेगा। उसे बताया गया कि पिछले जन्म में वह एक जल यक्ष था जो उन लोगों को खा जाता था जो उसके इस प्रश्न का उत्तर नहीं देते थे कि ईश्वरीय आचरण क्या है। बुद्ध ने उत्तर दिया और यक्ष को आगे के पाप से भी बचाया।

7. कट्ठाहारी-जातक - जाति और नस्लवाद के बारे में; अनजाने में एक दासी का विवाह कोसल के राजा से हो गया और उसे रानी बना दिया गया। जब राजा को इस बात का पता चला, तो उसने उसकी स्थिति को दासी के पद तक गिरा दिया, लेकिन बुद्ध ने उसे समान मानकर उसकी स्थिति बहाल कर दी। उन्होंने अपने पिछले जन्म की एक ऐसी ही कहानी सुनाई, जिसमें उनका जन्म एक साधारण महिला से एक राजा के घर हुआ था, राजा ने अपनी अंगूठी उसे दे दी थी; बाद में जब वह अपना पद वापस लेने आई, तो बुद्ध ने एक चमत्कार दिखाकर उन्हें कैसे मना लिया।

8. गामणि-जातक - जातक 462 में पूरी कहानी; धैर्य के बारे में; एक भिक्षु जिसने मार्ग पर दृढ़ रहने का प्रयास छोड़ दिया था, उसे बुद्ध ने सहायता प्रदान की, जिन्होंने पिछले जन्म की कहानी सुनाई, जिसमें बुद्ध ने सबसे छोटे राजकुमार को राजा और अन्य सभी की जीवन भर सहायता करने की सलाह दी और राजा की मृत्यु पर, भाइयों के साथ लड़ाई भी छोड़ दी, लेकिन अच्छे स्वभाव के कारण राजा के रूप में सिंहासन पर आसीन हुए।

9. मखादेव-जातक - बुद्ध के पिछले त्यागों के बारे में; पिछले जन्मों में भी उन्होंने तपस्वी जीवन के लिए त्याग किया था; राजा मखादेव की कहानी में, जब एक नाई को उनके सिर पर एक सफेद बाल मिलता है, तो राजा पश्चाताप से भर जाते हैं और त्याग कर देते हैं, अपना राज्य अपने पुत्र को सौंप देते हैं और तपस्वी के रूप में आम के कंदरा में विश्राम करते हैं।

10. सुखाविहारी-जातक - मार्ग से प्राप्त सुख के बारे में। एक पूर्व राजा (अब एक अरहत भिक्षु) भय में रहता था, अब आनंद में रहता है; पिछले जन्म में भी उसने अपने राज्य का त्याग कर आनंदमय जीवन व्यतीत किया था।

11. लक्खण-जातक: देवदत्त द्वारा बनाए गए विभाजन के बारे में, जिसमें 500 भिक्षुओं को छोड़ दिया गया था, सारिपुत्त ने उन्हें उपदेश दिया और उन्हें वापस ले आए; बुद्ध सारिपुत्त की प्रशंसा करते हैं कि पिछले जन्म में जब वे एक हिरण थे, तब उनके पुत्र (अब सारिपुत्त) ने झुंड को जंगल से सुरक्षित वापस लाया था;

12. निग्रोधामिगा-जातक - यह बुद्ध द्वारा एक गर्भवती भिक्षुणी के उद्धार के बारे में है, जिन्होंने अरिहंत कश्यप को जन्म दिया। एक धनी महिला, जिसे अपनी गर्भावस्था का पता नहीं था, देवदत्त (जिसने बाद में विभाजन पैदा किया) के अधीन भिक्षुणी संघ में शामिल हो गई। बाद में जब उसकी गर्भावस्था का पता चला, तो देवदत्त ने उसे संघ से निकाल दिया। लेकिन भगवान बुद्ध ने उसे बचाया और पुनः संघ में शामिल कर लिया, जहाँ उसने कश्यप को जन्म दिया और दोनों ने अरिहंत पद प्राप्त किया। भगवान बुद्ध ने उसके पिछले जन्म की कहानी सुनाई, जिसमें वे सभी हिरण के रूप में पैदा हुए थे और राजा द्वारा बारी-बारी से भोजन के लिए पकड़े गए थे। जब उसकी बारी आई, तब वह गर्भवती थी। लेकिन भगवान बुद्ध ने हिरणों के राजा के रूप में उसे बख्श दिया और स्वयं उसकी जगह मर गए। उनकी इस नैतिकता को देखकर राजा ने सभी प्राणियों के जीवन को बख्श दिया।

13. कंढिन-जातक - यह एक ऐसे भिक्षु के बारे में है जो अपनी पूर्व पत्नी के प्रेम में व्याकुल था। भगवान बुद्ध ने अपने पूर्वज जीवन की कथा सुनाई है, जब वे एक हिरण थे और जंगल में एक हिरणी से आसक्त हो गए थे। जब एक शिकारी आया, तो खतरे को भांपते हुए हिरणी ने हिरण को आगे बढ़ने के लिए कहा, जिसके परिणामस्वरूप शिकारी ने हिरण को मार डाला। हिरणी भाग गई। शिकारी ने हिरण की खाल उतारी, उसे भूना और उसका मांस खा लिया और बाकी को अपने साथ ले गया। इस प्रकार, वासना बड़े खतरे का कारण बनती है। इसमें तीन दंड भी बताए गए हैं।

14. वातमिगा-जातक - जीभ के स्वाद के बंधन के बारे में। एक भिक्षु को जीभ के स्वाद ने भिक्षुत्व छोड़ने के लिए बाध्य कर दिया था। उसके माता-पिता द्वारा उसे वापस लाने के लिए भेजी गई एक दासी ने ऐसा किया। वह दासी उसके भिक्षायात्रा के

दौरान सबसे आगे चलती थी, उसे उत्तम भोजन देती थी, फिर उसे अपने घर बुलाकर भिक्षावृत्ति छुड़वा देती थी और अंत में उसे उसके माता-पिता के पास भेज देती थी। भगवान बुद्ध ने अपने पिछले जन्म में भी यही बताया था, जब वे एक शर्मीले हिरण थे जो मनुष्यों को देखकर भाग जाते थे। उस समय एक व्यक्ति ने उनके रास्ते में मीठी घास का जाल बिछाकर उन्हें पकड़ लिया था और राजा के महल में ले आया था।

15. खरादीय-जातक - अनुशासनहीनता के बारे में। एक भिक्षु अनुशासनहीन था। भगवान बुद्ध ने अपने पिछले जन्म की कहानी सुनाई, जब वे एक हिरण के बच्चे थे और उन्होंने प्रशिक्षण के निर्देशों का पालन नहीं किया और एक शिकारी द्वारा बिछाए गए जाल में फंसकर मारे गए।

16. तिपल्लत्था-मिगा-जातक - अनुशासन और विद्या के पालन के बारे में। एक बार जब भगवान बुद्ध के पुत्र राहुल एक नवोदित भिक्षु थे, तब एक नियम के कारण उन्हें आवास नहीं दिया गया। इसलिए उन्हें खुले में सोना पड़ा, लेकिन उन्होंने कोई शिकायत नहीं की। अगले दिन भगवान बुद्ध ने नियम में संशोधन किया ताकि नवोदित भिक्षुओं को इस तरह के व्यवहार का सामना न करना पड़े। बाद में अन्य भिक्षुओं ने उनके धैर्य और विनम्रता के लिए उनकी प्रशंसा की। भगवान बुद्ध ने बताया कि अपने पिछले जन्म में, जब वे एक हिरण थे, तब वे विद्या के प्रति अत्यंत उत्सुक थे। एक बार जब वे एक शिकारी के जाल में फंस गए, तो उन्होंने मरने का नाटक किया और जैसे ही शिकारी ने उन्हें छोड़ा, वे भाग गए और अपनी जान बचा ली।

17. मालुत-जातक - दो भिक्षुओं के बीच सर्दी को लेकर हुई चर्चा के बारे में। वे इस बात पर सहमत नहीं थे कि महीने के किस भाग में सर्दी होती है। भगवान बुद्ध ने उन्हें बताया कि उनके पिछले जन्मों में भी उन्होंने यही प्रश्न पूछा था और जब वे शेर और बाघ के रूप में पैदा हुए थे, तब उन्होंने यही उत्तर दिया था। उन्होंने कहा था कि सर्दी तब होती है जब हवा चलती है।

18. मतकभट्ट-जातक - पशु बलि पर। एक व्यक्ति ने बकरी की हत्या की, फिर बाद में 500 बार बकरी के रूप में पुनर्जन्म लिया और दंड के रूप में उसकी हत्या कर दी गई।

19. आयाचितभट्ट-जातक - पशु बलि पर। जब एक व्यक्ति ने एक परी को बलि के रूप में कई प्राणियों को मार डाला, तो वृक्ष परी ने उसे सिखाया कि इससे समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।

20. नलपान-जातक - भगवान बुद्ध और उनके भिक्षुओं की यात्रा के दौरान एक तालाब और वहाँ उगने वाले खोखले सरकंडों के बारे में। इसमें पिछले जन्म की एक कथा है जिसमें भगवान बुद्ध ने वानरों के नेता के रूप में उसी स्थान पर अन्य वानरों की मृत्यु को रोका था, क्योंकि पानी में एक राक्षस मौजूद था। उन्होंने लंबे खोखले सरकंडों से पानी पीकर ऐसा किया था। इसमें चार चमत्कारों का भी उल्लेख है जो युगों-युगों तक बने रहेंगे।

21. कुरुंग-जातक - देवदत्त द्वारा भगवान बुद्ध को मारने के प्रयास पर आधारित। बुद्ध ने अपने पिछले जन्मों की एक कथा सुनाई, जिसमें वे एक हिरण थे और देवदत्त एक शिकारी। शिकारी ने पेड़ पर चबूतरा बनाया और उसके फल जमीन पर फेंके, लेकिन बुद्ध ने खतरे को भांपते हुए, फल को एक तरफ गिरते हुए देखकर, उसकी जान बचाई।

22. कुक्कुर-जातक - अहिंसा के बारे में। बहुत समय पहले, जब भगवान बुद्ध कुत्ते बोधिसत्व के रूप में पैदा हुए थे, तब एक राजा के चमड़े के सामान को पालतू कुत्तों ने कुतर दिया था। राजा ने जंगली कुत्तों के बारे में सोचकर सभी कुत्तों को मारने का आदेश दिया। बोधिसत्व राजा के पास गए और पालतू कुत्तों को छाछ के साथ घास खिलाकर उल्टी करवाई ताकि सबूत मिल सके। फिर उन्होंने राजा को सद्गुण का उपदेश दिया और सभी कुत्तों की जान बचाई।

23. भोजाजानी-जातक - कठिनाइयों का सामना करते हुए भी मार्ग पर दृढ़ रहने के बारे में। पिछले जन्म में भगवान बुद्ध अश्व बोधिसत्व के रूप में जन्मे थे। वे एक युद्ध अश्व थे जिन्होंने घातक घावों के बावजूद युद्ध लड़ा और युद्ध जीतने में सहायता की।

24. आज्ञ-जातक - मार्ग पर दृढ़ रहने के बारे में। पिछले जन्म की कहानी पहले जैसी ही है, लेकिन यहाँ रथ में दो घोड़े थे।

25. तित्त-जातक - भगवान बुद्ध द्वारा विचारों को पढ़कर समाधान खोजने के बारे में। एक सुनार भिक्षु प्रगति नहीं कर पा रहा था, जब उसे बुद्ध के पास लाया गया, तो उसे एक कमल दिखाया गया जो समय के साथ मुरझा गया था, जिससे उसे यह अहसास हुआ कि क्षय सभी को प्रभावित करता है, इसके बाद ध्यान में उसे ज्ञान प्राप्त हुआ। पिछले जन्म में, भगवान बुद्ध ने एक शाही घोड़े की देखभाल की थी जो उस स्थान पर न तो पानी पीता था और न ही स्नान करता था जहाँ दूसरे घोड़े ने ऐसा

किया था। इसलिए यह जानकर कि उसका स्थान बदल दिया गया था, उन्होंने समाधान खोज लिया।

26. महिलामुख जातक - भगवान बुद्ध द्वारा विचारों को जानने और उनका समाधान खोजने के बारे में। एक भिक्षु अपने प्रतिद्वंद्वी का भोजन खा रहा था, जब उसे भगवान बुद्ध के पास लाया गया तो उसे एक हाथी की पिछली जन्म की कहानी सुनाई गई, जो रात में चोरों की बुरी बातें सुनकर क्रूर हो गया था। बोधिसत्व की सलाह पर, जब उसके पास सद्‌भावना की बातें की गईं, तो वह फिर से अच्छा हो गया।

27. अभिण्हजातक - भगवान बुद्ध द्वारा विचारों को जानने और उनका समाधान खोजने के बारे में। एक भिक्षु और उसका गृहस्थ मित्र साथ में बहुत समय बिताते थे। बुद्ध को यह कहानी सुनाने पर उन्होंने अपने पिछले जन्म की कहानी सुनाई, जिसमें एक हाथी था और दूसरा कुत्ता। दोनों एक-दूसरे से बहुत प्यार करते थे और साथ में खाना भी खाते थे। जब एक व्यक्ति कुत्ते को ले गया, तो हाथी दुखी हो गया और उसने खाना छोड़ दिया। एक बुद्धिमान मंत्री (बोधिसत्व) की सलाह पर, एक घोषणा की गई, जिसके बाद कुत्ते को वापस लाया गया और दोनों फिर से प्रसन्न हो गए।

28. नंदीविसाल-जातक - दयालु शब्द बोलने के बारे में। एक बार भगवान बुद्ध का जन्म बैल के रूप में हुआ। जब उनके साथ कठोर शब्दों का प्रयोग किया गया तो उन्होंने रथों को नहीं खींचा, जिससे मालिक को हानि हुई, लेकिन जब उनके साथ दयालुता से बात की गई तो उन्होंने मालिक को बहुत धन का लाभ दिलाया।

29. कंह-जातक: बुद्ध की असमानता के बारे में। एक बार बुद्ध ने चमत्कार दिखाए और शरीर सहित स्वर्ग चले गए। उनके लौटने पर भिक्षु बुद्ध की असमानता पर चर्चा कर रहे थे। यह जानकर बुद्ध ने उन्हें बताया कि वे पिछले जन्मों में भी असमान थे। एक पिछले जन्म की कथा के अनुसार, जब वे एक काले बैल थे, तब उन्होंने एक नदी के पार 500 गाड़ियाँ खींचीं और इसके लिए उन्हें भारी प्रतिफल मिला।

30. मुणिक-जातक - प्रलोभन के बारे में। जब एक युवा भिक्षु एक लड़की के प्यार में पड़ गया, तो भगवान बुद्ध ने उसे अपने पिछले जन्म की कहानी सुनाई, जिसमें वह एक सुअर के रूप में उसी लड़की के विवाह के लिए करी बना दिया गया था।

31. कुलावक-जातक - पाँच शीलों (नैतिक मूल्यों) के बारे में। प्रेम, साहस, त्याग, देवताओं आदि से भरे एक सुंदर पूर्व जीवन का वर्णन है, और यह भी कि कैसे उन्होंने पिछले जन्म में पाँच शीलों के पालन से स्वर्ग राज्य प्राप्त किया। मनुष्य रूप में भगवान बुद्ध ने पाँच शीलों का पालन किया, जिससे मृत्यु के खतरे में भी उनकी रक्षा हुई। कई लोगों ने, विशेष रूप से चार महिलाओं ने, दान-पुण्य कार्यों में उनकी सहायता की। जीवन समाप्त होने के बाद वे स्वर्ग में देवताओं (देवदूतों) के राजा बने और उनके सहायक भी स्वर्ग में ही जन्म लिए। वहाँ भी उन्होंने शीलों का पालन किया और पक्षियों के बच्चों की जान बचाने के लिए असुरों (राक्षसों) के साथ युद्ध में हार मानने को तैयार थे, लेकिन फिर से धर्म के मार्गदर्शन से असुर भाग गए। उनकी सांसारिक सहायक (सुजा) असुरों के राजा की पुत्री के रूप में जन्मीं और कैसे उन्होंने सुजा को बचाने के लिए छद्म वेश में उनसे विवाह किया।

32. नच्चा जातक - लज्जा और लज्जा के बारे में। एक भिक्षु के पास बहुत सारा सामान और वस्त्र थे। जब किसी ने आपत्ति जताई, तो उसने सारे वस्त्र त्याग दिए और नग्न रहने की शपथ ली। लेकिन जब फिर आपत्ति जताई गई, तो उसने मठ और भिक्षु जीवन त्याग दिया और सांसारिक जीवन में लौट आया, जिससे उसका विश्वास भंग हो गया। बुद्ध ने उसके पिछले जन्म की कहानी सुनाई, जिसमें वह एक मोर के रूप में पैदा हुआ था। जब एक सुनहरी बत्तख ने उसे चुना, तो वह सबके सामने नाचने लगा और अपने पंख और नग्नता दिखाने लगा, इसलिए उसे अस्वीकार कर दिया गया। इस तरह उसने अपनी पत्नी को खो दिया।

33. सम्मोदमान-जातक - कुणाल जातक (536) में उठाए गए मुद्दों पर युद्ध से बचने के लिए बुद्ध ने अपने गृह नगर कपिलवस्तु में अपने परिवार को अपने ससुराल वालों के साथ सामंजस्य बनाए रखने के विषय में प्रवचन दिया। पिछले जन्म में बुद्ध एक बटेर थे। उन्होंने अपने परिवार को शिकारी के जाल में फंसकर एक साथ उड़कर शिकारी से बचने का तरीका सिखाया। बाद में जब कुछ बटेर आपस में झगड़ने लगे तो उन्होंने अपने झुंड को छोड़ दिया, जिसके बाद शेष बटेर जाल में फंस गए।

34. मच्छाजातक - अपनी पूर्व पत्नी के प्रेम में डूबे एक भिक्षु को अपने पिछले जन्म की कहानी सुनाई गई, जिसमें बताया गया कि कैसे वह मछली थे और अपनी पत्नी के साथ खेलते समय एक मछुआरे के जाल में फंस गए थे। उनकी पत्नी बच निकली,

जिससे भिक्षु अपनी पत्नी को खोने के गम में डूब गए। फिर एक पुजारी ने उन्हें बचाया।

35. वट्टक-जातक
36. सकुण-जातक
37. तित्तिर-जातक
38. बका-जातक
39. नन्द-जातक
40. खदिरंगारा-जातक
41. लोसाका-जातक
42. कपोता-जातक
43. वेलुका-जातक
44. मकासा-जातक
45. रोहिणी-जातक
46. आरामदूसक-जातक
47. वारुणि-जातक
48. वेदब्भ-जातक
49. नक्खत्त-जातक
50. दुम्मेधा जातक
51. महासीलव-जातक
52. चूल-जनक-जातक
53. पुण्णपाति-जातक
54. फलाजातक
55. पंचवुध-जातक
56. कंचनक्खंध-जातक
57. वानरिंद-जातक
58. तयोधम्म-जातक
59. भेरिवाद-जातक

60. संखधमन-जातक

61. असातमंत-जातक - शोक ग्रंथ। एक छात्र शोक ग्रंथों को कठिन तरीके से सीखता है (विपरीत लिंग के प्रति आकर्षण के बारे में)।

62. अण्डभूत-जातक

63. तकका-जातक

64. दुराजाना-जातक

65. अनाभिराति-जातक

66. मुदुलक्खण-जातक - यौन वासना के बारे में, कि कैसे यह संतों के भी पतन का कारण बनती है
67. उच्चांग-जातक

68. साकेत-जातक

69. विसवंत-जातक

70. कुड्डाला-जातक

71. वरण-जातक

72. सीलावनगा-जातक

73. सच्चंकिरा-जातक

74. रुक्खधम्म-जातक

75. मच्छा-जातक 2 - बुद्ध ने चमत्कारिक रूप से सूखे के समय में वर्षा कराई

76. असंकीय-जातक

77. महासुपीना-जातक - कोसल के राजा को भविष्य के बारे में 16 सपने आते हैं और इनकी व्याख्या करते हुए, बुद्ध आने वाले समय में मानव जाति के नैतिक पतन की भविष्यवाणी करते हैं।
78. इल्लिसा-जातक - एक कंजूस के धर्म परिवर्तन की सच्ची कहानी, जो अकेले रहकर अच्छा भोजन करना चाहता था, लेकिन देखता है कि बुद्ध के शिष्य हवाई मार्ग से आकर शिक्षा दे रहे हैं; बाद में वह बुद्ध को एक ऐसी टोकरी से भोजन देते हुए भी देखता है जो कभी खाली नहीं होती। फिर बुद्ध उस कंजूस के जीवन की पुरानी कहानी और उसके धन के भाग्य के बारे में बताते हैं।

79. खरस्सर-जातक

80. भीमसेन-जातक

81. सुरपान-जातक - नशा का दुष्परिणाम; जादुई शक्तियों वाले एक वृद्ध भिक्षु की सच्ची कहानी, जो नशे में धुत होने पर शक्तिहीन हो गया; उन शिष्यों की पुरानी जीवन कहानी, जिन्होंने राजा द्वारा भिक्षा में शराब दिए जाने पर सभी शिक्षाओं को भुला दिया।

82. मित्तविन्द-जातक

109. कुण्डकपुव-जातक

110. सब्बासंहारक-पन्ह
111. गद्रभ-पन्ह
112. अमरादेवी-पन्ह
113. सिगाला-जातक

114. मितासिंति-जातक

115. अनुसासिक-जातक

116. दुब्बाका-जातक

117. तित्तिर-जातक2

118. वट्टक-जातक2

119. अकालावी-जातक

120. बंधनमोक्खा-जातक - यह चिंचा नाम की महिला के बारे में है, जो बुद्ध पर गर्भावस्था का नाटक करने का झूठा आरोप लगाती है, और जब उसका पर्दाफाश होता है, तब बुद्ध उसके पूर्व जीवन के बारे में बताते हैं, जिसमें वह एक रानी थी और राजा के 64 दूतों के लिए वासना रखती थी।
121. कुसनाली-जातक

122. दुम्मेधा-जातक2

123. नांगलिसा-जातक

124. अम्बा-जातक

125. कटहक-जातक

126. असिलक्खण-जातक

127. कलण्डुक-जातक

128. बिलार-जातक

129. अग्गिका-जातक

130. कोसिया-जातक

131. असंपदान-जातक

132. पंचगरु-जातक

133. घटासन-जातक

134. झानशोधन-जातक

135. चंदाभ-जातक

188. सिहकोठुक-जातक

189. सिहाचम्म-जातक

190. सीलानिसंस-जातक

191. रूहक-जातक

192. सिरी-काकाकानि-जातक

193. कुल्ला-पदुमा-जातक

194. मणिकोर-जातक

195. पब्बतुपत्थर-जातक

196. वलहस्स-जातक

197. मित्तमित्त-जातक

198. नोनेम-जातक - बुराई न देखो; दो तोते भाइयों की कहानी, जिनमें से एक बुराई का सच बता देता है और अपनी जान गंवा देता है।

199. गहापति-जातक

200. साधुसील-जातक

201. बंधनागार-जातक

202. केली-सीला-जातक

203. खन्ध-वत्त-जातक

204. वीरक-जातक

205. गंगेय्या-जातक

206. कुरुंग-मिगा-जातक - मित्रता; देवदत्त द्वारा बुद्ध को मारने के प्रयास के बारे में; तीन मित्रों हिरण, कठफोड़वा और कछुए की पुरानी जीवन कहानी, कैसे उन्होंने एक शिकारी से एक साथ सहयोग करके खुद को बचाया।

207. अस्सका-जातक - प्रेम-पीड़न; दिवंगत पत्नी के प्रेम में डूबा एक भिक्षु; मृत रानी के शोक में डूबे एक राजा की पुरानी जीवन कथा, लेकिन रानी गोबर के कीड़े के रूप में पुनर्जन्म लेती है और राजा की निंदा करती है और इसके बजाय अपने साथी गोबर के कीड़े से प्यार करती है।

208. सुंसुमार-जातक

209. कक्करा-जातक

210. कंदगलक-जातक

211. सोमदत्त-जातक

212. उच्छीठ-भट्ट-जातक

213. भारु-जातक - रिश्वत; विभिन्न धर्मों के लोगों के एक समूह ने भगवान बुद्ध के शिष्यों को परेशान करने के लिए राजा को रिश्वत देकर भगवान बुद्ध के मठ के बगल में अपना मठ बनवाया; दो झगड़ने वाले संन्यासियों के समूहों की प्राचीन जीवन गाथा।

214. पुन्ण-नदी-जातक

215. कच्छप-जातक2

216. मच्छा-जातक3

217. सेग्गु-जातक

218. कूट-वणिज-जातक

219. गरहित-जातक

220. धम्मद्धज-जातक

221. कासाव-जातक

222. चूला-नंदीय-जातक

223. पुटा-भट्ट-जातक

224. कुंभीला जातक

225. खांति-वन्नान-जातक

226. कोसिया-जातक2

227. गूथा-पाण-जातक

228. कामानित-जातक

229. पलायी-जातक

230. दुतिया-पालयी-जातक

231. उपाहन-जातक

232. वीणा-थून-जातक

233. विकाण्णक-जातक

234. असिताभू-जातक

235. वच्छ-नख-जातक

236. बका-जातक2

237. साकेत-जातक2

238. एकपद-जातक

239. हरित-माता-जातक

240. महापिंगल-जातक

241. सब्बादठ-जातक

242. सुनख-जातक

243. गुट्टिला-जातक

244. वीटिच्च-जातक

245. मूल-परियया-जातक

246. तेलोवादा-जातक

247. पादंजलि-जातक

248. किंसुकोपमा-जातक

249. सालक-जातक

250. कपि-जातक

पुस्तक III. टीका-निपाता:

251. संकल्प-जातक

252. तिल-मुट्ठी-जातक

253. मणि-कण्ठ-जातक

254. कुंडक-कुच्चि-सिंधव-जातक

255. सुका-जातक

256. जरुदपान-जातक

257. गमानी-चंड-जातक

258. मंधातु-जातक - इच्छाएँ अनंत हैं; एक भिक्षु को एक स्त्री की इच्छा हुई; एक राजा की पुरानी जीवन कथा जिसने स्वर्ग प्राप्त करने की इच्छा की, उसने स्वर्ग प्राप्त कर लिया, लेकिन जब उसने स्वर्ग के सह-शासक को मारकर स्वर्ग पर एकमात्र प्रभुत्व प्राप्त करने की दूसरी इच्छा की, तो उसने इसे खो दिया और फिर से पृथ्वी पर लौट आया।

259. तिरीट-वच्छ-जातक

260. दूता-जातक

261. पद्मा-जातक

262. मुदु-पाणि-जातक

263. चुल्ला-पालोभना-जातक - यौन प्रेम व्यर्थ है; एक भिक्षु एक स्त्री के प्रति आकर्षित हो गया; एक राजकुमार की पुरानी जीवन कथा जो एक स्त्री से आसक्त हो गया, हिंसक हो गया, निर्वासित कर दिया गया, एक उड़ते हुए तपस्वी को देखा और इसलिए उसने भी तपस्वी बनने का निश्चय कर लिया;

264. महा-पानाद-जातक

265. खुरप्पा-जातक

266. वातग्ग-सिन्धव-जातक

267. कक्कटा-जातक

268. आराम-दूसा-जातक

269. सुजात-जातक

270. उलूका-जातक

271. उदपान-दूसका-जातक

272. व्याग्घ-जातक

273. कच्छप-जातक3

274. लोला-जातक

275. NONAME-Jātaka2

276. कुरुधम्म-जातक

277. रोमाका-जातक

278. महिषा-जातक

279. शतपट्ट-जातक

280. पुटा-दूसका-जातक

281. अब्भंतरा-जातक - बुद्ध की पत्नी के बारे में, मठ में भिक्षुणी के रूप में संघ में शामिल होने और कैसे वह बीमार पड़ गई और उसे राजा के महल से भिक्षा के रूप में लाए गए आम का रस और चीनी प्रदान की गई।

282. सेय्या-जातक

283. वधकि-शुकर-जातक

284. सिरी-जातक

285. मनीषूकर-जातक

286. सालूका-जातक

287. लाभ-गरह-जातक

288. मच्छ-उद्दान-जातक

289. नाना-छन्द-जातक

290. सीला-विमंस-जातक

291. भद्र-घट-जातक

292. सुपत्त-जातक - बुद्ध की पत्नी (एक भिक्षुणी जो अब मठ में रहती हैं) के बारे में, जो बीमार पड़ गईं और बुद्ध के प्रमुख अनुयायियों द्वारा राजा से दान में लाए गए चावल और मछली उन्हें दी गई।

293. काया-विच्चिन्द-जातक

294. जंबु-खादक-जातक

295. अंताजातक

296. समुद्दा-जातक

297. काम-विलप-जातक

298. उदंबरा-जातक

299. कोमाया-पुत्त-जातक

300. वाका-जातक

पुस्तक IV. चतुक्कनिपाटा:

301. चुल्लाकालिंग-जातक

302. महासारोह-जातक

303. एकराज-जातक

304. दद्दरा-जातक2

305. शीलविमांसन-जातक2

306. सुजात-जातक2

307. पलासा-जातक

308. जावसकुण-जातक

309. चावक-जातक

310. सयह-जातक

311. पुचिमांडा-जातक

312. कस्सपमंडीय-जातक

313. खन्तीवादी-जातक

314. लोहाकुंभी-जातक

315. मांसाजातक

316. सासा-जातक

317. मातरोदना-जातक

318. कनावेरा-जातक

319. तित्तिर-जातक3

320. सुच्चजा-जातक

321. कुटिदूसका-जातक

322. दद्दभा-जातक

323. ब्रह्मदत्त-जातक

324. कम्मासाटक-जातक

325. गोधा-जातक3

326. कक्कारु-जातक

327. काकाति-जातक

328. अन्नुसोसिया-जातक

329. कालबाहु-जातक

330. सीलावीमंस-जातक

331. कोकालिका-जातक

332. रथलट्ठी-जातक

333. गोधा-जातक4

334. राजोवाद-जातक2

335. जंबुका-जातक

336. ब्रह्मचत्त जातक

337. पीठाजातक

338. थुसा-जातक

339. बावेरु-जातक

340. विषय-जातक

341. कंडरी-जातक

342. वानर-जातक

343. कुन्तानी-जातक

344. अंबकोर-जातक

345. गजकुंभ-जातक

346. केशव-जातक

347. अयाकूत-जातक

348. अरञ्ञ-जातक

349. संधिभेद-जातक

350. देवतापन्ह-जातक

पुस्तक V. पंचनिपाता:

351. मणिकुंडल-जातक

352. सुजात-जातक3

353. धोनासाख-जातक

354. उराग-जातक2

355. घटा-जातक

356. कारंडिया-जातक

357. लाटुकिका-जातक

358. कुलधम्मपाल-जातक

359. सुवण्णमिगा-जातक

360. सुसोंडी-जातक

361. वण्णारोह-जातक

362. सीलावीमंस-जातक2

363. हिरि-जातक

364. खज्जोपनक-जातक

365. अहिगुंडिक-जातक

366. गुम्बिया-जातक

367. सालिया-जातक

368. तचसार-जातक

369. मित्तविन्द-जातक3

370. पलासा-जातक2

371. दीघितिकोसला-जातक

372. मिगापोताका-जातक

373. मूसाका-जातक

374. चुल्लधनुग्गहा-जातक

375. कपोता-जातक2

पुस्तक VI. चानीपाता:

376. अवार्य जातक

377. सेताकेतु-जातक

378. दरीमुख-जातक

379. नेरु-जातक

380. आसंक-जातक

381. मिगालोपा-जातक

382. सिरिकालकणि-जातक

383. कुक्कुट-जातक

384. धम्मद्धज-जातबा

385. नंदीयमिगा-जातक

386. खरपुत्त-जातक

387. सूचि-जातक

388. तुंडिल-जातक

389. सुवन्नक्कक्कट-जातक

390. मयहाक-जातक

पुस्तक VIII. अत्थ-निपाता:

417. कच्चानी-जातक

418. अट्ठसद्द-जातक

419. सुलासा-जातक

420. सुमंगल-जातक

421. गंगामाल जातक

422. चेतिया-जातक

423. इंद्रिय-जातक

424. आदित्य-जातक

425. अट्ठाना-जातक

426. दीप-जातक

पुस्तक 9. नवनीपाता:

427. गिज्जा-जातक3

428. कोसंबी-जातक

429. महासुका-जातक

430. कुल्लासुका-जातक

431. हरित-जातक

432. पादकुसलमानव-जातक

433. लोमासकस्सपा-जातक

434. चक्कवाका-जातक

435. हलिददिराग-जातक

436. समुग्ग-जातक

437. पूतिमंस-जातक

438. तित्तिर-जातक4

पुस्तक X. दशा-निपाता:

439. चतु-द्वार-जातक

440. काण्हजातक 2 - यह कहानी बुद्ध ने कपिलवस्तु (अपने गृहनगर) में सुनाई थी जब उनका जन्म ब्राह्मण के रूप में हुआ था और उन्होंने केवल पवित्र जीवन के लिए सक्का वरदान मांगे थे।

441. चतु-पोसाथिका-जातक

442. शंख-जातक

443. कुल्ला-बोधि-जातक

444. कान्हादीपायन-जातक

445. निग्रोध-जातक

446. तक्ल-जातक

447. महा-धम्म-पाल-जातक

448. कुक्कुट-जातक2

449. माता-कुंडली-जातक

450. बिलारी-कोसिया-जातक

451. चक्क-वाका-जातक

452. भूरी-पन्ह-जातक

453. महा-मंगल-जातक - बुद्ध शगुन और भाग्य के संकेतों में विश्वास करने की निरर्थकता सिखाते हैं और फिर बताते हैं कि इसके स्थान पर क्या अभ्यास करना चाहिए।

454. घट-जातक 2 - कृष्ण और बलराम की कहानी, बुद्ध उनके भाई थे जिनका नाम घटपंडित था

पुस्तक XI. एकादशी-निपाता:

455. माति-पोसाका-जातक

456. जुन्ह-जातक

457. धम्म-जातक

458. उदय-जातक

459. पाणीय-जातक

460. युवंजय-जातक

461. दशरथ जातक - राम, लक्ष्मण और सीता की कथा। बुद्ध स्वीकार करते हैं कि वे पिछले जन्म में राम थे।

462. संवर-जातक

463. सुप्पारक-जातक

पुस्तक XII. द्वादश-निपात:

464. चुल्ला-कुणाल-जातक

465. भद्दा-साला-जातक - जाति आधारित घृणा किस प्रकार विनाश का कारण बनती है

466. समुद्द-वणिज-जातक - विधर्मी और बुद्ध के विरोधी देवदत्त की मृत्यु, जिसने क्रम में फूट पैदा की

467. कामजातक

468. जनसंध-जातक

469. महाकम्भजातक

470. कोसिया-जातक3

471. मेण्डक-जातक

472. महा-पदुमा-जातक

473. मित्तमित्त-जातक2

पुस्तक XIII. तेरसा-निपाता:

474. अम्बा-जातक2

475. फंदना-जातक

476. जवाना-हंस-जातक

477. कुल्ला-नारद-जातक

478. दूता-जातक2

479. कालींग-बोधि-जातक - बुद्ध ने मूल बोधि वृक्ष (गया से) से लिए गए बीज से जेतवन मठ में बो (पीपल) वृक्ष को तुरंत उगाकर चमत्कार किया।

480. अकित्ता-जातक - बुद्ध अगत्स्य ऋषि थे

481. तक्कारिया-जातक

482. रुरु-जातक

483. सरभ-मिगा-जातक - बुद्ध ने पल भर में आम का पेड़ उगाकर चमत्कार किया, फिर हवा में उड़े और फिर वहां के देवताओं (देवदूतों) को शिक्षा देने के लिए स्वर्ग लोक गए और फिर तीन महीने बाद दूसरे शहर में पृथ्वी पर अवतरित हुए।

पुस्तक XIV. पकिन्नाका-निपाता :

484. सालिकेदार-जातक

485. चंद-किन्नर-जातक - बुद्ध ज्ञान प्राप्ति के बाद पहली बार अपने राज्य (कपिलवस्तु) लौटते हैं और अपनी रोती हुई पत्नी से मिलते हैं, जिन्होंने उनके जाने के समय एक नन के समान सरल जीवन व्यतीत करना शुरू कर दिया था। वे उनके अच्छे गुणों की प्रशंसा करते हैं और उनके पिछले जन्मों की कथा सुनाते हैं कि वे पिछले जन्मों में भी निष्ठावान थीं।

486. महा-उक्कुसा-जातक

487. उद्दालक-जातक

488. भीसा-जातक

489. सुरुचि-जातक

490. पंच-उपोसाथ-जातक

491. महा-मोरा-जातक

492. तच्छ-सूकर-जातक

493. महा-वाणिज-जातक

494. साधना-जातक

495. दश-ब्राह्मण-जातक

496. भिक्खा-परंपरा-जातक

पुस्तक XV. VISATI-NIPATA:

497. मातंग-जातक - बुद्ध मतंग ऋषि थे

498. चित्त-संभूत-जातक

499. सिवि-जातक

500. सिरिमंडा-जातक

501. रोहंत-मिगा-जातक

502. हंसाजातक

503. सत्तिगुम्बा-जातक

504. भल्लातिया-जातक

505. सोमनस्सा-जातक

506. कैम्पेय्य-जातक

507. महा-पालोभना-जातक

508. पंच-पंडित जातक

509. हत्थी-पाल जातक

510. अयोघरा-जातक

पुस्तक XVI. तिमसानिपाटा:

511. किंचन्द-जातक

512. कुंभ जातक

513. जयअदिशा-जातक

514. छद्दन्त-जातक

515. संभवा-जातक

516. महाकपि-जातक2

517. दकारक्खस-जातक

518. पाण्डर-जातक

519. संबुला-जातक

520. गण्डतिन्दु-जातक

पुस्तक XVII. कैटलिसानीपाटा:

521. तेसकुण-जातक

522. सरभंग-जातक

523. आलमबुसा-जातक

524. सांखपाल-जातक

525. कुल्ला-सुतसोमा-जातक

पुस्तक XVIII. पन्नासानिपाटा:

526. नलिनीका-जातक

527. उमदन्ती-जातक

528. महाबोधि-जातक

पुस्तक XIX. सत्थिनीपाता:

529. सोनाका-जातक

530. संकिच्च-जातक

पुस्तक XX. सत्ततिनिपाता:

531. कुसा-जातक

532. सोना-नंद-जातक

पुस्तक XXI. असितिनिपता:

533. चुल्लाहंस-जातक - विधर्मी देवदत्त राजा के नशे में धुत हाथी नलगिरि की मदद से बुद्ध को मारने की कोशिश करता है, लेकिन बुद्ध बच जाते हैं और हाथी को वश में कर लेते हैं।

534. महाहंस-जातक

535. सुधाभोजन-जातक

536. कुणाल-जातक - बुद्ध हवा में उड़ने का चमत्कार दिखाते हैं; उपदेश देते हैं और अपने कुल (शाक्य) और अपनी पत्नी के कुल (कोलिय) के बीच युद्ध को रोकते हैं; बाद में 500 भिक्षुओं के साथ हवा में उड़ते हैं ताकि उन्हें ऊपर से हिमालय दिखा सकें।

537. महा-सुतसोमा-जातक

पुस्तक XXII. महानिपता:

538. मुगा-पक्खा-जातक

539. महाजनक-जातक

540. समा-जातक

541. निमि-जातक - नरक और स्वर्ग का वर्णन
542. खंडाहल जातक - देवदत्त ने राजा के 130 धनुर्धारियों का उपयोग करके बुद्ध को मारने का प्रयास किया, बुद्ध बच गए और उन सभी को परिवर्तित कर दिया, फिर देवदत्त के पिछले जीवन की कहानी सुनाते हैं जब वह एक राजा था जिसने अपने पुजारी द्वारा रची गई साजिश के अनुसार अपने पूरे परिवार को बलिदान द्वारा मारकर स्वर्ग पहुंचने की इच्छा की थी।
543. भूरिदत्त-जातक

544. महानादकस्सपा-जातक

545. विधुरापंडित-जातक

546. महा-उम्मग्ग-जातक

547. वेस्सन्तरा-जातक - बुद्ध अपने पिता के राज्य (कपिलवस्तु) लौटते हैं और एक सभा में, हवा में तैरने का चमत्कार प्रदर्शित करते हैं और उनका विश्वास जीत लेते हैं।

जातक कथाओं में पाए जाने वाले सामान्य शब्द:---
टिप्पणी-1 : अधिकांश कथाओं के अंत में बुद्ध के श्रोताओं को प्रथम मार्ग, द्वितीय मार्ग, तृतीय मार्ग या चतुर्थ मार्ग प्राप्त करते हुए दर्शाया गया है। इनका विवरण यहाँ दिया गया है। (ये जातक कथा संख्या 1 में भी वर्णित हैं)

ध्यान का अभ्यास करने का बौद्ध अष्टांग मार्ग (धार्मिक जीवन के साथ) चार चरणों की उपलब्धियों की ओर ले जाता है, जिसे चट्टारो मार्ग (चार मार्ग) भी कहा जाता है:

प्रथम मार्ग (प्रथम मार्ग) - जिसे **सोतापन्ना** कहा जाता है , यानी धारा का विजेता, ध्यान में कई पापों/कर्मों के निवारण के साथ, पहली बार समाधि में निर्वाण की अवस्था का अनुभव होता है, मनुष्य/देवदूत के रूप में केवल सात बार पुनर्जन्म लेता है ताकि ध्यान के माध्यम से अपूर्णताओं को दूर कर सके और फिर निश्चित रूप से निर्वाण प्राप्त कर सके।
द्वितीय मार्ग (द्वितीय मार्ग) - जिसे **सकदागामी** कहा जाता है , इसमें बहुत कम पाप/कर्म शेष रहते हैं। ध्यान के माध्यम से व्यक्ति समाधि की अवस्था में कई बार निर्वाण का अनुभव करता है। वह केवल एक बार मनुष्य के रूप में पुनर्जन्म लेता है ताकि ध्यान के माध्यम से अपूर्णताओं को दूर कर सके और फिर निश्चित रूप से निर्वाण प्राप्त कर सके।
तीसरा मार्ग (तीसरा मार्ग) - जिसे **अनागामी** कहा जाता है , इसमें बहुत कम पाप/कर्म शेष रहते हैं। ध्यान के माध्यम से व्यक्ति समाधि की अवस्था में कई बार निर्वाण का अनुभव करता है। वह कभी मनुष्य के रूप में पुनर्जन्म नहीं लेता, बल्कि ब्रह्मा (राजदेव) के लोक में जन्म लेता है, जहाँ ध्यान के माध्यम से वह अपूर्णताओं को दूर करता है और निश्चित रूप से निर्वाण प्राप्त करता है।
चौथा मार्ग (चौथा मार्ग) - अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञानोदय) नामक अंतिम उपलब्धि , जिसमें व्यक्ति समाधि अवस्था में ध्यान के माध्यम से सभी पापों/कर्मों को पूर्णतः दूर कर लेता है, फिर निर्वाण से पूर्व की तीन अवस्थाओं का अनुभव करता है: (क) अनेक पूर्व जन्मों का स्मरण (ख) इनसे भौतिक जगत में आसक्तियों के कारण पुनर्जन्म के कारण-कार्य चक्र का ज्ञान (ग) आसक्तियों और पापों का विलीन होना; फिर निर्वाण तक पहुँचने के लिए समाधि की नौ अवस्थाओं का अनुभव करना: 1. भीतर चेतना की प्रबुद्ध आनंदमय अवस्था। 5. भौतिक शरीर से परे सभी दिशाओं में चेतना का विस्तार होकर भौतिक ब्रह्मांड में अनंत अंतरिक्ष/सर्वव्यापकता का अनुभव करना। 7. शून्यता का अनुभव करना, अर्थात् भौतिक ब्रह्मांड का अनुभव न होना। 9. अंत में शाश्वत, अनंत, अपरिवर्तनीय, अदृश्य प्रकाश के सागर के समान पारलौकिक सर्वव्यापी अवस्था में रूपांतरित होना - अंतिम ज्ञानोदय/मोक्ष/निर्वाण। टिपिटका में अरियापरियेसन सुत्त (मज्झिमा निकाया 26) देखें ।
(जैसा कि आर्यपरियेसन सूत्र में बताया गया है, प्रबुद्ध व्यक्ति अनंत के साथ एक हो जाता है, इस प्रकार अनंत क्षमताओं का स्वामी बन जाता है। कृपया ध्यान दें कि 'जादुई' शब्द का अर्थ उपरोक्त मार्ग का 'अनुयायी' या 'प्राप्तकर्ता' हो सकता है। लेकिन यह जादू नहीं है, यद्यपि जो लोग इसे प्राप्त करते हैं, उन्हें अलौकिक शक्तियां प्राप्त हो सकती हैं जिनका उल्लेख सम्मनफल और अन्य सूत्रों में किया गया है, लेकिन इन शक्तियों की प्राप्ति उद्देश्य बिल्कुल नहीं है। बुद्ध के मार्ग का उद्देश्य **ज्ञानोदय** है , अर्थात् भौतिक संसार में हमें बांधने वाली चीजों से मुक्त होना और अनंत काल तक जीवित रहना, अर्थात् मोक्ष/निर्वाण।)
टिप्पणी-2 : बौद्ध धर्म के **चार प्रमुख सत्य** हैं: (i) जीवन दुखमय है; (ii) भौतिक प्रकृति की लालसाएँ व्यक्ति/प्राणी के भविष्य के पुनर्जन्म का कारण बनती हैं; (iii) लालसाओं के लुप्त होने से व्यक्ति भी विलीन हो जाता है और ज्ञान/मोक्ष/शाश्वत जीवन प्राप्त करता है; और (iv) बुद्ध द्वारा शिक्षा दी गई धर्मपरायण अष्टमार्ग विधि का अनुसरण करने से लालसाएँ लुप्त हो जाती हैं।

टिप्पणी-3 : बौद्ध धर्म के **तीन रत्न,** जिन्हें त्रिरत्न (त्रिमूर्ति) के रूप में जाना जाता है, इस प्रकार हैं: (1) बुद्ध - यह विश्वास रखना कि यदि बुद्ध इसे प्राप्त कर सकते हैं, तो कोई भी कर सकता है। (2) धम्म - बुद्ध द्वारा दिखाया गया अष्टांगिक मार्ग, जो धर्म (शील), ध्यान (समाधि) और समाधि (प्रज्ञा) पर आधारित है। (3) संघ - भिक्षुओं का वह भाईचारा या पवित्र संघ, जिसकी स्थापना उन्होंने की थी (विशेषकर प्रबुद्ध भिक्षुओं का)।
नोट-4 : प्रतिद्वंद्वी या ' **विधर्मी** '। जिन छह प्रतिद्वंद्वियों के साथ गौतम (बुद्ध) को प्रतिस्पर्धा करनी थी, वे थे पुराण कश्यप, मक्खली गोशाल, अजिता केसा-कंबली, पकुधा कक्कायण, संजय बेलाथि-पुट्टा, और निगंथा नटपुट्टा (जिन्हें जैनियों के गुरु महावीर के नाम से भी जाना जाता है)।
नोट-5 : अनुवादकों ने भाई, भाईचारा और बंधुत्व शब्दों का प्रयोग किया है, अर्थात् भाई = भिक्षु; बंधुत्व = भिक्षुओं का पवित्र संघ; बंधुत्व = भिक्षु।
नोट-6 : **देव** = स्वर्ग लोक में देवदूत या देवता (ये भी पुनर्जन्म के अधीन हैं)
टिप्पणी-7 : **ब्रह्मा** = उच्च स्वर्ग में स्थित प्रधान देवदूत (ये भी पुनर्जन्म के अधीन हैं)
टिप्पणी-8 : **तथागत** = गौतम बुद्ध; तथा = परे, अगत = वापस आए; तथागत शब्द का अर्थ है वह व्यक्ति जिसने मृत्यु को पार किया, शाश्वत, कालातीत, अमर निर्वाण अवस्था में प्रवेश किया और फिर मनुष्यों को मार्ग सिखाने के लिए जीवित होकर वापस आया, एक अनुभवी व्यक्ति के रूप में जो मार्ग को भलीभांति जानता है।
नोट-9 : **दशबाला** = बुद्ध; दस = दस, बला = शक्तियाँ; बुद्ध को दस अलौकिक शक्तियों से युक्त माना जाता है।
टिप्पणी-10 : ज्ञान प्राप्ति की ओर ले जाने वाला धर्म का **अष्टांगिक मार्ग** । 1. सही दृष्टिकोण 2. सही इरादा 3. सही वाणी 4. सही कर्म 5. सही आजीविका 6. सही प्रयास 7. सही ध्यान (सती) 8. सही समाधि (समाधि)। यहाँ 'सही' शब्द का अर्थ वह है जो ज्ञान प्राप्ति की ओर ले जाता है। विस्तृत जानकारी के लिए, आर्य अष्टांगिक मार्ग देखें ।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **अपन्नक-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

जातक <<<<-----||-1-||----->>>> अगला

पुस्तक I.--एकनिपाता (*1)
जातक क्रमांक 1
अपन्नक-जातक

सत्य के विषय में यह (*2) प्रवचन भगवान बुद्ध ने श्रावस्ती शहर के पास जेतवन स्थित महान मठ में रहते हुए दिया था। लेकिन आप पूछेंगे कि इस कहानी की शुरुआत किसने की? दरअसल, यह कोषाध्यक्ष के पाँच सौ मित्र थे, जो गलत धारणा वाले गुरुओं के शिष्य थे (*3)।

एक दिन, कोषाध्यक्ष अनाथपिंडिका (*4) अपने पाँच सौ शिष्यों को साथ लेकर जेतवन मठ गए, जहाँ उन्होंने मालाएँ, इत्र, मलहम, तेल, शहद, गुड़, वस्त्र और लबादे का एक बड़ा भंडार मंगवाया। भगवान बुद्ध को विधिवत प्रणाम करने के बाद, उन्होंने उन्हें मालाएँ और इसी प्रकार की वस्तुएँ भेंट कीं और भिक्षु संघ को औषधीय तेल और वस्त्र सौंप दिए; और यह सब करने के बाद, वे बैठने के छह दोषों से बचते हुए एक तरफ बैठ गए। अन्य संप्रदायों के शिष्यों ने भी बुद्ध को प्रणाम किया और अनाथपिंडिका के निकट आकर बैठ गए, वे गुरु की पूर्णिमा के समान तेजस्वी शांति, बुद्धत्व के चिन्हों से परिपूर्ण उनकी उत्कृष्ट उपस्थिति और 6 फीट तक प्रकाश से घिरे उनके स्वरूप तथा बुद्ध की समृद्ध महिमा को निहारते रहे, वह महिमा मानो एक के ऊपर एक मालाओं के रूप में प्रकट हो रही हो।

फिर, यद्यपि लाल घाटी में दहाड़ते युवा शेर की गर्जना जैसी या बरसात के मौसम में तूफानी बादल की तरह, मानो स्वर्ग की गंगा को नीचे ला रहा हो (*5) और रत्नों का घेरा बुनता प्रतीत होता हो, फिर भी आठ गुना परिपूर्णता की आवाज में, जिसका आकर्षण कानों को मंत्रमुग्ध कर देता था, उन्होंने उन्हें मधुरता से भरे और विविध सुंदरता से उज्ज्वल प्रवचन में सत्य का उपदेश दिया।

गुरु के प्रवचन सुनने के बाद, वे परिवर्तित हृदय से उठे और ज्ञान के स्वामी को उचित प्रणाम करके, उन अन्य शिक्षाओं को त्याग दिया जिनमें उन्होंने शरण ली थी, और बुद्ध को अपना आश्रय बनाया। तब से वे निरंतर अनाथापिंडिका लेकर, हाथों में इत्र और मालाएँ आदि लिए हुए, मठ में सत्य का प्रवचन सुनने जाते थे; वे दानशील थे, आज्ञाओं का पालन करते थे और साप्ताहिक उपवास रखते थे।

अब भगवान बुद्ध श्रावस्ती नगर से राजगृह नगर लौट आए। बुद्ध के जाते ही उन्होंने अपना नया धर्म त्याग दिया और अन्य शिक्षाओं को शरण देकर अपनी मूल अवस्था में लौट गए।

लगभग सात-आठ महीने रहने के बाद भगवान बुद्ध जेतवन मठ लौट आए। एक बार फिर अनाथपिंडिका अपने मित्रों के साथ गुरु के पास आए, उन्हें प्रणाम किया, सुगंध और अन्य वस्तुएँ भेंट कीं और एक तरफ बैठ गए। उनके मित्रों ने भी भगवान बुद्ध को प्रणाम किया और उसी प्रकार बैठ गए। तब अनाथपिंडिका ने भगवान बुद्ध को बताया कि कैसे जब वे (बुद्ध) भिक्षायात्रा पर गए थे, तो उनके मित्रों ने पुराने उपदेशों का सहारा छोड़कर फिर से अपनी मूल अवस्था में लौट आए थे।

भगवान बुद्ध ने अपने मुख कमल को, मानो वह रत्नों से भरा हुआ एक संदूक हो, दिव्य सुगंधों से महकते हुए और अनगिनत युगों तक उचित रूप से बोलने के कारण अनेक सुगंधों से परिपूर्ण, खोलकर अपनी मधुर वाणी से पूछा:- "क्या यह खबर सच है कि तुम शिष्यों ने तीन शरणों (*6) को छोड़कर अन्य शिक्षाओं की शरण ली है?"

और जब वे इस तथ्य को छुपाने में असमर्थ होकर यह स्वीकार कर चुके थे, "यह सच है, भगवान बुद्ध," तब गुरु ने कहा, "शिष्य, न तो नीचे नरक (*7) की सीमाओं के बीच और न ही ऊपर सर्वोच्च स्वर्ग में, न ही दाएं और बाएं फैले हुए सभी अनंत लोकों में, कोई भी बुद्ध के बराबर, और न ही उनसे श्रेष्ठ, उन उत्कृष्टताओं में है जो आज्ञाओं का पालन करने और अन्य सद्गुणी आचरण से उत्पन्न होती हैं।"

फिर उन्होंने उन्हें त्रिरत्न (त्रिमूर्ति) तीन रत्नों (1. बुद्ध, 2. धम्म (निर्वाण का मार्ग) और 3. संघ (पवित्र व्यवस्था) की श्रेष्ठताएँ बताईं, जैसा कि पवित्र ग्रंथों में वर्णित है, जिनमें से कुछ इस प्रकार हैं: "हे भिक्षुओं, समस्त प्राणियों में, चाहे वे निराकार हों..., बुद्ध सर्वोपरि हैं"; "इस लोक या अन्य लोकों में जो भी धन-संपत्ति है... (पहले जैसा ही)"; और "वास्तव में, वे ही विश्वासियों के सर्वोपरि हैं... (पहले जैसा ही)।" वहाँ से उन्होंने आगे कहा:- "कोई भी शिष्य, चाहे पुरुष हो या स्त्री, जो असाधारण गुणों से परिपूर्ण त्रिरत्न (त्रिमूर्ति) तीन रत्नों की शरण लेता है, कभी भी नरक या ऐसे ही अन्य लोकों में जन्म नहीं लेता; बल्कि, दुख के सभी जन्मों से मुक्त होकर, वे देवलोक में जाते हैं और वहाँ महान यश प्राप्त करते हैं। इसलिए, अन्य शिक्षाओं द्वारा दी गई शरण के लिए ऐसी शरण को त्यागकर, तुम भटक गए हो।"

और यहाँ निम्नलिखित पवित्र ग्रंथों का हवाला देना उचित होगा ताकि यह स्पष्ट हो सके कि जो लोग मुक्ति और परम सुख की प्राप्ति के लिए त्रिरत्न (तीन रत्नों) की शरण लेते हैं, वे दुख की अवस्थाओं में पुनर्जन्म नहीं लेंगे:

जो बुद्धों की शरण लेते हैं,
वे दुख की अवस्थाओं में नहीं जाएंगे;
जैसे ही वे अपना मानव शरीर त्यागेंगे,
वे देव (देवदूत) रूप धारण कर लेंगे (*8)।
================
जो धम्म
(धर्म, ध्यान और निर्वाण की दिव्य अंतर्दृष्टि का मार्ग) की शरण लेते हैं
, वे दुख की अवस्थाओं में नहीं जाएंगे;
जैसे ही वे अपना मानव शरीर त्यागेंगे,
वे देव (देवदूत) रूप धारण कर लेंगे।
================
जो संघ, प्रबुद्धों के पवित्र संघ की शरण लेते हैं,
वे दुख की अवस्थाओं में नहीं जाएंगे;
जैसे ही वे अपना मानव शरीर त्यागेंगे,
वे देव (देवदूत) रूप धारण कर लेंगे।
================
मनुष्य अनेक शरणस्थलों की खोज करते हैं,
जैसे पर्वत शिखर, वन का एकांत,
(अतः)
जब वह इस शरणस्थल को खोजकर पा लेता है, तो
उसे हर प्रकार के कष्ट से पूर्ण मुक्ति मिल जाती है। (*9)

लेकिन गुरु ने यहीं पर अपना उपदेश समाप्त नहीं किया; उन्होंने आगे कहा: "शिष्यों, बुद्ध के मार्ग पर ध्यान, धम्म के मार्ग पर ध्यान (निर्वाण/मोक्ष की ओर ले जाने वाला धर्म और नियम), संघ के मार्ग पर ध्यान (पवित्र संघ/अच्छी संगति), यही वह मार्ग है जो परमानंद के प्रथम, द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ मार्गों में प्रवेश और उनकी प्राप्ति कराता है (*12)।" और जब उन्होंने इन और अन्य तरीकों से उन्हें सत्य का उपदेश दिया, तो उन्होंने कहा, "इस शरण को त्यागकर तुम भटक गए हो।"

(और यहाँ बुद्ध के मार्ग पर ध्यान करने वालों को मिलने वाले अनेक मार्गों के उपहार को निम्नलिखित शास्त्रों द्वारा स्पष्ट किया जाना चाहिए:- "भिक्षुओं, एक ही बात है, जिसका अभ्यास और विकास करने से संसार के सुखों से पूर्ण अरुचि, वासनाओं का निवारण, पुनर्जन्मों का अंत, शांति, अंतर्दृष्टि, ज्ञानोदय और निर्वाण प्राप्त होता है। वह एक बात क्या है?--बुद्ध के मार्ग पर ध्यान....आदि") (यहाँ ध्यान का तात्पर्य शरीर और मन के कठोर प्रशिक्षण/अनुशासन से है, जैसे ज़ेन, अनापान, विपश्यना, मेट्टा, सतिपत्तना, समाथा आदि, जिससे विचारों, भावनाओं, आसक्तियों और इच्छाओं में स्थिरता आती है, जो आगे चलकर दिव्य आनंदमय समाधि, अंतर्दृष्टि, आत्मज्ञान और अंततः चेतना के नश्वर एकत्व/अहंकार से अनंत सर्वव्यापकता के ज्ञानोदय की ओर ले जाती है।)

शिष्यों को इस प्रकार प्रोत्साहित करने के बाद, भगवान बुद्ध ने कहा, "इसी प्रकार अतीत में, शिष्यों ने मूर्खतापूर्ण निष्कर्ष निकाला कि जो शरण नहीं थी वही वास्तविक शरण थी, और वे राक्षस-ग्रस्त वन में प्रेतों के शिकार होकर पूरी तरह नष्ट हो गए; जबकि जो लोग सत्य के इस पूर्ण और निर्विवाद मार्ग पर दृढ़ रहे, वे उसी वन में समृद्ध हुए।" और यह कहकर वे मौन हो गए।

तब, गृहस्थ अनाथपिंडिका अपनी सीट से उठकर भगवान बुद्ध को प्रणाम करते हुए स्तुतिगान करने लगे और माथे पर हाथ जोड़कर आदरपूर्वक बोले, "हे प्रभु, यह हमारे लिए स्पष्ट है कि इन दिनों ये शिष्य भ्रम में पड़कर परम शरण से विमुख हो गए। परन्तु राक्षस-ग्रस्त वन में उन हठधर्मियों का विनाश और सत्य पर अडिग रहने वालों की समृद्धि हमसे छिपी हुई है, केवल आपको ही ज्ञात है। भगवान बुद्ध कृपा करें, मानो आकाश में पूर्णिमा का चंद्रमा उदय कर रहे हों, कि वे इस बात को हमारे लिए स्पष्ट कर दें।"

तब भगवान बुद्ध ने कहा:- "संसार की कठिनाइयों को दूर करने के लिए ही मैंने असंख्य युगों तक दस सिद्धियों (*10) का प्रदर्शन करके अनंत ज्ञान प्राप्त किया। ध्यान से सुनो, मानो तुम सोने की नली में शेर की मज्जा भर रहे हो।"

इस प्रकार कोषाध्यक्ष का ध्यान आकर्षित करने के बाद, उन्होंने उस बात को स्पष्ट कर दिया जिसे पुनर्जन्म ने उनसे छिपा रखा था, मानो वे आकाश से पूर्णिमा को मुक्त कर रहे हों, जो बर्फ का जन्मस्थान है।

बहुत समय पहले काशी देश के बनारस नगर में ब्रह्मदत्त नाम का एक राजा रहता था। उन दिनों बोधिसत्व ब्रह्मदत्त एक व्यापारी परिवार में जन्मे थे और बड़े होकर पाँच सौ रथों के साथ व्यापार करने के लिए पूर्व से पश्चिम और पश्चिम से पूर्व की ओर यात्रा करते थे। बनारस में एक और युवा व्यापारी भी था, जो मूर्ख और संसाधनहीन था।

अब हमारी कहानी के समय, बोधिसत्व ने बनारस के कीमती सामान से पाँच सौ गाड़ियाँ लाद ली थीं और उन्हें यात्रा के लिए तैयार कर लिया था। और वह मूर्ख युवक व्यापारी भी तैयार था। बोधिसत्व ने सोचा, "अगर यह मूर्ख युवक व्यापारी मेरे साथ-साथ चलता रहा और हज़ार गाड़ियाँ एक साथ चलती रहीं, तो सड़क पर बहुत बोझ हो जाएगा; आदमियों के लिए लकड़ी, पानी आदि और बैलों के लिए घास लाना मुश्किल हो जाएगा। या तो उसे पहले जाना होगा या मुझे।" इसलिए उन्होंने दूसरे को बुलवाया और उसके सामने अपना विचार रखते हुए कहा, "हम दोनों एक साथ यात्रा नहीं कर सकते; तुम पहले जाना चाहोगे या बाद में?" दूसरे ने सोचा, "अगर मैं पहले जाऊँ तो बहुत से फायदे होंगे। मुझे ऐसी सड़क मिलेगी जो अभी तक कटी-फटी नहीं है; मेरे बैलों को सबसे अच्छी घास मिलेगी; मेरे आदमियों को करी के लिए सबसे अच्छी जड़ी-बूटियाँ मिलेंगी; पानी साफ रहेगा; और अंत में, मैं अपने सामान के बदले अपनी मनचाही कीमत तय कर सकूँगा।" इसलिए उन्होंने जवाब दिया, "मैं पहले जाऊंगा, मेरे प्रिय महोदय।"

दूसरी ओर, बोधिसत्व को अंत में जाने में अनेक लाभ दिखाई दिए, और उन्होंने मन ही मन कहा: "जो पहले जाएंगे वे ऊबड़-खाबड़ रास्तों को समतल कर देंगे, जबकि मैं उनके द्वारा तय किए गए रास्ते पर चलूंगा; उनके बैल पुरानी खुरदरी घास चर चुके होंगे, जबकि मेरे बैल उसकी जगह उगने वाली मीठी नई घास चरेंगे; मेरे आदमियों को करी के लिए मीठी जड़ी-बूटियां मिलेंगी जहां पुरानी तोड़ी जा चुकी होंगी; जहां पानी नहीं होगा, वहां पहले कारवां को पानी की व्यवस्था के लिए कुआं खोदना पड़ेगा, और हम उनके खोदे हुए कुओं से पानी पिएंगे। कीमतों पर मोलभाव करना थका देने वाला काम है; जबकि मैं बाद में जाकर, उनके द्वारा तय की गई कीमतों पर अपना सामान बेच सकूंगा।" इन सभी लाभों को देखते हुए, उन्होंने दूसरे से कहा, "तो आप पहले जाइए, मेरे प्रिय महोदय।"

"ठीक है, मैं चलूँगा," मूर्ख व्यापारी ने कहा। और उसने अपनी गाड़ियाँ जोड़ीं और चल पड़ा। यात्रा करते-करते वह मानव बस्तियों को पीछे छोड़ते हुए जंगल के बाहरी इलाके में पहुँच गया। (जंगल पाँच प्रकार के होते हैं: लुटेरों का जंगल, जंगली जानवरों का जंगल, सूखे का जंगल, राक्षसों का जंगल और अकाल का जंगल। पहला प्रकार वह है जब रास्ता लुटेरों से भरा हो; दूसरा प्रकार वह है जब रास्ता शेरों और अन्य जंगली जानवरों से भरा हो; तीसरा प्रकार वह है जब नहाने या पानी की कोई व्यवस्था न हो; चौथा प्रकार वह है जब रास्ता राक्षसों से भरा हो; और पाँचवाँ प्रकार वह है जब कोई जड़ या अन्य भोजन न मिले। इस पाँचों श्रेणियों में, प्रश्न में उल्लिखित जंगल सूखा और राक्षसों का जंगल दोनों था।) तदनुसार, इस युवक व्यापारी ने अपनी गाड़ियों पर बड़े-बड़े पानी के घड़े रखे और उन्हें पानी से भरकर अपने सामने फैले साठ मील (4.23 किमी) के रेगिस्तान को पार करने के लिए चल पड़ा। जब वह घने जंगल के बीचोंबीच पहुँच गया, तो वहाँ रहने वाले जिन्न ने मन ही मन कहा, "मैं इन आदमियों को पानी का भंडार फेंकने पर मजबूर करूँगा और जब ये कमज़ोर पड़ जाएँगे, तब मैं इन सबको खा जाऊँगा।" इसलिए उसने अपनी जादुई शक्ति से शुद्ध सफेद रंग के युवा बैलों द्वारा खींची जाने वाली एक सुंदर रथ बनाई। लगभग दस-बारह जिन्नों के एक दल के साथ, जिनके पास धनुष-बाण, तलवारें और ढालें थीं, वह एक शक्तिशाली स्वामी की तरह इस रथ पर सवार होकर उनसे मिलने गया। उसके सिर पर नीले कमल और सफेद कमलों की मालाएँ थीं, उसके बाल और कपड़े गीले थे और रथ के पहिए कीचड़ से सने थे। उसके सेवक भी उसके आगे-पीछे गीले बालों और कपड़ों के साथ, मोतियों पर नीले कमल और सफेद कमलों की मालाएँ और हाथों में सफेद कमलों के गुच्छे लिए, खाने योग्य डंठल चबाते हुए, पानी और कीचड़ से लथपथ होकर चल रहे थे। अब कारवां के सरदारों की यह प्रथा है: जब भी हवा उनके सामने से आती है, तो वे धूल से बचने के लिए अपने रथ में अपने सेवकों के साथ आगे-आगे चलते हैं; लेकिन जब हवा पीछे से आती है, तो वे इसी तरह काफिले के पीछे चलते हैं। और, जैसा कि इस बार हवा उनके विपरीत दिशा से आ रही थी, युवक व्यापारी आगे चल रहा था। जब जिन्न को व्यापारी के आने का आभास हुआ, तो उसने अपना रथ रास्ते से हटाकर किनारे कर लिया और विनम्रतापूर्वक उसका अभिवादन करते हुए पूछा कि वह कहाँ जा रहा है। काफिले के सरदार ने भी अपनी गाड़ी को रास्ते से हटाकर किनारे कर दिया ताकि गाड़ियाँ निकल सकें। वह रास्ते में रुका और उस जिन्न से बोला, "हम अभी बनारस से आ रहे हैं, महोदय। लेकिन मैंने देखा है कि आपके सिर और हाथों में कमल और कमल के फूल हैं, आपके लोग उनकी खाने योग्य डंठलें चबा रहे हैं, और आप सब कीचड़ से सने हुए और भीगे हुए हैं। मैं पूछता हूँ, क्या रास्ते में बारिश हुई थी, और क्या आपको कमल और कमल से ढके हुए तालाब मिले थे?"

इस पर जिन्न ने कहा, "तुमने क्या कहा? अरे, उधर जंगल की गहरी हरी लकीर दिखाई दे रही है, और वहाँ से आगे पूरे जंगल में सिर्फ पानी ही पानी है। वहाँ हमेशा बारिश होती रहती है; तालाब भरे रहते हैं; और चारों ओर कमल और कमल के फूलों से ढकी झीलें हैं।" फिर जब गाड़ियों की कतार गुजरी, तो उसने पूछा कि वे कहाँ जा रही हैं। जवाब मिला, "फलां जगह।" "और इस गाड़ी में और इस गाड़ी में क्या सामान है?" "फलां।" "और इस आखिरी गाड़ी में क्या है जो भारी सामान से लदी हुई लग रही है?" "ओह, उसमें पानी है।" "तुम दूसरी तरफ से पानी लेकर आई हो, अच्छा किया। लेकिन अब इसकी जरूरत नहीं है, क्योंकि आगे पानी भरपूर है। इसलिए घड़े तोड़ दो और पानी फेंक दो, ताकि तुम आराम से यात्रा कर सको।" और उसने आगे कहा, "अब अपने रास्ते पर आगे बढ़ो, क्योंकि हम पहले ही बहुत देर तक रुक चुके हैं।" फिर वह थोड़ी दूर और आगे चला गया, जब तक कि वह नजरों से ओझल नहीं हो गया, तब वह वापस उस जिन्न-शहर की ओर चल पड़ा जहां वह रहता था।

उस मूर्ख व्यापारी की गलती इतनी बड़ी थी कि उसने पिशाच का आदेश मान लिया और उसके घड़े टूट गए और सारा पानी बर्बाद हो गया, यहाँ तक कि हथेली में आने जितना पानी भी नहीं बचा। फिर उसने गाड़ियों को आगे बढ़ने का आदेश दिया। आगे उन्हें पानी की एक बूँद भी नहीं मिली और प्यास से वे थक गए। दिनभर, सूरज डूबने तक वे चलते रहे; लेकिन सूर्यास्त के समय उन्होंने अपनी गाड़ियाँ खोल दीं और बैलों को पहियों से बाँधकर एक शिविर बना लिया। बैलों को पीने के लिए पानी नहीं मिला और आदमियों के पास चावल पकाने के लिए कुछ नहीं था; और थके-हारे लोग सोने के लिए ज़मीन पर गिर पड़े। लेकिन जैसे ही रात हुई, पिशाच अपने शहर से निकले और उन सभी आदमियों और बैलों को मार डाला; और जब उन्होंने उनका मांस खाकर केवल हड्डियाँ छोड़ीं, तो पिशाच चले गए। इस प्रकार, उस मूर्ख युवक व्यापारी के कारण ही उस पूरे समूह का विनाश हुआ, जिनके कंकाल हर दिशा में बिखरे पड़े थे, जबकि पाँच सौ गाड़ियाँ अपने भार के साथ वहीं खड़ी रहीं।

अब बोधिसत्व ने उस मूर्ख युवक व्यापारी के प्रस्थान के बाद लगभग छह सप्ताह का समय बीतने दिया, फिर वे रवाना हुए। तब वे अपने पाँच सौ रथों के साथ शहर से निकले और कुछ समय बाद जंगल के बाहरी इलाके में पहुँचे। यहाँ उन्होंने अपने जलपात्रों को भरवाया और उनमें पर्याप्त जल का भंडार रखा; और ढोल बजाकर अपने आदमियों को शिविर में इकट्ठा किया और उन्हें संबोधित करते हुए कहा: "मेरी अनुमति के बिना एक मुट्ठी भर पानी भी इस्तेमाल न करें। इस जंगल में विषैले वृक्ष हैं; इसलिए आप में से कोई भी व्यक्ति मुझसे पूछे बिना कोई भी पत्ता, फूल या फल न खाए।" अपने आदमियों को यह सलाह देकर वे अपने 500 रथों के साथ जंगल में आगे बढ़े। जब वे जंगल के मध्य में पहुँचे, तो भूत पहले की तरह ही बोधिसत्व के मार्ग में प्रकट हुआ। लेकिन जैसे ही बोधिसत्व को भूत का आभास हुआ, उन्होंने उसे पहचान लिया; क्योंकि उसने मन ही मन सोचा, "यहाँ पानी नहीं है, इस 'जलहीन रेगिस्तान' में। लाल आँखों और आक्रामक चेहरे वाला यह व्यक्ति तो परछाई भी नहीं बना सकता। शायद इसने मुझसे पहले आए मूर्ख युवक व्यापारी को अपना सारा पानी फेंकने के लिए उकसाया होगा, और फिर उनके थक जाने का इंतज़ार करके उसे उसके सभी आदमियों के साथ खा गया

होगा। लेकिन इसे मेरी चतुराई और हाजिरजवाबी का अंदाज़ा नहीं है।" फिर उसने उस जिन्न को चिल्लाकर कहा, "चले जाओ! हम व्यापारी हैं, और जब तक हमें पता नहीं चलता कि और पानी कहाँ से आएगा, तब तक हम अपना पानी नहीं फेंकते। लेकिन जब हमें और पानी मिल जाता है, तो आप भरोसा कर सकते हैं कि हम इस पानी को फेंक देंगे और अपनी गाड़ियों का भार कम कर लेंगे।"

वह जिन्न कुछ दूर तक घोड़े पर सवार होकर तब तक चलता रहा जब तक वह नज़रों से ओझल नहीं हो गया, और फिर राक्षसों के शहर में अपने घर लौट गया। लेकिन जिन्न के चले जाने के बाद, बोधिसत्व के आदमियों ने उनसे कहा, "महोदय, हमने उन आदमियों से सुना है कि वहाँ जंगल की एक गहरी हरी लकीर दिखाई देती है, जहाँ उन्होंने कहा कि हमेशा बारिश होती रहती है। उनके सिर पर कमल थे और हाथों में कमल की कलियाँ थीं और वे उनकी डंठलें खा रहे थे, जबकि उनके कपड़े और बाल पानी से पूरी तरह भीगे हुए थे। आइए हम अपना पानी फेंक दें और हल्की गाड़ियों के साथ थोड़ा तेज़ी से चलें।" ये शब्द सुनकर, बोधिसत्व ने रुकने का आदेश दिया और सभी आदमियों को इकट्ठा किया। उन्होंने कहा, "मुझे बताइए; क्या आप में से किसी ने आज से पहले कभी सुना था कि इस वीरान जगह में कोई झील या तालाब है?" उत्तर था, "नहीं, महाराज, इसीलिए इसे 'जलहीन रेगिस्तान' कहा जाता है।"

"हमें अभी कुछ लोगों ने बताया है कि आगे जंगल के इलाके में बारिश हो रही है; अब बारिश की हवा कितनी दूर तक जाती है?" "एक लीग (4.23 किमी), महोदय।" "क्या यह बारिश की हवा यहाँ किसी तक पहुँची है?" "नहीं, महोदय।" "तूफ़ानी बादल का शिखर कितनी दूर तक दिखाई देता है?" "एक लीग, महोदय।" "क्या यहाँ किसी ने एक भी तूफ़ानी बादल का शिखर देखा है?" "नहीं, महोदय।" "बिजली की चमक कितनी दूर तक दिखाई देती है?" "चार या पाँच लीग, महोदय।" "क्या यहाँ किसी ने बिजली की चमक देखी है?" "नहीं, महोदय।" गरज की आवाज़ कितनी दूर तक सुनाई देती है?" "दो या तीन लीग, महोदय।" "क्या यहाँ किसी ने गरज की आवाज़ सुनी है?" "नहीं, महोदय।" "ये इंसान नहीं, बल्कि जिन्न हैं। ये वापस आएंगे, इस उम्मीद में कि जब हम उनके कहने पर पानी फेंक देंगे और कमज़ोर पड़ जाएंगे, तो हमें खा जाएंगे।" हमारे आगे चलने वाला युवक साधन संपन्न नहीं था, इसलिए संभवतः उसने अपना पानी बर्बाद कर दिया होगा और थकान के कारण उसका शिकार हो गया होगा। हमें उम्मीद है कि उसकी पाँच सौ गाड़ियाँ ठीक उसी तरह खड़ी मिलेंगी जैसे शुरुआत में भरी गई थीं; हम आज उन तक पहुँच जाएँगे। बिना एक बूँद पानी बर्बाद किए पूरी गति से आगे बढ़ते रहो।

इन शब्दों से अपने आदमियों को आगे बढ़ने का प्रोत्साहन देते हुए, वह तब तक आगे बढ़ता रहा जब तक कि वह उन 500 गाड़ियों के पास नहीं पहुँच गया जो ठीक उसी तरह खड़ी थीं जैसे उन पर लादी गई थीं, और आदमियों और बैलों के कंकाल चारों ओर बिखरे पड़े थे। उसने अपनी गाड़ियों को जुए से अलग करवाया और उन्हें एक मजबूत घेरा बनाने के लिए व्यवस्थित करवाया; उसने देखा कि उसके आदमियों और बैलों ने जल्दी ही रात का भोजन कर लिया था, और बैलों को बीच में लिटाया गया था और आदमियों को उनके चारों ओर रखा गया था; और वह स्वयं अपने दल के प्रमुख आदमियों के साथ, हाथ में तलवार लिए, रात के तीनों पहरों में पहरा देता रहा, सूर्योदय की प्रतीक्षा करता रहा। अगले दिन सुबह होते ही, जब उसने अपने बैलों को चारा खिला दिया और सभी आवश्यक कार्य कर लिए, तो उसने अपनी कमजोर गाड़ियों को मजबूत गाड़ियों से बदल दिया, और अपने सामान्य सामान को छोड़े हुए सबसे कीमती सामान से बदल दिया। फिर वह अपने गंतव्य की ओर चल पड़ा, जहाँ उसने अपने माल को उसके मूल्य से दोगुने या तिगुने मूल्य के सामान से बदल दिया, और अपने पूरे दल में से एक भी आदमी खोए बिना अपने शहर लौट आया।

यह कहानी समाप्त करते हुए गुरु ने कहा, "हे गृहस्थ, अतीत में मूर्ख लोग पूर्ण विनाश की ओर अग्रसर हुए, जबकि सत्य के मार्ग पर चलने वाले लोग राक्षसों के चंगुल से बचकर सुरक्षित अपने गंतव्य तक पहुँचे और अपने घरों को लौट आए।" और इस प्रकार दोनों कहानियों को जोड़कर, उन्होंने बुद्ध के रूप में सत्य पर इस पाठ के लिए निम्नलिखित श्लोक कहा:

फिर कुछ लोगों ने एकमात्र, असाधारण सत्य की व्याख्या की;

लेकिन इसके अलावा झूठे शिक्षकों ने बातें कीं।

जो बुद्धिमान हो, वह इससे सबक ले।

और एकमात्र, असाधारण सत्य को दृढ़ता से ग्रहण करो।

इस प्रकार भगवान बुद्ध ने सत्य के विषय में यह शिक्षा दी। उन्होंने आगे कहा: "सत्य के मार्ग पर चलना न केवल तीन सुखदायी वरदान, इंद्रियों के छह दिव्य देव/देवदूत अवस्थाओं और ब्रह्मा/प्रधान देवदूत के उच्चतर लोक के वरदान देता है, बल्कि अंततः अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) का दाता भी है; जबकि असत्य के मार्ग पर चलना चार प्रकार के दंडों या मानव जाति की निम्नतम जातियों में पुनर्जन्म का

कारण बनता है।" इसके आगे गुरु ने सोलह विधियों से चार सत्यों (*11) की व्याख्या की, जिसके अंत में उन सभी पाँच सौ शिष्यों ने प्रथम मार्ग (*12) के फल को प्राप्त किया।

अपना पाठ और उपदेश देने के बाद, दोनों कहानियाँ सुनाकर और उनके बीच संबंध स्थापित करके, गुरु ने अंत में जन्म की पहचान इस प्रकार की: "देवदत्त उस समय का मूर्ख युवक व्यापारी था; उसके अनुयायी उस व्यापारी के अनुयायी थे; बुद्ध के अनुयायी उस बुद्धिमान व्यापारी के अनुयायी थे, जो मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) जातक ग्रंथों का प्रामाणिक पाठ, जो केवल गाथाओं या श्लोकों से बना है, गाथाओं की संख्या के अनुसार 'पुस्तकों' या निपातों में विभाजित है। पहले खंड में 150 कथाएँ हैं जो प्रत्येक गाथा की व्याख्या और टीका प्रस्तुत करती हैं, और इस प्रकार पहला खंड बनता है। बाद के खंडों में गाथाओं की संख्या बढ़ती जाती है और कथाओं की संख्या घटती जाती है: उदाहरण के लिए, दूसरे खंड में 100 दो-गाथा कथाएँ हैं, तीसरे खंड में 50 तीन-गाथा कथाएँ हैं, इत्यादि। निपातों की कुल संख्या 22 है, जिनमें से 21 पाली पाठ के पाँच प्रकाशित खंडों का पाठ हैं। निपातों को वग्गों, या लगभग 10 कथाओं के समूहों में उपविभाजित किया गया है, जिनका नाम सामान्यतः उनकी पहली कथा के नाम पर रखा गया है। इन उपविभाजनों से अनुवाद को जटिल बनाना उचित नहीं समझा गया है।

(2) परिचयात्मक कहानी आमतौर पर एक कैचवर्ड के रूप में, बाद की गाथा (कहानी) के पहले शब्दों को उद्धृत करके शुरू होती है।

(3)प्रतिद्वंद्वी या 'विधर्मी'। जिन छह प्रतिद्वंद्वियों के साथ गौतम (बुद्ध) को मुख्य रूप से प्रतिस्पर्धा करनी थी, वे थे पुराण कश्यप, मक्खली गोशाल, अजिता केसा-कंबली, पकुधा कक्कायण, संजय बेलाथि-पुट्टा, और निगंथा नटपुट्टा (जिन्हें जैनियों के गुरु महावीर के रूप में भी जाना जाता है) (देखें, दीघा निकाय में समन्नाफला सुत्त)।

(4) यह एक उपनाम है, जिसका शाब्दिक अर्थ है 'गरीबों का पालन-पोषण करने वाला'। उनका सामान्य नाम सुदत्ता था। उन्होंने राजकुमार जेत से उनका बगीचा उतने सोने में खरीदा, जितने में ज़मीन को पक्का किया जा सकता था, और उन्होंने उस पर बुद्ध के लिए महान मठ जेतवन का निर्माण किया।

(5)अर्थात् मिल्की वे.

(6)अर्थात् 1. बुद्ध, 2. सत्य का मार्ग जिसका उन्होंने प्रचार किया, और 3. भिक्षुओं का पवित्र संघ, जिसकी उन्होंने स्थापना की। इस त्रिमूर्ति को 'तीन रत्न' के नाम से जाना जाता है।

(7) बौद्ध धर्म में सख्ती से कहें तो, दुख के 4 तल (नरक सहित) पीड़ा के स्थान हैं - अस्थायी और शिक्षाप्रद हैं और दंड की अवधि सीमित है, उसके बाद दूसरे तल में पुनर्जन्म हो सकता है।

(8)पाली रूप में बरकरार रखा गया शब्द 'देव' का अर्थ 'देवदूत' है।

(9)धम्मपद, खंड 188-192.

(10)अर्थात दान, भलाई, त्याग, ज्ञान, ऊर्जा, धैर्य, सत्य, संकल्प, प्रेम और समभाव। जातक संख्या (35) भी देखें।

(11) बौद्ध धर्म के ये चार प्रमुख सत्य इस प्रकार हैं:-(i) दु:ख: जीवन **दुखमय** है ; (ii) समुदय: (भौतिक प्रकृति की) लालसाएँ किसी व्यक्ति/प्राणी के **उद्भव** और निरंतरता का कारण बनती हैं; (iii) निरोध: लालसाओं के **लुप्त होने** से व्यक्ति भी लुप्त हो जाता है; और (iv) मार्ग: बुद्ध द्वारा शिक्षा दिए गए धर्म पर आधारित ध्यानमय अष्टांगिक मार्ग का अनुसरण करने से लालसाएँ लुप्त हो जाती हैं।

(12) ध्यान का अभ्यास करने का बौद्ध अष्टांगिक मार्ग (धार्मिक जीवन के साथ) चार चरणों की उपलब्धियों में परिणत होता है, जिन्हें चट्टारो मार्ग (चार मार्ग) भी कहा जाता है:

प्रथम मार्ग (प्रथम मार्ग) - इसे सोतापन्ना कहा जाता है, धारा का विजेता, ध्यान में कई पापों/कर्मों के निवारण के साथ, पहली बार समाधि में निर्वाण की अवस्था का अनुभव होता है, मनुष्य/देवदूत के रूप में केवल सात बार पुनर्जन्म होता है ताकि ध्यान के माध्यम से अपूर्णताओं को दूर किया जा सके और फिर निश्चित रूप से निर्वाण प्राप्त होता है।

दूसरा मार्ग (दूसरा मार्ग) - जिसे सकदागामी कहा जाता है, इसमें बहुत कम पाप/कर्म शेष रहते हैं, ध्यान के माध्यम से व्यक्ति समाधि की अवस्था में कई बार निर्वाण का अनुभव करता है, केवल एक बार मनुष्य के रूप में पुनर्जन्म लेता है ताकि ध्यान के माध्यम से अपूर्णताओं को दूर कर सके और फिर निश्चित रूप से निर्वाण प्राप्त कर सके।

तीसरा मार्ग (तीसरा मार्ग) - जिसे अनागामी कहा जाता है, इसमें बहुत कम पाप/कर्म शेष रहते हैं। ध्यान के माध्यम से व्यक्ति समाधि की अवस्था में कई बार निर्वाण का अनुभव करता है। वह कभी मनुष्य के रूप में पुनर्जन्म नहीं लेता, बल्कि ब्रह्मा (राजदेव) के लोक में जन्म लेता है, जहाँ ध्यान के माध्यम से वह अपूर्णताओं को दूर करता है और निश्चित रूप से निर्वाण प्राप्त करता है।

चौथा मार्ग (चौथा मार्ग) - अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञानोदय) नामक अंतिम उपलब्धि, जिसमें व्यक्ति समाधि अवस्था में ध्यान के माध्यम से सभी पापों/कर्मों को पूर्णतः दूर कर लेता है, फिर निर्वाण से पूर्व की तीन अवस्थाओं का अनुभव करता है: (क) अनेक पूर्व जन्मों का स्मरण (ख) इनसे भौतिक जगत में आसक्तियों के कारण पुनर्जन्म के कारण-परिणाम चक्र का ज्ञान (ग) आसक्तियों और पापों का अब विलीन होना; फिर निर्वाण तक पहुँचने के लिए समाधि की नौ अवस्थाओं का अनुभव करना: 1. भीतर चेतना की प्रबुद्ध आनंदमय अवस्था। 5. भौतिक शरीर से परे सभी दिशाओं में चेतना का विस्तार, भौतिक ब्रह्मांड में अनंत अंतरिक्ष/सर्वव्यापकता का अनुभव। 7. शून्यता का अनुभव, अर्थात् भौतिक ब्रह्मांड का अनुभव न होना। 9. अंत में कालातीत, शाश्वत, अपरिवर्तनीय, अदृश्य प्रकाश के सागर के समान पारलौकिक सर्वव्यापी अवस्था में रूपांतरित होना - अंतिम ज्ञानोदय/मोक्ष/निर्वाण। टिपिटका में अरियापरियेसन सुत्त (मज्झिमा निकया 26) देखें।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **वानुपथ-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-2-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 2
वन्नुपथ-जातक

"वे अथक परिश्रम से गहराई तक खुदाई करते रहे।" - यह प्रवचन भगवान बुद्ध ने श्रावस्ती नगर में रहते हुए दिया था।

आप पूछेंगे, किसके बारे में?

एक भाई (भिक्षु) (*1) के बारे में जिसने मार्ग पर बने रहने का प्रयास छोड़ दिया।

परंपरा के अनुसार, जब बुद्ध श्रावस्ती नगर में रह रहे थे, तब श्रावस्ती नगर के एक परिवार का वंशज जेतवन मठ में आया। गुरु के प्रवचन सुनकर उसे यह अहसास हुआ कि कामवासनाएँ दुख का कारण बनती हैं, और उसने भिक्षु संघ के प्रथम चरण में प्रवेश लिया। पूर्ण भिक्षु संघ में प्रवेश की तैयारी में पाँच वर्ष व्यतीत करने के बाद (*2), जब उसने दो सारांश सीख लिए और अंतर्दृष्टि की विधियों में स्वयं को प्रशिक्षित कर लिया, तब उसे गुरु से ध्यान का एक विषय प्राप्त हुआ जो उसे बहुत अच्छा लगा। एक वन में जाकर उसने वर्षा ऋतु व्यतीत की; परन्तु तीन महीने के अपने अथक प्रयासों के बावजूद, वह अंतर्दृष्टि का एक अंश भी प्राप्त नहीं कर सका। तब उनके मन में यह विचार आया, "गुरु ने कहा था कि मनुष्य चार प्रकार के होते हैं, और मैं उनमें सबसे निम्न श्रेणी का हूँ; इस जन्म में, मुझे लगता है, न तो कोई मार्ग है और न ही कोई फल। वन में रहकर मैं क्या लाभ करूँगा? मैं गुरु के पास वापस जाऊँगा, और बुद्ध की महिमा को देखते हुए और उनके मधुर उपदेशों को सुनते हुए अपना जीवन व्यतीत करूँगा।" और वे फिर से जेतवन मठ लौट आए।

अब उनके मित्रों और करीबी लोगों ने कहा, "महोदय, आपने ही गुरु से ध्यान का विषय प्राप्त किया था और एक ऋषि का एकांतवास करने के लिए प्रस्थान किया था। फिर भी आप वापस आ गए हैं और संगति का आनंद ले रहे हैं। क्या ऐसा हो सकता है कि आपने भिक्षुओं के ज्ञान का मुकुट प्राप्त कर लिया है और आप कभी पुनर्जन्म नहीं लेंगे?" "महोदय, क्योंकि मुझे न तो मार्ग प्राप्त हुआ और न ही फल, मैंने स्वयं को निरर्थक समझा और इसलिए मार्ग पर बने रहना छोड़ दिया और वापस आ गया।" "महोदय, आपने दृढ़ गुरु के उपदेशों के प्रति स्वयं को समर्पित करते हुए दुर्भावना दिखाकर गलती की है। आइए, हम आपको बुद्ध के ध्यान में लाते हैं।" और वे उन्हें अपने साथ गुरु के पास ले गए। जब गुरु को उनके आने का पता चला, तो उन्होंने कहा, "भाइयों, आप इस भाई को उसकी इच्छा के विरुद्ध अपने साथ लाए हैं। उसने क्या किया है?"

"महोदय, इतने पूर्णतः सत्य उपदेश के प्रति स्वयं को समर्पित करने के बाद, इस भिक्षु ने एकांतवास के मार्ग पर दृढ़ रहने का प्रयास त्याग दिया है और वापस लौट आए हैं।"

तब गुरु ने उनसे कहा, “क्या यह सच है, जैसा कि लोग कहते हैं, कि हे भाई, तुमने मार्ग पर दृढ़ता छोड़ दी है?” “जी हाँ, भगवान बुद्ध।” “पर यह कैसे हो सकता है कि इतनी शिक्षा में स्वयं को समर्पित करने के बाद, हे भाई, तुम एक ऐसे व्यक्ति के रूप में प्रकट हो रहे हो जो कम इच्छाओं वाला, संतुष्ट, एकांतप्रिय और दृढ़ निश्चयी नहीं, बल्कि मार्ग पर दृढ़ता का अभाव दिखा रहे हो? क्या तुम ही अतीत में इतने साहसी नहीं थे? क्या यह तुम्हारे अकेले प्रयास से ही नहीं था, तुम्हारी मार्ग पर दृढ़ता के कारण, कि एक रेतीले रेगिस्तान में पाँच सौ गाड़ियों के कारवां के पुरुषों और बैलों को पानी मिला और वे प्रसन्न हुए? और अब तुम कैसे हार मान रहे हो?” ये शब्द उस भाई को हिम्मत देने के लिए काफी थे।

यह सुनकर, भिक्षुओं ने भगवान बुद्ध से पूछा, “हे प्रभु, इस भिक्षु की वर्तमान दुर्भावना तो हमें स्पष्ट है; परन्तु यह ज्ञान हमसे छिपा है कि कैसे इस अकेले व्यक्ति के निरंतर प्रयास से रेगिस्तान में मनुष्यों और बैलों को पानी मिला और वे प्रसन्न हुए। यह केवल आप ही जानते हैं, जो असीम ज्ञानी हैं; कृपया हमें इसके बारे में बताइए।”

"तो सुनो, भाइयों," भगवान बुद्ध ने कहा; और उनका ध्यान आकर्षित करने के बाद, उन्होंने उस बात को स्पष्ट किया जिसे पुनर्जन्म ने उनसे छिपा रखा था।

बहुत समय पहले, जब बनारस के काशी में ब्रह्मदत्त राजा थे, तब बोधिसत्व का जन्म एक व्यापारी परिवार में हुआ था। बड़े होकर वे 500 गाड़ियों के साथ व्यापार करने के लिए यात्रा करते थे। एक बार वे साठ मील (4.23 किमी) चौड़े एक रेतीले रेगिस्तान में पहुँचे, जिसकी रेत इतनी महीन थी कि मुट्ठी पकड़ने पर उंगलियों से फिसल जाती थी। सूर्योदय होते ही वह स्थान अंगारों के ढेर की तरह गर्म हो जाता था और उस पर चलना असंभव हो जाता था। इसलिए, वहाँ से गुजरने वाले लोग अपनी गाड़ियों में जलाऊ लकड़ी, पानी, तेल, चावल आदि लेकर केवल रात में ही यात्रा करते थे। भोर होते ही वे अपनी गाड़ियों को एक वृत्त में व्यवस्थित करके एक शिविर बनाते थे, जिसके ऊपर एक शामियाना लगा होता था, और सुबह का भोजन करने के बाद वे दिन भर छाया में बैठे रहते थे। सूर्यास्त के समय वे अपना रात्रि भोज करते थे। और जैसे ही ज़मीन ठंडी होती, वे अपनी गाड़ियाँ जोतकर आगे बढ़ जाते। इस रेगिस्तान में सफ़र करना समुद्र में यात्रा करने जैसा था; एक 'रेगिस्तान-मार्गदर्शक', जैसा कि उसे कहा जाता था, तारों के ज्ञान से उनका मार्गदर्शन करता था। और इसी तरह हमारा व्यापारी अब उस निर्जन क्षेत्र में यात्रा कर रहा था।

जब उसके सामने केवल सात मील ही बचे थे, तो उसने मन ही मन सोचा, "आज रात हम इस रेतीले रेगिस्तान से निकल जाएँगे।" इसलिए, रात का खाना खाने के बाद, उसने लकड़ी और पानी फेंकने का आदेश दिया और अपनी गाड़ियों को जोतकर सड़क पर चल पड़ा। सबसे आगे वाली गाड़ी में चबूतरा बैठा था, जो आकाश में तारों को देख रहा था और उसी से रास्ता तय कर रहा था। लेकिन वह इतनी देर से सोया नहीं था कि थककर सो गया, और इस वजह से उसने ध्यान नहीं दिया कि बैल मुड़कर वापस चलने लगे हैं। पूरी रात बैल चलते रहे, लेकिन भोर होते ही चबूतरा जागा और ऊपर तारों की स्थिति देखकर चिल्लाया, "गाड़ियों को घुमाओ! गाड़ियों को घुमाओ!" और जैसे ही गाड़ियों को घुमाकर कतार में लगाया जा रहा था, दिन निकल आया। "अरे, कल तो हमने यहीं डेरा डाला था!" कारवां के लोग चिल्लाए। "हमारी सारी लकड़ी और पानी खत्म हो गया है, और हम रास्ता भटक गए हैं।" ऐसा कहकर उन्होंने अपनी गाड़ियाँ खोल दीं और एक शिविर बनाकर ऊपर से शामियाना फैला दिया; फिर हर कोई अपनी-अपनी गाड़ी के नीचे निराशा में लेट गया। बोधिसत्व ने मन ही मन सोचा, "अगर मैं हार मान लूँगा, तो सब मर जाएँगे।" इसलिए वे सुबह के ठंडे मौसम में इधर-उधर घूमते रहे, जब तक कि उन्हें कुश घास का एक झुंड नहीं मिला। उन्होंने सोचा, "यह घास यहाँ नीचे पानी की मौजूदगी के कारण ही उगी होगी।" इसलिए उन्होंने एक फावड़ा लाने और उस जगह पर एक गड्ढा खोदने का आदेश दिया। उन्होंने साठ भुजाओं की गहराई तक खोदा, जब तक कि उस गहराई पर फावड़ा एक चट्टान से नहीं टकराया, और सब निराश हो गए। लेकिन बोधिसत्व को पूरा विश्वास था कि उस चट्टान के नीचे पानी जरूर होगा, इसलिए वे गड्ढे में उतरे और चट्टान पर खड़े हो गए। झुककर उन्होंने अपना कान उस पर लगाया और सुना। नीचे बहते पानी की आवाज़ सुनकर वह बाहर आया और एक नौकर से बोला, "मेरे बेटे, अगर तुमने हार मान ली तो हम सब मर जाएँगे। इसलिए हिम्मत और साहस रखो। इस लोहे के हथौड़े को लेकर गड्ढे में जाओ और चट्टान पर प्रहार करो।"

अपने गुरु के आदेश का पालन करते हुए, वह बालक, जहाँ अन्य सभी ने हिम्मत हार दी थी, दृढ़ निश्चय के साथ नीचे उतरा और चट्टान पर प्रहार किया। नदी को रोके रखने वाली चट्टान टूटकर गिर पड़ी। गड्ढे में पानी इतना भर गया कि वह ताड़ के पेड़ जितना ऊँचा हो गया; और सभी ने पानी पिया और स्नान किया। फिर उन्होंने अपने अतिरिक्त धुरे, जुए और अन्य फालतू सामान को काटकर चावल पकाया और खाया, और अपने बैलों को खिलाया। और जैसे ही सूरज डूबा, उन्होंने कुएँ के किनारे एक झंडा फहराया और अपने गंतव्य की ओर चल पड़े। वहाँ उन्होंने अपना सामान दुगुने और चौगुने मूल्य पर बेच दिया। प्राप्त धन से वे अपने घर लौट आए, जहाँ उन्होंने अपना

जीवन व्यतीत किया और अंत में अपने कर्मों के अनुसार फल भोगने के लिए परलोक चले गए। बोधिसत्व ने भी दान और अन्य अच्छे कार्यों में जीवन व्यतीत करने के बाद, अपने कर्मों के अनुसार फल भोगने के लिए परलोक चले गए।

जब परम बुद्ध ने यह प्रवचन दिया, तब स्वयं सर्वज्ञ ने यह श्लोक कहा:

उन्होंने बिना थके, उस रेतीले रास्ते को गहराई तक खोदा।

जब तक कि उन्हें उस रास्ते पर पानी नहीं मिल गया जिस पर वे चल रहे थे।

अतः ऋषि को दृढ़ मार्ग पर दृढ़ता से आगे बढ़ने दो,

जब तक उसके हृदय को शांति न मिल जाए, तब तक न हार मानो और न ही थको।

यह प्रवचन समाप्त होने पर, उन्होंने चार सत्यों का उपदेश दिया, जिसके अंत में कमजोर हृदय वाले भिक्षु को सभी फलों में सर्वोच्च फल, यानी अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञानोदय) प्राप्त हुआ।

इन दोनों कहानियों को सुनाने के बाद, गुरु ने उन दोनों को जोड़ने वाला संबंध स्थापित किया और जन्म की पहचान बताते हुए कहा: "आज का यह दुर्बल हृदय वाला भाई उन दिनों वह सेवक था जिसने दृढ़ मार्ग पर चलते हुए चट्टान को तोड़ा और सभी लोगों को पानी पिलाया; बुद्ध के अनुयायी कारवां के शेष लोग थे; और मैं स्वयं उनका नेता था।"

फुटनोट:

(1) भाई = भिक्षु (वास्तव में भाई शब्द 'भिक्षु' का ईसाई अनुवाद है जिसका अर्थ भिक्षु होता है); भाई = भिक्षु (बहुवचन)।

(2) बंधुत्व = भिक्षुओं का पवित्र संघ। पब्बज्जा और उपसंपदा शब्द, जो बौद्ध संघ के भिक्षु के दीक्षा के दो चरणों को दर्शाते हैं और किसी संकाय में स्नातक और गुरु की क्रमिक उपाधियों के समान हैं, दीक्षा प्राप्त भिक्षु और वरिष्ठ भिक्षु के क्रमिक दीक्षा समारोहों का संकेत देते हैं। लेकिन, बौद्ध दर्शन के बारे में बात करते समय ईसाई शब्दावली का प्रयोग भ्रामक है। पब्बज्जा के लिए सामान्य आयु पंद्रह वर्ष और उपसंपदा के लिए बीस वर्ष थी, जिनके बीच का अंतराल पाठ में उल्लिखित पाँच वर्ष है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सेरिवानिजा-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-3-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 3
सेरिवानिजा-जातक

"यदि इस आस्था में।" यह शिक्षा भी भगवान बुद्ध ने श्रावस्ती नगर में दी थी, एक ऐसे भिक्षु के बारे में जिसने मार्ग पर दृढ़ रहने का प्रयास छोड़ दिया था।

क्योंकि, जब भिक्षुओं द्वारा उस व्यक्ति को ठीक उसी तरह लाया गया जैसा कि पहले उल्लेखित मामले में हुआ था, तो गुरु ने कहा, "हे भाई, तुम, जो इस गौरवशाली शिक्षा के प्रति स्वयं को समर्पित करने के बाद, जो मार्ग और फल (निर्वाण) प्रदान करती है, मार्ग पर बने रहना छोड़ रहे हो, तुम्हें लंबे समय तक कष्ट भोगना पड़ेगा, जैसे सेरी के उस फेरीवाले को जिसने एक लाख सिक्कों के मूल्य का सोने का कटोरा खो दिया था।"

भिक्षुओं ने भगवान बुद्ध से इसका स्पष्टीकरण मांगा। भगवान बुद्ध ने पुनर्जन्म के कारण उनसे छिपी हुई बात को स्पष्ट किया।

पांच युग पूर्व, सेरी राज्य में, एक बोधिसत्व बर्तनों का व्यापार करते थे और उन्हें 'सेरीवन' कहा जाता था। उनके साथ एक और लालची व्यापारी था, जो 'सेरीवन' के नाम से ही जाना जाता था। वे तेलवाहा नदी पार करके अंधपुरा नगर में प्रवेश कर गए। उन्होंने दोनों ने मिलकर गलियों को आपस में बाँट लिया और अपने क्षेत्र की गलियों में अपना सामान बेचने लगे। दूसरे ने भी अपने क्षेत्र में ऐसा ही किया।

उस शहर में एक जर्जर परिवार रहता था। कभी वे धनी व्यापारी थे, लेकिन हमारी कहानी के समय तक वे अपने सभी बेटों, भाइयों और सारी दौलत खो चुके थे। केवल एक लड़की और उसकी दादी ही बची थीं, और वे मजदूरी करके अपना जीवन यापन करती थीं। इसके बावजूद, उनके घर में वह सोने का कटोरा था जिसमें पुराने समय में परिवार के मुखिया, महान व्यापारी, खाना खाते थे; लेकिन वह बर्तनों के बीच पड़ा हुआ था और लंबे समय तक इस्तेमाल न होने के कारण उस पर इतनी गंदगी जम गई थी कि दोनों महिलाओं को पता ही नहीं था कि वह सोने का है। उनके घर के दरवाजे पर एक लालची फेरीवाला आया और चिल्लाने लगा, "पानी के बर्तन बेचने हैं! पानी के बर्तन बेचने हैं!" और जब लड़की को पता चला कि वह वहाँ है, तो उसने अपनी दादी से कहा, "ओह, दादी, मेरे लिए एक छोटी सी चीज खरीद दीजिए।"

"हम बहुत गरीब हैं, प्रिय; इसके बदले हम क्या दे सकते हैं?" "यह कटोरा हमारे किसी काम का नहीं है। इसे हम आपको दे देते हैं।"

उस बूढ़ी औरत ने फेरीवाले को अंदर बुलवाया और उसे बिठाया, और उसे कटोरा देते हुए कहा, "यह लीजिए, महोदय, और कृपा करके अपनी बहन को इसके बदले में कुछ न कुछ दे दीजिए।"

फेरीवाले ने कटोरा हाथ में लिया, उसे पलटा और, सोने का संदेह होने पर, उसकी पीठ पर सुई से एक रेखा खींची, जिससे उसे पक्का पता चल गया कि वह असली सोना है। फिर, यह सोचकर कि वह औरत को कुछ भी दिए बिना कटोरा ले लेगा, वह चिल्लाया, "इसकी क्या कीमत है? यह तो आधे सिक्के के बराबर भी नहीं है!" और इतना कहकर उसने कटोरा ज़मीन पर फेंक दिया, अपनी जगह से उठा और घर से चला गया। अब, जैसा कि दोनों फेरीवालों के बीच तय हुआ था कि एक फेरीवाला उन गलियों में जाएगा जहाँ दूसरा जा चुका है, बोधिसत्व उसी गली में आए और घर के दरवाजे पर आकर चिल्लाए, "पानी के बर्तन बेचने हैं!" एक बार फिर उस महिला ने अपनी दादी से वही अनुरोध किया; और बूढ़ी औरत ने जवाब दिया, "मेरी प्यारी, पहले फेरीवाले ने हमारा कटोरा ज़मीन पर फेंक दिया और घर से बाहर निकाल दिया। अब हमारे पास बेचने के लिए क्या बचा है?"

"अरे, दादी माँ, वो फेरीवाला तो बहुत बदतमीज़ था; ये वाला तो देखने में अच्छा लगता है और मीठी बातें करता है। शायद ये इसे ले ही लेगा।" "तो फिर उसे अंदर बुलाओ।" तो वो घर में आया, और उन्होंने उसे बैठने के लिए जगह दी और कटोरा उसके हाथों में थमा दिया। कटोरा सोने का देखकर उसने कहा, "माँ, ये कटोरा एक लाख सिक्कों के बराबर है; मेरे पास इसकी कीमत नहीं है।"

"महोदय, यहाँ आने वाले पहले फेरीवाले ने कहा कि इसकी कीमत आधे सिक्के के बराबर भी नहीं है; इसलिए उसने इसे ज़मीन पर फेंक दिया और चला गया। यह आपकी दयालुता का ही परिणाम है जिसने कटोरे को सोने में बदल दिया है। इसे ले लीजिए; इसके बदले हमें कुछ दे दीजिए; और आप चले जाइए।" उस समय बोधिसत्व के पास 500 सिक्के और उससे भी अधिक मूल्य का भंडार था। उन्होंने यह सब उन्हें देते हुए कहा, "मुझे अपना तराज़ू, अपना थैला और आठ सिक्के रखने दीजिए।" उनकी सहमति से वे ये सब अपने साथ लेकर तेज़ी से नदी किनारे चले गए, जहाँ उन्होंने अपने आठ सिक्के नाविक को दिए और नाव में कूद गए। बाद में वह लालची फेरीवाला घर वापस आया और उनसे अपना कटोरा लाने को कहा, यह कहते हुए कि वह इसके बदले उन्हें कुछ न कुछ देगा। लेकिन बूढ़ी औरत उस पर भड़क उठी और बोली, "तुमने तो हमारे सोने के कटोरे को, जिसकी कीमत एक लाख सिक्के के बराबर भी नहीं समझी, एक छोटे सिक्के के बराबर भी नहीं समझा। लेकिन तभी एक ईमानदार फेरीवाला आया (शायद तुम्हारा मालिक), जिसने हमें उसके बदले एक हजार सिक्के दिए और कटोरा ले गया।"

इस पर वह चिल्लाया, "इसने मुझसे एक लाख सिक्कों के बराबर कीमत का सोने का कटोरा छीन लिया है; इसने मुझे बहुत बड़ा नुकसान पहुंचाया है।" और उस पर इतना गहरा दुःख छा गया कि वह अपना आपा खो बैठा और पागलों जैसा व्यवहार करने लगा। उसने अपना सारा धन-सामान घर के दरवाजे पर फेंक दिया; उसने अपने ऊपरी और भीतरी वस्त्र उतार फेंके; और अपने तराजू के बीम को गदा बनाकर नदी किनारे तक उसका पीछा किया। जब उसने देखा कि बोधिसत्व नदी पार कर रहे हैं, तो उसने नाविक को वापस लौटने के लिए कहा, लेकिन बोधिसत्व ने उसे ऐसा करने से मना कर दिया। जब वह बोधिसत्व को जाते हुए देखता रहा, तो उस पर गहरा दुःख छा गया। उसका हृदय प्रचंड हो गया; उसके होठों से खून बहने लगा; और उसका हृदय किसी तालाब की तलहटी में जमी मिट्टी की तरह फट गया, जिसे सूरज ने सुखा दिया हो। बोधिसत्व के प्रति अपने भीतर पनपी घृणा के कारण, वह वहीं पर मर गया। (यह पहली बार था जब देवदत्त ने बोधिसत्व के प्रति द्वेष भाव रखा।) बोधिसत्व ने अपना जीवन दान-पुण्य और अन्य अच्छे कार्यों में व्यतीत करने के बाद अपने कर्मों के फल के लिए परलोक देह त्याग दिया।

जब परम बुद्ध ने यह उपदेश समाप्त किया, तब स्वयं सर्वज्ञ ने यह श्लोक कहा:-

> यदि आप इस विश्वास में लापरवाही बरतते हैं, और असफल हो जाते हैं
>
> उस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए जिसकी ओर इसकी शिक्षाएं मार्गदर्शन करती हैं,
>
> फिर, 'सेरिवान' नामक फेरीवाले की तरह,
>
> आपको अपने गलत काम की वजह से खोई हुई कीमत पर लंबे समय तक पछतावा होगा।

इस प्रकार अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञानोदय) की ओर ले जाने वाले अपने प्रवचन को देने के बाद, गुरु ने चार सत्यों की व्याख्या की, जिसके अंत में कमजोर हृदय वाले भिक्षु को सभी फलों में सर्वोच्च फल, यानी अर्हतत्व प्राप्त हुआ।

और, दोनों कहानियाँ सुनाने के बाद, गुरु ने उन दोनों को आपस में जोड़ने वाला संबंध स्थापित किया, और अंत में यह कहकर जन्म की पहचान बताई, "उन दिनों देवदत्त मूर्ख फेरीवाला था; और मैं स्वयं बुद्धिमान और अच्छा फेरीवाला था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कुल्लका-सेठी-जातक**
***स्रोत** : रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-4-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 4.
CULLAKA-SETTHI-JATAKA

"बेहद साधारण शुरुआत के साथ।"

यह कथा गुरु ने राजगृह नगर के पास जीवक के आम के बाग (*1) में नन्हे व्यापारी नामक वृद्ध भिक्षु के बारे में सुनाई थी। यहाँ नन्हे व्यापारी के जन्म का वर्णन भी आवश्यक है। परंपरा के अनुसार, राजगृह नगर के एक धनी व्यापारी परिवार की पुत्री ने एक दास के साथ अंतरंग संबंध बना लिया। अपने दुराचार के सार्वजनिक होने के भय से उसने दास से कहा, "हम यहाँ नहीं रह सकते; क्योंकि यदि मेरे माता-पिता को हमारे इस पाप का पता चल गया, तो वे हमें टुकड़े-टुकड़े कर देंगे। चलो कहीं दूर जाकर बसते हैं।" अतः वे अपने सामान के साथ चुपके से उस दरवाजे से बाहर निकल गए जो मुश्किल से खुला था, और वे भाग गए। उन्हें इस बात की परवाह नहीं थी कि वे कहाँ जाएँगे, ताकि अपने परिवार की नज़रों से दूर कहीं शरण पा सकें। फिर वे एक स्थान पर साथ रहने लगे, जिसके परिणामस्वरूप वह गर्भवती हो गई। जब उसका प्रसव का समय लगभग आ गया, तो उसने अपने पति से कहा, "अगर मुझे परिवार और दोस्तों से दूर प्रसव पीड़ा होने लगी, तो हम दोनों के लिए परेशानी होगी। इसलिए चलो घर चलते हैं।" पहले तो वह आज ही जाने को तैयार हो गया, फिर उसने इसे अगले दिन के लिए टाल दिया; और इस तरह दिन बीतते चले गए, यहाँ तक कि उसने मन ही मन सोचा, "यह मूर्ख अपने बड़े अपराध के प्रति इतना सचेत है कि जाने की हिम्मत ही नहीं कर रहा। माता-पिता ही सबसे अच्छे दोस्त होते हैं; इसलिए चाहे वह जाए या रुके, मुझे तो जाना ही होगा।" तो, जब वह बाहर गया, तो उसने घर के सारे काम निपटाए और घर के लिए निकल पड़ी, और अपने पड़ोस में रहने वाली महिला को अपना पता बता दिया। घर लौटने पर, जब उसे अपनी पत्नी नहीं मिली, तो पड़ोसियों से पता चला कि वह घर के लिए निकल चुकी है, तो वह उसके पीछे भागा और सड़क पर उससे मिला; और तभी उसे प्रसव पीड़ा होने लगी।

"यह क्या है, मेरी प्यारी?" उसने कहा।

उन्होंने कहा, "मैंने एक बेटे को जन्म दिया है, जो मेरा पति है।"

इसलिए, चूंकि अब वही घटना घटित हो चुकी थी जिसके कारण यात्रा की गई थी, वे दोनों इस बात पर सहमत हुए कि अब आगे बढ़ना व्यर्थ है, और इसलिए वे वापस लौट गए। और चूंकि रास्ते में उनका बच्चा पैदा हुआ था, इसलिए उन्होंने उसका नाम 'मार्ग व्यापारी' रखा।

कुछ समय बाद ही वह फिर से गर्भवती हो गई, और सब कुछ पहले जैसा ही हो गया। और चूंकि यह दूसरा बच्चा भी संयोगवश पैदा हुआ था, इसलिए उन्होंने उसका नाम भी 'मार्ग व्यापारी' रख दिया, बड़े को 'वृद्ध व्यापारी' और छोटे को 'छोटा व्यापारी' कहकर अलग किया। फिर, वे अपने दोनों बच्चों के साथ वापस अपने घर लौट गए।

अब, जब वे वहाँ रह रहे थे, तो उनके राहगीर बच्चे ने दूसरे लड़कों को अपने चाचाओं, दादा-दादी के बारे में बातें करते सुना; इसलिए उसने अपनी माँ से पूछा कि क्या उसके भी दूसरे लड़कों की तरह रिश्तेदार नहीं हैं? "हाँ, मेरे प्यारे," उसकी माँ ने कहा; "लेकिन वे यहाँ नहीं रहते। तुम्हारे दादा राजगृह नगर में एक धनी व्यापारी हैं, और वहाँ तुम्हारे बहुत सारे रिश्तेदार हैं।" "माँ, क्यों न हम वहाँ चलें?" उसने बच्चे को वहाँ न जाने का कारण बताया; लेकिन, जब बच्चे उन रिश्तेदारों के बारे में बातें करते रहे, तो उसने अपने पति से कहा, "बच्चे हमेशा मुझे परेशान करते हैं। क्या मेरे माता-पिता हमें देखते ही खा जाएँगे? चलो, बच्चों को उनके दादा के परिवार से मिलवाते हैं।" "ठीक है, मुझे उन्हें वहाँ ले जाने में कोई आपत्ति नहीं है; लेकिन मैं सचमुच आपके माता-पिता का सामना नहीं कर सकता।" "ठीक है; बस किसी न किसी तरह से बच्चे अपने दादा के परिवार को देख लें," उसने कहा।

तो वे दोनों अपने बच्चों को लेकर उचित समय पर राजगृह नगर पहुँचे और नगर द्वार के पास एक सार्वजनिक विश्रामगृह में ठहरे। फिर, स्त्री ने अपने दोनों बच्चों को साथ लेकर अपने माता-पिता को उनके आने की सूचना दी। माता-पिता ने यह संदेश सुनकर उत्तर दिया, "यह सच है कि संतानहीन होना विचित्र है, जब तक कि कोई अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) की खोज में संसार का त्याग न कर दे। फिर भी, इन दोनों का हमारे प्रति इतना बड़ा पाप है कि वे हमारे सामने खड़े न हो सकें। यह उनके लिए कुछ धन है: वे इसे लेकर जहाँ चाहें वहाँ रहने चले जाएँ। लेकिन बच्चों को वे यहाँ भेज दें।" तब व्यापारी की पुत्री ने धन लेकर उसे भेजा और बच्चों को दूतों के द्वारा भेज दिया। इस प्रकार बच्चे अपने दादा के घर में पले-बढ़े। छोटा व्यापारी अभी छोटा था, जबकि बड़ा व्यापारी अपने दादा के साथ बुद्ध के प्रवचन सुनने जाया करता था। और गुरु के मुख से सत्य को निरंतर सुनने से, लड़के के हृदय में संसार का त्याग करके भिक्षु का जीवन व्यतीत करने की तीव्र इच्छा जागृत हुई।

"आपकी अनुमति से," उसने अपने दादाजी से कहा, "मैं भिक्षु संघ में शामिल होना चाहता/चाहती हूँ।" "क्या सुन रहा/रही?" बूढ़े ने हैरानी से कहा। "अरे, तुम्हें भिक्षु संघ में शामिल होते देखना मुझे पूरी दुनिया के शामिल होने से भी अधिक प्रसन्नता देगा। यदि तुम सक्षम हो, तो भिक्षु बन जाओ।" और वह उसे गुरु के पास ले गए।

"अच्छा, व्यापारी," गुरु ने कहा, "क्या तुम अपने बेटे को साथ लाए हो?" "जी जी; यह मेरा पोता है, जो आपके भिक्षु संघ में शामिल होना चाहता है।" तब गुरु ने एक भिक्षु को बुलवाया और उसे लड़के को संघ में शामिल करने के लिए कहा; भिक्षु ने नश्वर शरीर की शिक्षा (*2) दोहराई और लड़के को नौसिखिया के रूप में प्रवेश दिया। जब लड़के ने बुद्ध के कई वचन कंठस्थ कर लिए और वह पर्याप्त उम्र का हो गया, तो उसे पूर्ण भिक्षु के रूप में प्रवेश दिया गया। अब उसने अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) प्राप्त करने के लिए स्वयं को गहन चिंतन में समर्पित कर दिया; और जैसे-जैसे वह अंतर्दृष्टि और मार्ग के आनंद में दिन बिताता गया, उसने सोचा कि क्या वह नन्हे व्यापारी को भी ऐसा ही सुख दे सकता है। इसलिए वह अपने दादा व्यापारी के पास गया और बोला, "वृद्ध व्यापारी, आपकी सहमति से, मैं नन्हे व्यापारी को संघ में प्रवेश देना चाहता हूँ।" उत्तर मिला, "कृपया ऐसा करें, आदरणीय महोदय।"

तब बड़े भिक्षु (बड़े व्यापारी) ने छोटे व्यापारी को अपने यहाँ प्रवेश दिया और उसे दस आज्ञाओं की शिक्षा दी। लेकिन छोटा व्यापारी मंदबुद्धि साबित हुआ: चार महीने के अध्ययन के बाद भी वह इस एक श्लोक को भी याद नहीं कर पाया:-

> अद्भुत! भोर में खिले सुगंधित कमल की तरह।
>
> दिन के समय, पूरी तरह से खिले हुए, सुगंध की अछूती संपदा के साथ,
>
> बुद्ध की महिमा को चमकते हुए देखो,
>
> जैसे ऊंचे आकाश में सूर्य की किरणें चमकती हैं!

हमें बताया जाता है कि कश्यप के बुद्धत्व काल में, इस लघु व्यापारी ने स्वयं भिक्षु बनकर ज्ञान प्राप्त कर लिया था और एक मंदबुद्धि भिक्षु का उपहास किया जो एक श्लोक को कंठस्थ कर रहा था। उसके उपहास ने उसे इतना भ्रमित कर दिया कि वह भिक्षु न तो श्लोक को याद कर सका और न ही सुना सका। परिणामस्वरूप, भिक्षु संघ में शामिल होने पर वह स्वयं भी मंदबुद्धि साबित हुआ। हर नई पंक्ति उसे पिछली पंक्ति से विमुख कर देती थी; और इस एक श्लोक से जूझते हुए चार महीने बीत गए। उसके बड़े भाई ने उससे कहा, "लघु व्यापारी, तुम इस शिक्षा को ग्रहण करने में सक्षम नहीं हो। पूरे चार महीनों में तुम एक श्लोक भी नहीं याद कर पाए हो। फिर तुम अपने

ज्ञान को सर्वोच्च सफलता तक कैसे पहुंचा सकते हो? मठ छोड़ दो।" परन्तु, अपने भाई द्वारा निष्कासित किए जाने के बावजूद, लघु व्यापारी बुद्ध के मार्ग से इतना जुड़ा हुआ था कि वह फिर से गृहस्थ नहीं बनना चाहता था।

उस समय, वृद्ध व्यापारी वहाँ मठ के प्रबंधक (रक्षक) के रूप में कार्यरत थे। जीवक कुमारभच्च, जो उनके शिष्य थे, गुरु के लिए इत्र और फूलों का एक बड़ा उपहार लेकर आम के बाग में गए। वहाँ उन्होंने अपना भेंट प्रस्तुत किया और एक प्रवचन सुना; फिर, अपनी सीट से उठकर बुद्ध को प्रणाम करते हुए, वे वृद्ध व्यापारी के पास गए और पूछा, "आदरणीय महोदय, गुरु के साथ कितने भिक्षु हैं?" "महोदय, केवल 500।" "क्या आप कल बुद्ध सहित उन 500 भिक्षुओं को मेरे घर भोजन के लिए लाएँगे?" "शिष्य, उनमें से एक, जिसका नाम लघु व्यापारी है, मंदबुद्धि है और धर्म में कोई प्रगति नहीं करता," वृद्ध भिक्षु (वृद्ध व्यापारी) ने कहा; "मैं सभी का निमंत्रण स्वीकार करता हूँ, सिवाय उसके।"

यह सुनकर छोटे व्यापारी ने मन ही मन सोचा, "इन सभी भिक्षुओं का निमंत्रण स्वीकार करके, बड़े भाई ने जानबूझकर मुझे बाहर रखा है। इससे साबित होता है कि मेरे भाई का मेरे प्रति स्नेह समाप्त हो गया है। मुझे इससे क्या लेना-देना? मैं गृहस्थ बन जाऊंगा और दान-पुण्य और अन्य अच्छे कार्यों में अपना जीवन व्यतीत करूंगा।" और अगले दिन सुबह जल्दी ही वह फिर से गृहस्थ बनने का संकल्प लेकर चल पड़ा।

सुबह होते ही, जब भगवान बुद्ध ध्यानमग्न अवस्था में संसार का अवलोकन कर रहे थे (जैसा कि वे हर सुबह करते थे), गुरुजी को इसका आभास हुआ; और लघु व्यापारी से भी पहले आगे बढ़कर, वे लघु व्यापारी के रास्ते पर बने बरामदे के पास चक्कर लगाने लगे। जैसे ही लघु व्यापारी घर से बाहर आया, उसने गुरुजी को देखा और प्रणाम करके उनके पास गया। गुरुजी ने कहा, "इस समय तुम कहाँ जा रहे हो, लघु व्यापारी?"

"मेरे भाई ने मुझे मठ (सन्यास) से निकाल दिया है, महोदय; और मैं अब यहाँ से जा रहा हूँ।"

"छोटे व्यापारी, तुमने मुझसे ही प्रतिज्ञा ली थी, तो अपने भाई द्वारा निष्कासित किए जाने पर मेरे पास क्यों नहीं आए? तुम्हें एक गृहस्थ जीवन से क्या लेना-देना? मेरे साथ चलो।" ऐसा कहकर उन्होंने छोटे व्यापारी को अपने सुगंधित कक्ष के द्वार पर बैठाया। फिर उन्होंने उसे एक बिल्कुल साफ कपड़ा दिया, जिसे उन्होंने अलौकिक रूप से बनाया था, और कहा, "पूर्व की ओर मुख करो, और इस कपड़े को छूते हुए इन शब्दों का जाप करो—'अशुद्धता का निवारण; अशुद्धता का निवारण।'" फिर नियत समय पर गुरु, अपने अनुयायियों के साथ, जीवक के घर गए और उनके लिए निर्धारित आसन पर बैठ गए।

अब लघु व्यापारी सूर्य पर टकटकी लगाए, कपड़े को छूते हुए, "अशुद्धता का निवारण; अशुद्धता का निवारण" शब्दों को दोहराता रहा। जैसे-जैसे वह कपड़े को छूता रहा, वह गंदा होता गया। तब उसने सोचा, "अभी तो यह कपड़ा बिल्कुल साफ था; लेकिन मेरे स्वभाव ने इसकी मूल अवस्था को नष्ट कर दिया और इसे गंदा कर दिया। वास्तव में सभी सांसारिक वस्तुएँ क्षणभंगुर हैं!" और मृत्यु और क्षय को जानने के बाद भी, उसने अर्हत का ज्ञान (बुद्ध के समान प्रबुद्धता) प्राप्त कर लिया। लघु व्यापारी के मन को ज्ञान प्राप्त होने का ज्ञान प्राप्त होने पर, गुरु ने एक आकृति भेजी और स्वयं के रूप में उसके सामने प्रकट हुए, मानो उसके सामने बैठे हों और कह रहे हों, "लघु व्यापारी, यह साधारण सा कपड़ा अशुद्धता से मैला हो गया है; तुम्हारे भीतर कामवासना और अन्य बुरी चीजों की अशुद्धियाँ हैं। इन्हें दूर करो।" और आकृति ने ये श्लोक कहे:-

==============

अपवित्रता कामवासना (राग/इच्छा) में विद्यमान होती है, गंदगी में नहीं;

और कामवासना को हम वास्तविक अपवित्रता कहते हैं।

हाँ, भिक्षुओं, जो कोई भी इसे अपने से दूर भगाता है,

वह वास्तव में शुद्धिकरण की शिक्षाओं को अपने जीवन में उतारता है।

==============

अपवित्रता गंदगी में नहीं, बल्कि घृणा (दोष/द्वेष) में निहित है;

और घृणा को हम वास्तविक अपवित्रता कहते हैं।

हाँ, भिक्षुओं, जो कोई भी इसे अपने से दूर भगाता है,

वह वास्तव में शुद्धिकरण की शिक्षाओं को अपने जीवन में उतारता है।

===============

अशुद्धता भ्रम (मोह, ज्ञान की कमी) में विद्यमान होती है, गंदगी में नहीं;

और इस भ्रम को हम वास्तविक अशुद्धता कहते हैं।

हाँ, भिक्षुओं, जो कोई भी इसे अपने से दूर भगाता है,

वह वास्तव में शुद्धिकरण की शिक्षाओं को अपने जीवन में उतारता है।

===============

(नोट: यहाँ भ्रम का अर्थ है (1) बुद्ध द्वारा सिखाई गई ध्यान विधि का अभ्यास न करना, क्योंकि ध्यान में व्यक्ति रोजमर्रा की जिंदगी से संबंधित सत्यों का अनुभव कर सकता है, जैसे कि इंद्रिय बोध, भावनाएँ, मनोभाव, इच्छाएँ, प्रतिक्रियाएँ, विचार आदि। (2) भ्रम का अर्थ है समाधि अवस्था में आंतरिक स्व के सच्चे सुख का अनुभव न करना और सांसारिक सुखों को ही सुख का एकमात्र साधन मानकर भ्रमित रहना। (3) और अंततः भ्रम का अर्थ है परम सत्य, निर्वाण की दिव्य अवस्था का अनुभव न करना।)

इन श्लोकों के अंत में लघु व्यापारी ने अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) प्राप्त किया, जिसमें ज्ञान की चारों शाखाएँ (*3) समाहित थीं, जिससे उन्हें प्रत्यक्ष ही समस्त पवित्र ग्रंथों का ज्ञान प्राप्त हो गया। परंपरा के अनुसार, अतीत में जब वे राजा थे और अपने नगर में जुलूस निकाल रहे थे, तब उन्होंने अपने माथे से पसीना पोंछने के लिए अपने वस्त्र को एक निर्मल वस्त्र से ढक लिया; और वह वस्त्र मैला हो गया। उन्होंने सोचा, "यह मेरा शरीर ही है जिसने वस्त्र की मूल शुद्धता और सफेदी को नष्ट कर दिया है और उसे मैला कर दिया है। वास्तव में समस्त सांसारिक वस्तुएँ क्षणभंगुर हैं।" इस प्रकार उन्होंने क्षणभंगुरता का विचार ग्रहण किया; और इसीलिए अशुद्धता के दूर होने से ही उन्हें ज्ञान/निर्वाण (मोक्ष) प्राप्त हुआ।

इसी बीच, जीवक कोमरभच्चा ने दान जल (*4) (औपचारिक; भोजन की शुरुआत के प्रतीक के रूप में) अर्पित किया; लेकिन गुरु ने पात्र पर हाथ रखते हुए कहा, "क्या मठ में कोई भाई (भिक्षु) नहीं हैं, जीवक?"

वृद्ध व्यापारी ने कहा, "वहाँ कोई भिक्षु नहीं हैं, आदरणीय महोदय।" "जीवका, वहाँ हैं," गुरु ने कहा। "अरे! तुम जाओ और पता लगाओ कि मठ में कोई भिक्षु बचा है या नहीं।"

उसी क्षण, छोटे व्यापारी को (दिव्य श्रवण शक्ति के माध्यम से) यह आशय हुआ कि उसका भाई कह रहा है कि मठ में कोई भिक्षु नहीं हैं। उसने यह सिद्ध करने का निश्चय किया कि वहाँ भिक्षु हैं, और इसलिए उसने (ज्ञान प्राप्ति के बाद प्राप्त अर्हतत्व की अलौकिक शक्तियों का उपयोग करते हुए) पूरे आम के बाग को केवल शिष्यों से भर दिया। कुछ वस्त्र बना रहे थे, कुछ रंग रहे थे, जबकि अन्य पवित्र ग्रंथों का पाठ कर रहे थे। उसने अपने द्वारा बनाए गए हज़ार भिक्षुओं में से प्रत्येक को एक दूसरे से अद्वितीय बनाया। मठ में इतने सारे भिक्षुओं को देखकर वह लौट आया और कहा कि पूरा आम का बाग भिक्षुओं से भरा हुआ है।

लेकिन मठ में रहने वाले उस छोटे व्यापारी (जो अब वरिष्ठ भिक्षु बन चुका है) के बारे में—

छोटे व्यापारी, हजार गुना स्वयं-गुणित,

वे उस रमणीय उपवन में उपस्थित हैं।

“अब वापस जाओ,” गुरु ने उस आदमी से कहा, “और कहो, ‘गुरु ने उस व्यक्ति को बुलवाया है जिसका नाम छोटा व्यापारी है।’”

लेकिन जब वह आदमी जाकर अपना संदेश देने लगा, तो हज़ारों लोगों ने एक साथ जवाब दिया, "मैं छोटा व्यापारी हूँ! मैं छोटा व्यापारी हूँ!"

रिपोर्ट लेकर वह व्यक्ति वापस आया और बोला, "वे सभी कहते हैं कि वे 'लिटिल मर्चेंट' हैं, आदरणीय महोदय।"

“अच्छा, अब वापस जाओ,” गुरु ने कहा, “और उनमें से जो भी खुद को छोटा व्यापारी बताए, उसका हाथ पकड़ लो, बाकी सब गायब हो जाएँगे।” उस आदमी ने वैसा ही किया जैसा उसे कहा गया था, और देखते ही देखते हज़ार भिक्षु आँखों से ओझल हो गए। छोटा व्यापारी (जो अब एक वरिष्ठ भिक्षु था) उस आदमी के साथ वापस आया।

भोजन समाप्त होने पर गुरु ने कहा, "जीवक, छोटे व्यापारी का कटोरा ले लो; वह धन्यवाद देगा।" जीवक ने वैसा ही किया। फिर एक युवा शेर की तरह दहाड़ते हुए, बड़े भिक्षु (छोटे व्यापारी) ने अपने धन्यवाद भाषण में सभी पवित्र ग्रंथों को पढ़ा। अंत में, गुरु अपने आसन से उठे और भिक्षुओं के साथ मठ लौट आए, और वहाँ भिक्षुओं द्वारा कार्यों के आवंटन के बाद, वे अपने आसन से उठे और अपने सुगंधित कक्ष के द्वार पर खड़े होकर भिक्षुओं को बुद्ध-प्रवचन दिया। ध्यान के लिए एक विषय सुझाकर, भिक्षुओं को विदा करते हुए, वे अपने सुगंधित कक्ष में चले गए और विश्राम करने के लिए शेर की तरह अपनी दाहिनी ओर लेट गए।

शाम के समय, नारंगी वस्त्रधारी भिक्षु (भाई) सत्य के हॉल में चारों ओर से एकत्रित हुए और गुरु की स्तुति गाते हुए ऐसे गीत गाए मानो वे बैठते समय उनके चारों ओर नारंगी कपड़े का पर्दा फैला रहे हों।

“भाइयों,” उन्होंने कहा, “वृद्ध व्यापारी ने लघु व्यापारी के उत्साह को नहीं पहचाना और उसे मठ से यह कहकर निकाल दिया कि वह एक मंदबुद्धि है जो पूरे चार महीनों में एक श्लोक भी नहीं सीख सका। परन्तु सर्वज्ञ बुद्ध ने सत्य में अपनी श्रेष्ठता के कारण उसे अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) प्रदान किया, जिसमें समस्त अलौकिक ज्ञान भी शामिल था, यहाँ तक कि भोजन करते समय भी। और उस ज्ञान से उसने समस्त पवित्र ग्रंथों को आत्मसात कर लिया। ओह! बुद्ध की शक्ति कितनी महान है!”

अब भगवान बुद्ध सत्य सभा में चल रही चर्चा को भलीभांति (दिव्य दृष्टि से) जानते हुए वहाँ जाना उचित समझते थे। अतः वे अपने बुद्ध-शय्या से उठे, अपने दो नारंगी अंतर्वस्त्र धारण किए हुए, बिजली की गति से उठे, अपने नारंगी रंग के वस्त्र, बुद्ध के विशाल वस्त्र को धारण किया और बुद्ध की असीम कृपा के साथ, हाथी के राजसी आरोहण के साथ सत्य सभा में आए। भव्य सभा के मध्य में स्थापित भव्य बुद्ध-सिंहासन पर आसीन होकर, वे सिंहासन के मध्य में विराजमान हुए, बुद्ध के छह रंगों वाले प्रकाश से ऐसे विराजमान हुए जैसे नवभू सूर्य, जैसे युगान्ध पर्वत की चोटियों से सागर की गहराइयों को प्रकाशित करता है। सर्वज्ञ बुद्ध के सभा में आते ही, सभी भिक्षुओं ने अपनी चर्चा रोक दी और मौन हो गए। गुरुजी ने सौम्य प्रेम और करुणा से भरे भाव से सभा पर नज़र डालते हुए मन ही मन सोचा, "यह सभा परिपूर्ण है! कोई भी व्यक्ति गलत तरीके से हाथ-पैर नहीं हिला रहा; न कोई आवाज़ सुनाई दे रही है, न खांसी, न छींक! बुद्ध की महिमा और भव्यता के प्रति श्रद्धा और सम्मान में, कोई भी व्यक्ति मेरे बोलने से पहले बोलने का साहस नहीं करेगा, चाहे मैं जीवन भर मौन ही क्यों न बैठा रहूँ। परन्तु अब मेरी बारी है आरंभ करने की; और मैं वार्तालाप शुरू करूँगा।" फिर अपने मधुर दिव्य स्वर में उन्होंने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा, "कृपया इस सभा का विषय क्या है? और जो चर्चा अधूरी रह गई थी, उसका क्या अर्थ था?"

उन्होंने कहा, "महोदय, यह कोई व्यर्थ विषय नहीं था, बल्कि बैठक में हम आपकी ही प्रशंसा कर रहे थे।"

और जब उन्होंने उसे अपनी कही हुई सारी बातें शब्दशः बता दीं, तो गुरु ने कहा, "भाइयों (भिक्षुओं), हाँ, मेरे द्वारा ही लघु व्यापारी ने अभी-अभी धर्म में महान ऊंचाइयों को छुआ है; अतीत में भी मेरे द्वारा ही उसने धन-दौलत में महान कार्य किए थे।"

भिक्षुओं ने गुरु से इसका स्पष्टीकरण मांगा; और भगवान बुद्ध ने इन शब्दों में उस बात को स्पष्ट किया जो पिछले जन्मों में उनसे छिपी हुई थी:

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त काशी के बनारस में राज कर रहे थे, तब बोधिसत्व का जन्म कोषाध्यक्ष के परिवार में हुआ और बड़े होकर उन्हें कोषाध्यक्ष बना दिया गया, जिन्हें लघु कोषाध्यक्ष कहा जाता था। वे एक बुद्धिमान और चतुर व्यक्ति थे, जो शकुन और संकेतों को परखने में माहिर थे। एक दिन राजा से मिलने जाते समय, उन्हें रास्ते में एक मरा हुआ चूहा पड़ा मिला; और उस समय तारों की स्थिति को देखकर उन्होंने कहा, "कोई भी समझदार और नेक युवक इस चूहे को उठा ले, तो वह अपना व्यवसाय शुरू कर सकता है और पत्नी का भरण-पोषण कर सकता है।"

अच्छे परिवार से ताल्लुक रखने वाले लेकिन आर्थिक तंगी से जूझ रहे एक युवक ने उसकी बातें सुन लीं और मन ही मन सोचा, "यह आदमी जो कुछ भी कहता है, उसके पीछे कोई न कोई वजह जरूर होती है।" और उसने चूहे को उठा लिया और उसे एक सराय में मामूली सिक्कों में बेचकर अपनी बिल्ली को खिला दिया।

उस छोटे सिक्के से उसने गुड़ खरीदा और एक घड़े में पीने का पानी भर लिया। जंगल से लौट रहे फूल तोड़ने वालों को देखकर उसने उनमें से प्रत्येक को थोड़ा-थोड़ा गुड़ दिया और उन्हें पानी पिलाया। उनमें से प्रत्येक ने उसे मुट्ठी भर फूल दिए, जिनसे प्राप्त धन से वह

अगले दिन फिर से गुड़ और पानी का घड़ा लेकर फूल के खेत में लौट आया। उस दिन फूल तोड़ने वालों ने जाने से पहले उसे आधे फूलों वाले पौधे दे दिए; और इस प्रकार थोड़े ही समय में उसने आठ पैसे कमा लिए।

बाद में, एक बरसात और तेज़ हवा वाले दिन, राजा के बगीचे में हवा से बहुत सारी सड़ी हुई टहनियाँ और पत्तियाँ गिर आईं, और माली को उन्हें हटाने का कोई तरीका समझ नहीं आया। तभी एक युवक आया और उसने कहा कि अगर लकड़ी और पत्तियाँ उसे दे दी जाएँ तो वह उन्हें हटा देगा। माली ने तुरंत प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। फिर कोषाध्यक्ष लिटिल का यह होनहार शिष्य बच्चों के खेल के मैदान में गया और थोड़ी ही देर में गुड़ का लालच देकर उन्हें बगीचे के प्रवेश द्वार पर हर एक टहनी और पत्ती इकट्ठा करने के लिए मना लिया। उसी समय राजा का कुम्हार महल के लिए बर्तन पकाने के लिए ईंधन की तलाश में था, और जब उसे यह ढेर मिला, तो उसने इसे खरीद लिया। अपनी लकड़ी बेचकर कोषाध्यक्ष लिटिल के इस शिष्य को सोलह पैसे मिले, साथ ही पाँच कटोरे और अन्य बर्तन भी। अब उसके पास कुल चौबीस पैसे हो गए थे, तो उसे एक योजना सूझी। वह पानी से भरा एक घड़ा लेकर शहर के द्वार के पास गया और 500 घास काटने वालों को पीने का पानी दिया। उन्होंने कहा, "आपने हम पर बहुत बड़ा उपकार किया है, मित्र। हम आपके लिए क्या कर सकते हैं?" उन्होंने कहा, "जब मुझे आपकी सहायता की आवश्यकता होगी, मैं आपको बता दूंगा।" और जैसे-जैसे वे आगे बढ़े, उनकी एक भूमि व्यापारी और एक समुद्री व्यापारी से घनिष्ठ मित्रता हो गई। भूमि व्यापारी ने उनसे कहा, "कल शहर में एक घोड़ा व्यापारी 500 घोड़े बेचने आएगा।" यह खबर सुनकर उसने घास काटने वालों से कहा, "मैं चाहता हूं कि आप में से प्रत्येक आज मुझे घास का एक गट्ठा दे दें और जब तक मेरा गट्ठा बिक न जाए, तब तक आप अपना गट्ठा न बेचें।" उन्होंने कहा, "ज़रूर," और घास के 500 गट्ठे उसके घर पहुंचा दिए। अपने घोड़ों के लिए कहीं और से घास न मिलने के कारण, व्यापारी ने हमारे मित्र की घास एक हजार पीस में खरीद ली।

कुछ ही दिनों बाद उनके समुद्री व्यापारी मित्र ने उन्हें बंदरगाह पर एक बड़े जहाज के आगमन की खबर दी; और उनके मन में एक और योजना आई। उन्होंने आठ पेंस में एक सुसज्जित गाड़ी किराए पर ली, जो प्रति घंटा किराए पर चलती थी, और बड़े ठाठ-बाठ से बंदरगाह की ओर चल पड़े। उन्होंने जहाज को उधार पर खरीद लिया और अपनी अंगूठी जमानत के तौर पर जमा कर दी। इसके बाद उन्होंने पास ही में एक मंडप बनवाया और अंदर बैठते हुए अपने लोगों से कहा, "जब व्यापारी अंदर आएं, तो उन्हें तीन क्रमानुसार राहगीरों के माध्यम से मेरे पास लाया जाए।" बंदरगाह पर जहाज के आने की खबर सुनकर लगभग सौ व्यापारी माल खरीदने के लिए आए; लेकिन उन्हें बताया गया कि वे माल नहीं खरीद सकते क्योंकि एक बड़े व्यापारी ने पहले ही अग्रिम भुगतान कर दिया था। इसलिए वे सभी उस युवक के पास चले गए; और नौकरों ने पूर्व निर्धारित योजना के अनुसार तीन क्रमानुसार राहगीरों के माध्यम से उनका आगमन करवाया। सौ में से प्रत्येक व्यक्ति ने जहाज में हिस्सा खरीदने के लिए उसे एक हजार सिक्के दिए और फिर जहाज का पूरा हिस्सा खरीदने के लिए प्रत्येक ने एक हजार सिक्के और दिए। इस प्रकार कोषाध्यक्ष लिटिल का यह शिष्य 200,000 सिक्कों के साथ बनारस लौट आया।

कृतज्ञता व्यक्त करने की इच्छा से प्रेरित होकर, वह एक लाख सिक्के लेकर कोषाध्यक्ष लिटिल से मिलने गया। कोषाध्यक्ष ने पूछा, "तुम्हें यह सारी संपत्ति कहाँ से मिली?" युवक ने उत्तर दिया, "केवल चार महीनों में, आपके सुझावों का पालन करके।" उसने मरे हुए चूहे से शुरू करके पूरी कहानी सुनाई। यह सब सुनकर उच्च कोषाध्यक्ष लिटिल ने सोचा, "मुझे यह सुनिश्चित करना होगा कि इस क्षेत्र का यह युवक किसी और के हाथों में न पड़े।" इसलिए उन्होंने अपनी वयस्क पुत्री से उसका विवाह करा दिया और परिवार की सारी संपत्ति उस युवक के नाम कर दी। कोषाध्यक्ष की मृत्यु के बाद, वह उस शहर का कोषाध्यक्ष बन गया। और बोधिसत्व को अपने कर्मों के फल का आनंद प्राप्त हुआ।

उनका प्रवचन समाप्त हुआ, तब सर्वज्ञानी, परम बुद्ध ने स्वयं इस श्लोक को दोहराया:

> बेहद साधारण शुरुआत और कम पूंजी के साथ
>
> एक चतुर और सक्षम व्यक्ति धनवान बनेगा।
>
> यहां तक कि उसकी सांस भी एक छोटी सी लौ को जीवित रख सकती है।

भगवान बुद्ध ने यह भी कहा, "हे भिक्षुओं, मेरे कारण ही लघु व्यापारी ने धर्म में इतनी ऊँचाई प्राप्त की है, जैसे अतीत में उसने धन-संपत्ति में महान कार्य किए थे।" इस प्रकार अपना उपदेश समाप्त करते हुए, गुरु ने अपने द्वारा सुनाई गई दोनों कहानियों के बीच संबंध स्थापित किया और अपने अंतिम शब्दों में जन्म का उल्लेख किया, "उन दिनों लघु व्यापारी कोषाध्यक्ष लघु का शिष्य था, और मैं स्वयं उच्च कोषाध्यक्ष लघु था।"

फुटनोट:

(1)जीवक, बुद्ध के एक प्रमुख गृहस्थ अनुयायी, मगध के राजा सेनिया बिम्बिसार के चिकित्सक थे।

(2) बौद्ध धर्म वस्तुओं की अनित्यता सिखाता है, और इस शिक्षा को साकार करने के लिए विचार की प्रमुख धारा शरीर और उसकी 32 अशुद्धियों पर ध्यान है।

(3) ये चार शाखाएँ थीं: (i) पवित्र ग्रंथों के अर्थ को समझना, (ii) उनके नैतिक सत्य को समझना, (iii) किसी व्याख्या को व्याकरणिक रूप से, तार्किक रूप से, आदि के आधार पर उचित ठहराने की क्षमता, और (iv) सार्वजनिक व्याख्या की शक्ति। जातक 1 के नोट (12) को भी देखें।

(4) जब कोई दान दिया जाता था, तो दाता दानग्राही के हाथ पर पानी डालता था। यहाँ जीवक द्वारा दिया गया दान भिक्षुओं को दिया गया भोजन था।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **तंदुलनालि-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-5-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 5.
तंडुलनाली-जातक

"यह जरूर पूछें कि एक पेक चावल की कीमत कितनी है?"

यह बात गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए भिक्षु उदयि के बारे में बताई थी, जिसे मंदबुद्धि कहा जाता था।

उस समय पूज्य मल्यन दब्बा संघ (भिक्षुओं के संघ) के प्रबंध (अनुदान प्रभारी) थे (*1)। जब दब्बा सुबह-सुबह चावल के लिए चेक बाँटते थे, तो कभी उत्तम चावल मिलता था और कभी घटिया किस्म का, जो वरिष्ठ भिक्षु उदयि के हिस्से में आता था। जिन दिनों उन्हें घटिया किस्म का चावल मिलता था, वे चेक-रूम में हंगामा करते हुए पूछते थे, "क्या चेक बाँटना सिर्फ दब्बा को ही आता है? क्या हमें नहीं आता?" एक दिन जब वे हंगामा कर रहे थे, तो उन्होंने उन्हें चेक-टोकरी थमाते हुए कहा, "लो! आज आप खुद ही चेक बाँटिए!" तब से उदयि ही भिक्षुओं को चेक बाँटने लगे। लेकिन, बाँटने में वे उत्तम और घटिया चावल में अंतर नहीं कर पाते थे; न ही उन्हें यह पता था कि उत्तम चावल किसे मिलेगा और घटिया चावल किसे। (*1) इसी तरह, जब वह सूची बना रहा था, तो उसे भिक्षुओं की वरिष्ठता का कोई ज्ञान नहीं था। परिणामस्वरूप, जब भिक्षु अपनी-अपनी जगह पर बैठ गए, तो उसने ज़मीन या दीवार पर निशान लगा दिए ताकि पता चले कि एक टुकड़ी यहाँ है और दूसरी वहाँ। अगले दिन जाँच कक्ष में एक श्रेणी के भिक्षुओं की संख्या कम और दूसरी श्रेणी के भिक्षुओं की संख्या अधिक थी; जहाँ संख्या कम थी, वहाँ निशान बहुत नीचे लगा था; जहाँ संख्या अधिक थी, वहाँ निशान बहुत ऊपर लगा था। लेकिन उदय, जो टुकड़ियों के बारे में बिल्कुल अनभिज्ञ था, उसने पुराने निशानों के अनुसार ही जाँच के आदेश दिए।

इसलिए, भाइयों ने उससे कहा, "मित्र उदयि, यह निशान बहुत ऊपर या बहुत नीचे है; सबसे अच्छा चावल फलां-फलां वरिष्ठता वालों के लिए है, और घटिया चावल फलां-फलां दूसरों के लिए।" लेकिन उसने उन्हें यह कहकर चुप करा दिया, "अगर यह निशान यहीं है, तो तुम यहाँ क्यों खड़े हो? मैं तुम पर भरोसा क्यों करूँ? मुझे तो अपने निशान पर भरोसा है।"

तब लड़कों और नौसिखियों ने उसे चेक-रूम से बाहर धकेलते हुए चिल्लाकर कहा, "मूर्ख उदयि, जब तुम चेक देते हो, तो भाइयों को उनका हक नहीं मिलता; तुम चेक देने के लायक नहीं हो; यहाँ से चले जाओ।" इस पर चेक-रूम में ज़बरदस्त हंगामा मच गया।

शोर सुनकर गुरु ने वरिष्ठ भिक्षु आनंद से पूछा, "आनंद, चेक-रूम में बहुत शोर हो रहा है। यह शोर किस बात का है?"

वरिष्ठ भिक्षु ने बुद्ध को सब कुछ समझाया। उन्होंने कहा, "आनंद, यह एकमात्र ऐसा समय नहीं है जब उदयि ने अपनी मूर्खता से दूसरों को उनके लाभ से वंचित किया है; उसने अतीत में भी ठीक ऐसा ही किया था।"

वरिष्ठ भिक्षु ने भगवान बुद्ध से स्पष्टीकरण मांगा, और भगवान बुद्ध ने पुनर्जन्म के कारण छिपे रहस्य को स्पष्ट कर दिया।

एक समय की बात है, काशी के बनारस में ब्रह्मदत्त का राज था। उन दिनों हमारे बोधिसत्व उनके मूल्यांकक थे। वे घोड़ों, हाथियों और इसी प्रकार की वस्तुओं का मूल्यांक करते थे; और रत्नों, सोने और इसी प्रकार की वस्तुओं का भी मूल्यांक करते थे; और वे वस्तुओं के मालिकों को उनके द्वारा निर्धारित उचित मूल्य का भुगतान करते थे।

लेकिन राजा लालची था और उसके लालच ने उसे यह विचार दिया: "यह मूल्यांकक अपने मूल्यांकन के तरीके से मेरे महल का सारा धन जल्द ही खत्म कर देगा; मुझे दूसरा मूल्यांकक नियुक्त करना होगा।" उसने अपनी खिड़की खोलकर अपने आंगन में देखा तो उसे एक मूर्ख, लालची आदमी चलता हुआ दिखाई दिया, जिसमें उसे इस पद के लिए उपयुक्त उम्मीदवार नज़र आया। इसलिए राजा ने उस आदमी को बुलवाया और उससे पूछा कि क्या वह यह काम कर सकता है। "हाँ," उस आदमी ने कहा; और इस प्रकार, शाही खजाने की रक्षा के लिए, इस मूर्ख को मूल्यांकक नियुक्त कर दिया गया। इसके बाद वह मूर्ख, हाथियों, घोड़ों और इसी तरह के अन्य पशुओं का मूल्यांकन करते समय, उनकी वास्तविक कीमत की परवाह किए बिना, अपनी मनमर्जी से कीमत तय करता था; लेकिन, चूंकि वह मूल्यांकक था, इसलिए कीमत वही होती थी जो वह कहता था, और कुछ नहीं।

उस समय उत्तर देश (*2) से एक घोड़ा व्यापारी 500 घोड़े लेकर आया। राजा ने अपने नए मूल्यांकक को बुलवाया और उससे घोड़ों का मूल्य लगाने को कहा। उसने सभी 500 घोड़ों का मूल्य केवल एक माप चावल के बराबर लगाया, जिसे उसने व्यापारी को देने का आदेश दिया और घोड़ों को अस्तबल में ले जाने का निर्देश दिया। घोड़ा व्यापारी पुराने मूल्यांकक के पास गया, उसे सारी बात बताई और पूछा कि क्या किया जाए। पुराने मूल्यांकक ने कहा, "उसे रिश्वत दो और उससे यह कहो: 'हम जानते हैं कि हमारे घोड़ों का मूल्य केवल एक माप चावल के बराबर है, इसलिए हम यह जानने के लिए उत्सुक हैं कि एक माप चावल का सही मूल्य क्या है; क्या आप राजा के सामने इसका मूल्य बता सकते हैं?' यदि वह कहता है कि वह बता सकता है, तो उसे राजा के सामने ले जाओ; और मैं भी वहाँ उपस्थित रहूँगा।"

बोधिसत्व की सलाह का तुरंत पालन करते हुए, घोड़े के व्यापारी ने उस व्यक्ति को रिश्वत दी और उससे प्रश्न पूछा। दूसरे व्यक्ति ने चावल के एक माप का मूल्य बताने की क्षमता प्रकट की, जिसके बाद उसे तुरंत महल में ले जाया गया, जहाँ बोधिसत्व और कई अन्य मंत्री भी गए थे। घोड़े के व्यापारी ने आदरपूर्वक कहा, "महाराज, मैं इस बात से असहमत नहीं हूँ कि 500 घोड़ों की कीमत चावल का एक माप है; लेकिन मैं महाराज से अनुरोध करता हूँ कि आप अपने मूल्यांकक से चावल के उस माप का मूल्य पूछें।" जो कुछ हुआ था, उससे अनभिज्ञ राजा ने उस व्यक्ति से कहा, "मूल्यांकक, 500 घोड़ों का मूल्य क्या है?" उत्तर था, "महाराज, चावल का एक माप।" "बहुत खूब, मेरे मित्र; यदि 500 घोड़ों का मूल्य चावल का एक माप है, तो चावल के उस माप का मूल्य क्या है?" मूर्ख ने उत्तर दिया, "यह पूरे बनारस और उसके आसपास के क्षेत्रों के बराबर है।"

(इस प्रकार हमें पता चलता है कि राजा को प्रसन्न करने के लिए पहले तो उसने घोड़ों का मूल्य पहाड़ी धान के एक माप के बराबर लगाया, फिर घोड़े के व्यापारी ने उसे रिश्वत देकर उस चावल के माप का मूल्य पूरे बनारस और उसके उपनगरों के बराबर लगवा दिया। और यद्यपि बनारस की दीवारें अकेले ही बारह लीग (x 4.23 किमी) की थीं, जबकि शहर और उपनगरों का कुल क्षेत्रफल तीन सौ लीग (x 4.23 किमी) था! फिर भी उस मूर्ख ने इस विशाल शहर और उसके उपनगरों का मूल्य केवल एक माप चावल के बराबर लगा दिया!)

इस पर मंत्रियों ने ताली बजाई और खिलखिलाकर हँसे। उन्होंने तिरस्कार भरे लहजे में कहा, “हम तो पहले सोचते थे कि धरती और राज्य अनमोल हैं; पर अब हमें पता चला है कि बनारस राज्य अपने राजा समेत मात्र एक माप चावल के बराबर है! इस मूल्यांकक में कितनी प्रतिभा है! इतने लंबे समय तक वह अपने पद पर कैसे बना रहा? सचमुच, यह मूल्यांकक हमारे राजा के लिए बिल्कुल उपयुक्त है।”

तब बोधिसत्व ने इस श्लोक को दोहराया:

> यह जरूर पूछें कि एक पेक चावल की कीमत कितनी है?
>
> क्यों, बनारस के सभी लोग, भीतर और बाहर दोनों तरफ से।
>
> फिर भी, हैरानी की बात यह है कि पाँच सौ घोड़े भी
>
> इनकी कीमत ठीक इतने ही एक पेक चावल के बराबर है!

इस प्रकार सबके सामने अपमानित होकर राजा ने उस मूर्ख को निकाल दिया और बोधिसत्व को पुनः पद पर नियुक्त कर दिया। और जब उनका जीवन समाप्त हुआ, तो बोधिसत्व को उनके कर्मों का फल मिला।

उनका पाठ समाप्त हुआ और दोनों कहानियाँ सुनाने के बाद, गुरु ने दोनों को आपस में जोड़ते हुए संबंध स्थापित किया और अंत में यह कहकर जन्म की पहचान बताई, "उदयी मंदबुद्धि उस समय का मूर्ख देहाती मूल्यांकक था, और मैं स्वयं बुद्धिमान मूल्यांकक हूँ।"

फुटनोट:

(1) वरिष्ठों को, रोस्टर के अनुसार, पहले परोसा जाएगा। मैनसिपल ने रोस्टर बनाए रखा।

(2) बनारस के उत्तर में स्थित देश

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **देवधम्म-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-6-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 6
देवधम्मा-जातक

"केवल 'ईश्वरीय' लोगों को ही कहा जाता है..."

यह कहानी भगवान बुद्ध ने जेतवन मठ में रहते हुए एक धनी भिक्षु (भाई) के बारे में सुनाई थी।

परंपरा के अनुसार, श्रावस्ती नगर के एक उच्च अधिकारी के सहायक ने अपनी पत्नी की मृत्यु के बाद भिक्षु संघ में प्रवेश किया। प्रवेश के समय उन्होंने अपने लिए एक रहने का कमरा, चूल्हे के लिए एक कमरा और एक भंडारगृह बनवाया; और जब तक उन्होंने अपने भंडारगृह में घी, चावल और इसी तरह की अन्य सामग्री नहीं भर ली, तब तक वे भिक्षु नहीं बने। भिक्षु बनने के बाद भी वे अपने नौकरों को बुलाकर अपनी पसंद का खाना बनवाते थे। उनके पास सभी आवश्यक सामग्री (*1) उपलब्ध थी, रात और दिन के लिए अलग-अलग वस्त्र थे; और वे मठ के बाहरी इलाके में एकांत में रहते थे।

एक दिन जब उन्होंने अपने कपड़े और बिस्तर निकालकर अपने कमरे में सूखने के लिए फैला दिए थे, तभी देश भर से कई भिक्षु (भाई), जो एक मठ से दूसरे मठ की तीर्थयात्रा पर थे, अपनी यात्रा के दौरान उनकी कुटिया में आए और उन्हें ये सभी सामान मिले।

“ये किसके हैं?” उन्होंने पूछा। “मेरे हैं,” उन्होंने उत्तर दिया। “क्या, महाराज?” वे चिल्लाए; “ये ऊपरी वस्त्र और वो भी; ये अंदरूनी वस्त्र और वो भी; और वो बिस्तर भी, क्या ये सब आपका है?” “जी हाँ, किसी का नहीं, सिर्फ मेरा।” “महाराज,” उन्होंने कहा, “भगवान बुद्ध ने केवल तीन वस्त्रों को ही मान्यता दी है; और फिर भी, जबकि बुद्ध, जिनकी शिक्षाओं के लिए आपने स्वयं को समर्पित किया है, अपनी आवश्यकताओं में इतने सरल हैं, आपने इन सभी वस्तुओं का भंडार क्यों जमा कर लिया है? आइए! हमें आपको ज्ञान के स्वामी के समक्ष ले जाना होगा।” और ऐसा कहकर वे उनके साथ गुरु के पास चले गए।

उनकी उपस्थिति का आभास होते ही गुरु ने कहा, "भिक्षुओं, आप इस भिक्षु को उसकी इच्छा के विरुद्ध क्यों लाए हैं?" "महाराज, यह भिक्षु धनी है और उसके पास काफी सामान है।" "क्या यह सच है, भाई, जैसा कि लोग कहते हैं, कि आप इतने धनी हैं?" "जी हां, भगवान बुद्ध।" "परन्तु, भिक्षु, आपने यह सब सामान क्यों जमा किया है? क्या मैं कम इच्छा, संतोष, एकांत और दृढ़ संकल्प के गुणों की प्रशंसा नहीं करता?"

गुरु के शब्दों से क्रोधित होकर वह चिल्लाया, "तो मैं इस तरह घूमूंगा!" और अपने बाहरी वस्त्र उतार फेंककर, वह केवल कमरबंद पहने उनके बीच खड़ा हो गया।

तब, उन्हें नैतिक समर्थन देते हुए, गुरु ने कहा, "हे भिक्षु, क्या तुम ही अतीत में पाप से विमुख होने की लज्जा के साधक नहीं थे, और जब तुम जल यक्ष थे तब भी बारह वर्ष तक उसी लज्जा की खोज में व्यतीत हुए थे? फिर ऐसा कैसे हुआ कि बुद्ध के महान मार्ग का अनुसरण करने की प्रतिज्ञा करने के बाद, तुमने अपने वस्त्र उतार दिए और यहाँ निर्लज्ज खड़े हो?"

गुरु के वचन पर, उसकी शर्म की भावना फिर से जागृत हो गई; उसने अपने वस्त्र पुनः धारण किए, और गुरु को प्रणाम करके एक तरफ बैठ गया।

भिक्षुओं ने भगवान बुद्ध से उस विषय की व्याख्या करने का अनुरोध किया जिसका उन्होंने उल्लेख किया था, तो भगवान बुद्ध ने पुनर्जन्म के कारण उनसे छिपी हुई बात को स्पष्ट कर दिया।

एक समय की बात है, काशी के बनारस में ब्रह्मदत्त राजा थे। उन दिनों राजा की रानी के पुत्र के रूप में बोधिसत्व का जन्म हुआ और उनका नाम विधिपूर्वक राजकुमार महिंशसा रखा गया। जब वे दौड़ने-भागने लायक हुए, तभी राजा के दूसरे पुत्र का जन्म हुआ और उनका नाम राजकुमार चंद्र रखा गया; लेकिन जब तक वे दौड़ने-भागने लायक हुए, बोधिसत्व की माता का देहांत हो गया। तब राजा ने दूसरी रानी से विवाह किया, जो उनकी प्रसन्नता और आनंद का स्रोत थीं; और उनके प्रेम को एक और राजकुमार के जन्म से और भी बल मिला, जिनका नाम उन्होंने राजकुमार सूर्य रखा। पुत्र के जन्म से प्रसन्न होकर राजा ने रानी से वादा किया कि वे पुत्र के लिए जो भी वरदान मांगेगी, उसे पूरा करेंगे। लेकिन रानी ने उस वादे को अपने उचित समय पर पूरा करने का निश्चय कर लिया। बाद में, जब उनका पुत्र बड़ा हुआ, तो उन्होंने राजा से कहा, "महाराज, जब मेरे पुत्र का जन्म हुआ था, तब आपने मुझे उसके लिए वरदान मांगने का वरदान दिया था। कृपया उसे राजा बनाइए।"

“नहीं,” राजा ने कहा; “मेरे दो पुत्र हैं, जो धधकती आग के समान तेजस्वी हैं; मैं तुम्हारे पुत्र को राज्य नहीं दे सकता।” परन्तु जब राजा ने देखा कि इस इनकार से भी रानी विचलित नहीं हुई और बार-बार उससे अपनी विनती मनवाने के लिए दबाव डालती रही, तो राजा को डर था कि कहीं वह स्त्री उसके पुत्रों के विरुद्ध कोई षड्यंत्र न रच दे। इसलिए उसने उन्हें बुलवाया और कहा, “मेरे पुत्रों, जब राजकुमार सूर्य का जन्म हुआ था, तब मैंने एक वरदान दिया था; और अब उसकी माता उसके लिए राज्य चाहती है। मैं उसे राज्य देना नहीं चाहता; परन्तु स्त्रियाँ स्वभाव से दुष्ट होती हैं, और वह तुम्हारे विरुद्ध षड्यंत्र रच रही होगी। बेहतर होगा कि तुम वन में शरण ले लो, और मेरी मृत्यु के बाद लौटकर उस नगर पर शासन करो जो हमारे कुल का अधिकार है।” इतना कहकर, आँसुओं और सिसकियों के साथ, राजा ने अपने दोनों पुत्रों के सिर चूमे और उन्हें विदा कर दिया।

पिता से विदाई लेने के बाद जब राजकुमार महल से निकल रहे थे, तभी प्रांगण में खेल रहे राजकुमार सूर्य ने उन्हें देख लिया। जैसे ही उन्हें बात पता चली, उन्होंने भी अपने भाइयों के साथ जाने का निश्चय कर लिया। इसलिए वे भी उनके साथ चल दिए।

तीनों हिमालय क्षेत्र में पहुँचे; और वहाँ बोधिसत्व, जो मार्ग से हटकर एक वृक्ष की तलहटी में बैठे थे, ने राजकुमार सूर्य से कहा, "हे प्रिय सूर्य, उस ओर स्थित तालाब में जाओ; वहाँ जल पियो और स्नान करो; और फिर हमारे लिए भी कमल के पत्ते में थोड़ा जल ले आओ।"

(अब उस कुंड को वेसवना (*2) ने एक जल-यक्ष को सौंप दिया था, जिसने उससे कहा, "जो लोग वास्तव में ईश्वर-समानता को जानते हैं, उनके अलावा इस कुंड में उतरने वाले सभी लोग तुम्हारे भक्षण के पात्र हैं। जो लोग जल में प्रवेश नहीं करते, उन पर तुम्हें कोई अधिकार नहीं है।" और तब से वह जल-यक्ष कुंड में उतरने वाले सभी लोगों से ईश्वर-समानता का रहस्य पूछता था और जो लोग इसे नहीं जानते थे, उन्हें भक्षण कर देता था।)

अब राजकुमार सूर्य बड़ी बेखबरी से इसी कुंड में उतर गए, जिसके परिणामस्वरूप उन्हें जल यक्ष ने पकड़ लिया और उनसे पूछा, "क्या तुम जानते हो कि वास्तव में ईश्वरीय क्या है?" "जी हां," उन्होंने कहा; "सूर्य और चंद्रमा।" "तुम नहीं जानते," राक्षस ने कहा और राजकुमार को जल की गहराई में खींचकर अपने ही निवास में कैद कर लिया। यह देखकर कि उनका भाई बहुत समय से गायब है, बोधिसत्व ने राजकुमार चंद्रमा को भेजा। उन्हें भी जल यक्ष ने पकड़ लिया और पूछा कि क्या वे जानते हैं कि वास्तव में ईश्वरीय क्या है। "जी हां, मैं जानता हूं," उन्होंने कहा; "स्वर्ग की चारों दिशाएं हैं।" "तुम नहीं जानते," जल यक्ष ने कहा और इस दूसरे शिकार को भी उसी कारागार में ले गया।

यह देखकर कि दूसरा भाई भी बहुत देर तक प्रतीक्षा करता रहा, बोधिसत्व को विश्वास हो गया कि उनके साथ कुछ हुआ है। इसलिए वे उनके पीछे चल पड़े और पानी में उनके पदचिह्नों का पीछा किया। तुरंत यह समझते हुए कि यह कुंड किसी जल-यक्ष का क्षेत्र होना चाहिए, उन्होंने अपनी तलवार सुरक्षित कर ली, हाथ में धनुष लिया और प्रतीक्षा करने लगे। अब जब यक्ष ने देखा कि बोधिसत्व का पानी में प्रवेश करने का कोई इरादा नहीं है, तो उसने एक वनपाल का रूप धारण कर लिया और इस वेश में बोधिसत्व से कहा: "मित्र, तुम

अपनी यात्रा से थक गए हो; क्यों न तुम अंदर जाकर स्नान करो, पानी पियो और कमलों से खुद को सुशोभित करो? इसके बाद तुम आराम से यात्रा कर पाओगे।" उसे तुरंत यक्ष के रूप में पहचानते हुए, बोधिसत्व ने कहा, "तुमने ही मेरे भाइयों को पकड़ा है।" "हाँ, तुमने ही," उत्तर आया। "क्यों?" "क्योंकि जो भी इस कुंड में उतरता है, वह मेरा है।" "क्या, सभी?" "वे नहीं जो वास्तव में ईश्वरीयता को जानते हैं; इनके अलावा बाकी सब मेरे हैं।" "और क्या तुम ईश्वरीय गुणों के बारे में जानना चाहते हो?" "हाँ।" "यदि ऐसा है, तो मैं तुम्हें बताऊँगा कि वास्तव में ईश्वरीय गुण क्या हैं।" "बताओ, मैं सुनूँगा।"

बोधिसत्व ने कहा, "मैं आरंभ करना चाहता हूँ, परन्तु यात्रा के कारण मैं मैला हो गया हूँ।" तब जल यक्ष ने बोधिसत्व को स्नान कराया, उन्हें भोजन और जल दिया, फूलों की वर्षा की, सुगंधों का छिड़काव किया और एक भव्य मंडप के बीच में उनके लिए पलंग बिछाया। स्वयं उस पलंग पर विराजमान होकर और जल यक्ष को अपने चरणों में बैठाकर बोधिसत्व ने कहा, "सुनो, और तुम्हें पता चलेगा कि वास्तव में ईश्वरीय स्वरूप क्या है।" और उन्होंने इस श्लोक को दोहराया:-

केवल वही लोग 'ईश्वरीय' कहलाते हैं जो पाप से विरक्त रहते हैं।

पवित्र आत्मा वाले, शांत स्वभाव के, अच्छे के उपासक।

जब यक्ष ने यह सुना, तो वह प्रसन्न हुआ और बोधिसत्व से बोला, "हे ज्ञानी, मैं आपसे प्रसन्न हूँ और आपके एक भाई को आपको सौंपता हूँ। मैं किसे लाऊँ?" "सबसे छोटे को।" "हे ज्ञानी, यद्यपि आप जानते हैं कि सच्चे ईश्वरीय गुण क्या होते हैं, फिर भी आप अपने ज्ञान का उपयोग नहीं करते।" "ऐसा क्यों?" "आप बड़े की वरिष्ठता का ध्यान रखे बिना छोटे को प्राथमिकता देते हैं।" "हे यक्ष, मैं न केवल ईश्वरीय गुणों को जानता हूँ, बल्कि उनका अभ्यास भी करता हूँ। इसी बालक के कारण हमने वन में शरण ली थी; इसी के लिए उसकी माता ने हमारे पिता से राज्य की माँग की थी, और हमारे पिता ने उसकी माँग पूरी करने से इनकार कर दिया और हमें वन में शरण लेने की अनुमति दे दी। यह बालक भी हमारे साथ आया था, और हमने कभी वापस लौटने का सोचा भी नहीं। अगर मैं यह कहूँ कि उसे वन में किसी यक्ष ने खा लिया था, तो कोई भी मुझ पर विश्वास नहीं करेगा; और अन्याय के भय के कारण ही मैं उसे आपसे माँग रहा हूँ।"

"अद्भुत! उत्तम! हे ज्ञानवान पुरुष," यक्ष ने प्रशंसा करते हुए कहा; "आप न केवल ज्ञान रखते हैं बल्कि ईश्वरीय गुणों का अभ्यास भी करते हैं।" और अपनी प्रसन्नता और स्वीकृति के प्रतीक के रूप में उन्होंने दोनों भाइयों को लाकर बोधिसत्व को सौंप दिया।

तब दूसरे यक्ष ने जल-यक्ष से कहा, "मित्र, तुम्हारे अतीत के बुरे कर्मों के फलस्वरूप ही तुम अब दूसरे प्राणियों के मांस और रक्त पर जीवित रहने वाले यक्ष के रूप में जन्म ले रहे हो; और इस जन्म में भी तुम बुराई कर रहे हो। यह बुरा आचरण तुम्हें नरक और अन्य बुरी अवस्थाओं में पुनर्जन्म से सदा के लिए वंचित कर देगा। इसलिए, अब से बुराई का त्याग करो और सद्गुणों का जीवन व्यतीत करो।"

यक्ष का धर्म परिवर्तन कराने के बाद, बोधिसत्व उसकी देखरेख में उसी स्थान पर निवास करते रहे, जब तक कि एक दिन उन्होंने नक्षत्रों में अपने पिता के निधन की खबर नहीं देखी। तब वे जल-यक्ष को अपने साथ लेकर बनारस लौट आए और राज्य पर अधिकार कर लिया, उन्होंने राजकुमार चंद्रमा को अपना प्रतिनिधि और राजकुमार सूर्य को अपना सेनापति नियुक्त किया। जल-यक्ष के लिए उन्होंने एक रमणीय स्थान पर निवास बनाया और यह सुनिश्चित किया कि उसे उत्तम मालाएँ, फूल और भोजन उपलब्ध कराया जाए। उन्होंने स्वयं अपने कर्मों के फल के अनुसार मृत्यु को प्राप्त होने तक धर्मपरायणता से शासन किया।

उनका उपदेश समाप्त हुआ, गुरु ने सत्यों का प्रवचन दिया, जिसके अंत में उस भिक्षु भाई ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) का फल प्राप्त किया। सर्वज्ञ बुद्ध ने दोनों कथाएँ सुनाकर, दोनों को आपस में जोड़ते हुए, जन्म का वर्णन करते हुए कहा, "धनवान भिक्षु भाई उन दिनों के जल यक्ष थे; आनंद सूर्य राजकुमार थे, सारिपुत्र चंद्र राजकुमार थे, और मैं स्वयं सबसे बड़ा भाई, महिंश राजकुमार था।"

फुटनोट:

(1) अर्थात् एक भिक्षापात्र, तीन वस्त्र, एक कमरबंद, एक रेजर, एक सुई और एक जल छानने वाला यंत्र।

(2) यह कुबेर (धन के देवता) का दूसरा नाम है, जो हिंदू प्लूटस हैं, रामायण में सीलोन के यक्ष-राजा रावण के सौतेले भाई हैं। जातक संख्या (74) से पता चलता है कि वेसवना वृक्ष-आत्माओं के साथ-साथ जल-आत्माओं पर भी शासन करते थे, और सक्का (इंद्र) से अपना पद ग्रहण करते थे।

पिछला <<<<-----||-7-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 7
कत्थाहारी-जातक

"मैं तुम्हारा पुत्र हूँ।" - यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में वासभा-क्षत्रिय की कथा के बारे में सुनाई थी, जो भद्दसला-जातक (*1) के बारहवें खंड में मिलेगी। परंपरा के अनुसार, वह कपिलवस्तु (बुद्ध के वंश का राज्य) के राजा महानामा शाक्य (बुद्ध के सौतेले भाई और रानी महा-प्रजापति गौतमी के पुत्र, जो अब भिक्षुणियों की प्रमुख थीं) की नागमुंडा नामक दासी से पुत्री थीं, और बाद में कोसल के राजा की पत्नी बनीं। उन्होंने राजा से एक पुत्र को जन्म दिया; लेकिन राजा को जब उनके दास वंश का पता चला, तो उन्होंने उन्हें उनके पद से हटा दिया और उनके पुत्र विदुदभ को भी पदच्युत कर दिया। माता-पिता और पुत्र कभी महल से बाहर नहीं निकले।

यह सुनकर गुरुजी भोर होते ही पाँच सौ भिक्षुओं के साथ महल में आए और अपने लिए तैयार की गई सीट पर बैठकर बोले, "महाराज, वसाभा-क्षत्रिय कहाँ हैं?"

तब राजा ने उसे सारी घटना बताई।

महाराज, वसाभ-क्षत्रिय किसकी पुत्री हैं? "महानामा की पुत्री, महाराज।" "जब वह आई, तो किसके पास पत्नी बनकर आई?" "मेरे पास, महाराज।" "महाराज, वह एक राजा की पुत्री हैं; एक राजा से उनका विवाह हुआ है; और एक राजा को ही उन्होंने पुत्र को जन्म दिया है। वह पुत्र अपने पिता के अधिकार वाले राज्य पर अधिकार क्यों नहीं रखता? पुराने समय में, जिस राजा का किसी साधारण लकड़हारा स्त्री से पुत्र होता था, वह उस पुत्र को शासन करने की शक्ति दे देता था।"

राजा ने भगवान बुद्ध से इसका स्पष्टीकरण मांगा। भगवान बुद्ध ने पुनर्जन्म के कारण उनसे छिपी हुई बात को स्पष्ट किया।

एक समय की बात है, बनारस में राजा ब्रह्मदत्त बड़े ठाठ-बाठ से अपने उद्यान में फल और फूल ढूँढ़ते हुए घूम रहे थे, तभी उनकी नज़र एक स्त्री पर पड़ी जो उद्यान में लकड़ियाँ चुनते हुए प्रसन्नतापूर्वक गीत गा रही थी। पहली नज़र में ही उन्हें उससे प्रेम हो गया और वे उसके साथ अंतरंग हो गए, और उसी क्षण बोधिसत्व गर्भ में आ गए। इंद्र के बाण से बोझिल होकर स्त्री को अपने भीतर भारीपन का अनुभव हुआ, और उसने जान लिया कि वह माँ बनने वाली है, और उसने राजा को यह बात बताई। राजा ने अपनी उंगली से अंगूठी उतारकर उसे दी और इन शब्दों के साथ विदा किया: "यदि पुत्री हो, तो इस अंगूठी का उपयोग उसके पालन-पोषण के लिए करना; परन्तु यदि पुत्र हो, तो अंगूठी और बच्चे को मेरे पास लाना।"

जब स्त्री का प्रसव का समय आया, तब बोधिसत्व का जन्म हुआ। जब वह दौड़ने-भागने लायक हो गए और खेल के मैदान में खेलने लगे, तो अचानक उनकी आवाज़ सुनाई दी, "मुझे किसी ने मारा है!" यह सुनकर बोधिसत्व दौड़कर अपनी माँ के पास गए और उनसे अपने पिता के बारे में पूछा।

"मेरे बेटे, तुम बनारस के राजा के पुत्र हो।" "माँ, इसका क्या प्रमाण है?" "मेरे बेटे, राजा ने मुझे छोड़ते समय यह अंगूठी दी और कहा, 'यदि बेटी हो, तो इस अंगूठी का इस्तेमाल उसके पालन-पोषण के लिए करना; परन्तु यदि बेटा हो, तो अंगूठी और बच्चे को मेरे पास लाना।'" "तो फिर आप मुझे मेरे पिता के पास क्यों नहीं ले जातीं, माँ?"

यह देखकर कि लड़के ने अपना मन बना लिया है, वह उसे महल के द्वार तक ले गई और राजा को उनके आने की सूचना देने का अनुरोध किया। बुलाए जाने पर, वह अंदर गई और महाराज के सामने झुककर बोली, "महाराज, मैं आपका पुत्र हूँ।"

राजा भली-भांति जानते थे कि यह सच है, परन्तु अपने दरबार के समक्ष शर्मिंदगी के कारण उन्होंने कहा, "यह मेरा पुत्र नहीं है।" "परन्तु यह रही आपकी अंगूठी, महाराज; आप इसे पहचान लेंगे।" "यह भी मेरी अंगूठी नहीं है।" तब स्त्री ने कहा, "महाराज, मेरे पास अब अपने वचन को सिद्ध करने के लिए सत्य के सिवा कोई साक्षी नहीं है। इसलिए, यदि आप मेरे पुत्र के पिता हैं, तो मैं प्रार्थना करती हूँ कि वह

आकाश में ही रहे; परन्तु यदि नहीं, तो वह पृथ्वी पर गिरकर मर जाए।" ऐसा कहकर उसने बोधिसत्व का पैर पकड़कर उसे हवा में उछाल दिया।

हवा में पालथी मारकर बैठे बोधिसत्व ने मधुर स्वर में अपने पिता से इस श्लोक को दोहराया और सत्य का वर्णन किया:

> हे महान सम्राट, मैं आपका पुत्र हूँ; मेरा पालन-पोषण कीजिए, महाराज!
>
> राजा दूसरों का पालन-पोषण करता है, लेकिन अपने बच्चे का पालन-पोषण उससे कहीं अधिक करता है।

बोधिसत्व को आकाश में रहते हुए सत्य का उपदेश देते हुए सुनकर राजा ने अपने हाथ फैलाकर पुकारा, "मेरे बालक, मेरे पास आओ! मेरे सिवा कोई और तुम्हारा पालन-पोषण नहीं करेगा!" बोधिसत्व को ग्रहण करने के लिए हज़ारों हाथ फैले; परन्तु वे राजा की बाहों में ही समा गए, किसी और की नहीं, और उनकी गोद में बैठ गए। राजा ने उन्हें अपना प्रतिनिधि बनाया और उनकी माता को रानी बना दिया। अपने पिता राजा की मृत्यु के बाद, वे राजदंड धारण करने वाले राजा कत्थावाहन की उपाधि से सिंहासन पर आसीन हुए और अपने राज्य पर विधिपूर्वक शासन करने के बाद, अपने कर्मों के फल के अनुसार इस दुनिया से विदा हो गए।

कोसल के राजा को दिए गए उनके उपदेश का समापन हुआ और जब उनकी दोनों कथाएँ सुनाई गईं, तो गुरु ने उन दोनों को आपस में जोड़ते हुए उनके जन्म का वर्णन किया और कहा: "महामाया (बुद्ध की दिवंगत जन्म माता) उन दिनों की माता थीं, राजा शुद्धोदन (बुद्ध के पिता और कपिलवस्तु के राजा) उनके पिता थे, और मैं स्वयं राजा कत्थवाहन हूँ।"

[नोट: महाभारत में दुष्यंत और शकुंतला की कहानी और कालिदास के नाटक 'खोई हुई अंगूठी' का संदर्भ।]

फुटनोट:

(1)संख्या 465 देखें।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **गमानी-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-8-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 8
गामणि-जातक
"उनके दिल की ख्वाहिश।"

यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में एक भिक्षु के बारे में सुनाई थी, जिसने मार्ग पर दृढ़ रहने का प्रयास छोड़ दिया था। इस जातक कथा में परिचयात्मक कथा और अतीत की कथा दोनों को संवर-जातक (*1) के संदर्भ में ग्यारहवें खंड में दिया जाएगा; घटनाएँ उस जातक कथा और इस जातक कथा दोनों में समान हैं, लेकिन श्लोक भिन्न हैं।

बोधिसत्व के उपदेशों का दृढ़तापूर्वक पालन करते हुए, राजकुमार गमानी, अपने सौ भाइयों में सबसे छोटे होते हुए भी, स्वयं को उन सौ भाइयों से घिरे हुए, सेवकों के समूह के रूप में और राजत्व के श्वेत छत्र के नीचे बैठे हुए पाकर, अपनी महिमा को निहारते हुए सोचने लगे—"यह सारी महिमा मेरे गुरु की देन है।" और, अपनी प्रसन्नता में, वे हृदयस्पर्शी इस शब्द को कहने लगे:

जो लोग जल्दी नहीं करते, वे अपनी मनोकामना पूरी करते हैं;

हे गमानी, जान लो, तुम्हारी ही सफलता सिद्ध हो चुकी है।

राजा बनने के सात-आठ दिन बाद ही उनके सभी भाई अपने-अपने घर लौट गए। राजा गमानी ने अपने राज्य पर विधिपूर्वक शासन करने के बाद अपने कर्मों के फल के लिए परलोक देह त्याग दिया। बोधिसत्व भी अपने कर्मों के फल के लिए परलोक देह त्याग गए।

उनका प्रवचन समाप्त हुआ, गुरु ने सत्यों का उपदेश दिया, जिसके अंत में दुर्बल हृदय वाले भिक्षु ने अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) प्राप्त किया। दोनों कथाएँ सुनाने के बाद, गुरु ने उन दोनों के बीच संबंध समझाया और जन्म का कारण बताया।

फुटनोट:

(1)सं. 462.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **मखादेव-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-9-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 9

मखदेव-जातक

"ओह! ये सफेद बाल!"
यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जो महान त्याग के बारे में है और जिसका वर्णन पहले ही निदान-कथा में किया जा चुका है।
इस अवसर पर भिक्षुओं ने ज्ञान के स्वामी के त्याग की प्रशंसा करते हुए बैठक की। सत्य के हॉल में प्रवेश करके और बुद्ध-आसन पर विराजमान होकर, गुरु ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "हे भिक्षुओं, आप सब यहाँ एकत्रित होकर क्या विषय पर चर्चा कर रहे हैं?"

"हे महोदय, यह आपके स्वयं के त्याग की प्रशंसा के सिवा और कुछ नहीं है।" "भाइयों," गुरु ने उत्तर दिया, "तथागत (बुद्ध) (*1) ने न केवल इन अंतिम दिनों में त्याग किया है; अतीत में भी उन्होंने इसी प्रकार संसार का त्याग किया था।"

भिक्षुओं ने भगवान बुद्ध से इसका स्पष्टीकरण मांगा। भगवान बुद्ध ने पुनर्जन्म के कारण उनसे छिपी हुई बात को स्पष्ट किया।

बहुत समय पहले, विदेह राज्य के मिथिला में मखदेव नाम का एक राजा रहता था, जो धर्मात्मा और न्यायप्रिय था। चौरासी हजार वर्षों तक उसने क्रमशः राजकुमार, वायसराय और राजा के रूप में जीवन व्यतीत किया। इतने वर्षों तक जीवित रहने के बाद, एक दिन उसने अपने नाई से कहा, "नाई, मुझे बताना जब तुम्हें मेरे सिर में कोई सफेद बाल दिखाई दे।" कई वर्षों बाद, एक दिन नाई को राजा के काले घने बालों में एक सफेद बाल मिला और उसने राजा को बताया। राजा ने कहा, "इसे निकाल दो, मेरे मित्र, और मेरी हथेली पर रख दो।" नाई ने सोने के चिमटे से बाल निकाला और राजा की हथेली पर रख दिया। उस समय राजा के पास अभी चौरासी हजार वर्ष और जीने को थे; फिर भी उस एक सफेद बाल को देखकर वह अत्यंत भावुक हो गया। उन्हें ऐसा लगा मानो मृत्यु का राजा उनके ऊपर खड़ा हो, या वे जलते हुए पत्तों के गुच्छे में कैद हों। "मूर्ख मखदेव!" वे चिल्लाए; "तुम्हारे बाल तो अभी तक बुरे कर्मों से मुक्त भी नहीं हुए हैं कि सफेद हो गए।" और जैसे-जैसे वे अपने सफेद बालों के बारे में सोचते रहे, उनका क्रोध भड़कता गया; उनके शरीर से पसीना बहने लगा; और उनके वस्त्र उन्हें जकड़ रहे थे और असहनीय लग रहे थे। "आज ही," उन्होंने सोचा, "मैं संसार का त्याग करके तपस्वी का जीवन अपना लूँगा।"

उन्होंने अपने नाई को एक गाँव दान में दिया, जिससे उन्हें एक लाख सिक्के प्राप्त हुए। उन्होंने अपने बड़े पुत्र को बुलवाया और उससे कहा, “पुत्र, मेरे बाल सफेद हो गए हैं और मैं बूढ़ा हो गया हूँ। मैंने सांसारिक सुखों का भरपूर आनंद ले लिया है और अब मैं दिव्य सुखों

का अनुभव करना चाहता हूँ; अब मेरे लिए संन्यास का समय आ गया है। तुम स्वयं पर शासन करो; मैं मखदेव के आमों के बाग में निवास करूँगा और वहीं तपस्वी मार्ग पर चलूँगा।"

चूंकि वे तपस्वी जीवन जीने के लिए दृढ़ संकल्पित थे, इसलिए उनके मंत्री उनके पास आए और बोले, "महाराज, आप तपस्वी जीवन क्यों अपना रहे हैं?"

अपने हाथ में सफेद बाल लेकर राजा ने अपने मंत्रियों से यह श्लोक दोहराया:-

ओह, मेरे सिर पर ये सफेद बाल दिखाई दे रहे हैं

क्या ये मौत के खुद के दूत हैं जो लूटने आए हैं?

मेरा जीवन। अब समय आ गया है कि मैं सांसारिक चीजों से मुंह मोड़ लूं।

और संन्यासी के मार्ग पर चलकर स्थायी शांति की खोज करो।

इन शब्दों के बाद, उन्होंने उसी दिन शासन करने की शक्ति त्याग दी और संन्यासी बन गए। मखदेव के उसी आम के बाग में रहते हुए, उन्होंने चौरासी हजार वर्षों तक अपने भीतर चारों सिद्ध अवस्थाओं का पोषण किया और पूर्ण और अक्षुण्ण अंतर्दृष्टि के साथ प्राण त्याग कर ब्रह्मलोक (परमलोक) में पुनर्जन्म लिया। वहां से प्रस्थान करके, वे मिथिला में निमि नाम से पुनः राजा बने और अपने बिखरे हुए परिवार को एकजुट करने के बाद, उसी आम के बाग में पुनः संन्यासी बन गए, चारों सिद्ध अवस्थाओं को प्राप्त किया और वहां से एक बार फिर ब्रह्मलोक (परमलोक) में चले गए।

अपने इस कथन को दोहराते हुए कि उन्होंने भी अतीत में इसी प्रकार संसार का त्याग किया था, गुरु ने अपने प्रवचन के अंत में चार सत्यों का उपदेश दिया। कुछ ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) में प्रवेश किया, कुछ ने द्वितीय मार्ग (सम्मोहन) में और कुछ ने तृतीय मार्ग (सम्मोहन) में। दो कथाएँ सुनाने के बाद, गुरु ने उनके बीच संबंध स्पष्ट किया और जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उन दिनों आनंद नाई थे, राहुल पुत्र थे और मैं स्वयं राजा मखदेव था।"

फुटनोट:

(1) तथागत (तथा = पार चले गए, अगत = वापस आ गए) का अर्थ है वह जिसने भौतिक ब्रह्मांड को पार किया, मृत्यु से परे मोक्ष की उस महिमामय, दिव्य, अभौतिक, अपरिवर्तनीय, कालातीत, शाश्वत अवस्था में प्रवेश किया और फिर भी भौतिक संसार में मार्ग की खोज का सुसमाचार सुनाने के लिए वापस आया। बुद्ध को विशेषण के रूप में तथागत भी कहा जाता है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सुखविहारी-जातक**
***स्रोत**: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-10-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 10
सुखाविहारी-जातक

"वह व्यक्ति जो पहरा नहीं देता।"

यह कथा गुरु ने अनुपिया नगर के पास अनुपिया आम के बाग में सुनाई थी। इसमें वरिष्ठ भिक्षु भद्दिया (सुखद) के बारे में बताया गया है, जिन्होंने छह युवा भिक्षुओं के साथ भिक्षु संघ में प्रवेश किया था, जिनमें उपाली (*1) भी शामिल थे। इनमें से वरिष्ठ भिक्षु भद्दिया, किंबिला, भागु और उपाली ने अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) प्राप्त किया; वरिष्ठ भिक्षु आनंद ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) में प्रवेश किया; वरिष्ठ भिक्षु अनुरुद्ध ने सर्वदृष्टि प्राप्त की; और देवदत्त ने समाधि की अवस्था में परमानंद की शक्ति प्राप्त की। अनुपिया में घटित घटनाओं तक इन छह युवा भिक्षुओं की कथा खंडाहल जातक (*2) में वर्णित की जाएगी।

आदरणीय भद्दिया, जो अपने राजवास के दिनों में स्वयं को ऐसे सुरक्षित रखते थे मानो स्वयं उनके संरक्षक देवता हों, उन्हें उस भय की अवस्था याद आई जिसमें वे तब रहते थे जब अनेक पहरेदार उनकी रक्षा करते थे और महल के ऊंचे निजी कक्षों में अपने शाही पलंग पर भी करवटें बदलते रहते थे; और इसकी तुलना उन्होंने उस भयहीनता से की जिसमें वे अब अर्हत (बुद्ध के समान प्रबुद्ध) बनकर जंगलों और रेगिस्तानों में विचरण करते थे। और इस विचार से वे हृदयस्पर्शी स्वर में बोले—"ओह, कितना सुख! ओह, कितना सुख!"

भिक्षुओं ने भगवान बुद्ध को यह सूचना देते हुए कहा, "आदरणीय भद्दिया अपने द्वारा प्राप्त आनंद के बारे में बता रहे हैं।"

भगवान बुद्ध ने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि भद्दिया का जीवन सुखमय हुआ है; अतीत में भी उसका जीवन उतना ही सुखमय था।"

भिक्षुओं ने भगवान बुद्ध से इसका स्पष्टीकरण मांगा। भगवान बुद्ध ने पुनर्जन्म के कारण उनसे छिपी हुई बात को स्पष्ट किया।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब एक धनी उत्तरी ब्राह्मण परिवार में बोधिसत्व का जन्म हुआ। कामवासनाओं के बुरे प्रभाव और संसार त्याग से मिलने वाले लाभों को जानकर, उन्होंने कामवासनाओं का त्याग कर हिमालय में शरण ली और वहाँ एक संन्यासी बन गए तथा ज्ञान के आठ वरदान प्राप्त किए। उनके अनुयायियों की संख्या बहुत बढ़ गई और लगभग पाँच सौ हो गई। एक बार जब वर्षा ऋतु शुरू हुई, तो उन्होंने हिमालय छोड़ दिया और अपने साथी संन्यासियों के साथ गाँव-नगरों से होते हुए भिक्षा मांगने के लिए तीर्थयात्रा पर निकल पड़े। अंत में वे बनारस पहुँचे, जहाँ उन्होंने राजा की उदारता के फलस्वरूप राजमहल में निवास किया। वर्षा ऋतुओं के चार महीने यहाँ रहने के बाद, वे राजा से विदा लेने आए। परन्तु राजा ने उनसे कहा, “हे पूज्यवर, आप वृद्ध हो चुके हैं। आपको हिमालय वापस क्यों जाना चाहिए? अपने शिष्यों को वहाँ वापस भेज दीजिए और आप स्वयं यहीं ठहर जाइए।”

बोधिसत्व ने अपने पांच सौ तपस्वियों को अपने सबसे बुजुर्ग शिष्य की देखरेख में सौंपते हुए कहा, "तुम इन्हें लेकर हिमालय जाओ; मैं यहीं ठहर जाऊंगा।"

वह सबसे पुराना शिष्य कभी राजा हुआ करता था, लेकिन उसने एक शक्तिशाली राज्य त्यागकर तपस्वी जीवन व्यतीत किया था; एकाग्रचित्त अनुष्ठानों का विधिवत पालन करके उसने ज्ञान के आठ वरदान प्राप्त कर लिए थे। जब वह हिमालय में तपस्वियों के साथ रह रहा था, एक दिन उसे गुरु के दर्शन की तीव्र इच्छा हुई और उसने अपने साथियों से कहा, "आप लोग यहीं संतुष्ट होकर रहिए; गुरु को प्रणाम करके मैं तुरंत वापस आ जाऊँगा।" इस प्रकार वह गुरु के पास गया, उन्हें प्रणाम किया और प्रेमपूर्वक अभिवादन किया। फिर वह गुरु द्वारा बिछाई गई चटाई पर उनके बगल में लेट गया।

इसी समय राजा वहाँ आ गए, जो तपस्वी से मिलने उद्यान में आए थे; उन्होंने प्रणाम करके एक तरफ बैठ गए। यद्यपि राजा की उपस्थिति से अवगत थे, फिर भी उस सबसे पुराने शिष्य ने उठने से परहेज किया और वहीं लेटे-लेटे अत्यंत भावुकता से पुकारते रहे, "ओह, कितना सुख! ओह, कितना सुख!"

राजा इस बात से नाराज थे कि तपस्वी ने उन्हें देखने के बावजूद भी नहीं उठे, इसलिए उन्होंने बोधिसत्व से कहा, "हे पूज्यवर, इस तपस्वी ने अवश्य ही भरपेट भोजन कर लिया होगा, क्योंकि वे अभी भी इतने प्रसन्नतापूर्वक लेटे हुए हैं और इतनी गंभीरता से उद्गार व्यक्त कर रहे हैं।"

“महाराज,” बोधिसत्व ने कहा, “पुराने समय में यह तपस्वी आपकी ही तरह राजा हुआ करता था। वह सोच रहा है कि पुराने समय में जब वह गृहस्थ था और राजसी वैभव में रहता था, तथा अनेक सैनिकों से सुरक्षित रहता था, तब उसने कभी ऐसा सुख नहीं जाना था जैसा अब उसे प्राप्त है। तपस्वी के जीवन का सुख और अंतर्दृष्टि से प्राप्त सुख ही उसे इस हृदयस्पर्शी वचन को कहने के लिए प्रेरित करता है।” और बोधिसत्व ने राजा को सत्य सिखाने के लिए इस श्लोक को दोहराया:-

महाराज, जो व्यक्ति न तो रक्षा करता है और न ही उसकी रक्षा की जाती है।
सुखी जीवन जीता है, वासनाओं की गुलामी से मुक्त।

इस प्रकार प्राप्त शिक्षा से प्रसन्न होकर राजा ने प्रणाम किया और अपने महल लौट गए। शिष्य ने भी अपने गुरु से विदा ली और हिमालय लौट गए। परन्तु बोधिसत्व वहीं निवास करते रहे और पूर्ण एवं अक्षुण्ण अंतर्दृष्टि के साथ प्राण त्याग कर ब्रह्मलोक (परम स्वर्ग) में पुनर्जन्म लिया।

उनका पाठ समाप्त हुआ, और दोनों कहानियाँ सुनाने के बाद, गुरु ने उन दोनों को जोड़ने वाले संबंध की व्याख्या की, और जन्म की पहचान करते हुए कहा, "वरिष्ठ भिक्षु भद्दिया उन दिनों के शिष्य थे, और मैं स्वयं तपस्वियों के समूह का गुरु था।"

फुटनोट:

(1) उपाली निम्न जाति (बहिष्कृत) और जाति से नाई था।

(2)सं. 534

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **लक्षणा-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-11-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 11
लखन-जातक

"नेक इंसान।"

राजगृह नगर के पास बांस के वन में गुरु ने देवदत्त के बारे में यह कथा सुनाई थी। देवदत्त (*1) की कथा अभिमारा पद ग्रहण करने तक खंडाहल जातक में, कोषाध्यक्ष पद से बर्खास्तगी तक चुल्लमांश जातक (*2) में और पृथ्वी में समा जाने तक सोलहवें खंड समुद्र-वाणिजा जातक (*3) में वर्णित है।

दरअसल, इस अवसर पर देवदत्त ने अपने द्वारा सुझाए गए पंचसूत्रों का पालन न कर पाने के कारण भिक्षु संघ में फूट डाल दी थी और पाँच सौ भिक्षुओं के साथ गया-सिसा में निवास करने चले गए थे। अब, ये भिक्षु अधिक ज्ञानी हो गए थे; और गुरु ने यह जानकर अपने दो प्रमुख शिष्यों (*4) को बुलाया और कहा, "सारिपुत्र, देवदत्त की शिक्षा से पथभ्रष्ट होकर उसके साथ चले गए तुम्हारे पाँच सौ शिष्य अब अधिक ज्ञानी हो गए हैं। तुम कुछ भिक्षुओं को लेकर वहाँ जाओ, उन्हें सत्य का उपदेश दो, इन भटके हुए भिक्षुओं को मार्ग और फल का ज्ञान दो और उन्हें अपने साथ वापस ले आओ।"

वे वहाँ गए, सत्य का उपदेश दिया, उन्हें मार्ग और फल के विषय में ज्ञान दिया, और अगले दिन भोर में उन भिक्षुओं के साथ बाँस के वन में लौट आए। जब सारिपुत्र भगवान बुद्ध को प्रणाम करने के बाद वहाँ खड़े थे, तब भिक्षुओं ने वरिष्ठ भिक्षु सारिपुत्र की प्रशंसा करते हुए उनसे कहा, "महोदय, सत्य के सेनापति, हमारे वरिष्ठ भाई (भिक्षु) की महिमा अत्यंत उज्ज्वल थी, क्योंकि वे पाँच सौ भिक्षुओं के साथ लौटे; जबकि देवदत्त अपने सभी अनुयायियों को खो बैठे।"

"भाइयों, यह एकमात्र ऐसा समय नहीं है जब सारिपुत्र अपने परिवार के साथ लौटकर गौरवान्वित हुए हों; जैसे अतीत में भी वे गौरवान्वित हुए थे। इसी प्रकार, यह एकमात्र ऐसा समय नहीं है जब देवदत्त ने अपने अनुयायियों को खोया हो; अतीत में भी वे अपने अनुयायियों को खो चुके थे।"

भिक्षुओं ने भगवान बुद्ध से इसका स्पष्टीकरण मांगा। भगवान बुद्ध ने पुनर्जन्म के कारण छिपे रहस्य को स्पष्ट किया।

बहुत समय पहले मगध राज्य के राजग्रह नगर में एक राजा रहता था, जिसके समय में बोधिसत्व ने हिरण का रूप धारण किया। बड़े होकर वह जंगल में एक हजार हिरणों के झुंड के मुखिया के रूप में रहने लगा। उसके दो बच्चे थे, जिनका नाम लकी और ब्लैकी था।

जब वह बूढ़ा हो गया, तो उसने अपने दोनों बेटों को झुंड की जिम्मेदारी सौंप दी और प्रत्येक को पाँच सौ हिरणों की देखभाल का जिम्मा दे दिया। इस प्रकार अब ये दोनों युवा हिरण झुंड के मुखिया बन गए।

मगध में फसल कटाई के समय, जब खेतों में फसलें खूब उग जाती हैं, तो आसपास के जंगलों में हिरणों के लिए खतरा पैदा हो जाता है। अपनी फसलों को चट कर जाने वाले इन जीवों को मारने के लिए किसान गड्ढे खोदते हैं, खूंटे गाड़ते हैं, पत्थर के जाल बिछाते हैं और फंदे व अन्य जाल लगाते हैं; जिससे बड़ी संख्या में हिरण मारे जाते हैं।

इसलिए, जब बोधिसत्व ने देखा कि फसल का समय आ गया है, तो उन्होंने अपने दोनों पुत्रों को बुलवाया और उनसे कहा, "मेरे पुत्रों, अब खेतों में फसलें खूब उग रही हैं और इस मौसम में बहुत से हिरण मर जाते हैं। हम बूढ़े हो चुके हैं, इसलिए हम एक ही जगह पर ठहरेंगे; लेकिन तुम दोनों अपने-अपने पशुओं के साथ जंगल के पहाड़ी इलाकों में चले जाओ और फसल कट जाने के बाद वापस आ जाना।" "ठीक है," उनके दोनों पुत्रों ने कहा और अपने-अपने पशुओं के साथ अपने पिता के कहे अनुसार चले गए।

रास्ते में रहने वाले लोग हिरणों के पहाड़ों पर जाने और वहां से लौटने का समय भली-भांति जानते हैं। वे रास्ते में जगह-जगह घात लगाकर बैठे रहते हैं और बड़ी संख्या में हिरणों को मार डालते हैं। मूर्ख ब्लैकी, जिसे यात्रा के समय और रुकने के समय का ज्ञान नहीं था, अपने हिरणों को सुबह-शाम, भोर और गोधूलि बेला में लगातार दौड़ाता रहा, यहाँ तक कि गाँवों की सीमा तक पहुँच गया। किसानों ने घात लगाकर या खुले में उसके झुंड के कई हिरणों को मार डाला। इस प्रकार अपने नासमझी भरे कार्यों से इन सभी का विनाश करने के बाद, वह कुछ बचे हुए हिरणों के साथ जंगल तक पहुँचा।

दूसरी ओर, लकी अपनी बुद्धिमत्ता, चतुराई और सूझबूझ के कारण कभी किसी गाँव की सीमा के पास भी नहीं गया। वह दिन में, यहाँ तक कि भोर या शाम के समय भी यात्रा नहीं करता था। वह केवल रात के अंधेरे में ही निकलता था; और इसका परिणाम यह हुआ कि वह अपने एक भी हिरण को खोए बिना जंगल पहुँच गया।

चार महीने तक वे जंगल में ही रहे, फसल की कटाई होने तक पहाड़ियों से नीचे नहीं उतरे। घर लौटते समय ब्लैकी ने अपनी पिछली गलती दोहराते हुए अपने झुंड के बाकी हिरणों को खो दिया और अकेला लौट आया; जबकि लकी ने अपने झुंड का एक भी हिरण नहीं खोया था, बल्कि अपने माता-पिता के सामने प्रकट होते समय वह पूरे पाँच सौ हिरणों को वापस ले आया था। अपने दोनों बेटों को लौटते देख बोधिसत्व ने हिरणों के झुंड के साथ मिलकर यह श्लोक रचा:-

ईमानदार और दयालु व्यक्ति को उसका प्रतिफल मिलता है।

देखिए लकी अपने परिवार के दल का नेतृत्व करते हुए वापस लौट रहा है।

और तभी ब्लैकी अपने पूरे झुंड को छोड़कर आ जाता है।

बोधिसत्व ने अपने पुत्र का ऐसा स्वागत किया; और अच्छी वृद्धावस्था जीने के बाद, वह अपने कर्मों के अनुसार फल भोगने के लिए इस दुनिया से विदा हो गए।

अपने पाठ के अंत में, जब गुरु ने दोहराया कि सारिपुत्र की महिमा और देवदत्त की हानि दोनों की ही अतीत में एक समानता थी, तो उन्होंने दोनों कहानियों को जोड़ने वाले संबंध को स्पष्ट किया और जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "देवदत्त उन दिनों का काला व्यक्ति था; उसके अनुयायी काले व्यक्ति के अनुयायी थे; सारिपुत्र उन दिनों का भाग्यशाली व्यक्ति था, और उसके अनुयायी बुद्ध के अनुयायी थे; राहुल की माता (बुद्ध की पत्नी) उन दिनों की माता थीं; और मैं स्वयं पिता था।"

फुटनोट:

(1) देवदत्त के "पाँच सूत्र":- "भाई अपना सारा जीवन वन में व्यतीत करेंगे, केवल बाहर से भिक्षा प्राप्त करके ही जीवन यापन करेंगे, कूड़े के ढेर से चुने हुए चिथड़े-चिथड़े पहनेंगे, पेड़ों के नीचे निवास करेंगे और कभी छत के नीचे नहीं रहेंगे, कभी मछली या मांस नहीं

खाएंगे।" ये पाँच सूत्र बुद्ध के नियमों की तुलना में अधिक कठोर तपस्या से भरे थे, और देवदत्त ने इन्हें अपने चचेरे भाई और गुरु (बुद्ध) से आगे निकलने के लिए बनाया था।

(2)सं. 533.

(3)सं. 466.

(4) दो प्रमुख शिष्य, जिनमें से केवल एक का नाम पाठ में दिया गया है, सारिपुत्र (उपनाम 'धर्म का सेनापति') और मोग्गल्याना थे, जो दो ब्राह्मण मित्र थे और मूल रूप से एक घुमंतू तपस्वी के अनुयायी थे, जिसने बौद्ध धर्म अपना लिया था। धर्मभ्रष्ट लोगों को पुनः बौद्ध धर्म में परिवर्तित करने का श्रेय आंशिक रूप से मोग्गल्याना को दिया जाता है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **निग्रोधामिगा-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-12-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 12
निग्रोधामिगा-जातक

"इसे केवल बरगद के हिरण के साथ ही रखें।"

यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जो राजकुमार कश्यप नामक वरिष्ठ भिक्षु की माता के बारे में है। हमें पता चलता है कि राजग्रह नगर के एक धनी व्यापारी की पुत्री, सद्गुणों में पूर्णतः लीन थी और सांसारिक वस्तुओं से घृणा करती थी; वह अपने अंतिम जन्म को प्राप्त कर चुकी थी, और उसके हृदय में, जैसे कलश में जलता दीपक, अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) प्राप्त करने की उसकी अटूट आशा प्रज्वलित थी। आत्मज्ञान प्राप्त होते ही, उसे सांसारिक जीवन में कोई आनंद नहीं रहा, बल्कि वह संसार का त्याग करने के लिए तड़प उठी। इसी उद्देश्य से उसने अपने माता-पिता से कहा, "प्रिय माता-पिता, मेरे हृदय को सांसारिक जीवन में कोई आनंद नहीं है; मैं बुद्ध की असाधारण शिक्षाओं को सहर्ष ग्रहण करना चाहती हूँ। मुझे प्रतिज्ञा लेने की अनुमति दीजिए।"

"क्या, मेरी प्यारी? हमारा परिवार बहुत धनी है, और तुम हमारी इकलौती बेटी हो। तुम ये शपथ नहीं ले सकती।"

बार-बार विनती करने के बावजूद जब उसके माता-पिता की सहमति नहीं मिली, तो उसने मन ही मन सोचा, "ठीक है, जब मेरी शादी किसी दूसरे परिवार में होगी, तब मैं अपने पति की सहमति लेकर विवाह की प्रतिज्ञा ले लूंगी।" और जब वह बड़ी होकर दूसरे परिवार में गई, तो उसने एक समर्पित पत्नी होने का प्रमाण दिया और अपने नए घर में सदाचारी जीवन व्यतीत किया। अब उसे पता नहीं था कि वह गर्भवती हो गई है।

उस नगर में एक उत्सव मनाया जा रहा था और सभी लोग छुट्टी मना रहे थे, नगर को देवताओं के नगर की तरह सजाया गया था। लेकिन वह, उत्सव के चरम पर भी, न तो इत्र लगाती थी और न ही कोई आभूषण पहनती थी, वह अपने साधारण वस्त्रों में ही घूमती रही। तब उसके पति ने उससे कहा, "मेरी प्यारी पत्नी, सभी लोग उत्सव मना रहे हैं; लेकिन तुम आभूषण नहीं पहनती हो।"

"मेरे स्वामी," उसने उत्तर दिया, "शरीर बत्तीस कुरूप वस्तुओं से भरा हुआ है। इसे सजाने का क्या कारण है? यह शरीर देवदूतों या महादेवदूतों के साँचे का नहीं है; यह सोने, रत्नों या पीले चंदन से नहीं बना है; यह सफेद, लाल या नीले कमलों की कोख से जन्म नहीं लेता; यह किसी अमर मरहम से भरा नहीं है। नहीं, यह भ्रष्टाचार से उत्पन्न हुआ है और नश्वर माता-पिता से जन्मा है; इसके गुण क्षणभंगुरता, क्षय और विनाश हैं; यह कब्रिस्तान में समा जाने के लिए नियत है और वासनाओं में लिप्त है; यह दुःख का स्रोत और शोक का कारण है; यह सभी रोगों का निवास स्थान और कर्मों का भंडार है। भीतर से मैला, यह हमेशा मल त्याग करता रहता है। हाँ, जैसा कि समस्त संसार देख सकता है, इसका अंत मृत्यु है, श्मशान में जाना, जहाँ यह कीड़ों का निवास स्थान बन जाता है (*1)। हे मेरे दूल्हे, मैं इससे क्या प्राप्त करूँगी? इस शरीर को सजाना? क्या इसे अलंकृत करना किसी बंद कुर्सी के बाहरी हिस्से को सजाने जैसा नहीं होगा?

"मेरी प्यारी पत्नी," युवक व्यापारी ने उत्तर दिया, "यदि तुम इस शरीर को इतना पापी मानती हो, तो क्यों न तुम नन बन जाओ?"

“यदि मुझे स्वीकार कर लिया गया, मेरे पति, तो मैं आज ही दीक्षा ले लूँगी।” “बहुत अच्छा,” उन्होंने कहा, “मैं तुम्हें संघ में प्रवेश दिला दूँगा।” और संघ के प्रति उदारता और आतिथ्य सत्कार दिखाने के बाद, वे उसे अपने साथ कई लोगों को लेकर मठ ले गए और उसे देवदत्त की अनुयायी नन के रूप में प्रवेश दिला दिया। नन बनने की अपनी इच्छा पूरी होने पर वह अत्यंत प्रसन्न हुई।

जैसे-जैसे उनका समय नजदीक आता गया, ननों ने उनके शरीर में आए बदलाव, हाथों और पैरों में सूजन और उनके बढ़ते आकार को देखकर कहा, "देवी, ऐसा लगता है कि आप मां बनने वाली हैं; इसका क्या मतलब है?"

"मैं बता नहीं सकता, देवियों; मैं केवल इतना जानता हूं कि मैंने एक सदाचारी जीवन व्यतीत किया है।"

तब ननों ने उसे देवदत्त के समक्ष लाकर कहा, "हे प्रभु, यह युवती, जिसे उसके पति की अनिच्छा से नन के रूप में दीक्षा दी गई थी, अब गर्भवती हो गई है; परन्तु क्या यह गर्भ उसके दीक्षा लेने से पहले का है या नहीं, हम निश्चित नहीं कह सकते। अब हम क्या करें?"

बुद्ध न होते हुए और दान, प्रेम या करुणा से रहित, देवदत्त ने सोचा: "यह खबर फैल जाए तो बहुत बुरा होगा कि मेरी एक भिक्षुणी गर्भवती है और मैं इस अपराध को स्वीकार करता हूँ। मेरा रास्ता स्पष्ट है; मुझे इस स्त्री को संघ से निष्कासित करना होगा।" बिना किसी पूछताछ के, मानो पत्थर के ढेर को धकेलते हुए, वह आगे बढ़ा और बोला, "चलो, इस स्त्री को निष्कासित करो!"

यह उत्तर पाकर वे उठीं और आदरपूर्वक प्रणाम करके अपने मठ की ओर चल पड़ीं। परन्तु उस कन्या ने उन भिक्षुणियों से कहा, “देवियों, देवदत्त, वरिष्ठ भिक्षु, बुद्ध नहीं हैं। मैंने देवदत्त के अधीन नहीं, बल्कि जगत के सर्वोत्कृष्ट बुद्ध के अधीन व्रत लिए थे। मेरी उस विद्या को मुझसे मत छीनिए जो मैंने इतनी मेहनत से अर्जित की है; परन्तु मुझे जेतवन मठ में गुरु के समक्ष ले चलिए।” अतः वे उसे लेकर जेतवन मठ के लिए चल पड़ीं और राजगृह नगर से पैंतालीस मील (4.23 किमी) की दूरी तय करके समय रहते अपने गंतव्य पर पहुँच गईं, जहाँ उन्होंने गुरु को आदरपूर्वक प्रणाम करके अपना मामला उनके समक्ष रखा।

गुरु ने सोचा, “यद्यपि शिशु का गर्भाधान उस समय हुआ जब वह अभी भी गृहस्थ थी, फिर भी इससे गलत विश्वासियों को यह कहने का अवसर मिलेगा कि तपस्वी गौतम (बुद्ध) ने देवदत्त द्वारा निष्कासित एक भिक्षुणी से विवाह किया है। इसलिए, ऐसी बातों को रोकने के लिए, इस मामले की सुनवाई राजा और उनके दरबार के समक्ष होनी चाहिए।” अतः अगले दिन उन्होंने कोसल के राजा पसेनदी (प्रसेनजित), वरिष्ठ भिक्षु और युवा अनाथपिंडिका, महान गृहस्थ शिष्या विशाखा और अन्य प्रतिष्ठित व्यक्तियों को बुलवाया; और शाम को जब चारों वर्गों के विश्वासी - भिक्षु, भिक्षुणियां और गृहस्थ शिष्य, पुरुष और स्त्री दोनों - एकत्रित हुए, तो उन्होंने वरिष्ठ भिक्षु उपाली से कहा, “जाओ, और मेरे चारों वर्गों के शिष्यों के समक्ष इस युवा भिक्षुणी के मामले का समाधान करो।”

“यह किया जाएगा, आदरणीय महोदय,” वरिष्ठ भिक्षु ने कहा और सभा की ओर चल दिए। वहाँ वे अपने स्थान पर बैठ गए और राजा के सामने शिष्या विशाखा को बुलाया और जाँच का कार्य उन्हें सौंपते हुए कहा, “विशाखा, पहले उस महीने की सही तारीख का पता लगाओ जिस दिन इस कन्या ने संघ में प्रवेश किया था; और फिर गणना करो कि क्या उसने उस तारीख से पहले गर्भ धारण किया था या उसके बाद।” तदनुसार, उस महिला ने एक पर्दा लगवाया और कन्या के साथ उसके पीछे चली गई। दिनों और महीनों की तुलना करने पर, उस महिला ने पाया कि कन्या के नन बनने से पहले ही गर्भ धारण हो गया था। उसने यह बात वरिष्ठ भिक्षु को बताई, जिन्होंने सभा के समक्ष नन को निर्दोष घोषित किया। अब जब उसकी निर्दोषता सिद्ध हो गई थी, तो उसने आदरपूर्वक संघ और माता को प्रणाम किया और अन्य ननों के साथ अपने नन आश्रम लौट गई।

जब उनका समय आया, तो उन्हें एक बलवान पुत्र का जन्म हुआ, जिसके लिए उन्होंने युगों पूर्व बुद्ध पद्ममुत्तरा के चरणों में प्रार्थना की थी। एक दिन, जब राजा नन आश्रम के पास से गुजर रहे थे, तो उन्होंने एक शिशु के रोने की आवाज सुनी और अपने दरबारियों से इसका अर्थ पूछा। वे तथ्य जानते हुए महाराज को बताया कि यह रोने की आवाज उस बच्चे की है जिसे नन ने जन्म दिया है। राजा ने कहा, "महोदय, बच्चों की देखभाल ननों के धार्मिक जीवन में बाधा है; आइए हम इसकी जिम्मेदारी लें।" अतः राजा के आदेश पर शिशु को उनके परिवार की महिलाओं को सौंप दिया गया और उनका पालन-पोषण एक राजकुमार की तरह हुआ। जब उसका नामकरण का समय आया, तो उसका नाम कश्यप रखा गया, लेकिन राजकुमार कश्यप के रूप में जाना जाने लगा क्योंकि उसका पालन-पोषण एक राजकुमार की तरह हुआ था।

सात वर्ष की आयु में उन्हें गुरु के अधीन एक नौसिखिया के रूप में प्रवेश दिया गया, और वयस्क होने पर वे पूर्ण भिक्षु बन गए। समय बीतने के साथ-साथ वे सत्य के प्रचारकों में प्रसिद्ध होते गए। इसलिए गुरु ने उन्हें प्राथमिकता देते हुए कहा, "भाइयों, मेरे शिष्यों में वाक्पटुता में प्रथम राजकुमार कश्यप हैं।" इसके बाद, वाम्मिका सूत्र (*2) के कारण उन्होंने अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) प्राप्त किया। उनकी माता, भिक्षुणी, ने भी स्पष्ट दृष्टि प्राप्त की और परम फल प्राप्त किया। वरिष्ठ भिक्षु राजकुमार कश्यप बुद्ध की आस्था में ऐसे चमकते थे जैसे मध्य आकाश में पूर्णिमा का चंद्रमा। एक दिन दोपहर में जब तथागत (बुद्ध) भिक्षाटन से लौटकर भिक्षुओं को संबोधित

कर रहे थे, तब वे अपने सुगंधित कक्ष में चले गए। अपने संबोधन के समापन पर, भिक्षुओं ने दिन का समय या तो अपने रात्रि-आश्रय में या अपने दिन-आश्रय में बिताया, जब तक कि शाम नहीं हो गई। शाम होते ही वे सत्य के हॉल में एकत्रित हुए और इस प्रकार बोले: “भाइयों, देवदत्त, क्योंकि वह बुद्ध नहीं था और क्योंकि उसमें दान, प्रेम या करुणा नहीं थी, वह वरिष्ठ भिक्षु राजकुमार कश्यप और उनकी पूज्य माता के विनाश के निकट था। परन्तु सर्वप्रबुद्ध बुद्ध, जो सत्य के स्वामी हैं और दान, प्रेम और करुणा में परिपूर्ण हैं, ने उनके निर्वाण (मोक्ष) का मार्ग प्रशस्त किया है।” और जब वे वहाँ बैठकर बुद्ध की स्तुति कर रहे थे, तभी वे बुद्ध के पूर्ण आडंबर के साथ हॉल में प्रवेश कर गए और बैठते ही उन्होंने पूछा कि वे सब आपस में बैठकर किस विषय पर चर्चा कर रहे थे।

"आपकी खूबियों के बारे में, महोदय," उन्होंने कहा और उन्हें सब कुछ बता दिया।

उन्होंने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि तथागत (बुद्ध) ने इन दोनों के लिए निर्वाण (मोक्ष) और शरण सिद्ध की है: वे अतीत में भी इनके लिए समान थे।"

फिर, जब भाइयों ने उनसे इसका स्पष्टीकरण मांगा, तो उन्होंने वह बात प्रकट की जो पुनर्जन्म ने उनसे छिपा रखी थी।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व का जन्म एक हिरण के रूप में हुआ। जन्म के समय उनका रंग सुनहरा था; उनकी आँखें गोल रत्नों के समान थीं; उनके सींग चाँदी जैसे चमकते थे; उनका मुँह लाल कपड़े के गुच्छे के समान था; उनके चारों खुर मानो लाह से रंगे हुए थे; उनकी पूंछ याक जैसी थी; और वे एक जवान जानवर के समान बड़े थे। पाँच सौ हिरणों के साथ, वे बरगद के राजा के नाम से वन में रहते थे। उनके पास ही एक और हिरण रहता था, जिसके साथ पाँच सौ हिरणों का झुंड था, जिसका नाम शाखा हिरण था, और वह बोधिसत्व के समान सुनहरे रंग का था।

उन दिनों बनारस के राजा को शिकार का बहुत शौक था और वे हर भोजन में मांस खाते थे। प्रतिदिन वे अपने सभी नागरिकों, नगरवासियों और गाँववासियों को, उनके काम-काज में बाधा डालते हुए, इकट्ठा करते और शिकार पर जाते थे। उनकी प्रजा ने सोचा, "हमारे ये राजा तो हमारा सारा काम रोक देते हैं। मान लीजिए कि हम उनके बगीचे में हिरणों के लिए भोजन और पानी बो दें, और कुछ हिरणों को पकड़कर उन्हें अंदर बंद कर दें और राजा को सौंप दें!" इसलिए उन्होंने बगीचे में हिरणों के खाने के लिए घास बोई और पीने के लिए पानी का इंतजाम किया और द्वार चौड़ा खोल दिया। फिर उन्होंने नगरवासियों को बुलाया और हिरणों को खोजने के लिए लाठियों और हर तरह के हथियारों से लैस होकर जंगल में निकल पड़े। उन्होंने हिरणों को अपने घेरे में लेने के लिए लगभग एक लीग (4.23 किमी) जंगल को घेर लिया और इस तरह उन्होंने बरगद और शाखा हिरणों के निवास स्थान को घेर लिया। जैसे ही उन्हें हिरण दिखाई दिए, वे अपनी लाठियों से पेड़ों, झाड़ियों और ज़मीन को तब तक पीटते रहे जब तक कि हिरणों का झुंड उनके मांदों से बाहर नहीं निकल आया; फिर उन्होंने अपनी तलवारों, भालों और धनुषों को इतनी ज़ोर से बजाया कि सारे हिरण बगीचे में घुस आए और उन्होंने फाटक बंद कर दिया। फिर वे राजा के पास गए और बोले, “महाराज, आप हमेशा शिकार पर जाकर हमारे काम में बाधा डालते हैं; इसलिए हमने जंगल से इतने हिरण भगा दिए हैं कि आपका बगीचा भर जाए। अब से इन्हें खाएँ।”

इस पर राजा स्वयं उद्यान में गए और अपने झुंड को देखते हुए उन्होंने उनमें दो सुनहरे हिरण देखे, जिन्हें उन्होंने वफ़ादारी प्रदान की। कभी वे स्वयं जाकर एक हिरण का शिकार करके घर ले आते; कभी उनका रसोइया जाकर एक हिरण का शिकार करता। धनुष देखते ही हिरण जान बचाने के लिए कांपते हुए भाग जाते, परन्तु दो-तीन घाव लगने के बाद वे थककर कमजोर पड़ जाते और मारे जाते। हिरणों के झुंड ने यह बात बोधिसत्व को बताई, जिन्होंने शाखा को बुलवाया और कहा, “मित्र, हिरण बड़ी संख्या में मारे जा रहे हैं; और यद्यपि वे मृत्यु से नहीं बच सकते, कम से कम उन्हें अनावश्यक रूप से घायल न किया जाए। हिरणों को बारी-बारी से बलि के तख्ते पर भेजा जाए, एक दिन मेरे झुंड से एक, और अगले दिन तुम्हारे झुंड से एक। जिस हिरण की बारी निकले, उसे बलि के तख्ते पर सिर रखकर लेट जाना चाहिए। इस प्रकार हिरण घायल होने से बच जाएगा।” दूसरे ने सहमति जताई; और तब से जिस हिरण की बारी आती, वह बलि के तख्ते पर गर्दन रखकर लेट जाता। रसोइया जाकर केवल उसी शिकार को ले आता था जो उसका इंतजार कर रहा होता था।

एक दिन, ब्रांच के झुंड की एक गर्भवती हिरणी की पर्ची निकली। वह ब्रांच के पास गई और बोली, "हे प्रभु, मैं गर्भवती हूँ। जब मेरा बच्चा हो जाएगा, तो हम दो होंगे, बारी-बारी से। मुझे इस बार छूट दे दीजिए।" ब्रांच ने कहा, "नहीं, मैं तुम्हारी बारी नहीं दे सकता, किसी और की बारी तो नहीं। तुम्हें अपने भाग्य का फल भुगतना होगा। चली जाओ!" ब्रांच की कृपा न मिलने पर, हिरणी बोधिसत्व के पास गई और उन्हें अपनी कहानी सुनाई। बोधिसत्व ने कहा, "ठीक है; तुम चली जाओ, मैं देख लूँगा कि बारी तुम्हें छोड़ दे।" इतना कहकर वह स्वयं मृत्युदंड स्थल पर गए और तख्ते पर सिर रखकर लेट गए। उन्हें देखकर रसोइया चिल्लाया, "अरे, हिरणों का राजा तो छूट पा गया! इसका क्या मतलब है?" और वह दौड़कर राजा को बताने चला गया। जैसे ही राजा ने यह सुना, वह अपने रथ पर सवार होकर

अपने साथ बहुत से लोगों को लेकर वहाँ पहुँचे। बोधिसत्व को देखकर उसने कहा, "मेरे मित्र, हिरणों के राजा, क्या मैंने तुम्हें जीवनदान देने का वादा नहीं किया था? फिर तुम यहाँ क्यों पड़े हो?"

महाराज, मेरे पास एक गर्भवती हिरणी आई, जिसने मुझसे विनती की कि मैं उसे किसी दूसरे हिरण पर गिरने दूं; और चूंकि मैं एक का भाग्य दूसरे पर नहीं डाल सकता था, इसलिए मैंने उसके लिए अपना प्राण त्याग दिए और उसका भाग्य अपने ऊपर ले लिया, और मैं यहाँ लेट गया हूँ। महाराज, यह मत सोचिए कि इसके पीछे कोई और छुपी हुई बात है।

“हे मेरे प्रभु, हिरणों के स्वर्ण राजा,” राजा ने कहा, “मैंने मनुष्यों में भी आपके समान प्रेम, दया और करुणा से परिपूर्ण कोई नहीं देखा। इसलिए मैं आपसे प्रसन्न हूँ। उठो! मैं तुम दोनों का जीवन बख्श देता हूँ।”

“यद्यपि दो बच गए, तो शेष क्या करेंगे, हे मनुष्यों के राजा?” “मैं उनके जीवन भी बख्श देता हूँ, मेरे स्वामी।” “महाराज, केवल आपके उद्यान के हिरण ही इस प्रकार सुरक्षित रहेंगे; शेष सभी क्या करेंगे?” “मैं उनके जीवन भी बख्श देता हूँ, मेरे स्वामी।” “महाराज, हिरण तो सुरक्षित रहेंगे; परन्तु शेष चौपाये क्या करेंगे?” “मैं उनके जीवन भी बख्श देता हूँ, मेरे स्वामी।” “महाराज, चौपाये तो सुरक्षित रहेंगे; परन्तु पक्षियों के झुंड क्या करेंगे?” “वे भी बच जाएँगे, मेरे स्वामी।” “महाराज, पक्षी तो सुरक्षित रहेंगे; परन्तु जल में रहने वाली मछलियाँ क्या करेंगी?” “मैं उनके जीवन भी बख्श देता हूँ, मेरे स्वामी।”

सभी प्राणियों के जीवन के लिए राजा से प्रार्थना करने के बाद, महान बुद्ध प्रकट हुए और राजा को पंच आज्ञाओं का उपदेश देते हुए कहा, "हे महाराज, धर्म के मार्ग पर चलें। माता-पिता, बच्चों, नगरवासियों और देशवासियों के प्रति धर्म और न्याय का मार्ग अपनाएँ, ताकि इस पार्थिव शरीर के विलीन होने पर आप स्वर्ग के आनंद में प्रवेश कर सकें।" इस प्रकार, बुद्ध के विशिष्ट अनुग्रह और आकर्षण से उन्होंने राजा को सत्य का उपदेश दिया। कुछ दिनों तक वे राजा के उपदेश की प्रतीक्षा में उद्यान में रहे और फिर अपने पशुओं के साथ वन में चले गए।

और उस हिरणी ने कमल की खिलती कली के समान एक सुंदर बच्चे को जन्म दिया, जो बरगद के हिरणों के साथ खेला करता था। यह देखकर उसकी माँ ने उससे कहा, "मेरे बच्चे, उसके साथ मत जाओ, केवल बरगद के हिरणों के झुंड के साथ जाओ।" और सलाह देते हुए उसने यह श्लोक दोहराया—

इसे केवल बरगद के हिरण के साथ ही रखें।

और शाखा हिरणों के झुंड से दूर रहो; कहीं अधिक स्वागत योग्य।

क्या मृत्यु, मेरे बच्चे, बरगद के साथ है?

ब्रांच के साथ बिताए गए जीवन की सबसे समृद्ध अवधि से भी कहीं अधिक।

तब से, अब सुरक्षा का लाभ उठाते हुए हिरण मनुष्यों की फसलें खाने लगे, और मनुष्य अपनी सुरक्षा को याद रखते हुए हिरणों को मारने या भगाने की हिम्मत नहीं करते थे। इसलिए वे राजा के प्रांगण में एकत्रित हुए और राजा के समक्ष मामला रखा। राजा ने कहा, "जब बरगद के हिरण ने मेरा अनुग्रह प्राप्त किया, तो मैंने उसे एक वरदान देने का वादा किया था। मैं अपना वादा छोड़कर अपना राज्य त्याग दूँगा। चले जाओ! मेरे राज्य में कोई भी व्यक्ति हिरण को नुकसान नहीं पहुँचा सकता।"

लेकिन जब यह बात बरगद के हिरण के कानों तक पहुँची, तो उसने अपने झुंड को इकट्ठा किया और कहा, "आज से तुम दूसरों की फसलें नहीं खाओगे।" और इस प्रकार मना करने के बाद, उसने पुरुषों को संदेश भेजा, "आज से कोई भी किसान अपने खेत की बाड़ न लगाए, बल्कि केवल चारों ओर पत्ते बाँधकर उसे चिह्नित करे।" और इस तरह, हमें सुनने में आता है, खेतों को चिह्नित करने के लिए पत्ते बाँधने की योजना शुरू हुई; और तब से कोई भी हिरण कभी भी इस तरह चिह्नित खेत में घुसपैठ नहीं करता था। क्योंकि बोधिसत्व ने उन्हें यही निर्देश दिया था।

इस प्रकार बोधिसत्व ने अपने झुंड के हिरणों को उपदेश दिया, और जीवन भर उनका अनुसरण किया, और अंत में अपने कर्मों के फल के अनुसार उनके साथ ही परलोक विदा हो गए। राजा भी बोधिसत्व की शिक्षाओं का पालन करते हुए, अच्छे कर्मों में व्यतीत जीवन के बाद अपने कर्मों के फल के लिए परलोक विदा हो गए।

इस पाठ के अंत में, जब गुरु ने दोहराया कि जिस प्रकार अब और अतीत में भी वे इस जोड़े के उद्धारक थे, तब उन्होंने चार सत्यों का उपदेश दिया। फिर उन्होंने दोनों कहानियों को आपस में जोड़ते हुए संबंध समझाया और जन्म का वर्णन करते हुए कहा, "देवदत्त उन दिनों का बारहसिंगा था, और उसके अनुयायी उस बारहसिंगे का झुंड थे; भिक्षुणी हिरणी थी, और राजकुमार कश्यप उसकी संतान थे; आनंद राजा थे; और मैं स्वयं बरगद का राजा था।"

फुटनोट:

(1) शरीर की संरचना के बारे में घृणित छंदों की एक लंबी श्रृंखला को यहाँ छोड़ दिया गया है।

(2)मज्झिमा निकाय का 23वाँ सुत्त।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कंडिन-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-13-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 13
कंदिना-जातक

प्रेम के तीर पर लानत हो।

यह कथा गुरु (बुद्ध) ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें उन्होंने अपने सांसारिक जन्म की पत्नियों के कारण भिक्षुओं को हुए प्रलोभन का वर्णन किया है। इसका वर्णन इंद्रिय-जातक (*1) के आठवें खंड में किया जाएगा। भगवान बुद्ध ने भिक्षुओं से कहा, "भाई, इसी स्त्री के कारण पिछले जन्म में तुम्हारी मृत्यु हुई और तुम धधकते अंगारों पर झुलस गए।" भिक्षुओं ने भगवान बुद्ध से इसका स्पष्टीकरण मांगा। भगवान बुद्ध ने पुनर्जन्म के कारण उनसे छिपी हुई बात को स्पष्ट किया।

(अब से हम भाइयों द्वारा स्पष्टीकरण मांगने और पुनर्जन्म के कारण छिपी हुई बातों को स्पष्ट करने से संबंधित शब्दों को छोड़ देंगे; और केवल "अतीत की यह कहानी सुनाई" कहेंगे। जब केवल यही कहा जाए, तो बाकी सब कुछ ऊपर बताए अनुसार जोड़ा और दोहराया जाना चाहिए, अनुरोध, बादलों से चंद्रमा को मुक्त करने की उपमा, और पुनर्जन्म के कारण छिपी हुई बातों को स्पष्ट करना।)

बहुत समय पहले मगध राज्य में राजगृह नगर में राजा शासन कर रहे थे। फसलें तैयार होने पर हिरणों को भारी खतरों का सामना करना पड़ा, इसलिए वे जंगल में शरण लेने चले गए। जंगल में रहने वाले एक पहाड़ी हिरण को पास के एक गाँव से आई एक हिरणी से प्रेम हो गया। प्रेमवश हिरणी जंगल से लौटते समय हिरणी के साथ चलने का निश्चय कर लिया। हिरणी ने कहा, "हे महाराज, आप तो जंगल के एक साधारण हिरण मात्र हैं, और आसपास के गाँव खतरे और संकट से घिरे हुए हैं।"

इसलिए हमारे साथ नीचे मत आओ।" लेकिन उसके प्रति अपने अपार प्रेम के कारण वह रुका नहीं, बल्कि उसके साथ चला गया।

जब मगधवासियों को पता चला कि हिरणों के पहाड़ियों से नीचे आने का समय हो गया है, तो उन्होंने सड़क के किनारे घात लगा ली; और एक शिकारी ठीक उसी सड़क के किनारे घात लगाए बैठा था जहाँ से हिरणों का जोड़ा गुजर रहा था। किसी आदमी की गंध महसूस करते हुए, युवा हिरणी को शक हुआ कि कोई शिकारी घात लगाए बैठा है, और उसने हिरण को पहले जाने दिया और खुद कुछ दूरी पर उसके पीछे-पीछे चलने लगी। शिकारी ने एक ही तीर से हिरण को गिरा दिया, और हिरणी ने उसे घायल देखकर हवा की तरह भाग निकली। फिर वह शिकारी अपने छिपने की जगह से निकला और हिरण की खाल उतारकर आग जलाई और अंगारों पर उसका मीठा मांस पकाया। खाने-पीने के बाद, वह खून से लथपथ शव के बचे हुए हिस्से को अपने डंडे पर लादकर अपने बच्चों को खिलाने के लिए घर ले गया।

अब उन मिट्टी में, बोधिसत्व उसी वनक्षेत्र में रहने वाला एक परी था, और उसने देखा कि क्या हुआ था। "यह न तो पिता था और न ही माता, बल्कि केवल कामवासना ही थी जिसने इस मूर्ख हिरण का नाश किया। कामवासना का उदय आनंदमय होता है, परन्तु उसका अंत दु:ख और पीड़ा, हाथों का कष्टदायक नुकसान, और पांच प्रकार के बंधनों और मारों का कष्ट है। किसी दूसरे की मृत्यु का कारण बनना इस संसार में निंदनीय माना जाता है; वह भूमि भी निंदनीय है जिस पर स्त्री का अधिकार और शासन है; और वे पुरुष भी निंदनीय हैं जो स्त्रियों के अधीन हो जाते हैं।" और इसके साथ ही, जब वन की अन्य परियों ने प्रशंसा की और श्रद्धापूर्वक इत्र, फूल आदि भेंट किए, तो बोधिसत्व ने तीनों निंदनों को एक ही श्लोक में पिरो दिया, और इन पंक्तियों में सत्य का उपदेश देते हुए अपने मधुर स्वर से वन को गूंजने दिया।

प्रेम के उस तीर पर लानत हो जो पुरुषों को पीड़ा देता है!

उस देश पर लानत हो जहाँ महिलाओं का राज चलता है!

और उस मूर्ख पर लानत हो जो स्त्री के वश में झुकता है!

इस प्रकार एक ही श्लोक में बोधिसत्व द्वारा दी गई तीनों निंदाओं को समाहित किया गया था, और जब उन्होंने बुद्ध की पूर्ण निपुणता और गरिमा के साथ सत्य का उपदेश दिया तो जंगल गूंज उठा।

उनका प्रवचन समाप्त हुआ और गुरु ने चार सत्यों का उपदेश दिया, जिसके अंत में प्रेम में व्याकुल भाई (भिक्षु) प्रथम मार्ग के फल (सम्मोहन) में स्थापित हो गए। दो कथाएँ सुनाने के बाद, गुरु ने दोनों को जोड़ने वाले संबंध को समझाया और जन्म की पहचान बताई।

(इसके बाद, हम 'दोनों कहानियां सुनाने के बाद' शब्दों को हटा देंगे और सीधे 'संबंध समझाया...' कहेंगे; हटाए गए शब्दों को पहले की तरह ही जोड़ा जाएगा।)

"उन दिनों में," गुरु ने कहा, "प्रेम में व्याकुल भाई (भिक्षु) पर्वतीय हिरण थे; उनकी सांसारिक पत्नी युवा हिरणी थीं, और मैं स्वयं वह परी थी जो वासना के पाप को दर्शाते हुए सत्य का उपदेश देती थी।"

फुटनोट:

(1)सं. 423.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **वातामिगा-जातक**
***स्रोत** : रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-14-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 14
वातमिगा-जातक

इससे बुरा कुछ नहीं हो सकता।

यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें वरिष्ठ भिक्षु तिस्सा, जिन्हें प्रत्यक्ष भिक्षादाता कहा जाता था, का वर्णन है। परंपरा के अनुसार, जब गुरु राजगृह नगर के पास बांस के वन में रह रहे थे, तब एक धनी परिवार के वंशज, राजकुमार तिस्सा, एक दिन बांस के वन में आए और वहां गुरु का प्रवचन सुनकर भिक्षु संघ में शामिल होना चाहते थे। लेकिन माता-पिता की सहमति न मिलने पर, उन्होंने रत्थपाल (*1) के उदाहरण का अनुसरण करते हुए सात दिनों तक भोजन न करके उनकी सहमति प्राप्त की और अंततः गुरु के साथ दीक्षा ली।

इस युवक को प्रवेश देने के लगभग दो सप्ताह बाद, गुरुजी बाँस के वन से जेतवन मठ गए, जहाँ उस युवक ने तेरह प्रतिज्ञाओं (*2) का पालन किया और घर-घर जाकर भिक्षा माँगने में अपना समय व्यतीत किया। वरिष्ठ भिक्षु तिस्सा (प्रत्यक्ष भिक्षा) के नाम से वे बौद्ध धर्म में आकाश में चंद्रमा के समान तेजस्वी प्रकाश बन गए।

राजगृह नगर में इस समय एक त्योहार की घोषणा हुई थी। बड़े भिक्षु के माता-पिता ने उनके गृहस्थ जीवन में पहने जाने वाले आभूषणों को एक चांदी के डिब्बे में रखा और बहुत दुखी होकर विलाप करते हुए कहा, "अन्य त्योहारों में हमारा पुत्र यह या वह आभूषण पहनकर त्योहार मनाता था; और हमारा इकलौता पुत्र, गौतम बुद्ध, श्रावस्ती नगर ले गए हैं। हमारा पुत्र अब कहाँ बैठा है या खड़ा है?" तभी घर में आई एक दासी ने देखा कि घर की मालकिन रो रही है और उसने उससे पूछा कि वह क्यों रो रही है; मालकिन ने उसे सब कुछ बता दिया।

"महोदया, आपके बेटे को क्या पसंद था?" "अमुक चीज़," महिला ने उत्तर दिया। "अच्छा, अगर आप मुझे इस घर में अधिकार देंगी, तो मैं आपके बेटे को वापस ले आऊंगी।" "ठीक है," महिला ने सहमति जताते हुए कहा और लड़की को उसके खर्चे दिए और उसे अपने साथ कई लोगों को भेजकर कहा, "जाओ, और मेरे बेटे को वापस ले आओ।"

अतः वह कन्या पालकी (एक व्यक्ति को ले जाने वाली ढकी हुई हाथ से चलने वाली गाड़ी) में बैठकर श्रावस्ती नगर चली गई, जहाँ उसने उस गली में अपना निवास स्थान बना लिया जहाँ वह भिक्षा मांगने अक्सर आया करता था। उसने अपने सेवकों से खुद को घेर लिया और भिक्षा मांगने वाले ...

भिक्षा मांगने के अपने नियमित दौर में, उचित समय पर, वरिष्ठ भिक्षु उसके घर के दरवाजे पर आए; और उसके लोगों ने वरिष्ठ भिक्षु का कटोरा लिया और उन्हें घर में बैठा दिया।

जब वह बैठ गया, तो उसने कहा, "वह गृहस्थ शिष्या कहाँ है?" "वह बीमार है, महोदय; वह आपसे मिलकर प्रसन्न होगी।"

स्वाद की लालसा के बंधन में बंधा होने के कारण, उसने अपनी प्रतिज्ञा और कर्तव्य को तोड़ दिया और उस स्थान पर गया जहाँ वह महिला लेटी हुई थी।

फिर उसने उसे अपने आने का कारण बताया और इस प्रकार उसे वश में कर लिया कि स्वाद की लालसा के बंधन में जकड़े होने के कारण उसने उसे भिक्षु संघ (साधु संघ) छोड़ने के लिए मजबूर कर दिया; जब वह उसके वश में आ गया, तो उसने उसे पालकी में बिठाया और अपने साथ बड़ी संख्या में अनुयायियों को लेकर राजगृह नगर लौट आई।

यह सब बातें चारों ओर फैल गईं। सत्य के हॉल में बैठे भिक्षुओं ने इस मामले पर चर्चा करते हुए कहा, "महोदय, खबर है कि एक दासी ने कामुक लालसा के बंधन में बंधी हुई, वरिष्ठ भिक्षु तिस्सा द लेस, जिन्हें डायरेक्ट-आल्म्स कहा जाता है, को अगवा कर लिया है।" हॉल में प्रवेश करते हुए गुरुजी अपने रत्नजड़ित आसन पर बैठ गए और बोले, "भाइयों, इस सभा में चर्चा का विषय क्या है?" उन्होंने उन्हें घटना के बारे में बताया।

"भाइयों," उसने कहा, "यह पहली बार नहीं है कि वह स्वाद की लालसा के बंधन में पड़कर उसके वश में आ गया है; पहले भी वह इसी तरह उसके वश में आ चुका है।" और ऐसा कहते हुए उसने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, उनके यहाँ संजय नाम का एक माली था। राजा के बगीचे में एक पवन-हिरण आया, जो संजय को देखते ही भाग गया, लेकिन संजय ने उसे डराए बिना जाने दिया। कई बार आने के बाद हिरण बगीचे में घूमने लगा। माली की आदत थी कि वह फूल और फल इकट्ठा करके प्रतिदिन राजा के लिए ले जाता था। एक दिन राजा ने उससे कहा, "माली, क्या तुमने बगीचे में कुछ अजीब देखा है?" "जी, बस एक पवन-हिरण बगीचे में आया है।" "क्या तुम उसे पकड़ सकते हो?" "हाँ, बिल्कुल; अगर मेरे पास थोड़ा सा शहद होता, तो मैं उसे सीधे महाराज के महल में ले आता।"

राजा ने उस आदमी को शहद देने का आदेश दिया और वह उसे लेकर बगीचे में चला गया। वहाँ उसने सबसे पहले हिरणों के आने-जाने वाले स्थानों पर घास पर शहद छिड़का और फिर खुद को छिपा लिया। जब हिरण आया और उसने शहद लगी घास का स्वाद चखा, तो वह स्वाद के लालच में इतना फंस गया कि वह बगीचे के अलावा कहीं और नहीं गया। अपनी चाल की सफलता को देखकर माली धीरे-धीरे प्रकट होने लगा। पहले एक-दो दिन तो हिरण को देखकर वह भाग जाता था, लेकिन उसे देखकर उसका आत्मविश्वास बढ़ गया और वह धीरे-धीरे उसके हाथ से घास खाने लगा। जब उसने देखा कि जानवर का विश्वास जीत लिया गया है, तो उसने सबसे पहले टूटी

हुई शाखाओं से रास्ते को कालीन की तरह मोटा बिछा दिया; फिर अपने कंधे पर शहद से भरा एक लौकी बांधकर और अपनी कमरबंद में घास का एक गुच्छा लगाकर, वह हिरण के सामने शहद लगी घास के टुकड़े गिराता रहा, जब तक कि अंत में वह उसे महल के अंदर तक नहीं ले आया। हिरण के अंदर आते ही उन्होंने दरवाजा बंद कर दिया। आदमियों को देखते ही हिरण डर और जान के डर से कांपते हुए हॉल में इधर-उधर भागने लगा; और राजा अपने ऊपर के कमरे से नीचे आकर उस कांपते हुए प्राणी को देखकर बोला, "पवन-हिरण इतना डरपोक होता है कि पूरे एक हफ्ते तक उस जगह पर नहीं जाता जहाँ उसने किसी आदमी को देखा हो; और अगर एक बार कहीं डर भी जाए तो जीवन भर फिर कभी वहाँ नहीं जाता। फिर भी, स्वाद की लालसा में फँसकर जंगल का यह जंगली प्राणी ऐसी जगह पर आ गया है। सचमुच, मेरे मित्रों, दुनिया में स्वाद की इस लालसा से ज्यादा नीच कुछ भी नहीं है।" और उसने अपनी शिक्षा को इस श्लोक में व्यक्त किया:-

पुरुषों का कहना है कि स्वाद को फंसाने से बुरा कुछ नहीं है।

अकेले या दोस्तों के साथ। देखो! स्वाद लाजवाब था!

जिसने संजय को उस जंगली हिरण को सौंप दिया जो जंगल में भटकता रहता था।

और इन शब्दों के साथ उसने हिरण को वापस उसके जंगल में जाने दिया।

जब गुरु ने अपना पाठ समाप्त कर लिया और उस भिक्षु के बारे में अपनी कही हुई बात दोहराई कि वह अतीत और वर्तमान दोनों समय में उस स्त्री के वश में आ गया था, तो उन्होंने संबंध स्पष्ट करते हुए जन्म का वर्णन किया और कहा, "उन दिनों यह दासी संजय थी, भिक्षादाता पवन मृग था और मैं स्वयं बनारस का राजा था।"

फुटनोट:

(1) रत्थपाल-सुत्त मज्झिमा-निकाय (संख्या 83) में है,

(2) ये कर्मों पर विजय पाने के लिए पुण्यकारी तपस्वी अभ्यास हैं, जिनमें से तीसरा यह वचन है कि भिक्षु के भिक्षापात्र में दाता से सीधे प्राप्त भिक्षा के अलावा कोई भोजन नहीं करना है। अतः "टिकट-भोजन" (जातक (संख्या 5)) अस्वीकार्य था।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **खरादिया-जातक**
स्रोत : *रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-15-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 15
खराडिया-जातक

"जब कोई हिरण हो।"

यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक उद्दंड भिक्षु के बारे में सुनाई थी। परंपरा के अनुसार, यह भिक्षु उद्दंड था और उपदेश सुनने को तैयार नहीं था। इसलिए, गुरु ने उससे पूछा, "क्या यह सच है, जैसा कि लोग कहते हैं, कि तुम उद्दंड हो और उपदेश सुनने को तैयार नहीं हो?"

"यह सच है, भगवान बुद्ध," यह उत्तर मिला।

"इसी प्रकार, अतीत में," गुरु ने कहा, "तुम अनुशासनहीन थे और बुद्धिमान एवं भले लोगों की सलाह नहीं मानते थे, परिणामस्वरूप तुम एक जाल में फंस गए और तुम्हारी मृत्यु हो गई।" और ऐसा कहते हुए उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में थे, तब बोधिसत्व हिरण के रूप में पैदा हुए और जंगल में हिरणों के झुंड के मुखिया के रूप में रहते थे। उनकी बहन अपने बेटे को उनके पास लाकर बोली, "भाई, यह आपका भतीजा है; इसे हिरण की चालें सिखाइए।" इस प्रकार उसने अपने बेटे को बोधिसत्व की देखरेख में सौंप दिया। बोधिसत्व ने अपने भतीजे से कहा, "फलां समय पर आना, मैं तुम्हें सिखाऊंगा।" लेकिन भतीजा तय समय पर नहीं आया। और, जैसा उस दिन हुआ, वैसा ही सात दिनों तक उसने अपना पाठ छोड़ दिया और हिरण की चालें नहीं सीखीं; और अंत में, घूमते-घूमते वह एक जाल में फंस गया। उसकी माँ आई और बोधिसत्व से बोली, "भाई, क्या आपके भतीजे को हिरण की चालें नहीं सिखाई गईं?"

बोधिसत्व ने कहा, "उस अज्ञानी बदमाश की चिंता मत करो; तुम्हारा बेटा हिरण की चालें भी नहीं सीख पाया।" और ऐसा कहकर, उस बदमाश को उसकी जान के खतरे में भी सलाह देने की इच्छा खोकर, उन्होंने यह श्लोक दोहराया:-

जब हिरण के पास दौड़ने के लिए चार खुरों की दोगुनी संख्या होती है

और अनगिनत नुकीले सिरों से लैस शाखाओं वाले सींग,

और जब उसने सात तरकीबों से खुद को बचा लिया,

फिर मैं उसे और कुछ नहीं सिखाता, खराडिया।

लेकिन शिकारी ने फंदे में फंसे उस जिद्दी हिरण को मार डाला और उसका मांस लेकर चला गया।

जब गुरु ने भाई (भिक्षु) की अतीत और वर्तमान में अनुशासनहीनता के बारे में कही गई बातों के समर्थन में यह पाठ समाप्त किया, तो उन्होंने संबंध की व्याख्या की और जन्म की पहचान करते हुए कहा, "उन दिनों में यह अनुशासनहीन भाई (भिक्षु) भतीजा-हिरण था, उप्पला-वन्ना (*1) बहन थी, और मैं स्वयं वह हिरण था जिसने सलाह दी।"

फुटनोट:

(1) उप्पला-वन्ना थेरी (वरिष्ठ नन) को यह नाम इसलिए मिला क्योंकि उनकी त्वचा गहरे नीले कमल के हृदय के रंग जैसी थी।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **टिपल्लत्था-मिगा-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-16-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 16
TIPALLATTHA-MIGA-JATAKA

"तीनों मुद्राओं में।"

यह कहानी गुरु ने कोसंबी के बदरिका मठ में निवास करते हुए सुनाई थी, जिसमें वरिष्ठ भिक्षु राहुल के बारे में बताया गया है, जिनका हृदय भिक्षु संघ के नियमों का पालन करने में लगा हुआ था।

एक बार जब गुरुजी अलावी नगर के निकट अग्गलावा मंदिर में रह रहे थे, तब बहुत सी महिला शिष्याएँ और नन (भिक्षुणियाँ) वहाँ सत्य का उपदेश सुनने के लिए आती थीं। उपदेश दिन में होता था, लेकिन समय बीतने के साथ-साथ महिलाएँ आना बंद कर देती थीं, और केवल भिक्षु और पुरुष शिष्य ही उपस्थित रहते थे। फिर उपदेश शाम को होने लगा; और उपदेश समाप्त होने पर बड़े भिक्षु अपने-अपने कक्ष में चले जाते थे। लेकिन छोटे भिक्षु और शिष्य सेवा-कक्ष में विश्राम करने के लिए लेट गए। जब वे सो गए, तो उनके खर्राटे, घुरघुराहट और दाँत पीसने की आवाज़ें तेज़ हो गईं। थोड़ी देर की नींद के बाद कुछ भिक्षु उठे और उन्होंने भगवान बुद्ध को उस कुकर्म के

बारे में बताया जो उन्होंने देखा था। उन्होंने कहा, "यदि कोई भिक्षु नौसिखियों के साथ सोता है, तो यह पचित्त्य अपराध है (जिसके लिए पश्चात्ताप और क्षमा आवश्यक है)।" और यह आज्ञा देने के बाद वे कोसंबी चले गए।

इस पर भिक्षुओं ने पूज्य राहुल से कहा, "महोदय, भगवान बुद्ध ने यह नियम बनाया है, और अब आप कृपया अपने लिए अलग से जगह ढूंढ लें।" इससे पहले, भिक्षुओं ने पिता के प्रति आदर और पुत्र की भिक्षु संघ के नियमों का पालन करने की प्रबल इच्छा के कारण युवक का इस प्रकार स्वागत किया था मानो वह स्थान उसका ही हो; उन्होंने उसके लिए एक छोटा सा पलंग लगाया था और उसे तकिया बनाने के लिए कपड़ा दिया था। लेकिन हमारी कहानी के दिन उन्होंने उसे घर में रहने तक नहीं दिया, क्योंकि उन्हें गलत करने का इतना डर था। उत्तम राहुल न तो बुद्ध के पास पिता के रूप में गए, न ही धर्म के प्रमुख सारिपुत्र के पास गुरु के रूप में, न ही महान मोग्गल्याण के पास गुरु के रूप में, और न ही वरिष्ठ भिक्षु आनंद के पास चाचा के रूप में; बल्कि वे बुद्ध के प्रांगण में चले गए और वहाँ स्वर्गिक महल की तरह रहने लगे। बुद्ध के प्रांगण में दरवाजा हमेशा बंद रहता है; समतल फर्श सुगंधित मिट्टी का होता है; दीवारों पर फूल और मालाएँ सजी हैं; और रात भर वहाँ एक दीपक जलता रहता है। लेकिन यह वैभव ही राहुल के यहाँ निवास करने का कारण नहीं था। नहीं, बल्कि इसलिए कि भिक्षुओं ने उनसे अपने लिए रहने की जगह ढूँढ़ने को कहा था, और क्योंकि वे शिक्षा का आदर करते थे और संघ के नियमों का पालन करने के लिए उत्सुक थे। वास्तव में, समय-समय पर भिक्षु, उनकी परीक्षा लेने के लिए, जब उन्हें दूर से आते हुए देखते थे, तो एक झाड़ू या थोड़ी सी धूल फेंक देते थे, और राहुल के अंदर आने के बाद पूछते थे कि किसने फेंकी है। "राहुल उस तरफ से आया था," वे कहते थे, लेकिन भावी भिक्षु ने कभी यह नहीं कहा कि उन्हें इसके बारे में कुछ पता नहीं था। इसके विपरीत, वे कूड़ा हटाते थे और विनम्रतापूर्वक भिक्षु से क्षमा मांगते थे, और तब तक नहीं जाते थे जब तक उन्हें क्षमा का आश्वासन नहीं मिल जाता था;—वे नियमों का पालन करने के लिए इतने उत्सुक थे। और केवल इसी उत्सुकता ने उन्हें खुले मैदान में रहने के लिए प्रेरित किया।

हालांकि अभी दिन नहीं निकला था, गुरुजी खुले मैदान के द्वार पर रुके और खांसते हुए बोले, 'अहम।' पूज्य राहुल ने जवाब दिया, 'अहम।' बुद्ध ने पूछा, "कौन है?" उत्तर मिला, "मैं हूँ, राहुल।" फिर वह युवक बाहर आया और झुककर प्रणाम किया। "राहुल, तुम यहाँ क्यों सो रहे थे?" "क्योंकि मेरे पास कहीं और जाने की जगह नहीं थी। अब तक, महाराज, भिक्षुओं ने मुझ पर बहुत कृपा की है; लेकिन अब उन्हें गलती करने का इतना डर है कि वे मुझे अब और आश्रय नहीं देंगे। इसलिए, मैंने यहाँ अपना निवास स्थान बना लिया, क्योंकि मुझे लगा कि यह एक ऐसी जगह है जहाँ मैं किसी और के संपर्क में नहीं आऊँगा।"

तब गुरु ने मन ही मन सोचा, "अगर वे राहुल के साथ भी ऐसा व्यवहार करते हैं, तो संघ में शामिल किए जाने वाले अन्य युवकों के साथ वे क्या नहीं करेंगे?" और सत्य के लिए उनका हृदय प्रज्वलित हो गया। अतः उन्होंने सुबह तड़के ही भाइयों को एकत्रित किया और संघ के प्रमुख (सारिपुत्र) से इस प्रकार पूछा, "मुझे लगता है, सारिपुत्र, आपको कम से कम यह तो पता होगा कि राहुल इस समय कहाँ है?"

"नहीं, महोदय, मैं ऐसा नहीं करता/करती।"

"सारिपुत्र, राहुल आज खुले मैदान में रह रहा था। सारिपुत्र, अगर तुम राहुल के साथ ऐसा व्यवहार करोगे, तो संघ में शामिल होने वाले अन्य युवकों के साथ कैसा व्यवहार करोगे? ऐसा व्यवहार संघ में शामिल होने वालों को रोक नहीं पाएगा। भविष्य में, अपने नौसिखियों को एक-दो दिन अपने कमरे में रखो, और तीसरे दिन ही उन्हें बाहर रहने दो, और उनके रहने की जगह के बारे में अच्छी तरह जान लो।" इस शर्त के साथ गुरु ने नियम बता दिया।

सत्य के हॉल में एकत्रित होकर भिक्षुओं ने राहुल के गुणों की प्रशंसा की। “देखिए, महोदय, राहुल नियमों का पालन करने के लिए कितने तत्पर थे। जब उन्हें अपना आवास स्वयं खोजने को कहा गया, तो उन्होंने यह नहीं कहा, 'मैं बुद्ध का पुत्र हूँ; आवास से तुम्हारा क्या लेना-देना? तुम बाहर निकलो!' नहीं; उन्होंने किसी भी भिक्षु को नहीं निकाला, बल्कि स्वयं खुले मैदान में ही निवास किया।”

जब वे इस प्रकार बातें कर रहे थे, तभी गुरुजी हॉल में आए और अपने राजसी सिंहासन पर बैठते हुए बोले, "भाइयों, आप लोग किस विषय पर बात कर रहे हैं?" उत्तर आया, "महाराज, हम राहुल की नियमों का पालन करने की चिंता के बारे में बात कर रहे थे, और कुछ नहीं।"

तब गुरु ने कहा, "राहुल ने यह चिंता न केवल अभी दिखाई है, बल्कि अतीत में भी दिखाई थी, जब वह पशु के रूप में पैदा हुआ था।" और ऐसा कहते हुए उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, मगध के राजगृह नगर में एक राजा राज कर रहा था। उस समय, एक बोधिसत्व, जो जन्म से हिरण था, जंगल में हिरणों के झुंड का मुखिया बनकर रहता था। उसकी बहन अपने बेटे को उसके पास लाकर बोली, "भाई, अपने भतीजे को हिरणों की

कला सिखाओ।" बोधिसत्व ने कहा, "ज़रूर; अब जाओ, मेरे बेटे, और अमुक समय पर वापस आना।" ठीक उसी समय, जैसा उसके चाचा ने बताया था, वह युवा हिरण वहाँ पहुँच गया और हिरणों की कला सीखी।

एक दिन जब वह जंगल में घूम रहा था, तो वह एक जाल में फंस गया और एक कैदी की तरह दर्द भरी चीख निकाली। झुंड भाग निकला और माँ को उसके बेटे के पकड़े जाने की सूचना दी। वह अपने भाई के पास आई और उससे पूछा कि क्या उसके भतीजे को हिरणों की चालें सिखाई गई थीं। बोधिसत्व ने कहा, "चिंता मत करो; तुम्हारा बेटा निर्दोष है। उसने हिरणों की चालें अच्छी तरह सीख ली हैं और वह तुरंत तुम्हारे पास लौट आएगा और तुम्हें बहुत प्रसन्न करेगा।" और ऐसा कहकर उन्होंने यह श्लोक दोहराया:-

तीनों ही मुद्राओं में—पीठ के बल या करवट के बल—

आपका बेटा पारंगत है; उसे आठ खुरों का उपयोग करने का प्रशिक्षण दिया गया है (*1)

और आधी रात को छोड़कर उसकी प्यास कभी नहीं बुझती;

जब वह धरती पर लेटा होता है, तो वह निर्जीव प्रतीत होता है।

और वह केवल अपनी नाक के नीचे से ही सांस लेता है।

मेरे भतीजे को अपने प्रतिद्वंद्वियों को धोखा देने के लिए छह तरकीबें पता हैं।

इस प्रकार बोधिसत्व ने अपनी बहन को यह दिखाकर सांत्वना दी कि उसके पुत्र ने हिरणों की चालों में कितनी निपुणता प्राप्त कर ली थी। इसी बीच, फंदे में फँसने पर युवा हिरण ने कोई संघर्ष नहीं किया, बल्कि अपने पैरों को सीधा और अकड़ाकर एक तरफ लेट गया। उसने अपने खुरों के चारों ओर की ज़मीन को खुरचकर घास और मिट्टी बिखेर दी; शौच किया; अपना सिर नीचे लटका लिया; अपनी जीभ बाहर निकाल ली; अपने पूरे शरीर को लार से लथपथ कर लिया; हवा लगने से खुद को फुला लिया; अपनी आँखें ऊपर कर लीं; केवल निचले नथुने से साँस ली, ऊपरी नथुने से साँस रोक ली; और अपने आप को इतना कठोर और अकड़ा हुआ बना लिया कि वह एक लाश जैसा दिखने लगा। यहाँ तक कि चिड़ियाएँ भी उसके चारों ओर मंडरा रही थीं; और जगह-जगह कौवे बैठ गए।

शिकारी पास आया और हिरण के पेट पर हाथ से थपथपाते हुए बोला, "इसे आज सुबह जल्दी पकड़ा गया होगा; यह अभी से सड़ने लगा है।" इतना कहकर उसने हिरण के बंधन खोल दिए और मन ही मन कहा, "मैं इसे यहीं काटूंगा और इसका मांस घर ले जाऊंगा।" लेकिन जैसे ही वह आग जलाने के लिए लकड़ियाँ और पत्ते इकट्ठा करने लगा, युवा हिरण उठ खड़ा हुआ, खुद को झटका दिया, अपनी गर्दन फैलाई और तेज़ हवा के सामने उड़ते छोटे बादल की तरह तेज़ी से अपनी माँ के पास वापस चला गया।

राहुल ने अतीत में भी नियमों का पालन करने में उतनी ही चिंता दिखाई थी जितनी वर्तमान में, इस बात को दोहराते हुए गुरु ने संबंध स्थापित किया और जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "राहुल उन दिनों का युवा हिरण था, उप्पला-वन्ना उसकी माता थी और मैं उसका चाचा हिरण था।"

फुटनोट:

(1)हिरण का फटा हुआ खुर।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **मालुता-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-17-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 17
मालुत-जातक

"उजाले में हो या अंधेरे में।"

यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी। यह कथा दो भिक्षुओं के बारे में है जो वृद्धावस्था में भिक्षु संघ में शामिल हुए थे। परंपरा के अनुसार, वे कोसल देश के एक जंगल में रहते थे, और उनमें से एक का नाम 'वृद्ध अंधकार' और दूसरे का नाम 'वृद्ध प्रकाश' था। एक दिन प्रकाश ने अंधकार से पूछा, "महोदय, शीतकाल कब आता है?" अंधकार ने उत्तर दिया, "यह माह के कृष्ण पक्ष में आता है।"

चूंकि वे दोनों मिलकर भी इस प्रश्न का उत्तर नहीं दे सके, इसलिए वे गुरु के पास गए और विधिपूर्वक अभिवादन करते हुए पूछा, "महोदय, सर्दी कब प्रकट होती है?"

गुरु ने उनकी बातें सुनने के बाद कहा, "भाइयों, बीते दिनों में भी मैंने तुम्हारे लिए इसी प्रश्न का उत्तर दिया था; परन्तु तुम्हारे पिछले जन्म तुम भूल चुके हो।" और ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, एक पर्वत की तलहटी में, एक ही गुफा में दो मित्र, एक शेर और एक बाघ, साथ रहते थे। बोधिसत्व भी उसी पर्वत की तलहटी में एक तपस्वी के रूप में निवास करते थे।

एक दिन दो मित्रों के बीच सर्दी को लेकर बहस छिड़ गई। बाघ ने कहा कि महीने के कृष्ण पक्ष में ठंड होती है, जबकि शेर का कहना था कि शुक्ल पक्ष में ठंड होती है। जब दोनों मिलकर भी इस प्रश्न का उत्तर नहीं दे पाए, तो उन्होंने इसे बोधिसत्व के समक्ष रखा। उन्होंने यह श्लोक दोहराया—

प्रकाशमय या अंधकारमय भाग में, जब भी हवा चले

हवा चली, ठंड है। क्योंकि ठंड हवा के कारण ही होती है।

इसलिए, मैं यह निष्कर्ष निकालता हूँ कि आप दोनों सही हैं।

इस प्रकार बोधिसत्व ने उन मित्रों के बीच सुलह कराई।

जब गुरु ने अतीत में इसी प्रश्न का उत्तर देने के अपने कथन के समर्थन में अपना पाठ समाप्त किया, तो उन्होंने चार सत्यों का उपदेश दिया, जिसके अंत में दोनों वरिष्ठ भिक्षुओं ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) का फल प्राप्त किया।

गुरु ने संबंध की व्याख्या करते हुए जन्म की पहचान बताई और कहा, "उन दिनों का बाघ अंधकारमय था, सिंह प्रकाश था, और मैं स्वयं वह तपस्वी था जिसने प्रश्न का उत्तर दिया।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **मटकभट्ट-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-18-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 18
माताकभट्ट-जातक

"काश लोगों को पता होता।"

यह कहानी गुरुजी ने जेतवन मठ में मृतकों के लिए आयोजित भोज के बारे में सुनाई थी। उस समय लोग बकरियों, भेड़ों और अन्य जानवरों को मारकर मृतकों के लिए भोज के रूप में चढ़ा रहे थे, ताकि अपने दिवंगत परिजनों की याद में उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित कर

सकें। जब उन्होंने गुरुजी को ऐसा करते देखा, तो उन्होंने उनसे पूछा, "हे गुरुजी, अभी लोग बहुत से जीवित प्राणियों की बलि देकर उन्हें मृतकों के लिए भोज के रूप में चढ़ा रहे हैं। क्या इसमें कोई अच्छाई है?"

“नहीं, भिक्षुओं,” गुरु ने उत्तर दिया; “यहाँ तक कि मृतकों के लिए भोज आयोजित करने के उद्देश्य से भी प्राण त्यागने से कोई लाभ नहीं होता। अतीत में, ज्ञानियों ने आकाश में रहकर सत्य का उपदेश दिया और इस प्रथा के बुरे परिणामों को दर्शाते हुए समस्त महाद्वीप को इसका त्याग करने के लिए प्रेरित किया। परन्तु अब, जब उनके पूर्व जन्मों का ज्ञान उनके मन में लुप्त हो गया है, तो यह प्रथा पुनः प्रकट हो गई है।” और ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्याभिषेक हो रहा था, तब एक ब्राह्मण, जो तीनों वेदों में पारंगत और विश्व प्रसिद्ध शिक्षक थे, ने मृतकों के लिए भोज आयोजित करने का विचार किया। उन्होंने एक बकरी मंगवाई और अपने शिष्यों से कहा, "मेरे पुत्रों, इस बकरी को नदी तक ले जाओ और इसे नहलाओ; फिर इसके गले में एक माला डालो, इसे एक बर्तन अनाज खाने को दो, थोड़ा संवार लो और वापस ले आओ।"

“बहुत अच्छा,” उन्होंने कहा और बकरी को नदी के किनारे ले गए, जहाँ उन्होंने उसे नहलाया-धुलाया और किनारे पर बिठा दिया। बकरी को अपने पिछले जन्मों के कर्मों का एहसास हुआ और यह सोचकर वह अत्यंत प्रसन्न हुई कि आज ही के दिन वह अपने सभी कष्टों से मुक्त हो जाएगी, और वह ज़ोर से हँसी जैसे कोई घड़ा टूट गया हो। फिर यह सोचकर कि ब्राह्मण उसे मारकर अपने कष्टों को सहेगा, बकरी को ब्राह्मण पर बहुत दया आई और वह ज़ोर-ज़ोर से रोने लगी। “मित्र बकरी,” युवा ब्राह्मणों ने कहा, “तुम्हारी आवाज़ हँसते और रोते दोनों समय बहुत ऊँची रही है; तुम्हें हँसी क्यों आई और रोना क्यों आया?”

"अपना प्रश्न अपने गुरु के समक्ष मुझसे पूछें।"

तो वे बकरी के साथ अपने मालिक के पास आए और उसे सारी बात बताई। उनकी कहानी सुनने के बाद, मालिक ने बकरी से पूछा कि वह क्यों हंस रही थी और क्यों रो रही थी। इस पर उस जानवर ने अपने पूर्व जन्मों को याद करते हुए ब्राह्मण से कहा, “हे ब्राह्मण, बीते समय में मैं भी आपकी ही तरह वेदों के रहस्यवादी ग्रंथों का ज्ञाता ब्राह्मण था। मैंने मृतकों के लिए भोज अर्पित करने हेतु एक बकरी का वध किया था। उस एक बकरी के वध के कारण मेरा सिर पाँच सौ बार काटा गया, सिवाय एक बार के। यह मेरा पाँच सौवाँ और अंतिम जन्म है। यह सोचकर मैं हँस पड़ा कि आज ही मैं अपने दुखों से मुक्त हो जाऊँगा। वहीं दूसरी ओर, यह सोचकर मेरा रोना फूट पड़ा कि बकरी को मारने के कारण पाँच सौ बार सिर कटने का श्राप मुझे मिला था, जबकि आज मुझे अपने दुखों से मुक्ति मिल रही है। वहीं, मुझे मेरे वध के दंड स्वरूप मेरी ही तरह पाँच सौ बार सिर कटने का श्राप मिलेगा। इसलिए, तुम्हारे प्रति करुणावश ही मैं रोया।” ब्राह्मण ने कहा, “डरो मत, बकरी; मैं तुम्हें नहीं मारूँगा।” “यह क्या कह रहे हो, ब्राह्मण?” बकरी ने कहा। “चाहे तुम मुझे मारो या न मारो, मैं आज मृत्यु से नहीं बच सकता।” “डरो मत, बकरी; मैं तुम्हारी रक्षा के लिए तुम्हारे साथ चलूंगा।” “तुम्हारी रक्षा कमजोर है, ब्राह्मण, और मेरे कर्मों की शक्ति प्रबल है।”

बकरी को आज़ाद करते हुए ब्राह्मण ने अपने शिष्यों से कहा, "हम किसी को भी इस बकरी को मारने नहीं देंगे।" और युवकों के साथ वह बकरी के पीछे-पीछे चलने लगा। जैसे ही बकरी को आज़ाद किया गया, उसने चट्टान की चोटी के पास उगी झाड़ी की पत्तियाँ चरने के लिए अपनी गर्दन आगे बढ़ाई। उसी क्षण बिजली गिरी और चट्टान से एक बड़ा टुकड़ा टूटकर बकरी की गर्दन पर लगा, जिससे उसका सिर धड़ से अलग हो गया। और लोग वहाँ जमा हो गए।

उन दिनों बोधिसत्व ने उसी स्थान पर वृक्ष-परी के रूप में जन्म लिया था। अपनी अलौकिक शक्तियों से वे अब वायु में पालथी मारकर बैठ गए, जबकि समस्त भीड़ उन्हें देख रही थी। मन ही मन सोचते हुए, 'यदि ये प्राणी केवल बुराई के फल को जान लें, तो शायद वे हत्या करना छोड़ दें,' उन्होंने मधुर स्वर में उन्हें इस श्लोक में सत्य का उपदेश दिया:-

अगर लोगों को पता होता कि सजा क्या होगी

दुःख से जन्म, जीवन का अंत हो जाएगा

जान लेने से ही हत्यारे का अंत कठोर होता है।

इस प्रकार उस महान सत्ता ने सत्य का उपदेश दिया, जिससे श्रोता नरक के भय से भयभीत हो गए; और लोग उन्हें सुनकर नरक के भय से इतने भयभीत हो गए कि उन्होंने प्राण त्याग दिए। बोधिसत्व ने सत्य का उपदेश देकर लोगों को आज्ञाओं का पालन करना सिखाया

और फिर अपने कर्मों के फल के लिए परलोक चले गए। लोग भी बोधिसत्व की शिक्षाओं में लीन रहे और अपना जीवन दान-पुण्य और अन्य अच्छे कार्यों में व्यतीत किया, जिससे अंत में वे देवों के नगर (देवदूतों के नगर) में आबाद हो गए।

उनका पाठ समाप्त होने पर, गुरु ने संबंध समझाया और जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "उन दिनों मैं वृक्ष-परी थी।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **अयाचितभट्ट-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-19-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 19
अयचितभट्ट-जातक

"परलोक के बारे में सोचो।"

यह कथा गुरुजी ने जेतवन मठ में सुनाई थी, जिसमें देवताओं को मन्नत के तहत बलि देने की बात कही गई थी। परंपरा के अनुसार, उन दिनों लोग व्यापार के सिलसिले में यात्रा पर जाते समय जीवित प्राणियों को मारकर देवताओं को बलि चढ़ाते थे और यह मन्नत मांगकर विदा लेते थे, "यदि हम लाभ के साथ सुरक्षित लौट आए, तो हम आपको एक और बलि देंगे।" और जब वे लाभ के साथ सुरक्षित लौट आते थे, तो यह सोचकर कि यह सब देवताओं की कृपा से हुआ है, वे कई जीवित प्राणियों को मारकर बलि चढ़ा देते थे ताकि उनकी मन्नत पूरी हो जाए।

जब भिक्षुओं को इस बात का पता चला, तो उन्होंने भगवान बुद्ध से पूछा, "हे प्रभु, क्या इसमें कोई अच्छाई हो सकती है?"

भगवान बुद्ध ने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले काशी देश में एक छोटे से गाँव के एक उच्च अधिकारी के सहायक ने गाँव के प्रवेश द्वार पर स्थित बरगद के वृक्ष की परी को बलि चढ़ाने का वचन दिया। बाद में जब वह लौटा, तो उसने कई जीवों को मार डाला और अपने वचन से मुक्ति पाने के लिए वृक्ष की परी के पास गया। लेकिन वृक्ष की परी, वृक्ष की शाखाओं के बीच खड़ी होकर, यह श्लोक दोहराने लगी:-

जब आप अपनी आकांक्षाओं की तलाश करें तो परलोक के बारे में सोचें।

'रिहाई'; क्योंकि यह रिहाई कठोर बंधन है।

बुद्धिमान और भले लोग इस प्रकार स्वयं को मुक्त नहीं करते;

इसके लिए, मूर्ख की मुक्ति, बंधन में ही समाप्त होती है।

तब से मनुष्यों ने इस प्रकार जीवन लेने से परहेज किया और धार्मिकता के मार्ग पर चलकर देवों (देवदूतों) के नगर में भीड़ जमा कर ली।

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने संबंध की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "मैं उन दिनों की वृक्ष-परी थी।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **नापापान-जातक**

स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-20-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 20
नलपना-जातक

मुझे पैरों के निशान मिल गए।

यह कहानी गुरुजी ने कोसला में भिक्षा मांगने के लिए तीर्थयात्रा करते समय सुनाई थी, जब वे नलका-पना (गन्ने का पानी) गाँव में आए थे और नलका-पना कुंड के पास केतक-वन में रह रहे थे। उन्होंने गन्ने की छड़ियों के बारे में बताया। उन दिनों भिक्षु नलका-पना कुंड में स्नान करने के बाद नौसिखियों से सुई रखने के लिए गन्ने की छड़ियाँ लाने को कहते थे (*1), लेकिन जब उन्होंने देखा कि वे पूरी तरह से खोखली हैं, तो वे गुरुजी के पास गए और बोले, "गुरुजी, हमने सुई रखने के लिए गन्ने की छड़ियाँ मंगवाई थीं; और वे ऊपर से नीचे तक पूरी तरह खोखली हैं। अब ऐसा कैसे हो सकता है?"

“भाइयों,” गुरु ने कहा, “बीते समय में मेरा यही नियम था।” और ऐसा कहते हुए उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

हमें बताया जाता है कि पुराने समय में इस स्थान पर एक घना जंगल था। और यहाँ एक झील थी जिसमें एक जल-राक्षस रहता था जो पानी में उतरने वाले हर किसी को खा जाता था। उन दिनों बोधिसत्व ने वानरों के राजा के रूप में जन्म लिया था और वे लाल हिरण के बच्चे जितने बड़े थे; वे उस जंगल में लगभग अस्सी हजार वानरों के झुंड के मुखिया के रूप में रहते थे और उनकी रक्षा करते थे। उन्होंने अपने अनुयायियों को सलाह दी: "मेरे मित्रों, इस जंगल में विषैले पेड़ और राक्षसी झीलें हैं। कोई भी फल खाने या पानी पीने से पहले मुझसे अवश्य पूछ लेना, चाहे वह आपने पहले कभी न खाया हो।" "ज़रूर," उन्होंने तुरंत कहा।

एक दिन वे एक ऐसी जगह पर पहुँचे जहाँ वे पहले कभी नहीं गए थे। दिनभर की यात्रा के बाद पीने के लिए पानी की तलाश करते हुए वे इस झील के पास पहुँचे। लेकिन उन्होंने पानी नहीं पिया; इसके विपरीत वे बोधिसत्व के आने की प्रतीक्षा में बैठ गए।

जब वह आया तो उसने कहा, "अच्छा, मेरे दोस्तों, तुम लोग क्यों नहीं पीते?"

"हम आपके आने का इंतजार कर रहे थे।"

“बिल्कुल सही, मेरे मित्रों,” बोधिसत्व ने कहा। फिर उन्होंने झील का चक्कर लगाया और चारों ओर बने पदचिह्नों का बारीकी से निरीक्षण किया। उन्होंने पाया कि सभी पदचिह्न पानी में ही जा रहे थे और कोई भी ऊपर नहीं आ रहा था। “निस्संदेह,” उन्होंने मन ही मन सोचा, “यह किसी राक्षस का निवास स्थान है।” इसलिए उन्होंने अपने अनुयायियों से कहा, “मेरे मित्रों, इस जल को न पीने का आपका निर्णय बिल्कुल सही है; क्योंकि इस झील में एक राक्षस का वास है।”

जब जल-राक्षस को यह अहसास हुआ कि वे उसके क्षेत्र में प्रवेश नहीं कर रहे हैं, तो उसने नीले पेट, सफेद चेहरे और चमकीले लाल हाथों और पैरों वाले एक भयानक राक्षस का रूप धारण कर लिया; इस रूप में वह जल से बाहर आया और बोला, "तुम यहाँ क्यों बैठे हो? झील में उतरकर पानी पियो।" लेकिन बोधिसत्व ने उससे कहा, "क्या तुम इस जल के राक्षस नहीं हो?" "हाँ, मैं हूँ," उत्तर था। "क्या तुम इस जल में उतरने वाले सभी को अपना शिकार बनाते हो?" "हाँ, मैं बनाता हूँ; छोटे पक्षियों से लेकर ऊपर तक, जो भी मेरे जल में उतरता है, मैं उसे कभी नहीं छोड़ता। मैं तुम सबको भी खा जाऊँगा।" "लेकिन हम तुम्हें हमें खाने नहीं देंगे।" "बस पानी पी लो।" "हाँ, हम पानी पिएंगे, और फिर भी तुम्हारे वश में नहीं आएंगे।" "तो फिर तुम पानी कैसे पीने का इरादा रखते हो?" "अरे, आपको लगता है कि हमें पानी पीने के लिए पानी में उतरना पड़ेगा; जबकि हम पानी में बिल्कुल नहीं उतरेंगे, बल्कि हम सभी अस्सी हजार लोग एक-एक छड़ी लेकर आपकी झील से ऐसे पानी पिएंगे जैसे कमल के खोखले डंठल से आसानी से पानी पी सकते हैं। और इस तरह आप हमें खा नहीं पाएंगे।" और उन्होंने निम्नलिखित श्लोक का उत्तरार्ध दोहराया (प्रथम भाग गुरु ने बुद्ध के रूप में घटना को याद करते हुए जोड़ा था):-

मैंने देखा कि सारे पदचिह्न नीचे की ओर जा रहे थे, कोई भी वापस नहीं आ रहा था।

हम डंडों से पिएंगे; तुम मेरी जान नहीं ले सकते।

ऐसा कहकर बोधिसत्व ने एक छड़ी मंगवाई। फिर, अपने द्वारा प्रदर्शित दस सिद्धियों को याद करते हुए, उन्होंने उनका दृढ़तापूर्वक पाठ किया (*2), और छड़ी को फूंक मारकर गिरा दिया। तुरंत ही छड़ी पूरी तरह खोखली हो गई, उसकी पूरी लंबाई में एक भी गांठ नहीं बची। इसी प्रकार उन्होंने एक-एक करके और छड़ियां मंगवाईं और उन्हें भी फूंक मारकर गिरा दिया। (पर यदि ऐसा होता, तो वे कभी भी अपना कार्य पूरा नहीं कर पाते; और इसलिए ऊपर उल्लिखित वाक्य को इस शाब्दिक अर्थ में नहीं समझा जाना चाहिए।) इसके बाद बोधिसत्व ने झील का चक्कर लगाया और आज्ञा दी, "यहाँ उगने वाली सभी छड़ें पूरी तरह खोखली हो जाएं।" अब, बोधिसत्वों के असाधारण सद्गुणों के कारण, उनकी आज्ञाएँ हमेशा पूरी होती हैं। और तब से उस झील के चारों ओर उगने वाली प्रत्येक छड़ी पूरी तरह खोखली हो गई।

(इस कल्प (या युग) में चार चमत्कार हैं जो पूरे युग तक बने रहते हैं। वे चार क्या हैं? वे हैं - पहला, चंद्रमा में खरगोश का चिन्ह (*3), जो पूरे युग तक बना रहेगा; दूसरा, वट्टक जातक (*4) में वर्णित वह स्थान जहाँ आग बुझाई गई थी, जो पूरे युग में अग्नि से अछूता रहेगा; तीसरा, घटिकारा के घर के स्थान पर इस युग के दौरान कभी वर्षा नहीं होगी; और तीसरा, इस झील के चारों ओर उगने वाले सरकंडे पूरे युग में खोखले रहेंगे। इन्हें चार युग-चमत्कार कहा जाता है।)

यह आदेश देने के बाद, बोधिसत्व अपने हाथों में छड़ी लेकर बैठ गए। बाकी सभी अस्सी हजार बंदर भी झील के चारों ओर बैठ गए, हर एक के हाथ में छड़ी थी। और जिस क्षण बोधिसत्व ने अपनी छड़ी से पानी पिया, उसी क्षण वे सभी किनारे पर बैठे-बैठे उसी प्रकार पानी पीने लगे। इस प्रकार पानी पीने से जल-राक्षस उनमें से किसी को भी नहीं पकड़ सका; इसलिए वह क्रोधित होकर अपने निवास स्थान पर चला गया। बोधिसत्व भी अपने अनुयायियों के साथ जंगल में वापस चले गए।

जब गुरु ने अपना पाठ समाप्त कर लिया और अपने द्वारा कही गई बात को दोहराया कि बेंत का खोखला होना उनके अपने पूर्व विधान का परिणाम है, तो उन्होंने संबंध स्पष्ट किया और जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "देवदत्त उन दिनों का जल-राक्षस था; मेरे शिष्य अस्सी हजार बंदर थे; और मैं संसाधनों से भरपूर बंदरों का राजा था।"

फुटनोट:

(1) विनय (नियमों) में, बुद्ध बांस से बने सुई के खोल के उपयोग की अनुमति देते हैं।

(2) शाब्दिक रूप से "सत्य-कार्य किया"। यदि यह इरादे से किया जाता है, तो तुरंत एक चमत्कार होता है। तुलना करें क्रमांक (35)

(3) जातक क्रमांक 316 देखें।

(4)सं. (35).

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कुरुंग-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-21-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 21
कुरुंगा-जातक

"हिरण को यह बात अच्छी तरह पता है।"

यह कहानी गुरु ने बांस के वन में देवदत्त के बारे में सुनाई थी। एक बार जब भिक्षु (भाई) सत्य के हॉल में एकत्रित हुए, तो वे देवदत्त की निंदा करते हुए बातें कर रहे थे, "महोदय, बुद्ध को नष्ट करने के उद्देश्य से देवदत्त ने धनुर्धारियों को किराए पर लिया, एक चट्टान फेंकी और धनपालक हाथी को छोड़ दिया; वह हर तरह से ज्ञान के स्वामी (बुद्ध) को मारने का प्रयास कर रहा है (*1)।" गुरु ने हॉल में प्रवेश

किया और अपने लिए तैयार आसन पर बैठते हुए पूछा, “महोदय, आप लोग यहाँ किस विषय पर चर्चा कर रहे हैं?” उत्तर मिला, “महोदय, हम देवदत्त की दुष्टता पर चर्चा कर रहे थे, कि वह हमेशा आपको मारने का प्रयास करता रहता है।” गुरु ने कहा, “भाइयों, केवल आज ही देवदत्त मुझे मारने का प्रयास नहीं कर रहा है; वह पहले भी इसी इरादे से प्रयास करता था, परन्तु मुझे मार नहीं सका।” और ऐसा कहते हुए उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व ने एक हिरण के रूप में जन्म लिया और जंगल में अपनी यात्राओं के दौरान फल खाकर अपना जीवन यापन करते थे।

एक समय वह सेपन्नी वृक्ष के फल खाकर अपना जीवन यापन करते थे। गाँव में एक शिकारी रहता था, जो पेड़ों पर चबूतरा बनाकर हिरणों के पदचिह्न देखकर ऊपर से उनके फल खाने आने का इंतज़ार करता था। जब हिरण आते, तो वह भाले से उन्हें मार गिराता और उनका मांस बेचकर अपना गुजारा करता था। एक दिन उस शिकारी ने बोधिसत्व के पदचिह्न पेड़ के नीचे देखे और उसने भी शाखा पर एक चबूतरा बना लिया। सुबह जल्दी नाश्ता करके वह अपने भाले के साथ जंगल में गया और चबूतरे पर बैठ गया। बोधिसत्व भी सुबह जल्दी उस पेड़ का फल खाने आए; लेकिन उन्हें पेड़ के पास जाने की कोई जल्दी नहीं थी। उन्होंने मन ही मन सोचा, "कभी-कभी ये चबूतरा बनाने वाले शिकारी शाखाओं पर चबूतरे बना लेते हैं। क्या यह कुटिया यहीं बनी होगी?" और वह कुछ दूर रुककर स्थिति का जायजा लेने लगे। बोधिसत्व के न आने पर शिकारी, जो अभी भी अपने ऊंचे चबूतरे पर बैठा था, ने हिरण के सामने फल फेंक दिए। हिरण ने मन ही मन कहा, "देखो, फल मुझसे मिलने आ रहे हैं; पता नहीं ऊपर कोई शिकारी है या नहीं।" उसने तब तक देखा, जब तक उसे पेड़ पर बैठा शिकारी दिखाई नहीं दिया; लेकिन, जैसे उसने उस आदमी को न देखा हो, उसने चिल्लाकर कहा, "हे मेरे पूजनीय वृक्ष, अब तक तुम अपने फलों को लटकती लता की तरह सीधे जमीन पर गिराते रहे हो; लेकिन आज तुमने वृक्ष की तरह व्यवहार करना छोड़ दिया है। इसलिए, जैसे तुमने वृक्ष के अनुरूप व्यवहार करना छोड़ दिया है, मुझे भी बदलना होगा और दूसरे पेड़ के नीचे भोजन खोजना होगा।" और ऐसा कहते हुए, उसने यह श्लोक दोहराया:-

हिरण आपके द्वारा गिराए गए फलों को अच्छी तरह पहचानता है।

मुझे यह पसंद नहीं है; मैं कोई दूसरा पेड़ ढूंढूंगा।

तब शिकारी ने अपने चबूतरे से बोधिसत्व पर भाला फेंका और चिल्लाया, "चले जाओ! इस बार मेरा निशाना चूक गया।" बोधिसत्व घूमकर रुके और बोले, "हे मेरे भले मनुष्य, भले ही तुम्हारा निशाना चूक गया हो; लेकिन यकीन मानो, तुम्हें अपने कर्मों का फल अवश्य मिलेगा, अर्थात् आठ बड़े और सोलह छोटे नरक तथा सभी पाँच प्रकार के बंधन और यातनाएँ।" ये शब्द सुनकर हिरण उछलकर अपने रास्ते चला गया; और शिकारी भी नीचे उतरकर अपने रास्ते चला गया।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया और देवदत्त द्वारा अतीत में भी उन्हें जान से मारने के प्रयास के बारे में जो कहा था उसे दोहराया, तो उन्होंने संबंध स्पष्ट करते हुए जन्म की पहचान बताई और कहा, "देवदत्त उन दिनों का मंच-शिकारी था, और मैं स्वयं मृग था।"

फुटनोट:

(1) देवदत्त द्वारा गौतम बुद्ध की हत्या का प्रयास। हाथी का नाम भी नालगिरी है।

जातक क्रमांक 22

कुक्कुरा-जातक

"राजमहल में पलने वाले कुत्ते।"

--यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें परिवार के हित के लिए कार्य करने के बारे में बताया गया था, जैसा कि भद्दसला-जातक (*1) के बारहवें खंड में बताया जाएगा। इसी बात को पुष्ट करने के लिए उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई थी।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, बोधिसत्व के एक पिछले कर्म के फलस्वरूप उनका जन्म एक कुत्ते के रूप में हुआ और वे सैकड़ों कुत्तों के बीच एक विशाल कब्रिस्तान में रहने लगे।

एक दिन राजा अपने राजसी रथ में बैठकर, जो दूध जैसे सफेद घोड़ों द्वारा खींचा जा रहा था, अपने उद्यान के लिए निकले। दिनभर उद्यान में आनंद लेने के बाद वे सूर्यास्त के समय शहर लौट आए। रथ का लगाम वे आंगन में ही छोड़ आए थे, जो रथ से जुड़ा हुआ था। रात में बारिश हुई और लगाम भीग गया। इसके अलावा, राजा के कुत्ते ऊपरी कमरों से नीचे आए और रथ के चमड़े और पट्टियों को कुतर दिया। अगले दिन उन्होंने राजा से कहा, "महाराज, कुत्ते नाले के मुँह से अंदर घुस आए हैं और आपके रथ के चमड़े और पट्टियों को कुतर दिया है।" कुत्तों पर क्रोधित होकर राजा ने कहा, "जो भी कुत्ता दिखे, उसे मार डालो।" तब कुत्तों का बड़े पैमाने पर नरसंहार शुरू हुआ; और जब उन जीवों ने देखा कि उन्हें देखते ही मार दिया जा रहा है, तो वे बोधिसत्व के पास कब्रिस्तान गए। बोधिसत्व ने पूछा, "इतनी बड़ी संख्या में यहाँ आने का क्या अर्थ है?" उन्होंने कहा, "राजा को यह खबर सुनकर इतना गुस्सा आया है कि राजमहल परिसर में कुत्तों ने उनकी गाड़ी के चमड़े और पट्टियों को कुतर दिया है, कि उन्होंने सभी कुत्तों को मारने का आदेश दे दिया है। कुत्तों को बड़े पैमाने पर मारा जा रहा है, और बड़ा खतरा पैदा हो गया है।"

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, बोधिसत्व के एक पूर्व कर्म के अवशेष उनका जन्म कुत्ते के रूप में हुआ और वे सैकड़ों गिरोह के मुखिया के रूप में एक विशाल कब्रिस्तान में रहने लगे।

एक दिन, राजा अपने राजसी रथ पर सवार होकर, जो दूध की तरह सफेद रथ निकालकर निकाला जाता था, अपने बगीचे के लिए निकल रहा था और दिन भर बगीचे में आनंद लेने के बाद सूरज के शहर में वापस आ गया। रथ का स्थान वे बैलून में ही छोड़ आए थे, जो रथ से गिर गया था। रात में बारिश हुई और लगम भीग गई। इसके अलावा, राजा के कुत्ते के ऊपरी दर्शन से नीचे और रथों की इमारतों और मूर्तियों को कुतर दिया गया। अगले दिन उन्होंने राजा से कहा, "महाराज, कुत्ता गाड़ी के मुँह से अन्दर घुस आया है और तुम्हारे रथ के रथ और आभूषण को कुतर दिया है।" चित्रा पर क्रोधित अभिनय राजा ने कहा, "जो भी कुत्ते की गोली है, उसे मार डालो।" तब हुआ एक बड़ा नरसंहार शुरू हुआ; जब उन अपराधियों ने देखा कि उन्हें देखते ही मार दिया जाता है, तो वे बोधिसत्व के पास श्मशान में चले गये। उन्होंने पूछा, "इतनी बड़ी संख्या में यहां आने का क्या मतलब है?" उन्होंने कहा, "राजा को यह खबर सुनकर बहुत गुस्सा आया है कि राजमहल परिसर में मूर्तियों ने अपने रथों की मूर्तियां और मूर्तियां बनाने का आदेश दिया है, कि उन्होंने सभी मूर्तियों को मारने का आदेश दिया है। बड़े पैमाने पर मूर्तियां बनाई जा रही हैं, और एक बड़ा खतरा पैदा हो गया है।" बोधिसत्व ने मन ही मन सोचा, "इतनी कड़ी निगरानी वाली जगह में बाहर से कोई कुत्ता कैसे घुस सकता है? यह काम महल के अंदर मौजूद बेहतरीन नस्ल के कुत्तों ने ही किया होगा। फिलहाल असली दोषियों को कोई सज़ा नहीं मिल रही, जबकि निर्दोषों को मौत की सज़ा दी जा रही है। अगर मैं राजा को दोषियों के बारे में बता दूं और इस तरह अपने मित्रों और परिवार की जान बचा लूं तो क्या होगा?" उन्होंने अपने परिवार को दिलासा देते हुए कहा, "चिंता मत करो; मैं तुम्हें बचा लूंगा। तुम यहीं इंतज़ार करो जब तक मैं राजा से न मिल लूं।"

फिर, प्रेम के विचारों से प्रेरित होकर और दस सिद्धियों का स्मरण करते हुए, वह अकेले ही नगर में प्रवेश कर गए और आदेश दिया, "कोई भी मुझ पर लाठी या पत्थर फेंकने के लिए हाथ न उठाए।" तदनुसार, जब वह प्रकट हुए, तो उन्हें देखकर कोई भी क्रोधित नहीं हुआ।

इसी बीच राजा ने कुत्तों को मारने का आदेश देकर न्याय कक्ष में अपना आसन ग्रहण कर लिया था। तभी बोधिसत्व दौड़ते हुए राजा के सिंहासन के नीचे कूद पड़े। राजा के सेवकों ने उन्हें बाहर निकालने का प्रयास किया, लेकिन महाराज ने उन्हें रोक दिया। थोड़ा सा हौसला पाकर बोधिसत्व सिंहासन के नीचे से बाहर आए और राजा को प्रणाम करते हुए बोले, "क्या आप ही इन कुत्तों को मरवा रहे हैं?" "जी हाँ, मैं ही।" "हे मनुष्यों के राजा, इनका क्या कसूर है?" "ये मेरे रथ के पट्टे और चमड़े को कुतर रहे थे।" "क्या आप उन कुत्तों को जानते हैं जिन्होंने वास्तव में ये शरारत की है?" "नहीं, मैं नहीं जानता।" "लेकिन महाराज, यदि आप असली अपराधियों को निश्चित रूप से नहीं जानते, तो हर कुत्ते को मारने का आदेश देना उचित नहीं है।" "कुत्तों ने मेरे रथ का चमड़ा कुतर दिया था, इसीलिए मैंने उन सभी को मारने का आदेश दिया था।" "क्या आपके लोग बिना किसी अपवाद के सभी कुत्तों को मार डालते हैं; या कुछ कुत्तों को बख्श दिया जाता है?" "कुछ बच गए हैं, मेरे महल के शुद्ध नस्ल के कुत्ते।" "महाराज, अभी आप कह रहे थे कि आपने सभी कुत्तों को, जहाँ कहीं भी मिलें, मारने का आदेश दिया है, क्योंकि कुत्तों ने आपके रथ का चमड़ा कुतर दिया था; जबकि अब आप कहते हैं कि आपके महल के शुद्ध

नस्ल के कुत्ते मौत से बच गए। इसलिए आप पक्षपात, घृणा, अज्ञानता और भय के चार बुरे रास्तों पर चल रहे हैं। ऐसे रास्ते गलत हैं और राजाओं के लिए उचित नहीं हैं। क्योंकि राजाओं को न्याय के मामलों में तराजू के पलड़े की तरह निष्पक्ष होना चाहिए। लेकिन इस मामले में, चूंकि शाही कुत्ते बच गए हैं, जबकि बेचारे कुत्तों को मार दिया गया है, यह सभी कुत्तों के लिए एक समान न्याय नहीं है, बल्कि केवल बेचारे कुत्तों का वध है।" और इसके अलावा, महान सत्ता ने अपनी मधुर आवाज में कहा, "महाराज, आप जो कर रहे हैं वह न्याय नहीं है," और उन्होंने इस श्लोक में राजा को सत्य का उपदेश दिया:

राजमहल में पलने वाले कुत्ते,

वे उत्तम नस्ल के कुत्ते, जो इतने बलवान और सुंदर रूप वाले थे,

ये नहीं, बल्कि केवल हम ही मरने के लिए अभिशप्त हैं।

यहां कोई निष्पक्ष फैसला नहीं सुनाया गया है।

यह सबके लिए एक समान है; यह गरीबों का नरसंहार है।

बोधिसत्व की बातें सुनकर राजा ने कहा, "क्या आप अपनी बुद्धिमत्ता से जानते हैं कि वास्तव में मेरे रथ का चमड़ा किसने कुतरा है?" "जी महाराज।" "कौन थे?" "आपके महल में रहने वाले बेहतरीन नस्ल के कुत्तों ने।" "यह कैसे सिद्ध किया जा सकता है कि उन्होंने ही चमड़ा कुतरा है?" "मैं इसे सिद्ध कर दूंगा।" "ऐसा कीजिए, ऋषि।" "तो अपने कुत्तों को बुलवाइए और थोड़ा छाछ और कुश घास मंगवाइए।" राजा ने वैसा ही किया।

तब उस महान प्राणी ने कहा, "इस घास को छाछ में मसलकर कुत्तों को पिला दो।"

राजा ने ऐसा ही किया; परिणामस्वरूप, जैसे ही एक-एक कुत्ता पानी पीता, उसे उल्टी हो जाती थी। और उन सभी ने चमड़े के टुकड़े निकाले! "यह तो स्वयं एक पूर्ण बुद्ध के न्याय के समान है," राजा अत्यंत प्रसन्न होकर चिल्लाया, और उसने बोधिसत्व को राजसी छत्र भेंट करके उन्हें सम्मान दिया। लेकिन बोधिसत्व ने ते-सकुना जातक (*2) में धर्म पर दस श्लोकों में सत्य का उपदेश दिया, जिसकी शुरुआत इन शब्दों से होती है:-

हे राजसी वंश के महान राजा, धार्मिक मार्ग पर चलो।

फिर राजा को पंच आज्ञाओं में स्थापित करने और उन्हें भक्ति के लिए प्रोत्साहित करने के बाद, बोधिसत्व ने राजा को राजत्व का श्वेत छाता वापस सौंप दिया।

महान बोधिसत्व के वचन समाप्त होने पर राजा ने सभी प्राणियों के जीवन को हानि से सुरक्षित रखने का आदेश दिया। उन्होंने आदेश दिया कि बोधिसत्व से लेकर सभी कुत्तों को उनके समान निरंतर भोजन उपलब्ध कराया जाए; और बोधिसत्व की शिक्षाओं का पालन करते हुए उन्होंने अपना जीवन दान-पुण्य और अन्य अच्छे कर्मों में व्यतीत किया, ताकि उनकी मृत्यु के बाद उनका पुनर्जन्म देवलोक में हो। 'कुत्ते की शिक्षा' दस हजार वर्षों तक कायम रही। बोधिसत्व भी दीर्घायु हुए और फिर अपने कर्मों के फल के अनुसार इसलोक में विलीन हो गए।

जब गुरु ने यह पाठ समाप्त किया और कहा, "हे भिक्षुओं, बुद्ध न केवल अब बल्कि पहले भी अपने अनुयायियों के हित में कार्य करते थे," तो उन्होंने इस संबंध को स्पष्ट किया और जन्म की पहचान बताते हुए कहा,

"आनंद उन दिनों का राजा था, बुद्ध के अनुयायी बाकी लोग थे, और मैं खुद कुत्ता था।"

फुटनोट:

(1)सं. 465.

(2)सं. 521.

जातक क्रमांक 23

भोजजनीय-जातक

"यद्यपि अब पतित हो गया है।"
यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक भिक्षु के बारे में सुनाई थी, जिसने मार्ग पर चलना छोड़ दिया था। तब गुरु ने उस भिक्षु को संबोधित करते हुए कहा, "भाइयों, बीते दिनों में बुद्धिमान और भले लोग प्रतिकूल परिस्थितियों में भी मार्ग पर चलते रहे, और घायल होने पर भी उन्होंने हार नहीं मानी।" और ऐसा कहकर उन्होंने यह पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व ने एक उत्कृष्ट नस्ल के सिंधी घोड़े के रूप में जन्म लिया और उन्हें राजा का युद्ध घोड़ा बनाया गया। उनका भव्य और शान-शौकत से स्वागत किया गया। उन्हें तीन साल पुराने उत्तम चावल खिलाए जाते थे, जो हमेशा एक लाख सिक्कों के मूल्य के सोने के बर्तन में परोसे जाते थे; और उनके अस्तबल की ज़मीन चारों सुगंधों से महकती रहती थी। उनके अस्तबल के चारों ओर लाल रंग के पर्दे लगे थे, और ऊपर सोने के तारों से जड़ा एक मंडप था। दीवारों पर सुगंधित फूलों की मालाएँ सजी थीं; और वहाँ हमेशा सुगंधित तेल से जलने वाला एक दीपक रहता था।

अब चारों ओर के सभी राजा बनारस राज्य पर अधिकार करने के लिए उत्सुक थे। एक बार सात राजाओं ने बनारस को घेर लिया और राजा को संदेश भेजा, "या तो अपना राज्य हमें सौंप दें या युद्ध करें।" बनारस के राजा ने अपने मंत्रियों को इकट्ठा किया और उनके सामने मामला रखा और उनसे पूछा कि उन्हें क्या करना चाहिए। उन्होंने कहा, "महाराज, पहले आप स्वयं युद्ध में न जाएं। पहले फलां-फलां योद्धा को उनसे लड़ने के लिए भेजें; और बाद में, यदि वह असफल हो जाता है, तो हम निर्णय लेंगे कि क्या करना है।"

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व एक उत्तम नस्ल के सिंधी घोड़ों के रूप में अवतरित हुआ और उन्हें राजा युद्ध का अश्व बना दिया गया। उन्हें अत्यंत वैभव और शान-शौकत के साथ रखा गया। उन्हें तीन साल पुराने उत्तम चावल खिलाए जाते थे, जो हमेशा एक लाख करोड़ की कीमत के सोने के थाले में फेंके जाते थे; और उनकी अस्तबल की ज़मीन चारों ओर सुगंधों से महकती रहती थी। उनके अस्तबल के चारों ओर लाल रंग के कण लगे थे, और ऊपर सोने के स्थान से जड़ा हुआ एक मंडप था। दीवारों पर फूलों की मालाएँ साजी वाली; और वहां हमेशा तेल से भरा एक दीपक जलता रहता था।

अब आसपास के सभी राजस्थान बनारस राज्य पर अधिकार करने के लिए किराए पर रहे थे। एक बार सात सम्राटों ने बार्सिलोना को घेर लिया और राजा को संदेश भेजा, "या तो अपना राज्य हमें दो या युद्ध करो।" बनारस के राजा ने अपने सहयोगियों को एकजुट किया और उनका समसामयिक मामला रखा और उनसे पूछा कि उन्हें क्या करना चाहिए। उन्होंने कहा, "महाराज, आपको पहले स्वयं युद्ध में नहीं जाना चाहिए। पहले फलां-फलां योद्धाओं को अपनी लड़ाई के लिए भेजना चाहिए; और बाद में, यदि वह शामिल हो जाता है, तो हम तय करेंगे कि क्या करना है।" तब राजा ने उस योद्धा को बुलवाया और उससे कहा, "हे मेरे वीर योद्धा, क्या तुम सातों राजाओं से लड़ सकते हो?" योद्धा ने कहा, "बस मुझे अपना उत्तम युद्ध अश्व दे दो, तब मैं न केवल सात राजाओं से, बल्कि भारत के सभी राजाओं से लड़ सकूँगा।" "हे मेरे वीर योद्धा, मेरा युद्ध अश्व या जो भी घोड़ा तुम्हें पसंद हो, ले लो और युद्ध करो।" योद्धा ने कहा, "बहुत अच्छा, महाराज।" और धनुष लेकर वह महल के ऊपरी कक्षों से नीचे उतरा। फिर उसने शाही युद्ध अश्व को बाहर निकलवाया और उसे कवच पहनाया, स्वयं भी पूरी तरह से तैयार हुआ और अपनी तलवार को कमर पर बाँध लिया। अपने उत्तम अश्व पर सवार होकर वह नगरद्वार से बाहर निकला और बिजली की तेज़ी से हमला करके पहले शिविर को ध्वस्त कर दिया, एक राजा को जीवित पकड़कर सैनिकों की हिरासत में ले आया। युद्धक्षेत्र में लौटकर उसने दूसरे और तीसरे शिविरों को ध्वस्त कर दिया, और इसी तरह पाँचों राजाओं को जीवित पकड़ लिया। छठे शिविर को ध्वस्त करके छठे राजा को बंदी बनाने के बाद, उनके युद्ध के घोड़े को एक घाव लग गया, जिससे खून बहने लगा और उस वीर घोड़े को असहनीय पीड़ा हुई। घोड़े के घायल होने का पता चलने पर, योद्धा ने उसे राजा के द्वार पर लिटा दिया, उसका कवच ढीला किया और दूसरे घोड़े को कवच पहनाने लगा। जब बोधिसत्व करवट लेकर लेटे थे, तब उन्होंने अपनी आँखें खोलीं और योद्धा की गतिविधियों को समझा। उन्होंने मन ही मन सोचा, "मेरा सवार दूसरे घोड़े को कवच पहना रहा है। वह दूसरा घोड़ा सातवें शिविर को ध्वस्त करके सातवें राजा को बंदी नहीं बना पाएगा; वह मेरी सारी उपलब्धियों को व्यर्थ कर देगा। यह असाधारण योद्धा मारा जाएगा; और राजा भी शत्रु के हाथों में पड़ जाएगा। केवल मैं ही, कोई दूसरा घोड़ा नहीं, उस सातवें शिविर को ध्वस्त करके सातवें राजा को बंदी बना सकता हूँ।" अतः, जब वह वहाँ लेटा हुआ था, उसने शूरवीर को पुकारा और कहा, "महोदय शूरवीर, मेरे सिवा कोई ऐसा

घोड़ा नहीं है जो सातवें शिविर को ध्वस्त कर सातवें राजा को बंदी बना सके। मैंने जो कुछ किया है, उसे मैं व्यर्थ नहीं जाने दूँगा; बस मुझे फिर से खड़ा कर दीजिए और मुझे मेरा कवच पहना दीजिए।" और ऐसा कहते हुए, उसने यह छंद दोहराया:-

यद्यपि अब मैं गिर चुका हूँ और बाणों से भेदा हुआ हूँ, फिर भी पड़ा हूँ।

फिर भी कोई भी इस युद्ध-घोड़े की बराबरी नहीं कर सकता।

इसलिए हे सारथी, मेरे सिवा किसी और को जुताई न करो।

उस योद्धा ने बोधिसत्व को खड़ा किया, उनके घाव पर पट्टी बांधी और उन्हें फिर से हथियारबंद कर दिया। युद्ध के घोड़े पर सवार होकर, उन्होंने सातवें शिविर को ध्वस्त कर दिया और सातवें राजा को जीवित वापस ले आए, जिन्हें उन्होंने सैनिकों की हिरासत में सौंप दिया। सैनिक बोधिसत्व को भी राजा के द्वार तक ले गए, और राजा उन्हें देखने के लिए बाहर आए। तब उस महान सत्ता ने राजा से कहा, "महाराज, इन सात राजाओं को मत मारो; उन्हें शपथ दिलाकर जाने दो। योद्धा को हम दोनों के प्रति पूरा सम्मान प्राप्त करने दो, क्योंकि यह उचित नहीं है कि जिस योद्धा ने आपको सात बंदी राजाओं को प्रस्तुत किया है, उसे अपमानित किया जाए। और आप स्वयं, दानशीलता का अभ्यास करें, आज्ञाओं का पालन करें और अपने राज्य पर धर्म और न्याय से शासन करें।" जब बोधिसत्व ने इस प्रकार राजा को प्रोत्साहित किया, तो उन्होंने उनका कवच उतार दिया; परन्तु जब वे उसे धीरे-धीरे उतार रहे थे, तभी उनका देहांत हो गया।

राजा ने शव का पूर्ण आदर करते हुए अंतिम संस्कार किया, उस योद्धा को महान सम्मान दिया और सातों राजाओं से यह शपथ लेकर उन्हें उनके घर भेज दिया कि वे अब कभी भी राजा के विरुद्ध युद्ध नहीं करेंगे। राजा ने अपने राज्य पर न्याय और धर्म के साथ शासन किया और अपने कर्मों के फल के अनुसार परलोक विदा हुआ।

तब गुरु ने कहा, "हे भिक्षुओं, बीते समय में बुद्धिमान और भले लोग प्रतिकूल परिस्थितियों में भी मार्ग पर दृढ़ रहे, और गंभीर रूप से घायल होने पर भी उन्होंने हार नहीं मानी। परन्तु तुम, जिसने अपने आप को इतने असाधारण उपदेश के लिए समर्पित किया है, तुम मार्ग पर दृढ़ रहना क्यों छोड़ देते हो?" इसके बाद उन्होंने चार सत्यों का उपदेश दिया, जिसके अंत में उस निर्भीक भिक्षु ने अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) प्राप्त किया। अपना उपदेश समाप्त करते हुए, गुरु ने संबंध समझाया और जन्म का वर्णन करते हुए कहा, "आनंद उस समय के राजा थे, सारिपुत्र योद्धा थे, और मैं स्वयं शुद्ध नस्ल का सिंधी घोड़ा हूँ।"

जातक क्रमांक 24

अजान्न-जातक

"चाहे कभी भी हो या कहीं भी हो।"
यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक अन्य भिक्षु के बारे में सुनाई थी, जिसने मार्ग पर चलना छोड़ दिया था। लेकिन, इस बार उन्होंने उस भिक्षु को संबोधित करते हुए कहा, "भाइयों, बीते दिनों में बुद्धिमान और भले लोग घायल होने पर भी मार्ग पर चलते रहे।" और ऐसा कहकर उन्होंने यह पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब शहर को सात राजाओं ने घेर रखा था, ठीक वैसे ही जैसे पहले बताई गई कहानी में है।

तो एक योद्धा, जो रथ पर सवार होकर लड़ता था, ने दो सिंध घोड़ों (भाई) को जोता और शहर से तेजी से निकलते हुए छह शिविरों को ध्वस्त कर दिया और छह राजाओं को बंदी बना लिया। ठीक इसी समय बड़ा घोड़ा घायल हो गया। सारथी राजा के द्वार तक रथ चलाता रहा, जहाँ उसने बड़े घोड़े को रथ से उतारा और जब घोड़ा एक तरफ लेटा हुआ था, तब उसके कवच को खोलकर दूसरे घोड़े को कवच पहनाने लगा। योद्धा के इरादे को समझते हुए, बोधिसत्व के मन में वही विचार आए जो पहले बताई गई कहानी में थे, और सारथी को बुलवाकर, लेटे हुए ही, उन्होंने इस श्लोक को दोहराया:

चाहे कभी हो या कहीं भी, सुख-दुख की स्थिति में हो या कष्ट में,

एक श्रेष्ठ नस्ल का योद्धा लड़ता रहता है; दूसरा हार मान लेता है।

सारथी ने बोधिसत्व को खड़ा किया और उन्हें लगाम पहनाई। फिर उसने सातवें शिविर को ध्वस्त कर दिया और सातवें राजा को बंदी बना लिया। वह उसे राजा के द्वार तक ले गया और वहाँ से उसने अपना उत्तम घोड़ा निकाला। जब बोधिसत्व एक तरफ लेटे हुए थे, तब उन्होंने राजा को वही उपदेश दिए जो पिछली कथा में दिए गए थे, और फिर उनका प्राण त्याग दिए। राजा ने पूर्ण आदर के साथ उनके शरीर का अंतिम संस्कार किया, सारथी का भरपूर सम्मान किया, और अपने राज्य पर विधिपूर्वक शासन करने के बाद अपने कर्मों के फल के अनुसार परलोक विदा हो गए।

उनका पाठ समाप्त हुआ, गुरु ने सत्यों का उपदेश दिया (जिसके समापन पर उस भिक्षु ने अर्हतत्व/ज्ञानोदय प्राप्त किया); और जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "वरिष्ठ भिक्षु आनंद राजा थे, और पूर्ण बुद्ध उन दिनों के अश्व थे।"

जातक क्रमांक 25

तीर्थ-जातक

"अपनी जगह बदल लो।"
--यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, एक पूर्व सुनार के बारे में, जो भिक्षु बन गया था और धर्म के सरदार (सारिपुत्र) के साथ सह-निवासी था

अब, केवल बुद्ध ही हृदयों का ज्ञान रखते हैं और मनुष्यों के विचारों को पढ़ सकते हैं; और इसलिए इस शक्ति के अभाव में, धर्म के प्रमुख (सारिपुत्र) अपने सहवासी के हृदय और विचारों के बारे में इतना कम जानते थे कि उन्होंने अशुद्धता को ध्यान का विषय बताया। यह उस भाई के लिए लाभकारी नहीं था। इसका कारण यह था कि परंपरा के अनुसार, वे पाँच सौ जन्मों तक लगातार सुनार के रूप में ही जन्म लेते रहे थे; और परिणामस्वरूप, इतने लंबे समय तक शुद्ध सोने को देखने के संचयी प्रभाव ने अशुद्धता के विषय को उनके लिए निरर्थक बना दिया था। उन्होंने चार महीने बिताए, लेकिन उन्हें इस विचार का पहला संकेत भी नहीं मिला। अपने सहवासी को अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) प्रदान करने में असमर्थ पाकर, धर्म के प्रमुख (सारिपुत्र) ने मन ही मन सोचा, "यह निश्चित रूप से वह व्यक्ति है जिसे केवल बुद्ध ही परिवर्तित कर सकते हैं; मैं इसे बुद्ध के पास ले जाऊँगा।" अतः वे भोर होते ही भाई के साथ गुरु के पास आ गए।

“सारिपुत्र, क्या बात है जो तुम्हें इस भाई के साथ यहाँ लाई है?” गुरु ने कहा। “गुरुजी, मैंने उसे ध्यान के लिए एक विषय दिया था, और चार महीने बाद भी उसे उस विचार का पहला संकेत भी नहीं मिला; इसलिए मैं उसे आपके पास लाया, यह सोचकर कि यह वह व्यक्ति है जिसे केवल बुद्ध ही परिवर्तित कर सकते हैं।” “सारिपुत्र, आपने उसे कौन सा ध्यान बताया?” “अशुद्धता का ध्यान, भगवान बुद्ध।” “सारिपुत्र, लोगों के हृदयों का ज्ञान होना और उनके विचारों को पढ़ना तुम्हारे बस की बात नहीं है। अब तुम अकेले जाओ, और शाम को अपने सहवासी को लेने वापस आना।”

अब, केवल बुद्ध ही हृदयों का ज्ञान रखते हैं और मनुष्यों के विचारों को पढ़ सकते हैं; और इसली इस शक्ति के आभास में, धर्म के प्रमुख (सारिपुत्र) अपने सहवासी के हृदय और विचारों के इतने कम ज्ञान से पहले कि उन्होनें शुद्धता को ध्यान का विषय निर्धारित किया। हाँ हमें भाई के झूठ का लाभ नहीं था। इसका कारण यह था कि परंपरा के अनुसार, वे पांच सौ जन्मों तक लगातर सुनार के रूप में ही जन्म लेते रहे थे; और परिनामस्वरूप, इतने लम्बे समय तक पूर्णत: शुद्ध सोना देखने के संचयी प्रभाव ने शुद्धता के विषय को उनाके झूठ निरर्थक बना दिया था। उन्हें चार महीने बीते, लेकिन उन्हें इस विचार का पहला संकेत भी नहीं मिला। अपने सहवासियों को अरहतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) प्रदान करने में असमार्थ पाकर, धर्म के प्रमुख (सारिपुत्र) ने मन ही मन सोचा, "यह निश्चित रूप से वह व्यक्ति है जिसे केवल बौद्ध ही परिवर्तित कर सकते हैं; मैं इसे बौद्ध के पास ले जाऊंगा।" अत: वे भोर होते ही भाई के साथ गुरु के पास आ गए। “सारीपुत्र, क्या बात है जो तुमने इस भाई के साथ यहाँ लाई है?” गुरु ने कहा. "गुरुजी, मैंने ध्यान के लिए झूठ एक विषय दिया था, और चार महीने बाद भी हमें विचार का पहला संकेत भी नहीं मिला; इसलिए मैंने तुम्हारे पास लाया, यह सोचकर कि यह वह व्यक्ति है जिसे केवल बुद्ध ही परिवर्तन कर सकते हैं।" “सारीपुत्र, आपने उसे कौन सा ध्यान बताया?” "अशुद्धता का ध्यान, भगवान बुद्ध।" "सारिपुत्र, लोगों के दिलों का ज्ञान होना और उनके विचारों को पढ़ना तुम्हारे बस की बात नहीं है। अब तुम अकेले जाओ, और शाम को अपने साथी को लेने वापस आना।" इस प्रकार वरिष्ठ भिक्षु को विदा करने के बाद, गुरु ने उस भाई को उत्तम अंतर्वस्त्र और चोगा पहनाया, भिक्षा मांगने जाते समय उसे अपने साथ रखा और यह सुनिश्चित किया कि उसे उत्तम भोजन मिले। भिक्षुओं से घिरे हुए, गुरु एक बार

फिर मठ लौट आए और दिन के समय अपने सुगंधित कक्ष में विश्राम करते थे। शाम को, जब वे उस भाई के साथ मठ में टहल रहे थे, तो उन्होंने एक तालाब प्रकट किया और उसमें कमलों का एक बड़ा समूह प्रकट किया, जिसमें से एक बड़ा कमल खिला। उन्होंने कहा, "भाई, यहाँ बैठो और इस फूल को निहारो।" और भाई को वहीं बैठा छोड़कर वे अपने सुगंधित कक्ष में चले गए।

उस भिक्षु ने उस फूल को निहारते हुए देखा। भगवान बुद्ध ने उसे क्षयकारी बना दिया। जैसे-जैसे वह उसे देखता रहा, फूल क्षय की प्रक्रिया से मुरझाता गया; पंखुड़ियाँ किनारे से गिरनी शुरू हुईं और थोड़ी देर में सारी झड़ गईं; फिर बीच का पुंकेसर (उभरा हुआ भाग) गिर गया और केवल उसकी बाहरी परत ही बची रही। देखते हुए उस भिक्षु ने मन ही मन सोचा, "अभी भी यह कमल कितना सुंदर और आकर्षक था; फिर भी इसका रंग उड़ गया और केवल बाहरी परत ही बची है। इस सुंदर कमल का क्षय हो गया; मेरे शरीर का क्या न हो? सभी सांसारिक वस्तुएँ क्षणभंगुर हैं!" और इसी विचार से उन्हें अंतर्दृष्टि प्राप्त हुई।

यह जानकर कि भाई का मन अंतर्दृष्टि से भर गया है, गुरु ने अपने सुगंधित कक्ष में बैठे हुए ही वहाँ अपनी एक उज्ज्वल छवि/दर्शन भेजा और यह श्लोक कहा:-

स्वयं से प्रेम करना सीखें, ठीक वैसे ही जैसे आप किसी चीज़ को चुनते समय अपना हाथ चुनते हैं।

शरद ऋतु का जल लिली। अपना दिल लगा लो।

केवल इसी मार्ग पर चलकर, शांति का परिपूर्ण मार्ग प्राप्त किया जा सकता है।

और पुनर्जन्मों से मुक्ति/निर्वाण प्राप्त करने का वह मार्ग,

ध्यान और धर्म के द्वारा, जिसकी शिक्षा बुद्ध ने दी है।

इस श्लोक के अंत में, उस भाई ने अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) प्राप्त किया। यह सोचकर कि उनका पुनर्जन्म कभी नहीं होगा, और भविष्य में उन्हें किसी भी रूप में अस्तित्व की चिंता नहीं करनी पड़ेगी, वे भावपूर्ण शब्दों में बोले, जिनकी शुरुआत इन श्लोकों से होती है: जिसने अपना जीवन जी लिया है, जिसके विचार परिपक्व हैं;

जो सभी अशुद्धियों से शुद्ध और मुक्त हो गया हो,

वह अपना अंतिम शरीर धारण करता है; जिसका जीवन पवित्र है।

जिसकी वश में इंद्रियां उसे सर्वोपरि स्वामी मानती हैं;

वह, चंद्रमा की तरह, अंततः अपना रास्ता बना लेता है।

राहु (बुराई) के जबड़ों (*1) से सर्वोच्च मुक्ति प्राप्त कर ली है।

वह अपवित्रता जिसने मुझे घेर लिया था, जिसके कारण

मैंने भ्रम के घोर अंधकार को दूर किया;

जैसे हजारों किरणों से छलित होकर, चमकता हुआ सूरज

प्रकाश की बाढ़ से आकाश को रोशन करता है।

इसके बाद और आनंद की नई अभिव्यक्ति के साथ, वे भगवान बुद्ध के पास गए और उन्हें प्रणाम किया। वरिष्ठ भिक्षु भी आए और गुरु को विधिवत प्रणाम करने के बाद अपने सह-निवासी के साथ चले गए।

जब यह सब खबर भिक्षुओं में फैली, तो वे सत्य के हॉल में एकत्रित हुए और वहाँ बैठकर ज्ञान के स्वामी के गुणों की प्रशंसा करते हुए कहने लगे, "महोदय, मनुष्यों के हृदय और विचारों को न जानने के कारण, वरिष्ठ भिक्षु सारिपुत्र अपने सहवासी की स्थिति से अनभिज्ञ

थे। परन्तु गुरु को सब ज्ञात था, और उन्होंने एक ही दिन में उन्हें अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) और पूर्ण विद्वत्ता प्रदान कर दी। हे बुद्ध की अद्भुत शक्तियाँ कितनी महान हैं!"

अंदर आकर और अपने लिए तैयार की गई सीट पर बैठते हुए, गुरु ने पूछा, "भाइयों, इस सभा में आप लोग किस विषय पर प्रवचन दे रहे हैं?"

"हे भगवान बुद्ध, इसके अलावा और कुछ नहीं कि केवल आपको ही हृदय का ज्ञान था और आप धर्म के सेनापति (सारिपुत्र) के सह-निवासी के विचारों को पढ़ सकते थे।"

"यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है, भाइयों; कि मैं, बुद्ध होने के नाते, अब उस भाई की स्थिति को जानता हूँ। अतीत में भी मैं इसे उतनी ही अच्छी तरह जानता था।" और ऐसा कहते हुए, उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था। उन दिनों बोधिसत्व राजा के सांसारिक और आध्यात्मिक मामलों के मार्गदर्शक हुआ करते थे।

उस समय कुछ लोग राजा के राजसी घोड़े के स्नानागार में एक और बेचारे घोड़े को नहला रहे थे। जब उसका सेवक राजसी घोड़े को उसी पानी में ले जाने लगा, तो घोड़ा इतना नाराज़ हो गया कि वह अंदर जाने को तैयार नहीं था। इसलिए सेवक राजा के पास गया और बोला, "महाराज, आपका राजसी घोड़ा स्नान नहीं कर रहा है।"

तब राजा ने बोधिसत्व को यह कहते हुए भेजा, "हे ऋषि, आप जाइए और पता लगाइए कि जब जानवर को पानी में ले जाया जा रहा है तो वह पानी में क्यों नहीं जा रहा है।" "महाराज," बोधिसत्व ने कहा और जलमार्ग की ओर चल दिए। वहाँ उन्होंने घोड़े की जाँच की; और यह देखकर कि वह किसी भी प्रकार से बीमार नहीं था, उन्होंने कारण जानने का प्रयास किया। अंत में वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि उस स्थान पर किसी अन्य घोड़े को धोया गया होगा, और उस बलवान घोड़े को इस बात से इतनी ठेस पहुँची होगी कि वह पानी में नहीं जा रहा है। इसलिए उन्होंने घोड़ों की देखभाल करने वालों से पूछा कि उन्होंने पहले किस जानवर को पानी में धोया था। "एक और घोड़ा, महाराज, एक साधारण जानवर।" "अरे, उसके अहंकार को इतनी गहरी ठेस पहुँची है कि वह पानी में नहीं जा रहा है," बोधिसत्व ने मन ही मन कहा; "उसे कहीं और धोना चाहिए।" तो उसने घोड़े के रखवाले से कहा, "मेरे मित्र, चाहे कितना भी अच्छा व्यवहार मिले, अगर उसे हमेशा वही मिलता रहे तो वह थक जाएगा। और इस घोड़े के साथ भी यही हाल है। इसे यहाँ कई बार धोया जा चुका है। इसे किसी और जगह ले जाओ, और वहाँ इसे नहलाओ और पानी पिलाओ।" और ऐसा कहते हुए उसने यह पंक्ति दोहराई:-

अपनी जगह बदल लो, और घोड़े को पानी पीने दो।

कभी यहाँ, कभी वहाँ, दृश्य लगातार बदलता रहता है।

अंततः दूध-चावल भी मनुष्य को ऊबने पर मजबूर कर देता है।

उनकी बातें सुनकर वे घोड़े को दूसरी जगह ले गए और वहाँ उसे पानी पिलाकर नहलाया। पानी पिलाने के बाद जब वे उसे धो रहे थे, तभी बोधिसत्व राजा के पास लौट आए। राजा ने कहा, "क्या मेरे घोड़े ने पानी पी लिया है और नहा लिया है, मेरे मित्र?" "जी हाँ, महाराज।" "पहले उसने ऐसा क्यों नहीं किया?" बोधिसत्व ने कहा, "इसका कारण यह है," और राजा को पूरी कहानी सुनाई। राजा ने कहा, "यह कितना चतुर है! यह तो इस जैसे जानवर के मन को भी पढ़ सकता है।" उन्होंने बोधिसत्व का बहुत सम्मान किया और जब उनका जीवन समाप्त हुआ, तो वे अपने कर्मों के फल के लिए परलोक चले गए। बोधिसत्व भी अपने कर्मों के फल के लिए परलोक चले गए।

जब गुरु ने अपना पाठ समाप्त कर लिया और उस भिक्षु की अतीत और वर्तमान स्थिति के बारे में अपने ज्ञान को दोहराया, तो उन्होंने संबंध स्पष्ट किया और जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "यह भिक्षु उन दिनों का राजकीय अश्व था; आनंद राजा थे और मैं स्वयं बुद्धिमान मंत्री था।"

फुटनोट्स:

(1) राहु एक प्रकार का टाइटन था जिसके बारे में माना जाता था कि वह सूर्य और चंद्रमा को अस्थायी रूप से निगलकर ग्रहण का कारण बनता था

स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-26-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 26
महिलामुख जातक

"पहले सुनकर।"

यह कथा गुरु ने बाँस के वन में सुनाई थी। यह कथा देवदत्त के बारे में है, जिन्होंने राजकुमार अजात-सत्तु का समर्थन प्राप्त करके लाभ और सम्मान दोनों अर्जित किए थे। राजकुमार अजात-सत्तु ने गया-सिसा में देवदत्त के लिए एक मठ बनवाया और प्रतिदिन उन्हें पाँच सौ कलश सुगंधित तीन वर्ष पुराने चावल लाते थे, जिनमें उत्तम मसाले डाले जाते थे। इस लाभ और सम्मान के कारण देवदत्त के बहुत सारे अनुयायी हो गए, जिनके साथ देवदत्त अपने मठ से बाहर निकले बिना ही जीवन व्यतीत करते रहे।

उस समय राजगृह नगर में दो मित्र रहते थे, जिनमें से एक ने गुरु के अधीन दीक्षा ली थी, जबकि दूसरे ने देवदत्त के अधीन। वे दोनों अक्सर एक-दूसरे से मिलते रहते थे, कभी-कभी तो कभी मठों में जाकर। एक दिन देवदत्त के शिष्य ने दूसरे से कहा, "महोदय, आप प्रतिदिन पसीना बहाते हुए भिक्षा क्यों मांगते हैं? देवदत्त गया-सिसा में शांति से बैठे रहते हैं और उत्तम भोजन का आनंद लेते हैं, जो सर्वोत्तम मसालों से भरपूर होता है। उनके जैसा कोई दूसरा मार्ग नहीं है। आप अपने लिए कष्ट क्यों बढ़ाते हैं? आपके लिए यह अच्छा क्यों नहीं होगा कि आप सुबह सबसे पहले गया-सिसा स्थित मठ में आएं और वहां हमारे चावल के दलिया को बड़े चाव से पिएं, हमारे अठारह प्रकार के ठोस व्यंजन खाएं और हमारे उत्तम नरम भोजन का आनंद लें, जो सर्वोत्तम मसालों से भरपूर होता है?"

बार-बार निमंत्रण स्वीकार करने के लिए दबाव डाले जाने पर, वह जाने के लिए उत्सुक हो गया और तब से गया-सिसा जाकर खूब खाता-पीता था, लेकिन उचित समय पर बांस के जंगल में लौटना नहीं भूलता था। इसके बावजूद वह इसे हमेशा गुप्त नहीं रख सका; और कुछ ही समय में यह बात सामने आ गई कि वह गया-सिसा जाकर देवदत्त के लिए उपलब्ध कराए गए भोजन से अपना पेट भरता था। इस पर उसके मित्रों ने उससे पूछा, "क्या यह सच है, जैसा कि लोग कहते हैं, कि तुम देवदत्त के लिए उपलब्ध कराए गए भोजन से अपना पेट भरते हो?" "यह किसने कहा?" उसने कहा। "फलां व्यक्ति ने कहा।" "यह सच है, महोदय, कि मैं गया-सिसा जाता हूँ और वहाँ भोजन करता हूँ। लेकिन मुझे भोजन देवदत्त नहीं देते; दूसरे लोग देते हैं।" "हे प्रभु, देवदत्त बुद्धों का शत्रु है; उसने अपने दुष्ट कर्मों से अजात-सत्तु का अनुयायी बना लिया है और अधर्म से लाभ और सम्मान प्राप्त किया है। फिर भी, आप जिन्होंने निर्वाण (मोक्ष) की ओर ले जाने वाले इस धर्म के अनुसार व्रत लिए हैं, वह भोजन ग्रहण करें जो देवदत्त अधर्म से प्राप्त करता है। आइए, हम आपको गुरु के समक्ष ले चलते हैं।" और वे भिक्षु को साथ लेकर सत्य के हॉल में चले गए।

जब गुरुजी को उनकी उपस्थिति का ज्ञान हुआ, तो उन्होंने कहा, "भाइयों, क्या आप इस भाई को उसकी इच्छा के विरुद्ध यहाँ लाए हैं?" "जी जी; यह भाई, आपके अधीन व्रत लेने के बाद, देवदत्त द्वारा अधर्म से प्राप्त भोजन खाता है।" "क्या यह सच है, जैसा कि लोग कहते हैं, कि आप देवदत्त द्वारा अधर्म से प्राप्त भोजन खाते हैं?" "यह देवदत्त ने मुझे नहीं दिया, बल्कि दूसरों ने दिया।" "भाईजी, यहाँ कोई विवाद मत कीजिए," गुरुजी ने कहा। "देवदत्त बुरे आचरण और बुरे सिद्धांतों वाला व्यक्ति है। आप, जिन्होंने यहाँ व्रत लिया है, मेरे उपदेशों का पालन करते हुए देवदत्त का भोजन कैसे खा सकते हैं? आप हमेशा बहकने के आदी रहे हैं, और बदले में हर उस व्यक्ति का अनुसरण करते हैं जिससे आप मिलते हैं।" और ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व उनके मंत्री बने। उन दिनों राजा के पास एक राजसी हाथी था, जिसका नाम 'लेडी-फेस' था, जो गुणी और नेक था और कभी किसी को चोट नहीं पहुँचाता था।

एक दिन रात में कुछ चोर हाथी के अस्तबल के पास आए और बैठकर अपनी योजना पर चर्चा करने लगे। उन्होंने कहा, "घर में सुरंग खोदकर घुसने का यही तरीका है; दीवारों को तोड़कर अंदर जाने का यही तरीका है; लूट का माल ले जाने से पहले, सुरंग या दीवार में

बना छेद सड़क या नदी पार करने के रास्ते की तरह साफ और खुला होना चाहिए। सामान चुराते समय हत्या करने से पीछे मत हटना; क्योंकि इससे कोई भी विरोध नहीं कर पाएगा। चोर को सारी अच्छाई और सद्गुण त्याग देना चाहिए और बिल्कुल निर्दयी, क्रूर और हिंसक बन जाना चाहिए।" इन सलाहों से आपस में सीख लेने के बाद चोर चले गए। अगले दिन भी वे आए, और कई दिनों तक आते रहे, और यही बातें करते रहे, यहाँ तक कि हाथी को यह समझ आ गया कि वे उसे सिखाने के लिए ही आए हैं, और उसे निर्दयी, क्रूर और हिंसक बनना होगा। और सचमुच वह वैसा ही बन गया। सुबह-सुबह जैसे ही उसका महावत दिखाई दिया, हाथी ने उस आदमी को अपनी सूंड में उठाया और ज़मीन पर पटक कर मार डाला। और उसने दूसरे, तीसरे और बारी-बारी से अपने पास आने वाले हर व्यक्ति के साथ इसी तरह व्यवहार किया।

राजा को यह खबर मिली कि स्त्री-मुख वाला व्यक्ति पागल हो गया है और जिसे भी देखता है उसे मार डालता है। इसलिए राजा ने बोधिसत्व को यह कहते हुए भेजा, "हे ऋषि, जाइए और पता लगाइए कि उसे किसने विकृत किया है।"

बोधिसत्व चले गए और शीघ्र ही इस बात से संतुष्ट हो गए कि हाथी में शारीरिक रोग के कोई लक्षण नहीं हैं। जब उन्होंने इस परिवर्तन के संभावित कारणों पर विचार किया, तो वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि हाथी ने अपने आस-पास लोगों की बातें सुनी होंगी और उन्हें लगा होगा कि वे उसे उपदेश दे रहे हैं, और इसी कारण से वह विकृत हो गया है। तदनुसार, उन्होंने हाथी के रखवालों से पूछा कि क्या हाल ही में रात में उसके अस्तबल के पास कोई लोग बातें कर रहे थे। उत्तर मिला, "जी महाराज; कुछ चोर आए और बातें कर रहे थे।" तब बोधिसत्व राजा के पास गए और कहा, "महाराज, हाथी में शारीरिक रूप से कोई समस्या नहीं है; वह कुछ चोरों की बातें सुनकर विकृत हो गया है।" "अच्छा, अब क्या किया जाए?" "अच्छे पुरुषों, ऋषियों और ब्राह्मणों को आदेश दें कि वे उसके अस्तबल में बैठें और अच्छाई की बातें करें।" राजा ने कहा, "ऐसा ही करें, मेरे मित्र।" तब बोधिसत्व ने गौशाला में अच्छे पुरुषों, ऋषियों और ब्राह्मणों को बैठाया और उनसे सद्गुणों के विषय में बात करने को कहा। वे हाथी के पास बैठकर इस प्रकार बोले, "न तो दुर्व्यवहार करो और न ही मारो। अच्छे लोगों को धैर्यवान, प्रेममय और दयालु होना चाहिए।" यह सुनकर हाथी ने सोचा कि वे उसे यह शिक्षा दे रहे हैं और उसने तब से अच्छा बनने का संकल्प लिया। और वह अच्छा बन गया।

"तो मेरे मित्र," राजा ने बोधिसत्व से कहा; "क्या अब वह ठीक है?" "जी महाराज," बोधिसत्व ने कहा; "बुद्धिमान और भले लोगों की कृपा से, जो हाथी इतना बिगड़ गया था, वह फिर से अपने पुराने रूप में आ गया है।" और ऐसा कहते हुए, उन्होंने यह श्लोक दोहराया:

चोरों की दुष्टतापूर्ण बातें सुनकर

एक महिला अपने चेहरे के साथ लोगों को घायल करने और मारने के लिए घूमती रही;

बाद में, सुनने के माध्यम से, बुद्धिमान पुरुषों के उच्च वचन प्राप्त होते हैं।

वह नेक हाथी एक बार फिर अच्छा बन गया।

राजा ने कहा, "वह तो जानवर के मन की भी जानकारी प्राप्त कर सकता है!" और उसने बोधिसत्व को बहुत सम्मान दिया। अच्छी आयु जीने के बाद, वह बोधिसत्व के साथ अपने कर्मों के फल के लिए परलोक सिधार गया।

गुरु ने कहा, "पहले भी, हे भिक्षु, तुम जिससे भी मिलते थे, उसका अनुसरण करते थे; चोरों की बातें सुनकर भी उनकी बातों पर चलते थे; और बुद्धिमान और भले लोगों की बातें सुनकर भी उनकी बातों पर चलते थे।" अपना उपदेश समाप्त करते हुए, उन्होंने संबंध समझाया और जन्म का वर्णन करते हुए कहा, "देशद्रोही भिक्षु उन दिनों की स्त्री-प्रधान महिला, राजा आनंद थे, और मैं स्वयं मंत्री था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **अभिन-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-27-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 27
अभिन्ह-जातक

वह एक निवाला भी नहीं खा सकता।

यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें एक गृहस्थ शिष्य और एक वृद्ध भिक्षु की कहानी है।

परंपरा के अनुसार, श्रावस्ती शहर में दो मित्र थे, जिनमें से एक ने भिक्षु संघ में प्रवेश किया, लेकिन प्रतिदिन दूसरे के घर जाया करता था। वहां उसका मित्र उसे भोजन दान देता और स्वयं भोजन बनाता, फिर उसे वापस मठ ले जाता, जहां वह सूर्यास्त तक दिनभर बातें करता रहता और फिर शहर लौट जाता। उसका मित्र, भिक्षु, उसे वापस घर तक शहर के द्वार तक छोड़ने जाता और फिर लौट आता।

इन दोनों की घनिष्ठता भिक्षुओं के बीच तब फैल गई, जब एक दिन वे सत्य के हॉल में बैठे हुए इन दोनों के बीच मौजूद घनिष्ठता के बारे में बात कर रहे थे, तभी गुरुजी हॉल में प्रवेश करते हुए आए और उन्होंने पूछा कि वे किस विषय पर बात कर रहे हैं; और भिक्षुओं ने उन्हें सब कुछ बता दिया।

“भाइयों, ये दोनों न केवल अभी एक-दूसरे के घनिष्ठ मित्र हैं,” गुरु ने कहा; “वे अतीत में भी घनिष्ठ मित्र थे।” और ऐसा कहते हुए उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज था, तब बोधिसत्व उनके मंत्री बने। उन दिनों एक कुत्ता था जो राजसी हाथी के अस्तबल में जाकर गिरे हुए चावल के टुकड़ों को खा जाता था। भोजन की लालसा में वह उस जगह के आसपास मंडराता रहता था और हाथी से उसका गहरा लगाव हो गया। अंत में वह हाथी के बिना खाना नहीं खाता था। दोनों एक-दूसरे के बिना रह ही नहीं सकते थे। कुत्ता हाथी की सूंड पर आगे-पीछे झूलकर खूब आनंद लेता था। एक दिन एक ग्रामीण ने महावत से उस कुत्ते को खरीद लिया और उसे अपने घर ले गया। तब से हाथी कुत्ते को याद करते हुए न तो खाने लगा, न पीने लगा और न ही नहाने लगा। इस बात की सूचना राजा को मिली। महाराज ने बोधिसत्व को यह पता लगाने के लिए भेजा कि हाथी ऐसा व्यवहार क्यों कर रहा है। हाथी-घर की ओर बढ़ते हुए, बोधिसत्व ने हाथी की उदासी देखकर मन ही मन कहा, "इसे कोई शारीरिक बीमारी नहीं है; इसने किसी मित्र से गहरी मित्रता कर ली होगी और अपने मित्र के बिछड़ने से दुखी है।" इसलिए उन्होंने हाथी से पूछा कि क्या उसने किसी से मित्रता की है।

"जी महाराज," उत्तर मिला; "उसका और एक कुत्ते का बहुत गहरा मित्रता है।" "वह कुत्ता अब कहाँ है?" "एक आदमी उसे ले गया।" "क्या आपको पता है कि वह आदमी कहाँ रहता है?" "नहीं, महाराज।" बोधिसत्व राजा के पास गए और बोले, "महाराज, हाथी को कोई समस्या नहीं है; लेकिन उसका एक कुत्ते से बहुत गहरा मित्रता थी, और मुझे लगता है कि अपने मित्र की कमी के कारण ही उसने खाना छोड़ दिया है।" और ऐसा कहते हुए उन्होंने यह श्लोक दोहराया:

वह एक निवाला भी नहीं खा सकता, न चावल और न घास;

और अब उसे नहाने में कोई आनंद नहीं आता।

मुझे लगता है, कुत्ता इतना परिचित हो गया था,

वह हाथी और कुत्ता घनिष्ठ मित्र थे।

“अच्छा,” यह सुनकर राजा ने कहा, “अब क्या किया जाए, हे विद्वान?” “महाराज, ढोल बजाकर यह घोषणा की जाए कि एक व्यक्ति ने राजसी हाथी के प्रिय कुत्ते को चुरा लिया है, और जिस व्यक्ति के घर में वह कुत्ता मिलेगा, उसे इतना जुर्माना देना होगा।” राजा ने इस सलाह पर अमल किया; और जब उस व्यक्ति को इसकी सूचना मिली, तो उसने तुरंत कुत्ते को छोड़ दिया। कुत्ता तुरंत भाग निकला और हाथी के पास पहुँच गया। हाथी ने कुत्ते को अपनी सूंड में उठाया और अपने सिर पर रख लिया, और रोने-धोने लगा। फिर उसने कुत्ते को ज़मीन पर रख दिया और देखा कि कुत्ता पहले खा रहा है और फिर अपना खाना खा रहा है।

"वह जानवरों के मन को भी जानता है," राजा ने कहा, और उसने बोधिसत्व को सम्मानों से नवाजा।

इस प्रकार गुरु ने अपने पाठ का समापन यह दर्शाते हुए किया कि वे दोनों अतीत में भी और उस समय भी घनिष्ठ संबंध रखते थे। इसके बाद उन्होंने चार सत्यों का प्रतिपादन किया। (चार सत्यों का यह प्रतिपादन अन्य सभी जातक कथाओं का भाग है; परन्तु हम इसका

उल्लेख केवल वहीं करेंगे जहाँ स्पष्ट रूप से यह उल्लेख किया गया है कि यह फलदायी सिद्ध हुआ।) फिर उन्होंने संबंध की व्याख्या करते हुए जन्म का वर्णन करते हुए कहा, "गृहस्थ शिष्य उन दिनों का कुत्ता था, वृद्ध भिक्षु हाथी था, और मैं स्वयं ज्ञानी सेवक था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> नंदीविसाल - जातक
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-28-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 28
नंदीविसला-जातक

"केवल दयालुता के शब्द बोलें।"

यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें छह भिक्षुओं द्वारा बोले गए कठोर शब्दों का वर्णन है। उन दिनों, जब वे छह भिक्षु आदरणीय भिक्षुओं से असहमत होते थे, तो उनका उपहास करते, गाली देते और दस प्रकार की गालियाँ देते थे। भिक्षुओं ने यह बात भगवान बुद्ध को बताई, जिन्होंने उन छह भिक्षुओं को बुलवाया और पूछा कि क्या यह आरोप सत्य है। जब उन्होंने इसे सत्य स्वीकार किया, तो उन्होंने उन्हें फटकारते हुए कहा, "भाइयों, कठोर शब्द तो पशुओं को भी कष्ट पहुँचाते हैं: बीते दिनों में एक पशु ने कठोर भाषा का प्रयोग करने वाले मनुष्य को हज़ार टुकड़ों में तोड़ दिया था।" और ऐसा कहकर उन्होंने यह भूतकाल की घटना सुनाई।

बहुत समय पहले गांधार देश (कंधार सहित अफगानिस्तान और पाकिस्तान के निकट) के तक्षशिला में एक राजा राज करता था, और बोधिसत्व ने बैल के रूप में जन्म लिया। जब वह बहुत छोटा बछड़ा था, तो उसके मालिकों ने उसे एक ब्राह्मण को भेंट कर दिया, जो वहाँ आया था - क्योंकि वे ऐसे पवित्र पुरुषों को बैल भेंट करने के लिए जाने जाते थे। ब्राह्मण ने उसका नाम नंदी-विशाल (महान आनंद) रखा और उसे अपने बच्चे की तरह पाला, उसे चावल की दलिया और चावल खिलाए। जब बोधिसत्व बड़े हुए, तो उन्होंने मन ही मन सोचा, "इस ब्राह्मण ने मुझे बड़ी मेहनत से पाला है, और सारा भारत भी ऐसा बैल नहीं दिखा सकता जो मेरी तरह खींच सके। अगर मैं अपनी शक्ति का प्रमाण देकर ब्राह्मण को अपने पालन-पोषण का बदला चुका सकूँ तो कैसा रहेगा?" इसलिए, एक दिन उसने ब्राह्मण से कहा, "जाओ, ब्राह्मण, किसी ऐसे व्यापारी के पास जाओ जो पशुओं से भरा हो, और उससे एक हजार सिक्कों की शर्त लगाओ कि तुम्हारा बैल सौ भरी हुई गाड़ियाँ खींच सकता है।"

ब्राह्मण एक व्यापारी के पास गया और उससे इस बात पर बहस करने लगा कि कस्बे में किसके बैल सबसे ताकतवर हैं। व्यापारी ने कहा, "अरे, फलां के, या फलां के।" उसने आगे कहा, "लेकिन कस्बे में कोई भी बैल मेरे बैलों की ताकत का मुकाबला नहीं कर सकता।" ब्राह्मण ने कहा, "मेरे पास एक बैल है जो सौ भरी हुई गाड़ियाँ खींच सकता है।" व्यापारी हँसते हुए बोला, "ऐसा बैल कहाँ मिलेगा?" ब्राह्मण ने कहा, "मेरे घर पर है। शर्त लगाओ।" ब्राह्मण ने कहा, "ज़रूर," और एक हज़ार सिक्के दांव पर लगा दिए। फिर उसने सौ गाड़ियों में रेत, बजरी और पत्थर भर दिए और उन्हें एक के पीछे एक रस्सी से बाँध दिया। रस्सी आगे वाली गाड़ी के धुरे से पीछे वाली गाड़ी के पायदान तक जाती थी। यह सब करने के बाद, उन्होंने नंदी-विसला को स्नान कराया, उन्हें सुगंधित चावल खिलाया, उनके गले में माला पहनाई और उन्हें अकेले ही आगे वाली गाड़ी से जोड़ दिया। स्वयं ब्राह्मण खंभे पर बैठ गए और हवा में अपना डंडा लहराते हुए चिल्लाए, "अब आ जाओ, बदमाश! इन्हें खींचो, बदमाश!"

"मैं वह बदमाश नहीं हूँ जैसा वह मुझे कहता है," बोधिसत्व ने मन ही मन सोचा; और इसलिए उसने अपने चारों पैरों को खंभों की तरह जमा लिया और एक इंच भी नहीं हिला।

व्यापारी ने तुरंत ब्राह्मण से हज़ार से ज़्यादा सिक्के ले लिए। पैसे जाने पर ब्राह्मण ने अपने बैल को गाड़ी से उतारा और घर चला गया, जहाँ वह शोक से व्याकुल होकर अपने पलंग पर लेट गया। जब नंदी-विशाल टहलते हुए आए और ब्राह्मण को इतने दुखी देखा, तो वे उसके पास गए और पूछा कि क्या वह झपकी ले रहा है। "मैं झपकी कैसे ले सकता हूँ, जब मुझसे हज़ार सिक्के हार गए हैं?" "ब्राह्मण, जब से मैं तुम्हारे घर में रह रहा हूँ, क्या मैंने कभी कोई घड़ा तोड़ा है, या किसी से धक्का-मुक्की की है, या कोई गड़बड़ की है?" "कभी नहीं, मेरे बच्चे।" "तो फिर तुमने मुझे बदमाश क्यों कहा? गलती तुम्हारी है, मेरी नहीं। जाओ और इस बार उससे दो हज़ार की शर्त लगाओ। बस याद रखना कि मुझे फिर कभी बदमाश मत कहना।" यह सुनकर ब्राह्मण व्यापारी के पास गया और दो हज़ार की शर्त लगा

दी। पहले की तरह ही, उन्होंने सौ गाड़ियों को आपस में बांधा और सबसे आगे वाली गाड़ी में सुंदर और आकर्षक नंदी-विशाल को जोता। अगर आप पूछें कि उन्होंने उन्हें कैसे जोता, तो उन्होंने इस प्रकार किया: सबसे पहले, उन्होंने जुए को खंभे पर कस दिया; फिर उन्होंने बैल को एक तरफ से बिठाया और दूसरी तरफ जुए से लकड़ी का एक चिकना टुकड़ा धुरी पर बांधकर उसे कस दिया, ताकि जुआ तना हुआ रहे और किसी भी तरफ न झुके। इस प्रकार एक बैल दो गाड़ियों के लिए बनी गाड़ी को खींच सकता था। अब खंभे पर बैठे ब्राह्मण ने नंदी-विशाल की पीठ थपथपाई और इस तरह से उन्हें पुकारा, "अब, मेरे प्यारे! इन्हें खींचो, मेरे प्यारे!" एक ही झटके में बोधिसत्व ने सौ गाड़ियों की पूरी कतार को तब तक खींचा जब तक कि आखिरी गाड़ी वहीं नहीं पहुँच गई जहाँ से सबसे आगे वाली गाड़ी शुरू हुई थी। पशुधन से समृद्ध व्यापारी ने ब्राह्मण को अपने दो हजार सिक्कों का हर्जाना चुका दिया। अन्य लोगों ने भी बोधिसत्व को बड़ी रकम दी, और सारी संपत्ति ब्राह्मण के हाथ में चली गई। इस प्रकार बोधिसत्व के कारण उसे बहुत लाभ हुआ।

इस प्रकार, उन छहों को फटकार लगाते हुए, यह नियम स्थापित करते हुए कि कठोर शब्द किसी को प्रसन्न नहीं करते, गुरु ने बुद्ध के रूप में निम्नलिखित श्लोक कहा:-

केवल दयालुता के शब्द बोलें, कभी भी अपमानजनक शब्द न बोलें।

निर्दयी। जिसने उसके बारे में अच्छी बातें कही थीं, उसके लिए वह चला गया।

प्रेम के बदले में उसने भारी बोझ उठाया और धन अर्जित किया।

जब उन्होंने केवल दयालुता के शब्द बोलने के अपने पाठ को इस प्रकार समाप्त किया, तो गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "आनंद उन दिनों का ब्राह्मण था, और मैं स्वयं नंदी-विशाल हूँ।"

फुटनोट:

(1) 'छह' कुख्यात भाई थे जिनका उल्लेख हमेशा संघ के नियमों की अवहेलना करने वाले के रूप में किया जाता है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कान्हा-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-29-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 29
कान्हा-जातक

"भारी भार के साथ।"

--यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, दोहरे चमत्कार के बारे में, जो स्वर्ग से अवतरण के साथ, सरभामिगा-जातक (*1) के तेरहवें खंड में बताया जाएगा।

दोहरे चमत्कार को अंजाम देने और स्वर्ग में कुछ समय बिताने के बाद, सर्वज्ञानी बुद्ध महान पवाराना (*2) उत्सव के दिन समकस्सा शहर में उतरे और वहाँ से अपने अनुयायियों के साथ जेतवन मठ की ओर चल दिए।

सत्य के हॉल में एकत्रित होकर भिक्षुओं ने गुरु के गुणों की प्रशंसा करते हुए कहा, "महोदय, बुद्ध असाधारण हैं; बुद्ध द्वारा उठाए गए बोझ को कोई नहीं उठा सकता। छह गुरुओं ने बार-बार यह दावा किया कि वे और केवल वे ही चमत्कार करेंगे, फिर भी उन्होंने एक भी चमत्कार नहीं किया। हे! गुरु कितने असाधारण हैं!"

हॉल में प्रवेश करते हुए और सभा में उपस्थित भाइयों से चर्चा का विषय पूछने पर, गुरु को पता चला कि उनका विषय उनके स्वयं के सद्गुणों के अलावा और कुछ नहीं था। गुरु ने कहा, "भाइयों, अब मेरे द्वारा उठाए गए बोझ को कौन उठाएगा? अतीत में भी, जब मैंने पशु रूप धारण किया था, तब भी मैं अद्वितीय था।" और ऐसा कहते हुए, उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, तब बोधिसत्व ने बैल का रूप धारण किया। जब वह छोटा बछड़ा ही था, तब उसके मालिक, जो एक बूढ़ी औरत के यहाँ ठहरे हुए थे, ने अपने बछड़े के बदले उसे उस बूढ़ी औरत को सौंप दिया। उस बूढ़ी औरत ने उसे अपने बच्चे की तरह पाला, उसे चावल की दलिया, चावल और अन्य पौष्टिक आहार खिलाया। उसका नाम "दादी का काला बछड़ा" पड़ गया। बड़ा होकर वह गाँव के अन्य पशुओं के साथ घूमता था और उसका रंग गहरा काला था। गाँव के शरारती बच्चे उसके सींग, कान और गलफड़े पकड़कर उस पर सवारी करते थे; या फिर खेलते-खेलते उसकी पूंछ पकड़कर उसकी पीठ पर चढ़ जाते थे।

एक दिन उसने मन ही मन सोचा, "मेरी माँ बहुत गरीब है; उसने मुझे बड़ी तकलीफों से पाला-पोसा है, मानो मैं उसका अपना बच्चा हूँ। अगर मैं कुछ पैसे कमा सकूँ तो उसकी मुश्किलों में कुछ राहत मिलेगी?" तब से वह हमेशा नौकरी की तलाश में रहता था। एक दिन एक युवा व्यापारी अपने काफिले के मुखिया के रूप में पाँच सौ गाड़ियाँ लेकर एक ऐसे घाट पर पहुँचा, जिसका तल इतना उबड़-खाबड़ था कि उसके बैल गाड़ियों को खींच नहीं पा रहे थे। और जब उसने पाँच सौ जोड़ी बैलों को एक साथ जोतकर एक जोड़ी बनाई, तब भी वे एक गाड़ी को अकेले नदी पार नहीं करा पाए। उस घाट के पास ही बोधिसत्व गाँव के अन्य पशुओं के साथ मौजूद थे। युवा व्यापारी, जो पशुओं को परखने में माहिर था, ने झुंड पर नज़र डाली कि क्या उनमें कोई ऐसा बैल है जो गाड़ियों को नदी पार करा सके। जब उसकी नज़र बोधिसत्व पर पड़ी, तो उसे पूरा यकीन हो गया कि वही इसके लिए उपयुक्त है। और, बोधिसत्व के स्वामी का पता लगाने के लिए, उन्होंने चरवाहों से कहा, "इस जानवर का मालिक कौन है? अगर मैं इसे जुतकर अपनी गाड़ियाँ पार करा सकूँ, तो मैं इसके लिए भुगतान करूँगा।" उन्होंने कहा, "तो इसे ले जाओ और इसे जोत दो; यहाँ आस-पास इसका कोई स्वामी नहीं है।"

लेकिन जब उस नौजवान व्यापारी ने बोधिसत्व की नाक में रस्सी डालकर उन्हें ले जाने की कोशिश की, तो बैल टस से मस नहीं हुआ। क्योंकि, जैसा कि बताया जाता है, बोधिसत्व तब तक नहीं जाएंगे जब तक उनकी तनख्वाह तय नहीं हो जाती। बोधिसत्व का मतलब समझते हुए व्यापारी ने कहा, "गुरुजी, यदि आप इन पाँच सौ गाड़ियों को पार करा देंगे, तो मैं आपको प्रति गाड़ी दो सिक्के या कुल मिलाकर एक हजार सिक्के दूंगा।"

अब बोधिसत्व को लाने के लिए किसी बल प्रयोग की आवश्यकता नहीं थी। वे चले गए और लोगों ने उन्हें गाड़ियों से जोड़ दिया। पहली गाड़ी को उन्होंने एक ही झटके में खींचकर किनारे पर सुरक्षित उतार दिया; और इसी प्रकार उन्होंने बाकी सभी गाड़ियों के साथ भी किया।

उस नौजवान व्यापारी ने बोधिसत्व के गले में पाँच सौ सिक्कों का एक गट्ठा बाँध दिया, यानी हर गाड़ी के लिए सिर्फ़ एक सिक्का। बोधिसत्व ने मन ही मन सोचा, "यह आदमी हमें तयशुदा भुगतान नहीं कर रहा! मैं इसे आगे नहीं बढ़ने दूँगा!" इसलिए वह सबसे आगे वाली गाड़ी के रास्ते में खड़ा हो गया और रास्ता रोक दिया। लाख कोशिश करने के बावजूद वे उसे रास्ते से हटा नहीं सके। व्यापारी ने सोचा, "शायद उसे पता चल गया है कि मैंने उसे कम भुगतान किया है"; और उसने एक हज़ार सिक्कों का एक गट्ठा बनाया, जिसे उसने बोधिसत्व के गले में बाँधते हुए कहा, "गाड़ियों को सड़क पार कराने के लिए ये तुम्हारा भुगतान है।" और बोधिसत्व उन हज़ार सिक्कों के साथ अपनी "माता" के पास चल दिए।

“दादी के काले घोड़े के गले में यह क्या है?” गाँव के बच्चे दौड़ते हुए उसके पास आए और चिल्लाए। लेकिन बोधिसत्व ने दूर से ही उन पर नज़र रखी और उन्हें भगा दिया, जिससे वह अपनी “माँ” के पास सुरक्षित पहुँच गया। हालाँकि वह थका हुआ लग रहा था, उसकी आँखें लाल थीं, क्योंकि वह नदी के उस पार पाँच सौ गाड़ियाँ खींचकर लाया था। धर्मपरायण स्त्री ने उसके गले में एक हज़ार सिक्के देखकर कहा, “यह तुम्हें कहाँ से मिला, मेरे बच्चे?” चरवाहों से बात पता चलने पर उसने कहा, “क्या मैं तुम्हारी कमाई पर जीना चाहती हूँ, मेरे बच्चे? तुमने इतनी मेहनत क्यों की?” इतना कहकर उसने बोधिसत्व को गर्म पानी से धोया और पूरे शरीर पर तेल मल दिया; उसने उसे पानी पिलाया और उचित भोजन कराया। और जब उसका जीवन समाप्त हुआ, तो वह बोधिसत्व के साथ अपने कर्मों के फल के लिए इस दुनिया से चली गई।

जब उन्होंने यह पाठ समाप्त करते हुए दिखाया कि बुद्ध अतीत में भी और उस समय भी अद्वितीय थे, तो उन्होंने बुद्ध के रूप में इस श्लोक का उच्चारण करके इस संबंध को स्पष्ट किया:

> भारी सामान ढोने के साथ-साथ खराब सड़कें भी हैं,
>
> वे 'ब्लैकी' को जोतते हैं; वह जल्द ही बोझ खींचने लगता है।

यह साबित करने के लिए कि केवल 'ब्लैकी' ही बोझ खींच सकता है, अपना पाठ पढ़ाने के बाद, उसने रिश्ते को समझाया और जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "उप्पला-वन्ना उन दिनों की बूढ़ी औरत थी, और मैं खुद 'दादी का ब्लैकी' था।"

फुटनोट:

(1)सं. 483.

(2) वर्षा ऋतु के अंत में मनाया जाने वाला त्योहार।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **मुनिका-जातक**
***स्रोत** : रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-30-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 30
मुनिका-जातक

"तो फिर बेचारी मुनिका से ईर्ष्या मत करो।"

--यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें एक मोटी युवती द्वारा बहकाए जाने का वर्णन है, जैसा कि चुल्ला-नारद-कश्यप-जातक (*1) के तेरहवें खंड में बताया जाएगा।

तब गुरु ने भिक्षु भाई से पूछा, "क्या सच है, भिक्षु, जैसा कि लोग कहते हैं, कि तुम वासना से ग्रस्त हो?" "जी हाँ, श्रीमान," उत्तर आया। गुरु ने कहा, "भाई, वह तुम्हारी कमजोरी है; बीते दिनों में भी, उसकी शादी के दिन तुम्हारा अंत हो गया था और तुम वहाँ के लोगों के लिए एक स्वादिष्ट व्यंजन बन गए थे।" और ऐसा कहते हुए उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब एक गाँव में एक अधिकारी की जागीर में बोधिसत्व ने बैल के रूप में जन्म लिया, जिसका नाम बिग रेड था। उनका एक छोटा भाई था, जिसे लिटिल रेड के नाम से जाना जाता था। परिवार के सारे काम करने के लिए केवल यही दो भाई थे। अधिकारी की एक इकलौती बेटी थी, जिसका विवाह उनके बेटे के लिए शहर के एक सज्जन ने प्रस्तावित किया। और लड़की के माता-पिता ने शादी के मेहमानों के लिए शानदार दावत की व्यवस्था करने के उद्देश्य से मुनिका नाम के एक सूअर को पालना शुरू किया।

यह देखकर लिटिल रेड ने अपने भाई से कहा, "भाई, इस घर के सारे बोझ हम दोनों ही उठाते हैं; लेकिन बदले में हमें खाने के लिए सिर्फ़ सूखी घास और भूसा ही मिलता है। और यहाँ सूअर को चावल खिलाया जा रहा है! आखिर उसके साथ ऐसा बर्ताव क्यों किया जा रहा है?"

उसके भाई ने कहा, "मेरी प्यारी छोटी लाल, उससे ईर्ष्या मत करो; क्योंकि सुअर तो मृत्यु का भोजन खा रहा है। परिवार वाले तो बस अपनी बेटी की शादी में आए मेहमानों को दावत देने के लिए सुअर को पाल रहे हैं। बस थोड़ी देर रुको, मेहमान आ जाएँगे। तब तुम देखोगी कि सुअर को उसके बाड़े से टांगों से घसीटकर बाहर निकाला जा रहा है, मारा जा रहा है और उसे करी में बदला जा रहा है।" और ऐसा कहते हुए उसने यह छंद दोहराया:-

> इसलिए बेचारी मुनिका से ईर्ष्या मत करो; यह मृत्यु के समान है।
>
> वह खाता है। संतुष्ट होकर अपना कम भोजन चबाओ।
>
> दिनों की अवधि का वादा और गारंटी।

कुछ ही समय बाद मेहमान आ गए; और मुनिका को मार कर तरह-तरह के पकवानों में पका दिया गया। बोधिसत्व ने छोटे लाल से कहा, "क्या तुमने मुनिका को देखा, प्यारे भाई?" "हाँ, भाई, मुनिका के भोज का परिणाम मैंने देखा है। ऐसा भोजन हमारे लिए सौ गुना नहीं, बल्कि हज़ार गुना बेहतर है, भले ही वह घास, भूसा और भूसा ही क्यों न हो; क्योंकि हमारे साथ किया गया यह व्यवहार हमें कोई नुकसान नहीं पहुँचाता, और यह इस बात का आश्वासन है कि हमारा जीवन छोटा नहीं होगा।"

जब उन्होंने यह कहकर अपना पाठ समाप्त किया कि अतीत में उस युवती के कारण ही उस भाई का विनाश हुआ था और वह उस संगति का मोह बन गया था, तब उन्होंने सत्य का उपदेश दिया, जिसके अंत में उस वासनाग्रस्त भाई (भिक्षु) ने निर्वाण (मुक्ति) के प्रथम मार्ग (सम्मोहन) को प्राप्त किया। गुरु ने संबंध स्पष्ट करते हुए जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "उन दिनों का वह वासनाग्रस्त भाई सुअर मुनिका था, दोनों ही मामलों में वह युवती एक ही है, आनंद छोटा लाल था और मैं स्वयं बड़ा लाल था।"

फुटनोट:

(1)सं. 477.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कुलवक-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-31-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 31
कुलावक-जातक

"जंगल के सभी बच्चों को रहने दो।"

--यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, एक भाई (भिक्षु) के बारे में जिसने पानी को बिना छाने पिया (*1)।

परंपरा के अनुसार, दो युवा मित्र भाई श्रावस्ती शहर से निकलकर ग्रामीण इलाके में गए और एक रमणीय स्थान पर रहने लगे। वहाँ अपनी इच्छा अनुसार कुछ समय बिताने के बाद वे वहाँ से विदा होकर पूर्ण बुद्ध के दर्शन के लिए जेतवन मठ की ओर चल पड़े।

उनमें से एक के पास छलनी थी; दूसरे के पास नहीं थी; इसलिए दोनों पीने से पहले एक ही छलनी का इस्तेमाल करते थे। एक दिन उनमें झगड़ा हो गया। छलनी के मालिक ने उसे अपने साथी को नहीं दिया, बल्कि खुद छानकर पी लिया।

दूसरे को छलनी इस्तेमाल करने की अनुमति नहीं थी, और प्यास सहन न कर पाने के कारण उसने बिना छाने ही पानी पी लिया। कुछ देर बाद दोनों जेतवन मठ पहुँचे और गुरु को आदरपूर्वक प्रणाम करके बैठ गए। सौहार्दपूर्ण अभिवादन के बाद उन्होंने उनसे पूछा कि वे कहाँ से आए हैं।

“महोदय,” उन्होंने कहा, “हम कोसला देश के एक गाँव में रहते थे, जहाँ से हम आपसे मिलने आए हैं।” “मुझे उम्मीद है कि आप वैसे ही अच्छे दोस्त बनकर पहुँचे हैं जैसे आप गए थे?” बिना छलनी वाले भिक्षु ने कहा, “महोदय, रास्ते में उसका मुझसे झगड़ा हो गया और उसने मुझे अपनी छलनी नहीं दी।” दूसरे ने कहा, “महोदय, उसने पानी नहीं छाना, बल्कि जानबूझकर उसमें मौजूद सभी जीवों सहित पी लिया।” “क्या यह बात सच है, भिक्षु, कि आपने जानबूझकर उसमें मौजूद सभी जीवों सहित पानी पी लिया?” “जी हाँ, मैंने बिना छाना हुआ पानी पी लिया,” उत्तर मिला। "भाई (भिक्षु), अतीत के बुद्धिमान और भले भिक्षु, जब देवों (देवदूतों) के नगर पर शासन करने की शक्ति के दिनों में गहरे सागर में हारते हुए भाग रहे थे, तो उन्होंने अपने लिए सत्ता सुरक्षित करने के लिए जीवित प्राणियों को मारना तुच्छ समझा। इसके बजाय, उन्होंने अपने रथ को वापस मोड़ दिया, महान यश का त्याग करके गरुड़ों के बच्चों के जीवन को बचाया (*2)।" और ऐसा कहते हुए, उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, मगध देश के राजगृह नगर में मगध का एक राजा शासन करता था। तभी बोधिसत्व (इंद्र, देवताओं/देवदूतों के राजा) ने स्वर्ग में अपना जीवनकाल पूरा करने के बाद मगध देश के मचला गाँव में एक युवा (मनुष्य) बोधिसत्व के रूप में जन्म लिया। जब उनका नामकरण संस्कार हुआ, तो उनका नाम 'मघ कुमार' रखा गया, लेकिन बड़े होने पर वे 'मघ पुरुष' के नाम से जाने गए। उनके माता-पिता ने अपने ही परिवार के समान ही प्रतिष्ठित परिवार से उनके लिए एक पत्नी का विवाह किया; और अपने पुत्र-पुत्रियों के परिवार के साथ बड़े होते हुए, उन्होंने दान-पुण्य में उत्कृष्टता प्राप्त की और पंच शीलों का पालन किया।

नोट 5 साइलस:

1. जीवन का नाश न करना (अहत्या)।

2. जो दिया न गया हो उसे न लेना (चोरी न करना)।

3. यौन दुर्व्यवहार का कोई मामला नहीं।

4. झूठ न बोलना।

5. मादक पेय का सेवन न करना (नशा न करना)।

उस गाँव में केवल तीस परिवार थे, और एक दिन गाँव के बीचोंबीच पुरुष गाँव के कामकाज निपटा रहे थे। बोधिसत्व ने जहाँ वे खड़े थे, वहाँ से धूल झाड़ दी थी और आराम से खड़े थे, तभी एक और व्यक्ति आया और वहाँ खड़ा हो गया। तब बोधिसत्व ने अपने लिए एक और आरामदायक जगह बनाई, लेकिन वह भी पहली बार की तरह उनसे छीन ली गई। बोधिसत्व ने बार-बार नए सिरे से शुरुआत की, जब तक कि उन्होंने वहाँ के प्रत्येक व्यक्ति के लिए आरामदायक जगह नहीं बना दी। एक बार उन्होंने एक मंडप बनाया, जिसे बाद में उन्होंने तोड़ दिया और उसके स्थान पर बेंचों और पानी के घड़े वाला एक हॉल बनवाया। एक बार बोधिसत्व ने इन तीस पुरुषों को अपने समान विचारधारा का अनुयायी बनाया; उन्होंने उन्हें पंच आज्ञाओं में स्थापित किया और तब से उनके साथ अच्छे कार्य करते हुए घूमने लगे। और वे भी अच्छे कार्य करते हुए, हमेशा बोधिसत्व के साथ, सुबह जल्दी उठकर अपने हाथों में तेज धार वाले औजार, कुल्हाड़ी और गदा लेकर तेजी से आगे बढ़ते थे। वे अपने डंडों से गाँव के चारों राजमार्गों और अन्य सड़कों पर पड़े सभी पत्थरों को हटा देते थे; रथों के धुरों से टकराने वाले पेड़ों को काट डालते थे; ऊबड़-खाबड़ जगहों को समतल करते थे; पक्के रास्ते बनाते थे, पानी के टैंक खोदते थे और एक भवन का निर्माण करते थे; वे दान-पुण्य का उपदेश देते थे और बोधिसत्वों का पालन करते थे। इस प्रकार गाँव के अधिकांश लोग बोधिसत्वों की शिक्षाओं का पालन करते थे और बोधिसत्वों का अनुपालन करते थे।

ग्राम प्रधान मन ही मन सोचने लगा, "जब ये लोग शराब पीकर हत्याएँ वगैरह करते थे, तो मैं उनसे न केवल शराब के दामों से, बल्कि जुर्माने और अन्य करों के रूप में भी खूब पैसा कमाता था। लेकिन अब ये नौजवान मघा मान उन्हें धर्म के नियमों का पालन करवाने पर तुला हुआ है; ये हत्याओं और अन्य अपराधों को रोक रहा है।" और क्रोध में आकर उसने कहा, "मैं इन्हें पाँचों धर्म नियमों का पालन करने से रोकूँगा!" और वह राजा के पास गया और बोला, "महाराज, लुटेरों का एक गिरोह गाँवों को लूट रहा है और अन्य अपराध कर रहा है।" जब राजा ने यह सुना, तो उसने प्रधान को उन लोगों को लाने के लिए कहा। प्रधान गया और उन तीसों लोगों को कैदी बनाकर राजा के सामने पेश कर दिया, और उन्हें बदमाश बताया। उनके कारनामों की जाँच किए बिना, राजा ने कठोर आदेश दिया कि उन्हें हाथी से कुचलवाकर मार डाला जाए। फिर उन्होंने उन्हें राजा के प्रांगण में लिटाया और हाथी को बुलवाया। बोधिसत्व ने उन्हें प्रोत्साहित करते हुए कहा, "शीलों का ध्यान रखो; निंदा करने वाले, राजा और हाथी से अपने समान प्रेम करो।" और उन्होंने वैसा ही किया।

फिर उन्हें कुचल कर मार डालने के लिए हाथी को लाया गया। लेकिन वे उसे लाख कोशिशों से लाते रहे, फिर भी वह उनके पास नहीं आया, बल्कि जोर-जोर से चिंघाड़ते हुए भाग गया। एक के बाद एक कई हाथी लाए गए; लेकिन सभी पहले हाथी की तरह भाग गए। राजा ने सोचा कि शायद उन आदमियों ने अपने पास कोई नशीला पदार्थ रखा है, इसलिए उसने उनकी तलाशी का आदेश दिया। तलाशी ली गई, लेकिन कुछ नहीं मिला; और उन्होंने राजा को यही बताया। राजा ने कहा, "तो फिर वे कोई मंत्र बुदबुदा रहे होंगे; उनसे पूछो कि क्या उनके पास कोई मंत्र है जिसे वे बुदबुदा रहे हैं।"

जब उनसे यह प्रश्न पूछा गया, तो बोधिसत्व ने कहा कि उन्हें एक मंत्र प्राप्त हुआ है। यह बात राजा के लोगों ने महाराज को बता दी। तब राजा ने उन सभी को अपने समक्ष बुलाया और कहा, "मुझे अपना मंत्र बताओ।"

बोधिसत्व ने उत्तर दिया, "हे प्रभु, हमारे पास इस मंत्र के अलावा कोई और मंत्र नहीं है कि हम तीसों में से कोई भी व्यक्ति जीव-जंतुओं का संहार नहीं करता, न ही कोई वस्तु लेता है जो हमें नहीं दी गई है, न ही यौन दुराचार करता है, न ही झूठ बोलता है; हम मादक पेय नहीं

पीते; हम प्रेम और दान में श्रेष्ठ हैं; हम सड़कों को समतल करते हैं, तालाब खुदवाते हैं और एक सार्वजनिक भवन बनवाते हैं; यही हमारा मंत्र, हमारी सुरक्षा और हमारी शक्ति है।"

उनसे प्रसन्न होकर राजा ने निंदा करने वाले के घर की सारी संपत्ति उन्हें दे दी और उसे उनका दास बना दिया; साथ ही उसने उन्हें हाथी और पूरा गाँव भी दे दिया।

तब से, वे अपनी इच्छा अनुसार अच्छे काम करते रहे और उन्होंने एक बढ़ई को बुलवाया और उससे चारों राजमार्गों के संगम पर एक बड़ा हॉल बनवाया; लेकिन चूंकि उनमें स्त्री जाति के प्रति कोई इच्छा नहीं रह गई थी, इसलिए उन्होंने किसी भी स्त्री को अच्छे काम में भागीदार नहीं बनने दिया।

उन दिनों बोधिसत्व के घर में चार स्त्रियाँ थीं, जिनके नाम सुधम्म, चित्त, नन्द और सुजाति थे। इनमें से सुधम्म ने जब बढ़ई को अकेले पाया, तो उसे रिश्वत देते हुए कहा, "भाई, मुझे इस भवन से संबंधित प्रमुख व्यक्ति बनाने की योजना बनाइए।"

"बहुत बढ़िया," उसने कहा। और भवन पर कोई और काम शुरू करने से पहले, उसने कुछ लकड़ी सुखाई, उसे तराशा, छेद किया और एक तैयार शिखर (टॉप) बना लिया। उसने इसे एक कपड़े में लपेटकर एक तरफ रख दिया। जब हॉल बनकर तैयार हो गया और टॉप लगाने का समय आया, तो उसने कहा, "अफ़सोस, मेरे स्वामी, एक चीज़ हम बनाना भूल गए।" "क्या?" "अरे, हमें एक टॉप चाहिए।" "ठीक है, एक का इंतज़ाम करो।" "लेकिन यह कच्ची लकड़ी से नहीं बन सकता; हमें एक ऐसा टॉप चाहिए जो कुछ समय पहले काटा गया हो, तराशा गया हो, छेद किया गया हो और रखा गया हो।" "तो अब क्या करें?" "अरे, आस-पास देखो कि क्या किसी के घर में ऐसा कोई तैयार टॉप बिक्री के लिए है।" जब उन्होंने ऐसा किया, तो उन्हें सुधम्मा के घर में एक टॉप मिला, लेकिन वे उसे किसी भी कीमत पर उससे नहीं खरीद सके। उसने कहा, "यदि आप मुझे इस नेक काम में भागीदार बनाएंगे, तो मैं इसे आपको निःशुल्क दे दूंगी।"

"नहीं," जवाब मिला, "हम महिलाओं को अच्छे कामों में हिस्सा नहीं लेने देते।"

तब बढ़ई ने उनसे कहा, "हे स्वामियों, आप लोग क्या कह रहे हैं? ब्रह्मा के लोक (परम स्वर्ग) को छोड़कर, ऐसा कोई स्थान नहीं है जहाँ से स्त्रियों को बाहर रखा गया हो। शिखर को ले लीजिए, और हमारा काम पूरा हो जाएगा।"

सहमति मिलने पर उन्होंने शीर्ष भाग पर कब्जा कर लिया और अपना हॉल पूरा किया। उन्होंने बेंचें लगवाईं और अंदर पानी के कलश रखे, जिससे उबले हुए चावल की निरंतर आपूर्ति होती रही। हॉल के चारों ओर उन्होंने एक दीवार बनाई और उसमें एक द्वार लगाया, दीवार के अंदर की जगह में रेत भर दी और बाहर ताड़ के पेड़ों की एक पंक्ति लगाई। विचारशील (चित्त) ने भी उस स्थान पर एक बगीचा बनवाया, और ऐसा कोई फूलदार या फलदार पेड़ नहीं था जो वहां न उगता हो। आनंदित (नंदा) ने भी उसी स्थान पर एक पानी की टंकी खुदवाई, जिसे पांच प्रकार के कमलों से ढक दिया गया, जो देखने में सुंदर थे। उच्च कुल के (सूजा) ने कुछ भी नहीं किया।

बोधिसत्व ने इन सात आज्ञाओं का पालन किया: माता का आदर करना, पिता का आदर करना, बड़ों का सम्मान करना, सत्य बोलना, कठोर वाणी से बचना, निंदा से बचना और कंजूसी से दूर रहना।

जो कोई अपने माता-पिता का भरण-पोषण करता है, वह उम्र का सम्मान करता है।

वह सौम्य, सौहार्दपूर्ण भाषी और निंदा न करने वाला है।

सभ्य, सत्यवादी, क्रोध का स्वामी—दास नहीं।

*उसे तैंतीस (*3) भी अच्छा कहेंगे।*

वह जिस प्रशंसनीय अवस्था तक पहुंचे, वह सराहनीय थी, और अपने जीवन के अंत में वे तैंतीस के स्वर्गलोक में देवों के राजा सक्का (इंद्र) के रूप में पुनर्जन्म लेने के लिए देह त्याग कर गए; और वहां उनके मित्र भी पुनर्जन्म लेकर गए।

उन दिनों तैंतीस लोकों में असुर निवास करते थे। देवों के राजा इंद्र ने कहा, "जिस राज्य में दूसरे भी हिस्सा बाँटें, उसका हमें क्या लाभ?" इसलिए उन्होंने असुरों को देवों का पेय पिलाया और जब वे मदमस्त हो गए, तो उन्हें पैरों से पकड़कर शिनेरु पर्वत की ढलानों पर फेंक दिया। वे लुढ़कते हुए सीधे 'असुर लोक' में पहुँच गए, जो शिनेरु पर्वत के सबसे निचले तल पर स्थित है और जिसका क्षेत्रफल तैंतीस लोकों के बराबर है। यहाँ एक वृक्ष उगता है, जो देवों के मूंगा वृक्ष जैसा दिखता है, जो युगों तक जीवित रहता है और उसे चितकबरा तुरही-पुष्प कहा जाता है। इस वृक्ष के फूलों ने उन्हें तुरंत समझा दिया कि यह देवों का लोक नहीं है, क्योंकि वहाँ मूंगा वृक्ष खिलता है। तब

वे चिल्लाए, “बूढ़े सक्का (इंद्र) ने हमें मदहोश कर दिया है और हमारे स्वर्ग नगर पर कब्ज़ा करके हमें गहरे समुद्र में फेंक दिया है।” “आओ,” वे चिल्लाए, “हम शस्त्र बल से अपना राज्य उससे वापस जीत लें।” और वे चींटियों की तरह खंभे पर चढ़ गए।

असुरों के जागने की सूचना सुनकर, सक्का (इंद्र) उनसे युद्ध करने के लिए गहरे समुद्र में चले गए, लेकिन युद्ध में पराजित होकर वे मुड़कर अपने 'विजय रथ' में सवार होकर दक्षिणी समुद्र की एक के बाद एक चोटियों से होते हुए भाग गए, जो एक सौ पचास लीग (x 4.23 किमी) लंबा था।

अब जब उनका रथ गहरे पानी में तेज़ी से आगे बढ़ रहा था, तो वह रेशम-कपास के पेड़ों के जंगल में पहुँचा। रथ के मार्ग में ये विशाल वृक्ष ताड़ के पेड़ों की तरह कटते हुए गहरे पानी में गिर पड़े। और जब गरुड़ों के बच्चे गहरे पानी में गिरे, तो उनकी चीखें तेज़ हो गईं। इंद्र ने अपने सारथी मतली से कहा, "मतली, मेरे मित्र, यह कैसी आवाज़ है? यह कितनी हृदयविदारक है।" "महाराज, यह गरुड़ों के बच्चों की भय से भरी चीख है, क्योंकि आपके रथ की तेज़ी से उनका जंगल उखड़ रहा है।" महान पुरुष ने कहा, "मेरे कारण उन्हें परेशान न होने दो, मेरे मित्र मतली। हम साम्राज्य के लिए ऐसा कार्य न करें जिससे जीवन नष्ट हो। बल्कि मैं उनके लिए असुरों को अपना प्राण बलिदान कर दूंगा। रथ को वापस मोड़ो।" और ऐसा कहकर उन्होंने यह श्लोक दोहराया:-

जंगल के सभी नन्हे-मुन्ने, मताली,

हमारे सर्वभक्षी रथ से बच निकलो।

मैं स्वेच्छापूर्वक बलिदान अर्पित करता हूँ।

मेरी जान उन असुरों को समर्पित है; ये बेचारे पक्षी

मेरे कारण वे अपने घोंसलों से नहीं तोड़े जाएँगे।

यह सुनकर सारथी मतली ने रथ को घुमाया और दूसरे मार्ग से देवलोक की ओर चल पड़ा। परन्तु जैसे ही असुरों ने उसे रथ घुमाते देखा, वे चिल्ला उठे कि दूसरे लोकों के सक्का (इंद्र) अवश्य आ रहे हैं; "यह उसकी अतिरिक्त सेना ही होगी जो उसे रथ वापस मोड़ने पर मजबूर कर रही है।" अपने प्राणों के भय से कांपते हुए वे सब भाग गए और असुरलोक पहुँचने तक नहीं रुके। और सक्का (इंद्र) स्वर्ग में प्रवेश करके अपने नगर के मध्य में खड़ा हो गया, जो उसके अपने और ब्रह्मा के प्रधान देवदूतों के एक देवमंडल से घिरा हुआ था। और उसी क्षण फटी हुई पृथ्वी से लगभग एक हजार मील (4.23 किमी) ऊँचा 'विजय महल' प्रकट हुआ, जिसे विजय के समय प्रकट होने के कारण यह नाम दिया गया। फिर, असुरों को वापस आने से रोकने के लिए, सक्का (इंद्र) ने पाँच स्थानों पर पहरेदार नियुक्त किए, जिनके बारे में कहा गया है:-

दोनों शहर अभेद्य हैं!

पांच बार पहरा देते हुए, नागों, गरुलों को देखो,

कुम्भंड, जिन्न और चार महान राजा!

लेकिन जब सक्का (इंद्र) देवों के राजा के रूप में स्वर्ग की महिमा का आनंद ले रहे थे, और इन पांच चौकियों पर तैनात अपने पहरेदारों द्वारा सुरक्षित थे, तब सुधम्मा का निधन हो गया और वे सक्का (इंद्र) की दासी के रूप में पुनर्जन्म हुईं। उनके द्वारा शीर्ष स्थान दान करने का फल यह हुआ कि उनके लिए एक महल का निर्माण हुआ, जिसका नाम 'सुधम्मा' रखा गया, जो दिव्य रत्नों से जड़ा हुआ था और पांच सौ मील (4.23 किमी) ऊंचा था। वहां, राजसी सफेद छत्र के नीचे, देवों के राजा सक्का (इंद्र), मनुष्यों और देवों पर शासन करते हुए विराजमान थे।

चित्त (चिंतनशील) की भी मृत्यु हो गई और वह इंद्र (सक्का) की दासी के रूप में पुनर्जन्म लेकर लौटी; उसके द्वारा बाग में किए गए कर्मों का फल यह हुआ कि वहाँ 'चिंतनशील लता-वन' नामक एक बाग बन गया। नंद (आनंद) की भी मृत्यु हो गई और वह इंद्र (सक्का) की दासियों में से एक के रूप में पुनर्जन्म लेकर लौटी; उसके द्वारा किए गए सरोवर का फल यह हुआ कि उसके नाम पर 'आनंद' नामक एक सरोवर बन गया। परन्तु सुजा (उच्च कुल का) ने कोई पुण्य कर्म न किया था, इसलिए वह जंगल की एक गुफा में सारस के रूप में पुनर्जन्म लेकर लौटी।

“सुजा का कोई अता-पता नहीं है,” सक्का (इंद्र) ने मन ही मन कहा; “पता नहीं वह कहाँ पुनर्जन्म लेकर आई है।” विचार करते-करते उन्हें उसका पता चल गया। इसलिए वे उससे मिलने गए और उसे अपने साथ स्वर्ग ले आए। उन्होंने उसे देवों के रमणीय नगर, पुण्य के महल, चिंतनशील लता-वन और आनंदमय सरोवर के बारे में बताया। “ये तीनों अपने अच्छे कर्मों के फलस्वरूप मेरी दासियों के रूप में पुनर्जन्म लेकर आई हैं; परन्तु तुम, तुमने कोई अच्छा कर्म नहीं किया, इसलिए पशु जगत में पुनर्जन्म लेकर आई हो। अब से आज्ञाओं का पालन करो।” इस प्रकार उसे प्रोत्साहित करके और पाँच आज्ञाओं का निश्चय दिलाकर, वे उसे वापस ले गए और उसे मुक्त कर दिया। तब से वह आज्ञाओं का पालन करती रही।

कुछ समय बाद, यह जानने की उत्सुकता में कि क्या सुजा सचमुच शिलाओं का पालन कर सकती है, सक्का (इंद्र) मछली का रूप धारण करके उसके सामने लेट गए। मछली को मृत समझकर सारस ने उसका सिर पकड़ लिया। मछली ने अपनी पूंछ हिलाई। सारस ने कहा, "अरे, मुझे तो लगता है कि यह जीवित है," और मछली को छोड़ दिया। सक्का (इंद्र) ने कहा, "बहुत अच्छा, बहुत अच्छा; तुम शिलाओं का पालन कर पाओगी।" इतना कहकर वे चले गए।

सारस के रूप में मरने के बाद, उच्चवंशी का पुनर्जन्म बनारस के एक कुम्हार के परिवार में हुआ। यह सोचकर कि वह कहाँ चली गई, और अंततः उसका पता चलने पर, सक्का (इंद्र), एक बूढ़े व्यक्ति का वेश धारण करके, सोने के खीरों से भरी एक गाड़ी लेकर गाँव के बीच में बैठ गया और चिल्लाने लगा, "मेरे खीरे खरीदो! मेरे खीरे खरीदो!" लोग उसके पास आए और खीरे माँगने लगे। उसने कहा, "मैं इन्हें केवल उन्हीं को देता हूँ जो आज्ञाओं का पालन करते हैं। क्या आप करते हैं?" "हमें नहीं पता कि आप अपनी 'आज्ञाओं' से क्या मतलब रखते हैं; हमें खीरे बेचिए।" "नहीं; मुझे अपने खीरों के लिए पैसे नहीं चाहिए। मैं इन्हें मुफ्त में देता हूँ, लेकिन केवल उन्हीं को जो आज्ञाओं का पालन करते हैं।" लोग मुँह फेरते हुए बोले, "यह कौन है?" यह सुनकर उच्चवंशी (सुजा) ने मन ही मन सोचा कि खीरे उसके लिए ही लाए गए होंगे, और इसलिए वह गई और कुछ खीरे माँगे। "क्या आप आज्ञाओं का पालन करती हैं, महोदया?" उसने कहा। "हाँ, मैं करती हूँ," जवाब मिला। "मैं ये सब तुम्हारे लिए ही यहाँ लाया हूँ," उसने कहा और खीरे, ठेला और सारा सामान उसके दरवाजे पर छोड़कर चला गया।

जीवन भर शिलाओं का पालन करते हुए, सुजा का निधन होने पर उनका पुनर्जन्म असुर राजा वेपचित्तिय की पुत्री के रूप में हुआ और उनकी अच्छाई के फलस्वरूप उन्हें अपार सौंदर्य का वरदान प्राप्त हुआ। जब वह बड़ी हुईं, तो उनके पिता ने असुरों को एकत्रित किया ताकि उनकी पुत्री उनमें से किसी एक को अपना जीवनसाथी चुन सकें। इंद्र ने सुजा का पता लगाकर असुर का रूप धारण किया और मन ही मन कहा, "यदि सुजा अपने मनपसंद जीवनसाथी का चुनाव करती हैं, तो मैं ही उनका जीवनसाथी बनूंगा।"

उच्च कुल की सुजा को सज-धज कर सभा स्थल पर लाया गया, जहाँ उनसे अपने मनपसंद पति का चुनाव करने को कहा गया। चारों ओर देखकर और सक्का (इंद्र) को निहारते हुए, पिछले जन्म में उनके प्रति अपने प्रेम से प्रेरित होकर उन्होंने उन्हें ही अपना पति चुना। सक्का (इंद्र) उन्हें देवों के नगर में ले गए और उन्हें पच्चीस करोड़ नर्तकियों की मुखिया बना दिया। और जब उनका जीवनकाल समाप्त हुआ, तो वे अपने कर्मों के फल के लिए परलोक सिधार गए।

अपना उपदेश समाप्त करते हुए, गुरु ने उस भिक्षु को इन शब्दों में फटकारा, “हे भिक्षुओं, बीते समय के बुद्धिमान और भले भिक्षु, जब वे देवों के शासक थे, तब भी अपने प्राणों का बलिदान देकर भी वध के अपराध से विरक्त रहे। तो क्या तुम, जिन्होंने अपने आप को इतने असाधारण उपदेश के लिए समर्पित किया है, सभी जीवित प्राणियों से युक्त बिना छाने हुए जल को पी सकते हो?” और उन्होंने संबंध बताते हुए जन्म का वर्णन किया, “आनंद तब सारथी मतली थे, और मैं इंद्र था।”

फुटनोट:

(1)जल छानने के नियमों के लिए, विनय देखें।

(2) गरुल अलौकिक श्रेणी के पंख वाले प्राणी थे, जो नागों के कट्टर प्रतिद्वंद्वी थे, जिनका क्षेत्र जल था। (जैसे जातक संख्या 154)

(3) बौद्ध ब्रह्मांड विज्ञान के देवलोकों में से एक, तावतिंसा-भवनम्, या 'तैंतीस का लोक' था, जिसे यह नाम इसलिए दिया गया था क्योंकि इसके निवासी पूर्व-बौद्ध धर्म के इंद्र, सक्का (इंद्र) के नेतृत्व में तैंतीस देवों (देवदूतों) के अधीन थे। यहाँ यह भी जोड़ा जा सकता है कि प्रत्येक विश्व-प्रणाली का अपना एक सक्का (इंद्र) होता था।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **नक्का-जातक**

स्रोत : रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित

पिछला <<<<-----||-32-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 32
नक्का-जातक

"एक सुखद स्वर।"

यह कहानी गुरु (बुद्ध) ने जेतवन मठ में रहते हुए एक भिक्षु (भाई) के बारे में सुनाई थी, जिसके पास बहुत सारा सामान था। यह घटना देवधम्म-जातक (*1) में वर्णित घटना के समान ही है।

"क्या यह खबर सच है, भिक्षु भाई," गुरु ने कहा, "कि तुम्हारे पास बहुत सारा सामान है?" "जी हाँ।" "तुम्हारे पास इतना सारा सामान क्यों है?" इसके आगे सुने बिना ही, भिक्षु ने अपने सारे वस्त्र फाड़ दिए और गुरु के सामने नग्न खड़ा होकर चिल्लाया, "मैं ऐसे ही घूमूँगा!" "अरे, बुरा हुआ!" सबने कहा। वह आदमी भाग गया और एक आम आदमी की नीची अवस्था में लौट गया। सत्य के हॉल में इकट्ठा होकर भिक्षु भाइयों ने गुरु के सामने उसके इस तरह के व्यवहार के बारे में बात की। गुरु अंदर आए और पूछा कि सभा में चर्चा का विषय क्या है। "महोदय," उत्तर मिला, "हम उस भिक्षु के इस बुरे काम पर चर्चा कर रहे थे और कह रहे थे कि आपकी उपस्थिति में और आपके चारों वर्गों के सामने (*2) उसने इतनी शर्म खो दी कि वह गाँव के आवारा बच्चे की तरह नग्न खड़ा हो गया, और जब उसने देखा कि सब उसे नापसंद कर रहे हैं, तो वह नीची अवस्था में लौट गया और उसने अपना विश्वास खो दिया।"

गुरु ने कहा, "भाइयों, उसकी निर्लज्जता से उसे केवल यही हानि नहीं हुई है; क्योंकि बीते दिनों में उसने एक अनमोल पत्नी को खो दिया था, ठीक वैसे ही जैसे अब उसने विश्वास के रत्न को खो दिया है।" और ऐसा कहते हुए उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

विश्व इतिहास के प्रथम चक्र में, एक समय की बात है, चौपायों ने सिंह को अपना राजा चुना, मछलियों ने आनंद नामक राक्षस मछली को और पक्षियों ने स्वर्ण बत्तख को (*3)। स्वर्ण बत्तख राजा की एक सुंदर युवती थी, और उसके पिता ने उसे वरदान देने का वचन दिया था। उसने अपने लिए पति चुनने की स्वतंत्रता का वरदान मांगा। राजा ने अपने वचन का पालन करते हुए हिमालय देश में सभी पक्षियों को एकत्रित किया। हंस, मोर और अन्य सभी प्रकार के पक्षी आए और एक विशाल चट्टानी पठार पर एकत्रित हो गए। फिर राजा ने अपनी पुत्री को बुलवाया और उससे कहा कि वह जाकर अपने मनपसंद का पति चुने। जब उसने पक्षियों के समूह का अवलोकन किया, तो उसकी दृष्टि रत्नजड़ित गर्दन और रंग-बिरंगी पूंछ वाले मोर पर पड़ी; और उसने उसे चुनते हुए कहा, "यही मेरा पति हो।" तब पक्षियों का समूह मोर के पास गया और बोला, "मित्र मोर, इस राजकुमारी ने इन सभी पक्षियों में से अपने पति का चुनाव करते समय तुम्हें चुना है।"

अपनी अत्यधिक खुशी में मदहोश होकर मोर ने कहा, "इस धरती पर तुमने कभी नहीं देखा कि मैं कितना फुर्तीला हूँ;" और सारी मर्यादाओं को धता बताते हुए उसने अपने पंख फैलाए और नाचने लगा; और नाचते हुए उसने अपने शरीर को सबके सामने प्रकट कर दिया।

शर्म से व्याकुल होकर, सुनहरे बत्तख के राजा ने कहा, "इस बत्तख में न तो हृदय में लज्जा है और न ही बाहरी व्यवहार में शालीनता; मैं अपनी बेटी को ऐसे निर्लज्ज व्यक्ति को कभी नहीं दूंगा।" और वहाँ पक्षियों की उस सभा के बीच, उसने यह छंद दोहराया:-

> आपको एक सुखद संदेश मिलता है, एक सुंदर पीठ।
>
> नीलम के समान रंग की गर्दन;
>
> आपके फैले हुए पंख एक फैदम (6 फीट) की लंबाई तक पहुंचते हैं।
>
> इसके अलावा, तुम्हारा नाचना तुम्हें नुकसान पहुंचाता है, मेरे बच्चे।

सभी उपस्थित लोगों के सामने ही राजा राजसी बत्तख ने अपनी बेटी का विवाह अपने भतीजे, एक युवा बत्तख से करवा दिया। राजकुमारी को खोने के दुख से लज्जित मोर तुरंत वहां से उठा और भाग गया। और राजा स्वर्ण बत्तख भी अपने निवास स्थान पर लौट गया।

“इस प्रकार, भिक्षुओं,” गुरु ने कहा, “यह एकमात्र समय नहीं है जब उसके लज्जा भंग ने उसे हानि पहुँचाई है; जिस प्रकार इसने अब उसे धर्म का रत्न खो दिया है, उसी प्रकार अतीत में इसने उसे पत्नी का रत्न खो दिया था।” यह पाठ समाप्त करने के बाद, उन्होंने संबंध स्पष्ट किया और जन्म की पहचान बताते हुए कहा,

"बहुत सारी वस्तुओं से सुसज्जित वह भिक्षु उस समय का मोर था, और मैं स्वयं शाही बत्तख था।"

फुटनोट:

(1) संख्या 6.

(2)अर्थात भाई, बहनें, आम भाई और आम बहनें।

(3)सं. 270.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सम्मोदामन-जातक**
__स्रोत__ : रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित

पिछला <<<<-----||-33-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 33
सम्मोदमन-जातक

जब तक सद्भाव कायम है।

यह कहानी गुरु ने कपिलवस्तु (बुद्ध के पिता शुद्धोदन का राज्य) के पास बरगद के बाग में रहते हुए सुनाई थी, कुली के सिर पर बांधने वाले पैड को लेकर हुए झगड़े के बारे में, जैसा कि कुणाल-जातक (*1) में बताया जाएगा।

इस अवसर पर गुरु ने अपने परिवार से कहा, "हे स्वामियों, परिवार में कलह उचित नहीं है। जी हाँ, पुराने समय में, जो जानवर सद्भाव से रहते हुए अपने शत्रुओं को हरा देते थे, वे आपस में झगड़ने पर पूरी तरह नष्ट हो गए।" और अपने शाही परिवार के अनुरोध पर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व का जन्म एक बटेर के रूप में हुआ और वे हजारों बटेरों के झुंड के मुखिया के रूप में जंगल में रहते थे। उसी दौरान एक शिकारी बटेरों का शिकार करने के लिए उस स्थान पर आया; और वह बटेरों की आवाज की नकल करता था, जब तक कि उसने देखा कि पक्षी एक साथ जमा हो गए हैं। तब उसने अपना जाल उन पर फेंका और जाल के किनारों को आपस में टकराकर उन्हें एक ढेर में इकट्ठा कर लिया। फिर उसने उन्हें अपनी टोकरी में भर लिया और घर जाकर अपने शिकार को बेचकर जीविका कमाने लगा।

एक दिन बोधिसत्व ने उन बटेरों से कहा, "यह शिकारी हमारे परिवार में आतंक मचा रहा है। मेरे पास एक उपाय है जिससे वह हमें पकड़ नहीं पाएगा। आज से, जैसे ही वह तुम पर जाल फेंके, तुम सब अपना सिर एक-एक जाल में डाल दो और फिर सब मिलकर उस जाल को अपने मनचाहे स्थान पर ले जाओ और वहाँ उसे किसी कंटीली झाड़ी में डाल दो; ऐसा करने से हम सब अपने-अपने जालों से मुक्त हो जाएँगे।" "बहुत अच्छा," सबने तुरंत सहमति जताते हुए कहा।

अगले दिन जब उन पर जाल डाला गया, तो उन्होंने ठीक वैसा ही किया जैसा बोधिसत्व ने उन्हें बताया था: उन्होंने जाल उठाया और उसे कंटीली झाड़ियों पर गिरा दिया, और खुद उसके नीचे से निकल गए। शिकारी अभी अपना जाल सुलझा ही रहा था कि शाम हो गई; और वह खाली हाथ लौट गया। अगले दिन और उसके बाद के दिनों में भी बटेरों ने यही चाल चली। इस तरह शिकारी के लिए यह नियमित हो गया कि वह सूर्यास्त तक अपना जाल सुलझाने में लगा रहता और फिर खाली हाथ घर लौटता। इस पर उसकी पत्नी क्रोधित हो गई और बोली, "तुम दिन-ब-दिन खाली हाथ लौट रहे हो; मुझे लगता है कि तुम्हें कहीं और भी अपना काम चलाना है।"

“नहीं, मेरी प्रिय,” शिकारी ने कहा; “मुझे कोई दूसरा ठिकाना नहीं चलाना है। असल बात तो यह है कि अब ये बटेरें मिलकर काम करने लगी हैं। जैसे ही मेरा जाल उन पर पड़ता है, वे उसे लेकर उड़ जाती हैं और काँटेदार झाड़ी में छोड़कर भाग जाती हैं। फिर भी, वे हमेशा एकता में नहीं रहेंगी। तुम चिंता मत करो; जैसे ही वे आपस में झगड़ने लगेंगी, मैं सबको पकड़ लूँगा, और यह देखकर तुम्हारे चेहरे पर मुस्कान आ जाएगी।” और ऐसा कहकर उसने अपनी पत्नी से यह पंक्ति दोहराई:-

> जब शांति का माहौल बना हुआ था, तब पक्षी जाल से उड़ गए।
>
> जब झगड़े बढ़ेंगे, तो वे मेरे शिकार बन जाएंगे।

इसके कुछ ही समय बाद, एक बटेर अपने चारागाह पर उतरते समय गलती से दूसरी बटेर के सिर पर चढ़ गई। "मेरे सिर पर कौन चला?" दूसरी बटेर गुस्से से चिल्लाई। "मैं ही चली; पर मेरा इरादा नहीं था। गुस्सा मत हो," पहली बटेर ने कहा। लेकिन इस जवाब के बावजूद, दूसरी बटेर पहले की तरह ही गुस्से में थी। एक-दूसरे को ताने मारते हुए, वे कहने लगे, "मुझे लगता है कि जाल तो तुमने अकेले ही उठाया है।" जब वे इस तरह आपस में झगड़ रहे थे, तब बोधिसत्व ने मन ही मन सोचा, "झगड़ालू व्यक्ति के साथ कोई सुरक्षा नहीं है। वह समय आ गया है जब वे जाल नहीं उठा पाएंगे, और इससे उनका भारी विनाश होगा। शिकारी को अपना मौका मिल जाएगा। मैं अब यहाँ नहीं रुक सकता।" और इतना कहकर वे अपने साथियों के साथ कहीं और चले गए।

कुछ दिनों बाद शिकारी फिर लौटा और बटेर की आवाज़ की नकल करते हुए उन्हें इकट्ठा किया और फिर उन पर अपना जाल फेंक दिया। तब एक बटेर बोली, "कहते हैं जब तुम जाल उठा रहे थे, तो तुम्हारे सिर के बाल झड़ गए। अब तुम्हारी बारी है; उठ जाओ।" दूसरी बटेर ने जवाब दिया, "कहते हैं जब तुम जाल उठा रहे थे, तो तुम्हारे दोनों पंख झड़ गए। अब तुम्हारी बारी है; उठ जाओ।"

लेकिन जब वे एक-दूसरे को जाल उठाने के लिए आमंत्रित कर रहे थे, तो शिकारी ने खुद ही उनके लिए जाल उठाया और उन्हें एक ढेर में अपनी टोकरी में ठूंस दिया और उन्हें घर ले गया, जिससे उसकी पत्नी के चेहरे पर मुस्कान छा गई।

“हे महाराज,” गुरु ने कहा, “परिवार में कलह जैसी बात उचित नहीं है; कलह केवल विनाश की ओर ले जाती है।” अपना उपदेश समाप्त करते हुए, उन्होंने संबंध समझाया और जन्म का वर्णन करते हुए कहा, “देवदत्त उन दिनों का मूर्ख बटेर था, और मैं स्वयं बुद्धिमान और अच्छा बटेर हूँ।”

फुटनोट:

(1) संख्या 536.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **मच्छ-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-34-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 34
मच्छा-जातक

"यह ठंड नहीं है।" - यह कहानी गुरु (बुद्ध) ने जेतवन मठ में सुनाई थी, जिसमें भिक्षु संघ में शामिल होने से पहले सांसारिक जीवन की पत्नी द्वारा बहकाए जाने का वर्णन था। इस अवसर पर गुरु ने कहा, "क्या यह सच है, जैसा मैंने सुना है, भिक्षु भाई, कि तुम वासना से ग्रस्त हो?"

"जी हां, भगवान बुद्ध।"

"किसकी वजह से?"

“हे प्रभु, मेरी पूर्व पत्नी स्पर्श में कोमल है; मैं उसे छोड़ नहीं सकता!” तब गुरु ने कहा, “भाई, यह स्त्री तुम्हारे लिए हानिकारक है। अतीत में भी इसी के कारण तुम्हारा अंत होने वाला था, जब मैंने तुम्हें बचाया था।” और ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व उनके कुलपुजारी बन गए।

उन दिनों कुछ मछुआरे नदी में जाल फेंक रहे थे। तभी एक बड़ी मछली अपनी पत्नी के साथ प्रेम-क्रीड़ा करते हुए आई। मछली ने जाल की गंध पहचान ली और उससे आगे तैरते हुए उसके चारों ओर चक्कर लगाकर बच निकली। लेकिन उसका प्रेमी, वासना में अंधा होकर, सीधे जाल में फंस गया। जैसे ही मछुआरों ने उसे अपने जाल में महसूस किया, उन्होंने जाल खींच लिया और मछली को बाहर निकाल लिया; उन्होंने उसे तुरंत नहीं मारा, बल्कि जिंदा ही रेत पर फेंक दिया। उन्होंने कहा, "हम इसे अंगारों में पकाकर खाएंगे" और उसी के अनुसार वे आग जलाने और उसे भूनने के लिए एक सींक तराशने में जुट गए। मछली विलाप करते हुए मन ही मन बोली, "मुझे अंगारों की यातना, सींक की पीड़ा या कोई और दर्द नहीं सता रहा है; बल्कि केवल इस दुखद विचार से पीड़ा हो रही है कि मेरी पत्नी यह सोचकर दुखी होगी कि मैं किसी और के साथ चला गया हूँ।" और उसने यह पंक्ति दोहराई:-

> यह न तो ठंड है, न गर्मी है, और न ही चोट पहुंचाने वाला जाल है;
>
> मुझे बस इस बात का डर है कि मेरी प्यारी पत्नी ऐसा सोचेगी
>
> किसी और के प्यार ने उसके पति को उससे दूर कर दिया है।

तभी पुजारी अपने दासों के साथ नदी किनारे स्नान करने आया। वह सभी जानवरों की भाषा समझता था। इसलिए, जब उसने मछली की रोने की आवाज़ सुनी, तो उसने मन ही मन सोचा, "यह मछली वासना की पुकार पर विलाप कर रही है। यदि वह इस अस्वस्थ मनःस्थिति में मर जाए, तो वह नरक में पुनर्जन्म से नहीं बच पाएगी। मैं इसे बचाऊँगा।" इसलिए वह मछुआरों के पास गया और बोला, "मेरे साथियों, क्या तुम हमें हर दिन हमारी करी के लिए एक मछली नहीं देते?" मछुआरों ने कहा, "क्या कहते हो, महाराज? हम निवेदन करते हैं, जो भी मछली तुम्हें पसंद आए, ले जाओ।" "हमें इस मछली के अलावा किसी और की ज़रूरत नहीं है; बस यही एक मछली दे दो।" "यह आपकी है, महाराज।"

बोधिसत्व ने मछली को दोनों हाथों में लेकर किनारे पर बैठ कर कहा, "मित्र मछली, यदि आज मैंने तुम्हें न देखा होता, तो तुम्हारी मृत्यु हो जाती। अब से वासनाओं के वश में मत रहो।" यह कहकर उन्होंने मछली को पानी में फेंक दिया और नगर की ओर चल दिए।

उनका प्रवचन समाप्त हुआ, गुरु ने सत्यों का उपदेश दिया, जिसके अंत में वासना से ग्रस्त भाई (भिक्षु) ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) प्राप्त किया। गुरु ने संबंध की व्याख्या करते हुए जन्म की पहचान बताई और कहा, "पूर्व पत्नी उन दिनों की मादा मछली थी, वासना से ग्रस्त भाई नर मछली था, और मैं स्वयं कुल-पुजारी था।"

[नोट: जातक क्रमांक 216 और 297 की तुलना करें।]

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **वत्तक-जातक**
***स्रोत**: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

जातक क्रमांक 35
वट्टक-जातक

“ऐसे पंख जो उड़ नहीं सकते।”—यह कहानी गुरुजी ने मगध में भिक्षा मांगने के दौरान जंगल की आग के बुझने के बारे में सुनाई थी। एक बार गुरुजी मगध में भिक्षा मांगने के दौरान सुबह एक गाँव में भिक्षा मांगने गए। भोजन के बाद लौटते समय वे भिक्षुओं के साथ फिर से बाहर निकले। तभी एक भीषण आग लग गई। गुरुजी के आगे और पीछे कई भिक्षु थे। आग फैलती चली गई और चारों ओर धुएँ और लपटों की चादर बिछ गई। यह देखकर कुछ गैर-भिक्षुओं को मृत्यु का भय सताने लगा। वे बोले, “चलो हम भी एक छोटी सी आग जलाते हैं; इससे बड़ी आग उस जगह पर नहीं फैलेगी जहाँ हमने आग लगाई है।” और इसी विचार से उन्होंने अपनी बारूद की लकड़ियों से आग जलाना शुरू कर दिया।

लेकिन दूसरों ने कहा, "भाइयों, तुम ये क्या कर रहे हो? तुम उन लोगों के समान हो जो आकाश में चंद्रमा, पूर्व से अनगिनत किरणों के साथ उगते सूर्य, अपने तट पर स्थित समुद्र, या अपनी आँखों के सामने खड़े विशाल पर्वत शिनेरु पर ध्यान नहीं देते। जब तुम देवों और मनुष्यों में समान रूप से असाधारण गुरु के साथ यात्रा कर रहे हो, तब भी तुम सर्वज्ञानी बुद्ध का ध्यान नहीं रखते, बल्कि चिल्लाते हो, 'आग जलाएँ!' तुम बुद्ध की शक्ति को नहीं जानते! आओ, गुरु के पास चलें।" तब, आगे और पीछे से सभी भाइयों ने मिलकर ज्ञान के स्वामी को घेर लिया। एक स्थान पर गुरु रुक गए, उनके चारों ओर भाइयों का यह विशाल समूह था। लपटें ऐसे भड़क उठीं मानो उन्हें भस्म कर देंगी। लेकिन जब वे उस स्थान के पास पहुँचे जहाँ बुद्ध खड़े थे, तो वे सोलह कदम से अधिक दूर नहीं जा सके, और वहीं बुझ गईं, जैसे कोई मशाल पानी में डूब जाती है। इसमें बत्तीस लंबाई के व्यास वाले स्थान पर फैलने की शक्ति नहीं थी।

भिक्षुओं ने गुरु की स्तुति करते हुए कहा, "हे बुद्ध के गुण कितने महान हैं! क्योंकि यह अग्नि, भले ही इंद्रियहीन है, बुद्ध के स्थान को अपनी चपेट में नहीं ले सकी, बल्कि पानी में मशाल की तरह बुझ गई। हे बुद्ध की शक्तियाँ कितनी अद्‌भुत हैं!"

उनकी बातें सुनकर गुरु ने कहा, "हे भाइयों, यह मेरी कोई वर्तमान शक्ति नहीं है जो इस स्थान पर पहुँचते ही आग को बुझा देती है। यह मेरे एक पूर्व 'सत्य कर्म' की शक्ति है। क्योंकि इस स्थान पर युगों-युगों तक कोई आग नहीं जलेगी, यह चमत्कार युगों तक कायम रहेगा।"

तब वरिष्ठ भिक्षु आनंद ने एक वस्त्र को चार भागों में मोड़कर गुरुजी के बैठने के लिए फैला दिया। गुरुजी बैठ गए। बुद्ध को प्रणाम करते हुए, जो पालथी मारकर बैठे थे, उनके चारों ओर भिक्षु भी बैठ गए। फिर उन्होंने उनसे पूछा, "हे गुरुजी, हमें केवल वर्तमान का ज्ञान है; अतीत हमसे छिपा हुआ है। कृपया हमें अतीत के बारे में बताएं।" और उनके अनुरोध पर, उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, मगध में ठीक इसी स्थान पर, बोधिसत्व ने बटेर के रूप में पुनर्जन्म लिया। जिस अंडे में उनका जन्म हुआ था, उसके खोल को तोड़कर वे एक नन्हे बटेर के रूप में बाहर आए, जो लगभग एक बड़ी गेंद के आकार का था। उनके माता-पिता उन्हें घोंसले में लिटाए रखते थे और अपनी चोंच में भोजन लाकर उन्हें खिलाते थे। उनमें न तो पंख फैलाकर हवा में उड़ने की शक्ति थी और न ही पैर उठाकर जमीन पर चलने की। वर्ष दर वर्ष वह स्थान जंगल की आग से तबाह होता रहता था; और ठीक इसी समय, लपटें ज़ोरदार गर्जना के साथ उस पर टूट पड़ीं। अपने-अपने घोंसलों से निकले पक्षियों के झुंड मृत्यु के भय से कांप उठे और चीखते हुए उड़ गए। बोधिसत्व के माता-पिता भी अन्य पक्षियों की तरह भयभीत हो गए और उन्हें वहीं छोड़कर उड़ गए। घोंसले में लेटे हुए बोधिसत्व ने अपनी गर्दन फैला ली और अपनी ओर फैलती हुई लपटों को देखकर मन ही मन सोचने लगे, "काश मेरे पास पंख होते और मैं उड़ पाता, तो मैं उड़कर यहाँ से सुरक्षित निकल जाता; या, अगर मैं अपने पैरों को हिला पाता और चल पाता, तो मैं पैदल ही कहीं और भाग जाता। इसके अलावा, मेरे माता-पिता मृत्यु के भय से व्याकुल होकर अपनी जान बचाने के लिए भाग गए हैं, मुझे यहाँ संसार में बिलकुल अकेला छोड़कर। मेरा कोई रक्षक या सहायक नहीं है। तो फिर, आज मैं क्या करूँ?"

तब उनके मन में यह विचार आया:- "इस संसार में, जिसे अच्छाई की प्रभावशीलता कहा जाता है, और जिसे सत्य की प्रभावशीलता कहा जाता है, वह विद्यमान है। ऐसे लोग हैं जिन्होंने बीते युगों में सिद्धियों को प्राप्त करके बोधि वृक्ष के नीचे सर्वज्ञानी अवस्था प्राप्त की है; जिन्होंने अच्छाई, शांति और ज्ञान के द्वारा मोक्ष प्राप्त किया है और ऐसे मोक्ष के ज्ञान का विवेक भी रखते हैं; जो सत्य, करुणा, दया और धैर्य से परिपूर्ण हैं; जिनका प्रेम सभी प्राणियों को समान रूप से आलिंगन करता है; जिन्हें मनुष्य असीम ज्ञानी बुद्ध कहते हैं। उनके द्वारा प्राप्त गुणों में एक प्रभावशीलता है। और मैं भी एक सत्य को ग्रहण करता हूँ; मैं प्रकृति के एक ही सिद्धांत में विश्वास रखता हूँ। इसलिए, यह मुझे अतीत के बुद्धों और उनके द्वारा अर्जित महत्व को याद करने और प्रकृति के सिद्धांत के प्रति अपने भीतर निहित सच्चे

विश्वास को थामे रखने के लिए प्रेरित करता है; और सत्य के एक कार्य द्वारा ज्वालाओं को वापस बुझाने के लिए, ताकि मैं और शेष पक्षी दोनों बच सकें।"

इसलिए यह कहा गया है:-

इस संसार में अच्छाई में असाधारण कृपा निहित है;
इसमें सत्य, करुणा और जीवन की पवित्रता है।
इसके द्वारा, मैं सत्य का एक बेमिसाल कार्य करूंगा।

आस्था की शक्ति को याद करते हुए और विचार करते हुए
बीते दिनों में विजय प्राप्त करने वालों को श्रद्धांजलि।
सत्य में दृढ़, मैंने सत्य का एक कार्य किया।
तदनुसार, बोधिसत्व ने बहुत पहले दिवंगत हुए बुद्धों की शक्ति को याद करते हुए, अपने भीतर निहित सच्चे विश्वास के नाम पर सत्य का एक कार्य किया और इस श्लोक को दोहराया:-

ऐसे पंख जो उड़ना नहीं जानते, ऐसे पैर जो अभी चलना नहीं जानते,
मेरे माता-पिता ने मुझे त्याग दिया है, मैं यहाँ पड़ा हूँ!
इसीलिए मैं आपसे आह्वान करता हूँ, हे अग्नि के भयानक स्वामी,
आदिम जातवेद, बारी! वापस जाओ!
सत्य का कार्य करते हुए भी, जातवेद सोलह कदम पीछे हट गए; और पीछे हटते समय ज्वालाएँ जंगल में जाकर अपने रास्ते में आने वाली हर चीज़ को भस्म नहीं कर गईं। नहीं; वे वहीं बुझ गईं, मानो पानी में डूबी हुई मशाल। इसलिए कहा गया है:-

मैं अपना सत्य का वचन लेकर आया था, और उसके साथ
धधकती आग की लपटों ने सोलह लंबाई छोड़ दीं
अछूते, जैसे पानी के संपर्क में आने से ज्वालाएं बुझ जाती हैं।
और चूंकि वह स्थान पूरे युग भर अग्नि से नष्ट होने से बचा रहा, इसलिए इस चमत्कार को 'युग-चमत्कार' कहा जाता है। जब उनका जीवन समाप्त हुआ, तो सत्य का यह कार्य करने वाले बोधिसत्व अपने कर्मों के फल के अनुसार इस दुनिया से विदा हो गए।

“इस प्रकार, भिक्षुओं,” गुरु ने कहा, “यह मेरी वर्तमान शक्ति नहीं है, बल्कि मेरे द्वारा बचपन में किए गए सत्य के एक कर्म की शक्ति है, जिसके कारण जंगल के इस स्थान से ज्वाला गुजरी है।” अपना उपदेश समाप्त करते हुए, उन्होंने सत्यों का प्रचार किया, जिसके अंत में कुछ ने प्रथम, कुछ ने द्वितीय, कुछ ने तृतीय मार्ग (सम्मोहन) प्राप्त किया, जबकि अन्य अर्हत (बुद्ध के समान प्रबुद्ध) बन गए। गुरु ने जन्म के संबंध को समझाते हुए कहा, “मेरे वर्तमान माता-पिता उन दिनों के माता-पिता थे, और मैं स्वयं बटेरों का राजा हूँ।”

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सकुण-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-36-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 36
सकुना-जातक

"हे वायु के निवासियों!" - यह कहानी गुरु (बुद्ध) ने जेतवन मठ में एक भिक्षु के बारे में सुनाई थी, जिसकी कुटिया जल गई थी।

परंपरा के अनुसार, एक भिक्षु को गुरु द्वारा ध्यान के लिए एक विषय दिया गया, और वे जेतवन मठ से कोसल देश में गए और वहाँ एक सीमावर्ती गाँव के निकट जंगल में एक कुटिया में रहने लगे। वहाँ रहने के पहले ही महीने में उनकी कुटिया जल गई। उन्होंने गाँव वालों को बताया, "मेरी कुटिया जल गई है; मैं असुविधा में रह रहा हूँ।" गाँव वालों ने कहा, "अभी ज़मीन सूखे से ग्रस्त है; खेतों की सिंचाई हो

जाने पर हम इसे देख लेंगे।" सिंचाई पूरी होने पर उन्होंने कहा कि पहले उन्हें बुवाई करनी होगी; बुवाई पूरी होने पर उन्हें बाड़ लगानी थी; बाड़ लगाने के बाद उन्हें पहले निराई, कटाई और अनाज निकालने का काम करना था; इसी तरह एक के बाद एक काम करते-करते पूरे तीन महीने बीत गए।

तीन महीने तक खुले आसमान के नीचे असुविधा में रहने के बाद, उस भाई ने ध्यान के लिए अपना विषय तो विकसित कर लिया था, लेकिन आगे नहीं बढ़ सका। इसलिए, वर्षा ऋतु के अंत में आने वाले पवाराना उत्सव के बाद, वह गुरु के पास वापस गया और विधिपूर्वक प्रणाम करते हुए एक तरफ बैठ गया। स्नेहपूर्ण अभिवादन के बाद, गुरु ने कहा, "भाई, क्या तुमने वर्षा ऋतु सुखपूर्वक बिताई? क्या तुम्हारा ध्यान सफल रहा?" भाई ने उन्हें सब कुछ बताया और कहा, "चूंकि मुझे रहने के लिए कोई उपयुक्त स्थान नहीं मिला, इसलिए मेरा ध्यान सफल नहीं हो सका।"

गुरु ने कहा, "भाई, पुराने समय में तो जानवर भी जानते थे कि उनके लिए क्या ठीक है और क्या नहीं। तुम यह कैसे नहीं जानते?" और ऐसा कहते हुए उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्याभिषेक था, तब बोधिसत्व पक्षी के रूप में जन्मे और एक विशाल वृक्ष के चारों ओर, बड़ी-बड़ी शाखाओं वाले एक समूह के मुखिया के रूप में रहने लगे। एक दिन, जब उस वृक्ष की शाखाएँ आपस में रगड़ खा रही थीं, तो धूल गिरने लगी और फिर धुआँ उठने लगा। जब बोधिसत्व को इसका एहसास हुआ, तो उन्होंने मन ही मन सोचा, "यदि ये दोनों शाखाएँ इसी तरह आपस में रगड़ खाती रहीं, तो आग लग जाएगी; और आग गिरकर पुराने पत्तों को पकड़ लेगी, और इस प्रकार इस वृक्ष को भी जला देगी। हम यहाँ नहीं रह सकते; उचित यही होगा कि हम शीघ्र ही कहीं और चले जाएँ।" और उन्होंने पक्षियों के समूह को यह श्लोक दोहराया:-

हे आकाश के निवासियों, जिन्होंने अपना ठिकाना ढूंढ लिया है!
इन शाखाओं में आग के निशान देखें
इस धरती से निकले वृक्ष से शुरुआत करो! उड़ान में सुरक्षा की तलाश करो!
हमारा भरोसेमंद घर, अब मौत का अड्डा बन गया है!
बोधिसत्व की सलाह मानने वाले बुद्धिमान पक्षी तुरंत हवा में उड़ गए और उनके साथ कहीं और चले गए। लेकिन मूर्ख पक्षियों ने कहा,

"उसका यही हाल है; वो पानी की एक बूंद में भी मगरमच्छ देखता है।" बोधिसत्व की बातों पर ध्यान न देते हुए वे वहीं रुक गए। कुछ ही क्षणों में, जैसा बोधिसत्व ने भविष्यवाणी की थी, सचमुच आग भड़क उठी और पेड़ में लपटें उठने लगीं। जब धुआँ और आग उठी, तो धुएँ से आँखें चौंधिया जाने के कारण पक्षी भाग नहीं सके; एक-एक करके वे आग में गिर पड़े और जलकर राख हो गए।

"इसलिए, हे भिक्षुओं," गुरु ने कहा, "पुराने समय में वृक्षों की चोटियों पर रहने वाले जानवर भी जानते थे कि उनके लिए क्या उचित है और क्या नहीं। तुम कैसे नहीं जानते थे?" उनका उपदेश समाप्त हुआ और उन्होंने सत्यों का प्रवचन दिया, जिसके अंत में उस भिक्षु ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) का फल प्राप्त किया। गुरु ने संबंध स्पष्ट करते हुए जन्म का वर्णन किया, "बुद्ध के शिष्य वे पक्षी थे जिन्होंने बोधिसत्व की बात सुनी, और मैं स्वयं वह बुद्धिमान और नेक पक्षी था।"

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **तित्तिर-जातक**
***स्रोत**: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-37-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 37
तित्तिरा-जातक

"जो लोग उम्र का सम्मान करते हैं।" - यह कहानी गुरु (बुद्ध) ने श्रावस्ती नगर जाते समय सुनाई थी, जिसमें बताया गया था कि कैसे वरिष्ठ भिक्षु सारिपुत्र को एक रात ठहरने की जगह नहीं मिली।

जब अनाथपिंडिका ने अपना मठ बनवा लिया और उसके पूरा होने की सूचना भेज दी, तो गुरुजी राजगृह नगर छोड़कर वैशाली नगर आ गए और अपनी इच्छा अनुसार वैशाली में विश्राम करने के बाद अपनी यात्रा पर निकल पड़े। तभी छह शिष्य आगे बढ़ गए और गुरुजी के लिए आवास मिलने से पहले ही उन्होंने सारे आवासों पर कब्जा कर लिया और उन्हें अपने वरिष्ठों, गुरुओं और स्वयं में बाँट लिया। जब गुरुजी बाद में आए, तो उन्हें रात बिताने के लिए कोई आवास नहीं मिला। सारिपुत्र के शिष्यों ने भी बहुत खोजबीन की, लेकिन उन्हें गुरुजी के लिए आवास नहीं मिला। आवास न होने के कारण गुरुजी ने गुरुजी के आवास के पास एक वृक्ष की छाया में रात बिताई; वे या तो इधर-उधर टहलते रहे या वृक्ष की छाया में बैठे रहे।

भोर होते ही गुरुजी खांसते हुए बाहर आए। वरिष्ठ भिक्षु भी खांसे। गुरुजी ने पूछा, "यह कौन है?" गुरुजी ने कहा, "मैं सारिपुत्र हूँ, श्रीमान।" गुरुजी ने पूछा, "सारिपुत्र, आप इस समय यहाँ क्या कर रहे हैं?" तब वरिष्ठ भिक्षु ने अपनी कहानी सुनाई, जिसके अंत में गुरुजी ने सोचा, "अभी भी, जब मैं जीवित हूँ, भिक्षुओं में शिष्टाचार और आज्ञाकारिता का अभाव है; मेरे मरने के बाद वे क्या करेंगे?" और इस विचार ने उन्हें सत्य के लिए चिंता से भर दिया। जैसे ही दिन हुआ, उन्होंने भिक्षुओं की सभा बुलाई और उनसे पूछा, "क्या यह सच है, भिक्षुओं, जैसा मैंने सुना है, कि छह भिक्षुओं के अनुयायी आगे चले गए और भिक्षुओं में से वरिष्ठ भिक्षुओं को रात भर ठहरने नहीं दिया?" उत्तर मिला, "जी हाँ, भगवान बुद्ध।" इस पर, उन्होंने छह अनुयायियों को फटकार लगाते हुए और सभी को सबक सिखाते हुए भाइयों को संबोधित किया और कहा, "मुझे बताओ, भाइयों, सबसे अच्छा आवास, सबसे अच्छा पानी और सबसे अच्छा चावल पाने का हकदार कौन है?"

कुछ ने उत्तर दिया, "वह जो भिक्षु बनने से पहले एक कुलीन व्यक्ति था।" कुछ ने कहा, "वह जो मूल रूप से ब्राह्मण था, या एक धनी व्यक्ति था।" कुछ ने ज़ोर देकर कहा, "वह व्यक्ति जो संघ के नियमों में पारंगत है; वह व्यक्ति जो धर्ममार्ग का उपदेश दे सकता है; वह व्यक्ति जिसने रहस्यमयी परमानंद (सम्मोहन) की पहली, दूसरी, तीसरी या चौथी अवस्था प्राप्त कर ली है।" जबकि कुछ ने फिर कहा, "वह व्यक्ति जो निर्वाण (मोक्ष) के प्रथम, द्वितीय या तृतीय मार्ग (सम्मोहन) में है, या अर्हत (बुद्ध के समान प्रबुद्ध व्यक्ति); वह व्यक्ति जो तीन महा सत्यों को जानता है; वह व्यक्ति जिसे छह उच्चतर ज्ञान प्राप्त हैं।"

जब भिक्षुओं ने आवास और इसी प्रकार के मामलों में वरीयता के योग्य व्यक्ति के बारे में अपने विचार स्पष्ट रूप से बता दिए, तो गुरु ने कहा, "जिस धम्म (मार्ग) का मैं उपदेश देता हूँ, उसमें आवास और इसी प्रकार के मामलों में वरीयता का मानदंड कुलीन जन्म, ब्राह्मण होना या संघ में प्रवेश से पहले धनी होना नहीं है; मानदंड संघ के नियमों, सूत्रों या आध्यात्मिक ग्रंथों (*1) का ज्ञान होना भी नहीं है; न ही यह समाधि की चार अवस्थाओं में से किसी एक की प्राप्ति है, न ही मोक्ष के चार मार्गों में से किसी एक पर चलना है। भिक्षुओं, मेरे मार्ग में वरिष्ठता ही वचन और कर्म में आदर, अभिवादन और सभी उचित सेवा का आधार है; वरिष्ठों को ही सर्वोत्तम आवास, सर्वोत्तम जल और सर्वोत्तम चावल प्राप्त होने चाहिए। यही सच्चा मानदंड है, और इसलिए वरिष्ठ भिक्षु को ये सब प्राप्त होने चाहिए। फिर भी, भिक्षुओं, यहाँ सारिपुत्र हैं, जो मेरे प्रमुख हैं।" शिष्य, जिसने लघु सत्य के चक्र को गतिमान किया है, और जो मेरे बाद ठहरने का पात्र है। और सारिपुत्र ने यह रात एक वृक्ष की गोद में बिना किसी आश्रय के बिताई! यदि तुममें अभी भी आदर और आज्ञाकारिता का अभाव है, तो समय बीतने पर तुम्हारा व्यवहार कैसा होगा?

और आगे की शिक्षा देते हुए उन्होंने कहा, "हे भाइयों, पुराने समय में, यहाँ तक कि पशुओं ने भी यह निष्कर्ष निकाला कि उनके लिए एक-दूसरे का आदर और अधीनता किए बिना या अपने सामूहिक जीवन को व्यवस्थित किए बिना रहना उचित नहीं था; इन पशुओं ने भी यह पता लगाने का निर्णय लिया कि उनमें से वरिष्ठ कौन है, और फिर उसका सर्वथा आदर करें। अतः उन्होंने इस विषय पर विचार किया, और जब उन्हें पता चल गया कि उनमें से वरिष्ठ कौन है, तो उन्होंने उसका सर्वथा आदर किया, जिसके फलस्वरूप वे अपने जीवन के अंत में मनुष्यों के स्वर्ग में विलीन हो गए।" और ऐसा कहते हुए उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, हिमालय की ढलानों पर एक विशाल बरगद के पेड़ के पास, तीन मित्र रहते थे: एक तीतर, एक बंदर और एक हाथी। उनमें आपस में सम्मान और अधीनता की भावना नहीं रही और उनके जीवन में कोई व्यवस्था नहीं थी। तब उन्हें लगा कि इस तरह रहना उनके लिए उचित नहीं है और उन्हें यह पता लगाना चाहिए कि उनमें से वरिष्ठ कौन है और उसका सम्मान करना चाहिए।

वे तीनों यह सोच रहे थे कि इनमें से सबसे पुराना कौन है, तभी एक दिन उनके मन में एक विचार आया। बरगद के पेड़ की तलहटी में बैठे हुए तीतर और बंदर ने हाथी से कहा, "मित्र हाथी, जब तुम्हें यह बरगद पहली बार याद है, तब यह कितना बड़ा था?" हाथी ने कहा, "जब मैं छोटा था, तब यह बरगद एक छोटी सी झाड़ी मात्र थी, जिस पर मैं चला करता था; और जब मैं इस पर खड़ा होता था, तो इसकी सबसे ऊपरी शाखाएँ मेरे पेट तक पहुँचती थीं। मैं इस पेड़ को तब से जानता हूँ जब यह एक छोटी सी झाड़ी मात्र थी।"

इसके बाद बाकी दोनों बंदरों ने भी उसी बंदर से वही सवाल पूछा; और उसने जवाब दिया, "मेरे दोस्तों, जब मैं छोटा था, तो मैं ज़मीन पर बैठकर बस अपनी गर्दन फैलाता था और इस बरगद के सबसे ऊपरी अंकुर खा लेता था। इसलिए मैं इस बरगद को तब से जानता हूँ जब यह बहुत छोटा था।"

फिर बाकी दो पक्षियों ने तीतर से वही सवाल पूछा; और उसने कहा, "दोस्तों, पुराने समय में फलां जगह पर एक बड़ा बरगद का पेड़ था; मैंने उसके बीज खाए और उन्हें यहीं पर त्याग दिया; यही इस पेड़ की उत्पत्ति है। इसलिए, मुझे इस पेड़ के जन्म से पहले से ही इसकी जानकारी है, और मैं तुम दोनों से उम्र में बड़ा हूँ।"

इस पर बंदर और हाथी ने ऋषि तीतर से कहा, "मित्र, आप सबसे बड़े हैं। अब से हम आपका आदर और सम्मान करेंगे, आपके प्रति श्रद्धा और श्रद्धा का भाव रखेंगे, वचन और कर्म से आदर करेंगे, अभिवादन करेंगे और सभी उचित सम्मान प्रदान करेंगे; और हम आपकी सलाह का पालन करेंगे। आप भी अब से हमें आवश्यकतानुसार सलाह देते रहें।"

तब से तीतर पक्षी ने उन्हें सलाह दी और उन्हें ईश्वरीय आज्ञाओं में दृढ़ किया, जिनका पालन करने का वचन उसने स्वयं भी लिया। इस प्रकार ईश्वरीय आज्ञाओं में दृढ़ होकर, आपस में आदरणीय और आज्ञाकारी बनकर, और अपने सामान्य जीवन को उचित रूप से व्यवस्थित करके, इन तीनों ने इस जीवन के अंत में स्वर्ग में पुनर्जन्म सुनिश्चित किया।

"इन तीनों के उद्देश्य," गुरु ने आगे कहा, "'तीतर पक्षी की पवित्रता' के नाम से जाने जाते हैं। यदि ये तीनों प्राणी, हे भिक्षुओं, आदर और अधीनता के साथ एक साथ रहते हैं, तो आप, जिन्होंने इतने सुशिक्षित धर्म को अपनाया है, उचित आदर और अधीनता के बिना कैसे एक साथ रह सकते हैं? हे भिक्षुओं, अब से मैं यह नियम बनाता हूँ कि वरिष्ठता का वचन और कर्म, अभिवादन और सभी उचित सेवाओं में आदर किया जाएगा; वरिष्ठता सर्वोत्तम आवास, सर्वोत्तम जल और सर्वोत्तम चावल का अधिकार होगी; और कभी भी किसी कनिष्ठ को किसी वरिष्ठ को आवास से वंचित न करने दें। जो कोई भी अपने वरिष्ठ को आवास से वंचित रखता है, वह अपराध करता है।"

इस पाठ के अंत में गुरु ने बुद्ध के रूप में इस श्लोक को दोहराया:-

जो लोग उम्र का सम्मान करते हैं, वे सत्य में पारंगत होते हैं;
अब प्रशंसा और परलोक का सुख ही उनका प्रतिफल है।

जब गुरु ने आयु का आदर करने के गुण के बारे में बोलना समाप्त कर दिया, तो उन्होंने वर्णन को आगे बढ़ाते हुए जन्म की पहचान करते हुए कहा, "मोग्गल्याना उन दिनों का हाथी था, सारिपुत्र बंदर था, और मैं स्वयं ऋषि तीतर पक्षी था।"

फुटनोट:

(1)अर्थात बौद्ध धर्मग्रंथों के तीन विभाजन, या 'तीन टोकरियाँ', जिन्हें त्रिपिटक या त्रिपिटक के नाम से भी जाना जाता है ---

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **बका-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-38-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 38
बका-जातक

"धोखाधड़ी से लाभ नहीं होता।" - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक दर्जी भिक्षु के बारे में सुनाई थी।

परंपरा के अनुसार, जेतवन मठ में एक भिक्षु रहते थे जो वस्त्रों को काटने, जोड़ने, सजाने और सिलने जैसे सभी कार्यों में अत्यंत कुशल थे। इसी कौशल के कारण वे वस्त्र सिलते थे और इसीलिए उन्हें 'वस्त्र-दर्जी' के नाम से जाना जाने लगा। आप पूछेंगे कि वे क्या करते थे? वे पुराने कपड़ों के टुकड़ों पर अपनी कला का अभ्यास करते और एक सुंदर, मुलायम वस्त्र बनाते थे। रंगाई के बाद, वे आटे से बने घोल

से उसका रंग निखारते और उसे शंख से तब तक रगड़ते जब तक वह एकदम आकर्षक और सुंदर न हो जाए। फिर वे अपनी कारीगरी को एक तरफ रख देते थे।

वस्त्र बनाने की कला से अनभिज्ञ होने के कारण, भिक्षु उनके पास बिल्कुल नया कपड़ा लेकर आते थे और कहते थे, "हमें वस्त्र बनाना नहीं आता; आप हमारे लिए बना दीजिए।"

"महोदय," वह जवाब देता, "एक वस्त्र बनाने में बहुत समय लगता है; लेकिन मेरे पास एक वस्त्र अभी-अभी बनकर तैयार हुआ है। आप इसे ले सकते हैं, बशर्ते आप ये वस्त्र बदले में छोड़ दें।" और ऐसा कहकर वह अपना वस्त्र निकालकर उन्हें दिखाता। वे केवल उसके सुंदर रंग को देखकर, और यह जाने बिना कि वह किस पदार्थ से बना है, यह सोचकर कि वह अच्छा और मजबूत है, अपना नया वस्त्र उस वस्त्र बनाने वाले को सौंपकर, उसके द्वारा दिए गए वस्त्र को लेकर चले गए। जब वह वस्त्र गंदा हो गया और गर्म पानी में धोया जा रहा था, तो उसकी असलियत सामने आ गई, और जगह-जगह से घिसे हुए पैच दिखाई देने लगे। तब वस्त्र मालिकों को अपने सौदे पर पछतावा हुआ। इस तरह धोखा देने के लिए वह भिक्षु हर जगह प्रसिद्ध हो गया, जो भी उसके पास आता था।

एक गाँव में एक वस्त्र बनाने वाला था जो जेतवन मठ के उस भाई की तरह सबको धोखा देता था। उस आदमी के कुछ मित्रों ने उससे कहा, "महोदय, लोग कहते हैं कि जेतवन मठ में एक वस्त्र बनाने वाला है जो तुम्हारी तरह सबको धोखा देता है।" तब उसके मन में विचार आया, "चलो, मैं उस शहर वाले को धोखा देता हूँ!" तो उसने चिथड़ों से एक बहुत ही सुंदर वस्त्र बनाया और उसे नारंगी रंग में रंग दिया। उसने उसे पहना और जेतवन मठ चला गया। जैसे ही दूसरे ने उसे देखा, वह उसे पाने के लिए तरस गया और उसके मालिक से पूछा, "महोदय, क्या आपने यह वस्त्र बनाया है?" "जी हाँ, मैंने बनाया है," जवाब मिला। "मुझे यह वस्त्र दे दीजिए, साहब; आपको इसके बदले दूसरा मिल जाएगा।" "लेकिन, साहब, हम गाँव के भाइयों को ज़रूरी चीज़ें मिलना मुश्किल होता है; अगर मैं आपको यह दे दूँ, तो मेरे पास पहनने के लिए क्या होगा?" "महोदय, मेरे पास कुछ नया कपड़ा है; इसे ले लीजिए और अपने लिए एक वस्त्र बना लीजिए।" "आदरणीय महोदय, इस मामले में मैंने अपनी चालाकी का परिचय दे दिया है; लेकिन यदि आप ऐसा कहेंगे तो मैं क्या करूँ? इसे ले लीजिए।" और फटे-पुराने वस्त्र को नए वस्त्र से बदलकर उसने दूसरे को धोखा दिया और अपने रास्ते चला गया।

जेतवन मठ के उस भिक्षु ने जब वह खराब ढंग से बना वस्त्र पहना, तो कुछ ही समय बाद उसे गर्म पानी में धोते समय उसे पता चला कि वह चिथड़ों से बना है; और वह शर्मिंदा हो गया। भिक्षुओं के पूरे समुदाय को यह खबर मिली कि जेतवन मठ के उस भिक्षु को एक देहाती दर्जी ने धोखा दिया है।

एक दिन, भाई लोग सत्य के हॉल में बैठे समाचारों पर चर्चा कर रहे थे, तभी गुरुजी अंदर आए और पूछा कि वे किस बारे में चर्चा कर रहे हैं; और उन्होंने उन्हें सब कुछ बता दिया।

गुरु ने कहा, "भाइयों, जेतवन मठ के वस्त्रकार की धोखाधड़ी की यह एकमात्र घटना नहीं है; अतीत में भी उसने ऐसा ही किया था, और जिस प्रकार अब उसे देश के लोगों ने धोखा दिया है, उसी प्रकार अतीत में भी उसके साथ ऐसा ही हुआ था।" और ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, बोधिसत्व एक वन में एक कमल-कुंड के पास स्थित वृक्ष के वृक्ष-परी के रूप में अवतरित हुए। उन दिनों, गर्मियों में एक छोटे से तालाब का जलस्तर बहुत कम हो जाता था, जिसमें मछलियाँ बहुतायत में थीं। इन मछलियों को देखकर एक सारस ने मन ही मन सोचा, "मुझे इन मछलियों को खाने का कोई तरीका ढूंढना होगा।" इसलिए वह जाकर तालाब के किनारे गहरी सोच में डूब गया।

जब मछलियों ने उसे देखा, तो उन्होंने कहा, "हे स्वामी, आप यहाँ बैठे-बैठे क्या सोच रहे हैं?" "मैं आपके बारे में सोच रहा हूँ," उसने उत्तर दिया। "और आप हमारे बारे में क्या सोच रहे हैं?" "इस तालाब में पानी कम है, भोजन दुर्लभ है, और गर्मी बहुत तेज़ है, इसलिए मैं यहाँ बैठे-बैठे सोच रहा था कि तुम मछलियाँ क्या करोगी।" "और हम क्या करें, हे स्वामी?" "अच्छा, अगर तुम मेरी सलाह मानोगी, तो मैं तुम्हें एक-एक करके अपनी चोंच में उठाऊँगा, और तुम सबको पाँच प्रकार के कमलों से ढके एक बड़े सुंदर तालाब में ले जाऊँगा, और वहाँ तुम्हें छोड़ दूँगा।" "हे स्वामी," उन्होंने कहा, "दुनिया की शुरुआत से लेकर आज तक किसी भी सारस ने मछलियों के बारे में कभी सोचा भी नहीं। आपकी इच्छा हमें एक-एक करके खाने की है।" "नहीं; "जब तक तुम मुझ पर भरोसा करोगे, मैं तुम्हें नहीं खाऊंगा," सारस ने कहा। "अगर तुम्हें मेरी बात पर यकीन नहीं है कि ऐसा कोई तालाब है, तो अपने किसी साथी को मेरे साथ भेजो और उसे खुद देखने को कहो।" सारस की बात पर विश्वास करके मछलियों ने उसे एक बहुत बड़ी मछली भेंट की (वैसे, उसकी एक आंख अंधी थी), जिसे वे सारस का मुकाबला करने के लिए उपयुक्त समझते थे, चाहे वह पानी पर हो या किनारे पर; और उन्होंने कहा, "यही है, इसे अपने साथ ले चलो।"

सारस ने मछली को उठाकर तालाब में डाल दिया, और उसे तालाब का पूरा आकार दिखाने के बाद वापस लाकर उसके पुराने तालाब की अन्य मछलियों के साथ डाल दिया। और मछली नए तालाब के आकर्षण में आकर उनसे चिपकी रही।

यह खबर सुनकर वे वहां जाने के लिए उत्सुक हो गए और सारस से कहा, "बहुत अच्छा, मेरे स्वामी; कृपया हमें पार ले चलें।"

सबसे पहले, सारस ने उस बड़ी एक आँख वाली मछली को फिर से उठाया और उसे तालाब के किनारे ले गया, ताकि वह पानी देख सके, लेकिन वास्तव में वह किनारे पर उगे एक वरुण वृक्ष पर उतर गया। मछली को पेड़ की एक शाखा में पटककर, उसने उसे चोंच मारकर मार डाला, फिर उसने उसे साफ किया और उसकी हड्डियों को पेड़ के नीचे गिरा दिया। फिर वह वापस गया और बोला, "मैंने इसे फेंक दिया है; अगला कौन है?" और इस तरह उसने एक-एक करके मछलियों को उठाया और उन्हें खा गया, जब तक कि अंत में जब वह वापस आया, तो उसे एक भी मछली नहीं मिली। लेकिन तालाब में अभी भी एक केकड़ा बचा था; इसलिए सारस, जो उसे भी खाना चाहता था, बोला, "श्रीमान केकड़े, मैंने उन सभी मछलियों को निकाल लिया है और उन्हें कमलों से ढके एक बड़े सुंदर तालाब में बदल दिया है। मेरे साथ आइए; मैं आपको भी ले चलूँगा।" "आप मुझे कैसे पार ले जाएँगे?" केकड़े ने कहा। "क्यों, अपनी चोंच में," सारस ने कहा। “अरे, तुम मुझे ऐसे गिरा सकते हो,” केकड़े ने कहा; “मैं तुम्हारे साथ नहीं चलूँगा।” “डरो मत; मैं तुम्हें पूरे रास्ते कसकर पकड़े रहूँगा।” केकड़े ने मन ही मन सोचा, “उसने मछली को तालाब में नहीं डाला है। लेकिन, अगर वह सच में मुझे डाल दे, तो बहुत अच्छा होगा। अगर वह ऐसा नहीं करता है, तो मैं उसका सिर काट कर उसे मार डालूँगा।” इसलिए उसने सारस से कहा, “तुम मुझे कभी भी इतनी कसकर नहीं पकड़ पाओगे, मेरे दोस्त सारस; जबकि हम केकड़ों की पकड़ बहुत मजबूत होती है। अगर मैं अपने पंजों से तुम्हारी गर्दन पकड़ लूँ, तो मैं उसे कसकर पकड़ लूँगा और फिर तुम्हारे साथ चलूँगा।”

केकड़े की चाल को न भांपते हुए सारस ने अपनी सहमति दे दी। केकड़े ने अपने पंजों से सारस की गर्दन को ऐसे जकड़ लिया जैसे कोई लोहार अपने चिमटे से जकड़ता है, और बोला, "अब तुम जा सकते हो।" सारस ने उसे पकड़ा और पहले उसे तालाब के बारे में समझाया, फिर पेड़ की ओर चल पड़ा।

“तालाब इधर है, नानी,” केकड़े ने कहा; “लेकिन तुम मुझे दूसरी तरफ ले जा रहे हो।” “मैं तुम्हारा नानी ही हूँ, प्रिय!” सारस ने कहा; “और तुम मेरे भतीजे ही हो! मुझे लगता है तुमने मुझे अपना गुलाम समझा होगा जो तुम्हें उठाकर इधर-उधर ले जाए! ज़रा पेड़ के नीचे पड़े हड्डियों के ढेर पर नज़र डालो; जैसे मैंने उन सारी मछलियों को खा लिया, वैसे ही मैं तुम्हें भी खा जाऊँगा।” केकड़े ने कहा, “उनकी अपनी गलती के कारण ही तुमने उन मछलियों को खाया; लेकिन मैं तुम्हें मुझे खाने का मौका नहीं दूँगा। नहीं; मैं तुम्हें मार डालूँगा। क्योंकि तुम मूर्ख थे, तुमने मेरी चाल नहीं समझी। अगर हम दोनों मरेंगे, तो साथ-साथ मरेंगे; मैं तुम्हारा सिर धड़ से अलग कर दूँगा।” और ऐसा कहते हुए उसने अपने पंजों से सारस के गले को ऐसे जकड़ लिया जैसे चिमटे से। अपना मुंह चौड़ा खोले और आंखों से आंसू बहाते हुए, जान के डर से कांपते हुए सारस ने कहा, "हे प्रभु, मैं तुम्हें नहीं खाऊंगा! मेरी जान बख्श दो!"

“अच्छा, तो फिर तालाब में उतरकर मुझे उसमें डाल दो,” केकड़े ने कहा। फिर सारस वापस मुड़ा और निर्देशानुसार तालाब में उतरकर केकड़े को पानी के किनारे कीचड़ पर रख दिया। लेकिन पानी में उतरने से पहले ही केकड़े ने सारस का सिर इतनी कुशलता से काट डाला मानो वह चाकू से कमल की डंठल काट रहा हो।

पेड़ में रहने वाली वृक्ष-परी ने इस अद्भुत बात को देखकर पूरे जंगल को तालियों से गूंजने पर मजबूर कर दिया और मधुर स्वर में इस श्लोक को दोहराया:-

छल से लाभ नहीं होता, आपके स्वयं के छलकारी लोगों को।
देखो उस धूर्त सारस को केकड़े से क्या मिला!

“भाइयों,” गुरु ने कहा, “यह पहली बार नहीं है जब इस व्यक्ति को गाँव के वस्त्रकार ने धोखा दिया है; पहले भी उसे ठीक इसी तरह धोखा दिया गया था।” अपना पाठ समाप्त करते हुए, उन्होंने संबंध समझाया और जन्म की पहचान बताते हुए कहा, “जेतवन मठ का वस्त्रकार उन दिनों का सारस था, गाँव का वस्त्रकार केकड़ा था, और मैं स्वयं वृक्ष-परी हूँ।”

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **नंद-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

जातक क्रमांक 39
नंदा जातक

"मुझे लगता है सोना।" - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सारिपुत्र के एक सह-निवासी शिष्य के बारे में सुनाई थी।

परंपरा के अनुसार, यह भिक्षु विनम्र और शांत स्वभाव का था और गुरुजी की सेवा में तत्पर रहता था। एक बार गुरुजी की अनुमति से गुरुजी भिक्षा मांगने के लिए दक्षिण मगध चले गए। वहाँ पहुँचकर वह भिक्षु इतना अहंकारी हो गया कि गुरुजी की बात मानने को तैयार नहीं था। यहाँ तक कि अगर कोई उससे कहता, "महोदय, ऐसा कीजिए," तो वह गुरुजी से झगड़ा करने लगता। गुरुजी को समझ नहीं आ रहा था कि उसे क्या हो गया है।

उन क्षेत्रों की तीर्थयात्रा करने के बाद, वे फिर से जेतवन मठ लौट आए। जेतवन मठ में लौटते ही, वे फिर से वही बन गए जो वे हमेशा से थे।

वरिष्ठ भिक्षु ने बुद्ध से यह कहते हुए कहा, "हे प्रभु, मेरे साथ रहने वाला एक भिक्षु एक जगह सौ सिक्कों में खरीदे गए गुलाम की तरह है, और दूसरी जगह इतना अहंकारी है कि कुछ भी करने का आदेश मिलने पर वह झगड़ा करने लगता है।"

गुरु ने कहा, "सारिपुत्र, यह पहली बार नहीं है जब उसने ऐसा व्यवहार दिखाया है; पहले भी, यदि वह एक जगह जाता तो सौ सिक्कों में खरीदे गए गुलाम के समान व्यवहार करता, जबकि दूसरी जगह जाने पर झगड़ालू और उग्र हो जाता।" और ऐसा कहकर, वरिष्ठ भिक्षु के अनुरोध पर, उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व ने एक अधिकारी के रूप में पुनर्जन्म लिया। उनका एक मित्र, एक अन्य अधिकारी, स्वयं तो वृद्ध था, लेकिन उसकी एक युवा पत्नी थी जिसने उसे एक पुत्र और उत्तराधिकारी को जन्म दिया था। वृद्ध ने मन ही मन कहा, "जैसे ही मैं मर जाऊँगा, यह युवती, इतनी कम उम्र में, न जाने किससे विवाह कर लेगी और मेरे पुत्र को देने के बजाय मेरी सारी संपत्ति खर्च कर देगी। क्या मेरे लिए बेहतर यही नहीं होगा कि मैं अपनी संपत्ति को सुरक्षित रूप से जमीन में गाड़ दूँ?"

इसलिए, अपने एक घरेलू दास, नंदा के साथ, वह जंगल में गया और एक निश्चित स्थान पर अपना धन गाड़ दिया, और दास से कहा, "मेरे भले नंदा, मेरे जाने के बाद इस खजाने को मेरे बेटे को बता देना, और लकड़ी को बिकने मत देना।"

अपने दास को यह आदेश देने के बाद, बूढ़े व्यक्ति की मृत्यु हो गई। समय बीतने पर पुत्र बड़ा हुआ और उसकी माँ ने उससे कहा, "पुत्र, तुम्हारे पिता ने नंदा के साथ मिलकर अपना धन गाड़ दिया है। उसे वापस ले आओ और परिवार की संपत्ति की देखभाल करो।" एक दिन उसने नंदा से कहा, "नन्की, क्या कोई खजाना है जिसे मेरे पिता ने गाड़ा है?" "जी, स्वामी।" "कहाँ गाड़ा है?" "जंगल में, स्वामी।" "अच्छा, तो चलो वहाँ चलते हैं।" और उसने एक फावड़ा और एक टोकरी ली, और वहाँ जाकर नंदा से कहा, "नन्की, धन कहाँ है?" लेकिन जब तक नंदा खजाने तक पहुँचा और उसके ठीक ऊपर खड़ा हुआ, तब तक वह धन से इतना घमंडी हो चुका था कि उसने अपने स्वामी को अपशब्द कहते हुए कहा, "एक वेश्या के बेटे के दास! यहाँ तुम्हारे पास धन कैसे हो सकता है?"

उस युवक ने यह बदतमीज़ी अनसुनी करते हुए कहा, "चलिए फिर चलते हैं," और दास को अपने साथ घर ले गया। दो-तीन दिन बाद वह फिर उस जगह लौटा; लेकिन नंदा ने पहले की तरह ही उसे फिर से बुरा-भला कहा। बिना कोई अपशब्द कहे, वह युवक वापस आया और मन ही मन सोचने लगा। उसने सोचा, "यह दास शुरू में तो हमेशा पैसे का पता बताने की कोशिश करता है; लेकिन जैसे ही उसे पता चलता है, वह मुझे गाली देने लगता है। इसका कारण मुझे समझ नहीं आता; लेकिन अगर मैं अपने पिता के पुराने मित्र, उस अधिकारी से पूछूँ तो पता चल जाएगा।" इसलिए वह बोधिसत्व के पास गया और सारी बात उनके सामने रखते हुए अपने मित्र से ऐसे व्यवहार का असली कारण पूछा।

बोधिसत्व ने कहा, "हे मित्र, जिस स्थान पर नंदा खड़ा होकर तुम्हें गाली दे रहा है, वहीं तुम्हारे पिता का धन गँवाया हुआ है। इसलिए, जैसे ही वह तुम्हें फिर से गाली देने लगे, उससे कहो, 'तू किससे बात कर रहा है, हे दास?' उसे वहाँ से खींच ले, फावड़ा ले, खोद कर अपना कीमती खजाना निकाल ले और दास से उसे घर ले जाने को कह दे।" और ऐसा कहते हुए उन्होंने यह श्लोक दोहराया:-

मुझे लगता है कि सोना और रत्न दफन हैं

जहां नीच कुल की दासी नंदा इतनी जोर-जोर से रो रही है!
बोधिसत्व से आदरपूर्वक विदा लेकर वह युवक घर लौटा और नंदा को साथ लेकर उस स्थान पर गया जहाँ धन गँवाया गया था। बोधिसत्व की सलाह का पूर्णतया पालन करते हुए उसने धन को वहाँ से निकाला और पारिवारिक संपत्ति की देखभाल की। वह बोधिसत्व की सलाहों के प्रति समर्पित रहा और दान-पुण्य एवं अन्य नेक कार्यों में जीवन व्यतीत करने के बाद अपने कर्मों के फल के अनुसार परलोक विदा हुआ।

गुरु ने कहा, "पहले भी इस व्यक्ति का स्वभाव ऐसा ही था।" अपना पाठ समाप्त करते हुए, उन्होंने संबंध स्पष्ट किया और जन्म का उल्लेख करते हुए कहा, "सारिपुत्र के साथ उस समय के नंदा रहते थे, और मैं एक बुद्धिमान और कुशल अधिकारी था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **खादिरंगार-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-40-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 40
खादिरंगरा-जातक

"मैं तो सीधे छलांग लगाऊंगा।" - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में अनाथपिंडिका के बारे में सुनाई थी।

अनाथपिंडिका ने अकेले मठ पर ही बुद्ध धर्म के प्रचार-प्रसार में चौवन करोड़ (10 मिलियन) रुपये लुटा दिए थे और वे त्रिरत्न (तीन रत्नों) (1. बुद्ध, 2. धम्म (निर्वाण का मार्ग) और 3. संघ (पवित्र संघ) के सिवा किसी और चीज को महत्व नहीं देते थे। वे गुरु के जेतवन मठ में रहने के दौरान प्रतिदिन महान पूजा-अर्चना में शामिल होने जाते थे, एक बार सूर्योदय के समय, एक बार नाश्ते के बाद और एक बार शाम को। बीच-बीच में भी पूजा-अर्चना होती थी; लेकिन वे कभी खाली हाथ नहीं जाते थे, इस डर से कि कहीं नौसिखिए और लड़के यह न देख लें कि वे अपने साथ क्या लाए हैं। सुबह जल्दी जाते समय वे चावल की दलिया ले जाते थे; नाश्ते के बाद घी, मक्खन, शहद, गुड़ आदि; और शाम को वे इत्र, माला और वस्त्र ले जाते थे। वे प्रतिदिन इतना खर्च करते थे कि उनके खर्च की कोई सीमा नहीं थी। इसके अलावा, कई व्यापारियों ने उनसे अपने बांडों पर अठारह करोड़ (10 मिलियन) रुपये का ऋण लिया था; और उस महान व्यापारी ने कभी भी वह पैसा वापस नहीं मांगा। इतना ही नहीं, नदी किनारे दबी हुई उनकी पारिवारिक संपत्ति के अठारह करोड़ (10 मिलियन) रुपये भी तूफान में नदी के बह जाने पर समुद्र में बह गए; और पीतल के बर्तन, जिनके बंधन और मुहरें टूटी नहीं थीं, समुद्र की गहराई में समा गए। उनके घर में भी 500 भिक्षुओं के लिए हमेशा चावल तैयार रहता था, इसलिए भिक्षुओं के लिए उनका घर ऐसा था जैसे चार रास्तों के मिलन बिंदु पर खोदा गया तालाब, जी हाँ, वे उनके लिए माता-पिता के समान थे। इसलिए, सर्वज्ञानी बुद्ध भी उनके घर जाया करते थे, और अस्सी प्रमुख भिक्षु भी; और आने-जाने वाले अन्य भिक्षुओं की संख्या अनगिनत थी।

उनका घर सात मंजिला था और उसमें सात द्वार थे; चौथे द्वार के ऊपर एक परी रहती थी जो गलत धारणा रखती थी। जब सर्वज्ञानी बुद्ध घर में आते थे, तो वह ऊपर अपने निवास स्थान पर नहीं रह पाती थी, बल्कि अपने बच्चों के साथ नीचे भूतल पर आ जाती थी; और जब भी अस्सी प्रमुख भिक्षु या अन्य भिक्षु आते-जाते थे, तो उसे ऐसा ही करना पड़ता था। वह सोचती थी, "जब तक तपस्वी गौतम (बुद्ध) और उनके शिष्य इस घर में आते रहेंगे, मुझे यहाँ शांति नहीं मिल सकती; मैं हमेशा नीचे भूतल पर नहीं आ सकती। मुझे उन्हें इस घर में आने से रोकने की योजना बनानी होगी।" तो एक दिन, जब व्यापार प्रबंधक विश्राम करने के लिए चले गए, तो वह उनके सामने प्रत्यक्ष रूप में प्रकट हुईं।

"वह कौन है?" उसने कहा।

"मैं ही हूँ," जवाब आया; "मैं वो परी हूँ जो चौथे द्वार के ऊपर रहती हूँ।" "यहाँ क्यों आई हो?" "तुम्हें पता नहीं चल रहा कि व्यापारी क्या कर रहा है। अपने भविष्य की परवाह किए बिना, वो अपनी सारी संपत्ति केवल तपस्वी गौतम (बुद्ध) को समृद्ध करने के लिए निकाल रहा है। वो कोई व्यापार नहीं करता; कोई कारोबार नहीं करता। व्यापारी को सलाह दो कि वो अपने कारोबार पर ध्यान दे, और यह व्यवस्था करो कि तपस्वी गौतम (बुद्ध) अपने शिष्यों के साथ फिर कभी घर में न आएँ।"

तब उसने कहा, "मूर्ख परी, यदि व्यापारी अपना पैसा खर्च करता है, तो वह बुद्ध के धर्म पर खर्च करता है, जो मोक्ष (निर्वाण) की ओर ले जाता है। यदि वह मुझे बालों से पकड़कर गुलाम के रूप में बेच भी दे, तो भी मैं कुछ नहीं कहूंगा। चले जाओ!"

एक दिन वह व्यापारी के सबसे बड़े बेटे के पास गई और उसे भी वही सलाह दी। लेकिन उसने उसी तरह उसकी बात को अनसुना कर दिया। पर व्यापारी से इस मामले पर बोलने की हिम्मत तक नहीं हुई।

अब निरंतर दान-पुण्य और व्यापार न करने के कारण व्यापारी की आमदनी कम होती गई और उसकी संपत्ति घटती ही गई; जिससे वह धीरे-धीरे गरीबी में डूबता चला गया, और उसका भोजन, वस्त्र, बिस्तर और भोजन अब पहले जैसे नहीं रहे। फिर भी, अपनी बदली हुई परिस्थितियों के बावजूद, वह भिक्षुओं के समूह का सत्कार करता रहा, हालांकि अब वह उन्हें भोज नहीं दे पाता था। एक दिन जब उसने प्रणाम किया और अपनी जगह पर बैठा, तो गुरु ने उससे कहा, "गृहस्वामी, क्या आपके घर में उपहार दिए जा रहे हैं?" "जी जी," उसने कहा; "लेकिन कल का बचा हुआ थोड़ा सा खट्टा भूसे का दलिया ही है।" "हे गृहस्थ, इस विचार से दुखी मत हो कि तुम केवल अप्रिय वस्तु ही अर्पित कर सकते हो। यदि हृदय अच्छा हो, तो बुद्धों, पच्चेक बुद्धों (*1) और उनके शिष्यों को दिया गया भोजन भी निश्चित रूप से अच्छा होगा। और क्यों? क्योंकि उस भोजन का फल महान है। जो अपने हृदय को सुखद बना सकता है, वह अप्रिय दान नहीं दे सकता, जैसा कि निम्नलिखित कथन से प्रमाणित होता है:-

क्योंकि, यदि हृदय में आस्था हो, तो कोई भी उपहार छोटा नहीं होता।
बुद्धों या उनके शिष्यों के प्रति सत्य।
कहते हैं कि किसी भी सेवा को छोटा नहीं समझा जा सकता।
यह बुद्धों को, महान ख्याति प्राप्त देवताओं को दिया जाता है।
ध्यान से देखिए कि उस तुच्छ उपहार के बदले में क्या फल मिला।
सूप, सूखा हुआ, खट्टा और नमक रहित (*2)।"
इसके बाद उन्होंने आगे कहा, "हे गृहस्थ, यह अप्रिय दान देकर आप उन लोगों को दान दे रहे हैं जिन्होंने अष्टांगिक मार्ग (बुद्ध का ध्यान/ज़ेन पर आधारित और निर्वाण/मोक्ष की ओर ले जाने वाला मार्ग) का अनुसरण किया है। जबकि मैंने वेलामा के समय में सात बहुमूल्य वस्तुएँ दान करके पूरे भारत में हलचल मचा दी थी, और अपनी उदारता से उन वस्तुओं को ऐसे उंडेल दिया था मानो पाँचों बड़ी नदियों को एक विशाल धारा में मिला दिया हो, फिर भी मुझे कोई ऐसा व्यक्ति नहीं मिला जिसने तीन शरणों को प्राप्त किया हो या पाँच आज्ञाओं का पालन किया हो; क्योंकि दान के योग्य लोग दुर्लभ हैं। इसलिए, इस विचार से अपने हृदय को विचलित न होने दें कि आपका दान अप्रिय है।" और ऐसा कहकर उन्होंने वेलामाका सूत्र को दोहराया।

अब वह परी, जिसने अपने वैभव के दिनों में व्यापारी से बात करने की हिम्मत नहीं की थी, सोच रही थी कि अब जब वह गरीब है तो वह उसकी बात सुनेगा। इसलिए, आधी रात को उसके कमरे में प्रवेश करते हुए वह उसके सामने हवा में खड़ी होकर प्रकट हुई। "यह कौन है?" व्यापारी ने उसकी उपस्थिति का एहसास होने पर कहा। "मैं परी हूँ, महान व्यापारी, जो चौथे द्वार के ऊपर निवास करती हूँ।" "यहाँ क्यों आई हो?" "आपको सलाह देने।" "तो फिर आगे बढ़ो।" "हे महान व्यापारी, आपको अपने भविष्य या अपने बच्चों की कोई चिंता नहीं है। आपने गौतम बुद्ध के धर्म पर अपार धन खर्च कर दिया है; वास्तव में, निरंतर खर्च और नए व्यापार न करने के कारण ही गौतम बुद्ध ने आपको दरिद्र कर दिया है। लेकिन इस दरिद्रता में भी आप गौतम बुद्ध को नहीं भूले हैं! आज भी वे आपके घर आते-जाते रहते हैं! जो उन्होंने आपसे लिया है, वह वापस नहीं लिया जा सकता। यह निश्चित है। लेकिन अब से आप स्वयं गौतम बुद्ध के पास न जाएं और उनके शिष्यों को अपने घर में कदम न रखने दें। गौतम बुद्ध की ओर मुड़कर भी न देखें, बल्कि अपने व्यापार और कारोबार पर ध्यान दें ताकि परिवार की संपत्ति को संवार सकें।"

फिर उसने उससे कहा, "क्या यही सलाह तुम मुझे देना चाहती थी?"

"हाँ यह था।"

व्यापारी ने कहा, "ज्ञान के सर्वशक्तिमान भगवान ने मुझे तुम्हारे जैसी सौ, हज़ार, हाँ, एक लाख परियों से भी सुरक्षित रखा है! मेरा विश्वास सिनेरु पर्वत के समान दृढ़ और समर्पित है! मैंने अपनी सारी संपत्ति मोक्ष (निर्वाण) की ओर ले जाने वाले धर्म में लगा दी है। तुम्हारे शब्द दुष्टतापूर्ण हैं; हे दुष्ट और धृष्ट चुड़ैल, तुम बुद्धों के धर्म पर प्रहार कर रही हो। मैं तुम्हारे साथ एक ही छत के नीचे नहीं रह सकता; तुरंत मेरे घर से निकल जाओ और कहीं और शरण लो!" उस परिवर्तित व्यक्ति और चुने हुए शिष्य के ये शब्द सुनकर वह रुक नहीं सकी, बल्कि अपने घर गई, अपने बच्चों का हाथ पकड़ा और चली गई। लेकिन जाते हुए भी उसने मन बना लिया था कि अगर उसे कहीं और रहने की जगह नहीं मिली, तो वह व्यापारी को प्रसन्न करके उसके घर में वापस रहने लगेगी; और इसी विचार से वह नगर के संरक्षक देवता के पास गई और विधिपूर्वक उनके समक्ष प्रणाम किया। जब उनसे पूछा गया कि वे वहाँ क्यों आई हैं, तो उन्होंने कहा, "हे प्रभु, मैंने अनाथपिंडिका से अनुचित बातें कह दीं, और उन्होंने क्रोधित होकर मुझे मेरे घर से निकाल दिया है। मुझे उनके पास ले जाइए

और हमारे बीच सुलह करवाइए, ताकि वे मुझे वहाँ फिर से रहने दें।" "लेकिन आपने व्यापारी से क्या कहा?" "मैंने उनसे कहा कि भविष्य में वे बुद्ध और संघ का समर्थन न करें, और तपस्वी गौतम (बुद्ध) को अपने घर में फिर कभी कदम न रखने दें। मैंने यही कहा था, हे प्रभु।" "तुम्हारे शब्द दुष्टतापूर्ण थे; यह धर्म पर प्रहार था। मैं तुम्हें व्यापारी के पास अपने साथ नहीं ले जा सकता।" उनसे कोई समर्थन न मिलने पर, वे विश्व के चार महान अधिकारियों के पास गईं। और उनसे उसी प्रकार घृणा होने पर, वह देवों के राजा सक्का (इंद्र) के पास गई और उन्हें अपनी कहानी सुनाते हुए, और भी अधिक गंभीरता से उनसे विनती की, "देव (देवदूत), मुझे कोई आश्रय न मिलने के कारण, मैं अपने बच्चों का हाथ पकड़कर एक तपस्वी की तरह भटक रही हूँ। हे महाराज, मुझे रहने के लिए कोई स्थान प्रदान कीजिए।"

और उसने भी उससे कहा, "तुमने दुष्टता की है; यह विजेता के धर्म पर प्रहार था। मैं तुम्हारी ओर से व्यापारी से बात नहीं कर सकता। लेकिन मैं तुम्हें एक तरीका बता सकता हूँ जिससे व्यापारी तुम्हें क्षमा कर दे।" "कृपया मुझे बताइए, देव।" "लोगों ने व्यापारी के अठारह करोड़ (10 मिलियन) रुपये के बॉन्ड रखे हैं। उसके एजेंट का रूप धारण करो, और किसी को बताए बिना कुछ युवा जिन्नों के साथ बॉन्ड लेकर उनके घरों में जाओ। उनके घरों के बीच में एक हाथ में बॉन्ड और दूसरे हाथ में रसीद लेकर खड़े हो जाओ, और अपनी जिन्न शक्ति से उन्हें डराते हुए कहो, 'यह आपके ऋण की स्वीकृति है। जब हमारा व्यापारी समृद्ध था, तब उसने इस मामले में कोई कार्रवाई नहीं की; लेकिन अब वह गरीब है, और आपको अपना बकाया चुकाना होगा।'" अपनी अलौकिक शक्ति से वह अठारह करोड़ (10 मिलियन) सोना प्राप्त करो और व्यापारी के खाली खजाने भर दो। उसका एक और खजाना अचिरवती नदी के किनारे दबा हुआ था, लेकिन जब नदी का किनारा बह गया, तो वह खजाना समुद्र में चला गया। अपनी अलौकिक शक्ति से उसे भी वापस लाओ और उसके खजाने में जमा करो। इसके अलावा, फलां स्थान पर अठारह करोड़ (10 मिलियन) की एक और राशि लावारिस पड़ी है। उसे भी लाओ और उसके खाली खजाने में डाल दो। जब तुम इन चौवन करोड़ (10 मिलियन) को वापस लाकर प्रायश्चित कर लोगी, तो व्यापारी से क्षमा मांग लेना।" "बहुत अच्छा, देव," उसने कहा। और वह आज्ञाकारी होकर काम पर लग गई और ठीक वैसा ही किया जैसा उसे कहा गया था। जब उसने सारा पैसा वापस ला लिया, तो वह आधी रात को व्यापारी के कमरे में गई और हवा में खड़ी होकर उसके सामने प्रकट हुई।

व्यापारी ने पूछा कि कौन है, तो उसने उत्तर दिया, "हे महान व्यापारी, मैं ही हूँ, अंधी और मूर्ख परी जो आपके चौथे द्वार के ऊपर रहती थी। अपने अहंकार में डूबे हुए पाप में मैं बुद्ध के गुणों को नहीं जानती थी, इसलिए कुछ दिन पहले आपसे जो कहा था, वही कहने आई हूँ। मुझे क्षमा करें! देवों के राजा सक्का (इंद्र) के कहने पर, मैंने आपके अठारह करोड़ (10 मिलियन) रुपये वसूल कर प्रायश्चित किया है, जिनमें से अठारह करोड़ (10 मिलियन) समुद्र में बह गए थे, और दूसरे अठारह करोड़ (10 मिलियन) रुपये फलाँ-फलाँ स्थान पर लावारिस पड़े थे, कुल मिलाकर चौवन करोड़ (10 मिलियन) रुपये, जो मैंने आपके खाली खजाने में डाल दिए हैं। जेतवन में मठ पर आपने जो खर्च किया था, वह अब वसूल हो गया है। मेरे पास रहने की कोई जगह नहीं है, इसलिए मैं दुखी हूँ। हे महान व्यापारी, मेरे अज्ञान में किए गए पाप को न भूलें, बल्कि मुझे क्षमा करें।"

अनाथपिंडिका ने उसकी बातें सुनकर मन ही मन सोचा, "यह एक परी है, और यह कहती है कि उसने प्रायश्चित कर लिया है और अपने दोष को स्वीकार कर लिया है। गुरु इस पर विचार करेंगे और उसे अपने गुणों से अवगत कराएंगे। मैं इसे सर्वज्ञानी बुद्ध के समक्ष ले जाऊंगा।" इसलिए उन्होंने कहा, "मेरी प्यारी परी, यदि तुम मुझसे क्षमा चाहती हो, तो गुरु के समक्ष मुझसे विनती करो।" "ठीक है," उसने कहा, "मैं करूंगी। मुझे अपने साथ गुरु के पास ले चलो।" "ज़रूर," उन्होंने कहा। और सुबह तड़के, जब रात ढल रही थी, वे उसे अपने साथ गुरु के पास ले गए और भगवान बुद्ध को उसके द्वारा किए गए सभी कर्मों के बारे में बताया।

यह सुनकर गुरु ने कहा, "हे गृहस्थ, देखो पापी मनुष्य पाप को उसके फल लगने से पहले उत्तम समझता है। परन्तु जब वह फल लग जाता है, तब उसे पाप का वास्तविक रूप दिखाई देता है। इसी प्रकार, भले मनुष्य अपने अच्छे कर्मों को उसके फल लगने से पहले पाप समझता है; परन्तु जब वे फल लग जाते हैं, तब उसे अच्छाई दिखाई देती है।" ऐसा कहकर उन्होंने धम्मपद के ये दो श्लोक दोहराए:-

पापी अपने पापपूर्ण कर्म को अच्छा समझता है।
जब तक पाप फल के रूप में पक न जाए।
लेकिन जब उसका पाप अंततः परिपक्व हो जाता है,
पापी को निश्चित रूप से यह एहसास होता है कि "पाप तो मैंने ही किया है।"

वह नेक इंसान अपनी अच्छाई को पाप समझता है।
जब तक यह पककर फल न दे दे।
लेकिन जब उसकी अच्छाई परिपक्वता तक पहुँच जाती है,
वह नेक इंसान निश्चित रूप से देखता है कि "अच्छा हुआ कि मैं (*3) लाया।"

इन श्लोकों के अंत में वह परी प्रथम मार्ग के फल (सम्मोहन) में स्थापित हो गई। वह गुरु के चक्रचिह्नित चरणों में गिर पड़ी और रोते हुए बोली, "मैं वासना से दूषित, पाप से भ्रष्ट, भ्रम से गुमराह और अज्ञान से अंधी होकर, आपके गुणों को न जानने के कारण दुष्टतापूर्ण बातें बोली। मुझे क्षमा कीजिए!" तब उसे गुरु और महान व्यापारी से क्षमा प्राप्त हुई।

इस समय अनाथपिंडिका ने गुरु की उपस्थिति में अपनी प्रशंसा करते हुए कहा, "हे प्रभु, यद्यपि इस परी ने मुझे बुद्ध और उनके अनुयायियों का समर्थन करने से रोकने की पूरी कोशिश की, पर वह सफल नहीं हो सकी; और यद्यपि उसने मुझे दान देने से रोकने का प्रयास किया, फिर भी मैंने दान दिया! क्या यह मेरी ओर से अच्छाई नहीं थी?"

गुरु ने कहा, "हे गृहस्थ, तुम परिवर्तित पुरुष और चुने हुए शिष्य हो; तुम्हारा विश्वास दृढ़ है और तुम्हारी दृष्टि शुद्ध है। इसलिए आश्चर्य की बात नहीं कि तुम इस शक्तिहीन परी से नहीं रुके। आश्चर्य की बात तो यह थी कि बीते युग के बुद्धिमान और भले लोग, जब बुद्ध प्रकट नहीं हुए थे और ज्ञान अपने पूर्ण फल तक नहीं पहुँचा था, तब कमल के हृदय से दान देते रहे, जबकि कामवासनाओं के लोक के स्वामी मारा मध्य आकाश में प्रकट होकर चिल्ला रहे थे, 'यदि तुम दान दोगे, तो तुम इस नरक में जल जाओगे,' और उन्हें 80 भुजाओं जितना गहरा, धधकते अंगारों से भरा एक गड्ढा दिखा रहे थे।" और ऐसा कहकर, अनाथपिंडिका के अनुरोध पर, उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व का जन्म बनारस के प्रधान कोषाध्यक्ष के परिवार में हुआ और उनका पालन-पोषण एक राजकुमार की तरह विलासितापूर्ण वातावरण में हुआ। सोलह वर्ष की आयु में ही, जब वे विवेकशील हुए, तब तक उन्होंने सभी गुणों में निपुणता प्राप्त कर ली थी। अपने पिता की मृत्यु के बाद, उन्होंने प्रधान कोषाध्यक्ष का पदभार ग्रहण किया और छह भिक्षागृह बनवाए, जिनमें से एक नगर के चारों द्वारों पर, एक नगर के केंद्र में और एक उनके अपने महल के द्वार पर था। वे अत्यंत उदार थे, और वे आज्ञाओं का पालन करते थे तथा व्रत के नियमों का पालन करते थे।

एक दिन सुबह के नाश्ते के समय जब बोधिसत्व के लिए स्वादिष्ट और विविध प्रकार के लज़ीज़ व्यंजन लाए जा रहे थे, तभी सात दिनों की रहस्यमयी समाधि से जागे एक पच्चेक बुद्ध ने देखा कि अब उनके भ्रमण का समय हो गया है, तो उन्हें लगा कि इस सुबह बनारस के कोषाध्यक्ष से मिलना अच्छा रहेगा। इसलिए उन्होंने पान के पत्तों से बनी पान-छलनी से अपने दांत साफ किए, अनोतत्ता झील के जल से कुल्ला किया, मनोशिला के पठार पर खड़े होकर अपने अंतर्वस्त्र पहने, कमरबंद बांधा और बाहरी वस्त्र धारण किया; और अपने द्वारा प्रकट किए गए एक कटोरे को लेकर वे वायु में विचरण करते हुए महल के द्वार पर ठीक उसी समय पहुंचे जब बोधिसत्व का नाश्ता परोसा जा रहा था।

जैसे ही बोधिसत्व को वहाँ उसकी उपस्थिति का ज्ञान हुआ, वे तुरंत अपने आसन से उठे और सेवक की ओर देखकर यह संकेत दिया कि कोई सेवा आवश्यक है। "हे स्वामी, मुझे क्या करना है?" "आदरणीय महोदय का कुंड लाओ," बोधिसत्व ने कहा।

उसी क्षण दुष्ट मारा अत्यंत उत्तेजित होकर उठा और बोला, "पच्चेक बुद्ध को भोजन दिए सात दिन हो गए हैं; यदि आज उन्हें भोजन नहीं मिला तो वे मर जाएँगे। मैं उन्हें नष्ट कर दूँगा और कोषाध्यक्ष को भी दान देने से रोक दूँगा।" और उसी क्षण वह महल के भीतर गया और अस्सी भुजाओं जितना गहरा, जलते हुए अंगारों का एक गड्ढा बना दिया, जो बबूल के कोयले से भरा हुआ था और अविची के नरक की तरह आग की लपटों से घिरा हुआ था। इस गड्ढे को बनाने के बाद, मारा स्वयं हवा में खड़ा हो गया।

जब कटोरा लाने जा रहे व्यक्ति को इस बात का पता चला, तो वह भयभीत होकर वापस भागने लगा। बोधिसत्व ने पूछा, "तुम क्यों वापस भाग रहे हो? मेरे मित्र?" उत्तर मिला, "हे स्वामी, घर के बीचोंबीच धधकते अंगारों का एक बड़ा गड्ढा है।" और जैसे-जैसे एक-एक करके लोग उस स्थान पर पहुँचते गए, वे सब भयभीत होकर अपनी पूरी शक्ति से भागने लगे।

बोधिसत्व ने मन ही मन सोचा, "आज तो मुझे भिक्षा देने से रोकने के लिए सम्मोहन करने वाला मारा ही होगा। लेकिन मुझे अभी यह सीखना बाकी है कि सौ या हज़ार मारा मिलकर मुझे हिला देंगे। आज पता चल जाएगा कि किसकी शक्ति अधिक प्रबल है, किसकी सामर्थ्य अधिक है, मेरी या मारा की।" फिर तैयार रखे हुए कटोरे को हाथ में लेकर वे घर से बाहर निकल गए और अग्निकुंड के किनारे खड़े होकर आकाश की ओर देखने लगे। मारा को देखकर उन्होंने पूछा, "आप कौन हैं?" उत्तर मिला, "मैं मारा हूँ।"

"क्या तुमने इस धधकते अंगारों के गड्ढे को बनाया है?" "हाँ, मैंने।" "क्यों?" "तुम्हें भिक्षा देने से रोकने और उस पच्चेक बुद्ध के जीवन को नष्ट करने के लिए।" "मैं तुम्हें न तो मुझे भिक्षा देने से रोकने दूँगा और न ही पच्चेक बुद्ध के जीवन को नष्ट करने दूँगा। मैं आज देखूँगा कि तुम्हारी शक्ति अधिक है या मेरी।" और उस धधकते गड्ढे के किनारे खड़े होकर उन्होंने पुकारा, "आदरणीय पच्चेक बुद्ध, भले

ही मैं इस धधकते अंगारों के गड्ढे में सिर के बल गिरने ही वाला हूँ, मैं पीछे नहीं हटूँगा। बस मेरे द्वारा लाया गया भोजन स्वीकार कर लो।" और ऐसा कहते हुए उन्होंने यह श्लोक दोहराया:-

मैं बल्कि जल्दबाजी में सीधे छलांग लगाऊंगा
इस नरक की खाई में पूरी तरह डूब जाना, शर्म से झुकने से बेहतर है!
महोदय, मेरी ओर से यह भिक्षा स्वीकार करने की कृपा कीजिए!
इन शब्दों के साथ, बोधिसत्व ने भोजन का कटोरा थामकर, निडर दृढ़ संकल्प के साथ अग्निकुंड की सतह पर कदम रखा। लेकिन जैसे ही उन्होंने ऐसा किया, अग्निकुंड की अस्सी भुजाओं की गहराई से एक विशाल और असाधारण कमल का फूल प्रकट हुआ, जिसने बोधिसत्व के चरणों को ग्रहण किया! और उससे पराग की एक मात्रा निकली जो उस महान प्राणी के सिर पर गिरी, जिससे उनका पूरा शरीर मानो सिर से पैर तक सोने की धूल से ढक गया! कमल के ठीक बीच में खड़े होकर, उन्होंने उत्तम भोजन को पच्चेक बुद्ध के कटोरे में उंडेल दिया।

और जब उसने भोजन ग्रहण कर लिया और धन्यवाद दिया, तो उसने अपना कटोरा आकाश में बहुत ऊपर फेंक दिया, और सभी लोगों के सामने वह स्वयं भी शरीर सहित हवा में उठ गया, और हिमालय की ओर फिर से विदा हो गया, मानो वह बादलों से बने एक विचित्र आकार के रास्ते पर चल रहा हो।

और मारा भी पराजित और निराश होकर अपने निवास स्थान पर लौट गया।

लेकिन बोधिसत्व कमल में विराजमान रहते हुए लोगों को सत्य का उपदेश देते रहे, दान और आज्ञाओं की प्रशंसा करते रहे; इसके बाद, अपने अनुयायियों से घिरे हुए वे अपने निवास स्थान पर लौट गए। और जीवन भर उन्होंने दान का उपदेश दिया और अन्य अच्छे कार्य किए, अंत में अपने कर्मों के फल के अनुसार उनका निधन हो गया।

गुरु ने कहा, "हे गृहस्थ, यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि सत्य की समझ रखने वाले तुम अब परी के वश में नहीं आए; असली आश्चर्य तो वह था जो बुद्धिमान और भले लोगों ने बीते दिनों में किया।" अपना उपदेश समाप्त करते हुए, गुरु ने संबंध समझाया और जन्म का वर्णन करते हुए कहा, "उन दिनों के पच्चेक बुद्ध का निधन हो गया, और वे फिर कभी जन्म नहीं लेंगे। मैं स्वयं बनारस का कोषाध्यक्ष था, जिसने मारा को पराजित करके और कमल के हृदय में खड़े होकर पच्चेक बुद्ध के पात्र में भिक्षा डाली थी।"

फुटनोट्स :

(1) सभी बुद्धों ने पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर लिया है; लेकिन एक पच्चेक बुद्ध अपने ज्ञान को अपने तक ही सीमित रखता है और 'पूर्ण बुद्ध' के विपरीत, वह अपने साथी मनुष्यों को असाधारण सत्य का उपदेश नहीं देता।

(2) पहली दो पंक्तियाँ त्रिपिटक के विमान-वत्थु से हैं।

(3) ये श्लोक धम्मपद में संख्या 119 और 120 हैं।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **लोसाका-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-41-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 41
लोसाका-जातक

"जिद्दी आदमी।"--यह कहानी गुरु ने जेतवना मठ में रहते हुए वरिष्ठ भिक्षु लोसाका तिस्सा के बारे में सुनाई थी।

आप पूछेंगे, 'ये वरिष्ठ भिक्षु लोसाका तिस्सा कौन थे?' दरअसल, उनके पिता कोसला में मछुआरे थे और वे अपने परिवार के सबसे कमज़ोर सदस्य थे। भिक्षु बनने के बाद भी उन्हें कभी कुछ नहीं मिला। उनका पिछला जन्म कोसला के एक हज़ार परिवारों वाले मछली

पकड़ने वाले गाँव में एक मछुआरे की पत्नी से हुआ था। जिस दिन उनका जन्म हुआ, उस दिन वे सभी हज़ार परिवार जाल लेकर नदी और तालाब में मछली पकड़ने गए, लेकिन एक भी मछली नहीं पकड़ पाए। उस दिन से ही उनका दुर्भाग्य उनका पीछा करता रहा। उनके जन्म से पहले, गाँव सात बार आग से नष्ट हो चुका था और सात बार राजा के प्रकोप का शिकार हुआ था। समय के साथ, गाँव की हालत दयनीय हो गई। यह सोचकर कि पहले के जन्मों में उनका ऐसा हाल नहीं था, बल्कि अब वे दुर्भाग्य और बर्बादी की ओर बढ़ रहे हैं, उन्होंने सोचा कि उनमें से कोई न कोई दुर्भाग्य का कारण ज़रूर है, और उन्होंने दो समूहों में बँटने का निश्चय किया। उन्होंने ऐसा ही किया; तब पाँच-पाँच सौ परिवारों के दो समूह थे। उनसे आगे, भावी लोसाका के माता-पिता वाले समूह पर विपत्ति का साया मंडराता रहा, जबकि अन्य पाँच सौ परिवार तेज़ी से तरक्की करते रहे। इसलिए पहले समूह ने अपने सदस्यों की संख्या आधी करने का निश्चय किया और ऐसा ही करते रहे, जब तक कि यह एक परिवार बाकी सभी से अलग नहीं हो गया। तब उन्हें पता चला कि दुर्भाग्य का जनक इसी परिवार में है, और उन्होंने मार-पीट कर उन्हें भगा दिया। उसकी माँ बड़ी मुश्किल से अपना जीवन यापन कर पाती थी; परन्तु जब उसका समय आया, तो उसने एक विशेष स्थान पर अपने पुत्र को जन्म दिया। (जो अपने अंतिम जन्म में जन्म लेता है, उसे मारा नहीं जा सकता। क्योंकि जैसे कलश में दीपक जलता है, वैसे ही उसकी छाती में बुद्ध के समान अर्हत/प्रबुद्ध बनने की नियति की लौ सुरक्षित रूप से जलती रहती है।) माँ ने बच्चे की तब तक देखभाल की जब तक वह दौड़ने-भागने लायक नहीं हो गया, और जब वह दौड़ने-भागने लायक हो गया, तब उसने उसके हाथों में एक टूटा हुआ मिट्टी का बर्तन थमा दिया और उसे किसी घर में भीख मांगने के लिए कहकर भाग गई। तब से, वह अकेला बच्चा आसपास भीख मांगकर अपना भोजन प्राप्त करता था और जहाँ भी जगह मिलती, सो जाता था। वह गंदा और मैला था, और मिट्टी खाने वाले जिन्न (*1) की तरह जीवन यापन करता था। जब वह सात साल का था, तो वह कौवे की तरह, एक-एक करके, घर के दरवाजे के बाहर जो भी चावल मिलता था, उसे उठाकर खाता था, जहाँ चावल के बर्तनों की धुलाई का पानी फेंक दिया जाता था।

धर्म के प्रमुख सारिपुत्र, भिक्षा मांगने के लिए श्रावस्ती नगर में गए, तो उनकी नज़र उस बच्चे पर पड़ी। वे यह सोचकर आश्चर्यचकित रह गए कि यह बेचारा बच्चा किस गाँव से आया है। उन्हें उस पर दया आ गई और उन्होंने पुकारा, "इधर आओ।" बच्चा आया, उसने बड़े भिक्षु को प्रणाम किया और उनके सामने खड़ा हो गया। तब सारिपुत्र ने पूछा, "तुम किस गाँव के हो और तुम्हारे माता-पिता कहाँ हैं?"

"मैं बेसहारा हूँ, महोदय," बच्चे ने कहा; "क्योंकि मेरे माता-पिता ने कहा कि वे थक गए थे, इसलिए उन्होंने मुझे छोड़ दिया और चले गए।"

"क्या आप भिक्षु बनना चाहेंगे?" "जी हाँ, महोदय; लेकिन मुझ जैसे गरीब और लाचार को कौन अपने संघ में स्वीकार करेगा?" "मैं करूँगा।" "तो फिर, मैं निवेदन करता हूँ, मुझे भिक्षु बनने दीजिए।"

बड़े भिक्षु ने बच्चे को भोजन कराया और उसे मठ ले गए, अपने हाथों से उसका स्नान कराया और पहले उसे नौसिखिए के रूप में और बाद में, जब वह वयस्क हो गया, तो उसे पूर्ण भिक्षु के रूप में दीक्षा दी। वृद्धावस्था में वे बड़े भिक्षु लोसाका तिस्सा के नाम से जाने जाते थे; वे सदा दुर्भाग्यशाली (*2) रहे और उन्हें बहुत कम दान मिलता था। कहा जाता है कि दान कितना भी उदार क्यों न हो, उन्हें कभी भी पेट भरकर भोजन नहीं मिलता था, बस इतना ही मिलता था जिससे वे जीवित रह सकें। चावल का एक चम्मच ही उनके भिक्षापात्र को लबालब भर देता था, जिससे दानदाता यह सोचकर कि उनका कटोरा भर गया है, शेष चावल अगले चम्मच में डाल देते थे। कहा जाता है कि जब उनके कटोरे में चावल डाला जाता था, तो दानदाता के बर्तन से चावल गायब हो जाते थे। और ऐसा ही हर प्रकार के भोजन के साथ होता था। समय बीतने के साथ-साथ जब उन्होंने विवेक विकसित कर लिया और सर्वोच्च फल, अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) प्राप्त कर लिया, तब भी उन्हें बहुत कम ही मिलता था।

समय की पूर्णता में, जब उनके जीवन के अस्तित्व (जीवन काल) (*3) को निर्धारित करने वाले कारण समाप्त हो गए, तो उनके परलोक जाने का दिन आ गया। धर्म के प्रमुख (सारिपुत्र) ध्यान करते हुए इस बात से अवगत हुए और मन ही मन सोचने लगे, 'लोसाका तिस्सा आज परलोक चले जाएंगे; और आज तो मैं यह सुनिश्चित करूँगा कि उन्हें पर्याप्त भोजन मिले।' अतः वे वरिष्ठ भिक्षु को साथ लेकर भिक्षा मांगने श्रावस्ती नगर आए। परन्तु लोसाका उनके साथ थे, इसलिए घनी आबादी वाले श्रावस्ती नगर में सारिपुत्र का भिक्षा मांगने का प्रयास व्यर्थ रहा; उन्हें प्रणाम तक नहीं किया गया। अतः उन्होंने वरिष्ठ भिक्षु से वापस जाकर मठ के बैठक कक्ष में बैठने का अनुरोध किया और भोजन एकत्र किया, जिसे उन्होंने लोसाका को देने का संदेश भेज दिया। जिन्हें उन्होंने भोजन दिया, उन्होंने उसे लिया और अपने-अपने मार्ग पर चले गए, परन्तु लोसाका को पूरी तरह भूलकर, उसे स्वयं खा लिया। जब सारिपुत्र उठे और मठ में प्रवेश करने लगे, तो लोसाका उनके पास आए और उन्हें प्रणाम किया। सारिपुत्र रुक गए और मुड़कर बोले, "तो, क्या आपको भोजन मिल गया, भिक्षु भाई?"

“मुझे यह समय पर अवश्य मिल जाएगा,” वरिष्ठ भिक्षु ने कहा। सारिपुत्र बहुत व्याकुल हुए और देखने लगे कि समय क्या हुआ है। परन्तु दोपहर बीत चुकी थी (*4)। “यहीं ठहरिए, भाई,” सारिपुत्र ने कहा; “और हिलना मत”; और उन्होंने लोषक तिस्सा को बैठक में

बैठाया और कोसल के राजा के महल के लिए चल दिए। राजा ने अपना कटोरा मंगवाया और कहा कि दोपहर बीत चुकी है और इसलिए चावल खाने का समय नहीं है, इसलिए उन्होंने अपने कटोरे को चार प्रकार के मीठे पकवानों से भरने का आदेश दिया (*5)। यह लेकर वे लौटे और कटोरा हाथ में लिए उनके सामने खड़े होकर ऋषि से खाने का अनुरोध किया। परन्तु वरिष्ठ भिक्षु सारिपुत्र के प्रति अपने आदर के कारण लज्जित थे और उन्होंने खाने से इनकार कर दिया। “आइए, भाई (भिक्षु) तिस्सा,” सारिपुत्र ने कहा, “मुझे कटोरा लेकर खड़ा रहना होगा; आप बैठ जाइए और खा लीजिए। यदि कटोरा मेरे हाथ से छूट गया, तो उसमें रखा सब कुछ नष्ट हो जाएगा।”

अतः आदरणीय भिक्षु लोसाका तिस्सा ने मिठाई खाई, जबकि धर्म के परम पूज्य सेनापति (सारिपुत्र) कटोरा पकड़े खड़े रहे; और सारिपुत्र के गुणों और शक्तियों के कारण भोजन नष्ट नहीं हुआ। इस प्रकार, भिक्षु लोसाका तिस्सा ने अपनी इच्छा अनुसार भोजन किया और तृप्त हुए, और उसी दिन उस मृत्यु को प्राप्त हुए जिससे जीवन का शाश्वत अंत हो जाता है।

सर्वज्ञानी बुद्ध वहीं खड़े रहे और उन्होंने जलते हुए शरीर को देखा; और उन्होंने एकत्रित राख के लिए एक मंदिर बनाया।

सत्य के हॉल में एकत्रित होकर, भिक्षुओं ने कहा, "भाइयों, लोसाका दुर्भाग्यशाली था, और उसे बहुत कम दिया गया था। अपने दुर्भाग्य और अभाव के बावजूद वह अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) की महिमा कैसे प्राप्त कर सका?"

हॉल में प्रवेश करते ही गुरु ने पूछा कि वे किस बारे में बात कर रहे हैं; और उन्होंने उन्हें बताया। उन्होंने कहा, “भाइयों, इस भिक्षु के अपने कर्मों के कारण ही उसे इतना कम ज्ञान प्राप्त हुआ और वह अर्हत (बुद्ध के समान प्रबुद्ध) बन गया। अतीत में उसने दूसरों को ज्ञान प्राप्त करने से रोका था, और इसीलिए उसे स्वयं इतना कम ज्ञान प्राप्त हुआ। लेकिन दुःख, क्षणभंगुरता और वस्तुओं में किसी स्थायी सिद्धांत के अभाव पर ध्यान करने से ही उसने स्वयं अर्हतत्व (बुद्ध के समान प्रबुद्धता) प्राप्त किया।” और ऐसा कहते हुए उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, बुद्ध कश्यप (एक पूर्व बुद्ध) के समय में, एक भिक्षु गाँव में रहते थे और एक ग्रामीण अधिकारी उनका भरण-पोषण करते थे। वे भिक्षु के रूप में नियमित आचरण करते थे (*6), सदाचारी जीवन जीते थे और अंतर्दृष्टि से परिपूर्ण थे। एक वरिष्ठ भिक्षु भी थे, जो अर्हत (बुद्ध के समान प्रबुद्ध) थे और अपने साथियों के साथ समानता के भाव से रहते थे। कहानी के समय, उन्होंने पहली बार उस गाँव का दौरा किया जहाँ वह अधिकारी रहता था जो इस भिक्षु का भरण-पोषण करता था। वरिष्ठ भिक्षु को देखकर अधिकारी इतना प्रसन्न हुआ कि उसने अपना भोजन पात्र लेकर उन्हें घर में प्रवेश कराया और पूरे आदर के साथ भोजन के लिए आमंत्रित किया। फिर उसने वरिष्ठ भिक्षु का संक्षिप्त प्रवचन सुना और प्रवचन समाप्त होने पर प्रणाम करते हुए कहा, "महोदय, मैं आपसे निवेदन करता हूँ कि आप हमारे पास ही स्थित मठ से आगे यात्रा न करें; शाम को मैं वहाँ आकर आपसे मिलूँगा।" इस प्रकार, वरिष्ठ भिक्षु मठ की ओर चल पड़े और प्रवेश करते समय वहाँ रहने वाले भिक्षु को प्रणाम किया; और, पहले विनम्रतापूर्वक अनुमति मांगकर, उनके बगल में बैठ गए। भाई ने उनका पूरे सौहार्द से स्वागत किया और पूछा कि क्या उन्हें दान में कुछ भोजन मिला है।

“जी हाँ,” वृद्ध भिक्षु ने उत्तर दिया। “कहाँ?” “आपके पास ही स्थित गाँव में, अधिकारी के घर में।” इतना कहकर वृद्ध भिक्षु ने अपना कमरा दिखाने को कहा और उसे तैयार करवाया। फिर अपना पान-पात्र और वस्त्र एक तरफ रखकर, वे एकाग्र हो गए और आध्यात्मिक ज्ञान में लीन होकर आध्यात्मिक मार्ग के फलों के आनंद का अनुभव करने लगे।

शाम को अधिकारी अपने सेवकों के साथ फूल, इत्र, दीपक और तेल लेकर आए। उन्होंने वहां रहने वाले भिक्षु को प्रणाम किया और पूछा कि क्या कोई अतिथि, कोई वरिष्ठ भिक्षु, आए हैं। यह जानकर कि वे आए हैं, अधिकारी ने पूछा कि वे कहां हैं और उन्हें कौन सा कमरा दिया गया है। फिर अधिकारी वरिष्ठ भिक्षु के पास गए और पहले विनम्रतापूर्वक प्रणाम करके उनके पास बैठ गए और प्रवचन सुनने लगे। शाम की ठंडक में अधिकारी ने स्तूप और बोधि वृक्ष पर अपनी भेंट चढ़ाई, अपना दीपक जलाया और अगले दिन अपने घर भोजन के लिए आने का निमंत्रण देकर विदा हो गए।

“अधिकारी पर मेरी पकड़ कमजोर होती जा रही है,” भाई ने सोचा। “अगर यह वरिष्ठ भिक्षु रुक गए, तो मैं उनके लिए कुछ भी नहीं रहूँगा।” इसलिए वे असंतुष्ट हो गए और सोचने लगे कि वरिष्ठ भिक्षु को कैसे समझाया जाए कि उन्हें वहाँ स्थायी रूप से नहीं बसना चाहिए। तदनुसार, जब वरिष्ठ भिक्षु सुबह-सुबह प्रणाम करने आए, तो भाई ने कुछ नहीं कहा। अर्हत (बुद्ध के समान प्रबुद्ध) ने दूसरे के विचारों को समझ लिया और मन ही मन कहा, “यह भाई नहीं जानता कि मैं न तो उसके परिवार के साथ, न ही उसके भिक्षु समुदाय के साथ, कभी उसके प्रकाश में खड़ा हो पाऊँगा।” और अपनी कुटिया में लौटकर वे अंतर्दृष्टि के आनंद और फलों के आनंद में लीन हो गए।

अगले दिन, निवासी भिक्षु ने पहले धीरे से घंटा बजाया और फिर अपने नाखून के पिछले हिस्से से घंटा पर थपथपाया, और फिर अकेले अधिकारी के घर चले गए। अधिकारी ने उनसे भिक्षापात्र लेकर उन्हें बैठने को कहा और पूछा कि वह अजनबी कहाँ है।

“मुझे आपके मित्र के बारे में कोई खबर नहीं है,” भाई ने कहा। “मैंने घंटा बजाया और उनके दरवाजे पर दस्तक भी दी, लेकिन उन्हें जगा नहीं सका। मेरा अनुमान है कि कल यहाँ उनके साथ हुए शानदार व्यवहार से वे संतुष्ट नहीं हैं और इसी वजह से अभी भी बिस्तर पर हैं। शायद ऐसा करना आपको अच्छा लगे।”

(इसी बीच, अर्हत/बुद्ध के समान प्रबुद्ध व्यक्ति, जो भिक्षा मांगने के लिए अपने भ्रमण पर जाने का समय आने तक प्रतीक्षा कर रहे थे, स्नान करके वस्त्र धारण कर चुके थे और कटोरा और वस्त्र हवा में लहराते हुए उठकर कहीं और चले गए थे।)

अधिकारी ने भिक्षु को खाने के लिए चावल और दूध दिया, जिसमें घी, चीनी और शहद मिला हुआ था। फिर उसने अपने कटोरे को सुगंधित चूने के पाउडर से साफ करवाया और उसमें नया भोजन भरते हुए कहा, "महोदय, बड़े भिक्षु यात्रा से थक गए होंगे; उन्हें यह दे दीजिए।" भिक्षु ने बिना कोई आपत्ति किए भोजन लिया और मन ही मन सोचते हुए चल दिए, "अगर हमारे मित्र को एक बार इसका स्वाद लग गया, तो उसे गला पकड़कर बाहर फेंकने से भी वह नहीं जाएगा। लेकिन मैं इससे कैसे छुटकारा पाऊँ? अगर मैं इसे किसी इंसान को दे दूँ, तो सबको पता चल जाएगा। अगर मैं इसे पानी में फेंक दूँ, तो घी ऊपर तैरने लगेगा। और इसे ज़मीन पर फेंकने से तो पूरे इलाके के कौवे वहाँ जमा हो जाएँगे।" अपनी उलझन में उनकी नज़र एक जलते हुए खेत पर पड़ी, और उन्होंने अंगारों को खुरचकर अपने कटोरे का सारा भोजन गड्ढे में डाल दिया, ऊपर से अंगारे भर दिए और घर चले गए। वहाँ वरिष्ठ भिक्षु को न पाकर, उसने सोचा कि अर्हत (बुद्ध के समान प्रबुद्ध) उसकी ईर्ष्या को समझकर चले गए हैं। "मैं व्यथित हूँ, क्योंकि मेरे लालच ने मुझे पाप करने पर मजबूर किया है।"

और तब से वह भीषण बीमारी से ग्रसित हो गया और एक जीवित प्रेत के समान हो गया। शीघ्र ही उसकी मृत्यु हो गई और वह नरक में पुनर्जन्म लेकर लाखों वर्षों तक कष्ट भोगता रहा। अपने बढ़ते पाप के कारण, वह लगातार पाँच सौ जन्मों तक एक राक्षस बना रहा और उसे कभी भी तृप्ति नहीं मिली, सिवाय एक दिन के जब उसने एक जानवर के आंतरिक अंगों का अत्यधिक सेवन किया। इसके बाद, पाँच सौ और जन्मों तक वह एक कुत्ता बना रहा, और यहाँ भी, केवल एक ही दिन उसका पेट भरा - चावल की उल्टी से; किसी अन्य अवसर पर उसे तृप्ति नहीं मिली। यहाँ तक कि जब उसने कुत्ते का रूप त्याग दिया, तब भी उसका जन्म काशी गाँव के एक भिखारी परिवार में हुआ। उसके जन्म के समय से ही वह परिवार और भी अधिक भिखारी हो गया, और उसे कभी भी अपनी इच्छा के अनुसार आधा पानी का दलिया भी नहीं मिला। और उसे मित्त-विन्दक कहा जाने लगा।

अंततः भूख की पीड़ा सहन न कर पाने के कारण, उसके माता-पिता ने उसे पीटा और यह कहते हुए भगा दिया, "चले जाओ, तुम अभिशाप!"

अपनी यात्राओं के दौरान, वह छोटा बहिष्कृत व्यक्ति बनारस पहुँचा, जहाँ उन दिनों बोधिसत्व विश्वप्रसिद्ध गुरु थे और पाँच सौ युवा ब्राह्मणों को शिक्षा देते थे। उन दिनों बनारस के लोग गरीब लड़कों को प्रतिदिन भोजन देते थे और उन्हें निःशुल्क शिक्षा देते थे, इसलिए यह मित्र-विन्दक भी बोधिसत्व के शिष्य बन गया। परन्तु वह उग्र और हठी था, हमेशा अपने साथियों से लड़ता रहता था और अपने गुरु की डांट की परवाह नहीं करता था; इसलिए बोधिसत्व ने उससे फीस लेना बंद कर दिया। और क्योंकि वह इतना झगड़ालू था और डांट नहीं मानता था, अंततः वह युवक भाग गया और एक सीमावर्ती गाँव में आ गया जहाँ उसने मजदूरी करके अपना जीवन यापन किया और एक अत्यंत गरीब स्त्री से विवाह किया जिससे उसके दो बच्चे हुए। बाद में, ग्रामीणों ने उसे सच्चे और झूठे उपदेशों का ज्ञान देने के लिए भुगतान किया और उसे अपने गाँव के प्रवेश द्वार पर रहने के लिए एक झोपड़ी दी। लेकिन, मित्त-विन्दक के उनके बीच रहने आने के कारण ही राजा का प्रतिशोध उन ग्रामीणों पर सात बार बरसा, और सात बार उनके घर जलकर राख हो गए; सात बार उनके पानी के टैंक भी सूख गए।

तब उन्होंने इस मामले पर विचार किया और इस बात पर सहमत हुए कि मित्त-विन्दक के आने से पहले उनकी स्थिति ऐसी नहीं थी, परन्तु उसके आने के बाद से उनकी हालत बद से बदतर होती चली गई। अतः उन्होंने उसे पीट-पीटकर अपने गाँव से निकाल दिया; और वह अपने परिवार के साथ आगे बढ़ता गया और एक प्रेतवाधित जंगल में पहुँच गया। वहाँ राक्षसों ने उसकी पत्नी और बच्चों को मार डाला और खा लिया। वहाँ से भागकर, वह बहुत भटकने के बाद तट पर स्थित गम्भीरा नामक गाँव में पहुँचा, उस दिन जब एक जहाज समुद्र में जा रहा था; और उसने जहाज पर काम करने के लिए खुद को किराए पर दे दिया। एक सप्ताह तक जहाज चलता रहा, परन्तु सातवें दिन वह समुद्र के बीच में पूरी तरह रुक गया, मानो किसी चट्टान से टकरा गया हो। तब उन्होंने अपनी कमजोरी दूर करने के लिए पर्ची निकाली; और सातों बार पर्ची मित्त-विन्दक के नाम निकली। अतः उन्होंने उसे बाँसों का एक बेड़ा दिया, और उसे पकड़कर समुद्र में फेंक दिया। तब जहाज फिर से चलने लगा।

मित्त-विन्दक अपने बांसों पर सवार होकर लहरों पर तैरने लगा। बुद्ध कश्यप के समय में आज्ञाओं का पालन करने के कारण, उसे मध्य सागर में क्रिस्टल के महल में रहने वाली देवताओं की चार पुत्रियाँ मिलीं, जिनके साथ वह सात दिनों तक सुखपूर्वक रहा। महल के प्रेत केवल सात दिनों तक ही सुख भोगते हैं; इसलिए, जब सातवाँ दिन आया और उन्हें अपने दंड के लिए जाना पड़ा, तो उन्होंने मित्त-विन्दक को उनके लौटने की प्रतीक्षा करने का आदेश दिया। लेकिन उनके जाते ही, मित्त-विन्दक फिर से अपने बेड़े पर सवार होकर उस स्थान पर पहुँचा जहाँ देवताओं की आठ पुत्रियाँ चाँदी के महल में रहती थीं। उन्हें बारी-बारी से छोड़कर, वह उस स्थान पर पहुँचा जहाँ देवताओं की सोलह पुत्रियाँ रत्नों के महल में रहती थीं, और उसके बाद उस स्थान पर जहाँ बत्तीस पुत्रियाँ सोने के महल में रहती थीं। उनकी बातों पर ध्यान न देते हुए, वह फिर से रवाना हुआ और द्वीपों के बीच बसे राक्षसों के शहर में पहुँचा। वहाँ एक राक्षसी बकरी के रूप में घूम रही थी। यह न जानते हुए कि वह एक राक्षसी है, मित्त-विन्दका ने बकरी को अपना भोजन बनाने का सोचा और उसका पैर पकड़ लिया। तुरंत ही, अपने राक्षसी स्वभाव के कारण, उसने उसे समुद्र के ऊपर उछाल दिया, और वह बनारस की सूखी खाई की ढलान पर कंटीली झाड़ियों में धड़ाम से गिर पड़ा और वहाँ से लुढ़कते हुए धरती पर आ गिरा।

अब संयोगवश उस समय चोर उस खाई में अक्सर आते-जाते थे और राजा की बकरियों को मार डालते थे; और पास के बकरी चराने वालों ने उन बदमाशों को पकड़ने के लिए आपस में मिलकर काम किया था।

मित्त-विन्दक उठा और बकरियों को देखा। उसने मन ही मन सोचा, "अच्छा, समुद्र के एक द्वीप पर एक बकरी ने मुझे पैर पकड़कर यहाँ फेंक दिया था। शायद, अगर मैं भी इन बकरियों में से किसी एक के साथ ऐसा ही करूँ, तो मैं वापस वहीं पहुँच जाऊँगा जहाँ देवताओं की पुत्रियाँ अपने समुद्र-राजमहलों में रहती हैं।" इसलिए, बिना सोचे-समझे उसने एक बकरी का पैर पकड़ लिया। तुरंत बकरी मिमियाने लगी और चारों ओर से चरवाहे दौड़ते हुए आ गए। उन्होंने उसे तुरंत पकड़ लिया और चिल्लाते हुए कहा, "यह वही चोर है जो इतने दिनों से राजा की बकरियों पर पल रहा है।" और उन्होंने उसे पीटा और जंजीरों में बाँधकर राजा के पास ले जाने लगे।

ठीक उसी समय बोधिसत्व अपने पाँच सौ युवा ब्राह्मणों के साथ स्नान करने के लिए नगर से बाहर आ रहे थे। मित्त-विन्दक को देखकर और पहचानकर उन्होंने चरवाहों से कहा, "अरे, यह तो मेरा शिष्य है, मेरे सज्जनों; तुमने इसे किसलिए पकड़ा है?" "गुरुजी," उन्होंने कहा, "हमने इस चोर को बकरी को टांग से पकड़ते हुए रंगे हाथों पकड़ा है, इसलिए हमने इसे पकड़ रखा है।" "ठीक है," बोधिसत्व ने कहा, "मान लीजिए आप इसे हमारे हवाले कर दें ताकि हम इसे अपने साथ दास के रूप में रख सकें।" "ठीक है, महाराज," उन्होंने उत्तर दिया और अपने कैदी को छोड़कर अपने रास्ते चले गए। तब बोधिसत्व ने मित्त-विन्दक से पूछा कि वह इतने समय तक कहाँ था; और मित्त-विन्दक ने उन्हें अपने सारे कर्मों का वर्णन किया।

बोधिसत्व ने कहा, "उसने अपने शुभचिंतकों की बात न सुनने के कारण ही ये सभी विपत्तियाँ झेली हैं।" और उन्होंने यह श्लोक सुनाया:-

वह जिद्दी आदमी जो उकसाए जाने पर भुगतान करता है
जिन मित्रों ने दयालुतापूर्वक सलाह दी, उनकी परवाह नहीं की गई।
मित्तक की तरह निश्चित रूप से हानि होगी।
जब उसने चर रही बकरी को पैर से पकड़ लिया।
और उसी समय उस गुरु और मित्तविन्दक दोनों का देहांत हो गया, और उनका परलोक उनके कर्मों के अनुसार ही हुआ।

गुरु ने कहा, "यह लोसाका स्वयं ही अपने अल्प प्राप्ति और अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) की प्राप्ति का कारण था।" अपना प्रवचन समाप्त करते हुए, उन्होंने संबंध स्पष्ट किया और जन्म का वर्णन करते हुए कहा, "वरिष्ठ भिक्षु लोसाका तिस्सा उन दिनों के मित्त-विन्दक थे, और मैं विश्वव्यापी ख्याति प्राप्त गुरु हूँ।"

फुटनोट:

(1) पामसु-पिसाका को पेटा (प्रेत) या 'भूतों' का चौथा वर्ग कहा जाता है (जिन्हें एक साथ गुफानुमा मुंह और सुई की आंख से भी छोटे मुंह से शाप दिया गया था, ताकि उनकी भूख उनकी सामान्य अवस्था में भी कभी संतुष्ट न हो)।

(2) निप्पन्नो के स्थान पर निप्पन्नो पढ़ना। सीलोन आरएएस जर्नल, 1884, पृष्ठ 158 देखें; और पाली मूल के पृष्ठ 236, पंक्ति 20 पर अपुन्नो की तुलना करें।

(3)आयु-संखारा बौद्ध विचारों के अनुसार जीवन का नैतिक आधार है। बौद्ध धर्म का उद्देश्य इसे जड़ से उखाड़ फेंकना है, ताकि पुनर्जन्म न हो।

(4) यानी उस दिन और चावल नहीं खाए जा सकते थे। अगर एक सीधी छड़ी से उंगली की चौड़ाई जितनी भी छाया पड़ती है, तो एक सख्त भाई चावल और इसी तरह के भोजन नहीं खाएगा।

(5) शहद, घी (स्पष्ट मक्खन), मक्खन और चीनी।

(6) पकातत्तो को एक भाई (भिक्षु) के रूप में समझाया गया है "जिसने स्वयं को किसी भी अनुशासनात्मक कार्यवाही के लिए उत्तरदायी नहीं बनाया है, कोई अनियमितता नहीं की है।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कपोता-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-42-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 42
कपोता-जातक

"वह हठी व्यक्ति" - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक लालची भिक्षु के बारे में सुनाई थी। उसके लालच का वर्णन काका-जातक के नौवें खंड में किया जाएगा।

लेकिन इस अवसर पर भिक्षुओं ने गुरु से कहा, "महोदय, यह भिक्षु लालची है।"

गुरु ने कहा, "भाई, क्या यह सच है कि तुम लालची हो?" "जी हाँ," उत्तर मिला।

"भाई, बीते दिनों में तुम भी लालची थे, और इसी लालच के कारण तुमने अपनी जान गंवाई; तुमने बुद्धिमान और भले लोगों को भी अपना घर गंवाने पर मजबूर किया।" और ऐसा कहते हुए उसने बीते दिनों की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व कबूतर के रूप में पैदा हुए। उस समय बनारस के लोग भलाई के भाव से पक्षियों के आश्रय और आराम के लिए कई स्थानों पर भूसे की टोकरियाँ टांगते थे; बनारस के प्रधान कोषाध्यक्ष के रसोइए ने भी ऐसी ही एक टोकरी अपनी रसोई में टांग दी। बोधिसत्व इसी टोकरी में रहने लगे, भोर होते ही भोजन की तलाश में निकल जाते और शाम को लौट आते; इस प्रकार उन्होंने अपना जीवन व्यतीत किया।

लेकिन एक दिन रसोई के ऊपर उड़ते हुए एक कौवे ने वहाँ रखे नमक, ताज़ी मछली और मांस की अच्छी खुशबू सूंघ ली और उसे चखने की तीव्र इच्छा से भर गया। अपनी इच्छा पूरी करने का तरीका सोचते हुए वह पास ही बैठ गया और शाम को उसने बोधिसत्व को घर आते और रसोई में जाते देखा। "अहा!" उसने सोचा, "मैं कबूतर के ज़रिए यह काम कर सकता हूँ।"

इसलिए वह अगले दिन भोर में वापस आया, और जब बोधिसत्व भोजन की तलाश में तेज़ी से निकले, तो वह उनकी परछाई की तरह उनके पीछे-पीछे चलता रहा। तब बोधिसत्व ने कहा, "मित्र, तुम मेरे साथ क्यों रहते हो?"

"हे प्रभु," कौवे ने उत्तर दिया, "आपका रूप मुझे बहुत भा गया है; और अब से मेरी इच्छा है कि मैं आपका अनुसरण करूँ।" "परन्तु, मित्र, तुम्हारा और मेरा भोजन एक जैसा नहीं है," बोधिसत्व ने कहा, "यदि तुम मुझसे जुड़ जाओगे तो तुम्हें कठिनाई होगी।" "हे प्रभु," कौवे ने कहा, "जब आप भोजन की तलाश में होंगे, तो मैं भी आपके साथ भोजन करूँगा।" "ठीक है," बोधिसत्व ने कहा, "बस तुम्हें लगन से भोजन करना होगा।" कौवे को यह चेतावनी देकर बोधिसत्व घास के बीज चुगने लगे; जबकि दूसरा कौवा गोबर पलटकर उसके नीचे से कीड़े-मकोड़े निकालता रहा, जब तक कि उसका पेट भर नहीं गया। फिर वह बोधिसत्व के पास लौटकर बोला, "हे प्रभु, आप भोजन में बहुत अधिक समय लगाते हैं; इसमें अति नहीं करनी चाहिए।"

और जब बोधिसत्व ने भोजन कर लिया और शाम को घर वापस पहुंचे, तो कौआ उनके साथ उड़कर रसोई में आ गया।

“अरे वाह! हमारा पक्षी तो अपने साथ एक और को घर ले आया है!” रसोइए ने हैरानी से कहा और कौए के लिए एक और टोकरी टांग दी। और तब से वे दोनों पक्षी रसोई में साथ रहने लगे।

एक दिन, प्रधान कोषाध्यक्ष के पास मछलियों का भंडार था जिसे रसोइए ने रसोई में लटका दिया। उसे देखकर कौआ ललचा गया और उसने अगले दिन घर पर ही रहकर इस स्वादिष्ट दावत का आनंद लेने का निश्चय कर लिया।

तो पूरी रात वह कराहता रहा; और अगले दिन, जब बोधिसत्व भोजन की तलाश में निकले और पुकार कर बोले, "चलो, मित्र कौवे," तो कौवे ने उत्तर दिया, "मेरे बिना जाइए, मेरे पेट में दर्द है।" बोधिसत्व ने उत्तर दिया, "मित्र, मैंने पहले कभी कौवों के पेट में दर्द के बारे में नहीं सुना। हाँ, कौवे रात के तीनों पहरों में कमजोर महसूस करते हैं; लेकिन अगर वे दीपक की बाती खा लें, तो उनकी भूख क्षण भर के लिए शांत हो जाती है। आप यहाँ रसोई में रखी मछली के लिए तरस रहे होंगे। अब आइए, मनुष्य का भोजन आपको रास नहीं आएगा। इस तरह हार मत मानिए, बल्कि मेरे साथ आइए और अपना भोजन खोजिए।" कौवे ने कहा, "जी हाँ, मैं नहीं कर सकता, स्वामी।" बोधिसत्व ने कहा, "ठीक है, आपका आचरण ही बताएगा। केवल लालच के शिकार मत बनिए, बल्कि भक्ति भाव रखिए।" और इस सलाह के साथ, वह अपना दैनिक भोजन खोजने के लिए उड़ गया।

रसोइए ने कई तरह की मछलियाँ लीं, कुछ को एक तरह से पकाया, कुछ को दूसरी तरह से। फिर उसने बर्तनों के ढक्कन थोड़े से उठाकर भाप निकलने दी, एक बर्तन के ऊपर छेद वाला कटोरा रखा और दरवाजे के बाहर चला गया, जहाँ वह माथे से पसीना पोंछने लगा। ठीक उसी क्षण टोकरी से कौवे का सिर बाहर निकला। एक नज़र में ही उसे पता चल गया कि रसोइया चला गया है, और उसने सोचा, "अब या कभी नहीं, यही मेरा समय है। अब बस यही सवाल है कि मैं कीमा बनाया हुआ मांस चुनूँ या मछली का बड़ा टुकड़ा?" यह सोचकर कि कीमे से पूरा भोजन बनाने में बहुत समय लगता है, उसने मछली का एक बड़ा टुकड़ा लेने और टोकरी में बैठकर खाने का फैसला किया। तो वह उड़कर बाहर आया और छेद वाले कटोरे पर जा गिरा। "क्लिक" की आवाज़ आई।

शोर सुनकर रसोइया दौड़कर अंदर आया और बोला, "ये क्या हो सकता है?" कौए को देखकर वह चिल्लाया, "अरे, ये बदमाश कौआ मेरे मालिक का खाना खाने आ गया है। मुझे अपने मालिक के लिए काम करना है, उस बदमाश के लिए नहीं! मुझे उससे क्या लेना-देना है?" तो उसने पहले दरवाजा बंद किया, कौए को पकड़ा और उसके सारे पंख नोच डाले। फिर उसने अदरक को नमक और जीरे के साथ पीसकर उसमें खट्टी छाछ मिलाई और आखिर में कौए को अचार में लपेटकर उसकी टोकरी में वापस फेंक दिया। और कौआ दर्द से कराहता हुआ वहीं पड़ा रहा।

शाम को बोधिसत्व वापस आए और कौवे की दयनीय हालत देखी। “अरे! लालची कौवे,” उन्होंने कहा, “तूने मेरी बात नहीं मानी, और अब तेरे लालच ने ही तुझे यह कष्ट दिया है।” ऐसा कहकर उन्होंने यह श्लोक दोहराया:-

वह जिद्दी आदमी जो उकसाए जाने पर भुगतान करता है
जो मित्र दयालुतापूर्वक सलाह देते हैं, उनकी परवाह नहीं की जाती।
वह लालची कौवे की तरह अवश्य ही नष्ट हो जाएगा।
जिसने कबूतर के चेतावनी भरे शब्दों का तिरस्कार करते हुए हँसा।
फिर, "मैं भी अब यहाँ नहीं रह सकता" कहते हुए बोधिसत्व उड़ गया। लेकिन कौआ वहीं मर गया, और रसोइए ने उसे टोकरी समेत कूड़े के ढेर पर फेंक दिया।

गुरु ने कहा, “भाई, तुम अतीत में भी लालची थे, ठीक वैसे ही जैसे अब हो; और तुम्हारे लालच के कारण ही उन दिनों के बुद्धिमान और भले लोगों को अपने घर छोड़ने पड़े।” यह उपदेश समाप्त करके गुरु ने चार सत्यों का प्रवचन दिया, जिसके अंत में उस भिक्षु ने द्वितीय मार्ग (सम्मोहन) का फल प्राप्त किया। फिर गुरु ने संबंध समझाया और जन्म का वर्णन इस प्रकार किया: “लालची भिक्षु उस समय का कौआ था, और मैं कबूतर।”

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **वेशुक-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

जातक क्रमांक 43
वेलुका-जातक

"जिद्दी आदमी।"—यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक जिद्दी भिक्षु के बारे में सुनाई थी। भगवान बुद्ध ने उनसे पूछा कि क्या यह बात सच है कि वे जिद्दी थे, और भिक्षु ने स्वीकार किया कि यह सच था। गुरु ने कहा, "भाइ, यह पहली बार नहीं है जब तुम जिद्दी हुए हो: पहले भी तुम इतने ही जिद्दी थे। और बुद्धिमानों की सलाह न मानने की तुम्हारी जिद के कारण ही तुम्हारी मृत्यु सांप के काटने से हुई थी।" और ऐसा कहकर उन्होंने यह पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व का जन्म काशी राज्य के एक समृद्ध परिवार में हुआ। परिपक्व होने पर उन्होंने देखा कि कामवासना से दुख उत्पन्न होता है और कामवासना का त्याग करने से ही सच्चा आनंद प्राप्त होता है। इसलिए उन्होंने कामवासनाओं को त्याग दिया और हिमालय जाकर संन्यासी बन गए। वहां उन्होंने ध्यान साधना के माध्यम से पांचों उच्च ज्ञान और आठों सिद्धियां प्राप्त कीं। उन्होंने अपना जीवन अंतर्दृष्टि के आनंद में व्यतीत किया और समय के साथ उनके पांच सौ संन्यासी शिष्य हो गए, जिनके वे गुरु थे।

एक दिन एक युवा विषैला साँप, जो साँपों की आदत के अनुसार इधर-उधर भटक रहा था, एक साधु की कुटिया में आ पहुँचा; और वह साधु उस जीव से इतना स्नेह करने लगा मानो वह उसका अपना बच्चा हो, उसने उसे बाँस के एक टुकड़े में रखा और उसके प्रति दयालुता दिखाई। और क्योंकि वह बाँस के एक टुकड़े में रहता था, इसलिए उस साँप का नाम "बाँस" पड़ गया। इतना ही नहीं, क्योंकि साधु उस साँप से इतना स्नेह करता था मानो वह उसका अपना बच्चा हो, इसलिए लोग उसे "बाँस का पिता" कहने लगे।

यह सुनकर कि एक भिक्षु ने एक विषैला साँप पाल रखा है, बोधिसत्व ने उस भिक्षु को बुलवाया और पूछा कि क्या यह बात सच है। जब उसे बताया गया कि यह सच है, तो बोधिसत्व ने कहा, "एक विषैले साँप पर कभी भरोसा नहीं किया जा सकता; इसे अब और मत पालो।"

"परन्तु," बोधिसत्व ने आग्रह किया, "मेरा सर्प मुझे उतना ही प्रिय है जितना एक शिष्य गुरु को; मैं उसके बिना नहीं रह सकता।" "तो फिर," बोधिसत्व ने उत्तर दिया, "जान लो कि यही सर्प तुम्हारा प्राण छीन लेगा।" परन्तु गुरु की चेतावनी को अनसुना करते हुए, उस बोधिसत्व ने अपने पालतू सर्प को अपने पास ही रखा, क्योंकि वह उससे अलग नहीं होना चाहता था। कुछ ही दिनों बाद सभी बोधिसत्व फल तोड़ने निकले और एक ऐसी जगह पर पहुँचे जहाँ हर प्रकार के फल बहुतायत में उगते थे, वे वहाँ दो-तीन दिन रुके। उनके साथ "बांस के पिता" भी गए, और अपने सर्प को उसके बाँस के पिंजरे में ही छोड़ गए। दो-तीन दिन बाद जब वे वापस आए, तो उन्होंने सर्प को भोजन कराने का सोचा और बाँस खोलकर अपना हाथ बढ़ाते हुए कहा, "आओ, मेरे पुत्र; तुम्हें भूख लगी होगी।" परन्तु लंबे समय से उपवास से क्रोधित सर्प ने उनके बढ़े हुए हाथ पर काट लिया, जिससे उनकी मौके पर ही मृत्यु हो गई, और सर्प जंगल में भाग गया।

उन्हें वहाँ मृत पड़ा देखकर, भिक्षुओं ने आकर बोधिसत्व को सूचना दी, जिन्होंने शरीर को जलाने का आदेश दिया। फिर, उनके बीच बैठकर, उन्होंने इस श्लोक को दोहराकर भिक्षुओं को प्रोत्साहित किया:

वह जिद्दी आदमी, जो उकसाए जाने पर भुगतान करता है

जो मित्र दयालुतापूर्वक सलाह देते हैं, उनकी परवाह नहीं की जाती।
'बांस के पिता' की तरह, इसका भी नाश हो जाएगा।
इस प्रकार बोधिसत्व ने अपने अनुयायियों को उपदेश दिया; और उन्होंने अपने भीतर चार श्रेष्ठ अवस्थाओं का विकास किया, और अपनी मृत्यु के बाद ब्रह्मलोक (परम स्वर्ग) में पुनर्जन्म लिया।

गुरु ने कहा, "भाई (भिक्षु), यह पहली बार नहीं है जब तुमने हठ दिखाया है; तुम पहले भी इतने ही हठी थे, और इसी कारण एक सांप के डंक से तुम्हारी मृत्यु हुई थी।" अपना उपदेश समाप्त करते हुए, गुरु ने संबंध समझाया और जन्म का वर्णन करते हुए कहा, "उन दिनों, यह हठी भाई (भिक्षु) 'बांस के पिता' थे, मेरे शिष्य शिष्यों का समूह थे, और मैं स्वयं उनका गुरु था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **मकासा-जातक**

***स्रोत** : रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-44-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 44
मकासा-जातक

"समझहीन मित्रों!" - यह कहानी गुरुजी ने मगध में भिक्षा मांगने के दौरान सुनाई थी, एक गाँव के कुछ मूर्ख ग्रामीणों के बारे में। परंपरा के अनुसार, श्रावस्ती शहर से मगध राज्य की यात्रा के बाद, वे उस राज्य में घूम रहे थे जब वे एक ऐसे गाँव में पहुँचे जो मूर्खों से भरा हुआ था। उस गाँव में ये मूर्ख एक दिन इकट्ठा हुए और आपस में बहस करने लगे, "मित्रों, जब हम जंगल में काम करते हैं, तो मच्छर हमें काटते हैं; और इससे हमारा काम रुक जाता है। चलो, हम धनुष और हथियारों से लैस होकर मच्छरों से युद्ध करें और उन्हें मार डालें या काट डालें।" तो वे जंगल में गए और "मच्छरों को मार गिराओ" चिल्लाते हुए, एक-दूसरे पर तीर चलाते और वार करते रहे, जब तक कि वे बुरी तरह घायल नहीं हो गए और वापस आकर गाँव के अंदर या उसके प्रवेश द्वार पर जमीन पर गिर पड़े।

भिक्षुओं के संघ से घिरे हुए, गुरु भिक्षा मांगने उस गाँव में आए। गाँव के कुछ समझदार लोगों ने भगवान बुद्ध को देखते ही अपने गाँव के प्रवेश द्वार पर एक मंडप बना लिया और बुद्ध के नेतृत्व वाले भिक्षु संघ को बड़ी मात्रा में दान देकर गुरु को प्रणाम किया और बैठ गए। इधर-उधर घायल पड़े लोगों को देखकर गुरु ने उन भिक्षुओं से पूछा, "यहाँ बहुत से अपंग लोग पड़े हैं; उनके साथ क्या हुआ है?" उत्तर मिला, "महोदय, वे मच्छरों से लड़ने गए थे, लेकिन उन्होंने एक-दूसरे को ही मार डाला और इस तरह खुद को अपंग कर लिया।" गुरु ने कहा, "यह पहली बार नहीं है कि इन मूर्ख लोगों ने मच्छरों को मारने के बजाय खुद को ही चोट पहुँचाई है; पहले भी ऐसे लोग थे जो मच्छर को मारने के चक्कर में किसी दूसरे जीव को ही मार देते थे।" ऐसा कहकर, गाँव वालों के अनुरोध पर उन्होंने यह पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, बोधिसत्व व्यापारी के रूप में अपना जीवन यापन करते थे। उन दिनों काशी के सीमावर्ती गाँव में कई बढ़ई रहते थे। संयोगवश, उनमें से एक, एक गंजे, सफ़ेद बालों वाले व्यक्ति, तांबे के कटोरे की तरह चमकते हुए अपने सिर पर लकड़ी को तराश रहे थे, तभी एक मच्छर उनके सिर पर बैठ गया और अपने तीर जैसे डंक से उन्हें काट लिया।

बढ़ई ने पास ही बैठे अपने बेटे से कहा, "बेटा, मेरे सिर पर मच्छर काट रहा है; उसे भगा दो।" बेटे ने कहा, "शांत रहो पिताजी; एक ही वार में काम तमाम हो जाएगा।"

(ठीक उसी समय बोधिसत्व व्यापार के सिलसिले में उस गाँव में पहुँचे थे और बढ़ई की दुकान में बैठे थे।)

“मुझे इससे छुटकारा दिलाओ,” पिता चिल्लाया। “ठीक है, पिताजी,” बूढ़े के पीछे छिपे बेटे ने जवाब दिया और केवल मच्छर को मारने के इरादे से एक तेज कुल्हाड़ी उठाकर अपने पिता का सिर दो टुकड़ों में काट दिया। इस तरह बूढ़ा वहीं गिर पड़ा और मर गया।

उस पूरे दृश्य के प्रत्यक्षदर्शी बोधिसत्व ने सोचा, "ऐसे मित्र से बेहतर तो वह शत्रु है जो समझदार हो, जिसे लोगों के प्रतिशोध के भय से किसी मनुष्य की हत्या करने से रोका जा सके।" और उन्होंने ये पंक्तियाँ सुनाईं:-

बुद्धिहीन मित्र, बुद्धिवान शत्रुओं से भी बदतर होते हैं;
उस बेटे को देखो जो मच्छर को मारना चाहता था।
लेकिन बेचारे ने अपने पिता की खोपड़ी को दो टुकड़ों में फाड़ दिया।
इतना कहकर बोधिसत्व उठे और चले गए, और आने वाले दिनों में अपने कर्मों के फल के अनुसार उनका निधन हो गया। और बढ़ई के शरीर को उसके परिवार ने जला दिया।

“इस प्रकार, हे भाइयों,” गुरु ने कहा, “पुराने समय में भी ऐसे लोग थे जो मच्छर को मारने की कोशिश में अपने ही साथी प्राणी को मार डालते थे।” यह पाठ समाप्त करते हुए, उन्होंने संबंध समझाया और जन्म की पहचान बताते हुए कहा, “उन दिनों मैं स्वयं एक बुद्धिमान और कुशल व्यापारी था जो इस श्लोक को दोहराने के बाद चला गया।”

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **रोहिणी-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-45-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 45
रोहिणी जातक

"समझहीन मित्रो।"--यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी, जो महा कोषाध्यक्ष अनाथपिंडिका की एक दासी के बारे में है। कहा जाता है कि उनकी एक दासी थी जिसका नाम रोहिणी था। उसकी बूढ़ी माँ धान कूट रही लड़की के पास आकर लेट गई। मक्खियाँ उस बूढ़ी औरत के चारों ओर आ गईं और उसे सुई की तरह चुभने लगीं। तब उसने अपनी बेटी से कहा, "मक्खियाँ मुझे चुभ रही हैं, मेरी प्यारी; इन्हें भगा दो।" "ओह! मैं इन्हें भगा दूँगी, माँ," लड़की ने अपनी माँ पर बैठी मक्खियों पर मूसल उठाते हुए कहा। फिर, "मैं इन्हें मार डालूँगी!" चिल्लाते हुए, उसने अपनी माँ को इतनी ज़ोर से मारा कि बूढ़ी औरत की तुरंत मृत्यु हो गई। अपनी इस करारी करतूत को देखकर लड़की रोने लगी और चिल्लाने लगी, "ओह! माँ, माँ!"

यह खबर प्रधान कोषाध्यक्ष तक पहुंची, जिन्होंने शव को दफ़नाने के बाद मठ जाकर गुरु को सारी घटना बताई। गुरु ने कहा, “हे गृहस्थ, यह पहली बार नहीं है कि रोहिणी ने अपनी माताजी पर बैठी मक्खियों को मारने की हड़बड़ी में अपनी माताजी को मूसल से मार डाला हो; उसने पहले भी ठीक ऐसा ही किया था।” फिर अनाथपिंडिका के अनुरोध पर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, तब बोधिसत्व का जन्म महाकोषाध्यक्ष के पुत्र के रूप में हुआ और अपने पिता की मृत्यु के बाद वे स्वयं महाकोषाध्यक्ष बन गए। उनकी भी एक दासी थी जिसका नाम रोहिणी था। उनकी माता भी उसी प्रकार रोहिणी के पास गईं, जहाँ उनकी पुत्री धान कूट रही थी, और लेटकर बोलीं, 'मेरी प्यारी, इन मक्खियों को मुझसे दूर भगा दो।' ठीक इसी प्रकार रोहिणी ने अपनी माता पर मूसल से प्रहार किया और उन्हें मार डाला, और रोने लगीं।

जो कुछ हुआ था, उसे सुनकर बोधिसत्व ने सोचा, 'इस संसार में तो एक समझदार शत्रु भी श्रेष्ठ होगा,' और उन्होंने ये पंक्तियाँ पढ़ीं:-

बुद्धिहीन मित्र, बुद्धिवान प्रतिद्वंद्वियों से भी बदतर होते हैं।

उस लड़की को देखो जिसके लापरवाह हाथों ने उसे नीचे गिरा दिया
उसकी माँ, जिसके लिए वह अब व्यर्थ ही शोक मना रही है।
इन पंक्तियों में, जो बुद्धिमानों की प्रशंसा करती हैं, बोधिसत्व ने सत्य का उपदेश दिया।

“हे मनुष्य, यह पहली बार नहीं है कि रोहिणी मक्खियाँ मारने की हड़बड़ी में अपनी ही माँ को मार डाले।” यह पाठ समाप्त करते हुए उन्होंने संबंध समझाया और जन्म की पहचान बताते हुए कहा: “आज की माता और पुत्री अतीत में भी माता और पुत्री थीं, और मैं स्वयं परमेश्वर, सर्वोच्च कोषाध्यक्ष हूँ।”

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **अरामदुसक-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-46-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 46
अरमादुसक-जातक

"यह ज्ञान है।" - यह कहानी गुरु ने कोसला के एक गाँव में एक ऐसे व्यक्ति के बारे में सुनाई थी जिसने एक बगीचे को बर्बाद कर दिया था।

परंपरा के अनुसार, कोसल के लोगों के बीच भिक्षा मांगने के दौरान, गुरु बुद्ध एक गाँव में पहुँचे। उस गाँव के एक अधिकारी ने बुद्ध को अपने घर पर दोपहर का भोजन करने के लिए आमंत्रित किया और अतिथि को बगीचे में बैठाया। वहाँ उन्होंने बुद्ध के नेतृत्व में भिक्षु संघ (भाईचारे) को आतिथ्य सत्कार के बारे में समझाया और उन्हें विनम्रतापूर्वक अपने परिसर में घूमने की अनुमति दी। तब भिक्षु संघ (भाईचारे) उठे और माली के साथ परिसर में घूमने लगे। घूमते हुए उन्होंने एक खाली जगह देखी और माली से कहा, "हे शिष्य, बगीचे में अन्य जगहों पर तो भरपूर छाया है; लेकिन यहाँ न तो कोई पेड़ है और न ही कोई झाड़ी। ऐसा क्यों है?"

"महोदय," उस व्यक्ति ने उत्तर दिया, "जब इस भूमि का निर्माण हो रहा था, तब सिंचाई का काम कर रहे एक गाँव के लड़के ने यहाँ के सभी छोटे पेड़ों को उखाड़ दिया और फिर उनकी जड़ों के आकार के अनुसार उन्हें कम या ज्यादा पानी दिया। परिणामस्वरूप, वे छोटे पेड़ सूखकर मर गए; और इसीलिए यह स्थान खाली पड़ा है।"

गुरु के पास आकर, भाइयों ने उन्हें यह बताया। "जी भाइयों," उन्होंने कहा, "यह पहली बार नहीं है जब उस गाँव के लड़के ने बगीचे को खराब किया है; उसने पहले भी ठीक ऐसा ही किया था।" और ऐसा कहते हुए, उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब शहर में एक उत्सव की घोषणा की गई; और उत्सव के ढोल की पहली आवाज सुनते ही शहरवासी उत्सव मनाने के लिए निकल पड़े।

उन दिनों राजा के बगीचे में बंदरों का एक झुंड रहता था। राजा के माली ने मन ही मन सोचा, "वे शहर में छुट्टियां मनाने गए हैं। मैं बंदरों से पौधों में पानी डलवा लूँगा और बाकी लोगों के साथ मौज-मस्ती करने चला जाऊँगा।" ऐसा कहकर वह बंदरों के सरदार के पास गया और पहले तो राजा और उनकी प्रजा को बगीचे में रहने से मिलने वाले फूलों, फलों और नई कोंपलों का आनंद लेते हुए, अंत में बोला, "आज शहर में छुट्टियां मनाने गए हैं, और मैं मौज-मस्ती करने जा रहा हूँ। क्या आप मेरे जाने के दौरान छोटे पेड़ों में पानी डाल देंगे?"

"ओह! हाँ," बंदर ने कहा।

"बस ध्यान रखना," माली ने कहा; और वह बंदरों को पानी की मशकें और लकड़ी के पानी के बर्तन काम करने के लिए देकर चला गया।

फिर बंदरों ने पानी की मशकें और पानी के घड़े लिए और छोटे पेड़ों को पानी देने लगे। उनके राजा ने कहा, "लेकिन हमें पानी बर्बाद नहीं करना चाहिए; पानी देते समय, पहले हर छोटे पेड़ को उखाड़कर उसकी जड़ों का आकार देखो। फिर उन पेड़ों को खूब पानी दो जिनकी जड़ें गहरी हैं, और जिनकी जड़ें छोटी हैं उन्हें थोड़ा ही पानी दो। जब सारा पानी खत्म हो जाएगा, तो हमें और पानी मिलना मुश्किल हो जाएगा।"

"ज़रूर," दूसरे बंदरों ने कहा और उन्होंने वैसा ही किया जैसा उसने उनसे करने को कहा था।

इसी समय एक बुद्धिमान व्यक्ति ने बंदरों को इस प्रकार काम करते हुए देखा और उनसे पूछा कि वे एक-एक करके पेड़ क्यों उखाड़ रहे हैं और उनकी जड़ों के आकार के अनुसार उन्हें पानी क्यों दे रहे हैं।

बंदरों ने उत्तर दिया, "क्योंकि हमारे राजा का यही आदेश है।"

उनके उत्तर ने उस बुद्धिमान व्यक्ति को सोचने पर मजबूर कर दिया कि कैसे भलाई करने की हर इच्छा के बावजूद, अज्ञानी और मूर्ख लोग केवल हानि ही पहुंचाते हैं। और उन्होंने यह श्लोक सुनाया:

ज्ञान ही कड़ी मेहनत को सफलता में तब्दील करता है।

मूर्ख अपनी मूर्खता के कारण ही रुक जाते हैं।
उस बंदर को देखो जिसने बगीचे के पेड़ों को काट डाला।
बंदरों के राजा को यह फटकार लगाकर, ज्ञानी व्यक्ति अपने अनुयायियों के साथ बगीचे से चला गया।

गुरु ने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि इस गाँव के लड़के ने बागों को बर्बाद किया है; पहले भी वह ऐसा ही करता था।" अपना पाठ समाप्त करते हुए, उन्होंने संबंध समझाया और जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "जिस गाँव के लड़के ने इस बाग को बर्बाद किया, वह उन दिनों बंदरों का राजा था, और मैं स्वयं बुद्धिमान और नेक व्यक्ति था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **वारुणी-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-47-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 47
वरुणी जातक

"यह ज्ञान है।" - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक ऐसे व्यक्ति के बारे में सुनाई थी जिसने शराब में मिलावट कर दी थी। परंपरा के अनुसार, अनाथपिंडिका का एक मित्र था जो एक शराबखाना चलाता था। उस मित्र ने खूब शराब तैयार रखी जिसे वह सोने-चांदी में बेचता था, और उसका शराबखाना खचाखच भरा रहता था। उसने अपने शागिर्द को केवल नकद में बेचने का आदेश दिया और स्वयं स्नान करने चला गया। शागिर्द अपने ग्राहकों को रम परोसते समय यह देख रहा था कि वे नमक और गुड़ मंगवाकर उसे खा रहे हैं। उसने मन ही मन सोचा, "हमारी शराब में नमक नहीं हो सकता; मैं थोड़ा नमक मिला देता हूँ।" तो उसने रम के एक कटोरे में एक पौंड नमक डाल दिया और ग्राहकों को परोस दिया। जैसे ही उन्होंने एक घूंट लिया, उन्होंने उसे थूक दिया और कहा, "तुमने क्या किया है?" "मैंने देखा कि आप हमारी शराब पीने के बाद नमक मंगवा रहे थे, इसलिए मैंने थोड़ा नमक मिला दिया।" "और इस तरह तुमने बढ़िया शराब खराब कर दी, बेवकूफ़!" ग्राहकों ने चिल्लाते हुए कहा और गाली-गलौज करते हुए एक-एक करके उठकर सराय से बाहर चले गए। जब सराय का मालिक घर लौटा और उसे एक भी ग्राहक नहीं दिखा, तो उसने पूछा कि वे सब कहाँ चले गए। तब शिष्य ने उसे सब कुछ बताया। उसे उसकी गलती के लिए फटकारते हुए, वह आदमी जाकर अनाथपिंडिका को सब कुछ बता दिया। और अनाथपिंडिका ने यह कहानी सुनाने लायक समझकर जेतवन मठ में जाकर, विधिवत प्रणाम करने के बाद, गुरु को सब कुछ बता दिया।

"यह पहली बार नहीं है, हे मनुष्य," गुरु ने कहा, "कि इस शिष्य ने आत्माओं को दूषित किया है। उसने पहले भी ठीक ऐसा ही किया था।" फिर अनाथपिंडिका के अनुरोध पर, उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, तब बोधिसत्व बनारस के कोषाध्यक्ष थे और उनकी देखरेख में एक शराबखाना चलाते थे। ब्रह्मदत्त ने कुछ तेज़ शराब तैयार करवाई और उसे अपने शिष्य को बेचने के लिए छोड़कर खुद नहाने चले गए। उनकी अनुपस्थिति में उनके शिष्य ने शराब में नमक मिला दिया और उसे उसी तरह खराब कर दिया। जब उनके गुरु और मार्गदर्शक को इस घटना का पता चला, तो उन्होंने कोषाध्यक्ष को सारी बात बताई। कोषाध्यक्ष ने कहा, 'सचमुच, अज्ञानी और मूर्ख लोग भलाई करने की हर इच्छा के बावजूद केवल हानि ही करते हैं।' और उन्होंने यह श्लोक सुनाया:-

ज्ञान ही कड़ी मेहनत को सफलता में तब्दील करता है;
मूर्ख अपनी मूर्खता के कारण ही रुक जाते हैं।
कोंडन्ना का रम से भरा नमकीन कटोरा देखें।
इन पंक्तियों में बोधिसत्व ने सत्य का उपदेश दिया।

गुरु ने कहा, "हे गृहस्थ, यही व्यक्ति अतीत में भी आत्माओं को दूषित करता था, और अब भी करता है।" फिर उन्होंने संबंध स्पष्ट करते हुए जन्म की पहचान बताई, "जिसने अब आत्माओं को दूषित किया है, वही अतीत में भी आत्माओं को दूषित करता था, और मैं स्वयं उस समय बनारस का कोषाध्यक्ष था।"

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **वेदभ-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-48-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 48
वेदब्भा-जातक

"गलत दिशा में किया गया प्रयास।" - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक जिद्दी भिक्षु के बारे में सुनाई थी। गुरु ने उस भिक्षु से कहा, "हे भिक्षु, यह पहली बार नहीं है जब तुम जिद्दी हुए हो; पहले भी तुम्हारा स्वभाव ऐसा ही था; और इसीलिए तुमने बुद्धिमानों और भले लोगों की सलाह नहीं मानी, तो तुम्हें एक तेज तलवार से काटकर सड़क पर फेंक दिया गया; और तुम्हारे कारण ही एक हजार लोगों की मृत्यु हुई।" और ऐसा कहकर उन्होंने यह पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्याभिषेक था, एक गाँव में एक ब्राह्मण रहता था जिसे वेदब्भा नामक मंत्र का ज्ञान था। कहा जाता है कि यह मंत्र अनमोल था। ग्रहों की एक विशेष युति के समय इस मंत्र का जाप करने और आकाश की ओर दृष्टि उठाने से आकाश से सात अनमोल वस्तुएँ - सोना, चाँदी, मोती, मूंगा, खसखस, माणिक और हीरा - बरसने लगती थीं।

उन दिनों बोधिसत्व इस ब्राह्मण के शिष्य थे; और एक दिन उनके गुरु किसी काम से गाँव छोड़कर चले गए और बोधिसत्व के साथ चेति देश आ गए।

एक जंगल में पाँच सौ लुटेरे रहते थे, जिन्हें "भेजने वाले" के नाम से जाना जाता था। उन्होंने रास्ता दुर्गम बना दिया था। इन्हीं लुटेरों ने बोधिसत्व और वेदब्भ-ब्राह्मण को पकड़ लिया। (आप पूछेंगे कि उन्हें प्रेषक क्यों कहा जाता था? - दरअसल, वे हर दो कैदियों में से एक को फिरौती लाने के लिए भेजते थे; और इसीलिए उन्हें प्रेषक कहा जाता था। अगर वे पिता और पुत्र को पकड़ लेते थे, तो वे पिता को अपने बेटे को छुड़ाने के लिए फिरौती लाने को कहते थे; अगर वे माता और उसकी बेटी को पकड़ लेते थे, तो वे माता को पैसे लाने के लिए भेजते थे; अगर वे दो भाइयों को पकड़ लेते थे, तो वे बड़े भाई को छोड़ देते थे; और इसी तरह, अगर वे एक गुरु और उसके शिष्य को पकड़ लेते थे, तो वे शिष्य को ही मुक्त करते थे। इसलिए, इस मामले में, उन्होंने वेदब्भ-ब्राह्मण को रखा और बोधिसत्व को फिरौती लाने के लिए भेजा।) और बोधिसत्व ने अपने गुरु को प्रणाम करते हुए कहा, "एक-दो दिन में मैं अवश्य लौट आऊंगा; चिंता मत करो; बस मेरी बात मानो। आज ग्रहों का ऐसा संयोग होगा जिससे बहुमूल्य वस्तुओं की वर्षा होगी। सावधान रहो, अन्यथा इस विपत्ति के आगे झुककर तुम मंत्र दोहराओगे और बहुमूल्य वर्षा को आमंत्रित करोगे।" क्योंकि, यदि तुम ऐसा करोगे, तो तुम दोनों और लुटेरों के इस गिरोह पर निश्चित रूप से विपत्ति आएगी।" अपने गुरु को यह चेतावनी देकर बोधिसत्व फिरौती की तलाश में निकल पड़े।

सूर्यास्त के समय लुटेरों ने ब्राह्मण को बांधकर उसके पैरों से ज़मीन पर लिटा दिया। ठीक उसी क्षण पूर्वी क्षितिज पर पूर्णिमा का चंद्रमा उदय हुआ, और ब्राह्मण ने आकाश का अध्ययन करते हुए जान लिया कि ग्रहों का महासंयोग हो रहा है। उसने सोचा, "मैं यह कष्ट क्यों सहूँ? मंत्र का जाप करके मैं बहुमूल्य वर्षा को आमंत्रित करूँगा, लुटेरों को फिरौती दूँगा और मुक्त हो जाऊँगा।" इसलिए उसने लुटेरों को पुकारा, "मित्रों, मुझे बंदी क्यों बनाया है?" उन्होंने कहा, "पुण्य के लिए, आदरणीय महोदय।" ब्राह्मण ने कहा, "ठीक है, यदि यही तुम्हारी इच्छा है, तो जल्दी करो और मुझे खोल दो; मेरे सिर को धो दो, मुझे नए वस्त्र पहना दो; मुझे सुगंधित कर दो और फूलों से सजा दो। फिर मुझे अकेला छोड़ दो।" लुटेरों ने वैसा ही किया जैसा उसने कहा था। और ब्राह्मण ने ग्रहों के संयोग को देखते हुए, आकाश की ओर आँखें उठाकर अपने मंत्र का जाप किया। तब आकाश से बहुमूल्य वस्तुएँ बरस उठीं! लुटेरों ने उन सबको उठा लिया और लूटे हुए माल को अपने लबादों में लपेटकर गट्ठों में बांध लिया। फिर वे अपने साथियों के साथ चल पड़े; ब्राह्मण उनके पीछे-पीछे चल रहा था। लेकिन, किस्मत का खेल देखिए, तभी पांच सौ लुटेरों के दूसरे गिरोह ने उन्हें पकड़ लिया! पहले गिरोह ने दूसरे गिरोह से पूछा, "तुम हमें क्यों पकड़ रहे हो?" जवाब मिला, "लूट के लिए। अगर तुम्हें लूट ही चाहिए, तो उस ब्राह्मण को पकड़ लो, जिसने सिर्फ आकाश की ओर देखकर ही धन-दौलत बरसाती है। उसी ने हमें सब कुछ दिया है।" तो लुटेरों के दूसरे गिरोह ने पहले गिरोह को छोड़ दिया और ब्राह्मण को

पकड़कर चिल्लाने लगे, “हमें भी धन दे दो!” ब्राह्मण ने कहा, “मुझे बहुत खुशी होगी; लेकिन ग्रहों का ऐसा संयोग होने में अभी एक साल लगेगा। अगर तुम तब तक इंतजार करोगे, तो मैं तुम्हारे लिए धन-दौलत बरसा दूंगा।”

“दुष्ट ब्राह्मण!” क्रोधित डाकुओं ने चिल्लाकर कहा, “तूने दूसरे गिरोह को झटपट अमीर बना दिया, पर हमें पूरे एक साल तक इंतज़ार करवा रहा है!” उन्होंने उसे एक तेज़ तलवार से दो टुकड़ों में काट डाला और उसके शरीर को सड़क के बीचोंबीच फेंक दिया। फिर पहले गिरोह का पीछा करते हुए, उन्होंने उनके भी एक-एक आदमी को आमने-सामने की लड़ाई में मार डाला और लूटा हुआ माल छीन लिया। इसके बाद, वे दो टुकड़ियों में बँट गए और आपस में ही लड़ने लगे, एक टुकड़ी दूसरी टुकड़ी से, जब तक कि ढाई सौ आदमी मारे नहीं गए। इसी तरह वे एक-दूसरे को मारते रहे, जब तक कि केवल दो ही जीवित नहीं बचे। इस प्रकार उन हज़ार आदमियों का अंत हो गया।

अब, जब दोनों जीवित बचे लोग खजाने को ले जाने में कामयाब हो गए, तो उन्होंने उसे एक गांव के पास जंगल में छिपा दिया; और उनमें से एक तलवार हाथ में लेकर उसकी रखवाली करने के लिए वहीं बैठ गया, जबकि दूसरा गांव में चावल लाने और उसे रात के खाने के लिए पकाने के लिए चला गया।

"अधिकार की लालसा ही विनाश का मूल कारण है!" खजाने के पास रुके उस व्यक्ति ने कहा। "जब मेरा साथी वापस आएगा, तो वह इसका आधा हिस्सा चाहेगा। मान लो, उसके लौटते ही मैं उसे मार डालूँ।" इसलिए उसने अपनी तलवार निकाली और अपने साथी के लौटने की प्रतीक्षा करने लगा।

इसी बीच, दूसरे डाकू ने भी सोचा कि लूट का माल आधा-आधा बाँटना चाहिए, और मन ही मन सोचा, "मान लो मैं चावल में ज़हर मिला दूँ, उसे खिला दूँ और इस तरह उसे मार दूँ, और सारा खजाना खुद ले लूँ।" तदनुसार, जब चावल उबल गए, तो उसने पहले अपना हिस्सा खाया, फिर बाकी बचे चावल में ज़हर मिला दिया, जिसे वह अपने साथ जंगल ले गया। लेकिन जैसे ही उसने उसे नीचे रखा, दूसरे डाकू ने उसे अपनी तलवार से दो टुकड़ों में काट दिया, और शव को एक सुनसान जगह पर छिपा दिया। फिर उसने ज़हर मिले चावल खा लिए, और वहीं उसकी मृत्यु हो गई। इस प्रकार, खजाने के लालच में न केवल ब्राह्मण, बल्कि सभी डाकू नष्ट हो गए।

हालांकि, एक-दो दिन बाद बोधिसत्व फिरौती लेकर लौट आए। अपने गुरु को उस स्थान पर न पाकर जहाँ उन्होंने उन्हें छोड़ा था, और चारों ओर बिखरा हुआ खजाना देखकर, उनके मन में यह आशंका हुई कि उनकी सलाह के बावजूद, उनके गुरु ने आकाश से खजाने की वर्षा कर दी होगी और परिणामस्वरूप सभी नष्ट हो गए होंगे; और वे आगे बढ़ गए। रास्ते में वे उस स्थान पर पहुँचे जहाँ उनके गुरु का शरीर दो टुकड़ों में कटा हुआ पड़ा था। "हाय!" वे रोए, "मेरी चेतावनी न मानने के कारण उनकी मृत्यु हो गई।" फिर उन्होंने लकड़ियाँ इकट्ठा करके एक चिता बनाई और जंगली फूलों का अर्पण करते हुए अपने गुरु के शरीर को जला दिया। आगे चलकर वे पाँच सौ "प्रेषकों" के पास पहुँचे, फिर ढाई सौ के पास, और इसी तरह धीरे-धीरे आगे बढ़ते हुए अंत में वे उस स्थान पर पहुँचे जहाँ केवल दो शव पड़े थे। यह देखकर कि हज़ार में से दो को छोड़कर सभी मर चुके थे, और यह विश्वास करते हुए कि दो जीवित बचे होंगे, और वे संघर्ष से बच नहीं सकते थे, वे यह देखने के लिए आगे बढ़े कि वे कहाँ गए हैं। तो वह तब तक चलता रहा जब तक उसे वह रास्ता नहीं मिल गया जिससे होकर वे खजाने के साथ जंगल में गए थे; और वहाँ उसे खजाने के गट्ठों का ढेर मिला, और एक डाकू मृत पड़ा हुआ था, जिसका चावल का कटोरा उसके बगल में उलटा पड़ा था। पूरी कहानी को एक नज़र में समझते हुए, बोधिसत्व लापता व्यक्ति की तलाश में जुट गए, और अंत में उसका शव उस गुप्त स्थान पर पाया जहाँ उसे फेंका गया था। "और इस प्रकार," बोधिसत्व ने चिंतन किया, "मेरे गुरु ने मेरी सलाह न मानकर अपनी मनमानी में न केवल स्वयं को बल्कि हजारों अन्य लोगों को भी नष्ट कर दिया है। सचमुच, जो लोग गलत और भ्रामक साधनों से अपना लाभ चाहते हैं, वे विनाश ही पाते हैं, ठीक वैसे ही जैसे मेरे गुरु का हुआ।" और उन्होंने इस श्लोक को दोहराया:-

गलत दिशा में किया गया प्रयास लाभ नहीं, हानि की ओर ले जाता है;
चोरों ने वेदब्बा की हत्या कर दी और स्वयं भी मारे गए।
बोधिसत्व ने इस प्रकार कहा, और आगे बोला, “जिस प्रकार मेरे गुरु ने स्वर्ग से धन की वर्षा कराने के अपने गलत और भ्रामक प्रयास से स्वयं अपनी मृत्यु और दूसरों का विनाश किया, उसी प्रकार प्रत्येक मनुष्य जो गलत साधनों से अपना लाभ प्राप्त करने का प्रयास करता है, वह भी नष्ट हो जाएगा और दूसरों को भी अपने विनाश में शामिल कर लेगा।” इन शब्दों से बोधिसत्व ने वन को गुंजायमान कर दिया; और इस श्लोक में उन्होंने सत्य का उपदेश दिया, जबकि वृक्ष-परियों ने जयजयकार की। उन्होंने उस धन को अपने घर ले जाने की योजना बनाई, जहाँ उन्होंने अपना जीवन दान-पुण्य और अन्य अच्छे कार्यों में व्यतीत किया। और जब उनका जीवन समाप्त हुआ, तो वे अपने द्वारा जीते गए स्वर्ग की ओर प्रस्थान कर गए।

गुरु ने कहा, "यह पहली बार नहीं है, भाई (भिक्षु), जब तुम अपनी इच्छा के अनुसार चले हो; तुम अतीत में भी अपनी इच्छा के अनुसार चले थे; और अपनी इच्छा के कारण ही तुम्हारा पूर्ण विनाश हुआ।" अपना उपदेश समाप्त करते हुए उन्होंने जन्म का परिचय देते हुए कहा, "वह इच्छा के अनुसार चलने वाला भाई उस समय का वेदब्भ-ब्राह्मण था, और मैं स्वयं उसका शिष्य हूँ।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **नक्खट्ट-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-49-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 49
नक्खत्त-जातक

"मूर्ख देखता रहे।" - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक नग्न तपस्वी के बारे में सुनाई थी। परंपरा के अनुसार, श्रावस्ती शहर के पास रहने वाले एक सज्जन ने अपने पुत्र के लिए श्रावस्ती शहर की एक युवती से विवाह का प्रस्ताव रखा, जो उनके ही समान दर्जे की थी। दुल्हन को लाने के लिए एक दिन तय करने के बाद, उन्होंने अपने परिवार के करीबी नग्न तपस्वी से यह जानने के लिए परामर्श लिया कि क्या उस दिन विवाह समारोह आयोजित करने के लिए सितारे अनुकूल हैं।

“उन्होंने मुझसे पहले पूछा तक नहीं,” क्रोधित तपस्वी ने मन ही मन सोचा, “लेकिन मुझसे सलाह लिए बिना ही दिन तय कर लिया, अब बस मेरा नाम लेकर दिखावा कर रहे हैं। बहुत खूब; मैं उन्हें सबक सिखाऊंगा।” इसलिए उन्होंने जवाब दिया कि उस दिन नक्षत्र अनुकूल नहीं थे; उस दिन विवाह नहीं होना चाहिए; और अगर हुआ भी तो बड़ी विपत्ति आएगी। और गाँव के परिवार ने अपने तपस्वी पर विश्वास रखते हुए उस दिन दुल्हन को लेने नहीं गए। अब शहर में दुल्हन की सहेलियों ने विवाह समारोह की सारी तैयारियाँ कर ली थीं, और जब उन्होंने देखा कि दूसरी तरफ के लोग नहीं आए, तो उन्होंने कहा, “आज का दिन तो इन्होंने ही तय किया था, फिर भी नहीं आए; और हमारा इतना खर्चा हो गया। ये लोग कौन हैं? चलो लड़की का विवाह किसी और से करवा देते हैं।” इसलिए उन्होंने दूसरा दूल्हा ढूँढा और पहले से तैयार किए गए सभी समारोहों के साथ लड़की का विवाह उससे करवा दिया।

अगले दिन गांव के लोग दुल्हन को लेने आए। लेकिन श्रावस्ती शहर के लोगों ने उनके बारे में कुछ इस तरह कहा: "तुम गांव वाले बड़े बुरे लोग हो; तुमने खुद ही शादी की तारीख तय की और फिर न आकर हमारा अपमान किया। हमने लड़की को किसी और को दे दिया है।" गांव के लोगों ने झगड़ा शुरू कर दिया, लेकिन अंत में वे उसी रास्ते से वापस चले गए जिससे आए थे।

अब भिक्षुओं को पता चला कि उस नग्न तपस्वी ने उत्सव क्यों रोका था, और वे सत्य के हॉल में इस विषय पर चर्चा करने लगे। हॉल में प्रवेश करके और उनकी बातचीत का विषय जानने पर, गुरु ने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि इसी तपस्वी ने उस परिवार का उत्सव रोका है; उनसे नाराज़ होकर उसने पहले भी एक बार ऐसा ही किया था।" और ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज था, तब कुछ नगरवासियों ने एक गाँव की लड़की से विवाह का प्रस्ताव रखा और शादी की तारीख तय कर ली। शादी की तारीख तय होने के बाद, उन्होंने अपने कुल साधु से पूछा कि क्या उस दिन विवाह समारोह के लिए सितारे अनुकूल हैं। साधु को यह देखकर गुस्सा आया कि उन्होंने बिना सलाह लिए अपनी सुविधा के अनुसार शादी की रस्में रद्द कर दीं। उन्होंने बताया कि उस दिन सितारे अनुकूल नहीं हैं और अगर वे शादी करते रहे तो गंभीर दुर्भाग्य होगा। इसलिए, साधु पर विश्वास रखते हुए वे घर पर ही रहे! जब गाँववासियों ने देखा कि गाँव के लोग नहीं आए, तो उन्होंने आपस में कहा, "इन्होंने ही आज शादी तय की थी और अब वे नहीं आए। ये कौन हैं?" और उन्होंने उस लड़की का विवाह किसी और से कर दिया।

अगले दिन नगरवासी आए और लड़की के बारे में पूछा; लेकिन गाँव वालों ने यह उत्तर दिया:- "तुम नगरवासियों में सामान्य शिष्टाचार की कमी है। तुमने खुद दिन तय किया और फिर भी दुल्हन को लेने नहीं आए। तुम्हारे चले जाने से हमने उसका विवाह किसी और से कर दिया।" "लेकिन हमने अपने तपस्वी से पूछा, और उन्होंने बताया कि सितारे अनुकूल नहीं थे। इसीलिए हम कल नहीं आए। हमें लड़की दे दो।" "तुम सही समय पर नहीं आए, और अब वह किसी और की हो गई है। हम उसका विवाह दो बार कैसे कर सकते हैं?" जब वे इस प्रकार आपस में झगड़ रहे थे, तभी शहर से एक ज्ञानी व्यक्ति काम से गाँव आया। नगरवासियों को यह बताते हुए सुनकर कि

उन्होंने अपने तपस्वी से सलाह ली थी और उनकी अनुपस्थिति सितारों के प्रतिकूल होने के कारण थी, वह चौंक गया, "क्या, सितारों का कोई महत्व है? क्या लड़की का मिलना ही सौभाग्य की बात नहीं है?" और ऐसा कहते हुए उसने यह श्लोक दोहराया:-

मूर्ख व्यक्ति 'भाग्यशाली दिनों' की प्रतीक्षा कर सकता है।
फिर भी किस्मत कभी-कभी चूक जाती है;
भाग्य स्वयं ही भाग्य का सितारा है।
साधारण सितारे क्या हासिल कर सकते हैं?
जहां तक कस्बेवासियों की बात है, उनके तमाम प्रयासों के बावजूद जब उन्हें वह लड़की नहीं मिली, तो उन्हें वापस घर लौटना पड़ा!

गुरु ने कहा, "भाइयों (भिक्षुओं), यह पहली बार नहीं है कि इस नग्न तपस्वी ने उस परिवार के उत्सवों को रोका है; उसने अतीत में भी ऐसा ही किया था।" अपना प्रवचन समाप्त करते हुए, उन्होंने संबंध स्पष्ट किया और जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "यह तपस्वी उन दिनों का भी तपस्वी था, और परिवार भी वही थे; मैं स्वयं वह बुद्धिमान और नेक व्यक्ति था जिसने श्लोक का उच्चारण किया था।"

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **दुम्मेध-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-50-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 50
दुम्मेधा जातक

"हजारों दुष्ट।"--यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जो संसार की भलाई के लिए किए गए कार्यों के बारे में है, जैसा कि महा-कान्हा-जातक (*1) के बारहवें खंड में समझाया जाएगा।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व का पुनर्जन्म उनकी पत्नी रानी के गर्भ में हुआ। जन्म के समय ही उनका नामकरण उनके जन्मदिवस पर राजकुमार ब्रह्मदत्त के नाम से किया गया। सोलह वर्ष की आयु तक उन्होंने तक्षशिला में उच्च शिक्षा प्राप्त कर ली थी, तीनों वेदों को वे कंठस्थ कर चुके थे और ज्ञान की अठारह शाखाओं में पारंगत थे। उनके पिता ने उन्हें वायसराय नियुक्त किया।

उन दिनों बनारस के लोग 'देवताओं' के उत्सवों में बहुत मग्न रहते थे और उन्हें सम्मान देते थे। भेड़, बकरी, मुर्गी, सूअर और अन्य जीवित प्राणियों की बलि देना उनकी आदत थी, और वे अपने अनुष्ठान केवल फूलों और इत्रों से ही नहीं, बल्कि खून से लथपथ शवों से भी करते थे। दया के भावी भगवान ने मन ही मन सोचा, "अंधविश्वास के कारण मनुष्य अब मनमाने ढंग से जीवन की बलि दे रहे हैं; अधिकांश लोग अनैतिकता में लिप्त हैं: लेकिन जब मेरे पिता की मृत्यु के बाद मुझे मेरा उत्तराधिकार मिलेगा, तो मैं जीवन के इस विनाश को रोकने का उपाय खोजूंगा। मैं कोई ऐसी चतुर योजना बनाऊंगा जिससे किसी भी मनुष्य को हानि पहुंचाए बिना इस बुराई को रोका जा सके।" इसी भाव में राजकुमार एक दिन अपने रथ पर सवार होकर शहर से निकल पड़े। रास्ते में उन्होंने एक पवित्र बरगद के वृक्ष के पास भीड़ देखी, जो उस वृक्ष में पुनर्जन्म लेने वाली परी से प्रार्थना कर रही थी कि उन्हें पुत्र-पुत्रियां, मान-सम्मान और धन, प्रत्येक को उसकी इच्छा के अनुसार प्रदान करे। अपने रथ से उतरकर बोधिसत्व वृक्ष के पास आए और एक उपासक की तरह सुगंधित इत्र और फूल अर्पित किए, वृक्ष पर जल छिड़का और आदरपूर्वक उसके तने के चारों ओर परिक्रमा की। फिर अपने रथ पर सवार होकर वे वापस नगर की ओर चल दिए।

तब से राजकुमार समय-समय पर उस वृक्ष की यात्रा करने लगा और सच्चे 'देवताओं' में विश्वास रखने वाले की तरह उसकी पूजा करने लगा।

समय आने पर, जब उनके पिता का देहांत हुआ, तो बोधिसत्व ने उनके स्थान पर शासन संभाला। चार बुरे मार्गों से विमुख होकर और दस राजगुणों का पालन करते हुए, उन्होंने अपने प्रजाजनों पर धर्मपरायणता से शासन किया। अब जब उनकी इच्छा पूर्ण हो गई थी और

वे राजा बन गए थे, तो बोधिसत्व ने अपने पूर्व संकल्प को पूरा करने का निश्चय किया। इसलिए उन्होंने अपने मंत्रियों, ब्राह्मणों, कुलीन वर्ग और अन्य जनमानस को बुलाया और सभा से पूछा कि क्या वे जानते हैं कि उन्होंने स्वयं को राजा कैसे बनाया। परन्तु कोई भी इसका उत्तर नहीं दे सका।

"क्या आपने कभी मुझे बरगद के पेड़ की आदरपूर्वक पूजा करते हुए, इत्र आदि का प्रयोग करते हुए और उसके सामने सिर झुकाते हुए देखा है?"

उन्होंने कहा, "महाराज, हमारे पास है।"

"मैंने एक प्रतिज्ञा की थी; और प्रतिज्ञा यह थी कि यदि मैं कभी राजा बनूँ, तो उस वृक्ष को बलि चढ़ाऊँगा। और अब जब ईश्वर (देवदूत) की कृपा से मैं राजा बन गया हूँ, तो मैं अपनी प्रतिज्ञा की गई बलि चढ़ाऊँगा। इसलिए इसे शीघ्रता से तैयार करो।"

लेकिन हम इसका क्या मतलब निकालें?

राजा ने कहा, "मेरी प्रतिज्ञा यह थी: पाँच पापों में लिप्त, जीवित प्राणियों की हत्या करने वाले आदि सभी लोगों को, और अधर्म के दस मार्गों पर चलने वाले सभी लोगों को मैं मार डालूँगा, और उनके मांस, रक्त, अंतःस्रावी अंगों और प्राणों से उन्हें बलि चढ़ाऊँगा। ढोल बजाकर यह घोषणा करो कि हमारे स्वामी राजा ने अपने राज्याभिषेक के दिनों में प्रतिज्ञा की थी कि यदि वह राजा बने तो वह अपने उन सभी प्रजाजनों को मार डालेंगे और बलि चढ़ाएँगे जो आज्ञाओं का उल्लंघन करते हैं। अब राजा पाँच पापों में लिप्त या अधर्म के दस मार्गों पर चलने वाले एक हजार लोगों को मारना चाहता है; उन हजार लोगों के हृदय और मांस से देवता (देवदूत) के सम्मान में बलि चढ़ाई जाएगी। यह घोषणा पूरे नगर में करो ताकि सभी को पता चले। राजा ने आगे कहा, "इस तिथि के बाद उल्लंघन करने वालों में से मैं एक हजार को मार डालूँगा और अपनी प्रतिज्ञा पूरी करने के लिए उन्हें देवता को बलि चढ़ाऊँगा।" और अपनी बात स्पष्ट करने के लिए राजा ने यह श्लोक कहा:-

मैंने एक बार हजार दुष्टों को मारने की कसम खाई थी।
 श्रद्धापूर्वक कृतज्ञता के भाव से हत्या करना;
और दुष्टों की इतनी बड़ी भीड़ होती है,
 अब मैं अपनी प्रतिज्ञा पूरी करूंगा।

राजा के आदेशों का पालन करते हुए, मंत्रियों ने ढोल बजाकर बनारस के कोने-कोने में घोषणा करवाई। इस घोषणा का नगरवासियों पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि किसी ने भी पुराने दुराचार को नहीं छोड़ा। बोधिसत्व के शासनकाल में किसी भी व्यक्ति को कुकर्म का दोषी नहीं ठहराया गया। इस प्रकार, अपनी किसी भी प्रजा को हानि पहुँचाए बिना, बोधिसत्व ने उन्हें आज्ञाओं का पालन करवाया। दान-पुण्य और अन्य अच्छे कार्यों से भरे जीवन के अंत में, वे अपने अनुयायियों के साथ देवों (देवदूतों) के नगर में विराजमान हो गए।

गुरु ने कहा, "हे भिक्षुओं, यह पहली बार नहीं है कि बुद्ध ने जगत के कल्याण के लिए कार्य किया है; उन्होंने अतीत में भी इसी प्रकार कार्य किया था।" अपना प्रवचन समाप्त करते हुए उन्होंने संबंध स्पष्ट किया और जन्म का वर्णन करते हुए कहा, "बुद्ध के शिष्य उस समय के मंत्री थे और मैं स्वयं बनारस का राजा था।"

फुटनोट:

(1)सं. 469.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **महासिलव-जातक**
***स्रोत** : रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-51-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 51
महासिलवा-जातक

"लगे रहो, मेरे भाई।" - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी, एक भिक्षु के बारे में जिसने सभी गंभीर प्रयास छोड़ दिए थे। जब गुरु ने उससे पूछा कि क्या यह बात सच है कि वह पथभ्रष्ट हो गया है, तो भिक्षु ने कहा कि यह सच है। गुरु ने कहा, "भाई, तुम इतने असाधारण विश्वास में कैसे उदासीन हो सकते हो? यहाँ तक कि जब अतीत के बुद्धिमान और भले लोगों ने अपना राज्य खो दिया था, तब भी उनका संकल्प इतना दृढ़ था कि अंत में उन्होंने शासन करने की शक्ति वापस पा ली।" और ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व ने रानी के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिया; और उनके नामकरण के दिन उनका नाम राजकुमार सद्गुण रखा गया। सोलह वर्ष की आयु में उनकी शिक्षा पूर्ण हुई; और बाद में अपने पिता की मृत्यु के बाद वे राजा बने और महान राजा सद्गुण की उपाधि से अपनी प्रजा पर विधिपूर्वक शासन किया। उन्होंने नगर के चारों द्वारों पर एक-एक भिक्षागृह बनवाया, एक नगर के मध्य में और एक अपने महल के द्वारों पर, कुल मिलाकर छह भिक्षागृह बनवाए; और प्रत्येक द्वार पर वे गरीबों, बेघरों और जरूरतमंदों को भिक्षा देते थे। वे आज्ञाओं का पालन करते थे और व्रत रखते थे; उनमें बहुत धैर्य, प्रेम और दया थी; और उन्होंने विधिपूर्वक देश पर शासन किया, सभी प्राणियों को एक पिता के अपने बच्चे के प्रति स्नेह से समान रूप से प्यार किया।

राजा के एक मंत्री ने राजा के हरम में छल किया था, और यह बात सब में फैल गई। मंत्रियों ने राजा को इसकी सूचना दी। राजा ने स्वयं मामले की जाँच की और पाया कि मंत्री दोषी नहीं है। इसलिए उन्होंने दोषी को बुलवाया और कहा, "हे पाप में अंधे! तूने पाप किया है और तू मेरे राज्य में रहने योग्य नहीं है; अपनी संपत्ति, अपनी पत्नी और परिवार को लेकर यहाँ से चला जा।" इस प्रकार राज्य से निकाले जाने पर, वह मंत्री काशी देश छोड़कर कोसल के राजा की सेवा में लग गया और धीरे-धीरे उसका विश्वासपात्र सलाहकार बन गया। एक दिन उसने कोसल के राजा से कहा, "महाराज, बनारस का राज्य मक्खियों से रहित एक बड़े मधुकोश के समान है; इसका राजा स्वयं दुर्बल है; और एक छोटी सी सेना पूरे देश को जीतने के लिए पर्याप्त होगी।"

इस पर कोसल के राजा ने सोचा कि बनारस का राज्य विशाल है, और इस बात को ध्यान में रखते हुए कि एक छोटी सी सेना भी इसे जीत सकती है, उसे संदेह हुआ कि उसका सलाहकार रिश्वत लेकर उसे जाल में फंसाने के लिए भेजा गया है। "गद्दार!" वह चिल्लाया, "तुम्हें यह कहने के लिए पैसे दिए गए हैं!"

दूसरे ने उत्तर दिया, "बिल्कुल नहीं, मैं ऐसा नहीं हूँ; मैं तो बस सच बोल रहा हूँ। अगर तुम्हें मुझ पर शक है, तो उसके सीमा पार किसी गाँव में नरसंहार करने के लिए कुछ लोगों को भेजो और देखो कि जब वे पकड़े जाएँगे और उसके सामने लाए जाएँगे, तो क्या राजा उन्हें बिना किसी सजा के छोड़ नहीं देगा और उन्हें उपहारों से न नहला देगा।"

“वह अपनी बात मनवाने में बहुत ही धृष्टता दिखा रहा है,” राजा ने सोचा; “मैं बिना देर किए उसकी सलाह की परीक्षा लूँगा।” और तदनुसार उसने अपने कुछ सैनिकों को बनारस की सीमा के पार एक गाँव को परेशान करने के लिए भेजा। उन बदमाशों को पकड़कर बनारस के राजा के सामने लाया गया, जिसने उनसे पूछा, “मेरे बच्चों, तुमने मेरे गाँव वालों को क्यों मारा?”

उन्होंने कहा, "क्योंकि हम अपना गुजारा नहीं कर पा रहे थे।"

“तो फिर तुम मेरे पास क्यों नहीं आए?” राजा ने कहा। “ध्यान रखना कि तुम दोबारा ऐसा न करो।”

और उसने उन्हें उपहार देकर विदा कर दिया। वे वापस लौटे और कोसल के राजा को यह बात बताई। लेकिन यह सबूत उसे अभियान चलाने के लिए पर्याप्त नहीं लगा; और एक दूसरा दल दूसरे गाँव में नरसंहार करने के लिए भेजा गया, इस बार राज्य के मध्य में। इन्हें भी बनारस के राजा ने उपहार देकर विदा कर दिया। लेकिन यह सबूत भी पर्याप्त नहीं समझा गया; और एक तीसरा दल बनारस की गलियों को लूटने के लिए भेजा गया! और इन्हें भी, अपने पूर्ववर्तियों की तरह, उपहार देकर विदा कर दिया गया! अंततः यह जानकर कि बनारस का राजा पूरी तरह से अच्छा राजा है, कोसल के राजा ने उसके राज्य पर कब्जा करने का निश्चय किया और सेना और हाथियों के साथ उसके विरुद्ध निकल पड़ा।

उन दिनों बनारस के राजा के पास एक हजार वीर योद्धा थे, जो मदमस्त हाथी के आक्रमण का भी सामना कर सकते थे, जिन्हें इंद्र के वज्र से भी भयभीत नहीं किया जा सकता था। वे अद्वितीय, अजेय वीरों का एक दल थे, जो राजा के आदेश पर पूरे भारत को अपने अधीन करने के लिए तैयार थे! जब उन्हें पता चला कि कोसल का राजा बनारस पर कब्जा करने आ रहा है, तो वे अपने राजा के पास यह खबर लेकर आए और उनसे आक्रमणकारी के विरुद्ध भेजे जाने का अनुरोध किया। उन्होंने कहा, "महाराज, हम उसे सीमा पार कदम रखने से पहले ही परास्त कर लेंगे और पकड़ लेंगे।"

“ऐसा नहीं, मेरे बच्चों,” राजा ने कहा। “मेरी वजह से किसी को कष्ट नहीं उठाना पड़ेगा। जो लोग राज्य पर अधिकार करना चाहते हैं, वे चाहें तो मेरा राज्य छीन लें।” और उन्होंने उन्हें आक्रमणकारी के विरुद्ध मार्च करने की अनुमति देने से इनकार कर दिया।

फिर कोसल का राजा सीमा पार करके मध्य देश में आया; और मंत्री फिर से राजा के पास विनती लेकर गए। परन्तु राजा ने फिर भी इनकार कर दिया। अब कोसल का राजा नगर के बाहर प्रकट हुआ और राजा को संदेश भेजा कि या तो वह राज्य छोड़ दे या युद्ध करे। बनारस के राजा ने उत्तर में संदेश भेजा, “मैं युद्ध नहीं करूँगा; वह मेरा राज्य छीन ले।”

एक बार फिर राजा के मंत्री उनके पास आए और उनसे विनती की कि वे कोसल के राजा को शहर में प्रवेश न करने दें, बल्कि उन्हें शहर के सामने ही उसे पराजित करने और पकड़ने की अनुमति दें। फिर भी इनकार करते हुए, राजा ने शहर के द्वार खोलने का आदेश दिया और अपने हजार मंत्रियों के साथ अपने राजसी सिंहासन पर भव्य रूप से विराजमान हो गए।

शहर में प्रवेश करते ही, कोसल के राजा को कोई बाधा नहीं मिली, इसलिए वह अपनी सेना के साथ राजमहल की ओर बढ़ गया। महल के द्वार खुले हुए थे; और वहाँ अपने भव्य सिंहासन पर, अपने हज़ार मंत्रियों के साथ, महान राजा शुभांगना भव्यता से विराजमान थे। कोसल के राजा ने पुकारते हुए कहा, “इन सबको पकड़ लो; इनके हाथ पीछे की ओर कसकर बाँध दो, और इन्हें कब्रिस्तान ले जाओ! वहाँ गड्ढे खोदकर इन्हें गर्दन तक ज़िंदा दफ़ना दो, ताकि ये हाथ-पैर न हिला सकें। सियार रात में आकर इन्हें दफ़ना देंगे!”

उस दुष्ट राजा के आदेश पर, उसके अनुयायियों ने बनारस के राजा और उसके मंत्रियों को बांधकर घसीटते हुए ले गए। परन्तु उस घड़ी भी महान राजा बनारस ने उन दुष्टों के विरुद्ध जरा भी क्रोध नहीं किया; और कहा जाता है कि उसके अनुयायियों में अनुशासन इतना उत्तम था कि जब उसके मंत्रियों को जंजीरों में बांधकर ले जाया जा रहा था, तब भी उनमें से एक भी राजा की अवज्ञा नहीं कर सका।

तो राजा गुडनेस और उनके मंत्रियों को ले जाकर कब्रिस्तान में गड्ढों में गर्दन तक गाड़ दिया गया, राजा बीच में और बाकी लोग उनके दोनों ओर। ज़मीन को कुचलकर उन्हें वहीं छोड़ दिया गया। फिर भी विनम्र और अपने उत्पीड़क के प्रति क्रोध से मुक्त, राजा गुडनेस ने अपने साथियों को प्रोत्साहित करते हुए कहा, "मेरे बच्चों, अपने हृदयों को केवल प्रेम और दया से भर लो।"

आधी रात को सियार झुंड बनाकर इंसानी मांस की दावत के लिए आ गए; और उन जानवरों को देखते ही राजा और उसके साथियों ने एक साथ ज़ोर से चिल्लाकर सियारों को डरा दिया। रुककर झुंड ने पीछे मुड़कर देखा, और किसी को पीछा करते न देखकर फिर आगे बढ़ गए। दूसरी बार चिल्लाने पर वे फिर भाग गए, लेकिन फिर पहले की तरह लौट आए। लेकिन तीसरी बार, जब उन्होंने देखा कि उनमें से कोई भी उनका पीछा नहीं कर रहा है, तो सियारों ने मन ही मन सोचा, "ये ज़रूर मौत के मुंह में जाने वाले लोग हैं।" वे निडर होकर आगे बढ़े; यहाँ तक कि जब फिर से चिल्लाहट हुई, तब भी वे पीछे नहीं हटे। वे आगे बढ़ते गए, हर एक अपने शिकार को चुन रहा था, सरदार सियार राजा की ओर बढ़ा, और बाकी सियार उसके साथियों की ओर। चतुराई से काम लेते हुए, राजा ने जानवर को आते देखा, और काटने के लिए तैयार होकर अपना गला ऊपर उठाया, और अपने दांत सियार के गले में शिकंजे की तरह गड़ा दिए! राजा के जबड़ों की मजबूत पकड़ से अपना गला छुड़ाने में असमर्थ और मृत्यु के भय से सियार ने ज़ोर से दहाड़ मारी। उसकी चीख सुनकर झुंड ने समझ लिया कि उनके सरदार को किसी ने पकड़ लिया है। अपने शिकार के पास जाने की हिम्मत न होने के कारण, वे सब अपनी जान बचाने के लिए भाग गए।

राजा के चंगुल से खुद को छुड़ाने के लिए फंसा हुआ सियार पागलों की तरह इधर-उधर उछलने लगा, जिससे राजा के ऊपर की मिट्टी ढीली हो गई। इस पर राजा ने सियार को छोड़ दिया और अपनी पूरी ताकत लगाकर इधर-उधर उछलते हुए अपने हाथ छुड़ा लिए! फिर गड्ढे के किनारे को पकड़कर वह ऊपर आया और हवा के आगे बढ़ते बादल की तरह तेजी से आगे बढ़ा। अपने साथियों को हौसला देते हुए उसने उनके चारों ओर की मिट्टी को ढीला करने और उन्हें बाहर निकालने का काम शुरू किया, और अंत में अपने सभी सेवकों के साथ कब्रिस्तान में फिर से स्वतंत्र रूप से खड़ा हो गया।

अब संयोगवश, कब्रिस्तान के उस हिस्से में एक शव मिला था जो दो राक्षसों के संबंधित क्षेत्रों के बीच स्थित था; और राक्षस लूट के बंटवारे को लेकर आपस में झगड़ रहे थे।

उन्होंने कहा, “हम इसे स्वयं नहीं बाँट सकते; परन्तु यह राजा पुण्यात्मा है; वह इसे हमारे लिए बाँट देगा। चलो उसके पास चलते हैं।” इसलिए वे शव को पैर से घसीटते हुए राजा के पास ले गए और बोले, “महाराज, इस व्यक्ति को बाँट दीजिए और हममें से प्रत्येक को हमारा हिस्सा दे दीजिए।” राजा ने कहा, “निश्चित रूप से, मेरे मित्रों, मैं ऐसा करूँगा। परन्तु, क्योंकि मैं गंदा हूँ, मुझे पहले स्नान करना होगा।”

तुरंत ही, अपनी जादुई शक्ति से, राक्षस राजा के लिए वह सुगंधित जल ले आए जो गद्दी हड़पने वाले राजा के स्नान के लिए तैयार किया गया था। जब राजा ने स्नान कर लिया, तो वे उनके लिए वे वस्त्र ले आए जो गद्दी हड़पने वाले राजा के लिए रखे गए थे। जब राजा ने उन्हें

पहन लिया, तो वे उनके लिए चार प्रकार की सुगंधों से भरा एक डिब्बा ले आए। जब राजा ने खुद को सुगंधित कर लिया, तो वे रत्नजड़ित पंखों पर सजे हुए कई प्रकार के फूल सोने के एक डिब्बे में ले आए। जब राजा ने खुद को फूलों से सजाया, तो राक्षसों ने पूछा कि क्या वे कोई और सेवा कर सकते हैं। राजा ने उन्हें यह संकेत दिया कि उन्हें भूख लगी है। तो राक्षस चले गए और सबसे उत्तम स्वादों से सुगंधित चावल लेकर लौटे, जो गद्दी हड़पने वाले राजा की मेज के लिए तैयार किया गया था। अब राजा, स्नान करके, सुगंधित होकर, वस्त्र पहनकर, उस उत्तम भोजन का आनंद लेने लगे। इस पर राक्षस राजा के लिए सुगंधित जल उसी के सोने के कटोरे में लेकर आए, और सोने का प्याला लाना नहीं भूले। जब राजा ने जल पी लिया, मुँह धो लिया और हाथ धो रहे थे, तब वे उनके लिए सुगंधित पान लाए और पूछा कि क्या महाराज को कोई और आदेश चाहिए। राजा ने कहा, "अपनी जादुई शक्ति से राजा के तकिये के पास पड़ी राजसी तलवार लाओ।" और तुरंत तलवार राजा के पास लाई गई। फिर राजा ने शव को उठाया और सीधा खड़ा करके रीढ़ की हड्डी के बीच से दो हिस्सों में काट दिया, प्रत्येक राक्षस को आधा-आधा दे दिया। यह करने के बाद, राजा ने तलवार को धोया और अपनी कमर में बाँध लिया।

पेट भरकर भोजन करने के बाद राक्षस प्रसन्न हुए और कृतज्ञतापूर्वक राजा से पूछा कि वे उनके लिए और क्या कर सकते हैं। राजा ने कहा, "अपनी जादुई शक्ति से मुझे गद्दी हड़पने वाले राजा के कक्ष में नियुक्त कर दीजिए और मेरे सभी मंत्रियों को उनके अपने-अपने घर वापस भेज दीजिए।" राक्षसों ने कहा, "जी, अवश्य।" और ऐसा ही किया गया। उस समय गद्दी हड़पने वाला राजा अपने राजकक्ष में शाही पलंग पर सो रहा था। जब वह शांति से सो रहा था, तभी अच्छे राजा ने तलवार से उसके पेट पर प्रहार किया। भयभीत होकर जागते हुए, गद्दी हड़पने वाले राजा ने दीपक की रोशनी में देखा कि वह महान राजा अच्छाई थे। उन्होंने अपना सारा साहस जुटाकर पलंग से उठकर कहा, "महाराज, रात हो चुकी है; पहरा लगा हुआ है; दरवाजे बंद हैं; और कोई अंदर नहीं आ सकता। फिर आप मेरे पलंग के पास तलवार हाथ में लिए और शानदार वस्त्र पहने कैसे आ गए?" तब राजा ने उन्हें अपने भागने की पूरी कहानी विस्तार से सुनाई। तब उस धोखेबाज राजा का हृदय द्रवित हुआ और वह रोते हुए बोला, "हे महाराज, यद्यपि मुझे मानवीय स्वभाव प्राप्त है, फिर भी मैं आपकी अच्छाई को नहीं जानता था; परन्तु उस अच्छाई का ज्ञान तो उन क्रूर और निर्दयी राक्षसों को प्राप्त है, जिनका भोजन मांस और रक्त है। अब से, हे महाराज, मैं आपके इस असाधारण सद्‌गुण के विरुद्ध कोई षड्यंत्र नहीं रचूँगा।" ऐसा कहकर उसने अपनी तलवार पर मित्रता की शपथ ली और राजा से क्षमा माँगी। फिर उसने राजा को राजसी पलंग पर लिटाया और स्वयं एक छोटे पलंग पर लेट गया।

अगले दिन सुबह होते ही, जब सूरज निकल आया, तो उसने ढोल की थाप पर, धोखेबाज राजा के आदेश से, हर पद और ओहदे के सभी लोगों को इकट्ठा किया; उनके सामने उसने राजा गुडनेस की प्रशंसा की, मानो वह आकाश में पूर्णिमा के चाँद को ऊँचा उठा रहा हो; और उन सबके सामने उसने फिर से राजा से क्षमा माँगी और उसे उसका राज्य लौटाते हुए कहा, "अब से विद्रोहियों से निपटना मेरी जिम्मेदारी होगी; आप अपने राज्य पर शासन करें, मैं पहरा और सुरक्षा प्रदान करूँगा।" और ऐसा कहकर उसने उस निंदक गद्दार को सजा सुनाई और अपनी सेना और हाथियों के साथ अपने राज्य लौट गया।

राजसी शक्ति के श्वेत आवरण के नीचे, हिरण के समान पैरों वाले स्वर्ण सिंहासन पर विराजमान महान राजा सत्कार ने अपनी महिमा को निहारते हुए मन ही मन कहा, "यदि मैंने अपने मार्ग पर दृढ़ निश्चय न किया होता, तो मैं इस वैभव का आनंद न ले पाता, और न ही मेरे हजार मंत्री जीवित होते। मार्ग पर दृढ़ निश्चय के कारण ही मैंने अपना खोया हुआ राज्य पुनः प्राप्त किया और अपने हजार मंत्रियों के जीवन की रक्षा की। सचमुच, हमें दृढ़ हृदय से निरंतर परिश्रम करना चाहिए, क्योंकि मार्ग पर दृढ़ निश्चय का फल अत्यंत उत्तम होता है।" और यह कहकर राजा ने अपने हृदय से यह भाव प्रकट किया:

मेहनत करते रहो, मेरे भाई; उम्मीद बनाए रखो;
  और न ही अपने साहस को कमजोर और थका हुआ होने दें।
मैं स्वयं को देखता हूँ, जिसने अपने अतीत के सभी कष्टों को सहा है।
  मैं अपने दिल की इच्छा का स्वामी हूँ।

बोधिसत्व ने अपने हृदय की पूर्णता से यही कहा कि यह कितना निश्चित है कि नेक कर्मों का फल अवश्य मिलता है। जीवन भर नेक कार्य करते हुए वे परलोक विदा हुए और अब उनके कर्मों के अनुसार ही उनका फल मिलेगा।

उनका प्रवचन समाप्त हुआ और गुरु ने चार सत्यों का उपदेश दिया, जिसके अंत में पथभ्रष्ट भिक्षु ने अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) प्राप्त किया। गुरु ने संबंध स्पष्ट करते हुए जन्म का वर्णन किया, "देवदत्त उस समय का विश्वासघाती मंत्री था, बुद्ध के शिष्य हजार मंत्री थे और मैं स्वयं महान राजा सद्‌गुण हूँ।"

पिछला <<<<-----||-52-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 52
चुला-जनक-जातक
"लगे रहो, मेरे भाई।" - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक अन्य पथभ्रष्ट भिक्षु के बारे में सुनाई थी। यहाँ बताई जाने वाली सभी घटनाएँ महाजनक-जातक (#539) में दी गई हैं।

शासन की शक्ति के श्वेत चंदवा के नीचे विराजमान राजा ने यह श्लोक पढ़ा:-

मेहनत करते रहो, मेरे भाई; उम्मीद बनाए रखो;
 दर्द से पीड़ित होने पर भी बेहोश मत हो, न ही थको।
मैं स्वयं को देखता हूँ, जिसने अपने सभी कष्टों को पार कर लिया है।
 मैंने अपनी हठधर्मिता से लड़ते हुए किनारे तक पहुँच गया हूँ।
यहां भी पथभ्रष्ट भाई ने अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) प्राप्त किया। सर्वज्ञानी बुद्ध राजा जनक थे।

पिछला <<<<-----||-53-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 53
पुन्नपति-जातक

"क्या? इसे चखे बिना छोड़ दो।" - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें मादक पेय के बारे में बताया गया था।

एक समय की बात है, श्रावस्ती शहर के शराबी सलाह लेने के लिए इकट्ठा हुए और कहने लगे, "हमारे पास एक ड्रिंक का दाम भी नहीं बचा है; हम इसे कैसे जुटाएँ?"

"खुश हो जाओ!" एक बदमाश ने कहा; "मेरे पास एक छोटी सी योजना है।"

"यह क्या हो सकता है?" बाकी सब चिल्ला उठे।

"अनाथपिंडिका की यह प्रथा है," उस व्यक्ति ने कहा, "कि जब वह राजा से मिलने जाता है तो अपनी अंगूठियाँ और सबसे कीमती वस्त्र पहनता है। चलो, हम कुछ शराब में कोई नशीला पदार्थ मिलाकर एक शराबखाना तैयार कर लें, जिसमें हम सब बैठे होंगे जब अनाथपिंडिका वहाँ से गुजरेगा। हम चिल्लाएँगे, 'आओ और हमारे साथ शामिल हो जाओ, महाराज,' और उसे इतनी शराब पिला देंगे कि वह बेहोश हो जाएगा। फिर हम उसकी अंगूठियाँ और वस्त्र छीन लेंगे और एक पेय का दाम ले लेंगे।"

उसकी योजना से अन्य बदमाश बेहद प्रसन्न हुए और उसे विधिवत रूप से अंजाम दिया गया। जब अनाथपिंडिका लौट रहा था, तो वे उससे मिलने गए और उसे अपने साथ आने का निमंत्रण दिया; क्योंकि उन्हें कोई दुर्लभ शराब मिली थी, और जाने से पहले उसे उसका स्वाद चखना था।

"क्या?" उसने सोचा, "क्या मोक्ष (निर्वाण) प्राप्त कर चुका कोई विश्वासी शराब को हाथ लगाएगा? हालाँकि मुझे शराब की कोई तलब नहीं है, फिर भी मैं इन बदमाशों का पर्दाफाश करूँगा।" इसलिए वह उनके ठेले में गया, जहाँ उनकी बातचीत से उसे जल्द ही पता चल गया कि उनकी शराब में नशीला पदार्थ मिला हुआ था; और उसने ठान लिया कि वह इन बदमाशों को भगा देगा। इसलिए उसने उन पर

आरोप लगाया कि वे पहले अजनबियों को नशीला पदार्थ पिलाकर फिर लूटने के इरादे से शराब में मिलावट कर रहे थे। "तुम लोग अपने ठेले में बैठे शराब की तारीफ कर रहे हो, लेकिन इसे पीने की हिम्मत मत करना। अगर यह सचमुच शुद्ध है, तो खुद ही पी लो।" इस तीखे खुलासे से गिरोह भाग निकला, और अनाथपिंडिका घर चला गया। यह सोचकर कि शायद उसे यह घटना बुद्ध को भी बता देनी चाहिए, वह जेतवन मठ गया और उन्हें सारी कहानी सुनाई।

"इस बार, हे मनुष्य," गुरु ने कहा, "इन बदमाशों ने तुम्हें धोखा देने की कोशिश की है; पहले भी इन्होंने भले और बुद्धिमान लोगों को धोखा देने की कोशिश की थी।" ऐसा कहकर, अपने श्रोता के अनुरोध पर, उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, तब बोधिसत्व उस नगर के कोषाध्यक्ष थे। उसी तरह शराबियों का वही गिरोह, एक साथ मिलकर, शराब में मादक पदार्थ मिलाकर, ठीक उसी तरह उनसे मिलने आया और ठीक उसी तरह से शुरुआत की। कोषाध्यक्ष बिल्कुल भी शराब नहीं पीना चाहते थे, लेकिन फिर भी उनके साथ चले गए, सिर्फ उन्हें बेनकाब करने के लिए। उनकी हरकतों को देखकर और उनकी साजिश को भांपकर, वे उन्हें डराना चाहते थे और इसलिए उन्होंने कहा कि राजा के महल में जाने से ठीक पहले शराब पीना उनके लिए ठीक नहीं होगा। उन्होंने कहा, "आप यहीं बैठिए, जब तक मैं राजा से मिल कर वापस नहीं आ जाता; उसके बाद मैं इस बारे में सोचूंगा।"

उसके लौटने पर, उन बदमाशों ने उसे पुकारा, लेकिन कोषाध्यक्ष ने मादक प्यालों पर नज़र गड़ाते हुए उन्हें यह कहकर भ्रमित कर दिया, "मुझे तुम्हारा यह तरीका पसंद नहीं आया। ये प्याले आज भी उतने ही भरे हैं जितने मेरे जाने से पहले थे; तुम लोग शराब की इतनी तारीफ कर रहे हो, फिर भी एक बूँद भी अपने मुँह से नहीं पी रहे। अगर यह अच्छी शराब होती, तो तुम भी अपना हिस्सा ले लेते। इस शराब में मादक पदार्थ मिला हुआ है!" और उसने यह पंक्ति दोहराई:-

क्या? जिस पेय को आप इतना दुर्लभ बताते हैं, उसे बिना चखे ही छोड़ देंगे?
नहीं, यह इस बात का सबूत है कि वहां कोई असली शराब नहीं है।
अच्छे कर्मों से भरा जीवन जीने के बाद, बोधिसत्व अपने कर्मों के फल के अनुसार देह त्याग कर चले गए।

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "आज के बदमाश बीते दिनों के भी बदमाश थे; और मैं स्वयं उस समय बनारस का कोषाध्यक्ष था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **फल-जातक**
स्रोत: *रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-54-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 54
फला-जातक

"जब किसी गाँव के पास हों।"—यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक ऐसे शिष्य के बारे में सुनाई थी जो फलों के ज्ञान में निपुण था। ऐसा प्रतीत होता है कि श्रावस्ती नगर के एक अधिकारी ने भिक्षुओं के समूह को, जिनके प्रमुख बुद्ध थे, अपने बगीचे में आमंत्रित किया था और उन्हें चावल की दलिया और रोटी खिलाई थी। बाद में उन्होंने अपने माली को भिक्षुओं के साथ घूमकर उन्हें आम और अन्य फल देने के लिए कहा। आदेश का पालन करते हुए, वह व्यक्ति भिक्षुओं के साथ बगीचे में घूमा और पेड़ पर एक नज़र डालकर बता सकता था कि कौन सा फल हरा है, कौन सा लगभग पका है, कौन सा पूरी तरह पका है, इत्यादि। और उसकी कही हुई बात हमेशा सच साबित होती थी। इसलिए भिक्षु बुद्ध के पास आए और माली की निपुणता का वर्णन किया और बताया कि कैसे वह स्वयं जमीन पर खड़े होकर ही लटके हुए फलों की स्थिति का सटीक अनुमान लगा सकता था। "भाइयों," गुरु ने कहा, "यह माली अकेला नहीं है जिसे फलों का ज्ञान है। ऐसा ही ज्ञान पुराने समय के बुद्धिमान और भले लोगों में भी था।" और ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्य था, तब बोधिसत्व एक व्यापारी के रूप में पैदा हुए। बड़े होकर, जब वे पाँच सौ गाड़ियों का व्यापार कर रहे थे, एक दिन वे एक ऐसे स्थान पर पहुँचे जहाँ से होकर एक विशाल वन गुजरता था। वन के बाहरी किनारे पर रुककर, उन्होंने अपने काफिले को इकट्ठा किया और उनसे कहा, "इस वन में विषैले वृक्ष उगते हैं। कृपया ध्यान रखें कि मुझसे परामर्श किए बिना किसी भी अपरिचित पत्ते, फूल या फल का स्वाद न लें।" सभी ने पूरी सावधानी बरतने का वादा किया; और वन की यात्रा शुरू हुई। वन की सीमा के भीतर ही एक गाँव बसा हुआ है, और उस गाँव के ठीक बाहर एक व्हॉट-फल का वृक्ष उगता है। व्हॉट-फल का वृक्ष तना, शाखा, पत्ते, फूल और फल में बिल्कुल आम जैसा दिखता है। और न केवल दिखने में, बल्कि स्वाद और सुगंध में भी, पका हुआ हो या कच्चा, इसका फल आम जैसा ही होता है। यदि इसे खा लिया जाए, तो यह एक घातक विष है, और तुरंत मृत्यु का कारण बनता है।

कुछ लालची लोग, जो काफिले से आगे चल रहे थे, इस पेड़ के पास आए और इसे आम समझकर इसका फल खा लिया। लेकिन दूसरों ने कहा, "हमें खाने से पहले अपने नेता से पूछ लेना चाहिए"; और वे फल हाथ में लिए पेड़ के पास रुक गए, जब तक कि वह नहीं आ गया। यह देखकर कि यह आम नहीं है, उसने कहा, "यह 'आम' तो एक व्हट-फ्रूट का पेड़ है; इसके फल को मत छुओ।"

उन्हें भोजन करने से रोकने के बाद, बोधिसत्व ने अपना ध्यान उन लोगों की ओर मोड़ा जो पहले ही भोजन कर चुके थे। पहले उन्होंने उन्हें उल्टी कराने वाली दवा दी, और फिर उन्हें चार प्रकार के मीठे व्यंजन खाने को दिए; जिससे अंत में वे ठीक हो गए।

पहले भी कई बार कारवां इसी पेड़ के नीचे रुके थे और आम समझकर खाए गए ज़हरीले फल को खाकर मर गए थे। अगले दिन ग्रामीण आते और उन्हें मृत पड़ा देखकर उनकी एड़ियों से पकड़कर किसी गुप्त स्थान पर फेंक देते और कारवां का सारा सामान, गाड़ियाँ समेत, अपने साथ ले जाते।

और हमारी कहानी वाले दिन भी, ये ग्रामीण सुबह होते ही अपने अपेक्षित लाभ के लिए पेड़ की ओर दौड़ पड़े। कुछ ने कहा, "बैल तो हमारे ही होंगे।" कुछ ने कहा, "और गाड़ियाँ भी हमें ही मिलेंगी।" वहीं कुछ अन्य ने अपने हिस्से का सामान माँग लिया। लेकिन जब वे हाँफते-हाँफते पेड़ के पास पहुँचे, तो वहाँ पूरा काफिला ज़िंदा और सही-सलामत था!

निराश ग्रामीणों ने पूछा, "आपको कैसे पता चला कि यह आम का पेड़ नहीं है?" कारवां के बारे में उन्होंने कहा, "हमें नहीं पता था; हमारे नेता को पता था।"

तब गांव वाले बोधिसत्व के पास आए और बोले, "हे ज्ञानी पुरुष, आपने यह कैसे पता लगाया कि यह पेड़ आम का नहीं था?"

बोधिसत्व ने उत्तर दिया, "मुझे दो बातें बताई गईं," और उन्होंने इस श्लोक को दोहराया:-

जब किसी गाँव के पास पेड़ उगता है
मुझे तो यह स्पष्ट रूप से स्पष्ट है कि इस पर चढ़ना कठिन नहीं है।
और मुझे यह जानने के लिए और अधिक प्रमाण की आवश्यकता नहीं है।
उस पर कोई भी पौष्टिक फल नहीं उग सकता!
और एकत्रित लोगों को सत्य का उपदेश देने के बाद, उन्होंने सुरक्षित रूप से अपनी यात्रा पूरी की।

"इस प्रकार, हे भाइयों," गुरु ने कहा, "पुराने समय में बुद्धिमान और भले लोग फलों के पारखी थे।" अपना उपदेश समाप्त करते हुए, उन्होंने संबंध समझाया और जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "बुद्ध के अनुयायी उस समय कारवां के लोग थे, और मैं स्वयं कारवां का नेता था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **पंचवुध-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

जातक क्रमांक 55
पंचवुधा-जातक

"जब कोई आसक्ति न हो।"--यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक भिक्षु के बारे में सुनाई थी, जिसने सभी गंभीर प्रयासों का त्याग कर दिया था।

गुरु ने उससे कहा, "भाई, क्या यह खबर सच है कि तुम पथभ्रष्ट हो गए हो?"

"जी हां, भगवान बुद्ध।"

"भाई, बीते दिनों में, बुद्धिमान और नेक लोगों ने संकट की घड़ी में अपने दृढ़ संकल्प और मार्ग पर अडिग रहकर सिंहासन प्राप्त किया था," गुरु ने कहा।

और ऐसा कहते हुए उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब उनकी रानी के पुत्र के रूप में बोधिसत्व ने पुनः जन्म लिया। जिस दिन उनका नामकरण होना था, उस दिन माता-पिता ने आठ सौ ब्राह्मणों से अपने पुत्र के भाग्य के बारे में पूछा, जिन्हें उन्होंने अपनी सभी इंद्रिय सुखों से परिपूर्ण तृप्त किया था। इन चतुर भविष्यवक्ता ब्राह्मणों ने उनके द्वारा बताए गए गौरवशाली भाग्य के वचन को सुनकर भविष्यवाणी की कि राजा की मृत्यु के बाद सिंहासन पर बैठने वाला यह पुत्र सभी गुणों से परिपूर्ण एक शक्तिशाली राजा होगा; पाँच शस्त्रों में अपने पराक्रम के लिए प्रसिद्ध और विख्यात होगा, और समस्त जंबूद्वीप (भारत) में अद्वितीय स्थान रखेगा (*1)। ब्राह्मणों की इस भविष्यवाणी के कारण ही माता-पिता ने अपने पुत्र का नाम पंचशस्त्र राजकुमार रखा।

अब, जब राजकुमार समझदार हो गया और सोलह वर्ष का हो गया, तो राजा ने उसे अध्ययन करने के लिए कहीं दूर जाने को कहा।

"महाराज, मुझे किसके साथ अध्ययन करना चाहिए?" राजकुमार ने पूछा।

"गांधारा (अफगानिस्तान और पाकिस्तान के पास, कंधार सहित) क्षेत्र के तक्षशिला शहर में विश्वप्रसिद्ध शिक्षक के पास। यह उनकी फीस है," राजा ने अपने बेटे को एक हजार सिक्के देते हुए कहा।

अतः राजकुमार तक्षशिला गए और वहाँ शिक्षा प्राप्त की। जब वे वहाँ से विदा हो रहे थे, तो उनके गुरु ने उन्हें पाँच शस्त्रों का एक समूह दिया। अपने गुरु को विदाई देने के बाद, राजकुमार ने उन्हीं शस्त्रों से लैस होकर तक्षशिला से बनारस के लिए प्रस्थान किया।

अपने रास्ते में वह एक ऐसे जंगल में पहुँचा जहाँ 'बालों की पकड़' नामक एक राक्षस रहता था; और जंगल के प्रवेश द्वार पर, वहाँ मिले लोगों ने उसे रोकने की कोशिश करते हुए कहा: "हे युवा ब्राह्मण, उस जंगल से मत जाओ; वह राक्षस 'बालों की पकड़' का अड्डा है, और वह जिसे भी मिलता है उसे मार डालता है।" लेकिन, शेर की तरह साहसी, आत्मनिर्भर बोधिसत्व आगे बढ़ते रहे, और जंगल के मध्य में पहुँचकर उनका सामना उस राक्षस से हुआ। राक्षस ने अपना रूप एक ताड़ के पेड़ जितना लंबा, एक लता जितना बड़ा सिर और कटोरे जैसी विशाल आँखें, शलजम जैसे दो दाँत और बाज़ जैसी चोंच के साथ प्रकट किया; उसका पेट बैंगनी धब्बों से भरा था; और उसकी हथेलियाँ और पैरों के तलवे नीले-काले थे! "तुम कहाँ जा रहे हो?" राक्षस चिल्लाया। "रुको! तुम मेरे शिकार हो।" "राक्षस," बोधिसत्व ने उत्तर दिया, "इस जंगल में प्रवेश करते समय मुझे पता था कि मैं क्या कर रहा हूँ। मेरे पास आने की तुम्हारी इच्छा व्यर्थ होगी। क्योंकि मैं तुम्हें यहीं विषैले बाण से मार डालूँगा।" और इस चुनौती भरे स्वर में उन्होंने अपने धनुष पर सबसे घातक विष में डूबा हुआ बाण लगाया और राक्षस पर चलाया। परन्तु वह केवल राक्षस के घने बालों में ही अटक गया। फिर उन्होंने एक के बाद एक बाण चलाए, यहाँ तक कि पचास बाण समाप्त हो गए, और वे सभी राक्षस के घने बालों में ही अटक गए। इस पर राक्षस ने बाणों को झटक कर अपने पैरों पर गिरा दिया और बोधिसत्व पर आक्रमण करने के लिए आगे बढ़ा; और बोधिसत्व ने फिर से चुनौती देते हुए अपनी तलवार निकाली और राक्षस पर प्रहार किया। परन्तु बाणों की ही तरह, उनकी तैंतीस इंच लंबी तलवार भी उसके घने बालों में ही अटक गई। इसके बाद बोधिसत्व ने अपना भाला फेंका, और वह भी अटक गया। यह देखकर उन्होंने अपनी गदा से राक्षस पर प्रहार किया; लेकिन, उनके अन्य हथियारों की तरह, यह भी चिपक गया। इस पर बोधिसत्व ने गरजते हुए कहा, "राक्षस, हे पंच-शस्त्र राजकुमार, तूने अभी तक मेरा नाम नहीं सुना। जब मैं इस वन में आया, तो मैंने अपने धनुष और अन्य हथियारों पर नहीं, बल्कि स्वयं पर भरोसा किया! अब मैं तुझे ऐसा प्रहार करूँगा जिससे तू चूर-चूर हो जाएगा।" ऐसा कहते हुए, बोधिसत्व ने अपने दाहिने हाथ से राक्षस पर प्रहार किया; लेकिन हाथ उसके बालों में चिपक गया। फिर, बारी-बारी से, उन्होंने अपने बाएं हाथ और अपने दाएं और बाएं पैरों से राक्षस पर प्रहार किया, लेकिन हाथ

और पैर दोनों ही उसकी खाल में चिपक गए। फिर से गरजते हुए, "मैं तुझे चूर-चूर कर दूँगा!" उन्होंने अपने सिर से राक्षस को टक्कर मारी, और वह भी चिपक गया।

फिर भी, जब बोधिसत्व पंचम ज्ञान के जाल में फँस गए, तब भी वे राक्षस से लटके हुए निडर और अडिग थे। राक्षस ने मन ही मन सोचा, "यह तो मनुष्यों में सिंह समान है, अद्वितीय वीर है, कोई साधारण मनुष्य नहीं। मुझ जैसे राक्षस के चंगुल में फँसा होने के बावजूद, इसमें जरा भी कंपन नहीं है। जब से मैंने इस मार्ग पर यात्रियों को मारना शुरू किया है, तब से मैंने इसके बराबर का कोई मनुष्य नहीं देखा। यह भयभीत क्यों नहीं है?" बोधिसत्व को निर्दयता से निगलने का साहस न करते हुए, उसने कहा, "हे युवा ब्राह्मण, तुम्हें मृत्यु का भय क्यों नहीं है?"

"मुझे क्यों डरना चाहिए?" बोधिसत्व ने उत्तर दिया। "प्रत्येक जीवन की अपनी नियत मृत्यु अवश्य है। इसके अलावा, मेरे शरीर में एक हीरा है, जिसे तुम मुझे खाने पर कभी पचा नहीं पाओगे। यह तुम्हारे भीतरी अंगों को चूर-चूर कर देगा, और मेरी मृत्यु के साथ तुम्हारी भी मृत्यु हो जाएगी। इसलिए मुझे कोई भय नहीं है।" (कहा जाता है कि इससे बोधिसत्व का तात्पर्य ज्ञान की तलवार से था, जो उनके भीतर विद्यमान थी।)

यह सुनकर राक्षस सोचने लगा, "यह युवा ब्राह्मण सत्य कह रहा है, और कुछ नहीं। ऐसे वीर का एक टुकड़ा भी मैं नहीं पचा सकता। मैं इसे जाने देता हूँ।" और इस प्रकार, अपने जीवन के भय से उसने बोधिसत्व को मुक्त कर दिया और कहा, "युवक ब्राह्मण, तुम पुरुषों में सिंह हो; मैं तुम्हें नहीं खाऊँगा। मेरे हाथ से ऐसे ही निकल जाओ जैसे चंद्रमा राहु (ग्रहण) के जबड़ों से निकल जाता है, और अपने परिवार, मित्रों और देश के हृदयों को प्रसन्न करो।"

"हे राक्षस," बोधिसत्व ने उत्तर दिया, "मैं तो जाऊँगा। और तुम, तुम्हारे पिछले जन्मों के पापों के कारण ही एक हिंसक, हत्यारा, मांस खाने वाले राक्षस के रूप में पुनर्जन्म लिए हो; और यदि तुम इस जन्म में भी पाप करते रहे, तो अंधकार से अंधकार की ओर बढ़ते जाओगे। परन्तु मुझे देखकर तुम अब से पाप नहीं कर पाओगे। जान लो कि जीवन का नाश करना नरक में, या पशु के रूप में, या प्रेत के रूप में, या पतित आत्माओं के बीच पुनर्जन्म को निश्चित करता है। या, यदि पुनर्जन्म मनुष्यों के संसार में हो, तो ऐसा पाप मनुष्य के जीवन को अल्प कर देता है।"

इस और अन्य तरीकों से बोधिसत्व ने पाँच बुरे मार्गों के बुरे परिणामों और पाँच अच्छे मार्गों के लाभों को दर्शाया; और इस प्रकार उस राक्षस के भय को अनेक तरीकों से दूर किया, जिससे उनके उपदेशों ने उसे परिवर्तित कर दिया, उसमें आत्म-त्याग का भाव भर दिया और उसे पंच आज्ञाओं में स्थापित कर दिया। फिर उस राक्षस को उस वन का परी बनाकर, उसे कर वसूलने का अधिकार देकर (*2), और उसे भक्तिमय रहने का आदेश देकर, बोधिसत्व अपने मार्ग पर चले गए, और वन से निकलते समय राक्षस के बदलते मनोभावों को प्रकट किया। अंत में, वे पाँच शस्त्रों से सुसज्जित होकर बनारस नगर पहुँचे और अपने माता-पिता के समक्ष उपस्थित हुए। बाद में, राजा बनने पर वे एक धर्मात्मा शासक थे; और दान और अन्य अच्छे कार्यों में व्यतीत जीवन के बाद, वे अपने कर्मों के अनुसार फल भोगने के लिए परलोक विदा हुए।

यह पाठ समाप्त होने पर, गुरु ने बुद्ध के रूप में निम्नलिखित श्लोक का पाठ किया:-

जब कोई आसक्ति हृदय या मन को बाधित न करे,
जब धर्म का पालन किया जाता है तो शांति प्राप्त होती है।
जो इस मार्ग पर चलता है, उसे विजय प्राप्त होगी।
और सभी जंजीरें पूरी तरह से नष्ट हो जाती हैं।
जब उन्होंने अपने उपदेश को अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) तक पहुँचाया, जो कि शिखर बिंदु था, तब गुरु ने चार सत्यों का उपदेश दिया, जिसके अंत में उस भिक्षु ने अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) प्राप्त किया। गुरु ने संबंध स्पष्ट करते हुए जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "अंगुलिमाला (*3) उस समय का राक्षस था, और मैं स्वयं पंच-शस्त्र राजकुमार हूँ।"

फुटनोट:

(1) जामुन (जाम्बू) के पेड़ों की व्यापकता के कारण भारत को जाम्बू दीप कहा जाता था। यह उन चार द्वीपों या दीपों में से एक था जिनसे पृथ्वी बनी मानी जाती थी; इसमें भारत भी शामिल था।

(2)या, शायद, "जिनके लिए बलिदान चढ़ाए जाने चाहिए।" पाठ में दिया गया अनुवाद कर-संग्रहकर्ता के विकास के एक लोकप्रिय सिद्धांत का सुझाव देता है। क्रमांक 155 भी देखें।

(3) अंगुलिमाला, एक डाकू जो लोगों को मारता था और अपने पीड़ितों की उंगलियों की माला पहनता था, बुद्ध द्वारा परिवर्तित हुआ और बाद में अर्हत (बुद्ध के समान प्रबुद्ध) बन गया। मज्झिमा निकाय संख्या 86 देखें।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कांचनकखंड-जातक**
***स्रोत** : रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-56-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 56
कंचनक्खण्ड-जातक

"जब प्रसन्नता।" - यह कथा गुरु ने श्रावस्ती नगर में एक भिक्षु के बारे में सुनाई थी। परंपरा के अनुसार, गुरु के उपदेश सुनकर श्रावस्ती नगर के एक युवक ने बुद्ध के धर्म को अपना लिया और भिक्षु बन गया। उसके गुरुओं और पादरियों ने उसे दस नैतिक नियमों का एक-एक करके उपदेश दिया, उसे लघु, मध्यम और दीर्घ नैतिक शिक्षा दी, पतिमोक्खा के अनुसार आत्मसंयम पर आधारित नैतिक शिक्षा, इंद्रियों पर आत्मसंयम पर आधारित नैतिक शिक्षा, निष्कलंक जीवन शैली पर आधारित नैतिक शिक्षा और भिक्षु द्वारा आवश्यक वस्तुओं के उपयोग से संबंधित नैतिक शिक्षा प्रदान की। उस नवोदित युवक ने मन ही मन सोचा, "इस नैतिकता का दायरा बहुत बड़ा है; और मैं निश्चित रूप से अपनी सभी प्रतिज्ञाओं को पूरा करने में असफल रहूँगा। फिर भी, यदि कोई नैतिकता के नियमों का पालन नहीं कर सकता, तो भिक्षु होने का क्या लाभ? मेरे लिए सबसे अच्छा यही है कि मैं संसार में लौट जाऊँ, विवाह करूँ और संतानोत्पत्ति करूँ, दान-पुण्य और अन्य अच्छे कर्मों का जीवन व्यतीत करूँ।" उसने अपने वरिष्ठों को अपने विचार बताए और कहा कि वह गृहस्थ जीवन में लौटना चाहता है और अपना कुंड और वस्त्र वापस करना चाहता है। उन्होंने कहा, "ठीक है, यदि ऐसा है तो जाने से पहले बुद्ध से विदा ले लीजिए।" और वे उस युवक को सत्य के हॉल में गुरु के समक्ष ले आए।

गुरु ने कहा, "हे भिक्षुओं, तुम इस भाई को उसकी इच्छा के विरुद्ध मेरे पास क्यों ला रहे हो?"

"महोदय, उन्होंने कहा कि नैतिकता उनके बस से बाहर है, और वे अपने वस्त्र और कटोरा वापस देना चाहते थे। इसलिए हम उन्हें ले आए और आपके पास लाए।"

"लेकिन भाइयों, तुमने उस पर इतना बोझ क्यों डाला? वह जितना कर सकता है, उतना कर सकता है, इससे अधिक नहीं। यह गलती दोबारा मत दोहराना, और इस मामले में क्या करना चाहिए, इसका फैसला मुझ पर छोड़ दो।"

फिर, युवा भाई की ओर मुड़कर, गुरु ने कहा, "आओ, भाई; सामूहिक नैतिकता से तुम्हारा क्या लेना-देना है? क्या तुम्हें लगता है कि तुम केवल तीन नैतिक नियमों का पालन कर सकते हो?"

"जी हां, महोदय।"

"अब, अपनी वाणी, मन और शरीर के तीन मार्गों पर ध्यान रखो और सावधान रहो; चाहे वचन से हो, विचार से हो या कर्म से, कोई बुराई मत करो। भाईचारा मत छोड़ो, बल्कि यहाँ से जाओ और इन्हीं तीन नियमों का पालन करो।"

"जी जी, मैं इनका पालन करूँगा," प्रसन्न होकर उस युवक ने कहा और अपने गुरुओं के साथ वापस चल दिया। अपने तीनों नियमों का पालन करते हुए उसने मन ही मन सोचा, "मेरे गुरुओं ने मुझे संपूर्ण नैतिकता का उपदेश दिया था, परन्तु वे बुद्ध न होते हुए भी मुझे इतना भी नहीं समझा सके। जबकि सर्वप्रबुद्ध बुद्ध ने अपने बुद्धत्व और सत्य के स्वामी होने के कारण, मार्ग संबंधी केवल तीन नियमों में ही इतनी नैतिकता का सार प्रकट कर दिया है और मुझे स्पष्ट रूप से समझा दिया है। सचमुच, गुरु मेरे लिए बहुत बड़े सहायक रहे हैं।" और उसने अंतर्दृष्टि प्राप्त कर ली और कुछ ही दिनों में अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) प्राप्त कर लिया। जब यह बात भाइयों के कानों तक पहुँची, तो उन्होंने सत्य के हॉल में एकत्रित होकर इस विषय पर चर्चा की। उन्होंने बताया कि कैसे एक भाई, जो नैतिकता का पालन न कर पाने के कारण संसार में लौट रहा था, उसे गुरु ने नैतिकता के संपूर्ण सार को समाहित करने वाले तीन नियम प्रदान किए, और उसे

उन तीन नियमों को समझने में सक्षम बनाया, जिससे गुरु ने उसे अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) प्राप्त करने में सहायता की। उन्होंने कहा, बुद्ध कितने अद्भुत थे!

इस समय हॉल में प्रवेश करते हुए और पूछताछ करने पर उनके प्रवचन का विषय जानने पर, गुरु ने कहा, "भाइयों, भारी बोझ भी टुकड़ों में उठाने पर हल्का हो जाता है; और इसी प्रकार पुराने समय के बुद्धिमान और भले लोगों ने जब सोने का एक विशाल ढेर पाया जो उठाने में असमर्थ था, तो उन्होंने पहले उसे छोटे-छोटे टुकड़ों में बाँटा और फिर धीरे-धीरे अपना खजाना ले गए।" ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, बोधिसत्व ने एक गाँव में किसान के रूप में जन्म लिया और एक दिन उस खेत में हल चला रहे थे जहाँ कभी एक गाँव हुआ करता था। अतीत में, एक धनी व्यापारी की मृत्यु हो गई थी और वह उस खेत में सोने की एक विशाल छड़ गाड़ कर गया था, जो एक आदमी की जांघ जितनी मोटी और चार भुजाओं जितनी लंबी थी। यह छड़ सीधे बोधिसत्व के हल से टकराई और वहीं अटक गई। उन्होंने इसे पेड़ की फैली हुई जड़ समझकर खोदकर निकाला; लेकिन जब उन्हें इसकी असलियत पता चली, तो वे सोने से मिट्टी साफ करने में जुट गए। दिन भर का काम खत्म होने पर, सूर्यास्त के समय उन्होंने अपना हल और औजार एक तरफ रख दिया और अपने खजाने को कंधे पर उठाकर चलने की कोशिश की। लेकिन जब वे उसे उठा भी नहीं सके, तो वे उसके सामने बैठ गए और सोचने लगे कि इसका क्या उपयोग किया जाए। “मेरे पास जीने के लिए बहुत कुछ होगा, खजाने के रूप में दफनाने के लिए बहुत कुछ होगा, व्यापार करने के लिए बहुत कुछ होगा, और दान और अच्छे कामों के लिए बहुत कुछ होगा,” उसने मन ही मन सोचा और उसी के अनुसार सोने को चार भागों में काट दिया। विभाजन से उसका बोझ हल्का हो गया; और वह सोने के टुकड़ों को घर ले गया। दान और अन्य अच्छे कामों से भरा जीवन जीने के बाद, वह इस दुनिया से विदा हो गया और उसके कर्मों के अनुसार ही उसका अंत हुआ।

उनका प्रवचन समाप्त हुआ, तब गुरु ने बुद्ध के रूप में यह श्लोक सुनाया:-

जब हृदय और मन प्रसन्नता से भर जाते हैं,
जब धर्म का पालन किया जाता है तो शांति प्राप्त होती है।
जो इस मार्ग पर चलेगा, उसे विजय प्राप्त होगी।
और सभी जंजीरें पूरी तरह से नष्ट हो जाती हैं।
और जब गुरु ने इस प्रकार अपने उपदेश को अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञानोदय) तक पहुँचाकर चरमोत्कर्ष पर पहुँचाया, तो उन्होंने संबंध को स्पष्ट करते हुए जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "उन दिनों मैं स्वयं वह व्यक्ति था जिसे सोने का टुकड़ा प्राप्त हुआ था।"

फुटनोट:

(1) तीन रत्नों (त्रिमूर्ति) से संबंधित शिक्षा, अर्थात् 1. बुद्ध, 2. धम्म निर्वाण का मार्ग और 3. संघ पवित्र व्यवस्था।

(2)पतिमोक्खा विनय (नियम) में है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **वानरिंद-जातक**
***स्रोत**: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-57-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 57
वानरिंद जातक

“हे वानर-राजा!”—यह कथा गुरु ने बाँस के वन में सुनाई थी, जब देवदत्त ने उन्हें जान से मारने का प्रयास किया था। देवदत्त के इस घातक इरादे की जानकारी मिलने पर गुरु ने कहा, “भाइयों (भिक्षुओं) यह पहली बार नहीं है कि देवदत्त ने मुझे मारने का प्रयास किया है;

उसने पहले भी ऐसा ही किया था, परन्तु अपने इस दुष्ट इरादे को पूरा करने में असफल रहा।" और ऐसा कहकर उन्होंने यह पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, तब बोधिसत्व ने बंदर के रूप में पुनर्जन्म लिया। पूर्ण विकसित होने पर वे घोड़ी के बच्चे जितने बड़े और अत्यंत बलवान थे। वे एक नदी के किनारे अकेले रहते थे, जिसके बीचोंबीच एक द्वीप था जिस पर आम, ब्रेडफ्रूट और अन्य फलदार वृक्ष उगते थे। नदी के मध्य में, द्वीप और नदी के किनारे के बीचोंबीच, पानी से एक अकेली चट्टान निकली हुई थी। हाथी के समान बलवान होने के कारण, बोधिसत्व नदी के किनारे से इस चट्टान पर और फिर वहाँ से द्वीप पर छलांग लगाते थे। वहाँ वे द्वीप पर उगने वाले फलों को भरपेट खाते थे और शाम को उसी रास्ते से लौट आते थे। इस प्रकार उनका दैनिक जीवन व्यतीत होता था।

उन दिनों उस नदी में एक मगरमच्छ और उसकी मादा रहती थी; वह गर्भवती थी और बोधिसत्व को आते-जाते देखकर उसके मन में बंदर का हृदय खाने की लालसा उत्पन्न हुई। इसलिए उसने अपने स्वामी से बंदर को पकड़ने की विनती की। मगरमच्छ ने उसकी इच्छा पूरी करने का वादा किया और एक चट्टान पर जाकर बैठ गया, ताकि शाम को घर लौटते समय बंदर को पकड़ सके।

दिनभर द्वीप पर घूमने के बाद, बोधिसत्व ने शाम को चट्टान की ओर देखा और सोचने लगे कि वह पानी से इतनी ऊपर क्यों उठी हुई है। कथा के अनुसार, बोधिसत्व नदी के पानी और चट्टान की ऊंचाई का सटीक माप लेते थे। इसलिए, जब उन्होंने देखा कि पानी का स्तर तो एक जैसा है, लेकिन चट्टान पानी से अधिक ऊपर उठी हुई प्रतीत हो रही है, तो उन्हें संदेह हुआ कि कोई मगरमच्छ उन्हें पकड़ने के लिए वहाँ घात लगाए बैठा है। सच्चाई जानने के लिए, उन्होंने चट्टान को संबोधित करते हुए पुकारा, "हाय! चट्टान!" और कोई उत्तर न मिलने पर, उन्होंने तीन बार फिर पुकारा, "हाय! चट्टान!" और चट्टान के चुप रहने पर, बंदर ने पुकारा, "हे मित्र चट्टान, आज तुम मुझे उत्तर क्यों नहीं दे रहे हो?"

"ओह!" मगरमच्छ ने सोचा; "तो चट्टान को बंदर को जवाब देने की आदत है। आज मुझे चट्टान की तरफ से जवाब देना होगा।" इसलिए, वह चिल्लाया, "जी बंदर; क्या बात है?" "तुम कौन हो?" बोधिसत्व ने कहा। "मैं एक मगरमच्छ हूँ।" "तुम उस चट्टान पर क्यों बैठे हो?" "तुम्हें पकड़ने और तुम्हारा दिल खाने के लिए।" चूंकि पीछे हटने का कोई और रास्ता नहीं था, इसलिए मगरमच्छ को चकमा देने के अलावा कोई चारा नहीं था। इसलिए बोधिसत्व चिल्लाया, "अब तुम्हारे सामने आत्मसमर्पण करने के अलावा कोई चारा नहीं है। अपना मुंह खोलो और जब मैं कूदूं तो मुझे पकड़ लो।"

अब आपको पता ही होगा कि जब मगरमच्छ अपना मुंह खोलते हैं, तो उनकी आंखें बंद हो जाती हैं (*1)। तो, जब इस मगरमच्छ ने बेखबर अपना मुंह खोला, तो उसकी आंखें बंद हो गईं। और वह बंद आंखों और खुले जबड़ों के साथ वहीं इंतजार करता रहा! यह देखकर चालाक बंदर मगरमच्छ के सिर पर कूद गया, और वहां से बिजली की तरह फुर्ती से किनारे पर पहुंच गया। जब मगरमच्छ को इस करतब की चतुराई का एहसास हुआ, तो उसने कहा, "बंदर, इस संसार में जिसके पास चारों गुण होते हैं, वही अपने प्रतिद्वंद्वियों पर विजय प्राप्त करता है। और मुझे लगता है कि तुम्हारे पास चारों गुण हैं।" और ऐसा कहते हुए उसने यह श्लोक दोहराया:-

हे वानर-राजा, जो आपकी ही तरह, संयोजन करता है
सत्य, दूरदर्शिता, दृढ़ संकल्प और निर्भीकता।
वह अपने पराजित प्रतिद्वंद्वियों को मुड़कर भागते हुए देखेगा।
और बोधिसत्व की इस प्रशंसा के साथ, मगरमच्छ अपने निवास स्थान की ओर चल पड़ा।

गुरु ने कहा, "हे भिक्षुओं, यह पहली बार नहीं है कि देवदत्त मुझे मारने के लिए निकला है; उसने पहले भी ऐसा ही किया था।" और अपना उपदेश समाप्त करते हुए, गुरु ने संबंध स्पष्ट किया और जन्म का वर्णन करते हुए कहा, "देवदत्त उन दिनों का मगरमच्छ था, ब्राह्मण कन्या चिंचा (*2) मगरमच्छ की पत्नी थी, और मैं स्वयं वानर-राजा था।"

फुटनोट:

(1) यह दावा प्राकृतिक इतिहास के तथ्यों के अनुरूप नहीं है।

(2) यहाँ मगरमच्छ की दुष्ट पत्नी के रूप में उसकी पहचान इस तथ्य के कारण है कि चिंचा, जो "दुर्लभ सौंदर्य की महिला तपस्वी" थी, को गौतम (बुद्ध) के शत्रुओं द्वारा गर्भावस्था का नाटक करने और उसे पितृत्व का आरोप लगाने के लिए रिश्वत दी गई थी।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **तयोदम्म-जातक**
***स्रोत**: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-58-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 58
तयोधम्म-जातक

"जो कोई भी, तुम्हारे जैसा।" - यह कहानी गुरु ने बाँस के जंगल में शिकार करने के विषय पर सुनाई थी।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, देवदत्त ने एक बंदर के रूप में पुनर्जन्म लिया और हिमालय के पास अपने ही वंशजों के एक कबीले के मुखिया के रूप में रहने लगे। उन्हें इस बात का डर सताता रहता था कि कहीं उनके नर वंशज बड़े होकर उन्हें उनके पद से न हटा दें, इसलिए वे अपने दाँतों से उन सभी को नपुंसक बना देते थे। अब बोधिसत्व का जन्म इसी बंदर से हुआ था; और उनकी माता ने अपने अजन्मे बच्चे को बचाने के लिए चुपके से पर्वत की तलहटी में स्थित एक जंगल में शरण ली, जहाँ उचित समय पर उन्होंने बोधिसत्व को जन्म दिया। जब वे वयस्क हुए और ज्ञान प्राप्त कर लिया, तो उन्हें अद्‌भुत शक्ति प्राप्त हुई।

एक दिन उसने अपनी माँ से पूछा, "मेरे पिता कहाँ हैं?" माँ ने उत्तर दिया, "वे एक पर्वत की तलहटी में रहते हैं, नहीं पुत्र, और बंदरों के एक कबीले के राजा हैं।" "माँ, मुझे उनसे मिलने ले चलो।" "नहीं पुत्र, क्योंकि तुम्हारे पिता को अपने पुत्रों द्वारा पदच्युत किए जाने का इतना भय है कि वे अपने दाँतों से उन सभी को नपुंसक बना देते हैं।" बोधिसत्व ने कहा, "कोई बात नहीं; मुझे वहाँ ले चलो, माँ; मुझे पता है क्या करना है।" तो वह उसे अपने साथ बूढ़े बंदर के पास ले गई। अपने पुत्र को देखते ही, बूढ़े बंदर को लगा कि बोधिसत्व उसे मार डालेंगे, इसलिए उसने गले लगाने का नाटक करते हुए बोधिसत्व का गला घोंटने का निश्चय किया। "आह! मेरे पुत्र!" वह चिल्लाया; "तुम इतने समय से कहाँ थे?" और, गले लगाने का नाटक करते हुए, उसने उन्हें शिकंजे की तरह जकड़ लिया। लेकिन हाथी के समान बलवान बोधिसत्व ने इतनी ताकत से गले लगाया कि उनके पिता की पसलियां मानो टूट ही गईं।

तब बूढ़े बंदर ने सोचा, "मेरा यह बेटा, अगर बड़ा हुआ तो मुझे ज़रूर मार डालेगा।" बोधिसत्व को मारने की योजना बनाते हुए, उसे पास ही एक झील का ख्याल आया, जहाँ एक राक्षस रहता था जो उसे खा सकता था। इसलिए उसने बोधिसत्व से कहा, "मेरे बेटे, मैं अब बूढ़ा हो गया हूँ और अपना कुल तुम्हें सौंपना चाहता हूँ; आज तुम राजा बनोगे। पास ही एक झील है जिसमें दो प्रकार के कमल, तीन प्रकार के नीले कमल और पाँच प्रकार के सफेद कमल उगते हैं। जाओ और मेरे लिए कुछ तोड़ लाओ।" "जी पिता," बोधिसत्व ने उत्तर दिया; और वह चल पड़ा। सावधानी से झील के पास पहुँचकर, उसने उसके किनारों पर बने पदचिह्नों का अध्ययन किया और देखा कि वे सभी पानी की ओर जाते थे, लेकिन कोई भी वापस नहीं आता था। यह जानकर कि झील में एक राक्षस रहता है, उसने सोचा कि उसके पिता, स्वयं उसे मारने में असमर्थ होने के कारण, उसे उस राक्षस के हाथों मरवाना चाहते हैं। "पर मैं कमल तो ले ही आऊँगा," उसने कहा, "बिना पानी में उतरे।" इसलिए वह एक सूखी जगह पर गया और दौड़कर किनारे से छलांग लगा दी। छलांग लगाते हुए, जैसे ही वह पानी से बाहर निकला, उसने पानी की सतह के ऊपर उगे दो फूल तोड़ लिए और उन्हें लेकर दूसरे किनारे पर उतर गया। लौटते समय, उसने इसी तरह छलांग लगाते हुए दो और फूल तोड़ लिए; और इस तरह झील के दोनों किनारों पर फूलों का ढेर लगा दिया, लेकिन हमेशा राक्षस के जल क्षेत्र से दूर रहा। जब उसने उतने फूल तोड़ लिए जितने वह दूसरी तरफ ले जा सकता था, और उन्हें एक किनारे पर इकट्ठा कर रहा था, तो चकित राक्षस ने कहा, "मैं इस झील में बहुत समय से रह रहा हूँ, लेकिन मैंने कभी किसी इंसान को इतना अद्‌भुत चतुर नहीं देखा! देखो, यह बंदर है जिसने अपने मनचाहे सारे फूल तोड़ लिए हैं, और फिर भी मेरी शक्ति की पहुँच से सुरक्षित बाहर रहा है।" और, जल को दो भागों में बाँटकर, राक्षस झील से निकलकर उस स्थान पर आया जहाँ बोधिसत्व खड़े थे, और उनसे इस प्रकार कहा, "हे वानरों के राजा, जिसमें तीन गुण होते हैं, वही शत्रुओं पर विजय प्राप्त करता है; और मुझे लगता है कि आपमें वे तीनों गुण हैं।" और ऐसा कहकर, उसने बोधिसत्व की प्रशंसा में यह श्लोक दोहराया:-

हे वानर-राजा, जो आपकी ही तरह संयोजन करता है
निपुणता, वीरता और संसाधन

वह अपने पराजित प्रतिद्वंद्वी को मुड़कर भागते हुए देखेगा।
उनकी प्रशंसा समाप्त होने पर, राक्षस ने बोधिसत्व से पूछा कि वह फूल क्यों इकट्ठा कर रहे हैं।

बोधिसत्व ने कहा, "मेरे पिता मुझे अपने कबीले का राजा बनाना चाहते हैं, और इसीलिए मैं उन्हें इकट्ठा कर रहा हूँ।"

“परन्तु आप जैसे असाधारण व्यक्ति को फूल नहीं ले जाने चाहिए,” राक्षस ने कहा; “मैं आपके लिए फूल ले जाऊंगा।” और ऐसा कहकर उसने फूल तोड़े और बोधिसत्व के पीछे-पीछे चलने लगा।

दूर से यह देखकर बोधिसत्व के पिता समझ गए कि उनकी योजना विफल हो गई है। “मैंने अपने बेटे को राक्षस का शिकार बनने के लिए भेजा था, और देखो वह सुरक्षित लौट आया है, और राक्षस विनम्रतापूर्वक उसके लिए फूल लेकर आया है! मैं तो बर्बाद हो गया!” बूढ़े बंदर ने चीखते हुए कहा, और उसका हृदय सात टुकड़ों में फट गया, जिससे उसकी वहीं मृत्यु हो गई। और सभी अन्य बंदर एक साथ एकत्रित हुए और बोधिसत्व को अपना राजा चुना।

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने संबंध स्पष्ट किया और जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "उस समय देवदत्त बंदरों का राजा था, और मैं उसका पुत्र था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **भेरीवाद-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-59-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 59
भेरिवादा-जातक

“ज़्यादा दूर मत जाओ।”—यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक ज़िद्दी भिक्षु के बारे में सुनाई थी। जब गुरु ने उससे पूछा कि क्या यह बात सच है कि वह ज़िद्दी है, तो भिक्षु ने कहा कि हाँ। गुरु ने कहा, “यह पहली बार नहीं है, भिक्षु, कि तुमने ज़िद्दीपन दिखाया है; तुम पहले भी ऐसे ही थे।” और ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज था, तब बोधिसत्व ने ढोल बजाने वाले के रूप में जन्म लिया और एक गाँव में रहने लगे। बनारस में एक उत्सव होने की खबर सुनकर और त्योहार मनाने आए लोगों के बीच ढोल बजाकर पैसे कमाने की उम्मीद में, वे अपने बेटे के साथ शहर की ओर चल पड़े। वहाँ उन्होंने ढोल बजाकर खूब पैसा कमाया। अपनी कमाई लेकर घर लौटते समय उन्हें एक ऐसे जंगल से गुजरना पड़ा जो लुटेरों से भरा हुआ था; और जब लड़का लगातार ढोल बजाता रहा, तो बोधिसत्व ने उसे रोकते हुए कहा, "ऐसा मत करो, बस कभी-कभी बजाओ, मानो कोई महान स्वामी यहाँ से गुजर रहा हो।"

लेकिन अपने पिता के मना करने के बावजूद, लड़के ने सोचा कि लुटेरों को डराने का सबसे अच्छा तरीका लगातार ढोल बजाते रहना है।

ढोल की पहली ध्वनि सुनते ही लुटेरे भाग गए, यह सोचकर कि कोई महान स्वामी गुजर रहा है। लेकिन शोर जारी रहने पर उन्हें अपनी गलती का एहसास हुआ और वे यह पता लगाने के लिए वापस लौटे कि वास्तव में कौन है। वहाँ केवल दो व्यक्ति थे, जिन्हें उन्होंने पीट-पीट कर लूट लिया। "हाय!" बोधिसत्व ने पुकारते हुए कहा, "तुम्हारे निरंतर ढोल बजाने से हमारी सारी मेहनत की कमाई बर्बाद हो गई!" और ऐसा कहते हुए उन्होंने यह श्लोक दोहराया:

बहुत दूर मत जाओ, बल्कि अति से बचना सीखो;
अत्यधिक ढोल बजाने से वही नुकसान हुआ जो ढोल बजाने से हुआ।

उनका पाठ समाप्त होने पर, गुरु ने संबंध की व्याख्या की और जन्म की पहचान करते हुए कहा, "यह स्वेच्छाचारी भाई (भिक्षु) उन दिनों का पुत्र था, और मैं स्वयं उसका पिता था।"

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **शंखधामन-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-60-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 60
संखधमना-जातक

"ज्यादा दूर मत जाओ।" - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक अन्य स्वेच्छाचारी व्यक्ति के बारे में सुनाई थी।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व ने शंख बजाने वाले का रूप धारण किया और अपने पिता के साथ बनारस में एक सार्वजनिक उत्सव में गए। वहाँ उन्होंने शंख बजाकर खूब धन कमाया और घर लौटने लगे। रास्ते में, लुटेरों से भरे एक जंगल से गुजरते हुए, उन्होंने अपने पिता को चेतावनी दी कि वे लगातार शंख न बजाएँ; लेकिन बूढ़े पिता को लगा कि लुटेरों को भगाने का तरीका उन्हें बेहतर पता है, और उन्होंने बिना रुके लगातार शंख बजाते रहे। परिणामस्वरूप, पिछली कहानी की तरह ही, लुटेरे वापस आए और दोनों को लूट लिया। और, जैसा कि ऊपर बताया गया है, बोधिसत्व ने इस श्लोक को दोहराया:

बहुत दूर मत जाओ, बल्कि अति से बचना सीखो;
अतिशयोक्ति करने से वही लाभ खो गया जो फूंक मारने से प्राप्त हुआ।

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने संबंध की व्याख्या की और जन्म की पहचान करते हुए कहा, "यह स्वेच्छाचारी भाई (भिक्षु) उन दिनों का जनक था, और मैं स्वयं उसका पुत्र हूँ।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **असतमंत-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-61-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 61
असतमान्त-जातक

"अनियंत्रित कामवासना में डूबा हुआ।" - यह कथा गुरु (बुद्ध) ने जेतवन मठ में एक कामवासना से ग्रस्त भिक्षु के बारे में सुनाई थी। इसका परिचयात्मक वर्णन उम्मदन्ती-जातक (*1) में किया जाएगा। गुरु ने उस भिक्षु से कहा, "हे भिक्षु, स्त्रियाँ कामवासना से भरी, फिजूलखर्ची करने वाली, नीच और पतित होती हैं। ऐसी नीच स्त्री के प्रति क्यों ग्रस्त हो रहे हो?" ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व का जन्म गांधार (अफगानिस्तान और पाकिस्तान के पास स्थित कंधार देश) के तक्षशिला शहर में एक ब्राह्मण के रूप में हुआ; और जब तक वे बड़े हुए, तब तक तीनों वेदों और सभी उपलब्धियों में उनकी निपुणता इतनी अधिक थी कि एक शिक्षक के रूप में उनकी ख्याति पूरे विश्व में फैल गई।

उन दिनों बनारस में एक ब्राह्मण परिवार रहता था, जिनके यहाँ एक पुत्र का जन्म हुआ। उसके जन्म के दिन ही उन्होंने अग्नि जलाकर उसे सोलह वर्ष की आयु तक निरंतर प्रज्वलित रखा। फिर उसके माता-पिता ने उसे बताया कि जन्म के दिन प्रज्वलित की गई अग्नि को कभी बुझने नहीं दिया गया था। उन्होंने पुत्र से अपना निर्णय लेने को कहा। यदि उसका मन भविष्य में ब्रह्मालोक (स्वर्ग) में प्रवेश पाने का हो, तो वह अग्नि लेकर वन में जाकर अग्नि देव की निरंतर उपासना करके अपनी इच्छा पूरी करे। परन्तु यदि वह गृहस्थी सुखों को प्राथमिकता दे, तो उन्होंने पुत्र को तक्षशिला जाकर विश्वप्रसिद्ध गुरु से शिक्षा प्राप्त करने और बाद में संपत्ति का प्रबंधन करने के लिए कहा। उस युवक ब्राह्मण ने कहा, “मैं अग्नि देव की उपासना में अवश्य ही असफल हो जाऊँगा; मैं तो एक अधिकारी ही बनूँगा।” अतः उसने अपने माता-पिता को विदा किया और गुरु की शिक्षा के लिए एक हजार सिक्के लेकर तक्षशिला के लिए प्रस्थान किया। वहाँ उन्होंने अपनी शिक्षा पूरी होने तक पढ़ाई की और फिर वापस घर चले गए।

अब उसके माता-पिता चाहते थे कि वह संसार त्यागकर वन में अग्निदेव की उपासना करे। इसलिए उसकी माता ने उसे स्त्रियों की बुराई से अवगत कराकर वन भेजने की इच्छा से आश्वस्त होकर यह सोचा कि उसका बुद्धिमान और विद्वान शिक्षक उसके पुत्र को स्त्रियों की बुराई से अवगत करा देगा, और उसने पूछा कि क्या उसकी शिक्षा पूरी हो गई है। "हाँ," युवक ने कहा।

"तो फिर तुमने शोकगीत तो नहीं छोड़े?" "मैंने उन्हें नहीं पढ़ा है, माँ।" "तो फिर तुम कैसे कह सकते हो कि तुम्हारी शिक्षा पूरी हो गई है? मेरे बेटे, तुरंत अपने गुरु के पास वापस जाओ और उन्हें सीखकर हमारे पास लौट आओ," उसकी माँ ने कहा।

"बहुत बढ़िया," युवक ने कहा और एक बार फिर तक्षशिला के लिए रवाना हो गया।

अब उसके स्वामी की भी एक माता थी, जो एक सौ बीस वर्ष की वृद्धाश्रम थीं, जिनकी वह स्वयं नहलाता, भोजन कराता और देखभाल करता था। ऐसा करने के कारण उसके पड़ोसी उससे घृणा करते थे, यहाँ तक कि इतना अधिक कि उसने जंगल में जाकर अपनी माता के साथ रहने का निश्चय कर लिया। तदनुसार, जंगल के एकांत में, एक रमणीय स्थान पर, जहाँ पानी प्रचुर मात्रा में उपलब्ध था, उसने एक कुटिया बनवाई और घी, चावल और अन्य खाद्य सामग्री का भंडार जमा करने के बाद, वह अपनी माता को उनके नए घर ले गया और वहाँ उनकी वृद्धावस्था में स्नेहपूर्वक रहने लगा।

तक्षशिला में अपने गुरु को न पाकर, युवा ब्राह्मण ने पूछताछ की और जब उसे पता चला कि क्या हुआ है, तो वह जंगल की ओर चल पड़ा और अपने गुरु के समक्ष आदरपूर्वक उपस्थित हुआ। गुरु ने कहा, "मेरे बालक, इतनी जल्दी वापस क्यों आ गए?" युवक ने कहा, "गुरुजी, मुझे नहीं लगता कि मैंने आपके साथ रहते हुए शोक ग्रंथों का अध्ययन किया था।" "लेकिन तुम्हें शोक ग्रंथों का अध्ययन करने के लिए किसने कहा था?" उत्तर था, "गुरुजी, मेरी माता ने।" इस पर बोधिसत्व ने सोचा कि ऐसे कोई ग्रंथ हैं ही नहीं, और उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि उनके शिष्य की माता चाहती होंगी कि उनका पुत्र स्त्रियों के दुष्ट स्वभाव को सीखे। इसलिए उन्होंने युवक से कहा कि कोई बात नहीं, और उसे उचित समय पर इन ग्रंथों का अध्ययन कराया जाएगा। “आज से,” उसने कहा, “तुम मेरी माँ के पास मेरी जगह लोगे, और अपने हाथों से उन्हें नहलाओगे, खिलाओगे और उनकी देखभाल करोगे। जब तुम उनके हाथ, पैर, सिर और पीठ सहलाओगे, तो ध्यान से कहना, ‘आह, माँ! अगर आप इतनी उम्र में भी इतनी सुंदर हैं, तो जवानी में कितनी सुंदर रही होंगी!’ और जब तुम उनके हाथ-पैर धोकर इत्र लगाओगे, तो उनकी सुंदरता की प्रशंसा करोगे। इसके अलावा, मेरी माँ तुमसे जो भी कहें, मुझे बिना किसी झिझक के बताना। मेरी बात मानो, तो तुम शोक ग्रंथों में पारंगत हो जाओगे; मेरी अवज्ञा करोगे, तो तुम हमेशा के लिए उनसे अनभिज्ञ रहोगे।”

अपने स्वामी के आदेशों का पालन करते हुए, युवक ने सब कुछ किया और बुढ़िया की सुंदरता की इतनी प्रशंसा की कि उसे लगा कि वह उससे प्रेम करने लगा है; और अंधी और थकी हुई होने के बावजूद, उसके भीतर वासना जागृत हो गई। इसलिए एक दिन उसने उसकी प्रशंसाओं को रोकते हुए पूछा, "क्या तुम्हारी इच्छा मेरे प्रति है?" "जी हाँ, महोदया," युवक ने उत्तर दिया; "लेकिन कोई स्वामी इतना कठोर नहीं होता।" "यदि तुम मुझे चाहते हो," उसने कहा, "मेरे बेटे को मार डालो!" "लेकिन मैं, जिसने उससे इतना कुछ सीखा है, वासना के कारण अपने स्वामी को कैसे मार सकता हूँ?" "ठीक है, यदि तुम मेरे प्रति वफादार रहोगे, तो मैं उसे स्वयं मार डालूँगा।"

(औरतें इतनी कामुक, नीच और पतित होती हैं कि वासना को बढ़ावा देते हुए, इस जैसी बदसूरत बूढ़ी औरत, इतनी बूढ़ी होने के बावजूद, एक आज्ञाकारी बेटे के खून की प्यासी हो गई!)

अब उस युवा ब्राह्मण ने यह सब बोधिसत्व को बताया। बोधिसत्व ने उसे यह बात बताने के लिए बधाई दी और यह जानने की कोशिश की कि उसकी माताजी कितने दिन जीवित रहेंगी। जब उन्हें पता चला कि उनकी माताजी का उसी दिन निधन होना तय है, तो उन्होंने कहा, "आओ, युवा ब्राह्मण; मैं उनकी परीक्षा लूँगा।" इसलिए उन्होंने एक अंजीर का पेड़ काटा और उसमें से अपने ही कद की एक लकड़ी की मूर्ति बनाई। उन्होंने उस मूर्ति को सिर समेत एक वस्त्र में लपेटकर अपने पलंग पर रख दिया और उसमें एक डोरी बाँध दी। उन्होंने कहा, "अब कुल्हाड़ी लेकर मेरी माताजी के पास जाओ और उन्हें यह डोरी दे दो ताकि वे राह देख सकें।"

तब वह युवक बूढ़ी औरत के पास गया और बोला, “महोदया, स्वामी जी घर के अंदर पलंग पर लेटे हैं; मैंने यह रस्सी आपको रास्ता दिखाने के लिए बाँधी है; यह कुल्हाड़ी लीजिए और अगर हो सके तो उन्हें मार डालिए।” “लेकिन आप मुझे नहीं छोड़ेंगे, है ना?” उसने कहा। “मैं क्यों छोड़ूँ?” उसने उत्तर दिया। तब उसने कुल्हाड़ी उठाई और काँपते हुए अंगों से उठकर रस्सी के सहारे आगे बढ़ने लगी, जब तक कि उसे लगा कि उसका बेटा उसके पास है। फिर उसने आकृति का सिर नंगा किया और—अपने बेटे को एक ही वार में मार डालने की सोचकर—कुल्हाड़ी सीधे आकृति के गले पर चला दी, लेकिन धड़ाम की आवाज़ से उसे पता चला कि वह लकड़ी का था! “माँ, तुम क्या कर रही हो?” बोधिसत्व ने कहा। धोखे का चीखते हुए बूढ़ी औरत ज़मीन पर गिर पड़ी। क्योंकि, परंपरा के अनुसार, यह नियति थी कि वह उसी क्षण और अपने ही घर में मर जाए।

जब उसने देखा कि उसकी माँ मर चुकी है, तो उसके बेटे ने उसके शरीर को जला दिया, और जब चिता की लपटें बुझ गईं, तो उसने उसकी राख पर जंगली फूल चढ़ा दिए। फिर वह युवक ब्राह्मण के साथ कुटिया के द्वार पर बैठा और बोला, "मेरे पुत्र, 'शोक ग्रंथ' जैसा कोई अलग पाठ नहीं है। स्त्रीएँ ही तो साक्षात पाप हैं। और जब तुम्हारी माँ ने तुम्हें शोक ग्रंथ सीखने के लिए मेरे पास वापस भेजा था, तो उसका उद्देश्य यही था कि तुम सीखो कि स्त्रियाँ कितनी दुष्ट होती हैं। अब तुमने अपनी आँखों से मेरी माँ का पाप देख लिया है, और इससे तुम जानोगे कि स्त्रियाँ कितनी कामुक और नीच होती हैं।" और यह शिक्षा देकर उसने युवक को जाने को कहा।

अपने गुरु को विदाई देकर वह युवक ब्राह्मण अपने माता-पिता के घर लौट गया। उसकी माता ने उससे पूछा, "क्या तुमने अब शोक ग्रंथ सीख लिए हैं?"

"हाँ माँ।"

“और,” उसने पूछा, “तुम्हारा अंतिम निर्णय क्या है? क्या तुम अग्निदेव की पूजा करने के लिए संसार त्याग दोगे, या वैवाहिक जीवन चुनोगे?” “नहीं,” युवा ब्राह्मण ने उत्तर दिया; “मैंने अपनी आँखों से स्त्री जाति की दुष्टता देखी है; मैं वैवाहिक जीवन से कोई संबंध नहीं रखूँगा। मैं संसार का त्याग करूँगा।” और उसके इस विश्वास को इस श्लोक में अभिव्यक्ति मिली:-

अनियंत्रित वासना में, भस्म कर देने वाली आग की तरह,
क्या महिलाएं अपने गुस्से में बेकाबू हो गई हैं?
कामवासना का त्याग करके, मैं खुशी-खुशी सेवानिवृत्त हो जाऊंगा।
आश्रम में शांति की तलाश करना।
स्त्री जाति के विरुद्ध इस निंदा के साथ, युवा ब्राह्मण ने अपने माता-पिता से विदा ली और संन्यासी जीवन के लिए संसार का त्याग कर दिया, जिसमें उसने अपनी इच्छित शांति प्राप्त की और उस जीवन के बाद ब्रह्मा के लोक (परम स्वर्ग) में प्रवेश पाने का आश्वासन प्राप्त किया।

“तो देखो, भाई,” गुरु ने कहा, “स्त्रियाँ कितनी कामुक, दुष्ट और कष्टदायी होती हैं।” स्त्रियों की दुष्टता बताने के बाद, उन्होंने चार सत्यों का उपदेश दिया, जिसके अंत में उस भाई (भिक्षु) ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) का फल प्राप्त किया। अंत में, गुरु ने संबंध स्पष्ट करते हुए जन्म की पहचान बताई।

"उन दिनों कपिलानी माता थीं, महा-कश्यप पिता थे, आनंद शिष्य थे और मैं स्वयं गुरु था।"

फुटनोट:

(1)सं. 527.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **अंडभूत-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-62-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 62

अण्डभूत जातक

"आँखों पर पट्टी बाँधकर वीणा बजाना।" - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक अन्य भावुक व्यक्ति के बारे में सुनाई थी।

गुरु ने कहा, "क्या यह खबर सच है कि तुम वासना से ग्रस्त हो, भिक्षु भाई?" उत्तर मिला, "बिल्कुल सच है।"

"भाई, स्त्रियों को सुरक्षित नहीं रखा जा सकता; पुराने समय में जो बुद्धिमान लोग जन्म से ही स्त्री की रक्षा करते थे, वे भी उसे सुरक्षित रखने में असफल रहे।" और ऐसा कहते हुए उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व ने उनकी पत्नी के पुत्र के रूप में जन्म लिया। बड़े होकर उन्होंने सभी गुणों में निपुणता प्राप्त की; और अपने पिता की मृत्यु के बाद जब वे राजा बने, तो उन्होंने एक धर्मनिष्ठ राजा होने का प्रमाण दिया। वे अपने पुरोहित के साथ पासा खेलते थे, और जब वे सोने के पासे को चांदी की मेज पर फेंकते थे, तो सौभाग्य के लिए यह मंत्र गाते थे:

यह प्रकृति का नियम है कि नदियाँ घुमावदार होती हैं;
वृक्ष अपनी प्रकृति के नियम के अनुसार लकड़ी से उगते हैं;
और, अवसर मिलने पर,
सभी स्त्रियाँ पाप करती हैं।

चूंकि इन पंक्तियों से राजा हमेशा खेल जीत जाता था, इसलिए पुजारी अपनी सारी संपत्ति खोने के कगार पर था। और, खुद को पूरी तरह बर्बाद होने से बचाने के लिए, उसने एक ऐसी युवती को ढूंढने का फैसला किया जिसने कभी किसी पुरुष को न देखा हो, और फिर उसे अपने घर में ताला लगाकर रखने का निश्चय किया। उसने सोचा, "मैं किसी ऐसी लड़की की देखभाल नहीं कर सकता जिसने किसी दूसरे पुरुष को देखा हो। इसलिए मुझे एक नवजात बच्ची को गोद लेना होगा, और उसे अपने पास रखना होगा, उसकी कड़ी निगरानी करनी होगी, ताकि कोई उसके पास न आ सके और वह एक ही पुरुष के प्रति वफादार रहे। तब मैं राजा को जीत लूंगा और अमीर हो जाऊंगा।" वह भविष्यवाणी करने में माहिर था; और एक गरीब महिला को देखकर जो माँ बनने वाली थी, और यह जानते हुए कि उसका बच्चा एक लड़की होगी, उसने उस महिला को अपने घर में प्रसव के लिए बुलाया और प्रसव के बाद उसे उपहार देकर विदा कर दिया। बच्ची का पालन-पोषण पूरी तरह से महिलाओं द्वारा किया गया, और उसके अलावा किसी भी पुरुष को उसे देखने की अनुमति नहीं थी। जब लड़की बड़ी हुई, तो वह उसके अधीन हो गई और वह उसका स्वामी बन गया।

जब तक लड़की बड़ी होती रही, पुजारी राजा के साथ खेलने से बचता रहा; लेकिन जब वह पूरी तरह से बड़ी हो गई और उसके नियंत्रण में आ गई, तो उसने राजा को खेल के लिए चुनौती दी। राजा ने चुनौती स्वीकार कर ली और खेल शुरू हो गया। लेकिन, जब राजा ने पासा फेंकते हुए अपनी जीत का गीत गाया, तो पुजारी ने कहा, "हमेशा मेरी लड़की को छोड़कर।" और फिर किस्मत पलट गई, और अब पुजारी जीत गया, जबकि राजा हार गया।

मामले पर विचार करने के बाद, बोधिसत्व को संदेह हुआ कि पुजारी ने अपने घर में एक नेक लड़की को छिपा रखा है; और पूछताछ से उनका संदेह सही साबित हुआ। फिर, उसे फंसाने के लिए, उन्होंने एक चालाक बदमाश को बुलवाया और पूछा कि क्या वह लड़की को बहका सकता है। "जी महाराज, बिल्कुल," उस बदमाश ने कहा। तो राजा ने उसे पैसे दिए और उसे आदेश दिया कि वह जल्द से जल्द काम पर लौट आए।

राजा के पैसों से उस आदमी ने तरह-तरह के इत्र, अगरबत्ती और सुगंधित पदार्थ खरीदे और पुजारी के घर के पास एक इत्र की दुकान खोल ली। पुजारी का घर सात मंजिला था और उसमें सात द्वार थे, जिनमें से प्रत्येक पर केवल महिलाओं का पहरा रहता था, और ब्राह्मण के अलावा किसी भी पुरुष को अंदर जाने की अनुमति नहीं थी। झाड़ू और गंदगी से भरी टोकरियों की भी अंदर ले जाने से पहले जांच की जाती थी। केवल पुजारी को ही लड़की से मिलने की अनुमति थी, और उसकी केवल एक ही दासी थी। इस दासी को अपनी मालकिन के लिए फूल और इत्र खरीदने के लिए पैसे दिए गए थे, और वह रास्ते में उस दुकान के पास से गुजरती थी जिसे उस बदमाश ने खोला था। एक दिन पुजारी, जो अच्छी तरह जानता था कि वह लड़की की दासी है, उसके आने का इंतजार करने लगा, और अपनी दुकान से बाहर दौड़कर उसके पैरों पर गिर पड़ा, उसके घुटनों को दोनों हाथों से कसकर पकड़ लिया और रोते हुए बोला, "हे मेरी माँ! तुम इतने दिनों से कहाँ थीं?"

और उसके साथी, जो उसके बगल में खड़े थे, चिल्लाए, "कितनी समानता है! हाथ-पैर, चेहरा-शरीर, यहाँ तक कि पहनावा भी बिल्कुल एक जैसा है!" उस अद्भुत समानता को देखकर सब हैरान रह गए और बेचारी औरत का दिमाग खराब हो गया। यह कहते हुए कि यह

उसका बेटा ही होगा, वह भी फूट-फूटकर रोने लगी। और रोते-रोते दोनों एक-दूसरे को गले लगा लिया। तब उस आदमी ने पूछा, "माँ, तुम कहाँ रहती हो?"

"पुजारी के यहाँ, मेरे बेटे। उनकी एक जवान पत्नी है, जो बेहद खूबसूरत है, मानो देवी समान हो; और मैं उनकी सेविका हूँ।" "अब कहाँ जा रही हो, माँ?" "उनके लिए इत्र और फूल खरीदने।" "कहीं और क्यों जा रही हो? आगे से मेरे पास ही लाना," उस आदमी ने कहा। और उसने उस स्त्री को पान, बडेलियम, और न जाने कितने तरह के फूल दिए, और कोई पैसा नहीं लिया। सेविका द्वारा लाए गए फूलों और इत्र की मात्रा देखकर लड़की हैरान रह गई और उसने पूछा कि ब्राह्मण उस दिन उससे इतना प्रसन्न क्यों था। "ऐसा क्यों कह रही हो, मेरी प्यारी?" बूढ़ी औरत ने पूछा। "क्योंकि तुम इतनी सारी चीजें घर लाई हो।" "नहीं, बात ये नहीं है कि ब्राह्मण ने पैसे लुटा दिए," बूढ़ी औरत ने कहा; "क्योंकि मैंने ये सब अपने बेटे से लिए हैं।" और उस दिन से वह ब्राह्मण द्वारा दिए गए पैसे अपने पास रखती थी, और उस आदमी की दुकान से फूल और दूसरी चीजें मुफ्त में लेती थी।

कुछ दिनों बाद, वह बीमार पड़ गया और बिस्तर पर लेट गया। जब बुढ़िया दुकान पर आई और अपने बेटे के बारे में पूछा, तो उसे बताया गया कि वह बीमार है। उसके पास जाकर, उसने प्यार से उसके कंधे सहलाए और पूछा कि उसे क्या तकलीफ है। लेकिन उसने कोई जवाब नहीं दिया। "बेटा, तुम मुझे क्यों नहीं बताते?" "माँ, मैं मर भी जाऊँ तो भी आपको नहीं बता सकता।" "लेकिन अगर तुम मुझे नहीं बताओगे, तो किसे बताओगे?" "तो माँ, मेरी तकलीफ बस इतनी है कि आपकी युवती की सुंदरता की तारीफें सुनकर मुझे उससे प्यार हो गया है। अगर मैं उसे पा लेता हूँ, तो मैं जीवित रहूँगा; अगर नहीं, तो यही मेरी मृत्यु शैया होगी।" "यह मुझ पर छोड़ दो, मेरे बेटे," बुढ़िया ने प्रसन्नता से कहा; "और इस बारे में चिंता मत करो।" फिर वह अपने साथ इत्र और फूलों का भारी बोझ लेकर घर गई और ब्राह्मण की युवती से बोली, "हाय! मेरा बेटा तुमसे प्रेम करने लगा है, सिर्फ इसलिए कि मैंने उसे बताया कि तुम कितनी सुंदर हो! अब क्या किया जाए?"

"अगर आप उसे चुपके से यहाँ ला सकते हैं," लड़की ने जवाब दिया, "तो मेरी अनुमति है।"

इस पर बूढ़ी औरत ने घर की ऊपर से नीचे तक सारी धूल झाड़कर इकट्ठा करना शुरू कर दिया; उसने उस धूल को एक बड़ी टोकरी में भरकर बाहर निकलने की कोशिश की। जब हमेशा की तरह तलाशी ली गई, तो उसने पहरे पर खड़ी औरत पर धूल उड़ेल दी, जो इस तरह के दुर्व्यवहार से डरकर भाग गई। उसने बाकी सभी पहरेदारों के साथ भी ऐसा ही किया, जो भी उससे कुछ कहता, उसे बारी-बारी से धूल में डुबोकर मार डालती। और इस तरह उस समय से यह सिलसिला शुरू हो गया कि बूढ़ी औरत चाहे जो भी घर में लाए या बाहर ले जाए, किसी में भी उसकी तलाशी लेने की हिम्मत नहीं होती थी। अब समय आ गया था! बूढ़ी औरत उस बदमाश को टोकरी में छुपाकर घर में ले आई और उसे अपनी युवा मालकिन के पास ले गई। वह लड़की की इज्जत लूटने में कामयाब हो गया और एक-दो दिन ऊपरी कमरों में रहा, जब पुजारी घर पर होता था तो छिप जाता था और जब पुजारी घर से बाहर होता था तो अपनी मालकिन के साथ समय बिताता था। एक-दो दिन बीत गए और लड़की ने अपने प्रेमी से कहा, "प्रियतम, अब तुम्हें जाना होगा।" "बहुत खूब; बस पहले मुझे ब्राह्मण को थप्पड़ मारना होगा।" "ज़रूर," उसने कहा और उस बदमाश को छुपा दिया। फिर जब ब्राह्मण वापस आया, तो वह बोली, "ओह, मेरे प्यारे पति, अगर आप मेरे लिए वीणा बजाएँ तो मुझे नाचने का बहुत मन करेगा।" "नाचो, मेरी प्यारी," पुजारी ने कहा और वीणा बजानी शुरू कर दी। "लेकिन अगर आप देख रहे होंगे तो मुझे बहुत शर्म आएगी। पहले मैं आपका सुंदर चेहरा कपड़े से ढक दूँ; फिर मैं नाचूँगी।" "ठीक है," उसने कहा; "अगर आप इतनी शर्मीली हैं कि अन्यथा नाच नहीं सकतीं।" तो उसने एक मोटा कपड़ा लिया और उसे ब्राह्मण के चेहरे पर इस तरह बाँध दिया कि उसकी आँखें बंध गईं। और, आँखों पर पट्टी बाँधे हुए ब्राह्मण वीणा बजाने लगा। कुछ देर नाचने के बाद, वह चिल्लाई, "हे भगवान, मुझे आपके सिर पर एक बार मारने का बहुत मन कर रहा है।" "मारते रहो," उस भोले-भाले बूढ़े व्यक्ति ने कहा। फिर लड़की ने अपने प्रेमी को इशारा किया; और वह चुपके से ब्राह्मण के पीछे गया और उसके सिर पर वार किया।

प्रहार इतना ज़ोरदार था कि ब्राह्मण की आँखें मानो बाहर निकल आईं और उस जगह पर एक उभार आ गया। दर्द से तड़पते हुए उसने लड़की को हाथ देने के लिए कहा; और उसने अपना हाथ उसके हाथ में रख दिया। "अरे! यह तो कोमल हाथ है," उसने कहा; "पर चोट कितनी ज़ोरदार है!"

जैसे ही उस बदमाश ने ब्राह्मण पर हमला किया, वह छिप गया; और छिपते ही लड़की ने पुजारी की आँखों से पट्टी हटाई और उसके चोटिल सिर पर तेल मल दिया। ब्राह्मण के बाहर जाते ही, बूढ़ी औरत ने बदमाश को उसकी टोकरी में फिर से छिपा दिया और उसे घर से बाहर ले गई। तुरंत राजा के पास पहुँचकर उसने उन्हें सारी घटना सुनाई।

तदनुसार, जब ब्राह्मण अगली बार उपस्थित हुआ, तो राजा ने पासे का खेल प्रस्तावित किया; ब्राह्मण तैयार हो गया; और पासे की मेज बाहर लाई गई। जैसे ही राजा ने अपना पासा फेंका, उसने अपना पुराना गीत गाया, और ब्राह्मण—लड़की की शरारतों से अनभिज्ञ—ने अपना "हमेशा मेरी लड़की को छोड़कर" गीत जोड़ दिया—और इसके बावजूद हार गया!

तब राजा, जो सब कुछ जानता था, अपने पुजारी से बोला, "उसके अलावा और क्या? उसकी पवित्रता तो नष्ट हो गई। अरे, तुमने यह सपना देखा कि जन्म के समय ही किसी लड़की को ले जाकर और उसके चारों ओर सात वक्त की सुरक्षा लगाकर तुम उस पर भरोसा कर सकते हो? अरे, तुम तो किसी स्त्री पर भरोसा नहीं कर सकते, चाहे वह तुम्हारे गर्भ में हो और तुम हमेशा उसके साथ घूमते रहो। कोई भी स्त्री एक ही पुरुष के प्रति वफादार नहीं रहती। जहाँ तक तुम्हारी उस लड़की की बात है, उसने तुमसे कहा कि वह नाचना चाहती है, और पहले जब तुम उसके लिए वीणा बजा रहे थे, तब उसने तुम्हारी आँखों पर पट्टी बाँध दी, फिर अपने प्रेमी से तुम्हारे सिर पर प्रहार करवाया और फिर उसे चुपके से घर से बाहर निकाल दिया। तो फिर तुम्हारा अपवाद कहाँ है?" और ऐसा कहकर राजा ने यह श्लोक दोहराया:-

आंखों पर पट्टी बांधकर, वीणा बजाते हुए, पत्नी द्वारा धोखा दिया गया।
ब्राह्मण बैठा है, जिसने पालन-पोषण करने का प्रयास किया था।
सदाचार का एक उत्तम उदाहरण!
इसलिए लिंगभेद से डरना सीखो।

इस प्रकार बोधिसत्व ने ब्राह्मण को सत्य का उपदेश दिया। ब्राह्मण घर जाकर उस लड़की से उसके ऊपर लगाए गए आरोप के बारे में पूछताछ करने लगा। लड़की ने कहा, “मेरे प्रिय पति, मेरे बारे में ऐसा कौन कह सकता है?” ब्राह्मण ने उत्तर दिया, “मैं निःसंदेह निर्दोष हूँ; वास्तव में, मैंने ही आपको मारा है, किसी और ने नहीं; और यदि आप मुझ पर विश्वास नहीं करते, तो मैं अग्नि परीक्षा सहकर यह सिद्ध कर दूँगी कि मुझे आपके सिवा किसी और का हाथ नहीं लगा; और इस प्रकार मैं आपको विश्वास दिला दूँगी।” ब्राह्मण ने कहा, “ठीक है।” उसने लकड़ी मंगवाई और उसमें आग लगा दी। फिर लड़की को बुलाया गया। उसने कहा, “अब, यदि तुम अपनी कहानी पर विश्वास करती हो, तो इन लपटों का सामना करो!”

इससे पहले उस लड़की ने अपनी सेविका को निर्देश दिया था: “माँ, अपने बेटे से कहो कि वह वहाँ मौजूद रहे और जैसे ही मैं आग में जाने वाली हूँ, मेरा हाथ पकड़ ले।” बुढ़िया ने वैसा ही किया जैसा उसे कहा गया था; और वह आदमी आया और भीड़ के बीच खड़ा हो गया। फिर, ब्राह्मण को भ्रमित करने के लिए, लड़की सबके सामने खड़ी होकर ज़ोर से बोली, “हे ब्राह्मण, आपके सिवा किसी और का हाथ मुझे कभी नहीं छुआ; और मैं अपनी बात की सच्चाई की कसम खाकर इस आग से प्रार्थना करती हूँ कि वह मुझे नुकसान न पहुँचाए।” ऐसा कहकर वह जलते हुए ढेर की ओर बढ़ी, तभी उसका प्रेमी दौड़कर आया और उसका हाथ पकड़कर चिल्लाया, “उस ब्राह्मण पर शर्म है जो इतनी सुंदर कन्या को आग में जाने के लिए मजबूर कर सकता है!” अपना हाथ छुड़ाकर लड़की ने ब्राह्मण से कहा कि उसने जो कहा था वह अब व्यर्थ हो गया है, और वह अब आग की परीक्षा का सामना नहीं कर सकती। “क्यों नहीं?” ब्राह्मण ने कहा। “क्योंकि,” उसने उत्तर दिया, “मेरा दावा यह था कि आपके अलावा किसी और पुरुष का हाथ मुझे कभी नहीं छू पाया; और अब यहाँ एक पुरुष ने मेरा हाथ पकड़ लिया है!” लेकिन ब्राह्मण यह जानते हुए कि उसे धोखा दिया गया है, उसे मार-पीट कर दूर भगा दिया।

हम जानते हैं कि स्त्रियों की दुष्टता ऐसी ही होती है। वे क्या-क्या अपराध नहीं करतीं; और फिर अपने पतियों को धोखा देने के लिए दिन दहाड़े क्या-क्या कसमें नहीं खातीं कि उन्होंने ऐसा नहीं किया! वे कितनी धोखेबाज होती हैं! इसीलिए कहा गया है:-

एक ऐसा लिंग जो दुष्टता और छल से बना है।
अज्ञात; मार्ग की तरह अनिश्चित
पानी में मछलियों में से, नारी जाति
सत्य को असत्य और असत्य को सत्य मान लो!
जिस प्रकार गायें नए चरागाहों की तलाश में लालच से निकलती हैं,
असंतुष्ट महिलाएं एक के बाद एक साथी की तलाश में रहती हैं।
रेत की तरह अस्थिर, सांप की तरह क्रूर,
महिलाओं को सब कुछ पता होता है; उनसे कुछ भी छिपा नहीं रहता!

“स्त्रियों से दूर रहना भी उतना ही असंभव है,” गुरु ने कहा। उनका प्रवचन समाप्त हुआ और उन्होंने सत्यों का उपदेश दिया, जिसके अंत में भावुक भिक्षु ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) का फल प्राप्त किया। गुरु ने जन्म का संबंध बताते हुए कहा, “इन दिनों मैं बनारस का राजा था।”

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **तक्का-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-63-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 63
तकका-जातक

"स्त्रियाँ क्रोध से भरी होती हैं।" - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक अन्य भावुक भिक्षु के बारे में सुनाई थी। जब भिक्षु से पूछताछ की गई और उसने स्वीकार किया कि वह भावुक है, तो गुरु ने कहा, "स्त्रियाँ कृतघ्न और कपटी होती हैं; तुम उनके कारण भावुक क्यों हो?" और उन्होंने यह पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब एक बोधिसत्व ने, जिन्होंने संन्यासी जीवन का मार्ग चुना था, गंगा नदी के किनारे अपना आश्रम बनाया और वहाँ उन्होंने सिद्धियाँ और उच्चतर ज्ञान प्राप्त किए और अंतर्दृष्टि के आनंद में लीन रहे। उन दिनों बनारस के प्रधान कोषाध्यक्ष की एक क्रूर और निर्दयी पुत्री थी, जिसे दुष्ट स्त्री के नाम से जाना जाता था। वह अपने नौकरों और दासों को गाली देती और पीटती थी। एक दिन वे अपनी युवती को गंगा में खेलने के लिए ले गए; लड़कियाँ पानी में खेल रही थीं, तभी सूर्यास्त हो गया और भयंकर तूफान आ गया। यह देखकर लोग भाग गए और उसकी दासियों ने, "अब इस प्राणी का अंत देखने का समय आ गया है!" कहते हुए, उसे नदी में फेंक दिया और जल्दी से वहाँ से चली गईं। मूसलाधार बारिश हुई, सूर्य अस्त हो गया और अंधेरा छा गया। जब परिचारिकाएँ अपनी युवती के बिना घर पहुँचीं और उनसे पूछा गया कि वह कहाँ है, तो उन्होंने उत्तर दिया कि वह गंगा से बाहर तो निकल गई है, लेकिन उन्हें नहीं पता कि वह कहाँ गई है। उसके परिवार ने उसकी खोज की, लेकिन लापता लड़की का कोई सुराग नहीं मिला।

इसी बीच वह चीखती हुई उफनती धारा में बह गई और आधी रात को बोधिसत्व के आश्रम के पास पहुँची। उसकी चीखें सुनकर उन्होंने मन ही मन सोचा, "यह तो किसी स्त्री की आवाज़ है। मुझे इसे पानी से बचाना होगा।" इसलिए उन्होंने घास की मशाल ली और उसकी रोशनी में उसे धारा में देखा। "डरो मत; डरो मत!" उन्होंने उत्साह से चिल्लाकर कहा और पानी में उतर गए, और अपनी अपार शक्ति, जैसे हाथी की शक्ति से, उसे सुरक्षित किनारे पर ले आए। फिर उन्होंने अपने आश्रम में उसके लिए आग जलाई और उसके सामने कई प्रकार के स्वादिष्ट फल रखे। जब तक उसने फल खा नहीं लिए, तब तक उन्होंने नहीं पूछा, "तुम्हारा घर कहाँ है, और तुम नदी में कैसे गिरीं?" तब उस लड़की ने उन्हें अपने साथ हुई सारी घटना बताई। "अभी यहीं रहो," उन्होंने कहा और उसे अपने आश्रम में ठहराया, जबकि अगले दो-तीन दिन वे स्वयं खुले में रहे। उस समय के अंत में उसने उसे जाने के लिए कहा, लेकिन वह तब तक रुकने पर अड़ी रही जब तक वह तपस्वी को अपने प्रेम में मोहित न कर ले; और जाने को तैयार नहीं थी। समय बीतने के साथ, उसने अपने स्त्रीत्व और चतुराई से उस पर ऐसा प्रभाव डाला कि उसने अपना ज्ञान खो दिया। वह उसके साथ जंगल में ही रहने लगा। लेकिन उसे वह एकांत पसंद नहीं था और वह लोगों के बीच रहना चाहती थी। इसलिए उसकी बार-बार की विनती मानकर वह उसे अपने साथ एक सीमावर्ती गाँव ले गया, जहाँ वह ज्योतिष के माध्यम से शुभ तिथियाँ बताकर उसका भरण-पोषण करता था, और इसीलिए उसे तिथि-ऋषि (*1) कहा जाने लगा। गाँव वाले उसे शुभ और अशुभ ऋतुओं के बारे में सिखाने के लिए पैसे देते थे और उसे अपने गाँव के प्रवेश द्वार पर रहने के लिए एक झोपड़ी भी दे दी।

अब सीमावर्ती इलाकों में पहाड़ों से लुटेरे आतंक मचा रहे थे; एक दिन उन्होंने उस गाँव पर हमला किया जहाँ वे दोनों रहते थे और उसे लूट लिया। उन्होंने बेचारे ग्रामीणों को अपना सामान समेटने के लिए मजबूर किया और वे—कोषाध्यक्ष की बेटी समेत—अपने घरों की ओर चल दिए। वहाँ पहुँचकर उन्होंने बाकी सबको छोड़ दिया; लेकिन उस लड़की को, उसकी सुंदरता के कारण, लुटेरों के सरदार ने अपनी पत्नी बना लिया।

जब बोधिसत्व को यह पता चला, तो उन्होंने मन ही मन सोचा, "वह मुझसे दूर रहकर कष्ट नहीं सह पाएगी। वह भाग जाएगी और मेरे पास लौट आएगी।" और इस प्रकार वे उसके लौटने की प्रतीक्षा करते हुए जीवन व्यतीत करते रहे। इस बीच वह लुटेरों के साथ बहुत प्रसन्न थी, और उसे केवल यही भय था कि ऋषि उसे फिर से अगवा करने न आ जाएँ। उसने सोचा, "अगर वह मर जाए तो मैं अधिक सुरक्षित महसूस करूँगी। मुझे प्रेम का झूठा ढोंग करते हुए उसे संदेश भेजना चाहिए और उसे यहाँ मृत्यु के लिए बुलाना चाहिए।" इसलिए उसने एक दूत को यह संदेश देकर भेजा कि वह दुखी है और चाहती है कि वह उसे अपने साथ ले जाए।

और उसने उस पर विश्वास रखते हुए तब प्रस्थान किया और डाकुओं के गाँव के प्रवेश द्वार पर पहुँचकर उसे संदेश भेजा। उसने कहा, "हे मेरे पति, अभी भागना तो डाकुओं के सरदार के हाथों में पड़ना होगा, जो हम दोनों को मार डालेगा। चलो रात तक अपना पलायन

टाल देते हैं।" इसलिए उसने उसे अपने साथ लिया और एक कमरे में छिपा दिया; और जब डाकू रात को घर लौटा और शराब के नशे में चूर था, तो उसने उससे कहा, "बताओ, प्रिय, अगर तुम्हारा प्रतिद्वंद्वी तुम्हारे वश में होता तो तुम क्या करते?"

और उसने कहा कि वह उसके साथ यह और वह करेगा।

"शायद वह उतना दूर नहीं है जितना आप सोचते हैं," उसने कहा। "वह अगले कमरे में है।"

एक मशाल लेकर डाकू अंदर घुसा और बोधिसत्व को पकड़कर उनके सिर और शरीर पर जी भर कर प्रहार करने लगा। प्रहारों के बीच बोधिसत्व ने एक भी चीख नहीं निकाली, बस इतना ही बुदबुदाते रहे, "क्रूर, कृतघ्न! निंदक गद्दार!" और उन्होंने बस इतना ही कहा। इस प्रकार बोधिसत्व को पीट-पीटकर, बांधकर और पैरों से पकड़कर लिटाने के बाद डाकू ने अपना भोजन समाप्त किया और सोने के लिए लेट गया। सुबह, जब रात भर के नशे का असर कम हुआ, तो वह फिर से बोधिसत्व को पीटने लगा। बोधिसत्व अब भी एक चीख नहीं निकाले, बल्कि वही चार शब्द दोहराते रहे। डाकू यह देखकर चकित रह गया और उसने पूछा कि मार खाने के बाद भी वे ऐसा क्यों कह रहे हैं।

खजूर ऋषि ने कहा, "सुनो, और तुम्हें समझ आ जाएगा। एक समय मैं वन के एकांत में रहने वाला एक संन्यासी था, और वहीं मुझे ज्ञान प्राप्त हुआ। मैंने इस स्त्री को गंगा से बचाया और उसकी ज़रूरत में उसकी मदद की, और उसके आकर्षण के कारण मैं अपने उच्च पद से गिर गया। फिर मैंने वन छोड़ दिया और एक गाँव में उसका सहारा बना, जहाँ से उसे लुटेरे ले गए। उसने मुझे संदेश भेजा कि वह दुखी है, और मुझसे विनती की कि मैं आकर उसे ले जाऊँ। अब उसने मुझे तुम्हारे हाथों में सौंप दिया है। इसीलिए मैं ऐसा कह रहा हूँ।"

इससे लुटेरा फिर सोचने लगा, और उसने सोचा, "अगर वह उस व्यक्ति के लिए इतनी कम भावना रख सकती है जिसने उसके लिए इतना कुछ किया है, तो वह मुझे क्या नुकसान नहीं पहुँचाएगी? उसे मरना ही होगा।" इसलिए बोधिसत्व को आश्वस्त करके और स्त्री को जगाकर, वह हाथ में तलवार लेकर निकल पड़ा, और स्त्री से ऐसा दिखावा किया कि वह उसे गाँव के बाहर मारने जा रहा है। फिर उसने स्त्री से ऋषि को पकड़ने के लिए कहा और अपनी तलवार निकालकर, ऋषि को मारने का नाटक करते हुए, स्त्री के दो टुकड़े कर दिए। फिर उसने ऋषि को सिर से पैर तक स्नान कराया और कई दिनों तक उन्हें उनकी इच्छानुसार उत्तम भोजन कराया।

अंत में लुटेरे ने पूछा, "अब तुम कहाँ जाना चाहते हो?"

ऋषि ने उत्तर दिया, "संसार में मेरे लिए कोई सुख नहीं है। मैं एक बार फिर संन्यासी बन जाऊंगा और जंगल में अपने पुराने निवास स्थान पर रहूँगा।"

"और मैं भी संन्यासी बनूँगा," डाकू ने कहा। इस प्रकार दोनों एक साथ संन्यासी बन गए और जंगल में स्थित आश्रम में रहने लगे, जहाँ उन्होंने उच्च ज्ञान और सिद्धियाँ प्राप्त कीं और जीवन के अंत में ब्रह्मलोक (स्वर्ग) में प्रवेश करने के योग्य हो गए।

इन दो कहानियों को सुनाने के बाद, गुरु ने बुद्ध के रूप में इस श्लोक का पाठ करके इनके बीच संबंध स्पष्ट किया:

क्रोध से भरी हुई हैं स्त्रियाँ, निंदा करने वाली, कृतघ्न।
फूट और विवाद बोने वाले!
तो फिर, हे भिक्षु, पवित्रता के मार्ग पर चलो।
और उसमें आपको परम आनंद अवश्य मिलेगा।
उनका प्रवचन समाप्त हुआ, गुरु ने सत्यों का उपदेश दिया, जिसके अंत में भावुक भाई ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) का फल प्राप्त किया। साथ ही, गुरु ने जन्म का परिचय देते हुए कहा, "आनंद उन दिनों का डाकू सरदार था, और मैं स्वयं खजूर-ऋषि हूँ।"

फुटनोट:

(1) भारत में एक आम सड़क किनारे ज्योतिषी जो सितारों की गणना करता है और समारोहों और महत्वपूर्ण घटनाओं के लिए शुभ और अशुभ समय बताता है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **दुर्जन-जातक**
***स्रोत** : रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-64-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 64
दुराजन-जातक

"तुम्हें लगता है।" - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक गृहस्थ भिक्षु के बारे में सुनाई थी। परंपरा के अनुसार, श्रावस्ती नगर में एक गृहस्थ भिक्षु रहते थे, जो त्रिरत्न (तीन रत्नों - 1. बुद्ध, 2. धम्म (निर्वाण का मार्ग) और 3. संघ (पवित्र संघ)) और पंच आज्ञाओं में दृढ़ थे। वे बुद्ध, उनकी शिक्षाओं और भिक्षु संघ के सच्चे प्रेमी थे। लेकिन उनकी पत्नी पापी और दुष्ट थीं। जब वे कोई पाप करती थीं, तो सौ सिक्कों में खरीदी गई दासी की तरह विनम्र हो जाती थीं; जबकि जब वे कोई पाप नहीं करती थीं, तो वे क्रूर, निर्दयी और अत्याचारी बन जाती थीं। पति उन्हें समझ नहीं पाते थे। वे उन्हें इतना परेशान करती थीं कि वे बुद्ध की सेवा में नहीं जाते थे।

एक दिन वह इत्र और फूल लेकर गए और विधिपूर्वक प्रणाम करने के बाद बैठ गए, तभी गुरु ने उनसे कहा, "हे गृहस्थ, मुझे यह जानना है कि सात-आठ दिन बीत जाने के बाद भी आप बुद्ध से मिलने क्यों नहीं आए?" उन्होंने जवाब दिया, "हे गुरु, मेरी पत्नी एक दिन सौ सिक्कों में खरीदी गई दासी जैसी व्यवहार करती है, तो दूसरे दिन किसी क्रूर और अत्याचारी मालकिन की तरह। मैं उसे समझ नहीं पा रहा हूँ; और इसी वजह से उसने मुझे इतना परेशान किया है कि मैं बुद्ध से मिलने नहीं जा पाया।"

जब गुरु ने ये शब्द सुने, तो उन्होंने कहा, “हे गृहस्थ, तुम्हें बीते समय के बुद्धिमान और भले लोगों ने पहले ही बताया है कि स्त्रियों के स्वभाव को समझना कठिन है।” और उन्होंने आगे कहा, “परन्तु उसके पिछले जन्मों की बातें उसके मन में उलझ गई हैं, इसलिए उसे याद नहीं है।” और ऐसा कहते हुए उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व विश्व प्रसिद्ध गुरु बन गए और उनके शिष्य पाँच सौ ब्राह्मण थे। इन्हीं शिष्यों में से एक विदेशी ब्राह्मण था, जिसे एक स्त्री से प्रेम हो गया और उसने उससे विवाह कर लिया। वह बनारस में ही रहता रहा, लेकिन दो-तीन बार गुरु के पास जाने में चूक गया। दरअसल, उसकी पत्नी पापी और दुष्ट थी, जो पाप करने पर दासी की तरह विनम्र रहती थी, परन्तु निर्दोष दिनों में क्रूर और अत्याचारी बन जाती थी। उसका पति उसे समझ ही नहीं पाता था; और उससे इतना परेशान और व्याकुल था कि गुरु के पास जाना छोड़ दिया। अब, लगभग सात-आठ दिन बाद वह गुरु के पास जाने लगा, और बोधिसत्व ने उससे पूछा कि वह इतने दिनों से क्यों नहीं दिखाई दिया।

“गुरुजी, मेरी पत्नी ही इसका कारण है,” उसने कहा। और उसने बोधिसत्व को बताया कि कैसे वह एक दिन दासी की तरह विनम्र होती है, और अगले दिन अत्याचारी; कैसे वह उसे बिल्कुल समझ नहीं पाता था, और कैसे उसके बदलते मिजाज से वह इतना चिंतित और परेशान हो गया था कि वह उससे दूर ही रहता था।

“बिल्कुल सही, हे युवा ब्राह्मण,” बोधिसत्व ने कहा; “जिन दिनों स्त्रियाँ पाप करती हैं, वे अपने पतियों के समक्ष विनम्र हो जाती हैं और दासी के समान नम्र और आज्ञाकारी बन जाती हैं; परन्तु जिन दिनों वे पाप नहीं करतीं, वे हठी और अपने स्वामियों के प्रति अवज्ञाकारी हो जाती हैं। इसी प्रकार स्त्रियाँ पापी और दुष्ट होती हैं; और उनके स्वभाव को जानना कठिन है। उनकी पसंद-नापसंद पर ध्यान नहीं देना चाहिए।” और ऐसा कहकर, बोधिसत्व ने अपने शिष्य के ज्ञान के लिए इस श्लोक को दोहराया:-

क्या आपको लगता है कि कोई महिला आपसे प्यार करती है? तो खुश मत होइए।
क्या आपको लगता है कि वह आपसे प्यार नहीं करती? तो शोक मनाने से बचें।
अज्ञात, अनिश्चित, मार्ग की तरह
पानी में मछलियों की बात करें तो महिलाएं साबित करती हैं।

बोधिसत्व ने अपने शिष्य को यही निर्देश दिया, जिसके बाद शिष्य ने अपनी पत्नी की मनमानी पर ध्यान देना बंद कर दिया। और जब पत्नी को पता चला कि उसके दुराचार की बात बोधिसत्व तक पहुँच गई है, तो उसने भी उस समय से अपनी शरारतें छोड़ दीं।

इसी प्रकार उस गृहस्थ की पत्नी ने मन ही मन कहा, "लोग कहते हैं कि स्वयं पूर्ण बुद्ध भी मेरे दुराचार को जानते हैं," और उसके बाद उसने कभी पाप नहीं किया।

उनका पाठ समाप्त हुआ, गुरु ने सत्यों का उपदेश दिया, जिसके अंत में गृहस्थ भाई ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) का फल प्राप्त किया। तब गुरु ने संबंध स्पष्ट करते हुए जन्म की पहचान बताते हुए कहा—"यह पति-पत्नी उन दिनों के भी पति-पत्नी थे, और मैं स्वयं उनका गुरु हूँ।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **अनाभिरति-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-65-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 65
अनाभिराति-जातक

"राजमार्गों की तरह।" - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी, ठीक ऐसे ही एक और गृहस्थ (शिष्य) के बारे में, जैसा कि पिछली कहानी में बताया गया था। इस व्यक्ति ने जब अपनी पत्नी के दुराचार के बारे में पूछताछ की, तो उससे कहा-सुनी हो गई, जिसके परिणामस्वरूप वह इतना व्यथित हो गया कि सात-आठ दिनों तक मठ में नहीं आया। एक दिन वह मठ आया, भगवान बुद्ध को प्रणाम किया और बैठ गया। जब उससे पूछा गया कि वह सात-आठ दिनों से क्यों अनुपस्थित था, तो उसने उत्तर दिया, "हे प्रभु, मेरी पत्नी ने दुराचार किया है, और मैं उसके कारण इतना व्यथित था कि मैं नहीं आया।"

“हे गृहस्थ,” गुरु ने कहा, “बहुत समय पहले बुद्धिमान और भले लोगों ने तुम्हें बताया था कि स्त्रियों के दुराचार पर क्रोधित न हो, बल्कि अपना समभाव बनाए रखो। परन्तु पुनर्जन्म के कारण तुम यह बात भूल गए हो।” और ऐसा कहकर उन्होंने—उस गृहस्थ के अनुरोध पर—अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, बोधिसत्व विश्वव्यापी ख्यातिप्राप्त गुरु थे, जैसा कि पहले बताई गई कथा में वर्णित है। उनके एक शिष्य को जब पता चला कि उनकी पत्नी बेवफा है, तो वह इस बात से इतना आहत हुए कि कुछ दिनों तक अनुपस्थित रहे। लेकिन एक दिन जब उनके गुरु ने उनसे अनुपस्थिति का कारण पूछा, तो उन्होंने सब कुछ स्पष्ट-स्पष्ट बता दिया। तब उनके गुरु ने कहा, "मेरे पुत्र, स्त्रियों पर किसी का कोई अधिकार नहीं है: वे सभी की हैं। इसलिए बुद्धिमान लोग उनकी कमजोरी को जानते हुए भी उन पर क्रोधित नहीं होते।" और ऐसा कहकर उन्होंने अपने शिष्य को समझाने के लिए यह श्लोक दोहराया:-

राजमार्गों, नदियों, आंगनों, सराय की तरह,

या फिर सराय, जो सभी के लिए समान रूप से विस्तारित होती हैं
एक सार्वभौमिक आतिथ्य सत्कार,
स्त्री जाति ही स्त्रीत्व है; और बुद्धिमान पुरुष कभी झुकते नहीं।
इतनी नाजुक लिंग में कमजोरी पर क्रोध करना।
बोधिसत्व ने अपने शिष्य को यही शिक्षा दी, जिसके बाद से वह स्त्रियों के कार्यों के प्रति उदासीन हो गया। और जहाँ तक उनकी पत्नी की बात है, गुरु द्वारा उसके व्यक्तित्व की जानकारी मिलने से वह इतनी प्रभावित हुई कि उसने तब से अपनी शरारतें त्याग दीं।

इसी प्रकार, उस आम भाई की पत्नी ने भी जब सुना कि गुरुजी उसके बारे में सब कुछ जानते हैं, तो उसने भी तब से अपनी दुष्टता छोड़ दी।

उनका प्रवचन समाप्त हुआ, गुरु ने सत्यों का उपदेश दिया, जिसके अंत में गृहस्थ भाई (शिष्य) ने प्रथम मार्ग का फल (सम्मोहन) प्राप्त किया। गुरु ने जन्म के संबंध को समझाते हुए कहा, "यह पति-पत्नी उन दिनों भी पति-पत्नी थे, और मैं स्वयं ब्राह्मण गुरु हूँ।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **मुदुलक्खण-जातक**

स्रोत : रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित

पिछला <<<<-----||-66-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 66
मुदुलक्खना-जातक

"जब तक कोमल हृदय मेरी न हो जाए।" - यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में कामुक भावनाओं के बारे में सुनाई थी। परंपरा के अनुसार, श्रावस्ती नगर के एक युवक ने गुरु द्वारा दिए गए सत्य उपदेश को सुनकर त्रिरत्न (तीन रत्नों) - बुद्ध, धम्म (निर्वाण का मार्ग) और संघ (पवित्र संघ) - की शिक्षाओं को अपना हृदय समर्पित कर दिया। संसार का त्याग करके भिक्षु जीवन व्यतीत करने के लिए, वह मार्ग पर चलने, ध्यान का अभ्यास करने और अपने चुने हुए विषय पर चिंतन में कभी ढिलाई न बरतने के लिए उठ खड़ा हुआ। एक दिन, जब वह श्रावस्ती नगर में भिक्षा मांगने के लिए घूम रहा था, तो उसने एक सुशोभित स्त्री को देखा और वासना के कारण उसने नैतिकता का उल्लंघन करते हुए उसे घूरना शुरू कर दिया! उसके भीतर वासना जागृत हुई, वह कुल्हाड़ी से काटे गए अंजीर के पेड़ के समान कठोर हो गया। उस दिन से, वासना के प्रभाव में आकर, उसके शरीर की तरह ही उसके मन की भी सारी ऊर्जा समाप्त हो गई; एक क्रूर जानवर की तरह, उसे अध्यापन में कोई आनंद नहीं आता था, और उसने अपने नाखून और बाल लंबे कर लिए तथा उसके वस्त्र मैले हो गए।

जब भिक्षुओं में से उनके मित्रों को उनकी व्याकुलता का पता चला, तो उन्होंने कहा, "हे महोदय, क्या आपकी नैतिक स्थिति पहले जैसी नहीं रही?" उन्होंने कहा, "मेरा आनंद समाप्त हो गया है।" तब वे उन्हें गुरु के पास ले गए, जिन्होंने उनसे पूछा कि वे उस भिक्षु को उसकी इच्छा के विरुद्ध यहाँ क्यों लाए हैं। "क्योंकि, महोदय, उसका आनंद समाप्त हो गया है।" "क्या सच है, भाई?" "जी हाँ, भगवान बुद्ध।" "किसने आपको परेशान किया है?" "महोदय, मैं भिक्षा मांगने गया था, तभी मैंने नैतिक नियमों का उल्लंघन करते हुए एक स्त्री को देखा; और मेरे भीतर वासना जागृत हो गई। इसलिए मैं व्याकुल हूँ।" तब गुरु ने कहा, "हे भाई, इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि जब तुमने नैतिकता का उल्लंघन करते हुए, वासना के कारण किसी वर्जित वस्तु को देखा, तो तुम वासना से ग्रस्त हो गए। क्यों, अतीत में, यहाँ तक कि जिन्होंने पाँच उच्च ज्ञान और आठ सिद्धियाँ प्राप्त की थीं, जिन्होंने अंतर्दृष्टि की शक्ति से अपनी वासनाओं पर विजय प्राप्त की थी, जिनके हृदय शुद्ध थे और जिनके पैर आकाश तक जा सकते थे, हाँ, यहाँ तक कि बोधिसत्व भी, नैतिकता का उल्लंघन करते हुए किसी असाधारण वस्तु को देखने से अपनी अंतर्दृष्टि खो बैठे, वासना से ग्रस्त हो गए और बड़े दुःख में पड़ गए। वह हवा जो सिनेरु पर्वत को उखाड़ सकती है, हाथी से भी छोटी एक नंगी पहाड़ी को कुछ भी प्रभावित नहीं करती; वह हवा जो एक विशाल जामुन के पेड़ को उखाड़ सकती है, चट्टान पर उगी एक झाड़ी को कुछ भी प्रभावित नहीं करती; और वह हवा जो एक विशाल सागर को सुखा सकती है, एक छोटे से तालाब को कुछ भी प्रभावित नहीं करती। यदि वासना परम प्रबुद्ध और शुद्ध मन वाले बोधिसत्वों में भी कुकर्म उत्पन्न कर सकती है, तो क्या वासना तुम्हारे सामने पराजित होगी? क्यों, यहाँ तक कि शुद्ध "मनुष्य वासनाओं के कारण भटक जाते हैं, और सर्वोच्च सम्मान प्राप्त करने वाले भी लज्जित हो जाते हैं।" और ऐसा कहते हुए उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व का जन्म काशी देश के एक समृद्ध ब्राह्मण परिवार में हुआ। जब वे बड़े हुए और अपनी शिक्षा पूरी कर ली, तो उन्होंने सभी कामवासनाओं का त्याग कर दिया और संसार को छोड़कर एकांतवास का मार्ग अपनाते हुए हिमालय के एकांत में रहने चले गए। वहाँ उन्होंने ध्यान की सभी प्रारंभिक विधियों का विधिवत पालन करके मन की शांति के ध्यान से उच्च ज्ञान और परमानंद की प्राप्ति की; और इस प्रकार उन्होंने अपना जीवन रहस्यवादी अंतर्दृष्टि के आनंद में व्यतीत किया।

नमक और सिरके की कमी के कारण एक दिन वह बनारस पहुँच गया, जहाँ उसने राजा के बगीचे में डेरा डाला। अगले दिन, अपनी शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने के बाद, उसने अपने सामान्य लाल छाल के वस्त्र को समेटा, एक कंधे पर काले हिरण की खाल डाली, अपने उलझे बालों को सिर के ऊपर एक कुंडल में बाँधा, और अपनी पीठ पर दो टोकरियाँ लटकाए हुए जुआ लेकर भिक्षा मांगने के लिए निकल पड़ा। रास्ते में महल के द्वार पर पहुँचकर, उसका रूप-रंग राजा को इतना भाया कि महाराज ने उसे अंदर बुला लिया। इस प्रकार तपस्वी को एक भव्य पलंग पर बैठाया गया और उसे उत्तम भोजन से भरपूर तृप्ति दी गई। जब उसने राजा का धन्यवाद किया, तो उसे बगीचे में रहने का निमंत्रण दिया गया। तपस्वी ने प्रस्ताव स्वीकार कर लिया, और सोलह वर्षों तक बगीचे में रहकर राजा के परिवार को सलाह देता रहा और राजा का मांस खाता रहा।

अब एक दिन ऐसा आया जब राजा को विद्रोह को दबाने के लिए सीमावर्ती क्षेत्र में जाना पड़ा। लेकिन जाने से पहले, उन्होंने अपनी रानी, जिसका नाम सौम्य हृदय था, को उस संत की ज़रूरतों का ध्यान रखने का आदेश दिया। अतः राजा के जाने के बाद, बोधिसत्व जब चाहें महल में आते-जाते रहे।

एक दिन रानी सौम्य हृदय ने बोधिसत्व के लिए भोजन तैयार किया; लेकिन उनके आने में देर हो जाने के कारण, वह अपने स्नानघर चली गईं। सुगंधित जल से स्नान करने के बाद, उन्होंने अपने पूरे वैभव से सज-धज कर विशाल कक्ष में एक छोटे से पलंग पर लेट गईं और उनके आने की प्रतीक्षा करने लगीं।

अंतर्दृष्टि के परमानंद से जागकर और समय बीत जाने का अहसास करते हुए, बोधिसत्व वायु के माध्यम से महल में पहुँच गए। उनके वस्त्र की सरसराहट सुनकर रानी उन्हें लेने के लिए जल्दी से उठ खड़ी हुईं। जल्दी में उठने के कारण उनका वस्त्र नीचे खिसक गया, जिससे खिड़की से प्रवेश करते ही उनकी सुंदरता प्रकट हो गई; और इस दृश्य को देखकर, नैतिकता का उल्लंघन करते हुए, उन्होंने रानी की अद्भुत सुंदरता को निहारा। उनके भीतर कामवासना भड़क उठी; वे कुल्हाड़ी से काटे गए पेड़ के समान हो गए। पल भर में उनकी सारी अंतर्दृष्टि छिन गई, और वे पंख कटे कौवे के समान हो गए। अपना भोजन पकड़े, खड़े-खड़े ही खड़े रहे, उन्होंने खाया नहीं, बल्कि कामवासना से कांपते हुए महल से अपने बगीचे में स्थित कुटिया की ओर चल पड़े, उसे अपने लकड़ी के पलंग के नीचे रख दिया और उस पर सात दिनों तक भूख और प्यास से व्याकुल पड़े रहे, रानी की सुंदरता के गुलाम, उनका हृदय कामवासना की आग में जल रहा था।

सातवें दिन राजा सीमावर्ती क्षेत्र में शांति स्थापित करके वापस लौटे। नगर का जुलूस निकालने के बाद वे अपने महल में प्रवेश कर गए। तपस्वी से मिलने की इच्छा से वे उद्यान की ओर गए और वहाँ कुटिया में बोधिसत्व को पलंग पर लेटे हुए पाया। यह सोचकर कि संत बीमार पड़ गए हैं, राजा ने पहले कुटिया की सफाई करवाई और फिर उनके चरणों को सहलाते हुए पूछा कि उन्हें क्या कष्ट है। बोधिसत्व ने कहा, "महाराज, मेरा हृदय कामवासना से जकड़ा हुआ है; यही मेरी एकमात्र पीड़ा है।" "किसकी कामवासना?" "महात्मा बोधिसत्व के लिए, महाराज।" "तो वह आपकी हैं; मैं उन्हें आपको सौंपता हूँ," राजा ने कहा। फिर वे तपस्वी के साथ महल गए और रानी से अपने पूरे वैभव को धारण करने का अनुरोध करके उन्हें बोधिसत्व को सौंप दिया। लेकिन, उन्हें सौंपते समय राजा ने चुपके से रानी से संत को बचाने के लिए हर संभव प्रयास करने का अनुरोध किया।

“महाराज, चिंता न करें, मैं उसे बचा लूँगी।” अतः तपस्वी रानी के साथ महल से बाहर निकल गया। परन्तु जब वह बड़े द्वार से गुजरा, तो रानी ने पुकार कर कहा कि उन्हें रहने के लिए एक घर चाहिए; और उसे राजा के पास जाकर एक घर माँगना होगा। अतः वह राजा के पास रहने के लिए घर माँगने गया, और राजा ने उन्हें एक जर्जर झोपड़ी दे दी जिसका उपयोग राहगीर खुले में शौच करने के लिए करते थे। तपस्वी रानी को उस झोपड़ी में ले गया; परन्तु रानी ने उसकी गंदगी के कारण उसमें प्रवेश करने से साफ इनकार कर दिया।

“मैं क्या करूँ?” वह चिल्लाया। “अरे, इसे साफ़ करो,” उसने कहा। और उसने उसे राजा के पास एक फावड़ा और एक टोकरी लाने के लिए भेजा, और उससे सारी गंदगी और मैल हटवाया, और दीवारों पर गोबर का लेप लगवाया, जो उसे लाना पड़ा था। यह हो जाने के बाद, उसने उसे एक पलंग, एक स्टूल, एक गलीचा, एक पानी का बर्तन और एक प्याला लाने के लिए कहा, और एक बार में केवल एक ही चीज़ लाने के लिए भेजा। फिर, उसने उसे पानी और हज़ारो अन्य चीज़ें लाने के लिए भेजा। तो वह पानी लेने के लिए चल पड़ा, और पानी का बर्तन भर दिया, स्नान के लिए पानी निकाला, और पलंग लगाया। और, जब वह उसके साथ पलंग पर बैठा था, तो उसने उसकी मूंछें पकड़कर उसे अपनी ओर खींच लिया जब तक कि वे आमने-सामने नहीं आ गए, और कहा, “क्या तुम भूल गए हो कि तुम एक पवित्र पुरुष और एक ब्राह्मण हो?”

इस पर उसे अपने मूर्खतापूर्ण कुकर्मों के अंतराल के बाद होश आया।

(और यहाँ उस पाठ को दोहराया जाना चाहिए जो इस प्रकार शुरू होता है, "इस प्रकार कामवासना और लालसा की बाधाओं को बुराई कहा जाता है क्योंकि वे अज्ञान से उत्पन्न होती हैं, भाइयों; जो अज्ञान से उत्पन्न होता है वह अंधकार पैदा करता है।")

जब उसे होश आया, तो उसने सोचा कि कैसे यह घातक लालसा, जो दिन-ब-दिन प्रबल होती जा रही है, उसे आगे चलकर दंड के चार रूपों (*1) में ले जाएगी। "इसी दिन," वह चिल्लाया, "मैं इस स्त्री को राजा को लौटाकर पहाड़ों पर भाग जाऊंगा!" इसलिए वह रानी के साथ राजा के सामने खड़ा हुआ और बोला, "महाराज, मुझे अब आपकी रानी नहीं चाहिए; और केवल उन्हीं के लिए मेरे भीतर लालसा जागृत हुई थी।" और ऐसा कहते हुए, उसने इस श्लोक को दोहराया:-

जब तक कोमल हृदय मेरी थी, मेरी एक ही इच्छा थी
मुझे उसे जीतना ही था। जब उसकी खूबसूरती ने मुझे अपने वश में कर लिया।

हे प्रभु, एक के बाद एक इच्छाएँ उमड़ती चली आईं।
फिर उनकी खोई हुई अंतर्दृष्टि शक्ति उन्हें वापस मिल गई। धरती से उठकर वे हवा में विराजमान हो गए और राजा को सत्य का उपदेश दिया; और धरती को छुए बिना ही वे हवा में उड़ते हुए हिमालय पहुँच गए। वे फिर कभी मनुष्यों के मार्ग पर नहीं लौटे; बल्कि प्रेम और दान में इतने लीन हो गए कि अपनी अक्षुण्ण अंतर्दृष्टि के साथ वे ब्रह्मा के लोक (परम स्वर्ग) में पुनर्जन्म लेकर चले गए।

उनका प्रवचन समाप्त हुआ और गुरु ने सत्यों का उपदेश दिया, जिसके समापन पर उस भिक्षु ने अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) प्राप्त किया। गुरु ने जन्म के संबंध को समझाते हुए कहा, "आनंद उस समय के राजा थे, उप्पला-वन्ना सौम्य हृदय वाले थे और मैं संन्यासी था।"

फुटनोट:

(1)नरक, पशु-सृष्टि, प्रेतलोक, शैतानलोक।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **उच्चांग-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-67-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 67
उच्चांग-जातक

"बेटा आसानी से मिल जाता है।" - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक ग्रामीण महिला के बारे में सुनाई थी।

कोसल में एक बार यह बात सामने आई कि तीन आदमी एक जंगल के बाहरी इलाके में हल चला रहे थे, और लुटेरों ने उस जंगल में लोगों को लूटा और भाग गए। लुटेरे जब व्यर्थ ही उन बदमाशों की तलाश कर रहे थे, तो पीड़ित उस जगह पर पहुँचे जहाँ वे तीनों आदमी हल चला रहे थे। उन्होंने चिल्लाकर कहा, "देखो, जंगल के लुटेरे किसान के वेश में हैं," और उन तीनों को कैदी बनाकर कोसल के राजा के पास ले गए। अब बार-बार राजा के महल में एक स्त्री आती और जोर-जोर से रोते हुए "ढकने के लिए कपड़े" माँगती। उसकी पुकार सुनकर राजा ने उसे एक कमीज देने का आदेश दिया; लेकिन उसने यह कहते हुए इनकार कर दिया कि उसकी ज़रूरत कपड़े नहीं हैं। तब राजा के सेवक महाराज के पास वापस गए और कहा कि स्त्री को कपड़े नहीं, बल्कि पति चाहिए। तब राजा ने उस स्त्री को अपने सामने बुलवाया और उससे पूछा कि क्या वास्तव में उसकी ज़रूरत पति से है।

"जी महाराज," उसने उत्तर दिया; "क्योंकि पति ही स्त्री का असली आवरण है, और जिसके पास पति नहीं है—चाहे वह हजार रुपये के वस्त्र ही क्यों न पहने हो—वह वास्तव में नंगी और नग्न ही रहती है।"

(और इस सत्य को पुष्ट करने के लिए, यहाँ निम्नलिखित सूत्र का पाठ किया जाना चाहिए:-)
जैसे कोई राजाविहीन राज्य हो, जैसे कोई नदी सूख गई हो,
इस प्रकार स्त्री को नग्न अवस्था में देखा जाता है,
जिसके दस भाई हों, फिर भी उसका कोई साथी न हो।
महिला के उत्तर से प्रसन्न होकर राजा ने पूछा कि तीनों कैदी उससे क्या संबंध रखते हैं। उसने बताया कि एक उसका पति है, एक उसका भाई है और एक उसका पुत्र है। राजा ने कहा, "अच्छा, कृपा दिखाने के लिए मैं तुम्हें इन तीनों में से एक देता हूँ। तुम किसे चुनोगी?" महिला ने उत्तर दिया, "महाराज, यदि मैं जीवित रही तो मुझे दूसरा पति और दूसरा पुत्र मिल जाएगा; परन्तु मेरे माता-पिता मर चुके हैं, इसलिए मुझे दूसरा भाई कभी नहीं मिल सकता। इसलिए महाराज, मुझे मेरा भाई दे दीजिए।" महिला से प्रसन्न होकर राजा ने तीनों पुरुषों को मुक्त कर दिया; इस प्रकार एक महिला तीन व्यक्तियों को संकट से बचाने का माध्यम बनी।

जब यह बात भिक्षु समुदाय को पता चली, तो वे सत्य के हॉल में उस महिला की प्रशंसा कर रहे थे, तभी गुरुजी वहाँ आ गए। जब उन्होंने उनसे उनकी बातचीत का विषय पूछा, तो उन्होंने कहा, "भाइयों (भिक्षुओं), यह पहली बार नहीं है कि इस महिला ने उन तीनों को खतरे से बचाया है; उसने पहले भी ऐसा किया है।" और ऐसा कहते हुए उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्याभिषेक हो रहा था, तीन आदमी जंगल के बाहरी इलाके में हल चला रहे थे, और फिर वही हुआ जैसा ऊपर बताया गया है।

राजा ने जब स्त्री से पूछा कि वह तीनों में से किसे लेना चाहेगी, तो उसने कहा, "महाराज, क्या आप मुझे तीनों नहीं दे सकते?" राजा ने कहा, "नहीं, मैं नहीं दे सकता।" स्त्री ने कहा, "अच्छा, अगर मैं तीनों नहीं ले सकती, तो मुझे मेरा भाई दे दीजिए।" राजा ने कहा, "अपने पति या अपने बेटे को ले लो। भाई से क्या लेना-देना?" स्त्री ने उत्तर दिया, "पहले दो को तो मैं आसानी से बदल सकती हूँ, लेकिन भाई को कभी नहीं।" और ऐसा कहते हुए उसने यह छंद दोहराया:-

बेटा तो आसानी से मिल जाता है; पति भी आसानी से मिल जाते हैं।
सार्वजनिक रास्तों पर विकल्पों की भरमार है। लेकिन कहाँ?
क्या मेरे सारे कष्टों का पता किसी और भाई को चल जाएगा?
“वह बिल्कुल सही कह रही है,” राजा ने प्रसन्न होकर कहा। और उसने तीनों पुरुषों को जेल से बुलवाकर उस स्त्री को सौंपने का आदेश दिया। वह उन तीनों को लेकर अपने रास्ते चली गई।

"तो देखो, भिक्षुओं," गुरु ने कहा, "कि इसी स्त्री ने पहले भी इन्हीं तीन पुरुषों को खतरे से बचाया था।" अपना प्रवचन समाप्त करते हुए, उन्होंने संबंध स्थापित किया और जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "आज की स्त्री और तीनों पुरुष अतीत के भी स्त्री और पुरुष थे; और तब मैं राजा था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **साकेत-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-68-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 68
सकेत-जातक

“जिस पुरुष पर तुम्हारा मन टिका है।”—यह कथा गुरु (बुद्ध) ने अंजनावन में एक ब्राह्मण के बारे में सुनाई थी। परंपरा के अनुसार, जब भगवान बुद्ध अपने शिष्यों के साथ साकेत नगर में प्रवेश कर रहे थे, तो वहाँ से बाहर जाते हुए एक वृद्ध ब्राह्मण ने द्वार पर उनसे मुलाकात की। बुद्ध के चरणों में गिरकर और उनके टखनों को पकड़कर वह वृद्ध व्यक्ति रोते हुए बोला, “पुत्र, क्या माता-पिता के वृद्धावस्था में उनका आदर करना पुत्रों का कर्तव्य नहीं है? आपने हमें इतने समय तक दर्शन क्यों नहीं कराए? अंततः मैंने आपको देख लिया; आइए, अपनी माता को भी आपको देखने दीजिए।” ऐसा कहकर वह गुरु को अपने घर ले गया; और वहाँ गुरु अपने शिष्यों के साथ अपने लिए तैयार आसन पर बैठ गए। फिर ब्राह्मण की पत्नी आई और वह भी भगवान बुद्ध के चरणों में गिरकर रोते हुए बोली, “पुत्र, आप इतने समय तक कहाँ थे? क्या माता-पिता के वृद्धावस्था में उनका आदर करना पुत्रों का कर्तव्य नहीं है?” इस पर उन्होंने अपने पुत्रों और पुत्रियों को पुकार कर बताया कि उनका भाई आ गया है, और उन्हें बुद्ध को प्रणाम करने को कहा। प्रसन्न होकर वृद्ध दंपति ने अपने अतिथियों का बड़े ही सत्कारपूर्ण स्वागत किया। भोजन के बाद, गुरु ने वृद्धजनों को वृद्धावस्था से संबंधित सूत्र (*1) सुनाया; और जब उन्होंने सुनाना समाप्त किया, तो पति-पत्नी दोनों ने द्वितीय मार्ग (सम्मोहन) का फल प्राप्त किया। फिर अपने आसन से उठकर गुरु अंजनावन लौट गए।

सत्य के हॉल में एकत्रित होकर भिक्षुओं ने इस विषय पर चर्चा शुरू की। उनका तर्क था कि ब्राह्मण को यह भलीभांति ज्ञात होगा कि शुद्धोदन (कपिलवस्तु के राजा) बुद्ध के पिता थे और महामाया बुद्ध की दिवंगत माता थीं; फिर भी उन्होंने और उनकी पत्नी ने गुरु की

सहमति से बुद्ध को अपना पुत्र माना था। इसका क्या अर्थ हो सकता है? उनकी बातें सुनकर गुरु ने कहा, "भाइयों, वृद्ध दंपति ने मुझे अपना पुत्र मानने में उचित ही किया था।" और ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

भाइयों, बीते युगों में यह ब्राह्मण मेरे पिता 500 जन्मों तक, मेरे चाचा 500 जन्मों तक और मेरे दादा 500 जन्मों तक रहे। और उनकी पत्नी 1500 जन्मों तक क्रमशः मेरी माता, मेरी चाची और मेरी नानी रहीं। इस प्रकार, मेरा पालन-पोषण 1500 जन्मों तक इस ब्राह्मण द्वारा और 1500 जन्मों तक उनकी पत्नी द्वारा हुआ।

और इस प्रकार, इन 3000 जन्मों का वर्णन करने के बाद, गुरु ने बुद्ध के रूप में इस श्लोक का पाठ किया:-

वह व्यक्ति जिस पर तुम्हारा मन टिका है, जिसके साथ तुम्हारा दिल जुड़ा है
अगर वह पहली नजर में ही प्रसन्न हो जाए, तो उस पर भरोसा रखें।

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने संबंध की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "यह ब्राह्मण और उसकी पत्नी उन सभी जन्मों में पति-पत्नी थे, और मैं बच्चा था।"

[नोट. क्रमांक 237 भी देखें।]

फुटनोट:

(1) सुत्त-निपात का जरा-सुत्त।

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **विश्ववंत-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-69-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 69
विश्वान्त-जातक

"शर्मिंदगी हो!" - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में धर्म के प्रमुख सारिपुत्र के बारे में सुनाई थी। परंपरा के अनुसार, जब वरिष्ठ भिक्षु रोटी खाते थे, तब लोग भिक्षुओं के लिए बड़ी मात्रा में रोटी लेकर मठ में आते थे। भिक्षुओं के भरपेट खाने के बाद भी बहुत रोटी बच जाती थी; तब रोटी देने वालों ने कहा, "महोदय, गाँव में रहने वालों के लिए भी कुछ रख लीजिए।"

उसी समय, एक युवक जो बड़े भिक्षु का सह-निवासी था, गाँव गया हुआ था। उसके लिए एक हिस्सा लिया गया; लेकिन, चूंकि वह वापस नहीं लौटा, और यह महसूस किया गया कि बहुत देर हो चुकी है (*1), यह हिस्सा बड़े भिक्षु को दे दिया गया। जब बड़े भिक्षु ने वह हिस्सा खा लिया, तो युवक अंदर आया। तब बड़े भिक्षु ने उसे समझाते हुए कहा, "महोदय, मैंने आपके लिए रखे हुए केक खा लिए हैं।" "अरे!" उसने जवाब दिया, "हम सभी को मीठा बहुत पसंद है।" बड़े भिक्षु बहुत परेशान हो गए।

“आज से,” उन्होंने कहा, “मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं फिर कभी रोटी नहीं खाऊँगा।” और परंपरा के अनुसार, उस दिन से वरिष्ठ भिक्षु सारिपुत्र ने फिर कभी रोटी को हाथ नहीं लगाया! यह परहेज भिक्षु समुदाय में सर्वविदित हो गया, और भिक्षु सत्य के हॉल में बैठकर इस पर चर्चा करने लगे। गुरु ने कहा, “भाइयों, आप यहाँ बैठकर किस बारे में बात कर रहे हैं?” जब उन्होंने उन्हें बताया, तो उन्होंने कहा, “भाइयों, जब सारिपुत्र एक बार किसी चीज का त्याग कर देते हैं, तो वे फिर कभी उसकी ओर नहीं लौटते, चाहे उनके जीवन का भी खतरा हो।” और ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व का जन्म सांप के काटने के इलाज में कुशल चिकित्सकों के परिवार में हुआ था, और जब वे बड़े हुए, तो उन्होंने जीविका के लिए चिकित्सक के रूप में काम करना शुरू किया।

फिर एक घटना घटी कि एक ग्रामीण को सांप ने काट लिया; उसके रिश्तेदारों ने तुरंत डॉक्टर को बुलाया। बोधिसत्व ने कहा, "क्या मैं सामान्य औषधियों से विष निकाल दूं, या सांप को पकड़कर उसे घाव से अपना ही विष चूसने के लिए मजबूर करूं?" "सांप को पकड़कर उसे ही विष चूसने के लिए मजबूर करूं।" तो उन्होंने सांप को पकड़वाया और उससे पूछा, "क्या तुमने इस आदमी को काटा था?" "हां, मैंने काटा था," जवाब मिला। "तो फिर, घाव से अपना ही विष चूस लो।" "क्या? जो विष मैंने एक बार बहाया है, उसे वापस ले लूं!" सांप चिल्लाया; "मैंने कभी नहीं बहाया, और कभी नहीं बहाऊंगा।" तब डॉक्टर ने लकड़ी से आग जलाई और सांप से कहा, "या तो विष चूस लो, या आग में चले जाओ।"

"भले ही आग ही मेरा अंत हो, मैं एक बार बहाया हुआ जहर वापस नहीं लूंगा," सांप ने कहा और फिर निम्नलिखित छंद दोहराया:-

उस जहर पर कलंक लगे, जो एक बार बह जाने पर...
अपनी जान बचाने के लिए, मैं फिर से निगल जाता हूँ!
कमजोरी से खरीदी गई जिंदगी से बेहतर तो मौत है!
ये शब्द सुनकर साँप आग की ओर बढ़ा! लेकिन वैद्य ने उसका रास्ता रोक दिया और औषधीय जड़ी-बूटियों और मंत्रों से विष निकाल दिया, जिससे वह व्यक्ति फिर से स्वस्थ हो गया। फिर उसने साँप को दस आज्ञाएँ समझाईं और उसे यह कहते हुए मुक्त कर दिया, "अब से किसी को हानि मत पहुँचाना।"

और गुरु ने आगे कहा, "भाइयों (भिक्षुओं), जब सारिपुत्र एक बार कुछ दे देता है, तो वह उसे कभी वापस नहीं लेता, चाहे उसकी जान ही क्यों न खतरे में हो।" अपना उपदेश समाप्त करते हुए, उन्होंने संबंध समझाया और जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "सारिपुत्र उन दिनों का सर्प था, और मैं चिकित्सक।"

फुटनोट:

(1) यानी दोपहर के ठीक बाद, जिसके बाद भिक्षुओं के नियमों के अनुसार भोजन नहीं किया जा सकता था।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कुड्डुल-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-70-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 70
कुद्दला-जातक

"विजय।"--यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी, जिसमें चित्तहत्था-सारिपुत्र नामक एक वरिष्ठ भिक्षु का वर्णन है। कहा जाता है कि वे श्रावस्ती नगर के एक अच्छे परिवार के युवक थे; और एक दिन हल चलाकर घर लौटते समय वे मठ में रुके। वहाँ उन्हें एक वरिष्ठ भिक्षु के कटोरे से स्वादिष्ट और पौष्टिक भोजन प्राप्त हुआ, जिसे खाकर उन्होंने मन ही मन सोचा, "दिन-रात मैं अनेक कार्यों में परिश्रम करता हूँ, फिर भी मुझे इतना मीठा भोजन कभी नहीं मिला। मुझे स्वयं भिक्षु बनना चाहिए!" अतः वे भिक्षु संघ में शामिल हो गए, परन्तु छह सप्ताह तक गहन चिंतन में लगे रहने के बाद वे कामवासनाओं के वश में आ गए और मठ छोड़ दिया। उनका पेट फिर से तृप्त हो गया, इसलिए वे वापस मठ में शामिल हो गए और अभिधम्म (*1) का अध्ययन करने लगे। इस प्रकार, वे छह बार मठ छोड़कर गए और फिर वापस आए; लेकिन जब वे सातवीं बार भिक्षु बने, तो उन्होंने अभिधम्म के सभी सात ग्रंथों में महारत हासिल कर ली, और भिक्षुओं की शिक्षाओं का बहुत अधिक जप करके विवेक प्राप्त किया और अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) प्राप्त किया। अब उनके भिक्षु मित्रों ने उनका उपहास करते हुए कहा—"क्या ऐसा हो सकता है, महोदय, कि आपके हृदय में कामवासनाएँ उत्पन्न होना बंद हो गई हों?"

"महोदय," जवाब मिला, "अब मैं सांसारिक जीवन से परे जा चुका हूँ।"

इस प्रकार अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) प्राप्त करने के बाद, सत्य के हॉल में इस विषय पर चर्चा हुई, जो इस प्रकार थी:- "महोदय, यद्यपि वे सर्वत्र अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) की समस्त महिमाओं के लिए नियत थे, फिर भी चित्तहत्था-सारिपुत्र ने छह बार बंधुत्व का त्याग किया; वास्तव में, अपरिवर्तित अवस्था अत्यंत कुटिल है।"

हॉल में लौटकर, गुरु ने पूछा कि वे किस बारे में बात कर रहे थे। बताए जाने पर उन्होंने कहा, "भाइयों, सांसारिक व्यक्ति का हृदय हल्का और वश में करना कठिन होता है; भौतिक वस्तुएँ उसे आकर्षित करती हैं और जकड़ लेती हैं; एक बार जकड़ लेने पर, उसे जल्दी से छुड़ाना मुश्किल होता है। ऐसे हृदय पर वशीकरण उत्कृष्ट है; एक बार वशीकरण हो जाने पर, यह आनंद और खुशी लाता है।"

जिद्दी और कमजोर दिल को वश में करना अच्छा होता है।
भावनाओं के वश में आकर, हृदय वश में हो जाता है। एक बार वश में आ जाने पर, यह आनंद प्रदान करता है।
लेकिन हृदय के इसी हठी स्वभाव के कारण, अतीत के बुद्धिमान और भले लोग एक सुंदर कुदाल के लिए, जिसे वे फेंक नहीं सकते थे, केवल लालच के कारण छह बार संसार में लौट आए; परन्तु सातवीं बार उन्होंने अंतर्दृष्टि प्राप्त की और अपने लालच को वश में कर लिया। और ऐसा कहते हुए उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व ने एक माली के रूप में पुनर्जन्म लिया और बड़े हुए। उनका नाम 'कुदाल ऋषि' था। उन्होंने अपने कुदाल से ज़मीन का एक टुकड़ा साफ़ किया और उसमें जड़ी-बूटियाँ, कद्दू, लौकी, खीरे और अन्य सब्जियाँ उगाईं, जिन्हें बेचकर वे बड़ी मुश्किल से गुज़ारा करते थे। क्योंकि उस एक कुदाल के सिवा उनके पास संसार में कुछ भी नहीं था! एक दिन उन्होंने संसार त्यागकर संन्यासी जीवन जीने का निश्चय किया और अपना कुदाल छुपा कर संन्यासी बन गए। लेकिन उस कुदाल का ख्याल उनके मन में बार-बार आता रहा और लोभ उन पर हावी हो गया, जिससे वे अपने कुंद कुदाल के लिए संसार में लौट आए। ऐसा बार-बार होता रहा; छह बार उन्होंने कुदाल छुपा कर संन्यासी बने, लेकिन फिर से अपने व्रतों को त्याग दिया। लेकिन सातवीं बार उन्होंने सोचा कि कैसे उस कुंद कुदाल ने उन्हें बार-बार संसार से विमुख कर दिया था; और उसने निश्चय किया कि संन्यासी बनने से पहले वह उसे किसी बड़ी नदी में फेंक देगा। इसलिए वह फावड़ा लेकर नदी किनारे गया, और इस डर से कि कहीं वह उसे गिरते हुए न देख ले और फिर उसे वापस न निकाल ले, उसने फावड़े को हैंडल से पकड़कर तीन बार अपने सिर के चारों ओर घुमाया और हाथी जैसी ताकत से उसे नदी के बीचोंबीच फेंक दिया, ऐसा करते समय उसने अपनी आँखें कसकर बंद कर लीं। फिर उसकी खुशी की चीख गूंजी, शेर की दहाड़ जैसी चीख, "मैंने जीत हासिल कर ली! मैंने जीत हासिल कर ली!"

ठीक उसी समय, सीमा पर अशांति को शांत करने के बाद घर लौटते समय, बनारस का राजा उसी नदी में स्नान कर रहा था और अपने हाथी पर सवार होकर शान-शौकत से जा रहा था, तभी उसने बोधिसत्व की विजयघोषणा सुनी। राजा ने कहा, “देखो, एक आदमी है जो विजय का दावा कर रहा है। मुझे आश्चर्य है कि उसने किसे हराया है। जाओ, उसे मेरे सामने लाओ।”

तब बोधिसत्व को राजा के समक्ष लाया गया, जिसने उनसे कहा, "हे महाराज, मैं स्वयं एक विजेता हूँ; मैंने अभी-अभी एक युद्ध जीता है और विजयी होकर घर लौट रहा हूँ। मुझे बताइए कि आपने किसे परास्त किया है।" बोधिसत्व ने कहा, "महाराज, आपकी हज़ार, हाँ, एक लाख, ऐसी विजयें व्यर्थ हैं, यदि आपने अपने भीतर की वासनाओं पर विजय प्राप्त नहीं की है। मैंने अपने भीतर के लोभ पर विजय प्राप्त करके ही अपनी वासनाओं पर विजय प्राप्त की है।" और बोलते हुए, उन्होंने महान नदी पर दृष्टि डाली, और जल के विचार पर अपना सारा ध्यान केंद्रित करके अंतर्दृष्टि प्राप्त की। फिर अपनी नवप्राप्त दिव्य शक्तियों के बल पर, वे वायु में उठे, और वहाँ बैठकर, राजा को इस श्लोक में सत्य का उपदेश दिया:-

आगे की विजयों के माध्यम से प्राप्त होने वाली विजय
इसका पालन करना ही होगा, अन्यथा अंततः हमारी ही हार होगी।
यह व्यर्थ है! सच्ची जीत तो सदा के लिए बनी रहती है!
सत्य की बातें सुनते ही राजा के अंधकार में प्रकाश आ गया और उसके हृदय की वासनाएँ शांत हो गईं; उसका मन संसार त्यागने पर दृढ़ हो गया; उसी क्षण राजसत्ता की लालसा उससे विलीन हो गई। राजा ने बोधिसत्व से पूछा, “अब आप कहाँ जाएँगे?” बोधिसत्व ने कहा, “हे महाराज, हिमालय जाऊँगा; वहाँ संन्यासी का जीवन व्यतीत करूँगा।” राजा ने कहा, “तो मैं भी संन्यासी बन जाऊँगा” और वह बोधिसत्व के साथ प्रस्थान कर गया। राजा के साथ ही समस्त सेना, सभी ब्राह्मण, गृहस्थ और सभी आम लोग, संक्षेप में, वहाँ एकत्रित समस्त सभा भी प्रस्थान कर गई।

बनारस में यह खबर पहुंची कि उनके राजा ने कुदाल ऋषि द्वारा दिए गए सत्य के उपदेश को सुनकर प्रसन्नतापूर्वक संन्यासी जीवन व्यतीत करने का निश्चय किया और अपने समस्त अनुयायियों के साथ प्रस्थान कर दिया। "अब हम यहाँ क्या करें?" बनारस के लोगों ने

पूछा। इस पर, बारह मील (4.23 किमी) के उस शहर से, सभी निवासी बारह मील (4.23 किमी) लंबे मार्ग पर बोधिसत्व के साथ हिमालय की ओर चल पड़े।

तब देवों (देवदूतों) के राजा सक्का (इंद्र) का सिंहासन उनके नीचे गर्म हो गया (*2)। बाहर देखते हुए उन्होंने पाया कि फावड़ा ऋषि महान वैराग्य में लीन थे (*3)। उनके अनुयायियों की संख्या देखकर इंद्र सोचने लगे कि उन सभी को कैसे ठहराया जाए। उन्होंने देवों (देवदूतों) के वास्तुकार विश्वकर्मा को बुलवाया और कहा, "फावड़ा ऋषि महान वैराग्य में लीन हैं, और उनके लिए आवास की व्यवस्था करनी होगी। आप हिमालय जाइए, और वहाँ समतल भूमि पर दिव्य शक्ति से तीस लीग (x 4.23 किमी) लंबी और पंद्रह किमी चौड़ी एक ऋषि की संपत्ति बनाइए।"

"महाराज," विश्वकर्मा ने कहा। और वह चला गया और उसने वही किया जो उसे करने के लिए कहा गया था।

(आगे का विवरण केवल सारांश है; पूर्ण विवरण हत्थिपाला-जातक (*4) में दिया जाएगा, जो इस कथा के साथ एक ही कथा का निर्माण करता है।) विश्वकर्मा ने ऋषि की संपत्ति में एक आश्रम बनवाया; सभी शोर मचाने वाले जानवरों, पक्षियों और परियों को भगा दिया; और प्रत्येक दिशा में एक ऐसा मार्ग बनाया जो एक समय में केवल एक व्यक्ति के चलने के लिए पर्याप्त चौड़ा था। यह करने के बाद, वे स्वयं अपने निवास स्थान पर चले गए। कुदाल ऋषि अपने अनुयायियों के साथ हिमालय आए और इंद्र द्वारा दी गई संपत्ति में प्रवेश किया तथा विश्वकर्मा द्वारा ऋषियों के लिए बनाए गए घर और साज-सामान पर अधिकार कर लिया। सबसे पहले, उन्होंने स्वयं संसार का त्याग किया, और बाद में लोगों को भी संसार का त्याग करवाया। फिर उन्होंने संपत्ति को उनके बीच बाँट दिया। उन्होंने शासन करने की अपनी समस्त शक्ति का त्याग कर दिया, जो स्वयं सक्का (इंद्र) की शक्ति के बराबर थी; और तीस मील (4.23 किमी) की पूरी संपत्ति भर गई। अन्य सभी (*5) अनुष्ठानों का विधिवत पालन करके, जो अंतर्दृष्टि की ओर ले जाते हैं, कुदाल ऋषि ने अपने भीतर पूर्ण सद्भावना विकसित की और लोगों को ध्यान करना सिखाया। इससे उन सभी ने सिद्धियाँ प्राप्त कीं और उसके बाद ब्रह्मलोक (प्रधान देवदूतों का लोक) में प्रवेश सुनिश्चित किया, जबकि उनकी सेवा करने वाले सभी लोग देवलोक (देवदूतों का लोक) में प्रवेश के योग्य हो गए।

"इस प्रकार, भिक्षुओं," गुरु ने कहा, "जब हृदय वासना से जकड़ा होता है, तो उसे मुक्त करना कठिन होता है। जब उसमें लोभ के गुण उत्पन्न होते हैं, तो उन्हें दूर करना कठिन होता है, और यहाँ तक कि उपर्युक्त जैसे बुद्धिमान और अच्छे व्यक्ति भी इससे बुद्धिहीन हो जाते हैं।" अपना उपदेश समाप्त करते हुए, उन्होंने सत्यों का प्रचार किया, जिसके अंत में कुछ ने प्रथम, कुछ ने द्वितीय और कुछ ने तृतीय मार्ग (सम्मोहन) प्राप्त किया, जबकि अन्य ने अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) प्राप्त किया। आगे गुरु ने संबंध स्पष्ट करते हुए जन्म की पहचान बताई, "आनंद उस समय के राजा थे, बुद्ध के अनुयायी उनके अनुयायी थे, और मैं स्वयं कुदाल ऋषि हूँ।"

फुटनोट:

(1) पिटकों (बौद्ध शिक्षाओं) में तीसरा और अंतिम।

(2) केवल विपत्ति से जूझ रहे एक अच्छे व्यक्ति के गुण ही इस प्रकार देवताओं (देवदूतों) के राजा की दया-सिंहासन से अपील कर सकते हैं।

(3) भविष्य में जब कोई बुद्ध धार्मिक (सन्यासी) जीवन के लिए संसार का त्याग करता है, तभी उसके 'आगे बढ़ने' को महान त्याग कहा जाता है।

(4)सं. 509.

(5) जैसा कि ऊपर दिखाया गया है, वह पानी के विचार के माध्यम से पहले ही अंतर्दृष्टि प्राप्त कर चुका था।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **वारण-जातक**
***स्रोत** : रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-71-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 71
वारणा-जातक

"उनसे सीखो।" - यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी, जो एक अधिकारी के पुत्र, वरिष्ठ भिक्षु तिस्सा के बारे में थी। परंपरा के अनुसार, एक दिन श्रावस्ती शहर के तीस युवक, जो आपस में मित्र थे, इत्र, फूल और वस्त्र लेकर अपने साथ कई सेवकों को लेकर गुरु का प्रवचन सुनने के लिए जेतवन मठ की ओर चल पड़े। जेतवन मठ पहुँचकर वे कुछ समय तक विभिन्न कक्षों में बैठे रहे - लौह-लकड़ी के वृक्षों के कक्ष में, साल के वृक्षों के कक्ष में, इत्यादि। शाम को गुरु अपने सुगंधित कक्ष से निकलकर सत्य के हॉल में गए और भव्य बुद्ध-आसन पर विराजमान हुए। फिर, अपने अनुयायियों के साथ, ये युवक सत्य के हॉल में गए, इत्र और फूल अर्पित किए, उनके चरणों में प्रणाम किया—उन पवित्र चरणों में जो खिले हुए कमल के समान तेजस्वी थे और तलवे पर चक्र की छाप थी!—और वहाँ बैठकर सत्य का प्रवचन सुना। तब उनके मन में विचार आया, "हमें भी गुरु द्वारा उपदेशित सत्य को समझकर प्रतिज्ञा लेनी चाहिए।" तदनुसार, जब भगवान बुद्ध हॉल से चले गए, तो वे उनके पास गए और पूरे आदर के साथ भिक्षु संघ में प्रवेश की अनुमति मांगी; और गुरु ने उन्हें भिक्षु संघ में प्रवेश दे दिया। अपने गुरुओं और सलाहकारों का अनुग्रह प्राप्त करके उन्होंने पूर्ण भिक्षु संघ ग्रहण किया, और अपने गुरुओं और सलाहकारों के साथ पाँच वर्ष निवास करने के बाद, तब तक वे दोनों शिक्षाओं को अच्छी तरह से आत्मसात कर चुके थे, उचित और अनुचित का ज्ञान प्राप्त कर चुके थे, धन्यवाद व्यक्त करने के तीन तरीके सीख चुके थे, और वस्त्रों को सिलने और रंगने का अभ्यास कर चुके थे। इस अवस्था में, तपस्वी जीवन अपनाने की इच्छा से उन्होंने अपने गुरुओं और सलाहकारों की सहमति प्राप्त की और गुरु के पास पहुँचे। उनके समक्ष प्रणाम करते हुए वे बैठ गए और बोले, "हे प्रभु, हम जीवन के चक्र से व्याकुल हैं, जन्म, क्षय, रोग और मृत्यु से भयभीत हैं; हमें एक ऐसा विषय दीजिए, जिस पर चिंतन करके हम जीवन के इन तत्वों से मुक्त हो सकें।" गुरु ने अपने मन में अड़तीस विषयों का चिंतन किया और उनमें से एक उपयुक्त विषय का चयन किया, जिसका उन्होंने उन्हें अर्थ समझाया। गुरु से अपना विषय प्राप्त करने के बाद, उन्होंने प्रणाम किया और विधिपूर्वक विदाई लेकर अपनी कोठरियों की ओर प्रस्थान किया, और अपने गुरुओं और सलाहकारों को निहारने के बाद कुंड और वस्त्र धारण करके तपस्वी जीवन को अपना लिया।

उनमें से एक भिक्षु, बड़े भिक्षु तिस्सा, अधिकारी के पुत्र थे, जो दुर्बल और अनिश्चित स्वभाव के थे, और सांसारिक सुखों के गुलाम थे। उन्होंने मन ही मन सोचा, "मैं कभी जंगल में नहीं रह पाऊंगा, कठिन परिश्रम नहीं कर पाऊंगा और भिक्षा पर जीवन यापन नहीं कर पाऊंगा। मेरे जाने का क्या लाभ? मैं वापस लौट जाऊंगा।" और इस प्रकार उन्होंने अपना इरादा बदल दिया, और कुछ दूर तक उन भिक्षुओं के साथ चलने के बाद वे वापस लौट गए। अन्य भिक्षुओं की बात करें तो, वे कोसल में भिक्षायात्रा के दौरान एक सीमावर्ती गाँव में पहुँचे, जिसके पास ही एक वन क्षेत्र में उन्होंने वर्षा ऋतु का समय बिताया, और तीन महीने के परिश्रम और संघर्ष से उन्होंने विवेक का बीज प्राप्त किया और अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) प्राप्त किया, जिससे पृथ्वी आनंद से झूम उठी। वर्षा ऋतु के अंत में, पवाराना उत्सव मनाने के बाद, वे वहाँ से अपने द्वारा प्राप्त उपलब्धियों के बारे में गुरु को बताने के लिए निकल पड़े। उचित समय पर जेतवन मठ पहुँचकर, उन्होंने अपने पान-पात्र और वस्त्र त्याग दिए, अपने गुरुओं और सलाहकारों से मुलाकात की, और भगवान बुद्ध के दर्शन की उत्सुकता से उनके पास जाकर आदरपूर्वक विराजमान हो गए। गुरु ने उनका स्नेहपूर्वक स्वागत किया और उन्होंने भगवान बुद्ध को अपनी प्राप्त उपलब्धियों के बारे में बताया, जिस पर भगवान बुद्ध ने उनकी प्रशंसा की। गुरु द्वारा उनकी प्रशंसा सुनकर, अधिकारी के पुत्र, वरिष्ठ भिक्षु तिस्सा, एकांतवास में रहने की इच्छा से भर गए। अन्य भिक्षुओं ने भी गुरु से उसी वन क्षेत्र में वापस निवास करने की अनुमति मांगी और प्राप्त की। वे आदरपूर्वक अपने-अपने आश्रमों में लौट गए।

उसी रात अधिकारी के पुत्र, वरिष्ठ भिक्षु तिस्सा, अपनी तपस्या तुरंत शुरू करने की तीव्र इच्छा से भर गए। वे अत्यंत उत्साह और ईमानदारी से एक संन्यासी के तरीकों का अभ्यास कर रहे थे और अपने तख्ते वाले पलंग के किनारे सीधे लेटे हुए थे। रात के मध्य पहर के कुछ ही समय बाद, वे घूमे और गिर पड़े, जिससे उनकी जांघ की हड्डी टूट गई; और उन्हें असहनीय पीड़ा होने लगी, जिसके कारण अन्य भिक्षुओं को उनकी देखभाल करनी पड़ी और उन्हें उनके साथ जाने से रोक दिया गया।

इसलिए, जब वे बुद्ध से मिलने के समय पर उपस्थित हुए, तो उन्होंने उनसे पूछा कि क्या उन्होंने कल उनसे आज जाने की अनुमति नहीं मांगी थी।

"जी हाँ, हमने ऐसा ही किया था; लेकिन हमारे मित्र, वरिष्ठ भिक्षु तिस्सा, जो अधिकारी के पुत्र हैं, ने तपस्वी विधि का बड़े उत्साह से अभ्यास किया, लेकिन अनुचित समय में, और इसी कारण वे सो गए और गिर पड़े, जिससे उनकी जांघ टूट गई; और इसी वजह से हमारा प्रस्थान रुक गया है।" "भाइयों (भिक्षुओं), गुरु ने कहा, "यह पहली बार नहीं है कि इस व्यक्ति के पथभ्रष्ट होने के कारण उसने अनुचित उत्साह से परिश्रम किया है, और इस वजह से आपका प्रस्थान विलंबित हुआ है; उसने पहले भी आपका प्रस्थान विलंबित किया था।" और इस पर, उनके अनुरोध पर, उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, गांधार राज्य के तक्षशिला (कंधार सहित अफगानिस्तान और पाकिस्तान के निकट) में, एक बोधिसत्व विश्वप्रसिद्ध गुरु थे, जिनके 500 युवा ब्राह्मण शिष्य थे। एक दिन ये शिष्य अपने गुरु के लिए लकड़ियाँ इकट्ठा करने जंगल गए और लकड़ियाँ इकट्ठा करने में जुट गए। उनमें से एक आलसी शिष्य एक विशाल वृक्ष पर पहुँचा, जिसे उसने सूखा और सड़ा हुआ समझा। उसने सोचा कि वह पहले आराम से झपकी ले ले और आखिरी क्षण में चढ़कर कुछ शाखाएँ तोड़कर घर ले जाए। उसने अपना वस्त्र बिछाया और खर्राटे लेते हुए सो गया। बाकी सभी युवा ब्राह्मण लकड़ियों के गट्ठे लेकर घर जा रहे थे, तभी उनकी नज़र उस सोते हुए शिष्य पर पड़ी। उन्होंने उसकी पीठ पर लात मारकर उसे जगाया और उसे वहीं छोड़कर अपने रास्ते चले गए। वह झट से उठा और कुछ देर तक अपनी आँखें मलता रहा। फिर, अभी भी आधी नींद में ही, वह वृक्ष पर चढ़ने लगा। लेकिन जिस शाखा को वह खींच रहा था, वह टूट गई; और जैसे ही वह ऊपर उठी, उसका सिरा उसकी आंख में जा लगा। एक हाथ से अपनी घायल आंख को ढककर, उसने दूसरे हाथ से हरी शाखाएं इकट्ठा कीं। फिर नीचे उतरकर, उसने लकड़ियों का अपना गट्ठा बांधा और उसे लेकर जल्दी से घर चला गया, और अपनी हरी लकड़ियों को दूसरों के लकड़ियों के गट्ठों के ऊपर फेंक दिया।

उसी दिन संयोगवश एक ग्रामीण परिवार ने गुरुजी को अगले दिन अपने यहाँ आने का निमंत्रण दिया, ताकि वे उन्हें ब्राह्मण भोज दे सकें। गुरुजी ने अपने शिष्यों को बुलाया और उन्हें अगले दिन गाँव की यात्रा के बारे में बताते हुए कहा कि वे उपवास नहीं कर सकते। उन्होंने कहा, "इसलिए सुबह जल्दी चावल का दलिया बना लेना और निकलने से पहले उसे खा लेना। वहाँ तुम्हें अपने लिए भोजन मिलेगा और मेरे लिए भी एक हिस्सा होगा। सब कुछ अपने साथ घर ले आना।"

इसलिए वे अगली सुबह जल्दी उठे और नौकरानी को नाश्ता तैयार करने के लिए कहा। फिर वह आग जलाने के लिए लकड़ी लेने चली गई। हरी लकड़ियाँ ढेर के ऊपर रखी थीं, और उसने उनसे आग जलाई। वह लगातार फूँकती रही, लेकिन आग नहीं जली, और अंत में सूरज निकल आया। उन्होंने कहा, "अब तो दिन का उजाला हो गया है, और अब आग जलाने का समय नहीं है।" और वे अपने मालिक के पास चले गए।

"क्या, अभी तक नहीं निकले मेरे बेटों?" उसने कहा। "जी नहीं, महाराज; हम अभी तक नहीं निकले हैं।" "क्यों?" "क्योंकि वह आलसी आदमी, जब हमारे साथ लकड़ी इकट्ठा करने गया था, तो एक जंगल के पेड़ के नीचे सो गया; और समय की भरपाई करने के लिए, वह इतनी जल्दी में पेड़ पर चढ़ गया कि उसकी आँख में चोट लग गई और वह बहुत सारी हरी लकड़ी घर ले आया, जिसे उसने हमारी लकड़ियों के गट्ठों के ऊपर फेंक दिया। इसलिए, जब हमारी चावल की दलिया पकाने वाली नौकरानी लकड़ियों के ढेर के पास गई, तो उसने उसकी लकड़ी ले ली, यह सोचकर कि वह सूखी होगी; और वह सूरज निकलने से पहले आग नहीं जला सकी। और इसी वजह से हमारा जाना रुक गया।"

उस युवा ब्राह्मण की करतूत सुनकर गुरु ने कहा कि एक मूर्ख के कर्मों से ही सारी गड़बड़ी हुई है, और उन्होंने यह श्लोक दोहराया:-

जिसने हरी डालियों को तोड़ डाला, उससे सीखो।
अंततः टलते हुए कार्यों को पूरा करने पर आंसू आ जाते हैं।
बोधिसत्व ने अपने शिष्यों से इस विषय पर यही टिप्पणी की थी; और दान और अन्य अच्छे कार्यों से भरे जीवन के अंत में, वे अपने कर्मों के अनुसार फल भोगने के लिए इस दुनिया से विदा हो गए।

गुरु ने कहा, "भाइयों (भिक्षुओं), यह पहली बार नहीं है कि इस व्यक्ति ने आपको रोका है; इसने पहले भी ऐसा ही किया है।" अपना प्रवचन समाप्त करते हुए, उन्होंने संबंध समझाया और जन्म का वर्णन करते हुए कहा, "जिस भिक्षु (भाइयों) की जांघ टूटी है, वह उन दिनों का युवा ब्राह्मण था जिसकी आँख में चोट लगी थी; बुद्ध के अनुयायी शेष युवा ब्राह्मण थे; और मैं स्वयं उनका गुरु ब्राह्मण था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सिलवनाग-जातक**
***स्रोत**: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-72-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 72
सिलवनगा-जातक

"कृतघ्नता की तो हद ही हो जाती है।" - यह कहानी गुरु ने बाँस के वन में देवदत्त के बारे में सुनाई थी। भिक्षु (भाइयों) ने सत्य के हॉल में बैठकर कहा, "महोदय, देवदत्त कृतघ्न है और भगवान बुद्ध के गुणों को नहीं पहचानता।" हॉल में लौटकर गुरु ने पूछा कि वे किस विषय पर चर्चा कर रहे हैं, और उन्हें बताया गया। गुरु ने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि देवदत्त ने कृतघ्नता दिखाई है; वह पहले भी ऐसा ही था, और उसने कभी मेरे गुणों को नहीं जाना।" और ऐसा कहकर, उनके अनुरोध पर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब हिमालय में एक हाथी ने बोधिसत्व को गर्भ धारण कराया। जन्म के समय, उनका पूरा शरीर सफेद था, मानो वे चांदी के एक विशाल पिंड हों। उनकी आंखें हीरे की तीलियों जैसी थीं, मानो पांचों ज्योतियों का साक्षात रूप हों; उनका मुख लाल था, मानो लाल वस्त्र जैसा; उनकी सूंड चांदी पर लाल सोने की तरह चमकीली थी; और उनके चारों पैर मानो लाख से पॉलिश किए हुए थे। इस प्रकार, दस गुणों से सुशोभित उनका शरीर अत्यंत सुंदर था। जब वे बड़े हुए, तो हिमालय के सभी हाथी एक साथ उनका नेतृत्व करने लगे। जब वे 80,000 हाथियों के दल के साथ हिमालय में रह रहे थे, तब उन्हें अपने समूह में पाप का ज्ञान हुआ। अतः, उन्होंने बाकियों से अलग होकर वन में एकांतवास किया, और उनके सदाचारी जीवन ने उन्हें 'अच्छे हाथी राजा' का नाम दिलाया।

बनारस का एक वनपाल हिमालय आया और अपने काम के औजारों की तलाश में जंगल में चला गया। रास्ता भटककर वह हताशा में हाथ फैलाए, मृत्यु के भय से रोता हुआ इधर-उधर भटकता रहा। उस आदमी की चीखें सुनकर बोधिसत्व को उस पर दया आ गई और उन्होंने उसकी मदद करने का निश्चय किया। इसलिए वे उस आदमी के पास गए। लेकिन हाथी को देखते ही वनपाल भयभीत होकर भाग गया (*1)। उसे भागते देख बोधिसत्व वहीं रुक गए, और इससे वह आदमी भी रुक गया। फिर बोधिसत्व आगे बढ़े, और वनपाल फिर भाग गया, और बोधिसत्व के रुकने पर एक बार फिर रुक गया। तब उस आदमी को यह बात समझ में आई कि हाथी तब रुकता है जब वह भागता है, और तभी आगे बढ़ता है जब वह खुद रुका रहता है। इसलिए उसने निष्कर्ष निकाला कि हाथी उसे नुकसान नहीं पहुंचाना चाहता, बल्कि उसकी मदद करना चाहता है। अतः इस बार वह साहसपूर्वक वहीं डटा रहा। और बोधिसत्व पास आकर बोले, "हे मित्र, तुम यहाँ शोक मनाते हुए क्यों भटक रहे हो?"

वनपाल ने उत्तर दिया, "मेरे स्वामी, मैं रास्ता भटक गया हूँ और मुझे मृत्यु का भय है।"

फिर हाथी उस आदमी को उसके निवास स्थान पर ले गया और वहाँ कुछ दिनों तक उसका सत्कार किया, उसे तरह-तरह के फल खिलाए। फिर, "दुखी मत हो, मैं तुम्हें मनुष्यों के स्थान पर वापस ले जाऊँगा," कहते हुए हाथी ने वनपाल को अपनी पीठ पर बिठाया और उसे मनुष्यों के निवास स्थान पर ले गया। परन्तु उस कृतघ्न ने मन ही मन सोचा कि यदि उससे प्रश्न किया जाए, तो वह सब कुछ बता देगा। इसलिए, हाथी की पीठ पर यात्रा करते हुए उसने वृक्षों और पहाड़ियों के चिन्हों को ध्यान से देखा। अंत में हाथी उसे जंगल से बाहर ले आया और बनारस जाने वाली मुख्य सड़क पर उतारते हुए कहा, "यही तुम्हारा मार्ग है, मित्र: चाहे तुमसे प्रश्न किया जाए या न किया जाए, मेरे निवास स्थान के बारे में किसी को मत बताना।" और इस प्रकार विदा लेकर बोधिसत्व अपने निवास स्थान की ओर चल पड़ा।

बनारस पहुँचकर, वह व्यक्ति शहर में घूमते हुए हाथीदांत के कारीगरों के बाज़ार में पहुँचा, जहाँ उसने हाथीदांत को विभिन्न रूपों और आकारों में ढाला जाते देखा। उसने कारीगरों से पूछा कि क्या वे जीवित हाथी के दांत के बदले कुछ देंगे?

"तुम ऐसा सवाल क्यों पूछ रहे हो?" जवाब मिला। "जीवित हाथी का दांत मरे हुए हाथी के दांत से कहीं ज्यादा कीमती होता है।"

“अच्छा, तो मैं आपके लिए कुछ हाथीदांत लाता हूँ,” उसने कहा और यात्रा के लिए आवश्यक सामान और एक तेज़ आरी लेकर बोधिसत्व के निवास की ओर चल पड़ा। जब उससे पूछा गया कि वह वापस क्यों आया है, तो उसने रोते हुए कहा कि उसकी हालत इतनी दयनीय है कि वह किसी भी तरह से अपना गुजारा नहीं कर सकता। इसीलिए वह आपसे हाथी दांत का एक टुकड़ा माँगने आया है ताकि उसे बेचकर अपना गुजारा कर सके! “ज़रूर; मैं तुम्हें पूरा दांत दे दूँगा,” बोधिसत्व ने कहा, “अगर तुम्हारे पास उसे काटने के लिए आरी हो।” “अरे, मैं आरी तो लाया हूँ।” “तो मेरे दांत काट दो और अपने साथ ले जाओ,” बोधिसत्व ने कहा। और वह बैल की तरह घुटने टेककर ज़मीन पर लेट गया। फिर वनपाल ने बोधिसत्व के दोनों मुख्य दांत काट दिए! जब वे चले गए, तो बोधिसत्व ने उन्हें अपनी सूंड में उठाया और उस व्यक्ति से कहा, "हे मित्र, यह मत सोचो कि मैं इन दांतों को इसलिए दे रहा हूँ क्योंकि मैं इन्हें महत्व नहीं देता। परन्तु मुझे तो हजार गुना, एक लाख गुना, अनंत ज्ञान के दांत अधिक प्रिय हैं, जो सब कुछ समाहित कर सकते हैं। इसलिए, तुम्हें ये दांत भेंट करने से मुझे भी अनंत ज्ञान प्राप्त हो।" ये कहकर उन्होंने अनंत ज्ञान के मूल्य के रूप में वनपाल को दांतों का जोड़ा दे दिया।

उस आदमी ने उन्हें उतारकर बेच दिया। जब उसका पैसा खर्च हो गया, तो वह बोधिसत्व के पास वापस आया और कहने लगा कि उन दो दांतों से उसे केवल अपने पुराने कर्ज चुकाने लायक ही पैसे मिले हैं, और उसने बोधिसत्व के बाकी हाथी दांत मांगे। बोधिसत्व मान

गए और पहले की तरह तराशने के बाद उन्होंने बाकी हाथी दांत दे दिए। वनपाल चला गया और उसने इसे भी बेच दिया। वापस आकर उसने कहा, "हे स्वामी, कोई फायदा नहीं; मैं वैसे भी अपना गुजारा नहीं कर सकता। इसलिए मुझे अपने दांतों के ठूंठ दे दीजिए।"

"ऐसा ही हो," बोधिसत्व ने उत्तर दिया; और वे पहले की तरह लेट गए। तब उस दुष्ट, दुष्ट ने बोधिसत्व की सूंड को रौंदते हुए, उस पवित्र सूंड को जो चांदी की गद्दी के समान थी, और भविष्य के बुद्ध के मंदिरों पर चढ़ते हुए, जो केलासा पर्वत की बर्फीली चोटी के समान थे, उनके दांतों की जड़ों को तब तक लात मारी जब तक कि मांस पूरी तरह से साफ न हो गया। फिर उसने ठूंठों को काट दिया और चला गया। लेकिन अभी वह दुष्ट बोधिसत्व की दृष्टि से ओझल ही हुआ था कि विशाल विस्तार में अकल्पनीय ठोस पृथ्वी, जो सिनेरु पर्वत और उसके चारों ओर की चोटियों के भारी भार को, संसार की सारी कुरूप गंदगी और गोबर को भी सहन कर सकती है, अब एक गहरी खाई में फट गई, मानो उस सारी दुष्टता का भार सहन करने में असमर्थ हो! और देखते ही देखते, सबसे गहरे नरक से निकली ज्वालाओं ने उस कृतघ्न को घेर लिया, मानो उसे विनाश के कफ़न में लपेटकर अपने साथ ले गईं। और जैसे ही वह दुखी प्राणी धरती की गहराई में समा गया, उस जंगल में रहने वाली वृक्ष-परी ने उस क्षेत्र में ये शब्द गूंजाए:- "विश्व साम्राज्य का उपहार भी कृतघ्न और कृतघ्न को संतुष्ट नहीं कर सकता!" और अगले श्लोक में परी ने सत्य का उपदेश दिया:-

कृतज्ञताहीनता को जितना अधिक मिलता है, उतनी ही उसकी कमी महसूस होती है।
पूरी दुनिया अपनी भूख मिटा नहीं सकती।
इन उपदेशों से वृक्ष-परी ने उस जंगल को गूंज से भर दिया। बोधिसत्व ने अपना जीवन व्यतीत किया और अंततः अपने कर्मों के फल के अनुसार इस दुनिया से विदा हो गए।

गुरु ने कहा, "यह पहली बार नहीं है, भिक्षुओं, कि देवदत्त ने कृतघ्नता का परिचय दिया है; वह पहले भी ऐसा ही था।" अपना प्रवचन समाप्त करते हुए उन्होंने जन्म का परिचय देते हुए कहा, "देवदत्त उन दिनों का कृतघ्न पुरुष था, सारिपुत्र वृक्ष-परी था, और मैं स्वयं अच्छे हाथी राजा हूँ।"

फुटनोट:

(1) एक अकेला हाथी, या 'दुष्ट' हाथी, खतरनाक होता है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सैकांकिरा-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-73-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 73
सच्चमकिरा-जातक

"वे संसार को जानते थे।" - यह कहानी गुरु ने बाँस के जंगल में हत्या करने की कोशिश के बारे में सुनाई थी। सत्य के हॉल में बैठे भिक्षु देवदत्त की दुष्टता के बारे में बात कर रहे थे और कह रहे थे, "महोदय, देवदत्त को गुरु की श्रेष्ठता का कोई ज्ञान नहीं है; वह तो उन्हें जान से मारने की कोशिश कर रहा है!" तभी गुरु हॉल में आए और पूछा कि वे किस बारे में बात कर रहे हैं। 323] जब उन्हें बताया गया, तो उन्होंने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि देवदत्त मुझे जान से मारने की कोशिश कर रहा है; उसने पहले भी ऐसा ही किया था।" और ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, बनारस में ब्रह्मदत्त का राज था। उनका एक पुत्र था जिसका नाम दुष्ट राजकुमार था। वह क्रोधी सर्प के समान क्रूर और निर्दयी था; वह किसी से भी बिना गाली-गलौज या मार-पीट किए बात नहीं करता था। महल के भीतर और बाहर, सभी लोगों के लिए वह राजकुमार किसी भयानक राक्षस की तरह था, इतना खौफनाक और क्रूर कि लोग उससे डरते थे।

एक दिन, नदी में आनंद लेने की इच्छा से, वह अपने कई सेवकों के साथ नदी किनारे गया। तभी एक भयंकर तूफान आया और चारों ओर घना अंधेरा छा गया। उसने अपने सेवकों से कहा, "अरे! मुझे नदी के बीच में ले चलो, वहाँ नहलाओ और फिर वापस ले आओ।" तो वे उसे नदी के बीच में ले गए और वहाँ आपस में सलाह करने लगे, "राजा हमारा क्या करेगा? चलो इस दुष्ट को यहीं मार डालते हैं! तो जाओ, तू तो मुसीबत है!" यह कहते हुए उन्होंने उसे पानी में फेंक दिया। जब वे किनारे पर पहुँचे, तो उनसे पूछा गया कि राजकुमार कहाँ है, तो उन्होंने उत्तर दिया, "हमें वह दिखाई नहीं दे रहा; तूफान देखकर वह नदी से निकलकर हमसे पहले ही घर चला गया होगा।"

दरबारी राजा के समक्ष गए और राजा ने अपने पुत्र के बारे में पूछा। उन्होंने कहा, "महाराज, हमें नहीं पता; तूफान आ गया था और हम यह सोचकर वापस आ गए थे कि वह आगे चला गया होगा।" राजा ने तुरंत द्वार खुलवा दिए; वे नदी किनारे गए और लापता राजकुमार की अच्छी तरह से खोज करने का आदेश दिया। लेकिन उसका कोई सुराग नहीं मिला। क्योंकि तूफान के अंधेरे में वह धारा में बह गया था और एक पेड़ के तने से टकराकर उस पर चढ़ गया था, और डूबने के डर से जोर-जोर से रोते हुए धारा में बहता चला गया था।

उन दिनों बनारस में एक धनी व्यापारी रहता था, जिसकी मृत्यु हो गई और उसने उसी नदी के किनारे चालीस करोड़ (10 मिलियन) का खजाना दफना दिया। धन के लालच में वह उसी स्थान पर सर्प के रूप में पुनर्जन्म लेकर आया जहाँ उसका बहुमूल्य खजाना था। ठीक उसी स्थान पर एक अन्य व्यक्ति ने तीस करोड़ (10 मिलियन) का खजाना छिपा रखा था, और धन के लालच में वह भी उसी स्थान पर चूहे के रूप में पुनर्जन्म लेकर आया। उनके निवास स्थान में पानी भर गया; और वे दोनों जीव पानी के तेज बहाव से बचते हुए नदी पार कर रहे थे, तभी संयोगवश वे उस वृक्ष के तने पर आ पहुँचे जिससे राजकुमार चिपका हुआ था। सर्प एक छोर से चढ़ा और चूहा दूसरे छोर से; इस प्रकार दोनों ने राजकुमार के साथ वृक्ष के तने पर पैर जमा लिया।

नदी के किनारे एक रेशमी कपास का पेड़ था, जिस पर एक छोटा तोता रहता था; उफनते पानी से वह पेड़ उखड़कर नदी में गिर गया। जब तोते ने उड़ने की कोशिश की तो भारी बारिश ने उसे बुरी तरह से पीट दिया और वह गिरते-गिरते उसी पेड़ के तने पर जा गिरा। इस तरह अब ये चारों तोते एक साथ पेड़ पर सवार होकर नदी में बह रहे थे।

उन दिनों बोधिसत्व का पुनर्जन्म उत्तर-पश्चिम देश में एक ब्राह्मण के रूप में हुआ था। युवावस्था में पहुँचकर उन्होंने संसार त्याग कर संन्यासी जीवन व्यतीत किया और नदी के मोड़ पर अपना आश्रम बनाया। वे वहीं निवास कर रहे थे। आधी रात को टहलते हुए उन्हें राजकुमार की तेज़ पुकार सुनाई दी और उन्होंने मन ही मन सोचा, "यह प्राणी मेरे जैसे दयालु और करुणामय संन्यासी के सामने इस प्रकार न मर जाए। मैं इसे जल से बचाऊँगा और इसकी जान बचाऊँगा।" उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक पुकारा, "डरो मत! डरो मत!" और नदी में छलांग लगाकर उन्होंने वृक्ष को एक छोर से पकड़ लिया और हाथी के समान बलवान होकर उसे एक ही झटके में किनारे पर खींच लाए और राजकुमार को सुरक्षित किनारे पर उतार दिया। फिर जब उसे साँप, चूहा और तोते का आभास हुआ, तो वह उन्हें अपने आश्रम में ले गया और वहाँ आग जलाकर पहले जानवरों को, क्योंकि वे कमज़ोर थे, और फिर राजकुमार को, गर्म किया। इसके बाद, वह कई प्रकार के फल लाया और उन्हें अपने मेहमानों के सामने रखा, पहले जानवरों का ध्यान रखा और फिर राजकुमार का। इससे युवा राजकुमार क्रोधित हो गया और मन ही मन बोला, "यह दुष्ट साधु मेरे राजसी वंश का कोई सम्मान नहीं करता, बल्कि जानवरों को मुझसे ऊपर रखता है।" और उसके मन में बोधिसत्व के प्रति घृणा उत्पन्न हो गई!

कुछ दिनों बाद, जब चारों ने अपनी शक्ति वापस पा ली और पानी कम हो गया, तो साँप ने इन शब्दों के साथ ऋषि को विदाई दी, "पिताजी, आपने मेरी बहुत बड़ी सेवा की है। मैं गरीब नहीं हूँ, क्योंकि मैंने एक विशेष स्थान पर चालीस करोड़ (10 मिलियन) सोना छिपा रखा है। यदि आपको कभी धन की आवश्यकता हो, तो मेरा सारा धन आपका होगा। आपको बस उस स्थान पर आकर 'साँप' कहना है।" इसके बाद चूहे ने भी ऋषि को अपने खजाने के समान ही वादा करते हुए विदाई दी और उनसे कहा कि आकर 'चूहा' कहें। फिर तोते ने विदाई देते हुए कहा, "पिताजी, मेरे पास चाँदी-सोना कुछ नहीं है; लेकिन यदि आपको कभी उत्तम चावल की आवश्यकता हो, तो मेरे निवास स्थान पर आकर 'तोता' कहें।" और मैं अपने परिवार की सहायता से आपको चावल से भरी कई गाड़ियाँ दूंगा।" अंत में राजकुमार आया। उसका हृदय कृतघ्नता से भरा हुआ था और उसने ठान लिया था कि यदि बोधिसत्व उससे मिलने आए तो वह अपने शुभचिंतक को मृत्युदंड दे देगा। परन्तु अपने इरादे को छुपाते हुए उसने कहा, "पिताजी, जब मैं राजा बन जाऊँगा, तब आप मेरे पास आइएगा, और मैं आपको चारों आवश्यक वस्तुएँ दूंगा।" इतना कहकर वह विदा हुआ और कुछ ही समय बाद सिंहासन पर आसीन हुआ।

बोधिसत्व के मन में उनकी बात को परखने की इच्छा जागी; और सबसे पहले वे साँप के पास गए और उसके निवास के पास खड़े होकर 'साँप' कहकर पुकारा। यह सुनकर साँप झपट्टा मारकर आया और अत्यंत आदरपूर्वक बोला, "हे पिता, इस स्थान पर चालीस करोड़ सोने के सिक्के हैं। इन्हें खोदकर निकाल लीजिए और सब ले आइए।" बोधिसत्व ने कहा, "ठीक है; जब मुझे इनकी आवश्यकता होगी, मैं नहीं भूलूँगा।" फिर साँप को विदा करके वे चूहे के निवास स्थान पर गए और 'चूहा' कहकर पुकारा। चूहे ने भी साँप की तरह ही किया। इसके बाद वे तोते के पास गए और 'तोता' कहकर पुकारा, तोता तुरंत पेड़ की चोटी से नीचे उतर आया और आदरपूर्वक पूछा कि क्या

बोधिसत्व की इच्छा है कि वह अपने परिवार की सहायता से हिमालय के आसपास के क्षेत्र से उनके लिए धान इकट्ठा करे। बोधिसत्व ने तोते को भी यह वादा करके विदा कर दिया कि यदि आवश्यकता पड़ी तो वे पक्षी के प्रस्ताव को नहीं भूलेंगे। अंत में, राजा की परीक्षा लेने के इरादे से, बोधिसत्व राजमहल में आए और अपने आगमन के अगले दिन, सलीके से वस्त्र धारण करके, भिक्षा मांगने के लिए शहर में निकल पड़े। ठीक उसी समय, कृतघ्न राजा, अपने राजसी वैभव में अपने राजसी हाथी पर विराजमान होकर, सेवकों के एक विशाल समूह के साथ शहर का जुलूस निकाल रहा था। दूर से बोधिसत्व को देखकर उसने मन ही मन सोचा, "देखो, यह दुष्ट संन्यासी मुझ पर अपना वासना और भोग लगाने आया है। इससे पहले कि वह दुनिया को अपने द्वारा किए गए उपकार का बखान कर सके, मुझे उसका सिर काट देना चाहिए।" इसी इरादे से उसने अपने सेवकों को इशारा किया और जब उन्होंने उसकी इच्छा पूछी, तो उसने कहा, "मुझे लगता है कि वह दुष्ट साधु मुझसे भीख मांगने आया है। ध्यान रखना कि वह मेरे पास न आए, बल्कि उसे पकड़कर बांध देना; हर गली के कोने पर उसे कोड़े मारना; और फिर उसे शहर से बाहर ले जाकर, फांसी के स्थान पर उसका सिर काट देना और उसके शरीर को खंभे पर टांग देना।"

अपने राजा के आदेश का पालन करते हुए, सेवकों ने निर्दोष महापुरुष को जंजीरों में बांध दिया और मृत्युदंड स्थल तक ले जाते समय हर गली के मोड़ पर उन्हें कोड़े मारे। लेकिन उनके कोड़े मारने से भी बोधिसत्व का कोई भाव नहीं बदला और न ही उनसे "हे मेरे माता-पिता!" की कोई पुकार निकली। उन्होंने केवल इस श्लोक को दोहराया:-

वे ही दुनिया को जानते थे, जिन्होंने इस कहावत को सत्य रूप में गढ़ा था--
'एक लकड़ी का लट्ठा कुछ आदमियों से बेहतर प्रतिफल देता है।'
ये पंक्तियाँ वह हर जगह दोहराता रहा जहाँ उसे कोड़े मारे जाते थे, जब तक कि अंत में वहाँ मौजूद बुद्धिमानों ने उस साधु से नहीं पूछा कि उसने उनके राजा की क्या सेवा की है। तब बोधिसत्व ने पूरी कहानी सुनाई और अंत में कहा, "तो ऐसा हुआ कि उसे यातना से बचाकर मैंने अपने ऊपर यह सारा कष्ट लाद लिया। और जब मैं सोचता हूँ कि मैंने पुराने समय के बुद्धिमानों के वचनों को कैसे अनसुना कर दिया, तो मैं वही कहता हूँ जो तुमने सुना है।"

इस कथन से क्रोधित होकर, सभी कुलीन, ब्राह्मण और सभी वर्गों के लोग एकमत होकर चिल्लाए, "यह कृतघ्न राजा उस भले आदमी की अच्छाई को भी नहीं मानता जिसने महाराज का जीवन बचाया। इस राजा से हमें क्या लाभ हो सकता है? अत्याचारी को पकड़ो!" और क्रोध में आकर वे चारों ओर से राजा पर टूट पड़े और जब वह अपने हाथी पर सवार था, तब उसे बाणों, भालों, पत्थरों, गदाओं और जो भी हथियार हाथ लगे, उनसे मार डाला। शव को वे एड़ियों से घसीटकर एक खाई में फेंक दिया। फिर उन्होंने बोधिसत्व राजा का राज्याभिषेक किया और उसे अपने ऊपर शासन करने के लिए नियुक्त किया।

जब राजा न्यायपूर्वक शासन कर रहे थे, एक दिन उन्हें फिर से साँप, चूहे और तोते की परीक्षा लेने की इच्छा हुई; और वे अपने साथ कई सेवकों को लेकर साँप के निवास स्थान पर पहुँचे। 'साँप' पुकारते ही साँप अपने बिल से बाहर आया और पूरे आदर के साथ बोला, "हे महाराज, यह रहा आपका खजाना; इसे ले लीजिए।" तब राजा ने चालीस करोड़ (10 मिलियन) सोना अपने सेवकों को सौंप दिया और चूहे के निवास स्थान पर जाकर 'चूहा' पुकारा। चूहा बाहर आया, राजा को प्रणाम किया और अपने तीस करोड़ (10 मिलियन) दे दिए। इस खजाने को भी अपने सेवकों को सौंपकर राजा तोते के निवास स्थान पर गए और 'तोता' पुकारा। तोता भी उसी प्रकार आया और राजा के चरणों में झुककर पूछा कि क्या वह महाराज के लिए चावल इकट्ठा कर सकता है। राजा ने कहा, "जब तक चावल की आवश्यकता नहीं होगी, हम आपको परेशान नहीं करेंगे। अब चलिए चलते हैं।" अतः राजा सत्तर करोड़ (10 मिलियन) सोने के साथ, चूहे, साँप और तोते को भी अपने साथ लेकर नगर लौट आया। वहाँ उसने एक भव्य महल में, जिसकी राजसी मंजिल पर वह सवार हुआ, खजाने को सुरक्षित रखा और उसकी रक्षा करवाई; उसने साँप के लिए सोने की नली, चूहे के लिए क्रिस्टल का संदूक और तोते के लिए सोने का पिंजरा बनवाया। राजा के आदेशानुसार प्रतिदिन तीनों प्राणियों को सोने के पात्रों में भोजन परोसा जाता था, तोते और साँप के लिए भुना हुआ मीठा अनाज और चूहे के लिए सुगंधित चावल। राजा दान और अच्छे कार्यों में लीन रहा। इस प्रकार, ये चारों एक-दूसरे के साथ सद्भाव और मेलजोल से अपना जीवन व्यतीत करते रहे; और जब उनका अंत आया, तो उन्हें उनके कर्मों के अनुसार दंड मिला।

गुरु ने कहा, "हे भिक्षुओं, यह पहली बार नहीं है कि देवदत्त ने मुझे मारने का प्रयास किया है; उसने पहले भी ऐसा ही किया था।" अपना प्रवचन समाप्त करते हुए उन्होंने संबंध समझाया और जन्म का वर्णन करते हुए कहा, "उन दिनों देवदत्त दुष्ट राजा था, सारिपुत्र नाग, मोग्गल्याण चूहा, आनंद तोता और मैं स्वयं धर्मात्मा राजा था जिसने एक राज्य जीता था।"

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **रुक्खधम्म-जातक**

स्रोत : रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित

पिछला <<<<-----||-74-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 74
रुक्खाधम्मा-जातक

"एकजुट, वन के समान।" - यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें कपिलवस्तु के उनके कुल में जल को लेकर हुए एक विवाद का वर्णन था, जिसके कारण उन्हें कष्ट भोगना पड़ा था। यह जानकर वे वायु में विचरण करते हुए रोहिणी नदी के ऊपर पालथी मारकर बैठ गए और अंधकार की किरणें उत्सर्जित कीं, जिससे उनके कुल में दहशत फैल गई। फिर वे वायु से नीचे उतरकर नदी के किनारे बैठ गए और उस विवाद के संदर्भ में यह कथा सुनाई। (यहाँ केवल संक्षिप्त विवरण दिया गया है; संपूर्ण विवरण कुणाल जातक (*1) में दिया जाएगा।) इस अवसर पर गुरु ने अपने कुल को संबोधित करते हुए कहा, "हे महाराज, यह अच्छा है कि परिवार सद्भाव और एकता में एक साथ रहे। क्योंकि जब परिवार एकजुट होता है, तो शत्रुओं को कोई अवसर नहीं मिलता। मनुष्यों की तो बात ही छोड़िए, यहाँ तक कि बुद्धिहीन वृक्षों को भी एक साथ खड़ा रहना चाहिए। क्योंकि पुराने समय में हिमालय में एक साल के वन में तूफान आया; फिर भी, क्योंकि उस वन के वृक्ष, झाड़ियाँ, और लताएँ आपस में गुंथी हुई थीं, तूफान एक भी वृक्ष को नहीं गिरा सका, बल्कि उनके सिर के ऊपर से बिना किसी नुकसान के गुजर गया। परन्तु एक आँगन में अकेला एक विशाल वृक्ष खड़ा था; और यद्यपि उसके अनेक तने और शाखाएँ थीं, फिर भी, क्योंकि वह अन्य वृक्षों से जुड़ा हुआ नहीं था, तूफान ने उसे जड़ से उखाड़ दिया और गिरा दिया। इसीलिए, आपको भी सद्भाव और एकता में एक साथ रहना चाहिए।" और ऐसा कहकर, उनके अनुरोध पर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्याभिषेक हो रहा था, तब प्रथम राजा वेसवना (*2) का निधन हो गया और इंद्र ने उनके स्थान पर एक नए राजा को नियुक्त किया। इस परिवर्तन के बाद, नए राजा वेसवना ने सभी वृक्षों, झाड़ियों और पौधों को संदेश भेजा और वृक्ष आत्माओं से कहा कि वे अपने लिए सबसे उपयुक्त निवास स्थान चुनें। उन दिनों बोधिसत्व हिमालय के एक साल वन में वृक्ष आत्मा के रूप में अवतरित हुए थे। उन्होंने अपने परिवार को निवास स्थान चुनते समय यह सलाह दी कि वे खुले में अकेले खड़े वृक्षों से दूर रहें और उस साल वन में उनके द्वारा चुने गए निवास स्थान के चारों ओर अपना निवास स्थान बना लें। इस पर बुद्धिमान वृक्ष आत्माओं ने बोधिसत्व की सलाह का पालन करते हुए उनके वृक्ष के चारों ओर अपना निवास स्थान बना लिया। लेकिन मूर्खों ने कहा, "हम जंगल में क्यों रहें? बल्कि हमें मनुष्यों के राज्य में जाकर गांवों, कस्बों या राजधानियों के बाहर निवास करना चाहिए। क्योंकि ऐसे स्थानों में रहने वाली आत्माओं को सबसे अधिक भेंट और सबसे बड़ी पूजा प्राप्त होती है।" इसलिए वे मनुष्यों के राज्य में चले गए और खुले मैदान में उगने वाले कुछ विशाल वृक्षों में निवास करने लगे।

एक दिन अचानक भयंकर तूफान देश भर में छा गया। वर्षों से मिट्टी में गहरी जड़ें जमाए खड़े और सबसे शक्तिशाली वृक्ष होने के बावजूद, उन अकेले वृक्षों पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। उनकी शाखाएँ टूट गईं; उनके तने चकनाचूर हो गए; और वे स्वयं भी तूफान के कारण जड़ से उखड़कर धरती पर गिर पड़े। लेकिन जब यह तूफान आपस में गुंथे हुए साल के जंगल पर टूटा, तो इसका प्रकोप व्यर्थ हो गया; क्योंकि चाहे वह कितना भी हमला करे, एक भी वृक्ष को नहीं गिरा सका।

जिन दुखी आत्माओं का जीवन नष्ट हो गया था, वे अपने बच्चों को गोद में लेकर हिमालय की यात्रा पर निकल पड़ीं। वहाँ उन्होंने साल वन की आत्माओं को अपना दुःख सुनाया, जिन्होंने बदले में बोधिसत्व को उनके दुखद वापसी के बारे में बताया। उन्होंने कहा, "क्योंकि उन्होंने ज्ञान की बातों को नहीं सुना, इसलिए उन्हें इस स्थिति में लाया गया है।" और उन्होंने इस श्लोक में सत्य को समझाया:

परिवार को एकजुट होकर, जंगल की तरह खड़ा रहना चाहिए;
तूफान ने अकेले पेड़ को उखाड़ फेंका।
बोधिसत्व ने ऐसा कहा; और जब उनका जीवन समाप्त हुआ, तो वे अपने कर्मों के अनुसार फल भोगने के लिए इस दुनिया से चले गए।

और गुरु ने आगे कहा, "इसलिए, महाराज, सोचिए कि यह कितना अच्छा है कि परिवार कम से कम एकजुट रहे और प्रेमपूर्वक सद्भाव और एकता में एक साथ निवास करे।" अपना उपदेश समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म का परिचय देते हुए कहा, "बुद्ध के अनुयायी उन दिनों की आत्माएँ थीं, और मैं स्वयं ज्ञानी आत्मा हूँ।"

फुटनोट:

(1) संख्या 536.

(2) कुबेर का एक नाम।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **मच्छ-जातक**2
***स्रोत** : रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-75-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 75
मच्छा-जातक

"पज्जुन्ना, गरज!" - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, उस बारिश के बारे में जो उन्होंने करवाई थी। कहा जाता है कि उन दिनों कोसल में बारिश नहीं हुई थी; फसलें सूख गईं थीं; और हर जगह तालाब, पोखर और झीलें सूख गई थीं। यहाँ तक कि जेतवन मठ के किलेबंद द्वार के पास स्थित तालाब भी सूख गया था; और मछलियाँ और कछुए कीचड़ में दब गए थे। तब कौवे और बाज अपनी भाले जैसी चोंचों के साथ आए और तड़पते-तड़पते हुए उन्हें चुन-चुनकर खा गए।

जब उन्होंने देखा कि मछलियाँ और कछुए नष्ट हो रहे हैं, तो गुरुजी करुणा से भर उठे और बोले, "आज मुझे वर्षा करानी होगी।" अतः, जब रात ढलकर दिन हुआ, तो अपनी शारीरिक आवश्यकताओं को पूरा करने के बाद, उन्होंने भिक्षा मांगने के लिए परिक्रमा करने का उचित समय आने का इंतजार किया, और फिर भिक्षुओं के समूह से घिरे हुए, बुद्ध के समान परिपूर्ण होकर, वे भिक्षा मांगने के लिए श्रावस्ती नगर गए। श्रावस्ती नगर में भिक्षा मांगने के बाद दोपहर में मठ लौटते समय, वे जेतवन मठ के तालाब की ओर जाने वाली सीढ़ियों पर रुके और वरिष्ठ भिक्षु आनंद से कहा, "आनंद, मेरे लिए स्नान वस्त्र लाओ; मैं जेतवन मठ के तालाब में स्नान करना चाहता हूँ।" "परन्तु, महोदय," वरिष्ठ भिक्षु ने उत्तर दिया, "जल तो पूरी तरह सूख गया है, केवल कीचड़ ही बचा है।" “आनंद, बुद्ध की शक्ति महान है। जाओ, मेरे लिए स्नान वस्त्र लाओ,” गुरु ने कहा। तब वरिष्ठ भिक्षु गए और स्नान वस्त्र ले आए, जिसे गुरु ने पहन लिया। उन्होंने एक छोर कमर के चारों ओर लपेटा और दूसरे छोर से अपना शरीर ढक लिया। इस प्रकार वस्त्र धारण करके वे तालाब की सीढ़ियों पर खड़े हो गए और बोले, “मैं जेतवन मठ के तालाब में स्नान करना चाहता/चाहती हूँ।”

उसी क्षण इंद्र का पीला पत्थर का सिंहासन गर्म हो गया और वे इसका कारण जानने के लिए आगे बढ़े। जब उन्हें बात समझ में आई, तो उन्होंने बादलों के राजा को बुलाया और कहा, "गुरुजी जेतवन मठ के तालाब की सीढ़ियों पर खड़े हैं और स्नान करना चाहते हैं। जल्दी करो और कोसल राज्य पर एक ही बार में मूसलाधार वर्षा करो।" इंद्र के आदेश का पालन करते हुए, बादलों के राजा ने एक बादल को अंतर्वस्त्र और दूसरे बादल को बहिर्वस्त्र के रूप में धारण किया और वर्षागीत गाते हुए पूर्व दिशा की ओर चल पड़े। और देखो! वे पूर्व में खलिहान के आकार के बादल के रूप में प्रकट हुए, जो बढ़ता ही गया, यहाँ तक कि सौ-हजार खलिहानों के बराबर हो गया; और उन्होंने गरजते हुए और बिजली चमकाते हुए अपना मुख और मुख झुकाकर कोसल राज्य को मूसलाधार वर्षा से सराबोर कर दिया। लगातार बारिश हो रही थी, जिससे जेतवन मठ का तालाब जल्दी भर गया और तब तक नहीं रुका जब तक कि पानी सबसे ऊपरी सीढ़ी तक नहीं पहुँच गया। तब गुरु ने तालाब में स्नान किया और पानी से बाहर आकर अपने दो नारंगी रंग के वस्त्र और कमरबंद पहन लिए, और अपने बुद्ध वस्त्र को इस प्रकार लपेटा कि उनका एक कंधा खुला रह गया। इसी वेश में वे भिक्षुओं से घिरे हुए अपने सुगंधित कक्ष में गए, जो मधुर सुगंध से महक रहा था। वहाँ वे बुद्ध आसन पर बैठे और जब भिक्षुओं ने अपने कर्तव्य पूरे कर लिए, तो वे उठे और अपने सिंहासन की रत्नजड़ित सीढ़ियों से भिक्षुओं को प्रोत्साहित किया और उन्हें अपने समक्ष से विदा किया। अब अपने सुगंधित कक्ष में प्रवेश करते हुए, वे सिंह की तरह अपनी दाहिनी ओर लेट गए।

शाम को, भिक्षु सत्य के हॉल में एकत्रित हुए और गुरु के संयम और प्रेममयी कृपा का अनुभव किया। "जब फसलें मुरझा रही थीं, तालाब सूख रहे थे और मछलियाँ और कछुए दयनीय स्थिति में थे, तब उन्होंने करुणापूर्वक उद्धारकर्ता के रूप में आगमन किया। स्नान

वस्त्र पहनकर, वे जेतवन मठ के तालाब की सीढ़ियों पर खड़े हुए और क्षण भर में आकाश से इतनी वर्षा कराई कि ऐसा लगा मानो कोसल पूरी तरह डूब जाएगा। और जब तक वे मठ लौटे, तब तक वे सभी को मन और शरीर के कष्टों से मुक्त कर चुके थे।"

उनकी बातें कुछ इस तरह चल रही थीं कि गुरुजी अपने सुगंधित कक्ष से निकलकर सत्य के हॉल में आए और उनसे पूछा कि वे किस विषय पर बात कर रहे हैं। गुरुजी ने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि भगवान बुद्ध ने संकट के समय वर्षा कराई हो। उन्होंने ऐसा ही तब किया था जब वे पशु जगत में जन्मे थे और मत्स्यवंश के राजा थे।" और ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई:-

---

बहुत समय पहले, इसी कोसल राज्य में और श्रावस्ती नगर में, जहाँ अब जेतवन मठ का तालाब है, वहाँ एक तालाब था, जो लताओं के घने जाल से घिरा हुआ था। उसी तालाब में बोधिसत्व रहते थे, जिन्होंने उन दिनों मछली का रूप धारण किया था। उस समय भी और आज भी, देश में सूखा पड़ा था; फसलें सूख गईं; तालाब और पोखर सूख गए; और मछलियाँ और कछुए कीचड़ में दब गए। ठीक उसी प्रकार, जब इस तालाब की मछलियाँ और कछुए कीचड़ में छिप गए, तो कौवे और अन्य पक्षी वहाँ झुंड बनाकर आ गए और उन्हें अपनी चोंच से नोच कर खा गए। अपने परिवार का यह हाल देखकर और यह जानकर कि संकट की घड़ी में उनके सिवा कोई उनकी रक्षा नहीं कर सकता, बोधिसत्व ने सच्चे मन से अच्छाई का वचन बोलने का निश्चय किया, और उसके प्रभाव से आकाश से वर्षा कराने का संकल्प लिया ताकि उनके परिवार को निश्चित मृत्यु से बचाया जा सके। काली मिट्टी को चीरते हुए, वह आगे बढ़ा, एक विशाल मछली, जो काजल से सने उत्तम चंदन के ताबूत की तरह मिट्टी से काली हो गई थी। धुले हुए माणिक के समान अपनी आँखें खोलकर, आकाश की ओर देखते हुए उसने देवों के राजा पज्जुन्न से कहा, "हे मेरे प्रिय पज्जुन्न, मेरे परिवार के कारण मेरा हृदय भारी है। मैं पूछता हूँ, ऐसा क्यों है कि जब मैं, जो धर्मात्मा हूँ, अपने परिवार के लिए दुखी हूँ, तो आप स्वर्ग से वर्षा नहीं भेजते? क्योंकि यद्यपि मेरा जन्म ऐसे स्थान पर हुआ है जहाँ परिवार को ही अपना शिकार बनाना प्रथा है, मैंने अपने बचपन से लेकर आज तक कभी भी चावल के दाने के आकार की मछली भी नहीं खाई; न ही मैंने कभी किसी जीव का प्राण छीना है। अपनी इस बात की सत्यता के कारण, मैं आपसे अपने परिवार पर वर्षा और राहत भेजने का आह्वान करता हूँ।" इसके साथ ही, उसने देवों के राजा पज्जुन्न को इस प्रकार पुकारा, जैसे कोई स्वामी अपने सेवक को पुकारता है, इस श्लोक में:-

पज्जुन्ना, गरज! चकमा दो, रुक जाओ, कौआ!
उसमें दु:ख की पीड़ा उत्पन्न करो; मुझे कष्टों से मुक्ति दिलाओ!
जिस प्रकार स्वामी अपने सेवक को बुलाता है, उसी प्रकार बोधिसत्व ने पज्जुन को बुलाया और भारी वर्षा करवाकर अनेकों को मृत्यु के भय से मुक्त किया। और जब उनका जीवन समाप्त हुआ, तो वे अपने कर्मों के फल के लिए परलोक सिधार गए।

"तो यह पहली बार नहीं है, भिक्षुओं," गुरु ने कहा, "कि भगवान बुद्ध ने वर्षा कराई है। उन्होंने अतीत में भी ऐसा ही किया था, जब वे मछली थे।" अपना प्रवचन समाप्त करते हुए उन्होंने जन्म का परिचय देते हुए कहा, "बुद्ध के शिष्य उन दिनों की मछलियाँ थे, आनंद देवों के राजा पज्जुन थे, और मैं स्वयं मछलियों का राजा हूँ।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **असांकिया-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-76-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 76
असामकीय-जातक

"गांव से मुझे कोई डर नहीं लगता।" - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में श्रावस्ती शहर में रहने वाले एक गृहस्थ (शिष्य) के बारे में सुनाई थी। परंपरा के अनुसार, यह व्यक्ति, जिसने मार्ग का अनुसरण किया था और जो एक सच्चा अनुयायी था, एक बार किसी काम से एक कारवां के सरदार के साथ यात्रा कर रहा था; जंगल में गाड़ियों को अलग कर दिया गया और एक शिविर बनाया गया; और वह सज्जन सरदार के पास एक पेड़ के नीचे इधर-उधर टहलने लगा।

अब पांच सौ लुटेरे, जो मौके का इंतजार कर रहे थे, धनुष, लाठी और अन्य हथियारों से लैस होकर शिविर को लूटने के इरादे से उस स्थान को घेर चुके थे। फिर भी वह साधु लगातार इधर-उधर चहलकदमी कर रहा था। लुटेरों ने उसे देखकर कहा, "ज़रूर वह उनका पहरेदार होगा; हम उसके सो जाने का इंतजार करेंगे और फिर उन्हें लूट लेंगे।" इस प्रकार, शिविर पर अचानक हमला करने में असमर्थ होने के कारण, वे वहीं रुक गए। फिर भी वह साधु रात के पहले पहर, मध्य पहर और आखिरी पहर में लगातार इधर-उधर चहलकदमी करता रहा। जब सुबह हुई, तो लुटेरे, जिन्हें मौका ही नहीं मिला था, अपने साथ लाए पत्थर और लाठियां फेंक कर भाग गए।

अपना काम पूरा करके, वह गृहस्थ श्रावस्ती शहर लौट आया और गुरु के पास जाकर उनसे यह प्रश्न पूछा, "हे गुरु, क्या मनुष्य अपनी रक्षा करते हुए दूसरों के भी रक्षक सिद्ध होते हैं?"

"जी हां, भाई। अपनी रक्षा करने में मनुष्य दूसरों की रक्षा करता है; दूसरों की रक्षा करने में वह अपनी रक्षा करता है।"

"ओह, भगवान बुद्ध का यह कथन कितना सटीक है! जब मैं एक कारवां-नेता के साथ यात्रा कर रहा था, तो मैंने एक पेड़ की डाल पर इधर-उधर टहलकर अपनी रक्षा करने का संकल्प लिया, और ऐसा करके मैंने पूरे कारवां की रक्षा की।"

गुरु ने कहा, "हे गृहस्थ, पुराने समय में भी बुद्धिमान और भले लोग अपनी रक्षा करते हुए दूसरों की भी रक्षा करते थे।" और ऐसा कहकर, गृहस्थ के अनुरोध पर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व ब्राह्मण के रूप में अवतरित हुए। परिपक्व होने पर, उन्हें कामवासनाओं से उत्पन्न होने वाली बुराइयों का ज्ञान हुआ और इसलिए उन्होंने संसार त्याग कर हिमालय के आसपास के क्षेत्र में एक संन्यासी के रूप में जीवन व्यतीत करना शुरू कर दिया। नमक और सिरके की आवश्यकता ने उन्हें भिक्षा मांगने के लिए ग्रामीण इलाकों की यात्रा पर प्रेरित किया और वे एक व्यापारी के काफिले के साथ चल पड़े। जब काफिला जंगल में एक स्थान पर रुका, तो वे काफिले के पास ही एक वृक्ष की तलहटी में बैठकर अंतर्दृष्टि के आनंद में मग्न हो गए।

रात के खाने के बाद पाँच सौ लुटेरे शिविर को लूटने के लिए चारों ओर से घेर लिया; लेकिन तपस्वी को देखकर वे रुक गए और बोले, "अगर वह हमें देख लेगा तो शोर मचा देगा; उसके सो जाने का इंतज़ार करो, फिर हम तुम्हें लूट लेंगे।" लेकिन तपस्वी पूरी रात इधर-उधर टहलता रहा; और लुटेरों को ज़रा भी मौका नहीं मिला! इसलिए उन्होंने अपने डंडे और पत्थर फेंक दिए और कारवां वालों को पुकारा;--"अरे, कारवां वालों! अगर वह तपस्वी पेड़ के नीचे टहल न रहा होता, तो हम तुम सबको लूट लेते। कल उसका ध्यान रखना और दावत देना!" और ऐसा कहकर वे चले गए। जब रात ढलकर उजाला हुआ, तो लोगों ने लुटेरों द्वारा फेंके गए डंडे और पत्थर देखे, और डरते-डरते कांपते हुए बोधिसत्व से आदरपूर्वक प्रणाम करते हुए पूछा कि क्या उन्होंने लुटेरों को देखा था। "जी हाँ, मैंने देखा था, महोदय," उन्होंने उत्तर दिया। "क्या इतने सारे लुटेरों को देखकर आप भयभीत या डरे नहीं?" "नहीं," बोधिसत्व ने कहा; "लुटेरों को देखकर भय केवल धनी लोगों को ही होता है। मैं तो निर्धन हूँ; मुझे क्यों डरना चाहिए? चाहे मैं गाँव में रहूँ या जंगल में, मुझे कभी कोई भय या डर नहीं होता।" और इस प्रकार, उन्हें सत्य सिखाने के लिए, उन्होंने यह श्लोक दोहराया:-

यह गांव मेरे मन में किसी प्रकार का भय उत्पन्न नहीं करता;
  मुझे जंगलों से निराशा होती है।
मैंने प्रेम और दान के बल पर जीत हासिल की है।
  मुक्ति का उत्तम मार्ग।

जब बोधिसत्व ने इस श्लोक में वर्णित सत्य का उपदेश कारवां के लोगों को दिया, तो उनके हृदयों में शांति का संचार हुआ और उन्होंने उनका आदर और श्रद्धापूर्वक सम्मान किया। उन्होंने जीवन भर चार गुणों का विकास किया और फिर ब्रह्मलोक (परमलोक) में पुनर्जन्म लिया।

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने संबंध को स्पष्ट किया और जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "बुद्ध के अनुयायी उन दिनों के कारवां वाले लोग थे, और मैं तपस्वी था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **महासुपिन-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

जातक क्रमांक 77
महासुपीना-जातक

"पहले बैल, फिर पेड़।" - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सोलह अद्भुत सपनों के बारे में सुनाई थी। परंपरा के अनुसार, एक रात के अंतिम पहर में कोसल के राजा, जो पूरी रात सो रहे थे, ने सोलह बड़े सपने देखे और डर के मारे जाग उठे कि कहीं ये सपने उनके लिए क्या संकेत न दें। मृत्यु का भय उन पर इतना प्रबल था कि वे हिल भी नहीं सके और अपने पलंग पर दुबक कर पड़े रहे। जब रात का उजाला हुआ, तो उनके ब्राह्मण और पुरोहित उनके पास आए और आदरपूर्वक पूछा कि महाराज अच्छी नींद सोए थे या नहीं।

"हे सलाहकारों, मैं चैन से कैसे सो सका?" राजा ने उत्तर दिया। "भोर होते ही मैंने सोलह भयानक सपने देखे, और तब से मैं भयभीत हूँ! हे सलाहकारों, मुझे बताओ कि इन सबका क्या अर्थ है।"

हम उनकी बातें सुनकर निर्णय ले सकेंगे।

तब राजा ने उन्हें अपने सपने बताए और पूछा कि उन सपनों का उनके लिए क्या परिणाम होगा।

ब्राह्मण हाथ मलने लगे! राजा ने पूछा, “हे ब्राह्मणों, तुम हाथ क्यों मल रहे हो?” ब्राह्मणों ने उत्तर दिया, “हे महाराज, ये बुरे सपने हैं।” राजा ने पूछा, “इनका क्या परिणाम होगा?” ब्राह्मणों ने उत्तर दिया, “तीन विपत्तियों में से एक आएगी: आपके राज्य को हानि, आपके जीवन को हानि, या आपके धन को हानि।” ब्राह्मणों ने पूछा, “क्या इसका कोई उपाय है या नहीं?” ब्राह्मणों ने उत्तर दिया, “निःसंदेह ये सपने इतने भयावह हैं कि इनका कोई उपाय नहीं है; फिर भी हम इनका उपाय अवश्य खोजेंगे। अन्यथा, हमारे इतने अध्ययन और ज्ञान का क्या लाभ?” ब्राह्मणों ने पूछा, “तो फिर इस विपत्ति को रोकने के लिए आप क्या करने का प्रस्ताव रखते हैं?” ब्राह्मणों ने उत्तर दिया, “हे महाराज, जहाँ भी चारों मार्ग मिलते हैं, हम वहाँ यज्ञ करेंगे।” राजा भयभीत होकर चिल्लाया, “हे मेरे सलाहकारों, मेरा जीवन आपके हाथों में है; शीघ्रता से मेरी रक्षा करें।” ब्राह्मणों ने प्रसन्न होकर सोचा, “हमें बड़ी धनराशि और हर प्रकार का भोजन मिलेगा”; और राजा से भय न करने का अनुरोध करते हुए वे महल से चले गए। नगर के बाहर उन्होंने एक यज्ञ-कुंड खोदा और उसमें पूर्णतः दोषरहित चौपायों और अनेक पक्षियों का समूह एकत्र किया। परन्तु फिर भी उन्हें कुछ कमी महसूस हुई और वे बार-बार राजा के पास यह या वह माँगने आते रहे। अब उनकी गतिविधियों पर रानी मल्लिका की नजर थी, जो राजा के पास आईं और उनसे पूछा कि ये ब्राह्मण बार-बार उनके पास क्यों आते हैं।

“मुझे आप पर ईर्ष्या हो रही है,” राजा ने कहा; “आपके कान में साँप घुसा हो और आपको पता भी न चले!” “महाराज, आपका क्या तात्पर्य है?” “मैंने बहुत ही अशुभ सपने देखे हैं! ब्राह्मणों ने बताया है कि ये तीन विपत्तियों में से एक का संकेत हैं; और वे इस विपत्ति को रोकने के लिए यज्ञ करने को उत्सुक हैं। और इसी कारण वे अक्सर यहाँ आते हैं।” “लेकिन महाराज, क्या आपने इस लोक और देवलोक के प्रधान ब्राह्मण से परामर्श लिया है?” “हे प्रिय, वह कौन हैं?” राजा ने पूछा। “क्या आप उस सर्वज्ञानी, सर्वज्ञ और पवित्र, निष्कलंक ब्राह्मण को नहीं जानते? निश्चय ही, भगवान बुद्ध आपके सपनों को समझेंगे। जाइए, उनसे पूछिए।” “हाँ, मैं पूछूँगा, महारानी,” राजा ने कहा। और वह मठ की ओर चल पड़ा, गुरु को प्रणाम किया और बैठ गया। “महाराज, आप इतनी सुबह यहाँ क्यों आए हैं?” गुरु ने मधुर स्वर में पूछा। राजा ने कहा, "हे प्रभु, भोर होने से ठीक पहले मैंने सोलह अद्भुत सपने देखे, जिनसे मैं इतना भयभीत हो गया कि मैंने उन्हें ब्राह्मणों को बताया। उन्होंने मुझे बताया कि मेरे सपने अशुभ संकेत हैं, और उस विपत्ति को रोकने के लिए उन्हें चारों दिशाओं के संगम पर यज्ञ करना होगा। इसलिए वे अपनी तैयारियों में लगे हुए हैं, और अनेक प्राणियों के मन में मृत्यु का भय मंडरा रहा है। परन्तु हे प्रभु, जो मनुष्य और देवों के संसार में सर्वोच्च हैं, जिनके दर्शन में भूतकाल, वर्तमान और भविष्य का समस्त ज्ञान है, हे भगवान बुद्ध, मैं आपसे अपने सपनों का परिणाम बताने का अनुरोध करता हूँ।"

"महाराज, यह सच है कि मेरे सिवा कोई और नहीं है जो आपके सपनों का अर्थ या उनके परिणाम बता सके। मैं आपको बताऊंगा। बस पहले मुझे अपने सपने वैसे ही बताइए जैसे वे आपको दिखाई दिए।"

“जी जनाब,” राजा ने कहा और तुरंत ही सपनों के प्रकट होने के क्रम के अनुसार यह सूची बनाना शुरू कर दिया:-

पहले बैल, फिर पेड़, फिर गायें, और फिर बछड़े।
घोड़ा, थाली, मादा सियार, पानी का बर्तन
एक तालाब, कच्चा चावल और चंदन।
और ऐसे लौकी जो डूब गए, और ऐसे पत्थर जो तैरने लगे,

उन मेंढकों के साथ जो काले सांपों को निगल जाते थे,
चमकीले पंखों वाले साथियों के समूह के साथ एक कौआ।
और भेड़िये बकरियों के डर से दहशत में हैं!
"महाराज, मुझे ये सपना कैसे आया? मुझे लगता है, काजल की तरह गहरे काले रंग के चार काले बैल चारों दिशाओं से राजमहल के प्रांगण में लड़ने के इरादे से आए; और लोग बैल-लड़ाई देखने के लिए उमड़ पड़े, यहाँ तक कि एक बड़ी भीड़ जमा हो गई। लेकिन बैलों ने सिर्फ दिखावटी लड़ाई की, दहाड़े और चिल्लाए, और अंत में बिना लड़े ही चले गए। ये मेरा पहला सपना था। इसका क्या परिणाम होगा?"

"महाराज, यह सपना आपके या मेरे दिनों में सार्थक नहीं होगा। परन्तु भविष्य में, जब राजा कंजूस और अधर्मी होंगे, और जब लोग अधर्मी होंगे, जब संसार भ्रष्ट हो जाएगा, जब अच्छाई कम होती जाएगी और बुराई तेजी से बढ़ती जाएगी, संसार के पतन के उन दिनों में आकाश से वर्षा नहीं होगी, आँधी के पैर लंगड़े हो जाएँगे, फसलें सूख जाएँगी, और देश में अकाल पड़ जाएगा। तब चारों दिशाओं से बादल वर्षा के लिए एकत्रित होंगे; पहले तो महिलाएं जल्दी से चावल और फसलें, जिन्हें उन्होंने धूप में सुखाने के लिए फैलाया था, घर के अंदर ले जाएँगी, कहीं फसल गीली न हो जाए; और फिर पुरुष फावड़ा और टोकरी लेकर तटबंधों को भरने में जुट जाएँगे। मानो आने वाली वर्षा का संकेत देते हुए, गरज उठेगी, बादलों से बिजली चमकेगी, परन्तु जैसे आपके सपने में बैल नहीं लड़े, वैसे ही बादल बिना वर्षा किए भाग जाएँगे। इस सपने का यही परिणाम होगा। परन्तु कोई हानि नहीं होगी।" इससे आपको यह पता चलेगा; क्योंकि आपने यह सपना भविष्य के बारे में ही देखा था। ब्राह्मणों ने आपको जो कुछ बताया, वह केवल अपनी जीविका कमाने के लिए कहा था।" और जब गुरु ने इस प्रकार इस सपने की पूर्ति बता दी, तो उन्होंने कहा, "हे महाराज, मुझे अपना दूसरा सपना बताइए।"

"महाराज," राजा ने कहा, "मेरा दूसरा सपना कुछ इस प्रकार था:- मुझे लगता है कि छोटे-छोटे पेड़ और झाड़ियाँ मिट्टी से फूट निकले, और जब वे मुश्किल से एक या दो बिन्दु ऊँचे हुए, तो उनमें फूल और फल लग गए! यह मेरा दूसरा सपना था; इसका क्या परिणाम होगा?"

"महाराज," गुरु ने कहा, "यह सपना उस समय पूरा होगा जब संसार का पतन हो जाएगा और मनुष्य अल्पायु होंगे। आने वाले समय में वासनाएँ प्रबल होंगी; कम उम्र की लड़कियाँ पुरुषों के साथ रहने लगेंगी और उनके साथ स्त्रियों के समान व्यवहार करेंगी, वे गर्भ धारण करेंगी और संतान उत्पन्न करेंगी। फूल उनकी संतानों का प्रतीक हैं, और फल उनके वंश का। परन्तु महाराज, आपको इससे भयभीत होने की कोई आवश्यकता नहीं है। हे महान राजा, मुझे अपना तीसरा सपना बताइए।"

"मुझे लगता है, महोदय, मैंने गायों को उसी दिन पैदा हुए बछड़ों का दूध पीते देखा। यह मेरा तीसरा सपना था। इसका क्या परिणाम होगा?"

"यह सपना भी आने वाले दिनों में ही पूरा होगा, जब बुढ़ापे का आदर करना बंद हो जाएगा। क्योंकि भविष्य में लोग माता-पिता या सास-ससुर का आदर न करते हुए स्वयं पारिवारिक संपत्ति का प्रबंधन करेंगे, और यदि उनकी इच्छा होगी तो वे वृद्धों को भोजन और वस्त्र देंगे, परन्तु यदि उनकी इच्छा न हो तो उपहार देने से इनकार कर देंगे। तब वृद्ध, निर्धन और आश्रित होकर, अपने बच्चों की कृपा से जीवन यापन करेंगे, जैसे बड़ी गायें एक दिन के बछड़ों का दूध पीती हैं। परन्तु तुम्हें इससे डरने की कोई आवश्यकता नहीं है। मुझे अपना चौथा सपना बताओ।"

"मुझे लगता है, महोदय, मैंने देखा कि कुछ लोग बलवान और मजबूत बैलों की जोड़ी को खोल रहे थे और उनकी जगह युवा बछड़ों को बोझ खींचने के लिए लगा रहे थे; लेकिन बछड़े इस काम को करने में असमर्थ साबित हुए, उन्होंने मना कर दिया और वहीं खड़े रह गए, जिससे गाड़ियाँ आगे नहीं बढ़ पाईं। यह मेरा चौथा सपना था। इसका क्या परिणाम होगा?"

"यहाँ भी, यह सपना भविष्य में, अधर्मी राजाओं के दिनों में ही पूरा होगा। क्योंकि आने वाले दिनों में, अधर्मी और कंजूस राजा, न्याय के जानकार, अनेक तरीकों से कार्य करने में सक्षम और कुशल बुद्धिमान सरदारों का सम्मान नहीं करेंगे; न ही वे न्याय और विधान के न्यायालयों में कानून के ज्ञान और विद्वता से संपन्न वृद्ध सलाहकारों को नियुक्त करेंगे। नहीं, वे तो युवा और नासमझ लोगों का सम्मान करेंगे और उन्हें न्यायालयों का अध्यक्ष नियुक्त करेंगे। और ये बाद वाले, जो शासन-प्रबंधन और व्यावहारिक ज्ञान दोनों से अनभिज्ञ होंगे, अपने सम्मान का भार उठाने या शासन करने में असमर्थ होंगे, बल्कि अपनी अक्षमता के कारण पद का बोझ उतार फेंकेंगे। जिस पर वृद्ध और बुद्धिमान सरदार, यद्यपि सभी कठिनाइयों का सामना करने में सक्षम होंगे, यह याद रखेंगे कि उन्हें कैसे नजरअंदाज किया गया था, और सहायता करने से इनकार कर देंगे, यह कहते हुए: 'यह हमारा काम नहीं है; हम बाहरी हैं; इसे आंतरिक मंडली के युवा ही संभाल लें।'" इसलिए वे अलग-थलग खड़े रहेंगे, और उन राजाओं पर चारों ओर से विनाश आ पड़ेगा। यह ठीक वैसा ही होगा जैसे जुआ उन युवा बछड़ों पर रखा गया था जो बोझ उठाने के लिए पर्याप्त मजबूत नहीं थे, न कि उन बलवान और मजबूत बैलों की जोड़ी पर, जो अकेले ही काम करने में सक्षम थे। हालांकि, आपको इससे डरने की कोई जरूरत नहीं है। मुझे अपना पाँचवाँ सपना बताओ।

"मुझे लगता है, महोदय, मैंने एक घोड़ा देखा जिसके दोनों ओर मुंह थे, और दोनों ओर से उसे चारा दिया जा रहा था, और वह दोनों मुंह से खा रहा था। यह मेरा पांचवा सपना था। इसका क्या परिणाम होगा?"

"यह सपना भी भविष्य में ही पूरा होगा, अधर्मी और मूर्ख राजाओं के दिनों में, जो अधर्मी और लालची लोगों को न्यायाधीश नियुक्त करेंगे। ये नीच, मूर्ख, भले लोगों से घृणा करने वाले, न्याय की कुर्सी पर बैठते हुए दोनों पक्षों से रिश्वत लेंगे, और उस घोड़े की तरह दोहरी भ्रष्टता से भर जाएंगे जिसने एक साथ दो मुँह से चारा खाया था। लेकिन तुम्हें इससे डरने की कोई ज़रूरत नहीं है। मुझे अपना छठा सपना बताओ।"

"मुझे लगता है, महोदय, मैंने लोगों को एक लाख सिक्कों के मूल्य का अच्छी तरह से साफ किया हुआ सोने का कटोरा पकड़े हुए देखा, और वे एक बूढ़े सियार से उसमें मल त्याग करने की विनती कर रहे थे। और मैंने उस जानवर को ऐसा करते हुए देखा। यह मेरा छठा सपना था। इसका क्या परिणाम होगा?"

"यह सपना भी भविष्य में ही पूरा होगा। आने वाले दिनों में, दुष्ट राजा, भले ही वे राजाओं के वंश से आए हों, अपने पुराने कुलीन वंश के वंशजों पर अविश्वास करेंगे और उन्हें सम्मान नहीं देंगे, बल्कि उनकी जगह नीच कुल के लोगों को ऊँचा उठाएंगे; जिससे कुलीन लोग नीचा गिरेंगे और नीच कुल के लोग प्रभुत्व प्राप्त करेंगे। तब बड़े परिवार मजबूरी में कुकर्मों से धनवान हुए लोगों पर निर्भर रहने को मजबूर होंगे और अपनी बेटियों का विवाह उन्हें सौंपेंगे। और कुलीन कन्याओं का नीच कुल के पुरुषों से विवाह सोने के कटोरे में बूढ़े सियार के मल के समान होगा। हालांकि, आपको इससे डरने की कोई जरूरत नहीं है। मुझे अपना सातवाँ सपना बताइए।"

"एक आदमी रस्सी बुन रहा था, महोदय, और बुनते-बुनते वह उसे अपने पैरों के पास फेंक देता था। उसकी बेंच के नीचे एक भूखी सियार लेटी थी, जो आदमी को पता चले बिना ही रस्सी खाती जा रही थी। यही मैंने देखा। यह मेरा सातवाँ सपना था। इसका क्या परिणाम होगा?"

"यह सपना भी भविष्य में ही पूरा होगा। क्योंकि आने वाले दिनों में स्त्रियाँ पुरुषों, शराब, कीमती वस्त्रों, घूमने-फिरने और संसार के सुखों की लालसा करेंगी। अपनी दुष्टता और व्यभिचार में डूबी ये स्त्रियाँ अपने प्रेमियों के साथ शराब पिएंगी; वे मालाओं, इत्रों और मलहमों से सज-धज कर इतराएंगी; और अपने घरेलू कर्तव्यों की परवाह किए बिना, वे अपने प्रेमियों की तलाश में घर की दीवारों की ऊँची दरारों में भी घात लगाए रहेंगी; हाँ, वे अगले दिन बोए जाने वाले अनाज को भी पीसकर रख देंगी ताकि उन्हें खुशी मिले; इन सभी तरीकों से वे अपने पतियों की मेहनत से खेतों और गौशालाओं में अर्जित धन को लूट लेंगी, उनकी संपत्ति को उसी प्रकार खा जाएँगी जैसे भूखा सियार रस्सियाँ बुनते समय रस्सियों को चट कर जाता है। लेकिन आपको इससे डरने की कोई जरूरत नहीं है। मुझे अपना आठवाँ सपना बताइए।"

"मुझे लगता है, महोदय, मैंने महल के द्वार पर एक बड़ा घड़ा देखा जो पानी से लबालब भरा हुआ था और उसके आसपास कई खाली घड़े रखे थे। चारों दिशाओं से, और बीच की चारों दिशाओं से भी, चारों जातियों के लोग लगातार पानी से भरे घड़े में पानी भरते हुए आ रहे थे। पानी छलक कर बह रहा था। फिर भी वे लगातार पानी से लबालब भरे घड़े में पानी डालते रहे, किसी ने भी खाली घड़ों की तरफ देखा तक नहीं। यह मेरा आठवां सपना था। इसका क्या परिणाम होगा?"

यह सपना भी भविष्य में ही पूरा होगा। क्योंकि आने वाले दिनों में संसार का पतन होगा; राज्य कमजोर हो जाएगा, उसके राजा गरीब और कंजूस हो जाएंगे; उनमें से सबसे श्रेष्ठ राजा के खजाने में 100,000 सिक्कों से अधिक नहीं होंगे। तब ये राजा अपनी आवश्यकता में समस्त देशवासियों को अपने लिए काम पर लगाएंगे; राजाओं के लिए परिश्रम करने वाले लोग अपना काम छोड़कर अनाज और दालें बोएंगे, पहरा देंगे, फसल काटेंगे, अनाज निकालेंगे और इकट्ठा करेंगे; राजाओं के लिए गन्ने बोएंगे, चीनी की चक्की बनाएंगे और चलाएंगे, और गुड़ को उबालेंगे; राजाओं के लिए फूलों के बाग और फलों के बाग लगाएंगे और फल इकट्ठा करेंगे। और जैसे ही वे तरह-तरह की उपज इकट्ठा करेंगे, वे शाही भंडारों को लबालब भर देंगे, अपने घर के खाली गोदामों की ओर जरा भी नहीं देखेंगे। इस प्रकार यह ऐसा होगा जैसे घड़े को भर देना, किसी की परवाह किए बिना। बिल्कुल खाली सपने। हालांकि, आपको इससे डरने की कोई जरूरत नहीं है। मुझे अपना नौवां सपना बताओ।

"मुझे लगता है, महोदय, मैंने एक गहरा तालाब देखा जिसके चारों ओर ढलानदार किनारे थे और जो पाँचों प्रकार के कमलों से आच्छादित था। हर तरफ से दो पैरों वाले और चार पैरों वाले जीव वहाँ पानी पीने के लिए आते थे। बीच में गहराई में कीचड़ था, लेकिन किनारे पर जहाँ विभिन्न जीव तालाब में उतरते थे, वहाँ पानी साफ और चमकीला था। यह मेरा नौवाँ सपना था। इसका क्या अर्थ होगा?"

"यह सपना भी भविष्य में ही पूरा होगा। क्योंकि आने वाले दिनों में राजा अधर्मी हो जाएँगे; वे अपनी इच्छा और लालसा के अनुसार शासन करेंगे और न्याय के अनुसार निर्णय नहीं लेंगे। ये राजा धन के लोभी होंगे और रिश्वतखोरी में लिप्त हो जाएँगे; वे अपनी प्रजा के

प्रति दया, प्रेम और करुणा नहीं दिखाएँगे, बल्कि क्रूर और निर्दयी होंगे, अपनी प्रजा को चक्की में गन्ने की तरह कुचलकर और उन पर हर छोटी से छोटी चीज़ पर कर लगाकर धन इकट्ठा करेंगे। दमनकारी कर चुकाने में असमर्थ, लोग गाँव-नगर आदि छोड़कर राज्य की सीमाओं पर शरण लेंगे; देश का मध्य भाग वीरान हो जाएगा, जबकि सीमाएँ लोगों से भरी होंगी, जैसे तालाब के बीच का पानी मटमैला और किनारे का साफ होता है। लेकिन तुम्हें इससे डरने की कोई ज़रूरत नहीं है। मुझे अपना दसवाँ सपना बताओ।"

"मुझे लगता है, महोदय, मैंने एक बर्तन में चावल उबलते हुए देखे, लेकिन वे पक नहीं रहे थे। न पकने से मेरा मतलब है कि ऐसा लग रहा था जैसे उन्हें अलग-अलग हिस्सों में बाँटकर रखा गया हो, जिससे खाना पकाने की प्रक्रिया तीन अलग-अलग चरणों में चल रही हो। एक हिस्सा गीला था, एक हिस्सा सख्त और कच्चा था, और एक हिस्सा बस ठीक से पका हुआ था। यह मेरा दसवाँ सपना था। इसका क्या परिणाम होगा?"

यह सपना भी भविष्य में ही पूरा होगा। क्योंकि आने वाले दिनों में राजा अधर्मी हो जाएँगे; राजाओं के आसपास के लोग भी अधर्मी हो जाएँगे, साथ ही ब्राह्मण, गृहस्थ, नगरवासी और गाँववासी भी; हाँ, सभी लोग समान रूप से अधर्मी हो जाएँगे, यहाँ तक कि ऋषि और ब्राह्मण भी। इसके बाद, उनके संरक्षक देवता—जिनकी वे पूजा करते हैं, वृक्षों की आत्माएँ और वायु की आत्माएँ—भी अधर्मी हो जाएँगे। इन अधर्मी राजाओं के राज्य में बहने वाली हवाएँ भी क्रूर और अराजक हो जाएँगी; वे आकाश के महलों को हिला देंगी और इस प्रकार वहाँ निवास करने वाली आत्माओं के क्रोध को भड़काएँगी, जिससे वे वर्षा नहीं होने देंगे—या, यदि वर्षा होती भी है, तो वह पूरे राज्य में एक साथ नहीं होगी, और न ही वह सुहावनी वर्षा सभी जोती या बोई गई भूमि पर समान रूप से बरसेगी ताकि उनकी आवश्यकता पूरी हो सके। और, जैसे पूरे राज्य में, वैसे ही प्रत्येक जिले और गाँव में और प्रत्येक अलग-अलग तालाब या झील पर भी। झील पर एक ही समय में पूरे क्षेत्र में बारिश नहीं होगी; अगर ऊपरी हिस्से में बारिश हो तो निचले हिस्से में नहीं होगी; कहीं तेज बारिश से फसलें बर्बाद हो जाएंगी, कहीं सूखे से सूख जाएंगी, और कहीं हल्की बारिश से सींचने पर तेज़ी से पनपेंगी। इसलिए एक ही राज्य की सीमाओं के भीतर बोई गई फसलें—जैसे एक ही बर्तन में चावल—एक समान नहीं होंगी। लेकिन आपको इससे डरने की कोई ज़रूरत नहीं है। मुझे अपना ग्यारहवाँ सपना बताओ।

"मुझे लगता है, महोदय, मैंने खट्टी छाछ को 100,000 सिक्कों के बराबर कीमती चंदन के बदले में बिकते देखा। यह मेरा ग्यारहवाँ सपना था। इसका क्या परिणाम होगा?"

यह सपना भी भविष्य में ही पूरा होगा—जब मेरी शिक्षा का प्रभाव कम हो जाएगा। क्योंकि आने वाले दिनों में बहुत से लालची और निर्लज्ज भाई उठेंगे, जो अपने पेट के लिए उन्हीं शब्दों का प्रचार करेंगे जिनमें मैंने लालच की निंदा की थी! क्योंकि उन्होंने अपने पेट के कारण त्याग दिया है और दूसरे संप्रदायों (गलत विश्वासियों) का साथ दिया है, इसलिए वे अपने उपदेश से निर्वाण प्राप्त करने में असफल रहेंगे। नहीं, उपदेश देते समय उनका एकमात्र विचार मीठे शब्दों और मधुर आवाजों से लोगों को महंगे वस्त्र और इसी तरह की वस्तुएँ देने के लिए प्रेरित करना होगा। कुछ अन्य लोग सड़कों पर, गलियों के कोनों पर, राजाओं के महलों के द्वारों पर, आदि स्थानों पर बैठकर धन के लिए उपदेश देंगे, हाँ, केवल सिक्कों, आधे सिक्कों, पदों या मसकों के लिए! (*1) और इस प्रकार वे भोजन, वस्त्र या सिक्कों के बदले अपना लेन-देन करते रहेंगे। और मेरे उपदेश के आधे-अधूरे कथन, जिनका मूल्य निर्वाण है, वे उन लोगों के समान होंगे जिन्होंने एक लाख लाख की कीमत का कीमती चंदन छाछ के बदले बेच दिया। लेकिन आपको इससे डरने की कोई जरूरत नहीं है। मुझे अपना बारहवां सपना बताओ।

"मुझे लगता है, महोदय, मैंने पानी में खाली कद्दू डूबते हुए देखे। इसका क्या परिणाम होगा?"

यह सपना भी भविष्य में, अधर्मी राजाओं के दिनों में, जब संसार भ्रष्ट हो जाएगा, तब ही पूरा होगा। क्योंकि उन दिनों में राजा कुलीन वर्ग के वंशजों पर नहीं, बल्कि केवल निम्न वर्ग के लोगों पर ही कृपा करेंगे; और ये निम्न वर्ग के लोग बड़े स्वामी बन जाएँगे, जबकि कुलीन लोग गरीबी में डूब जाएँगे। राजमहल में, महल के द्वारों पर, सभा कक्ष में और न्याय अदालतों में, केवल निम्न वर्ग के लोगों (जिनका प्रतीक खाली कद्दू हैं) के शब्द ही मान्य होंगे, मानो वे डूबकर तल पर टिक गए हों। इसी प्रकार भिक्षु संघ की सभाओं में, छोटी-बड़ी सभाओं में, और प्यालों, वस्त्रों, आवास आदि के बारे में पूछताछ में, केवल दुष्ट और नीच लोगों की सलाह को ही असाधारण महत्व दिया जाएगा, विनम्र भिक्षुओं की सलाह को नहीं। इस प्रकार हर जगह ऐसा ही होगा जैसे खाली कद्दू डूब गए हों। हालाँकि, आपको इससे डरने की कोई आवश्यकता नहीं है। मुझे अपना विचार बताइए। तेरहवां सपना।"

इस पर राजा ने कहा, "महाराज, मुझे लगता है कि मैंने घरों जितने बड़े ठोस चट्टान के विशालकाय टुकड़े पानी पर जहाजों की तरह तैरते हुए देखे। इसका क्या परिणाम होगा?"

"यह सपना भी उन दिनों से पहले पूरा नहीं होगा जिनके बारे में मैंने बात की है। क्योंकि उन दिनों में अधर्मी राजा नीच कुल के लोगों का सम्मान करेंगे, जो महान स्वामी बन जाएंगे, जबकि कुलीन लोग गरीबी में डूब जाएंगे। कुलीनों को नहीं, बल्कि केवल कुकर्मों से शीघ्रता

से ऊपर उठे लोगों को ही सम्मान दिया जाएगा। राजमहल में, सभा कक्ष में, या न्याय अदालतों में, कानून के विद्वान कुलीनों (और ठोस चट्टानें उन्हीं का प्रतीक हैं) के शब्द व्यर्थ ही बह जाएंगे, और लोगों के दिलों में गहराई तक नहीं उतरेंगे; जब वे बोलेंगे, तो कुकर्मों से शीघ्रता से ऊपर उठे लोग केवल उनका उपहास करेंगे और कहेंगे, 'ये लोग क्या कह रहे हैं?'" जैसा कि पहले कहा गया है, भाइयों की सभाओं में भी लोग भाइयों में श्रेष्ठ लोगों को आदर के योग्य नहीं समझते; ऐसे लोगों के शब्द गहराई तक नहीं उतरते, बल्कि व्यर्थ ही बह जाते हैं, जैसे चट्टानें पानी पर तैरती हैं। लेकिन आपको इससे डरने की कोई ज़रूरत नहीं है। मुझे अपना चौदहवाँ सपना बताइए।

"मुझे लगता है, महोदय, मैंने नन्हे-मुन्ने मेंढक देखे, जो नन्हे फूलों की कलियों से भी छोटे थे, वे तेज़ी से विशाल काले साँपों का पीछा कर रहे थे, उन्हें कमल की डंडियों की तरह काट रहे थे और निगल रहे थे। इसका क्या परिणाम होगा?"

"यह सपना भी आने वाले उन दिनों तक पूरा नहीं होगा, जैसे दिनों की मैंने बात की है, जब दुनिया का पतन हो रहा होगा। तब पुरुषों के जुनून इतने प्रबल और उनकी वासना इतनी तीव्र होगी कि वे अपनी सबसे छोटी पत्नियों के गुलाम बन जाएंगे, जिनके अधीन केवल दास और नौकर, बैल, भैंस और सभी मवेशी, सोना-चांदी और घर का सारा सामान होगा। यदि बेचारा पति पूछे कि पैसा या वस्त्र कहाँ है, तो उसे तुरंत कहा जाएगा कि वह जहाँ है वहीं है, उसे अपने काम से मतलब रखना चाहिए और इस बात की जिज्ञासा नहीं करनी चाहिए कि उसके घर में क्या है और क्या नहीं है। और इस तरह पत्नियाँ गाली-गलौज और ताने मारकर कई तरीकों से अपने पतियों पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर लेंगी, जैसे वे दासों और बंधुआ नौकरों पर करती हैं। यह वैसा ही होगा जैसे नन्हे-मुन्ने मेंढक, जो फूलों की छोटी कलियों से भी छोटे होते हैं, बड़े काले साँपों को निगल जाते थे। लेकिन आपको इससे डरने की कोई ज़रूरत नहीं है। मुझे बताओ।"
आपका पंद्रहवां सपना।"

"मुझे लगता है, महोदय, मैंने एक गाँव का कौआ देखा, जिसमें दसों बुराइयाँ निवास करती थीं, और उसके साथ उन पक्षियों का एक समूह था, जिन्हें उनकी सुनहरी चमक के कारण शाही स्वर्ण बत्तख कहा जाता है। इसका क्या परिणाम होगा?"

"यह सपना भी भविष्य में, कमज़ोर राजाओं के शासनकाल तक पूरा नहीं होगा। आने वाले दिनों में ऐसे राजा उठेंगे जिन्हें हाथियों या अन्य कलाओं का कोई ज्ञान नहीं होगा और वे युद्ध के मैदान में डरपोक होंगे। अपने राज-पाट से बेदखल होने के डर से वे अपने समकक्षों को नहीं, बल्कि अपने नौकरों, स्नानागारों, नाइयों और ऐसे ही लोगों को सत्ता में बिठाएंगे। इस प्रकार, राज-कृपा से वंचित और अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ, ये कुलीन लोग कुकर्मों से धनवान हुए लोगों की सेवा में नाचने-गाने लगेंगे, ठीक वैसे ही जैसे कौवे के पास शाही सोने की बत्तखें सेवक के रूप में थीं। लेकिन आपको इससे डरने की कोई ज़रूरत नहीं है। मुझे अपना सोलहवाँ सपना बताइए।"

"पहले तो, साहब, बकरियों का शिकार हमेशा पैंथर ही करते थे; लेकिन मुझे लगता है मैंने बकरियों को पैंथरों का पीछा करते और उन्हें खाते हुए देखा—चबा-चबा!—और दूर से बकरियों को देखते ही डर से कांपते हुए भेड़िये भाग गए और घनी झाड़ियों में छिप गए। ऐसा ही मेरा सपना था। इसका क्या अंजाम होगा?"

"यह सपना भी भविष्य में, अधर्मी राजाओं के शासनकाल तक पूरा नहीं होगा। उन दिनों में नीच कुल के लोग सामंत बन जाएंगे और राजा के चहेते बन जाएंगे, जबकि कुलीन लोग गुमनामी और विपत्ति में डूब जाएंगे। राजा की कृपा से न्यायालयों में प्रभाव प्राप्त करके, कुकर्मों द्वारा तेजी से ऊपर उठे ये लोग पुश्तैनी जागीरों, वस्त्रों और पुराने कुलीनों की सारी संपत्ति पर दावा करेंगे। और जब ये बाद वाले न्यायालयों के समक्ष अपने अधिकारों की पैरवी करेंगे, तब राजा के चहेते उन्हें लाठियों से पिटवाएंगे, उनका गला पकड़ेंगे और अपमानजनक शब्दों से उनका अपमान करेंगे, जैसे: 'अपनी औकात जानो, मूर्खों! क्या? हमसे बहस करोगे? राजा को तुम्हारी धृष्टता का पता चल जाएगा, और हम तुम्हारे हाथ-पैर कटवा देंगे और अन्य दंडात्मक कार्रवाई करेंगे!'" इस पर भयभीत कुलीन लोग यह दावा करेंगे कि उनकी संपत्ति वास्तव में उन अभिमानी लोगों की है जो कुकर्मों से शीघ्र धनवान हुए हैं, और वे अपने प्रिय लोगों से उसे स्वीकार करने को कहेंगे। फिर वे उसे अपने घर ले जाकर भय से कांपने लगेंगे। साथ ही, दुष्ट भाई भले और नेक भाइयों को तब तक सताते रहेंगे, जब तक कि उन्हें कोई सहायता न मिले और वे जंगल में भाग न जाएं। नीच और दुष्ट भाइयों द्वारा कुलीनों और भले भाइयों पर किया गया यह अत्याचार बकरियों द्वारा भेड़ियों को डराने जैसा होगा। हालांकि, आपको इससे डरने की कोई आवश्यकता नहीं है। क्योंकि यह स्वप्न भी भविष्य की ही बात करता है। ब्राह्मणों को ऐसी भविष्यवाणी करने के लिए सत्य या प्रेम प्रेरित नहीं किया गया था। नहीं, यह लाभ का लालच और संपत्ति की लालसा से उत्पन्न अंतर्दृष्टि थी जिसने उनके सभी स्वार्थपूर्ण कथनों को आकार दिया।

इस प्रकार गुरु ने इन सोलह महान स्वप्नों का महत्व समझाते हुए कहा, “हे महाराज, आप इन स्वप्नों को देखने वाले पहले व्यक्ति नहीं हैं; ये स्वप्न अतीत के राजाओं ने भी देखे थे; और तब भी, और अब भी, ब्राह्मण इन्हें यज्ञों का बहाना मानते थे; जिस पर बुद्धिमान और भले लोगों के आग्रह पर बोधिसत्व से परामर्श लिया जाता था, और उन्होंने प्राचीन काल में इन स्वप्नों की व्याख्या ठीक उसी प्रकार की थी जैसे अब की गई है।” और ऐसा कहकर, राजा के अनुरोध पर, उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब उत्तर देश में एक ब्राह्मण परिवार में बोधिसत्व का जन्म हुआ। जब वे समझदार हुए, तो उन्होंने संसार त्याग कर संन्यासी जीवन व्यतीत किया; उन्होंने उच्च ज्ञान और सिद्धियाँ प्राप्त कीं और हिमालय देश में अंतर्दृष्टि से प्राप्त आनंद में निवास किया।

उन दिनों, ठीक इसी प्रकार, ब्रह्मदत्त ने बनारस में ये सपने देखे और ब्राह्मणों से इनके बारे में पूछा। ब्राह्मण, तब भी और अब भी, यज्ञों में जुट गए। उनमें एक विद्वान और बुद्धिमान युवक ब्राह्मण था, जो राजा के पुरोहित का शिष्य था। उसने अपने गुरु से कहा, "गुरुजी, आपने मुझे तीनों वेदों का ज्ञान दिया है। क्या उसमें यह वचन नहीं है कि 'एक प्राणी को मारने से दूसरे को जीवन नहीं मिलता'?" "मेरे पुत्र, इससे हमें धन मिलेगा, बहुत सारा धन। तुम तो केवल राजा के खजाने को बचाने के लिए चिंतित दिखते हो!" "आपकी इच्छा के अनुसार," युवक ब्राह्मण ने कहा; "जहाँ तक मेरी बात है, मैं यहाँ आपके साथ और क्यों प्रतीक्षा करूँ?" इतना कहकर वह उन्हें छोड़कर राज उद्यान चला गया।

उसी दिन बोधिसत्व ने यह सब जानकर मन ही मन सोचा, "यदि मैं आज मनुष्यों के लोक में जाऊँ, तो मैं असंख्य लोगों को उनके बंधनों से मुक्त कराऊँगा।" अतः वे वायु में विचरण करते हुए राजमहल में उतरे और स्वर्ण प्रतिमा के समान तेजस्वी होकर अनुष्ठानिक शिला पर विराजमान हो उठे। युवा ब्राह्मण उनके पास आया और आदरपूर्वक मित्रता भाव से बोधिसत्व के पास बैठ गया। मधुर चर्चाएँ हुईं; और बोधिसत्व ने युवा ब्राह्मण से पूछा कि क्या राजा न्यायपूर्ण शासन करते हैं। युवक ने उत्तर दिया, "महोदय, राजा स्वयं धर्मात्मा हैं; परन्तु ब्राह्मण उन्हें बुराई की ओर ले जाते हैं। राजा द्वारा अपने सोलह स्वप्नों के बारे में पूछे जाने पर, ब्राह्मणों ने यज्ञ करने का अवसर पाकर उस पर कार्य करना शुरू कर दिया। हे महाराज, क्या यह अच्छा नहीं होगा कि आप राजा को उनके स्वप्नों का वास्तविक अर्थ बताएँ और इस प्रकार असंख्य प्राणियों को उनके भय से मुक्त कराएँ?" "परन्तु, मेरे पुत्र, मैं राजा को नहीं जानता, न ही वह मुझे। फिर भी, यदि वह यहाँ आकर मुझसे पूछे, तो मैं उसे बता दूँगा।" "मैं राजा को ले आता हूँ, महाराज," युवा ब्राह्मण ने कहा; "यदि आप कृपा करके मेरे लौटने तक एक मिनट यहाँ प्रतीक्षा करें।" बोधिसत्व की सहमति प्राप्त करके, वह राजा के सामने गया और कहा कि राजमहल में एक वायु-यात्री तपस्वी अवतरित हुआ है, जिसने कहा है कि वह राजा के स्वप्नों की व्याख्या करेगा; क्या महाराज अपने स्वप्नों को इस तपस्वी को नहीं बताएँगे?

यह सुनकर राजा तुरंत अपने कई सेवकों के साथ उद्यान में गए। तपस्वी को प्रणाम करके वे उनके पास बैठ गए और उनसे पूछा कि क्या यह सच है कि वे उनके सपनों का परिणाम जानते हैं। बोधिसत्व ने कहा, "जी हाँ, महाराज; लेकिन पहले मुझे आपके सपने वैसे ही सुनने दीजिए जैसे आपने देखे थे।" राजा ने उत्तर दिया, "ज़रूर, महाराज;" और उन्होंने इस प्रकार सुनाना शुरू किया:-

पहले बैल, फिर पेड़, फिर गायें, और फिर बछड़े।
घोड़ा, थाली, मादा सियार, पानी का बर्तन
एक तालाब, कच्चा चावल और चंदन।
और ऐसे लौकी जो डूब गए, और ऐसे पत्थर जो तैरने लगे,
...और इसी तरह आगे बढ़ते हुए अंत में...
और भेड़िये बकरियों के डर से सहमे हुए थे।
और महाराज ने अपने सपनों का वर्णन ठीक उसी तरह किया जैसे राजा पसेनादि (प्रसेनजित) ने किया था।

"बस करो," महान पुरुष ने कहा; "तुम्हें इन सब बातों से डरने या घबराने की कोई ज़रूरत नहीं है।" इस प्रकार राजा को आश्वस्त करने और असंख्य लोगों को बंधन से मुक्त करने के बाद, बोधिसत्व ने फिर से आकाश में अपना स्थान ग्रहण किया, जहाँ से उन्होंने राजा को प्रोत्साहित किया और उन्हें पंच आज्ञाओं में स्थापित किया, और अंत में ये शब्द कहे: "हे राजा, अब से ब्राह्मणों के साथ यज्ञ के लिए पशुओं का वध न करो।" अपना उपदेश समाप्त करके, बोधिसत्व सीधे वायु में अपने निवास स्थान पर चले गए। और राजा, अपने द्वारा सुनी गई शिक्षा में दृढ़ रहते हुए, भिक्षावृत्ति और अन्य अच्छे कार्यों का जीवन व्यतीत करने के बाद अपने कर्मों के अनुसार फल भोगने के लिए इसलोक सिधार गए।

उनका उपदेश समाप्त हुआ और गुरु ने कहा, "तुम्हें इन सपनों से डरने की कोई ज़रूरत नहीं है; यज्ञ को हटा दो!" यज्ञ को हटवाकर और अनेक प्राणियों के जीवन को बचाकर, उन्होंने संबंध स्पष्ट किया और जन्म का वर्णन करते हुए कहा, "आनंद उस समय के राजा थे, सारिपुत्र युवा ब्राह्मण थे और मैं तपस्वी था।"

(पाली टिप्पणी: लेकिन भगवान बुद्ध के निधन के बाद, महान संपादन के संपादकों ने पहली तीन पंक्तियों को टीका में शामिल किया, और 'और डूबे हुए लौकी' से शुरू होने वाली पंक्तियों को एक श्लोक में मिलाकर (उसके बाद) पूरी कहानी को प्रथम पुस्तक में डाल दिया।)

फुटनोट:

(1) प्राचीन सिक्के

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **इलिसा-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-78-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 78
इल्लिसा-जातक

"दोनों आँखें सिकोड़ते हैं।" - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक कंजूस कोषाध्यक्ष के बारे में सुनाई थी। हमें बताया जाता है कि राजगृह नगर के पास ही जगघरी नाम का एक कस्बा था, जहाँ एक कंजूस कोषाध्यक्ष रहता था, जिसकी संपत्ति अस्सी करोड़ (10 मिलियन) थी! घास के तिनके जितना तेल भी वह न तो दान करता था और न ही अपने उपभोग के लिए इस्तेमाल करता था। उसने अपनी सारी संपत्ति न तो अपने परिवार के लिए, न ही ऋषियों और ब्राह्मणों के लिए इस्तेमाल की: वह किसी भूत-प्रेत से ग्रस्त तालाब की तरह अनुपयोगी पड़ी रही। एक दिन गुरु जी भोर में अत्यंत करुणा से भर उठे और जब उन्होंने ब्रह्मांड भर में मोक्ष के योग्य लोगों का अवलोकन किया, तो उन्हें यह अहसास हुआ कि यह कोषाध्यक्ष अपनी पत्नी के साथ लगभग चार सौ मील दूर स्थित मोक्ष के मार्ग पर चलने के लिए नियत है।

एक दिन पहले, प्रधान कोषाध्यक्ष राजा से मिलने महल गए थे और घर लौटते समय उन्होंने एक देहाती को देखा, जो अंदर से बिल्कुल खाली था, दलिया से भरा केक खा रहा था। यह देखकर उनके मन में भी दलिया खाने की तीव्र इच्छा जाग उठी! लेकिन घर पहुँचकर उन्होंने सोचा, "अगर मैं कहूँ कि मुझे दलिया खाने का मन है, तो बहुत सारे लोग मेरे साथ खाना खाने के लिए इकट्ठा हो जाएँगे; और इसका मतलब होगा कि मेरा सारा चावल, घी और चीनी खत्म हो जाएगी। मुझे किसी से एक शब्द भी नहीं कहना चाहिए।" इसलिए वे अपनी इस तीव्र इच्छा से जूझते हुए इधर-उधर भटकते रहे। जैसे-जैसे घंटे बीतते गए, उनका रंग पीला पड़ता गया और उनके दुबले-पतले शरीर पर नसें उभरने लगीं। अंत में और सहन न कर पाने पर वे अपने कमरे में गए और बिस्तर को गले लगाकर लेट गए। लेकिन फिर भी उन्होंने किसी से एक शब्द भी नहीं कहा, क्योंकि उन्हें डर था कि कहीं उनका सारा धन बर्बाद न हो जाए! फिर उसकी पत्नी उसके पास आई और उसकी पीठ सहलाते हुए बोली: "क्या बात है, मेरे पति?"

“कुछ नहीं,” उसने कहा। “शायद राजा आपसे नाराज़ हैं?” “नहीं, ऐसा नहीं है।” “क्या आपके बच्चों या नौकरों ने आपको परेशान करने के लिए कुछ किया है?” “ऐसा भी कुछ नहीं।” “तो फिर, क्या आपकी कोई इच्छा है?” लेकिन फिर भी वह एक शब्द भी नहीं बोला, क्योंकि उसे यह बेतुका डर था कि कहीं उसकी सारी संपत्ति बर्बाद न हो जाए; वह चुपचाप अपने बिस्तर पर लेटा रहा। “बोलो पतिदेव,” पत्नी ने कहा; “बताओ तुम्हारी क्या इच्छा है।” “हाँ,” उसने घबराकर कहा, “मेरी एक इच्छा है।” “और वह क्या है, मेरे पतिदेव?” “मुझे भरवां केक खाने को चाहिए!” “अब पहले क्यों नहीं बताया? आप काफी अमीर हैं! मैं पूरे जगघरी कस्बे के लिए काफी केक बना दूँगी।” “उनकी चिंता क्यों? उन्हें अपना पेट भरने के लिए काम करना पड़ता है।” “तो फिर, मैं सिर्फ अपनी गली के लिए ही बनाऊँगा।” “आप कितने अमीर हैं!” “तो फिर, मैं सिर्फ अपने घर के लिए ही बनाऊँगा।” "तुम तो बहुत खर्चीली हो!" "बहुत खूब, मैं सिर्फ बच्चों के लिए ही खाना बनाऊंगी।" "उनकी चिंता क्यों?" "तो फिर, मैं सिर्फ हम दोनों के लिए ही खाना बनाऊंगी।" "तुम्हें इसमें दखल क्यों देना चाहिए?" "तो फिर, मैं सिर्फ तुम्हारे लिए ही खाना बनाऊंगी," पत्नी ने कहा।

“धीरे से,” प्रधान कोषाध्यक्ष ने कहा; “इस जगह पर खाना पकाने के संकेतों पर बहुत से लोग नज़र रख रहे हैं। टूटे हुए चावल चुन लो, साबुत चावल को ध्यान से छोड़ दो, और एक अंगीठी, खाना पकाने के बर्तन, थोड़ा सा दूध, घी, शहद और गुड़ ले लो; फिर घर की सातवीं मंजिल पर जाओ और वहाँ खाना पकाओ। मैं वहाँ अकेले और बिना किसी बाधा के बैठकर भोजन करूँगा।”

पति की इच्छा का पालन करते हुए, पत्नी ने सभी आवश्यक सामान ऊपर भिजवाए, स्वयं भी ऊपर तक चढ़ी, नौकरों को विदा किया और कोषाध्यक्ष को आने का संदेश भेजा। कोषाध्यक्ष ऊपर चढ़ते गए, एक-एक करके सभी दरवाजे बंद करते गए और कुंडी लगाते गए, अंत में वे सातवीं मंजिल पर पहुँचे, जहाँ का दरवाजा भी उन्होंने कसकर बंद कर दिया। फिर वे बैठ गए। पत्नी ने अंगीठी में आग जलाई, अपना बर्तन रखा और केक पकाने लगी।

अब सुबह तड़के, गुरु ने महान भिक्षु मोग्गल्याना से कहा, "मोग्गल्याना, राजगृह नगर के पास जगघेरी कस्बे में रहने वाला यह कंजूस करोड़पति स्वयं केक खाना चाहता है, और दूसरों को पता चलने से इतना डरता है कि उसने अपने लिए केक सातवीं मंजिल पर बनवाए हैं। तुम वहाँ जाओ; उस व्यक्ति को आत्म-त्याग का मार्ग दिखाओ, और दिव्य शक्ति से पति-पत्नी, केक, दूध, घी (स्पष्ट मक्खन) और सब कुछ लेकर यहाँ जेतवन मठ में आ जाओ। आज मैं और पाँच सौ भिक्षु घर पर ही रहेंगे, और मैं उनके लिए केक बनाऊँगा और उन्हें भोजन कराऊँगा।"

गुरु के आदेश का पालन करते हुए, वरिष्ठ भिक्षु अलौकिक शक्ति से जगघेरी नगर पहुँचे और अपने वस्त्रों में सजे-धजे, रत्नजड़ित मूर्ति की तरह चमकते हुए, कक्ष की खिड़की के सामने हवा में विश्राम करने लगे। वरिष्ठ भिक्षु के इस अप्रत्याशित दृश्य को देखकर प्रधान कोषाध्यक्ष भय से काँप उठे। उन्होंने मन ही मन सोचा, "मैं ऐसे आगंतुकों से बचने के लिए ही यहाँ चढ़ा था: और अब उनमें से एक खिड़की पर खड़ा है!" और जो बात उन्हें समझनी ही थी, उसे न समझ पाने के कारण वे आग में फेंके गए चीनी-नमक की तरह क्रोध से भड़क उठे और बोले—"हे ऋषि, हवा में खड़े रहने से आपको क्या मिलेगा? आप चाहे हवा में इधर-उधर चक्कर लगाएँ, फिर भी आपको कुछ नहीं मिलेगा।"

बड़े भिक्षु हवा में अपनी जगह पर इधर-उधर टहलने लगे! कोषाध्यक्ष ने कहा, "इधर-उधर टहलने से क्या मिलेगा? तुम हवा में पालथी मारकर ध्यान कर सकते हो, लेकिन फिर भी कुछ नहीं मिलेगा।" बड़े भिक्षु पालथी मारकर बैठ गए! तब कोषाध्यक्ष ने कहा, "वहाँ बैठने से क्या मिलेगा? तुम आकर खिड़की की चौखट पर खड़े हो सकते हो; लेकिन उससे भी कुछ नहीं मिलेगा!" बड़े भिक्षु खिड़की की चौखट पर खड़े हो गए। कोषाध्यक्ष ने कहा, "खिड़की की चौखट पर खड़े होने से क्या मिलेगा? तुम धुआँ निकाल सकते हो, फिर भी कुछ नहीं मिलेगा!" तब बड़े भिक्षु ने इतना धुआँ निकाला कि पूरा महल धुएँ से भर गया। कोषाध्यक्ष की आँखों में सुई चुभने जैसा दर्द होने लगा; और अंत में अपने घर में आग लगने के डर से उसने यह कहने से खुद को रोक लिया—"अगर तुम जलकर राख भी हो जाओगे, तो भी कुछ नहीं मिलेगा।" उसने मन ही मन सोचा, "ये बुजुर्ग भिक्षु तो बड़े जिद्दी हैं! खाली हाथ जाने को तैयार ही नहीं! मुझे इन्हें कम से कम एक रोटी तो देनी ही पड़ेगी।" इसलिए उसने अपनी पत्नी से कहा, "मेरी प्यारी, एक छोटी सी रोटी बनाओ और उस ऋषि को दे दो ताकि वो चले जाएं।"

तो उसने एक बर्तन में थोड़ा सा आटा गूंथा। लेकिन आटा फूलता चला गया और इतना फूल गया कि पूरा बर्तन भर गया, और एक बड़ा सा केक बन गया! "तुमने कितना सारा आटा इस्तेमाल किया होगा!" कोषाध्यक्ष ने यह देखकर कहा। फिर उसने चम्मच के सिरे से थोड़ा सा आटा लिया और उसे पकाने के लिए ओवन में रख दिया। लेकिन आटे का वह छोटा सा टुकड़ा पहले वाले से भी बड़ा हो गया; और एक के बाद एक, आटे का हर टुकड़ा उतना ही बड़ा होता चला गया! तब वह निराश हो गया और अपनी पत्नी से बोला, "प्यारी, तुम उसे एक केक दे दो।" लेकिन जैसे ही उसने टोकरी से एक केक निकाला, बाकी सारे केक उससे चिपक गए। तो वह अपने पति से चिल्लाकर बोली कि सारे केक आपस में चिपक गए हैं और वह उन्हें अलग नहीं कर पा रही है।

"ओह, मैं इन्हें जल्दी ही अलग कर दूंगा," उसने कहा, लेकिन पाया कि वह ऐसा नहीं कर सकता!

फिर पति-पत्नी दोनों ने कोने में रखे केक के ढेर को पकड़ लिया और उन्हें अलग करने की कोशिश की। लेकिन लाख कोशिश करने पर भी, वे दोनों मिलकर भी उतना ही प्रभाव नहीं डाल पाए जितना अकेले-अकेले ढेर पर डाल रहे थे। अब जब कोषाध्यक्ष केक को खींच रहा था, तो उसे पसीना आने लगा और उसकी लालसा समाप्त हो गई। तब उसने अपनी पत्नी से कहा, "मुझे केक नहीं चाहिए; इन्हें टोकरी समेत इस तपस्वी को दे दो।" और वह टोकरी हाथ में लिए हुए उस वरिष्ठ भिक्षु के पास गई। तब वरिष्ठ भिक्षु ने दंपति को सत्य का उपदेश दिया और त्रिरत्न (तीन रत्नों) (1. बुद्ध, 2. धम्म (निर्वाण का मार्ग) और 3. संघ (पवित्र व्यवस्था)) की श्रेष्ठता का बखान किया। और यह सिखाते हुए कि दान ही सच्चा बलिदान है, उन्होंने दान और अन्य अच्छे कार्यों के फलों को आकाश में पूर्णिमा के चंद्रमा के समान चमकाया। बुजुर्ग भिक्षु के शब्दों से प्रभावित होकर कोषाध्यक्ष ने कहा, "महोदय, यहाँ आइए और इस सोफे पर बैठकर अपने केक खाइए।"

“महा कोषाध्यक्ष महोदय,” वरिष्ठ भिक्षु ने कहा, “सर्वज्ञानी बुद्ध अपने पाँच सौ शिष्यों के साथ मठ में रोटी के भोज की प्रतीक्षा कर रहे हैं। यदि आपकी इच्छा हो, तो मैं आपसे निवेदन करता हूँ कि आप अपनी पत्नी और रोटी साथ लेकर आएँ और हम गुरु के पास चलें।” “पर, महोदय, गुरु इस समय कहाँ हैं?” “पचास मील (4.23 किमी) दूर, जेतवन के मठ में।” “महोदय, हम इतनी दूर कैसे जाएँगे, बिना रास्ते में अधिक समय बर्बाद किए?” “महा कोषाध्यक्ष महोदय, यदि आपकी इच्छा हो, तो मैं अपनी दिव्य शक्तियों से आपको वहाँ पहुँचा

दूँगा। आपके घर की सीढ़ी का शीर्ष भाग वहीं रहेगा, लेकिन निचला भाग जेतवन मठ के मुख्य द्वार पर होगा। इस प्रकार मैं आपको नीचे जाने में लगने वाले समय में ही गुरु के पास पहुँचा दूँगा।" "ठीक है, महोदय," कोषाध्यक्ष ने कहा।

तब वरिष्ठ भिक्षु ने सीढ़ी के शीर्ष को वहीं रोके रखते हुए आदेश दिया, "सीढ़ी का निचला सिरा जेतवन मठ के मुख्य द्वार पर हो।" और ऐसा ही हुआ! इस प्रकार वरिष्ठ भिक्षु ने कोषाध्यक्ष और उनकी पत्नी को इतनी जल्दी जेतवन मठ पहुँचा दिया कि वे सीढ़ियों से नीचे उतरने में भी देर कर सकते थे।

फिर पति-पत्नी गुरु के सामने आए और कहा कि भोजन का समय हो गया है। गुरु भोजन कक्ष में गए और अपने लिए तैयार किए गए बुद्ध आसन पर बैठ गए, उनके चारों ओर भिक्षु समुदाय एकत्रित था। तब प्रधान कोषाध्यक्ष ने बुद्ध की प्रतिमा वाले भिक्षु समुदाय के हाथों पर दान जल डाला, जबकि उनकी पत्नी ने भगवान बुद्ध के भिक्षापात्र में एक रोटी रखी। उन्होंने अपने जीवन निर्वाह के लिए पर्याप्त रोटी ली, जैसा कि पाँच सौ भिक्षुओं ने भी किया। इसके बाद कोषाध्यक्ष ने घी, शहद और गुड़ मिला हुआ दूध सबको दिया; और गुरु और भिक्षु समुदाय ने अपना भोजन समाप्त किया। अंत में कोषाध्यक्ष और उनकी पत्नी ने तृप्त भोजन किया, लेकिन फिर भी रोटियाँ कम नहीं हो रही थीं। यहाँ तक कि जब सभी भिक्षुओं और मठ के सभी भिक्षुओं ने रोटी खा ली, तब भी रोटी खत्म होने का कोई आसार नहीं था। तब उन्होंने गुरु से कहा, "महोदय, रोटियों की आपूर्ति कम नहीं हो रही है।"

"फिर उन्हें मठ के बड़े द्वार के पास फेंक दो।"

इसलिए वे उन्हें प्रवेश द्वार से कुछ ही दूरी पर स्थित एक गुफा में फेंक देते हैं; और आज भी उस गुफा के अंतिम छोर पर 'द क्रॉक-केक' नामक एक स्थान दिखाया जाता है।

प्रधान कोषाध्यक्ष और उनकी पत्नी भगवान बुद्ध के समक्ष उपस्थित हुए, जिन्होंने धन्यवाद का उत्तर दिया। धन्यवाद के बाद, दोनों ने मोक्ष के प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की प्राप्ति कर निर्वाण प्राप्त किया। फिर, गुरु से विदा लेकर, वे दोनों विशाल द्वार की सीढ़ियों से ऊपर चढ़े और अपने घर में पुनः प्रवेश कर गए। इसके बाद, प्रधान कोषाध्यक्ष ने बुद्ध द्वारा सिखाई गई धर्म की शिक्षाओं पर अस्सी करोड़ (10 मिलियन) रुपये लुटा दिए।

अगले दिन, श्रावस्ती नगर में भिक्षा मांगने के बाद, पूर्ण बुद्ध जेतवन मठ लौटकर, भिक्षुओं को बुद्ध-प्रवचन प्रदान करते हुए सुगंधित कक्ष के एकांतवास में चले गए। संध्याकाल में, भिक्षु सत्य के हॉल में एकत्रित हुए और बोले, "वरिष्ठ भिक्षु मोग्गल्याना की शक्ति कितनी महान है! क्षण भर में उन्होंने एक कंजूस को दान की ओर परिवर्तित किया, उसे रोटी सहित जेतवन मठ में लाए, उसे पियास्टर के समक्ष स्थापित किया और उसे मोक्ष (निर्वाण) प्राप्त कराया। वरिष्ठ भिक्षु की शक्ति कितनी महान है!" जब वे इस प्रकार भिक्षु के गुणों की प्रशंसा कर रहे थे, तभी गुरु ने प्रवेश किया और पूछने पर उन्हें उनकी चर्चा का विषय बताया गया। उन्होंने कहा, "भाइयों, जो किसी गृहस्थी का धर्म परिवर्तन करते हैं, उन्हें उस गृहस्थी के पास बिना उसे कष्ट पहुँचाए उसी प्रकार जाना चाहिए जैसे मधुमक्खी फूल से रस चूसती है; इसी प्रकार उन्हें बुद्ध की श्रेष्ठता का वर्णन करने के लिए उनके पास जाना चाहिए।" और वरिष्ठ भिक्षु मोग्गल्याना की प्रशंसा में उन्होंने यह श्लोक पढ़ा:-

मधुमक्खियों की तरह, जो किसी भी फूल की सुगंध या रंग को नुकसान नहीं पहुंचातीं।
लेकिन, शहद से लदी हुई, उड़ जाती है।
इसलिए, ऋषि, अपने गाँव के भीतर अपना रास्ता तय करो (*1)।
फिर, वरिष्ठ भिक्षु की अच्छाई को और अधिक उजागर करते हुए, उन्होंने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि कंजूस कोषाध्यक्ष मोग्गल्याना द्वारा परिवर्तित हुआ है। पहले भी वरिष्ठ भिक्षु ने उसे परिवर्तित किया था और उसे सिखाया था कि कर्म और उनके परिणाम आपस में कैसे जुड़े होते हैं।" ऐसा कहते हुए, उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्याभिषेक था, तब इल्लिस नाम का एक कोषाध्यक्ष था, जिसकी संपत्ति अस्सी करोड़ (10 मिलियन) थी और उसमें मनुष्य के सारे दोष थे। वह लंगड़ा, कुबड़ा और भेंगा था; वह धर्मत्यागी और कंजूस था, कभी दूसरों को दान नहीं देता था और न ही स्वयं उसका उपयोग करता था; उसका घर राक्षसों से भरे तालाब जैसा था। फिर भी, सात पीढ़ियों से उसके पूर्वज उदार थे और अपनी सर्वोत्तम संपत्ति दान करते आ रहे थे; लेकिन जब वह कोषाध्यक्ष बना, तो उसने अपने परिवार की परंपराओं को तोड़ दिया। उसने दान-पुण्य स्थल को जला दिया और गरीबों को अपने द्वार से पीट-पीटकर भगा दिया और अपनी संपत्ति संचित कर ली।

एक दिन जब वह राजा की सेवा करके लौट रहा था, तो उसने एक देहाती को देखा, जो दूर यात्रा करके थका हुआ था, एक बेंच पर बैठा था और एक घड़े में रखी बदबूदार शराब से मग भरकर पी रहा था, साथ में बदबूदार सूखी मछली का एक टुकड़ा भी था। यह दृश्य देखकर कोषाध्यक्ष को भी शराब पीने की इच्छा हुई, लेकिन उसने मन ही मन सोचा, "अगर मैं पीऊंगा, तो दूसरे भी मेरे साथ पीना चाहेंगे, और इससे बहुत खर्चा होगा।" इसलिए वह अपनी प्यास को दबाए इधर-उधर घूमता रहा। लेकिन समय बीतने के साथ, वह ऐसा नहीं कर सका; उसका चेहरा पुराने रुई की तरह पीला पड़ गया; और उसके दुबले-पतले शरीर पर नसें उभरने लगीं। एक दिन, अपने कमरे में लौटकर वह बिस्तर पर लेट गया। उसकी पत्नी उसके पास आई और उसकी पीठ सहलाते हुए पूछा, "महाराज, क्या हुआ है?"

(आगे की कहानी पिछली कहानी के शब्दों में ही बताई जाएगी।) लेकिन, जब उसने कहा, "तो मैं सिर्फ आपके लिए ही शराब बनाऊंगी," तो उसने कहा, "अगर तुम घर में शराब बनाओगी, तो बहुत से लोग पहरा देंगे; और शराब मंगवाकर यहाँ बैठकर पीना तो नामुमकिन है।" इसलिए उसने एक पैसा निकाला और एक गुलाम को शराबखाने से शराब का एक घड़ा लाने भेजा। जब गुलाम वापस आया, तो उसने उसे कस्बे से नदी किनारे भेजा और घड़ा एक सुनसान झाड़ी में रख दिया। "अब जाओ!" उसने कहा और गुलाम को कुछ दूरी पर इंतज़ार करवाया, जबकि उसने अपना प्याला भरा और सो गया।

कोषाध्यक्ष के पिता, जिन्होंने अपने दान और अन्य अच्छे कार्यों के कारण देवलोक में सक्का (इंद्र) के रूप में पुनर्जन्म लिया था, उस समय यह सोच रहे थे कि क्या उनकी उदारता अभी भी बरकरार है या नहीं, और उन्हें अपनी उदारता में कमी और अपने पुत्र के व्यवहार का एहसास हुआ। उन्होंने देखा कि उनके पुत्र ने अपने घर की परंपराओं को तोड़ते हुए भिक्षा देने के स्थान को जलाकर राख कर दिया था, गरीबों को अपने द्वार से पीट-पीटकर भगा दिया था, और कैसे अपनी कंजूसी में, दूसरों के साथ कुछ साझा करने से डरते हुए, वह अकेले ही एक झाड़ी में जाकर पानी पी रहा था। यह देखकर सक्का (इंद्र) रो पड़े, "मैं उसके पास जाऊंगा और उसे समझाऊंगा कि कर्मों का फल अवश्य मिलता है; मैं उसका परिवर्तन करूंगा, और उसे दानशील बनाऊंगा और देवलोक में पुनर्जन्म के योग्य बनाऊंगा।" अतः वह पृथ्वी पर अवतरित हुआ और एक बार फिर मनुष्यों के मार्ग पर चलने लगा, कोषाध्यक्ष इल्लिसा का रूप धारण कर लिया, जिसमें इल्लिसा की लंगड़ाहट, कुबड़ापन और भेंगापन शामिल था। इसी वेश में वह राजगृह नगर में प्रवेश कर महल के द्वार तक पहुँचा और राजा को अपने आगमन की सूचना देने का अनुरोध किया। राजा ने कहा, "उसे अंदर आने दो।" वह अंदर आया और महाराज के समक्ष आदरपूर्वक खड़ा हो गया।

“हे महा कोषाध्यक्ष, आप इस असामान्य समय पर यहाँ क्यों आए हैं?” राजा ने पूछा। “महाराज, मैं इसलिए आया हूँ क्योंकि मेरे महल में अस्सी करोड़ (10 मिलियन) का खजाना है। कृपया इसे राजकोष में भरने के लिए ले जाने की व्यवस्था करें।” “नहीं, महाराज; मेरे महल में इससे भी अधिक खजाना है।” “यदि महाराज, आप इसे नहीं लेंगे, तो मैं इसे जिसे चाहूँ उसे दे दूँगा।” “ज़रूर दीजिए, कोषाध्यक्ष,” राजा ने कहा। “ठीक है, महाराज,” नकली इल्लिसा ने कहा और सम्मानपूर्वक कोषाध्यक्ष के घर की ओर चल पड़ा। सभी सेवक उसके चारों ओर जमा हो गए, लेकिन कोई भी यह नहीं पहचान सका कि वह उनका असली स्वामी नहीं है। अंदर प्रवेश करते ही वह दहलीज पर खड़ा हो गया और द्वारपाल को बुलवाया, जिसे उसने आदेश दिया कि यदि कोई उसके जैसा दिखने वाला व्यक्ति प्रकट हो और घर का स्वामी होने का दावा करे, तो उसे लाठियों से बुरी तरह पीटकर बाहर निकाल दिया जाए। फिर, ऊपरी मंजिल की सीढ़ियाँ चढ़कर, वह एक शानदार सोफे पर बैठ गया और इलिसा की पत्नी को बुलवाया। जब वह आई तो उसने मुस्कुराते हुए कहा, "मेरी प्यारी, चलो उदारता दिखाएँ।"

ये शब्द सुनकर पत्नी, बच्चे और नौकर सब सोचने लगे, “बड़े समय से उनका ऐसा स्वभाव नहीं रहा। आज इतने उदार और दयालु होने के लिए उन्होंने ज़रूर शराब पी होगी।” तब उनकी पत्नी ने उनसे कहा, “हे मेरे पति, आप जितना चाहें उतना उदार हो सकते हैं।” उन्होंने कहा, “घोषक को बुलाओ और उससे कहो कि ढोल बजाकर पूरे शहर में यह ऐलान करे कि जिसे भी सोना, चांदी, हीरे, मोती और ऐसी ही चीज़ें चाहिए, वह कोषाध्यक्ष इल्लिस के घर आए।” उनकी पत्नी ने वैसा ही किया जैसा उन्होंने कहा था, और जल्द ही टोकरियाँ और बोरे लिए एक बड़ी भीड़ दरवाजे पर जमा हो गई। तब सक्का (इंद्र) ने खजाने के कमरे खुलवाए और पुकार कर कहा, “यह मेरा तुम्हें उपहार है; जो चाहो ले लो और अपने-अपने रास्ते जाओ।” तब भीड़ ने वहाँ जमा धन पर झपट्टा मारा, उसे ज़मीन पर ढेर लगा दिया और अपने साथ लाए थैलों और बर्तनों को भर दिया, और लूट का माल लेकर चले गए। उनमें से एक ग्रामीण ने इल्लिसा के बैलों को उसकी गाड़ी में जोता, उसमें सात बहुमूल्य वस्तुएँ भरीं और शहर से निकलकर मुख्य सड़क पर चल पड़ा। जैसे-जैसे वह आगे बढ़ा, वह घनी वनस्पति के पास पहुँचा और कोषाध्यक्ष की प्रशंसा में ये शब्द कहे: "हे मेरे स्वामी इल्लिसा, आप सौ वर्ष तक जीवित रहें! आज आपने मेरे लिए जो किया है, उससे मैं बिना कोई काम किए जीवन यापन कर सकूँगा। ये बैल किसके थे? आपके। यह गाड़ी किसकी थी? आपकी। गाड़ी में जो धन है, वह भी आपका ही है। यह सब मुझे किसी माता-पिता ने नहीं दिया; नहीं, यह सब केवल आपसे ही मिला है, मेरे स्वामी।"

ये शब्द सुनकर प्रधान कोषाध्यक्ष भय और कंपकंपी से कांप उठा। उसने मन ही मन कहा, “अरे, ये तो अपनी बातों में मेरा नाम ले रहा है! क्या राजा मेरी संपत्ति जनता में बांट रहा है?” इस विचार मात्र से ही वह झाड़ी से उछल पड़ा और अपने बैलों और गाड़ी को पहचानकर,

बैलों की रस्सी पकड़कर चिल्लाया, “रुको, दोस्त; ये बैल और ये गाड़ी मेरी हैं।” गाड़ी से वह आदमी कूद पड़ा और क्रोधित होकर बोला, “अरे बदमाश! प्रधान कोषाध्यक्ष इलिसा अपनी संपत्ति पूरे शहर में बांट रहा है। तुझे क्या मिल गया?” और वह कोषाध्यक्ष पर झपटा और बिजली की तरह उसकी पीठ पर प्रहार किया और गाड़ी लेकर चला गया। इलिसा कांपते हुए उठा, कीचड़ पोंछा और अपनी गाड़ी के पीछे दौड़कर उसे पकड़ लिया। फिर वह देहाती नीचे उतरा और इलिसा के बाल पकड़कर उसे झुका दिया और कुछ देर तक उसके सिर पर घूंसे मारता रहा; फिर उसने उसका गला पकड़कर उसे उसी रास्ते वापस फेंक दिया जहाँ से वह आया था, और गाड़ी चलाकर चला गया। इस क्रूर व्यवहार से आहत होकर इलिसा जल्दी से घर की ओर चल पड़ा। वहाँ, लोगों को खजाना ले जाते देख, वह एक आदमी से दूसरे आदमी पर हाथ उठाने लगा और चिल्लाने लगा, "अरे! यह क्या है? क्या राजा मुझे लूट रहा है?" और जिस भी आदमी पर उसने हाथ उठाया, उसने उसे गिरा दिया। चोटिल और दर्द से कराहते हुए, उसने अपने घर में शरण लेने की कोशिश की, तभी द्वारपालों ने उसे रोकते हुए कहा, "अरे, बदमाश! कहाँ जा रहे हो?" पहले उसे बांसों से बुरी तरह पीटने के बाद, उन्होंने अपने स्वामी का गला पकड़कर उसे बाहर फेंक दिया। "मुझे न्याय दिलाने वाला राजा के सिवा कोई नहीं बचा है," इलिसा कराहते हुए बोला और महल की ओर चल पड़ा। "हे महाराज, आपने मुझे इस तरह क्यों लूटा?" वह रोते हुए बोला।

“नहीं, यह मैं नहीं था, महाराज कोषाध्यक्ष,” राजा ने कहा। “क्या आप स्वयं आकर यह नहीं बताया था कि यदि मैं आपकी संपत्ति स्वीकार नहीं करूंगा तो आप उसे दान कर देंगे? और क्या आपने फिर संदेशवाहक को भेजकर अपनी धमकी को अंजाम नहीं दिया?” “हे महाराज, वास्तव में यह मैं नहीं था जो इस काम के लिए आपके पास आया था। महाराज, आप जानते हैं कि मैं कितना निकट और करीबी हूं, और मैं कभी भी तेल की एक बूंद तक दान नहीं करता, जिसे घास का एक तिनका भी सोख सकता है। महाराज, कृपया उस व्यक्ति को बुलवाएं जिसने मेरी संपत्ति दान की है, और उससे इस मामले में पूछताछ करें।”

तब राजा ने सक्का को बुलवाया। वे दोनों इतने एक जैसे दिखते थे कि न तो राजा और न ही उसका दरबार यह बता सका कि असली प्रधान कोषाध्यक्ष कौन है। कंजूस इल्लिसा ने कहा, "महाराज, यह कोषाध्यक्ष कौन है और क्या है? मैं ही कोषाध्यक्ष हूँ।"

“सच कहूँ तो, मैं नहीं कह सकता कि असली इल्लिस कौन है,” राजा ने कहा। “क्या कोई है जो निश्चित रूप से उनमें अंतर बता सके?” “जी महाराज, मेरी पत्नी।” तो पत्नी को बुलवाया गया और पूछा गया कि दोनों में से उसका पति कौन है। उसने कहा कि सक्का (इंद्र) उसका पति है और वह उसके पास चली गई। फिर बारी-बारी से इल्लिस के बच्चों और नौकरों को लाया गया और उनसे भी यही सवाल पूछा गया; और सभी ने एकमत से कहा कि सक्का ही असली महाकोषाध्यक्ष है। तभी इल्लिस के मन में अचानक यह बात आई कि उसके सिर पर बालों के बीच एक मस्सा है, जिसके बारे में केवल उसके नाई को ही पता था। इसलिए, अंतिम उपाय के रूप में, उसने अपने नाई को बुलवाने का अनुरोध किया ताकि वह उसकी पहचान कर सके। उस समय बोधिसत्व ही उसका नाई था। तदनुसार, नाई को बुलवाया गया और उससे पूछा गया कि क्या वह असली और नकली इल्लिस में अंतर बता सकता है। “महाराज, मैं बता सकता हूँ,” उसने कहा, “यदि मैं उनके सिर देख लूँ।” “तो फिर इन दोनों के सिर देखो,” राजा ने कहा। उसी क्षण इंद्र ने अपने सिर पर एक मस्सा उगा लिया! दोनों की जांच करने के बाद, बोधिसत्व ने बताया कि चूंकि दोनों के सिर पर एक जैसे मस्से थे, इसलिए वे यह नहीं कह सकते कि असली पुरुष कौन है। और इसके साथ ही उन्होंने यह श्लोक कहा:-

दोनों की आंखें तिरछी हैं; दोनों रुक-रुक कर चलते हैं; दोनों ही कुबड़ वाले हैं;
और दोनों के शरीर पर एक जैसे मस्से हैं!
मैं यह नहीं बता सकता कि इन दोनों में से असली इलिसा कौन है।

अपनी अंतिम आशा को भी इस प्रकार विफल होते देख, महाकोषाध्यक्ष क्षक हो उठे; अपने प्रिय धन के खोने का उनका दुख इतना असहनीय था कि वे बेहोश होकर गिर पड़े। तभी इंद्र ने अपनी दिव्य शक्तियों का प्रयोग किया और वायु में उठकर राजा को इन शब्दों में संबोधित किया: "हे राजा, मैं इल्लिस नहीं, बल्कि इंद्र हूँ।" तब आसपास के लोगों ने इल्लिस का चेहरा पोंछा और उन पर जल छिड़का। संभलकर वे उठे और देवों के राजा इंद्र के समक्ष प्रणाम किया। तब सक्का (इंद्र) ने कहा, "इलिसा, धन मेरा था, तुम्हारा नहीं; मैं तुम्हारा पिता हूँ और तुम मेरे पुत्र हो। अपने जीवनकाल में मैं गरीबों के प्रति उदार था और भलाई करने में प्रसन्न रहता था; इसी कारण मैं इस उच्च पद पर आसीन होकर सक्का (इंद्र) बना। परन्तु तुम मेरे पदचिह्नों पर न चलकर कंजूस और कंजूस हो गए हो; तुमने मेरे भिक्षागृह को जलाकर राख कर दिया, गरीबों को द्वार से भगा दिया और अपना धन संचित कर लिया। न तो तुम्हें स्वयं इसका आनंद मिलता है और न ही किसी अन्य मनुष्य को; परन्तु तुम्हारा भंडार राक्षसों से भरे तालाब के समान हो गया है, जहाँ से कोई भी अपनी प्यास नहीं बुझा सकता। यद्यपि, यदि तुम मेरे भिक्षागृह का पुनर्निर्माण करोगे और गरीबों के प्रति उदारता दिखाओगे, तो यह तुम्हारे लिए पुण्य का फल होगा। परन्तु, यदि तुम ऐसा नहीं करोगे, तो मैं तुम्हारा सब कुछ छीन लूँगा और इंद्र के वज्र से तुम्हारा सिर फोड़ दूँगा, और तुम मर जाओगे।"

इस खतरे को सुनकर इल्लिस अपने जीवन के भय से कांप उठा और बोला, "अब से मैं उदार बनूंगा।" इंद्र ने उसका वचन स्वीकार कर लिया और आकाश में बैठे-बैठे ही अपने पुत्र को ईश्वरीय आज्ञाओं का ज्ञान दिया और उसे सत्य का उपदेश देकर अपने निवास स्थान

पर लौट गया। इल्लिस ने दान-पुण्य और अन्य अच्छे कार्यों में लगन दिखाई और इस प्रकार स्वर्ग में अपने पुनर्जन्म को सुनिश्चित किया।

"भाइयों," गुरु ने कहा, "यह पहली बार नहीं है कि मोग्गल्याना ने कंजूस कोषाध्यक्ष का धर्म परिवर्तन कराया है; पहले भी उसी व्यक्ति का धर्म परिवर्तन उनके द्वारा हुआ था।" अपना प्रवचन समाप्त करते हुए उन्होंने संबंध समझाया और जन्म का परिचय देते हुए कहा, "यह कंजूस कोषाध्यक्ष उन दिनों के इल्लिस थे, मोग्गल्याना देवों के राजा सक्का (इंद्र) थे, आनंद राजा थे और मैं स्वयं नाई था।"

फुटनोट:

(1) यह धम्मपद का श्लोक 49 है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **खरसार-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-79-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 79
खरस्सारा-जातक

"उसने लुटेरों को समय दिया।" - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक मंत्री के बारे में सुनाई थी। कहा जाता है कि उसने राजा का विश्वास जीत लिया और सीमावर्ती गाँव से राजकोषीय राजस्व इकट्ठा करने के बाद, लुटेरों के एक गिरोह से गुप्त रूप से यह समझौता किया कि वह उन्हें जंगल में ले जाएगा और गाँव को लुटेरों के लिए लूटने के लिए छोड़ देगा, इस शर्त पर कि वे उसे लूटे गए माल का आधा हिस्सा दे देंगे। तदनुसार, भोर होते ही जब गाँव असुरक्षित हो गया, तो लुटेरे आ गए, उन्होंने मवेशियों को मार डाला और खा लिया, गाँव को लूट लिया और उसके शाम को अपने साथियों के साथ लौटने से पहले ही अपना सारा माल लेकर भाग गए। लेकिन बहुत जल्द ही उसकी बेईमानी राजा के कानों तक पहुँच गई। राजा ने उसे बुलवाया और, क्योंकि उसका अपराध स्पष्ट था, उसे पदच्युत कर दिया गया और उसके स्थान पर एक अन्य मुखिया नियुक्त किया गया। तब राजा जेतवन मठ में गुरु के पास गए और उन्हें सारी घटना बताई। भगवान बुद्ध ने कहा, "महाराज, इस व्यक्ति ने अब भी वही स्वभाव दिखाया है जो उसने अतीत में बताया था।" फिर राजा के अनुरोध पर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, उन्होंने एक मंत्री को सीमावर्ती गाँव का मुखिया नियुक्त किया; और ठीक वही हुआ जो ऊपर वर्णित है। उन दिनों बोधिसत्व व्यापार के सिलसिले में सीमावर्ती गाँवों का दौरा कर रहे थे और उसी गाँव में रहने लगे थे। जब मुखिया शाम को ढोल बजाते हुए अपने आदमियों के साथ वापस लौट रहे थे, तो उन्होंने कहा, "यह बदमाश, जिसने चुपके से लुटेरों को गाँव लूटने के लिए उकसाया था, उनके जंगल में वापस चले जाने का इंतज़ार करता रहा, और अब ढोल बजाते हुए वापस आ गया है, मानो उसे कुछ भी गलत होने का पता ही न हो।" और ऐसा कहते हुए उन्होंने यह श्लोक कहा:-

उसने लुटेरों को गाड़ी चलाने और हत्या करने का समय दे दिया।
मवेशियों को मारो, घरों को जला दो, लोगों को पकड़ लो;
और फिर ढोल की थाप के साथ, वह घर की ओर चल पड़ा।
अब वह पुत्र नहीं रहा, क्योंकि ऐसा पुत्र मर चुका है (*1)।
इस प्रकार बोधिसत्व ने मुखिया की निंदा की। कुछ ही समय बाद, इस दुष्टता का पता चल गया और राजा ने उसे उसके कर्मों के अनुसार दंडित किया।

“महाराज, यह पहली बार नहीं है कि उसका स्वभाव ऐसा है; बीते दिनों में भी वह ऐसा ही था।” अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने संबंध स्पष्ट किया और जन्म की पहचान बताते हुए कहा, “आज का मुखिया उन दिनों का भी मुखिया था, और मैं स्वयं वह बुद्धिमान और नेक व्यक्ति हूँ जिसने यह श्लोक पढ़ा है।”

फुटनोट:

(1) इसका तात्पर्य ऐसे पुत्र से है जो सभी शालीनता और शर्म से इतना विमुख हो गया है कि वह पुत्र नहीं रह जाता, और उसकी माँ पुत्रहीन है जबकि उसका पुत्र अभी भी जीवित है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **भीमसेन-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-80-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 80
भीमसेन-जातक

“तुमने अपनी कुशलता का बखान किया।”—यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में भिक्षुओं के एक घमंडी साथी के बारे में सुनाई थी। परंपरा के अनुसार, वह हर उम्र के भिक्षुओं को अपने चारों ओर इकट्ठा करता था और अपने कुलीन वंश के बारे में झूठे दावे करके सबको भ्रमित करता था। वह कहता था, “अरे, भिक्षुओं, मेरे जैसा कुलीन परिवार कोई नहीं, कोई असाधारण वंश नहीं। मैं सर्वोच्च राजसी वंश का वंशज हूँ; जन्म या पैतृक संपत्ति में कोई मेरे बराबर नहीं; हमारे पास सोने, चांदी और अन्य खजानों की कोई कमी नहीं है। हमारे दास और नौकर भी चावल और मांस का दलिया खाते हैं, और बनारस के उत्तम वस्त्र पहनते हैं, और बनारस के उत्तम इत्र लगाते हैं;—जबकि मैं भिक्षु संघ में शामिल होने के कारण इस घटिया भोजन और घटिया वस्त्र से ही संतोष करता हूँ।”

लेकिन एक अन्य भिक्षु ने अपने परिवार की संपत्ति की जाँच करने के बाद, भिक्षुओं के सामने इस दिखावे की खामोशी उजागर कर दी। तब भिक्षु सत्य के हॉल में एकत्रित हुए और इस बात पर चर्चा शुरू हुई कि कैसे वह भिक्षु, सांसारिक चीजों को त्यागकर केवल असाधारण सत्य का अनुसरण करने की प्रतिज्ञा के बावजूद, अपने झूठे दावों से भिक्षुओं को गुमराह कर रहा था। जब उस भिक्षु के पाप पर चर्चा हो रही थी, तभी गुरुजी प्रवेश कर गए और उन्होंने उनका विषय पूछा। भिक्षुओं ने उन्हें बताया। गुरुजी ने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि वह शेखी बघार रहा है; पहले भी वह शेखी बघारता और लोगों को गुमराह करता रहा है।" और ऐसा कहते हुए उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्याभिषेक था, तब बोधिसत्व का जन्म उत्तर देश के एक बाजार नगर में ब्राह्मण परिवार में हुआ। बड़े होकर उन्होंने तक्षशिला में विश्वप्रसिद्ध गुरु के अधीन अध्ययन किया। वहाँ उन्होंने तीनों वेदों और ज्ञान की अठारह शाखाओं का ज्ञान प्राप्त किया और अपनी शिक्षा पूर्ण की। वे लघु धनुर्धर के नाम से प्रसिद्ध हुए। तक्षशिला छोड़कर वे व्यावहारिक अनुभव की खोज में आंध्र प्रदेश आए। इस जन्म में बोधिसत्व कुछ हद तक टेढ़े-मेढ़े बौने थे, और उन्होंने मन ही मन सोचा, "यदि मैं किसी राजा के समक्ष प्रकट होऊँ, तो वह अवश्य पूछेगा कि मुझ जैसे बौने का क्या लाभ; क्यों न मैं किसी लंबे-चौड़े व्यक्ति को अपना सहायक बना लूँ और उसके प्रभावशाली व्यक्तित्व की आड़ में अपनी जीविका कमाऊँ?" अतः वे बुनकरों के क्षेत्र में गए और वहाँ भीमसेन नामक एक विशालकाय बुनकर को देखकर उन्हें प्रणाम किया और उनका नाम पूछा। “मेरा नाम भीमसेन (*1) है,” बुनकर ने कहा। “आप जैसे तगड़े और तगड़े आदमी को इतना घटिया काम करने की क्या ज़रूरत है?” “क्योंकि मेरे पास गुज़ारा करने के लिए और कोई ज़रिया नहीं है।” “अब और बुनाई मत करो, मित्र। पूरे महाद्वीप में मेरे जैसा धनुर्धर कोई नहीं है; लेकिन राजा तो मुझे बौना समझकर तुच्छ समझेंगे। इसलिए, मित्र, तुम्हें ही धनुष चलाने में अपनी कुशलता का बखान करना होगा, और राजा तुम्हें वेतन देकर तुम्हारा काम नियमित रूप से करवाएगा। इस बीच मैं तुम्हारे पीछे रहकर तुम्हारे कर्तव्यों का पालन करूँगा, और इस तरह तुम्हारी छत्रछाया में रहकर अपनी जीविका कमाऊँगा। इस तरह हम दोनों तरक्की करेंगे और समृद्ध होंगे। बस मेरी बात मानो।” “बस, तुमसे काम हो गया,” दूसरे ने कहा।

तदनुसार, बोधिसत्व बुनकर को अपने साथ बनारस ले गए, उसे धनुष के छोटे सेवक के रूप में रखते हुए, और दूसरे को आगे रखते हुए; और जब वे महल के द्वार पर पहुँचे, तो उन्होंने उसे राजा को अपने आने की सूचना भेजने के लिए कहा। राजमहल में बुलाए जाने पर, दोनों एक साथ प्रवेश कर राजा के सामने प्रणाम करने के लिए खड़े हो गए। राजा ने पूछा, "आप यहाँ क्यों आए हैं?" भीमसेन ने कहा, "मैं एक महान धनुर्धर हूँ; पूरे महाद्वीप में मेरे जैसा कोई धनुर्धर नहीं है।" "मेरी सेवा में आने के लिए आप क्या वेतन चाहते हैं?" "महाराज, एक हजार सिक्के प्रति पखवाड़ा।" "आपका यह सेवक कौन है?" "महाराज, यह मेरा छोटा सेवक है।" "ठीक है, मेरी सेवा में आ जाइए।"

इस प्रकार भीमसेन ने राजा की सेवा में प्रवेश किया; परन्तु उनके सारे कार्य बोधिसत्व ही करते थे। उन दिनों काशी के एक जंगल में एक बाघ था जिसने व्यस्त सड़क को अवरुद्ध कर रखा था और अनेकों को खा चुका था। जब यह बात राजा को पता चली, तो उन्होंने भीमसेन को बुलवाया और पूछा कि क्या वे बाघ को पकड़ सकते हैं।

"हे महाराज, अगर मैं बाघ को नहीं पकड़ सकता, तो मैं खुद को धनुर्धर कैसे कह सकता हूँ?" राजा ने उसे उदारतापूर्वक दान दिया और काम पर भेज दिया। और भीमसेन यह खबर लेकर बोधिसत्व के घर लौट आया। "ठीक है," बोधिसत्व ने कहा; "जाओ मेरे मित्र।" "पर तुम भी तो नहीं आ रहे?" "नहीं, मैं नहीं जाऊँगा; पर मैं तुम्हें एक छोटी सी योजना बताता हूँ।" "ज़रूर बताओगे मेरे मित्र।" "अचानक, आप अकेले बाघ की मांद के पास जाने की जल्दबाजी न करें। आप कुछ ग्रामीणों को इकट्ठा करें और उन्हें एक-दो हजार धनुषों के साथ उस स्थान पर भेजें। जब आपको पता चले कि बाघ उत्तेजित हो गया है, तो आप घनी झाड़ियों में घुसकर मुंह के बल लेट जाएं। ग्रामीण बाघ को पीट-पीटकर मार डालेंगे; और जैसे ही वह मर जाए, आप अपने दांतों से एक लता तोड़कर मृत बाघ के पास जाएं, लता को अपने हाथ में घसीटते हुए। उस जानवर के मृत शरीर को देखते ही आप चिल्ला उठें - 'बाघ को किसने मारा? मैं तो उसे बैल की तरह लता से बांधकर राजा के पास ले जाना चाहता था, और इसी इरादे से लता लेने के लिए घनी झाड़ियों में गया था। लता लेकर वापस आने से पहले मुझे जानना होगा कि बाघ को किसने मारा।' तब ग्रामीण बहुत डर जाएंगे और आपको राजा को उनकी सूचना न देने के लिए भारी रिश्वत देंगे; बाघ को मारने का श्रेय आपको मिलेगा; और राजा भी आपको खूब सारा पैसा देगा।"

"बहुत अच्छा," भीमसेन ने कहा; और वह बोधिसत्व के बताए अनुसार बाघ को मारने चला गया। इस प्रकार मार्ग को यात्रियों के लिए सुरक्षित बनाकर, वह अपने साथ बहुत से लोगों को लेकर बनारस लौटा और राजा से कहा, "हे महाराज, मैंने बाघ को मार डाला है; अब वन यात्रियों के लिए सुरक्षित है।" राजा प्रसन्न हुआ और उसने भीमसेन को उपहारों से भर दिया।

एक दिन खबर आई कि एक सड़क पर भैंसों का आतंक है, और राजा ने भीमसेन को उसे मारने के लिए भेजा। बोधिसत्व के निर्देशों का पालन करते हुए, उन्होंने भैंस को उसी तरह मार डाला जैसे बाघ को मारा था, और राजा के पास लौट आए, जिन्होंने उन्हें एक बार फिर बहुत सारा धन दिया। अब वे एक महान स्वामी बन गए थे। अपने नए सम्मानों के नशे में चूर होकर, उन्होंने बोधिसत्व का अपमान किया और उनकी सलाह मानने से इनकार करते हुए कहा, "मैं तुम्हारे बिना भी काम चला सकता हूँ। क्या तुम्हें लगता है कि तुम्हारे सिवा कोई और पुरुष नहीं है?" उन्होंने बोधिसत्व से ये और कई अन्य कठोर बातें कहीं।

कुछ दिनों बाद, एक शत्रु राजा बनारस पर आक्रमण करने के लिए आगे बढ़ा और उसे घेर लिया। राजा को संदेश भेजकर उसे या तो अपना राज्य सौंपने या युद्ध करने के लिए कहा गया। बनारस के राजा ने भीमसेन को युद्ध के लिए भेजा। भीमसेन ने सैनिक की तरह पूर्ण हथियार धारण किए और कवच से ढके एक हाथी पर सवार हुए। बोधिसत्व, जिन्हें भीमसेन के मारे जाने का गहरा भय था, उन्होंने भी पूर्ण हथियार धारण किए और विनम्रतापूर्वक भीमसेन के पीछे बैठ गए। सेना से घिरे हाथी ने शहर के द्वार से बाहर निकलकर युद्ध के मोर्चे पर पहुँच गया। युद्ध के ढोल की पहली ध्वनि सुनते ही भीमसेन भय से कांपने लगे। बोधिसत्व ने कहा, "अगर तुम अभी गिर गए, तो मारे जाओगे," और तदनुसार उन्होंने भीमसेन के चारों ओर एक रस्सी बाँध दी, जिसे उन्होंने कसकर पकड़ रखा था, ताकि वे हाथी से न गिरें। लेकिन युद्धक्षेत्र का दृश्य भीमसेन के लिए असहनीय हो गया, और मृत्यु का भय इतना प्रबल हो गया कि उसने हाथी की पीठ पर गंदगी फैला दी। बोधिसत्व ने कहा, "अरे, वर्तमान अतीत से मेल नहीं खाता। तब तो तुम योद्धा का रूप धारण करते थे; अब तुम्हारी कुशलता केवल उस हाथी को गंदा करने तक सीमित है जिस पर तुम सवार हो।" और ऐसा कहते हुए उन्होंने यह श्लोक कहा:-

आपने अपनी कुशलता का बखान किया, और आपका बखान बहुत जोर-शोर से था;
  तुमने दुश्मन पर विजय प्राप्त करने की शपथ ली थी!
लेकिन क्या यह उनकी सेना का सामना करने पर सुसंगत रहता है?
  महोदय, क्या आप अपनी भावनाओं को व्यक्त करना चाहते हैं?

जब बोधिसत्व ने ये उपहास समाप्त किए, तो उन्होंने कहा, "पर मेरे मित्र, डरो मत। क्या मैं तुम्हारी रक्षा के लिए यहाँ नहीं हूँ?" फिर उन्होंने भीमसेन को हाथी से उतारा और उन्हें स्नान करके घर जाने को कहा। "और अब आज यश प्राप्त करने का दिन है," बोधिसत्व ने युद्ध घोष करते हुए कहा और युद्ध में कूद पड़े। राजा के शिविर को भेदते हुए, उन्होंने राजा को बाहर निकाला और उन्हें जीवित ही बनारस ले

गए। उनकी कुशलता से प्रसन्न होकर, उनके स्वामी ने उन्हें कई सम्मान दिए, और उस दिन से सारा भारत लघु धनुर्धर ऋषि की प्रसिद्धि से भर गया। उन्होंने भीमसेन को दान दिया और उन्हें उनके घर वापस भेज दिया; जबकि स्वयं उन्होंने दान और सभी अच्छे कार्यों में उत्कृष्टता प्राप्त की, और अपनी मृत्यु पर अपने कर्मों के अनुसार फल भोगने के लिए परलोक चले गए।

"इसलिए, भिक्षुओं," गुरु ने कहा, "यह पहली बार नहीं है कि यह भिक्षु शेखी बघार रहा है; पहले भी वह ऐसा ही था।" अपना प्रवचन समाप्त करते हुए, गुरु ने संबंध समझाया और जन्म का वर्णन करते हुए कहा, "यह शेखी बघारने वाला भिक्षु उन दिनों का भीमसेन था, और मैं स्वयं ऋषि लघु धनुर्धर था।"

फुटनोट:

(1) इस नाम का अर्थ है "वह व्यक्ति जिसके पास या जो एक भयंकर सेना का नेतृत्व करता है;" यह दूसरे पांडव का नाम है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सुरापान-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-81-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 81
सुरपना-जातक

"हमने शराब पी।" - यह कहानी गुरु ने वरिष्ठ भिक्षु सगाता के बारे में सुनाई थी, जब वे कोसंबी के पास स्थित घोषिता उद्यान में रह रहे थे।

श्रावस्ती नगर में वर्षा ऋतु बिताने के बाद, गुरु बुद्ध भद्दावाटिका नामक एक बाज़ार नगर में भिक्षा मांगने के लिए तीर्थयात्रा पर आए थे, जहाँ ग्वालों, बकरियों, किसानों और यात्रियों ने उनसे आदरपूर्वक विनती की कि वे आम घाट न जाएँ; क्योंकि उन्होंने कहा, "आम घाट में, नग्न तपस्वियों के निवास स्थान पर, आम घाट का नाग नामक एक विषैला और घातक नाग रहता है, जो भगवान बुद्ध को हानि पहुँचा सकता है।" उनकी चेतावनी को तीन बार दोहराने के बावजूद, भगवान बुद्ध ने अनसुना करने का नाटक किया और अपने मार्ग पर चलते रहे। जब भगवान बुद्ध भद्दावाटिका के पास एक उपवन में रह रहे थे, तब बुद्ध के सेवक, वरिष्ठ भिक्षु सगत, जिन्होंने सांसारिक मनुष्यों के समान अलौकिक शक्तियाँ प्राप्त कर ली थीं, उस स्थान पर गए, जहाँ नाग-राजा रहता था, वहाँ पत्तों का एक पलंग बनाया और उस पर पालथी मारकर बैठ गए। अपने दुष्ट स्वभाव को छिपाने में असमर्थ, नाग ने घना धुआँ उठाया। तो वरिष्ठ भिक्षु ने भी ऐसा ही किया। फिर नाग ने ज्वाला भेजी। वरिष्ठ भिक्षु ने भी ज्वाला भेजी। लेकिन, नाग की ज्वालाओं से वरिष्ठ भिक्षु को कोई हानि नहीं हुई, जबकि वरिष्ठ भिक्षु की ज्वालाओं ने नाग को हानि पहुँचाई, और इस प्रकार थोड़े ही समय में उन्होंने नाग-राजा को वश में कर लिया और उन्हें शरण और आज्ञाओं में स्थापित कर दिया, जिसके बाद वे गुरु के पास लौट गए। और गुरु, भद्दावाटिका में अपनी इच्छानुसार जीवन व्यतीत करने के बाद, कोसंबी चले गए। अब नाग के सगत द्वारा धर्म परिवर्तन की कहानी पूरे क्षेत्र में फैल गई थी, और कोसंबी के नगरवासी भगवान बुद्ध से मिलने गए और उन्हें प्रणाम किया, जिसके बाद वे वरिष्ठ भिक्षु सगत के पास गए और उन्हें प्रणाम करते हुए कहा, "हे प्रभु, हमें बताइए कि आपको किस चीज की कमी है और हम उसे पूरा करेंगे।" वरिष्ठ भिक्षु स्वयं मौन रहे; लेकिन दुष्ट छह के अनुयायियों ने इस प्रकार उत्तर दिया: "महोदय, जिन्होंने संसार का त्याग कर दिया है, उनके लिए श्वेत शराब उतनी ही दुर्लभ और स्वीकार्य है। क्या आप वरिष्ठ भिक्षु के लिए कुछ शुद्ध श्वेत शराब ला सकते हैं?" "ज़रूर ला सकते हैं," नगरवासियों ने कहा और गुरु को अगले दिन उनके साथ भोजन करने के लिए आमंत्रित किया। फिर वे अपने नगर लौट गए और व्यवस्था की कि प्रत्येक अपने घर में वरिष्ठ भिक्षु को शुद्ध श्वेत शराब अर्पित करे। तदनुसार, उन्होंने एक भंडार जमा किया और वरिष्ठ भिक्षु को घर-घर जाकर आमंत्रित किया और उन्हें शराब परोसी। वे इतने नशे में थे कि नगर से बाहर जाते समय, वरिष्ठ भिक्षु द्वार पर गिर पड़े और हिचकी लेते हुए बेसुध पड़े रहे। नगर में भोजन करके लौटते समय, गुरु ने वरिष्ठ भिक्षु को इस अवस्था में पड़ा हुआ देखा और भिक्षुओं से सागाता को घर ले जाने का अनुरोध करके उद्यान की ओर चल दिए। भिक्षुओं ने वरिष्ठ भिक्षु को बुद्ध के चरणों में सिर रखकर लिटाया, लेकिन वे घूम गए और उनके पैर बुद्ध की ओर हो गए। तब गुरु ने उनसे पूछा, "भाइयों, क्या सगत अब भी मेरे प्रति वैसा ही आदर दिखाते हैं जैसा पहले दिखाते थे?" "नहीं, श्रीमान।" "बताइए, भाइयों,""आम की नाव के नाग-राजा को किसने पराजित किया था?" "वह सगत थे, महाराज।" "क्या आपको लगता है कि अपनी वर्तमान अवस्था में सगत एक हानिरहित जल-सांप को भी मार सकते थे?" "नहीं, महाराज।" "तो

अब, भाइयों, क्या वह पेय पीना उचित है जो पीने से मनुष्य की इंद्रियों को वश में कर लेता है?" "यह अनुचित है, महाराज।" अब, वरिष्ठ भिक्षु की आलोचना करते हुए भाइयों से चर्चा करने के बाद, भगवान बुद्ध ने यह नियम स्थापित किया कि मादक पदार्थों का सेवन एक अपराध है जिसके लिए पश्चाताप और क्षमा आवश्यक है; इसके बाद वे उठे और अपने सुगंधित कक्ष में चले गए।

सत्य के हॉल में एकत्रित होकर, भिक्षुओं ने शराब पीने के पाप पर चर्चा की और कहा, "महोदय, शराब पीना कितना बड़ा पाप है, क्योंकि इसने सगत जैसे बुद्धिमान और प्रतिभाशाली व्यक्ति को भी बुद्ध की श्रेष्ठता से अंधा कर दिया है।" इसी समय सत्य के हॉल में प्रवेश करते हुए, गुरु ने पूछा कि वे किस विषय पर चर्चा कर रहे हैं; और उन्होंने उन्हें बताया। गुरु ने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि संसार का त्याग करने वालों ने शराब पीकर अपनी इंद्रियों को वश में किया है; ऐसा ही पहले भी होता रहा है।" और ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज था, तब बोधिसत्व काशी में एक उत्तरी ब्राह्मण परिवार में पैदा हुए। बड़े होकर उन्होंने संसार त्याग कर संन्यासी जीवन व्यतीत किया। उन्होंने ज्ञान और सिद्धियाँ प्राप्त कीं और हिमालय में पाँच सौ शिष्यों के साथ अंतर्दृष्टि के आनंद में लीन रहे। एक बार जब वर्षा ऋतु आई, तो उनके शिष्यों ने उनसे कहा, "गुरुजी, क्या हम मनुष्यों के निवास स्थानों पर जाकर नमक और सिरका ला सकते हैं?" उन्होंने उत्तर दिया, "मैं तो यहीं रहूँगा; आप अपनी भलाई के लिए जा सकते हैं और वर्षा ऋतु समाप्त होने पर लौट आएँगे।"

“बहुत अच्छा,” उन्होंने कहा और अपने स्वामी से आदरपूर्वक विदा लेकर बनारस आ गए, जहाँ उन्होंने राजमहल में अपना निवास स्थान बनाया। अगले दिन वे भिक्षा मांगने के लिए शहर के द्वार के ठीक बाहर एक गाँव गए, जहाँ उन्हें भोजन की प्रचुरता मिली; और अगले दिन वे शहर में प्रवेश कर गए। दयालु नागरिकों ने उन्हें भिक्षा दी, और राजा को जल्द ही पता चला कि हिमालय से आए पाँच सौ संन्यासी राजमहल में निवास कर रहे हैं, और वे महान तपस्वी हैं, देह को वश में रखते हैं और महान सद्गुणों से परिपूर्ण हैं। उनके इस अच्छे चरित्र के बारे में सुनकर, राजा राजमहल गए और उन्हें चार महीने तक वहाँ रहने के लिए सहर्ष आमंत्रित किया। उन्होंने वादा किया, और तब से उन्हें राजमहल में भोजन और राजमहल में आवास दिया जाने लगा। लेकिन एक दिन शहर में एक शराब उत्सव आयोजित हुआ, और राजा ने पाँच सौ संन्यासियों को उत्तम शराब की प्रचुर मात्रा दी, यह जानते हुए कि संसार और उसके व्यर्थों का त्याग करने वालों के रास्ते में ऐसी चीजें शायद ही कभी आती हैं। तपस्वियों ने मदिरा पी और बगीचे में लौट गए। वहाँ, नशे में चूर होकर, कुछ नाचने लगे, कुछ गाने लगे, जबकि कुछ नाचते-गाते थककर अपने चावल के थैले और अन्य सामान इधर-उधर फेंकने लगे, और फिर सोने के लिए लेट गए। जब उनका नशा उतर गया और वे जागकर अपने उत्सव के निशान देखकर रोए और विलाप करने लगे, और बोले, "हमने वह किया जो हमें नहीं करना चाहिए था। हमने यह बुराई इसलिए की क्योंकि हम अपने गुरु से दूर हो गए थे।" फिर, वे बगीचे से निकलकर हिमालय लौट गए। अपने कुंड और अन्य सामान एक तरफ रखकर, उन्होंने अपने गुरु को प्रणाम किया और बैठ गए। "अच्छा, मेरे पुत्रों," उन्होंने कहा, "क्या तुम मनुष्यों के बीच आराम से रहे, और क्या तुम्हें भिक्षा मांगने के लिए थका देने वाली यात्राओं से मुक्ति मिली? क्या तुम एक दूसरे के साथ एकता में रहे?"

"जी, स्वामी जी, हम आराम से थे; लेकिन हमने वर्जित पेय पी लिया, जिससे हम होश खो बैठे और होश में न रहकर नाचने-गाने लगे।" और बात को आगे बढ़ाने के लिए, उन्होंने यह छंद रचा और दोहराया:-

हमने पिया, नाचा, गाया, रोया; सब ठीक था।
जब हमने वो पेय पिया जो हमें चुरा लेता है
हमारी इंद्रियां बंदरों में परिवर्तित नहीं हुईं।
“जो लोग गुरु की देखरेख में नहीं रहते, उनका यही हाल होता है,” बोधिसत्व ने उन तपस्वियों को फटकारते हुए कहा; और उन्हें प्रोत्साहित करते हुए कहा, “अब से कभी ऐसा मत करना।” अपनी अंतर्दृष्टि को बरकरार रखते हुए, वे आगे ब्रह्मलोक (परमलोक) में पुनर्जन्म लेने के लिए नियत हुए।

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म की पहचान बताई (और अब से हम 'संबंध की व्याख्या की' शब्दों को छोड़ देंगे), यह कहते हुए, "मेरे शिष्य उन दिनों के संन्यासियों का समूह थे, और मैं उनका गुरु था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **मित्तविंदा-जातक**

***स्रोत**: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-82-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 82
मित्तविन्द-जातक

"अब और चिंतन नहीं।" - यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में एक स्वेच्छाचारी भिक्षु के बारे में सुनाई थी। बुद्ध कश्यप के समय में घटी इस जन्म की घटनाओं का वर्णन महा-मित्तविन्दक जातक (*1) के दसवें खंड में किया जाएगा।

तब बोधिसत्व ने यह श्लोक कहा:-

अब द्वीपों के महलों में रहने की जरूरत नहीं
क्रिस्टल, चांदी या चमकीले रत्नों से बना हुआ,
आपके सिर पर जो कठोर टोपी है, उसके साथ;
और न ही इसकी कष्टदायक यातना कभी समाप्त होगी।
जब तक तुम्हारे सारे पाप धुल न जाएं और जीवन का अंत न हो जाए।
इतना कहकर बोधिसत्व देवों (स्वर्गदूतों) के बीच अपने निवास स्थान पर चले गए। और मित्तविन्दक, उस मुकुट को धारण किए हुए, अपने पाप के प्रायश्चित तक भीषण पीड़ा भोगते रहे और अपने कर्मों के फल के अनुसार उनका निधन हो गया।

अपना उपदेश समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म का वर्णन करते हुए कहा, "यह स्वेच्छाचारी भाई (भिक्षु) उन दिनों के मित्तविन्दक थे, और मैं स्वयं देवों (देवदूतों) का राजा था।"

फुटनोट:

(1)सं. 439.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कालकाणि-जातक**
***स्रोत**: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-83-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 83
कलाकन्नी-जातक

“वह मेरा मित्र है।”—यह कहानी गुरुजी ने जेतवन मठ में अनाथपिंडिका के एक मित्र के बारे में सुनाई थी। परंपरा के अनुसार, दोनों ने साथ में मिट्टी के खिलौने बनाए थे और एक ही विद्यालय में पढ़ते थे; लेकिन, वर्षों बीतने के साथ, 'शाप' नाम का वह मित्र बहुत कष्ट में डूब गया और किसी भी तरह से अपना जीवन यापन नहीं कर पा रहा था। इसलिए वह एक धनी व्यक्ति के पास आया, जो उस पर दयालु था और उसने उसे अपनी सारी संपत्ति की देखभाल करने के लिए भुगतान किया; और वह गरीब मित्र अनाथपिंडिका के अधीन काम करने लगा और उनके सारे काम करने लगा। धनी व्यक्ति के घर जाने के बाद, घर में अक्सर यह सुनने को मिलता था—"उठो, शाप," या "बैठो, शाप," या "खाना खाओ, शाप।"

एक दिन कोषाध्यक्ष के मित्र और परिचित उनसे मिलने आए और बोले, "महोदय कोषाध्यक्ष, अपने घर में इस तरह की बातें न होने दें। 'उठो, श्राप दो', 'बैठो, श्राप दो' या 'खाना खाओ, श्राप दो' जैसी अशुभ बातें सुनकर तो राक्षस भी डर जाएगा। वह व्यक्ति आपके बराबर का नहीं है; वह दुर्भाग्य से घिरा हुआ एक अभागा है। उससे कोई वास्ता क्यों रखना?" "ऐसा नहीं," अनाथपिंडिका ने उत्तर दिया; "नाम तो केवल व्यक्ति की पहचान बताता है, और बुद्धिमान लोग किसी व्यक्ति को उसके नाम से नहीं आंकते; न ही केवल नाम के आधार पर अंधविश्वास करना उचित है। मैं कभी भी उसके नाम मात्र से उस मित्र को नहीं छोडूंगा जिसके साथ मैंने बचपन में मिट्टी के खिलौने बनाए थे।" और उन्होंने उनकी सलाह को अस्वीकार कर दिया।

एक दिन वह महान व्यक्ति अपने मुखिया गाँव का दौरा करने के लिए निकल गया और घर की ज़िम्मेदारी दूसरे को सौंप दी। उसके जाने की खबर सुनकर कुछ लुटेरों ने घर में सेंध लगाने का निश्चय किया; और हथियारों से लैस होकर वे रात के अंधेरे में घर को घेर लिया। लेकिन 'कर्स' को शक था कि चोर आ सकते हैं, और वह सतर्क था। जब उसे पता चला कि वे आ गए हैं, तो वह अपने लोगों को जगाने के लिए इधर-उधर दौड़ने लगा, एक से शंख बजाने को कहा, दूसरे से ढोल बजाने को, और इस तरह पूरे घर में शोर मच गया, मानो वह नौकरों की पूरी सेना को जगा रहा हो। लुटेरों ने कहा, "घर उतना खाली नहीं है जितना हमें बताया गया था; मालिक घर पर ही होगा।" अपने पत्थर, लाठी और अन्य हथियार फेंककर वे जान बचाकर भाग गए। अगले दिन घर के चारों ओर बिखरे हुए हथियारों को देखकर अफरा-तफरी मच गई; और कर्स की इतनी प्रशंसा हुई कि मानो आसमान छू रही हो: "अगर इस घर की रखवाली इस जैसे बुद्धिमान व्यक्ति ने न की होती, तो लुटेरे अपनी मर्जी से अंदर घुस आते और घर लूट लेते। कोषाध्यक्ष को यह सौभाग्य अपने वफादार मित्र की वजह से मिला है।" और जैसे ही व्यापारी अपने गाँव से लौटा, वे तुरंत उसके पास आकर उसे पूरी कहानी सुनाने लगे। "आह," उसने कहा, "यह मेरे घर का भरोसेमंद रखवाला है जिसे आप मुझे हटाने के लिए कह रहे थे। अगर मैंने आपकी सलाह मानकर उसे हटा दिया होता, तो आज मैं भिखारी होता। नाम नहीं, दिल मायने रखता है इंसान को।" ऐसा कहकर उसने अपनी तनख्वाह बढ़ा ली। और यह सोचकर कि यह एक अच्छी कहानी है, वह मालिक के पास गया और उसे पूरी घटना विस्तार से बताई। "महाराज, यह पहली बार नहीं है कि कर्स नाम के किसी मित्र ने अपने मित्र की संपत्ति को लुटेरों से बचाया हो; पहले भी ऐसा हो चुका है।" फिर, अनाथपिंडिका के अनुरोध पर, उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज था, तब बोधिसत्व एक विख्यात कोषाध्यक्ष थे; उनका एक मित्र था जिसका नाम श्राप था, और इसी तरह आगे की कहानी पहले बताई गई है। जब बोधिसत्व अपनी जमींदारी से लौटे और उन्हें सब कुछ पता चला, तो उन्होंने अपने मित्रों से कहा, "अगर मैंने तुम्हारी सलाह मानकर अपने भरोसेमंद मित्र को त्याग दिया होता, तो आज मैं भिखारी होता।" और उन्होंने यह श्लोक दोहराया:-

सच्चा मित्र वही है जो सात कदम तक साथ चलेगा।
हमारी मदद करने के लिए; बारह लोग इस बात की गवाही देते हैं कि साथी सच्चा है।
दो सप्ताह या एक महीने की परखी हुई वफादारी
वह अपने दयालु, लंबे समय को अपना दूसरा रूप बना लेता है।
तो मैं, जो इतने वर्षों से जानता आया हूँ, कैसे जानूँ?
मेरे मित्र, शाप को दूर भगाने में समझदारी बरतो?

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "आनंद उन दिनों का अभिशाप था, और मैं स्वयं बनारस का कोषाध्यक्ष था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **अट्ठस्सद्वार-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-84-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 84
अत्थसद्वारा-जातक

"स्वास्थ्य की तलाश करो।" - यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी, एक ऐसे बालक की जो आध्यात्मिक कल्याण के मामलों में ऋषि समान था। जब वह केवल सात वर्ष का था, तब एक अत्यंत धनी कोषाध्यक्ष के पुत्र ने अपनी आध्यात्मिक भलाई के लिए असाधारण बुद्धि और चिंता प्रकट की; और एक दिन वह अपने पिता के पास आध्यात्मिक कल्याण के मार्ग पूछने आया। पिता उत्तर नहीं दे सके, परन्तु उन्होंने मन ही मन सोचा, "यह बहुत कठिन प्रश्न है; स्वर्ग से लेकर नरक तक कोई भी इसका उत्तर नहीं दे सकता, सिवाय सर्वज्ञानी बुद्ध के।" अतः वे उस बालक को अपने साथ बहुत सारे इत्र, फूल और मलहम लेकर जेतवन मठ ले गए। वहाँ पहुँचकर उन्होंने गुरु को प्रणाम किया, उनके सामने सिर झुकाया और एक तरफ बैठकर भगवान बुद्ध से इस प्रकार कहा: "हे प्रभु, मेरा यह बालक, जो बुद्धिमान और आध्यात्मिक कल्याण के लिए उत्सुक है, मुझसे आध्यात्मिक कल्याण के मार्ग के बारे में पूछ रहा है; और क्योंकि मुझे इसका उत्तर नहीं पता था, इसलिए मैं आपके पास आया हूँ। हे भगवान बुद्ध, कृपा करके इस प्रश्न का उत्तर दीजिए।" गुरु ने कहा, "भाई, यही प्रश्न मुझसे पहले इसी बालक ने पूछा था और मैंने उसका उत्तर दिया था। उसे पहले उत्तर पता था, लेकिन जन्म परिवर्तन के कारण अब वह भूल गया है।" फिर पिता के अनुरोध पर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व एक अत्यंत धनी कोषाध्यक्ष थे; उनका एक पुत्र था, जो मात्र सात वर्ष की आयु में ही अत्यंत बुद्धिमान और आध्यात्मिक कल्याण के प्रति सजग था। एक दिन वह बालक अपने पिता के पास आध्यात्मिक कल्याण के मार्ग पूछने आया। उसके पिता ने उसे इस श्लोक को दोहराते हुए उत्तर दिया:

स्वास्थ्य की तलाश करो, जो सर्वोच्च अच्छाई है; सदाचारी बनो;
बड़ों की बात सुनो; शास्त्रों से सीखो;
सत्य के अनुरूप चलो; और आसक्ति के बंधनों को तोड़ दो।
मुख्यतः कल्याण के ये छह मार्ग ही हमें ले जाते हैं।
इस प्रकार बोधिसत्व ने अपने पुत्र के आध्यात्मिक कल्याण के मार्ग के प्रश्न का उत्तर दिया; और पुत्र ने तब से उन छह नियमों का पालन करना शुरू कर दिया। दान और अन्य अच्छे कार्यों में जीवन व्यतीत करने के बाद, बोधिसत्व का निधन हो गया और उनके कर्मों के अनुसार ही उनका फल भोगा गया।

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "यह बच्चा भी उन्हीं दिनों का बच्चा था, और मैं स्वयं प्रभु कोषाध्यक्ष हूँ।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **किम्पक्क-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-85-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 85
किम्पाक्का-जातक

"जैसे खाने वाले।"—यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में एक भिक्षु के बारे में सुनाई थी, जो वासना से ग्रस्त हो गया था। परंपरा के अनुसार, एक अच्छे परिवार का वंशज था जिसने बुद्ध की शिक्षाओं में अपना हृदय समर्पित कर दिया और भिक्षु संघ में शामिल हो गया। लेकिन एक दिन जब वह श्रावस्ती नगर में भिक्षा मांगने जा रहा था, तो वहाँ एक सुंदर वस्त्रधारी स्त्री को देखकर वह वासना से भर गया। अपने गुरुओं और सलाहकारों द्वारा गुरु के समक्ष लाए जाने पर, उसने भगवान बुद्ध के प्रश्नों के उत्तर में स्वीकार किया कि उसके भीतर वासना उत्पन्न हो गई थी। तब गुरु ने कहा, "भाई, इंद्रियों की पाँचों वासनाएँ वास्तव में आनंद के समय मीठी लगती हैं; परन्तु इनका आनंद (क्योंकि यह नरक में पुनर्जन्म और अन्य बुरी अवस्थाओं के कष्टों के बाद आता है) उस फल को खाने के समान है। वह फल देखने में बहुत सुंदर, सुगंधित और मीठा होता है; परन्तु खाने पर वह आंतरिक अंगों पर आक्रमण करता है और मृत्यु लाता है। पुराने समय में, इसके बुरे स्वभाव से अनभिज्ञ होकर, बहुत से लोग उस फल की सुंदरता, सुगंध और मिठास से मोहित होकर उसे खा गए और उनकी मृत्यु हो गई।" ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व एक कारवां के नेता के रूप में अवतरित हुए। एक बार जब वे पूर्व से पश्चिम की ओर पाँच सौ रथों के साथ यात्रा कर रहे थे, तो वे एक जंगल के बाहरी इलाके में पहुँचे। अपने साथियों को इकट्ठा करके उन्होंने उनसे कहा, "इस जंगल में विषैले फल देने वाले वृक्ष उगते हैं। कोई भी व्यक्ति मुझसे पूछे बिना कोई भी अपरिचित फल न खाए।" जब वे जंगल पार कर गए, तो वे दूसरे किनारे पर एक ऐसे वृक्ष के पास पहुँचे जिसकी शाखाएँ फलों के भार से झुकी हुई थीं। आकार, गंध और स्वाद में उसका तना, शाखाएँ, पत्ते और फल आम के समान थे। वृक्ष को उसके भ्रामक रूप आदि के कारण आम समझकर, कुछ लोगों ने फल तोड़कर खा लिए; परन्तु अन्य ने कहा, "हमें खाने से पहले अपने नेता से बात कर लेनी चाहिए।" और ये लोग फल तोड़कर उनके आने की प्रतीक्षा करने लगे। जब वे आए, तो उन्होंने उन्हें तोड़े हुए फल फेंकने का आदेश दिया, और जो लोग पहले ही खा चुके थे, उन्हें उल्टी कराने वाली दवा दी। इनमें से कुछ लोग ठीक हो गए; परन्तु जो सबसे पहले खाया, वही मर गया। बोधिसत्व सुरक्षित अपने गंतव्य तक पहुँच गए और अपना सामान लाभ पर बेचकर अपने घर लौट गए। दान-पुण्य और अन्य अच्छे कार्यों में जीवन व्यतीत करने के बाद, वे अपने कर्मों के फल के लिए परलोक सिधार गए।

जब उन्होंने यह कहानी सुनाई, तब गुरु ने बुद्ध के रूप में यह श्लोक कहा:-

जिस प्रकार उस फल को खाने वाले मर जाते हैं, उसी प्रकार वासनाएं भी मर जाती हैं।
जब पक जाए, तो उसे मार डालो जो पीड़ा को नहीं जानता।
वे आगे चलकर संतान उत्पन्न करते हैं और वासनापूर्ण कृत्यों में लिप्त हो जाते हैं।
इस प्रकार यह सिद्ध करने के बाद कि कामवासनाएँ, जो फल प्राप्ति के समय अत्यंत मधुर प्रतीत होती हैं, अंततः अपने अनुयायियों का नाश कर देती हैं, गुरु ने चार सत्यों का उपदेश दिया, जिसके समापन पर कामवासना से ग्रस्त भिक्षु का रूपांतरण हुआ और उन्होंने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) का फल प्राप्त किया। बुद्ध के शेष अनुयायियों में से कुछ ने प्रथम, कुछ ने द्वितीय और कुछ ने तृतीय मार्ग (सम्मोहन) प्राप्त किया, जबकि अन्य अर्हत (बुद्ध के समान प्रबुद्ध) बन गए।

अपना उपदेश समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "मेरे शिष्य उन दिनों कारवां के लोग थे, और मैं उनका नेता था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **शीलावीमांसन-जातक**
***स्रोत**: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-86-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 86
सिलविमांसना-जातक

"तुलना किसी से नहीं की जा सकती।"—यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी, एक ब्राह्मण के बारे में जिसने अपनी अच्छाई की प्रतिष्ठा की परीक्षा ली। कोसल के राजा द्वारा पोषित इस भिक्षु ने तीन शरणों का मार्ग अपनाया था; वे पंच वशीकरण का पालन करते थे और तीनों वेदों में पारंगत थे। राजा ने सोचा, "यह तो अच्छा व्यक्ति है," और उन्हें बहुत सम्मान दिया। लेकिन उस भिक्षु ने मन ही मन सोचा, "राजा मुझे अन्य ब्राह्मणों से अधिक सम्मान देते हैं और मुझे अपना गुरु बनाकर अपना आदर प्रकट करते हैं। लेकिन क्या उनका यह अनुग्रह मेरी अच्छाई के कारण है या केवल मेरे जन्म, वंश, परिवार, देश और उपलब्धियों के कारण? मुझे इसका उत्तर अवश्य जानना चाहिए।" तदनुसार, एक दिन जब वे महल से निकल रहे थे, तो उन्होंने बिना पूछे कोषाध्यक्ष के कुंड से एक सिक्का लिया और चले गए। कोषाध्यक्ष ब्राह्मण के प्रति इतना आदरपूर्ण था कि वह एकदम शांत बैठा रहा और एक शब्द भी नहीं बोला। अगले दिन ब्राह्मण ने दो सिक्के लिए; लेकिन फिर भी अधिकारी ने कोई आपत्ति नहीं जताई। तीसरे दिन ब्राह्मण ने मुट्ठी भर सिक्के चुरा लिए। कोषाध्यक्ष चिल्लाया, "यह तीसरा दिन है जब तुमने महाराज को लूटा है।" और उसने तीन बार ज़ोर से कहा, "मैंने खजाने को लूटने वाले चोर को पकड़ लिया है।" चारों ओर से लोगों की भीड़ उमड़ पड़ी और चिल्लाने लगी, "अरे, तुम तो बड़े समय से अच्छे होने का ढोंग कर रहे हो।" और उसे दो-तीन लात मारकर राजा के सामने ले गए। राजा ने बड़े दुःख से उससे कहा, "हे ब्राह्मण, तुमने ऐसा दुष्ट काम क्यों किया?" और उसने आदेश दिया, "इसे दंड के लिए ले जाओ।" ब्राह्मण ने कहा, "मैं चोर नहीं हूँ, महाराज। फिर आपने खजाने से पैसे

क्यों चुराए?" "हे महाराज, आपने मुझे इतना बड़ा सम्मान समझाया, और मैंने यह जानने का निश्चय किया कि यह सम्मान मेरे जन्म और अन्य गुणों के कारण है या केवल मेरे अच्छे स्वभाव के कारण। यही मेरा उद्देश्य था, और अब मुझे निश्चित रूप से पता है (जहाँ तक आपने मुझे दंड देने का आदेश दिया है) कि यह मेरा अच्छा स्वभाव ही था, न कि मेरा जन्म और अन्य लाभ, जिसने मुझे महाराज की कृपा दिलाई। मैं जानता हूँ कि अच्छाई ही सर्वोपरि गुण है; मैं यह भी जानता हूँ कि इस जीवन में, जब तक मैं पापमय सुखों के बीच जीवन व्यतीत करते हुए एक गृहस्थ बना रहूँगा, तब तक मैं अच्छाई को कभी प्राप्त नहीं कर सकता। इसीलिए, आज ही मैं जेतवन मठ में गुरु के पास जाकर सांसारिक जीवन त्याग कर भिक्षु संघ में शामिल होना चाहता हूँ। कृपया मुझे अनुमति दें।" राजा की सहमति से ब्राह्मण जेतवन मठ के लिए चल पड़ा। उसके मित्रों और रिश्तेदारों ने सामूहिक रूप से उसे उसके इरादे से रोकने का प्रयास किया, लेकिन जब उनके प्रयास व्यर्थ साबित हुए, तो उन्होंने उसे अकेला छोड़ दिया। वह गुरु के पास आया और भिक्षु संघ में प्रवेश करने का अनुरोध किया। शिष्यों के निम्न और उच्चतर पवित्र क्रम में प्रवेश के बाद, उन्होंने लगन से आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि प्राप्त की और अर्हत (बुद्ध के समान प्रबुद्ध) बन गए, जिस पर वे गुरु के निकट आकर बोले, "हे गुरु, संघ में मेरा प्रवेश सर्वोच्च फल लेकर आया है।"‘‘—इससे यह संकेत मिलता है कि उन्होंने अर्हत पद (बुद्ध के समान ज्ञान) प्राप्त कर लिया था। यह सुनकर, सत्य के हॉल में एकत्रित भिक्षुओं ने राजा के उस पुजारी के गुणों के बारे में आपस में चर्चा की, जिसने अपनी अच्छाई की प्रतिष्ठा का परीक्षण किया और राजा को छोड़कर अब अर्हत (बुद्ध के समान ज्ञान प्राप्त) बन गया था। हॉल में प्रवेश करके, गुरु ने भिक्षुओं से पूछा कि वे किस विषय पर चर्चा कर रहे हैं, और उन्होंने उन्हें बताया। “भाइयों, इस ब्राह्मण का अपनी अच्छाई की प्रतिष्ठा का परीक्षण करना और संसार का त्याग करके मोक्ष (निर्वाण) प्राप्त करना कोई अनभिज्ञता नहीं है। ऐसा ही अतीत के बुद्धिमान और अच्छे भिक्षुओं ने भी किया था।” और ऐसा कहकर, उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व उनके पुरोहित थे। वे दान-पुण्य और अन्य अच्छे कार्यों में लीन रहते थे, उनका मन सदा धर्म में लगा रहता था और वे पंचमाताओं का निरंतर पालन करते थे। राजा ने उन्हें अन्य ब्राह्मणों से अधिक सम्मान दिया; और जैसा ऊपर बताया गया है, वैसा ही हुआ।

लेकिन, जब बोधिसत्व को जंजीरों में जकड़कर राजा के सामने लाया जा रहा था, तो वे वहाँ पहुँचे जहाँ कुछ सपेरे एक साँप का प्रदर्शन कर रहे थे। उन्होंने साँप की पूंछ और गला पकड़कर उसे अपने गले में बाँध लिया था। यह देखकर बोधिसत्व ने उन सपेरों से विनती की कि वे ऐसा करना बंद कर दें, क्योंकि साँप उन्हें काट सकता है और उनकी जान ले सकता है। सपेरों ने उत्तर दिया, "ब्राह्मण, यह एक अच्छा और सभ्य नाग है; यह तुम्हारी तरह दुष्ट नहीं है, जिसे उसके दुष्टता और दुराचार के कारण हिरासत में लाया जा रहा है।"

बोधिसत्व ने मन ही मन सोचा, "नाग भी, अगर काटते या घाव नहीं करते, तो 'अच्छे' कहलाते हैं। तो मनुष्य रूप धारण करने वालों के साथ तो यह बात और भी अधिक स्पष्ट होगी! वास्तव में, यही अच्छाई समस्त संसार में सबसे उत्तम है, इससे बढ़कर कुछ भी नहीं है।" फिर उन्हें राजा के समक्ष लाया गया। राजा ने कहा, "यह क्या है, मेरे मित्रों?" बोधिसत्व ने कहा, "यह चोर महाराज के खजाने को लूट रहा है।" "इसे मृत्युदंड के लिए ले चलो।" ब्राह्मण ने कहा, "महाराज, मैं चोर नहीं हूँ।" "तो फिर तुमने धन कैसे चुराया?" इस पर बोधिसत्व ने ठीक ऊपर दिए गए उत्तर के समान ही उत्तर दिया और अंत में कहा:- "इसीलिए मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि समस्त संसार में सबसे श्रेष्ठ और उत्तम गुण सत्त्व ही है। परन्तु चाहे जो भी हो, यह देखते हुए कि जब नाग काटता या घाव नहीं करता, तो उसे केवल 'सद्गुण' ही कहा जा सकता है, इससे अधिक कुछ नहीं, इसी कारण से भी केवल सत्त्व ही समस्त गुणों में सर्वोच्च और उत्तम है।" फिर सत्त्व की स्तुति में उन्होंने यह श्लोक कहा:-

अच्छाई की तुलना किसी से नहीं की जा सकती;
पूरी दुनिया इसकी बराबरी नहीं कर सकती। कोबरा गिर पड़ा।
यदि मनुष्य इसे 'अच्छा' मानता है, तो मृत्यु से मुक्ति मिल जाती है।
इस श्लोक में राजा को सत्य का उपदेश देने के बाद, बोधिसत्व ने सभी कामवासनाओं का त्याग करके और संसार को त्यागकर संन्यासी का जीवन व्यतीत करते हुए हिमालय चले गए, जहाँ उन्होंने पाँच ज्ञान और आठ सिद्धियाँ प्राप्त कीं, जिससे उन्हें ब्रह्मलोक (परम स्वर्ग) में पुनर्जन्म की निश्चित आशा प्राप्त हुई।

अपना उपदेश समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "उन दिनों मेरे शिष्य राजा के अनुयायी थे, और मैं स्वयं राजा का पुजारी था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **मंगल-जातक**

स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-87-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 87
ममगल जातक

“जो कोई भी त्याग करता है।”—यह कथा गुरु ने बाँस के वन में एक ब्राह्मण के बारे में सुनाई थी, जो वस्त्र के टुकड़ों से भविष्यवाणियाँ करने की कला में निपुण था। परंपरा के अनुसार, राजगृह नगर में एक ब्राह्मण रहता था जो अंधविश्वासी और भ्रामक विचारों वाला था, और त्रिरत्न (तीन रत्नों) (1. बुद्ध, 2. धम्म (निर्वाण का मार्ग) और 3. संघ (पवित्र व्यवस्था)) में विश्वास नहीं करता था। यह ब्राह्मण अत्यंत धनी और संपत्ति से परिपूर्ण था; और एक मादा चूहे ने उसके वस्त्रों का एक सूट कुतर दिया, जो एक संदूक में रखा था। एक दिन स्नान करने के बाद, उसने उस सूट को मंगवाया, और तब उसे चूहे द्वारा किए गए शरारत के बारे में बताया गया। “अगर ये कपड़े घर में ही रह गए,” उसने मन ही मन सोचा, “तो ये दुर्भाग्य लाएंगे; ऐसी अशुभ वस्तु श्राप अवश्य लाएगी। इन्हें अपने किसी बच्चे या नौकर को देना तो नामुमकिन है; क्योंकि जिसके पास भी ये होंगे, वह अपने आस-पास के सभी लोगों पर विपत्ति लाएगा। मुझे इन्हें कब्रिस्तान में फेंकवाना होगा (*1); लेकिन कैसे? मैं इन्हें नौकरों को नहीं दे सकता; क्योंकि वे इन्हें पाने और अपने पास रखने की लालसा करेंगे, जिससे मेरा घर बर्बाद हो जाएगा। मेरे बेटे को ही इन्हें ले जाना होगा।” इसलिए उसने अपने बेटे को बुलाया और उसे सारी बात बताकर कहा कि वह इन कपड़ों को एक डंडे पर उठाकर, बिना हाथ लगाए, कब्रिस्तान में फेंक दे। फिर बेटे को पूरे शरीर को धोकर लौटना था। उसी सुबह भोर होते ही गुरु ने यह देखने के लिए चारों ओर देखा कि किन लोगों को सत्य की ओर लाया जा सकता है, तब उन्हें पता चला कि पिता और पुत्र दोनों ही मोक्ष (निर्वाण) प्राप्त करने के लिए पूर्वनियोजित थे। अतः उसने शिकार पर जा रहे शिकारी का वेश धारण किया और श्मशान घाट पर प्रवेश द्वार पर बैठ गया, जहाँ से बुद्ध के चिन्ह स्वरूप छह रंगों की किरणें निकल रही थीं। कुछ ही देर में वह युवक ब्राह्मण वहाँ आ पहुँचा, अपने पिता के निर्देशानुसार वस्त्रों को अपनी छड़ी के सिरे पर सावधानीपूर्वक उठाए हुए, मानो वह किसी घर के साँप को ढो रहा हो।

"तुम क्या कर रहे हो, नन्हे ब्राह्मण?" गुरु ने पूछा।

“मेरे प्यारे गौतम (बुद्ध) (*2),” उत्तर आया, “चूहों द्वारा कुतरे गए ये वस्त्र दुर्भाग्य का साक्षात रूप हैं, और विष में डूबे हुए प्रतीत होते हैं; इसीलिए मेरे पिता ने, इस डर से कि कोई सेवक इन वस्त्रों को पाने और अपने पास रखने की लालसा न करे, मुझे इन्हें देकर भेजा है। मैंने वादा किया था कि मैं इन्हें फेंक दूंगा और बाद में स्नान कर लूंगा; और यही वह काम है जिसके लिए मैं यहाँ आया हूँ।” “तो फिर वस्त्र फेंक दो,” गुरु ने कहा; और युवा ब्राह्मण ने वैसा ही किया। “ये मुझ पर बिल्कुल ठीक रहेंगे,” गुरु ने कहा और युवक की आँखों के सामने ही, उसके बार-बार मना करने और न लेने की विनती को अनसुना करते हुए, दुर्भाग्य से भरे उन वस्त्रों को उठा लिया; और वे बाँस के वन की ओर चल दिए।

वह युवक बड़ी जल्दी से घर भागा, अपने पिता को यह बताने के लिए कि ऋषि गौतम (बुद्ध) ने कहा था कि वे वस्त्र उन पर बिल्कुल जँचेंगे, और तमाम चेतावनियों के बावजूद, वे उस वस्त्र को अपने साथ बाँस के वन में ले जाने पर अड़े रहे। ब्राह्मण ने मन ही मन सोचा, “वे वस्त्र जादू से ग्रसित और शापित हैं। ऋषि गौतम (बुद्ध) भी उन्हें पहने बिना विनाश के नहीं रह सकते; और इससे मेरी बदनामी होगी। मैं ऋषि को बहुत सारे दूसरे वस्त्र दूँगा और उनसे कहूँगा कि वे उस वस्त्र को फेंक दें।” अतः वह बहुत सारे वस्त्र लेकर अपने पुत्र के साथ बाँस के वन की ओर चल पड़ा। जब वह गुरु से मिला, तो वह आदरपूर्वक एक तरफ खड़ा हो गया और बोला, “क्या यह सचमुच सच है, जैसा मैंने सुना है, कि आपने, मेरे आदरणीय गौतम (बुद्ध), श्मशान से वस्त्र उठाए हैं?” “जी हाँ, ब्राह्मण।” "हे गौतम (बुद्ध), वह वस्त्र शापित है; यदि आप उसका उपयोग करेंगे, तो वह आपका नाश कर देगा। यदि आपको वस्त्रों की आवश्यकता हो, तो इन्हें धारण करें और उस वस्त्र को फेंक दें।" "ब्राह्मण," गुरु ने उत्तर दिया, "मैंने खुलेआम संसार का त्याग कर दिया है और सड़क किनारे या स्नानागारों में पड़े चिथड़ों से, या कूड़े के ढेरों या श्मशान घाटों में फेंके गए वस्त्रों से संतुष्ट हूँ। जबकि आपने अतीत में भी और वर्तमान में भी अंधविश्वासों को धारण किया है।" ऐसा कहकर, ब्राह्मण के अनुरोध पर, उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले मगध राज्य के राजगृह नगर में एक धर्मात्मा राजा का शासन था। उसी समय बोधिसत्व ने उत्तर-पश्चिम के ब्राह्मण के रूप में पुनर्जन्म लिया। बड़े होकर उन्होंने संसार त्यागकर संन्यासी जीवन व्यतीत किया, ज्ञान और सिद्धियाँ प्राप्त कीं और हिमालय में निवास करने चले गए। एक बार हिमालय से लौटकर राजा के उद्यान में रहने के बाद, वे दूसरे दिन भिक्षा मांगने के लिए नगर में गए।

उन्हें देखकर राजा ने उन्हें महल में बुलाया और वहाँ उन्हें आसन और भोजन प्रदान किया तथा उनसे यह वचन लिया कि वे उद्यान में ही निवास करेंगे। इस प्रकार बोधिसत्व महल में ही भोजन ग्रहण करते और उद्यान में ही निवास करते थे।

उन दिनों उस नगर में वस्त्र-शगुन के नाम से एक ब्राह्मण रहता था। उसके पास एक संदूक में कपड़ों का एक सूट था जिसे चूहों ने कुतर दिया था, और ठीक वही हुआ जैसा कि पहले बताई गई कहानी में है। लेकिन जब पुत्र श्मशान घाट जा रहा था, तो बोधिसत्व पहले ही वहाँ पहुँच गए और द्वार पर बैठ गए; और युवा ब्राह्मण द्वारा फेंके गए सूट को उठाकर वे बगीचे में लौट आए। जब पुत्र ने यह बात बूढ़े ब्राह्मण को बताई, तो उन्होंने कहा, "यह राजा के तपस्वी की मृत्यु होगी"; और बोधिसत्व से विनती की कि वे उस सूट को फेंक दें, अन्यथा वे मर जाएँगे। लेकिन तपस्वी ने उत्तर दिया, "हमारे लिए श्मशान घाटों में फेंके गए चिथड़े ही काफी हैं। हम भाग्य से संबंधित अंधविश्वासों में विश्वास नहीं करते, जिन्हें बुद्धों, पच्चेक बुद्धों या बोधिसत्वों ने मान्यता नहीं दी है; इसलिए किसी भी बुद्धिमान व्यक्ति को भाग्य में विश्वास नहीं करना चाहिए।" सत्य की व्याख्या सुनकर ब्राह्मण ने अपने पापों का त्याग कर बोधिसत्व की शरण ली। बोधिसत्व ने अपनी अंतर्दृष्टि को अक्षुण्ण रखते हुए ब्रह्मलोक (परमलोक) में पुनर्जन्म प्राप्त किया।

यह कहानी सुनाने के बाद, गुरु ने बुद्ध के रूप में ब्राह्मण को इस श्लोक में सत्य का उपदेश दिया:

जो शकुनों, सपनों और संकेतों का त्याग करता है,
वह व्यक्ति, अंधविश्वास की गलतियों से मुक्त होकर,
हम दोनों दुष्टताओं पर विजय प्राप्त करेंगे।
और अंत समय तक आसक्तियों से परे।

जब गुरु ने ब्राह्मण को इस श्लोक के रूप में अपना उपदेश दिया, तो उन्होंने आगे बढ़कर चार सत्यों का उपदेश दिया, जिसके अंत में उस ब्राह्मण ने अपने पुत्र सहित प्रथम मार्ग (सम्मोहन) को प्राप्त किया। गुरु ने जन्म का उल्लेख करते हुए कहा, "आज के पिता और पुत्र उन दिनों के भी पिता और पुत्र थे, और मैं स्वयं तपस्वी था।"

फुटनोट:

(1) एक खुला स्थान या उपवन जिसमें जंगली जानवरों के खाने के लिए शवों को रखा जाता था, ताकि पृथ्वी अपवित्र न हो।

(2) पाली में भो गौतम (बुद्ध), एक परिचित संबोधन का रूप। ब्राह्मणों को हमेशा बुद्ध को भो कहने का आशय जताते हुए दर्शाया जाता है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सारंभ-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-88-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 88
सारम्भ-जातक

"कृपापूर्वक बोलो।"--यह कहानी गुरु ने श्रावस्ती नगर में अपशब्दों के प्रयोग से संबंधित नियम के बारे में सुनाई थी। प्रारंभिक कहानी और अतीत की कहानी ऊपर दिए गए नंदीविसाला-जातक (*1) के समान ही हैं।

लेकिन इस मामले में अंतर यह है कि बोधिसत्व सरम्भा नामक एक बैल थे, और गांधार राज्य (कंधार सहित अफगानिस्तान और पाकिस्तान के निकट) के तक्षशिला के एक ब्राह्मण के थे। अतीत की कहानी सुनाने के बाद, गुरु ने बुद्ध के रूप में यह श्लोक कहा:-

विनम्रता से बोलें, अपने साथी को गाली न दें;
प्रेम और दयालुता का भाव रखें; दुर्व्यवहार से दुख उत्पन्न होता है।

जब गुरु ने अपना पाठ समाप्त किया तो उन्होंने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "आनंद उस समय के ब्राह्मण थे, उप्पलावन्ना उनकी पत्नी थीं और मैं सरम्भा था।"

फुटनोट:

(1)संख्या 28.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कुहाका-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-89-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 89
कुहाका-जातक

"कितना विश्वसनीय है!" यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक बेईमान व्यक्ति के बारे में सुनाई थी। उसकी बेईमानी का विवरण उद्दल-जातक (*1) में दिया जाएगा।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज था, तब पास ही एक छोटे से गाँव में एक धूर्त और दुष्ट तपस्वी रहता था, जो लंबे, जटाधारी बालों वाला था। गाँव के अधिकारी ने उसके रहने के लिए जंगल में एक आश्रम बनवाया था और उसे अपने घर में उत्तम भोजन उपलब्ध कराता था। जटाधारी तपस्वी को सदाचार का आदर्श मानते हुए और लुटेरों के डर से, अधिकारी ने आश्रम में सौ सोने के सिक्के लाकर गाड़ दिए और तपस्वी से उनकी रक्षा करने को कहा। "महाराज, संसार त्याग चुके व्यक्ति से ऐसा कहने की कोई आवश्यकता नहीं है; हम तपस्वी कभी दूसरों की संपत्ति के लालच में नहीं पड़ते।" "ठीक है महाराज," अधिकारी ने कहा और अधिकारी की बात पर पूरा भरोसा करके चला गया। तब उस दुष्ट तपस्वी ने मन ही मन सोचा, "यहाँ इतना है कि किसी का जीवन भर का गुजारा हो जाएगा।" कुछ दिन बीतने का इंतज़ार करने के बाद, उन्होंने सोना निकाला और उसे सड़क किनारे गाड़ दिया, और पहले की तरह अपने आश्रम में रहने लौट गए। अगले दिन, अधिकारी के घर पर चावल का भोजन करने के बाद, तपस्वी ने कहा, "महाराज, बहुत समय हो गया है जब से आप मेरा भरण-पोषण कर रहे हैं; और एक ही स्थान पर लंबे समय तक रहना संसार में रहने के समान है, जो समर्पित तपस्वियों के लिए वर्जित है। इसलिए मुझे जाना ही होगा।" और यद्यपि अधिकारी ने उन्हें रुकने के लिए कहा, फिर भी उनका दृढ़ संकल्प नहीं डिगा।

“अच्छा, तो अगर ऐसा ही होना है, तो जाइए महोदय,” अधिकारी ने कहा; और उसने तपस्वी को शहर के बाहरी इलाके तक पहुँचाया और फिर उसे छोड़कर चला गया। थोड़ी दूर जाने के बाद तपस्वी ने सोचा कि अधिकारी को मनाना अच्छा रहेगा; इसलिए उसने अपनी जटाओं में एक तिनका फंसाकर वापस मुड़ गया। “वापस क्यों आए?” अधिकारी ने पूछा। “महोदय, आपकी छत से एक तिनका मेरी जटाओं में फंस गया था; और क्योंकि हम संन्यासी बिना दी हुई कोई भी चीज़ नहीं लेते, इसलिए मैं इसे आपके पास वापस ले आया हूँ।” “इसे नीचे फेंक दीजिए महोदय, और जाइए,” अधिकारी ने कहा, और मन ही मन सोचा, “अरे वाह, यह तो बिना मालिक का तिनका भी नहीं लेगा! कितना संवेदनशील स्वभाव है!” तपस्वी से अत्यंत प्रसन्न होकर अधिकारी ने उसे विदाई दी।

उस समय संयोगवश, व्यापार के उद्देश्य से सीमावर्ती जिले की ओर जा रहे बोधिसत्व ने उस गाँव में रात्रि विश्राम किया। तपस्वी की बातें सुनकर उनके मन में संदेह उत्पन्न हुआ कि उस दुष्ट तपस्वी ने अधिकारी से कुछ चुरा लिया होगा; और उन्होंने अधिकारी से पूछा कि क्या उन्होंने तपस्वी की देखरेख में कुछ रखा था।

"हां, सौ सोने के सिक्के।"

"ठीक है, जाकर देख लो कि सब कुछ सुरक्षित है या नहीं।"

अधिकारी आश्रम गया और वहाँ देखा तो पाया कि उसका पैसा गायब है। दौड़कर बोधिसत्व के पास लौटा और रोते हुए बोला, "पैसा नहीं है।" बोधिसत्व ने कहा, "चोर कोई और नहीं बल्कि वह लंबे बालों वाला बदमाश तपस्वी है; चलो उसका पीछा करके उसे पकड़ते हैं।" तो वे तेज़ी से उसका पीछा करने लगे। जब उन्होंने उस बदमाश को पकड़ा तो उसे तब तक लात-घूंसे मारे जब तक उसने उन्हें यह नहीं बता दिया कि उसने पैसा कहाँ छिपाया था। जब उसने सोना निकाला तो बोधिसत्व ने उसे देखकर तपस्वी से तिरस्कारपूर्वक कहा, "तो सौ सोने के सिक्कों ने तुम्हारे अंतरात्मा को उतना परेशान नहीं किया जितना उस तिनके ने!" और उन्होंने उसे इस श्लोक में फटकारा:-

उस बदमाश ने जो कहानी सुनाई, वह कितनी विश्वसनीय लग रही थी!
तिनके के प्रति कितना सजग! सोने के प्रति कितना लापरवाह!
जब बोधिसत्व ने उस व्यक्ति को इस प्रकार फटकारा, तो उन्होंने आगे कहा, "और अब सावधान रहो, हे पाखंडी, कहीं तुम फिर से ऐसी चाल न चलो।" अपने जीवन के अंत में, बोधिसत्व अपने कर्मों के फल के अनुसार आगे बढ़ने के लिए इस दुनिया से विदा हो गए।

अपना उपदेश समाप्त करते हुए गुरु ने कहा, "इस प्रकार आप देखते हैं, भिक्षुओं, कि यह भिक्षु अतीत में भी उतना ही बेईमान था जितना आज है।" और उन्होंने जन्म का परिचय देते हुए कहा, "यह बेईमान भिक्षु उन दिनों का बेईमान तपस्वी था, और मैं बुद्धिमान और नेक इंसान हूँ।"

फुटनोट:

(1)सं. 487.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **अकातान्नु-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-90-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 90
अकटन्नु-जातक

"वह कृतघ्न व्यक्ति।" - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में अनाथपिंडिका के बारे में सुनाई थी।

कहा जाता है कि सीमावर्ती इलाके में एक व्यापारी रहता था, जो अनाथपिंडिका का पत्र-व्यवहार करने वाला और मित्र था, लेकिन उनकी कभी मुलाकात नहीं हुई थी। एक बार उस व्यापारी ने पाँच सौ गाड़ियों में स्थानीय उत्पाद लाद दिए और अपने कर्मचारियों को आदेश दिया कि वे महान व्यापारी अनाथपिंडिका के पास जाकर उनके पत्र-व्यवहार की दुकान में अपने सामान का मूल्य लेकर बदले में माल वापस ले आएं। वे श्रावस्ती नगर पहुंचे और अनाथपिंडिका से मिले। पहले उन्होंने उन्हें भेंट दी और फिर उन्हें अपने काम के बारे में बताया। महान व्यापारी ने कहा, "आपका स्वागत है," और उन्हें अपने यहाँ ठहराने और उनकी ज़रूरतों के लिए पैसे देने का आदेश दिया। उनके मालिक का हालचाल पूछने के बाद, उन्होंने उनके माल का आदान-प्रदान किया और बदले में उन्हें माल दे दिया। फिर वे अपने जिले लौट गए और सारी बात बताई।

कुछ समय बाद, अनाथपिंडिका ने भी उसी प्रकार पाँच सौ गाड़ियाँ माल से भरकर उसी क्षेत्र में भेजीं जहाँ वे रहते थे; और जब उनके लोग वहाँ पहुँचे, तो वे उपहार लेकर सीमावर्ती व्यापारी से मिलने गए। व्यापारी ने पूछा, “आप कहाँ से आए हैं?” उन्होंने उत्तर दिया, “श्रावस्ती नगर से; आपके पत्र-व्यवहारकर्ता, अनाथपिंडिका से।” अनाथपिंडिका ने उपहास करते हुए कहा, “कोई भी खुद को अनाथपिंडिका कह सकता है”; और उनका उपहार लेकर, उसने उन्हें न तो रहने की जगह दी और न ही पैसे। इसलिए उन्होंने अपना सामान अपने बदले में दिया और बदले में वह सामान श्रावस्ती नगर वापस ले आए, साथ ही उन्होंने वहाँ हुए स्वागत की कहानी भी सुनाई।

संयोगवश, इस सीमावर्ती व्यापारी ने श्रावस्ती नगर में पाँच सौ बैलगाड़ियों का एक और काफिला भेजा; और उसके लोग अनाथपिंडिका से मिलने के लिए उपहार लेकर आए। परन्तु जैसे ही अनाथपिंडिका के लोगों ने उन्हें देखा, उन्होंने कहा, “जी महोदय, हम देख लेंगे कि उनके रहने, खाने और ज़रूरतों के लिए धन की व्यवस्था हो।” और वे अजनबियों को नगर के बाहर ले गए और उन्हें एक उपयुक्त

स्थान पर अपनी बैलगाड़ियाँ खोलने को कहा, साथ ही यह भी कहा कि चावल और धन अनाथपिंडिका के घर से आएगा। रात के मध्याह्न के समय, उन्होंने कुछ नौकरों और दासों को इकट्ठा करके पूरे काफिले को लूट लिया, पुरुषों के सारे वस्त्र छीन लिए, उनके बैलों को भगा ले गए और बैलगाड़ियों के पहिए निकाल लिए। कुछ लोगों के पास एक भी कमीज़ नहीं थी, डरे हुए अजनबी भाग निकले और किसी तरह सीमावर्ती अपने घर पहुँच गए। तब अनाथपिंडिका के लोगों ने उन्हें सारी कहानी सुनाई। “यह अद्भुत कहानी,” उसने कहा, “आज मैं गुरु को भेंट करूंगा;” और वह चला गया और गुरु को वह कहानी सुनाई।

“यह पहली बार नहीं है, महोदय, कि इस सीमावर्ती व्यापारी ने ऐसा व्यवहार दिखाया है; वह पहले भी ऐसा ही था।” फिर, अनाथपिंडिका के अनुरोध पर, उन्होंने अतीत की निम्नलिखित कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व उस नगर के एक अत्यंत धनी व्यापारी थे। उनका एक सीमावर्ती व्यापारी से भी पत्राचार होता था, जिसे उन्होंने कभी नहीं देखा था, और फिर वही सब कुछ घटित हुआ जैसा कि ऊपर बताया गया है।

जब उसके लोगों ने उसे बताया कि उन्होंने क्या किया है, तो उसने कहा, "यह संकट उनके द्वारा दिखाई गई दया के प्रति उनकी कृतघ्नता का परिणाम है।" और फिर उसने एकत्रित भीड़ को इस श्लोक में उपदेश देना शुरू किया:-

वह व्यक्ति जो किसी के द्वारा किए गए उपकार के लिए कृतघ्न है,
इसके बाद उसे जरूरत के समय कोई मददगार नहीं मिलेगा।
इस श्लोक में बोधिसत्व ने इसी प्रकार सत्य का उपदेश दिया। दान और अन्य अच्छे कार्यों में व्यतीत जीवन के बाद, वे अपने कर्मों के फल के लिए परलोक विदा हुए।

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "आज का सीमावर्ती व्यापारी उन दिनों का भी सीमावर्ती व्यापारी था; और मैं बनारस का व्यापारी था।"

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **लित्त-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-91-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 91

लिट्टा-जातक

"वह पासे को कस देता है।" - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें चीजों का लापरवाही से उपयोग करने के बारे में बताया गया था।

परंपरा के अनुसार, उस समय के अधिकांश भिक्षु अपने वस्त्रों आदि का उपयोग लापरवाही से करते थे। उनका चार आवश्यक वस्तुओं का लापरवाही से उपयोग करना ही उनके लिए नरक और पशुलोक में पुनर्जन्म के दंड का कारण बना। यह जानकर गुरु ने सद्गुणों का उपदेश देना शुरू किया और वस्तुओं के इस लापरवाहीपूर्ण उपयोग के खतरे को समझाया। उन्होंने भिक्षुओं को चार आवश्यक वस्तुओं का सावधानीपूर्वक उपयोग करने की सलाह दी और यह नियम बताया, "विवेकी भिक्षु वस्त्र धारण करते समय एक निश्चित उद्देश्य रखता है, अर्थात् ठंड से बचाव।" अन्य आवश्यक वस्तुओं के लिए भी इसी प्रकार के नियम बताते हुए उन्होंने अंत में कहा, "चार आवश्यक वस्तुओं का विवेकपूर्ण उपयोग इसी प्रकार किया जाना चाहिए। लापरवाही से इनका उपयोग करना घातक विष ग्रहण करने के समान है; और अतीत में ऐसे लोग भी थे जिन्होंने लापरवाही के कारण अनजाने में विष ग्रहण कर लिया, जिससे उन्हें समय आने पर अत्यधिक पीड़ा हुई।" ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज था, बोधिसत्व एक समृद्ध परिवार में पैदा हुए और बड़े होकर पासा खेलने लगे। उनके साथ एक धूर्त खेलता था, जो जीतने तक खेलता रहता था, लेकिन जब किस्मत पलटती तो एक पासा मुंह में डालकर खेल रोक देता और फिर खो जाने का नाटक करता। बोधिसत्व को जब पता चला कि ऐसा हो रहा है, तो उन्होंने कहा, "बहुत खूब! हम इसकी जांच करेंगे।" इसलिए उन्होंने कुछ पासे लिए, उन्हें घर पर विष से लेपित किया, उन्हें अच्छी तरह सुखाया और फिर उन्हें अपने साथ धूर्त के पास ले गए, जिसे उन्होंने खेल के लिए चुनौती दी। दूसरा तैयार हो गया, पासे का बोर्ड तैयार किया गया और खेल शुरू हो गया। जैसे ही धूर्त हारने लगा, उसने एक पासा मुंह में डाल लिया। उसे ऐसा करते देख बोधिसत्व ने कहा, "निगल लो; थोड़ी देर में तुम्हें पता चल ही जाएगा कि यह वास्तव में क्या है।" और उन्होंने फटकार का यह श्लोक कहा:-

वह बड़ी बेधड़क होकर पासे को ठोक देता है, यह जाने बिना कि...
वह कौन सा ज्वलनशील जहर है जो अदृश्य रूप से छिपा हुआ है?
हाँ, इसे कस दो, और तेज़! जल्द ही तुम अंदर से जल उठोगे।
लेकिन जब बोधिसत्व बोल रहे थे, तभी उस दुष्ट पर विष का असर होने लगा; वह बेहोश हो गया, उसकी आँखें घूमने लगीं और दर्द से कराहते हुए वह ज़मीन पर गिर पड़ा। बोधिसत्व ने कहा, "अब मुझे इस दुष्ट की जान बचानी होगी।" इसलिए उन्होंने कुछ औषधीय जड़ी-बूटियाँ मिलाकर उसे उल्टी कराने वाली दवा पिलाई, जिससे उल्टी हो गई। फिर उन्होंने उसे घी, शहद, चीनी और अन्य सामग्री मिलाकर पिलाया और इस तरह वह ठीक हो गया। फिर उन्होंने उसे दोबारा ऐसा न करने की सलाह दी। दान और अन्य अच्छे कार्यों में जीवन व्यतीत करने के बाद, बोधिसत्व का निधन हो गया और उनके कर्मों के अनुसार ही उनका फल मिलेगा।

अपना प्रवचन समाप्त करते हुए गुरु ने कहा, "भाइयों (भिक्षुओं), वस्तुओं का लापरवाही से उपयोग करना घातक विष को लापरवाही से ग्रहण करने के समान है।" ऐसा कहते हुए उन्होंने अपने जन्म को इन शब्दों में वर्णित किया, "मैं स्वयं उन दिनों का बुद्धिमान और कुशल जुआरी था।"

(पाली टिप्पणी: "तेज़ करने वाले का कोई उल्लेख नहीं है, इसका कारण यह है कि, यहाँ और अन्यत्र भी, उन व्यक्तियों का कोई उल्लेख नहीं है जिनका इस तिथि पर उल्लेख नहीं किया गया है।")

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **महासर-जातक**
***स्रोत**: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-92-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 92
महासार-जातक

"पुरुष युद्ध के लिए तरसते हैं।" - यह कथा गुरु (बुद्ध) ने जेतवन मठ में आदरणीय आनंद के बारे में सुनाई थी।

एक बार कोसल के राजा की पत्नियों ने आपस में विचार किया, "बुद्ध का आना अत्यंत दुर्लभ है; और समस्त इंद्रियों की पूर्णता के साथ मनुष्य रूप में जन्म लेना भी अत्यंत दुर्लभ है। यद्यपि हमें संयोगवश बुद्ध के जीवनकाल में मनुष्य रूप प्राप्त हुआ है, फिर भी हम अपनी इच्छा से मठ जाकर उनके मुख से सत्य का ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकते, उन्हें प्रणाम नहीं कर सकते और उन्हें भेंट नहीं चढ़ा सकते। हम यहाँ एक पिंजरे में बंद होकर रह रहे हैं। आइए हम राजा से प्रार्थना करें कि वे एक योग्य भिक्षु को यहाँ बुलाएँ और हमें सत्य का ज्ञान दें। आइए हम उनसे जितना हो सके उतना सीखें, और वे दान-पुण्य करें और अच्छे कार्य करें, ताकि इस शुभ अवसर पर जन्म लेने का हमें लाभ हो।" अतः वे सब एक साथ राजा के पास गईं और उन्हें अपने मन की बात बताई; और राजा ने अपनी सहमति दे दी।

एक दिन ऐसा संयोग हुआ कि राजा राज उद्यान में कुछ समय बिताना चाहते थे, और उन्होंने आदेश दिया कि उनके आने की तैयारी में उद्यान को तैयार किया जाए। माली जब काम कर रहा था, तो उसने गुरु को एक वृक्ष के नीचे बैठे देखा। इसलिए वह राजा के पास गया और बोला, "महाराज, उद्यान तो तैयार है; लेकिन भगवान बुद्ध वृक्ष के नीचे बैठे हैं।" राजा ने कहा, "बहुत अच्छा, हम जाकर गुरु से मिलते हैं।" अपने राज रथ पर सवार होकर वह उद्यान में गुरु के पास गया।

उस समय गुरु के चरणों में बैठे हुए, चट्टपानी नामक एक गृहस्थ, जो तृतीय मार्ग (सम्मोहन) में प्रवेश कर चुके थे, उनके उपदेश सुन रहे थे। इस गृहस्थ को देखते ही राजा झिझके; परन्तु यह सोचकर कि यह अवश्य ही गुणी पुरुष होगा, अन्यथा वह गुरु के पास उपदेश सुनने नहीं बैठा होता, वे आगे बढ़े और गुरु के एक ओर प्रणाम करके बैठ गए। परम बुद्ध के प्रति श्रद्धावश, गृहस्थ ने न तो राजा के सम्मान में उठकर प्रणाम किया और न ही उन्हें प्रणाम किया; इससे राजा अत्यंत क्रोधित हो गए। राजा की नाराजगी देखकर, गुरु ने उस गृहस्थ के गुणों का गुणगान करते हुए कहा, “महाराज, यह गृहस्थ समस्त परंपराओं के ज्ञाता हैं; इन्हें शास्त्रों की पूर्ण जानकारी है; और इन्होंने अपने आप को वासना के बंधन से मुक्त कर लिया है।” राजा ने मन ही मन सोचा, “जिसकी प्रशंसा गुरु कर रहे हैं, वह कोई साधारण व्यक्ति नहीं हो सकता।” और उसने उससे कहा, "हे गृहस्थ, यदि तुम्हें किसी चीज़ की आवश्यकता हो तो मुझे बता देना।" "धन्यवाद," उस व्यक्ति ने कहा। तब राजा ने गुरु का उपदेश सुना, और उपदेश समाप्त होने पर उठकर विधिपूर्वक विदा हो गया।

एक दिन, उसी गृहस्थ से मुलाकात हुई जब वह नाश्ते के बाद छाता लिए जेतवन मठ जा रहा था। राजा ने उसे अपने समक्ष बुलाया और कहा, "मैंने सुना है, गृहस्थ, कि आप बहुत विद्वान हैं। मेरी पत्नियाँ सत्य को सुनने और सीखने के लिए बहुत उत्सुक हैं; यदि आप उन्हें सिखाएँ तो मुझे प्रसन्नता होगी।" "महाराज, यह उचित नहीं है कि एक गृहस्थ राजा के हरम में सत्य की व्याख्या करे या सिखाए; यह भिक्षुओं का विशेषाधिकार है।"

इस टिप्पणी के महत्व को समझते हुए, राजा ने उस आम आदमी को विदा करने के बाद अपनी पत्नियों को बुलाया और उन्हें बताया कि वे गुरु से अपने शिष्यों में से किसी एक को उनके शिक्षक के रूप में भेजने का इरादा रखते हैं। अस्सी प्रमुख शिष्यों में से वे किसे अपना शिक्षक बनाना चाहेंगे? आपस में विचार-विमर्श करने के बाद, सभी महिलाओं ने सर्वसम्मति से आनंद (*1) को चुना, जो एक वरिष्ठ भिक्षु थे और जिन्हें धर्म के कोषाध्यक्ष के रूप में जाना जाता था। इसलिए राजा गुरु के पास गए और विनम्रतापूर्वक उनका अभिवादन करते हुए उनके पास बैठ गए। इसके बाद उन्होंने अपनी पत्नियों की इच्छा और अपनी आशा व्यक्त की कि आनंद ही उनके शिक्षक बनें। गुरु द्वारा आनंद को भेजने की सहमति मिलने पर, राजा की पत्नियाँ अब नियमित रूप से वरिष्ठ भिक्षु से शिक्षा प्राप्त करने लगीं और उनसे सीखने लगीं।

एक दिन राजा की पगड़ी से रत्न गायब हो गया। राजा को जब इस बात का पता चला तो उन्होंने अपने मंत्रियों को बुलवाया और उनसे कहा कि वे महल में आने-जाने वाले हर व्यक्ति को पकड़ लें और रत्न ढूंढें। मंत्रियों ने हर किसी की, यहाँ तक कि महिलाओं की भी, तलाशी ली, यहाँ तक कि हर किसी को इतना परेशान कर दिया कि उनकी जान ही निकल गई; लेकिन रत्न का कोई सुराग नहीं मिला। उसी दिन आनंद महल में आए और उन्होंने देखा कि राजा की पत्नियाँ उतनी ही उदास थीं जितनी अब तक उनके उपदेश देने पर प्रसन्न होती थीं। "आज तुम सब इतनी उदास क्यों हो?" बड़े भिक्षु ने पूछा। "जी, महाराज," उन्होंने कहा, "राजा की पगड़ी से रत्न खो गया है; और उनके आदेश पर मंत्री हर किसी को, यहाँ तक कि महिलाओं को भी, परेशान कर रहे हैं ताकि रत्न मिल सके। हम नहीं जानते कि हममें से किसी के साथ क्या नहीं हो सकता; और इसीलिए हम इतने दुखी हैं।" "अब इसके बारे में और मत सोचो," बड़े भिक्षु ने प्रसन्नता से कहा और राजा को ढूंढने चले गए। अपने लिए रखी कुर्सी पर बैठते हुए, वृद्ध भिक्षु ने पूछा कि क्या महाराज का रत्न खो गया है? "जी हाँ, महाराज," राजा ने कहा। "और क्या वह नहीं मिल रहा?" "मैंने महल के सभी निवासियों को इतना परेशान कर दिया है कि उनकी जान निकल गई है, फिर भी वह नहीं मिल रहा है।" "महाराज, उसे खोजने का एक तरीका है, बिना लोगों को परेशान किए।" "वह क्या तरीका है, महाराज?" "भूसे का टुकड़ा देना, महाराज।" "भूसे का टुकड़ा देना? वह क्या है?" "महाराज, उन सभी लोगों को बुलाइए जिन पर आपको संदेह है, और उनमें से प्रत्येक को अलग-अलग चुपके से भूसे का एक टुकड़ा या मिट्टी का एक ढेला दीजिए, और कहिए, 'इसे लीजिए और कल सुबह भोर में फलाँ स्थान पर रख दीजिए।'" जिस व्यक्ति ने रत्न लिया है, वह उसे भूसे या मिट्टी में रख देगा और फिर उसे वापस ले आएगा। यदि वह पहले ही दिन वापस आ जाए, तो बहुत अच्छा। यदि नहीं, तो यही प्रक्रिया दूसरी और तीसरी मिट्टी के साथ भी दोहराई जानी चाहिए। इस तरह, बहुत से लोग चिंता से बच जाएंगे और आपको आपका रत्न वापस मिल जाएगा।” ये कहकर वृद्ध भिक्षु विदा हो गए।

उपरोक्त सलाह का पालन करते हुए, राजा ने लगातार तीन दिनों तक भूसा और मिट्टी बाँटने का आदेश दिया; फिर भी रत्न नहीं मिला। तीसरे दिन, वरिष्ठ भिक्षु फिर आए और पूछा कि क्या रत्न वापस लाया गया है। राजा ने कहा, "जी नहीं।" "तो महाराज, आपको अपने आँगन के एक एकांत कोने में एक बड़ा पानी का बर्तन रखना होगा, उसे पानी से भरना होगा और उसके सामने एक पर्दा लगाना होगा। फिर आदेश दें कि परिसर में आने-जाने वाले सभी लोग, पुरुष और महिलाएँ, अपने बाहरी वस्त्र उतार दें, बारी-बारी से पर्दे के पीछे हाथ धोएँ और फिर वापस आएँ।" यह सलाह देकर वरिष्ठ भिक्षु चले गए। और राजा ने सलाह के अनुसार ही कार्य किया।

चोर ने सोचा, "आनंद ने मामले को गंभीरता से अपने हाथ में ले लिया है; और अगर उसे रत्न नहीं मिला, तो वह इसे यहीं नहीं छोड़ेगा। अब रत्न को बिना किसी परेशानी के सौंपने का समय आ गया है।" इसलिए उसने रत्न को अपने पास छिपा लिया और पर्दे के पीछे जाकर उसे पानी में डाल दिया। जब सब लोग चले गए, तो घड़ा खाली किया गया और रत्न मिल गया। राजा ने खुशी से कहा, "यह सब बड़े भिक्षु की कृपा से ही संभव हुआ है कि मुझे मेरा रत्न वापस मिल गया, और वह भी बिना किसी को परेशान किए।" परिसर में मौजूद

सभी लोग आनंद के आभारी थे क्योंकि उन्होंने उन्हें मुसीबतों से बचाया था। आनंद की अद्भुत शक्तियों से रत्न मिलने की कहानी पूरे शहर में फैल गई, यहाँ तक कि भिक्षु संघ तक भी पहुँच गई। भिक्षुओं ने कहा, "वरिष्ठ भिक्षु आनंद के महान ज्ञान, विद्या और चतुराई ने खोए हुए रत्न को पुनः प्राप्त करने और अनेक लोगों को संकट से उबरने में सहायक सिद्ध किया है।" जब वे सत्य के हॉल में बैठकर आनंद की स्तुति कर रहे थे, तभी गुरुजी प्रवेश कर गए और उनसे विषय पूछा। विषय सुनकर उन्होंने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि चोरी हुई वस्तु मिली है, और न ही आनंदजी अकेले ऐसे व्यक्ति हैं जिन्होंने ऐसी खोज करवाई है। अतीत में भी बुद्धिमान और भले लोगों ने चोरी हुई वस्तुओं को खोज निकाला था और बहुत से लोगों को संकट से बचाया था, क्योंकि उन्हें पता चला था कि खोई हुई संपत्ति जानवरों के हाथों में पड़ गई थी।" ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व ने अपनी शिक्षा पूर्ण करने के बाद राजा के मंत्रियों में से एक बन गए। एक दिन राजा अपने साथ बहुत से लोगों को लेकर अपने बगीचे में गए और जंगल में घूमने के बाद उन्हें पानी में डुबकी लगाने की इच्छा हुई। इसलिए वे राजसी तालाब में उतरे और अपनी हरम की स्त्रियों को बुलवाया। हरम की स्त्रियों ने अपने सिर और गले आदि से गहने उतारकर अपने ऊपरी वस्त्रों सहित दासियों की देखरेख में बक्सों में रख दिए और फिर पानी में उतर गईं। अब, जब रानी अपने गहने और आभूषण उतारकर अपने ऊपरी वस्त्र सहित एक बक्से में रख रही थीं, तो पास के एक पेड़ की शाखाओं में छिपी एक मादा बंदर उन्हें देख रही थी। रानी के मोतियों के हार को पहनने की लालसा में, यह बंदर दासी के लापरवाह होने का इंतजार कर रही थी। पहले तो लड़की गहनों की सुरक्षा के लिए चारों ओर देखती रही; लेकिन समय बीतने के साथ-साथ वह ऊंघने लगी। जैसे ही बंदरिया ने यह देखा, वह हवा की तरह तेज़ी से नीचे कूदी और उतनी ही तेज़ी से मोतियों को अपने गले में पहनकर फिर से पेड़ पर चढ़ गई। फिर, इस डर से कि कहीं दूसरे बंदर उसे देख न लें, उसने मोतियों की माला पेड़ के एक छेद में छिपा दी और ऐसे पहरा देने लगी जैसे कुछ हुआ ही न हो। कुछ समय बाद दास जागा और गहनों को गायब देखकर भयभीत हो गया, उसके पास चिल्लाने के अलावा कोई चारा नहीं था, "एक आदमी रानी का मोतियों का हार लेकर भाग गया है।" चारों ओर से पहरेदार दौड़ पड़े और यह कहानी सुनकर राजा को सुनाई। "चोर को पकड़ो," महाराज ने कहा; और पहरेदार बगीचे में चोर को ढूंढने के लिए निकल पड़े। शोर सुनकर एक बेचारा अंधविश्वासी देहाती घबराकर भाग गया। "देखो, वह जा रहा है," भागे हुए चोर को देखकर पहरेदार चिल्लाए; और वे उसका पीछा करते हुए उसे पकड़ने तक गए, और फिर मार-पीट करते हुए उससे पूछा कि उसने इतने कीमती गहने क्यों चुराए।

उसने सोचा, "अगर मैं आरोप से इनकार करूँ तो इन बदमाशों की मार से मर जाऊँगा। बेहतर यही होगा कि मैं कह दूँ कि मैंने ही इसे लिया है।" इसलिए उसने चोरी कबूल कर ली और उसे कैदी बनाकर राजा के पास ले जाया गया। राजा ने पूछा, "क्या तुमने वे कीमती गहने लिए थे?" "जी महाराज।" "वे अब कहाँ हैं?" "महोदय, मैं एक गरीब आदमी हूँ; मैंने अपने जीवन में कभी कोई कीमती चीज, यहाँ तक कि बिस्तर या कुर्सी भी नहीं खरीदी, गहनों की तो बात ही छोड़िए। कोषाध्यक्ष ने ही मुझसे वह कीमती हार लेने को कहा था; और मैंने उसे लेकर उसे दे दिया। वह सब कुछ जानता है।"

तब राजा ने कोषाध्यक्ष को बुलवाया और पूछा कि क्या उस देहाती ने हार उसे सौंपा था। उत्तर था, "जी महाराज।" राजा ने पूछा, "तो फिर वह कहाँ है?" "मैंने उसे महाराज के पुजारी को दे दिया।" तब पुजारी को बुलवाया गया और उससे भी उसी तरह पूछताछ की गई। उसने कहा कि उसने उसे मुख्य संगीतकार को दिया था, जिसने बदले में कहा कि उसने उसे एक शाही नर्तकी और वेश्या को उपहार में दिया था। लेकिन जब उसे राजा के सामने लाया गया, तो उसने हार मिलने से साफ इनकार कर दिया।

जब उन पाँचों से पूछताछ चल रही थी, तभी सूरज डूब गया। राजा ने कहा, "अब बहुत देर हो चुकी है; हम इस मामले को कल देखेंगे।" इस प्रकार उन्होंने उन पाँचों को अपने मंत्रियों के हवाले कर दिया और शहर लौट गए। यहीं पर बोधिसत्व चिंतन में लीन हो गए। "ये गहने," उसने सोचा, "जब देहाती बाहर था, तब परिसर के अंदर ही खो गए थे। द्वार पर कड़ी सुरक्षा थी, और अंदर से किसी के लिए भी हार चुराना नामुमकिन था। मुझे समझ नहीं आता कि अंदर हो या बाहर, कोई भी इसे कैसे हासिल कर सकता था। सच तो यह है कि इस बेचारे ने कोषाध्यक्ष को हार देने की बात सिर्फ अपनी जान बचाने के लिए कही होगी; और कोषाध्यक्ष ने पुजारी को हार देने की बात इस उम्मीद में कही होगी कि अगर वह पुजारी को इस मामले में फंसा देगा तो वह बच जाएगा। इसके अलावा, पुजारी ने मुख्य संगीतकार को हार देने की बात इसलिए कही होगी क्योंकि उसने सोचा होगा कि वह जेल में समय को मज़ेदार तरीके से गुजार देगा; जबकि मुख्य संगीतकार का शाही नर्तकियों और वेश्या को फंसाने का मकसद सिर्फ जेल में उनके साथ रहकर खुद को तसल्ली देना था। इन पांचों में से किसी का भी चोरी से कोई लेना-देना नहीं है। दूसरी ओर, परिसर में बंदरों की भरमार है, और हार किसी मादा बंदर के हाथ लग गया होगा।"

इस निष्कर्ष पर पहुँचने के बाद, बोधिसत्व राजा के पास गए और उनसे निवेदन किया कि संदिग्धों को उनके हवाले कर दिया जाए और उन्हें स्वयं मामले की जाँच करने की अनुमति दी जाए। राजा ने कहा, "ज़रूर, मेरे बुद्धिमान मित्र; आप इसकी जाँच कर सकते हैं।"

तब बोधिसत्व ने अपने सेवकों को बुलवाया और उन्हें पाँचों कैदियों को ठहराने का स्थान बताया, और कहा, "इन पर कड़ी नज़र रखना; ये जो कुछ भी कहें, ध्यान से सुनना और मुझे सब कुछ बताना।" और उनके सेवकों ने वैसा ही किया जैसा उन्होंने कहा था। जब कैदी एक साथ बैठे थे, तब कोषाध्यक्ष ने देहाती से कहा, "बताओ, हे दुष्ट, आज से पहले हम कहाँ मिले थे; बताओ तुमने मुझे वह हार कब दिया था?" दूसरे ने कहा, "आदरणीय महोदय, मेरे पास कभी भी इतनी कीमती कोई चीज़ नहीं थी, यहाँ तक कि एक स्टूल या पलंग भी नहीं, जो खस्ताहाल न हो। मैंने सोचा था कि आपकी मदद से मैं इस मुसीबत से निकल जाऊँगा, और इसीलिए मैंने ऐसा कहा। हे स्वामी, मुझ पर क्रोधित न हों।" पुजारी ने कोषाध्यक्ष से पूछा, "तो फिर आपने मुझे वह चीज़ कैसे दे दी जो इस व्यक्ति ने आपको कभी दी ही नहीं थी?" "मैंने ऐसा इसलिए कहा क्योंकि मैंने सोचा था कि अगर हम दोनों, जो राज्य के उच्च अधिकारी हैं, एक साथ खड़े हों, तो हम जल्द ही इस मामले को सुलझा सकते हैं।" "ब्राह्मण," मुख्य संगीतकार ने पुजारी से कहा, "मैंने तुमसे पूछा, तुमने मुझे यह रत्न कब दिया था?" पुजारी ने उत्तर दिया, "मैंने तो बस इसलिए कहा कि दिया था, क्योंकि मुझे लगा कि तुम समय को थोड़ा सुखद बनाने में मदद करोगी।" अंत में राजसी नर्तकी और मदिरास्त्री ने कहा, "अरे, तुम बेचारे संगीतकार, तुम जानते हो कि तुम कभी मुझसे मिलने नहीं आए, न ही मैं तुमसे। तो फिर तुमने मुझे यह हार कब दिया होगा, जैसा कि तुम कहते हो?" संगीतकार ने कहा, "गुस्सा क्यों हो रही हो, मेरी प्यारी? हमें कुछ समय के लिए साथ रहना है; तो चलो खुश रहें और साथ में आनंद मनाएं।"

जब बोधिसत्व के दूतों ने यह बातचीत उन्हें बताई, तो उन्हें पूरा विश्वास हो गया कि पाँचों बंदर चोरी के दोषी नहीं हैं और एक मादा बंदर ने हार चुराया है। उन्होंने मन ही मन कहा, "मुझे कोई ऐसा उपाय ढूंढना होगा जिससे वह हार गिरा दे।" इसलिए उन्होंने कई मोतियों के हार बनवाए। फिर उन्होंने कई बंदरों को पकड़ा और उनके गले, कलाई और टखनों में मोतियों की माला बांधकर उन्हें फिर से छोड़ दिया। इस बीच, दोषी बंदर पेड़ों पर बैठकर अपने खजाने को देखती रही। तब बोधिसत्व ने कई लोगों को आदेश दिया कि वे परिसर में मौजूद हर बंदर पर ध्यान से नज़र रखें, जब तक कि उन्हें कोई ऐसा बंदर न दिख जाए जिसने खोया हुआ मोतियों का हार पहना हो, और फिर उसे डराकर हार गिरा दें।

अपने नए वैभव में सजे-धजे अन्य बंदर इधर-उधर घूमते रहे जब तक कि वे असली चोर के पास नहीं पहुँच गए, जिसके सामने उन्होंने अपने कीमती वस्त्रों का प्रदर्शन किया। ईर्ष्या ने उसकी विवेकशीलता पर विजय प्राप्त कर ली और वह चिल्लाई, "ये तो केवल मोती हैं!" और उसने असली मोतियों का अपना हार पहन लिया। यह तुरंत देखने वालों की नज़र में आ गया, जिन्होंने उससे हार छुड़वा दिया और उसे उठाकर बोधिसत्व के पास ले आए। बोधिसत्व उसे राजा के पास ले गए और बोले, "हे महाराज, यह रहा हार। पाँचों कैदी निर्दोष हैं; इसे बगीचे की एक मादा बंदर ने चुराया था।" राजा ने पूछा, "आपको यह कैसे पता चला? और आपने इसे वापस कैसे प्राप्त किया?" तब बोधिसत्व ने पूरी कहानी सुनाई, और राजा ने बोधिसत्व को धन्यवाद देते हुए कहा, "आप सही जगह पर सही व्यक्ति हैं।" और उन्होंने बोधिसत्व की प्रशंसा में यह श्लोक कहा:-

युद्ध के लिए, पुरुष नायक की शक्ति की लालसा रखते हैं।
संयमित रहने के लिए समझदारी भरी सलाह के लिए,
उनके आनंदमय उत्सव के लिए साथीगण,
लेकिन खतरनाक स्थिति में ही निर्णय लेना चाहिए।

इन प्रशंसा और कृतज्ञता के शब्दों के अतिरिक्त, राजा ने बोधिसत्व पर आकाश से बरसते तूफ़ान की तरह धन-संपत्ति की वर्षा की। बोधिसत्व के उपदेशों का पालन करते हुए दान और अच्छे कार्यों में व्यतीत लंबा जीवन बिताने के बाद, राजा का निधन हो गया और उनके कर्मों के अनुसार ही उनका परलोक हुआ।

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने वरिष्ठ भिक्षु के गुणों की प्रशंसा करने के बाद, जन्म की पहचान करते हुए कहा, "आनंद उन मिट्टी के राजा थे और मैं उनका बुद्धिमान सलाहकार था।"

फुटनोट:

(1)आनंद के 'महिला प्रश्न पर उन्नत विचार' थे। यह वही थे जिन्होंने अनिच्छुक बुद्ध को संघ में महिलाओं को (समान रूप से) स्वीकार करने के लिए राजी किया, जिसकी शुरुआत उनकी (बुद्ध की) पालक माता प्रजापति गौतमी से हुई।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **विशासभोजन-जातक**
स्रोत: *रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-93-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 93
विस्साभोजना-जातक

"जिन पर भरोसा किया जाता है, उन पर भरोसा मत करो।" यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी, जिसमें भरोसे के आधार पर चीजों को स्वीकार करने के बारे में बताया गया था।

परंपरा के अनुसार, उन दिनों भिक्षु (भाईचारे के सदस्य) अधिकतर अपने माता-पिता, भाई-बहन, चाचा-चाची या परिवार के अन्य सदस्यों द्वारा दी गई किसी भी वस्तु से संतुष्ट रहते थे। उनका तर्क था कि गृहस्थ जीवन में उन्हें ये सब चीजें उन्हीं के हाथों से मिलती थीं, इसलिए भिक्षु होने के नाते वे अपने रिश्तेदारों द्वारा दिए गए भोजन, वस्त्र और अन्य आवश्यक वस्तुओं का उपयोग करने में कोई सावधानी नहीं बरतते थे। यह देखकर गुरु ने भिक्षुओं को सबक सिखाना आवश्यक समझा। अतः उन्होंने सबको बुलाया और कहा, "भाइयों, चाहे देने वाला रिश्तेदार हो या न हो, उसका उपयोग सावधानी से करें। जो भिक्षु बिना सावधानी के दी गई वस्तुओं का उपयोग करता है, वह अपने लिए परलोक में राक्षस या प्रेत का रूप धारण कर सकता है। बिना सावधानी के उपयोग करना विष लेने के समान है; और विष चाहे रिश्तेदार दे या अजनबी, एक समान ही मृत्यु का कारण बनता है। अतीत में ऐसे लोग भी थे जिन्होंने अपने प्रियजनों द्वारा दिए गए विष को ग्रहण किया और उसी से उनका अंत हुआ।" ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, तब बोधिसत्व एक अत्यंत धनी व्यापारी थे। उनका एक चरवाहा था, जो फसल अच्छी होने पर अपनी गायों को जंगल में ले जाकर एक झोपड़ी में रखता था और समय-समय पर व्यापारी के लिए दूध लाता था। उस झोपड़ी के पास ही जंगल में एक शेर रहता था; और गायें शेर से इतनी डरती थीं कि वे बहुत कम दूध देती थीं। एक दिन जब चरवाहा अपना घी लेकर आया, तो व्यापारी ने पूछा कि इतना कम घी क्यों है। तब चरवाहे ने कारण बताया। "क्या शेर को किसी चीज से लगाव हो गया है?" "जी महाराज; उसे एक हिरणी बहुत पसंद है।" "क्या आप उस हिरणी को पकड़ सकते हैं?" "जी महाराज।" "अच्छा, उसे पकड़ो और उस पर ज़हर और चीनी मल दो, फिर उसे सूखने दो। उसे एक-दो दिन अपने पास रखो, फिर उसे छोड़ दो। उसके प्रति प्रेम के कारण शेर उसे अपनी जीभ से चाटेगा और मर जाएगा। उसकी खाल, उसके पंजे, दांत और चर्बी सहित, मेरे पास ले आओ।" ऐसा कहकर उन्होंने चरवाहे को घातक ज़हर दिया और उसे भेज दिया। चरवाहे ने अपने बनाए जाल की सहायता से हिरणी को पकड़ा और बोधिसत्व के आदेश का पालन किया।

जैसे ही शेर ने हिरणी को दोबारा देखा, अपने प्रेम में उसने उसे जीभ से चाट लिया, जिससे उसकी मृत्यु हो गई। चरवाहे ने शेर की खाल और बाकी सब कुछ बोधिसत्व के पास लाकर रख दिया, जिन्होंने कहा, "दूसरों के प्रति स्नेह से बचना चाहिए। देखो, अपनी सारी शक्ति के बावजूद, पशुओं का राजा शेर भी हिरणी के प्रति अपने पापी प्रेम के कारण उसे चाटकर खुद को विषैले पदार्थ से मार बैठा।" ऐसा कहकर उन्होंने आस-पास उपस्थित लोगों को उपदेश देने के लिए यह श्लोक कहा:-

न तो भरोसेमंद पर भरोसा करो, न ही अविश्वसनीय पर भरोसा करो;
विश्वास घातक होता है; विश्वास के कारण ही शेर की जान गई।
यही वह शिक्षा थी जो बोधिसत्व ने अपने आसपास के लोगों को दी। दान और अन्य अच्छे कार्यों में व्यतीत जीवन बिताने के बाद, वे अपने कर्मों के फल के लिए परलोक सिधार गए।

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "मैं उन दिनों का व्यापारी था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **लोमहंस-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-94-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 94
लोमहाम्सा-जातक

"अब झुलस गया है।" - यह कहानी गुरु ने वैशाली शहर के पास पतिकारमा में सुनाक्खत्ता के बारे में सुनाई थी।

उस समय सुनक्खत्ता, गुरु के अनुयायी बनकर, कुंड और वस्त्र धारण करके भिक्षु के रूप में देश भर में यात्रा कर रहे थे, तभी वे क्षत्रिय कोरा के सिद्धांतों से प्रभावित हो गए। अतः उन्होंने क्षत्रिय कोरा के कारण अपना कुंड और वस्त्र भगवान बुद्ध को लौटा दिया और गृहस्थ जीवन में लौट आए, लगभग उसी समय जब कोरा का पुनर्जन्म कालकंजक असुर के वंशज के रूप में हुआ था। वे वैशाली नगर की चारदीवारी के भीतर घूम-घूमकर गुरु की निंदा करते रहे और कहते रहे कि ऋषि गौतम (बुद्ध) में कोई अलौकिक बात नहीं है, क्योंकि वे किसी असाधारण धर्म का प्रचार करके अन्य मनुष्यों से भिन्न नहीं थे; कि ऋषि गौतम (बुद्ध) ने केवल एक ऐसी प्रणाली बनाई थी जो उनके व्यक्तिगत चिंतन और अध्ययन का परिणाम थी; और जिस आदर्श की प्राप्ति के लिए उनके उपदेश का प्रचार किया गया था, वह उसका अनुसरण करने वालों के दुःखों के नाश का कारण नहीं बनता (*1)।

पूज्य सारिपुत्र भिक्षा मांगने निकले थे, तभी उन्होंने सुनक्खत्त की निंदा सुनी। भिक्षा मांगने के बाद उन्होंने यह बात भगवान बुद्ध को बताई। गुरु ने कहा, “सारिपुत्र, सुनक्खत्त उग्र स्वभाव का है और व्यर्थ की बातें करता है। इसी उग्र स्वभाव के कारण उसने ऐसी बातें कीं और मेरे उपदेशों के उद्धार का खंडन किया। अनजाने में ही यह मूर्ख मेरी प्रशंसा कर रहा है; मैं अनजाने में इसलिए कह रहा हूँ क्योंकि उसे मेरे ज्ञान का कोई ज्ञान नहीं है। सारिपुत्र, मुझमें छह ज्ञान निवास करते हैं और इस मामले में मैं मनुष्य से भी बढ़कर हूँ; दस शक्तियाँ और विश्वास के चार आधार मुझमें विद्यमान हैं। मैं पृथ्वी पर चार प्रकार के जन्मों और मृत्यु के बाद पुनर्जन्म की पाँच अवस्थाओं की सीमाएँ जानता हूँ। यह भी मुझमें एक अलौकिक गुण है; और जो इसका खंडन करता है, उसे अपने वचन वापस लेने होंगे, अपना विश्वास बदलना होगा और अपने गलत विश्वास का त्याग करना होगा, अन्यथा उसे तुरंत नरक में डाल दिया जाएगा।” अपने भीतर विद्यमान अलौकिक स्वभाव और शक्ति का इस प्रकार वर्णन करते हुए गुरु ने आगे कहा, "सुनक्खत्त, मैंने सुना है, सारिपुत्र, क्षत्रिय कोरा की कुष्ठ साधना की भ्रामक आत्म-यातनाओं में आनंदित होता था; इसीलिए वह मुझमें प्रसन्न नहीं हो सका। इक्यावन युग पूर्व मैंने उच्च जीवन के सभी चार रूपों (*2) में जिया, उस झूठी कुष्ठ साधना की जाँच की ताकि उसमें निहित सत्य का पता लगा सकूँ। मैं एक तपस्वी था, तपस्वियों का श्रेष्ठ; मैं अन्य सभी से अधिक क्षीण और दुर्बल था; मुझे आराम से अत्यंत घृणा थी; मैं एकांत में रहता था, और एकांत के प्रति मेरी तीव्र लालसा थी।" फिर, वरिष्ठ भिक्षु के अनुरोध पर, उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, इक्यावन युग पहले, बोधिसत्व ने झूठी तपस्या का अध्ययन करने का निश्चय किया। इसलिए वे अजीविकों के अनुसार, नग्न तपस्वियों के रूप में एक संन्यासी बन गए; निर्वस्त्र, धूल से ढके हुए, एकांतवासी, मनुष्यों से हिरण की तरह भागते हुए; उनका भोजन छोटी मछलियाँ, गोबर और अन्य अपशिष्ट पदार्थ थे; और ताकि उनकी तपस्या में कोई खलल न डाले, उन्होंने घने जंगल में अपना निवास स्थान बनाया। शीत ऋतु की बर्फबारी में, वे रात में घने जंगल से निकलकर खुले में आ जाते और सूर्योदय के साथ ही वापस जंगल में लौट आते; और जैसे वे रात में तेज बर्फबारी से भीग जाते थे, वैसे ही दिन में भी वे जंगल की शाखाओं से टपकती बूंदा-बांदी से भीग जाते थे। इस प्रकार वे दिन-रात भीषण ठंड सहन करते रहे। ग्रीष्म ऋतु में, वह दिन में खुले आसमान के नीचे और रात में जंगल में रहता था—दिन में चिलचिलाती धूप से झुलसता था और रात में ठंडी हवा न चलने के कारण पसीना बहता था। तभी उसके मन में यह छंद आया, जो नया था और पहले कभी नहीं बोला गया था:-

कभी झुलसा हुआ, कभी बर्फीला, सुनसान जंगलों में अकेला,
बाहर कोई आग नहीं, लेकिन भीतर सब कुछ जल रहा है।
नग्न अवस्था में, संन्यासी सत्य के लिए संघर्ष करता है।
लेकिन जब इस कठोर तपस्या में व्यतीत जीवन के बाद, मरणासन्न अवस्था में बोधिसत्व के समक्ष नरक का दर्शन हुआ, तो उन्हें अपनी सभी तपस्याओं की निरर्थकता का अहसास हुआ, और उस परम क्षण में वे अपने भ्रमों से मुक्त हो गए, वास्तविक सत्य को ग्रहण किया, और देवों (देवदूतों) के स्वर्ग में पुनर्जन्म लिया।

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "मैं उन दिनों का नग्न तपस्वी था।"

फुटनोट:

(1) यह मज्झिमा निकया I. 68 का उद्धरण है।

(2) एक विद्यार्थी, गृहस्थ, गुणी और संन्यासी के रूप में।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **महासुदासन-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-95-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 95
महासुदस्सना-जातक

"कितना क्षणभंगुर है।" - यह कहानी गुरु ने अपनी मृत्युशय्या पर लेटे हुए सुनाई थी, जिसमें आनंद के शब्दों का जिक्र था, "हे भगवान बुद्ध, इस दुखद छोटे से शहर में अपना अंत न होने दें।"

"जब बुद्ध जेतवन मठ में रह रहे थे," गुरु ने सोचा, "नाला गाँव में जन्मे वरिष्ठ भिक्षु सारिपुत्र का वरक में कात्तिका माह में पूर्णिमा के दिन निधन हो गया; और उसी माह में, जब चंद्रमा ढल रहा था, महान मोग्गल्याण का भी निधन हो गया। मेरे दो प्रमुख शिष्यों के निधन के बाद, मैं भी कुशीनार में ही देह त्याग दूँगा।"—भगवान बुद्ध ने ऐसा सोचा; और कुशीनार की भिक्षायात्रा पर आकर, वहाँ उत्तर दिशा की ओर स्थित दो साल के वृक्षों के बीच स्थित एक समतल भूमि पर वे लेट गए और फिर कभी नहीं उठे। तब वरिष्ठ भिक्षु आनंद ने कहा, "हे भगवान बुद्ध, इस उजाड़ छोटे से कस्बे में, जंगल के इस उबड़-खाबड़ छोटे से कस्बे में, इस छोटे से उपनगरीय कस्बे में अपना अंत न होने दें। क्या राजगृह नगर या कोई अन्य बड़ा शहर बुद्ध का जन्मस्थान नहीं होना चाहिए?"

"नहीं, आनंद," गुरु ने कहा; "इसे एक दयनीय छोटा शहर, जंगल में बसा एक छोटा शहर, एक छोटा उपनगरीय शहर मत कहो। अतीत में, सुदस्सन के सर्वराज्य के दिनों में, इसी शहर में मेरा जीवन यापन होता था। तब यह बारह लीग (x 4.23 किमी) के घेरे में रत्नजड़ित दीवारों से घिरा एक विशाल नगर था।" इसके साथ ही, वरिष्ठ भिक्षु के अनुरोध पर, उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई और महा-सुदस्सन सूत्र (*1) का पाठ किया।

तब सुदस्सन की रानी सुभद्दा ने देखा कि सत्य महल से नीचे आने के बाद, उनके स्वामी खजूर के उस सुनहरे और रत्नजड़ित उद्यान में उनके लिए तैयार किए गए पलंग पर दाहिनी ओर लेटे हुए थे, जिस पलंग से वे फिर कभी नहीं उठेंगे। और उन्होंने कहा, "हे महाराज, चौरासी हजार नगर, जिनमें कुसावती का राजनगर प्रमुख है, आपके शासन के स्वामी हैं। इन पर अपना मन लगाइए।"

"ऐसा मत कहो, मेरी रानी," सुदस्सना ने कहा; "बल्कि मुझे सलाह दो, 'अपना मन इसी नगर पर टिकाए रखो, और उन दूसरे नगरों के लिए तरसना मत'।"

"ऐसा क्यों, महाराज?"

"क्योंकि आज मेरी मृत्यु होने वाली है," राजा ने उत्तर दिया।

आँखों में आँसू लिए, उन्हें पोंछते हुए, रानी ने किसी तरह राजा द्वारा कहे गए शब्दों को सिसकते हुए बोल दिया। फिर वह फूट-फूटकर रोने लगी; और हरम की चौरासी हज़ार अन्य स्त्रियाँ भी रोने और विलाप करने लगीं; दरबारियों में से कोई भी बच नहीं सका, वे सब एक साथ मिलकर रोने लगे।

"शांति!" बोधिसत्व ने कहा; और उनके शब्द सुनते ही उनका रोना थम गया। फिर, रानी की ओर मुड़कर उन्होंने कहा, "हे रानी, रोओ मत, विलाप मत करो। क्योंकि तिल के एक छोटे से बीज तक, सांसारिक वस्तु स्थायी नहीं होती; सब क्षणभंगुर हैं, सब नष्ट हो जाते हैं।" फिर, रानी के हित में, उन्होंने यह श्लोक कहा:-

ये सारी सांसारिक चीजें कितनी क्षणभंगुर हैं!
वृद्धि और क्षय उनका स्वभाव है:
वे उत्पन्न होते हैं, फिर से घुल जाते हैं:

और सबसे अच्छा समय तब होता है, जब वे आराम करने के लिए डूब जाते हैं।
इस प्रकार महान सुदासन ने अपने प्रवचन को अमृतमय निर्वाण की ओर अग्रसर किया। इसके अतिरिक्त, उन्होंने अन्य लोगों को दान करने, आज्ञाओं का पालन करने और व्रत रखने की सलाह दी। उनका लक्ष्य देवलोक में पुनर्जन्म लेना था।

अपना उपदेश समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म का वर्णन करते हुए कहा, "राहुल की माता उस समय की रानी सुभद्दा थीं; राहुल राजा के सबसे बड़े पुत्र थे; बुद्ध के शिष्य उनके दरबारी थे; और मैं स्वयं महान सुदस्सन हूँ।"

[टिप्पणी। इस जातक के विकास के लिए, टिपिटका में महा-परिनिब्बान सुत्त और महा-सुदासन सुत्त देखें]

फुटनोट:

(1)दीघ निकाय का 17वाँ सुत्त।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **तेलपट्ट-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-96-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 96
तेलपट्टा-जातक

"जैसे कोई चिंता से भरा हो।" - यह कथा गुरु ने शुम्भ देश के देसाका नगर के पास एक जंगल में रहते हुए जनपद-कल्याणी सूत्र के विषय में सुनाई थी। उस अवसर पर भगवान बुद्ध ने कहा था: "हे भिक्षुओं, मानो एक विशाल जनसमूह एकत्रित होकर 'भूमि की सुंदरी को प्रणाम! भूमि की सुंदरी को प्रणाम!' का नारा लगा रहा हो।" और मान लीजिए कि उसी प्रकार एक बड़ी भीड़ इकट्ठा हो जाए और चिल्लाए, 'देश की सुंदरी गा रही है और नाच रही है'; और फिर मान लीजिए कि एक ऐसा व्यक्ति आए जो जीवन से प्रेम करता हो, मृत्यु से भयभीत हो, सुख का शौकीन हो और पीड़ा से विमुख हो, और मान लीजिए कि ऐसे व्यक्ति से इस प्रकार कहा जाए, 'अरे, तुम्हें तेल से लबालब भरे इस घड़े को भीड़ और देश की सुंदरी के बीच से ले जाना है; एक तलवार लिए हुए आदमी तुम्हारे पीछे आएगा; और अगर तुमने एक बूंद भी गिराई, तो वह तुम्हारा सिर काट देगा';--भाइयों, आप क्या सोचते हैं? क्या वह व्यक्ति इन परिस्थितियों में लापरवाह होगा और तेल के उस घड़े को ले जाने में कोई सावधानी नहीं बरतेगा?' 'बिल्कुल नहीं, महोदय।' "यह एक दृष्टांत है, जिसे मैंने अपने अर्थ को स्पष्ट करने के लिए गढ़ा है, हे भाइयों; और इसका अर्थ यह है: तेल से लबालब भरा हुआ घड़ा शरीर से संबंधित बातों के प्रति एकाग्र मन की अवस्था का प्रतीक है, और इससे सीखने योग्य पाठ यह है कि ऐसी जागरूकता का अभ्यास और उसमें निपुणता प्राप्त करनी चाहिए। हे भाइयों, इसमें असफल न हों।" ऐसा कहकर, गुरु ने भूमि की सुंदरी से संबंधित सूत्र का पाठ और व्याख्या दोनों प्रस्तुत की। फिर, व्यावहारिक रूप से, भगवान बुद्ध ने कहा, "शरीर के प्रति सही जागरूकता का अभ्यास करने के इच्छुक भिक्षु को अपनी जागरूकता को उसी प्रकार भंग नहीं होने देना चाहिए, जिस प्रकार दृष्टांत में वर्णित व्यक्ति को तेल का घड़ा गिरने नहीं देना चाहिए।"

जब उन्होंने सूत्र और उसका अर्थ सुना, तो भाइयों ने कहा: "महोदय, उस व्यक्ति के लिए तेल का घड़ा लेकर उस देश की सुंदरी को देखे बिना आगे बढ़ना कितना कठिन कार्य था।" "बिल्कुल नहीं, भाइयों; यह तो बहुत आसान कार्य था, आसान इसलिए क्योंकि उसके साथ एक ऐसा व्यक्ति था जो उसे खींची हुई तलवार से धमकाता था। परन्तु बीते समय के बुद्धिमान और भले लोगों के लिए सही चेतना बनाए रखना और अपनी भावनाओं को इस प्रकार नियंत्रित करना कि वे दिव्य सौंदर्य को उसकी संपूर्णता में न देखें, वास्तव में एक कठिन कार्य था। फिर भी वे विजयी हुए और आगे बढ़ते हुए एक राज्य जीत लिया।" ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्याभिषेक था, तब बोधिसत्व राजा के सौ पुत्रों में सबसे छोटे थे और वयस्क हो चुके थे। उन दिनों पच्चेक बुद्ध महल में भोजन करने आते थे और बोधिसत्व उनकी सेवा करते थे।

एक दिन अपने असंख्य भाइयों के बारे में सोचते हुए बोधिसत्व ने स्वयं से पूछा कि क्या उस नगर में उनके पूर्वजों के सिंहासन पर बैठने की कोई संभावना है, और उन्होंने पच्चेक बुद्धों से यह जानने का निश्चय किया कि आगे क्या होगा। अगले दिन बुद्ध आए, पवित्र उपयोग के लिए रखे गए जलपात्र को लिया, जल को छानकर अपने पैर धोए और सुखाए, और भोजन करने बैठ गए। जब वे बैठे ही थे, बोधिसत्व आए और उनके पास बैठकर विनम्रतापूर्वक प्रणाम किया और अपना प्रश्न पूछा। उन्होंने उत्तर दिया, "राजकुमार, आप इस शहर के राजा कभी नहीं बन पाएंगे। लेकिन गांधार (कंधार सहित अफगानिस्तान और पाकिस्तान के निकट) में, दो हजार मील (4.23 किमी) दूर, तक्षशिला शहर स्थित है। यदि आप उस शहर तक पहुँच सकें, तो सात दिनों में आप वहाँ के राजा बन जाएंगे। लेकिन वहाँ का रास्ता खतरनाक है, क्योंकि वहाँ एक घना जंगल है। जंगल के चारों ओर से होकर जाने की दूरी उससे दुगनी है। उस जंगल में राक्षस रहते हैं, और राक्षसनियाँ रास्ते में गाँव और घर बसाती हैं। तारों से सजे एक विशाल चंदवा के नीचे, उनका जादू एक कीमती पलंग को सुंदर रंगीन पर्दों से ढक देता है। दिव्य वैभव में सजी राक्षसनियाँ अपने घरों में बैठी रहती हैं, और मीठी बातों से यात्रियों को लुभाती हैं। वे कहती हैं, 'आप थके हुए प्रतीत होते हैं; यहाँ आइए, और आगे की यात्रा करने से पहले खा-पी लीजिए।'" जो लोग उनके कहने पर आते हैं, उन्हें बैठने की जगह दी जाती है और उनकी कामुक सुंदरता के आकर्षण से वे वासना से भर जाते हैं। लेकिन पाप करने से पहले ही राक्षसी उन्हें मार डालती हैं और उनका गर्म खून बहते हुए ही खा जाती हैं। वे पुरुषों की इंद्रियों को वश में कर लेती हैं; अपनी असीम सुंदरता से सौंदर्यबोध को, मधुर संगीत से कानों को, दिव्य सुगंध से नाक को, उत्तम स्वाद वाले स्वादिष्ट भोजन से स्वाद इंद्रियों को और दिव्य कोमलता से लाल गद्देदार पलंगों से स्पर्श इंद्रियों को मोहित कर लेती हैं। लेकिन यदि तुम अपनी इंद्रियों को वश में कर सको और उन्हें न देखने का दृढ़ निश्चय कर सको, तो सातवें दिन तुम तक्षशिला नगर के राजा बन जाओगे।

"हे प्रभु, आपकी सलाह के बाद मैं उन राक्षसी महिलाओं को कैसे देख सकता हूँ?" ऐसा कहते हुए बोधिसत्व ने पच्चेक बुद्धों से अपनी यात्रा में सुरक्षा के लिए कुछ देने की विनती की। उनसे एक जादुई धागा और कुछ जादुई रेत प्राप्त करके, उन्होंने पहले पच्चेक बुद्धों और अपने माता-पिता को विदाई दी; और फिर अपने निवास पर जाकर अपने घरवालों से कहा, "मैं तक्षशिला जाकर वहाँ का राजा बनूँगा। तुम सब यहीं रुक जाओ।" लेकिन उनमें से पाँच ने उत्तर दिया, "हम भी चलें।"

बोधिसत्व ने उत्तर दिया, "आप मेरे साथ नहीं आ सकते; क्योंकि मुझे बताया गया है कि मार्ग में राक्षसी विपत्तियाँ हैं जो मनुष्यों की इंद्रियों को मोहित कर लेती हैं और जो उनके आकर्षण में आ जाते हैं उन्हें नष्ट कर देती हैं। खतरा बहुत बड़ा है, लेकिन मैं स्वयं पर भरोसा रखूंगा और जाऊंगा।"

"यदि हम आपके साथ चलें, राजकुमार, तो हम उनके खतरनाक आकर्षणों को नहीं देखेंगे। हम भी तक्षशिला जाएंगे।" "तो फिर अपनी भक्ति प्रकट करो," बोधिसत्व ने कहा और उन पाँचों को अपने साथ यात्रा पर ले गए।

राक्षसनियाँ अपने-अपने गाँवों में रास्ते के किनारे बैठी प्रतीक्षा कर रही थीं। पाँचों में से एक, सौंदर्य प्रेमी, उन राक्षसनियों को देख रहा था और उनकी सुंदरता पर मोहित होकर बाकियों से पीछे रह गया। बोधिसत्व ने पूछा, "तुम पीछे क्यों रह रहे हो?" राक्षसी ने जवाब दिया, "मेरे पैर दुख रहे हैं, राजकुमार। मैं थोड़ी देर के लिए इन मंडपों में से किसी एक में बैठ जाता हूँ, फिर तुम्हारे साथ आ जाता हूँ।" बोधिसत्व ने कहा, "हे भगवान, ये राक्षसनियाँ हैं; इन पर बुरी नज़र मत डालो।" बोधिसत्व ने आगे बढ़ते हुए कहा, "खैर, जल्द ही तुम्हें तुम्हारी असलियत का पता चल जाएगा।"

अपनी इंद्रियों के वश में आकर, सौंदर्य प्रेमी राक्षसी स्त्रियों के पास आया, जिन्होंने उसे पाप करने के लिए उकसाया और वहीं मार डाला। इसके बाद वे चली गईं और आगे जाकर जादुई कला से एक नया मंडप बनाया, जिसमें वे अनेक वाद्ययंत्रों की धुन पर गीत गाती हुई बैठी थीं। तभी संगीत प्रेमी पीछे छूट गया और उन्हें खा लिया गया। फिर राक्षसी स्त्रियाँ आगे बढ़ीं और एक बाज़ार में जाकर बैठ गईं, जो मीठी सुगंधों और इत्रों से भरा हुआ था। यहीं पर सुगंधित वस्तुओं का प्रेमी पीछे छूट गया। जब उन्होंने उसे खा लिया, तो वे आगे बढ़ीं और एक भोजन-भंडार में बैठ गईं, जहाँ उत्तम स्वाद वाले स्वादिष्ट व्यंजनों की भरमार थी। यहीं पर भोजन प्रेमी पीछे छूट गया। जब उन्होंने उसे खा लिया, तो वे आगे बढ़ीं और अपनी जादुई कला से लाए गए दिव्य शंखों पर बैठ गईं। यहीं पर सुख-सुविधाओं का प्रेमी पीछे छूट गया। और उसे भी उन्होंने खा लिया।

अब केवल बोधिसत्व ही बचे थे। और एक राक्षसी उनके पीछे-पीछे चल पड़ी, मन ही मन यह निश्चय करते हुए कि उनके दृढ़ संकल्प के बावजूद, वह वापस लौटने से पहले उन्हें खा जाएगी। जंगल में आगे जाकर, लकड़हारों और अन्य लोगों ने उस राक्षसी को देखकर उससे पूछा कि आगे चल रहा वह आदमी कौन था।

"वह मेरे पति हैं, महोदय।"

"नमस्कार!" उन्होंने बोधिसत्व से कहा; "जब आपके पास फूलों जैसी सुंदर, प्यारी युवती है, जो अपना घर छोड़कर आप पर भरोसा करती है, तो आप उसके साथ क्यों नहीं चलते, बजाय इसके कि उसे अपने पीछे थके-हारे चलने दें?" "वह मेरी पत्नी नहीं, बल्कि एक

राक्षसी है। उसने मेरे पाँच साथियों को खा लिया है।" "अफ़सोस! सज्जनों," उसने कहा, "क्रोध पुरुषों को अपनी पत्नियों को भी राक्षसी और प्रेत कहने पर मजबूर कर देता है।"

इसके बाद, उसने गर्भावस्था का अभिनय किया और फिर एक बच्चे को जन्म दे चुकी महिला का रूप धारण किया; बच्चे को गोद में लिए वह बोधिसत्व के पीछे-पीछे चलने लगी। रास्ते में मिलने वाले हर व्यक्ति ने उनसे वही सवाल पूछे, और बोधिसत्व ने भी वही जवाब देते हुए अपनी यात्रा जारी रखी।

अंततः वह तक्षशिला पहुंचे, जहां राक्षसी ने बच्चे को गायब कर दिया और अकेले ही उनके पीछे-पीछे चले गए। नगर के द्वार पर बोधिसत्व एक विश्रामगृह में प्रवेश कर बैठ गए। बोधिसत्व की ज्ञान प्राप्ति और शक्ति के कारण वह स्त्री भी अंदर नहीं जा सकी; इसलिए उसने दिव्य सौंदर्य का वस्त्र धारण किया और द्वार के बाहर खड़ी हो गई।

उस समय तक्षशिला का राजा अपने बगीचे की ओर जा रहा था और उसकी सुंदरता पर मोहित हो गया। उसने अपने सेवक से कहा, "जाओ, पता लगाओ कि क्या उसका पति उसके साथ है या नहीं।" जब दूत आया और उसने पूछा कि क्या उसका पति उसके साथ है, तो उसने कहा, "जी महाराज; मेरा पति कमरे में बैठा है।"

बोधिसत्व ने कहा, "वह मेरी पत्नी नहीं है। वह एक राक्षसी है और उसने मेरे पांच साथियों को खा लिया है।"

और, पहले की तरह, उसने कहा, "अफ़सोस! सज्जनों, क्रोध लोगों को कुछ भी कहने के लिए मजबूर कर देता है जो उनके दिमाग में आता है।"

फिर वह आदमी राजा के पास वापस गया और उसे बताया कि हर किसी ने क्या कहा था। राजा ने कहा, "खजाना तो राजसी विशेषाधिकार है।" और उसने राक्षसी को बुलवाया और उसे अपने हाथी की पीठ पर बिठाया। शहर का चक्कर लगाने के बाद, राजा अपने महल में वापस आया और राक्षसी को रानी-पत्नी के लिए आरक्षित कमरों में ठहराया। स्नान और इत्र लगाने के बाद, राजा ने अपना शाम का भोजन किया और फिर अपने राजसी पलंग पर लेट गया। राक्षसी ने भी अपने लिए भोजन तैयार किया और अपने पूरे वैभव से सजी। और जब वह प्रसन्न राजा के बगल में लेटी थी, तो वह करवट बदलकर फूट-फूट कर रोने लगी। उससे रोने का कारण पूछे जाने पर उसने कहा, "महाराज, आपने मुझे रास्ते में पाया था, और हरम की स्त्रियाँ बहुत हैं। यहाँ शत्रुओं के बीच रहकर मैं कुचल जाऊँगी जब वे कहेंगे 'कौन जानता है कि तुम्हारे माता-पिता कौन हैं, या तुम्हारे परिवार के बारे में कुछ भी? तुम्हें रास्ते में उठाया गया था।'" लेकिन यदि महाराज मुझे पूरे राज्य पर शक्ति और अधिकार दे दें, तो कोई भी मुझे इस तरह के ताने मारने की हिम्मत नहीं करेगा।"

"प्रिय, मेरे राज्य में रहने वालों पर मेरा कोई अधिकार नहीं है; मैं उनका स्वामी या स्वामी नहीं हूँ। मेरा अधिकार केवल विद्रोह करने वालों या पाप करने वालों पर है। इसलिए मैं तुम्हें पूरे राज्य पर अधिकार और शक्ति नहीं दे सकता।"

"तो, महाराज, यदि आप मुझे राज्य या नगर पर अधिकार नहीं दे सकते, तो कम से कम मुझे महल के भीतर अधिकार दे दीजिए, ताकि मैं यहाँ महल में रहने वालों पर शासन कर सकूँ।"

उसके आकर्षण से इतना मोहित होकर कि राजा उसे मना नहीं कर सका, उसने महल में सभी को अपना अधिकार दे दिया और उसे उन पर शासन करने के लिए कहा। संतुष्ट होकर, उसने राजा के सो जाने का इंतजार किया और फिर राक्षसों के शहर की ओर जाकर अपने पूरे दल के साथ महल में लौट आई। उसने स्वयं राजा की हत्या कर दी और उसकी खाल, नसें और मांस सब खा गई, केवल हड्डियाँ ही बची रहीं। और बाकी राक्षस द्वार से अंदर आए और जो भी उनके रास्ते में आया, उसे खा गए, यहाँ तक कि एक पक्षी या कुत्ते को भी जीवित नहीं छोड़ा। अगले दिन जब लोग आए और द्वार बंद पाया, तो उन्होंने अधीरता से चिल्लाते हुए उस पर प्रहार किया और अंदर प्रवेश किया, लेकिन उन्होंने पाया कि पूरा महल हड्डियों से भरा पड़ा था। और वे चिल्लाए, "तो वह आदमी सही कह रहा था कि वह उसकी पत्नी नहीं बल्कि एक राक्षसी थी। अपनी नासमझी में राजा उसे अपनी पत्नी बनाने के लिए घर ले आया, और निस्संदेह उसने अन्य राक्षसों को इकट्ठा किया, सबको खा डाला और फिर भाग गई।"

उस दिन बोधिसत्व अपने सिर पर मंत्रयुक्त रेत और माथे पर मंत्रयुक्त धागा लपेटे विश्रामगृह में तलवार हाथ में लिए भोर की प्रतीक्षा कर रहे थे। इस बीच, अन्य लोग महल की सफाई कर रहे थे, फर्शों को नए सिरे से सजा रहे थे, उन पर सुगंध छिड़क रहे थे, फूल बिखेर रहे थे, छत से फूलों के गुच्छे लटका रहे थे और दीवारों को मालाओं से सजा रहे थे, और वहां धूप जला रहे थे। फिर उन्होंने आपस में इस प्रकार चर्चा की:-

“जो व्यक्ति अपनी इंद्रियों पर इतना नियंत्रण रख सके कि दिव्य सौंदर्य में उसका पीछा करती हुई राक्षसी की ओर देखे भी नहीं, वह एक महान और समर्पित, ज्ञान से परिपूर्ण पुरुष है। ऐसे व्यक्ति के राजा बनने से पूरे राज्य का भला होगा। आइए, हम उसे अपना राजा बनाएं।”

और राज्य के सभी दरबारी और सभी नागरिक इस मामले में एकमत थे। अतः बोधिसत्व को राजा चुना गया और उन्हें राजधानी ले जाया गया, जहाँ उन्हें आभूषणों से सुशोभित किया गया और तक्षशिला का राजा घोषित किया गया। चार बुरे मार्गों से विमुख होकर और राजसी कर्तव्य के दस मार्गों का अनुसरण करते हुए, उन्होंने अपने राज्य पर धर्मपूर्वक शासन किया और दान-पुण्य और अन्य अच्छे कार्यों में व्यतीत जीवन व्यतीत करने के बाद अपने कर्मों के फल के अनुसार परलोक विदा हुए।

उनकी कहानी सुनाते हुए, गुरु ने बुद्ध के रूप में यह श्लोक कहा:-

जिस प्रकार एक बर्तन में तेल को सावधानीपूर्वक रखा जाता है,
 पूरी तरह भरा हुआ, ताकि कहीं से भी छलक न जाए।
अतः जो व्यक्ति विदेशी भूमि की यात्रा करता है
 अपने दिल पर भी उसी तरह संयम बरतें।
जब गुरु ने इस प्रकार शिक्षा के सर्वोच्च स्तर, यानी अर्हतत्व (बुद्ध के समतुल्य ज्ञानोदय) तक पहुँचाया, तो उन्होंने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "बुद्ध के शिष्य उन दिनों राजा के दरबारी थे, और मैं वह राजकुमार हूँ जिसने एक राज्य जीता।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **नामसिद्धि-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-97-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 97
नामासिद्धि-जातक

"क्विक को मृत देखना।" - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी, एक भिक्षु के बारे में जो मानता था कि भाग्य का संबंध नामों से होता है। सुना है कि 'लो' नाम के एक अच्छे परिवार के युवक ने धर्म को अपना लिया और भिक्षु संघ में शामिल हो गया। भिक्षु उसे "लो भाई!" और "रुको, लो भाई!" कहकर पुकारते थे, जब तक कि उसने यह निश्चय नहीं कर लिया कि 'लो' नाम दुष्टता और दुर्भाग्य का प्रतीक है, इसलिए वह अपना नाम बदलकर कोई बेहतर अर्थ वाला नाम रख लेगा। उसने अपने गुरुओं और प्रशिक्षकों से नया नाम रखने का अनुरोध किया। लेकिन उन्होंने कहा कि नाम केवल संकेत देता है, गुणों का सूचक नहीं होता; और उन्होंने उसे अपने वर्तमान नाम से संतुष्ट रहने को कहा। उसने बार-बार यह अनुरोध दोहराया, यहाँ तक कि पूरे भिक्षु संघ को पता चल गया कि वह नाम को कितना महत्व देता है। जब वे सत्य के हॉल में इस विषय पर चर्चा कर रहे थे, तब गुरु वहाँ आए और पूछा कि वे किस बारे में बात कर रहे हैं। यह सुनकर उन्होंने कहा, "यह पहली बार नहीं है जब इस भाई ने यह माना है कि भाग्य नाम से तय होता है; वे अतीत में अपने नाम से भी उतने ही असंतुष्ट थे।" ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, तक्षशिला में बोधिसत्व विश्वप्रसिद्ध गुरु थे और पाँच सौ युवा ब्राह्मण उनसे वेद सीखते थे। इन्हीं युवकों में से एक का नाम लो था। अपने साथियों को बार-बार "लो, जाओ" और "लो, आओ" कहते सुनकर, लो का मन हुआ कि वह अपना नाम बदल ले और कोई ऐसा नाम रख ले जो अशुभ न लगे। इसलिए वह अपने गुरु के पास गया और उनसे एक सम्मानजनक नाम देने का अनुरोध किया। गुरु ने कहा, "बेटा, जाओ और देश-विदेश घूमो, जब तक तुम्हें अपनी पसंद का नाम न मिल जाए। फिर वापस आना, मैं तुम्हारा नाम बदल दूँगा।"

उस युवक ने आदेश का पालन किया और यात्रा के लिए आवश्यक सामान लेकर वह गाँव-गाँव भटकता हुआ एक कस्बे में पहुँचा। वहाँ क्विक नाम के एक व्यक्ति की मृत्यु हो गई थी, और उस युवक ब्राह्मण ने उसे कब्रिस्तान ले जाते हुए देखकर उसका नाम पूछा।

"क्विक," जवाब आया। "क्या, क्विक मर सकता है?" "हाँ, क्विक मर गया है; क्विक और मरे हुए दोनों एक ही तरह से मरते हैं। नाम तो बस यह बताने का ज़रिया है कि कौन क्या है। तुम मूर्ख लगते हो।"

यह सुनकर वह शहर की ओर चल पड़ा, उसे अपने नाम से न तो संतुष्टि महसूस हो रही थी और न ही असंतुष्टि।

एक दासी को घर के दरवाजे पर पटक दिया गया था, और उसके मालिक और मालकिन उसे रस्सियों से पीट रहे थे क्योंकि वह अपनी मजदूरी घर नहीं लाई थी। उस दासी का नाम रिच था। जब वह गली से गुजर रहा था, तो उसने दासी को पिटते हुए देखा और कारण पूछा। जवाब में उसे बताया गया कि दासी के पास दिखाने के लिए कोई मजदूरी नहीं थी।

"और उस लड़की का नाम क्या है?"

“अमीर,” उन्होंने कहा। “और क्या अमीर एक मामूली दिन की कमाई भी नहीं कमा सकता?” “चाहे उसे अमीर कहा जाए या गरीब, अब पैसा नहीं आएगा। नाम तो बस एक पहचान है। तुम मूर्ख लगते हो।”

अपने नाम से कुछ हद तक संतुष्ट होकर, वह युवक ब्राह्मण शहर छोड़कर चला गया और रास्ते में उसे एक राहगीर मिला। यह जानकर कि वह राहगीर भटक गया है, युवक ने उससे उसका नाम पूछा। उत्तर मिला, "मार्गदर्शक।" "क्या मार्गदर्शक भी राहगीर भटक गया है?" "मार्गदर्शक हो या गुमराह करने वाला, राहगीर तो एक ही तरह से भटक सकते हैं। नाम तो बस यह बताता है कि कौन क्या है। तुम मूर्ख लगते हो।"

अपने नाम से पूरी तरह संतुष्ट होकर, युवा ब्राह्मण अपने गुरु के पास लौट आया।

“अच्छा, तुमने कौन सा नाम चुना है?” बोधिसत्व ने पूछा। “गुरुजी,” उसने कहा, “मैंने पाया है कि मृत्यु ‘जीवित’ और ‘मृत’ दोनों को समान रूप से आती है, ‘धनी’ और ‘गरीब’ एक साथ गरीब हो सकते हैं, और ‘मार्गदर्शक’ और ‘मार्गदर्शक’ दोनों ही भटक जाते हैं। अब मैं जानता हूँ कि नाम केवल यह बताता है कि कौन क्या है, और यह उसके स्वामी के भाग्य को निर्धारित नहीं करता। इसलिए मैं अपने नाम से संतुष्ट हूँ, और इसे किसी और नाम से बदलना नहीं चाहता।”

तब बोधिसत्व ने युवा ब्राह्मण के कार्यों और उसके द्वारा देखे गए दृश्यों को मिलाकर यह श्लोक कहा:

क्विक को मरा हुआ देखकर, गाइड खो गया, अमीर गरीब हो गया,
कम ज्ञान और न ही अधिक यात्रा का अनुभव।

अपनी कहानी सुनाते हुए गुरु ने कहा, "तो आप देख सकते हैं, भिक्षुओं, कि पुराने समय में भी, जैसा कि अब है, इस भिक्षु ने नाम को बहुत महत्व दिया था।" और उन्होंने जन्म का परिचय देते हुए कहा, "यह भिक्षु, जो अपने नाम से असंतुष्ट है, उन दिनों का असंतुष्ट युवा ब्राह्मण था; बुद्ध के शिष्य उसके विद्यार्थी थे; और मैं स्वयं उनका गुरु हूँ।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कुटवनिज-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-98-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 98
कुटवनिजा-जातक

"समझदारी से काम लेना, सबसे बुद्धिमानी से काम लेना" - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक धोखेबाज व्यापारी के बारे में सुनाई थी। बताया जाता है कि श्रावस्ती शहर में दो व्यापारी साझेदार थे, जो अपना माल लेकर यात्रा करते थे और मुनाफा लेकर लौटते थे। धोखेबाज व्यापारी मन ही मन सोचता था, "मेरे साथी को पिछले कई दिनों से ठीक से खाना-पीना नहीं मिला और रहने की भी जगह नहीं मिली, अब घर आकर वह जी भर के स्वादिष्ट भोजन का आनंद ले सकता है और बदहजमी से मर जाएगा। मेरी योजना है कि हम जो

कमाएंगे उसे तीन हिस्सों में बाँट दूँ, एक हिस्सा उसके अनाथों को दूँ और दो हिस्से खुद रख लूँ।" और इसी उद्देश्य से वह लाभ के बंटवारे को टालने के लिए प्रतिदिन कोई न कोई बहाना बनाता रहता था।

बंटवारे के लिए ज़ोर देना व्यर्थ देखकर, ईमानदार साझेदार मठ में गुरु के पास गया, उन्हें प्रणाम किया और उनका हार्दिक स्वागत किया गया। बुद्ध ने कहा, "बहुत समय हो गया है जब तुम पिछली बार मुझसे मिलने आए थे।" इस पर व्यापारी ने गुरु को अपने साथ हुई घटना के बारे में बताया।

“हे शिष्य, यह पहली बार नहीं है कि यह व्यक्ति एक धोखेबाज व्यापारी है; यह अतीत में भी उतना ही धोखेबाज रहा है। जिस प्रकार यह अब तुम्हें धोखा देने का प्रयास कर रहा है, उसी प्रकार इसने पुराने समय के बुद्धिमान और भले लोगों को धोखा देने का प्रयास किया था।” ऐसा कहकर, व्यापारी के अनुरोध पर, गुरु ने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्याभिषेक था, तब बोधिसत्व एक व्यापारी परिवार में पैदा हुए और नामकरण के दिन उनका नाम 'बुद्धिमान' रखा गया। बड़े होकर उन्होंने 'सर्वोच्च बुद्धि' नामक एक अन्य व्यापारी के साथ साझेदारी की और उनके साथ व्यापार करने लगे। ये दोनों बनारस से पाँच सौ गाड़ियाँ माल लेकर ग्रामीण क्षेत्रों में गए, जहाँ उन्होंने अपना माल बेच दिया और बाद में लाभ लेकर शहर लौट आए। जब बंटवारे का समय आया, तो सर्वोत्तम बुद्धि ने कहा, "मुझे दुगुना हिस्सा चाहिए।" "ऐसा क्यों?" बुद्धिमान ने पूछा। "क्योंकि तुम तो केवल बुद्धिमान हो, मैं सर्वोच्च बुद्धि हूँ। और सर्वोत्तम बुद्धि को दुगुने हिस्से के मुकाबले केवल एक हिस्सा मिलना चाहिए।" "लेकिन हम दोनों का माल, बैल और गाड़ियों में बराबर हिस्सा था। तुम्हें दुगुने हिस्से क्यों मिलने चाहिए?" "क्योंकि मैं सर्वोच्च बुद्धि हूँ।" और इस तरह वे बहस करते-करते आपस में झगड़ने लगे।

“आह!” बुद्धिमान ने सोचा, “मेरे पास एक योजना है।” और उसने अपने पिता को एक खोखले पेड़ में छिपा दिया, और बूढ़े को आदेश दिया कि जब वे दोनों बाहर आएं, तो वे कहें, “बुद्धिमान को दुगुना हिस्सा मिलना चाहिए।” यह व्यवस्था करके, वह बोधिसत्व के पास गया और उनसे दुगुने हिस्से के दावे को वृक्ष-परी के विवेकाधिकार पर छोड़ने का प्रस्ताव रखा। फिर उसने इन शब्दों में अपनी विनती की: “हे वृक्ष-परी, हमारे मामले का फैसला कीजिए!” इस पर पेड़ में छिपे पिता ने बदली हुई आवाज में उनसे मामला बताने को कहा। बोधिसत्व ने पेड़ से इस प्रकार कहा: “हे प्रभु, यहाँ बुद्धिमान खड़ा है, और यहाँ मैं, बुद्धिमान, खड़ा हूँ। हम व्यापार में साझेदार रहे हैं। बताइए कि हममें से प्रत्येक को कितना हिस्सा मिलना चाहिए।”

"समझदार को एक हिस्सा मिलना चाहिए, और सबसे समझदार को दो," यह जवाब मिला।

यह निर्णय सुनकर बोधिसत्व ने यह पता लगाने का निश्चय किया कि क्या वास्तव में वह वृक्ष-परी थी या नहीं। इसलिए उन्होंने खोखले तने को भूसे से भरकर उसमें आग लगा दी। ज्ञानी के पिता जलती हुई लपटों से अधमरे हो गए और एक शाखा को पकड़कर ऊपर चढ़ गए। जमीन पर गिरते ही उन्होंने यह श्लोक कहा:-

बुद्धिमान व्यक्ति को सही ही यह नाम मिला, जबकि सर्वोत्कृष्ट बुद्धिमान व्यक्ति को गलत ही यह नाम मिला;
वाइजेस्ट के माध्यम से, मैं लगभग आग की लपटों में भुन रहा हूँ।
फिर दोनों व्यापारियों ने बराबर-बराबर बंटवारा किया और प्रत्येक ने आधा-आधा हिस्सा ले लिया, और अपनी मृत्यु के समय अपने कर्मों के अनुसार ही उनका अंत हुआ।

“इस प्रकार तुम देख सकते हो,” गुरु ने कहा, “कि तुम्हारा साथी अतीत में भी उतना ही बड़ा धोखेबाज था जितना अब है।” अपनी कहानी समाप्त करते हुए उन्होंने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, “आज का धोखेबाज व्यापारी कहानी का धोखेबाज व्यापारी था, और मैं बुद्धिमान नामक ईमानदार व्यापारी था।”

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **परोसहसा-जातक**
***स्रोत**: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

जातक क्रमांक 99
परोसहस्सा-जातक

"हजारों मूर्खों से कहीं बेहतर।" - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में गैर-धर्मांतरित लोगों के प्रश्न के संबंध में सुनाई थी।

(इन घटनाओं का वर्णन सरभंग-जातक (*1) में किया जाएगा।)

एक बार भिक्षुओं ने सत्य के हॉल में बैठक की और धर्म के प्रमुख सारिपुत्र की बुद्धिमत्ता की प्रशंसा की, जिन्होंने बुद्ध के सारगर्भित कथन का अर्थ समझाया था। हॉल में प्रवेश करते हुए, गुरु ने भिक्षुओं से पूछा और उन्हें बताया गया कि वे किस बारे में बात कर रहे हैं। उन्होंने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि सारिपुत्र ने मेरे किसी सारगर्भित कथन का अर्थ समझाया हो। उन्होंने अतीत में भी ऐसा ही किया था।" ऐसा कहते हुए, उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व का जन्म उत्तरी ब्राह्मण परिवार में हुआ और उन्होंने तक्षशिला में अपनी शिक्षा पूर्ण की। कामवासनाओं का त्याग करके और संसार को त्यागकर संन्यासी जीवन व्यतीत करते हुए, उन्होंने पंच ज्ञान और अष्टम सिद्धियाँ प्राप्त कीं और हिमालय में निवास किया, जहाँ पाँच सौ संन्यासी उनके चारों ओर एकत्रित हुए। एक बरसात के मौसम में, उनके प्रमुख शिष्य आधे संन्यासियों के साथ नमक और सिरका लेने के लिए मनुष्यों के निवास स्थान पर गए। और यही वह समय था जब बोधिसत्व का निधन हो गया। उनके शिष्यों ने उनकी आध्यात्मिक उपलब्धि जानने की इच्छा से उनसे पूछा, "आपने कौन सी श्रेष्ठता प्राप्त की है?"

“जीत गए?” उन्होंने कहा; “मैंने कुछ नहीं जीता (*2)।” ऐसा कहकर उनकी मृत्यु हो गई, लेकिन उनका पुनर्जन्म प्रधान देवदूतों के ब्रह्मलोक (ऊपरी स्वर्ग) में हुआ। (बोधिसत्व सर्वोच्च अवस्था प्राप्त कर लें, फिर भी वे निराकार लोक में पुनर्जन्म नहीं लेते, क्योंकि वे साकार लोक से परे जाने में असमर्थ हैं।) उनके कहने का अर्थ गलत समझकर उनके शिष्यों ने यह निष्कर्ष निकाला कि वे कोई आध्यात्मिक उपलब्धि प्राप्त करने में असफल रहे। इसलिए उन्होंने अंतिम संस्कार के समय प्रथागत सम्मान नहीं दिए।

वापस लौटने पर मुख्य शिष्य को पता चला कि गुरु का निधन हो गया है, और उसने पूछा कि क्या उन्होंने उनसे पूछा था कि उन्होंने क्या जीता था। शिष्यों ने कहा, "उन्होंने कहा कि उन्होंने कुछ नहीं जीता। इसलिए हमने अंतिम संस्कार के समय उन्हें पारंपरिक सम्मान नहीं दिया।"

“तुम उनका अर्थ नहीं समझ पाए,” उस प्रमुख शिष्य ने कहा। “हमारे गुरु का तात्पर्य था कि उन्होंने ‘वस्तुओं की शून्यता की अंतर्दृष्टि’ नामक ज्ञान प्राप्त कर लिया था।” लेकिन शिष्यों को बार-बार समझाने के बावजूद भी उन्होंने उनकी बात नहीं मानी।

उनके अविश्वास को जानकर बोधिसत्व ने पुकार कर कहा, "मूर्खों! वे मेरे प्रधान शिष्य पर विश्वास नहीं करते। मैं उन्हें यह बात स्पष्ट कर दूंगा।" और वे ब्रह्मलोक (परमलोक) से आए और अपनी अपार शक्तियों के बल पर आश्रम के ऊपर आकाश में विलीन हो गए और प्रधान शिष्य की बुद्धिमत्ता की प्रशंसा में यह श्लोक कहा:-

हजार मूर्खों से कहीं बेहतर, हालांकि वे
सौ वर्षों तक निरंतर पुकारते रहो,
वह व्यक्ति जो सुनकर तुरंत समझ जाता है।
इस प्रकार उस महान सत्ता ने आकाश से सत्य की घोषणा की और संन्यासियों के समूह को फटकारा। फिर वे ब्रह्मलोक (परमलोक) में लौट गए, और वे सभी संन्यासी भी उसी लोक में पुनर्जन्म के योग्य हो गए।

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "सारिपुत्र उन दिनों के प्रमुख शिष्य थे, और मैं महा-ब्रह्मा हूं।"

फुटनोट:

(1)सं. 522.

(2) सर्वोच्च उपलब्धियों में से एक वस्तुओं की शून्यता (शून्यता) की अंतर्दृष्टि थी; सब कुछ भ्रम है। लेकिन यह समाधि की कुल 9 अवस्थाओं में से मध्यवर्ती 7वीं अवस्था है। 9वीं अवस्था में पारलौकिक अवस्था का अंतिम ज्ञान प्राप्त होता है। त्रिपिटक में आर्यपरियेसन सूत्र (एमएन 26) और जातक 1 में टिप्पणी 12 देखें।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **असतरूप-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-100-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 100
असतरूपा-जातक

"आनंद के वेश में।" - यह कथा गुरु ने कुंदिया नगर के निकट कुंदधनवन में राजा कोलिया की पुत्री सुप्पवासा के बारे में सुनाई थी। उस समय वह सात वर्ष से गर्भ धारण किए हुए थी और सातवें दिन से पीड़ा से गुजर रही थी। इतनी पीड़ा के बावजूद उसने सोचा, "परमप्रबुद्ध भगवान बुद्ध हैं जो सत्य का उपदेश देते हैं ताकि ऐसी पीड़ा समाप्त हो जाए; भगवान बुद्ध के चुने हुए लोग धर्मात्मा हैं जो ऐसा मार्ग अपनाते हैं जिससे ऐसी पीड़ा समाप्त हो जाए; निर्वाण धन्य है जिसमें ऐसी पीड़ा समाप्त हो जाती है।" ये तीन विचार उसकी पीड़ा में उसके लिए सांत्वना थे। उसने अपने पति को बुद्ध के पास अपनी स्थिति बताने और उनका अभिवादन करने के लिए भेजा।

सुप्पवासा का संदेश भगवान बुद्ध तक पहुँचाया गया, जिन्होंने कहा, "कोलिय वंश के राजा की पुत्री सुप्पवासा शीघ्र स्वस्थ हो जाएँ और एक स्वस्थ संतान को जन्म दें।" भगवान बुद्ध के वचनानुसार, कोलिवंश के राजा की पुत्री सुप्पवासा स्वस्थ हो गईं और उन्होंने एक स्वस्थ संतान को जन्म दिया। जब पति वापस लौटे और देखा कि उनकी पत्नी ने सफलतापूर्वक बच्चे को जन्म दे दिया है, तो वे बुद्ध की महान शक्तियों पर अत्यंत आश्चर्यचकित हुए। अब जब उनकी संतान का जन्म हो चुका था, सुप्पवासा बुद्ध के नेतृत्व वाले भिक्षु संघ (ब्रह्मांड संघ) में सात दिनों तक उदारता दिखाने के लिए उत्सुक थीं और उन्होंने अपने पति को उन्हें आमंत्रित करने के लिए वापस भेजा। संयोगवश, उसी समय बुद्ध के नेतृत्व वाले भिक्षु संघ को उस गृहस्थ व्यक्ति से निमंत्रण मिला था जो महान भिक्षु मोग्गल्याना का समर्थक था; लेकिन गुरु ने सुप्पवासा की दानशीलता की इच्छा को पूरा करने के लिए महान भिक्षु को मामले को समझाने के लिए भेजा और भिक्षु संघ के साथ सात दिनों तक सुप्पवासा का आतिथ्य स्वीकार किया। सातवें दिन उसने अपने छोटे बेटे, जिसका नाम सिवली था, को सजाया-संवारा और उसे बुद्ध और भिक्षु समुदाय के सामने प्रणाम करवाया। जब उसे उचित समय पर सारिपुत्र के पास लाया गया, तो वरिष्ठ भिक्षु ने अत्यंत स्नेहपूर्वक शिशु का अभिवादन करते हुए कहा, "सिवली, क्या तुम ठीक हो?" शिशु ने कहा, "कैसे ठीक हो सकते हो, महाराज? सात लंबे वर्षों तक मुझे खून में लोटना पड़ा है।"

तब आनंद से भरे सुप्पावासा ने कहा, "मेरा बच्चा, जो केवल सात दिन का है, वास्तव में धर्म के सेनापति, वरिष्ठ भिक्षु सारिपुत्र के साथ धर्म (धार्मिक मार्ग) पर चर्चा कर रहा है?"

“क्या आप ऐसा ही एक और बच्चा चाहेंगे?” गुरुजी ने पूछा। “जी महाराज; अगर मुझे उसके जैसे सात और बच्चे मिल सकें तो।” गुरुजी ने सप्पवासा के आतिथ्य के लिए हार्दिक धन्यवाद दिया और विदा हो गए।

सात वर्ष की आयु में बालक सिवली ने अपना हृदय धर्म को समर्पित कर दिया और संसार का त्याग कर भिक्षु संघ में शामिल हो गए; बीस वर्ष की आयु में उन्हें पूर्ण भिक्षु के रूप में दीक्षा दी गई। वे धर्मपरायण थे और उन्होंने अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) का मुकुट प्राप्त किया, और पृथ्वी आनंद से प्रज्वलित हो उठी।

एक दिन, सभा में उपस्थित भिक्षुओं ने सत्य के हॉल में इस विषय पर आपस में चर्चा करते हुए कहा, "वरिष्ठ भिक्षु सिवली, जो अब प्रकाशमान हैं, अनेक प्रार्थनाओं के फलस्वरूप जन्मे थे; सात वर्ष गर्भ में और सात दिन जन्म के बाद। माता और शिशु को कितना कष्ट सहना पड़ा होगा! उनके ये कष्ट किन कर्मों का फल थे?"

हॉल में प्रवेश करते ही गुरु ने उनसे उनके प्रवचन का विषय पूछा। उन्होंने कहा, “भाइयों, धर्मात्मा सिवली अपने पिछले कर्मों के फलस्वरूप ही सात वर्ष गर्भ में और सात दिन जन्म के बाद जीवित रहे। इसी प्रकार सुप्पवासा का सात वर्ष का गर्भकाल और सात दिन प्रसव पीड़ा भी उनके पिछले कर्मों का ही परिणाम थी।” ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व उनकी रानी के पुत्र थे। उनका पालन-पोषण और शिक्षा तक्षशिला में हुई और अपने पिता की मृत्यु के बाद वे राजा बने और न्यायपूर्वक शासन किया। उसी समय कोसल के राजा ने एक विशाल सेना के साथ बनारस पर आक्रमण किया और राजा को मारकर उनकी रानी को अपने साथ ले गए।

जब राजा मारा गया, तो उसका पुत्र नाले के रास्ते भाग निकला। बाद में उसने एक विशाल सेना एकत्रित की और बनारस पहुँचा। पास ही डेरा डालकर उसने राजा को संदेश भेजा कि या तो वह राज्य को आत्मसमर्पण कर दे या युद्ध करे। राजा ने उत्तर दिया कि वह युद्ध करेगा। परन्तु राजकुमार की माता ने यह सुनकर अपने पुत्र को संदेश भेजा, "युद्ध करने की कोई आवश्यकता नहीं है। शहर के चारों ओर हर मार्ग को हथियारों से लैस कर दो, जब तक कि लकड़ी, पानी और भोजन की कमी से लोग थक न जाएँ। तब शहर बिना किसी लड़ाई के तुम्हारे हाथों में आ जाएगा।" अपनी माता की सलाह मानकर राजकुमार ने सात दिनों तक शहर को इतनी कड़ी घेराबंदी से घेर लिया कि सातवें दिन नागरिकों ने अपने राजा का सिर काटकर राजकुमार के पास ला दिया। फिर वह शहर में प्रवेश कर गया और स्वयं को राजा घोषित कर दिया, और जब उसका जीवन समाप्त हुआ तो उसे उसके कर्मों का फल मिला।

सात दिनों तक नगर की घेराबंदी करने के उनके कार्यों का परिणाम यह हुआ कि वे सात वर्षों तक गर्भ में रहे और सात दिनों तक प्रसव पीड़ा से गुज़रे। परन्तु, क्योंकि उन्होंने बुद्ध पद्ममुत्तरा के चरणों में गिरकर अनेक दान देकर अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) की प्राप्ति की प्रार्थना की थी; और क्योंकि बुद्ध विपस्सी के समय में उन्होंने और उनके नगरवासियों ने बहुमूल्य दान देकर यही प्रार्थना की थी; अतः, अपने पुण्य कर्मों से उन्होंने अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) प्राप्त किया। और क्योंकि सुप्पवासा ने अपने पुत्र को नगर की घेराबंदी करने का संदेश भेजा था, इसलिए उन्हें सात वर्षों की गर्भावस्था और सात दिनों के प्रसव पीड़ा का सामना करना पड़ा।

उनकी कहानी समाप्त हुई, गुरु ने बुद्ध के रूप में इन श्लोकों को दोहराया:-

सुख और आशीर्वाद के वेश में दुख आता है
और यह आलस्यियों के दिलों को भी विचलित कर देता है।
और जब उन्होंने यह पाठ पढ़ा दिया, तो गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "सिवली वह राजकुमार था जिसने उन दिनों शहर की घेराबंदी की और राजा बना; सुप्पवास उसकी माता थी, और मैं उसका पिता, बनारस का राजा था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **परोसता-जातक**
***स्रोत** : रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-101-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 101
परोसत-जातक
सौ मूर्खों से कहीं बेहतर, हालांकि वे
सौ वर्षों तक निरंतर गहन चिंतन करें।
वह व्यक्ति जो सुनकर तुरंत समझ जाता है।
यह कहानी हर तरह से परोसहस्स-जातक (नंबर 99) के समान है, केवल अंतर यह है कि यहां 'गहन विचार करो' पढ़ा जाता है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **पाणिक-जातक**
***स्रोत** : रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-102-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 102

पन्निका-जातक "वही जो सिद्ध करे।"--यह कथा गुरुजी ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी। यह कथा श्रावस्ती नगर के एक गृहस्थ भिक्षु के बारे में है, जो फल-सब्जियाँ बेचता था और विभिन्न प्रकार की जड़ वाली सब्जियाँ, कद्दू आदि बेचकर अपना जीवन यापन करता था। उसकी एक सुंदर पुत्री थी, जो जितनी सुंदर थी उतनी ही गुणी और सदाचारी भी थी, पर वह हमेशा हँसती रहती थी। जब उसके अपने ही इलाके के एक परिवार ने उसका विवाह का प्रस्ताव रखा, तो उसने सोचा, "उसकी शादी तो हो जानी चाहिए, पर वह हमेशा हँसती रहती है; और एक बुरी लड़की का विवाह किसी परदेस में होना उसके माता-पिता के लिए शर्म की बात है। मुझे यह पता लगाना ही होगा कि वह अच्छी लड़की है या नहीं।"

एक दिन उसने अपनी बेटी को टोकरी देकर जंगल में जड़ी-बूटियाँ लाने के लिए कहा। फिर उसकी परीक्षा लेने के लिए उसने प्रेम भरे शब्दों में उसका हाथ पकड़ा। लड़की तुरंत रोने लगी और कहने लगी कि ऐसा करना पानी से आग निकलने जितना भयानक होगा, और उसने उससे विनती की कि वह ऐसा करना बंद कर दे। तब उसने कहा कि उसका इरादा केवल उसकी परीक्षा लेना था, और पूछा कि क्या वह गुणी है। उसने कहा कि वह गुणी है और उसने कभी किसी पुरुष को प्रेम भरी दृष्टि से नहीं देखा। उसके भय को शांत करके और उसे घर वापस लाकर, उसने एक भोज दिया और उसका विवाह करा दिया। फिर गुरु को प्रणाम करने की इच्छा से वह अपने हाथों में इत्र और मालाएँ लेकर जेतवन मठ गया। प्रणाम और भेंट चढ़ाकर वह गुरु के पास बैठ गया, जिन्होंने देखा कि वे बहुत समय से यहाँ नहीं आए थे। तब उस व्यक्ति ने भगवान बुद्ध को पूरी कहानी सुनाई।

"वह हमेशा से अच्छी लड़की रही है," गुरु ने कहा। "तुमने अब उसकी परीक्षा ली है, ठीक वैसे ही जैसे तुमने पहले ली थी।" फिर सब्जीवाले के अनुरोध पर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्याभिषेक था, तब बोधिसत्व एक वन में वृक्ष-परी के रूप में विराजमान थे। बनारस के एक सब्जी विक्रेता, जो उनके एक गृहस्थ अनुयायी थे, को उनकी पुत्री के समान ही संदेह हुआ, और फिर वही सब कुछ हुआ जैसा कि प्रारंभिक कथा में वर्णित है। जब उनके पिता ने उनका हाथ पकड़ा, तो रोती हुई कन्या ने ये श्लोक दोहराए:-

जो मेरी ढाल की मजबूती साबित करे,
मेरे पिता मुझसे यह सब गलत तरीके से करवाते हैं।
घने जंगल में उदास होकर मैं रोता हूँ;
मेरा सहायक ही मेरा शत्रु साबित हुआ।
तब उसके पिता ने उसके डर को शांत किया और पूछा कि क्या वह कुंवारी है। जब उसने हाँ कहा, तो वह उसे घर ले आए और एक दावत दी और लड़की का विवाह कर दिया।

उनकी कहानी समाप्त हुई, गुरु ने चार सत्यों का उपदेश दिया, जिसके अंत में सब्जी विक्रेता मोक्ष (निर्वाण) के प्रथम मार्ग (सम्मोहन) में स्थापित हो गया। तब व्रत करने वाले ने जन्म की पहचान करते हुए कहा, "आज के पिता और पुत्री कहानी के पिता और पुत्री थे, और मैं वह वृक्ष-परी थी जिसने यह दृश्य देखा।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **वेरी-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-103-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 103
वेरी-जातक

"यदि बुद्धिमान हो तो यहाँ देर मत करो।"—यह कथा जेतवन मठ के गुरु ने अनाथपिंडिका के बारे में सुनाई थी। सुना है कि अनाथपिंडिका अपने गाँव के मुखिया थे और गाँव से लौट रहे थे, तभी उन्होंने रास्ते में लुटेरे देखे। उन्होंने सोचा, "रास्ते में देर करना ठीक नहीं है; मुझे श्रावस्ती नगर जल्दी पहुँचना चाहिए।" इसलिए उन्होंने अपने बैलों को तेज़ी से दौड़ाया और सुरक्षित रूप से श्रावस्ती नगर पहुँच गए। अगले दिन वे मठ गए और गुरु को अपने साथ हुई घटना बताई। गुरु ने कहा, "महोदय, पुराने समय में भी बुद्धिमान और भले

लोगों ने रास्ते में लुटेरे देखे और बिना देर किए अपने घरों की ओर चल दिए।" फिर व्यापारी के अनुरोध पर उन्होंने यह पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्याभिषेक था, तब बोधिसत्व एक धनी व्यापारी थे, जो अपना बकाया वसूलने के लिए एक गाँव गए थे और घर लौट रहे थे, तभी उन्होंने रास्ते में लुटेरे देखे। उन्होंने तुरंत अपने बैलों को पूरी गति से दौड़ाया और सुरक्षित घर पहुँच गए। भोजन करने के बाद जब वे अपने आलीशान पलंग पर बैठे, तो उन्होंने कहा, "मैं लुटेरों के चंगुल से बचकर अपने घर आ गया हूँ, जहाँ भय का कोई स्थान नहीं है।" और कृतज्ञता व्यक्त करते हुए उन्होंने यह श्लोक कहा:-

यदि बुद्धिमान हो तो शत्रुओं के बीच समय बर्बाद न करो;
ऐसे लोगों के साथ एक-दो रातें बिताना कष्टदायी होता है।
इसलिए, बोधिसत्व ने अपने हृदय की पूर्णता से कहा, और दान और अन्य अच्छे कर्मों का जीवन व्यतीत करने के बाद, वे अपने कर्मों के अनुसार फल भोगने के लिए इस दुनिया से विदा हो गए।

अपनी कहानी समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "मैं उन दिनों का बनारस का व्यापारी था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **मित्तविंदा-जातक2**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-104-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 104
मित्तविन्द-जातक

"चार से आठ तक।"--यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक उद्दंड भिक्षु के बारे में सुनाई थी। घटनाएँ मित्तविन्दक (*1) की पिछली कहानी के समान हैं, लेकिन ये बुद्ध कश्यप के समय की हैं।

उस समय, मुकुट पहने हुए और नरक की यातनाएँ भोग रहे शापितों में से एक ने बोधिसत्व से पूछा, "हे प्रभु, मैंने क्या पाप किया है?" बोधिसत्व ने उस व्यक्ति के सभी बुरे कर्मों का विस्तृत वर्णन करते हुए यह श्लोक कहा:

चार से आठ तक, फिर वहां से सोलह तक, और इसी तरह
बत्तीस लोगों तक अतृप्त लालच पहुँच गया,
फिर भी अतृप्ति की स्थिति तक आगे बढ़ते रहना
आखिरकार, उस घेरे की घिसने-पिटने की मुसीबत से छुटकारा पा लिया।
ऐसा कहकर वह देवलोक (स्वर्गदूतों के लोक) लौट गया, परन्तु दूसरा अपने पापों के प्रायश्चित होने तक नरक में रहा। फिर वह वहाँ से अपने कर्मों के अनुसार फल भोगने के लिए चला गया।

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "यह उद्दंड भाई (भिक्षु) तब मित्तविन्दक थे और मैं देव (देवदूत) था।"

फुटनोट:

(1)सं. 41.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **दुब्बालकठ-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-105-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 105
दुब्बलकत्था-जातक

"क्या तुम्हें हवा से डर लगता है?"—यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक भिक्षु के बारे में सुनाई थी, जो हमेशा मानसिक रूप से भयभीत रहता था। हमें पता चलता है कि वह श्रावस्ती शहर के एक अच्छे परिवार से था और सत्य के उपदेश सुनकर उसने संसार त्याग दिया था। वह रात-दिन अपने जीवन के भय में डूबा रहता था। हवा की सरसराहट, पंखे की खड़खड़ाहट या किसी पक्षी या जानवर की आवाज से भी वह इतना भयभीत हो जाता था कि चीखकर भाग जाता था। उसे कभी यह विश्वास नहीं होता था कि मृत्यु निश्चित है; हालांकि, यदि वह मृत्यु की निश्चितता पर ध्यान करता, तो उसे डर नहीं लगता। क्योंकि मृत्यु से केवल वही भयभीत होते हैं जो इस पर ध्यान नहीं करते। अब उसकी मृत्यु के निरंतर भय के बारे में भिक्षुओं को पता चल गया और एक दिन वे सत्य के हॉल में एकत्रित हुए और उसके भय और प्रत्येक भिक्षु के लिए मृत्यु को ध्यान का विषय बनाने की औचित्य पर चर्चा करने लगे। हॉल में प्रवेश करते ही गुरु ने पूछा कि वे किस बारे में बात कर रहे हैं। तब उन्होंने उस भाई को बुलवाया और उससे पूछा कि क्या यह सच है कि वह मृत्यु के भय में जीता है। भाई ने स्वीकार किया कि वह जीता है। गुरु ने कहा, "भाइयों, इस भाई पर क्रोधित मत होइए। मृत्यु का भय जो अब उसके हृदय में व्याप्त है, पहले भी उतना ही प्रबल था।" ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, तब बोधिसत्व हिमालय के निकट एक वृक्ष-देवता के रूप में विराजमान थे। उस समय राजा ने अपने राजसी हाथी को दृढ़ निश्चय के साथ खड़े रहने का प्रशिक्षण देने के लिए हाथी प्रशिक्षकों के हाथों में सौंप दिया। उन्होंने हाथी को एक खंभे से कसकर बांध दिया और हाथों में डंडे लेकर उसे प्रशिक्षण देना शुरू कर दिया। दर्द सहन न कर पाने के कारण हाथी ने खंभा तोड़ दिया, प्रशिक्षकों को भगा दिया और हिमालय की ओर भाग गया। वे उसे पकड़ने में असमर्थ रहे और खाली हाथ लौट आए। हाथी हिमालय में मृत्यु के भय में जी रहा था। हवा का एक झोंका ही उसे भयभीत करने और पूरी गति से दौड़ने के लिए काफी था, वह अपनी सूंड को इधर-उधर हिलाता रहता था। ऐसा लगता था मानो वह अभी भी प्रशिक्षण के लिए खंभे से बंधा हुआ हो। मन और शरीर का सारा सुख खोकर वह निरंतर भय में इधर-उधर भटकता रहता था। यह देखकर वृक्ष-परी अपने वृक्ष की शाखाओं के बीच खड़ी हो गई और उसने यह श्लोक कहा:-

उस हवा से डरो जो लगातार चलती रहती है
क्या सड़ी हुई शाखाएँ हमेशा टूट जाती थीं?
ऐसा डर आपको पूरी तरह से बर्बाद कर देगा!
वृक्ष-परी के ये उत्साहवर्धक शब्द थे। और तब से हाथी को कोई भय नहीं रहा। --- अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने चार सत्यों का उपदेश दिया (जिसके समापन पर भाई ने मार्ग में प्रवेश किया), और जन्म का वर्णन करते हुए कहा, "यह भाई (भिक्षु) उन दिनों का हाथी था और मैं वृक्ष-परी।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **उदानचनि-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-106-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 106
उदंचानी-जातक

"मेरा जीवन सुखमय था।" - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें एक मोटी लड़की द्वारा किए गए प्रलोभन का वर्णन है। इस घटना का वर्णन तेरहवें खंड में चुल्ला-नारद-कश्यप जातक (*1) में किया जाएगा।

जब गुरु ने भिक्षु से पूछा, तो उन्हें पता चला कि यह सच है कि वह प्रेम में हैं, और उस मोटी लड़की से प्रेम करते हैं। गुरु ने कहा, "भाइ, वह तुम्हें गुमराह कर रही है। अतीत में भी उसने तुम्हें बुराई की ओर ले जाया था, और उस समय के बुद्धिमान और भले लोगों ने ही तुम्हें सुख की ओर लौटाया था।" इतना कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्याभिषेक था, तब वे घटनाएँ घटीं जिनका वर्णन चुल्ला-नारद-कश्यप जातक में किया जाएगा। उस अवसर पर, बोधिसत्व शाम को आश्रम में फल लेकर आए और द्वार खोलकर अपने पुत्र से बोले, "तुम प्रतिदिन लकड़ी और भोजन लाते थे और अग्नि जलाते थे। आज तुमने इनमें से कुछ भी क्यों नहीं किया, बल्कि उदास होकर यहाँ बैठे-बैठे कमजोर हो रहे हो?"

“पिताजी,” युवक ने कहा, “जब आप फल तोड़ने गए थे, तब एक स्त्री आई और उसने मीठी-मीठी बातें करके मुझे बहलाने की कोशिश की। लेकिन मैंने आपकी अनुमति के बिना उसके साथ जाने से इनकार कर दिया और उसे वहीं बैठकर मेरा इंतज़ार करने के लिए छोड़ दिया। अब मेरी इच्छा है कि मैं चला जाऊं।”

यह देखकर कि वह युवक उससे इतना प्रेम करता है कि उसे छोड़ नहीं सकता, बोधिसत्व ने उसे जाने के लिए कहा, "पर जब उसे मांस, मछली, घी, नमक, सवारी या ऐसी ही कोई खाने की चीज चाहिए हो और वह तुम्हें अपने कामों के लिए इधर-उधर भेजती रहे, तो इस आश्रम को याद रखना और वापस मेरे पास आ जाना।"

इसलिए दूसरा व्यक्ति उस स्त्री के साथ पुरुषों के निवास स्थान पर चला गया; और जब वह उसके घर पहुँचा, तो उसने उससे अपनी हर मनचाही चीज़ लाने के लिए कहा।

"इसकी गुलामी करने से तो मुझे कोई फर्क नहीं पड़ता," उसने सोचा और तुरंत अपने पिता के पास वापस भाग गया, और उन्हें प्रणाम करके खड़ा हो गया और इस छंद को दोहराया:-

उस स्त्री के आने से पहले तक मेरा जीवन सुखमय था।
उस चिंताजनक, थकाऊ घड़े ने मेरी पत्नी को...
मुझे उसकी मनमर्जी के काम करने का जिम्मा सौंप दो।
बोधिसत्व ने उस युवक की प्रशंसा की और उसे दयालुता और करुणा का भाव रखने के लिए प्रोत्साहित किया, साथ ही मनुष्यों के प्रति सही भाव के चार रूपों और अंतर्दृष्टि प्राप्त करने के तरीकों का उपदेश दिया। कुछ ही समय में उस युवक ने ज्ञान और सिद्धियाँ प्राप्त कर लीं, अपने साथी प्राणियों के प्रति सही भाव विकसित कर लिया और अपने पिता के साथ ब्रह्मलोक (परमलोक) में पुनर्जन्म लिया।

उनका पाठ समाप्त हुआ, और चार सत्यों का उपदेश देने के बाद (जिसके समापन पर वह भिक्षु प्रथम मार्ग (सम्मोहन) में प्रवेश कर गया), गुरु ने जन्म की पहचान करते हुए कहा, "आज की मोटी लड़की उन दिनों भी मोटी लड़की थी; यह जोड़ने वाला भाई पुत्र था; और मैं उन दिनों का पिता था।"

फुटनोट:

(1)सं. 477.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सालित्तक-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-107-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 107
सालित्तक-जातक

"अद्‌भुत कौशल।"--यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी, एक भिक्षु के बारे में जिसने पत्थर फेंका और वह हंस को लगा। बताया जाता है कि श्रावस्ती शहर के एक अच्छे परिवार से आने वाले इस भिक्षु को पत्थर से चीजों को भेदने में महारत हासिल थी; और एक दिन सत्य का उपदेश सुनकर उन्होंने अपना पूरा मन उसमें लगा दिया और संसार त्यागकर पूर्ण भिक्षु संघ में प्रवेश लिया। लेकिन अध्ययन और अभ्यास दोनों में ही वे भिक्षु के रूप में श्रेष्ठ नहीं थे। एक दिन, एक युवा भिक्षु के साथ वे अचिरवती नदी (*1) गए और स्नान करने के बाद किनारे पर खड़े थे, तभी उन्होंने दो सफेद हंसों को उड़ते हुए देखा। उन्होंने छोटे भिक्षु से कहा, "मैं पिछले हंस की आंख में मारूंगा और उसे गिरा दूंगा।" "उसे गिराना ही है!" दूसरे ने कहा; "तुम उसे नहीं मार सकते।" "बस एक पल रुको। मैं उसकी आंख के इस तरफ से दूसरी आंख के आर-पार मारूंगा।" "अरे, बकवास।" "ठीक है; तुम देखते रहो।" फिर उसने हाथ में एक तिकोना पत्थर लिया और हंस पर फेंक दिया। पत्थर हवा में 'सरसराहट' की आवाज़ करते हुए गया और हंस को खतरे का आभास हुआ, इसलिए वह रुककर सुनने लगा। तुरंत ही उस भाई ने एक चिकना गोल पत्थर उठाया और जब आराम कर रहा हंस दूसरी दिशा में देख रहा था, तो उसने उसे सीधे हंस की आंख में मारा, जिससे पत्थर एक आंख से अंदर गया और दूसरी से बाहर निकल गया। हंस ज़ोर से चीखते हुए उनके पैरों के पास ज़मीन पर गिर पड़ा। दूसरे भाई ने कहा, "यह बहुत ही अनुचित कार्य है," और उसे गुरु के सामने ले जाकर पूरी घटना बताई। उस भाई को डांटने के बाद गुरु ने कहा, "भाइयों (भिक्षुओं), उसके पास अतीत में भी वही कौशल था जो अब है।" और उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, तब बोधिसत्व राजा के दरबारियों में से एक थे। उस समय के राजपुजारी इतने बातूनी और वाचाल थे कि एक बार शुरू होने पर किसी और को बोलने का मौका ही नहीं मिलता था। इसलिए राजा ने पुजारी की बात काटने के लिए किसी को नियुक्त करने का सोचा और ऐसे व्यक्ति की तलाश में बहुत खोजबीन की। उस समय बनारस में एक लंगड़ा रहता था जो पत्थरों पर अद्‌भुत निशानेबाज़ था। लड़के उसे एक छोटी गाड़ी में बिठाकर बनारस के द्वार पर ले जाते थे, जहाँ पत्तों से ढका एक विशाल, शाखाओं वाला बरगद का पेड़ था। वहाँ वे उसके चारों ओर इकट्ठा होकर उसे आधा पैसा देते और कहते, 'हाथी बनाओ' या 'घोड़ा बनाओ'। लंगड़ा तब तक एक के बाद एक पत्थर फेंकता रहता जब तक कि वह पत्तों को मनचाहे आकार में न काट दे। ज़मीन गिरे हुए पत्तों से भर जाती थी।

अपने बगीचे की ओर जाते समय राजा उस स्थान पर रुके, और राजा के भय से सभी लड़के भाग गए, और लंगड़े को वहीं असहाय छोड़ दिया। पत्तों का ढेर देखकर राजा ने रथ पर सवार होकर पूछा कि ये पत्ते किसने काटे हैं। उन्हें बताया गया कि लंगड़े ने ही ऐसा किया है। यह सोचकर कि शायद पुजारी का मुंह बंद करने का कोई उपाय मिल जाए, राजा ने लंगड़े के बारे में पूछा, और उन्हें पेड़ के नीचे बैठे हुए दिखाया गया। फिर राजा ने उसे अपने पास बुलवाया और अपने सेवकों को एक तरफ खड़े होने का इशारा करते हुए लंगड़े से कहा, "मेरे पास एक बहुत बातूनी पुजारी है। क्या तुम उसका बोलना बंद करवा सकते हो?"

"जी महाराज, अगर मेरे पास सूखी बकरी के गोबर से भरी मटर की तोप होती," लंगड़े ने कहा। तब राजा ने उसे महल में बुलवाया और पुरोहित के आसन के सामने, एक परदे के पीछे सूखी बकरी के गोबर से भरी मटर की तोप के साथ बिठा दिया, जिसमें एक छेद था। जब ब्राह्मण राजा से मिलने आया और अपने लिए तैयार आसन पर बैठा, तो महाराज ने बातचीत शुरू की। तब पुरोहित ने सारी बातचीत पर अपना एकाधिकार जमा लिया और किसी और को बोलने का मौका नहीं मिला। इस पर लंगड़े ने बकरी के गोबर की गोलियां एक-एक करके, मक्खियों की तरह, पर्दे के छेद से सीधे पुरोहित के गले में मार दीं। ब्राह्मण ने गोलियों को तेल की तरह निगल लिया, जब तक कि वे पूरी तरह से गायब नहीं हो गईं। जब पुरोहित के पेट में मटर की तोप से भरी सारी गोलियां जमा हो गईं, तो वे फूलकर आधे पेक के आकार की हो गईं; और राजा को जब पता चला कि वे सब चले गए हैं, तो उसने ब्राह्मण से इन शब्दों में कहा, "आदरणीय महोदय, आप इतने बातूनी हैं कि आपने बिना ध्यान दिए मटर की तोप से भरकर बकरी का गोबर पी लिया है। एक बार में आप इससे ज़्यादा नहीं खा सकते। अब घर जाइए और उल्टी करने के लिए पानी और कुछ बीज मिलाकर पीजिए और फिर से ठीक हो जाइए।"

उस दिन से पुजारी चुप रहने लगा और बातचीत के दौरान ऐसे चुपचाप बैठता था मानो उसके होंठ सील बंद हों।

"खैर, इस राहत के लिए मैं उस अपंग व्यक्ति का आभारी हूं," राजा ने कहा और उसे चार गांव दे दिए, एक उत्तर में, एक दक्षिण में, एक पश्चिम में और एक पूर्व में, जिनसे प्रति वर्ष एक लाख की आय होती थी।

बोधिसत्व राजा के पास आकर बोले, "हे महाराज, इस संसार में बुद्धि का विकास बुद्धिमानों को ही करना चाहिए। केवल लक्ष्य साधने की कुशलता ने ही इस अपंग को यह सारी समृद्धि दिलाई है।" ऐसा कहकर उन्होंने यह श्लोक कहा:-

कौशल को महत्व दें, और लंगड़े निशानेबाज पर ध्यान दें;
चार गांवों ने उनके लक्ष्य को पूरा करने में मदद की।

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "यह भाई (भिक्षु) उन दिनों का अपंग, राजा आनंद था, और मैं बुद्धिमान दरबारी था।"

फुटनोट:

(1) आधुनिक राप्ती नदी, अवध में।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **बाहिया-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-108-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 108
बाह्य जातक

"जल्दी सीख लो।" - यह कहानी गुरु ने वैशाली नगर के पास स्थित महान उपवन में बने एक गुंबददार कक्ष में रहते हुए सुनाई थी। यह कहानी एक लिच्छवी राजकुमार के बारे में है, जिसने सत्य का मार्ग अपनाया था। उसने बुद्ध के नेतृत्व में भिक्षु संघ को अपने घर आमंत्रित किया था और उनके प्रति बड़ी उदारता दिखाई थी। उसकी पत्नी बहुत मोटी थी, लगभग फूली हुई सी दिखती थी और उसके कपड़े भी ठीक से नहीं बने थे।

राजा के आतिथ्य सत्कार के लिए धन्यवाद देते हुए, गुरु मठ लौट आए और भिक्षुओं को प्रवचन देने के बाद अपने सुगंधित कक्ष में चले गए।

सत्य के हॉल में एकत्रित होकर, भाइयों ने आश्चर्य व्यक्त किया कि इस लिच्छवी राजकुमार जैसे व्यक्ति की पत्नी इतनी मोटी और भद्दी पोशाक वाली महिला थी, और वह उससे इतना प्रेम करता था। हॉल में प्रवेश करते हुए और उनकी चर्चा सुनकर, गुरु ने कहा, "भाइयों, जैसे अब है, वैसे ही पहले भी वह एक मोटी स्त्री से प्रेम करता था।" फिर, उनके अनुरोध पर, उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, तब बोधिसत्व उनके दरबारियों में से एक थे। एक मोटी और फटे-पुराने कपड़े पहने देहाती महिला, जो मजदूरी करती थी, महल के प्रांगण के पास से गुजर रही थी, तभी उसे एक अवसर की तीव्र आवश्यकता महसूस हुई। उसने अपने वस्त्रों को सलीके से समेटते हुए झुककर अपना काम पूरा किया और थोड़ी ही देर में फिर से सीधी खड़ी हो गई।

उस समय राजा संयोगवश खिड़की से आंगन की ओर देख रहे थे और उन्होंने यह दृश्य देखा। उन्होंने सोचा, "जो स्त्री इतनी शालीनता से यह सब संभाल सकती है, वह अवश्य ही स्वस्थ होगी। वह अपने घर में स्वच्छ और सलीकेदार होगी; और स्वच्छ घर में जन्मा पुत्र भी स्वच्छ और गुणी होगा। मैं उसे अपनी रानी बनाऊंगा।" और राजा ने पहले यह सुनिश्चित कर लिया कि वह किसी और की नहीं है, फिर उसे बुलवाया और उसे अपनी रानी बना लिया। वह राजा के बहुत प्रिय हो गई। कुछ समय बाद ही उनके पुत्र का जन्म हुआ और वह सर्वशक्तिशाली सम्राट बने।

उनकी सौभाग्य की स्थिति देखकर बोधिसत्व ने राजा से कहा, "महाराज, जब इस उत्तम स्त्री ने अपनी विनम्रता और शालीनता से आपका अनुग्रह प्राप्त किया और इतनी समृद्धि हासिल की, तो सभी उचित अनुष्ठानों का विधिवत पालन करने का ध्यान क्यों न रखा जाए?" और उन्होंने आगे यह श्लोक कहा:-

चाहे कुछ लोग जिद्दी हों, जल्दी ही सीख लो;
उस ग्रामीण व्यक्ति ने अपनी विनम्रता से राजा को प्रसन्न किया।

इस प्रकार, ईश्वर ने उन लोगों के गुणों की प्रशंसा की जिन्होंने उचित अनुष्ठानों के अध्ययन में स्वयं को समर्पित किया।

उनकी कहानी का अंत इस प्रकार हुआ कि गुरु ने जन्म की पहचान करते हुए कहा, "आज के पति-पत्नी उस समय के भी पति-पत्नी थे, और मैं उस समय का बुद्धिमान दरबारी था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कुंडकपूव-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-109-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 109
कुंडकपुवा-जातक

"उसके उपासक का क्या हाल हुआ?" - यह कहानी गुरु ने श्रावस्ती नगर में एक बहुत गरीब आदमी के बारे में सुनाई थी।

श्रावस्ती नगर में बुद्ध के नेतृत्व में भिक्षु संघ का आतिथ्य सत्कार कभी एक परिवार द्वारा, कभी तीन-चार परिवारों द्वारा संयुक्त रूप से किया जाता था। कभी-कभी लोगों का एक समूह या पूरी गली मिलकर उनका आतिथ्य सत्कार करती थी, या कभी-कभी पूरा नगर ही उनका आतिथ्य सत्कार करता था। परन्तु इस अवसर पर एक गली ने आतिथ्य सत्कार में ढील दी थी। और वहाँ के निवासियों ने चावल की दलिया और उसके बाद केक परोसने की व्यवस्था की थी।

उस गली में एक बहुत गरीब मजदूर रहता था, जिसे दलिया देने का कोई तरीका समझ नहीं आ रहा था, इसलिए उसने रोटी देने का निश्चय किया। उसने भूसे के छिलकों से लाल पाउडर निकाला और उसे पानी में मिलाकर गोल रोटी गूंथी। उसने इस रोटी को एक पत्ते में लपेटकर अंगारों पर पकाया। जब रोटी पक गई, तो उसने ठान लिया कि इसे केवल बुद्ध ही खाएंगे, और तुरंत गुरु के पास जाकर खड़ा हो गया। रोटी देने का आदेश मिलते ही, वह सबसे पहले आगे बढ़ा और अपनी रोटी गुरु के भिक्षापात्र में डाल दी। गुरु ने बाकी सभी रोटियों को ठुकरा दिया और उस गरीब की रोटी खा ली। तब पूरे शहर में यही चर्चा होने लगी कि सर्वज्ञानी बुद्ध ने उस गरीब की रोटी खाने से इनकार नहीं किया। और कुली से लेकर रईसों और राजा तक, सभी वर्गों के लोग उस स्थान पर उमड़ पड़े, गुरु को प्रणाम किया और उस गरीब आदमी के चारों ओर जमा हो गए, उसे भोजन की पेशकश की, या दो से पांच सौ सिक्के देने की पेशकश की, यदि वह अपने कार्य का पुण्य उन्हें सौंप दे।

उसने सोचा कि पहले गुरु से पूछ लेना बेहतर होगा, इसलिए वह उनके पास गया और अपनी बात रखी। गुरु ने कहा, "जो कुछ वे भेंट करें, उसे स्वीकार करो और अपनी धार्मिकता से सभी प्राणियों को आशीष दो।" तब वह व्यक्ति भेंट इकट्ठा करने में जुट गया। कुछ ने दूसरों से दुगुना, कुछ ने चार गुना, कुछ ने आठ गुना, और इसी तरह नौ करोड़ (10 मिलियन) सोने का दान दिया।

आतिथ्य सत्कार के लिए धन्यवाद देते हुए, गुरु मठ लौट गए और भिक्षुओं को उपदेश देने और उन्हें अपनी पवित्र शिक्षा प्रदान करने के बाद, अपने सुगंधित कक्ष में चले गए।

शाम को राजा ने उस गरीब आदमी को बुलवाया और उसे कोषाध्यक्ष बना दिया।

सत्य के हॉल में एकत्रित होकर, भाइयों ने आपस में चर्चा की कि कैसे गुरु ने उस गरीब आदमी की भूसी की रोटी को मना नहीं किया, बल्कि उसे अमृत (देवताओं का भोजन) मानकर खाया, और कैसे उस गरीब आदमी को अपार समृद्धि प्राप्त हुई और वह अपने सौभाग्य से कोषाध्यक्ष बन गया। जब गुरु हॉल में आए और उन्होंने उनकी बातें सुनीं, तो उन्होंने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि मैंने उस गरीब आदमी की भूसी की रोटी खाने से मना नहीं किया है। मैंने ऐसा तब भी किया था जब मैं वृक्ष-परी था, और तब भी यही उसके कोषाध्यक्ष बनने का कारण बना था।" ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व एक वृक्ष-परी थे जो अरंडी के पेड़ में रहते थे। उस समय के ग्रामीण देवी-देवताओं (देवदूतों) के प्रति अंधविश्वासी थे। एक त्योहार आया और ग्रामीणों ने अपने-अपने वृक्ष-परियों को अर्पण किया। यह देखकर एक गरीब व्यक्ति ने अरंडी के पेड़ की पूजा के बारे में बताया। बाकी सभी लोग मालाएँ, सुगंध, इत्र और केक लेकर आए थे; लेकिन उस गरीब व्यक्ति के पास अपने पेड़ के लिए केवल नारियल के खोल में भूसी के पाउडर और पानी का केक था। पेड़ के सामने खड़े होकर उसने मन ही मन सोचा, "वृक्ष-परियाँ दिव्य भोजन की आदी होती हैं, और मेरी वृक्ष-परी इस भूसी के पाउडर का केक नहीं खाएगी। तो फिर मैं इसे यूँ ही क्यों खो दूँ? मैं इसे स्वयं खा लूँगा।" और जब वह जाने के लिए मुड़ा, तभी वृक्ष की शाखा में बैठे बोधिसत्व ने कहा, "हे मेरे भले मनुष्य, यदि तुम महान स्वामी होते तो मेरे लिए उत्तम रोटियाँ लाते; परन्तु तुम तो गरीब हो, इस रोटी के सिवा मुझे क्या मिलेगा? मेरा हिस्सा मत छीनो।" और उन्होंने यह श्लोक कहा:-

परी का भी वही हाल होता है जो उसके उपासक का होता है।
मुझे केक लाकर दो, मेरा हिस्सा मुझसे मत छीनो।
फिर वह व्यक्ति मुड़ा और बोधिसत्व को देखकर अपना अर्पण अर्पित किया। बोधिसत्व ने अर्पण का स्वाद ग्रहण किया और कहा, "तुम मेरी पूजा क्यों करते हो?" "हे स्वामी, मैं एक गरीब आदमी हूँ और मैं आपकी पूजा इसलिए करता हूँ ताकि मेरी दरिद्रता दूर हो जाए।" बोधिसत्व ने कहा, "इस बात की चिंता मत करो। तुमने एक ऐसे व्यक्ति को अर्पण किया है जो कृतज्ञ और दयालु कर्मों का ध्यान रखता है। इस वृक्ष के चारों ओर, एक दूसरे से सटाकर, खजाने से भरे घड़े दबे हुए हैं। जाओ राजा को बताओ और उस खजाने को गाड़ियों में भरकर राजा के प्रांगण में ले जाओ। वहाँ उसे ढेर लगा दो, और राजा इतना प्रसन्न होगा कि वह तुम्हें मुख्य कोषाध्यक्ष बना देगा।" इतना कहकर बोधिसत्व दृष्टि से ओझल हो गए। उस व्यक्ति ने वैसा ही किया जैसा उसे कहा गया था, और राजा ने उसे मुख्य कोषाध्यक्ष बना दिया। इस प्रकार बोधिसत्व की सहायता से उस गरीब आदमी को महान सौभाग्य प्राप्त हुआ; और जब उसकी मृत्यु हुई, तो उसे अपने कर्मों के अनुसार ही फल मिला।

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "आज का गरीब आदमी उन दिनों का भी गरीब आदमी था, और मैं अरंडी के पेड़ में रहने वाली वृक्ष-परी थी।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सब्बासंहारक-पन्हा**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----ll-110-ll----->>>> अगला

जातक क्रमांक 110
SABBASAMHARAKA-PANHA

"कोई सर्वव्यापी नहीं है।" - इस सर्वव्यापी प्रश्न पर उम्मग्ग जातक (546) में विस्तार से चर्चा की जाएगी। सर्वव्यापी प्रश्न यहीं समाप्त होता है।

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **गद्रभ-पन्हा**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----ll-111-ll----->>>> अगला

जातक क्रमांक 111
गद्रभा-पन्हा

"तुम स्वयं को हंस समझते हो।" - गधे से संबंधित इस प्रश्न का विस्तृत उत्तर उम्मग्ग जातक (546) में दिया जाएगा। गधे से संबंधित प्रश्न यहीं समाप्त होता है।

पिछला <<<<-----||-112-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 112
अमरादेवी-पन्हा

"केक और दलिया।"--यह प्रश्न भी उसी जातक में मिलेगा। यह रानी अमरा (*1) के प्रश्न का अंत है।

फुटनोट:

(1)अमारा राजा महोसधा की पत्नी थीं। बोधिसत्व महोसधा थे।

पिछला <<<<-----||-113-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 113
सिगाला-जातक

"शराबी सियार" - यह कहानी गुरु ने बाँस के वन में देवदत्त के बारे में सुनाई थी। भिक्षु सत्य के हॉल में एकत्रित थे और बता रहे थे कि देवदत्त पाँच सौ अनुयायियों के साथ गयासिसा गया था, जिन्हें वह यह सिखाकर गुमराह कर रहा था कि सत्य उसी में प्रकट है "न कि तपस्वी गौतम (बुद्ध) में"; और कैसे वह अपने झूठ से भिक्षु संघ को तोड़ रहा था; और कैसे वह सप्ताह में दो दिन उपवास रखता था। जब वे वहाँ बैठकर देवदत्त की दुष्टता के बारे में बात कर रहे थे, तभी गुरु वहाँ आए और उन्हें उनकी बातचीत का विषय बताया गया। उन्होंने कहा, "भाइयों, देवदत्त अतीत में भी उतना ही बड़ा झूठा था जितना अब है।" ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज था, तब बोधिसत्व ब्रह्मदत्त एक श्मशान में वृक्ष-परी के रूप में पैदा हुए। उन दिनों बनारस में एक उत्सव मनाया जा रहा था और लोगों ने राक्षसों को बलि देने का निश्चय किया। उन्होंने आंगनों, गलियों और अन्य स्थानों पर मछली और मांस फैला दिया और शराब के बड़े-बड़े बर्तन रख दिए। आधी रात को एक सियार नाले के रास्ते शहर में आया और उसने मांस और शराब पीकर अपना पेट भरा। झाड़ियों में रेंगते हुए वह सुबह होने तक गहरी नींद में सोता रहा। जब वह जागा और देखा कि दिन का उजाला हो चुका है, तो उसे पता था कि इस समय वह सुरक्षित वापस नहीं जा सकता। इसलिए वह चुपचाप सड़क के किनारे ऐसी जगह लेट गया जहाँ उसे कोई देख न सके, जब तक कि अंत में उसने एक अकेले ब्राह्मण को तालाब में कुल्ला करते हुए नहीं देखा। तब सियार ने मन ही मन सोचा, "ब्राह्मण बड़े लालची होते हैं। मुझे उनके लालच का फायदा उठाकर उन्हें अपने वस्त्र के नीचे अपनी कमरबंद में ही मुझे शहर से बाहर ले जाने के लिए मजबूर करना चाहिए।" इसलिए, उसने मानवीय आवाज में "ब्राह्मण" कहकर पुकारा।

“मुझे कौन बुला रहा है?” ब्राह्मण ने मुड़कर कहा। “मैं, ब्राह्मण।” “किसलिए?” “मेरे पास दो सौ सोने के सिक्के हैं, ब्राह्मण; और यदि आप मुझे अपने बाहरी वस्त्र के नीचे अपनी कमरबंद में छिपाकर बिना किसी को दिखाई दिए शहर से बाहर निकाल देंगे, तो ये सभी सिक्के आपको मिल जाएंगे।”

प्रस्ताव समाप्त करते हुए, लालची ब्राह्मण ने सियार को छिपा दिया और उसे शहर से थोड़ा दूर ले गया। सियार ने पूछा, "यह कौन सी जगह है, ब्राह्मण?" ब्राह्मण ने कहा, "ओह, यह फलाँ जगह है।" सियार ने कहा, "थोड़ा और आगे चलो," और ब्राह्मण को थोड़ा-थोड़ा आगे चलने के लिए उकसाता रहा, जब तक कि अंत में श्मशान घाट नहीं आ गया। सियार ने कहा, "मुझे यहाँ उतार दो," और ब्राह्मण ने वैसा ही किया। "अपना वस्त्र ज़मीन पर बिछा दो, ब्राह्मण।" और लालची ब्राह्मण ने वैसा ही किया।

“अब इस वृक्ष को जड़ से उखाड़ दो,” उसने कहा, और जब ब्राह्मण काम कर रहा था, वह उस वस्त्र पर चढ़ गया और उस पर पाँच स्थानों पर, चारों कोनों और मध्य भाग में, गोबर और मल त्याग कर दिया। यह करके वह जंगल में चला गया।

इस पर बोधिसत्व ने वृक्ष की शाखाओं के बीच खड़े होकर यह श्लोक कहा:-

हे ब्राह्मण, शराबी सियार तुम्हारे भरोसे को धोखा देता है!
आपको यहां सौ कौड़ी भी नहीं मिलेंगी।
आपकी खोज तो दो सौ सोने के सिक्कों से कहीं कम है।
और जब उसने ये श्लोक दोहरा लिए, तो बोधिसत्व ने ब्राह्मण से कहा, "अब जाओ, अपने वस्त्र धो लो, स्नान करो और अपने काम पर जाओ।" इतना कहकर वह दृष्टि से ओझल हो गया, और ब्राह्मण ने वैसा ही किया जैसा उसे कहा गया था, और अपने साथ हुए धोखे से बहुत अपमानित होकर वहाँ से चला गया।

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "देवदत्त उन दिनों का सियार था, और मैं वृक्ष-परी थी।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **मितासिंति-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-114-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 114
मितासिंति-जातक

"वे दोनों मछुआरे के जाल में फँसे हुए थे।" - यह कहानी गुरुजी ने जेतवन मठ में दो वृद्ध भिक्षुओं के बारे में सुनाई थी। बरसात का मौसम देश के एक जंगल में बिताने के बाद, उन्होंने गुरुजी से मिलने का निश्चय किया और यात्रा के लिए भोजन सामग्री एकत्र की। लेकिन वे हर दिन अपनी यात्रा टालते रहे, यहाँ तक कि एक महीना बीत गया। फिर उन्होंने भोजन सामग्री का नया भंडार जुटाया और दूसरे महीने तक टालते रहे, फिर तीसरा महीना भी बीत गया। जब उनकी सुस्ती और आलस्य के कारण तीन महीने बीत गए, तब वे निकले और जेतवन मठ पहुँचे। उन्होंने अपने पान और वस्त्र सभा कक्ष में रख दिए और गुरुजी के समक्ष उपस्थित हुए। भिक्षुओं ने देखा कि कितने समय से वे गुरुजी से नहीं मिले थे और इसका कारण पूछा। तब उन्होंने अपनी कहानी सुनाई और सभी भिक्षुओं को इन आलसी भिक्षुओं के आलस्य के बारे में पता चल गया।

सत्य के हॉल में एकत्रित होकर भाई इस विषय पर आपस में चर्चा करने लगे। गुरुजी वहाँ आए और उन्हें बताया गया कि वे क्या बात कर रहे हैं। जब उनसे पूछा गया कि क्या वे सचमुच इतने आलसी हैं, तो उन भाईजी ने अपनी कमी स्वीकार की। गुरुजी ने कहा, "भाइयों, पुराने समय में भी, आज की ही तरह, वे आलसी थे और अपने घर से बाहर निकलने को तैयार नहीं थे।" ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, बनारस नदी में तीन मछलियाँ रहती थीं, जिनके नाम थे अति-विचारशील, विचारशील और विचारहीन। वे जंगली इलाके से निकलकर मनुष्यलोक की ओर आ रही थीं। इस पर विचारशील मछली ने बाकी दोनों मछलियों से कहा, "यह इलाका खतरनाक और जोखिम भरा है, जहाँ मछुआरे जाल, टोकरीनुमा फंदों और इसी तरह के उपकरणों से मछलियाँ पकड़ते हैं। चलो हम भी जंगली इलाके में वापस चलते हैं।" लेकिन बाकी दोनों मछलियाँ इतनी आलसी और लालची थीं कि वे हर दिन अपना जाना टालती रहीं, यहाँ तक कि तीन महीने बीत गए। अब मछुआरों ने नदी में जाल डाले; अति-विचारशील और विचारहीन मछली भोजन की तलाश में आगे तैर रही थीं, तभी वे अंधाधुंध जाल में फँस गईं। पीछे रह गई विचारशील मछली ने जाल को देखा और बाकी दोनों मछलियों का हाल देखा।

“मुझे इन आलसी मूर्खों को मौत से बचाना ही होगा,” उसने सोचा। इसलिए पहले वह जाल के चारों ओर घूमा और उसके सामने पानी में ऐसे छपछपाया जैसे कोई मछली जाल तोड़कर ऊपर की ओर चली गई हो; फिर वापस मुड़कर, वह उसके पीछे ऐसे छपछपाया जैसे कोई

मछली जाल तोड़कर नीचे की ओर चली गई हो। यह देखकर मछुआरों को लगा कि मछली ने जाल तोड़ दिया है और सारी मछलियाँ भाग गई हैं; इसलिए उन्होंने जाल को एक कोने से खींचा और दोनों मछलियाँ जाल से निकलकर खुले पानी में वापस आ गईं। इस तरह उन्होंने विचारशील व्यक्ति की कृपा से अपनी जान बचाई।

अपनी कहानी सुनाते हुए, गुरु ने बुद्ध के रूप में यह श्लोक सुनाया:

> वे दोनों मछुआरों के जाल में फंसकर पकड़े गए;
> वे विचारशील होकर बचाते हैं और फिर से मुक्त कर देते हैं।

उनका पाठ समाप्त हुआ, और चारों सत्यों की व्याख्या करने के बाद (जिसके समापन पर वृद्ध भिक्षुओं ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की प्राप्ति की), गुरु ने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "ये दोनों भिक्षु उस समय अतिविचारशील और विचारहीन थे, और मैं विचारशील था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **अनुसासिका-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-115-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 115
अनुससिका-जातक

"लालच का धिक्कार करने वाली चिड़िया" - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी, एक साध्वी (नन) के बारे में जिसने दूसरों को चेतावनी दी थी। बताया जाता है कि वह श्रावस्ती शहर के एक अच्छे परिवार से थी, लेकिन संघ में प्रवेश करने के दिन से ही वह अपने कर्तव्य में विफल रही और लालच से भर गई; वह शहर के उन इलाकों में भिक्षा माँगती थी जहाँ दूसरी साध्वी (नन) नहीं जाती थीं। वहाँ उसे उत्तम भोजन दिया जाता था। अब उसके लालच ने उसे डरा दिया कि कहीं दूसरी साध्वी (नन) भी वहाँ न जाएँ और उसका हिस्सा छीन लें। उन्हें जाने से रोकने और सब कुछ अपने पास रखने का उपाय सोचते हुए, उसने दूसरी साध्वी (नन) को चेतावनी दी कि वह इलाका खतरनाक है, जहाँ एक खूंखार हाथी, एक खूंखार घोड़ा और एक खूंखार कुत्ता रहता है। उसने उनसे विनती की कि वे वहाँ भिक्षा लेने न जाएँ। इसके बाद एक भी साध्वी (नन) ने उस तरफ देखा तक नहीं।

एक दिन भिक्षा मांगने के लिए इस इलाके से गुजरते हुए, जब वह एक घर में जल्दी से प्रवेश कर रही थी, तभी एक खूंखार भेड़ ने उसे इतनी ज़ोर से टक्कर मारी कि उसका पैर टूट गया। लोग दौड़े और उसका पैर ठीक किया और उसे स्ट्रेचर पर उठाकर ननों के मठ में ले गए। और सभी ननों ने ताना मारते हुए कहा कि उसका पैर इसलिए टूटा क्योंकि वह उस जगह गई थी जहाँ उसने उन्हें जाने से मना किया था।

कुछ समय बाद भिक्षु संघ को इस बात का पता चला; और एक दिन सत्य के हॉल में भिक्षुओं ने चर्चा की कि कैसे इस नन (नन) का पैर शहर के उस हिस्से में एक हिंसक भेड़ ने तोड़ दिया था, जिसके बारे में उसने अन्य ननों (ननों) को चेतावनी दी थी; और उन्होंने उसके इस कृत्य की निंदा की। उसी समय हॉल में प्रवेश करते हुए, गुरु ने पूछा, और उन्हें बताया गया कि वे किस बारे में बात कर रहे हैं। "भाइयों, जैसा कि अब है," उन्होंने कहा, "वैसे ही अतीत में भी उसने चेतावनियाँ दीं जिनका उसने स्वयं पालन नहीं किया; और तब भी, जैसा कि अब है, उसे हानि उठानी पड़ी।" ऐसा कहते हुए, उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व पक्षी के रूप में जन्मे और बड़े होकर पक्षियों के राजा बने और हजारों पक्षियों के साथ हिमालय आए। वहाँ रहने के दौरान, एक उग्र पक्षी भोजन की तलाश में एक राजमार्ग पर जाया करती थी, जहाँ उसे गुजरते हुए रथों द्वारा गिराए गए चावल, सेम और अन्य अनाज मिलते थे। अन्य पक्षियों को भी वहाँ जाने से रोकने के सर्वोत्तम उपाय के बारे में सोचते हुए, उसने उन्हें इस प्रकार संबोधित किया: "यह राजमार्ग खतरों से भरा है। इस पर हाथी और घोड़े, क्रूर बैलों द्वारा खींचे जाने वाले रथ और ऐसी ही खतरनाक चीजें चलती हैं। और क्योंकि वहाँ तुरंत उड़ना असंभव है, इसलिए वहाँ बिल्कुल मत जाओ।" उसकी इस चेतावनी के कारण, अन्य पक्षियों ने उसे 'चेतावनी देने वाली' नाम दिया।

एक दिन जब वह राजमार्ग के किनारे चर रही थी, तो उसने सड़क पर तेज़ी से आती हुई एक गाड़ी की आवाज़ सुनी और उसे देखने के लिए अपना सिर घुमाया। "अरे, यह तो बहुत दूर है," उसने सोचा और पहले की तरह आगे बढ़ गई। तभी हवा की तरह तेज़ गति से गाड़ी आई और इससे पहले कि वह उठ पाती, पहिए ने उसे कुचल दिया और गाड़ी घूम कर आगे बढ़ गई। सभा में राजा ने उसकी अनुपस्थिति देखी और उसकी खोज का आदेश दिया। अंत में वह राजमार्ग पर दो टुकड़ों में कटी हुई मिली और यह खबर राजा तक पहुंचाई गई। "अन्य पक्षियों के प्रति अपनी सावधानी न बरतने के कारण वह दो टुकड़ों में कट गई है," राजा ने कहा और यह श्लोक बोला:-

लालच की निंदा करने वाला पक्षी, लालच को अपना शिकार बनाता है।
रथ के पहिए रास्ते में बुरी तरह क्षतिग्रस्त हो जाते हैं।

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "चेतावनी देने वाली बहन उस समय की 'चेतावनी देने वाली' चिड़िया थी, और मैं पक्षियों का राजा था।"

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **दुब्बाका-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-116-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 116
दुब्बाका-जातक

"बहुत ज़्यादा।"--यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, एक उद्दंड भाई (भिक्षु) के बारे में जिसकी कहानी गिज्झ-जातक (*1) के नौवें खंड में दी जाएगी।

गुरु ने उसे इन शब्दों में फटकारा: "भाई, तुम पहले भी ऐसे ही उद्दंड थे, बुद्धिमानों और भले लोगों की सलाहों की अवहेलना करते थे। इसी कारण भाले से तुम्हारी मृत्यु हुई।" इतना कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व का जन्म एक कलाबाज के परिवार में हुआ। बड़े होकर वे अत्यंत बुद्धिमान और चतुर निकले। उन्होंने एक अन्य कलाबाज से भाला फेंक नृत्य सीखा और अपने गुरु के साथ यात्रा करके अपना कौशल प्रदर्शित करते थे। उनके गुरु को चार भाला फेंक नृत्य तो आता था, लेकिन पाँचवाँ नहीं। एक दिन एक गाँव में प्रदर्शन करते समय, शराब के नशे में उन्होंने पाँच भाले एक कतार में लगा दिए और घोषणा की कि वे उन सभी के बीच से नाचते हुए निकल जाएँगे।

बोधिसत्व ने कहा, "हे गुरु, आप पाँचों भाले एक साथ नहीं संभाल सकते। एक भाला हटा लीजिए। यदि आप पाँचों भाले एक साथ संभालने का प्रयास करेंगे, तो पाँचवाँ भाला आपको भेद देगा और आपकी मृत्यु हो जाएगी।"

"तो फिर आपको नहीं पता कि मैं कोशिश करने पर क्या कर सकता हूँ," नशे में धुत उस व्यक्ति ने कहा; और बोधिसत्व के शब्दों पर ध्यान न देते हुए, वह चार भालों से बच निकला और पाँचवें भाले पर उसी प्रकार घायल हो गया जैसे बासिया का फूल अपनी डंठल पर घायल हो जाता है। और वहीं कराहता हुआ पड़ा रहा। बोधिसत्व ने कहा, "यह विपत्ति तुम्हारे बुद्धिमान और भले लोगों की सलाहों की अवहेलना करने के कारण आई है"; और उन्होंने यह श्लोक कहा:-

आपने हद से ज्यादा कोशिश की—भले ही यह मेरी इच्छा के विरुद्ध दर्दनाक था;
चारों को पार करने के बाद, पाँचवें पर आपकी मृत्यु हो गई।

ऐसा कहकर उसने अपने गुरु को भाले के स्थान से उठाया और विधिपूर्वक उनके शरीर का अंतिम संस्कार किया।

अपनी कहानी समाप्त करने के बाद, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "यह उद्दंड भाई (भिक्षु) उन दिनों का गुरु था, और मैं उसका शिष्य था।"

फुटनोट:

(1)सं. 427.

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **तित्तिर-जातक2**
स्रोत: *रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-117-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 117
तित्तिरा-जातक

"जैसे तीतर पक्षी मर गया।"--यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में कोकालिका के बारे में सुनाई थी, जिसकी कहानी तकरिया जातक (*1) के तेरहवें खंड में मिलेगी।

गुरु ने कहा, "हे भिक्षुओं, जैसे अब है, वैसे ही पहले भी कोकालिका की जीभ ने उसका विनाश किया था।"

ऐसा कहते हुए उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब उत्तर देश में एक ब्राह्मण परिवार में बोधिसत्व का जन्म हुआ। बड़े होकर उन्होंने तक्षशिला में पूर्ण शिक्षा प्राप्त की और कामवासनाओं का त्याग करके संसार छोड़कर संन्यासी बन गए। उन्होंने पंच ज्ञान और अष्टम सिद्धियाँ प्राप्त कीं और हिमालय के सभी पाँच सौ संन्यासी एकत्रित होकर उन्हें अपना गुरु मानकर उनका अनुसरण करने लगे।

हिमालय में अपने शिष्यों के बीच रहते हुए उन्हें गहरी अंतर्दृष्टि प्राप्त हुई।

उन दिनों एक तपस्वी पीलिया से पीड़ित होकर कुल्हाड़ी से लकड़ी काट रहा था। तभी एक बातूनी भिक्षु आकर उसके पास बैठ गया और उसे निर्देश देने लगा, कभी यहाँ से कहीं वहाँ से काटने को कहता रहा, जिससे पीलिया से पीड़ित तपस्वी का क्रोध भड़क उठा। क्रोधित होकर वह चिल्लाया, "तुम कौन होते हो मुझे लकड़ी काटना सिखाने वाले?" और अपनी धारदार कुल्हाड़ी उठाकर एक ही वार में दूसरे को मार डाला। बोधिसत्व ने शव को दफना दिया।

अब आश्रम के पास ही एक चींटी के टीले पर एक तीतर रहता था, जो सुबह-शाम हमेशा टीले की चोटी पर चहचहाता रहता था। तीतर की आवाज़ पहचानकर एक शिकारी ने उसे मार डाला और अपने साथ ले गया। बोधिसत्व को तीतर की आवाज़ की कमी खल रही थी, इसलिए उन्होंने संन्यासियों से पूछा कि अब उन्हें अपने पड़ोसी तीतर की आवाज़ क्यों नहीं सुनाई दे रही है। तब संन्यासियों ने उन्हें सारी घटना बताई, और उन्होंने इन दोनों घटनाओं को इस श्लोक में जोड़ा:-

जैसे तेज चीखने के कारण तीतर पक्षी की मृत्यु हो गई,
इस प्रकार व्यर्थ की बातों और बकवास ने इस मूर्ख को मृत्यु के घाट उतार दिया।
अपने भीतर चारों सिद्ध अवस्थाओं को विकसित करने के कारण, बोधिसत्व ब्रह्मलोक (परम स्वर्ग) में पुनर्जन्म के लिए नियत हो गए।

गुरु ने कहा, "भाइयों (भिक्षुओं), जैसे आज है, वैसे ही पहले भी कोकालिका की वाणी ने उसका विनाश किया था।" और इस पाठ के अंत में उन्होंने जन्म का वर्णन करते हुए कहा, "उन दिनों कोकालिका दखलंदाजी करने वाला तपस्वी था, मेरे अनुयायी संन्यासियों का समूह थे, और मैं उनका गुरु था।"

फुटनोट:

(1)सं. 481. कोकालिका देवदत्ता की साजिशकर्ताओं में से एक थी।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **वातक-जातक2**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----‖-118-‖---->>>> अगला

जातक क्रमांक 118
वट्टक-जातक

“लापरवाह पुरुष।”—यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी, जो मुख्य कोषाध्यक्ष के पुत्र के बारे में थी। कहा जाता है कि मुख्य कोषाध्यक्ष श्रावस्ती नगर के एक बहुत धनी व्यक्ति थे, और उनकी पत्नी ब्रह्मा लोक (परमलोक) के एक धर्मात्मा देवदूत की माता बनीं, जो ब्रह्मा (परमलोक) के समान सुंदर थे। एक दिन जब श्रावस्ती नगर में कट्टिका पर्व की घोषणा हुई, तो पूरा नगर उत्सव में डूब गया। उनके साथी, जो अन्य धनी पुरुषों के पुत्र थे, सभी की पत्नियाँ थीं, लेकिन मुख्य कोषाध्यक्ष का पुत्र ब्रह्मा लोक (परमलोक) में इतने लंबे समय तक रहा था कि वह वासना से मुक्त हो गया था। उसके साथियों ने मिलकर उसके लिए भी एक प्रेमिका ढूंढने और उसे अपने साथ उत्सव मनाने के लिए योजना बनाई। इसलिए वे उसके पास गए और बोले, “प्रिय मित्र, आज कट्टिका का महान पर्व है... क्या हम तुम्हारे लिए भी एक प्रेमिका नहीं ढूंढ सकते और साथ में आनंद नहीं मना सकते?” अंततः उसके दोस्तों ने एक सुंदर लड़की को चुना और उसे सजा-संवार कर उसके घर पर छोड़ दिया, साथ ही उसे अपने कमरे में आने का निर्देश भी दिया। लेकिन जब वह कमरे में दाखिल हुई, तो उस युवक व्यापारी ने न तो उसकी ओर देखा और न ही उससे एक शब्द कहा। अपनी सुंदरता के इस अपमान से नाराज़ होकर, उसने अपने सारे नज़ाकत और स्त्रीत्व के भावों को प्रदर्शित किया, और साथ ही इस तरह मुस्कुराई जैसे उसके सुंदर दाँत दिख रहे हों। उसके दाँतों को देखकर उसे लगा जैसे हड्डियाँ हों, और उसके मन में हड्डियों का ही ख्याल छा गया, यहाँ तक कि उसे लड़की का पूरा शरीर हड्डियों की एक श्रृंखला मात्र लगने लगा। फिर उसने उसे पैसे दिए और जाने के लिए कहा। लेकिन जैसे ही वह घर से बाहर निकली, एक रईस ने उसे सड़क पर देखा और उसे अपने साथ घर ले जाने के लिए उपहार दिया।

सात दिन बीतने पर त्योहार समाप्त हो गया, और लड़की की माँ ने देखा कि उसकी बेटी वापस नहीं आई है, तो वह उस युवक व्यापारी के दोस्तों के पास गई और उनसे पूछा कि वह कहाँ है। उन्होंने भी युवक व्यापारी से ही पूछा। व्यापारी ने बताया कि उसने लड़की को पैसे देकर देखते ही उसे विदा कर दिया था।

तब लड़की की माँ ने अपनी बेटी को वापस पाने की ज़िद की और उस युवक को राजा के सामने ले आई। राजा ने मामले की जाँच शुरू की। राजा के सवालों के जवाब में युवक ने स्वीकार किया कि लड़की उसे सौंपी गई थी, लेकिन उसने कहा कि उसे लड़की के ठिकाने का कोई पता नहीं है और न ही उसे पेश करने का कोई ज़रिया है। तब राजा ने कहा, "अगर वह लड़की को पेश नहीं कर पाता, तो उसे मार डालो।" इसके बाद युवक को हाथ बाँधकर फाँसी देने के लिए घसीटकर ले जाया गया और यह खबर सुनकर पूरे शहर में हंगामा मच गया। लोग सीने पर हाथ रखकर रोते हुए उसके पीछे-पीछे चल रहे थे और कह रहे थे, "महोदय, इसका क्या मतलब है? आप पर अन्याय हो रहा है।"

तब उस युवक ने सोचा, “यह सारा दुख मुझे इसलिए झेलना पड़ा क्योंकि मैं एक साधारण जीवन जी रहा था। अगर मैं किसी तरह इस खतरे से बच जाऊं, तो मैं संसार त्यागकर सर्वज्ञानी गौतम (बुद्ध) के भिक्षु संघ में शामिल हो जाऊंगा।”

अब उस लड़की ने खुद शोर सुना और पूछा कि इसका क्या मतलब है। जब उसे बताया गया, तो वह तेजी से बाहर भागी और चिल्लाई, "मुखिया, हट जाइए! मुझे जाने दीजिए! राजा के आदमियों को मुझे देखने दीजिए।" जैसे ही उसने खुद को दिखाया, राजा के आदमियों ने उसे उसकी माँ के हवाले कर दिया और उस युवक को छोड़कर अपने रास्ते चले गए।

अपने मित्रों से घिरे, कोषाध्यक्ष के पुत्र नदी में गए और स्नान किया। घर लौटकर उन्होंने नाश्ता किया और अपने माता-पिता को संसार त्यागने का अपना संकल्प बताया। फिर तपस्वी वस्त्र धारण करके, एक विशाल समूह के साथ, उन्होंने गुरु को ढूँढा और विधिपूर्वक प्रणाम करते हुए भिक्षु संघ में प्रवेश का निवेदन किया। पहले एक नौसिखिया और बाद में पूर्ण भिक्षु बनकर, उन्होंने बंधन के विचार पर

तब तक ध्यान किया जब तक उन्हें अंतर्दृष्टि प्राप्त नहीं हो गई, और कुछ ही समय बाद उन्होंने अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) प्राप्त कर लिया।

एक दिन सत्य के हॉल में एकत्रित भिक्षुओं ने उनके गुणों का वर्णन किया और याद किया कि कैसे संकट की घड़ी में उन्होंने सत्य की श्रेष्ठता को पहचाना और बुद्धिमानी से संसार का त्याग करके अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) का सर्वोच्च फल प्राप्त किया। जब वे बातें कर रहे थे, तभी गुरुजी वहाँ आए और उनके पूछने पर उन्हें विषय बताया गया। इस पर उन्होंने बताया कि पूर्वकाल के ज्ञानी, जैसे कि महाकोष के पुत्र ने संकट की घड़ी में सूझबूझ से मृत्यु से मुक्ति पाई थी, वैसे ही उन्होंने भी मृत्यु से बच गए थे। ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, तब बोधिसत्व का जन्म बटेर के रूप में हुआ। उस समय एक बटेर पकड़ने वाला था जो जंगल से बड़ी संख्या में बटेर पकड़कर उन्हें घर ले आता था और उन्हें मोटा करता था। जब वे मोटे हो जाते थे, तो वह उन्हें लोगों को बेचकर अपना जीवन यापन करता था। एक दिन उसने बोधिसत्व को पकड़ लिया और उन्हें कई अन्य बटेरों के साथ घर ले आया। बोधिसत्व ने मन ही मन सोचा, "यदि मैं वह भोजन और पेय लूँगा जो वह मुझे देगा, तो मुझे बेच दिया जाएगा; और यदि मैं इसे नहीं खाऊँगा, तो मैं इतना पतला हो जाऊँगा कि लोग मुझे देखकर अनदेखा कर देंगे, और इस प्रकार मैं सुरक्षित रहूँगा। इसलिए मुझे यही करना चाहिए।" अतः उन्होंने उपवास किया और तब तक उपवास करते रहे जब तक कि वे इतने पतले नहीं हो गए कि वे केवल हड्डियों का ढाँचा रह गए, और कोई भी उन्हें किसी भी कीमत पर नहीं खरीदना चाहता था। बोधिसत्व को छोड़कर अपने सभी पक्षियों को मार डालने के बाद, पक्षी पकड़ने वाले ने बोधिसत्व को पिंजरे से बाहर निकाला और यह देखने के लिए कि पक्षी को क्या तकलीफ है, उसे अपनी हथेली पर रख दिया। जब वह व्यक्ति लापरवाह था, तो बोधिसत्व ने अपने पंख फैलाए और जंगल की ओर उड़ गया। उसे लौटते देख, अन्य बटेरों ने पूछा कि इतने समय तक वह कहाँ था और कहाँ गया था। तब उसने उन्हें बताया कि उसे एक शिकारी ने पकड़ लिया था, और जब उससे पूछा गया कि वह कैसे बच निकला, तो उसने उत्तर दिया कि उसने एक ऐसा तरीका सोचा था, यानी शिकारी द्वारा दिए गए भोजन और पानी को न लेना। ऐसा कहकर उसने यह श्लोक कहा:-

लापरवाह व्यक्ति को कोई लाभ नहीं मिलता। लेकिन देखो
मेरे भीतर विचार का फल है, जो मुझे मृत्यु और बंधन से मुक्त करता है।
इस प्रकार बोधिसत्व ने अपने द्वारा किए गए कार्यों का वर्णन किया।

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "मैं उन दिनों मृत्यु से बच निकलने वाली बटेर था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **अकालरावी-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-119-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 119
अकालरवी-जातक

"माता-पिता ने सही शिक्षा नहीं दी।"—यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी, एक भिक्षु के बारे में जो अक्सर बेवजह शोर मचाता था। कहा जाता है कि वह श्रावस्ती शहर के एक अच्छे परिवार से था और उसने संसार का त्याग करके सत्य का मार्ग अपनाया था, लेकिन उसने अपने कर्तव्यों की उपेक्षा की और शिक्षा का तिरस्कार किया। वह अपने कर्तव्यों, धर्मोपदेश या शास्त्र पाठ के लिए समय का हिसाब नहीं रखता था। रात के तीनों पहरों में, साथ ही जागते समय भी, वह कभी शांत नहीं रहता था;—जिससे अन्य भिक्षुओं को एक पल भी नींद नहीं आती थी। इसलिए, सत्य सभा में भिक्षुओं ने उसके इस व्यवहार की आलोचना की। सभा में प्रवेश करके और पूछताछ करने पर जब गुरु ने जाना कि वे किस बारे में बात कर रहे हैं, तो उन्होंने कहा, "भाइयों, जैसा कि अब है, वैसे ही अतीत में भी, यह भिक्षु बेवजह शोर मचाता था, और इसी बेवजह व्यवहार के कारण उसका गला घोंट दिया गया था।" ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व का जन्म उत्तरी ब्राह्मण परिवार में हुआ। बड़े होकर उन्होंने सर्वज्ञान प्राप्त किया और विश्व प्रसिद्ध गुरु बन गए, जिनके शिष्य पाँच सौ युवा ब्राह्मण थे। इन युवा ब्राह्मणों के पास एक मुर्गा था जो सुबह जल्दी बांग देता था और उन्हें पढ़ाई के लिए जगा देता था। लेकिन वह मुर्गा मर गया। उन्होंने दूसरे मुर्गे की तलाश की, और उनमें से एक ने श्मशान में लकड़ियाँ चुनते समय वहाँ एक मुर्गा देखा। वह उसे घर ले आया और एक बाड़े में रख दिया। लेकिन, क्योंकि यह दूसरा मुर्गा श्मशान में पला-बढ़ा था, इसलिए उसे समय और ऋतुओं का ज्ञान नहीं था और वह आधी रात से लेकर सुबह तक बेफिक्र होकर बांग देता था। आधी रात को उसकी बांग से जागकर युवा ब्राह्मण अपनी पढ़ाई में जुट जाते थे; भोर तक वे थक जाते थे और नींद के कारण विषय पर ध्यान नहीं लगा पाते थे; और जब वह दिन दहाड़ता था तो उन्हें पाठ दोहराने के लिए शांति का समय नहीं मिलता था। और चूंकि मुर्गे की बांग ने आधी रात और दिन दोनों समय उनकी पढ़ाई रोक दी थी, इसलिए उन्होंने पक्षी को पकड़ा और उसकी गर्दन मरोड़ दी। फिर उन्होंने अपने शिक्षक को बताया कि उन्होंने उस मुर्गे को मार डाला है जो हर मौसम में बांग देता है।

उनके शिक्षक ने उन्हें समझाने के लिए कहा, "उसकी बुरी परवरिश ही इस मुर्गे के अंत का कारण बनी।" इतना कहकर उन्होंने यह श्लोक कहा:-

इस पक्षी को न तो किसी माता-पिता ने प्रशिक्षित किया, न ही किसी शिक्षक ने इसे सिखाया:
सीजन के दौरान और सीजन के बाहर, दोनों ही समय उनकी आवाज सुनी जाती थी।
बोधिसत्व की इस विषय पर यही शिक्षा थी; और जब उन्होंने पृथ्वी पर अपना निर्धारित समय पूरा कर लिया, तो वे अपने कर्मों के अनुसार फल भोगने के लिए इस दुनिया से चले गए।

अपना उपदेश समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म का वर्णन इस प्रकार किया, "यह भाई (भिक्षु) उस समय का मुर्गा था, जो बांग देना नहीं जानता था; मेरे शिष्य युवा ब्राह्मण थे; और मैं उनका गुरु था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **बंधनमोक्ख-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-120-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 120
बंधनमोक्खा-जातक

"अनैतिक कर्म के वाणी के दौरान"—यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में ब्राह्मण कन्या चिंचा के बारे में सुनाई थी, जिसका इतिहास महापदुम-जातक (*1) के बारहवें खंड में दिया जाएगा। इस अवसर पर गुरु ने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है जब चिंचा ने मुझ पर झूठे आरोप लगाए हैं। उसने पहले भी ऐसा किया है।" ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व का जन्म एक पुरोहित के परिवार में हुआ और अपने पिता की मृत्यु के बाद उन्होंने पुरोहिती का पदभार संभाला।

अब राजा ने अपनी रानी से वादा किया कि वह जो भी वरदान मांगेगी, वह उसे पूरा करेगा। रानी ने कहा, "मैं जो वरदान मांग रही हूँ, वह बहुत सरल है; आज से आप किसी और स्त्री को प्रेम भरी दृष्टि से न देखें।" पहले तो राजा ने मना कर दिया, लेकिन रानी के लगातार आग्रह से तंग आकर अंततः मान गया। और उस दिन से उसने अपनी सोलह हजार नर्तकियों में से किसी को भी प्रेम भरी दृष्टि से नहीं देखा।

अब उसके राज्य की सीमाओं पर अशांति फैल गई, और लुटेरों के साथ दो-तीन झड़पों के बाद, वहाँ की सेना ने राजा को पत्र भेजकर कहा कि वे इस मामले को आगे नहीं बढ़ा सकते। तब राजा स्वयं जाने के लिए उत्सुक हुआ और उसने एक विशाल सेना एकत्रित की।

उसने अपनी पत्नी से कहा, "प्रिय, मैं सीमा पर जा रहा हूँ, जहाँ भयंकर युद्ध होंगे, जिनमें या तो जीत होगी या हार। शिविर में स्त्री का कोई स्थान नहीं है, और तुम्हें यहीं रहना होगा।"

“हे स्वामी, यदि आप चले जाएँगे तो मैं रुक नहीं पाऊँगी,” उसने कहा। परन्तु राजा को अपने निर्णय पर अडिग देखकर उसने यह निवेदन किया, “प्रत्येक एक मील (x 4.23 किमी) पर एक दूत भेजकर मेरा हालचाल पूछिए।” राजा ने ऐसा करने का वचन दिया। तदनुसार, जब राजा अपनी सेना के साथ नगर में बोधिसत्व को छोड़कर निकला, तो उसने प्रत्येक मील (x 4.23 किमी) के अंत में एक दूत भेजा ताकि रानी को उसका हालचाल पता चल सके और वह कैसी है। प्रत्येक दूत के आने पर रानी उससे पूछती कि वह क्यों लौटा है। और जब उसे उत्तर मिलता कि वह उसका हालचाल पूछने आया है, तो रानी दूत को अपने पास बुलाती और उसके साथ संबंध बनाती। अब राजा ने बत्तीस मील (x 4.23 किमी) की यात्रा की और बत्तीस दूत भेजे, और रानी ने उन सभी के साथ संबंध बनाए। जब उसने सीमावर्ती क्षेत्र में शांति स्थापित कर ली, जिससे निवासियों को अपार प्रसन्नता हुई, तो वह अपने घर वापसी के लिए रवाना हुआ और बत्तीस दूतों का दूसरा दल भेजा। रानी ने पहले की तरह ही उनमें से प्रत्येक से संबंध स्थापित किए। अपनी विजयी सेना को शहर के पास रोककर, राजा ने बोधिसत्व को पत्र भेजा कि वे शहर को उसके प्रवेश के लिए तैयार करें। शहर में तैयारियाँ पूरी हो चुकी थीं और बोधिसत्व राजा के आगमन के लिए महल को सजा रहे थे, तभी वे रानी के कक्ष में पहुँचे। उनके भव्य रूप को देखकर रानी इतनी मोहित हो गई कि उसने अपनी वासना को शांत करने के लिए उन्हें बुलाया। परन्तु बोधिसत्व ने राजा के सम्मान का हवाला देते हुए उससे विनती की और कहा कि वे सभी पापों से विमुख हैं और उसकी इच्छा के अनुसार कार्य नहीं करेंगे। रानी ने कहा, “राजा के चौंसठ दूतों को भी राजा के विचार से भय नहीं लगा; तो क्या तुम राजा के खातिर मेरी इच्छा पूरी करने से डरोगे?”

बोधिसत्व ने कहा, "यदि इन दूतों ने मेरे साथ विचार किया होता, तो वे ऐसा न करते। जहाँ तक मेरा सवाल है, जो सत्य को जानता हूँ, मैं यह पाप नहीं करूँगा।"

"बकवास मत करो," उसने कहा। "अगर तुमने इनकार किया, तो मैं तुम्हारा सिर कटवा दूंगी।"

"ऐसा ही हो। इस जन्म में या लाखों जन्मों में मेरा सिर काट दो; फिर भी मैं तुम्हारी बात नहीं मानूंगा।"

“ठीक है; मैं देख लेती हूँ,” रानी ने धमकी भरे लहजे में कहा। और अपने कमरे में जाकर उसने खुद को खुजलाया, अपने अंगों पर तेल लगाया, गंदे कपड़े पहने और बीमार होने का नाटक किया। फिर उसने अपने दासों को बुलवाया और उनसे कहा कि जब राजा उसका हालचाल पूछे तो उसे बता दें कि वह बीमार है।

इसी बीच बोधिसत्व राजा से मिलने गए, जो शहर का जुलूस निकालने के बाद अपने महल में दाखिल हुए। रानी को न देखकर उन्होंने पूछा कि वह कहाँ हैं, तो उन्हें बताया गया कि वह बीमार हैं। राजशय के शयनकक्ष में प्रवेश करके राजा ने रानी को प्यार से सहलाया और पूछा कि उन्हें क्या तकलीफ है। वह चुप रहीं; लेकिन जब राजा ने तीसरी बार पूछा, तो उन्होंने राजा की ओर देखकर कहा, "यद्यपि मेरे स्वामी, राजा अभी जीवित हैं, फिर भी मुझ जैसी दीन स्त्रियों को स्वामी रखना ही पड़ता है।"

"आपका क्या मतलब है?"

"जिस पुजारी को आपने शहर की निगरानी के लिए छोड़ा था, वह महल की देखरेख करने के बहाने यहाँ आया; और क्योंकि मैंने उसकी इच्छा के आगे झुकने से इनकार कर दिया, उसने मुझे जी भर कर पीटा और चला गया।"

तब राजा आग में नमक या चीनी के चटकने जैसी भयंकर क्रोध से आग बबूला हो गया; और वह कमरे से बाहर भागा। उसने अपने सेवकों को बुलाया और उनसे कहा कि वे पुजारी के हाथ पीछे की ओर बांध दें, जैसे किसी को मृत्युदंड दिया गया हो, और उसे फांसी के स्थान पर ही काट दें। वे तुरंत गए और बोधिसत्व को बांध दिया। फिर फांसी की घोषणा के लिए ढोल बजाया गया।

बोधिसत्व ने सोचा, “निस्संदेह उस दुष्ट रानी ने राजा के मन में मेरे विरुद्ध द्वेष भर दिया है, और अब मुझे स्वयं को इस खतरे से बचाना होगा।” इसलिए उन्होंने अपने बंदी बनाने वालों से कहा, “मुझे मारने से पहले राजा के समक्ष ले आओ।” उन्होंने पूछा, “क्यों?” बोधिसत्व ने कहा, “क्योंकि राजा के सेवक के रूप में मैंने राजा के कार्यों में बहुत परिश्रम किया है, और मुझे उन बड़े खजानों का ज्ञान है जो मैंने खोजे हैं। यदि मुझे राजा के समक्ष नहीं लाया गया, तो यह सारा धन खो जाएगा। इसलिए मुझे उनके समक्ष ले चलो, और फिर अपना कर्तव्य निभाओ।”

तदनुसार, वे उसे राजा के समक्ष लाए, जिसने पूछा कि श्रद्धा ने उसे ऐसी दुष्टता करने से क्यों नहीं रोका।

“महाराज,” बोधिसत्व ने उत्तर दिया, “मैं ब्राह्मण के रूप में जन्मा हूँ और मैंने कभी किसी चींटी का भी प्राण नहीं लिया। मैंने कभी किसी और की वस्तु नहीं ली, यहाँ तक कि घास का एक तिनका भी नहीं। मैंने कभी किसी दूसरे पुरुष की पत्नी को वासना भरी दृष्टि से नहीं देखा। मैंने कभी मजाक में भी झूठ नहीं बोला और न ही कभी शराब का एक घूँट पिया है। मैं निर्दोष हूँ, महाराज; परन्तु उस दुष्ट स्त्री ने वासनावश मेरा हाथ पकड़ा और जब मैंने उसे मना किया तो उसने मुझे धमकाया और अपने कमरे में जाने से पहले मुझे अपने गुप्त अपराध के बारे में बता दिया। क्योंकि चौंसठ दूत आपके पत्र लेकर रानी के पास आए थे। इन पुरुषों को बुलवाएँ और प्रत्येक से पूछें कि क्या उन्होंने रानी के आदेश का पालन किया या नहीं।” तब राजा ने उन चौंसठ पुरुषों को बाँधवाकर रानी को बुलवाया। रानी ने उन पुरुषों के साथ यौन संबंध बनाने की बात स्वीकार की। तब राजा ने उन चौंसठ पुरुषों का सिर कलम करने का आदेश दिया।

लेकिन इस पर बोधिसत्व ने पुकार कर कहा, "नहीं, महाराज, पुरुषों का कोई दोष नहीं है; क्योंकि वे रानी के दबाव में थे। इसलिए उन्हें क्षमा कर दीजिए। और रानी का भी कोई दोष नहीं है, क्योंकि स्त्रियों की वासनाएं अनियंत्रित होती हैं, और वह तो अपने स्वभाव के अनुसार ही कार्य करती है। इसलिए, हे राजा, उन्हें भी क्षमा कर दीजिए।"

इस विनती पर राजा दयालु हो गए और बोधिसत्व ने रानी और चौंसठ पुरुषों के जीवन को बचा लिया और उन्हें रहने के लिए स्थान दिया। फिर बोधिसत्व राजा के पास आए और बोले, "महाराज, निराधार आरोप बुद्धिमानों को अनुचित बंधनों में जकड़ लेते हैं, परन्तु बुद्धिमानों के वचन मूर्खों को मुक्त कर देते हैं। इस प्रकार, कुकर्म गलत बंधन बनाता है और बुद्धि बंधनों से मुक्ति दिलाती है।" ऐसा कहकर उन्होंने यह श्लोक कहा:-

यद्यपि कुकर्म के भाषण ने अन्यायपूर्ण ढंग से बाध्य किया,
बुद्धि के वचन से न्यायसंगत बंधनों से मुक्त हो जाते हैं।
जब उन्होंने राजा को इन श्लोकों में सत्य का उपदेश दिया, तो उन्होंने कहा, "यह सारी परेशानी मेरे गृहस्थ जीवन जीने के कारण उत्पन्न हुई है। मुझे अपना जीवन-मार्ग बदलना होगा, और हे महाराज, मैं आपसे सांसारिक जीवन त्यागने की अनुमति चाहता/चाहती हूँ।" राजा की अनुमति से उन्होंने सांसारिक जीवन त्याग दिया और अपने शोकग्रस्त रिश्तेदारों और अपार धन-संपत्ति को छोड़कर संन्यासी बन गए। उनका निवास हिमालय में था, और वहाँ उन्होंने उच्च ज्ञान और सिद्धियाँ प्राप्त कीं और ब्रह्मलोक (परमलोक) में पुनर्जन्म के लिए नियत हुए।

अपने उपदेश के अंत में, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "चिंचा उन दिनों की दुष्ट रानी थी, आनंद राजा थे और मैं उनका पुरोहित था।"

फुटनोट:

(1)सं. 472.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> कुसानादि - **जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-121-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 121
कुसानली-जातक

“बड़े-छोटे सभी का सम्मान हो।”—यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में अनाथपिंडिका के सच्चे मित्र के बारे में सुनाई थी। उनके परिचित, मित्र और रिश्तेदार उनके पास आए और एक विशेष व्यक्ति के साथ उनकी घनिष्ठता को रोकने का भरसक प्रयास किया, यह कहते हुए कि वह न तो जन्म से और न ही धन-दौलत से अनाथपिंडिका के बराबर है। परन्तु महान व्यापारी ने उत्तर दिया कि मित्रता बाहरी समानता या असमानता पर निर्भर नहीं होनी चाहिए। और जब वे अपनी जमींदारी पर लौटे, तो उन्होंने अपने मित्र को अपनी संपत्ति का प्रभार सौंप दिया। सब कुछ कालकन्नी जातक (*1) में वर्णित अनुसार हुआ। लेकिन, जब इस मामले में अनाथपिंडिका ने अपने घर पर मंडरा रहे खतरे के बारे में बताया, तो गुरु ने कहा, "हे गृहस्थ, सच्चा मित्र कभी हीन नहीं होता। मित्रता का मापदंड उसकी योग्यता है। सच्चा मित्र, चाहे वह स्वयं के बराबर या उससे कमतर ही क्यों न हो, उसे श्रेष्ठ मानना चाहिए, क्योंकि ऐसे सभी मित्र स्वयं पर आने वाली विपत्तियों

का सामना करने में कभी असफल नहीं होते। तुम्हारा सच्चा मित्र ही है जिसने आज तुम्हारी संपत्ति बचाई है। इसी प्रकार बीते समय में एक ऐसे ही सच्चे मित्र ने एक आत्मा के घर की रक्षा की थी।" फिर अनाथपिंडिका के अनुरोध पर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व राजा के उद्यान में एक आत्मा के रूप में जन्म लेकर कुश घास के एक झुंड में रहने लगे। उसी उद्यान में राजा के सिंहासन के पास एक सुंदर वरदान वृक्ष (जिसे मुखक वृक्ष भी कहा जाता है) उगता था, जिसका तना सीधा और शाखाएँ फैली हुई थीं, और जो राजा को अत्यंत प्रिय था। यहाँ एक शक्तिशाली देव-राजा का निवास था, जो वृक्ष-आत्मा के रूप में पुनर्जन्म लेकर आए थे। बोधिसत्व का इस वृक्ष-आत्मा के साथ घनिष्ठ मित्रता का संबंध था।

अब राजा के निवास में छत को सहारा देने के लिए केवल एक ही खंभा था और वह खंभा हिलने लगा था। यह जानकर राजा ने बढ़ईयों को बुलवाया और उन्हें एक मजबूत खंभा लगाने और छत को सुरक्षित करने का आदेश दिया। बढ़ई एक उपयुक्त पेड़ की तलाश में इधर-उधर देखने लगे, लेकिन कहीं और न मिलने पर वे बगीचे में गए और उन्हें मुखक का पेड़ दिखाई दिया। फिर वे राजा के पास वापस आ गए। राजा ने कहा, "अच्छा, क्या तुम्हें कोई उपयुक्त पेड़ मिल गया?" उन्होंने कहा, "जी महाराज, लेकिन हम इसे काटना नहीं चाहते।" राजा ने कहा, "क्यों नहीं?" तब उन्होंने बताया कि कैसे उन्होंने व्यर्थ ही हर जगह पेड़ की तलाश की और पवित्र पेड़ को काटने की हिम्मत नहीं की। राजा ने कहा, "जाओ और इसे काट दो और छत को सुरक्षित कर दो। मैं दूसरा पेड़ ढूंढता हूँ।"

तो वे चले गए। और वे बगीचे में बलि लेकर गए और वृक्ष को अर्पित करते हुए आपस में कहने लगे कि वे कल आकर उसे काट डालेंगे। उनकी बातें सुनकर वृक्ष-परी को पता चल गया कि कल उसका घर नष्ट हो जाएगा, और वह अपने बच्चों को सीने से लगाकर फूट-फूट कर रोने लगी, यह न जानते हुए कि उन्हें लेकर कहाँ भागे। उसके मित्र, वन के प्रेत, आए और पूछा कि क्या हुआ है। लेकिन उनमें से कोई भी बढ़ई को रोकने का उपाय नहीं सोच सका, और सभी रोते-बिलखते उसे गले लगाने लगे। उसी क्षण बोधिसत्व वृक्ष-परी को पुकारने आए और उन्हें यह खबर सुनाई गई। बोधिसत्व ने प्रसन्नता से कहा, "डरो मत। मैं देखूंगा कि वृक्ष को काटा न जाए। बस कल देखो कि जब बढ़ई आएंगे तो मैं क्या करूंगा।"

अगले दिन जब लोग आए, तो बोधिसत्व गिरगिट का रूप धारण करके उनसे पहले ही वृक्ष पर पहुँच गए थे। वे जड़ से अंदर घुस गए और शाखाओं के बीच तक ऊपर चढ़ते हुए वृक्ष को छेदों से भर दिया। फिर बोधिसत्व शाखाओं के बीच आराम करने लगे और अपना सिर तेजी से इधर-उधर हिलाने लगे। बढ़ई उठ खड़े हुए; और गिरगिट को देखते ही उनके सरदार ने वृक्ष पर हाथ मारा और कहा कि वृक्ष सड़ा हुआ है और उन्होंने कल भेंट चढ़ाने से पहले ध्यान से नहीं देखा था। और वह उस विशाल और मजबूत वृक्ष के प्रति तिरस्कार से भर कर वहाँ से चले गए। इस प्रकार बोधिसत्व ने वृक्ष-आत्मा के घर को बचा लिया। और जब उसके सभी मित्र और परिचित उससे मिलने आए, तो उसने अपने घर के रक्षक के रूप में बोधिसत्व की स्तुति करते हुए हर्षोल्लास से कहा, "वृक्षों के प्राणों, अपनी अपार शक्ति के बावजूद हम नहीं जानते थे कि क्या करें; जबकि एक विनम्र कुश-प्राणी ने बुद्धि से मेरे घर की रक्षा की। सचमुच हमें अपने मित्रों का चुनाव इस बात पर विचार किए बिना करना चाहिए कि वे श्रेष्ठ हैं, समान हैं या हीन हैं, पद का कोई भेद नहीं करना चाहिए। क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति अपनी सामर्थ्य के अनुसार संकट की घड़ी में मित्र की सहायता कर सकता है।" और उसने मित्रता और उसके कर्तव्यों के बारे में यह श्लोक दोहराया:-

बड़े हों या छोटे, और बराबर हों, सभी को,
यदि कोई हानि हो तो प्रत्येक व्यक्ति अपनी सर्वोत्तम कोशिश करे।
और मुसीबत में फंसे दोस्त की मदद करो।
मुझे कुसा-आत्मा से सहायता मिली।
इस प्रकार उन्होंने एकत्रित देवों (देवदूतों) को उपदेश देते हुए ये शब्द कहे, “इसी कारणवश, जो किसी बुरी स्थिति से बचना चाहते हैं, उन्हें केवल यह विचार नहीं करना चाहिए कि कोई व्यक्ति उनके बराबर है या उनसे श्रेष्ठ, बल्कि उन्हें बुद्धिमानों से मित्रता करनी चाहिए, चाहे जीवन में उनकी स्थिति कुछ भी हो।” और उन्होंने अपना जीवन व्यतीत किया और कुश आत्मा के साथ अंततः अपने कर्मों के फल के अनुसार फल भोगने के लिए परलोक विदा हो गईं।

अपने उपदेश के अंत में गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "आनंद तब वृक्ष-आत्मा थे, और मैं कुश-आत्मा था।"

फुटनोट:

(1) संख्या (83)

पिछला <<<<-----||-122-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 122
दुम्मेधा जातक

"उच्च पद मूर्ख को भी महान कष्ट देता है।" - यह कथा गुरु ने बाँस के वन में देवदत्त के बारे में सुनाई थी। भिक्षु सत्य के हॉल में एकत्रित हुए थे और इस बात पर चर्चा कर रहे थे कि बुद्ध की सिद्धियों और बुद्धत्व के सभी विशिष्ट लक्षणों (*1) को देखकर देवदत्त कैसे क्रोधित हो गया था; और ईर्ष्या के कारण वह बुद्ध के असीम ज्ञान की प्रशंसा सहन नहीं कर पा रहा था। हॉल में प्रवेश करते हुए, गुरु ने उनसे पूछा कि वे किस विषय पर बात कर रहे हैं। जब उन्होंने बताया, तो उन्होंने कहा, "भाइयों, जैसे अब, वैसे ही पहले भी देवदत्त मेरी प्रशंसा सुनकर क्रोधित हो जाता था।" ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कथा सुनाई।

बहुत समय पहले, मगध के राजगृह नगर में मगध राजा शासन कर रहे थे, तभी बोधिसत्व का जन्म हाथी के रूप में हुआ। वे पूर्णतः श्वेत थे और ऊपर वर्णित सभी सौंदर्यों से परिपूर्ण थे। उनकी सुंदरता के कारण राजा ने उन्हें अपना राज-हाथी बना लिया।

एक त्यौहार के दिन राजा ने शहर को देवों के नगर की तरह सजाया और अपने अलंकृत वस्त्रों में सजे हाथी पर सवार होकर, अपने विशाल दल के साथ शहर में जुलूस निकाला। पूरे रास्ते भर लोग उस असाधारण हाथी को देखकर मंत्रमुग्ध हो गए और कहने लगे, "वाह, क्या राजसी चाल है! क्या भव्यता है! क्या सुंदरता है! क्या आकर्षण है! ऐसा सफेद हाथी किसी सर्वोपरि सम्राट के योग्य है।" हाथी की इस प्रशंसा ने राजा को ईर्ष्या से भर दिया और उसने उसे खाई में फेंककर मार डालने का निश्चय किया। इसलिए उसने महावत को बुलाया और पूछा कि क्या वह इसे प्रशिक्षित हाथी कहता है।

"जी महाराज, यह तो बहुत अच्छी तरह से प्रशिक्षित है," महावत ने कहा। "नहीं, यह तो बहुत बुरी तरह से प्रशिक्षित है।" "महाराज, यह अच्छी तरह से प्रशिक्षित है।" "अगर यह इतना अच्छा प्रशिक्षित है, तो क्या आप इसे वेपुल्ला पर्वत की चोटी तक चढ़ा सकते हैं?" "जी महाराज।" "तो जाओ फिर," राजा ने कहा। और वह हाथी से उतर गए, महावत को अपने ऊपर बिठाया, और स्वयं पर्वत की तलहटी में चले गए, जबकि महावत हाथी की पीठ पर सवार होकर वेपुल्ला पर्वत की चोटी तक गया। राजा अपने दरबारियों के साथ पर्वत पर चढ़े, और हाथी को एक गहरी खाई के किनारे पर रोक दिया। "अब," उन्होंने उस व्यक्ति से कहा, "अगर यह इतना अच्छा प्रशिक्षित है जैसा कि आप कहते हैं, तो इसे तीन पैरों पर खड़ा करो।"

हाथी की पीठ पर बैठे महावत ने इशारे से हाथी को हल्के से छुआ और पुकारा, "हे मेरे सुंदर हाथी, तीन पैरों पर खड़े हो जाओ।" राजा ने कहा, "अब इसे अपने दोनों अगले पैरों पर खड़ा करो।" और हाथी ने अपने पिछले पैर उठाए और केवल अगले पैरों पर खड़ा हो गया। राजा ने फिर कहा, "अब पिछले पैरों पर," और आज्ञाकारी हाथी ने अपने अगले पैर तब तक उठाए जब तक वह केवल पिछले पैरों पर खड़ा नहीं हो गया। राजा ने फिर कहा, "अब एक पैर पर," और हाथी एक पैर पर खड़ा हो गया।

यह देखकर कि हाथी खाई में नहीं गिरा, राजा चिल्लाया, "अब अगर हो सके तो उसे हवा में खड़ा कर दो।"

तब महावत ने मन ही मन सोचा, "प्रशिक्षण की उत्कृष्टता के मामले में पूरा भारत भी इस हाथी की बराबरी नहीं कर सकता। राजा ज़रूर इसे खाई में गिराकर मार डालना चाहता होगा।" इसलिए उसने हाथी के कान में फुसफुसाते हुए कहा, "मेरे पुत्र, राजा चाहता है कि तुम गिरकर मर जाओ। वह तुम्हारे लायक नहीं है। यदि तुममें हवा में उड़ने की शक्ति है, तो मुझे अपनी पीठ पर बिठाकर हवा में उड़ो और बनारस पहुँचो।"

और पुण्य से प्राप्त अद्भुत शक्तियों से संपन्न वह महान प्राणी तुरंत आकाश में विलीन हो गया। तब महावत ने कहा, "महाराज, पुण्य से प्राप्त अद्भुत शक्तियों से युक्त यह हाथी आप जैसे निकम्मे मूर्ख के लिए बहुत अच्छा है: केवल एक बुद्धिमान और नेक राजा ही इसका स्वामी बनने योग्य है। जब आप जैसे निकम्मे लोगों को ऐसा हाथी मिलता है, तो वे उसका मूल्य नहीं समझते, और इस प्रकार वे अपना हाथी और अपनी सारी शान-शौकत खो देते हैं।" ऐसा कहते हुए महावत हाथी की गर्दन पर बैठा और उसने यह श्लोक पढ़ा:-

उच्च पद मूर्ख को भी महान कष्ट भोगने पर मजबूर करता है;
वह स्वयं का और दूसरों का कट्टर शत्रु साबित होता है।
"अब, अलविदा," उन्होंने राजा को फटकार लगाते हुए कहा; और हवा में उड़ते हुए, वे बनारस की ओर बढ़े और राजगृह के ऊपर हवा में ही रुक गए। शहर में हलचल मच गई और सब चिल्ला उठे, "देखो, हमारे राजा के लिए राज-हाथी हवा में आया है और राजगृह के ऊपर मंडरा रहा है।" और यह खबर राजा तक भी शीघ्रता से पहुंचाई गई, जो बाहर आए और बोले, "यदि तुम्हारा आना मेरे हित में है, तो पृथ्वी पर उतर आओ।" और बोधिसत्व हवा से नीचे उतरे। फिर महावत नीचे उतरे और राजा के सामने प्रणाम किया, और राजा के प्रश्नों के उत्तर में राजगृह से उनके जाने की पूरी कहानी सुनाई। "तुम्हारा आना बहुत अच्छा हुआ," राजा ने कहा; और प्रसन्नता में उन्होंने शहर को सजाया और हाथी को अपने राजगृह में स्थापित किया। फिर उन्होंने अपने राज्य को तीन भागों में बाँटा, एक भाग बोधिसत्व को, एक भाग महावत को और एक भाग स्वयं अपने पास रखा। बोधिसत्व के आगमन के दिन से ही उनकी शक्ति बढ़ती गई और समस्त भारत पर उनका प्रभुत्व स्थापित हो गया। भारत के सम्राट के रूप में वे दानशील और अन्य अच्छे कार्य करते रहे, और अंत में अपने कर्मों के फल के अनुसार उनका निधन हो गया।

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "उन दिनों देवदत्त मगध के राजा थे, सारिपुत्र बनारस के राजा थे, आनंद महावत थे और मैं हाथी था।"

फुटनोट:

(1) सेला सुत्त (सुत्त निपाता की संख्या 33 और टिपिटका में मज्झिमा निकाय की संख्या 92)।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> नांगलीस - **जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-123-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 123
नांगलिसा-जातक

"सार्वभौमिक उपयोग के लिए।"--यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी, जिसमें वरिष्ठ भिक्षु लालुदयी के बारे में बताया गया है, जिनके बारे में कहा जाता है कि उन्हें हमेशा गलत बात कहने की आदत थी। उन्हें कभी भी यह पता नहीं होता था कि विभिन्न उपदेशों के लिए उचित अवसर क्या है। उदाहरण के लिए, यदि कोई त्योहार होता, तो वे उदास स्वर में कहते, "दीवारों के बाहर वे घात लगाए बैठे हैं, और जहाँ चार चौराहे मिलते हैं।" यदि कोई अंत्येष्टि होती, तो वे अचानक बोल पड़ते, "देवताओं (देवदूतों) और मनुष्यों के हृदय आनंद से भर गए," या "हे भगवान, ऐसे सौ नहीं, हज़ार दिन देखो!"

एक दिन सत्य के हॉल में भिक्षुओं ने लालुदायी की विषय चुनने की विलक्षण अक्षमता और हमेशा गलत बात कहने की उसकी आदत पर टिप्पणी की। जब वे बातें कर रहे थे, तभी गुरुजी प्रवेश कर गए और उनके प्रश्न के उत्तर में उन्हें उनकी चर्चा का विषय बताया गया। गुरुजी ने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि लालुदायी के कुकर्म ने उसे गलत बात कहने पर मजबूर किया है। वह हमेशा से ही इस तरह की अक्षमता से ग्रस्त रहा है।" ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व का जन्म एक धनी ब्राह्मण परिवार में हुआ था, और जब वे बड़े हुए, तो वे सभी ज्ञान में पारंगत हो गए और विश्व प्रसिद्ध शिक्षक बन गए, जिनके पास शिक्षा देने के लिए पाँच सौ युवा ब्राह्मण थे।

हमारी कहानी के समय, युवा ब्राह्मणों में से एक ऐसा था जिसके मन में हमेशा मूर्खतापूर्ण विचार रहते थे और वह हमेशा गलत बातें बोलता था; वह अन्य ब्राह्मणों की तरह शास्त्रों का अध्ययन कर रहा था, लेकिन अपने इस दुराचार के कारण शास्त्रों में पारंगत नहीं हो सका। वह बोधिसत्व का समर्पित सेवक था और उनकी सेवा एक दास की तरह करता था।

एक दिन रात के भोजन के बाद बोधिसत्व अपने पलंग पर लेट गए और उस युवक ब्राह्मण ने उनके हाथ, पैर और पीठ धोकर इत्र लगाया। जब युवक जाने लगा, तो बोधिसत्व ने उससे कहा, "जाने से पहले मेरे पलंग के पैर उठा दो।" युवक ब्राह्मण ने पलंग के एक तरफ के पैर तो उठा लिए, लेकिन दूसरी तरफ उठाने के लिए उसे कुछ नहीं मिला। इसलिए उसने अपने पैर का सहारा लेकर रात गुजारी। सुबह जब बोधिसत्व उठे और युवक ब्राह्मण को देखा, तो उन्होंने पूछा कि वह यहाँ क्यों बैठा है। युवक ने कहा, "गुरुजी, मुझे पलंग का सहारा नहीं मिला; इसलिए मैंने अपना पैर नीचे रखकर पलंग को सहारा दिया है।"

इन शब्दों से प्रभावित होकर बोधिसत्व ने सोचा, “कितनी भक्ति है! और यह तो मेरे सबसे मंदबुद्धि शिष्य से आ रही है। मैं इसे ज्ञान कैसे दे सकता हूँ?” तभी उन्हें विचार आया कि सबसे अच्छा तरीका यह है कि जब वह युवा ब्राह्मण लकड़ी और पत्ते इकट्ठा करके लौटे, तो उससे उस दिन देखी या की गई किसी बात के बारे में पूछा जाए; और फिर पूछा जाए कि वह कैसी थी। “क्योंकि,” गुरु ने सोचा, “इससे वह तुलना करना और तर्क देना सीखेगा, और उसके द्वारा तुलना और तर्क करने का निरंतर अभ्यास मुझे उसे ज्ञान देने में सक्षम बनाएगा।”

इसलिए उन्होंने उस युवक को बुलवाया और उससे कहा कि जब भी वह लकड़ियाँ और पत्ते इकट्ठा करके लौटे, तो उसे बताना कि उसने क्या देखा, क्या खाया या क्या पिया। युवक ने वादा किया कि वह ऐसा ही करेगा। एक दिन जब वह अन्य शिष्यों के साथ जंगल में लकड़ियाँ इकट्ठा कर रहा था, तो उसने एक साँप देखा और कहा, "गुरुजी, मैंने एक साँप देखा।" "वह कैसा दिखता था?" "ओह, हल के डंडे जैसा।" "यह तो बहुत अच्छी तुलना है। साँप हल के डंडों जैसे होते हैं," बोधिसत्व ने कहा, और उन्हें उम्मीद जगी कि शायद वे अपने शिष्य को समझाने में सफल हो जाएँगे।

एक दिन उस युवा ब्राह्मण ने जंगल में एक हाथी देखा और अपने गुरु से पूछा, “हाथी कैसा दिखता है?” “हल के डंडे जैसा।” उसके गुरु ने कुछ नहीं कहा, क्योंकि उन्हें लगा कि हाथी की सूंड और दांत हल के डंडे से मिलते-जुलते हैं, शायद अपने शिष्य की नासमझी के कारण उसने सामान्य रूप से ऐसा कहा हो (हालाँकि वह विशेष रूप से सूंड के बारे में सोच रहा था), क्योंकि वह सटीक विवरण देने में असमर्थ था। तीसरे दिन उसे गन्ना खाने का निमंत्रण मिला और उसने अपने गुरु से पूछा, “गन्ना कैसा दिखता है?” “हल के डंडे जैसा।” “यह तुलना ठीक नहीं है,” उनके गुरु ने सोचा, लेकिन कुछ नहीं कहा। एक और दिन, विद्यार्थियों को फिर से दही और दूध के साथ गुड़ खाने के लिए आमंत्रित किया गया, और इसकी भी उन्होंने ठीक से रिपोर्ट दी। “और दही और दूध कैसे दिखते हैं?” “ओह, हल के डंडे जैसे।” तब गुरु ने मन ही मन सोचा, “यह युवक सांप को हल के डंडे जैसा कहने में बिल्कुल सही था, और हाथी और गन्ने की समानता बताने में भी लगभग सही था, हालांकि पूरी तरह सटीक नहीं। लेकिन दूध और दही (जो हमेशा सफेद रंग के होते हैं) जिस भी बर्तन में रखे जाते हैं, उसका आकार ले लेते हैं; और यहाँ तो वह तुलना में पूरी तरह से चूक गया। यह मूर्ख कभी नहीं सीखेगा।” ऐसा कहते हुए उन्होंने यह श्लोक कहा:-

सार्वभौमिक अनुप्रयोग के लिए वह
सीमित महत्व वाले शब्द का प्रयोग करता है।
हल का डंडा और दही, दोनों ही उसके लिए अपरिचित थे।
मूर्ख व्यक्ति का दावा है कि दोनों चीजें एक ही हैं।

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "ललुदायी उन दिनों का मंदबुद्धि था, और मैं विश्वव्यापी ख्याति प्राप्त शिक्षक हूँ।"

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **अम्बा-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-124-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 124
अम्बा-जातक

"लगे रहो, मेरे भाई।" - यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी, जिसमें श्रावस्ती शहर के एक प्रतिष्ठित परिवार के एक अच्छे ब्राह्मण का वर्णन है, जिसने सत्य को अपना हृदय समर्पित कर दिया और भिक्षु संघ में शामिल होकर सभी कर्तव्यों का पालन करने लगा। वह

गुरुओं की सेवा में निर्मल था; भोजन और पेय के मामले में सावधान था; मठ, स्नानागार आदि के कर्तव्यों का पालन करने में उत्साही था; चौदह प्रमुख और अस्सी लघु नियमों का पालन करने में पूर्ण पाबंद था; वह मठ, कोठरियों, परिसर और मठ तक जाने वाले मार्ग की सफाई करता था और प्यासे लोगों को पानी पिलाता था। उसकी इस महान उदारता के कारण लोग प्रतिदिन भिक्षुओं को पाँच सौ भोजन देते थे; और इस प्रकार मठ को बहुत लाभ और सम्मान प्राप्त हुआ, अनेकों लोग उसके गुणों से समृद्ध हुए। एक दिन सत्य के हॉल में भिक्षु इस बात पर चर्चा करने लगे कि उस भिक्षु की उदारता ने उन्हें कितना लाभ और सम्मान दिलाया है और अनेकों के जीवन को आनंद से भर दिया है। हॉल में प्रवेश करते हुए गुरु ने पूछा और उन्हें बताया गया कि वे किस बारे में बात कर रहे हैं। उन्होंने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि इस भिक्षु ने अपने कर्तव्यों का नियमित रूप से पालन किया है। बीते दिनों में फल इकट्ठा करने निकले पाँच सौ संन्यासी उनकी उदारता से प्राप्त फलों से अपना भरण-पोषण करते थे।" ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व का जन्म उत्तर भारत में एक ब्राह्मण परिवार में हुआ। बड़े होकर उन्होंने संसार त्याग दिया और पर्वतों की तलहटी में पाँच सौ संन्यासियों के समूह का नेतृत्व करते हुए रहने लगे। उन दिनों हिमालयी क्षेत्र में भीषण सूखा पड़ा और हर जगह पानी सूख गया, जिससे सभी जीव-जंतुओं पर विकराल संकट छा गया। प्यास से पीड़ित जीवों को देखकर, एक संन्यासी ने एक पेड़ काटकर उसे खोखला करके एक कुंड बनाया और उसमें जितना पानी मिल सका, भर दिया। इस प्रकार उन्होंने जीवों को पानी पिलाया। जीव झुंड में आते रहे और इतना पानी पीते रहे कि संन्यासी के पास अपने लिए फल लाने का समय ही नहीं बचा। अपनी भूख की परवाह किए बिना, वे जीवों की प्यास बुझाने में लगे रहे। उन्होंने मन ही मन सोचा, "यह साधु हमारी जरूरतों को पूरा करने में इतना लीन है कि उसके पास फल लाने का समय ही नहीं बचता। वह बहुत भूखा होगा। चलो हम सब मिलकर तय करें कि जो भी यहाँ पानी पीने आए, वह साधु के लिए जितना फल ला सके, उतना लाए।" उन्होंने ऐसा करने का निश्चय किया और हर जानवर जो आता, वह आम, जामुन, ब्रेडफ्रूट या इसी तरह के फल लाता, यहाँ तक कि उनकी भेंट से ढाई सौ गाड़ियाँ भर गईं; और पाँच सौ साधुओं के लिए भोजन की पर्याप्त व्यवस्था हो गई और फिर भी भोजन बच गया। यह देखकर बोधिसत्व ने कहा, "इस प्रकार एक व्यक्ति के परोपकार से इन सभी साधुओं को भोजन मिल सका। सचमुच, हमें सदा धर्म के मार्ग पर दृढ़ रहना चाहिए।" ऐसा कहकर उन्होंने यह श्लोक कहा:-

मेहनत करते रहो, मेरे भाई; उम्मीद बनाए रखो;
  और न ही अपने साहस को कमजोर और थका हुआ होने दें;
उसे मत भूलो, जिसने अपने दुखद अतीत से अपराध किए हैं।
  उसने अपनी उम्मीदों से कहीं अधिक फल प्राप्त किए।
यही वह शिक्षा थी जो उस महान सत्ता ने संन्यासियों के समूह को दी थी।

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "यह भाई (भिक्षु) उन दिनों के अच्छे तपस्वी थे, और मैं तपस्वियों का गुरु था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कटहाका-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-125-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 125
कटहक-जातक

"यदि वह अजनबियों के बीच हो।"--यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक घमंडी भिक्षु के बारे में सुनाई थी। उसके बारे में परिचयात्मक कहानी वैसी ही है जैसी पहले बताई जा चुकी है (*1)।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज था, तब बोधिसत्व एक धनी कोषाध्यक्ष थे और उनकी पत्नी ने उन्हें एक पुत्र को जन्म दिया। उसी दिन उनके घर की एक दासी ने एक पुत्र को जन्म दिया और दोनों बच्चे साथ-साथ बड़े हुए। जब धनी व्यक्ति के पुत्र को लिखना सिखाया जा रहा था, तब वह युवा दासी अपने स्वामी की चिट्ठियाँ लेकर जाया करता था और इस प्रकार स्वयं भी लिखना सीख गया। इसके बाद उसने दो-तीन हस्तकलाएँ सीखीं और एक सुंदर और वाक्पटु युवक के रूप में बड़ा हुआ; उसका नाम काताहक था। जब वह स्वामी के निजी सचिव के रूप में कार्यरत था, तब उसने मन ही मन सोचा, "मैं हमेशा इस काम में नहीं रहूँगा। ज़रा सी भी गलती हुई तो मुझे पीटा जाएगा, कैद किया जाएगा, दागा लगाया जाएगा और दासों का भोजन खिलाया जाएगा। सीमा पर एक व्यापारी रहता है, जो मेरे स्वामी का मित्र है। क्यों न मैं अपने स्वामी का पत्र लेकर उसके पास जाऊँ और अपने स्वामी का पुत्र बताकर व्यापारी की पुत्री से विवाह कर लूँ और सुखमय जीवन व्यतीत करूँ?"

इसलिए उसने एक पत्र लिखा, जिसमें उसने कहा, "इस पत्र का वाहक मेरा पुत्र है। हमारे परिवारों का विवाह बंधन में बंधना अच्छा है, और मैं चाहता हूँ कि आप अपनी पुत्री का विवाह मेरे पुत्र से करें और इस नवविवाहित जोड़े को कुछ समय के लिए अपने पास रखें। जैसे ही मुझे समय मिलेगा, मैं आपके पास आऊँगा।" उसने अपने स्वामी की निजी मुहर से पत्र पर मुहर लगाई और एक भरे हुए पर्स, सुंदर वस्त्रों, इत्रों आदि के साथ सीमावर्ती व्यापारी के पास पहुँचा। और व्यापारी के सामने झुककर प्रणाम किया। व्यापारी ने पूछा, "आप कहाँ से आए हैं?" "बनारस से।" "आपके पिता कौन हैं?" "बनारस के कोषाध्यक्ष।" "और आप यहाँ क्यों आए हैं?" काताहाका ने पत्र देते हुए कहा, "यह पत्र आपको बताएगा।" व्यापारी ने पत्र पढ़ा और प्रसन्न होकर कहा, "इससे मुझे नया जीवन मिला है।" और अपनी प्रसन्नता में उसने अपनी पुत्री काताहाका को दे दी और नवविवाहित जोड़े का घर बसा दिया, जो बड़े ठाठ-बाठ से रहने लगे। लेकिन काताहाका को घमंड था और वह अपने लिए लाए गए भोजन और कपड़ों में कमियां निकालता रहता था, उन्हें "देहाती" कहता था। वह कहता था, "इन गुमराह देहातियों को पहनावे का कोई ज्ञान नहीं है। और सुगंध और मालाओं की तो इनमें कोई समझ ही नहीं है।"

अपने दास को याद करते हुए बोधिसत्व ने कहा, "मुझे काताहका दिखाई नहीं दे रहा। वह कहाँ चला गया है? उसे ढूँढ़ो।" और बोधिसत्व के अनुयायी उसकी खोज में निकल पड़े और दूर-दूर तक खोजते रहे जब तक कि वह मिल नहीं गया। फिर वे वापस आए, काताहका ने उन्हें पहचाना नहीं था, और उन्होंने बोधिसत्व को सब कुछ बताया।

यह खबर सुनकर बोधिसत्व ने कहा, "यह ठीक नहीं है। मैं जाकर उसे वापस लाऊंगा।" इसलिए उन्होंने राजा से अनुमति मांगी और अपने साथ बहुत से अनुयायियों को लेकर निकल पड़े। यह खबर हर जगह फैल गई कि कोषाध्यक्ष सीमा की ओर जा रहे हैं। यह खबर सुनकर काताहक अपने आगे के कदम के बारे में सोचने लगे। वे जानते थे कि कोषाध्यक्ष के आने का एकमात्र कारण वे ही थे, और उन्होंने देखा कि अब भाग जाना वापसी की सारी संभावना को नष्ट कर देगा। इसलिए उन्होंने कोषाध्यक्ष से मिलने और पुराने दिनों की तरह उनके प्रति दास की तरह व्यवहार करके उन्हें प्रसन्न करने का निश्चय किया। इस योजना पर अमल करते हुए, उन्होंने हर अवसर पर सार्वजनिक रूप से यह घोषणा की कि वे माता-पिता के प्रति सम्मान में आई इस दुखद गिरावट का विरोध करते हैं, जिसका कारण बच्चों का अपने माता-पिता की सेवा करने के बजाय उनके साथ बैठकर भोजन करना था। काताहक ने कहा, "जब मेरे माता-पिता भोजन करते हैं, तो मैं थालियां और व्यंजन देता हूं, थूकदान लाता हूं और उनके लिए पंखे लाता हूं। यही मेरा अटल नियम है।" और उसने स्वामी के प्रति दास के कर्तव्यों को विस्तार से समझाया, जैसे कि पानी लाना और स्वामी के विश्राम के समय उनकी सेवा करना। आम लोगों को सामान्य शिक्षा देने के कारण, बोधिसत्व के आगमन से कुछ समय पहले उसने अपने ससुर से कहा, "मैंने सुना है कि मेरे पिता आपसे मिलने आ रहे हैं। आप उनके स्वागत की तैयारी कर लीजिए, मैं रास्ते में जाकर उन्हें उपहार दूंगा।" "ऐसा ही कीजिए, मेरे प्यारे बेटे," उसके ससुर ने कहा।

अतः काताहाका एक भव्य भेंट लेकर अपने कई सेवकों के साथ बोधिसत्व से मिलने गया और बड़े आदर के साथ भेंट उन्हें सौंपी। बोधिसत्व ने कृपापूर्वक भेंट ग्रहण की और नाश्ते के समय अपना विश्राम किया और शौच के लिए चले गए। अपने सेवकों को रोककर काताहाका ने जल लिया और बोधिसत्व के पास पहुँचा। तब वह युवक बोधिसत्व के चरणों में गिर पड़ा और रोते हुए बोला, "हे प्रभु, आप जो भी राशि माँगें, मैं अर्पित करूँगा; परन्तु मुझे निर्भीक मत कीजिए।"

"मेरे हाथों से अपमानित होने का डर मत रखो," बोधिसत्व ने उसके कर्तव्यपरायण आचरण से प्रसन्न होकर कहा और नगर में प्रवेश किया, जहाँ उसका भव्य स्वागत हुआ। और कटाहका अब भी उसका दास बना रहा।

जब कोषाध्यक्ष आराम से बैठे थे, तभी सीमावर्ती व्यापारी ने कहा, "महाराज, आपका पत्र प्राप्त होते ही मैंने अपनी पुत्री का विवाह आपके पुत्र से विधिवत कर दिया।" कोषाध्यक्ष ने 'अपने पुत्र' के बारे में इतने विनम्र ढंग से उचित उत्तर दिया कि व्यापारी अत्यंत प्रसन्न हो गया। परन्तु उस क्षण से बोधिसत्व कटाहका को देखना भी सहन नहीं कर सके।

एक दिन उस महान सत्ता ने व्यापारी की बेटी को बुलवाया और कहा, "मेरी प्यारी, कृपया मेरा हालचाल पूछ लो।" उसने ऐसा ही किया, और उन्होंने उसकी अत्यंत आवश्यक सेवाओं के लिए उसे धन्यवाद देते हुए कहा, "और अब मुझे बताओ, मेरी प्यारी, कि क्या मेरा बेटा सुख-दुख में एक समझदार व्यक्ति है, और क्या तुम उसके साथ अच्छे से रह पाती हो।"

"मेरे पति में सिर्फ एक ही कमी है। वह अपने खाने में भी कमी निकालेंगे।"

"मेरी प्रिय, उसमें हमेशा से कुछ कमियाँ रही हैं; लेकिन मैं तुम्हें बताऊँगा कि उसकी ज़बान कैसे बंद करनी है। मैं तुम्हें एक श्लोक बताऊँगा जिसे तुम्हें ध्यान से याद करना होगा और जब तुम्हारा पति फिर से खाने में कमी निकाले तो उसे सुनाना होगा।" और उसने उसे वे पंक्तियाँ सिखाईं और कुछ ही समय बाद बनारस के लिए निकल पड़ा। कटाहका कुछ दूर तक उसके साथ गया और कोषाध्यक्ष को बहुमूल्य उपहार देकर विदा हुआ। बोधिसत्व के जाने के बाद से कटाहका का अहंकार बढ़ता ही गया। एक दिन उसकी पत्नी ने बढ़िया खाना मंगवाया और चम्मच से उसे खाना परोसने लगी, लेकिन पहले ही निवाले में कटाहका बड़बड़ाने लगा। तब व्यापारी की बेटी को अपना सबक याद आया और उसने निम्नलिखित श्लोक दोहराया:-

अगर वह घर से दूर अजनबियों के बीच बड़ी-बड़ी बातें करता है,
उसका मेहमान वापस आकर सब कुछ बिगाड़ देता है।
आओ, फिर अपना रात का खाना खा लो, कटाहाका (*2)।
"हे भगवान," कटाहाका ने सोचा, "कोषाध्यक्ष ने उसे मेरा नाम बता दिया होगा और उसे सारी बात सुना दी होगी।" और उस दिन से उसने फिर कभी घमंड नहीं किया, बल्कि विनम्रता से वही खाया जो उसके सामने रखा गया था, और अंत में अपने कर्मों के फल के अनुसार ही उसका निधन हो गया।

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "यह अभिमानी भाई (भिक्षु) उन दिनों का काताहका था, और मैं बनारस का कोषाध्यक्ष था।"

फुटनोट:

(1) संख्या (80)

(2) ऐसा प्रतीत होता है कि पत्नी को आयत का अर्थ समझ नहीं आया, बल्कि उसने केवल वही शब्द दोहराए जो उसे सिखाए गए थे।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **असिलक्खान-जातक**
***स्रोत** : रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-126-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 126
असिलक्खना-जातक

"हमारे अनेक भाग्य।" - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी। यह कहानी कोसल के राजा द्वारा नियुक्त एक ब्राह्मण के बारे में है, जो तलवारों के भाग्य का पता लगाने की क्षमता रखता था। बताया जाता है कि जब राजा के लोहार तलवार बनाते थे, तो यह ब्राह्मण केवल उसे सूंघकर ही बता देता था कि वह भाग्यशाली है या नहीं। उसने यह नियम बना लिया था कि वह केवल उन्हीं लोहारों के काम की प्रशंसा करेगा जो उसे उपहार देते थे, जबकि जो उसे रिश्वत नहीं देते थे, उनके काम को वह अस्वीकार कर देता था।

एक लोहार ने तलवार बनाई और उसमें बारीक पिसी हुई काली मिर्च डालकर उसे राजा के पास ले आया। राजा ने तुरंत तलवार ब्राह्मण को परीक्षण के लिए दे दी। ब्राह्मण ने तलवार को म्यान से बाहर निकाला और उसे सूंघा। काली मिर्च उसकी नाक में चली गई और उसे इतनी ज़ोर से छींक आई कि तलवार की धार से उसकी नाक कट गई।

ब्राह्मण के साथ हुई इस दुर्भाग्यपूर्ण घटना की खबर भिक्षुओं तक पहुंची और एक दिन वे सत्य के हॉल में इस विषय पर चर्चा कर रहे थे, तभी गुरुजी वहां आए। उनकी बातचीत का विषय जानकर उन्होंने कहा, "हे भिक्षुओं, यह पहली बार नहीं है कि इस ब्राह्मण ने तलवार सूंघते हुए अपनी नाक काट ली है। पहले भी उसके साथ ऐसा ही हुआ था।" इतना कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, उनके सेवकों में एक ब्राह्मण था जो तलवारों के शुभ होने या न होने का ज्ञान रखता था। कहानी की शुरुआत में जो बताया गया है, वही हुआ। राजा ने सर्जनों को बुलाया और उसकी नाक पर एक नकली नोक लगवा दी, जिसे बड़ी चालाकी से असली नाक की तरह रंगा गया था। इसके बाद ब्राह्मण ने राजा की सेवा में अपना काम फिर से शुरू कर दिया। ब्रह्मदत्त का कोई पुत्र नहीं था, केवल एक पुत्री और एक भतीजा था, जिनका पालन-पोषण उन्होंने स्वयं किया था। जब वे दोनों बड़े हुए, तो उन्हें एक-दूसरे से प्रेम हो गया। राजा ने अपने सलाहकारों को बुलवाया और उनसे कहा, "मेरा भतीजा सिंहासन का उत्तराधिकारी है। यदि मैं अपनी पुत्री का विवाह उससे करा दूं, तो उसका राज्याभिषेक हो जाएगा।"

लेकिन, पुनर्विचार करने पर उसने निर्णय लिया कि उसका भतीजा तो वैसे भी बेटे के समान था, इसलिए बेहतर यही होगा कि उसकी शादी किसी विदेशी राजकुमारी से कर दी जाए और अपनी बेटी का विवाह किसी दूसरे राजपरिवार के राजकुमार से कर दिया जाए। क्योंकि, उसने सोचा, इस योजना से उसे और अधिक पोते-पोतियाँ मिलेंगी और उसके वंश को दो अलग-अलग राज्यों की बागडोर मिल जाएगी। और, अपने सलाहकारों से परामर्श करने के बाद, उसने उन दोनों को अलग करने का निश्चय किया, और तदनुसार उन्हें एक-दूसरे से अलग रहने के लिए कहा गया। अब वे सोलह वर्ष के थे और एक-दूसरे से बहुत प्यार करते थे, और युवा राजकुमार केवल यही सोचता था कि राजकुमारी को उसके पिता के महल से कैसे ले जाया जाए। अंततः उसे एक बुद्धिमान महिला को बुलाने का विचार आया, जिसे उसने जेब भर धन दे दिया।

"और यह किसलिए है?" उसने कहा।

फिर उसने उसे अपने प्रेम के बारे में बताया और उस बुद्धिमान महिला से विनती की कि वह उसे उसकी प्रिय राजकुमारी के पास पहुंचा दे।

और उसने उसे सफलता का आश्वासन दिया, और कहा कि वह राजा को बताएगी कि उसकी बेटी जादू-टोने के प्रभाव में है, लेकिन चूंकि राक्षस ने उसे इतने लंबे समय तक अपने वश में रखा है कि राजा लापरवाह हो गया है, इसलिए वह एक दिन राजकुमारी को हथियारों से लैस मजबूत सुरक्षाकर्मियों के साथ एक रथ में कब्रिस्तान ले जाएगी, और वहां एक जादुई घेरे में राजकुमारी को एक बिस्तर पर लिटाएगी जिसके नीचे एक मृत व्यक्ति होगा, और एक सौ आठ सुगंधित जल की बौछारों से राक्षस को उसके अंदर से निकाल देगी। "और जब मैं इस बहाने राजकुमारी को कब्रिस्तान लाऊँ," बुद्धिमान स्त्री ने आगे कहा, "ध्यान रखना कि तुम अपने रथ में सशस्त्र अंगरक्षकों के साथ हमसे पहले कब्रिस्तान पहुँच जाओ, और अपने साथ कुछ पिसी हुई काली मिर्च ले जाना। कब्रिस्तान पहुँचकर, तुम अपना रथ प्रवेश द्वार पर छोड़ देना और अपने आदमियों को कब्रिस्तान के उपवन में भेज देना, जबकि तुम स्वयं टीले के ऊपर जाकर मृत होने का नाटक करते हुए लेट जाना। फिर मैं आकर तुम्हारे ऊपर एक पलंग बिछा दूँगी और उस पर राजकुमारी को लिटा दूँगी। फिर वह समय आएगा जब तुम्हें काली मिर्च को तब तक सूंघना होगा जब तक कि तुम्हें दो या तीन बार छींक न आ जाए, और जब तुम्हें छींक आ जाए तो हम राजकुमारी को वहीं छोड़कर भाग जाएँगे। उसके बाद तुम्हें और राजकुमारी को पूरी तरह से स्नान करना होगा और उसे अपने साथ घर ले जाना होगा।" "शानदार," राजकुमार ने कहा; "बहुत ही बढ़िया उपाय।"

तो वह बुद्धिमान स्त्री राजा के पास गई, और राजा को उसका विचार पसंद आया, राजकुमारी को भी जब उसे यह बात समझाई गई। जब वह दिन आया, तो उस बूढ़ी स्त्री ने राजकुमारी को उनका काम बताया, और सड़क पर तैनात पहरेदारों को डराने के लिए कहा, "सुनो। मैं जो पलंग लगाऊँगी, उसके नीचे एक मरा हुआ आदमी होगा; और वह मरा हुआ आदमी छींकेगा। और अच्छी तरह जान लो कि जैसे ही वह छींकेगा, वह पलंग के नीचे से बाहर आएगा और जो भी पहला व्यक्ति उसे मिलेगा, उसे पकड़ लेगा। इसलिए तुम सब तैयार रहो।"

राजकुमार उस स्थान पर पहुँच चुका था और योजना के अनुसार पलंग के नीचे छिप गया था।

फिर बूढ़ी औरत राजकुमारी को उठाकर ले गई और उसे पलंग पर लिटाते हुए फुसफुसाकर कहा कि डरना मत। राजकुमार ने तुरंत मिर्च की गंध सूंघी और छींकने लगा। छींक शुरू ही हुई थी कि वह बुद्धिमान स्त्री राजकुमारी को छोड़कर जोर से चीखते हुए भाग गई, जितनी तेजी से बाकी सब भागे थे। कोई भी अपनी जगह पर नहीं रुका; सबने अपने हथियार फेंक दिए और जान बचाकर भाग गए। तभी राजकुमार आया और राजकुमारी को अपने घर ले गया, जैसा कि पहले से तय था। और बूढ़ी औरत राजा के पास गई और उसे सारी घटना बताई।

“खैर,” राजा ने सोचा, “मैंने तो हमेशा से उसे उसी के लिए तय किया था, और वे चावल की दलिया में घी की तरह एक साथ पले-बढ़े हैं।” इसलिए उसने आवेश में आकर कोई फैसला नहीं लिया, बल्कि समय बीतने के साथ अपने भतीजे को देश का राजा बना दिया और अपनी बेटी को रानी बना दिया।

अब नए राजा ने तलवारों की तीव्रता बताने वाले ब्राह्मण को अपनी सेवा में रखा। एक दिन धूप में खड़े-खड़े ब्राह्मण की नाक का नकली सिरा ढीला होकर गिर गया। और वह शर्म से सिर झुकाए वहीं खड़ा रह गया। राजा हँसते हुए बोला, "कोई बात नहीं, कोई बात नहीं। छींक आना कुछ लोगों के लिए अच्छा होता है, तो कुछ के लिए बुरा। एक छींक से तुम्हारी नाक चली गई; जबकि मुझे अपनी गद्दी और रानी दोनों के लिए छींक का शुक्रगुजार होना पड़ेगा।" ऐसा कहते हुए उसने यह श्लोक कहा:-

हमारी अनेक नियतियाँ इस नैतिक प्रदर्शन को दर्शाती हैं।
जो चीज मुझे लाभ पहुंचाती है, वह शायद आपको कष्ट पहुंचाए।
राजा ने ऐसा कहा, और दान-पुण्य और अन्य अच्छे कार्यों में व्यतीत जीवन बिताने के बाद, वह अपने कर्मों के अनुसार फल भोगने के लिए इस दुनिया से विदा हो गए।

इस प्रकार गुरु ने यह शिक्षा दी कि संसार का यह मानना गलत है कि हर स्थिति में चीजें निश्चित रूप से अच्छी या बुरी होती हैं। अंत में, उन्होंने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "वही व्यक्ति जो अब तलवारों के भाग्य का वर्णन करता है, उन दिनों भी यही कौशल रखता था; और मैं स्वयं वह राजकुमार था जिसने अपने चाचा का राज्य विरासत में प्राप्त किया था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कलन्दुक-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-127-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 127
कलांडुक-जातक

"तुम घमंड करते हो।" - यह कहानी गुरु ने एक बार जेतवन मठ में एक घमंडी भिक्षु के बारे में सुनाई थी। (इस मामले में परिचयात्मक कहानी और अतीत की कहानी ऊपर वर्णित काताहाका की कहानियों के समान हैं (*1)।)

इस मामले में कलांदुका बनारस के कोषाध्यक्ष के दास का नाम था। जब वह भाग गया और सीमावर्ती व्यापारी की बेटी के साथ विलासितापूर्ण जीवन जी रहा था, तब कोषाध्यक्ष को उसकी कमी खल रही थी और वह उसका पता नहीं लगा पा रहा था। इसलिए उसने एक युवा पालतू तोते को भगोड़े की तलाश में भेजा। तोता कलांदुका की खोज में उड़ गया और दूर-दूर तक उसकी तलाश करता रहा, अंततः वह उस कस्बे में आ पहुँचा जहाँ कलांदुका रहता था। ठीक उसी समय कलांदुका अपनी पत्नी के साथ नदी में एक नाव में आनंद ले रहा था, जो उत्तम भोजन, फूलों और इत्रों से सुसज्जित थी। उस क्षेत्र के रईस लोग जल भोज में तीखी औषधि मिला हुआ दूध पीते हैं, ताकि जलपान के बाद सर्दी-जुकाम से बच सकें। लेकिन जब कलांदुका ने इस दूध का स्वाद चखा, तो उसने उसे खांसकर थूक दिया; और ऐसा करते हुए उसने व्यापारी की बेटी के सिर पर थूक दिया। ठीक उसी क्षण तोता उड़कर आया और किनारे पर अंजीर के पेड़ की एक शाखा से यह सब देख रहा था। “आओ, आओ, दास कलांदुका,” पक्षी ने पुकारा; “याद रखो कि तुम कौन हो और क्या हो, और इस युवती के सिर पर थूको मत। अपनी औकात जानो, साथी।” इतना कहकर उसने निम्नलिखित छंद कहा:-

आप अपने उच्च वंश, अपनी उच्च उपाधि पर गर्व करते हैं।
झूठी ज़ुबान से। हालाँकि मैं एक पक्षी ही हूँ, मुझे पता है।
सच यही है। भगोड़े, तुम जल्द ही पकड़े जाओगे।
तो फिर दूध का तिरस्कार मत करो, दास कलांदुका।
तोते को पहचानते ही कलांदुका को पकड़े जाने का डर सताने लगा और वह चिल्लाई, "अरे! अच्छे स्वामी, आप कब आए?"

तोते ने सोचा, "यह मित्रता नहीं, बल्कि मेरा गला घोंटने की इच्छा है जो इस दयालुतापूर्ण रुचि को प्रेरित कर रही है।" इसलिए उसने उत्तर दिया कि उसे कलांदुका की सेवाओं की आवश्यकता नहीं है, और वह बनारस के लिए उड़ गया, जहाँ उसने कोषाध्यक्ष को वह सब कुछ बताया जो उसने देखा था।

"वह बदमाश!" कोषाध्यक्ष चिल्लाया और कलांदुका को वापस बनारस ले जाने का आदेश दिया, जहाँ उसे एक बार फिर गुलामों जैसा बर्ताव सहना पड़ा।

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "कहानी में यह भाई (भिक्षु) कलांदुका था, और मैं बनारस का कोषाध्यक्ष था।"

फुटनोट:

(1)सं. (125).

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **बिसार-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-128-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 128
बिलारा-जातक

“संतत्व कहाँ है?”—यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक पाखंडी के बारे में सुनाई थी। जब उस भिक्षु के पाखंड की सूचना उन्हें मिली, तो गुरु ने कहा, “यह पहली बार नहीं है जब उसने पाखंड दिखाया है; वह तो पहले समझदार हुआ करता था।” ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व का जन्म चूहे के रूप में हुआ, वे बुद्धि में परिपूर्ण थे और एक युवा सूअर के समान विशाल थे।

वह जंगल में रहता था और सैकड़ों अन्य चूहे उसके प्रभुत्व में थे।

एक भटकता हुआ सियार चूहों के इस झुंड को देखकर उन्हें छल से खाने की योजना बनाने लगा। वह उनके घर के पास सूर्य की ओर मुख करके, एक पैर पर खड़ा हो गया, हवा सूंघता हुआ। भोजन की तलाश में निकले बोधिसत्व ने यह देखकर सियार को संत समझा और उसके पास जाकर उसका नाम पूछा।

“मेरा नाम ‘ईश्वरीय’ है,” सियार ने कहा। “तुम एक ही पैर पर क्यों खड़े हो?” “क्योंकि अगर मैं चारों पैरों पर एक साथ खड़ा हो जाऊं, तो धरती मेरा भार सहन नहीं कर पाएगी। इसीलिए मैं एक ही पैर पर खड़ा रहता हूं।” “और तुम अपना मुंह क्यों खुला रखते हो?” “हवा लेने के लिए। मैं हवा पर ही जीवित रहता हूं; यही मेरा एकमात्र भोजन है।” “और तुम सूर्य की ओर मुख क्यों करते हो?” “उसकी पूजा करने के लिए।” “कितनी पवित्रता!” बोधिसत्व ने सोचा, और तब से उन्होंने अन्य चूहों के साथ सुबह-शाम उस संत सियार को प्रणाम करने का नियम बना लिया। और जब चूहे जाने लगते, तो सियार उनमें से आखिरी चूहे को पकड़कर खा जाता, अपने होंठ पोंछता और ऐसे देखता जैसे कुछ हुआ ही न हो। इसके परिणामस्वरूप चूहों की संख्या धीरे-धीरे कम होती गई, यहां तक कि उन्होंने अपनी कतारों में खालीपन देखा, और यह जानकर कि ऐसा क्यों हो रहा है, उन्होंने बोधिसत्व से कारण पूछा। वह कारण नहीं बता सके, लेकिन सियार पर संदेह करते हुए, उन्होंने उसकी परीक्षा लेने का निश्चय किया। अगले दिन उसने बाकी चूहों को पहले जाने दिया और खुद सबसे पीछे-पीछे आया। सियार ने बोधिसत्व पर छलांग लगाई, जिसे देखकर बोधिसत्व मुड़कर चिल्लाया, "तो यही है तुम्हारा संतत्व, हे पाखंडी और दुष्ट!" और उसने निम्नलिखित श्लोक दोहराया:-

जहां संतत्व महज एक आवरण है
जिससे भोले-भाले लोगों को धोखा दिया जा सके
और खलनायक के विश्वासघात को उजागर करना,
वहाँ हमें बिल्ली जैसा स्वभाव देखने को मिलता है
ऐसा कहते ही चूहों के सरदार ने सियार के गले पर झपट्टा मारा और जबड़े के ठीक नीचे से उसकी श्वास नली को चीर डाला, जिससे वह मर गया। बाकी चूहे भी दौड़कर आए और सियार के शरीर को 'चटक-चटक-चटक' की आवाज़ के साथ चट कर गए; यानी, उनमें से सबसे आगे वाले ने ऐसा किया, क्योंकि कहते हैं कि अंत में कुछ बचा ही नहीं था। और उसके बाद से चूहे शांति और सुकून से सुख-सुविधाओं से रहने लगे।

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने यह कहकर बात को जोड़ा, "यह पाखंडी भाई (भिक्षु) उन दिनों का सियार था, और मैं चूहों का राजा था।"

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **अग्गिका-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-129-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 129
अग्गिका-जातक

"यह लालच था।"...यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक अन्य पाखंडी के बारे में सुनाई थी।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, तब बोधिसत्व चूहों के राजा थे और जंगल में रहते थे। अचानक जंगल में आग लग गई और एक सियार जो भाग नहीं सका, उसने अपना सिर एक पेड़ से टिका दिया और आग की लपटों को अपने ऊपर से गुजरने दिया। आग ने उसके पूरे शरीर के बाल जला दिए और वह पूरी तरह गंजा हो गया, सिवाय उस जगह के जहाँ उसके सिर का ऊपरी हिस्सा पेड़ से टिका हुआ था, एक गुच्छे के समान। एक दिन एक पथरीले तालाब में पानी पीते हुए, उसकी नज़र पानी में उस गुच्छे के प्रतिबिंब पर पड़ी। उसने सोचा, "आखिरकार मेरे पास बाजार जाने के लिए पैसे आ गए।" जंगल में भटकते हुए जब वह चूहों की गुफा के पास पहुँचा, तो उसने मन ही मन कहा, "मैं इन चूहों को धोखा देकर खा जाऊँगा;" और इसी इरादे से वह ठीक उसी जगह पर खड़ा हो गया, जैसा कि पहले बताई गई कहानी में है।

भोजन की तलाश में निकलते समय, बोधिसत्व ने सियार को देखा और उस जानवर को सद्गुण और अच्छाई से युक्त मानते हुए, उसके पास आए और उसका नाम पूछा।

"भारद्वाज (*1), अग्नि-देव के भक्त।"

आप यहां क्यों आए हैं?

"आपकी और आपके परिवार की रक्षा के लिए।"

"हमारी रक्षा के लिए आप क्या करेंगे?"

मैं उंगलियों पर गिनना जानता हूँ, और सुबह-शाम मैं तुम्हारी गिनती करूँगा, ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि जितने लोग सुबह घर से बाहर गए, उतने ही लोग रात को घर लौटे। मैं इसी तरह तुम्हारी रक्षा करूँगा।

"तो फिर यहीं रुकिए, चाचा जी, और हमारी रक्षा कीजिए।"

और इसी प्रकार, जैसे ही चूहे सुबह निकलने लगे, वह उन्हें गिनने लगा, "एक, दो, तीन;" और फिर रात को लौटने पर भी यही करता रहा। और हर बार गिनने के बाद, वह आखिरी चूहे को पकड़कर खा जाता था। सब कुछ पहले बताई गई कहानी की तरह ही हुआ, सिवाय इसके कि यहाँ चूहों के राजा ने मुड़कर सियार से कहा, "हे भारद्वाज, अग्नि-देव के भक्त, यह पवित्रता नहीं, बल्कि लालच है जिसने तुम्हारे मुकुट को उस चोटी से सजाया है।" ऐसा कहकर उसने यह श्लोक कहा:-

यह लालच था, सद्गुण नहीं, जिसने आपको यह प्रतीक चिन्ह दिलाया।
हमारी घटती हुई जनसंख्या का हिसाब-किताब ठीक नहीं बैठ रहा है;
हे अग्नि-भक्त, हम तुमसे तंग आ चुके हैं।

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "यह भाई (भिक्षु) उन दिनों का सियार था, और मैं चूहों का राजा था।"

फुटनोट:

(1) भारद्वाज ब्राह्मण पुरोहितों के एक कुल का नाम था, जिन्हें ऋग्वेद का छठा ग्रंथ समर्पित है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कोसीय-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-130-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 130
कोसिया-जातक (*1).

"तुम बीमार रहो या खाओ।" - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में श्रावस्ती नगर की एक स्त्री के बारे में सुनाई थी। कहा जाता है कि वह एक अच्छे और गुणी ब्राह्मण की दुष्ट पत्नी थी, जो उनका गृहस्थ शिष्य था। वह रातें सुख-सुविधाओं में व्यतीत करती थी; दिन में वह कोई काम नहीं करती थी, बल्कि बीमार होने का बहाना बनाकर बिस्तर पर कराहती रहती थी।

"क्या बात है, मेरी प्रिय?" उसके पति ने कहा।

हवा मुझे परेशान करती है।

"मैं तुम्हारे लिए क्या ले सकता हूं?"

"मिठाई, बढ़िया स्वाद वाले, पौष्टिक भोजन, चावल की दलिया, उबले हुए चावल, तेल, इत्यादि।"

आज्ञाकारी पति उसकी इच्छा के अनुसार काम करता था और उसके लिए दास की तरह परिश्रम करता था। जब तक उसका पति घर में रहता था, वह बिस्तर पर लेटी रहती थी; लेकिन जैसे ही वह दरवाजा बंद होते देखती, वह अपने प्रेमी की बाहों में होती थी।

अंत में ब्राह्मण ने सोचा, "मेरी बेचारी पत्नी की ज़ुकाम में कोई कमी नहीं आई है," और वह इत्र, फूल आदि भेंट लेकर जेतवन मठ में गुरु के पास गया। अपनी श्रद्धा अर्पित करने के बाद वह भगवान बुद्ध के सामने खड़ा हुआ, जिन्होंने उससे पूछा कि वह इतने दिनों से अनुपस्थित क्यों था।

“महाराज,” ब्राह्मण ने कहा, “मुझे बताया गया है कि मेरी पत्नी को वात रोग है, और मैं उसकी हर संभव देखभाल करने में लगा हुआ हूँ। अब वह स्वस्थ और स्वस्थ है, फिर भी वात रोग पहले की तरह ही कष्टदायी है। पत्नी की देखभाल में व्यस्त रहने के कारण ही मुझे यहाँ आने का समय नहीं मिला, महाराज।”

गुरु, जो पत्नी के दुष्ट स्वभाव को जानते थे, बोले, "अरे! ब्राह्मण, बीते समय के बुद्धिमान और भले लोगों ने तुम्हें सिखाया था कि तुम्हारी पत्नी जैसी जिद्दी बीमारी से पीड़ित स्त्री का इलाज कैसे किया जाता है। लेकिन पुनर्जन्म ने तुम्हारी स्मृति को भ्रमित कर दिया है, जिससे तुम भूल गए हो।" इतना कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, तब बोधिसत्व एक प्रतिष्ठित ब्राह्मण परिवार में जन्मे। तक्षशिला में अपनी शिक्षा पूर्ण करने के बाद, वे बनारस में विश्व प्रसिद्ध गुरु बन गए। सभी रियासतों और धनी परिवारों के युवा कुलीन और ब्राह्मण उनके शिष्य बनने के लिए उमड़ पड़ते थे। अब एक ग्रामीण ब्राह्मण, जिसने बोधिसत्व से तीनों वेदों और अठारह विद्याओं का ज्ञान प्राप्त किया था, और जो अपनी जागीर की देखभाल के लिए बनारस में रुका था, प्रतिदिन दो या तीन बार बोधिसत्व के उपदेश सुनने आता था। इस ब्राह्मण की पत्नी दुष्ट और दुष्ट थी। और जैसा ऊपर बताया गया है, वैसा ही हुआ। जब ब्राह्मण ने बताया कि वह अपने गुरु के उपदेश सुनने के लिए क्यों नहीं जा पा रहा है, तो बोधिसत्व, जो जानते थे कि ब्राह्मण की पत्नी केवल बीमारी का बहाना कर रही है, ने मन ही मन सोचा, "मैं उसे वह औषधि बताऊँगा जिससे वह ठीक हो जाएगा।" तब उसने ब्राह्मण से कहा, “मेरे पुत्र, अब उसे उत्तम भोजन मत दो, बल्कि गाय का गोबर इकट्ठा करो और उसमें पाँच प्रकार के फल आदि मिलाओ, और उसे एक नए तांबे के बर्तन में तब तक पकाओ जब तक उसमें धातु की सारी सुगंध न आ जाए। फिर एक रस्सी या डोरी या डंडा लेकर अपनी पत्नी के पास जाओ और उससे साफ-साफ कहो कि या तो वह तुम्हारे द्वारा लाई गई औषधि को निगल ले, या फिर अपने भोजन के लिए काम करे। (और यहाँ तुम्हें कुछ पंक्तियाँ दोहरानी होंगी जो मैं तुम्हें बताऊँगा।) यदि वह औषधि लेने से इनकार करती है, तो उसे रस्सी या डंडे का स्वाद चखाने और उसके बाल पकड़कर उसे घसीटने की धमकी दो, साथ ही उसे मुक्कों से मारो। तुम देखोगे कि मात्र धमकी से ही वह उठकर अपने काम पर लग जाएगी।”

अतः ब्राह्मण चला गया और बोधिसत्व के निर्देशानुसार तैयार किया गया भोजन अपनी पत्नी के लिए ले आया।

"यह दवा किसने लिखी है?" उसने कहा।

"मालिक," उसके पति ने कहा।

"इसे ले जाओ, मैं इसे नहीं लूंगा।"

“तो तुम इसे नहीं मानोगे, है ना?” युवा ब्राह्मण ने रस्सी का सिरा उठाते हुए कहा; “ठीक है, तो या तो तुम इस सुरक्षित इलाज को निगल लो या फिर ईमानदारी से इलाज और भोजन के लिए काम करो।” ऐसा कहते हुए उसने यह श्लोक कहा:-

आप बीमार पड़ सकते हैं या खा सकते हैं; आप क्या चुनेंगे?
क्योंकि तुम दोनों काम एक साथ नहीं कर सकती, मेरी कोसिया।
इससे भयभीत होकर, कोसिया नाम की स्त्री को गुरु के हस्तक्षेप से ही यह अहसास हो गया कि उन्हें धोखा देना असंभव है, और वह उठकर अपने काम में लग गई। गुरु को अपनी दुष्टता का बोध होने से उसे पश्चाताप हुआ और वह पहले की तरह ही अच्छी बन गई।

(कहानी यहीं समाप्त हुई, और ब्राह्मण की पत्नी को यह एहसास हुआ कि सर्वज्ञानी बुद्ध उसे जानते हैं, और वह उनके प्रति इतनी श्रद्धा से भर गई कि उसने फिर कभी पाप नहीं किया।)

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "आज के पति-पत्नी कहानी के पति-पत्नी थे, और मैं गुरु था।"

फुटनोट:

(1) क्रमांक 226 भी देखें।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **असंपादन-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

जातक क्रमांक 131
असंपदाना-जातक

“यदि कोई मित्र हो।”—यह कहानी गुरु ने बाँस के वन में देवदत्त के बारे में सुनाई थी। उस समय भिक्षु सत्य के हॉल में देवदत्त की कृतघ्नता और गुरु की अच्छाई को न पहचानने की उसकी अक्षमता पर चर्चा कर रहे थे, तभी स्वयं गुरु वहाँ आए और पूछने पर उन्हें उनकी चर्चा का विषय बताया गया। उन्होंने कहा, “भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि देवदत्त ने कृतघ्नता दिखाई है; वह पहले भी ऐसा ही कृतघ्न रहा है।” ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, मगध के राजगृह नगर में एक राजा राज कर रहे थे। उनके कोषाध्यक्ष बोधिसत्व, जिनकी संपत्ति अस्सी करोड़ (10 मिलियन) थी, 'करोड़पति' के नाम से प्रसिद्ध थे। बनारस में भी एक अन्य कोषाध्यक्ष रहते थे, जिनकी संपत्ति भी अस्सी करोड़ (10 मिलियन) थी। उनका नाम पिलिया था और वे पिलिया के घनिष्ठ मित्र थे। किसी कारणवश बनारस के पिलिया विपत्ति में पड़ गए और अपनी सारी संपत्ति खो बैठे। वे भीख मांगने को विवश हो गए। हताशा में उन्होंने बनारस छोड़ दिया और अपनी पत्नी के साथ पैदल ही राजगृह नगर पहुंचे, ताकि वे उस करोड़पति से मिल सकें, जो उनकी आखिरी उम्मीद थी। करोड़पति ने अपने मित्र का आलिंगन किया और उनका सम्मानपूर्वक स्वागत करते हुए उनसे आने का कारण पूछा। पिलिया ने उत्तर दिया, "मैं व्यथित हो चुका हूं। मैंने सब कुछ खो दिया है और आपसे मदद मांगने आया हूं।"

“पूरे दिल से! इस बात की चिंता मत करो,” करोड़पति ने कहा। उसने अपना तिजोरी खुलवाया और पिलिया को चालीस करोड़ (10 मिलियन) रुपये दिए। उसने अपनी सारी संपत्ति, पशुधन समेत, दो बराबर भागों में बाँट दी और पिलिया को अपनी पूरी दौलत का ठीक आधा हिस्सा दे दिया। अपनी संपत्ति लेकर पिलिया बनारस लौट गया और वहीं रहने लगा।

कुछ समय बाद ही करोड़पति पर भी वैसी ही विपत्ति आ पड़ी, और उसने अपना सारा धन खो दिया। संकट की घड़ी में मदद के लिए कहाँ जाए, यह सोचते हुए उसे याद आया कि उसने पिलिया से अपनी आधी संपत्ति साझा की थी, और वह बिना किसी डर के उससे मदद मांग सकता है। इसलिए वह अपनी पत्नी के साथ राजगृह शहर से निकल पड़ा और बनारस आ गया। शहर के प्रवेश द्वार पर उसने अपनी पत्नी से कहा, "पत्नी, मेरे साथ सड़कों पर चलना तुम्हारे लिए ठीक नहीं है। थोड़ी देर यहीं रुको, मैं एक गाड़ी और नौकर भेजकर तुम्हें ठीक से शहर ले आऊँगा।" इतना कहकर उसने अपनी पत्नी को वहाँ छोड़ दिया और अकेले शहर में आगे बढ़ गया, जब तक कि वह पिलिया के घर नहीं पहुँच गया, जहाँ उसने अपना परिचय राजगृह शहर के करोड़पति के रूप में देने को कहा, जो अपने मित्र से मिलने आया है।

"ठीक है, उसे अंदर आने दो," पिलिया ने कहा; लेकिन दूसरे की हालत देखकर वह न तो उसका स्वागत करने के लिए उठा और न ही अभिवादन के शब्दों से उसका अभिवादन किया, बल्कि उसने केवल यही पूछा कि वह यहाँ क्यों आया है।

"तुम्हें देखने के लिए," यह जवाब मिला।

आप कहाँ रुकेंगे?

"अभी तक कहीं नहीं। मैंने अपनी पत्नी को आश्रय में छोड़ दिया और सीधे आपके पास आ गया।"

“यहाँ तुम्हारे लिए कोई जगह नहीं है। एक भिक्षा चावल लो, कहीं पकाकर खा लो, और फिर चले जाओ और फिर कभी मुझसे मिलने मत आना।” ऐसा कहकर धनी व्यक्ति ने एक सेवक को आदेश देकर भेजा कि वह अपने अभागे मित्र को एक गुच्छे में से आधा-चौथाई अनाज अपने कपड़े के कोने में बाँधकर ले जाने को दे; और यह तब, जब उसी दिन उसने एक हजार बैलगाड़ियों में उत्तम चावल की पिसाई करवाकर अपने भरे हुए भंडारों में जमा कर रखी थी। जी हाँ, वह धूर्त, जिसने बड़ी सहजता से चार सौ मिलियन ले लिए थे, अब अपने एक समय के सहायक को एक गुच्छे में से आधा-चौथाई अनाज भिक्षा में दे रहा था! तदनुसार, सेवक ने गुच्छे में से अनाज एक टोकरी में नापा और बोधिसत्व के पास लाया, जो मन ही मन दुविधा में थे कि उसे लेना चाहिए या नहीं। और उसने सोचा, "इस कृतघ्न ने मेरी दोस्ती इसलिए तोड़ दी क्योंकि मैं बर्बाद हो चुका हूँ। अब, अगर मैं उसका यह तुच्छ उपहार ठुकरा दूँ, तो मैं भी उसी के बराबर बुरा हो जाऊँगा। क्योंकि जो नीच लोग एक मामूली उपहार का भी तिरस्कार करते हैं, वे मित्रता के मूल सिद्धांत का ही उल्लंघन करते हैं। इसलिए, जहाँ तक हो सके, मुझे उसकी दी हुई अनाज की गठरी स्वीकार करके मित्रता निभानी चाहिए।" अतः उसने अनाज को अपने कपड़े के कोने में बाँधा और अपनी पत्नी के घर की ओर चल पड़ा।

"तुम्हारे पास क्या है, प्यारे?" उसने कहा।

"हमारा मित्र पिलिया हमें इतना अनाज देता है और फिर हमसे अपना पल्ला झाड़ लेता है।"

"अरे, तुमने इसे क्यों लिया? क्या चालीस करोड़ (x10 मिलियन) के बदले यह उचित प्रतिफल है?"

“रो मत, प्रिय पत्नी,” बोधिसत्व ने कहा। “मैंने इसे केवल इसलिए लिया क्योंकि मैं मित्रता के सिद्धांत का उल्लंघन नहीं करना चाहता था। ये आँसू क्यों?” इतना कहकर उन्होंने यह श्लोक कहा:-

यदि कोई मित्र कंजूस की भूमिका निभाता है,
एक मूर्ख के दिल पर गहरा आघात लगता है;
मैं उसके अनाज का दान स्वीकार करूंगा।
और इस वजह से हमारी दोस्ती नहीं टूटेगी।
लेकिन पत्नी लगातार रोती रही।

उसी क्षण, करोड़पति द्वारा पिलिया को सौंपे गए एक खेत के नौकर वहाँ से गुजर रहे थे और अपनी पूर्व प्रेमिका के रोने की आवाज सुनकर पास आए। अपने स्वामी और प्रेमिका को पहचानकर वे उनके चरणों में गिर पड़े और आँसुओं और सिसकती हुई आवाज़ में उनके आने का कारण पूछा। बोधिसत्व ने उन्हें उनकी कहानी सुनाई।

“हिम्मत बनाए रखो,” उस आदमी ने प्रसन्नता से कहा; और उन्हें अपने कमरे में ले जाकर, उनके लिए सुगंधित स्नान और भोजन की व्यवस्था की। फिर उसने अन्य दासों को बताया कि उनके पुराने स्वामी और स्वामिनी आ गए हैं, और कुछ दिनों बाद उन्हें एक साथ राजा के महल में ले गया, जहाँ उन्होंने खूब हंगामा किया।

राजा ने पूछा कि मामला क्या है, और उन्होंने उन्हें पूरी कहानी बता दी। तब उन्होंने उन दोनों को बुलवाया और करोड़पति से पूछा कि क्या यह खबर सच है कि उसने पिलिया को चार सौ मिलियन दिए थे।

"महोदय," उसने कहा, "जब संकट की घड़ी में कोई मित्र मुझ पर भरोसा नहीं कर रहा था और मेरी सहायता मांगने आया, तो मैंने उसे न केवल अपने धन का आधा हिस्सा, बल्कि अपने पशुधन और अपनी हर चीज का आधा हिस्सा दे दिया।"

"क्या यह सच है?" राजा ने पिलिया से कहा।

"जी महाराज," उसने कहा।

और जब, बदले में, जिसने पहले आपकी मदद की थी, उसने आप पर भरोसा किया और आपकी पोल खोल दी, तो क्या आपने उसे सम्मान और आतिथ्य दिखाया?

यहां पिलिया चुप थी।

"क्या आपने उसके कपड़े के कोने में आधा-चौथाई अनाज दान के रूप में दिया था?"

फिर भी पिलिया चुप रही।

तब राजा ने अपने मंत्रियों से सलाह ली कि क्या किया जाना चाहिए, और अंत में, पिलिया पर फैसला सुनाते हुए, उन्हें पिलिया के घर जाने और पिलिया की सारी संपत्ति करोड़पति को देने का आदेश दिया।

"नहीं, महाराज," बोधिसत्व ने कहा; "मुझे दूसरे की कोई चीज़ नहीं चाहिए। मुझे उससे अधिक कुछ भी न दिया जाए जो मैंने पहले उसे दिया था।"

तब राजा ने आदेश दिया कि बोधिसत्व को उनकी संपत्ति पुनः प्राप्त करने की अनुमति दी जाए; और बोधिसत्व, अपने साथ कई सेवकों और परिचारकों के एक बड़े समूह के साथ, अपनी पुनः प्राप्त संपत्ति लेकर राजगृह नगर लौट आए, जहाँ उन्होंने अपने मामलों को व्यवस्थित किया, और दान और अन्य अच्छे कार्यों में व्यतीत जीवन बिताने के बाद, अपने कर्मों के अनुसार फल भोगने के लिए परलोक चले गए।

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "देवदत्त उन दिनों के कोषाध्यक्ष पिलिया थे, और मैं स्वयं करोड़पति था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **पंचगरु-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-132-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 132
पंचगरु-जातक

"बुद्धिमान सलाह"--यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए, बकरियों के बरगद के पेड़ पर मारा की पुत्रियों द्वारा प्रलोभन (*1) से संबंधित सूत्र के बारे में सुनाई थी। गुरु ने सूत्र के शुरुआती शब्दों से उद्धत किया:-

अपनी पूरी चकाचौंध भरी सुंदरता के साथ वे आगे बढ़ते गए,
लालसा, घृणा और वासना। रुई की तरह
हवा के सामने, गुरु ने उन्हें उड़ाया।
सूत्र का पूर्ण पाठ करने के बाद, भिक्षु सत्य के हॉल में एकत्रित हुए और इस बात पर चर्चा करने लगे कि मारा की पुत्रियाँ अपने अनेक आकर्षणों के साथ उनके निकट आईं, फिर भी सर्वज्ञानी गुरु को मोहित करने में असफल रहीं। क्योंकि गुरु ने उन्हें देखने के लिए अपनी आँखें तक नहीं खोलीं, वे इतने अद्भुत थे! हॉल में प्रवेश करते हुए, गुरु ने पूछा और उन्हें बताया गया कि वे किस विषय पर चर्चा कर रहे हैं। उन्होंने कहा, "भाइयों, इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि मैंने इस जीवन में मारा की पुत्रियों की ओर दृष्टि तक नहीं डाली, जबकि मैंने पाप को त्याग दिया है और ज्ञान प्राप्त कर लिया है। पूर्व दिनों में, जब मैं केवल ज्ञान की खोज में था, जब पाप अभी भी मेरे भीतर विद्यमान था, तब मैंने सद्गुणों का उल्लंघन करते हुए कामवासना के कारण दिव्य सौंदर्य को भी दृष्टि न डालने की शक्ति पाई; और उस संयम से मैंने एक राज्य प्राप्त किया।" ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज्याभिषेक कर रहे थे, बोधिसत्व सौ भाइयों में सबसे छोटे थे, और उनके कारनामों का विस्तृत वर्णन यहाँ उसी प्रकार किया जाएगा जैसा कि ऊपर तक्षशिला-जातक (*2) में वर्णित है। जब लोगों ने बोधिसत्व को राज्य भेंट किया, और जब उन्होंने इसे स्वीकार कर राजा के रूप में राज्याभिषेक किया, तो लोगों ने नगर को देवताओं के नगर की तरह और राजमहल को इंद्र के महल की तरह सजाया। नगर में प्रवेश करते ही बोधिसत्व महल के विशाल हॉल में गए और वहाँ अपने राजत्व के श्वेत छत्र के नीचे अपने रत्नजड़ित सिंहासन पर अपनी दिव्य सुंदरता के साथ विराजमान हुए। उनके चारों ओर उनके मंत्री, ब्राह्मण और सरदार तेजस्वी रूप में खड़े थे, जबकि सोलह हजार नर्तकियाँ, स्वर्ग की अप्सराओं के समान सुंदर, गाती, नाचती और संगीत बजाती रहीं, जिससे महल गर्जना से भरे आकाश के समान ध्वनि से गूंज उठा। अपने राजसी वैभव को निहारते हुए बोधिसत्व ने सोचा कि यदि उन्होंने उन राक्षसी स्त्रीयों के आकर्षण को देखा होता, तो उनका दुखद अंत हो जाता और वे कभी भी अपनी वर्तमान वैभवशाली स्थिति को नहीं देख पाते, जो उन्हें पच्चेक बुद्धों के उपदेशों का पालन करने के कारण प्राप्त हुई थी। और जैसे ही ये विचार उनके हृदय में भर गए, उनकी भावना इन श्लोकों में प्रकट हुई:-

इस संबंध में बुद्धिमत्तापूर्ण सलाह, अपने संकल्प में दृढ़,
दृढ़ हृदय से अपने मार्ग पर अडिग रहते हुए,
मैंने सायरनों के जीवन और उनके जाल से परहेज किया।
और मैंने अपनी आवश्यकता में ही महान मुक्ति (निर्वाण) प्राप्त की।
इस प्रकार इन श्लोकों से मिलने वाला पाठ समाप्त हुआ। और उस महान सत्ता ने अपने राज्य पर धर्मपूर्वक शासन किया, और दान और अन्य अच्छे कार्यों से परिपूर्ण होकर अंत तक अपने कर्मों के अनुसार फल भोगने के लिए इस दुनिया से विदा हो गए।

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "मैं उन दिनों का राजकुमार था जो तक्षशिला गया और एक राज्य जीता।"

फुटनोट:

(1) मारा (शैतान), मृत्यु, पुनर्जन्म, रोग, प्रलोभन और भौतिक सुखों का देवता। इसे कामदेव के नाम से भी जाना जाता है। इसका उच्चारण मार होता है। माना जाता है कि मारा सभी लोकों पर शासन करता है, जिनमें नरक, स्वर्ग और परलोक भी शामिल हैं, जहाँ पुनर्जन्म होता है। केवल निर्वाण की परम आनंदमय अवस्था ही वह स्थान है जहाँ मारा का कोई नियंत्रण नहीं होता। बौद्ध धर्म का उद्देश्य सांसारिक मोह-माया को त्यागकर निर्वाण की इस परम अवस्था को प्राप्त करना है।

(2) स्पष्टतः संदर्भ क्रमांक (96) से है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **घटासन-जातक**
***स्रोत**: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-133-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 133
घटसन-जातक

"देखो! तुम्हारे गढ़ में!" - यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी। यह कथा एक भिक्षु के बारे में है जिसे गुरु ने ध्यान के लिए एक विषय दिया था। भिक्षु सीमावर्ती क्षेत्र में जाकर एक गाँव के पास जंगल में रहने लगा। उसने वर्षा ऋतु यहीं बिताने की आशा की थी, लेकिन पहले ही महीने में जब वह गाँव में भिक्षा माँग रहा था, उसकी कुटिया जल गई। छत छिन जाने से दुखी होकर उसने अपने मित्रों को अपनी विपत्ति बताई और उन्होंने तुरंत उसके लिए दूसरी कुटिया बनाने का प्रबंध किया। परन्तु उनके बार-बार मना करने के बावजूद तीन महीने बीत गए और कुटिया का पुनर्निर्माण नहीं हुआ। छत न होने के कारण भिक्षु का ध्यान निर्भय हो गया। यहाँ तक कि सत्य के प्रकाश का प्रकाश भी उसे प्राप्त नहीं हुआ था, जब वर्षा ऋतु समाप्त होने पर वह जेतवन मठ लौट आया और गुरु के समक्ष आदरपूर्वक उपस्थित हुआ। वार्तालाप के दौरान गुरु ने उससे पूछा कि क्या उसका ध्यान सफल रहा। तब उस भिक्षु ने अपने साथ घटी अच्छी और बुरी घटनाओं का सजीव वर्णन किया। गुरु ने कहा, "पुराने समय में, यहाँ तक कि पशु-पक्षी भी अपने लिए अच्छे और बुरे में अंतर कर सकते थे और इसलिए खतरनाक साबित होने से पहले ही उन आवासों को छोड़ देते थे जहाँ वे सुखी दिनों में शरण पाते थे। और यदि पशु-पक्षी इतने विवेकशील थे, तो तुम ज्ञान में उनसे इतने पीछे कैसे रह गए?" ऐसा कहकर, उस भाई के अनुरोध पर, गुरु ने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, तब बोधिसत्व पक्षी के रूप में पैदा हुए। जब वे समझदार हुए, तो सौभाग्य से वे पक्षियों के राजा बन गए और अपने प्रजाजनों के साथ एक विशाल वृक्ष पर रहने लगे, जिसकी घनी शाखाएँ एक झील के ऊपर फैली हुई थीं। उन सभी पक्षियों ने शाखाओं पर बैठकर अपना मल नीचे के पानी में गिरा दिया। वह झील नागों के राजा चंद का निवास स्थान थी, जो अपने जल के दूषित होने से क्रोधित हो गए और उन्होंने पक्षियों से बदला लेने और उन्हें जलाकर नष्ट करने का निश्चय किया। एक रात जब सभी पक्षी शाखाओं पर बैठे थे, तो उन्होंने काम शुरू किया। सबसे पहले उन्होंने झील के पानी को उबाला, फिर धुआँ उत्पन्न किया और अंत में ताड़ के पेड़ जितनी ऊँची लपटें उठाईं।

जल से उठती लपटों को देखकर बोधिसत्व ने पक्षियों से कहा, "जल का उपयोग आग बुझाने के लिए किया जाता है; लेकिन यहाँ तो जल ही जल रहा है। यह हमारे लिए उपयुक्त स्थान नहीं है; हमें कहीं और अपना घर खोजना चाहिए।" ऐसा कहकर उन्होंने यह श्लोक कहा:-

देखो! तुम्हारे गढ़ में शत्रु खड़ा है।
  और आग ने पानी को जला दिया;
इसलिए अपने पेड़ से जल्दी जाओ,
  विश्वास को कांपते हुए मोड़ने दो।

और इस पर बोधिसत्व उन पक्षियों को लेकर उड़ गए जिन्होंने उनकी सलाह मानी थी; लेकिन अवज्ञाकारी पक्षी, जो पीछे रुक गए, वे सभी नष्ट हो गए।

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने चार सत्यों का उपदेश दिया (जिसके समापन पर उस भिक्षु ने अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) प्राप्त किया) और जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "उन दिनों के वफादार और आज्ञाकारी पक्षी अब मेरे शिष्य बन गए हैं, और मैं स्वयं उस समय पक्षियों का राजा था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **ज्ञानशोधन-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-134-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 134
ज्ञानशोधन-जातक

"सचेत भाव से।" - यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी। इसमें उन्होंने बताया कि समकस्सा नगर के द्वार पर धर्म के प्रमुख सारिपुत्र ने गुरु द्वारा संक्षेप में बताई गई एक समस्या का स्पष्टीकरण किया था। इसके बाद उन्होंने अतीत की जो कहानी सुनाई, वह इस प्रकार है।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, (और पहले जैसा ही) बोधिसत्व ने अपने वनवास में प्राण त्यागते हुए कहा, "न तो सजग, न ही अचेतन।" और संन्यासियों ने बोधिसत्व के प्रमुख शिष्य द्वारा गुरु के शब्दों की व्याख्या पर विश्वास नहीं किया। बोधिसत्व प्रकाशमान लोक से वापस आए और आकाश में ही यह श्लोक सुनाया:-

चेतन अवस्था में भी, अचेतन अवस्था में भी,
दु:ख का वास है। इससे बचना ही बेहतर है।
शुद्ध आनंद, हर तरह के भ्रष्टाचार से मुक्त।
लेकिन अंतर्दृष्टि के परमानंद (सम्मोहन) से उत्पन्न।
अपना प्रवचन समाप्त करने के बाद, बोधिसत्व ने अपने शिष्य की प्रशंसा की और ब्रह्मलोक (परम स्वर्ग) लौट गए। तब शेष संन्यासियों ने मुख्य शिष्य की बात पर विश्वास किया।

अपना उपदेश देने के बाद, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "उन दिनों सारिपुत्र प्रमुख शिष्य थे, और मैं महा-ब्रह्मा था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **चंदभ-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-135-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 135
चंदाभा जातक

"जो ऋषि भाव से ध्यान करते हैं।" - यह कहानी भी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें समकस्सा के द्वार पर वरिष्ठ भिक्षु सारिपुत्र द्वारा एक समस्या की व्याख्या का वर्णन किया गया था।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व ने अपने वनवास में प्राण त्यागते हुए अपने शिष्यों के प्रश्नों का उत्तर इन शब्दों में दिया—"चंद्रमा और सूर्य का प्रकाश।" इन्हीं शब्दों के साथ उन्होंने प्राण त्याग दिए और प्रकाशमान लोक में प्रवेश कर गए।

जब मुख्य शिष्य ने गुरु के शब्दों का अर्थ समझाया तो उसके साथियों ने उस पर विश्वास नहीं किया। तब बोधिसत्व वापस आए और आकाश में से ही उन्होंने यह श्लोक सुनाया:-

जो सूर्य और चंद्रमा का गहन ध्यान करते हैं,
जीतने के बाद
(जब परमानंद (सम्मोहन) की अवस्था उत्पन्न होती है)
रेडिएंट रियल्म्स में उनका स्थान।
बोधिसत्व की यही शिक्षा थी, और अपने शिष्य की प्रशंसा करने के बाद वे ब्रह्मलोक (परम स्वर्ग) की ओर वापस चले गए।

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "सारिपुत्र उन दिनों के प्रमुख शिष्य थे, और मैं महा-ब्रह्मा हूं।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सुवनहंस-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-136-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 136
सुवन्नहंस-जातक

"संतोषी रहो।"--यह कहानी गुरु ने फैट नंदा नाम की एक नन (नन) के बारे में सुनाई थी।

श्रावस्ती नगर में एक भिक्षुणी ने भिक्षुणियों को लहसुन भेंट किया और अपने सहायक को बुलवाकर आदेश दिया कि यदि वे आएं तो प्रत्येक भिक्षुणी को दो या तीन मुट्ठी लहसुन मिलेगा। इसके बाद भिक्षुणियां लहसुन लेने के लिए उनके घर या खेत में जाने लगीं। एक दिन छुट्टी के दिन घर में लहसुन खत्म हो गया और भिक्षुणी फात नंदा अपने साथ अन्य भिक्षुणियों के साथ घर आईं। जब उन्होंने लहसुन मांगा तो उन्हें बताया गया कि घर में लहसुन नहीं बचा है, सारा खत्म हो गया है और उन्हें खेत से लाना होगा। तो वे खेत गईं और बहुत सारा लहसुन ले आईं। सहायक क्रोधित हो गया और कहने लगा कि ये भिक्षुणियां कितनी लालची हैं! इससे विनम्र भिक्षुणियां नाराज हो गईं और भिक्षुणियों ने जब यह बात दोहराई तो वे भी नाराज हो गए और उन्होंने भगवान बुद्ध को बताया। मोटे नंदा के लालच की निंदा करते हुए गुरु ने कहा, "भाइयों, लालची व्यक्ति अपनी जन्मदात्री माँ के प्रति भी कठोर और निर्दयी होता है; लालची व्यक्ति न तो किसी को परिवर्तित कर सकता है, न ही परिवर्तितों को कृपा में वृद्धि दे सकता है, न ही दान प्राप्त करा सकता है, और न ही दान प्राप्त होने पर उन्हें बचा सकता है; जबकि विनम्र व्यक्ति ये सब कर सकता है।" इस प्रकार गुरु ने नैतिक शिक्षा देते हुए अंत में कहा, "भाइयों, जिस प्रकार मोटे नंदा अब लालची हैं, उसी प्रकार वे अतीत में भी लालची थीं।" और इस पर उन्होंने अतीत की निम्नलिखित कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, बोधिसत्व ब्राह्मण परिवार में जन्मे और बड़े होकर उनका विवाह उन्हीं के वंश की एक महिला से हुआ, जिनसे उन्हें नंदा, नंदा-वती और सुंदरी-नंदा नाम की तीन बेटियाँ हुईं। बोधिसत्व की मृत्यु हो जाने पर, उनकी बेटियाँ पड़ोसियों और मित्रों के पास रहीं, जबकि उनका पुनर्जन्म एक सुनहरे बत्तख के रूप में हुआ, जिसे अपने पिछले जन्मों की चेतना प्राप्त थी। बड़े होते हुए, पक्षी ने अपने विशाल आकार और सुनहरे पंखों को देखा और उसे याद आया कि वह पहले एक मनुष्य था। यह

जानकर कि उसकी पत्नी और बेटियाँ दूसरों की भिक्षा पर जी रही हैं, बत्तख ने अपने पंखों को पीटे हुए सोने के समान समझा और सोचा कि एक-एक करके उन्हें सुनहरा पंख देकर वह अपनी पत्नी और बेटियों को सुखमय जीवन जीने में सक्षम बना सकता है। इसलिए वह उनके घर की ओर उड़ गया और छत के बीचोंबीच स्थित बीम पर बैठ गया। बोधिसत्व को देखकर, पत्नी और बेटियों ने पूछा कि वह कहाँ से आए हैं; और उसने उन्हें बताया कि वह उनका पिता है, जिसकी मृत्यु हो गई थी और वह एक सुनहरी बत्तख के रूप में जन्म लिया था, और वह उनसे मिलने और मजदूरी करने की उनकी दयनीय स्थिति को समाप्त करने आया है। उसने कहा, "तुम्हें मेरे पंख एक-एक करके मिलेंगे, और उन्हें बेचकर तुम सब आराम से रह पाओगी।" ऐसा कहकर उसने उन्हें अपना एक पंख दिया और चला गया। और समय-समय पर वह उन्हें दूसरा पंख देने के लिए लौटता रहा, और उन पंखों की बिक्री से प्राप्त धन से ये ब्राह्मण स्त्रियाँ समृद्ध और संपन्न हो गईं। लेकिन एक दिन माँ ने अपनी बेटियों से कहा, "मेरे बच्चों, जानवरों पर भरोसा नहीं किया जा सकता। कौन जानता है कि तुम्हारे पिता एक दिन चले जाएँगे और फिर कभी वापस नहीं आएँगे? चलो, अगली बार जब वह आए तो हम समय का सदुपयोग करें और उसके सारे पंख नोच लें।" यह सोचकर कि इससे उसे दुख होगा, बेटियों ने मना कर दिया। लालच में आकर माँ ने एक दिन सुनहरी बत्तख को अपने पास बुलाया, जब वह आया, और फिर उसे दोनों हाथों से पकड़कर उसके सारे पंख नोच लिए। बोधिसत्व के पंखों में यह विशेषता थी कि यदि उन्हें उनकी इच्छा के विरुद्ध नोच लिया जाता, तो वे सुनहरे रंग के बजाय सारस के पंखों जैसे हो जाते। अब बेचारा पक्षी, यद्यपि अपने पंख फैलाता, उड़ नहीं पाता था, इसलिए स्त्री ने उसे एक बर्तन में डाल दिया और वहाँ उसे भोजन दिया। समय बीतने पर उसके पंख फिर से उग आए (यद्यपि वे अब सादे सफेद रंग के थे), और वह अपने निवास स्थान पर उड़ गया और फिर कभी वापस नहीं आया।

इस कहानी के अंत में गुरु ने कहा, "इस प्रकार देखो, भिक्षुओं, मोटी नंदा अतीत में भी उतनी ही लालची थी जितनी अब है। और उसके लालच ने तब भी उससे सोना छीन लिया था, ठीक उसी तरह जैसे अब उसके लालच से उससे लहसुन छिन जाएगा। इसके अलावा, ध्यान दो कि उसके लालच ने पूरी नन-साधु को लहसुन से वंचित कर दिया है, और इससे सीख लो कि अपनी इच्छाओं में संयम बरतो और जो कुछ भी तुम्हें मिले, चाहे वह कितना भी कम क्यों न हो, उसी से संतुष्ट रहो।" ऐसा कहकर उन्होंने यह श्लोक कहा:-

संतुष्ट रहो, और अधिक धन की लालसा मत रखो।
उन्होंने हंस को तो पकड़ लिया, लेकिन उसका सोना उनके हाथ नहीं लगा।
ऐसा कहकर गुरु ने गलती करने वाली साध्वी को खूब फटकारा और यह नियम बनाया कि जो भी साध्वी लहसुन खाएगी उसे प्रायश्चित करना होगा। फिर उन्होंने तुलना करते हुए कहा, "फैट नंदा कहानी में ब्राह्मण की पत्नी थी, उसकी तीन बहनें ब्राह्मण की तीन बेटियाँ थीं, और मैं स्वयं सोने की बत्तख हूँ।"

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **बब्बू-जातक**
***स्रोत**: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-137-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 137
बब्बू जातक

"एक बिल्ली को खाना दो।"—यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में काना की माता के बारे में सुनाई थी। श्रावस्ती नगर में रहने वाली काना की माता एक गृहस्थ थीं, जिन्हें केवल काना की माता के नाम से जाना जाता था। उन्होंने मोक्ष (निर्वाण) प्राप्त कर लिया था और वे चुनी हुई साध्वियों में से थीं। उनकी पुत्री काना का विवाह उसी जाति के एक व्यक्ति से दूसरे गाँव में हुआ था, और किसी काम के चलते वह अपनी माता से मिलने गई। कुछ दिन बीत गए, और उनके पति ने एक दूत भेजा कि वह वापस आना चाहते हैं। काना ने अपनी माता से पूछा कि क्या उसे जाना चाहिए, और माता ने कहा कि इतने लंबे समय के बाद वह खाली हाथ नहीं लौट सकतीं, और उन्होंने केक बनाना शुरू कर दिया। तभी एक भिक्षु भिक्षा मांगने के लिए वहाँ से गुजरे, और माता ने उन्हें अपने बनाए हुए केक के पास बैठा दिया। वह चले गए और दूसरे भिक्षु को बताया, जो ठीक समय पर आकर बेटी के लिए बनाया गया दूसरा केक ले आए ताकि वह उसे घर ले जा सके। उसने तीसरे को बताया, और तीसरे ने चौथे को, और इस तरह हर बार एक नया व्यक्ति नया केक लेकर चला गया। इसका परिणाम यह हुआ कि बेटी घर नहीं लौटी, और पति ने उसके पीछे दूसरा और तीसरा दूत भेजा। तीसरे दूत के द्वारा उसने यह संदेश भेजा कि यदि उसकी पत्नी वापस न आए, तो वह दूसरी पत्नी ले आए। और हर संदेश का परिणाम एक ही रहा। इसलिए पति ने दूसरी पत्नी ले ली,

और यह खबर सुनकर उसकी पहली पत्नी रोने लगी। यह सब जानकर गुरुजी सुबह जल्दी उठकर अपने वस्त्र धारण करके भिक्षापात्र लेकर काना की माता के घर गए और अपने लिए निर्धारित आसन पर बैठ गए। फिर उन्होंने पूछा कि बेटी क्यों रो रही है, और जब उन्हें पता चला, तो उन्होंने माता को सांत्वना दी, और उठकर मठ लौट गए।

अब भिक्षुओं को पता चला कि उन चार भिक्षुओं के कारण काना को तीन बार उसके पति के पास वापस जाने से रोका गया था; और एक दिन वे सत्य के हॉल में मिले और इस मामले पर चर्चा करने लगे। गुरु हॉल में आए और पूछा कि वे किस बारे में बात कर रहे हैं, और उन्होंने उन्हें बताया। गुरु ने कहा, "भाइयों, यह मत सोचो कि उन चार भिक्षुओं ने काना की माँ का भंडार खाकर उसे पहली बार दुख पहुँचाया है; उन्होंने पहले भी ऐसा ही किया था।" ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, बोधिसत्व जन्म से ही पत्थर तराशने वाले थे और बड़े होकर पत्थर तराशने में निपुण हो गए। काशी देश में एक बहुत धनी व्यापारी रहता था, जिसने चालीस करोड़ (10 मिलियन) सोने का धन इकट्ठा कर लिया था। जब उसकी पत्नी की मृत्यु हुई, तो धन के प्रति उसके प्रेम ने उसे चूहा बना दिया और वह उस खजाने के ऊपर रहने लगी। धीरे-धीरे उसका पूरा परिवार, व्यापारी समेत, मर गया। गाँव भी वीरान और उदास हो गया। हमारी कहानी के समय, बोधिसत्व इस वीरान गाँव की जगह पर पत्थर तराश रहे थे और उन्हें आकार दे रहे थे; और चूहा अक्सर भोजन की तलाश में इधर-उधर भागते हुए उन्हें देखता था। अंततः उसे उनसे प्रेम हो गया; और यह सोचकर कि उसकी सारी संपत्ति का रहस्य उसके साथ ही मिट जाएगा, उसने उनके साथ इसका आनंद लेने का विचार किया। तो एक दिन वह अपने मुँह में एक सिक्का लेकर बोधिसत्व के पास आई। यह देखकर उन्होंने उससे प्रेमपूर्वक कहा, "माँ, आप यह सिक्का लेकर यहाँ क्यों आई हैं?" "यह आपके लिए है, और मेरे लिए भी इससे मांस खरीदना है, मेरे पुत्र।" बिना किसी संकोच के, उन्होंने पैसे लिए और उसमें से आधा पैसा मांस खरीदने में खर्च किया, जो उन्होंने चूहे को दिया। चूहा चला गया और उसने जी भरकर मांस खाया। और यह सिलसिला चलता रहा, चूहा प्रतिदिन बोधिसत्व को एक सिक्का देता रहा और बदले में वह उसे मांस देता रहा। लेकिन एक दिन संयोगवश चूहा एक बिल्ली के हाथों पकड़ा गया।

"मुझे मत मारो," चूहे ने कहा।

"क्यों नहीं?" बिल्ली ने कहा। "मुझे बहुत भूख लगी है, और भूख मिटाने के लिए मुझे तुम्हें मारना ही पड़ेगा।"

"पहले मुझे यह बताओ कि तुम्हें हमेशा भूख लगती है या सिर्फ आज ही भूख लगी है।"

"ओह, मुझे हर दिन फिर से भूख लग जाती है।"

"अच्छा, अगर ऐसा है तो मैं तुम्हें हमेशा मांस खाते हुए पाऊंगा; बस मुझे जाने दो।"

"ठीक है, ऐसा करना," बिल्ली ने कहा और चूहे को छोड़ दिया।

इसके परिणामस्वरूप चूहे को बोधिसत्व से प्राप्त मांस को दो भागों में बांटना पड़ा और उसने आधा हिस्सा बिल्ली को दे दिया, जबकि दूसरा हिस्सा उसने खुद रख लिया।

अब संयोगवश, उसी चूहे को एक दिन दूसरी बिल्ली ने पकड़ लिया और उसे उसी शर्तों पर छुड़ाना पड़ा। इस प्रकार, दैनिक भोजन को तीन भागों में बाँट दिया गया। और जब तीसरी बिल्ली ने चूहे को पकड़ा और वैसी ही व्यवस्था करनी पड़ी, तो भोजन को चार भागों में बाँट दिया गया। बाद में चौथी बिल्ली ने उसे पकड़ लिया, और भोजन को पाँच भागों में बाँटना पड़ा, जिससे चूहा, भोजन की कमी के कारण, इतना दुबला हो गया कि वह केवल हड्डियों का ढाँचा रह गया। अपने मित्र को इतना कमजोर देखकर बोधिसत्व ने कारण पूछा। तब चूहे ने उन्हें अपने साथ घटी सारी घटना बता दी।

बोधिसत्व ने कहा, "तुमने मुझे ये सब पहले क्यों नहीं बताया?" "हिम्मत रखो, मैं तुम्हारी मुसीबतों से बाहर निकालूंगा।" फिर उन्होंने शुद्धतम क्रिस्टल का एक टुकड़ा लिया और उसमें एक खोखला छेद बनाकर चूहे को अंदर डाल दिया। उन्होंने कहा, "अब यहीं रुक जाओ, और जो भी तुम्हारे पास आए उसे बुरी तरह धमकाओ और गाली दो।"

चूहा क्रिस्टल के कक्ष में घुस गया और इंतज़ार करने लगा। तभी एक बिल्ली बाहर आई और अपना मांस माँगने लगी। चूहे ने कहा, "दूर हो जाओ, गंदी बिल्ली! मैं तुम्हें क्यों दूँ? घर जाओ और अपने बच्चों को खाओ!" इन शब्दों से क्रोधित होकर, और चूहे के क्रिस्टल के अंदर होने का ज़रा भी संदेह न करते हुए, बिल्ली चूहे पर झपटी; और उसका हमला इतना ज़ोरदार था कि उसकी छाती की दीवारें टूट गईं

और उसकी आँखें सिर से बाहर निकल आईं। इस प्रकार वह बिल्ली मर गई और उसका मृत शरीर आँखों से ओझल हो गया। और यही हाल बारी-बारी से चारों बिल्लियों का भी हुआ। और उसके बाद से कृतज्ञ चूहा बोधिसत्व को पहले की तरह एक के बजाय दो या तीन सिक्के देता रहा, और धीरे-धीरे उसने उन्हें सारा धन दे दिया। अटूट मित्रता में वे दोनों साथ रहे, जब तक कि उनका जीवन समाप्त नहीं हो गया और वे अपने कर्मों के अनुसार फल भोगने के लिए इस दुनिया से चले गए।

कहानी के अनुसार, उस अभिमानी ने, बुद्ध के रूप में, यह श्लोक कहा:-

एक बिल्ली को खाना दो, दूसरी बिल्ली प्रकट होती है:
तीसरी और चौथी संतानें भी फलदायी क्रम में सफल होती हैं;
उन चारों को देखो जो क्रिस्टल के कारण मर गए।
अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "ये चार भिक्षु (भाई) उन दिनों की चार बिल्लियाँ थीं, काना की माँ चूहा थी, और मैं पत्थर तराशने वाला था।"

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **गोधा-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-138-||---->>>> अगला

जातक क्रमांक 138
गोधा-जातक

"जूँके हुए बालों के साथ।"--यह कहानी जेतवन मठ में शेखी बघारने वाले ने एक पाखंडी के बारे में सुनाई थी। घटनाएँ ऊपर बताई गई घटनाओं के समान थीं (*1)।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्य था, बोधिसत्व एक छिपकली के रूप में पैदा हुए; और पास ही सीमा पर स्थित एक गाँव में एक कठोर तपस्वी रहते थे, जिन्होंने पंच ज्ञान प्राप्त कर लिया था और गाँव वाले उनका बहुत सम्मान करते थे। जिस रास्ते पर तपस्वी टहलते थे, उसके अंत में एक चींटी के टीले में बोधिसत्व रहते थे, और दिन में दो-तीन बार वे तपस्वी के पास जाकर धर्म और पवित्रता के वचन सुनते थे। फिर उस साधु का आदर करते हुए बोधिसत्व अपने निवास स्थान पर लौट जाते थे। कुछ समय बाद तपस्वी ने गाँव वालों को विदाई दी और चले गए। उनके स्थान पर एक और तपस्वी, एक कुटिल व्यक्ति, आश्रम में रहने आया। नए तपस्वी की पवित्रता को अपनाकर, बोधिसत्व ने उसके साथ भी पहले तपस्वी जैसा ही व्यवहार किया। एक दिन सूखे मौसम में अचानक आए तूफान ने चींटियों को उनके टीलों पर ला दिया, और उन्हें खाने के लिए निकली छिपकलियों को गांव वालों ने बड़ी संख्या में पकड़ लिया; और उनमें से कुछ को सिरके और चीनी के साथ मिलाकर तपस्वी को खाने के लिए परोसा गया। इतना स्वादिष्ट व्यंजन देखकर वह प्रसन्न हुआ और उसने पूछा कि यह क्या है, और उसे पता चला कि यह छिपकलियों का व्यंजन है। यह सोचकर उसे याद आया कि उसका पड़ोसी एक अद्भुत छिपकली है, और उसने उसे खाने का निश्चय किया। तदनुसार उसने छिपकली पकाने का बर्तन और परोसने के लिए चटनी तैयार की, और अपनी पीली पोशाक के नीचे एक गदा छिपाकर अपनी कुटिया के दरवाजे पर बैठ गया, पूर्ण शांति का भाव लिए बोधिसत्व के आने की प्रतीक्षा करने लगा। शाम को बोधिसत्व आए, और पास आते ही उन्होंने देखा कि तपस्वी पहले जैसा नहीं लग रहा था, बल्कि उसके चेहरे पर एक अशुभ संकेत था। बोधिसत्व ने संन्यासी की कुटिया से आती हवा को सूंघते हुए छिपकली के मांस की गंध महसूस की और तुरंत समझ गए कि छिपकली का स्वाद चखने के कारण संन्यासी उन्हें गदा से मारकर खा जाना चाहता था। इसलिए वे संन्यासी से मिले बिना ही घर लौट गए। बोधिसत्व के न आने पर संन्यासी ने सोचा कि छिपकली को उनकी योजना का भनक लग गई होगी, लेकिन उन्हें आश्चर्य हुआ कि उसे यह कैसे पता चला। छिपकली को भागने न देने का निश्चय करके उन्होंने गदा निकाली और फेंकी, जो छिपकली की पूंछ के सिरे पर जाकर लगी। बोधिसत्व पलक झपकते ही अपनी कुटिया में घुस गए और जिस छेद से वे अंदर आए थे, उससे अलग छेद से अपना सिर बाहर निकालकर चिल्लाए, "दुष्ट पाखंडी, तेरे धार्मिक वस्त्रों ने मुझे तुझ पर विश्वास करने के लिए प्रेरित किया, लेकिन अब मैं तेरा कुटिल स्वभाव जान गया हूँ। तेरे जैसे चोर का संन्यासी के वस्त्रों से क्या लेना-देना है?" इस प्रकार झूठे तपस्वी को फटकारते हुए बोधिसत्व ने यह श्लोक पढ़ा:-

उलझे हुए बालों और त्वचा के आवरण के साथ
  तपस्वी की धार्मिकता का अनुसरण क्यों करें?
बाहर से संत, भीतर से हृदय।
  दुर्गंधयुक्त अशुद्धता से भरा हुआ है (*2)।
इस प्रकार बोधिसत्व ने दुष्ट तपस्वी का पर्दाफाश किया और फिर अपनी दीमक की बस्ती में लौट गए। और दुष्ट तपस्वी वहां से चले गए।

अपना उपदेश समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "पाखंडी उस समय का दुष्ट तपस्वी था, सारिपुत्र उससे पहले आश्रम में रहने वाला अच्छा तपस्वी था, और मैं स्वयं छिपकली था।"

फुटनोट:

(1)स्पष्टतः नहीं. (128).

(2)धम्मपद बनाम 394.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **उभतोभट्ट-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-139-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 139
उभतोभट्ट-जातक

"उसकी आँखों में अंधापन और उसकी पिटाई।" - यह कहानी गुरु ने बाँस के जंगल में देवदत्त के बारे में सुनाई थी। हमने सुना है कि सत्य के हॉल में एकत्रित भिक्षुओं ने आपस में कहा कि जिस प्रकार चिता से निकली मशाल, जो दोनों सिरों से झुलसी हुई और बीच में धब्बा लगी हो, न तो जंगल के पेड़ के काम आती है और न ही गाँव के चूल्हे के, उसी प्रकार देवदत्त ने संसार का त्याग करके इस असाधारण आस्था का पालन करके दोहरी कमी और विफलता ही पाई, क्योंकि उन्होंने गृहस्थ जीवन के सुखों को तो खो दिया, लेकिन भिक्षु के रूप में अपने ज्ञान में भी कमी रह गई।

हॉल में प्रवेश करते ही गुरु ने पूछा और उन्हें बताया गया कि भाई आपस में किस बारे में बात कर रहे थे। "जी भाइयों," उन्होंने कहा, "और इसी तरह बीते दिनों में देवदत्त को भी ठीक इसी तरह दो बार असफलता मिली थी।" इतना कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, तब बोधिसत्व एक वृक्ष-देवी के रूप में पैदा हुए। वहाँ एक गाँव था जहाँ उस समय मछुआरे रहते थे। उन्हीं मछुआरों में से एक अपने छोटे बेटे के साथ अपना सामान लेकर अपने साथी मछुआरों द्वारा ज्ञात सबसे उपयुक्त जलक्षेत्र में कांटा डालने गया। तभी एक झाड़ी में उसका कांटा फंस गया और मछुआरा उसे खींच नहीं पाया। "वाह, कितनी बढ़िया मछली है!" उसने सोचा। "मुझे अपने बेटे को घर अपनी पत्नी के पास भेज देना चाहिए और उससे कहना चाहिए कि वह झगड़ा करे और बाकी सबको घर पर ही रखे, ताकि कोई भी मेरे इनाम में हिस्सा न ले सके।" उसने बेटे से कहा कि वह घर जाकर अपनी माँ को बताए कि उसने कितनी बड़ी मछली पकड़ी है और कैसे वह पड़ोसियों का ध्यान आकर्षित करे। फिर, अपनी कांटा टूटने के डर से, उसने अपना कोट उतार दिया और अपना इनाम पाने के लिए पानी में कूद पड़ा। लेकिन जैसे ही वह मछली को टटोल रहा था, वह झाड़ी से टकरा गया और उसकी दोनों आँखें निकल गईं। इसके अलावा, एक लुटेरे ने बैंक से उसके कपड़े चुरा लिए। दर्द से कराहते हुए, अपनी अंधी आँखों पर हाथ रखे, वह कांपते हुए बाहर निकला और अपने कपड़े खोजने की कोशिश करने लगा।

इसी बीच, उसकी पत्नी ने पड़ोसियों को झगड़ा कराने के इरादे से अपने एक कान के पीछे ताड़ का पत्ता लगा लिया और बर्तन की कालिख से अपनी एक आंख काली कर ली। इसी वेश में, एक कुत्ते को सहलाते हुए, वह पड़ोसियों से मिलने निकली। एक औरत ने उससे कहा, "अरे, तुम पागल हो गई हो।" मछुआरे की पत्नी ने जवाब दिया, "बिल्कुल पागल नहीं; तुम बिना वजह अपनी गंदी जुबान से मुझे गालियां दे रही हो। मेरे साथ जमींदार के पास चलो, मैं तुम पर मानहानि का आठ पैसे (*1) का जुर्माना लगवा दूंगी।"

इसलिए वे क्रोधित होकर जमींदार के पास चले गए। लेकिन जब मामले की जांच हुई, तो पता चला कि मछुआरे की पत्नी पर जुर्माना लगाया गया था; और उसे बांधकर पीटा गया ताकि वह जुर्माना अदा करे। अब जब वृक्ष-परी ने देखा कि गांव में पत्नी और जंगल में पति दोनों के साथ क्या दुर्भाग्य हुआ है, तो वह अपने वृक्ष की शाखा पर खड़ा होकर बोला, "अरे मछुआरे, जल में और भूमि पर तुम्हारा परिश्रम व्यर्थ है, और तुम दो बार असफल हुए हो।" ऐसा कहते हुए उसने यह श्लोक कहा:-

उसकी आंखों की रोशनी छीनना और उसकी पिटाई करना स्पष्ट रूप से दर्शाता है
दो बार की विफलता और दो बार का कष्ट।

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "देवदत्त उन दिनों का मछुआरा था, और मैं वृक्ष-परी हूँ।"

फुटनोट:

(1) यहां पाली शब्द, जैसा कि क्रमांक (137) में है, कहपना है। लेकिन वहां संदर्भ से पता चलता है कि यह एक सोने का सिक्का था; जबकि यहां मछुआरों की गरीबी इस बात का समर्थन करती है कि सिक्का तांबे का था, जैसा कि आमतौर पर माना जाता है। असल बात यह है कि कहपना शब्द, भारतीय सिक्कों के कुछ अन्य नामों की तरह, मुख्य रूप से किसी भी ढाले गए धातु, चाहे सोना, चांदी या तांबा हो, के वजन को दर्शाता था।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **काक-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-140-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 140
काका-जातक

"अथक भय में।"--यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक बुद्धिमान सलाहकार के बारे में सुनाई थी। इन घटनाओं का वर्णन बारहवीं पुस्तक में भद्दसला-जातक (*1) के संदर्भ में किया जाएगा।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, तब बोधिसत्व कौवे के रूप में पैदा हुए। एक दिन राजा का पुरोहित शहर से नदी पर गया, वहाँ स्नान किया, इत्र और मालाएँ लगाकर अपने सबसे उत्तम वस्त्र पहने और शहर लौट आया। शहर के द्वार के मेहराब पर दो कौवे बैठे थे; उनमें से एक ने अपने साथी से कहा, "मैं इस ब्राह्मण के सिर को गंदा करना चाहता हूँ।" "अरे, ऐसा मत करो," दूसरे ने कहा; "क्योंकि यह ब्राह्मण एक महान व्यक्ति है, और महान व्यक्ति के क्रोध को आमंत्रित करना बुरा होता है। यदि तुम उसे क्रोधित करोगे, तो वह हमारे पूरे वंश का नाश कर सकता है।" "मुझे करना ही होगा," पहले ने कहा। "ठीक है, तुम ज़रूर पकड़े जाओगे," दूसरे ने कहा और तेज़ी से उड़ गया। जैसे ही ब्राह्मण प्राचीर के नीचे पहुँचा, कौवे ने उस पर ऐसे गंदगी गिराई मानो कोई माला गिरा रहा हो। क्रोधित ब्राह्मण ने तब सभी कौवों के प्रति घृणा उत्पन्न कर ली।

अब संयोग से, एक अनाज भंडार की रखवाली करने वाली दासी ने भंडार के द्वार पर चावल धूप में फैला रखे थे और उसे देख रही थी, तभी उसे नींद आ गई। तभी एक ऊनी बकरी आई और चावल खाने लगी, जब तक कि लड़की की नींद नहीं खुली और उसने उसे भगा दिया। बकरी दो-तीन बार वापस आई, जैसे ही वह सो जाती, और चावल खा जाती। इसलिए जब उसने तीसरी बार उसे भगा दिया, तो उसने सोचा कि बकरी के बार-बार आने से उसका आधा चावल खत्म हो जाएगा और उसे हमेशा के लिए भगाने के लिए कुछ करना होगा ताकि उसे इतना बड़ा नुकसान न हो। इसलिए उसने एक जलती हुई मशाल ली और बैठ गई, हमेशा की तरह सोने का नाटक

किया। जब बकरी चावल खा रही थी, तो वह अचानक उठी और अपनी मशाल से उसकी ऊनी पीठ पर मारा। देखते ही देखते बकरी की ऊनी खाल में आग लग गई और दर्द कम करने के लिए वह हाथी के अस्तबल के पास बने एक घास के शेड में घुस गई और घास में लोटने लगी। इससे शेड में आग लग गई और लपटें अस्तबल तक फैल गईं। जैसे ही इन अस्तबलों में आग लगी, हाथी पीड़ित होने लगे और उनमें से कई बुरी तरह जल गए, जिनका इलाज हाथी चिकित्सकों के लिए भी संभव नहीं था। जब यह बात राजा को पता चली, तो उन्होंने अपने पुजारी से पूछा कि क्या उन्हें हाथियों के इलाज का तरीका पता है। पुजारी ने कहा, "जी महाराज, मुझे पता है," और जब उनसे और स्पष्टीकरण मांगा गया, तो उन्होंने बताया कि उनका नुस्खा कौवों की चर्बी है। तब राजा ने कौवों को मारने और उनकी चर्बी निकालने का आदेश दिया। फिर कौवों का बड़े पैमाने पर वध किया गया, लेकिन उनमें से किसी में भी चर्बी नहीं मिली, और वे तब तक मारते रहे जब तक कि हर जगह मरे हुए कौवों के ढेर नहीं लग गए। और सभी कौवों में बड़ा भय फैल गया।

उन दिनों बोधिसत्व एक विशाल कब्रिस्तान में, अस्सी हज़ार कौवों के झुंड के मुखिया के रूप में निवास करते थे। इनमें से एक कौवे ने उन्हें कौवों पर छाए भय की सूचना दी। बोधिसत्व ने महसूस किया कि इस कार्य को करने वाला उनके सिवा कोई और नहीं है, इसलिए उन्होंने अपने परिवार को इस भय से मुक्त करने का संकल्प लिया। दस सिद्धियों का अध्ययन करते हुए और दयालुता को अपना मार्गदर्शक मानते हुए, वे बिना रुके सीधे राजा के महल तक उड़ गए और खुली खिड़की से अंदर प्रवेश करके राजा के सिंहासन के नीचे उतर गए। तुरंत ही एक सेवक ने पक्षी को पकड़ने का प्रयास किया, लेकिन राजा ने कक्ष में प्रवेश करते ही उसे रोक दिया।

पल भर में संभलकर, उस महान सत्ता ने दयालुता को याद करते हुए राजा के सिंहासन के नीचे से आकर राजा से कहा, “महाराज, एक राजा को यह सिद्धांत याद रखना चाहिए कि राजाओं को अपने राज्य पर शासन करते समय वासना और अन्य बुरी भावनाओं के अनुसार नहीं चलना चाहिए। कोई भी कार्य करने से पहले, पहले पूरी बात की जांच-परख कर उसे जान लेना उचित है, और उसके बाद ही वह कार्य करना चाहिए जो लाभकारी हो। यदि राजा वह कार्य करते हैं जो लाभकारी नहीं है, तो वे हजारों लोगों में घोर भय, यहाँ तक कि मृत्यु का भय भी पैदा कर देते हैं। और कौवों की चर्बी का विधान करते समय, आपके पुजारी ने प्रतिशोध की भावना से झूठ बोला था; क्योंकि कौवों में चर्बी नहीं होती।”

इन शब्दों से राजा का हृदय प्रसन्न हो गया और उन्होंने बोधिसत्व को सोने के सिंहासन पर बैठने और वहाँ पंखों के नीचे उत्तम तेलों से अभिषेक करने तथा सोने के पात्रों में राजा के विशेष भोजन और पेय परोसने का अनुरोध किया। जब बोधिसत्व तृप्त और शांत हो गए, तो राजा ने कहा, "हे ऋषि, आप कहते हैं कि कौवों में वसा नहीं होती। ऐसा क्यों है?"

“इस प्रकार,” बोधिसत्व ने एक ऐसी वाणी से उत्तर दिया जिससे पूरा महल गूंज उठा, और उन्होंने इस श्लोक में सत्य की घोषणा की:-

निरंतर भय में, समस्त मानव जाति को शत्रु मानते हुए,
उनका जीवन बीत चुका है; इसलिए कौवों में चर्बी नहीं बची है।
यह स्पष्टीकरण देने के बाद, बोधिसत्व ने राजा को उपदेश देते हुए कहा, "महाराज, राजाओं को कभी भी पूरी बात की जांच-परख किए बिना कोई कार्य नहीं करना चाहिए।" राजा प्रसन्न हुए और उन्होंने अपना राज्य बोधिसत्व के चरणों में समर्पित कर दिया, लेकिन बोधिसत्व ने राजा को राज्य वापस सौंप दिया और उन्हें पंच नियमों में स्थापित करते हुए सभी जीवित प्राणियों को हानि से बचाने की विनती की। इन शब्दों से प्रभावित होकर राजा ने सभी जीवित प्राणियों को सुरक्षा प्रदान की, और विशेष रूप से कौवों के प्रति अत्यंत उदार रहे। वे प्रतिदिन उनके लिए छह बोरी चावल पकाते और उसे स्वादिष्ट बनाते थे, और यह कौवों को दिया जाता था। परन्तु बोधिसत्व को वही भोजन दिया जाता था जो केवल वे स्वयं खाते थे।

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म का वर्णन करते हुए कहा, "उन दिनों आनंद बनारस के राजा थे, और मैं स्वयं कौवों का राजा था।"

फुटनोट:

(1)सं. 465.

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **गोधा-जातक2**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

जातक क्रमांक 141
गोधा-जातक

"बुरी संगति।"--यह कहानी गुरु ने बाँस के जंगल में एक गद्दार भिक्षु (भाई) के बारे में सुनाई थी। प्रारंभिक घटना वही है जो महिला-मुख जातक (*1) में वर्णित है।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, तब बोधिसत्व का जन्म एक इगुआना (बड़ी छिपकली) के रूप में हुआ। बड़े होकर वे नदी किनारे एक बड़े बिल में सैकड़ों अन्य इगुआनों के साथ रहने लगे। बोधिसत्व का एक पुत्र था, जो एक छोटा इगुआना था और एक गिरगिट से उनकी गहरी मित्रता थी। वे गिरगिट के बाल नोचते और उसे गले लगाते थे। जब इस घनिष्ठता की खबर इगुआनों के राजा को मिली, तो उन्होंने अपने पुत्र को बुलवाया और कहा कि ऐसी मित्रता उचित नहीं है, क्योंकि गिरगिट नीच प्राणी होते हैं, और यदि यह घनिष्ठता जारी रही, तो इगुआनों (बड़ी छिपकलियों) के पूरे कबीले पर विपत्ति आ जाएगी। उन्होंने अपने पुत्र से गिरगिट से कोई संबंध न रखने को कहा। लेकिन पुत्र ने अपनी घनिष्ठता जारी रखी। बोधिसत्व ने बार-बार अपने बेटे से बात की, लेकिन जब उनके शब्दों का कोई फायदा नहीं हुआ और उन्होंने गिरगिट से इगुआना (बड़ी छिपकलियों) को होने वाले खतरे को भांप लिया, तो उन्होंने उनके बिल के एक तरफ एक निकास द्वार कटवा दिया, ताकि जरूरत पड़ने पर भागने का एक रास्ता हो सके।

समय बीतने के साथ-साथ, नन्हा इगुआना बहुत बड़ा हो गया, जबकि गिरगिट का आकार बिल्कुल नहीं बढ़ा। जब उस नन्हे विशालकाय (इगुआना) के ये पर्वतीय आलिंगन असहनीय रूप से कष्टदायक हो गए, तो गिरगिट को आभास हुआ कि यदि ये कुछ दिनों तक और जारी रहे तो उसकी मृत्यु हो जाएगी। उसने एक शिकारी के साथ मिलकर इगुआनाओं (बड़ी छिपकलियों) के पूरे कबीले को नष्ट करने का निश्चय किया।

गर्मी के एक दिन, आंधी-तूफान के बाद चींटियाँ बाहर निकल आईं (*2), और इगुआना इधर-उधर दौड़कर उन्हें पकड़कर खाने लगे। तभी जंगल में एक इगुआना पकड़ने वाला फावड़ा और कुत्तों के साथ इगुआना खोदने आया; और गिरगिट ने सोचा कि वह उस शिकारी के रास्ते में कितना बड़ा झंझट खड़ा कर देगा। इसलिए वह उस आदमी के पास गया, और उसके सामने लेटकर पूछा कि वह जंगल में क्यों आया है। जवाब मिला, "इगुआना पकड़ने।" गिरगिट ने कहा, "अच्छा, मुझे पता है कि सैकड़ों इगुआना का बिल कहाँ है; आग और झाड़ियाँ लेकर मेरे पीछे आओ।" और वह शिकारी को उस जगह ले गया जहाँ इगुआना रहते थे। गिरगिट ने कहा, "अब, अपना ईंधन वहाँ डालो और इगुआना को धुएँ से बाहर निकालो। इस बीच अपने कुत्तों को चारों ओर रखो और अपने हाथ में एक बड़ी छड़ी ले लो। फिर जैसे ही इगुआना बाहर निकलें, उन्हें मार गिराओ और मारे गए इगुआना का ढेर बना दो।" ऐसा कहते हुए, धूर्त गिरगिट पास ही एक जगह पर गया, जहाँ वह सिर ऊपर करके लेट गया और मन ही मन कहने लगा, "आज मैं अपने शत्रु की पराजय देखूंगा।"

शिकारी ने इगुआनाओं को धुएं से बाहर निकालने का काम शुरू किया; और अपनी जान के डर से वे अपने बिलों से इधर-उधर भागने लगे। जैसे ही वे बाहर आए, शिकारी ने उनके सिर पर वार किया, और अगर वह चूक गया तो वे उसके कुत्तों का शिकार बन गए। इस तरह इगुआनाओं में भारी नरसंहार हुआ। यह जानकर कि यह गिरगिट का काम है, बोधिसत्व रोते हुए बोले, "दुष्टों से कभी मित्रता नहीं करनी चाहिए, क्योंकि ऐसे लोग अपने समूह में दुःख लाते हैं। एक दुष्ट गिरगिट ने इन सभी इगुआनाओं की कमजोरी साबित कर दी है।" ऐसा कहकर, वह अपने द्वारा बनाए गए निकास द्वार से भाग निकले और यह श्लोक बोला:-

बुरी संगति कभी अच्छी संगति में तब्दील नहीं होती।
एक इकलौते गिरगिट के साथ दोस्ती के माध्यम से
इगुआना की पूरी प्रजाति का अंत हो गया।

अपना उपदेश समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "देवदत्त उन दिनों का गिरगिट था; यह गद्दार भाई (भिक्षु) अवज्ञाकारी युवा इगुआना था, बोधिसत्व का पुत्र; और मैं स्वयं इगुआनाओं का राजा हूँ।"

फुटनोट:

(1)सं. (26).

(2) मक्खिका से तात्पर्य उन पंखों से हो सकता है जो चींटियों (या दीमकों) को भारत में वर्षा ऋतु के आरंभ में मिलते हैं।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> सिगला - **जातक2**
स्रोत: *रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-142-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 142
सिगाला-जातक

"तुम्हारी बढ़ती पकड़" - यह कहानी गुरु ने बाँस के जंगल में सुनाई थी, जिसमें देवदत्त द्वारा उन्हें जान से मारने की कोशिश का वर्णन था। सत्य के हॉल में भिक्षुओं को इस विषय पर चर्चा करते हुए सुनकर गुरु ने कहा कि देवदत्त ने जैसा अब किया, वैसा ही उसने अतीत में भी किया था, परन्तु अपने दुष्ट इरादे में असफल रहा - और इसका उसे घोर खेद हुआ। ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बेहावे में राज कर रहे थे, तब बोधिसत्व सियार के रूप में पैदा हुए और एक श्मशान वन में सियारों के एक बड़े समूह के साथ रहते थे, जिनके वे राजा थे। उस समय राजगृह नगर में एक उत्सव चल रहा था, जो बहुत ही उमस भरा था और जिसमें सभी लोग जमकर शराब पी रहे थे। कुछ बदमाशों ने खूब सारा खाना-पीना बटोर लिया और अपने सबसे अच्छे कपड़े पहनकर गाने गाते हुए खूब मौज-मस्ती की। आधी रात तक सारा मांस खत्म हो गया, हालांकि शराब अभी भी चल रही थी। तब उनमें से एक ने और मांस मांगा और उसे बताया गया कि मांस नहीं बचा है, तो उसने कहा, "जब तक मैं यहाँ हूँ, खाने की कमी नहीं होती। मैं श्मशान वन जाकर लाशें खाने वाले एक सियार को मारूंगा और कुछ मांस लेकर आऊंगा।" ऐसा कहकर उसने एक गदा उठाई और नाले के रास्ते शहर से बाहर निकल गया, जहाँ वह गदा हाथ में लिए लेट गया और मरने का नाटक करने लगा। तभी, अन्य सियारों के पीछे-पीछे बोधिसत्व आए और उन्होंने नकली शव को देखा। धोखे का संदेह होने पर उन्होंने मामले की छानबीन करने का निश्चय किया। इसलिए वे हवा की दिशा वाली ओर गए और गंध से जान गए कि वह व्यक्ति वास्तव में मरा नहीं है। उसे जाने से पहले उसे मूर्ख साबित करने का निश्चय करके, बोधिसत्व चुपके से पास गए और अपने दांतों से गदा को पकड़कर खींचने लगे। उस दुष्ट ने गदा नहीं छोड़ी: बोधिसत्व के आने का आभास न होने पर, उसने और कसकर पकड़ लिया। इस पर बोधिसत्व एक-दो कदम पीछे हट गए और बोले, "हे मेरे भले मनुष्य, यदि तुम मर चुके होते, तो जब मैं तुम्हारी गदा खींच रहा था, तब तुम उसे और कसकर नहीं पकड़ते, और इस प्रकार तुम स्वयं को धोखा दे देते।" ऐसा कहकर उन्होंने यह श्लोक कहा:-

क्लब पर आपकी मजबूत पकड़ स्पष्ट रूप से दिखाई दे रही थी।
तुम्हारा छल-कपट—मुझे लगता है तुम कोई लाश नहीं हो।
जब उसे पता चला कि वह पकड़ा गया है, तो वह बदमाश उछलकर खड़ा हो गया और बोधिसत्व पर अपना गदा फेंक दिया, लेकिन उसका निशाना चूक गया। उसने कहा, "दूर हट जा, जानू! इस बार मैं तुम्हें नहीं मार पाया।" बोधिसत्व ने मुड़कर कहा, "हाँ, तुम मुझे नहीं मार पाए, लेकिन निश्चिंत रहो, तुम महान नरक और सोलह छोटे नरकों की यातनाओं से नहीं बचोगे।"

खाली हाथ, वह बदमाश कब्रिस्तान से निकला और एक नाले में नहाने के बाद उसी रास्ते से वापस शहर में चला गया जिससे वह आया था।

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "देवदत्त उस समय का दुष्ट था, और मैं गीदड़ों का राजा था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **विरोचन-जातक**
स्रोत: *रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-143-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 143

विरोचना-जातक

"तुम्हारा क्षत-विक्षत शव।" - यह कहानी गुरु ने बाँस के वन में सुनाई थी, जिसमें देवदत्त द्वारा गयासिसा (*1) में बुद्ध का रूप धारण करने के प्रयासों का वर्णन था। जब उनकी आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि उनसे विमुख हो गई और उन्होंने अपना वह मान-सम्मान और लाभ खो दिया जो कभी उनका था, तो उन्होंने व्याकुलता में गुरु से पंचसूत्रों को स्वीकार करने का अनुरोध किया। मना किए जाने पर, उन्होंने भिक्षु संघ में विभाजन कर दिया और बुद्ध के दो प्रमुख शिष्यों के पाँच सौ युवा भिक्षुओं को लेकर गयासिसा चले गए, जो अभी तक धर्ममार्ग और नियम से अनभिज्ञ थे। उनके साथ उन्होंने उसी परिसर में एकत्रित एक अलग भिक्षु संघ के कार्य किए। इन युवा भिक्षुओं के ज्ञान के परिपक्व होने के समय को भलीभांति जानते हुए, गुरु ने दो वरिष्ठ भिक्षुओं को उनके पास भेजा। उन्हें देखकर, देवदत्त ने (जैसा कि वह स्वयं को प्रसन्न करता था) बुद्ध की निपुणता से रात भर उन्हें समझाने का कार्य प्रसन्नतापूर्वक किया। फिर बुद्ध का रूप धारण करके उन्होंने कहा, “हे पूज्य सारिपुत्र, सभा अभी भी जागृत और अचेत है। क्या आप कृपा करके भाइयों को संबोधित करने के लिए कोई धार्मिक प्रवचन दे सकते हैं? परिश्रम से मेरी कमर दुख रही है, और मुझे कुछ देर आराम करना है।” इतना कहकर वे लेट गए। फिर उन दो प्रमुख शिष्यों ने भाइयों को उपदेश दिया, उन्हें पुण्य और मार्ग के बारे में ज्ञान दिया, और अंत में वे सभी को बांस के वन में वापस जाने के लिए राजी कर लिया।

मठ को भिक्षुओं से खाली पाकर, कोकालिका देवदत्त के पास गया और उसे बताया कि कैसे दोनों शिष्यों ने उसके अनुयायियों को तितर-बितर कर दिया और मठ को खाली छोड़ दिया; "और फिर भी तुम यहाँ सो रहे हो," उसने कहा। ऐसा कहते हुए उसने देवदत्त के बाहरी वस्त्र उतार दिए और इतनी निर्दयता से उसकी छाती पर लात मारी मानो वह मिट्टी की दीवार में छत की कील ठोक रहा हो। देवदत्त के मुँह से खून बह निकला, और उसके बाद से वह उस प्रहार के प्रभावों से पीड़ित रहा (*2)।

गुरु ने सारिपुत्र से पूछा, "जब तुम वहाँ पहुँचे, तो देवदत्त क्या कर रहा था?" सारिपुत्र ने उत्तर दिया कि बुद्ध का रूप धारण किए हुए भी उसके साथ कुछ बुरा हुआ था। गुरु ने कहा, "सारिपुत्र, जैसे अभी हो रहा है, वैसे ही पहले भी देवदत्त ने मेरा अनुकरण किया था, जिससे उसे ही हानि हुई।" फिर, वरिष्ठ भिक्षु के अनुरोध पर, उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, तब वे एक अयालदार सिंह के रूप में हिमालय की स्वर्ण गुफा में रहते थे। एक दिन वे अपनी गुफा से उछलते हुए उत्तर-पश्चिम, दक्षिण-पूर्व की ओर देखते हुए शिकार की तलाश में निकले और ज़ोर से दहाड़ते रहे। उन्होंने एक विशाल भैंसा मारकर उसके मांस का उत्तम भाग खाया और फिर एक तालाब में उतरकर निर्मल जल पीकर अपनी गुफा की ओर चल दिए। तभी एक भूखा सियार अचानक सिंह से मिला और भागने में असमर्थ होकर उसके चरणों में गिर पड़ा। जब सिंह ने उससे पूछा कि वह क्या चाहता है, तो सियार ने उत्तर दिया, "हे प्रभु, मुझे अपना सेवक बना लीजिए।" "ठीक है," सिंह ने कहा; "मेरी सेवा करो और तुम्हें उत्तम मांस मिलेगा।" ऐसा कहकर वे सियार के साथ स्वर्ण गुफा चले गए। तब से सिंह का बचा हुआ मांस सियार को मिलता रहा और वह मोटा हो गया।

एक दिन अपनी मांद में लेटे हुए शेर ने सियार से कहा कि वह पहाड़ की चोटी से घाटियों का निरीक्षण करे और देखे कि क्या वहाँ कोई हाथी, घोड़ा या भैंस है, या कोई अन्य जानवर जिसे सियार पसंद करता है। यदि ऐसा कोई जानवर दिखाई दे, तो सियार को उसे बताना था और आदरपूर्वक कहना था, "हे प्रभु, अपनी शक्ति से हमें प्रसन्न करो।" तब शेर ने वादा किया कि वह उसे मारकर खाएगा और सियार को भी उसका एक हिस्सा देगा। इसलिए सियार पहाड़ों पर चढ़ जाता था और जब भी उसे नीचे अपनी पसंद के जानवर दिखाई देते, वह शेर को बताता और उसके चरणों में गिरकर कहता, "हे प्रभु, अपनी शक्ति से हमें प्रसन्न करो।" इस पर शेर फुर्ती से आगे बढ़ता और उस जानवर को मार डालता, चाहे वह मदमस्त हाथी ही क्यों न हो, और सियार के साथ उसके मांस का उत्तम भाग बाँट देता। भोजन से तृप्त होकर सियार अपनी मांद में लौट जाता और सो जाता।

समय बीतने के साथ-साथ सियार बड़ा होता गया, यहाँ तक कि वह घमंडी हो गया। उसने खुद से पूछा, "क्या मेरे भी चार पैर नहीं हैं? मैं दिन-प्रतिदिन दूसरों की उदारता का लाभ क्यों उठा रहा हूँ? अब से मैं अपने भोजन के लिए हाथियों और अन्य जानवरों को मारूंगा। जानवरों का राजा शेर तो उन्हें केवल 'हे प्रभु, अपनी शक्ति से चमक उठो' के मंत्र के कारण ही मारता है। मैं शेर को 'हे सियार, अपनी शक्ति से चमक उठो' कहने पर मजबूर करूँगा, और फिर मैं अपने लिए एक हाथी मारूंगा।" तदनुसार, वह शेर के पास गया और यह बताते हुए कि वह लंबे समय से शेर द्वारा मारे गए मांस पर ही जीवित रहा है, अपनी इच्छा व्यक्त की कि वह अपने द्वारा मारे गए हाथी को खाना चाहता है। अंत में, उसने शेर से निवेदन किया कि जब शेर पहाड़ पर हाथी की तलाश में जाए, तो उसे, सियार को, स्वर्ण गुफा में शेर के कोने में छिपने दे। जब उसे हाथी मिल गया, तो उसने शेर से कहा कि वह गुफा में आकर उससे कहे, 'हे सियार, अपनी शक्ति से चमक उठो।' उसने शेर से इतनी ईर्ष्या न करने की विनती की। शेर ने कहा, "सियार, हाथियों को केवल शेर ही मार सकते हैं, और दुनिया ने कभी किसी सियार को हाथियों का मुकाबला करते नहीं देखा। यह भ्रम छोड़ दो, और जो मैं मारता हूँ उसे खाते रहो।" लेकिन शेर चाहे

जो कह दे, सियार नहीं माना और अपनी विनती पर अड़ा रहा। अंततः शेर मान गया, और सियार को मांद में आराम करने के लिए कहकर, वह चोटी पर चढ़ गया और वहाँ से उसने एक मदमस्त हाथी को देखा। गुफा के मुँह पर लौटकर उसने कहा, "अपनी पूरी शक्ति से आगे बढ़ो, सियार।" तब सियार फुर्ती से सोने की मांद से बाहर निकला, चारों ओर देखा, और तीन बार जोर से दहाड़ते हुए हाथी पर झपटा, मानो उसकी गर्दन पकड़ने की कोशिश कर रहा हो। लेकिन निशाना चूकने पर वह हाथी के पैरों पर गिर पड़ा। क्रोधित हाथी ने अपना दाहिना पैर उठाया और सियार का सिर कुचल दिया, हड्डियों को चूर-चूर कर दिया। फिर हाथी ने शव को ढेर बनाकर उस पर गोबर फैला दिया और चिंघाड़ते हुए जंगल की ओर दौड़ पड़ा। यह सब देखकर बोधिसत्व ने कहा, "अब अपनी शक्ति से चमकते रहो, सियार," और यह श्लोक कहा:-

तुम्हारा क्षत-विक्षत शव, तुम्हारा मस्तिष्क मिट्टी में मिला हुआ,
आज आपने अपनी शक्ति से किस प्रकार चमक बिखेरी है, यह साबित करें।
बोधिसत्व ने ऐसा कहा और दीर्घायु होकर अपने कर्मों के फल के अनुसार फल भोगने के लिए समय रहते ही उनका देहांत हो गया।

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "देवदत्त उन दिनों का सियार था, और मैं शेर था।"

फुटनोट:

(1) जहाँ बुद्ध को ज्ञान प्राप्त हुआ।

(2) विनय वृत्तांत (कुल्लवग्ग 7:4) में लात मारने की घटना का उल्लेख नहीं है, बल्कि केवल इतना कहा गया है कि कोकालिका ने देवदत्त को "जगाया" और दलबदल की खबर सुनकर "देवदत्त के मुँह से गर्म खून बह निकला"। अन्य वृत्तांतों में कहा गया है कि देवदत्त की मृत्यु वहीं हो गई।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> नांगुठ - **जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-144-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 144
नांगुत्था-जातक

"घृणित जटावेद।" - यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी, जिसमें उन्होंने आजीविकों, या नग्न तपस्वियों की झूठी तपस्या का वर्णन किया था। परंपरा के अनुसार, जेतवन मठ के पीछे वे झूठी तपस्या करते थे (*1)। कई भिक्षुओं ने उन्हें वहाँ कष्टपूर्वक एड़ियों पर बैठे, चमगादड़ की तरह हवा में झूलते, कांटों पर लेटते, पाँच अग्नियों से स्वयं को झुलसाते आदि झूठी तपस्या करते देखा और भगवान बुद्ध से पूछा कि क्या इससे कोई लाभ होता है? गुरु ने उत्तर दिया, "बिल्कुल नहीं।" "पुराने समय में, बुद्धिमान और भले लोग अपने जन्म-अग्नि को लेकर वन में जाते थे, यह सोचकर कि ऐसी तपस्याओं से उन्हें लाभ होगा; परन्तु अग्नि को अर्पित किए गए सभी बलिदानों और इसी प्रकार की अन्य प्रथाओं से भी जब उन्हें कोई लाभ नहीं मिला, तो उन्होंने तुरंत जन्म-अग्नि को जल से बुझा दिया। ध्यान के एक कार्य से उन्हें ज्ञान और सिद्धियाँ प्राप्त हुईं और ब्रह्मलोक (परमलोक) का पद प्राप्त हुआ।" ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व का जन्म उत्तर देश में एक ब्राह्मण परिवार में हुआ और उनके जन्म के दिन उनके माता-पिता ने जन्म-अग्नि प्रज्वलित की।

सोलह वर्ष की आयु में उन्होंने उससे कहा, "पुत्र, तुम्हारे जन्म के दिन हमने तुम्हारे लिए जन्म अग्नि प्रज्वलित की थी। अब तुम चुनाव करो। यदि तुम गृहस्थ जीवन व्यतीत करना चाहते हो, तो तीनों वेदों का अध्ययन करो; परन्तु यदि तुम ब्रह्मलोक (परम स्वर्ग) में प्रवेश

करना चाहते हो, तो अपनी अग्नि को वन में ले जाओ और वहाँ उसकी देखभाल करो, ताकि महाब्रह्म की कृपा प्राप्त हो और तुम ब्रह्मलोक (परम स्वर्ग) में प्रवेश कर सको।"

अपने माता-पिता को यह कहकर कि पारिवारिक जीवन में उन्हें कोई आकर्षण नहीं है, वे जंगल में चले गए और एक आश्रम में अग्नि की देखभाल करते हुए रहने लगे। एक दिन सीमावर्ती गाँव में उन्हें एक बैल भेंट के रूप में दिया गया। जब वे उसे अपने आश्रम में लाए, तो उनके मन में अग्नि देव को गाय की बलि देने का विचार आया। लेकिन जब उन्हें पता चला कि उनके पास नमक नहीं है, और उन्हें लगा कि अग्नि देव बिना नमक के उनकी बलि नहीं खाएँगे, तो उन्होंने गाँव से नमक लाने के लिए वापस जाने का निश्चय किया। अतः उन्होंने बैल को बाँधा और गाँव की ओर चल पड़े।

जब वह चला गया, तो शिकारियों का एक समूह आया और बैल को देखकर उसे मार डाला और अपने लिए भोजन बनाया। जो उन्होंने नहीं खाया, उसे वे ले गए, केवल पूंछ, खाल और टांगें ही छोड़ गए। लौटकर केवल इन अवशेषों को देखकर ब्राह्मण ने कहा, "जब यह अग्नि देवता अपने लोगों की भी रक्षा नहीं कर सकता, तो वह मेरी रक्षा कैसे करेगा? उसकी सेवा करना व्यर्थ है, न इससे कोई लाभ होता है और न ही कोई लाभ।" इस प्रकार अग्नि की पूजा करने की सारी इच्छा खोकर उसने कहा, "हे अग्नि देवता, यदि आप स्वयं की रक्षा नहीं कर सकते, तो आप मेरी रक्षा कैसे करेंगे? मांस तो चला गया, अब आपको भीतरी अंगों से ही काम चलाना पड़ेगा।" ऐसा कहकर उसने पूंछ और लुटेरों के बचे हुए भाग को आग में फेंक दिया और यह श्लोक बोला:-

दुष्ट जटावेदा (*2), ये लो तुम्हारी पूंछ;
और इतना सब कुछ पाकर खुद को भाग्यशाली समझो!
बढ़िया मांस तो खत्म हो चुका है; आज पूंछ से ही काम चलाना पड़ेगा।
ऐसा कहकर उस महान पुरुष ने जल से आग बुझाई और संन्यासी बनने के लिए प्रस्थान किया। उन्होंने ज्ञान और सिद्धियाँ प्राप्त कीं और ब्रह्मलोक (परम स्वर्ग) में अपने पुनर्जन्म को सुनिश्चित किया।

अपना उपदेश समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "मैं वह तपस्वी था जिसने उन दिनों अग्नि को बुझाया था।"

फुटनोट:

(1)अत्यधिक तपस्वी तपस्याओं की सूची के लिए मज्झिमा निकया देखें, जिसका प्रारंभिक बौद्ध धर्म ने दृढ़ता से विरोध किया और इसके बजाय मध्य मार्ग को अपनाया।

(2) क्रमांक (35) देखें

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **राधा-जातक**
***स्रोत**: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-145-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 145
राधा जातक

"और कितने?"--यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें सांसारिक जीवन की पत्नी के प्रति लालसा का वर्णन है। इस प्रारंभिक कहानी की घटनाओं का वर्णन इंद्रिय-जातक (*1) में किया जाएगा।

गुरु ने भिक्षु से कहा, "स्त्री की रक्षा करना असंभव है; कोई रक्षक स्त्री को सही मार्ग पर नहीं रख सकता। तुमने स्वयं अतीत में पाया कि तुम्हारे सारे उपाय व्यर्थ थे; तो अब तुम और अधिक सफलता की आशा कैसे कर सकते हो?"

और ऐसा कहते हुए उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्याभिषेक था, तब बोधिसत्व एक तोते के रूप में पैदा हुए। काशी देश के एक ब्राह्मण ने उन्हें और उनके छोटे भाई को पिता तुल्य माना और उनका पालन-पोषण अपने बच्चों की तरह किया। बोधिसत्व का नाम पोत्थपाद और उनके भाई का नाम राधा था।

ब्राह्मण की पत्नी बहुत ही उद्दंड और दुष्ट स्वभाव की थी। जब वह काम के सिलसिले में घर से निकल रहा था, तो उसने दोनों भाइयों से कहा, "अगर तुम्हारी माँ, मेरी पत्नी, कोई शरारत करने का मन बनाए, तो उसे रोकना।" बोधिसत्व ने कहा, "हम रोकेंगे, पापा, अगर हम रोक सकते हैं; लेकिन अगर नहीं रोक सकते, तो हम चुप रहेंगे।"

इस प्रकार अपनी पत्नी को तोतों के हवाले करके ब्राह्मण अपने काम पर निकल पड़ा। उसके बाद से प्रतिदिन उसकी पत्नी दुराचार करती रही; उसके प्रेमियों का आना-जाना लगा रहा। यह देखकर राधा बोधिसत्व से बोली, “भाई, हमारे पिता ने विदाई के समय यही आदेश दिया था कि पत्नी दुराचार न करे, और अब वह दुराचार के सिवा कुछ नहीं कर रही है। आइए हम उसे रोकें।”

“भाई,” बोधिसत्व ने कहा, “तुम्हारे शब्द कुकर्म के शब्द हैं। तुम किसी स्त्री को अपनी बाहों में उठा लो, फिर भी वह सुरक्षित नहीं रहेगी। इसलिए असंभव को संभव करने का प्रयास मत करो।” और ऐसा कहते हुए उन्होंने यह श्लोक कहा:-

आधी रात और कितने लोगों को लेकर आएगी? आपकी योजना
निष्क्रिय है। पत्नी के प्रेम के अलावा और कुछ भी उसे रोक नहीं सकता।
उसमें कामुकता और पत्नी का प्यार बिल्कुल गायब है।

और इन कारणों से बोधिसत्व ने अपने भाई को ब्राह्मण की पत्नी से बात करने की अनुमति नहीं दी, जो अपने पति की अनुपस्थिति में अपनी इच्छानुसार घूमती रही। लौटने पर ब्राह्मण ने पोत्थपाद से अपनी पत्नी के व्यवहार के बारे में पूछा, और बोधिसत्व ने ईमानदारी से सारी घटना का विवरण दिया।

“पिताजी,” उसने कहा, “आप इस दुष्ट स्त्री से और क्या वास्ता रखना चाहेंगे?” और उसने आगे कहा, “पिताजी, अब जब मैंने अपनी माता के दुष्ट स्वभाव का खुलासा कर दिया है, तो हम यहाँ और नहीं रह सकते।” इतना कहकर उसने ब्राह्मण के चरणों में प्रणाम किया और राधा के साथ वन की ओर उड़ गया।

उनका पाठ समाप्त हुआ, गुरु ने चार सत्यों का उपदेश दिया, जिसके अंत में सांसारिक जीवन में पत्नी की लालसा रखने वाला भिक्षु प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की सिद्धि में स्थापित हो गया।

गुरु ने कहा, "ये पति-पत्नी उस समय के ब्राह्मण और उनकी पत्नी थे; आनंद राधा थे और मैं स्वयं पोत्थपाद था।"

फुटनोट:

(1)सं. 423.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **काक-जातक**2
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-146-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 146
काका-जातक

"हमारे गले थक गए हैं।" - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में कई वृद्ध भिक्षुओं को सुनाई थी। जब वे संसार में थे, तब वे श्रावस्ती नगर के धनी और प्रभावशाली अधिकारी थे, और आपस में घनिष्ठ मित्र थे। परंपरा के अनुसार, जब वे अच्छे कार्यों में लगे हुए थे, तब उन्होंने गुरु का उपदेश सुना। वे तुरंत बोले, "हम बूढ़े हो गए हैं; हमारे लिए घर-बार का क्या महत्व है? आइए हम भिक्षु संघ में शामिल हों और बुद्ध की सुंदर शिक्षाओं का अनुसरण करके दुखों का अंत करें।"

अतः उन्होंने अपनी सारी संपत्ति अपने बच्चों और परिवार में बाँट ली, और अपने आँसू बहाते परिवार को छोड़कर, गुरु से उन्हें भाईचारे में शामिल करने का निवेदन करने आए। परन्तु जब उन्हें शामिल कर लिया गया, तो उन्होंने भाईचारे का जीवन नहीं जिया; और अपनी वृद्धावस्था के कारण वे सत्य (*1) को आत्मसात करने में असफल रहे। गृहस्थ जीवन की तरह ही, अब भी भाईचारे में वे एक साथ रहते थे, और मठ के किनारे पर उन्होंने अपने लिए कई झोपड़ियाँ बना ली थीं। यहाँ तक कि जब वे भिक्षा मांगने जाते थे, तब भी वे आम तौर पर अपनी पत्नियों और बच्चों के घर जाते और वहीं भोजन करते थे। विशेष रूप से, इन सभी वृद्ध पुरुषों का भरण-पोषण उनमें से एक की पत्नी की उदारता से होता था, जिसके घर प्रत्येक व्यक्ति अपनी प्राप्त वस्तुएँ ले जाता और वहीं उसके द्वारा दिए गए चटनी और करी के साथ भोजन करता था। एक बार बीमारी के कारण वह अक्सर बीमार पड़ जाती थी; वृद्ध भाईचारे मठ लौट गए, और एक-दूसरे के गले लगकर अपनी उपकारिणी, चटनी देने वाली की मृत्यु पर विलाप करते हुए इधर-उधर घूमने लगे। उनके रोने की आवाज़ सुनकर भाई लोग यह जानने के लिए वहाँ पहुँचे कि उन्हें क्या तकलीफ़ हुई है। बूढ़े लोगों ने बताया कि उनकी दयालु उपकारिणी का निधन हो गया है और वे उनके खोने के गम में रो रहे हैं, क्योंकि उन्हें अब उनके जैसी कोई और नहीं मिलेगी। इस अन्यायपूर्ण कृत्य से स्तब्ध होकर, भाई लोगों ने सत्य के हॉल में बूढ़े लोगों के दुःख का कारण जानने के लिए आपस में बातचीत की और जब गुरु हॉल में आए और उन्होंने पूछा कि वे क्या चर्चा कर रहे हैं, तो उन्होंने गुरु को भी बताया। गुरु ने कहा, "अरे, भाइयों, पहले भी इसी स्त्री की मृत्यु पर लोग रोते-बिलखते रहे थे; उस समय वह एक कौआ थी और समुद्र में डूब गई थी, और लोग उसे निकालने के लिए समुद्र का सारा पानी निकालने के लिए कड़ी मेहनत कर रहे थे, तभी उस समय के बुद्धिमान लोगों ने उनकी रक्षा की।"

और इस तरह उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, तब बोधिसत्व एक समुद्री परी थे। एक कौआ अपने साथी के साथ भोजन की तलाश में समुद्र तट पर आया, जहाँ कुछ समय पहले ही कुछ लोग नागों को दूध, चावल, मछली, मांस और मादक पेय आदि का अर्पण कर रहे थे। कौआ और उसका साथी ऊपर चढ़े और अर्पण की सामग्री को जी भरकर खाया और खूब मादक पेय पिया। इस प्रकार वे दोनों बहुत नशे में हो गए। फिर वे समुद्र में मस्ती करना चाहते थे और लहरों पर तैरने की कोशिश कर रहे थे, तभी एक लहर कौए को समुद्र में बहा ले गई और एक मछली आई और उसे निगल गई।

“ओह, मेरी बेचारी पत्नी मर गई!” कौआ फूट-फूटकर रोने लगा। उसकी चीख सुनकर कौओं का एक झुंड वहाँ आ गया, यह जानने के लिए कि उसे क्या तकलीफ हुई है। जब उसने बताया कि उसकी पत्नी समुद्र में बह गई है, तो वे सब एक स्वर में रोने लगे। अचानक उन्हें ख्याल आया कि वे समुद्र से अधिक शक्तिशाली हैं और उन्हें बस इतना करना है कि उसे खाली करके अपने साथी को बचा लें! इसलिए वे अपनी चोंचों से मुंह भर-भरकर समुद्र का पानी निकालने लगे और जैसे ही उनके गले खारे पानी से जलने लगते, वे आराम करने के लिए सूखी ज़मीन पर आ जाते। वे तब तक मेहनत करते रहे जब तक उनके मुंह और जबड़े सूखकर सूज नहीं गए, उनकी आँखें लाल नहीं हो गईं और वे थकान से चूर होकर गिरने को तैयार हो गए। फिर निराशा में वे एक-दूसरे की ओर मुड़े और कहा कि समुद्र को खाली करने की उनकी मेहनत व्यर्थ है, क्योंकि जैसे ही वे एक जगह से पानी निकालते, और पानी आ जाता और उन्हें फिर से वही सारा काम करना पड़ता। वे समुद्र से पानी निकालने में कभी सफल नहीं होंगे। और ऐसा कहते हुए उन्होंने यह श्लोक कहा:-

हमारे गले थक गए हैं, हमारे मुंह में दर्द हो रहा है;
समुद्र हमेशा भरता रहता है।
तब सारे कौवे उसकी चोंच और आँखों की सुंदरता, उसके रंग-रूप, आकृति और मधुर आवाज की प्रशंसा करने लगे, और कहने लगे कि इन्हीं खूबियों के कारण समुद्र ने उसे उनसे चुराने की कोशिश की। लेकिन जब वे ये सब बकवास कर रहे थे, तभी समुद्र की परी ने समुद्र से एक राक्षस प्रकट किया और उन सबको भगा दिया। इस तरह वे बच गए।

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "वृद्ध भाई की पत्नी उन दिनों की मुर्गी-कौवा थी, और उसका पति नर कौवा था; अन्य वृद्ध भाई (भिक्षु) शेष कौवे थे, और मैं समुद्री परी था।"

फुटनोट:

(1) बौद्ध धर्म ने वृद्धावस्था के प्रति आदर को वृद्ध नौसिखियों के प्रति हल्के तिरस्कार के साथ जोड़ा, जिन्होंने सांसारिक जीवन के बाद, अपने दिनों और क्षमताओं का छोटा सा हिस्सा एक ऐसे शिक्षण को समर्पित किया, जिसे केवल कठिन चिंतन और उत्साही लगन से ही प्राप्त किया जा सकता था।

पिछला <<<<-----||-147-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 147
पुप्फरत्त-जातक

“मैं इसे पीड़ा नहीं मानता।”—यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक भिक्षु के बारे में सुनाई थी, जो वासना से ग्रस्त था। गुरु द्वारा पूछे जाने पर, उसने अपनी कमजोरी स्वीकार करते हुए बताया कि वह अपने सांसारिक जीवन की पत्नी के लिए तरस रहा था, “हे प्रभु!” उसने कहा, “वह इतनी प्यारी स्त्री है कि मैं उसके बिना नहीं रह सकता।”

“भाई (भिक्षु),” गुरु ने कहा, “वह तुम्हारे लिए हानिकारक है। पुराने समय में उसी के कारण तुम्हें सूली पर चढ़ाया गया था; और अपनी मृत्यु पर उसके लिए विलाप करने के कारण ही तुम नरक में पुनर्जन्म पाए। तो फिर अब तुम उसके लिए क्यों तरस रहे हो?” और ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्याभिषेक हो रहा था, तब बोधिसत्व का जन्म वायु देवता के रूप में हुआ। बनारस में कत्तिका का रात्रि उत्सव चल रहा था; शहर को देवताओं के नगर की तरह सजाया गया था और सभी लोग उत्सव मना रहे थे। एक गरीब आदमी के पास केवल दो मोटे कपड़े थे जिन्हें उसने धोकर और इस्त्री करके सौ नहीं, बल्कि हज़ार सिलवटें बना ली थीं। लेकिन उसकी पत्नी ने कहा, "मेरे पति, मुझे पहनने के लिए एक केसर के रंग का कपड़ा चाहिए, एक बाहर पहनने के लिए और एक अंदर पहनने के लिए, क्योंकि मैं उत्सव में आपके गले में लटकती रहूंगी।"

"हम जैसे गरीब लोगों को कुसुम कैसे मिलेंगे?" उसने कहा। "अपने साफ-सुथरे कपड़े पहनो और मेरे साथ आओ।"

"अगर मैं इन्हें कुसुम के रंग से नहीं रंगवा सकती, तो मैं बिल्कुल नहीं जाऊंगी," उसकी पत्नी ने कहा। "किसी और औरत को अपने साथ त्यौहार पर ले चलो।"

"अब मुझे इस तरह क्यों सता रहे हो? हमें कुसुम कैसे मिलेंगे?"

"जहां चाह होती है, वहां राह होती है," महिला ने पलटकर जवाब दिया। "क्या राजा के संग्रहालयों में कुसुम के फूल नहीं हैं?"

"पत्नी," उसने कहा, "राजा के कक्ष किसी राक्षस से प्रेतवाधित तालाब की तरह हैं। इतने मजबूत पहरेदार के रहते वहाँ प्रवेश करना असंभव है। इस कल्पना को त्याग दो और जो तुम्हारे पास है उसी में संतुष्ट रहो।"

"लेकिन जब रात का अंधेरा होता है," उसने कहा, "तो फिर किसी पुरुष को अपनी मर्जी से कहीं भी जाने से कौन रोक सकता है?"

जब वह अपनी विनती पर अड़ी रही, तो अंततः उसके प्रेम ने उसे झुकने पर मजबूर कर दिया और उसने उसकी इच्छा पूरी करने का वादा किया। अपनी जान जोखिम में डालकर, वह रात में तेज़ी से शहर से निकल गया और बाड़ तोड़कर मंदिर में घुस गया। बाड़ तोड़ने से हुए शोर से पहरेदार जाग गए और चोर को पकड़ने के लिए बाहर आ गए। उन्होंने उसे तुरंत पकड़ लिया और मार-पीट और गालियों के साथ जंजीरों में जकड़ दिया। सुबह उसे राजा के सामने लाया गया, जिसने तुरंत उसे ज़िंदा सूली पर चढ़ाने का आदेश दिया। उसके हाथ पीछे बंधे हुए उसे घसीटकर शहर से बाहर ले जाया गया और फांसी के ढोल की आवाज़ के बीच उसे फांसी के लिए ले जाया गया, जहाँ उसे ज़िंदा सूली पर चढ़ा दिया गया। उसकी पीड़ा असहनीय थी; और तो और, कौवे उसके सिर पर बैठ गए और अपनी नुकीली चोंचों से उसकी आँखें नोचने लगे। फिर भी, अपने दर्द की परवाह किए बिना, और केवल अपनी पत्नी के बारे में सोचते हुए, वह व्यक्ति मन ही मन बुदबुदाया, "हाय, मैं तुम्हारे साथ केसरिया रंग के वस्त्र पहनकर, तुम्हारी बाहों में अपना हाथ डाले, त्योहार पर जाने को बहुत याद करूंगा।" ऐसा कहते हुए, उसने यह छंद कहा:-

मैं इसे पीड़ा नहीं मानता कि यहाँ सूली पर चढ़ाए जाने के बाद,

कौवों की वजह से मैं दुविधा में हूँ। मेरा गहरा दर्द यही है,
मेरी प्यारी पत्नी छुट्टी नहीं मनाएगी
चमकीले लाल रंग के वस्त्र पहने हुए।
और जब वह अपनी पत्नी के बारे में इस प्रकार बड़बड़ा रहा था, तभी उसकी मृत्यु हो गई और वह नरक में पुनर्जन्म लिया।

अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "ये पति-पत्नी उन दिनों भी पति-पत्नी थे, और मैं वायु की आत्मा थी जिसने उनकी कहानी को प्रकट किया।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> सिगला - **जातक**3
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-148-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 148
सिगाला-जातक

"एक बार धोखा खाने के बाद, दोबारा सावधान रहना चाहिए।" - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में इच्छाओं को वश में करने के बारे में सुनाई थी।

हमें बताया गया है कि श्रावस्ती शहर के व्यापारियों के लगभग पाँच सौ धनी मित्रों ने गुरु की शिक्षाओं को सुनकर सत्य के प्रति अपना हृदय समर्पित कर दिया और भिक्षु संघ में शामिल होकर वे जेतवन मठ में उस भाग में रहने लगे जिसे अनाथपिंडिका ने सोने के टुकड़ों से सटाकर बनाया था (*1)।

एक रात के मध्य में उन पर कामवासना के विचार हावी हो गए, और अपनी व्याकुलता में वे उन कामवासनाओं को पुनः धारण करने के लिए तत्पर हो उठे जिन्हें उन्होंने त्याग दिया था। उसी क्षण गुरु ने अपने असीम ज्ञान का दीपक ऊँचा उठाया ताकि वे जान सकें कि जेतवन मठ में भिक्षुओं के मन में किस प्रकार की वासना उत्पन्न हुई है, और उनके हृदय को पढ़कर उन्होंने पाया कि उनके भीतर कामवासना और वासना जागृत हो गई है। जैसे एक माँ अपने इकलौते बच्चे की रक्षा करती है, या जैसे एक आँख वाला व्यक्ति अपनी बची हुई एक आँख का ध्यान रखता है, वैसे ही गुरु अपने शिष्यों की रक्षा करते हैं; सुबह हो या शाम, चाहे जिस भी वक्त उनकी वासनाएँ उन पर हावी हों, वे अपने शिष्यों को पराजित नहीं होने देते, बल्कि उसी वक्त उनकी प्रचंड कामवासनाओं को वश में कर लेते हैं। इसी कारण उनके मन में यह विचार आया, "यह ठीक वैसा ही है जैसे चोर किसी सम्राट के शहर में सेंध लगाते हैं; मैं इन भाइयों को सीधे सत्य का ज्ञान दूंगा, ताकि उनकी वासनाओं को वश में करके मैं उन्हें अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) तक पहुंचा सकूं।"

अत: वे अपने सुगंधित कक्ष से बाहर आए और मधुर स्वर में आदरणीय वरिष्ठ भिक्षु आनंद, जो धर्म के कोषाध्यक्ष थे, का नाम लेकर उन्हें आमंत्रित किया। वरिष्ठ भिक्षु आए और विधिपूर्वक प्रणाम करते हुए गुरु के समक्ष खड़े होकर उनकी इच्छा जानने का प्रयास किया। तब गुरु ने उनसे जेतवन मठ के उस भाग में रहने वाले सभी भिक्षुओं को अपने सुगंधित कक्ष में एकत्रित करने का अनुरोध किया। परंपरा के अनुसार, गुरु का विचार था कि यदि वे केवल उन पाँच सौ भिक्षुओं को बुलाते, तो वे यह निष्कर्ष निकाल लेते कि गुरु उनकी कामुक मनोदशा से अवगत हैं और अपनी उत्तेजना के कारण सत्य को ग्रहण करने से विमुख हो जाते; अतः उन्होंने वहाँ रहने वाले सभी भिक्षुओं को बुलाया। वरिष्ठ भिक्षु ने एक चाबी ली और एक-एक कक्ष में जाकर भिक्षुओं को तब तक आमंत्रित करते रहे जब तक कि सभी सुगंधित कक्ष में एकत्रित नहीं हो गए। तब उन्होंने बुद्ध-आसन को तैयार किया। पृथ्वी पर विराजमान सिनेरु पर्वत की तरह गरिमामय भाव से, गुरु बुद्ध-आसन पर विराजमान हुए, और अपने चारों ओर छह रंगों के प्रकाश की दो-दो मालाओं का प्रकाश फैलाया, जो थाली के आकार, चंदवा के आकार और मीनार के आकार के पिंडों में विभाजित होकर, बिजली की किरणों की तरह आकाश तक पहुँच गया। यह ठीक वैसा ही था जैसे सूर्योदय के समय सागर की गहराई में हलचल मच जाती है।

श्रद्धापूर्वक श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए और आदरपूर्ण हृदय से, ब्रदरन ने प्रवेश किया और उनके चारों ओर अपनी सीटें ग्रहण कीं, मानो उन्हें एक नारंगी पर्दे के भीतर घेर लिया हो। फिर महाब्रह्म के स्वर में गुरु ने कहा, "भाइयों, एक भिक्षु को तीन बुरे विचारों - कामवासना, घृणा और क्रूरता - को अपने मन में नहीं रखना चाहिए। कभी यह मत सोचो कि बुरी इच्छाएँ तुच्छ होती हैं। क्योंकि ऐसी इच्छाएँ शत्रु के

समान होती हैं; और शत्रु कोई तुच्छ चीज़ नहीं है, बल्कि अवसर मिलने पर केवल विनाश ही करता है। ठीक उसी प्रकार, इच्छा चाहे कितनी भी छोटी क्यों न हो, उसे बढ़ने देने मात्र से पूर्ण विनाश हो जाता है। इच्छा भोजन में विष के समान, त्वचा की खुजली के समान, विषैले साँप के समान, इंद्र के वज्र के समान है, जिससे सदा बचना चाहिए, सदा भयभीत रहना चाहिए। जब भी कोई इच्छा उत्पन्न हो, तो उसे हृदय में एक क्षण भी स्थान दिए बिना, विचार और अंतर्दृष्टि से उसी प्रकार निकाल देना चाहिए, जैसे कमल के पत्ते से वर्षा की बूँद तुरंत लुढ़क जाती है। पुराने समय के ज्ञानी लोग एक छोटी सी इच्छा से भी इतनी घृणा करते थे कि उसे बढ़ने से पहले ही कुचल देते थे।" और ऐसा कहते हुए उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, तब बोधिसत्व का पुनर्जन्म एक सियार के रूप में हुआ और वे नदी किनारे के जंगल में रहने लगे। गंगा नदी के किनारे एक बूढ़ा हाथी मर गया, और सियार ने उसका शव देखकर खुद को मांस का इतना बड़ा भंडार पाकर बहुत प्रसन्न किया। पहले उसने हाथी की सूंड को काटा, लेकिन वह हल के हैंडल को काटने जैसा था। सियार ने कहा, "यहाँ खाने को कुछ नहीं है," और उसने हाथी के दांत को काटने की कोशिश की। लेकिन वह भी हड्डियों को काटने जैसा था। फिर उसने कान को आजमाया, लेकिन वह भी सूप के किनारे को चबाने जैसा था। फिर उसने हाथी के पेट पर झपट्टा मारा, लेकिन वह भी अनाज की टोकरी जितना सख्त था। पैर भी कुछ बेहतर नहीं थे, वे भी ओखली जैसे थे। फिर उसने पूंछ को आजमाया, लेकिन वह भी मूसल जैसी थी। सियार ने कहा, "यह भी ठीक नहीं है।" और जब उसे कहीं और कोई स्वादिष्ट हिस्सा नहीं मिला, तो उसने हाथी का पिछला हिस्सा आजमाया और वह भी नरम केक खाने जैसा था। "आखिरकार," उसने कहा, "मुझे सही जगह मिल गई," और वह खाते हुए सीधे हाथी के पेट में घुस गया, जहाँ उसने गुर्दे, हृदय और बाकी सब कुछ खाकर अपनी प्यास बुझाई और खून से अपनी प्यास बुझाई। रात होने पर वह अंदर लेट गया। लेटे-लेटे उसके मन में यह विचार आया, "यह शव मेरे लिए मांस और घर दोनों है, तो मैं इसे क्यों छोड़ूँ?" इसलिए वह वहीं रुक गया और हाथी के भीतर रहने लगा, खाता रहा। समय बीतता गया, यहाँ तक कि गर्मी के सूरज और हवाओं ने हाथी की खाल को सुखाकर सिकोड़ दिया, यहाँ तक कि जिस रास्ते से सियार अंदर आया था वह बंद हो गया और अंदर घोर अंधेरा छा गया। इस प्रकार सियार मानो दुनिया से कट गया और दो दुनियाओं के बीच की जगह में कैद हो गया। खाल के बाद मांस सूख गया और खून भी खत्म हो गया। हताशा के उन्माद में, वह भागने की व्यर्थ कोशिश में अपनी कैद की दीवारों पर इधर-उधर दौड़ने लगा। लेकिन जैसे ही वह उबलते हुए तवे में चावल के गोले की तरह अंदर ऊपर-नीचे हो रहा था, तभी अचानक एक आंधी आ गई और मूसलाधार बारिश ने शव के खोल को गीला कर दिया और उसे उसकी पुरानी अवस्था में लौटा दिया, यहाँ तक कि उस रास्ते से एक तारे की तरह रोशनी चमक उठी जिससे सियार अंदर आया था। "बच गया! बच गया!" सियार चिल्लाया, और हाथी के सिर में पीछे हटकर, सिर के बल निकास द्वार की ओर झपटा। यह सच है कि वह अंदर तो चला गया, लेकिन अपने सारे बाल रास्ते में ही छोड़कर। पहले वह दौड़ा, फिर रुका, और फिर बैठ गया और अपने बाल रहित शरीर को देखा, जो अब ताड़ के तने की तरह चिकना था। "आह!" वह चिल्लाया, "यह दुर्भाग्य मेरे लालच के कारण ही हुआ है। अब से मैं न तो लालची होऊंगा और न ही कभी हाथी के शव में प्रवेश करूंगा।" और उसका भय इस श्लोक में व्यक्त हुआ:-

एक बार धोखा खाने के बाद, दोबारा सावधान रहना पड़ता है। ओह, मेरा डर कितना बड़ा था!
अब से मैं हाथियों के अंदरूनी अंगों से दूर रहूंगा।
और ये शब्द कहकर सियार भाग गया, और फिर कभी उसने न तो उस हाथी के शव की ओर देखा और न ही किसी अन्य हाथी के शव की ओर। और उसके बाद से वह कभी लालची नहीं हुआ।

अपना उपदेश समाप्त करते हुए गुरु ने कहा, "भाइयों (भिक्षुओं), कभी भी इच्छाओं को हृदय में जड़ जमाने न दो, बल्कि जहाँ कहीं से भी वे उत्पन्न हों, उन्हें उखाड़ फेंको।" चार सत्यों का उपदेश देने के बाद (जिसके समापन पर उन पाँच सौ भिक्षुओं ने अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) प्राप्त किया और शेषों ने मोक्ष (निर्वाण) की विभिन्न निम्न अवस्थाएँ प्राप्त कीं), गुरु ने जन्म का वर्णन इस प्रकार किया: "मैं स्वयं उन दिनों का सियार था।"

फुटनोट:

(1)या 'करोड़ों (10 मिलियन) से पक्का किया गया।' जातक 92 भी।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **एकापन्न-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-149-II---->>>> अगला

जातक क्रमांक 149
एकपन्न-जातक

"यदि विष घात लगाए बैठा हो।" - यह कहानी वैशाली नगर के दुष्ट लिच्छवी राजकुमार के बारे में गुरु ने तब सुनाई थी जब वे वैशाली नगर के निकट घने जंगल में स्थित एक गुंबददार घर में रह रहे थे। उन दिनों वैशाली नगर अत्यंत समृद्ध था। नगर के चारों ओर तिहरी दीवार थी, प्रत्येक दीवार दूसरी दीवार से एक लीग (4.23 किमी) की दूरी पर थी, और तीन द्वार थे जिन पर पहरेदार मीनारें बनी हुई थीं। उस नगर में राज्य का शासन चलाने के लिए सात हजार सात सौ सात राजा और उतने ही वायसराय, सेनापति और कोषाध्यक्ष होते थे। राजाओं के पुत्रों में एक लिच्छवी राजकुमार के नाम से प्रसिद्ध था, जो एक उग्र, आवेशपूर्ण और क्रूर युवक था, जो क्रोधित सर्प की तरह हमेशा दंड देता रहता था। उसका स्वभाव इतना आवेशपूर्ण था कि उसकी उपस्थिति में कोई दो-तीन शब्दों से अधिक नहीं बोल पाता था; और न ही माता-पिता, परिवार और न ही मित्र उसे सुधार सकते थे। अतः अंततः उसके माता-पिता ने उस उग्र युवक को सर्वज्ञानी बुद्ध के पास लाने का निश्चय किया, क्योंकि उन्हें यह अहसास हो गया था कि उनके पुत्र के उग्र स्वभाव को केवल वही शांत कर सकते हैं। अतः वे उसे गुरु के पास ले आए और विधिपूर्वक आदर करते हुए उनसे विनती की कि वे युवक को प्रवचन दें।

तब गुरु ने राजकुमार को संबोधित करते हुए कहा, "राजकुमार, मनुष्य को आवेशपूर्ण, क्रूर या हिंसक नहीं होना चाहिए। क्रूर वह है जो अपनी माँ, अपने पिता, बच्चे, भाई-बहनों, पत्नी, मित्रों और परिवार के प्रति समान रूप से कठोर और निर्दयी होता है; वह आगे बढ़कर काटने के लिए झपटने वाले विषैले साँप की तरह, जंगल में अपने शिकार पर झपटने वाले डाकू की तरह, निगलने के लिए आगे बढ़ने वाले राक्षस की तरह आतंक फैलाता है। क्रूर व्यक्ति इस जीवन के बाद सीधे नरक या किसी अन्य दंड स्थान में पुनर्जन्म लेगा; और इस जीवन में भी, चाहे वह कितना भी सुशोभित क्यों न हो, वह बदसूरत दिखता है। उसका चेहरा पूर्णिमा के चंद्रमा के समान सुंदर क्यों न हो, वह आग से झुलसे कमल के समान, गंदगी से सने सोने के टुकड़े के समान घृणित होता है। ऐसा क्रोध ही मनुष्यों को तलवार से आत्महत्या करने, विष खाने, फांसी लगाने और चट्टानों से कूदने के लिए प्रेरित करता है; और इस प्रकार, अपने ही क्रोध के कारण मृत्यु को प्राप्त करके, वे यातना में पुनर्जन्म लेते हैं। जो दूसरों को हानि पहुँचाते हैं, वे इस जीवन में भी घृणा के पात्र होते हैं और अपने पापों के कारण शरीर की मृत्यु के बाद नरक और दंड भोगेंगे; और जब वे पुनः मनुष्य के रूप में जन्म लेंगे, तो जन्म से ही उन्हें आँख, कान और हर प्रकार की बीमारियाँ सताती रहेंगी। इसीलिए सभी मनुष्यों को दयालुता दिखानी चाहिए और अच्छे कर्म करने चाहिए, तब निश्चित रूप से नरक और दंड का कोई भय नहीं रहेगा।

उस एक प्रवचन का राजकुमार पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि उसका अहंकार चूर-चूर हो गया; उसका घमंड और स्वार्थ दूर हो गया, और उसका हृदय दया और प्रेम से भर गया। उसने फिर कभी गाली-गलौज या मारपीट नहीं की, बल्कि वह दाँत निकाले हुए साँप की तरह, टूटे हुए पंजों वाले केकड़े की तरह, टूटे हुए सींगों वाले बैल की तरह कोमल हो गया।

इस मनोभाव परिवर्तन को देखकर भिक्षुओं ने सत्य के हॉल में आपस में चर्चा की कि कैसे लिच्छवी राजकुमार दुष्ट, जिसे उसके माता-पिता की निरंतर सलाह भी वश में नहीं कर पाई थी, सर्वज्ञानी बुद्ध की एक ही सलाह से वश में हो गया और विनम्र हो गया, और यह एक साथ छह मदमस्त हाथियों को वश में करने के समान था। यह कहना बिल्कुल सही था कि, 'हे भिक्षुओं, हाथी को वश में करने वाला उसे अपनी इच्छा अनुसार दाएं या बाएं, पीछे या आगे ले जाता है; इसी प्रकार घोड़े को वश में करने वाला और पूर्व वश में करने वाला घोड़ों और बैलों को वश में करते हैं; और इसी प्रकार भगवान बुद्ध, सर्वज्ञानी बुद्ध, जिसे वे प्रशिक्षित करना चाहते हैं, उसे उचित मार्गदर्शन देते हैं, उसे आठों दिशाओं में से किसी भी दिशा में अपनी इच्छा अनुसार ले जाते हैं, और अपने शिष्य को अपने से परे आकृतियों को पहचानने में सक्षम बनाते हैं।' 'बुद्ध ऐसे ही हैं और केवल वही हैं,' और इसी तरह आगे बढ़ते हुए, 'वे जो मनुष्यों के प्रशिक्षकों में श्रेष्ठ माने जाते हैं, सत्य के बंधन में मनुष्यों को झुकाने में सर्वोच्च हैं।' "क्योंकि, महोदय," भाइयों ने कहा, "सर्वोच्च बुद्ध के समान कोई भी मनुष्य प्रशिक्षक नहीं है।"

तभी गुरुजी सभागार में आए और उनसे पूछा कि वे किस विषय पर चर्चा कर रहे हैं। तब उन्होंने गुरुजी को बताया, और गुरुजी ने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि मेरी एक सलाह ने राजकुमार को पराजित किया हो; ऐसा पहले भी हो चुका है।"

और ऐसा कहते हुए उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व ने उत्तर देश में एक ब्राह्मण के रूप में पुनर्जन्म लिया। बड़े होकर उन्होंने सबसे पहले तक्षशिला में तीनों वेदों और सभी विद्याओं का अध्ययन किया और कुछ समय तक सांसारिक जीवन व्यतीत किया। लेकिन जब उनके माता-पिता का देहांत हो गया, तो वे हिमालय में रहने लगे और एक संन्यासी बन गए, जहाँ उन्होंने रहस्यवादी ज्ञान और उपलब्धियाँ प्राप्त कीं। वे वहाँ दीर्घकालीन जीवन व्यतीत करते रहे, जब तक कि नमक और जीवन की अन्य आवश्यकताओं ने उन्हें वापस मनुष्य मार्ग पर नहीं ला दिया। वे बनारस आए और राजमहल के उद्यान में अपना निवास स्थान बनाया। अगले दिन उन्होंने बड़ी सावधानी से वस्त्र धारण किए और एक संन्यासी के सर्वोत्तम वस्त्र पहनकर भिक्षा मांगने के लिए नगर में निकले और राजा के द्वार पर पहुँचे। राजा बैठे हुए थे और खिड़की से बोधिसत्व को देख रहे थे। उन्होंने मन ही मन गौर किया कि हृदय और आत्मा से ज्ञानी वह तपस्वी, अपनी निगाहें सीधे अपने सामने टिकाए, सिंह समान गरिमा के साथ आगे बढ़ रहे थे, मानो हर कदम पर वे हजार सिक्कों से भरा थैला रख रहे हों। राजा ने सोचा, "यदि कहीं अच्छाई का वास है, तो वह इसी व्यक्ति के हृदय में है।" इसलिए उन्होंने एक दरबारी को बुलाकर तपस्वी को अपने समक्ष लाने का आदेश दिया। दरबारी बोधिसत्व के पास गया और आदरपूर्वक उनके हाथ से भिक्षापात्र ग्रहण किया। बोधिसत्व ने कहा, "महाराज, क्या कहते हैं?" दरबारी ने उत्तर दिया, "राजा ने आपको बुलवाया है।" बोधिसत्व ने कहा, "मेरा निवास हिमालय में है, और मुझे राजा की कृपा प्राप्त नहीं है।"

अतः दरबारी वापस गया और उसने राजा को यह सूचना दी। यह सोचकर कि उस समय राजा के पास कोई गोपनीय सलाहकार नहीं था, राजा ने बोधिसत्व को लाने का आदेश दिया और बोधिसत्व आने के लिए सहमत हो गए।

राजा ने उनके प्रवेश पर अत्यंत विनम्रतापूर्वक उनका स्वागत किया और उन्हें राजसी छत्र के नीचे स्थित स्वर्ण सिंहासन पर बैठने के लिए कहा। राजा के स्वयं के भोजन के लिए तैयार किए गए उत्तम भोजन से बोधिसत्व को भोजन कराया गया।

तब राजा ने तपस्वी के निवास स्थान के बारे में पूछा और उसे पता चला कि उसका घर हिमालय में है।

"और अब आप कहाँ जा रहे हैं?"

"हे महाराज, बरसात के मौसम के लिए आवास की तलाश में।"

“आप मेरे बगीचे में क्यों नहीं निवास करते?” राजा ने सुझाव दिया। बोधिसत्व की सहमति प्राप्त करने और स्वयं भोजन करने के बाद, वह अपने अतिथि के साथ बगीचे में गए और वहाँ दिन और रात के लिए अलग-अलग कुटियाओं वाला एक आश्रम बनवाया। इस कुटिया में तपस्वी की आठ आवश्यक वस्तुएँ उपलब्ध थीं। बोधिसत्व को इस प्रकार स्थापित करने के बाद, राजा ने उन्हें माली की देखरेख में सौंप दिया और महल लौट गए। तब से बोधिसत्व राजा के बगीचे में रहने लगे और राजा प्रतिदिन दो या तीन बार उनसे मिलने आते थे।

राजा का एक उग्र और आवेशपूर्ण पुत्र था, जिसे दुष्ट राजकुमार के नाम से जाना जाता था, जो अपने पिता और परिवार के नियंत्रण से परे था। सलाहकारों, ब्राह्मणों और नागरिकों ने उस युवक को उसकी गलतियों के बारे में समझाया, लेकिन व्यर्थ। उसने उनकी सलाहों पर कोई ध्यान नहीं दिया। राजा को लगा कि अपने पुत्र को सुधारने की एकमात्र आशा उस गुणी तपस्वी में ही है। इसलिए अंतिम उपाय के रूप में उन्होंने राजकुमार को बोधिसत्व के हवाले कर दिया। बोधिसत्व राजकुमार के साथ बगीचे में तब तक चलते रहे जब तक वे एक नीम के पौधे के पास नहीं पहुँच गए, जिस पर अभी तक केवल दो ही पत्ते थे, एक एक तरफ और एक दूसरी तरफ।

बोधिसत्व ने कहा, "हे राजकुमार, इस छोटे से पेड़ का एक पत्ता चखकर देखो, और फिर पता चलेगा कि यह कैसा लगता है।"

युवक ने ऐसा ही किया; लेकिन जैसे ही उसने पत्ता अपने मुंह में डाला, उसने उसे गुस्से में थूक दिया और मुंह से उसका स्वाद निकालने के लिए खांसने और थूकने लगा।

"राजकुमार, क्या बात है?" बोधिसत्व ने पूछा।

“महाराज, आज तो यह वृक्ष केवल घातक विष का संकेत दे रहा है; परन्तु यदि इसे बढ़ने दिया गया तो यह अनेक लोगों की मृत्यु का कारण बनेगा,” राजकुमार ने कहा और फिर उस नन्हे से पौधे को उठाकर अपने हाथों में मसलते हुए ये पंक्तियाँ बोलीं:-

यदि छोटे पेड़ में जहर छिपा हो,
इस पूर्ण विकास का परिणाम क्या होगा?
तब बोधिसत्व ने उससे कहा, “राजकुमार, विषैले पौधे के बढ़ने के भय से तुमने उसे उखाड़ फेंका और टुकड़े-टुकड़े कर दिया। जैसा तुमने उस वृक्ष के साथ किया, वैसे ही इस राज्य के लोग, ऐसे क्रूर और आवेशपूर्ण राजकुमार के राजा बनने पर उसके क्रोध से भयभीत

होकर, तुम्हें सिंहासन पर नहीं बिठाएँगे, बल्कि तुम्हें इस नीम के वृक्ष की तरह जड़ से उखाड़कर वनवास भेज देंगे। इसलिए इस वृक्ष से सीख लो और अब से दयालुता दिखाओ और प्रेम में परिपूर्ण हो जाओ।"

उस क्षण से राजकुमार का स्वभाव बदल गया। वह विनम्र और शांत हो गया, दयालु और करुणा से परिपूर्ण हो गया। बोधिसत्व की सलाह का पालन करते हुए, जब अपने पिता की मृत्यु के बाद वह राजा बना, तो उसने दान और अन्य अच्छे कार्यों में अपना जीवन व्यतीत किया और अंत में अपने कर्मों के फल के अनुसार ही उसका निधन हुआ।

अपना प्रवचन समाप्त करते हुए गुरु ने कहा, "तो, भिक्षुओं, यह पहली बार नहीं है जब मैंने दुष्ट राजकुमार को वश में किया है; मैंने अतीत में भी ऐसा ही किया था।" फिर उन्होंने जन्म का परिचय देते हुए कहा, "आज का लिच्छवी दुष्ट राजकुमार वही दुष्ट राजकुमार था जिसकी कहानी में आनंद राजा के रूप में वर्णित है, और मैं वह तपस्वी था जिसने राजकुमार को सद्गुण की ओर प्रेरित किया था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **संजीव-जातक**
स्रोत *: रॉबर्ट चाल्मर्स द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-150-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 150
संजीव-जातक

"एक दुष्ट से मित्रता करो।" - यह कहानी गुरु ने बाँस के वन में राजा अजातशत्रु के झूठे गुरुओं (देवदत्त) के प्रति आसक्ति के बारे में सुनाई थी (*1)। वह बुद्धों के कट्टर शत्रु, नीच और दुष्ट देवदत्त में विश्वास रखते थे और देवदत्त को सम्मान देने की इच्छा से उन्होंने गयासिसा में एक मठ बनवाने में भारी धन खर्च किया। देवदत्त की दुष्ट सलाहों का अनुसरण करते हुए उन्होंने अपने पिता, जो अच्छे और गुणी थे और आध्यात्मिक मार्ग पर चल रहे थे, की हत्या कर दी, जिससे उन्होंने स्वयं भी अच्छे और सद्गुणों को प्राप्त करने का अवसर खो दिया और अपने ऊपर घोर पीड़ा ला दी।

देवदत्त के धरती में समा जाने की खबर सुनकर, उसे अपने लिए भी वैसी ही नियति का भय सताने लगा। उसका भय इतना गहरा था कि उसने अपने राज्य की देखभाल नहीं की, अपने पलंग पर सोया नहीं, बल्कि दर्द से तड़पते हुए एक युवा हाथी की तरह शरीर के हर अंग कांपते हुए इधर-उधर भटकता रहा। उसे कल्पना में धरती अपने लिए मुंह फुलाती हुई और नरक की ज्वालाएं भड़कती हुई दिखाई दीं; वह स्वयं को जलते हुए धातु के पलंग पर जकड़ा हुआ और लोहे के भाले अपने शरीर में चुभते हुए देख सकता था। एक घायल मुर्गे की तरह, उसे एक पल भी शांति नहीं मिली। उसके मन में सर्वज्ञानी बुद्ध के दर्शन करने, उनसे मेल-मिलाप करने और उनका मार्गदर्शन मांगने की इच्छा हुई; परन्तु अपने घोर पापों के कारण वह बुद्ध के समक्ष आने से विमुख हो गया। जब कट्टिका पर्व आया और रात में राजगृह नगर देवताओं के नगर की तरह प्रकाशित और सजाया गया, तब राजा, जो सोने के सिंहासन पर बैठा था, ने जीवक कुमारभच्च को पास बैठे देखा। उनके मन में यह विचार आया कि वे जीवक के साथ बुद्ध के पास जाएँ, लेकिन वे यह स्पष्ट रूप से नहीं कह सकते थे कि वे अकेले नहीं जाएँगे बल्कि जीवक को अपने साथ ले जाना चाहते हैं। नहीं; बेहतर तरीका यह होगा कि रात्रि की सुंदरता की प्रशंसा करने के बाद, किसी ऋषि या ब्राह्मण के चरणों में बैठने का प्रस्ताव रखें और दरबारियों से पूछें कि कौन सा गुरु हृदय को शांति प्रदान कर सकता है। बेशक, वे अपने गुरुओं की जमकर प्रशंसा करेंगे; लेकिन जीवक सर्वज्ञानी बुद्ध की प्रशंसा अवश्य करेंगे; और राजा जीवक के साथ बुद्ध के पास जाएँगे। इसलिए उन्होंने रात्रि की पाँच बार प्रशंसा करते हुए कहा—"हे सज्जनों, यह निर्मल, निर्मल रात्रि कितनी सुंदर है! कितनी खूबसूरत! कितनी मनमोहक! कितनी आनंददायक! कितनी प्यारी! हम किस ऋषि या ब्राह्मण से मिलें, ताकि संयोगवश वे हमारे हृदय को शांति प्रदान कर सकें?"

तब एक मंत्री ने पुराण कश्यप, दूसरे ने मक्खली गोसाला, और अन्य ने अजित केशकंबला, ककुधा कच्चयन, संजय बेलत्थिपुत्त या निगंथ नटपुत्त (महावीर, जैनों के गुरु) के नाम सुझाए। राजा ने इन सभी नामों को चुपचाप सुना, और अपने मुख्य मंत्री जीवक के बोलने की प्रतीक्षा करने लगे। लेकिन जीवक को संदेह हुआ कि राजा का असली उद्देश्य उन्हें बुलवाना है, इसलिए उन्होंने चुप रहना ही बेहतर समझा। अंत में राजा ने कहा, "अच्छा, मेरे प्यारे जीवक, तुम्हें कुछ कहना क्यों नहीं है?" यह सुनकर जीवक अपनी सीट से उठे और भगवान बुद्ध की ओर हाथ जोड़कर बोले, "महाराज, मेरे आम के बाग में सर्वज्ञानी बुद्ध तेरह सौ पचास भिक्षुओं के साथ निवास करते हैं। यही उनकी प्रसिद्धि है।" और फिर उन्होंने उन्हें दिए गए नौ सम्मानों का पाठ करना शुरू किया, जिसकी शुरुआत 'आदरणीय (*2)' से

हुई। जब उन्होंने आगे यह दिखाया कि बुद्ध की शक्तियां जन्म से ही सभी पूर्व भविष्यवाणियों और अपेक्षाओं से कहीं अधिक थीं, तो जीवक ने कहा, "हे भगवान बुद्ध, राजा को उनके पास जाने दो, ताकि वे सत्य सुन सकें और प्रश्न पूछ सकें।"

इस प्रकार अपना उद्देश्य पूरा होने पर, राजा ने जीवक को हाथियों को तैयार करने का आदेश दिया और शाही ठाठ-बाठ से जीवक के आम के बाग में गए, जहाँ उन्होंने सुगंधित मंडप में भिक्षुओं के बीच बुद्ध को देखा, जो सागर की तरह शांत और विश्राम कर रहे थे। राजा की दृष्टि जहाँ भी जाती, उन्हें भिक्षुओं की अंतहीन कतारें ही दिखाई देतीं, जिनकी संख्या उन्होंने अब तक देखे किसी भी अनुयायी समूह से कहीं अधिक थी। भिक्षुओं के व्यवहार से प्रसन्न होकर, राजा ने प्रणाम किया और उनकी प्रशंसा की। फिर बुद्ध को प्रणाम करके वे बैठ गए और उनसे पूछा, 'धार्मिक (सन्यासी) जीवन (बुद्ध द्वारा उपदेशित मार्ग) का फल क्या है?' इस पर भगवान बुद्ध ने समन्नफल सूत्र का दो भागों में वर्णन किया (*3)। हृदय से प्रसन्न होकर, राजा ने सूत्र के अंत में बुद्ध से सुलह की और उचित आदर के साथ उठकर विदा हो गए। राजा के जाने के तुरंत बाद, गुरु ने भाइयों को संबोधित करते हुए कहा, "भाइयों, इस राजा का वध हो चुका है; यदि इस राजा ने सत्ता के लालच में अपने पिता, जो एक धर्मात्मा शासक थे, की हत्या न की होती, तो सिंहासन से उठने से पहले ही उसे अर्हत का सत्य का स्पष्ट दर्शन (ज्ञानोदय) प्राप्त हो जाता। परन्तु देवदत्त के प्रति अपने पापपूर्ण पक्षपात के कारण वह प्रथम मार्ग (सम्मोहन) के फल से वंचित रह गया।"

अगले दिन सभी भिक्षुओं ने आपस में इस सब पर चर्चा की और कहा कि अजातशत्रु द्वारा अपने पिता की हत्या का अपराध, जो उसने उस दुष्ट और पापी देवदत्त के कारण किया था जिसका उसने पक्ष लिया था, उसके कारण ही उसे मोक्ष (निर्वाण) प्राप्त नहीं हुआ; और देवदत्त ही राजा के विनाश का कारण बना। इसी समय गुरु सत्य के हॉल में आए और उन्होंने उनसे चर्चा का विषय पूछा। विषय बताए जाने पर गुरु ने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि अजातशत्रु को पापी का पक्ष लेने के कारण कष्ट भोगना पड़ा है; अतीत में इसी प्रकार के आचरण के कारण उसे अपनी जान गंवानी पड़ी थी।" ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व का जन्म एक धनी ब्राह्मण परिवार में हुआ। वयस्क होने पर वे तक्षशिला में अध्ययन करने गए, जहाँ उन्होंने पूर्ण शिक्षा प्राप्त की। बनारस में एक शिक्षक के रूप में उन्हें विश्वव्यापी ख्याति प्राप्त थी और उनके पाँच सौ युवा ब्राह्मण शिष्य थे। इनमें से एक संजीव था, जिसे बोधिसत्व ने मृतकों को जीवित करने का मंत्र सिखाया। परन्तु इस मंत्र के पर उसे प्रति-मंत्र नहीं सिखाया गया। अपनी इस नई शक्ति पर घमंड करते हुए वह अपने साथी शिष्यों के साथ वन में लकड़ी इकट्ठा करने गया और वहाँ उसे एक मृत बाघ मिला।

"अब देखो मैं बाघ को फिर से जीवित कर देता हूँ," उसने कहा।

उन्होंने कहा, "तुम ऐसा नहीं कर सकते।"

"तुम देखोगे और तुम्हें मैं ऐसा करते हुए दिख जाऊंगा।"

"ठीक है, अगर आप कर सकते हैं, तो ऐसा करें," उन्होंने कहा और फिर एक पेड़ पर चढ़ गए।

फिर संजीव ने अपना जादू दोहराया और टूटे हुए मिट्टी के बर्तन से मरे हुए बाघ पर प्रहार किया। बाघ उछल पड़ा और बिजली की गति से संजीव पर झपटा तथा उनके गले पर काट कर उन्हें तुरंत मार डाला। बाघ वहीं गिर पड़ा और संजीव भी उसी स्थान पर मृत हो गए। इस प्रकार दोनों वहीं अगल-बगल मृत पड़े रहे।

युवा ब्राह्मण अपनी लकड़ी लेकर अपने गुरु के पास लौट आए और उन्हें सारी कहानी सुनाई। गुरु ने कहा, "मेरे प्रिय शिष्यों, इस विषय में जान लो कि पापी पर कृपा करने और जहाँ सम्मान देना उचित नहीं था, वहाँ सम्मान देने के कारण उसने अपने ऊपर यह विपत्ति बुला ली है।" और ऐसा कहते हुए उन्होंने यह श्लोक कहा:-

> किसी खलनायक से दोस्ती करो, जरूरत के समय उसकी मदद करो,
> और, ठीक उसी बाघ की तरह जिसे संजीव ने पाला था
> जीवन के प्रति, वह सीधे आपके कष्टों का बदला लेने के लिए आपको निगल जाता है।

बोधिसत्व ने युवा ब्राह्मणों को यही शिक्षा दी, और दान-पुण्य और अन्य अच्छे कर्मों से भरा जीवन जीने के बाद वे अपने कर्मों के फल के लिए इस दुनिया से विदा हो गए।

अपने उपदेश के अंत में गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "अजातशत्रु उस समय का वह युवा ब्राह्मण था जिसने मृत बाघ को जीवित किया था, और मैं विश्वप्रसिद्ध शिक्षक हूँ।"

फुटनोट:

(1) समन्नाफल सूत्र में, दीघा निकया इस परिचयात्मक कथा की घटनाओं का वर्णन करता है और राजा से अपने पिता की हत्या स्वीकार करवाता है। साथ ही, यह सब इसलिए हुआ क्योंकि अजातशत्रु ने अपने (झूठे) गुरु देवदत्त से सलाह ली थी।

(2) सूची के लिए दीघा निकाय के खंड I के पृष्ठ 49 देखें।

(3) दीघा निकाय में सूत्र को दो भागों में विभाजित नहीं किया गया है।

पुस्तक II. दुकानिपाता:

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **राजोवदा-जातक**
***स्रोत** : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-151-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 151
राजोवदा-जातक

"कठोर को कठोर," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, यह समझाने के लिए कि एक राजा को कैसे सबक सिखाया गया था।

इसे तेसाकुना जन्म (*1) में सेट किया जाएगा।

कहा जाता है कि एक दिन कोसल के राजा ने नैतिक दुराचार से जुड़े एक अत्यंत कठिन मामले में फैसला सुनाया था। भोजन करने के बाद, उनके हाथ अभी सूखे भी नहीं थे कि वे अपने भव्य रथ में सवार होकर गुरु से मिलने गए; और राजा ने खिले हुए कमल के समान सुंदर चरणों से उनका अभिवादन किया और एक तरफ बैठ गए।

तब गुरु ने उनसे इन शब्दों में कहा, "हे महाराज, इस समय आप यहाँ क्यों आए हैं?" उन्होंने कहा, "महाराज, मैं एक कठिन मामले पर विचार कर रहा था, जिसमें नैतिक दुराचार शामिल था; इसलिए मेरा समय निकल गया। अब मैंने वह मामला निपटा लिया है, भोजन कर लिया है, और अब मैं यहाँ हूँ, मेरे हाथ अभी सूखे ही हैं, आपकी सेवा करने के लिए।" गुरु ने उत्तर दिया, "हे महाराज, किसी भी मामले का न्याय और निष्पक्षता से निर्णय करना ही सही है; यही स्वर्ग का मार्ग है। अब जब आपको मुझ जैसे सर्वज्ञानी व्यक्ति की सलाह मिल रही है, तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि आप अपने मामले का निष्पक्ष और न्यायपूर्ण निर्णय लें; लेकिन आश्चर्य तो तब होता है जब राजाओं को केवल उन विद्वानों की सलाह मिली हो जो सर्वज्ञानी नहीं हैं, फिर भी उन्होंने निष्पक्ष और न्यायपूर्ण निर्णय लिया है, दुष्टता के चार मार्गों से बचते हुए, और दस राजसी गुणों का पालन करते हुए, और न्यायपूर्ण शासन करने के बाद स्वर्ग गए हैं।" तब, राजा के अनुरोध पर, उन्होंने प्राचीन काल की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब उनकी रानी पत्नी ने बोधिसत्व को गर्भ धारण कराया; और उनके राज्य के अनुसार विधिवत समारोह संपन्न होने के बाद (*2), उन्होंने सुरक्षित प्रसव किया। उनके नामकरण दिवस पर, उन्हें राजकुमार ब्रह्मदत्त नाम दिया गया।

समय बीतने के साथ, वह बड़ा हुआ और सोलह वर्ष की आयु में शिक्षा के लिए तक्षशिला (*3) गया; जहाँ उसने विद्या की सभी शाखाओं में महारत हासिल की और अपने पिता की मृत्यु के बाद उनका स्थान लेकर राजा बना। उसने न्याय और निष्पक्षता से शासन

किया और अपनी इच्छा या सनक की परवाह किए बिना न्याय का संचालन किया। उसके न्यायपूर्ण शासन के कारण उसके मंत्री भी न्यायप्रिय थे; इस प्रकार, जब सब कुछ न्यायपूर्वक किया जा रहा था, तब भी कोई भी न्यायालय में झूठा मुकदमा लेकर नहीं आया। देखते ही देखते महल परिसर में सभी मुवक्किलों की गतिविधियाँ थम गईं; मंत्री दिन भर बेंच पर बैठे रहते और बिना किसी मुवक्किल को देखे चले जाते। न्यायालय सुनसान हो गए।

तब बोधिसत्व ने मन ही मन सोचा, “मेरे न्यायपूर्ण शासन के कारण अब कोई भी वर अपने बच्चे की संतान को लेकर अदालत में नहीं आता; पहले की चहल-पहल शांत है; अदालतें सुनसान हैं। अब मुझे यह देखना होगा कि मुझमें कोई दोष है या नहीं; यदि मुझे वह दोष मिला, तो मैं उसे त्याग दूँगा और आगे सुखमय जीवन व्यतीत करूँगा।” उस समय से उन्होंने निरंतर प्रयास किया कि कोई उन्हें कोई दोष बता दे; परन्तु दरबार में उपस्थित सभी लोगों में से उन्हें कोई ऐसा नहीं मिला; उन्हें अपने बारे में केवल प्रशंसा ही सुनने को मिली। उन्होंने सोचा, “शायद वे सब मुझसे इतना भयभीत हैं कि मेरे बारे में कोई बुराई नहीं, केवल अच्छाई ही कहते हैं,” और इसलिए वे अपने शहर की सीमा से बाहर रहने वालों से पूछताछ करने निकल पड़े। परन्तु उनके साथ भी यही स्थिति थी। फिर उन्होंने सभी नागरिकों से पूछताछ की, और शहर के बाहर, नगर के चारों द्वारों पर स्थित उपनगरों के निवासियों से भी पूछताछ की। फिर भी उन्हें कोई दोष नहीं मिला; उन्हें केवल प्रशंसा ही सुनने को मिली। अंत में, ग्रामीण इलाकों का अनुभव करने के इरादे से, उन्होंने शासन की सारी बागडोर अपने मंत्रियों को सौंप दी और अपने रथ में सवार होकर, केवल अपने सारथी को साथ लेकर, भेस बदलकर शहर से निकल गए। वे पूरे देश में, यहाँ तक कि सीमा तक भी गए; पर उन्हें कोई दोष निकालने वाला नहीं मिला; उन्हें केवल अपनी ही प्रशंसा सुनाई देती रही। इसलिए वे सीमावर्ती इलाकों से लौट आए और मुख्य मार्ग से अपने घर की ओर चल पड़े।

अब संयोगवश, ठीक उसी समय कोसल के राजा मल्लिका ने भी ठीक यही किया था। वह भी एक न्यायप्रिय राजा थे और अपनी कमियों की खोज कर रहे थे; लेकिन उनके आसपास के लोगों में कोई भी ऐसा नहीं था जिसमें कोई दोष निकाला जा सके; और केवल प्रशंसा सुनकर, उन्होंने पूरे देश में पूछताछ की और ठीक उसी स्थान पर पहुँचे।

ये दोनों एक ऐसी जगह पर मिले, जहाँ दो किनारों के बीच सड़क काफी गहरी थी और एक गाड़ी के दूसरी गाड़ी को पार करने की जगह नहीं थी।

"अपनी गाड़ी रास्ते से हटाओ!" मल्लिका राजा के सारथी ने बनारस के राजा के सारथी से कहा।

"नहीं, नहीं, ड्राइवर," उसने कहा, "अपनी गाड़ी हटाओ! जान लो कि इस रथ में बनारस राज्य के स्वामी, महान सम्राट ब्रह्मदत्त विराजमान हैं!"

“नहीं, स्वामी!” दूसरे ने उत्तर दिया, “इस रथ में कोसल राज्य के स्वामी महान राजा मल्लिका विराजमान हैं! आपको रास्ता देना होगा और हमारे राजा के रथ को जगह देनी होगी!”

“अरे, यहाँ तो एक राजा भी है,” बनारस के राजा के सारथी ने सोचा। “अब क्या किया जाए?” तभी उसके मन में एक विचार आया; उसने दोनों राजाओं की आयु जानने का प्रयास किया, ताकि छोटा राजा बड़े राजा को पदभार सौंप सके। उसने दूसरे सारथी से उसके राजा की आयु पूछी; पर उसे पता चला कि दोनों की आयु समान थी। इस पर उसने राजा की शक्ति, धन-संपत्ति, वैभव और जाति-वंश तथा परिवार से संबंधित सभी बातों के बारे में पूछा; उसे पता चला कि दोनों के पास 300 मील (4.23 किमी) लंबा राज्य था, और वे शक्ति, धन, वैभव तथा परिवार और वंश के मामले में एक समान थे। तब उसने सोचा कि बेहतर व्यक्ति को स्थान दिया जाना चाहिए; इसलिए उसने दूसरे सारथी से अपने स्वामी के गुणों का वर्णन करने का अनुरोध किया। उस व्यक्ति ने कविता की पहली पंक्ति सुनाकर उत्तर दिया, जिसमें उसने अपने राजा के दोषों को इस प्रकार वर्णित किया मानो वे अनेक गुण हों:

"कठोर से कठोर तक, सौम्य राजा मल्लिका सौम्यता से विवश होते हैं।"
अच्छाई से अच्छाई को प्राप्त करो, और बुराई से बुराई को प्राप्त करो।
"गायब करो, जगह दो, हे सारथी! इस सम्राट के यही तौर-तरीके हैं!"
“ओह,” बनारस के राजा के सेवक ने कहा, “क्या राजा के गुणों के बारे में बस इतना ही कहना है?” “हाँ,” दूसरे ने कहा। “यदि ये उनके गुण हैं, तो उनके अवगुण क्या होंगे?” “ठीक है, अवगुण ही सही,” उसने कहा, “लेकिन हमें यह भी सुनने दीजिए कि आपके राजा के गुण कैसे हैं!” “तो सुनिए,” पहले ने उत्तर दिया, और दूसरा श्लोक दोहराया:-

वह सौम्यता से क्रोध पर विजय प्राप्त करता है, अच्छाई से बुराई को वश में करता है।
उपहारों के द्वारा कंजूस विजय प्राप्त करता है और झूठ का बदला सत्य से चुकाता है।
जगह दो, जगह दो, हे स्वामी! इस सम्राट के तौर-तरीके ऐसे ही हैं (*4)!"

ये शब्द सुनकर राजा मल्लिका और उनके सारथी दोनों रथ से उतरे, घोड़ों को खोलकर रथ को रास्ते से हटा दिया ताकि बनारस के राजा को रास्ता मिल सके। तब बनारस के राजा ने राजा मल्लिका को अच्छी सलाह देते हुए कहा, "तुम्हें ऐसा और ऐसा करना चाहिए।" इसके बाद वे बनारस लौट गए और वहाँ जीवन भर दान-पुण्य करते रहे, अंत में स्वर्ग सिधार गए। राजा मल्लिका ने इस सीख को दिल से मान लिया और देश के कोने-कोने का भ्रमण करने के बाद, जहाँ उन्हें कोई दोष नहीं मिला, अपने नगर लौट आए; जहाँ उन्होंने जीवन भर दान-पुण्य किया और अंत में वे भी स्वर्ग सिधार गए।

जब गुरु ने कोसल के राजा को शिक्षा देने के उद्देश्य से शुरू किए गए इस प्रवचन को समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म का विवरण दिया: "उस समय मोग्गल्याना राजा मल्लिका के सारथी थे, आनंद राजा थे, सारिपुत्र बनारस के राजा के सारथी थे, लेकिन राजा मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)सं. 521.

(2) शाब्दिक अर्थ "भ्रूण की सुरक्षा;" निःसंदेह कोई धार्मिक अनुष्ठान।

(3) प्राचीन भारत का महान विश्वविद्यालय नगर; यह अब पाकिस्तान में इस्लामाबाद (तक्षशिला) के पास है।

(4)धम्मपद, श्लोक 223.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> सिगला - **जातक**4
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-152-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 152
सिगाला-जातक

"जो जल्दबाजी में कोई काम हाथ में लेता है," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने अपने छज्जे वाले कमरे में रहते हुए सुनाई थी, जो वैशाली शहर में रहने वाले एक नाई के बारे में थी।

हमें बताया गया है कि यह व्यक्ति शाही परिवार, राजाओं, रानियों, राजकुमारों और राजकुमारियों के लिए दाढ़ी बनाने, बाल संवारने और चोटी बनाने का काम करता था; वास्तव में, वह हर तरह का काम करता था। वह एक सच्चा विश्वासी था, जो तीन शरणों - बुद्ध, धम्म (धर्म और पवित्र मार्ग) और संघ (प्रबुद्धों का पवित्र संघ) (*1) - में शरण लिए हुए था, पाँच नियमों का पालन करने के लिए दृढ़ संकल्पित था; और समय-समय पर वह गुरु के प्रवचन सुनता था।

एक दिन वह अपने बेटे को साथ लेकर महल में काम करने निकला। रास्ते में उस युवक ने एक लिच्छवी लड़की को अप्सरा की तरह सजे-धजे देखा और उस पर मोहित हो गया। महल से निकलते समय उसने अपने पिता से कहा, "वहाँ एक लड़की है - अगर मैं उसे पा लूँ तो मेरी जान बच जाएगी; लेकिन अगर नहीं तो मेरे लिए मौत के सिवा कुछ नहीं।" उसने खाने का एक निवाला भी नहीं खाया और पलंग को गले लगाकर लेट गया। उसके पिता ने उसे देखा और कहा, "बेटा, इस कुटिल इच्छा पर ध्यान मत दो। तुम तो कुछ भी नहीं हो - एक नाई के बेटे हो; यह लिच्छवी लड़की ऊँचे खानदान की औरत है। तुम उसके लायक नहीं हो। मैं तुम्हारे लिए कोई और ढूंढ लूँगा; तुम्हारे ही दर्जे और रुतबे की लड़की।" लेकिन लड़का नहीं माना। तब उसकी माँ, भाई, बहन, चाची और चाचा, पूरा परिवार, और सारे दोस्त और साथी उसे मनाने आए; पर वे उसे मना नहीं सके। इसलिए वह दिल टूटने से कमजोर होता चला गया और वहीं पड़ा रहा जब तक कि उसकी मृत्यु नहीं हो गई।

तब पिता ने अंतिम संस्कार किया और मृत आत्मा के लिए जो भी प्रथा होती है, वह सब की। कुछ समय बाद, जब शोक का पहला दौर थोड़ा कम हुआ, तो उन्होंने गुरु से मिलने का मन बनाया। फूलों, सुगंधों और इत्रों का एक बड़ा उपहार लेकर वे महावन गए और गुरु को प्रणाम किया, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। गुरु ने पूछा, “हे गृहस्थ, तुम इतने समय तक क्यों छिपे रहे?” तब उस व्यक्ति ने

उन्हें सब कुछ बताया। गुरु ने कहा, “अरे गृहस्थ, यह पहली बार नहीं है कि उसने किसी ऐसी चीज पर अपना दिल लगा लिया हो जो उसे नहीं मिलनी चाहिए थी; यह तो बस वही है जो उसने पहले भी किया है।” तब गृहस्थ के अनुरोध पर उन्होंने उसे पुराने समय की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब हिमालय क्षेत्र में एक युवा सिंह के रूप में बोधिसत्व का जन्म हुआ। उनके परिवार में कुछ छोटे भाई और एक बहन थी; और वे सभी एक स्वर्ण गुफा में रहते थे।

इस गुफा के पास ही एक चांदी की पहाड़ी पर क्रिस्टल की गुफा थी, जहाँ एक सियार रहता था। कुछ समय बाद शेरों के माता-पिता की मृत्यु हो गई। तब वे अपनी बहन शेरनी को गुफा में छोड़कर भोजन की तलाश में जाते थे; भोजन मिलने पर वे उसे शेरनी के लिए वापस लाते थे।

अब सियार की नज़र उस शेरनी पर पड़ी और वह उससे प्रेम करने लगा; परन्तु जब तक बूढ़ा शेर और शेरनी जीवित थे, तब तक वह उस तक नहीं पहुँच सकता था। अब, जब सातों भाई भोजन की तलाश में गए, तो वह अपनी क्रिस्टल गुफा से निकला और बड़ी जल्दी से सोने की गुफा की ओर भागा; वहाँ, उस युवती के सामने खड़ा होकर, उसने शरारती ढंग से उससे मोहक और लुभावने शब्दों में कहा:

"हे शेरनी, मैं चार पैरों वाला प्राणी हूँ, और तुम भी। इसलिए तुम मेरी साथी बनो, और मैं तुम्हारा पति बनूँगा! हम मित्रता और सौहार्द से साथ रहेंगे, और तुम मुझे सदा प्यार करोगी!"

यह सुनकर शेरनी मन ही मन सोचने लगी, “यह सियार तो जानवरों में भी नीच, घिनौना और नीच जाति का आदमी है। लेकिन मैं तो राजसी खानदान की हूं। इसका मेरे बारे में ऐसा बोलना अशोभनीय और बुरा है। ऐसी बातें सुनकर मैं कैसे जी सकती हूं? मैं मरने तक अपनी सांस रोक लूंगी।” फिर कुछ देर सोचने के बाद उसने कहा, “नहीं, इस तरह मरना अच्छा नहीं लगेगा। मेरे भाई जल्द ही घर लौट आएंगे; मैं पहले उन्हें बताऊंगी, और फिर खुद को खत्म कर लूंगी।”

जब सियार को कोई जवाब नहीं मिला, तो उसे यकीन हो गया कि उसे उसकी कोई परवाह नहीं है; इसलिए वह वापस अपनी क्रिस्टल गुफा में चला गया और बहुत दुखी होकर लेट गया।

अब एक जवान शेर ने भैंस, हाथी या किसी और जानवर को मारकर उसका कुछ हिस्सा खुद खाया और अपनी बहन के लिए भी थोड़ा हिस्सा लाया। उसने उसे खाने के लिए कहा, "नहीं भाई, मैं एक निवाला भी नहीं खाऊंगी, क्योंकि मुझे मरना है!" शेर ने पूछा, "ऐसा क्यों?" तब उसने उसे सब कुछ बताया। शेर ने पूछा, "यह सियार अब कहाँ है?" उसने उसे क्रिस्टल गुफा में पड़ा देखा और यह सोचकर कि वह आकाश में है, बोली, "भाई, तुम उसे चांदी के पहाड़ पर आकाश में पड़ा हुआ क्यों नहीं देख सकते?" जवान शेर को पता नहीं था कि सियार क्रिस्टल गुफा में है और यह सोचकर कि वह सचमुच आकाश में है, उसने शेरों की तरह उस पर झपट्टा मारा और क्रिस्टल से टकरा गया। क्रिस्टल से उसका दिल फट गया और पहाड़ की तलहटी में गिरकर वह तुरंत मर गया।

फिर एक और शेर आया, जिसे शेरनी ने वही कहानी सुनाई। इस शेर ने भी पहले शेर की तरह ही किया और पहाड़ की तलहटी में गिरकर मर गया।

जब छह सिंह भाई इस प्रकार मर गए, तब अंत में बोधिसत्व ने प्रवेश किया। जब उसने अपनी कहानी सुना दी, तो उन्होंने पूछा कि सियार अब कहाँ है? "वह रहा," उसने कहा, "आकाश में, रजत पर्वत के ऊपर!" बोधिसत्व ने सोचा—"आकाश में पड़ा सियार? बकवास। मैं जानता हूँ कि क्या है: वह एक क्रिस्टल गुफा में पड़ा है।" इसलिए वे पर्वत की तलहटी में गए, और वहाँ उन्होंने अपने छह भाइयों को मृत पड़ा देखा। "मैं समझ गया," उन्होंने सोचा; "ये सब मूर्ख थे, और उनमें पूर्ण ज्ञान का अभाव था; यह न जानते हुए कि यह क्रिस्टल गुफा है, उन्होंने इसमें अपने दिल को फोड़ दिया, और मारे गए। बिना उचित समझ के जल्दबाजी में कार्य करने का यही परिणाम होता है;" और उन्होंने पहला श्लोक दोहराया:-

जो जल्दबाजी में कोई उद्यम शुरू करता है,
  सभी संभावित समस्याओं को ध्यान में न रखते हुए,
जैसे कोई खाना खाते समय अपना मुंह जला लेता है
  वह उन्हीं योजनाओं का शिकार हो जाता है जो उसने खुद बनाई थीं।
इन पंक्तियों को दोहराने के बाद, शेर ने आगे कहा: "मेरे भाई इस सियार को मारना चाहते थे, लेकिन उन्हें अपनी योजना को चतुराई से अंजाम देना नहीं आता था; इसलिए वे उस पर बहुत तेज़ी से झपटे और इस तरह उनकी मृत्यु हो गई। मैं ऐसा नहीं करूँगा; बल्कि मैं इस

सियार को क्रिस्टल गुफा में पड़े-पड़े ही उसका दिल फोड़ दूँगा।" फिर उसने वह रास्ता देखा जिससे सियार ऊपर-नीचे जाया करता था, और उस ओर मुड़कर उसने शेर की दहाड़ से तीन गुना ज़ोर से दहाड़ा, जिससे धरती और आकाश एक साथ एक ज़ोरदार दहाड़ में बदल गए! क्रिस्टल गुफा में पड़ा सियार भयभीत और स्तब्ध रह गया, जिससे उसका दिल फट गया; और वह तुरंत वहीं मर गया।

गुरु ने आगे कहा, "इस प्रकार शेर की दहाड़ सुनकर यह सियार मर गया।" और पूर्णतः ज्ञान प्राप्त कर उन्होंने दूसरा श्लोक दोहराया:-

दद्दारा पर शेर ने दहाड़ लगाई,
  और इससे माउंट दादरा एक बार फिर गूंज उठा।
पास ही में एक सियार रहता था; वह उससे बहुत डरता था।
  उस आवाज को सुनकर उसका दिल दो टुकड़ों में टूट गया।
इस प्रकार हमारे शेर ने उस सियार को मार डाला। फिर उसने उसके भाइयों को एक ही कब्र में दफनाया और उसकी बहन को बताया कि वे मर गए हैं, और उसे सांत्वना दी; और उसने अपने शेष दिन स्वर्ण गुफा में बिताए, जब तक कि वह उस स्थान पर नहीं चला गया जो उसके कर्मों के फलस्वरूप उसे मिला था।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने सत्यों को प्रकट किया और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के समापन पर, गृहस्थ प्रथम मार्ग (सम्मोहन) के फल में स्थापित हो गया: "आज का नाई का पुत्र तब सियार था; लिच्छवी कन्या युवा शेरनी थी; छह छोटे शेर अब छह बुजुर्ग हैं; और मैं स्वयं सबसे बड़ा शेर हूँ।"

फुटनोट:

(1)बुद्ध, धर्म मार्ग (धम्म), और भिक्षुओं का संघ।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **शूकर-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-153-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 153
सुकरा-जातक (*1)

"तुम चौपाया हो," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जो एक वृद्ध भिक्षु के बारे में थी।

एक बार, जैसा कि हमें बताया गया है, रात्रि प्रार्थना सभा चल रही थी और गुरु ने अपने सुगंधित कक्ष के द्वार पर स्थित रत्नजड़ित सीढ़ी के एक शिलाखंड पर खड़े होकर उपदेश दिया। धन्य गुरु का प्रवचन देने के बाद, वे अपने सुगंधित कक्ष में चले गए; और धर्म के प्रमुख (सारिपुत्र) ने अपने गुरु को प्रणाम करके अपने कक्ष में वापस चले गए। महामोग्गल्याण भी अपने कक्ष में चले गए, और कुछ क्षण विश्राम करने के बाद वरिष्ठ भिक्षु सारिपुत्र से एक प्रश्न पूछने के लिए वापस आए। जैसे-जैसे वे एक-एक प्रश्न पूछते गए, धर्म के प्रमुख (सारिपुत्र) ने सब कुछ स्पष्ट कर दिया, मानो वे आकाश में चंद्रमा को उदय कर रहे हों। वहाँ चारों श्रेणियों के शिष्य (*2) उपस्थित थे, जो बैठे-बैठे सब कुछ सुन रहे थे। तभी एक वृद्ध वरिष्ठ भिक्षु के मन में एक विचार आया। उन्होंने सोचा, "मान लीजिए, मैं इस सारी भीड़ के सामने सारिपुत्र को कोई प्रश्न पूछकर उलझन में डाल दूं? वे सब सोचेंगे, कितना चतुर व्यक्ति है! और मुझे बहुत सम्मान और प्रतिष्ठा प्राप्त होगी।" तो वह भीड़ में से उठा और बड़े भिक्षु के पास जाकर एक तरफ खड़ा हो गया और बोला, "मित्र सारिपुत्र, मेरा भी आपसे एक प्रश्न है; क्या आप मुझे बोलने देंगे? मुझे विवेकपूर्ण या अविभेदपूर्ण, खंडन या स्वीकृति, भेद या प्रतिभेद के आधार पर निर्णय दीजिए।" बड़े भिक्षु ने उसकी ओर देखा। उन्होंने सोचा, "यह बूढ़ा अभी भी इच्छा के दायरे में है; यह खाली है और कुछ नहीं जानता।" शर्म के मारे उन्होंने उससे एक शब्द भी नहीं कहा; अपना पंखा नीचे रखकर वे अपनी सीट से उठे और अपनी कोठरी में लौट गए। बड़े भिक्षु मोग्गल्याना भी अपनी कोठरी में लौट गए। आस-पास खड़े लोग चिल्लाते हुए उठे, "इस दुष्ट बूढ़े को पकड़ो, जिसने हमें उपदेश के मधुर शब्द नहीं सुनने दिए!" और उन्होंने उस पर हमला कर दिया। वह भागा और मठ के ठीक बाहर एक गंदे नाले के कोने में बने एक छेद में गिर गया; जब वह उठा तो वह पूरी तरह गंदगी से सना हुआ था। जब लोगों ने उसे देखा, तो उन्हें उस पर दया आई और वे गुरु के पास चले गए। उन्होंने पूछा, "हे साधारण लोगों, तुम इस असमय क्यों आए हो?" उन्होंने गुरु को सारी घटना बताई। गुरु ने कहा, "हे

साधारण लोगों, यह पहली बार नहीं है जब इस बूढ़े को इस तरह से उखाड़ फेंका गया है और अपनी शक्ति को न जानते हुए बलवानों से भिड़ गया है, और अंत में वह पूरी तरह से गंदगी से लथपथ हो गया है। बहुत समय पहले, वह अपनी शक्तियों को न जानते हुए बलवानों से भिड़ गया था और उसी तरह गंदगी से लथपथ हो गया था जैसे अब है।" फिर, उनके अनुरोध पर, उन्होंने उन्हें पुराने समय की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व एक सिंह थे जो हिमालय की एक पर्वतीय गुफा में रहते थे। पास ही एक झील के किनारे बहुत सारे सूअर रहते थे; और उसी झील के किनारे पेड़ों की पत्तियों और शाखाओं से बनी झोपड़ियों में संन्यासियों का एक समूह रहता था।

एक दिन ऐसा हुआ कि शेर ने भैंसा, हाथी या ऐसा ही कोई शिकार मार गिराया; और अपनी पसंद का भोजन करने के बाद, वह इस झील पर पानी पीने गया। जैसे ही वह बाहर आया, एक बलवान सूअर पानी के किनारे चर रहा था। शेर ने सोचा, "किसी और दिन यह मुझे भोजन देगा।" लेकिन इस डर से कि अगर सूअर ने उसे देख लिया, तो वह फिर कभी यहाँ नहीं आएगा, शेर पानी से बाहर आते ही चुपके से किनारे की ओर खिसक गया। सूअर ने यह देख लिया; और तुरंत उसके मन में विचार आया, "यह इसलिए है क्योंकि इसने मुझे देख लिया है, और डर गया है! यह मेरे पास आने की हिम्मत नहीं कर रहा है, और डर के मारे भाग रहा है! आज मेरा और शेर का युद्ध होगा!" इसलिए उसने अपना सिर उठाया, और पहले छंद में शेर को चुनौती दी:

"तुम चार पैरों वाले हो - मैं भी: इसलिए, दोस्त, हम दोनों एक जैसे हैं, तुम देख रहे हो ना;
शेर, मुड़ो, मुड़ो; क्या तुम डर रहे हो? मुझसे क्यों भाग रहे हो?
शेर ने ध्यान से सुना। उसने कहा, "मित्र सूअर, आज तुम्हारे और मेरे बीच कोई लड़ाई नहीं होगी। लेकिन आज हम यहीं पर लड़ेंगे।" और इतना कहकर वह चला गया।

सूअर शेर से लड़ने की कल्पना करके बहुत खुश था; उसने अपने सभी मित्रों और परिवार को इसके बारे में बताया। लेकिन कहानी सुनकर वे डर गए। उन्होंने कहा, "तुम हम सबकी कमजोरी बन जाओगे, और खुद अपनी भी। तुम्हें अपनी क्षमता का अंदाजा नहीं है, वरना तुम शेर से लड़ने के लिए इतने उत्सुक क्यों होते? जब शेर आएगा, तो वह तुम्हारी और हम सबकी जान ले लेगा; इतना हिंसक मत बनो!" इन शब्दों ने सूअर को भयभीत कर दिया। उसने पूछा, "तो मैं क्या करूँ?" तब दूसरे सूअरों ने उसे सलाह दी कि वह अगले सात दिनों तक साधुओं के गोबर के ढेर में लोटता रहे और अपने शरीर पर लगे कीचड़ को सूखने दे; फिर सातवें दिन ओस की बूंदों से खुद को गीला करे और मिलन स्थल पर सबसे पहले पहुँचे; फिर हवा की दिशा का पता लगाए और हवा की दिशा में जाए; और शेर, जो एक पवित्र प्राणी है, उसकी गंध मिलते ही उसकी जान बख्श देगा।

तो उसने वैसा ही किया; और नियत दिन वह वहाँ पहुँच गया। शेर ने जैसे ही उसकी गंध पहचानी और गंदगी को सूंघा, उसने कहा, "मित्र सूअर, यह तो बड़ी चालाकी है! यदि तुम पूरी तरह गंदगी से सने न होते, तो मैं आज ही तुम्हारी जान ले लेता। लेकिन जैसा कि है, मैं तुम्हें काट नहीं सकता, न ही अपने पैर से छू सकता हूँ। इसलिए मैं तुम्हारी जान बख्श रहा हूँ।" और फिर उसने दूसरा छंद दोहराया:-

"हे गंदे सूअर, तेरी खाल बदबूदार है, तेरी दुर्गंध मुझे भयानक लगती है;
यदि तुम लड़ना चाहो तो मैं आत्मसमर्पण कर दूंगा और तुम्हारी जीत स्वीकार करूंगा।

फिर शेर मुड़कर चला गया और अपने दिन का भोजन जुटाया; और थोड़ी देर बाद झील से पानी पीकर वह पहाड़ पर स्थित अपनी गुफा में लौट गया। सूअर ने अपने परिवार को बताया कि उसने शेर को कैसे हराया! लेकिन वे डर गए क्योंकि उन्हें लगा कि शेर किसी और दिन फिर आ जाएगा और उन सबको मार डालेगा। इसलिए वे भाग गए और किसी दूसरी जगह चले गए।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म की पहचान बताई: "उन दिनों का सूअर अब वृद्ध भिक्षु है, और मैं स्वयं शेर था।"

फुटनोट:

(1) सूअर

(2) भिक्षु, भिक्षुणियाँ, गृहस्थ (शिष्य) और गृहस्थ बहनें।

पिछला <<<<-----॥-154-॥----->>>> अगला

जातक क्रमांक 154
उरगा-जातक

"पत्थर के भीतर छिपा हुआ," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में सैनिकों के झगड़े के बारे में सुनाई थी।

परंपरा के अनुसार, कोसल के राजा की सेवा में कार्यरत दो उच्च पदस्थ और दरबारी सैनिक, एक-दूसरे को देखते ही आपस में झगड़ने लगते थे। न तो राजा, न मित्र और न ही परिवार उन्हें सुलह करा सका।

एक दिन सुबह-सुबह गुरुजी अपने मित्रों में से यह देखने के लिए चारों ओर देख रहे थे कि कौन मोक्ष प्राप्त करने के लिए तैयार है। उन्होंने पाया कि ये दो मित्र प्रथम मार्ग (सम्मोहन) में प्रवेश करने के लिए तैयार हैं। अगले दिन वे अकेले श्रावस्ती नगर में भिक्षा मांगने गए और उनमें से एक के घर के द्वार पर रुके। वह बाहर आया और गुरुजी का भिक्षापात्र लेकर उन्हें अंदर ले गया और बैठने के लिए आमंत्रित किया। गुरुजी बैठ गए और प्रेम भाव के लाभों का वर्णन किया। जब उन्होंने देखा कि उस व्यक्ति का मन तैयार है, तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की। ऐसा होने पर, दूसरा व्यक्ति प्रथम मार्ग (सम्मोहन) के फल में स्थापित हो गया। यह देखकर, गुरुजी ने उसे भिक्षापात्र ग्रहण करने के लिए प्रेरित किया; फिर वे उठकर दूसरे के घर गए। दूसरा व्यक्ति बाहर आया और प्रणाम करने के बाद गुरुजी से अंदर आने का अनुरोध किया और उन्हें बैठने के लिए आमंत्रित किया। उसने भी गुरुजी का भिक्षापात्र लिया और उनके साथ अंदर चला गया। गुरुजी ने उसे प्रेम भाव के ग्यारह आशीर्वादों का वर्णन किया; और यह देखकर कि उसका हृदय तैयार है, उन्होंने सत्यों की व्याख्या की। और ऐसा करने के बाद, वह भी प्रथम मार्ग (सम्मोहन) के फल में स्थापित हो गया।

इस प्रकार दोनों का परिवर्तन हुआ; उन्होंने एक-दूसरे के सामने अपनी गलतियों को स्वीकार किया और क्षमा मांगी; शांति और सद्भाव से वे एक हो गए। उसी दिन उन्होंने भगवान बुद्ध की उपस्थिति में एक साथ भोजन किया।

भोजन समाप्त होने पर गुरुजी मठ लौट आए। वे दोनों उनके साथ फूलों, सुगंधों, घी, शहद और चीनी का एक अनमोल उपहार लेकर लौटे। भिक्षुओं के समक्ष कर्तव्य का उपदेश देने और बुद्ध की शिक्षा का प्रचार करने के बाद गुरुजी अपने सुगंधित कक्ष में चले गए।

अगली सुबह, भिक्षुओं ने सत्य के हॉल में इस मामले पर चर्चा की। एक भिक्षु दूसरे से कहता, "मित्र, हमारे गुरु अजेय को भी वश में कर लेते हैं।"

"देखो, ये दो महान व्यक्ति, जो इतने समय से आपस में झगड़ रहे थे और राजा, उनके मित्र और परिवार भी उन्हें सुलह नहीं करा पाए थे, और गुरु ने उन्हें एक ही दिन में विनम्र कर दिया!" गुरु अंदर आए, "तुम लोग यहाँ बैठे-बैठे क्या बात कर रहे हो?" उन्होंने पूछा। गुरु ने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि मैंने इन दोनों को सुलह कराई है; बीते युगों में भी मैंने इन्हीं दो व्यक्तियों को सुलह कराई थी।" और उन्होंने पुराने समय की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बनारस में एक उत्सव मनाने के लिए बहुत सारे लोग एकत्रित हुए। मनुष्य, देवता, सर्प और गरुल (*1) की भीड़ उस सभा को देखने के लिए इकट्ठा हुई।

एक जगह पर एक सर्प और एक गरुला एक साथ सारी गतिविधियाँ देख रहे थे। सर्प को यह पता नहीं था कि उसके बगल में एक गरुला है, इसलिए उसने अपना हाथ उसके कंधे पर रख दिया। जब गरुला ने मुड़कर देखा कि किसके हाथ ने उसके कंधे पर हाथ रखा है, तो उसने सर्प को देखा। सर्प ने भी देखा और पाया कि यह एक गरुला है; और डर के मारे वह नदी के ऊपर उड़ गया। गरुला ने उसे पकड़ने के लिए उसका पीछा किया।

बोधिसत्व एक तपस्वी थे और नदी किनारे पत्तों की कुटिया में रहते थे। उस समय वे सूर्य की गर्मी से बचने के लिए गीला कपड़ा ओढ़कर अपने छाल के वस्त्र उतार रहे थे और नदी में स्नान कर रहे थे। सर्प ने सोचा, "मैं इस तपस्वी को अपनी जान बचाने का जरिया

बनाऊंगा।" अपना वास्तविक रूप त्यागकर, उन्होंने एक अनमोल रत्न का रूप धारण कर छाल के वस्त्र पर अपना सिर जमा लिया। गरुला उनका पीछा करते हुए देख लिया कि वे कहाँ गए हैं; परन्तु आदर के कारण उन्होंने वस्त्र को छुआ तक नहीं; इसलिए उन्होंने बोधिसत्व से इस प्रकार कहा:

"महोदय, मुझे भूख लगी है। अपने छाल के वस्त्र को देखिए, उसमें एक सर्प है जिसे मैं खाना चाहता हूँ।" और बात को स्पष्ट करने के लिए, उसने पहला छंद दोहराया:

"पत्थर के भीतर छिपा हुआ यह बेचारा साँप"
सुरक्षा के लिए उसने शरण ली है।
और फिर भी, आपकी पवित्रता के प्रति श्रद्धा में,
हालांकि मुझे भूख लगी है, फिर भी मैं कुछ नहीं खाऊंगा।
जल में खड़े-खड़े ही बोधिसत्व ने गरुला राजा की स्तुति में दूसरा श्लोक कहा:

ब्रह्मा (प्रधान देवदूत) द्वारा संरक्षित, दीर्घायु हो, चाहे तुम्हारा पीछा किया जाए।
और आपको कभी भी दिव्य भोजन की कमी न हो।
मेरी पवित्रता के प्रति श्रद्धा में, ऐसा न करें
भूख लगने पर भी उसे मत खाओ।
इन शब्दों में बोधिसत्व ने जल में खड़े-खड़े अपनी स्वीकृति व्यक्त की। फिर वे जल से बाहर आए, अपना वस्त्र धारण किया और दोनों प्राणियों को अपने साथ अपने आश्रम ले गए; जहाँ उन्होंने प्रेम और करुणा के आशीर्वाद का अभ्यास किया जब तक कि दोनों एकमत नहीं हो गए। तब से वे शांति और सद्भाव में सुखपूर्वक साथ रहने लगे।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म की पहचान बताते हुए कहा, "उन दिनों, दो महान व्यक्तित्व सर्प और गरुला थे, और मैं स्वयं एक संन्यासी था।"

फुटनोट:

(1) एक पौराणिक पक्षी, जिसे हम देखते हैं कि वह मानव रूप धारण करने में सक्षम है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **गग्गा-जातक**
***स्रोत**: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-155-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 155
गग्गा-जातक

"गग्गा, सौ वर्ष जियो," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने तब सुनाई थी जब वे जेतवन मठ के सामने राजा पसेनादि (प्रसेनजित) द्वारा निर्मित मठ में ठहरे हुए थे; यह कहानी उनके द्वारा मारी गई एक छींक के बारे में थी।

एक दिन, जैसा कि हमें बताया जाता है, जब गुरु अपने चारों ओर चार लोगों के साथ उपदेश दे रहे थे, तभी उन्हें छींक आ गई। "भगवान बुद्ध की जय हो, बुद्ध की जय हो!" सभी भिक्षुओं ने जोर से चिल्लाकर शोर मचा दिया।

शोरगुल से प्रवचन बाधित हो गया। तब गुरु ने भिक्षुओं से कहा, "भाइयों, छींक सुनकर 'दीर्घायु!' कहने से क्या मनुष्य का जीवन बदल जाता है?" उन्होंने उत्तर दिया, "नहीं, नहीं, महाराज।" गुरु ने आगे कहा, "भाइयों, छींक आने पर 'दीर्घायु!' मत कहो। जो भी ऐसा करेगा, वह नियम तोड़ने का दोषी होगा।"

कहा जाता है कि उस समय जब भिक्षु छींकते थे, तो लोग पुकारते थे, "आपकी आयु दीर्घायु हो, महोदय!" लेकिन भिक्षु झिझकते थे और कोई उत्तर नहीं देते थे। सभी लोग नाराज़ हो गए और पूछने लगे, "अरे, ऐसा क्यों है कि शाक्य वंश के राजकुमार बुद्ध के आसपास के भिक्षु छींकने पर कोई उत्तर नहीं देते, जबकि कोई न कोई उन्हें दीर्घायु की शुभकामना देता है?"

यह सब बातें भगवान बुद्ध को बताई गईं। उन्होंने कहा, "भाइयों, आम लोग अंधविश्वासी होते हैं। जब आप छींकते हैं और लोग कहते हैं, 'आपकी आयु लंबी हो, महाराज!' तो आप भी उत्तर दे सकते हैं, 'आपकी भी आयु लंबी हो'।" तब भाइयों ने उनसे पूछा, "हे महाराज, लोग 'आयु लंबी हो' का उत्तर 'आपकी भी आयु लंबी हो' कब से देने लगे?" गुरु ने कहा, "बहुत समय पहले की बात है;" और उन्होंने उन्हें पुराने समय की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व काशी राज्य के एक ब्राह्मण के पुत्र के रूप में इस संसार में आए; उनके पिता पेशे से वकील थे। जब बालक लगभग सोलह वर्ष का था, तब उसके पिता ने उसे एक अनमोल रत्न सौंप दिया, और वे दोनों एक के बाद एक नगर-गाँव घूमते हुए बनारस पहुँचे। वहाँ उन्होंने द्वारपाल के घर में भोजन किया; और जब उन्हें रहने के लिए कोई जगह नहीं मिली, तो उन्होंने पूछा कि देर से आने वाले यात्रियों के लिए ठहरने की जगह कहाँ है? लोगों ने उन्हें बताया कि शहर के बाहर एक इमारत है, लेकिन वह भूतिया है; फिर भी यदि वे चाहें तो वहाँ ठहर सकते हैं। बालक ने अपने पिता से कहा, "पिताजी, किसी भूत से मत डरिए! मैं उसे वश में कर लूँगा और आपके चरणों में ले आऊँगा।" इस प्रकार उन्होंने अपने पिता को मना लिया, और वे दोनों साथ में उस स्थान पर गए।

पिता एक बेंच पर लेट गए और उनका बेटा उनके बगल में बैठकर उनके पैर छूने लगा।

उस स्थान पर विचरण करने वाले जिन्न को वेसवना (*1) की बारह वर्षों की सेवा के बदले यह स्थान प्राप्त हुआ था, इस शर्त पर कि यदि कोई व्यक्ति जो उसमें प्रवेश करे, छींक दे और उसे दीर्घायु की कामना की जाए, तो वह उत्तर दे, "आपको दीर्घायु हो!" या "आपको भी!" - इन दोनों को छोड़कर बाकी सभी बातें जिन्न को खाने का अधिकार था। जिन्न झोपड़ी के केंद्रीय शहतीर पर रहता था।

उसने बोधिसत्व के पिता को छींक दिलाने का निश्चय किया। तदनुसार, उसने अपनी जादुई शक्ति से बारीक धूल का एक बादल उठाया, जो उस व्यक्ति की नाक में घुस गया; और जब वह बेंच पर लेटा हुआ था, तो उसे छींक आ गई। पुत्र ने "दीर्घायु!" नहीं कहा और जिन्न अपने ठिकाने से नीचे उतर आया, अपने शिकार को खाने के लिए तैयार। लेकिन बोधिसत्व ने उसे नीचे उतरते देखा, और तब उनके मन में ये विचार आए। "निस्संदेह यही वह जिन्न है जिसने मेरे पिता को छींक दिलाई। यह अवश्य ही वह जिन्न है जो उन सभी को खा जाता है जो 'तुम्हें दीर्घायु हो' नहीं कहते।" और अपने पिता को संबोधित करते हुए, उन्होंने पहला श्लोक इस प्रकार दोहराया:-

"गग्गा, सौ साल जियो, हाँ, और बीस साल और जियो, मैं प्रार्थना करता हूँ!"
"कोई जिन्न तुम्हें खा न जाए; मेरी शुभकामना है, तुम सौ साल जियो!"

गोब्लिन ने सोचा, "मैं इसे नहीं खा सकता, क्योंकि इसने 'आपकी आयु लंबी हो' कहा है। लेकिन मैं इसके पिता को खाऊंगा;" और वह पिता के पास पहुंचा। लेकिन उस व्यक्ति ने मामले की सच्चाई को भांप लिया—"यह अवश्य ही एक गोब्लिन है," उसने सोचा, "जो उन सभी को खा जाता है जो जवाब में 'आपकी आयु लंबी हो' नहीं कहते!" और इसलिए अपने बेटे को संबोधित करते हुए, उसने दूसरी पंक्ति दोहराई:-

"तुम भी सौ साल जियो, हाँ, और बीस साल और, मैं पूछता हूँ;"
राक्षसों का भोजन जहर हो; मैं कहता हूँ, सौ साल जियो!

ये शब्द सुनकर गोब्लिन मुँह फेरकर सोचने लगा, "इनमें से कोई भी मेरे खाने के लिए नहीं है।" लेकिन बोधिसत्व ने उससे एक प्रश्न पूछा: "आओ, गोब्लिन, तुम इस भवन में प्रवेश करने वाले लोगों को कैसे खाते हो?"

"मैंने वेसवाना की बारह वर्षों की सेवा के लिए यह अधिकार अर्जित किया।"

"क्या, तुम्हें सबको खाने की इजाजत है?"

"उन सभी को छोड़कर जो किसी दूसरे के दीर्घायु की कामना करने पर 'आपको भी यही' कहते हैं।"

"गोब्लिन," लड़के ने कहा, "तुमने पिछले जन्मों में कुछ दुष्टताएँ की हैं, जिनके कारण तुम अब क्रूर, निर्दयी और दूसरों के लिए कमजोरी बनकर पैदा हुए हो। यदि तुम अब भी वही काम करोगे, तो अंधकार से अंधकार में ही गिरते जाओगे। इसलिए अब से किसी की जान

लेना छोड़ दो।" इन शब्दों से उसने गोब्लिन को विनम्र बनाया, उसे नरक के भय से भयभीत किया, उसे पाँच नियमों में स्थापित किया और उसे एक नौकर की तरह आज्ञाकारी बना दिया।

अगले दिन जब लोग आए और उन्होंने उस जिन्न को देखा और जाना कि बोधिसत्व ने उसे वश में कर लिया है, तो वे राजा के पास गए और कहा, "महाराज, किसी ने जिन्न को वश में कर लिया है और उसे नौकर की तरह आज्ञाकारी बना दिया है!" तब राजा ने उसे बुलवाया और उसे सेनापति बना दिया; साथ ही उसने पिता का भी खूब सम्मान किया। जिन्न को कर वसूलने वाला बनाकर और उसे बोधिसत्व के नियमों में स्थापित करके, दान-पुण्य और अच्छे कर्म करने के बाद वह स्वर्ग चला गया।

जब गुरु ने यह कहानी समाप्त की, जो उन्होंने 'दीर्घायु' के उत्तर में 'आपको भी दीर्घायु' कहने की प्रथा के उद्भव को समझाने के लिए सुनाई थी, तो उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "उन दिनों, आनंद राजा थे, कश्यप पिता थे, और मैं स्वयं उनका बालक पुत्र था।"

फुटनोट:

(1) सफेद त्वचा, तीन पैर और आठ दांतों वाला एक राक्षस, रत्नों और कीमती धातुओं का रक्षक।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **अलीनाचित्त-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-156-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 156
अलीनाचित्त-जातक

"एक समय की बात है, राजकुमार विनहार्ट," इत्यादि — यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में एक दुर्बल भिक्षु के बारे में सुनाई थी। ग्यारहवें खंड (*1) में संवर जन्म के वर्णन में इन घटनाओं का विस्तार से वर्णन किया गया है। जब गुरु ने उस भिक्षु से पूछा कि क्या वह सचमुच दुर्बल है, जैसा कि कहा जाता है, तो उसने उत्तर दिया, "जी, भगवान बुद्ध।" इस पर गुरु ने कहा, "क्या, भाई! पुराने समय में तुमने बनारस राज्य पर, जो बारह मील (4.23 किमी) तक फैला था, विजय प्राप्त की और उसे एक शिशु को, जो मांस के लोथ के समान था, सौंप दिया, और यह सब केवल निरंतर साधना से ही संभव हुआ! और अब जब तुमने इस महान मोक्ष (निर्वाण) को प्राप्त कर लिया है, तो क्या तुम हिम्मत हारकर विरक्त हो जाओगे?" और उन्होंने पुराने समय की एक कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब शहर से कुछ ही दूरी पर बढ़ईयों का एक गाँव था, जिसमें पाँच सौ बढ़ई रहते थे। वे नाव में बैठकर नदी के ऊपर जंगल में जाते थे, जहाँ वे घर बनाने के लिए शहतीर और तख्ते तराशते थे और एक या दो मंजिला मकानों का ढाँचा तैयार करते थे। वे मुख्य खंभे से आगे के सभी टुकड़ों को गिनते थे; फिर उन्हें नदी के किनारे लाकर नाव में रखते थे; इसके बाद नाव से नदी के साथ-साथ वापस आते और आवश्यकतानुसार मकान बनाते थे; फिर जब उन्हें उनकी मजदूरी मिल जाती, तो वे निर्माण के लिए और सामग्री लाने के लिए वापस जाते और इस तरह अपनी आजीविका चलाते थे।

एक बार ऐसा हुआ कि एक जगह जहाँ लकड़ी तराशने का काम चल रहा था, वहाँ एक हाथी बबूल की लकड़ी के एक टुकड़े पर चल पड़ा, जो उसके पैर में चुभ गया। इससे उसका पैर सूज गया और उसमें से मवाद निकलने लगा, जिससे उसे बहुत दर्द हुआ। दर्द से कराहते हुए उसने बढ़ईयों के लकड़ी काटने की आवाज़ सुनी। उसने सोचा, "कोई बढ़ई तो मेरा इलाज कर देगा।" और तीन पैरों पर लंगड़ाते हुए वह उनके सामने गया और पास ही लेट गया। बढ़ईयों ने उसके सूजे हुए पैर को देखकर पास जाकर देखा; उसमें लकड़ी का टुकड़ा फंसा हुआ था। उन्होंने एक तेज़ औज़ार से टुकड़े के चारों ओर चीरा लगाया और उसमें एक रस्सी बांधकर उसे बाहर निकाल दिया। फिर उन्होंने घाव को चीरा लगाकर गर्म पानी से धोया और उसका इलाज किया; और बहुत कम समय में घाव ठीक हो गया।

इस इलाज के लिए आभारी होकर हाथी ने सोचा: "इन बढ़ईयों की मदद से मेरी जान बच गई; अब मुझे इनके लिए कुछ उपयोगी करना चाहिए।" इसलिए, उसके बाद से वह उनके लिए पेड़ उखाड़ता था, या जब वे पेड़ काटते थे तो वह लट्ठों को लपेटकर लाता था; या उनके

लिए कुल्हाड़ी और अन्य औजार लाता था, सब कुछ अपनी सूंड में इस तरह दबाए रखता था जैसे कोई मरणासन्न हो। और जब बढ़ईयों को उसे खाना खिलाना होता था, तो वे उसे बारी-बारी से खाना देते थे, इस तरह कुल मिलाकर उसके पास पाँच सौ हिस्से हो जाते थे।

इस हाथी का एक बच्चा था, जो पूरी तरह सफेद, भव्य और उच्च कोटि का प्राणी था। हाथी ने सोचा कि अब वह बूढ़ा हो गया है, और बेहतर होगा कि वह अपने बच्चे को बढ़ईयों के काम में लगा दे और खुद आज़ाद हो जाए। इसलिए वह बढ़ईयों से बिना कुछ कहे जंगल में चला गया और अपने बेटे को उनके पास लाकर बोला, "यह छोटा हाथी मेरा बेटा है। तुमने मेरी जान बचाई है, और मैं इसे तुम्हारे काम के बदले तुम्हें देता हूँ; अब से यह तुम्हारे लिए काम करेगा।" उसने छोटे हाथी को समझाया कि उसका कर्तव्य वही काम करना है जो वह खुद करता आया है, और फिर उसे बढ़ईयों के पास छोड़कर जंगल में चला गया। उसके बाद से छोटा हाथी ईमानदारी और आज्ञाकारिता से उनका सारा काम करता रहा; और वे उसे भी, बाकी हाथियों की तरह, एक बार के भोजन में पाँच सौ भाग खिलाते थे।

अपना काम खत्म करने के बाद हाथी नदी में खेलने चला जाता और फिर लौट आता। बढ़ई के बच्चे उसे सूंड से खींचते और पानी में और पानी के बाहर उसके साथ तरह-तरह की शरारतें करते थे। वैसे तो हाथी, घोड़े या मनुष्य जैसे श्रेष्ठ प्राणी कभी पानी में गोबर या मल त्याग नहीं करते। इसलिए यह हाथी भी पानी में रहते हुए ऐसा कुछ नहीं करता था, बल्कि किनारे पर आने तक इंतजार करता था।

एक दिन, नदी के ऊपरी हिस्से में भारी बारिश हुई; और बाढ़ के साथ उसका आधा सूखा गोबर का टुकड़ा नदी में बह गया। यह बहता हुआ बनारस घाट तक पहुँचा, जहाँ यह एक झाड़ी में अटक गया। उसी समय राजा के हाथी पालक पाँच सौ हाथियों को नहलाने के लिए लाए थे। लेकिन हाथियों को उस पवित्र जानवर की मिट्टी की गंध आ गई, और एक भी हाथी पानी में नहीं उतरा; उनकी पूंछें ऊपर उठीं और वे सब भाग गए। पालकों ने यह बात हाथी प्रशिक्षकों को बताई; जिन्होंने कहा, "ज़रूर पानी में कुछ गड़बड़ है।" इसलिए पानी को शुद्ध करने का आदेश दिया गया; और झाड़ियों में यह टुकड़ा दिखाई दिया। "यही तो बात है!" वे चिल्लाए। तो वे एक घड़ा लाए, और उसे पानी से भर दिया; फिर उसमें गोबर का चूरा डालकर, उन्होंने पानी हाथियों पर छिड़का, जिससे उनके शरीर से सुगंध निकलने लगी। वे तुरंत नदी में उतर गए और नहाने लगे।

जब प्रशिक्षकों ने राजा को अपनी रिपोर्ट सौंपी, तो उन्होंने राजा को हाथी को अपने उपयोग और लाभ के लिए सुरक्षित रखने की सलाह दी। राजा तदनुसार एक बेड़ा पर सवार हुए और नदी के विपरीत दिशा में तब तक आगे बढ़ते रहे जब तक कि वे उस स्थान पर नहीं पहुँच गए जहाँ बढ़ई डेरा डाले हुए थे। युवा हाथी ने पानी में ढोल बजाते हुए ढोल की आवाज़ सुनी और बाहर आकर बढ़इयों के सामने उपस्थित हो गया, जो सभी राजा के आगमन का सम्मान करने के लिए आए थे, और उनसे कहा, "महाराज, यदि लकड़ी का काम चाहिए, तो यहाँ आने की क्या आवश्यकता है? क्यों न इसे मंगवा लिया जाए?"

"नहीं, नहीं, मेरे प्यारे दोस्तों," राजा ने उत्तर दिया, "मैं लकड़ी के लिए नहीं, बल्कि इस हाथी के लिए आया हूँ।"

"यह आपका है, महाराज!" - लेकिन हाथी टस से मस नहीं हुआ।

"हे हाथी, तुम मुझसे क्या करवाना चाहते हो?" राजा ने पूछा।

"महाराज, बढ़ईयों को मेरे ऊपर खर्च किए गए पैसे का भुगतान करने का आदेश दीजिए।"

"खुशी से, मित्र।" राजा ने आदेश दिया कि हाथी की पूंछ, सूंड और चारों पैरों के पास एक लाख सिक्के रखे जाएं। लेकिन यह भी हाथी के लिए काफी नहीं था; वह जाने को तैयार नहीं था। इसलिए हर बढ़ई को एक जोड़ी कपड़े और उनकी पत्नियों को पहनने के लिए वस्त्र दिए गए, और साथ ही इतना पैसा भी दिया गया जिससे उसके साथी बच्चों का पालन-पोषण हो सके; फिर बढ़इयों, स्त्रियों और बच्चों पर आखिरी नजर डालकर वह राजा के साथ चला गया।

राजा उसे अपनी राजधानी ले आया; और शहर और अस्तबल को पूरी शान-शौकत से सजाया गया। उसने हाथी को जुलूस के साथ शहर में घुमाया और वहाँ से अपने अस्तबल में ले गया, जो वैभव और शान से सजा हुआ था। वहाँ उसने विधिपूर्वक हाथी पर जल छिड़का और उसे अपनी सवारी के लिए नियुक्त किया; उसने उसके साथ एक साथी जैसा व्यवहार किया और उसे अपने राज्य का आधा हिस्सा दे दिया, और उसकी उतनी ही देखभाल की जितनी अपनी स्वयं की। इस हाथी के आने के बाद, राजा ने पूरे भारत पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया।

कुछ समय बाद बोधिसत्व रानी की पत्नी के गर्भ में आ गए; और जब उनके प्रसव का समय निकट आया, तो राजा की मृत्यु हो गई। यदि हाथी को राजा की मृत्यु का समाचार मिलता, तो उसका हृदय टूट जाता; इसलिए पहले की तरह ही उसकी सेवा की गई और उससे एक शब्द भी नहीं कहा गया। परन्तु पड़ोसी, कोसल के राजा को राजा की मृत्यु का समाचार मिला। उसने सोचा, "अब तो यह राज्य मेरे अधीन है"; और एक विशाल सेना के साथ नगर की ओर अग्रसर हुआ और उसे घेर लिया। तुरंत ही द्वार बंद कर दिए गए और कोसल

के राजा को संदेश भेजा गया: “हमारी रानी का प्रसव निकट है; और ज्योतिषियों ने कहा है कि सात दिनों में वह पुत्र को जन्म देंगी। यदि पुत्र को जन्म होता है, तो हम राज्य नहीं छोड़ेंगे, परन्तु सातवें दिन हम आपसे युद्ध करेंगे। आपसे निवेदन है कि तब तक प्रतीक्षा करें!” और राजा इस पर सहमत हो गया।

सात दिनों के भीतर रानी ने एक पुत्र को जन्म दिया। उसके नामकरण दिवस पर उसका नाम प्रिंस विनहार्ट रखा गया, क्योंकि लोगों का मानना था कि वह जनता का दिल जीतने के लिए पैदा हुआ था।

जिस दिन उनका जन्म हुआ, उसी दिन नगरवासियों ने कोसल के राजा से युद्ध करना शुरू कर दिया। लेकिन उनका कोई नेता न होने के कारण, उनकी विशाल सेना धीरे-धीरे कमजोर पड़ने लगी। दरबारियों ने यह खबर रानी को सुनाई और कहा, "चूंकि हमारी सेना इस तरह पिछड़ रही है, हमें हार का डर है। लेकिन राजसी हाथी, जो हमारे राजा का प्रिय मित्र है, उसे यह नहीं बताया गया है कि राजा की मृत्यु हो गई है, उनका एक पुत्र जन्मा है, और कोसल का राजा हमसे युद्ध करने आया है। क्या हम उसे यह बात बता दें?"

“जी हां, ऐसा ही करो,” रानी ने कहा। फिर उसने अपने बेटे को कपड़े पहनाए और उसे एक बढ़िया सूती कपड़े में लपेट दिया; इसके बाद वह अपने पूरे दरबार के साथ महल से नीचे उतरी और हाथी के अस्तबल में गई। वहां उसने बच्चे को हाथी के चरणों में रखते हुए कहा, “महाराज, आपका साथी मर गया है, लेकिन हमने आपको बताने से डरते हुए कहा कि कहीं आपका दिल न टूट जाए। यह आपके साथी का बेटा है; कोसल के राजा ने शहर के चारों ओर घेरा बना लिया है और आपके बेटे पर हमला कर रहा है; सेना हार रही है; या तो आप स्वयं अपने बेटे को मार डालें, या उसके लिए राज्य वापस जीत लें!”

हाथी ने तुरंत अपनी सूंड से बच्चे को सहलाया और उसे अपने सिर पर उठा लिया; फिर विलाप करते और रोते हुए उसने उसे जल्दी से नीचे उतारा और उसकी माँ की बाहों में लिटा दिया, और ये कहते हुए—"मैं कोसल के राजा पर विजय प्राप्त करूँगा!" वह तेजी से आगे बढ़ गया।

तब दरबारियों ने उसे कवच और काठी पहनाई, नगर द्वार खोला और उसे वहाँ ले गए। हाथी ने तुरही बजाई और सारी सेना को इतना डरा दिया कि वे भाग गए और अपना शिविर तितर-बितर कर दिया; फिर उसने कोसल के राजा को उसकी चोटी से पकड़कर युवा राजकुमार के पास ले जाकर उसके चरणों में गिरा दिया। कुछ लोग उसे मारने के लिए उठे, लेकिन हाथी ने उन्हें रोक दिया; और उसने बंदी राजा को यह सलाह देकर जाने दिया: "भविष्य के लिए सावधान रहना, और हमारे राजकुमार की युवावस्था पर अत्यधिक आत्मविश्वास न रखना।"

उसके बाद, पूरे भारत की सत्ता बोधिसत्व के हाथों में आ गई और कोई भी प्रतिद्वंद्वी उनके विरुद्ध खड़ा नहीं हो सका। सात वर्ष की आयु में बोधिसत्व को राजा विनहार्ट नियुक्त किया गया; उनका शासनकाल न्यायपूर्ण था और जीवन के अंत में वे स्वर्ग सिधार गए।

जब गुरु ने पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने के बाद यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने इन दो श्लोकों को दोहराया:-

"राजकुमार विनहार्ट राजा कोसला से नाराज होकर उनके पास मौजूद सभी चीजों के साथ उन पर कब्जा कर लिया।"
लालची राजा को बंदी बनाकर उसने अपनी प्रजा को प्रसन्न किया।
इसलिए कोई भी भाई (भिक्षु), दृढ़ इच्छाशक्ति वाला, जो शरण लेता है,
जो सभी अच्छाइयों को महत्व देता है और निर्वाण के मार्ग पर चलता है,
धीरे-धीरे सभी बंधनों (पापों/लालसाओं) का नाश हो जाएगा।
और इस प्रकार, गुरु ने अपने उपदेश को शाश्वत निर्वाण में समाप्त करते हुए, सत्यों का उपदेश दिया और फिर जन्म का वर्णन किया: सत्यों के बाद, इस पथभ्रष्ट भाई को संतत्व प्राप्त हुआ: - "महामाया (बुद्ध की दिवंगत जन्म माता) तब माता थीं; यह पथभ्रष्ट वह हाथी था जिसने राज्य को ग्रहण करके बच्चे को सौंप दिया; सारिपुत्र पिता हाथी थे, और मैं स्वयं युवा राजकुमार था।"

फुटनोट:

(1)सं. 462.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **गुण-जातक**
***स्रोत**: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-157-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 157
गुण-जातक

"बलवानों की ही जीत होती है," इत्यादि — यह वर्णन गुरु ने जेतवन मठ में किया था, जहाँ वरिष्ठ भिक्षु आनंद को एक हजार वस्त्रों का उपहार मिला था। वरिष्ठ भिक्षु कोसल के राजा के महल की महिलाओं को उपदेश दे रहे थे, जैसा कि महासार जन्म (*1) में वर्णित है।

जब उन्होंने वहाँ वर्णित तरीके से उपदेश दिया, तो राजा के लिए एक हजार वस्त्र लाए गए, जिनमें से प्रत्येक की कीमत एक हजार सिक्के थी। इनमें से राजा ने पाँच सौ वस्त्र अपनी पाँच सौ रानियों को दे दिए। रानियों ने इन्हें अलग रख दिया और हमारे वरिष्ठ भिक्षु को भेंट कर दिया, और फिर अगले दिन अपने पुराने वस्त्रों में उस महल में गईं जहाँ राजा नाश्ता कर रहे थे। राजा ने कहा, "मैंने तुम्हें एक हजार सिक्के कीमत के वस्त्र दिए थे। तुम उन्हें क्यों नहीं पहन रही हो?" उन्होंने कहा, "महाराज, हमने उन्हें वरिष्ठ भिक्षु को दे दिया है।" राजा ने पूछा, "क्या वरिष्ठ भिक्षु आनंद को वे सभी मिल गए हैं?" उन्होंने कहा, हाँ, उन्हें मिल गए हैं। राजा ने कहा, "परम बुद्ध केवल तीन वस्त्रों की अनुमति देते हैं। मुझे लगता है कि आनंद वस्त्रों का थोड़ा-बहुत व्यापार कर रहे हैं!" राजा वरिष्ठ भिक्षु से क्रोधित हो गए; और नाश्ते के बाद, उनकी कुटिया में उनसे मिलने गए, और अभिवादन करने के बाद, इन शब्दों के साथ बैठ गए:-

मैं आपसे पूछना चाहता हूँ, महोदय, क्या मेरी महिलाएं आपके उपदेशों को सुनती हैं या उनसे सीखती हैं?

"जी महाराज; वे वही सीखते हैं जो उन्हें सीखना चाहिए, और जो उन्हें सुनना चाहिए, वे सुनते हैं।"

"ओह, बिल्कुल। क्या वे सिर्फ सुनते ही नहीं, या फिर वे आपको ऊपरी या भीतरी वस्त्र उपहार में भी देते हैं?"

"आज, महाराज, उन्होंने मुझे एक हजार पीस मूल्य के पांच सौ वस्त्र दिए हैं।"

"और आपने उन्हें स्वीकार कर लिया, महोदय?"

"जी हां, महाराज, मैंने किया।"

"महाराज, गुरुजी ने तीन वस्त्रों के बारे में कोई नियम क्यों नहीं बनाया?"

"जी हां, महाराज, प्रत्येक भिक्षु के लिए तीन वस्त्र रखना नियम है, यह उनके स्वयं के उपयोग के लिए है। लेकिन किसी को भी भेंट स्वीकार करने से मना नहीं किया गया है; और इसीलिए मैंने इन्हें लिया है - ताकि मैं इन्हें उन भिक्षुओं को दे सकूं जिनके वस्त्र पुराने हो गए हैं।"

"लेकिन जब ये भाई आपसे ये चीजें ले लेते हैं, तो वे अपनी पुरानी चीजों का क्या करते हैं?"

"इन्हें एक लबादे में बदल दो।"

और उस पुराने लबादे का क्या हुआ?

"कि वे एक शर्ट में बदल जाएं।"

और वो पुरानी कमीज़...?

"यह चादर का काम चलाऊ है।"

"पुरानी चादर?" - "चटाई बन जाती है।" "पुरानी चटाई?" - "तौलिया बन जाती है।" "और पुराने तौलिये का क्या?"

"महाराज, विश्वासियों के दान को व्यर्थ करना उचित नहीं है; इसलिए वे पुराने तौलिये को छोटे-छोटे टुकड़ों में काट देते हैं और उन टुकड़ों को मिट्टी में मिलाते हैं, जिसका उपयोग वे अपने घरों के निर्माण में गारे के रूप में करते हैं।"

"महोदय, उपहार को नष्ट नहीं किया जाना चाहिए, यहां तक कि एक तौलिया भी नहीं।"

"जी हां, महाराज, हम कोई भी उपहार नष्ट नहीं करते, बल्कि सभी का किसी न किसी तरह से उपयोग किया जाता है।"

इस बातचीत से राजा इतना प्रसन्न हुआ कि उसने शेष बचे पाँच सौ वस्त्र मंगवाए और उन्हें वरिष्ठ भिक्षु को दे दिया। फिर, धन्यवाद ग्रहण करने के बाद, उसने वरिष्ठ भिक्षु का हार्दिक अभिवादन किया और अपने मार्ग पर चल पड़ा।

वरिष्ठ भिक्षु ने पहले पाँच सौ वस्त्र उन भिक्षुओं को दिए जिनके वस्त्र पुराने हो चुके थे। परन्तु उनके साथी भिक्षुओं की संख्या मात्र पाँच सौ थी। इनमें से एक युवा भिक्षु वरिष्ठ भिक्षु के लिए अत्यंत उपयोगी था; वह उनकी कुटिया की सफाई करता, उन्हें भोजन और पेय पदार्थ परोसता, मुँह धोने के लिए टूथब्रश और पानी देता, स्नानघर, बैठक और शयनकक्ष की देखभाल करता, और हाथ-पैर या पीठ से संबंधित सभी आवश्यक कार्य करता। उनकी इस महान सेवा के फलस्वरूप, वरिष्ठ भिक्षु ने उन्हें वे सभी पाँच सौ वस्त्र दे दिए जो उन्हें बाद में प्राप्त हुए थे। युवा भिक्षु ने उन्हें अपने साथी शिष्यों में बाँट दिया। उन सभी ने उन्हें काटकर कनिकारा (*2) फूल के समान पीले रंग में रंगा; फिर उन्हें पहनकर वे गुरु के पास गए, उनका अभिवादन किया और एक ओर बैठ गए। उन्होंने पूछा, "महोदय, क्या प्रथम मार्ग (सम्मोहन) में प्रवेश कर चुके किसी पवित्र शिष्य के लिए अपने गुणों में पक्षपात करना संभव है?" "नहीं, भाइयों, पवित्र शिष्यों के लिए उपहार देते समय किसी का पक्षपात करना संभव नहीं है।" "महोदय, हमारे आध्यात्मिक गुरु, धर्म के कोषाध्यक्ष ने एक युवा भाई को पाँच सौ वस्त्र दिए, जिनमें से प्रत्येक की कीमत एक हजार सिक्के थी; और उन्होंने इन्हें हम सब में बाँट दिया है।" "भाइयों, इन्हें देते समय आनंद ने किसी का पक्षपात नहीं किया। वह युवक एक बहुत ही उपयोगी सेवक था; इसलिए उन्होंने अपने सेवक को सेवा भाव से, भलाई के भाव से और अधिकारवश यह उपहार दिया, यह सोचकर कि एक अच्छा काम दूसरे अच्छे काम को जन्म देता है, और कृतज्ञता का भाव रखते हुए। पुराने समय में भी, और आज भी, बुद्धिमान लोग इस सिद्धांत पर चलते थे कि एक अच्छा काम दूसरे अच्छे काम को जन्म देता है।" और फिर, उनके अनुरोध पर, उन्होंने उन्हें पुराने समय की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व एक सिंह के रूप में पहाड़ियों पर एक गुफा में रहते थे। एक दिन वे अपनी गुफा से बाहर निकले और पर्वत की तलहटी की ओर देखा। उस पर्वत की तलहटी के चारों ओर एक विशाल जलक्षेत्र फैला हुआ था। उस जलक्षेत्र से थोड़ी दूर पर घनी मिट्टी में मुलायम हरी घास उग रही थी, और उस मिट्टी पर खरगोश, हिरण और ऐसे ही छोटे जानवर घास चर रहे थे। उस दिन, हमेशा की तरह, एक हिरण उस पर घास चर रहा था।

"मैं उस हिरण को पकड़ लूँगा!" शेर ने सोचा; और शेर जैसी छलांग लगाकर वह पहाड़ी से उसकी ओर दौड़ा। लेकिन हिरण डर के मारे गरजते हुए भाग गया। शेर उसे रोक नहीं सका; वह कीचड़ में गिर पड़ा और धंस गया, जिससे वह बाहर नहीं निकल सका; और सात दिन तक वहीं पड़ा रहा, उसके पैर चार खंभों की तरह जमे हुए थे, उसे खाने के लिए एक निवाला भी नहीं मिला।

तभी एक सियार, जो भोजन की तलाश में था, संयोग से उसे देख बैठा; और डर के मारे भागने लगा। लेकिन शेर ने उसे पुकारा— "सीखिए, सियार, भागो मत—मैं यहाँ कीचड़ में फँस गया हूँ। कृपया मुझे बचाओ!" सियार उठ खड़ा हुआ। उसने कहा, "मैं आपको बाहर निकाल सकता हूँ, लेकिन मुझे डर है कि बाहर निकलने के बाद आप मुझे खा जाएँगे।" शेर ने कहा, "डरने की कोई बात नहीं, मैं तुम्हें नहीं खाऊँगा। बल्कि, मैं तुम्हारी बहुत मदद करूँगा; बस मुझे किसी तरह बाहर निकाल दो।"

सियार ने यह वादा मान लिया और अपने चारों पैरों के आसपास की कीचड़ को हटाते हुए, जिन गड्ढों में उसके पैर गड़े थे, उन्हें पानी की ओर और खोदा; फिर पानी अंदर आया और कीचड़ को नरम कर दिया। फिर वह शेर के नीचे घुस गया और बोला—"अब, महाराज, एक ज़ोरदार प्रयास कीजिए," और ज़ोर से आवाज़ करते हुए अपने सिर से शेर के पेट पर प्रहार किया। शेर ने अपनी पूरी ताकत लगाकर कीचड़ से बाहर निकला; वह सूखी ज़मीन पर खड़ा हो गया। एक पल आराम करने के बाद, वह झील में कूद गया और अपने ऊपर से कीचड़ को धोकर साफ किया। फिर उसने एक भैंसा मारा और अपने दाँतों से उसका मांस नोच डाला, जिसमें से कुछ उसने सियार को देते हुए कहा, "खाओ, साथी!" और सियार के खाने के बाद उसने भी खा लिया। इसके बाद, सियार ने एक टुकड़ा अपने मुँह में लिया। "यह किसलिए है?" शेर ने पूछा। "आपके विनम्र सेवक, मेरी साथी के लिए, जो घर पर मेरा इंतज़ार कर रही है।" "ठीक है," शेर ने कहा और अपनी साथी के लिए एक टुकड़ा ले लिया। "चलो, साथी," उसने फिर कहा, "कुछ देर पहाड़ की चोटी पर रुकते हैं, फिर उस महिला के घर चलते हैं।" तो वे वहाँ गए, और शेर ने मादा सियार को खाना खिलाया; और जब दोनों का पेट भर गया, तो उसने कहा, "अब मैं तुम्हारी देखभाल करूँगा।" तो वह उन्हें अपने घर ले गया, और उन्हें अपने घर के प्रवेश द्वार के पास एक गुफा में ठहरा दिया।

उसके बाद से, वह और सियार अपने साथियों को पीछे छोड़कर एक साथ शिकार पर जाया करते थे; वे तरह-तरह के जीवों को मारते, जी भर के खाते और फिर उनमें से कुछ अपने बाकी दो साथियों के लिए भी ले आते थे।

और समय बीतने के साथ, सियार और शेरनी दोनों ने दो-दो शावकों को जन्म दिया, और वे सभी खुशी-खुशी एक साथ रहने लगे।

एक दिन अचानक शेरनी के मन में एक विचार आया। "मेरा शेर सियार और उसकी मादा और बच्चों को बहुत पसंद करता है। कहीं उनके बीच कुछ गड़बड़ तो नहीं है! शायद यही वजह है कि वह उन्हें इतना पसंद करता है। चलो, मैं उसे परेशान करूंगी, डराऊंगी और उसे इस जगह से भगा दूंगी।"

जब शेर और सियार शिकार पर गए हुए थे, तो सियार ने सियार की साथी को परेशान किया और डराया, उससे पूछा कि वह यहाँ क्यों रुकी है, भाग क्यों नहीं जाती? उसके शावकों ने भी उसी तरह से छोटे सियारों को डराया। सियार ने अपने साथी को बताया कि क्या कहा गया था। उसने कहा, "यह स्पष्ट है कि शेर ने हमारे बारे में कुछ इशारा किया होगा। हम यहाँ बहुत समय से हैं; और अब वह हमारी जान ले लेगा। चलो हम वापस उसी जगह चलते हैं जहाँ हम पहले रहते थे!"

यह सुनकर सियार शेर के पास आकर बोला, "स्वामी, हम यहाँ बहुत देर से हैं। जो बहुत देर तक रुकते हैं, वे अपनी सीमा पार कर जाते हैं। जब हम दूर होते हैं, तो आपकी शेरनी किसी साथी को डांटती या डराती नहीं है, न ही उससे पूछती है कि वह क्यों रुकी है और न ही उसे जाने के लिए कहती है; आपके बच्चे भी मेरे बच्चों के साथ ऐसा ही करते हैं। अगर किसी को अपना पड़ोसी पसंद नहीं है, तो उसे बस उसे जाने के लिए कह देना चाहिए और उसे उसके काम पर भेज देना चाहिए; इस सब झंझट का क्या फायदा?" ऐसा कहकर उसने पहला श्लोक दोहराया:-

"बलवानों की हमेशा अपनी मनमानी होती है; ऐसा करना उनका स्वभाव है।"
तुम्हारा साथी जोर से दहाड़ता है; और अब मैं कहता हूँ कि मुझे उस चीज़ से डर लगता है जिस पर मैंने कभी भरोसा किया था।"
शेर ने सुना; फिर अपनी शेरनी की ओर मुड़कर, "पत्नी," उसने कहा, "तुम्हें याद है कैसे एक बार मैं एक हफ्ते के लिए शिकार पर गया था, और फिर इस सियार और उसकी साथी को अपने साथ वापस लाया था?" "हाँ, मुझे याद है।" "अच्छा, क्या तुम जानते हो कि मैं उस पूरे हफ्ते क्यों दूर रहा?" "नहीं, महाराज।" "मेरी पत्नी, हिरण पकड़ने की कोशिश में, मुझसे गलती हो गई, और मैं कीचड़ में फंस गया; मैं वहीं फंसा रहा—क्योंकि मैं बाहर नहीं निकल सका—पूरे एक हफ्ते बिना भोजन के। मेरी जान इस सियार ने बचाई। मेरे इस दोस्त ने मेरी जान बचाई! संकट में साथ देने वाला ही सच्चा दोस्त होता है, चाहे वह बड़ा हो या छोटा। फिर कभी मेरे साथी, उसकी पत्नी या उसके परिवार का अपमान मत करना।" और फिर शेर ने दूसरा छंद दोहराया:-

"एक मित्र जो मित्रतापूर्ण भूमिका निभाता है, चाहे वह कितनी भी छोटी और कमजोर क्यों न हो,"
वह मेरा रिश्तेदार और मेरा खून का रिश्ता है, एक दोस्त और साथी है;
मेरे नुकीले दांतों वाले साथी, उससे घृणा मत करो! इस सियार ने मेरी जान नहीं बचाई।

जब शेरनी ने यह कहानी सुनी, तो उसने सियार की मादा से सुलह कर ली और तब से वह उसके और उसके बच्चों के साथ सौहार्दपूर्ण जीवन व्यतीत करती रही। दोनों जोड़ियों के बच्चे बचपन में साथ खेलते रहे और जब उनके माता-पिता की मृत्यु हो गई, तो उन्होंने मित्रता का बंधन नहीं तोड़ा, बल्कि बड़ों की तरह ही खुशी-खुशी साथ रहने लगे। वास्तव में, यह मित्रता सात पीढ़ियों तक अटूट बनी रही।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई:-(सत्यों के अंत में कुछ प्रथम मार्ग (सम्मोहन) में प्रवेश करते हैं, कुछ द्वितीय में, कुछ तृतीय में और कुछ चतुर्थ में:)--"उन दिनों आनंद सियार था, और मैं स्वयं सिंह था।"

फुटनोट:

(1)सं. 92.

(2) टेरोस्पर्मम एसरीफोलियम.

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सुहानु-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-158-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 158
सुहानु-जातक

"एक जैसे स्वभाव वाले पक्षी," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए दो गुस्सैल भिक्षुओं के बारे में सुनाई थी।

एक बार दो भिक्षु थे, जो बेहद जोशीले, क्रूर और हिंसक स्वभाव के थे। एक जेतवन मठ में रहता था और दूसरा गाँव में। एक बार गाँव वाला भिक्षु किसी काम से जेतवन मठ आया। नौसिखिए और युवा भिक्षु उसके उग्र स्वभाव को जानते थे, इसलिए वे उसे दूसरे भिक्षु की कुटिया में ले गए, और उन दोनों को लड़ते देखने के लिए बहुत उत्सुक थे। जैसे ही उन दोनों गुस्सैल भिक्षुओं ने एक-दूसरे को देखा, वे एक-दूसरे की बाहों में दौड़ पड़े और एक-दूसरे के हाथों, पैरों और पीठ को सहलाने और प्यार करने लगे!

सत्य के हॉल में भाई इस बारे में बात कर रहे थे। "मित्रों, ये जोशीले भाई दूसरों के प्रति तो चिड़चिड़े, निर्दयी और क्रोधित रहते हैं, लेकिन आपस में वे सबसे अच्छे मित्र, सौहार्दपूर्ण और सहानुभूतिशील हैं!" गुरुजी अंदर आए और पूछने लगे कि वे यहाँ बैठकर किस बारे में बात कर रहे हैं? उन्होंने उन्हें बताया। गुरुजी ने कहा, "भाइयों, यह एकमात्र ऐसा समय नहीं है जब इन लोगों ने, जो दूसरों के प्रति चिड़चिड़े, निर्दयी और क्रोधित रहते हैं, आपस में सौहार्दपूर्ण, मित्रवत और सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार दिखाया है। पुराने समय में भी ऐसा ही हुआ था"; और ऐसा कहते हुए उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व उनके सर्वांगीण दरबारी थे, जो उन्हें सांसारिक और आध्यात्मिक मामलों पर सलाह देते थे। यह राजा स्वभाव से कुछ लालची था; और उसके पास महासोना नामक एक विशालकाय घोड़ा था।

उत्तर देश से कुछ अश्व व्यापारी पाँच सौ घोड़े लेकर आए; और राजा को इन घोड़ों के आने की सूचना भेजी गई। पहले बोधिसत्व हमेशा व्यापारियों से कीमत तय करने को कहते थे और फिर पूरी कीमत चुका देते थे। लेकिन अब राजा उनसे नाराज़ होकर अपने दरबार के एक अन्य व्यक्ति को बुलाया और उससे कहा,

"दोस्त, आदमियों से उनकी कीमत पूछो; फिर बिग चेस्टनट को छोड़ दो ताकि वह उनके बीच जाए; उसे उन्हें काटने दो, और जब वे कमजोर और घायल हो जाएं तो आदमियों से अपनी कीमत कम करवा लो।"

"ज़रूर," उस आदमी ने कहा; और उसने वैसा ही किया।

व्यापारियों ने बड़े आक्रोश के साथ बोधिसत्व को बताया कि उस घोड़े ने क्या किया था।

"क्या तुम्हारे शहर में भी ऐसा ही कोई क्रूर व्यक्ति नहीं है?" बोधिसत्व ने पूछा। उन्होंने कहा, हाँ, वहाँ सुहानु नाम का एक क्रूर व्यक्ति था, जिसका अर्थ है बलवान जबड़ा, और वह बहुत ही हिंसक और बर्बर था। "अगली बार जब तुम आओ तो उसे अपने साथ लाना," बोधिसत्व ने कहा; और उन्होंने ऐसा करने का वादा किया।

अगली बार जब वे आए तो यह क्रूर घोड़ा भी उनके साथ आया। राजा ने जब घोड़ों के व्यापारियों के आने की खबर सुनी तो उसने घोड़ों को देखने के लिए अपनी खिड़की खोली और चेस्टनट को खुला छोड़ दिया। फिर जैसे ही व्यापारियों ने चेस्टनट को आते देखा, उन्होंने स्ट्रॉन्गजॉ को भी खुला छोड़ दिया। दोनों मिलते ही एक-दूसरे को चाटने लगे!

राजा ने बोधिसत्व से पूछा कि यह कैसे हुआ? राजा ने कहा, "मित्र, जब ये दोनों बदमाश घोड़े दूसरों से मिलते हैं, तो वे उग्र, हिंसक और क्रूर हो जाते हैं, उन्हें काटते हैं और बीमार कर देते हैं। लेकिन जब वे एक-दूसरे के साथ होते हैं—तो वे एक-दूसरे के पूरे शरीर को चाटते हुए खड़े रहते हैं! इसका क्या कारण है?" बोधिसत्व ने कहा, "इसका कारण यह है कि वे एक-दूसरे से भिन्न नहीं हैं, बल्कि स्वभाव और चरित्र में एक समान हैं।" और उन्होंने ये दो श्लोक दोहराए:

एक जैसे पक्षी एक साथ रहते हैं: चेस्टनट और स्ट्रॉन्गजॉ दोनों सहमत हैं:
उद्देश्य और लक्ष्य दोनों में समानता है—मुझे कोई अंतर नजर नहीं आता।"
"दोनों ही क्रूर और हिंसक हैं; दोनों ही हमेशा अपनी रस्सी को काटते हैं;"
इसलिए पाप का पाप से और दुर्गुण का दुर्गुण से एकरूपता अवश्य होनी चाहिए।"

फिर बोधिसत्व ने राजा को अत्यधिक धन-संपत्ति के लालच और दूसरों की संपत्ति लूटने से बचने की चेतावनी दी; और मूल्य निर्धारित करके उनसे उचित कीमत वसूल की। व्यापारियों को उचित मूल्य प्राप्त हुआ और वे संतुष्ट होकर चले गए; और राजा ने बोधिसत्व की शिक्षाओं का पालन करते हुए अंततः अपने कर्मों के फल के अनुसार ही मृत्यु को प्राप्त किया।

जब गुरु (बुद्ध) ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "वे दुष्ट भाई (भिक्षु) तब ये दो घोड़े थे, आनंद राजा थे, और मैं बुद्धिमान सलाहकार था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **मोरा-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-159-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 159
मोरा-जातक

"देखो, वह आरोहित हो रहा है, सर्वज्ञानी राजा," इत्यादि। यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में एक पथभ्रष्ट भिक्षु के बारे में सुनाई थी। कुछ भिक्षु उसे गुरु के समक्ष लाए और उन्होंने पूछा, "क्या सच है, जैसा मैंने सुना है, कि तुम पथभ्रष्ट हो गए हो?" "जी हाँ।" "ऐसा क्या देखा है जिससे तुमने ऐसा किया?" "एक स्त्री को भव्य वस्त्रों में सजे हुए।" तब गुरु ने कहा, "यह आश्चर्य की बात नहीं है कि स्त्री जाति तुम जैसे पुरुष के मन को विचलित कर दे! यहाँ तक कि ज्ञानी पुरुष, जिन्होंने सात सौ वर्षों तक कोई पाप नहीं किया, एक स्त्री की आवाज सुनकर क्षण भर में पाप कर बैठते हैं; पवित्र भी अपवित्र हो जाते हैं; यहाँ तक कि सर्वोच्च सम्मान प्राप्त करने वाले भी इस प्रकार अपमानित हो जाते हैं - अपवित्रों का क्या होगा!" और उन्होंने प्राचीन काल की एक कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व ने मोर के रूप में इस संसार में जन्म लिया। जिस अंडे में वे थे, उसका छिलका कनिकारा कली के समान पीला था; और जब उन्होंने छिलका तोड़ा, तो वे सुनहरे मोर बन गए, जो सुंदर और आकर्षक थे, और उनके पंखों के नीचे सुंदर लाल धारियाँ थीं। अपने जीवन की रक्षा के लिए, वे तीन पर्वत श्रृंखलाओं को पार करते हुए चौथी श्रृंखला में दंडक में एक सुनहरी पहाड़ी के पठार पर बस गए। जब सूर्योदय हुआ, तो वे पहाड़ी पर बैठकर सूर्योदय देख रहे थे, तभी उन्होंने अपने आप को अपने ही भोजन स्थल में सुरक्षित रखने के लिए ब्रह्मा (प्रधान देवदूत) का मंत्र रचा, जो इस प्रकार शुरू होता है:-

"वहाँ वह उदय होता है, सर्वज्ञानी राजा,
वह अपनी सुनहरी रोशनी से सब कुछ रोशन कर देता है।
हे महिमामयी, मैं आपकी पूजा करता हूँ।
अपनी सुनहरी रोशनी से सब कुछ रोशन करते हुए,
मेरी रक्षा करना, मैं प्रार्थना करता हूँ।
आने वाले दिन के दौरान।"

इस श्लोक के अनुसार सूर्य की पूजा करने के बाद, वह दिवंगत बुद्धों और उनके सभी गुणों की पूजा में एक और श्लोक दोहराता है:

सभी संत, धर्मी, पवित्र परंपरा में ज्ञानी,
मैं इनका आदर करता हूँ और इनसे सहायता की याचना करता हूँ:
बुद्धिमानों को सर्वोपरि सम्मान, ज्ञान को ही सम्मान मिले।
स्वतंत्रता के लिए, और उन सभी चीजों के लिए जिन्हें स्वतंत्रता ने स्वतंत्र बनाया है।"

स्वयं को हानि से बचाने के लिए यह मंत्र जपते हुए, मोर भोजन करने चला गया।

दिन भर उड़ने के बाद, वह शाम को वापस आया और सूर्यास्त देखने के लिए पहाड़ी की चोटी पर बैठ गया; फिर ध्यान करते हुए, उसने अपनी रक्षा करने और बुराई को दूर रखने के लिए एक और मंत्र का उच्चारण किया, जो "वहाँ वह अस्त हो रहा है" से शुरू होता है:-

"वहाँ वह सर्वज्ञानी राजा विराजमान बैठता है,"
वह जो अपने सुनहरे प्रकाश से सब कुछ रोशन कर देता है।
हे महिमामयी, मैं आपकी पूजा करता हूँ।
अपनी सुनहरी रोशनी से सब कुछ रोशन कर दो।
रात भर, दिन भर की तरह,
मेरी रक्षा करना, मैं प्रार्थना करता हूँ।
सभी संत, धर्मी, पवित्र परंपरा में ज्ञानी,
मैं इनका आदर करता हूँ और इनसे सहायता की याचना करता हूँ:
बुद्धिमानों को सर्वोपरि सम्मान, ज्ञान को ही सम्मान मिले।
स्वतंत्रता के लिए, और उन सभी चीजों के लिए जिन्हें स्वतंत्रता ने स्वतंत्र बनाया है।"
स्वयं को हानि से बचाने के लिए यह मंत्र जपते हुए मोर सो गया।

बनारस के पास जंगली शिकारियों के एक गाँव में एक असभ्य व्यक्ति रहता था। हिमालय की पहाड़ियों में घूमते हुए उसने दंडक की सुनहरी पहाड़ी पर विराजमान बोधिसत्व को देखा और यह बात अपने बेटे को बताई।

एक दिन बनारस के राजा की पत्नियों में से एक, खेमा नाम की, ने स्वप्न में एक स्वर्णिम मोर को धार्मिक प्रवचन देते हुए देखा। उसने यह बात राजा को बताई और कहा कि वह स्वर्णिम मोर का प्रवचन सुनने के लिए व्याकुल है। राजा ने अपने दरबारियों से इसके बारे में पूछा; और दरबारियों ने कहा, "ब्राह्मणों को अवश्य पता होगा।" ब्राह्मणों ने कहा, "जी हाँ, स्वर्णिम मोर होते हैं।" जब उनसे पूछा गया, कहाँ? तो उन्होंने उत्तर दिया, "शिकारियों को अवश्य पता होगा।" राजा ने शिकारियों को बुलाया और उनसे पूछा। तब एक शिकारी ने उत्तर दिया, "हे महाराज, दंडक में एक स्वर्णिम पर्वत है; और वहाँ एक स्वर्णिम मोर रहता है।" "तो उसे यहाँ ले आओ—उसे मारो मत, बल्कि उसे जीवित ही ले आओ।"

शिकारी ने मोर के चारागाह में फंदे लगाए। लेकिन जब मोर ने फंदे पर पैर रखा, तब भी फंदा बंद नहीं हुआ। शिकारी ने सात साल तक कोशिश की, लेकिन उसे पकड़ नहीं सका; और वहीं उसकी मृत्यु हो गई। और रानी खेमा भी अपनी इच्छा पूरी किए बिना ही मर गईं।

राजा क्रोधित थे क्योंकि उनकी रानी एक मोर के कारण मर गई थीं। उन्होंने एक सोने की थाली पर यह लिखवाया: "हिमालय पर्वतमाला में दंडक में एक सोने की पहाड़ी है। वहाँ एक सोने का मोर रहता है; और जो कोई भी उसका मांस खाता है, वह सदा युवा और अमर हो जाता है।" उन्होंने इसे एक ताबूत में बंद करवा दिया।

उनकी मृत्यु के बाद, अगले राजा ने यह शिलालेख पढ़ा और सोचा, "मैं सदा युवा और अमर हो जाऊँगा;" इसलिए उन्होंने एक और शिकारी को भेजा। पहले शिकारी की तरह, यह शिकारी भी मोर को पकड़ने में असफल रहा और खोज में मारा गया। इसी प्रकार राज्य पर लगातार छह राजाओं ने शासन किया।

फिर एक सातवाँ व्यक्ति आया, जिसने एक शिकारी को भी भेजा। शिकारी ने देखा कि जब सुनहरा मोर फंदे में फँसता था, तो वह रुकता नहीं था, और यह भी कि वह भोजन की तलाश में निकलने से पहले एक मंत्र पढ़ता था। वह मैदान में गया और एक मोरनी को पकड़ लिया, जिसे उसने ताली बजाने पर नाचने और उंगली के इशारे पर अपनी आवाज निकालने का प्रशिक्षण दिया। फिर, उसे अपने साथ लेकर, उसने फंदा लगाया और मोर के मंत्र पढ़ने से पहले ही सुबह-सुबह उसके खंभों को जमीन में गाड़ दिया। फिर उसने मोरनी से आवाज निकलवाई। यह अपरिचित आवाज—मादा की आवाज—ने मोर के मन में वासना जगा दी; अपना मंत्र पढ़े बिना ही वह उसकी ओर बढ़ा; और फंदे में फँस गया। फिर शिकारी ने उसे पकड़ा और बनारस के राजा के पास ले गया।

राजा मोर की सुंदरता देखकर प्रसन्न हुए और उन्होंने उसके लिए आसन लगाने का आदेश दिया। उस आसन पर बैठकर बोधिसत्व ने पूछा, "हे राजा, आपने मुझे क्यों पकड़वाया?"

"क्योंकि कहते हैं कि जो भी तुम्हें खाता है, वह अमर हो जाता है और उसे शाश्वत यौवन प्राप्त होता है। इसलिए मैं तुम्हें खाकर शाश्वत यौवन और अमरता प्राप्त करना चाहता हूँ," राजा ने कहा।

"ठीक है—मान लीजिए कि जो भी मुझे खाएगा वह अमर हो जाएगा और शाश्वत यौवन प्राप्त करेगा। लेकिन इसका मतलब यह होगा कि मुझे मरना होगा!"

"बिल्कुल," राजा ने कहा।

"अच्छा—और अगर मैं मर जाऊं, तो मेरा मांस खाने वालों को अमरता कैसे दे सकता है?"

"तुम्हारा रंग सुनहरा है; इसलिए (ऐसा कहा जाता है) जो तुम्हारा मांस खाते हैं वे जवान हो जाते हैं और हमेशा के लिए जीवित रहते हैं (*1)।"

"महाराज," पक्षी ने उत्तर दिया, "मेरे सुनहरे रंग का एक बहुत अच्छा कारण है। बहुत समय पहले, मैंने इस शहर में रहते हुए पूरे विश्व पर अपना प्रभुत्व जमाया था; मैंने पंच आज्ञाओं का पालन किया और संसार के सभी लोगों को भी उनका पालन करने के लिए प्रेरित किया। इसी कारण मृत्यु के बाद मेरा पुनर्जन्म तैंतीस प्रधान देवदूतों के लोक में हुआ; मैंने वहाँ अपना जीवन व्यतीत किया, लेकिन अगले जन्म में किसी पाप के कारण मैं मोर बन गया; फिर भी, मैं सुनहरा इसलिए हुआ क्योंकि मैंने पहले पंच आज्ञाओं का पालन किया था।"

"क्या? अविश्वसनीय! आप एक शाही शासक हैं, जिन्होंने आज्ञाओं का पालन किया! उन्हीं के फल स्वरूप स्वर्ण-रंग के रूप में जन्मे! कृपया प्रमाण दीजिए!"

"मेरे पास एक है, महाराज।"

"यह क्या है?"

"महाराज, जब मैं सम्राट था, तब मैं रत्नजड़ित रथ पर सवार होकर हवा में विचरण किया करता था, जो अब शाही झील के पानी के नीचे धरती में दबा हुआ है। इसे झील के नीचे से खोदकर निकालिए, और यही मेरा प्रमाण होगा।"

राजा ने योजना को मंजूरी दे दी; उसने झील का पानी सूखवा दिया, रथ को खोदकर निकाला और बोधिसत्व पर विश्वास किया। तब बोधिसत्व ने उससे इस प्रकार कहा:

"हे महाराज, निर्वाण को छोड़कर, जो शाश्वत है, बाकी सभी चीजें सांसारिक स्वभाव की होने के कारण सारहीन, क्षणभंगुर और जीवन-मृत्यु के अधीन हैं।" इस विषय पर उपदेश देते हुए उन्होंने राजा को बोधिसत्वों का पालन करना सिखाया। राजा के हृदय में शांति का संचार हुआ; उन्होंने अपना राज्य बोधिसत्व को सौंप दिया और उनका आदर किया। बोधिसत्व ने दान लौटा दिया; और कुछ दिनों के प्रवास के बाद, वे आकाश में विलीन हो गए और दंडक पर्वत की सुनहरी पहाड़ी पर लौट आए, और विदाई के समय यह सलाह दी - "हे राजा, सावधान रहें!" राजा ने बोधिसत्व की सलाह का पालन किया; और दान-पुण्य और अच्छे कर्म करने के बाद, अपने कर्मों के फल के लिए परलोक विदा हो गए।

यह प्रवचन समाप्त हुआ, गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म का वर्णन किया:- अब सत्यों के बाद पथभ्रष्ट भाई (भिक्षु) संत बन गया:- "आनंद उन दिनों का राजा था, और मैं स्वयं स्वर्णिम मोर था।"

फुटनोट:

(1) शायद इसलिए कि वे तब तक जीवित रहने वाले हैं जब तक सोना रहता है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **विनीलक-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-160-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 160
विनीलाका-जातक

"जैसे वहाँ राजा घोड़े दौड़ा रहा हो," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने वेलुवाना में अपने प्रवास के दौरान सुनाई थी, कि कैसे देवदत्त ने बुद्ध का अनुकरण किया।

दो प्रमुख शिष्य (*1) गयासिसा (*2) के दर्शन करने गए, जहाँ देवदत्त ने बुद्ध का अनुकरण किया और मारा गया; तब दोनों वरिष्ठ भिक्षु प्रवचन देने के बाद अपने-अपने शिष्यों को साथ लेकर लौट आए। वेलुवन पहुँचने पर गुरु ने उनसे पूछा कि देवदत्त ने उन्हें देखकर क्या किया था? उन्होंने कहा, "गुरुजी, उसने बुद्ध का अनुकरण किया और बुरी तरह नष्ट हो गया।" गुरु ने उत्तर दिया, "सारिपुत्र, ऐसा केवल अभी ही नहीं हुआ है कि देवदत्त ने मेरा अनुकरण करके गंभीर विनाश का सामना किया हो; पहले भी ऐसा ही हुआ था।" तब वरिष्ठ भिक्षु के अनुरोध पर उन्होंने एक प्राचीन कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब विदेह अपने राज्य मिथिला में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व उनकी रानी पत्नी के पुत्र बने। समय के साथ वे बड़े हुए और तक्षशिला में शिक्षा प्राप्त की; और अपने पिता की मृत्यु के बाद उन्होंने उनका राज्य विरासत में प्राप्त किया।

उस समय, सुनहरे हंसों के एक राजा ने चारागाह में एक कौवे के साथ जोड़ी बनाई और उन्हें एक पुत्र हुआ। वह न तो अपने माता-पिता जैसा था, न ही अपने पिता जैसा। वह पूरी तरह से मंद नीले-काले रंग का था, इसलिए उन्होंने उसका नाम 'मंद' रख दिया। हंसों का राजा अक्सर अपने पुत्र से मिलने जाता था; उसके दो और पुत्र थे, जो उसी की तरह हंस थे। उन्होंने देखा कि वह अक्सर उन क्षेत्रों में जाता था जहाँ मनुष्य आते-जाते थे, और उन्होंने उससे इसका कारण पूछा। "मेरे पुत्रों," उसने कहा, "वहाँ मेरी एक साथी है, एक कौवा, और उसने मुझे एक पुत्र दिया है, जिसका नाम 'मंद' है। मैं उसी से मिलने जाता हूँ।" "वे कहाँ रहते हैं?" उन्होंने पूछा। "विदेह राज्य में मिथिला के पास एक ताड़ के पेड़ पर," उसने उस स्थान का वर्णन किया। "पिताजी," उन्होंने कहा, "जहाँ मनुष्य होते हैं, वहाँ भय और खतरा होता है। आपको वहाँ नहीं जाना चाहिए; हम जाकर उसे आपके पास लाते हैं।"

इसलिए उन्होंने एक छड़ी ली और उस पर डल को बिठा दिया; फिर अपनी चोंचों में दोनों सिरों को पकड़कर वे मिथिला शहर के ऊपर उड़ गए।

उस समय संयोगवश राजा विदेह चार दूधिया सफेद नस्ल के घोड़ों द्वारा खींचे जा रहे एक भव्य रथ में बैठे शहर का विजय जुलूस निकाल रहे थे। डल ने उन्हें देखा और मन ही मन सोचा—"मुझमें और राजा विदेह में क्या अंतर है? वे चार सफेद घोड़ों द्वारा खींचे जा रहे रथ में शान से अपनी राजधानी का चक्कर लगा रहे हैं; और मैं दो हंसों द्वारा खींचे जा रहे वाहन में बैठा हूँ।" इसलिए हवा में उड़ते हुए उन्होंने पहली पंक्ति दोहराई:

"वहाँ राजा अपने दूधिया सफेद चार घोड़ों के साथ सरपट दौड़ रहा है,
डल के पास ये दो हंस हैं, जो उसे ज़मीन पर ले जाएंगे!
इन शब्दों से हंस क्रोधित हो गए। उनका पहला विचार था, "चलो इसे यहीं छोड़ देते हैं!" लेकिन फिर उन्होंने सोचा—"हमारे पिता क्या कहेंगे!" इसलिए डांट के डर से वे उस प्राणी को अपने पिता के पास ले गए और उसे सब कुछ बताया जो उसने किया था। यह सुनकर पिता क्रोधित हो गए: "क्या!" उन्होंने कहा, "क्या तुम मेरे बेटों से श्रेष्ठ हो कि तुम उन पर अपना अधिकार जमाते हो और उनके साथ गाड़ी के घोड़ों जैसा व्यवहार करते हो? तुम्हें अपनी औकात का पता नहीं है। यह तुम्हारे लिए जगह नहीं है; अपनी माँ के पास वापस जाओ!" और इस आलोचना के साथ उन्होंने दूसरा छंद दोहराया:

"सुस्त, मेरी प्यारी, यहाँ खतरा है; यह तुम्हारे लिए जगह नहीं है;"
गांव के द्वार पर तुम्हारी मां इंतजार कर रही है—तुम्हें भी जल्दी से वहां जाना होगा।

इस आलोचना के साथ, उसने अपने बेटों को पक्षी को मिथिला शहर के बाहर कूड़े के ढेर तक ले जाने के लिए कहा; और उन्होंने ऐसा ही किया।

यह पाठ समाप्त होने पर, गुरु ने जन्म का वर्णन किया: "उन दिनों देवदत्त सुस्त थे, दो बड़े दो छोटे हंस थे, आनंद हंस पिता थे, और मैं स्वयं राजा विदेह था।"

फुटनोट:

(1)सारिपुत्र और मोग्गल्याना.

(2) बिहार (भारत) में गया के पास एक पर्वत। इसे अब ब्रह्मयोनि कहा जाता है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **इंदसामनगोट्टा-जातक**
***स्रोत**: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-161-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 161
इंदासमनगोट्टा-जातक

"बुराई से मित्रता," इत्यादि—यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक हठी व्यक्ति के बारे में सुनाई थी; और इसके घटनाक्रम नौवें खंड के गिद्ध जन्म (*1) में मिलेंगे। गुरु ने उस भिक्षु से कहा—"पुराने समय में, आज की ही तरह, तुम भी एक पागल हाथी के पैरों तले कुचलकर मर गए थे क्योंकि तुम बहुत हठी थे और बुद्धिमानों की सलाह नहीं मानते थे।" और उन्होंने वह पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब एक ब्राह्मण परिवार में बोधिसत्व का जन्म हुआ। बड़े होकर उन्होंने सांसारिक घर त्याग दिया और संन्यासी जीवन व्यतीत करने लगे। समय के साथ वे हिमालय क्षेत्र में एक साथ रहने वाले पाँच सौ संन्यासियों के समूह के नेता बन गए।

इन संन्यासियों में इंद्रसमनागोत्ता नाम का एक हठी और अशिक्षित व्यक्ति था। उसके पास एक पालतू हाथी था। बोधिसत्व को जब इस बात का पता चला, तो उन्होंने उसे बुलवाया और पूछा कि क्या वह सचमुच एक छोटा हाथी पालता है? उस व्यक्ति ने कहा, हाँ, उसके पास एक हाथी है जिसकी माँ मर चुकी है। बोधिसत्व ने कहा, "हाथी बड़े होने पर अपने पालने वालों को भी मार डालते हैं; इसलिए बेहतर होगा कि तुम उसे अब और न पालें।" बोधिसत्व ने उत्तर दिया, "लेकिन मैं उसके बिना नहीं रह सकता, मेरे गुरु!" बोधिसत्व ने कहा, "अच्छा, तो तुम्हें इसका पछतावा होगा।"

हालांकि उसने फिर भी उस जीव का पालन-पोषण किया, और कुछ समय बाद वह विशाल आकार का हो गया।

एक बार ऐसा हुआ कि सभी साधु जंगल में जड़ और फल इकट्ठा करने के लिए दूर खेतों में गए थे और कई दिनों तक अनुपस्थित रहे। दक्षिण से आती हवा का पहला झोंका आते ही यह हाथी बेकाबू हो गया।

“इस झोपड़ी का नाश हो!” उसने सोचा, “मैं पानी का घड़ा तोड़ दूंगा! मैं पत्थर की बेंच उलट दूंगा! मैं पुआल का गद्दा फाड़ दूंगा! मैं साधु को मार डालूंगा, और फिर चला जाऊंगा!” इसलिए वह जंगल में भाग गया, और उनके लौटने का इंतजार करने लगा।

मालिक सबसे पहले आया, अपने पालतू जानवर के लिए भोजन लेकर। जैसे ही उसने उसे देखा, वह तेजी से आगे बढ़ा, यह सोचकर कि सब ठीक है (*2)। तभी हाथी घनी झाड़ियों से बाहर निकला और उसे अपनी सूंड में पकड़कर जमीन पर पटक दिया, फिर उसके सिर पर एक जोरदार प्रहार करके उसकी जान ले ली; और पागलों की तरह चिंघाड़ते हुए वह जंगल में भाग गया।

अन्य संन्यासियों ने यह समाचार बोधिसत्व को दिया। उन्होंने कहा, "हमें बुरे लोगों से कोई संबंध नहीं रखना चाहिए;" और फिर उन्होंने ये दो श्लोक दोहराए:-

"बुराई से मित्रता करने से अच्छाई को बचना चाहिए।"
  अच्छे लोग, जो जानते हैं कि उनका कर्तव्य उनसे क्या करवाना चाहता है:
वे गड़बड़ी जरूर करेंगे, चाहे जल्दी हो या देर से।
  यहां तक कि हाथी ने अपने स्वामी को मरवा दिया था।
लेकिन यदि तुम किसी परिचित आत्मा को देखो,
  आपके समान सद्गुण, ज्ञान और विद्या में।
ऐसे व्यक्ति को अपना सच्चा मित्र चुनें;
  अच्छे दोस्त और आशीर्वाद संगति में ही मिलते हैं।

इस प्रकार बोधिसत्व ने अपने संन्यासियों के समूह को यह दिखाया कि विनम्र रहना ही सर्वोत्तम है, हठी नहीं। फिर उन्होंने इंद्रसमनगोत्त की अंत्येष्टि संपन्न की और श्रेष्ठ गुणों का अभ्यास करते हुए अंततः ब्रह्मा के उच्च स्वर्ग में प्रवेश किया।

इस प्रवचन के समापन के बाद, गुरु ने जन्म की पहचान बताई: "यह उद्दंड व्यक्ति तब इंद्रसमनागोत्ता था, और मैं स्वयं संन्यासियों के समूह का गुरु था।"

फुटनोट:

(1) गिज्जा-जातक, संख्या 427.

(2)या, "अपने सामान्य अभिवादन या संकेत के साथ।"

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **संतव-जातक**
स्रोत : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित

पिछला <<<<-----||-162-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 162
संथाव-जातक

“इससे बुरा कुछ नहीं,” इत्यादि — यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए पवित्र अग्नि को जल में जलाने के बारे में सुनाई थी। परिस्थितियाँ नांगुत्था जन्म (*1) जैसी ही हैं। भिक्षुओं ने अग्नि को जलाए रखने वालों को देखकर भगवान बुद्ध से कहा, “हे प्रभु, यहाँ तो चोटी वाले तपस्वी तरह-तरह की झूठी तपस्या कर रहे हैं। इसमें क्या लाभ है?” गुरु ने कहा, “इसमें कोई लाभ नहीं है। पहले भी ऐसा हुआ है कि ज्ञानी पुरुषों ने पवित्र अग्नि को जल में जलाने में कुछ लाभ समझा, परन्तु लंबे समय तक ऐसा करने के बाद उन्हें पता चला कि इसमें कोई लाभ नहीं है, और उन्होंने उसे पानी से बुझा दिया, लाठियों से पीटा, और फिर कभी उसकी ओर देखा तक नहीं।” फिर उन्होंने उन्हें एक कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व का जन्म एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। जब वे लगभग सोलह वर्ष के थे, तब उनके माता-पिता ने उनकी जन्म अग्नि (*2) लेकर उनसे कहा, “पुत्र, क्या तुम अपनी जन्म अग्नि लेकर वन में जाओगे और वहाँ अग्नि की पूजा करोगे; या तुम तीनों वेदों का अध्ययन करोगे, विवाह करके संसार में बस जाओगे?” उन्होंने कहा, “मुझे सांसारिक जीवन नहीं चाहिए: मैं वन में अपनी अग्नि की पूजा करूँगा और स्वर्ग की ओर चलूँगा।” अतः अपनी जन्म अग्नि लेकर उन्होंने अपने माता-पिता को विदा किया और वन में प्रवेश किया, जहाँ वे टहनियों और पत्तों से बनी एक कुटिया में रहने लगे और अग्नि की पूजा करने लगे।

एक दिन उन्हें किसी स्थान पर आमंत्रित किया गया जहाँ उन्हें चावल और घी का उपहार मिला। उन्होंने सोचा, "यह चावल मैं परम ब्रह्मा (प्रधान देवदूत) को अर्पित करूँगा।" अतः वे चावल घर ले आए और आग जलाई। फिर "इस चावल से मैं पवित्र अग्नि को प्रज्वलित करता हूँ" कहते हुए उन्होंने उसे आग में डाल दिया। वसा से भरपूर यह चावल जैसे ही आग में गिरा, एक भयंकर ज्वाला उठी जिसने उनके आश्रम को जला दिया। तब ब्राह्मण भयभीत होकर भागा और कुछ दूरी पर बैठ गया। उसने कहा, "दुष्टों से कोई संबंध नहीं रखना चाहिए; और इस प्रकार इस आग ने मेरी उस कुटिया को जला दिया जिसे मैंने इतनी मेहनत से बनाया था!" और उसने पहला श्लोक दोहराया:-

"बुरी संगति से बुरा कुछ नहीं होता;
मैंने अपनी आग में खूब सारा चावल और घी डाला;
और देखो! वही झोपड़ी जिसने मुझे इतनी परेशानी दी थी
इसे खड़ा करने के लिए, मेरे अंदर आग जलती रही है।"

"अब तुम्हारा काम तमाम हो गया, झूठे दोस्त!" उसने आगे कहा; और उसने आग पर पानी डाला, उसे डंडों से बुझाया, और फिर पहाड़ों में छिप गया। वहाँ उसे एक काला हिरण शेर, बाघ और तेंदुआ के चेहरे चाटते हुए दिखाई दिया। इससे उसके मन में यह बात बैठ गई कि अच्छे दोस्तों से बढ़कर कुछ नहीं होता; और उसके बाद उसने दूसरी पंक्ति दोहराई:

अच्छी संगति से बेहतर कुछ नहीं है;
मुझे यहां मित्रता के अच्छे प्रयास दिखाई दे रहे हैं;
शेर, बाघ और तेंदुए को देखें--
काला हिरण तीनों के चेहरों को चाटता है।

इन्हीं विचारों के साथ बोधिसत्व पर्वतों की गहराई में उतर गए, और वहाँ उन्होंने नैतिकता के सच्चे जीवन को अपनाया, अपनी क्षमताओं और उपलब्धियों को विकसित किया, और अपने जीवन के अंत में ब्रह्मा के उच्च स्वर्ग में प्रवेश कर गए।

यह प्रवचन देने के बाद, गुरु ने जन्म की पहचान बताई: "उन दिनों मैं कहानी का तपस्वी था।"

फुटनोट:

(1) संख्या 144.

(2) विवाह के समय भी एक पवित्र अग्नि प्रज्वलित की जाती थी, जिसका उपयोग यज्ञ के लिए किया जाता था और जिसे निरंतर प्रज्वलित रखा जाता था। इसी प्रकार, कुमाऊं में अग्नि-होत्री अपने विवाह के दिन से अग्नि पूजा प्रारंभ करता है। विवाह वेदी की पवित्र अग्नि को तांबे के पात्र में उसकी अग्नि-कुंड तक ले जाया जाता है। यह अग्नि सदा प्रज्वलित रहती है, और इसी से उसकी अंत्येष्टि की चिता प्रज्वलित की जाती है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सुसीमा-जातक**
***स्रोत**: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-163-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 163
सुसीमा जातक

"पचास काले हाथी," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में भिक्षा देने के मनमाने तरीके के बारे में सुनाई थी।

हमने सुना है कि श्रावस्ती शहर में, एक परिवार कभी बुद्ध और उनके मित्रों को दान दिया करता था, कभी वे विधर्मियों (गलत विश्वासियों) को दान देते थे, या फिर दान देने वाले समूह बनाकर दान देते थे, या फिर एक ही गली के लोग मिलकर दान देते थे, या फिर पूरे निवासी स्वेच्छा से दान इकट्ठा करके उसे प्रस्तुत करते थे।

इस अवसर पर सभी निवासियों ने सभी आवश्यक वस्तुओं का संग्रह किया था; लेकिन विचार अलग-अलग थे, कुछ लोग इसे विधर्मियों (गलत विश्वासियों) को देने की मांग कर रहे थे, जबकि कुछ बुद्ध के अनुयायियों के पक्ष में बोल रहे थे। प्रत्येक पक्ष अपनी बात पर अड़ा रहा, विधर्मियों (गलत विश्वासियों) के शिष्यों ने विधर्मियों के पक्ष में मतदान किया, और बुद्ध के शिष्यों ने बुद्ध के अनुयायियों के पक्ष में। फिर इस प्रश्न पर विभाजन का प्रस्ताव रखा गया, और तदनुसार विभाजन हुआ; बुद्ध के पक्ष में रहने वाले बहुमत में थे।

इसलिए उनकी योजना का पालन किया गया, और गलत विश्वासियों के शिष्य बुद्ध और उनके अनुयायियों को भेंट किए जाने वाले उपहारों को रोक नहीं सके।

नागरिकों ने बुद्ध के साथ आने का निमंत्रण दिया; सात दिनों तक उन्होंने उनके सामने बहुमूल्य भेंट रखीं, और सातवें दिन उन्होंने अपनी सारी एकत्रित वस्तुएँ अर्पित कर दीं। गुरु ने धन्यवाद दिया, जिसके बाद उन्होंने बहुत से लोगों को मार्ग की सफलता के बारे में उपदेश

दिया। फिर वे जेतवन मठ लौट गए; और जब उनके अनुयायियों ने अपने कर्तव्य पूरे कर लिए, तो उन्होंने अपने सुगंधित कक्ष के सामने खड़े होकर बुद्ध का प्रवचन दिया, और फिर वे विश्राम करने चले गए।

शाम के समय भिक्षुओं ने सत्य के हॉल में आपस में विचार-विमर्श किया: "मित्रों, कैसे कुटिल अनुयायियों के शिष्यों ने इसे संतों तक पहुँचने से रोकने का प्रयास किया! फिर भी वे ऐसा नहीं कर सके; सभी वस्तुएँ संतों के चरणों में ही अर्पित कर दी गईं। आह, बुद्ध की शक्ति कितनी महान है!" "अब तुम सब किस बारे में बात कर रहे हो?" गुरुजी ने अंदर आते हुए पूछा। उन्होंने उन्हें बताया। "भाइयों," उन्होंने कहा, "यह पहली बार नहीं है कि कुटिल अनुयायियों के शिष्यों ने मुझे अर्पित की जाने वाली भेंट को रोकने का प्रयास किया है। उन्होंने पहले भी ऐसा ही किया था; लेकिन हमेशा ये वस्तुएँ अंततः मेरे चरणों में ही अर्पित की गईं।" ऐसा कहकर उन्होंने उन्हें बहुत पुरानी एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, बनारस में सुसीमा नाम का एक राजा रहता था; और बोधिसत्व उस राजा की पुरोहित पत्नी का पुत्र था। जब वह सोलह वर्ष का हुआ, तब उसके पिता का देहांत हो गया। अपने जीवनकाल में, उसके पिता राजा के हाथी उत्सवों के समारोहों के प्रमुख थे। उत्सव स्थल पर आने वाले हाथियों के सभी अलंकृत वस्त्रों और साज-सज्जा पर केवल उनका ही अधिकार था। इस प्रकार वे प्रत्येक उत्सव में दस मिलियन तक की आय अर्जित करते थे।

हमारी कहानी के समय हाथी उत्सव का समय आ गया था। सभी ब्राह्मण राजा के पास यह कहते हुए एकत्रित हुए: "हे महाराज! हाथी उत्सव का समय आ गया है, और उत्सव का आयोजन किया जाना चाहिए। लेकिन आपके इस पुरोहित का पुत्र बहुत छोटा है; वह न तो तीनों वेदों को जानता है और न ही हाथियों की परंपरा को। क्या हम यह समारोह संपन्न कराएँ?" इस पर राजा ने सहमति दे दी।

ब्राह्मण प्रसन्न होकर चले गए। उन्होंने कहा, "अहा! हमने इस लड़के को उत्सव में भाग लेने से रोक दिया है। हम स्वयं उत्सव मनाएंगे और सारा लाभ अपने पास रखेंगे!"

लेकिन बोधिसत्व की माताजी ने सुना कि चार दिन बाद हाथी उत्सव होने वाला है। उन्होंने सोचा, "सात पीढ़ियों से हम पिता से पुत्र तक हाथी उत्सव का आयोजन करते आ रहे हैं। यह पुरानी परंपरा हमसे छिन जाएगी और हमारी सारी संपत्ति नष्ट हो जाएगी!" वह रोने लगीं। उनके पुत्र ने पूछा, "आप क्यों रो रही हैं?" उन्होंने बताया। पुत्र ने कहा, "माँ, क्या मैं उत्सव का संचालन करूँ?" "क्या, पुत्र? तुम्हें न तो तीनों वेदों का ज्ञान है और न ही हाथी परंपरा का; तुम यह कैसे कर सकते हो?" "माँ, उत्सव कब है?" "चार दिन बाद, पुत्र।" "मुझे ऐसे गुरु कहाँ मिलेंगे जिन्हें तीनों वेद और हाथी परंपरा का ज्ञान हो?" "पुत्र, ऐसा ही एक प्रसिद्ध गुरु तक्षशिला में, गांधार राज्य (कंधार सहित अफगानिस्तान और पाकिस्तान के निकट) में, दो हजार मील (4.23 किमी) दूर रहते हैं।" "माँ," उसने कहा, "हम अपना पुश्तैनी अधिकार नहीं खोएँगे। एक दिन मुझे तक्षशिला ले जाएगा; एक रात में मुझे तीनों वेद और हाथी की परंपरा सिखा दी जाएगी; अगले दिन मैं घर लौट आऊँगा; और चौथे दिन मैं हाथी उत्सव का आयोजन करूँगा। अब और मत रोओ!" इन शब्दों से उसने अपनी माँ को सांत्वना दी।

अगली सुबह उसने अपना व्रत तोड़ा और अकेले ही तक्षशिला के लिए निकल पड़ा, जहाँ वह एक ही दिन में पहुँच गया। फिर उसने गुरु को ढूँढ़कर उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गया।

शिक्षक ने पूछा, "तुम कहाँ से आए हो?"

"बनारस से, शिक्षक।"

"किस सिरे पर?"

"आपसे तीनों वेदों और हाथी परंपरा के बारे में सीखने के लिए।"

"निश्चित रूप से, मेरे बेटे, तुम इसे सीख जाओगे।"

"परन्तु, महाराज," हमारे बोधिसत्व ने कहा, "मेरा मामला अत्यंत आवश्यक है।" फिर उन्होंने पूरी बात बताते हुए कहा, "मैंने एक ही दिन में दो हजार मील (4.23 किमी) की यात्रा की है। कृपया मुझे केवल एक रात का समय दें। तीन दिन बाद हाथी उत्सव है; एक पाठ के बाद मैं सब कुछ सीख लूंगा।"

गुरुजी मान गए। तब बालक ने अपने गुरु के पैर धोए और उन्हें एक हजार सिक्के भेंट किए; वह एक तरफ बैठ गया और अपना पाठ याद करने लगा; जैसे ही सुबह हुई, ठीक सुबह होते ही उसने तीनों वेद और हाथी परंपरा को पूरा कर लिया। "क्या और कुछ है, गुरुजी?" उसने पूछा। "नहीं, मेरे पुत्र, तुमने सब कुछ जान लिया है।" "गुरुजी," वह आगे बोला, "इस पुस्तक में एक श्लोक देर से आता है, दूसरा श्लोक पढ़ते समय भटक गया है। भविष्य के लिए अपने विद्यार्थियों को पढ़ाने का यही तरीका है," और फिर उसने अपने गुरुजी के ज्ञान को सुधार दिया।

सुबह का भोजन करने के बाद वह विदा हुआ और एक ही दिन में बनारस लौट आया और अपनी माँ से मिला। माँ ने पूछा, "क्या तुमने सबक सीख लिया, मेरे बेटे?" उसने उत्तर दिया, "हाँ," और यह सुनकर उसकी माँ अत्यंत प्रसन्न हुई।

अगले दिन, हाथियों के उत्सव की तैयारी की गई। सौ हाथियों को सोने के आभूषणों से सुसज्जित किया गया, उन पर सोने के झंडे लगाए गए और उन्हें बारीक सोने के जाल से सजाया गया; और महल का पूरा प्रांगण सजाया गया। वहाँ ब्राह्मण अपने उत्तम वस्त्रों में सजे खड़े थे, मन ही मन सोच रहे थे, "अब हम उत्सव मनाएंगे, हम इसे मनाएंगे!" तभी राजा अपने पूरे वैभव के साथ, आभूषणों और अन्य प्रयुक्त वस्तुओं के साथ वहाँ पहुँचे।

राजकुमार के वेश में, अपने दल के आगे-आगे चलते हुए बोधिसत्व इन शब्दों के साथ राजा के पास पहुंचे।

"हे महान राजा, क्या यह सचमुच सच है कि आप मेरा अधिकार छीनने जा रहे हैं? क्या आप इस समारोह के प्रबंधन का जिम्मा अन्य ब्राह्मणों को सौंपने जा रहे हैं? क्या आपने कहा है कि आप उन्हें विभिन्न आभूषण और बर्तन देने जा रहे हैं?" और उन्होंने पहले श्लोक को इस प्रकार दोहराया:

पचास (20) काले हाथी, जिनके सारे दांत सफेद हैं
  क्या ये आपके हैं, सोने के कपड़े से सजे हुए?
 'मैं इन्हें तुम्हें ही देता हूँ'—क्या तुम यही कहते हो?
  क्या मुझे अपने पूर्वजों के पुराने अधिकार याद हैं?
इस प्रकार संबोधित किए जाने पर राजा सुसीमा ने फिर दूसरे श्लोक को दोहराया:-

"पचास (x20) काले हाथी, जिनके सारे दांत सफेद हैं,
  ये मेरे हैं, सोने के कपड़े से सजे हुए।
 'मैं इन्हें तुम्हें ही देता हूँ, और तुम्हें ही देता हूँ'—इसलिए मैं कहता हूँ,
  मेरे बेटे, अपने पैतृक अधिकार को याद रखना।
तब बोधिसत्व के मन में एक विचार आया और उन्होंने कहा, "हे प्रभु, यदि आप मेरे पैतृक अधिकार और अपनी प्राचीन परंपरा को याद रखते हैं, तो आप मेरी उपेक्षा क्यों करते हैं और अपने उत्सव का संचालन दूसरों को क्यों सौंपते हैं?" बोधिसत्व ने उत्तर दिया, "मुझे बताया गया था कि आप तीनों वेदों या हाथी परंपरा का ज्ञान नहीं रखते, इसलिए मैंने उत्सव का संचालन दूसरों को सौंप दिया है।" बोधिसत्व ने कहा, "अच्छी बात है, महाराज। यदि इन सभी ब्राह्मणों में से कोई एक भी मेरे विरुद्ध वेदों या हाथी परंपरा का एक अंश सुना सकता है, तो वह आगे आए! पूरे भारत में मेरे सिवा कोई भी ऐसा नहीं है जो तीनों वेदों और हाथी परंपरा का ज्ञान रखता हो और हाथी उत्सव का संचालन कर सके!" बोधिसत्व ने शेर की दहाड़ की तरह गर्व से उत्तर दिया! किसी भी ब्राह्मण ने उनका विरोध करने का साहस नहीं किया। अतः बोधिसत्व ने अपने पैतृक अधिकार का पालन किया और समारोह का संचालन किया; और धन-संपन्न होकर वे अपने घर लौट गए।

जब गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की और जन्मों की पहचान बताई:-कुछ प्रथम मार्ग (सम्मोहन) में प्रवेश करते हैं, कुछ द्वितीय (सम्मोहन) में, कुछ तृतीय (सम्मोहन) में और कुछ चतुर्थ (सम्मोहन) में:- "महामाया (बुद्ध की दिवंगत जन्म माता) उस समय मेरी माता थीं, राजा शुद्धोदन (बुद्ध के पिता और कपिलवस्तु के राजा) मेरे पिता थे, आनंद राजा सुसीमा थे, सारिपुत्र प्रसिद्ध गुरु थे और मैं स्वयं युवा ब्राह्मण था।"

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **गिज्जा-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-164-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 164
गिज्जा जातक

"एक गिद्ध लाश को देखता है," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने एक भिक्षु के बारे में सुनाई, जिसे अपनी माता का भरण-पोषण करना था। इस घटना का वर्णन समा जन्म (*1) के अंतर्गत किया जाएगा। गुरु ने उससे पूछा कि क्या वह, एक भिक्षु होकर, वास्तव में उन लोगों का भरण-पोषण कर रहा है जो अभी भी संसार में जीवित हैं। भिक्षु ने यह स्वीकार किया, "वे आपसे किस प्रकार संबंधित हैं?" गुरु ने आगे पूछा। "वे मेरे माता-पिता हैं, महोदय।" "बहुत खूब, बहुत खूब," गुरु ने कहा; और भिक्षुओं से इस भिक्षु पर क्रोधित न होने का अनुरोध किया। उन्होंने कहा, "पुराने समय के बुद्धिमान लोगों ने तो उन लोगों की भी सेवा की है जो उनके परिवार के नहीं थे; परन्तु इस व्यक्ति का कार्य तो अपने माता-पिता का भरण-पोषण करना रहा है।" ऐसा कहकर उन्होंने उन्हें बीते दिनों की यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व ने गिद्ध पर्वत पर एक युवा गिद्ध के रूप में जन्म लिया और उनके माता-पिता ने उनका पालन-पोषण किया।

एक बार तेज हवा और बारिश हुई। गिद्ध उसका सामना नहीं कर सके; अधमरे होकर वे बनारस की ओर उड़ गए, और वहाँ दीवार और खाई के पास ठंड से कांपते हुए बैठ गए।

बनारस का एक व्यापारी स्नान करने के लिए शहर से बाहर जा रहा था, तभी उसने इन बेचारे गिद्धों को देखा। उसने उन्हें एक सूखी जगह पर इकट्ठा किया, आग जलाई, पशुओं के दफ़न स्थल से उनके लिए कुछ गोमांस मंगवाया और किसी को उनकी देखभाल के लिए नियुक्त किया।

जब तूफान आया, तो हमारे गिद्ध सुरक्षित थे और तुरंत पहाड़ों की ओर उड़ गए। बिना देर किए वे मिले और आपस में सलाह मशवरा किया। "बनारस के एक व्यापारी ने हमारा भला किया है; और कहावत है कि एक भला करने पर दूसरा भला मिलता है (*2): इसलिए अब से जब भी हममें से किसी को कोई वस्त्र या आभूषण मिले, तो उसे उस व्यापारी के आंगन में रख देना चाहिए।" तब से, जब भी वे किसी को धूप में अपने कपड़े या कीमती सामान सुखाते देखते, तो वे तुरंत उन्हें झपट्टा मार लेते, जैसे बाज मांस के टुकड़े पर झपट्टा मारता है, और व्यापारी के आंगन में रख देते। लेकिन व्यापारी, जब भी देखता कि वे उसके लिए कुछ ला रहे हैं, तो उसे अलग रखवा देता था।

उन्होंने राजा को बताया कि गिद्ध शहर को लूट रहे हैं। राजा ने कहा, "बस एक गिद्ध पकड़ लो, मैं उनसे सब कुछ वापस लाने को कहूँगा।" इसलिए हर जगह फंदे और जाल बिछाए गए; हमारा आज्ञाकारी गिद्ध पकड़ा गया। वे उसे राजा के पास लाने के इरादे से पकड़ रहे थे। उपर्युक्त व्यापारी, महाराज से मिलने जाते समय, इन लोगों को गिद्ध के साथ चलते हुए देखा। वह उनके साथ चला गया, इस डर से कि कहीं वे गिद्ध को नुकसान न पहुँचा दें।

उन्होंने गिद्ध को राजा को सौंप दिया, जिसने उसकी जांच की।

"तुमने हमारे शहर को लूटा और कपड़े और तरह-तरह की चीजें चुरा लीं," उसने कहना शुरू किया। "जी महाराज।" "किसे दी हैं ये?" "बनारस के एक व्यापारी को।" "क्यों?" "क्योंकि उसने हमारी जान बचाई, और कहते हैं कि एक अच्छा काम दूसरे अच्छे काम को जन्म देता है; इसलिए हमने उसे ये चीजें दे दीं।"

राजा ने कहा, "कहते हैं कि गिद्ध सौ मील (4.23 किमी) दूर से भी लाश देख सकते हैं; और क्या तुम अपने लिए बिछाए गए जाल को नहीं देख सकते?" और इन्हीं शब्दों के साथ उन्होंने पहला छंद दोहराया:-

"एक गिद्ध सौ मील (4.23 किमी) दूर पड़े शव को देखता है:
जब आप किसी जाल में फंस जाते हैं, तो क्या आप उसे नहीं देख पाते, मैं पूछता हूँ?
गिद्ध ने सुना, फिर दूसरे छंद को दोहराते हुए उत्तर दिया:-

जब जीवन का अंत निकट आ रहा हो, और मृत्यु का समय नजदीक आ रहा हो,

भले ही आप इसके करीब आ जाएं, लेकिन आपको न तो कोई जाल दिखाई देगा और न ही कोई फंदा।"
गिद्ध की इस प्रतिक्रिया के बाद, राजा ने हमारे व्यापारी की ओर रुख किया और पूछा, "क्या ये सारी चीज़ें सचमुच गिद्धों द्वारा ही तुम्हारे पास लाई गई हैं?"

"जी, महाराज।" "वे कहाँ हैं?" "महाराज, उन्हें सुरक्षित स्थान पर रखा गया है; प्रत्येक को उसका अपना सामान वापस मिल जाएगा: बस इस गिद्ध को जाने दीजिए!" उनकी इच्छा पूरी हुई; गिद्ध को मुक्त कर दिया गया, और व्यापारी ने सारा सामान उसके मालिकों को लौटा दिया।

यह पाठ समाप्त होने पर, गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के समापन पर, कर्तव्यनिष्ठ भाई (भिक्षु) प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की सिद्धि में स्थापित हो गया: "आनंद उन दिनों का राजा था; सारिपुत्र व्यापारी था; और मैं स्वयं वह गिद्ध था जिसने उसके माता-पिता का सहारा दिया।"

फुटनोट:

(1) संख्या 532

(2) यह "कृतज्ञ पशु" घटना का एक और रूप प्रतीत होता है जो लोककथाओं में अक्सर घटित होती है।

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **नकुल-जातक**
***स्रोत**: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-165-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 165
नकुला-जातक

"हे प्राणी, तेरा अंडजनित शत्रु," इत्यादि—यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में प्रवास के दौरान सुनाई थी, जिसमें दो अधिकारियों के बीच झगड़ा हुआ था। परिस्थितियाँ ऊपर उराग जन्म (*1) में दी गई हैं। यहाँ, पहले की तरह, गुरु ने कहा, "यह पहली बार नहीं है, भिक्षुओं, कि मैंने इन दोनों कुलीनों का मेल कराया है; पहले भी मैंने उनका मेल कराया था।" फिर उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व का जन्म एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। जब वे वयस्क हुए, तो उन्होंने तक्षशिला में शिक्षा प्राप्त की; फिर, संसार का त्याग करके वे एक संन्यासी बन गए, अपनी इंद्रियों और सिद्धियों को विकसित किया और हिमालय क्षेत्र में रहने लगे, जहाँ वे जंगली जड़ों और फलों को इकट्ठा करके अपना जीवन यापन करते थे।

अपने बाड़े के अंत में, चींटियों के ढेर में एक नेवला रहता था; और उससे कुछ ही दूरी पर, एक खोखले पेड़ में एक साँप रहता था। ये दोनों, साँप और नेवला, लगातार झगड़ते रहते थे। बोधिसत्व ने उन्हें झगड़ों के दुख और शांति के आशीर्वाद के बारे में उपदेश दिया, और दोनों का मेल कराते हुए कहा, "तुम्हें अपना झगड़ा बंद करके एक साथ रहना चाहिए।"

जब सर्प चला गया, तो रास्ते के अंत में स्थित नेवला अपने चींटी के टीले में बने छेद से सिर बाहर निकालकर, मुंह खोलकर सो गया, और हांफते-हांफते उसकी सांसें तेज चल रही थीं। बोधिसत्व ने उसे वहां सोते हुए देखा और उससे पूछा, "अरे, तुम्हें किस बात का डर है?" और फिर पहला श्लोक दोहराया:

"हे प्राणी, तेरे अंडों से उत्पन्न शत्रु का एक सच्चा मित्र बन गया है।"
तुम वहाँ बिना दाँत दिखाए क्यों सो रहे हो? तुम्हें किस बात का डर है?
"पिताजी," नेवले ने कहा, "अपने पुराने शत्रु को कभी तुच्छ मत समझो, बल्कि हमेशा उस पर संदेह करो": और उसने दूसरी पंक्ति दोहराई:

"कभी भी शत्रु को तुच्छ न समझो और कभी भी मित्र पर भरोसा मत करो।"
जिन चीजों से डर नहीं लगता, उनसे उत्पन्न होने वाला भय सब कुछ उखाड़ फेंकता है और अंत कर देता है।
"भयभीत मत हो," बोधिसत्व ने उत्तर दिया। "मैंने सर्प को मना लिया है कि वह तुम्हें हानि न पहुँचाए; अब उस पर अविश्वास मत करो।" यह सलाह देकर वे चारों गुणों का साधना करने लगे और ब्रह्मा के उच्च स्वर्ग की ओर मुख करके चल दिए। और अन्य लोग भी अपने कर्मों के फल के अनुसार परलोक चले गए।

फिर जब यह पाठ समाप्त हुआ, तो गुरु ने जन्म का वर्णन किया: "उस समय वे दो कुलीन व्यक्ति सर्प और नेवला थे, और मैं स्वयं तपस्वी था।"

फुटनोट:

(1)सं. (154).

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **उपसाध-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-166-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 166
उपसल्हा-जातक

"चौदह हजार उपसल्हा," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें उपसल्हा नामक एक ब्राह्मण का वर्णन था, जो कब्रिस्तानों के मामले में बहुत ही सावधानी बरतता था।

हमें पता चलता है कि यह व्यक्ति धनी और समृद्ध था; परन्तु यद्यपि वह मठ के ठीक सामने रहता था, फिर भी वह बुद्धों के प्रति कोई दया नहीं दिखाता था, क्योंकि वह गलत मान्यताओं में लिप्त था। उसका एक बुद्धिमान और समझदार पुत्र था। जब वह बूढ़ा हो रहा था, तो उसने अपने पुत्र से कहा, "मेरे शरीर को ऐसे कब्रिस्तान में मत जलाना जहाँ किसी भी अछूत को जलाया जाता हो, बल्कि मेरे लिए कोई पवित्र स्थान ढूँढ़ो।" "पिताजी," पुत्र ने कहा, "मुझे कोई ऐसा कब्रिस्तान नहीं पता जहाँ आपके शरीर को जलाया जा सके। हे मेरे पिताजी, आप स्वयं आगे बढ़ें और वह स्थान बताएँ जहाँ मैं आपको जलाना चाहता हूँ।" तब ब्राह्मण ने सहमति देकर अपने पुत्र को शहर से बाहर गिद्ध शिखर पर ले जाकर कहा, "यहाँ, मेरे पुत्र, किसी भी अछूत को कभी नहीं जलाया जाता; मैं चाहता हूँ कि तुम मुझे यहीं जलाओ।" फिर वह अपने पुत्र के साथ पहाड़ी से नीचे उतरने लगा।

उस दिन शाम को गुरुजी यह देखने के लिए चारों ओर देख रहे थे कि उनके मित्रों में से कौन मोक्ष के लिए तैयार है, और उन्होंने पाया कि यह पिता और पुत्र प्रथम मार्ग (सम्मोहन) में प्रवेश करने के लिए तैयार हैं। इसलिए वे उनके मार्ग पर चल पड़े और पहाड़ी की तलहटी में आ गए, जैसे कोई शिकारी अपने शिकार की प्रतीक्षा कर रहा हो; वे वहाँ तब तक बैठे रहे जब तक वे ऊपर से नीचे न आ जाएँ। वे नीचे आए और गुरुजी को देखा। उन्होंने उनका अभिवादन किया और पूछा, "ब्राह्मणों, तुम कहाँ जा रहे हो?" युवक ने उन्हें अपना कार्य बताया। गुरुजी ने कहा, "चलो, मुझे वह स्थान दिखाओ जो तुम्हारे पिता ने बताया था।" इसलिए वे दोनों साथ मिलकर पर्वत पर चढ़ गए। "कौन सा स्थान?" उन्होंने पूछा। "गुरुजी," लड़के ने कहा, "इन तीन पहाड़ियों के बीच का स्थान ही वह स्थान है जो उन्होंने मुझे दिखाया था।" गुरुजी ने कहा, "मेरे पुत्र, यह पहली बार नहीं है कि तुम्हारे पिता श्मशान घाटों के मामले में इतने दयालु रहे हैं; वे पहले भी ऐसे ही थे। और यह केवल अब ही नहीं है कि उन्होंने तुम्हें अपने दाह संस्कार के लिए यह स्थान बताया है; बहुत समय पहले उन्होंने ठीक उसी जगह की ओर इशारा किया था।" और उनके अनुरोध पर गुरु ने उन्हें बहुत समय पहले की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, इसी राजग्रह नगर में, उपासलहक नामक ब्राह्मण निवास करते थे, और उनका यही पुत्र था। उस समय बोधिसत्व का जन्म मगध देश के एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था; और अपनी शिक्षा पूरी करने के बाद, उन्होंने संन्यासी जीवन व्यतीत किया, अपनी इंद्रियों और उपलब्धियों को निखारा, और हिमालय क्षेत्र में दीर्घकालीन आध्यात्मिक साधना में लीन रहे।

एक बार वो गिद्ध शिखर पर स्थित अपने आश्रम से नमक और मसाले खरीदने गए। जब वो वापस आए, तो उस ब्राह्मण ने अपने बेटे से ठीक उसी तरह बात की, जैसे अभी कर रहे हैं। लड़के ने उनसे एक उचित स्थान बताने की विनती की, और वो आए और उन्होंने यही स्थान दिखाया। जब वो अपने बेटे के साथ नीचे उतर रहे थे, तो उन्होंने बोधिसत्व को देखा और उनके पास गए। बोधिसत्व ने उनसे वही प्रश्न पूछा जो मैंने अभी पूछा था, और बेटे का उत्तर सुना। “आह,” उन्होंने कहा, “हम देखेंगे कि तुम्हारे पिता ने जो स्थान तुम्हें दिखाया है, वह अपवित्र है या नहीं,” और उन्हें अपने साथ फिर से पहाड़ी पर ले गए। “इन तीनों पहाड़ियों के बीच का स्थान,” लड़के ने कहा, “शुद्ध है।” बोधिसत्व ने उत्तर दिया, “मेरे बालक, इस स्थान पर अनगिनत लोगों को जलाया गया है। तुम्हारे पिता, जो आज राजगृह नगर में ब्राह्मण के रूप में जन्मे थे और जिनका नाम भी यही था, चौदह हजार जन्मों में इसी पर्वत पर जलाए गए हैं। पूरी पृथ्वी पर ऐसा कोई स्थान नहीं है जहाँ शव न जलाया गया हो, जो कब्रिस्तान न रहा हो, जो खोपड़ियों से ढका न हो।”

उन्होंने अपने सभी पूर्व जन्मों के ज्ञान से यह बात समझी; और फिर उन्होंने इन दो छंदों को दोहराया:-

"इस स्थान पर चौदह हजार उपसल जलाए जा चुके हैं।"
  और न ही ऐसी कोई जगह है जहाँ मृत्यु न हो।
"दया, सत्य, न्याय, संयम और आत्म-नियंत्रण कहाँ हैं?"
  वहां मृत्यु का कोई प्रवेश द्वार नहीं है; वहां प्रत्येक पवित्र आत्मा का सफर होता है।

जब बोधिसत्व ने पिता और पुत्र को इस प्रकार उपदेश दिया, तो उन्होंने चार गुणों का विकास किया और ब्रह्मा के उच्चतर स्वर्ग की ओर प्रस्थान किया।

जब यह प्रवचन समाप्त हुआ, तो गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के समापन पर पिता और पुत्र प्रथम मार्ग के फल (सम्मोहन) में स्थापित हो गए: "पिता और पुत्र तब भी वही थे जो अब हैं, और तपस्वी मैं स्वयं था।"

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **समिद्धि-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-167-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 167
समिद्धि-जातक

"भीख मांगने वाले भाई, क्या आप जानते हैं," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने राजगृह शहर के पास तापोदा पार्क में रहते हुए सुनाई थी, यह कहानी वरिष्ठ भिक्षु समिद्धि या गुड लक के बारे में थी।

एक बार, वरिष्ठ भिक्षु गुड लक रात भर आध्यात्मिक साधना में लीन रहे। सूर्योदय होते ही उन्होंने स्नान किया; फिर वे अपने अंतर्वस्त्र को पहने हुए, दूसरे को हाथ में पकड़े हुए, अपने शरीर को सुखाते रहे, जो सोने के समान पीला था। वे किसी उत्कृष्ट कारीगरी की स्वर्ण प्रतिमा के समान थे, सौंदर्य की पराकाष्ठा; और इसीलिए उन्हें गुड लक कहा जाता था।

देवताओं की एक पुत्री ने वृद्ध भिक्षु की असाधारण सुंदरता देखकर उन पर मोहित हो गई और उनसे कहा, “हे भिक्षु, आप युवा, तरोताज़ा और जवान हैं, आपके बाल काले हैं, भगवान आपको आशीर्वाद दें! आप यौवनवान हैं, आप सुंदर और देखने में आकर्षक हैं। आप जैसे व्यक्ति को थोड़ा आनंद लिए बिना संन्यासी क्यों बनना चाहिए? पहले अपनी इच्छाओं का पालन करें, फिर संन्यासी बनें और संन्यासियों का मार्ग अपनाएँ!” उन्होंने उत्तर दिया, “हे अप्सरा, एक दिन मुझे मरना ही है, और मेरी मृत्यु का समय मुझे ज्ञात नहीं है; वह समय मुझसे छिपा हुआ है। इसलिए अपनी यौवन की ताजगी में मैं एकांत जीवन व्यतीत करूँगा और कष्टों का अंत करूँगा।”

जब देवी ने देखा कि उन्हें कोई प्रोत्साहन नहीं मिल रहा है, तो वह तुरंत गायब हो गईं। बड़े भिक्षु ने जाकर अपने गुरु को इसके बारे में बताया। तब गुरु ने कहा, "हे सौभाग्य, तुम अकेले नहीं हो, एक अप्सरा तुम्हें लुभा रही है। पुराने समय में भी, आज की तरह, अप्सराएँ तपस्वियों को लुभाती थीं।" और फिर उनके अनुरोध पर गुरु ने उन्हें एक प्राचीन कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त राजा थे, तब बोधिसत्व काशी के एक गाँव में एक ब्राह्मण के पुत्र बने। उम्र बढ़ने के साथ, उन्होंने अपने सभी अध्ययनों में पूर्णता प्राप्त की और धार्मिक (तपस्वी) जीवन को अपना लिया; और वे हिमालय में एक प्राकृतिक झील के किनारे रहने लगे, जहाँ वे अपनी इंद्रियों और उपलब्धियों का अभ्यास करते रहे।

सारी रात वह मनन करता रहा (ध्यान लगाता रहा); और सूर्योदय होते ही उसने स्नान किया, और एक वस्त्र पहने और दूसरा हाथ में लिए खड़ा रहा, अपने शरीर से पानी सूखने देता रहा। उसी क्षण देवदूतों की एक पुत्री ने उसकी परिपूर्ण सुंदरता देखी और उससे प्रेम करने लगी। उसे लुभाने के लिए उसने यह पहला श्लोक दोहराया:-

"भिखारी भिक्षु, क्या तुम जानते हो?"
दुनिया किस प्रकार की खुशी दिखा सकती है?
अब यही सही समय है, इसके अलावा कोई और विकल्प नहीं है:
पहले सुख, फिर भिक्षा, भिक्षु!

बोधिसत्व ने अप्सरा का संबोधन सुना और फिर अपने निर्धारित उद्देश्य को बताते हुए दूसरे श्लोक को दोहराते हुए उत्तर दिया:

समय अज्ञात है, मुझे पता नहीं है
मुझे कब जाना होगा?
अब समय आ गया है: इसके अलावा कोई और समय नहीं है:
अतः अब मैं एक भिखारी भिक्षु हूँ (*1)।"

जब अप्सरा ने बोधिसत्व के शब्द सुने, तो वह तुरंत गायब हो गई।

इस प्रवचन के बाद गुरु ने जन्म की पहचान बताई: "दोनों कथाओं में अप्सरा एक ही है, और उस समय जो संन्यासी था वह मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) टीकाकार इस अंश की व्याख्या करते हुए एक और दोहा जोड़ता है:

जीवन, बीमारी, मृत्यु, शरीर का त्याग,
पुनर्जन्म—ये पाँच इस संसार में छिपे हुए हैं।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सकुनागघी-जातक**

***स्रोत** : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-168-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 168
सकुनाग्घी-जातक

"उसके चारागाह में एक बटेर थी," इत्यादि -- यह कहानी मास्टर ने जेतवन मठ में पक्षी शिक्षा (*1) में अपने अर्थ के बारे में बताई थी।

एक दिन गुरु ने भिक्षुओं को बुलाकर कहा, "भिक्षुओं, जब तुम भिक्षा मांगो, तो अपने-अपने क्षेत्र में रहो।" और उस अवसर के अनुकूल महावग्ग के उस सूत्र को दोहराते हुए उन्होंने आगे कहा, "परन्तु एक क्षण रुकिए: पहले तो यहाँ तक कि पशु रूपी प्राणी भी अपने-अपने क्षेत्रों में रहने से इनकार कर देते थे और दूसरों के क्षेत्रों में शिकार करके अपने शत्रुओं के जाल में फंस जाते थे, फिर अपनी बुद्धि और सूझबूझ से अपने शत्रुओं के चंगुल से मुक्त हो जाते थे।" इन शब्दों के साथ उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त राजा थे, तब बोधिसत्व ने एक छोटे बटेर के रूप में जन्म लिया। वे खेत जोतने के बाद बचे हुए मिट्टी के ढेलों पर कूद-कूद कर अपना भोजन प्राप्त करते थे।

एक दिन उसने सोचा कि वह अपने भोजन क्षेत्र को छोड़कर किसी दूसरे क्षेत्र में जाकर भोजन की तलाश करेगा; इसलिए वह उड़कर जंगल के किनारे पहुँच गया। जैसे ही उसने वहाँ अपना भोजन उठाया, एक बाज़ ने उसे देख लिया और उस पर ज़ोरदार हमला करते हुए उसे पकड़ लिया।

इस बाज़ द्वारा बंदी बनाए जाने पर, हमारी बटेर कराह उठी: "आह! मैं कितना बदनसीब हूँ! मुझमें कितनी अक्ल नहीं है! मैं किसी और के इलाके में शिकार कर रहा हूँ! काश मैं अपने ही स्थान पर रहता, जहाँ मेरे पूर्वज रहते थे! तब यह बाज़ मेरा कुछ नहीं बिगाड़ पाता, मतलब अगर वह लड़ने आता तो!"

"क्यों, बटेर," बाज़ ने कहा, "तुम्हारी अपनी ज़मीन क्या है, जहाँ तुम्हारे पूर्वज तुमसे पहले चरते थे?"

"एक जोता हुआ खेत जो पूरी तरह से टीलों से ढका हुआ है!"

इस पर बाज़ ने अपनी शक्ति ढीली करते हुए उसे छोड़ दिया। "चले जाओ, मैं तुम्हें यहीं छोड़ रहा हूँ, बटेर! लेकिन तुम मुझसे बच नहीं पाओगे, यहाँ तक कि वहाँ भी नहीं!"

बटेर वापस उड़कर एक विशाल टीले पर बैठ गई और वहीं खड़ी होकर पुकारने लगी—"चलो अब, बाज़!"

अपनी पूरी ताकत और दोनों पंखों को झोंकते हुए बाज़ ने हमारी बटेर पर ज़ोरदार हमला किया। बटेर ने सोचा, "देखो, यह तो बदला लेने आ रहा है!" और जैसे ही उसने उसे पूरी गति से आते देखा, वह थोड़ा हट गया और उसे मिट्टी के टीले पर ज़ोर से टकराने दिया। बाज़ खुद को रोक नहीं पाया और उसका सीना ज़मीन से टकरा गया; इससे उसका दिल टूट गया और वह आँखें बाहर निकलते हुए वहीं गिर पड़ा।

यह कथा सुनाए जाने के बाद, गुरु ने आगे कहा, "इस प्रकार आप देखते हैं, भिक्षुओं, कि कैसे पशु भी अपना स्थान छोड़कर अपने शत्रुओं के हाथों में पड़ जाते हैं; परन्तु जब वे अपना स्थान बनाए रखते हैं, तो वे अपने शत्रुओं पर विजय प्राप्त करते हैं। इसलिए सावधान रहें कि अपना स्थान न छोड़ें और दूसरों के स्थान में अतिक्रमण न करें। (फिर वे छुपे अर्थ की व्याख्या करते हैं) हे भिक्षुओं, जो अपनी आनंदमयी आंतरिक आत्म-जागरूकता (समाधि में परमानंदमयी अवस्था) को छोड़ देते हैं, उन्हें मारा (मृत्यु का देवता, जो सभी प्राणियों को जन्म-मृत्यु-पुनर्जन्म के चक्र में घुमाता है) (*2) को एक द्वार मिल जाता है, मारा को पैर जमाने का स्थान मिल जाता है। भिक्षुओं, परायापन क्या है, और भिक्षु के लिए अनुचित निवास क्या है? मेरा तात्पर्य शरीर की इंद्रियों के सुखों में निवास करने से है। ये क्या हैं? आँख की वासना, कान की वासना, नाक की वासना, जीभ की वासना, स्पर्श की वासना और मन की वासना (विचार/अवधारणाएँ)। भिक्षुओं, यही भिक्षु के लिए अनुचित निवास है।" फिर पूर्णतः ज्ञान प्राप्त करने के बाद उन्होंने प्रथम श्लोक को दोहराया:-

"एक बटेर अपने चारागाह में थी, तभी ऊपर से झपट्टा मारा।"
एक बाज़ आया; लेकिन वह इस तरह गिरा कि उसी से उसकी मृत्यु हो गई।

जब उसकी इस प्रकार मृत्यु हो गई, तो बटेर बाहर निकली और चिल्लाई, "मैंने अपने शत्रु की पीठ देख ली है!" और अपने शत्रु की छाती पर बैठकर उसने दूसरे छंद के शब्दों में अपनी खुशी व्यक्त की:-

"अब मैं अपनी सफलता पर प्रसन्न हूं: मुझे एक चतुर योजना मिल गई है।"
अपने मोर्चे पर डटे रहकर अपने दुश्मन से छुटकारा पाना।"

यह प्रवचन समाप्त हुआ, गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई:- सत्यों के समापन पर कई भिक्षुओं ने मार्ग में या उनकी सफलता में विराजमान हुए:- "देवदत्त उन दिनों का बाज़ था, और बटेर मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) शकुनग्गी सूत्र, संयुक्त निकाय 47.6 टिपिटका में

(2) मारा मृत्यु का स्वामी है, और इस शब्द का प्रयोग बुद्ध ने दुष्ट (शैतान/शैतान) के लिए किया है।

स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-169-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 169
अरका-जातक

"वह हृदय जो असीम करुणा महसूस करता है," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में प्रेम और करुणा पर आधारित धर्मग्रंथ के बारे में सुनाई थी।

एक अवसर पर गुरु ने भिक्षुओं के समूह को इस प्रकार संबोधित किया: "भाइयों, पूर्ण मनन से किया गया दान, जिस पर ध्यान लगाया जाए, जिसे बढ़ाया जाए, प्रगति का साधन बनाया जाए, जिसे अपना एकमात्र लक्ष्य बनाया जाए, जिसका अभ्यास अच्छी तरह से शुरू किया गया हो, उससे ग्यारह आशीर्वाद प्राप्त होने की उम्मीद की जा सकती है (*1)। ये ग्यारह क्या हैं? वह सुखी सोता है और सुखी जागता है; उसे बुरे सपने नहीं आते; मनुष्य उससे प्रेम करते हैं; आत्माएं उसकी रक्षा करती हैं; अग्नि, विष और तलवार उसके पास नहीं आते; वह शीघ्र ही मन में लीन हो जाता है; उसकी दृष्टि शांत हो जाती है; वह निर्भय होकर मृत्यु को प्राप्त होता है; आगे किसी ज्ञान की आवश्यकता के बिना वह ब्रह्मा के उच्च स्वर्ग में जाता है। हे भाइयों, अपनी इच्छाओं का त्याग करके किया गया दान"—और इसी प्रकार—"इन ग्यारह आशीर्वादों को प्राप्त करने की उम्मीद की जा सकती है। हे भाइयों, इन ग्यारह आशीर्वादों को धारण करने वाले दान की प्रशंसा करते हुए, एक भिक्षु को सभी प्राणियों के प्रति दयालुता दिखानी चाहिए, चाहे स्पष्ट रूप से आज्ञा दी गई हो या नहीं, उसे मित्रवतों का मित्र होना चाहिए, हाँ, शत्रुओं का भी मित्र होना चाहिए, और एक उदासीनों का मित्र: इस प्रकार, बिना किसी भेदभाव के, चाहे स्पष्ट रूप से निवेदन किया जाए या न किया जाए, उसे सभी के प्रति दान भाव रखना चाहिए; उसे सुख-दुख में सहानुभूति दिखानी चाहिए और समभाव का अभ्यास करना चाहिए; उसे चारों गुणों के माध्यम से अपना कार्य करना चाहिए। ऐसा करने से वह बिना किसी मार्ग या फल के भी ब्रह्मा के उच्च स्वर्ग में प्रवेश करेगा। प्राचीन काल के ज्ञानी पुरुषों ने सात वर्षों तक दान भाव का अभ्यास करके ब्रह्मा के उच्च स्वर्ग में सात युगों तक निवास किया है, प्रत्येक युग में एक विकास काल और एक पतन काल होता है।" और उन्होंने उन्हें अतीत की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, एक ब्राह्मण परिवार में बोधिसत्व का जन्म हुआ। बड़े होकर उन्होंने अपनी वासनाओं का त्याग कर तपस्वी जीवन व्यतीत किया और चार गुणों को प्राप्त किया। उनका नाम अरका था, वे गुरु बन गए और हिमालय क्षेत्र में अपने अनेक अनुयायियों के साथ रहने लगे। अपने ऋषियों के समूह को संबोधित करते हुए उन्होंने कहा, "सन्यासी को दानशीलता दिखानी चाहिए, सुख-दुख दोनों में सहानुभूति रखनी चाहिए और समभाव धारण करना चाहिए; क्योंकि संकल्प से प्राप्त यह दानशीलता का भाव उन्हें ब्रह्म के उच्च स्वर्ग के लिए तैयार करता है।" दानशीलता के आशीर्वाद को समझाते हुए उन्होंने इन श्लोकों को दोहराया:-

"वह हृदय जो जन्म लेने वाली हर चीज के लिए असीम दया महसूस करता है,"
ऊपर स्वर्ग में, नीचे के लोकों में, और इस मध्य पृथ्वी पर,
असीम दया और अपार परोपकार से परिपूर्ण।
ऐसे हृदय में कोई भी चीज संकीर्ण या सीमित नहीं हो सकती।

इस प्रकार बोधिसत्व ने अपने शिष्यों को दान के अभ्यास और उसके लाभों के बारे में उपदेश दिया। और अपनी रहस्यमय समाधि में क्षण भर भी व्यवधान डाले बिना, उनका ब्रह्मा के स्वर्ग में जन्म हुआ, और सात युगों तक, प्रत्येक युग में विकास और पतन के अपने समय के साथ, वे इस संसार में फिर कभी नहीं आए।

इस प्रवचन को समाप्त करने के बाद, गुरु ने जन्म का परिचय देते हुए कहा: "उस समय के ऋषियों का समूह अब बुद्ध के अनुयायी हैं; और मैं स्वयं वही हूं जो गुरु अरका थे।"

फुटनोट:

(1) ग्यारह आशीर्वादों पर मिलिंदा के प्रश्न में चर्चा की गई है

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **काकान्तक-जातक**
***स्रोत**: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

जातक क्रमांक 170
काकंताका-जातक

इस काकंतक जन्म का विवरण नीचे महा-उम्मग्ग जन्म, जातक 546 में दिया जाएगा।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कल्याण-धम्म-जातक**
***स्रोत**: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-171-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 171
कल्याण-धम्म-जातक

"हे राजा, जब लोग हमारा अभिवादन करते हैं," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक बहरी सास के बारे में सुनाई थी।

कहा जाता है कि श्रावस्ती नगर में एक अधिकारी थे, जो धर्म के सच्चे अनुयायी थे और पंच गुणों से संपन्न थे। वे तीन शरणस्थलों में शरण लिए हुए थे। एक दिन वे जेतवन मठ में गुरु के प्रवचन सुनने के लिए निकले। वे अपने साथ बहुत सारा घी, तरह-तरह की मिठाइयाँ, फूल, इत्र आदि ले गए थे। उसी समय उनकी पत्नी की माँ अपनी बेटी से मिलने आई थीं और अपने साथ पौष्टिक भोजन और दलिया लेकर आई थीं। उन्हें थोड़ा कम सुनाई देता था।

खाना खाने के बाद—खाने के बाद थोड़ी नींद आने लगती है—उसने खुद को जगाए रखने के लिए कहा—"अच्छा, और क्या आपके पति आपके साथ खुशी से रहते हैं? क्या आप दोनों में सहमति है?" "अरे माँ, ये कैसी बात पूछ रही हो! उनके जैसा नेक और गुणी साधु तो मुश्किल से ही मिलेगा!" उस भली महिला को अपनी बेटी की बात पूरी तरह समझ नहीं आई, लेकिन उसने "साधु" शब्द सुन लिया और चिल्लाई—"अरे बाप रे, आपके पति साधु क्यों बन गए!" और उसने खूब हंगामा किया। उस घर में रहने वाले सभी लोगों ने यह सुना और चिल्लाए, "अधिकारी साधु बन गए!" लोगों ने शोर सुना और यह जानने के लिए दरवाजे पर भीड़ जमा हो गई कि क्या हुआ है। "यहाँ रहने वाला अधिकारी साधु बन गया है!" बस यही उन्होंने सुना।

हमारे अधिकारी ने बुद्ध का उपदेश सुना और फिर शहर लौटने के लिए मठ से निकल पड़े। रास्ते में एक व्यक्ति उनसे मिला और बोला, "हे गुरुजी, लोग कहते हैं कि आपने संन्यासी बन गए हैं और आपके सभी परिवार और नौकर घर पर रो रहे हैं!" तब उनके मन में ये विचार आए, "लोग कहते हैं कि मैंने संन्यासी बन गया हूँ जबकि मैंने ऐसा कुछ नहीं किया है। शुभ वाणी को अनदेखा नहीं करना चाहिए; आज मुझे संन्यासी बनना ही होगा।" तभी वे तुरंत मुड़े और गुरुजी के पास लौट आए। गुरुजी ने कहा, "तुम बुद्ध के दर्शन करके चले गए। फिर यहाँ वापस क्यों आए हो?" उस व्यक्ति ने उन्हें सब कुछ बताया और कहा, "हे गुरुजी, शुभ वाणी को अनदेखा नहीं करना चाहिए। इसलिए मैं यहाँ आया हूँ और संन्यासी बनना चाहता हूँ।" फिर उन्होंने शिष्यों की दीक्षा ली और पुण्य जीवन व्यतीत किया; और शीघ्र ही वे संत बन गए।

यह कहानी समुदाय में फैल गई। एक दिन वे सब मिलकर सत्य के हॉल में इस विषय पर चर्चा कर रहे थे, और उनका कहना था: "मेरे मित्र, फलां अधिकारी ने शिष्यों का दीक्षा संस्कार इसलिए ग्रहण किया क्योंकि उन्होंने कहा था कि 'महान वाणी को कभी उपेक्षित नहीं करना चाहिए,' और अब वे संत बन गए हैं!" गुरुजी अंदर आए और जानना चाहते थे कि वे किस बारे में बात कर रहे हैं। उन्होंने उन्हें बताया। गुरुजी ने कहा, "भाइयों (भिक्षुओं), पुराने समय में ज्ञानी पुरुष भी भिक्षु संघ में इसलिए शामिल हुए थे क्योंकि उन्होंने कहा था कि शुभ वाणी को कभी उपेक्षित नहीं करना चाहिए;" और फिर उन्होंने उन्हें पुराने समय की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व एक धनी व्यापारी के पुत्र के रूप में संसार में आए; और जब वे बड़े हुए और उनके पिता की मृत्यु हो गई, तो उन्होंने अपने पिता का स्थान ग्रहण कर लिया।

एक बार वह राजा को प्रणाम करने गए थे, तभी उनकी सास अपनी बेटी से मिलने आईं। उन्हें थोड़ा कम सुनाई देता था, और सब कुछ ठीक वैसे ही हुआ जैसे अब हुआ है। पति राजा को प्रणाम करके लौट रहे थे, तभी उन्हें एक आदमी मिला, जिसने कहा, "लोग कहते हैं कि आप संन्यासी बन गए हैं, और आपके घर में इतना शोरगुल है!" बोधिसत्व ने यह सोचकर कि शुभ शब्दों को कभी अनदेखा नहीं करना चाहिए, तुरंत मुड़कर राजा के पास वापस चले गए। राजा ने पूछा कि उन्हें वापस आने का क्या कारण है। उन्होंने कहा, "महाराज, मुझे बताया गया है कि मेरे सभी लोग मेरे संन्यासी बनने पर शोक मना रहे हैं, जबकि मैंने ऐसा कुछ नहीं किया है। लेकिन शुभ शब्दों को अनदेखा नहीं करना चाहिए, और मैं संन्यासी बनूंगा। मैं संन्यासी बनने के लिए आपकी अनुमति चाहता हूं!" और उन्होंने निम्नलिखित श्लोकों में स्थिति का वर्णन किया:

"हे राजा, जब लोग हमें नाम से पुकारते हैं
हमें अपने कार्यों को भी पवित्र बनाना चाहिए:
हमें न तो विचलित होना चाहिए और न ही इसमें कमी करनी चाहिए;
हमें इस शर्मिंदगी का बोझ खुद उठाना होगा।
"हे राजा, मुझे यह नाम दिया गया है:
आज वे चिल्लाते हैं कि मुझे कितना पवित्र होना चाहिए:
इसलिए मैं एक संन्यासी के रूप में जीना और मरना पसंद करूंगा;
मुझे खुशी और मौज-मस्ती में कोई रुचि नहीं है।"

इस प्रकार बोधिसत्व ने राजा से धार्मिक (तपस्वी) जीवन अपनाने की अनुमति मांगी। फिर वे हिमालय चले गए और तपस्वी बनकर उन्होंने अपनी इंद्रियों और उपलब्धियों को विकसित किया और अंत में ब्रह्मा के उच्च स्वर्ग में पहुंचे।

गुरु ने प्रवचन समाप्त करते हुए जन्म का विवरण दिया: "उन दिनों आनंद राजा थे, और मैं स्वयं बनारस का धनी व्यापारी था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **दद्दारा-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-172-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 172
दद्दरा-जातक

"वह कौन है जो इतनी ज़ोर से चिल्लाता है, इत्यादि।"—यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में कोकालिका के बारे में सुनाई थी। उस समय हमें पता चला कि मनोशिला जिले में कई विद्वान भिक्षु थे, जो समुदाय के सामने शास्त्रों का पाठ करते समय युवा शेरों की तरह ज़ोर से बोलते थे, मानो स्वर्ग की गंगा नदी को भी नीचे ला सकते हों (*1)। जब वे अपने ग्रंथों का पाठ कर रहे थे, तो कोकालिका (यह जाने बिना कि वह कितना मूर्ख साबित हो रहा है) ने सोचा कि वह भी ऐसा ही करना चाहेगा। इसलिए वह भिक्षुओं के बीच गया, हालाँकि उसने भिक्षुओं का नाम नहीं लिया, बल्कि कहा, "वे मुझसे शास्त्र का कोई अंश पढ़ने के लिए नहीं कहते। यदि वे मुझसे कहें, तो मैं पढ़ दूँगा।" पूरे समुदाय को इसकी जानकारी हो गई और उन्होंने सोचा कि वे उसकी परीक्षा लेंगे। उन्होंने कहा, "मित्र कोकालिका, आज समुदाय को कुछ शास्त्र सुनाओ।" वह अपनी गलती को जाने बिना इस पर सहमत हो गया; उस दिन वह समुदाय के सामने पाठ करेगा।

सबसे पहले उन्होंने अपनी पसंद का दलिया खाया, कुछ और भोजन किया और अपना पसंदीदा सूप पिया। सूर्यास्त के समय प्रवचन का घंटा बजा; सारा समुदाय इकट्ठा हो गया। उन्होंने जो 'पीला वस्त्र' पहना था, वह नीले रंग का था; उनका बाहरी वस्त्र शुद्ध सफेद था। इस प्रकार वस्त्र पहनकर वे सभा में प्रवेश किया, बड़ों को प्रणाम किया, एक भव्य रत्नजड़ित मंडप के नीचे बने प्रवचन आसन पर चढ़े, हाथ में एक सुंदर नक्काशीदार पंखा लिए हुए, और बैठ गए, अपने पाठ को शुरू करने के लिए तैयार। लेकिन ठीक उसी क्षण उनके पूरे शरीर पर पसीने की बूंदें आने लगीं और उन्हें शर्म महसूस हुई। उन्होंने पहले श्लोक का पहला भाग दोहराया; लेकिन आगे क्या आएगा, वे

सोच नहीं पाए। इसलिए घबराकर आसन से उठकर वे सभा से बाहर निकल गए और अपनी कोठरी खोजने लगे। किसी और ने, जो वास्तव में एक विद्वान थे, धर्मग्रंथ का पाठ किया। उसके बाद सभी भाइयों को पता चल गया कि वे कितने खाली थे।

एक दिन सत्य के हॉल में भाई लोग इस विषय पर चर्चा करने लगे: "मित्र, पहले यह देखना आसान नहीं था कि कोकालिका कितना खोखला है; परन्तु अब उसने अपनी वाणी से यह प्रकट कर दिया है।" गुरुजी अंदर आए और पूछा कि वे किस विषय पर चर्चा कर रहे हैं। उन्होंने गुरुजी को सब कुछ बताया। गुरुजी ने कहा—"भाइयों, यह पहली बार नहीं है जब कोकालिका ने अपनी वाणी से स्वयं को प्रकट किया है; ठीक ऐसा ही पहले भी हो चुका है;" और फिर उन्होंने उन्हें एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व का जन्म एक युवा सिंह के रूप में हुआ और वे कई सिंहों के राजा थे। वे अपने सिंहों के दल के साथ चांदी की गुफा में रहते थे। पास ही एक सियार दूसरी गुफा में रहता था।

एक दिन, बारिश के बाद, सभी शेर अपने सरदार की गुफा के प्रवेश द्वार पर इकट्ठा होकर ज़ोर-ज़ोर से दहाड़ रहे थे और शेरों की तरह उछल-कूद कर रहे थे। जब वे दहाड़ रहे थे और खेल रहे थे, तभी सियार ने भी अपनी आवाज़ उठाई। "देखो, यह सियार भी हमारे साथ दहाड़ रहा है!" शेरों ने कहा; उन्हें शर्म महसूस हुई और वे चुप हो गए। जब वे सब चुप हो गए, तो बोधिसत्व के शावक ने उनसे यह प्रश्न पूछा। "पिताजी, ये सभी शेर जो दहाड़ रहे थे और खेल रहे थे, एक प्राणी की आवाज़ सुनकर शर्म से चुप हो गए हैं। यह कौन सा प्राणी है जो अपनी आवाज़ से इस तरह अपनी पहचान उजागर कर देता है?" और उसने पहला श्लोक दोहराया:

"कौन है वो जोरदार चीख जिससे दद्दारा गूंज उठता है?"
हे पशुओं के स्वामी, यह कौन है? और उसका स्वागत क्यों नहीं हुआ?
अपने बेटे के शब्दों पर बूढ़े शेर ने दूसरी पंक्ति दोहराई:

"सभी जानवरों में सबसे घिनौना सियार ही वह आवाज निकालता है।"
शेर उसकी दीनता को नापसंद करते हैं, इसलिए वे चुपचाप उसके चारों ओर बैठे रहते हैं।

"भाइयों," गुरु ने आगे कहा, "यह पहली बार नहीं है जब कोकालिका ने अपनी वाणी से स्वयं को प्रकट किया है; पहले भी ऐसा ही हुआ था;" और अपने प्रवचन को समाप्त करते हुए उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "उस समय कोकालिका सियार था, राहुल युवा शेर था, और मैं स्वयं सिंहराज था।"

फुटनोट:

(1) आकाशगंगा।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **मक्कट-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-173-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 173
मक्काता-जातक

"पिताजी, देखिए! बेचारा बूढ़ा!" इत्यादि। यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक बदमाश के बारे में सुनाई थी। इसके घटनाक्रम उद्दल जन्म (*1) के चौदहवें खंड में वर्णित हैं। यहाँ भी गुरु ने कहा, "भाइयों, यह बदमाश केवल एक बार ही नहीं निकला है; पुराने दिनों में, जब यह बंदर था, तब भी इसने आग जलाने के लिए शरारतें की थीं।" और उन्होंने बहुत पुराने दिनों की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व का जन्म काशी के एक गाँव में एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। जब वे बड़े हुए, तो उन्होंने तक्षशिला में शिक्षा प्राप्त की और वहीं बस गए।

कुछ समय बाद उनकी पत्नी ने एक पुत्र को जन्म दिया; और जब बच्चा दौड़-भाग कर ही सकता था, तभी उनकी पत्नी का निधन हो गया। पति ने उनकी अंतिम संस्कार की रस्में पूरी कीं और फिर कहा, "अब मेरे लिए घर क्या है? मैं और मेरा पुत्र संन्यासी का जीवन व्यतीत करेंगे।" अपने मित्रों और परिवार को आँसुओं में डूबा छोड़कर, वह पुत्र को लेकर हिमालय चले गए, एक धार्मिक संन्यासी बन गए और जंगल से मिलने वाले फलों और जड़ों पर अपना जीवन व्यतीत करने लगे।

बरसात के मौसम में एक दिन, जब ज़ोरदार बारिश हुई थी, उसने कुछ लकड़ियाँ जलाईं और पुआल के गद्दे पर लेटकर आग से खुद को गर्म करने लगा। उसका बेटा उसके बगल में बैठकर उसके पैर छू रहा था।

अब एक जंगली बंदर, ठंड से बेहाल होकर, हमारे साधु की पत्तों की कुटिया में आग जलती हुई देखी। उसने सोचा, "मान लो मैं अंदर चला जाऊं: वे चिल्लाएंगे बंदर! बंदर! और मुझे भगा देंगे: मुझे खुद को गर्म करने का मौका ही नहीं मिलेगा। — मुझे एक उपाय सूझा!" वह चिल्लाया। "मैं एक साधु का वस्त्र पहनूंगा, और एक तरकीब से अंदर चला जाऊंगा!" तो उसने एक मरे हुए साधु का छाल का वस्त्र पहना, अपनी टोकरी और टेढ़ी छड़ी उठाई, और कुटिया के दरवाजे के पास खड़ा हो गया, जहाँ वह एक ताड़ के पेड़ के पास बैठ गया। लड़के ने उसे देखा, और अपने पिता को पुकारा (यह जाने बिना कि वह एक बंदर है) "देखो, एक बूढ़ा साधु है, सचमुच, ठंड से बेहाल होकर आग के पास खुद को गर्म करने आया है।" फिर उसने अपने पिता से पहले श्लोक के शब्दों में विनती की, कि बेचारे को अंदर आने दें ताकि वह खुद को गर्म कर सके।

"पिताजी, देखिए! एक बेचारा बूढ़ा आदमी वहाँ ताड़ के पेड़ के पास दुबका हुआ है!"
हमारे पास रहने के लिए एक झोपड़ी है; आइए उस आदमी को भी उसमें से एक हिस्सा दे दें।"
जब बोधिसत्व ने यह सुना, तो वे उठे और द्वार की ओर गए। परन्तु जब उन्होंने देखा कि वह प्राणी केवल एक बंदर है, तो उन्होंने कहा, "हे मेरे पुत्र, मनुष्य का ऐसा चेहरा नहीं होता; यह एक बंदर है, और इसे यहाँ अंदर नहीं आने देना चाहिए।" फिर उन्होंने दूसरा श्लोक दोहराया:

"यदि वह दरवाजे के अंदर आ गया तो वह हमारे जीवन को अपवित्र कर देगा।"
ऐसा चेहरा देखकर आसानी से पता चल जाता है कि किसी अच्छे ब्राह्मण का चेहरा ऐसा कभी नहीं रहा होगा।
बोधिसत्व ने जलता हुआ एक टुकड़ा उठाया और चिल्लाते हुए कहा, "तुम्हें यहाँ क्या चाहिए?" और उसे उस पर फेंक दिया, और उसे भगा दिया। बंदर ने अपने छाल के वस्त्र उतार दिए, एक पेड़ पर चढ़ गया और जंगल में छिप गया।

तब बोधिसत्व ने चारों गुणों का अभ्यास करते हुए ब्रह्मा के उच्चतर स्वर्ग तक पहुँच गए।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म का विवरण दिया: "यह चालाक भाई (भिक्षु) उन दिनों का बंदर था; राहुल उस ऋषि का पुत्र था, और मैं स्वयं वह ऋषि था।"

फुटनोट:

(1)सं. 487.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **दुभिया-मक्कट-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-174-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 174
दुभिया-मक्कता-जातक

"भरपूर पानी," इत्यादि—यह कहानी गुरु ने वेलुवाना में अपने प्रवास के दौरान देवदत्त के बारे में सुनाई थी। एक दिन ऐसा हुआ कि भिक्षु (भाई) सत्य के हॉल में देवदत्त की कृतघ्नता और अपने मित्रों के प्रति विश्वासघात के बारे में बात कर रहे थे, तभी गुरु ने बीच में टोकते हुए कहा, "भाइयों, देवदत्त ने केवल एक बार ही अपने मित्रों के प्रति कृतघ्नता और विश्वासघात नहीं किया है। वह पहले भी ऐसा ही था।" फिर उन्होंने उन्हें एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व का जन्म काशी के एक गाँव में एक ब्राह्मण (पुजारी) परिवार में हुआ। बड़े होकर उन्होंने विवाह किया और वहीं बस गए। उस गाँव में, काशी राज्य के राजमार्ग के किनारे एक गहरा कुआँ था, जिसमें उतरने का कोई रास्ता नहीं था। वहाँ से गुजरने वाले लोग पुण्य कमाने के लिए एक लंबी रस्सी और बाल्टी से पानी खींचकर पशुओं के लिए एक कुंड भरते थे; इस प्रकार वे पशुओं को पानी पिलाते थे। चारों ओर घना जंगल था, जिसमें बंदरों के झुंड रहते थे।

संयोगवश दो-तीन दिनों तक पानी का स्रोत बंद हो गया, जहाँ से यात्री पानी भरते थे; और जीवों को पीने के लिए कुछ नहीं मिला। प्यास से व्याकुल एक बंदर पानी की तलाश में कुएँ के पास इधर-उधर भटकता रहा।

अब बोधिसत्व किसी काम से उस रास्ते से गुजरे, अपने लिए पानी लाए, उसे पिया और हाथ धोए; फिर उनकी नज़र हमारे बंदर पर पड़ी। उसे प्यासा देखकर यात्री कुएँ से पानी लाए और उसके लिए प्याला भर दिया। फिर वे एक पेड़ के नीचे बैठ गए, यह देखने के लिए कि वह प्राणी क्या करता है।

बंदर ने पानी पिया, पास में बैठ गया और बोधिसत्व को डराने के लिए बंदर जैसा मुंह बनाया। "अरे, बदमाश बंदर!" बोधिसत्व ने इस पर कहा—"जब तुम प्यासे और दुखी थे, तब मैंने तुम्हें खूब पानी पिलाया; और अब तुम मेरे सामने बंदर जैसे मुंह बना रहे हो। वाह वाह, बदमाश की मदद करके तुमने अपनी मेहनत बर्बाद कर दी।" और उन्होंने पहली पंक्ति दोहराई:

मैंने तुम्हें खूब पानी दिया था
जब आपको गर्मी और प्यास दोनों लग रही थी:
अब तुम शरारतों से भरे हुए बकबक करते बैठे हो,
दुष्ट लोगों से कोई वास्ता न रखना ही बेहतर है।

तब उस चिड़चिड़े बंदर ने जवाब दिया, "मुझे लगता है कि तुम सोचते हो कि मैं बस इतना ही कर सकता हूँ। अब जाने से पहले मैं तुम्हारे सिर पर कुछ गिरा दूँगा।" फिर, दूसरी पंक्ति को दोहराते हुए, वह आगे बढ़ा--

"एक सुशासित बंदर जिसने कभी सुना या देखा हो"
मैं तुम्हारे सिर पर अपना मल त्याग देता हूँ; क्योंकि यही हमारा व्यवहार है।

यह सुनकर बोधिसत्व उठकर जाने लगे। लेकिन ठीक उसी क्षण, जिस डाल पर वे बैठे थे, वहाँ से एक बंदर ने उसे माला की तरह उनके सिर पर गिरा दिया और चीखता हुआ जंगल की ओर भाग गया। बोधिसत्व ने स्नान किया और अपने रास्ते चले गए।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त करते हुए कहा, "ऐसा केवल अब ही नहीं है कि देवदत्त ऐसा है, बल्कि पहले भी उसने मेरे द्वारा दिखाई गई कृपा को स्वीकार नहीं किया था," तो उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "उस समय देवदत्त बंदर था, और ब्राह्मण मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **अदिक्कुपत्थान-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-175-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 175
आदिकुपट्टाना-जातक

"कोई जनजाति नहीं है," इत्यादि - यह कहानी जेतवन मठ में गुरु द्वारा एक बदमाश के बारे में सुनाई गई थी।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व का जन्म काशी के एक ब्राह्मण परिवार में हुआ। बड़े होकर वे तक्षशिला गए और वहाँ अपनी शिक्षा पूरी की। फिर उन्होंने धार्मिक जीवन अपनाया, अपनी क्षमताओं और उपलब्धियों को निखारा और कई शिष्यों के गुरु बनकर हिमालय में अपना जीवन व्यतीत किया।

वह वहां लंबे समय तक रहे; एक बार नमक और मसाले खरीदने के लिए उन्हें ऊंचे पहाड़ों से नीचे एक सीमावर्ती गांव में आना पड़ा, जहां वे पत्तों की झोपड़ी में रहने लगे। जब वे भिक्षा मांगने के लिए बाहर गए होते थे, तो एक शरारती बंदर कुटिया में घुस आता था और सब कुछ उलट-पुलट कर देता था, घड़ों से पानी गिरा देता था, जग तोड़ देता था और अंत में उस कोठरी में गंदगी फैला देता था जहां आग जल रही होती थी।

बरसात खत्म होने पर, संन्यासियों ने लौटने का सोचा और ग्रामीणों से विदा ली; उन्होंने सोचा, "अभी पहाड़ों पर फूल और फल पक रहे हैं।" उत्तर मिला, "कल हम आपके निवास पर भिक्षा लेकर आएंगे; जाने से पहले आप भोजन कर लेना।" इसलिए अगले दिन वे वहाँ भरपूर भोजन, ठोस और तरल, लेकर आए। बंदर ने मन ही मन सोचा, "मैं इन लोगों को छल से वश में कर लूँगा और उनसे कुछ भोजन ले लूँगा।" इसलिए उसने भिक्षा मांगने वाले एक पवित्र व्यक्ति का रूप धारण किया और संन्यासियों के पास ही खड़ा होकर सूर्य की पूजा करने लगा। जब लोगों ने उसे देखा, तो उन्होंने सोचा, "पवित्र हैं वे जो पवित्रों के साथ रहते हैं," और पहली पंक्ति दोहराई:

"पशुओं की ऐसी कोई प्रजाति नहीं है जो अपने गुणी स्वरूप को न नकारती हो।"
देखो, यह बेचारा बंदर यहाँ सूर्य की पूजा कर रहा है!

इस प्रकार लोगों ने हमारे बंदर के गुणों की प्रशंसा की। लेकिन बोधिसत्व ने यह देखकर उत्तर दिया, "तुम शरारती बंदर के तौर-तरीकों को नहीं जानते, वरना तुम उसकी प्रशंसा नहीं करते जो प्रशंसा के योग्य नहीं है;" और फिर उन्होंने दूसरा श्लोक जोड़ा:

"आप इस प्राणी के चरित्र की प्रशंसा इसलिए करते हैं क्योंकि आप उसे जानते नहीं हैं;
उसने पवित्र अग्नि को अपवित्र किया है और हर एक जलपात्र को तोड़ दिया है।

जब लोगों ने सुना कि वह बंदर कितना शरारती है, तो उन्होंने लाठी-पत्थर उठाकर उस पर प्रहार किया और भिक्षुओं को दान दिया। ऋषि हिमालय लौट गए; और अपनी रहस्यमय समाधि (सम्मोहन) को भंग किए बिना अंततः ब्रह्मा के उच्च स्वर्ग (प्रधान देवदूतों के स्वर्ग) में पहुँच गए।

इस प्रवचन के अंत में, गुरु ने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उन दिनों यह पाखंडी बंदर था; बुद्ध के अनुयायी ऋषियों का समूह थे; और उनका नेता मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कालया-मुथि-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-176-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 176
कलाय-मुक्ति-जातक

"एक मूर्ख बंदर," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में कोसल के एक राजा के बारे में सुनाई थी।

एक बरसात के मौसम में, उसकी सीमा पर असंतोष फैल गया। वहाँ तैनात सैनिकों ने दो-तीन लड़ाइयों में अपने शत्रुओं को हराने में असफल रहने के बाद राजा को संदेश भेजा। मौसम और बारिश की परवाह किए बिना, राजा युद्ध के मैदान में उतरा और जेतवन मठ के प्रांगण में डेरा डाला। फिर वह सोचने लगा, "यह अभियान के लिए अच्छा मौसम नहीं है; हर दरार और गड्ढा पानी से भरा है; रास्ता दुर्गम है: मैं गुरु से मिलने जाऊँगा। वे अवश्य पूछेंगे, 'तुम कहाँ जा रहे हो?'; तब मैं उन्हें बता दूँगा। गुरु केवल भविष्य के मामलों में ही मेरी रक्षा नहीं करते, बल्कि वर्तमान में हम जो देखते हैं, उसमें भी मेरी रक्षा करते हैं। इसलिए यदि मेरा जाना सफल नहीं होगा, तो वे कहेंगे,

'महाराज, यह जाने का अच्छा समय नहीं है'; लेकिन यदि मैं सफल होऊंगा, तो वे कुछ नहीं कहेंगे।" इस प्रकार वह प्रांगण में आया और गुरु को प्रणाम करने के बाद एक तरफ बैठ गया।

"हे महाराज, आप इस असमय कहाँ से आए हैं?" गुरु ने पूछा। "महाराज," उसने उत्तर दिया, "मैं सीमा पर हो रहे विद्रोह को दबाने जा रहा हूँ; और सबसे पहले आपसे विदाई लेने आया हूँ।" इस पर गुरु ने कहा, "ऐसा पहले भी हुआ है कि शक्तिशाली सम्राट युद्ध पर निकलने से पहले बुद्धिमानों की सलाह मानकर असमय अभियान से लौट जाते हैं।" फिर, राजा के अनुरोध पर, उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, उनका एक सलाहकार था जो उनका विशेष विश्वासपात्र था और उन्हें आध्यात्मिक और सांसारिक मामलों में सलाह देता था। सीमा पर विद्रोह हुआ और वहाँ तैनात सैनिकों ने राजा को पत्र भेजा। राजा तुरंत, बरसात के मौसम में भी, अपने उद्यान में डेरा डालकर निकल पड़े। बोधिसत्व राजा के सामने उपस्थित हुए। उसी समय लोगों ने घोड़ों के लिए मटर उबाली और उन्हें एक नांद में डाल दिया। उद्यान में रहने वाले बंदरों में से एक पेड़ से नीचे कूदा, अपने मुँह और हाथों में मटर भर ली, फिर वापस ऊपर चढ़ गया और पेड़ पर बैठकर खाने लगा। खाते समय, एक मटर उसके हाथ से ज़मीन पर गिर गई। उसके हाथों और मुँह से सारी मटर तुरंत नीचे गिर गईं और वह पेड़ से नीचे उतरकर खोई हुई मटर को खोजने लगा। लेकिन वह मटर उसे नहीं मिली; इसलिए वह फिर से अपने पेड़ पर चढ़ गया और उदास होकर बैठ गया, मानो किसी मुकदमे में हज़ारों रुपये हार गया हो।

राजा ने बंदर की हरकत देखी और बोधिसत्व को उसकी ओर इशारा करते हुए पूछा, "मित्र, इस बारे में तुम्हारा क्या विचार है?" इस पर बोधिसत्व ने उत्तर दिया, "महाराज, मूर्ख लोग अक्सर यही करते हैं; वे एक पैसा कमाने के लिए एक पाउंड खर्च कर देते हैं;" और उन्होंने पहली पंक्ति को दोहराया।

"एक मूर्ख बंदर, जो पेड़ों पर रहता है,"
हे राजा, जब उनके दोनों हाथ मटर से भरे हुए थे,
उसने एक की तलाश में उन सभी को फेंक दिया है:
हे महाराज, ऐसे लोगों में कोई बुद्धिमत्ता नहीं है।
तब बोधिसत्व राजा के पास गए और उनसे दोबारा बात करते हुए दूसरी पंक्ति दोहराई:

"हे महामहिम सम्राट, हम ऐसे ही हैं, लालची लोग भी ऐसे ही हैं।"
थोड़ा पाने के लिए बहुत कुछ खोना, बिल्कुल बंदर और मटर की कहानी की तरह।
यह भाषण सुनकर राजा मुड़ा और सीधे बनारस लौट गया। और जब डाकुओं ने सुना कि राजा अपनी राजधानी से अपने शत्रुओं को कुचलने के लिए निकल पड़ा है, तो वे भी सीमा से भाग निकले।

जिस समय यह कहानी सुनाई गई, उस समय भगोड़े ठीक उसी तरह भाग निकले। गुरु की बातें सुनकर राजा उठे और विदा लेकर श्रावस्ती नगर लौट गए।

इस प्रवचन के समाप्त होने के बाद, गुरु ने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उन दिनों आनंद राजा थे, और बुद्धिमान सलाहकार मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **तिन्दुक-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-177-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 177
तिन्दुका-जातक

"हमारे चारों ओर उन्हें खड़े देखो," इत्यादि—यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए पूर्ण ज्ञान के बारे में सुनाई थी। महाबोधि जन्म (*1) और उम्मग्ग जन्म (*2) की तरह, अपने ज्ञान की प्रशंसा सुनकर उन्होंने कहा, "बुद्ध केवल आज ही ज्ञानी नहीं हैं, बल्कि वे पहले भी ज्ञानी और सभी संसाधनों से परिपूर्ण थे;" और उन्होंने निम्नलिखित पुरानी कथा सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व का जन्म एक बंदर के रूप में हुआ और वे अस्सी हजार बंदरों के झुंड के साथ हिमालय में रहते थे। पास ही एक गाँव था, जो कभी आबाद होता था और कभी खाली। उस गाँव के बीच में एक तिन्दुका (*3) का पेड़ था, जिस पर मीठे फल लगते थे और वह टहनियों और शाखाओं से ढका हुआ था। जब वह जगह खाली होती थी, तो सभी बंदर वहाँ जाकर फल खाते थे।

एक बार, फलों के मौसम में, गाँव लोगों से भरा हुआ था, उसके चारों ओर बाँस की बाड़ लगी थी और द्वार पहरेदार थे। और एक पेड़ फलों के भार से झुकी हुई अपनी सभी शाखाओं के साथ खड़ा था। बंदर सोचने लगे: "एक ऐसा गाँव है, जहाँ से हम फल खाते थे। पता नहीं उस पेड़ पर फल हैं या नहीं; क्या वहाँ लोग हैं या नहीं?" अंत में उन्होंने एक जासूस बंदर को भेजा। उसने पाया कि पेड़ पर फल थे और गाँव लोगों से भरा हुआ था। जब बंदरों ने सुना कि पेड़ पर फल हैं, तो उन्होंने उस मीठे फल को खाने का निश्चय किया; और हिम्मत जुटाकर, उनमें से एक झुंड अपने मुखिया के पास गया और उसे बताया। मुखिया ने पूछा कि गाँव भरा हुआ है या खाली; उन्होंने कहा, भरा हुआ है। "तो तुम्हें नहीं जाना चाहिए," उसने कहा, "क्योंकि मनुष्य बहुत धोखेबाज होते हैं।" "लेकिन, महाराज, हम आधी रात को जाएँगे, जब सब गहरी नींद में सो रहे होंगे, और तब खाएँगे!" अत: इस विशाल दल ने अपने सरदार से अनुमति प्राप्त की और पहाड़ों से नीचे उतरकर एक किनारे पर तब तक प्रतीक्षा की जब तक लोग विश्राम करने के लिए नहीं चले गए; मध्य पहर में, जब लोग सो रहे थे, वे पेड़ पर चढ़ गए और फल खाने लगे।

एक आदमी को रात में किसी ज़रूरी काम से उठना पड़ा; वह गाँव गया और वहाँ उसने बंदरों को देखा। उसने तुरंत शोर मचाया; लोग धनुष-बाण लेकर या जो भी हथियार हाथ लगे, लाठी या मिट्टी के ढेले लेकर बाहर आए और पेड़ को घेर लिया; उन्होंने सोचा, "भोर होते ही, हमने उन्हें पकड़ लिया है!"

अस्सी हजार बंदरों ने इन लोगों को देखा और बुरी तरह डर गए। उन्होंने सोचा, "हमारे सरदार के सिवा हमारी कोई मदद नहीं है;" इसलिए वे उसके पास गए और पहला श्लोक सुनाया:

"हमारे चारों ओर वे खड़े दिखाई देते हैं, धनुष और बाण से लैस योद्धा।"
हमारे चारों ओर, हाथों में तलवार लिए: ऐसा कौन है जो हमें बचा सकता है?

इस पर बंदरों के सरदार ने उत्तर दिया: "डरिए मत; मनुष्यों के पास करने के लिए बहुत काम है। अभी दोपहर का समय है; वे वहाँ खड़े सोच रहे हैं—'हम उन्हें मार डालेंगे!' लेकिन हम उनके इस काम में बाधा डालने के लिए कोई और काम ढूंढ लेंगे।" और बंदरों को सांत्वना देने के लिए उसने दूसरा श्लोक दोहराया:

"लोगों के पास करने के लिए बहुत सी चीजें हैं; किसी न किसी कारण से सभा भंग हो जाएगी।"
देखो तुम्हारे लिए अभी क्या बचा है; जब तक खाने के लिए फल बचे हैं, खा लो।

उस महान प्राणी ने बंदरों के झुंड को दिलासा दिया। अगर उन्हें यह थोड़ी सी भी तसल्ली न मिलती तो वे टूट जाते और मर जाते। जब उस महान प्राणी ने बंदरों को सांत्वना दी, तो उसने पुकार कर कहा, "सभी बंदरों को इकट्ठा करो!" लेकिन जब उन्होंने उन्हें इकट्ठा किया, तो उन्हें एक बंदर नहीं मिला, उसका भतीजा, सेनाका नाम का बंदर। इसलिए उन्होंने उसे बताया कि सेनाका झुंड में नहीं है। उसने कहा, "अगर सेनाका यहाँ नहीं है, तो चिंता मत करो; वह तुम्हारी मदद करने का कोई न कोई रास्ता ज़रूर निकालेगा।"

जिस समय सैनिकों का दल तेज़ी से आगे बढ़ा, सेनाका सो रहा था। बाद में जब वह जागा, तो उसे आसपास कोई दिखाई नहीं दिया। इसलिए उसने उनके पदचिह्नों का पीछा किया और थोड़ी देर में उसने सभी लोगों को तेज़ी से भागते हुए देखा। "हमारे दल के लिए कोई खतरा है," उसने सोचा। तभी उसने गाँव के बाहरी इलाके में एक झोपड़ी में एक बूढ़ी औरत को जलती हुई आग के सामने गहरी नींद में सोते हुए देखा। और जैसे कोई गाँव का बच्चा खेतों में जा रहा हो, सेनाका ने एक जलती हुई लकड़ी उठाई और हवा की दिशा में खड़े होकर गाँव में आग लगा दी। फिर सभी लोग बंदरों को छोड़कर आग बुझाने के लिए दौड़ पड़े। इस पर बंदर भाग गए और हर एक सेनाका के लिए एक फल लेकर आया।

जब यह प्रवचन समाप्त हुआ, तो गुरु ने जन्म का वर्णन किया: "महानामा शाक्य उन दिनों के सेनाक के भतीजे थे; बुद्ध के अनुयायी वानरों का समूह थे; और मैं स्वयं उनका मुखिया था।"

फुटनोट:

(1)सं. 528.

(2) संख्या 538.

(3)डायोस्पायरोस एम्ब्रियोप्टेरिस.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कच्छप-जातक**
***स्रोत** : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-178-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 178
कच्छपा-जातक

"यहाँ मेरा जन्म हुआ था," इत्यादि--यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी, कि कैसे एक आदमी मलेरिया से छुटकारा पा गया (*1)।

कहा जाता है कि एक बार श्रावस्ती नगर के एक परिवार में मलेरिया फैल गया। माता-पिता ने अपने पुत्र से कहा, "पुत्र, इस घर में मत रहो; दीवार में छेद करके कहीं भाग जाओ और अपनी जान बचा लो (*2)। फिर वापस आना—इस जगह पर बहुत धन दबा हुआ है; उसे खोदकर निकालो और परिवार का धन और अपना सुखमय जीवन फिर से संवार लो!" युवक ने वैसा ही किया जैसा उसे कहा गया था; उसने दीवार तोड़ दी और भाग निकला। जब उसकी बीमारी ठीक हो गई, तो वह लौटा और खजाना खोदकर निकाला, जिससे उसने अपना घर बसाया।

एक दिन, तेल, घी, वस्त्र और अन्य भेंटों से लदे हुए, वे जेतवन मठ गए, गुरु को प्रणाम किया और आसन ग्रहण किया। गुरु ने उनसे बातचीत शुरू की। उन्होंने कहा, "हमने सुना है कि आपके घर में हैजा फैल गया था। आप इससे कैसे बच गए?" उन्होंने गुरु को सारी बात बताई। गुरु ने कहा, "पुराने समय में भी, और आज भी, हे मेरे मित्र, जब कोई संकट आता था, तो कुछ लोग घर से इतना लगाव रखते थे कि उसे छोड़ना नहीं चाहते थे, और इसी कारण वे मर जाते थे; जबकि जो लोग घर से इतना लगाव नहीं रखते थे, और कहीं और चले जाते थे, वे बच जाते थे।" फिर उनके अनुरोध पर गुरु ने उन्हें एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व का जन्म एक गाँव में कुम्हार के पुत्र के रूप में हुआ था। वे कुम्हार का काम करते थे और उन्हें अपनी पत्नी और परिवार का भरण-पोषण करना था।

उस समय बनारस की महान नदी के पास एक विशाल प्राकृतिक झील थी। जब उसमें भरपूर पानी होता था, तो नदी और झील एक हो जाते थे; लेकिन जब पानी कम हो जाता था, तो वे अलग हो जाते थे। मछलियाँ और कछुए सहज ज्ञान से जानते हैं कि साल में कब बारिश होगी और कब सूखा पड़ेगा। इसलिए हमारी कहानी के समय, उस झील में रहने वाली मछलियाँ और कछुए जानते थे कि सूखा पड़ने वाला है; और जब दोनों झील में पानी एक हो गया, तो वे झील से निकलकर नदी में तैर गए। लेकिन एक कछुआ ऐसा था जो नदी में नहीं गया, क्योंकि उसने कहा, "मैं यहीं पैदा हुआ हूँ, यहीं पला-बढ़ा हूँ, और यहीं मेरे माता-पिता का घर है: मैं इसे छोड़ नहीं सकता!"

फिर गर्मी के मौसम में सारा पानी सूख गया। उसने एक गड्ढा खोदा और खुद को उसमें गाड़ दिया, ठीक उसी जगह पर जहाँ बोधिसत्व मिट्टी लेने आते थे। वहीं बोधिसत्व मिट्टी लेने आते थे; उन्होंने एक बड़े फावड़े से इतना खोदा कि कछुए का खोल टूट गया और वह मिट्टी के एक बड़े टुकड़े की तरह ज़मीन पर गिर पड़ा। पीड़ा में वह प्राणी सोचने लगा, "देखो, मैं मर रहा हूँ, सिर्फ इसलिए कि मुझे अपने घर से इतना लगाव था कि मैं उसे छोड़ना नहीं चाहता था!" और इन छंदों में उसने विलाप किया:

"मैं यहीं पैदा हुआ था, और यहीं रहता था; मिट्टी ही मेरी शरणस्थली थी।"

और अब मिट्टी ने मेरे साथ बेहद दुखद तरीके से धोखा किया है;
हे भगगवा (*3) मैं तुम्हें पुकारता हूँ; सुनो, मुझे क्या कहना है!
"जहाँ आपको खुशी मिल सके, वहाँ जाओ, चाहे वह जगह कोई भी हो।"
चाहे जंगल हो या गांव, बुद्धिमान व्यक्ति वहां अपना घर और जन्मस्थान दोनों देखता है;
वहां जाओ जहां जीवन हो; और घर पर मत रहो जहां मृत्यु तुम पर हावी हो जाए।

इसलिए वह बोधिसत्व से लगातार बात करता रहा, जब तक कि उसकी मृत्यु नहीं हो गई। बोधिसत्व ने उसे उठाया और सभी ग्रामीणों को इकट्ठा करके उनसे कहा, "इस कछुए को देखो। जब दूसरी मछलियाँ और कछुए बड़ी नदी में चले गए, तो यह अपने घर से इतना मोहित था कि उनके साथ नहीं गया और उस जगह पर खुद को गाड़ लिया जहाँ से मैं मिट्टी निकालता हूँ। फिर जब मैं मिट्टी खोद रहा था, तो मैंने अपने बड़े फावड़े से उसका खोल तोड़ दिया और उसे मिट्टी का एक बड़ा ढेला समझकर ज़मीन पर फेंक दिया। तब उसे अपने किए का पछतावा हुआ, उसने दो छंदों में अपने भाग्य पर शोक व्यक्त किया और मर गया। तो तुम देख सकते हो कि उसका अंत इसलिए हुआ क्योंकि वह अपने घर से बहुत मोहित था। सावधान रहो कि इस कछुए की तरह मत बनो। अपने आप से यह मत कहो, 'मेरे पास दृष्टि है, मेरे पास श्रवण शक्ति है, मेरे पास गंध है, मेरे पास स्वाद है, मेरे पास स्पर्श शक्ति है, मेरे पास एक पुत्र है, मेरे पास एक पुत्री है, मेरे पास सेवा के लिए बहुत से पुरुष और कन्याएँ हैं, मेरे पास कीमती सोना है'; लालसा और इच्छा से इन चीजों से चिपके मत रहो। प्रत्येक प्राणी अस्तित्व के तीन चरणों से गुजरता है (*4)।" इस प्रकार उन्होंने बुद्ध की कुशलता से भीड़ को उपदेश दिया। यह उपदेश पूरे भारत में फैल गया और पूरे सात हजार वर्षों तक इसे याद रखा गया। सारी भीड़ ने उनके उपदेश का पालन किया और दान-पुण्य एवं अच्छे कार्य करते हुए अंततः स्वर्ग को प्राप्त हुए।

जब गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के समापन पर युवक प्रथम मार्ग के फल (सम्मोहन) में स्थापित हो गया: और कहा, "आनंद तब कछुआ था, और कुम्हार मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) अहिवातारोगो। इस शब्द का अर्थ "सांप की हवा से होने वाली बीमारी" होना चाहिए, संभवतः मलेरिया बुखार, जिसे तराई क्षेत्र में सांप की सांस के कारण माना जाता है। या क्या यह संभव है कि अहि, जिसका अर्थ नाभि हो सकता है, यहाँ आंतें हों, और हैजा जैसी कोई बीमारी हो?

(2) यह उल्लेखनीय है कि यहाँ बीमारी की आत्मा को मात देने के लिए वही साधन इस्तेमाल किया जाता है जो अक्सर मृतकों के भूतों को मात देने के लिए इस्तेमाल किया जाता है; जिनके बारे में माना जा सकता है कि वे दरवाजे की रखवाली करते हैं, लेकिन घर के उन हिस्सों की नहीं जहाँ से कोई निकास नहीं होता।

(3) "कुम्हार को संबोधित करते हुए."

(4)इंद्रिय जगत, रूप जगत, निराकार अस्तित्व जगत।

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **शतधम्म-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-179-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 179
सतधम्म-जातक

"कितना नीच तरीका है," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें जीविका कमाने के इक्कीस गैरकानूनी तरीकों का वर्णन था।

एक समय में बहुत से भिक्षु चिकित्सक बनकर, संदेशवाहक बनकर, पैदल काम करके, भिक्षा लेकर (*1), और इसी प्रकार के इक्कीस अवैध कामों से अपना जीवन यापन करते थे। साकेत जन्म (*2) में इन सभी बातों का वर्णन किया जाएगा। जब गुरु को पता चला कि वे

इस प्रकार अपना जीवन यापन करते हैं, तो उन्होंने कहा, "अब बहुत से भिक्षु हैं जो अवैध तरीकों से अपना जीवन यापन करते हैं। जो इस प्रकार अपना जीवन यापन करते हैं, वे प्रेत या निराकार आत्माओं के रूप में जन्म लेने से नहीं बचेंगे; वे बोझ ढोने वाले जानवर बनेंगे; वे नरक में जन्म लेंगे; उनके कल्याण और आशीर्वाद के लिए एक ऐसा प्रवचन देना आवश्यक है जो अपने नैतिक संदेश को स्पष्ट और सरल शब्दों में व्यक्त करे।" अतः उन्होंने समुदाय को एकत्रित किया और कहा, "भाइयों, अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए इक्कीस अवैध तरीकों का प्रयोग न करें। अवैध रूप से प्राप्त भोजन धधकते लोहे के समान है, घातक विष के समान है। सभी बुद्धों और पच्चेक-बुद्धों के शिष्य इन अवैध तरीकों की निंदा और खंडन करते हैं। अवैध साधनों से प्राप्त भोजन खाने वालों को न तो हँसी आती है और न ही आनंद। मेरे धर्म (मार्ग) में इस प्रकार प्राप्त भोजन निम्नतम जाति के व्यक्ति के बचे हुए भोजन के समान है। धर्म (मार्ग) के अनुयायी के लिए इसे खाना, मनुष्य जाति के सबसे नीच व्यक्ति के बचे हुए भोजन को खाने के समान है।" और इन शब्दों के साथ उन्होंने प्राचीन काल की सारी कहानी सुना दी।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व का जन्म निम्नतम जाति के एक व्यक्ति के पुत्र के रूप में हुआ। बड़े होकर वे किसी उद्देश्य से यात्रा पर निकल पड़े, और अपने भोजन के लिए टोकरी में कुछ चावल के दाने ले गए।

उस समय बनारस में सतधम्म नाम का एक युवक रहता था। वह एक महान ब्राह्मण का पुत्र था। वह भी किसी उद्देश्य से यात्रा पर निकला था, लेकिन उसके पास न तो चावल थे और न ही टोकरी। दोनों की मुलाकात राजमार्ग पर हुई। युवक ब्राह्मण ने दूसरे से पूछा, "तुम किस जाति के हो?" उसने उत्तर दिया, "सबसे नीच जाति का। और तुम कौन हो?" "ओह, मैं एक उत्तरी ब्राह्मण हूँ।" "ठीक है, चलो साथ चलें;" और वे साथ चलने लगे। नाश्ते का समय आया: बोधिसत्व एक स्वच्छ जल के पास बैठ गया, अपने हाथ धोए और अपनी टोकरी खोली। "क्या तुम कुछ लोगे?" उसने पूछा। "अरे, अरे," दूसरे ने कहा, "मुझे कुछ नहीं चाहिए, तुम नीच।" "ठीक है," बोधिसत्व ने कहा। कुछ भी बर्बाद न करते हुए, उसने अपनी इच्छा अनुसार चावल एक पत्ते में अलग रख दिए, अपनी टोकरी बंद की और भोजन किया। फिर उसने पानी पिया, हाथ-पैर धोए और बचा हुआ चावल और खाना उठाया। "चलिए, महाराज," उसने कहा और वे फिर से अपनी यात्रा पर चल पड़े।

सारा दिन वे चलते रहे; और शाम को दोनों ने उत्तम जल में स्नान किया। स्नान करने के बाद, बोधिसत्व एक अच्छी जगह पर बैठ गए, अपना थैला खोला और खाने लगे। इस बार उन्होंने दूसरे को हिस्सा नहीं दिया। वह युवक सारा दिन चलने से थक गया था और भूख से बेहाल था; वह वहीं खड़ा देखता रहा और सोचता रहा, "अगर वह मुझे कुछ देगा, तो मैं ले लूँगा।" लेकिन दूसरा चुपचाप खाता रहा। "यह नीच आदमी," युवक ने सोचा, "बिना कुछ बोले एक-एक टुकड़ा खा जाता है। चलो, मैं भी एक टुकड़ा माँग लेता हूँ; मैं बाहरी, जो अपवित्र है, उसे फेंक दूँगा और बाकी खा लूँगा।" और उसने ऐसा ही किया; उसने बचा हुआ खाना खा लिया। खाते ही उसने सोचा— "मैंने अपने कुल, अपने परिवार, अपने खानदान को कितना कलंकित किया है! मैंने एक नीच कुल के देहाती का बचा हुआ खाना खा लिया!" उसे बहुत पछतावा हुआ; उसने भोजन उल्टी कर दिया, और उसके साथ खून भी निकला। "ओह, मैंने कितना बुरा काम किया है," वह रोते हुए बोला, "एक नीच व्यक्ति के लिए!" और उसने पहले छंद के शब्दों में अपनी बात जारी रखी:

"कितना नीच आदमी है! और उसका बचा हुआ खाना भी! उसकी मर्जी के खिलाफ दिया गया!"
और मैं उच्च कुल का ब्राह्मण हूँ! और उस पदार्थ ने मुझे बीमार कर दिया है!
इस प्रकार उस युवक ने रोते हुए कहा, "मैंने जीवन बचाने के लिए इतना बुरा काम क्यों किया?" वह जंगल में कूद गया और फिर कभी किसी की नजरों में नहीं आया, वहीं उसकी दुखद मृत्यु हो गई।

जब यह कथा समाप्त हुई, तो गुरु ने दोहराया, "हे भिक्षुओं, जिस प्रकार एक युवा ब्राह्मण ने नीच जाति के व्यक्ति का बचा हुआ भोजन खाने के बाद पाया कि उसे न तो हंसी आई और न ही आनंद, क्योंकि उसने अनुचित भोजन किया था; उसी प्रकार जिसने भी इस मोक्ष (निर्वाण) को ग्रहण किया है और अवैध साधनों से जीविका कमाता है, जब वह बुद्ध द्वारा निंदनीय और अस्वीकृत किसी भी तरीके से भोजन करता है और अपना जीवन यापन करता है, तो उसे पता चलेगा कि उसे न तो हंसी आई और न ही आनंद।" फिर, पूर्णतः प्रबुद्ध होकर, उन्होंने दूसरा श्लोक दोहराया:

जो दुष्टता से जीवन यापन करता है, जो अपने पापों की परवाह नहीं करता,
कहानी के ब्राह्मण की तरह, उसे अपनी जीत का कोई आनंद नहीं मिलता।
जब यह प्रवचन समाप्त हुआ, तो गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के समापन पर कई भाइयों ने मार्ग का अनुसरण किया और उसका फल प्राप्त किया: "कहानी के समय मैं निम्न जाति का व्यक्ति था।"

फुटनोट:

(1) अपराध का तात्पर्य एक दिन भीख में हिस्सा देना और अगले दिन भीख मांगते समय उसी के बराबर हिस्सा लेना है, ताकि प्रतिदिन भीख मांगने की परेशानी से बचा जा सके।

(2) संख्या 237, जो हालांकि केवल संख्या 68 को संदर्भित करता है।

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **दुद्ददा-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-180-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 180
दुद्दादा-जातक

"नेक लोगों की तरह करना कठिन है," इत्यादि — यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में सामूहिक दान के बारे में सुनाई थी। श्रावस्ती नगर में दो प्रतिष्ठित युवक मित्रों ने बुद्ध और उनके अनुयायियों को देने के लिए आवश्यक वस्तुएँ एकत्रित कीं। उन्होंने सभी को आमंत्रित किया, सात दिनों तक उदारतापूर्वक दान दिया और सातवें दिन उन्हें उनकी सभी आवश्यक वस्तुएँ भेंट कीं। उनमें से बड़े ने गुरु को प्रणाम किया और उनके पास बैठकर कहा, "हे प्रभु, दान देने वालों में से कुछ ने अधिक दिया और कुछ ने कम; परन्तु यह सबके लिए समान रूप से फलदायी हो।" फिर उन्होंने दान भेंट किया। गुरु ने उत्तर दिया, "बुद्ध और उनके अनुयायियों को ये वस्तुएँ देकर, मेरे मित्रों, आपने महान कर्म किया है। पुराने समय में बुद्धिमान लोग इसी प्रकार उदारतापूर्वक दान देते थे और इसी प्रकार भेंट करते थे।" फिर उनके अनुरोध पर उन्होंने एक कथा सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व का जन्म काशी के एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। बड़े होकर उन्होंने तक्षशिला में पूर्ण शिक्षा प्राप्त की; जिसके बाद उन्होंने संसार त्याग दिया और संन्यासी जीवन व्यतीत करते हुए अपने कुछ शिष्यों के साथ हिमालय में निवास करने चले गए। वहाँ वे दीर्घकाल तक रहे।

एक बार नमक और मसालों की आवश्यकता होने पर वे ग्रामीण इलाकों की तीर्थयात्रा पर निकल पड़े और रास्ते में बनारस पहुँचे। वहाँ उन्होंने राजा के उद्यान में विश्राम किया; और अगली सुबह वे अपने साथियों के साथ शहर के द्वार के बाहर एक गाँव में भिक्षा मांगने गए। लोगों ने उन्हें दान दिया। अगले दिन उन्होंने शहर में भिक्षा की तलाश की। सभी लोग उन्हें दान देने के लिए प्रसन्न थे। उन्होंने मिलकर चंदा इकट्ठा किया और संन्यासियों के समूह के लिए पर्याप्त दान दिया। दान के बाद उनके प्रवक्ता ने ऊपर दिए गए शब्दों में अपना दान दिया। बोधिसत्व ने उत्तर दिया, "मित्र, जहाँ आस्था (*1) होती है, वहाँ कोई दान छोटा नहीं होता।" और उन्होंने निम्नलिखित श्लोकों में अपना धन्यवाद व्यक्त किया:

"अच्छे लोगों की तरह करना, उनकी क्षमता के अनुसार देना कठिन है।"
 बुरे लोग अच्छे लोगों के जीवन की नकल शायद ही कर सकते हैं।
और इसलिए, जब अच्छाई और बुराई पृथ्वी से मिट जाएंगी,
 बुरे लोग नरक में जन्म लेते हैं, अच्छे लोग स्वर्ग में जन्म लेते हैं।
यह उनका धन्यवाद था। वे वर्षा ऋतु के चार महीनों तक उस स्थान पर रहे और फिर हिमालय लौट आए; जहाँ उन्होंने पवित्र ध्यान की सभी विधियों का अभ्यास किया और बिना किसी रुकावट के स्वर्गारोहण तक उनका अभ्यास जारी रखा।

जब यह प्रवचन समाप्त हुआ तो गुरु ने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उस समय," उन्होंने कहा, "बुद्ध का समूह तपस्वियों का समूह था, और मैं स्वयं उनका नेता था।"

फुटनोट:

(1)चित्त-पासदो.

स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----॥-181-॥----->>>> अगला

जातक क्रमांक 181
असादिसा-जातक

“असाधारण राजकुमार, धनुर्धरी में निपुण,” इत्यादि — यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में महान त्याग के बारे में सुनाई। गुरु ने कहा, “हे भिक्षुओं, केवल आज ही नहीं, तथागत (बुद्ध) ने महान त्याग किया है: पहले भी उन्होंने राजसी वस्त्रों का त्याग किया था और ऐसा ही किया था।” और उन्होंने अतीत की एक कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब उनकी पत्नी रानी ने बोधिसत्व को गर्भ धारण कराया। रानी का जन्म स्वस्थ हुआ और उनके नामकरण के दिन उनका नाम असादिस-कुमार रखा गया, जिसका अर्थ है असाधारण राजकुमार। जब वे चलना सीख रहे थे, तभी रानी ने एक बुद्धिमान बच्चे को गर्भ धारण कराया। रानी का जन्म भी स्वस्थ हुआ और नामकरण के दिन उनका नाम ब्रह्मदत्त-कुमार रखा गया, जिसका अर्थ है स्वर्ग से भेजा गया राजकुमार।

जब असाधारण राजकुमार सोलह वर्ष के हुए, तो वे अपनी शिक्षा के लिए तक्षशिला गए। वहाँ उन्होंने विश्वप्रसिद्ध शिक्षक के चरणों में तीन वेद और अठारह सिद्धियाँ सीखीं; धनुर्विद्या में वे असाधारण थे; फिर वे बनारस लौट आए।

जब राजा अपनी मृत्युशय्या पर थे, तब उन्होंने आदेश दिया कि असाधारण राजकुमार उनके स्थान पर राजा बनें और राजकुमार ब्रह्मदत्त उत्तराधिकारी घोषित हों। फिर उनकी मृत्यु हो गई; जिसके बाद असाधारण राजकुमार को राजसत्ता की पेशकश की गई, लेकिन उन्होंने यह कहते हुए इनकार कर दिया कि उन्हें इसकी परवाह नहीं है। इसलिए उन्होंने ब्रह्मदत्त का राज्याभिषेक करके उन्हें राजा नियुक्त किया। असाधारण राजकुमार को यश-यद्यपि की कोई परवाह नहीं थी और उन्हें किसी चीज की चाह नहीं थी।

जब छोटा भाई शासन कर रहा था, तब असाधारण राजकुमार राजसी ठाठ-बाठ से रह रहा था। दास आए और उन्होंने उसके भाई से उसकी निंदा की; उन्होंने कहा, "असाधारण राजकुमार राजा बनना चाहता है!" ब्रह्मदत्त ने उनकी बात मान ली और धोखे में आ गया; उसने कुछ लोगों को असाधारण राजकुमार को बंदी बनाने के लिए भेजा।

राजकुमार के एक विशेष सेवक ने उसे सारी बात बता दी। वह अपने भाई पर क्रोधित हो गया और दूसरे देश चला गया। वहाँ पहुँचकर उसने राजा को संदेश भेजा कि एक धनुर्धारी आया है और उसका इंतज़ार कर रहा है। राजा ने पूछा, "वह कितना वेतन माँगता है?" राजकुमार ने जवाब दिया, "एक लाख प्रति वर्ष।" राजा ने कहा, "अच्छा, उसे अंदर आने दो।" राजकुमार राजा के समक्ष आया और प्रतीक्षा करने लगा। राजा ने पूछा, "क्या तुम वही धनुर्धारी हो?" राजकुमार ने जवाब दिया, "जी महाराज।" राजा ने कहा, "बहुत अच्छा, मैं तुम्हें अपनी सेवा में ले लेता हूँ।" इसके बाद राजकुमार राजा की सेवा में ही रहा। परन्तु पुराने धनुर्धारी उसे दिए गए वेतन से नाराज़ थे; वे बड़बड़ाए, "बहुत ज़्यादा है।"

एक दिन संयोगवश राजा अपने उद्यान में गए। वहाँ, एक आम के पेड़ के नीचे, जहाँ एक विशेष पत्थर की आसन के सामने पर्दा लगा हुआ था, वे एक भव्य पलंग पर आराम कर रहे थे। उनकी नज़र ऊपर उठी और पेड़ की चोटी पर उन्हें आमों का एक गुच्छा दिखाई दिया। उन्होंने सोचा, "यह तो चढ़ने के लिए बहुत ऊँचा है।" इसलिए उन्होंने अपने तीरंदाजों को बुलाया और उनसे पूछा कि क्या वे तीर से एक गुच्छा तोड़कर उनके लिए नीचे ला सकते हैं। उन्होंने कहा, "अरे, यह हमारे लिए कोई बड़ी बात नहीं है। लेकिन महाराज, आपने हमारी कुशलता कई बार देखी है। नया सैनिक हमसे कहीं अधिक वेतन पाता है, इसलिए शायद आप उसे फल नीचे लाने के लिए कह दें।"

तब राजा ने विशेष दूत को बुलवाया और उससे पूछा कि क्या वह यह कार्य कर सकता है। "जी हां, महाराज, यदि मुझे अपना स्थान चुनने की अनुमति हो।" "तुम्हें कौन सा स्थान चाहिए?" "वह स्थान जहां आपका पलंग रखा है।" राजा ने पलंग हटवा दिया और स्थान दे दिया।

असाधारण धनुर्धारी के हाथ में धनुष नहीं था; वह उसे अपने शरीर के वस्त्र के नीचे रखता था; इसलिए उसे परदे की आवश्यकता अवश्य रही होगी। राजा ने उसके लिए परदा मंगवाने का आदेश दिया और उसे बिछाया, और हमारा धनुर्धारी अंदर गया। उसने अपने ऊपर ओढ़ा हुआ सफेद वस्त्र उतार दिया और अपनी त्वचा के पास लाल वस्त्र ओढ़ लिया; फिर उसने अपनी कमरबंद कसी और लाल कमरबंद पहन ली। उसने एक थैली से टुकड़ों में बंटी तलवार निकाली, जिसे उसने जोड़कर अपनी कमर के बाईं ओर बांध लिया। फिर उसने सोने का कवच पहना, अपने धनुष का थैला पीठ पर बांधा और अपने कई टुकड़ों में बने विशाल मेढ़े के सींग से बने धनुष को निकाला, जिसे उसने जोड़कर मूंगे के समान लाल डोरी लगाई; अपने सिर पर पगड़ी बांधी; अपने नाखूनों से तीर घुमाते हुए, उसने परदा खोल दिया और बाहर आ गया, मानो फटी हुई जमीन से निकला हुआ कोई सर्प राजकुमार हो। वह तीरंदाजी स्थल पर गया, धनुष पर तीर चढ़ाया और फिर राजा से यह प्रश्न पूछा। "महाराज," उसने कहा, "क्या मुझे इस फल को ऊपर की ओर तीर मारकर गिराना है, या तीर को इस पर गिराकर?"

राजा ने कहा, "मेरे पुत्र, मैंने अक्सर ऊपर की ओर दागे गए तीर से लक्ष्य को गिरते देखा है, लेकिन गिरते हुए लक्ष्य पर लगते कभी नहीं देखा। बेहतर होगा कि तुम तीर को लक्ष्य पर ही गिराओ।"

“महाराज,” धनुर्धर ने कहा, “यह तीर बहुत ऊँचा उड़ेगा। यह चारों महान राजाओं के स्वर्ग तक जाएगा और फिर स्वतः लौट आएगा। कृपया इसके लौटने तक धैर्य रखें।” राजा ने आज्ञा का पालन किया। तब धनुर्धर ने फिर कहा, “महाराज, यह तीर ऊपर जाते ही आम के डंठल को ठीक बीचोंबीच भेद देगा; और नीचे आते समय यह एक बाल बराबर भी इधर-उधर नहीं भटकेगा, बल्कि ठीक उसी स्थान पर लगेगा और गुच्छे को भी अपने साथ गिरा देगा।” फिर उसने तेजी से तीर चलाया। तीर ऊपर जाते ही आम के डंठल के ठीक बीचोंबीच जा लगा। जब धनुर्धर को पता चला कि उसका तीर चारों महान राजाओं के स्थान पर पहुँच गया है, तब उसने पहले तीर से भी अधिक गति से एक और तीर चलाया। इस तीर ने पहले तीर के पंख को टक्कर मारी और उसे वापस मोड़ दिया; फिर वह स्वयं तैंतीस प्रधान देवदूतों के स्वर्ग तक पहुँच गया। वहाँ देवताओं ने उसे पकड़ लिया और अपने पास रख लिया।

तीर के हवा को चीरते हुए गिरने की आवाज़ बिजली की कड़क जैसी थी। हर कोई पूछ रहा था, "यह कैसी आवाज़ है?" हमारे धनुर्धर ने जवाब दिया, "यह तीर गिरने की आवाज़ है।" आस-पास खड़े लोग डर के मारे कांप रहे थे, कहीं तीर उन पर न गिर जाए; लेकिन असाधारण धनुर्धर ने उन्हें दिलासा दिया। उसने कहा, "डरने की कोई बात नहीं, मैं देखूंगा कि यह ज़मीन पर न गिरे।" तीर ज़रा सा भी इधर-उधर नहीं हुआ, बल्कि आम के गुच्छे के डंठल को साफ-साफ चीरता हुआ नीचे आया। धनुर्धर ने तीर को एक हाथ में और आम को दूसरे हाथ में पकड़ लिया, ताकि वे ज़मीन पर न गिरें। इस चमत्कार को देखकर दर्शक चिल्ला उठे, "हमने ऐसा पहले कभी नहीं देखा!" उन्होंने उस महान व्यक्ति की कितनी प्रशंसा की! उन्होंने कितना जयकारा लगाया, तालियाँ बजाईं और उंगलियां चटकाईं, हज़ारों रुमाल हवा में लहरा रहे थे! अपनी खुशी और प्रसन्नता में दरबारियों ने असाधारण धनुर्धर को करोड़ों रुपये के उपहार दिए। और राजा ने भी उस पर उपहारों और सम्मानों की वर्षा की तरह बरसाई।

जब बोधिसत्व इस राजा के हाथों इतना यश और सम्मान प्राप्त कर रहे थे, तभी सात राजा, जो जानते थे कि बनारस में कोई असाधारण राजकुमार नहीं है, शहर के चारों ओर एक मील (4.23 किमी) की दूरी तक आए और राजा को युद्ध करने या आत्मसमर्पण करने की चुनौती दी। राजा भयभीत हो गया। उसने पूछा, "मेरा भाई कहाँ है?" उत्तर मिला, "वह एक पड़ोसी राजा की सेवा में है।" उसने कहा, "यदि मेरा प्रिय भाई नहीं आया, तो मैं मर जाऊँगा। जाओ, मेरे नाम पर उसके चरणों में गिरो, उसे प्रसन्न करो, उसे यहाँ लाओ!" उसके दूत आए और अपना काम किया। असाधारण राजकुमार ने अपने स्वामी से विदा ली और बनारस लौट आया। उसने अपने भाई को सांत्वना दी और उससे कहा कि वह किसी भी बात से न डरे; फिर उसने एक तीर पर यह संदेश उकेरा (या लपेटा) कि "मैं, असाधारण राजकुमार, लौट आया हूँ। मैं तुम सबको एक ही तीर से मार डालूँगा जो मैं तुम पर चलाऊँगा। जो लोग अपनी जान की परवाह करते हैं, वे भाग जाएँ।" उसने तीर इस तरह चलाया कि वह सोने की थाली के ठीक बीचोंबीच जा गिरा, जिस पर सातों राजा एक साथ भोजन कर रहे थे। जब उन्होंने लेख पढ़ा तो वे सब भय से अधमरे होकर भाग गए।

इस प्रकार हमारे राजकुमार ने सात राजाओं को बिना एक मक्खी जितना भी रक्त बहाए भगा दिया; फिर अपने छोटे भाई को देखकर उन्होंने अपनी वासनाओं का त्याग कर संसार को छोड़ दिया, अपनी इंद्रियों और उपलब्धियों को संजोया और अपने जीवन के अंत में ब्रह्मा के उच्चतर स्वर्ग (प्रधान देवदूतों के स्वर्ग) में प्रवेश किया।

“और यही वह तरीका है,” गुरु ने कहा, “जिससे उस असाधारण राजकुमार ने सात राजाओं को परास्त किया और युद्ध जीता; जिसके बाद उसने संन्यासी जीवन व्यतीत किया।” फिर पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने के बाद उसने ये दो श्लोक कहे:

"वह एक असाधारण राजकुमार थे, तीरंदाजी में निपुण थे, और एक बहादुर सरदार थे।"
बिजली की तरह तेज गति से चलने वाला उसका बाण महान योद्धाओं की कमजोरी साबित हुआ।
"उसने अपने प्रतिद्वंद्वियों के बीच क्या तबाही मचाई! फिर भी उसने किसी को चोट नहीं पहुंचाई;"
उसने अपने भाई को बचाया; और उसने आत्म-संयम की कृपा प्राप्त की।"

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "आनंद तब छोटा भाई था, और मैं स्वयं बड़ा भिक्षु था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **संगमावचरा-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-182-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 182
सम्गमवाचारा-जातक

"हे हाथी, तुम तो एक वीर हो," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए वरिष्ठ भिक्षु नंदा के बारे में सुनाई थी।

गुरुदेव जब पहली बार कपिलवस्तु (बुद्ध के पिता शुद्धोदन का राज्य) लौटे, तो उन्होंने अपने छोटे भाई राजकुमार नंदा को अपने समुदाय में शामिल कर लिया और फिर श्रावस्ती नगर लौटकर वहीं रहने लगे। अब पिता नंदा को याद आया कि जब वे गुरुदेव के साथ प्याला लेकर घर से निकल रहे थे, तो जनपदकल्याणी खिड़की से बाहर देख रही थीं, उनके बाल आधे सँवारे हुए थे, और उन्होंने कहा था - "अरे, राजकुमार नंदा गुरुदेव के साथ चले गए! - हे प्रभु, जल्दी लौट आइए!" - यह याद करके वे उदास और निराश हो गए, उनका रंग पीला पड़ता गया और उनकी नसें तनकर उभर आईं।

जब गुरुजी को इस बात का पता चला, तो उन्होंने सोचा, "अगर मैं नंदा को संत का दर्जा दिला सकूँ तो कितना अच्छा होगा!" वे नंदा की कुटिया में गए और उन्हें दिए गए आसन पर बैठ गए। उन्होंने पूछा, "नंदा, क्या तुम हमारी शिक्षा से संतुष्ट हो?" नंदा ने उत्तर दिया, "गुरुजी, मैं जनपदकल्याणी से प्रेम करता हूँ, और मैं संतुष्ट नहीं हूँ।" "क्या तुम हिमालय की तीर्थयात्रा पर गए हो, नंदा?" "नहीं, गुरुजी, अभी तक नहीं।" "तो हम चलेंगे।" "पर, गुरुजी, मेरे पास कोई चमत्कारिक शक्ति नहीं है; मैं कैसे जा सकता हूँ?" "मैं तुम्हें ले चलूँगा, नंदा।" ऐसा कहकर गुरुजी ने उनका हाथ पकड़ा और वे हवा में उड़ गए।

रास्ते में वे एक जले हुए खेत से गुज़रे। वहाँ, एक पेड़ के जले हुए ठूंठ पर, जिसकी नाक और पूंछ आधी गायब थी, बाल झुलसे हुए थे, खाल राख हो चुकी थी, केवल चमड़ी बची थी, जो खून से लथपथ थी, एक मादा बंदरिया बैठी थी। "क्या तुम उस बंदरिया को देख रहे हो, नंदा?" गुरुजी ने पूछा। "जी हाँ।" "उसे ध्यान से देखो," उन्होंने कहा। फिर उन्होंने साठ मील (4.23 किमी) तक फैले मनोशिला के ऊंचे इलाकों, सात बड़ी झीलों, अनोत्ता और बाकी झीलों, पांच बड़ी नदियों, पूरे हिमालय के ऊंचे इलाकों, सोने, चांदी और रत्नों के नाम से मशहूर शानदार पहाड़ियों और सैकड़ों अन्य सुंदर स्थानों की ओर इशारा किया। फिर उन्होंने पूछा, "नंदा, क्या तुमने कभी तैंतीस प्रधान देवदूतों का निवास देखा है?" "नहीं, गुरुजी, कभी नहीं," उत्तर मिला। "चलो, नंदा," उन्होंने कहा, "मैं तुम्हें तैंतीस का निवास दिखाता हूँ।" उसके बाद वह उसे येलोस्टोन सिंहासन (*1) पर ले आया और उसे उस पर बैठा दिया। दो स्वर्गों के देवताओं (देवदूतों) के राजा सक्का (इंद्र) अपने देवताओं (देवदूतों) के समूह के साथ आए, अभिवादन किया और एक तरफ बैठ गए। उनकी पच्चीस मिलियन दासियाँ और कबूतरों के चरणों वाली पाँच सौ अप्सराएँ आईं और अभिवादन करके एक तरफ बैठ गईं। स्वामी ने नंदा को बार-बार उन पाँच सौ अप्सराओं को देखने के लिए कहा, जिनके प्रति वह लालसा से भरा हुआ था। "नंदा," उन्होंने कहा, "क्या तुम इन कबूतरों के चरणों वाली अप्सराओं को देख रहे हो?" "जी हाँ।" "अच्छा, कौन सी सुंदर है - वे या जनपदकल्याणी?" "ओह, स्वामी!" जिस प्रकार वह दयनीय बंदर जनपदकल्याणी के सामने तुच्छ था, उसी प्रकार वह इनके सामने तुच्छ है!" "अच्छा, नंदा, तुम क्या करने जा रहे हो?" "हे गुरु, इन अप्सराओं को कैसे जीता जा सकता है?" "हे गुरु, तपस्वी जीवन जीकर," गुरु ने कहा, "इन अप्सराओं को जीता जा सकता है।" बालक ने कहा, "यदि भगवान बुद्ध वचन देते हैं कि तपस्वी जीवन जीने से ये अप्सराएँ प्राप्त हो जाएँगी, तो मैं तपस्वी जीवन व्यतीत करूँगा।" "ठीक है, नंदा, मैं वचन देता हूँ। अच्छा, हे गुरु," उन्होंने कहा, "इसे लंबा न खींचें। चलिए चलते हैं, और मैं तपस्वी बन जाता हूँ।"

गुरु उन्हें वापस जेतवन मठ ले आए। वरिष्ठ भिक्षु ने तपस्वी जीवन का अनुसरण करना शुरू कर दिया।

गुरु ने धर्म के प्रमुख सारिपुत्र को बताया कि कैसे उनके छोटे भाई ने उन्हें तैंतीस देवताओं के स्वर्ग में अप्सराओं के बारे में देवताओं (देवदूतों) के बीच प्रतिज्ञा दिलाई थी। इसी प्रकार, उन्होंने यह कहानी वरिष्ठ भिक्षु महामोग्गल्याना, वरिष्ठ भिक्षु महाकश्यप, वरिष्ठ भिक्षु अनुरुद्ध और धर्म के कोषाध्यक्ष वरिष्ठ भिक्षु आनंद सहित कुल अस्सी महान शिष्यों को सुनाई; और फिर एक-एक करके उन्होंने इसे अन्य भिक्षुओं को भी सुनाया। धर्म के प्रमुख, वरिष्ठ भिक्षु सारिपुत्र ने वरिष्ठ भिक्षु नंदा से पूछा, "क्या यह सच है, जैसा मैंने सुना है, मित्र, कि आपको बुद्ध का वचन मिला है कि आप तपस्वी जीवन व्यतीत करके तैंतीस देवताओं के स्वर्ग में देवदूतों को प्राप्त करेंगे? फिर," उन्होंने आगे कहा, "क्या आपका पवित्र जीवन स्त्रीत्व और कामवासना से ही जुड़ा हुआ नहीं है? यदि आप केवल स्त्रियों के लिए ही पवित्र जीवन व्यतीत करते हैं, तो आपमें और मजदूरी करने वाले मजदूर में क्या अंतर है?" इस कथन ने उनके भीतर की सारी अग्नि बुझा दी और उन्हें अपने आप पर लज्जा हुई। इसी प्रकार, सभी अस्सी प्रमुख शिष्यों और शेष सभी भिक्षुओं ने इस आदरणीय भिक्षु को लज्जित किया। "मैं गलत था," उन्होंने सोचा; अत्यंत लज्जा और पश्चाताप से भरे हुए, उन्होंने साहस जुटाया और अपनी आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि विकसित करने के लिए परिश्रम किया। शीघ्र ही उन्होंने संतत्व प्राप्त कर लिया। वे गुरु के पास आए और बोले, "महोदय, मैं भगवान बुद्ध को उनके वचन से मुक्त करता हूँ।" गुरु ने कहा, "नंदा, यदि तुमने संतत्व प्राप्त कर लिया है, तो मैं अपने वचन से मुक्त हो जाता हूँ।"

जब भिक्षुओं ने यह सुना, तो वे अपने सत्य कक्ष में इस पर चर्चा करने लगे। "वरिष्ठ भिक्षु नंदा कितने विनम्र हैं! अरे मित्र, एक सलाह ने ही उनमें लज्जा जगा दी; वे तुरंत एक तपस्वी की तरह रहने लगे और अब वे संत हैं!" गुरुजी अंदर आए और पूछा कि वे किस बारे में बात कर रहे हैं। उन्होंने उन्हें बताया। "भाइयों," उन्होंने कहा, "नंदा पहले भी उतने ही विनम्र थे जितने अब हैं;" और फिर उन्होंने उन्हें एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व का जन्म एक हाथी प्रशिक्षक के पुत्र के रूप में हुआ। बड़े होकर उन्हें हाथियों के प्रशिक्षण से संबंधित सभी बातें सावधानीपूर्वक सिखाई गईं। वे एक ऐसे राजा की सेवा में थे जो बनारस के राजा का शत्रु था। उन्होंने उस राजा के राजसी हाथी को पूर्णतया प्रशिक्षित किया।

राजा ने बनारस पर कब्जा करने का निश्चय किया। अपने राजसी हाथी पर सवार होकर, वह एक विशाल सेना लेकर बनारस के विरुद्ध निकल पड़ा और उसे घेर लिया। फिर उसने नगर के राजा को पत्र भेजा: "लड़ो, या आत्मसमर्पण करो।" राजा ने लड़ने का विकल्प चुना। उसने दीवारों, फाटकों, मीनारों और प्राचीरों को एक विशाल सेना से सुसज्जित किया और शत्रु को चुनौती दी।

शत्रु राजा ने अपने राजसी हाथी को हथियारबंद किया, कवच पहना, हाथ में एक नुकीला डंडा लिया और अपने जानवर को शहर की ओर दौड़ाया; उसने कहा, "अब मैं इस शहर पर हमला करूँगा, अपने शत्रु को मार डालूँगा और उसके राज्य को अपने कब्जे में ले लूँगा।" लेकिन खौलती मिट्टी, गुलेल से पत्थर और हर तरह के गोला-बारूद फेंकने वाले रक्षकों को देखते ही हाथी बुरी तरह डर गया और उस जगह के पास भी नहीं आया। तभी उसका प्रशिक्षक चिल्लाते हुए आया, "पुत्र, तुम्हारे जैसा वीर युद्ध के मैदान में ही सहज महसूस करता है! ऐसी जगह पर दुम दबाकर भागना शर्मनाक है!" और अपने हाथी का हौसला बढ़ाने के लिए उसने ये दो श्लोक कहे:

"हे हाथी, तुम तो एक वीर हो, जिसका घर मैदान में है:
  अब आपके सामने द्वार खड़ा है: आप क्यों मुड़कर हार मान लेते हैं?
जल्दी करो! लोहे की सलाखों को तोड़ दो, और खंभों को गिरा दो!
  युद्ध के लिए तैयार किए गए फाटकों को तोड़कर शहर में प्रवेश करो!

हाथी ने बात मान ली; सलाह का एक शब्द ही उसके लिए काफी था। उसने अपनी सूंड को खंभों के डंडों पर लपेटकर उन्हें मशरूम की तरह उखाड़ फेंका: उसने द्वार पर प्रहार किया, सलाखों को तोड़ दिया और जबरदस्ती अंदर घुसकर शहर में प्रवेश किया और उसे अपने राजा के लिए जीत लिया।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "उन दिनों नंदा हाथी थे, आनंद राजा थे, और प्रशिक्षक मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) देवताओं के राजा सक्का (इंद्र) का सिंहासन।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **वलोडक-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-183-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 183
वलोदक-जातक(*1)

"यह दुखद हिस्सा," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में सुनाते समय बताई थी, जिसमें लगभग पाँच सौ लोगों ने टूटा हुआ मांस खाया था।

श्रावस्ती नगर में, जैसा कि हमें पता चला है, पाँच सौ लोग थे जिन्होंने सांसारिक जीवन के बंधनों को अपने पुत्र-पुत्रियों के लिए त्याग दिया था और गुरु के उपदेशों को सुनने के लिए एक साथ बैठे रहते थे। इनमें से कुछ प्रथम मार्ग (सम्मोहन) में थे, कुछ द्वितीय मार्ग में, कुछ तृतीय मार्ग में: एक भी ऐसा नहीं था जिसने मोक्ष (निर्वाण) प्राप्त न किया हो। जिन्होंने गुरु को आमंत्रित किया था, उन्होंने इन्हें भी आमंत्रित किया था। लेकिन उनके पास पाँच सौ सेवक थे जो उनकी सेवा में टूथब्रश, माउथवॉश और फूलों की माला लाते थे; ये लड़के अपना टूटा हुआ मांस खाते थे। भोजन और थोड़ी देर आराम करने के बाद, वे अचिरावती नदी की ओर दौड़ते थे और नदी के किनारे मल्लियन (*2) की तरह कुश्ती करते थे, लगातार चिल्लाते रहते थे। लेकिन पाँच सौ गृहस्थ भाई शांत रहते थे, बहुत कम शोर करते थे और एकांत पसंद करते थे।

गुरुजी ने संयोगवश सेवकों के चिल्लाने की आवाज़ सुनी। उन्होंने पूछा, "आनंद, यह कैसी आवाज़ है?" उत्तर मिला, "ये सेवक टूटे हुए मांस खा रहे हैं।" गुरुजी ने कहा, "आनंद, ये सेवक टूटे हुए मांस को खाकर इतना शोर मचाने का पहला मौका नहीं है; पुराने समय में भी ये ऐसा ही करते थे; और तब भी ये गृहस्थ भाई आज की तरह ही शांत रहते थे।" ऐसा कहकर, आनंदजी के अनुरोध पर, गुरुजी ने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व उनके दरबारियों में से एक के पुत्र के रूप में पैदा हुए और सांसारिक एवं आध्यात्मिक मामलों में राजा के सलाहकार बन गए। राजा को सीमा पर विद्रोह की सूचना मिली। उन्होंने पाँच सौ बलवान घोड़ों को तैयार करने और चारों भागों में पूर्ण सेना (*3) बनाने का आदेश दिया। इसके साथ वे निकले और विद्रोह को कुचलकर बनारस लौट आए।

जब वह घर लौटा, तो उसने आदेश दिया, "घोड़े थक गए हैं, इसलिए उन्हें कुछ रसीला भोजन और पीने के लिए अंगूर का रस दो।" घोड़ों ने यह स्वादिष्ट पेय पिया, फिर अपने-अपने अस्तबलों में चले गए और चुपचाप अपने-अपने स्थान पर खड़े हो गए।

लेकिन बहुत सारा बचा हुआ भोजन था, जिसमें से लगभग सारा पोषण निचोड़ लिया गया था। रखवालों ने राजा से पूछा कि इसका क्या किया जाए। राजा ने आदेश दिया, "इसे पानी में मिलाकर गूँथ लो, तौलिये से छान लो और घोड़ों का चारा ढोने वाले गधों को दे दो।" गधों ने वह बेस्वाद भोजन पी लिया। इससे वे पागल हो गए और महल के प्रांगण में जोर-जोर से रेंकते हुए दौड़ने लगे।

खुली खिड़की से राजा ने बोधिसत्व को देखा और उन्हें पुकारा, "देखो वहाँ! ये गधे उस कड़वे पेय से कितने पागल हो गए हैं! कैसे रेंक रहे हैं, कैसे उछल-कूद कर रहे हैं! लेकिन वे उत्तम नस्ल के गधे जिन्होंने तेज़ शराब पी है, वे तो बिलकुल भी शोर नहीं कर रहे; वे एकदम शांत हैं और बिल्कुल भी नहीं उछल रहे। इसका क्या अर्थ है?" और उन्होंने पहला श्लोक दोहराया:

"यह दुखद हिस्सा, जिसमें से सारी अच्छाई छन कर निकल गई है,"
नशे में धुत होकर इन सभी बेवकूफों को भगा देता है:
वे शुद्ध नस्ल के घोड़े, जिन्होंने शक्तिशाली रस पिया,
चुपचाप खड़े रहो, न ही उछल-कूद करते हुए इधर-उधर भागो।
और बोधिसत्व ने दूसरे श्लोक में इस विषय को समझाया:-

निम्न कुल का देहाती व्यक्ति, भले ही वह केवल चखे और आजमाए,

समय बीतने के साथ ही वह आनंदित और मदहोश हो जाता है:
जो सौम्य होता है, उसका मन स्थिर रहता है।
भले ही वह सबसे शक्तिशाली शराब को भी पूरी तरह से पी जाए।"
जब राजा ने बोधिसत्व का उत्तर सुन लिया, तो उसने अपने आंगन से गधों को बाहर निकलवा दिया। फिर, बोधिसत्व की सलाह का पालन करते हुए, उसने दान दिया और अच्छे कार्य किए, और अंत में अपने कर्मों के फल के अनुसार फल भोगने के लिए इस दुनिया से चला गया।

जब यह प्रवचन समाप्त हुआ, तो गुरु ने जन्म का वर्णन इस प्रकार किया:- "उस समय ये सेवक पाँच सौ गधे थे, ये गृहस्थ भाई पाँच सौ उत्तम नस्ल के घोड़े थे, आनंद राजा थे, और बुद्धिमान दरबारी मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) धम्मपद में परिचयात्मक कथा भिन्न है।

(2) मल्लियन पेशेवर पहलवानों की एक जनजाति थी।

(3) हाथी, घोड़े, रथ, पैदल सेना।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **गिरिदंत-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-184-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 184
गिरिदांत-जातक

"दूल्हे का शुक्रिया," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने वेलुवाना पार्क में रहते हुए बुरी संगति के बारे में सुनाई थी। परिस्थितियाँ पहले ही महिलामुख जातक (*1) में वर्णित हैं। फिर, पहले की तरह, गुरु ने कहा: "पुराने दिनों में यह भाई (भिक्षु) बुरी संगति में रहता था, ठीक वैसे ही जैसे अब रहता है।" फिर उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, बनारस में समा नामक एक राजा का शासन था। उस समय बोधिसत्व एक दरबारी परिवार से थे और बड़े होकर राजा के सांसारिक और आध्यात्मिक सलाहकार बने। राजा के पास पांडव नाम का एक राजकीय अश्व था और उसका प्रशिक्षक गिरिदांत था, जो लंगड़ा था। अश्व उसे लंगड़ाते हुए आगे-आगे चलते देखता था, लगाम (पट्टा) पकड़े हुए; और उसे अपना प्रशिक्षक जानकर, उसकी नकल करते हुए वह भी लंगड़ाने लगा।

किसी ने राजा को बताया कि घोड़ा लंगड़ा रहा है। राजा ने सर्जनों को भेजा। उन्होंने घोड़े की जांच की, लेकिन उसे पूरी तरह स्वस्थ पाया; और तदनुसार रिपोर्ट दी। फिर राजा ने बोधिसत्व को भेजा। उन्होंने कहा, "जाओ, मित्र, और इसके बारे में पूरी जानकारी जुटाओ।" उन्हें जल्द ही पता चल गया कि घोड़ा लंगड़ा इसलिए था क्योंकि वह एक लंगड़े प्रशिक्षक के साथ घूमता था। इसलिए उन्होंने राजा को बताया कि मामला क्या था। उन्होंने कहा, "यह बुरी संगति का मामला है," और पहले श्लोक को दोहराया:-

"दूल्हे की वजह से बेचारे पांडव की हालत बहुत खराब है।"
वह अब अपने पुराने तौर-तरीकों का प्रदर्शन नहीं करता, बल्कि मजबूरीवश उनका अनुकरण करना पड़ता है।
“तो अब, मेरे मित्र,” राजा ने कहा, “क्या किया जाए?” “एक अच्छा घोड़ा रख लो,” बोधिसत्व ने उत्तर दिया, “और घोड़ा पहले की तरह ही अच्छा हो जाएगा।” फिर उन्होंने दूसरा श्लोक दोहराया:-

"एक योग्य और उपयुक्त दूल्हा ढूंढो, जिस पर तुम भरोसा कर सको।"

उसे लगाम लगाकर व्यायाम कराने से घोड़ा जल्दी ठीक हो जाएगा;
उसकी दयनीय स्थिति सुधर जाएगी; वह अपने दोस्त का अनुकरण करता है।"

राजा ने वैसा ही किया। घोड़ा पहले जैसा ही अच्छा हो गया। राजा ने बोधिसत्व का बहुत सम्मान किया, क्योंकि वह इस बात से प्रसन्न था कि उन्हें पशुओं के स्वभाव का भी ज्ञान था।

जब यह प्रवचन समाप्त हुआ, तो गुरु ने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उन दिनों देवदत्त गिरिदांत थे; बुरी संगत में रहने वाला भाई (भिक्षु) घोड़ा था; और बुद्धिमान सलाहकार मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) संख्या 26.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **अनाभिरति-जातक**2
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-185-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 185
अनाभिराति-जातक

"गाढ़ा, मैला पानी," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, और यह एक युवा ब्राह्मण के बारे में थी।

श्रावस्ती नगर के एक युवक ब्राह्मण ने तीनों वेदों में महारत हासिल कर ली थी और वे कई युवा ब्राह्मणों और क्षत्रियों को पवित्र श्लोक सिखाते थे। समय के साथ उनका विवाह हो गया। धन-दौलत, आभूषण, स्त्री-पुरुषों की सेवा, भूमि-संपत्ति, गाय-भैंस, पुत्र-पुत्रियों के आशय में लीन होकर वे वासना, त्रुटि और कुकर्म के वश में हो गए। इससे उनकी बुद्धि क्षीण हो गई और वे मंत्रों का सही क्रम भूल गए, और कभी-कभी मंत्र उनके मन में स्पष्ट नहीं होते थे। एक दिन उन्होंने कुछ फूल और सुगंधित पदार्थ एकत्र किए और उन्हें जेतवन मठ के उद्यान में स्थित गुरु के पास ले गए। अभिवादन करने के बाद वे एक तरफ बैठ गए। गुरु ने उनसे मधुरता से बातें कीं। "हे युवक, आप पवित्र श्लोकों के शिक्षक हैं। क्या आपको वे सभी श्लोक कंठस्थ हैं?" "जी महाराज, मैं पहले तो इन्हें भली-भांति जानता था, परन्तु विवाह के बाद मेरा मन अंधकारमय हो गया है, और अब मैं इन्हें नहीं जानता।" "अरे, नौजवान," गुरु ने कहा, "ऐसा ही पहले भी हुआ था; पहले तुम्हारा मन निर्मल था, और तुम सभी श्लोकों को भली-भांति जानते थे, परन्तु जब तुम्हारा मन वासनाओं और व्यथाओं से ग्रस्त हो गया, तो तुम उन्हें स्पष्ट रूप से नहीं देख पाते थे।" तब उनके अनुरोध पर गुरु ने उन्हें यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व का जन्म एक महान ब्राह्मण परिवार में हुआ था। बड़े होकर उन्होंने तक्षशिला के एक प्रसिद्ध गुरु से शिक्षा प्राप्त की, जहाँ उन्होंने सभी मंत्रों का ज्ञान प्राप्त किया। बनारस लौटने पर उन्होंने इन मंत्रों का प्रशिक्षण अनेक ब्राह्मण और क्षत्रिय युवकों को दिया।

इन युवकों में एक ब्राह्मण युवक ऐसा भी था जिसने तीनों वेदों को कंठस्थ कर लिया था; वह विधि-विधान में निपुण हो गया और बिना एक भी पंक्ति में अटके संपूर्ण पवित्र ग्रंथों को दोहरा सकता था। समय आने पर उसका विवाह हो गया और वह गृहस्थ जीवन व्यतीत करने लगा। फिर गृहस्थी की जिम्मेदारियों ने उसके मन को इतना विचलित कर दिया कि वह पवित्र श्लोकों को दोहराने में असमर्थ हो गया।

एक दिन उनके शिक्षक उनसे मिलने आए। उन्होंने पूछा, "हे बालक, क्या तुम्हें सारे श्लोक कंठस्थ हैं?" उत्तर मिला, "जब से मैं गृहस्थ बना हूँ, मेरा मन विचलित हो गया है और मैं उन्हें दोहरा नहीं सकता।" शिक्षक ने कहा, "पुत्र, जब मन विचलित होता है, तो शास्त्रों का कितना भी पूर्ण ज्ञान क्यों न हो, वे स्पष्ट रूप से याद नहीं रहते। परन्तु जब मन शांत होता है, तो उन्हें भूलना असंभव है।" और इस पर उन्होंने निम्नलिखित दो श्लोक दोहराए:

"गाढ़ा, मैला पानी दिखाई नहीं देगा"
मछली, सीप, रेत या बजरी जो नीचे दबी हो सकती है:
इसलिए अस्पष्ट बुद्धि के साथ:
इसमें न तो आपका और न ही दूसरों का भला देखा जाता है।
"स्वच्छ, शांत जल सदा दिखाई देता है"
चाहे वह मछली हो या शंख, जो कुछ भी नीचे पड़ा है;
अतः स्पष्ट बुद्धि के साथ:
इसमें आपकी और दूसरों की अच्छाई दोनों स्पष्ट रूप से दिखाई देती हैं।"

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त कर लिया, तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के समापन पर युवा ब्राह्मण ने प्रथम मार्ग के फल (सम्मोहन) में प्रवेश किया: "उन दिनों, यह युवक युवा ब्राह्मण था, और मैं उसका गुरु था।"

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **दधि-वाहन-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-186-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 186
दधी-वाहन-जातक

"एक समय आम का स्वाद मीठा हुआ करता था," इत्यादि — यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए बुरी संगति के विषय पर सुनाई थी। परिस्थितियाँ ऊपर बताई गई घटनाओं के समान थीं। गुरु ने फिर कहा: "भाइयों, बुरी संगति हानिकारक और नुकसानदायक होती है; मनुष्यों पर बुरी संगति के बुरे प्रभावों की बात क्यों करें? बहुत समय पहले, एक सब्जी, एक आम का पेड़, जिसका मीठा फल देवताओं (देवदूतों) के लिए उपयुक्त व्यंजन था, एक हानिकारक और कड़वे नीम के पेड़ के प्रभाव से खट्टा और कड़वा हो गया था।" फिर उन्होंने एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, काशी देश के चार ब्राह्मण भाई सांसारिक जीवन त्यागकर संन्यासी बन गए; उन्होंने हिमालय की ऊँची पहाड़ियों में एक कतार में चार कुटियाएँ बनाईं और वहीं रहने लगे।

सबसे बड़े भाई की मृत्यु हो गई और उनका जन्म सक्का (इंद्र) के रूप में हुआ। अपने अतीत को जानते हुए, वे हर सात-आठ दिन में दूसरों से मिलने जाते थे और उनकी सहायता करते थे।

एक दिन, वह सबसे बड़े ऋषि के पास गए और औपचारिक अभिवादन के बाद एक तरफ बैठ गए। उन्होंने पूछा, "हे महाराज, मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ?" पीलिया से पीड़ित ऋषि ने उत्तर दिया, "मुझे आग चाहिए।" सक्का (इंद्र) ने उन्हें एक तेज धार वाली कुल्हाड़ी दी। (इस कुल्हाड़ी को तेज धार वाली कुल्हाड़ी इसलिए कहा जाता है क्योंकि इसे हैंडल में फिट करने के अनुसार यह तेज धार या कुल्हाड़ी दोनों का काम करती है।) ऋषि ने कहा, "इससे मुझे जलाने के लिए लकड़ी कौन लाएगा?" सक्का (इंद्र) ने उत्तर दिया, "यदि आपको आग चाहिए, तो आपको बस कुल्हाड़ी पर हाथ मारना है और कहना है - 'लकड़ी लाओ और आग जलाओ!' कुल्हाड़ी लकड़ी लाएगी और आपके लिए आग जला देगी।"

उसे यह तेज धार वाली कुल्हाड़ी देने के बाद, वह दूसरे भाई के पास गया और उससे भी वही सवाल पूछा—"हे भगवान, मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ?" उसकी कुटिया के पास हाथियों का रास्ता था और वे उसे परेशान करते थे। इसलिए उसने सक्का (इंद्र) से कहा कि वह हाथियों से तंग आ गया है और उन्हें भगाना चाहता है। सक्का (इंद्र) ने उसे एक ढोल दिया। उसने समझाया, "हे भगवान, अगर आप इस तरफ बजाएंगे, तो आपके दुश्मन भाग जाएंगे; लेकिन अगर आप दूसरी तरफ बजाएंगे, तो वे आपके पक्के दोस्त बन जाएंगे और आपको चार गुना सेना से घेर लेंगे।" फिर उसने उसे ढोल सौंप दिया।

अंत में, उन्होंने सबसे छोटे पुत्र से मुलाकात की और पहले की तरह पूछा कि वे उसकी कैसे सेवा कर सकते हैं। उसे भी पीलिया था, और उसने कहा—"कृपया मुझे कुछ दही दीजिए।" सक्का (इंद्र) ने उसे दूध का कटोरा देते हुए कहा, "यदि तुम्हें कुछ चाहिए, तो इसे उलट दो, और इसमें से एक बड़ी नदी बह निकलेगी, जो पूरे क्षेत्र में बाढ़ ला देगी, और यह तुम्हारे लिए एक राज्य भी जीत लेगी।" इतना कहकर वे चले गए।

इसके बाद कुल्हाड़ी से बड़े भाई के लिए आग जलाई जाती थी, दूसरा भाई अपने ढोल के एक तरफ पीटकर हाथियों को भगाता था, और छोटा भाई दही खाता था।

लगभग इसी समय, एक खंडहर गाँव में रहने वाले एक जंगली सूअर को जादुई शक्ति से युक्त एक रत्न मिला। उसने रत्न को अपने मुँह में उठाया और उसकी जादुई शक्ति से हवा में उड़ गया। दूर से उसे समुद्र के बीचोंबीच एक छोटा सा द्वीप दिखाई दिया और उसने वहीं रहने का निश्चय किया। इसलिए वह नीचे उतरा और एक आम के पेड़ के नीचे एक सुंदर स्थान चुना और वहीं अपना घर बना लिया।

एक दिन वह पेड़ के नीचे सो गया, उसके सामने ही वह रत्न पड़ा था। काशी देश का एक आदमी, जिसे उसके माता-पिता ने निकम्मा समझकर घर से निकाल दिया था, किसी तरह एक बंदरगाह पर पहुँचा, जहाँ उसने नाविकों के नौकर के रूप में काम करना शुरू कर दिया। समुद्र के बीच में जहाज टूट गया, और वह एक तख्ते पर तैरता हुआ इस द्वीप पर आ पहुँचा। फल की तलाश में भटकते हुए उसने हमारे सूअर को गहरी नींद में सोते देखा। चुपके से वह उसके पास गया, रत्न उठाया, और जादू से हवा में उड़ने लगा! वह आम के पेड़ पर उतरा और सोचने लगा, "इस रत्न के जादू ने सूअर को आकाश में उड़ने की शक्ति दी है; शायद इसीलिए वह यहाँ आया है। अच्छा! मुझे पहले उसे मारकर उसका मांस खाना चाहिए; और फिर मैं चला जाऊँगा।" तो उसने एक टहनी तोड़ी और उसे सूअर के सिर पर गिरा दिया। सूअर जाग गया, और रत्न न देखकर काँपते हुए इधर-उधर भागने लगा। पेड़ पर बैठा आदमी हँसा। सूअर ने ऊपर देखा और उसे देखकर अपना सिर पेड़ से टकराकर खुद को मार डाला।

वह आदमी नीचे आया, आग जलाई, सूअर को पकाया और भोजन किया। फिर वह आकाश में ऊपर उठा और अपनी यात्रा पर निकल पड़ा।

हिमालय पार करते समय, उसने संन्यासियों की बस्ती देखी। इसलिए वह नीचे उतरा और बड़े भाई की कुटिया में दो-तीन दिन बिताए, उनका आतिथ्य सत्कार किया और इस दौरान उसे कुल्हाड़ी के गुणों का पता चला। उसने उसे अपने लिए प्राप्त करने का निश्चय कर लिया। इसलिए उसने संन्यासी को अपने रत्न के गुण दिखाए और कुल्हाड़ी के बदले उसे देने का प्रस्ताव रखा। संन्यासी हवा में उड़ने की क्षमता (*1) पाने के लिए तरस रहा था, इसलिए उसने सौदा मान लिया। उस व्यक्ति ने कुल्हाड़ी ली और चला गया; लेकिन बहुत दूर जाने से पहले ही, उसने कुल्हाड़ी पर प्रहार किया और कहा—"कुल्हाड़ी! उस संन्यासी की खोपड़ी तोड़ दो और रत्न मेरे पास ले आओ!" कुल्हाड़ी चली, संन्यासी की खोपड़ी चीर दी और रत्न वापस ले आई।

फिर उस व्यक्ति ने कुल्हाड़ी छिपा दी और दूसरे भाई से मिलने गया। वह कुछ दिन उसके साथ रहा और जल्द ही उसे उसके ढोल की शक्ति का पता चल गया। फिर उसने पहले की तरह अपना रत्न ढोल के बदले दे दिया और पहले की तरह कुल्हाड़ी से मालिक की खोपड़ी चीर दी। इसके बाद वह तीनों संन्यासियों में सबसे छोटे के पास गया, दूध के कटोरे की शक्ति का पता लगाया, अपना रत्न उसके बदले दे दिया और पहले की तरह कुल्हाड़ी से उस व्यक्ति की खोपड़ी चीर दी। इस प्रकार अब वह रत्न, कुल्हाड़ी, ढोल और दूध के कटोरे, चारों का स्वामी बन गया।

वह ऊपर उठा और हवा में उड़ गया। बनारस के पास रुककर उसने एक पत्र लिखा और उसे दूत के द्वारा भिजवा दिया, जिसमें राजा को या तो उससे लड़ना होगा या आत्मसमर्पण करना होगा। यह संदेश मिलते ही राजा उस दुष्ट को पकड़ने के लिए तुरंत आगे बढ़ा। लेकिन उसने अपने ढोल के एक तरफ प्रहार किया और तुरंत ही चारों ओर से सेना ने उसे घेर लिया। जब उसने देखा कि राजा ने अपनी सेना तैनात कर दी है, तो उसने दूध का प्याला उलट दिया और दूध की एक बड़ी नदी बह निकली; दही की नदी में बहुत से लोग डूब गए। फिर उसने अपनी कुल्हाड़ी पर प्रहार किया। "मुझे राजा का सिर लाओ!" वह चिल्लाया; कुल्हाड़ी चली गई और वापस आकर उसके पैरों पर सिर गिरा दिया। कोई भी उसके विरुद्ध हाथ नहीं उठा सका।

इस प्रकार एक विशाल सेना से घिरे हुए, उन्होंने शहर में प्रवेश किया, और स्वयं को दधि-वाहन राजा, या दही पर सवार राजा की उपाधि से राजा के रूप में अभिषेक कराया, और धार्मिकता से शासन किया।

एक दिन राजा नदी में जाल डालकर अपना मनोरंजन कर रहे थे, तभी उन्हें कन्नामुंडा झील से बहकर आया एक ऐसा आम मिला जो देवताओं (देवदूतों) के योग्य था। जाल खींचने पर राजा को वह आम मिला। वह एक विशाल फल था, एक बर्तन जितना बड़ा, गोल और

सुनहरे रंग का। राजा ने पूछा कि यह कौन सा फल है: वनपालों ने बताया, आम। उन्होंने उसे खाया और उसकी गुठली को अपने बगीचे में लगा दिया और उसमें दूध का पानी डाल दिया।

वह वृक्ष अंकुरित हुआ और तीन वर्षों में उस पर फल लग गए। इस वृक्ष की बहुत पूजा-अर्चना की जाती थी; उस पर दूध-जल चढ़ाया जाता था; पाँच गुच्छों वाली सुगंधित मालाएँ (*2) उस पर चढ़ाई जाती थीं; पुष्पांजलिओं से उसे सजाया जाता था; एक दीपक जलता रहता था और उसमें सुगंधित तेल डाला जाता था; और उसके चारों ओर कपड़े का पर्दा लगा रहता था। फल मीठे और शुद्ध सोने के रंग के थे। राजा दधि-वाहन अन्य राजाओं को इन आमों का उपहार भेजने से पहले, उस गुठली में काँटा चुभो देते थे जहाँ से अंकुर निकलता था, इस डर से कि कहीं वे उसे रोपकर वैसा ही न उगा लें। जब वे फल खाते थे, तो वे गुठली को रोप देते थे; लेकिन वह जड़ नहीं पकड़ पाती थी। उन्होंने कारण पूछा और उन्हें पता चला कि मामला क्या था।

एक राजा ने अपने माली से पूछा कि क्या वह इस फल का स्वाद बिगाड़ सकता है और इसे पेड़ पर ही कड़वा बना सकता है। माली ने कहा, हाँ, वह ऐसा कर सकता है; इसलिए राजा ने उसे एक हजार फल दिए और उसे काम पर भेज दिया।

बनारस पहुँचते ही उस व्यक्ति ने राजा को संदेश भेजा कि एक माली आया है। राजा ने उसे अपने दरबार में आने की अनुमति दी। उस व्यक्ति के अभिवादन करने के बाद राजा ने पूछा, "तुम माली हो?" "जी महाराज," उस व्यक्ति ने कहा और अपनी प्रशंसा करने लगा। राजा ने कहा, "बहुत खूब, तुम जाओ और मेरे उद्यान के रखवाले की सहायता करो।" इसके बाद से वे दोनों राजमहल की देखभाल करने लगे।

नए माली ने मौसम से पहले ही फूल और फल उगाकर पार्क को और भी सुंदर बना दिया। इससे राजा प्रसन्न हुए और उन्होंने पुराने माली को बर्खास्त कर दिया और पार्क की पूरी ज़िम्मेदारी नए माली को सौंप दी। पार्क का ज़िम्मा लेते ही उन्होंने उत्तम आम के पेड़ के चारों ओर नीम के पेड़ और लताएँ लगा दीं। कुछ समय बाद नीम के पेड़ उग आए। ऊपर से नीचे तक, जड़ से जड़ और शाखा से शाखा, ये सभी आम के पेड़ से लिपट गए। इस प्रकार, मीठे फलों वाला यह पेड़, इस हानिकारक और खट्टे पौधे की संगति में कड़वे पत्तों वाले नीम के पेड़ की तरह कड़वा हो गया। जैसे ही माली को पता चला कि फल कड़वे हो गए हैं, वह तुरंत भाग गया।

राजा दधि-वाहन अपने बगीचे में टहलने गए और उन्होंने आम का एक टुकड़ा खाया। उनके मुंह में आम का रस नीम के रस जैसा कड़वा लगा; वे उसे निगल नहीं सके और खांसते हुए थूक दिया। उस समय बोधिसत्व उनके सांसारिक और आध्यात्मिक सलाहकार थे। राजा ने उनकी ओर मुड़कर कहा, "हे ज्ञानी, इस वृक्ष की इतनी अच्छी देखभाल की जाती है, फिर भी इसका फल कड़वा हो गया है। इसका क्या अर्थ है?" यह प्रश्न पूछते हुए उन्होंने पहला श्लोक दोहराया:

एक समय था जब आम का स्वाद मीठा होता था, उसकी सुगंध मीठी होती थी, उसका रंग सुनहरा होता था।
इस कड़वे स्वाद का कारण क्या है? क्योंकि हम इसकी देखभाल तो पुराने समय से ही करते आ रहे हैं।
बोधिसत्व ने दूसरे श्लोक में इसका कारण समझाया:-

"तना के चारों ओर शाखा से शाखा और जड़ से जड़ लिपटी हुई है,"
देखो, यह कड़वी लता चढ़ रही है; इसी ने तुम्हारे फल खराब कर दिए हैं;
और इसलिए आप देख सकते हैं कि बुरी संगति अच्छे लोगों को भी उसी राह पर चलने के लिए मजबूर कर देती है।"
यह सुनकर बोधिसत्व ने सभी नीम के वृक्षों और लताओं को उखाड़कर उनकी जड़ें निकलवा दीं; सारी हानिकारक मिट्टी हटाकर उसकी जगह मीठी मिट्टी डाल दी गई; और वृक्ष को मीठे जल, दूध-जल और सुगंधित जल से अच्छी तरह सींचा गया। तब उस सारी मिठास को सोखकर उसके फल फिर से मीठे हो गए। राजा ने अपने पूर्व माली को उद्यान का कार्यभार सौंप दिया, और अपने जीवन के अंत में वह अपने कर्मों के फल के अनुसार फल भोगने के लिए परलोक चला गया।

इस प्रवचन के समाप्त होने के बाद, गुरु ने जन्म का वर्णन किया: "उन दिनों मैं बुद्धिमान सलाहकार था।"

फुटनोट:

(1) यह बौद्धों द्वारा अत्यधिक प्रशंसित अलौकिक शक्तियों में से एक थी।

(2) गंध-पंच-अंगुलिकम का अर्थ अनिश्चित है। शायद एक माला जिसमें अंकुर या टहनियाँ हाथ की उंगलियों की तरह फैली हुई हों।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कैटुमाट-जातक**
स्रोत : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित

पिछला <<<<-----||-187-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 187
चतुमत्त-जातक

“बैठो और गाओ,” इत्यादि — यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक वृद्ध भिक्षु के बारे में सुनाई थी। बताया जाता है कि एक बार दो प्रमुख शिष्य एक साथ बैठे प्रश्नोत्तर कर रहे थे; तभी वृद्ध भिक्षु उठे और तीसरे को भी साथ ले आए। बैठते हुए उन्होंने कहा, “महोदय, मेरा भी एक प्रश्न है, जो मैं आपसे पूछना चाहता हूँ; और यदि आपको कोई कठिनाई हो, तो आप मुझसे पूछ सकते हैं।” वृद्ध भिक्षु उनसे नाराज़ हो गए; वे उठकर चले गए। भिक्षुओं का प्रवचन सुनने वाले शिष्य सभा समाप्त होने के बाद गुरु के पास आए; उन्होंने पूछा कि वे यहाँ समय से पहले क्यों आए हैं और उन्होंने उन्हें सारी घटना बताई। उन्होंने उत्तर दिया, “यह पहली बार नहीं है, भिक्षुओं, कि सारिपुत्र और मोग्गल्याण इस व्यक्ति से नाराज़ होकर बिना कुछ कहे चले गए हों; पुराने समय में भी ऐसा ही होता था।” और फिर उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व एक वृक्ष-परी बन गए और जंगल में रहने लगे। चित्तकूट पर्वत से दो युवा हंस नीचे आए और उस वृक्ष पर बैठ गए। वे भोजन की तलाश में इधर-उधर उड़ते रहे, फिर वापस वहीं लौट आए और विश्राम करने के बाद अपने पर्वतीय घर लौट गए। समय बीतने के साथ-साथ परी ने उनसे मित्रता कर ली। वे आते-जाते घनिष्ठ मित्र बन गए और विदा होने से पहले एक-दूसरे से धर्म की बातें किया करते थे।

एक दिन ऐसा हुआ कि जब पक्षी वृक्ष की चोटी पर बैठकर बोधिसत्व से बातें कर रहे थे, तभी एक सियार वृक्ष के नीचे आकर रुका और उसने युवा हंसों से निम्नलिखित श्लोक में कुछ कहा:

पेड़ पर बैठकर गाओ
   अगर आप निजी तौर पर होते तो ऐसा होता।
 जमीन पर बैठो और गाओ
   "जानवरों के अपने राजा के लिए छंद!"

घृणा से भर कर, युवा हंस पंख फैलाकर चित्तकुटा लौट गए। उनके चले जाने पर, बोधिसत्व ने सियार को समझाने के लिए दूसरी पंक्ति दोहराई:-

"फेयरविंग यहाँ फेयरविंग के लिए गाता है,"
   मीठी बातों से भगवान भी प्रभावित होते हैं;
 परिपूर्ण सौंदर्य (*1), आपको तब अवश्य
   वापस अपने बिल में जाओ!

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "उन दिनों में बूढ़ा व्यक्ति सियार था, सारिपुत्र और मोग्गल्याना दो युवा हंस थे, और मैं स्वयं वृक्ष-परी था।"

फुटनोट:

(1) शाब्दिक अर्थ 'चार बिंदुओं में सुंदर', अर्थात् 'रूप में, जन्म में, आवाज में, गुणवत्ता में' व्यंग्यात्मक रूप से।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सिहकोठुका-जातक**
स्रोत : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित

पिछला <<<<-----||-188-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 188
सिहाकोत्थुक-जातक

"शेर के पंजे और शेर के पैर," इत्यादि - यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में कोकालिका के बारे में सुनाई थी। कहते हैं कि एक दिन कई ज्ञानी भिक्षुओं को उपदेश देते हुए सुनकर कोकालिका ने स्वयं उपदेश देने की इच्छा की; बाकी की घटना पिछली कथा के समान है। इस बार भी गुरु ने यह सुनकर कहा, "कोकालिका को उसकी वाणी से ही उसकी असलियत का पता नहीं चला है; ऐसा पहले भी हो चुका है।" और उन्होंने एक कथा सुनाई।

बहुत समय पहले की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व हिमालय पर्वत में एक सिंह के रूप में विराजमान थे। उनका एक शावक था, जो एक सियार के साथ संभोग करने से पैदा हुआ था। वह शावक अपने पिता की तरह ही था - पैर की उंगलियों, पंजे, अयाल, रंग, शरीर - सब कुछ; लेकिन उसकी आवाज अपनी माँ जैसी थी।

एक दिन, बारिश के बाद, सभी शेर एक साथ उछल-कूद कर रहे थे और दहाड़ रहे थे; शावक ने सोचा कि वह भी दहाड़ना चाहेगा, और सियार की तरह चिल्लाया। यह सुनकर सभी शेर एकदम चुप हो गए! उसी शावक का एक और भाई, जो उसका सगा भाई था, ने यह आवाज़ सुनी और बोला, "पिताजी, शेर रंग और हर चीज़ में हम जैसा है, बस आवाज़ अलग है। वह कौन है?" यह सवाल पूछते हुए उसने पहली पंक्ति दोहराई:

शेर के पंजे और शेर के पैर,
शेर के पैरों पर खड़े होने के लिए;
लेकिन इस आदमी की दहाड़
यह तो शेर के बेटे जैसा नहीं लगता!

उत्तर में बोधिसत्व ने कहा, "यह तुम्हारा भाई है, सियार का बच्चा; रूप में मेरे जैसा, लेकिन आवाज में अपनी माँ जैसी।" फिर उन्होंने दूसरे बच्चे को सलाह दी—"मेरे प्यारे बेटे, जब तक तुम यहाँ रहो, अपनी ज़बान पर लगाम रखो। अगर तुमने फिर से ज़बान चलाई, तो सबको पता चल जाएगा कि तुम सियार हो।" सलाह को और अच्छे से समझाने के लिए उन्होंने दूसरा श्लोक दोहराया:-

सब देखेंगे कि तुम किस तरह के इंसान हो।
अगर आप पहले की तरह चीखते हैं;
इसलिए इसे आजमाने की कोशिश न करें, बल्कि चुप रहें:
तुम्हारी दहाड़ शेर की दहाड़ जैसी नहीं है।

इस सलाह के बाद उस प्राणी ने फिर कभी दहाड़ने की कोशिश तक नहीं की।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "उन दिनों कोकालिका सियार थी, राहुल उसका भाई शावक था, और पशुओं का राजा मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) वह देवदत्त के साथ था, दोनों विधर्मी थे।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सिहचम्मा-जातक**
***स्रोत**: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-189-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 189
सिहाचम्मा-जातक (*1)

"न शेर, न बाघ, मुझे दिखाई देता है," इत्यादि। यह कहानी, पिछली कहानी की तरह, कोकालिका के बारे में थी, जिसे गुरु ने जेतवन मठ में सुनाया था। इस बार वह मंत्रोच्चार करना चाहते थे। गुरु ने यह सुनकर निम्नलिखित कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व का जन्म एक किसान परिवार में हुआ था, और बड़े होकर उन्होंने खेती करके अपना जीवन यापन किया।

उसी समय एक व्यापारी था जो सामान ढोने के लिए गधे का इस्तेमाल करता था। वह जहाँ भी जाता, गधे से सामान उतारकर उस पर शेर की खाल डाल देता और उसे धान और जौ के खेतों में छोड़ देता। पहरेदार जब उसे देखते, तो उसे शेर समझ लेते और उसके पास जाने की हिम्मत नहीं करते।

एक दिन एक फेरीवाला एक गाँव में रुका और जब वह अपना नाश्ता बना रहा था, तो उसने शेर की खाल ओढ़े गधे को जौ के खेत में छोड़ दिया। पहरेदारों ने सोचा कि यह शेर है और पास आने की हिम्मत नहीं की, बल्कि घर भाग गए और शोर मचाया। सभी ग्रामीणों ने हथियार उठा लिए और चिल्लाते, शंख बजाते और ढोल पीटते हुए खेत की ओर दौड़े। गधा बुरी तरह डर गया और ही-ही की आवाज़ निकाली! तब बोधिसत्व ने देखा कि यह एक गधा है और उन्होंने पहली पंक्ति दोहराई:

मुझे न तो शेर दिख रहा है, न ही बाघ।
वह तो तेंदुआ भी नहीं है:
लेकिन एक गधा—वह बेचारा बूढ़ा!
उसकी पीठ पर शेर की खाल थी!

जैसे ही ग्रामीणों को पता चला कि यह केवल एक गधा था, उन्होंने उसे लाठियों से तब तक पीटा जब तक उसकी हड्डियाँ टूट नहीं गईं, और फिर शेर की खाल लेकर चले गए। जब व्यापारी आया और उसने देखा कि उसके गधे को कष्ट हुआ है, तो उसने दूसरी पंक्ति दोहराई:-

"अगर गधा समझदार होता,
हरी जौ को काफी समय तक खाया जा सकता था;
उसने शेर की खाल को अपने वेश में इस्तेमाल किया था:
लेकिन उसने जोर से आवाज निकाली और पिट गया!

ये शब्द बोलते ही गधा मर गया। व्यापारी उसे वहीं छोड़कर अपने रास्ते चला गया।

इस प्रवचन के समाप्त होने के बाद, गुरु ने जन्म का वर्णन किया: "उस समय कोकालिका गधा था, और बुद्धिमान किसान मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) शेर की खाल में गधा।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सिलानीसांस-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-190-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 190
सिलानिसम्सा-जातक

"बलिदान का फल देखो," इत्यादि - यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक विश्वासी गृहस्थ के बारे में सुनाई थी। वह एक निष्ठावान, धर्मनिष्ठ आत्मा और एक निर्वाचित शिष्य थे। एक शाम, जेतवन मठ जाते समय, वे अचिरवती नदी के किनारे पहुँचे, जब नाविक पूजा-अर्चना के लिए अपनी नाव किनारे पर खड़ी कर चुके थे; घाट पर कोई नाव दिखाई नहीं दे रही थी, और हमारे मित्र का मन बुद्ध के आनंदमय विचारों से भरा हुआ था, इसलिए वे नदी पर चलने लगे। उनके पैर पानी में नहीं डूबे। वे नदी के मध्य तक ऐसे चले जैसे सूखी भूमि पर चल रहे हों; लेकिन वहाँ उन्होंने लहरें देखीं। तब उनकी समाधि (तल्ली) भंग हो गई, और उनके पैर डूबने लगे। उन्होंने फिर से अपने शरीर को तनाव से जकड़ा, और पानी पर चलने लगे। इस प्रकार वे जेतवन मठ पहुँचे, गुरु को प्रणाम किया, और एक तरफ बैठ गए। गुरु ने उनसे प्रसन्नतापूर्वक वार्तालाप किया। "आशा है, हे मित्र," उन्होंने कहा, "रास्ते में आपके साथ कोई दुर्घटना न हुई हो।" "ओह, महाराज," उन्होंने उत्तर दिया, "रास्ते में मैं बुद्ध के चिंतन में इतना लीन था कि नदी पर पैर रख दिया; लेकिन मैं उस पर ऐसे चला जैसे वह सूखी ज़मीन हो!" "अरे, मित्र," गुरु ने कहा, "बुद्ध के गुणों को याद करके सुरक्षित रहने वाले आप अकेले नहीं हैं। पुराने समय में भी धर्मनिष्ठ गृहस्थ समुद्र में जहाज़ दुर्घटना का शिकार हुए हैं और बुद्ध के गुणों को याद करके अपनी जान बचाई है।" फिर, उस व्यक्ति के अनुरोध पर, उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब कश्यप परम बुद्ध थे, तब एक शिष्य, जिसने आध्यात्मिक मार्ग का मार्ग अपनाया था, एक धनी नाई के साथ जहाज पर सवार हुआ। नाई की पत्नी ने उसे हमारे मित्र की देखरेख में सौंपा था, ताकि वह सुख-दुख में उसकी देखभाल करे।

एक सप्ताह बाद, जहाज समुद्र के बीचोंबीच टूट गया। एक तख्ते से चिपके हुए ये दो लोग एक द्वीप पर जा गिरे। वहाँ नाई ने कुछ पक्षियों को मारकर पकाया और अपने भोजन का एक हिस्सा उस शिष्य को दिया। "नहीं, धन्यवाद," उसने कहा, "मेरा पेट भर गया है।" वह मन ही मन सोच रहा था, "इस जगह पर हमारे लिए तीन रत्नों (*1) के सिवा कोई सहारा नहीं है," और इसलिए उसने तीन रत्नों के आशीर्वाद के बारे में सोचा। जैसे-जैसे वह सोचता रहा, उसी छोटे से द्वीप में जन्मा एक सर्प-राजा ने अपना शरीर एक विशाल जहाज के रूप में बदल लिया। जहाज सात प्रकार की कीमती वस्तुओं से भरा हुआ था। समुद्र का एक देवता उसका नाविक था। तीनों मस्तूल नीलम के, लंगर सोने का, रस्सियाँ चाँदी की और तख्ते सोने के बने थे।

समुद्र-देवता जहाज पर खड़े होकर पुकार रहे थे—"भारत जाने वाले कोई यात्री हैं?" शिष्य ने कहा, "हाँ, हम वहीं जा रहे हैं।" "तो फिर, जहाज पर चढ़िए!" वह जहाज पर चढ़ गए और अपने मित्र नाई को बुलाना चाहते थे। नाविक ने कहा, "तुम आ सकते हो, लेकिन वह नहीं।" "क्यों नहीं?" दूसरे ने कहा, "वह पवित्र जीवन जीने वाला व्यक्ति नहीं है; मैंने यह जहाज तुम्हारे लिए लाया है, उसके लिए नहीं।" "बहुत खूब—जो वरदान मैंने दिए हैं, जो सद्‌गुण मैंने अपनाए हैं, जो शक्तियाँ मैंने विकसित की हैं—उन सबका फल मैं उसे देता हूँ!" नाई ने कहा, "धन्यवाद, गुरुजी!" समुद्र-देवता ने कहा, "अब, मैं तुम्हें जहाज पर ले जा सकता हूँ।" इस प्रकार उन्होंने उन दोनों को समुद्र पार पहुँचाया और बनारस की ओर नदी के विपरीत दिशा में रवाना हुए। वहाँ, अपनी शक्ति से, उन्होंने उन दोनों के लिए धन का भंडार बनाया और उनसे इस प्रकार कहा।

"बुद्धिमान और भले लोगों की संगति में रहो। यदि यह नाई इस धर्मनिष्ठ गृहस्थ की संगति में न होता, तो वह गहरे समुद्र में डूबकर मर जाता।" फिर उसने अच्छी संगति की प्रशंसा में ये छंद कहे:

"त्याग, सद्‌गुण और धर्मपरायणता का फल देखो:
एक जहाज के आकार का सर्प उस भले आदमी को समुद्र के पार ले जाता है।
"केवल अच्छे लोगों से ही मित्रता करो और अच्छी संगति रखो।"
अच्छे लोगों से दोस्ती होने के कारण, यह नाई अपने घर में सुरक्षित रह सकता था।
इस प्रकार सागर का देवता हवा में स्थिर रहा। अंत में वह सर्पराज को अपने साथ लेकर अपने निवास स्थान पर चला गया।

इस प्रवचन के समापन पर गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म का वर्णन किया। सत्यों के समापन पर उस धर्मनिष्ठ गृहस्थ ने द्वितीय मार्ग (सम्मोहन) के फल को प्राप्त किया:- "उस अवसर पर परिवर्तित गृहस्थ शिष्य ने निर्वाण प्राप्त किया; सारिपुत्र सर्प-राज थे और सागर-आत्मा मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)तीन रत्न हैं बुद्ध, धर्म मार्ग (निर्वाण की ओर ले जाने वाला मार्ग), पवित्र आदेश।

पिछला <<<<-----||-191-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 191
रूहका-जातक

"टूटी हुई धनुष की डोरी भी," इत्यादि—यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जो उनकी पूर्व पत्नी के कारण उत्पन्न प्रलोभन से संबंधित थी। इन परिस्थितियों का वर्णन इंद्रिय-जातक (*1) के आठवें खंड में किया जाएगा। तब गुरु ने अपने भिक्षु भाई से कहा, "वह स्त्री तुम्हें हानि पहुँचाती है। पुराने समय में भी उसने तुम्हें राजा और उसके पूरे दरबार के सामने लज्जित किया था और तुम्हें अपना घर छोड़ने का उचित कारण दिया था।" और उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त राजा का शासन था, तब उनकी प्रमुख रानी से बोधिसत्व का जन्म हुआ। जब वे वयस्क हुए, तो उनके पिता का देहांत हो गया; और फिर वे राजा बने और धर्मपरायणता से शासन किया।

बोधिसत्व का एक पुजारी था जिसका नाम रुहका था, और इस रुहका ने एक वृद्ध ब्राह्मण महिला से शादी की थी।

राजा ने ब्राह्मण को सभी अलंकृत वस्त्रों से सुसज्जित एक घोड़ा भेंट किया, और वह घोड़े पर सवार होकर राजा की सेवा में चल पड़ा। जब वह अपने उत्तम साज-सज्जा वाले घोड़े पर सवार होकर जा रहा था, तो इधर-उधर के लोग उसकी प्रशंसा में जोर-जोर से चिल्ला रहे थे: "देखो वह सुंदर घोड़ा!" वे चिल्लाए; "क्या ही सुंदर है!"

जब वह घर लौटा, तो वह अपने आलीशान घर में गया और अपनी पत्नी को सब कुछ बताया।

"गुडवाइफ," उसने कहा, "हमारा घोड़ा बहुत अच्छा चल रहा है! हर तरफ लोग उसकी तारीफ कर रहे हैं।"

अब उसकी पत्नी वैसी नहीं थी जैसी उसे होनी चाहिए थी, और वह छल से भरी हुई थी; इसलिए उसने उसे इस प्रकार उत्तर दिया।

"अरे पतिदेव, आप नहीं जानते कि इस घोड़े की सुंदरता किसमें निहित है। यह सब इसके सुंदर अलंकृत वस्त्रों में है। अब यदि आप स्वयं को घोड़े के समान सुंदर बनाना चाहते हैं, तो इसके अलंकृत वस्त्र पहनें और घोड़े की तरह इतराते हुए सड़क पर निकलें। आप राजा को देखेंगे, और वह आपकी प्रशंसा करेगा, और सभी लोग आपकी प्रशंसा करेंगे।"

उस मूर्ख ब्राह्मण ने सब कुछ सुना, पर वह स्त्री का इरादा नहीं समझ पाया। इसलिए उसने उसकी बात मान ली और वैसा ही किया जैसा उसने कहा था। उसे देखकर सब ज़ोर से हँस पड़े: "वाह, क्या गुरु है!" सबने कहा। और राजा ने उस पर लज्जा जताई। "हे गुरु, क्या आप ठीक हैं? क्या आप पागल हो गए हैं?" यह सुनकर ब्राह्मण को लगा कि उसने कुछ गलत किया है और उसे शर्म आ गई। वह अपनी पत्नी पर क्रोधित हुआ और जल्दी से घर लौटते हुए मन ही मन कहने लगा, "इस स्त्री ने मुझे राजा और उसकी सारी सेना के सामने शर्मिंदा कर दिया है: मैं इसे दंड दूंगा और घर से निकाल दूंगा!"

लेकिन उस धूर्त स्त्री को पता चल गया कि वह क्रोधित होकर घर लौटा है; वह उससे पहले ही निकल गई और एक तरफ के दरवाजे से महल की ओर चल पड़ी, जहाँ वह चार-पाँच दिन रही। जब राजा को इस बात का पता चला, तो उसने अपने पुजारी को बुलवाया और उससे कहा, "हे गुरु, समस्त स्त्रीयाँ दोषों से भरी होती हैं; आपको इस स्त्री को क्षमा कर देना चाहिए;" और उसे क्षमा करने के लिए प्रेरित करते हुए उसने पहला श्लोक कहा:-

"टूटी हुई धनुष की डोरी को भी ठीक किया जा सकता है और उसे पूरा बनाया जा सकता है।"
अपनी पत्नी को क्षमा कर दो, और अपने मन में इस क्रोध को मत पालो।"
यह सुनकर रुहाका ने दूसरा वाक्य कहा:-

"जबकि छाल और मजदूर भी मौजूद हैं

धनुष की डोरी नई खरीदना आसान है।
मैं एक और पत्नी का इंतजाम कर लूंगा;
मैं इससे तंग आ चुका हूँ, बस।
ऐसा कहकर उसने उसे विदा कर दिया और दूसरी ब्राह्मण स्त्री से विवाह कर लिया।

इस प्रवचन को समाप्त करने के बाद, गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के समापन पर प्रलोभित भाई (भिक्षु) प्रथम मार्ग (समाधि) के फल में स्थापित हो गया: "उस अवसर पर पूर्व पत्नी वही थी, रुहका प्रलोभित भाई थी, और मैं बनारस का राजा था।"

फुटनोट:

(1) जातक संख्या 423.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सिरी-काडकानि-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

जातक क्रमांक 192
सिरी-कलाकन्नी-जातक

"यद्यपि स्त्रियाँ सुंदर हों," इत्यादि—यह कथा महा-उम्मग्ग-जातक क्रमांक 546 में दी जाएगी।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कुल्ल-पदुम-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-193-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 193
CULLA-PADUMA-JATAKA

"मैं ही हूँ—कोई और नहीं," इत्यादि—यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक पथभ्रष्ट भिक्षु के बारे में सुनाई थी। इसके घटनाक्रम का वर्णन उम्मदंती जन्म (*1) में किया जाएगा। जब गुरु ने उस भिक्षु से पूछा कि क्या वह सचमुच पथभ्रष्ट है, तो उसने कहा कि वह है। गुरु ने कहा, "किसने तुम्हें पथभ्रष्ट किया है?" उसने उत्तर दिया कि उसने एक सुंदर वस्त्रधारी स्त्री को देखा था और वासना में बहककर वह पथभ्रष्ट हो गया था। तब गुरु ने कहा, "भाई, स्त्री जाति कृतघ्न और कपटी होती है; पुराने समय के बुद्धिमान पुरुष भी इतने मूर्ख थे कि उन्होंने अपने दाहिने घुटने का खून भी उन्हें पिलाया, जीवन भर उन्हें उपहार देते रहे, फिर भी उनका दिल नहीं जीत सके।" और उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब राजा ब्रह्मदत्त बनारस पर शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व का जन्म उनकी प्रमुख रानी के पुत्र के रूप में हुआ। उनके नामकरण के दिन, उन्हें राजकुमार पद्म, यानी कमल राजकुमार कहा गया। उनके बाद उनके छह छोटे भाई हुए। एक-एक करके ये सातों बड़े हुए, विवाह किए और राजा के साथी बनकर बस गए।

एक दिन राजा ने महल के प्रांगण में देखा, और उसे कुछ लोग अपने साथ बड़ी संख्या में अनुयायियों को लेकर उससे मिलने आते हुए दिखाई दिए। उसे संदेह हुआ कि वे उसे मारना चाहते हैं और उसका राज्य छीनना चाहते हैं। इसलिए उसने उन्हें बुलवाया और उनसे इस प्रकार बात की।

"मेरे पुत्रों, तुम इस नगर में नहीं रह सकते। इसलिए कहीं और चले जाओ, और मेरे मरने के बाद तुम लौटकर उस राज्य को ले लेना जो हमारे परिवार का है।"

उन्होंने अपने पिता की बात मान ली और रोते-बिलखते घर लौट आए। "हमें कहीं भी जाने की परवाह नहीं!" वे चिल्लाए और अपनी पत्नियों को साथ लेकर शहर छोड़कर सड़क पर चल पड़े। कुछ समय बाद वे एक जंगल में पहुँचे, जहाँ उन्हें न तो भोजन मिला और न ही पानी। भूख की पीड़ा सहन न कर पाने के कारण उन्होंने महिलाओं की जान की कीमत पर अपनी जान बचाने का निश्चय किया। उन्होंने सबसे छोटे भाई की पत्नी को पकड़ लिया और उसकी हत्या कर दी; उन्होंने उसके शरीर के तेरह टुकड़े कर दिए और उसे खा लिया। लेकिन बोधिसत्व और उनकी पत्नी ने एक हिस्सा अलग रख दिया और बाकी को आपस में बाँट लिया।

इस प्रकार उन्होंने छह दिन तक ऐसा किया और छह स्त्रियों को मारकर खा लिया; और प्रत्येक दिन बोधिसत्व ने एक भाग अलग रख दिया, जिससे उनके पास छह भाग सुरक्षित रह गए।

सातवें दिन बाकी लोग बोधिसत्व की पत्नी को मारने के लिए ले जाना चाहते थे; लेकिन इसके बजाय उन्होंने उन्हें अपने पास रखे हुए छह भाग दे दिए। उन्होंने कहा, "इन्हें खा लो; कल मैं संभाल लूंगा।" उन सभी ने मांस खाया; और जब सोने का समय आया, तो बोधिसत्व और उनकी पत्नी एक साथ चले गए।

थोड़ी दूर चलने पर स्त्री ने कहा, "पतिदेव, मैं और आगे नहीं जा सकती।" तब बोधिसत्व ने उसे अपने कंधों पर उठा लिया और सूर्योदय के समय जंगल से बाहर आ गए। सूर्य उदय होते ही उसने कहा, "पतिदेव, मुझे प्यास लगी है!"

"पानी नहीं है, प्रिय पत्नी!" उसने कहा।

लेकिन वह उससे बार-बार विनती करती रही, जब तक कि उसने अपनी तलवार से अपने दाहिने घुटने पर प्रहार नहीं किया और कहा,

"यहाँ पानी नहीं है; लेकिन तुम बैठ जाओ और मेरे घुटने से निकला खून पी लो।" और उसने वैसा ही किया।

कुछ समय बाद वे विशाल गंगा नदी के पास पहुँचे। उन्होंने पानी पिया, स्नान किया, तरह-तरह के फल खाए और एक रमणीय स्थान पर विश्राम किया। नदी के मोड़ पर उन्होंने एक कुटिया बनाई और उसमें रहने लगे।

अब हुआ यूं कि ऊपरी गंगा क्षेत्र में एक डाकू राजद्रोह का दोषी पाया गया। उसके हाथ-पैर, नाक-कान काट दिए गए और उसे एक डोंगी में लिटाकर नदी में बहने के लिए छोड़ दिया गया। दर्द से कराहते हुए वह बहता हुआ इस स्थान पर पहुंचा। बोधिसत्व ने उसकी व्यथित कराह सुनी।

"जब तक मैं जीवित हूँ," उसने कहा, "कोई भी बेचारा प्राणी मेरे लिए नहीं मरेगा!" और वह नदी किनारे गया और उस आदमी को बचा लिया। वह उसे झोपड़ी में ले आया और कसैली क्रीम और मलहम से उसके घावों की देखभाल की।

लेकिन उसकी पत्नी ने मन ही मन कहा, "देखो, यह तो गंगा से एक अच्छा आलसी साथी लेकर आया है, जिसकी देखभाल करने के लिए!" और वह उस साथी को देखकर घृणा से थूकने लगी।

जब उस आदमी के घाव भरने लगे, तो बोधिसत्व ने उसे और उसकी पत्नी को अपनी कुटिया में रहने के लिए कहा और जंगल से तरह-तरह के फल लाकर उसे और उसकी पत्नी को खिलाना शुरू किया। इस तरह साथ रहते हुए, पत्नी को उस आदमी से प्रेम हो गया और उसने पाप किया। फिर उसने बोधिसत्व को जान से मारने की इच्छा जताई और उससे कहा, "पतिदेव, जब मैं जंगल से लौटते समय आपके कंधे पर बैठी थी, तो मैंने उस पहाड़ी को देखा था और मैंने प्रतिज्ञा की थी कि यदि हम दोनों बच जाएं और हमें कोई हानि न हो, तो मैं उस पहाड़ी की पवित्र आत्मा को भेंट चढ़ाऊंगी। अब वह आत्मा मुझे सता रही है और मैं अपनी भेंट चढ़ाना चाहती हूं!"

"बहुत अच्छा," बोधिसत्व ने कहा, क्योंकि उन्हें उसकी छल का पता नहीं था। उन्होंने प्रसाद तैयार किया और प्रसाद का पात्र उसे देकर पहाड़ी की चोटी पर चढ़ गए। तब उनकी पत्नी ने उनसे कहा,

"पतिदेव, पर्वत की आत्मा नहीं, बल्कि आप मेरे सर्वोच्च देवता (देवदूत) हैं! इसलिए सबसे पहले मैं आपके सम्मान में जंगली फूल अर्पित करूंगी, और आपके दाहिनी ओर रहते हुए आदरपूर्वक आपके चारों ओर परिक्रमा कर आपको प्रणाम करूंगी; और उसके बाद मैं पर्वत की आत्मा को अपना अर्पण दूंगी।" ऐसा कहकर उसने उसे एक खाई के सामने खड़ा कर दिया और आदरपूर्वक प्रणाम करने का नाटक किया। इस प्रकार उसके पीछे आकर उसने उसकी पीठ पर प्रहार किया और उसे खाई में धकेल दिया। फिर वह खुशी से चिल्लाई, "मैंने अपने शत्रु की पीठ देख ली!" और वह पर्वत से नीचे उतरकर अपने प्रेमी के समक्ष चली गई।

अब बोधिसत्व चट्टान से नीचे लुढ़क गए; लेकिन वे अंजीर के पेड़ की चोटी पर पत्तों के एक गुच्छे में फंस गए जहाँ कांटे नहीं थे। फिर भी वे पहाड़ी से नीचे नहीं उतर सके, इसलिए वे वहीं शाखाओं के बीच बैठकर अंजीर खाने लगे। संयोग से एक विशाल इगुआना (बड़ी छिपकली) पहाड़ी की तलहटी से ऊपर चढ़ती थी और इस अंजीर के पेड़ के फल खाती थी। उस दिन उसने बोधिसत्व को देखा और भाग गई। अगले दिन, वह आई और पेड़ के एक किनारे पर कुछ फल खाए। वह बार-बार आती रही, अंततः बोधिसत्व से उसकी मित्रता हो गई।

"आप इस स्थान पर कैसे पहुंचे?" उसने पूछा; और बोधिसत्व ने उसे बताया कि कैसे।

“डरिए मत,” इगुआना (बड़ी छिपकली) ने कहा; और उसे अपनी पीठ पर लादकर पहाड़ी से नीचे उतरा और जंगल से बाहर ले आया। वहाँ उसने उसे मुख्य सड़क पर रख दिया, उसे रास्ता दिखाया और स्वयं जंगल में लौट गया।

दूसरा व्यक्ति एक गाँव में गया और वहाँ अपने पिता की मृत्यु की खबर मिलने तक रहा। इसके बाद वह बनारस के लिए रवाना हुआ। वहाँ उसने अपने खानदानी राज्य का उत्तराधिकार ग्रहण किया और राजा कमल का नाम धारण किया; उसने राजाओं के लिए निर्धारित दस नियमों का उल्लंघन नहीं किया और सत्यनिष्ठा से शासन किया। उसने छह दान-पुण्य कक्ष बनवाए, एक चारों द्वारों पर, एक नगर के मध्य में और एक महल के सामने; और प्रतिदिन वह दान में छह लाख सिक्के वितरित करता था।

उस दुष्ट पत्नी ने अपने प्रेमी को अपने कंधों पर उठाया और जंगल से बाहर आ गई; वह लोगों के बीच भीख मांगने गई और उसके लिए चावल और दलिया इकट्ठा करती थी। अगर उससे पूछा जाता कि वह आदमी उसका क्या है, तो वह जवाब देती, "उसकी माँ मेरे पिता की बहन थी, वह मेरा चचेरा भाई है; मुझे उसी ने दिया है। अगर उसे मौत की सजा भी दी जाए, तो भी मैं अपने पति को अपने कंधों पर उठा लूंगी, उसकी देखभाल करूंगी और उसके लिए भोजन की भीख मांगूंगी!"

“कितनी समर्पित पत्नी!” सभी लोग कहने लगे। और तब से वे उसे पहले से कहीं अधिक भोजन देने लगे। उनमें से कुछ ने सलाह भी दी, “इस तरह मत रहो। बनारस के स्वामी कमल राजा हैं; उन्होंने अपनी उदारता से पूरे भारत में हलचल मचा दी है। तुम्हें देखकर उन्हें बहुत प्रसन्नता होगी; वे इतने प्रसन्न होंगे कि तुम्हें बहुमूल्य उपहार देंगे। अपने पति को इस टोकरी में रखो और उनके पास जाओ।” ऐसा कहकर उन्होंने उसे मना लिया और उसे सीपियों से भरी एक टोकरी दे दी।

उस दुष्ट स्त्री ने अपने प्रेमी को टोकरी में रखा और उसे लेकर बनारस चली गई, जहाँ वह दान-पुण्य के आश्रमों से जो कुछ प्राप्त करती, उसी से अपना जीवन यापन करती थी। बोधिसत्व भव्य, अलंकृत हाथी पर सवार होकर भिक्षागृह जाया करते थे; और आठ-दस लोगों को दान देने के बाद वे अपने घर के लिए निकल पड़ते थे। तभी उस दुष्ट स्त्री ने अपने प्रेमी को टोकरी में रखा और उसे लेकर उस स्थान पर खड़ी हो गई जहाँ से राजा अक्सर गुजरते थे। राजा ने उसे देखा। उन्होंने पूछा, “यह कौन है?” उत्तर मिला, “एक समर्पित पत्नी।” उन्होंने उसे बुलवाया और पहचान लिया कि वह कौन है। उन्होंने उस व्यक्ति को टोकरी से नीचे उतारा और उससे पूछा, “यह व्यक्ति तुम्हारा क्या है?” उसने उत्तर दिया, “यह मेरे पिता की बहन का पुत्र है, मेरे परिवार ने मुझे दिया है, मेरा अपना पति है।”

"वाह, कितनी समर्पित पत्नी है!" वे सब चिल्लाए; क्योंकि वे इसके बारे में पूरी तरह से नहीं जानते थे; और उन्होंने उस दुष्ट स्त्री की प्रशंसा की।

"क्या—क्या वह बदमाश तुम्हारा चचेरा भाई है? क्या तुम्हारे परिवार ने उसे तुम्हें सौंपा है?" राजा ने पूछा; "क्या वह तुम्हारा पति है?"

उसने राजा को नहीं पहचाना; और "जी, मेरे स्वामी!" उसने बड़े ही मुखर अंदाज में कहा।

"क्या यह बनारस के राजा का पुत्र है? क्या तुम राजकुमार कमल की पत्नी नहीं हो, फलाँ राजा की पुत्री नहीं हो, तुम्हारा नाम फलाँ है? क्या तुमने मेरे घुटने का खून नहीं पिया था? क्या तुम इस दुष्ट से प्रेम नहीं कर बैठी थीं और मुझे खाई में नहीं फेंक दिया था? आह, तुमने सोचा था कि मैं मर गया हूँ, और देखो तुम्हारे माथे पर मृत्यु लिखी है—और देखो मैं जीवित हूँ!" फिर वह अपने दरबारियों की ओर मुड़ा। "क्या तुम्हें याद है मैंने तुम्हें क्या बताया था, जब तुमने मुझसे सवाल किए थे? मेरे छह छोटे भाइयों ने अपनी छह पत्नियों को मार डाला और उन्हें खा लिया; लेकिन मैंने अपनी पत्नी को सुरक्षित रखा और उसे गंगा के किनारे ले आया, जहाँ मैं एक साधु की कुटिया में रहता था: मैंने एक दोषी अपराधी को नदी से बाहर निकाला और उसकी देखभाल की; इस स्त्री को उससे प्रेम हो गया और उसने मुझे खाई में फेंक दिया, लेकिन मैंने दया दिखाकर अपनी जान बचाई। यह वही दुष्ट स्त्री है जिसने मुझे खाई में फेंका था: यही है, और कोई नहीं, वह दोषी!" फिर उन्होंने निम्नलिखित छंद कहे:

"यह मैं ही हूँ—कोई और नहीं, और यह रानी वही है।"
हाथविहीन बेईमान, और कोई नहीं, बस यही है जो आपको दिख रहा है;

उसने कहा—'यह मेरे यौवन का पति है।'
महिलाओं को मरना ही चाहिए; उनमें कोई सच्चाई नहीं होती।
"एक बड़े डंडे से उस बदमाश की जान ले लो।"
जो अपने पड़ोसी की पत्नी को चुराने के लिए घात लगाकर बैठा है।
फिर वेश्या को पकड़ो,
और मरने से पहले उसकी नाक और कान काट दो।"

लेकिन यद्यपि बोधिसत्व अपना क्रोध नहीं रोक सके और उन्होंने उनके लिए यह दंड निर्धारित किया, फिर भी उन्होंने उस पर अमल नहीं किया; बल्कि उन्होंने अपने क्रोध को दबाकर टोकरी को उसके सिर पर इतनी मजबूती से रख दिया कि वह उसे उतार न सके; उन्होंने उस दुष्ट को भी उसी टोकरी में डाल दिया और उन्हें अपने राज्य से निकाल दिया।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के समापन पर पथभ्रष्ट भाई (भिक्षु) ने प्रथम मार्ग के फल (समाधि) में प्रवेश किया: "उन दिनों कुछ बुजुर्ग छह भाई थे, युवती चिंचा पत्नी थी, देवदत्त अपराधी था, आनंद इगुआना था, और राजा कमल मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)सं. 527.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **मणिकोरा-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-194-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 194
मणिकोरा-जातक

“देवदूत यहाँ हैं,” इत्यादि — यह कहानी गुरु ने वेलुवन में अपने प्रवास के दौरान सुनाई थी, जिसमें उन्होंने बताया था कि देवदत्त ने उन्हें मारने का प्रयास किया था। देवदत्त द्वारा उन्हें जान से मारने की बात सुनकर उन्होंने कहा, “भाइयों, यह पहली बार नहीं है जब देवदत्त ने मुझे मारने का प्रयास किया है; उसने पहले भी ऐसा करने की कोशिश की थी, लेकिन असफल रहा।” फिर उन्होंने उन्हें यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तभी बोधिसत्व ने शहर से कुछ ही दूरी पर स्थित एक गांव में रहने वाले एक गृहस्थ के पुत्र के रूप में जन्म लिया।

जब वे वयस्क हुए, तो उनके परिवार ने बनारस से एक युवती को उनके विवाह के लिए बुलाया। वह एक सुंदर और आकर्षक कन्या थी, अप्सरा के समान सुंदर, कोमल लता के समान नाजुक और परी के समान मोहक। उसका नाम सुजाता था; वह निष्ठावान, गुणी और कर्तव्यनिष्ठ थी। वह हमेशा अपने स्वामी और उनके माता-पिता के प्रति अपने कर्तव्य का पूर्ण निर्वाह करती थी। यह कन्या बोधिसत्व को अत्यंत प्रिय और अनमोल थी। इस प्रकार वे दोनों आनंद, एकता और एकरूपता के साथ जीवन व्यतीत करते रहे।

एक दिन सुजाता ने अपने पति से कहा, "मेरी इच्छा है कि मैं अपने माता-पिता को देखूं।"

“बहुत अच्छा, मेरी पत्नी,” उन्होंने उत्तर दिया; “यात्रा के लिए पर्याप्त भोजन तैयार करो।” उन्होंने हर तरह का भोजन पकवाया और उसे एक गाड़ी में रख दिया; क्योंकि वे गाड़ी चला रहे थे, इसलिए वे आगे बैठे और उनकी पत्नी पीछे। वे बनारस के लिए रवाना हुए; वहाँ उन्होंने गाड़ी खोली, स्नान किया और भोजन किया। फिर बोधिसत्व ने बैलों को फिर से जोता और आगे बैठ गए; और सुजाता, जिन्होंने अपने वस्त्र बदल लिए थे और खुद को सजाया था, पीछे बैठ गईं।

जैसे ही रथ शहर में दाखिल हुआ, बनारस का राजा एक भव्य हाथी पर सवार होकर शहर का चक्कर लगा रहा था; और वह उस जगह से गुज़रा। सुजाता रथ से उतरकर पैदल पीछे-पीछे चल रही थी। राजा ने उसे देखा: उसकी सुंदरता ने राजा का ध्यान इतना आकर्षित किया कि वह उस पर मोहित हो गया। उसने अपने एक साथी को बुलाया। "जाओ, पता लगाओ कि उस स्त्री का पति है या नहीं।" उस व्यक्ति ने वैसा ही किया जैसा उसे कहा गया था और राजा को बताने के लिए वापस आया। "मुझे बताया गया है कि उसका पति है," राजा ने कहा; "क्या आप उस रथ में बैठे उस आदमी को देख रहे हैं? वही उसका पति है।"

राजा अपनी वासना को दबा नहीं सका और उसके मन में पाप का विचार आया। उसने सोचा, "मैं किसी तरह इस आदमी से छुटकारा पाऊंगा और फिर मैं खुद उसकी पत्नी बन जाऊंगा।" उसने एक आदमी को बुलाया और कहा, "लो, मेरे भले आदमी, यह रत्नजड़ित मुकुट ले लो और ऐसे दिखावा करो जैसे तुम गली से जा रहे हो। जाते समय इसे उस आदमी की गाड़ी में डाल देना।" इतना कहकर उसने उसे रत्नजड़ित मुकुट दिया और उसे जाने दिया। उस आदमी ने मुकुट लिया और चला गया; गाड़ी के पास से गुजरते ही उसने मुकुट उसमें डाल दिया; फिर वह लौटा और राजा को बताया कि काम हो गया है।

"मेरा रत्नजड़ित मुकुट खो गया है!" राजा चिल्लाया: पूरा स्थान कोलाहल से भर गया।

“सभी द्वार बंद करो!” राजा ने आदेश दिया; “सभी रास्ते बंद करो! चोर को पकड़ो!” राजा के अनुयायियों ने आज्ञा का पालन किया। शहर में अफरा-तफरी मच गई! दूसरा व्यक्ति, कुछ अन्य लोगों को साथ लेकर, बोधिसत्व के पास गया और चिल्लाया—“नमस्कार! अपनी गाड़ी रोको! राजा का रत्नजड़ित मुकुट खो गया है; हमें आपकी गाड़ी की तलाशी लेनी होगी!” और उसने तलाशी ली, जब तक कि उसे वह रत्न नहीं मिल गया जिसे उसने स्वयं वहाँ रखा था। “चोर!” चिल्लाते हुए उसने बोधिसत्व को पकड़ लिया; उन्होंने उसे पीटा और लात मारी; फिर उसके हाथ पीछे बाँधकर उसे राजा के सामने घसीटते हुए चिल्लाए—“देखो, वह चोर जिसने तुम्हारा रत्न चुराया!” “उसका सिर काट दो!” राजा का आदेश था। उन्होंने उसे कोड़ों से पीटा, हर गली के कोने पर उसे तड़पाया और दक्षिणी द्वार से शहर से बाहर फेंक दिया।

सुजाता गाड़ी से उतरी और बाहें फैलाकर विलाप करते हुए उसके पीछे दौड़ी—"हे मेरे पति, मैंने ही तुम्हें इस दयनीय स्थिति में पहुँचाया है!" राजा के सेवकों ने बोधिसत्व को पीठ पर लादकर उसका सिर काटने का इरादा किया। यह देखकर सुजाता ने अपने सद्‌गुणों और अच्छाई पर विचार किया और मन ही मन सोचा, "मुझे लगता है कि यहाँ कोई ऐसी आत्मा नहीं है जो क्रूर और दुष्ट पुरुषों के हाथों को रोक सके, जो सद्‌गुणी लोगों को हानि पहुँचाते हैं"; और रोते-बिलखते उसने पहली पंक्ति दोहराई:-

"यहाँ कोई देवता (देवदूत) नहीं हैं: वे बहुत दूर होंगे;--"
कोई देवता (देवदूत) नहीं, जो समस्त संसार पर अपना प्रभुत्व रखते हों:
अब उग्र और हिंसक लोग अपनी इच्छा के अनुसार कार्य कर सकते हैं।
क्योंकि यहां कोई ऐसा नहीं है जो उन्हें मना कर सके।

जब यह पुण्यी स्त्री इस प्रकार शोक मना रही थी, तब देवताओं के राजा (इंद्र) सक्का (इंद्र) का सिंहासन, जिस पर वे बैठे थे, गर्म हो गया। सक्का (इंद्र) ने सोचा, "कौन है जो मुझे मेरे देवत्व से गिराना चाहता है?" फिर उन्हें कुछ समझ में आया। उन्होंने सोचा, "बनारस का राजा बहुत क्रूर काम कर रहा है। वह पुण्यी सुजाता को दुखी कर रहा है; अब मुझे वहाँ जाना ही होगा!" अतः देवलोक से उतरकर, उन्होंने अपनी शक्ति से दुष्ट राजा को उस हाथी से नीचे उतारा जिस पर वह सवार था, और उसे मृत्युदंड स्थल पर अपनी पीठ पर लिटा दिया। लेकिन बोधिसत्व को उन्होंने उठा लिया, उसे सभी प्रकार के आभूषणों से सजाया, राजा के वस्त्र पहनाए, और उसे राजा के हाथी की पीठ पर बिठा दिया। सेवकों ने कुल्हाड़ी उठाई और एक सिर काट दिया - लेकिन वह राजा का ही सिर था; और जब वह अलग हुआ, तो वे जान गए कि वह राजा का ही सिर था।

सक्का (इंद्र) ने प्रत्यक्ष रूप धारण किया और बोधिसत्व के सामने आकर उन्हें राजा नियुक्त किया; और सुजाता को प्रधान रानी का पद दिया। जब दरबारी, ब्राह्मण, गृहस्थ और अन्य सभी ने देवताओं के राजा सक्का (इंद्र) को देखा, तो वे प्रसन्न हुए और कहने लगे, “अधर्मी राजा मारा गया! अब हमें सक्का (इंद्र) के हाथों से एक धर्मी राजा प्राप्त हुआ है!” सक्का (इंद्र) वायु में स्थिर खड़े होकर बोले, “तुम्हारा यह धर्मी राजा अब से धर्म के मार्ग पर चलेगा। यदि राजा अधर्मी हो, तो ईश्वर असमय वर्षा भेजता है और समय पर वर्षा नहीं भेजता; और उसके कारण मनुष्यों पर अकाल, महामारी और तलवार का भय आ पड़ता है।” इस प्रकार उन्होंने उन्हें उपदेश दिया और यह दूसरा श्लोक कहा:-

"उसके लिए बारिश के समय बारिश नहीं होती।"
लेकिन ऑफ-सीजन में बहुत अधिक बारिश होती है।
एक राजा स्वर्ग से पृथ्वी पर अवतरित होता है।
देखिए इस आदमी की हत्या का कारण क्या था।

इस प्रकार इंद्र ने जनसमूह को संबोधित किया और फिर सीधे अपने दिव्य निवास स्थान पर चले गए। बोधिसत्व ने धार्मिकता का मार्ग अपनाया और फिर स्वर्ग चले गए।

इस प्रवचन को समाप्त करते हुए गुरु ने जन्म का वर्णन इस प्रकार किया:- "उस समय देवदत्त दुष्ट राजा थे; अनुरुद्ध सक्का (इंद्र) थे; सुजाता राहुल की माता (बुद्ध की पत्नी) थीं; परन्तु सक्का (इंद्र) के वरदान से राजा मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **पब्बतुपत्थर-जातक**
***स्रोत** : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-195-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 195
पब्बतुपत्थारा-जातक

"एक खुशहाल झील," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए कोसल के राजा के बारे में सुनाई थी।

हमें बताया जाता है कि एक दरबारी ने राजमहल में षड्यंत्र रचा। राजा ने इस मामले की छानबीन की और जब उन्हें सारी सच्चाई पता चली तो उन्होंने गुरु को बताने का निश्चय किया। इसलिए वे जेतवन मठ आए और गुरु को प्रणाम किया; उन्हें बताया कि कैसे एक दरबारी ने षड्यंत्र रचा था और पूछा कि उन्हें क्या करना चाहिए। गुरु ने उनसे पूछा कि क्या उन्हें वह दरबारी उपयोगी लगता है और क्या वे अपनी पत्नी से प्रेम करते हैं। उत्तर था, "हाँ, वह व्यक्ति बहुत उपयोगी है; वह मेरे दरबार का आधार है; और मैं अपनी पत्नी से प्रेम करता हूँ।" गुरु ने उत्तर दिया, "महाराज, जब सेवक उपयोगी हों और स्त्रियाँ प्रिय हों, तो उनमें कोई हानि नहीं है। पुराने समय में भी राजा बुद्धिमानों की बातें सुनते थे और ऐसी बातों से उदासीन रहते थे।" और उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व का जन्म एक दरबारी परिवार में हुआ था। जब वे वयस्क हुए, तो वे राजा के सांसारिक और आध्यात्मिक मामलों के सलाहकार बन गए।

अब राजा के दरबार के एक सेवक ने हरम में साजिश रची और राजा को इसकी भनक लग गई। उसने सोचा, "वह तो बहुत ही उपयोगी सेवक है, और वह स्त्री मुझे प्रिय है। मैं इन दोनों को नष्ट नहीं कर सकता। मैं अपने दरबार के किसी बुद्धिमान व्यक्ति से इस बारे में पूछूंगा; और यदि आवश्यक हुआ तो सहन कर लूंगा; यदि नहीं, तो नहीं।"

उन्होंने बोधिसत्व को बुलवाया और उन्हें बैठने के लिए कहा। उन्होंने कहा, "हे ज्ञानी महोदय, मुझे आपसे एक प्रश्न पूछना है।"

"हे महाराज, पूछिए! मैं उत्तर दूंगा," दूसरे ने उत्तर दिया। तब राजा ने प्रथम दोहे के शब्दों में अपना प्रश्न पूछा:-

एक सुंदर पहाड़ी की तलहटी में एक रमणीय झील स्थित थी।
लेकिन एक सियार ने इसका इस्तेमाल किया, यह जानते हुए कि एक शेर अभी भी उसे देख रहा है।
बोधिसत्व ने सोचा, "निश्चित रूप से उसके दरबारियों में से किसी ने हरम में षड्यंत्र रचा होगा"; और उन्होंने दूसरा दोहा पढ़ा:-

"विशाल नदी से सभी प्राणी इच्छानुसार जल पीते हैं।"
अगर वह आपको प्रिय है, तो धैर्य रखें—नदी तो नदी ही है।
इस प्रकार उस महान सत्ता ने राजा को सलाह दी।

राजा ने उनकी सलाह मानकर उन्हें क्षमा कर दिया और उनसे कहा कि वे फिर कभी पाप न करें। और तब से उन्होंने पाप करना छोड़ दिया। राजा ने दान दिया और भलाई के कार्य किए, और अपने जीवन के अंत में स्वर्ग सिधार गए।

और कोसल के राजा ने भी यह प्रवचन सुनकर इन दोनों लोगों को क्षमा कर दिया और उदासीन बना रहा।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उस समय आनंद राजा थे, और मैं स्वयं बुद्धिमान सलाहकार था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **वलाहसा-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-196-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 196
वलहस्सा-जातक

"जो लोग उपेक्षा करेंगे," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक भिक्षु के बारे में सुनाई थी, जो पथभ्रष्ट हो गया था।

जब गुरु ने उससे पूछा कि क्या सचमुच वह पथभ्रष्ट हो गया है, तो भाई ने कहा कि हाँ, यह सच है। कारण पूछे जाने पर उसने कहा कि एक सुंदर वस्त्रधारी स्त्री को देखकर उसकी वासना जागृत हो गई थी। तब गुरु ने उससे इस प्रकार कहा:

"भाई (भिक्षु), ये स्त्रियाँ अपने रूप, आवाज़, सुगंध, इत्र, स्पर्श और चालबाज़ी से पुरुषों को लुभाती हैं; इस प्रकार वे पुरुषों को अपने वश में कर लेती हैं; और जैसे ही उन्हें पता चलता है कि ऐसा हो गया है, वे अपने बुरे तरीकों से उनका चरित्र, धन-दौलत सब कुछ बर्बाद कर देती हैं। इसी कारण इन्हें स्त्री-स्त्री कहा जाता है। पुराने समय में भी स्त्री-स्त्रियों के एक समूह ने व्यापारियों के एक कारवां को लुभाया और उन पर अपना अधिकार जमा लिया; और बाद में, जब उन्होंने दूसरे पुरुषों को देखा, तो उन्होंने पहले वाले सभी को मार डाला और फिर उन्हें अपने दाँतों में चबाते हुए खा गईं, जबकि खून उनके दोनों गालों पर बह रहा था।" और फिर उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, श्रीलंका द्वीप में सिरिसावत्थु नाम का एक जिन्न नगर था, जिसमें मादा जिन्न रहती थीं। जब कोई जहाज़ डूब जाता था, तो ये जिन्नें खुद को सजाती-संवारती थीं और चावल-दलिया लेकर, दासों के काफिले और अपने बच्चों को गोद में लिए व्यापारियों के पास आती थीं। उन्हें यह भ्रम दिलाने के लिए कि उनका नगर मनुष्यों का नगर है, वे उन्हें जगह-जगह हल चलाते और गायों, मवेशियों, कुत्तों आदि की देखभाल करते हुए पुरुषों को दिखाती थीं। फिर व्यापारियों के पास जाकर वे उन्हें अपने द्वारा लाया गया दलिया, चावल और अन्य भोजन खाने के लिए आमंत्रित करती थीं। व्यापारी, बिना जाने-समझे, जो कुछ भी परोसा जाता था, खा लेते थे। जब वे खा-पी कर आराम कर रहे होते थे, तब ये जिन्नें उनसे पूछती थीं: "आप कहाँ रहते हैं? आप कहाँ से आए हैं? आप कहाँ जा रहे हैं, और आपको यहाँ क्या काम आया है?" वे उत्तर देते थे, "हम जहाज़ डूबने के कारण यहाँ आ गए हैं।" "बहुत अच्छा, महोदय," अन्य जिन्नें उत्तर देती थीं; "हमारे पतियों को जहाज पर गए तीन साल हो गए हैं; वे अवश्य ही मर गए होंगे। आप भी व्यापारी हैं; हम आपकी पत्नियाँ बनेंगी।" इस प्रकार वे स्त्रियों के प्रलोभन, छल और इश्कबाज़ी से उन्हें बहकाते हुए पिशाचों के शहर में ले जाते हैं; फिर, यदि उनके पास पहले से ही कोई और पकड़ा हुआ हो, तो वे उन्हें जादुई जंजीरों से बांधकर यातनागृह में फेंक देते हैं। और यदि उन्हें अपने निवास स्थान पर कोई जहाज़ दुर्घटना में बचा हुआ व्यक्ति नहीं मिलता, तो वे एक ओर कल्याणी नदी और दूसरी ओर नागदीपा द्वीप तक तट की छानबीन करते हैं। यही उनका तरीका है।

एक बार ऐसा हुआ कि जहाज़ टूटने से बचे पाँच सौ व्यापारी उन जिन्नों के शहर के पास किनारे पर आ गिरे। जिन्नें उनके पास आईं और उन्हें बहला-फुसलाकर अपने शहर ले गईं; जिन्हें उन्होंने पहले पकड़ा था, उन्हें उन्होंने जादुई जंजीरों से बांधकर यातनागृह में डाल दिया। फिर मुख्य जिन्न ने मुख्य व्यापारी को पकड़ा, और बाकी को बाकी के, इस तरह पाँच सौ व्यापारी हो गए; और उन्होंने उन पुरुषों को अपना पति बना लिया। फिर रात के समय, जब उसका साथी सो रहा था, मुख्य जिन्न उठी और मृत्युगृह की ओर चल पड़ी, कुछ पुरुषों को मारकर खा गई। बाकी ने भी ऐसा ही किया। जब सबसे बड़ी जिन्न पुरुषों का मांस खाकर लौटी, तो उसका शरीर ठंडा था। सबसे बड़े व्यापारी ने उसे गले लगाया और पहचान लिया कि वह एक जिन्न है। "ये सभी पाँच सौ जिन्न जरूर जिन्न हैं!" उसने मन ही मन सोचा: "हमें यहाँ से भागना होगा!"

तो सुबह-सुबह जब वह चेहरा धोने गया, तो उसने दूसरे व्यापारियों से इन शब्दों में कहा, “ये तो जिन्न हैं, इंसान नहीं! जैसे ही जहाज़ टूटने से बचे हुए दूसरे लोग मिलेंगे, वे उन्हें अपना पति बना लेंगे और हमें खा जाएंगे; चलो—हम भाग निकलें!”

उनमें से ढाई सौ लोगों ने जवाब दिया, "हम उन्हें नहीं छोड़ सकते: आप जा सकते हैं, लेकिन हम भागेंगे नहीं।"

फिर मुख्य व्यापारी अपने ढाई सौ साथियों के साथ, जो उसकी बात मानने को तैयार थे, भूतों के डर से भाग गया।

उस समय बोधिसत्व एक उड़ते हुए घोड़े के रूप में संसार में प्रकट हुए, जो पूर्णतः श्वेत थे, कौवे जैसी चोंच वाले थे, और उनके बाल मुंजा घास (*1) के समान थे। वे अलौकिक शक्ति से परिपूर्ण थे और वायु में उड़ने में सक्षम थे। वे हिमालय से वायु में उड़ते हुए श्रीलंका पहुँचे। वहाँ उन्होंने श्रीलंका के तालाबों और पोखरों को पार किया और वहाँ उगने वाले जंगली धान को खाया। इस प्रकार आगे बढ़ते हुए उन्होंने तीन बार करुणा से भरे मानवीय शब्दों में कहा—"कौन घर जाना चाहता है? कौन घर जाना चाहता है?" व्यापारियों ने उनकी यह बात सुनी और चिल्लाए—"हम घर जा रहे हैं, गुरुजी!" उन्होंने अपने हाथ जोड़कर आदरपूर्वक अपने माथे तक उठाए। बोधिसत्व ने कहा, "तो मेरी पीठ पर चढ़ जाओ।" यह सुनकर उनमें से कुछ चढ़ गए, कुछ ने उनकी पूंछ पकड़ ली और कुछ आदरपूर्वक प्रणाम करते हुए खड़े रहे। फिर बोधिसत्व ने उन लोगों को भी उठा लिया जो उन्हें प्रणाम करते हुए स्थिर खड़े थे, और उन सभी को, यानी ढाई सौ लोगों को, उनके अपने देश ले गए, और प्रत्येक को उसके अपने स्थान पर बिठा दिया; फिर वे अपने निवास स्थान पर लौट गए।

और जब दूसरे पुरुष उस स्थान पर आए, तो उन मादा जिन्नों ने बचे हुए ढाई सौ लोगों को मार डाला और उन्हें खा गईं।

गुरु ने अब भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा, “हे भिक्षुओं, जिस प्रकार ये व्यापारी राक्षसी स्त्रियों के हाथों मारे गए, परन्तु अन्य सभी उस अद्‌भुत घोड़े की आज्ञा मानकर सुरक्षित अपने घर लौट आए; उसी प्रकार, जो बुद्धों की सलाह की अवहेलना करते हैं, चाहे भिक्षु हों या भिक्षुणियाँ, गृहस्थ भिक्षु हों या भिक्षुणियाँ, वे चारों नरकों में घोर कष्ट भोगते हैं, जहाँ उन्हें पाँच कोड़ों से बांधकर दंडित किया जाता है, इत्यादि। परन्तु जो इस सलाह का पालन करते हैं, वे तीन प्रकार के सौभाग्यशाली जन्म, छह इंद्रिय लोकों, बीस ब्रह्म लोकों में प्रवेश करते हैं और अविनाशी निर्वाण की अवस्था प्राप्त करके परम आनंद प्राप्त करते हैं।” फिर पूर्णतः प्रबुद्ध होकर उन्होंने निम्नलिखित श्लोक पढ़े:

"जो लोग बुद्ध द्वारा बताए गए निर्देशों की अवहेलना करेंगे,"
  जिस प्रकार पिशाचों ने व्यापारियों को खाया, उसी प्रकार वे भी नष्ट हो जाएंगे।
जो लोग बुद्ध की बात सुनते हैं जब वे उन्हें करने के लिए निर्देश देते हैं,
  जिस प्रकार पक्षी-घोड़े ने व्यापारियों को बचाया, उसी प्रकार उन्हें भी मोक्ष (निर्वाण) प्राप्त होगा।
जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के समापन पर पथभ्रष्ट भाई (भिक्षु) ने प्रथम मार्ग (समाधि) का फल प्राप्त किया, और कई अन्य लोगों ने प्रथम, द्वितीय, तृतीय या चतुर्थ मार्ग का फल प्राप्त किया: "बुद्ध के अनुयायी वे ढाई सौ लोग थे जिन्होंने घोड़े की सलाह का पालन किया, और मैं स्वयं घोड़ा था।"

फुटनोट:

(1)सैकरम मुंजा

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **मित्तमित्त-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-197-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 197
मित्तमित्त-जातक

"वह मुस्कुराता नहीं है," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने श्रावस्ती शहर में रहते हुए एक भिक्षु (भाई) के बारे में सुनाई थी।

उस भाई ने अपने गुरु द्वारा रखा हुआ एक कपड़ा उठा लिया, उसे पूरा भरोसा था कि अगर वह उसे ले लेगा तो गुरु क्रोधित नहीं होंगे। फिर उसने उस कपड़े को जूतों के थैले में भरकर रख दिया और विदा लेने चला गया। जब गुरु ने उससे पूछा कि उसने कपड़ा क्यों लिया, तो उसने उत्तर दिया कि उसे पूरा भरोसा था कि अगर वह ले लेगा तो गुरु क्रोधित नहीं होंगे। गुरु क्रोधित हो उठे, उठे और उसे एक घूंसा मारा। उन्होंने पूछा, "तुम्हारे और मेरे बीच क्या विश्वास है?"

यह बात भिक्षुओं के बीच फैल गई। एक दिन सभी भिक्षु सत्य के हॉल में इकट्ठा होकर इस विषय पर चर्चा कर रहे थे। "मित्र, फलां भिक्षु को अपने गुरु की मित्रता पर इतना भरोसा था कि उसने कपड़े का एक टुकड़ा लेकर उसे जूतों की थैली बना लिया। तब गुरु ने उससे पूछा कि उनके बीच किस बात का भरोसा है, तो गुरु क्रोधित हो गए, उछल पड़े और उन्हें एक घूंसा मार दिया।" गुरुजी अंदर आए और जब वे सब वहाँ बैठे थे, तो उन्होंने उनसे पूछा कि वे किस बारे में बात कर रहे हैं। उन्होंने उन्हें सब कुछ बताया। तब गुरुजी ने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि इस व्यक्ति ने अपने साथी के भरोसे को तोड़ा है। उसने पहले भी ऐसा ही किया है।" और फिर उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व काशी राज्य में एक ब्राह्मण के पुत्र के रूप में जन्मे। जब वे वयस्क हुए, तो उन्होंने संसार त्याग दिया; उन्होंने अपने भीतर अलौकिक शक्तियों और उपलब्धियों को विकसित किया और अपने शिष्यों के साथ हिमालय क्षेत्र में निवास करने लगे। इस तपस्वी समूह में से एक ने बोधिसत्व की बात नहीं मानी और एक ऐसे हाथी के बच्चे को अपने पास रख लिया जिसकी माँ मर चुकी थी। समय बीतने पर वह हाथी बड़ा हो गया, फिर उसने अपने स्वामी को मार डाला और जंगल में भाग गया। तपस्वियों ने उसका अंतिम संस्कार किया; और फिर बोधिसत्व से मिलकर उन्होंने उनसे यह प्रश्न पूछा।

"महोदय, हम कैसे जान सकते हैं कि कोई मित्र है या शत्रु?"

बोधिसत्व ने उन्हें निम्नलिखित श्लोकों में इसका स्पष्टीकरण दिया:-

"वह उसे देखकर मुस्कुराता भी नहीं, न ही उसका स्वागत करता है।"
  वह उस तरफ अपनी नज़रें नहीं घुमाएगा और उसे 'नहीं' में जवाब देगा।
"ये वे चिह्न और संकेत हैं जिनसे तुम अपने शत्रु को पहचानोगे:
  एक बुद्धिमान व्यक्ति इन्हें देखकर और सुनकर अपने शत्रु को पहचान लेता है।
इन शब्दों में बोधिसत्व ने मित्र और शत्रु के लक्षण बताए। इसके बाद उन्होंने श्रेष्ठ गुणों का अभ्यास किया और ब्रह्मा के स्वर्ग में प्रवेश किया।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "जिस भाई (भिक्षु) की बात हो रही है, वह वही था जिसने पालतू हाथी रखा था, उसका गुरु हाथी था, बुद्ध के अनुयायी संन्यासियों का समूह थे, और मैं स्वयं उनका मुखिया था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **अनाम-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-198-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 198

"मैं आता हूँ, मेरे पुत्र," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक ऐसे भिक्षु के बारे में सुनाई थी जो पथभ्रष्ट हो गया था।

हमने सुना है कि गुरु ने उससे पूछा कि क्या वह सचमुच पथभ्रष्ट है; और उसने उत्तर दिया, हाँ, वह है। कारण पूछे जाने पर उसने कहा, "क्योंकि एक स्त्री को उसके सुंदर वस्त्रों में देखकर मेरी वासना जागृत हो गई।" तब गुरु ने कहा, "भाई, स्त्रियों पर नज़र रखना व्यर्थ है। पुराने समय में द्वारों की रक्षा के लिए पहरेदार रखे जाते थे, फिर भी वे उन्हें सुरक्षित नहीं रख पाते थे; यहाँ तक कि जब तुम उन्हें पा भी लो, तो भी तुम उन्हें अपने पास नहीं रख सकते।" और उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व एक नन्हे तोते के रूप में संसार में आए। उनका नाम राधा था और उनके सबसे छोटे भाई का नाम पोत्थपाद था। जब वे बहुत छोटे थे, तभी एक शिकारी ने उन्हें पकड़ लिया और बनारस के एक ब्राह्मण को सौंप दिया। ब्राह्मण ने उनकी देखभाल अपने बच्चों की तरह की। लेकिन ब्राह्मण की पत्नी दुष्ट थी; उस पर नज़र रखना संभव नहीं था।

पति को व्यापारिक यात्रा पर जाना पड़ा और उसने अपने नन्हे तोतों से कहा, "मेरे प्यारे बच्चों, मैं व्यापारिक यात्रा पर जा रहा हूँ। मौसम हो या न हो, अपनी माँ का ध्यान रखना; देखना कि कोई पुरुष उससे मिलने तो नहीं आता।" इस प्रकार वह अपनी पत्नी को नन्हे तोतों की देखभाल का जिम्मा सौंपकर चला गया।

उसके जाते ही वह स्त्री कुकर्म करने लगी; दिन-रात आगंतुकों का तांता लगा रहा। यह देखकर पोत्थपाद ने राधा से कहा, "हमारे स्वामी ने इस स्त्री को हमारे हवाले किया था, और यह कुकर्म कर रही है। मैं इससे बात करूंगा।"

"नहीं," राधा ने कहा। लेकिन दूसरा नहीं माना। "माँ," उसने कहा, "आप पाप क्यों करती हैं?"

वह उसे जान से मार डालने के लिए कितनी तरसी जा रही थी! लेकिन उसे प्यार से सहलाने का नाटक करते हुए उसने उसे अपने पास बुलाया।

"मेरे प्यारे बेटे, तुम मेरे बेटे हो! मैं ऐसा दोबारा कभी नहीं करूंगी! लो, मेरे प्यारे!" तो वह बाहर आया; फिर उसने रोते हुए उसे पकड़ लिया।

"क्या! तुम मुझे उपदेश दे रहे हो! तुम्हें अपनी हद का पता नहीं है!" और उसने उसका गला दबा दिया और उसे भट्टी में फेंक दिया।

ब्राह्मण लौट आया। विश्राम करने के बाद उसने बोधिसत्व से पूछा:

"अच्छा, मेरी प्यारी, तुम्हारी माँ के बारे में क्या? क्या वह कुछ गलत करती है या नहीं?" और जैसे ही उसने यह प्रश्न पूछा, उसने पहली पंक्ति दोहराई:-

"मैं आ गया हूँ, मेरे बेटे, यात्रा पूरी हो गई है, और अब मैं फिर से घर आ गया हूँ:
मुझे बताओ; क्या तुम्हारी माँ सच्ची है? क्या वह दूसरे पुरुषों के साथ प्रेम संबंध बनाती है?
राधा ने उत्तर दिया, "प्रिय पिता, बुद्धिमान लोग उन चीजों के बारे में बात नहीं करते जो आशीर्वाद की ओर नहीं ले जातीं, चाहे वे घटित हुई हों या नहीं"; और उन्होंने दूसरे दोहे को दोहराकर इसे समझाया:

"उसने जो कहा, उसी के कारण अब वह राख के नीचे दबकर मर चुका है।"
सच बताना ठीक नहीं है, वरना पोत्थापाड़ा का ही हश्र मेरा भी हो जाएगा।
इस प्रकार बोधिसत्व ने ब्राह्मण को पकड़ लिया और आगे कहा—"यह जगह भी मेरे रहने लायक नहीं है"; फिर ब्राह्मण को विदाई देकर वह जंगल की ओर उड़ गया।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की और जन्म का वर्णन किया: सत्यों के समापन पर पथभ्रष्ट भाई (भिक्षु) प्रथम मार्ग के फल (सम्मोहन) तक पहुँचे: "आनंद पोत्थपाद थे, और मैं स्वयं राधा थी।"

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **गहपति-जातक**
***स्रोत** : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-199-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 199
गहापति-जातक

"मुझे यह पसंद नहीं है," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में प्रवास के दौरान एक पथभ्रष्ट भिक्षु के बारे में सुनाई थी। अपने संबोधन में उन्होंने कहा, "स्त्रियों को कभी भी सही राह पर नहीं रखा जा सकता; वे किसी न किसी तरह पाप करेंगी और अपने पतियों को धोखा देंगी।" और फिर उन्होंने निम्नलिखित कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, बनारस के राजा ब्रह्मदत्त के शासनकाल में, बोधिसत्व का जन्म काशी राज्य में एक गृहस्थ के पुत्र के रूप में हुआ। बड़े होकर उन्होंने विवाह किया और घर बसा लिया। उनकी पत्नी दुष्ट थी और वह ग्राम प्रधान के साथ षड्यंत्र रचती थी। बोधिसत्व को इसकी भनक लग गई और उन्होंने सोचा कि कैसे उसकी परीक्षा ली जाए।

उस समय बरसात के मौसम में सारा अनाज बह गया था और अकाल पड़ा हुआ था। लेकिन यह वह समय था जब अनाज अंकुरित ही हुआ था; और सभी ग्रामीण एक साथ आए और अपने मुखिया से मदद की गुहार लगाते हुए कहा, "दो महीने बाद, जब हम अनाज की कटाई कर लेंगे, तो हम आपको बदले में कुछ देंगे"; इसलिए उन्होंने उससे एक बूढ़ा बैल लिया और उसे खा लिया।

एक दिन मुखिया ने मौके का फायदा उठाया और जब बोधिसत्व बाहर गए हुए थे, तब वह उनके घर गया। जब दोनों साथ में खुश थे, तभी बोधिसत्व गांव के द्वार से अंदर आए और घर की ओर मुड़ गए। महिला भी द्वार की ओर देख रही थी और उसने उन्हें देख लिया। "अरे, ये कौन है?" उसने हैरानी से उन्हें दहलीज पर खड़े देखा। "ये वही हैं!" वह उन्हें पहचानती थी और उसने मुखिया को बताया। मुखिया डर से कांप उठा।

“डरो मत,” महिला ने कहा, “मेरे पास एक योजना है। तुम जानते हो कि हमने तुमसे मांस लिया है: ऐसा दिखावा करो जैसे तुम मांस की कीमत मांग रहे हो; मैं अनाज भंडार में चढ़ जाऊंगी; और उसके दरवाजे पर खड़ी होकर चिल्लाऊंगी, 'यहाँ चावल नहीं है!' जबकि तुम कमरे के बीच में खड़े होकर बार-बार विनती करते हुए कहो, 'मेरे घर पर बच्चे हैं; मुझे मांस की कीमत दो!'”

इतना कहकर वह अनाज भंडार पर चढ़ गई और उसके दरवाजे पर बैठ गई। दूसरी महिला घर के बीच में खड़ी होकर चिल्लाई, "मुझे मांस का दाम दो" जबकि वह अनाज भंडार के दरवाजे पर बैठी ही बोली, "अनाज भंडार में चावल नहीं है; फसल तैयार होने पर मैं दूंगी: अभी मुझे अकेला छोड़ दो!"

वह सज्जन घर में दाखिल हुए और उन्होंने देखा कि वे क्या कर रहे थे।

"यह उस दुष्ट स्त्री की योजना अवश्य होगी," उसने सोचा, और उसने मुखिया को बुलाया।

"मुखिया महोदय, जब हमें आपके पुराने बैल का मांस खाने को मिला, तो हमने आपसे वादा किया था कि दो महीने बाद हम आपको उसके बदले चावल देंगे। आधा महीना भी नहीं बीता है; तो अब आप हमसे पैसे क्यों मांग रहे हैं? आप यहाँ इस कारण से नहीं आए हैं: आप किसी और काम से आए होंगे। मुझे आपका व्यवहार पसंद नहीं है। वह दुष्ट और पापी स्त्री जानती है कि भंडार में चावल नहीं है, फिर भी वह ऊपर चढ़ गई है और वहाँ बैठकर चिल्ला रही है, 'यहाँ चावल नहीं है!' और आप चिल्ला रहे हैं, 'दे दो!' मुझे आप दोनों का व्यवहार पसंद नहीं है!" और अपनी बात स्पष्ट करने के लिए उन्होंने ये पंक्तियाँ कहीं:-

"मुझे यह पसंद नहीं, मुझे वह पसंद नहीं; मुझे वह पसंद नहीं, मैं कहता हूँ।"
  कौन अनाज भंडार के पास खड़ा होकर चिल्लाता है, 'मैं भुगतान नहीं कर सकता!'
"न आप, न आप, महोदय! अब सुनिए:- मेरे पास साधन और भंडार सीमित हैं;
  आपने मुझे एक बार एक दुबली-पतली गाय दी थी, और साथ ही दो महीने की मोहलत भी दी थी;
  अब, तय दिन से पहले ही आप मुझसे भुगतान करने को कह रहे हैं! मुझे यह बिल्कुल पसंद नहीं है।"
ऐसा कहते हुए उसने मुखिया के सिर के बालों की लट पकड़ ली, उसे आंगन में घसीटकर ले गया, नीचे पटक दिया और जब मुखिया चिल्लाया, "मैं मुखिया हूँ!" तो उसका मज़ाक उड़ाते हुए बोला—"दूसरे की देखरेख में रखी संपत्ति को हुए नुकसान के लिए हर्जाना दीजिए!" और उसे तब तक पीटता रहा जब तक वह बेहोश नहीं हो गया। फिर उसने उसकी गर्दन पकड़कर उसे घर से बाहर फेंक दिया। उस दुष्ट स्त्री के बाल पकड़कर उसने उसे भंडारगृह से दूर खींचा, उसे नीचे गिरा दिया और धमकी दी—"अगर तुमने दोबारा कभी ऐसा किया, तो मैं तुम्हें सबक सिखाऊँगा!"

उस दिन के बाद से मुखिया उस घर की ओर देखने की भी हिम्मत नहीं करता था, और वह महिला तो विचार में भी उस घर में जाने की हिम्मत नहीं करती थी।

जब यह प्रवचन समाप्त हुआ, तो गुरु ने सत्यों की व्याख्या की, जिसके समापन पर पथभ्रष्ट भिक्षु (भिक्षु) प्रथम मार्ग के फल (सम्मोहन) तक पहुँच गया: "उस मुखिया को दंडित करने वाला भले आदमी मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **साधुशिला-जातक**
***स्रोत** : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-200-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 200
साधुशील जातक

"एक अच्छा है," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक ब्राह्मण के बारे में सुनाई थी।

हमें बताया जाता है कि इस व्यक्ति की चार बेटियाँ थीं। चार दूल्हों ने उनसे प्रेम किया; एक सुंदर और आकर्षक था, एक वृद्ध और उम्रदराज था, तीसरा परिवार वाला था और चौथा गुणी था। उसने मन ही मन सोचा, "जब कोई व्यक्ति अपनी बेटियों का विवाह तय करता है, तो उसे किसे देना चाहिए? सुंदर पुरुष को या वृद्ध पुरुष को, या अन्य दो में से किसी एक को, उच्च कुल वाले को या गुणी पुरुष को?" वह चाहे जितना भी सोचे, निर्णय नहीं कर सका। इसलिए उसने सोचा कि वह यह बात परम बुद्ध को बताएगा, जिन्हें इसका उत्तर अवश्य पता होगा; और फिर वह अपनी बेटियों को सबसे उपयुक्त दूल्हे को देगा। इसलिए उसने बहुत सारे इत्र और मालाएँ तैयार करवाईं और मठ गया। गुरु को प्रणाम करके वह एक तरफ बैठ गया और उन्हें सब कुछ शुरू से अंत तक बताया; फिर उसने पूछा, "इन चारों में से किसे अपनी बेटियाँ दूँ?" इस पर गुरु ने उत्तर दिया, "पुराने समय में, आज की तरह, बुद्धिमान लोग यह प्रश्न पूछते थे; लेकिन अब पुनर्जन्म ने तुम्हारी स्मृति को भ्रमित कर दिया है, इसलिए तुम्हें यह मामला याद नहीं है।" और फिर उनके अनुरोध पर गुरु ने एक प्राचीन कथा सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व का जन्म एक ब्राह्मण के पुत्र के रूप में हुआ। वे वयस्क हुए और तक्षशिला में शिक्षा प्राप्त की; फिर लौटकर वे एक प्रसिद्ध शिक्षक बन गए।

एक ब्राह्मण की चार पुत्रियाँ थीं। जैसा कि ऊपर बताया गया है, इन चारों पुत्रियों को चार पुरुष शादी का प्रस्ताव दे रहे थे। ब्राह्मण यह तय नहीं कर पा रहा था कि उन्हें किसे सौंपे। उसने सोचा, "मैं गुरु से पूछूंगा, और फिर उन्हें पता चल जाएगा कि उन्हें किसे सौंपना चाहिए।" इसलिए वह गुरु के पास गया और पहला दोहा दोहराया:

एक अच्छा है, और एक महान है; एक सुंदर है, एक अनुभवी है।
हे ब्राह्मण, इस प्रश्न का उत्तर दो; इन चारों में से कौन सा सबसे अच्छा प्रतीत होता है?
यह सुनकर शिक्षक ने उत्तर दिया, "सौंदर्य और ऐसे ही अन्य गुण होने पर भी, यदि कोई व्यक्ति सद्गुणों में विलीन हो जाता है, तो वह तिरस्कृत ही होता है। अतः सौंदर्य किसी व्यक्ति का मापदंड नहीं है; मुझे तो सद्गुणी लोग ही पसंद हैं।" और इस बात को स्पष्ट करते हुए उन्होंने दूसरा दोहा दोहराया:

"अच्छाई सुंदरता है: वृद्धों का सम्मान करो, क्योंकि यही उचित है।"
उच्च कुल में जन्म लेना अच्छा है; लेकिन सद्गुण—सद्गुण ही तो मेरा आनंद है।"
जब ब्राह्मण ने यह सुना, तो उसने अपनी सभी पुत्रियों को उस गुणी प्रेमी को दे दिया।

जब यह प्रवचन समाप्त हुआ, तो गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के समापन पर ब्राह्मण ने प्रथम मार्ग का फल (सम्मोहन) प्राप्त किया: "यह ब्राह्मण तब ब्राह्मण था, और प्रसिद्ध शिक्षक मैं स्वयं था।"

पिछला <<<<-----II-201-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 201
बंधनागर जातक

"लोहे की जंजीरें नहीं," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए, कारागार के बारे में सुनाई थी।

इस कथा के समय, हमें पता चलता है कि चोरों, लुटेरों और हत्यारों के एक गिरोह को पकड़ा गया और कोसल के राजा के सामने लाया गया। राजा ने उन्हें जंजीरों, रस्सियों और जंजीरों से जकड़ने का आदेश दिया। तीस भिक्षु (साधु), गुरु के दर्शन की इच्छा से, उनसे मिलने आए और उन्हें प्रणाम किया। अगले दिन, भिक्षा मांगते समय, वे कारागार के पास से गुजरे और उन्होंने इन बदमाशों को देखा। शाम को, दिनभर के भ्रमण से लौटने के बाद, वे बुद्ध के पास पहुँचे और बोले, “हे प्रभु, आज, भिक्षा मांगते समय, हमने कारागार में कई अपराधियों को जंजीरों और बेड़ियों में जकड़ा हुआ, अत्यंत दयनीय स्थिति में देखा। वे इन बेड़ियों को तोड़कर भाग नहीं सकते थे। क्या इन जंजीरों से भी अधिक मजबूत कोई जंजीर है?”

गुरु ने उत्तर दिया, "भाइयों (भिक्षुओं), ये जंजीरें तो सच हैं; लेकिन धन, अनाज, पुत्र, पत्नियाँ और संतान की लालसा से बनी जंजीरें इनसे सौ गुना, बल्कि हज़ार गुना अधिक मजबूत होती हैं। फिर भी, ये जंजीरें, जो तोड़ना कितना भी कठिन क्यों न हो, प्राचीन काल के उन बुद्धिमान पुरुषों ने तोड़ दी थीं, जो हिमालय गए और संन्यासी बन गए।" फिर उन्होंने उन्हें एक प्राचीन कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस पर शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व का जन्म एक गरीब परिवार में हुआ। जब वे बड़े हुए, तो उनके पिता का देहांत हो गया। वे मजदूरी करके अपनी माता का भरण-पोषण करते थे। उनकी माता ने उनकी इच्छा के विरुद्ध उनके लिए एक पत्नी को घर लाया और कुछ समय बाद ही उनका भी देहांत हो गया। अब उनकी पत्नी गर्भवती हो गईं। उन्हें अपनी गर्भावस्था का पता नहीं था, इसलिए उन्होंने उनसे कहा, "पत्नी, तुम्हें अपनी जीविका कमानी होगी; मैं संसार त्याग दूंगा।" तब उन्होंने कहा, "नहीं, क्योंकि मैं गर्भवती हूं। आप मेरे बच्चे को देखिए और फिर संन्यासी बन जाइए।" वे इस बात पर सहमत हो गए। जब उनकी पत्नी का प्रसव हुआ, तो उन्होंने कहा, "अब पत्नी, तुम्हारा प्रसव सुरक्षित हो गया है, और मुझे संन्यासी बनना चाहिए।" उन्होंने कहा, "बच्चे के दूध छुड़ाने तक प्रतीक्षा कीजिए।" और उसके बाद वे फिर से गर्भवती हो गईं।

बोधिसत्व ने सोचा, "अगर मैं उसकी विनती मान लेता हूँ, तो मैं कभी बच नहीं पाऊँगा। मैं उससे एक शब्द भी कहे बिना भाग जाऊँगा और संन्यासी बन जाऊँगा।" इसलिए उन्होंने उससे कुछ नहीं कहा, बल्कि रात में उठे और भाग गए।

शहर के पहरेदारों ने उसे पकड़ लिया। उसने कहा, "मुझे अपनी माँ का पालन-पोषण करना है, मुझे जाने दो!" इस प्रकार उसने उन्हें मुक्त कर दिया, और कुछ समय रहने के बाद, वह मुख्य द्वार से निकलकर हिमालय की ओर चल पड़ा, जहाँ वह एक संन्यासी के रूप में रहने लगा; और ध्यान की अवस्था में रहते हुए उसने अपने भीतर अलौकिक शक्तियों और उपलब्धियों को उत्पन्न किया। वहाँ रहते हुए वह प्रसन्न हुआ और बोला, "पत्नी और बच्चे का बंधन, वासना का बंधन, जिसे तोड़ना इतना कठिन था, टूट गया!" और उसने ये पंक्तियाँ कहीं:-

"लोहे की जंजीरें नहीं—जैसा कि बुद्धिमानों ने बताया है—"
रस्सियाँ या लकड़ी के डंडे इतनी तेज़ी से पकड़ नहीं सकते।
जैसे जुनून, और बच्चे या पत्नी के प्रति प्रेम,
बहुमूल्य रत्नों और उत्तम सोने की बालियों से युक्त।
"ये भारी जंजीरें—वहाँ कौन है जो इन्हें ढूंढ सकता है"
इनसे मुक्ति?--ये वे बंधन हैं जो हमें बांधते हैं:
यदि बुद्धिमान लोग इन्हें भेद सकें, तो वे मुक्त हो जाते हैं।
सभी प्रेम और सभी इच्छाओं को पीछे छोड़ते हुए!

और बोधिसत्व ने इस आकांक्षा को व्यक्त करने के बाद, अपनी समाधि (तल्ली) के आकर्षण को भंग किए बिना, ब्रह्मा के लोक को प्राप्त किया।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की: सत्यों के समापन पर, कुछ ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) में प्रवेश किया, कुछ ने द्वितीय (सम्मोहन) में, कुछ ने तृतीय (सम्मोहन) में और कुछ ने चतुर्थ (सम्मोहन) में:- "कहानी में, महामाया (बुद्ध की दिवंगत जन्म माता) माता थीं, राजा शुद्धोदन (बुद्ध के पिता और कपिलवस्तु के राजा) पिता थे, राहुल की माता (बुद्ध की पत्नी) पत्नी थीं, राहुल (बुद्ध के पुत्र) स्वयं पुत्र थे, और मैं वह व्यक्ति था जिसने अपने परिवार को छोड़कर संन्यासी बन गया।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **केशि-शील-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-202-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 202
केली-शिला-जातक

"हंस, बगुले, हाथी," आदि--यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए, आदरणीय और अच्छे लकुंतक के बारे में सुनाई थी।

अब हमें पता चलता है कि यह आदरणीय लकुंतका बुद्ध के अनुयायियों में सुप्रसिद्ध थे, एक प्रसिद्ध व्यक्ति थे, मधुर वाणी बोलने वाले, एक तीक्ष्ण उपदेशक, तीक्ष्ण विवेक वाले, अपनी भावनाओं पर पूर्णतः नियंत्रण रखने वाले, लेकिन कद में अस्सी वरिष्ठों में सबसे छोटे, एक नौसिखिए से भी छोटे, मानो मनोरंजन के लिए रखे गए बौने हों।

एक दिन, वे जेतवन मठ के द्वार पर बुद्ध को प्रणाम करने गए थे, तभी देश से तीस भिक्षु भी उन्हें प्रणाम करने के लिए द्वार पर आ पहुँचे। जब उन्होंने उस वरिष्ठ भिक्षु को देखा, तो उन्हें लगा कि वे कोई नौसिखिया हैं; उन्होंने उनके वस्त्र का कोना खींचा, उनके हाथ पकड़े, उनका सिर थामा, उनकी नाक मरोड़ी, उनके कान पकड़कर उन्हें हिलाया और उनके साथ बहुत अभद्र व्यवहार किया; फिर अपना भिक्षापात्र और वस्त्र एक तरफ रखकर वे गुरु के पास गए और उन्हें प्रणाम किया। इसके बाद उन्होंने उनसे पूछा, "महोदय, हमें पता चला है कि आपके यहाँ लकुंतका नामक एक वरिष्ठ भिक्षु हैं, जो मधुर उपदेशक हैं। वे कहाँ हैं?" "क्या आप उनसे मिलना चाहते हैं?" गुरु ने पूछा। "जी हाँ।" "वही व्यक्ति हैं जिन्हें आपने द्वार पर देखा था और यहाँ आने से पहले उनके वस्त्र को खींचकर उनके साथ बहुत अभद्र व्यवहार किया था।" "महोदय," उन्होंने पूछा, "प्रार्थना में लीन, उच्च आकांक्षाओं से परिपूर्ण, एक सच्चे शिष्य—वे इतने महत्वहीन कैसे हो सकते हैं?" "उसके अपने पापों के कारण," गुरु ने उत्तर दिया; और उनके अनुरोध पर उन्होंने उन्हें एक प्राचीन कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त राजा थे, तब बोधिसत्व इंद्र कहलाए, जो देवताओं (देवदूतों) के राजा थे। ब्रह्मदत्त को कोई भी पुरानी या जर्जर चीज देखना पसंद नहीं था, चाहे वह हाथी हो, घोड़ा हो, बैल हो या कुछ और। वे शरारतों से भरे हुए थे और जब भी उन्हें ऐसी कोई चीज दिखती, वे उसे भगा देते; पुरानी गाड़ियों को वे तोड़ देते; किसी भी बूढ़ी औरत को वे बुलाकर उसके पेट पर मारते, फिर उसे खड़ा करके डराते; वे बूढ़े पुरुषों को जमीन पर लोट-पोट कर कलाबाजों की तरह खिलाते थे। अगर उन्हें कोई बूढ़ा आदमी नहीं दिखता, बल्कि सिर्फ इतना पता चलता कि फलां कस्बे में कोई बूढ़ा आदमी है, तो वे उसे वहीं से बुलाकर उसके साथ मस्ती करते थे।

इस पर लोगों ने शर्म के मारे अपने माता-पिता को राज्य की सीमाओं से बाहर भेज दिया। अब पुरुष अपने माता-पिता की देखभाल या सेवा नहीं करते थे। राजा के मित्र भी उसके जैसे ही बुरे थे। जैसे-जैसे लोग मरते गए, वे चारों (*1) दुख के लोकों (नरक) को भरते गए; देवताओं (देवदूतों) का लोक धीरे-धीरे कम होता गया।

सक्का (इंद्र) ने देखा कि देवताओं (देवदूतों) में कोई नया सदस्य नहीं है; और वह सोचने लगा कि क्या किया जाए। अंत में उसे एक योजना सूझी। "मैं उसे नीचा दिखाऊंगा!" सक्का (इंद्र) ने सोचा; और उसने एक बूढ़े व्यक्ति का रूप धारण कर लिया, और एक पुरानी खस्ताहाल गाड़ी में छाछ के दो घड़े रखकर, उसमें दो पुराने बैल जोते, और एक उत्सव के दिन निकल पड़ा। ब्रह्मदत्त, एक सजे-धजे हाथी पर सवार होकर, शहर में जुलूस निकाल रहा था, जो पूरी तरह से सजा हुआ था; और सक्का (इंद्र), फटे-पुराने वस्त्र पहने हुए, उस गाड़ी

को चलाते हुए, राजा से मिलने आया। जब राजा ने पुरानी गाड़ी देखी, तो वह चिल्लाया, "इस गाड़ी को हटाओ!" लेकिन उसके लोगों ने उत्तर दिया, "यह कहाँ है, महाराज? हमें कोई गाड़ी दिखाई नहीं दे रही है!" (क्योंकि सक्का (इंद्र) ने अपनी शक्ति से इसे राजा के अलावा किसी को भी दिखाई नहीं देने दिया था)। बार-बार राजा के पास आकर, अंत में सक्का (इंद्र), जो अभी भी अपनी गाड़ी चला रहा था, ने एक घड़ा राजा के सिर पर तोड़ दिया, जिससे वह घूम गया; फिर उसने दूसरा घड़ा भी उसी तरह तोड़ दिया। और छाछ उसके सिर के दोनों ओर बहने लगी। इस प्रकार राजा सक्का (इंद्र) के कृत्यों से पीड़ित, दुखी और व्यथित हो गया।

जब इंद्र ने उसकी पीड़ा देखी, तो उन्होंने रथ को गायब कर दिया और अपना वास्तविक रूप फिर से धारण कर लिया। वायु में स्थिर होकर, हाथ में वज्र लिए, उन्होंने उसे फटकारा—"हे दुष्ट और अधर्मी राजा! क्या तुम स्वयं कभी बूढ़े नहीं होगे? क्या बुढ़ापा तुम्हें नहीं सताएगा? फिर भी तुम क्रीड़ा करते हो, उपहास करते हो और बूढ़ों का अपमान करते हो! तुम्हारे और तुम्हारे इन कर्मों के कारण ही मनुष्य हर ओर मर रहे हैं, चारों लोक दुख से भरे हुए हैं, और मनुष्य अपने माता-पिता के कल्याण की परवाह नहीं कर सकते! यदि तुम यह सब नहीं छोड़ोगे, तो मैं तुम्हारा सिर अपने वज्र से चीर दूंगा। जाओ, और ऐसा फिर कभी मत करना।"

इस फटकार के साथ, उन्होंने माता-पिता के महत्व को समझाया और वृद्धावस्था का आदर करने के लाभ को बताया; इस प्रवचन के बाद वे अपने स्थान पर चले गए। उस समय से राजा ने कभी भी पहले जैसा कुछ करने के बारे में सोचा तक नहीं।

यह कहानी यहीं समाप्त हुई, और पूर्णतः प्रबुद्ध गुरु ने ये दो दोहे सुनाए:-

हंस, बगुले, हाथी और चित्तीदार हिरण
  हालांकि सभी एक दूसरे से भिन्न हैं, शेर एक समान रूप से भयभीत होता है।
फिर भी, यदि बच्चा होशियार हो तो वह महान होता है;
  मूर्ख भले ही बड़े हों, लेकिन वे कभी महान नहीं हो सकते।

जब यह प्रवचन समाप्त हुआ, तो गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म का वर्णन किया: सत्यों के समापन पर, कुछ भिक्षुओं ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) में प्रवेश किया, कुछ ने द्वितीय में और कुछ ने चतुर्थ में: "कहानी में उत्कृष्ट लकुंतक राजा थे, जिन्होंने लोगों को अपने उपहास का पात्र बनाया और फिर स्वयं उपहास का पात्र बन गए, जबकि मैं स्वयं सक्का (इंद्र) था।"

फुटनोट:

(1)चार अपाये = नरक (दंड के लिए), पशु के रूप में जन्म, पेटा (भूखे प्रेत, लालसा रखने वालों के लिए) के रूप में जन्म, असुरों (हिंसा और रक्तपात की लालसा रखने वालों के लिए टाइटन्स) के बीच जन्म।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **खंड-वत्त-जातक**
***स्रोत** : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-203-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 203
खंड-वट्टा-जातक

"मुझे विरुपाक्खा नाग बहुत प्रिय हैं," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक भिक्षु के बारे में सुनाई थी।

हमें बताया जाता है कि जब वह अपने बैठक कक्ष के दरवाजे पर बैठकर लकड़ियाँ काट रहे थे, तभी एक सड़े हुए लट्ठे से एक साँप निकला और उनके पैर के अंगूठे पर काट लिया; उनकी मौके पर ही मृत्यु हो गई। मठ के सभी लोगों को उनकी अचानक मृत्यु के बारे में पता चल गया। सत्य के हॉल में सब लोग इस बारे में बातें करने लगे; कहने लगे कि फलाँ भाई अपने दरवाजे पर बैठकर लकड़ी काट रहे थे, तभी एक साँप ने उन्हें काट लिया और उनकी तुरंत मृत्यु हो गई।

गुरुजी अंदर आए और जानना चाहते थे कि वे सब वहाँ बैठकर क्या चर्चा कर रहे हैं। उन्होंने उन्हें बताया। गुरुजी ने कहा, "भाइयों, यदि हमारे भाई ने चारों वंशों के सर्पों के प्रति दयालुता का अभ्यास किया होता, तो वह सर्प उन्हें न काटता: बुद्ध के जन्म से पहले, बीते समय

में बुद्धिमान संन्यासियों ने इन चारों वंशों के प्रति दयालुता का अभ्यास करके इन सर्पों से उत्पन्न भय से मुक्ति पाई थी।" फिर उन्होंने उन्हें एक प्राचीन कथा सुनाई।

बहुत समय पहले, बनारस के राजा ब्रह्मदत्त के शासनकाल में, बोधिसत्व काशी के एक युवा ब्राह्मण के रूप में इस संसार में आए। जब वे वयस्क हुए, तो उन्होंने अपनी वासनाओं को वश में किया और एक तपस्वी का जीवन व्यतीत किया; उन्होंने अलौकिक शक्तियों और उपलब्धियों को विकसित किया; उन्होंने हिमालय की तलहटी के निकट गंगा के मोड़ पर एक आश्रम बनाया और वहाँ वे तपस्वियों के एक समूह से घिरे हुए, ध्यान की अवस्था में लीन रहते थे।

उस समय गंगा तट पर अनेक प्रकार के सर्प पाए जाते थे, जो तपस्वियों को कष्ट पहुँचाते थे और उनमें से अनेक सर्पों के काटने से मर जाते थे। तपस्वियों ने यह बात बोधिसत्व को बताई। उन्होंने सभी तपस्वियों को अपने पास बुलाया और उनसे कहा, "यदि तुम सर्पों की चारों वंशों के प्रति सद्भावना रखोगे, तो कोई सर्प तुम्हें नहीं काटेगा। इसलिए अब से तुम चारों वंशों के प्रति सद्भावना रखो।" फिर उन्होंने यह श्लोक जोड़ा:-

मुझे विरुपाक्खा सांप बहुत पसंद हैं।
मुझे एरापाथा सांप बहुत पसंद हैं।
मुझे चब्बीपुट्टा सांप बहुत पसंद हैं।
मुझे कन्हागोटामास बहुत पसंद हैं।
इस प्रकार नागों के चार राजपरिवारों का नाम लेने के बाद उन्होंने आगे कहा: "यदि तुम इनके प्रति सद्भावना रखोगे, तो कोई भी नाग तुम्हें काटेगा नहीं या हानि नहीं पहुँचाएगा।" फिर उन्होंने दूसरा श्लोक दोहराया:-

सूर्य के नीचे रहने वाले सभी जीव,
दो फीट, चार फीट, इससे अधिक, या बिल्कुल नहीं--
मैं आप सभी से कितना प्यार करता हूँ!
अपने भीतर के प्रेम के स्वरूप को व्यक्त करने के बाद, उन्होंने प्रार्थना के रूप में एक और श्लोक कहा:

सभी प्राणी, चाहे दो पैर के हों या चार पैर के,
तुम्हारे पास कुछ नहीं है, और तुम्हारे पास बहुत कुछ है।
कृपया मुझे चोट न पहुँचाएँ, मैं आपसे विनती करता हूँ!
फिर, सामान्य शब्दों में, उन्होंने एक श्लोक और दोहराया:-

"हे सभी प्राणियों, जो जन्म लेते हैं,
सांस लो और धरती पर चलो-फिरो।
आप सभी को ढेर सारी खुशियाँ मिलें।
कभी भी शरारत में मत पड़ो।
इस प्रकार उन्होंने बताया कि सभी प्राणियों के प्रति बिना किसी भेदभाव के प्रेम और सद्भावना कैसे दिखानी चाहिए; उन्होंने अपने श्रोताओं को तीन रत्नों के गुणों की याद दिलाते हुए कहा—"बुद्ध अनंत हैं, धर्ममार्ग अनंत है, और व्यवस्था अनंत है।" उन्होंने कहा, "तीन रत्नों के गुणों को याद रखो;" और इस प्रकार उन्हें तीन रत्नों की अनंतता दिखाकर, और यह दर्शाते हुए कि सभी प्राणी सीमित हैं, उन्होंने आगे कहा, "रेंगने वाले जीव, सांप, बिच्छू, कनखजूरे, मकड़ी, छिपकली, चूहे सीमित और मापनीय हैं।" फिर उन्होंने कहा, "चूंकि इन जीवों में वासना और कामवासनाएं ही वे गुण हैं जो उन्हें सीमित और परिमित बनाते हैं, इसलिए हमें अनंत तीन रत्नों की शक्ति से इन सीमित चीजों से दिन-रात सुरक्षित रहना चाहिए: इसीलिए तीन रत्नों के महत्व को याद रखो।" फिर उन्होंने यह श्लोक सुनाया:-

अब मैं सुरक्षित हूं और मेरे चारों ओर बाड़ लगी हुई है;
अब सभी प्राणी मुझे मेरी जमीन पर अकेला छोड़ दें।
मैं भगवान बुद्ध को सभी प्रकार का सम्मान अर्पित करता हूँ।
और वे सात बुद्ध जो इस दुनिया से चले गए हैं।"
और उनसे यह भी अनुरोध करते हुए कि वे सम्मान करते समय सात बुद्धों को भी याद रखें, बोधिसत्व ने इस सुरक्षा मंत्र की रचना की और इसे अपने ऋषियों के समूह को सौंप दिया। तब से ऋषियों ने बोधिसत्व की सलाह को मन में रखा, प्रेम और सद्भावना का भाव

रखा और बुद्ध के गुणों को याद किया। ऐसा करने पर सभी सर्प उनसे दूर चले गए। और बोधिसत्व ने श्रेष्ठता का अभ्यास किया और ब्रह्मा के उच्चतर स्वर्ग (प्रधान देवदूतों के स्वर्ग) को प्राप्त किया।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "बुद्ध के अनुयायी उस ऋषि के अनुयायी थे; और उनके गुरु मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> विरक - **जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-204-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 204
विराका-जातक

"ओह, क्या तुमने देखा है," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए बुद्ध का अनुकरण करने के बारे में सुनाई थी।

जब वरिष्ठ भिक्षु अपने अनुयायियों के साथ देवदत्त (*1) से मिलने गए, तो गुरु ने सारिपुत्र से पूछा कि देवदत्त ने उन्हें देखकर क्या किया। सारिपुत्र ने उत्तर दिया कि उसने बुद्ध का अनुकरण किया था। गुरु ने कहा, "देवदत्त ने न केवल अब मेरा अनुकरण करके अपना विनाश किया है, बल्कि उसने पहले भी ठीक ऐसा ही किया था।" फिर, वरिष्ठ भिक्षु के अनुरोध पर, उन्होंने एक प्राचीन कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब एक बोधिसत्व दलदली कौवे के रूप में एक तालाब के किनारे रहने लगे। उनका नाम वीरक था, जिसका अर्थ है बलवान।

काशी में अकाल पड़ गया। लोग कौवों के लिए भोजन नहीं बचा पा रहे थे, न ही भूतों और साँपों को भेंट चढ़ा पा रहे थे। एक-एक करके कौवे अकालग्रस्त भूमि को छोड़कर जंगलों की ओर चले गए।

बनारस में रहने वाला सवित्थिका नामक एक कौआ अपनी मादा कौए को साथ लेकर उस स्थान पर गया जहाँ वीरका रहता था और उसी तालाब के किनारे अपना निवास स्थान बनाया।

एक दिन, यह कौआ तालाब के आसपास भोजन की तलाश कर रहा था। उसने देखा कि वीरका तालाब में उतरा और कुछ मछलियाँ खाकर भोजन किया; फिर पानी से बाहर आकर अपने पंख सुखाने लगा। उसने सोचा, "उस कौए की शरण में तो बहुत सारी मछलियाँ मिलेंगी। मैं उसका सेवक बन जाऊँगा।" इसलिए वह उसके पास गया।

"क्या बात है, श्रीमान?" विराका ने पूछा।

"मैं आपका सेवक बनना चाहता हूँ, मेरे स्वामी!" यह उत्तर मिला।

वीरका मान गया, और तब से दूसरा उसकी सेवा करने लगा। तब से वीरका अपनी जीविका चलाने के लिए पर्याप्त मछली खाता था, और बची हुई मछलियाँ पकड़ते ही सावित्थक को दे देता था; और जब सावित्थक भी पर्याप्त मछली खा लेता था, तो बची हुई मछली अपनी पत्नी को दे देता था।

कुछ देर बाद उसके मन में घमंड आ गया। उसने कहा, "यह कौआ काला है, और मैं भी: आँखों, चोंच और पैरों में भी हम दोनों में कोई अंतर नहीं है। मुझे इसकी मछली नहीं चाहिए; मैं अपनी मछली खुद पकड़ूँगा!" इस प्रकार उसने वीरका से कहा कि भविष्य में वह पानी में जाकर खुद मछली पकड़ेगा। तब वीरका ने कहा, "हे मित्र, तुम उन कौओं की जाति के नहीं हो जो पानी में जाकर मछली पकड़ने के लिए पैदा होते हैं। अपना आपा मत खोओ!"

लेकिन समझाने-बुझाने के बावजूद सवित्थक ने चेतावनी को गंभीरता से नहीं लिया। वह तालाब में उतर गया, पानी में चला गया; लेकिन वह खरपतवारों से होकर बाहर नहीं निकल सका—वह खरपतवारों में उलझ गया, उसकी चोंच का केवल सिरा ही पानी के ऊपर दिखाई दे रहा था। सांस न ले पाने के कारण वह पानी के नीचे ही मर गया।

उसकी साथी ने देखा कि वह वापस नहीं लौटा, और उसके बारे में जानने के लिए वीरका के पास गई। उसने पूछा, "मेरे स्वामी, सवित्थक कहीं दिखाई नहीं दे रहे हैं: वे कहाँ हैं?" और यह पूछते हुए उसने पहला श्लोक दोहराया:

"हे वीरक, क्या तुमने सावित्थक को देखा है?
मेरी मधुर आवाज वाली साथी, जिसकी गर्दन मोर की तरह चमकती है?
जब वीरक ने यह सुना, तो उसने उत्तर दिया, "हाँ, मुझे पता है कि वह कहाँ गया है," और दूसरा श्लोक सुनाया:-

"वह लहरों के नीचे गोता लगाने के लिए पैदा नहीं हुआ था।"
लेकिन जो काम वह नहीं कर सका, उसे करने की कोशिश जरूर करनी चाहिए;
तो बेचारे पक्षी को जल समाधि मिल गई।
झाड़ियों में उलझा हुआ, और मरने के लिए छोड़ दिया गया।"
जब कौवे ने यह सुना तो वह रोते हुए बनारस लौट गई।

इस प्रवचन के समाप्त होने के बाद, गुरु ने जन्म का वर्णन किया: "देवदत्त ने तब सवित्थक के रूप में अवतार लिया, और मैं स्वयं वीरक था।"

फुटनोट:

(1) सारिपुत्र और मोग्गल्याना ने कट्टर विधर्मी (गलत विश्वासी) और विरोधी से मुलाकात की ताकि वे उसके अनुयायियों को गुरु के पास वापस ला सकें।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **गंगेय्या-जातक**
***स्रोत** : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-205-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 205
गंगेय्या जातक

"मछलियाँ बढ़िया हैं," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए दो युवा भिक्षुओं के बारे में सुनाई थी।

हमें बताया गया है कि ये दोनों युवक श्रावस्ती नगर के एक अच्छे परिवार से थे और उन्होंने ईसाई धर्म अपना लिया था। परन्तु वे शरीर की अपवित्रता को न समझते हुए अपनी सुंदरता की प्रशंसा करते और उस पर गर्व करते फिरते थे।

एक दिन वे इस बात पर बहस करने लगे: "तुम सुंदर हो, लेकिन मैं भी सुंदर हूँ," दोनों ने कहा; फिर पास ही बैठे एक बुजुर्ग को देखकर वे इस बात पर सहमत हुए कि शायद उन्हें पता होगा कि वे सुंदर हैं या नहीं। तब वे उनके पास गए और पूछा, "महोदय, हम में से कौन सुंदर है?" बुजुर्ग ने उत्तर दिया, "दोस्तों, मैं तुम दोनों से अधिक सुंदर हूँ।" इस पर युवकों ने उन्हें बुरा-भला कहा और बड़बड़ाते हुए चले गए कि उन्होंने उन्हें वह बात बता दी जो उन्होंने नहीं पूछी थी, लेकिन यह नहीं बताया कि उन्होंने क्या पूछा था।

भिक्षु संघ को इस घटना की जानकारी मिली; और एक दिन, जब वे सभी सत्य के हॉल में एकत्रित थे, तो वे इस विषय पर चर्चा करने लगे। "मित्रों, उस वृद्ध भिक्षु ने उन दो युवकों को कैसे लज्जित किया जो अपनी सुंदरता के घमंड में चूर थे!" गुरुजी अंदर आए और पूछा कि वे सब किस बारे में बात कर रहे हैं। उन्होंने गुरुजी को बताया। गुरुजी ने उत्तर दिया, "भाइयों, यह एकमात्र ऐसा समय नहीं है जब

हमारे मित्र अपनी सुंदरता की प्रशंसा में लबरेज हुए हों। पुराने समय में भी वे इसी तरह अपनी सुंदरता का बखान करते थे।" और फिर उन्होंने उन्हें एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, बनारस के राजा ब्रह्मदत्त के शासनकाल में, बोधिसत्व गंगा नदी के किनारे एक वृक्ष देवदूत बन गए। गंगा और यमुना के संगम पर दो मछलियाँ मिलीं, एक गंगा की और एक यमुना की। एक ने कहा, "मैं सुंदर हूँ! और तुम भी!" और फिर वे अपनी सुंदरता को लेकर झगड़ने लगीं। गंगा से कुछ दूर उन्होंने किनारे पर एक कछुआ लेटा हुआ देखा। उन्होंने कहा, "यह कछुआ ही तय करेगा कि हम सुंदर हैं या नहीं!" और वे उसके पास गईं। उन्होंने पूछा, "हे मित्र कछुए, हम में से कौन सुंदर है, गंगा की मछली या यमुना की मछली?" कछुए ने उत्तर दिया, "गंगा की मछली सुंदर है, और यमुना की मछली भी सुंदर है: लेकिन मैं तुम दोनों से अधिक सुंदर हूँ।" और इसे समझाने के लिए, उसने पहला श्लोक कहा:-

यमुना नदी की मछलियाँ उत्तम हैं, गंगा की मछलियाँ उत्तम हैं।
लेकिन एक चार पैरों वाला प्राणी, जिसकी गर्दन मेरी तरह पतली होती है,
एक फैले हुए बरगद के पेड़ की तरह, उन सभी को उत्कृष्ट प्रदर्शन करना होगा।"
जब मछलियों ने यह सुना, तो वे चिल्लाईं, "अरे, बदमाश कछुए! तुम हमारे सवाल का जवाब नहीं देते, बल्कि दूसरे सवाल का जवाब देते हो!" और उन्होंने दूसरी पंक्ति दोहराई:

"हम उनसे यह पूछते हैं, वे वह जवाब देते हैं: वाकई एक अजीब जवाब!"
उनकी अपनी ज़ुबान से उनकी प्रशंसा गाई जाती है:-1 मुझे यह पसंद नहीं, मुझे नहीं!

जब यह प्रवचन समाप्त हुआ, तो गुरु ने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उन दिनों युवा भिक्षु दो मछलियाँ थे, बूढ़ा व्यक्ति कछुआ था, और मैं गंगा तट से सब कुछ देखने वाली वृक्ष-परी थी।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कुरुंग-मिगा-जातक**
***स्रोत**: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-206-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 206
कुरुंगा-मिगा-जातक

"आओ, कछुआ," इत्यादि—यह कहानी गुरु ने वेलुवाना में देवदत्त के बारे में सुनाई थी। गुरु को खबर मिली कि देवदत्त उनकी हत्या की साजिश रच रहा है। "अहा, भिक्षुओं," उन्होंने कहा, "बहुत समय पहले भी ऐसा ही हुआ था; देवदत्त ने तब भी मुझे मारने की कोशिश की थी, जैसे वह अब कर रहा है।" और उन्होंने उन्हें यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व हिरण बनकर एक झील के पास घने जंगल में रहने लगे। उसी झील से कुछ ही दूरी पर एक पेड़ की चोटी पर कठफोड़वा बैठा रहता था; और झील में एक कछुआ रहता था। तीनों मित्र बन गए और सौहार्दपूर्वक एक साथ रहने लगे।

जंगल में घूमते हुए एक शिकारी ने पानी में उतरते हुए बोधिसत्व (हिरण) के पदचिह्न देखे; उसने लोहे की जंजीर की तरह मजबूत चमड़े का फंदा लगाया और चला गया। रात के पहले पहर में बोधिसत्व पानी पीने के लिए नीचे उतरे और फंदे में फंस गए: जिससे वे जोर-जोर से रोने लगे। तभी कठफोड़वा अपने पेड़ की चोटी से नीचे उड़कर आई और कछुआ पानी से बाहर आया और आपस में विचार करने लगे कि क्या किया जाए।

कठफोड़वा ने कछुए से कहा, "मित्र, तुम्हारे पास दांत हैं—इस जाल को काट डालो; मैं जाकर देखूंगा कि शिकारी दूर रहे; और अगर हम दोनों अपनी पूरी कोशिश करें, तो हमारा मित्र अपनी जान नहीं गंवाएगा।" इसे स्पष्ट करने के लिए उसने पहला छंद कहा:

"आओ, कछुए, चमड़े के फंदे को फाड़ दो, और उसे पूरी तरह से काट डालो,"
और मैं शिकारी का ध्यान रखूंगा और उसे तुमसे दूर रखूंगा।"
कछुआ चमड़े की डोरी कुतरने लगा: कठफोड़वा शिकारी के घर की ओर चल पड़ा। भोर होते ही शिकारी हाथ में चाकू लेकर बाहर निकला। जैसे ही पक्षी ने उसे निकलते देखा, वह चिल्लाया, अपने पंख फड़फड़ाए और जैसे ही वह सामने के दरवाजे से निकला, उसने शिकारी के चेहरे पर वार कर दिया। "किसी अपशगुन पक्षी ने मुझे मारा है!" शिकारी ने सोचा; वह वापस मुड़ा और थोड़ी देर के लिए लेट गया। फिर वह उठा और अपना चाकू उठाया। पक्षी ने मन ही मन सोचा, "पहली बार तो वह सामने के दरवाजे से निकला था, अब वह पीछे के दरवाजे से निकलेगा" और वह घर के पीछे बैठ गया। शिकारी ने भी यही सोचा: "जब मैं सामने के दरवाजे से निकला था, तो मुझे अपशगुन दिखा था, अब मैं पीछे के दरवाजे से निकलूंगा!" और उसने वैसा ही किया। लेकिन पक्षी फिर चिल्लाया और उसके चेहरे पर वार कर दिया। यह देखकर कि उसे फिर से किसी अपशगुन पक्षी ने मारा है, शिकारी चिल्लाया, "यह प्राणी मुझे जाने नहीं दे रहा!" और वापस मुड़कर वह सूर्योदय तक लेट गया, और जब सूरज निकल आया, तो उसने अपना चाकू उठाया और काम शुरू कर दिया।

कठफोड़वा पूरी तेज़ी से अपने दोस्तों के पास लौटा। "देखो, शिकारी आ रहा है!" वह चिल्लाया। तब तक कछुए ने सारी रस्सियाँ कुतर दी थीं, बस एक मज़बूत रस्सी बची थी: उसके दाँत मानो गिर ही जाएँगे, और उसका मुँह खून से सना हुआ था। बोधिसत्व (हिरण) ने युवा शिकारी को बिजली की गति से हाथ में चाकू लिए आते देखा: उसने रस्सी तोड़ दी और जंगल में भाग गया। कठफोड़वा अपने पेड़ की चोटी पर बैठ गया। लेकिन कछुआ इतना कमज़ोर था कि वह वहीं पड़ा रहा। शिकारी ने उसे एक थैले में डाला और उसे एक पेड़ से बाँध दिया।

बोधिसत्व (हिरण) ने देखा कि कछुआ पकड़ा गया है, और उसने अपने मित्र का जीवन बचाने का निश्चय किया। इसलिए उसने शिकारी को अपने सामने आने दिया और ऐसा दिखाया जैसे वह कमजोर हो। शिकारी ने उसे देख लिया और उसे कमजोर समझकर अपना चाकू उठाया और उसका पीछा करने लगा। बोधिसत्व उसकी पहुँच से थोड़ा दूर रहकर उसे जंगल में ले गया; और जब उसने देखा कि वे काफी दूर आ गए हैं, तो वह उसे चकमा देकर हवा की तरह तेज दूसरे रास्ते से लौट आया। उसने अपने सींगों से थैला उठाया, उसे जमीन पर फेंका, फाड़ दिया और कछुए को बाहर निकाल दिया। और कठफोड़वा पेड़ से नीचे आ गया।

तब बोधिसत्व (हिरण) ने उन दोनों से कहा, "तुमने मेरी जान बचाई है और मेरे प्रति मित्रवत व्यवहार किया है। अब शिकारी आएगा और तुम्हें ले जाएगा; इसलिए हे मित्र कठफोड़वा, तुम अपने बच्चों के साथ कहीं और चले जाओ, और हे मित्र कछुआ, तुम पानी में गोता लगा लो।" उन्होंने वैसा ही किया।

पूर्णतः प्रबुद्ध गुरु ने द्वितीय श्लोक कहा:-

कछुआ तालाब में चला गया, हिरण जंगल में चला गया।
और कठफोड़वा पेड़ से अपने बच्चे को ले गया।
शिकारी लौटा, और उन्हें वहाँ नहीं पाया। उसने देखा कि उसका थैला फटा हुआ है; उसने उसे उठाया और दुखी मन से घर चला गया। और तीनों मित्र जीवन भर अटूट मित्रता में रहे, और अंत में अपने कर्मों के फल के अनुसार इस दुनिया से चले गए।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "देवदत्त शिकारी थे, सारिपुत्र कठफोड़वा थे, मोग्गल्याना कछुआ थे, और मैं हिरण था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **अस्सक-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-207-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 207
अस्सक-जातक

“एक बार महान राजा अस्सका के साथ,” इत्यादि — यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी। यह कथा एक ऐसे व्यक्ति के बारे में थी जो अपनी पूर्व पत्नी की यादों में खोया हुआ था। उसने भिक्षु से पूछा कि क्या वह सचमुच प्रेम में व्याकुल है? उस व्यक्ति ने कहा, “हाँ।” गुरु ने आगे पूछा, “तुम किससे प्रेम करते हो?” उत्तर मिला, “मेरी दिवंगत पत्नी से।” तब गुरु ने कहा, “भाई, तुम केवल एक बार ही इस स्त्री के लिए इतने अभिलाषा से ग्रस्त नहीं रहे हो; पुराने समय में उसके प्रेम ने तुम्हें बहुत कष्ट दिया था।” और फिर उन्होंने एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, काशी राज्य के एक नगर पोटाली में अस्सका नाम का एक राजा रहता था। उसकी रानी पत्नी, उब्बारी, उसे बहुत प्रिय थी; वह आकर्षक, सुंदर और स्त्रीत्व की दृष्टि से असाधारण थी, यद्यपि किसी देवी के समान सुंदर नहीं थी। उसकी मृत्यु हो गई और राजा गहरे शोक में डूब गया। उसने शव को ताबूत में रखवाया, तेल और मरहम से लेप लगाया और पलंग के नीचे रख दिया; वह वहाँ बिना भोजन किए रोता-बिलखता रहा। उसके माता-पिता, परिवार, मित्र, दरबारी, पुजारी और आम लोग सभी ने उससे शोक न करने का आग्रह किया, क्योंकि सब कुछ क्षणभंगुर होता है; लेकिन वे उसे विचलित नहीं कर सके। शोक में डूबे हुए सात दिन बीत गए।

उस समय बोधिसत्व एक तपस्वी थे, जिन्होंने पंच अलौकिक शक्तियों और अष्टम सिद्धियों को प्राप्त कर लिया था; वे हिमालय की तलहटी में रहते थे। उन्हें पूर्ण अलौकिक अंतर्दृष्टि प्राप्त थी, और जब उन्होंने अपनी दिव्य दृष्टि से भारत का अवलोकन किया, तो उन्होंने इस राजा को शोक में डूबा हुआ देखा और तुरंत उसकी सहायता करने का निश्चय किया। अपनी चमत्कारिक शक्ति से वे आकाश में उठे और राजा के उद्यान में उतरे, और एक स्वर्ण प्रतिमा की तरह अनुष्ठानिक पत्थर पर बैठ गए।

पोटाली नगर का एक युवक उद्यान में आया और बोधिसत्व को देखकर उसने उनका अभिवादन किया और बैठ गया। बोधिसत्व ने उससे मधुरतापूर्वक बातचीत शुरू की। उसने पूछा, "क्या राजा न्यायप्रिय शासक है?"

“जी महाराज, राजा न्यायप्रिय हैं,” युवक ने उत्तर दिया; “परन्तु उनकी रानी का निधन हो गया है; उन्होंने उनके शरीर को ताबूत में रखा है और शोक मना रहे हैं; और आज से सात दिन हो गए हैं। आप राजा को इस गहरे दुःख से मुक्ति क्यों नहीं दिलाते? आप जैसे गुणी व्यक्ति राजा के दुःख को दूर कर सकते हैं।”

"मैं राजा को नहीं जानता, हे युवक," बोधिसत्व ने कहा; "परन्तु यदि वह आकर मुझसे पूछे, तो मैं उसे वह स्थान बता दूंगा जहाँ वह अब पुनः जीवित हो उठी है, और उससे स्वयं बुलवा लूँगा।"

“तो, हे पूज्यवर, जब तक मैं राजा को आपके पास न ले आऊं, तब तक आप यहीं ठहरिए,” युवक ने कहा। बोधिसत्व मान गए और तेज़ी से राजा के पास जाकर उन्हें इसके बारे में बताया। “आपको इस दिव्य अंतर्दृष्टि वाले व्यक्ति से अवश्य मिलना चाहिए!” उन्होंने राजा से कहा।

उब्बारी को देखने की कल्पना से राजा अत्यंत प्रसन्न हुआ; और वह अपने रथ में सवार होकर उस स्थान की ओर चल पड़ा। बोधिसत्व को प्रणाम करके वह एक तरफ बैठ गया और पूछा, "क्या यह सच है, जैसा कि मुझे बताया गया है, कि आप जानते हैं कि मेरी रानी का पुनर्जन्म कहाँ हुआ है?"

"जी हां, महाराज," उसने उत्तर दिया।

तब राजा ने पूछा कि वह कहाँ है।

बोधिसत्व ने उत्तर दिया, "हे राजा, वह अपनी सुंदरता के नशे में चूर हो गई थी, और इस कारण लापरवाही बरतते हुए उसने उचित और सद्‌गुणपूर्ण कर्म नहीं किए; इसलिए अब वह इसी उद्यान में एक छोटा सा कीड़ा बन गई है।"

"मुझे विश्वास नहीं हो रहा!" राजा ने कहा।

"तब मैं उसे तुम्हें दिखाऊंगा और उससे बुलवाऊंगा," बोधिसत्व ने उत्तर दिया।

"कृपया उसे बुलवाओ!" राजा ने कहा।

बोधिसत्व ने आज्ञा दी—"गोबर के ढेर को लुढ़काने में व्यस्त दो लोगों को राजा के सामने आने दो।" और उन्होंने अपनी शक्ति से उन्हें ऐसा करने को कहा, और वे आ गए। बोधिसत्व ने राजा को उनमें से एक की ओर इशारा करते हुए कहा, "हे राजा! यह आपकी रानी उब्बारी है! वह अभी-अभी इस ढेर से अपने पति, गोबर के कीड़े के पीछे-पीछे निकली है। देखो तो सही।"

"क्या! मेरी रानी उब्बारी एक गोबर का कीड़ा? मुझे विश्वास नहीं हो रहा!" राजा चिल्लाया।

मैं उसे बुलवाऊंगा, हे राजा!

"मैं आपसे विनती करता हूँ, हे प्रभु!" उसने कहा।

बोधिसत्व ने अपनी शक्ति से उसे वाणी प्रदान की। "उब्बारी!" उसने कहा।

"क्या बात है, हे प्रभु?" उसने मानवीय स्वर में पूछा।

बोधिसत्व ने उससे पूछा, "अपने पूर्व रूप में तुम्हारा नाम क्या था?"

"मेरा नाम उब्बारी था, महाराज," उसने उत्तर दिया, "मैं राजा अस्सका की पत्नी थी।"

बोधिसत्व ने आगे कहा, "मुझे बताओ, अब तुम सबसे ज्यादा किसे प्यार करते हो—राजा अस्सका को, या इस गोबर के कीड़े को?"

“हे महाराज, वह मेरा पिछला जन्म था,” उसने कहा। “तब मैं उसके साथ इस उद्यान में रहती थी, आकार, ध्वनि, सुगंध, स्वाद और स्पर्श का आनंद लेती थी; परन्तु अब पुनर्जन्म के कारण मेरी स्मृति धुंधली हो गई है, वह कौन है? अब तो मैं राजा अस्सका को मार डालूँगी और अपने पति, जो एक कीड़े के समान है, के पैरों पर उसके गले से बहने वाला रक्त मल दूँगी!” और राजा के समूह के बीच उसने मनुष्य की आवाज़ में ये शब्द कहे:

"एक बार महान राजा असाका के साथ, जो मेरे प्रिय पति थे,
प्रियतम और प्रियतम, मैं इस बगीचे में घूम रहा था।
लेकिन अब नए दुखों और नई खुशियों ने पुराने दुखों को भगा दिया है।
और अब मेरा कीड़ा असाका से कहीं अधिक प्रिय है।"
जब राजा अस्सका ने यह सुना, तो उन्हें तुरंत पश्चाताप हुआ; उन्होंने रानी के शव को हटवाकर अपना सिर धोया। उन्होंने बोधिसत्व को प्रणाम किया और नगर लौट गए; जहाँ उन्होंने दूसरी रानी से विवाह किया और धर्मपरायणता से शासन किया। बोधिसत्व ने राजा को उपदेश देकर और उन्हें दुःख से मुक्त करके हिमालय लौट गए।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की और जन्म का वर्णन किया: सत्यों के समापन पर, प्रेम में व्याकुल भाई (भिक्षु) प्रथम मार्ग के फल (सम्मोहन) तक पहुँचे: "आपकी दिवंगत पत्नी उब्बारी थीं; आप, प्रेम में व्याकुल भाई, राजा अस्सका थे; सारिपुत्र युवा ब्राह्मण थे; और वह तपस्वी मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सुमसुमर-जातक**
***स्रोत** : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-208-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 208
संसुमारा-जातक (*1)

“गुलाब, कटहल,” इत्यादि—यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी, जिसमें देवदत्त द्वारा उनकी हत्या के प्रयासों का वर्णन था। इन प्रयासों के बारे में सुनकर गुरु ने कहा, “यह पहली बार नहीं है जब देवदत्त ने मेरी हत्या करने का प्रयास किया है; उसने पहले भी ऐसा किया था, लेकिन फिर भी वह मुझे ज़रा भी भयभीत नहीं कर सका।” फिर उन्होंने यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब हिमालय की तलहटी में बोधिसत्व ने एक बंदर के रूप में जन्म लिया। वे बलवान और हृष्ट-पुष्ट हुए, विशाल शरीर वाले, समृद्ध हुए और गंगा नदी के मोड़ के पास एक वन में निवास करने लगे।

उस समय गंगा में एक मगरमच्छ रहता था। मगरमच्छ की मादा ने बंदर के विशाल शरीर को देखा और उसके हृदय को खाने की तीव्र इच्छा हुई। उसने अपने स्वामी से कहा, "हे प्रभु, मैं उस महान बंदर राजा का हृदय खाना चाहती हूँ!"

मगरमच्छ ने कहा, "अच्छी पत्नी, मैं पानी में रहता हूँ और वह सूखी ज़मीन पर रहता है: हम उसे कैसे पकड़ सकते हैं?"

"चाहे जैसे भी हो जाए, उसे पकड़ना ही होगा। अगर मैं उसे नहीं पकड़ पाई, तो मैं मर जाऊंगी।" उसने जवाब दिया।

"कोई बात नहीं," मगरमच्छ ने उसे दिलासा देते हुए कहा, "चिंता मत करो। मेरे पास एक योजना है; मैं तुम्हें उसका दिल खाने को दूंगा।"

जब बोधिसत्व गंगा के किनारे बैठे थे और जल पी चुके थे, तब मगरमच्छ उनके पास आया और बोला:

"हे बंदर, तुम इस पुरानी परिचित जगह पर सूखे फलों पर ही क्यों जी रहे हो? गंगा के उस पार आम और लाबुजा के पेड़ों की कोई कमी नहीं है, जिनके फल शहद जैसे मीठे हैं! क्या पार जाकर तरह-तरह के जंगली फल खाना बेहतर नहीं है?"

"मगरमच्छ स्वामी," बंदर ने उत्तर दिया, "गंगा कितनी गहरी और चौड़ी है: मैं इसे कैसे पार करूँ?"

"अगर तुम जाओगे, तो मैं तुम्हें अपनी पीठ पर बिठाकर पार ले जाऊंगा।"

बंदर ने उस पर भरोसा किया और मान गया। दूसरे ने कहा, "तो इधर आओ, मेरी पीठ पर चढ़ जाओ!" और बंदर चढ़ गया। लेकिन जैसे ही मगरमच्छ थोड़ा आगे तैरा, उसने बंदर को पानी में डुबो दिया।

"मेरे प्यारे दोस्त, तुम मुझे डूबने दे रहे हो!" बंदर चिल्लाया। "ऐसा क्यों?"

मगरमच्छ ने कहा, "तुम्हें लगता है कि मैं तुम्हें सिर्फ अच्छे स्वभाव के कारण ले जा रहा हूँ? बिलकुल नहीं! मेरी पत्नी को तुम्हारा दिल चाहिए और मैं उसे खाने के लिए देना चाहता हूँ।"

“मित्र,” बंदर ने कहा, “मुझे बताने के लिए आपका धन्यवाद। अगर पेड़ों की चोटियों पर कूदते समय हमारा दिल हमारे अंदर होता, तो वह टुकड़े-टुकड़े हो जाता।”

"अच्छा, तो तुम इसे कहाँ रखते हो?" दूसरे ने पूछा।

बोधिसत्व ने पास ही खड़े पके फलों के गुच्छों से लदे अंजीर के पेड़ की ओर इशारा करते हुए कहा, "देखो, अंजीर के पेड़ पर हमारे हृदय लटके हुए हैं।"

मगरमच्छ ने कहा, "अगर तुम मुझे अपना दिल दिखाओगे, तो मैं तुम्हें नहीं मारूंगा।"

"तो मुझे उस पेड़ के पास ले चलो, और मैं तुम्हें दिखा दूंगा कि वह उस पर लटका हुआ है।"

मगरमच्छ उसे उस स्थान पर ले आया। बंदर उसकी पीठ से कूदकर अंजीर के पेड़ पर चढ़ गया और उस पर बैठ गया। "ओ मूर्ख मगरमच्छ!" उसने कहा, "तुमने सोचा था कि ऐसे प्राणी भी होते हैं जिनका दिल पेड़ की चोटी पर होता है! तुम मूर्ख हो, और मैंने तुम्हें मात दे दी है! तुम अपने फल अपने पास ही रखो। तुम्हारा शरीर तो विशाल है, पर अक्ल नहीं है।" और फिर इस विचार को समझाने के लिए उसने निम्नलिखित छंद कहे:-

"पानी के उस पार मुझे गुलाब सेब, कटहल और आम भी दिखाई दे रहे हैं;
बस बहुत हो गया, मुझे इनकी ज़रूरत नहीं है; मेरा अंजीर ही मेरे लिए काफी है!
"तुम्हारा शरीर तो वाकई महान है, लेकिन तुम्हारी बुद्धि कितनी छोटी है!"
अब आप अपने रास्ते जाइए, श्रीमान मगरमच्छ, क्योंकि मैंने इसका भरपूर आनंद ले लिया है।

मगरमच्छ को ऐसा दुख और निराशा महसूस हो रही थी मानो उसने हजार सिक्के खो दिए हों, और वह उदास होकर अपने निवास स्थान पर लौट गया।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "उन दिनों देवदत्त मगरमच्छ था, चिंचा उसकी साथी थी, और मैं बंदर था।"

फुटनोट:

(1) मार्कट-जातक। ऊपर क्रमांक 57 में एक बंदर मगरमच्छ को मात देता है।

(2)आर्टोकार्पस लाकुचा .

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **ककर-जातक**
स्रोत : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित

पिछला <<<<-----||-209-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 209
कक्करा-जातक

"मैंने बहुत सारे पेड़ देखे हैं," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जो एक भिक्षु के बारे में थी, जो धर्म के प्रमुख भिक्षु सारिपुत्र के सहपाठियों में से एक थे।

हमें पता चला है कि यह व्यक्ति अपनी सेहत का बहुत ध्यान रखता था। वह न तो बहुत गर्म और न ही बहुत ठंडा खाना खाता था, क्योंकि उसे डर था कि इससे उसे नुकसान हो सकता है। वह ठंड या गर्मी से चोट लगने के डर से कभी बाहर नहीं जाता था; और वह बहुत ज्यादा उबले या बहुत सख्त चावल नहीं खाता था।

भिक्षु संघ को पता चला कि वह अपना कितना ख्याल रखता है। सत्य के हॉल में, वे सब इस पर चर्चा कर रहे थे। "मित्र, फलां-फलां भाई कितना होशियार है, जो जानता है कि उसके लिए क्या अच्छा है!" गुरुजी अंदर आए और जब वे सब वहाँ बैठे थे, तो उन्होंने पूछा कि वे किस बारे में बात कर रहे हैं। उन्होंने उन्हें बताया। तब उन्होंने उत्तर दिया,

"हमारा यह नौजवान दोस्त न सिर्फ अब अपनी निजी सुख-सुविधाओं का ख्याल रखता है, बल्कि पुराने जमाने में भी वह ऐसा ही था।" और उसने उन्हें एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, बनारस के राजा ब्रह्मदत्त के शासनकाल में, बोधिसत्व एक वनभूमि में वृक्ष-आत्मा बन गए। एक शिकारी, एक नकली पक्षी, बालों का फंदा और एक छड़ी लेकर, पक्षियों की तलाश में जंगल में गया। वह एक बूढ़े पक्षी का पीछा करने लगा जो जंगल में उड़कर भागने की कोशिश कर रहा था। पक्षी उसे अपने फंदे में पकड़ने का मौका नहीं दे रहा था, बल्कि बार-बार ऊपर-नीचे उड़ता रहा। इसलिए शिकारी ने खुद को टहनियों और शाखाओं से ढक लिया और बार-बार अपना फंदा और छड़ी लगाई। लेकिन पक्षी ने उसे शर्मिंदा करने की इच्छा से एक मानवीय आवाज भेजी और पहली पंक्ति दोहराई:

मैंने बहुत सारे पेड़ देखे हैं
वन की हरियाली में उगना:
लेकिन, हे वृक्ष, वे ऐसा नहीं कर सके।
तुम्हारे जैसी कोई भी अजीबोगरीब चीज़!
इतना कहकर चिड़िया उड़ गई और कहीं और चली गई। उसके चले जाने पर शिकारी ने दूसरी पंक्ति दोहराई:-

"यह बूढ़ा पक्षी, जो जाल को पहचानता है,"
ऑफ हवा में उड़ गया है;
उसका पिंजरा टूट गया है,
और उसने मानवीय आवाज में बात की है!
शिकारी ने ऐसा कहा; और जंगल में शिकार करने के बाद, जो कुछ वह पकड़ सका, उसे लेकर घर लौट गया।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "देवदत्त तब शिकारी थे, वह युवा सजग व्यक्ति पक्षी था, और वह वृक्ष-परी जिसने यह सब देखा, वह मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कंदगलक-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-210-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 210
कंदगलक-जातक।

“हे मित्र,” इत्यादि—यह बात गुरु ने वेलुवन में अपने प्रवास के दौरान देवदत्त द्वारा उनकी नकल करने के प्रयासों के बारे में कही थी। जब गुरु ने इन प्रयासों के बारे में सुना, तो उन्होंने कहा, “देवदत्त ने मेरी नकल करके पहली बार अपना विनाश नहीं किया है; पहले भी ऐसा ही हो चुका है।” फिर उन्होंने यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व ने कठफोड़वा का रूप धारण किया। वे बबूल के वन में रहते थे और उनका नाम खदिरावनीय था, यानी बबूल के वन का पक्षी। उनका एक साथी था जिसका नाम कंदगलक था, जो फलों से भरे वन में भोजन प्राप्त करता था।

एक दिन दोस्त खदिरावनिया से मिलने गया। खदिरावनिया ने सोचा, "मेरा दोस्त आ गया!" और वह उसे बबूल के जंगल में ले गया और पेड़ों के तनों पर तब तक चोंच मारता रहा जब तक कि कीड़े बाहर नहीं आ गए, जिन्हें उसने अपने दोस्त को दे दिया। जैसे ही उसे एक कीड़ा दिया गया, दोस्त ने उसे चोंच मारकर ऐसे खाया जैसे वह शहद की रोटी हो। खाते-खाते उसके मन में घमंड जागा। उसने सोचा, "यह पक्षी कठफोड़वा है, और मैं भी कठफोड़वा ही हूँ। मुझे इससे भोजन की क्या आवश्यकता है? मैं इस बबूल के जंगल में अपना भोजन खुद नहीं जुटा पाऊँगा!" इसलिए उसने खदिरावनिया से कहा,

"मित्र, तुम चिंता मत करो, मैं बबूल के जंगल में अपना भोजन स्वयं प्राप्त कर लूंगा।"

तब दूसरे ने कहा, "तुम पक्षियों की उस प्रजाति से हो जो अपना भोजन रेशम-कपास के पेड़ों और भरपूर फल देने वाले पेड़ों के जंगल में पाती है; परन्तु बबूल का पेड़ गूदे से भरा और कठोर होता है। कृपया ऐसा मत करो!"

"क्या!" कंदगलक ने कहा—"क्या मैं कठफोड़वा नहीं हूँ?" और उसने किसी की बात नहीं सुनी, बल्कि बबूल के तने पर चोंच मारी। पल भर में उसकी चोंच टूट गई, उसकी आँखें सिर से बाहर निकल आईं और उसका सिर फट गया। पेड़ को कसकर पकड़ न पाने के कारण वह ज़मीन पर गिर पड़ा और पहली पंक्ति दोहराई:

"हे मित्र, यह काँटेदार, ठंडी पत्तियों वाला वृक्ष क्या है?"
जिसने एक ही झटके में मेरी चोंच तोड़ दी?
यह सुनकर खदिरावनिया ने दूसरा श्लोक पढ़ा:

"यह पक्षी सड़ी हुई लकड़ी के लिए अच्छा था।"

और कोमल; लेकिन एक बार उसने कोशिश की,
किसी दुर्भाग्यवश, कुछ पेड़ों से रस निकालना कठिन होता है;
और उसकी खोपड़ी टूट गई, और उसकी मौत हो गई।"
खदिरावनिया ने ऐसा कहा और आगे बोला, "हे कंदगलक, जिस वृक्ष पर तुमने अपना सिर फोड़ा है, वह बहुत कठोर और मजबूत है!"
लेकिन दूसरा वहीं मर गया।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "देवदत्त कंदगलक थे, लेकिन खदिरवनीय मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सोमदत्त-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-211-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 211
सोमदत्त-जातक

"पूरे साल भर, कभी न रुकने वाला," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जो वरिष्ठ भिक्षु लालुदायी या उदयी नामक सीधे-सादे व्यक्ति के बारे में थी।

हमें पता चला कि यह आदमी दो-तीन लोगों की मौजूदगी में एक शब्द भी नहीं बोल पाता था। वह इतना घबराया हुआ था कि जब कुछ कहता तो उसका मतलब कुछ और होता था। संयोग से, भिक्षु (भाई) सत्य के हॉल में एक साथ बैठे हुए इस बारे में बात कर रहे थे। गुरुजी अंदर आए और पूछा कि वे किस बारे में बात कर रहे हैं। उन्होंने उन्हें बताया। गुरुजी ने उत्तर दिया, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि लालुदायी इतना घबराया हुआ है। पहले भी ऐसा ही था।" और उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व काशी राज्य के एक ब्राह्मण परिवार में पैदा हुए थे। जब वे वयस्क हुए, तो वे तक्षशिला में अध्ययन करने गए। लौटने पर उन्होंने अपने परिवार को गरीब पाया; और उन्होंने अपने माता-पिता को विदाई दी और बनारस के लिए निकल पड़े, मन ही मन सोचते हुए, "मैं अपने पतित परिवार को फिर से स्थापित करूँगा!"

बनारस में वह राजा का सेवक बन गया; और वह राजा का बहुत प्रिय हो गया और उसका पसंदीदा बन गया।

उसके पिता खेत जोतकर अपना जीवन यापन करते थे, लेकिन उनके पास केवल एक जोड़ी बैल थे; और उनमें से एक मर गया। वह बोधिसत्व के सामने आया और उनसे कहा, "पुत्र, मेरा एक बैल मर गया है, और खेत जोतने का काम रुक गया है। राजा से एक बैल देने का अनुरोध कीजिए!"

"नहीं, पिताजी," उसने उत्तर दिया, "मैंने अभी-अभी राजा को देखा है; मुझे अभी उनसे बैल नहीं माँगने चाहिए: आप उनसे माँगिए।"

"मेरे बेटे," उसके पिता ने कहा, "तुम्हें नहीं पता कि मैं कितना शर्मीला हूँ। अगर दो-तीन लोग भी मौजूद हों तो मैं एक शब्द भी नहीं बोल पाता। अगर मैं राजा से बैल माँगने जाऊँ, तो अंत में उसे यही बैल दे दूँगा!"

“पिताजी,” बोधिसत्व ने कहा, “जो होना है, सो होकर रहेगा। मैं राजा से नहीं पूछ सकता; लेकिन मैं आपको सिखाऊंगा कि यह कैसे करना है।” इसलिए वे अपने पिता को एक श्मशान में ले गए जहाँ मीठी घास के गुच्छे थे; और उन्होंने घास के गुच्छे बाँधकर उन्हें इधर-उधर बिखेर दिया और एक-एक करके उनके नाम बताते हुए अपने पिता को बताया: “वह राजा है, वह वायसराय है, वह मुख्य सेनापति है। अब, पिताजी, जब आप राजा के सामने आएँ, तो सबसे पहले कहें—‘राजा की जय हो!’ और फिर बैल माँगने के लिए इस श्लोक को दोहराएँ;” और यही वह श्लोक था जो उन्होंने उन्हें सिखाया:

"मेरे हल में दो बैल लगे थे, जिनसे मेरा काम पूरा हो गया था, लेकिन एक मर गया है! हे शक्तिशाली राजकुमार, कृपया मुझे एक और बैल दे दीजिए!"

उस व्यक्ति ने पूरे एक वर्ष तक इस दोहे को याद किया; और फिर उसने अपने पुत्र से कहा—"प्रिय सोमदत्त, मैंने पंक्तियाँ याद कर ली हैं! अब मैं इसे किसी के भी सामने कह सकता हूँ! मुझे राजा के पास ले चलो।"

अतः बोधिसत्व ने एक उपयुक्त भेंट लेकर अपने पिता को राजा के समक्ष प्रस्तुत किया। "राजा की जय हो!" ब्राह्मण ने अपनी भेंट अर्पित करते हुए कहा।

"यह सोमदत्त ब्राह्मण कौन है?" राजा ने पूछा।

"महाराज, ये मेरे पिता हैं," उसने उत्तर दिया।

"वह यहाँ क्यों आया है?" राजा ने पूछा। तब ब्राह्मण ने बैल माँगने के लिए अपना दोहा दोहराया:-

"मेरे हल में दो बैल लगे थे, जिनसे मेरा काम पूरा हो गया था, लेकिन एक मर गया है! हे शक्तिशाली राजकुमार, कृपया दूसरे को ले लीजिए!"

राजा ने देखा कि कुछ गलती हुई है। "सोमदत्ता," उसने मुस्कुराते हुए कहा, "मुझे लगता है कि तुम्हारे घर में बहुत सारे बैल हैं?"

"यदि ऐसा है, तो हे महान राजा, ये आपके लिए उपहार हैं!"

यह उत्तर सुनकर राजा प्रसन्न हुए। उन्होंने ब्राह्मण को भेंट के रूप में सोलह बैल, उत्तम काठी के वस्त्र सहित, और रहने के लिए एक गाँव दिया और उन्हें बड़े सम्मान के साथ विदा किया। ब्राह्मण शुद्ध सफेद रंग के सिंधी घोड़ों द्वारा खींचे गए रथ पर सवार होकर बड़े ठाठ-बाठ से अपने निवास स्थान की ओर चल पड़े।

जब बोधिसत्व रथ में अपने पिता के बगल में बैठे थे, तब उन्होंने कहा, "पिताजी, मैंने आपको पूरे वर्ष शिक्षा दी, और फिर भी जब समय आया तो आपने अपना बैल राजा को दे दिया!" और उन्होंने पहला श्लोक कहा:-

"पूरे वर्ष भर अथक परिश्रम के साथ निरंतर प्रयास करते हुए।"
जहां मीठी घास गुच्छों में उगती है, वहां वह दिन-प्रतिदिन इसका अभ्यास करता था:
जब वह अचानक दरबारियों के बीच आया तो उसने अर्थ ही बदल दिया;
यदि किसी व्यक्ति में बुद्धि की कमी हो तो अभ्यास का कोई लाभ नहीं होता।
यह सुनकर ब्राह्मण ने दूसरा श्लोक कहा:

"जो पूछता है, प्रिय सोमदत्त, वह इन दोनों में से किसी एक को चुनने का जोखिम उठाता है--"
आपको अधिक मिल भी सकता है, या कुछ भी नहीं मिल सकता: जब आप पूछते हैं, तो ऐसा ही होता है।"

जब गुरु ने इस कहानी के माध्यम से यह दिखाया कि भोला-भाला उदयि पहले भी उतना ही शर्मीला था जितना कि वह अब है, तो उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "लालदयी सोमदत्त के पिता थे, और मैं स्वयं सोमदत्त था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **उच्छिष्ठ-भट्ट-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-212-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 212
उच्छित्त-भट्ट-जातक

"ऊपर से गर्म," इत्यादि। यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी, एक ऐसे भिक्षु के बारे में जो अपनी खोई हुई पत्नी के लिए तड़प रहा था। गुरु ने उस भिक्षु से पूछा कि क्या वह सचमुच प्रेम में व्याकुल है? उसने कहा, हाँ, वह प्रेम में व्याकुल है। अगला प्रश्न था, "किसके लिए?" उसने कहा, "अपनी दिवंगत पत्नी के लिए।" गुरु ने कहा, "भिक्षु, यही स्त्री पहले दुष्ट थी और तुम्हें अपने प्रेमी का बचा हुआ मांस खिलाती थी।" फिर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व का जन्म एक गरीब परिवार में हुआ, जो भीख मांगकर जीवन यापन करता था। इसलिए जब वे बड़े हुए, तो वे जरूरतमंद और दयनीय स्थिति में थे, और भीख मांगकर ही उनका जीवन यापन होता था।

उस समय काशी के एक गाँव में एक ब्राह्मण रहता था जिसकी पत्नी दुष्ट और कुटिल थी। एक दिन पति किसी काम से बाहर चला गया, और उसका प्रेमी समय देखकर घर आया। पत्नी ने उससे मिलने के बाद कहा, "जाने से पहले थोड़ा खा लूँ।" पत्नी ने भोजन तैयार किया और गरमागरम चावल, चटनी और करी परोसकर उसे दिया और खाने के लिए कहा। वह स्वयं दरवाजे पर खड़ी ब्राह्मण के आने की प्रतीक्षा कर रही थी। प्रेमी भोजन कर रहा था, और बोधिसत्व भी भोजन के एक निवाले की प्रतीक्षा कर रहे थे।

उसी क्षण ब्राह्मण घर की ओर चल पड़ा। उसकी पत्नी ने उसे आते देखा और झट से दौड़कर अंदर आई—"उठो, मेरे पति आ रहे हैं!" और उसने अपने प्रेमी को भंडारगृह में नीचे भेजा। पति अंदर आया; पत्नी ने उसे बैठने के लिए जगह दी और हाथ धोने के लिए पानी दिया; और दूसरे के छोड़े हुए ठंडे चावलों पर उसने कुछ गर्म चावल निकाले और उसके सामने रख दिए। उसने चावलों में हाथ डाला और महसूस किया कि वे ऊपर से गर्म और नीचे से ठंडे हैं। "यह किसी और का बचा हुआ होगा," उसने सोचा; और इसलिए उसने स्त्री से इसके बारे में पहले श्लोक के शब्दों में पूछा:

"ऊपर से गर्म और नीचे से ठंडा, ऐसा लगता है कि ये दोनों चीजें एक जैसी नहीं हैं।"
मैं आपसे इसका कारण पूछना चाहता हूँ: आइए, मेरी महिला, मुझे उत्तर दीजिए!
उसने बार-बार पूछा, लेकिन वह, अपने किए का भेद खुल जाने के डर से, चुप रही। तभी हमारे जादूगर के मन में एक विचार आया। "भंडारघर में छिपा हुआ आदमी ज़रूर कोई प्रेमी होगा, और यह घर का मुखिया है: पत्नी अपने किए के भेद खुलने के डर से कुछ नहीं कह रही है। सोहो! मैं सारा मामला बताऊँगा, और ब्राह्मण को दिखाऊँगा कि उसके भंडारघर में एक आदमी छिपा हुआ है!" और उसने उसे सारा मामला बताया: कि कैसे जब वह अपने घर से बाहर गया था, तो कोई दूसरा अंदर आया और उसने बुराई की; कैसे उसने पहला चावल खाया, और पत्नी सड़क पर नज़र रखने के लिए दरवाजे पर खड़ी रही; और कैसे दूसरा आदमी भंडारघर में छिपा हुआ था। और ऐसा कहते हुए, उसने दूसरा श्लोक दोहराया:

"मैं एक कलाबाज हूँ, महोदय: मैं यहाँ भीख मांगने आया हूँ;
जिसे तुम ढूंढ रहे हो, वह भंडारगृह में छिपा हुआ है, जहाँ वह गया है!
उसने उस आदमी को चोटी से पकड़कर भंडारगृह से बाहर निकाला और चेतावनी दी कि वह दोबारा ऐसी गलती न करे; फिर वह चला गया। ब्राह्मण ने उन दोनों को खूब डांटा और पीटा, और उन्हें ऐसा सबक सिखाया कि वे दोबारा ऐसी गलती न करें। इसके बाद वह अपने कर्मों के फल के लिए इस दुनिया से विदा हो गया।

जब गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की और जन्म का वर्णन किया: सत्यों के समापन पर प्रेम में व्याकुल भाई (भिक्षु) प्रथम मार्ग के फल (सम्मोहन) तक पहुँचे: "तुम्हारी दिवंगत पत्नी उस समय ब्राह्मण की स्वामिनी थीं; तुम, प्रेम में व्याकुल भाई, स्वयं ब्राह्मण थे; और मैं तराशने वाला था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **भरु-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-213-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 213

भारु-जातक

"भारू का राजा," इत्यादि। यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए कोसल के राजा के बारे में सुनाई थी।

अब हम पढ़ते हैं कि भगवान बुद्ध और उनके साथियों को भव्य उपहार दिए गए और उनका बहुत सम्मान किया गया, जैसा कि लिखा है: 'उस समय भगवान बुद्ध का आदर और सम्मान किया जाता था, उन्हें बहुमूल्य उपहार - वस्त्र, भोजन, आवास, औषधियाँ और भोजन सामग्री - प्राप्त होते थे; और भिक्षु संघ का भी सम्मान किया जाता था, इत्यादि (पहले की तरह); लेकिन विधर्मी संप्रदायों के तीर्थयात्रियों का सम्मान नहीं किया जाता था, इत्यादि।' खैर, अन्य संप्रदायों (गलत विश्वासियों) ने यह देखकर कि सम्मान और उपहार कम हो गए हैं, विचार-विमर्श के लिए एक गुप्त बैठक बुलाई। उन्होंने कहा, "वरिष्ठ भिक्षु गौतम (बुद्ध) के प्रकट होने के बाद से, हमें सम्मान और उपहार नहीं मिलते, लेकिन उन्हें दोनों का सर्वोत्तम लाभ प्राप्त हुआ है।" उनकी इस सौभाग्य का कारण क्या हो सकता है?" तब उनमें से एक ने कहा, "वरिष्ठ भिक्षु गौतम (बुद्ध) पूरे भारत में सबसे उत्तम और सर्वोच्च स्थान पर निवास करते हैं, और यही उनकी सफलता का कारण है।" तब अन्य भिक्षुओं ने कहा, "यदि यही कारण है, तो हम जेतवन मठ के ऊपर एक प्रतिद्वंद्वी बस्ती बसाएंगे, और फिर हमें उपहार प्राप्त होंगे।" वे इसी निष्कर्ष पर पहुंचे।

लेकिन, उन्होंने सोचा, "अगर हम राजा को अपनी बस्ती के बारे में नहीं बताएंगे, तो भिक्षु हमें रोक देंगे। अगर वह कोई उपहार स्वीकार कर लेता है, तो वह उनकी बस्ती को तोड़ने से नहीं हिचकेगा। इसलिए बेहतर यही होगा कि हम उसे रिश्वत देकर अपनी बस्ती के लिए जगह प्राप्त कर लें।"

अतः दरबारियों के हस्तक्षेप से उन्होंने राजा को एक लाख सिक्के भेंट किए और साथ में यह संदेश भी दिया: "महाराज, हम जेतवन मठ में एक प्रतिद्वंद्वी बस्ती बसाना चाहते हैं। यदि भिक्षु आपसे कहें कि वे इसकी अनुमति नहीं देंगे, तो कृपया उन्हें कोई उत्तर न दें।" राजा रिश्वत के लालच में इस बात पर सहमत हो गए।

इस प्रकार राजा को प्रसन्न करने के बाद, योजनाकारों ने एक वास्तुकार को बुलाया और काम शुरू कर दिया। इस बात को लेकर काफी शोर-शराबा हुआ।

"आनंद, यह सब शोर-शराबा किस बात का है?" गुरु ने पूछा। "शोर," उसने कहा, "दूसरे संप्रदायों (गलत विश्वासियों) के कुछ लोग कर रहे हैं जो एक नई बस्ती बनवा रहे हैं।" "वह जगह उनके रहने के लिए ठीक नहीं है," उसने उत्तर दिया। "दूसरे संप्रदायों (गलत विश्वासियों) के ये लोग शोर-शराबा पसंद करते हैं; उनके साथ रहना संभव नहीं है।" फिर उन्होंने सभी शिष्यों को बुलाया और उनसे राजा को सूचित करने और निर्माण कार्य रुकवाने के लिए कहा।

भाई लोग महल के द्वार पर जाकर खड़े हो गए। राजा ने जैसे ही उनके आने की खबर सुनी, वह समझ गया कि वे नई बस्ती को रोकने के लिए आए होंगे। लेकिन उसे रिश्वत दी गई थी, इसलिए उसने अपने सेवकों को आदेश दिया कि वे कहें कि राजा घर पर नहीं है। भाई लोग वापस गए और गुरु को बताया। गुरु को समझ आ गया कि रिश्वत दी गई है, और उन्होंने अपने दो प्रमुख शिष्यों (*1) को भेजा। लेकिन राजा ने जैसे ही उनके आने की खबर सुनी, उसने पहले जैसा ही आदेश दिया; और वे भी वापस लौट आए और गुरु को बताया। गुरु ने कहा, "निस्संदेह राजा आज घर पर नहीं रह सकता; वह बाहर गया होगा।"

अगले दिन सुबह, उन्होंने वस्त्र धारण किए, अपना भिक्षापात्र और वस्त्र धारण किया, और पाँच सौ साथियों के साथ महल के द्वार तक गए। राजा ने उनके आने की आहट सुनी; वे ऊपरी मंजिल से नीचे उतरे, और बुद्ध से उनका भिक्षापात्र ले लिया। फिर उन्होंने उन्हें और उनके अनुयायियों को चावल और दलिया दिया, और प्रणाम करके एक तरफ बैठ गए।

गुरु ने राजा के लाभार्थ इन शब्दों से प्रवचन देना शुरू किया: "महाराज, बीते समय में अन्य राजाओं ने रिश्वत ली और फिर नेक लोगों को आपस में झगड़वाकर अपने राज्य से वंचित कर दिया और पूरी तरह से नष्ट हो गए।" और फिर, राजा के अनुरोध पर, गुरु ने एक प्राचीन कथा सुनाई।

एक समय की बात है, राजा भारु अपने राज्य भारु पर शासन कर रहे थे। उसी समय बोधिसत्व भिक्षुओं के एक समूह के गुरु थे। वे पंच अलौकिक शक्तियों और अष्टम सिद्धियों से संपन्न एक तपस्वी थे; और वे हिमालय क्षेत्र में दीर्घकाल व्यतीत करते रहे।

वह हिमालय से नमक और मसाले खरीदने के लिए नीचे आए, उनके पीछे पाँच सौ तपस्वी थे; और वे धीरे-धीरे भारू नगर पहुँचे। उन्होंने नगर में भिक्षा माँगी; और फिर नगर से निकलकर उत्तरी द्वार के पास, टहनियों और शाखाओं से ढके एक बरगद के वृक्ष की जड़ में बैठ गए। वहीं उन्होंने भोजन किया और वहीं निवास किया।

अब जब संन्यासियों का वह समूह वहाँ आधे महीने तक रहा, तो एक और गुरु पाँच सौ अन्य लोगों के साथ आए, जो नगर में भिक्षा माँगते फिर निकले और दक्षिणी द्वार के पास एक और बरगद के वृक्ष के नीचे बैठकर भोजन किया और वहीं रहने लगे। दोनों समूह वहाँ अपनी इच्छा अनुसार रहे और फिर हिमालय लौट गए।

उनके जाने के बाद, दक्षिणी द्वार के पास का पेड़ सूख गया। अगली बार, जो लोग उस पेड़ के नीचे रहते थे, वे पहले आए और यह देखकर कि उनका पेड़ सूख गया है, वे पहले पूरे शहर में भिक्षा मांगने के लिए घूमे और फिर उत्तरी द्वार से निकलकर उस द्वार के पास स्थित बरगद के पेड़ के नीचे भोजन किया और वहीं ठहरे। फिर दूसरा समूह बाद में आया और शहर में घूमकर अपना भोजन तैयार किया और अपने पेड़ के पास ही रहने लगा। "यह पेड़ तुम्हारा नहीं, हमारा है!" वे चिल्लाए और पेड़ को लेकर आपस में झगड़ने लगे। झगड़ा बढ़ गया: एक ने कहा - "वह जगह मत लो जहाँ हम पहले रहते थे!" और दूसरे ने कहा - "इस बार हम पहले आए हैं; तुम इसे मत लो!" इस प्रकार जोर-जोर से चिल्लाते हुए कि वह पेड़ उनका है, वे सब राजा के महल की ओर चल पड़े।

राजा ने आदेश दिया कि जो लोग पहले वहाँ रहे थे, वे ही उस वृक्ष के स्वामी रहेंगे। तब अन्य संन्यासियों ने सोचा—"हम यह नहीं कहेंगे कि हम इनसे पराजित हुए हैं!" तब उन्होंने दिव्य दृष्टि (*2) से चारों ओर देखा और सम्राट के उपयोग के योग्य रथ का ढाँचा देखकर उसे उठा लिया और राजा को भेंट करते हुए उनसे उस वृक्ष का अधिकार उन्हें भी देने की विनती की। राजा ने उनकी भेंट स्वीकार कर ली और आदेश दिया कि वे सभी उस वृक्ष के नीचे निवास करेंगे; और इस प्रकार वे सभी वहाँ एक साथ स्वामी बनकर रहे। तब अन्य संन्यासियों ने उसी रथ के रत्नजड़ित पहिए लाकर राजा को भेंट किए और उनसे प्रार्थना की, "हे महामहिम, इस वृक्ष का अधिकार केवल हमें ही दें!" और राजा ने ऐसा ही किया। तब संन्यासियों को पश्चाताप हुआ और उन्होंने कहा, "यह सोचना कितना बुरा है कि हम, जिन्होंने धन के लोभ और देह की वासना पर विजय प्राप्त कर ली है और संसार का त्याग कर दिया है, एक वृक्ष के कारण झगड़ा कर रहे हैं और उसके लिए रिश्वत दे रहे हैं! यह उचित नहीं है।" और वे शीघ्रता से हिमालय की ओर चल पड़े। भारु राज्य में रहने वाले सभी प्रेत, जिनमें एक खनिक भी शामिल था, राजा से क्रोधित हो गए और उन्होंने समुद्र को ऊपर उठा दिया, और तीन सौ मील (4.23 किमी) की दूरी तक भारु राज्य को मानो अस्तित्वहीन बना दिया। इस प्रकार भारु के राजा के कारण ही राज्य के सभी निवासी नष्ट हो गए।

जब गुरु ने यह कहानी समाप्त कर ली, तो अपनी पूर्ण बुद्धिमत्ता से उन्होंने निम्नलिखित श्लोक कहे:-

"पुरानी कथाओं के अनुसार, भारू का राजा,
एक दिन पवित्र संन्यासियों में झगड़ा हो गया:
इसी पाप के कारण वह मर गया।
और उसके साथ ही उसका सारा राज्य नष्ट हो गया।
"इसी कारण बुद्धिमान लोग इसे बिलकुल भी स्वीकार नहीं करते।"
जब वह इच्छा हृदय में उत्पन्न हुई।
जो छल से मुक्त है, जिसका हृदय शुद्ध है,
वह जो कुछ भी कहता है, वह सदा सत्य और निश्चित होता है।
जब गुरु ने यह कथा समाप्त की, तो उन्होंने आगे कहा, "महाराज, किसी को भी इच्छा के वश में नहीं होना चाहिए। दो धार्मिक व्यक्तियों को आपस में झगड़ा नहीं करना चाहिए।" फिर उन्होंने अपने जन्म का वर्णन करते हुए कहा, "उन दिनों मैं ऋषियों का नेता था।"

जब राजा ने बुद्ध का सत्कार कर उनके प्रस्थान कर दिया, तो राजा ने कुछ लोगों को भेजकर प्रतिद्वंद्वी बस्ती को नष्ट करवा दिया, और अन्य संप्रदायों (गलत विश्वासियों) के लोग तपस्वी बन गए।

फुटनोट:

(1)सारिपुत्र और मोग्गल्याना.

(2) अलौकिक शक्तियों में से एक

स्रोत : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित

पिछला <<<<-----||-214-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 214
पुन्ना-नाड़ी-जातक

"जो पी सकता है," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए पूर्ण ज्ञान के बारे में सुनाई थी।

एक बार भिक्षु (भाईचारे के सदस्य) सत्य के हॉल में एकत्रित होकर बुद्ध की बुद्धिमत्ता पर चर्चा कर रहे थे। "मित्र, परम बुद्ध की बुद्धिमत्ता महान, व्यापक, तीक्ष्ण, तीव्र, पारगम्य और संसाधनों से परिपूर्ण है।" गुरुजी अंदर आए और उन्होंने पूछा कि वे सब किस विषय पर चर्चा कर रहे हैं। उन्होंने गुरुजी को बताया। गुरुजी ने कहा, "बुद्ध केवल आज ही बुद्धिमान और संसाधन संपन्न नहीं हैं; वे अतीत में भी ऐसे ही थे।" फिर उन्होंने उन्हें एक कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व दरबारी पुजारी के पुत्र के रूप में इस संसार में आए। बड़े होकर उन्होंने तक्षशिला में अध्ययन किया; और अपने पिता की मृत्यु के बाद उन्हें पुजारी का पद प्राप्त हुआ, और वे राजा के मानवीय और दैवीय मामलों के सलाहकार थे।

इसके बाद राजा ने कुछ षड्यंत्रकारियों की बातें सुनीं और क्रोधित होकर बोधिसत्व को अपने सामने फिर कभी न रहने का आदेश दिया और उन्हें बनारस से विदा कर दिया। तब वे अपनी पत्नी और परिवार को साथ लेकर काशी के एक गाँव में रहने लगे। बाद में राजा को अपने इस अच्छे कार्य का स्मरण हुआ और उन्होंने मन ही मन कहा:

"यह उचित नहीं है कि मैं अपने गुरु को बुलाने के लिए किसी दूत को भेजूँ। मैं एक कविता लिखूँगा और उसे एक पत्ते पर लिखूँगा; मैं कौवे का मांस पकाऊँगा; और पत्र और मांस को एक सफेद कपड़े में बाँधकर, उस पर राजा की मुहर लगाऊँगा और उसे उनके पास भेज दूँगा। यदि वह बुद्धिमान हैं, तो पत्र पढ़कर और यह देखकर कि यह कौवे का मांस है, वे आएँगे; यदि नहीं, तो वे नहीं आएँगे।" और इस प्रकार उन्होंने पत्ते पर यह छंद लिखा:

जो नदियों में बाढ़ आने पर भी पानी पी सकता है;
वह चीज जिसे अनाज ढककर आंखों से ओझल कर देगा;
वह जो राहगीर के लिए भविष्य की भविष्यवाणी करता है
हे ज्ञानी, खाओ! मेरी पहेली सही ढंग से पढ़ी गई है।
राजा ने यह श्लोक एक पत्ते पर लिखा और बोधिसत्व को भेज दिया। उन्होंने पत्र पढ़ा और यह सोचकर कि "राजा मुझसे मिलना चाहते हैं", उन्होंने दूसरा श्लोक दोहराया:

"राजा मुझे कौआ भेजना नहीं भूलता।"
वहां हंस, बगुले, मोर और अन्य पक्षी भी पाए जाते हैं:
अगर वह एक देगा तो बाकी भी दे देगा, मुझे पता है;
अगर उसने किसी को भी नहीं भेजा तो स्थिति कहीं ज्यादा खराब थी।
फिर उसने अपना वाहन तैयार करवाया और जाकर राजा से मिला। राजा उससे प्रसन्न हुआ और उसे फिर से राजा के पुरोहित के पद पर नियुक्त कर दिया।

यह प्रवचन समाप्त होने पर, गुरु ने जन्म का वर्णन किया: "उन दिनों आनंद राजा थे, और मैं उनका पुरोहित था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कच्छप-जातक2**

स्रोत : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित

पिछला <<<<-----||-215-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 215
कच्छपा-जातक

"कछुए को बोलना ही पड़ता है," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए कोकालिका के बारे में सुनाई थी। इस कहानी के घटित होने की परिस्थितियों का वर्णन महातक्कारी जन्म (*1) के अंतर्गत किया जाएगा। यहाँ गुरु ने फिर कहा: "हे भिक्षुओं, यह एकमात्र समय नहीं है जब कोकालिका बोलने के कारण बर्बाद हुई है; पहले भी ऐसा ही हुआ था।" और फिर उन्होंने कहानी इस प्रकार सुनाई।

एक समय की बात है, ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे। बोधिसत्व राजा के दरबार में जन्मे थे और बड़े होकर राजा के सांसारिक और आध्यात्मिक मामलों के सलाहकार बन गए। लेकिन राजा बहुत बातूनी थे; और जब वे बोलते थे तो किसी और को बोलने का मौका ही नहीं मिलता था। बोधिसत्व उनकी इस अत्यधिक बोलने की आदत को रोकने के लिए अवसर की प्रतीक्षा करते रहे।

हिमालय क्षेत्र में एक तालाब में एक कछुआ रहता था।

भोजन की तलाश में निकले दो जंगली हंसों की उससे मुलाकात हुई और धीरे-धीरे वे घनिष्ठ मित्र बन गए। एक दिन उन दोनों ने उससे कहा: "मित्र कछुए, हिमालय में, चित्तकुटा पर्वत के पठार पर, सोने की गुफा में हमारा एक सुंदर घर है! क्या तुम हमारे साथ चलोगे?"

उसने कहा, "क्यों, मैं वहां कैसे पहुंच सकता हूँ?"

"ओह, हम तुम्हें ले जाएंगे, बस शर्त यह है कि तुम अपना मुंह बंद रखो और किसी से एक शब्द भी मत बोलो।"

"हाँ, मैं यह कर सकता हूँ," वह कहता है; "मुझे भी साथ ले चलो!"

इसलिए उन्होंने कछुए को अपने दांतों के बीच एक छड़ी पकड़ने के लिए कहा; और स्वयं छड़ी के दोनों सिरों को पकड़कर वे हवा में उछल पड़े।

गांव के बच्चों ने यह देखा और हैरानी से बोले—"दो हंस एक कछुए को छड़ी से उठाकर ले जा रहे हैं!"

(तब तक हंस तेजी से उड़ते हुए बनारस में राजा के महल के ऊपर पहुँच चुके थे।) कछुआ चीखना चाहता था--

"अच्छा, और अगर मेरे दोस्त मुझे उठा ले जाएं, तो इससे तुम्हें क्या लेना-देना, बेवकूफों?"—और उसने अपने दांतों के बीच से छड़ी छोड़ दी, और खुले आंगन में गिरकर दो टुकड़ों में बंट गया। कितना शोर मच गया! "एक कछुआ आंगन में गिर गया है, और दो टुकड़ों में टूट गया है!" वे चिल्लाए। राजा, बोधिसत्व और अपने सभी दरबारियों के साथ वहां पहुंचे, और कछुए को देखकर बोधिसत्व से एक प्रश्न पूछा। "हे ज्ञानी, यह प्राणी कैसे गिरा?"

"अब मेरा समय आ गया है!" उसने सोचा। "काफी समय से मैं राजा को सलाह देना चाहता था और अवसर की तलाश में घूमता रहा। निस्संदेह सच्चाई यह है: कछुआ और हंस मित्र बन गए; हंस उसे हिमालय ले जाना चाहते होंगे, इसलिए उन्होंने उसके दांतों के बीच एक छड़ी पकड़वाई और उसे हवा में उठा लिया; फिर उसने कोई बात सुनी होगी और जवाब देना चाहा होगा; और अपना मुंह बंद न रख पाने के कारण उसने खुद को छोड़ दिया होगा; और इस तरह वह आकाश से गिर गया और उसकी मृत्यु हो गई।" उसने ऐसा सोचा; और राजा को संबोधित करते हुए कहा: "हे राजा, जो लोग बहुत अधिक बोलते हैं, जो अपनी बातों पर कोई सीमा नहीं रखते, उनका हमेशा ऐसा ही दुर्भाग्य होता है;" और उसने निम्नलिखित छंद कहे:-

कछुए को जोर से बोलना ही होगा।
हालाँकि उसके दांतों के बीच
उसने एक छड़ी को काटा: फिर भी, इसके बावजूद,

उसने बात की और नीचे गिर गया।
और अब, हे सर्वशक्तिमान स्वामी, इसे अच्छी तरह जान लो।
आप समझदारी से बोलें, समय रहते बोलें।
कछुआ गिरकर मर गया:
वह बहुत ज्यादा बोलता था: यही वजह थी।
"वह मेरे बारे में बात कर रहा है!" राजा ने मन ही मन सोचा; और बोधिसत्व से पूछा कि क्या ऐसा ही है।

"हे महान राजा, चाहे आप हों या कोई और," उसने उत्तर दिया, "जो भी हद से ज्यादा बोलता है, उसे इस तरह की किसी न किसी विपत्ति का सामना करना पड़ता है।" और इस प्रकार उसने बात स्पष्ट कर दी। तब से राजा ने बोलना बंद कर दिया और कम बोलने वाला बन गया।

यह प्रवचन समाप्त होने पर, गुरु ने जन्म का वर्णन किया: "उस समय कोकालिका कछुआ थीं, दो प्रसिद्ध बुजुर्ग दो जंगली हंस थे, आनंद राजा थे, और मैं उनका बुद्धिमान सलाहकार था।"

फुटनोट:

(1)तकरिया-जातक, संख्या 481.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **मच्छ-जातक**3
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-216-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 216
मच्छा-जातक

"यह आग नहीं है," इत्यादि — यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में प्रवास के दौरान सुनाई थी, एक ऐसे भिक्षु के बारे में जो अपनी पूर्व पत्नी के लिए तड़प रहा था। गुरु ने उस भिक्षु से पूछा, "भाई, क्या यह सच है जो मैंने सुना है कि तुम प्रेम में व्याकुल हो?" "जी हाँ।" "किसके लिए?" "अपनी दिवंगत पत्नी के लिए।" तब गुरु ने उससे कहा, "भाई, यही पत्नी तुम्हारे लिए मुसीबत का सबब बनी है। बहुत समय पहले उसी के कारण तुम लगभग भूनकर खाए जाने वाले थे, लेकिन बुद्धिमान लोगों ने तुम्हारी जान बचाई।" फिर उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व उनके पुरोहित थे। कुछ मछुआरे अपने जाल में फंसी एक मछली को निकालकर गर्म रेत पर फेंकते हुए बोले, "हम इसे अंगारों में पकाकर खाएंगे।" तो उन्होंने एक सींक को तेज किया। और मछली अपने साथी को देखकर रोने लगी और ये दो श्लोक कहे:

"मुझे आग नहीं जलाती, न ही सींक मुझे पीड़ा देती है;
लेकिन मुझे यह सोचकर डर लगता है कि कहीं मेरा साथी मुझे बेवफा प्रेमी न कह दे।
"यह प्रेम की लौ है जो मुझे जलाती है, और मेरे दिल को दर्द से भर देती है।"
प्रेम करने का फल मृत्यु नहीं है; हे मछुआरों, मुझे फिर से मुक्त करो!
उसी क्षण बोधिसत्व नदी के किनारे पहुंचे; और मछली की आवाज सुनकर वे मछुआरों के पास गए और उनसे मछली को मुक्त करने के लिए कहा।

यह प्रवचन समाप्त होने पर, गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के समापन पर प्रेम में व्याकुल भाई (भिक्षु) प्रथम मार्ग (समाधि) के फल तक पहुँच गया: "उन दिनों पत्नी मछली की साथी थी, प्रेम में व्याकुल भाई मछली था, और मैं स्वयं पुजारी था।"

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सेग्गु-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-217-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 217
सेगु-जातक

"सारा संसार सुख-सुविधाओं में लिप्त है," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक सब्जी विक्रेता के बारे में सुनाई थी, जो उनका गृहस्थ (शिष्य) था।

ये घटनाएँ प्रथम पुस्तक (*1) में पहले ही बताई जा चुकी हैं। यहाँ गुरु ने उससे फिर पूछा कि वह इतने दिनों से कहाँ था; और उसने उत्तर दिया, "मेरी बेटी, महोदय, हमेशा मुस्कुराती रहती है। उसकी परीक्षा लेने के बाद, मैंने उसका विवाह एक युवक से कर दिया। ऐसा करना आवश्यक था, इसलिए मुझे आपसे मिलने का अवसर नहीं मिला।" इस पर गुरु ने उत्तर दिया, "तुम्हारी बेटी न केवल अब गुणी है, बल्कि अतीत में भी गुणी थी; और जिस प्रकार तुमने अब उसकी परीक्षा ली है, उसी प्रकार तुमने उन दिनों में भी उसकी परीक्षा ली थी।" और उस व्यक्ति के अनुरोध पर उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व एक वृक्ष-आत्मा थे।

इसी धर्मनिष्ठ सब्जी विक्रेता ने अपनी बेटी की परीक्षा लेने का निश्चय किया। वह उसे जंगल में ले गया और उसका हाथ पकड़ लिया, मानो उसे उससे प्रेम हो गया हो। जब वह दर्द से कराह उठी, तो उसने उससे पहले श्लोक के शब्दों में कहा:-

"सारा संसार सुख-सुविधाओं में डूबा हुआ है;"
आह, मेरा नन्हा-सा मासूम बच्चा!
अब मैंने तुम्हें पकड़ लिया है, मेरी विनती है, रोना मत;
शहर जैसा करता है, मैं भी वैसा ही करता हूं।
यह सुनकर उसने उत्तर दिया, "प्रिय पिता, मैं कुंवारी हूँ, और मुझे पाप के मार्ग नहीं पता हैं," और रोते हुए उसने दूसरा छंद कहा:-

जो मुझे हर तरह के कष्ट से सुरक्षित रखेगा,
यही बात मुझे मेरे अकेलेपन में धोखा देती है;
मेरे पिता, जो मेरे सबसे बड़े रक्षक होने चाहिए,
यहां जंगल में हिंसा का माहौल है।"
और फल-सब्जी बेचने वाले ने अपनी बेटी की इस प्रकार परीक्षा लेने के बाद उसे घर ले जाकर एक युवक से उसका विवाह करा दिया। बाद में अपने कर्मों के फलस्वरूप ही उसका निधन हो गया।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के अंत में सब्जी विक्रेता प्रथम मार्ग के फल (समाधि) में प्रवेश कर गया: "उन दिनों, पिता और पुत्री अब की तरह खर्राटे ले रहे थे, और वह वृक्ष-आत्मा जिसने यह सब देखा, वह मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)सं. 102, पन्निका-जातक.

***स्रोत**: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-218-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 218
कुटा-वनिजा-जातक

"वाह, क्या बढ़िया योजना थी!" इत्यादि। यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक बेईमान व्यापारी के बारे में सुनाई थी।

श्रावस्ती नगर में दो व्यापारी थे, एक धर्मनिष्ठ और दूसरा बेईमान। इन दोनों ने साझेदारी की और पाँच सौ वैगनों में माल भरकर पूर्व से पश्चिम की ओर व्यापार यात्रा की; और भारी लाभ कमाकर श्रावस्ती नगर लौट आए।

धर्मनिष्ठ व्यापारी ने अपने साथी को सुझाव दिया कि वे अपना भंडार आपस में बाँट लें। धूर्त व्यापारी ने मन ही मन सोचा, "यह आदमी तो बहुत दिनों से खराब खान-पान और रहने की जगह में जी रहा है। अब जब वह घर वापस आ गया है, तो वह तरह-तरह के स्वादिष्ट भोजन खाएगा और अधिक खाने से मर जाएगा। तब सारा भंडार मेरा हो जाएगा।" उसने कहा, "न तो सितारे अनुकूल हैं और न ही दिन; कल या परसों देखेंगे।" वह बार-बार यही कहता रहा। हालाँकि, धर्मनिष्ठ व्यापारी ने उस पर दबाव डाला और अंततः भंडार बाँट लिया गया। फिर वह सुगंध और मालाएँ लेकर गुरु से मिलने गया; और आदरपूर्वक प्रणाम करने के बाद, वह एक तरफ बैठ गया। गुरु ने पूछा कि वह कब लौटा। "महोदय, बस दो सप्ताह पहले।" व्यापारी ने बताया, "तो फिर बुद्ध से मिलने में इतनी देर क्यों कर दी?" तब गुरु ने कहा, "तुम्हारा साथी अब ही धूर्त नहीं है; वह पहले भी ऐसा ही था।" और उसके अनुरोध पर उन्होंने उसे एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व राजा के दरबार में एक व्यक्ति के पुत्र के रूप में इस दुनिया में आए। बड़े होकर उन्हें न्यायधीश बनाया गया।

उस समय, दो व्यापारी, एक गाँव का और एक शहर का, आपस में मित्र थे। गाँव वाले ने शहर वाले के पास पाँच सौ हल के फाल जमा कर दिए। दूसरे ने उन्हें बेच दिया और कीमत अपने पास रख ली, और जहाँ फाल रखे थे, वहाँ उसने चूहे चिपका दिए। कुछ समय बाद गाँव वाला आया और अपना फाल माँगने लगा। "चूहों ने उन्हें खा लिया है!" धोखेबाज ने कहा और अपने ऊपर चिपके चूहे की ओर इशारा किया।

"अच्छा, अच्छा, तो ठीक है," दूसरे ने जवाब दिया: "चूहों द्वारा खाई गई चीजों का क्या किया जा सकता है?"

स्नान करते समय उसने दूसरे व्यापारी के बेटे को अपने मित्र के घर के भीतरी कमरे में बिठाया और उनसे विनती की कि उसे कहीं बाहर न जाने दें। स्नान करने के बाद वह अपने मित्र के घर लौट गया।

"मेरा बेटा कहाँ है?" धोखेबाज ने पूछा।

"प्रिय मित्र," उसने उत्तर दिया, "मैं उसे अपने साथ ले गया और नदी किनारे छोड़ दिया; और जब मैं पानी में उतर गया, तभी एक बाज़ आया और उसने अपने फैले हुए पंजों में तुम्हारे बेटे को पकड़ लिया और हवा में उड़ गया। मैंने पानी में हाथ-पैर मारे, चिल्लाया, संघर्ष किया—पर उसे छुड़ा नहीं सका।"

"झूठ!" बदमाश चिल्लाया। "कोई बाज किसी लड़के को उठाकर नहीं ले जा सकता।"

"रहने दो, प्रिय मित्र: अगर कुछ ऐसा हो जाए जो नहीं होना चाहिए, तो मैं क्या कर सकता हूँ? जैसा कि मैंने कहा, तुम्हारे बेटे को एक बाज उठा ले गया है।"

दूसरे ने उसे अपशब्द कहे। "अरे, बदमाश! हत्यारे! अब मैं तुम्हें न्यायाधीश के पास ले जाऊँगा और उसके सामने घसीटकर ले जाऊँगा!" और वह चला गया। ग्रामीण ने कहा, "जैसी आपकी मर्ज़ी," और न्याय अदालत की ओर चल पड़ा। उस बदमाश ने बोधिसत्व को इस प्रकार संबोधित किया-

"महोदया, इस व्यक्ति ने मेरे बेटे को अपने साथ स्नान कराने के लिए ले गया, और जब मैंने उससे पूछा कि वह कहाँ है, तो उसने उत्तर दिया कि एक बाज़ उसे उड़ा ले गया है। कृपया मेरे मामले का न्याय करें!"

"सच बताओ," बोधिसत्व ने दूसरे से पूछा।

"जी हां, मेरे स्वामी," उसने उत्तर दिया, "मैं उसे अपने साथ ले गया था, और एक बाज़ उसे उड़ा ले गया है।"

"लेकिन दुनिया में ऐसे बाज कहां हैं जो लड़कों को उठाकर ले जाते हैं?"

“मेरे स्वामी,” उसने उत्तर दिया, “मुझे आपसे एक प्रश्न पूछना है। यदि बाज़ लड़कों को हवा में नहीं उड़ा सकते, तो क्या चूहे लोहे के हल खा सकते हैं?”

"तुम्हारा इससे क्या मतलब है?"

"महामहिम, मैंने इस आदमी के घर में पाँच सौ हल रखे थे। उस आदमी ने मुझे बताया कि चूहों ने उन्हें खा लिया है, और उसने मुझे उन चूहों की बीट भी दिखाई जिन्होंने ऐसा किया था। महाराज, अगर चूहे हल खा सकते हैं, तो बाज़ लड़कों को उठा ले जाते हैं: लेकिन अगर चूहे ऐसा नहीं कर सकते, तो बाज़ लड़के को भी नहीं उठा ले जाएँगे। यह आदमी कहता है कि चूहों ने मेरे हल खा लिए हैं। फैसला सुनाइए कि क्या उन्हें खाया गया है या मेरे मामले का फैसला कीजिए!"

बोधिसत्व ने सोचा, "उसका इरादा धोखेबाज से उसी के हथियारों से लड़ने का रहा होगा। - बढ़िया योजना!" उसने कहा, और फिर उसने ये दो श्लोक कहे:-

"बेहद सुनियोजित! काटने वाले ने काट लिया।"
चालबाज ने ही चालबाजी कर दी—काफी सफल रहा!
अगर चूहे हल खा जाएं तो बाज उड़ सकते हैं।
लड़के आसमान में उड़ गए!
"जैसे को तैसा करके बदमाश को मात दी गई!"
हल वापस कर दो, और उसके बाद
शायद वह आदमी जिसने हल खो दिया
मैं अब आपके बेटे को आपको वापस दे सकता हूँ!

इस प्रकार जिसने अपना पुत्र खो दिया था, उसे वह फिर से मिल गया, और उसने अपना खोया हुआ हल भी वापस पा लिया; और उसके बाद दोनों अपने कर्मों के अनुसार फल भोगने के लिए इस दुनिया से चले गए।

जब यह प्रवचन समाप्त हुआ, तो गुरु ने जन्म की पहचान बताई: "दोनों मामलों में धोखेबाज एक ही था, और चालाक आदमी भी एक ही था; मैं स्वयं मुख्य न्यायाधीश था।"

फुटनोट:

(1) चूहों या गिलहरियों द्वारा कुतरी गई वस्तुएँ अशुभ मानी जाती थीं; तुलना करें खंड 1, पृष्ठ 372 (पाली), तेविज्जा-सुत्त महाशिलम i (एसबीई, बौद्ध सुत्त, पृष्ठ 196 में अनुवादित)। यहाँ व्यक्ति आवश्यकता से अधिक विस्तार से बता रहा है; यदि चूहों ने हल के फालों को केवल कुतरा होता तो शायद वह उन्हें फेंक देता।--हमें ग्रीक और लैटिन दोनों में पाई जाने वाली एक पुरानी कहावत का भी संदर्भ मिल सकता है: "जहाँ चूहे लोहा खाते हैं" का अर्थ "कहीं नहीं" था। हेरोंडास 3. 76 oyd' okoy xures oi mus omoius ton sideron trugoysin. सेनेका, अपोकोलोसिंटोसिस अध्याय 7 (स्वर्ग में क्लॉडियस को) venisti huc ubi mures ferrum rodunt.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **गार्हित-जातक**

***स्रोत** : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-219-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 219
गरहिता-जातक

"सोना मेरा है," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक ऐसे भिक्षु के बारे में सुनाई थी जो उदास और असंतुष्ट था।

यह व्यक्ति किसी एक वस्तु पर अपना ध्यान केंद्रित नहीं कर पाता था, उसका जीवन पूरी तरह असंतोष से भरा हुआ था; और यह बात उसने गुरु को बताई। जब गुरु ने उससे पूछा कि क्या वह सचमुच असंतुष्ट है, तो उसने हाँ कहा; जब उससे पूछा गया कि क्यों, तो उसने उत्तर दिया! "हे भाई!" गुरु ने कहा, "इस वासना को तो निम्न स्तर के प्राणी भी तुच्छ समझते हैं; और क्या तुम, ऐसे उपदेशों के ज्ञाता, उस वासना से उत्पन्न असंतोष के आगे झुक सकते हो जिसे पशु भी तुच्छ समझते हैं?" तब उन्होंने उसे एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब हिमालय क्षेत्र में बोधिसत्व बंदर के रूप में पैदा हुए। एक वनवासी ने उन्हें पकड़ लिया, घर ले आया और राजा को सौंप दिया। वे लंबे समय तक राजा के साथ रहे, उनकी निष्ठापूर्वक सेवा करते रहे और उन्होंने मनुष्य जगत के रीति-रिवाजों के बारे में बहुत कुछ सीखा। राजा उनकी निष्ठा से प्रसन्न हुए। उन्होंने वनवासी को बुलवाया और उनसे कहा कि वे बंदर को उसी स्थान पर मुक्त कर दें जहाँ से उन्हें पकड़ा गया था; और उन्होंने ऐसा ही किया।

सभी वानर एक विशाल चट्टान पर एकत्रित हो गए, ताकि बोधिसत्व को देख सकें क्योंकि वह उनके पास लौट आए थे; और उन्होंने उनसे प्रसन्नतापूर्वक बातें कीं।

"सर, आप इतने लंबे समय से कहाँ रह रहे थे?"

"बनारस में राजा के महल में।"

"तो फिर तुम आज़ाद कैसे हुए?"

"राजा ने मुझे अपना पालतू बंदर बना लिया, और मेरी करतूतों से प्रसन्न होकर उसने मुझे जाने दिया।"

बंदरों ने आगे कहा—"तुम्हें तो मनुष्यों की दुनिया में रहने का तरीका पता ही होगा: हमें भी इसके बारे में बताओ—हम सुनना चाहते हैं!"

बोधिसत्व ने कहा, "मुझसे मनुष्यों के रहन-सहन के बारे में मत पूछो।" उन्होंने फिर कहा, "बताओ—हम सुनना चाहते हैं!"

उन्होंने कहा, "मनुष्य, चाहे राजकुमार हों या ब्राह्मण, पुकारते हैं—'मेरा! मेरा!' वे अनित्यता को नहीं जानते, जिसके कारण ये वस्तुएँ अस्तित्वहीन हैं। अब इन अंधे मूर्खों का मार्ग सुनो;" और उन्होंने ये श्लोक कहे:

"यह सोना मेरा है, यह कीमती सोना मेरा है!" वे दिन-रात यही चिल्लाते रहते हैं:
ये मूर्ख लोग पवित्र मार्ग की ओर कभी दृष्टि भी नहीं डालते।
"घर में दो मालिक हैं; एक की दाढ़ी नहीं है।"
लेकिन उसके स्तन लंबे हैं, कान छिदे हुए हैं और वह गुंथे हुए बालों के साथ रहती है;
उसकी कीमत अनगिनत सोने में बताई जाती है; वह वहां के सभी लोगों को परेशान करता है।"

यह सुनकर सभी बंदर चिल्ला उठे—"रुको, रुको! हमने कुछ ऐसा सुन लिया है जो सुनना ठीक नहीं है!" और उन्होंने अपने दोनों हाथों से अपने कान कसकर बंद कर लिए। उन्हें वह जगह पसंद नहीं आई, क्योंकि उन्होंने कहा, "हमने यहाँ कुछ ऐसा सुना है जो उचित नहीं है;" इसलिए वे दूसरी जगह चले गए। और इस चट्टान का नाम गराहितपित्थी चट्टान या निंदा की चट्टान पड़ गया।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के समापन पर इस भाई (भिक्षु) ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) का फल प्राप्त किया: "बुद्ध के वर्तमान अनुयायी बंदरों का वह झुंड थे, और उनका मुखिया मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **धम्मद्धाज-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-220-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 220 (*1)
धम्मद्धज-जातक

“तुम ऐसे दिखते हो जैसे,” इत्यादि—यह बात गुरु ने बाँस के जंगल में रहते हुए अपने ऊपर हुए जानलेवा हमलों के बारे में कही थी। इस बार भी, पहले की तरह, गुरु ने कहा, “देवदत्त ने मुझे जान से मारने की कोशिश की है और मुझे ज़रा भी डराया नहीं है। उसने पहले भी ऐसा ही किया था।” और उन्होंने यह कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, बनारस में यशपानी नामक एक महान राजा का शासन था। उनके मुख्य सेनापति का नाम कालका था। उस समय बोधिसत्व उनके पुरोहित थे, जिनका नाम धम्मद्धजा था, यानी धर्म का ध्वजवाहक। राजा के आभूषण बनाने वाला एक व्यक्ति चट्टापानी भी था। राजा एक कुशल राजा थे, लेकिन उनके मुख्य सेनापति मुकदमों के निपटारे में रिश्वत लेते थे; वे चुगली करते थे; रिश्वत लेकर वे वास्तविक मालिकों को धोखा देते थे।

एक दिन, एक व्यक्ति जो अपना मुकदमा हार गया था, दरबार से रोते हुए और बाहें फैलाते हुए जा रहा था, तभी उसकी मुलाकात बोधिसत्व से हुई जो राजा को अपनी सेवा अर्पित करने जा रहे थे। उनके चरणों में गिरकर, उस व्यक्ति ने रोते हुए बताया कि कैसे वह अपने मामले में पराजित हुआ: "हे स्वामी, यद्यपि आप जैसे लोग राजा को इस लोक और परलोक के नियमों का ज्ञान देते हैं, फिर भी सेनापति रिश्वत लेता है और वास्तविक मालिकों को धोखा देता है!"

बोधिसत्व को उस पर दया आ गई। उन्होंने कहा, "आओ, मेरे भले, मैं तुम्हारे मामले का फैसला तुम्हारे लिए करूँगा!" और वह अदालत की ओर चल पड़ा। वहाँ एक बड़ी भीड़ जमा थी। बोधिसत्व ने फैसला पलट दिया और न्यायसंगत व्यक्ति के पक्ष में निर्णय सुनाया। दर्शकों ने तालियाँ बजाईं। शोर बहुत तेज़ था। राजा ने यह सुना और पूछा, "यह कैसी आवाज़ है जो मैं सुन रहा हूँ?"

उन्होंने उत्तर दिया, "मेरे स्वामी राजा, यह एक ऐसा मामला था जिसका गलत मूल्यांकन किया गया था, लेकिन बुद्धिमान धम्मद्धजा ने इसका सही मूल्यांकन किया है; इसीलिए तालियों की यह गड़गड़ाहट हो रही है।"

राजा प्रसन्न हुए और बोधिसत्व को बुलवाया। उन्होंने कहना शुरू किया, "मुझे बताया गया है कि आपने एक मामले का फैसला किया है?"

"जी हां, महाराज, मैंने उस बात का फैसला कर लिया है जिसका फैसला कालका ने ठीक से नहीं किया था।"

राजा ने कहा, "आज से आप ही न्याय करें; यह मेरे लिए आनंददायक होगा और संसार के लिए समृद्धि लाएगा!" वह अनिच्छुक था, लेकिन राजा ने उससे विनती की—"सभी प्राणियों पर दया करते हुए, आप ही न्याय करें!" और इस प्रकार राजा ने उसकी सहमति प्राप्त कर ली।

उस समय से कालका को कोई उपहार नहीं मिला; और अपनी सारी संपत्ति खोकर उसने राजा के सामने बोधिसत्व की निंदा करते हुए कहा, "हे महामहिम, बुद्धिमान धम्मद्धजा आपके राज्य पर अधिकार करना चाहते हैं!" लेकिन राजा ने उसकी बात पर विश्वास नहीं किया और उसे ऐसा न कहने के लिए कहा।

"अगर तुम्हें मेरी बात पर यकीन नहीं है," कलाका ने कहा, "उसके आने के समय खिड़की से बाहर देखो। तब तुम्हें पता चलेगा कि उसने पूरे शहर को अपने कब्जे में ले लिया है।"

राजा ने अपने न्याय कक्ष में अपने चारों ओर जमा भीड़ को देखा। उसने सोचा, "ये रहे उसके सेवकों का दल।" उसने रास्ता देते हुए पूछा, "सेनापति, अब हम क्या करें?"

"मेरे स्वामी, उसे मृत्युदंड दिया जाना चाहिए।"

"बिना किसी गंभीर अपराध में लिप्त पाए जाने के हम उसे मौत की सजा कैसे दे सकते हैं?"

"एक रास्ता है," दूसरे ने कहा।

"क्या तरीका है?"

"उसे वह करने को कहो जो असंभव है, और यदि वह ऐसा नहीं कर सकता, तो उसे इसके लिए मौत की सजा दे दो।"

लेकिन उसके लिए क्या असंभव है?

“महाराज,” उसने उत्तर दिया, “अच्छी मिट्टी वाले बगीचे को फल देने में दो या दो साल लगते हैं, जब उसमें पौधे लगाए जाते हैं और उनकी देखभाल की जाती है। आप उसे बुलवाएं और कहें—‘हमें कल मौज-मस्ती करने के लिए एक बगीचा चाहिए। हमारे लिए एक बगीचा बना दीजिए!’ वह ऐसा नहीं कर पाएगा; और हम इस गलती के लिए उसे मार डालेंगे।”

राजा ने बोधिसत्व से कहा, "हे ज्ञानी महोदय, हम अपने पुराने उद्यान में बहुत समय बिता चुके हैं; अब हम एक नए उद्यान में आनंद लेना चाहते हैं। हमारे लिए एक उद्यान बना दीजिए! यदि आप इसे नहीं बना सकते, तो आपको मरना होगा।"

बोधिसत्व ने सोचा, "ज़रूर कालका ने राजा को मेरे विरुद्ध भड़काया होगा, क्योंकि उसे कोई उपहार नहीं मिल रहा है। अगर मैं कर सकूँ," उन्होंने राजा से कहा, "हे महामहिम, मैं इसका ध्यान रखूँगा।" और वे घर चले गए। भरपेट भोजन करने के बाद वे अपने पलंग पर लेटकर सोचने लगे। सक्का (इंद्र) का महल गर्म हो गया (*2)। सक्का (इंद्र) ने दूरदर्शिता से बोधिसत्व की परेशानी को भाँप लिया। वे शीघ्रता से उनके पास पहुँचे, उनके कक्ष में प्रवेश किया और उनसे पूछा, "हे ज्ञानी, आप क्या सोच रहे हैं?" - वे दोनों हवा में ही खड़े रहे।

बोधिसत्व ने पूछा, "तुम कौन हो?"

मैं सक्का (इंद्र) हूँ।

"राजा ने मुझे एक बगीचा बनाने के लिए कहा है: मैं इसी बारे में सोच रहा हूँ।"

"हे ज्ञानी महोदय, चिंता न करें: मैं आपके लिए नंदना और चित्तलता के उपवनों के समान एक उद्यान बनाऊंगा! मैं इसे किस स्थान पर बनाऊं?"

"फलां-फलां स्थान पर," उसने उसे बताया। सक्का (इंद्र) ने उसे बनाया और देवताओं (देवदूतों) के नगर में लौट आया।

अगले दिन, बोधिसत्व ने वहाँ सचमुच में बगीचा देखा और राजा की उपस्थिति की प्रतीक्षा की। "हे राजा, बगीचा तैयार है: आप अपने खेल का आनंद लें!"

राजा उस स्थान पर आया और उसने अठारह भुजाओं की लाल रंग की बाड़ से घिरा एक बगीचा देखा, जिसमें द्वार और तालाब थे, और वह बगीचा फूलों और फलों से लदे विभिन्न प्रकार के वृक्षों से सुशोभित था! उसने कालका से कहा, "ऋषि ने मेरा अनुरोध पूरा कर दिया है: अब हम क्या करें?"

"हे शक्तिशाली राजा!" उसने उत्तर दिया, "यदि वह एक रात में बाग बना सकता है, तो क्या वह आपके राज्य पर कब्जा नहीं कर सकता?"

"तो अब हम क्या करें?"

"हम उससे एक और असंभव काम करवाएंगे।"

"यह क्या है?" राजा ने पूछा।

हम उनसे प्रार्थना करेंगे कि वे सात अनमोल रत्नों से युक्त एक झील का निर्माण करें!

राजा सहमत हो गया और उसने बोधिसत्व को संबोधित किया:

"गुरुजी, आपने एक उद्यान बनाया है। अब इसके अनुरूप सात अनमोल रत्नों से सुसज्जित एक झील बनाइए। यदि आप इसे नहीं बना सकते, तो आप जीवित नहीं रहेंगे!"

"बहुत अच्छा, महान राजा," बोधिसत्व ने उत्तर दिया, "यदि संभव हुआ तो मैं अवश्य आऊंगा।"

तब इंद्र ने एक अत्यंत भव्य झील का निर्माण किया, जिसमें सौ घाटियाँ और एक हजार खाड़ियाँ थीं, और वह पाँच अलग-अलग रंगों के कमलों से ढकी हुई थी, ठीक नंदन की झील की तरह।

फिर मिट्टी देखकर बोधिसत्व ने यह भी देखा और राजा से कहा, "देखो, झील बन गई है!" राजा ने इसे देखकर कालका से पूछा कि क्या किया जाए।

"हे मेरे स्वामी, उनसे कहिए कि वे इसके अनुरूप एक घर बनवाएं," उन्होंने कहा।

राजा ने बोधिसत्व से कहा, "हे गुरु, हाथीदांत का एक घर बनाइए, जो उद्यान और झील के अनुरूप हो; यदि आप इसे नहीं बनाएँगे, तो आपको मरना होगा!"

फिर इंद्र ने उनके लिए एक घर भी बनाया। बोधिसत्व ने अगले दिन उसे देखा और राजा को बताया। राजा ने उसे देखकर फिर कालका से पूछा कि क्या करना चाहिए। कालका ने उनसे कहा कि वे बोधिसत्व से घर के अनुरूप एक रत्न बनाने के लिए कहें। राजा ने उनसे कहा, "हे ज्ञानी, इस हाथीदांत के घर के अनुरूप एक रत्न बनाइए; मैं रत्न के प्रकाश में इसका दर्शन करूंगा: यदि आप ऐसा रत्न नहीं बना सकते, तो आपको मरना होगा!" तब इंद्र ने उनके लिए भी एक रत्न बनाया। अगले दिन बोधिसत्व ने उसे देखा और राजा को बताया। राजा ने उसे देखकर फिर कालका से पूछा कि क्या करना चाहिए।

“हे महामहिम!” उसने उत्तर दिया, “मुझे लगता है कि कोई परी है जो ब्राह्मण धम्मद्धजा की हर इच्छा पूरी करती है। अब उससे ऐसी वस्तु बनाने को कहिए जो देवता भी न बना सकें। देवता भी चारों गुणों से युक्त मनुष्य का निर्माण नहीं कर सकते (*3); इसलिए उससे इन चारों गुणों से युक्त रक्षक बनाने को कहिए।” तब राजा ने कहा, “गुरुजी, आपने उद्यान, झील, महल और प्रकाश देने वाला रत्न बनाया है। अब मेरे लिए भी चारों गुणों से युक्त रक्षक बनाइए, जो उद्यान की रखवाली करे; यदि आप ऐसा नहीं कर सकते, तो आपको मरना होगा।”

“ऐसा ही हो,” उन्होंने उत्तर दिया, “यदि संभव हो तो मैं इसका प्रबंध करूँगा।” वे घर गए, भरपेट भोजन किया और लेट गए। सुबह जब वे उठे, तो अपने पलंग पर बैठे और सोचने लगे, “महान राजा सक्का (इंद्र) अपनी शक्ति से जो कुछ बना सकते थे, वह बना चुके हैं। वे चार गुणों वाले एक वनपाल को भी नहीं बना सकते। ऐसा होने पर, अन्य मनुष्यों के हाथों मरने से बेहतर है कि जंगल में दुखी होकर मर जाऊँ।” इसलिए किसी से कुछ कहे बिना, वे अपने निवास से नीचे उतरे और मुख्य द्वार से शहर से बाहर निकलकर जंगल में प्रवेश कर गए, जहाँ वे एक वृक्ष के नीचे बैठ गए और अच्छे लोगों के धर्मपरायणता पर विचार करने लगे। सक्का (इंद्र) ने यह देखा; और एक वनपाल के वेश में वे बोधिसत्व के पास आए और बोले,

"ब्राह्मण, तुम तो अभी युवा और कोमल हो: फिर भी इस जंगल में क्यों बैठे हो, मानो तुमने कभी दर्द देखा ही न हो?" यह पूछते हुए उसने पहली पंक्ति दोहराई:-

"ऐसा लगता है जैसे आपका जीवन सुखमय होगा।"
फिर भी तुम तपस्वी होकर घने जंगलों में जाओगे,
किसी बेचारे दुखी व्यक्ति की तरह जिसका जीवन दुखमय था,
और इस वृक्ष के नीचे अकेलेपन और पीड़ा में तड़पते हुए मेरा अंत हो जाए।"
इस पर बोधिसत्व ने दूसरे श्लोक में उत्तर दिया:-

मुझे ऐसा लगता है कि मेरा जीवन सुखमय होगा;
फिर भी मैं निर्धन होकर घने जंगलों में जाऊंगा,
किसी बेचारे दुखी व्यक्ति की तरह जिसका जीवन दुखमय था,
और इस वृक्ष के नीचे एकांत पीड़ा में जीर्ण-शीर्ण हो जाए,

यह सोचकर कि सभी संत इस सत्य को जानते हैं।
तब सक्का (इंद्र) ने कहा, "यदि ऐसा है, तो फिर, ब्राह्मण, तुम यहाँ क्यों बैठे हो?"

उसने उत्तर दिया, "राजा को चार अच्छे गुणों वाला एक उद्यान रक्षक चाहिए; ऐसा कोई मिल नहीं सकता; इसलिए मैंने सोचा—मनुष्य के हाथों क्यों मरना? मैं जंगल में जाकर अकेले ही मर जाऊंगा। इसलिए मैं यहाँ आया और यहीं बैठा हूँ।"

तब दूसरे ने उत्तर दिया, "ब्राह्मण, मैं सक्का (इंद्र), देवदूतों का राजा हूँ। मैंने ही तुम्हारा उद्यान और अन्य वस्तुएँ बनवाई हैं। चार गुणों से युक्त उद्यान रक्षक नहीं बनाया जा सकता; परन्तु तुम्हारे देश में एक छत्तपाणि है, जो सिर के आभूषण बनाता है, और वही ऐसा व्यक्ति है। यदि किसी उद्यान रक्षक की आवश्यकता हो, तो जाकर इस कारीगर को ही रक्षक बना दो।" ये कहकर सक्का (इंद्र) उसे सांत्वना देकर और भय न करने का आग्रह करके अपने दिव्य नगर की ओर प्रस्थान कर गए।

बोधिसत्व घर लौटे और उपवास तोड़कर महल के द्वार पर गए, जहाँ उन्होंने चट्टपाणि को देखा। उन्होंने चट्टपाणि का हाथ पकड़कर पूछा, "क्या यह सच है, जैसा मैंने सुना है, चट्टपाणि, कि तुम चारों सद्गुणों से संपन्न हो?"

"तुम्हें किसने बताया?" दूसरे ने पूछा।

"सक्का (इंद्र), देवताओं (देवदूतों) के राजा।"

"उसने तुम्हें क्यों बताया?" उसने सब कुछ बता दिया, और कारण भी बता दिया। दूसरे ने कहा,

"जी हां, मैं चारों गुणों से संपन्न हूं।" बोधिसत्व ने उनका हाथ पकड़कर उन्हें राजा के समक्ष ले गए। "हे महामहिम, मैं छत्तपाणि हूं, जो चारों गुणों से संपन्न है। यदि उद्यान के रखवाले की आवश्यकता हो, तो उसे रखवाला बना दीजिए।"

राजा ने उससे पूछा, "क्या यह सच है, जैसा मैंने सुना है, कि तुममें चार गुण हैं?"

"जी हां, महामहिम राजा।"

"ये क्या हैं?" उसने पूछा।

मैं ईर्ष्या नहीं करता और शराब नहीं पीता;
मुझमें न तो कोई तीव्र इच्छा है, न ही कोई क्रोध।
उन्होंने कहा।

"छत्तपानी," राजा चिल्लाया, "क्या तुमने कहा था कि तुममें ईर्ष्या नहीं है?"

"जी हां, हे राजा, मुझे किसी से ईर्ष्या नहीं है।"

"ऐसी कौन सी चीजें हैं जिनसे आपको ईर्ष्या नहीं होती?"

"सुनिए, मेरे स्वामी!" उसने कहा; और फिर उसने निम्नलिखित पंक्तियों में बताया कि उसे किसी प्रकार की ईर्ष्या नहीं थी (*4):-

"एक पुजारी जिसे कभी बंधनों में जकड़ा गया था, मैं उसे मुक्त करता हूँ--"
वह काम जो एक महिला ने मुझसे करवाया:
उन्होंने मुझे पवित्र परंपराओं में दीक्षित किया;
मुझे इससे पहले कभी इतनी ईर्ष्या नहीं हुई थी।
तब राजा ने कहा, "प्रिय चट्टपानी, तुम मादक पेय से परहेज क्यों करते हो?" और दूसरे ने निम्नलिखित श्लोक (*5) में उत्तर दिया--

एक बार मैं नशे में था, और मैंने खाया
मेरे अपने बेटे का मांस मेरी थाली में;
फिर, दु:ख और पीड़ा से व्याकुल होकर,
मैंने कसम खाई कि मैं फिर कभी शराब को हाथ नहीं लगाऊंगा।"
तब राजा ने कहा, "परन्तु, हे महोदय, ऐसी कौन सी बात है जो आपको प्रेमहीन बना देती है?" उस व्यक्ति ने इसे इन शब्दों में समझाया (*6):-

"मेरा नाम राजा कितावासा था;"
मैं एक शक्तिशाली राजा था;
मेरे बेटे ने बुद्ध का पात्र तोड़ दिया
और इसलिए उसे मरना पड़ा।
तब राजा ने कहा, "हे मित्र, ऐसी क्या बात थी जिसने तुम्हें क्रोधहीन बना दिया?" और दूसरे ने इन पंक्तियों में बात स्पष्ट कर दी:

"अराका के रूप में, सात वर्षों के लिए
मैंने दान-पुण्य का कार्य किया;
और फिर सात युगों तक वे जीवित रहे।
ब्रह्मा के उच्चतर स्वर्ग (प्रधान देवदूतों के स्वर्ग) में।"
जब चट्टापानी ने अपने चारों गुणों का इस प्रकार वर्णन किया, तो राजा ने अपने सेवकों को संकेत दिया। पल भर में सारा दरबार, पुजारी और आम लोग, सब उठ खड़े हुए और कालका पर चिल्लाए—"अरे, दुष्ट, रिश्वतखोर चोर और बदमाश! रिश्वत न मिलने पर तूने इस ज्ञानी पुरुष की निंदा करके उसकी हत्या कर दी!" उन्होंने उसे हाथ-पैर से पकड़कर महल से बाहर घसीटा; और जो कुछ भी उनके हाथ लगा, कभी पत्थर, कभी लाठी, उससे उसका सिर फोड़ दिया और उसकी हत्या कर दी; और उसके पैरों को घसीटते हुए उसे गोबर के ढेर पर फेंक दिया।

तब से राजा ने अपने कर्मों के अनुसार मृत्यु तक न्यायपूर्वक शासन किया।

यह प्रवचन समाप्त होने पर, गुरु ने जन्म का वर्णन किया: "देवदत्त सेनापति कालका थे, सारिपुत्र शिल्पकार चट्टपाणि थे, और मैं धम्मद्धजा था।"

फुटनोट:

(1) यहाँ हमारे पास "हीरो के कार्य" एक नए रूप में हैं।

(2) ऐसा तब होना चाहिए था जब कोई भला आदमी संकट में हो। कुछ आधुनिक अंधविश्वास, पीड़ा में पड़े प्राणियों के प्रति देवता की दया पर आधारित हैं।

(3) चतुर्चंग-समन्नगतम्;

(4)निम्नलिखित इन पंक्तियों की व्याख्या है। कहानी क्रमांक 120 की है, जहाँ निम्नलिखित छंदों का पहला छंद दिया गया है। "इसका अर्थ यह है। पुराने समय में, मैं बनारस का ऐसा ही राजा था, और एक स्त्री के कारण मैंने एक पुजारी को कैद कर लिया था।

जब कुकर्म अपना प्रभाव दिखाता है, तो स्वतंत्र लोग भी बाध्य हो जाते हैं;

जब ज्ञान बोलता है, तो बंधन टूटकर मुक्त हो जाते हैं।
जैसा कि अब वर्णित जन्म में बताया गया है, यह चट्टापाणि राजा बना। रानी ने चौंसठ दासों के साथ षड्यंत्र रचा। उसने बोधिसत्व को भी बहकाया, और जब उन्होंने मना कर दिया तो उसने उनके बारे में झूठे आरोप लगाकर उन्हें बर्बाद करने की कोशिश की; तब राजा ने उन्हें कैद कर लिया। बोधिसत्व को बंधन में बांधकर राजा के सामने लाया गया, और उन्होंने मामले की वास्तविक स्थिति बताई। तब उन्हें स्वयं रिहा कर दिया गया; और फिर उन्होंने राजा से उन सभी दासों को रिहा करवाया जिन्हें कैद किया गया था, और उन्हें रानी और उन दोनों को क्षमा करने की सलाह दी। शेष सभी को ठीक उसी तरह समझा जाना चाहिए जैसा ऊपर बताया गया है। इसी के संदर्भ में उन्होंने कहा-

"एक पुजारी जिसे कभी बंधनों में जकड़ा गया था, मैं उसे मुक्त करता हूँ--"

वह काम जो एक महिला ने मुझसे करवाया:
उन्होंने मुझे पवित्र परंपराओं में दीक्षित किया;
मुझे इससे पहले कभी इतनी ईर्ष्या नहीं हुई थी।

लेकिन फिर मैंने सोचा, 'मैंने सोलह हज़ार स्त्रियों से दूरी बनाए रखी है, और मैं इस एक स्त्री को अपनी वासनाओं से संतुष्ट नहीं कर सकता। स्त्रियों की वासनाएँ ऐसी ही होती हैं, जिन्हें संतुष्ट करना कठिन होता है। यह वैसा ही है जैसे कोई पुराना कपड़ा गंदा देखकर क्रोधित हो और कहे, 'यह गंदा क्यों है?' यह वैसा ही है जैसे भोजन के बाद कुछ बचा हुआ हिस्सा खाने से गिर जाए तो क्रोधित हो और कहे, 'यह ऐसा क्यों हो गया?' मैंने निश्चय किया कि अब से मेरे भीतर वासनाओं के कारण कोई ईर्ष्या उत्पन्न नहीं होनी चाहिए, अन्यथा मैं संत बनने से वंचित रह जाऊँगा। उस समय से मैं ईर्ष्या से मुक्त हूँ। यही कहने का सार है, 'उस समय से मैंने कभी ईर्ष्या नहीं की।'

(5) इस श्लोक की व्याख्या करते हुए--वक्ता कहते हैं, "एक समय मैं बनारस का राजा था; मैं शराब और मांस के बिना नहीं रह सकता था। उस नगर में व्रत के दिन (उपोसथादिवसेसु) पशुओं का वध करना मना था; इसलिए रसोइए ने मेरे व्रत के भोजन के लिए एक दिन पहले (चंद्र पखवाड़े की तेरहवीं तिथि को) कुछ मांस तैयार किया था। यह ठीक से रखा नहीं गया था, इसलिए कुत्तों ने खा लिया। रसोइए व्रत के दिन राजा के सामने बिना मांस के ऊपरी कक्ष में उनका स्वादिष्ट और विविध भोजन परोसने की हिम्मत नहीं कर सका, इसलिए उसने रानी से सलाह मांगी। "महारानी, आज मेरे पास मांस नहीं है; और इसके बिना मैं उन्हें भोजन देने की हिम्मत नहीं कर सकता, मैं क्या करूँ?" रानी ने कहा, "राजा मेरे पुत्र को बहुत प्यार करते हैं। जब वे उसे दुलारते हैं, तो उन्हें शायद ही पता चलता है कि वह है या नहीं। मैं अपने पुत्र को सजाकर राजा को सौंप दूँगी, और जब वह उसके साथ खेलेंगे, तब आप उसे भोजन परोसेंगे; उसे पता भी नहीं चलेगा।" इसलिए उसने अपने प्यारे बेटे को सजाया-संवारा और राजा की गोद में सौंप दिया। जब राजा लड़के के साथ खेल रहा था, रसोइए ने खाना परोसा। राजा, शराब के नशे में चूर था, और थाली में मांस न देखकर उसने पूछा कि मांस कहाँ है। जवाब मिला कि उस दिन मांस नहीं मिलेगा क्योंकि उपवास के दिन किसी को मारना मना था। "मेरे लिए मांस मिलना मुश्किल है, है ना?" उसने कहा; और फिर उसने अपने प्यारे बेटे का गला घोंट दिया, जब वह उसकी बाहों में बैठा था, और उसे मार डाला; उसे रसोइए के सामने फेंक दिया, और उसे जल्दी से पकाने के लिए कहा। रसोइए ने आज्ञा मानी, और राजा ने अपने ही बेटे का मांस खाया। राजा के डर से किसी ने रोने, विलाप करने या एक शब्द भी कहने की हिम्मत नहीं की। राजा ने खाया और सो गया। अगली सुबह, नशा उतरने के बाद, उसने अपने बेटे को माँगा। तब रानी उसके चरणों में गिर पड़ी और रोने लगी, और बोली, "हे महाराज, कल आपने अपने बेटे को मारकर उसका मांस खाया!" राजा शोक से रोया और विलाप किया, और सोचने लगा, "यह शराब पीने की वजह से हुआ!" फिर, शराब के बुरे प्रभावों को देखकर मैंने यह संकल्प लिया कि अन्यथा मैं कभी संत नहीं बन पाऊंगा, मैं इस घातक पेय को कभी हाथ नहीं लगाऊंगा; मैंने धूल लेकर उसे अपने मुंह पर मल लिया। तब से मैंने कोई शराब नहीं पी है। यही इन पंक्तियों का सार है, "एक बार मैं नशे में था।"

(6) "इसका अर्थ यह है कि एक समय की बात है, मैं किटवासा नाम का राजा था, और मेरा एक पुत्र हुआ। ज्योतिषियों ने कहा कि वह बालक पानी की कमी से मर जाएगा। इसलिए उसका नाम दुत्थकुमार रखा गया। जब वह बड़ा हुआ, तो वह वायसराय बन गया। राजा अपने पुत्र को हमेशा अपने पास, आगे-पीछे रखता था; और भविष्यवाणी को गलत साबित करने के लिए उसने शहर के चारों द्वारों पर और शहर के अंदर जगह-जगह तालाब बनवाए; उसने चौकों और चौराहों में हॉल बनवाए और उनमें पानी के घड़े रखवाए। एक दिन वह युवक, अच्छे वस्त्र पहनकर, अकेले पार्क गया। रास्ते में उसने सड़क पर पच्चेक-बुद्ध की एक मूर्ति देखी, और बहुत से लोग उनसे बात कर रहे थे, उनकी प्रशंसा कर रहे थे, उनके सामने प्रणाम कर रहे थे। 'क्या!' राजकुमार ने सोचा, 'जब मुझ जैसा कोई यहाँ से गुजर रहा होता है, तो लोग उस मुंडे हुए सिर वाले को इतना सम्मान क्यों दिखाते हैं?'" क्रोधित होकर वह हाथी से उतरा और बुद्ध से पूछा कि क्या उसे भोजन मिल गया है। उत्तर था, 'हाँ।' राजकुमार ने उनसे भोजन छीन लिया, चावल और कटोरा दोनों ज़मीन पर फेंक दिए और पैरों से कुचलकर चूर-चूर कर दिए। बुद्ध ने कहा, 'यह तो सचमुच बर्बाद हो गया!' और उसके चेहरे की ओर देखा। राजकुमार ने कहा, 'मैं राजा किटावसा का पुत्र राजकुमार दुत्था हूँ! आप मुझे क्रोधित दृष्टि से देखकर और आँखें खोलकर क्या हानि पहुँचाएँगे?' बुद्ध भोजन खोकर हवा में उड़ गए और उत्तरी हिमालय में नंदा पर्वत की तलहटी में स्थित एक गुफा में चले गए। ठीक उसी क्षण राजकुमार के बुरे कर्मों का फल मिलने लगा और वह चिल्लाया, 'मैं जल रहा हूँ! मैं जल रहा हूँ!' उसका शरीर आग की लपटों में घिर गया और वह सड़क पर ही गिर पड़ा; आसपास का सारा पानी गायब हो गया, नालियाँ सूख गईं, और उसी क्षण उसकी मृत्यु हो गई और वह नरक में चला गया। राजा ने यह सुना और वह शोक से व्याकुल हो गया। फिर उसने सोचा—"यह शोक मुझ पर इसलिए आया है क्योंकि मेरा पुत्र मुझे प्रिय था। यदि मुझे उससे कोई स्नेह न होता, तो मुझे कोई पीड़ा न होती। अब से मैं संकल्प लेता हूँ कि मैं किसी भी सजीव या निर्जीव वस्तु से अपना स्नेह नहीं रखूँगा।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कसाव-जातक**
स्रोत : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित

पिछला <<<<-----||-221-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 221

कासव-जातक

"यदि कोई मनुष्य," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने देवदत्त के बारे में जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी।

यह घटना राजगृह नगर में घटी एक घटना के कारण हुई थी। एक समय सारिपुत्र धर्माध्यक्ष अपने पाँच सौ भिक्षुओं के साथ बाँस के वन में निवास कर रहे थे। वहीं देवदत्त अपने जैसे दुष्ट लोगों के एक समूह के साथ गयासिसा में रहता था।

उस समय राजगृह नगर के नागरिक दान-पुण्य के लिए एकत्रित होते थे। एक व्यापारी, जो व्यापार के सिलसिले में वहाँ आया था, एक सुंदर सुगंधित पीला वस्त्र लेकर आया और उसने निवेदन किया कि वह भी इस वस्त्र को दान में दे दे। नगरवासियों ने भी बहुत से उपहार दिए। एकत्रित लोगों द्वारा दिया गया सारा दान नकद था। यह वस्त्र बच गया। एकत्रित भीड़ ने कहा, "यह सुंदर सुगंधित वस्त्र बच गया है। इसे कौन लेगा - सारिपुत्र भिक्षु या देवदत्त?" कुछ लोग सारिपुत्र के पक्ष में थे; अन्य ने कहा, "सारिपुत्र भिक्षु कुछ दिन यहाँ रहेंगे और फिर अपनी इच्छा से यात्रा पर चले जाएँगे; लेकिन देवदत्त हमेशा हमारे नगर के पास रहते हैं; वे सुख-दुख में हमारे आश्रयदाता हैं। देवदत्त को ही यह वस्त्र मिलना चाहिए!" उन्होंने मतपत्र का प्रयोग किया और देवदत्त के पक्ष में मत देने वाले बहुमत में थे। अतः उन्होंने देवदत्त को ही वस्त्र दे दिया। उसने उसे पट्टियों में कटवाया, फिर उन्हें आपस में सिलवाया और सोने की तरह रंगवाया, और इस तरह उसने उसे पहन लिया।

उसी समय, श्रावस्ती शहर से तीस भिक्षु गुरु को प्रणाम करने आए। अभिवादन के बाद, उन्होंने गुरु को सारी बात बताई और कहा, "हे गुरु, देवदत्त ने संत का यह चिन्ह धारण किया हुआ है, जो उसे बिल्कुल शोभा नहीं देता।" गुरु ने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि देवदत्त ने संत का यह वस्त्र धारण किया है, जो बिल्कुल अनुपयुक्त है। उसने पहले भी यही वस्त्र धारण किया था।" फिर उन्होंने उन्हें एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व हिमालय क्षेत्र में हाथी के रूप में इस दुनिया में आए। अस्सी हजार जंगली हाथियों के झुंड के स्वामी, वे वन क्षेत्र में रहते थे।

बनारस में रहने वाले एक गरीब आदमी ने हाथी दांत के बाज़ार में कारीगरों को चूड़ियाँ और तरह-तरह के हाथी दांत के गहने बनाते देखा और उनसे पूछा कि अगर उसे हाथी दांत मिलें तो क्या वे उन्हें खरीदेंगे? उन्होंने जवाब दिया, हाँ।

अतः उसने एक शस्त्र उठाया और पीले वस्त्र पहनकर पच्चेक-बुद्ध (*1) का वेश धारण किया, सिर पर एक पट्टी बाँधी। हाथियों के मार्ग में खड़ा होकर उसने अपने शस्त्र से एक हाथी को मार डाला और उसके दाँत बनारस में बेच दिए; इस प्रकार वह अपना जीवन यापन करता था। इसके बाद वह बोधिसत्वों के दल के अंतिम हाथी को ही मारने लगा। दिन-प्रतिदिन हाथियों की संख्या घटती गई। तब वे बोधिसत्व के पास गए और उनसे पूछा कि उनकी संख्या क्यों कम हो रही है। बोधिसत्व को कारण समझ आ गया। उन्होंने सोचा, "हाथियों के मार्ग में कोई व्यक्ति पच्चेक-बुद्ध के वेश में खड़ा है। क्या वही हाथियों को मार रहा है? मैं उसे ढूँढूँगा।" एक दिन उसने अन्य हाथियों को आगे भेज दिया और स्वयं उनके पीछे चल दिया। उस व्यक्ति ने बोधिसत्व को देखा और अपने शस्त्र से उन पर आक्रमण कर दिया। बोधिसत्व मुड़े और खड़े हो गए। उन्होंने सोचा, "मैं इसे ज़मीन पर पटक कर मार डालूँगा!" और जब उन्होंने उस व्यक्ति के पीले वस्त्र देखे तो उन्होंने अपनी सूंड आगे बढ़ाई। उन्होंने कहा, "मुझे इन पवित्र वस्त्रों का सम्मान करना चाहिए!" फिर अपनी सूंड वापस लाते हुए वे चिल्लाए—"हे मनुष्य! क्या यह वस्त्र, जो संतत्व का प्रतीक है, तुम्हारे लिए उपयुक्त नहीं है? तुम इसे क्यों पहनते हो?" और उन्होंने ये पंक्तियाँ दोहराईं:

"यदि कोई व्यक्ति, जो अभी भी पापों से भरा हुआ है, साहस करे"
पीले वस्त्र धारण करने के लिए, जिसमें कोई परवाह नहीं है
संयम पाया जाता है, या सत्य के प्रति प्रेम।
वह इस प्रकार का वस्त्र पहनने के योग्य नहीं है।
जिसने पाप को दूर भगाया है, जिसने हर जगह
वह सद्गुणों में दृढ़ है, और जिसकी सर्वोच्च देखभाल है
उसे अपनी भावनाओं पर नियंत्रण रखना चाहिए और सच्चा होना चाहिए।
वह पीले रंग का वस्त्र पहनने के पूरी तरह हकदार हैं।

इन शब्दों के साथ, बोधिसत्व ने उस व्यक्ति को फटकारा और कहा कि वह फिर कभी वहां न आए, अन्यथा उसे मृत्युदंड भुगतना पड़ेगा। इस प्रकार उन्होंने उसे वहां से भगा दिया।

इस प्रवचन के समाप्त होने के बाद, गुरु ने जन्म का वर्णन किया: "देवदत्त वह व्यक्ति था जिसने हाथियों को मारा था, और झुंड का मुखिया मैं था।"

फुटनोट:

(1) वह व्यक्ति जिसने निर्वाण का ज्ञान प्राप्त कर लिया है, परन्तु वह मनुष्यों को इसका उपदेश नहीं देता।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कुल-नंदिया-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-222-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 222
चुला-नंदिया-जातक

"मुझे याद आता है," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने बांस के जंगल में रहते हुए देवदत्त के बारे में सुनाई थी।

एक दिन भिक्षुओं ने सत्य के हॉल में बातचीत शुरू की: "मित्र, वह देवदत्त कठोर, क्रूर और अत्याचारी है, और परम बुद्ध के प्रति उसके मन में घोर द्वेष है। उसने पत्थर फेंका, यहाँ तक कि उसने नलगिरि (*1) की सहायता भी ली; तथागत (बुद्ध) के प्रति उसके मन में दया और करुणा का कोई अंश नहीं है।"

गुरुजी अंदर आए और उनसे पूछा कि वे सब आपस में क्या बातें कर रहे हैं। उन्होंने गुरुजी को सब कुछ बताया। तब गुरुजी ने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि देवदत्त इतना कठोर, निर्दयी और बेरहम रहा है। वह पहले भी ऐसा कर चुका है।" और फिर उन्होंने उन्हें एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व नंदीय या जॉली नामक बंदर बन गए और हिमालय क्षेत्र में रहने लगे। उनके सबसे छोटे भाई का नाम जॉलिकिन था। वे दोनों अस्सी हजार बंदरों के झुंड के मुखिया थे और उनकी देखभाल के लिए उनके घर में एक अंधी माँ भी थी।

उन्होंने अपनी माता को झाड़ियों में बने उनके ठिकाने पर छोड़ दिया और तरह-तरह के मीठे जंगली फल लाने के लिए पेड़ों के बीच चले गए, जिन्हें वे उनके लिए घर वापस भेज रहे थे। दूत फल नहीं पहुँचा पाए; और भूख से पीड़ित होकर वह दुबली-पतली हो गईं। बोधिसत्व ने उनसे कहा, "माता, हमने आपको बहुत सारे मीठे फल भेजे हैं: फिर भी आप इतनी दुबली क्यों हैं?"

"मेरे बेटे, मुझे यह कभी समझ नहीं आता!"

बोधिसत्व ने सोचा, “जब तक मैं अपने पशुओं की देखभाल करूँगा, मेरी माता मर जाएँगी! मैं पशुओं को छोड़कर अकेले अपनी माता की देखभाल करूँगा।” इसलिए उन्होंने अपने भाई को पुकारते हुए कहा, “भाई, तुम पशुओं की देखभाल करो, मैं हमारी माता की देखभाल करूँगा।”

“नहीं भाई,” उसने उत्तर दिया, “मुझे भेड़-बकरियों के झुंड पर राज करने की क्या परवाह? मैं तो बस अपनी माँ की ही देखभाल करूँगा!” इस प्रकार दोनों एकमत हुए और भेड़-बकरियों के झुंड को छोड़कर अपनी माँ को हिमालय से नीचे ले आए और सीमावर्ती क्षेत्र के एक बरगद के वृक्ष में अपना निवास स्थान बना लिया, जहाँ उन्होंने उसकी देखभाल की।

तक्षशिला में रहने वाले एक ब्राह्मण ने एक प्रसिद्ध गुरु से शिक्षा प्राप्त की थी और बाद में उनसे विदा लेते हुए चले गए। गुरु को मनुष्य के शारीरिक संकेतों से भविष्य जानने की शक्ति प्राप्त थी; और इस प्रकार उन्होंने जान लिया कि उनका शिष्य कठोर, निर्दयी और हिंसक है। गुरु ने कहा, “मेरे पुत्र, तुम कठोर, निर्दयी और हिंसक हो। ऐसे लोग हर मौसम में एक समान रूप से सफल नहीं होते; उन्हें गंभीर

कष्ट और गंभीर विनाश का सामना करना पड़ता है। कठोर मत बनो, और ऐसा कोई काम मत करो जिसका तुम्हें बाद में पछतावा हो।" यह सलाह देकर उन्होंने उसे जाने दिया।

युवक ने अपने गुरु से विदा ली और बनारस के लिए रवाना हो गया। वहाँ उसने विवाह किया और बस गया; अपनी अन्य कलाओं से जीविका कमाने में असमर्थ होने के कारण उसने धनुष-बाण से ही जीविका चलाने का निश्चय किया। अतः उसने शिकारी के रूप में काम शुरू किया और जीविका कमाने के लिए बनारस छोड़ दिया। सीमावर्ती गाँव में रहते हुए वह धनुष और बाण लेकर जंगलों में जाता और शिकार किए गए विभिन्न प्रकार के पशुओं का मांस बेचकर अपना जीवन यापन करता था।

एक दिन, जब वह जंगल में कुछ भी न मिलने के बाद घर लौट रहा था, तो उसने एक खुले मैदान के किनारे एक बरगद का पेड़ देखा। उसने सोचा, "शायद यहाँ कुछ हो।" और उसने अपना चेहरा बरगद के पेड़ की ओर कर लिया। दोनों भाई अपनी माँ को फल खिलाकर पेड़ पर उसके पीछे बैठे थे, तभी उन्होंने उस आदमी को आते देखा। उन्होंने कहा, "अगर वह हमारी माँ को देख भी ले, तो क्या करेगा?" और वे डालियों के बीच छिप गए। तभी वह क्रूर आदमी पेड़ के पास आया और उसने बूढ़ी और अंधी माँ बंदरिया को देखा, तो उसने मन ही मन सोचा, "मैं खाली हाथ क्यों लौटूँ? मैं पहले इस बंदरिया को मारूंगा!" और उसे मारने के लिए उसने अपना धनुष उठा लिया। यह देखकर बोधिसत्व ने अपने भाई से कहा, "जोलिकिन, मेरे प्यारे, यह आदमी हमारी माँ को मारना चाहता है! मैं उसकी जान बचाऊंगा। मेरे मरने के बाद, तुम उसका ध्यान रखना।" ऐसा कहकर वह पेड़ से नीचे उतरा और पुकारा,

"हे मनुष्य, मेरी माता को मत मारो! वह अंधी और वृद्धावस्था से कमजोर है। मैं उसकी जान बचाऊँगा; उसे मत मारो, बल्कि मुझे मार डालो!" और जब दूसरे ने वादा कर दिया, तो वह धनुष की मार की दूरी के भीतर एक स्थान पर बैठ गया। शिकारी ने निर्दयतापूर्वक बोधिसत्व को तीर मारा; जब वह गिर पड़ा, तो उस व्यक्ति ने माता बंदर को तीर मारने के लिए अपना धनुष तैयार किया। जोलिकिन ने यह देखा और मन ही मन सोचा, "शिकारी मेरी माता को मारना चाहता है। भले ही वह केवल एक दिन जीवित रहे, उसे जीवन का वरदान प्राप्त होगा; मैं उसके लिए अपना जीवन दे दूँगा।" तदनुसार, वह पेड़ से नीचे उतरा और बोला,

"हे मनुष्य, मेरी माँ को मत मारो! मैं अपनी जान उसकी जान के बदले दे दूँगा। मुझे मार डालो—हम दोनों भाइयों को मार डालो, और हमारी माँ की जान बख्श दो!" शिकारी मान गया, और जोलिकिन तीर की मारक दूरी के भीतर बैठ गया। शिकारी ने उसे भी मार डाला—"घर पर मेरे बच्चों के लिए इतना काफी है," उसने सोचा—और उसने माँ को भी मार डाला; उन तीनों को अपने डंडे पर लटका दिया, और घर की ओर चल पड़ा। उसी क्षण उस दुष्ट व्यक्ति के घर पर बिजली गिरी, और उसकी पत्नी और दो बच्चों को घर समेत जलाकर राख कर दिया: छत और बांस के खंभों के अलावा कुछ भी नहीं बचा।

गाँव के प्रवेश द्वार पर एक व्यक्ति उससे मिला और उसे यह बात बताई। अपनी पत्नी और बच्चों के शोक से वह इतना दुखी हुआ कि वहीं गिर पड़ा, उसने अपना शिकार और धनुष वहीं छोड़ दिया, अपने वस्त्र उतार फेंके और नग्न अवस्था में हाथ फैलाकर विलाप करते हुए घर की ओर चल पड़ा। तभी बाँस के खंभे टूटकर उसके सिर पर गिर पड़े और उसे कुचल दिया। धरती फट पड़ी, नरक से आग की लपटें उठने लगीं। जब वह धरती में समा रहा था, तब उसे अपने गुरु की चेतावनी याद आई: "तो यही वह शिक्षा थी जो ब्राह्मण परासरिया ने मुझे दी थी!" और विलाप करते हुए उसने ये श्लोक कहे:

मुझे अपने शिक्षक के शब्द याद आ रहे हैं: तो उनका यही मतलब था!
सावधान रहें, ऐसा कुछ भी न करें जिसका आपको बाद में पछतावा हो।
मनुष्य जो कुछ भी करता है, वही उसे अपने भीतर प्राप्त होता है;
अच्छा व्यक्ति अच्छा होता है; और बुराई की योजना बनाने वाला बुरा होता है;
और इसलिए हमारे सभी कर्म बीज के समान हैं, और उनसे उसी प्रकार का फल प्राप्त होता है।"

इस प्रकार शोक मनाते हुए वह पृथ्वी में समा गया और नरक की गहराइयों में पुनर्जीवित हुआ।

जब गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त किया, जिसमें उन्होंने दिखाया कि कैसे अन्य दिनों में भी, उस समय की तरह, देवदत्त कठोर, क्रूर और निर्दयी था, तो उन्होंने जन्म का वर्णन इन शब्दों में किया: "उन दिनों देवदत्त शिकारी था, सारिपुत्र प्रसिद्ध शिक्षक था, आनंद जोलिकिन था, परम पूज्य देवी गौतमी (बुद्ध की पालक माता, दिवंगत जन्मदाता महामाया की बहन, कपिलवस्तु की रानी और अब एक भिक्षुणी) माता थी, और मैं बंदर जोली था।"

फुटनोट:

(1) देवदत्त के अनुरोध पर बुद्ध को मारने के लिए छोड़ा गया एक भयंकर हाथी।

पिछला <<<<-----||-223-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 223
पुता-भट्ट-जातक

"सम्मान के बदले सम्मान," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक जमींदार के बारे में सुनाई थी।

परंपरा के अनुसार, एक बार श्रावस्ती नगर के एक जमींदार का ग्रामीण इलाके के एक जमींदार से व्यापार था। वह अपनी पत्नी को साथ लेकर अपने कर्जदार से मिलने गया, लेकिन कर्जदार ने पाया कि वह कर्ज चुकाने में असमर्थ है। यह सुनकर वह क्रोधित हो गया और उपवास तोड़े बिना ही घर के लिए निकल पड़ा। रास्ते में कुछ लोग उससे मिले और उसकी भूख देखकर उसे भोजन दिया और कहा कि वह अपनी पत्नी के साथ भी बाँट ले।

जब उसे यह मिला, तो उसने अपनी पत्नी को हिस्सा देने में कंजूसी की। इसलिए उसने उससे कहा, "पत्नी, यह चोरों का अड्डा है, इसलिए बेहतर होगा कि तुम आगे जाओ।" इस तरह उसे वहाँ से हटाकर, उसने सारा खाना खा लिया और फिर उसे खाली बर्तन दिखाते हुए कहा—"देखो पत्नी! मुझे तो खाली बर्तन मिला है!" पत्नी समझ गई कि उसने सारा खाना खुद ही खा लिया है और उसे बहुत गुस्सा आया।

जेतवन मठ के पास से गुजरते हुए, उन्होंने सोचा कि वे पार्क में जाकर पानी पी लें। वहाँ गुरुजी, किसी शिकारी की तरह, अपने सुगंधित कक्ष की छाया में, उनका इंतज़ार कर रहे थे। उन्होंने उनका स्नेहपूर्वक अभिवादन किया और कहा, "श्रीमती, क्या आपके पति दयालु और प्रेममय हैं?" "मैं उनसे प्रेम करती हूँ, श्रीमान," उन्होंने उत्तर दिया, "परन्तु वे मुझसे प्रेम नहीं करते; अन्य दिनों की तो बात ही छोड़िए, आज ही उन्हें रास्ते में भोजन का एक बर्तन दिया गया, और उन्होंने मुझे एक निवाला भी नहीं दिया, बल्कि सारा खुद ही खा लिया।" "श्रीमती, ऐसा ही हमेशा से रहा है - आप प्रेममय और दयालु हैं, और वे प्रेमहीन; परन्तु जब ज्ञानी लोगों की सहायता से वे आपका गुण जान लेंगे, तो वे आपका पूरा सम्मान करेंगे।" फिर, उनके अनुरोध पर, उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व राजा के दरबारियों में से एक के पुत्र थे। वयस्क होने पर वे राजा के सांसारिक और आध्यात्मिक मामलों के सलाहकार बन गए। राजा को अपने पुत्र से डर लगता था, कहीं वे उन्हें हानि न पहुँचा दें, इसलिए उन्होंने उन्हें विदा कर दिया। पुत्र अपनी पत्नी को साथ लेकर उस नगर से निकलकर काशी गाँव में आ गए, जहाँ वे रहने लगे। कुछ समय बाद जब पिता का देहांत हो गया, तो पुत्र ने यह सुनकर बनारस लौटने का निश्चय किया; उन्होंने कहा, "ताकि मुझे वह राज्य प्राप्त हो जो मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है।" रास्ते में किसी ने उन्हें सूप का एक भाग देते हुए कहा, "खाओ और अपनी पत्नी को भी दो।" परन्तु उन्होंने अपनी पत्नी को कुछ नहीं दिया और सारा सूप स्वयं खा लिया। उनकी पत्नी ने सोचा, "यह तो बड़ा निर्दयी है!" और वे व्यथित हो गईं।

जब वह बनारस आया और उसे अपना राज्य प्राप्त हुआ, तो उसने उसे अपनी पत्नी रानी बना लिया; लेकिन यह सोचकर कि "उसके लिए थोड़ा ही काफी है," उसने उसके प्रति कोई और सम्मान या आदर नहीं दिखाया, यहाँ तक कि उससे यह भी नहीं पूछा कि वह कैसी है।

बोधिसत्व ने सोचा, "यह रानी राजा की अच्छी सेवा करती है और उससे प्रेम करती है; लेकिन राजा उसके बारे में जरा भी नहीं सोचता। मैं उसे रानी का आदर और सम्मान करने के लिए मजबूर करूँगा।"

तो वह रानी के पास आया, प्रणाम किया और एक तरफ हट गया। "क्या बात है, महोदय?" रानी ने पूछा।

"महाराज," उसने पूछा, "हम आपकी सेवा कैसे कर सकते हैं? क्या आप वृद्ध पिताओं को एक कपड़ा या चावल की एक थाली नहीं देंगी?"

"महोदय, मुझे स्वयं कभी कुछ नहीं मिलता; मैं आपको क्या दूँ? जब मुझे मिलता था, तो क्या मैं कुछ नहीं देता था? लेकिन अब राजा मुझे कुछ भी नहीं देते: कुछ और देने की तो बात ही छोड़िए, जब वे रास्ते से जा रहे थे तो उन्हें चावल का एक कटोरा मिला, और उन्होंने मुझे एक निवाला भी नहीं दिया—उन्होंने सारा खुद ही खा लिया।"

"महोदया, क्या आप राजा की उपस्थिति में यह बात कह पाएंगी?"

"हां," उसने उत्तर दिया।

"ठीक है। आज जब मैं राजा के सामने खड़ी होकर अपना प्रश्न पूछूँ, तो क्या आप मुझे वही उत्तर देंगे: आज ही मैं आपकी अच्छाई का बखान करूँगी।" इस प्रकार बोधिसत्व आगे बढ़े और राजा के समक्ष खड़े हो गए। और वह भी जाकर राजा के पास खड़ी हो गईं।

तब बोधिसत्व ने कहा, "महोदया, आप बहुत निर्दयी हैं। क्या आपको पिताओं को एक कपड़ा या एक थाली भोजन भी नहीं देना चाहिए?" इस पर उन्होंने उत्तर दिया, "हे प्रभु, मुझे स्वयं राजा से कुछ नहीं मिलता: मैं आपको क्या दे सकती हूँ?"

"क्या तुम रानी की पत्नी नहीं हो?" उसने कहा।

"हे महाराज," उसने कहा, "जब सम्मान ही न मिले तो रानी पत्नी होने का क्या लाभ? राजा अब मुझे क्या देंगे? रास्ते में जब उन्हें चावल की थाली मिली, तो उन्होंने मुझे कुछ नहीं दिया, बल्कि सारा खुद ही खा लिया।" बोधिसत्व ने उनसे पूछा, "क्या सच में, हे राजा?" राजा ने हाँ में जवाब दिया। जब बोधिसत्व ने देखा कि राजा मान गए हैं, तो उन्होंने कहा, "हे देवी, जब राजा निर्दयी हो गए हैं, तो आप उनके साथ यहाँ क्यों रह रही हैं? संसार में प्रेम के बिना संबंध कष्टदायी होता है। जब तक आप यहाँ रहेंगी, राजा के साथ प्रेमहीन संबंध आपको दुख देगा। ये लोग सम्मान देने वाले का सम्मान करते हैं, और जब कोई सम्मान नहीं करता—तो जैसे ही आपको यह दिखाई दे, आपको कहीं और चले जाना चाहिए; संसार में रहने वाले बहुत हैं।" और उन्होंने निम्नलिखित श्लोक दोहराए:

"सम्मान के बदले सम्मान, प्रेम के बदले प्रेम उचित है।"
जो तुम्हारे साथ अच्छा व्यवहार करे, तुम भी उसके साथ अच्छा व्यवहार करो:
पालन से पालन उत्पन्न होता है; लेकिन यह स्पष्ट है
जो व्यक्ति बदले में किसी की मदद नहीं करेगा, उसे किसी की मदद की जरूरत नहीं है।
लापरवाही के बदले लापरवाही न लौटाएं, न ही रुकें
जिसका प्यार अब इस दुनिया में नहीं है, उसे सांत्वना देने के लिए।
दुनिया विशाल है; और जब पक्षी यह पता लगा लेते हैं
जिन पेड़ों से फल झड़ गए हैं, वे उड़ गए हैं।
यह सुनकर राजा ने अपनी रानी को पूरा सम्मान दिया; और तब से वे मित्रता और सद्भाव से एक साथ रहने लगे।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के समापन पर पति-पत्नी ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) के फल में प्रवेश किया: "दोनों ही मामलों में पति-पत्नी एक ही हैं, और बुद्धिमान सलाहकार मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कुम्भिला-जातक**
***स्रोत** : https://ancient-buddhist-texts.net*

पिछला <<<<-----II-224-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 224
कुंभिला जातक

वर्तमान समय में देवदत्त बुद्ध को मारने के लिए निकलता है, जिस पर बुद्ध जवाब देते हैं कि उन्होंने अतीत में भी ऐसा किया था, और एक कहानी सुनाते हैं कि कैसे, जब वे एक बंदर थे, तो उन्होंने एक मगरमच्छ को चकमा दिया और खाए जाने से बच गए।

बोधिसत्व = बंदरों के स्वामी (वाणरिन्द),

देवदत्त = मगरमच्छ (कुम्भिला),

सिन्चामानविका = (मगरमच्छ की) पत्नी (भरिया)।

वर्तमान स्रोत: जा 57 वानरिंदा,

उद्धृत: जा 224 कुंभीला,

अतीत की तुलना करें: जा 57 वानरिंद, जा 208 सुमसुमरा, जा 224 कुंभिला, जा 342 वानर, सीपी 27 कपिराजकारिया, मवु iii पृष्ठ 40 वानर (द्वितीय)।

मुख्य शब्द: छल, जानवर।

"ओ बंदर।" [2.145] यह कहानी शिक्षक ने बांस के जंगल में देवदत्त के बारे में सुनाई।

देवदत्त के हत्या के इरादे के बारे में जानकर गुरु ने कहा: "भिक्षुओं, यह पहली बार नहीं है कि देवदत्त ने मुझे मारने का प्रयास किया है; उसने पहले भी ऐसा ही किया था, परन्तु अपने दुष्ट इरादे को पूरा करने में असफल रहा।" और ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की यह कहानी सुनाई।

पुराने समय में जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व ने बंदर के रूप में पुनर्जन्म लिया। पूर्ण विकसित होने पर वे घोड़ी के बच्चे जितने बड़े और अत्यंत बलवान थे। वे एक नदी के किनारे अकेले रहते थे, जिसके बीचोंबीच एक द्वीप था जिस पर आम, ब्रेडफ्रूट और अन्य फलदार वृक्ष उगते थे। नदी के मध्य में, द्वीप और नदी के किनारे के बीचोंबीच, पानी से एक अकेली चट्टान उभरी हुई थी। हाथी के समान बलवान होने के कारण, बोधिसत्व नदी के किनारे से इस चट्टान पर और फिर द्वीप पर छलांग लगाते थे। वहाँ वे द्वीप पर उगने वाले फलों को भरपेट खाते थे और शाम को उसी रास्ते से लौट आते थे। इस प्रकार उनका दैनिक जीवन व्यतीत होता था।

उन दिनों उस नदी में एक मगरमच्छ और उसकी मादा रहती थी; वह गर्भवती थी और बोधिसत्व को आते-जाते देखकर उसके मन में बंदर का हृदय खाने की लालसा उत्पन्न हुई। इसलिए उसने अपने स्वामी से उसके लिए बंदर को पकड़ने की विनती की। मगरमच्छ ने उसकी इच्छा पूरी करने का वादा किया और एक चट्टान पर जाकर बैठ गया, ताकि शाम को घर लौटते समय बंदर को पकड़ सके।

दिनभर द्वीप पर घूमने के बाद, बोधिसत्व ने शाम को चट्टान की ओर देखा और सोचा कि वह पानी से इतनी ऊपर क्यों उठी हुई है। कथा के अनुसार, बोधिसत्व नदी के पानी और चट्टान की ऊंचाई का सटीक माप लेते थे। इसलिए, जब उन्होंने देखा कि पानी का स्तर तो एक जैसा है, लेकिन चट्टान पानी से अधिक ऊपर उठी हुई प्रतीत हो रही है, तो उन्हें संदेह हुआ कि कोई मगरमच्छ उन्हें पकड़ने के लिए वहां घात लगाए बैठा है। सच्चाई जानने के लिए, उन्होंने चट्टान को संबोधित करते हुए पुकारा, "हाय! चट्टान!" और कोई उत्तर न मिलने पर, उन्होंने तीन बार फिर पुकारा, "हाय! चट्टान!" और चट्टान के चुप रहने पर, बंदर ने कहा, "हे मित्र चट्टान, आज तुम मुझे उत्तर क्यों नहीं दे रहे हो?"

"ओह!" मगरमच्छ ने सोचा, "तो चट्टान को बंदर को जवाब देने की आदत है। आज मुझे चट्टान की तरफ से जवाब देना होगा।" इसलिए, वह चिल्लाया, "जी बंदर; क्या बात है?" "तुम कौन हो?" बोधिसत्व ने कहा। "मैं मगरमच्छ हूँ।" "तुम उस चट्टान पर क्यों बैठे हो?" "तुम्हें पकड़ने और तुम्हारा दिल खाने के लिए।" चूंकि पीछे हटने का कोई और रास्ता नहीं था, इसलिए मगरमच्छ को चकमा देने के अलावा कोई चारा नहीं था। इसलिए बोधिसत्व चिल्लाए, "अब तुम्हारे सामने आत्मसमर्पण करने के अलावा कोई चारा नहीं है। अपना मुँह खोलो और जब मैं कूदूँ तो मुझे पकड़ लो।"

अब आपको पता ही होगा कि मगरमच्छ जब अपना मुंह खोलते हैं, तो उनकी आंखें बंद हो जाती हैं। तो, जब इस मगरमच्छ ने बेखबर होकर अपना मुंह खोला, तो उसकी आंखें बंद हो गईं। और वह बंद आंखों और खुले जबड़ों के साथ वहीं इंतजार करता रहा! यह देखकर चालाक बंदर मगरमच्छ के सिर पर कूद गया, और वहां से बिजली की तरह फुर्ती से किनारे पर पहुंच गया। जब मगरमच्छ को इस करतब की चतुराई का एहसास हुआ, तो उसने कहा: "बंदर, इस संसार में जिसके पास चारों गुण होते हैं, वही शत्रुओं पर विजय प्राप्त करता है। और मुझे लगता है कि तुम्हारे पास चारों गुण हैं।" और ऐसा कहते हुए उसने यह श्लोक दोहराया:

1. यस्सेते चतुरो धम्म, वानरिंद, यथा तव:

सच्चं धम्मो धीति कागो, दिट्ठं सो अतिवत्तति।

हे वानरराज, जो तुम्हारे समान इन चार गुणों से युक्त है: सत्य, ज्ञान, साहस और दान, वही अपने शत्रु पर विजय प्राप्त करेगा।

2. यस्सा चेते न विज्जन्ति गुण परमभद्दका,

सच्चं धम्मो धीति कागो, दिट्ठं सो नातिवत्तति ।

जिसके भीतर ये अत्यंत शुभ गुण नहीं पाए जाते, उसके शत्रु पर सत्य, ज्ञान, साहस और दान का कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा।

इस संदर्भ में, *'वह जो'* का अर्थ है कोई भी व्यक्ति।
इससे यह संकेत मिलता है कि अब जो कुछ भी कहा जाएगा वह व्यक्तिगत अनुभव पर आधारित होगा।
चार चीजों का अर्थ है चार सद्गुण।
सत्य का अर्थ है सच्ची वाणी, यह कहना कि: "मैं निकट आऊंगा," न कि झूठी वाणी बोलना, और फिर निश्चय ही आना, यही तुम्हारी सच्ची वाणी है।
बुद्धिमत्ता का अर्थ है खोजी बुद्धिमत्ता: "ऐसा करने के कारण निश्चित रूप से ऐसा ही होगा," यही आपकी खोजी बुद्धिमत्ता है।
साहस , इसे ही आपका निरंतर प्रयास कहा जाता है, यह आपका ही है।
दान का अर्थ है आत्म-बलिदान, स्वयं को त्यागकर मेरी उपस्थिति में आओ। लेकिन उसे पकड़ न पाने की गलती मेरी है।
शत्रु का अर्थ है विरोधी।
तुम्हारे जैसे व्यक्ति के पास ये चार गुण होने से, वह विजय प्राप्त करेगा , जैसे आज तुमने मुझे परास्त किया, वैसे ही वह अपने शत्रु को परास्त करेगा, उसे जीत लेगा।

और बोधिसत्व की इस प्रशंसा के साथ, मगरमच्छ अपने निवास स्थान की ओर चल पड़ा।

गुरु ने कहा, "तो यह पहली बार नहीं है, भिक्षुओं, कि देवदत्त मुझे मारने के लिए निकला है; उसने अतीत में भी ठीक ऐसा ही किया था।" और अपना पाठ समाप्त करते हुए, गुरु ने संबंध स्पष्ट करते हुए जातक की पहचान बताई: "देवदत्त उन दिनों का मगरमच्छ था, ब्राह्मण कन्या चिंचा मगरमच्छ की पत्नी थी, और मैं स्वयं वानर-राजा था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **खांति-वाणान-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-225-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 225
खांटी-वन्नाना-जातक

"एक आदमी है," इत्यादि — यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में कोसल के राजा के बारे में सुनाई थी। राजा का एक बहुत ही उपयोगी अधीनस्थ हरम में षड्यंत्र रच रहा था। यद्यपि राजा अपराधी को जानता था, फिर भी उसने अपमान को सहन कर लिया, क्योंकि वह व्यक्ति उपयोगी था, और उसने गुरु को इसके बारे में बताया। गुरु ने कहा, "बहुत समय पहले अन्य राजाओं ने भी ऐसा ही किया था;" और उनके अनुरोध पर, उन्होंने आगे की कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, उनके दरबार का एक सेवक राजा के हरम में षड्यंत्र रचने में सफल हो गया, और उसी दरबारी के एक सेवक ने उसके घर में वही काम किया। राजा को यह अपमान सहन नहीं हुआ। इसलिए उसने दूसरे सेवक को राजा के सामने लाकर कहा, "महाराज, मेरा एक सेवक है जो हर तरह का काम करता है, और उसने मुझे व्यभिचारी पत्नी का पति बताकर उपहास का पात्र बना दिया है: मुझे उसके साथ क्या करना चाहिए?" और इस प्रश्न के साथ उसने निम्नलिखित पहला श्लोक कहा-

मेरे घर में एक आदमी है, जो एक उत्साही सेवक भी है;

हे राजा! उसने मेरे विश्वास को धोखा दिया है! बताइए—मैं क्या करूँ?
यह सुनकर राजा ने दूसरा श्लोक कहा:-

"मेरे पास भी एक उत्साही सेवक है; और वह सचमुच यहाँ खड़ा है!"
मुझे लगता है कि अच्छे लोग बहुत कम मिलते हैं, इसलिए मेरी सलाह है कि धैर्य रखें।
दरबारी समझ गया कि राजा के ये शब्द उसी के लिए थे; और उसने भविष्य में राजा के घर में कोई कुकर्म करने का साहस नहीं किया। और सेवक को भी जब पता चला कि यह बात राजा को बता दी गई है, तो उसने भी भविष्य में ऐसा करने का साहस नहीं किया।

यह प्रवचन समाप्त होने पर, गुरु ने अपने जन्म का वर्णन किया: "मैं बनारस का राजा था।" इस अवसर पर दरबारी को पता चला कि राजा ने उसके बारे में गुरु को बताया था, और उसने फिर कभी ऐसा नहीं किया।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कोसीय-जातक2**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-226-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 226
कोसिया-जातक

"एक समय होता है," इत्यादि - जेतवन मठ में गुरु द्वारा कोसल के राजा के बारे में सुनाई गई एक कहानी। इस राजा ने वर्ष के एक बुरे मौसम में सीमा पर उठ रहे विद्रोह को दबाना शुरू किया। परिस्थितियाँ पहले ही वर्णित की जा चुकी हैं (*1)। गुरु ने पहले की तरह राजा को एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, बनारस के राजा युद्ध के मैदान के लिए असमय ही निकल पड़े और उन्होंने अपने उद्यान में डेरा डाला। उसी समय एक उल्लू बांस के घने जंगल में घुस गया और उसमें छिप गया। कौवों का एक झुंड आया और बोला, "जैसे ही वह बाहर आएगा, हम उसे पकड़ लेंगे।" और उन्होंने उल्लू को चारों ओर से घेर लिया। वह समय से पहले ही बाहर आ गया, उसने सूर्यास्त का इंतजार भी नहीं किया; और भागने की कोशिश करने लगा। कौवों ने उसे घेर लिया और अपनी चोंचों से तब तक चोंच मारी जब तक वह जमीन पर गिर नहीं गया। राजा ने बोधिसत्व से पूछा, "हे ज्ञानी, मुझे बताइए, कौवे इस उल्लू पर हमला क्यों कर रहे हैं?" बोधिसत्व ने उत्तर दिया, "हे महाराज, जो लोग समय से पहले अपना निवास स्थान छोड़ देते हैं, वे ठीक इसी तरह के कष्ट भोगते हैं। इसलिए समय से पहले किसी को भी अपना निवास स्थान नहीं छोड़ना चाहिए।" और बात स्पष्ट करने के लिए उन्होंने ये दो श्लोक कहे:

हर चीज़ का एक समय होता है: घर से कौन आगे जाएगा?
समय से परे, एक या अनेक व्यक्ति निश्चित रूप से किसी न किसी कष्ट का सामना करेंगे;
उल्लू का भी यही हाल हुआ, बेचारा पक्षी! कई कौवों ने उसे चोंच मारकर मार डाला।
जो प्रत्येक नियम और रीति-रिवाज में पूर्णतः पारंगत हो; जो दूसरों की कमजोरी को जानता हो;
बुद्धिमान उल्लुओं की तरह, वह प्रसन्न रहेगा और अपने सभी प्रतिद्वंद्वियों पर विजय प्राप्त करेगा।
जब राजा ने यह सुना, तो वह वापस घर की ओर चल पड़ा।

यह प्रवचन समाप्त होने पर, गुरु ने जन्म का वर्णन किया: "उस समय आनंद राजा थे, और बुद्धिमान दरबारी मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)संख्या (176) देखें

पिछला <<<<-----II-227-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 227
गुथा-पाना-जातक

"अच्छी तरह से मेल खाते थे," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए अपने एक भिक्षु के बारे में सुनाई थी।

उस समय, जेतवन मठ से लगभग तीन-चौथाई (*1) मील (x 4.23 किमी) दूर एक बाज़ार कस्बा था, जहाँ टिकट के ज़रिए बड़ी मात्रा में चावल बाँटा जाता था और विशेष भोजन दिया जाता था। यहाँ एक जिज्ञासु और उतावला व्यक्ति रहता था, जो दान में हिस्सा लेने आए युवकों और नौसिखियों को परेशान करता था—"ठोस भोजन कौन लेगा? पेय कौन लेगा? गीला भोजन कौन लेगा?" और जो लोग जवाब नहीं दे पाते थे, उन्हें वह शर्मिंदा कर देता था, और वे उससे इतना डरते थे कि उस गाँव में जाना भी नहीं चाहते थे।

एक दिन एक भिक्षु टिकट काउंटर पर आया और पूछा, "महोदय, फलाँ गाँव में बाँटने के लिए कोई भोजन है क्या?" उत्तर मिला, "जी हाँ, मित्र, लेकिन यहाँ एक बदतमीज़ आदमी सवाल पूछता रहता है; अगर आप उसका जवाब नहीं देते, तो वह गाली-गलौज और अपमान करता है। वह इतना उपद्रवी है कि कोई भी उस जगह के पास नहीं जाता।" दूसरे भिक्षु ने कहा, "महोदय, मुझे उस जगह का आदेश दीजिए, मैं उसे सबक सिखाऊँगा, उसे विनम्र बनाऊँगा और उस पर ऐसा प्रभाव डालूँगा कि इसके बाद जब भी वह आपको देखेगा, तो भाग जाने का मन करेगा।"

भिक्षुओं ने सहमति जताई और आवश्यक आदेश दिया। वह व्यक्ति हमारे गाँव की ओर चल पड़ा और गाँव के द्वार पर उसने अपना वस्त्र धारण किया। आवारा भिक्षु उसे देखता रहा—पागल मेढ़े की तरह उस पर झपट पड़ा और बोला, "हे भिक्षु जी, मेरे एक प्रश्न का उत्तर दीजिए!" "हे भिक्षु, मुझे पहले गाँव में जाकर अपना शोरबा लाने दीजिए, फिर उसे लेकर प्रतीक्षा कक्ष में लौट आऊँगा।"

जब वह अपना भोजन लेकर लौटा, तो उस व्यक्ति ने अपना प्रश्न दोहराया। भाई ने उत्तर दिया, "मुझे अपना सूप खत्म करने दो, कमरा साफ करने दो और अपने टिकट के पैसे चावल लाने दो।" तो वह चावल ले आया; फिर अपना कटोरा उसी व्यक्ति के हाथों में रखते हुए उसने कहा, "आइए, अब मैं आपके प्रश्न का उत्तर देता हूँ।"

फिर वह उसे गाँव के बाहर ले गया, अपना बाहरी वस्त्र मोड़कर उसके कंधे पर रख दिया और दूसरे हाथ से कटोरा लेकर उसके आरंभ की प्रतीक्षा करने लगा। उस व्यक्ति ने कहा, "वरिष्ठ भिक्षु, मेरे एक प्रश्न का उत्तर दीजिए।" "ठीक है, मैं उत्तर दूंगा," भिक्षु ने कहा; और एक ही प्रहार में उसे ज़मीन पर गिरा दिया, उसकी आँखों पर चोट पहुँचाई, उसे पीटा, उसके चेहरे पर गंदगी फेंकी और उसे डराने के लिए ये अंतिम शब्द कहकर चला गया, "यदि तुमने कभी फिर से इस गाँव में आने वाले किसी भी भिक्षु से कोई प्रश्न पूछा, तो मैं देख लूंगा!"

इसके बाद, वह किसी भाई को देखते ही भागने लगा।

कुछ समय बाद यह बात भिक्षुओं के बीच फैल गई। एक दिन वे सत्य के हॉल में इस बारे में बात कर रहे थे: "मित्र, मैंने सुना है कि फलां भिक्षु ने उस आवारा के चेहरे पर गंदगी फेंक दी और उसे वहीं छोड़ दिया!" गुरुजी अंदर आए और जानना चाहते थे कि वे सब किस बारे में बात कर रहे हैं। उन्होंने उन्हें बताया। गुरुजी ने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है जब इस भिक्षु ने उस आदमी पर गंदगी फेंकी है, बल्कि उसने पहले भी ऐसा ही किया था।" फिर उन्होंने उन्हें एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, अंग और मगध राज्यों के वे नागरिक जो एक राज्य से दूसरे राज्य की यात्रा कर रहे थे, दोनों राज्यों की सीमाओं पर स्थित एक घर में ठहरते थे। वहाँ वे शराब पीते और मछली खाते थे, और सुबह सवेरे अपने रथों को जोतकर निकल जाते थे। उसी समय, गोबर की गंध से आकर्षित होकर एक गोबर का कीड़ा उस स्थान पर आया जहाँ उन्होंने शराब पी थी। उसने देखा कि कुछ शराब ज़मीन पर गिरी हुई है, और प्यास बुझाने के लिए उसने उसे पी लिया। फिर वह नशे में चूर होकर अपने गोबर के ढेर पर लौट आया। जब वह उस पर चढ़ा तो गीला गोबर थोड़ा सा धंस गया। "दुनिया मेरे भार को नहीं सुन सकती!" वह चिल्लाया। उसी क्षण एक क्रोधित हाथी

वहाँ आया, और गोबर की गंध से घृणा से वापस चला गया। कीड़े ने यह देखा। उसने सोचा, "एक प्राणी मुझसे डर रहा है, और देखो कैसे भाग रहा है! मुझे उससे लड़ना ही होगा!" और इसलिए उसने पहले श्लोक में उसे चुनौती दी:-

"बिल्कुल सही मुकाबला! क्योंकि हम दोनों ही नायक हैं: आइए यहाँ कोशिश करें:"
 वापस मुड़ो, वापस मुड़ो, मेरे मित्र हाथी! तुम क्यों डरकर भाग रहे हो?
 मगध और अंग (*2) देखें कि हमारी वीरता कितनी महान है!
हाथी ने सुना और आवाज़ सुनी; वह भृंग की ओर मुड़ा और फटकार के रूप में दूसरी पंक्ति बोली:-

मैं न तो पैर, न सूंड और न ही दांत का इस्तेमाल करूंगा।
 तुम्हारे लिए तो सिर्फ मेरा गोबर और पेशाब ही काफी है।"
और फिर, उसने उस पर गोबर का एक बड़ा टुकड़ा गिराकर और पेशाब करके उसे वहीं मार डाला; और चिंघाड़ते हुए जंगल में भाग गया।

जब यह प्रवचन समाप्त हुआ, तो गुरु ने जन्म की पहचान बताई:- "उन दिनों, यह मूर्ख गोबर का कीड़ा था, प्रश्न में उल्लिखित भाई (भिक्षु) हाथी था, और मैं वृक्ष-परी थी जिसने वृक्षों के उस समूह से यह सब देखा।"

फुटनोट:

(1) गवुतद्धयोजनमत्ते। इसका संभवतः अर्थ 'आठवां' हो सकता है। (2) मगध और अंग - प्राचीन भारतीय राज्यों के नाम।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कामनिता-जातक**
***स्रोत** : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-228-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 228
कामनिता-जातक

"तीन किले," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में कामनिता नामक ब्राह्मण के बारे में सुनाई थी। परिस्थितियों का वर्णन बारहवें ग्रंथ और काम-जातक (*1) में किया जाएगा।

बनारस के राजा के दो पुत्र थे। इन दोनों पुत्रों में से बड़ा पुत्र बनारस गया और राजा बन गया; छोटा पुत्र उपसराय बना। राजा धन-दौलत की लालसा, देह-वास और लाभ के लोभ में लिप्त हो गया।

उस समय बोधिसत्व, सक्का (इंद्र), देवताओं (देवदूतों) के राजा थे। जब उन्होंने भारत पर नज़र डाली और देखा कि यहाँ का राजा वासनाओं में लिप्त है, तो उन्होंने मन ही मन कहा, "मैं उस राजा को दंडित करूँगा और उसे लज्जित करूँगा।" अतः एक युवा ब्राह्मण का रूप धारण करके वे राजा के पास गए और उन्हें देखा।

"इस नौजवान को क्या चाहिए?" राजा ने पूछा।

उसने कहा, "महाराज, मुझे तीन नगर दिखाई दे रहे हैं, समृद्ध, उपजाऊ, जिनमें हाथी, घोड़े, रथ और पैदल सेना बहुतायत में हैं, और जो सोने और शुद्ध सोने के आभूषणों से लदे हुए हैं। इन्हें एक छोटी सी सेना से भी जीता जा सकता है। मैं इन्हें आपके लिए प्राप्त करने का प्रस्ताव लेकर आया हूँ!"

"हम कब चलेंगे, हे युवक?" राजा ने पूछा।

"कल, महाराज।"

"तो अब मुझे छोड़ दो; कल सुबह जल्दी चले जाना।"

"अच्छा, महाराज: जल्दी से जाइए और सेना तैयार कीजिए!" इतना कहकर सक्का (इंद्र) अपने स्थान पर लौट गए।

अगले दिन राजा ने ढोल बजवाया और सेना तैयार करवाई; और अपने दरबारियों को बुलाकर उनसे इस प्रकार कहा:-

"कल एक युवक ब्राह्मण आया और उसने कहा कि वह मेरे लिए तीन नगरों - उत्तरा पंचाल, इंद्रप्रस्थ और केकका - को जीत लेगा। इसीलिए अब हम उस व्यक्ति के साथ चलेंगे और उन नगरों को जीत लेंगे। उसे शीघ्र बुलाओ!"

"हे स्वामी, आपने उसे रहने के लिए कौन सा स्थान दिया था?"

राजा ने कहा, "मैंने उसे रहने के लिए कोई जगह नहीं दी।"

"लेकिन आपने ही तो उसे रहने की जगह का किराया चुकाने के लिए पैसे दिए थे!"

"नहीं, वो भी नहीं।"

"तो फिर हम उसे कैसे ढूंढेंगे?"

राजा ने कहा, "उसे शहर की गलियों में ढूंढो।"

उन्होंने उसे ढूंढा, लेकिन वह नहीं मिला। इसलिए वे राजा के सामने आए और उससे कहा, "हे राजा, हमें वह दिखाई नहीं दे रहा है।"

राजा पर गहरा शोक छा गया। "मुझसे कितनी महिमा छीन ली गई है!" वह विलाप करने लगा; उसका हृदय प्रचंड हो गया, उसका रक्त संक्षारण करने लगा, उसे पेचिश हो गई, चिकित्सक उसका इलाज नहीं कर सके।

तीन-चार दिन बीतने के बाद, सक्का (इंद्र) ने ध्यान किया और उनकी बीमारी के बारे में चिंतित हुए। उन्होंने कहा, "मैं इसे ठीक कर दूंगा," और एक ब्राह्मण के वेश में जाकर उनके दरवाजे पर खड़े हो गए। उन्होंने राजा से कहा, "एक ब्राह्मण चिकित्सक आपका इलाज करने आया है।"

यह सुनकर राजा ने उत्तर दिया, "राज दरबार के सभी महान चिकित्सक मुझे ठीक नहीं कर पाए हैं। इसे शुल्क दीजिए और इसे जाने दीजिए।" सक्का (इंद्र) ने सुना और उत्तर दिया, "मुझे अपने रहने के लिए भी पैसे नहीं चाहिए, न ही मैं अपने उपचार के लिए कोई शुल्क लूँगा। मैं इसे ठीक कर दूँगा: राजा मुझे देख लें!"

“तो उसे अंदर आने दो,” राजा ने यह संदेश पाकर कहा। तब इंद्र अंदर गए और राजा की विजय की कामना करते हुए एक तरफ बैठ गए। राजा ने पूछा, “क्या तुम मेरा इलाज करोगे?”

उन्होंने उत्तर दिया, "जी हां, मेरे स्वामी।"

"तो फिर मेरा इलाज करो!" राजा ने कहा।

"बहुत अच्छा, महाराज। मुझे अपनी बीमारी के लक्षण बताइए, और यह कैसे शुरू हुई, आपने ऐसा क्या खाया या पिया है जिससे यह बीमारी हुई हो, या आपने क्या सुना या देखा हो।"

"प्रिय मित्र, मेरी बीमारी मुझे किसी सुनी हुई बात के कारण हुई है।"

फिर दूसरे ने पूछा, "यह क्या था?"

"प्रिय महोदय, एक युवक ब्राह्मण आया और उसने मुझे तीन नगरों पर अधिकार दिलाने का प्रस्ताव दिया; मैंने उसे न तो रहने की जगह दी और न ही किसी नगर के लिए धन। वह मुझसे क्रोधित होकर किसी दूसरे राजा के पास चला गया होगा। इसलिए जब मैंने सोचा कि मुझसे कितना बड़ा गौरव छीन लिया गया है, तो मुझे यह रोग लग गया; यदि आप कर सकते हैं, तो इस रोग, अधिकार की लालसा, का निवारण कीजिए।" और बात स्पष्ट करने के लिए उसने पहला श्लोक कहा:-

"तीन किले, जिनमें से प्रत्येक एक ऊंचे पर्वत पर बना हुआ है,"
मैं लेना चाहता हूँ, जिनके नामों का वर्णन मैं यहाँ करता हूँ (*2):
और मुझे एक और चीज की जरूरत है--
हे ब्राह्मण, मुझे लोभ के गुलाम से मुक्ति दिलाओ!
तब इंद्र ने कहा, "हे राजा, जड़ों से बनी औषधियों से आपका इलाज नहीं हो सकता, बल्कि सरल ज्ञान से ही आपका इलाज हो सकता है।" और उन्होंने दूसरा श्लोक इस प्रकार कहा:

"ऐसे लोग भी हैं जो काले सांप के काटने का इलाज करते हैं।"
बुद्धिमान लोग राक्षसों द्वारा किए गए घावों को भर सकते हैं।
लोभ के गुलाम को कोई डॉक्टर ठीक नहीं कर सकता;
भटकती आत्मा का क्या इलाज है?
इस प्रकार महान सत्ता ने अपने विचार को स्पष्ट करते हुए कहा, और आगे यह भी कहा: "हे राजा, यदि आपको वे तीन नगर प्राप्त हो जाएँ, तो क्या आप इन चार नगरों पर शासन करते हुए एक साथ चार वस्त्र धारण कर सकते हैं, चार स्वर्णमय थालियों में भोजन कर सकते हैं और चार राजसी पलंगों पर लेट सकते हैं? हे राजा, मनुष्य को कामवासना के वश में नहीं होना चाहिए। कामवासना समस्त बुराई की जड़ है; जब कामवासना बढ़ जाती है, तो उसे पालने वाला आठ महान नरकों, सोलह निम्नतम नरकों और सर्वथा प्रकार के दुखों में डाल दिया जाता है।" इस प्रकार महान सत्ता ने राजा को नरक और दुख के भय से भयभीत किया और उन्हें उपदेश दिया। उनके उपदेशों को सुनकर राजा का हृदयविदारक विदारक हो गया और क्षण भर में ही वह रोगमुक्त हो गया। सक्का (इंद्र) ने उन्हें शिक्षा देकर और उन्हें सद्गुणों में स्थापित करके देवदूतों के लोक में प्रस्थान किया। तब से राजा ने दान-पुण्य किया और अच्छे कार्य किए, और अपने कर्मों के फल के अनुसार ही उनका निधन हुआ।

जब यह प्रवचन समाप्त हुआ, तो गुरु ने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "वह भाई (भिक्षु) जो अपनी इच्छाओं का गुलाम था, उस समय राजा था; और मैं स्वयं सक्का (इंद्र) था।"

फुटनोट:

(1)सं. 467.

(2) पांचाल, कुरु और केकक के नाम दिए गए हैं।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> पलयी - **जातक**
स्रोत: *डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-229-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 229
पालयी-जातक

"देखो, मेरे हाथी," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक भिक्षु के बारे में सुनाई थी, जो घूमने-फिरने और सुख-सुविधाओं की तलाश में रहता था।

वे तर्क-वितर्क करने के उद्देश्य से पूरे भारत में विचरण करते रहे, लेकिन उन्हें कोई भी विरोध करने वाला नहीं मिला। अंत में वे श्रावस्ती नगर पहुँचे और पूछा कि क्या यहाँ कोई ऐसा है जो उनसे तर्क कर सके? लोगों ने कहा, "एक ऐसा है जो हज़ारों लोगों से भी तर्क कर सकता है - सर्वज्ञानी, पुरुषों के श्रेष्ठ, शक्तिशाली गौतम (बुद्ध), धर्म के स्वामी, जो सभी विरोधों को कुचल देते हैं, पूरे भारत में कोई भी ऐसा विरोधी नहीं है जो उनसे बहस कर सके। जैसे लहरें तट से टकराती हैं, वैसे ही सभी तर्क उनके चरणों में आकर चूर-चूर हो जाते हैं।" इस प्रकार उन्होंने बुद्ध के गुणों का वर्णन किया।

“वह अब कहाँ हैं?” भिक्षु ने पूछा। उन्होंने उत्तर दिया कि वे जेतवन मठ में हैं। “अब मैं उनसे बहस करूँगा!” भिक्षु ने कहा। इस प्रकार, एक विशाल जनसमूह के साथ वे जेतवन मठ की ओर चल पड़े। राजकुमार जेत द्वारा 90 करोड़ रुपये की लागत से निर्मित जेतवन मठ के द्वार-शिलाओं को देखकर उन्होंने पूछा कि क्या यह वही महल है जहाँ वरिष्ठ भिक्षु गौतम (बुद्ध) निवास करते थे? उन्होंने कहा, “यह उसका प्रवेश द्वार है।” “यदि यह प्रवेश द्वार है, तो वहाँ का जीवन कैसा होगा!” वे चिल्लाए। “सुगंधित कक्षों का तो कोई अंत ही नहीं है!” लोगों ने कहा। “ऐसे वरिष्ठ भिक्षु से भला कौन बहस कर सकता है?” उन्होंने पूछा; और तुरंत वहाँ से चले गए।

भीड़ खुशी से चिल्ला उठी और पार्क में उमड़ पड़ी। गुरु ने पूछा, "तुम लोग समय से पहले यहाँ क्यों आ गए हो?" उन्होंने उन्हें सारी घटना बताई। गुरु ने कहा, "यह पहली बार नहीं है, हे मनुष्यों, कि वह मेरे जीवन के द्वार को देखते ही भाग गया। उसने पहले भी ऐसा ही किया था।" और उनके अनुरोध पर, उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, गांधार राज्य (अफगानिस्तान और पाकिस्तान के निकट, कंधार सहित) के तक्षशिला में बोधिसत्व राजा थे, और बनारस में ब्रह्मदत्त राजा थे। ब्रह्मदत्त ने तक्षशिला पर कब्जा करने का निश्चय किया; इसी कारण वे एक विशाल सेना लेकर निकले और शहर से कुछ दूरी पर एक स्थान पर तैनात होकर अपनी सेना को व्यवस्थित किया: "यहाँ हाथी, यहाँ घोड़े, यहाँ रथ और यहाँ पैदल सैनिक: इस प्रकार आक्रमण करो और अपने हथियारों से प्रहार करो; जैसे बादल वर्षा बरसाते हैं, वैसे ही तुम बाणों की वर्षा करो!" और उन्होंने ये दो श्लोक कहे:-

"देखो, मेरे हाथी और घोड़े, आकाश में तूफानी बादल की तरह!"
देखो, मेरे रथों का विशाल सागर आसमान में तीरों की बौछार कर रहा है!
देखो, मेरे योद्धाओं की सेना, हाथों में तलवार लिए, प्रहार और प्रहार करते हुए,
शहर की ओर बढ़ते हुए, जब तक उनके प्रतिद्वंद्वी धूल चाट न लें!
"उन पर टूट पड़ो—उन पर टूट पड़ो! युद्धघोष करो—जोर से गाओ!"
जब हाथी एक साथ मिलकर कर्कश आवाज में चिंघाड़ते हैं!
जैसे ही आकाश में बिजली और गरज चमकती है और गड़गड़ाहट होती है,
तो अब अपनी आवाज बुलंद करो और एक बुलंद, लंबी युद्धघोषणा करो!
राजा ने पुकार लगाई। उसने अपनी सेना को आगे बढ़ाया और नगर के द्वार पर पहुँचा। जब उसने द्वार पर बने बुर्ज देखे, तो उसने पूछा कि क्या राजा का निवास स्थान वही है? उन्होंने कहा, "वह द्वार बुर्ज है।" राजा ने पूछा, "यदि द्वार बुर्ज ऐसा है, तो राजा का महल कैसा होगा?" उन्होंने उत्तर दिया, "सक्का (इंद्र) के महल वेजयंत जैसा!" यह सुनकर राजा ने कहा, "इतने महान राजा से हम कभी लड़ नहीं पाएँगे!" और द्वार पर बने बुर्ज को देखे बिना ही वह मुड़कर भाग गया और बनारस लौट आया।

यह प्रवचन समाप्त होने पर, गुरु ने जन्म का वर्णन किया: "हमारा भिक्षु सुख-साधक उस समय बनारस का राजा था, और मैं स्वयं तक्षशिला का राजा था।"

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **दुतिया-पालयी-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-230-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 230
दुतिया-पालयी-जातक

"मेरे अनगिनत ध्वज हैं," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए इसी सुख-साधक भिक्षु के बारे में सुनाई थी।

उस समय, गुरु बुद्ध अपने चारों ओर एक विशाल मंडली के साथ, लाल मंच पर बने सत्य के सुंदर सिंहासन पर विराजमान थे और एक युवा शेर की तरह दहाड़ते हुए प्रवचन दे रहे थे। भिक्षु ने बुद्ध के ब्रह्मा स्वरूप, पूर्णिमा के चंद्रमा की चमकीली ज्योति और सोने की थाली

जैसे माथे को देखकर, जहाँ से वे आए थे वहीं से मुड़कर भीड़ के बीच से भागते हुए कहा, "इस तरह के व्यक्ति को कौन पराजित कर सकता है?"

भीड़ उसका पीछा करने लगी, फिर लौटकर गुरु को बताया। उन्होंने कहा, "यह भिक्षु न केवल मेरे सुनहरे चेहरे को देखते ही भाग गया, बल्कि पहले भी ऐसा ही कर चुका है।" और उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, बोधिसत्व बनारस के राजा थे, और तक्षशिला में गांधार (कंधार सहित अफगानिस्तान और पाकिस्तान के निकट) का एक राजा शासन करता था। बनारस पर कब्जा करने की इच्छा से, वह चार टुकड़ियों की पूरी सेना के साथ शहर को घेरने गया। शहर के द्वार पर खड़े होकर, उसने अपनी सेना को देखा और कहा, "इतनी बड़ी सेना को कौन जीत सकता है?" और अपनी सेना का वर्णन करते हुए, उसने पहला श्लोक कहा:-

मेरे झंडे अनगिनत हैं, लेकिन उनका कोई मुकाबला नहीं है।
कौवों के झुंड कभी भी उमड़ते समुद्र को रोक नहीं सकते--
तूफान की तेज हवा कभी पहाड़ को नहीं गिरा सकती:-
इसलिए, जीवित प्राणियों में से कोई भी मुझे पराजित नहीं कर सकता!

तब बोधिसत्व ने पूर्णिमा के चंद्रमा के समान अपनी शानदार शांति प्रकट की; और उसे धमकाते हुए कहा, "मूर्ख, व्यर्थ की बातें मत करो! अब मैं तुम्हारी सेना को उसी प्रकार नष्ट कर दूंगा, जैसे एक क्रोधित हाथी सरकंडों की घनी वनस्पति को कुचल देता है!" और उन्होंने दूसरा श्लोक दोहराया:

"मूर्ख! क्या तुम्हें अभी तक कोई प्रतिद्वंदी नहीं मिला?"
अगर तुम चोट पहुँचाने की कोशिश करोगे तो तुम बुखार से तड़प रहे हो।
मुझ जैसे एकाकी, जंगली हाथी!
जैसे वे सरकंडे को कुचलते हैं, वैसे ही मैं तुम्हें कुचल दूंगा!

जब गांधार (कंधार सहित अफगानिस्तान और पाकिस्तान के निकट) के राजा ने उसे इस प्रकार धमकी देते हुए सुना, तो उसने ऊपर देखा, और उसके चौड़े माथे को सोने की थाली के समान देखकर, स्वयं पकड़े जाने के भय से वह मुड़कर भाग गया, और वापस अपने नगर में आ गया।

यह प्रवचन समाप्त होने पर, गुरु ने जन्म का वर्णन किया: "उस समय आनंद की तलाश में भटकने वाला व्यक्ति गांधार (कंधार सहित अफगानिस्तान और पाकिस्तान के निकट) का राजा था, और बनारस का राजा मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **उपाहण-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-231-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 231
उपाहना-जातक

"जैसे जूतों का जोड़ा," इत्यादि—यह कहानी गुरु ने बाँस के वन में देवदत्त के बारे में सुनाई। भिक्षु (भाई) सत्य के हॉल में एकत्रित हुए और इस विषय पर चर्चा करने लगे। "मित्र, देवदत्त ने अपने गुरु का खंडन करके तथागत (बुद्ध) का प्रतिद्वंद्वी और शत्रु बनकर पूर्णतः विनाश को प्राप्त हुआ है।" गुरु अंदर आए और बैठे-बैठे उनसे पूछा कि वे किस बारे में बात कर रहे हैं। उन्होंने गुरु को बताया। गुरु ने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि देवदत्त ने अपने गुरु का खंडन करके मेरा शत्रु बनकर पूर्णतः विनाश को प्राप्त किया है। ऐसा पहले भी हो चुका है।" फिर उन्होंने उन्हें एक प्राचीन कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व एक हाथी प्रशिक्षक के पुत्र के रूप में पैदा हुए। बड़े होकर उन्हें हाथी पालन की सारी कला सिखाई गई। तभी काशी से एक युवक आया और उसने भी उनसे शिक्षा प्राप्त की। भविष्य के बुद्ध जब किसी को शिक्षा देते हैं, तो वे ज्ञान में कंजूसी नहीं करते; बल्कि अपने ज्ञान के अनुसार ही सिखाते हैं, कुछ भी नहीं छिपाते। इस प्रकार उस युवक ने बोधिसत्व से ज्ञान की सभी शाखाएँ बिना किसी चूक के सीखीं; और जब उसने सब कुछ सीख लिया, तो उसने अपने गुरु से कहा:

"गुरुजी, मैं जाकर राजा की सेवा करूंगा।"

"अच्छा, मेरे पुत्र," उन्होंने कहा और राजा के सामने जाकर उन्हें बताया कि उनका एक शिष्य राजा की सेवा करेगा। राजा ने कहा, "अच्छा, उसे मेरी सेवा करने दो।" "तो क्या तुम जानते हो कि कितना शुल्क देना है?" बोधिसत्व ने पूछा।

"तुम्हारे शिष्य को उतना नहीं मिलेगा जितना तुम्हें; यदि तुम सौ दो दो दो दो दो, तो उसे एक ही दोगे।" अतः बोधिसत्व घर गए और अपने शिष्य को यह सब बताया।

"गुरुजी," युवक ने कहा, "मैं आपका सारा ज्ञान, एक-एक करके जानता हूँ। यदि मुझे उतना ही वेतन मिले, तो मैं राजा की सेवा करूँगा; परन्तु यदि नहीं, तो मैं उनकी सेवा नहीं करूँगा।" यह बात बोधिसत्व ने राजा को बताई। राजा ने कहा,

"यदि वह युवक आपके समान ही कौशल प्रदर्शित कर सके—यदि वह आपके साथ कौशल में निपुण हो, तो उसे भी वैसा ही सम्मान प्राप्त होगा।" बोधिसत्व ने यह बात अपने शिष्य से कही, और शिष्य ने उत्तर दिया, "बहुत अच्छा, मैं ऐसा ही करूँगा।" राजा ने कहा, "कल तुम अपने कौशल का प्रदर्शन करना।" "अच्छा, मैं करूँगा; ढोल बजाकर घोषणा करवाओ।" और राजा ने घोषणा करवाई, "कल गुरु और शिष्य हाथी को संभालने में अपने कौशल का प्रदर्शन करेंगे। कल जो भी देखना चाहें, महल के प्रांगण में एकत्रित हों और इसे देखें।"

शिक्षक ने मन ही मन सोचा, "मेरा शिष्य मेरे सारे ज्ञान का उपयोग नहीं करता।" इसलिए उसने एक हाथी को चुना और एक ही रात में उसे सब कुछ उल्टा-पुल्टा करना सिखा दिया। उसने उसे आगे बढ़ने को कहने पर पीछे हटना और पीछे हटने को कहने पर आगे बढ़ना सिखाया; उठने को कहने पर लेटना और लेटने को कहने पर उठना सिखाया; उठाने को कहने पर गिराना और गिराने को कहने पर उठाना सिखाया।

अगले दिन, अपने हाथी पर सवार होकर वह महल के प्रांगण में आया। उसका शिष्य भी वहाँ एक सुंदर हाथी पर सवार था। वहाँ लोगों की एक बड़ी सभा थी। दोनों ने अपनी-अपनी कुशलता का प्रदर्शन किया। परन्तु बोधिसत्व ने अपने हाथी को उलटा आदेश दिया; "आगे बढ़ो!" उसने कहा, और वह पीछे हट गया; "पीछे हटो!" और वह आगे दौड़ा; "खड़े हो जाओ!" और वह लेट गया; "लेट जाओ!" और वह खड़ा हो गया; "उठाओ!" और उस प्राणी ने उसे गिरा दिया; "छोड़ दो!" और उसने उसे उठा लिया। और भीड़ चिल्लाई, "चले जाओ, बदमाश! अपने गुरु के विरुद्ध आवाज़ मत उठाओ! तुम अपनी औकात नहीं जानते, और सोचते हो कि तुम उससे मुकाबला कर सकते हो!" और उन्होंने उस पर पत्थर और लाठियों से हमला किया, जिससे उसकी वहीं पर मृत्यु हो गई। और बोधिसत्व अपने हाथी से नीचे उतरे, और राजा के पास जाकर उनसे इस प्रकार कहा—

"हे महान राजा! लोगों को उनकी भलाई के लिए ही शिक्षा दी जानी चाहिए; परन्तु एक ऐसा भी था जिसके लिए उसका ज्ञान कष्ट लेकर आया, जैसे कोई खराब बना जूता;" और उसने ये दो पंक्तियाँ कहीं:-

जैसे कि जब कोई व्यक्ति जूते का एक जोड़ा खरीदता है
क्योंकि सहायता और सांत्वना तो केवल दुख ही लाती हैं।
पैरों को तब तक खुजलाना जब तक वे बहुत गर्म न हो जाएं
और समय आने पर उनसे स्राव निकलने लगता है:
फिर भी एक नीच, घृणित व्यक्ति,
आपसे वह सब कुछ सीख लेने के बाद जो वह सीख सकता है,
आपकी स्वयं की शिक्षा ही आपकी कमजोरी को सिद्ध करती है।
नीच जाति का देहाती आदमी खराब ढंग से बने जूते के समान होता है।
राजा प्रसन्न हुआ और उसने बोधिसत्व का भरपूर सम्मान किया।

जब यह प्रवचन समाप्त हुआ, तो गुरु ने इस जन्म का वर्णन इस प्रकार किया: "देवदत्त शिष्य थे, और मैं स्वयं गुरु था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **विण-थुन-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-232-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 232
वीना-थुना-जातक

"तुम्हारा अपना विचार," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक युवती के बारे में सुनाई थी।

वह श्रावस्ती नगर के एक धनी व्यापारी की इकलौती पुत्री थी। उसने देखा कि उसके पिता के घर में एक उत्तम बैल को लेकर बहुत धूमधाम हो रही है, और उसने अपनी दाई से पूछा कि इसका क्या अर्थ है। "दाई, यह कौन सा बैल है जिसका इतना सम्मान किया जा रहा है?" दाई ने उत्तर दिया कि यह सचमुच एक शाही बैल है।

एक दिन वह ऊपरी मंजिल से सड़क पर देख रही थी, तभी अचानक उसकी नज़र एक कुबड़ा आदमी पर पड़ी। उसने सोचा, "गाय-गाय के झुंड में मुखिया का कुबड़ा होता है। शायद पुरुषों में भी ऐसा ही होता है। वह ज़रूर कोई महान और रईस आदमी होगा, और मुझे जाकर उसकी विनम्र अनुयायी बनना चाहिए।" इसलिए उसने अपनी दासी को यह बताने के लिए भेजा कि व्यापारी की बेटी उससे जुड़ना चाहती है, और उसे एक निश्चित स्थान पर उसका इंतज़ार करना है। उसने अपना सारा सामान इकट्ठा किया और भेष बदलकर महल से निकलकर उस कुबड़े आदमी के साथ चली गई।

कुछ समय बाद यह बात कस्बे में और भिक्षु समुदाय में फैल गई। सत्य के हॉल में भिक्षुओं ने इसके अर्थों पर चर्चा की: "मित्र, एक व्यापारी की बेटी एक कुबड़ा आदमी के साथ भाग गई है!" गुरुजी अंदर आए और पूछा कि वे सब आपस में क्या बात कर रहे हैं। उन्होंने उन्हें बताया। गुरुजी ने उत्तर दिया, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि वह किसी कुबड़ा आदमी के प्यार में पड़ी है। उसने पहले भी ऐसा किया था।" और उन्होंने उन्हें एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब एक बाज़ार कस्बे में एक धनी परिवार में बोधिसत्व का जन्म हुआ। जब वे वयस्क हुए, तो उन्होंने गृहस्थ जीवन व्यतीत किया और पुत्र-पुत्रियों की संतान प्राप्ति हुई। अपने पुत्र की पत्नी के रूप में उन्होंने बनारस के एक धनी नागरिक की पुत्री का चयन किया और विवाह का दिन निर्धारित किया।

फिर उस लड़की ने अपने घर में एक बैल को सम्मान और श्रद्धा अर्पित करते देखा। उसने अपनी दाई से पूछा, "यह क्या है?" दाई ने कहा, "एक शाही बैल।" इसके बाद लड़की ने गली से एक कुबड़ा आदमी जाते देखा। उसने सोचा, "यह तो ज़रूर कोई शाही आदमी होगा!" और अपने कीमती सामान का एक गट्ठा लेकर वह उसके साथ चली गई।

बोधिसत्व भी उस लड़की को घर लाने की इच्छा से एक बड़े समूह के साथ बनारस के लिए निकल पड़े; और उन्होंने उसी रास्ते से यात्रा की।

दोनों रात भर सड़क पर चलते रहे। रात भर कुबड़ा प्यास से बेहाल रहा; और सूर्योदय होते ही उसे पेट में तेज दर्द होने लगा। दर्द से बेहाल होकर वह सड़क से उतर गया और टूटे हुए वीणा के डंडे की तरह सिकुड़कर गिर पड़ा; लड़की भी उसके चरणों में बैठ गई। बोधिसत्व ने उसे कुबड़े के चरणों में बैठे देखा और पहचान लिया। पास आकर उन्होंने उससे बात की और पहला श्लोक दोहराया:

"यह तुम्हारा ही विचार है! यह मूर्ख व्यक्ति बिना मार्गदर्शक के हिल भी नहीं सकता।"
यह मूर्ख कुबड़ा! तुम्हारे लिए इसके साथ रहना उचित नहीं है।"
और उसकी आवाज सुनकर लड़की ने दूसरे छंद में उत्तर दिया:-

"मैंने कुबड़ा आदमी को पुरुषों का राजा समझा और उसकी खूबियों के कारण उससे प्यार किया।"

जो टूटे तारों वाले वीणा की तरह धरती पर दुबका पड़ा है।
और जब बोधिसत्व को पता चला कि वह केवल भेस बदलकर उनके पीछे आई है, तो उन्होंने उसे स्नान कराया, उसे सजाया-संवारा और उसे अपने रथ में बिठाकर अपने घर ले गए।

जब यह प्रवचन समाप्त हुआ, तो गुरु ने जन्म की पहचान बताई: "दोनों ही मामलों में लड़की एक ही है; और बनारस का व्यापारी मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **विकांकक-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-233-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 233
विकननाका-जातक

"तुम्हारी पीठ में कांटा चुभा हुआ है," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक पथभ्रष्ट भिक्षु के बारे में सुनाई थी।

उन्हें सत्य के हॉल में लाया गया और पूछा गया कि क्या वे सचमुच पथभ्रष्ट हो रहे हैं; उन्होंने हाँ में उत्तर दिया। जब उनसे कारण पूछा गया, तो उन्होंने कहा, "इच्छा के गुण के कारण।" गुरु ने कहा, "इच्छा हृदय में प्रवेश करने के लिए दो नुकीले तीरों के समान है; एक बार वहाँ पहुँच जाने पर, वे मार डालते हैं, जैसे नुकीले तीरों ने मगरमच्छ को मार डाला।" फिर उन्होंने उन्हें एक प्राचीन कथा सुनाई।

एक समय की बात है, बोधिसत्व बनारस के राजा थे, और वे एक अच्छे राजा थे। एक दिन वे अपने उद्यान में गए और एक झील के किनारे पहुँचे। वहाँ नृत्य और गायन में निपुण लोग नाचने-गाने लगे। मछलियाँ और कछुए गीत की ध्वनि सुनने के लिए उत्सुक होकर झुंड बनाकर राजा के साथ चलने लगे। राजा ने ताड़ के तने के बराबर मछलियों का एक बड़ा समूह देखकर अपने दरबारियों से पूछा,

"अब ये मछलियाँ मेरा पीछा क्यों कर रही हैं?"

दरबारियों ने कहा, "वे अपने स्वामी को अपनी सेवाएं अर्पित करने आ रहे हैं।"

यह सुनकर राजा प्रसन्न हुआ कि वे उसकी सेवा करने आए हैं, और उसने उन्हें नियमित रूप से चावल देने का आदेश दिया। भोजन के समय कुछ मछलियाँ आईं और कुछ नहीं आईं; इस प्रकार चावल बर्बाद हो गया। उन्होंने राजा को यह बात बताई। राजा ने कहा, “अब से, चावल देने के समय ढोल बजाया जाए; और ढोल की ध्वनि पर, जब मछलियाँ इकट्ठा हों, तो उन्हें भोजन दिया जाए।” तब से, भोजन देने वाला ढोल बजाता था, और जब मछलियाँ इकट्ठा होती थीं, तो उन्हें चावल देता था। जब वे इस प्रकार भोजन कर रही थीं, तभी एक मगरमच्छ आया और कुछ मछलियों को खा गया। भोजन देने वाले ने राजा को यह बात बताई। राजा ने सुना। उसने कहा, “जब मगरमच्छ मछलियाँ खा रहा हो, तो उसे भाले से मार कर पकड़ लेना।”

“अच्छा,” उस आदमी ने कहा। और वह एक नाव पर सवार हो गया, और जैसे ही मगरमच्छ मछली खाने आया, उसने उसे भाले से घायल कर दिया। भाला उसकी पीठ में जा लगा। दर्द से पागल होकर मगरमच्छ भाला लेकर भाग गया। उसे घायल देखकर, मछली खिलाने वाले ने उससे इस प्रकार कहा:

"तुम्हारी पीठ में कांटा चुभा हुआ है, अब तुम जहां चाहो जा सकते हो।"
ढोल की थाप, मेरी मछलियों को भोजन के लिए बुला रही है,
तुम्हें लाया, पीछा करते हुए, लालची, रास्ते में
जिसकी वजह से आप भी अपनी सबसे बड़ी जरूरत की स्थिति में आ गए।
जब मगरमच्छ अपने ठिकाने पर पहुंचा तो उसकी मौत हो गई।

इस विषय को समझाने के लिए, पूर्णतः प्रबुद्ध गुरु ने दूसरा श्लोक इस प्रकार कहा:

इसलिए, जब दुनिया किसी भी व्यक्ति को पाप करने के लिए लुभाती है
जो अपने विवेक और इच्छा के सिवा कोई कानून नहीं जानता,
वह अपने दोस्तों और परिवार के बीच ही अंतिम सांस लेता है।
ठीक वैसे ही जैसे मगरमच्छ ने मछली को खा लिया था।
जब यह प्रवचन समाप्त हुआ, तो गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के समापन पर, पथभ्रष्ट भाई (भिक्षु) प्रथम मार्ग के फल (समाधि) तक पहुँच गया: "उन दिनों मैं बनारस का राजा था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> असिताभू - **जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-234-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 234
असिताभु-जातक

"अब इच्छा समाप्त हो गई है," इत्यादि—यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक युवती के बारे में सुनाई थी।

परंपरा के अनुसार, श्रावस्ती नगर में गुरु के दो प्रमुख शिष्यों के सेवक एक व्यक्ति की एक सुंदर और सुखी पुत्री थी। जब वह बड़ी हुई, तो उसका विवाह एक ऐसे परिवार में हुआ जो उसके अपने परिवार के समान ही था। उसका पति बिना किसी से सलाह लिए अपनी इच्छा से कहीं और मौज-मस्ती करता था। उसने उसके इस अनादर पर ध्यान नहीं दिया; बल्कि उसने दो प्रमुख शिष्यों को आमंत्रित किया, उन्हें उपहार दिए और उनके उपदेश सुने, यहाँ तक कि उसने प्रथम मार्ग का फल (सम्मोहन) प्राप्त कर लिया। इसके बाद उसने अपना सारा समय मार्ग और फल के आनंद में व्यतीत किया; अंत में, यह सोचकर कि उसके पति को उसकी आवश्यकता नहीं है, उसे गृहस्थ जीवन में रहने की कोई आवश्यकता नहीं है, उसने धार्मिक जीवन अपनाने का निश्चय किया। उसने अपने माता-पिता को अपनी योजना के बारे में बताया, उसे पूरा किया और एक संत बन गई।

उसकी कहानी भिक्षुओं के बीच फैल गई; और एक दिन वे सत्य के हॉल में इस पर चर्चा कर रहे थे। "मित्र, फलाँ परिवार की पुत्री ने सर्वोच्च कल्याण प्राप्त करने का प्रयास किया। जब उसने देखा कि उसका पति उसकी परवाह नहीं करता, तो उसने प्रमुख शिष्यों को बहुमूल्य उपहार दिए, उनके उपदेश सुने और प्रथम मार्ग का फल (सन्यास) प्राप्त किया; उसने अपने माता-पिता से विदा ली, एक तपस्वी बन गई और फिर एक संत बन गई। अतः, मित्र, उस कन्या ने सर्वोच्च कल्याण की खोज की।"

जब वे बातें कर रहे थे, तभी गुरुजी अंदर आए और पूछा कि आखिर बात क्या है। उन्होंने उन्हें सब कुछ बताया। गुरुजी ने कहा, "भाइयों (भिक्षुओं) यह पहली बार नहीं है कि वह सर्वोच्च लक्ष्य की खोज कर रही है; पुराने समय में भी वह ऐसा ही करती थी।" और उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व हिमालय क्षेत्र में एक तपस्वी के रूप में रह रहे थे और उन्होंने अपनी इंद्रियों और उपलब्धियों को संजोया था। तब बनारस के राजा ने अपने पुत्र राजकुमार ब्रह्मदत्त की भव्यता को देखकर संदेह किया और अपने पुत्र को राज्य से निर्वासित कर दिया।

वह युवक अपनी पत्नी असितभु के साथ हिमालय की ओर चल पड़ा और पत्तों की झोपड़ी में रहने लगा। वहाँ खाने के लिए मछली और तरह-तरह के जंगली फल थे। उसने एक वन परी को देखा और उस पर मोहित हो गया। उसने कहा, "मैं उसे अपनी पत्नी बनाऊँगा!" और असितभु के बारे में सोचे बिना, वह उसके पीछे चल पड़ा। उसकी पत्नी ने उसे परी के पीछे जाते देखकर क्रोधित हो गई। उसने सोचा, "यह आदमी मेरी परवाह नहीं करता; मुझे इससे क्या लेना-देना है?" इसलिए वह बोधिसत्व के पास आई और उन्हें प्रणाम किया।

उसने दीक्षा प्राप्त करने के लिए आवश्यक बातें सीखीं और उस रहस्यमय वस्तु को निहारते हुए अपनी इंद्रियों और उपलब्धियों को विकसित किया। उसने बोधिसत्व को विदाई दी और लौटकर अपनी पत्तों की झोपड़ी के द्वार पर खड़ी हो गई।

ब्रह्मदत्त परी के पीछे-पीछे गया, पर वह यह नहीं देख पाया कि वह किस रास्ते से जा रही है; और अपनी इच्छा को दबाते हुए उसने फिर से कुटिया की ओर रुख किया। असितभु ने उसे आते देखा और हवा में ऊपर उठी; और एक कीमती पत्थर के रंग के समतल पर स्थिर होकर उसने उससे कहा—"मेरे युवा स्वामी! आपके कारण ही मुझे यह परमानंद प्राप्त हुआ है!" और उसने पहला श्लोक कहा:-

अब इच्छा समाप्त हो गई है,
आपकी बदौलत, मुझे इसका अंत मिल गया:
जैसे हाथीदांत को एक बार काट देने पर,
इसे मरम्मत करके कोई भी इसे एक नहीं बना सकता।
ऐसा कहते हुए, उसने देखा और वह उठकर दूसरी जगह चली गई। और उसके जाने के बाद, उसने शोक व्यक्त करते हुए दूसरा छंद कहा:

"लालच जिसकी कोई सीमा नहीं होती,"
वासना, सारी इंद्रियों को भ्रमित कर देती है,
हमारी अच्छी चीजें चुरा लेता है,
अब तो मैं अपनी पत्नी को भी खो रहा हूँ।"
और इस श्लोक में अपना विलाप करने के बाद, वह जंगल में अकेले रहने लगा, और अपने पिता की मृत्यु के बाद उसे शासन करने की शक्ति प्राप्त हुई।

इस प्रवचन के समाप्त होने के बाद, गुरु ने जन्म की पहचान बताई: "ये दोनों व्यक्ति राजकुमार और राजकुमारी थे, और मैं संन्यासी था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **वाचा-नख-जातक**
स्रोत: *डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-235-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 235
वच्च-नख-जातक

"संसार में घर प्यारे होते हैं," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रोजा मल्लियन के बारे में सुनाई थी।

हमें पता चलता है कि आनंद के एक गृहस्थ मित्र ने, जो स्वयं भी आनंद का मित्र था, वरिष्ठ भिक्षु को संदेश भेजा कि वह उसके पास आए। वरिष्ठ भिक्षु ने गुरु से विदा ली और चले गए। उन्होंने वरिष्ठ भिक्षु को तरह-तरह के भोजन परोसे और एक तरफ बैठकर उनसे सुखद वार्तालाप किया। फिर उन्होंने वरिष्ठ भिक्षु को अपने घर में रहने का प्रस्ताव दिया और उन्हें पांच प्रकार की इच्छाओं का प्रलोभन दिया। "आनंद, मेरे घर में बहुत से जीवित और मृत पशु हैं। मैं उन्हें बाँटकर आधा आपको दे दूँगा; आइए हम एक ही घर में साथ रहें!" वरिष्ठ भिक्षु ने उन्हें इच्छाओं से उत्पन्न कष्टों के बारे में समझाया; फिर वे अपनी जगह से उठे और मठ लौट गए।

जब गुरु ने पूछा कि क्या उसने रोजा को देखा है, तो उसने कहा कि उसने देखा है। "उसने तुमसे क्या कहा?" "गुरु, रोजा ने मुझे संसार में लौटने का निमंत्रण दिया; तब मैंने उसे इच्छाओं और सांसारिक जीवन में निहित कष्टों के बारे में बताया।" गुरु ने कहा, "आनंद, यह पहली बार नहीं है कि रोजा मल्लियन ने संन्यासियों को संसार में लौटने का निमंत्रण दिया है; उसने पहले भी ऐसा किया था;" और फिर, उसके अनुरोध पर, उन्होंने प्राचीन काल की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व एक ब्राह्मण परिवार के सदस्य थे जो एक कस्बे में रहते थे। वृद्ध होने पर उन्होंने संन्यासी जीवन व्यतीत किया और हिमालय की गोद में लंबे समय तक रहे।

वह नमक और मसाले खरीदने के लिए बनारस गया और राजा के महल में ठहरा; अगले दिन वह बनारस में प्रवेश कर गया।

फिर उस इलाके के एक धनी व्यक्ति को उसका व्यवहार पसंद आया और वह उसे अपने घर ले गया, उसे खाना खिलाया और उसके साथ रहने का वादा लेकर उसे बगीचे में ठहराया और उसकी जरूरतों का ख्याल रखा। इस तरह उन दोनों के बीच दोस्ती हो गई।

एक दिन, धनी व्यक्ति ने बोधिसत्व के प्रति अपने प्रेम और मित्रता के कारण मन ही मन सोचा: "सन्यासी का जीवन दुखमय होता है। मैं अपने मित्र वचनखा को संन्यास लेने के लिए मनाऊंगा; मैं अपनी संपत्ति को दो भागों में बांटकर आधा उसे दे दूंगा, और हम दोनों साथ रहेंगे।" अतः एक दिन, भोजन समाप्त होने के बाद, उसने अपने मित्र से मधुरता से कहा-

"हे वचनखा, संन्यासी का जीवन दुखी है; घर में रहना सुखदायक है। आओ, हम दोनों साथ मिलकर अपनी इच्छानुसार जीवन व्यतीत करें।" ऐसा कहकर उन्होंने पहला श्लोक बोला:-

दुनिया में घर प्यारे होते हैं,
भोजन से भरपूर, और खजाने से भी भरपूर;
वहाँ आपको भरपूर मांस मिलेगा।
अपनी इच्छानुसार खाएं-पिएं।
बोधिसत्व ने उनकी बात सुनकर उत्तर दिया: "हे प्रभु, अज्ञानवश तुम इच्छाओं के लोभी हो गए हो और गृहस्थ जीवन को अच्छा तथा तपस्वी जीवन को बुरा कहते हो; अब सुनो, मैं तुम्हें बताता हूँ कि गृहस्थ जीवन कितना बुरा है;" और उन्होंने दूसरा श्लोक कहा:

"जिसके पास घर हैं, उसे कभी शांति का अनुभव नहीं हो सकता।"
वह झूठ बोलता है और धोखा देता है, उसे कई वार करने होंगे।
दूसरों के कंधों पर: इस गलती का कोई इलाज नहीं है:
फिर भला कौन स्वेच्छा से घर में जाना चाहेगा?
इन शब्दों के साथ महान बुद्ध ने गृहस्थ जीवन की कमियों का वर्णन किया और फिर बगीचे में चले गए।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "रोजा मल्लियन बनारस का व्यापारी था, और मैं वचनखा भिक्षु था।"

स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-236-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 236
बका-जातक

"देखो, वह द्विज पक्षी," इत्यादि—यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक पाखंडी के बारे में सुनाई थी। जब उसे गुरु के समक्ष लाया गया, तो गुरु ने कहा, "भाइयों, वह पुराने समय से ही पाखंडी था, जैसा कि वह अब है," और फिर निम्नलिखित कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व हिमालय क्षेत्र के एक तालाब में मछली बन गए और उनके साथ मछलियों का एक बड़ा झुंड भी था। अब एक सारस उस मछली को खाना चाहता था। इसलिए उसने तालाब के पास एक जगह पर अपना सिर झुकाया, अपने पंख फैलाए और मछलियों को खाली निगाहों से देखता रहा, उनके लापरवाह होने का इंतजार करता रहा

(*1)। उसी क्षण बोधिसत्व अपने झुंड के साथ भोजन की तलाश में उस स्थान पर आए। और मछलियों के झुंड ने सारस को देखकर पहला श्लोक बोला:-

"उस द्विज (dijo) (*2) पक्षी को देखो, कितना सफेद है--
 कमल के फूल की तरह प्रतीत होता है;
पंख बाएँ और दाएँ फैले हुए--
 ओह, कितना पवित्र! सपने देख रहा है, सपने देख रहा है!
तब बोधिसत्व ने देखा और दूसरा श्लोक बोला:

वह क्या है, यह तुम नहीं जानते।
 वरना तुम उसकी प्रशंसा नहीं करते।
वह हमारा सबसे कपटी प्रतिद्वंद्वी है;
 इसीलिए वह कोई पंख नहीं उठाता।
इस पर मछली पानी में उछली और सारस को भगा दिया।

जब यह प्रवचन समाप्त हुआ, तो गुरु ने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "यह पाखंडी सारस था, और मैं मछलियों के झुंड का मुखिया था।"

फुटनोट:

(1) सारस की नींद" छल के लिए एक भारतीय कहावत है।

(2) दिजो (या द्विज) शब्द पक्षी के लिए प्रयोग किया जाता है, जिसका अर्थ है अंडे में जन्म लेना और अंडे से उत्पन्न होना। यह ब्राह्मणों (उच्चतम पुरोहित जाति) के लिए भी प्रयोग किया जाता है, जिससे पवित्रता का एक अतिरिक्त भाव भी व्यक्त होता है। भारत में उच्च जाति के लोग मूल रूप से गोरे (सफेद) थे, जो यूरोप से आए थे और फिर हजारों साल पहले प्रवास कर गए थे। 'द्विज' शब्द का प्रयोग इन उच्च जाति के लोगों के लिए किया जाता है, क्योंकि जनेऊ संस्कार के बाद उन्हें पवित्रता में पुनर्जन्म प्राप्त हुआ माना जाता है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **साकेत-जातक2**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-237-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 237
सकेत-जातक

"दिल ठंडे क्यों होते हैं?", इत्यादि - यह कहानी गुरु ने साकेत के पास प्रवास के दौरान साकेत नामक एक ब्राह्मण के बारे में सुनाई थी। कहानी की प्रेरणा देने वाली परिस्थितियाँ और कहानी दोनों पहले ही दी जा चुकी हैं (*1)।

...और जब तथागत (बुद्ध) मठ में चले गए, तो भिक्षु ने पूछा, "हे प्रभु, प्रेम की शुरुआत कैसे हुई?" और पहली पंक्ति दोहराई:-

हे बुद्ध, बताइए, हृदय एक-दूसरे के प्रति उदासीन क्यों हो जाते हैं!
और किसी दूसरे से इतना अधिक प्रेम करना?

गुरु ने दूसरे श्लोक में प्रेम के स्वरूप की व्याख्या की:

"वे लोग जिनसे प्यार करते हैं, जो पिछले जन्मों में प्रिय थे,"
जैसे झील में कमल अवश्य उगता है, वैसे ही निश्चित है।

इस प्रवचन के समाप्त होने के बाद, गुरु ने जन्म की पहचान बताई: "ये दोनों व्यक्ति कथा में वर्णित ब्राह्मण और उनकी पत्नी थे; और मैं उनका पुत्र था।"

फुटनोट:

(1)सं. 68.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **एकपाद-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-238-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 238
एकपाद-जातक

"मुझे एक शब्द बताओ," इत्यादि—यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक जमींदार के बारे में सुनाई थी।

हमें बताया जाता है कि श्रावस्ती नगर में एक जमींदार रहता था। एक दिन, उसका बेटा उसकी गोद में बैठा उससे वह प्रश्न पूछने लगा जिसे "द्वार" (*1) कहा जाता है। उसने उत्तर दिया, "इस प्रश्न का उत्तर बुद्ध ही दे सकते हैं; कोई और नहीं।" इसलिए वह अपने बेटे को जेतवन मठ ले गया और गुरु को प्रणाम किया। उसने कहा, "हे गुरु, जब मेरा बेटा मेरी गोद में बैठा था, उसने मुझसे 'द्वार' नामक प्रश्न पूछा। मुझे इसका उत्तर नहीं पता था, इसलिए मैं आपसे उत्तर माँगने आया हूँ।" गुरु ने कहा, "हे गृहस्थ, यह पहली बार नहीं है कि इस बालक ने अपने लक्ष्य की प्राप्ति का मार्ग खोजते हुए ज्ञानी पुरुषों से यह प्रश्न पूछा है; उसने पहले भी ऐसा किया था, और पुराने समय के ज्ञानी पुरुषों ने उसे उत्तर दिया था; लेकिन पुनर्जन्म के कारण उसकी स्मृति धुंधली हो गई है, इसलिए वह उसे भूल गया है।" और उसके अनुरोध पर गुरु ने उसे पुराने समय की एक कथा सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व एक धनी व्यापारी के पुत्र के रूप में इस संसार में आए। वे बड़े हुए और समय बीतने पर जब उनके पिता का देहांत हुआ, तो उन्होंने व्यापारी के रूप में अपने पिता का स्थान ग्रहण कर लिया।

और उसका छोटा बेटा, जो उसकी गोद में बैठा था, ने उससे एक सवाल पूछा, "पिताजी," उसने कहा, "मुझे एक ऐसी बात एक शब्द में बताइए जिसमें अर्थों की व्यापक श्रृंखला समाहित हो;" और उसने पहला छंद दोहराया:-

मुझे एक ऐसा शब्द बताओ जिसे सभी चीजें समाहित कर सकें:
संक्षेप में कहें तो, हम अपने लक्ष्य को किस प्रकार प्राप्त कर सकते हैं?
उसके पिता ने दूसरे वाक्य से उत्तर दिया:-

"सभी अनमोल चीजों में एक चीज महत्वपूर्ण है - वह है कौशल।"
सद्गुण और धैर्य को अपनाएं, और आप सफल होंगे।
अपने मित्रों के साथ भलाई करो और अपने प्रतिद्वंद्वियों के साथ बुरा व्यवहार करो।
इस प्रकार बोधिसत्व ने अपने पुत्र के प्रश्न का उत्तर दिया। पुत्र ने अपने पिता द्वारा बताए गए मार्ग का अनुसरण करते हुए अपने उद्देश्यों की पूर्ति की और समय आने पर अपने कर्मों के फल के लिए परलोक विदा हो गया।

जब यह प्रवचन समाप्त हुआ, तो गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के समापन पर पिता और पुत्र प्रथम मार्ग (समाधि) के फल तक पहुँचे: "यह व्यक्ति तब पुत्र था, और मैं स्वयं बनारस का व्यापारी था।"

फुटनोट:

(1) यह प्रश्न पथों पर प्रवेश करने के साधनों से संबंधित है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **हरिता-माता-जातक**
स्रोत: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित

पिछला <<<<-----||-239-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 239
हरिता-माता-जातक

"जब मैं उनके पिंजरे में था," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने बाँस के जंगल में रहते हुए अजातशत्रु के बारे में सुनाई थी।

कोसल के राजा महा-कोसल के पिता ने जब अपनी पुत्री का विवाह राजा बिम्बिसार से किया, तो उन्होंने उसे स्नान के बदले काशी में एक गाँव दे दिया। अजातशत्रु द्वारा अपने पिता बिम्बिसार की हत्या करने के बाद, रानी बिम्बिसार के प्रेम में शीघ्र ही मर गई। माता की मृत्यु के बाद भी अजातशत्रु को उस गाँव से आय प्राप्त होती रही। परन्तु कोसल के राजा ने निश्चय किया कि पिता के हत्यारे को वह गाँव नहीं मिलना चाहिए जो उत्तराधिकार के अधिकार से उसका है, और उसने अजातशत्रु पर युद्ध छेड़ दिया। कभी मामा की जीत होती, कभी भतीजे की। जब अजातशत्रु विजयी होता, तो वह अपना ध्वज फहराकर विजयोत्सव मनाते हुए राजधानी लौट जाता; परन्तु जब वह हार जाता, तो निराश होकर बिना किसी को बताए वापस लौट आता।

यह उस दिन की बात है जब भिक्षु (भाई) सत्य के हॉल में बैठकर इस विषय पर चर्चा कर रहे थे। "मित्र"—जैसा कि कोई कहता—"अजातशत्रु अपने मामा को हराने पर प्रसन्न होता है, और हारने पर निराश हो जाता है।" गुरुजी हॉल में प्रवेश करते हुए बोले, "वे इस बार किस विषय पर चर्चा कर रहे हैं?" और उन्होंने उन्हें बताया। गुरुजी ने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि कोई व्यक्ति जीतने पर प्रसन्न होता है और हारने पर दुखी।" और उन्होंने उन्हें एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व हरे मेंढक बन गए। उस समय लोग नदियों के सभी गड्ढों और छेदों में मछली पकड़ने के लिए बुने हुए पिंजरे लगाते थे। एक पिंजरे में बहुत सारी मछलियाँ थीं। एक जल-सांप मछली खाते हुए खुद उस पिंजरे में घुस गया। कई मछलियाँ उस पर टूट पड़ीं और उसे काटने लगीं, जिससे वह खून से लथपथ हो गया। अपनी जान के डर से, उसने पिंजरे के मुँह से फिसलकर पानी के किनारे दर्द से कराहते हुए लेट गया। उसी क्षण, हरा मेंढक उछला और पिंजरे के मुँह में गिर गया। सांप को समझ नहीं आ रहा था कि वह किससे मदद मांगे, इसलिए उसने वहाँ फंसे मेंढक से पूछा, "मित्र मेंढक, क्या तुम मछलियों के इस व्यवहार से प्रसन्न हो?" और उसने पहला श्लोक कहा:-

"जब मैं उनके पिंजरे में था, तो मछलियों ने मुझे काट लिया।"
मैं, हालांकि एक सांप। हरा मेंढक, क्या यह सही लगता है?
तब मेंढक ने उसे उत्तर दिया, "हाँ, मित्र साँप, ऐसा ही होता है: क्यों नहीं? यदि तुम अपने क्षेत्र में आने वाली मछलियों को खाओगे, तो मछलियाँ अपने क्षेत्र में आने पर तुम्हें खा जाएँगी। अपने स्थान, अपने क्षेत्र और अपने भोजन क्षेत्र में कोई भी कमज़ोर नहीं होता।" ऐसा कहकर उसने दूसरा छंद कहा:

"लोग तब तक लूटपाट करते रहते हैं जब तक वे ऐसा कर सकते हैं।"
और जब वे ऐसा नहीं कर पाते—तो काटने वाले को ही काट दिया जाता है!
बोधिसत्व द्वारा अपना मत व्यक्त करने के बाद, सभी मछलियों ने सर्प की कमजोरी को देखकर कहा, "चलो हम अपने प्रतिद्वंद्वी को पकड़ लें!" और पिंजरे से बाहर आकर उसे वहीं मार डाला और फिर वहां से चले गए।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "अजातशत्रु जल सर्प था, और हरा मेंढक मैं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **महापिंगल-जातक**

स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-240-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 240
महापिंगला-जातक

"पीला राजा," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ के उद्यान में विधर्मी (गलत विश्वास रखने वाले) देवदत्त के बारे में सुनाई थी।

देवदत्त ने नौ महीने तक भावी बुद्ध के विनाश की योजना बनाई थी और जेतवन मठ के द्वार के पास धरती में समा गया था।

तब जेतवन मठ और आसपास के सभी क्षेत्रों में रहने वाले लोग प्रसन्न होकर कहने लगे, "बुद्ध के शत्रु देवदत्त पृथ्वी में समा गए हैं: शत्रु का नाश हो गया है, और गुरु पूर्णतः प्रबुद्ध हो गए हैं!" ये शब्द बार-बार सुनकर भारत महाद्वीप के सभी लोग, सभी प्रेत, जीव-जंतु और देवता भी प्रसन्न हो गए। एक दिन, सभी भिक्षु सत्य के हॉल में आपस में बातें कर रहे थे, और वे इस प्रकार कहते थे: "भाई, जब से देवदत्त पृथ्वी में समा गए हैं, कितने लोग प्रसन्न होकर कह रहे हैं, देवदत्त पृथ्वी में समा गए हैं!" गुरु ने प्रवेश किया और पूछा, "भाइयों, तुम सब यहाँ किस बारे में बात कर रहे हो?" उन्होंने उन्हें बताया। तब उन्होंने कहा, "हे भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि बहुत से लोगों ने देवदत्त की मृत्यु पर प्रसन्नता मनाई है और जोर-जोर से हँसे हैं। बहुत पहले भी उन्होंने इसी तरह प्रसन्नता मनाई थी और हँसे थे।" और उन्होंने उन्हें एक प्राचीन कथा सुनाई।

एक समय बनारस में महापिंगला नामक एक दुष्ट और अन्यायी राजा का राज था, जिसे महान पीतराज भी कहा जाता था। वह अपनी मनमानी और इच्छा के अनुसार पाप करता था। करों, जुर्माने, अनेक अंग-भंग (*1) और लूटपाट से वह जनता को गन्ने की चक्की में कुचलने के समान निर्दयी, क्रूर और हिंसक था। उसे अन्य लोगों के लिए जरा भी दया नहीं थी; घर पर वह अपनी पत्नियों, पुत्रों और पुत्रियों, ब्राह्मण दरबारियों और गृहस्थों के प्रति कठोर और असंतुष्ट रहता था। वह आँख में गिरने वाले धूल के कण के समान, शोरबे में कंकड़ के समान, एड़ी में चुभने वाले कांटे के समान था।

बोधिसत्व महापिंगला राजा के पुत्र थे। दीर्घकाल तक शासन करने के बाद उनका निधन हो गया। उनके निधन पर बनारस के सभी नागरिक अत्यंत प्रसन्न हुए और खूब हँसे। उन्होंने उनके शरीर को हज़ारों बैलगाड़ियों में लट्ठों के साथ जलाया और हज़ारों घड़े जल से आग बुझाई तथा बोधिसत्व को राजा नियुक्त किया। उन्होंने अपने राज्य में धर्मात्मा राजा की प्राप्ति की खुशी में सड़कों पर ढोल बजवाए। उन्होंने झंडे और ध्वज फहराए और शहर को सजाया। प्रत्येक द्वार पर मंडप लगाया गया और भुने हुए अनाज और फूल बिखेरकर, उन्होंने सुंदर छतरियों के नीचे सजे हुए चबूतरों पर बैठकर भोजन और पेय का आनंद लिया। बोधिसत्व स्वयं एक भव्य ऊंचे चबूतरे पर रखे सुंदर दीवान पर अत्यंत वैभव के साथ विराजमान थे, उनके ऊपर एक सफेद छत्र फैला हुआ था। दरबारी, गृहस्थ, नागरिक और द्वारपाल अपने राजा के चारों ओर खड़े थे।

लेकिन राजा से कुछ ही दूरी पर खड़ा एक द्वारपाल आहें भर रहा था और सिसक रहा था। बोधिसत्व ने उसे देखकर कहा, "हे द्वारपाल, मेरे पिता की मृत्यु पर सब लोग आनंद मना रहे हैं, पर तुम रो रहे हो। बताओ, क्या मेरे पिता तुम्हारे प्रति दयालु और भले थे?" और इस प्रश्न के साथ उन्होंने पहला श्लोक कहा:-

"पीला राजा सभी मनुष्यों के प्रति क्रूर था;
अब वह मर चुका है, सब फिर से खुलकर सांस ले सकते हैं।
क्या पीली आंखों वाला वह व्यक्ति इतना प्यारा था?
या फिर, पोर्टर, तुम यहाँ खड़े होकर क्यों रो रहे हो?

उस आदमी ने सुना और उत्तर दिया: "मैं पिंगला की मृत्यु पर शोक नहीं कर रहा हूँ। मेरा सिर तो प्रसन्न ही हो जाएगा। क्योंकि राजा पिंगला जब भी महल से नीचे आते या ऊपर जाते, तो मुझे अपनी मुट्ठी से आठ प्रहार करते, मानो कोई लोहार हथौड़े से प्रहार कर रहा हो। इसलिए जब वे परलोक जाएँगे, तो वे नरक के द्वारपाल यम के सिर पर आठ प्रहार करेंगे, मानो मुझे ही मार रहे हों। तब वहाँ के लोग चिल्लाएँगे - 'वह हमारे लिए बहुत क्रूर है!' और उसे वापस भेज देंगे। और मुझे डर है कि वह फिर आकर मेरे सिर पर प्रहार करेगा, और इसीलिए मैं रो रहा हूँ।" बात समझाने के लिए उन्होंने दूसरा श्लोक कहा:-

"पीला राजा किसी भी तरह से प्रिय नहीं था:
मुझे डर है कि वह फिर से वापस आ जाएगा।
क्या होगा अगर वह मृत्यु के राजा को हरा दे, और फिर
क्या मृत्यु के राजा को उसे वापस भेज देना चाहिए?
तब बोधिसत्व ने कहा: "उस राजा को हज़ार रथों में भरी लकड़ियों से जला दिया गया है; उसके जलने के स्थान को हज़ारों घड़ों के जल से भिगो दिया गया है, और चारों ओर की ज़मीन खोद दी गई है; भाग्य के बल (*2) के अलावा जो प्राणी परलोक चले गए हैं, वे अपने पहले वाले शारीरिक रूप में वापस नहीं आते; डरो मत!" और उसे सांत्वना देने के लिए, उन्होंने निम्नलिखित श्लोक दोहराया-

"हजारों बोरी लकड़ी से वह बुरी तरह जल गया है।"
हजारों घड़ों ने उस आग को बुझाया जो अब भी जल रही थी;
जमीन को बाएँ और दाएँ ओर खोदा जाता है।
डरो मत—राजा अब कभी वापस नहीं आएगा।
उसके बाद कुली को तसल्ली मिली। बोधिसत्व ने धर्मपरायणता से शासन किया; और दान-पुण्य और अन्य अच्छे कर्म करने के बाद, वे अपने कर्मों के फल के अनुसार निर्वाण हो गए।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "देवदत्त पिंगला थे; और उनका पुत्र मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)-jamghakahapanadigahanena का अर्थ है 'पैर, धन आदि छीन लेना'

(2) अन्नत्र गतिवासा का पाठ, 'पुनर्जन्म की शक्ति के अलावा।'

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सब्बादथ-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-241-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 241
सब्बदथा-जातक।

"सियार की तरह," इत्यादि। यह कहानी गुरु ने बांस के जंगल में रहते हुए देवदत्त के बारे में सुनाई थी।

देवदत्त ने अजातशत्रु की कृपा तो प्राप्त कर ली थी, लेकिन वह अपनी प्रतिष्ठा और समर्थन को लंबे समय तक कायम नहीं रख सका। जब से उन्होंने नलगिरि हाथी को उसके विरुद्ध भेजे जाने पर हुए चमत्कार (*1) को देखा, तब से देवदत्त की प्रतिष्ठा और आय में गिरावट आने लगी।

एक दिन, सभी भिक्षु सत्य के हॉल में इस विषय पर चर्चा कर रहे थे: "मित्र, देवदत्त ने प्रतिष्ठा और समर्थन तो प्राप्त कर लिया, पर उसे बनाए नहीं रख सका। पुराने समय में भी ठीक ऐसा ही हुआ था।" और फिर उसने उन्हें एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे और बोधिसत्व उनके पुरोहित थे। उन्होंने तीनों वेदों और ज्ञान की अठारह शाखाओं में महारत हासिल कर ली थी। उन्हें 'संसार को वश में करने का मंत्र' ज्ञात था। (यह मंत्र धार्मिक ध्यान से संबंधित है।)

एक दिन बोधिसत्व ने इस मंत्र का जाप करने का मन बनाया; इसलिए वे एकांत स्थान पर एक समतल पत्थर पर बैठ गए और वहीं इसका जाप करने लगे। कहा जाता है कि इस मंत्र को विशेष विधि के बिना किसी को सिखाया नहीं जा सकता था; इसीलिए उन्होंने

वर्णित स्थान पर इसका जाप किया। संयोगवश, एक सियार जो एक बिल में लेटा हुआ था, उसी समय मंत्र का जाप सुन रहा था और उसे कंठस्थ कर लिया। कहा जाता है कि यह सियार अपने पिछले जन्म में कोई ब्राह्मण था जिसने 'संसार को वश में करने का मंत्र' सीखा था।

बोधिसत्व ने अपना पाठ समाप्त किया और उठ खड़े हुए बोले—"मुझे यह मंत्र अब पूरी तरह से याद हो गया है।" तभी सियार अपने बिल से निकला और चिल्लाया—"हे ब्राह्मण! मैंने यह मंत्र तुमसे भी बेहतर सीख लिया है!" और भाग गया। बोधिसत्व उसका पीछा करने लगे और कुछ दूर तक चिल्लाते रहे—"सियार बहुत बड़ा उत्पात मचाएगा—उसे पकड़ो, उसे पकड़ो!" लेकिन सियार जंगल में आसानी से निकल गया।

सियार को एक मादा सियार मिली और उसने उसके शरीर पर हल्का सा काटा। "क्या बात है, स्वामी?" उसने पूछा। "क्या तुम मुझे जानती हो?" उसने पूछा, "या नहीं?" "(*2)मैं तुम्हें नहीं जानती।" उसने मंत्र दोहराया और इस प्रकार सैकड़ों सियारों को अपने वश में कर लिया, और अपने चारों ओर सभी हाथियों, घोड़ों, शेरों, बाघों, सूअरों, हिरणों और अन्य सभी चार पैरों वाले प्राणियों को इकट्ठा कर लिया; और वह सब्बदथा या ऑलटस्क की उपाधि से उनका राजा बन गया, और उसने एक मादा सियार को अपनी पत्नी बना लिया। दो हाथियों की पीठ पर एक शेर खड़ा था, और शेर की पीठ पर सियार राजा सब्बदथा अपनी पत्नी सियार के साथ बैठा था; और उनका बहुत सम्मान किया गया।

अब सियार अपने गौरव के लालच में आकर घमंड से भर गया और उसने बनारस राज्य पर कब्जा करने का निश्चय कर लिया। इसलिए वह अपने सभी चार पैरों वाले साथियों के साथ बनारस के निकट एक स्थान पर पहुंचा। उसकी सेना ने बारह मील (4.23 किमी) का क्षेत्र घेर लिया। वहां से उसने राजा को संदेश भेजा, "अपना राज्य छोड़ दो, या उसके लिए लड़ो।" बनारस के नागरिक भय से कांपते हुए अपने द्वार बंद करके अंदर ही रहे।

तब बोधिसत्व राजा के पास आए और उनसे बोले, “हे महामहिम, भयभीत न हों! सियार राजा सब्बदथा से युद्ध करने का कार्य मुझे सौंप दीजिए। मेरे सिवा कोई भी उससे युद्ध करने में सक्षम नहीं है।” इस प्रकार उन्होंने राजा और नागरिकों को हिम्मत दी। उन्होंने आगे कहा, “मैं उससे तुरंत पूछूंगा कि वह नगर पर अधिकार करने के लिए क्या करेगा।” अतः वे एक द्वार के ऊपर बने बुर्ज पर चढ़ गए और पुकार कर बोले—“सब्बदथा, इस राज्य पर अधिकार प्राप्त करने के लिए तुम क्या करोगे?”

मैं शेरों को दहाड़ने पर मजबूर करूँगा, और उनकी दहाड़ से सबको डरा दूँगा: इस प्रकार मैं उन्हें ले लूँगा!

“ओह, बस यही है,” बोधिसत्व ने सोचा और वे मीनार से नीचे उतर आए। उन्होंने ढोल बजाकर घोषणा की कि बनारस के विशाल नगर में, उसके बारह मील (4.23 किमी) के दायरे में रहने वाले सभी निवासियों को अपने कान आटे से बंद कर लेने चाहिए। सभी ने आदेश सुना; उन्होंने अपने कान आटे से बंद कर लिए, जिससे वे एक-दूसरे की बात भी नहीं सुन सके – यहाँ तक कि उन्होंने अपनी बिल्लियों और अन्य जानवरों के साथ भी ऐसा ही किया।

फिर बोधिसत्व दूसरी बार मीनार में चढ़े और "सब्बदथा!" कहकर पुकारे।

"क्या बात है, ब्राह्मण?" उसने कहा।

"तुम इस राज्य पर कैसे अधिकार करोगे?" उसने पूछा।

"मैं शेरों को दहाड़ने पर मजबूर करूँगा, मैं लोगों को डराऊँगा और उन्हें नष्ट कर दूँगा; इस प्रकार मैं इसे ले लूँगा!" उसने कहा।

"तुम शेरों को दहाड़ने पर मजबूर नहीं कर पाओगे; ये महान शेर, अपने भूरे पंजों और घने बालों वाले, तुम्हारे जैसे बूढ़े सियार की बात कभी नहीं मानेंगे!" अभिमान से भरे सियार ने उत्तर दिया, "न केवल दूसरे शेर मेरी बात मानेंगे, बल्कि मैं तो इस शेर को भी, जिसकी पीठ पर मैं बैठा हूँ, अकेले दहाड़ने पर मजबूर कर दूँगा!"

बोधिसत्व ने कहा, "बहुत अच्छा, अगर आप कर सकते हैं तो करें।"

इसलिए उसने जिस शेर पर वह बैठा था, उस पर पैर से थपथपाकर दहाड़ मारी।

और शेर ने हाथी की कनपटी पर अपना मुँह रखकर निडरता से तीन बार दहाड़ा। हाथी भयभीत हो गए और सियार को अपने पैरों के पास गिरा दिया; उन्होंने उसके सिर को कुचलकर चूर-चूर कर दिया। वहीं सब्बदथा की मृत्यु हो गई। शेर की दहाड़ सुनकर हाथी भी भयभीत हो गए और एक-दूसरे को घायल करते हुए वहीं मर गए। बाकी सभी जीव, हिरण, सूअर, खरगोश और बिल्लियाँ, शेरों को छोड़कर, वहीं मर गए; शेर भागकर जंगल में चले गए। बारह मील (4.23 किमी) तक ज़मीन पर लाशों का ढेर लगा हुआ था।

बोधिसत्व मीनार से नीचे उतरे और नगर के द्वार खुलवा दिए। ढोल बजाकर उन्होंने पूरे नगर में यह घोषणा करवाई: "सभी लोग अपने कानों से आटा निकाल लें, और जिन्हें मांस खाने की इच्छा हो, वे खा लें!" लोगों ने जितना मांस ताजा मिल सका, उतना खाया और बाकी को सुखाकर सुरक्षित रख लिया।

परंपरा के अनुसार, इसी समय लोगों ने पहली बार मांस को सुखाना शुरू किया था।

गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त करने के बाद, दिव्य ज्ञान से परिपूर्ण निम्नलिखित श्लोकों द्वारा जन्म का वर्णन किया:

"यहाँ तक कि सियार भी, अभिमान से अकड़ा हुआ,
चारों ओर एक विशाल जनसमूह की लालसा थी,
और सभी दांत वाले प्राणी आए
जब तक उन्हें अपार प्रसिद्धि नहीं मिली, तब तक वे उनके चारों ओर मंडराते रहे:
फिर भी जिस व्यक्ति को आपूर्ति की जाती है
चारों ओर भारी संख्या में पुरुषों की भीड़ के साथ,
उन्हें बहुत प्रसिद्धि प्राप्त है।
जैसे सियार ने अपनी संप्रभुता में किया था।"
"उन दिनों देवदत्त सियार था, आनंद राजा था और मैं पुजारी था।"

फुटनोट:

(1) बुद्ध को नष्ट करने के उद्देश्य से एक विशाल हाथी को छोड़ा गया था, लेकिन उसने केवल उनका आदर किया।

(2)शायद ajanami "मैं तुम्हें जानता हूँ।"

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सुनक-जातक**
स्रोत: *डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-242-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 242
सुनाख-जातक

"मूर्ख कुत्ता," इत्यादि। यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें एक कुत्ते के बारे में बताया गया था जिसे अंबाला टावर के पास स्थित विश्राम कक्ष में खाना खिलाया जाता था।

कहा जाता है कि इस कुत्ते को बचपन से ही वहाँ कुछ पानी ढोने वालों ने रखा था और उसे खाना खिलाया था। समय बीतने के साथ-साथ वह वहाँ बड़ा होकर एक विशाल कुत्ता बन गया। एक बार एक ग्रामीण की नज़र उस पर पड़ी और उसने पानी ढोने वालों से एक ऊपरी वस्त्र और एक रुपया देकर उसे खरीद लिया; फिर उसे जंजीर से बाँधकर अपने साथ ले गया। कुत्ता बिना किसी विरोध के, बिना कोई आवाज़ किए, अपने नए मालिक के पीछे-पीछे चलता रहा और जो कुछ भी दिया जाता, खा लेता था। "यह मुझे ज़रूर पसंद करता होगा," उस व्यक्ति ने सोचा; और उसे जंजीर से खोल दिया। जैसे ही कुत्ते ने खुद को आज़ाद पाया, वह दौड़ पड़ा और तब तक नहीं रुका जब तक कि वह वापस उसी जगह पर नहीं आ गया जहाँ से वह चला था।

उसे देखकर भाइयों ने समझ लिया कि क्या हुआ होगा; और शाम को जब वे सत्य के हॉल में इकट्ठा हुए, तो वे इस बारे में बातें करने लगे। "मित्र—देखो, हमारा कुत्ता फिर से हमारे विश्राम कक्ष में आ गया! कितना चालाक रहा होगा, अपनी जंजीर तोड़कर भाग गया! जंजीर से छूटते ही वापस भाग गया!" गुरुजी अंदर आए और पूछा कि वे सब आपस में बैठकर किस बारे में बात कर रहे हैं। उन्होंने गुरुजी को बताया। गुरुजी ने उत्तर दिया, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है जब हमारा कुत्ता अपनी जंजीर तोड़ने में इतना चालाक रहा है; पहले भी वह ऐसा ही करता था।" और उन्होंने उन्हें एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, बोधिसत्व काशी राज्य के एक समृद्ध परिवार में पैदा हुए थे; और बड़े होकर उन्होंने अपना घर बसाया। बनारस में एक आदमी के पास एक कुत्ता था जिसे चावल खिला-खिलाकर मोटा कर दिया गया था। बनारस आए एक ग्रामीण ने उस कुत्ते को देखा; और उसने कुत्ते के मालिक को एक उत्तम वस्त्र और एक सिक्का देकर उसे अपने साथ ले गया। जंगल के बाहरी इलाके में पहुँचकर, वह एक झोपड़ी में गया, कुत्ते को बाँधा और सोने के लिए लेट गया। उसी क्षण बोधिसत्व किसी काम से जंगल में गए और उन्होंने कुत्ते को एक डोरी से बंधा हुआ देखा; यह देखकर उन्होंने पहला श्लोक कहा:-

"बेवकूफ कुत्ते! तुम काटते क्यों नहीं?"
उस पट्टे के ज़रिए जो तुम्हें कसकर पकड़े हुए है?
कुछ ही समय में आप मुक्त हो जाएंगे।
खुशी-खुशी भागते हुए!
इस श्लोक को सुनकर कुत्ते ने दूसरा श्लोक बोला:-

दृढ़ संकल्पित, मैं
मेरे अवसर की प्रतीक्षा करें:
मैं सावधानीपूर्वक निगरानी रखता हूँ।
जब तक लोग सो रहे हों।"
उसने ऐसा कहा; और जब सभी लोग सो गए, तो उसने पट्टा कुतर दिया और बड़े हर्षोल्लास के साथ अपने मालिक के घर लौट आया।

जब यह प्रवचन समाप्त हुआ, तो गुरु ने जन्म का कारण बताया: "कुत्ते एक ही हैं, और मैं ही वह ज्ञानी व्यक्ति था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **गुत्तिला-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-243-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 243
गुट्टिला-जातक

"एक समय मेरा एक शिष्य था," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने बांस के जंगल में देवदत्त के बारे में सुनाई थी।

इस अवसर पर भिक्षुओं ने देवदत्त से कहा, "मित्र देवदत्त, परम बुद्ध आपके गुरु हैं; आपने उनसे ही तीन पिटक और चार प्रकार की समाधि (सम्मोहन) प्राप्त करने का तरीका सीखा है; आपको अपने गुरु का शत्रु नहीं बनना चाहिए!" देवदत्त ने उत्तर दिया, "मित्रों, गौतम (बुद्ध) मेरे गुरु क्यों? बिलकुल नहीं: क्या यह मेरी अपनी शक्ति से नहीं था कि मैंने तीन पिटक सीखे और चार प्रकार की समाधि प्राप्त की?" उन्होंने अपने गुरु को स्वीकार करने से इनकार कर दिया।

सत्य के हॉल में भिक्षु इस विषय पर चर्चा करने लगे। "मित्र! देवदत्त ने अपने गुरु का खंडन किया! वह परम बुद्ध का शत्रु बन गया! और उसका कितना बुरा हाल हुआ!" गुरुजी वहाँ आए और उन्होंने पूछा कि वे सब किस बारे में बात कर रहे हैं। उन्होंने गुरुजी को बताया। "अरे, भिक्षुजी," गुरुजी ने कहा, "यह पहली बार नहीं है कि देवदत्त ने अपने गुरु का खंडन किया है, स्वयं को मेरा शत्रु साबित किया है और उसका ऐसा बुरा अंत हुआ है। पहले भी ऐसा ही हुआ था।" और फिर उन्होंने आगे की कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व का जन्म एक संगीतकार परिवार में हुआ। उनका नाम गुरु गुट्टिला था। बड़े होकर उन्होंने संगीत की सभी विधाओं में महारत हासिल की और गुट्टिला संगीतकार के नाम से वे पूरे भारत में अपने क्षेत्र के प्रमुख बन गए। उन्होंने विवाह नहीं किया, बल्कि अपने अंधे माता-पिता का भरण-पोषण किया (*1)।

उस समय बनारस के कुछ व्यापारी व्यापार के लिए उज्जैनी गए। छुट्टी का दिन घोषित किया गया; वे सब एक साथ जमा हुए; उन्होंने सुगंधित पदार्थ, इत्र, मलहम और तरह-तरह के खाद्य पदार्थ और मांस खरीदे। "किराया चुकाओ, और एक संगीतकार लाओ!"

उस समय उज्जैनी में मुसिला नाम का एक व्यक्ति प्रमुख संगीतकार था। उन्होंने उसे बुलवाया और उसे अपना संगीतकार बना लिया। मुसिला वीणा बजाता था; और उसने अपनी वीणा को सबसे ऊँचे सुर में तौलकर बजाना शुरू किया। लेकिन वे संगीतकार गुटिला की वादन शैली से परिचित थे, और उसका संगीत उन्हें चटाई पर खरोंचने जैसा लगता था। इसलिए उनमें से किसी ने भी खुशी नहीं दिखाई। जब मुसिला ने देखा कि वे खुश नहीं हैं, तो उसने मन ही मन कहा—"शायद बहुत तेज़ है," और अपनी वीणा को मध्यम सुर में तौलकर उसी तरह बजाने लगा। फिर भी वे उदासीन बैठे रहे। तब उसने सोचा, "शायद इन्हें इसके बारे में कुछ पता ही नहीं है;" और जैसे वह भी अनजान हो, उसने तारों को ढीला करके बजाना शुरू कर दिया। पहले की तरह, उन्होंने कोई प्रतिक्रिया नहीं दी। तब मुसिला ने उनसे पूछा, "भले व्यापारियों, आपको मेरा वादन क्यों पसंद नहीं आया?"

"क्या! आप बजा रहे हैं?" वे चिल्लाए। "हमने सोचा था कि आप अपने वाद्य यंत्रों को ठीक कर रहे होंगे।"

"क्या आप मुझसे बेहतर किसी संगीतकार को जानते हैं?" उसने पूछा, "या आप इतने अज्ञानी हैं कि आपको मेरा वादन पसंद नहीं आएगा?"

व्यापारियों ने कहा, "हमने बनारस के संगीतकार गुटिला का संगीत सुना है; और आपका संगीत तो ऐसा लगता है जैसे महिलाएं अपने बच्चों को शांत करने के लिए गा रही हों।"

"लो, अपने पैसे वापस ले लो," उसने कहा, "मुझे इनकी ज़रूरत नहीं है। बस जब आप बनारस जाएं, तो कृपया मुझे अपने साथ ले जाएं।"

वे मान गए और उसे अपने साथ बनारस ले गए; उन्होंने गुटिला के जीवन के बारे में बताया और फिर सब अपने-अपने घर चले गए।

मुसिला बोधिसत्व के कमरे में दाखिल हुआ; उसने देखा कि उनका सुंदर वीणा बंधा हुआ रखा है: उसने उसे नीचे उतारा और बजाने लगा। यह देखकर बूढ़े माता-पिता, जो अंधे होने के कारण उसे देख नहीं सकते थे, चिल्ला उठे।

"चूहे वीणा को कुतर रहे हैं! भागो! भागो! चूहे वीणा के टुकड़े-टुकड़े कर रहे हैं!"

मुसिला ने तुरंत वीणा नीचे रख दी और बुजुर्गों को प्रणाम किया। उन्होंने पूछा, "आप कहाँ से आए हैं?"

उन्होंने उत्तर दिया, "मैं उज्नेनी से गुरु के चरणों में शिक्षा प्राप्त करने आया हूँ।"

"अच्छा, ठीक है," उन्होंने कहा। उसने पूछा कि शिक्षक कहाँ है।

"पिताजी, वह बाहर गए हैं; लेकिन आज लौट आएंगे," उत्तर आया। मुसिला बैठ गया और उनके आने का इंतज़ार करने लगा; फिर कुछ दोस्ताना बातें करने के बाद उसने अपना काम बताया। बोधिसत्व शरीर की विशेषताओं से भविष्यवाणी करने में निपुण थे। उन्होंने महसूस किया कि यह व्यक्ति अच्छा नहीं है; इसलिए उन्होंने मना कर दिया। "जाओ, मेरे बेटे, यह क्षेत्र तुम्हारे लिए नहीं है।" मुसिला ने बोधिसत्व के माता-पिता के पैर पकड़कर उनसे विनती की—"उन्हें मुझे सिखाने के लिए कहिए!" उनके माता-पिता ने बार-बार बोधिसत्व से ऐसा करने की विनती की; जब तक कि वे और सहन नहीं कर सके, और उन्होंने वैसा ही किया जैसा उनसे कहा गया था। और मुसिला बोधिसत्व के साथ राजा के महल में चला गया।

"यह कौन है, स्वामी?" राजा ने उसे देखकर पूछा।

"मेरा शिष्य, महान महाराज!" यह उत्तर मिला।

समय बीतने के साथ ही वह राजा का विश्वास जीतने में सफल हो गया।

अब बोधिसत्व ने अपना ज्ञान छिपाया नहीं, बल्कि अपने शिष्य को वह सब कुछ सिखाया जो वे स्वयं जानते थे। यह कहकर उन्होंने कहा, "अब तुम्हारा ज्ञान परिपूर्ण है।"

मुसिला ने मन ही मन सोचा, “मैंने अब अपनी कला में महारत हासिल कर ली है। बनारस नगर पूरे भारत का प्रमुख नगर है। मेरे गुरु वृद्ध हैं, इसलिए मुझे यहीं रहना चाहिए।” उसने अपने गुरु से कहा, “महोदय, मैं राजा की सेवा करना चाहता हूँ।” गुरु ने उत्तर दिया, “अच्छा पुत्र, मैं राजा को इसके बारे में बता दूँगा।”

वह राजा के सामने आया और बोला, "मेरा शिष्य महाराज की सेवा करने का इच्छुक है। कृपया उसकी फीस तय कर दीजिए।"

राजा ने उत्तर दिया, "उसकी तनख्वाह तुम्हारी तनख्वाह की आधी होगी।" फिर वह आया और उसने यह बात मुसिला को बताई। मुसिला ने कहा, "यदि मुझे भी तुम्हारे बराबर तनख्वाह मिले तो मैं उसकी सेवा करूँगा; परन्तु यदि नहीं तो मैं उसकी सेवा नहीं करूँगा।"

"क्यों?" "क्या मैं वह सब नहीं जानता जो तुम जानते हो?" "हाँ, तुम जानते हो।" "तो फिर वह मुझे आधा हिस्सा क्यों दे रहा है?"

बोधिसत्व ने राजा को सारी घटना बताई। राजा ने कहा,

“यदि वह तुम्हारे समान निपुण हो, तो उसे भी वही फल मिलेगा जो तुम्हें मिलता है।” राजा का यह वचन बोधिसत्व ने अपने शिष्य को सुनाया। शिष्य ने यह बात मान ली; और जब राजा को यह पता चला, तो उसने कहा—“बहुत अच्छा। तुम दोनों किस दिन प्रतियोगिता करोगे?” “हे महाराज, आज से सातवें दिन।”

राजा ने मुसिला को बुलवाया। "मुझे पता चला है कि तुम अपने स्वामी से इस मामले को सुलझाने के लिए तैयार हो?"

"जी महाराज," यह उत्तर मिला।

राजा ने उसे ऐसा करने से मना किया होगा। उन्होंने कहा, "ऐसा मत करो, गुरु और शिष्य के बीच कभी कोई प्रतिद्वंद्विता नहीं होनी चाहिए।"

"हे राजा, रुकिए!" वह चिल्लाया—"हाँ, सातवें दिन मेरे और मेरे गुरु के बीच मुलाकात होनी चाहिए; हम जानेंगे कि हम में से कौन अपनी कला में निपुण है।"

अतः राजा मान गया; और उसने शहर में ढोल बजवाते हुए यह सूचना भेजी:- "चुप रहो और सुनो! सातवें दिन गुरु गुटिला और शिष्य मुसिला राजमहल के द्वार पर मिलेंगे और अपना कौशल दिखाएंगे। शहर के सभी लोग इकट्ठा हों और उनका कौशल देखें!"

बोधिसत्व ने मन ही मन सोचा, "यह मुसिला तो जवान और तरोताज़ा है, मैं बूढ़ा हो गया हूँ और मेरी शक्ति क्षीण हो गई है। बूढ़े का कर्म फलदायी नहीं होता। अगर मेरे शिष्य की पिटाई हो (*2), तो उसमें कोई बड़ा यश नहीं। अगर वह मुझे पीटता है, तो जंगल में मरना उस अपमान से बेहतर है जो मुझे भुगतना पड़ेगा।" अतः वह जंगल की ओर चल पड़ा, परन्तु मृत्यु के भय से बार-बार लौटता रहा और अपमान के भय से वापस जंगल की ओर। इस प्रकार छह दिन बीत गए। चलते-चलते घास सूखती गई और उसके पैरों के निशान से एक रास्ता बन गया।

उस समय, सक्का (इंद्र) का सिंहासन गर्म हो गया। सक्का (इंद्र) ने ध्यान किया और जो कुछ हुआ था उसे समझा। "अपने शिष्य के कारण संगीतज्ञ गुट्टिला वन में बहुत दुखी है। मुझे उसकी सहायता करनी चाहिए!" इसलिए वह शीघ्रता से गया और बोधिसत्व के समक्ष खड़ा हो गया। "गुरुजी," उसने कहा, "आप वन में क्यों गए हैं?"

"तुम कौन हो?" दूसरे ने पूछा।

मैं सक्का (इंद्र) हूँ।

तब बोधिसत्व ने कहा, "हे देवदूतों के राजा, मुझे अपने शिष्य से पराजित होने का भय था; इसलिए मैं वनों में भाग गया।" और उन्होंने पहला श्लोक दोहराया:

"एक बार मेरा एक छात्र था, जिसने मेरे बारे में जाना।"
सात तारों वाले वीणा का मधुर संगीत;
अब वह अपने शिक्षक की कुशलता को पार करने के लिए उत्सुक रहेगा।
हे कोसिया (*3)! क्या तुम मेरी सहायक बनोगी!
“डरो मत,” सक्का (इंद्र) ने कहा, “मैं तुम्हारा रक्षक और शरणस्थल हूँ,” और उन्होंने दूसरा श्लोक दोहराया:-

"डरो मत, मैं तुम्हारी जरूरत के समय तुम्हारी सहायता करूंगा;"
शिक्षक का उचित वेतन सम्मान ही होता है।
डरो मत! तुम्हारा शिष्य तुम्हारा प्रतिद्वंदी नहीं होगा।
लेकिन तुम वास्तव में बेहतर इंसान साबित होगे।
"जब तुम वीणा बजा रहे हो, तो तुम अपने वीणा के एक तार को तोड़ देना और छह तारों पर बजाना; और संगीत पहले जैसा ही मधुर होगा। मुसिला भी एक तार तोड़ देगा, और वह अपनी वीणा से संगीत नहीं बजा पाएगा; तब वह पराजित हो जाएगा। और जब तुम देखोगे कि वह पराजित हो गया है, तो तुम अपनी वीणा का दूसरा तार, फिर तीसरा, और इसी तरह सातवें तार तक तोड़ देना, और केवल वीणा के शरीर से बजाते रहना; और टूटे हुए तारों के सिरों से ध्वनि निकलेगी, और बारह मील (x 4.23 किमी) की दूरी तक बनारस की सारी भूमि को भर देगी।" ये कहकर उन्होंने बोधिसत्व को तीन पासे दिए और आगे कहा, "जब वीणा की ध्वनि पूरे शहर में गूंज उठे, तो आपको इनमें से एक पासा हवा में उछालना है; और तीन सौ अप्सराएँ उतरकर आपके सामने नृत्य करेंगी। जब वे नृत्य कर रही हों, तो दूसरा पासा उछालें, और तीन सौ अप्सराएँ आपकी वीणा के सामने नृत्य करेंगी; फिर तीसरा पासा उछालें, और फिर तीन सौ और अप्सराएँ उतरकर अखाड़े के भीतर नृत्य करेंगी। मैं भी उनके साथ आऊंगा; आगे बढ़ो, और डरो मत!"

सुबह बोधिसत्व घर लौटे। महल के द्वार पर एक मंडप बना हुआ था और राजा के लिए एक सिंहासन अलग रखा गया था। वे महल से नीचे उतरे और रंग-बिरंगे मंडप में बने दीवान पर विराजमान हुए। उनके चारों ओर हजारों दास, सुंदर वस्त्रों में सजी स्त्रियाँ, दरबारी, ब्राह्मण और नागरिक उपस्थित थे। नगर के सभी लोग एकत्रित हुए थे। आँगन में वे एक के ऊपर एक, पंक्तिबद्ध रूप से आसन लगा रहे थे। बोधिसत्व ने स्नान और अभिषेक किया था और उत्तम मांस का सेवन किया था; वे हाथ में वीणा लिए अपने नियत स्थान पर प्रतीक्षा कर रहे थे। सक्का (इंद्र) वहाँ अदृश्य रूप से, वायु में स्थिर, एक विशाल समूह से घिरे हुए थे। फिर भी, बोधिसत्व ने उन्हें देखा। मुसिला भी वहाँ थे और अपने आसन पर बैठे थे। चारों ओर लोगों की एक विशाल सभा थी।

पहले दोनों ने एक ही धुन बजाई। जब दोनों ने एक ही धुन बजाई, तो सभी प्रसन्न हुए और खूब तालियाँ बजाईं। सक्का (इंद्र) ने आकाश में स्थित बोधिसत्व से कहा, "एक डोर तोड़ दो!" तब बोधिसत्व ने मधुमक्खी की डोर तोड़ दी; और टूटी हुई डोर से भी एक ध्वनि निकली; ऐसा लगा जैसे दिव्य संगीत हो। मुसिला ने भी एक डोर तोड़ी; लेकिन उसके बाद कोई ध्वनि नहीं निकली। उनके गुरु ने दूसरी डोर तोड़ी, और इसी तरह सातवीं डोर तोड़ी: उन्होंने केवल शरीर पर ही बजाया, और ध्वनि निरंतर निकलती रही और पूरे शहर में गूंज उठी: हजारों लोग अपने रुमाल हवा में लहराते रहे, हजारों तालियाँ बजाते रहे। बोधिसत्व ने एक पासा हवा में उछाला, और तीन सौ अप्सराएँ उतरीं और नृत्य करने लगीं। और जब उन्होंने दूसरा और तीसरा पासा भी इसी तरह उछाला, तो सक्का (इंद्र) के कहे अनुसार नौ सौ अप्सराएँ नृत्य करने लगीं। तब राजा ने लोगों को इशारा किया; लोग उठ खड़े हुए और चिल्लाए—"तुमने अपने गुरु से मुकाबला करके बड़ी गलती की है! तुम्हें अपनी औकात का पता नहीं है!" इस प्रकार वे मुसिला के विरुद्ध चिल्लाए; और पत्थरों, लाठियों और जो कुछ भी हाथ लगा, उससे उन्होंने उसे पीट-पीटकर मार डाला, और उसके पैर पकड़कर उसे कूड़े के ढेर पर फेंक दिया।

राजा प्रसन्न होकर बोधिसत्व पर उपहारों की वर्षा करने लगा, और नगरवासियों ने भी ऐसा ही किया। इंद्र ने भी उनसे मधुरता से कहा, "हे ज्ञानी, मैं शीघ्र ही अपने सारथी मतली को एक हजार श्रेष्ठ घोड़ों द्वारा खींचे गए रथ के साथ भेजूँगा; और आप मेरे एक हजार घोड़ों द्वारा खींचे गए दिव्य रथ पर सवार होकर स्वर्ग की यात्रा करेंगे"; और वह प्रस्थान कर गया।

जब सक्का (इंद्र) लौटकर अपने बहुमूल्य पत्थर से बने सिंहासन पर विराजमान हुए, तो देवदूतों की पुत्रियों ने उनसे पूछा, "हे राजा, आप कहाँ थे?" सक्का (इंद्र) ने उन्हें सारी घटना विस्तार से बताई और बोधिसत्व के गुणों और अच्छाइयों की प्रशंसा की। तब देवदूतों की पुत्रियों ने कहा,

"हे राजा, हम इस शिक्षक के दर्शन के लिए तरस रहे हैं; उन्हें यहाँ बुलाइए!"

सक्का (इंद्र) ने मतली को बुलाया। उन्होंने कहा, "स्वर्ग की अप्सराएँ बोधिसत्व गुट्टिला के दर्शन करना चाहती हैं। जाओ, उन्हें मेरे दिव्य रथ में बिठाओ और यहाँ ले आओ।" सारथी गया और बोधिसत्व को ले आया। सक्का (इंद्र) ने उनका सौहार्दपूर्ण अभिवादन किया। उन्होंने कहा, "देवताओं की अप्सराएँ आपका संगीत सुनना चाहती हैं, हे गुरु।"

"हे महान राजा, हम संगीतकार अपनी कला के अभ्यास से ही अपना जीवन यापन करते हैं। बदले में मैं संगीत बजाऊंगा," उसने कहा।

"खेलते रहो, मैं तुम्हें मुआवजा दूंगा।"

"मुझे इसके सिवा कोई और प्रतिफल नहीं चाहिए। देवदूतों की ये पुत्रियाँ मुझे बताएँ कि किन पुण्य कर्मों के कारण वे यहाँ आई हैं; तभी मैं खेलूँगा।"

तब देवदूतों की पुत्रियों ने कहा, "हम आपको अपने द्वारा अपनाए गए गुणों के बारे में सहर्ष बताएंगे; लेकिन पहले आप हमारे लिए खेलिए, हे स्वामी।"

एक सप्ताह तक बोधिसत्व ने उनके लिए संगीत बजाया, और उनका संगीत स्वर्ग के संगीत से भी श्रेष्ठ था। सातवें दिन उन्होंने देवदूतों की पुत्रियों से उनके पुण्यमय जीवन के बारे में, पहले से शुरू करते हुए, पूछा। उनमें से एक ने, बुद्ध कश्यप के समय में, एक भाई को एक वस्त्र भेंट किया था; और सक्का (इंद्र) की परिचारिका के रूप में पुनर्जन्म लेकर, वह देवदूतों की पुत्रियों में प्रमुख बन गई थी, जिसके साथ एक हजार अप्सराओं का समूह था। बोधिसत्व ने उससे पूछा—"तुमने पिछले जन्म में ऐसा क्या किया था, जिसके कारण तुम यहाँ आई हो?" उनके प्रश्न का तरीका और उसने जो भेंट दी थी, उसका वर्णन विमान कथा में किया गया है: उन्होंने इस प्रकार उत्तर दिया:-

हे तेजस्वी देवी, भोर के तारे के समान,
अपनी सुंदरता की रोशनी दूर-दूर तक बिखेरते हुए,
इस सुंदरता का स्रोत क्या है? इस खुशी का स्रोत क्या है?
वे सभी आशीर्वाद कहाँ से आते हैं जिनसे हृदय आशीर्वाद दे सकता है?
हे शक्तिवान देवी, मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ,
यह सर्वव्यापी अद्‌भुत प्रकाश कहाँ से आता है?
जब तुम नश्वर स्त्री थीं, तब तुमने क्या किया था?
"क्या आप उस प्रसिद्धि को प्राप्त करना चाहते हैं जो अब आपके चारों ओर मौजूद है?"
वह पुरुषों में श्रेष्ठ और महिलाओं में भी श्रेष्ठ थी।
कौन दान में अपना वस्त्र देता है?
जो प्रसन्नतादायक वस्तुएँ देती है, वह अवश्य ही जीतती है।
एक दिव्य और सुंदर घर जिसमें प्रवेश करना सुखद है।
इस निवास को देखो, कितना दिव्य है!
मेरे अच्छे कर्मों के फल स्वरूप यह घर मेरा है।
मेरी पुकार पर हजारों अप्सराएं तैयार खड़ी रहती हैं;
सुंदर अप्सराओं—और मैं उन सब में सबसे सुंदर हूँ।
और इसलिए मैं सामर्थ्य में श्रेष्ठ हूँ;
इसीलिए यह सर्वव्यापी अद्‌भुत प्रकाश आता है!

एक अन्य ने भिक्षा की भीख मांगने वाले एक भाई को पूजा के लिए फूल दिए थे। एक अन्य से मंदिर के लिए सुगंधित फूलों की पाँच मालाएँ माँगी गईं और उसने उन्हें दे दीं। एक अन्य ने मीठे फल दिए थे। एक अन्य ने उत्तम सुगंध दी थीं। एक अन्य ने बुद्ध कश्यप के मंदिर में सुगंधित फूलों की पाँच मालाएँ भेंट की थीं। एक अन्य ने यात्रा में या किसी परिवार के घर में निवास करने वाले भाई-बहनों (नन) के प्रवचन सुने थे। एक अन्य जल में खड़ी होकर नाव पर भोजन कर रहे एक भाई को जल पिलाया था। संसार में रहने वाली एक अन्य ने सास-ससुर के प्रति अपना कर्तव्य निभाया और कभी क्रोधित नहीं हुई। एक अन्य ने अपने हिस्से का भोजन भी बाँटकर खाया और सदाचारी रही। एक अन्य, जो किसी घर में दासी थी, ने क्रोध और अहंकार रहित होकर अपने हिस्से का एक भाग दान कर दिया और देवदूतों के राजा के परिचारिका के रूप में पुनर्जन्म लिया। इसी प्रकार, गुट्टिला-विमान की कथा में वर्णित सभी देवदूतों (पैतृकों) की सैंतीस पुत्रियों से भी बोधिसत्व ने पूछा कि उनमें से प्रत्येक ने वहां आने के लिए क्या किया था, और उन्होंने भी उसी प्रकार श्लोकों के माध्यम से अपने कर्मों का वर्णन किया।

यह सब सुनकर बोधिसत्व ने कहा, "सचमुच, मेरे लिए यह बहुत अच्छा हुआ कि मैं यहाँ आया और सुना कि एक छोटे से पुण्य से कितनी बड़ी महिमा प्राप्त की जा सकती है। अब से जब मैं मनुष्यों के संसार में लौटूँगा, तो मैं सभी प्रकार के दान दूँगा और अच्छे कर्म करूँगा।" और उन्होंने यह इच्छा व्यक्त की।

"ओह, शुभ सुबह! मुझे कितना प्रसन्न होना चाहिए!"
हे सुखद तीर्थयात्रा, जिसके द्वारा मैं देखता हूँ
ये देवदूतों की पुत्रियाँ हैं, जो दिव्य रूप से सुंदर हैं।
और उनकी मधुर बातें सुनो! मैं अब से कसम खाता हूँ।
मधुर शांति और उदारता से परिपूर्ण,
मैं संयम और सत्य के मार्ग पर अपना जीवन व्यतीत करूंगा।
जब तक मैं वहां न पहुंच जाऊं जहां कोई दुख नहीं है।"

सात दिन बीत जाने के बाद, स्वर्ग के राजा ने सारथी मताली को आदेश दिया, और उसने गुटिला को रथ में बिठाकर बनारस भेज दिया। बनारस पहुँचकर उसने लोगों को स्वर्ग में अपनी आँखों से देखा हुआ दृश्य बताया। उस समय से लोगों ने पूरी लगन से अच्छे कर्म करने का निश्चय किया।

जब यह प्रवचन समाप्त हुआ, तो गुरु ने जन्म का वर्णन किया: "उन दिनों देवदत्त मुसिला थे, अनुरुद्ध सक्का (इंद्र) थे, अमांडा राजा थे, और मैं गुट्टिला संगीतकार था।"

फुटनोट:

(1) गुटिला उन चार पुरुषों में से एक है जिन्होंने "अपने पार्थिव शरीरों में भी देवताओं (देवदूतों) के नगर में महिमा प्राप्त की।"

(2)रीडिंग antevasike.

(3) इंद्र की एक उपाधि; इस शब्द का अर्थ उल्लू (कौचिका) है: यह कई भारतीय कुल नामों में से एक है जो जानवरों के नाम भी हैं।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **वितिच्च-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-244-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 244
विच्चा जातक

"वह जो देखता है," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी, एक ऐसे घुमक्कड़ के बारे में जो देश भर में घूमता रहता था।

कहा जाता है कि इस व्यक्ति को पूरे भारत में कोई ऐसा व्यक्ति नहीं मिला जो उससे बहस कर सके; जब तक कि वह श्रावस्ती नगर नहीं आया और वहाँ उसने पूछा कि क्या कोई उससे बहस कर सकता है। उसे बताया गया, जी हाँ—परम बुद्ध। यह सुनकर वह और उसके कुछ साथी जेतवन मठ गए और जब गुरु चारों प्रकार के शिष्यों के बीच प्रवचन दे रहे थे, तब उन्होंने उनसे एक प्रश्न पूछा। गुरु ने उनके प्रश्न का उत्तर दिया और फिर उनसे एक प्रश्न पूछा। वह व्यक्ति इसका उत्तर नहीं दे सका, उठा और भाग गया। चारों ओर बैठे लोगों ने कहा, "हे गुरु, एक शब्द से ही तो भटकने वाला शांत हो गया!" गुरु ने कहा, "जी हाँ, भिक्षुओं, और जिस प्रकार मैंने उसे अभी एक शब्द से शांत किया है, वैसे ही पहले भी किया था।" फिर उन्होंने पुराने समय की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व का जन्म काशी राज्य में एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। वे बड़े हुए और अपनी वासनाओं पर विजय प्राप्त की; और धार्मिक (सन्यासी) जीवन अपनाकर उन्होंने हिमालय में दीर्घकालीन निवास किया।

वह ऊंचे पहाड़ों से नीचे आया और गंगा नदी के मोड़ के किनारे पत्तों से बनी एक झोपड़ी में रहने लगा, जो एक बड़े कस्बे के पास थी। एक तीर्थयात्री, जिसे पूरे भारत में कोई भी जवाब देने वाला नहीं मिला, उस कस्बे में आया। उसने पूछा, "क्या कोई ऐसा है जो मुझसे बहस कर सके?"

जी हां, उन्होंने कहा और उन्हें बोधिसत्व की शक्ति के बारे में बताया। इसलिए, बहुत से लोगों के साथ, वह उस स्थान पर गए जहाँ बोधिसत्व रहते थे, और उन्हें प्रणाम करने के बाद, बैठ गए।

उन्होंने पूछा, "क्या तुम जंगली लकड़ी की सुगंध से सराबोर गंगाजल पियोगे?"

तीर्थयात्री ने उसे शब्दों में फंसाने की कोशिश की। "गंगा क्या है? गंगा रेत हो सकती है, गंगा पानी हो सकती है, गंगा पास का किनारा हो सकती है, गंगा दूर का किनारा हो सकती है!"

बोधिसत्व ने तीर्थयात्री से कहा, "रेत, जल, निकट और दूर के किनारों के अलावा, गंगा के अलावा और क्या हो सकता है?" तीर्थयात्री के पास इसका कोई उत्तर नहीं था; वह उठा और चला गया। उसके जाने के बाद बोधिसत्व ने वहाँ उपस्थित लोगों को प्रवचन देते हुए ये श्लोक कहे:-

जो वह देखेगा, वह उसे नहीं मिलेगा;
जो चीज उसे दिखाई नहीं देगी, उसकी वह लालसा करेगा।
वह अभी बहुत आगे जा सकता है--
उसे वह नहीं मिलेगा जो वह चाहता है।
वह अपने पास जो कुछ है, उससे घृणा करता है;
एक बार मिल जाने पर, वह इसे नहीं चाहता।
उसे हमेशा हर चीज की लालसा रहती है:
जो किसी चीज की लालसा नहीं करता, वही हमारी प्रशंसा का पात्र है।

जब यह प्रवचन समाप्त हुआ, तो गुरु ने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "दोनों ही मामलों में यात्री एक ही है, और मैं स्वयं उस समय तपस्वी था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **मूल-परिय-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-245-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 245
मूला-परियया-जातक

"समय सब कुछ खा जाता है," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने उक्कत्था के पास, सुभगवन उद्यान में रहते हुए, कारणों के क्रम पर अध्याय के संबंध में सुनाई थी।

उस समय, ऐसा कहा जाता है, पाँच सौ ब्राह्मण, जिन्होंने तीनों वेदों में महारत हासिल कर ली थी और मोक्ष (निर्वाण) प्राप्त कर लिया था, ने तीनों पिटकों का अध्ययन किया। ज्ञान प्राप्त करने के बाद, वे अहंकार से भर गए और सोचने लगे—"परमेश्वर बुद्ध को केवल तीनों पिटकों का ज्ञान है, और हमें भी है। तो फिर हम दोनों में क्या अंतर है?" उन्होंने बुद्ध की सेवा करना छोड़ दिया और अपने अनुयायियों का समूह बनाकर घूमने लगे।

एक दिन जब ये लोग गुरु के सामने बैठे थे, तब उन्होंने कारण-क्रम का अध्याय दोहराया और उसमें ज्ञान की आठ अवस्थाओं का वर्णन किया। उन्हें एक शब्द भी समझ नहीं आया। उनके मन में यह विचार आया—"हम तो अब तक यही मानते आए हैं कि हमारे समान बुद्धिमान कोई नहीं है, और इस बात को भी हम नहीं समझते। बुद्धों के समान बुद्धिमान कोई नहीं है: हे बुद्धों की श्रेष्ठता!" इसके बाद वे नम्र हो उठे, मानो दांत निकलवाने के बाद सांप शांत हो गया हो।

जब गुरुजी उक्कत्था में अपनी इच्छा अनुसार ठहर गए, तो वे वैशाली नगर के लिए प्रस्थान कर गए; और गौतम (बुद्ध) के मंदिर में उन्होंने गौतम (बुद्ध) पर आधारित अध्याय का पुनरावलोकन किया। यह सुनकर हजार लोक कांप उठे! ये भिक्षु (भाई) संत बन गए।

लेकिन, जब गुरु ने कारणों के क्रम पर अध्याय को दोहराना समाप्त कर दिया, तो उक्कत्था की अपनी यात्रा के दौरान भिक्षुओं ने सत्य के हॉल में इस पूरे मामले पर चर्चा की। "हे मित्र, बुद्धों की शक्ति कितनी महान है! ये ब्राह्मण भिक्षु, जो अहंकार से इतने चूर रहते थे, कारणों के क्रम पर दिए गए उपदेश से कितने विनम्र हो गए!" गुरु अंदर आए और उनसे पूछा कि वे किस बारे में बात कर रहे हैं। उन्होंने उन्हें बताया। गुरु ने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि मैंने इन लोगों को विनम्र किया है, जो अहंकार से इतने ऊंचे सिर रखते थे; मैंने पहले भी ऐसा किया है।" और फिर उन्होंने उन्हें पुराने समय की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्य था, तब एक बोधिसत्व ब्राह्मण के रूप में पैदा हुए; बड़े होकर उन्होंने तीनों वेदों में महारत हासिल की और एक प्रसिद्ध शिक्षक बन गए, और उन्होंने पाँच सौ शिष्यों को पवित्र श्लोकों का ज्ञान दिया। इन पाँच सौ शिष्यों ने अपने कार्य में पूरी ऊर्जा लगाकर और अपनी विद्या को परिपूर्ण करके मन ही मन कहा,

"हम अपने शिक्षक के बराबर ही जानते हैं: इसमें कोई अंतर नहीं है।"

वे अभिमानी और जिद्दी थे, न तो वे अपने शिक्षक के सामने आते थे और न ही अपना कर्तव्य निभाते थे।

एक दिन उन्होंने अपने स्वामी को बेर के पेड़ के नीचे बैठे देखा; और उनका उपहास करने के लिए, उन्होंने अपनी उंगलियों से पेड़ पर थपथपाया। "एक बेकार पेड़!" उन्होंने कहा।

बोधिसत्व ने देखा कि वे उनका उपहास कर रहे हैं। उन्होंने कहा, "मेरे शिष्यों, मैं तुमसे एक प्रश्न पूछूंगा।"

वे बेहद प्रसन्न हुए। उन्होंने कहा, "बोलते रहिए, हम जवाब देंगे।"

उनके शिक्षक ने पहले श्लोक को दोहराते हुए प्रश्न पूछा:-

समय सब कुछ नष्ट कर देता है, यहां तक कि स्वयं समय भी।
सर्व-उपभोक्ता का उपभोग कौन करता है?--बताओ (*1)!"
युवकों ने समस्या सुनी; लेकिन उनमें से कोई भी इसका उत्तर नहीं दे सका। तब बोधिसत्व ने कहा,

"यह मत समझो कि यह प्रश्न तीनों वेदों में है। तुम सोचते हो कि तुम सब कुछ जानते हो जो मैं जानता हूँ, और इसलिए तुम बेर के पेड़ (*2) की तरह व्यवहार करते हो। तुम नहीं जानते कि मैं बहुत कुछ जानता हूँ जो तुम्हें नहीं पता। अब मुझे छोड़ दो: मैं तुम्हें सात दिन देता हूँ—इस प्रश्न पर इतने समय तक विचार करो।"

अतः उन्होंने अभिवादन किया और अपने-अपने घर चले गए। वहाँ एक सप्ताह तक वे विचार करते रहे, परन्तु समस्या का हल नहीं निकाल पाए। सातवें दिन वे अपने गुरु के पास आए और बैठकर उन्हें प्रणाम किया।

"अच्छा, हे शुभ वाणी वाले, क्या आपने प्रश्न का हल निकाल लिया?"

उन्होंने कहा, "नहीं, हमने ऐसा नहीं किया है।"

फिर बोधिसत्व ने फटकार लगाते हुए दूसरा श्लोक कहा:-

"गर्दन पर सिर उगते हैं, और सिर पर बाल उगते हैं।"
मैं जानना चाहता हूँ, कितने सिरों के कान होते हैं?
"तुम मूर्ख हो," उन्होंने युवकों को फटकारते हुए कहा, "तुम्हारे कान तो छेद वाले हैं, लेकिन बुद्धि नहीं है;" और उन्होंने समस्या का समाधान कर दिया। उन्होंने उनकी बात सुनी। "आह," उन्होंने कहा, "हमारे गुरु कितने महान हैं!" और उन्होंने उनसे क्षमा मांगी, और अपने अहंकार को त्यागकर बोधिसत्व की सेवा में बैठ गए।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उस समय ये भिक्षु पाँच सौ शिष्य थे; और मैं स्वयं उनका गुरु था।"

फुटनोट:

(1) कालाघासो, 'समय का उपभोग करने वाला', वह है जो अस्तित्व की प्यास को नष्ट करके इस प्रकार जीता है कि उसे फिर से जन्म नहीं लेना पड़ता।

(2) बेर फल की तुलना अक्सर नारियल से की जाती है, क्योंकि यह केवल बाहरी रूप से ही आकर्षक होता है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **तेलोवदा-जातक**

स्रोत : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित

पिछला <<<<-----II-246-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 246
TELOVADA-JATAKA

"दुष्ट हत्या करता है," इत्यादि - यह एक कहानी है जो गुरु ने वैशाली शहर के पास अपने छज्जे वाले कक्ष में रहते हुए सिंहासनपति के बारे में सुनाई थी।

कहा जाता है कि यह व्यक्ति शरणस्थल पर आने के बाद वहां आतिथ्य सत्कार करने लगा और फिर मांस युक्त भोजन परोसा। यह सुनकर नग्न तपस्वी क्रोधित और असंतुष्ट हो गए; वे बुद्ध को हानि पहुँचाना चाहते थे; उन्होंने उपहास करते हुए कहा, "वरिष्ठ भिक्षु गौतम (बुद्ध) आँखें खोलकर अपने लिए विशेष रूप से तैयार किया गया मांस खा रहे हैं।"

भिक्षुओं ने अपने सत्य कक्ष में इस विषय पर चर्चा की: "मित्र, तपस्वी निगंथ नटपुत्त (महावीर, जैन गुरु) (*1) उपहास उड़ाते फिरते हैं, क्योंकि उनका कहना है, 'भिक्षु गौतम (बुद्ध) अपने लिए विशेष रूप से तैयार किया गया मांस आँखें खोलकर खाते हैं'।" यह सुनकर गुरु ने उत्तर दिया: "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि निगंथ नटपुत्त (महावीर, जैन गुरु) मेरे लिए विशेष रूप से तैयार किया गया मांस खाने पर मेरा उपहास उड़ा रहे हैं; उन्होंने पहले भी ऐसा ही किया था। और उन्होंने उन्हें एक पुरानी कहानी सुनाई।"

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व का जन्म एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। वयस्क होने पर उन्होंने संन्यासी जीवन अपना लिया।

वह हिमालय से नमक और मसाले लेने आया था, और अगले दिन शहर में घूम-घूम कर भीख मांगने लगा। एक धनी व्यक्ति ने उस तपस्वी को परेशान करने की योजना बनाई। इसलिए वह उसे अपने घर ले गया, बैठने के लिए जगह दिखाई, और फिर उसे मछली परोसी। भोजन के बाद, वह व्यक्ति एक तरफ बैठ गया और बोला,

"यह भोजन तुम्हारे लिए ही जीवित प्राणियों को मारकर तैयार किया गया है। इसका दोष मेरा नहीं, बल्कि तुम्हारा है!" और उसने पहली पंक्ति दोहराई:-

दुष्ट लोग हत्या करते हैं, पकाते हैं और खाने के लिए देते हैं।
जो इस तरह का मांस खाता है वह पाप से दूषित हो जाता है।
यह सुनकर बोधिसत्व ने दूसरा श्लोक सुनाया:-

दुष्ट लोग उपहार के रूप में पत्नी या बेटे की हत्या भी कर सकते हैं।
फिर भी, यदि पवित्र लोग भोजन करते हैं, तो कोई पाप नहीं होता (*2)।"
और बोधिसत्व ने ये उपदेश देकर अपने आसन से उठकर प्रस्थान किया।

यह प्रवचन समाप्त होने पर, गुरु ने जन्म का वर्णन किया: "निगंथ नटपुत्त (महावीर, जैनों के गुरु), नग्न तपस्वी यह धनी व्यक्ति थे, और मैं तपस्वी था।"

फुटनोट:

(1) वह छह गलत विश्वासियों में से एक है, और सामान्यतः नटपुत्त कहलाता है (जिसे निगंथ नटपुत्त या जैन धर्म के गुरु महावीर भी कहा जाता है)। 'नग्न तपस्वी' संभवतः जैन थे।

(2) "जीवन लेने वाले दोषी हैं, परन्तु मांस खाने वाले नहीं; मेरे भिक्षुओं को किसी भी स्थान या देश में प्रचलित भोजन खाने की अनुमति है, बशर्ते कि वह भूख या बुरी इच्छा के भोग के बिना खाया जाए।" बुद्ध

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **पादांजलि-जातक**
स्रोत : *डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-247-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 247
पदांजलि-जातक

"निश्चित रूप से यह लड़का," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए, वरिष्ठ भिक्षु लालुदायी के बारे में सुनाई थी।

एक दिन, ऐसा कहा जाता है, दो प्रमुख शिष्य एक प्रश्न पर चर्चा कर रहे थे। चर्चा सुनने वाले भिक्षुओं ने वरिष्ठ भिक्षुओं की प्रशंसा की। भिक्षुओं के बीच बैठे वरिष्ठ भिक्षु लालुदयी ने मन ही मन सोचा, "इनका ज्ञान मेरे ज्ञान के सामने क्या है?" जब भिक्षुओं ने यह देखा, तो वे उन्हें छोड़कर चले गए। भिक्षुओं का समूह तितर-बितर हो गया।

सत्य के हॉल में भाई लोग इस बारे में बात कर रहे थे। “मित्र, क्या तुमने देखा कि लालुदयी ने दो प्रमुख शिष्यों के प्रति तिरस्कार में अपने होंठ कैसे सिकोड़े?” यह सुनकर गुरु ने कहा, “भाइयों, पुराने समय में भी, आज की तरह, लालुदयी के पास होंठ सिकोड़ने के अलावा कोई और जवाब नहीं होता था।” फिर उन्होंने उन्हें एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त राजा राज कर रहे थे, तब बोधिसत्व उनके आध्यात्मिक और सांसारिक मामलों के सलाहकार थे। राजा का एक पुत्र था, जिसका नाम पदांजलि था, जो आलसी और निकम्मा था। कुछ समय बाद राजा की मृत्यु हो गई। उनके अंतिम संस्कार के बाद, दरबारी उनके पुत्र पदांजलि को राजा नियुक्त करने की बात करने लगे। लेकिन बोधिसत्व ने कहा,

"यह एक आलसी आदमी है, एक निकम्मा आवारा है, क्या हम इसे पकड़कर राजा नियुक्त कर दें?"

दरबारियों ने एक मुकदमा चलाया। उन्होंने युवक को अपने सामने बैठाया और एक गलत फैसला सुनाया। उन्होंने किसी चीज़ का दोष गलत मालिक पर डाल दिया और उससे पूछा, "युवक, क्या हमने सही फैसला किया है?"

लड़के ने अपने होंठ सिकोड़ लिए।

बोधिसत्व ने सोचा, "मुझे लगता है कि वह एक बुद्धिमान बालक है; उसे अवश्य ही पता होगा कि हमने गलत निर्णय लिया है।" और उन्होंने पहला श्लोक पढ़ा:

"निस्संदेह वह लड़का सभी मनुष्यों से कहीं अधिक बुद्धिमान है।"
वह अपने होंठ सिकोड़ता है—वह हमें पूरी तरह से समझ गया होगा!
अगले दिन, पहले की तरह, उन्होंने एक सुनवाई का आयोजन किया, लेकिन इस बार उन्होंने निष्पक्ष रूप से निर्णय लिया। उन्होंने फिर से उनसे पूछा कि वे इसके बारे में क्या सोचते हैं।

उसने फिर से अपने होंठ सिकोड़े। तब बोधिसत्व ने महसूस किया कि वह अंधा मूर्ख है, और उसने दूसरा श्लोक दोहराया:-

"उसे न तो सही और न ही गलत का ज्ञान है।"
वह अपने होंठ सिकोड़ता है—लेकिन इससे ज्यादा समझदारी नहीं दिखाता।
दरबारियों को पता चला कि युवक पदांजलि मूर्ख था, और उन्होंने बोधिसत्व को राजा बना दिया।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "लालुदयी पदांजलि थीं, और मैं बुद्धिमान दरबारी था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **किशुकोपमा-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-248-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 248
किमसुकोपामा-जातक

"सभी ने देखा है," इत्यादि--यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए, यहूदा वृक्ष (*1) के अध्याय पर सुनाई थी।

चार भिक्षुओं ने तथागत (बुद्ध) के पास जाकर उनसे समाधि की अवस्था प्राप्त करने का तरीका पूछा। तथागत ने उन्हें समझाया। इसके बाद वे अपने-अपने स्थानों पर चले गए जहाँ वे रातें और दिन बिताते थे। उनमें से एक ने स्पर्श के छह क्षेत्रों का ज्ञान प्राप्त कर संत का पद प्राप्त किया; दूसरे ने पाँच तत्वों का ज्ञान प्राप्त कर, तीसरे ने चार मुख्य तत्वों का ज्ञान प्राप्त कर और चौथे ने अठारह तत्वों का ज्ञान प्राप्त कर संत का पद प्राप्त किया। प्रत्येक ने गुरु को अपनी-अपनी विशेष उपलब्धि के बारे में बताया। उनमें से एक के मन में एक विचार आया और उसने गुरु से पूछा, "इन सभी ध्यान विधियों का केवल एक ही निर्वाण है; ये सभी विधियाँ संतत्व की ओर कैसे ले जाती हैं?" तब गुरु ने पूछा, "क्या यह उस घटना के समान नहीं है जिसमें लोगों ने यहूदा वृक्ष देखा था?" जब उन्होंने गुरु से इसके बारे में बताने का अनुरोध किया, तो उन्होंने बीते दिनों की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, बनारस के राजा ब्रह्मदत्त के चार पुत्र थे। एक दिन उन्होंने सारथी को बुलवाया और उससे कहा,

"हम एक यहूदा वृक्ष देखना चाहते हैं; हमें एक दिखाओ!"

“ठीक है, मैं दिखाऊंगा,” सारथी ने उत्तर दिया। लेकिन उसने सबको एक साथ पेड़ नहीं दिखाया। वह सबसे बड़े को रथ में बिठाकर जंगल ले गया और उसे उस समय पेड़ दिखाया जब उसमें कलियाँ निकलनी शुरू हुई थीं। दूसरे को उसने पत्तियाँ हरी होने पर, तीसरे को फूल खिलने पर और चौथे को फल लगने पर पेड़ दिखाया।

इसके बाद ऐसा हुआ कि चारों भाई एक साथ बैठे थे, और किसी ने पूछा, "यहूदा का वृक्ष किस प्रकार का वृक्ष है?" तब पहले भाई ने उत्तर दिया,

"जले हुए ठूंठ की तरह!"

और दूसरे ने चिल्लाकर कहा, "बरगद के पेड़ की तरह!"

और तीसरा--"मांस के टुकड़े की तरह (*2)!"

और चौथे ने कहा, "बबूल की तरह!"

वे एक-दूसरे के जवाबों से नाराज़ हो गए और अपने पिता को ढूंढने दौड़ पड़े। उन्होंने पूछा, "मेरे स्वामी, यह जुडास का पेड़ किस प्रकार का पेड़ है?"

“तुमने इस पर क्या कहा?” उसने पूछा। उन्होंने उसे अपने उत्तरों का तरीका बताया। राजा ने कहा,

"तुम चारों ने वह वृक्ष देखा है। केवल जब सारथी ने तुम्हें वृक्ष दिखाया, तो तुमने उससे यह नहीं पूछा कि 'वृक्ष ऐसे समय में कैसा दिखता है?' या 'दूसरे समय में कैसा दिखता है?' तुमने कोई भेद नहीं किया, और यही तुम्हारी गलती है।" और उसने पहला श्लोक दोहराया:-

"सभी ने यहूदा का पेड़ देखा है--"
आपकी उलझन क्या है?

किसी ने सारथी से नहीं पूछा
इसका स्वरूप पूरे वर्ष कैसा रहता है!

गुरु ने मामले को समझाने के बाद भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा: "जिस प्रकार वे चारों भिक्षु भेद न कर पूछने के कारण वृक्ष के विषय में संशय में पड़ गए, उसी प्रकार तुम भी सही के विषय में संशय में पड़ गए हो": और अपनी पूर्ण बुद्धि से उन्होंने दूसरा श्लोक कहा:

"जो सही को कुछ कमी के साथ जानते हैं"
उन चार भाइयों की तरह, जिनके पास वह पेड़ था, संदेह महसूस करो।
जब यह प्रवचन समाप्त हुआ, तो गुरु ने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उस समय मैं बनारस का राजा था।"

फुटनोट:

(1) किम्सुका = ब्यूटिया फ्रोंडोसा.

(2) इसमें गुलाबी फूल हैं।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सालक-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-249-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 249
सलाका-जातक

"मेरे अपने बेटे की तरह," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक प्रतिष्ठित वरिष्ठ भिक्षु के बारे में सुनाई थी।

कहा जाता है कि उन्होंने एक युवक को दीक्षा दी थी, जिसके साथ उन्होंने बुरा बर्ताव किया। नौसिखिए युवक अंततः इसे सहन नहीं कर सका और संसार में लौट आया। तब वरिष्ठ भिक्षु ने उसे मनाने की कोशिश की। उन्होंने कहा, "देखो, बालक, तुम्हारा वस्त्र और तुम्हारा कुंड तुम्हारा ही रहेगा; मेरे पास एक और कुंड और वस्त्र है जो मैं तुम्हें दे दूंगा। फिर से हमारे साथ जुड़ जाओ!" पहले तो उसने मना कर दिया, लेकिन बहुत मिन्नतें करने के बाद वह मान गया। जिस दिन से वह भिक्षु संघ में शामिल हुआ, वरिष्ठ भिक्षु ने उसके साथ पहले जैसा ही बुरा बर्ताव किया। फिर से उस लड़के को यह असहनीय लगा और उसने संघ छोड़ दिया। जब वरिष्ठ भिक्षु ने उससे कई बार फिर से जुड़ने की विनती की, तो लड़के ने उत्तर दिया, "न तो तुम मेरे साथ रह सकते हो और न ही मेरे बिना; मुझे अकेला छोड़ दो - मैं शामिल नहीं होऊंगा!"

सत्य के हॉल में भिक्षु इस विषय पर चर्चा करने लगे। उन्होंने कहा, “मित्र, वह लड़का कितना संवेदनशील है! वह बड़े भिक्षु को इतनी अच्छी तरह जानता था कि हमारे साथ शामिल नहीं होना चाहता था।” गुरुजी अंदर आए और पूछा कि वे किस बारे में बात कर रहे हैं। उन्होंने उन्हें सब कुछ बताया। गुरुजी ने उत्तर दिया, “भाइयों, वह लड़का न केवल अब संवेदनशील है, बल्कि पहले भी ऐसा ही था; एक बार जब उसने उस व्यक्ति की कमियाँ देख लीं, तो उसने उसे फिर कभी स्वीकार नहीं किया।” और उन्होंने पुराने समय की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, बनारस के राजा ब्रह्मदत्त के शासनकाल में, बोधिसत्व एक जमींदार परिवार में पैदा हुए और अनाज बेचकर अपना जीवन यापन करते थे। एक अन्य व्यक्ति, जो सपेरा था, ने एक बंदर को प्रशिक्षित किया, उसे विषनाशक दवा पिलाई और सांप को बंदर के साथ खेलने के लिए कहकर अपनी आजीविका चलाता था।

एक उत्सव का ऐलान हो चुका था; वह आदमी भी उस उत्सव में शामिल होना चाहता था, इसलिए उसने अपना बंदर उस व्यापारी को सौंप दिया और उससे विनती की कि वह उसकी उपेक्षा न करे। सात दिन बाद वह व्यापारी के पास आया और अपना बंदर मांगा। बंदर ने अपने मालिक की आवाज़ सुनी और अनाज की दुकान से झट से बाहर आ गया। तुरंत ही उस आदमी ने बाँस के एक टुकड़े से उसकी पीठ पर मारा; फिर वह उसे जंगल में ले गया, बाँध दिया और सो गया। जैसे ही बंदर ने देखा कि वह सो रहा है, उसने अपने बंधन खोल दिए, भाग गया और एक आम के पेड़ पर चढ़ गया। उसने एक आम खाया और उसकी गुठली सपेरे के सिर पर गिरा दी। वह आदमी जागा और ऊपर देखा: वहाँ बंदर था। "मैं उसकी चापलूसी करूँगा!" उसने सोचा, "और जब वह पेड़ से नीचे आएगा, तो मैं उसे पकड़ लूँगा!" इसलिए उसकी चापलूसी करने के लिए, उसने पहला श्लोक दोहराया:-

"तुम मेरे अपने बेटे के समान होगे।"
हमारे परिवार में मुखिया:
नीचे उतर आओ, चाचा जी (*1) पेड़ से--
मेरे साथ जल्दी घर चलो?
बंदर ने सुना और दूसरी पंक्ति दोहराई:-

"तुम मन ही मन हंस रहे हो!"
क्या तुम उस पिटाई को पूरी तरह से भूल गए हो?
मैं यहाँ रहकर संतुष्ट हूँ।
(तो अलविदा) पके आम खाना।
वह उठा और जल्द ही जंगल में गायब हो गया; जबकि सपेरा बहुत क्रोधित होकर अपने घर लौट गया।

जब यह प्रवचन समाप्त हुआ, तो गुरु ने जन्म का वर्णन किया: "हमारा नवोदित भिक्षु बंदर था। वरिष्ठ भिक्षु सपेरा था, और मैं स्वयं अनाज व्यापारी था।"

फुटनोट:

(1)सलका, शाब्दिक अर्थ 'साला', जिसका प्रयोग अक्सर गाली के रूप में किया जाता है।

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कपि-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-250-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 250
कपि-जातक

"एक पवित्र ऋषि," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक पाखंडी भिक्षु के बारे में सुनाई थी।

भिक्षु संघ को उसके पाखंड का पता चल गया। सत्य के हॉल में वे आपस में चर्चा कर रहे थे: "मित्र, फलां भिक्षु, बुद्ध के धर्म (मुक्ति) के मार्ग को अपनाने के बाद भी पाखंड करते हैं।" गुरुजी ने आकर पूछा कि वे किस बारे में बात कर रहे हैं। उन्होंने गुरुजी को बताया। गुरुजी ने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है जब यह भिक्षु पाखंडी हुआ है; वह पहले भी पाखंडी था, जब उसने केवल आग से खुद को गर्म करने के लिए पाखंड किया था।" फिर उन्होंने उन्हें एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व का जन्म एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। जब वे बड़े हुए और उनका बेटा इतना बड़ा हो गया कि खेलने-कूदने लगा, तब उनकी पत्नी का देहांत हो गया; उन्होंने बच्चे को गोद में उठाया और हिमालय चले गए, जहाँ वे तपस्वी बन गए और अपने बेटे का भी उसी तरह पालन-पोषण किया। वे पत्तों की कुटिया में रहते थे।

बरसात का मौसम था और आसमान से लगातार मूसलाधार बारिश हो रही थी: एक बंदर ठंड से बेहाल होकर इधर-उधर भटक रहा था, अपने दांत किटकिटा रहा था। बोधिसत्व एक बड़ी लकड़ी लाए, आग जलाई और अपने पुआल के गद्दे पर लेट गए। उनका बेटा उनके पास बैठा उनके पैर खुजला रहा था।

अब बंदर को किसी मृत साधु का वस्त्र मिला। उसने उस वस्त्र को पहन लिया और एक कंधे पर खाल डाल ली; उसने डंडा और पानी का घड़ा लिया और उस साधु के वस्त्र में ही आग जलाने के लिए पत्तों की कुटिया में आ गया; और वहाँ वह अपने उधार लिए हुए पंखों के साथ खड़ा हो गया।

लड़के ने उसे देखा और अपने पिता से पुकार कर कहा, "देखिए पिताजी—वहाँ एक तपस्वी ठंड से काँप रहा है! उसे पास बुलाइए; वह स्वयं को गर्म कर लेगा।" इस प्रकार अपने पिता को संबोधित करते हुए उसने पहला श्लोक कहा:

"एक पवित्र संत हमारे द्वार पर कांपते हुए खड़े हैं,"
एक ऋषि, जो शांति और अच्छाई में स्थापित हैं।
हे पिता! उस पवित्र व्यक्ति को अंदर आने के लिए कहिए।
ताकि उसकी सारी सर्दी और तकलीफ दूर हो जाए।
बोधिसत्व ने अपने पुत्र की बात सुनी; वे उठे और देखा; तब उन्हें पता चला कि यह एक बंदर है, और उन्होंने दूसरी पंक्ति दोहराई:

वह कोई पवित्र ऋषि नहीं है: वह एक घिनौना व्यक्ति है।
और घृणित बंदर, जो सब कुछ बर्बाद करने के लिए लालची है।
जिसे वह स्पर्श कहता है, जो वृक्षों के बीच निवास करता है;
एक बार उसे अंदर आने दिया तो वह हमारे घर को अपवित्र कर देगा।"
इन शब्दों के साथ, बोधिसत्व ने एक जलती हुई लकड़ी उठाई और बंदर को भगा दिया; और वह उछल पड़ा, और चाहे उसे लकड़ी पसंद आई हो या न आई हो, वह फिर कभी उस स्थान पर नहीं लौटा। बोधिसत्व ने अपनी इंद्रियों और उपलब्धियों का विकास किया, और युवा तपस्वी को उन्होंने रहस्यमय समाधि की प्रक्रिया समझाई; और उसने भी अपनी इंद्रियों और उपलब्धियों को अपने भीतर विकसित होने दिया। और वे दोनों, अपनी समाधि (समाधि) में बिना किसी रुकावट के, ब्रह्मा के लोक के लिए नियत हो गए।

इस प्रकार गुरु ने प्रवचन देते हुए समझाया कि यह व्यक्ति न केवल उस समय, बल्कि हमेशा से ही पाखंडी था। प्रवचन समाप्त करते हुए उन्होंने सत्यों की व्याख्या की और जन्म का वर्णन किया: सत्यों के समापन पर कुछ लोग प्रथम मार्ग (सम्मोहन) पर पहुँचे, कुछ द्वितीय मार्ग पर और कुछ तृतीय मार्ग पर। "पाखंडी भाई (भिक्षु) बंदर था, राहुल पुत्र था और मैं स्वयं संन्यासी था।"

पुस्तक III. टीका-निपाता:

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सनकप्पा-जातक**
***स्रोत**: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----॥-251-॥----->>>> अगला

जातक क्रमांक 251
समकप्पा-जातक

"कोई धनुर्धारी नहीं," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक पथभ्रष्ट भिक्षु के बारे में सुनाई थी।

श्रावस्ती नगर में रहने वाले एक युवक ने तीन रत्नों (*1) की शिक्षाओं में अपना हृदय समर्पित कर दिया और संन्यासी जीवन व्यतीत करने लगा। परन्तु एक दिन श्रावस्ती नगर में भ्रमण करते समय उसकी दृष्टि एक स्त्री पर पड़ी जो चमकीले रंग के वस्त्र पहने थी। उसके हृदय में वासना उत्पन्न हुई; वह व्याकुल हो गया। जब उसके गुरुओं, सलाहकारों और मित्रों ने उसे इस प्रकार देखा, तो उन्होंने तुरंत उससे कारण पूछा। यह देखकर कि वह संसार में लौटने के लिए व्याकुल है, उन्होंने आपस में कहा, "हे मेरे मित्र, गुरु उन लोगों के पापों को दूर कर सकते हैं जो कामवासना और इसी प्रकार के पापों से ग्रस्त हैं, और सत्यों की शिक्षा देकर उन्हें पुण्य का फल भोगने के लिए प्रेरित

करते हैं। आओ, हम उसे गुरु के पास ले चलें।” अतः वे उसे गुरु के पास ले गए। उन्होंने कहा, “भाइयों (भिक्षुओं) आप इस युवक को उसकी इच्छा के विरुद्ध मेरे पास क्यों लाए हैं?” उन्होंने कारण बताया। उन्होंने पूछा, “क्या यह सच है कि आप पथभ्रष्ट हैं, जैसा कि लोग कहते हैं?” उन्होंने स्वीकार किया। गुरु ने कारण पूछा, और उन्होंने घटना का वर्णन किया। उन्होंने कहा, “हे भिक्षु (भाइयों), पहले भी ऐसा हुआ है कि इन स्त्रियों ने उन शुद्ध प्राणियों में भी अशुद्धता उत्पन्न कर दी है जिनके पाप समाधि की शक्ति से शांत हो गए थे। जब शुद्ध लोगों में भी अशुद्धता आ जाती है, तो आप जैसे व्यर्थ पुरुषों को क्यों न अशुद्ध होना चाहिए? उच्च प्रतिष्ठा वाले पुरुष भी अपमानित हो जाते हैं; तो अशुद्ध लोगों का क्या होगा! क्या सिनेरु पर्वत को हिलाने वाली हवा पुराने पत्तों के ढेर को नहीं हिलाएगी? इस पाप ने स्वयं सिंहासन पर बैठे प्रबुद्ध बुद्ध को भी विचलित किया है, तो क्या यह आप जैसे व्यक्ति को विचलित नहीं करेगा?” और उनके अनुरोध पर उन्होंने उन्हें एक प्राचीन कथा सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व का जन्म एक महान ब्राह्मण परिवार में हुआ, जिसके पास आठ सौ मिलियन की संपत्ति थी। उनका पालन-पोषण तक्षशिला में हुआ और उन्होंने वहीं शिक्षा प्राप्त की, फिर वे बनारस लौट आए। वहाँ उनका विवाह हुआ और अपने माता-पिता की मृत्यु के बाद उन्होंने उनके अंतिम संस्कार किए।

फिर, जब वह अपने खजाने का निरीक्षण कर रहा था, तो उसने सोचा—"खजाना तो अभी भी यहीं है, लेकिन इसे इकट्ठा करने वाले अब यहां नहीं हैं!" वह शोक से व्याकुल हो गया, और उसके शरीर से पसीना बहने लगा।

उन्होंने दीर्घकाल घर पर बिताया और दान-पुण्य में बहुत कुछ दिया; उन्होंने अपनी भावनाओं पर विजय प्राप्त की; फिर वे अपने शोकग्रस्त मित्रों को छोड़कर हिमालय चले गए, जहाँ उन्होंने एक रमणीय स्थान पर एक कुटिया बनाई और जंगल के जंगली फलों और जड़ों को खाकर अपना जीवन व्यतीत किया, जो उन्हें आने-जाने के दौरान मिलते थे। शीघ्र ही उन्होंने अपनी इंद्रियों और ज्ञान को विकसित किया और कुछ समय तक आनंदमय ध्यान में व्यतीत किया।

फिर उनके मन में एक विचार आया। वे मनुष्यों के बीच जाकर नमक और मसाले खरीदेंगे; इससे उनका शरीर बलवान होगा और वे पैदल ही विचरण करेंगे। उन्होंने सोचा, “जो भी मुझ जैसे पुण्य पुरुष को दान देगा और आदरपूर्वक मेरा अभिवादन करेगा, वह स्वर्ग को भर देगा।” अतः वे हिमालय से नीचे उतरे और कुछ समय बाद आगे बढ़ते हुए सूर्यास्त के समय बनारस पहुँचे। उन्होंने रहने के लिए जगह ढूँढी और राजमहल देखा। उन्होंने कहा, “यह विश्राम के लिए उपयुक्त स्थान है; मैं यहीं निवास करूँगा।” अतः वे उद्यान में प्रवेश कर गए और एक वृक्ष की छाया में बैठ गए तथा पूरी रात ध्यान की अवस्था में व्यतीत की।

अगले दिन दोपहर होते-होते, अपनी शारीरिक आवश्यकताओं को पूरा करने और अपने उलझे हुए बालों, त्वचा और छाल से बने वस्त्रों को ठीक करने के बाद, उसने अपना भिक्षापात्र उठाया; उसकी सभी इंद्रियाँ शांत थीं, उसका अहंकार शांत हो चुका था, उसका आचरण गरिमामय था, वह बस अपने सामने हल की लंबाई जितनी दूरी तक ही देख रहा था; अपने हर तरह से परिपूर्ण रूप की भव्यता से उसने संसार की निगाहें अपनी ओर खींच लीं। इस प्रकार वह नगर में प्रवेश किया और घर-घर जाकर भीख माँगता रहा, जब तक कि वह राजा के महल तक नहीं पहुँच गया।

राजा अपनी छत पर टहल रहे थे। उन्होंने खिड़की से बोधिसत्व को देखा। वे उनके रूप से प्रसन्न हुए; उन्होंने सोचा, "यदि पूर्ण शांति जैसी कोई चीज है, तो वह निश्चित रूप से इसी व्यक्ति में पाई जाएगी।" इसलिए उन्होंने अपने एक दरबारी को भेजा और तपस्वी को लाने को कहा। दरबारी ने अभिवादन किया और भिक्षापात्र लेकर कहा, "महाराज ने आपको बुलवाया है, महोदय।"

बोधिसत्व ने उत्तर दिया, "हे महान मित्र, राजा मुझे नहीं जानते!"

“तो महाराज, कृपया मेरे लौटने तक यहीं ठहरिए।” उसने राजा को भिखारी की कही बात बताई। तब राजा ने कहा,

"हमारे पास कोई गोपनीय पुजारी नहीं है: जाओ, उसे बुला लाओ;" और उसी समय उसने खिड़की से बाहर इशारा करते हुए उसे पुकारा—"यहाँ, अंदर आइए, महोदय!"

बोधिसत्व ने अपना भिक्षापात्र दरबारी को दे दिया और चबूतरे पर चढ़ गए। राजा ने उनका अभिवादन किया और उन्हें अपने पलंग पर बैठाकर अपने लिए तैयार किए गए सभी भोजन और मांस उन्हें अर्पित किए। भोजन करने के बाद, उन्होंने उनसे कुछ प्रश्न पूछे; और उनके उत्तरों से वे अत्यंत प्रसन्न हुए, इसलिए आदरपूर्वक उन्होंने पूछा,

"महोदय, आप कहाँ रहते हैं? आप यहाँ कहाँ से आए हैं?"

"मैं हिमालय में निवास करता हूँ, हे पराक्रमी राजा, और मैं हिमालय से आया हूँ।"

राजा ने पूछा, "क्यों?"

"हे राजा, वर्षा ऋतु में हमें एक स्थायी निवास की तलाश करनी चाहिए।"

तब राजा ने कहा, "मेरे शाही उद्यान में यहीं ठहरो, तुम्हें चारों आवश्यक चीजों की कमी नहीं होगी; मैं वह पुण्य अर्जित करूंगा जो स्वर्ग की ओर ले जाता है।"

प्रतिज्ञा ली गई; और अपना उपवास तोड़कर वह बोधिसत्व के साथ परिसर में गया और वहाँ पत्तों की एक कुटिया बनवाई। उसने एक ढका हुआ मार्ग बनवाया और रात-दिन रहने के लिए सभी स्थान तैयार किए। वह संन्यासी के जीवन के लिए सभी आवश्यक साज-सामान और सामान लाया और उसे आराम से रहने के लिए कहकर उद्यान के रखवाले को सौंप दिया।

इसके बाद बारह वर्षों तक बोधिसत्व उसी स्थान पर रहे।

एक बार ऐसा हुआ कि सीमावर्ती जिले में विद्रोह भड़क उठा। राजा स्वयं जाकर उसे शांत करना चाहता था। उसने अपनी रानी को बुलाकर कहा—"महारानी, या तो आप या मैं यहीं रुकेंगे।"

"आप ऐसा क्यों कह रहे हैं, महाराज?" उसने पूछा।

"अच्छे तपस्वी के हित में।"

"मैं उनकी उपेक्षा नहीं करूंगी," उसने कहा। "मेरा कर्तव्य है पवित्र पिता की सेवा करना; आप निश्चिंत होकर चले जाइए।"

अत: राजा चले गए; और फिर रानी ने बोधिसत्व की ध्यानपूर्वक सेवा की।

अब राजा जा चुका था; नियत समय पर बोधिसत्व आए।

जब उनका मन करता, वे महल में आते और वहीं भोजन करते। एक दिन, वे बहुत देर तक प्रतीक्षा करते रहे। रानी ने उनका सारा भोजन तैयार कर दिया था; उन्होंने स्नान किया, सज-धज कर एक नीची आसन तैयार की; अपने ऊपर एक साफ वस्त्र ओढ़े, वे बोधिसत्व के आने की प्रतीक्षा में लेटी रहीं। तभी बोधिसत्व ने समय देखा; उन्होंने अपना भिक्षापात्र उठाया और वायु में से होकर बड़ी खिड़की तक आए। रानी ने उनके वस्त्रों की सरसराहट सुनी और जैसे ही वे जल्दी से उठीं, उनका पीला वस्त्र फिसल गया। बोधिसत्व ने इस असामान्य दृश्य को अपने मन में बसने दिया और उन्हें वासना भरी निगाहों से देखा। फिर उनकी समाधि (सम्मोहन) की शक्ति से शांत हुई बुरी वासना, उस टोकरी से फन फैलाते हुए नाग की तरह उठ खड़ी हुई जिसमें उन्हें रखा गया था: वे कुल्हाड़ी से कटे हुए दूध के पेड़ के समान थे। जैसे-जैसे उनकी वासना प्रबल होती गई, उनकी समाधि की शांति भंग होती गई, उनकी इंद्रियों ने अपनी पवित्रता खो दी; वह मानो टूटे पंख वाले कौवे जैसा था। वह पहले की तरह बैठकर भोजन नहीं कर सकता था; रानी के बार-बार बैठने की विनती करने पर भी वह नहीं बैठता था। इसलिए रानी ने सारा भोजन उसके भिक्षापात्र में रख दिया; परन्तु उस दिन वह भोजन के बाद पहले की तरह खिड़की से बाहर नहीं जा सका; भोजन लेकर वह बड़ी सीढ़ी से नीचे उतरकर उपवन में चला गया।

जब वह वहाँ पहुँचा, तो कुछ खा नहीं सका। उसने अपना खाना अपनी बेंच के नीचे रख दिया और बुदबुदाते हुए बोला, "क्या औरत है! सुंदर हाथ, सुंदर पैर! क्या कमर है, क्या जांघें हैं!" और इसी तरह वह सात दिन तक पड़ा रहा। सारा खाना सड़ गया और उस पर काली मक्खियों का झुंड मंडरा रहा था।

फिर राजा सीमा व्यवस्था बहाल करके लौट आया। शहर पूरी तरह सजा हुआ था; उसने जुलूस निकालते हुए शहर का चक्कर लगाया, हमेशा शहर को दाहिनी ओर रखते हुए, और फिर महल की ओर बढ़ा। इसके बाद वह बोधिसत्व के दर्शन की इच्छा से उपवन में प्रवेश किया। उसने आश्रम के आसपास गंदगी और कूड़ा-करकट देखा, और यह सोचकर कि वह चला गया होगा, उसने कुटिया का दरवाजा धक्का देकर खोला और अंदर चला गया। वहाँ बोधिसत्व लेटा हुआ था। राजा ने सोचा, "वह बीमार होगा।" इसलिए उसने सड़ा हुआ भोजन फेंकवा दिया, कुटिया को साफ करवाया, और फिर पूछा,

"क्या बात है सर?"

"महाराज, मैं घायल हूँ!"

तब राजा ने सोचा, "मुझे लगता है कि यह मेरे दुश्मनों ने ही किया होगा। उन्हें मुझ पर हमला करने का मौका नहीं मिला, इसलिए उन्होंने मेरी प्रिय चीज़ को नुकसान पहुँचाने का निश्चय किया।" इसलिए उसने उसे पलटकर घाव की तलाश की; पर उसे कोई घाव नहीं दिखा। फिर उसने पूछा, "महाराज, घाव कहाँ है?"

बोधिसत्व ने उत्तर दिया, "मुझे किसी ने चोट नहीं पहुँचाई, मैंने स्वयं अपने हृदय को ही चोट पहुँचाई है।" फिर वे उठे और आसन पर बैठ गए तथा निम्नलिखित श्लोक दोहराए:

किसी भी तीरंदाज ने अपने कान तक तीर नहीं पहुंचाया।
इस घाव को भरने के लिए, यहाँ कोई पंखों वाला बाण नहीं है।
मोर के पंख से तोड़ा गया, और बारीक ढंग से सजाया गया
कुशल तीर बनाने वालों द्वारा:-यह मेरा हृदय है,
"एक बार अपनी दृढ़ इच्छाशक्ति से वासनाओं से मुक्त हो जाने पर,
और तीव्र बुद्धि, जो इच्छा के माध्यम से
उसने मुझे ऐसा घाव दिया है जिससे मेरी मृत्यु निश्चित हो गई है।
और यह आग की तरह मेरे सभी अंगों को जला देता है।
मुझे ऐसा कोई घाव नहीं दिख रहा जिससे खून बह सके:
मेरे अपने दिल की गलती ही है जो मुझे इतना भेद रही है।"
इस प्रकार बोधिसत्व ने इन तीन श्लोकों के द्वारा राजा को विषयवस्तु समझाई। फिर उन्होंने राजा को कुटिया से बाहर बुलाया और उन्हें रहस्यमयी समाधि की अवस्था में ले गए; जिससे राजा की बाधित समाधि (समाधि) पुनः प्राप्त हो गई। फिर वे कुटिया से बाहर निकले और वायु में बैठकर राजा को प्रोत्साहित किया। इसके बाद उन्होंने कहा कि वे हिमालय जाएंगे। राजा उन्हें मना करना चाहते थे, लेकिन उन्होंने कहा,

"हे राजा, देखिए यहाँ रहते हुए मुझ पर कितना अपमान आया है! मैं यहाँ नहीं रह सकता।" राजा के बार-बार विनती करने पर भी वह आकाश में उड़ गया और हिमालय चला गया, जहाँ वह जीवन भर रहा और फिर ब्रह्मा के लोक में चला गया।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के समापन पर पथभ्रष्ट भाई (भिक्षु) संत बन गए, और कुछ ने प्रथम मार्ग (समाधि), कुछ ने द्वितीय (समाधि), और कुछ ने तृतीय (समाधि) में प्रवेश किया: - "अमंदा राजा थे, और मैं संन्यासी था।"

फुटनोट:

(1) त्रिरत्न/त्रिमूर्ति : बुद्ध, निर्वाण का धर्मी मार्ग (धम्म), भिक्षुओं का पवित्र संघ।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **तिल-मुथि-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-252-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 252
तिला-मुत्थी-जातक

"अब मैं सोचता हूँ," इत्यादि—यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक भावुक व्यक्ति के बारे में सुनाई थी। हमें पता चलता है कि एक भिक्षु था जो कड़वाहट से भरा हुआ था। चाहे उससे कितना भी कम कहा जाए, वह क्रोधित हो जाता और कठोर शब्दों में बोलता; क्रोध, घृणा और अविश्वास प्रकट करता था। सत्य के हॉल में भिक्षुओं ने इस विषय पर चर्चा की। "मित्र, फलां भिक्षु कितना क्रोधित और कड़वा है! वह आग में नमक की तरह भड़कता रहता है। यद्यपि उसने इस शांतिपूर्ण धर्म (मार्ग) को अपनाया है, फिर भी वह अपने क्रोध को भी नियंत्रित नहीं कर सकता।" गुरु ने यह सुना और एक भिक्षु को उस व्यक्ति को लाने के लिए भेजा। "क्या तुम सचमुच उतने ही भावुक हो

जितना लोग कहते हैं?" उन्होंने पूछा। उस व्यक्ति ने कहा कि वह है। तब गुरु ने आगे कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि यह व्यक्ति भावुक हुआ है। वह पहले इतना ही शांत था;" और उन्होंने उन्हें एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, बनारस के राजा ब्रह्मदत्त का एक पुत्र था जिसका नाम राजकुमार ब्रह्मदत्त था। पुराने समय के राजा, भले ही उनके शहर में कोई प्रसिद्ध शिक्षक रहता हो, अक्सर अपने पुत्रों को दूर-दराज के देशों में शिक्षा पूरी करने के लिए भेजते थे, ताकि वे अपने अहंकार और घमंड को वश में करना सीख सकें, सर्दी-जुकाम सहन करना सीख सकें और संसार के रीति-रिवाजों से परिचित हो सकें। राजा ने भी ऐसा ही किया। अपने पुत्र को अपने पास बुलाकर—जो अब सोलह वर्ष का था—उन्होंने उसे एक तले की चप्पल, पत्तों की बनी एक छाता और एक हजार सिक्के देते हुए ये शब्द कहे:

"मेरे बेटे, मैं तुम्हें तक्षशिला ले जाऊंगा और तुम वहां पढ़ाई करोगे।"

लड़के ने आज्ञा का पालन किया। उसने अपने माता-पिता को विदाई दी और कुछ देर बाद तक्षशिला पहुँच गया। वहाँ उसने शिक्षक के निवास के बारे में पूछा और उस समय पहुँचा जब शिक्षक अपना व्याख्यान समाप्त कर चुके थे और घर के द्वार पर इधर-उधर टहल रहे थे। जैसे ही लड़के की नज़र शिक्षक पर पड़ी, उसने अपने जूते के फीते खोले, अपनी धूप से बचने वाली छतरी को बंद किया और आदरपूर्वक अभिवादन करते हुए वहीं खड़ा हो गया। शिक्षक ने देखा कि वह थका हुआ है और नए साथी का स्वागत किया। लड़के ने भोजन किया और थोड़ा आराम किया। फिर वह शिक्षक के पास लौटा और आदरपूर्वक उनके पास खड़ा हो गया।

"तुम कहाँ से आए हो?" उसने पूछा।

"बनारस से।"

तुम किसके बेटे हो?

मैं बनारस के राजा का पुत्र हूँ।

"आप यहाँ क्या लेकर आये हो?"

लड़के ने जवाब दिया, "मैं सीखने आया हूँ।"

"अच्छा, क्या आप शिक्षक की फीस लाए हैं? या आप मुझे पढ़ाने के बदले में मेरी सेवा करना चाहते हैं?"

"मैं अपने साथ फीस लाया हूँ," और यह कहकर उसने शिक्षक के चरणों में अपने हजार सिक्कों से भरा पर्स रख दिया।

विद्यालय में रहने वाले विद्यार्थी दिन में अपने शिक्षक की सेवा करते हैं और रात में उनसे सीखते हैं; परन्तु जो विद्यार्थी शुल्क लेकर आते हैं, उन्हें शिक्षक के घर में सबसे बड़े पुत्रों के समान माना जाता है और वे इसी प्रकार शिक्षा प्राप्त करते हैं। और यह शिक्षक, अन्य शिक्षकों की तरह, प्रत्येक शुभ और शुभ दिन राजकुमार को शिक्षा देता था (*1)। इस प्रकार युवा राजकुमार को शिक्षा प्राप्त हुई।

एक दिन वह अपने गुरु के साथ स्नान करने गया। वहाँ एक बूढ़ी औरत थी जिसने कुछ सफेद बीज तैयार करके अपने सामने फैला रखे थे; वह वहीं बैठकर उन्हें देख रही थी। युवक ने उन सफेद बीजों को देखा और उसे खाने की इच्छा हुई; उसने मुट्ठी भर बीज उठाए और खा लिए।

"वह आदमी भूखा होगा," उसने सोचा; लेकिन उसने कुछ नहीं कहा और चुपचाप बैठी रही।

अगले दिन भी ठीक उसी समय वही घटना घटी। फिर भी उस महिला ने उससे कुछ नहीं कहा। तीसरे दिन उसने फिर वही किया; तब बूढ़ी औरत चिल्ला उठी और बोली,

"महान गुरु अपने शिष्यों को मुझे लूटने दे रहे हैं!" और उसने अपनी बाहें ऊपर उठाते हुए रोते हुए कहा।

शिक्षक ने पीछे मुड़कर पूछा, "क्या बात है, माँ?"

"गुरुजी, मैं कुछ बीज भून रहा था, और आपके शिष्य ने मुट्ठी भर बीज निकालकर खा लिए! उसने आज भी ऐसा किया, कल भी किया और परसों भी किया! वह निश्चित रूप से मेरा सारा पैसा खा जाएगा!"

"मां, रोओ मत: मैं देखूंगा कि तुम्हें भुगतान मिल जाए।"

"हे गुरुजी, मुझे कोई भुगतान नहीं चाहिए: बस अपने शिष्य को यह सिखा दीजिए कि वह दोबारा ऐसा न करे।"

"देखो, माँ," उसने कहा; और उसने दो लड़कों को उस युवक के दोनों हाथ पकड़ने का आदेश दिया, और उसे बाँस की छड़ी से उसकी पीठ पर तीन बार मारा, और उससे कहा कि वह फिर कभी ऐसा न करे।

राजकुमार अपने गुरु पर बहुत क्रोधित था। उसने गुस्से से लाल आँखों से उन्हें सिर से पैर तक घूरा। गुरु ने देखा कि वह कितना क्रोधित था और किस तरह से उन्हें घूर रहा था।

युवक ने मन लगाकर पढ़ाई की और अपना पाठ्यक्रम पूरा किया। लेकिन उसने अपने मन में अपराधबोध छिपाए रखा और अपने शिक्षक की हत्या करने का निश्चय कर लिया। जब उसके जाने का समय आया, तो उसने अपने शिक्षक से कहा,

"हे मेरे गुरु, जब मुझे बनारस का राज्य प्राप्त होगा, तो मैं आपको बुलवाऊंगा। तब आप मेरे पास आइएगा, मैं आपसे विनती करता हूं।" और इस प्रकार उन्हें अत्यंत स्नेहपूर्वक यह वादा प्राप्त हुआ।

वह बनारस लौट आया, अपने माता-पिता से मिला और उसने अपने ज्ञान का प्रमाण प्रस्तुत किया। राजा ने कहा, "मैं अपने पुत्र को पुनः देखकर प्रसन्न हुआ हूँ, और जब तक मैं जीवित हूँ, मैं उसके शासन की भव्यता देखूँगा।" अतः उसने अपने पुत्र को अपने स्थान पर राजा बना दिया।

जब राजकुमार राजसी वैभव का आनंद ले रहा था, तो उसे अपनी पुरानी दुश्मनी याद आ गई और उसके भीतर क्रोध उमड़ पड़ा। "मैं उस आदमी को मौत के घाट उतार दूंगा!" उसने मन ही मन सोचा और अपने शिक्षक को बुलाने के लिए एक दूत भेजा।

“जब तक वह जवान है, मैं उसे कभी शांत नहीं कर पाऊंगा,” गुरु ने सोचा; इसलिए वह नहीं आया। लेकिन जब राजकुमार का शासनकाल आधा बीत चुका था, तब उसने सोचा कि वह उसे शांत कर सकता है; और वह आया, राजा के द्वार पर खड़ा हुआ, और यह संदेश भेजा कि तक्षशिला से गुरु आ गए हैं। राजा प्रसन्न हुआ, और ब्राह्मण को अंदर लाने का आदेश दिया। फिर उसका क्रोध भड़क उठा, और उसकी आँखें लाल हो गईं। उसने अपने आस-पास के लोगों को इशारा करते हुए कहा, “हा, जिस स्थान पर मेरे गुरु ने प्रहार किया था, वह आज भी मुझे पीड़ा देता है! वह यहाँ मृत्यु को अपने माथे पर लिखा हुआ लेकर मरने आया है! आज उसका जीवन समाप्त होना ही है!” और उसने पहले दो श्लोक दोहराए:-

"अब मुझे लगता है, बीते दिनों में कुछ बेचारे बीजों के लिए,
तुमने मुझे बांह से पकड़ा और मुझे एक छड़ी से इतनी दर्दनाक पिटाई की।
ब्राह्मण, क्या तुम्हें मृत्यु से प्रेम है और क्या तुम्हें जरा भी भय नहीं है?
मुझे पकड़ने और पीटने के बाद, अब तुम यहाँ आने की हिम्मत कैसे कर रहे हो?
इस प्रकार उसने उसे मृत्युदंड की धमकी दी। यह सुनकर शिक्षक ने तीसरा श्लोक कहा:

"कुलीन कुल में जन्मा (*2) जो वश में करने के लिए क्रूरता का प्रयोग करता है
यही सही अनुशासन है, क्रोध नहीं: बुद्धिमान लोग इसे भली-भांति जानते हैं।

"इसलिए, हे महाराज, इसे स्वयं समझ लीजिए। जान लीजिए कि यह क्रोध का कोई उचित कारण नहीं है। वास्तव में, यदि मैंने आपको यह शिक्षा न दी होती, तो आप केक, मिठाई, फल और इसी प्रकार की वस्तुएँ चुराते रहते, जब तक कि चोरी के इन कृत्यों से आप लालची न हो जाते; फिर धीरे-धीरे आप घरों में सेंधमारी, राजमार्गों पर डकैती और गाँवों में हत्या करने के लिए प्रेरित होते; अंत में, आपको रंगे हाथों पकड़ा जाता और राजा के समक्ष एक सार्वजनिक शत्रु और लुटेरे के रूप में पेश किया जाता; और आप सार्वजनिक दंड के भय में आते, जब राजा कहता, 'इस आदमी को ले जाओ और इसके अपराधों के अनुसार इसे दंडित करो।' यह सारी समृद्धि, जिसका आप अब आनंद ले रहे हैं, कहाँ से आती? क्या यह मेरी ही कृपा से नहीं है कि आपने यह वैभव प्राप्त किया है?"

इस प्रकार उनके शिक्षक ने राजा के ऊपर भाषण दिया। और चारों ओर खड़े दरबारी, जब उन्होंने उनका भाषण सुना, तो बोले, "सचमुच, महाराज, आपकी सारी शान-शौकत वास्तव में आपके शिक्षक की ही है!"

राजा ने तुरंत अपने गुरु की अच्छाई को पहचान लिया और उनसे कहा,

"हे मेरे गुरु, मैं अपनी सारी शक्ति आपको समर्पित करता हूँ! राज्य ग्रहण कीजिए!" लेकिन दूसरे ने इनकार करते हुए कहा, "नहीं, मेरे स्वामी, मुझे राज्य की कोई इच्छा नहीं है।"

और राजा ने तक्षशिला से शिक्षक की पत्नी और परिवार को बुलवाया; उसने उन्हें बहुत अधिकार दिए और उन्हें राजपुजारी बना दिया; उसने उनके साथ पिता के समान व्यवहार किया और उनकी सलाहों का पालन किया; और उपहार देने और अच्छे कर्म करने के बाद वे स्वर्ग के लिए नियत हो गए।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की: सत्यों के समापन पर भावुक भाई (भिक्षु) ने तृतीय मार्ग (सम्मोहन) का फल प्राप्त किया, और कई अन्य प्रथम, द्वितीय या तृतीय मार्ग में प्रवेश कर गए: "उस समय भावुक भाई राजा थे; परन्तु गुरु मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) चार नक्खत्त हैं जिन्हें लकु, 'प्रकाश' कहा जाता है; एक और पाठ सुभनाक्खत्तेना है, 'हर सुंदर दिन'।

(2) उच्च कुल में जन्मा, कुलीन परवरिश वाला

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **मणि-कंठ-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----॥-253-॥----->>>> अगला

जातक क्रमांक 253
मणि-कंठ-जातक

"भरपूर भोजन और पेय," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने अलवी के पास अग्गलावा के मंदिर में रहते हुए, कोठरियों के निर्माण के नियमों के बारे में सुनाई थी।

अलावी (*1) में रहने वाले कुछ भिक्षु (भाई) अपने लिए घर बनवाने के लिए हर तरफ से सामग्री की भीख मांग रहे थे (*2)। वे लगातार चिल्लाते रहते थे, "हमें एक आदमी दे दो, हमें नौकर का काम करने के लिए कोई दे दो," इत्यादि। हर कोई उनकी इस भीख और याचना से परेशान था। वे इतने परेशान थे कि इन भिक्षुओं को देखते ही चौंककर भाग जाते थे।

ऐसा हुआ कि वरिष्ठ भिक्षु महाकश्यप अलावी में प्रवेश कर भिक्षा मांगने के लिए इधर-उधर घूमने लगे। लोग, वरिष्ठ भिक्षु को देखते ही पहले की तरह भाग गए (*3)। भोजन के बाद, अपने भ्रमण से लौटने पर, उन्होंने भिक्षुओं को बुलाया और उनसे कहा, "एक समय अलावी भिक्षा का प्रमुख केंद्र था; अब यह इतना गरीब क्यों है?" उन्होंने उन्हें कारण बताया।

उस समय भगवान बुद्ध अग्गलावा मंदिर में रह रहे थे। एक वरिष्ठ भिक्षु उनके पास आए और उन्होंने उन्हें सारी बात बताई। गुरु ने इस विषय पर भिक्षुओं को बुलाया। उन्होंने कहा, "मैंने सुना है कि आप लोग घर बनवा रहे हैं और मदद के लिए सबसे परेशान हो रहे हैं। क्या यह सच है?" भिक्षुओं ने कहा कि यह सच है। तब गुरु ने उन्हें फटकारा और कहा, "हे भिक्षुओं, सर्प लोक में भी, जो सात अनमोल पत्थरों से भरा है, इस प्रकार की भीख मांगना सर्पों को भी अप्रिय लगता है। तो मनुष्यों को कितना अधिक अप्रिय होगा, जिनसे एक रुपया प्राप्त करना उतना ही कठिन है जितना कि पत्थर की खाल उतारना!" और उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व एक धनी ब्राह्मण के पुत्र के रूप में पैदा हुए। जब वे बड़े हुए और खेलने-कूदने लगे, तब उनकी माता ने एक और बुद्धिमान व्यक्ति को जन्म दिया। दोनों भाई बड़े होकर अपने माता-पिता की मृत्यु से इतने

दुखी हुए कि वे संन्यासी बन गए और गंगा नदी के मोड़ पर पत्तों से बनी कुटियाओं में रहने लगे। बड़े भाई की कुटिया ऊपरी गंगा के किनारे थी और छोटे भाई की निचली गंगा के किनारे।

एक दिन, एक नागराज (उसका नाम मणिकांत या रत्न-गले वाला था) अपना निवास स्थान छोड़कर मनुष्य का रूप धारण करके नदी के किनारे-किनारे चलते हुए अपने छोटे भाई के आश्रम तक पहुँचा। उसने स्वामी को प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गया। वे आपस में मधुर बातें करने लगे और इतने घनिष्ठ मित्र बन गए कि उनके लिए अलग रहना असंभव हो गया। रत्न-गले वाला अक्सर छोटे संन्यासी से मिलने आता और बैठकर बातें करता रहता। जब वह विदा लेता, तो वह उस व्यक्ति से इतना प्रेम करता कि अपना रूप त्यागकर तपस्वी को नाग की खाल में लपेट लेता और अपने बड़े फन से उसे गले लगा लेता। वह कुछ देर वहीं लेटा रहा, जब तक उसका प्रेम शांत नहीं हो गया। फिर उसने अपने मित्र के शरीर को त्याग दिया और विदाई लेकर अपने स्थान पर लौट गया। उसके भय से संन्यासी दुबला-पतला हो गया; वह बदसूरत हो गया, उसका रंग फीका पड़ गया, वह पीला पड़ता गया और उसकी त्वचा पर नसें उभरने लगीं।

एक दिन वह अपने भाई से मिलने गया। उसने कहा, "भाई, तुम इतने पतले क्यों हो गए हो? तुम्हारा रंग कैसे उड़ गया? तुम इतने पीले क्यों हो गए हो, और तुम्हारी नसें त्वचा पर इस तरह उभरी हुई क्यों हैं?"

दूसरे ने उसे इसके बारे में सब कुछ बता दिया।

पहले वाले ने कहा, "मुझे बताओ, क्या तुम चाहते हो कि वह आए या नहीं?" "नहीं, मैं नहीं चाहता।"

"अच्छा, जब नागराज तुमसे मिलने आता है तो वह कौन सा आभूषण पहनता है?"

"एक अनमोल रत्न!"

"बहुत खूब। जब वह दोबारा आए, तो बैठने से पहले ही उससे गहना मांग लेना। फिर वह तुम्हें गले लगाए बिना ही चला जाएगा। अगले दिन अपने दरवाजे पर खड़े होकर उससे गहना मांग लेना; और तीसरे दिन जैसे ही वह नदी से निकले, उससे गहना मांग लेना। वह फिर कभी तुम्हारे पास नहीं आएगा।"

छोटे साधु ने ऐसा करने का वादा किया और अपनी कुटिया में लौट गया। अगले दिन, जब सर्प आया, तो वहाँ खड़े-खड़े साधु ने पुकार कर कहा, "मुझे अपना सुंदर रत्न दे दो!" सर्प बिना बैठे ही जल्दी से चला गया। उसके अगले दिन, साधु अपने द्वार पर खड़ा रहा और सर्प के आते ही पुकार कर बोला—"कल तुमने मुझे अपना रत्न नहीं दिया! आज तो दे ही दो!" और सर्प कुटिया में प्रवेश किए बिना ही निकल गया। तीसरे दिन, जैसे ही सर्प पानी से बाहर निकला, साधु ने पुकार कर कहा—"यह तीसरा दिन है जब मैं तुमसे यह रत्न माँग रहा हूँ: आओ, मुझे यह रत्न दे दो!" और सर्प ने पानी में अपने स्थान से ही इन दो पंक्तियों में कहा:

मुझे भरपूर मात्रा में पौष्टिक भोजन और पेय मिल सकता है।
जिस अनमोल रत्न की आपको लालसा है, उसके माध्यम से:
तुम बहुत अधिक मांग रहे हो; मैं वह रत्न नहीं दूंगा;
और जब तक मैं जीवित रहूंगा, तब तक आपसे दोबारा मिलने नहीं आऊंगा।
"जैसे जवान लोग हाथ में धारदार तलवार लिए प्रतीक्षा करते हैं,"
तुम मुझे डराते हो, जैसे तुम मेरे गहने मांगते हो।
तुम बहुत ज्यादा मांग रहे हो—मैं वह अनमोल रत्न नहीं दूंगा।
और मैं अपने जीवनकाल में कभी तुमसे मिलने नहीं आऊंगा!
इन शब्दों के साथ, नागों का राजा पानी के नीचे गोता लगा गया और अपने स्थान पर चला गया, फिर कभी वापस नहीं लौटा।

फिर, अपने सुंदर सर्प-राजा को दोबारा न देखकर, तपस्वी और भी दुबला होता चला गया; वह और भी बदसूरत हो गया, उसका रंग पहले से भी ज्यादा फीका पड़ गया, वह और भी पीला पड़ गया, और उसकी त्वचा पर नसें और भी मोटी हो गईं!

बड़े भाई ने सोचा कि वह जाकर देख ले कि उसका भाई कैसा है। वह उससे मिलने गया और पाया कि वह पहले से भी ज्यादा पीला पड़ गया था।

"ये क्या हो रहा है? ये तो पहले से भी बदतर है!" उसने कहा।

उसके भाई ने जवाब दिया, "ऐसा इसलिए है क्योंकि मैं सुंदर नागों के राजा को कभी नहीं देखता!"

“यह संन्यासी,” बड़े साधु ने उसका उत्तर सुनकर कहा, “अपने सर्प-राजा के बिना नहीं रह सकता; और उसने तीसरा श्लोक दोहराया:-

"जिस व्यक्ति के प्रेम को तुम महत्व देते हो, उससे भीख मत मांगो।"
भीख मांगने से तुम उसकी नजरों में घृणित हो जाते हो।
ब्राह्मण ने सर्प के रत्न के लिए इतनी विनती की
वह गायब हो गया और फिर कभी वापस नहीं आया।"
तब उन्होंने अपने भाई को शोक न करने की सलाह दी और यह दिलासा देकर उन्हें छोड़कर अपने आश्रम लौट गए। इसके बाद दोनों भाइयों ने अपनी क्षमताओं और योग्यताओं का विकास किया और ब्रह्मा के स्वर्ग के लिए नियत हो गए।

गुरु ने आगे कहा, "हे भाइयों, सर्पों के संसार में भी, जहाँ सात अनमोल रत्न बहुतायत में हैं, भीख माँगना सर्पों को भी नापसंद है, तो मनुष्यों को कितना अधिक नापसंद होगा!" और यह शिक्षा देने के बाद उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "उस समय आनंद छोटा भाई था, परन्तु बड़ा मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) परिचयात्मक कथा विनय, सुत्तविभंग, संघुदिशेष, 6 में आती है। 1. पाप आग्रह था।

(2)साम्यचिकाय पढ़ना (जैसा कि सुत्तविभंग में है)।

(3) पतिपज्जिसु पढ़ना।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कुंडक-कुच्चि-सिंधव-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-254-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 254
कुंडक-कुच्ची-सिंधव-जातक

"घास और दलिया की मैल," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में वरिष्ठ भिक्षु सारिपुत्र के बारे में सुनाई थी।

एक बार संयोगवश बुद्ध वर्षा ऋतु में श्रावस्ती नगर में रहे और उसके बाद भिक्षा मांगने के लिए तीर्थयात्रा पर गए। उनके लौटने पर नगरवासियों ने उनका हार्दिक स्वागत करने का निश्चय किया और बुद्ध एवं उनके अनुयायियों को भेंटें दीं। उन्होंने उपदेश देने वाले उद्घोषक को नियुक्त किया कि वह भिक्षुओं को उनकी इच्छानुसार आने-जाने वालों में बाँट दे।

एक गरीब बूढ़ी औरत थी, जिसने एक हिस्सा तैयार किया था। भिक्षुओं को अलग-अलग काम सौंपे गए थे, कुछ को एक को, कुछ को दूसरे को। सूर्योदय के समय, वह गरीब औरत क्लर्क के पास आई और बोली, "मुझे भी एक भिक्षु दे दीजिए (भोजन कराने के लिए)!" उसने उत्तर दिया, "मैंने तो सबको बाँट दिया है; लेकिन वरिष्ठ भिक्षु सारिपुत्र अभी भी मठ में हैं, आप अपना हिस्सा उन्हें दे सकती हैं।" यह सुनकर वह बहुत प्रसन्न हुई और जेतवन मठ के द्वार पर तब तक प्रतीक्षा करती रही जब तक कि वरिष्ठ भिक्षु बाहर नहीं आ गए। उसने उनका अभिवादन किया, उनके हाथ से कटोरा लिया और उन्हें अपने घर ले जाकर बैठने के लिए आमंत्रित किया।

कई धर्मनिष्ठ परिवारों ने यह अफवाह सुनी कि किसी वृद्ध स्त्री ने सारिपुत्र को अपने दरवाजे पर बैठा लिया है। यह अफवाह सुनने वालों में कोसल वंश के राजा पसेनदी (प्रसेनजित) भी थे। उन्होंने तुरंत उस वृद्ध स्त्री को तरह-तरह का भोजन, एक वस्त्र और एक हजार सिक्कों से भरा थैला भेजा और उनसे निवेदन किया, "जो भी इस वृद्ध भिक्षु का सत्कार कर रही हैं, वे यह वस्त्र धारण करें, यह धन खर्च करें और इस प्रकार उनका सत्कार करें।" राजा की तरह ही, अनाथपिंडिका, छोटी अनाथपिंडिका, गृहस्थ बहन विशाखा (एक महान महिला), सभी ने ऐसा ही किया; अन्य परिवारों ने अपनी सामर्थ्य के अनुसार सौ-दो सौ सिक्के भेजे। इस प्रकार एक ही दिन में उस वृद्ध स्त्री को एक लाख सिक्के प्राप्त हो गए।

हमारे भिक्षु ने उसके द्वारा दिया गया शोरबा पिया, उसका भोजन खाया और उसके द्वारा पकाए गए चावल भी खाए; फिर उन्होंने उसे धन्यवाद दिया और उसे ऐसा उपदेश दिया कि वह परिवर्तित हो गई। फिर वे मठ लौट गए।

सत्य के हॉल में, भिक्षुओं ने वरिष्ठ भिक्षु की अच्छाई पर चर्चा की। "मित्र, धर्म के सेनापति (सारिपुत्र) ने एक बूढ़ी गृहिणी को गरीबी से बचाया है। वे उसके सहारा बने रहे हैं। उसने जो भोजन उन्हें दिया, उन्होंने उसे खाने से मना नहीं किया।"

गुरुजी अंदर आए और जब वे सब साथ बैठे थे, तो उन्होंने पूछा कि वे किस बारे में बात कर रहे हैं। उन्होंने गुरुजी को सब कुछ बताया। गुरुजी ने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि सारिपुत्र इस बूढ़ी औरत की शरण में आया है; और न ही यह पहली बार है कि उसने उसके द्वारा दिए गए भोजन को अस्वीकार किया है। उसने पहले भी ऐसा ही किया था।" और फिर उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व का जन्म उत्तरी प्रांत के एक व्यापारी परिवार में हुआ था। उस देश के पाँच सौ लोग, जो घोड़ों के व्यापारी थे, बनारस में घोड़े ले जाया करते थे और उन्हें वहाँ बेचते थे।

अब एक व्यापारी पाँच सौ घोड़े बेचने के लिए बनारस की ओर चल पड़ा। इस मार्ग पर, बनारस से कुछ ही दूरी पर एक कस्बा है, जहाँ पहले एक धनी व्यापारी रहता था। उसकी संपत्ति कभी बहुत अधिक थी; लेकिन उसका परिवार धीरे-धीरे क्षीण हो गया, और अब केवल एक बूढ़ी औरत ही बची थी, जो पैतृक घर में रहती थी। व्यापारी ने उस घर में कुछ किराया देकर अपना ठिकाना बनाया और अपने घोड़ों को पास ही रखा।

संयोगवश उसी दिन उसकी एक बेहतरीन नस्ल की घोड़ी ने बच्चे को जन्म दिया। उसने दो-तीन दिन प्रतीक्षा की और फिर अपने घोड़ों को साथ लेकर राजा से मिलने चला गया। इसी कारण उस बूढ़ी औरत ने उससे घर का किराया मांगा।

"ठीक है माँ, मैं आपको पैसे दे दूंगा," उसने कहा।

"बेटे, जब तुम मुझे पैसे दोगे, तो मुझे यह छोटा जानवर दे देना, और इसकी कीमत किराए में से काट लेना," उसने कहा। व्यापारी ने उसकी बात मान ली और चला गया। वह स्त्री उस छोटे जानवर को अपने बेटे की तरह प्यार करती थी; और उसे भुने हुए चावल का तेल, टूटे हुए मांस और घास खिलाती थी।

कुछ समय बाद, बोधिसत्व पाँच सौ घोड़ों के साथ यात्रा करते हुए इस घर में ठहरे। परन्तु घोड़ों ने लाल चावल के चूर्ण खाने वाले इस उच्च नस्ल के युवा घोड़े की गंध पहचान ली और उनमें से एक भी घोड़ा अंदर नहीं आया। तब बोधिसत्व ने उस स्त्री से कहा,

"लगता है यहाँ कोई घोड़ा है, माँ?"

"ओह, मेरे बेटे, यहाँ एकमात्र घोड़ा एक छोटा जानवर है जिसे मैं यहाँ इतनी कोमलता से रखता हूँ जैसे वह मेरा बेटा हो!"

"वह कहाँ है, माँ?"

चरने के लिए बाहर गया है।

वह कब लौटेगा?

"ओह, वह जल्द ही वापस आ जाएगा।"

बोधिसत्व ने घोड़ों को बाहर ही रखा और युवा पशु के आने का इंतज़ार करने के लिए बैठ गए; और जल्द ही युवा पशु अपनी सैर से लौट आया। जब उन्होंने चावल के चूर्ण से भरे पेट वाले उस सुंदर युवा पशु को देखा, तो बोधिसत्व ने उसके हाव-भाव पर ध्यान दिया और सोचा, "यह तो अनमोल नस्ल का पशु है; मुझे इसे उस बुढ़िया से खरीद लेना चाहिए।"

तब तक वह छोटा जानवर घर में घुसकर अपने अस्तबल में चला गया था। तुरंत ही सभी घोड़े भी अंदर जा सके।

वहाँ बोधिसत्व कुछ दिनों तक रहे और अपने घोड़ों की देखभाल की। फिर जब वे जाने लगे, तो उन्होंने उस बूढ़ी औरत से कहा, "माँ, मुझे आपसे यह जवान घोड़ा खरीदने दीजिए।"

"तुम क्या कह रहे हो! किसी को अपने पाले-पोसे बच्चे को नहीं बेचना चाहिए!"

"माँ, आप उसे खाने में क्या देती हैं?"

"उबले हुए चावल, चावल की दलिया, और भुने हुए चावल; टूटा हुआ मांस और घास; और पीने के लिए चावल का शोरबा।"

"अच्छा, माँ, अगर मुझे वह मिल गया, तो मैं उसे सबसे उत्तम भोजन खिलाऊँगा; जब वह खड़ा होगा, तो उसके ऊपर कपड़े का शामियाना बिछा दूँगा; मैं उसे खड़े होने के लिए एक कालीन दूँगा।"

"क्या तुम ऐसा करोगे, मेरे बेटे? तो मेरे इस बच्चे को ले जाओ, और जाओ, और वह खुश रहे!"

और बोधिसत्व ने उस बालक पशु के चारों पैरों, पूंछ और सिर के लिए अलग-अलग कीमत अदा की; उन्होंने प्रत्येक के लिए एक-एक हजार सिक्कों से भरे छह थैले रखे; और उन्होंने उस महिला को नए वस्त्र पहनाए, उसे आभूषणों से सजाया और उसे बालक पशु के सामने बिठा दिया। बालक पशु ने अपनी आँखें खोलीं और अपनी माँ को देखकर आँसू बहाए। माँ ने उसकी पीठ सहलाई और कहा, "मैंने तुम्हारे लिए जो किया है, उसका प्रतिफल मुझे मिल गया है; जाओ, मेरे बेटे!" और फिर वह चला गया।

अगले दिन बोधिसत्व ने सोचा कि वे उस युवा पशु की परीक्षा लेंगे, यह देखने के लिए कि क्या वह अपनी शक्ति को जानता है या नहीं। इसलिए साधारण भोजन तैयार करने के बाद, उन्होंने बाल्टी में लाल चावल का दलिया निकलवाया और उसे परोसा। लेकिन वह इसे निगल नहीं सका; और उसने ऐसे किसी भी भोजन को छूने से इनकार कर दिया। तब बोधिसत्व ने उसकी परीक्षा लेने के लिए पहला श्लोक बोला:

"घास और दलिया का मैल जिसे तुम अच्छा समझते थे"
  पुराने जमाने में: तुम अपना खाना क्यों नहीं खाते?
यह सुनकर उस युवा जानवर ने निम्नलिखित दो अन्य दोहे कहे:-

"जब लोगों को किसी व्यक्ति के जन्म और वंश के बारे में पता नहीं होता,
  चावल की मैल किसी की जरूरत पूरी करने के लिए काफी है।
"लेकिन जैसा कि आप जानते हैं, मैं घोड़ों का मुखिया हूं;"
  इसलिए मैं तुमसे यह भोजन नहीं लूंगा।
तब बोधिसत्व ने उत्तर दिया, "मैंने यह आपकी परीक्षा लेने के लिए किया था; क्रोधित न हों"; और उन्होंने उत्तम भोजन पकाया और उन्हें अर्पित किया। जब वे राजा के प्रांगण में पहुँचे, तो उन्होंने पाँच सौ घोड़ों को एक तरफ़ खड़ा किया और दूसरी तरफ़ कढ़ाईदार चंदवा लगाया, जिसके नीचे उन्होंने एक कालीन बिछाया और उसके ऊपर कपड़े का एक तंबू लगाया; और यहीं उन्होंने उस युवा पशु को ठहराया।

घोड़ों का निरीक्षण करने आए राजा ने पूछा कि इस घोड़े को अलग क्यों रखा गया है।

"हे राजा," उत्तर आया, "यदि इस घोड़े को अलग नहीं रखा गया, तो यह इन अन्य घोड़ों को भी छोड़ देगा।"

"क्या वह एक सुंदर घोड़ा है?" राजा ने पूछा।

"जी हां, हे राजा।"

"तो मुझे उसके कदम देखने दो।"

मालिक ने घोड़े पर काठी कसी और उसकी पीठ पर सवार हो गया। फिर उसने आंगन से सभी लोगों को बाहर निकाल दिया और घोड़े को उसमें दौड़ाया। ऐसा लग रहा था मानो पूरा स्थान घोड़ों की कतारों से घिरा हुआ हो, बिना किसी रुकावट के!

तब बोधिसत्व ने कहा, "हे राजा, मेरे घोड़े की गति देखो!" और उसे अपना सिर काटने दिया। उसे कोई देख भी नहीं सका! फिर उन्होंने घोड़े के पार्श्व भाग पर एक लाल पत्ता बाँध दिया; और केवल पत्ता ही दिखाई दिया। फिर उन्होंने घोड़े को शहर के एक बगीचे में स्थित एक तालाब की सतह पर दौड़ाया। वे ऊपर से गुजरे, और उनके खुरों के सिरे तक गीले नहीं हुए। फिर वे कमल के पत्तों पर सरपट दौड़े, और एक भी पत्ता पानी में नहीं डूबा।

जब स्वामी ने घोड़े की शानदार चाल का प्रदर्शन किया, तो वे घोड़े से उतरे, ताली बजाई और एक हाथ ऊपर की ओर करके फैला दिया। घोड़ा उस पर चढ़ गया और अपने स्वामी की हथेली पर चारों पैर सटाकर खड़ा हो गया। बोधिसत्व ने कहा, "हे महामहिम! इस घोड़े के सारे कौशल दिखाने के लिए समुद्र का पूरा घेरा भी पर्याप्त नहीं होगा।" राजा इतना प्रसन्न हुआ कि उसने उसे अपने राज्य का आधा हिस्सा दे दिया: उसने घोड़े को अपना राजसी घोड़ा बनाकर उस पर औपचारिक जल छिड़का। वह राजा को प्रिय और अनमोल था, और उसका बहुत सम्मान किया जाता था; और उसका निवास स्थान राजा के निवास कक्ष के समान सुंदर बनाया गया था: फर्श पर चारों प्रकार के सुगंध छिड़के गए थे, दीवारों पर फूलों की मालाएँ और कई हार लटके हुए थे; छत पर सोने के तारों से ढका हुआ कपड़ा था; चारों ओर एक सुंदर मंडप जैसा था। सुगंधित तेल का दीपक सदा जलता रहता था; और विश्राम कक्ष में एक सोने का कलश रखा हुआ था। उनका भोजन हमेशा राजा के योग्य होता था। उनके वहाँ आने के बाद, पूरे भारत पर प्रभुत्व उस राजा के हाथ में आ गया। राजा ने बोधिसत्व की सलाह के अनुसार अच्छे कर्म और दान किए, और स्वर्ग के लिए नियत हो गया।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की और जन्म का वर्णन किया: (सत्यों के समापन पर कई लोग प्रथम मार्ग (सम्मोहन), द्वितीय या तृतीय मार्ग में प्रवेश कर गए:) "उस समय वह बूढ़ी औरत वही थी, सारिपुत्र वह श्रेष्ठ घोड़ा था, आनंद राजा था, और घोड़े का व्यापारी मैं स्वयं था।"

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **शुक-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-255-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 255
सुका-जातक

"पक्षी किस समय आया," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, एक भिक्षु के बारे में जिसकी मृत्यु अधिक खाने से हो गई थी।

उनकी मृत्यु पर, भिक्षुओं ने सत्य के हॉल में एकत्रित होकर उनके दोषों पर इस प्रकार चर्चा की: "मित्र, फलां भाई को यह ज्ञान नहीं था कि वह कितना खा सकते हैं। इसलिए उन्होंने अपनी क्षमता से अधिक खा लिया और फलस्वरूप उनकी मृत्यु हो गई।" गुरुजी प्रवेश कर गए और पूछा कि वे सब किस बारे में बात कर रहे हैं; और उन्होंने उन्हें बताया। गुरुजी ने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है जब हमारे मित्र की मृत्यु अधिक खाने से हुई है; ऐसा पहले भी हो चुका है।" फिर उन्होंने उन्हें एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस पर ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व ने तोते का रूप धारण किया और हिमालय क्षेत्र में रहने लगे। वे हिमालय के समुद्र की ओर स्थित अपने जैसे कई हज़ार तोतों के राजा थे; उनका एक पुत्र था। जब उनका पुत्र बलवान हुआ, तो तोते की आँखें कमजोर हो गईं। दरअसल, तोते बहुत तेज़ी से उड़ते हैं; इसी कारण बुढ़ापे में सबसे पहले उनकी आँखें कमजोर होती हैं। पुत्र अपने माता-पिता को घोंसले में रखता था और उनके लिए भोजन लाता था।

एक दिन ऐसा हुआ कि हमारा छोटा तोता अपने भोजन के स्थान पर गया और एक पर्वत की चोटी पर उतर गया। वहाँ से उसने समुद्र की ओर देखा और उसे एक द्वीप दिखाई दिया, जिस पर मीठे सुनहरे फलों से लदा आमों का बाग था। अगले दिन, भोजन लाने के समय, वह हवा में उड़कर उस आमों के बाग में गया, जहाँ उसने आम का रस चूसा और एक फल लेकर अपने माता-पिता के पास घर ले गया। जब बोधिसत्व ने उसे खाया, तो उन्हें उसका स्वाद पता चल गया।

उन्होंने कहा, "मेरे बेटे, यह फलां द्वीप का आम है," और फिर उन्होंने उस द्वीप का नाम बताया।

"फिर भी, पिताजी!" नन्हे तोते ने उत्तर दिया।

“बेटे, जो तोते वहाँ जाते हैं, उनकी उम्र लंबी नहीं होती,” उन्होंने कहा। “फिर कभी उस द्वीप पर मत जाना!”—पर पुत्र ने उनकी बात नहीं मानी और फिर से चला गया।

फिर एक दिन ऐसा हुआ कि वह हमेशा की तरह गया और खूब आम का रस पिया। चोंच में आम लिए वह समुद्र के ऊपर से जा रहा था, तभी लंबे समय तक आम ढोने से वह थक गया और उसे नींद आ गई; नींद में ही वह उड़ता रहा और उसके हाथ में रखा आम उसकी चोंच से गिर गया। धीरे-धीरे वह अपने रास्ते से भटक गया और पानी की सतह पर तैरता हुआ नीचे चला गया, अंत में वह पानी में गिर गया। फिर एक मछली ने उसे पकड़ लिया और निगल लिया। जब उसे वापस लौटना चाहिए था, वह नहीं लौटा, और बोधिसत्व समझ गया कि वह पानी में गिर गया होगा। फिर उसके माता-पिता, भोजन न मिलने के कारण, दुखी होकर कमजोर पड़ गए और मर गए।

गुरु ने यह कहानी सुनाने के बाद, अपनी पूर्ण बुद्धिमत्ता से, निम्नलिखित छंद कहे:

"जिस समय पक्षी ने बिना अधिक खाए भोजन किया,
उसने रास्ता ढूंढ लिया और अपनी माँ के लिए मांस ले आया।
लेकिन एक बार उसने जरूरत से ज्यादा खा लिया, और संतुलन भूल गया,
वह गिर पड़ा; और उसके बाद फिर कभी दिखाई नहीं दिया।
अतः लालची मत बनो; हर बात में विनम्र रहो।
बचाना सुरक्षित है; लालच पतन से पहले आता है (*1)।"
जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की (जिसके समापन पर कई व्यक्ति प्रथम, द्वितीय, तृतीय या चतुर्थ मार्ग में प्रवेश कर गए), और जन्म की पहचान बताई: "उस समय, अधिक भोजन करने वाला भाई (भिक्षु) छोटा तोता था, और तोतों का राजा मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) विद्वान निम्नलिखित पंक्तियाँ जोड़ते हैं:

"सूखे या गीले भोजन का सेवन संयम से करें।"
और इससे आपकी भूख की समस्या हल हो जाएगी।
जो सावधानीपूर्वक खाता है, जिसका पेट बड़ा नहीं होता,
वे जल्द ही या देर से एक पवित्र संन्यासी बन जाएंगे।
चार-पांच घूंट, फिर एक पेय लेना उचित है;
किसी भी गंभीर संन्यासी के लिए इतना ही काफी है।
संयमित और सावधानीपूर्वक भोजन करने वाले व्यक्ति को कम दर्द होता है।
धीरे-धीरे बूढ़ा होता है, और उससे दुगनी लंबी उम्र जीता है।"
और ये:

जब बेटे जंगल में अपने पिता के लिए मांस लाते हैं,
यह आंखों में लगाने वाली मरहम की तरह बहुत अच्छा है।
इस प्रकार, थकावट से भरी हुई, नश्वर जिंदगी के लिए,
उन्होंने उसे इसी प्रकार का पोषण दिया।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **जारुदापन-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-256-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 256

जरुदपना-जातक

"कुछ व्यापारी," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें कुछ व्यापारियों का जिक्र था जिनका घर श्रावस्ती शहर में था।

परंपरा के अनुसार, इन लोगों ने श्रावस्ती नगर से सामान खरीदा और उसे गाड़ियों पर लाद लिया। जब उनके काम पर जाने का समय आया, तो उन्होंने भगवान बुद्ध को आमंत्रित किया और उन्हें भरपूर दान दिया; उन्होंने शरण ली, नियमों में सुदृढ़ हुए और गुरु से विदा लेते हुए कहा, "हे प्रभु, हम बहुत दूर जा रहे हैं। जब हम अपना सामान बेच देंगे और सौभाग्य से सुरक्षित लौट आएंगे, तो हम फिर आकर आपसे मिलेंगे।" फिर वे अपनी यात्रा पर निकल पड़े।

अपने कठिन मार्ग पर चलते हुए उन्हें एक परित्यक्त कुआँ दिखाई दिया। उसमें पानी नहीं था, और वे प्यासे थे; इसलिए उन्होंने और गहरा खोदने का निश्चय किया। खोदते-खोदते उन्हें लोहे से लेकर नीलमणि तक, हर प्रकार के खनिजों की परतें मिलीं। इस खोज से वे संतुष्ट हो गए; उन्होंने अपनी गाड़ियों को इन खजानों से भर लिया और श्रावस्ती नगर सुरक्षित लौट आए। उन्होंने अपने द्वारा लाए गए खजाने को छिपा दिया; और फिर सोचा कि इतनी सौभाग्यशाली होने के कारण वे भिक्षु समुदाय को भोजन देंगे। इसलिए उन्होंने भगवान बुद्ध को आमंत्रित किया और उन्हें भेंट दी; और जब उन्होंने आदरपूर्वक उनका अभिवादन किया और एक तरफ बैठ गए, तो उन्होंने बताया कि उन्हें अपना खजाना कैसे मिला। उन्होंने कहा, "हे गृहस्थों, आप अपनी खोज से संतुष्ट हैं और अपने धन और जीविका को पूर्ण संयम से स्वीकार करते हैं। परन्तु पुराने समय में ऐसे लोग भी थे जो संतुष्ट नहीं थे, जिनमें आत्मसंयम की कमी थी, जिन्होंने बुद्धिमानों की सलाह नहीं मानी और इस प्रकार अपना प्राण खो दिया।" और उनके अनुरोध पर उन्होंने एक प्राचीन कथा सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, तब बोधिसत्व एक व्यापारी के परिवार में पैदा हुए और बड़े होकर एक महान व्यापारी बने। एक बार उन्होंने अपने रथों को माल से भर लिया और एक बड़े काफिले के साथ इसी जंगल में आए और इसी कुएँ को देखा। व्यापारियों ने कुएँ को देखते ही पानी पीने की इच्छा की और खोदना शुरू कर दिया। खोदते-खोदते उन्हें बहुत सारा धातु और रत्न मिला। इतना खजाना मिलने के बावजूद वे संतुष्ट नहीं हुए। उन्होंने सोचा, "यहाँ इससे भी बेहतर कोई खजाना जरूर होगा!" और वे खोदते रहे।

तब बोधिसत्व ने उनसे कहा, "हे व्यापारियों, लोभ विनाश का मूल कारण है। तुमने बहुत धन अर्जित कर लिया है; इसी से संतुष्ट रहो और आगे मत खोदो।" परन्तु वे फिर भी और अधिक खोदते रहे।

यह कुआँ सर्पों से आबाद था। मिट्टी और ढेलों के गिरने से क्रोधित होकर सर्पराज ने अपनी नासिका श्वास से सभी सर्पों को मार डाला (*1), बोधिसत्व को छोड़कर, और उन्हें नष्ट कर दिया; फिर वह सर्पलोक से ऊपर आया, बैलों को रथों में लगाया, उन्हें रत्नों से भर दिया, और बोधिसत्व को एक सुंदर रथ पर बैठाकर, कुछ युवा सर्पों से रथ चलवाए, और उन्हें बनारस ले आया। वह उन्हें अपने घर ले गया, खजाने को व्यवस्थित किया, और सर्पलोक में अपने स्थान पर वापस चला गया। बोधिसत्व ने अपना सारा खजाना खर्च कर दिया, जिससे उनके दान से पूरे भारत में हलचल मच गई, और पुण्य कर्मों का पालन करते हुए, और पवित्र दिन का पालन करते हुए, अपने जीवन के अंत में वे स्वर्ग पहुँचे।

गुरु ने यह कहानी सुनाने के बाद, अपनी पूर्ण बुद्धिमत्ता से, निम्नलिखित पंक्तियाँ कहीं:

कुछ व्यापारियों को पानी की आवश्यकता थी, इसलिए उन्होंने जमीन खोदी।
एक पुराने कुएं में खजाना मिला:-
टिन, लोहा, तांबा, सीसा, चांदी और सोना,
कई बार बेरिल, मोती और रत्न।
लेकिन वे संतुष्ट नहीं थे, उन्हें और भी अधिक की इच्छा थी।
और भयंकर सर्पों ने उन सबको आग से मार डाला।
आप चाहें तो खुदाई कर सकते हैं, लेकिन अत्यधिक खुदाई न करें;
अत्यधिक खुदाई करना एक प्रकार का पाप है।
"खुदाई से इन लोगों को खजाना मिला।"
लेकिन ज्यादा खुदाई करने से सब कुछ फिर से खो गया।"

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म का वर्णन किया:- "उस समय, सारिपुत्र सर्प-राजा थे, और कारवां का स्वामी मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)नासिकवातेना। शायद इससे अहिवातारोगो रोग पर प्रकाश पड़ता है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **गामणी-चण्ड-जातक**
स्रोत: *डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-257-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 257
गामणि-चंदा-जातक

“यह कोई चतुर निर्माता नहीं है,” इत्यादि — यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए ज्ञान की प्रशंसा करते हुए सुनाई थी। सत्य के हॉल में भिक्षु बैठे थे और बुद्ध के ज्ञान की प्रशंसा कर रहे थे: “भगवान बुद्ध का ज्ञान विशाल और व्यापक है, उनका ज्ञान बुद्धिपूर्ण और तीव्र है, उनका ज्ञान तीक्ष्ण और मर्मस्पर्शी है। वे ज्ञान में इस संसार और देवदूतों के लोक से श्रेष्ठ हैं।”

गुरुजी अंदर आए और उनसे पूछा कि वे सब यहाँ बैठे-बैठे किस बारे में बात कर रहे हैं। उन्होंने उन्हें बताया। गुरुजी ने उत्तर दिया, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि भगवान बुद्ध ज्ञानी हुए हैं; वे पहले भी ऐसे ही थे।" और उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

हे भाइयों, एक समय की बात है, जब बनारस में जनसंध राज कर रहे थे, तब उनकी प्रधान रानी के पुत्र के रूप में बोधिसत्व का जन्म हुआ। उनका चेहरा तेजस्वी था, मानो किसी तराशे हुए सुनहरे दर्पण की तरह शुभ सौंदर्य से परिपूर्ण। उनके नामकरण के दिन उनका नाम अदसमुख रखा गया, अर्थात् दर्पण-चेहरे वाले राजकुमार।

सात वर्षों के भीतर ही उनके पिता ने उन्हें तीनों वेदों और संसार के सभी कर्तव्यों की शिक्षा दी; और फिर सात वर्ष की आयु में ही उनका देहांत हो गया। दरबारियों ने राजा का अंतिम संस्कार बड़े धूमधाम से किया और मृतक के लिए भेंट चढ़ाई; और सातवें दिन वे सब महल के प्रांगण में एकत्रित हुए और आपस में बातचीत की। उन्होंने सोचा कि राजकुमार बहुत छोटा है, और उसे राजा नहीं बनाया जा सकता।

उन्हें राजा बनाने से पहले, वे उनकी परीक्षा लेना चाहते थे। इसलिए उन्होंने एक न्याय अदालत तैयार की और एक सोफा लगाया। फिर वे राजकुमार के सामने आए और कहा, "हे स्वामी, आपको न्याय अदालत में आना होगा।" राजकुमार मान गए; और एक बड़े दल के साथ वे वहाँ गए और चबूतरे पर बैठ गए।

जब राजा न्याय के लिए बैठे, तो दरबारियों ने एक बंदर को ऐसे व्यक्ति के वेश में तैयार किया जो भवन निर्माण के लिए उपयुक्त स्थानों के बारे में जानकारी देने वाली परंपराओं में पारंगत था। उन्होंने उसे दो पैरों पर खड़ा किया और न्याय कक्ष में ले आए।

“महाराज,” उन्होंने कहा, “आपके पिता राजा के समय में यह व्यक्ति जादुई भविष्यवाणी करके उपयुक्त स्थानों का पता लगाता था और अपने इस हुनर में माहिर था। वह धरती में सात भुजाओं की गहराई तक दरार देख सकता था। उसकी सहायता से राजा के महल के लिए एक स्थान चुना गया था; राजा कृपया उसके लिए व्यवस्था करें और उसे पद प्रदान करें।”

राजकुमार ने उसे सिर से पैर तक देखा। "यह कोई मनुष्य नहीं, बल्कि एक बंदर है," उसने सोचा; "बंदर दूसरों की बनाई हुई चीजों को नष्ट कर सकते हैं, लेकिन स्वयं न तो कुछ बना सकते हैं और न ही उसे पूरा कर सकते हैं।" और इसलिए उसने अपने दरबार में पहली पंक्ति दोहराई:-

"यह कोई चतुर निर्माता नहीं है, बल्कि झुर्रियों वाले चेहरे वाला एक बंदर है।"
वह दूसरों की बनाई हुई चीजों को नष्ट कर सकता है; यही उसकी जाति का स्वभाव है।"

“ऐसा ही होना चाहिए, महाराज!” दरबारियों ने कहा और उसे अपने साथ ले गए। लेकिन एक-दो दिन बाद उन्होंने उसी व्यक्ति को भव्य वस्त्र पहनाए और न्याय कक्ष में वापस ले आए। “महाराज, आपके पिता के समय में, यह एक न्यायाधीश था जो न्याय करता था। न्याय दिलाने में सहायता के लिए आपको इसी की मदद लेनी चाहिए।”

राजकुमार ने उसकी ओर देखा। उसने सोचा, "बुद्धि और विवेक वाला मनुष्य इतना मूर्ख नहीं होता। यह मूर्ख बंदर न्याय नहीं कर सकता;" और उसने दूसरा श्लोक दोहराया:-

"इस बालदार प्राणी में कोई बुद्धि नहीं है; यह आत्मविश्वास पैदा नहीं करता।"
उसे कुछ नहीं पता, जैसा कि मेरे पिता ने सिखाया था: जानवर में कोई समझ नहीं होती!
“तो ऐसा ही होगा, महाराज!” दरबारियों ने कहा और उसे अपने साथ ले गए। फिर उन्होंने उसी बंदर को दोबारा सजाया और न्याय कक्ष में ले आए। “महाराज,” उन्होंने कहा, “आपके पिता राजा के समय में इस बंदर ने अपने माता-पिता के प्रति कर्तव्य निभाया और अपने परिवार में वृद्धों का आदर किया। आप इसे अपने पास रखें।”

राजकुमार ने फिर उसकी ओर देखा और सोचा—"बंदर तो बुद्धिहीन होते हैं; ऐसा काम वे नहीं कर सकते।" और फिर उसने तीसरा श्लोक दोहराया:-

"दशरथ (*1) ने मुझे एक बात सिखाई है: ऐसा प्राणी कभी सहायता नहीं भेजेगा।"
पिता या माता को, बहन या भाई को, या किसी को भी जो उसे मित्र कहता हो!
“ऐसा ही होना चाहिए, महाराज!” उन्होंने उत्तर दिया और उसे वापस ले गए। और उन्होंने आपस में कहा, “यह एक बुद्धिमान राजकुमार है; यह शासन करने में सक्षम होगा”; और उन्होंने बोधिसत्व को राजा बना दिया; और पूरे शहर में ढोल बजाकर उन्होंने घोषणा की, “राजा दर्पण-चेहरे का फरमान!”

उस समय से बोधिसत्व ने धार्मिक शासन किया; और उनकी बुद्धिमत्ता पूरे भारत में फैल गई। उनकी इस बुद्धिमत्ता को दर्शाने के लिए, उनके समक्ष ये चौदह प्रश्न निर्णय हेतु प्रस्तुत किए गए:-

"एक बैल, एक लड़का, एक घोड़ा, एक टोकरी-शूरवीर,
एक अधिकारी, प्रेम की एक ज्योति और एक युवती,
एक सांप, एक हिरण, एक तीतर पक्षी और एक परी,
मैं एक सांप, तपस्वियों और एक युवा पुजारी का नाम लेता हूँ।"
यह घटना इस प्रकार घटी: जब बोधिसत्व का राज्याभिषेक हुआ, तो राजा जनसंध के एक सेवक, गमनी-चंदा ने मन ही मन सोचा, “यह राज्य तभी गौरवशाली होगा जब इस पर राजा के समान आयु के लोगों का शासन हो। अब मैं बूढ़ा हो गया हूँ और एक युवा राजकुमार की सेवा नहीं कर सकता, इसलिए मैं गाँव में खेती करके अपना जीवन यापन करूँगा।” अतः वह नगर से तीन मील (4.23 किमी) दूर एक गाँव में जाकर बस गया। उसके पास खेती के लिए बैल नहीं थे। इसलिए, बारिश होने के बाद, उसने एक मित्र से दो बैल उधार लिए; उसने दिन भर उनसे खेत जोता, फिर उन्हें घास खिलाई और मालिक के घर उन्हें वापस देने चला गया। उसी समय मालिक अपनी पत्नी के साथ भोजन कर रहा था; और बैल घर में ऐसे प्रवेश कर गए जैसे वे अपने घर में ही हों। उनके प्रवेश करते ही, मालिक अपनी थाली उठा रहा था और पत्नी अपनी थाली नीचे रख रही थी। यह देखकर कि उन्होंने उसे भोजन में शामिल होने के लिए आमंत्रित नहीं किया, गमानी-चंदा ने औपचारिक रूप से बैल सौंपे बिना ही प्रस्थान कर दिया। रात में चोर गौशाला में घुस आए और बैलों को चुरा ले गए।

अगले दिन सुबह तड़के, इन बैलों का मालिक गौशाला में गया, लेकिन वहाँ कोई मवेशी नहीं था; उसे समझ आ गया कि चोर उन्हें चुरा ले गए हैं। "मैं गमानी से इसका बदला लूँगा!" उसने सोचा और गमानी के पास चल पड़ा।

"मैं कहता हूँ, मेरे बैल मुझे लौटा दो!" वह चिल्लाया।

"क्या वे अपने बाड़े में नहीं हैं?"

"क्या आपने उन्हें मुझे लौटा दिया?"

"नहीं, मैंने नहीं किया।"

"ये रहा राजा का अधिकारी: मेरे साथ आइए।"

अब इस जनजाति की एक प्रथा है कि वे पत्थर का एक टुकड़ा या टूटा हुआ मिट्टी का बर्तन उठाते हैं और कहते हैं—"देखो, राजा का अधिकारी है; मेरे साथ चलो!" यदि कोई व्यक्ति जाने से इनकार करता है, तो उसे दंडित किया जाता है। इसलिए जब गमानी ने "अधिकारी" शब्द सुना, तो वह उनके साथ चला गया।

तो वे दोनों राजा के दरबार की ओर चल पड़े। रास्ते में वे एक गाँव में पहुँचे जहाँ गमानी का एक मित्र रहता था। उसने दूसरे से कहा,

"मैंने कहा, मुझे बहुत भूख लगी है। जब तक मैं अंदर जाकर कुछ खाने को न ले आऊं, यहीं रुको!" और वह अपने दोस्त के घर में घुस गया।

लेकिन उसका दोस्त घर पर नहीं था। पत्नी ने कहा,

"महोदय, अभी कुछ पका नहीं है। एक पल रुकिए; मैं अभी पकाकर आपके सामने परोस देती हूँ।"

वह अनाज भंडार तक जाने वाली सीढ़ी पर चढ़ी और जल्दबाजी में जमीन पर गिर पड़ी। और चूंकि वह सात महीने की गर्भवती थी, इसलिए उसका गर्भपात हो गया।

उसी क्षण पति अंदर आया और उसने सब कुछ देखा। "तुमने मेरी पत्नी को मारा है और उसे असमय प्रसव पीड़ा दे दी है! ये लो, राजा का एक अधिकारी तुम्हारे लिए हाज़िर है—चलो!" और वह उसे उठाकर ले गया। इसके बाद वे दोनों आगे बढ़ गए, उनके बीच में गमानी था।

जैसे ही वे आगे बढ़े, गाँव के द्वार पर एक घोड़ा खड़ा था; और उसका रखवाला उसे रोक नहीं सका, फिर भी वह उनके साथ-साथ दौड़ने लगा। घोड़े के रखवाले ने गमानी को पुकारा--

"चाचा (*2) चंदगामणि, घोड़े को किसी चीज़ से मारो और उसे पीछे धकेल दो!" गैलार्ड ने एक पत्थर उठाया और घोड़े पर फेंक दिया। पत्थर उसके पैर पर लगा और उसे अरंडी के पौधे के डंठल की तरह तोड़ दिया। तब वह आदमी चिल्लाया,

"ओह, तुमने मेरे घोड़े का पैर तोड़ दिया! ये लो, राजा का एक अधिकारी तुम्हारे लिए!" और उसने उसे पकड़ लिया।

इस प्रकार गमानी तीन आदमियों का कैदी बन गया। जब वे उसे ले जा रहे थे, तो उसने सोचा: "ये लोग राजा के सामने मेरी शिकायत कर देंगे; मैं बैलों का पैसा भी नहीं दे सकता; असमय प्रसव कराने के जुर्माने का तो सवाल ही नहीं उठता; और फिर घोड़े का दाम कहाँ से आएगा? मर जाना ही बेहतर है।" तो, जैसे-जैसे वे आगे बढ़ते गए, उसने सड़क के किनारे एक जंगल देखा, और उसमें एक पहाड़ी थी जिसके एक तरफ गहरी खाई थी। उसकी छाया में दो टोकरी बनाने वाले, पिता और पुत्र, एक चटाई बुन रहे थे। गमानी ने कहा,

"मैं कहता हूँ, मैं थोड़ी देर के लिए आराम करना चाहता हूँ: तुम यहीं रुको, मैं एक तरफ जाता हूँ"; और ये कहते हुए वह पहाड़ी पर चढ़ गया और खाई में कूद गया। वह टोकरी बनाने वाले बूढ़े व्यक्ति की पीठ पर गिरा और उसे वहीं मार डाला। गमानी उठा और वहीं खड़ा रहा।

"अरे, तुम दुष्ट! तुमने मेरे पिता की हत्या कर दी!" छोटे टोकरी बनाने वाले ने चिल्लाते हुए कहा; "ये रहा राजा का अधिकारी!" उसने गमानी के हाथ पकड़े और घनी झाड़ियों से बाहर आ गया।

"यह क्या है?" बाकी लोगों ने पूछा।

"खलनायक ने मेरे पिता की हत्या कर दी!"

तो वे चारों आगे बढ़ गए, और गामानी बीच में था।

वे दूसरे गाँव के द्वार पर पहुँचे। वहाँ मुखिया मौजूद था, जिसने गमानी को पुकारा: "चाचा (*2) चंदा, आप कहाँ जा रहे हैं?"

"राजा को देखने के लिए," गामानी कहते हैं।

"ओह, राजा से मिलना तो बहुत अच्छा होगा। मैं उन्हें एक संदेश भेजना चाहता हूँ; क्या आप इसे ले जाएँगे?"

"हां, मैं ऐसा करूंगा।"

"वैसे तो मैं आमतौर पर सुंदर, धनी, सम्मानित और स्वस्थ रहता हूँ; लेकिन अब मैं दुखी हूँ और मुझे पीलिया भी हो गया है। राजा से पूछो कि ऐसा क्यों हुआ है।"

लोग कहते हैं कि वह एक बुद्धिमान व्यक्ति है; वह आपको बताएगा, और आप उसका संदेश मुझे वापस ला सकते हैं।"

इस पर दूसरे ने सहमति जताई।

दूसरे गाँव में प्रेम की एक ज्योति ने उसे पुकारा—"कहाँ जा रहे हो, चाचा (*2) चंदा 4"

"राजा से मिलने के लिए," वह कहता है।

"लोग कहते हैं कि राजा एक बुद्धिमान व्यक्ति हैं; मेरी ओर से उन्हें संदेश पहुंचा दीजिए," स्त्री ने कहा। "पहले मैं खूब धन कमाती थी; अब मुझे पान के बराबर भी कमाई नहीं होती, और कोई मुझसे प्रेम नहीं करता। राजा से पूछिए कि ऐसा क्यों है, फिर आप मुझे बता दीजिएगा।"

एक तीसरे गाँव में एक युवती थी जिसने गमानी से कहा, "मैं न तो अपने पति के साथ रह सकती हूँ और न ही अपने परिवार के साथ। राजा से पूछिए कि ऐसा क्यों है, और फिर मुझे बताइए।"

थोड़ी दूर आगे सड़क के पास एक चींटी के टीले में एक सांप रहता था। उसने गमानी को देखा और पुकारा,

"तुम कहाँ जा रही हो, चंदा?"

"राजा को देखने के लिए।"

"राजा बुद्धिमान हैं; मेरी ओर से उन्हें संदेश पहुंचा दीजिए। जब मैं भोजन लेने बाहर जाता हूँ, तो इस चींटी के टीले से बेहाल और भूखा निकलता हूँ, फिर भी मैं अपने शरीर से प्रवेश द्वार को भर देता हूँ और बड़ी मुश्किल से घिसटते हुए बाहर निकलता हूँ। लेकिन जब मैं वापस अंदर आता हूँ, तो मैं तृप्त और मोटा महसूस करता हूँ, फिर भी मैं बिना किनारों को छुए तेज़ी से छेद से निकल जाता हूँ। यह कैसे होता है? राजा से पूछिए और मुझे उनका उत्तर बताइए।"

और आगे चलकर एक हिरण ने उसे देखा और कहा—"मैं इस पेड़ के नीचे के अलावा कहीं और घास नहीं खा सकता। राजा से इसका कारण पूछो।" फिर एक तीतर ने कहा, "जब मैं इस चींटी के ढेर के नीचे बैठता हूँ और अपना सुर निकालता हूँ, तो मैं मधुरता से गा सकता हूँ; लेकिन कहीं और नहीं। राजा से इसका कारण पूछो।" और फिर एक वृक्ष आत्मा ने उसे देखा और कहा,

"तुम कहाँ जा रही हो, चंदा?"

"राजा को।"

"लोग कहते हैं कि राजा एक बुद्धिमान व्यक्ति हैं। पुराने समय में मेरा बहुत सम्मान होता था; अब मुझे मुट्ठी भर टहनियाँ भी नहीं मिलतीं। राजा से पूछो कि इसका कारण क्या है।"

आगे चलकर उसे एक सर्प-राजा ने देखा और उससे कहा, "राजा को बुद्धिमान कहा जाता है; तो उससे यह प्रश्न पूछो। पहले इस तालाब का पानी क्रिस्टल की तरह साफ था। अब यह गंदा क्यों हो गया है और इस पर मैल क्यों जम गया है?"

आगे चलकर, एक कस्बे से कुछ ही दूरी पर, एक उद्यान में रहने वाले कुछ तपस्वियों ने उन्हें देखा और उसी तरह कहा, "लोग कहते हैं कि राजा बुद्धिमान हैं। पहले इस उद्यान में मीठे फल बहुतायत में होते थे, अब वे बेस्वाद और सूख गए हैं। उनसे इसका कारण पूछिए।" आगे चलकर, कस्बे के द्वार पर स्थित एक सभागार में कुछ ब्राह्मण छात्र उनके पास आए। उन्होंने उनसे कहा,

"तुम कहाँ जा रही हो, चंदा?"

चंदा कहती है, "राजा को।"

"तो हमारे लिए एक संदेश ले चलो। अब तक हमने जो भी पाठ पढ़ा था, वह स्पष्ट और सुस्पष्ट था; अब वह हमारे साथ नहीं रहता, समझ में नहीं आता, बल्कि चारों ओर अंधेरा छाया हुआ है, जैसे किसी टूटे हुए घड़े में पानी भरा हो। राजा से पूछो कि इसका कारण क्या है।"

गमानी-चंदा अपने चौदह प्रश्न लेकर राजा के समक्ष आया। राजा ने उसे देखते ही पहचान लिया। "यह मेरे पिता का सेवक है, जो मुझे गोद में झुलाता था। इतने समय से कहाँ रह रहा था?" राजा ने कहा, "चंदा, तुम इतने समय से कहाँ रह रहे थे? हमने तुम्हें बहुत दिनों से नहीं देखा; यहाँ क्यों आए हो?"

"हे मेरे स्वामी, जब मेरे दिवंगत राजा स्वर्ग सिधार गए, तो मैं गाँव चला गया और खेती करके अपना जीवन यापन करने लगा। फिर इस व्यक्ति ने मुझे अपने पशुओं के संबंध में एक मामले के लिए बुलाया, और वह मुझे यहाँ ले आया है।"

"अगर तुम्हें यहाँ न लाया जाता, तो तुम कभी नहीं आते; लेकिन मुझे खुशी है कि तुम्हें लाया गया। अब मैं तुम्हें देख सकता हूँ। वह आदमी कहाँ है?"

"यहाँ, मेरे स्वामी।"

"क्या तुमने ही हमारी दोस्त चंदा को बुलाया था?"

"जी महाराज।"

"क्यों?"

"वह मेरे बैलों की जोड़ी वापस देने से इनकार कर रहा है!"

"क्या सच में ऐसा है, चंदा?"

"हे स्वामी, मेरी कहानी भी सुनिए!" चंदा ने कहा और उसे पूरी कहानी सुनाई। कहानी सुनकर राजा ने बैलों के मालिक से पूछा, "क्या तुमने बैलों को अस्तबल में जाते देखा?"

"नहीं, महाराज," उस व्यक्ति ने उत्तर दिया।

"अरे यार, तुमने मेरा नाम कभी सुना ही क्यों नहीं? लोग मुझे 'किंग मिरर-फेस' कहते हैं। सच बोलो।"

"मैंने उन्हें देखा, महाराज!" उसने कहा।

"चंदा," राजा ने कहा, "तुमने बैल लौटाए नहीं, इसलिए तुम उसके ऋणी हो। परन्तु इस व्यक्ति ने बैलों को न देखने का बहाना करके सरासर झूठ बोला है। अतः तुम अपने हाथों से उसकी आँखें निकाल लो और स्वयं उसे बैलों की कीमत के रूप में चौबीस सिक्के अदा करो।" फिर वे बैलों के मालिक को बाहर ले गए।

"अगर मेरी आंखें चली जाएं तो मुझे पैसों की क्या परवाह?" उसने सोचा। और वह गमानी के चरणों में गिर पड़ा और उनसे विनती की—"हे स्वामी चंदा, ये चौबीस सिक्के रख लीजिए, और ये भी ले लीजिए!" और गमानी ने उसे बाकी सिक्के दे दिए और भाग गए।

दूसरे व्यक्ति ने कहा, "महाराज, इस आदमी ने मेरी पत्नी को मारा और उसका गर्भपात हो गया।" राजा ने पूछा, "क्या यह सच है, चंदा?" चंदा ने सुनवाई की गुहार लगाई और पूरी कहानी सुनाई।

राजा ने पूछा, "क्या तुमने सचमुच उसे मारा और उसका गर्भपात करवा दिया?"

"नहीं, महाराज! मैंने ऐसा कुछ नहीं किया।"

"अब, क्या तुम"—दूसरे से—"क्या तुम उस गर्भपात को ठीक कर सकते हो जो उसने किया है?"

"नहीं, महाराज, मैं ऐसा नहीं कर सकता।"

अब आप क्या करना चाहते हैं?

"मुझे एक बेटा चाहिए, महाराज।"

"तो फिर, चंदा—तुम उस आदमी की पत्नी को अपने घर ले आओ; और जब तुम्हें बेटा हो जाए, तो उसे उसके पति को सौंप देना।"

तब वह आदमी भी चंदा के पैरों पर गिर पड़ा और रोते हुए बोला, "मालिक, मेरा घर मत तोड़ो!" उसने कुछ पैसे फेंके और भाग गया।

फिर तीसरे व्यक्ति ने चंदा पर अपने घोड़े का पैर लंगड़ा करने का आरोप लगाया। चंदा ने पहले की तरह ही सारी बात बताई। तब राजा ने मालिक से पूछा, "क्या तुमने सचमुच चंदा को घोड़े को मारने और उसे वापस मोड़ने के लिए कहा था?"

"नहीं, महाराज, मैंने ऐसा नहीं कहा।" लेकिन बार-बार पूछे जाने पर उन्होंने स्वीकार किया कि उन्होंने ऐसा कहा था।

"इस आदमी ने सरासर झूठ बोला है, यह कहकर कि उसने तुम्हें घोड़े को वापस लाने के लिए नहीं कहा था। तुम इसकी जीभ काट दो; और फिर घोड़े की कीमत के तौर पर इसे एक हजार सिक्के दो, जो मैं तुम्हें दूंगा।" लेकिन उस आदमी ने उसे एक और रकम दी और चला गया।

तब टोकरी बनाने वाले के बेटे ने कहा,

"यह आदमी हत्यारा है, और इसने मेरे पिता की हत्या की है!"

"क्या सच में, चंदा?" आइसिंग ने पूछा। "मेरी बात सुनिए, महाराज," चंदा ने कहा और उसे इसके बारे में बताया।

"अब तुम क्या चाहते हो?" राजा ने पूछा।

"मेरे स्वामी, मुझे मेरे पिता चाहिए।"

राजा ने चंदा से कहा, "इस आदमी का कोई पिता तो होगा ही। लेकिन तुम इसे मृत्यु से वापस नहीं ला सकते। इसलिए इसकी माँ को अपने घर ले आओ और तुम ही इसके पिता बनो।"

"ओह, मालिक!" उस आदमी ने चिल्लाकर कहा, "मेरे मृत पिता के घर को मत तोड़ो!" उसने गमानी को कुछ पैसे दिए और जल्दी से चला गया।

इस प्रकार गमानी ने अपनी बात मनवा ली, और अत्यंत प्रसन्न होकर उसने राजा से कहा, "महाराज, मेरे पास कई व्यक्तियों से आपके लिए कई प्रश्न हैं; क्या मैं उन्हें आपको बता सकता हूँ?"

"बोलते रहो," राजा ने कहा।

तो गमानी ने उन सभी को उल्टे क्रम में बताया, सबसे पहले युवा ब्राह्मणों से शुरू किया। राजा ने बारी-बारी से उनके उत्तर दिए। पहले प्रश्न के उत्तर में उन्होंने कहा: "जिस स्थान पर वे रहते थे, वहाँ एक मुर्गा हुआ करता था जो समय जानता था। जब वे उसकी बांग सुनते थे, तो वे उठ जाते थे और सूर्योदय तक अपने पाठ दोहराते रहते थे, और इस प्रकार वे जो कुछ सीखते थे उसे नहीं भूलते थे। लेकिन अब एक ऐसा मुर्गा है जो बेमौसम बांग देता है; वह आधी रात को या दिन के उजाले में बांग देता है। जब वह आधी रात को बांग देता है, तो वे उठ जाते हैं, लेकिन वे इतने नींद में होते हैं कि पाठ दोहरा नहीं पाते। जब वह दिन के उजाले में बांग देता है, तो वे उठ जाते हैं, लेकिन उन्हें अपने पाठ दोहराने का मौका नहीं मिलता। इस प्रकार, वे जो कुछ भी सीखते हैं, उसे शीघ्र ही भूल जाते हैं।"

दूसरे प्रश्न के उत्तर में उन्होंने कहा: "पहले ये लोग तपस्वी के सभी कर्तव्यों का पालन करते थे और रहस्यमय समाधि की अवस्था में पहुँच जाते थे। अब इन्होंने तपस्वी के कर्तव्यों की उपेक्षा कर दी है और वे ऐसे काम करते हैं जो उन्हें नहीं करने चाहिए; उद्यान में उगने वाले फल वे अपने सेवकों को दे देते हैं; वे पापमय जीवन जीते हैं और भिक्षा का आदान-प्रदान करते हैं (*3)। इसीलिए यह फल मीठा नहीं होता। यदि वे एक बार फिर एकमत होकर तपस्वी के रूप में अपने कर्तव्य का पालन करें, तो यह फल उनके लिए फिर से मीठा हो जाएगा। ये संन्यासी राजाओं की बुद्धिमत्ता नहीं जानते; उन्हें तपस्वी जीवन जीने के लिए कहिए।"

उसने तीसरा प्रश्न सुना और उत्तर दिया, "वे सर्प सरदार आपस में झगड़ते रहते हैं, और इसी कारण जल मटमैला हो जाता है। यदि वे पहले की तरह मित्र हो जाएँ, तो जल फिर से स्वच्छ हो जाएगा।" चौथा प्रश्न सुनने के बाद, उसने कहा, "वृक्ष की आत्मा पहले वन से गुजरने वाले मनुष्यों की रक्षा करती थी, और इसलिए उसे अनेक भेंटें प्राप्त होती थीं। अब वह उनकी रक्षा नहीं करती, और इसलिए उसे कोई भेंट नहीं मिलती। यदि वह पहले की तरह उनकी रक्षा करे, तो उसे फिर से उत्तम भेंटें प्राप्त होंगी। वह नहीं जानती कि संसार में राजा

भी हैं। इसलिए उससे कहो कि वह उस वन में जाने वाले मनुष्यों की रक्षा करे।" और पाँचवाँ प्रश्न सुनने पर, उसने कहा, "चींटियों के टीले के नीचे, जहाँ तीतर मधुर आवाज निकाल पाता है, खजाने से भरा एक घड़ा है; उसे खोदकर निकाल लो।" छठे प्रश्न के उत्तर में उन्होंने कहा, "जिस वृक्ष के नीचे हिरण को घास खाने को मिली, उस पर एक बड़ा छत्ता है। उसे उस घास की लालसा है जिस पर यह शहद गिरा है, इसलिए वह दूसरी घास नहीं खा सकता। तुम छत्ता ले आओ, उसमें से सबसे अच्छा हिस्सा मुझे भेज दो, और बाकी तुम खुद खा लो।" फिर सातवें प्रश्न को सुनकर उन्होंने कहा, "सांप के चींटियों के टीले के नीचे एक बड़ा खजाना है, और वह वहीं उसकी रखवाली करता रहता है। इसलिए जब वह बाहर निकलता है, तो इस खजाने के लालच से उसका शरीर चिपक जाता है; लेकिन भोजन करने के बाद, खजाने की लालसा उसके शरीर को चिपकने नहीं देती, और वह जल्दी और आसानी से अंदर चला जाता है। खजाना खोदकर निकाल लो, और उसे अपने पास रख लो।" फिर उसने आठवें प्रश्न का उत्तर दिया, "जिस गाँव में युवती का पति और माता-पिता रहते हैं, उनके बीच एक घर में उसका प्रेमी रहता है। युवती को उसकी याद आती है और उसके प्रति उसकी इच्छा जागृत होती है; इसलिए वह अपने पति के घर में नहीं रह सकती, बल्कि अपने माता-पिता से मिलने जाने का बहाना करती है और रास्ते में कुछ दिन अपने प्रेमी के साथ बिताती है। कुछ दिन घर लौटने पर उसे फिर उसकी याद आती है और अपने पति के पास लौटने का बहाना करके वह फिर अपने प्रेमी के पास चली जाती है। जाओ, उससे कहो कि उस देश में राजा हैं; कहो कि उसे अपने पति के साथ रहना होगा, और यदि वह नहीं रहेगी, तो उसे सावधान कर दो, राजा उसे पकड़वा देगा और वह मर जाएगी।" नौवीं बात सुनकर उसने कहा, "वह स्त्री पहले एक से पैसे लेकर दूसरे के पास तब तक नहीं जाती थी जब तक कि उसका काम पूरा न हो जाए (*4), और इसी तरह वह बहुत कुछ कमाती थी। अब उसने अपना तरीका बदल लिया है, और पहले की अनुमति के बिना ही वह आखिरी के साथ चली जाती है, इसलिए उसे कुछ नहीं मिलता और कोई उसकी तलाश नहीं करता। अगर वह अपनी पुरानी प्रथा पर चलती रही, तो सब कुछ पहले जैसा ही हो जाएगा। उसे कहो कि वह ऐसा ही करे।" दसवीं बात सुनकर उसने उत्तर दिया, "वह ग्राम प्रधान पहले निष्पक्ष रूप से न्याय करता था, जिससे लोग उससे प्रसन्न और खुश रहते थे; और अपनी प्रसन्नता में उसे कई उपहार देते थे। इसी वजह से वह सुंदर, धनी और सम्मानित हुआ। अब उसे रिश्वत लेना पसंद है, और उसका न्याय निष्पक्ष नहीं है; इसलिए वह गरीब, दुखी और पीलियाग्रस्त है। अगर वह फिर से न्याय से न्याय करे,वह फिर से पहले जैसा हो जाएगा। उसे पता नहीं है कि इस देश में राजा भी हैं। उसे बता दो कि उसे न्याय करते समय निष्पक्षता बरतनी चाहिए।

और गमानी-चंदा ने ये सभी संदेश, जैसे-जैसे उन्हें बताए गए थे, सबको बता दिए। राजा ने, बुद्ध की तरह असीम ज्ञान से, इन सभी प्रश्नों का हल निकाल लिया और गमानी-चंदा को बहुमूल्य उपहार दिए; और चंदा जिस गाँव में रहता था, उसे भी ब्राह्मण के उपहार के रूप में दे दिया और उसे जाने दिया। चंदा नगर से बाहर गया और राजा का उत्तर ब्राह्मण युवकों, तपस्वियों, सर्प और वृक्ष-देवता को बताया; उसने तीतर के बैठने की जगह से खजाना लिया और जिस वृक्ष के नीचे हिरण चरता था, वहाँ से मधुकोश लिया और राजा को शहद भेजा; उसने सर्प के टीले को तोड़कर उसमें से खजाना निकाला; और युवती, प्रेम की ज्योति और ग्राम प्रधान को भी वही बताया जो राजा ने उसे बताया था। फिर वह अपने गाँव लौट आया और जीवन भर वहीं रहा और उसके बाद अपने कर्मों के फल के अनुसार उसका निधन हो गया। और राजा दर्पण-चेहरे ने भी दान दिया, भलाई फैलाई और अंत में अपनी मृत्यु के बाद स्वर्ग चले गए।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो यह दर्शाने के लिए कि भगवान बुद्ध न केवल अब बल्कि पहले भी बुद्धिमान थे, उन्होंने सत्यों की व्याख्या की और जन्म का वर्णन किया: (सत्यों के समापन पर अनेक व्यक्ति प्रथम मार्ग (सम्मोहन), द्वितीय मार्ग (सम्मोहन), तृतीय मार्ग (सम्मोहन) या चतुर्थ मार्ग (सम्मोहन) में प्रवेश कर गए): "उस समय आनंद गमनी-चंदा थे; परन्तु राजा दर्पण-मुख मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)दशरथ उनके पिता का दूसरा नाम है।

(2) यह ध्यान देने योग्य है कि स्नेह का यह शब्द माँ के भाई को दर्शाता है।

(3)कुछ लोग घर पर ही रहते हैं, जबकि अन्य सभी से भीख मांगते हैं, ताकि परेशानी से बचा जा सके।

(4) शाब्दिक रूप से, "जब तक उसने उसे उसके पैसे का पूरा आनंद नहीं दिलाया," ajirapetva.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **मांधातु-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-258-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 258
मंधातु-जातक

"जहाँ सूर्य और चंद्रमा हों," इत्यादि। यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में प्रवास के दौरान एक पथभ्रष्ट भिक्षु के बारे में सुनाई थी।

हमें बताया जाता है कि यह भाई श्रावस्ती नगर में भिक्षा मांगने के दौरान एक सुंदर वस्त्रधारी स्त्री को देखकर मोहित हो गया। तब भिक्षुओं ने उसे सत्य के हॉल में ले जाकर भगवान बुद्ध को बताया कि वह पथभ्रष्ट हो गया है। भगवान बुद्ध ने पूछा कि क्या यह सच है; और उत्तर मिला, हाँ, यह सच है।

“भाई (भिक्षु),” गुरु ने कहा, “गृहस्थ रहते हुए भी तुम इस कामवासना को कब तृप्त कर पाओगे? ऐसी कामवासना सागर जितनी गहरी है, इसे कोई भी चीज़ तृप्त नहीं कर सकती। पुराने समय में ऐसे सर्वोच्च सम्राट हुए हैं, जो अपने सेवकों के साथ दो हज़ार द्वीपों से घिरे चार महान महाद्वीपों पर शासन करते थे, यहाँ तक कि चार महान राजाओं के स्वर्ग में भी, यहाँ तक कि जब वे तैंतीस देवदूतों के स्वर्ग में देवताओं के राजा थे, यहाँ तक कि छत्तीस इंद्रों के निवास में भी, फिर भी वे अपनी कामवासना को तृप्त नहीं कर पाए और ऐसा करने से पहले ही मर गए; तुम इसे कब तृप्त कर पाओगे?” और उन्होंने एक प्राचीन कथा सुनाई।

बहुत समय पहले, संसार के आरंभिक युग में, महासम्मत नामक एक राजा रहते थे। उनके पुत्र रोजा थे, जिनके पुत्र वरारोजा, वरारोजा के पुत्र कल्याणा, वराकल्याण, उपोसथ के पुत्र वरकल्याण और उपोसथ के पुत्र मंधात थे। मंधात सात रत्नों और चार अलौकिक शक्तियों से संपन्न थे; और वे एक महान सम्राट थे। जब वे अपनी बाईं मुट्ठी बंद करके उसे अपने दाहिने हाथ से छूते थे, तो घुटनों तक सात प्रकार के रत्नों की वर्षा होती थी, मानो आकाश में दिव्य वर्षा का बादल उठ खड़ा हुआ हो; वे इतने अद्भुत थे। चौरासी हजार वर्षों तक वे राजकुमार रहे, इतने ही वर्षों तक उन्होंने राज्य के शासन में भाग लिया और इतने ही वर्षों तक सर्वोच्च राजा के रूप में शासन किया; उनका जीवन अनगिनत युगों तक चला।

एक दिन, वह अपनी किसी इच्छा को पूरा नहीं कर सका, इसलिए उसने असंतोष के लक्षण दिखाए।

"महाराज, आप नीचे क्यों देख रहे हैं?" दरबारियों ने उनसे पूछा।

"जब मेरी योग्यता की शक्ति पर विचार किया जाता है, तो यह राज्य क्या है? कौन सा स्थान वांछनीय प्रतीत होता है?"

हे भगवान!

इस प्रकार साम्राज्य के चक्र (1) पर सवार होकर, वह अपने दल के साथ चार महान राजाओं (2) के स्वर्ग में गया। चारों राजा, देवताओं (देवदूतों) की एक बड़ी भीड़ के साथ, भव्यता से उसका स्वागत करने आए, दिव्य फूल और सुगंध लिए हुए; और उसे अपने स्वर्ग में ले जाकर, उसे शासन सौंप दिया। वहाँ उसने शान से शासन किया, और एक लंबा समय बीत गया। परन्तु वहाँ भी वह अपनी लालसा को संतुष्ट नहीं कर सका; और इसलिए वह असंतोष से बीमार दिखने लगा।

चारों सम्राटों ने कहा, “हे महामहिम, क्या आप असंतुष्ट हैं?” राजा ने उत्तर दिया,

"इस स्वर्ग से अधिक सुंदर स्थान और कौन सा हो सकता है?"

उन्होंने उत्तर दिया, "मेरे स्वामी, हम सेवकों के समान हैं। तैंतीस(3) का स्वर्ग इससे कहीं अधिक सुंदर है!"

मंधाता ने साम्राज्य का चक्र चलाया और अपने दरबारियों को अपने चारों ओर समेटे हुए तैंतीस देवताओं के स्वर्ग की ओर मुख किया। देवताओं के राजा सक्का (इंद्र), दिव्य पुष्प और सुगंध लिए हुए, देवताओं की एक विशाल भीड़ के बीच भव्य रूप से उनसे मिलने आए और उनका मार्गदर्शन करते हुए उन्हें मार्ग दिखाया। जब राजा देवताओं की भीड़ के बीच से गुजर रहे थे, तभी उनके बड़े पुत्र ने साम्राज्य का चक्र संभाला और मनुष्यों के मार्ग पर उतरकर अपने नगर में आ गए। सक्का (इंद्र) मंधाता को तैंतीस देवताओं के स्वर्ग में ले गए और उन्हें अपने राज्य का आधा भाग दे दिया। इसके बाद दोनों ने मिलकर शासन किया। समय बीतता गया, जब तक कि सक्का (इंद्र) साठ लाख वर्षों और तीस करोड़ वर्षों तक जीवित रहे, तब उनका पुन: जन्म हुआ; एक और सक्का (इंद्र) का जन्म हुआ, उन्होंने भी

शासन किया, अपना जीवन व्यतीत किया और उनका पुन: जन्म हुआ। इस प्रकार छत्तीस इंद्रों का एक के बाद एक आगमन हुआ। फिर भी मंधाता अपने दरबारियों की भीड़ के साथ शासन करता रहा। समय बीतने के साथ-साथ उसकी वासना और इच्छा की शक्ति और भी प्रबल होती गई।

“मेरे लिए आधा राज्य क्या है?” उसने मन ही मन कहा; “मैं सक्का (इंद्र) को मार डालूँगा और अकेले राज करूँगा!” लेकिन वह सक्का (इंद्र) को मार नहीं सका। उसकी यही इच्छा और लोभ उसके दुर्भाग्य का कारण बना। उसकी शक्ति क्षीण होने लगी; बुढ़ापा उसे जकड़ने लगा; लेकिन मनुष्य का शरीर स्वर्ग में नष्ट नहीं होता। इसलिए वह स्वर्ग से गिर पड़ा और एक उद्यान में जा पहुँचा। माली ने उसके आने की सूचना राजपरिवार को दी; वे आए और उद्यान में उसके लिए विश्राम स्थल नियुक्त किया; वहाँ राजा सुस्ती और थकान में पड़ा रहा। दरबारियों ने उससे पूछा,

"मेरे स्वामी, हम आपसे क्या वचन लें?"

“मेरी ओर से लोगों को यह संदेश दो: राजाओं के राजा मंधाता, जिन्होंने पृथ्वी के चारों दिशाओं पर, चारों ओर फैले दो हजार द्वीपों पर, लंबे समय तक शासन किया, चार महान राजाओं की प्रजा पर राज किया, छत्तीस इंद्रों के जीवनकाल में स्वर्ग के राजा रहे, अब मृत हो गए हैं।” इन्हीं शब्दों के साथ उनका निधन हो गया और वे अपने कर्मों के फल के लिए विदा हो गए।

यह कथा समाप्त होने पर, गुरुजी पूर्णतः ज्ञानी हो गए और उन्होंने निम्नलिखित श्लोक कहे:-

"जहां कहीं भी सूर्य और चंद्रमा अपने मार्ग पर चलते हैं"
सभी मंधाता के सेवक हैं, हर एक:
पृथ्वी के जहाँ कहीं भी दिन का प्रकाश पड़ता है,
वहां राजा मान्धाता का शाही प्रभुत्व था।
"भले ही आकाश से सिक्कों की बारिश हो (*4)
क्या संतुष्टि देने वाली कोई चीज मिल सकती है?
दर्द इच्छा है, और दु:ख बेचैनी है:
जो इस बात को जानता है, वह बुद्धिमान है और वह धन्य है।
जहां लालसा होती है, वहां आनंद को पंख लग जाते हैं।
भले ही इच्छा स्वर्गीय चीजों की ओर उन्मुख हो।
स्वयं बुद्ध के शिष्य प्रयास करते हैं
सभी इच्छाओं को शाश्वत रूप से कुचल देने के लिए।"
जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने चार सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के समापन पर पथभ्रष्ट भाई (भिक्षु) और कई अन्य लोगों ने प्रथम मार्ग का फल (सोतापना की समाधि अवस्था) प्राप्त किया: "उस समय, मैं महान राजा मंधाता था।"

फुटनोट: (1) उस प्रकार के कृत्यों द्वारा आधिपत्य की मांग करना।

(2) स्वर्ग की चार दिशाओं की रक्षा करने वाले चार प्रकार के स्वर्गीय प्राणियों के चार राजा। ये प्राणी स्वर्ग के पूर्वी भाग में संगीत के शौकीन गंधर्व हैं, दक्षिण में बड़े-बड़े घड़े जैसे गोले लिए बैठे कुम्भंड हैं, पश्चिम में नाग (सांप) हैं और उत्तर में मानव रूप वाले यक्ष (स्वर्गीय योद्धा) हैं।

(3) 33 करोड़ देवी-देवताओं (देवदूतों) का स्वर्ग, स्वर्ग का प्रारंभिक स्तर जहाँ जीवनकाल 36.5 मिलियन वर्ष है।

(4) धम्मपद के श्लोक 186 और 187 देखें, जो इन श्लोकों के अंतिम दो हैं।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **तिरीता-वाचा-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

जातक क्रमांक 259
तिरिता-वच्छ-जातक

"जब बिल्कुल अकेले थे," इत्यादि। यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें हजार वस्त्रों के उपहार का वर्णन है। इसमें बताया गया है कि पूज्य आनंद को कोसल के राजा के घर की स्त्रियों से पाँच सौ वस्त्र और स्वयं राजा से पाँच सौ वस्त्र प्राप्त हुए थे। इन परिस्थितियों का वर्णन सिगला जन्म में ऊपर किया जा चुका है।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व का जन्म काशी में एक ब्राह्मण के पुत्र के रूप में हुआ। उनके नामकरण के दिन उनका नाम गुरु तिरितवचेह रखा गया। समय आने पर वे बड़े हुए और तक्षशिला में अध्ययन किया। उन्होंने विवाह किया और बस गए, लेकिन अपने माता-पिता की मृत्यु से वे इतने दुखी हुए कि उन्होंने संन्यासी बनने का निश्चय किया और वन में रहने लगे, जहाँ वे वन की जड़ों और फलों को खाकर अपना जीवन व्यतीत करते थे।

जब वह वहाँ रह रहा था, बनारस की सीमा पर अशांति फैल गई। राजा वहाँ गया, लेकिन लड़ाई में हार गया; अपनी जान के डर से वह हाथी पर सवार होकर जंगल के रास्ते छिपकर भाग गया। सुबह तिरितवाचेहा जंगली फल इकट्ठा करने के लिए बाहर गया था, और इसी बीच राजा उसकी कुटिया के पास पहुँचा। "एक साधु की कुटिया!" उसने कहा; वह अपने हाथी से नीचे उतरा, हवा और धूप से थका हुआ और प्यासा; उसने पानी का घड़ा ढूँढा, लेकिन उसे कोई नहीं मिला। ढके हुए रास्ते के अंत में उसे एक कुआँ दिखाई दिया, लेकिन उसे पानी निकालने के लिए कोई रस्सी या बाल्टी नहीं दिखी। उसकी प्यास असहनीय थी; उसने हाथी के पेट के नीचे से जाने वाली कमरबंद उतारी, उसे किनारे पर बाँधा, और खुद को कुएँ में उतारा। लेकिन वह बहुत छोटी थी; इसलिए उसने अपने निचले वस्त्र के सिरे को उससे बाँधा, और फिर से नीचे उतरा। फिर भी वह पानी तक नहीं पहुँच सका। वह बस अपने पैरों से उसे छू सका: वह बहुत प्यासा था! “अगर मेरी प्यास बुझ जाए तो मृत्यु भी मीठी लगेगी!” उसने सोचा। फिर वह कुएँ में कूद गया और जी भरकर पानी पिया; पर वह उठ नहीं सका, इसलिए वहीं कुएँ में खड़ा रहा। और हाथी, जो इतना प्रशिक्षित था, राजा की प्रतीक्षा में स्थिर खड़ा रहा।

शाम को बोधिसत्व जंगली फलों से लदे हुए लौटे और उन्होंने हाथी को देखा। उन्होंने सोचा, "शायद राजा आ गए हैं; लेकिन यहाँ तो सशस्त्र हाथी के सिवा कुछ दिखाई नहीं दे रहा। अब क्या करें?" वे हाथी के पास गए, जो वहीं खड़ा उनका इंतज़ार कर रहा था। वे कुएँ के किनारे गए और नीचे राजा को देखा। उन्होंने पुकारा, "हे राजा, डरिए मत!" फिर उन्होंने एक सीढ़ी लगाई और राजा को बाहर निकाला; उन्होंने राजा के शरीर की मालिश की और तेल से उनका अभिषेक किया; इसके बाद उन्होंने उन्हें फल खाने को दिए और हाथी के कवच को खोल दिया। राजा ने वहाँ दो-तीन दिन विश्राम किया; फिर वे बोधिसत्व से मिलने आने का वादा लेकर चले गए।

राजसी सेना शहर के ठीक पास डेरा डाले हुए थी; और जब राजा के आने का आभास हुआ, तो वे उसके चारों ओर जमा हो गए।

डेढ़ महीने बाद, बोधिसत्व बनारस लौट आए और उद्यान में रहने लगे। अगले दिन वे भोजन मांगने महल आए। राजा ने एक बड़ी खिड़की खोली हुई थी और वे आंगन की ओर देख रहे थे। बोधिसत्व को देखकर और उन्हें पहचानकर, राजा नीचे उतरे और उनका अभिवादन किया। वे उन्हें एक चबूतरे पर ले गए और सफेद छतरी के नीचे सिंहासन पर बिठाया। राजा ने उन्हें अपना भोजन दिया और स्वयं भी खाया। फिर वे उन्हें बगीचे में ले गए और उनके लिए एक ढका हुआ रास्ता और रहने का स्थान बनवाया, और उन्हें एक तपस्वी की सभी आवश्यक वस्तुएँ प्रदान कीं। इसके बाद, राजा ने उन्हें एक माली के हवाले करके विदाई ली और चले गए। इसके बाद, बोधिसत्व ने राजा के रहने के स्थान पर भोजन किया: उन्हें बहुत आदर और सम्मान दिया गया।

लेकिन दरबारी इसे सहन नहीं कर सके। उन्होंने कहा, "अगर किसी सैनिक को ऐसा सम्मान मिले, तो वह कैसा व्यवहार करेगा!" वे उन्हें वायसराय के पास ले गए: "महाराज, हमारे राजा एक तपस्वी को बहुत महत्व दे रहे हैं! उन्होंने उस व्यक्ति में क्या देखा है? आप इस बारे में राजा से बात कीजिए।" वायसराय मान गए, और वे सब एक साथ राजा के सामने गए। वायसराय ने राजा को प्रणाम किया और पहला श्लोक पढ़ा:

मुझे उसमें जरा भी बुद्धि नजर नहीं आती;
वह न तो आपका रिश्तेदार है और न ही आपका मित्र;
लकड़ी के तीन टुकड़ों (*1) वाले इस साधु को ऐसा क्यों करना चाहिए?
क्या तिरितवाचेहा के पास इतना शानदार भोजन है?
राजा ने सुना। फिर उसने अपने पुत्र से कहा,

"मेरे बेटे, तुम्हें याद है कि एक बार मैं सीमावर्ती इलाकों में गया था, और कैसे युद्ध में मेरी हार हुई थी, और मैं कुछ दिनों तक वापस नहीं आ सका था?"

"मुझे याद है," उसने कहा।

"इस आदमी ने मेरी जान बचाई," राजा ने कहा; और उसने उसे सारी घटना बताई। "मेरे पुत्र, अब जब मेरा यह रक्षक मेरे साथ है, तो मैं उसके इस कार्य के लिए उसका एहसान नहीं चुका सकता, चाहे मैं उसे अपना राज्य ही क्यों न दे दूं।" और उसने निम्नलिखित दो श्लोक पढ़े:-

"जब मैं बिल्कुल अकेला, एक भयानक प्यासे जंगल में था,
केवल उसी ने, और किसी ने नहीं, मेरा भला करने की कोशिश की;
मेरी परेशानी के समय उन्होंने मेरी मदद की;
लगभग अधमरी हालत में उसने मुझे उठाया और खड़ा किया।
"केवल उन्हीं के प्रयासों से मैं पुनः लौट आया।"
मृत्यु के चंगुल से निकलकर मनुष्यों की दुनिया में वापसी।
इस प्रकार की दयालुता का प्रतिफल देना उचित ही है;
भरपूर भेंट दो, उसका हिस्सा मत रोको।

राजा ने इस प्रकार कहा, मानो वह आकाश में चंद्रमा को उदय कर रहा हो; और जैसे-जैसे बोधिसत्व के गुणों का वर्णन होता गया, वैसे-वैसे उनके स्वयं के गुणों का भी सर्वत्र वर्णन होता गया; और उनकी आय और सम्मान में वृद्धि होती गई। उसके बाद न तो उनके प्रतिनिधि, न उनके दरबारी, और न ही किसी और ने राजा के समक्ष उनके विरुद्ध कुछ कहने का साहस किया। राजा बोधिसत्व की सलाह का पालन करते हुए दान-पुण्य करते रहे और अंत में स्वर्ग को प्राप्त हुए। बोधिसत्व ने सभी सिद्धियों और उपलब्धियों को प्राप्त कर ब्रह्मलोक (परमलोक) के लिए नियतिबद्ध हो गए।

फिर गुरु ने आगे कहा, "पुराने समय के बुद्धिमान लोगों ने भी सहायता की थी;" और इस प्रकार अपना प्रवचन समाप्त करते हुए उन्होंने जन्म का विवरण इस प्रकार दिया: "आनंद राजा थे और मैं संन्यासी था।"

फुटनोट:

(1) अपने पानी के बर्तन को लटकाने के लिए।

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **दूत-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-260-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 260
दूता-जातक

"हे राजा, पेट का दूत," इत्यादि। यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, एक भिक्षु के बारे में जो भोग-विलास में लिप्त था। इस घटना का विस्तृत वर्णन नौवें खंड में काका जन्म के अंतर्गत दिया जाएगा। यहाँ गुरु ने भिक्षु से फिर कहा, "हे भिक्षु, तुम पहले भी लालची थे, जैसे अब हो; और पुराने समय में तुम्हारे लालच के कारण तुम्हारा सिर तलवार से काट दिया गया था।" फिर उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व उनके पुत्र के रूप में पैदा हुए। उनका पालन-पोषण तक्षशिला में हुआ और उन्होंने वहीं अपनी शिक्षा पूरी की। अपने पिता की मृत्यु के बाद, उन्हें राज्य विरासत में मिला और वे अपने खान-पान में बहुत

ही सुरुचिपूर्ण थे; इसी कारण उन्हें सुरुचिपूर्ण राजा की उपाधि प्राप्त हुई। उनका खान-पान इतना भव्य था कि एक ही थाली पर वे एक लाख सिक्के खर्च कर देते थे। वे भोजन करते समय घर के अंदर नहीं खाते थे; बल्कि वे अपने महंगे भोजन का प्रदर्शन करके अनेक लोगों को पुण्य प्रदान करना चाहते थे, इसलिए उन्होंने द्वार पर रत्नों से सजा एक मंडप बनवाया और भोजन करते समय उसे सजाकर, वे सोने से बने एक राजसी चबूतरे पर, सफेद छतरी के नीचे, राजकुमारियों से घिरे हुए, एक लाख सिक्कों की कीमत वाली थाली में सौ प्रकार के लजीज व्यंजनों का आनंद लेते थे।

अब एक लालची व्यक्ति ने राजा के भोजन करने का तरीका देखा और उसका भी भोजन चखने का मन हुआ। अपनी लालसा पर काबू न रख पाने के कारण उसने अपनी कमर कसकर बांधी और राजा की ओर दौड़ते हुए जोर से पुकारा—"संदेशवाहक! दूत! हे राजा!"—अपने हाथ ऊपर उठाकर। (उस समय और उस राज्य में, यदि कोई व्यक्ति "संदेशवाहक!" पुकारता था, तो उसे कोई नहीं रोकता था; और इसी प्रकार पर्ची निकाली गई और उसे आगे जाने दिया गया।)

वह आदमी तेज़ी से दौड़ा और राजा की थाली से चावल का एक दाना उठाकर अपने मुँह में डाल लिया। तलवारबाज़ ने उस आदमी का सिर काटने के लिए अपनी तलवार निकाली। लेकिन राजा ने उसे रोक दिया। "वार मत करो," उसने कहा; फिर उस आदमी से कहा, "डरना मत, खाते रहो!" उसने अपने हाथ धोए और बैठ गया।

भोजन के बाद, राजा ने अपना पीने का पानी और पान उस आदमी को दिलवाया और फिर कहा--

"अब मेरे दोस्त, तुमने कहा था कि तुम्हारे पास खबर है। तुम्हारी खबर क्या है?"

"हे राजा, मैं कामवासना और भोग-विलास का दूत हूँ। कामवासना ने मुझसे कहा, जाओ! और मुझे यहाँ अपना दूत बनाकर भेजा है;" और इन्हीं शब्दों के साथ उन्होंने पहले दो छंद कहे:-

"हे राजा, आप बेली के दूत को देख रहे हैं:
हे रथों के स्वामी, क्रोधित न हों!
बेली के लिए लोग बहुत दूर तक चले जाते हैं।
यहां तक कि प्रतिद्वंद्वी से मदद मांगने के लिए भी।
"हे राजा, आप बेली के दूत को देख रहे हैं;
हे रथों के स्वामी, क्रोधित न हों!
पेट उसके शक्तिशाली प्रभाव के नीचे दबा हुआ है
पृथ्वी पर रहने वाले सभी मनुष्य, दिन-रात।
जब राजा ने यह सुना, तो उसने कहा, "यह सच है; ये तो वृषण-संदेशवाहक हैं; कामवासना से प्रेरित होकर ये इधर-उधर भटकते हैं, और कामवासना ही इन्हें चलाती है। इस व्यक्ति ने कितनी खूबसूरती से इसे व्यक्त किया है!" वह उससे प्रसन्न हुआ, और उसने तीसरा श्लोक कहा:-

"ब्राह्मण, मैं एक हजार लाल गायें भेंट करता हूँ।"
आपको; उस बैल को, पूरक के रूप में।
एक संदेशवाहक दूसरे को जानकारी दे सकता है;
बेली के दूत ही सब कुछ हैं जो जीवित हैं।
राजा ने ऐसा कहा और आगे बोला, "मैंने इस महान व्यक्ति से कुछ ऐसा सुना है जो मैंने पहले कभी नहीं सुना था, न ही कभी सोचा था।" और वह इतना प्रसन्न हुआ कि उसने उस पर सम्मानों की वर्षा कर दी।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के समापन पर लालची भाई (भिक्षु) ने तीसरे मार्ग (समाधि) का फल प्राप्त किया, और कई अन्य लोगों ने अन्य मार्गों में प्रवेश किया: "दोनों कहानियों में लालची व्यक्ति एक ही है, और मैं सुरुचिपूर्ण राजा था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **पदुम-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----॥-261-॥----->>>> अगला

जातक क्रमांक 261
पद्मुमा-जातक

"काटो, फिर काटो, फिर से काटो," इत्यादि। यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी, जिसमें कुछ भिक्षुओं ने आनंद के वृक्ष के नीचे पुष्पमालाएं अर्पित की थीं। इसका विस्तृत वर्णन कलिंग-बोधि जन्म (*1) में दिया गया है। इस वृक्ष को आनंद का वृक्ष इसलिए कहा जाता था क्योंकि इसे आनंद ने ही लगाया था। पूरे भारत में यह कथा प्रचलित है कि कैसे एक वरिष्ठ भिक्षु ने जेतवन मठ के द्वार पर इस वृक्ष को लगाया था।

कुछ भिक्षु जो ग्रामीण इलाके में रहते थे, उन्होंने आनंद के वृक्ष को भेंट चढ़ाने का निश्चय किया। वे जेतवन मठ गए, गुरु के प्रति अपनी श्रद्धा अर्पित की और अगले दिन धीरे-धीरे श्रावस्ती नगर में कमल मार्ग की ओर चल पड़े; परन्तु उन्हें एक भी माला नहीं मिली। तब उन्होंने आनंद को बताया कि वे वृक्ष को भेंट चढ़ाना चाहते थे, परन्तु कमल मार्ग में कहीं भी एक भी माला नहीं मिली। वरिष्ठ भिक्षु ने कुछ माला लाने का वादा किया; अतः वे कमल मार्ग गए और मुट्ठी भर नीले कमल लेकर लौटे, जो उन्होंने उन्हें दिए। इन फूलों से उन्होंने वृक्ष को अपनी भेंट चढ़ाई।

जब भिक्षुओं को इस बात का पता चला, तो वे सत्य के हॉल में उस वरिष्ठ भिक्षु के गुणों पर चर्चा करने लगे: “मित्र, देश के कुछ कम गुणवान भिक्षुओं को कमल बाजार में फूलों का एक गुच्छा भी नहीं मिला; लेकिन वरिष्ठ भिक्षु उनके लिए फूल ले आए।” गुरुजी अंदर आए और उनसे पूछा कि वे क्या बात कर रहे हैं; और उन्होंने उन्हें बताया। गुरुजी ने कहा, “भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि चतुर वाणी को प्रशंसा मिली हो; पहले भी ऐसा ही होता था।” और उन्होंने उन्हें एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व एक धनी व्यापारी के पुत्र थे। शहर में एक तालाब था, जिसमें कमल खिलता था। एक व्यक्ति जिसकी नाक कटी हुई थी, उस तालाब की देखभाल करता था।

एक दिन बनारस में छुट्टी का दिन घोषित हुआ; और उस धनी व्यक्ति के तीन बेटों ने सोचा कि वे अपने ऊपर फूलों की मालाएँ सजाएँगे और मौज-मस्ती करने निकलेंगे। "हम उस बूढ़े धूर्त को खुश करेंगे और उससे कुछ फूल माँगेंगे।" तो जिस समय वह कमल के फूल तोड़ता था, वे तालाब के पास गए और प्रतीक्षा करने लगे। और उनमें से एक ने पहला छंद कहा:

काटो, फिर काटो, फिर से काटो।
बाल और मूंछें काफी बढ़ जाती हैं;
और तुम्हारी नाक ऐसी हो जाएगी,
मुझे बस एक कमल दे दीजिए, कृपया!
लेकिन वह व्यक्ति क्रोधित था और उसने कुछ नहीं दिया। तब दूसरे ने दूसरा छंद कहा:

शरद ऋतु में बीज बोए जाते हैं
जो शीघ्र ही पूर्ण रूप से विकसित हो जाते हैं;
काश तुम्हारी नाक भी ऐसी ही उग आए।
मुझे बस एक कमल दे दीजिए, कृपया!
फिर वह व्यक्ति क्रोधित हो गया और उसने कमल नहीं दिया। तब उनमें से तीसरे ने तीसरा श्लोक दोहराया:

"बेवकूफों की बकवास! यह सोचना कि वे
इस तरह से कमल प्राप्त किया जा सकता है।
वे हाँ कहें या ना कहें,
जिन नाकों को काटा गया है, वे अब और नहीं उगेंगी।
देखिए, मैं आपसे ईमानदारी से पूछता हूँ:
मुझे कमल और हवा दो!
यह सुनकर झील के रखवाले ने कहा, "बाकी दोनों ने झूठ बोला, लेकिन तुमने सच कहा है। तुम कमलों के हकदार हो।" इसलिए उसने उसे कमलों का एक बड़ा गुच्छा दिया और अपनी झील पर लौट गया।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "कमल प्राप्त करने वाला बालक मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)सं. 479.

पिछला <<<<-----||-262-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 262
मुदु-पाणि-जातक

"कोमल हाथ," इत्यादि। यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक पथभ्रष्ट भिक्षु के बारे में सुनाई। उसे सत्य के हॉल में लाया गया और गुरु ने उससे पूछा कि क्या वह सचमुच पथभ्रष्ट है? उसने उत्तर दिया, हाँ, वह है। तब गुरु ने कहा, "हे भिक्षुओं! स्त्रियों को उनकी इच्छाओं के पीछे जाने से रोकना असंभव है। पुराने समय में तो बुद्धिमान पुरुष भी अपनी पुत्रियों की रक्षा नहीं कर पाते थे; वे अपने पिता का हाथ थामे खड़ी रहती थीं और बिना उनकी जानकारी के किसी प्रेमी के साथ दुराचार कर बैठती थीं"; और उन्होंने उन्हें एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में राजा ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व उनकी रानी पत्नी के पुत्र के रूप में उत्पन्न हुए। तक्षशिला में शिक्षा प्राप्त करने के बाद, अपने पिता की मृत्यु पर वे उनके स्थान पर राजा बने और न्यायपूर्वक शासन किया।

उसके घर में उसकी बेटी और भतीजा एक साथ रहते थे। एक दिन जब वह अपनी अदालत में बैठा था, उसने कहा,

"मेरे मरने के बाद मेरा भतीजा राजा बनेगा और मेरी बेटी उसकी मुख्य रानी होगी।"

बाद में, जब वे बड़े हो गए, तो राजा अपने दरबार में फिर से बैठे थे; और उन्होंने उनसे कहा, "मैं अपने भतीजे के लिए किसी दूसरे आदमी की बेटी लाऊंगा, और अपनी बेटी का विवाह किसी दूसरे राजा के परिवार में करूंगा। इस तरह मेरे कई रिश्तेदार हो जाएंगे।" दरबारी सहमत हो गए। तब राजा ने भतीजे को महल के बाहर एक घर दे दिया, और उसका महल में आना बंद कर दिया।

लेकिन ये दोनों एक-दूसरे से प्यार करते थे। युवक ने सोचा, "मैं राजा की बेटी को घर से बाहर कैसे लाऊँगा? आहा, मुझे एक उपाय मिल गया।" उसने दाई को एक उपहार दिया।

"इसके बदले मुझे क्या करना होगा, स्वामीजी?" उसने पूछा।

"माँ, मैं राजकुमारी को घर से बाहर लाने का मौका चाहता हूँ।"

“मैं राजकुमारी से इस बारे में बात कर लूंगी,” उसने कहा, “और फिर तुम्हें बताऊंगी।” “बहुत अच्छा, माँ,” उसने जवाब दिया।

वह राजकुमारी के पास आई। उसने कहा, "मुझे तुम्हारे सिर से कीड़े निकालने दो।"

उसने राजकुमारी को एक छोटी सी चौकी पर बिठाया और खुद एक ऊँची चौकी पर बैठकर राजकुमारी का सिर अपनी गोद में रख लिया, और कीड़े-मकोड़े ढूंढते हुए उसने राजकुमारी के सिर को खुजलाया। राजकुमारी समझ गई। उसने सोचा, "उसने मुझे मेरे चचेरे भाई राजकुमार के नाखून से खुजलाया है, अपने नाखून से नहीं।" माँ, उसने पूछा, "क्या आप राजकुमार के साथ थीं?"

"हां, मेरी बेटी।"

और उसने क्या कहा?

"उसने पूछा कि वह तुम्हें घर से बाहर निकालने का कोई तरीका कैसे ढूंढ सकता है।"

"यदि वह बुद्धिमान है, तो वह जान जाएगा," राजकुमारी ने कहा; और उसने पहला श्लोक सुनाया, और बूढ़ी औरत से इसे याद करने और राजकुमार को दोहराने के लिए कहा:

"एक कोमल हाथ, और एक अच्छी तरह से प्रशिक्षित हाथी,"
 और एक काला बारिश का बादल, आपको वही देता है जो आप चाहते हैं।"
उस महिला को यह बात पता चली और वह राजकुमार के पास लौट आई।

"तो माँ, राजकुमारी ने क्या कहा?" उसने पूछा।

"कुछ नहीं, बस मैंने आपको यह छंद भेजा है," उसने उत्तर दिया; और उसने इसे दोहराया। राजकुमार ने इसे सुना और उसे विदा कर दिया।

राजकुमार को ठीक-ठीक समझ आ गया कि क्या कहना है। उसने एक सुंदर और कोमल हाथों वाला सेवक ढूंढा और उसे तैयार किया। उसने राजसी हाथी के रखवाले को रिश्वत दी और हाथी को भावहीन होने का प्रशिक्षण देकर उचित समय की प्रतीक्षा की। फिर, कृष्ण पक्ष के एक व्रत के दिन, मध्य पहर के ठीक बाद, एक घने काले बादल से बारिश होने लगी। "यही वह दिन है जिसके बारे में राजकुमारी ने कहा था," उसने सोचा; वह हाथी पर सवार हुआ और कोमल हाथों वाले लड़के को उसकी पीठ पर बिठाकर चल पड़ा। महल के सामने एक खुले आंगन की बड़ी दीवार से उसने हाथी को बांध दिया और एक खिड़की के सामने भीगते हुए खड़ा हो गया।

अब राजा अपनी बेटी पर नज़र रखे हुए था और उसे अपने सामने एक छोटे से पलंग पर ही आराम करने देता था। बेटी मन ही मन सोच रही थी, "आज राजकुमार आएगा!" और बिना सोए ही लेट गई।

"पिताजी," उसने कहा, "मैं नहाना चाहती हूँ।"

"चलो, मेरी बेटी," राजा ने कहा। उसके हाथ पकड़कर वह उसे खिड़की तक ले गया; उसने उसे उठाया और एक हाथ से पकड़े हुए उसे खिड़की के बाहर कमल के आकार के आभूषण पर बिठा दिया। स्नान करते समय उसने राजकुमार की ओर हाथ बढ़ाया। राजकुमार ने उसके हाथ से चूड़ियाँ खोलकर अपने सेवक के हाथ में बाँध दीं; फिर उसने लड़के को उठाया और राजकुमारी के बगल में कमल पर बिठा दिया। राजकुमारी ने उसका हाथ पकड़ा और अपने पिता के हाथ में रख दिया, जिन्होंने उसका हाथ पकड़कर बेटी का हाथ छोड़ दिया। फिर उसने अपने दूसरे हाथ से आभूषण खोलकर लड़के के दूसरे हाथ में बाँध दिए, जिसे उसने अपने पिता के हाथ में रख दिया और राजकुमार के साथ चली गई। राजा ने लड़के को अपनी ही बेटी समझा; और स्नान समाप्त होने पर उसने उसे राजकक्ष में सुला दिया, दरवाजा बंद कर दिया और उस पर अपनी मुहर लगा दी; फिर पहरा लगाकर वह अपने कमरे में चला गया और आराम करने लगा।

जब सुबह हुई, तो उसने दरवाजा खोला और वहाँ उसे वह लड़का दिखाई दिया। "यह क्या है?" वह चिल्लाया। लड़के ने बताया कि वह राजकुमार के साथ भाग गई थी। राजा निराश हो गया। "हाथ पकड़कर भी कोई स्त्री की रक्षा नहीं कर सकता। इसलिए स्त्री की रक्षा करना असंभव है;" और उसने ये दो पंक्तियाँ कहीं:-

"यद्यपि बोलने में मृदुभाषी, नदियों की तरह जिन्हें भरना कठिन है,"
 उनकी अतृप्त इच्छा को कोई भी चीज संतुष्ट नहीं कर सकती:
 वे नीचे, नीचे धंसते जा रहे हैं: मनुष्य को दूर भाग जाना चाहिए
 महिलाओं से, जब वह जानता है कि वे किस प्रकार की हैं।
 वे चाहे सोने के लिए या अपनी इच्छाओं के लिए जिसकी भी सेवा करें,
 वे उसे आग में ईंधन की तरह जला देते हैं।
इतना कहकर उस महान सत्ता ने आगे कहा, "मुझे अपने भतीजे का भरण-पोषण करना ही होगा;" अतः उन्होंने बड़े आदर के साथ अपनी पुत्री उसी व्यक्ति को सौंप दी और उसे अपना प्रतिनिधि बना दिया। और अपने चाचा की मृत्यु के बाद भतीजा स्वयं राजा बन गया।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के समापन पर, पथभ्रष्ट भाई (भिक्षु) प्रथम मार्ग के फल (समाधि) में दृढ़ता से स्थापित हो गया: "उन दिनों, मैं राजा था।"

स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-263-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 263
CULLA-PALOBHANA-JATAKA

"समुद्र के रास्ते नहीं," इत्यादि। यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी, जो एक पथभ्रष्ट भिक्षु के बारे में थी। गुरु ने उसे सत्य के हॉल में बुलवाया और पूछा कि क्या वह सच में पथभ्रष्ट है। उसने कहा, हाँ, वह सच में पथभ्रष्ट है। गुरु ने कहा, "पुराने समय में स्त्रियाँ विश्वासियों को भी पाप करने के लिए प्रेरित करती थीं।" फिर उन्होंने एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, बनारस के राजा ब्रह्मदत्त निःसंतान थे। उन्होंने अपनी रानी से कहा, "आइए पुत्र प्राप्ति के लिए प्रार्थना करें।" उन्होंने प्रार्थना की। बहुत समय बाद, बोधिसत्व ब्रह्मलोक (परमलोक) से अवतरित हुए और उनकी माता का गर्भ धारण हुआ। जन्म लेते ही उन्हें स्नान कराया गया और एक सेविका को दूध पिलाने के लिए दे दिया गया। जैसे ही उन्होंने स्तनपान किया, वे रोने लगे। उन्हें दूसरी सेविका को दिया गया; लेकिन जब कोई स्त्री उन्हें गोद में लेती थी, तो वे शांत नहीं होते थे। इसलिए उन्हें एक पुरुष सेवक को दिया गया; और जैसे ही पुरुष ने उन्हें गोद में लिया, वे शांत हो गए। उसके बाद पुरुष उन्हें गोद में लेकर घूमने लगे। जब वे उन्हें दूध पिलाते थे, तो वे उनके लिए स्तन का दूध निकालते थे, या पर्दे के पीछे से उन्हें स्तनपान कराते थे। यहां तक कि जब वे बड़े हो गए, तब भी वे उन्हें किसी स्त्री से नहीं मिलवा सकते थे। राजा ने उनके लिए बैठने और ध्यान करने के लिए एक अलग स्थान और एक अलग कमरा बनवाया।

जब लड़का सोलह वर्ष का हुआ, तो राजा ने मन ही मन सोचा, "मेरा कोई दूसरा पुत्र नहीं है, और यह पुत्र किसी सुख का आनंद नहीं लेता। यह तो राज्य की कामना भी नहीं करेगा। ऐसे पुत्र का क्या लाभ?"

और एक नर्तकी थी, जो नृत्य, गीत और संगीत में निपुण, युवा और इतनी कुशल कि वह अपने सामने आने वाले किसी भी पुरुष को मोहित कर लेती थी। वह राजा के पास गई और उससे पूछा कि वह क्या सोच रहा है; राजा ने उसे अपने विचार बता दिए।

"रहने दीजिए, मेरे स्वामी," उसने कहा: "मैं उसे मोहित कर लूंगी, मैं उसे मुझसे प्यार करने पर मजबूर कर दूंगी।"

"अच्छा, अगर तुम मेरे बेटे को, जिसका महिलाओं से कभी कोई वास्ता नहीं रहा, बहला-फुसला सकती हो, तो वह राजा बनेगा और तुम उसकी मुख्य रानी बनोगी!"

“हे स्वामी, यह मुझ पर छोड़ दीजिए,” उसने कहा; “आप चिंता न कीजिए।” फिर वह पहरेदारों के पास गई और बोली, “भोर होते ही मैं राजकुमार के विश्राम कक्ष में जाऊंगी और उस कमरे के बाहर जहाँ वे एकांत में ध्यान करते हैं, गीत गाऊंगी। यदि वे क्रोधित हों, तो मुझे बता दीजिएगा और मैं चली जाऊंगी; परन्तु यदि वे सुनें, तो मेरी प्रशंसा कीजिएगा।” वे ऐसा करने के लिए सहमत हो गए।

तो सुबह के समय वह उस स्थान पर खड़ी हो गई और मधुर स्वर में गाने लगी, जिससे संगीत गीत के समान मधुर और गीत संगीत के समान मधुर हो गया। राजकुमार सुनता रहा। अगले दिन उसने उसे पास खड़े होकर गाने का आदेश दिया। उसके अगले दिन उसने उसे अपने निजी कक्ष में खड़े होने का आदेश दिया, और उसके अगले दिन अपने सामने; और इस प्रकार समय के साथ उसके मन में वासना जागृत हुई; वह संसार के मार्ग पर चल पड़ा और प्रेम का आनंद प्राप्त किया। उसने निश्चय किया, "मैं इस स्त्री को किसी और को नहीं लेने दूँगा"; और अपनी तलवार लेकर वह पागलों की तरह गलियों में लोगों का पीछा करते हुए दौड़ पड़ा। राजा ने उसे पकड़ लिया और लड़की सहित शहर से निर्वासित कर दिया।

वे दोनों गंगा नदी के किनारे जंगल की ओर चल पड़े। वहाँ, एक ओर नदी और दूसरी ओर समुद्र के बीच, उन्होंने एक झोपड़ी बनाई और वहीं रहने लगे। वह अंदर बैठकर जड़ और कंद पकाती थी; बोधिसत्व जंगल से जंगली फल लाते थे।

एक दिन, जब वह फलों की तलाश में बाहर गया हुआ था, समुद्र में स्थित एक द्वीप का एक साधु, जो भोजन की तलाश में चक्कर लगा रहा था, हवा में उड़ते हुए धुआं देखा और इस झोपड़ी के पास उतर आया।

"पकने तक बैठो," स्त्री ने कहा; फिर उसके मोहक आकर्षण ने उसकी आत्मा को मोहित कर लिया और उसे उसकी सम्मोहन अवस्था से बाहर निकाल दिया, जिससे उसकी पवित्रता भंग हो गई। और वह टूटे पंख वाले कौवे की तरह, उसे छोड़कर जाने में असमर्थ, पूरे दिन वहीं बैठा रहा जब तक कि उसने बोधिसत्व को आते नहीं देखा, और फिर तेजी से समुद्र की दिशा में भाग गया। "यह अवश्य ही कोई शत्रु होगा," उसने सोचा, और अपनी तलवार निकालकर उसका पीछा करने चल पड़ा।

लेकिन तपस्वी ने मानो हवा में उठने का नाटक किया, और फिर समुद्र में गिर पड़ा। तब बोधिसत्व ने सोचा,

"निःसंदेह यह व्यक्ति एक तपस्वी है जो हवा के रास्ते यहाँ आया है; और अब जब उसकी समाधि टूट गई है, तो वह समुद्र में गिर गया है। मुझे उसकी मदद के लिए जाना होगा।" और किनारे पर खड़े होकर उसने ये छंद कहे:

"समुद्र के रास्ते नहीं, बल्कि आपकी जादुई शक्ति से।"
आप यहाँ पहले ही आ चुके थे;
अब एक स्त्री की बुरी संगति से
आपको समुद्र की गहराई में धकेल दिया गया है।
मोहक प्रलोभनों से भरा, पूरी तरह से कपटी।
वे सबसे पवित्र हृदय वाले व्यक्ति को भी पतन की ओर ले जाते हैं।
वे नीचे धंसते जा रहे हैं: मनुष्य को दूर भाग जाना चाहिए
महिलाओं से, जब वह जानता है कि वे किस प्रकार की हैं।
वे जिसकी भी सेवा करते हैं, चाहे सोने के लिए हो या इच्छा के लिए,
वे उसे आग में ईंधन की तरह जला देते हैं।
जब तपस्वी ने बोधिसत्व के ये शब्द सुने, तो वह समुद्र के बीचोंबीच खड़ा हो गया और अपनी बाधित समाधि में लौटकर वायु में ऊपर उठ गया और अपने निवास स्थान की ओर चल दिया। बोधिसत्व ने सोचा, "इतने भारी बोझ के साथ तपस्वी रुई के कण की तरह वायु में उड़ जाता है। मैं भी उसकी तरह समाधि क्यों न धारण करूँ और वायु में उड़ जाऊँ!" अतः वह अपनी कुटिया में लौटा और उस स्त्री को फिर से मनुष्यों के बीच ले गया; फिर उसने उसे जाने के लिए कहा और स्वयं जंगल में चला गया, जहाँ उसने एक रमणीय स्थान पर अपनी कुटिया बनाई और तपस्वी बन गया; उसने रहस्यमय समाधि की तैयारी की, अपनी इंद्रियों और उपलब्धियों को विकसित किया और ब्रह्मलोक (परमलोक) के लिए नियत हो गया।

जब यह प्रवचन समाप्त हुआ, तो गुरु ने सत्यों की व्याख्या की: (सत्यों के समापन पर पथभ्रष्ट भाई (भिक्षु) प्रथम मार्ग (सम्मोहन) के फल में स्थापित हो गया): "उस समय," उसने कहा, "मैं स्वयं वह युवक था जिसका महिलाओं से कभी कोई संबंध नहीं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **महा-पणद-जातक**
***स्रोत** : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-264-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 264
महा-पानाद-जातक (*1)

"यह राजा पनादा थे," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने गंगा के किनारे बसने के दौरान सुनाई थी, जिसमें उन्होंने वरिष्ठ भिक्षु भद्दाजी की चमत्कारी शक्ति का वर्णन किया था।

एक बार जब गुरुजी श्रावस्ती नगर में वर्षा ऋतु बिता रहे थे, तो उन्होंने भद्दाजी नामक एक युवक पर कृपा करने का विचार किया। अतः अपने सभी भिक्षुओं के साथ वे भद्दिया नगर की ओर चल पड़े और तीन माह जातीय वन में रहे, इस प्रतीक्षा में कि वह युवक परिपक्व होकर अपने ज्ञान में निपुण हो जाए। भद्दाजी एक महान व्यक्तित्व के धनी थे, जो भद्दिया के एक धनी व्यापारी के इकलौते पुत्र थे और जिनकी संपत्ति आठ सौ मिलियन थी। उनके पास तीन ऋतुओं के लिए तीन घर थे, जिनमें से प्रत्येक में वे चार माह निवास करते थे; और एक घर में यह अवधि बिताने के बाद, वे अपने सभी मित्रों और परिवार के साथ बड़े धूमधाम से दूसरे घर में चले जाते थे। इन अवसरों पर सारा नगर उस युवक की भव्यता को देखने के लिए प्रचंड हो जाता था; और इन घरों के बीच गोल-गोल और कई स्तरों पर आसन बने होते थे।

जब गुरुजी वहाँ तीन महीने रहे, तो उन्होंने नगरवासियों को अपने प्रस्थान की सूचना दी। नगरवासियों ने उनसे अगले दिन तक प्रतीक्षा करने का अनुरोध किया और अगले दिन बुद्ध और उनके शिष्यों के लिए भव्य उपहार एकत्र किए; और नगर के मध्य में एक मंडप स्थापित किया, उसे सजाया और बैठने की व्यवस्था की; फिर उन्होंने घोषणा की कि समय आ गया है। गुरुजी अपने साथियों के साथ वहाँ गए और बैठ गए। सभी ने उदारतापूर्वक उन्हें दान दिया। भोजन समाप्त होने के बाद, गुरुजी ने मधुर स्वर में सभी को धन्यवाद दिया।

उस समय युवा भद्दाजी अपने एक निवास से दूसरे निवास की ओर जा रहे थे। परन्तु उस दिन उनकी शोभा देखने कोई नहीं आया; उनके आस-पास केवल उनके अपने लोग ही थे। इसलिए उन्होंने अपने लोगों से पूछा कि ऐसा क्यों है? आमतौर पर सारा शहर उन्हें घर-घर जाते देखने के लिए उमड़ पड़ता था; उनके लिए ऊंचे-ऊंचे आसन बने होते थे; परन्तु उस दिन उनके अनुयायियों के सिवा कोई नहीं था! इसका क्या कारण हो सकता है?

उत्तर मिला, "हे प्रभु, परम बुद्ध तीन महीने से इस नगर के पास ही निवास कर रहे हैं और आज वे यहाँ से जा रहे हैं। उन्होंने अभी-अभी भोजन किया है और प्रवचन दे रहे हैं। सारा नगर उनके वचन सुनने के लिए वहाँ उपस्थित है।"

"अच्छा, हम भी जाकर उन्हें सुनेंगे," युवक ने कहा। फिर, गहनों से सजे-धजे, अपने अनुयायियों की भीड़ के साथ, वह भीड़ के किनारे जाकर खड़ा हो गया; जैसे ही उसने प्रवचन सुना, उसने अपने सभी पापों को त्याग दिया और परम ज्ञान और संतत्व को प्राप्त कर लिया।

गुरु ने भद्दिया के व्यापारी को संबोधित करते हुए कहा, "महोदय, आपका पुत्र, अपने पूरे वैभव के साथ, मेरे प्रवचन को सुनकर संत बन गया है; आज ही उसे या तो संन्यासी जीवन अपना लेना चाहिए या निर्वाण प्राप्त कर लेना चाहिए।"

"महोदय," उसने उत्तर दिया, "मैं नहीं चाहता कि मेरा पुत्र निर्वाण प्राप्त करे। उसे संन्यासी दीक्षा में प्रवेश दे दीजिए; ऐसा करने के बाद, कल उसे मेरे घर ले आइए।"

भगवान बुद्ध ने यह निमंत्रण स्वीकार किया; वे उस युवक को मठ ले गए, उसे भिक्षु संघ में शामिल किया, और बाद में शिष्यों के निम्न और उच्चतर पवित्र संघ में भी प्रवेश दिलाया। एक सप्ताह तक युवक के माता-पिता ने उसका उदारतापूर्वक आतिथ्य सत्कार किया।

सात दिन वहाँ रहने के बाद, गुरुजी उस युवक को साथ लेकर भिक्षायात्रा पर निकल पड़े और कोटि नामक गाँव पहुँचे। कोटि गाँव के लोगों ने बुद्ध और उनके अनुयायियों को उदारतापूर्वक दान दिया। भोजन के बाद, गुरुजी ने धन्यवाद देना शुरू किया। इसी बीच, वह युवक गाँव से बाहर गया और गंगा के किनारे एक वृक्ष के नीचे बैठ गया और समाधि में लीन हो गया, यह सोचकर कि गुरुजी के आते ही वह उठ जाएगा। जब सबसे वृद्ध भिक्षु उसके पास आए, तो वह नहीं उठा, लेकिन गुरुजी के आते ही वह उठ गया। जो लोग धर्म परिवर्तन नहीं कर रहे थे, वे क्रोधित हो गए क्योंकि उसने ऐसा व्यवहार किया जैसे वह कोई वृद्ध भिक्षु हो, और सबसे वृद्ध भिक्षुओं को आते देख भी नहीं उठा।

ग्रामीणों ने बेड़े बनाए। यह हो जाने पर, गुरु ने पूछा कि भद्दाजी कहाँ हैं। "वह रहे, महाराज।" "आइए, भद्दाजी, मेरे बेड़े पर आ जाइए।" बड़े भिक्षु उठे और उनके पीछे-पीछे उनके बेड़े पर चल दिए। जब वे नदी के बीच में पहुँचे, तो गुरु ने उनसे एक प्रश्न पूछा।

"भद्दाजी, जब महान पांडा राजा थे तब आप जिस महल में रहते थे वह कहाँ है?" उत्तर मिला, "यहाँ, पानी के नीचे।" जो शिष्य परिवर्तित नहीं हुए थे, उन्होंने आपस में कहा, "वरिष्ठ भिक्षु भद्दाजी तो संत होने का प्रमाण दे रहे हैं!" तब गुरु ने उनसे अपने साथी छात्रों के संदेह को दूर करने को कहा।

क्षण भर में, गुरुदेव ने अपने गुरु को प्रणाम करते हुए, अपनी रहस्यमयी शक्ति से प्रेरित होकर, महल के पूरे ढांचे को अपनी उंगली पर उठा लिया और महल को अपने साथ हवा में ऊपर उठा लिया (महल का क्षेत्रफल पच्चीस लीग (4.23 किमी) था); फिर उन्होंने उसमें एक छेद किया और नीचे महल में मौजूद लोगों को दर्शन दिए, और इमारत को पानी के ऊपर पहले एक लीग (4.23 किमी), फिर दो,

फिर तीन लीग उछाल दिया। फिर जो लोग पिछले जन्म में उनके परिवार का हिस्सा थे, जो महल से अत्यधिक प्रेम के कारण अब मछली, कछुए, जल-सांप या मेंढक बन गए थे और उसी स्थान पर पुनर्जीवित हुए थे, महल के ऊपर उठते ही उससे बाहर निकल आए और बार-बार पानी में गिरते रहे। गुरुदेव ने यह देखकर कहा, "भद्दाजी, आपके रिश्तेदार मुसीबत में हैं।" गुरुदेव की बात सुनकर गुरुदेव ने महल को छोड़ दिया और वह उसी स्थान पर डूब गया जहाँ वह पहले था।

गुरुदेव गंगा के उस पार चले गए। फिर नदी के किनारे उनके लिए एक आसन तैयार किया गया। बुद्ध के लिए तैयार किए गए आसन पर वे ऐसे बैठे जैसे उगता हुआ सूरज अपनी किरणें बिखेर रहा हो। तब भिक्षुओं ने उनसे पूछा कि वरिष्ठ भिक्षु भद्दाजी उस महल में कब रहते थे। गुरुदेव ने उत्तर दिया, "महा पांडा राजा के समय में," और फिर उन्हें एक प्राचीन कथा सुनाई।

बहुत समय पहले, विदेह राज्य के एक नगर मिथिला में सुरुचि नाम का एक राजा था। उसका एक पुत्र था, जिसका नाम भी सुरुचि था, और उसका एक और पुत्र था, जिसका नाम महान पांडा था। उन्होंने उस महल पर अधिकार प्राप्त किया। उन्होंने इसे पिछले जन्म में किए गए एक कर्म के फलस्वरूप प्राप्त किया था। एक पिता और पुत्र ने पच्चेकबुद्ध के रहने के लिए अंजीर के पेड़ की शाखाओं और बेंत से पत्तों की एक झोपड़ी बनाई थी।

शेष कहानी सुरुचि जन्म, खंड 14 में बताई जाएगी। (*2)

गुरु ने यह कहानी समाप्त करने के बाद, अपनी पूर्ण बुद्धिमत्ता से निम्नलिखित छंद कहे:-

"यह महल राजा पनाड का था।"
एक हजार तीरों की दूरी जितनी ऊँचाई पर, चौड़ाई में सोलह।
हजारों तीरों की दूरी पर ऊँचाई पर, झंडों से सजे हुए;
सौ मंजिलें, सभी पन्ना हरे रंग की।
छह हजार संगीतकार इधर-उधर आते-जाते रहे।
उन्होंने सात कंपनियों में नृत्य किया।
जैसा कि भद्दाजी ने कहा है, बात यहाँ तक थी:
मैं, सक्का (इंद्र), आपका दास था, आपके हर आदेश का पालन करता था।
उस समय, जिन लोगों ने धर्म परिवर्तन नहीं किया था, उनका संदेह दूर हो गया।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "भद्दाजी महान पांडा थे, और मैं सक्का (इंद्र) था।"

फुटनोट:

(1) दिव्यावदना

(2)सं. 489.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **खुरप्पा-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-265-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 265
खुरप्पा जातक

"कई बार प्रणाम करने पर," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक भिक्षु के बारे में सुनाई, जिसने अपनी सारी ऊर्जा खो दी थी। गुरु ने पूछा, क्या सच में उस भिक्षु ने अपनी ऊर्जा खो दी थी? उसने उत्तर दिया, हाँ। गुरु ने फिर पूछा, "मुक्ति (निर्वाण) की इस शिक्षा को

अपनाने के बाद तुम्हारी ऊर्जा क्यों कम हो गई? पुराने समय में तो ज्ञानी पुरुष उन कार्यों में भी ऊर्जावान रहते थे जो मोक्ष (निर्वाण) की ओर नहीं ले जाते थे।" ऐसा कहकर उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व का जन्म एक वनपाल के परिवार में हुआ था। बड़े होकर उन्होंने पाँच सौ वनपालों के एक दल का नेतृत्व संभाला और जंगल के प्रवेश द्वार पर स्थित एक गाँव में रहने लगे। वे लोगों को जंगल में रास्ता दिखाने का काम करते थे।

एक दिन बनारस का एक व्यक्ति, जो एक व्यापारी का पुत्र था, पाँच सौ गाड़ियों के काफिले के साथ उस गाँव में पहुँचा। उसने बोधिसत्व को बुलवाकर जंगल में मार्गदर्शक बनने के लिए एक हजार सिक्के देने की पेशकश की। बोधिसत्व मान गए और व्यापारी के हाथ से पैसे लेकर उन्होंने मन ही मन व्यापारी की सेवा में अपना जीवन समर्पित कर दिया। फिर उन्होंने व्यापारी को जंगल में मार्गदर्शन दिया।

जंगल के बीचोंबीच पाँच सौ डाकू उठ खड़े हुए। बाकी साथियों ने जैसे ही इन डाकुओं को देखा, वे पेट के बल रेंगने लगे। केवल मुख्य वनपाल ने चिल्लाते, उछलते और मारते हुए सभी पाँच सौ डाकुओं को भगा दिया और व्यापारी को सुरक्षित जंगल पार करा दिया। जंगल पार करने के बाद व्यापारी ने अपने काफिले का डेरा डाला; उसने मुख्य वनपाल को हर तरह का उत्तम मांस दिया और स्वयं उपवास तोड़कर उसके पास आराम से बैठ गया और उससे इस प्रकार बातें कीं: "बताइए," उसने कहा, "कि जब पाँच सौ डाकू, हाथों में हथियार लिए, चारों ओर फैले हुए थे, तब भी आपके मन में जरा भी डर क्यों नहीं आया?" और उसने पहला छंद कहा:

"जब कई धनुषों का तीर तेज गति से चलता है--"
कठोर लोहे की धारियों को पकड़े हुए हाथ पास ही थे--
जब मृत्यु ने अपने सारे भय को एकत्रित कर लिया था—
इतने भयानक माहौल में भी आपको घबराहट क्यों नहीं हुई?
यह सुनकर वनपाल ने निम्नलिखित दो छंद दोहराए:

"जब कई धनुषों का तीर तेज गति से चलता है--"
कठोर लोहे की धारियों को पकड़े हुए हाथ पास ही थे--
जब मृत्यु ने अपने सारे भय को एकत्रित कर लिया था—
मुझे उस दिन बहुत ही गहरा और जबरदस्त आनंद महसूस हुआ।
और इसी खुशी ने मुझे विजय दिलाई;
मैंने जरूरत पड़ने पर मरने का भी निश्चय कर लिया था;
उसे अपने जीवन से घृणा करनी चाहिए, जो इसे पूरा करना चाहेगा।
वीरतापूर्ण कार्य करो और आज भी हीरो बने रहो।"
इस प्रकार उसने अपने शब्दों को तीरों की बौछार की तरह बरसाया; और यह समझाते हुए कि उसने जीने की इच्छा से मुक्त होकर किस प्रकार वीरतापूर्ण कार्य किया, वह उस युवक व्यापारी से विदा होकर अपने गाँव लौट गया; जहाँ दान-पुण्य और भलाई करने के बाद वह अपने कर्मों के फल के अनुसार फल भोगने के लिए इस दुनिया से विदा हो गया।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के समापन पर निराश भाई (भिक्षु) ने संतत्व प्राप्त किया: "उस समय मैं वनपालों का प्रमुख था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **वातग्गा-सिंधव-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-266-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 266
वटग्ग-सिंधव-जातक

"जिसके लिए," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक जमींदार के बारे में सुनाई थी।

श्रावस्ती नगर में, हमें पता चलता है कि एक सुंदर स्त्री ने एक सुंदर पुरुष को देखा और उससे प्रेम करने लगी। उसके भीतर का प्रेम आग की तरह उसके शरीर को जला रहा था। उसने अपने शरीर और मन दोनों को खो दिया; उसे भोजन की कोई परवाह नहीं थी; वह केवल पलंग के किनारे को गले लगाकर लेटी रहती थी।

उसकी सहेलियों और नौकरानियों ने उससे पूछा कि उसे क्या बात परेशान कर रही है कि वह पलंग को गले लगाकर लेटी है; वे जानना चाहती थीं कि आखिर क्या बात है। शुरू में तो उसने कुछ नहीं कहा; लेकिन जब उन्होंने उससे बार-बार पूछा तो उसने उन्हें सब कुछ बता दिया।

उन्होंने कहा, "चिंता मत करो, हम उसे तुम्हारे पास ले आएंगे।" फिर वे जाकर उस आदमी से बात करने लगे। पहले तो उसने मना कर दिया, लेकिन बार-बार कहने पर वह मान गया। उन्होंने उससे वादा लिया कि वह तय दिन पर तय समय पर आएगा और उन्होंने यह बात उस औरत को बता दी।

उसने अपना कमरा सजाया, सुंदर वस्त्र पहने और बिस्तर पर बैठकर उसके आने का इंतज़ार करने लगी। वह उसके बगल में बैठ गया। तभी उसके मन में एक विचार आया। "अगर मैं उसकी बातों को तुरंत मान लूँ और खुद को उसके सामने कमतर साबित कर दूँ, तो मेरा स्वाभिमान चूर-चूर हो जाएगा। उसके आते ही पहले दिन उसकी मर्ज़ी मान लेना ठीक नहीं होगा। मैं आज नखरे दिखाऊँगी, और बाद में मान जाऊँगी।" जैसे ही उसने उसे छुआ और उससे छेड़छाड़ शुरू की, उसने उसके हाथ पकड़ लिए और उसे सख्ती से कहा कि वह उसे नहीं चाहती, इसलिए चली जाए। वह गुस्से से पीछे हट गया और घर चला गया।

जब महिलाओं को पता चला कि उसने क्या किया है और वह आदमी चला गया है, तो उन्होंने उसे फटकारा। उन्होंने कहा, "देखो, तुम किसी से प्यार करती हो और खाना खाने से इनकार करते हुए लेटी रहती हो; उस आदमी को मनाने में हमें बहुत मुश्किल हुई, लेकिन आखिरकार हम उसे ले आए; और फिर तुम्हारे पास उससे कहने के लिए कुछ नहीं होगा!" उसने उन्हें वजह बताई, और वे चली गईं; उसे चेतावनी देते हुए कि उसके बारे में बातें फैलेंगी।

वह आदमी फिर कभी उसकी तरफ देखने तक नहीं आया। जब उसे पता चला कि वह उसे खो चुका है, तो उसने कुछ भी नहीं खाया और जल्द ही उसकी मृत्यु हो गई। जब उस आदमी को उसकी मृत्यु की खबर मिली, तो वह ढेर सारे फूल, सुगंध और इत्र लेकर जेतवन मठ गया, जहाँ उसने गुरु को प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गया।

गुरु ने उससे पूछा, "हे शिष्य, ऐसा क्यों है कि तुम यहाँ कभी दिखाई नहीं देते?" उसने पूरी कहानी सुनाई और बताया कि वह शर्म के मारे इतने समय से बुद्ध की सेवा करने से बचता रहा। गुरु ने कहा, "हे शिष्य, इस बार उस स्त्री ने तुम्हें अपने आवेश में बुलाया, फिर तुमसे कोई वास्ता नहीं रखा और तुम्हें क्रोधित होकर वापस भेज दिया; ठीक वैसे ही पुराने समय में, स्त्री को किसी बुद्धिमान व्यक्ति से प्रेम हो जाता था, वह उन्हें बुलाती थी, और जब वे आते थे तो उनसे कोई वास्ता नहीं रखती थी, और इस प्रकार उन्हें सताती थी और उन्हें भटका देती थी।" फिर उसके अनुरोध पर गुरु ने एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व एक सिंधी अश्व था, जिसे वे पवनप्रबल कहते थे; और वह राजा का विशेष अश्व था। अश्वपाल उसे गंगा में स्नान कराने ले जाया करते थे। वहीं एक गधी ने उसे देखा और उससे प्रेम करने लगी।

वह आवेश से कांप रही थी, न घास खा रही थी और न पानी पी रही थी; बल्कि कमजोर और दुबली होती जा रही थी, यहाँ तक कि वह सिर्फ हड्डियों का ढाँचा रह गई थी। तब उसके एक छोटे जानवर ने उसे कमजोर होते देख कहा, "माँ, तुम घास क्यों नहीं खा रही हो और पानी क्यों नहीं पी रही हो; और क्यों मुरझा रही हो और इधर-उधर कांपती पड़ी हो? क्या बात है?" उसने कुछ नहीं कहा; लेकिन बार-बार पूछने पर उसने उसे सब कुछ बता दिया। तब उसके छोटे जानवर ने उसे दिलासा देते हुए कहा,

"माँ, चिंता मत करो; मैं उसे तुम्हारे पास ले आऊँगा।"

जब स्विफ्ट-एज़-द-विंड नहाने के लिए नीचे गया, तो वह युवा जानवर उसके पास आकर बोला,

"हे प्रभु, मेरी माँ आपसे प्रेम करती है: वह खाना नहीं खाती और मृत्यु के कगार पर पहुँच गई है। उसे जीवनदान दीजिए!"

"अच्छा, मेरे बच्चे, मैं ले आऊंगा," घोड़े ने कहा। "जब मेरा स्नान हो जाएगा, तो रखवाले मुझे नदी किनारे थोड़ी देर व्यायाम करने के लिए छोड़ देंगे। क्या तुम अपनी माँ को भी वहाँ ले आओगे?"

इसलिए उस युवा जानवर ने अपनी माँ को बुलाया और उसे उस जगह पर छोड़ दिया; फिर वह खुद पास ही कहीं छिप गया।

दूल्हे ने स्विफ्ट-एज़-द-विंड को दौड़ने के लिए छोड़ दिया; उसने मादा गधे को देखा और उसके पास आया।

जब घोड़ा पास आकर उसे सूंघने लगा, तो गधे ने मन ही मन सोचा, "अगर मैं खुद को सस्ता बना लूं और आते ही उसे अपनी मनमानी करने दूं, तो मेरी इज्जत और स्वाभिमान मिट्टी में मिल जाएंगे। मुझे ऐसा दिखाना होगा जैसे मैं यह नहीं चाहती।" इसलिए उसने घोड़े के निचले जबड़े पर एक लात मारी और भाग गई। इससे उसका जबड़ा टूट गया और वह अधमरा हो गया। "मुझे इससे क्या लेना-देना?" स्विफ्ट-एज़-द-विंड ने सोचा; उसे शर्म महसूस हुई और वह भाग गया।

तब गधी को पश्चाताप हुआ और वह दुःख से वहीं लेट गई। उसका बेटा, जो एक छोटा जानवर था, उसके पास आया और उससे निम्नलिखित प्रश्न पूछा:

"जिसकी खातिर तुम दुबले-पतले और पीले पड़ गए,"
 और उसने एक निवाला भी नहीं खाया।
 वह प्रियतम तुम्हारे पास आया है;
 आप उड़ान क्यों भरते हैं?
अपने बेटे की आवाज सुनकर गधे ने दूसरी पंक्ति दोहराई:

"अगर बिल्कुल शुरुआत में ही, जब मैं उसके साथ था
 वह बिना देरी किए खड़ा हो जाता है
 जब एक स्त्री झुक जाती है, तो उसका सारा अहंकार चूर-चूर हो जाता है:
 इसलिए मैं भाग गया।
इन्हीं शब्दों में उन्होंने अपने बेटे को स्त्री स्वभाव के बारे में समझाया।

गुरु ने अपनी पूर्ण बुद्धिमत्ता से तीसरे श्लोक को दोहराया:

"यदि वह कुलीन परिवार में जन्मे किसी दूल्हे को अस्वीकार कर दे"
 कौन उसके साथ रहेगा?
 कुंडलि विंडस्विफ्ट के लिए शोक मना रही थी, उसे शोक मनाना ही होगा।
 कई लंबे दिनों के लिए।"
जब यह प्रवचन समाप्त हुआ, तो गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के समापन पर, इस भूस्वामी ने प्रथम मार्ग (समाधि) के फल में प्रवेश किया: "यह स्त्री गधी थी, और मैं हवा के समान तीव्र था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कक्कट-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-267-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 267
कक्कटा-जातक

"सोने के पंजे वाली प्राणी," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक स्त्री के बारे में सुनाई थी।

हमें बताया जाता है कि श्रावस्ती नगर का एक जमींदार अपनी पत्नी के साथ कर्ज वसूलने के उद्देश्य से देश की यात्रा पर था, तभी वह लुटेरों के चंगुल में आ गया। पत्नी अत्यंत सुंदर और आकर्षक थी। लुटेरों का सरदार उस पर इतना मोहित हो गया कि उसने उसे पाने के लिए पति की हत्या करने का निश्चय किया। लेकिन पत्नी नेक और गुणी थी, एक समर्पित पत्नी थी। वह लुटेरे के चरणों में गिर पड़ी और रोते हुए बोली, "हे स्वामी, यदि आप मेरे प्रेम के कारण मेरे पति को मार डालेंगे, तो मैं विष खा लूंगी या अपनी सांस रोक लूंगी और स्वयं को भी मार डालूंगी! मैं आपके साथ नहीं जाऊंगी। मेरे पति को व्यर्थ में मत मारिए!" इस प्रकार उसने लुटेरे से विनती की।

वे दोनों श्रावस्ती नगर सुरक्षित लौट आए। फिर जेतवन मठ के पास से गुजरते हुए उनके मन में यह विचार आया कि वे वहाँ जाकर गुरु को प्रणाम करें। अतः वे सुगंधित कुटिया में गए और प्रणाम करने के बाद एक तरफ बैठ गए। गुरु ने उनसे पूछा कि वे कहाँ गए थे। उन्होंने उत्तर दिया, "अपना ऋण वसूलने।" गुरु ने आगे पूछा, "क्या आपकी यात्रा बिना किसी दुर्घटना के संपन्न हुई?" पति ने कहा, "रास्ते में हमें डाकुओं ने पकड़ लिया था और उनका सरदार मुझे मारना चाहता था; लेकिन मेरी पत्नी ने मेरी जान बचाई और मैं उसका ऋणी हूँ।" तब गुरु ने कहा, "हे गृहस्थ, तुम अकेले नहीं हो जिसकी जान उसने बचाई है। अतीत में उसने अन्य ज्ञानी पुरुषों की भी जान बचाई है।" और फिर उनके अनुरोध पर गुरु ने एक प्राचीन कथा सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, हिमालय में एक विशाल झील थी, जिसमें एक बड़ा सुनहरा केकड़ा रहता था। उनके वहाँ रहने के कारण उस स्थान को केकड़ा झील के नाम से जाना जाता था। केकड़ा बहुत बड़ा था, खलिहान जितना गोल; वह हाथियों को पकड़कर मार डालता और खा जाता था; और उसके डर से हाथी वहाँ चरने की हिम्मत नहीं करते थे।

अब बोधिसत्व का गर्भाधान एक हाथी की मादा से हुआ, जो इस केकड़ा झील के पास ही रहने वाले हाथियों के झुंड का मुखिया था। प्रसव तक सुरक्षित रहने के लिए माँ ने एक पहाड़ पर दूसरी जगह ढूंढी और वहीं उसने एक पुत्र को जन्म दिया; जो समय आने पर ज्ञानवान हुआ, महान और शक्तिशाली बना, समृद्ध हुआ और वह काजल के बैंगनी पर्वत के समान था।

उसने अपने साथी के रूप में एक और हाथी चुना और उसने उस केकड़े को पकड़ने का निश्चय किया। इसलिए, अपने साथी और अपनी माँ के साथ, वह हाथियों के झुंड की तलाश में निकला और अपने पिता को पाकर, केकड़े को पकड़ने जाने का प्रस्ताव रखा।

"तुम ऐसा नहीं कर पाओगे, मेरे बेटे," उसने कहा।

लेकिन उसने पिता से बार-बार छुट्टी देने की विनती की, आखिरकार उन्होंने कहा, "ठीक है, तुम कोशिश कर सकते हो।"

तो उस युवा हाथी ने केकड़ा झील के किनारे सभी हाथियों को इकट्ठा किया और उन्हें झील के पास ले गया। "क्या केकड़ा उन्हें तब पकड़ लेता है जब वे नीचे जाते हैं, या जब वे भोजन कर रहे होते हैं, या जब वे फिर से ऊपर आते हैं?"

उन्होंने उत्तर दिया, "जब जानवर फिर से प्रकट होंगे।"

"तो फिर," उसने कहा, "तुम सब झील पर जाओ और जो कुछ भी दिखे खा लो, और सबसे पहले वापस आ जाओ; मैं तुम्हारे पीछे सबसे आखिर में आऊँगा।" और उन्होंने वैसा ही किया। फिर केकड़े ने बोधिसत्व को सबसे आखिर में आते देख, उसके पैरों को अपने पंजे में कसकर पकड़ लिया, जैसे कोई लोहार लोहे के बड़े टुकड़े को चिमटे से पकड़ लेता है। बोधिसत्व की साथी ने उसे नहीं छोड़ा, बल्कि उसके पास ही खड़ी रही। बोधिसत्व ने केकड़े को खींचा, लेकिन उसे हिला नहीं सके। तब केकड़े ने खींचा और उसे अपनी ओर खींच लिया। यह देखकर हाथी डर के मारे ज़ोर-ज़ोर से दहाड़ा; यह सुनकर बाकी सभी हाथी डर के मारे चिंघाड़ते और मल त्यागते हुए भाग गए। उसकी साथी भी खड़ी नहीं रह सकी, और भागने लगी। फिर उसे यह बताने के लिए कि उसे कैसे बंदी बनाया गया है, उसने पहला श्लोक बोला, इस उम्मीद में कि वह भाग न जाए:

"सुनहरे पंजों वाला (*1) प्राणी जिसकी आंखें उभरी हुई हैं,
झील में पला-बढ़ा, बाल रहित, हड्डीदार खोल से ढका हुआ,
उसने मुझे पकड़ लिया है! मेरी दर्द भरी चीखें सुनो!
दोस्त! मुझे छोड़कर मत जाओ—क्योंकि तुम मुझसे बहुत प्यार करते हो!
फिर उसके साथी ने मुड़कर उसे दिलासा देने के लिए दूसरी पंक्ति दोहराई:

"तुम्हें छोड़ दूं? कभी नहीं! मैं कभी नहीं जाऊंगी--"
हे महान पति, आपकी आयु साठ (x20) वर्ष है।

पृथ्वी के चारों कोने दिखाई दे सकते हैं
अतीत में आप जितने प्रिय रहे हैं, उतने प्रिय कोई और नहीं रहा।
इस तरह उसने उसे प्रोत्साहित किया; और तीसरे छंद में उसने केकड़े से कहा, "महोदय, अब मैं केकड़े से थोड़ी देर बात करूंगी ताकि वह आपको जाने दे।"

समुद्र में पाए जाने वाले सभी केकड़ों में से,
गंगा, या नर्मदा,
मुझे पता है, आप सर्वश्रेष्ठ और प्रमुख हैं:
मेरी बात सुनो—मेरे पति को जाने दो!
जब वह इस प्रकार बोल रही थी, तो केकड़े का मन उस स्त्री की आवाज़ से मोहित हो गया, और सारा भय भूलकर उसने अपने पंजे हाथी के पैर से खोल लिए, और उसे ज़रा भी आभास नहीं था कि आज़ाद होने पर वह क्या करेगा। तभी हाथी ने अपना पैर उठाया और केकड़े की पीठ पर चढ़ गया; और देखते ही देखते उसकी आँखें फटी रह गईं। हाथी ने खुशी से चिल्लाया। बाकी सभी हाथी दौड़े आए, केकड़े को घसीटकर ज़मीन पर रख दिया और उसे कुचलकर चूर-चूर कर दिया। उसके शरीर से टूटे हुए दोनों पंजे अलग-अलग पड़े थे। और यह केकड़ा झील, गंगा के पास होने के कारण, जब गंगा में बाढ़ आती थी, तो गंगा के पानी से भर जाती थी; जब पानी उतरता था तो वह झील से गंगा में बह जाता था। तब ये दोनों पंजे उठकर गंगा में बहने लगे। उनमें से एक समुद्र तक पहुँच गया, दूसरा दस राजभाईयों को पानी में खेलते समय मिला, और उन्होंने उसे लेकर अनाका नामक छोटा ढोल बनाया। टाइटनों ने समुद्र तक पहुँचने वाली वस्तु को पाया और उसे अलंबरा नामक ढोल का रूप दिया। बाद में, सक्का (इंद्र) से युद्ध में पराजित होने पर, वे भाग गए और उसे वहीं छोड़ गए। तब सक्का (इंद्र) ने उसे अपने उपयोग के लिए रख लिया; और इसी के बारे में कहा जाता है, "अलंबरा बादल जैसी गर्जना होती है!"

जब यह प्रवचन समाप्त हुआ, तो गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के समापन पर पति और पत्नी दोनों ने 'प्रथम मार्ग का फल' (समाधि) प्राप्त किया: "उन दिनों, यह गृहस्थ बहन हथिनी थी, और मैं स्वयं उसका साथी था।"

फुटनोट:

(1) सिंगी का अर्थ या तो 'सींग वाला' या 'सोना' होता है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **अराम-दुष-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-268-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 268 (*1)
आराम-दुसा-जातक

"सबसे उत्तम," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने दक्षिणागिरि के निकट ग्रामीण इलाके में रहते हुए एक माली के बेटे के बारे में सुनाई थी।

वर्षा के बाद, गुरु बुद्ध जेतवन मठ छोड़कर दक्षिणागिरि के आसपास के क्षेत्र में भिक्षा मांगने के लिए तीर्थयात्रा पर निकल पड़े। एक गृहस्थ ने बुद्ध और उनके साथियों को आमंत्रित किया और उन्हें अपने परिसर में बैठाकर चावल और रोटी खिलाई। फिर उन्होंने कहा, "यदि कोई संत इस परिसर का निरीक्षण करना चाहें, तो वे माली के साथ जा सकते हैं।" और उन्होंने माली को आदेश दिया कि वे उन्हें उनकी पसंद के फल उपलब्ध कराएं।

कुछ समय बाद वे एक बंजर जगह पर पहुँचे। उन्होंने पूछा, "यह जगह बंजर और वृक्षहीन क्यों है?" माली ने उत्तर दिया, "कारण यह है कि एक माली के बेटे को पौधों को पानी देना था, और उसने सोचा कि जड़ों की लंबाई के अनुपात में पानी देना बेहतर होगा; इसलिए उसने सभी पौधों को उखाड़कर देखा और उसी अनुपात में पानी दिया। परिणामस्वरूप वह जगह बंजर हो गई।"

भिक्षु लौट आए और उन्होंने यह बात अपने गुरु को बताई। गुरु ने कहा, "लड़के ने अभी-अभी एक बागान नष्ट नहीं किया है; उसने पहले भी ठीक ऐसा ही किया था;" और फिर उन्होंने उन्हें एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस पर विस्सेना नाम का एक राजा राज कर रहा था, तब एक छुट्टी की घोषणा की गई। उद्यान के रखवाले ने सोचा कि वह भी छुट्टी मनाने जाएगा; इसलिए उसने उद्यान में रहने वाले बंदरों को बुलाया और कहा:

"यह उद्यान आपके लिए एक बड़ा आशीर्वाद है। मैं एक सप्ताह की छुट्टी लेना चाहता हूँ। क्या आप सातवें दिन पौधों को पानी देंगे?" "जी हाँ," उन्होंने कहा; उन्होंने उन्हें पानी देने वाली मशकें दीं और चले गए।

बंदर पानी लेकर आए और जड़ों को पानी देने लगे।

सबसे बड़े बंदर ने चिल्लाकर कहा, "रुको! पानी हमेशा आसानी से नहीं मिलता। हमें इसे बचाकर इस्तेमाल करना चाहिए। चलो पौधों को उखाड़कर उनकी जड़ों की लंबाई देखते हैं; अगर उनकी जड़ें लंबी हैं, तो उन्हें खूब पानी चाहिए; लेकिन छोटी जड़ों को कम पानी चाहिए।" "सही कहा, सही कहा," वे सब सहमत हुए; फिर उनमें से कुछ ने पौधों को उखाड़ा; फिर दूसरों ने उन्हें वापस लगाया और पानी दिया।

उस समय बोधिसत्व बनारस में रहने वाले एक युवक थे। किसी कारणवश वे इस उद्यान में आए और उन्होंने देखा कि बंदर क्या कर रहे थे।

"तुम्हें ऐसा करने के लिए कौन मजबूर करता है?" उसने पूछा।

उन्होंने उत्तर दिया, "हमारे मुखिया।"

"यदि मुखिया की बुद्धिमत्ता ऐसी है, तो तुम सब कैसे होगे!" उसने कहा; और इस बात को समझाने के लिए उसने पहला श्लोक सुनाया:

"इस टुकड़ी में सबसे अच्छी बात यह है:
वह कितना बुद्धिमान है!
अगर उन्हें सर्वश्रेष्ठ चुना जाता,
बाकी किस तरह के जीव हैं!
यह सुनकर बंदरों ने दूसरी पंक्ति में उत्तर दिया:

"ब्राह्मण, तुम नहीं जानते कि तुम क्या कह रहे हो।"
इस तरह से हमें दोषी ठहराना!
यदि हमें मूल का पता नहीं है,
हम यह कैसे बता सकते हैं कि कौन से पेड़ उगते हैं?
जिस पर बोधिसत्व ने तीसरे सूत्र से इस प्रकार उत्तर दिया:

"बंदरों, मुझे तुम पर कोई दोष नहीं है,"
न ही वे लोग जो जंगल में घूमते हैं।
सम्राट का ऐसा कहना मूर्खता है।
कृपया मेरे अनुपस्थित रहने के दौरान मेरे पेड़ों की देखभाल करना।

जब यह प्रवचन समाप्त हुआ, तो गुरु ने जन्म का कारण बताया: "जिस लड़के ने उद्यान को नष्ट किया वह बंदरों का सरदार था, और मैं ज्ञानी व्यक्ति था।"

फुटनोट:

(1) क्रमांक 46

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सुजाता-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-269-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 269
सुजाता-जातक

"जो लोग प्रतिभाशाली हैं," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जो अनाथपिंडिका की बहू, महान व्यापारी धनंजय की पुत्री और विशाखा की सबसे छोटी बहन सुजाता के बारे में थी।

हमें बताया जाता है कि वह अपने महान परिवार के बारे में सोचकर अहंकार से भरी हुई अनाथपिंडिका के घर में दाखिल हुई और वह हठी, हिंसक, भावुक और क्रूर थी; उसने अपने नए माता-पिता या अपने पति के प्रति अपनी जिम्मेदारी निभाने से इनकार कर दिया; और घर में सबके लिए कठोर शब्दों और मारपीट के साथ घूमती रही।

एक दिन, गुरु और पाँच सौ भिक्षु अनाथपिंडिका के घर आए और बैठ गए। महान व्यापारी भगवान बुद्ध के बगल में बैठकर उनका प्रवचन सुनने लगे। उसी समय सुजाता नौकरों को डांट रही थीं।

गुरुजी ने बोलना बंद कर दिया और पूछा कि यह कैसी आवाज़ है। व्यापारी ने बताया कि यह उसकी बदतमीज़ बहू की आवाज़ है; वह अपने पति और माता-पिता के प्रति उचित व्यवहार नहीं करती, दान नहीं देती, और उसमें कोई अच्छा गुण नहीं है; वह विश्वासहीन और नास्तिक है, और दिन-रात घर में ताने मारती फिरती रहती है। गुरुजी ने उसे भेजने का आदेश दिया।

वह स्त्री आई और गुरु को प्रणाम करने के बाद एक तरफ खड़ी हो गई। तब गुरु ने उससे इस प्रकार कहा:

"सुजाता, एक पुरुष सात प्रकार की पत्नियाँ रख सकता है; तुम किस प्रकार की हो?" उसने उत्तर दिया, "महोदय, आप बहुत संक्षिप्त में बोल रहे हैं, मुझे समझ नहीं आ रहा; कृपया समझाएँ।" "अच्छा," गुरु ने कहा, "ध्यान से सुनो," और उन्होंने निम्नलिखित श्लोक कहे:

एक व्यक्ति न तो निर्दयी है और न ही दयालु।
वह अच्छी है; दूसरों से प्यार करती है, लेकिन अपने स्वामी से घृणा करती है।
अपने स्वामी की सारी संपत्ति नष्ट करते हुए,
इस पत्नी को विनाशक की उपाधि प्राप्त होती है।
"पति को उसके बदले में जो कुछ भी मिले,
या कुशल पेशा, या किसान का फावड़ा,
वह उसमें से थोड़ा-बहुत चुराने की कोशिश करती है।
ऐसी पत्नी के लिए चोर की उपाधि बिल्कुल उपयुक्त है।
कर्तव्य के प्रति लापरवाह, आलसी, भावुक
लालची, बदज़ुबान और क्रोध एवं घृणा से भरा हुआ,
वह अपने सभी अधीनस्थों के प्रति अत्याचारी थी।
ये सब कुछ हाई एंड माइटी शीर्षक के साथ आता है।
जो सदा भले लोगों पर दया करता है,
वह अपने पति की देखभाल एक माँ की तरह करती है।
वह अपने पति द्वारा अर्जित सभी संपत्ति की रक्षा करती है।
यह पत्नी मातृत्व की उपाधि प्राप्त करेगी।
जो स्त्री अपने पति का सम्मान करती है
छोटी बहनें बड़ों का आदर करती हैं।
विनम्र, अपने पति की इच्छा का पालन करने वाली,
बहन जैसी पत्नी का खिताब आज भी इस पत्नी के लिए इस्तेमाल होता है।
वह स्त्री जिसे उसके पति की दृष्टि सदा प्रसन्न करती है
जैसे कोई दोस्त लंबे समय बाद मिलता है,
उच्च नस्ल और सदाचारी, मुर्गी जीवन का त्याग करने वाली
वह इसे 'मिलनसार पत्नी' कहते हैं।
दुर्व्यवहार सहने पर शांत रहना, हिंसा से डरना,

कोई जुनून नहीं, बल्कि अटूट धैर्य।
सच्चे दिल वाली, अपने पति की इच्छा के आगे झुकने वाली,
आज भी उसे गुलाम की उपाधि से पुकारा जाता है।
"सुजाता, ये सात पत्नियाँ हैं जो एक पुरुष रख सकता है। इनमें से तीन, विनाशकारी पत्नी, बेईमान पत्नी और अहंकारी महिला, नरक में पुनर्जन्म लेती हैं; बाकी चार पाँचवें स्वर्ग में।"

"जो इस जीवन में विनाशक कहलाते हैं,
उच्च और शक्तिशाली, या फिर चोरी करने वाली पत्नी,
क्रोधित होना, दुष्ट होना, अनादर करना, जाना
शरीर से निकलकर नीचे नरक में।
"जो इस जीवन में मित्रवत कहलाते हैं,
मातृत्वपूर्ण, बहनत्वपूर्ण या दासी पत्नी
अपने सद्गुण और लंबे आत्म-नियंत्रण के कारण
जब उनके शरीर का अंत होता है, तो वे स्वर्ग में प्रवेश करते हैं।"
जब गुरु इन सात प्रकार की पत्नियों के बारे में बता रहे थे, तब सुजाता ने प्रथम मार्ग का फल (सम्मोहन) प्राप्त कर लिया; और जब गुरु ने उनसे पूछा कि वह किस श्रेणी में आती हैं, तो उन्होंने उत्तर दिया, "मैं दासी हूँ, श्रीमान!" और बुद्ध को आदरपूर्वक प्रणाम करके उनसे क्षमा प्राप्त कर ली।

इस प्रकार एक ही उपदेश से गुरु ने उस गुस्सैल स्त्री को शांत कर दिया; और भोजन के बाद, जब उन्होंने भिक्षुओं के बीच उनके कर्तव्यों का वर्णन कर दिया, तो वे अपने सुगंधित कक्ष में प्रवेश कर गए।

अब सभी भाई सत्य के हॉल में एकत्रित हुए और गुरु की स्तुति करने लगे। "मित्र, गुरु ने एक ही उपदेश से गुस्सैल स्त्री को वश में कर लिया और उसे प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की सिद्धि तक पहुँचा दिया!" गुरु प्रवेश कर गए और जब वे सब एक साथ बैठे थे, तो उन्होंने पूछा कि वे किस बारे में बात कर रहे हैं। उन्होंने उन्हें बताया। गुरु ने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि मैंने सुजाता को एक ही उपदेश से वश में किया है।" और फिर उन्होंने एक प्राचीन कथा सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस पर शासन कर रहे थे, तब उनकी रानी पत्नी के पुत्र के रूप में बोधिसत्व का जन्म हुआ। बड़े होकर उन्होंने तक्षशिला में शिक्षा प्राप्त की और अपने पिता की मृत्यु के बाद राजा बनकर धर्मपरायणता से शासन किया।

उसकी माँ एक गुस्सैल, क्रूर, कठोर, चिड़चिड़ी और बदज़ुबान महिला थी। बेटा अपनी माँ को समझाना चाहता था, लेकिन उसे लगा कि उसे कुछ भी अपमानजनक नहीं करना चाहिए; इसलिए वह इशारे करने का मौका ढूंढता रहा।

एक दिन वह नीचे मैदान में गया, और उसकी माँ उसके साथ गई। सड़क पर एक नीलकंठ चिड़िया चीखी। यह सुनकर सभी दरबारी अपने कान बंद करके रोने लगे--

"कितनी कर्कश आवाज है, कितनी चीख है!—ऐसी आवाज मत करो!"

जब बोधिसत्व अपनी माता और कुछ संगीतकारों के साथ उद्यान में टहल रहे थे, तभी साल (*1) के पेड़ की घनी पत्तियों के बीच बैठी एक कोयल ने मधुर स्वर में गाना शुरू किया। वहाँ खड़े सभी लोग उसकी आवाज़ से प्रसन्न हो गए; हाथ जोड़कर और फैलाकर उन्होंने विनती की, "ओह, कितनी कोमल आवाज़ है, कितनी प्यारी आवाज़ है, कितनी मधुर आवाज़ है! गाती रहो, प्यारी चिड़िया, गाती रहो!" और वे सब गर्दनें फैलाकर उत्सुकता से सुनने लगे।

इन दो बातों को ध्यान में रखते हुए, बोधिसत्व ने सोचा कि महारानी को संकेत देने का यही एक अवसर है। उन्होंने कहा, "माँ, जब सड़क पर नीलकंठ पक्षी की आवाज़ सुनाई दी, तो सबने अपने कान बंद कर लिए और पुकार कर कहा—यह शोर मत करो! यह शोर मत करो! और अपने कान बंद कर लिए: क्योंकि कर्कश आवाज़ें किसी को पसंद नहीं आतीं।" और उन्होंने निम्नलिखित श्लोक दोहराए:

"जिन लोगों को सुंदर रंग का वरदान प्राप्त है,
हालांकि देखने में बहुत ही सुंदर और मनमोहक है,
लेकिन अगर उनकी आवाज सुनने में बहुत कर्कश हो

न तो इस दुनिया में और न ही अगली दुनिया में कोई प्रिय है।
"एक पक्षी ऐसा है जिसे आप अक्सर देख सकते हैं;
भले ही वह बदसूरत, काला और धब्बेदार हो,
फिर भी उसकी मधुर आवाज कानों को सुहावनी लगती है:
कितने जीव कोयल को प्रिय मानते हैं!
इसलिए तुम्हारी आवाज कोमल और मधुर होनी चाहिए।
बुद्धिमानी से बोलना, अहंकार से भरा हुआ नहीं।
और ऐसी आवाज—कितनी मधुर है!
पवित्र ग्रंथ (*2) के अर्थ की व्याख्या करता है।"
जब बोधिसत्व ने इन तीन श्लोकों से अपनी माता को उपदेश दिया, तो उन्होंने उन्हें अपने विचारों की ओर आकर्षित कर लिया; और उसके बाद से गलत राह पर चलने वाले ने सही राह अपना ली। और एक ही शब्द से अपनी माता को त्यागी स्त्री बनाकर, वे अपने कर्मों के फल के अनुसार फल भोगने के लिए परलोक चले गए।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने इस प्रकार जन्म का वर्णन किया: "सुजाता बनारस के राजा की माता थीं, और मैं स्वयं राजा था।"

फुटनोट:

(1)शोरिया रोबस्टा.

(2)धम्मपद, खंड 363.

स्रोत : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित

पिछला <<<<-----||-270-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 270
उलुका-जातक

"उल्लू राजा है," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें कौवे और उल्लू के बीच झगड़े का वर्णन है।

उस समय, कौवे दिन में उल्लुओं को खाते थे और रात में उल्लू उड़ते हुए सोते हुए कौवों के सिर नोचकर उन्हें मार डालते थे। जेतवन मठ के बाहरी इलाके में एक कुटिया में एक भिक्षु रहते थे। जब सफाई का समय आता था, तो पेड़ से गिरे हुए कौवों के इतने सिर होते थे कि उन्हें फेंकना पड़ता था, इतने कि सात-आठ कुटियाएँ भर जाती थीं। उन्होंने यह बात भिक्षुओं को बताई। भिक्षु सभा में भिक्षु इस बारे में बातें करने लगे। "मित्र, फलां भिक्षु को तो अपने घर में प्रतिदिन इतने सारे कौवों के सिर फेंकने पड़ते हैं!" गुरुजी अंदर आए और बैठे-बैठे उनसे पूछा कि वे किस बारे में बात कर रहे हैं। उन्होंने उन्हें बताया। फिर उन्होंने पूछा कि कौवों और उल्लुओं के बीच झगड़ा कब से नहीं हुआ है। गुरुजी ने उत्तर दिया, "संसार के पहले युग से ही;" और फिर उन्होंने उन्हें एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, संसार के पहले चक्र में रहने वाले लोग एकत्रित हुए और उन्होंने एक सुंदर, शुभ, शक्तिशाली और सर्वगुण संपन्न पुरुष को अपना राजा चुना। चौपाये भी एकत्रित हुए और उन्होंने सिंह को अपना राजा चुना; और समुद्र की मछलियों ने आनंद नामक मछली को अपना राजा चुना। फिर हिमालय के सभी पक्षी एक समतल चट्टान पर एकत्रित हुए और चिल्लाने लगे,

"मनुष्यों में राजा होता है, जानवरों में भी, और मछलियों में भी; लेकिन हम पक्षियों में कोई राजा नहीं है। हमें अराजकता में नहीं रहना चाहिए; हमें भी एक राजा चुनना चाहिए। किसी ऐसे व्यक्ति का चुनाव करो जो राजा के पद के लिए उपयुक्त हो!"

उन्होंने ऐसे पक्षी की तलाश की और उल्लू को चुना; उन्होंने कहा, "यही वह पक्षी है जो हमें पसंद है।" और एक पक्षी ने तीन बार सबको बताया कि इस मामले पर मतदान होगा। इस घोषणा को दो बार धैर्यपूर्वक सुनने के बाद, तीसरी बार एक कौआ उठा और चिल्लाया,

"बस यहीं रुको! अगर राजा नियुक्त होते समय उसका चेहरा ऐसा है, तो क्रोधित होने पर कैसा होगा? अगर वह केवल क्रोध से ही हमारी ओर देखेगा, तो हम गर्म तवे पर बिखरे तिल की तरह बिखर जाएँगे। मैं इस आदमी को राजा नहीं बनाना चाहता!" और यह समझाते हुए उसने पहला श्लोक कहा:-

"तुम कहते हो कि उल्लू सभी पक्षियों का राजा है:
आपकी अनुमति से, क्या मैं अपने विचार व्यक्त कर सकता हूँ?
पक्षियों ने दूसरी बात दोहराई और उन्हें बोलने की अनुमति दी:-

"आपको हमारी अनुमति है, महोदय, इसलिए यह उचित और सही होगा।"
क्योंकि दूसरे पक्षी जवान, बुद्धिमान और प्रतिभाशाली हैं।"
इस प्रकार अनुमति मिलने पर, उन्होंने तीसरी बात दोहराई:-

"मुझे यह पसंद नहीं है (यहाँ तक कि मैं सम्मानपूर्वक कहना चाहता हूँ)"
उल्लू को हमारे मुखिया के रूप में अभिषेक करना।
उसके चेहरे को देखो! अगर यह अच्छा हास्य है,
जब वह गुस्से से देखेगा तो क्या करेगा?
फिर वह हवा में उड़ गया और कांव-कांव करते हुए बोला, "मुझे यह पसंद नहीं! मुझे यह पसंद नहीं!" उल्लू उठा और उसका पीछा करने लगा। तब से उन दोनों के बीच शत्रुता पनप गई। और पक्षियों ने एक सुनहरे हंस को अपना राजा चुना और तितर-बितर हो गए।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: "उस समय, राजा के रूप में चुना गया जंगली हंस मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **उदपान-दुष्का-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-271-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 271
उदपना-दुसाका-जातक

"इस कुएं में एक वनवासी साधु रहता था," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने इसिपताना में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें एक सियार ने एक कुएं को गंदा कर दिया था।

हमें पता चला है कि एक सियार उस कुएँ को गंदा कर देता था जहाँ भिक्षु पानी भरते थे, और फिर भाग जाता था। एक दिन नौसिखियों ने उस पर मिट्टी के ढेले फेंके और उसे परेशान कर दिया। उसके बाद वह फिर कभी उस जगह पर नहीं आया।

यह सुनकर सभी भाई-बंधु सत्य के हॉल में इस पर चर्चा करने लगे। “मित्र, वह सियार जो हमारे कुएँ को गंदा करता था, जब से नौसिखियों ने उसे मिट्टी के ढेलों से भगाया है, तब से वह कुएँ के पास नहीं आया है!” गुरुजी अंदर आए और जब वे सब एक साथ बैठे थे, तो उन्होंने पूछा कि वे अब किस बारे में बात कर रहे हैं। उन्होंने उन्हें बताया। तब गुरुजी ने उत्तर दिया, “भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि इस सियार ने कुएँ को गंदा किया है। उसने पहले भी ऐसा ही किया था;” और फिर उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, बनारस के पास इसिपताना नामक स्थान पर एक कुआँ था। उसी समय बोधिसत्व का जन्म एक अच्छे परिवार में हुआ था। बड़े होकर उन्होंने संन्यासी जीवन अपना लिया और अपने अनुयायियों के साथ इसिपताना में रहने लगे। जैसा कि वर्णन किया गया है, एक सियार ने कुएँ को गंदा कर दिया और भाग गया। एक दिन, संन्यासियों ने उसे घेर लिया और किसी तरह उसे पकड़कर बोधिसत्व के सामने ले आए। उन्होंने सियार को पहले श्लोक की पंक्तियों में संबोधित किया:

"यह कुआँ एक वनवासी संन्यासी ने बनाया है।"
जो लंबे समय से जंगल में एकांतवासी के रूप में रहता आया है।
और अपनी सारी परेशानियों और मेहनत के बाद
मेरे दोस्त, तुमने कुएं को खराब करने की कोशिश क्यों की?
यह सुनकर सियार ने दूसरी पंक्ति दोहराई:-

"यह सियार जाति का सर्वमान्य नियम है।"
किसी स्थान पर शराब पीने के बाद गंदगी फैलाना:
मेरे पिता और दादाजी हमेशा ऐसा ही करते थे;
इसलिए आपके दोषारोपण का कोई उचित कारण नहीं है।"
तब बोधिसत्व ने तीसरे कथन से उत्तर दिया:

"अगर सियार की दुनिया में यही 'कानून' है तो..."
मुझे आश्चर्य है कि उनकी 'अराजकता' किस हद तक हो सकती है!
मुझे उम्मीद है कि मैंने तुम्हें आखिरी बार देखा है।
आपके सभी कार्य, चाहे वे वैध हों या अवैध।
तब उस महान सत्ता ने उसे चेतावनी दी और कहा, "फिर कभी वहाँ मत जाना।" उसके बाद से उसने कभी उस ओर देखा तक नहीं।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की और जन्म का कारण बताया: "कुएँ को गंदा करने वाला सियार दोनों ही मामलों में एक ही है; और मैं तपस्वियों के समूह का मुखिया था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **व्याघ्-जातक**
***स्रोत**: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-272-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 272
व्याग्घ-जातक

“निकटता का समय क्या है,” इत्यादि — यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए कोकालिका (*1) के बारे में सुनाई थी। इस कथा की परिस्थितियाँ तेरहवें ग्रंथ और तक्करिया-जातक (*2) में दी जाएँगी। यहाँ फिर कोकालिका ने कहा, “मैं सारिपुत्र और मोग्गल्याण को अपने साथ ले जाऊँगा।” अतः कोकालिका के देश से निकलकर वे जेतवन मठ गए, गुरु को प्रणाम किया और फिर अन्य गुरुओं के पास गए। उन्होंने कहा, “मित्रों, कोकालिका के देश के लोग आपको बुला रहे हैं। चलिए वहाँ चलें!!” उत्तर मिला, “आप स्वयं जाइए, मित्र, हम नहीं जाएँगे।” इस इनकार के बाद वे स्वयं चले गए।

भिक्षुओं ने सत्य के हॉल में इस विषय पर चर्चा शुरू की। “मित्र! कोकालिका न तो सारिपुत्र और मोग्गल्याण के साथ रह सकता है, न उनके बिना! वह न तो उनके कमरे में रह सकता है और न ही उनकी संगति में!” गुरुजी अंदर आए और पूछा कि वे सब किस बारे में बात कर रहे हैं। उन्होंने उन्हें बताया। गुरुजी ने कहा, “पुराने समय में भी, ठीक आज की तरह, कोकालिका न तो सारिपुत्र और मोग्गल्याण के साथ रह सकता था, न उनके बिना।” और उन्होंने एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब एक बोधिसत्व वन में वृक्ष-आत्मा के रूप में निवास करते थे। उनके निवास से कुछ ही दूरी पर एक अन्य वृक्ष-आत्मा, वन के एक महान सम्राट के रूप में निवास करती थी। उसी वन में एक शेर और एक बाघ रहते थे। उनके भय से कोई भी भूमि जोतने या वृक्ष काटने का साहस नहीं करता था, यहाँ तक कि कोई भी वृक्ष की ओर देखने के लिए भी नहीं रुकता था। शेर और बाघ सभी प्रकार के प्राणियों को मारकर खा जाते थे; और खाने के बाद जो कुछ बचता था, उसे वे वहीं छोड़ देते थे और चले जाते थे, जिससे वन दुर्गंध से भर गया था।

दूसरा प्रेत, जो मूर्ख था और न तो तर्क जानता था और न ही अतर्क, एक दिन बोधिसत्व से इस प्रकार बोला: "हे मित्र, इस शेर और बाघ के कारण जंगल में दुर्गंध फैली हुई है। मैं इन्हें भगा दूंगा।"

उन्होंने कहा, “मेरे प्रिय मित्र, ये दो ही प्राणी हमारे घरों की रक्षा करते हैं। एक बार इन्हें भगा दिया गया, तो हमारे घर उजाड़ हो जाएँगे। यदि मनुष्य शेर और बाघ के पदचिह्नों को नहीं देखेंगे, तो वे सारा जंगल काट डालेंगे, उसे एक खुला मैदान बना देंगे और उस पर खेती करने लगेंगे। कृपया ऐसा मत करो!” और फिर उन्होंने पहले दो छंद कहे:

किसी घनिष्ठ मित्र की निकटता का क्या समय होता है?
यह आपकी शांति को भंग करने की धमकी देता है।
यदि आप बुद्धिमान हैं, तो अपनी सर्वोच्चता की रक्षा करें।
जैसे तुम्हारी आंखों का तारा।
लेकिन जब आपकी जिगरी दोस्त और भी ज्यादा बढ़ जाती है
आपकी शांति का पैमाना,
अपने दोस्त के जीवन में हर चीज को सही ढंग से शामिल होने दें।
ये आपके लिए उतने ही प्यारे होंगे जितने आपके अपने।

जब बोधिसत्व ने इस प्रकार मामला समझाया, तब भी मूर्ख परी ने इसे गंभीरता से नहीं लिया, बल्कि एक दिन उसने भयानक रूप धारण कर लिया और शेर और बाघ को भगा दिया। लोगों ने उनके पदचिह्न न देखकर अनुमान लगाया कि शेर और बाघ किसी दूसरे जंगल में गए होंगे और उस जंगल के एक हिस्से को काट डाला होगा। तब परी बोधिसत्व के पास आई और उनसे बोली,

"हे मित्र, मैंने तुम्हारी बात नहीं मानी, बल्कि उन जीवों को भगा दिया; और अब मनुष्यों को पता चल गया है कि वे चले गए हैं, और वे जंगल काट रहे हैं! अब क्या किया जाए?" उत्तर मिला कि वे फलाँ जंगल में रहने चले गए हैं; परी को जाकर उन्हें वापस लाना होगा। परी ने ऐसा ही किया; और उनके सामने खड़े होकर, आदरपूर्वक प्रणाम करते हुए, तीसरे श्लोक को दोहराया:

"वापस आओ, हे बाघों! जंगल में फिर से।"
और इसे मैदान के बराबर न होने दिया जाए;
क्योंकि तुम्हारे बिना, कुल्हाड़ी इसे नष्ट कर देगी;
इसके बिना तुम सदा के लिए तपस्वी बन जाओगे।

उन्होंने यह अनुरोध ठुकरा दिया और कहा, "चले जाओ! हम नहीं आएंगे।" परी अकेले ही जंगल लौट गई। और कुछ ही दिनों बाद उन आदमियों ने सारी लकड़ियाँ काट डालीं, खेत बनाए और उनमें खेती शुरू कर दी।

जब बुद्ध ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: "कोकालिका मूर्ख परी थी, सारिपुत्र सिंह थे, मोग्गल्याना बाघ थे, और बुद्धिमान परी मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) कोकालिका बुद्ध के विरोधी देवदत्त की अनुयायी थी।

(2)सं. 481.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कच्छप-जातक**3
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-273-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 273
कच्छपा-जातक3

"तुम भीख क्यों मांग रहे हो," इत्यादि—यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में अपने प्रवास के दौरान सुनाई थी, जिसमें बताया गया था कि कोसल (*1) में राजा के दरबार के दो उच्च अधिकारियों के बीच हुए झगड़े का समाधान कैसे हुआ। इन घटनाओं का वर्णन द्वितीय पुस्तक में किया गया है।

एक समय ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे। बोधिसत्व का जन्म काशी राज्य में एक पुरोहित परिवार में हुआ था। बड़े होकर वे अध्ययन के लिए तक्षशिला नगर आए। अध्ययन पूर्ण करने के बाद, अपनी इंद्रियों को वश में रखते हुए, वे हिमालय क्षेत्र में गंगा नदी के किनारे वृक्षों की शाखाओं से बनी एक कुटिया में एकांतवास में रहने लगे। ध्यान के अभ्यास से वे समाधि की अवस्थाओं का आनंद लेते थे। इस प्रकार वे शांति, एकाग्रमरण और धैर्य से निवास करते थे।

वे लंबे समय तक शांति से ध्यान में बैठे रहते थे। एक शरारती बंदर उस स्थान पर आता था और अपनी हरकतों से बोधिसत्व के कान में (अनजाने में) अपना वीर्य गिराकर उपद्रव करता था, लेकिन बोधिसत्व कभी भी अपनी मन की शांति नहीं खोते थे और अविचलित रहते थे। एक कछुआ वहाँ पानी से बाहर आता था और धूप सेंकने के लिए मुँह खोलकर सोता था। एक बार उस उद्दंड बंदर ने आनंद के लिए अपना जननांग कछुए के मुँह में डालने की कोशिश की। लेकिन तब कछुए ने अपना मुँह बंद कर लिया और उसे कसकर पकड़ लिया। दर्द से कराहते हुए बंदर ने कछुए को अपने हाथों से जकड़ लिया। बंदर को इतना दर्द हो रहा था कि उसे लगा जैसे उसका जननांग दो टुकड़ों में कट जाएगा। बंदर ने दर्द से मुक्ति पाने के लिए कछुए से उसे छोड़ने की विनती की, लेकिन कोई लाभ नहीं हुआ। बंदर ने कछुए के खोल को भिक्षापात्र की तरह पकड़ रखा था।

जब बोधिसत्व वहां पहुंचे, तो बंदर ने उनसे मदद मांगी।

बोधिसत्व ने पूछा:

अब भीख क्यों मांग रहे हो?

बंदर ने गिड़गिड़ाते हुए कहा, "मैं अपना मनोरंजन करना चाहता था, लेकिन यह गलत था, मैंने अपने पागलपन में यह सब किया, कृपया मुझे बचा लें।"

तब बोधिसत्व ने उनसे कहा:

"ओह, बंदर, कछुए की प्रजाति अलग होती है;"
कछुए को कछुए के साथ संभोग करना चाहिए।
और बंदरों का संभोग केवल बंदरों से ही हो।
यही प्रकृति का उचित तरीका है।
हानि से बचने के लिए धर्म का अनुसरण करो।
ये शब्द सुनकर कछुआ प्रसन्न हो गया। कछुए ने बंदर को छोड़ दिया और बंदर ने कछुए को छोड़ दिया और दोनों अपने-अपने रास्ते चले गए। उसके बाद बंदर ने कभी किसी को परेशान नहीं किया। बाद में बोधिसत्व, जिन्होंने अपना जीवन एक तपस्वी के रूप में व्यतीत किया, अंत में परलोक चले गए और ब्रह्मा (प्रधान देवदूत) के लोक में जन्म लिया।

जब यह प्रवचन समाप्त हुआ, तो गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: "दो उच्च अधिकारी बंदर और कछुआ थे, और मैं संन्यासी था।"

फुटनोट:

(1)संख्या 154, 165 की तुलना करें।

(2) कछुआ भीख मांगने वाले कटोरे जैसा दिखता था।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **लोल-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-274-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 274
लोला-जातक

“यह गुच्छेदार सारस कौन है?” इत्यादि — यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक लालची भिक्षु के बारे में सुनाई थी। उसे भी सभा-महल में लाया गया, जहाँ गुरु ने कहा — “यह केवल अब ही लालची नहीं है; यह पहले भी लालची था, और इसी लालच के कारण इसने अपनी जान गंवाई; और इसी के कारण प्राचीन काल के बुद्धिमान लोग बेघर हो गए थे।” फिर उन्होंने एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, उस नगर के एक धनी व्यापारी के रसोइए ने पुण्य कमाने के लिए रसोई में एक टोकरी टांग दी। उस समय बोधिसत्व एक कबूतर थे; और वे आकर उसमें रहने लगे।

रसोई के ऊपर से उड़ता हुआ एक लालची कौआ वहाँ रखी तरह-तरह की मछलियों को देखकर आकर्षित हो गया। उसे उन्हें खाने की तीव्र इच्छा हुई। उसने सोचा, "मैं इन्हें कैसे पाऊँगा?" तभी उसकी नज़र बोधिसत्व पर पड़ी। उसने सोचा, "मुझे मिल गया! मैं इस प्राणी को अपना मोहरा बना लूँगा।" और इस तरह उसने अपना संकल्प पूरा किया।

जब कबूतर अपने दिन का भोजन खोजने निकला, तो उसके पीछे-पीछे कौआ भी आ रहा था।

"मुझसे क्या चाहते हो, श्रीमान कौआ?" कबूतर ने कहा। "तुम और मैं एक जैसे नहीं खाते।"

"आह, लेकिन मुझे तुम पसंद हो," कौआ कहता है। "मुझे तुम्हारा विनम्र सेवक बनने दो, और तुम्हारे साथ भोजन करने दो।"

कबूतर मान गया। लेकिन जब वे साथ में खाना खाने गए, तो कौआ सिर्फ खाने का नाटक करता; थोड़ी देर में ही सही, वह वापस मुड़ जाता, गोबर के किसी ढेर को चोंच मारकर टुकड़े-टुकड़े कर देता और एक-दो कीड़े खा लेता। पेट भर जाने पर वह उड़ जाता—"अरे, श्रीमान कबूतर! खाना खाने का समय निकालने का क्या तरीका है! तुम्हें कभी पता नहीं चलता कि हद कहाँ तक है। चलो, इससे पहले कि बहुत देर हो जाए, वापस चलते हैं।" और वे चले गए। जब वे वापस मिले, तो रसोइए ने देखा कि उनका कबूतर एक दोस्त को साथ लाया है, तो उसने एक और टोकरी टांग दी।

इस तरह चार-पाँच दिन तक चलता रहा। फिर धनी व्यक्ति के रसोईघर में मछलियों का ढेर लग गया। कौआ उन्हें पाने के लिए कितना तरस रहा था! वह सुबह से ही वहाँ पड़ा कराह रहा था और ज़ोर-ज़ोर से आवाज़ें निकाल रहा था। सुबह कबूतर ने कौए से कहा:

"चलो, दोस्त, नाश्ता करो!"

"तुम जा सकते हो," उसने कहा, "मुझे बदहजमी का दौरा पड़ गया है!"

"बदहजमी से पीड़ित कौआ? बकवास!" कबूतर बोला। "तुम्हारे पेट में दीपक की बाती भी मुश्किल से टिकती है; और बाकी सब तो खाते ही थोड़ी देर में पच जाता है। अब मेरी बात मानो। एक छोटी मछली को देखकर इस तरह का व्यवहार मत करो!"

"अरे, महोदय, आप क्या कह रहे हैं? मैं आपको बता रहा हूँ, मुझे अंदर बहुत दर्द हो रहा है!"

"ठीक है, ठीक है," कबूतर बोला; "बस ध्यान रखना।" और वह उड़ गया।

रसोइए ने सारे व्यंजन तैयार कर लिए और फिर रसोई के दरवाजे पर खड़े होकर अपने पसीने को पोंछने लगा। "अब मेरी बारी है!" कौए ने सोचा और एक स्वादिष्ट भोजन से भरी थाली पर झपटा। क्लिक! रसोइए ने आवाज़ सुनी और पीछे मुड़कर देखा। आह! पलक झपकते ही उसने कौए को पकड़ लिया और उसके सिर के ऊपर के एक गुच्छे को छोड़कर उसके सारे पंख नोच लिए; फिर उसने अदरक और दालचीनी को पीसकर छाछ में मिलाया और पक्षी के पूरे शरीर पर अच्छी तरह मल दिया। "यह मेरे मालिक का खाना खराब करने और मुझे उसे फेंकने पर मजबूर करने का बदला है!" उसने कहा और उसे टोकरी में फेंक दिया। ओह, कितना दर्द हुआ!

कुछ समय बाद, कबूतर शिकार से लौट आया। सबसे पहले उसने हमारे कौए को देखा, जो खूब शोर मचा रहा था। उसने उसका खूब मज़ाक उड़ाया! फिर वह कविता की तरह बोलने लगा:-

"यह गुच्छेदार सारस (*1) कौन है जिसे मैं देख रहा हूँ?"
जहां उसे रहने का कोई अधिकार नहीं है?
बाहर आओ! मेरा दोस्त कौआ पास ही है।
मुझे डर है कि कौन तुम्हें नुकसान पहुंचाएगा!
इस पर कौवे ने एक और छंद में उत्तर दिया:-

मैं कोई गुच्छेदार सारस नहीं हूँ—नहीं, नहीं!
एक लालची कौवे के अलावा और कुछ नहीं।
मैं वैसा नहीं करूंगा जैसा मुझे कहा गया था
तो जैसा कि आप देख सकते हैं, मुझे चुन लिया गया है।
और कबूतर ने तीसरी बात कहकर जवाब दिया:-

मुझे पता है, तुम्हें फिर दुख सहना पड़ेगा--
ऐसा करना आपकी प्रकृति है।
अगर लोग मांस का कोई व्यंजन बनाते हैं,
यह छोटी चिड़ियों के लिए नहीं है।
फिर कबूतर यह कहते हुए उड़ गया—"मैं इस प्राणी के साथ नहीं रह सकता।" और कौआ वहीं कराहता रहा जब तक कि उसकी मृत्यु नहीं हो गई।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के समापन पर लालची भाई (भिक्षु) ने तीसरे मार्ग (समाधि) का फल प्राप्त किया: "उन दिनों लालची भाई लालची कौआ था; और मैं कबूतर था।"

फुटनोट:

(1) "जिसका दादा बादल है (शाब्दिक अर्थ: तेज चलने वाला)" जोड़ा गया है। अंधविश्वास:- सारस गरज की आवाज से गर्भ धारण करते हैं। इसलिए गरज को उनका पिता और गरजने वाले बादल को उनका दादा कहा जाता है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **अनाम-जातक**2
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-275-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 275

“यह सुंदर सारस कौन है?” इत्यादि – यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक लालची भिक्षु के बारे में सुनाई थी। ये दोनों कहानियाँ बिल्कुल एक जैसी हैं। और ये हैं वो श्लोक:-

"यह खूबसूरत सारस कौन है, और क्यों?"
क्या वो मेरे कौवे की टोकरी में लेटा है?
एक गुस्सैल पक्षी, मेरा दोस्त कौआ!
आपको बता दूं, यह उसका घोंसला है!
"क्या तुम मुझे नहीं जानते, मेरे मित्र?"
हम सब मिलकर खाना खिलाते थे!
मैं वैसा नहीं करूंगा जैसा मुझे कहा गया था।
तो अब मुझे निकाल लिया गया है, जैसा कि आप देख सकते हैं।
मुझे पता है, तुम्हें फिर दुख सहना पड़ेगा--
ऐसा करना आपकी प्रकृति है।
जब लोग मांस का व्यंजन बनाते हैं
यह छोटे पक्षियों के खाने के लिए नहीं है।
पहले की तरह ही, बोधिसत्व ने कहा—"मैं अब यहाँ और नहीं रह सकता," और कहीं उड़ गए।

जब यह प्रवचन समाप्त हुआ, तो गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के समापन पर, लालची भाई (भिक्षु) ने तीसरे मार्ग (सम्मोहन) का फल प्राप्त किया: "लालची भाई कौआ था, और मैं कबूतर था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कुरुधम्म-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-276-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 276
कुरुधम्म-जातक

"अपने धर्म को जानना," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें एक भिक्षु ने जंगली हंस को मार डाला था। श्रावस्ती शहर से आए दो घनिष्ठ मित्र भिक्षुओं ने दीक्षा लेकर संन्यासी जीवन अपना लिया था और वे अक्सर साथ-साथ घूमते थे। एक दिन वे अचिरवती नदी पर पहुँचे। स्नान करने के बाद वे रेत पर खड़े होकर धूप सेंक रहे थे और आपस में सुखद बातें कर रहे थे। तभी दो जंगली हंस उनके सिर के ऊपर से उड़ गए। उनमें से एक ने पत्थर उठाया। उसने कहा, "मैं इस हंस की आँख में मारूंगा!" दूसरे ने कहा, "तुम नहीं मार सकते।" पहले ने कहा, "हाँ, मैं मार सकता हूँ, और इतना ही नहीं - मैं अपनी इच्छा अनुसार इस आँख या उस आँख में मार सकता हूँ।" दूसरे ने कहा, "तुम नहीं!" पहले ने कहा, "तो देखो!" और एक तिकोना पत्थर उठाकर उसने हंस पर फेंक दिया। कंकड़ की सरसराहट सुनकर पक्षी ने अपना सिर घुमाया। तभी दूसरे पक्षी ने एक गोल कंकड़ उठाया और उसे इस तरह फेंका कि वह पास वाली आंख पर लगा और दूसरी आंख से निकल गया। हंस जोर से चिल्लाते हुए बार-बार पलटा और उनके पैरों के पास गिर पड़ा।

वहाँ खड़े भिक्षुओं ने जो कुछ हुआ देखा, वे दौड़कर आए और उसे फटकारने लगे। उन्होंने कहा, “कितनी शर्म की बात है कि तुमने, जिसने हमारे जैसे महान उपदेश को अपनाया है, किसी जीवित प्राणी का प्राण ले लिया!” वे उसे अपने साथ तथागत (बुद्ध) के समक्ष ले गए। गुरु ने पूछा, “क्या वे जो कह रहे हैं वह सच है? क्या तुमने सचमुच किसी जीवित प्राणी का प्राण लिया है?” भिक्षु ने उत्तर दिया, “जी, श्रीमान।” गुरु ने कहा, “भाई, तुमने इतने महान मोक्ष (निर्वाण) के मार्ग को अपनाकर यह काम कैसे कर दिया? बुद्ध के प्रकट होने से पहले के ज्ञानी पुरुष, यद्यपि वे संसार में रहते थे और सांसारिक जीवन अपवित्र है, फिर भी वे केवल छोटे-मोटे पापों के लिए पश्चाताप करते थे; परन्तु तुमने, जिसने इस महान उपदेश को अपनाया है, कोई संदेह नहीं किया। एक भिक्षु को अपने कर्म, वचन और विचार पर नियंत्रण रखना चाहिए।” फिर उन्होंने एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब कुरु राज्य के इंद्रप्रस्थ नगर में धनंजय राजा थे, तब उनकी रानी के पुत्र के रूप में बोधिसत्व का जन्म हुआ। समय बीतने पर वे तक्षशिला में पले-बढ़े और शिक्षा प्राप्त की। उनके पिता ने उन्हें उपसराय बनाया और बाद में अपने पिता की मृत्यु के बाद वे राजा बने और कुरु धर्म के मार्ग पर चलते हुए दस राजसी कर्तव्यों का पालन किया। कुरु धर्म का अर्थ है पांच सद्‌गुण; बोधिसत्व ने इन सद्‌गुणों का पालन किया और इन्हें पवित्र रखा; बोधिसत्व की तरह ही उनकी रानी, पत्नी, लघु भाई, उपसराय, कुलपुजारी, ब्राह्मण, सारथी, दरबारी, सारथी, कोषाध्यक्ष, अन्न भंडार के स्वामी, कुलीन व्यक्ति, कुली, राजनित्मी और दासी—सभी ने इनका पालन किया।

राजा, माता, पत्नी, वायसराय, पुजारी भी,
सारथी, रथ चालक और कोषाध्यक्ष
और जो राजा के अन्न भंडारों का प्रबंधन करता था,
कुली, शाही नर्तकी और मनोरंजन करने वाली महिला, कुल मिलाकर ग्यारह।
कुरु धर्म के नियमों का पालन किया।
इस प्रकार इन सभी ने पंच सद्‌गुणों का पालन किया और उन्हें निष्कलंक बनाए रखा। राजा ने छह दान-पुण्य केंद्र बनवाए, एक-एक शहर के चारों द्वारों पर, एक शहर के मध्य में और एक अपने घर के द्वार पर; वह प्रतिदिन 6 लाख सिक्के दान में वितरित करता था, जिससे पूरे भारत में उत्साह का संचार हुआ। पूरे भारत में दान के प्रति उसका प्रेम और प्रसन्नता व्याप्त हो गई।

उस समय कलिंग राज्य के दंतपुरा नगर में कलिंग नाम का एक राजा रहता था। उसके राज्य में बारिश नहीं हुई और सूखे के कारण अकाल पड़ गया। लोगों को लगा कि भोजन की कमी से महामारी फैल सकती है; और उन्हें सूखे और अकाल का डर सता रहा था। लोग बेसहारा होकर इधर-उधर भटक रहे थे, अपने बच्चों का हाथ थामे हुए। राज्य के सभी लोग दंतपुरा में एकत्रित हुए और राजा के द्वार पर जाकर उन्होंने गुहार लगाई।

जब राजा खिड़की के पास खड़ा था, तो उसने शोर सुना और पूछा कि लोग इतना शोर क्यों मचा रहे हैं।

"हे महाराज," उत्तर आया, "आपके पूरे राज्य में तीन भय छाए हुए हैं: बारिश नहीं हो रही, फसलें बर्बाद हो रही हैं, अकाल पड़ा है। लोग भूखे, बीमार और दरिद्र होकर अपने छोटे बच्चों को हाथ में लेकर इधर-उधर भटक रहे हैं। हे राजा, हमारे लिए बारिश कीजिए!"

राजा ने कहा, "यदि वर्षा न होती तो पूर्व के सम्राट क्या करते थे?"

"हे राजा, पूर्व के सम्राट, यदि वर्षा न हो तो दान देते थे, पवित्र दिन मनाते थे, सद्‌गुणों की प्रतिज्ञा करते थे और सात दिन तक अपने कक्ष में घास के गद्दे पर लेटते थे: तब वर्षा होती थी।"

“बहुत अच्छा,” राजा ने कहा; और उसने वैसा ही किया। फिर भी बारिश नहीं हुई। राजा ने अपने दरबारियों से कहा,

"जैसा आपने कहा था, मैंने वैसा ही किया है; लेकिन बारिश नहीं हो रही है। मैं क्या करूँ?"

"हे राजा, इंद्रप्रस्थ नगर में अंजना-वासभो नामक एक राजकीय हाथी है, जिसे काला बैल भी कहा जाता है। यह कुरु राजा धनंजय का है। हम इसे ले आएं; तब वर्षा होगी।"

"लेकिन हम ऐसा कैसे कर सकते हैं? राजा और उसकी सेना को हराना आसान नहीं है।"

"हे राजा, उससे लड़ने की कोई आवश्यकता नहीं है। राजा दान देने का शौकीन है, वह दान से प्रेम करता है: यदि उससे विनती की जाए, तो वह अपना सिर भी काट देगा, या अपनी सुंदर आँखें निकाल लेगा, या अपना राज्य तक त्याग देगा। हाथी के लिए भी विनती करने की कोई आवश्यकता नहीं होगी। वह उसे निःसंकोच दे देगा।"

"पर उनसे पूछने की हिम्मत कौन कर सकता है?" राजा ने कहा।

"ब्राह्मण, महान राजा!"

राजा ने ब्राह्मणों के एक गाँव से आठ ब्राह्मणों को बुलाया और पूरे आदर के साथ उन्हें हाथी माँगने के लिए भेजा। उन्होंने यात्रा के लिए पैसे लिए, यात्रा के वस्त्र पहने और एक रात से ज़्यादा विश्राम किए बिना तेज़ी से यात्रा करते हुए कुछ दिनों बाद शहर के द्वार पर स्थित भिक्षागृह में भोजन किया। जब उनकी शारीरिक आवश्यकताएँ पूरी हो गईं, तो उन्होंने पूछा, "राजा भिक्षागृह में कब आएँगे?"

उत्तर था, "पखवाड़े में तीन दिन - चौदहवें, पंद्रहवें और आठवें; लेकिन कल पूर्णिमा है, इसलिए वह कल भी आएगा।"

अगले दिन सुबह सवेरे ब्राह्मण पूर्वी द्वार से प्रवेश कर गए। बोधिसत्व भी स्नान और अभिषेक करके, उत्तम वस्त्रों से सुसज्जित होकर, एक सुंदर हाथी पर सवार होकर, एक विशाल समूह के साथ पूर्वी द्वार पर स्थित भिक्षागृह में आए। वहाँ वे हाथी से उतरे और अपने हाथों से सात-आठ लोगों को भोजन कराया। "इस प्रकार देते रहिए," उन्होंने कहा और हाथी पर सवार होकर दक्षिणी द्वार की ओर चल दिए। पूर्वी द्वार पर राजरक्षक बल की भारी संख्या के कारण ब्राह्मणों को कोई अवसर नहीं मिला; इसलिए वे दक्षिण की ओर चले गए और राजा के आने की प्रतीक्षा करने लगे। जब राजा द्वार से कुछ ही दूरी पर स्थित एक ऊँची जगह पर पहुँचे, तो उन्होंने अपने हाथ उठाकर राजा को विजयी घोषित किया। राजा ने अपने हाथी को तीखे डंडे से उस स्थान तक निर्देशित किया जहाँ वे थे। "हे ब्राह्मणों, आपकी क्या इच्छा है?" उन्होंने पूछा। तब ब्राह्मणों ने प्रथम श्लोक में बोधिसत्व के गुणों का वर्णन किया।

"हे प्रभु, हम आपके विश्वास और सद्‌गुणों को जानते हुए आपके पास आते हैं;
इस जानवर के खातिर हमने घर पर अपनी सारी संपत्ति खर्च कर दी (*1)।
इस पर बोधिसत्व ने उत्तर दिया, "ब्राह्मणों, यदि इस हाथी को प्राप्त करने में तुम्हारा सारा धन खर्च हो गया हो, तो चिंता मत करो—मैं इसे इसके समस्त वैभव सहित तुम्हें देता हूँ।" इस प्रकार उन्हें सांत्वना देते हुए उन्होंने ये दो श्लोक दोहराए:

चाहे आप वर्दी के लिए सेवा करें या न करें,
जो भी प्राणी मेरे पास यहाँ आएगा,
जैसा कि मेरे प्रशिक्षकों ने मुझे बहुत पहले सिखाया था,
यहां आने वाले सभी लोगों का हमेशा स्वागत किया जाएगा।
"मैं यह हाथी आपको उपहार में लाया हूँ।"
यह राजा का हिस्सा है, राजा के योग्य है!
उसे ले जाओ, उसके सभी अलंकृत वस्त्रों और सोने की चेन सहित।
ड्राइवर समेत सभी लोग अपने-अपने रास्ते चले जाओ।"
इस प्रकार महान पुरुष ने अपने हाथी पर सवार होकर कहा; फिर उतरकर उन्होंने उनसे कहा—"यदि इस पर कोई भी स्थान अलंकृत न हो, तो मैं उसे अलंकृत करके तुम्हें सौंप दूँगा।" उन्होंने तीन बार दाहिनी ओर मुड़कर उस प्राणी की जाँच की; परन्तु उन्हें उस पर कोई भी स्थान अलंकृत नहीं मिला। तब उन्होंने सूंड ब्राह्मणों के हाथों में सौंप दी; उन्होंने एक उत्तम स्वर्ण कलश से सुगंधित जल छिड़ककर उसे उनके हवाले कर दिया। ब्राह्मणों ने हाथी और उसके सामान को स्वीकार कर लिया और उसकी पीठ पर बैठकर दंतपुरा गए तथा उसे अपने राजा को सौंप दिया। परन्तु हाथी के आने के बावजूद अभी तक वर्षा नहीं हुई थी।

तब राजा ने दोबारा पूछा—"इसका कारण क्या हो सकता है?"

उन्होंने कहा, "कुरु राजा धनंजय कुरु धर्म का पालन करते हैं; इसीलिए उनके राज्य में हर दस-पंद्रह दिन में वर्षा होती है। यही राजा के अच्छे गुणों का प्रभाव है। यदि इस जानवर में कोई अच्छाई है भी, तो वह कितनी कम होगी!" तब राजा ने कहा, "इस हाथी को, इसके काठी समेत, इसके सभी सामान सहित, राजा को वापस दे दो। उनके द्वारा पालन किए जाने वाले कुरु धर्म के नियमों को एक स्वर्ण पट्टिका पर लिखो और उसे यहाँ ले आओ।" ये कहकर उन्होंने ब्राह्मणों और दरबारियों को विदा किया।

ये लोग राजा के सामने आए और उनका हाथी लौटाते हुए बोले, "महाराज, आपके हाथी के आने के बाद भी हमारे देश में बारिश नहीं हुई। लोग कहते हैं कि आप कुरु धर्म का पालन करते हैं। हमारे राजा स्वयं भी इसका पालन करना चाहते हैं, इसलिए उन्होंने हमें भेजा है और हमसे कहा है कि हम इसे एक सोने की थाली पर लिखकर उनके पास लाएँ। हमें इस धर्म के बारे में बताइए!"

"मित्रों," राजा ने कहा, "मैंने एक समय इस धार्मिकता का पालन किया था; परन्तु अब मुझे इसी बात पर संदेह है। यह धार्मिकता अब मेरे हृदय को प्रसन्न नहीं करती, इसलिए मैं इसे तुम्हें नहीं दे सकता।"

आप शायद पूछेंगे कि राजा को अब पुण्य क्यों नहीं मिल रहा था? दरअसल, हर तीसरे वर्ष, कत्तिका (*2) माह में राजा कत्तिका पर्व मनाते थे। इस पर्व के दौरान राजा बड़े वैभव से सजते-संवरते थे और देवदूतों की तरह वस्त्र धारण करते थे। वे चित्तराज नामक एक राक्षस, जो अनेक रंगों के राजा थे, के समक्ष खड़े होते थे और फूलों से लिपटे और रंग-बिरंगे तीर चारों दिशाओं में चलाते थे। इस बार राजा, पर्व के दौरान, एक झील के किनारे चित्तराज के समक्ष खड़े होकर चारों दिशाओं में तीर चला रहे थे। उन्हें तीन तीर तो दिख गए, लेकिन चौथा तीर, जो पानी के ऊपर से गया, उन्हें नहीं दिखा। राजा ने सोचा, "शायद जो तीर मैंने चलाया है, वह किसी मछली पर गिरा हो!" जैसे ही यह संदेह उत्पन्न हुआ, जीवना के पाप ने उनके पुण्य में दोष उत्पन्न कर दिया; इसीलिए उनके पुण्य ने उन्हें पहले की तरह आशीर्वाद नहीं दिया। राजा ने उनसे यह कहा और आगे बोला, "मित्रों, मुझे स्वयं पर संदेह है कि मैं कुरु धर्म के नियमों का पालन करता हूँ या नहीं; परन्तु मेरी माता उनका भला करती है। तुम उनसे यह नियम सीख सकते हो।"

“परन्तु, हे राजा,” उन्होंने कहा, “आपका किसी की जान लेने का कोई इरादा नहीं था। हृदय के इरादे के बिना किसी की जान नहीं ली जा सकती। हमें वह कुरु धर्म प्रदान कीजिए जिसका आपने पालन किया है!”

“तो लिखो,” उसने कहा। और उसने उन्हें सोने की थाली पर लिखने को कहा: “जीवितों की हत्या मत करो; जो न दिया गया हो उसे मत लो; वासना में बुराई के मार्ग पर मत चलो; झूठ मत बोलो; मादक पेय मत पियो।” फिर उसने आगे लिखा,

"फिर भी, इससे मुझे कोई आशीर्वाद नहीं मिलता; बेहतर होगा कि आप इसे मेरी माँ से सीख लें।"

दूतों ने राजा को प्रणाम किया और महारानी माँ से मिलने गए। उन्होंने कहा, "महारानी, लोग कहते हैं कि आप कुरु धर्म के नियमों का पालन करती हैं: कृपया हमें भी इसके बारे में बताएँ!"

महारानी ने कहा, "मेरे पुत्रों, मैंने एक समय इस धर्म का पालन किया था, परन्तु अब मुझे संदेह है। यह धर्म मुझे प्रसन्न नहीं करता, इसलिए मैं इसे तुम्हें नहीं दे सकती।" अब हमें बताया जाता है कि उनके दो पुत्र थे, बड़ा पुत्र राजा और छोटा पुत्र उपसराय। एक राजा ने बोधिसत्व को एक लाख मूल्य के उत्तम चंदन के इत्र और एक लाख मूल्य का सोने का हार भेजा। उसने अपनी माता का आदर करने के लिए ये सब उन्हें ही भेज दिया। उन्होंने सोचा, "मैं चंदन का इत्र नहीं लगाती, मैं हार नहीं पहनती। मैं इन्हें अपने पुत्रों की पत्नियों को दे दूंगी।" फिर उनके मन में विचार आया - "मेरे बड़े पुत्र की पत्नी मेरी प्रिय है; वह प्रधान रानी है: मैं उसे सोने का हार दूंगी; परन्तु छोटे पुत्र की पत्नी एक निर्धन प्राणी है, उसे मैं चंदन का इत्र दूंगी।" और इस प्रकार उन्होंने एक को हार दिया और दूसरे को इत्र। बाद में उसने सोचा, "मैं कुरु धर्म के नियमों का पालन करती हूँ; चाहे वे गरीब हों या न हों, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। बड़ों की चापलूसी करना उचित नहीं है। शायद ऐसा न करके मैंने अपने सद्गुण में कोई कमी कर दी है!" और उसे संदेह होने लगा; इसीलिए फिसलते हुए वह बोली।

दूतों ने कहा, "जब यह तुम्हारे हाथों में है, तो जो चाहो वह तुम्हें मिल जाएगा। अगर तुम्हें इतनी छोटी सी बात पर संदेह है, तो तुम और कौन सा पाप करोगे? इस तरह की बात से पुण्य नहीं टूटता। हमें कुरु धर्म का वचन दो!" और उन्होंने उससे वह वचन प्राप्त किया और उसे सोने की थाली पर लिख दिया।

"फिर भी, मेरे बेटों," महारानी ने कहा, "मैं इस धार्मिकता से प्रसन्न नहीं हूँ। लेकिन मेरी बहू इसका अच्छी तरह पालन करती है। उससे इसके बारे में पूछो।"

अतः उन्होंने आदरपूर्वक विदा ली और पुत्री से पहले की ही तरह पूछा। और पहले की ही तरह उसने उत्तर दिया, "मैं नहीं कर सकती, क्योंकि मैं स्वयं अब इसका पालन नहीं करती!" एक दिन जब वह जाली पर बैठी नीचे देख रही थी, तो उसने राजा को नगर में जुलूस निकालते हुए देखा; और उसके पीछे हाथी की पीठ पर वायसराय बैठा था। उसे वायसराय से प्रेम हो गया और उसने सोचा, "क्या होगा यदि मैं उससे मित्रता कर लूँ, और उसका भाई मर जाए, और फिर वह राजा बन जाए, और मुझसे विवाह कर ले!" तभी उसके मन में यह विचार कौंधा - "मैं, जो कुरु धर्म का पालन करती हूँ, जिसका विवाह हो चुका है, मैंने किसी दूसरे पुरुष को प्रेम दृष्टि से देखा! मेरे सद्गुण में यही दोष है!" उसे पश्चाताप सताने लगा। उसने यह बात दूतों को बताई।

तब उन्होंने कहा, “पाप मात्र एक विचार का उदय नहीं है। यदि तुम इतनी छोटी सी बात पर पश्चाताप करती हो, तो भला तुम कौन सा पाप कर सकती हो? इतनी छोटी सी बात से सद्गुण भंग नहीं होता; हमें भी यह धार्मिकता प्रदान करो!” और उसने उन्हें यह बात बताई, और उन्होंने इसे एक सोने की थाली पर लिख लिया। परन्तु उसने कहा, “परन्तु मेरे पुत्रों, मेरा सद्गुण परिपूर्ण नहीं है। परन्तु वायसराय इन नियमों का भली-भांति पालन करते हैं; तुम जाओ और उनसे ये नियम प्राप्त करो।”

फिर वे वायसराय के पास गए और पहले की तरह उनसे कुरु धर्म की जानकारी मांगी। वायसराय शाम को राजा से मिलने जाते थे और जब वे रथ में महल के प्रांगण में आते थे, तो यदि वे राजा के साथ भोजन करना चाहते थे और रात वहीं बिताना चाहते थे, तो वे लगाम और छड़ी रथ के जुए पर छोड़ देते थे; यह लोगों के लिए जाने का संकेत होता था; और अगली सुबह वे जल्दी वापस आते और वायसराय के जाने की प्रतीक्षा करते। सारथी रथ की देखभाल करता और सुबह जल्दी वापस आकर राजा के द्वार पर प्रतीक्षा करता। लेकिन यदि वायसराय उसी समय प्रस्थान करते, तो वे लगाम और छड़ी रथ में ही छोड़ देते और राजा से मिलने अंदर चले जाते। तब लोग इसे उनके शीघ्र प्रस्थान का संकेत समझकर महल के द्वार पर प्रतीक्षा करने लगते। एक दिन उन्होंने ऐसा ही किया और राजा से मिलने अंदर चले गए। लेकिन जैसे ही वे अंदर गए, बारिश शुरू हो गई; राजा ने यह देखकर उसे जाने नहीं दिया, इसलिए उसने भोजन किया और वहीं सो गया। लेकिन लोगों की एक बड़ी भीड़ उसके बाहर आने की प्रतीक्षा में खड़ी थी, और वे पूरी रात भीगते रहे। अगले दिन वायसराय बाहर आया और भीगी हुई भीड़ को देखकर मन ही मन सोचने लगा—"मैं, जो कुरु धर्म का पालन करता हूँ, मैंने इस पूरी भीड़ को असुविधा में डाल दिया! अवश्य ही मेरे सद्गुण में कोई कमी है!" और उसे पश्चाताप हुआ। इसलिए उसने दूतों से कहा: "अब

मुझे संदेह हो गया है कि क्या मैं वास्तव में इस धर्म का पालन करता हूँ; इसलिए मैं इसे आपको नहीं दे सकता;" और उसने उन्हें सारी बात बता दी।

“परन्तु,” उन्होंने कहा, “तुम्हें उन लोगों को सताने की कभी इच्छा नहीं हुई। जो अनचाहा हो, उसका हिसाब नहीं होता। अगर तुम्हें इतनी छोटी सी बात पर पछतावा हो, तो भला तुम किस गुनाह में लिप्त होगे?” इस प्रकार उन्होंने उससे इस धार्मिकता का ज्ञान भी प्राप्त किया और उसे अपनी सोने की थाली पर लिख लिया। “परन्तु,” उसने कहा, “यह धार्मिकता मुझमें पूर्ण नहीं हुई है। परन्तु मेरा पुजारी इसका भला करता है; जाओ, उससे इसके बारे में पूछो।” फिर वे पुजारी के पास चले गए।

एक दिन पुजारी राजा से मिलने जा रहे थे। रास्ते में उन्होंने एक रथ देखा; जो किसी दूसरे राजा ने भेजा था, और उसका रंग उगते सूरज जैसा था। उन्होंने पूछा, “किसका रथ?” उन्होंने कहा, “राजा के लिए भेजा गया है।” तब उन्होंने सोचा, “मैं बूढ़ा हो गया हूँ; अगर राजा मुझे यह रथ दे दें, तो इसमें सवारी करने का कितना आनंद आएगा!” जब वे राजा के सामने पहुँचे और समृद्धि की प्रार्थना के साथ उनका अभिवादन करने के बाद खड़े हुए, तो उन्होंने राजा को रथ दिखाया। राजा ने कहा, “यह तो बहुत सुंदर रथ है; इसे मेरे गुरु को दे दीजिए।” लेकिन पुजारी को इसे लेने में रुचि नहीं थी; बार-बार विनती करने पर भी नहीं। ऐसा क्यों था? क्योंकि उनके मन में यह विचार आया— “मैं, जो कुरु धर्म का पालन करता हूँ, दूसरों की संपत्ति पाने की लालसा रखता हूँ। यह तो मेरे सद्‌गुण में एक दोष है!” इसलिए उन्होंने इन दूतों को यह कहानी सुनाते हुए कहा, "मेरे पुत्रों, मुझे कुरु धर्म के बारे में संदेह है; यह धर्म अब मुझे आशीर्वाद नहीं देता; इसलिए मैं इसे तुम्हें नहीं सिखा सकता।"

लेकिन दूतों ने कहा, "केवल धन-संपत्ति की लालसा से पुण्य नष्ट नहीं होता। यदि तुम इतनी छोटी सी बात पर संदेह करते हो, तो वास्तव में तुम कौन सा पाप करोगे?" और उनसे भी उन्होंने पुण्य प्राप्त किया और उसे अपनी सोने की थाली पर लिख लिया। उन्होंने कहा, "फिर भी, यह पुण्य अभी मुझे लाभ नहीं देता; परन्तु राजसी सारथी इसका सावधानीपूर्वक अभ्यास करता है। जाओ और उससे पूछो।" तो उन्होंने राजसी सारथी को ढूँढ़ा और उससे पूछा।

एक दिन सारथी खेत नाप रहा था। उसने एक डंडी में रस्सी बाँधी और उसका एक सिरा खेत के मालिक को पकड़ने के लिए दे दिया, और दूसरा सिरा खुद पकड़ लिया। रस्सी के जिस सिरे को उसने पकड़ा था, उससे बंधी हुई डंडी एक केकड़े के बिल तक पहुँच गई। उसने सोचा, "अगर मैं डंडी को बिल में डाल दूँ, तो बिल में बैठा केकड़ा घायल हो जाएगा; अगर मैं उसे दूसरी तरफ डाल दूँ, तो राजा की संपत्ति का नुकसान होगा; और अगर मैं उसे इस तरफ डाल दूँ, तो किसान का नुकसान होगा। अब क्या करूँ?" फिर उसने दोबारा सोचा—"केकड़ा अपने बिल में होना चाहिए; लेकिन अगर वह होता, तो वह खुद को दिखा देता;" इसलिए उसने डंडी को बिल में डाल दिया। केकड़े ने अंदर से 'क्लिक' की आवाज़ निकाली! फिर उसने सोचा, "डंडी केकड़े पर लगी होगी, और उसने उसे मार डाला होगा! मैं कुरु धर्म के नियमों का पालन करता हूँ, और अब इसमें एक खामी है!" तो उसने उन्हें यह बताया, और कहा, "इसलिए अब मुझे इस पर संदेह है, और मैं इसे आपको नहीं दे सकता।"

दूतों ने कहा, “तुम्हारी केकड़े को मारने की कोई इच्छा नहीं थी। बिना इरादे के किया गया काम मायने नहीं रखता; अगर तुम्हें इतनी छोटी सी बात पर संदेह है, तो तुम भला कौन सा बड़ा गुनाह करोगे?” और उन्होंने उसके मुख से यह नेकी की बात भी ले ली और उसे अपनी सोने की थाली पर लिख लिया। “परन्तु,” उसने कहा, “यद्यपि इससे मुझे कोई लाभ नहीं मिलता, पर सारथी इसका सावधानीपूर्वक पालन करता है; जाओ और उससे पूछ लो।”

अतः वे विदा लेकर सारथी की खोज में निकल पड़े। एक दिन सारथी राजा को रथ में बिठाकर उसके उद्यान में ले गया। राजा ने दिन भर वहाँ आनंद लिया और शाम को लौटकर रथ में बैठ गया। परन्तु शहर पहुँचने से पहले ही सूर्यास्त के समय तूफ़ानी बादल छा गए। सारथी को राजा के भीग जाने का डर सताने लगा, इसलिए उसने चाबुक से घोड़ों को तेज़ी से दौड़ाया: घोड़े तुरंत घर की ओर भागे।

तब से, पार्क जाते या वहाँ से आते समय, वे उस स्थान से तेज़ी से जाते थे। ऐसा क्यों था? क्योंकि उन्हें लगता था कि उस स्थान पर कोई खतरा है, और इसीलिए सारथी ने उन्हें कोड़े मारे थे। सारथी ने सोचा, "राजा गीले हों या सूखे, इसमें मेरी कोई गलती नहीं है; लेकिन मैंने इन प्रशिक्षित घोड़ों को समय से पहले कोड़े मार दिए, और इसलिए वे बार-बार तब तक तेज़ी से दौड़ते हैं जब तक कि वे थक न जाएँ, यह सब मेरी ही देन है। और मैं कुरु धर्म का पालन करता हूँ! इसमें ज़रूर कोई कमी है!" उसने यह बात दूतों से कही और बोला, "इसी कारण मुझे इस पर संदेह है, और मैं इसे तुम्हें नहीं दे सकता।" "लेकिन," उन्होंने कहा, "आपका इरादा घोड़ों को थकाने का नहीं था, और जो अनजाने में किया जाता है उसे हिसाब में नहीं लिया जाता। अगर आपको इतनी छोटी सी बात पर संदेह है, तो आप वास्तव में कौन सा गुनाह कर सकते हैं?" और उन्होंने उससे धर्म का ज्ञान भी प्राप्त किया और उसे अपनी सोने की थाली पर लिख लिया। लेकिन सारथी ने उन्हें एक धनी व्यक्ति की खोज में भेजते हुए कहा, "यद्यपि यह धार्मिकता मुझे आशीर्वाद नहीं देती, फिर भी वह इसकी सावधानीपूर्वक रक्षा करता है।"

तो वे उस धनी व्यक्ति के पास गए और उससे पूछा। एक दिन वह अपने धान के खेत में गया और उसने देखा कि धान की एक बाली छिलका तोड़ रही है। उसने उसे धान की एक छोटी सी बाली से बांधना शुरू किया और मुट्ठी भर धान लेकर उसे एक खंभे से बांध दिया। तभी उसके मन में यह बात आई—"इस खेत से मुझे अभी राजा को उसका हक देना है, और मैंने तो एक ऐसे खेत से मुट्ठी भर धान ले लिया है जिसका कोई हिसाब नहीं है! मैं, जो कुरु धर्म के नियमों का पालन करता हूँ, मैंने तो ज़रूर उनका उल्लंघन किया है!" और उसने यह बात दूतों को बताते हुए कहा, "अब मुझे अपने इस धर्म पर संदेह हो रहा है, इसलिए मैं तुम्हें यह धान नहीं दे सकता।"

"परन्तु," उन्होंने कहा, "तुम्हारे मन में चोरी का विचार ही नहीं था; इसके बिना किसी को चोरी का दोषी नहीं ठहराया जा सकता। यदि तुम्हें इतनी छोटी सी बात पर संदेह है, तो तुम भला किसी दूसरे की वस्तु कब लोगे?" और उनसे भी उन्हें धार्मिकता का ज्ञान प्राप्त हुआ और उन्होंने उसे अपनी सोने की थाली पर लिख लिया। उन्होंने आगे कहा, "फिर भी, यद्यपि मैं इस मामले में संतुष्ट नहीं हूँ, राजकोषीय अन्न भंडार का स्वामी इन नियमों का भली-भांति पालन करता है। जाओ, उनसे ये नियम और शर्तें मांग लो।" अतः वे उन्हें अन्न भंडार के स्वामी के पास ले गए।

एक दिन एक व्यक्ति अन्न भंडार के द्वार पर बैठा राजा के कर के चावल नाप रहा था। उसने बिना नापे हुए ढेर में से एक दाना उठाकर उसे निशान के तौर पर रख दिया। उसी क्षण बारिश होने लगी। अधिकारी ने सभी निशानों को गिना, और उन्हें इकट्ठा करके नापे हुए ढेर पर डाल दिया। फिर वह जल्दी से अंदर भागा और द्वार-गृह में बैठ गया। "क्या मैंने निशान नापे हुए ढेर पर डाले या बिना नापे हुए ढेर पर?" वह सोचने लगा; और उसके मन में यह विचार आया— "अगर मैं उन्हें नापे हुए ढेर पर डालूँ, तो राजा की संपत्ति बढ़ जाएगी और मालिकों को नुकसान होगा; मैं कुरु धर्म का पालन कर रहा हूँ; और अब यहाँ गलती हो गई!" उसने यह बात दूतों को बताई और कहा कि इसलिए उसे इस पर संदेह है और वह उन्हें यह बात नहीं बता सकता। लेकिन दूतों ने कहा, "तुम्हारे मन में चोरी का कोई विचार नहीं था, और इसके बिना कोई बेईमानी का दोषी नहीं ठहराया जा सकता। अगर तुम्हें इस छोटी सी बात पर संदेह होता है, तो तुम भला किसी दूसरे की कोई चीज़ क्यों चुराओगे?" और उनसे भी उन्होंने यह नेकी सीख ली और उसे अपनी सोने की थाली पर लिख लिया। "पर," उन्होंने आगे कहा, "यद्यपि यह सद्गुण मुझमें पूर्ण नहीं है, तो द्वारपाल है, जो इसका भला पालन करता है: जाओ और उससे यह सीख ले आओ।" तो वे चले गए और द्वारपाल से यह सद्गुण मांगा।

एक दिन, शहर का द्वार बंद होने के समय, उसने तीन बार ज़ोर से पुकारा। एक गरीब आदमी, जो अपनी सबसे छोटी बहन के साथ जंगल में लकड़ियाँ और पत्ते इकट्ठा करने गया था, आवाज़ सुनकर दौड़ता हुआ आया। द्वारपाल ने कहा, "क्या! क्या तुम्हें नहीं पता कि राजा शहर में है? क्या तुम्हें नहीं पता कि इस शहर का द्वार जल्दी बंद हो जाता है? क्या इसीलिए तुम जंगल में जाकर प्रेम करते हो?" दूसरे ने कहा, "नहीं, स्वामी, यह मेरी पत्नी नहीं, बल्कि मेरी बहन है।" तब द्वारपाल ने सोचा, "बहन को पत्नी कहना कितना अनुचित है! और मैं कुरु धर्म के नियमों का पालन करता हूँ; ज़रूर मैंने उन्हें तोड़ दिया होगा!" उसने दूतों से यह कहते हुए आगे कहा, "इस तरह मुझे संदेह है कि क्या मैं वास्तव में कुरु धर्म का पालन कर रहा हूँ, इसलिए मैं इसे तुम्हें नहीं दे सकता।" लेकिन उन्होंने कहा, "तुमने ऐसा इसलिए कहा क्योंकि तुम्हें ऐसा लगा; इससे तुम्हारा सद्गुण भंग नहीं होता। अगर तुम इतने मामूली कारण पर पश्चाताप करते हो, तो तुम जानबूझकर झूठ कैसे बोल सकते हो?" और इसलिए उन्होंने उससे वे सद्गुण भी ले लिए और उन्हें अपनी सोने की थाली पर लिख लिया।

फिर उन्होंने कहा, "परन्तु यह पुण्य मुझे प्राप्त न होने के बावजूद, एक राजसी नर्तकी और मदिरा कन्या है जो इसे भली-भांति धारण करती है; जाओ और उससे पूछो।" और उन्होंने वैसा ही किया। उसने भी अन्य लोगों की तरह ही इनकार कर दिया, जिसका कारण यह था। देवताओं (देवदूतों) के राजा सक्का (इंद्र) ने उसकी अच्छाई की परीक्षा लेने का निश्चय किया; इसलिए एक युवक का रूप धारण करके उन्होंने उसे एक हजार पान के टुकड़े देते हुए कहा, "मैं उचित समय पर आऊंगा।" फिर वे स्वर्ग लौट गए और तीन वर्षों तक उससे मिलने नहीं आए। और उसने सम्मान के लिए तीन वर्षों तक किसी अन्य पुरुष से पान का एक टुकड़ा भी नहीं लिया। धीरे-धीरे वह गरीब हो गई; और फिर उसने सोचा—"जिस व्यक्ति ने मुझे एक हजार पान के टुकड़े दिए थे, वह इन तीन वर्षों में नहीं आया; और अब मैं गरीब हो गई हूँ। मेरा पेट भरना मुश्किल है। अब मुझे मुख्य न्यायाधीशों को बताना होगा और पहले की तरह अपना वेतन लेना होगा।" तो वह दरबार में आई और बोली, "तीन साल पहले एक आदमी ने मुझे एक हजार सिक्के दिए थे, और फिर कभी वापस नहीं आया; पता नहीं वह मर गया है या नहीं। मेरा पेट नहीं भर रहा; मैं क्या करूँ, महाराज?" उसने कहा, "अगर वह तीन साल तक वापस नहीं आता, तो तुम क्या करोगी? पहले की तरह अपनी मजदूरी कमाओ।" इस फैसले के बाद जैसे ही वह दरबार से निकली, एक आदमी आया और उसने उसे एक हजार सिक्के देने की पेशकश की। जैसे ही उसने सिक्के लेने के लिए हाथ बढ़ाया, इंद्र प्रकट हुए। उसने कहा, "यह वही आदमी है जिसने मुझे तीन साल पहले एक हजार सिक्के दिए थे: मुझे तुम्हारा पैसा नहीं लेना चाहिए;" और उसने अपना हाथ पीछे खींच लिया। तब इंद्र प्रकट हुए और हवा में मंडराते हुए, उगते सूरज की तरह चमकने लगे, और सारे शहर को इकट्ठा कर लिया। इंद्र ने भीड़ के बीच में कहा, "उसकी अच्छाई की परीक्षा लेने के लिए मैंने उसे तीन साल पहले एक हजार सिक्के दिए थे। उसी की तरह बनो, और उसी की तरह अपनी इज्जत बचाओ;" और इस सलाह के साथ, उसने उसके कक्ष को सात प्रकार के रत्नों से भर दिया, और यह कहते हुए, "अब से सावधान रहना," उसने उसे सांत्वना दी और स्वर्ग चला गया। इस कारण उसने यह कहते हुए इनकार कर दिया, "क्योंकि एक मजदूरी कमाने से पहले ही मैंने दूसरी के लिए हाथ बढ़ाया, इसलिए मेरा सद्गुण पूर्ण नहीं है, और इसलिए मैं इसे आपको नहीं दे

सकती।" इस पर दूतों ने उत्तर दिया, "केवल हाथ बढ़ाना सद्‌गुण का उल्लंघन नहीं है: तुम्हारा वह सद्‌गुण तो सर्वोच्च पूर्णता है!" और उससे, और बाकी सभी से, उन्होंने सद्‌गुण के नियम प्राप्त किए, और उन्हें अपनी सोने की थाली पर लिख लिया। वे उसे अपने साथ दंतपुरा ले गए, और राजा को अपने अनुभव बताए।

तब उनके राजा ने कुरु नियमों का पालन किया और पंच सद्‌गुणों को परिपूर्ण किया। तब कलिंग राज्य में भरसक वर्षा हुई; तीनों भय दूर हुए; भूमि समृद्ध और उपजाऊ हो गई। बोधिसत्व ने जीवन भर दान-पुण्य किया और भलाई के कार्य किए, और फिर अपनी प्रजा के साथ स्वर्ग में चले गए।

जब गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की और जन्म-कथा का वर्णन किया। सत्यों की व्याख्या के बाद, कुछ ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) में प्रवेश किया, कुछ ने द्वितीय मार्ग में, कुछ ने तृतीय मार्ग में, और कुछ संत बन गए। और जन्म-कथा की व्याख्या इस प्रकार है:-

"उप्पलावन्ना राजसी नर्तकी और आनंद कन्या थीं, पुन्ना कुली थीं, और सारथी कुच्चना थे; कोलिता मापक थे; धनी व्यक्ति सारिपुत्र थे; रथ चालक अनुरुद्ध थे; और पुरोहित वरिष्ठ भिक्षु कश्यप थे; जो वायसराय थे, वे अब नंदपांडित हैं; राहुल की माता (बुद्ध की पत्नी) रानी-पत्नी थीं, रानी-माता माया (बुद्ध की दिवंगत जन्म माता) थीं; और राजा बोधिसत्व थे - इस प्रकार जन्म स्पष्ट है।"

फुटनोट:

(1) यानी हमने अपना सारा पैसा खाने पर खर्च कर दिया, इस भरोसे के साथ कि जब हम हाथी मांगेंगे तो आप हमें दे देंगे।

(2) अक्टूबर-नवंबर.

(3)अर्थात् संघ में (नत्ती एक 'संकल्प' है)।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **रोमक-जातक**
स्रोत : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित

पिछला <<<<-----||-277-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 277
रोमाका-जातक

"यहाँ पहाड़ियों में," इत्यादि—यह कहानी गुरु ने बाँस के जंगल में हत्या के प्रयास के बारे में सुनाई थी। परिस्थितियाँ स्वयं ही सब कुछ स्पष्ट कर देती हैं।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व कबूतर बन गए और कबूतरों के एक बड़े झुंड के साथ पहाड़ियों की एक गुफा में जंगल के बीचोंबीच रहने लगे। एक तपस्वी, एक गुणी व्यक्ति, ने कबूतरों के रहने के स्थान से कुछ ही दूरी पर स्थित एक सीमावर्ती गाँव के पास उनके लिए एक कुटिया बनाई थी और वे उसी गुफा में रहने लगे। बोधिसत्व समय-समय पर उनसे मिलने जाते और उनसे ज्ञानवर्धक बातें सुनते।

वहाँ लंबे समय तक रहने के बाद, वह तपस्वी चला गया; और वहाँ एक छद्म तपस्वी आकर रहने लगा। बोधिसत्व अपने कबूतरों के झुंड के साथ उससे मिलने गए और आदरपूर्वक उसका अभिवादन किया; उन्होंने दिन भर तपस्वी के निवास स्थान के आसपास फुदकते हुए और गुफा के सामने से भोजन इकट्ठा करते हुए बिताया और शाम को घर लौट गए। वहाँ वह छद्म तपस्वी पचास वर्षों से अधिक समय तक रहा।

एक दिन ग्रामीणों ने उसे कबूतर का मांस दिया, जिसे उन्होंने पकाया था। उसे स्वाद बहुत अच्छा लगा और उसने पूछा कि यह क्या है। उन्होंने कहा, "कबूतर का मांस।" उसने सोचा, "मेरे आश्रम में कबूतरों के झुंड आते हैं; मुझे उनमें से कुछ को मारकर खाना चाहिए।"

इसलिए उसने चावल, घी, दूध, जीरा और काली मिर्च ली और सब कुछ तैयार करके रख दिया; उसने अपने वस्त्र के एक कोने में एक लाठी छिपा ली और कबूतरों के आने का इंतजार करते हुए झोपड़ी के दरवाजे पर बैठ गया।

बोधिसत्व अपने अनुयायियों के साथ आए और यह पता लगाने लगे कि यह पाखंडी तपस्वी क्या दुष्ट कार्य कर रहा है। "वहाँ बैठा दुष्ट तपस्वी छल-कपट कर रहा है! शायद वह हमारे ही किसी व्यक्ति का खून पी रहा है; मैं उसका पर्दाफाश करूँगा!"

इसलिए वह हवा की दिशा में नीचे उतरा और उसे सूंघा। उसने कहा, "हाँ, वह आदमी हमें मारना और खाना चाहता है; हमें उसके पास नहीं जाना चाहिए;" और वह अपने झुंड के साथ उड़ गया। उसे दूर रहते देखकर साधु ने सोचा, "मैं उससे मीठी बातें करूँगा, उससे दोस्ती करूँगा, और फिर उसे मारकर खा जाऊँगा!" और उसने पहले दो श्लोक कहे:-

"यहाँ पहाड़ियों में, इक्यावन वर्षों से,
हे पंख वाले पक्षी! पक्षी मुझसे मिलने आते थे।
किसी भी बात पर संदेह नहीं, किसी भी भय से अनजान।
पूरी तरह सुरक्षित!
"अंडों से निकले ये बच्चे अब प्रतीत होते हैं
संदिग्ध रूप से किसी दूसरी पहाड़ी की ओर उड़ान भरना।
क्या वे अपना सारा पुराना सम्मान भूल गए हैं?
क्या वे अभी भी वही पक्षी हैं?
फिर बोधिसत्व पीछे हट गए और तीसरी बार दोहराया:

हम मूर्ख नहीं हैं, और हम आपको जानते हैं;
हम सब एक जैसे हैं, और आप भी एक जैसे हैं:
आप हमारी भलाई के खिलाफ साजिश रच रहे हैं।
तो, गलत विश्वास रखने वाले, यह डर हम महसूस करते हैं।"
"उन्होंने मुझे पहचान लिया!" झूठे तपस्वी ने सोचा। उसने अपनी लाठी पक्षी पर फेंकी, लेकिन निशाना चूक गया। "दूर हटो!" पक्षी बोला—"मेरा निशाना चूक गया!"

“तुम हमें याद कर रहे हो,” बोधिसत्व ने कहा, “परन्तु तुम चारों नरकों को नहीं भूलोगे! अगर तुम यहाँ रुके तो मैं गाँव वालों को बुलाकर तुम्हें चोर समझकर पकड़वा दूँगा। जल्दी भागो!” इस प्रकार उन्होंने उस व्यक्ति को धमकी दी और उड़ गए। साधु वहाँ और नहीं रह सका।

इस प्रवचन को समाप्त करते हुए शिक्षक ने जन्म का वर्णन किया: "उस समय देवदत्त तपस्वी थे; प्रथम तपस्वी, श्रेष्ठ तपस्वी, सारिपुत्र थे; और कबूतरों के मुखिया मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **महिसा-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-278-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 278
महिषा जातक

“तुम धैर्यपूर्वक क्यों सहन करते हो?” इत्यादि। यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक उद्दंड बंदर के बारे में सुनाई थी। श्रावस्ती नगर में, हमें बताया जाता है कि एक परिवार में एक पालतू बंदर था; वह हाथी के अस्तबल में घुस गया और एक गुणी हाथी की पीठ पर बैठकर

मल त्याग कर इधर-उधर चलने लगा। हाथी गुणी और धैर्यवान होने के कारण कुछ नहीं किया। लेकिन एक दिन उस हाथी की जगह एक दुष्ट बच्चा खड़ा हो गया। बंदर ने उसे वही समझकर उसकी पीठ पर चढ़ गया। हाथी ने उसे अपनी सूंड से पकड़ लिया और ज़मीन पर पटक कर उसके टुकड़े-टुकड़े कर दिए। यह बात भिक्षुओं की सभा में फैल गई; और एक दिन वे सब इस बारे में बात करने लगे। “भाई (भिक्षु), क्या आपने सुना है कि कैसे उस उद्दंड बंदर ने एक दुष्ट हाथी को अच्छा समझकर उसकी पीठ पर चढ़ गया और कैसे उसने अपनी जान गंवा दी?” गुरुजी अंदर आए और पूछा, "भाइयों (भिक्षुओं), आप यहाँ बैठकर किस बारे में बात कर रहे हैं?" और जब उन्होंने उन्हें बताया, "यह पहली बार नहीं है कि इस बदतमीज़ बंदर ने ऐसा व्यवहार किया है; इसने पहले भी ऐसा ही किया था:" और उन्होंने उन्हें एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब हिमालय क्षेत्र में एक भैंस के रूप में बोधिसत्व का जन्म हुआ। वे बलवान और विशालकाय होकर पहाड़ियों, पहाड़ों, चोटियों, गुफाओं और घने जंगलों में विचरण करते थे।

एक बार जब वह जा रहा था, तो उसे एक सुंदर वृक्ष दिखाई दिया और उसने उसके नीचे खड़े होकर भोजन किया।

फिर एक उद्दंड बंदर पेड़ से नीचे उतरा और अपनी पीठ पर चढ़कर मल त्याग किया; फिर उसने भैंस के एक सींग को पकड़ लिया और उसकी पूंछ से झूलते हुए खूब मस्ती करने लगा। बोधिसत्व, जो धैर्य, दया और करुणा से परिपूर्ण थे, ने उसके इस दुराचार पर जरा भी ध्यान नहीं दिया। बंदर ने यह क्रिया बार-बार दोहराई।

लेकिन एक दिन, उस पेड़ की आत्मा, पेड़ के तने पर खड़ी होकर, उससे बोली, "मेरे प्रभु भैंस, आप इस दुष्ट बंदर की बदतमीज़ी क्यों सहन कर रहे हैं? इसे रोकिए!" और इस विषय को समझाते हुए उसने पहले दो छंदों को इस प्रकार दोहराया:

"तुम हर विचित्र घटना को धैर्यपूर्वक क्यों सहन करते हो?"
यह शरारती और स्वार्थी बंदर तबाही मचा सकता है?
"उसे पैरों तले कुचल दो, अपने सींग से उसे भेद दो!"
उसे रोको वरना बच्चे भी उसका अपमान करेंगे।"
यह सुनकर बोधिसत्व ने उत्तर दिया, "हे वृक्ष-परी, यदि मैं इस बंदर के दुर्व्यवहार को उसकी जन्म, वंश और शक्तियों का अपमान किए बिना सहन नहीं कर सकता, तो मेरी इच्छा कैसे पूरी हो सकती है? परन्तु यह बंदर किसी और के साथ भी ऐसा ही करेगा, उसे मेरे समान समझकर। और यदि वह किसी भयंकर भैंस के साथ ऐसा करे, तो वे उसे निश्चित रूप से मार डालेंगे। जब कोई और उसे मार डालेगा, तो मैं पीड़ा और रक्तपात के दोष से मुक्त हो जाऊंगा।" और यह कहकर उन्होंने तीसरा श्लोक दोहराया:

"अगर वह दूसरों के साथ भी वैसा ही व्यवहार करे जैसा वह अभी मेरे साथ कर रहा है,
वे उसे नष्ट कर देंगे; तब मैं मुक्त हो जाऊंगा।"
कुछ दिनों बाद, बोधिसत्व कहीं और चले गए, और उनकी जगह एक दूसरा भैंसा, एक खूंखार जानवर, आकर खड़ा हो गया। दुष्ट बंदर ने उसे पुराना भैंसा समझकर उसकी पीठ पर चढ़ गया और पहले जैसा ही करने लगा। भैंसे ने उसे ज़मीन पर पटक दिया, अपना सींग बंदर के दिल में गाड़ दिया और उसे अपने खुरों से कुचल कर चूर-चूर कर दिया।

जब गुरु ने यह उपदेश समाप्त किया, तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: "उस समय दुष्ट भैंसा वही था जो अब दुष्ट हाथी है, दुष्ट बंदर भी वही था, लेकिन गुणी और श्रेष्ठ भैंसा मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **शतपट्ट-जातक**
__स्रोत__: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित

पिछला <<<<-----||-279-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 279
शतपत्त-जातक

“जैसे वह युवक अपने रास्ते पर था,” इत्यादि। यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में पांडुका और लोहिता के बारे में सुनाई थी। छह पथभ्रष्ट भिक्षुओं में से दो—मैत्तिया और भूमजा—राजगृह नगर के पास रहते थे; दो, असजी और पुनाबसु, कितागिरि के पास, और बाकी दो, पांडुका और लोहिता, श्रावस्ती नगर के पास जेतवन मठ में रहते थे। वे शिक्षा में निर्धारित बातों पर प्रश्न उठाते थे; वे अपने मित्रों और घनिष्ठ मित्रों को यह कहकर प्रोत्साहित करते थे, “हे भिक्षु, तुम जन्म, वंश या चरित्र में इनसे कमतर नहीं हो; यदि तुम अपने मतों को त्याग दोगे, तो ये तुम पर बहुत श्रेष्ठ हो जाएँगे।” इस प्रकार की बातें कहकर वे उन्हें अपने मतों को त्यागने से रोकते थे, और इस प्रकार संघर्ष, झगड़े और विवाद उत्पन्न हो गए। भिक्षुओं ने यह बात भगवान बुद्ध को बताई। भगवान बुद्ध ने इस कारण से भिक्षुओं को एकत्रित किया, ताकि वे स्पष्टीकरण दे सकें। पांडुका और लोहिता को बुलाकर उन्होंने उनसे कहा, "भाइयों, क्या यह सच है कि आप स्वयं कुछ मामलों पर सवाल उठाते हैं और लोगों को अपनी राय देने से रोकते हैं?" उन्होंने उत्तर दिया, "हाँ।" तब उन्होंने कहा, "तो फिर आपका व्यवहार उस मनुष्य और सारस की कहानी जैसा है;" और उन्होंने उन्हें एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज था, तब काशी के एक गाँव में एक परिवार में बोधिसत्व का जन्म हुआ। बड़े होकर, उन्होंने खेती या व्यापार से जीविका कमाने के बजाय, पाँच सौ डाकुओं को इकट्ठा किया और उनके सरदार बन गए, और सड़कों पर लूटपाट और घरों में सेंध लगाकर अपना जीवन यापन करने लगे।

अब ऐसा हुआ कि एक जमींदार ने किसी को एक हजार सिक्के दिए और उन्हें वापस मिलने से पहले ही उसकी मृत्यु हो गई। कुछ समय बाद, उसकी पत्नी अपनी मृत्युशय्या पर पड़ी थी और अपने बेटे से बोली,

"बेटा, तुम्हारे पिता ने एक आदमी को हज़ार सिक्के दिए और उन्हें वापस लिए बिना ही उनकी मृत्यु हो गई; अगर मैं भी मर जाऊं, तो वह तुम्हें वह नहीं देंगे। जाओ, जब तक मैं जीवित हूं, उससे कहो कि वह उसे वापस लाए और तुम्हें दे दे।"

तो बेटा गया और पैसे ले आया।

माँ की मृत्यु हो गई; लेकिन वह अपने बेटे से इतना प्यार करती थी कि वह अचानक (*1) एक सियार के रूप में उस रास्ते पर प्रकट हुई जिससे वह आ रहा था। उस समय, लुटेरों का सरदार अपने गिरोह के साथ यात्रियों को लूटने के लिए सड़क के किनारे घात लगाए बैठा था। और जब उसका बेटा जंगल के प्रवेश द्वार पर पहुँचा, तो सियार बार-बार लौटकर उसे रोकने की कोशिश करता रहा; यह कहते हुए, "मेरे बेटे, जंगल में मत जाओ! वहाँ लुटेरे हैं, जो तुम्हें मार डालेंगे और तुम्हारा सारा पैसा छीन लेंगे!"

लेकिन वह आदमी उसकी बात समझ नहीं पाया। "बदकिस्मती!" उसने कहा, "यहाँ एक सियार मेरा रास्ता रोकने की कोशिश कर रही है!" और उसने लाठियों और पत्थरों से उसे भगा दिया और जंगल में चला गया।

और एक सारस लुटेरों की ओर उड़ता हुआ चिल्लाया—"देखो, एक आदमी के हाथ में हज़ार सिक्के हैं! उसे मार डालो और सिक्के ले लो!" उस युवक को समझ नहीं आया कि वह क्या कर रहा है, इसलिए उसने सोचा, "वाह! यह तो एक शुभ पक्षी है! अब मेरे लिए एक अच्छा शगुन है!" उसने आदरपूर्वक प्रणाम करते हुए कहा, "आवाज उठाओ, आवाज उठाओ, मेरे स्वामी!"

सभी ध्वनियों का अर्थ जानने वाले बोधिसत्व ने इन दोनों के कार्यों को देखा और सोचा: "सियार उस आदमी की माँ होगी; इसलिए वह उसे रोकने की कोशिश कर रही है और उसे बता रही है कि उसे मार डाला जाएगा और लूट लिया जाएगा; लेकिन सारस उसका कोई शत्रु होगा, इसलिए वह कह रहा है 'उसे मार डालो और धन ले लो;' और वह आदमी समझ नहीं पा रहा है कि क्या हो रहा है, और अपनी माँ को, जो उसका भला चाहती है, भगा देता है, जबकि सारस, जो उसका बुरा चाहता है, उसकी पूजा इस विश्वास में करता है कि वह उसका शुभचिंतक है। वह आदमी मूर्ख है।"

(बोधिसत्व, यद्यपि वे महान प्राणी हैं, कभी-कभी दुष्ट पुरुषों के रूप में जन्म लेकर दूसरों की संपत्ति हड़प लेते हैं; उनका कहना है कि यह कुंडली दोष के कारण होता है।)

तो वह युवक आगे बढ़ता गया और कुछ समय बाद डाकुओं के समूह में शामिल हो गया। बोधिसत्व ने उसे पकड़ लिया और पूछा, "तुम कहाँ रहते हो?"

"बनारस में।"

"आप कहां थे?"

"एक खास गांव में मुझे एक हजार चीजें मिलनी थीं; और मैं वहीं था।"

"क्या आपको मिला?"

"हाँ मैंने किया।"

"तुम्हें किसने भेजा?"

"गुरुजी, मेरे पिता की मृत्यु हो गई है और मेरी माता बीमार हैं; उन्होंने ही मुझे भेजा है, क्योंकि उन्हें लगा कि उनकी मृत्यु के बाद मुझे यह नहीं मिलेगा।"

"और क्या आपको पता है कि अब आपकी माँ के साथ क्या हुआ है?"

"नहीं, स्वामी।"

"तुम्हारे जाने के बाद उसकी मृत्यु हो गई; और वह तुमसे इतना प्यार करती थी कि वह तुरंत सियार बन गई और तुम्हें मारे जाने के डर से रोकने की कोशिश करती रही। तुमने उसी को डराकर भगा दिया। लेकिन सारस हमारा दुश्मन था, जो आया और उसने हमें तुम्हें मारने और तुम्हारा पैसा लेने को कहा। तुम इतने मूर्ख हो कि तुमने अपनी माँ को तुम्हारा भला चाहने वाली समझा, जबकि वह तुम्हारा भला चाहती थी, और सारस को तुम्हारा भला चाहने वाली समझा। उसने तुम्हारा कोई भला नहीं किया, लेकिन तुम्हारी माँ तुम्हारे लिए बहुत अच्छी थी। अपना पैसा रखो और चले जाओ!" और उसने उसे जाने दिया।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त कर लिया, तो उन्होंने निम्नलिखित छंदों को दोहराया:

"जैसे ही युवक अपने रास्ते पर
 जंगल के सियार ने सोचा
 वह प्रतिद्वंद्वी था, उसके बने रहने का रास्ता,
 हालांकि उसने उसका भला करने की कोशिश की:
 वह झूठा सारस अपने सच्चे मित्र को समझ रहा है
 उसे बर्बाद करने की साजिश रची जा रही थी:
"ऐसा ही एक और व्यक्ति, जो यहाँ है,
 क्या उसके दोस्तों ने गलत समझा है?
 वे कभी भी उनका विश्वास नहीं जीत सकते।
 जो उसे उसके भले के लिए सलाह देते हैं।
"उनका मानना है कि जब दूसरे प्रशंसा करते हैं--"
 भयानक भय की भविष्यवाणी:
 पुराने जमाने के युवाओं की तरह
 मुझे उसके ऊपर उड़ता हुआ सारस बहुत पसंद आया (*2)।"
जब गुरु ने इस विषय पर विस्तार से चर्चा की, तो उन्होंने जन्म की पहचान बताई: "उस समय डाकुओं का सरदार मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) इस शब्द का तात्पर्य ऐसे प्राणी से है जो प्राकृतिक रूप से जन्म नहीं लेता, बल्कि माता-पिता की आवश्यकता के बिना आकार लेता है।

(2) वह मित्र जो लगातार दूसरे को लूटता रहता है; वह जो निरंतर विरोध करता रहता है; वह मित्र जो प्रसन्न करने के लिए चापलूसी करता है; व्यभिचार में साथ देने वाला मित्र; ये चारों बुद्धिमान हैं, जिनसे शत्रुओं की तरह भयभीत होना चाहिए, और निकट खतरे की स्थिति में इनसे दूर रहना चाहिए।

स्रोत: *डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-280-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 280
पुता-दुसाका-जातक

“निःसंदेह राजा,” इत्यादि — यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी, एक ऐसे व्यक्ति के बारे में जिसने मटके तोड़ दिए थे। श्रावस्ती नगर में, हमें पता चलता है, एक दरबारी ने बुद्ध और उनके साथियों को आमंत्रित किया और उन्हें अपने उद्यान में बैठाया। भोजन परोसते समय, उसने कहा, “जो लोग उद्यान में घूमना चाहते हैं, वे घूम सकते हैं।” भिक्षु उद्यान में घूमने लगे। उसी समय माली पत्तों से लदे एक पेड़ पर चढ़ गया और कुछ बड़े पत्ते पकड़कर बोला, “यह फूलों के लिए ठीक रहेगा, यह फल के लिए,” और उनसे मटके बनाकर पेड़ की जड़ में गिरा दिए। उसके छोटे बेटे ने गिरते ही हर एक को तोड़ दिया। भिक्षुओं ने यह बात गुरु को बताई। गुरु ने कहा, “भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि इस लड़के ने मटके तोड़े हैं: उसने पहले भी ऐसा किया है।” और उन्होंने उन्हें एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व का जन्म बनारस के एक परिवार में हुआ था। जब वे बड़े हुए और गृहस्थ जीवन व्यतीत कर रहे थे, तब किसी कारणवश वे एक उद्यान में गए, जहाँ कई बंदर रहते थे। माली अपने बर्तनों को, जैसा कि हमने वर्णन किया है, नीचे फेंक रहा था और बंदरों का सरदार उन्हें गिरते ही तोड़ रहा था। बोधिसत्व ने उससे कहा, "जैसे ही माली अपने बर्तन गिराता है, बंदर सोचता है कि माली उन्हें तोड़कर उसे प्रसन्न करने का प्रयास कर रहा है," और उन्होंने पहला श्लोक दोहराया:

"निस्संदेह जानवरों का राजा चतुर है।"
मिट्टी के बर्तन बनाने में; वह कभी नहीं
जिस चीज को इतनी मेहनत से बनाया गया है, उसे नष्ट कर दो।
जब तक कि उसका इरादा दूसरा बनाने का न हो।"
यह सुनकर बंदर ने दूसरी पंक्ति दोहराई:

न तो मेरे पिता और न ही मेरी माँ
और न ही मैं खुद दूसरा बना सकता था।
जो दूसरे बनाते हैं, हम उसे टुकड़े-टुकड़े कर देते हैं:
बंदरों का यही सही तरीका है!
और बोधिसत्व ने तीसरे उत्तर के साथ जवाब दिया:

"अगर यह बंदरों का उचित स्वभाव है,
ऐसे प्राणी के लिए अनुचित तरीका क्या है!
चले जाओ—इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि
आप या तो सही हैं या गलत—दोनों एक साथ!
और निंदा भरे इन शब्दों के साथ वह चला गया।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म की पहचान बताई: "उस समय बंदर वह लड़का था जो बर्तन तोड़ रहा था; लेकिन ज्ञानी व्यक्ति मैं स्वयं था।"

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **अब्भनतार-जातक**
स्रोत: *डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-281-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 281
अब्भंतरा-जातक

"वहाँ एक वृक्ष उगता है," इत्यादि - यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी, जिसमें वरिष्ठ भिक्षु सारिपुत्र ने भिक्षुणी बिम्बादेवी (जो बुद्ध की पत्नी यशोदरा के नाम से भी जानी जाती हैं) को आम का रस पिलाया था। जब परम बुद्ध ने अपने निर्वाणिक मार्ग का सार्वभौमिक प्रसार किया, तब वैशाली नगर के एक कमरे में निवास करते हुए, गौतम बुद्ध की प्रमुख पत्नी (यशोदरा) ने शाक्य वंश (बुद्ध का वंश) की पाँच सौ स्त्रियों के साथ दीक्षा ली और दीक्षा तथा शिष्यों के पूर्ण पवित्र क्रम को प्राप्त किया। इसके बाद, पाँच सौ भिक्षुणियाँ नंदका के उपदेश सुनकर संत बन गईं। लेकिन जब गुरुजी श्रावस्ती नगर के पास रह रहे थे, तब राहुल की माता (गौतम बुद्ध की पत्नी यशोदरा) ने मन ही मन सोचा, “मेरे पति ने संन्यासी जीवन अपनाकर असीम ज्ञान प्राप्त कर लिया है; मेरा पुत्र भी संन्यासी बन गया है (बुद्ध के पुत्र राहुल ने सात वर्ष की आयु में संन्यासी बन गए थे) और उनके साथ रहता है। मैं घर के बीच में क्या करूँ? मैं भी यही जीवन अपनाऊँगी, श्रावस्ती नगर जाऊँगी और वहाँ निरंतर बुद्ध और अपने पुत्र के दर्शन करती रहूँगी।” अतः उन्होंने एक मठ में शरण ली और संन्यासी संघ में प्रवेश कर लिया। वे श्रावस्ती नगर में अपने गुरुओं और प्रशिक्षकों के साथ एक कुटिया में रहने लगीं, जहाँ वे गुरुजी और अपने प्रिय पुत्र के दर्शन करती थीं। तभी नौसिखिए राहुल अपनी माताजी से मिलने आए।

एक दिन, बुद्ध की पत्नी (बहन) को पेट में तेज दर्द हुआ; जब उनका बेटा उनसे मिलने आया, तो वे उससे मिल नहीं पाईं, बल्कि कुछ अन्य लोगों ने आकर उन्हें बताया कि वह बीमार हैं। तब वह अंदर गए और अपनी माँ से पूछा, "क्या दवा लें?" माँ ने कहा, "बेटा, घर पर तो यह दर्द चीनी मिले आम के रस से ठीक हो जाता था; लेकिन अब हम भीख मांगकर गुजारा करते हैं, और वह रस हमें कहाँ मिलेगा?" नवोदित बेटे (राहुल) ने कहा, "मैं आपके लिए ले आता हूँ," और चले गए। अब, पूज्य राहुल के गुरु धर्म के प्रमुख (सारिपुत्र) थे, उनके गुरु महान मोग्गल्याण थे, उनके चाचा वरिष्ठ भिक्षु आनंद (बुद्ध के चचेरे भाई) थे, और उनके पिता परम बुद्ध थे: इस प्रकार वे सौभाग्यशाली थे। फिर भी, वे किसी और के पास नहीं गए, केवल अपने गुरु के पास गए; और उन्हें प्रणाम करने के बाद, उदास चेहरे के साथ उनके सामने खड़े हो गए। वरिष्ठ भिक्षु ने पूछा, "राहुल, तुम उदास क्यों लग रहे हो?" “महाराज,” उसने उत्तर दिया, “मेरी माताजी को पेट में दर्द है।” “उन्हें क्या लेना चाहिए?” “आम का रस और चीनी से उन्हें आराम मिलता है।” “ठीक है, मैं लाता हूँ; चिंता मत कीजिए।” अगले दिन वह लड़के को श्रावस्ती नगर ले गया और उसे प्रतीक्षालय में बैठाकर महल चला गया। कोसल के राजा ने वरिष्ठ भिक्षु को बैठने के लिए कहा। उसी क्षण माली पके हुए मीठे आमों की टोकरी ले आया। राजा ने छिलका उतारा, चीनी छिड़की, आमों को खुद मसला और वरिष्ठ भिक्षु के कटोरे में भर दिया। वरिष्ठ भिक्षु प्रतीक्षालय में वापस गए और आमों को नौसिखिए (राहुल) को देते हुए कहा कि वह उन्हें अपनी माताजी (बुद्ध की पत्नी) को दे दे; और उसने ऐसा ही किया। भिक्षुणी के खाते ही उसका दर्द ठीक हो गया। राजा ने दूत भी भेजे और कहा, “वरिष्ठ भिक्षु यहाँ आम का रस पीने के लिए नहीं बैठे हैं। जाकर पता लगाइए कि क्या उन्होंने इसे किसी को दिया है।” दूत बड़े भिक्षु के साथ गया और पता लगाकर राजा को बताने लौटा। राजा ने सोचा, "यदि गुरु (बुद्ध) सांसारिक जीवन में लौट आएं, तो वे सर्वशक्तिमान सम्राट होंगे; नवोदित राहुल उनके खजाने, युवराज (*1) होंगे, पवित्र नन (भिक्षुणी) उनकी खजाने, साम्राज्ञी होंगी, और सारा ब्रह्मांड उन्हीं का होगा। मुझे जाकर उनकी सेवा करनी चाहिए। अब वे पास में ही रहते हैं, समय बर्बाद करने का कोई समय नहीं है।" इसलिए उस दिन से वह लगातार पवित्र नन (बुद्ध की पत्नी) को आम का सिरप पिलाने लगा।

भिक्षुओं के बीच यह बात फैल गई कि कैसे वरिष्ठ भिक्षु ने पवित्र भिक्षुणी को आम का सिरप पिलाया। एक दिन वे सत्य के हॉल में बातें करने लगे: "मित्रों, मैंने सुना है कि वरिष्ठ भिक्षु सारिपुत्र ने भिक्षुणी बिम्बादेवी (यशोदरा, राहुल की माता और बुद्ध की पत्नी) को आम के सिरप से सांत्वना दी।" गुरुजी अंदर आए और पूछा, "अब तुम लोग क्या बात कर रहे हो?" जब उन्होंने बताया—"भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि राहुल की माता (बुद्ध की पत्नी) को वरिष्ठ भिक्षु ने आम के सिरप से सांत्वना दी हो; ऐसा पहले भी हो चुका है;" तो उन्होंने उन्हें एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व का जन्म काशी के एक गाँव में रहने वाले एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। बड़े होकर उन्होंने तक्षशिला में शिक्षा प्राप्त की, पारिवारिक जीवन में रम गए और माता-पिता के देहांत के बाद संन्यासी जीवन अपना लिया। इसके बाद वे हिमालय क्षेत्र में रहकर साधना और ज्ञान प्राप्ति के साधना-प्रसार में लगे रहे। कई ऋषि उनके चारों ओर एकत्रित हुए और वे उनके गुरु बन गए।

लंबी यात्रा के अंत में, वह नमक और मसाले लेने के लिए पहाड़ियों से नीचे आया और अपनी यात्रा के दौरान बनारस पहुँचा, जहाँ उसने एक उद्यान में अपना निवास स्थान बनाया। और इन पवित्र पुरुषों के समूह के पुण्य की महिमा से सक्का (इंद्र) का महल काँप उठा। सक्का (इंद्र) ने सोचा और समझा कि क्या हो रहा है। उसने सोचा, "मैं उनके जीवन को हानि पहुँचाऊँगा; फिर उनका विश्राम भंग होगा;

वे इतने व्याकुल होंगे कि उन्हें मन की शांति नहीं मिलेगी। तब मैं फिर से आराम पाऊँगा।" जब वह यह सोच रहा था कि यह कैसे किया जाए, तो उसे एक योजना सूझी। "मैं रात के मध्य पहर में मुख्य रानी के कक्ष में प्रवेश करूँगा और हवा में मंडराते हुए कहूँगा - 'हे देवी, यदि आप एक मध्यम आम खाएँगी, तो आप एक पुत्र को जन्म देंगी, जो सर्वशक्तिमान सम्राट बनेगा।'" वह राजा को बताएगी, और वह बाग से आम मंगवाएगा: मैं सारे फल गायब कर दूंगा। वे राजा से कहेंगे कि कोई आम नहीं है, और जब वह पूछेगा कि इसे कौन खाता है, तो वे कहेंगे 'तपस्वी'। तो ठीक मध्य पहर में, वह रानी के कक्ष में प्रकट हुआ, और हवा में मंडराते हुए, उसने अपने देवत्व को प्रकट किया, और उससे बातचीत करते हुए, पहले दो श्लोकों को दोहराया:-

"वहाँ एक वृक्ष उगता है, जिस पर दिव्य फल लगते हैं;
पुरुष इसे मध्यस्थ कहते हैं: और यदि कोई हो
वह गर्भवती होगी और उसका मांस खाएगी, वह जल्द ही
एक ऐसा व्यक्ति हो जो पूरी पृथ्वी पर शासन कर सके।
"महामहिम, आप वास्तव में एक शक्तिशाली रानी हैं;"
आपके पति, राजा, आपको बहुत प्यार करते हैं और आपसे प्रेम करते हैं।
उससे कहो कि वह तुम्हारी जरूरत के लिए आम ले आए।
और वही मध्य फल तुम्हें यहाँ लाएगा।
ये श्लोक सक्का (इंद्र) ने रानी को सुनाए; और फिर उनसे सावधान रहने और देरी न करने बल्कि स्वयं राजा को यह बात बताने के लिए कहकर, उन्हें प्रोत्साहित किया और अपने स्थान पर लौट गए।

अगले दिन, रानी बीमार होने का आभास देते हुए लेट गईं और अपनी दासियों को निर्देश देने लगीं। राजा सफेद छतरी के नीचे अपने सिंहासन पर बैठे नृत्य देख रहे थे। अपनी रानी को न देखकर उन्होंने एक दासी से पूछा कि वह कहाँ हैं।

"रानी बीमार हैं," लड़की ने उत्तर दिया।

इसलिए राजा उससे मिलने गया; और उसके पास बैठकर, उसकी पीठ सहलाते हुए पूछा, "क्या बात है, देवी?"

"कुछ नहीं," उसने कहा, "बस मुझे किसी चीज की तीव्र इच्छा हो रही है।"

"आप क्या चाहती हैं, महोदया?" उसने फिर पूछा।

"एक मध्यम आकार का आम, मेरे स्वामी।"

"बीच का आम जैसी कोई चीज कहाँ होती है?"

"मुझे नहीं पता कि बीच वाला आम क्या होता है; लेकिन मुझे पता है कि अगर मुझे एक भी आम नहीं मिला तो मैं मर जाऊंगा।"

"ठीक है, हम आपको एक दिलवा देंगे; आप चिंता न करें।"

तो राजा ने उसे सांत्वना दी और चले गए। वे शाही सोफे पर बैठ गए और अपने दरबारियों को बुलवाया। उन्होंने कहा, "मेरी रानी को मध्यम आकार का आम खाने की बहुत इच्छा हो रही है। क्या किया जाए?"

किसी ने उनसे कहा, "मध्यम आम वह होता है जो दो आमों के बीच उगता है। अपने उद्यान में लोगों को भेजिए और दो आमों के बीच उगने वाला एक आम ढूंढिए; उसका फल तोड़िए और हम उसे रानी को दे देंगे।" इसलिए राजा ने ऐसा करने के लिए लोगों को भेजा।

लेकिन इंद्र ने अपनी शक्ति से सारे फल ऐसे गायब कर दिए मानो उन्हें खा लिया गया हो। आम लेने आए लोगों ने पूरे उद्यान में खोजबीन की, लेकिन उन्हें एक भी आम नहीं मिला; इसलिए वे राजा के पास वापस गए और उन्हें बताया कि यहाँ आम नहीं हैं।

राजा ने पूछा, "आम कौन खाता है?"

"तपस्वी, मेरे स्वामी।"

“इन तपस्वियों को खूब मारो और उन्हें पार्क से बाहर निकाल दो!” उसने आदेश दिया। लोगों ने सुना और आज्ञा का पालन किया: इंद्र की इच्छा पूरी हुई। रानी आम के लिए तड़पती हुई लेटी रही।

राजा को समझ नहीं आ रहा था कि क्या करें। उन्होंने अपने दरबारियों और ब्राह्मणों को इकट्ठा किया और उनसे पूछा, "क्या आप जानते हैं कि बीच का आम क्या होता है?"

ब्राह्मणों ने कहा, "हे प्रभु, मध्यम आकार का आम देवताओं (देवदूतों) का हिस्सा है। यह हिमालय में, स्वर्ण गुफा में उगता है। हमने सदियों पुरानी परंपरा से यही सुना है।"

"अच्छा, इसे कौन जाकर ला सकता है?"

"कोई इंसान नहीं जा सकता; हमें एक छोटा तोता भेजना होगा।"

उस समय राजा के परिवार में एक सुंदर युवा तोता था, जो राजकुमारों की गाड़ी के पहिये जितना बड़ा, बलवान, चतुर और धूर्तता से परिपूर्ण था। राजा ने उस तोते को बुलवाया और उससे कहा, "प्रिय तोते, मैंने तुम्हारे लिए बहुत कुछ किया है: तुम सोने के पिंजरे में रहते हो; सोने की थाली में मीठा अनाज खाते हो; मीठा पानी पीते हो। मैं तुमसे एक काम करवाना चाहता हूँ।"

"आप बोलते रहिए, मेरे स्वामी," तोते ने कहा।

"पुत्र, मेरी रानी को एक मध्य भाग वाले आम की बहुत इच्छा है; यह आम हिमालय में, स्वर्ण पर्वत पर उगता है; यह देवताओं (देवदूतों) का हिस्सा है, कोई मनुष्य वहां नहीं जा सकता। तुम्हें वहां से यह फल लाना होगा।"

"बहुत अच्छा, महाराज, मैं ऐसा ही करूँगा," तोते ने कहा। तब राजा ने उसे सोने की थाली में मीठा अनाज खाने को दिया और चीनी का पानी पीने को दिया; फिर उसके पंखों के नीचे सौ गुना शुद्ध तेल लगाया; उसके बाद उसे दोनों हाथों में उठाया और खिड़की पर खड़े होकर उसे उड़ा ले गया।

राजा के आदेश पर, तोता मनुष्यों के मार्ग से परे, आकाश में उड़ता हुआ हिमालय के प्रथम पर्वतीय क्षेत्र में रहने वाले कुछ तोतों के पास पहुँचा। उसने उनसे पूछा, "मध्यम आम कहाँ है? मुझे उसका स्थान बताइए।"

उन्होंने कहा, "हमें नहीं पता, लेकिन पहाड़ियों की दूसरी श्रृंखला में रहने वाले तोते जरूर जानते होंगे।"

तोते ने बात सुनी और दूसरे क्षेत्र की ओर उड़ गया। उसके बाद वह तीसरे, चौथे, पाँचवें और छठे क्षेत्र में गया। वहाँ भी तोतों ने कहा, "हमें नहीं पता, लेकिन सातवें क्षेत्र में रहने वालों को पता होगा।" इसलिए वह वहाँ गया और पूछा कि बीच वाला आम का पेड़ कहाँ उगता है।

उन्होंने कहा, "गोल्डन हिल पर फलां जगह पर।"

उसने कहा, "मैं इसका फल लेने आया हूँ, मुझे वहाँ ले चलो और मेरे लिए फल ला दो।"

"यह राजा वेसवना का हिस्सा है। इसके पास जाना नामुमकिन है। जड़ से ऊपर तक पूरा पेड़ सात लोहे के जालों से घिरा हुआ है; इसकी रखवाली लाखों-करोड़ों कुम्भंडा राक्षस करते हैं; अगर वे किसी को देख लेते हैं, तो उसका अंत निश्चित है। यह जगह प्रलय की आग और नरक की आग जैसी है। ऐसी कोई बात मत पूछो!"

"अगर तुम मेरे साथ नहीं चलोगे, तो मुझे उस जगह का वर्णन करो," उसने कहा।

तो उन्होंने उसे फलां रास्ते से जाने को कहा। उसने उनकी बात ध्यान से सुनी। वह दिन में दिखाई नहीं दिया; लेकिन आधी रात को, जब जिन्न सो रहे थे, वह पेड़ के पास पहुँचा और धीरे से उसकी एक जड़ पर चढ़ने लगा, तभी लोहे का जाल खनखना उठा - जिन्न जाग गए - उन्होंने तोते को देखा और उसे पकड़कर चिल्लाए, "चोर!" फिर उन्होंने आपस में चर्चा की कि उसके साथ क्या किया जाए।

एक कहता है, "मैं उसे अपने मुंह में डालूंगा और निगल जाऊंगा!"

एक अन्य व्यक्ति कहता है, "मैं उसे कुचल दूंगा, अपने हाथों में मसल दूंगा और उसके टुकड़े-टुकड़े कर दूंगा!"

एक तीसरे व्यक्ति ने कहा, "मैं उसे दो टुकड़ों में काटूंगा, फिर उसे कोयलों पर पकाकर खा जाऊंगा!"

तोते ने उनकी बातचीत सुनी। बिना किसी डर के उसने उनसे कहा, "मैं कहता हूँ, तुम जिन्न हो, किसके आदमी हो?"

"हम राजा वेसवना के हैं।"

"अच्छा, तुम्हारा स्वामी एक राजा है, और मेरा स्वामी दूसरा है। बनारस के राजा ने मुझे यहाँ मध्य आम के वृक्ष का फल लाने भेजा था। मैंने वहीं अपने राजा के लिए प्राण त्याग दिए, और मैं यहाँ हूँ। जो अपने माता-पिता या स्वामी के लिए प्राण त्याग देता है, वह तुरंत स्वर्ग में जन्म लेता है। इसलिए मैं तुरंत इस पशु रूप से देवदूतों के लोक में चला जाऊँगा!" और उसने तीसरा श्लोक दोहराया:

वे चाहे जो भी स्थान प्राप्त करें
  जो, वीरतापूर्ण आत्म-विस्मृति द्वारा,
किसी स्वामी के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए पूरी लगन से प्रयास करो।
  मुझे भी जल्द ही उसी स्थान तक पहुँच प्राप्त हो जाएगी।"

इसी तरह वह इस श्लोक को दोहराते हुए प्रवचन देता रहा। जिन्नों ने सुना और मन ही मन प्रसन्न हुए। उन्होंने कहा, "यह एक नेक प्राणी है, हमें इसे मारना नहीं चाहिए—इसे जाने दो!" इसलिए उन्होंने उसे जाने दिया और कहा, "तोते, तुम आज़ाद हो! हमारे हाथों से निश्चिंत होकर जाओ!"

तोते ने कहा, "मुझे खाली हाथ मत लौटने दो, मुझे पेड़ से एक फल तोड़कर दो!"

“तोते,” उन्होंने कहा, “इस पेड़ से फल देना हमारा काम नहीं है। इस पेड़ के सारे फल चिह्नित हैं। अगर एक भी फल गलत हुआ तो हमारी जान चली जाएगी। अगर वेसवना क्रोधित हो जाए और एक बार भी देख ले, तो हज़ारों जिन्न चूर-चूर होकर ऐसे बिखर जाएंगे जैसे गर्म तवे पर भुने मटर उछल रहे हों। इसलिए हम तुम्हें कोई फल नहीं दे सकते। लेकिन हम तुम्हें एक ऐसी जगह बता देंगे जहाँ से तुम फल ले सकते हो।”

तोते ने कहा, "मुझे परवाह नहीं कि कौन देता है, मुझे फल चाहिए। मुझे बताओ कि मैं इसे कहाँ से प्राप्त कर सकता हूँ।"

"स्वर्ण पर्वत के घुमावदार रास्तों में से एक में जोतिरासा नाम का एक तपस्वी रहता है, जो वेसवना की प्रिय, कंचना-पत्ती या स्वर्णपत्ती नामक पत्तों की झोपड़ी में पवित्र अग्नि की रखवाली करता है; और उसे पेड़ से लगातार चार फल भेजता है; उसके पास जाओ।"

तोता विदा लेकर तपस्वी के पास आया; उसने तपस्वी को प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गया। तपस्वी ने उससे पूछा,

"तुम कहाँ से आए हो?" "बनारस के राजा से।" "तुम क्यों आए हो?"

"स्वामी, हमारी रानी को बीच वाले आम का फल खाने की बहुत इच्छा है, इसीलिए मैं आया हूँ। लेकिन जिन्नों ने मुझे स्वयं आम नहीं दिया, इसलिए उन्होंने मुझे आपके पास भेज दिया।"

“तो बैठ जाओ, तुम्हें एक मिलेगा,” तपस्वी ने कहा। फिर वे चार आए जो वेसवना भेजा करता था। तपस्वी ने उनमें से दो खा लिए, एक तोते को खाने को दिया, और जब तोते ने उसे खा लिया तो उसने चौथा एक धागे से तोते के गले में बांध दिया और उसे छोड़ दिया—“अब जाओ!” तोता वापस उड़कर आया और उसे रानी को दे दिया। रानी ने उसे खा लिया और अपनी इच्छा पूरी कर ली, लेकिन फिर भी उसे कोई पुत्र नहीं हुआ।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने इन शब्दों में जन्म की पहचान बताई: "उस समय राहुल की माता (बुद्ध की पत्नी) रानी थीं, आनंद तोता थे, सारिपुत्र आम देने वाले तपस्वी थे, लेकिन उद्यान में रहने वाले तपस्वी मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) एक सार्वभौमिक सम्राट के साम्राज्य के सात रत्नों या खजानों में से दो।

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सेय-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

जातक क्रमांक 282
सेय्या-जातक

“यह अच्छा है कि तुम जान लो,” इत्यादि — यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में कोसल के राजा के एक दरबारी के बारे में सुनाई थी। बताया जाता है कि वह व्यक्ति राजा के लिए बहुत उपयोगी था और राजा के सभी कार्यों को करता था। उसकी उपयोगिता के कारण राजा ने उसे बहुत सम्मान दिया। अन्य लोग उससे ईर्ष्या करते थे और उन्होंने उसके बारे में झूठी अफवाहें फैलाईं और उसे बदनाम किया। राजा ने उनकी बातों पर विश्वास कर लिया और बिना उसकी गलती जाने, उसे जंजीरों में बांधकर, जबकि वह गुणी और निर्दोष था, जेल में डाल दिया। वहाँ वह एकांत में रहा; परन्तु अपने सद्गुणों के कारण उसे मन की शांति प्राप्त हुई और मन की शांति से उसने जीवन के नियमों को समझा और प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की प्राप्ति की। कुछ समय बाद राजा को पता चला कि वह निर्दोष है और उसने उसकी जंजीरें तोड़ दीं तथा उसे पहले से भी अधिक सम्मान दिया। वह व्यक्ति गुरु को प्रणाम करना चाहता था; और फूल और इत्र लेकर वह मठ गया, बुद्ध को प्रणाम किया और आदरपूर्वक एक तरफ बैठ गया। गुरु ने उनसे बड़े आदर से बात की। उन्होंने कहा, "हमने सुना है कि आप पर विपत्ति आई है।" गुरु ने कहा, "जी हाँ, लेकिन मैंने अपनी विपत्ति को ही लाभ में बदल दिया; और जब मैं कारागार में था, तब मैंने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की प्राप्ति की।" गुरु ने कहा, "मित्र, तुम अकेले नहीं हो जिसने बुराई को भलाई में बदला है; क्योंकि प्राचीन काल के बुद्धिमान लोगों ने भी तुम्हारी ही तरह बुराई को भलाई में बदला था।" और उन्होंने एक प्राचीन कथा सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब उनकी रानी पत्नी के पुत्र के रूप में बोधिसत्व का जन्म हुआ। उनका पालन-पोषण और शिक्षा तक्षशिला में हुई; और अपने पिता की मृत्यु के बाद वे राजा बने और दस राजसी नियमों का पालन किया: उन्होंने दान दिया, सद्गुणों का अभ्यास किया और पवित्र दिनों का पालन किया।

अब उसके दरबारियों में से एक राजा की पत्नियों के बीच षड्यंत्र रचने लगा। नौकरों ने यह देखा और राजा को बताया कि फलां व्यक्ति षड्यंत्र कर रहा है। राजा को मामले की सच्चाई पता चली और उसने उसे बुलवाया। "फिर कभी मेरे सामने मत आना," उसने कहा और उसे निर्वासित कर दिया। वह व्यक्ति एक पड़ोसी राजा के दरबार में चला गया, और फिर वही हुआ जैसा कि ऊपर महासिलाव जन्म (*1) में वर्णित है। यहाँ भी इस राजा ने तीन बार उसकी परीक्षा ली, और दरबारी की बात पर विश्वास करके बनारस पर कब्जा करने के इरादे से एक बड़ी सेना लेकर बनारस के सामने आया। जब बनारस के राजा के पांच सौ प्रमुख योद्धाओं को यह बात पता चली, तो उन्होंने राजा से कहा,

"फलां-फलां राजा यहाँ आया है, देश को तबाह कर रहा है, बनारस पर कब्जा करने के इरादे से—चलो, हम उसे पकड़ लेते हैं!"

राजा ने कहा, "मुझे ऐसा कोई राज्य नहीं चाहिए जिसे हानि पहुँचाकर ही कायम रखा जा सके। कुछ भी न करो।"

लूटपाट करने वाले राजा ने शहर को घेर लिया। दरबारी फिर राजा के पास गए और बोले,

"मेरे स्वामी, कृपया ध्यान दें—आइए हम उसे पकड़ लें!"

“कुछ नहीं किया जा सकता,” राजा ने कहा। “नगर के द्वार खोल दो।” फिर, अपने दरबारियों से घिरे हुए, वह भव्य मंच पर राजसी ढंग से बैठ गए।

लुटेरा शहर में घुस गया, चारों द्वारों पर खड़े लोगों को मार गिराया और चबूतरे पर चढ़ गया। वहाँ उसने राजा और उसके पूरे दरबार को बंदी बना लिया, उन पर जंजीरें डालीं और उन्हें जेल में डाल दिया। जेल में बैठे राजा को लुटेरे पर दया आ गई और उसके मन में दया की भावना जागृत हुई। इसी दया के कारण दूसरे राजा को अपने शरीर में असहनीय पीड़ा हुई; वह मानो दो लपटों में जल रहा था; और अत्यधिक पीड़ा से व्याकुल होकर उसने पूछा कि क्या बात है।

उन्होंने उत्तर दिया, "तुमने एक धर्मी राजा को कैद में डाल दिया है, इसीलिए तुम पर यह विपत्ति आई है।"

वह बोधिसत्व के पास गया और उनसे क्षमा मांगी, और उनका राज्य वापस पाकर बोला, "तुम्हारा राज्य तुम्हारा ही रहे। अब से अपने शत्रुओं से निपटने का काम मुझ पर छोड़ दो।" उसने दुष्ट सलाहकार को दंडित किया और अपने नगर लौट आया।

बोधिसत्व अपने ऊंचे मंच पर भव्य वस्त्रों में, अपने दरबारियों से घिरे हुए, शान से विराजमान थे; और उन्हें संबोधित करते हुए उन्होंने प्रथम दो श्लोकों को दोहराया:

"यह बेहतर होगा कि आप जान लें, बेहतर हिस्सा"
यही करना हमेशा बेहतर होता है।
किसी के साथ दयालुतापूर्ण व्यवहार करके,
मैंने सौ लोगों को उनकी नियति की मौत से बचाया।
इसलिए मैं तुम सबको बताता हूँ कि तुम सबको दिखाओ
दयालुता और मित्रता की कृपा प्रिय है;
और फिर तुम अकेले स्वर्ग नहीं जा पाओगे।
हे कासी देश के लोगों, सुनो!
इस प्रकार उस महान सत्ता ने दया भाव से भरे लोगों के प्रति सद्गुण की प्रशंसा की; और बारह मील (4.23 किमी) के विशाल शहर बनारस में सफेद छत्र छोड़कर हिमालय में एकांतवास किया और धार्मिक (सन्यासी) जीवन व्यतीत किया।

गुरु ने अपनी पूर्ण बुद्धिमत्ता से तीसरे श्लोक को दोहराया:

"ये वे शब्द हैं जो मैंने, राजा कंस ने कहे थे।"
मैं, बनारस नगर का महान शासक।
मैंने अपना धनुष नीचे रख दिया, मैंने अपना तीर का थैला नीचे रख दिया।
और मैंने आत्म-नियंत्रण में महारत हासिल कर ली।"

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उस समय आनंद लूटपाट करने वाला राजा था, लेकिन बनारस का राजा मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) संख्या 51

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **वधकि-सूकर-जातक**
***स्रोत** : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-283-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 283
वद्धकी-सुकरा-जातक

“सर्वोत्तम, आप सदा सर्वश्रेष्ठ रहें,” इत्यादि — यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में वरिष्ठ भिक्षु धनुगहतिसा के बारे में सुनाई थी। राजा पसेनदी (प्रसेनजित) के पिता महाकोसला ने जब अपनी पुत्री कोसला का विवाह राजा बिम्बिसार से किया, तो उन्होंने स्नान और इत्र के बदले एक लाख की आय देने वाला काशी गाँव दे दिया। जब अजातशत्रु ने उनके पिता राजा की हत्या कर दी, तो कोसला शोक से मर गईं। तब राजा पसेनदी (प्रसेनजित) ने सोचा, “अजताशत्रु ने अपने पिता को मार डाला है, मेरी बहन अपने पति के दुर्भाग्य के कारण शोक से मर गई है; मैं काशी गाँव पिता के हत्यारे को नहीं दूँगा।” अतः उन्होंने अजातशत्रु को गाँव देने से इनकार कर दिया। इस गाँव को लेकर इन दोनों के बीच समय-समय पर युद्ध होते रहे। अजातशत्रु क्रूर और बलवान था, और पसेनदी (प्रसेनजित) बहुत वृद्ध थे, इसलिए अजातशत्रु बार-बार पराजित होता रहा, और महाकोसला गाँव के लोग आम तौर पर हारते रहे। तब राजा ने अपने दरबारियों से पूछा, “हम लगातार हार रहे हैं; क्या करें?” उन्होंने कहा, “महाराज, वरिष्ठ भिक्षु मंत्रों में निपुण हैं। हमें जेतवन मठ में रहने वाले भिक्षुओं की बात सुननी चाहिए।” तब राजा ने दूतों को भेजा और उनसे उचित समय पर भिक्षुओं की बात सुनने को कहा। उस समय मठ के पास ही पत्तों की झोपड़ी में दो वरिष्ठ भिक्षु रहते थे, जिनके नाम थे वरिष्ठ भिक्षु उत्त और वरिष्ठ भिक्षु धनुगहतिसा। धनुगहतिसा रात के पहले और दूसरे पहर सोए रहे; और अंतिम पहर में जागकर उन्होंने कुछ लकड़ियाँ तोड़ीं, आग जलाई और बैठ कर बोले, “उत्त, मेरे मित्र!”

“क्या बात है, मित्र तिस्सा?” “क्या तुम सो नहीं रहे हो?” “अब हम जाग गए हैं, क्या करें?” “उठो और मेरे पास बैठो।” ऐसा ही हुआ और उन्होंने उनसे बातें करना शुरू कर दिया। “वह मूर्ख, तोंददार कोसला, उबले हुए चावल से भरा कोई भी बर्तन बिना खराब हुए नहीं रख पाता; उसे युद्ध की योजना बनाना बिल्कुल नहीं आता। वह हमेशा पिटता रहता है और उससे हर्जाना वसूला जाता है।” “पर वह क्या करे?” तभी दूत उनकी बातें सुनने के लिए खड़े हो गए। वरिष्ठ भिक्षु धनुगहतिसा ने युद्ध के स्वरूप पर चर्चा की। “महाराज,” उन्होंने कहा, “युद्ध तीन प्रकार का होता है: कमल सेना, चक्र सेना और रथ सेना (*1)। यदि अजातशत्रु को पकड़ने की इच्छा रखने वाले लोग पहाड़ियों में दो पहाड़ी किलों में तुरंत सेना तैनात कर दें, और अपनी कमजोरी का दिखावा करें, और तब तक प्रतीक्षा करें जब तक कि वे उसे पहाड़ियों के बीच न पकड़ लें, और उसका मार्ग रोक दें, फिर दोनों किलों से निकलकर उसे आगे और पीछे से घेर लें और जोर से चिल्लाएं, तो वे उसे तुरंत पकड़ लेंगे, जैसे कोई मछली मुट्ठी में पकड़ी हो; और इस प्रकार वे उसे सुरक्षित कर लेंगे।” यह सब दूतों ने अपने राजा को बताया। राजा ने आक्रमण के लिए ढोल बजवाया, अपनी सेना को रथों के अनुसार व्यवस्थित किया, अजातशत्रु को जीवित पकड़ लिया; उसकी पुत्री, राजकुमारी वजिरा का विवाह उसने अपनी बहन के पुत्र से कर दिया और स्नान के धन के बदले उसे काशी गाँव के साथ विदा कर दिया।

यह घटना भिक्षुओं के बीच प्रसिद्ध हो गई। एक दिन, वे सभी सत्य के हॉल में इस विषय पर चर्चा कर रहे थे; "मित्रों, मैंने सुना है कि कोसल के राजा ने धनुग्गहतिसा के निर्देशों से अजातशत्रु को परास्त कर दिया।" गुरुजी अंदर आए; "भाइयों, तुम यहाँ बैठकर किस बारे में बात कर रहे हो?" उन्होंने पूछा। उन्होंने उन्हें बताया। गुरुजी ने कहा, "धनुग्गहतिसा ने युद्ध की चर्चा में जो चतुराई दिखाई है, वह पहली बार नहीं है" और उन्होंने उन्हें एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व वृक्ष-आत्मा के रूप में अवतरित हुए। उस समय बनारस के पास एक गाँव में कुछ बढ़ई रहते थे। उनमें से एक बढ़ई जंगल में लकड़ी लेने गया, तो उसे एक गड्ढे में गिरा हुआ एक छोटा सूअर मिला, जिसे वह घर ले आया और अपने पास रख लिया। वह बड़ा हो गया, उसके नुकीले दांत निकल आए और वह एक सभ्य प्राणी था। क्योंकि बढ़ई ने उसे अपने पास रखा था, इसलिए उसका नाम बढ़ई का सूअर पड़ गया। जब बढ़ई पेड़ काट रहा होता था, तो सूअर अपनी थूथन से पेड़ को पलट देता था और अपने दांतों से कुल्हाड़ी, छेनी और हथौड़ा निकालता था और नापने वाली रेखा को उसके सिरे से खींचता था। बढ़ई को डर था कि कहीं कोई उसे खा न जाए; इसलिए उसने उसे उठाया और जंगल में छोड़ दिया। सूअर जंगल में भाग गया, रहने के लिए एक सुरक्षित और सुखद जगह की तलाश में; अंत में उसने पहाड़ की ढलान पर एक बड़ी गुफा देखी, जिसमें बहुत सारे कंद, जड़ें और फल थे, जो रहने के लिए एक सुखद स्थान था। सैकड़ों अन्य जंगली सूअरों ने उसे देखा और उसके पास आ गए।

उसने उनसे कहा, "तुम ही हो जिसकी मुझे तलाश थी, और मुझे तुम मिल गए। यह जगह अच्छी लग रही है; और अब मैं यहीं तुम्हारे साथ रहना चाहता हूँ।"

उन्होंने कहा, "यह निश्चित रूप से एक अच्छी जगह है, लेकिन खतरनाक है।"

“अरे,” उसने कहा, “तुम्हें देखते ही मुझे आश्चर्य हुआ कि इतने समृद्ध स्थान में रहने वाले लोग शरीर और रक्त में इतने विरल कैसे हो सकते हैं। तुम्हें किस बात का डर है?”

"सुबह-सुबह एक बाघ आता है और जिसे भी देखता है उसे पकड़कर ले जाता है।"

क्या ऐसा हमेशा होता है, या कभी-कभार ही होता है?

"हमेशा।"

"वहाँ कितने बाघ हैं?"

"केवल एक।"

"क्या—तुम सबके लिए तो एक ही काफी है!"

"जी श्रीमान।"

"मैं उसे पकड़ लूंगा, बस तुम मेरी बात मानो। यह बाघ कहाँ रहता है?"

"उस पहाड़ी पर।"

अतः रात में उसने सूअरों को प्रशिक्षण दिया और उन्हें युद्ध के लिए तैयार किया; उन्हें युद्ध का विज्ञान समझाया। "युद्ध तीन प्रकार के होते हैं—कमल सेना, चक्र सेना और रथ सेना" और उसने उन्हें कमल के आकार में व्यवस्थित किया। वह लाभप्रद स्थान जानता था; इसलिए उसने कहा, "यहाँ हमें अपना युद्ध स्थापित करना चाहिए।" उसने माताओं और उनके दूध पीते बच्चों को मध्य में रखा; इनके चारों ओर उसने बिना बच्चों वाली मादा सूअरों को रखा; इनके चारों ओर छोटे सूअरों को; इनके चारों ओर अपेक्षाकृत छोटे सूअरों को; इनके चारों ओर उन सभी सूअरों को जिनके दांत विकसित हो चुके थे; इनके चारों ओर युद्ध के लिए तैयार, बलवान और शक्तिशाली सूअरों को दस-बीस की संख्या में रखा; इस प्रकार उसने उन्हें सधी हुई पंक्तियों में रखा। अपनी स्थिति के सामने उसने एक गोल गड्ढा खुदवाया; उसके पीछे, एक गड्ढा धीरे-धीरे गहरा होता गया, जो सूप (अनाज फटकने वाली टोकरी) के आकार का था (*2)। जैसे ही वह साठ-सत्तर सूअरों के साथ उनके बीच घूम रहा था और उन्हें साहस बनाए रखने के लिए कह रहा था, भोर हो गई।

बाघ जाग उठा। "अब समय आ गया है!" उसने सोचा। वह दौड़ता हुआ तब तक आगे बढ़ा जब तक उसे वे दिखाई नहीं दिए; फिर पठार पर रुक गया और सूअरों के झुंड को घूरने लगा। "तुम्हें भी घूरो!" बढ़ई के सूअर ने बाकी सूअरों को इशारा करते हुए कहा। सभी सूअरों ने उसे घूरा। बाघ ने अपना मुंह खोला और एक लंबी सांस ली: सभी सूअरों ने भी ऐसा ही किया। बाघ ने शौच किया: सूअरों ने भी। इस प्रकार बाघ जो भी करता, सूअर भी उसके पीछे वही करते।

"अरे, ये क्या हो रहा है!" बाघ ने हैरानी से कहा। "पहले तो ये मुझे देखते ही भाग जाते थे—दरअसल, इतना डरते थे कि दौड़ भी नहीं पाते थे। अब तो भागने की बजाय, ये मेरे सामने डटकर खड़े हो जाते हैं! मैं जो भी करता हूँ, ये उसकी नकल करते हैं। वहाँ एक आदमी ऊँची जगह पर बैठा है: उसी ने इस भीड़ को संगठित किया है। खैर, मुझे समझ नहीं आ रहा कि इनसे कैसे निपटूँ।" और वह मुड़कर अपनी मांद में वापस चला गया।

अब एक पाखंडी साधु था, जिसे बाघ के शिकार का हिस्सा मिलता था। इस बार बाघ खाली हाथ लौट आया। यह देखकर साधु ने निम्नलिखित श्लोक दोहराया।

"सर्वश्रेष्ठ, सर्वश्रेष्ठ जो आप हमेशा पहले लाते थे"
जब आप जंगली सूअर का शिकार करने गए थे।
अब तुम खाली हाथ होकर दुःख से व्याकुल हो रहे हो।
आज आपके भीतर अतीत की वो ताकत कहां है?
इस संबोधन पर, टाइगर ने एक और छंद दोहराया:

एक समय था जब वे चारों ओर हड़बड़ी मचाते थे।
उनकी कमियों को ढूंढने के लिए, एक भयभीत हार।
लेकिन अब वे घनी पंक्तियों में एकजुट होकर गुर्राते हैं:
वे अजेय हैं, डटकर मेरा सामना कर रहे हैं।"
"अरे, उनसे डरो मत!" साधु ने आग्रह किया। "एक दहाड़ और एक छलांग ही उन्हें बुरी तरह डरा देगी और वे घबराकर जल्दबाजी में भागने लगेंगे।" बाघ ने उनकी बात मान ली। हिम्मत जुटाकर वह वापस पठार पर खड़ा हो गया।

बढ़ई का सूअर दोनों गड्ढों के बीच खड़ा था। "देखो मालिक! वह बदमाश फिर आ गया!" सूअरों ने चिल्लाकर कहा। "अरे, डरो मत, अब वह हमारे हाथ में है।"

एक ज़ोरदार दहाड़ के साथ बाघ बढ़ई के सूअर पर झपटा। जैसे ही वह कूदा, सूअर चकमा खाकर सीधे गोल गड्ढे में गिर गया। बाघ रुक नहीं सका, बल्कि लुढ़कता हुआ दूसरे गड्ढे के जबड़ों में जा गिरा, जहाँ गड्ढा बहुत संकरा था। सूअर अपने गड्ढे से उछलकर बाहर आया और बिजली की तेज़ी से अपने दांत बाघ की जांघों में घुसा दिए, उसकी वृहनियों को चीर डाला, अपने नुकीले दांत उसके मीठे मांस में गाड़ दिए और उसके सिर को घायल कर दिया। फिर उसने उसे गड्ढे से बाहर फेंक दिया और ज़ोर से चिल्लाया—"ये रहा तुम्हारा दुश्मन!" जो पहले आए थे उन्हें बाघ खाने को मिला; लेकिन जो बाद में आए वे एक-दूसरे के मुंह सूंघते रहे और पूछते रहे कि बाघ का मांस कैसा होता है!

लेकिन सूअर अब भी बेचैन थे। "अब क्या बात है?" हमारे सूअर ने पूछा, जिसने उनकी हलचल पर ध्यान दिया था।

उन्होंने कहा, "गुरुजी, एक बाघ को मारना तो ठीक है, लेकिन वह पाखंडी साधु दस और बाघ ला सकता है!"

"कौन है ये?"

"एक दुष्ट तपस्वी।"

"मैंने बाघ को मार डाला है; क्या तुम्हें लगता है कि कोई आदमी मुझे नुकसान पहुंचा सकता है? चलो, हम उसे पकड़ लेते हैं।" यह कहकर वे सब चल पड़े।

अब वह आदमी सोच रहा था कि बाघ को आने में इतनी देर क्यों लग रही है। क्या उसे सूअरों ने पकड़ लिया होगा? उसने सोचा। आखिरकार वह रास्ते में उससे मिलने के लिए चल पड़ा; और जैसे ही वह चला, सूअर आ गए! उसने अपना सामान उठाया और भाग निकला। सूअर उसके पीछे दौड़े। उसने अपना बोझ फेंक दिया और पूरी तेज़ी से एक अंजीर के पेड़ पर चढ़ गया।

"अब तो मालिक, सब कुछ गड़बड़ हो गया!" झुंड चिल्लाया। "वह आदमी पेड़ पर चढ़ गया है!"

"कौन सा पेड़?" उनके नेता ने पूछा।

उन्होंने उत्तर दिया, "एक अंजीर का पेड़।"

“अच्छा, ठीक है,” सरदार ने कहा। “मादा सूअर पानी लाएँगी, बच्चे पेड़ के चारों ओर खुदाई करेंगे, नर सूअर जड़ों को नोचेंगे, और बाकी सब पेड़ को घेरकर पहरा देंगे।” उन्होंने उसके कहे अनुसार अपने-अपने काम किए; इसी बीच उसने एक मोटी जड़ पर पूरी ताकत से हमला किया, मानो कुल्हाड़ी से वार किया हो; और एक ही वार में उसने पेड़ को गिरा दिया। जो नर सूअर उस आदमी का इंतज़ार कर रहे थे, उन्होंने उसे नीचे गिरा दिया, उसके टुकड़े-टुकड़े कर दिए, और पल भर में उसकी हड्डियाँ कुतर कर साफ कर दीं!

अब उन्होंने बढ़ई के सूअर को पेड़ के तने पर बिठाया। उन्होंने मरे हुए आदमी के खोल को पानी से भर दिया और सूअर का अभिषेक करके उसे अपना राजा नियुक्त किया; एक युवा मादा सूअर को उन्होंने उसकी पत्नी नियुक्त किया।

ऐसा कहा जाता है कि यही उस प्रथा की उत्पत्ति है जिसका पालन आज भी किया जाता है। आजकल जब लोग किसी को राजा बनाते हैं, तो उसे अंजीर की लकड़ी की एक सुंदर कुर्सी पर बिठाया जाता है और उस पर तीन सीपियाँ छिड़की जाती हैं।

उस जंगल में रहने वाली एक परी ने यह अद्भुत दृश्य देखा। पेड़ के तने की एक दरार में प्रकट होकर, उसने सूअरों के सामने तीसरी पंक्ति दोहराई:

"यहां एकत्रित सभी जनजातियों को सम्मान मिले!"
मैंने स्वयं एक अद्भुत मिलन देखा!
हाथियों ने एक बाघ पर कैसे विजय प्राप्त की
संघीय शक्ति और एकता के बल पर!

इस प्रवचन के बाद गुरु ने जन्म का वर्णन किया: "वृद्ध भिक्षु धनुग्गहा बढ़ई का सूअर थे, और मैं वृक्ष-परी थी।"

फुटनोट:

(1) ये संस्कृत में भी तकनीकी शब्द हैं (पद्मव्यूहो, चकत डिग्री, चक्र डिग्री); देखें मनु 7. 188, 7. 187, और बीआर डाइट. एसवी। 'पहिया' स्वयं स्पष्ट है: 'गाड़ी' एक कील के आकार की पंक्ति थी; 'कमल', जैसा कि बुहलर (एसबीई पृष्ठ 246 में मनु का अनुवाद) ने उल्लेख किया है, "सभी तरफ समान रूप से फैला हुआ और पूरी तरह से गोलाकार है, जिसका केंद्र राजा द्वारा अधिग्रहित है।"

(2) फटकने (छानने) की टोकरी की तीन तरफ नीची दीवारें होती हैं, जिनमें से दो खुली तरफ ढलान वाली होती हैं। इसे हिंदी में 'सूप' भी कहते हैं।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सिरी-जातक**
***स्रोत**: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-284-II---->>>> अगला

जातक क्रमांक 284
सिरी-जातक

"कठिन परिश्रम करने वालों को ही धन प्राप्त होता है," इत्यादि — यह कथा गुरु (बुद्ध) ने एक ब्राह्मण के बारे में सुनाई जिसने सौभाग्य चुरा लिया था। इस जन्म-कथा की परिस्थितियाँ खदिरंगा जन्म (*1) में ऊपर दी गई हैं। पहले की तरह, अनाथपिंडिका के घर के द्वार पर तपस्या कर रही एक दुष्ट आत्मा चौवन करोड़ (10 मिलियन) सोना लाकर भंडारगृहों में भर लाई और उस महान व्यक्ति की मित्र बन गई। वह उसे गुरु के समक्ष ले आई। गुरु ने उसे प्रवचन दिया। उसने सुना और धर्म परिवर्तन के मार्ग पर चल पड़ी। तब से उस महान व्यक्ति का मान-सम्मान पहले की तरह ही बढ़ गया। अब श्रावस्ती नगर में एक ब्राह्मण रहता था, जो शुभ संकेतों का ज्ञाता था, उसने इस प्रकार सोचा, "अनाथपिंडिका गरीब था, फिर प्रसिद्ध हो गया। क्या होगा यदि मैं ऐसा दिखावा करूँ कि मैं उससे मिलने गया था और उसका सौभाग्य चुरा लूँ?" अतः वह उसके घर गया और उसका आतिथ्य सत्कार किया गया। शिष्टाचार के बाद, मेज़बान ने उससे पूछा कि वह क्यों आया है। ब्राह्मण यह देखने के लिए इधर-उधर देख रहा था कि उस व्यक्ति का भाग्य कहाँ छिपा है। अनाथपिंडिका के पास एक सफेद मुर्गा था, बिल्कुल साफ सफेद, जिसे वह सोने के पिंजरे में रखता था, और उस मुर्गे की कलगी में उस महान व्यक्ति का भाग्य छिपा था। ब्राह्मण ने चारों ओर देखा, जहाँ भाग्य छिपा था। "महाराज," उसने कहा, "मैं पाँच सौ युवकों को जादू-टोना सिखाता हूँ। हम एक ऐसे मुर्गे से परेशान हैं जो गलत समय पर बांग देता है। आपका मुर्गा सही समय पर बांग देता है। मैं उसी के लिए आया हूँ; क्या आप उसे मुझे दे देंगे?" "जी हाँ," दूसरे ने कहा: और जैसे ही यह शब्द बोला गया, वह देहाती मुर्गे की कलगी छोड़कर तकिये में रखे एक रत्न में जा बैठा। ब्राह्मण ने देखा कि भाग्य उस रत्न में चला गया है, और उसने उसे भी माँग लिया। जैसे ही मालिक उसे देने के लिए राजी हुआ, भाग्य रत्न छोड़कर तकिये पर रखे आत्मरक्षा के डंडे में जा बैठा। ब्राह्मण ने उसे देखा और फिर से माँग लिया। "इसे ले लो, और अब तुम जाओ," मालिक ने कहा; और पल भर में भाग्य गदा से निकलकर मालिक की मुख्य पत्नी, जिसका नाम लेडी पुन्नलक्खना था, के सिर पर जा गिरा। यह देखकर चोरी करने वाले ब्राह्मण ने सोचा, "यह एक ऐसी वस्तु है जिसे मैं मांग नहीं सकता।" फिर उसने उस महान व्यक्ति से कहा, "महाराज," उसने कहा, "मैं आपके घर आपका भाग्य चुराने आया था। भाग्य आपके मुर्गे की कलगी में था। लेकिन जब आपने मुझे मुर्गा दिया, तो भाग्य इस रत्न में चला गया; जब आपने मुझे रत्न दिया, तो वह आपकी छड़ी में चला गया; जब आपने मुझे छड़ी दी, तो वह उससे निकलकर लेडी पुन्नलक्खना के सिर पर चला गया। निश्चय ही यह ऐसी वस्तु है जिसे मैं कभी नहीं पा सकता। आपका भाग्य चुराना असंभव है—तो इसे अपने पास ही रखो!" और अपनी सीट से उठकर वह चला गया। अनाथपिंडिका ने गुरु को बताने का निश्चय किया; अतः वह मठ में आया, और आदरपूर्वक उनका अभिवादन करने के बाद एक तरफ बैठ गया, और बुद्ध को सारी बात बताई। गुरु ने सुना और कहा, "भले आदमी, आजकल एक आदमी का भाग्य दूसरे को नहीं मिलता।"लेकिन पहले जो भाग्य कम बुद्धि वालों का होता था, वह बुद्धिमानों को मिलता था;" और उसने उसे एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व का जन्म काशी राज्य में एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। बड़े होकर उन्होंने तक्षशिला में शिक्षा प्राप्त की और अपने परिवार के साथ रहे; लेकिन जब उनके माता-पिता का देहांत हो गया, तो वे बहुत दुखी हुए और हिमालय में एक संन्यासी का जीवन व्यतीत करने चले गए, और वहाँ उन्होंने अपनी क्षमताओं और सिद्धियों को विकसित किया।

काफी समय बीत गया और वह नमक और भोजन की तलाश में आबादी वाले इलाकों में आया और बनारस के राजा के बागों में रहने लगा। अगले दिन, भीख मांगते हुए वह एक हाथी प्रशिक्षक के दरवाजे पर पहुँचा। उस व्यक्ति को उसका व्यवहार और तौर-तरीका पसंद आया, उसने उसे भोजन कराया और अपने घर में रहने की जगह दी, और लगातार उसकी सेवा करता रहा।

तभी एक आदमी, जिसका काम लकड़ियाँ इकट्ठा करना था, जंगल से समय पर शहर नहीं लौट पाया। उसने रात एक मंदिर में बिताई और सिर के नीचे लकड़ियों का गट्ठा रखकर तकिया बनाया। उस मंदिर में कई मुर्गे खुले में थे, जो पास ही एक पेड़ पर बैठे थे। सुबह होते-होते, उनमें से एक जो ऊँची जगह पर बैठा था, उसने नीचे बैठे एक पक्षी की पीठ पर बीट कर दी। "किसने मेरे ऊपर बीट की?" दूसरे ने चिल्लाकर कहा। "मैंने की," पहले ने कहा। "और क्यों?" "सोचा नहीं," दूसरे ने कहा; और फिर से बीट कर दी। इस पर दोनों एक-दूसरे को गाली देने लगे और चिल्लाने लगे—"तुम्हें क्या शक्ति मिली है? तुम्हें क्या शक्ति मिली है?" आखिर में नीचे वाले ने कहा, "जो कोई मुझे मारेगा और कोयले पर भूनकर मेरा मांस खाएगा, उसे सुबह एक हजार सिक्के मिलेंगे!" और ऊपर वाले ने उत्तर दिया—"छी, छी, ऐसी छोटी सी बात पर घमंड मत करो! जो कोई मेरे मांसल भाग खाएगा, वह राजा बनेगा; यदि वह मेरा बाहरी भाग खाएगा, तो वह

सेनापति या रानी बनेगा, इस बात पर निर्भर करते हुए कि वह पुरुष है या स्त्री; यदि वह मेरी हड्डियों के पास का मांस खाएगा, तो उसे शाही कोषाध्यक्ष का पद मिलेगा, यदि वह गृहस्थ है; या, यदि वह पवित्र पुरुष है, तो वह राजा का प्रिय बनेगा!"

लकड़ी बीनने वाले ने यह सब सुना और सोचा, "अब अगर मैं राजा बन जाऊँ, तो हज़ार सिक्कों की ज़रूरत नहीं पड़ेगी।" चुपके से वह पेड़ पर चढ़ा, सबसे ऊपर वाले मुर्गे को पकड़ा और उसे मार डाला। उसने मुर्गे को अपने कपड़े की तह में बाँध लिया और मन ही मन कहा, "अब मैं राजा बनूँगा!" जैसे ही द्वार खुले, वह अंदर चला गया। उसने मुर्गे के पंख नोचे, उसे साफ़ किया और अपनी पत्नी को देते हुए कहा कि वह मांस को स्वादिष्ट बनाए। पत्नी ने चावल के साथ मांस तैयार किया और उसे अपने स्वामी के सामने रखते हुए कहा, "खाओ।"

“हे पत्नी,” उसने कहा, “इस मांस में बहुत पुण्य है। इसे खाने से मैं राजा बन जाऊँगा और तुम मेरी रानी!” इसलिए वे मांस और चावल लेकर गंगा किनारे गए, खाने से पहले स्नान करने के इरादे से। फिर, मांस और चावल किनारे पर रखकर वे स्नान करने चले गए।

तभी एक हवा चली और पानी में हलचल मच गई, जिससे मांस बह गया। वह नदी में बहता हुआ एक हाथी प्रशिक्षक की नज़र में आ गया, जो एक प्रतिष्ठित व्यक्ति था और नीचे अपने हाथियों को नहला रहा था। उसने पूछा, "यह क्या है?" और उसे उठा लिया। जवाब मिला, "यह पक्षी और चावल है, महाराज।" उसने उसे लपेटकर सील कर दिया और अपनी पत्नी को घर भेज दिया, साथ ही यह संदेश भी दिया कि जब वह वापस आए तो इसे खोल दे। लकड़ी बीनने वाला भी भाग गया, उसका पेट रेत और पानी से फूला हुआ था, जिसे उसने निगल लिया था।

अब एक तपस्वी, जिसे दिव्य दृष्टि प्राप्त थी, जो हाथी प्रशिक्षक का प्रिय पुजारी था, मन ही मन सोच रहा था, "मेरा मित्र, जो मेरा संरक्षक है, हाथियों के साथ अपना पद नहीं छोड़ता। उसे पदोन्नति कब मिलेगी?" ऐसा सोचते हुए, उसने अपनी दिव्य दृष्टि से उस व्यक्ति को देखा और उसके कार्यों को समझ लिया। वह आगे बढ़ा और संरक्षक के घर में बैठ गया।

जब गुरुजी लौटे, तो उन्होंने आदरपूर्वक उनका अभिवादन किया और एक तरफ बैठ गए। फिर उन्होंने पार्सल मंगवाकर तपस्वी के लिए भोजन और पानी लाने का आदेश दिया। तपस्वी ने भोजन ग्रहण नहीं किया, बल्कि कहा, "मैं इसे बाँट लूँगा।" गुरुजी ने उन्हें अनुमति दे दी। फिर उन्होंने मांस को अलग-अलग हिस्सों में बाँटा और हाथी-प्रशिक्षक को मांसल भाग, उसकी पत्नी को बाहरी भाग और हड्डियों के आसपास का मांस अपने हिस्से के लिए दे दिया। भोजन समाप्त होने के बाद उन्होंने कहा, "आज से तीसरे दिन तुम राजा बनोगे। अपने कार्यों का ध्यान रखना!" और वे चले गए।

तीसरे दिन एक पड़ोसी राजा आया और उसने बनारस को घेर लिया। राजा ने अपने हाथी प्रशिक्षक को राजसी वस्त्र धारण करने का आदेश दिया और उसे अपने हाथी पर सवार होकर युद्ध करने के लिए कहा। उसने स्वयं भी वेश बदलकर सेना में शामिल हो गया; तभी एक तीर आया और उसे लग गया, जिससे उसकी वहीं मृत्यु हो गई। प्रशिक्षक को राजा की मृत्यु की सूचना मिली तो उसने बड़ी मात्रा में धन मंगवाया और ढोल बजाकर घोषणा की, "जिनके पास धन नहीं है, वे आगे बढ़ें और युद्ध करें!" योद्धाओं के समूह ने पलक झपकते ही शत्रु राजा को मार डाला।

राजा के अंतिम संस्कार के बाद दरबारी इस बात पर विचार-विमर्श करने लगे कि किसे राजा बनाया जाए। उन्होंने कहा, "जब हमारे राजा जीवित थे, तब उन्होंने अपने राजसी वस्त्र हाथी प्रशिक्षक को पहना दिए थे। इसी व्यक्ति ने युद्ध लड़कर राज्य जीता है। राज्य इसी को दिया जाना चाहिए!" और उन्होंने उसे राजा नियुक्त किया और उसकी पत्नी को प्रधान रानी बनाया। बोधिसत्व उनके विश्वासपात्र बने।

इस प्रवचन के बाद, गुरु ने अपनी पूर्ण बुद्धि से, निम्नलिखित दो श्लोक कहे:

जो लोग कड़ी मेहनत करते हैं, उनके पास चाहे कितनी भी दौलत हो।
भाग्य की सहायता के बिना कभी भी कुछ हासिल नहीं किया जा सकता।
यह सब भाग्य की देवी की कृपा से हुआ।
कुशल और अकुशल दोनों को समान रूप से लाभ प्राप्त होता है।
"पूरी दुनिया में बहुत से लोग हमारी नजरों के सामने आते हैं,"
न केवल अच्छे, बल्कि बिल्कुल अलग तरह के जीव।
जिसका यह सौभाग्य है कि वह इसे प्राप्त करे
"संग्रहित धन जो उनका अधिकार नहीं है।"

इसके बाद गुरु ने कहा, "हे ईश्वर, इन प्राणियों के पास पिछले जन्मों में अर्जित पुण्य के सिवा कोई और साधन नहीं है; इसी कारण तुम उन स्थानों पर भी खजाने प्राप्त कर सकते हो जहाँ कोई खान नहीं है।" फिर उन्होंने निम्नलिखित शास्त्र का पाठ किया:

सभी अच्छी चीजों का खजाना मौजूद है
जो देवताओं (देवदूतों) और मनुष्यों दोनों की मनोकामनाएं पूरी करता है।
सुंदर रूप, आवाज, कद-काठी, आकार और संप्रभुता
अपनी पूरी शान-शौकत के साथ, वह खजाना उसी खजाने में समाहित है।
प्रभुत्व और शासन, शाही सुख,
उस खजाने के भीतर स्वर्ग का मुकुट है।
सभी मानवीय सुख, स्वर्ग के आनंद,
निर्वाण का स्वरूप, उस भंडार से दिया जाता है।
सच्ची मित्रता के बंधन, ज्ञान की स्वतंत्रता,
दृढ़ आत्मसंयम, उसी खजाने में निहित है।
मोक्ष (निर्वाण), समझ, प्रशिक्षण, उपयुक्तता
इससे पच्चेका बुद्धों की प्रतिमाएं उत्पन्न की जा सकें।
इस प्रकार इस गुण में एक जादुई सद्गुण निहित है;
बुद्धिमान और दृढ़ निश्चयी सभी लोग इसकी प्रशंसा करते हैं।
अंत में पक्षी ने तीसरे श्लोक को दोहराया, जिसमें अनाथपिंडिका के भाग्य में छिपे खजानों का वर्णन किया गया था।

"एक पक्षी, एक रत्न, एक गदा, एक पत्नी--"
शुभ चिह्नों वाले ये सभी लोग प्रचलित थे।
इन सभी खजानों के लिए, यह ज्ञात हो कि
एक नेक और निष्कलंक व्यक्ति ने यह बात स्वीकार की।
फिर उन्होंने जन्म की पहचान बताई: "वरिष्ठ भिक्षु आनंद राजा थे, और कुलपुजारी स्वयं बुद्ध थे।"

फुटनोट:

(1)सं. 40

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **मणिसुकर-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-285-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 285
मानिसुकरा-जातक

“वह नरक में जाएगा” इत्यादि — यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में सुंदरी की हत्या के बारे में सुनाई थी। उस समय हमें पता चलता है कि बोधिसत्व को बहुत सम्मान प्राप्त था। परिस्थितियाँ कंधक (*1) में वर्णित परिस्थितियों के समान थीं; यह उनका संक्षिप्त विवरण है। भगवान बुद्ध के पवित्र संघ को पाँच नदियों की बाढ़ की तरह लाभ और सम्मान प्राप्त हुआ था; गलत अनुयायियों ने पाया कि अब उन्हें लाभ और सम्मान नहीं मिल रहा है, वे सूर्योदय के समय जुगनू की तरह धुंधले हो गए थे। वे एकत्रित हुए और सलाह ली: “जब से गौतम (बुद्ध) प्रकट हुए हैं, हमारा लाभ और यश हमसे दूर हो गया है। कोई भी हमारे अस्तित्व को नहीं जानता। कौन हमारी मदद करेगा गौतम (बुद्ध) को बदनाम करने में, और उन्हें यह सब प्राप्त करने से रोकने में?” तब उन्हें एक विचार आया। “सुंदरी हमें ऐसा करने में सक्षम बनाएगी।” इसलिए जब एक दिन सुंदरी गलत अनुयायियों के उपवन में गईं, तो उन्होंने उनका अभिवादन किया, लेकिन और कुछ नहीं कहा। उन्होंने बार-बार उनसे बात की, लेकिन कोई उत्तर नहीं मिला। “क्या किसी बात से साधु-संतों को ठेस पहुंची है?” उसने पूछा। “बहनो, क्या तुम नहीं देखतीं कि गुरु गौतम (बुद्ध) हमें कितना परेशान करते हैं, हमें दान और सम्मान से वंचित करते हैं?” “मैं क्या कर सकती हूँ?” उसने कहा। “बहनो, तुम सुंदर और आकर्षक हो। तुम गौतम (बुद्ध) को अपमानित कर सकती हो, और तुम्हारे शब्द बहुतों को प्रभावित करेंगे, और इस प्रकार तुम हमारे लाभ और प्रतिष्ठा को वापस दिला सकती हो।” वह मान गई और विदा हो गई। इसके बाद

वह फूल, सुगंध, कपूर, मिठाई और फल लेकर शाम को, जब गुरु के प्रवचन सुनकर बड़ी भीड़ शहर में प्रवेश कर जाती थी, तो वह जेतवन मठ की ओर मुख करके जाती थी। यदि कोई पूछता कि वह कहाँ जा रही है, तो वह कहती, "गुरु गौतम (बुद्ध) के पास; मैं उनके साथ एक सुगंधित कक्ष में रहती हूँ।" फिर वह रात किसी धर्मभ्रष्ट भिक्षुओं की बस्ती में बिताती और सुबह जेतवन मठ से शहर की ओर जाने वाली सड़क पर निकल पड़ती। जब कोई उससे पूछता कि वह कहाँ जा रही है, तो वह उत्तर देती, "मैं वरिष्ठ भिक्षु गौतम (बुद्ध) के साथ एक सुगंधित कक्ष में थी, और उन्होंने मेरे साथ प्रेम किया।" कुछ दिनों बाद उन्होंने कुछ गुंडों को गौतम (बुद्ध) के कक्ष के सामने सुंदरी की हत्या करने और उसके शव को कूड़े के ढेर में फेंकने के लिए भेजा। और उन्होंने ऐसा ही किया। तब उन अनुयायियों ने सुंदरी के पीछे शोर मचाया और राजा को सूचित किया। राजा ने पूछा कि उन्हें किस बात का संदेह है। उन्होंने उत्तर दिया कि वह पिछले कुछ दिनों से जेतवन मठ में थी, लेकिन उसके बाद क्या हुआ, यह उन्हें नहीं पता। राजा ने उन्हें उसकी खोज के लिए भेजा। इस अनुमति पर अमल करते हुए, वे अपने नौकरों को लेकर जेतवन मठ गए, जहाँ उन्होंने खोजबीन करते-करते उसे कूड़े के ढेर में पाया। वे शव को नगर में लाए और राजा को बताया कि गौतम (बुद्ध) के शिष्यों ने अपने गुरु के पाप को छिपाने के लिए सुंदरी की हत्या कर उसे कूड़े के ढेर में फेंक दिया है। राजा ने उन्हें पूरे शहर में खोजबीन करने का आदेश दिया।वे गलियों में चिल्लाते हुए गए, "देखो, शाक्य राजकुमार के वरिष्ठ भिक्षुओं ने क्या किया है!" और महल के द्वार पर लौट आए। राजा ने सुंदरी के शव को एक चबूतरे पर रखा था और उसे श्मशान में पहरा देने के लिए रखा था। पवित्र शिष्यों को छोड़कर सभी लोग शहर के अंदर, शहर के बाहर, उद्यानों और जंगलों में घूम-घूम कर भिक्षुओं को गालियां दे रहे थे और चिल्ला रहे थे, "देखो, शाक्य राजकुमार के वरिष्ठ भिक्षुओं ने क्या किया है!" भिक्षुओं ने यह सब बुद्ध को बताया। गुरु ने कहा, "अच्छा, जाओ और इन लोगों को इन शब्दों में फटकारो:-"

झूठ में आनंद लेने वाला नरक में जाएगा।
और जो किसी काम को करने के बाद उसका खंडन करता है:
जब मृत्यु उन्हें हमसे छीन लेगी, तब ये दोनों
जैसे अन्यत्र बुरे कर्म करने वाले लोग उठ खड़े होंगे (*2)

राजा ने कुछ लोगों को यह पता लगाने का आदेश दिया कि क्या सुंदरी की हत्या किसी और ने की थी। अब वे बदमाश खून का पैसा पी चुके थे और आपस में झगड़ रहे थे। एक ने दूसरे से कहा, "तुमने सुंदरी को एक ही वार में मार डाला, फिर उसे कूड़े के ढेर में फेंक दिया, और देखो, तुम खून के पैसे से शराब खरीद रहे हो!" "ठीक है, ठीक है," राजा के दूतों ने कहा; और उन्होंने बदमाशों को पकड़कर राजा के सामने घसीट कर लाया। "क्या तुमने उसकी हत्या की?" राजा ने पूछा। उन्होंने कहा, हाँ, उन्होंने की। "किसने पूछा?" "गलत मानने वालों ने, महाराज।" राजा ने गलत मानने वालों को बुलवाया। "सुंदरी को उठाओ," उसने कहा, "और उसे पूरे शहर में घुमाओ, और चिल्लाते हुए जाओ: 'इस स्त्री सुंदरी ने संत गौतम (बुद्ध) को बदनाम करना चाहा; हमने उसकी हत्या करवाई; दोष गौतम (बुद्ध) का नहीं है, न ही उनके शिष्यों का; दोष हमारा है!'" उन्होंने वैसा ही किया। बहुत से गैर-धर्मांतरित लोगों ने विश्वास कर लिया, और गलत विश्वासियों को हत्या के दंड से मुक्त कर दिया गया। तब से बुद्ध की प्रतिष्ठा बढ़ती ही गई। फिर एक दिन सत्य के हॉल में कानाफूसी शुरू हो गई: "मित्र, गलत विश्वासियों ने बुद्ध की प्रतिष्ठा को धूमिल करने की सोची, और उन्होंने केवल खुद को ही धूमिल किया: तब से, हमारी उन्नति और यश बढ़ता ही जा रहा है!" गुरुजी अंदर आए और पूछा कि वे किस बारे में बात कर रहे हैं? उन्होंने उन्हें बताया। "भाइयों," उन्होंने कहा, "बुद्ध को अपवित्र करना असंभव है। बुद्ध को कलंकित करने का प्रयास करना, एक उत्तम रत्न को कलंकित करने के प्रयास के समान है। बीते युगों में लोगों ने एक उत्तम रत्न को कलंकित करने की इच्छा की, और चाहे उन्होंने कितना भी प्रयास किया, वे असफल रहे।" और उन्होंने उन्हें एक प्राचीन कथा सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व का जन्म एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। बड़े होकर, उन्होंने इच्छाओं से उत्पन्न होने वाले कष्ट को भलीभांति समझा और हिमालय की तीन पर्वत श्रृंखलाओं को पार करते हुए एकांतवास में चले गए, जहाँ वे पत्तों की कुटिया में रहने लगे।

उसकी झोपड़ी के पास एक क्रिस्टल की गुफा थी, जिसमें तीस जंगली सूअर रहते थे। गुफा के पास एक शेर घूमता रहता था। उसकी परछाईं क्रिस्टल में दिखाई देती थी। जंगली सूअर इस परछाईं को देखकर डर जाते थे और दुबले-पतले हो जाते थे। उन्होंने सोचा, "हमें परछाईं इसलिए दिख रही है क्योंकि यह क्रिस्टल साफ है। हम इसे गंदा करके इसका रंग बदल देंगे।" इसलिए वे पास के एक तालाब से थोड़ी मिट्टी लाए और उससे क्रिस्टल को खूब रगड़ा। लेकिन जंगली सूअरों के बालों से लगातार रगड़ने के कारण क्रिस्टल पहले से भी ज्यादा चमकदार हो गया।

उन्हें इसका प्रबंधन करना नहीं आता था; इसलिए उन्होंने तपस्वी से पूछने का निश्चय किया कि वे क्रिस्टल को कैसे अपवित्र कर सकते हैं। इसलिए वे उनके पास गए, और आदरपूर्वक अभिवादन करने के बाद, उनके पास बैठ गए, और इन दो श्लोकों का उच्चारण किया:

"हम सात गर्मियों से यहाँ हैं
 क्रिस्टल की गुफा में तीस लोग।
अब हम इसकी चमक को कम करने के लिए उत्सुक हैं।
 लेकिन हम इसे सुस्त नहीं कर सकते।
यद्यपि हम अपनी पूरी ताकत से प्रयास करते हैं
 इसकी चमक को धूमिल करने के लिए,
प्रकाश की चमक और भी तेज होती जा रही है।
 इसका कारण क्या हो सकता है?
बोधिसत्व ने सुना। फिर उन्होंने तीसरा श्लोक दोहराया:

"यह अनमोल क्रिस्टल है, बेदाग, चमकदार और शुद्ध है;
 कांच नहीं—इसकी चमक सदा बनी रहेगी।
पृथ्वी पर ऐसी कोई चीज नहीं है जिसे इसकी चमक नुकसान पहुंचा सके।
 जंगली सूअरों, बेहतर होगा कि तुम कहीं और चले जाओ।
और उन्होंने ऐसा ही किया, यह उत्तर सुनकर। बोधिसत्व परमानंद (सम्मोहन) में लीन हो गए और ब्रह्मा के लोक में जाने के लिए नियत हो गए।

इस प्रवचन के समाप्त होने के बाद, गुरु ने जन्म का वर्णन किया: "उस समय, मैं एक संन्यासी था।"

फुटनोट:

(1) यह कहानी उदनम, iv. 8 में दी गई है।

(2)धम्मपद, वि. 306; सुत्ता निपाता, वी. 661.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> शालूक - **जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-286-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 286
सालुका-जातक (*1)

"अजवाइन क्या खाती है, उससे ईर्ष्या मत करो" इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी, जिसमें एक मोटी लड़की से प्रेम के प्रलोभन का वर्णन है। परिस्थितियों का वर्णन कुल्लनारद कश्यप (*2) की कहानी में किया जाएगा। गुरु ने अपने एक भिक्षु से पूछा कि क्या सच में उसे प्रेम हो गया है? उसने कहा, हाँ। गुरु ने पूछा, "किससे?" उसने कहा, "एक मोटी लड़की से।" गुरु ने कहा, "वह स्त्री, भाई, तुम्हारी कमजोरी है; बहुत पहले, और अब भी, तुम उससे विवाह करने की इच्छा के कारण भीड़ का भोजन बन चुके हो।" फिर भिक्षुओं के अनुरोध पर उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व एक बैल थे जिनका नाम बिग रेडकोट था, और उनका एक छोटा भाई था जिसका नाम लिटिल रेडकोट था। दोनों किसी गाँव में एक परिवार के लिए काम करते थे।

इस परिवार में एक वयस्क लड़की थी, जिसे दूसरे परिवार ने शादी के लिए बुलाया था। अब पहले परिवार में सलुका या अजवाइन (*3) नाम का एक सूअर पाला जा रहा था, जिसका उद्देश्य शादी के दिन दावत के लिए परोसना था; वह एक सूअरबाड़े (*4) में सोता था।

एक दिन, लिटिल रेडकोट ने अपने भाई से कहा, "भाई, हम इस परिवार के लिए काम करते हैं और उनकी आजीविका कमाने में मदद करते हैं। फिर भी वे हमें केवल घास और भूसा देते हैं, जबकि वे तुम्हें सूअर को चावल की खिचड़ी खिलाकर सूअर के बाड़े में सुला देते हैं; और वह उनके लिए क्या कर सकता है?"

"भाई," बिग रेडकोट ने कहा, "उसके दलिया की लालसा मत करो। वे हमारी युवती की शादी के दिन उसका भोज बनाना चाहते हैं, इसीलिए उसे मोटा कर रहे हैं। कुछ दिन रुको, और तुम देखोगे कि उसे उसके बाड़े से घसीटकर निकाला जाएगा, मार डाला जाएगा, टुकड़े-टुकड़े कर दिए जाएंगे और आगंतुक उसे खा जाएंगे।" ऐसा कहकर उसने पहले दो छंद रचे:

"सेलेरी जो खाती है उससे ईर्ष्या मत करो;"
उसे जो खाना मिलता है वह जानलेवा होता है।
संतुष्ट रहो और अपनी बची हुई भूसी खा लो:
इसका अर्थ है आपकी लंबी आयु।
उचित समय आने पर अतिथि आएगा।
उसकी हर तरह की गपशप से।
बेचारे अजवाइन को काट डाला
वह अपनी बड़ी चपटी थूथन के साथ लेटा रहेगा।"
कुछ दिनों बाद, शादी के मेहमान आए और सलुका को मारकर उसका मांस खा लिया गया। दोनों बैलों ने उसकी हालत देखकर सोचा कि उनका अपना भूसा ही सबसे अच्छा था।

गुरु ने अपनी पूर्ण बुद्धिमत्ता से तीसरे श्लोक को स्पष्टीकरण के रूप में दोहराया:

"जब उन्होंने चपटे थूथन को लेटे हुए देखा
बेचारी अजवाइन पूरी तरह से कट गई।
बैलों ने कहा, आधा दाम बेहतर है
"निश्चित रूप से यह हमारा तुच्छ नमूना है!"
जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की और जन्म का वर्णन किया: सत्यों के समापन पर, संबंधित भिक्षु ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की सिद्धि प्राप्त की: "उस समय, वह हष्ट-पुष्ट लड़की वही थी, प्रेम में व्याकुल भाई सलुका था, आनंद छोटा लाल वस्त्रधारी था, और मैं स्वयं बड़ा लाल वस्त्रधारी था।"

फुटनोट:

(1) क्रमांक 30 और क्रमांक 477 की तुलना करें;

(2)सं. 477.

(3) शाब्दिक अर्थ: खाने योग्य कमल की जड़।

(4) हेत्थामंचा, शायद छज्जे के नीचे घर के बाहर का चबूतरा, एक पसंदीदा रिसॉर्ट।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **लाभ-गृह-जातक**
***स्रोत** : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-287-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 287
लाभ-गरह-जातक

“जिस पर पागलपन सवार हो,” इत्यादि — यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी, जो सारिपुत्र भिक्षुओं के एक साथी भिक्षु के बारे में थी। यह भिक्षु आया और सारिपुत्र के एक तरफ बैठकर उसने उनसे धन प्राप्ति का तरीका, वस्त्र और अन्य वस्तुएँ प्राप्त करने का तरीका पूछा। सारिपुत्र ने उत्तर दिया, “मित्र, धन प्राप्ति में सफल होने के लिए चार गुण आवश्यक हैं। उसे अपने हृदय से लज्जा का त्याग करना होगा, शिष्यों के पवित्र संघ को छोड़ना होगा, पागल न होते हुए भी पागल होने का दिखावा करना होगा; निंदा करनी होगी; नर्तक की तरह व्यवहार करना होगा; और हर जगह कठोर शब्दों का प्रयोग करना होगा।” इस प्रकार उन्होंने समझाया कि कैसे व्यक्ति धन-संपत्ति प्राप्त करता है। भिक्षु ने इस विधि पर आपत्ति जताई और चला गया। सारिपुत्र अपने गुरु के पास गया और उन्हें इसके बारे में बताया। गुरु ने कहा, “यह पहली बार नहीं है जब इस भिक्षु ने धन की आलोचना की है; उसने पहले भी ऐसा किया है;” और फिर, सारिपुत्र के अनुरोध पर, उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व का जन्म एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। सोलह वर्ष की आयु तक पहुँचते-पहुँचते उन्होंने तीनों वेदों और अठारह गुणों में महारत हासिल कर ली थी; और वे एक प्रसिद्ध शिक्षक बन गए, जिन्होंने पाँच सौ युवकों को शिक्षा दी। एक दिन एक सदाचारी युवक अपने गुरु के पास यह प्रश्न लेकर आया, "ये लोग लाभ कैसे प्राप्त करते हैं?"

शिक्षक ने उत्तर दिया, "मेरे पुत्र, चार गुण हैं जो उन लोगों को लाभ दिलाते हैं;" और उन्होंने पहला श्लोक दोहराया:-

जो पागल हो, जो निंदा करने में माहिर हो,
इसमें अभिनेता की तरकीबें हैं, बुरी कहानियाँ सुनाई जाती हैं,
ऐसा ही व्यक्ति समृद्धि प्राप्त करता है।
जहां सब मूर्ख हों, वहीं तुम्हारा यही सिद्धांत होना चाहिए।
गुरु की बातें सुनकर शिष्य ने लाभ कमाने के प्रति अपनी असहमति निम्नलिखित दो पंक्तियों में व्यक्त की:-

"जो लाभ या यश को जीतता है, उस पर शर्म आती है।"
भयंकर विनाश और जघन्य पापों के द्वारा।
"मैं हाथ में कटोरा लेकर एकांतवासी जीवन व्यतीत करूँगा।"
दुष्टता और लोभ में जीने के बजाय।"
इस प्रकार उस युवक ने तपस्वी जीवन के गुणों की प्रशंसा की; और तुरंत एक संन्यासी बन गया, और धर्मपरायणता के साथ भिक्षा मांगते हुए, सिद्धियों को प्राप्त करता रहा, जब तक कि वह ब्रह्मा के लोक में जाने के लिए नियत नहीं हो गया।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया तो उन्होंने इस प्रकार जन्म की पहचान की:- "उस समय लाभ का विरोध करने वाला भाई (भिक्षु) वह युवक था, लेकिन उसका गुरु मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **मच्छ-उददान-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-288-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 288
मच्छ-उद्दना-जातक

“कौन इस कहानी पर विश्वास कर सकता है,” इत्यादि — यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक बेईमान व्यापारी के बारे में सुनाई थी। घटनाक्रम का वर्णन ऊपर किया जा चुका है।

बहुत समय पहले की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व का जन्म एक जमींदार के परिवार में हुआ था।

जब वे बड़े हुए, तो वे धनी व्यक्ति बन गए। उनका एक छोटा भाई था। बाद में उनके पिता का देहांत हो गया। उन्होंने अपने पिता के कुछ काम निपटाने का निश्चय किया। इसके लिए वे एक गाँव गए, जहाँ उन्हें एक हज़ार सिक्के मिले। लौटते समय, जब वे नदी के किनारे नाव का इंतज़ार कर रहे थे, तो उन्होंने पत्तों के बर्तन में भोजन किया। बोधिसत्व ने बचा हुआ भोजन गंगा में मछलियों के लिए बहा दिया, जिससे नदी की देवी को पुण्य प्राप्त हुआ। देवी ने इसे प्रसन्नतापूर्वक ग्रहण किया, जिससे उनकी दिव्य शक्ति में वृद्धि हुई, और अपनी इस बढ़ी हुई शक्ति पर विचार करते हुए उन्हें पता चला कि क्या हुआ था। बोधिसत्व ने अपना ऊपरी वस्त्र रेत पर रखा और वहीं लेटकर सो गए।

छोटा भाई स्वभाव से ही चोरी करने वाला था। वह बोधिसत्व से पैसे चुराकर खुद रखना चाहता था; इसलिए उसने पैसे की थैली की तरह दिखने वाली बजरी की एक थैली बनाई और उन दोनों को कहीं छिपा दिया।

जब वे नाव पर सवार हो गए और नदी के मध्य में आ गए, तो छोटा लड़का नाव के किनारे से टकरा गया और उसने बजरी का वह पैकेट पानी में गिरा दिया, जिसे वह बजरी समझ रहा था, लेकिन वास्तव में वह पैसा था।

“भाई, पैसा तो जहाज से गिर गया!” वह चिल्लाया। “अब क्या करें?”

"हम क्या कर सकते हैं? जो हो गया सो हो गया। इसके बारे में चिंता मत करो," दूसरे ने जवाब दिया।

लेकिन नदी की देवी ने सोचा कि उसे जो पुण्य प्राप्त हुआ है उससे वह कितनी प्रसन्न हुई है, और उसकी दिव्य शक्ति कितनी बढ़ गई है, और उसने उसकी संपत्ति की देखभाल करने का निश्चय किया। इसलिए उसने अपनी शक्ति से एक बड़ी मुंह वाली मछली को पार्सल निगलवा दिया, और स्वयं उसकी देखभाल की।

जब चोर घर पहुँचा, तो उसने अपने भाई के साथ किए गए धोखे पर ठहाका लगाया और पार्सल का बचा हुआ हिस्सा खोला। अंदर कंकड़ के सिवा कुछ नहीं था! उसका दिल बैठ गया; वह अपने बिस्तर पर गिर पड़ा और पलंग को कसकर पकड़ लिया।

तभी कुछ मछुआरों ने मछली पकड़ने के लिए जाल डाला। नदी की शक्ति से, एक मछली उनके जाल में आ गिरी। मछुआरे उसे बेचने के लिए शहर ले गए। लोगों ने कीमत पूछी।

मछुआरों ने कहा, "एक हजार सिक्के और सात आने।"

सबने उनका मजाक उड़ाया। "हमने तो एक मछली को हज़ार टुकड़ों में बिकते देखा है!" वे हँसे।

मछुआरे अपनी मछलियाँ बोधिसत्व के द्वार पर लाए और उनसे उन्हें खरीदने का अनुरोध किया।

"कीमत क्या है?" उसने पूछा।

उन्होंने कहा, "आप इसे सात आने में ले सकते हैं।"

"आपने इसके लिए दूसरे लोगों से क्या मांगा?"

उन्होंने कहा, "हमने दूसरे लोगों से एक हजार रुपये और सात दान मांगे थे; लेकिन आप इसे सात अखाड़ों के बदले ले सकते हैं।"

उसने इसके लिए सात एरीना दिए और अपनी पत्नी को भेज दिए। उसने उसे खोला और उसमें पैसों का पार्सल था! उसने बोधिसत्व को बुलाया। उन्होंने एक नज़र डाली और अपना चिह्न पहचानकर जान लिया कि यह उनका ही है। उन्होंने सोचा, "इन मछुआरों ने दूसरे लोगों से एक हजार रुपये और सात आना मांगे थे, लेकिन क्योंकि हजार रुपये मेरे थे, इसलिए उन्होंने मुझे केवल सात आना में दे दिए! यदि कोई व्यक्ति इसका अर्थ नहीं समझता, तो कोई भी चीज़ उसे कभी विश्वास नहीं दिला पाएगी।" और फिर उन्होंने पहला श्लोक दोहराया:

"अगर उसे यह कहानी बताई जाए तो कौन इस पर विश्वास करेगा?"
क्या हजार में बिकने वाली मछलियों को बेच देना चाहिए?
मेरे लिए तो ये सात पेंस के बराबर हैं: काश ऐसा होता!
इस तरह की मछलियों की पूरी माला खरीदना!

यह कहने के बाद, वह सोचने लगा कि उसे अपना पैसा कैसे वापस मिल गया। उसी क्षण नदी की आत्मा अदृश्य रूप से हवा में मंडराने लगी और बोली—

"मैं गंगा की आत्मा हूँ। आपने अपने भोजन का बचा हुआ भाग मछलियों को खिला दिया, और मुझे पुण्य का फल दिया। इसलिए मैंने आपकी संपत्ति की देखभाल की है;" और उसने एक श्लोक दोहराया:-

"तुमने मछलियों को खाना खिलाया और मुझे उपहार दिया।"
मुझे यह और आपकी धर्मपरायणता याद है।
फिर आत्मा ने छोटे भाई की उस नीच चाल के बारे में बताया। फिर उसने कहा, "वह वहीं पड़ा है, उसका दिल अंदर से सूख चुका है। धोखेबाज के लिए कोई समृद्धि नहीं है। लेकिन मैं तुम्हारे लिए तुम्हारा ही लाई हूँ, और मैं तुम्हें चेतावनी देती हूँ कि इसे खोना मत। इसे अपने चोर भाई को मत देना, बल्कि इसे अपने पास ही रखना।" फिर उसने तीसरा श्लोक दोहराया:-

दुष्ट हृदय वाले व्यक्ति का कोई सौभाग्य नहीं होता।
और परियों के मामले में उसका कोई स्थान नहीं है;
जो अपने भाई को पैतृक संपत्ति से वंचित करता है
और वह छल और चोरी-छिपे तरीके से बुरे काम करता है।
आत्मा ने ऐसा कहा, वह नहीं चाहती थी कि वह कपटी व्यक्ति धन प्राप्त करे। परन्तु बोधिसत्व ने कहा, "यह असंभव है," और फिर भी उन्होंने भाई को पाँच सौ रुपये भेज दिए।

इस प्रवचन के बाद, गुरु ने सत्यों की व्याख्या की, जिसके समापन पर व्यापारी ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की सिद्धि प्राप्त की और अपने जन्म की पहचान बताई: "उस समय छोटा भाई (भिक्षु) बेईमान व्यापारी था, लेकिन बड़ा भाई मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **नाना-चंड-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-289-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 289
नाना-छन्द-जातक

“हम एक ही घर में रहते हैं,” इत्यादि — यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी, जिसमें पूज्य आनंद द्वारा एक मूल्यवान वस्तु ले जाने का वर्णन है। इन परिस्थितियों का वर्णन जून्ह जन्म (*1) में किया जाएगा।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व उनकी रानी पत्नी के पुत्र के रूप में उत्पन्न हुए। उनका पालन-पोषण तक्षशिला में हुआ और उन्होंने वहीं शिक्षा प्राप्त की; और अपने पिता की मृत्यु के बाद वे राजा बने। उनके पिता के परिवार में एक पुरोहित थे जिन्हें पद से हटा दिया गया था और वे बहुत गरीब होने के कारण एक पुराने घर में रहते थे।

एक रात राजा भेस बदलकर शहर का भ्रमण कर रहे थे। कुछ चोर अपना काम निपटाकर एक शराबखाने में शराब पी रहे थे और एक घड़े में और शराब भरकर घर ले जा रहे थे। उन्होंने राजा को सड़क पर देखा और "अरे, कौन हो?" चिल्लाते हुए उन्हें धक्का देकर गिरा दिया और उनका ऊपरी वस्त्र छीन लिया; फिर उन्होंने अपना घड़ा उठाया और राजा को डराते हुए वहां से चले गए।

उस समय संयोगवश वही ब्राह्मण सड़क पर नक्षत्रों का अवलोकन कर रहा था। उसने देखा कि राजा शत्रुओं के चंगुल में फंस गया है, और उसने अपनी पत्नी को पुकारा; वह तुरंत आई और पूछने लगी कि क्या हुआ है। उसने कहा, "पत्नी, हमारे राजा अपने शत्रुओं के हाथों में पड़ गए हैं!" "हे महाराज, आपका राजा से क्या संबंध है? उनके ब्राह्मण देख लेंगे।" राजा ने यह सुना और थोड़ा आगे जाकर उन

दुष्टों को पुकारा, "हे स्वामियों, मैं गरीब हूँ - मेरा वस्त्र ले लो और मुझे जाने दो!" बार-बार ऐसा कहने पर उन्होंने दया करके उसे छोड़ दिया। उसने उनके निवास स्थान को देखा और वापस लौट आया।

ब्राह्मण ने अपनी पत्नी से कहा, "पत्नी, हमारे राजा अपने शत्रुओं के चंगुल से बच निकले हैं!" राजा ने यह बात पहले की तरह सुनी और अपने महल में प्रवेश किया।

जब भोर हुई तो राजा ने अपने ब्राह्मणों को बुलाया और उनसे एक प्रश्न पूछा।

"क्या आप अवलोकन कर रहे हैं?"

"जी महाराज।"

"क्या यह सौभाग्य था या दुर्भाग्य?"

"आप भाग्यशाली हैं, मेरे स्वामी।"

"ग्रहण नहीं होगा?"

"नहीं, मेरे स्वामी, कोई नहीं।"

राजा ने उन्हें निर्देश देते हुए कहा, "जाओ और फलाँ घर से ब्राह्मण को मेरे लिए ले आओ।"

इसलिए वे बूढ़े पुजारी को ले आए, और राजा ने उससे पूछताछ शुरू कर दी।

"क्या आपने कल रात अवलोकन किया था, गुरुजी?"

"जी हां, मेरे स्वामी, मैंने किया।"

"क्या ग्रहण था?"

"जी हां, मेरे स्वामी: कल रात आप अपने शत्रुओं के हाथों में पड़ गए थे, और पल भर में आप फिर से मुक्त हो गए।"

राजा ने कहा, "यही तो ज्योतिषी का स्वभाव है।" उन्होंने अन्य ब्राह्मणों को विदा कर दिया; उन्होंने उस वृद्ध ब्राह्मण से कहा कि वे उससे प्रसन्न हैं और उसे वरदान मांगने को कहा। उस व्यक्ति ने अपने परिवार से परामर्श करने के लिए अनुमति मांगी, और राजा ने उसे अनुमति दे दी।

उस व्यक्ति ने अपनी पत्नी, पुत्र, बहू और नौकरानी को बुलाया और उनके सामने मामला रखा। "राजा ने मुझे वरदान दिया है; मैं क्या मांगूं?"

पत्नी ने कहा, "मुझे सौ दुधारू गायें ला दो।"

चट्टा नाम के बेटे ने कहा, "मेरे लिए, एक रथ जो उत्तम नस्ल के सुंदर, सफेद घोड़ों द्वारा खींचा जाए।"

तब बहू ने कहा, "मेरे लिए तो हर तरह के गहने, रत्नों से जड़ी बालियां, और इसी तरह की और भी चीजें!"

और नौकरानी (जिसका नाम पुन्ना था) ने कहा, "मेरे लिए एक मूसल, ओखली और एक छलनी टोकरी लाद दो।"

ब्राह्मण स्वयं एक गाँव का राजस्व वरदान के रूप में चाहता था। इसलिए जब वह राजा के पास लौटा और राजा ने जानना चाहा कि क्या उसकी पत्नी से भी पूछा गया था, तो ब्राह्मण ने उत्तर दिया, "जी हाँ, महाराज; परन्तु जिनसे पूछा गया है वे सब एकमत नहीं हैं"; और उसने दो श्लोक दोहराए:-

"हम एक ही घर में रहते हैं, हे राजा,
लेकिन हम सभी एक ही चीज नहीं चाहते।
मेरी पत्नी की इच्छा थी—सौ गायें;

मेरा गांव समृद्ध है;
छात्र का पाठ्यक्रम एक जटिल प्रक्रिया है।
हमारी लड़की को कान की बाली चाहिए।
बेचारी छोटी पुन्ना, जो नौकरानी थी,
उसने कहा, "मुझे मूसल और ओखली चाहिए!"
“ठीक है,” राजा ने कहा, “उन्हें जो चाहिए वह सब मिल जाएगा”; और शेष पंक्तियाँ दोहराईं:-

पत्नी को सौ गायें दे दो।
भले आदमी के लिए जीवन भर के लिए एक गाँव।
और बेटी के लिए एक रत्नजड़ित झुमका:
छात्र को एक गाड़ी और एक जोड़ी मिलेगी।
और नौकरानी अपना मूसल और ओखली ले आती है।
इस प्रकार राजा ने ब्राह्मण को उसकी इच्छा के अनुसार सब कुछ दिया और साथ ही उसे बहुत सम्मान भी दिया; और उससे कहा कि वह तब से राजा के कामों में व्यस्त रहे, और उसने ब्राह्मण को अपनी सेवा में बनाए रखा।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उस समय ब्राह्मण आनंद थे, लेकिन राजा मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)सं. 456.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **शील-विमांसा-जातक**
***स्रोत** : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-290-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 290
शिला-विमांसा-जातक (*1)

"सद्गुण सुंदर है," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी, एक ब्राह्मण के बारे में जिसने अपनी प्रतिष्ठा की परीक्षा ली थी। इस कहानी के उत्पन्न होने की परिस्थितियाँ और स्वयं कहानी, दोनों प्रथम खंड के सिलविमांसा जन्म-कथा में दी गई हैं। यहाँ, पहले की तरह ही।

जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब उनके पुरोहित ने अपने सद्गुणों की परीक्षा लेने का निश्चय किया और दो दिन तक कोषाध्यक्ष के कुंड से एक-एक सिक्का चुराया। तीसरे दिन उन्हें राजा के पास घसीटकर ले जाया गया और उन पर चोरी का आरोप लगाया गया। रास्ते में उन्होंने कुछ सपेरों को सांप को नचाते हुए देखा। राजा ने उनसे पूछा कि उन्होंने ऐसा क्यों किया। ब्राह्मण ने उत्तर दिया, "अपने सद्गुणों की परीक्षा लेने के लिए" और आगे बढ़ गए।

"सद्गुण सुंदर है, इसलिए लोग इसे ऐसा मानते हैं।"
विश्व में सदाचार को सर्वोच्च स्थान दिया जाता है।
देखो! इस घातक सांप को वे नहीं मारते।
    वे कहते हैं, 'वह अच्छा है।'
मैं यहाँ यह घोषणा करता हूँ कि सद्गुण सर्वोपरि है।
और संसार में सुंदर: जिसके पास है
जो सदाचारी होता है, उसके बारे में हमेशा यही कहा जाता है।

पूर्णता की राह पर चलना।
"परिवार के प्रिय लोगों के बीच वह सबसे ज्यादा चमकता है;"
और जब शरीर के साथ उसका संबंध समाप्त हो जाता है,
जिसने सद्गुणों का अभ्यास करने में खुशी पाई है
स्वर्ग में पुनर्जन्म होता है।"

इस प्रकार तीन श्लोकों में सद्गुणों की सुंदरता का वर्णन और उनके प्रति प्रवचन देने के बाद, बोधिसत्व ने आगे कहा—"महाराज, मेरे परिवार, मेरे पिता की संपत्ति, मेरी माता की संपत्ति और मैंने स्वयं जो कुछ अर्जित किया है, उससे आपको बहुत कुछ प्राप्त हुआ है; इसकी कोई सीमा नहीं है। लेकिन मैंने अपने मूल्य को परखने के लिए खजाने से ये सिक्के लिए। अब मैं देखता हूँ कि इस संसार में जन्म, वंश, रक्त और परिवार कितना महत्वहीन है, और सद्गुण कितना श्रेष्ठ है। मैं संन्यासी जीवन अपनाऊँगा; मुझे ऐसा करने की अनुमति दें!" अनेक निवेदनों के बाद, अंततः राजा ने सहमति दी। उन्होंने सांसारिक जीवन त्याग दिया और हिमालय में शरण ली, जहाँ उन्होंने संन्यासी जीवन अपनाया और ब्रह्मलोक में आने तक अपनी क्षमताओं और उपलब्धियों का विकास किया।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म की पहचान बताई: "उस समय, अपने सद्गुणों के लिए अपनी प्रतिष्ठा आजमाने वाला ब्राह्मण पुजारी मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) संख्या 86, 290, 305, 330, 362 की तुलना करें।

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **भद्र-घट-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-291-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 291
भद्र-घट-जातक

“एक निकम्मे ने एक बार,” इत्यादि — यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में अनाथपिंडिका के भतीजे के बारे में सुनाई थी। इस व्यक्ति ने चालीस करोड़ (10 मिलियन) सोने की विरासत लुटा दी थी। फिर वह अपने चाचा के पास गया, जिन्होंने उसे एक हजार दिए और उसे व्यापार करने को कहा। उस व्यक्ति ने इसे भी लुटा दिया और फिर दोबारा आया; और उसे फिर से पाँच सौ दिए गए। उसने इसे भी बाकी की तरह लुटा दिया, तो अगली बार उसके चाचा ने उसे दो मोटे वस्त्र दिए; और जब उसने इन्हें भी घिसकर खराब कर दिया और फिर से विनती की, तो उसके चाचा ने उसे गर्दन से पकड़कर बाहर निकाल दिया। वह असहाय था और एक दीवार के पास गिरकर मर गया। वे उसे घसीटकर बाहर ले गए और वहीं फेंक दिया। अनाथपिंडिका ने जाकर बुद्ध को अपने भतीजे के साथ हुई घटना के बारे में बताया। गुरु ने कहा, “तुम उस व्यक्ति को कैसे संतुष्ट करने की उम्मीद कर सकते हो जिसे मैं बहुत पहले संतुष्ट नहीं कर पाया था, यहाँ तक कि जब मैंने उसे मनोकामना का प्याला दिया था?” और उसके अनुरोध पर, उन्होंने उन्हें एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व एक धनी व्यापारी के पुत्र के रूप में पैदा हुए और अपने पिता की मृत्यु के बाद उनका स्थान ग्रहण किया। उनके घर में चार सौ मिलियन का खजाना छिपा हुआ था। उनका एक ही पुत्र था। बोधिसत्व ने अपनी मृत्यु तक दान-पुण्य किया और अच्छे कार्य किए, फिर वे देवताओं (देवदूतों) के राजा सक्का (इंद्र) के रूप में पुनर्जन्म लेकर आए। उनके पुत्र ने सड़क के उस पार एक मंडप बनवाया और अपने कई मित्रों के साथ बैठकर शराब पीने लगे। उन्होंने गायकों और नर्तकों को एक हजार सिक्के दिए और अपना समय शराब पीने, भोग-विलास और अय्याशी में व्यतीत किया; वे इधर-उधर भटकते रहे, केवल गीत, संगीत और नृत्य की ही माँग करते रहे, अपने शुभचिंतकों के प्रति समर्पित रहे और आलस्य में डूबे रहे। इसलिए थोड़े ही समय में उसने अपने चार सौ मिलियन के सारे खजाने, अपनी सारी संपत्ति, सामान और फर्नीचर को लुटा दिया और इतना गरीब और दुखी हो गया कि उसे फटे-पुराने कपड़ों में घूमना पड़ा।

सक्का (इंद्र) ध्यान करते हुए अपने दरिद्रता के ज्ञान से अभिभूत हो गए। पुत्र के प्रेम से अभिभूत होकर उन्होंने उसे एक वरदान पात्र देते हुए कहा, "पुत्र, इस पात्र को टूटने न देना। जब तक तुम इसे अपने पास रखोगे, तुम्हारा धन कभी समाप्त नहीं होगा। इसलिए इसका ध्यान रखना!" और फिर वे स्वर्ग लौट गए।

उसके बाद वह आदमी बस उसी प्याले से पीता रहा। एक दिन, वह नशे में धुत था और उसने प्याला हवा में उछाला, गिरते ही उसे पकड़ लिया। लेकिन एक बार वह चूक गया। प्याला ज़मीन पर गिरा और चकनाचूर हो गया! फिर वह दोबारा गरीब हो गया और फटे-पुराने कपड़ों में, हाथ में कटोरा लिए भीख माँगता फिरने लगा, अंत में एक दीवार के पास लेटकर उसकी मृत्यु हो गई।

जब गुरु ने यह कहानी समाप्त कर ली, तो उन्होंने आगे कहा:-

"एक निकम्मे व्यक्ति ने एक बार बाउल हासिल कर लिया था,"
एक ऐसा कटोरा जिसने उसकी सारी मनोकामनाएं पूरी कर दीं।
और जब तक वह इस कटोरे का ध्यान रखता रहा,
उसका भाग्य हर तरह से अनुकूल था।
"जब, घमंड और नशे में, एक लापरवाह क्षण में,
उसने उस कटोरे को तोड़ दिया जिससे उसे यह सारी शक्ति प्राप्त होती थी।
नंगा, बेचारा मूर्ख! चिथड़े-चिथड़े कपड़ों में, वह
बहुत कष्ट में पड़ गया।
"ऐसा नहीं है कि चाहे कोई भी व्यक्ति कितना भी धनी क्यों न हो,
लेकिन इसका आनंद लेने की कोई सीमा नहीं है।
बेईमान की तरह ही वह भी जल्द ही झुलस जाएगा—बेचारा!
इससे उसका मनोकामना पात्र टूट गया।
अपनी पूर्ण बुद्धिमत्ता से इन श्लोकों को दोहराते हुए, उन्होंने जन्म की पहचान की: "उस समय अनाथपिंडिका का भतीजा वह दुष्ट था जिसने शुभ प्याला तोड़ा था, लेकिन मैं

स्वयं सक्का (इंद्र) था।"

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सुपट्ट-जातक**
***स्रोत**: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-292-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 292
सुपत्त-जातक

"यहाँ, बनारस नगर में," इत्यादि — यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी, जिसमें कच्चे घी में मिला हुआ चावल और स्वाद के लिए लाल मछली का भोजन था, जो वरिष्ठ भिक्षु सारिपुत्र ने बिम्बादेवी (बुद्ध की पत्नी, जिन्हें यशोदरा के नाम से भी जाना जाता है) को दिया था। परिस्थितियाँ ऊपर अभंतर जन्म-कथा (*1) में वर्णित परिस्थितियों के समान हैं। यहाँ भी पवित्र भिक्षुणी (भिक्षुणी) के पेट में दर्द था। श्रेष्ठ राहुल (बुद्ध के पुत्र) ने वरिष्ठ भिक्षु को यह बात बताई। उन्होंने राहुल को अपने प्रतीक्षालय में बैठाया और राजा के पास चावल, लाल मछली और कच्चा घी लेने गए। बालक ने यह भोजन अपनी माता, पवित्र भिक्षुणी (भिक्षुणी) को दिया। भोजन करते ही उनका दर्द शांत हो गया। राजा ने पूछताछ के लिए दूत भेजे और उसके बाद से वे हमेशा उन्हें इसी प्रकार का भोजन भेजते रहे। एक दिन वे सत्य के हॉल में इस विषय पर चर्चा करने लगे: "मित्र, धर्म के सरदार (सारिपुत्र) ने भिक्षुणी (भिक्षुणी) को ऐसा भोजन देकर तृप्त किया।" गुरुजी अंदर आए और पूछा कि वे किस बारे में बात कर रहे हैं: उन्होंने उन्हें बताया। गुरुजी ने कहा, "यह पहली बार नहीं है, भाई (भिक्षु), कि

सारिपुत्र ने राहुल की माता (बुद्ध की पत्नी) को उनकी इच्छा पूरी की है; उन्होंने पहले भी ऐसा किया था।" इतना कहकर उन्होंने अपने पिछले जन्म की एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व कौवे के रूप में पैदा हुए। वे बड़े हुए और अस्सी हजार कौवों के मुखिया बने, जिनका नाम सुपत्त या सुंदर पंख था; उनके साथी का नाम सुफस्सा या कोमल था, और उनके सेनापति का नाम सुमुखो था। वे अपने अस्सी हजार प्रजाजनों के साथ बनारस के पास ही रहते थे।

एक दिन वह और उसका साथी भोजन की तलाश में राजा के रसोईघर के पास से गुज़रे। राजा का रसोइया तरह-तरह की मछलियों के कई व्यंजन बना रहा था और उसने उन्हें थोड़ी देर के लिए ठंडा होने के लिए खुला छोड़ दिया था। रानी कौवे को खाने की खुशबू आई और उसे खाने की तीव्र इच्छा हुई। लेकिन उस दिन उसने कुछ नहीं कहा।

लेकिन अगले दिन, जब किंग क्रो ने उन्हें भोजन के लिए जाने का प्रस्ताव रखा, तो उसने कहा, "तुम अकेले जाओ: मुझे कुछ बहुत चाहिए!"

"यह क्या है?" उसने पूछा।

"मुझे राजा का कुछ भोजन चाहिए; और चूंकि मुझे वह नहीं मिल सकता, इसलिए मैं मरने जा रहा हूँ।"

कौआ सोचने के लिए बैठ गया। प्रिटीबीक उसके पास आया और पूछा कि क्या उसे किसी बात से आपत्ति है। किंग क्रो ने उसे सब कुछ बता दिया। "ओह, कोई बात नहीं," कैप्टन ने कहा; और उन दोनों को दिलासा देते हुए आगे कहा, "तुम आज यहीं रहो, मैं मांस ले आता हूँ।"

इसलिए उसने कौवों को इकट्ठा किया और उन्हें सारी बात बताई। "चलो, इसे हासिल करें!" उसने कहा; और वे सब एक साथ बनारस के लिए उड़ गए। उसने उन्हें रसोई के पास इधर-उधर टुकड़ियों में बिठा दिया ताकि वे पहरा दें; और वह अपने आठ योद्धाओं के साथ रसोई की छत पर बैठ गया। राजा के भोजन परोसे जाने की प्रतीक्षा करते हुए उसने उन्हें निर्देश दिए: "जब भोजन परोसा जाएगा, तो मैं उस आदमी से थालियाँ छुड़वा दूँगा। एक बार ऐसा हो जाए तो मेरा अंत हो जाएगा। इसलिए तुममें से चार लोग चावल से अपना मुँह भर लो, और चार लोग मछली से, और हमारे शाही जोड़े को भी खिलाओ; और अगर वे पूछें कि मैं कहाँ हूँ, तो कहना कि मैं आ रहा हूँ।"

खैर, रसोइए ने अपने सारे पकवान तैयार कर लिए, उन्हें तराजू पर टांगा और राजा के कमरों की ओर चल पड़ा। जैसे ही वह दरबार से गुज़रा, कौवे के सरदार ने अपने साथियों को इशारा किया और उड़कर उस वाहक की छाती पर बैठ गया, अपने फैले हुए पंजों से उस पर वार किया, भाले की नोक जैसी नुकीली चोंच से उसकी नाक पर चोंच मारी और अपने दोनों पैरों से उसके जबड़े बंद कर दिए।

राजा ऊपरी मंजिल पर इधर-उधर टहल रहे थे, तभी उन्होंने एक बड़ी खिड़की से बाहर देखा कि कौआ क्या कर रहा है। उन्होंने भोजनवाहक को आवाज़ दी: "अरे, बर्तन नीचे रखो और कौए को पकड़ो!" तो भोजनवाहक ने बर्तन नीचे रख दिए और कौए को कसकर पकड़ लिया।

"इधर आओ!" राजा चिल्लाया।

फिर कौवों ने जी भरकर खाया और निर्देशानुसार बचा हुआ भोजन नोच कर ले गए। इसके बाद बाकी कौवे भी झुंड बनाकर आए और बचा हुआ भोजन खा लिया। आठों योद्धाओं ने वह भोजन अपने राजा और रानी को खाने के लिए दे दिया। इस तरह सॉफ्टी की भूख शांत हो गई।

भोजन लेकर आया सेवक राजा के लिए अपना कौआ लेकर आया।

"ओ कौवे!" उसने कहा, "तुमने मेरा ज़रा भी आदर नहीं किया! तुमने मेरे नौकर की नाक तोड़ दी! तुमने मेरे बर्तन चकनाचूर कर दिए! तुमने लापरवाही से अपनी जान गंवा दी! तुम्हें ऐसा करने के लिए किसने उकसाया?"

कौवे ने उत्तर दिया, "हे महान राजा! हमारे राजा बनारस के पास रहते हैं और मैं उनकी सेना का सेनापति हूँ। उनकी पत्नी (जिनका नाम सॉफ्टी है) को आपके भोजन की तीव्र इच्छा हुई और वे उसे चखना चाहती थीं। हमारे राजा ने मुझे उनकी इच्छा बताई। मैंने तुरंत अपना

प्राण लगा दिए। अब मैंने उन्हें भोजन भेज दिया है; मेरी इच्छा पूरी हो गई है। यही कारण है कि मैंने ऐसा किया।" और बात समझाते हुए उन्होंने कहा:-

"हे महान राजा, बनारस नगर में,
वहाँ कौवों का एक राजा रहता है, उस रात की परी पंख वाली चिड़िया;
जिसके साथ निम्नलिखित लोग उपस्थित थे
अस्सी हजार कौवों का।
"उसके साथी, सॉफ्टी की एक ही दिली इच्छा थी:
उसे राजा की खुद की पकड़ी हुई मछली का भोजन करने की तीव्र इच्छा थी।
ताजा पकड़ी गई मछली को उनकी रसोई में पकाया गया, ऐसा व्यंजन
जहां तक राजाओं की मेजों का सवाल है।
"अब आप मुझे उनके दूत के रूप में देखते हैं;"
मेरे स्वामी ने ही मुझे यहाँ भेजा है;
और इसीलिए मैं अपने सम्राट का आदर करता हूँ।
मैंने उस आदमी की नाक पर चोट पहुँचाई।
जब राजा ने यह सुना, तो उन्होंने कहा, "हम मनुष्यों का बहुत सम्मान करते हैं, फिर भी उन्हें मित्र नहीं बना पाते। चाहे हम पूरे गाँव के बराबर उपहार दें, कोई भी हमारे लिए अपना प्राण देने को तैयार नहीं होता। परन्तु यह प्राणी, कौआ, अपने राजा के लिए प्राणत्याग कर देता है। वह बहुत ही नेक, मधुर वाणी वाला और भला है।" राजा कौए के अच्छे गुणों से इतने प्रसन्न हुए कि उन्होंने उसे एक सफेद छतरी भेंट करके सम्मानित किया। लेकिन कौए ने राजा को अपनी ही भेंट से प्रणाम किया और सुंदर कौए के गुणों पर विस्तार से चर्चा की। राजा ने उसे बुलवाया, उसकी शिक्षाएँ सुनीं और उन दोनों के लिए उसी प्रकार का भोजन भेजा जैसा वह स्वयं खाता था; और बाकी कौओं के लिए उन्होंने प्रतिदिन बड़ी मात्रा में चावल पकाया। उन्होंने स्वयं बोधिसत्व के उपदेशों का अनुसरण किया और सभी प्राणियों की रक्षा करते हुए सद्गुणों का पालन किया। सुंदर कौए के उपदेश सात सौ वर्षों तक याद रखे गए।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म की पहचान बताई: "उस समय राजा आनंद थे, सेनापति सारिपुत्र थे, लेकिन सुपत्ता मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) क्रमांक (281), ऊपर।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **काया-विच्छिन्द-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-293-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 293
काया-विच्चिंडा-जातक

"भयानक बीमारी से ग्रस्त," इत्यादि — यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में एक व्यक्ति के बारे में सुनाई थी। हमें पता चलता है कि श्रावस्ती नगर में एक व्यक्ति पीलिया से पीड़ित था, जिसे डॉक्टरों ने लाइलाज बताकर छोड़ दिया था। उसकी पत्नी और पुत्र चिंतित थे कि उसका इलाज कौन करेगा। उस व्यक्ति ने सोचा, "यदि मैं इस बीमारी से छुटकारा पा लूँ, तो मैं संन्यासी जीवन अपना लूँगा।" कुछ दिनों बाद उसने कुछ ऐसा खाया जिससे उसे लाभ हुआ और वह ठीक हो गया। फिर वह जेतवन मठ गया और संघ में प्रवेश का अनुरोध किया। उसने गुरु से शिष्यों के छोटे और बड़े दीक्षा संस्कार प्राप्त किए और शीघ्र ही संतत्व प्राप्त कर लिया। इसके एक दिन बाद भिक्षु सत्य के हॉल में आपस में बातचीत कर रहे थे: "मित्र, फलाँ व्यक्ति को पीलिया हो गया था और उसने प्रतिज्ञा की थी कि यदि वह ठीक हो जाएगा तो संन्यासी जीवन अपना लेगा; उसने ऐसा ही किया और अब वह संतत्व प्राप्त कर चुका है।" गुरु अंदर आए और पूछा कि वे सब आपस में क्या बात कर रहे थे। उन्होंने उसे बताया। तब उसने कहा: "भाइयों (भिक्षुओं), ऐसा करने वाला यह अकेला व्यक्ति नहीं है।

बहुत समय पहले, बीमारी से उबर रहे ज्ञानी पुरुषों ने एकांतवासी जीवन अपना लिया और अपना लाभ सुनिश्चित किया।" और उसने एक प्राचीन कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व का जन्म एक ब्राह्मण परिवार में हुआ। वे बड़े हुए और धन-संपत्ति अर्जित करने लगे, लेकिन उन्हें पीलिया हो गया। चिकित्सक भी उनका कुछ नहीं कर सके और उनकी पत्नी और परिवार हताश हो गए। उन्होंने निश्चय किया कि यदि वे कभी ठीक हो गए, तो वे संन्यासी जीवन अपना लेंगे; और कुछ ऐसा ग्रहण करने के बाद जो उनके लिए लाभकारी था, वे ठीक हो गए, जिसके बाद वे हिमालय चले गए और संन्यासी बन गए। उन्होंने अपनी इंद्रियों और उपलब्धियों का विकास किया और परमानंद में रहने लगे। उन्होंने सोचा, "इतने समय तक मैं इस महान सुख से वंचित रहा!" और उन्होंने यह इच्छा व्यक्त की:

"एक भयंकर बीमारी से त्रस्त होकर, मैं
अत्यंत पीड़ा और बीमारी में पड़े हुए,
   मेरा शरीर फूल की तरह जल्दी मुरझा जाता है।
सूखने के लिए धूल भरी जगह पर धूप में रख दिया गया।
"जो श्रेष्ठ है वह नीच प्रतीत होता है, और जो शुद्ध है वह अशुद्ध प्रतीत होता है।"
जो अंधा है, वह हर खूबसूरत चीज को गंदगी का गड्ढा समझता है।
"उस बीमार शरीर पर शर्म आती है, शर्म आती है, मैं कहता हूँ।"
घृणास्पद, अपवित्र और घिनौनी सड़न से भरा हुआ!
   जब मूर्ख आलसी होते हैं, तो वे जीतने में असफल हो जाते हैं।
स्वर्ग में नया जन्म, और मार्ग से भटकना।"

इस प्रकार उस महान प्राणी ने अशुद्धता और निरंतर रोग के स्वरूप का विभिन्न तरीकों से वर्णन किया, और शरीर और उसके सभी अंगों से विरक्त होकर, अपने पूरे जीवन में जीवन की चार उत्कृष्ट अवस्थाओं का अभ्यास किया, जब तक कि वह ब्रह्मा के लोक में नहीं चले गए।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने सत्यों की घोषणा की और जन्म की पहचान बताई—कई लोग प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की सफलता प्राप्त कर चुके थे, इत्यादि—"उस समय मैं स्वयं तपस्वी था।"

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **जम्बू-खड़क-जातक**
***स्रोत**: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-294-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 294
जंबू-खडाका-जातक

"यह कौन बैठा है," इत्यादि—यह कथा गुरु ने बाँस के वन में देवदत्त और कोकालिका के बारे में सुनाई थी। जब देवदत्त को दान और ख्याति दोनों ही क्षीण होने लगे, तब कोकालिका घर-घर जाकर कहने लगे, "वरिष्ठ भिक्षु देवदत्त प्रथम महान राजा के वंश में, ओक्काका (इक्ष्वाकु) (*1) के शाही कुल से, निरंतर कुलीन वंश से, समस्त शास्त्रों के ज्ञाता, परमानंदमय पवित्रता से परिपूर्ण, मधुर वाणी वाले और धर्म के प्रचारक हैं। वरिष्ठ भिक्षु की सहायता कीजिए, उनकी मदद कीजिए!" इन शब्दों में उन्होंने देवदत्त की प्रशंसा की। वहीं दूसरी ओर, देवदत्त ने कोकालिका की प्रशंसा करते हुए कहा, "कोकालिका उत्तरी ब्राह्मण परिवार से हैं; वे धार्मिक (सन्यासी) जीवन व्यतीत करते हैं; वे विद्वतापूर्ण शिक्षाओं में निपुण और धर्म के प्रचारक हैं। कोकालिका की सहायता कीजिए, उनकी मदद कीजिए!" इस प्रकार वे एक-दूसरे की प्रशंसा करते हुए और अलग-अलग घरों में भोजन करते हुए घूमते रहे। एक दिन भिक्षुओं ने सत्य के हॉल में इस विषय पर चर्चा शुरू की। "मित्र, देवदत्त और कोकालिका एक-दूसरे के गुणों की प्रशंसा करते फिरते हैं, जबकि उनमें ये गुण होते ही नहीं, और इस तरह भोजन प्राप्त करते हैं।" गुरुजी अंदर आए और बैठे-बैठे उनसे पूछा कि वे किस बारे में बात कर रहे हैं। उन्होंने गुरुजी को बताया। गुरुजी

ने कहा, “भाइयों, ये पहली बार नहीं है कि इन लोगों ने एक-दूसरे की प्रशंसा करके भोजन प्राप्त किया है। बहुत समय पहले भी उन्होंने ऐसा ही किया था,” और उन्होंने उन्हें एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व एक गुलाब-सेब के बाग में वृक्ष-परी बन गए। 9 एक कौआ उनके वृक्ष की एक शाखा पर बैठा और फल खाने लगा। तभी एक सियार आया और उसने ऊपर देखा तो कौआ दिखाई दिया। उसने सोचा, "अगर मैं इस प्राणी की चापलूसी करूँ, तो शायद मुझे भी कुछ फल खाने को मिल जाएँ!" इसलिए चापलूसी में उसने पहला श्लोक दोहराया:

"वह कौन है जो गुलाब के पेड़ पर बैठा है--"
मधुर गायिका! जिसकी मधुर आवाज मुझ तक पहुंचती है?
वह एक नन्हे मोर की तरह कोमल और मधुर स्वर में कूकती है।
और वह हमेशा अपनी जगह पर स्थिर बैठी रहती है।
कौवे ने प्रशंसा करते हुए दूसरा उत्तर दिया:

जो व्यक्ति जन्म और पालन-पोषण से श्रेष्ठ हो
दूसरों के पालन-पोषण की प्रशंसा कर सकता है, उनकी अहमियत जानता है।
आप एक युवा बाघ की तरह प्रतीत होते हैं:
आइए, खाइए, महोदय, जो मैं आपको देता हूँ!
ये कहते हुए उसने डाल को हिलाया और कुछ फल नीचे गिर गए।

फिर वृक्ष की आत्मा ने इन दोनों को खाते हुए देखकर, एक-दूसरे की चापलूसी करने के बाद, तीसरे छंद को दोहराया:

"झूठे लोग इकट्ठा होते हैं, यह मैं अच्छी तरह जानता हूँ।"
उदाहरण के लिए, यहाँ एक सड़ा हुआ मांस खाने वाला कौआ है।
और लाश खाने वाला सियार, बचकानी खड़खड़ाहट के साथ
एक दूसरे की चापलूसी करने में आगे बढ़ो!
इस छंद को दोहराने के बाद, वृक्ष-परी ने एक भयानक रूप धारण कर लिया और उन दोनों को डराकर भगा दिया।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म-कथा का सारांश प्रस्तुत किया; "उस समय सियार देवदत्त था, कौआ कोकालिका था, लेकिन वृक्ष की आत्मा मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) एक शानदार राजा, इक्ष्वाकु, बुद्ध और राम के पूर्वज।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **अंत-जातक**
***स्रोत**: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-295-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 295
अंताजातक (*1)

"बैल की तरह," इत्यादि - यह एक और कहानी है जो गुरु ने उसी स्थान पर और उन्हीं लोगों के बारे में सुनाई थी। परिस्थितियाँ पहले जैसी ही हैं।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व एक गाँव के प्रवेश द्वार पर स्थित अरंडी के वृक्ष की आत्मा बन गए। एक गाँव में एक बूढ़ा बैल मर गया; और उन्होंने उसके शव को घसीटकर गाँव के द्वार के पास पेड़ों के झुरमुट में फेंक दिया। एक सियार आया और उसका मांस खाने लगा। तभी एक कौआ आया और पेड़ पर बैठ गया। सियार को देखकर उसने सोचा कि क्या वह चापलूसी करके उस मांस का कुछ हिस्सा खा सकती है। और इस प्रकार उसने पहली पंक्ति दोहराई:

"तुम्हारा शरीर बैल की तरह लगता है।"
शेर की तरह अपनी गतिविधि करें।
हे पशुओं के राजा! आपकी ही महिमा हो!
कृपया आय के लिए कुछ पैसे छोड़ना न भूलें।
यह सुनकर सियार ने दूसरी बात दोहराई:

"जो लोग सभ्य जन्म और परवरिश के हों
सज्जनों की उचित प्रशंसा करना सीखें।
हे कौवे, जिसकी गर्दन मोर की गर्दन के समान है,
पेड़ से नीचे उतरो और एक चोंच खा लो!
यह देखकर वृक्ष-आत्मा ने तीसरी बात दोहराई:

सियार सभी जानवरों में सबसे नीच होता है।
कौआ सभी पक्षियों में सबसे नीचा होता है, यह बात सर्वविदित है।
अरंडी के पेड़ों का सबसे छोटा पेड़:
और अब ये तीनों ही सबसे नीच चीजें यहाँ मौजूद हैं!

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया तो उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "उस समय देवदत्त सियार था, कोकालिका कौआ थी, लेकिन वृक्ष-आत्मा मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)संख्या 294 की तुलना करें।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **समुद्द-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-296-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 296
समुद्दा-जातक

"खारे समुद्र की लहरों पर," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में वरिष्ठ भिक्षु उपनंद के बारे में सुनाई थी। यह व्यक्ति बहुत खाने-पीने वाला था; भोजन से भरी बैलगाड़ियाँ भी उसे तृप्त नहीं कर पाती थीं। बरसात के मौसम में वह दो-तीन अलग-अलग बस्तियों में समय बिताता था, एक में अपने जूते, दूसरी में अपनी छड़ी, तीसरी में अपना पानी का घड़ा छोड़ देता था, और एक में वह स्वयं रहता था। जब वह एक ग्रामीण मठ में गया और वहाँ के भिक्षुओं को अपनी सभी आवश्यक वस्तुओं के साथ तैयार देखा, तो उसने संतुष्ट तपस्वियों के चार वर्गों (*1) के बारे में बात करना शुरू कर दिया; उनके वस्त्र छीन लिए और उन्हें कूड़े के ढेर से चिथड़े उठाने को कहा; उनसे मिट्टी के बर्तन लेने को कहा और उन्हें अपनी पसंद के बर्तन और धातु के बर्तन देने को कहा; फिर उसने एक गाड़ी भरकर उन्हें जेतवन मठ ले गया। एक दिन सत्य के हॉल में लोग बातें करने लगे। “मित्र, सक्का कुल का उपनंद, जो बहुत खाने वाला और लालची है, दूसरों को धर्म का उपदेश दे रहा है, और देखो, वह तो बड़े भिक्षुओं की संपत्ति से भरी गाड़ी लेकर आ गया है!” गुरुजी अंदर आए और यह जानने की इच्छा जताई कि वे क्या बातें कर रहे हैं। उन्होंने गुरुजी को बताया। “भाइयों,” गुरुजी ने कहा, “उपनंद ने पहले भी संतोष

की बात करके गलती की है। लेकिन मनुष्य को दूसरों के अच्छे व्यवहार की प्रशंसा करने से पहले अपनी इच्छाओं में संयमी होना चाहिए।"

"पहले स्वयं को धार्मिकता में स्थापित करो,
फिर सिखाओ; बुद्धिमानों को स्वार्थी नहीं होना चाहिए।
धम्मपद (*2) के इस श्लोक का हवाला देते हुए और उपनंद को दोषी ठहराते हुए उन्होंने आगे कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि उपनंद लालची हुआ है। बहुत पहले, उसने सोचा था कि समुद्र का पानी भी बचाया जाना चाहिए।" और उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व समुद्र-देवता बन गए। फिर एक कौआ समुद्र के ऊपर से उड़ रहा था। वह उड़ता हुआ मछलियों के झुंड और पक्षियों के समूह को देखकर चिल्लाने लगा,

"समुद्री जल का अधिक सेवन मत करो! सावधान रहो!" उसे देखकर, समुद्र-देवता ने पहली पंक्ति दोहराई:

"खारे समुद्र की लहरों के ऊपर कौन उड़ता है?"
मछलियों के झुंड की जाँच कौन करता है, और कोशिश कौन करता है
गहरे समुद्र के राक्षस यहीं रहेंगे
अन्यथा सारा समुद्र ही बह जाएगा?
जलकौवे ने यह सुना और दूसरे छंद में उत्तर दिया:

"एक शराबी कभी संतुष्ट नहीं होता"
इसलिए लोग मुझे दुनिया भर में इसी नाम से पुकारते हैं।
मैं समुद्र का पानी पीने की कोशिश खुशी-खुशी करूंगा।
और नदियों के स्वामी को सुखा दो।
यह सुनकर सागर-आत्मा ने तीसरी बात दोहराई:

सागर का जलस्तर निरंतर घटता रहता है।
और उसी दिन फिर से भर जाता है।
भला किसने सोचा था कि समुद्र भी हार सकता है?
इसे पी लेने से कोई फायदा नहीं होगा!
इन शब्दों के साथ ही उस आत्मा ने एक भयानक रूप धारण कर लिया और जल-कौवे को डराकर भगा दिया।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म की पहचान बताई: "उस समय उपनंद जल-कौवा था, लेकिन आत्मा मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) वह संन्यासी जो उसे दिए गए वस्त्रों, भोजन, बिस्तर से संतुष्ट रहता है, और जो ध्यान में आनंदित रहता है।

(2)श्लोक 158.

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **काम-विलाप-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-297-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 297
काम-विलप-जातक

"हे पक्षी, जो उड़ता है," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी, एक ऐसे व्यक्ति के बारे में जो अपनी पूर्व पत्नी के लिए तरसता था। जिन परिस्थितियों ने उसे ऐसा करने के लिए प्रेरित किया, उनका वर्णन (*1) पुप्परत्ता जन्म-कथा (*2) में और अतीत की कहानी का वर्णन इंद्रिय जन्म-कथा (*3) में किया गया है।

इस प्रकार उस व्यक्ति को जिंदा ही सूली पर चढ़ा दिया गया। जब वह वहाँ लटका हुआ था, उसने ऊपर देखा और एक कौआ हवा में उड़ता हुआ दिखाई दिया; और, असहनीय दर्द की परवाह किए बिना, उसने कौए को अपनी प्रिय पत्नी को संदेश भेजने के लिए पुकारा, और निम्नलिखित छंद दोहराए:

"हे पक्षी, आकाश में उड़ने वाले!"
हे पंखों वाले पक्षी, जो ऊँची उड़ान भरते हो!
मेरी पत्नी को बताओ, जिसकी जांघें इतनी सुंदर हैं:
उसे यह समय लंबा लगेगा।
उसे पता नहीं है कि तलवार और भाला तैयार हैं:
दर्द से भरी और गुस्से में वह परेशान होगी।
यही मेरी पीड़ा और मेरा भय है।
और ऐसा नहीं है कि मैं यहाँ लटका हुआ हूँ।
मैंने अपना कमल-कवच त्याग दिया है।
और मेरे तकिए में गहने पड़े हैं,
और साथ में बनारस का मुलायम कपड़ा भी।
धन-संपत्ति से ही वह संतुष्ट रहे।
इन्हीं चीखों के साथ उसकी मृत्यु हो गई।

जब उस गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई (सत्यों के समापन पर, प्रेम में व्याकुल भाई (भिक्षु) ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की सिद्धि प्राप्त की): "वह पत्नी तब भी वही पत्नी थी जो अब है; परन्तु जिसने यह देखा, वह आत्मा में ही था।"

फुटनोट:

(1)कथितम पढ़ना.

(2) संख्या 147

(3)सं. 423.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **उडुंबर-जातक**
***स्रोत** : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-298-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 298
उदंबर जातक

"अंजीर पक गए हैं," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी, एक भिक्षु के बारे में, जिसने सीमावर्ती गाँव में एक आश्रम बनाया था। यह रमणीय आश्रम एक समतल चट्टान पर बना था; एक छोटा, साफ-सुथरा स्थान, जहाँ पर्याप्त पानी था, जिससे वह सुखद लगता था, पास में ही एक गाँव था जहाँ लोग परिक्रमा करते थे, और मित्रवत लोग थे जो भोजन देते थे। एक भिक्षु अपनी परिक्रमा के दौरान इस स्थान पर पहुँचा। वहाँ रहने वाले वरिष्ठ भिक्षु ने नए भिक्षु का आतिथ्य सत्कार किया और अगले दिन उसे अपने साथ परिक्रमा पर ले गए। लोगों ने उसे भोजन दिया और अगले दिन फिर आने का निमंत्रण दिया। कुछ दिन वहाँ रहने के बाद, भिक्षु ने दूसरे भिक्षु को वहाँ से हटाने और आश्रम पर कब्ज़ा करने की योजना बनाई। एक बार जब वह वरिष्ठ भिक्षु से मिलने आया, तो उसने पूछा, "क्या आपने कभी बुद्ध के दर्शन किए हैं, मित्र?" भिक्षु ने जवाब दिया, "नहीं, महोदय; यहाँ मेरी कुटिया की देखभाल करने वाला कोई नहीं है, वरना मैं पहले ही चला गया होता।" "ओह, जब आप बुद्ध के दर्शन करने जाएँगे, मैं इसकी देखभाल करूँगा," नए आए व्यक्ति ने कहा; और इस प्रकार स्वामी ने गाँव वालों को यह आदेश देकर प्रस्थान किया कि वे उसके लौटने तक पवित्र भिक्षु की देखभाल करें। नए आए व्यक्ति ने अपने मेज़बान की बुराई करना शुरू कर दिया और गाँव वालों के सामने उसकी हर तरह की कमियाँ गिनाईं। दूसरा व्यक्ति अपने गुरु से मिलने गया और लौट आया; लेकिन नए आए व्यक्ति ने उसे आश्रय देने से इनकार कर दिया। उसने रहने के लिए एक जगह ढूँढी और अगले दिन गाँव में अपने चक्कर लगाने निकल गया। लेकिन गाँव वाले वेतन लेकर अपना कर्तव्य निभाने को तैयार नहीं थे। वह बहुत निराश हुआ और जेतवन मठ लौट आया, जहाँ उसने भिक्षुओं को सारी बात बताई। वे अपने सत्य के मंथन में इस मामले पर चर्चा करने लगे: "मित्र, फलाँ भिक्षु ने फलाँ भिक्षु को उसके आश्रम से निकाल दिया है और उस पर कब्ज़ा कर लिया है!" गुरुजी अंदर आए और जानना चाहते थे कि वे वहाँ बैठकर क्या चर्चा कर रहे हैं। उन्होंने उन्हें सब कुछ बता दिया। उसने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि इस आदमी ने दूसरे को उसकी रोजी-रोटी से बेदखल किया है;" और उसने उन्हें एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, तब बोधिसत्व वन में वृक्ष-आत्मा बन गए। उस समय वर्षा ऋतु में लगातार सात दिनों तक भारी बारिश होती थी। एक छोटा लाल मुख वाला बंदर बारिश से सुरक्षित एक चट्टानी गुफा में रहता था। एक दिन वह गुफा के मुहाने पर सूखे में, बड़े सुख से बैठा था। तभी एक बड़ा काला मुख वाला बंदर, जो ठंड से कांप रहा था, उसे देखकर रुका। उसने सोचा, "मैं इसे गुफा से कैसे निकालूँ और इसकी गुफा में कैसे रहूँ?" उसने अपना पेट फुलाकर और ऐसा जताते हुए जैसे उसने भरपेट भोजन किया हो, दूसरे बंदर के सामने रुककर पहली पंक्ति दोहराई:

अंजीर पक गए हैं, बरगद के पेड़ अच्छे हैं।
और बंदर के भोजन के लिए तैयार।
मेरे साथ आइए और खाना खाइए!
भूख से परेशान क्यों होना चाहिए?
रेडफेस ने इन सब बातों पर विश्वास किया और इन सभी फलों को खाने की तीव्र इच्छा रखने लगा। इसलिए वह निकल पड़ा, यहाँ-वहाँ शिकार किया, पर उसे कोई फल नहीं मिला। फिर वह वापस लौटा; और देखा कि ब्लैकफेस अपनी गुफा में बैठा है! उसने उसे मात देने का निश्चय किया; इसलिए उसके सामने रुककर उसने दूसरा छंद दोहराया:

"वह धन्य है जो सम्मान का फल देता है।"
अपने उन बड़ों के लिए जो पूर्ण आयु में थे;
मुझे अभी भी उतनी ही खुशी महसूस हो रही है।
इतने सारे फल खाने के बाद, मैं कसम खाता हूँ!
बड़े बंदर ने सुना और तीसरी बात दोहराई:

"जब यूनानी का सामना यूनानी से होता है, तब रस्साकशी शुरू होती है।"
एक बंदर दूसरे बंदर की शरारतों को दूर से ही भांप लेता है।
यहां तक कि एक युवा भी जरूरत से ज्यादा तेज था;
लेकिन बूढ़े पक्षियों को भूसे से नहीं पकड़ा जा सकता।
दूसरा भाग गया।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म-कथा का सारांश इस प्रकार दिया: "उस समय झोपड़ी का स्वामी छोटा बंदर था, घुसपैठिया बड़ा काला बंदर था, लेकिन वृक्ष-आत्मा मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कोमाया-पुत्त-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-299-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 299
कोमया-पुत्त-जातक

“पहले तुम इस्तेमाल होते थे,” इत्यादि — यह कहानी गुरु ने पुब्बाराम में सुनाई थी, कुछ भिक्षुओं के बारे में जो अपने व्यवहार में असभ्य और बदतमीज़ थे। ये भिक्षु, जो गुरु के नीचे वाली मंजिल पर रहते थे, अपने देखे-सुने किस्से सुनाते थे और झगड़ालू व गाली-गलौज करने वाले थे। गुरु ने महामोग्गल्याना को अपने पास बुलाया और उन्हें डराने के लिए कहा। वरिष्ठ भिक्षु हवा में उठे और अपने अंगूठे से घर की नींव को छू लिया। नींव समुद्र के सबसे दूर के किनारे तक हिल गई! भिक्षु बुरी तरह डर गए और बाहर आकर खड़े हो गए। उनके इस असभ्य व्यवहार के बारे में भिक्षुओं के बीच चर्चा होने लगी। एक दिन वे सत्य के हॉल में इस बारे में बात करने लगे। “मित्र, कुछ भिक्षु इस मोक्ष (निर्वाण) के घर में आए हैं, जो असभ्य और बदतमीज़ हैं; वे संसार की अनित्यता, दु:ख और असभ्यता को नहीं देखते और न ही अपना कर्तव्य निभाते हैं।” गुरु अंदर आए और उनसे पूछा कि वे वहाँ बैठे-बैठे किस बारे में चर्चा कर रहे हैं। उन्होंने उससे कहा, “भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि वे कठोर और असभ्य व्यवहार कर रहे हैं। वे पहले भी ऐसे ही थे।” और उसने उन्हें एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व का जन्म एक ब्राह्मण के पुत्र के रूप में एक गाँव में हुआ। उनका नाम कोमयपुत्त रखा गया। समय बीतने पर वे हिमालय क्षेत्र में जाकर संन्यासी जीवन व्यतीत करने लगे। वहाँ कुछ आनंदमय तपस्वी रहते थे, जिन्होंने एक आश्रम बनाया हुआ था। वे ध्यान की अवस्था (सम्मोहन) प्राप्त करने के लिए किसी भी प्रकार का प्रयास नहीं करते थे। वे जंगल से फल लाकर खाते थे और फिर आपस में हँसते-हँसते समय बिताते थे। उनके पास एक बंदर था, जो उन्हीं की तरह असभ्य स्वभाव का था और अपनी विचित्र हरकतों और शरारतों से उनका खूब मनोरंजन करता था।

वे काफी समय तक उसी स्थान पर रहे, जब तक कि उन्हें नमक और मिठाई लेने के लिए फिर से मनुष्यों के बीच नहीं जाना पड़ा। उनके चले जाने के बाद, बोधिसत्व उनके निवास स्थान में रहने लगे। बंदर ने उनके लिए भी वही शरारतें कीं जो वह दूसरों के लिए करता था। बोधिसत्व ने अपनी उंगली उसकी ओर इशारा करते हुए उसे उपदेश दिया, "जो व्यक्ति सुशिक्षित तपस्वियों के साथ रहता है, उसे उचित व्यवहार करना चाहिए, अपने कार्यों में विवेकशील होना चाहिए और ध्यान में लीन रहना चाहिए।" उसके बाद से, बंदर हमेशा गुणी और अच्छे व्यवहार वाला रहा।

इसके बाद बोधिसत्व चले गए। अन्य तपस्वी अपना नमक और मिठाई लेकर लौट आए। लेकिन बंदर ने उनके साथ शरारतें करना बंद कर दिया। उन्होंने पूछा, "यह क्या है, मेरे मित्र? तुम पहले की तरह खेल क्यों नहीं खेलते?" उनमें से एक ने पहली पंक्ति दोहराई:

"पहले आप खेला करते थे
हम संन्यासी इसी झोपड़ी में निवास करते हैं।
ओ बंदर! बंदर की तरह करो;
जब तुम अच्छे होते हो तो हम तुमसे प्यार नहीं करते।
यह सुनकर बंदर ने दूसरी पंक्ति दोहराई:

शब्द द्वारा संपूर्ण ज्ञान
मैंने बुद्धिमान कोमाया के बारे में सुना है।
अब मुझे मत समझो क्योंकि मुझे देर हो गई थी
अब मुझे ध्यान करना पसंद है।"
इस पर साधु ने तीसरी बात दोहराई:

"यदि तुम चट्टान पर बीज बोते हो,

बारिश होने पर भी फसल नहीं उगेगी।
आपको अभी भी पूर्ण ज्ञान सुनने को मिल सकता है;
लेकिन तुम कभी ध्यान नहीं कर पाओगे।"

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: "उस समय ये भाई (भिक्षु) तुच्छ संन्यासी थे, लेकिन कोमयपुत्त मैं स्वयं था।"

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **वाका-जातक**
***स्रोत** : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-300-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 300
वाका-जातक

“भेड़िया जो ले जाता है,” इत्यादि — यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में पुरानी मित्रता के बारे में सुनाई थी। परिस्थितियाँ विस्तार से विनय में वर्णित घटनाओं के समान थीं; यह उनका संक्षिप्त विवरण है। पूज्य उपसेना, जो दो वर्ष के विद्यार्थी थे, अपने साथ एक प्रथम वर्ष के विद्यार्थी को लेकर गुरु से मिलने आए, जो उसी मठ में रहते थे। गुरु ने उन्हें फटकारा और वे एकांतवास में चले गए। आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि प्राप्त करने और संतत्व प्राप्त करने के बाद, संतोष और पारिवारिक सद्गुणों को अपनाकर, एक संन्यासी के तेरह साधनाओं का पालन करते हुए और उन्हें अपने साथियों को सिखाते हुए, जब भगवान बुद्ध तीन महीने के लिए एकांतवास में थे, उन्होंने अपने भिक्षुओं के साथ, पहले गलत वाणी और असामंजस्य के लिए दिए गए दोष को स्वीकार किया, और दूसरी बार इस प्रकार स्वीकृति प्राप्त की, “अब से, कोई भी भिक्षु जब चाहे मुझसे मिलने आ सकता है, बशर्ते कि वे एक संन्यासी के तेरह साधनाओं का पालन करें।” इससे प्रोत्साहित होकर, वे वापस लौटे और उन्होंने यह कहानी अपने भिक्षुओं को सुनाई। उसके बाद, भाई लोग गुरु से मिलने आने से पहले इन प्रथाओं का पालन करते थे; फिर, जब गुरु अपने एकांतवास से बाहर आते, तो वे अपने पुराने चिथड़े फेंक देते और साफ वस्त्र पहन लेते। जब गुरु अपने सभी भाइयों के साथ कमरों का निरीक्षण करने गए, तो उन्होंने वहाँ पड़े इन चिथड़ों को देखा और पूछा कि ये क्या हैं। जब उन्होंने बताया, तो गुरु ने कहा, "भाइयों, इन भाइयों द्वारा अपनाई गई यह प्रथा क्षणभंगुर है, भेड़िये की पवित्र दिन की सेवा की तरह"; और उन्होंने उन्हें एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त राजा थे, तब बोधिसत्व ने देवताओं (देवदूतों) के राजा सक्का (इंद्र) के रूप में जन्म लिया। उस समय गंगा के किनारे एक चट्टान पर एक भेड़िया रहता था। सर्दियों में बाढ़ आई और चट्टान को घेर लिया। वह चट्टान पर पड़ा रहा, उसके पास न तो भोजन था और न ही उसे प्राप्त करने का कोई साधन। पानी बढ़ता ही गया, और भेड़िये ने सोचा, "यहाँ न तो भोजन है और न ही उसे प्राप्त करने का कोई साधन। मैं यहाँ पड़ा हूँ, कुछ करने को नहीं है। क्यों न मैं उपवास रख लूँ?" इस प्रकार उपवास रखने का संकल्प लेते हुए, वह लेटे-लेटे धार्मिक नियमों का पालन करने के लिए दृढ़ निश्चय कर रहा था। सक्का (इंद्र) ने ध्यान में भेड़िये के कमजोर संकल्प को देखा। उन्होंने सोचा, "मैं इस भेड़िये को दंडित करूँगा"; और एक जंगली बकरी का रूप धारण करके, वे उसके पास खड़े हो गए और भेड़िये को अपना दर्शन कराया।

"मैं आज का व्रत एक और दिन रख लूँगा!" भेड़िये ने उसे देखते ही सोचा; वह उठा और उस पर झपटा। लेकिन बकरी इधर-उधर उछली जिससे भेड़िया उसे पकड़ नहीं पाया। जब भेड़िये ने देखा कि वह उसे पकड़ नहीं पा रहा है, तो वह रुक गया और वापस चला गया, और लेटते हुए मन ही मन सोचने लगा, "अच्छा हुआ, मेरा व्रत तो टूटा नहीं।"

तब सक्का (इंद्र) अपनी दिव्य शक्ति से आकाश में मंडराते हुए बोले, "तुम जैसे अस्थिर लोगों का उपवास रखने से क्या लेना-देना? तुम्हें पता नहीं था कि मैं सक्का (इंद्र) हूँ और बकरे का मांस खाना चाहता था!" और इस प्रकार उसे प्रताड़ित और फटकारते हुए, वे देवदूतों के लोक में लौट गए।

"भेड़िया, जो जीवित प्राणियों को अपने भोजन के रूप में लेता है,"

और उनके मांस और रक्त को खाकर अपना भोजन बनाता है।
एक बार भुगतान करने की पवित्र प्रतिज्ञा ली थी,
उसने व्रत रखने का निश्चय कर लिया था।
"जब सक्का (इंद्र) को पता चला कि उसने क्या करने का संकल्प लिया है,
उसने स्वयं को बाहरी नजरों के लिए एक बकरे के समान बना लिया।
फिर खून पीने वाला अपने शिकार को पकड़ने के लिए झपटा।
उसने अपना वचन भुला दिया, अपने सद्गुणों को त्याग दिया।
फिर भी, इस दुनिया में कुछ लोग ऐसे भी हैं,
जो ऐसे संकल्प लेते हैं जो उनकी क्षमता से परे होते हैं।
अपने उद्देश्य से भटक जाना, जैसा कि भेड़िये ने यहाँ किया।
जैसे ही उसने बकरी को आते देखा।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म का वर्णन इस प्रकार किया: "उस समय मैं स्वयं सक्का (इंद्र) था।"

पुस्तक IV. चतुक्कनिपाटा:

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कुल्लकलिंग-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-301-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 301
CULLAKALINGA-JATAKA

"द्वार खोलो," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें चार महिला तपस्वियों को धार्मिक (तपस्वी) जीवन में प्रवेश देने की बात कही गई थी।

परंपरा के अनुसार, वैशाली नगर में शासक परिवार के सात हजार सात सौ सात लिच्छवी रहते थे। वे सभी वाद-विवाद में लीन रहते थे।

अब पाँच सौ विभिन्न शिक्षाओं का ज्ञान रखने वाला एक जैन वैशाली नगर में आया और वहाँ उसका हार्दिक स्वागत हुआ। उसी प्रकार की एक जैन स्त्री भी वैशाली नगर में आई और लिच्छवी सरदारों ने उन दोनों के बीच वाद-विवाद करवाया। जब वे वाद-विवाद में एक-दूसरे के बराबर सिद्ध हुए, तो लिच्छवियों को यह विचार आया कि ऐसे जोड़े के बच्चे अवश्य बुद्धिमान होंगे। अतः उन्होंने उनका विवाह करवा दिया और समय आने पर इस विवाह से चार पुत्रियाँ और एक पुत्र उत्पन्न हुए। पुत्रियों के नाम सच्चा, लोला, अववादका और पताकरा रखे गए, और पुत्र का नाम सच्चका रखा गया। ये पाँचों संतानें जब वयस्क हुईं, तो उन्होंने एक हजार विभिन्न शिक्षाएँ प्राप्त कीं, पाँच सौ माता से और पाँच सौ पिता से। माता-पिता ने अपनी पुत्रियों को इस प्रकार शिक्षा दी: "यदि कोई गृहस्थ तुम्हारी शिक्षा का खंडन करे, तो तुम उसकी पत्नियाँ बन जाओ, परन्तु यदि कोई वरिष्ठ भिक्षु तुम्हारा खंडन करे, तो तुम्हें उसके हाथों से शिष्यत्व ग्रहण करना होगा।"

कुछ समय बाद उनके माता-पिता का देहांत हो गया। उनके मरने के बाद जैन सच्चक वैशाली नगर में ही रहने लगे और लिच्छवियों की परंपरा का अध्ययन करने लगे। उनकी बहनें गुलाब-खलिहान की एक शाखा लेकर शहर-शहर विमर्श करते हुए अंततः श्रावस्ती नगर पहुँचीं। वहाँ उन्होंने नगर के द्वार पर गुलाब-खलिहान की शाखा लगाई और वहाँ मौजूद कुछ लड़कों से कहा, "यदि कोई भी व्यक्ति, चाहे वह गृहस्थ हो या वरिष्ठ भिक्षु, हमारे विरुद्ध कोई उपदेश देने का साहस करे, तो वह इस धूल के ढेर को अपने पैरों से रौंद डाले और इस शाखा को कुचल दे।" ये कहकर वे भिक्षा मांगने नगर में चली गईं।

अब पूज्य सारिपुत्र ने जहाँ-जहाँ आवश्यक था वहाँ सफाई की, खाली घड़ों में पानी भरा और बीमारों की सेवा की। इसके बाद वे दिन में भिक्षा मांगने के लिए श्रावस्ती नगर गए। जब उन्होंने उस शाखा को देखा और उसके बारे में सुना, तो उन्होंने लड़कों को उसे नीचे

गिराकर कुचलने का आदेश दिया। उन्होंने कहा, “जिन लोगों ने इस वृक्ष शाखा को रोपा है, वे भोजन समाप्त होते ही जेतवन मठ के द्वार के ऊपर बने चबूतरे में आकर मुझसे मिलें।”

अतः वह नगर में गया और भोजन करने के बाद मठ के द्वार के ऊपर बने कक्ष में बैठ गया। स्त्री तपस्वियों ने भी भिक्षा मांगने के बाद लौटकर देखा कि शाखा कुचली हुई थी। जब उन्होंने पूछा कि यह किसने किया, तो लड़कों ने बताया कि यह सारिपुत्र ने किया है, और यदि वे इस पर चर्चा करना चाहती हैं, तो वे मठ के द्वार के ऊपर बने कक्ष में आ सकती हैं।

अतः वे शहर लौट आए और एक विशाल जनसमूह के साथ मठ के द्वार-शिखर पर गए तथा वरिष्ठ भिक्षु से हज़ारो अलग-अलग प्रश्न पूछे। वरिष्ठ भिक्षु ने उनकी सभी समस्याओं का समाधान किया और फिर उनसे पूछा कि क्या उन्हें और कुछ पता है।

उन्होंने उत्तर दिया, "नहीं, महाराज।"

"तब मैं आपसे कुछ पूछूंगा," उसने कहा।

उन्होंने कहा, "पूछिए, मेरे प्रभु, और यदि हमें इसका उत्तर पता होगा, तो हम आपको उत्तर देंगे।"

इसलिए, वरिष्ठ भिक्षु ने उनसे केवल एक प्रश्न पूछा, और जब उन्हें प्रश्न का उत्तर देना पड़ा, तो वरिष्ठ भिक्षु ने उन्हें उत्तर बता दिया।

तब उन्होंने कहा, "हम हार गए हैं, जीत आपकी है।"

"अब तुम क्या करोगे?" उसने पूछा।

उन्होंने उत्तर दिया, “हमारे माता-पिता ने हमें यह सलाह दी थी: यदि किसी गृहस्थ से वाद-विवाद में हार जाओ, तो उसकी पत्नियाँ बन जाओ, परन्तु यदि किसी वरिष्ठ भिक्षु से हार जाओ, तो उसके हाथों से शिष्यों का दीक्षा संस्कार ग्रहण करो।” अतः उन्होंने कहा, “हमें धार्मिक (तपस्वी) जीवन में प्रवेश दे दीजिए।”

वरिष्ठ भिक्षु ने सहर्ष सहमति दी और उन्हें उप्पलावन्ना नामक भिक्षुणी के घर में दीक्षा दी। और वे सभी शीघ्र ही संत बन गए।

फिर एक दिन उन्होंने सत्य के हॉल में यह विषय शुरू किया कि कैसे सारिपुत्र ने चार महिला तपस्वियों को शरण दी और उनके द्वारा ही वे सभी संतत्व प्राप्त कर सकीं। जब गुरुजी आए और उन्होंने उनकी चर्चा सुनी, तो उन्होंने कहा, "न केवल अभी, बल्कि पहले भी सारिपुत्र ने इन महिलाओं को शरण दी थी। (3) इस अवसर पर उन्होंने उन्हें धार्मिक (तपस्वी) जीवन के लिए समर्पित किया, लेकिन पहले उन्होंने उन्हें रानी पत्नी का दर्जा दिया था।" फिर उन्होंने उन्हें एक प्राचीन कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब कलिंग अपने राज्य के दंतपुरा नगर में शासन कर रहे थे, तब अस्सक, अस्सक देश के पोटाली नगर में राजा थे। कलिंग के पास एक बड़ी सेना थी और वे स्वयं हाथी के समान बलवान थे, परन्तु उन्हें युद्ध करने वाला कोई नहीं मिला। युद्ध के लिए उत्सुक होकर उन्होंने अपने मंत्रियों से कहा, "मैं युद्ध करने के लिए तरस रहा हूँ, परन्तु मुझे युद्ध करने वाला कोई नहीं मिल रहा।"

उनके मंत्रियों ने कहा, "महाराज, आपके लिए एक ही रास्ता खुला है। आपकी चार अत्यंत सुंदर पुत्रियाँ हैं। उनसे कहिए कि वे गहनों से सजें, और फिर उन्हें एक ढकी हुई गाड़ी में बिठाकर सशस्त्र सुरक्षाकर्मियों के साथ हर गाँव, कस्बे और राजमहल में ले जाया जाए। और यदि कोई राजा उन्हें अपने हरम में ले जाने की इच्छा रखे, तो हम उससे युद्ध करेंगे।"

राजा ने उनकी सलाह मान ली। परन्तु जहाँ कहीं भी वे गए, विभिन्न देशों के राजा उन्हें अपने नगरों में प्रवेश देने से डरते रहे, परन्तु उन्हें उपहार भेजे और नगर की दीवारों के बाहर आवास प्रदान किया। इस प्रकार वे भारत के कोने-कोने में यात्रा करते हुए अस्सक देश के पोटाली पहुँचे। परन्तु अस्सक ने भी अपने द्वार उनके लिए बंद कर दिए और केवल उपहार भेजा। अब इस राजा का नंदीसेना नाम का एक बुद्धिमान और योग्य मंत्री था, जो अनेक विद्याओं में निपुण था। उसने मन ही मन सोचा, “लोग कहते हैं कि ये राजकुमारियाँ भारत भर में घूम चुकी हैं, लेकिन उन्हें कोई ऐसा नहीं मिला जो उनके अधिकार के लिए युद्ध करे। यदि ऐसा है, तो भारत तो बस एक खोखला नाम है। मैं स्वयं कलिंग से युद्ध करूँगा।”

फिर वह गया और पहरेदारों से शहर का द्वार उनके लिए खोलने को कहा, और उसने पहला श्लोक बोला:

नंदीसेना की शक्ति से इन लड़कियों के लिए द्वार खोल दो।

राजा अरुणा (*2) के ऋषि सिंह, हमारे शहर की ठीक से रक्षा की जाती है।
इन शब्दों के साथ उसने द्वार खोल दिया और कन्याओं को राजा अस्सक के समक्ष ले आया तथा उससे कहा, “भयभीत न हों। यदि युद्ध होना हो, तो मैं उसका प्रबंध करूँगा। इन सुंदर राजकुमारियों को अपनी प्रधान रानियाँ बनाइए।” फिर उसने पवित्र जल छिड़ककर उन्हें रानियाँ बनाया और उनके सेवकों को यह कहकर विदा कर दिया कि वे जाकर कलिंग को बताएँ कि उनकी पुत्रियों को रानी-पत्नी का दर्जा दिया गया है। वे जाकर कलिंग को यह सूचना दी, और कलिंग ने कहा, “मुझे लगता है कि वह नहीं जानता कि मैं कितना शक्तिशाली हूँ,” और तुरंत एक विशाल सेना के साथ निकल पड़ा। नंदीसेना ने उसके आगमन की सूचना पाकर यह संदेश भेजा; “कलिंग अपनी सीमाओं में ही रहे, हमारी सीमाओं में अतिक्रमण न करे, और युद्ध दोनों देशों की सीमाओं पर लड़ा जाएगा।” यह संदेश प्राप्त करके कलिंग अपने क्षेत्र की सीमा में ही रुक गया और अस्सक भी अपनी सीमा में ही रहा।

उस समय बोधिसत्व तपस्वी जीवन व्यतीत कर रहे थे और दो राज्यों के बीच स्थित एक आश्रम में रह रहे थे। कलिंग ने कहा, "ये भिक्षु ज्ञानी हैं। कौन बता सकता है कि हममें से कौन विजयी होगा और कौन पराजित? मैं इस तपस्वी से पूछूंगा।" इसलिए वे भेस बदलकर बोधिसत्व के पास आए और एक तरफ आदरपूर्वक बैठते हुए, सामान्य अभिवादन के बाद बोले, "आदरणीय, कलिंग और अस्सका ने अपने-अपने क्षेत्र में तीन-तीन भुजाएँ खींच रखी हैं, वे युद्ध के लिए उत्सुक हैं। इनमें से कौन विजयी होगा और कौन पराजित होगा?"

“महामहिम,” उन्होंने उत्तर दिया, “एक विजयी होगा, दूसरा पराजित होगा। मैं इससे अधिक कुछ नहीं बता सकता। लेकिन स्वर्ग के राजा सक्का (इंद्र) यहाँ आ रहे हैं। मैं उनसे पूछकर आपको बता दूंगा, यदि आप कल फिर लौटें।”

जब सक्का (इंद्र) बोधिसत्व को प्रणाम करने आए, तो उन्होंने उनसे यह प्रश्न पूछा, और सक्का (इंद्र) ने उत्तर दिया, "आदरणीय महोदय, कलिंग की विजय होगी, अस्साक पराजित होगा, और फलां-फलां शगुन दिखाई देंगे।" अगले दिन कलिंग फिर आए और अपना प्रश्न दोहराया, और बोधिसत्व ने सक्का (इंद्र) का उत्तर दिया। कलिंग ने शगुन के बारे में पूछे बिना ही मन ही मन सोचा, "वे कहते हैं कि मेरी विजय होगी," और पूर्णतः संतुष्ट होकर चले गए। यह खबर दूर-दूर तक फैल गई। और जब अस्साक ने इसे सुना, तो उन्होंने नंदीसेना को बुलाया और कहा, "कहते हैं कि कलिंग विजयी होगा और हम पराजित होंगे। अब क्या किया जाए?"

"महाराज," उसने उत्तर दिया, "यह कौन जानता है? आप इस बात की चिंता न करें कि किसे विजय मिलेगी और किसे हार का सामना करना पड़ेगा।"

इन शब्दों से उन्होंने राजा को सांत्वना दी। फिर वे गए और बोधिसत्व को प्रणाम किया, और आदरपूर्वक एक तरफ बैठकर पूछा, "हे पूज्यवर, कौन विजय प्राप्त करेगा और कौन पराजित होगा?"

“कलिंगा की जीत होगी,” उसने उत्तर दिया। “और हे पूज्यवर, जीतने वाले के लिए क्या शगुन होगा और हारने वाले के लिए क्या होगा?” उसने पूछा।

"महामहिम," उसने उत्तर दिया, "विजेता का संरक्षक देवता एक बेदाग सफेद बैल होगा, और दूसरे राजा का संरक्षक देवता एक पूर्णतः काला बैल होगा, और दोनों राजाओं के संरक्षक देवता (देवदूत) स्वयं लड़ेंगे और बलपूर्वक विजयी या पराजित होंगे।"

यह सुनकर नंदीसेना उठे और राजा के सहयोगियों को अपने साथ ले गए—वे लगभग एक हजार थे और सभी महान योद्धा थे—और उन्हें पास के एक पहाड़ पर ले गए और उनसे पूछा, "क्या तुम हमारे राजा के लिए अपने प्राणों का बलिदान करोगे?"

"जी सर, हम करेंगे," उन्होंने उत्तर दिया।

"तो फिर इस खाई से कूद जाओ," उसने कहा।

उन्होंने ऐसा करने की कोशिश की, लेकिन तभी उसने उन्हें रोकते हुए कहा, "बस करो। हमारे राजा के सच्चे मित्र बनो और उनके लिए वीरतापूर्वक युद्ध लड़ो।"

उन सभी ने ऐसा करने की प्रतिज्ञा की। और जब युद्ध निकट आ गया, तो कलिंग ने मन ही मन यह निष्कर्ष निकाल लिया कि उसकी विजय होगी, और उसकी सेना ने भी यही सोचा, "जीत हमारी ही होगी।" अतः उन्होंने अपने कवच पहन लिए और अलग-अलग टुकड़ियों में संगठित होकर, अपनी इच्छानुसार आगे बढ़े, और जब बल प्रयोग करने का समय आया, तो वे असफल रहे।

लेकिन दोनों राजा, घोड़ों पर सवार होकर, युद्ध करने के इरादे से एक-दूसरे के निकट आ गए। उनके दो संरक्षक देवता (देवदूत) उनके आगे-आगे चलने लगे, कलिंग का देवता सफेद बैल के रूप में और दूसरे राजा का देवता काले बैल के रूप में। जैसे ही वे एक-दूसरे के

निकट आए, उन्होंने भी युद्ध का पूरा प्रदर्शन किया। लेकिन ये दोनों बैल केवल दोनों राजाओं को ही दिखाई दिए, किसी और को नहीं। तब नंदीसेन ने अस्सक से पूछा, "महाराज, क्या आपको संरक्षक देवता (देवदूत) दिखाई दे रहे हैं?"

"हां," उसने उत्तर दिया, "वे हैं।"

"किस वेश में?" उसने पूछा।

"कलिंग के संरक्षक देवता (देवदूत) सफेद बैल के रूप में प्रकट होते हैं, जबकि हमारे संरक्षक देवता काले बैल के रूप में प्रकट होते हैं और व्यथित प्रतीत होते हैं।"

"महाराज, भयभीत न हों, हम विजय प्राप्त करेंगे और कलिंग पराजित होगा। बस अपने सुप्रशिक्षित सिंधी घोड़े से उतरें और इस भाले को अपने बाएं हाथ से पकड़कर उसके पार्श्व पर प्रहार करें, फिर हजार सैनिकों के इस दल के साथ तेजी से आगे बढ़ें और अपने हथियार के एक ही प्रहार से कलिंग के इस देवता (देवदूत) को जमीन पर गिरा दें, जबकि हम हजार भालों से उस पर प्रहार करेंगे और इस प्रकार कलिंग के संरक्षक देवता का नाश होगा, और तब कलिंग पराजित होगा और हम विजयी होंगे।"

"अच्छा," राजा ने कहा, और नंदीसेना के संकेत पर उसने अपने भाले से प्रहार किया और उसके दरबारियों ने भी अपने हजार भालों से प्रहार किया, और कलिंग के संरक्षक देवता (देवदूत) की वहीं मृत्यु हो गई।

इस बीच कलिंग पराजित होकर भाग गया। यह देखकर उन सभी हजार सलाहकारों ने जोर से चिल्लाकर कहा, "कलिंग भाग गया है।" तब मृत्यु के भय से ग्रस्त कलिंग ने भागते हुए उस तपस्वी को फटकारा और दूसरा श्लोक कहा:

"कलिंगों का साहस विजय का दावा करेगा।"
इस हार ने अस्साक परिवार को शर्म से भर दिया है।
इस प्रकार आपके आदरणीय ने भविष्यवाणी की थी।
और ईमानदार लोगों को कभी झूठ नहीं बोलना चाहिए।
इस प्रकार कलिंग ने भागते समय उस तपस्वी का अपमान किया। और अपने नगर लौटते समय उसने एक बार भी पीछे मुड़कर देखने का साहस नहीं किया। कुछ दिनों बाद इंद्र उस तपस्वी से मिलने आए। और तपस्वी ने उनसे बातचीत करते हुए तीसरा श्लोक कहा:

झूठे शब्दों से देवता (देवदूत) मुक्त हैं।
सत्य ही उनका सबसे बड़ा खजाना होना चाहिए।
हे महान सक्का (इंद्र), इसमें आपने झूठ बोला था;
मैंने पूछा, मुझे कारण बताओ।
यह सुनकर इंद्र ने चौथा श्लोक बोला:

हे ब्राह्मण, क्या तुम्हें कभी नहीं बताया गया?
क्या देवता (देवदूत) साहसी नायक से ईर्ष्या नहीं करते?
वह दृढ़ संकल्प जो कभी नहीं झुकेगा,
इस क्षेत्र में साहसी कौशल,
उच्च साहस और साहसिक शक्ति
क्योंकि असाका ने यह मुकाबला जीत लिया है।
कलिंग के भाग जाने पर, राजा अस्सक लूट का माल लेकर अपने नगर लौट आया। नंदीसेन ने कलिंग को संदेश भेजा कि वह इन चारों कन्याओं के दहेज के लिए कुछ हिस्सा भेजे। उसने आगे कहा, "नहीं तो मैं उससे निपटने का तरीका जान लूंगा।" यह संदेश सुनकर कलिंग इतना भयभीत हुआ कि उसने उनके लिए उचित हिस्सा भेजा। और उस दिन से दोनों राजा सौहार्दपूर्ण ढंग से एक साथ रहने लगे।

अपने प्रवचन के अंत में, गुरु ने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उन दिनों ये युवतियाँ कलिंग राजा की पुत्रियाँ थीं, सारिपुत्र नंदीसेना थे और मैं स्वयं वह ऋषि था।"

फुटनोट:

(1) आधुनिक उड़ीसा.

(2)अरुणा असाका राजा का असली नाम था।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **महासारोह-जातक**
***स्रोत**: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-302-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 302
महासरोह-जातक

“आपके दिए हुए उपहार,” इत्यादि—यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए, वरिष्ठ भिक्षु आनंद के बारे में सुनाई थी। कहानी के स्रोत का वर्णन पहले ही किया जा चुका है। गुरु ने कहा, “पुराने समय में भी, बुद्धिमान लोग इस सिद्धांत पर चलते थे कि एक अच्छे कर्म का फल अच्छा कर्म ही होता है।” और इसी पर उन्होंने उन्हें पुराने समय की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, बोधिसत्व बनारस के राजा थे, और उन्होंने न्याय और निष्पक्षता के साथ शासन करते हुए दान दिया और नैतिक नियमों का पालन किया।

सीमा पर किसी गड़बड़ी को दबाने के इरादे से वह एक बड़ी सेना लेकर निकला, लेकिन पराजित होकर वह अपने घोड़े पर सवार होकर भागता रहा और एक सीमावर्ती गाँव तक पहुँच गया। वहाँ तीस वफादार प्रजा रहती थी और वे गाँव के बीचोंबीच सुबह-सुबह कुछ काम निपटाने के लिए इकट्ठा हुए थे। तभी राजा अपने कवचधारी घोड़े पर सवार होकर, शानदार ढंग से सुसज्जित होकर, गाँव के द्वार से अंदर आया। लोग भयभीत हो गए और "यह क्या हो सकता है?" कहते हुए अपने-अपने घर भाग गए। लेकिन एक व्यक्ति ऐसा था जो अपने घर जाए बिना ही राजा का स्वागत करने आ गया। उसने अजनबी को बताया कि उसने सुना है कि राजा सीमा पर आया है, और उससे पूछा कि वह कौन है और क्या वह राजभक्त है या विद्रोही। "मैं राजा का समर्थक हूँ, महाराज," उसने कहा। "तो मेरे साथ आइए," उसने उत्तर दिया और राजा को अपने घर ले जाकर अपनी कुर्सी पर बैठा दिया। फिर उस व्यक्ति ने अपनी पत्नी से कहा, "मेरी प्रिय, हमारे मित्र के पैर धो दो;" जब उसने यह कर लिया, तो उसने राजा को सर्वोत्तम भोजन परोसा और उसके लिए बिस्तर तैयार करवाया, तथा उसे कुछ देर आराम करने के लिए कहा। राजा लेट गया। फिर उसके मेज़बान ने घोड़े का कवच उतार दिया, उसे खुला छोड़ दिया, उसे पानी पिलाया और घास खिलाई तथा तेल से मालिश की। इस प्रकार उसने तीन-चार दिन तक राजा की सेवा की, और राजा ने कहा, "मित्र, अब मैं चलता हूँ," और उसने फिर से राजा और उसके घोड़े दोनों की पूरी सेवा की। भोजन करने के बाद, राजा ने जाते समय कहा, "मुझे महान घुड़सवार कहा जाता है। हमारा घर शहर के केंद्र में है। यदि आप किसी काम से वहाँ आएँ, तो दाहिनी ओर के द्वार पर खड़े होकर द्वारपाल से पूछें कि महान घुड़सवार कहाँ रहता है, और उसे अपने साथ हमारे घर ले आएँ।" ये कहकर वह चला गया।

सेना ने राजा को न देखकर शहर के बाहर डेरा डाला, लेकिन जब उन्होंने राजा को देखा, तो वे उनसे मिलने के लिए बाहर आए और उन्हें उनके घर तक ले गए। शहर में प्रवेश करते ही राजा द्वार पर खड़े हो गए और द्वारपाल को बुलाकर भीड़ को पीछे हटने का आदेश दिया और कहा, "मित्र, सीमावर्ती गाँव में रहने वाला एक व्यक्ति हमसे मिलने के लिए उत्सुक होकर यहाँ आएगा और पूछेगा कि महान घुड़सवार का घर कहाँ है। उसका हाथ पकड़कर उसे हमारे सामने ले आओ, और तब तुम्हें एक हजार सिक्के मिलेंगे।"

लेकिन जब वह आदमी नहीं आया, तो राजा ने उसके गाँव पर कर बढ़ा दिया। फिर भी कर बढ़ने पर भी वह नहीं आया। इसलिए राजा ने दूसरी और तीसरी बार कर बढ़ाया, फिर भी वह नहीं आया। तब गाँव के निवासी इकट्ठा हुए और उस आदमी से बोले, “महाराज, जब से घुड़सवार आपके पास आया है, हम कर के बोझ तले दबे हुए हैं, इतना कि सिर भी नहीं उठा सकते। जाइए और उस महान घुड़सवार से मिलिए और उनसे हमारा बोझ हल्का करने का आग्रह कीजिए।”

“ठीक है, मैं जाऊंगा,” उसने उत्तर दिया, “लेकिन मैं खाली हाथ नहीं जा सकता। मेरे मित्र के दो बेटे हैं: इसलिए उनके लिए, उनकी पत्नी के लिए और स्वयं मेरे मित्र के लिए गहने और कपड़े तैयार कर लेना।”

"बहुत अच्छा," उन्होंने कहा और उपहार के लिए सारी तैयारी कर ली।

अतः वह यह उपहार और अपने घर में तली हुई एक रोटी लेकर गया। जब वह दाहिनी ओर के द्वार पर पहुँचा, तो उसने द्वारपाल से पूछा कि महान घुड़सवार का घर कहाँ है। द्वारपाल ने उत्तर दिया, "मेरे साथ आइए, मैं आपको दिखाता हूँ," और उसका हाथ पकड़कर राजा के द्वार पर पहुँचकर उसने संदेश भेजा, "द्वारपाल आ गया है और अपने साथ सीमावर्ती गाँव में रहने वाले व्यक्ति को लाया है।" यह सुनकर राजा अपने आसन से उठा और बोला, "मेरे मित्र और उनके साथ आए सभी लोगों को अंदर आने दीजिए।" फिर वह उनका स्वागत करने के लिए आगे बढ़ा और उन्हें गले लगाया। अपने मित्र की पत्नी और बच्चों का हालचाल पूछने के बाद, उसने उनका हाथ पकड़ा, चबूतरे पर चढ़ाया और उन्हें सफेद छतरी के नीचे राजसिंहासन पर बैठाया। उसने अपनी मुख्य पत्नी को बुलाया और कहा, "मेरे मित्र के पैर धो दो।" अतः उसने उनके पैर धोए। राजा ने सोने के कटोरे से जल छिड़का, जबकि रानी ने उनके पैर धोए और सुगंधित तेल से उनकी मालिश की। तब राजा ने पूछा, "क्या हमारे लिए कुछ खाने को है?" उसने कहा, "जी महाराज," और एक थैली में केक लेकर आया। राजा ने उन्हें सोने की थाली में ग्रहण किया, और उस पर विशेष कृपा दिखाते हुए कहा, "मेरे मित्र जो लाए हैं, उसे खाइए," और अपनी रानी और मंत्रियों को भी कुछ केक दिए, और स्वयं भी खाए। तब उस अजनबी ने अपना दूसरा उपहार निकाला। राजा ने यह दिखाने के लिए कि उसने इसे स्वीकार कर लिया है, अपने रेशमी वस्त्र उतार दिए और वह वस्त्र पहन लिया जो वह उसके लिए लाया था। रानी ने भी अपने रेशमी वस्त्र और आभूषण उतार दिए और वह वस्त्र और आभूषण पहन लिए जो वह उसके लिए लाया था। तब राजा ने उसे राजाओं के योग्य भोजन परोसा और अपने एक सलाहकार से कहा, "जाओ और देखो कि उसकी दाढ़ी मेरी तरह संवारी जाए, और उसे सुगंधित जल से स्नान कराओ। फिर उसे एक लाख सिक्कों के मूल्य का रेशमी वस्त्र पहनाओ, और उसे राजसी ढंग से सजाकर यहाँ लाओ।" ऐसा ही किया गया। और राजा ने ढोल बजाते हुए नगर में अपने सलाहकारों को इकट्ठा किया, और सफेद छतरी पर शुद्ध लाल रंग का धागा डालकर उसे अपने राज्य का आधा हिस्सा दे दिया। उस दिन से वे साथ खाने-पीने और रहने लगे और पक्के और अटूट मित्र बन गए।

तब राजा ने उस व्यक्ति की पत्नी और परिवार को बुलवाया और उनके लिए नगर में एक घर बनवाया, और वे पूर्ण सामंजस्य के साथ राज्य पर शासन करने लगे। इससे दरबारी क्रोधित हो गए और राजा के पुत्र से कहने लगे, "हे राजकुमार, राजा ने अपने राज्य का आधा हिस्सा एक गृहस्थ को दे दिया है। वह उनके साथ खाता-पीता और रहता है, और हमें उनके बच्चों को प्रणाम करने का आदेश देता है। उसने राजा की क्या सेवा की है, यह हम नहीं जानते। राजा का क्या इरादा है? हमें शर्म आ रही है। क्या आप राजा से बात करेंगे?" वह तुरंत तैयार हो गया और उसने राजा को सारी बात बताई और कहा, "हे महाराज, ऐसा न करें।"

"मेरे बेटे," उसने उत्तर दिया, "क्या तुम जानते हो कि युद्ध में पराजित होने के बाद मैं कहाँ रहा?" (*1)

"मुझे नहीं पता, महाराज," उसने कहा।

राजा ने कहा, "मैं इस व्यक्ति के घर में रह रहा था, और जब मेरा स्वास्थ्य ठीक हो गया तो मैं वापस आया और फिर से शासन करने लगा। तो फिर मैं उस व्यक्ति को सम्मान क्यों न दूं जिसने मेरी सहायता की?"

फिर बोधिसत्व ने आगे कहा, "मेरे पुत्र, जो कोई अयोग्य को दान देता है और योग्य को कुछ नहीं देता, विपत्ति आने पर उसे कोई सहायता देने वाला नहीं मिलता।" और इस उपदेश को समझाने के लिए उन्होंने ये श्लोक कहे:

आपके द्वारा मूर्ख या बेईमान व्यक्ति को दिए गए उपहार,
घोर संकट की स्थिति में कोई मित्र भी बचाव के लिए नहीं आएगा:
लेकिन अच्छे लोगों के प्रति दिखाई गई कृपा या दया
अत्यंत आवश्यकता होने पर हम आपको समय पर सहायता प्रदान करेंगे।
अयोग्य आत्माओं को दिए गए वरदान व्यर्थ ही खर्च हो जाते हैं।
भलाई के लिए आपकी छोटी सी सेवा भी लाभ है:
हालांकि यह एक अनूठा और सराहनीय कार्य है,
इससे कर्ता सिंहासन के योग्य हो जाता है:
छोटे बीज से भरपूर फल प्राप्त होते हैं,
शाश्वत प्रसिद्धि किसी नेक कर्म से ही प्राप्त होती है।
यह सुनकर न तो पार्षदों और न ही युवा राजकुमार के पास जवाब में कहने के लिए कुछ था।

अपने प्रवचन के अंत में गुरु ने इस प्रकार जन्म का वर्णन किया: "उस समय सीमावर्ती गाँव में आनंद रहते थे, जबकि मैं स्वयं बनारस का राजा था।"

फुटनोट:

(1)संख्या 157 की तुलना करें

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **एकराज-जातक**
***स्रोत**: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-303-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 303
एकराज-जातक

"हे महाराज, पूर्व में," इत्यादि—यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए कोसल के राजा के एक दरबारी के बारे में सुनाई थी। इस कथा के सूत्रधार बनने की परिस्थितियाँ पहले ही सेय्याम्सा (*1) जन्म में वर्णित हैं। इस अवसर पर गुरु ने कहा, "बुराई से भलाई प्राप्त करने वाले तुम अकेले नहीं हो: प्राचीन काल के बुद्धिमान पुरुषों ने भी बुराई से भलाई प्राप्त की थी।" और उन्होंने एक प्राचीन कथा सुनाई।

एक समय की बात है, बनारस के राजा के एक सेवक ने राजमहल में दुराचार किया। राजा ने अपनी आँखों से उसका अपराध देखकर उसे राज्य से निकाल दिया। उसके द्वारा कोसल के राजा दब्बासेना की सेवा में आने की पूरी कहानी महासिलाव (*2) जन्म में वर्णित है।

लेकिन इस कथा में, दब्बासेना ने बनारस के राजा को उनके सलाहकारों के बीच मंच पर बैठे हुए पकड़ लिया और उन्हें रस्सी से दरवाजे के चौखट पर बांधकर सिर नीचे की ओर लटका दिया। राजा ने विद्रोही राजकुमार के प्रति दया भाव विकसित किया और पूर्ण तल्लीनता से एक रहस्यमय ध्यान अवस्था में प्रवेश किया, और अपने बंधन तोड़कर हवा में पालथी मारकर बैठ गए। विद्रोही राजकुमार को शरीर में तेज जलन हुई और "मैं जल रहा हूँ, मैं जल रहा हूँ" चिल्लाते हुए वह जमीन पर लोटने लगे। जब उन्होंने इसका कारण पूछा, तो उनके दरबारियों ने उत्तर दिया, "क्योंकि जिस राजा को आपने दरवाजे के चौखट पर सिर नीचे की ओर लटकाया है, वह इतना निर्दोष और पवित्र व्यक्ति है।" तब उन्होंने कहा, "जल्दी जाओ और उसे छुड़ाओ।" उनके सेवक गए और राजा को हवा में पालथी मारकर बैठे हुए पाया और वापस आकर दब्बासेना को बताया। इसलिए वह पूरी तेजी से गए और उनके सामने झुककर क्षमा मांगी और पहली पंक्ति दोहराई:

हे सम्राट, जो पहले अपने राज्य में निवास करते थे,
   ऐसे आनंद का अनुभव करना जैसा बहुत कम मनुष्यों ने देखा है।
नरक की यातनाओं के बीच लेटना कैसे संभव है?
   आप अब भी इतने शांत और विनम्र स्वभाव के हैं?
यह सुनकर बोधिसत्व ने शेष श्लोकों को दोहराया:

अतीत में स्वर्ग से मेरी यही एक सच्ची प्रार्थना थी।
   तपस्वियों की श्रेणी से अब किसी को भी बाहर नहीं रखा जाएगा।
लेकिन अब जब मुझे ऐसी महिमा प्रदान की गई है,
   हे मेरे चेहरे की सुंदरता क्यों विकृत होनी चाहिए?

अंत हो गया, मेरा काम पूरा हो गया।
   जो राजकुमार कभी मेरा प्रतिद्वंद्वी था, वह अब मुझसे विमुख नहीं है।
लेकिन अब जब मुझे वह प्रसिद्धि मिल गई है जिसकी मुझे इतनी लालसा थी,
   हे मेरे चेहरे का रूप क्यों बदला जाना चाहिए?
जब आनंद दुःख में बदल जाता है, और कल्याण कष्ट में बदल जाता है,
   धैर्यवान आत्माएं अपने दर्द से भी सुख प्राप्त कर सकती हैं।
लेकिन वे भावनाओं के ऐसे किसी भेद को नहीं जानते।

जब निर्वाण की शांति को बेचारे मनुष्य प्राप्त करते हैं।
यह सुनकर दब्बासेना ने बोधिसत्व से क्षमा मांगी और कहा, "आप अपनी प्रजा पर शासन कीजिए और मैं आप में से विद्रोहियों को निकाल दूंगा।" उस दुष्ट सलाहकार को दंडित करने के बाद वह अपने मार्ग चला गया। परन्तु बोधिसत्व ने राज्य अपने मंत्रियों को सौंप दिया और ऋषि का तपस्वी जीवन अपनाकर ब्रह्मलोक (देवदूतों का लोक) में जन्म लेने के लिए नियत हो गए।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उस समय आनंद दब्बासेना थे, और मैं स्वयं बनारस का राजा था।"

फुटनोट:

(1) संख्या 282

(2) संख्या 51

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **दद्दारा-जातक**2
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-304-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 304
दद्दरा-जातक

"हे दद्दरा, कौन," इत्यादि — यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक गुस्सैल व्यक्ति के बारे में सुनाई थी। घटना का वर्णन पहले ही किया जा चुका है। उस अवसर पर जब सत्य के हॉल में उस व्यक्ति के उग्र स्वभाव पर चर्चा हुई, तो गुरु वहाँ आए और जब उनके प्रश्न के उत्तर में भिक्षुओं ने उन्हें अपने विषय के बारे में बताया, तो उन्होंने उस व्यक्ति को बुलवाया और पूछा, "क्या यह सच है, हे भिक्षु, कि आप उग्र स्वभाव के हैं?" "जी, हे प्रभु, यह सच है," उसने उत्तर दिया। तब गुरु ने कहा, "केवल अभी ही नहीं, हे भिक्षुओं, बल्कि पुराने समय में भी यह व्यक्ति बहुत उग्र स्वभाव का था और उसके उग्र स्वभाव के कारण पुराने समय के बुद्धिमान लोग नाग राजकुमारों के रूप में पूर्णतः निर्दोष जीवन व्यतीत करते हुए भी तीन वर्ष तक एक गंदे गोबर के ढेर पर निवास करना पड़ा था।" और इसके साथ ही उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्याभिषेक था, हिमालय क्षेत्र में दद्दरा पर्वत की तलहटी में दद्दरा नाग रहते थे। वहीं बोधिसत्व महादद्दरा के रूप में अवतरित हुए, जो उस देश के राजा सुरदद्दरा के पुत्र थे। उनका एक छोटा भाई था जिसका नाम कुल्दद्दरा था। कुल्दद्दरा क्रोधी और क्रूर था और नाग कन्याओं के साथ दुर्व्यवहार और मारपीट करता था। नाग राजा ने उसकी क्रूरता के बारे में सुनकर उसे नाग लोक से निष्कासित करने का आदेश दिया। लेकिन महादद्दरा ने अपने पिता को क्षमा कर दिया और अपने भाई को निष्कासन से बचा लिया। दूसरी बार राजा उससे क्रोधित हुए, लेकिन फिर से क्षमा कर बैठे। लेकिन तीसरी बार राजा ने कहा, "तुमने मुझे इस निकम्मे को निष्कासित करने से रोक दिया; अब तुम दोनों इस नाग लोक से चले जाओ और तीन साल तक बनारस में एक गोबर के ढेर पर रहो।"

इसलिए उन्होंने उन्हें नाग देश से भगा दिया और वे बनारस जाकर बस गए। जब गाँव के लड़कों ने उन्हें गोबर के ढेर के किनारे बनी खाई में खाना ढूंढते देखा, तो उन्होंने उन पर पत्थर, लाठी और अन्य चीजें फेंकीं और चिल्लाते हुए कहा, "ये क्या हैं - बड़े सिर और सुई जैसी पूंछ वाली पानी की छिपकलियाँ?" और अपशब्द भी कहे। लेकिन कुल्लादद्दारा, अपने उग्र और जोशीले स्वभाव के कारण, इस तरह के अपमान को सहन न कर पाने के कारण बोले, "भाई, ये लड़के हमारा मजाक उड़ा रहे हैं। इन्हें नहीं पता कि हम विषैले सर्प हैं। मैं इनका तिरस्कार सहन नहीं कर सकता। मैं इन्हें अपनी नाक की साँस से नष्ट कर दूँगा।" और फिर अपने भाई को संबोधित करते हुए, उन्होंने पहला श्लोक दोहराया:

हे दादरा, ऐसा अपमान कौन सहन कर सकता है?
"अरे! मेंढक खाने वाले अड़ियल!" वे चिल्लाते हैं:
यह सोचना भी भयानक है कि ये बेचारे निर्दोष जीव ऐसा करने की हिम्मत करेंगे।
विषैले दांतों वाले सर्प को चुनौती देना!
उनकी बात सुनकर महादद्दारा ने शेष श्लोक कहे:

एक निर्वासित जिसे एक विदेशी धरती पर धकेल दिया गया
दुर्व्यवहार से बड़ी मात्रा में धन जमा हो जाता है;
क्योंकि उनके पद और गुणों को कोई नहीं जान सकता।
केवल मूर्ख ही अपना अहंकार दिखाना चाहेगा।
जो घर पर "चमकदार व्यक्तित्व" हो,
विदेश में निम्न स्तर के लोगों को सहन करना पड़ता है।
तो वे वहाँ तीन साल तक रहे। फिर उनके पिता ने उन्हें वापस घर बुला लिया। और उस दिन से उनका स्वाभिमान कम हो गया।

जब गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने सत्यों की घोषणा की और जन्म का वर्णन किया: सत्यों के समापन पर, उग्र स्वभाव वाले भिक्षु ने तृतीय मार्ग (सम्मोहन) की सिद्धि प्राप्त की: "उस समय उग्र स्वभाव वाले भिक्षु कुल्लदद्दारा थे, और मैं स्वयं महादद्दारा था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **शीलावीमांसन-जातक2**
***स्रोत** : एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-305-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 305
सिलविमांसना-जातक

"सचमुच है," इत्यादि—यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए पाप के निवारण के बारे में सुनाई थी। ग्यारहवें खंड में पाणिय जन्म (*1) में इसके घटनाक्रम का विस्तार से वर्णन किया जाएगा। इसका संक्षिप्त सारांश निम्नलिखित है।

जेतवन मठ में रहने वाले पाँच सौ भिक्षु, रात के मध्य पहर के अंत में, इंद्रिय सुखों पर बहस करने लगे। गुरुजन दिन-रात छहों पहरों में भिक्षुओं की निरंतर निगरानी रखते हैं, ठीक वैसे ही जैसे एक आँख वाला व्यक्ति अपनी आँख की, एक पिता अपने इकलौते बेटे की, या एक याक अपनी पूंछ की रक्षा करता है। रात के समय, जेतवन मठ के ऊपर अपनी अलौकिक दृष्टि से, उन्होंने इन भिक्षुओं को मानो किसी महान राजा के महल में घुसपैठ करने वाले लुटेरों की तरह देखा। और अपने सुगंधित कक्ष का द्वार खोलकर उन्होंने आनंद को बुलाया और उनसे स्वर्णमयी वेदी पर भिक्षुओं को एकत्रित करने और सुगंधित कक्ष के द्वार पर उनके लिए एक आसन तैयार करने को कहा। आनंद ने आज्ञा का पालन किया और गुरुजन को बताया। फिर गुरुजी अपने लिए तैयार की गई सीट पर बैठ गए और सभी भाइयों को संबोधित करते हुए बोले, "भाइयों, पुराने समय के बुद्धिमान लोगों का मानना था कि गलत काम में गोपनीयता जैसी कोई बात नहीं होती, इसलिए वे उससे दूर रहते थे," और उन्होंने उन्हें पुराने समय की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व एक ब्राह्मण परिवार में पैदा हुए। जब वे वयस्क हुए, तो उन्हें उस शहर के एक विश्वप्रसिद्ध शिक्षक से विज्ञान की शिक्षा मिली। वे पाँच सौ छात्रों की कक्षा के प्रमुख थे। उनके शिक्षक की एक वयस्क पुत्री थी। उन्होंने सोचा, "मैं इन युवकों के गुणों की परीक्षा लूँगा और जो सबसे गुणवान होगा, उसी से उसका विवाह करूँगा।"

एक दिन उन्होंने अपने शिष्यों से कहा, "मेरे मित्रों, मेरी एक वयस्क पुत्री है और मैं उसका विवाह करना चाहता हूँ, लेकिन मुझे उसके लिए उचित वस्त्र और आभूषण चाहिए। तुम अपने मित्रों को बिना बताए कुछ चुराकर मुझे दे दो। जो कुछ भी तुमने चुराया है और किसी ने तुम्हें चुराते हुए नहीं देखा है, मैं उसे स्वीकार करूँगा, लेकिन यदि तुम जो कुछ भी लाते हो, उसे किसी को देखने देते हो, तो मैं उसे अस्वीकार कर दूँगा।" वे सहमत हो गए और बोले, "ठीक है," और उस दिन से वे अपने मित्रों की जानकारी के बिना वस्त्र और आभूषण

चुराकर उन्हें देने लगे। गुरु ने प्रत्येक शिष्य द्वारा लाए गए वस्त्रों को अलग-अलग स्थानों पर रखा। लेकिन बोधिसत्व ने कुछ भी नहीं चुराया।

तब शिक्षक ने कहा, "परन्तु तुम, मेरे मित्र, मुझे कुछ नहीं लाते।" "जी हाँ, गुरुजी," उसने उत्तर दिया। "ऐसा क्यों है, मेरे मित्र?" उसने पूछा। "आप कुछ भी स्वीकार नहीं करते," उसने उत्तर दिया, "जब तक वह गुप्त रूप से न लिया गया हो। परन्तु मुझे लगता है कि कुकर्म में कोई गोपनीयता नहीं होती।"

और इस सत्य को समझाने के लिए उन्होंने इन दो छंदों को दोहराया:

वास्तव में, इस संसार में ऐसा कोई पाप नहीं है जो छिपा रह सके।
जिसे मूर्ख रहस्य समझता है, जंगल की आत्माएं उसे जानती हैं।
कहीं भी छिपाव नहीं पाया जा सकता, न ही मेरे लिए कोई शून्य अस्तित्व में हो सकता है।
जहां कोई प्राणी नजर नहीं आता, वहां भी जब तक मैं वहां मौजूद हूं, कोई शून्य नहीं हो सकता।

गुरु उसकी बातों से प्रसन्न होकर बोले, "मित्र, मेरे घर में धन की कोई कमी नहीं है, परन्तु मैं अपनी पुत्री का विवाह एक गुणी पुरुष से करना चाहता था, और मैंने इन युवकों की परीक्षा लेने के लिए ऐसा किया। परन्तु मेरी पुत्री के योग्य केवल तुम ही हो।" फिर उन्होंने अपनी पुत्री को सजाया-संवारा और उसका विवाह बोधिसत्व से कर दिया, परन्तु अपने अन्य शिष्यों से कहा, "जो कुछ तुम मेरे लिए लाए हो, उसे अपने-अपने घर वापस ले जाओ।"

तब गुरु ने कहा, "हे भाइयों, इस प्रकार दुष्ट शिष्यों ने अपनी बेईमानी से इस स्त्री को पाने में असफल रहे, जबकि इस बुद्धिमान युवक ने अपने सदाचारी आचरण से उसे अपनी पत्नी के रूप में प्राप्त कर लिया।" और अपनी पूर्ण बुद्धि से उन्होंने दो और छंद कहे:

स्वामी बुरे, नीच, आसान और आनंद में लिप्त होते हैं,
और कमजोर होने के कारण, पत्नी के लिए भटक गई;
लेकिन हमारे ब्राह्मण, जो बचपन से ही विधि में निपुण थे,
सत्य को थामे रखने के अपने साहस से उसने एक दुल्हन को जीता।

गुरु ने इस गंभीर पाठ को समाप्त करते हुए सत्यों की व्याख्या की और जन्म का वर्णन किया:- सत्यों के समापन पर इन पाँच सौ भिक्षुओं ने संतत्व प्राप्त किया:- "उस समय सारिपुत्र गुरु थे, और मैं स्वयं ज्ञानी युवक था।"

फुटनोट:

(1)सं. 459

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सुजाता-जातक**2
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-306-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 306
सुजाता-जातक

"यह अंडाकार फल क्या है?" इत्यादि—यह कथा गुरुजी ने जेतवन मठ में रहते हुए रानी मल्लिका के बारे में सुनाई थी। कहते हैं कि एक दिन दरबार में उनका और राजा का विवाद हो गया। (*1) राजा इतना क्रोधित था कि उसने मल्लिका के अस्तित्व को ही नकार दिया। मल्लिका ने सोचा, "मुझे लगता है कि गुरुजी को पता ही नहीं है कि राजा मुझसे कितना क्रोधित है।" लेकिन गुरुजी को सब पता था और उन्होंने उनके बीच सुलह कराने का निश्चय किया। इसलिए सुबह सवेरे उन्होंने अपने भीतरी वस्त्र पहने और अपने भिक्षापात्र और वस्त्र लेकर पाँच सौ भिक्षुओं के साथ श्रावस्ती नगर में प्रवेश किया और महल के द्वार पर पहुँचे। राजा ने उनसे भिक्षापात्र ले लिया, उन्हें महल में ले गए और उनके लिए तैयार की गई आसन पर बिठाकर, बुद्ध की मूर्ति के साथ भिक्षुओं के हाथों पर दान जल डाला और उन्हें खाने के लिए चावल और रोटी दी। लेकिन गुरुजी ने अपने भिक्षापात्र को हाथ से ढक लिया और कहा, "महाराज, रानी कहाँ हैं?"

"आपका उससे क्या लेना-देना है, आदरणीय महोदय?" उसने उत्तर दिया। "उसका दिमाग खराब हो गया है, वह अपने सम्मान के नशे में चूर है।"

"महाराज," उसने कहा, "जब आपने स्वयं इस स्त्री को यह सम्मान दिया है, तो अब उससे छुटकारा पाना और उसके द्वारा आपके विरुद्ध किए गए अपराध को सहन न करना आपके लिए अनुचित है।"

राजा ने गुरु की बात सुनी और रानी को बुलवाया।

और उसने स्वामी की सेवा की। स्वामी ने कहा, "तुम्हें शांति से साथ रहना चाहिए," और सद्भाव की मधुरता का गुणगान करते हुए वह अपने मार्ग पर चल पड़ा। और उस दिन से वे सुखपूर्वक साथ रहने लगे।

सत्य के हॉल में भिक्षुओं ने इस बात पर चर्चा शुरू कर दी कि गुरु ने एक ही शब्द से राजा और रानी का मेल करा दिया था। गुरु जब वहाँ आए, तो उन्होंने भिक्षुओं से पूछा कि वे किस बारे में बात कर रहे हैं, और जब उन्हें बताया गया, तो उन्होंने कहा, "भाइयों, केवल अभी ही नहीं, बल्कि पहले भी मैंने एक ही सलाह के शब्द से उनका मेल कराया था।" और उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व उनके मंत्री और उनके सांसारिक और आध्यात्मिक सलाहकार थे।

एक दिन राजा महल के प्रांगण में झांकती एक खुली खिड़की पर खड़े थे। तभी एक फल विक्रेता की बेटी, जो अपनी जवानी के यौवन में एक सुंदर युवती थी, सिर पर बेरों की टोकरी लिए रोते हुए बोली, "बेर, पके बेर, मेरे बेर कौन खरीदेगा?" लेकिन वह राजमहल में प्रवेश करने की हिम्मत नहीं कर पाई।

और राजा ने उसकी आवाज़ सुनते ही उस पर मोहित हो गया, और जब उसे पता चला कि वह अविवाहित है, तो उसने उसे बुलवाया और उसे मुख्य रानी के पद पर पदोन्नत किया और उसका बहुत सम्मान किया। अब वह राजा की प्रिय और मनभावन थी। एक दिन राजा सोने की थाली में बेर खा रहा था। रानी सुजाता ने जब राजा को बेर खाते देखा, तो उससे पूछा, "हे स्वामी, आप यह क्या खा रहे हैं?" और उसने पहला श्लोक कहा:

हे प्रभु, यह अंडाकार फल क्या है, जो इतना सुंदर और लाल रंग का है?
क्या ये सोने की थाली में आपके सामने रखे हैं? मैं आपसे निवेदन करता हूँ, मुझे बताइए, ये कहाँ उगे थे?
और राजा क्रोधित होकर बोला, "हे सब्जी विक्रेता की पुत्री, पके बेरों की व्यापारी, क्या तुम अपने ही परिवार के विशेष फल बेरों को नहीं पहचानती?" और उसने दो छंद दोहराए:

हे मेरी रानी, बिना सिर ढके और साधारण वस्त्र पहने, एक समय था जब तुम्हें शर्म नहीं आती थी।
अपनी गोद को बेर से भरने के लिए, और अब आप उसका नाम पूछते हैं;
हे मेरी रानी, तुम अहंकार से भरी हुई हो, तुम्हें जीवन में कोई आनंद नहीं मिलता।
जाओ और अपने बेर वापस ले आओ। अब तुम मेरी पत्नी नहीं रहोगी।
तब बोधिसत्व ने सोचा, "मेरे सिवा कोई भी इस जोड़े का मेल नहीं करा पाएगा। मैं राजा के क्रोध को शांत करूँगा और उसे उसे घर से बाहर निकालने से रोकूँगा।" फिर उन्होंने चौथा श्लोक दोहराया:

हे प्रभु, उच्च पद पर आसीन स्त्री के ये पाप हैं:
हे राजा, उसे क्षमा कर दो और अपना क्रोध छोड़ दो, क्योंकि तुमने ही उसे महान बनाया है।
अतः राजा ने रानी के वचन का पालन करते हुए उसकी नाराजगी को सहन किया और उसे उसके पूर्व पद पर बहाल कर दिया। और तब से वे सौहार्दपूर्ण ढंग से एक साथ रहने लगे।

अपने पाठ के अंत में गुरु ने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उस समय कोसल का राजा बनारस का राजा था, मल्लिका सुजाता थी और मैं स्वयं मंत्री था।"

फुटनोट:

(1) पसेनदी (प्रसेनजित), कोसल के राजा

स्रोत : एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।

पिछला <<<<-----॥-307-॥----->>>> अगला

जातक क्रमांक 307
पलासा-जातक

"अरे ब्राह्मण, ऐसा क्यों?" इत्यादि--मृत्युशय्या पर लेटे हुए गुरु ने यह कहानी वरिष्ठ भिक्षु आनंद को सुनाई।

आदरणीय व्यक्ति यह जानते हुए कि गुरुजी आज शाम को परास्त हो जाएंगे, मन ही मन सोचने लगे, "मैं अभी भी अनुशासन में हूँ और मुझे अपने कर्तव्य निभाने हैं, और मेरे गुरुजी निश्चित रूप से परास्त होने वाले हैं, और तब पच्चीस वर्षों तक मैंने उनकी जो सेवा की है वह व्यर्थ हो जाएगी।" और इस प्रकार व्याकुल होकर वे बगीचे के भंडारगृह के कुंडी के रूप में बने बंदर के सिर पर झुक गए और फूट-फूटकर रोने लगे।

और गुरुजी, आनंद को न पाकर, भिक्षुओं से पूछने लगे कि वह कहाँ है। जब उन्हें बात समझ में आई, तो उन्होंने आनंद को बुलवाया और उससे कहा, "आनंद, तुमने पुण्य का भंडार जमा कर लिया है। लगन से परिश्रम करते रहो, और तुम शीघ्र ही सांसारिक वासनाओं से मुक्त हो जाओगे। दुखी मत हो। भला तुमने जो सेवा मुझे दी है, वह अब व्यर्थ क्यों हो, जबकि पापमय दिनों में भी तुम्हारी सेवा व्यर्थ नहीं गई थी?" फिर उन्होंने अतीत की एक कथा सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व ने एक चिड़िया के रूप में जन्म लिया। उस समय बनारस के सभी निवासी ऐसे देवताओं की पूजा में लीन थे और निरंतर धार्मिक अनुष्ठानों में लगे रहते थे।

एक गरीब ब्राह्मण ने सोचा, "मैं भी किसी देवता की रक्षा करूँगा।" इसलिए उसने ऊँची जगह पर उगने वाला एक बड़ा यहूदा वृक्ष ढूँढा और उसके चारों ओर कंकड़ छिड़ककर और झाड़ू लगाकर उसकी जड़ों को घास से मुक्त रखा। फिर उसने उसे पाँच गुच्छों का सुगंधित हार भेंट किया और दीपक जलाकर फूल, इत्र और धूप अर्पित की। आदरपूर्वक प्रणाम करने के बाद उसने कहा, "आपको शांति मिले," और फिर चला गया। अगले दिन वह सुबह जल्दी आया और वृक्ष का हालचाल पूछा। एक दिन वृक्ष-परी के मन में विचार आया, "यह ब्राह्मण मेरी बहुत परवाह करता है। मैं इसकी परीक्षा लूँ और पता लगाऊँ कि यह मेरी इतनी पूजा क्यों करता है, और इसकी इच्छा पूरी करूँ।" इसलिए जब ब्राह्मण आया और वृक्ष की जड़ों के चारों ओर झाड़ू लगा रहा था, तो परी एक बूढ़े ब्राह्मण के वेश में उसके पास खड़ी हो गई और पहली पंक्ति दोहराई:

हे ब्राह्मण, बुद्धि से संपन्न होते हुए भी
तुमने इस बुद्धिहीन वृक्ष को क्यों संबोधित किया है?
तुम्हारी प्रार्थना व्यर्थ है, तुम्हारा विनम्र अभिवादन व्यर्थ है,
इस उजाड़ वृक्ष से तुम्हें कोई उत्तर नहीं मिलेगा।
यह सुनकर ब्राह्मण ने दूसरे श्लोक में उत्तर दिया:

इस स्थान पर बहुत समय से एक प्रसिद्ध वृक्ष खड़ा है, जो
वन की आत्माओं के लिए उपयुक्त निवास स्थान है;
मैं ऐसे प्राणियों का अत्यंत श्रद्धापूर्वक आदर करता हूँ,
मुझे लगता है कि वे यहाँ किसी पवित्र खजाने की रक्षा करते हैं।
ये शब्द सुनकर वृक्ष-परी ब्राह्मण से इतना प्रसन्न हुआ कि उसने कहा, "हे ब्राह्मण, मैं इसी वृक्ष के देवता के रूप में जन्मा हूँ। भयभीत न हो। मैं तुम्हें यह खजाना प्रदान करूँगा।" और उसे आश्वस्त करने के लिए, दिव्य शक्ति के एक महान प्रदर्शन द्वारा, वह अपने स्वर्गलोक के प्रवेश द्वार पर हवा में लटका रहा, और उसने दो और श्लोक पढ़े:

हे ब्राह्मण, मैंने तुम्हारा प्रेम देखा है;
पुण्य कर्म कभी व्यर्थ नहीं जाता।
देखो! जहाँ अंजीर का वृक्ष अपनी घनी छाया देता है, वहाँ
प्राचीन काल में विधिवत यज्ञ और दान अर्पित किए गए थे।
इस अंजीर के नीचे छिपा खजाना है,
उसे खोज निकालो और उसे अपना पुरस्कार बना लो।
उस अपरा ने आगे ये शब्द भी कहे: "हे ब्राह्मण, यदि तुम्हें खजाना खोदकर ले जाना पड़े तो तुम थक जाओगे। इसलिए तुम जाओ, मैं उसे तुम्हारे घर लाकर फलाँ स्थान पर रख दूँगी। फिर तुम जीवन भर उसका आनंद लो, दान दो और नैतिक नियमों का पालन करो।" ब्राह्मण से ऐसा कहने के बाद, वृक्ष-परी ने अपनी दिव्य शक्ति से खजाना ब्राह्मण के घर में पहुँचा दिया।

गुरु ने यहाँ अपना पाठ समाप्त किया और जन्म का वर्णन किया: "उस समय आनंद ब्राह्मण थे, और मैं स्वयं वृक्ष-परी थी।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **जावासाकुण-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-308-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 308
जावसाकुना-जातक

"इतनी ही दयालुता," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए देवदत्त की कृतघ्नता के बारे में सुनाई थी।

उन्होंने यह कहते हुए अपनी बात समाप्त की, "देवदत्त ने न केवल आज, बल्कि पहले भी कृतघ्नता दिखाई थी," और इन शब्दों के साथ उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व ने हिमालय देश में एक कठफोड़वा के रूप में जन्म लिया।

एक शेर अपने शिकार को खा रहा था, तभी उसके गले में हड्डी फंस गई। उसका गला इतना सूज गया कि वह कुछ खा नहीं पा रहा था और उसे बहुत दर्द हो रहा था। तभी एक कठफोड़वा, जो अपना भोजन ढूंढ रहा था, एक डाल पर बैठा हुआ था। उसने शेर को देखा और उससे पूछा, "मित्र, क्या हुआ?" शेर ने उसे सब बताया, तो पक्षी ने कहा, "मित्र, मैं तुम्हारे गले से हड्डी निकाल देता, लेकिन मैं अपना सिर तुम्हारे मुंह में डालने की हिम्मत नहीं कर सकता, कहीं तुम मुझे खा न जाओ।"

"डरो मत, मित्र; मैं तुम्हें नहीं खाऊंगा। बस मेरी जान बचा लो।"

"ठीक है," चिड़िया ने कहा और शेर को करवट लेकर लेट जाने का आदेश दिया। फिर उसने सोचा: "पता नहीं ये क्या करेगा?" और उसका मुँह बंद होने से रोकने के लिए, उसने उसके जबड़े के ऊपरी और निचले हिस्से में एक छड़ी फंसा दी, और फिर अपना सिर शेर के मुँह में डालकर, हड्डी के सिरे पर अपनी चोंच से प्रहार किया। हड्डी गिर गई और गायब हो गई। फिर कठफोड़वा ने अपना सिर शेर के मुँह से बाहर निकाला, और अपनी चोंच से एक प्रहार करके छड़ी को तोड़ दिया, और उछलकर एक डाल पर बैठ गया।

शेर अपनी बीमारी से ठीक हो गया, और एक दिन वह एक जंगली भैंसा को खा रहा था जिसे उसने मार डाला था। कठफोड़वा ने सोचा: "अब मैं इसकी परीक्षा लूँगा," और शेर के सिर के ऊपर एक पेड़ की शाखा पर बैठकर, वह उससे बातचीत करने लगा और उसने पहला छंद बोला:

हममें जितनी दयालुता हो सकती है, उतनी दयालुता बरतें।
हे मेरे स्वामी, हमने एक बार आपको यह दिखाया था:

हम भी आपसे विनम्रतापूर्वक निवेदन करते हैं,
आप एक छोटा सा वरदान तो देते ही हैं।
यह सुनकर शेर ने दूसरी पंक्ति दोहराई:

अपना सिर शेर के जबड़े के हवाले कर देना।
एक ऐसा प्राणी जो अपने दांत और पंजे खून से लथपथ रखता है,
इतना बड़ा काम करने का साहस करके भी जीवित रहना,
यह मेरी सद्भावना का पर्याप्त प्रतीक है।
यह सुनकर कठफोड़वा ने दो और पंक्तियाँ बोलीं।

नीच कृतघ्न से यह आशा न करने की कि कुछ प्राप्त न हो।
किए गए अच्छे कार्य के लिए उचित भुगतान;
कड़वे विचारों और क्रोधपूर्ण शब्दों से दूर रहो।
लेकिन दुखियों की उपस्थिति से बचने के लिए जल्दी करो।
ये शब्द कहकर कठफोड़वा उड़ गया।

अपने पाठ के अंत में गुरु ने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उस समय देवदत्त सिंह थे और मैं स्वयं कठफोड़वा था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **चावक-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-309-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 309
चावक-जातक

"पवित्र गुरु" आदि-- जेतवन मठ में निवास करते समय गुरु ने छह वरिष्ठ भिक्षुओं के संघ के बारे में यह कथा सुनाई थी। इसका विस्तृत वर्णन विनय ग्रंथ में मिलता है। यहाँ इसका संक्षिप्त सारांश दिया गया है।

गुरु ने छह वरिष्ठ भिक्षुओं को बुलवाया और पूछा कि क्या यह सच है कि वे अपने शिष्यों के ऊँची आसन पर बैठने के बावजूद, नीची आसन (*1) से धर्ममार्ग का उपदेश देते हैं। उन्होंने स्वीकार किया कि ऐसा ही है, और गुरु ने अपने धर्ममार्ग के प्रति अनादर दिखाने के लिए इन भिक्षुओं को फटकारा और कहा कि पुराने समय के बुद्धिमानों को भी नीची आसन पर बैठकर दूसरों को उपदेश देने के लिए फटकार लगानी पड़ती थी। फिर उन्होंने उन्हें एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व एक बहिष्कृत स्त्री के पुत्र के रूप में जन्म लेकर बड़े हुए और गृहस्थ जीवन व्यतीत करने लगे। उनकी पत्नी गर्भवती थी और उसे आम खाने की तीव्र इच्छा हुई। उसने अपने पति से कहा, "हे स्वामी, मुझे आम खाने की बहुत इच्छा हो रही है।"

"मेरी प्यारी," उसने कहा, "इस मौसम में आम नहीं हैं, मैं तुम्हारे लिए कोई दूसरा खट्टा फल लाऊंगा।"

"मेरे स्वामी," उसने कहा, "यदि मुझे एक आम मिल जाए तो मैं जीवित रहूंगी। अन्यथा मैं मर जाऊंगी।"

अपनी पत्नी के प्रति आसक्त होकर वह सोचने लगा, "मुझे आम कहाँ से मिलेगा?" उस समय बनारस के राजा के बगीचे में एक आम का पेड़ था, जिस पर साल भर फल लगते थे। उसने सोचा, "मैं वहाँ से एक पका हुआ आम लाकर उसकी इच्छा पूरी करूँगा।" रात में बगीचे में जाकर वह पेड़ पर चढ़ गया और फल की तलाश में एक शाखा से दूसरी शाखा पर जाने लगा। इसी दौरान सुबह होने लगी।

उसने सोचा, "अगर मैं अभी नीचे उतर कर चला गया, तो मुझे चोर समझकर पकड़ लिया जाएगा। मैं अंधेरा होने तक इंतजार करूँगा।" इसलिए वह पेड़ की एक शाखा पर चढ़ गया और वहीं बैठा रहा।

उस समय बनारस के राजा अपने पुरोहित से पवित्र ग्रंथों का अध्ययन कर रहे थे। वे उद्यान में आए और आम के वृक्ष की तलहटी में एक ऊँचे आसन पर बैठ गए, तथा अपने गुरु को नीचे आसन पर बैठाकर उनसे शिक्षा प्राप्त करने लगे। उनके ऊपर बैठे बोधिसत्व ने सोचा, “यह राजा कितना दुष्ट है। वह ऊँचे आसन पर बैठकर पवित्र ग्रंथों का अध्ययन कर रहा है। ब्राह्मण भी उतना ही दुष्ट है, जो नीचे आसन पर बैठकर उसे शिक्षा दे रहा है। मैं भी दुष्ट हूँ, क्योंकि मैं स्त्री के वश में आ गया हूँ, और अपने जीवन को तुच्छ समझकर आम चुरा रहा हूँ।” फिर एक लटकती शाखा को पकड़कर वे वृक्ष से नीचे उतर आए और इन दोनों पुरुषों के सामने खड़े होकर बोले, “हे महाराज, मैं एक पथभ्रष्ट व्यक्ति हूँ, आप एक मूर्ख हैं, और यह पुरोहित तो मानो मृत समान है।” राजा द्वारा इन शब्दों का अर्थ पूछे जाने पर उन्होंने पहला श्लोक कहा:-

हे पवित्र गुरु, हे महान विद्वान, देखो! मैंने पापपूर्ण कर्म देखा।
दोनों ही ईश्वर की कृपा से वंचित होकर पतित हुए, दोनों ने ही कानून का उल्लंघन किया। (*2)
यह सुनकर ब्राह्मण ने दूसरा श्लोक दोहराया:-

मेरा भोजन पहाड़ी क्षेत्र का शुद्ध चावल है।
मांस के नाजुक स्वाद के साथ,
एक पापी को ऐसा क्यों करना चाहिए?
क्या यह नियम संतों के लिए है, जब वे भोजन करते हैं?
यह सुनकर बोधिसत्व ने दो और श्लोक पढ़े:-

ब्राह्मण, जाओ और पृथ्वी के कोने-कोने में घूम जाओ;
देखो! दुख तो सबका हिस्सा है।
यहां पाप से कलंकित तुम्हारा बर्बाद जीवन ही मायने रखता है।
टूटे हुए बर्तन के टुकड़ों से भी कम।
महत्वाकांक्षा से सावधान रहें और लोभ पर काबू पाएं:
इस तरह की बुराइयाँ "दुखों के संसार" की ओर ले जाती हैं।
तब राजा उसके विधि-विवेचना से प्रसन्न होकर उससे पूछा कि वह किस जाति का है। उसने कहा, “महाराज, मैं एक बहिष्कृत हूँ।” राजा ने उत्तर दिया, “मित्र, यदि तुम उच्च जाति के होते, तो मैं तुम्हें एकमात्र राजा बना देता। परन्तु अब से मैं दिन में राजा रहूँगा और तुम रात में राजा रहोगे।” और ये कहकर उसने अपने द्वारा सुशोभित फूलों की माला उसके गले में डाल दी और उसे नगर का संरक्षक नियुक्त कर दिया। यहीं से नगर के स्वामियों के गले में लाल फूलों की माला धारण करने की प्रथा शुरू हुई। और उस दिन से राजा ने अपने गुरु की सलाह मानकर उनका आदर किया और उनसे नीची चौकी पर बैठकर पवित्र ग्रंथों का अध्ययन किया।

अपने उपदेश के अंत में गुरु ने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उस समय आनंद राजा थे और मैं स्वयं बहिष्कृत था।"

फुटनोट:

(1) यह नियम कि शिष्य को अपने गुरु (शिक्षक) से नीची सीट पर बैठना चाहिए।

(2) विद्वान अपनी व्याख्या में यह आयत जोड़ते हैं:

अतीत की सच्ची आस्था पृथ्वी पर कायम रही।
झूठी शिक्षा बाद में उत्पन्न हुई।
तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सायहा-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-310-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 310
सया-जातक

“धरती पर कोई सिंहासन नहीं,” इत्यादि — गुरु ने जेतवन मठ में निवास करते समय एक पथभ्रष्ट भिक्षु की कहानी सुनाई, जो श्रावस्ती नगर में भिक्षा मांगने के दौरान एक सुंदर स्त्री को देखकर विचलित हो गया और तब से उसका मन असंतुष्ट हो गया तथा उसने धर्म के मार्ग से विमुख होकर विमुख हो गया। इसलिए भिक्षुओं ने उसे भगवान बुद्ध के समक्ष प्रस्तुत किया। भगवान बुद्ध ने कहा, “भाई, क्या यह सच है कि तुम असंतुष्ट हो?” उसने स्वीकार किया कि वह असंतुष्ट है। गुरु ने उसकी असंतुष्टि का कारण जानकर कहा, “भाई, मोक्ष (निर्वाण) की ओर ले जाने वाले मार्ग पर शिष्य बनने के बाद भी तुम संसार की लालसा क्यों कर रहे हो? प्राचीन काल के बुद्धिमान पुरुषों ने जब कुलपुजारी का पद दिया गया तो उसे अस्वीकार कर दिया और तपस्वी जीवन अपना लिया।” और उन्होंने उन्हें प्राचीन काल की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज्य कर रहे थे, तब बोधिसत्व राजा के पुरोहित की ब्राह्मण पत्नी के गर्भ में गर्भ धारण किए और राजा के पुत्र के साथ ही उनका जन्म हुआ। जब राजा ने अपने मंत्रियों से पूछा कि क्या उनके पुत्र के साथ ही किसी और का भी जन्म हुआ है, तो उन्होंने कहा, "जी महाराज, आपके कुल पुरोहित का पुत्र।" इसलिए राजा ने उसे बुलवाया और उसे और राजकुमार की देखभाल के लिए दाइयों के हवाले कर दिया। दोनों को एक जैसे आभूषण पहनाए गए और वे एक ही तरह का भोजन और पेय पदार्थ ग्रहण करते थे।

और जब वे बड़े हो गए, तो वे सब मिलकर तक्षशिला गए और जैसे ही उन्होंने सभी विज्ञानों में दक्षता प्राप्त कर ली, वे घर लौट आए।

राजा ने अपने पुत्र को उपसराय बनाया और उसे बहुत सम्मान दिया। उस समय से बोधिसत्व राजकुमार के साथ खाते-पीते और रहते थे, और उनके बीच गहरी मित्रता स्थापित हो गई। कुछ समय बाद, अपने पिता की मृत्यु के बाद, युवा राजकुमार सिंहासन पर आसीन हुए और उन्होंने अपार समृद्धि प्राप्त की। बोधिसत्व ने सोचा, "मेरा मित्र अब राज्य पर शासन कर रहा है; जब उसे उचित अवसर मिलेगा, तो वह मुझे अवश्य ही अपने कुलपुजारी का पद देगा। गृहस्थ जीवन से मेरा क्या लेना-देना? मैं संन्यासी बन जाऊंगा और एकांतवास में व्यतीत करूंगा।"

अतः उन्होंने अपने माता-पिता को प्रणाम किया और शिष्य बनने की अनुमति लेकर सांसारिक संपत्ति त्याग दी तथा एकाकी होकर हिमालय की ओर प्रस्थान किया। वहाँ एक रमणीय स्थान पर उन्होंने अपना आश्रम बनाया और तपस्वी जीवन व्यतीत करते हुए सभी क्षमताओं और योग्यताओं का विकास किया तथा रहस्यवादी जीवन के आनंद में लीन रहे।

इस समय राजा को उनकी याद आई और उन्होंने कहा, “मेरे मित्र का क्या हुआ? वे कहीं दिखाई नहीं दे रहे।” उनके मंत्रियों ने बताया कि उन्होंने शिष्यों का मार्ग अपना लिया है और सुना है कि वे किसी रमणीय वन में रह रहे हैं। राजा ने उनके निवास स्थान के बारे में पूछा और सायहा नामक एक सलाहकार से कहा, “जाओ और मेरे मित्र को वापस ले आओ। मैं उन्हें अपना पुरोहित बनाऊंगा।” सायहा तुरंत सहमत हो गए और कुछ समय बाद बनारस से आगे बढ़ते हुए एक सीमावर्ती गाँव पहुँचे और वहाँ अपना निवास स्थान बनाकर कुछ वनपालों के साथ उस स्थान पर गए जहाँ बोधिसत्व रहते थे। उन्होंने उन्हें अपनी कुटिया के द्वार पर एक सुनहरी मूर्ति की तरह बैठे हुए पाया। सामान्य अभिवादन करने के बाद वे कुछ दूरी पर आदरपूर्वक बैठ गए और उनसे कहा, “आदरणीय महोदय, राजा आपका स्वागत चाहते हैं, क्योंकि वे आपको अपने कुल पुरोहित के पद पर पदोन्नत करना चाहते हैं।” बोधिसत्व ने उत्तर दिया, "यदि मुझे केवल पुरोहित का पद ही नहीं, बल्कि समस्त काशी और कोसल, भारत राज्य और एक सार्वभौमिक साम्राज्य की महिमा भी प्राप्त हो जाए, तो भी मैं जाने से इनकार कर दूंगा। ज्ञानी व्यक्ति एक बार त्यागे हुए पापों को पुनः नहीं अपनाते, ठीक वैसे ही जैसे वे एक बार निकाले हुए कफ को नहीं निगलते।" ऐसा कहकर उन्होंने ये श्लोक दोहराए:-

(*1) पृथ्वी पर कोई भी सिंहासन मुझे शर्मिंदा करने के लिए प्रलोभित न करे,
समुद्र से घिरा हुआ कोई राज्य नहीं, गहरे पानी में सुरक्षित;
धन और प्रसिद्धि की लालसा पर लानत हो।
इससे "दुख भरे संसार" में बेचारा मनुष्य रोने के लिए अभिशप्त हो जाता है।
धरती पर एक संन्यासी के रूप में भटकना बेहतर है।
और हाथ में कटोरा लेकर घर-घर भीख मांगने लगे।
फिर राजा की तरह, वह भी पापी वासनाओं का शिकार बन जाता है।
दमनकारी शासन को सहन करना और गरीबों को सताना।

इस प्रकार बोधिसत्व ने बार-बार विनती करने के बावजूद भी उसका प्रस्ताव ठुकरा दिया। सयाह उसे मनाने में असमर्थ रहा और उसने उसे प्रणाम किया, और लौटकर राजा को अपने आने से इनकार करने की सूचना दी।

जब गुरु ने अपना पाठ समाप्त किया, तो उन्होंने सत्यों का खुलासा किया और जन्म का वर्णन किया: सत्यों के समापन पर, पथभ्रष्ट भाई (भिक्षु) ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की सिद्धि प्राप्त की। कई अन्य लोगों ने भी रूपांतरण के समान फल का अनुभव किया: "उस समय आनंद राजा थे, सारिपुत्र सयाह थे, और मैं स्वयं कुलपुजारी था।"

फुटनोट:

(1) जातक 433 में दोहराया गया।

स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----॥-311-॥----->>>> अगला

जातक क्रमांक 311
पुचिमांडा जातक

"लुटेरे, उठो," इत्यादि--बांस के जंगल में रहते हुए गुरु ने आदरणीय मोग्गल्याना के बारे में यह कहानी सुनाई।

जब वह संत राजगृह नगर के पास एक वन कुटिया में रह रहे थे, तब एक डाकू ने उपनगरीय गाँव में एक घर में सेंध लगाकर लूट का माल लेकर भागते हुए संत की कुटिया तक पहुँच गया। वहाँ पहुँचकर संत ने सोचा कि वह सुरक्षित रहेगा और कुटिया के द्वार पर लेट गया। संत ने उसे वहाँ लेटे हुए देखा और उसके चरित्र पर संदेह करते हुए मन ही मन कहा, "डाकू से कोई वास्ता रखना मेरे लिए उचित नहीं होगा।" इसलिए कुटिया से बाहर आकर उन्होंने उसे वहाँ न लेटने को कहा और उसे भगा दिया।

लुटेरा बड़ी तेज़ी से भाग निकला। मशालें लिए हुए कुछ लोग लुटेरे के पदचिह्नों का पीछा करते हुए वहाँ पहुँचे और लुटेरे की मौजूदगी के विभिन्न निशान देखकर बोले, "लुटेरा इस रास्ते से आया था। यहाँ खड़ा हुआ, वहाँ बैठा और उस रास्ते से भाग गया। अब वह यहाँ नहीं दिख रहा।" इसलिए वे सब इधर-उधर खोजबीन करते रहे, लेकिन अंत में उसे न पाकर लौट आए। अगले दिन सुबह-सुबह, वरिष्ठ भिक्षु राजगृह नगर में भिक्षा मांगने गए और तीर्थयात्रा से लौटकर बाँस के वन में गए और गुरु को सारी घटना बताई। गुरु ने कहा, "हे मोग्गल्याण, तुम अकेले नहीं हो जो ऐसे मामले में संदेह कर रहे हो जिसमें संदेह जायज़ है। पुराने समय के बुद्धिमान लोग भी इसी तरह संदेह करते थे।" और वरिष्ठ भिक्षु के अनुरोध पर उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व ने शहर के एक श्मशान में नीम के वृक्ष के रूप में जन्म लिया। एक दिन शहर के बाहरी गाँव में चोरी करने वाला एक लुटेरा श्मशान में आया। उस समय वहाँ दो पुराने पेड़ खड़े थे, एक नीम का और एक बोधि-पीपल का। लुटेरे ने अपना चुराया हुआ सामान नीम के पेड़ की जड़ों में रख दिया और वहीं लेट गया।

उन दिनों पकड़े गए लुटेरों को नीम के पेड़ की एक डंडी पर लटकाकर यातना दी जाती थी। इसलिए नीम के पेड़ की आत्मा ने सोचा: "अगर लोग आकर इस लुटेरे को पकड़ लें, तो वे इस नीम के पेड़ की एक शाखा काटकर उससे एक डंडी बनाएंगे और उसे उस पर लटका देंगे। और उस स्थिति में पेड़ नष्ट हो जाएगा। इसलिए मैं इसे भगा दूंगा।" फिर उसे संबोधित करते हुए उसने पहली पंक्ति दोहराई:-

हे लुटेरे, उठो! क्यों सो रहे हो? सोने का समय नहीं है।
राजा के आदमी तुम पर टूट पड़े हैं, वे तुम्हारे अपराध का बदला लेने आए हैं।

इसके अलावा उन्होंने ये शब्द भी कहे, "राजा के आदमियों के तुम्हें पकड़ने से पहले यहाँ से चले जाओ।" इस प्रकार उन्होंने डाकू को डराकर भगा दिया। और उसके भागते ही बोधि वृक्ष के देवता ने दूसरी पंक्ति दोहराई:-

और अगर यह लुटेरा रंगे हाथों पकड़ा भी जाए तो भी उन्हें उसे पकड़ लेना चाहिए,
हे नीम के वृक्ष, वन की परी, तुम्हें इससे क्या फर्क पड़ेगा?
यह सुनकर नीम के वृक्ष के देवता ने तीसरा श्लोक कहा:-

हे बोपड़ी के वृक्ष, मुझे यकीन है कि तुम मेरे भय का रहस्य नहीं जानते;
मैं नहीं चाहता कि राजा के आदमी उस दुष्ट डाकू को यहाँ ढूंढें।
मुझे पता है, वे मेरे पवित्र वृक्ष से तुरंत एक शाखा ले लेंगे।
और उस दोषी दुष्ट से बदला लेने के लिए, उसे एक खंभे पर लटका दो।
जब दोनों वन देवता इस प्रकार आपस में बातचीत कर रहे थे, तभी संपत्ति के मालिक मशालें लिए लुटेरे का पीछा करते हुए उस स्थान को देखकर, जहाँ वह लेटा हुआ था, बोले, "देखो! लुटेरा अभी-अभी उठकर यहाँ से भाग गया है। हमने उसे अभी तक पकड़ा नहीं है, लेकिन अगर पकड़ लिया तो वापस आकर या तो उसे इस नीम के पेड़ के नीचे सूली पर चढ़ा देंगे या इसकी किसी शाखा से लटका देंगे।"

और ये शब्द इधर-उधर भटकते हुए, जब उन्हें लुटेरा नहीं मिला, तो वे भाग गए। और उनकी बातें सुनकर बोपड़ी के वृक्ष की आत्मा ने चौथा श्लोक बोला:-

एक अनदेखे खतरे से सावधान रहें: बहुत देर होने से पहले ही संदेह करें।
इस वर्तमान संसार में भी बुद्धिमान लोग भविष्य की स्थिति की ओर देखते हैं।

जब गुरु ने यह पाठ समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म का वर्णन किया:

"उस समय सारिपुत्र बोधिवृक्ष (पीपल) के प्राण थे। मैं स्वयं नीम वृक्ष का प्राण था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कस्सपमंडिया-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-312-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 312
कस्सपमंडीय-जातक

“नासमझ युवक,” इत्यादि — यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में निवास करते समय एक वृद्ध भिक्षु के बारे में सुनाई थी। परंपरा के अनुसार, श्रावस्ती नगर के एक युवा कुलीन व्यक्ति ने पापी इच्छाओं के बुरे परिणामों को भांपकर गुरु से दीक्षा ली और समाधि की विधि का पालन करते हुए अल्पकाल में ही संतत्व प्राप्त कर लिया। समय बीतने पर माता की मृत्यु के बाद उन्होंने अपने पिता और छोटे भाई को भी शिष्यों के समूह में शामिल कर लिया और वे जेतवन मठ में रहने लगे।

बरसाती ऋतु के आरंभ में, एक ऐसे गाँव के बारे में सुनकर जहाँ आवश्यक वस्त्र आसानी से मिल जाते थे, वे तीनों वहाँ बरसाती ऋतु के निवास में चले गए, और बरसाती ऋतु समाप्त होने पर सीधे जेतवन मठ लौट आए। जब वे जेतवन मठ से कुछ ही दूरी पर एक स्थान पर पहुँचे, तो युवा भिक्षु ने नौसिखिए लड़के से कहा कि वह बूढ़े भिक्षु को चुपचाप ले आए, जबकि वह स्वयं जेतवन मठ की ओर आगे बढ़ गया ताकि उनकी कुटिया तैयार कर सके। बूढ़ा भिक्षु धीरे-धीरे चलता रहा। नौसिखिए ने बार-बार मानो अपने सिर से उसे धक्का दिया और उसे ज़बरदस्ती खींचते हुए चिल्लाया, "चलो, गुरुजी।" बूढ़े भिक्षु ने कहा, "तुम मुझे मेरी इच्छा के विरुद्ध खींच रहे हो," और मुड़कर उसने फिर से शुरुआत की। जब वे इस प्रकार झगड़ रहे थे, सूर्य अस्त हो गया और अंधेरा छा गया। इस बीच युवा भिक्षु ने अपनी कुटिया साफ की, बर्तनों में पानी भर दिया, और उन्हें आते हुए न देखकर, वह एक मशाल लेकर उनसे मिलने चला गया। जब उसने उन्हें आते देखा, तो उसने पूछा कि उन्हें इतनी देर क्यों हो गई। बूढ़े भिक्षु ने कारण बताया। अतः उन्होंने उन्हें विश्राम कराया और धीरे-धीरे उनके मार्ग पर विदा किया। उस दिन उन्हें बुद्ध को प्रणाम करने का समय नहीं मिला। इसलिए अगले दिन जब वे बुद्ध को प्रणाम करने आए, तो

प्रणाम करने और आसन ग्रहण करने के बाद गुरु ने पूछा, "तुम कब आए?" "कल, महाराज।" "तुम कल आए थे और आज ही मुझे प्रणाम कर रहे हो?" "जी महाराज," उन्होंने उत्तर दिया और कारण बताया। गुरु ने वरिष्ठ भिक्षु को फटकारा: "यह केवल अब ही ऐसा नहीं करता। पुराने समय में भी वह ऐसा ही करता था। अब तुम उससे नाराज़ हो। पहले वह बुद्धिमानों को नाराज़ करता था।" और भाई के अनुरोध पर उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज था, तब बोधिसत्व का जन्म काशी प्रदेश के एक कस्बे में एक ब्राह्मण परिवार में हुआ। जब वे बड़े हुए, तो उनकी माता का देहांत हो गया। उनकी अंतिम संस्कार की रस्में पूरी करने के बाद, छह सप्ताह बाद उन्होंने घर का सारा धन दान कर दिया और अपने पिता और छोटे भाई को साथ लेकर किसी के वस्त्र धारण करके हिमालय प्रदेश में एक तपस्वी का जीवन व्यतीत करने चले गए। वहाँ वे एक रमणीय उपवन में रहते थे, खेतों में बचे हुए अनाज से अपना जीवन यापन करते थे और जंगली फल और जड़ वाली लकड़ियाँ खाते थे।

हिमालय में, बरसाती ऋतु में, जब लगातार बारिश होती है, और किसी भी प्रकार का कंद या जड़ खोदना या जंगली फल प्राप्त करना असंभव हो जाता है, और पत्ते गिरने लगते हैं, तो अधिकांश तपस्वी हिमालय से नीचे उतर आते हैं और मनुष्यों के बीच निवास करने लगते हैं। इसी समय, बोधिसत्व, अपने पिता और छोटे भाई के साथ यहाँ रहने के बाद, जैसे ही हिमालयी क्षेत्र फिर से हरा-भरा होने लगा और फल देने लगा, अपने दोनों साथियों को लेकर हिमालय में स्थित अपने आश्रम लौट आए। सूर्यास्त के समय, जब वे अपनी कुटिया से कुछ ही दूर थे, उन्होंने उन्हें यह कहते हुए विदा किया, "आप धीरे-धीरे आ सकते हैं, मैं आगे जाकर आश्रम को व्यवस्थित करता हूँ।"

अब युवा तपस्वी अपने पिता के साथ धीरे-धीरे आ रहा था और बार-बार अपने सिर से उनकी कमर पर धक्का मार रहा था। बूढ़े ने कहा, "मुझे आपका घर ले जाने का तरीका पसंद नहीं आया।" इसलिए वह वापस मुड़ गया और उसी जगह से फिर से चलने लगा। जब वे इस तरह झगड़ रहे थे, अंधेरा छा गया। लेकिन बोधिसत्व ने जैसे ही अपनी कुटिया से पत्ते साफ किए और पानी तैयार किया, एक मशाल ली और वापस रास्ते पर चल पड़े। जब वे उनसे मिले, तो उन्होंने पूछा कि उन्हें इतना समय क्यों लग गया। तब उस तपस्वी बालक ने उन्हें बताया कि उसके पिता ने क्या किया था। लेकिन बोधिसत्व उन्हें चुपचाप घर ले आए और बौद्ध धर्म की सभी आवश्यक वस्तुओं को सुरक्षित रखने के बाद, उन्होंने अपने पिता को स्नान कराया, उनके पैर धोए और मालिश की और उनकी पीठ पर शैम्पू लगाया। फिर उसने कोयले का एक बर्तन रखा और जब उसके पिता थकान से उबर गए, तो वह उनके पास बैठ गया और बोला, "पिताजी, छोटे लड़के मिट्टी के बर्तनों के समान होते हैं: वे पल भर में टूट जाते हैं, और एक बार टूट जाने पर उन्हें फिर से जोड़ना असंभव होता है। जब वे दुर्व्यवहार करें तो बूढ़े लोगों को धैर्यपूर्वक उन्हें सहन करना चाहिए।" और अपने पिता कश्यप को सलाह देने के लिए, उसने ये श्लोक दोहराए:-

यदि नासमझ युवक अपने शब्दों या कार्यों से अपराध करे,
   धैर्य का प्रदर्शन करना बुद्धिमत्ता का ही गुण है;
अच्छे लोगों के झगड़े शीघ्र ही समाप्त हो जाते हैं।
   मूर्ख लोग अधपकी मिट्टी की तरह अलग हो जाते हैं।
ज्ञान प्राप्त करने में बुद्धिमान पुरुष, अपने पापों से अवगत
   मित्रता इस बात का प्रमाण है कि वह कभी क्षीण नहीं होती;
भाई के लिए ऐसे बोझ सहना बहुत कठिन होता है।
   और पड़ोसियों के झगड़ों को सुलझाने में कुशल।
इस प्रकार बोधिसत्व ने अपने पिता को सलाह दी। और तब से उन्होंने आत्मसंयम का पालन करना शुरू कर दिया।

गुरु ने अपना पाठ समाप्त करते हुए जन्म का वर्णन किया: "उस समय वृद्ध पुजारी पिता संन्यासी थे, नौसिखिया बालक संन्यासी थे, और मैं स्वयं वह पुत्र था जो अपने पिता को सलाह देता था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **खांतिवादी-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

जातक क्रमांक 313
खांतिवादी-जातक

“जो कोई काट डाले,” इत्यादि — यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक क्रोधी भिक्षु के बारे में सुनाई थी। इस कथा की उत्पत्ति का वर्णन पहले ही किया जा चुका है। गुरु ने उस भिक्षु से पूछा, “बुद्ध के मार्ग पर चलकर शिष्य बनने के बाद भी, जो क्रोध को नहीं जानते, तुम क्रोध क्यों दिखाते हो? पुराने समय के ज्ञानी पुरुष, चाहे उन्हें हज़ार कोड़े पड़े हों, उनके हाथ-पैर, कान और नाक काट दिए गए हों, फिर भी उन्होंने किसी पर क्रोध नहीं दिखाया।” और फिर उन्होंने पुराने समय की एक कथा सुनाई।

बहुत समय पहले, काशी के राजा कलाबु बनारस में शासन करते थे। उसी समय, बोधिसत्व ने कुंडककुमार नामक एक युवक के रूप में अस्सी करोड़ (10 मिलियन) धन-संपत्ति से संपन्न ब्राह्मण परिवार में जन्म लिया। जब वे वयस्क हुए, तो उन्होंने तक्षशिला में समस्त विद्याओं का ज्ञान प्राप्त किया और बाद में गृहस्थ जीवन व्यतीत करने लगे।

अपने माता-पिता की मृत्यु के बाद, अपने संचित धन को देखकर उन्होंने सोचा, "मेरे वे रिश्तेदार जिन्होंने यह धन इकट्ठा किया था, इसे अपने साथ लिए बिना ही चले गए; अब यह मेरा कर्तव्य है कि मैं इसे अपना बनाऊं और फिर इस दुनिया से विदा हो जाऊं।" तब उन्होंने सावधानीपूर्वक उन लोगों का चयन किया जो अपने दान के कारण इसके पात्र थे, और अपना सारा धन उन्हें दे दिया। फिर वे हिमालयी क्षेत्र में प्रवेश कर तपस्वी जीवन व्यतीत करने लगे। वहां उन्होंने लंबे समय तक जंगली फलों का सेवन किया। नमक और सिरका प्राप्त करने के लिए वे आबादी वाले क्षेत्रों में गए और धीरे-धीरे बनारस पहुंचे, जहां उन्होंने राजमहल में अपना निवास स्थान बनाया। अगले दिन वे शहर में भिक्षा मांगने के लिए चक्कर लगाते रहे, जब तक कि वे सेनापति के द्वार पर नहीं पहुंच गए। सेनापति उनके आचरण की धार्मिकता से प्रसन्न हुए और उन्हें अपने घर में ले आए और अपने लिए तैयार किया हुआ भोजन उन्हें खिलाया। सेनापति की सहमति प्राप्त करने के बाद, उन्होंने उन्हें राजमहल में निवास करने के लिए राजी किया।

एक दिन राजा कलाबु शराब के नशे में चूर होकर बड़े ठाठ-बाठ से नर्तकियों के समूह से घिरे हुए उद्यान में आए। उन्होंने पत्थर के राजसी आसन पर पलंग बिछाया और हरम की एक प्रिय स्त्री की गोद में सिर रखकर लेट गए। वहीं, गायन, वाद्य संगीत और नृत्य में निपुण नर्तकियों ने संगीतमय मनोरंजन प्रदान किया। उनका वैभव इतना महान था कि मानो स्वर्ग के स्वामी इंद्र के समान था। और राजा सो गए। तब स्त्रीयों ने कहा, “जिसके लिए हम संगीत प्रस्तुत कर रही हैं, वह तो सो गया है। अब हमें गाने की क्या आवश्यकता है?” तब उन्होंने अपने वीणा और अन्य वाद्य यंत्र इधर-उधर फेंक दिए और उद्यान की ओर चल पड़ीं, जहाँ फूलों और फलदार झाड़ियों से आकर्षित होकर वे शीघ्र ही आनंदमय नृत्य करने लगीं।

उस समय बोधिसत्व इस उद्यान में, एक राजसी हाथी की तरह, अपनी शक्ति के बल पर गर्व करते हुए, एक पुष्पित साल वृक्ष के चरणों में विराजमान थे और संसार से विरक्ति के आनंद में डूबे हुए थे। तभी कुछ स्त्रियाँ घूमते-घूमते उनके पास आईं और बोलीं, "हे देवियों, आइए हम बैठें और इस वृक्ष के चरणों में विश्राम कर रहे पुरोहित से कुछ सुनें, जब तक राजा जाग न जाएँ।" तब वे उनके पास गईं और उन्हें प्रणाम किया और उनके चारों ओर घेरा बनाकर बैठ गईं और बोलीं, "हमें कुछ ऐसा बताइए जो सुनने योग्य हो।" तब बोधिसत्व ने उन्हें उपदेश दिया।

इसी बीच राजसी प्रिय स्त्री ने अपने शरीर की एक हरकत से राजा को जगा दिया। जागने पर राजा ने स्त्री को न देखकर पूछा, "ये दुष्ट कहाँ चली गईं?" स्त्री ने कहा, "महाराज, वे चली गई हैं और किसी तपस्वी की सेवा में बैठी हैं।" राजा क्रोधित होकर अपनी तलवार उठाकर जल्दी से चला गया और बोला, "मैं इस झूठे तपस्वी को सबक सिखाऊंगा।" तब जो स्त्री राजा की सबसे प्रिय थीं, उन्होंने राजा को क्रोधित आते देख उनके हाथ से तलवार छीन ली और उन्हें शांत किया। फिर राजा आकर बोधिसत्व के पास खड़ा हो गया और पूछा, "भिक्षु, आप किस शिक्षा का उपदेश दे रहे हैं?" बोधिसत्व ने उत्तर दिया, "महाराज, मैं धैर्य की शिक्षा दे रहा हूँ।" राजा ने पूछा, "यह धैर्य क्या है?" बोधिसत्व ने कहा, "जब लोग आपको गाली दें, मारें-पीटें और अपशब्द कहें, तब क्रोधित न होना।" राजा ने कहा, "अब मैं आपके धैर्य का वास्तविक रूप देखूंगा," और उसने अपने जल्लाद को बुलाया। और उसने अपने कर्तव्य के अनुसार एक कुल्हाड़ी और कांटों का कोड़ा लिया, और पीले वस्त्र और लाल माला धारण करके राजा के पास आकर उन्हें प्रणाम किया और कहा, "महाराज, आपकी क्या इच्छा है?" राजा ने कहा, "इस दुष्ट तपस्वी को घसीटकर ले जाओ, और उसे जमीन पर पटककर, कांटों के कोड़े से आगे-पीछे और दोनों तरफ मारो, और उसे दो हजार कोड़े मारो।" ऐसा ही किया गया। बोधिसत्व की बाहरी और भीतरी त्वचा मांस तक कट गई, और खून बहने लगा। राजा ने फिर पूछा, "भिक्षु, तुम किस शिक्षा का प्रचार करते हो?" उसने उत्तर दिया, "महाराज, धैर्य की शिक्षा। आपको लगता है कि मेरा धैर्य केवल ऊपरी है। यह ऊपरी नहीं है, बल्कि मेरे हृदय में गहराई से समाया हुआ है, जहाँ आप इसे देख नहीं सकते,

महाराज।" जल्लाद ने फिर पूछा, "महाराज, आपकी क्या इच्छा है?" राजा ने कहा, "इस झूठे तपस्वी के दोनों हाथ काट दो।" तो उसने अपनी कुल्हाड़ी उठाई और पीड़ित को घातक घेरे में रखकर उसके दोनों हाथ काट दिए। फिर राजा ने कहा, "इसके पैर भी काट दो," और उसके पैर काट दिए गए। उसके हाथों और पैरों से खून ऐसे बह रहा था जैसे किसी छलकते घड़े से लाख का रस बहता है। राजा ने फिर पूछा कि वह क्या उपदेश देता है। उसने उत्तर दिया, "महाराज, धैर्य का उपदेश।" "महाराज, आप सोचते हैं कि मेरा धैर्य मेरे हाथों और पैरों में बसता है। ऐसा नहीं है, बल्कि यह कहीं और गहराई में स्थित है।" राजा ने कहा, "इसकी नाक और कान भी काट दो।" जल्लाद ने ऐसा ही किया। उसका पूरा शरीर अब खून से लथपथ था। राजा ने फिर उससे उसके उपदेश के बारे में पूछा। और तपस्वी ने कहा, "यह मत सोचो कि मेरा धैर्य मेरी नाक और कानों की नोकों में बसता है: मेरा धैर्य मेरे हृदय में गहराई में बसा है।" राजा ने कहा, "लेट जाओ, हे झूठे भिक्षु, और वहीं से अपने धैर्य को बढ़ाओ।" और ऐसा कहते हुए, उसने बोधिसत्व के हृदय के ऊपर अपने पैर से प्रहार किया और वहां से चला गया।

जब वह चला गया, तो सेनापति ने बोधिसत्व के शरीर से खून पोंछा, उनके हाथों, पैरों, कानों और नाक पर पट्टियाँ बाँधीं, और फिर उन्हें धीरे से आसन पर बिठाकर, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठकर कहा, "हे पूज्यवर, यदि आप किसी ऐसे व्यक्ति पर क्रोधित हों जिसने आपके विरुद्ध पाप किया है, तो राजा पर क्रोधित हों, किसी और पर नहीं।" और यह निवेदन करते हुए, उन्होंने पहला श्लोक दोहराया:-

जिसने भी तुम्हारी नाक और कान काट डाले, और तुम्हारा पैर और हाथ काट डाले,
हे वीर आत्मा, उसके साथ क्रोधित रहो, लेकिन हम आपसे विनती करते हैं कि इस भूमि को बख्श दो।
यह सुनकर बोधिसत्व ने दूसरा श्लोक कहा:-

राजा अमर रहें, जिनके क्रूर हाथों ने मेरे शरीर को इस प्रकार विकृत कर दिया है।
मुझ जैसे पवित्र आत्माएं ऐसे कर्मों को क्रोध से नहीं देखतीं।
जैसे ही राजा उद्यान से निकल रहे थे और ठीक उसी क्षण जब वे बोधिसत्व की दृष्टि से ओझल हो गए, दो लाख चालीस हजार मील (4.23 किमी) मोटी विशाल पृथ्वी दो भागों में फट गई, मानो कोई मजबूत कपड़ा फट गया हो, और अविची से निकलती हुई ज्वाला ने राजा को जकड़ लिया, मानो उन्हें लाल ऊन के शाही वस्त्र में लपेट लिया हो। इस प्रकार राजा उद्यान के द्वार के पास ही पृथ्वी में समा गए और अविची के महान नरक में स्थिर हो गए। उसी दिन बोधिसत्व का निधन हो गया। राजा के सेवक और नागरिक अपने हाथों में इत्र, पुष्पमालाएँ और धूप लेकर आए और बोधिसत्व के अंतिम संस्कार किए। कुछ लोगों ने कहा कि बोधिसत्व सीधे हिमालय लौट गए। परन्तु उन्होंने यह बात असत्य कही।

प्राचीन काल के एक संत, जैसा कि लोगों ने बताया है,
   उन्होंने असाधारण साहस का प्रदर्शन किया:
वह संत अन्याय सहने में इतना शक्तिशाली था
   काशी के राजा ने हत्या कर दी थी।
हाय! व्यर्थ पछतावे का कर्ज
   उस राजा को कीमत चुकानी होगी;
जब उन्हें सबसे निचले नरक में रहने के लिए अभिशप्त किया जाता है,
   उसे उस दिन का लंबे समय तक पछतावा रहेगा।
ये दोनों छंद परिपूर्ण ज्ञान से प्रेरित हैं।

अपने उपदेश के अंत में, गुरु ने सत्यों का खुलासा किया और जन्म का वर्णन किया: सत्यों के समापन पर, उग्र स्वभाव वाले भिक्षु ने द्वितीय मार्ग (सम्मोहन) की प्राप्ति की, जबकि अन्य कई लोगों ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की प्राप्ति की: "उस समय देवदत्त काशी के कलाबु राजा थे, सारिपुत्र सेनापति थे, और मैं स्वयं तपस्वी, धैर्य का उपदेशक था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **लोहकुंभी-जातक**

स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----II-314-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 314
लोहाकुंभी-जातक। (*1)

“धन का उचित हिस्सा,” इत्यादि—यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए कोसल के एक राजा के विषय में सुनाई थी। कहते हैं कि उस समय के कोसल के राजा ने एक रात नरक के चार निवासियों की चीख सुनी—चारों में से प्रत्येक ने ‘दु’, ‘सा’, ‘ना’ और ‘सो’ कहा। परंपरा के अनुसार, पिछले जन्म में वे श्रावस्ती नगर के राजकुमार थे और व्यभिचार के दोषी थे। अपने पड़ोसियों की पत्नियों के साथ यौन दुराचार करने और अपनी कामुक प्रवृत्तियों में लिप्त होने के कारण, श्रावस्ती नगर के पास मृत्यु चक्र में उनका जीवन समाप्त हो गया। वे चार लोहे के कुंडों में पुनर्जीवित हुए। साठ हजार वर्षों तक यातना सहने के बाद वे कुंड के शीर्ष पर पहुँचे और कुंड के मुख को देखकर उन्होंने मन ही मन सोचा, “हम इस कष्ट से कब मुक्ति पाएँगे?” और फिर चारों ने एक के बाद एक ज़ोर से चीख मारी। शोर सुनकर राजा बुरी तरह भयभीत हो गया और सुबह होने का इंतजार करता रहा, हिलने-डुलने में असमर्थ।

भोर होते ही ब्राह्मण आए और राजा का हालचाल पूछा। राजा ने उत्तर दिया, “हे मेरे स्वामियों, मैं कैसे स्वस्थ हो सकता हूँ, जिसने आज ऐसी चार भयानक चीखें सुनी हैं?” ब्राह्मणों ने हाथ हिलाए। (*2) “हे मेरे स्वामियों, यह क्या है?” राजा ने कहा। ब्राह्मणों ने उन्हें आश्वासन दिया कि ये आवाजें भीषण हिंसा का संकेत हैं। “क्या इनका कोई उपाय है या नहीं?” राजा ने कहा। “आप कह सकते हैं कि नहीं,” ब्राह्मणों ने कहा, “परन्तु हम इन मामलों में भली-भांति प्रशिक्षित हैं, महाराज।” “आप इन बुराइयों को कैसे रोकेंगे?” राजा ने उत्तर दिया, “महाराज, हमारे पास एक महान उपाय है, और सभी जीवित प्राणियों का चार बार यज्ञ करके हम सभी बुराइयों को रोक सकते हैं।” “तो जल्दी कीजिए,” राजा ने कहा, “और सभी जीवित प्राणियों को चार-चार करके ले जाइए—मनुष्यों, बैलों, घोड़ों, हाथियों से लेकर बटेरों और अन्य पक्षियों तक—और इस चार बार के यज्ञ से मेरी मन की शांति बहाल कीजिए।” ब्राह्मणों ने सहमति दे दी और अपनी आवश्यकतानुसार सामान लेकर उन्होंने एक यज्ञ कुंड खोदा और अपने असंख्य बलिदानों को खूंटों से बांध दिया। वे उत्तम भोजन और प्राप्त होने वाले धन के विचार से अत्यधिक उत्साहित थे और इधर-उधर घूमते हुए कह रहे थे, "हे प्रभु, मुझे फलां-फलां वस्तु चाहिए।"

रानी मल्लिका आईं और राजा से पूछा कि ब्राह्मण इतने प्रसन्न और मुस्कुराते हुए क्यों घूम रहे हैं। राजा ने कहा, "महारानी, तुम्हारा इससे क्या लेना-देना? तुम अपने ही गौरव में चूर हो और तुम्हें पता नहीं कि मैं कितना दुखी हूँ।" "महाराज?" रानी ने उत्तर दिया। "महारानी, मैंने ऐसी भयानक आवाजें सुनी हैं और जब मैंने ब्राह्मणों से पूछा कि इन चीखों को सुनने का क्या परिणाम होगा, तो उन्होंने मुझे बताया कि मेरे राज्य, मेरी संपत्ति या मेरे जीवन को खतरा है, लेकिन चार वक्त का यज्ञ करने से मुझे शांति मिलेगी, और अब मेरे आदेश का पालन करते हुए, उन्होंने एक यज्ञकुंड खोदा है और वे अपनी जरूरत के बलि लाने गए हैं।" रानी ने कहा, "महाराज, क्या आपने इन चीखों के स्रोत के बारे में देवलोक के प्रमुख ब्राह्मण से परामर्श लिया है?" राजा ने कहा, "देवी, देवलोक का प्रमुख ब्राह्मण कौन है?" “महान गौतम (बुद्ध),” उसने उत्तर दिया, “सर्वोच्च बुद्ध।” “देवी,” उसने कहा, “मैंने सर्वोच्च बुद्ध से परामर्श नहीं लिया है।” “तो जाइए,” उसने उत्तर दिया, “और उनसे परामर्श लीजिए।”

राजा ने रानी की बातें सुनीं और सुबह का भोजन करने के बाद वे अपने राज रथ पर सवार होकर जेतवन मठ के लिए रवाना हुए। वहाँ उन्होंने गुरु को प्रणाम किया और उनसे कहा, “आदरणीय महोदय, रात्रि के समय मैंने चार प्रकार की आवाजें सुनीं और इस विषय में ब्राह्मणों से परामर्श किया। उन्होंने मेरी मन की शांति के लिए प्रत्येक प्रकार के बलिदान के चार वक्त अर्पित करने का वचन दिया है और वे अब यज्ञकुंड तैयार करने में लगे हैं। इन आवाजों का मेरे लिए क्या अर्थ है?”

“कुछ नहीं,” गुरु ने कहा। “नरक में कुछ प्राणी असहनीय पीड़ा के कारण ज़ोर-ज़ोर से रो रहे थे। ये चीखें केवल आपने ही नहीं सुनी हैं,” उन्होंने आगे कहा। “पुराने समय के राजाओं ने भी इन्हें सुना था। और जब वे भी अपने ब्राह्मणों से परामर्श करने के बाद बलि चढ़ाने के लिए उत्सुक हुए, तो ज्ञानियों की बातें सुनकर उन्होंने ऐसा करने से इनकार कर दिया। ज्ञानियों ने उन्हें इन चीखों का कारण समझाया और बलि चढ़ाने के लिए कहा, जिससे उन्हें शांति मिली।” और राजा के अनुरोध पर उन्होंने बीते समय की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व का जन्म काशी के एक गाँव में एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। जब वे परिपक्व हुए, तो उन्होंने इंद्रिय सुखों का त्याग कर तपस्वी जीवन व्यतीत किया और रहस्यमयी ध्यान की अलौकिक शक्तियाँ प्राप्त कीं। चिंतन के आनंद में लीन होकर वे हिमालय की एक रमणीय वनभूमि में निवास करने लगे।

उस समय बनारस के राजा नरक में रहने वाले चार प्राणियों द्वारा उच्चारित उन चार ध्वनियों को सुनकर भयभीत हो गए। जब ब्राह्मणों ने उन्हें ठीक उसी प्रकार समझाया कि उन पर तीन में से एक विपत्ति अवश्य आएगी, तो उन्होंने चार बार यज्ञ करके इस विपत्ति को रोकने के उनके प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। कुल पुरोहित ने ब्राह्मणों की सहायता से एक यज्ञकुंड तैयार करवाया और बड़ी संख्या में बलि के प्राणियों को लाकर खंभों से बांध दिया। तब बोधिसत्व ने प्रेम भाव से प्रेरित होकर, अपनी दिव्य दृष्टि से संसार का अवलोकन करते हुए, जो कुछ हो रहा था उसे देखकर कहा, "मुझे तुरंत जाकर इन सभी प्राणियों का कल्याण करना चाहिए।" फिर अपनी जादुई शक्ति से वायु में उड़कर वे बनारस के राजा के उद्यान में उतरे और सोने की प्रतिमा के समान राजसी शिला पर बैठ गए। कुल पुरोहित के मुख्य शिष्य ने अपने गुरु के पास जाकर पूछा, "हे गुरु, क्या हमारे वेदों में यह नहीं लिखा है कि किसी भी प्राणी का प्राण लेने वाले को सुख नहीं मिलता?" पुजारी ने उत्तर दिया, “तुम्हें राजा की संपत्ति यहाँ लानी है, और हमें खाने के लिए भरपूर उत्तम भोजन मिलेगा। बस चुप रहो।” और इतना कहकर उसने अपने शिष्य को विदा कर दिया। परन्तु युवक ने सोचा, “मैं इस मामले में दखल नहीं दूंगा,” और जाकर राजा के उद्यान में बोधिसत्व से मिला। उन्हें मैत्रीपूर्ण प्रणाम करने के बाद वह आदरपूर्वक दूरी पर बैठ गया। बोधिसत्व ने उससे पूछा, “युवक, क्या राजा अपने राज्य पर विधिपूर्वक शासन करता है?” “जी, पूज्यवर, राजा को शांति मिली है,” युवक ने उत्तर दिया। “लेकिन उन्होंने रात में चार चीखें सुनी हैं, और ब्राह्मणों से पूछने पर उन्होंने आश्वासन दिया है कि वे चार वक्त का यज्ञ करके उनकी शांति बहाल कर देंगे। इसलिए राजा अपनी खुशी वापस पाने के लिए चिंतित हैं और पशु यज्ञ की तैयारी कर रहे हैं। बड़ी संख्या में पशुओं को लाकर यज्ञ के खंभों पर बांध दिया गया है। क्या आप जैसे पवित्र पुरुषों का यह कर्तव्य नहीं है कि आप इन आवाजों का कारण बताएं और इन असंख्य पशुओं को मृत्यु के मुंह से बचाएं?” “युवक,” उन्होंने उत्तर दिया, “राजा हमें नहीं जानते, न ही हम राजा को जानते हैं, लेकिन हम इन चीखों का स्रोत जानते हैं, और यदि राजा आकर हमसे कारण पूछें, तो हम उनके संदेह दूर कर देंगे।” “तो,” युवक ने कहा, “कृज्यवर, कृपया एक क्षण यहीं रुकिए, मैं राजा को आपके पास ले आता हूँ।”

बोधिसत्व मान गए, और युवक राजा के पास गया और उन्हें सारी बात बताकर वापस ले आया। राजा ने बोधिसत्व को प्रणाम किया और एक तरफ बैठकर उनसे पूछा कि क्या यह सच है कि वे इन आवाज़ों का स्रोत जानते हैं। "जी महाराज," उन्होंने कहा। "तो मुझे बताइए, पूज्यवर।" “महाराज,” उसने उत्तर दिया, “ये पुरुष अपने पूर्व जन्म में बनारस के निकट अपने पड़ोसियों की सावधानीपूर्वक संरक्षित पत्नियों के साथ दुराचार के दोषी थे, और इसलिए चार लोहे के कड़ाहदानों में पुनर्जन्म हुए। जहाँ तीस हज़ार वर्षों तक उबलते हुए गाढ़े संक्षारक द्रव में यातना सहने के बाद, वे कभी कड़ाहे की तलहटी तक डूब जाते थे, और कभी झाग के बुलबुले की तरह ऊपर उठ आते थे (*3), लेकिन उन वर्षों के बाद उन्हें कड़ाहे का मुँह मिल गया, और किनारे से झाँकते हुए वे चारों चार पूर्ण श्लोक बोलना चाहते थे, लेकिन असफल रहे। और प्रत्येक केवल एक अक्षर बोलकर, वे फिर से लोहे के कड़ाहे में डूब गए। अब उनमें से जो “दु” अक्षर का उच्चारण करने के बाद डूब गया था, वह इस प्रकार बोलना चाहता था:-

हमने धन का उचित हिस्सा नहीं दिया; हमने एक दुष्ट जीवन व्यतीत किया।
जो सुख अब हमसे बिछड़ गए हैं, उनमें हमें कोई निश्चित मोक्ष (निर्वाण) नहीं मिला।
और जब वह इसे बोलने में असफल रहा, तो बोधिसत्व ने अपने ज्ञान से संपूर्ण श्लोक दोहराया। और इसी प्रकार बाकी लोगों के साथ भी हुआ। जिसने केवल "स" अक्षर का उच्चारण किया, वह निम्नलिखित श्लोक दोहराना चाहता था:-

दुख भोगने वालों का कितना दुखद भाग्य है! आह! मुक्ति कब आएगी?
असंख्य युगों के बाद भी, नरक की यातनाएँ कभी समाप्त नहीं होतीं।
और फिर से, जिसने "ना" अक्षर का उच्चारण किया, उसके मामले में, वह इस छंद को दोहराना चाहता था:-

भाग्य द्वारा निर्धारित हमारे लिए क्षुद्रता के कोई अनंत दुख नहीं हैं;
हमने पृथ्वी पर जो बुराइयां पैदा की हैं, उन्हें दूर करना हमारी ही जिम्मेदारी है।
और जिसने "सो" शब्द का उच्चारण किया, वह निम्नलिखित को दोहराने के लिए उत्सुक था:-

मैं शीघ्र ही यहाँ से प्रस्थान करके मनुष्य जन्म ग्रहण करूँगा।
और सद्गुणों से परिपूर्ण होकर वे अनेक सराहनीय कार्य करते हैं।
बोधिसत्व ने एक-एक करके इन श्लोकों का पाठ करने के बाद कहा, “हे महाराज, नरक में रहने वाला जब पूर्ण श्लोक बोलना चाहता था, तो अपने पाप की तीव्रता के कारण वह ऐसा करने में असमर्थ रहा। जब उसने अपने इस कुकर्म का फल भोगा, तो वह जोर से रोया। परन्तु भयभीत न हो; इस पुकार के कारण कोई खतरा तुम्हारे निकट नहीं आएगा।” इस प्रकार उन्होंने राजा को आश्वस्त किया। राजा ने अपने स्वर्ण ढोल की थाप से घोषणा की कि असंख्य पीड़ितों को मुक्त किया जाए और यज्ञकुंड को नष्ट किया जाए। बोधिसत्व ने इस प्रकार असंख्य पीड़ितों की सुरक्षा सुनिश्चित करने के बाद वहाँ कुछ दिनों तक निवास किया और फिर उसी स्थान पर लौटकर, अपनी समाधि (सम्मोहन) में बिना किसी व्यवधान के, ब्रह्मलोक (परमलोक) में जन्म लिया।

गुरु ने अपना पाठ समाप्त करते हुए जन्म का विवरण दिया: "उस समय सारिपुत्र युवा पुजारी थे, और मैं स्वयं तपस्वी था।"

पेटा कहानी#50: पेटावत्थु(भूत_कहानियां)50 भी देखें
फुटनोट:

(1) एक राजा सपने में खुद को लोहाकुंभी नरक में फेंका हुआ देखता है।

(2)संभवतः अशुभ संकेत को रोकने के लिए।

(3) मिलिंदपन्हा, 357 देखें।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **मानस-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-315-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 315
मांसा-जातक

"माँगने वाले के लिए," इत्यादि - यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, कि कैसे वरिष्ठ भिक्षु सारिपुत्र ने कुछ बीमार भिक्षुओं के लिए उत्तम भोजन की व्यवस्था की। कथा यह है कि जेतवन मठ में उस समय के कुछ भिक्षुओं ने तेल से पेट साफ करने के बाद उत्तम भोजन की इच्छा की। उनकी सेवा करने वाले भिक्षु उत्तम भोजन लाने के लिए श्रावस्ती नगर गए, लेकिन रसोइयों के क्वार्टर की एक गली में भिक्षा मांगने के बाद उन्हें मनचाहा भोजन नहीं मिला। बाद में उसी दिन वरिष्ठ भिक्षु भिक्षा मांगने नगर गए और इन भिक्षुओं से मिले। उन्होंने उनसे पूछा कि वे इतनी जल्दी क्यों लौट आए। भिक्षुओं ने उन्हें सारी बात बताई। वरिष्ठ भिक्षु ने कहा, "तो मेरे साथ आइए," और उन्हें उसी गली में ले गए। वहाँ के लोगों ने उन्हें भरपूर उत्तम भोजन दिया। सेवकों ने भोजन बीमार भिक्षुओं के पास पहुँचाया और उन्होंने उसे खाया। एक दिन सत्य के सभागार में चर्चा शुरू हुई कि जब कुछ सेवक अपने बीमार स्वामियों के लिए उत्तम भोजन का इंतजाम न कर पाने के कारण एक कस्बे से जा रहे थे, तो एक वरिष्ठ भिक्षु उन्हें अपने साथ रसोइयों के क्वार्टर की एक गली में भिक्षा मांगने के लिए ले गए और उन्हें भरपूर उत्तम भोजन देकर घर भेजा। गुरुजी वहाँ आए और उनकी चर्चा का विषय पूछा, और जब उन्हें बताया गया कि चर्चा किस बारे में है, तो उन्होंने कहा, "भाइयों, अब केवल सारिपुत्र को ही भोजन नहीं मिला। पहले भी मधुर वाणी वाले और मधुर बोलने वाले बुद्धिमान लोगों को भोजन मिलता था।" और फिर उन्होंने पुराने समय की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व का जन्म एक धनी व्यापारी के पुत्र के रूप में हुआ था।

एक दिन एक हिरण शिकारी ने हिरण का मांस पकड़ा और अपनी गाड़ी में मांस भरकर उसे बेचने के इरादे से शहर लौट आया। उसी समय बनारस में रहने वाले धनी व्यापारियों के चार बेटे शहर से तेज़ी से निकले और एक चौराहे पर मिलकर बैठ गए और जो कुछ उन्होंने देखा या सुना था, उस पर बातें करने लगे। मांस से भरी गाड़ी देखकर उनमें से एक युवक ने शिकारी से हिरण का मांस लेने का प्रस्ताव रखा। बाकी युवकों ने भी उसे कोशिश करने को कहा। तो वह शिकारी के पास गया और बोला, "हे श्रीमान, मुझे मांस का एक टुकड़ा दे दीजिए।" शिकारी ने उत्तर दिया, "जो व्यक्ति किसी से कुछ मांगता है, उसे विनम्र स्वर में बोलना चाहिए: तुम्हें तुम्हारे बोलने के तरीके के अनुसार मांस का टुकड़ा मिलेगा।" फिर उसने पहला श्लोक कहा:-

मेरे मित्र, जो आपसे मदद मांग रहा है, उसके लिए आपकी भाषा का लहजा काफी असभ्य है।
ऐसी भाषा के बदले में कठोर व्यवहार ही उचित है, इसलिए मैं तुम्हें केवल हड्डियाँ और चमड़ी ही भेंट करता हूँ।

फिर उसके एक साथी ने उससे पूछा कि उसने मांस का टुकड़ा माँगते समय किस भाषा का प्रयोग किया था। उसने उत्तर दिया, "मैंने कहा, 'हाय, महोदय!'" दूसरे ने कहा, "मैं भी उससे भीख माँगूँगा।" फिर वह शिकारी के पास गया और बोला, "हे बड़े भाई, मुझे हिरण का मांस दे दीजिए।" शिकारी ने उत्तर दिया, "तुम्हें तुम्हारे शब्दों के अनुरूप ही मांस का टुकड़ा मिलेगा," और उसने दूसरी पंक्ति दोहराई:-

भाई का नाम एक मजबूत कड़ी का पता लगाता है, जो एक दूसरे से मिलते-जुलते लोगों को जोड़ता है।
आपके मधुर शब्दों से मुझे जो उपहार देने का सुझाव मिला, वही उपहार मैं अपने भाई को भेंट करता हूँ।
और इन शब्दों के साथ उसने हिरण के मांस का एक टुकड़ा उठाया और उसे फेंक दिया। तब एक तीसरे युवक ने पूछा कि पहले वाले ने किन शब्दों में मांस माँगा था। उसने उत्तर दिया, "मैंने उसे भाई कहकर पुकारा था।" "तो मैं भी उससे माँगूँगा," उसने कहा। इसलिए वह शिकारी के पास गया और रोते हुए बोला, "प्रिय पिता, मुझे हिरण के मांस का एक टुकड़ा दे दीजिए।" शिकारी ने उत्तर दिया, "तुम्हें तुम्हारे कहे शब्दों के अनुरूप एक टुकड़ा मिलेगा," और उसने तीसरा छंद दोहराया:-

जब माता-पिता का स्नेही हृदय दया से भर जाता है, और "प्रिय पिता" की पुकार सुनाई देती है,
अतः मैं भी आपकी प्रेमपूर्ण अपील का उत्तर देता हूँ और आपको हिरण का हृदय अर्पित करता हूँ।
और इन शब्दों के साथ उसने मांस का एक स्वादिष्ट टुकड़ा उठाया और उसे दे दिया, जिसमें दिल भी शामिल था। फिर चौथे युवक ने तीसरे युवक से पूछा कि उसने हिरण का मांस किन शब्दों में माँगा था। "ओह, मैंने उसे 'प्रिय पिता' कहकर पुकारा था," उसने उत्तर दिया। "तो मैं भी एक टुकड़ा माँगूँगा," दूसरे ने कहा, और वह शिकारी के पास गया और बोला, "मेरे मित्र, मुझे मांस का एक टुकड़ा दे दो।" शिकारी ने कहा, "तुम्हारे कहे शब्दों के अनुसार ही तुम्हें मिलेगा।" और उसने चौथा श्लोक दोहराया:-

मेरे विचार से, बिना दोस्तों की दुनिया निश्चित रूप से एक वीरान जगह होगी।
मित्र की उपाधि में ही सब कुछ प्रिय निहित है, इसलिए मैं अपने सारे प्रियतम तुम्हें अर्पित करता हूँ।
फिर उसने कहा, "आओ मित्र, मैं यह सारा मांस से भरा बैलगाड़ी तुम्हारे घर पहुँचा दूँगा।" तो उस व्यापारी के बेटे ने बैलगाड़ी को अपने घर तक मँगवाया और जाकर मांस उतारा। उसने शिकारी का बड़े आदर और सत्कार से स्वागत किया और उसकी पत्नी और बेटे को बुलवाकर उसे उसके क्रूर काम से दूर ले गया और उसे अपनी जागीर में बसा दिया। वे दोनों घनिष्ठ मित्र बन गए और जीवन भर सौहार्दपूर्ण ढंग से साथ रहे।

गुरु ने अपना पाठ समाप्त करते हुए जन्म का विवरण दिया: "उस समय सारिपुत्र शिकारी थे, और मैं स्वयं व्यापारी का पुत्र था जिसे हिरण का सारा मांस दिया जाता था।"

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **शश-जातक**
***स्रोत**: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-316-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 316
ससा-जातक

"सात लाल मछलियाँ," इत्यादि - यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें बौद्ध धर्म की सभी आवश्यक वस्तुओं के दान का वर्णन है। कहते हैं कि श्रावस्ती नगर के एक जमींदार ने बुद्ध के नेतृत्व में भिक्षुओं के समूह के लिए सभी आवश्यक वस्तुएँ उपलब्ध कराईं। उन्होंने अपने घर के द्वार पर एक मंडप बनाकर सभी वरिष्ठ भिक्षुओं और उनके मुखिया बुद्ध को आमंत्रित किया, उनके लिए तैयार की गई सुंदर कुर्सियों पर उन्हें बैठाया और उन्हें विभिन्न प्रकार के उत्तम और स्वादिष्ट भोजन परोसे। "कल फिर आइएगा" कहकर उन्होंने एक सप्ताह तक उनका सत्कार किया और सातवें दिन बुद्ध और उनके अधीन पाँच सौ वरिष्ठ भिक्षुओं को सभी आवश्यक वस्तुएँ भेंट कीं। भोज के अंत में गुरु ने धन्यवाद देते हुए कहा, "हे शिष्य, इस दान से सद्भावना और संतुष्टि प्रदान करना तुम्हारा उचित कार्य है। क्योंकि यह प्राचीन काल के बुद्धिमानों की परंपरा है, जिन्होंने अपने प्राणों की आहुति दी और यहाँ तक कि अपना मांस भी उन्हें खाने को दिया।" और अपने मेज़बान के अनुरोध पर उन्होंने यह प्राचीन कथा सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व ने एक युवा खरगोश का रूप धारण किया और एक जंगल में रहने लगे। जंगल के एक ओर पर्वत की तलहटी थी, दूसरी ओर एक नदी और तीसरी ओर एक सीमावर्ती गाँव था। खरगोश के तीन मित्र थे - एक बंदर, एक सियार और एक ऊदबिलाव। ये चारों बुद्धिमान प्राणी एक साथ रहते थे और प्रत्येक अपने-अपने शिकार क्षेत्र से भोजन प्राप्त करते थे, और शाम को फिर से एक साथ इकट्ठा होते थे। खरगोश ने अपनी बुद्धिमत्ता से अपने तीनों साथियों को सत्य का उपदेश दिया, उन्हें सिखाया कि दान देना चाहिए, नैतिक नियमों का पालन करना चाहिए और पवित्र दिनों का पालन करना चाहिए। उन्होंने उनकी सलाह मान ली और जंगल के अपने-अपने हिस्से में जाकर रहने लगे।

समय बीतने के साथ, एक दिन बोधिसत्व ने आकाश का अवलोकन करते हुए और चंद्रमा को देखकर जाना कि कल उपवास का दिन है। उन्होंने अपने तीनों साथियों से कहा, "कल उपवास का दिन है। तुम तीनों नैतिक नियमों का पालन करो और इस पवित्र दिन का पालन करो। जो नैतिक आचरण में दृढ़ रहता है, उसे दान देने से बड़ा प्रतिफल मिलता है। इसलिए, जो भी भिखारी तुम्हारे पास आए, उसे अपने भोजन में से खिलाओ।" वे सहर्ष सहमत हो गए और अपने-अपने निवास स्थान पर रहने लगे।

अगले दिन सुबह तड़के ही ऊदबिलाव अपने शिकार की तलाश में तेज़ी से आगे बढ़ा और गंगा के किनारे चला गया। तभी एक मछुआरे ने सात लाल मछलियाँ पकड़ी थीं और उन्हें एक टहनी पर पिरोकर नदी के किनारे रेत में दबा दिया था। फिर वह और मछलियाँ पकड़ने के लिए नदी में उतर गया। दबी हुई मछलियों की गंध से ऊदबिलाव रेत खोदता हुआ उन तक पहुँचा और उन्हें निकालते हुए तीन बार ज़ोर से बोला, "क्या इन मछलियों का कोई मालिक है?" कोई मालिक न देखकर उसने टहनी को अपने दाँतों से पकड़ा और मछलियों को अपने घर के जंगल में रख दिया, उचित समय आने पर उन्हें खाने का इरादा रखते हुए। फिर वह लेट गया और सोचने लगा कि उसने कितना पुण्य किया है! सियार भी भोजन की तलाश में तेज़ी से आगे बढ़ा और एक खेत-चौकीदार की झोपड़ी में उसे मांस के दो भुने हुए टुकड़े, एक छिपकली और दूध-दही का एक बर्तन मिला। और तीन बार ज़ोर से चिल्लाने के बाद, "ये किसके हैं?" और जब उसे कोई मालिक नहीं मिला, तो उसने बर्तन उठाने वाली रस्सी को अपने गले में डाल लिया, और भुने हुए मांस के टुकड़ों और छिपकली को अपने दांतों से पकड़कर, उन्हें अपने मांद में ले आया और यह सोचते हुए रख दिया, "उचित समय आने पर मैं इन्हें खा जाऊंगा," और फिर लेट गया, यह सोचते हुए कि उसने कितना नेक काम किया है।

बंदर भी पेड़ों के झुंड में घुस गया और आमों का एक गुच्छा इकट्ठा करके उन्हें जंगल के अपने हिस्से में रख दिया, यह सोचकर कि उचित समय आने पर उन्हें खाएगा, और फिर लेट गया, यह सोचकर कि वह कितना पुण्यशील है। लेकिन बोधिसत्व उचित समय पर बाहर आए, कुश घास खाने के इरादे से, और जब वे जंगल में लेटे थे, तो उनके मन में यह विचार आया, "मेरे लिए किसी भी भिखारी को घास देना असंभव है जो संयोगवश प्रकट हो जाए, और मेरे पास तेल या चावल जैसी कोई वस्तु भी नहीं है। यदि कोई भिखारी मुझसे विनती करे, तो मुझे उसे अपना मांस खिलाना पड़ेगा।" पुण्य के इस शानदार प्रदर्शन को देखकर, सक्का (इंद्र) के सफेद संगमरमर के सिंहासन में गर्मी के लक्षण दिखाई देने लगे। सक्का (इंद्र) ने अंतर्दृष्टि से कारण का पता लगाया और इस शाही खरगोश की परीक्षा लेने का निश्चय किया। सबसे पहले वह ब्राह्मण का वेश धारण करके ऊदबिलाव के निवास स्थान के पास जाकर खड़ा हो गया, और जब उससे पूछा गया कि वह वहाँ क्यों खड़ा है, तो उसने उत्तर दिया, "हे ज्ञानी महोदय, यदि मुझे उपवास के बाद कुछ खाने को मिल जाए, तो मैं अपने सभी पुरोहितीय कर्तव्यों का पालन करूँगा।" ऊदबिलाव ने उत्तर दिया, "ठीक है, मैं तुम्हें कुछ भोजन दूँगा," और उससे बात करते हुए उसने पहला श्लोक दोहराया:-

मैं गंगा की बाढ़ से सात लाल मछलियों को सुरक्षित रूप से किनारे पर ले आया।
हे ब्राह्मण, मेरी विनती है कि आप भरपेट भोजन करें और इसी जंगल में रहें।
ब्राह्मण ने कहा, "कल तक रहने दो। मैं उचित समय पर देख लूंगा।" फिर वह सियार के पास गया, और जब सियार ने उससे पूछा कि वह वहाँ क्यों खड़ा है, तो उसने वही उत्तर दिया। सियार ने भी उसे भोजन देने का वादा किया, और उससे बात करते हुए दूसरी पंक्ति दोहराई:-

एक छिपकली और दही का एक जार, रखवाले का शाम का भोजन।
इसके अतिरिक्त मैंने दो भुने हुए मांस के टुकड़े भी अवैध रूप से चुरा लिए:
मेरे पास जो कुछ है, वही मैं तुम्हें देता हूँ: हे ब्राह्मण, कृपया ग्रहण करो।
यदि आप कृपा करके कुछ समय के लिए हमारे साथ इस जंगल में ठहरना चाहें।
ब्राह्मण ने कहा, "कल तक रहने दो। मैं उचित समय पर देख लूंगा।" फिर वह बंदर के पास गया, और जब उससे पूछा गया कि वह वहाँ क्यों खड़ा है, तो उसने पहले की तरह ही उत्तर दिया। बंदर ने सहर्ष उसे कुछ भोजन दिया, और उससे बातचीत करते हुए तीसरे श्लोक का उच्चारण किया:-

एक बर्फीली धारा, एक पका हुआ आम और हरे-भरे जंगल की सुखद छाया।
यदि आप वन के खुले मैदान में संतुष्ट होकर रह सकते हैं, तो इसका आनंद आप स्वयं ले सकते हैं।
ब्राह्मण ने कहा, "कल तक रहने दो। मैं उचित समय पर देख लूँगा।" और वह बुद्धिमान खरगोश के पास गया, और जब खरगोश ने उससे पूछा कि वह वहाँ क्यों खड़ा है, तो उसने वही उत्तर दिया। बोधिसत्व ने उसकी इच्छा सुनकर अत्यंत प्रसन्नता व्यक्त की और कहा, "ब्राह्मण, मेरे पास भोजन के लिए आकर तुमने अच्छा किया है। आज मैं तुम्हें एक ऐसा वरदान दूँगा जो मैंने पहले कभी नहीं दिया, लेकिन तुम पशु का वध करके नैतिक नियम का उल्लंघन नहीं करोगे। जाओ, मित्र, और जब तुम लकड़ियाँ इकट्ठा करके आग जला लो, तो आकर मुझे सूचित करना, और मैं लपटों के बीच गिरकर स्वयं को बलिदान कर दूँगा, और जब मेरा शरीर भुन जाएगा, तो तुम मेरा मांस खाकर अपने सभी पुरोहितीय कर्तव्यों को पूरा करोगे।" और इस प्रकार उनसे बात करते हुए खरगोश ने चौथा श्लोक कहा:-

मेरे पास न तो तिल हैं, न ही सेम हैं, न ही चावल हैं जो मैं भोजन के रूप में दे सकूँ।
लेकिन यदि तुम हमारे साथ रहना चाहते हो, तो मैं अपना शरीर आग में भूनने के लिए तैयार हूँ।
सक्का (इंद्र) ने उनकी बात सुनकर अपनी चमत्कारिक शक्ति से जलते हुए अंगारों का ढेर प्रकट किया और आकर बोधिसत्व को बताया। कुश घास के बिस्तर से उठकर वे वहाँ पहुँचे और तीन बार शरीर को झटककर अपने शरीर को इस तरह हिलाया कि यदि उनके वस्त्र में कोई कीड़े हों तो वे मृत्यु से बच जाएँ। फिर उन्होंने अपना पूरा शरीर निःस्वार्थ दान करते हुए उछल पड़े और कमलों के समूह पर उतरते हुए राजसी हंस की तरह आनंद की अवस्था में जलते हुए अंगारों के ढेर पर गिर पड़े। परन्तु लौ बोधिसत्व के शरीर के रोमछिद्रों को भी गर्म नहीं कर पाई, ऐसा लगा मानो वे हिमपात के क्षेत्र में प्रवेश कर गए हों। तब उन्होंने सक्का (इंद्र) से इन शब्दों में कहा, "ब्राह्मण, आपने जो अग्नि प्रज्वलित की है वह बर्फीली है: यह मेरे शरीर के रोमछिद्रों को भी गर्म नहीं कर पा रही है। इसका क्या अर्थ है?" "हे ज्ञानी," उसने उत्तर दिया, "मैं ब्राह्मण नहीं हूँ। मैं सक्का (इंद्र) हूँ, और मैं आपके सद्गुणों की परीक्षा लेने आया हूँ।" बोधिसत्व ने कहा, "यदि केवल आप ही नहीं, सक्का (इंद्र), बल्कि संसार के सभी निवासी मुझे दान देने के मामले में परखें, तो उन्हें मुझमें दान देने की अनिच्छा नहीं मिलेगी," और यह कहकर बोधिसत्व ने सिंह की दहाड़ जैसी प्रसन्नता का स्वर निकाला। तब सक्का (इंद्र) ने बोधिसत्व से कहा, "हे ज्ञानी खरगोश, जिसने अपने सद्गुणों का प्रचार-प्रसार किया है, वह विजय प्राप्त कर चुका है।" और पर्वत को निचोड़कर, उससे निकाले गए सार से, उन्होंने चंद्रमा के चेहरे पर खरगोश का चिन्ह बनाया। और उसी वन क्षेत्र में, युवा कुश घास के बिस्तर पर खरगोश को रखकर, सक्का (इंद्र) स्वर्ग में अपने स्थान पर लौट गए। और ये चारों बुद्धिमान प्राणी सुखपूर्वक और सद्भाव से एक साथ रहते थे, नैतिक नियमों का पालन करते थे और पवित्र दिनों का स्मरण करते थे, जब तक कि वे अपने कर्मों के अनुसार विदा नहीं हो गए।

गुरु ने अपना पाठ समाप्त करने के बाद सत्यों का प्रकटीकरण किया और जन्म का वर्णन किया: सत्यों के समापन पर, गृहस्थ, जिसने बौद्ध धर्म की सभी आवश्यक वस्तुएँ निःशुल्क दान कर दीं, ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की प्राप्ति की: "उस समय आनंद ऊदबिलाव थे, मोग्गल्याण सियार थे, सारिपुत्र बंदर थे, और मैं स्वयं बुद्धिमान खरगोश था।"

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **मातारोधन-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-317-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 317
मातारोदन-जातक

"जीवितों के लिए विलाप करो," इत्यादि-- जेतवन मठ में निवास करते समय गुरु ने श्रावस्ती शहर में रहने वाले एक जमींदार की यह कहानी सुनाई।

कहा जाता है कि अपने भाई की मृत्यु पर वह इतना गहरे शोक में डूब गया था कि उसने न तो भोजन किया, न स्नान किया और न ही अभिषेक किया, बल्कि गहरे शोक में वह भोर होते ही कब्रिस्तान जाकर रोने लगता था। गुरु ने सुबह सवेरे संसार पर दृष्टि डाली और उस व्यक्ति में प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की प्राप्ति की क्षमता देखकर सोचा, "मेरे सिवा कोई और नहीं है जो उसे बहुत पहले घटी घटना के बारे में बताकर उसके शोक को दूर कर सके और उसे प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की प्राप्ति करा सके। मुझे ही उसका आश्रय बनना चाहिए।" अतः अगले दिन दोपहर में भिक्षा मांगने के बाद लौटकर वह एक कनिष्ठ भिक्षु को अपने साथ लेकर उसके घर गया। गुरु के

आगमन की सूचना पाकर जमींदार ने एक आसन तैयार करवाया और उन्हें बैठने के लिए कहा। गुरु ने उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। गुरु ने उनसे शोक का कारण पूछा तो उन्होंने कहा कि वे अपने भाई की मृत्यु के बाद से ही दुखी हैं। गुरु ने कहा, "सभी सांसारिक अस्तित्व क्षणभंगुर हैं, और जो टूटना तय है वह टूट जाता है। इस बात को लेकर परेशान नहीं होना चाहिए। पुराने समय के बुद्धिमान लोग यह जानते हुए भी अपने भाई की मृत्यु पर शोक नहीं करते थे।" और उनके अनुरोध पर गुरु ने उन्हें अतीत की यह कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्याभिषेक था, तब बोधिसत्व का पुनर्जन्म एक धनी व्यापारी के परिवार में हुआ, जिसकी संपत्ति अस्सी करोड़ (10 मिलियन) थी। जब वे वयस्क हुए, तो उनके माता-पिता का देहांत हो गया। उनकी मृत्यु के बाद, बोधिसत्व के भाई ने पारिवारिक संपत्ति का प्रबंधन संभाला। बोधिसत्व उन पर आश्रित होकर जीवन व्यतीत करते थे। कुछ समय बाद, उनके भाई की भी एक घातक बीमारी से मृत्यु हो गई। उनके रिश्तेदार, मित्र और साथी एकत्रित हुए और हाथ जोड़कर रोने-धोने लगे, कोई भी अपने आंसुओं को वश में नहीं कर पा रहा था। परन्तु बोधिसत्व ने न तो शोक किया और न ही रोए। लोगों ने कहा, "देखो, यद्यपि उसका भाई मर गया है, तो भी वह जरा भी विचलित नहीं है: वह तो बहुत ही निर्दयी है। मुझे लगता है कि उसने अपने भाई की मृत्यु की कामना की थी, ताकि उसे दुगुना लाभ मिल सके।" इस प्रकार उन्होंने बोधिसत्व पर दोषारोपण किया। उनके परिवार ने भी उन्हें फटकारा और कहा, "यद्यपि तुम्हारा भाई मर गया है, तो भी तुम एक आंसू नहीं बहाते।" उनकी बातें सुनकर उन्होंने कहा: "अपने अज्ञानवश, अष्टम सांसारिक अवस्थाओं को न जानते हुए, तुम रोते-बिलखते हो, 'हाय! मेरा भाई मर गया,' लेकिन मुझे भी, और तुम्हें भी, मरना होगा। तो फिर तुम अपनी मृत्यु के विचार से क्यों नहीं रोते? सभी वस्तुएँ क्षणभंगुर हैं, और इसलिए कोई भी पदार्थ अपनी स्वाभाविक अवस्था में नहीं रह सकता। हे अज्ञानवश, तुम अंधों, अष्टम सांसारिक अवस्थाओं को न जानते हुए रोते-बिलखते हो, तो मैं क्यों रोऊँ?" और ऐसा कहकर उन्होंने ये श्लोक दोहराए:-

मृतकों के लिए शोक करने की बजाय जीवितों के लिए शोक करो!
  वे सभी प्राणी जो नश्वर रूप धारण करते हैं,
  चौपाया जानवर, पक्षी और फनदार सांप,
जी हां, इंसान और फरिश्ते सभी एक ही रास्ते पर चलते हैं।
भाग्य से निपटने में असमर्थ, मृत्यु से प्रसन्न,
  सुख और दुख के दुखद उतार-चढ़ाव के बीच,
  व्यर्थ आंसू बहाने पर मनुष्य को शिकायत क्यों करनी चाहिए?
और भाई के लिए शोक में डूबी आह भरी?
धोखाधड़ी और फिजूलखर्ची में माहिर पुरुष बूढ़े हो चुके हैं,
  अशिक्षित मूर्ख, यहाँ तक कि पराक्रमी वीर पुरुष भी,
  यदि कोई सांसारिक मामलों में तो बुद्धिमान हो लेकिन सही-गलत से अनभिज्ञ हो,
बुद्धिमत्ता स्वयं मूर्खता के समान हो सकती है।
इस प्रकार बोधिसत्व ने इन लोगों को सत्य का उपदेश दिया और उन सभी को उनके दुखों से मुक्ति दिलाई।

गुरु ने अपने धार्मिक (धार्मिक मार्ग के) प्रवचन को समाप्त करने के बाद सत्यों को प्रकट किया और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के समापन पर भूस्वामी ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की सिद्धि प्राप्त की: - "उस समय, धार्मिक प्रवचन (मार्ग के) द्वारा लोगों को उनके दुःखों से मुक्त करने वाला ज्ञानी व्यक्ति मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कणवेरा-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-318-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 318
कानावेरा-जातक

"वह आनंदमय समय था," इत्यादि। यह कहानी जेतवन मठ में गुरु द्वारा सुनाई गई थी, एक भिक्षु के बारे में जो अपनी परित्यक्त पत्नी के विचारों से प्रलोभित था। इस कहानी की पृष्ठभूमि इंद्रिय जन्म (*1) में विस्तार से बताई जाएगी। गुरु ने उस भिक्षु को संबोधित करते हुए कहा, "एक बार पहले, उसी के कारण तुम्हारा सिर काट दिया गया था।" और फिर उन्होंने अतीत की एक कथा सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज था, तब बोधिसत्व का जन्म काशी गाँव के एक गृहस्थ के घर में एक डाकू के नक्षत्र में हुआ था। जब वे बड़े हुए, तो उन्होंने लूटपाट करके अपना जीवन यापन करना शुरू किया और एक साहसी और हाथी के समान बलवान व्यक्ति के रूप में उनकी प्रसिद्धि दूर-दूर तक फैल गई। उन्हें कोई पकड़ नहीं सका। एक दिन उन्होंने एक धनी व्यापारी के घर में सेंध लगाई और बहुत सारा खजाना लूट लिया। नगरवासियों ने राजा के पास आकर कहा, "महाराज, एक शक्तिशाली डाकू नगर को लूट रहा है: उसे गिरफ्तार करवाइए।" राजा ने नगर के राज्यपाल को उसे पकड़ने का आदेश दिया। रात में राज्यपाल ने टुकड़ियों में जगह-जगह अपने सैनिक तैनात किए और जब उन्होंने उसे धन सहित पकड़ लिया, तो उन्होंने राजा को सूचना दी। राजा ने राज्यपाल को उसका सिर कलम करने का आदेश दिया। फिर राज्यपाल ने उसके हाथ पीछे की ओर कसकर बांध दिए, उसके गले में लाल कनवेरा के फूलों का हार बांध दिया और उसके सिर पर ईंटों का चूरा छिड़क दिया। फिर उसे चारों ओर कोड़ों से पीटा गया और कर्कश ढोल की थाप पर फांसी के स्थान पर ले जाया गया। लोगों ने कहा, "हमारे शहर को लूटने वाला यह लालची लुटेरा पकड़ा गया है," और पूरा शहर बहुत भावुक हो गया।

उस समय बनारस में समा नाम की एक शाही नर्तकी और वेश्या रहती थी, जिसकी कीमत एक हजार सिक्के थी। वह राजा की प्रिय थी और उसके साथ पाँच सौ दासियों का दल रहता था। महल की ऊपरी मंजिल पर एक खुली खिड़की पर खड़ी समा ने एक डाकू को आते हुए देखा। वह देखने में सुंदर और आकर्षक था, और सभी पुरुषों से लंबा, अत्यंत तेजस्वी और देवदूत जैसा दिखता था। उसे इस प्रकार आते देख समा को उससे प्रेम हो गया और उसने मन ही मन सोचा, "मैं इस पुरुष को अपना पति कैसे बना सकती हूँ?" समा ने कहा, "यही तरीका है," और अपनी एक दासी के द्वारा राज्यपाल को एक हजार सिक्के भिजवाए। उसने कहा, "उसे बताओ कि यह डाकू समा का भाई है, और समा के सिवा उसका कोई सहारा नहीं है। उससे कहो कि वह पैसे स्वीकार कर ले और अपने कैदी को छोड़ दे।" दासी ने वैसा ही किया जैसा उसे कहा गया था। लेकिन राज्यपाल ने कहा, "यह एक कुख्यात डाकू है, मैं इस तरह के अपराध के बाद इसे आज़ाद नहीं छोड़ सकता। लेकिन अगर मुझे इसके बदले कोई दूसरा आदमी मिल जाए, तो मैं इस डाकू को एक ढकी हुई गाड़ी में बिठाकर तुम्हारे पास भेज सकता हूँ।" दासी ने आकर यह बात अपनी मालकिन को बताई।

उस समय एक धनी युवक समा पर मोहित हो गया और उसे प्रतिदिन एक हजार सिक्के भेंट करता था। उसी दिन सूर्यास्त के समय उसका प्रेमी हमेशा की तरह उसके घर सिक्के लेकर आया। समा ने सिक्के लेकर अपनी गोद में रख लिए और रोने लगी। जब उससे उसके दुःख का कारण पूछा गया, तो उसने कहा, "मेरे स्वामी, यह डाकू मेरा भाई है, हालाँकि वह मुझसे मिलने कभी नहीं आया, क्योंकि लोग कहते हैं कि मैं कोई बुरा धंधा करती हूँ। जब मैंने राज्यपाल को संदेश भेजा, तो उसने कहा कि यदि उसे एक हजार सिक्के मिल जाएँ, तो वह अपने कैदी को रिहा कर देगा। अब मुझे कोई ऐसा नहीं मिल रहा जो जाकर ये सिक्के राज्यपाल तक पहुँचा सके।" युवक ने समा के प्रेम में कहा, "मैं जाता हूँ।" समा ने कहा, "तो जाओ, और जो सिक्के तुम मेरे लिए लाए हो, उन्हें भी साथ ले जाओ।" इसलिए वह सिक्के लेकर राज्यपाल के घर चला गया।

राज्यपाल ने युवक व्यापारी को एक गुप्त स्थान पर छिपा दिया और डाकू को एक तंग गाड़ी में समा ले जाने का आदेश दिया। फिर उसने सोचा, "यह डाकू तो पूरे इलाके में जाना-पहचाना है। पहले तो पूरी तरह अंधेरा होना चाहिए। और फिर, जब सब लोग सोने चले जाएँगे, तो मैं इसे फाँसी दे दूँगा।" इसलिए कुछ समय के लिए फाँसी को टालने का बहाना बनाकर, जब लोग सोने चले गए, तो उसने युवक व्यापारी को भारी सुरक्षा दल के साथ फाँसी के स्थान पर भेजा, और तलवार से उसका सिर काटकर उसके शरीर को भाले पर टांग दिया, और वापस शहर लौट आया।

उसके बाद समा ने किसी और पुरुष से कुछ भी स्वीकार नहीं किया, बल्कि अपना सारा समय इसी डाकू के साथ सुख भोगने में बिताया। डाकू के मन में यह विचार आया: "अगर यह स्त्री किसी और से प्रेम कर बैठी, तो वह मुझे भी मरवा देगी और उसके साथ सुख भोगेगी। यह अपने मित्रों के प्रति बहुत विश्वासघाती है। मुझे अब यहाँ नहीं रहना चाहिए, बल्कि जल्दी से भाग जाना चाहिए।" जाते समय उसने सोचा, "मैं खाली हाथ नहीं जाऊँगा, बल्कि इसके कुछ गहने ले जाऊँगा।" इसलिए एक दिन उसने उससे कहा, "मेरी प्रिय, हम हमेशा पिंजरे में बंद पालतू तोतों की तरह घर के अंदर ही रहेंगे। किसी दिन हम बगीचे में खूब मस्ती करेंगे।" वह तुरंत मान गई और उसने हर तरह का खाना, सख्त और नरम, तैयार किया, अपने सारे गहने पहने और उसे एक बंद गाड़ी में बिठाकर बगीचे की ओर चल पड़ी। जब वह उसके साथ मस्ती कर रहा था, तब उसने सोचा, "अब मेरे भागने का समय आ गया है।" इसलिए, उसके प्रति अत्यधिक स्नेह का दिखावा करते हुए, वह कनवेरा की घनी झाड़ियों में घुस गया और उसे गले लगाने का नाटक करते हुए, उसे तब तक दबाया जब तक

वह बेहोश नहीं हो गई। फिर उसे नीचे फेंककर उसने उसके सारे गहने छीन लिए और उन्हें उसके बाहरी वस्त्र में बांधकर, उस गठरी को अपने कंधे पर रखा और बगीचे की दीवार फांदकर भाग गया।

जब उसे होश आया, तो वह उठकर अपने सेवकों के पास गई और उनसे पूछा कि उसके प्रेमी का क्या हुआ। "हमें नहीं पता, महोदया।" उसने कहा, "उसे लगता है कि मैं मर गई हूँ और शायद डर के मारे भाग गया होगा।" यह सोचकर वह बहुत दुखी हुई और वहाँ से अपने घर लौट आई। उसने कहा, "जब तक मैं अपने प्रिय प्रेमी को देख नहीं लेती, तब तक मैं आराम नहीं करूँगी।" और वह ज़मीन पर लेट गई। उस दिन से उसने न तो सुंदर वस्त्र पहने, न एक से अधिक बार भोजन किया, न ही इत्र, फूलों की माला आदि का प्रयोग किया। अपने प्रेमी को हर संभव तरीके से ढूंढने और वापस लाने का निश्चय करके उसने कुछ अभिनेताओं को बुलवाया और उन्हें एक हज़ार सिक्के दिए। जब उन्होंने पूछा, "इसके बदले हमें क्या करना चाहिए, महोदया?" उसने कहा, "ऐसी कोई जगह नहीं है जहाँ तुम न जाओ। इसलिए हर गाँव, कस्बे और शहर में जाओ, और अपने चारों ओर भीड़ इकट्ठा करके, सबसे पहले लोगों के बीच यह गीत गाओ," - अभिनेताओं को पहला छंद सिखाते हुए, "और अगर," उसने कहा, "जब तुम यह गीत गाओगे, तो मेरा पति भीड़ में से एक हो, तो वह तुमसे बात करेगा। तब तुम उसे बता देना कि मैं बिल्कुल ठीक हूँ, और उसे अपने साथ वापस ले आना। और अगर वह आने से इनकार कर दे, तो मुझे संदेश भेज देना।"

और उन्हें यात्रा का खर्च देकर उसने उन्हें विदा कर दिया। वे बनारस से चले और जगह-जगह लोगों को इकट्ठा करते हुए अंत में एक सीमावर्ती गाँव पहुँचे। अब डाकू, भागने के बाद से यहीं रह रहा था। और अभिनेताओं ने अपने चारों ओर भीड़ इकट्ठा की और पहला छंद गाया:-

यह वसंत ऋतु का आनंदमय समय था।
   प्रत्येक झाड़ी और पेड़ फूलों से लदे हुए हैं।
उसकी बेहोशी से जागने पर
   समा जीवित है, और आपके लिए जीवित है।
यह सुनकर लुटेरा अभिनेता के पास आया और बोला, "तुम कहते हो कि समा जीवित है, लेकिन मुझे इस पर विश्वास नहीं है।" और उसे संबोधित करते हुए उसने दूसरी पंक्ति दोहराई:

क्या तेज हवाएं पहाड़ों को हिला सकती हैं?
क्या वे स्थिर पृथ्वी को भी हिला सकते हैं?
लेकिन मृतकों को जीवित देखना
इससे भी कहीं अधिक अद्भुत और अजीब होगा!
ये शब्द सुनकर अभिनेता ने तीसरा छंद बोला:

समा निश्चित रूप से मरी नहीं है।
और न ही कोई दूसरा स्वामी विवाह करेगा।
एक भोजन को छोड़कर बाकी सभी भोजन से परहेज करना,
वह तुमसे प्यार करती है और सिर्फ तुमसे ही।
यह सुनकर लुटेरे ने कहा, "चाहे वह जीवित हो या मृत, मुझे उसकी कोई ज़रूरत नहीं है," और इन शब्दों के साथ उसने चौथे छंद को दोहराया:

समा की कल्पना हमेशा भटकती रहती है
दृढ़ विश्वास से लेकर हल्के-फुल्के प्रेम तक:
मैं भी समा को धोखा दे दूंगा।
अगर मैं भाग न जाता।
अभिनेताओं ने आकर समा को बताया कि उसने उनके साथ कैसा व्यवहार किया था। और वह, पछतावे से भरी हुई, एक बार फिर अपने पुराने जीवन पथ पर लौट आई।

जब गुरु ने अपना उपदेश समाप्त किया, तो उन्होंने सत्य प्रकट किए और जन्म का वर्णन किया: सत्यों के समापन पर सांसारिक मन वाले भिक्षु ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की सिद्धि प्राप्त की: "उस समय यह भिक्षु धनी व्यापारी का पुत्र था, उसकी परित्यक्त पत्नी समा थी, और मैं स्वयं डाकू था।"

फुटनोट:

(1)सं. 423.

जातक क्रमांक 319
तित्तिरा-जातक

"सुखद जीवन," इत्यादि - यह कथा गुरु ने कोसंबी के निकट बदरिका मठ में रहते हुए वरिष्ठ भिक्षु राहुल के बारे में सुनाई थी। प्रारंभिक कथा का पूर्ण वर्णन तिपल्लत्था जन्म में पहले ही हो चुका है। (*1) जब सत्य के हॉल में भिक्षु पूज्य राहुल की प्रशंसा कर रहे थे और उन्हें शिक्षा के शौकीन, ईमानदार और फटकार सहने वाले बता रहे थे, तब गुरु वहाँ आए और उनकी बातों का विषय सुनकर बोले, "न केवल अब, बल्कि पहले भी राहुल में ये सभी गुण थे।" फिर उन्होंने उन्हें अतीत की एक कथा सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व का जन्म एक ब्राह्मण परिवार में हुआ। बड़े होकर उन्होंने तक्षशिला में समस्त विद्याओं का अध्ययन किया और संसार का त्याग करके हिमालयी क्षेत्र में तपस्वी जीवन व्यतीत किया तथा समस्त ज्ञान और सिद्धियों का विकास किया। वहाँ वे समाधि की अवस्था में आनंद भोगते हुए एक रमणीय उपवन में निवास करते थे, जहाँ से वे नमक और सिरका लेने के लिए एक सीमावर्ती गाँव गए। उन्हें देखकर गाँव के लोग उनके अनुयायी बन गए और उन्होंने जंगल में उनके लिए पत्तों की एक कुटिया बनाई तथा उन्हें बौद्ध धर्म की सभी आवश्यक वस्तुएँ प्रदान करके वहाँ उनका निवास स्थान बनाया।

उस समय इस गाँव के एक शिकारी ने एक तीतर पकड़ा और उसे पिंजरे में रखकर बड़े ध्यान से प्रशिक्षित किया और उसकी देखभाल की। फिर वह उसे जंगल में ले गया और उसकी आवाज़ से आस-पास आने वाले सभी तीतरों को आकर्षित किया। तीतर ने सोचा, "मेरे कारण मेरे परिवार के कई लोग मर जाते हैं। यह मेरा एक बुरा काम है।" इसलिए वह चुप रहा। जब उसके मालिक ने देखा कि वह चुप है, तो उसने बाँस के एक टुकड़े से उसके सिर पर प्रहार किया। दर्द से तीतर चीख उठा। और शिकारी ने उसके द्वारा अन्य तीतरों को आकर्षित करके अपनी जीविका चलाई। तब तीतर ने सोचा, "अच्छा, मान लो वे मर जाते हैं। मेरी ओर से कोई बुरी मंशा नहीं है। क्या मेरे कर्मों के बुरे परिणाम मुझ पर असर डालते हैं? जब मैं चुप रहता हूँ, तो वे नहीं आते, लेकिन जब मैं चीखता हूँ, तो वे आते हैं। और जो भी आते हैं, यह आदमी उन्हें पकड़कर मार डालता है। क्या इसमें मेरी ओर से कोई पाप है, या नहीं?" तब से तीतर पक्षी के मन में बस एक ही विचार रह गया, "सचमुच मेरे संदेह का समाधान कौन कर सकता है?" और वह ऐसे ही किसी ज्ञानी व्यक्ति की तलाश में निकल पड़ा। एक दिन शिकारी ने बहुत सारे तीतर पकड़े और अपनी टोकरी भरकर बोधिसत्व के आश्रम में पानी मांगने आया। बोधिसत्व के पास पिंजरा रखकर उसने थोड़ा पानी पिया और रेत पर लेटकर सो गया। बोधिसत्व को सोते देख तीतर पक्षी ने सोचा, "मैं इस तपस्वी से अपने संदेह का उत्तर पूछूंगा, और यदि वह जानता है तो मेरी समस्या का समाधान कर देगा।" और पिंजरे में लेटे-लेटे उसने पहले श्लोक को प्रश्न के रूप में दोहराया:

मैं दिन भर सुखमय जीवन जीता हूँ।
   मुझे भरपूर भोजन प्राप्त होता है:
फिर भी मैं एक खतरनाक स्थिति में हूँ।
   मेरी भविष्य की स्थिति क्या होगी?
इस प्रश्न का हल निकालते हुए बोधिसत्व ने दूसरा श्लोक कहा:

यदि आपके हृदय में कोई बुराई नहीं है
   दुष्टतापूर्ण कृत्यों के लिए उकसाने वाले कारक,
यदि आप निष्क्रिय भूमिका निभाते हैं,
   दोष आप पर नहीं लगता।

यह सुनकर तीतर पक्षी ने तीसरा छंद बोला:

"देखो! हमारा रिश्तेदार": वे इस प्रकार पुकारते हैं,
  और लोग बड़ी संख्या में उन्हें देखने के लिए उमड़ पड़ते हैं।
क्या मैं दोषी हूँ, क्या उन्हें मर जाना चाहिए?
  कृपया मेरी इस शंका का समाधान करें।
यह सुनकर बोधिसत्व ने चौथा श्लोक दोहराया:

यदि हृदय में कोई पाप न छिपा हो,
  यह कृत्य निर्दोष साबित होगा।
जो निष्क्रिय भूमिका निभाता है
  सभी दोषों से मुक्त माना जाता है।
इस प्रकार उस महान सत्ता ने तीतर को सांत्वना दी। और उनके द्वारा पक्षी पश्चाताप से मुक्त हो गया। तब शिकारी जागकर बोधिसत्व को प्रणाम किया और अपना पिंजरा उठाकर चला गया।

गुरु ने अपना पाठ समाप्त करते हुए जन्म का वर्णन किया: "उस समय राहुल तीतर पक्षी थे, और मैं स्वयं तपस्वी था।"

फुटनोट:

(1) संख्या 16

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सुक्कजा-जातक**
***स्रोत**: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

जातक क्रमांक 320
सुच्चजा-जातक

"वह शायद दे दे," इत्यादि—यह कथा गुरुजी ने जेतवन मठ में निवास करते समय एक जमींदार के बारे में सुनाई थी। कथा के अनुसार, वह अपनी पत्नी के साथ एक गाँव में कर्ज लेने गया और बकाया राशि के बदले एक गाड़ी जब्त करके उसे एक परिवार के पास यह सोचकर रख दिया कि बाद में उसे वापस ले लेगा। श्रावस्ती नगरी जाते समय उन्हें एक पर्वत दिखाई दिया। पत्नी ने उससे पूछा, "मान लो यह पर्वत पूरा सोना बन जाए, तो क्या तुम मुझे थोड़ा सा सोना दोगे?" उसने उत्तर दिया, "तुम कौन हो? मैं तुम्हें एक कण भी नहीं दूँगा।" "हाय!" वह रो पड़ी, "यह तो बड़े निर्दयी हैं। चाहे पर्वत शुद्ध सोना बन जाए, फिर भी वे मुझे एक कण भी नहीं देंगे।" और वह बहुत क्रोधित हुई।

जब वे जेतवन मठ के पास पहुँचे, तो प्यास लगने पर वे मठ में गए और पानी पिया। भोर होते ही गुरु ने उनमें मोक्ष (निर्वाण) प्राप्त करने की क्षमता देखकर, अपने सुगंधित कक्ष की एक कोठरी में बैठकर उनके आने की प्रतीक्षा की और बुद्धत्व की छह रंगों वाली किरणें बिखेरीं। प्यास बुझाने के बाद वे गुरु के पास आए और आदरपूर्वक उन्हें प्रणाम करके बैठ गए। गुरु ने सामान्य सौहार्दपूर्ण अभिवादन के बाद उनसे पूछा कि वे कहाँ से आए हैं। "हम आदरणीय महोदय, ऋणी हैं।" "बहनोई, मुझे आशा है कि आपके पति आपकी भलाई के लिए चिंतित होंगे और आप पर कृपा करने के लिए तत्पर होंगे।" "आदरणीय महोदय," उन्होंने उत्तर दिया, "मैं उनसे बहुत स्नेह करती हूँ, लेकिन वे मुझसे प्रेम नहीं करते। आज जब मैंने एक पर्वत को देखकर उनसे पूछा, "मान लीजिए कि यह सब शुद्ध सोना है, तो क्या आप मुझे थोड़ा सा देंगे?" तो उन्होंने उत्तर दिया, "तुम कौन हो? मैं तुम्हें एक कण भी नहीं दूँगा।" वे कितने कठोर हृदय के हैं।" "श्रीमती बहन," गुरु ने कहा, "वह इस तरह बातें करता है। लेकिन जब भी उसे आपके गुणों की याद आती है, वह आपको सर्वोपरि बनाने के लिए तैयार हो जाता है।" "हमें इसके बारे में बताइए, महाराज," उन्होंने विनती की, और उनके अनुरोध पर उन्होंने अतीत की यह कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, तब बोधिसत्व उनके मंत्री थे और उनकी सभी सेवाएँ करते थे। एक दिन राजा ने अपने पुत्र को, जो उनके प्रतिनिधि के रूप में कार्य कर रहे थे, उनसे मिलने आते देखा। राजा ने मन ही मन सोचा, "अगर इसे

मौका मिला तो यह मेरा कुछ बिगाड़ सकता है।" इसलिए उन्होंने उसे बुलवाया और कहा, "जब तक मैं जीवित हूँ, तुम इस शहर में नहीं रह सकते। कहीं और रहो, और मेरी मृत्यु के बाद राज्य का शासन संभालो।" बोधिसत्व इन शर्तों पर सहमत हो गए और अपने पिता को विदाई देकर अपनी पत्नी के साथ बनारस से चल पड़े। एक सीमावर्ती गाँव में पहुँचकर उन्होंने जंगल में पत्तों की एक झोपड़ी बनाई और वहीं जंगली जड़ों और फलों को खाकर अपना जीवन यापन करने लगे। कुछ समय बाद राजा की मृत्यु हो गई। युवा प्रतिनिधि ने नक्षत्रों के अवलोकन से अपने पिता की मृत्यु का पता लगा लिया और जब वे बनारस की यात्रा पर निकले, तो उन्हें एक पर्वत दिखाई दिया। उनकी पत्नी ने उनसे कहा, "मान लीजिए, महाराज, वह पर्वत शुद्ध सोने का बना हो, तो क्या आप मुझे उसमें से कुछ देंगे?" "तुम कौन हो?" वह चिल्लाया, "मैं तुम्हें एक कण भी नहीं दूँगा।" उसने सोचा, "उसके प्रति प्रेम के कारण ही मैं इस जंगल में आई हूँ, उसे छोड़ने का मन नहीं करता, और वह मुझसे इस तरह बात करता है। वह बहुत कठोर हृदय का है, और यदि वह राजा बन गया, तो मेरा क्या भला करेगा?" और उसका मन पीड़ा से भर गया।

बनारस पहुँचकर उन्होंने सिंहासन संभाला और रानी को प्रधान रानी का पद दिया। उन्होंने रानी को केवल उपाधि दी, इसके अलावा उन्होंने रानी का कोई आदर-सम्मान नहीं किया और यहाँ तक कि उनके अस्तित्व को भी मान्यता नहीं दी। बोधिसत्व ने सोचा, "यह रानी राजा की संगिनी थी, जिसने कष्टों की परवाह किए बिना उनके साथ वन में निवास किया। परन्तु राजा इसकी परवाह न करते हुए अन्य स्त्रियों के साथ भोग-विलास करता है। परन्तु मैं ऐसा करूँगा कि वह समस्त पर आधिपत्य प्राप्त करे।" और इसी विचार के साथ वे एक दिन गए और रानी को प्रणाम करते हुए बोले, "देवी, हमें आपसे चावल का एक टुकड़ा भी नहीं मिलता। आप इतनी कठोर हृदय क्यों हैं और हमारी उपेक्षा क्यों करती हैं?" "मित्र," उसने उत्तर दिया, "यदि मुझे स्वयं कुछ प्राप्त हो, तो मैं तुम्हें दे दूँगी, परन्तु यदि मुझे कुछ न मिले, तो मैं क्या दूँगी? मैं पूछती हूँ, राजा मुझे क्या देने की संभावना रखते हैं? यहाँ आते समय, जब मुझसे पूछा गया, "यदि यह पर्वत पूर्णतः शुद्ध सोने का होता, तो क्या तुम मुझे कुछ देती?" तो उन्होंने उत्तर दिया, "तुम कौन हो? मैं तुम्हें कुछ नहीं दूँगा।" "अच्छा, क्या तुम यह सब राजा के सामने दोहरा सकती हो?" उन्होंने कहा। "क्यों न दोहराऊँ, मित्र?" उसने उत्तर दिया। "तो जब मैं राजा के समक्ष खड़ा होऊँगा," उन्होंने कहा, "मैं पूछूँगा और तुम इसे दोहरा देना।" "ठीक है, मित्र," उसने कहा। अतः बोधिसत्व ने राजा को प्रणाम करते हुए रानी से पूछा, "क्या हमें, हे देवी, आपके हाथों से कुछ प्राप्त नहीं होगा?" "महोदय," उसने उत्तर दिया, "जब मुझे कुछ मिलेगा, तो मैं आपको कुछ दूँगी। परन्तु मैं पूछती हूँ, अब राजा मुझे क्या देने की संभावना रखते हैं?" जब हम जंगल से आ रहे थे और एक पहाड़ दिखाई दिया, तो मैंने उससे पूछा, "अगर पहाड़ पूरी तरह से शुद्ध सोना होता, तो क्या तुम मुझे उसमें से कुछ देते?" "तुम कौन हो?" उसने कहा, "मैं तुम्हें कुछ नहीं दूंगा।" और इन शब्दों में उसने उस चीज़ को ठुकरा दिया जिसे देना आसान था।" इसे समझाने के लिए, उसने पहला छंद दोहराया:

वह कम कीमत पर दान दे सकता है।
अगर वह किसी चीज को खो देता, तो उसे उसकी कमी महसूस नहीं होती।
मैं स्वर्णिम पर्वत देता हूँ;
मैं उससे जो भी पूछता हूँ, वह हर बार "नहीं" कहता है।
यह सुनकर राजा ने दूसरा श्लोक कहा:

जब भी संभव हो, "हां, मैं करूंगा" कहिए।
जब आप ऐसा नहीं कर सकते, तो कुछ भी वादा न करें।
टूटे हुए वादे झूठ होते हैं;
सभी बुद्धिमान लोग झूठ बोलने वालों से घृणा करते हैं।
यह सुनकर रानी ने आदरपूर्वक हाथ जोड़कर अभिवादन किया और तीसरे श्लोक को दोहराया:

धार्मिकता में दृढ़ रहते हुए,
हे राजकुमार, हम आपको विनम्रतापूर्वक आशीर्वाद देते हैं।
भाग्य ही सब कुछ नष्ट कर सकता है;
सत्य ही अब भी आपका एकमात्र आनंद है।
रानी द्वारा राजा की प्रशंसा में गाए गए गीतों को सुनकर बोधिसत्व ने उनके गुणों का स्मरण किया और चौथे श्लोक को दोहराया।

एक असाधारण पत्नी के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त करने वाली,
जीवन के सुख-दुखों को साझा करना,
वह दोनों ही नियतियों के लिए समान रूप से उत्तरदायी है।
यहां तक कि राजाओं के साथ भी संभोग करने में सक्षम।

इन शब्दों में बोधिसत्व ने रानी की प्रशंसा करते हुए कहा, "महाराज, विपत्ति के समय में यह देवी आपके साथ वन में रहीं और आपके दुखों में भागीदार बनीं। आपको उनका सम्मान करना चाहिए।" राजा ने उनकी बात सुनकर रानी के गुणों को याद किया और कहा, "हे ज्ञानी महाराज, आपके शब्दों से मुझे रानी के गुण याद आ गए," और ऐसा कहकर उन्होंने सारी शक्ति रानी को सौंप दी। इसके अलावा उन्होंने बोधिसत्व को भी अपार शक्ति प्रदान की। उन्होंने कहा, "आपके कारण ही मुझे रानी के गुणों की याद आई।"

गुरु ने अपना पाठ समाप्त करते हुए सत्य प्रकट किए और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के समापन पर, पति-पत्नी ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की सिद्धि प्राप्त की: "उस समय यह जमींदार बनारस का राजा था, यह गृहस्थ बहन रानी थी, और मैं स्वयं बुद्धिमान सलाहकार था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कुटिदुसाका-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-321-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 321
कुटिदुसका-जातक

“बंदर, पैरों में,” इत्यादि—यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी। यह कहानी एक युवा शिष्य के बारे में है जिसने वरिष्ठ भिक्षु महाकश्यप की पत्तों की कुटिया जला दी थी। इस कहानी की उत्पत्ति राजगृह नगर में हुई थी। कहते हैं कि उस समय वरिष्ठ भिक्षु राजगृह नगर के पास जंगल में एक कुटिया में रहते थे। दो युवा शिष्य उनकी सेवा करते थे। उनमें से एक वरिष्ठ भिक्षु का सेवाभावी था, जबकि दूसरा बदतमीज़ था। उसका साथी जो भी काम करता, वह उसे ऐसे दिखाता जैसे उसने खुद किया हो। उदाहरण के लिए, जब दूसरे लड़के ने कुल्ला करने के लिए पानी रखा, तो वह वरिष्ठ भिक्षु के पास जाकर उन्हें प्रणाम करते हुए कहता, “महोदय, पानी तैयार है। कृपया कुल्ला कर लीजिए।” और जब उसका साथी सुबह जल्दी उठकर वरिष्ठ भिक्षु की कुटिया साफ कर देता, तो जैसे ही वरिष्ठ भिक्षु प्रकट होते, वह इधर-उधर चीजें बिखेर देता और ऐसा दिखाता जैसे पूरी कुटिया उसने खुद साफ की हो।

उस आज्ञाकारी शिष्य ने सोचा, "यह बदमाश तो मेरे हर काम का श्रेय खुद को ही दे देता है। मैं उसकी इस धूर्तता का पर्दाफाश करूँगा।" इसलिए जब वह बदमाश लड़का गाँव से लौटकर खाना खाने के बाद सो रहा था, तो उसने नहाने के लिए पानी गर्म किया और उसे एक पिछले कमरे में छिपा दिया, और फिर बॉयलर में बस थोड़ा सा पानी डाला। दूसरा लड़का जागने पर गया और भाप को ऊपर उठते देखा और सोचा, "ज़रूर हमारे दोस्त ने पानी गर्म करके स्नानघर में डाल दिया है।" तो वह बड़े भिक्षु के पास गया और बोला, "महोदय, पानी स्नानघर में है। कृपया स्नान कर लीजिए।" बड़े भिक्षु उसके साथ स्नान करने गए, और स्नानघर में पानी न पाकर पूछा कि पानी कहाँ है। लड़का जल्दी से गर्म करने वाले कमरे में गया और खाली बॉयलर में एक करछुल डाल दी। करछुल खाली बर्तन के तल से टकराई और एक खड़खड़ाहट की आवाज़ आई। (तब से उस लड़के को "रैटल-लैडल" के नाम से जाना जाने लगा।) इसी समय दूसरा लड़का पीछे वाले कमरे से पानी लेकर आया और बोला, "महोदय, कृपया स्नान कीजिए।" बड़े भिक्षु ने स्नान किया और रैटल-लैडल के दुराचार से अवगत होने पर, जब वह लड़का शाम को उनकी सेवा करने आया, तो उन्होंने उसे फटकारा और कहा, "जब कोई व्यक्ति जो धार्मिक (तपस्वी) व्रत धारण किए हुए है, कोई कार्य स्वयं करता है, तभी उसे यह कहने का अधिकार है, 'मैंने यह किया।' अन्यथा यह जानबूझकर बोला गया झूठ है। अब से इस प्रकार का आचरण न करना।"

वह लड़का बड़े भिक्षु से नाराज़ था, और अगले दिन उसने उनके साथ शहर में भिक्षा मांगने जाने से इनकार कर दिया। लेकिन दूसरा युवक बड़े भिक्षु के साथ चला गया। और रैटल-लैडल बड़े भिक्षु के संरक्षकों के परिवार से मिलने गया। जब उन्होंने पूछा कि बड़े भिक्षु कहाँ हैं, तो उन्होंने उत्तर दिया कि वे बीमार होकर घर पर ही हैं। उन्होंने पूछा कि उन्हें क्या चाहिए। उन्होंने कहा, "मुझे यह दे दो," और उसे लेकर अपनी मनपसंद जगह पर गए, वहाँ भोजन किया और आश्रम लौट आए। अगले दिन बड़े भिक्षु उस परिवार से मिलने गए और उनके साथ बैठ गए। लोगों ने कहा, "आप ठीक नहीं हैं, है ना? कल, लोग कहते हैं, आप घर पर अपनी कुटिया में ही रहे। हमने फलाँ लड़के के हाथों आपके लिए कुछ भोजन भेजा था। क्या आपने उसे खाया?" बड़े भिक्षु चुप रहे, और भोजन समाप्त करने के बाद मठ लौट आए।

शाम को जब लड़का उनकी सेवा करने आया, तो बड़े भिक्षु ने उससे कहा, "हे महोदय, आप फलां परिवार और फलां गांव में भीख मांगने गए थे। आपने यह कहकर भीख मांगी, "बड़े भिक्षु को फलां भोजन चाहिए।" और फिर, लोग कहते हैं, आपने वह स्वयं खा लिया। इस तरह भीख मांगना अत्यंत अनुचित है। ध्यान रखें कि आप फिर कभी ऐसा दुराचार न करें।"

इसलिए वह लड़का लंबे समय तक उस बड़े भिक्षु के प्रति द्वेष रखता रहा, यह सोचते हुए कि, "कल तो उसने थोड़े से पानी के लिए मुझसे झगड़ा किया। और अब अपने संरक्षक के घर में मुट्ठी भर चावल खाने पर नाराज़ होकर मुझसे फिर झगड़ा कर रहा है। मैं उससे निपटने का सही तरीका ज़रूर ढूँढूँगा।" और अगले दिन, जब वह बड़ा भिक्षु भिक्षा मांगने शहर गया, तो उसने एक हथौड़ा उठाया और भोजन के सभी बर्तन तोड़ दिए, और पत्तों की झोपड़ी में आग लगाकर भाग गया। जीवित रहते हुए ही वह मनुष्यों के संसार में प्रेत बन गया, और धीरे-धीरे क्षीण होता चला गया, जब तक कि उसकी मृत्यु नहीं हो गई और उसका पुनर्जन्म अविची के महान नरक में हुआ। और उसके इस बुरे कर्म की प्रसिद्धि लोगों में फैल गई।

एक दिन कुछ भिक्षु राजग्रह नगर से श्रावस्ती नगर आए और सभा कक्ष में अपने पान-पात्र और वस्त्र रखकर गुरु को प्रणाम करके बैठ गए। गुरु ने उनसे स्नेहपूर्वक बातचीत की और पूछा कि वे कहाँ से आए हैं। "राजग्रह नगर से, महोदय।" "वहाँ उपदेश देने वाले गुरु कौन हैं?" उन्होंने कहा। "महान कश्यप, महोदय।" "क्या कश्यप ठीक हैं, भिक्षुओं?" उन्होंने पूछा। "जी, आदरणीय, वरिष्ठ भिक्षु ठीक हैं। लेकिन भिक्षुओं के एक शिष्य को उनकी फटकार से इतना क्रोध आया कि उसने वरिष्ठ भिक्षु की पत्तों की कुटिया में आग लगा दी और भाग गया।" यह सुनकर गुरु ने कहा, "भाइयों, कश्यप के लिए इस मूर्ख की संगति से एकांत बेहतर है।" और ऐसा कहकर उन्होंने धम्मपद का एक श्लोक दोहराया।

अशिष्ट और निकम्मे लोगों के साथ यात्रा करना,
   और मूर्ख लोगों की संगति से दूर रहो;
अपने समकक्ष या बेहतर साथी का चयन करें
   या फिर एकांत में ही अपना रास्ता खोजो।
इसके बाद उन्होंने फिर भाइयों को संबोधित करते हुए कहा, "भाइयों, केवल आज ही इस युवक ने झोपड़ी नहीं तोड़ी और डांटने वाले पर क्रोधित नहीं हुआ। पहले भी वह क्रोधित होता था।" फिर उन्होंने उन्हें अतीत की एक कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्य था, तब बोधिसत्व एक छोटे सिंहला पक्षी के रूप में प्रकट हुए। जब वे बड़े हुए, तो वे हिमालय में बस गए और अपनी पसंद का एक घोंसला बनाया, जो बारिश से सुरक्षित था। फिर बरसात के मौसम में, जब लगातार बारिश हो रही थी, एक बंदर बोधिसत्व के पास बैठा था, ठंड के कारण उसके दांत किटकिटा रहे थे। बोधिसत्व ने उसे इस प्रकार दुखी देखकर उससे बात करना शुरू किया और पहला श्लोक कहा:

बंदर, पैरों, हाथों और चेहरे में
   तो जैसे मानव रूप,
तुम रहने के लिए कोई जगह क्यों नहीं बना रहे हो?
   क्या तुम्हें तूफान से बचाने के लिए?
यह सुनकर बंदर ने दूसरी पंक्ति में उत्तर दिया:

पैरों, हाथों और चेहरे में, हे पक्षी,
   हालांकि सहयोगी व्यक्ति के करीब,
उन्हें प्राप्त सबसे बड़ा वरदान ज्ञान था।
   मुझे इससे वंचित रखा गया है।
यह सुनकर बोधिसत्व ने दो और दोहे दोहराए:

जो अविश्वसनीय है वह धोखा देता है, एक कमजोर और निर्धन मन वाला व्यक्ति।
अपने सभी व्यवहारों में अस्थिरता साबित होने पर, उसे सुख नहीं मिल सकता।
हे बंदर, उत्कृष्टता प्राप्त करने के गुण में, अपना पूरा परिश्रम करो।
और सर्द हवाओं से सुरक्षित रहने के लिए, जाओ, पत्तों की झोपड़ी बनाओ।

बंदर ने सोचा, "यह प्राणी, जो बारिश से सुरक्षित स्थान पर रहता है, मुझसे घृणा करता है। मैं इसे इस घोंसले में चैन से नहीं बैठने दूँगा।" बोधिसत्व को पकड़ने की उत्सुकता में उसने उन पर झपट्टा मारा। लेकिन बोधिसत्व हवा में उड़ गए और कहीं और चले गए। और बंदर ने अपना घोंसला तोड़कर नष्ट कर दिया और वहाँ से चला गया।

गुरु ने अपना पाठ समाप्त करते हुए जन्म की पहचान बताई: "उस समय झोपड़ी में आग लगाने वाला युवक बंदर था, और मैं स्वयं सिंगिला पक्षी था।"

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **दद्दभा-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-322-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 322
दद्दभा-जातक

“जिस स्थान से,” इत्यादि—यह कथा गुरुजी ने जेतवन मठ में रहते हुए कुछ दुराचारी अनुयायियों के बारे में सुनाई थी। कहते हैं कि ये दुराचारी अनुयायी जेतवन मठ के आस-पास विभिन्न स्थानों पर कांटों पर बिस्तर लगाते थे, पांचों प्रकार की अग्नि तपस्या करते थे और अनेक प्रकार की झूठी तपस्या करते थे। अब श्रावस्ती नगर में भिक्षा मांगने के बाद जेतवन मठ लौटते समय कुछ भिक्षुओं ने इन दुराचारी अनुयायियों को दिखावटी तपस्या करते देखा और गुरुजी से पूछा, “हे गुरुजी, क्या इन विभिन्न संप्रदायों के भिक्षुओं द्वारा इन प्रथाओं को अपनाने में कोई गुण है?” गुरुजी ने कहा, “हे भिक्षुओं, इसमें न तो कोई गुण है और न ही कोई विशेष पुण्य। जब इसकी जांच-परख की जाती है, तो यह गोबर के ढेर पर चलने के समान है, या खरगोश द्वारा सुनी गई आवाज के समान है।” “हे गुरुजी, हमें नहीं पता कि वह आवाज क्या थी। हे परम पूज्य, हमें बताइए।” इसलिए उनके अनुरोध पर उन्होंने उन्हें एक प्राचीन लोककथा सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, तब बोधिसत्व ने एक युवा शेर के रूप में जन्म लिया। बड़े होकर वे एक जंगल में रहने लगे। उस समय पश्चिमी सागर के पास खजूर और विल्व के पेड़ों का एक छोटा सा जंगल था। एक खरगोश विल्व के पेड़ की तलहटी में, खजूर के एक छोटे से पौधे के नीचे रहता था। एक दिन भोजन करने के बाद वह खरगोश उस युवा खजूर के पेड़ के नीचे लेट गया। तभी उसके मन में यह विचार आया, "यदि यह पृथ्वी नष्ट हो जाए, तो मेरा क्या होगा?" ठीक उसी क्षण एक पका हुआ विल्व का फल खजूर के पत्ते पर गिरा। उसकी आवाज सुनकर खरगोश ने सोचा, "यह ठोस पृथ्वी ढह रही है," और वह बिना पीछे देखे ही डर के मारे भाग गया। एक दूसरे खरगोश ने उसे डर के मारे भागते हुए देखा और उससे भागने का कारण पूछा। उसने कहा, "कृपया मुझसे मत पूछिए।" दूसरे खरगोश ने चिल्लाकर कहा, "श्रीमान, क्या बात है?" और उसके पीछे दौड़ता रहा। फिर खरगोश एक पल के लिए रुका और पीछे मुड़े बिना बोला, "यहाँ धरती फट रही है।" यह सुनकर दूसरा खरगोश उसके पीछे दौड़ पड़ा। इस तरह पहले एक और फिर दूसरा खरगोश उसे दौड़ते हुए देखकर उसका पीछा करने लगा, और अंत में एक लाख खरगोश एक साथ भागने लगे। उन्हें एक हिरण, एक जंगली सूअर, एक बारहसिंगा, एक भैंस, एक जंगली बैल, एक गैंडा, एक बाघ, एक शेर और एक हाथी ने देखा। जब उन्होंने पूछा कि इसका क्या मतलब है और उन्हें बताया गया कि धरती फट रही है, तो वे भी भागने लगे। धीरे-धीरे जानवरों का यह समूह बढ़कर एक लीग (4.23 किमी) की लंबाई तक फैल गया।

जब बोधिसत्व ने जानवरों को इस तरह बेतहाशा भागते देखा और सुना कि वे पृथ्वी के अंत की आशंका से भाग रहे हैं, तो उन्होंने सोचा, "पृथ्वी कहीं भी समाप्त नहीं हो रही है। ज़रूर कोई ऐसी आवाज़ होगी जिसे उन्होंने गलत समझा होगा। और अगर मैंने कोई बड़ा प्रयास नहीं किया, तो वे सब मर जाएँगे। मैं उनकी जान बचाऊँगा।" इसलिए वे शेर की गति से उनके आगे एक पहाड़ की तलहटी तक पहुँचे और शेर की तरह तीन बार दहाड़े। शेर को देखकर वे बुरी तरह डर गए और भागना बंद करके एक साथ huddled होकर खड़े हो गए। शेर उनके बीच गया और पूछा कि वे क्यों भाग रहे हैं।

उन्होंने उत्तर दिया, "पृथ्वी ढह रही है।"

उन्होंने कहा, "इसे ढहते हुए किसने देखा?"

उन्होंने जवाब दिया, "हाथियों को इसके बारे में सब पता है।"

उसने हाथियों से पूछा। "हमें नहीं पता," उन्होंने कहा, "शेर जानते हैं।" लेकिन शेरों ने कहा, "हमें नहीं पता, बाघ जानते हैं।" बाघों ने कहा, "गैंडे जानते हैं।" गैंडों ने कहा, "जंगली बैल जानते हैं।" जंगली बैलों ने कहा, "भैंसें।" भैंसों ने कहा, "हिरण।" हिरणों ने कहा, "सूअर।" सूअरों ने कहा, "हिरण।" हिरणों ने कहा, "हमें नहीं पता, खरगोश जानते हैं।" जब खरगोशों से पूछा गया, तो उन्होंने एक खास खरगोश की ओर इशारा करते हुए कहा, "इसने हमें बताया।"

तब बोधिसत्व ने पूछा, "क्या यह सच है, महाराज, कि पृथ्वी फट रही है?" "जी महाराज, मैंने देखा है," खरगोश ने कहा।

उसने पूछा, "जब आपने इसे देखा, तब आप कहाँ रह रहे थे?"

"महासागर के निकट, खजूर और विल्वा के पेड़ों से भरे एक झुरमुट में। मैं विल्वा के पेड़ की तलहटी में खजूर के छोटे पौधे की छाया में लेटा हुआ था, तभी मैंने सोचा, 'यदि यह पृथ्वी फट जाए, तो मैं कहाँ जाऊँगा?' और ठीक उसी क्षण मैंने पृथ्वी के फटने की आवाज सुनी और मैं भाग गया।"

शेर ने सोचा, "पका हुआ विल्वा फल ज़रूर किसी ताड़ के पत्ते पर गिरा होगा और 'धड़' की आवाज़ हुई होगी, और इस खरगोश ने यह सोचकर कि पृथ्वी का अंत होने वाला है, भाग गया होगा। मैं इसकी सच्चाई का पता लगाऊंगा।" उसने जानवरों के झुंड को आश्वस्त करते हुए कहा, "मैं खरगोश को लेकर जाता हूं और उसके बताए स्थान पर जाकर पता लगाता हूं कि पृथ्वी का अंत हो रहा है या नहीं। मेरे लौटने तक तुम यहीं रहो।" फिर खरगोश को अपनी पीठ पर लादकर वह शेर की गति से आगे बढ़ा और उसे ताड़ के झुरमुट में उतारते हुए बोला, "आओ, हमें वह स्थान दिखाओ जिसकी तुम बात कर रहे थे।"

"मैं ऐसा करने की हिम्मत नहीं कर सकता, महाराज," खरगोश ने कहा।

"आओ, डरो मत," शेर ने कहा।

खरगोश विल्वा वृक्ष के पास जाने का साहस न करते हुए, दूर खड़ा रहा और चिल्लाया, "हे प्रभु, उधर ही भयानक ध्वनि का स्थान है," और ऐसा कहते हुए उसने पहली पंक्ति दोहराई:

जिस स्थान पर मैं रहता था
    एक भयानक "धड़ाम" के साथ जारी किया गया;
वह क्या था, मैं नहीं बता सकता।
    और न ही इसके कारण का पता चल पाया।

खरगोश की बात सुनकर शेर विल्वा वृक्ष के नीचे गया और उसने वह स्थान देखा जहाँ खरगोश ताड़ के पेड़ की छाया में लेटा हुआ था, और ताड़ के पत्ते पर गिरे हुए पके विल्वा फल को भी देखा। उसने ध्यानपूर्वक यह सुनिश्चित कर लिया कि मिट्टी नहीं फटी है, फिर उसने खरगोश को अपनी पीठ पर उठाया और शेर की गति से शीघ्र ही पशुओं के झुंड के पास वापस आ गया।

फिर उन्होंने उन्हें पूरी कहानी सुनाई और कहा, "डरो मत।" इस प्रकार पशुओं के झुंड को आश्वस्त करके उन्होंने उन्हें जाने दिया। सचमुच, यदि उस समय बोधिसत्व न होते, तो सभी पशु समुद्र में गिरकर मर जाते। बोधिसत्व की कृपा से ही वे मृत्यु से बच गए।

गिरे हुए फलों की आवाज सुनकर घबरा गया
    एक बार एक खरगोश भाग गया,
बाकी सभी जानवरों ने भी उनका अनुसरण किया।
    उस खरगोश की निराशा देखकर मैं द्रवित हो गया।

वे दृश्य को न देखने के लिए तेजी से आगे बढ़े।
    लेकिन उन्होंने ध्यान से सुना।
बेकार की गपशप के लिए, और साफ थे
    मूर्खतापूर्ण भय से पागल।
जो लोग ज्ञान की शांत प्रसन्नता का अनुभव करते हैं
    और सद्गुण की ऊँचाइयों को प्राप्त करते हैं,

हालांकि बुरे उदाहरण से चेतावनी मिलनी चाहिए,
इस तरह की घबराहट, भय और इनकार।
ये तीनों श्लोक पूर्ण ज्ञान से प्रेरित हैं।

गुरु ने अपना पाठ समाप्त करते हुए जन्म का वर्णन किया: "उस समय मैं स्वयं शेर था।"

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **ब्रह्मदत्त-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-323-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 323
ब्रह्मदत्त-जातक

"यही गुण है," इत्यादि-- यह कहानी गुरु ने अलवी के पास अग्गलावा मंदिर में रहते हुए, कोठरियों के निर्माण में पालन किए जाने वाले नियमों के बारे में सुनाई थी। (*1)

मणिकांत जन्म (*2) में प्रारंभिक कथा पहले ही बताई जा चुकी है, लेकिन इस अवसर पर गुरु ने कहा, "क्या यह सच है, भिक्षुओं, कि तुम यहाँ भीख माँगने और गिड़गिड़ाने की अपनी ज़िद के कारण रहते हो?" और जब उन्होंने उत्तर दिया "हाँ," तो उन्होंने उन्हें फटकारा और कहा, "पुराने समय के बुद्धिमान पुरुषों को जब राजा ने अपनी पसंद चुनने का अवसर दिया, तो यद्यपि वे एक जोड़ी सिंगल सोल वाले जूते माँगने के लिए तरस रहे थे, लेकिन अपनी संवेदनशील और संशयपूर्ण प्रकृति के प्रति दुर्भावना के भय से, उन्होंने लोगों के सामने एक शब्द भी कहने का साहस नहीं किया, बल्कि एकांत में बात की।" और ऐसा कहकर उन्होंने उन्हें एक प्राचीन कथा सुनाई।

बहुत समय पहले, कम्पिलक राज्य में, जब उत्तरी पंचाल नगर में एक पंचाल राजा शासन कर रहे थे, तब एक ब्राह्मण परिवार में बोधिसत्व का जन्म हुआ। उनका जन्म एक बाजार नगर में हुआ था। बड़े होकर उन्होंने तक्षशिला में कलाओं का ज्ञान प्राप्त किया। बाद में उन्होंने संन्यासी बनने का मार्ग अपनाया और हिमालयी क्षेत्र में रहकर, जो कुछ भी उन्हें प्राप्त होता, उसी से अपना जीवन व्यतीत किया - वे जंगली फलों और जड़ों को खाकर अपना पेट भरते थे।

नमक और सिरका प्राप्त करने के उद्देश्य से लोगों के घरों में भटकते हुए, वह उत्तर पांचाल के एक नगर में पहुँचा और राजा के उद्यान में रहने लगा। अगले दिन वह भिक्षा मांगने के लिए नगर में गया और राजा के द्वार पर पहुँचा। राजा उसके व्यवहार से इतना प्रसन्न हुआ कि उसने उसे ऊंचे आसन पर बैठाया और राजा के योग्य भोजन कराया। उसने उससे एक वचनबद्धता करवाई और उसे उद्यान में रहने का स्थान दिया।

वह राजा के महल में ही रहता था, और बरसात के मौसम के अंत में, हिमालय लौटने की तीव्र इच्छा से उसने सोचा, "यदि मैं इस यात्रा पर जाऊँ, तो मुझे एक जोड़ी एकल-तलवे वाले जूते (*3) और पत्तों की छतरी अवश्य चाहिए। मैं राजा से ये माँगूँगा।" एक दिन वह बगीचे में आया, और राजा को वहाँ बैठे देखकर उसने उन्हें प्रणाम किया और जूते और छतरी माँगने का निश्चय किया। परन्तु उसके मन में दूसरा विचार आया, "जो व्यक्ति किसी दूसरे से यह कहते हुए भीख माँगता है, 'मुझे फलाँ चीज़ दे दो,' वह अवश्य रोएगा। और जब दूसरा व्यक्ति यह कहते हुए मना करता है, 'मेरे पास नहीं है,' तो वह भी रोएगा।" और ताकि लोग उसे या राजा को रोते हुए न देख सकें, उसने सोचा, "हम दोनों किसी गुप्त स्थान पर चुपचाप रो लेंगे।" अतः उसने कहा, "महाराज, मैं आपसे एकांत में बात करना चाहता हूँ।" यह सुनकर राज सेवक वहाँ से चले गए। बोधिसत्व ने सोचा, "यदि राजा मेरी प्रार्थना अस्वीकार कर दें, तो हमारी मित्रता समाप्त हो जाएगी। इसलिए मैं उनसे कोई वरदान नहीं माँगूँगा।" उस दिन, इस विषय पर बात करने का साहस न करते हुए, उन्होंने कहा, "अब जाइए, महाराज, मैं इस मामले को उचित समय पर देख लूँगा।" एक और दिन जब राजा उद्यान में आए, तो पहले यह और फिर वह कहते हुए, वे अपना अनुरोध स्पष्ट नहीं कर सके। और इस प्रकार बारह वर्ष बीत गए।

तब राजा ने सोचा, “इस पुजारी ने कहा था, ‘मैं एकांत में बात करना चाहता हूँ,’ और जब दरबारी चले गए, तो बोलने का साहस नहीं हुआ। और ऐसा करने की उनकी तीव्र इच्छा के कारण बारह वर्ष बीत गए। इतने लंबे समय तक धार्मिक (सन्यासी) जीवन जीने के बाद, मुझे लगता है, वे संसार के लिए तरस रहे हैं। वे सुखों का आनंद लेने के लिए उत्सुक हैं और शासन करने की शक्ति की लालसा रखते हैं। लेकिन ‘राज्य’ शब्द का उच्चारण करने में असमर्थ होने के कारण वे चुप रहते हैं। आज मैं उन्हें अपने राज्य से लेकर नीचे तक जो कुछ भी वे चाहते हैं, वह सब अर्पित करूँगा।” अतः वह उद्यान में गए और बैठकर उन्हें प्रणाम किया। बोधिसत्व ने उनसे एकांत में बात करने का अनुरोध किया, और जब दरबारी चले गए, तो वे एक शब्द भी नहीं बोल सके। राजा ने कहा, “बारह वर्षों से आप मुझसे एकांत में बात करने का अनुरोध करते रहे हैं, और जब भी आपको अवसर मिला, आप एक शब्द भी नहीं बोल पाए। मैं आपको अपने राज्य से लेकर सब कुछ अर्पित करता हूँ। भयभीत न हों, जो कुछ भी आप चाहें, माँग लें।”

“महाराज,” उसने कहा, “क्या आप मुझे वह देंगे जो मैं चाहता हूँ?”

"जी हां, पूज्यवर, मैं करूंगा।"

"महाराज, जब मैं अपनी यात्रा पर जाऊं, तो मुझे एक जोड़ी सिंगल सोल वाले जूते और पत्तों की छतरी अवश्य चाहिए।"

"क्या आप बारह वर्षों में इतनी तुच्छ चीज़ भी नहीं माँग पाए हैं, महोदय?"

"जी हां, महाराज।"

"महाराज, आपने ऐसा क्यों किया?"

"महाराज, जो कहता है 'मुझे फलां वस्तु दे दो', वह आंसू बहाता है, और जो मना करता है और कहता है 'मेरे पास यह नहीं है', वह भी रोता है। यदि मेरी विनती पर आपने मुझे मना कर दिया होता, तो मुझे डर था कि लोग हमें आंसू बहाते हुए देख लेंगे। इसीलिए मैंने गुप्त मुलाकात का अनुरोध किया था।" फिर उन्होंने शुरू से ही तीन छंद दोहराए:

हे राजा, प्रार्थना का यही गुण है।
यह या तो एक कीमती उपहार होगा या अस्वीकृति का कारण बनेगा।
जो पांचाल स्वामी से रोने की विनती करते हैं, वे ऐसा करने के लिए विवश हैं।
जो इनकार करते हैं, उन्हें दोबारा रोना पड़ सकता है।
अन्यथा लोग हमें व्यर्थ में आंसू बहाते हुए देखेंगे।
मैं अपनी प्रार्थना तुम्हारे कान में फुसफुसाता हूँ।
बोधिसत्व द्वारा दिखाए गए इस आदर भाव से प्रसन्न होकर राजा ने उन्हें वरदान दिया और चौथा श्लोक बोला:

ब्राह्मण, मैं आपको एक हजार गायें भेंट करता हूँ।
लाल रंग की गायें, मेहनती और झुंड की मुखिया;
आपके इन उदार शब्दों को अभी सुनकर,
मैं भी उदारतापूर्ण कार्य करने के लिए प्रेरित हुआ हूँ।
लेकिन बोधिसत्व ने कहा, "हे प्रभु, मुझे भौतिक सुखों की इच्छा नहीं है। मुझे वही दीजिए जो मैं मांगता हूँ।" और उन्होंने एक जोड़ी एकल-तलवे वाले जूते और पत्तों की छतरी ली, और राजा को धर्म के मार्ग पर दृढ़ रहने, नैतिक नियमों का पालन करने और उपवास रखने के लिए प्रोत्साहित किया। यद्यपि राजा ने उनसे रुकने की विनती की, फिर भी वे हिमालय चले गए, जहाँ उन्होंने सभी क्षमताओं और उपलब्धियों को विकसित किया, और ब्रह्मलोक (देवदूतों का लोक) में जन्म लेने के लिए नियत हुए।

गुरु ने अपना पाठ समाप्त करते हुए जन्म का वर्णन किया: "उस समय आनंद राजा थे और मैं स्वयं तपस्वी था।"

फुटनोट:

(1)सुत्तविभंग vi. 1 देखें।

(2) संख्या 253,

(3)महावग्ग, खंड 1. 28 देखें। भाइयों को एक से अधिक अस्तर वाले जूते नहीं पहनने थे, सिवाय इसके कि जब उन्हें दूसरों ने उतार दिया हो।

***स्रोत** : एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-324-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 324
चम्मसतका-जातक

“दयालु पशु,” इत्यादि—यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, एक ऐसे भिक्षु के बारे में जो चमड़े की जैकेट पहनता था। (*1) कहा जाता है कि उसका ऊपरी और भीतरी दोनों वस्त्र चमड़े के थे। एक दिन वह मठ से तेज़ी से निकलकर श्रावस्ती नगर में भिक्षा मांगने के लिए चक्कर लगा रहा था, तभी वह भेड़ों के युद्धक्षेत्र में पहुँच गया। एक भेड़ ने उसे देखकर पीछे हटकर उसे टक्कर मारने की इच्छा जताई। भिक्षु ने सोचा, “वह मेरे प्रति सम्मान का भाव दिखा रहा है,” और वह पीछे नहीं हटा। भेड़ तेज़ी से दौड़ा और उसकी जांघ पर प्रहार करके उसे ज़मीन पर गिरा दिया। भिक्षुओं के संघ में इस काल्पनिक अभिवादन की घटना खूब चर्चित हुई। उन्होंने सत्य सभा में इस विषय पर चर्चा की कि कैसे चमड़े की जैकेट पहने भिक्षु ने सोचा कि उसे अभिवादन किया जा रहा है और इसी कारण उसकी मृत्यु हो गई। गुरुजी आए और उन्होंने उनकी चर्चा का विषय पूछा, और जब उन्हें बताया गया कि क्या हो रहा था, तो उन्होंने कहा, "भाइयों, केवल अभी ही नहीं, बल्कि पुराने समय में भी इस तपस्वी ने सोचा कि उसे प्रणाम किया जा रहा है और इसी कारण उसकी मृत्यु हुई," और फिर उन्होंने उन्हें एक प्राचीन कथा सुनाई।

एक समय की बात है, बोधिसत्व एक व्यापारी परिवार में पैदा हुए और अपना व्यापार करते थे। उसी समय चमड़े का वस्त्र पहने एक धर्मनिष्ठ भिक्षु भिक्षा मांगने के लिए चक्कर लगाते हुए भेड़ों के युद्धक्षेत्र में आए और एक भेड़ को अपने सामने पीछे हटते देखकर उन्होंने सोचा कि भेड़ ने ऐसा सम्मान के प्रतीक के रूप में किया है, और वे स्वयं पीछे नहीं हटे। उन्होंने सोचा, "संपूर्ण संसार में, केवल यही भेड़ मेरे गुणों को पहचानती है," और आदरपूर्वक हाथ जोड़कर अभिवादन करते हुए वे खड़े हो गए और पहली पंक्ति दोहराई:

दयालु जानवर उसके सामने सम्मान का भाव प्रकट करता है।
पवित्र परंपराओं में पारंगत उच्च जाति का ब्राह्मण।
आप एक अच्छे ईमानदार प्राणी हैं।
मैं कसम खाता हूँ, मैं सभी अन्य जानवरों से अधिक प्रसिद्ध हूँ!
इसी क्षण अपने भंडार में बैठे एक बुद्धिमान व्यापारी ने भिक्षु को रोकने के लिए दूसरी पंक्ति का उच्चारण किया:

ब्राह्मण, इस जानवर पर इतना जल्दी भरोसा मत करो।
अन्यथा वह तुम्हें धूल में मिलाने में जरा भी देर नहीं करेगा।
इसके लिए रैम पीछे हट जाती है।
अपने हमले को गति देने के लिए।
जब यह बुद्धिमान व्यापारी अभी बोल ही रहा था कि मेढ़ा पूरी गति से आया और भिक्षु की जांघ पर प्रहार करके उसे गिरा दिया। वह दर्द से पागल हो गया और कराहते हुए पड़ा रहा, तब गुरु ने घटना को समझाने के लिए तीसरे श्लोक का उच्चारण किया:

टूटी टांग और भिक्षापात्र उलट जाने के साथ,
अपनी क्षतिग्रस्त संपत्ति पर उन्हें गहरा अफसोस होगा।
उसे व्यर्थ में बाहें फैलाकर रोने न दो।
पुजारी की हत्या होने से पहले बचाव के लिए तुरंत पहुंचें।
फिर भिक्षु ने चौथा श्लोक दोहराया:

इस प्रकार अयोग्य लोगों को वह सारा सम्मान चुकाना पड़ता है।

मुझे भी वही नियति मिले जो आज मुझे मिली है;
धूल में लोटते हुए, राम के प्रहार से नीचे गिर पड़ा
मेरी मृत्यु का कारण मेरा मूर्खतापूर्ण विश्वास था।
इस प्रकार शोक मनाते हुए ही उनकी मृत्यु हो गई।

अपने पाठ के अंत में गुरु ने जन्म की पहचान इस प्रकार बताई: "आज चमड़े का कोट पहने हुए व्यक्ति तब भी वही था जो अब है। और मैं स्वयं वह बुद्धिमान व्यापारी था।"

फुटनोट:

(1)महावग्ग, viii. 28. 2.

स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-325-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 325
गोधा-जातक(*1)

“एक धोखेबाज़,” इत्यादि—यह कहानी गुरुजी ने जेतवन मठ में रहते हुए एक धोखेबाज़ भिक्षु के बारे में सुनाई थी। प्रारंभिक कहानी पहले ही पूरी तरह से बताई जा चुकी है। लेकिन इस बार वे उस भिक्षु को गुरुजी के पास लाए और उसका पर्दाफ़ाश करते हुए कहा, “हे पूज्यवर, यह भिक्षु धोखेबाज़ है।” गुरुजी ने कहा, “यह केवल अभी ही नहीं, बल्कि पहले भी धोखेबाज़ था।” और फिर उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्य था, तब बोधिसत्व का जन्म एक छोटे छिपकली के रूप में हुआ। जब वे बड़े होकर बलवान और सुखी हुए, तो वे एक जंगल में रहने लगे। तभी एक दुष्ट तपस्वी ने पत्तों की एक कुटिया बनाई और उनके पास ही रहने लगा। बोधिसत्व भोजन की तलाश में भटकते हुए उस कुटिया को देखकर मन ही मन सोचने लगे,

"यह झोपड़ी अवश्य ही किसी पवित्र तपस्वी की होगी," और वह वहाँ गया और उस पवित्र व्यक्ति को प्रणाम करने के बाद अपने निवास स्थान पर लौट आया।

एक दिन इस झूठे तपस्वी ने अपने एक संरक्षक के घर में बना स्वादिष्ट भोजन खाया और पूछा कि यह कौन सा मांस है। यह सुनकर कि यह छिपकली का मांस है, वह अपने लज़ीज़ भोजन के प्रति इतना ललचा गया कि उसने सोचा, "मैं इस छिपकली को मार डालूँगा जो लगातार मेरे आश्रम में आती रहती है और इसे अपने स्वादानुसार पकाकर खाऊँगा।" इसलिए उसने घी, दही, मसाले और इसी तरह की अन्य वस्तुएँ लीं और अपनी गदा को अपने पीले वस्त्र के नीचे छिपाकर अपनी कुटिया के द्वार पर एकदम शांत होकर बैठ गया, बोधिसत्व के आने की प्रतीक्षा करने लगा।

जब बोधिसत्व ने इस दुष्ट को देखा, तो उन्होंने सोचा, "यह नीच मेरे परिवार का मांस खा रहा होगा। मैं इसकी परीक्षा लूँगा।" इसलिए वे उसके सामने हवा की दिशा में खड़े हो गए और उसके शरीर से आती गंध से जान गए कि वह छिपकली का मांस खा रहा था, और उसके पास जाए बिना ही वे वापस मुड़ गए और भाग गए। जब तपस्वी ने देखा कि वह नहीं आ रहा है, तो उन्होंने अपना गदा उस पर फेंका। गदा उसके शरीर को तो नहीं छू पाया, लेकिन उसकी पूंछ के सिरे तक पहुँच गया। तपस्वी ने कहा, "चले जाओ, मुझे तुम्हारी याद आ रही है।" बोधिसत्व ने कहा, "हाँ, तुम्हें मेरी याद आ रही है, लेकिन तुम चारों प्रकार के दुखों से नहीं बच पाओगे।" फिर वे भाग गए और बाड़े के अंत में स्थित एक चींटी के टीले में गायब हो गए, और किसी दूसरे छेद से अपना सिर बाहर निकालकर उन्होंने तपस्वी को इन दो छंदों में संबोधित किया:

जो तपस्वी की भूमिका निभाता है
आत्मसंयम प्रदर्शित करना चाहिए।
तुमने मुझ पर अपनी लाठी फेंकी थी,
तुम झूठे तपस्वी ही होगे।
उलझे हुए बाल और त्वचा का आवरण
किसी गुप्त पाप को छुपाने के लिए इस्तेमाल किया जाता है।
मूर्ख! दिखावे के लिए सफाई करना,
जो भी गंदा है उसे नीचे छोड़ दें।
यह सुनकर तपस्वी ने तीसरे श्लोक में उत्तर दिया:

हे छिपकली, कृपया जल्दी से पीछे हट जाओ।
मुझे तेल और नमक की कोई कमी नहीं है:
मैं काली मिर्च भी सुझाऊंगा।
उबले हुए चावल में डालने से स्वाद और भी बढ़ जाता है।
यह सुनकर बोधिसत्व ने चौथा श्लोक कहा:

मैं अपने आप को सुरक्षित और गर्म जगह में छिपा लूंगी
चींटियों के टीले पर उमड़ी असंख्य चींटियों के बीच।
तेल और नमक का उपयोग बंद करने के लिए,
मुझे काली मिर्च से सख्त नफरत है।
इसके अलावा, उसने उसे धमकी देते हुए कहा, "अरे दुष्ट! झूठे तपस्वी, यदि तू यहाँ ठहरता रहा, तो मैं तुझे चोर की तरह अपने चरागाह में रहने वाले लोगों से पकड़वाकर नष्ट करवा दूँगा। इसलिए जल्दी कर यहाँ से चला जा।" तब वह झूठा तपस्वी उस स्थान से भाग गया।

अपने उपदेश के अंत में गुरु ने जन्म की पहचान इस प्रकार बताई: "उस समय वह दुष्ट भिक्षु (भाई) झूठा तपस्वी था, परन्तु मैं स्वयं राजसी छिपकली था।"

फुटनोट:

(1)संख्या 277 की तुलना करें

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कक्करू-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-326-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 326
कक्करू-जातक

“चोरी करने वाला,” इत्यादि — यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए देवदत्त के बारे में सुनाई थी। उन्होंने बताया कि देवदत्त ने संघ में फूट डालने के बाद अपने प्रमुख शिष्यों के साथ जाते समय, जब सभा समाप्त हुई, तो उसके मुँह से खून की गर्म धारा बह निकली। तब भिक्षुओं ने सत्य के हॉल में इस विषय पर चर्चा की और कहा कि देवदत्त ने झूठ बोलकर फूट डाली थी, जिसके बाद वह बीमार पड़ गया और उसे भारी बारिश का सामना करना पड़ा। गुरु वहाँ आए और पूछा कि भिक्षु किस विषय पर चर्चा कर रहे हैं। यह सुनकर उन्होंने कहा, “भाइयों, केवल अभी ही नहीं, बल्कि पुराने समय में भी यह व्यक्ति झूठा था, और केवल अभी ही नहीं, बल्कि पुराने समय में भी उसे झूठ बोलने के दंड के रूप में पीड़ा सहनी पड़ी थी।” ऐसा कहकर उन्होंने इस प्राचीन कथा को दोहराया।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व तैंतीस देवताओं के स्वर्ग में एक देवदूत बन गए। उस समय बनारस में एक बड़ा उत्सव था। नागों, गरुड़ों और पृथ्वी के देवताओं की भीड़ उत्सव देखने आई थी। तैंतीस देवताओं के स्वर्ग से चार दिव्य प्राणी, दिव्य कक्करु फूलों की माला धारण किए हुए, उत्सव देखने आए। बारह मील (4.23 किमी) के क्षेत्र में फैला शहर इन फूलों की सुगंध से भर गया। लोग यह सोचकर इधर-उधर घूमने लगे कि ये फूल किसने धारण किए हैं। देवताओं ने कहा, "वे हमें देख रहे हैं," और अलौकिक शक्ति से राजमहल से उड़कर वे हवा में स्थिर हो गए। सभी लोग एकत्रित हुए, और राजा अपने राजकुमारों के साथ आए और पूछा कि वे किस लोक से आए हैं।

"हम तैंतीस के स्वर्ग से आए हैं।"

आप किसलिए आए हैं?

"त्योहार देखने के लिए।"

ये फूल कैसे हैं?

"इन्हें दिव्य कक्करू फूल कहा जाता है।"

उन्होंने कहा, "महोदय, देवदूतों की दुनिया में आपको पहनने के लिए अन्य फूल मिल सकते हैं। कृपया ये फूल हमें दे दीजिए।"

देवताओं (देवदूतों) ने उत्तर दिया, "ये दिव्य फूल महान शक्तियों से संपन्न लोगों के लिए उपयुक्त हैं; इस संसार में रहने वाले नीच, मूर्ख, अविश्वासी और पापी प्राणियों के लिए ये उपयुक्त नहीं हैं। परन्तु जो भी मनुष्य अमुक गुणों से संपन्न हैं, उनके लिए ये फूल उपयुक्त हैं।" और इन्हीं शब्दों के साथ इन दिव्य प्राणियों में प्रमुख ने प्रथम श्लोक को दोहराया:-

जो चोरी करने से परहेज करता है,
वह अपने मुंह से झूठ बोलने से खुद को रोकता है।
और प्रसिद्धि की बुलंदियों तक पहुंचना
फिर भी वह अपना सिर ऊंचा रखता है—यह फूल शायद यही दावा करे।
यह सुनकर कुलपुजारी ने सोचा, "इनमें से एक भी गुण मुझमें नहीं है, लेकिन झूठ बोलकर मैं ये फूल धारण कर लूँगा, और इस प्रकार लोग मुझे इन गुणों से युक्त मान लेंगे।" फिर उसने कहा, "मैं इन गुणों से संपन्न हूँ," और उसने फूल मंगवाए और उन्हें धारण कर लिया, और फिर दूसरे देवता (देवदूत) से प्रार्थना की, जिसने दूसरे श्लोक में उत्तर दिया:-

जो ईमानदारी से धन अर्जित करना चाहता है, वही सफल होगा।
और धोखाधड़ी से अर्जित धन से दूर रहो।
अत्यधिक सुख से बचना चाहिए।
इस दिव्य फूल ने आखिरकार जीत हासिल कर ली है।
पुजारी ने कहा, "मैं इन गुणों से संपन्न हूँ," और उसने फूल मंगवाकर उन्हें धारण किया, और फिर तीसरे देवता (देवदूत) से प्रार्थना की, जिसने तीसरा श्लोक कहा:-

जो अपने लक्ष्य से दृढ़ निश्चय कर लेता है, वह कभी विचलित नहीं होता।
और उनका अविचल विश्वास कायम रहता है,
चुनिंदा भोजन को ही खाने से घृणा होती है।
इस दिव्य फूल पर उचित रूप से दावा किया जा सकता है।
पुजारी ने कहा, "मुझे ये गुण प्राप्त हैं," और उसने फूल मंगवाए और उन्हें धारण किया, फिर चौथे देवता (देवदूत) से प्रार्थना की, जिसने चौथा श्लोक कहा:-

वह जिस पर भले लोग कभी हमला नहीं करेंगे
जब वे मौजूद हों, न तो उनकी पीठ पीछे,
और वह जो कुछ कहता है, उसे अपने कर्मों में पूरा करता है।
यह फूल अपने अधिकार में खरपतवार होने का दावा कर सकता है।
पुजारी ने कहा, "मैं इन गुणों से संपन्न हूँ," और उसने फूल मंगवाकर उन्हें अपने ऊपर धारण कर लिया। तब उन दिव्य प्राणियों ने पुजारी को फूलों की चार मालाएँ दीं और देवदूतों के लोक में लौट गए। उनके जाते ही पुजारी के सिर में असहनीय दर्द होने लगा, मानो किसी

नुकीले कांटे से ठोका जा रहा हो या लोहे के औजार से कुचला जा रहा हो। दर्द से पागल होकर वह सिर पर लोटने लगा और जोर-जोर से चिल्लाने लगा। जब लोगों ने पूछा, "इसका क्या अर्थ है?" तो उसने कहा, "मैंने इन गुणों का दावा किया जबकि मुझमें ये गुण नहीं थे, और झूठ बोला था, इसलिए मैंने इन फूलों को देवदूतों से विनती की: इन्हें मेरे सिर से उतार दो।" वे उन्हें उतारना चाहते थे, लेकिन नहीं उतार सके, क्योंकि वे मानो लोहे के बंधन से बंधे हुए थे। फिर उन्होंने उसे उठाया और घर ले गए। और वह वहाँ लेटा हुआ जोर-जोर से रो रहा था, सात दिन बीत गए। राजा ने अपने सलाहकारों से कहा, "यह दुष्ट ब्राह्मण मरेगा। अब हम क्या करें?" उन्होंने उत्तर दिया, "हे मेरे स्वामी, आइए हम फिर से उत्सव मनाएं। देवताओं के पुत्र (देवदूत) वापस आएंगे।"

राजा ने एक उत्सव का आयोजन किया, और देवदूत लौटकर आए और उन्होंने पूरे नगर को फूलों की सुगंध से भर दिया, और राजमहल में एक ही स्थान पर खड़े हो गए। लोग एकत्रित हुए, और उस दुष्ट ब्राह्मण को लाकर देवदूतों के सामने पेट के बल लिटा दिया। उसने देवदूतों से प्रार्थना की, "हे मेरे स्वामियों, मेरी जान बख्श दीजिए।" उन्होंने कहा, "ये फूल दुष्ट और पापी मनुष्य के लिए उपयुक्त नहीं हैं। तुमने मन ही मन हमें धोखा देने का सोचा था। तुम्हें अपने झूठे वचनों का फल मिल गया है।"

लोगों के सामने उसे इस प्रकार फटकार लगाने के बाद, उन्होंने उसके सिर से फूलों की माला उतार ली और लोगों को संबोधित करने के बाद वे अपने निवास स्थान पर लौट गए।

गुरु ने अपना पाठ समाप्त करते हुए जन्म का वर्णन किया: "उस समय देवदत्त ब्राह्मण थे, दिव्य प्राणियों में कश्यप एक थे, मोग्गल्याण दूसरे थे, सारिपुत्र तीसरे थे, और मैं स्वयं उन सब में प्रमुख था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **काकति-जातक**
***स्रोत**: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----II-327-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 327
काकती-जातक (*1)

"सुगंधित सुगंध," आदि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में निवास करते समय सुनाई थी। यह कहानी एक भिक्षु (भाई) की थी, जिसे शिष्य बनने के अपने निर्णय पर खेद था। इस अवसर पर गुरु ने भिक्षु से पूछा कि क्या वह वास्तव में असंतुष्ट है, और जब उसने उत्तर दिया, "जी, परम पूज्य", तो उन्होंने उससे कारण पूछा। भिक्षु ने उत्तर दिया, "पापपूर्ण वासना के कारण।" गुरु ने कहा, "स्त्री की रक्षा नहीं की जा सकती। उसे सुरक्षित रखना असंभव है। प्राचीन ऋषियों ने एक स्त्री को सिंबली झील (*2) के किनारे एक महल में समुद्र के बीच में रख दिया था, लेकिन फिर भी उसकी प्रतिष्ठा की रक्षा नहीं कर सके।" फिर उन्होंने पुराने समय की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व ने राजा की रानी पत्नी से पुत्र के रूप में जन्म लिया। बड़े होकर, अपने पिता की मृत्यु के बाद उन्होंने शासन संभाला। काकती उनकी मुख्य रानी थीं और अप्सरा के समान सुंदर थीं। इस कथा का प्राचीन रूप कुणाल जन्म (*3) में पूर्ण रूप से वर्णित है। यहाँ इसका संक्षिप्त सारांश दिया गया है।

उस समय एक गरुड़ राजा मनुष्य का वेश धारण करके बनारस के राजा के साथ पासा खेलने आया। रानी काकतीय से प्रेम हो जाने पर वह उसे अपने साथ गरुड़ों के निवास स्थान पर ले गया और उसके साथ सुखपूर्वक रहने लगा। राजा को काकतीय की याद सताने लगी और उसने अपने संगीतकार नटकुवेरा को उसकी खोज में भेजा। नटकुवेरा ने गरुड़ राजा को एक झील में एरका घास के बिस्तर पर लेटा हुआ पाया। जैसे ही गरुड़ राजा वहाँ से जाने ही वाला था, वह राजा के पंखों के बीच में बैठ गया और इस प्रकार गरुड़ों के निवास स्थान पर पहुँच गया। वहाँ उसने रानी का भोग लगाया और फिर से काकतीय के पंख पर बैठकर घर लौट आया। जब राजा के साथ पासा खेलने का समय आया, तो संगीतकार ने अपना वीणा उठाया और खेल के तख़्ते के पास जाकर राजा के सामने खड़ा हो गया और गीत के रूप में पहला श्लोक गाया:

मेरे चारों ओर सुगंधित खुशबू फैल रही है

सुंदर काकाती के प्रेम की सांस,
अपने दूर स्थित घर से संदेश भेजते हुए
मेरे अंतर्मन में विचार हलचल मचा रहे हैं।
यह सुनकर गरुड़ ने दूसरे श्लोक में उत्तर दिया:-

समुद्र और केबुक धारा को चुनौती देते हुए
क्या आप मेरे द्वीप पर स्थित घर पहुँच गए?
सात महासागरों के ऊपर उड़ान भरते हुए
क्या वह सिंबल वन में आया था?
यह सुनकर नटकुवेरा ने तीसरा श्लोक कहा:-

यह सब आप ही के माध्यम से संभव हुआ, अंतरिक्ष की सीमाओं को चुनौती देते हुए।
मुझे सिंबल वन में ले जाया गया।
और समुद्रों और नदियों के ऊपर उड़ते हुए
तुम्हारे माध्यम से ही मुझे मेरा प्यार मिला।
तब गरुड़ राजा ने चौथे श्लोक में उत्तर दिया:-

उस मूर्खतापूर्ण भूल पर,
मैं कितना बड़ा मूर्ख था!
प्रेमी जोड़े को अलग रखा गया,
देखो! मैंने मध्यस्थ की भूमिका निभाई है।
इसलिए गरुड़ रानी को लेकर आया और उसे बनारस के राजा को वापस सौंप दिया, और फिर कभी वहां नहीं आया।

अपने उपदेश के अंत में, गुरु ने सत्यों का खुलासा किया और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के समापन पर असंतुष्ट भाई (भिक्षु) ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की सिद्धि प्राप्त की: "उस समय असंतुष्ट भाई नटकुवेरा थे, और मैं स्वयं राजा था।"

फुटनोट:

(1) संख्या 360

(2)मेरु पर्वत पर: गरुड़ इसके चारों ओर रहते हैं।

(3)सं. 536.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **अन्नुसोसिया-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-328-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 328
अननुसोचिया-जातक

"मैं क्यों आँसू बहाऊँ?" इत्यादि—यह कथा गुरुजी ने जेतवन मठ में रहते हुए एक ज़मींदार की सुनाई थी, जिसकी पत्नी का देहांत हो गया था। कहते हैं कि उसकी मृत्यु के बाद उसने न तो स्नान किया, न भोजन किया और न ही अपने खेत के कामों में लापरवाही बरती। शोक से व्याकुल होकर वह कब्रिस्तान में शोक मनाता फिरता था, जबकि प्रथम मार्ग (सम्मोहन) में प्रवेश करने का उसका पूर्वनियोजित भाग्य उसके सिर के चारों ओर एक आभा की तरह चमक रहा था। एक सुबह गुरुजी ने संसार पर दृष्टि डाली और उसे देखकर कहा, "मेरे सिवा कोई नहीं है जो इस व्यक्ति के दु:ख को दूर कर सके और उसे प्रथम मार्ग (सम्मोहन) में प्रवेश करने की शक्ति प्रदान कर सके। मैं

ही उसका आश्रय बनूँगा।" अतः जब वह अपने परिक्रमाओं से लौटकर भोजन कर चुके, तो उन्होंने एक सेवक भिक्षु को साथ लेकर ज़मींदार के घर के द्वार पर गए। गुरुजी के आने की सूचना पाकर वह उनसे मिलने बाहर आया और अन्य आदरपूर्वक उन्हें निर्धारित आसन पर बैठाया और एक तरफ बैठकर उनका प्रणाम किया।

गुरु ने पूछा, "हे शिष्य, तुम किस कारण चुप हो?"

"आदरणीय महोदय," उन्होंने उत्तर दिया, "मैं उनके लिए शोक मना रहा हूँ।"

गुरु ने कहा, "हे शिष्य, जो टूटने योग्य है वह टूट जाता है, परन्तु ऐसा होने पर शोक नहीं करना चाहिए। प्राचीन ऋषियों ने जब अपनी पत्नी को खोया, तो वे इस सत्य को जानते थे, इसलिए उन्होंने शोक नहीं किया।" और फिर उनके अनुरोध पर गुरु ने एक प्राचीन कथा सुनाई।

यह प्राचीन कथा दसवें खंड में कुल्लाबोधि जन्म (*1) में मिलेगी। यहाँ इसका संक्षिप्त सारांश दिया गया है।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व का जन्म एक ब्राह्मण परिवार में हुआ। बड़े होकर उन्होंने तक्षशिला में सभी कलाओं का अध्ययन किया और फिर अपने माता-पिता के पास लौट आए। इस जन्म में, महान पुरुष एक पवित्र युवा छात्र बने। तब उनके माता-पिता ने उनसे कहा कि वे उनके लिए एक पत्नी की तलाश करेंगे।

बोधिसत्व ने कहा, "मुझे वैवाहिक जीवन की कोई इच्छा नहीं है। आपके मरने के बाद, मैं एक तपस्वी का धार्मिक जीवन अपना लूंगा।"

उनके अत्यधिक आग्रह पर, उसने सोने की एक मूर्ति बनवाई और कहा, "यदि आप मुझे इसके जैसी कोई कन्या ढूंढकर दे दें, तो मैं उससे विवाह करूंगा।" उसके माता-पिता ने कुछ दूतों को एक बड़े दल के साथ भेजा और उनसे कहा कि वे सोने की मूर्ति को एक रथ में रखकर भारत के मैदानों में ऐसी ही एक ब्राह्मण कन्या की खोज करें। जब उन्हें ऐसी कन्या मिल जाए, तो वे सोने की मूर्ति देकर उसे वापस ले आएं। उसी समय, काशी राज्य के एक नगर में, अस्सी करोड़ (10 मिलियन) धनवान ब्राह्मण के घर में, ब्रह्मलोक से एक संत का पुनर्जन्म हुआ और उनका नाम सम्मिलभासिनी रखा गया। सोलह वर्ष की आयु में वह अप्सरा के समान सुंदर और आकर्षक थी, स्त्री सौंदर्य के सभी लक्षणों से परिपूर्ण। और चूंकि पापमय वासनाओं ने कभी भी उसके मन में बुराई का विचार नहीं जगाया, इसलिए वह पूर्णतः पवित्र थी। अतः वे लोग सोने की मूर्ति लेकर भटकते रहे और अंततः इस नगर में पहुँचे। वहाँ के निवासियों ने मूर्ति देखकर पूछा, "अमुक ब्राह्मण की पुत्री सम्मिलभासिनी को यहाँ क्यों रखा गया है?" यह सुनकर दूतों ने ब्राह्मण परिवार को ढूँढा और सम्मिलभासिनी को राजकुमार की दुल्हन के रूप में चुना। सम्मिलभासिनी ने अपने माता-पिता को संदेश भेजा, "आपके मरने के बाद मैं संन्यासी जीवन अपना लूँगी; मुझे विवाह की कोई इच्छा नहीं है।" उन्होंने कहा, "बेटी, तुम क्या सोच रही हो?" और स्वर्ण मूर्ति को स्वीकार करके उन्होंने अपनी पुत्री को बड़ी संख्या में परिचारकों के साथ विदा किया। विवाह समारोह बोधिसत्व और सम्मिलभासिनी दोनों की इच्छा के विरुद्ध संपन्न हुआ। एक ही कमरे और एक ही बिस्तर पर सोते हुए भी उन्होंने एक-दूसरे को वासना भरी दृष्टि से नहीं देखा, बल्कि दो पवित्र पुरुषों या दो संत महिलाओं की तरह साथ रहे।

कुछ समय बाद बोधिसत्व के माता-पिता का देहांत हो गया। उन्होंने उनके अंतिम संस्कार किए और सम्मिलभासिनी को अपने पास बुलाकर उनसे कहा, "हे प्रिय, मेरी पारिवारिक संपत्ति अस्सी करोड़ (10 मिलियन) है, और तुम्हारी संपत्ति भी लगभग अस्सी करोड़ (10 मिलियन) है। यह सब ले लो और गृहस्थ जीवन व्यतीत करो। मैं संन्यासी बन जाऊंगा।"

"श्रीमान," उसने उत्तर दिया, "यदि आप संन्यासी बन जाते हैं, तो मैं भी बन जाऊंगी। मैं आपको नहीं छोड़ सकती।"

"तो फिर आओ," उन्होंने कहा। उन्होंने अपनी सारी संपत्ति दान में दे दी और अपनी सांसारिक संपत्ति को कफ के ढेले की तरह त्याग दिया। वे हिमालय की ओर चल पड़े और दोनों ने तपस्वी जीवन अपना लिया। वहाँ उन्होंने लंबे समय तक जंगली फल और कंद खाकर जीवन व्यतीत किया। अंततः वे नमक और सिरका लेने के लिए हिमालय से नीचे उतरे और धीरे-धीरे बनारस पहुँचे तथा राजमहल में रहने लगे। वहाँ रहते हुए, इस युवा और कोमल तपस्वी को मिश्रित गुणवत्ता वाले बेस्वाद चावल खाने से पेचिश हो गई और कोई उपाय न मिलने के कारण वह बहुत कमजोर हो गई। भिक्षा मांगने निकले बोधिसत्व ने उसे उठाया और नगर के द्वार तक ले जाकर एक विशेष कक्ष में एक बेंच पर लिटा दिया और स्वयं भिक्षा मांगने नगर के भीतर चले गए। उनके निकलते ही उसकी मृत्यु हो गई। इस तपस्वी की अपार सुंदरता को देखकर लोग उसके चारों ओर जमा हो गए और रोने-धोने लगे। भिक्षा मांगने के बाद बोधिसत्व वापस लौटे और उनकी मृत्यु की खबर सुनकर बोले, "जिसमें विघटन का गुण होता है, वह विघटित हो जाता है। सभी अनित्य प्राणी इसी प्रकार के होते

हैं।" ये कहकर वे उस आसन पर बैठ गए जिस पर वे लेटी थीं और भोजन का मिश्रण खाकर उन्होंने कुल्ला किया। वहाँ खड़े लोग उनके चारों ओर जमा हो गए और बोले, "आदरणीय महोदय, यह महिला तपस्वी आपके लिए क्या मायने रखती थी?"

"जब मैं एक आम आदमी था," उसने जवाब दिया, "वह मेरी पत्नी थी।"

उन्होंने कहा, "हे प्रभु, जब हम रोते-बिलखते हैं और अपनी भावनाओं पर काबू नहीं रख पाते, तो आप क्यों नहीं रोते?"

बोधिसत्व ने कहा, "जब तक वह जीवित थी, वह किसी न किसी रूप में मेरी थी। जो दूसरे लोक में चला गया है, उसका कुछ भी नहीं बचा है: वह दूसरों के अधिकार में चली गई है। मुझे क्यों रोना चाहिए?" और लोगों को सत्य का उपदेश देते हुए, उन्होंने ये श्लोक सुनाए:

मुझे तुम्हारे लिए आंसू क्यों बहाने चाहिए?
सुंदर सम्मिलाभासिनी?
मृत्यु के बहुमत को सौंप दिया गया
अब से तुम मेरे लिए खो चुके हो।
कमजोर मनुष्य को शोक क्यों करना चाहिए?
उसके लिए केवल उपवास क्या है?
वह भी अपनी नश्वर सांस लेता है
मृत्यु के कारण हर घंटा कम होता जा रहा है।
चाहे वह खड़ा हो या बैठा हो,
चलना-फिरना, आराम करना, जो चाहे।
पलक झपकते ही,
एक पल में मृत्यु निकट है।
मैं जीवन को एक अस्थिर चीज मानता हूँ।
दोस्तों को खोना अपरिहार्य है।
जो भी जीवित हैं, उन सभी को संजो कर रखें।
यदि आप जीवित रहें तो शोक न करें।
इस प्रकार उस महान सत्ता ने सत्य का उपदेश दिया और इन चार श्लोकों के माध्यम से वस्तुओं की अनित्यता को समझाया। लोगों ने उस महिला तपस्वी का अंतिम संस्कार किया। और बोधिसत्व हिमालय लौट गईं, और रहस्यमय ध्यान से प्राप्त उच्च ज्ञान को ग्रहण करके ब्रह्मलोक (देवदूतों का लोक) में जन्म लेने के लिए नियत हुईं।

गुरु ने अपना पाठ समाप्त करने के बाद सत्यों का खुलासा किया और जन्म का वर्णन किया:- सत्यों के समापन पर, भूस्वामी ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की सिद्धि प्राप्त की:- "उस समय राहुल की माता सम्मिलभासिनी थीं, और मैं स्वयं तपस्वी था।"

फुटनोट:

(1)सं. 443.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कालबाहु-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-329-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 329
कलाबाहु जातक

"एक समय था जब हमने आनंद लिया," इत्यादि—यह कथा गुरु ने बाँस के वन में रहते हुए देवदत्त के लाभ और मान-सम्मान के ह्रास के संबंध में सुनाई थी। जब देवदत्त ने बुद्ध के प्रति अनुचित द्वेष पाल लिया और उन्हें मारने के लिए धनुर्धारियों के एक दल को रिश्वत दी,

तो उसका अपराध नलगिरि (*1) नामक हाथी को छोड़े जाने से प्रकट हुआ। तब लोगों ने उसका पद और उसके लिए निर्धारित राशन छीन लिया, और राजा ने उसका सम्मान करना छोड़ दिया। लाभ और मान-सम्मान का स्रोत खो देने के बाद, वह कुलीन परिवारों में भीख माँगकर जीवन यापन करने लगा। भिक्षुओं ने सत्य के हॉल में इस बात पर चर्चा शुरू की कि देवदत्त ने लाभ और मान-सम्मान तो प्राप्त कर लिया, लेकिन उसे बनाए नहीं रख सका। गुरु आए और उन्होंने पूछा कि भिक्षु किस विषय पर चर्चा करने के लिए एकत्रित हुए हैं, और जब उन्हें बताया गया तो उन्होंने कहा, "भाइयों, न केवल अब, बल्कि पहले भी देवदत्त लाभ और मान-सम्मान से वंचित रहा है।" और फिर उन्होंने उन्हें एक प्राचीन कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में धनंजय राज कर रहे थे, तब बोधिसत्व राधा नाम के तोते बन गए। वे सुगठित और सुगठित थे। उनके छोटे भाई का नाम पोत्थपाद था। एक शिकारी ने इन दोनों पक्षियों को पकड़ लिया और बनारस के राजा को भेंट के रूप में लाया। राजा ने उन्हें सोने के पिंजरे में रखा और उनकी देखभाल की। उन्होंने उन्हें सोने के बर्तन में शहद और भुना हुआ मक्का खाने को दिया और चीनी का पानी पीने को दिया। राजा ने उनकी बहुत देखभाल की और वे खूब धन-दौलत और सम्मान प्राप्त कर गए। फिर एक वनपाल ने कलाबाहु नाम का एक बड़ा काला बंदर राजा को भेंट के रूप में लाया। चूंकि वह तोतों से बाद में आया था, इसलिए उसे और भी अधिक धन-दौलत और सम्मान प्राप्त हुआ, जबकि तोतों का सम्मान कम हो गया। बुद्ध गुणों से युक्त बोधिसत्व ने एक शब्द भी नहीं कहा, परन्तु उनके छोटे भाई, जिनमें ये गुण नहीं थे, बंदर को दिए जा रहे सम्मान को सहन न कर पाने के कारण बोले, "भाई, पहले इस राजमहल में लोग हमें स्वादिष्ट भोजन देते थे, परन्तु अब हमें कुछ नहीं मिलता, और वे सब कुछ बंदर कलाबाहु को अर्पित कर देते हैं। इस स्थान पर राजा से हमें न तो कोई लाभ मिलता है और न ही कोई सम्मान, तो हम क्या करें? चलो, हम जंगल में जाकर निवास करें।" और उनसे बात करते हुए उन्होंने पहला श्लोक कहा:

एक बार हमने प्रचुर मात्रा में भोजन भंडार का आनंद लिया,
अब इस बंदर के पास वह चीज है जो पहले हमारी थी।
आओ, राधा, हम जंगल की ओर चलें;
इस तरह के खराब इलाज को भला कौन उचित ठहरा सकता है?
यह सुनकर राधा ने दूसरे श्लोक में उत्तर दिया:

लाभ और हानि, प्रशंसा और निंदा,
सुख, दुख, अपमान, प्रसिद्धि,
सभी क्षणिक अवस्थाओं के रूप में परिकल्पित हैं--
पोत्थापाड़ा को शोक क्यों करना चाहिए?
यह सुनकर पोत्थापदा बंदर के प्रति अपनी दुर्भावना से मुक्त नहीं हो सका और उसने तीसरा श्लोक दोहराया:

राधा, सबसे बुद्धिमान पक्षी,
मुझे यकीन है कि आप आने वाली बातों से अवगत हैं।
यह घिनौना प्राणी जो चलाएगा
अदालत से लेकर उनके पुराने घर तक?
यह सुनकर राधा ने चौथा श्लोक बोला:

अक्सर उसका सिकुड़ा हुआ चेहरा और हिलते हुए कान
शाही बच्चे मूर्खतापूर्ण भय से भर जाते हैं:
जल्द ही कलाबाहु किसी शरारती सनकी के माध्यम से,
उसे भोजन की तलाश में बहुत दूर जाना पड़ेगा।
कुछ ही समय में बंदर ने अपने कान हिलाकर और इसी तरह की हरकतें करके युवा राजकुमारों को डरा दिया। घबराकर उन्होंने शोर मचाया। राजा ने पूछा कि क्या हुआ, और कारण सुनकर कहा, "इसे भगा दो।" इस प्रकार उन्होंने बंदर को भगा दिया, और तोते अपनी पूर्व सुख-सुविधा और सम्मान की स्थिति में लौट आए।

गुरु ने यहाँ अपना पाठ समाप्त किया और जन्म का वर्णन किया: "उस समय देवदत्त कलाबाहु थे, आनंद पोत्थपाद थे और मैं स्वयं राधा थी।"

फुटनोट:

(1) देवदत्त द्वारा बुद्ध को मारने के लिए भेजा गया हाथी

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **शीलाविमांसा-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-330-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 330
सिलविमांसा-जातक

"पृथ्वी पर शक्ति," इत्यादि--यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी, एक ब्राह्मण के बारे में जो सदा अपने सद्गुणों का प्रमाण देता रहता था। इससे पहले भी दो ऐसी ही कहानियां सुनाई जा चुकी हैं। (*1)

इस मामले में बोधिसत्व बनारस के राजा के कुलपुजारी थे।

अपनी सदाचारिता की परीक्षा के लिए उसने तीन दिन तक राजकोष के कोष से एक-एक सिक्का चुराया। लोगों ने उसके खिलाफ चोर होने की सूचना दी, और जब उसे राजा के सामने लाया गया, तो उसने कहा:

पृथ्वी पर अतुलनीय शक्ति,
   सद्गुण में एक अद्भुत आकर्षण होता है:
नेक होने का दिखावा करना
   घातक सांप किसी भी प्रकार के नुकसान से बचते हैं।
पहले श्लोक में इस प्रकार सद्गुणों की प्रशंसा करने के बाद, उन्होंने राजा की सहमति प्राप्त की और तपस्वी जीवन अपना लिया। अब एक बाज ने कसाई की दुकान में मांस का एक टुकड़ा उठाया और हवा में उड़ गया। अन्य पक्षियों ने उसे घेर लिया और अपने पैरों, पंजों और चोंचों से उस पर प्रहार किया। दर्द सहन न कर पाने के कारण उसने मांस का टुकड़ा गिरा दिया। दूसरे पक्षी ने उसे पकड़ लिया। वह भी उसी प्रकार दबाव में आकर मांस को गिरा दिया। फिर एक और पक्षी उस पर झपटा, और जिसने भी मांस पकड़ा, बाकी पक्षियों ने उसका पीछा किया, और जिसने उसे छोड़ दिया, उसे शांति मिली। यह देखकर बोधिसत्व ने सोचा, "हमारी ये इच्छाएँ मांस के टुकड़ों के समान हैं। जो इन्हें पकड़ते हैं उन्हें दुख मिलता है, और जो इन्हें छोड़ देते हैं उन्हें शांति मिलती है।" और उन्होंने दूसरा श्लोक दोहराया:

जब तक बाज को खाने को कुछ मिलता रहा,
   शिकारी पक्षियों ने दर्द से कराहते हुए उसे चोंच मारी।
जब अनैच्छिक रूप से उससे मांस गिर गया,
   फिर उन्होंने उसे चोंच मारना बंद कर दिया।
शहर से लौटते हुए तपस्वी अपनी यात्रा के दौरान एक गाँव में पहुँचे और शाम को एक व्यक्ति के घर में ठहर गए। वहाँ पिंगला नाम की एक दासी ने एक पुरुष से मुलाकात तय की और कहा, "आपको अमुक समय पर आना है।" अपने स्वामी और उनके परिवार के सदस्यों के पैर धोने के बाद, जब वे लेट गए, तो वह दहलीज पर बैठ गई और अपने प्रेमी के आने की प्रतीक्षा करती रही। उसने पहला और मध्य पहर यह दोहराते हुए बिताया, "अब वह आ रहा होगा।" लेकिन भोर होते ही, आशा खोकर उसने कहा, "अब वह नहीं आएगा," और लेटकर सो गई। यह देखकर बोधिसत्व ने कहा, "यह स्त्री इतने लंबे समय तक अपने प्रेमी के आने की आशा में बैठी रही, लेकिन अब जब वह जानती है कि वह नहीं आएगा, तो निराशा में वह शांति से सो रही है।" और इस विचार के साथ कि पापी संसार में आशा दुख लाती है, जबकि निराशा शांति लाती है, उन्होंने तीसरा श्लोक कहा:

आशा की पूर्ति का फल आनंद है;
निराशा और निराशा में क्या अंतर है?
हालांकि घोर निराशा उसकी आशा को नष्ट कर देती है,
देखो! पिंगला को शांत नींद का आनंद मिलता है।

अगले दिन उस गाँव से आगे बढ़ते हुए वह एक जंगल में प्रवेश किया, और एक साधु को जमीन पर बैठे ध्यान में लीन देखकर उसने सोचा, "इस लोक और परलोक दोनों में ध्यान के आनंद से बढ़कर कोई सुख नहीं है।" और उसने चौथे श्लोक को दोहराया:

इस दुनिया में और आने वाली दुनियाओं में
परमानंद की अनुभूति से बढ़कर कुछ नहीं हो सकता:
किसी भक्त को पवित्र शांति प्रदान करने के लिए,
स्वयं को कोई हानि न पहुंचाते हुए, वह किसी को परेशान नहीं करेगा।
फिर वह जंगल में चले गए और एक ऋषि का तपस्वी जीवन अपना लिया तथा ध्यान से प्राप्त उच्च ज्ञान को विकसित किया और ब्रह्मलोक (देवदूतों का लोक) में जन्म लेने के लिए नियत हो गए।

गुरु ने अपना पाठ समाप्त करते हुए जन्म का वर्णन किया: "उस समय मैं स्वयं कुल का पुरोहित था।"

फुटनोट:

(1) संख्या 86 और संख्या 290

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कोकालिका-जातक**
स्रोत : एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।

पिछला <<<<-----II-331-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 331
कोकालिका-जातक

"जो अनुचित वाणी से विवश होते हैं," इत्यादि - यह कथा जेतवन मठ में गुरु द्वारा कोकालिका के बारे में सुनाई गई थी। प्रारंभिक कथा पूरी तरह से टक्करिका जन्म में वर्णित है। (*1)

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, बोधिसत्व उनके प्रिय मंत्री थे। राजा बहुत बातूनी थे। बोधिसत्व ने सोचा, "मैं इनकी बातूनीपन का अंत करूँगा," और इसके लिए एक उपयुक्त उदाहरण की तलाश में निकल पड़े। एक दिन राजा अपने बगीचे में आए और राजसी पत्थर की शिला पर बैठ गए। उनके सिर के ऊपर एक आम का पेड़ था और वहाँ एक कौवे के घोंसले में एक काली कोयल ने अंडा दिया था और चली गई थी। मादा कौवा उस कोयल के अंडे की रखवाली करती रही। कुछ समय बाद उसमें से एक छोटी कोयल निकली। कौवे ने उसे अपना बच्चा समझकर उसकी देखभाल की और अपनी चोंच में उसके लिए भोजन लाती रही। वह नन्हा पक्षी अभी पंखहीन ही था कि उसने समय से पहले कोयल की आवाज निकाली। कौवे ने सोचा, "यह नन्हा पक्षी अभी से अजीब आवाज निकाल रहा है। बड़ा होकर क्या करेगा?" और इसलिए उसने अपनी चोंच से उसे मारकर घोंसले से बाहर फेंक दिया, जो राजा के चरणों में गिर गया। राजा ने बोधिसत्व से पूछा, "हे मेरे मित्र, इसका क्या अर्थ है?" बोधिसत्व ने सोचा, "मैं राजा को सबक सिखाने के लिए एक उदाहरण खोज रहा था, और अब मुझे वह मिल गया है।" इसलिए उन्होंने कहा, "हे महाराज, जो लोग समय से पहले बहुत बोलते हैं, उनका यही हाल होता है। हे महाराज, कौवे द्वारा पाली जा रही इस छोटी कोयल ने, पंखहीन अवस्था में ही, समय से पहले ही रोना शुरू कर दिया। कौवे ने जान लिया कि यह उसकी संतान नहीं है और उसने अपनी चोंच से उसे मारकर घोंसले से बाहर फेंक दिया। जो भी लोग समय से पहले बहुत बोलते हैं, चाहे वे मनुष्य हों या पशु, उन्हें इसी प्रकार कष्ट भोगना पड़ता है।" और इन शब्दों के साथ उन्होंने ये श्लोक सुनाए:

वे जो अनुचित भाषण से अपराध करते हैं
जैसे कोयल का बच्चा अकाल मृत्यु को प्राप्त होता है।
न तो घातक जहर, न ही धारदार तलवार
यह अपशब्दों के बोले जाने से आधा घातक होता है।

ऋषि अपने संयमित शब्दों से विवेकपूर्ण मार्गदर्शन करते हैं।
और न ही जल्दबाजी में अपने दूसरे स्वरूप से कोई बात साझा करता है:
बोलने से पहले वह समझदारी भरी सलाह लेगा,
अपने प्रतिद्वंद्वियों को फंसाने के लिए, वह गरुड़ नामक सर्प की तरह उनका उपयोग करता है।
बोधिसत्व की धार्मिक शिक्षा सुनने के बाद राजा अपने शब्दों में अधिक संयम बरतने लगा और बोधिसत्व की महिमा बढ़ाते हुए उन्हें लगातार अधिकाधिक दान देता रहा।

गुरु ने अपना पाठ समाप्त करते हुए जन्म का वर्णन किया: "उन दिनों कोकालिका नन्ही कोयल थी, और मैं स्वयं बुद्धिमान मंत्री था।"

फुटनोट:

(1)सं. 481

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **रथलाथी-जातक**
***स्रोत** : एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-332-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 332
रथलत्थी-जातक

“किसी दूसरे को घायल करना,” इत्यादि—यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी। यह कहानी कोसल के राजा के कुल पुरोहित के बारे में है, जो अपने रथ में बैठकर अपने राज्य के एक गाँव जा रहे थे, तभी एक संकरी सड़क पर उन्हें एक काफिला मिला। वे बार-बार “रास्ते से हट जाओ” चिल्लाते हुए, एक गाड़ी के न हटने पर इतने क्रोधित हो गए कि उन्होंने अपनी लाठी पहले गाड़ी के चालक पर फेंक दी। लाठी गाड़ी के जुए से टकराई और उछलकर उनके माथे पर लगी, जिससे उनके सिर पर एक उभार आ गया। पुरोहित वापस मुड़े और राजा के पास जाकर बताया कि उन्हें कुछ गाड़ी चालकों ने घायल कर दिया है। गाड़ी चालकों को बुलाया गया और मामले की जाँच करने वाले न्यायाधीशों ने पाया कि केवल पुरोहित ही दोषी थे। एक दिन सत्य सभा में इस बात पर चर्चा हुई कि राजा के पुरोहित, जिन्होंने कहा था कि उन पर कुछ गाड़ी चालकों ने हमला किया था, जब अदालत गए तो उनका मुकदमा खारिज कर दिया गया। जब गुरुजी आए और उन्होंने पूछा कि भिक्षु किस विषय पर चर्चा करने के लिए सभा में बैठे हैं, तो यह सुनकर उन्होंने कहा, "भाइयों, केवल अभी ही नहीं, बल्कि पहले भी यह व्यक्ति ठीक इसी तरह व्यवहार करता था।" फिर उन्होंने उन्हें पुराने समय की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व उनके न्याय स्वामी बने। राजा का पुजारी उस गाँव में गया जहाँ वह मुखिया था, और उसने ठीक उसी तरह व्यवहार किया जैसा कि दूसरी कहानी में है, लेकिन इस संस्करण में, जब राजा ने पुजारी की कहानी सुनी, तो उसने रथ चालकों को बुलाया और स्वयं न्याय के लिए बैठ गया, और बिना मामले की जाँच किए ही उसने कहा, "तुमने मेरे पुजारी को पीटा है और उसके माथे पर चोट पहुँचाई है," और उनकी सारी संपत्ति छीन लेने का आदेश दिया। तब बोधिसत्व ने उससे कहा, "महाराज, बिना मामले की जाँच किए ही आप उन्हें उनकी सारी संपत्ति जब्त करने का आदेश देते हैं, जबकि कुछ लोग खुद को घायल करने के बाद कहते हैं कि उन्हें किसी और ने घायल किया है। इसलिए, शासक के लिए बिना मामले की सुनवाई किए इस प्रकार कार्य करना गलत है। उसे सब कुछ सुने बिना कोई कार्रवाई नहीं करनी चाहिए।" और फिर उन्होंने ये श्लोक सुनाए:

दूसरे को घायल करके, वह अपना ही घाव दिखाता है।
स्वयं अपराधी होते हुए भी, वह मारपीट की शिकायत करता है।
हे राजा, बुद्धिमान लोग, पक्षपातपूर्ण दृष्टिकोण से सावधान रहें।
पहले दोनों पक्षों की बात सुन लें, फिर सही फैसला सुनाएं।
मुझे आलसी, कामुक और उदासीन व्यक्ति से घृणा है।

झूठा तपस्वी एक दुष्ट तपस्वी होता है।
एक दुष्ट राजा बिना सुने ही किसी मामले का फैसला कर देगा।
ऋषि का क्रोध कभी भी उचित नहीं ठहराया जा सकता।
योद्धा राजकुमार एक सुविचारित निर्णय देता है,
धर्मी न्यायाधीश की प्रसिद्धि सदा बनी रहती है।
बोधिसत्व के वचन सुनकर राजा ने न्यायसंगत निर्णय लिया, और जब मामले की विधिवत सुनवाई हुई, तो दोष केवल ब्राह्मण का ही पाया गया।

अपने पाठ के अंत में गुरु ने जन्म की पहचान बताते हुए कहा: "दोनों कहानियों में ब्राह्मण ने एक ही भूमिका निभाई, और मैं स्वयं उन दिनों में बुद्धिमान मंत्री था।"

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **गोधा-जातक**4
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-333-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 333
गोधा-जातक(*1)

“तो फिर तुम,” इत्यादि—यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक जमींदार के बारे में सुनाई थी। प्रारंभिक कहानी पहले ही पूरी सुनाई जा चुकी है। (*2) इस मामले में, पति-पत्नी कर्ज चुकाकर घर लौट रहे थे, तभी रास्ते में कुछ शिकारियों ने उन्हें भुनी हुई छिपकली दी और उसे खाने को कहा। पति ने पत्नी को पानी लाने भेजा और पूरी छिपकली खा गया। जब वह लौटी, तो उसने कहा, “मेरी प्रिय, छिपकली भाग गई।” “हे स्वामी,” उसने कहा, “भटकने वाली भुनी हुई छिपकली का क्या करें?” उसने थोड़ा पानी पिया और बाद में जेतवन मठ में गुरु के सामने बैठी, तो गुरु ने उससे पूछा: “श्रीमती, क्या यह पुरुष तुम्हारे प्रति स्नेही, प्रेममय और सहायक है?” उसने उत्तर दिया, “मैं उससे प्रेम करती हूँ और स्नेह रखती हूँ, लेकिन वह मुझसे प्रेम नहीं करता।” गुरु ने कहा, "अच्छा, मान लो कि वह तुम्हारे साथ ऐसा व्यवहार करता है। दुखी मत होना। जब उसे तुम्हारे सद्गुण याद आएंगे, तो वह सर्वोच्च शक्ति केवल तुम्हें ही प्रदान करेगा।" और उनके अनुरोध पर उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

यह पुरानी कहानी ऊपर दी गई कहानी जैसी ही है, लेकिन इस मामले में, जब पति-पत्नी घर लौट रहे थे, तो कुछ शिकारियों ने उनकी व्यथा देखी और उन्हें एक भुनी हुई छिपकली दी और उसे आपस में बाँटने को कहा। राजमाता ने उसे एक लता से बाँधकर रस्सी की तरह इस्तेमाल किया और उसे हाथ में लिए अपने रास्ते पर चल पड़ी। वे एक झील के पास पहुँचे और मुख्य सड़क छोड़कर बोधि वृक्ष के नीचे बैठ गए। राजकुमार ने कहा, "जाओ, मेरी प्रिय, कमल के पत्ते में झील से पानी ले आओ, फिर हम यह मांस खाएँगे।" उसने छिपकली को पेड़ की शाखा पर लटका दिया और पानी लाने चली गई। उसके साथी ने सारी छिपकली खा ली और फिर मुँह फेरकर पूंछ का सिरा हाथ में पकड़े बैठ गया। जब वह पानी लेकर लौटी, तो उसने कहा, "मेरी प्यारी, छिपकली पेड़ की डाल से नीचे उतरी और चींटियों के टीले की ओर चली गई। मैं दौड़ा और उसकी पूंछ का सिरा पकड़ लिया। छिपकली दो टुकड़ों में टूट गई और जो हिस्सा मैंने पकड़ा था, वह मेरे हाथ में छोड़कर बिल में गायब हो गई।"

"अच्छा, महाराज," उसने उत्तर दिया, "हम उस भुनी हुई छिपकली से कैसे निपट सकते हैं जो भाग जाती है? चलिए, हम चलते हैं।"

और इस प्रकार जल पीकर वे बनारस की यात्रा पर निकल पड़े। राजकुमार ने सिंहासन ग्रहण करते ही उन्हें रानी की उपाधि दी, परन्तु उन्हें कोई आदर-सम्मान नहीं दिया गया। बोधिसत्व ने उनका सम्मान दिलाने की इच्छा से राजा के समक्ष खड़े होकर उनसे पूछा, "हे देवी, क्या ऐसा नहीं है कि हमें आपसे कुछ भी प्राप्त नहीं होता? आप हमारी उपेक्षा क्यों करती हैं?"

"महोदय," उसने कहा, "मुझे राजा से कुछ नहीं मिलता। तो मैं आपको उपहार कैसे दूं? अब राजा मुझे क्या देंगे? जब हम जंगल से लौट रहे थे, तो उन्होंने भुनी हुई छिपकली अकेले ही खा ली थी।"

"महामहिम," उसने कहा, "राजा इस तरह का व्यवहार नहीं करेंगे। उनके बारे में इस तरह की बातें न करें।"

तब उस महिला ने उससे कहा, "महोदय, यह बात आपको स्पष्ट नहीं है, लेकिन राजा और मुझे यह बात पूरी तरह से स्पष्ट है," और उसने पहला श्लोक दोहराया:-

तो फिर सबसे पहले आप मेरे संपर्क में कब आए थे?
हे राजा, जब आप घने जंगलों में हों,
भुनी हुई छिपकली ने अपना धागा तोड़ दिया
और बो (पीपल) के पेड़ की शाखा से मुक्त हो गया।
हालांकि छाल के आवरण के नीचे, मुझे लगता है,
तलवार और कवच दिखाई दिए।

इस प्रकार रानी ने राजा के अपराध को उनके दरबारियों के बीच प्रकट करते हुए कहा। बोधिसत्व ने यह सुनकर कहा, "हे देवी, जब से तुम्हारे पति ने तुमसे प्रेम करना छोड़ दिया है, तब से तुम यहाँ क्यों रह रही हो और हम दोनों के लिए अप्रिय स्थिति पैदा कर रही हो?" और उन्होंने दो श्लोक दोहराए:-

जो आपका सम्मान करता है, उसके प्रति उचित सम्मान प्रदर्शित करें।
दी गई अच्छी सेवा के लिए पूर्ण भुगतान के साथ:
कंजूसों पर दया मत करो।
और न ही उन लोगों से दूर रहें जो आपकी उपस्थिति को प्रभावित कर सकते हैं।
उस दुष्ट को छोड़ दो जिसने तुम्हें त्याग दिया है।
और उससे प्रेम मत करो जो तुमसे प्रेम न करता हो।
जिस प्रकार एक पक्षी बंजर पेड़ को छोड़ देता है,
और वह किसी दूरदराज के जंगल में अपना घर तलाशता है।

जब बोधिसत्व बोल ही रहे थे, तभी राजा को उनके गुणों की याद आई और उन्होंने कहा, "मेरी प्रिय, मैंने बहुत समय तक तुम्हारे गुणों पर ध्यान नहीं दिया, परन्तु इस ज्ञानी पुरुष के वचनों से मैंने उन्हें जान लिया है। मेरी गलती क्षमा करो। मैं अपना सारा राज्य तुम्हें ही समर्पित करता हूँ।" और इस पर उन्होंने चौथा श्लोक कहा:-

जहां तक उसके अधिकार में हो,
एक राजा को जो कृतज्ञता दिखानी चाहिए:
मैं अपना सारा राज्य तुम्हें सौंपता हूँ।
आप जिसे चाहें, उपहार दे सकते हैं।

इन शब्दों के साथ राजा ने रानी को सर्वोच्च शक्ति प्रदान की, और यह सोचते हुए कि "इसी व्यक्ति के माध्यम से मुझे उसके गुणों की याद आई," उसने उस बुद्धिमान व्यक्ति को भी बहुत शक्ति प्रदान की।

गुरु ने अपना पाठ समाप्त करते हुए जन्म का वर्णन किया: सत्यों के समापन पर, पति और पत्नी दोनों ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की प्राप्ति की: "इस कहानी के पति और पत्नी ने पुरानी कहानी में भी वही भूमिका निभाई थी। लेकिन मैं स्वयं बुद्धिमान सेवक था।"

फुटनोट:

(1)संख्या 223 की तुलना करें

(2) क्रमांक 320 देखें

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **राजोवदा-जातक2**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-334-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 334
राजोवदा-जातक

“बाढ़ में बैल,” इत्यादि—यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में एक राजा को सलाह देते समय सुनाई थी। प्रारंभिक कथा पूरी तरह से तेसाकुना जन्म (*1) में मिलेगी। लेकिन इस संस्करण में गुरु ने कहा, “हे महाराज, प्राचीन काल के राजाओं ने बुद्धिमानों की बात सुनकर न्यायपूर्वक शासन किया और स्वर्गलोक प्राप्त किया।” और राजा के अनुरोध पर उन्होंने प्राचीन काल की एक कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्याभिषेक था, तब बोधिसत्व का जन्म एक ब्राह्मण परिवार में हुआ। जब वे वयस्क हुए, तो उन्होंने सभी कलाओं का प्रशिक्षण प्राप्त किया और तपस्वी जीवन अपनाकर सभी क्षमताओं और उपलब्धियों को विकसित किया। वे हिमालय के एक रमणीय क्षेत्र में निवास करने लगे और जंगली फलों और जड़ों का सेवन करने लगे। उस समय राजा उनकी कमियों को जानने के लिए उत्सुक थे और यह जानने के लिए इधर-उधर भटकने लगे कि क्या कोई ऐसा व्यक्ति है जो उन्हें उनकी कमियां बता सके। जब उन्हें न तो घर के अंदर और न ही बाहर कोई ऐसा व्यक्ति मिला जो उनकी आलोचना कर सके, तो वे भेस बदलकर ग्रामीण इलाकों में घूमने लगे और सोचने लगे, "ग्रामीण इलाकों में कैसा होगा?" वहां भी कोई ऐसा व्यक्ति नहीं मिला जो उनकी आलोचना कर सके, और लोगों को केवल उनके गुणों की ही प्रशंसा करते सुनकर उन्होंने सोचा, "हिमालय क्षेत्र में कैसा होगा?" और वह जंगल में चला गया और भटकता रहा, जब तक कि वह बोधिसत्व के आश्रम तक नहीं पहुँच गया। वहाँ उसने बोधिसत्व को प्रणाम किया और उनसे मैत्रीपूर्ण ढंग से बात की, फिर एक तरफ बैठ गया। उस समय बोधिसत्व कुछ पके हुए अंजीर खा रहे थे, जो वे जंगल से लाए थे। वे स्वादिष्ट और मीठे थे, मानो पिसी हुई चीनी हों। उन्होंने राजा से कहा, "महाराज, मैं आपसे निवेदन करता हूँ, कृपया यह पका हुआ अंजीर खाएँ और थोड़ा पानी पी लें।"

राजा ने ऐसा ही किया और बोधिसत्व से पूछा, "हे पूज्यवर, यह पका हुआ अंजीर इतना मीठा क्यों है?"

"महामहिम," उन्होंने उत्तर दिया, "राजा अब न्याय और निष्पक्षता के साथ शासन कर रहे हैं। इसीलिए यह इतना सुखद है।"

"क्या एक अन्यायी राजा के शासनकाल में इसकी मिठास खो जाती है, महोदय?"

"जी हां, महाराज, अन्यायपूर्ण राजाओं के समय में तेल, शहद, गुड़ और इसी प्रकार की चीजें, साथ ही जंगली जड़ें और फल भी अपनी मिठास और स्वाद खो देते हैं, और केवल ये ही नहीं बल्कि पूरा राज्य खराब और बेस्वाद हो जाता है; लेकिन जब शासक न्यायप्रिय होते हैं, तो ये चीजें मीठी और स्वाद से भरपूर हो जाती हैं, और पूरा राज्य अपना स्वाद और रंगत वापस पा लेता है।"

राजा ने कहा, "ऐसा ही होना चाहिए, पूज्यवर," और बिना राजा को बताए, उसने बोधिसत्व को प्रणाम किया और बनारस लौट गया। तपस्वी की बात सिद्ध करने के लिए उसने अन्यायपूर्ण शासन किया और मन ही मन कहा, "अब मुझे सब पता चल जाएगा," और कुछ समय बाद वह वापस लौटा और बोधिसत्व को प्रणाम करके आदरपूर्वक एक तरफ बैठ गया। बोधिसत्व ने ठीक उन्हीं शब्दों का प्रयोग करते हुए उसे एक पका हुआ अंजीर भेंट किया, जो उसे कड़वा लगा। कड़वा पाकर उसने उसे थूक दिया और कहा, "यह कड़वा है, महाराज।"

बोधिसत्व ने कहा, "हे महाराज, राजा अवश्य ही अन्यायी है, क्योंकि जब शासक अन्यायी होते हैं, तो जंगल के जंगली फलों से लेकर सब कुछ अपनी मिठास और स्वाद खो देता है।" और इस पर उन्होंने ये श्लोक पढ़े:-

बाढ़ के बीच से बैल टेढ़ा-मेढ़ा रास्ता अपनाएगा।
गायों का पूरा झुंड उसके पीछे-पीछे चल रहा था:
इसलिए यदि कोई नेता कठिन रास्तों का अनुसरण करता है,
वह इस अशिष्ट समूह को नीच उद्देश्यों की ओर ले जाएगा।
और संपूर्ण राज्य उस तरह के पछतावे के युग में डूबा हुआ है।
लेकिन अगर बैल को सीधे रास्ते पर ले जाना चाहिए,
गायों का झुंड सीधे उसके पीछे-पीछे चलता है।
इसलिए उनका मुख्य उद्देश्य सही मार्ग अपनाना होना चाहिए।
आम जनता अन्याय से बच जाएगी।
और पूरे राज्य में पवित्र शांति का प्रसार होगा।

बोधिसत्व के सत्य के प्रवचन को सुनकर राजा ने उन्हें यह बताया कि वह राजा हैं और कहा, "हे परम पूज्य, पहले मेरी ही वजह से अंजीर पहले मीठे और फिर कड़वे हो गए थे, परन्तु अब मैं उन्हें फिर से मीठा बना दूंगा।" फिर उन्होंने बोधिसत्व को प्रणाम किया और घर लौट आए, और न्यायपूर्वक शासन करते हुए सब कुछ उसकी मूल स्थिति में बहाल कर दिया।

गुरु ने अपना पाठ समाप्त करते हुए जन्म का वर्णन किया: "उस समय आनंद राजा थे और मैं स्वयं तपस्वी था।"

फुटनोट:

(1) संख्या 521

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **जम्बूक-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-335-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 335
जंबुका-जातक

"सियार सावधान," इत्यादि-- यह कहानी गुरु ने बाँस के जंगल में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें देवदत्त द्वारा बुद्ध का अनुकरण करने के प्रयास का वर्णन है। इस कहानी की उत्पत्ति का घटनाक्रम पहले ही विस्तार से बताया जा चुका है। (*1) यहाँ उसका संक्षिप्त सारांश दिया गया है।

जब गुरु ने सारिपुत्र से पूछा कि देवदत्त ने उन्हें देखकर क्या किया, तो वरिष्ठ भिक्षु ने उत्तर दिया, "महोदय, आपको उतारते समय उसने मेरे हाथ में पंखा थमा दिया और लेट गया, तब कोकालिका ने उसके सीने पर घुटने से प्रहार किया: और इस प्रकार आपको उतारते समय वह मुसीबत में पड़ गया।" गुरु ने कहा, "देवदत्त के साथ पहले भी ऐसा हो चुका है," और वरिष्ठ भिक्षु के बार-बार पूछने पर उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्याभिषेक था, तब बोधिसत्व का जन्म एक युवा सिंह के रूप में हुआ और वे हिमालय की एक गुफा में रहने लगे। एक दिन भैंस का वध करके उसका मांस खाने के बाद उन्होंने पानी पिया और घर लौट आए। तभी एक सियार ने उन्हें देख लिया और भागने में असमर्थ होकर पेट के बल लेट गया।

शेर ने कहा, "इसका क्या मतलब है, श्रीमान सियार?"

"महाराज," उसने कहा, "मैं आपका सेवक बनना चाहूंगा।"

शेर ने कहा, "अच्छा, तो आओ," और उसे अपने निवास स्थान पर ले जाकर प्रतिदिन उसके लिए मांस लाता और उसे खिलाता रहा। जब सियार शेर के दिए हुए मांस को खाकर मोटा हो गया, तो एक दिन उसमें अहंकार जागा और वह शेर के पास आकर बोला, "हे स्वामी, मैं आपके लिए सदा एक बाधा रहा हूँ। आप मुझे निरंतर मांस लाते और खिलाते हैं। आज आप यहीं रहिए। मैं जाकर एक हाथी मारूंगा और पेट भरकर आपके लिए कुछ मांस लाऊंगा।" शेर ने कहा, "मित्र सियार, इसे अपनी दृष्टि में अच्छा मत समझो। तुम ऐसे वंश से नहीं आए हो जो हाथियों को मारकर उनका मांस खाते हों। मैं एक हाथी मारूंगा और उसका मांस तुम्हारे लिए लाऊंगा। हाथी तो विशाल शरीर वाला होता है। अपने स्वभाव के विपरीत कार्य मत करो, बल्कि मेरी बात सुनो।" और इस पर उसने पहला श्लोक कहा:-

सियार, सावधान!
उसके दांत लंबे हैं।
तुम्हारी तुच्छ जाति में से एक
शायद ही हिम्मत कर पाऊंगा

इतना विशाल और मजबूत
ऐसे राक्षस का सामना करना बहुत कठिन है।

शेर के मना करने के बावजूद, सियार गुफा से बाहर निकला और तीन बार सियार की दहाड़ लगाई। पहाड़ की तलहटी की ओर देखते हुए, उसने नीचे एक काले हाथी को चलते हुए देखा। सिर के बल गिरने की सोचकर वह उछला और हवा में पलटते हुए हाथी के पैरों पर गिर पड़ा। हाथी ने अपना अगला पैर उठाकर सियार के सिर पर रख दिया और उसकी खोपड़ी के टुकड़े-टुकड़े कर दिए। सियार वहीं कराहता हुआ पड़ा रहा और हाथी चिंघाड़ता हुआ चला गया। बोधिसत्व आए और चट्टान के ऊपर खड़े होकर देखा कि सियार की मृत्यु कैसे हुई, और कहा, "अपने अहंकार के कारण ही यह सियार मारा गया," और तीन श्लोक कहे:-

एक बार एक सियार ने शेर के गौरव को धारण कर लिया था।
और हाथी ने बराबर के प्रतिद्वंद्वी के रूप में चुनौती दी।
वह धरती पर औंधा पड़ा था, और उसके सीने से चीर-फाड़ की आवाज़ें आ रही थीं।
उसने उस जल्दबाजी में किए गए कृत्य पर पश्चाताप करना सीख लिया।
तो भला कौन असाधारण प्रसिद्धि वाले व्यक्ति को चुनौती दे सकता है?
और न ही उसके सुगठित शरीर की मजबूती पर ध्यान दिया।
उस सियार का भी वही दुखद अंत हुआ जो उस पर आया था।
लेकिन अपनी शक्ति का माप कौन जानता है?
और उनकी भाषा में संयम का अच्छा प्रयोग स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।
अपने कर्तव्य के प्रति निष्ठावान रहते हुए वह जीवित रहता है और अपने प्रतिद्वंद्वियों पर विजय प्राप्त करता है।
इस प्रकार बोधिसत्व ने इन श्लोकों में इस संसार में किए जाने वाले उचित कर्तव्यों का उपदेश दिया।

गुरु ने अपना पाठ समाप्त करते हुए जन्म का वर्णन किया: "उस समय देवदत्त सियार था और मैं स्वयं सिंह था।"

फुटनोट:

(1) क्रमांक 204 देखें

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **ब्रहचट्ट-जातक**
***स्रोत** : एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-336-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 336
ब्रह्मचट्ट जातक

"घास अभी भी स्थिर है," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक बदमाश के बारे में सुनाई थी। जिस घटना से यह कहानी प्रेरित हुई, उसका वर्णन पहले ही किया जा चुका है।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व उनके मंत्री और सांसारिक एवं आध्यात्मिक सलाहकार बने। बनारस के राजा ने एक विशाल सेना के साथ कोसल के राजा पर आक्रमण किया और श्रावस्ती नगर पहुँचकर युद्ध के बाद राजा को बंदी बना लिया। कोसल के राजा का एक पुत्र था, जिसका नाम राजकुमार चट्टा था। वह भेष बदलकर तक्षशिला चले गए, जहाँ उन्होंने तीनों वेदों और अठारह विद्याओं का ज्ञान प्राप्त किया। तक्षशिला छोड़कर वे विज्ञान के व्यावहारिक उपयोगों का अध्ययन करते हुए एक सीमावर्ती गाँव पहुंचे। इस गाँव के पास ही एक जंगल में पाँच सौ तपस्वी प्यालों की झोपड़ियों में रहते थे। राजकुमार उनके पास गए और उनसे कुछ ज्ञान प्राप्त करने के उद्देश्य से वे भी तपस्वी बन गए और उनसे जो भी ज्ञान प्राप्त करना चाहते थे, वह ग्रहण कर लिया। समय के साथ वे शिष्यों के उस समूह के नेता बन गए।

एक दिन उन्होंने अपने शिष्यों को संबोधित करते हुए उनसे पूछा, "महोदय, आप मध्य क्षेत्र में क्यों नहीं जाते?"

उन्होंने कहा, "महोदय, मध्य क्षेत्र में ज्ञानी पुरुष रहते हैं। वे प्रश्न पूछते हैं, धन्यवाद देने और आशीर्वाद दोहराने के लिए कहते हैं, और अयोग्य लोगों को फटकारते हैं। इसलिए हम वहां जाने से डरते हैं।"

"चिंता मत करो, मैं तुम्हारे लिए यह सब संभाल लूंगा," उसने कहा।

“तो हम चलते हैं,” उन्होंने कहा। और वे सब अपनी-अपनी ज़रूरत की चीज़ें लेकर समय पर बनारस पहुँचे। बनारस के राजा ने कोसल राज्य को अपने अधिकार में लेकर वहाँ वफादार अधिकारियों को राज्यपाल नियुक्त किया और स्वयं उनका सारा खजाना इकट्ठा करके बनारस लौट आया। उसने लोहे के बर्तनों में खजाना भरकर राजमहल के बगीचे में गाड़ दिया और वहीं रहने लगा। ये साधु राजा के बगीचे में रात बिताने के बाद अगले दिन शहर में भीख मांगने गए और महल के द्वार पर पहुँचे। राजा उनके व्यवहार से इतना प्रसन्न हुआ कि उसने उन्हें बुलाया और चबूतरे पर बैठाकर चावल और रोटी खिलाई और भोजन के समय तक उनसे तरह-तरह के प्रश्न पूछे। चट्टा ने राजा के सभी प्रश्नों के उत्तर देकर उसका दिल जीत लिया और भोजन के अंत में उसने कई प्रकार से धन्यवाद दिया। राजा और भी प्रसन्न हुआ और उनसे वचन लेकर उन्हें अपने बगीचे में ठहरा लिया।

चट्टा को दबे हुए खजाने को निकालने का एक मंत्र आता था, और वहाँ रहते हुए उसने सोचा, "मेरे पिता का पैसा इस आदमी ने कहाँ रखा होगा?" इसलिए उसने मंत्र दोहराया और चारों ओर खोजबीन की तो पाया कि वह बगीचे में दबा हुआ है। यह सोचकर कि इस पैसे से वह अपना राज्य भी वापस पा लेगा, उसने तपस्वियों से कहा, "महोदय, मैं कोसल के राजा का पुत्र हूँ। जब बनारस के राजा ने हमारे राज्य पर कब्जा कर लिया था, तब मैं भेस बदलकर भाग निकला था और अब तक अपनी जान बचा पाया हूँ। लेकिन अब मुझे वह संपत्ति मिल गई है जो मेरे परिवार की थी। मैं इससे जाकर अपना राज्य वापस पाऊँगा। आप क्या करेंगे?"

उन्होंने जवाब दिया, "हम भी आपके साथ चलेंगे।"

“ठीक है,” उसने कहा और चमड़े के बड़े-बड़े बोरे बनवाए। रात में उसने ज़मीन में गड्ढा खोदकर खजाने के बर्तन निकाले और उनमें पैसा भरकर बर्तनों को घास से भर दिया। फिर उसने पाँच सौ साधुओं और अन्य लोगों को भी पैसा लेने का आदेश दिया और श्रावस्ती नगर भाग गया। वहाँ उसने राजा के सभी अधिकारियों को पकड़वा लिया और अपना राज्य पुनः प्राप्त कर लिया। उसने शहर की दीवारों, मीनारों और अन्य निर्माणों का जीर्णोद्धार करवाया और इस प्रकार शहर को किसी भी शत्रु राजा के आक्रमण से अभेद्य बनाकर वहाँ निवास करने लगा। बनारस के राजा को सूचना मिली, “सन्यासी आपके उद्यान से खजाना लेकर भाग गए हैं।” वह उद्यान गया और बर्तनों को खोलकर देखा तो उनमें केवल घास ही पाई। अपने खोए हुए खजाने के कारण वह घोर शोक में डूब गया। शहर जाते हुए वह "घास, घास" बुदबुदाते हुए इधर-उधर भटक रहा था, और कोई भी उसके दुःख को शांत नहीं कर पा रहा था। बोधिसत्व ने सोचा, "राजा बड़ी मुसीबत में है। वह इधर-उधर भटक रहा है, व्यर्थ की बातें कर रहा है। मेरे सिवा कोई भी उसके दुःख को दूर नहीं कर सकता। मैं ही उसे उसकी मुसीबत से मुक्त करूँगा।" इसलिए एक दिन जब वह राजा के साथ शांति से बैठा था, और राजा ने फिर से बातें करना शुरू किया, तो उसने पहली पंक्ति दोहराई:

"घास" अब भी तुम्हारी लगातार पुकार है;
आपकी घास कौन ले गया?
आपको इसकी आवश्यकता क्यों है?
क्या आप सिर्फ यही शब्द बोलते हैं?
राजा ने उसकी बात सुनकर दूसरे श्लोक में उत्तर दिया:

चट्टा, प्रसिद्धि का पवित्र व्यक्ति,
संयोगवश बात इस प्रकार सामने आई:
मुझे लगता है कि इसके लिए केवल वही दोषी है।
सोने की जगह घास का इस्तेमाल करना।
यह सुनकर बोधिसत्व ने तीसरा श्लोक कहा:

समझदार लोगों को अपना नियम बनाना चाहिए,
"थोड़ा दो और खूब ले लो।"
जो कुछ उसने लिया वह सब उसका अपना था।
उसने वहाँ सिर्फ घास छोड़ी थी।

यह सुनकर राजा ने चौथा श्लोक बोला:

सद्गुण ऐसे किसी नियम का पालन नहीं करता।
ये तो मूर्खों के लिए ही उपयुक्त नैतिक सिद्धांत हैं।
उनके नैतिक मूल्यों पर संदेह होना स्वाभाविक है।
ज्ञान प्राप्त करना भी व्यर्थ है।
यद्यपि राजा ने इस प्रकार चट्टा को दोषी ठहराया, लेकिन बोधिसत्व के इन शब्दों से वह अपने दु:ख से मुक्त हो गया और उसने अपने राज्य पर न्यायपूर्वक शासन किया।

गुरु ने यहाँ अपना पाठ समाप्त किया और जन्म की पहचान बताई: "उस समय बेईमान भाई (भिक्षु) महान चट्टा थे, और मैं स्वयं बुद्धिमान मंत्री था।"

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **पीठ-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-337-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 337
पीठा जातक

"अफ़सोस! हमने आपको भेंट की थी," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक भिक्षु के बारे में सुनाई थी। कहा जाता है कि वह गाँव से जेतवन मठ आया था और अपना भिक्षापात्र और वस्त्र त्यागकर गुरु को प्रणाम किया तथा युवा भिक्षुओं से पूछा, "महोदय, श्रावस्ती नगर में आने वाले पराभिषेक भिक्षुओं की देखभाल कौन करता है?" उन्होंने कहा, "कोषाध्यक्ष अनाथपिंडिका और महान और पवित्र गृहस्थ बहन विशाखा भिक्षुओं की देखभाल करते हैं और उनके लिए माता-पिता के समान हैं।" उन्होंने कहा, "बहुत अच्छा," और अगले दिन सुबह-सुबह, किसी भी भिक्षु के घर में प्रवेश करने से पहले ही, वह अनाथपिंडिका के द्वार पर आ गया। समय से पहले आने के कारण वहाँ उसकी सेवा करने वाला कोई नहीं था। वहाँ भी कुछ न मिलने पर वह विशाखा के घर चला गया। वहाँ भी समय से पहले आने के कारण उसे कुछ नहीं मिला। इधर-उधर भटकने के बाद वह वापस आया और जब उसने देखा कि चावल का दलिया खत्म हो गया है, तो वह चला गया। फिर वह इधर-उधर भटकता रहा और लौटकर जब उसने देखा कि चावल खत्म हो गया है, तो वह मठ में वापस गया और बोला, "यहाँ के भिक्षु इन दो परिवारों को सच्चे विश्वासी कहते हैं, लेकिन वास्तव में ये दोनों ही अविश्वासी और नास्तिक हैं।" इस प्रकार वह इन परिवारों को बुरा-भला कहता रहा। एक दिन सत्य के हॉल में चर्चा शुरू हुई कि गाँव का एक भिक्षु कुछ घरों के दरवाजे पर सुबह जल्दी पहुँच गया और भिक्षा न मिलने पर उन परिवारों को बुरा-भला कहने लगा। जब गुरुजी आए और उन्होंने पूछा कि भिक्षु किस विषय पर चर्चा कर रहे हैं, तो यह सुनकर उन्होंने भिक्षुजी को बुलाया और पूछा कि क्या यह सच है। जब भिक्षुजी ने कहा, "जी जी, यह सच है," तो गुरुजी ने पूछा, "भाइ, तुम क्रोधित क्यों हो? पुराने समय में, बुद्ध के आने से पहले, जब तपस्वी किसी घर में जाते थे और उन्हें भिक्षा नहीं मिलती थी, तो वे क्रोधित नहीं होते थे।" और इसी के साथ उन्होंने पुराने जमाने की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, बोधिसत्व का जन्म एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। वयस्क होने पर उन्होंने तक्षशिला में सभी विद्याओं का अध्ययन किया और बाद में एक तपस्वी का जीवन व्यतीत किया। हिमालय में दीर्घकाल व्यतीत करने के बाद वे नमक और सिरका लेने बनारस गए और एक बगीचे में अपना निवास स्थान बनाकर अगले दिन भिक्षा मांगने के लिए शहर में प्रवेश किया। उस समय बनारस में एक व्यापारी था, जो सच्चा विश्वासी था। बोधिसत्व ने पूछा कि कौन सा परिवार विश्वासी है, और व्यापारी के परिवार का नाम सुनकर वे उसके घर गए। उस समय व्यापारी राजा को प्रणाम करने गया हुआ था और उसके परिवार का कोई भी सदस्य उन्हें देख नहीं पाया। इसलिए वे वापस लौट आए।

फिर महल से लौट रहे व्यापारी ने उन्हें देखा और प्रणाम करके अपना भिक्षापात्र लेकर उन्हें अपने घर ले गया। वहाँ उसने उन्हें बैठने के लिए आमंत्रित किया और उनके पैर धोकर और मालिश करके तथा चावल, रोटी और अन्य भोजन देकर उनका सत्कार किया। भोजन के दौरान उसने उनसे कई बातें पूछीं और भोजन समाप्त होने के बाद, उन्हें प्रणाम करके एक तरफ आदरपूर्वक बैठते हुए कहा, “आदरणीय महोदय, हमारे द्वार पर आने वाले अजनबी, चाहे भिखारी हों, पुजारी हों या ब्राह्मण हों, पहले कभी भी आदर और सम्मान प्राप्त किए बिना नहीं गए, परन्तु आज हमारे संरक्षकों द्वारा न देखे जाने के कारण आप बिना बैठने, बिना पानी पिए, बिना पैर धोए और बिना चावल-दलिया खाए चले गए। यह हमारी गलती है। कृपया हमें क्षमा करें।” और इन शब्दों के साथ उसने पहला श्लोक कहा:

अफसोस! हमने आपको बैठने की जगह नहीं दी।
पानी नहीं लाया गया, न ही खाने के लिए कुछ।
हम यहां अपने पापों को स्वीकार करते हैं।
हे परम पूज्य, हम आपसे विनम्रतापूर्वक क्षमा करने की विनती करते हैं।
यह सुनकर बोधिसत्व ने दूसरा श्लोक दोहराया:

मुझे कुछ भी स्वीकार नहीं करना है।
मुझे कोई गुस्सा नहीं आता।
यह विचार कि एक बार मैं इसे अपना बना लूँ
मेरे मन में यह बात आ गई,
यहां के लोगों की आदतें
ये तो बस बहुत छोटे हैं।"
यह सुनकर व्यापारी ने दो और पंक्तियों में उत्तर दिया:

हमारे परिवार की परंपरा—यह कुछ इस प्रकार थी
हमें यह बहुत पुराने समय से प्राप्त है--
अजनबी को बैठने की जगह देना है।
उसकी ज़रूरतों की पूर्ति करो, उसके पैरों के लिए पानी लाओ
और हर मेहमान को अपने प्रिय रिश्तेदार की तरह सम्मानपूर्वक व्यवहार करना चाहिए।
और बोधिसत्व ने वहां कुछ दिन रहने और बनारस के व्यापारी को उसके कर्तव्य का उपदेश देने के बाद सीधे हिमालय वापस चले गए, जहां उन्होंने सभी क्षमताओं और उपलब्धियों को विकसित किया।

गुरु ने अपना पाठ समाप्त करते हुए सत्यों का खुलासा किया और जन्म का वर्णन किया: सत्यों के समापन पर, भिक्षु ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की सिद्धि प्राप्त की: "उस समय आनंद बनारस का व्यापारी था, और मैं स्वयं तपस्वी था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **थुसा-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----॥-338-॥----->>>> अगला

जातक क्रमांक 338
थुसा-जातक

"इतनी अच्छी समझ के साथ," इत्यादि - यह कथा गुरु ने बाँस के वन में रहते हुए राजकुमार अजातशत्रु की सुनाई थी। उनके गर्भ धारण के समय, कोसल के राजा की पुत्री, उनकी माता के मन में अपने पति बिम्बिसार के दाहिने घुटने से रक्त पीने की तीव्र इच्छा उत्पन्न हुई। अपनी दासियों द्वारा पूछे जाने पर, उन्होंने उन्हें अपनी स्थिति बताई। राजा ने भी यह सुनकर अपने ज्योतिषियों को बुलाया और कहा, "रानी को ऐसी-ऐसी इच्छा है। इसका क्या परिणाम होगा?" ज्योतिषियों ने कहा, "रानी के गर्भ में पल रहा बच्चा आपको मार डालेगा और आपका राज्य छीन लेगा।" राजा ने कहा, "यदि मेरा पुत्र मुझे मार डाले और मेरा राज्य छीन ले, तो इसमें क्या हर्ज है?" फिर उन्होंने तलवार से अपना दाहिना घुटना चीर दिया और रक्त को एक सोने के पात्र में गिराकर रानी को पीने के लिए दे दिया। उसने सोचा, "अगर

मेरा बेटा अपने पिता को मार डाले, तो मुझे उसकी क्या परवाह होगी?" और उसने गर्भपात कराने की कोशिश की। राजा ने यह सुनकर उसे अपने पास बुलाया और कहा, "मेरी प्रिय, ऐसा कहा जाता है कि मेरा बेटा मुझे मार डालेगा और मेरा राज्य छीन लेगा।"

लेकिन मैं बुढ़ापे और मृत्यु से मुक्त नहीं हूँ: मुझे अपने बच्चे का चेहरा देखने की अनुमति दो। अब से ऐसा व्यवहार मत करना।" लेकिन वह फिर भी बगीचे में गई और पहले की तरह ही व्यवहार करती रही। राजा ने यह सुनकर उसके बगीचे में जाने पर रोक लगा दी, और जब वह पूरे समय बगीचे में रही तो उसने एक पुत्र को जन्म दिया। उसके नामकरण के दिन, क्योंकि वह जन्म से पहले ही अपने पिता का शत्रु था, उसका नाम राजकुमार अजातशत्रु रखा गया। जब वह राजसी परिवेश में बड़ा हो रहा था, एक दिन गुरु पाँच सौ भिक्षुओं के साथ राजा के महल में आए और बैठ गए। राजा ने बुद्ध के नेतृत्व में भिक्षुओं की सभा को उत्तम भोजन, कठोर और नरम दोनों प्रकार का, से दावत दी। गुरु को प्रणाम करने के बाद राजा धर्म मार्ग सुनने के लिए बैठ गए। इसी समय उन्होंने युवा राजकुमार को वस्त्र पहनाए और राजा के पास लाए। राजा ने बच्चे का बड़े स्नेह से स्वागत किया और उसे अपनी गोद में बिठा लिया, और एक पिता के अपने बच्चे के प्रति स्वाभाविक प्रेम से उसे दुलारते हुए, धर्म मार्ग की बात नहीं सुनी। गुरु ने उसकी लापरवाही देखकर कहा, "महाराज, पहले के राजा अपने पुत्रों पर संदेह करते थे।" उन्हें गुप्त स्थान पर रखा गया था, और आदेश दिया गया था कि उनकी मृत्यु के बाद उन्हें लाया जाए और सिंहासन पर बिठाया जाए। और राजा के अनुरोध पर उसने उसे पुराने समय की एक कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्याभिषेक था, तब बोधिसत्व तक्षशिला में एक प्रसिद्ध शिक्षक थे और वे कई युवा राजकुमारों और ब्राह्मणों के पुत्रों को विद्याओं का प्रशिक्षण देते थे। बनारस के राजा का पुत्र सोलह वर्ष की आयु में उनके पास आया और तीनों वेदों और सभी विद्याओं में निपुणता प्राप्त करने के बाद, उसने अपने गुरु से विदा ली। गुरु ने अपनी दूरदृष्टि से उसे देखकर सोचा, "इस व्यक्ति पर उसके पुत्र के कारण कोई संकट आ रहा है। मैं अपनी जादुई शक्ति से उसे इससे बचाऊंगा।" और चार श्लोक रचकर उन्होंने युवा राजकुमार को दिए और इस प्रकार कहा: "मेरे पुत्र, जब तुम सिंहासन पर बैठोगे और तुम्हारा पुत्र सोलह वर्ष का हो जाएगा, तब चावल खाते समय पहला श्लोक बोलना; महान सभा के समय दूसरा श्लोक दोहराना; महल की छत पर चढ़ते समय सीढ़ियों के शीर्ष पर खड़े होकर तीसरा श्लोक बोलना; और राजकक्ष में प्रवेश करते समय दहलीज पर खड़े होकर चौथा श्लोक बोलना।"

राजकुमार ने तुरंत इस बात पर सहमति जताई और अपने गुरु को प्रणाम करके चले गए। वायसराय के रूप में कार्य करने के बाद, अपने पिता की मृत्यु पर वे सिंहासन पर आसीन हुए। जब उनका पुत्र सोलह वर्ष का था, तब राजा को बगीचे में आराम करते हुए देखकर, अपने पिता की शान और शक्ति को देखकर उसके मन में उन्हें मारकर उनके राज्य पर कब्जा करने की इच्छा जागृत हुई और उसने अपने सेवकों से इस बारे में बात की। उन्होंने कहा, "महाराज, यह सच है, लेकिन बुढ़ापे में सत्ता प्राप्त करने का क्या लाभ? आपको किसी न किसी तरह राजा को मारकर उनके राज्य पर कब्जा करना ही होगा।" राजकुमार ने कहा, "मैं उनके भोजन में जहर मिलाकर उन्हें मार डालूंगा।" इसलिए उन्होंने थोड़ा जहर लिया और अपने पिता के साथ रात्रि भोजन करने बैठ गए। जब कटोरे में चावल परोसे ही जा रहे थे, तब राजा ने पहला श्लोक बोला:

इतनी अच्छी समझ के साथ, चावल के छिलके
  चूहे भेद करने में माहिर होते हैं:
उन्हें छिलकों को छूने की ज्यादा परवाह नहीं थी।
 लेकिन उन्होंने चावल को दाना-दाना करके खाया।

"मैं पकड़ा गया," राजकुमार ने सोचा, और चावल के कटोरे में जहर मिलाने की हिम्मत न करते हुए, वह उठा और राजा को प्रणाम करके चला गया। उसने अपने सेवकों को सारी कहानी सुनाई और कहा, "आज मैं पकड़ा गया। अब मैं उसे कैसे मारूँ?" उस दिन से वे बगीचे में छिपे रहे और फुसफुसाते हुए आपस में सलाह करते रहे, "अभी एक काम बाकी है। जब बड़ी सभा का समय आए, तो अपनी तलवार तैयार रखो, और सलाहकारों के बीच खड़े होकर, जब राजा लापरवाह दिखे, तो उसे अपनी तलवार से वार करके मार डालो।" इस प्रकार उन्होंने योजना बनाई। राजकुमार तुरंत मान गया, और बड़ी सभा के समय, उसने अपनी तलवार तैयार रखी और जगह-जगह घूमते हुए राजा पर वार करने का मौका ढूंढने लगा। उसी क्षण राजा ने दूसरा श्लोक बोला:

जंगल में ली गई गुप्त सलाह
  मेरे द्वारा इसका अर्थ यह समझा जाता है:
गांव के खेत ने कान में धीरे से फुसफुसाया
  मैंने भी यही सुना है।

राजकुमार ने सोचा, "मेरे पिता जानते हैं कि मैं उनका शत्रु हूँ," और भागकर अपने सेवकों को यह बात बता दी। सात-आठ दिन बीतने के बाद उन्होंने कहा, "राजकुमार, आपके पिता को आपके प्रति आपकी भावनाओं का ज्ञान नहीं है। यह सब आप अपने मन में ही सोच रहे हैं। उन्हें मृत्युदंड दे दीजिए।" इसलिए एक दिन उन्होंने अपनी तलवार उठाई और राजकक्ष की सीढ़ियों के शीर्ष पर खड़े हो गए। सीढ़ियों के शीर्ष पर खड़े राजा ने तीसरा श्लोक बोला:

एक बार एक बंदर ने क्रूरतापूर्ण उपाय किए
उसकी कोमल संतान संतान उत्पन्न करने में असमर्थ थी।

राजकुमार ने सोचा, "मेरे पिता मुझे पकड़ना चाहते हैं," और डर के मारे वह भाग गया और अपने सेवकों को बताया कि उसके पिता ने उसे धमकी दी है। दो सप्ताह बीतने के बाद उन्होंने कहा, "राजकुमार, यदि राजा को यह पता होता, तो वह इतने लंबे समय तक इसे सहन नहीं करते। आपकी कल्पना आपको ऐसा करने के लिए प्रेरित करती है। उसे मार डालो।" इसलिए एक दिन उसने अपनी तलवार उठाई और महल की ऊपरी मंजिल पर स्थित शाही कक्ष में प्रवेश करके पलंग के नीचे लेट गया, राजा के आते ही उसे मारने के इरादे से। शाम के भोजन के बाद, राजा ने अपने सेवकों को विदा कर दिया, क्योंकि वह लेटना चाहता था, और शाही कक्ष में प्रवेश करते ही, दहलीज पर खड़े होकर उसने चौथा श्लोक बोला:

आपके सतर्क रेंगने के तरीके
सरसों के खेत में भटकती हुई एक आंख वाली बकरी की तरह,
और तुम कौन हो जो यहाँ नीचे छिपे हुए हो?
यह बात भी मुझे पता है।

राजकुमार ने सोचा, "मेरे पिता को मेरी भनक लग गई है। अब वे मुझे मार डालेंगे।" भय से कांपते हुए वह पलंग के नीचे से बाहर आया और राजा के चरणों में अपनी तलवार फेंककर, "मुझे क्षमा करें, महाराज," कहते हुए उनके सामने गिड़गिड़ाने लगा। राजा ने कहा, "तुमने सोचा था, कोई नहीं जानता कि मैं क्या कर रहा हूँ।" और उसे फटकार लगाने के बाद, उन्होंने उसे जंजीरों में बांधकर कारागार में डालने और उस पर पहरा बिठाने का आदेश दिया। फिर राजा ने बोधिसत्व के गुणों का ध्यान किया। और कुछ समय बाद उनका निधन हो गया। जब उनके अंतिम संस्कार हो गए, तो उन्होंने युवा राजकुमार को कारागार से निकालकर सिंहासन पर बिठा दिया।

गुरु ने अपना पाठ यहीं समाप्त करते हुए कहा, "हे महाराज, पुराने समय में राजा उन मामलों में संदेह करते थे जिनमें संदेह उचित होता था," और फिर उन्होंने यह घटना सुनाई, लेकिन राजा ने उनकी बातों पर ध्यान नहीं दिया। इस प्रकार गुरु ने जन्म का कारण बताया: "उस समय तक्षशिला का प्रसिद्ध शिक्षक मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **बवेरु-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-339-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 339
बावेरु-जातक

"मुकुटदार मोर से पहले," इत्यादि - यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी, जिसमें कुछ पथभ्रष्ट अनुयायियों का वर्णन था जिन्होंने अपने पूर्व के लाभ और यश को खो दिया था। बुद्ध के जन्म से पहले लाभ और सम्मान प्राप्त करने वाले ये पथभ्रष्ट अनुयायी उनके जन्म के समय उसे खो बैठे और सूर्योदय के समय जुगनू के समान हो गए। सत्य के हॉल में उनके भाग्य पर चर्चा हुई। जब गुरु आए और उन्होंने भिक्षुओं से पूछा कि वे किस विषय पर चर्चा कर रहे हैं, तो विषय जानने पर उन्होंने कहा, "भाइयों, न केवल अब, बल्कि पहले भी, सद्गुणों से परिपूर्ण भिक्षुओं के प्रकट होने से पहले, निर्गुण भिक्षुओं ने सर्वोच्च लाभ और यश प्राप्त किया था, परन्तु जब सद्गुणों से परिपूर्ण भिक्षु प्रकट हुए, तो निर्गुण भिक्षुओं ने अपना लाभ और यश खो दिया।" और इसके साथ ही उन्होंने अतीत की एक कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, तब बोधिसत्व ने एक युवा मोर के रूप में जन्म लिया। जब वे पूर्ण रूप से बड़े हुए, तो वे अत्यंत सुंदर थे और एक वन में रहते थे। उसी समय कुछ व्यापारी बावेरु राज्य में आए और अपने साथ एक विदेशी कौआ लेकर आए। कहा जाता है कि उस समय बावेरु में कोई पक्षी नहीं थे। स्थानीय लोग जो समय-समय पर आते और उस पक्षी को जहाज के मस्तूल पर बैठे देखते, वे कहते, "इस पक्षी की त्वचा का रंग देखो। इसके गले के अंत में स्थित चोंच को देखो, और इसकी आंखें रत्न-जड़ित गेंदों जैसी हैं।" इस प्रकार उस कौए की प्रशंसा करते हुए उन्होंने उन व्यापारियों से कहा, "महोदय, हमें यह पक्षी दे दीजिए। हमें इसकी आवश्यकता है, और आप अपने देश में दूसरा प्राप्त कर सकते हैं।"

उन्होंने कहा, "तो इसे ले लो, लेकिन कीमत चुकानी होगी।"

उन्होंने कहा, "हमें यह एक सिक्के के बदले दे दो।"

व्यापारियों ने कहा, "हम इसे उस कीमत पर नहीं बेचेंगे।"

धीरे-धीरे अपनी पेशकश बढ़ाते हुए लोगों ने कहा, "इसे हमें सौ सिक्कों में दे दो।"

उन्होंने उत्तर दिया, "यह हमारे लिए बहुत उपयोगी है, लेकिन कृपया हमारे और आपके बीच मित्रता बनी रहे।" और उन्होंने इसे सौ सिक्कों में बेच दिया।

स्थानीय लोगों ने उसे ले जाकर एक सुनहरे पिंजरे में रख दिया और उसे तरह-तरह की मछलियाँ, मांस और जंगली फल खिलाए। एक ऐसी जगह पर जहाँ कोई और पक्षी नहीं थे, दस दुष्ट गुणों से युक्त एक कौवे ने सर्वोच्च लाभ और यश प्राप्त किया। अगली बार जब ये व्यापारी बावेरु राज्य में आए, तो वे एक शाही मोर लाए जिसे उन्होंने उंगलियां चटकाने पर चीखने और ताली बजाने पर नाचने का प्रशिक्षण दिया था। जब भीड़ जमा हो गई, तो पक्षी जहाज के आगे वाले हिस्से में खड़ा हो गया और अपने पंख फड़फड़ाते हुए मधुर ध्वनि निकालते हुए नाचने लगा।

इसे देखने वाले लोग बेहद प्रसन्न हुए और बोले, "पक्षियों का यह राजा बहुत सुंदर और प्रशिक्षित है। इसे हमें दे दीजिए।"

व्यापारियों ने कहा, "पहले हम एक कौआ लाए थे। आपने उसे ले लिया। अब हम यह शाही मोर लाए हैं और आप इसके लिए भीख मांग रहे हैं। आपके देश में आकर किसी भी पक्षी का नाम लेना भी नामुमकिन होगा।"

उन्होंने कहा, "महोदय, संतुष्ट रहिए, यह पक्षी हमें दे दीजिए और अपने देश से दूसरा पक्षी ले लीजिए।"

और कीमत बढ़ाकर उन्होंने उसे एक हजार सिक्कों में खरीद लिया। फिर उन्होंने उसे सात रत्नों से सजे पिंजरे में रखा और उसे मछली, मांस और जंगली फल, साथ ही शहद, भुना हुआ मक्का, चीनी का पानी आदि खिलाया। इस प्रकार शाही मोर को सर्वोच्च लाभ और यश प्राप्त हुआ। उसके आने के दिन से ही कौवे को मिलने वाला लाभ और सम्मान कम हो गया। और कोई उसे देखना तक नहीं चाहता था। जब कौवे को न तो कठोर और न ही नरम भोजन मिला, तो वह "कांव-कांव" की आवाज करते हुए गया और गोबर के ढेर पर बैठ गया।

गुरु ने दोनों कथाओं के बीच संबंध स्थापित करते हुए, अपनी पूर्ण बुद्धि से इन छंदों को दोहराया:

कलगीदार मोर के प्रकट होने से पहले,
कौवों को फल और मांस के उपहार देकर सम्मानित किया जाता था।
मधुर आवाज वाला मोर बावेरु के पास आया।
कौवे से तुरंत ही सारे उपहार और प्रसिद्धि छीन ली गई।
इसलिए उस व्यक्ति ने कई पुजारियों को उचित सम्मान दिया।
जब तक बुद्ध ने सत्य के पूर्ण प्रकाश को प्रकट नहीं किया:
लेकिन जब मधुर स्वर वाले बुद्ध ने धर्म के मार्ग का उपदेश दिया,
गलत विश्वासियों से सभी लोगों ने उनके उपहार और प्रशंसा वापस ले ली।

इन चार श्लोकों का उच्चारण करने के बाद, उन्होंने इस प्रकार जन्म की पहचान की: "उस समय जैन निगंथ नटपुत्त (जैनों के गुरु महावीर) कौआ थे, और मैं स्वयं राजसी मोर था।"

***स्रोत**: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-340-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 340
विषय-जातक

"पुराने समय की बात है, विषया," इत्यादि--यह कथा गुरु ने अनाथपिंडिका के जेतवन मठ में सुनाई थी। इस कथा की उत्पत्ति का घटनाक्रम खदिरंगारा जन्म में पहले ही विस्तार से बताया जा चुका है। (*1) इस अवसर पर गुरु ने अनाथपिंडिका को संबोधित करते हुए कहा, "हे मेरे गृहस्थ शिष्य, पुराने समय के ज्ञानी पुरुषों ने स्वर्ग के राजा सक्का (इंद्र) की सलाह को ठुकराते हुए भिक्षा दी थी, जब उन्होंने वायु में खड़े होकर उन्हें रोकने का प्रयास किया था और कहा था, 'भिक्षा मत दो।' और उनके अनुरोध पर गुरु ने अतीत की एक कथा सुनाई।"

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व विषया नामक एक महान व्यापारी बने, जिनकी संपत्ति अस्सी करोड़ (10 मिलियन) थी। पंच सद्गुणों से संपन्न होने के कारण वे उदार और दानप्रिय थे। उन्होंने नगर के चारों द्वारों पर, नगर के मध्य में और अपने घर के द्वार पर भिक्षागृह बनवाए। इन छह स्थानों से वे भिक्षादान करते थे, और प्रतिदिन छह लाख लोग भिक्षा मांगने जाते थे, और बोधिसत्व और भिखारियों का भोजन एक समान होता था।

और जब उसने अपने दान से पूरे भारत को उत्तेजित कर दिया, तो उसके दान के असाधारण प्रभाव से सक्का (इंद्र) का निवास हिल उठा और स्वर्ग के राजा के पीले संगमरमर के सिंहासन पर गर्मी के लक्षण दिखाई देने लगे। सक्का (इंद्र) ने कहा, "अरे, मुझे स्वर्ग के सिंहासन से कौन गिरा सकता है?" और चारों ओर देखते हुए उसने उस महान व्यापारी को देखा और मन ही मन सोचा, "यह विषया भिक्षा देता है और अपने दान को हर जगह बिखेरकर पूरे भारत को उत्तेजित कर रहा है। मुझे लगता है कि वह अपने भिक्षादान के द्वारा मुझे सिंहासन से हटाकर स्वयं सक्का (इंद्र) बन जाएगा। मैं उसकी सारी संपत्ति नष्ट कर दूंगा और उसे कंगाल बना दूंगा, ताकि वह फिर कभी भिक्षा न दे सके।" इस प्रकार सक्का (इंद्र) ने उसका तेल, शहद, गुड़ और इसी तरह की सभी वस्तुएँ, यहाँ तक कि उसका सारा अनाज का भंडार, उसके दास और कामगार भी गायब कर दिए। जिन लोगों को उनके दान से वंचित रखा गया था, वे आकर बोले, “हे प्रभु, भिक्षागृह गायब हो गया है। आपने जो विभिन्न स्थान स्थापित किए थे, उनमें हमें कुछ भी नहीं मिल रहा है।” उन्होंने कहा, “यहाँ से धन ले लो। भिक्षा देना बंद मत करो।” और अपनी पत्नी को बुलाकर उन्होंने उससे दान जारी रखने का आग्रह किया। उसने पूरे घर की तलाशी ली, और एक भी पैसा न पाकर बोली, “हे प्रभु, हमारे वस्त्रों के अलावा मुझे कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा है। पूरा घर खाली है।” सात रत्न-भंडारों को खोलकर देखने पर उन्हें कुछ नहीं मिला, और व्यापारी और उसकी पत्नी के अलावा कोई और दिखाई नहीं दिया, न दास और न ही श्रमिक। बोधिसत्व ने फिर अपनी पत्नी से कहा, “प्रिय, हम दान देना बंद नहीं कर सकते। पूरे घर की तलाशी लो जब तक कुछ मिल न जाए।”

उसी क्षण एक घास काटने वाले ने अपना हंसिया, डंडा और घास बांधने वाली रस्सी दरवाजे पर फेंक दी और भाग गया। व्यापारी की पत्नी ने उन्हें पाया और कहा, "हे स्वामी, मुझे बस यही दिखाई दे रहा है," और उन्हें लाकर उसे दे दिया। बोधिसत्व ने कहा, "हे प्रिय, इतने वर्षों में मैंने कभी घास नहीं काटी, लेकिन आज मैं घास काटूंगा और उसे बेचकर उचित दान जुटाऊंगा।" इसलिए दान में कटौती के डर से, उसने हंसिया, डंडा और रस्सी उठाई और शहर से आगे बढ़ते हुए एक ऐसे स्थान पर पहुंचा जहां बहुत घास थी। उसने घास काटकर दो गट्ठे बांधे और कहा, "एक गट्ठा हमारा रहेगा और दूसरा मैं दान में दूंगा।" घास को डंडे पर लटकाकर वह शहर के द्वार पर गया और उसे बेच दिया। उसे दो छोटे सिक्के मिले और उसने आधा पैसा भिखारियों को दे दिया। वहाँ बहुत से भिखारी थे, और जब वे बार-बार पुकार कर कह रहे थे, "हमें भी दे दो," तो उसने बाकी का आधा पैसा भी दे दिया, और अपनी पत्नी के साथ उपवास करते हुए दिन बिताया। इस तरह छह दिन बीत गए, और सातवें दिन, जब वह घास इकट्ठा कर रहा था, क्योंकि वह स्वभाव से कमजोर था और सात दिनों से उपवास कर रहा था, जैसे ही सूर्य की गर्मी उसके माथे पर पड़ी, उसकी आँखें घूमने लगीं, और वह बेहोश होकर गिर पड़ा, घास बिखर गई। सक्का (इंद्र) इधर-उधर घूम रहा था, और विषया की हरकतों को देख रहा था। और उसी क्षण देवदूत आया, और हवा में खड़े होकर पहला श्लोक बोला:

विसायहा, पुराने समय में तुम दान देते थे।

और दान देने से धन की हानि होती है।
अब से आत्मसंयम दिखाओ, देने से इनकार करो।
और आप निश्चित रूप से चिरस्थायी सुखों के बीच जीवन व्यतीत करेंगे।
बोधिसत्व ने उनकी बात सुनकर पूछा, "तुम कौन हो?" उन्होंने कहा, "मैं सक्का (इंद्र) हूँ।" बोधिसत्व ने उत्तर दिया, "सक्का (इंद्र) ने स्वयं दान देकर, नैतिक कर्तव्यों का पालन करके, उपवास रखकर और सात व्रतों को पूरा करके सक्का (इंद्र) पद प्राप्त किया था। परन्तु अब तुम उस दान को रोक रहे हो जिससे तुम्हें स्वयं महानता प्राप्त हुई। निश्चय ही तुम एक अयोग्य कर्म के दोषी हो।" और ऐसा कहकर उन्होंने तीन श्लोक दोहराए:

पुरुषों का कहना है कि यह शर्मनाक कृत्य करना सही नहीं है।
इससे एक प्रतिष्ठित नाम की प्रतिष्ठा कलंकित होनी चाहिए।
हे हजार नेत्रों के स्वामी!
हमारी पीड़ादायक स्थिति में भी, हमें इससे बचाओ।
हमारी संपत्ति विश्वासघाती तरीके से खर्च न हो।
अपनी खुशी के लिए या धन बढ़ाने के उद्देश्य से,
लेकिन पुराने समय से ही हमारे भंडारों में वृद्धि होती जा रही है।
उसी रास्ते से एक पुराना रथ गुजरा था।
दूसरा भी जा सकता है। तो क्या हम भी देंगे?
जब तक हमारे पास जीने के साधन हैं,
और सबसे बुरी स्थिति में भी हर उदार विचार को रोकना नहीं चाहिए।
सक्का (इंद्र) उन्हें उनके उद्देश्य से रोक नहीं पाए और उनसे पूछा कि वे दान क्यों देते हैं। उन्होंने कहा, "मैं न तो सक्कात्व (देवदूतों का राजा) और न ही ब्रह्मत्व (प्रधान देवदूत) की इच्छा रखता हूँ, बल्कि अनंत ज्ञान की प्राप्ति के लिए दान देता हूँ।" ये शब्द सुनकर सक्का (इंद्र) प्रसन्न हुए और उन्होंने अपने हाथों से उनकी पीठ थपथपाई। बोधिसत्व को यह कृपा प्राप्त होते ही उनका पूरा शरीर आनंद से भर गया। सक्का (इंद्र) की अलौकिक शक्ति से उन्हें सर्वथा समृद्धि प्राप्त हुई। सक्का (इंद्र) ने कहा, "हे महान व्यापारी, अब से प्रतिदिन बारह लाख दान बाँटो।" उनके घर में अपार धन सृजित करके सक्का (इंद्र) ने उनसे विदा ली और सीधे अपने निवास स्थान लौट गए।

गुरु ने अपना पाठ समाप्त करते हुए जन्म का इस प्रकार वर्णन किया: "उस समय राहुल की माता व्यापारी की पत्नी थी, और मैं स्वयं विषया था।"

फुटनोट:

(1)सं. 40

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कंडारी-जातक**
***स्रोत**: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-341-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 341
कंदारी-जातक

इस जन्म की पूरी कहानी कुणाला जन्म में विस्तार से बताई जाएगी।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **वानर-जातक**
***स्रोत**: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-342-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 342
वानर-जातक (*1)

"मैंने जल से प्राप्त किया है," इत्यादि - यह कथा गुरु ने बाँस के वन में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें देवदत्त द्वारा बुद्ध की हत्या के प्रयास का वर्णन है। इस कथा की उत्पत्ति का घटनाक्रम पहले ही विस्तार से बताया जा चुका है।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज था, तब हिमालय क्षेत्र में बोधिसत्व एक युवा बंदर के रूप में पैदा हुए। बड़े होकर वे गंगा नदी के किनारे रहने लगे। गंगा में रहने वाली एक मादा मगरमच्छ को बोधिसत्व के हृदय के मांस की तीव्र इच्छा हुई और उसने यह बात अपने पति को बताई। पति ने सोचा, "मैं बोधिसत्व को पानी में डुबोकर मार डालूंगा और उनके हृदय का मांस निकालकर अपनी पत्नी को दे दूंगा।" इसलिए उसने बोधिसत्व से कहा, "आओ, मेरे मित्र, हम एक द्वीप पर जाकर जंगली फल खाएंगे।"

"मैं वहां कैसे पहुंचूंगा?" उसने कहा।

"मैं तुम्हें अपनी पीठ पर लादकर वहाँ ले जाऊँगा," मगरमच्छ ने उत्तर दिया।

मगरमच्छ के इरादे से अनजान बंदर उसकी पीठ पर कूद गया और वहीं बैठ गया। मगरमच्छ थोड़ी दूर तैरने के बाद गोता लगाने लगा। तब बंदर बोला, "हे भगवान, आप मुझे पानी में क्यों डुबो रहे हैं?"

मगरमच्छ ने कहा, "मैं तुम्हें मार डालूंगा और तुम्हारे दिल का मांस अपनी पत्नी को दूंगा।"

“मूर्ख,” उसने कहा, “क्या तुम्हें लगता है कि मेरा दिल मेरे अंदर है?” “तो फिर तुमने उसे कहाँ रखा है?”

क्या तुम उसे अंजीर के पेड़ पर लटका हुआ नहीं देख रहे हो?

मगरमच्छ ने कहा, "मैं इसे देख रहा हूँ। लेकिन क्या तुम इसे मुझे दोगे?"

"हां, मैं करूंगा," बंदर ने कहा।

फिर मगरमच्छ—अपनी मूर्खता के कारण—उसे पकड़कर नदी किनारे अंजीर के पेड़ की तलहटी तक तैरकर ले गया। बोधिसत्व मगरमच्छ की पीठ से कूदकर अंजीर के पेड़ पर बैठ गया और उसने ये श्लोक दोहराए:

क्या मैं पानी से, मछली से, सूखी ज़मीन तक आ गया हूँ?
क्या अंततः आप ही आपके वश में आ जाएंगे?
मुझे ब्रेड फ्रूट और रोज़ एप्पल से उल्टी आने लगी है।
और आमों की बजाय अंजीर चुनना बेहतर है।
जो महान अवसर पर उठने में विफल रहता है
शत्रु के पैरों तले दुःख में गिरी पड़ी है:
एक बात उसके भाग्य में संकट पैदा कर देती है।
उसे अपने शत्रु के उत्पीड़न से कभी भयभीत होने की आवश्यकता नहीं है।
इस प्रकार बोधिसत्व ने इन चार श्लोकों में सांसारिक मामलों में सफलता प्राप्त करने का तरीका बताया और फिर वृक्षों के झुरमुट में विलीन हो गए।

गुरु ने अपना पाठ समाप्त करते हुए जन्म का वर्णन किया: "उस समय देवदत्त मगरमच्छ था, और मैं स्वयं बंदर था।"

फुटनोट:

(1) संख्या 523

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कुंतनि-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-343-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 343
कुन्तानी-जातक

"मैंने बहुत देर तक थामे रखा," इत्यादि - यह कहानी जेतवन मठ के गुरु ने सुनाई थी, जो कोसल के राजा के घर में रहने वाले एक बगुले के बारे में है। कहते हैं कि वह राजा के लिए संदेश ले जाती थी और उसके दो बच्चे थे। राजा ने इस पक्षी को किसी दूसरे राजा के पास पत्र के साथ भेजा। जब वह चली गई, तो राजपरिवार के लड़कों ने उन बच्चों को अपने हाथों में दबाकर मार डाला। माँ पक्षी वापस आई और अपने बच्चों को याद करते हुए पूछा कि उसके बच्चों को किसने मारा। उन्होंने कहा, "अमुक व्यक्ति ने।" उस समय महल में एक खूंखार और हिंसक बाघ को मजबूत जंजीर से बांधकर रखा गया था। अब वे लड़के बाघ को देखने आए और बगुला उनके साथ चला गया, यह सोचते हुए कि "जिस तरह मेरे बच्चों को उन्होंने मार डाला, उसी तरह मैं इन लड़कों के साथ भी करूंगी," और उसने उन्हें पकड़कर बाघ के पैरों में फेंक दिया। बाघ ने गुर्राते हुए उन्हें कुतर दिया। पक्षी ने कहा, "अब मेरे दिल की इच्छा पूरी हो गई," और हवा में उड़कर सीधे हिमालय की ओर चली गई। यह सब सुनकर वे सत्य के हॉल में चर्चा करने लगे और कहने लगे, "महोदय, ऐसा कहा जाता है कि राजा के महल में एक बगुला अपने बच्चों को मारने वाले लड़कों को बाघ के सामने गिरा देता है, और उन्हें मारने के बाद वह भाग जाता है।" गुरुजी आए और उन्होंने भिक्षुओं से पूछा कि वे किस बारे में बात कर रहे हैं, और कहा, "भाइयों, केवल अभी ही नहीं, बल्कि पहले भी वह अपने बच्चों को मारने वालों को मार डालती थी।" और इसके साथ ही उन्होंने अतीत की एक कथा सुनाई।

एक समय की बात है, बनारस के बोधिसत्व ने अपने राज्य पर न्याय और निष्पक्षता से शासन किया। उनके घर में एक बगुला उनके लिए संदेश पहुँचाता था। और यह सिलसिला पहले की तरह ही चलता रहा। लेकिन यहाँ खास बात यह है कि इस घटना में, बाघ द्वारा बच्चों को मारे जाने के बाद, पक्षी ने सोचा, "मैं अब यहाँ नहीं रह सकती। मैं यहाँ से चली जाऊँगी, लेकिन जाते समय मैं राजा को बताए बिना नहीं जाऊँगी, और जैसे ही मैं उन्हें बता दूँगी, मैं चली जाऊँगी।" और इस प्रकार वह राजा के पास आई और उन्हें प्रणाम किया, और थोड़ी दूरी पर खड़े होकर बोली, "हे प्रभु, आपकी लापरवाही के कारण ही उन बच्चों ने मेरे बच्चों को मार डाला, और आवेश में आकर मैंने बदला लेने के लिए उन्हें मार डाला। अब मैं यहाँ नहीं रह सकती।" और पहला श्लोक बोलते हुए उसने कहा:

मैंने लंबे समय तक इस घर को अपना माना।
   मुझे बहुत बड़ा सम्मान प्राप्त हुआ।
यह आपके कृत्य के कारण है
   अब मुझे जाने के लिए विवश होना पड़ रहा है।
यह सुनकर राजा ने दूसरा श्लोक दोहराया:

यदि कोई जवाबी कार्रवाई करे,
   गलत के बदले समान गलत का भुगतान करना,
तब उसका क्रोध शांत हो जाएगा;
   तो, हे अच्छे बगुले, कृपया यहीं रहो।
यह सुनकर पक्षी ने तीसरा छंद बोला:

पीड़ित कभी भी अपराधी के साथ अन्याय नहीं कर सकता।
   पहले की तरह एक ही बार में बनाया जाए:
हे राजा, कोई भी चीज मुझे यहाँ रोक नहीं सकती।
   देखो! अब से मैं जा रहा हूँ।
यह सुनकर राजा ने चौथा श्लोक बोला:

उन्हें बुद्धिमान होना चाहिए, मूर्ख नहीं।
पीड़ित के साथ गलत काम करने वाला व्यक्ति
शांति और सद्भाव से जीवन व्यतीत करें:
तो, हे अच्छे बगुले, कृपया यहीं रहो।
चिड़िया ने कहा, "हालात ऐसे हैं कि मैं यहाँ नहीं रुक सकती, महाराज," और राजा को प्रणाम करके वह हवा में उड़ गई और सीधे हिमालय की ओर चली गई।

अपने पाठ के अंत में गुरु ने इस प्रकार जन्म की पहचान की: "पिछली कहानी का बगुला इस कहानी का बगुला था, लेकिन बनारस का राजा मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **अंबाकोरा-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-344-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 344
अम्बाकोरा-जातक

"जिसने तुम्हारे आम खाए," इत्यादि — यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में सुनाई थी, जो आमों की रखवाली करने वाले एक बुजुर्ग भिक्षु से संबंधित है। कहते हैं कि जब वे बूढ़े हो गए, तो उन्होंने संन्यासी बन गए और जेतवन मठ के बाहरी इलाके में एक आम के बाग में पत्तों की एक कुटिया बनाई। वे न केवल स्वयं आमों से गिरे पके फल खाते थे, बल्कि अपने परिवार को भी कुछ देते थे। जब वे भिक्षा मांगने निकले, तो कुछ चोरों ने उनके आम तोड़ लिए, कुछ खा लिए और बाकी ले गए। उसी समय एक धनी व्यापारी की चार बेटियाँ अचिरवती नदी में स्नान करने के बाद भटकते हुए आम के बाग में आ गईं। जब बूढ़े भिक्षु वापस लौटे और उन्हें वहाँ पाया, तो उन्होंने उन पर अपने आम खाने का आरोप लगाया।

उन्होंने कहा, "महोदय, हम अभी-अभी आए हैं; हमने आपके आम नहीं खाए हैं।"

"तो फिर शपथ लो," उन्होंने कहा।

"जी, हम करेंगे," उन्होंने कहा और शपथ ली। इस प्रकार शपथ दिलवाकर उन्हें शर्मिंदा करने के बाद बूढ़े व्यक्ति ने उन्हें जाने दिया।

भिक्षुओं ने जब उसके इस कार्य के बारे में सुना, तो उन्होंने सत्य के हॉल में चर्चा शुरू कर दी कि कैसे एक बूढ़े व्यक्ति ने एक व्यापारी की बेटियों से शपथ ली, जो उस आम के बाग में गया था जहाँ वह स्वयं रहता था। बूढ़े व्यक्ति ने उन्हें शपथ दिलाकर अपमानित करने के बाद छोड़ दिया। जब गुरुजी आए और उन्होंने पूछा कि वे किस विषय पर चर्चा कर रहे हैं, तो उन्होंने कहा, "भाइयों, केवल अभी ही नहीं, बल्कि पहले भी यह बूढ़ा व्यक्ति, जब आमों की रखवाली करता था, एक धनी व्यापारी की कुछ बेटियों से शपथ लेता था और उन्हें अपमानित करने के बाद छोड़ देता था।" और ऐसा कहते हुए उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व इंद्र (सक्का) बने। उसी समय एक बेईमान तपस्वी ने बनारस के पास एक नदी के किनारे आम के बाग में पत्तों का एक आश्रम बनाया और आमों की रखवाली करते हुए, पेड़ों से गिरे पके आमों को खुद खा लेता था और कुछ अपने परिवार को भी देता था। वह वहाँ विभिन्न कुटिल प्रथाओं से जीविका कमाता था।

उस समय स्वर्ग के राजा सक्का (इंद्र) ने सोचा, "हे मनुष्यलोक में, कौन अपने माता-पिता का सहारा बनता है, परिवार के वृद्ध सदस्यों का आदर करता है, दान देता है, नैतिक नियमों का पालन करता है और व्रत रखता है? इनमें से कौन संन्यासी जीवन अपनाकर निरंतर पुरोहितों के कर्तव्यों का निर्वाह करता है, और कौन दुराचार का दोषी है?" संसार का भ्रमण करते हुए उन्होंने एक दुष्ट तपस्वी को अपने आमों की रखवाली करते देखा और कहा, "यह पाखंडी तपस्वी, ध्यान की अवस्था में पहुंचने जैसी प्रक्रियाओं आदि जैसे पुरोहितों के

कर्तव्यों का त्याग करके, निरंतर आमों के बाग की रखवाली कर रहा है। मैं इसे खूब डराऊंगा।" अतः जब वह भिक्षा मांगने गांव गया, तो सक्का (इंद्र) ने अपनी अलौकिक शक्ति से आमों को गिरा दिया और ऐसा कर दिया मानो चोरों ने उन्हें लूट लिया हो। इसी समय बनारस के एक व्यापारी की चार बेटियाँ बाग में दाखिल हुईं, और उस झूठे तपस्वी ने उन्हें देखकर रोक दिया और कहा, "तुमने मेरे आम खा लिए हैं।"

उन्होंने कहा, "महोदय, हम अभी-अभी आए हैं। हमने इन्हें नहीं खाया है।"

"तो फिर शपथ लो," उन्होंने कहा।

"लेकिन अगर ऐसा है तो क्या हम जा सकते हैं?" उन्होंने पूछा। "बिल्कुल जा सकते हैं।"

"बहुत खूब, महोदय," उन्होंने कहा, और उनमें से सबसे बड़े ने पहली पंक्ति का उच्चारण करते हुए शपथ ली:

जिसने तुम्हारे आम खाए,
   क्योंकि उसका स्वामी किसी देहाती व्यक्ति को स्वीकार करेगा,
सफेद बालों को रंगने से धोखा होगा
   और वह चिमटे से अपने बालों को कर्ल करता था।
तपस्वी ने कहा, "तुम एक तरफ खड़ी हो जाओ," और उसने व्यापारी की दूसरी बेटी से शपथ ली, और उसने दूसरा श्लोक दोहराया:

उस नौकरानी को जिसने तुम्हारा पेड़ चुराया, उसे जाने दो।
   पति की व्यर्थ चाह में आह भरते हुए,
हालांकि वह अपनी किशोरावस्था पार कर चुकी हो सकती है
   और लगभग तीस के आसपास।
और शपथ लेने और एक तरफ खड़े होने के बाद, तीसरी लड़की ने तीसरा छंद बोला:

उसने तुम्हारे पके आम खा लिए
   थका देने वाले रास्ते पर अकेले ही चलना होगा।
और मुलाकात की जगह पर भी बहुत देर हो चुकी थी।
   अपने प्रेमी के चले जाने से दुखी।
जब उसने शपथ ली और एक तरफ खड़ी हो गई, तब चौथी लड़की ने चौथा श्लोक बोला:

जिसने तुम्हारे पेड़ लूटे
   चमकीले रंग के कपड़े पहने, सिर पर फूलों की माला धारण किए हुए।
और चंदन के तेल से नम किया हुआ
   फिर भी कुंवारी बिस्तर की तलाश रहेगी।
तपस्वी ने कहा, "तुमने बहुत बड़ी शपथ ली है; आम तो दूसरों ने भी खा लिए होंगे। इसलिए अब तुम यहाँ से चले जाओ।" ऐसा कहकर उसने उन्हें विदा कर दिया। फिर इंद्र ने भयानक रूप धारण किया और उस झूठे तपस्वी को वहाँ से भगा दिया।

गुरु ने अपना पाठ समाप्त करते हुए जन्म का वर्णन किया: "उस समय यह झूठा तपस्वी आमों की रखवाली करने वाला बूढ़ा व्यक्ति था। व्यापारी की चारों पुत्रियाँ तब भी वही भूमिका निभा रही थीं जो अब निभा रही हैं। लेकिन सक्का (इंद्र) मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **गजकुंभ-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-345-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 345

गजकुंभ-जातक

“यदि ज्वाला भस्म हो जाए,” इत्यादि—यह कथा जेतवन मठ के गुरु ने एक आलसी भिक्षु के विषय में सुनाई थी। कहा जाता है कि वह एक कुलीन परिवार से था और श्रावस्ती नगर में रहता था। दीक्षा को सहर्ष स्वीकार करने और भिक्षु संघ में शामिल होने के बाद वह आलसी हो गया और धार्मिक मार्ग के अभ्यास, प्रश्नोत्तर, प्रबुद्ध भक्ति और भिक्षुओं के कर्तव्यों के पालन में पूर्णतः संलग्न नहीं हो पाया, क्योंकि वह अपने पापों के प्रति आसक्त था और हमेशा सार्वजनिक विश्राम स्थलों पर पाया जाता था। भिक्षुओं ने सत्य सभा में उसकी आलस्य पर चर्चा करते हुए कहा, “हे सज्जनों, ऐसा व्यक्ति, इतनी उत्तम आस्था के साथ भिक्षु संघ में शामिल होने के बाद भी, जो मोक्ष (निर्वाण) की ओर ले जाती है, निरंतर आलसी और सुस्त बना रहता है और अपने पापों के प्रति आसक्त रहता है।” जब गुरुजी आए और उन्होंने पूछा कि भिक्षु किस विषय पर चर्चा करने के लिए एकत्रित हुए हैं, तो उन्हें जब बताया गया कि विषय क्या है, तो उन्होंने कहा, "भाइयों, वह केवल अभी ही नहीं, बल्कि पहले भी आलसी था।" और ऐसा कहते हुए उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, तब बोधिसत्व उनके प्रिय मंत्री बन गए। बनारस के राजा आलसी स्वभाव के थे, और बोधिसत्व राजा को सक्रिय करने के उपाय सोचने लगे। एक दिन राजा अपने मंत्री के साथ अपने बगीचे में गए, और वहाँ घूमते हुए उन्होंने एक आलसी कछुआ देखा। कहते हैं कि ऐसे आलसी प्राणी, भले ही दिनभर चलते रहें, केवल एक या दो इंच ही आगे बढ़ते हैं।

राजा ने उसे देखकर पूछा, "मित्र, इसका नाम क्या है?"

बोधिसत्व ने उत्तर दिया, “हे महाराज, इस प्राणी का नाम कछुआ है; और यह इतना आलसी है कि दिन भर गतिमान रहने पर भी यह केवल एक या दो इंच ही चलता है।” और उसे संबोधित करते हुए उन्होंने कहा, “हे! हे कछुआ, तुम्हारी गति तो बहुत धीमी है। मान लो जंगल में आग लग जाए तो तुम क्या करोगे?” और इसके साथ ही उन्होंने पहला श्लोक कहा:

यदि जंगल में आग की लपटें फैल जाएं,
   काले पड़ चुके रास्ते को पीछे छोड़ते हुए,
अरे, श्रीमान वैडलर, आप तो बहुत धीमी गति से चल रहे हैं!
   क्या आप सुरक्षा का कोई उपाय ढूंढ सकते हैं?
यह सुनकर कछुए ने दूसरी पंक्ति दोहराई:

हर तरफ कई छेद थे।
   हर पेड़ में दरारें तो होती ही हैं।
यहां शरण मिलेगी
   या फिर हमारा अंत हो जाएगा।
यह सुनकर बोधिसत्व ने दो श्लोक कहे:

जो कोई भी विश्राम करने के समय जल्दी करता था,
और जब अधिकतम गति सबसे अच्छी होती है, तब देरी लंबी हो जाती है।
यह उसके कल्याण के पतले ताने-बाने को नष्ट कर देता है।
जैसे सूखी पत्ती एड़ी के नीचे कुचली जाती है।
लेकिन जो लोग जल्दी इंतजार नहीं करते और जल्दबाजी नहीं करते,
वे चंद्रमा की परिक्रमा करते हुए अपने उद्देश्य को पूरा करते हैं।
बोधिसत्व के वचन सुनकर राजा तब से आलसी नहीं रहा।

गुरु ने अपना पाठ समाप्त करते हुए जन्म का वर्णन किया: "उस समय आलसी भाई (भिक्षु) कछुआ था, और मैं स्वयं बुद्धिमान सलाहकार था।"

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **केसव-जातक**

*<u>**स्रोत**</u>: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-346-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 346
केशव जातक

"तुम जो हाल ही में," इत्यादि - यह कहानी गुरु (भगवान बुद्ध) ने जेतवन मठ में मित्रता पर्व के संबंध में सुनाई थी।

कहते हैं कि अनाथपिंडिका के घर में पाँच सौ भिक्षुओं को निरंतर भोजन कराया जाता था। वह घर भिक्षुओं की सभा के लिए सदा विश्राम स्थल बना रहता था, उनके पीले वस्त्रों की चमक से जगमगाता और पवित्र सुगंध से महकता रहता था। एक दिन राजा जब शहर में जुलूस निकाल रहे थे, तो उनकी नज़र कोषाध्यक्ष के घर में भिक्षुओं की सभा पर पड़ी। उन्होंने सोचा, "मैं भी संतों की इस सभा को शाश्वत दान दूंगा," और वे मठ गए तथा गुरु को प्रणाम करने के बाद पाँच सौ भिक्षुओं के लिए शाश्वत दान की व्यवस्था की। तब से राजा के महल में निरंतर दान-पुण्य का सिलसिला चलता रहता है, यहाँ तक कि वर्षा की सुगंध से सराबोर उत्तम चावल भी दिया जाता है, लेकिन कोई भी अपने हाथों से स्नेह और प्रेम के साथ दान नहीं करता, बल्कि राजा के मंत्री ही भोजन उपलब्ध कराते हैं, और भिक्षु स्वयं बैठकर भोजन करने की परवाह नहीं करते, बल्कि विभिन्न प्रकार के उत्तम भोजन लेकर अपने-अपने संरक्षकों के घर जाते हैं, और उन्हें भोजन देकर स्वयं जो कुछ भी उनके सामने परोसा जाता है, चाहे वह साधारण हो या उत्तम, उसे खा लेते हैं।

एक दिन राजा के पास बहुत सारे जंगली फल लाए गए। राजा ने कहा, "इन्हें भिक्षुओं के संघ को दे दो।"

वे भोजन करने के लिए कमरे में गए और आकर राजा को बताया, "वहाँ एक भी भिक्षु नहीं है।"

"क्या, अभी समय नहीं हुआ है?" राजा ने कहा।

उन्होंने कहा, "हाँ, समय आ गया है, लेकिन भाई लोग आपके घर में भोजन ले लें, और फिर अपने भरोसेमंद सेवकों के घर जाकर उन्हें भोजन दें, और स्वयं जो कुछ भी परोसा जाए, चाहे वह साधारण हो या उत्तम, उसे खा लें।"

राजा ने कहा, "हमारा भोजन तो उत्तम है। फिर ये लोग हमारा भोजन क्यों नहीं खाते और दूसरा भोजन क्यों करते हैं?" और यह सोचकर कि "मैं गुरु से पूछूंगा," वह मठ गया और उनसे पूछा।

गुरु ने कहा, "सबसे अच्छा भोजन वही है जो प्रेम से दिया जाए। प्रेम से भोजन देकर मित्रता स्थापित करने वालों की अनुपस्थिति के कारण, बंधुआ लोग भोजन लेकर अपने किसी मित्रवत स्थान पर खाते हैं। हे महाराज, प्रेम के स्वाद के समान कोई स्वाद नहीं है। जो भोजन बिना प्रेम के दिया जाता है, चाहे वह चार मीठी चीजों से ही क्यों न बना हो, प्रेम से दिए गए जंगली चावल के बराबर भी नहीं। पुराने समय के बुद्धिमान लोग जब बीमार पड़ते थे, तो राजा और उसके पाँच परिवारों के लोग भी उपचार उपलब्ध कराते थे, फिर भी यदि रोग से राहत नहीं मिलती थी, तो वे अपने घनिष्ठ मित्रों के पास जाते थे और बिना नमक के जंगली चावल और बाजरे का शोरबा या केवल पानी छिड़के हुए बिना नमक के पत्ते खाकर ठीक हो जाते थे।" और इन शब्दों के साथ, उनके अनुरोध पर, उन्होंने उन्हें अतीत की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, बोधिसत्व का जन्म काशी राज्य के एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था, और उन्हें युवा कप्पा नाम दिया गया था। जब वे वयस्क हुए, तो उन्होंने तक्षशिला में सभी विद्याओं का ज्ञान प्राप्त किया और बाद में संन्यासी जीवन व्यतीत किया। उसी समय, केशव नामक एक तपस्वी, जिनके साथ पाँच सौ अन्य तपस्वी भी थे, हिमालय में निवास करते हुए शिष्यों के एक समूह के गुरु बन गए। बोधिसत्व उनके पास गए और पाँच सौ शिष्यों में वरिष्ठ होकर वहीं रहने लगे और केशव के प्रति अपने मैत्रीपूर्ण और स्नेहपूर्ण भाव को प्रकट किया। इस प्रकार वे एक-दूसरे के बहुत घनिष्ठ हो गए।

कुछ समय बाद केशव अपने साथ इन तपस्वियों को लेकर नमक और सिरका लेने बनारस गए और राजा के बगीचे में ठहरे। अगले दिन वे शहर गए और महल के द्वार पर पहुँचे। जब राजा ने इन साधुओं को देखा, तो उन्होंने उन्हें अंदर बुलाया और अपने घर में भोजन कराया। उनसे प्रतिज्ञा लेकर उन्होंने उन्हें अपने बगीचे में ठहराया। बरसात का मौसम समाप्त होने पर केशव ने राजा से विदा ली। राजा ने

कहा, “हे पूज्यवर, आप वृद्ध हो गए हैं। अब आप हमारे पास ही रहें और इन युवा तपस्वियों को हिमालय भेज दें।” केशव मान गए और उन्हें मुख्य शिष्य के साथ हिमालय भेज दिया और स्वयं अकेले रह गए। कप्पा हिमालय गए और वहाँ तपस्वियों के साथ रहने लगे। कप्पा के साथ न रहने से केशव दुखी थे और उन्हें देखने की तीव्र इच्छा के कारण उन्हें नींद नहीं आई। नींद न आने के कारण उनका भोजन ठीक से पच नहीं पाया। उन्हें दस्त हो गए और फिर असहनीय पीड़ा होने लगी। राजा अपने पांच परिवारों के जोंकों के साथ तपस्वी की देखरेख करता रहा, लेकिन उसकी बीमारी में कोई कमी नहीं आई।

तपस्वी ने राजा से पूछा, "महाराज, क्या आप चाहते हैं कि मैं मर जाऊं या ठीक हो जाऊं?"

"ठीक होने के लिए, महोदय," उसने उत्तर दिया।

"तो मुझे हिमालय भेज दो," उसने कहा।

“सहमत,” राजा ने कहा और नारद नामक एक मंत्री को भेजा और उनसे कुछ वनपालों के साथ उस संत को हिमालय ले जाने को कहा। नारद उन्हें वहाँ ले गए और घर लौट आए। लेकिन कप्पा के दर्शन मात्र से केशव का मानसिक विकार दूर हो गया और उनका दुख कम हो गया। कप्पा ने उन्हें बाजरे और जंगली चावल का शोरबा दिया, जिसमें पानी में छिड़के हुए पत्ते थे, बिना नमक और मसालों के, और उसी क्षण उनका पेचिश ठीक हो गया। राजा ने फिर नारद को यह कहकर भेजा, “जाओ और तपस्वी केशव का हालचाल पता करो।” वह आए और उन्हें स्वस्थ पाकर बोले, “आदरणीय महोदय, बनारस के राजा ने अपने पाँच परिवारों की जोंकों से आपका इलाज किया, फिर भी आपकी बीमारी ठीक नहीं हुई। कप्पा ने आपका इलाज कैसे किया?” और यह कहकर उन्होंने पहला श्लोक कहा:

तुम जो हाल ही में मनुष्यों के स्वामी के साथ निवास करते थे,
एक ऐसा राजा जो आपके दिल की हर इच्छा पूरी करने के लिए तैयार है।
कप्पा की एकांतवास की क्या खूबी है?
क्या यह आदरणीय केशवा का यहाँ सेवानिवृत्ति का स्थान है?
यह सुनकर केशवा ने दूसरी पंक्ति दोहराई:

यहां सब कुछ मनमोहक है: यहां तक कि पेड़ भी।
हे नारद, मेरी कल्पना,
और कप्पा के वो शब्द जो हमेशा मन को प्रसन्न करते हैं
मेरे हृदय में कृतज्ञता की एक गूंज जागृत हुई।
इन शब्दों के बाद उन्होंने कहा: "कप्पा ने मुझे प्रसन्न करने के लिए बाजरा और जंगली चावल से बना शोरबा पिलाया, जिसमें पानी में कुछ पत्ते छिड़के हुए थे, और उसमें नमक और मसाले नहीं थे, और उसके बाद मेरी शारीरिक बीमारी दूर हो गई और मैं ठीक हो गया।"

यह सुनकर नारद ने तीसरा श्लोक दोहराया:

आपने वह खाया लेकिन अब आपने सबसे शुद्ध चावल खाया।
मांस के बेहतरीन स्वाद के साथ उबाला गया,
आप इतने फीके भोजन का आनंद कैसे ले सकते हैं?
और क्या साधुओं के साथ बाजरा और जंगली चावल साझा किए जाते हैं?
यह सुनकर केशव ने चौथा श्लोक कहा:

भोजन चाहे साधारण हो या सुरुचिपूर्ण,
यह कम भी हो सकता है या बहुत अधिक भी हो सकता है।
लेकिन अगर भोजन प्रेम से भरा हो,
यह अब तक की सबसे बेहतरीन सॉस है।
नारद ने उनकी बात सुनकर राजा के पास लौटकर कहा, "केशव ने ऐसा कहा है।"

गुरु ने अपना पाठ समाप्त करते हुए जन्म का वर्णन किया: "उस समय राजा आनंद थे, नारद सारिपुत्र थे, केशव बकाब्रह्म थे और मैं स्वयं कप्पा था।"

पिछला <<<<-----||-347-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 347
अयाकुटा-जातक (*1)

"हवा में क्यों?", इत्यादि—यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए मनुष्यों के प्रति भलाई करने के कर्तव्य के विषय में सुनाई थी। इस कहानी की उत्पत्ति का वर्णन महाकान्हा जन्म में किया जाएगा। (*2)

बहुत समय पहले की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व उनकी प्रमुख रानी के पुत्र के रूप में प्रकट हुए। जब वे वयस्क हुए, तो उन्हें सभी कलाओं का ज्ञान दिया गया और अपने पिता की मृत्यु के बाद, वे उनके राज्य में स्थापित हुए और न्यायपूर्वक शासन किया।

उस समय मनुष्य अलौकिक शक्तियों की पूजा में लीन थे और बकरियों, भेड़ों आदि का वध करके उन्हें धार्मिक भेंट चढ़ाते थे। बोधिसत्व ने ढोल बजाकर घोषणा की, "किसी भी जीवित प्राणी को मृत्युदंड नहीं दिया जाना चाहिए।" अपनी भेंट न मिलने से यक्ष (राक्षस) बोधिसत्व के विरुद्ध क्रोधित हो गए और हिमालय में अपने साथियों की सभा बुलाकर उन्होंने एक क्रूर यक्ष (राक्षस) को बोधिसत्व की हत्या करने के लिए भेजा। उसने घर के गुंबद के समान विशाल जलता हुआ लोहे का टुकड़ा उठाया और मध्याह्न के तुरंत बाद, बोधिसत्व के पलंग के पास आकर खड़ा हो गया। उसी क्षण इंद्र के सिंहासन पर ऊष्मा के लक्षण प्रकट हुए। इस मामले पर विचार करने के बाद, देवदूत ने कारण का पता लगाया और अपने वज्र को हाथ में धारण करके यक्ष (राक्षस) के ऊपर आकर खड़ा हो गया। यक्ष (राक्षस) को देखकर बोधिसत्व ने सोचा, "यह यहाँ क्यों खड़ा है? क्या यह मेरी रक्षा करने के लिए है, या मुझे मारने की इच्छा से?" और उससे बात करते हुए उन्होंने पहला श्लोक दोहराया:

हे यक्ष, तुम वायु में क्यों खड़े हो?
क्या आपके हाथ में लोहे का इतना बड़ा बोल्ट है?
क्या आप मुझे हर प्रकार के हानिकारक इरादों से बचाएंगे?
या फिर आज मुझे नष्ट करने के लिए भेजा गया है?
अब बोधिसत्व को केवल यक्ष (राक्षस) दिखाई दिया। उन्हें सक्का (इंद्र) दिखाई नहीं दिया। सक्का (इंद्र) के भय से यक्ष (राक्षस) ने बोधिसत्व पर प्रहार करने का साहस नहीं किया। बोधिसत्व की बात सुनकर यक्ष (राक्षस) ने कहा, "महाराज, मैं यहाँ आपकी रक्षा के लिए नहीं आया हूँ; मैं इस धधकते लोहे के टुकड़े से आप पर प्रहार करने के इरादे से आया था, परन्तु सक्का (इंद्र) के भय से मैंने आप पर प्रहार करने का साहस नहीं किया।" और अपने अर्थ को स्पष्ट करने के लिए उसने दूसरा श्लोक कहा:

राक्षसों के दूत के रूप में, देखो!
मैं तुम्हारा विनाश करने के लिए प्रकट हुआ हूँ।
लेकिन मेरे द्वारा चलाया गया अग्नि-बल व्यर्थ है।
उस सिर के विरुद्ध जिसकी रक्षा इंद्र स्वयं करेंगे।
यह सुनकर बोधिसत्व ने दो और श्लोक दोहराए:

यदि इंद्र, सुजा के स्वामी, स्वर्ग में राज करते हैं,
हे महान देवताओं (देवदूतों) के राजा, मेरा कर्तव्य है कि मैं इसका समर्थन करूं।
भयानक चीखों के साथ पिशाच आकाश को चीरते हुए,
किसी भी युवा दानव में आतंकित करने की शक्ति नहीं होती।
मिट्टी की परियों को जो कहना है कहने दो,
वे कठिन मुकाबले के लिए बराबर के नहीं हैं।

इस प्रकार इंद्र ने यक्ष (राक्षस) को भगा दिया। और उस महान सत्ता को संबोधित करते हुए उन्होंने कहा, "महाराज, भयभीत न हों। अब से हम आपकी रक्षा करेंगे। आप निःसंदेह रहें।" और ऐसा कहकर वे सीधे अपने निवास स्थान पर लौट गए।

गुरु ने यहाँ अपना पाठ समाप्त किया और जन्म का वर्णन किया: "उस समय अनुरुद्ध सक्का (इंद्र) थे, और मैं स्वयं बनारस का राजा था।"

फुटनोट:

(1)संख्या 405 देखें।

(2)सं. 469, खंड iv.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **अरण्य-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-348-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 348
अरन्ना-जातक

"यह संदेह, मेरे पिता," इत्यादि—यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें एक साधारण स्त्री द्वारा एक युवक को बहकाने का वर्णन है। इस कहानी की उत्पत्ति से जुड़ी घटनाओं का वर्णन कुल्लानारद कश्यप जन्म में किया जाएगा। (*1)

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्याभिषेक था, तब बोधिसत्व का जन्म एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। तक्षशिला में बड़े होकर जब उन्होंने सभी विद्याओं का ज्ञान प्राप्त किया, तब उनकी पत्नी का देहांत हो गया और उन्होंने संन्यासी जीवन अपना लिया तथा अपने पुत्र के साथ हिमालय में निवास करने चले गए। वहाँ अपने पुत्र को एक आश्रम में छोड़कर वे विभिन्न प्रकार के फल एकत्र करने चले गए। उसी समय कुछ लुटेरे सीमावर्ती गाँव में आतंक मचा रहे थे और अपने कैदियों को लेकर भाग रहे थे, तभी एक स्त्री शरण लेने के लिए उस आश्रम में आई और अपने प्रलोभनों से उस युवक के सजगता में बहका दिया। उसने उससे कहा, "चलो, हम यहाँ से चले चलते हैं।"

उसने कहा, "पहले मेरे पिता को लौटने दो, और उनसे मिलने के बाद मैं तुम्हारे साथ चलूंगा।"

"अच्छा, जब तुम उसे देख लो, तो मेरे पास आना," उसने कहा। और बाहर जाकर वह सड़क के बीचोंबीच बैठ गई। जब उसके पिता आए, तो उस युवा तपस्वी ने पहला श्लोक बोला:

मेरे पिता, कृपया मेरे इस संदेह का समाधान करें;
यदि मैं इस जंगल से भटककर किसी गाँव में चला जाऊं,
किस विचारधारा या किस संप्रदाय के लोग?
क्या मुझे अपने दोस्तों के लिए सबसे बुद्धिमानी से काम करना चाहिए?
तब उसके पिता ने उसे चेतावनी देते हुए तीन छंद दोहराए:

एक ऐसा व्यक्ति जो आपका विश्वास और प्यार जीत सके।
मैं आपके शब्दों पर भरोसा कर सकता हूं, और आपके धैर्य को साबित कर सकता हूं।
विचार, वचन और कर्म से कभी किसी को ठेस नहीं पहुंचाऊंगा--
उसे अपने दिल में बसा लो और एक मित्र की तरह उससे जुड़े रहो।
बंदरों की तरह चंचल स्वभाव वाले मनुष्यों के लिए

और यदि अस्थिर पाया जाए, तो उसकी ओर आकर्षित न हों।
हालांकि, आपका भाग्य कुछ हद तक एकांत रेगिस्तान तक ही सीमित होना चाहिए।
यह सुनकर उस युवा तपस्वी ने कहा, “प्रिय पिता, मुझे इन गुणों से युक्त पुरुष कहाँ मिलेगा? मैं नहीं जाऊँगा। मैं केवल आपके साथ ही रहूँगा।” और ऐसा कहकर वह लौट गया। तब उसके पिता ने उसे रहस्यमयी ध्यान में लीन होने के लिए आवश्यक विधियाँ सिखाईं। और पिता और पुत्र दोनों ही ध्यान की परमानंद अवस्था (सम्मोहन) से विमुख हुए बिना (प्रधान देवदूतों के लोक में) जन्म लेने के लिए नियत हो गए।

अपने उपदेश के अंत में गुरु ने जन्म की पहचान इस प्रकार की: "उस समय युवक और कन्या वही थे जो बाद की कहानी में हैं। तपस्वी मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)सं. 477

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **संधिभेद-जातक**
***स्रोत** : एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-349-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 349
संधिभेद-जातक

"कोई समानता नहीं," इत्यादि - यह कहानी जेतवन मठ में रहने वाले गुरु ने निंदा संबंधी नैतिक नियम के बारे में सुनाई थी।

एक समय की बात है, गुरुजी ने सुना कि छह (*1) भिक्षु निंदात्मक कहानियाँ एकत्र करते हैं। उन्होंने उन्हें अपने पास बुलाया और पूछा, "क्या यह सच है, भिक्षुओं, कि तुम अपने उन भिक्षुओं की निंदात्मक कहानियाँ एकत्र करते हो जो झगड़ालू, विवादशील और वाद-विवाद करने के लिए प्रवृत्त हैं, और इस कारण ऐसे झगड़े उत्पन्न होते हैं जो अन्यथा नहीं होते, और जब वे उत्पन्न होते हैं तो बढ़ने लगते हैं?" "हाँ, यह सच है," उन्होंने कहा। तब उन्होंने उन भिक्षुओं को फटकारा और कहा, "भाइयों, चुगली करना तेज तलवार के प्रहार के समान है। निंदा से एक दृढ़ मित्रता शीघ्र ही टूट जाती है और जो लोग इसे सुनते हैं वे अपने मित्रों से विमुख हो जाते हैं, जैसा कि शेर और बैल के मामले में हुआ था।" और ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की एक पुरानी कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व उनके पुत्र के रूप में पैदा हुए, और तक्षशिला में सभी कलाओं को प्राप्त करने के बाद, अपने पिता की मृत्यु के बाद, उन्होंने अपने राज्य पर न्यायपूर्वक शासन किया।

उस समय जंगल में मवेशी चरा रहा एक चरवाहा घर लौटा और अनजाने में एक गर्भवती गाय को वहीं छोड़ गया। उस गाय और एक शेरनी के बीच गहरी दोस्ती हो गई। दोनों जानवर पक्के दोस्त बन गए और साथ-साथ घूमने लगे। कुछ समय बाद गाय ने एक बछड़ा और शेरनी ने एक शावक को जन्म दिया। पारिवारिक बंधन के कारण ये दोनों छोटे जीव भी पक्के दोस्त बन गए और साथ-साथ घूमने लगे। फिर एक वनपाल ने उनकी दोस्ती देखकर जंगल में उगने वाली कुछ वस्तुएँ लीं और बनारस जाकर राजा को भेंट कीं। जब राजा ने उससे पूछा, "मित्र, क्या तुमने जंगल में कोई अद्भुत चीज़ देखी है?" तो उसने उत्तर दिया, "महाराज, मैंने इसके अलावा कुछ भी अद्भुत नहीं देखा, लेकिन मैंने एक शेर और एक बैल को साथ-साथ घूमते हुए देखा, वे एक-दूसरे के प्रति बहुत मित्रवत थे।"

राजा ने कहा, "यदि तीसरा जानवर दिखाई दे तो निश्चित रूप से विपत्ति आएगी। यदि तुम उस जोड़े के साथ किसी तीसरे जानवर को देखो तो आकर मुझे बताना।"

"जी हां, महाराज," उसने उत्तर दिया।

जब वनपाल बनारस के लिए रवाना हुआ, तो एक सियार ने शेर और बैल को भोजन कराया। जब वह जंगल में लौटा और यह देखा, तो उसने कहा, "मैं राजा को बताऊंगा कि एक तीसरा जानवर प्रकट हुआ है," और शहर के लिए निकल पड़ा। सियार ने सोचा, "मैंने शेरों और बैलों के मांस के अलावा कोई ऐसा मांस नहीं खाया है जो मैंने न खाया हो। इन दोनों को आपस में लड़वाकर मैं इनका मांस खाऊंगा।" और उसने कहा, "यह तो तुम्हारे बारे में ऐसा ही कहता है," और इस तरह उन्हें आपस में अलग करके उसने शीघ्र ही उनमें झगड़ा करवा दिया और उन्हें मरने की हालत में पहुंचा दिया।

लेकिन वनपाल आया और राजा को बताया, “महाराज, एक तीसरा जानवर दिखाई दिया है।” राजा ने पूछा, “यह क्या है?” राजा ने कहा, “एक सियार।” राजा ने आगे कहा, “यह उन दोनों में झगड़ा करवाएगा और उनकी मृत्यु का कारण बनेगा। जब हम वहाँ पहुँचेंगे तो वे मरे हुए मिलेंगे।” ऐसा कहकर वह अपने रथ पर सवार हुआ और वनपाल द्वारा बताए गए मार्ग पर चल पड़ा। वह ठीक उसी समय पहुँचा जब दोनों जानवर आपस में लड़कर एक-दूसरे को मार चुके थे। सियार बड़े आनंद से शेर का मांस और बैल का मांस खा रहा था। जब राजा ने देखा कि वे दोनों मर चुके हैं, तो वह अपने रथ पर वहीं खड़ा रहा और अपने सारथी से ये शब्द कहे:

इन दोनों में कोई समानता नहीं थी।
न तो पत्नियों ने आपस में भोजन साझा किया; न ही भोजन साझा किया गया;
लेकिन देखो यह कितना अपमानजनक शब्द है,
दोधारी तलवार की तरह तेज,
उसने बड़ी चतुराई से यह योजना बनाई।
पुराने दोस्तों को अलग रखना होगा
इस प्रकार बैल और शेर गिर पड़े
सबसे क्रूर जानवर का शिकार:
तो सभी बिस्तर के साथी भी ऐसे ही होंगे।
इस जोड़े की दुर्दशा को देखते हुए,
यदि वे ध्यानपूर्वक सुनने को तैयार हों
निंदा करने वाले की फुसफुसाती उपहास के जवाब में।
लेकिन वे बहुत अच्छी तरह से फल-फूल रहे हैं।
स्वर्ग में रहने वालों के समान ही,
जिन लोगों की निंदा की जाती है, वे कभी उपस्थित नहीं होते--
बदनामी का मतलब है दोस्त को दोस्त से अलग करना।
राजा ने ये छंद कहे और उनसे शेर की अयाल, खाल, पंजे और दांत इकट्ठा करने को कहकर सीधे अपने शहर लौट गया।

गुरु ने अपना पाठ समाप्त करते हुए जन्म का वर्णन इस प्रकार किया: "उस समय मैं स्वयं राजा था।"

फुटनोट:

(1) क्रमांक 28 देखें

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **देवतापन्ह-जातक**
स्रोत : एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।

पिछला <<<<-----||-350-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 350
देवतापन्हा-जातक

यह प्रश्न उम्मग्ग जातक में मिलेगा।

पुस्तक V. पंचनिपाता:

पिछला <<<<-----||-351-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 351
मणिकुंडला-जातक

"जीवन के सभी सुखों से वंचित," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए कोसल के राजा के हरम में दुराचार के दोषी एक सलाहकार के बारे में सुनाई थी। इस कहानी की उत्पत्ति का घटनाक्रम पहले ही विस्तार से बताया जा चुका है। (*1)

यहाँ भी बोधिसत्व बनारस के राजा बन गए। दुष्ट सलाहकार ने कोसल के राजा को बुलाया और उसे काशी राज्य पर कब्ज़ा करने और बोधिसत्व को कैद में डालने के लिए उकसाया। बनारस के राजा ने समाधि जैसी अवस्था प्राप्त की और हवा में पालथी मारकर बैठ गए। उस लुटेरे राजा के शरीर में तीव्र गर्मी उत्पन्न हुई और वह बनारस के राजा के पास आकर पहली पंक्ति को दोहराया:

जीवन के सभी सुखों से वंचित,
   रत्नजड़ित झुमके, घोड़ा और रथ,
बच्चे और प्यारी पत्नी से वंचित,
   लेकिन आपकी खुशी आपसे छिन नहीं जाएगी।
उनकी बात सुनकर बोधिसत्व ने ये श्लोक पढ़े:-

सुख-सुविधाएं बहुत जल्द हमसे बिछड़ जाती हैं।
   सुख-सुविधाओं का अंत शीघ्र ही हो जाता है।
दु:ख में हमें दुखी करने की कोई शक्ति नहीं होती।
   खुशी भी जल्द ही दुख में बदल जाती है।
नवजात शिशु के चेहरे वाले चंद्रमा दिखाई दे रहे हैं
   कुछ समय तक बढ़ना, फिर कम होना और मर जाना।
सूर्य की गर्माहट से पूरी प्रकृति प्रसन्न हो रही है।
   आकाश में अस्त होने की जल्दी।
मुझे लगता है कि परिवर्तन ही इस दुनिया का नियम है।
   मुझे दु:ख से कोई पीड़ा नहीं होती।
इस प्रकार अब उस महान सत्ता ने सत्ता हथियाने वाले राजा को सत्य समझाया और उसके आचरण की परीक्षा लेते हुए इन छंदों को दोहराया:

मुझे आलसी, कामुक और उदासीन व्यक्ति से घृणा है।
 झूठा तपस्वी एक दुष्ट तपस्वी होता है।
एक दुष्ट राजा बिना सुने ही किसी मामले का फैसला कर देगा;
 ऋषि का क्रोध कभी भी उचित नहीं ठहराया जा सकता।
योद्धा राजकुमार एक सुविचारित निर्णय देता है,
 धर्मी न्यायाधीश की प्रसिद्धि सदा बनी रहती है।
इस प्रकार कोसला के राजा ने बोधिसत्व से क्षमा प्राप्त कर ली और उन्हें उनका राज्य वापस सौंप दिया, जिसके बाद वह अपने देश लौट गया।

गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त करते हुए जन्म का इस प्रकार वर्णन किया: "उस समय आनंद कोसल के राजा थे और मैं स्वयं बनारस का राजा था।"

फुटनोट:

(1) क्रमांक 282, खंड 2 और क्रमांक 303 देखें

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सुजाता-जातक**3
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-352-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 352
सुजाता-जातक

“जल्दी लाने की क्या ज़रूरत है,” इत्यादि—यह कथा गुरुजी ने जेतवन मठ में रहते हुए एक ज़मींदार के बारे में सुनाई थी, जिसके पिता का देहांत हो गया था। कहते हैं कि पिता की मृत्यु पर वह शोक में डूबा रहा, उसका दुख कम नहीं हो रहा था। गुरुजी ने उस व्यक्ति में मोक्ष (निर्वाण) प्राप्त करने की क्षमता देखी, और जब वे एक भिक्षु के साथ श्रावस्ती नगर में भिक्षा मांगने गए, तो वे उसके घर आए और अपने लिए तैयार आसन पर बैठकर अपने मेज़बान को प्रणाम किया, जो स्वयं भी बैठे हुए थे, और पूछा, “हे शिष्य, क्या तुम शोक में हो?” जब उसने उत्तर दिया, “जी, पूज्यवर, मैं हूँ,” तो गुरुजी ने कहा, “मित्र, पुराने समय के ऋषियों ने ज्ञान की बातें सुनीं, और जब उन्होंने अपने पिता को खोया, तो वे शोक नहीं मनाए।” और अपने मेज़बान के अनुरोध पर उन्होंने पुराने समय की एक कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व का जन्म एक जमींदार के घर में हुआ। उनका नाम सुजाता रखा गया। जब वे बड़े हुए, तो उनके दादाजी का देहांत हो गया। उनके पिता, दादाजी की मृत्यु के दिन से ही व्याकुल हो गए। उन्होंने श्मशान घाट से अस्थियां लाकर अपने उद्यान में एक मिट्टी का टीला बनवाया और उसमें अस्थियां रखकर, जब भी वे वहां जाते, स्तूप को फूलों से सजाते और गहन शोक मनाते, न स्नान करते, न इत्र लगाते और न ही भोजन करते। उन्होंने अपने व्यवसाय पर भी ध्यान नहीं दिया। यह देखकर बोधिसत्व ने सोचा, “मेरे पिता दादाजी की मृत्यु के बाद से ही व्याकुल हैं। मुझे पूरा विश्वास है कि मेरे सिवा कोई उन्हें सांत्वना नहीं दे सकता। मैं उनके इस व्याकुलता का मार्ग खोजूंगा।”

तो उसने शहर के बाहर एक मरा हुआ बैल पड़ा देखा, तो वह घास और पानी लेकर उसके सामने रखकर बोला, "खाओ और पियो, खाओ और पियो।" वहाँ से गुजरने वाले सभी लोगों ने यह देखकर कहा, "मित्र सुजाता, क्या तुम पागल हो गए हो? क्या तुम मरे हुए बैल को घास और पानी चढ़ा रहे हो?" लेकिन उसने एक शब्द भी नहीं कहा।

तो वे उसके पिता के पास गए और बोले, “आपका बेटा पागल हो गया है। वह मरे हुए बैल को घास और पानी दे रहा है।” यह सुनकर जमींदार का अपने पिता के लिए शोक समाप्त हो गया और वह अपने बेटे के लिए शोक करने लगा। और वह जल्दी से गया और रोते हुए बोला, “मेरी प्यारी सुजाता, क्या तुम होश में नहीं हो? तुम बैल के मृत शरीर को घास और पानी क्यों दे रही हो?” और इस पर उसने दो श्लोक कहे:-

अपनी नई कटी घास को इतनी मीठी बनाने की इतनी जल्दी क्यों है?
और निर्जीव जानवर से पुकार कर कहूँ, "उठो और खाओ"?
किसी मरे हुए बैल को भोजन से जीवित नहीं किया जा सकता।
आपके शब्द व्यर्थ हैं और कुकर्म से प्रेरित हैं।
तब बोधिसत्व ने दो श्लोक कहे:-

मुझे लगता है कि यह राक्षस फिर से जीवित हो सकता है।
इसका सिर, पूंछ और चारों पैर बरकरार हैं।
लेकिन मेरे दादाजी के सिर और हाथ-पैर गायब हैं:

उसकी कब्र पर कोई मूर्ख नहीं रोता, सिवाय तुम्हारे।
यह सुनकर बोधिसत्व के पिता ने सोचा, “मेरा पुत्र बुद्धिमान है। वह इस लोक और परलोक दोनों के लिए उचित मार्ग जानता है। उसने यह मुझे सांत्वना देने के लिए किया।” और उन्होंने कहा, “मेरे प्रिय और बुद्धिमान पुत्र सुजाता, मैं जानता हूँ कि सभी वस्तुएँ क्षणभंगुर हैं। अब से मैं शोक नहीं करूँगा। ऐसा पुत्र ही हर उस व्यक्ति में होना चाहिए जो पिता के शोक को दूर करे।” और अपने पुत्र की प्रशंसा करते हुए उन्होंने कहा:-

घी से प्रज्वलित लौ की तरह जो तेजी से भड़क उठती है
उसे पानी से बुझाया गया, इसलिए उसने मेरा दर्द बुझा दिया।
दु:ख के तीर से मेरा हृदय घायल हो गया,
उन्होंने घाव को भर दिया और मेरा जीवन पुनः संवार दिया।
कांटा निकाल दिया गया, शांति और आनंद से परिपूर्ण,
मैं शोक करना बंद कर देता हूँ और अपने बेटे की बात सुनता हूँ।
इस प्रकार दयालु आत्माएं मनुष्यों को उनके दु:ख से मुक्ति दिलाती हैं।
बुद्धिमान सुजाता ने अपने पिता को राहत पहुंचाई।

अपने प्रवचन के अंत में गुरु ने सत्य प्रकट किए और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के समापन पर भूस्वामी ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की प्राप्ति की: "उस समय मैं स्वयं सुजाता थी।"

फुटनोट:

(1) क्रमांक 332 में दोहराया गया

स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-353-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 353
धोनासखा-जातक

“यद्यपि तुम अब हो,” इत्यादि—यह कथा गुरु ने भग्गों के देश में सुमसुमरगिरि (मगरमच्छ पर्वत) के निकट भेषकला वन में रहते हुए युवा राजकुमार बोधि के विषय में सुनाई। यह राजकुमार उदेना का पुत्र था और उस समय सुमसुमरगिरि में रहता था। उसने एक अत्यंत कुशल कारीगर को बुलाया और उससे कोकनादा नामक एक महल बनवाया, जो अन्य राजाओं के महलों से बिलकुल भिन्न था। बाद में उसने सोचा, “यह कारीगर किसी अन्य राजा के लिए भी ऐसा ही महल बना सकता है।” ईर्ष्यावश उसने उसकी आँखें निकाल लीं। यह बात भिक्षुओं की सभा में ज्ञात हुई। तब उन्होंने सत्य के सभागार में इस विषय पर चर्चा की और कहा, “महोदय, युवा राजकुमार बोधि ने फलाँ कारीगर की आँखें निकलवा लीं। निश्चय ही वह एक कठोर, क्रूर और हिंसक व्यक्ति है।” गुरुजी आए और उन्होंने पूछा कि जब वे सब एक साथ बैठे थे तो वे किस विषय पर चर्चा कर रहे थे। जब उन्होंने यह सुना तो उन्होंने कहा, "न केवल अभी, बल्कि पहले भी उनका स्वभाव ऐसा ही था, और पुराने समय में उन्होंने इसी प्रकार हज़ार योद्धाओं की आँखें निकाल दीं और उन्हें मारने के बाद उनके मांस को बलि के रूप में अर्पित किया।" और ऐसा कहकर उन्होंने उन्हें बीते समय की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्याभिषेक हो रहा था, तब बोधिसत्व तक्षशिला में विश्वप्रसिद्ध शिक्षक बन गए और भारत भर से योद्धा और ब्राह्मण जाति के युवक उनसे विद्या सीखने के लिए आने लगे। बनारस के राजा के पुत्र, राजकुमार ब्रह्मदत्त को भी उन्होंने तीनों वेदों की शिक्षा दी। अब वे स्वभाव से कठोर, निर्दयी और हिंसक थे। बोधिसत्व ने अपनी दूरदृष्टि से उनके स्वभाव को जानकर कहा, "मेरे मित्र, तुम कठोर, निर्दयी और हिंसक हो, और यह सत्य है कि हिंसाशील व्यक्ति द्वारा प्राप्त शक्ति क्षणभंगुर होती है:

जब उसकी शक्ति उससे चली जाती है, तो वह समुद्र में डूबे हुए जहाज के समान होता है। उसे कोई सुरक्षित बंदरगाह नहीं मिलता। इसलिए ऐसा स्वभाव मत रखो।" और उपदेश के रूप में उन्होंने दो श्लोक दोहराए:-

हालांकि अब आप शांति और समृद्धि से परिपूर्ण हैं,
ऐसा सुखद भाग्य अल्पकालिक ही सिद्ध हो सकता है:
धन-दौलत नष्ट हो जाए तो दुःख और व्याकुलता से मत घबराओ।
जैसे तूफान में फंसा कोई नाविक समुद्र में बहुत दूर फंस गया हो।
हर किसी को उसके कर्मों के अनुसार ही फल मिलेगा।
और वह जैसा बीज बोता है, वैसा ही फल पाता है।
चाहे वह अच्छी जड़ी बूटी हो या फिर हानिकारक खरपतवार।

फिर उन्होंने अपने गुरु को विदाई दी और बनारस लौट आए। अपने पिता को कलाओं में अपनी निपुणता का प्रदर्शन करने के बाद, उन्हें वायसराय का पद प्राप्त हुआ और पिता की मृत्यु के बाद वे राज्य के उत्तराधिकारी बने। उनके कुल पुरोहित, पिंगिया नाम के, एक कठोर और निर्दयी व्यक्ति थे। यश के लालच में उन्होंने सोचा, "क्या होगा यदि मैं भारत के सभी शासकों को इस राजा के हाथों पकड़वा दूँ, और इस प्रकार वह एकमात्र सम्राट बन जाए और मैं एकमात्र पुरोहित बन जाऊँ?" और उन्होंने राजा को अपनी बात मनवा ली।

और राजा ने एक विशाल सेना के साथ आगे बढ़कर एक राजा के नगर पर कब्जा कर लिया और उसे बंदी बना लिया। इसी प्रकार उसने पूरे भारत पर शासन करने की शक्ति प्राप्त कर ली और अपने साथ एक हजार राजाओं को लेकर तक्षशिला राज्य पर कब्जा करने के लिए आगे बढ़ा। बोधिसत्व ने नगर की दीवारों की मरम्मत करवाकर उसे शत्रुओं के लिए अभेद्य बना दिया। बनारस के राजा ने गंगा नदी के किनारे एक विशाल बरगद के वृक्ष के नीचे अपने ऊपर एक मंडप और चारों ओर एक पर्दा लगवाया। अपने लिए एक पलंग बिछाकर वह वहाँ रहने लगा। भारत के मैदानों में युद्ध करते हुए उसने एक हजार राजाओं को बंदी बना लिया था, लेकिन तक्षशिला पर आक्रमण में असफल होने पर उसने अपने पुरोहित से पूछा, "गुरुजी, यद्यपि हम बंदी राजाओं की एक बड़ी सेना लेकर यहाँ आए हैं, फिर भी हम तक्षशिला पर कब्जा नहीं कर सकते। अब हम क्या करें?"

"महाराज," उसने उत्तर दिया, "हजारों राजाओं की आंखें निकाल दीजिए और उनके पेट चीरकर उनका मांस और पांच मीठे पदार्थ निकाल लीजिए और इस बरगद के संरक्षक देवता को अर्पित कीजिए। और वृक्ष के चारों ओर एक घेरा बनाकर उसे पांच इंच गहरे रक्त से भर दीजिए। इस प्रकार शीघ्र ही विजय हमारी होगी।"

राजा तुरंत मान गया और शक्तिशाली पहलवानों को पर्दे के पीछे छिपाकर, उसने एक-एक करके सभी राजाओं को बुलाया। जब पहलवानों ने उन्हें अपनी बाहों में जकड़कर बेहोश कर दिया, तो उसने उनकी आँखें निकलवा दीं। उनकी मृत्यु के बाद, उसने उनका मांस लिया और शवों को गंगा में बहा दिया। फिर उसने ऊपर वर्णित आहुति दी, ढोल बजवाया और युद्ध के लिए चला गया। तभी एक यक्ष (राक्षस) अपने पहरेदार बुर्ज से आया और राजा की दाहिनी आँख निकाल ली। भयंकर पीड़ा हुई और पीड़ा से पागल होकर वह बरगद के पेड़ के नीचे बने पलंग पर लेट गया। उसी क्षण एक गिद्ध एक नुकीली हड्डी लेकर पेड़ की चोटी पर बैठ गया। मांस खाते समय उसने हड्डी गिरा दी, और नुकीली नोक लोहे की कीलों की तरह राजा की बाईं आँख पर लगी, जिससे वह आँख भी नष्ट हो गई। इस क्षण उन्हें बोधिसत्व के शब्द याद आए और उन्होंने कहा, "हमारे गुरु ने जब कहा था कि 'ये मनुष्य अपने कर्मों के अनुरूप फल भोगते हैं, जैसे बीज के अनुरूप फल मिलता है', तो मुझे लगता है कि उन्होंने ये सब बातें अपने मन में रखते हुए कही थीं।" और रोते हुए उन्होंने पिंगिया को दो छंदों में संबोधित किया:-

आह! अब जाकर मुझे सच्चाई का पता चला।
मेरे युवावस्था में ही गुरु ने मुझे यह शिक्षा दी:
"पाप मत करो," वह चिल्लाया, "वरना बुरा कर्म होगा।"
एक दिन शायद यही बात आपको अपने ही दंड की ओर ले जाए।
इस वृक्ष की छंटी हुई शाखाओं और कांपती हुई छाया के नीचे
चंदन के तेल का अर्पण किया गया।
मैंने यहीं पर एक हजार राजाओं का वध किया, और देखो!
उस समय उन्होंने जो पीड़ा सहन की, अब मुझे भी वही सहनी होगी।

इस प्रकार शोक मनाते हुए, उन्होंने अपनी रानी पत्नी को याद किया और इस श्लोक को दोहराया:-

हे उब्बारी, मेरी सांवली रानी,
सुंदर मोरिंगा वृक्ष की टहनी की तरह लचीला,

चंदन के तेल से अपने अंगों को नम करें।
मैं तुम्हारे बिना कैसे जीऊँगा?
हाँ, मृत्यु भी इससे कहीं कम कष्टदायी होगी!

ये शब्द बुदबुदाते हुए ही उसकी मृत्यु हो गई और वह नरक में पुनर्जन्म लेकर लौटा। सत्ता के लालच में डूबा हुआ पुजारी न तो उसे बचा सका और न ही अपनी शक्ति से स्वयं को बचा सका, और उसकी मृत्यु होते ही उसकी सेना तितर-बितर हो गई और भाग गई।

गुरु ने अपना पाठ समाप्त करते हुए जन्म का वर्णन इस प्रकार किया: "उस समय युवा राजकुमार बोधि एक लुटेरा राजा था, देवदत्त पिंगिया था, और मैं स्वयं विश्वप्रसिद्ध शिक्षक था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **उरगा-जातक**2
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----II-354-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 354
उरगा-जातक

"मनुष्य अपने नश्वर शरीर को त्याग देता है," इत्यादि। यह कहानी गुरुजी ने जेतवन मठ में रहते हुए एक जमींदार के बारे में सुनाई थी, जिसके पुत्र का निधन हो गया था। प्रारंभिक कहानी ठीक वैसी ही है जैसी उस व्यक्ति की थी जिसने अपनी पत्नी और पिता दोनों को खो दिया था। यहाँ भी गुरुजी उसी प्रकार उस व्यक्ति के घर गए और बैठे हुए उसे प्रणाम करने के बाद पूछा, "महोदय, क्या आप शोक में हैं?" जब उन्होंने उत्तर दिया, "जी, पूज्यवर, अपने पुत्र की मृत्यु के बाद से मैं शोक में डूबा हुआ हूँ," तो उन्होंने कहा, "महोदय, सत्य है कि जो विघटन के अधीन है, वह विघटन के अधीन है, और जो विनाश के अधीन है, वह विनाश के अधीन है, और यह केवल एक व्यक्ति के साथ या केवल एक गाँव में ही नहीं होता, बल्कि असंख्य लोकों में, और तीनों गुणों में, ऐसा कोई प्राणी नहीं है जो मृत्यु के अधीन न हो, और न ही कोई ऐसी वस्तु है जो इस अवस्था में रह सकती है। सभी प्राणी मृत्यु के अधीन हैं, और सभी सांसारिक वस्तुएँ विघटन के अधीन हैं। परन्तु प्राचीन ऋषि-मुनि, जब अपने पुत्र को खो देते थे, तो कहते थे, "जो विनाश के अधीन है, वह नष्ट हो जाता है," और शोक नहीं करते थे।" और इस पर उस व्यक्ति के अनुरोध पर उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, बोधिसत्व का जन्म बनारस के द्वार के बाहर एक गाँव में एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। वे खेतों में मजदूरी करके अपने परिवार का पालन-पोषण करते थे। उनके दो बच्चे थे, एक पुत्र और एक पुत्री। जब पुत्र बड़ा हुआ, तो पिता ने अपने ही परिवार के एक उच्च वर्ग की महिला को उसके लिए घर में आमंत्रित किया। इस प्रकार, एक दासी के साथ उनका परिवार छह सदस्यों का हो गया: बोधिसत्व और उनकी पत्नी, पुत्र और पुत्री, बहू और दासी। वे सभी सुखपूर्वक और प्रेमपूर्वक एक साथ रहते थे। बोधिसत्व ने अन्य पाँचों को सलाह दी: "जैसा तुम्हें प्राप्त हुआ है, दान करो, पवित्र दिनों का पालन करो, नैतिक नियमों का पालन करो, मृत्यु के विषय में चिंतन करो, अपनी नश्वरता के प्रति सचेत रहो। क्योंकि हम जैसे प्राणियों के लिए मृत्यु निश्चित है, जीवन अनिश्चित: सभी वस्तुएँ क्षणभंगुर और क्षय के अधीन हैं। इसलिए दिन-रात अपने आचरण पर ध्यान दो।" उन्होंने उनकी शिक्षा को सहर्ष स्वीकार कर लिया और मृत्यु के विचार पर गंभीरतापूर्वक जीवन व्यतीत किया।

एक दिन बोधिसत्व अपने पुत्र के साथ खेत जोतने गए। पुत्र ने कूड़ा-करकट इकट्ठा करके उसमें आग लगा दी। जहाँ वे थे, वहाँ से कुछ ही दूरी पर एक चींटी के टीले में एक साँप रहता था। धुएँ से साँप की आँखों में जलन हुई। क्रोधित होकर वह अपने बिल से बाहर निकला और सोचने लगा, "यह सब उस युवक की वजह से हुआ है," और अपने चारों दाँतों से उसे काट लिया। युवक वहीं गिर पड़ा और मर गया। बोधिसत्व ने उसे गिरते देख अपने बैलों को वहीं छोड़ दिया और उसके पास आए। जब उन्होंने देखा कि वह मर चुका है, तो उन्होंने उसे उठाया और एक वृक्ष के नीचे लिटा दिया। उन्हें एक चादर से ढक दिया और न तो रोए और न ही शोक मनाया। उन्होंने कहा, "जो नश्वर है, वह नश्वर है, और जो मृत्यु के अधीन है, वह मर चुका है। समस्त सांसारिक अस्तित्व क्षणभंगुर और मृत्यु के योग्य हैं।" वस्तुओं की क्षणभंगुर प्रकृति को पहचानते हुए वे खेत जोतने लगे। पास से गुजरते हुए एक पड़ोसी को देखकर उन्होंने पूछा, "मित्र, क्या तुम घर जा रहे हो?" और जब उसने "हाँ" में उत्तर दिया, तो उसने कहा, "तो कृपया हमारे घर जाओ और मालकिन से कहो, 'आज पहले

की तरह दो लोगों के लिए भोजन मत लाओ, बल्कि केवल एक के लिए लाओ। अब तक केवल दासी ही भोजन लाती थी, लेकिन आज तुम चारों साफ वस्त्र पहनो और अपने हाथों में इत्र और फूल लेकर आओ।'"

"ठीक है," उसने कहा और जाकर ब्राह्मण की पत्नी से ठीक यही शब्द कहे।

उसने पूछा, "महोदय, यह संदेश किसके द्वारा दिया गया था?"

"ब्राह्मण की कसम, महिला," उसने उत्तर दिया।

तब उसे समझ आया कि उसका पुत्र मर गया है। परन्तु वह जरा भी नहीं काँपी। पूर्ण आत्मसंयम दिखाते हुए, सफेद वस्त्र पहने और हाथों में इत्र और फूल लिए, उसने उनसे भोजन लाने को कहा और परिवार के अन्य सदस्यों के साथ खेत में चली गई। परन्तु उनमें से किसी ने भी न तो आँसू बहाए और न ही रोई। बोधिसत्व, जहाँ युवक लेटा था, वहीं छाया में बैठे रहे और अपना भोजन किया। भोजन समाप्त होने पर, सबने लकड़ियाँ लीं और शव को चिता पर रखकर, इत्र और फूल अर्पित किए और फिर उसे अग्नि दे दी। परन्तु किसी ने भी एक आँसू नहीं बहाया। सब मृत्यु के विचार में ही जी रहे थे। उनके पुण्य का ऐसा प्रभाव था कि सक्का (इंद्र) का सिंहासन ऊष्मा से भर गया। सक्का (इंद्र) ने कहा, "अरे, मुझे आश्चर्य है कि कौन मुझे मेरे सिंहासन से नीचे उतारने के लिए उत्सुक है?" और अंतर्दृष्टि से उसने पाया कि गर्मी इन लोगों में विद्यमान सद्गुण की शक्ति के कारण थी, और अत्यंत प्रसन्न होकर उसने कहा, "मुझे उनके पास जाकर शेर की दहाड़ की तरह ज़ोर से उपदेश देना चाहिए, और तुरंत बाद उनके निवास स्थान को सात रत्नों से भर देना चाहिए।" और वहाँ जल्दी से जाकर वह चिता के पास खड़ा हो गया और बोला, "तुम क्या कर रहे हो?"

"हम एक आदमी के शव को जला रहे हैं, मेरे स्वामी।"

"तुम किसी इंसान को नहीं जला रहे हो," उसने कहा। "मुझे लगता है कि तुम किसी जानवर का मांस भून रहे हो जिसे तुमने मार डाला है।"

“ऐसा नहीं है, महाराज,” उन्होंने कहा। “हम तो बस एक मनुष्य के शरीर को जला रहे हैं।”

फिर उसने कहा, "यह कोई दुश्मन ही रहा होगा।"

बोधिसत्व ने कहा, "यह हमारा सच्चा पुत्र है, शत्रु नहीं।"

"तब वह आपके लिए बेटे के समान प्रिय नहीं हो सकता था।"

"वह बहुत प्रिय थे, मेरे स्वामी।"

तो फिर तुम रोते क्यों नहीं हो?

तब बोधिसत्व ने अपने न रोने का कारण बताते हुए पहला श्लोक कहा:-

जीवन में सुख समाप्त हो जाने पर मनुष्य अपने नश्वर शरीर को त्याग देता है।
जिस प्रकार एक सांप अपनी पुरानी केंचुली को फेंकने का आदी होता है।
किसी मित्र का शोक भी मृतक की राख को स्पर्श नहीं कर सकता:
मुझे शोक क्यों करना चाहिए? वह उसी रास्ते से यात्रा करता है जिस पर उसे चलना था।
बोधिसत्व की बात सुनकर सक्का (इंद्र) ने ब्राह्मण की पत्नी से पूछा, "हे महिला, मृत व्यक्ति का आपके प्रति क्या रवैया था?"

"मैंने उसे दस महीने तक अपने गर्भ में पाला, उसे अपना दूध पिलाया, उसके हाथों और पैरों की गतिविधियों को निर्देशित किया, और वह मेरा बड़ा बेटा था, मेरे स्वामी।"

"मान लिया कि एक पिता स्वभाव से रो नहीं सकता, लेकिन एक माँ का हृदय निश्चित रूप से कोमल होता है। तो फिर आप क्यों नहीं रोतीं?"

और यह समझाने के लिए कि वह क्यों नहीं रोई, उसने कुछ पंक्तियाँ कहीं:-

वह बिना बुलाए यहाँ आया, बिना पूछे ही जल्द ही चला जाएगा;

वह जैसे आया वैसे ही चला गया। इसमें दुख का क्या कारण है?
किसी मित्र का शोक भी मृतक की राख को स्पर्श नहीं कर सकता:
मुझे शोक क्यों करना चाहिए? वह उसी रास्ते से यात्रा करता है जिस पर उसे चलना था।
ब्राह्मण की पत्नी की बात सुनकर सक्का (इंद्र) ने बहन से पूछा: "हे महिला, वह मृत व्यक्ति तुम्हारे लिए क्या मायने रखता था?"

"वह मेरे भाई थे, मेरे स्वामी।"

"महोदया, बहनें तो अपने भाइयों से बहुत प्यार करती हैं। आप क्यों नहीं रोतीं?"

लेकिन उसने यह समझाने के लिए कि वह क्यों नहीं रोई, कुछ पंक्तियाँ दोहराईं:-

अगर मैं उपवास करूं और रोऊं, तो इससे मुझे क्या लाभ होगा?
अफसोस! मेरे दोस्त और परिवार वाले और भी ज्यादा दुखी होंगे।
किसी मित्र का शोक भी मृतक की राख को स्पर्श नहीं कर सकता:
मुझे शोक क्यों करना चाहिए? वह उसी रास्ते से यात्रा करता है जिस पर उसे चलना था।
सक्का (इंद्र) ने बहन की बात सुनकर अपनी पत्नी से पूछा: "हे देवी, वह तुम्हारे लिए क्या था?"

"वह मेरे पति थे, मेरे स्वामी।"

"जब पति की मृत्यु हो जाती है, तो विधवाएँ निःसंकोच हो जाती हैं। तुम क्यों नहीं रोती हो?"

लेकिन उसने अपने रोने का कारण बताते हुए दो पंक्तियाँ कहीं:-

जैसे बच्चे ऊपर चाँद को पकड़ने के लिए व्यर्थ में रोते हैं,
इसलिए मनुष्य अपने प्रियजनों के बिछड़ने पर व्यर्थ ही शोक मनाते हैं।
किसी मित्र का शोक भी मृतक की राख को स्पर्श नहीं कर सकता:
मुझे शोक क्यों करना चाहिए? वह उसी रास्ते से यात्रा करता है जिस पर उसे चलना था।
पत्नी की बात सुनकर इंद्र ने दासी से पूछा, "हे स्त्री, वह तुम्हारे लिए क्या था?"

"वह मेरे स्वामी थे, मेरे मालिक थे।"

"निस्संदेह, उसने तुम्हारा शोषण किया होगा, तुम्हें पीटा होगा और तुम पर अत्याचार किया होगा, इसलिए यह सोचकर कि वह खुशी-खुशी मर गया है, तुम रोती नहीं हो।"

"ऐसा मत कहिए, मेरे स्वामी। यह उनके मामले के अनुकूल नहीं है। मेरे युवा स्वामी मेरे प्रति बहुत धैर्यवान, प्रेमशील और दयालु थे, और मेरे लिए एक सधे हुए बच्चे के समान थे।"

तो फिर तुम रोते क्यों नहीं हो?

और उसने यह समझाने के लिए कि वह क्यों नहीं रोई, कुछ पंक्तियाँ कही:-

मिट्टी का टूटा हुआ घड़ा, आह! इसे कौन जोड़ सकता है?
इसी प्रकार, मृतकों का शोक मनाना भी व्यर्थ का श्रम है।
किसी मित्र का शोक भी मृतक की राख को स्पर्श नहीं कर सकता:
मुझे शोक क्यों करना चाहिए? वह उसी रास्ते से यात्रा करता है जिस पर उसे चलना था।
उन सबकी बातें सुनकर इंद्र (सक्का) अत्यंत प्रसन्न हुए और बोले, "तुमने मृत्यु के विचार में ही अपना जीवन व्यतीत किया है। अब से तुम अपने हाथों से परिश्रम न करना। मैं (सक्का), स्वर्ग का राजा, तुम्हारे घर में सातों रत्नों का असंख्य सृजन करूंगा। तुम्हें दान देना है, नैतिक नियमों का पालन करना है, पवित्र दिनों का ध्यान रखना है और अपने आचरण पर ध्यान देना है।" ऐसा कहकर उन्होंने उनके घर को अपार धन से भर दिया और उनसे विदा हो गए।

गुरु ने धम्म (धार्मिक मार्ग) की व्याख्या समाप्त करने के बाद सत्यों का स्पष्टीकरण दिया और जन्म का वर्णन किया: सत्यों के समापन पर भूस्वामी ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) का फल प्राप्त किया: "उस समय खुज्जुत्तारा दासी थी, उप्पलावन्ना पुत्री, राहुल पुत्र, खेमा माता और मैं स्वयं ब्राह्मण था।"

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **घट-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----II-355-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 355
घट-जातक

"जब दूसरे रो रहे थे," इत्यादि - यह कहानी जेतवन मठ में रहने वाले गुरु ने कोसल के राजा के एक मंत्री के बारे में सुनाई। प्रारंभिक कहानी पहले दी गई कहानी के समान ही है। लेकिन इस मामले में राजा ने अपने एक कुशल सेवक को बहुत सम्मान देने के बाद कुछ उपद्रवियों की बात मानकर उसे पकड़वाकर जेल में डाल दिया। जब वह जेल में था, तब उसने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) में प्रवेश किया। राजा ने उसके महान पुण्य को जानकर उसे रिहा कर दिया। उसने एक सुगंधित माला ली और गुरु के समक्ष आकर उन्हें प्रणाम किया और बैठ गया। तब गुरु ने पूछा कि क्या उसके साथ कोई बुरा हुआ है? "जी, पूज्यवर," उसने उत्तर दिया, "लेकिन बुरे से ही मुझे भला हुआ है। मैंने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) में प्रवेश किया है।" "सचमुच," गुरु ने कहा, "केवल तुम ही नहीं, बल्कि प्राचीन ऋषियों ने भी बुरे से भला पाया है।" और यह कहकर उन्होंने उसके अनुरोध पर अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब उनकी रानी पत्नी से बोधिसत्व का जन्म हुआ। उनका नाम राजकुमार घटा रखा गया। बाद में उन्होंने तक्षशिला में कलाओं का ज्ञान प्राप्त किया और अपने राज्य पर विधिपूर्वक शासन किया।

अब एक मंत्री ने राजमहल में दुराचार किया। राजा ने अपनी आँखों से अपराध देखकर उसे अपने राज्य से निर्वासित कर दिया। उस समय श्रावस्ती नगर में वांका नामक राजा का शासन था। मंत्री उसके पास गया और उसकी सेवा में प्रवेश करके, ठीक उसी प्रकार जैसे पिछली कथा (*1) में बताया गया है, राजा का विश्वास जीत लिया और उसे बनारस राज्य पर कब्जा करने के लिए राजी कर लिया। राज्य पर कब्जा करने के बाद, उसने बोधिसत्व को जंजीरों में जकड़कर कारागार में डाल दिया। बोधिसत्व समाधि में लीन हो गए और पालथी मारकर हवा में बैठ गए। वांका के शरीर में तीव्र ऊष्मा उत्पन्न हुई। वह आया और उसने बोधिसत्व की शांति को एक पूर्ण विकसित कमल की सुंदरता से जगमगाते हुए, सुनहरे दर्पण के समान देखा, और प्रश्न के रूप में प्रथम श्लोक को दोहराया:-

जबकि दूसरे रोते-बिलखते हैं, उनके गाल आंसुओं से भीगे हुए हैं,
घाटा अब भी मुस्कुराते हुए चेहरे के साथ कभी शिकायत क्यों नहीं करता?
तब बोधिसत्व ने शोक न करने का कारण बताते हुए शेष श्लोकों का पाठ किया:-

अतीत को बदलना सभी दुखों के लिए व्यर्थ है।
   इसमें भविष्य के राज्य के लिए कोई आशीर्वाद नहीं है:
मैं, वांका, अपने कष्टों की शिकायत क्यों करूं?
   दुःख हमारे लिए साथी बनने के योग्य नहीं है।
जो दुःख से बीमार होता है, वह तड़प-तड़प कर मर जाता है।
   उसका भोजन बेस्वाद और नीरस होता जा रहा है।
जैसे तीरों से भेदा गया हो, अपने दुख के लिए शिकार बना हो,
   वह अपने सभी प्रतिद्वंद्वियों के लिए हंसी का पात्र बन जाता है।
चाहे मेरा घर सूखी जमीन पर हो या समुद्र पर,
   चाहे वह गांव हो या कोई डरावना जंगल,
कोई भी दुख कभी मेरे पास नहीं आएगा।
   परिवर्तित आत्मा को किसी बात का भय नहीं रहता।

लेकिन जो व्यक्ति स्वयं में पूर्णता से रहित है
　और इंद्रियों को तृप्त करने वाली चीजों की लालसा से प्रज्वलित है,
पूरी दुनिया नहीं, अपनी सारी गंदी और अवैध रूप से अर्जित दौलत के साथ,
　क्या यह कभी ऐसे व्यक्ति की इच्छा को पूरा कर सकता है?
अत: इन चार श्लोकों को सुनकर वांका ने बोधिसत्व से क्षमा मांगी और उन्हें उनका राज्य लौटा कर अपने मार्ग पर चल दिया। परन्तु बोधिसत्व ने अपना राज्य अपने मंत्रियों को सौंप दिया और हिमालय में जाकर तपस्वी बन गए। वे बिना किसी व्यवधान के अपनी समाधि जैसी ध्यान साधना में लीन रहे और ब्रह्मलोक (परमलोक) में जन्म लेने के लिए नियत हुए।

गुरु ने अपना पाठ समाप्त करते हुए जन्म का वर्णन किया: "उस समय आनंद राजा वांका थे और मैं स्वयं राजा घटा था।"

फुटनोट:

(1)संख्या 303 की तुलना करें

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कराण्डीय-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-356-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 356
करंदीय जातक

“जंगल में क्यों?” इत्यादि—यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जो धर्म के सरदार (सारिपुत्र) के बारे में थी। कहते हैं कि जब दुष्ट लोग, जैसे शिकारी, मछुआरे आदि, उनके पास आते थे, तो वे उन्हें और समय-समय पर मिलने वाले अन्य लोगों को नैतिक नियम समझाते हुए कहते थे, “धर्म का मार्ग अपनाओ।” गुरु के प्रति आदर के कारण वे उनकी बात नहीं मानते थे और धर्म का मार्ग अपना लेते थे, परन्तु उसका पालन नहीं करते थे और अपने-अपने काम में लगे रहते थे। गुरु ने अपने साथी भिक्षुओं से सलाह ली और कहा, “महोदय, ये लोग मुझसे धर्म का मार्ग तो ग्रहण करते हैं, परन्तु उसका पालन नहीं करते।” उन्होंने उत्तर दिया, “हे परम पूज्य, आप उनकी इच्छा के विरुद्ध उन्हें धर्म का मार्ग सिखाते हैं, और क्योंकि वे आपकी बात मानने से इनकार नहीं करते, इसलिए वे उसे स्वीकार कर लेते हैं। अब से ऐसे लोगों को धर्म का मार्ग न सिखाएँ।” गुरु को यह सुनकर ठेस पहुँची। इस घटना के बारे में सुनकर उन्होंने सत्य के हॉल में चर्चा शुरू कर दी कि कैसे वरिष्ठ भिक्षु सारिपुत्र हर उस व्यक्ति को धर्म का उपदेश देते थे जो उन्हें दिखाई देता था। गुरुजी आए और उन्होंने पूछा कि भिक्षुओं की सभा में क्या चर्चा चल रही है, और यह सुनकर उन्होंने कहा, "भाइयों, केवल अभी ही नहीं, बल्कि पहले भी वे हर उस व्यक्ति को धर्म का उपदेश देते थे जो उन्हें दिखाई देता था, भले ही उन्होंने इसके लिए न कहा हो।" और इसके साथ ही उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, बोधिसत्व का जन्म एक ब्राह्मण परिवार में हुआ और वे वहीं पले-बढ़े। वे तक्षशिला में एक विश्वप्रसिद्ध गुरु के प्रमुख शिष्य बने। उस समय, गुरु सभी को, चाहे वे मछुआरे हों या अन्य, नैतिक नियमों का उपदेश देते थे, यहाँ तक कि उनकी अनिच्छा होने पर भी, और बार-बार उनसे धर्म मार्ग अपनाने का आग्रह करते थे। परन्तु वे नियम को ग्रहण तो करते थे, पर उसका पालन नहीं करते थे। गुरु ने अपने शिष्यों से इस विषय पर चर्चा की। शिष्यों ने कहा, “हे गुरु, आप उनकी इच्छा के विरुद्ध उन्हें उपदेश देते हैं, और इसीलिए वे धर्म का उल्लंघन करते हैं। अब से केवल उन्हीं को उपदेश दीजिए जो सुनना चाहते हैं, न कि उन्हें जो सुनना नहीं चाहते।” गुरु को बहुत खेद हुआ, परन्तु फिर भी उन्होंने सभी को नैतिक नियमों का उपदेश दिया।

एक दिन एक गाँव से कुछ लोग आए और गुरु को ब्राह्मणों को अर्पित किए गए केक खाने के लिए आमंत्रित किया। उन्होंने अपने शिष्य करंदिया को बुलाया और कहा, "मेरे प्रिय पुत्र, मैं नहीं जा रहा हूँ, तुम इन पाँच सौ शिष्यों के साथ वहाँ जाओ, केक लो और मेरे हिस्से का केक लाकर दो।" तो उन्होंने उसे भेज दिया। शिष्य गया, और लौटते समय उसने रास्ते में एक गुफा देखी, और उसके मन में यह विचार आया, "हमारे गुरु बिना पूछे ही सबको धर्म का मार्ग दिखाते हैं। अब से मैं उन्हें केवल उन्हीं को उपदेश देने के लिए कहूँगा जो सुनना

चाहते हैं।" और जब अन्य शिष्य आराम से बैठे थे, तब वह उठा और एक बड़ा पत्थर उठाकर गुफा में फेंक दिया, और बार-बार यही करता रहा। तब शिष्य खड़े हो गए और बोले, "गुरुजी, आप क्या कर रहे हैं?" करंदिया ने एक शब्द भी नहीं कहा। और वे जल्दी से जाकर अपने गुरु को बताने लगे। गुरु आए और करंदिया से बातचीत करते हुए पहली पंक्ति दोहराई:-

जंगल में अकेले क्यों?
अक्सर एक विशाल पत्थर को पकड़ते हुए,
क्या तुमने इसे जानबूझकर फेंका था?
क्या यह पर्वतीय गुफा भरने के लिए थी?
उनकी बात सुनकर करंदिया ने अपने स्वामी को उत्तेजित करने के लिए दूसरी पंक्ति कही:-

मैं इस समुद्र से घिरी भूमि को बनाऊंगा
मानव हथेली की तरह चिकना:
इस प्रकार मैंने टीले और पहाड़ी को समतल किया
और पत्थरों से हर खोखले भाग को भर दो।
यह सुनकर ब्राह्मण ने तीसरा श्लोक दोहराया:-

वह कभी भी नश्वर जन्म का नहीं था।
इसमें धरती को समतल करने की शक्ति है।
दुर्लभ करंदिया उम्मीद कर सकते हैं
सिर्फ एक गुफा से ही काम चलाना था।
यह सुनकर शिष्य ने चौथा श्लोक कहा:-

यदि कोई व्यक्ति नश्वर जन्म का हो
इसमें पृथ्वी को समतल करने की शक्ति नहीं है।
गलत धारणा रखने वाले लोग शायद इनकार कर दें।
ब्राह्मण, आपके विचारों को अपनाने के लिए।
यह सुनकर शिक्षक ने उचित उत्तर दिया। क्योंकि अब उन्हें यह आभास हो गया था कि अन्य लोग उनसे असहमत हो सकते हैं, और यह सोचकर कि "मैं अब ऐसा नहीं करूंगा," उन्होंने पाँचवाँ श्लोक कहा:-

मित्र करंदिया, संक्षेप में
आप मेरी भलाई के लिए सलाह देते हैं:
पृथ्वी को कभी समतल नहीं किया जा सकता।
न ही सभी पुरुष सहमत हो सकते हैं।
इस प्रकार गुरु ने अपने शिष्य की प्रशंसा की। और शिष्य ने गुरु से इस प्रकार बात करने के बाद उसे घर ले गया।

इस पाठ को समाप्त करते हुए गुरु ने जन्म का वर्णन किया: "उस समय सारिपुत्र ब्राह्मण थे और मैं स्वयं उनका शिष्य करंदिया था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **लाटुकिका-जातक**
***स्रोत**: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-357-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 357
लतुकिका-जातक

"साठ वर्ष का हाथी," इत्यादि - यह कहानी गुरुजी ने बाँस के वन में रहते हुए देवदत्त के विषय में सुनाई थी। एक दिन सत्य के हॉल में चर्चा हुई और सबने कहा, "महोदय, देवदत्त कठोर, निर्दयी और हिंसक है। उसे मनुष्यों पर जरा भी दया नहीं आती।" जब गुरुजी आए,

तो उन्होंने पूछा कि भिक्षु किस विषय पर चर्चा करने के लिए एकत्रित हुए हैं, और जब उन्होंने सुना, "भाइयों, वह न केवल अभी, बल्कि पहले भी निर्दयी था।" और यह कहकर उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, तब बोधिसत्व ने एक युवा हाथी के रूप में जन्म लिया और बड़े होकर एक सुंदर और आकर्षक जानवर बन गए। वे अस्सी हजार हाथियों के झुंड के मुखिया बने और हिमालय में रहने लगे। उसी समय एक बटेर ने हाथियों के चारागाह में अंडे दिए। जब अंडे से बच्चे निकलने वाले थे, तो उन्होंने खोल तोड़कर अंडे से बाहर आ गए। उनके पंख अभी पूरी तरह विकसित नहीं हुए थे और वे उड़ने में भी असमर्थ थे, तभी बोधिसत्व अपने अस्सी हजार हाथियों के झुंड के साथ भोजन की तलाश में उस स्थान पर आए। उन्हें देखकर बटेर ने सोचा, "यह राजसी हाथी मेरे बच्चों को कुचलकर मार डालेगा। देखो! मैं अपने बच्चों की रक्षा के लिए उनकी कृपा की प्रार्थना करती हूँ।" तब उसने अपने दोनों पंख उठाए और उनके सामने खड़े होकर पहला श्लोक दोहराया:-

साठ वर्ष का हाथी,
आपके समकक्षों के बीच वन स्वामी,
मैं तो एक तुच्छ पक्षी हूँ।
आप समूह के नेता हैं;
मैं अपने पंखों से श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ।
हे भगवान, मेरे बच्चों को बचा लो।
उस महान प्राणी ने कहा, "हे बटेर, चिंता मत करो। मैं तुम्हारे बच्चों की रक्षा करूँगा।" और नन्हे पक्षियों के ऊपर खड़े होकर, जब अस्सी हज़ार हाथी वहाँ से गुज़र रहे थे, तब उन्होंने बटेर से इस प्रकार कहा: "हमारे पीछे एक अकेला दुष्ट हाथी आ रहा है। वह हमारी बात नहीं मानेगा। जब वह आए, तो तुम भी उससे विनती करना, और इस प्रकार अपने बच्चों की सुरक्षा सुनिश्चित करना।" और ये कहकर वे चले गए। और बटेर दूसरे हाथी से मिलने गई, और दोनों पंख ऊपर उठाकर, आदरपूर्वक प्रणाम करते हुए, उसने दूसरा श्लोक कहा--

पहाड़ियों और घाटियों में विचरण करते हुए
    अपने एकाकीपन को संजोते हुए,
हे वनराज, मैं आपको प्रणाम करता हूँ।
    और पंखों के साथ मैं अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ।
मैं तो बस एक दयनीय बटेर हूँ।
    मेरे नाज़ुक बच्चों को मारने के लिए छोड़ दो।
उसकी बात सुनकर हाथी ने तीसरा श्लोक बोला:-

मैं तेरे बच्चों को मार डालूंगा, बटेर;
आपके गरीब लोग किस काम आ सकते हैं?
मेरा बायां पैर आसानी से कुचल सकता है
इन जैसे हजारों पक्षी।
और ऐसा कहते हुए, उसने अपने पैर से उन नन्हे पक्षियों को चूर-चूर कर दिया, और उन पर मल त्याग कर उन्हें पानी की बाढ़ में बहा दिया, और जोर-जोर से चिंघाड़ते हुए चला गया। बटेर एक पेड़ की शाखा पर बैठ गई और बोली, "तो जाओ और चिंघाड़ते रहो। तुम बहुत जल्द देखोगे कि मैं क्या करूंगी। तुम्हें जरा भी अंदाजा नहीं है कि शरीर की ताकत और मन की ताकत में कितना फर्क होता है। अच्छा! मैं तुम्हें यह सबक सिखाऊंगी।" और इस प्रकार उसे धमकाते हुए उसने चौथा श्लोक दोहराया:-

सत्ता का दुरुपयोग हमेशा लाभप्रद नहीं होता।
सत्ता अक्सर कुकर्म की कमजोरी बन जाती है।
उस दरिंदे ने मेरे बच्चों की हत्या की।
मैं अब भी तुम्हारे लिए शरारतें करता रहूंगा।
ऐसा कहकर, कुछ ही देर बाद उसने एक कौवे पर कृपा की। जब कौवा बहुत प्रसन्न हुआ और उसने पूछा, "मैं आपके लिए क्या कर सकता हूँ?" तो बटेर ने कहा, "महोदय, और कुछ नहीं किया जा सकता, बस मैं चाहूँगी कि आप अपनी चोंच से इस दुष्ट हाथी की आँखें फोड़ दें।" कौवा तुरंत मान गया। फिर बटेर ने एक नीली मक्खी की भी कृपा की। जब मक्खी ने पूछा, "मैं आपके लिए क्या कर सकती हूँ?" तो उसने कहा, "जब कौवा इस दुष्ट हाथी की आँखें फोड़ दे, तो आप उन पर अंडे गिरा दें।" मक्खी मान गई, और फिर बटेर ने एक

मेंढक पर दया दिखाई। जब मेंढक ने पूछा कि उसे क्या करना है, तो बटेर ने कहा, "जब यह दुष्ट हाथी अंधा हो जाए और पानी की तलाश में निकले, तो पहाड़ की चोटी पर खड़े होकर टर्राना, और जब वह चोटी पर चढ़ जाए, तो नीचे आकर खाई के तल पर फिर से टर्राना। बस इतना ही मैं तुमसे चाहूँगी।" बटेर की बात सुनकर मेंढक तुरंत मान गया। एक दिन कौवे ने अपनी चोंच से हाथी की दोनों आँखें निकाल दीं, और मक्खी ने उन पर अंडे दे दिए। कीड़े लगने से हाथी दर्द से पागल हो गया और प्यास से बेहाल होकर पानी की तलाश में भटकने लगा। उसी समय पहाड़ की चोटी पर खड़ा मेंढक टर्राया। हाथी ने सोचा, "वहाँ ज़रूर पानी होगा," और पहाड़ पर चढ़ गया। तब मेंढक नीचे उतरा और तल पर खड़े होकर फिर से टर्राया। हाथी ने सोचा, "वहाँ पानी होगा," और खाई की ओर बढ़ गया, और लुढ़कते हुए पहाड़ की तलहटी में गिर गया और मर गया। जब बटेर को पता चला कि हाथी मर गया है, तो उसने कहा, "मैंने अपने शत्रु की पीठ देख ली है," और अत्यंत प्रसन्न होकर उसके शरीर पर घूमने लगी, और अपने कर्मों के फल के लिए चल बसी।

गुरु ने कहा, "भाइयों, किसी की शत्रुता मोल नहीं लेनी चाहिए। इन चारों प्राणियों ने मिलकर इस हाथी का नाश कर दिया, चाहे वह कितना भी बलवान क्यों न हो।"

कौवे, नीली मक्खी और मेंढक के साथ एक बटेर।
  एक समय यह एक घातक झगड़े का कारण साबित हुआ था।
उन्हीं के कारण हाथी राजा की असमय मृत्यु हो गई:
  इसलिए हर प्रकार के झगड़े से बचना चाहिए।

पूर्ण ज्ञान से प्रेरित होकर इस श्लोक का उच्चारण करते हुए, उन्होंने इस प्रकार जन्म की पहचान की: "उस समय देवदत्त दुष्ट हाथी था, और मैं स्वयं हाथियों के झुंड का नेता था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कुल्लधम्मपाल-जातक**
***स्रोत** : एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-358-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 358
कुल्लधममपाला-जातक

"महापातपा की दुखी रानी," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने बाँस के वन में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें देवदत्त द्वारा बोधिसत्व की हत्या करने की योजना का वर्णन है। अन्य सभी जन्मों में देवदत्त बोधिसत्व के मन में जरा सा भी भय उत्पन्न करने में विफल रहा, परन्तु कुलधम्मपाल जन्म में, जब बोधिसत्व केवल सात महीने के थे, उसने उनके हाथ-पैर और सिर काट दिए और उनके शरीर को तलवार के घावों से इस प्रकार घेर लिया मानो किसी माला से सजाया हो। दद्दरा (*1) जन्म में उसने उनकी गर्दन मरोड़कर उनकी हत्या कर दी, उनके मांस को भट्टी में भूनकर खा लिया। खंतिवादी (*2) जन्म में उसने उन्हें दो हज़ार कोड़ों से पीटा, उनके हाथ-पैर, कान और नाक काटने का आदेश दिया, फिर उनके सिर के बाल पकड़कर उन्हें घसीटा, और जब वे पीठ के बल पूरी तरह लेट गए, तो उसने उनके पेट में लात मारी और भाग गया, और उसी दिन बोधिसत्व की मृत्यु हो गई। लेकिन चुल्लनन्दक और वेवतियाकापी जन्मों में उसने केवल उनकी हत्या करवाई। इस प्रकार देवदत्त लंबे समय तक उन्हें मारने की कोशिश करता रहा, और बुद्ध बनने के बाद भी ऐसा करता रहा। इसलिए एक दिन सत्य के हॉल में चर्चा हुई, और कहा गया, "महोदय, देवदत्त लगातार बुद्ध को मारने की साजिश रच रहा है। सर्वोच्च बुद्ध को मारने के इरादे से उसने धनुर्धारियों को रिश्वत देकर उन पर तीर चलाए, उन पर एक चट्टान फेंकी, और उन पर हाथी नलगिरि को छोड़ दिया।" जब गुरुजी आए और उन्होंने पूछा कि भिक्षु किस विषय पर चर्चा करने के लिए एकत्रित हुए हैं, तो यह सुनकर उन्होंने कहा, "भाइयों, न केवल अभी, बल्कि पहले भी वह मुझे जान से मारने की कोशिश करता था, लेकिन अब वह मुझमें जरा भी भय उत्पन्न नहीं कर पाता, जबकि पहले जब मैं धम्मपाल राजकुमार था, तब उसने अपने पुत्र होते हुए भी, मेरे शरीर को तलवार के वारों से इस प्रकार घेरकर मेरी हत्या कर दी थी, मानो मुझे एक माला पहनाई गई हो।" और ऐसा कहते हुए उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब महापातपा बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व ने उनकी रानी चंदा के पुत्र के रूप में जन्म लिया और उनका नाम धम्मपाला रखा गया। जब वे सात महीने के थे, तब उनकी माता ने उन्हें सुगंधित जल से स्नान कराया, उन्हें सुंदर वस्त्र पहनाए

और उनके साथ खेलने लगीं। राजा उनके घर आए। जब माता अपने बच्चे के प्रति प्रेम से भरी हुई थीं, तब उन्होंने राजा को देखकर उठना ही भूल गईं। राजा ने सोचा, "यह स्त्री अभी भी अपने पुत्र के कारण अहंकार से भरी हुई है और मेरी जरा भी कद्र नहीं करती, लेकिन जब यह पुत्र बड़ा होगा, तब यह सोचेगी, 'मुझे एक पुरुष पुत्र मिल गया है' और मेरी ओर ध्यान नहीं देगी। मैं इसे तुरंत मृत्युदंड दिलवा दूंगा।" इसलिए वे घर लौट आए और अपने सिंहासन पर बैठकर जल्लाद को उसके सभी उपकरणों के साथ अपने समक्ष बुलाया। उस व्यक्ति ने अपना पीला वस्त्र पहना और लाल रंग का मुकुट धारण करके अपनी कुल्हाड़ी कंधे पर रखी, और हाथों में एक गट्ठा और एक कटोरा लेकर राजा के सामने आकर खड़ा हो गया, और उन्हें प्रणाम करते हुए बोला, "महाराज, आपकी क्या इच्छा है?"

राजा ने कहा, "रानी के राजमहल कक्ष में जाओ और धम्मपाला को यहाँ ले आओ।"

लेकिन रानी जानती थी कि राजा उसे क्रोधित अवस्था में छोड़कर चला गया है, और उसने बोधिसत्व को अपनी गोद में लिटाकर रोना शुरू कर दिया। जल्लाद आया और उसकी पीठ पर एक प्रहार करके लड़के को उसकी बाहों से छीन लिया और राजा के पास ले जाकर बोला, "महाराज, आपकी क्या इच्छा है?" राजा ने एक तख्ता मंगवाया और उसे अपने सामने रखवाया और कहा, "इसे इस पर लिटा दो।" उस व्यक्ति ने वैसा ही किया। लेकिन रानी चंदा आकर अपने पुत्र के ठीक पीछे खड़ी हो गई और रोने लगी। जल्लाद ने फिर पूछा, "महाराज, आपकी क्या इच्छा है?" राजा ने कहा, "धम्मपाल के हाथ काट दो।" रानी चंदा ने कहा, "महाराज, मेरा बालक तो केवल सात महीने का बच्चा है। उसे कुछ नहीं पता। गलती उसकी नहीं है। यदि कोई गलती है, तो वह मेरी है। इसलिए मेरे हाथ काटने का आदेश दें।" और अपनी बात स्पष्ट करने के लिए, उसने पहला श्लोक कहा:-

महापतापा की दुखी रानी,
इसके लिए मैं ही पूरी तरह से दोषी हूं।
हे महाराज, धम्मपाला से नि: मुक्त होने का अनुरोध करें।
और बदकिस्मत मुझ पर से ये छुटकारा पा लिया गया।
राजा ने जल्लाद की ओर देखा। "महाराज, आपकी क्या इच्छा है?" राजा ने कहा, "बिना देर किए, इसके हाथ काट दो।" उसी क्षण जल्लाद ने एक तेज कुल्हाड़ी उठाई और लड़के के दोनों हाथ ऐसे काट दिए जैसे वे बांस के छोटे-छोटे अंकुर हों। हाथ कटने पर लड़का न तो रोया और न ही शोक मनाया, बल्कि धैर्य और दया से प्रेरित होकर उसने इसे सहन किया। लेकिन रानी चंदा ने उसकी उंगलियों के सिरों को अपनी गोद में रखा और खून से लथपथ होकर शोक मनाने लगी। जल्लाद ने फिर पूछा, "महाराज, आपकी क्या इच्छा है?" राजा ने कहा, "इसके पैर काट दो।" यह सुनकर चंदा ने दूसरा श्लोक कहा:-

महापतापा की दुखी रानी,
इसके लिए मैं ही पूरी तरह से दोषी हूं।
हे महाराज, धम्मपाला से नि:मुक्त होने का अनुरोध करें।
और दुर्भाग्य से मेरे पैर कट गए।
लेकिन राजा ने जल्लाद को इशारा किया और उसने उसके दोनों पैर काट दिए। रानी चंदा ने उसके पैर भी अपनी गोद में रख लिए और खून से लथपथ होकर विलाप करते हुए बोली, "मेरे महापतापा, उसके पैर और हाथ काट दिए गए हैं। एक माँ का कर्तव्य है कि वह अपने बच्चों का पालन-पोषण करे। मैं मजदूरी करके अपने बेटे का पालन-पोषण करूंगी। उसे मुझे दे दीजिए।" जल्लाद ने कहा, "महाराज, क्या आपकी इच्छा पूरी हो गई? क्या मेरा काम समाप्त हो गया?" राजा ने कहा, "अभी नहीं।" "महाराज, तो आपकी क्या इच्छा है?" राजा ने कहा, "उसका सिर काट दो।" तब चंदा ने तीसरा श्लोक दोहराया:-

महापतापा की दुखी रानी,
इसके लिए मैं ही पूरी तरह से दोषी हूं।
हे महाराज, धम्मपाला से नि: मुक्त होने का अनुरोध करें।
और मेरा, बदनसीब का सिर काट दिया जाए।
और इन्हीं शब्दों के साथ उसने अपना सिर अर्पित कर दिया। जल्लाद ने फिर पूछा, "महाराज, आपकी क्या इच्छा है?" राजा ने कहा, "इसका सिर काट दो।" अतः उसने उसका सिर काट दिया और पूछा, "क्या महाराज की इच्छा पूरी हुई?" राजा ने कहा, "अभी नहीं। महाराज, मुझे और क्या करना है?" राजा ने कहा, "तलवार की धार से उसे पकड़कर, तलवार के वारों से उसे ऐसे घेर लो जैसे किसी माला से।" फिर उसने बालक के शरीर को हवा में उछाला, और तलवार की धार से उसे पकड़कर, तलवार के वारों से उसे ऐसे घेर लिया जैसे किसी माला से, और उसके टुकड़े मंच पर बिखेर दिए। चंदा ने बोधिसत्व के मांस को अपनी गोद में रखा, और मंच पर बैठकर शोक मनाते हुए उसने ये श्लोक दोहराए:-

कोई भी मित्रवत सलाहकार राजा को सलाह नहीं देता।

"अपने गर्भ से उत्पन्न हुए उत्तराधिकारी को मत मारो":
किसी भी स्नेही रिश्तेदार ने कोमल विनती नहीं की।
"उस लड़के को मत मारो जिसने तुम्हारे कारण अपनी जान बचाई है।"
इन दो श्लोकों को बोलने के बाद रानी चंदा ने अपने दोनों हाथों को अपने हृदय पर रखकर तीसरा श्लोक दोहराया:-

हे धम्मपाल, जन्मसिद्ध अधिकार से आप ही थे।
पृथ्वी के स्वामी:
तुम्हारी भुजाएँ, जो कभी चंदन के तेल से सराबोर थीं,
खून से लथपथ लेटे हुए।
हाय! मेरी रुक-रुक कर चलने वाली सांसें आहों से भर कर रुक गई हैं।
और टूटी हुई चीखें।
जब वह शोक मना रही थी, तभी उसका हृदय टूट गया, जैसे जंगल में आग लगने पर बाँस टूट जाता है, और वह वहीं गिर पड़ी। राजा भी अपने सिंहासन पर स्थिर न रह पाने के कारण चबूतरे पर गिर पड़ा। धरती में एक गहरी खाई फट गई, और वह तुरंत उसमें गिर गया। फिर ठोस धरती, जो दो लाख मील (4.23 किमी) से भी अधिक मोटी थी, उसके दुष्टता को सहन न कर पाने के कारण फट गई और एक दरार खुल गई। अविची नरक से एक ज्वाला उठी, और उसे पकड़कर, जैसे किसी शाही ऊनी वस्त्र में लपेटकर, अविची में धकेल दिया। उसके मंत्रियों ने चंदा और बोधिसत्व का अंतिम संस्कार किया।

इस प्रवचन को समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म का वर्णन किया: "उस समय देवदत्त राजा थे, महाप्रजापति (जिन्हें गौतमी भी कहा जाता है, जो बुद्ध की पालक माता, दिवंगत जन्मदाता महामाया की बहन और कपिलवस्तु की रानी थीं, जो अब एक भिक्षुणी हैं) चंदा थीं, और मैं स्वयं राजकुमार धम्मपाला था।"

फुटनोट:

(1) यह बात दद्दरा जातक कथाओं संख्या 172 और संख्या 304 में से किसी में भी नहीं मिलती।

(2) संख्या 313

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सुवनमिग-जातक**
***स्रोत**: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-359-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 359
सुवन्नामिगा-जातक

"हे स्वर्ण चरण!" यह कथा गुरुजी ने जेतवन मठ में निवास करते समय श्रावस्ती नगर की एक कुलीन कन्या को सुनाई थी। कहते हैं कि वह श्रावस्ती नगर के दो प्रमुख शिष्यों के सहायक की पुत्री थी, और एक सच्ची भक्त थी, बुद्ध, धर्ममार्ग और भिक्षु संघ से प्रेम करती थी, अच्छे कर्मों में निपुण थी, मोक्ष (निर्वाण) की राह पर अग्रसर थी, और दान-पुण्य और ऐसे ही अन्य धार्मिक कार्यों में लगी रहती थी। श्रावस्ती नगर के एक अन्य परिवार ने, जो उसी उच्च कोटि का था लेकिन जिनके विचार गलत थे, उससे विवाह करने का प्रस्ताव रखा। तब उसके माता-पिता ने कहा, "हमारी पुत्री एक सच्ची भक्त है, तीनों रत्नों में लीन है, दान-पुण्य और अन्य अच्छे कार्यों में लगी रहती है, परन्तु आपके विचार गलत हैं। और क्योंकि आप उसे अपनी इच्छा अनुसार दान करने, सत्य सुनने, मठ जाने, नैतिक नियमों का पालन करने या पवित्र दिनों का पालन करने की अनुमति नहीं देते, इसलिए हम उसका विवाह आपसे नहीं करेंगे। आप भी अपने जैसे गलत विचारों वाले परिवार से ही किसी कन्या का चुनाव करें।" जब उनका प्रस्ताव ठुकरा दिया गया, तो उन्होंने कहा, "जब आपकी बेटी हमारे घर आए, तो वह अपनी इच्छा अनुसार सब कुछ करे। हम उसे नहीं रोकेंगे। बस हमें यह वरदान दीजिए।" "तो उसे ले आइए," उन्होंने उत्तर दिया। अतः उन्होंने शुभ मुहूर्त में विवाह समारोह मनाया और उसे घर ले आए। उसने अपने कर्तव्यों का पालन करते हुए निष्ठा दिखाई, एक समर्पित पत्नी बनी और अपने ससुर और सास की उचित सेवा की। एक दिन उसने अपने पति से कहा, "हे स्वामी, मैं अपने

कुल भिक्षुओं को दान देना चाहती हूँ।" "ठीक है, मेरी प्रिय, उन्हें जो चाहे दान दीजिए।" तो एक दिन उसने इन भिक्षुओं को आमंत्रित किया और एक भव्य भोज आयोजित करके उन्हें उत्तम भोजन कराया, और उनसे अलग बैठकर कहा, "हे पूज्यवर, यह परिवार कुटिल और अविश्वासी है। ये तीनों रत्नों के महत्व से अनभिज्ञ हैं। तो फिर, हे पूज्यवर, जब तक यह परिवार तीनों रत्नों का महत्व नहीं समझ लेता, तब तक आप यहाँ भोजन ग्रहण करते रहें।" भिक्षुओं ने सहमति जताई और वहीं नियमित रूप से भोजन करने लगे। उसने फिर अपने पति से कहा, "महोदय, भिक्षु यहाँ लगातार आते रहते हैं। आप उनसे क्यों नहीं मिलते?" यह सुनकर उसने कहा, "ठीक है, मैं उनसे मिलूंगा।" अगले दिन जब भिक्षुओं ने भोजन कर लिया, तो उसने उसे बताया। वह आया और एक तरफ आदरपूर्वक बैठ गया, और भिक्षुओं से विनम्रतापूर्वक बातचीत करने लगा। तब धर्म के प्रमुख (सारिपुत्र) ने उसे धर्म का उपदेश दिया। वह धर्म के उपदेश और भिक्षुओं के व्यवहार से इतना प्रभावित हुआ कि उस दिन से वह वरिष्ठ भिक्षुओं के बैठने के लिए चटाई बिछाने लगा, उनके लिए पानी छानने लगा और भोजन के दौरान धर्म के उपदेश सुनने लगा। समय के साथ उसके गलत विचार दूर हो गए। एक दिन वरिष्ठ भिक्षु ने धर्म की व्याख्या करते हुए उस व्यक्ति और उसकी पत्नी को सत्य समझाया, और जब उपदेश समाप्त हुआ, तो वे दोनों प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की सिद्धि में स्थापित हो गए। तब से वे सभी,उसके माता-पिता से लेकर नौकरों तक, सभी ने अपने गलत विचारों को त्याग दिया और बुद्ध, उनके धार्मिक मार्ग और भिक्षुओं के पवित्र संघ के प्रति सर्मपित हो गए। एक दिन उस युवती ने अपने पति से कहा, "हे स्वामी, गृहस्थ जीवन से मेरा क्या लेना-देना? मैं संन्यासी जीवन अपनाना चाहती हूँ।" "बहुत अच्छा, मेरी प्रिय," उसने कहा, "मैं भी संन्यासी बनूँगा।" और वह उसे बड़े धूमधाम से भिक्षुणी संघ ले गया और उसे भिक्षुणी के रूप में प्रवेश दिलाया, और स्वयं भी गुरु के पास जाकर दीक्षा का अनुरोध किया। गुरु ने पहले उसे भिक्षुओं के संघ में और बाद में वरिष्ठ भिक्षुओं के पवित्र संघ में प्रवेश दिया। दोनों को आध्यात्मिक दृष्टि प्राप्त हुई और शीघ्र ही वे संत बन गए। एक दिन उन्होंने सत्य सभा में चर्चा करते हुए कहा, "महोदय, एक स्त्री ने अपने और अपने पति के विश्वास के कारण भिक्षुणी का रूप धारण किया। और दोनों ने संन्यासी जीवन अपनाकर और आध्यात्मिक दृष्टि प्राप्त करके संतत्व प्राप्त किया।" गुरुजी जब आए तो उन्होंने पूछा कि भिक्षु किस विषय पर चर्चा करने के लिए सभा में बैठे हैं। विषय सुनकर उन्होंने कहा, "भाइयों, उसने न केवल अभी अपने पति को वासना के बंधनों से मुक्त किया है, बल्कि पहले भी उसने प्राचीन ऋषियों को मृत्यु के बंधनों से मुक्त किया था।" इतना कहकर वे चुप रहे, परन्तु आग्रहवश उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, बोधिसत्व एक युवा हिरण के रूप में अवतरित हुए और सुनहरे रंग के एक सुंदर और आकर्षक प्राणी के रूप में बड़े हुए। उनके आगे और पीछे के पैर मानो लाख से ढके हुए थे। उनके सींग चांदी की माला के समान थे, उनकी आंखें गोल रत्नों जैसी थीं और उनका मुख लाल ऊन के गोले जैसा था। उनकी साथी हिरणी भी सुंदर थी और वे सुख-सुविधाओं के साथ रहते थे। बोधिसत्व के झुंड में अस्सी हजार चित्तीदार हिरण थे। जब वे वहां रह रहे थे, तभी एक शिकारी ने हिरणों के झुंड में फंदा लगा दिया। एक दिन बोधिसत्व अपने झुंड का नेतृत्व करते हुए, अपना पैर फंदे में फंसा बैठे। फंदा तोड़ने के लिए उन्होंने उसे खींचा और पैर की चमड़ी कट गई। फिर उन्होंने खींचा और मांस में चोट लगी, और तीसरी बार खींचने पर नस में चोट आ गई। अंत में फंदा हड्डी तक घुस गया। फंदे को तोड़ने में असमर्थ, हिरण मृत्यु के भय से इतना भयभीत हो गया कि वह लगातार चीखने लगा। उसकी चीख सुनकर हिरणों का झुंड घबराकर भाग गया। लेकिन हिरणी भागते हुए हिरणों के बीच बोधिसत्व को नहीं देख पाई और सोचने लगी, "यह घबराहट अवश्य ही मेरे स्वामी से संबंधित है," और तेजी से उनके पास दौड़कर, बहुत आँसू बहाते हुए और रोते हुए बोली, "मेरे स्वामी, आप बहुत बलवान हैं। आप फंदे को क्यों नहीं तोड़ पा रहे हैं? अपनी शक्ति का प्रयोग कीजिए और इसे तोड़ दीजिए।" और इस प्रकार उन्हें प्रयास करने के लिए प्रेरित करते हुए, उसने पहला श्लोक कहा:-

हे सुनहरे पैरों वाले,
अपने आप को जंजीरदार जाल से मुक्त करने में कोई कसर मत छोड़ो।
तुम्हारे बिना मैं
जंगल में स्वतंत्र रूप से विचरण करने का आनंद कैसे ले सकता हूँ?
यह सुनकर बोधिसत्व ने दूसरे श्लोक में उत्तर दिया:-

मैं हर संभव प्रयास करता हूँ, पर व्यर्थ,
मुझे अपनी स्वतंत्रता नहीं मिल पाती।
जितना अधिक मैं मुक्त होने के लिए संघर्ष करता हूँ,
उतना ही फंदा कसता जाता है।
तब हिरणी ने कहा, "हे मेरे स्वामी, भयभीत न हों। मैं अपनी शक्ति से शिकारी से विनती करूंगी, और अपना प्राण त्यागकर आपका प्राण बचा लूंगी।" इस प्रकार उस महान प्राणी को दिलासा देते हुए, उसने रक्त से लथपथ बोधिसत्व को गले लगाया। लेकिन शिकारी तलवार और भाला लिए, चक्र की शुरुआत में विनाशकारी ज्वाला की तरह, पास आ रहा था। उसे देखकर हिरणी ने कहा, "हे मेरे स्वामी, शिकारी आ रहा है। मैं अपनी शक्ति से आपको बचा लूंगी। भयभीत न हों।" इस प्रकार हिरण को दिलासा देते हुए, वह शिकारी

से मिलने गई, और आदरपूर्वक दूरी पर खड़े होकर उसने उसे प्रणाम किया और कहा, "हे मेरे स्वामी, मेरे पति स्वर्ण रंग के हैं, और सभी गुणों से परिपूर्ण हैं, अस्सी हजार हिरणों के राजा हैं।" और इस प्रकार बोधिसत्व की स्तुति करते हुए, उसने अपनी मृत्यु की भीख मांगी, केवल झुंड के राजा को बचाए रखने के लिए, और उसने तीसरा श्लोक दोहराया:-

हे शिकारी , धरती पर पत्तों से भरा एक बिस्तर बिछा दो
, जहाँ हम गिर सकें;
और अपनी तलवार म्यान से निकालकर
मुझे मार डालो और उसके बाद मेरे स्वामी को भी।
यह सुनकर शिकारी अचंभित हो गया और बोला, "मनुष्य भी अपने राजा के लिए अपनी जान नहीं देते; तो जानवर भी नहीं। इसका क्या अर्थ है? यह प्राणी तो मनुष्यों की भाषा में मधुर स्वर में बोल रही है। आज मैं इसे और इसके साथी को जीवनदान दूंगा।" और उससे अत्यंत मोहित होकर शिकारी ने चौथा श्लोक कहा:-

ऐसा प्राणी जो मनुष्यों की आवाज़ में बोलता हो,
मेरी समझ से परे था।
शांति से विश्राम करो, मेरे प्यारे हिरण, और
हे सुनहरे पैरों वाले, भय करना छोड़ दो।
बोधिसत्व को आराम से बैठे देखकर हिरणी अत्यंत प्रसन्न हुई और शिकारी को धन्यवाद देते हुए पाँचवाँ श्लोक दोहराया:-

आज जिस प्रकार मैं
इस शक्तिशाली जानवर को स्वतंत्र देखकर प्रसन्न हूं,
उसी प्रकार हे शिकारी, जिसने जाल खोला,
अपने सभी मित्रों और परिवार के साथ आनन्द मनाओ।
और बोधिसत्व ने सोचा, "इस शिकारी ने मुझे और इस हिरणी को, तथा अस्सी हज़ार हिरणों को जीवनदान दिया है। यह मेरा आश्रय रहा है, और मुझे भी इसका आश्रय बनना चाहिए।" और अपने परम गुणी स्वभाव के कारण उन्होंने सोचा, "जिसने सहायता की है, उसका उचित प्रतिफल देना चाहिए।" और उन्होंने शिकारी को एक जादुई रत्न दिया जो उन्हें उनके चारागाह में मिला था और कहा: "मित्र, अब से किसी भी प्राणी का वध मत करना, बल्कि इस रत्न से अपना घर बसाओ, पत्नी और बच्चों का पालन-पोषण करो, दान दो और अन्य अच्छे कार्य करो।" और इस प्रकार कहकर हिरण जंगल में विलीन हो गया।

गुरु ने यहाँ अपना पाठ समाप्त किया और जन्म की पहचान बताई: "उस समय चन्ना शिकारी था, यह नवोदित महिला हिरणी थी, और मैं स्वयं शाही हिरण था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सुसोंडी-जातक**
***स्रोत**: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----II-360-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 360
सुस्सौंडी-जातक (*1)

"मुझे सुगंध आ रही है," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक पथभ्रष्ट भिक्षु के बारे में सुनाई थी। गुरु ने पूछा कि क्या यह सच है कि वह संसार के लिए तरस रहा है, और उसने ऐसा क्या देखा है जिससे उसे शिष्यों के मार्ग पर चलने का पछतावा हो रहा है। भिक्षु ने उत्तर दिया, "यह सब एक स्त्री के आकर्षण के कारण था।" गुरु ने कहा, "सचमुच, भिक्षु, स्त्री-पुरुषों से सावधान रहना संभव नहीं है। प्राचीन ऋषि, यद्यपि गरुड़ों के निवास में रहते थे, फिर भी उनसे सावधान नहीं रह पाए।" और उसके आग्रह पर, गुरु ने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, बनारस में ताम्बा राजा का राज था और उनकी रानी सुसोंडी अत्यंत सुंदर थीं। उसी समय बोधिसत्व ने एक युवा गरुड़ का रूप धारण किया। नाग द्वीप को तब सेरुमा द्वीप के नाम से जाना जाता था और बोधिसत्व इसी द्वीप पर गरुड़ों के निवास में रहते थे। वे एक युवक का वेश धारण करके बनारस गए और राजा ताम्बा के साथ जुए का खेल खेला। उनकी सुंदरता देखकर सुसोंडी से लोगों ने कहा, "फलां-फलां युवक हमारे राजा के साथ जुए का खेल खेल रहा है।" सुसोंडी उन्हें देखने के लिए व्याकुल हो उठीं और एक दिन उन्होंने सज-धज कर जुए के कक्ष में गईं। वहां सेवकों के बीच खड़ी होकर उन्होंने युवक पर अपनी निगाहें गड़ा दीं। युवक की भी रानी पर निगाहें टिक गईं और दोनों एक-दूसरे से प्रेम करने लगे। गरुड़ राजा ने अलौकिक शक्ति से शहर में तूफान ला दिया। महल के गिरने के भय से लोग भाग निकले। अपनी शक्ति से उसने अंधेरा कर दिया और रानी को अपने साथ हवा में उठाकर नाग द्वीप में अपने निवास स्थान की ओर चल पड़ा। लेकिन सुसोंडी के आने-जाने की किसी को खबर नहीं थी। गरुड़ ने उसके साथ आनंद लिया और राजा के साथ पासा खेलने आता रहा। राजा का एक संगीतकार था जिसका नाम सग्गा था। रानी के बारे में न जानकर राजा ने संगीतकार से कहा, "जाओ और हर जगह, हर समुद्र और भूमि की खोज करो और पता लगाओ कि रानी कहाँ है।" इतना कहकर उसने संगीतकार को जाने के लिए कहा।

उसने अपनी यात्रा के लिए आवश्यक सामान लिया और नगर द्वार से खोज शुरू करते हुए अंततः भारुकच्छा पहुँचा। उस समय भारुकच्छा के कुछ व्यापारी स्वर्ण देश (स्वर्ग) के लिए रवाना हो रहे थे। वह उनके पास पहुँचा और बोला, "मैं एक संगीतकार हूँ। यदि आप मेरा किराया माफ कर दें, तो मैं आपके लिए संगीतकार का काम करूँगा। मुझे अपने साथ ले चलिए।" वे मान गए और उसे जहाज पर बिठाकर लंगर उठा दिया। जब जहाज पूरी तरह से रवाना हो गया, तो उन्होंने उसे बुलाया और उनसे उनके लिए संगीत बजाने को कहा। उसने कहा, "मैं संगीत बजा सकता हूँ, लेकिन अगर मैं ऐसा करूँ, तो मछलियाँ इतनी उत्तेजित हो जाएँगी कि आपका जहाज डूब जाएगा।" उन्होंने कहा, "अगर एक साधारण मनुष्य संगीत बजाए, तो मछलियाँ उत्तेजित नहीं होंगी। हमारे लिए बजाइए।" उसने कहा, "तो मुझ पर क्रोधित मत होइए," और अपने वीणा को ठीक करते हुए और अपने गीत के शब्दों और वीणा के साथ पूर्ण सामंजस्य बनाए रखते हुए, उसने उनके लिए संगीत बजाया। मछलियाँ उस ध्वनि से पागल हो गईं और उछल-कूद करने लगीं। एक समुद्री राक्षस उछलकर जहाज पर गिरा और उसे दो टुकड़ों में तोड़ दिया। सग्गा एक तख्ते पर लेटा हुआ था और हवा उसे उड़ाते हुए नाग द्वीप में एक बरगद के पेड़ तक ले गई, जहाँ गरुड़ राजा रहते थे। रानी सुसोंडी, जब भी गरुड़ राजा जुआ खेलने जाते थे, अपने घर से नीचे आती थीं। जब वह किनारे पर घूम रही थीं, तो उन्होंने संगीतकार सग्गा को देखा और पहचान लिया। उन्होंने उससे पूछा कि वह यहाँ कैसे आया। सग्गा ने उन्हें सारी कहानी सुनाई। रानी ने उसे दिलासा देते हुए कहा, "डरो मत," और उसे अपनी बाहों में भरकर अपने घर ले गईं और पलंग पर लिटा दिया। जब वह पूरी तरह से स्वस्थ हो गया, तो रानी ने उसे दिव्य भोजन खिलाया, दिव्य सुगंधित जल से स्नान कराया, दिव्य वस्त्र पहनाए और दिव्य सुगंध वाले फूलों से सजाया और उसे दिव्य पलंग पर आराम दिया। इस प्रकार वह उसकी रक्षा करती रही, और जब भी गरुड़ राजा लौटता, वह अपने प्रेमी को छुपा लेती, और राजा के जाते ही, वासना के आवेश में आकर उसके साथ भोग-विलास करती। उस समय से डेढ़ महीने बाद, बनारस में रहने वाले कुछ व्यापारी जलाऊ लकड़ी और पानी लेने के लिए इस द्वीप पर बरगद के पेड़ की तलहटी में उतरे। संगीतकार उनके साथ जहाज पर सवार हो गया, और बनारस पहुँचकर, जैसे ही उसने राजा को पासा खेलते देखा, सग्गा ने अपना वीणा उठाया, और संगीत बजाते हुए पहला श्लोक सुनाया:-

मुझे तिमिरा के उपवन की सुगंध आ रही है।
मुझे थके हुए समुद्र की कराह सुनाई देती है:
ताम्बा, मैं अपने प्यार के कारण पीड़ा झेल रहा हूँ।
सुंदर सुसोंडी मुझसे बहुत दूर रहती है।
यह सुनकर गरुड़ राजा ने दूसरा श्लोक कहा:-

आपने तूफानी जलधाराओं को कैसे पार किया?
और क्या सीरम से सुरक्षा में कोई लाभ होता है?
सागा, आपने ये कैसे किया, मुझे बताइए, मैं आपसे अनुरोध करता हूँ।
क्या सुसोंडी को जीत दिलाने में कोई बाधा आएगी?
फिर सग्गा ने तीन छंद दोहराए:-

भारुकच्छ भूमि के व्यापारियों के साथ
समुद्र के राक्षसों ने मेरे जहाज को चकनाचूर कर दिया;
मैंने तख्ते पर चढ़कर सुरक्षित रूप से किनारे तक पहुँच प्राप्त कर ली।
जब एक अभिषिक्त रानी कोमल हाथों से
उसने मुझे प्यार से अपनी गोद में बिठाया था।
मानो मैं उसके लिए एक सच्चा बेटा हो सकता हूँ।

वह खाना और कपड़े लेकर आई, और मैं लेटा रहा
प्रेम में डूबी निगाहों से वह दिन भर मेरे सोफे पर टकटकी लगाए रहा।
ताम्बा, इसे अच्छी तरह जान लो; मैं जो कह रहा हूँ वह सत्य है।
जब संगीतकार इस प्रकार बोल रहा था, गरुड़ खेद से भर उठा और बोला, "यद्यपि मैं गरुड़ों के निवास में रहता था, फिर भी मैं उसकी रक्षा करने में असफल रहा। यह दुष्ट स्त्री मेरे लिए क्या मायने रखती है?" इसलिए वह उसे वापस ले आया और राजा के समक्ष प्रस्तुत करके चला गया। और उसके बाद वह फिर कभी वहाँ नहीं आया।

अपने उपदेश के अंत में, गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म का वर्णन किया: सत्यों के समापन पर सांसारिक मन वाले भिक्षु ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की सिद्धि प्राप्त की: "उस समय आनंद बनारस के राजा थे, और मैं स्वयं गरुड़ राजा था।"

फुटनोट:

(1)संख्या 327 की तुलना करें

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **वाणारोह-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-361-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 361
वन्नारोह-जातक(*1) "क्या ऐसा है, सुदथ?" इत्यादि--यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए अपने दो प्रमुख शिष्यों के विषय में सुनाई थी। एक बार वर्षा ऋतु में दोनों प्रमुख भिक्षुओं ने एकांतवास करने का निश्चय किया। उन्होंने गुरु को विदाई दी और भिक्षुओं का साथ छोड़कर जेतवन मठ से अपने कुंड और वस्त्र स्वयं उठाकर एक सीमावर्ती गाँव के पास के जंगल में रहने लगे। वहीं एक व्यक्ति, जो भिक्षुओं की सेवा करता था और उनके द्वारा दिए गए भोजन पर निर्भर था, अलग से उसी स्थान पर रहने लगा। इन भिक्षुओं को इतने सुखपूर्वक एक साथ रहते देखकर उसने सोचा, "क्या इनके बीच मतभेद संभव है?" इसलिए वह सारिपुत्र के पास आया और बोला, "हे पूज्यवर, क्या आपके और आदरणीय प्रमुख भिक्षु मोग्गल्याना के बीच कोई मतभेद है?" "ऐसा क्यों, श्रीमान?" सारिपुत्र ने पूछा। "हे परम पूज्य, वह हमेशा आपकी आलोचना करते हुए कहता है, 'मेरे जाने के बाद, जाति, वंश, परिवार और देश के संदर्भ में, या पवित्र ग्रंथों में प्राप्त ज्ञान के संदर्भ में, सारिपुत्र मेरे मुकाबले क्या महत्व रखता है?'" वरिष्ठ भिक्षु मुस्कुराए और बोले, "चले जाओ!" एक दिन वह मुख्य वरिष्ठ भिक्षु मोग्गल्याना के पास आया और वही बात कही। मोग्गल्याना भी मुस्कुराए और बोले, "चले जाओ!" मोग्गल्याना सारिपुत्र के पास गए और पूछा, "क्या इस व्यक्ति ने, जो हमारे बचे हुए भोजन पर जीता है, आपसे कुछ कहा है?" "हाँ, मित्र, कहा है।" "और उसने मुझसे भी बिलकुल यही बात कही।" हमें उसे भगा देना चाहिए।" "ठीक है, मित्र, उसे भगा दो।" बड़े भिक्षु ने कहा, "तुम्हें यहाँ नहीं आना है," और उंगली चटकाकर उसे भगा दिया। दोनों बड़े भिक्षु सुखपूर्वक साथ रहे, और गुरु के पास लौटकर उन्हें प्रणाम किया और बैठ गए। गुरु ने उनसे स्नेहपूर्वक बात की और पूछा कि क्या उनका एकांतवास सुखमय रहा। उन्होंने कहा, "एक भिखारी ने हमें आपस में झगड़ा कराने की कोशिश की, लेकिन असफल होने पर वह भाग गया।" गुरु ने कहा, "सचमुच, सारिपुत्र, अभी ही नहीं, बल्कि पहले भी उसने तुम्हें आपस में झगड़ा कराने की कोशिश की थी, लेकिन असफल होने पर वह भाग गया।" और इस पर उनके अनुरोध पर उन्होंने बीते दिनों की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, तब बोधिसत्व एक वन में वृक्ष-देवता (देवदूत) के रूप में विराजमान थे। उस समय उस वन की एक पर्वत-गुफा में एक शेर और एक बाघ रहते थे। एक सियार उनकी सेवा में था और उनके मांस के टुकड़े खाकर उसका शरीर बड़ा होने लगा। एक दिन उसके मन में यह विचार आया, "मैंने आज तक शेर या बाघ का मांस नहीं खाया है। मुझे इन दोनों जानवरों को आपस में लड़वाना चाहिए और जब उनके झगड़े के परिणामस्वरूप उनकी मृत्यु हो जाए, तब मैं उनका मांस खाऊंगा।" इसलिए वह शेर के पास गए और बोले, "क्या आपके और बाघ के बीच कोई झगड़ा है, महाराज?" "क्यों, महाराज?" उन्होंने कहा, "यह शेर हमेशा आपकी आलोचना करता है और कहता है, 'मेरे मरने के बाद, यह शेर मेरी सुंदरता, मेरे कद और आकार, और मेरी स्वाभाविक शक्ति और सामर्थ्य के सोलहवें भाग के बराबर भी नहीं हो पाएगा।' तब शेर ने उनसे कहा, "यहाँ से चले जाओ।" वह

मेरे बारे में कभी ऐसा नहीं कहेगा।" फिर सियार भी शेर के पास आया और उसी तरह बोला। उसकी बात सुनकर शेर तेजी से शेर के पास गया और पूछा, "मित्र, क्या यह सच है कि तुमने मेरे बारे में ऐसा कहा?" और उसने पहला श्लोक कहा:-

"क्या सुदथा मेरे बारे में इस प्रकार (*2) बात करता है?
रूप और वंश की सुंदरता में,
मैदान में शक्ति और कौशल में,
(*2)सुबाहु को अभी भी मेरे सामने झुकना होगा।"
यह सुनकर सुदत्थ ने शेष चार श्लोक दोहराए:-

क्या सुबाहु मेरे बारे में इसी प्रकार बात करता है?
"रूप और वंश की कृपा में,
मैदान में शक्ति और कौशल में,
सुदथा को अब भी मेरे सामने झुकना होगा।"
यदि ऐसे अपमानजनक शब्द आपके हैं,
अब तुम मेरे मित्र नहीं रहोगे।
वह व्यक्ति जो ध्यानपूर्वक सुनता है
उसे जो भी गपशप सुनने को मिले,
जल्द ही एक दोस्त से झगड़ा शुरू कर देता है।
और प्रेम का अंत घोर घृणा में होगा।
कोई भी दोस्त बिना कारण के संदेह नहीं करता।
या फिर सावधानीपूर्वक खामियों की तलाश करता है;
लेकिन भरोसे का सारा भार अपने मित्र पर ही रहेगा।
जैसे बच्चा अपनी माँ की गोद में होता है,
और मैं कभी किसी अजनबी के शब्दों पर विश्वास नहीं करूंगा।
अपने हृदय के स्वामी से विमुख हो जाना।
जब इन चार छंदों में मित्र के गुणों का वर्णन हो गया, तो बाघ ने कहा, "गलती मेरी है," और शेर से क्षमा मांगी। और वे उसी स्थान पर सुखपूर्वक साथ रहने लगे। लेकिन सियार वहां से चला गया और कहीं और भाग गया।

गुरु ने अपना पाठ समाप्त करते हुए जन्म का वर्णन किया: "उस समय सियार वह भिखारी था जो टूटे-फूटे मांस पर जीवन यापन करता था, शेर सारिपुत्र था, बाघ मोग्गल्याना था, और वह देवता जो उस जंगल में रहता था और जिसने यह सब अपनी आँखों से देखा, वह मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)संख्या 349 की तुलना करें

(2) सुदथा (मजबूत दांत वाला) सिंह है, सुबाहु (मजबूत भुजा वाला) बाघ है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **शीलाविमांसा-जातक2**
***स्रोत** : एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-362-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 362
सिलविमांसा-जातक(*1)

“सद्‌गुण और विद्या,” इत्यादि — यह कथा गुरु (भगवान बुद्ध) ने जेतवन मठ में निवास करते हुए एक ब्राह्मण के बारे में सुनाई, जो सद्‌गुण की शक्ति का परीक्षण करना चाहता था। कहते हैं कि राजा ने उसके सद्‌गुणों के कारण उसे अन्य ब्राह्मणों से अधिक सम्मान दिया। ब्राह्मण ने सोचा, “क्या राजा मुझे सद्‌गुणों से संपन्न होने के कारण विशेष सम्मान दे रहे हैं, या विद्या के प्रति सर्मर्पित होने के कारण? मैं तो बस सद्‌गुण और विद्या के तुलनात्मक महत्व का परीक्षण करूँगा।”

एक दिन उसने राजकोष से एक सिक्का चुरा लिया। कोषाध्यक्ष, उसके प्रति अपने आदर के कारण, कुछ नहीं बोला। ऐसा दूसरी बार भी हुआ, तब भी कोषाध्यक्ष चुप रहा। लेकिन तीसरी बार उसने उसे चोरी का दोषी समझकर गिरफ्तार करवा दिया और राजा के समक्ष पेश किया। जब राजा ने उससे अपराध के बारे में पूछा, तो उसने उस पर राजा की संपत्ति चुराने का आरोप लगाया।

"क्या यह सच है, ब्राह्मण?" राजा ने कहा।

“महाराज, मुझे आपकी संपत्ति चुराने की आदत नहीं है,” उसने कहा, “लेकिन मुझे सद्‌गुण और ज्ञान के सापेक्षिक महत्व के बारे में संदेह था, और यह जानने के लिए कि दोनों में से कौन अधिक महत्वपूर्ण है, मैंने तीन बार एक सिक्का चुराया, और फिर मुझे हिरासत में लेकर आपके सामने पेश किया गया। अब जब मैं ज्ञान की तुलना में सद्‌गुण का अधिक महत्व जान गया हूँ, तो मैं अब गृहस्थ जीवन नहीं जीना चाहता। मैं संन्यासी बनूँगा।”

अनुमति मिलने पर, उन्होंने अपने घर के दरवाजे की ओर देखे बिना सीधे जेतवन मठ जाकर गुरु से दीक्षा देने का अनुरोध किया। गुरु ने उन्हें दीक्षा प्राप्त भिक्षु और वरिष्ठ भिक्षु दोनों की दीक्षा प्रदान की। दीक्षा प्राप्त करने के कुछ ही समय बाद, उन्हें आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त हुआ और वे परम मोक्ष को प्राप्त कर गए। सत्य सभा में इस घटना की चर्चा हुई कि कैसे एक ब्राह्मण ने सद्‌गुणों की शक्ति सिद्ध करने के बाद शिष्यों का मार्ग अपनाया और आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त कर संतत्व को प्राप्त किया। जब गुरु आए और भिक्षुओं से उनके विषय के बारे में पूछा, तो विषय सुनकर उन्होंने कहा, "केवल यह व्यक्ति ही नहीं, बल्कि प्राचीन ऋषियों ने भी सद्‌गुणों को सिद्ध किया और तपस्वी बनकर निर्वाण प्राप्त किया।" और इसके साथ ही उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्याभिषेक था, तब बोधिसत्व का जन्म एक ब्राह्मण परिवार में हुआ। जब वे वयस्क हुए, तो उन्होंने तक्षशिला में सभी धार्मिक विद्याओं का ज्ञान प्राप्त किया और बनारस लौटकर राजा से मिलने गए। राजा ने उन्हें कुलपुजारी का पद प्रदान किया और चूंकि वे पांच नैतिक नियमों का पालन करते थे, इसलिए राजा ने उन्हें एक गुणी व्यक्ति मानकर आदर किया। उन्होंने सोचा, "क्या ऐसा हो सकता है कि राजा मुझे एक गुणी व्यक्ति मानकर आदर कर रहे हैं, या विद्या प्राप्ति में लीन रहने वाले व्यक्ति के रूप में?" यह पूरी कहानी आधुनिक घटना से हूबहू मेल खाती है, लेकिन इस मामले में ब्राह्मण ने कहा, "अब मैं विद्या की तुलना में सद्‌गुण के महत्व को समझ गया हूँ।" और इस पर उन्होंने ये पांच श्लोक कहे:

मुझे सद्‌गुण और ज्ञान की परीक्षा करने में खुशी हुई;
अब से मुझे इस बात में कोई संदेह नहीं है कि सद्‌गुण ही सर्वश्रेष्ठ है।
सद्‌गुण, रूप और जन्म के व्यर्थ उपहारों से श्रेष्ठ है।
सद्‌गुण के बिना विद्या का कोई मूल्य नहीं है।
चाहे राजकुमार हो या किसान, यदि वह पाप का गुलाम हो जाए,
दोनों ही मोर्चों पर दुख-तकलीफें कम नहीं होतीं।
उच्च जाति के पुरुषों का निम्न जाति के पुरुषों के साथ टकराव।
जो इस ग्रह पर सदाचारी है, उसे स्वर्ग में भी समान दर्जा मिलेगा।
न जन्म, न परंपरा, न मित्रता - इनमें से कुछ भी मायने नहीं रखता।
शुद्ध सद्‌गुण ही भविष्य में सुख की प्राप्ति का कारण बनते हैं।
इस प्रकार उस महान सत्ता ने सद्‌गुणों की स्तुति की और राजा की सहमति प्राप्त करके उसी दिन हिमालय क्षेत्र में चले गए, और एक तपस्वी का धार्मिक (सन्यासी) जीवन अपनाकर उन्होंने अपनी क्षमताओं और उपलब्धियों को विकसित किया और (प्रधान देवदूतों के लोक में) जन्म लेने के लिए नियत हो गए।

गुरु ने यहाँ इस पाठ को समाप्त किया और जन्म की पहचान बताई: "उस समय मैंने स्वयं सद्‌गुण की परीक्षा ली और एक तपस्वी का धार्मिक (सन्यासी) जीवन अपनाया।"

फुटनोट:

(1) क्रमांक 86, 290, 305 और 330 की तुलना करें

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **हिरि-जातक**
***स्रोत**: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-363-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 363
हिरी-जातक

"जो सम्मान के बावजूद," इत्यादि--यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए, अनाथपिंडिका के मित्र, एक सीमावर्ती प्रांत में रहने वाले एक धनी व्यापारी के बारे में सुनाई थी। प्रारंभिक कहानी और अतीत की कहानी, दोनों ही प्रथम पुस्तक के नौवें भाग के समापन अध्याय 'जन्म' में पूरी तरह से वर्णित हैं, (*1) लेकिन इस संस्करण में जब बनारस के व्यापारी को बताया गया कि विदेशी व्यापारी के अनुयायियों की सारी संपत्ति छीन ली गई और सब कुछ खोने के बाद उन्हें भागना पड़ा, तो उन्होंने कहा, "क्योंकि वे अपने पास आए अजनबियों के लिए वह नहीं कर पाए जो उन्हें करना चाहिए था, इसलिए उन्हें कोई भी मदद करने के लिए तैयार नहीं मिला।" और ऐसा कहते हुए उन्होंने इन छंदों को दोहराया:

जो सम्मान की परवाह किए बिना, अपनी भूमिका निभाता है
एक विनम्र सेवक, अपने हृदय में आपसे घृणा करता है।
अच्छे कर्मों में विपन्न, केवल शब्दों में धनी—
आह! ऐसा दोस्त तो आप कभी नहीं चाहेंगे।
अपने हर वादे को अपने कर्मों में निभाओ।
जो आप पूरा नहीं कर सकते, उसका वादा करने से इनकार करें;
ज्ञानी लोग खोखली शेखी बघारने वालों को संदेह की नजर से देखते हैं।
कोई भी मित्र बिना कारण के झगड़े पर संदेह नहीं करता।
खामियों को खोजने के लिए हमेशा देखते रहने के लिए:
लेकिन जो अपने मित्र पर भरोसा रखता है, वह निश्चिंत रह सकता है।
जैसे छोटा बच्चा अपनी माँ की गोद में होता है,
मैं कभी भी किसी अजनबी के कर्म या वचन से प्रभावित नहीं होऊंगा।
अपने हृदय के स्वामी से विमुख हो जाना।
जो व्यक्ति मानवीय मित्रता के बंधन को भलीभांति निभाता है,
बढ़े हुए आनंद और सम्मान से भरा जीवन क्या बता सकता है:
लेकिन जो शांति के आनंद का अनुभव करता है,
सत्य के मीठे घूंट पीते हुए—केवल वही जानता है
पाप के बंधनों और उसके सभी कष्टों से मुक्ति।
इस प्रकार, दुष्ट साथियों के संपर्क में आने से विरक्त होकर, उस महान सत्ता ने एकांत की शक्ति के माध्यम से अपने उपदेश को समाप्त किया और मनुष्यों को शाश्वत निर्वाण की ओर ले गए।

अपने पाठ के अंत में गुरु ने जन्म का वर्णन इस प्रकार किया: "उस समय मैं स्वयं बनारस का व्यापारी था।"

फुटनोट:

(1)सं. 90

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **खज्जोपनक-जातक**

स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-364-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 364
खज्जोपनक-जातक

जुगनू से संबंधित इस प्रश्न पर महाउम्मग्ग में विस्तार से चर्चा की जाएगी।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **अहिगुंडिका-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-365-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 365
अहिगुंडिका-जातक

"देखो! हम यहाँ लेटे हैं," इत्यादि—यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक वृद्ध भिक्षु के बारे में सुनाई थी। यह कहानी शलाका जन्म (*1) में पहले ही पूरी तरह से वर्णित है। इस संस्करण में भी, वृद्ध भिक्षु ने एक गाँव के लड़के को भिक्षु दीक्षा देने के बाद उसका अपमान किया और उसे पीटा। लड़का भाग गया और संसार में लौट गया। वृद्ध भिक्षु ने उसे एक बार फिर शिष्यों के पवित्र संघ में शामिल किया और पहले की तरह ही व्यवहार किया। तीसरी बार संसार में लौटने के बाद, जब उस युवक को फिर से वापस आने के लिए कहा गया, तो उसने वृद्ध भिक्षु की ओर देखा तक नहीं। सत्य के हॉल में इस बात पर चर्चा हुई कि एक वरिष्ठ भिक्षु न तो अपने शिष्य के साथ रह सकता है और न ही उसके बिना, जबकि वह लड़का, जो एक संवेदनशील युवक था, वृद्ध भिक्षु के स्वभाव दोष को देखकर उसकी ओर देखता तक नहीं था। गुरु आए और उन्होंने पूछा कि चर्चा का विषय क्या है। जब उन्होंने उसे बताया, तो उसने कहा, "केवल अभी ही नहीं, भिक्षुओं, बल्कि पहले भी यही युवक एक संवेदनशील नौसिखिया था, जो वरिष्ठ भिक्षु की कमियों को देखकर उनकी ओर दृष्टि तक नहीं डालता था।" और ऐसा कहते हुए उसने अतीत की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, बनारस के राजा ब्रह्मदत्त के शासनकाल में, बोधिसत्व का जन्म एक अनाज व्यापारी के परिवार में हुआ था। बड़े होकर वे अनाज बेचकर अपना जीवन यापन करते थे।

एक सपेरे ने एक बंदर को पकड़ा और उसे सांप के साथ खेलना सिखाया। जब बनारस में एक त्योहार की घोषणा हुई, तो उसने बंदर को अनाज व्यापारी के पास छोड़ दिया और सात दिनों तक घूम-घूम कर सांप के साथ खेलता रहा। व्यापारी बंदर को हर तरह का भोजन खिलाता रहा। सातवें दिन त्योहार के जश्न में सपेरा शराब के नशे में चूर हो गया और वापस आकर उसने बांस के एक टुकड़े से बंदर को तीन बार मारा। फिर उसे अपने साथ एक बगीचे में ले जाकर बांध दिया और सो गया। बंदर अपनी जंजीर से छूट गया और एक आम के पेड़ पर चढ़कर वहां फल खाने लगा। जब सपेरे की नींद खुली तो उसने बंदर को पेड़ पर बैठा देखा और सोचा, "मुझे उसे बहला-फुसलाकर पकड़ना चाहिए।" और उससे बात करते हुए उसने पहली पंक्ति दोहराई:

देखो! हम यहाँ लेटे हैं, मेरी प्यारी।
जैसे कोई जुआरी पासे से हार जाता है।
कुछ आम गिरा दो: खैर, हम जानते हैं।
हम अपनी आजीविका के लिए आपके तरकीबों के ऋणी हैं।
यह सुनकर बंदर ने शेष छंद बोले:

हे मित्र, तुम्हारी प्रशंसा निरर्थक लगती है;
एक सुंदर बंदर कभी नहीं मिला।

दुकानों में कौन, जब नशे में हो,
क्या आज तुमने मुझे भूखा रखा और इतना पीटा कि दर्द होने लगा?
जब मैं, सपेरा, याद करता हूँ
दर्द की वह बिस्तर जिस पर मैं लेटा हुआ था,
हालांकि मुझे किसी दिन राजा बनना हो,
मेरी किसी भी प्रार्थना से यह वरदान भंग नहीं होना चाहिए।
तुम्हारी क्रूरता याद आ रही है।
लेकिन अगर किसी व्यक्ति के रहने के बारे में पता हो
घर पर संतुष्टि मिलने की संभावना है,
और सौम्य जाति के स्रोत, बुद्धिमान
ऐसे लोगों के साथ घनिष्ठ संबंध स्थापित करने चाहिए।
इन शब्दों के साथ ही बंदर अपने साथी बंदरों की भीड़ में खो गया। (*2)

गुरु ने यहाँ अपना पाठ समाप्त किया और जन्म की पहचान बताई: "उस समय बूढ़ा व्यक्ति सपेरा था, नौसिखिया बंदर था, और मैं स्वयं अनाज व्यापारी था।"

फुटनोट:

(1) क्रमांक 249 देखें

(2) "पेड़ों के झुरमुट में खो गया था"।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **गुम्बिया-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-366-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 366
गुम्बिया-जातक (*1)

"शहद जैसा ज़हर," इत्यादि - यह कहानी गुरुजी ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी। यह कहानी एक भिक्षु के बारे में है जिसे दीक्षा लेने का पछतावा था। गुरुजी ने उससे पूछा कि क्या उसे सच में पछतावा है? भिक्षु ने कहा, "जी हाँ, परम पूज्य।" गुरुजी ने पूछा, "ऐसा क्या देखा है जिससे तुम्हें यह एहसास हुआ?" जब भिक्षु ने उत्तर दिया, "एक स्त्री के आकर्षण के कारण," तो गुरुजी ने कहा, "इच्छा के ये पाँच गुण उस शहद के समान हैं जिस पर घातक ज़हर छिड़का गया हो और जिसे गुम्बिका ने सड़क पर छोड़ दिया हो।" और इस पर भिक्षु के अनुरोध पर उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

बनारस के राजा ब्रह्मदत्त के शासनकाल में, एक व्यापारी के घर में बोधिसत्व का जन्म हुआ। बड़े होकर वे पाँच सौ गाड़ियों में माल लादकर व्यापार के लिए बनारस से निकले। मुख्य मार्ग पर, एक जंगल के प्रवेश द्वार पर पहुँचकर उन्होंने अपने सभी काफिले के सदस्यों को बुलाया और कहा, “देखो! इस मार्ग पर पत्ते, फूल, फल और ऐसी ही अन्य चीजें हैं जो विषैली हैं। इन्हें खाते समय मुझसे पूछे बिना कोई भी पराया भोजन न करना; क्योंकि राक्षस मार्ग में ताजे चावल और विभिन्न प्रकार के मीठे जंगली फलों से भरी टोकरियाँ रखते हैं और उन पर विष छिड़कते हैं। मेरी अनुमति के बिना इन्हें मत खाना।” यह चेतावनी देने के बाद वे अपनी यात्रा पर आगे बढ़ गए।

फिर गुम्बिया नाम के एक यक्ष (राक्षस) ने जंगल के बीचोंबीच एक जगह पर पत्ते बिछाए और उन पर शहद के कुछ टुकड़े रखकर उन्हें घातक विष से ढक दिया। वह स्वयं पेड़ों को चोंच मारने का नाटक करते हुए, मानो शहद की खोज में लगा हो, सड़क पर इधर-उधर भटकने लगा। अज्ञानवश मनुष्यों ने सोचा, "यह शहद किसी पुण्य कर्म के फल के रूप में यहाँ रखा गया होगा," और फिर उसे खाकर

उनकी मृत्यु हो गई। राक्षस आए और उनका मांस खा गए। बोधिसत्व के काफिले के कुछ लोग, स्वभाव से लालची होने के कारण, इन उत्तम खाद्य पदार्थों को देखकर अपने आप को रोक नहीं पाए और उन्हें खा लिया। लेकिन जो बुद्धिमान थे उन्होंने कहा, "हम खाने से पहले बोधिसत्व से सलाह लेंगे," और उसे अपने हाथों में पकड़े खड़े रहे। जब बोधिसत्व ने देखा कि उनके हाथों में क्या है, तो उन्होंने उन्हें उसे फेंक देने के लिए कहा। और जो लोग उसे पूरा खा चुके थे, वे मर गए। लेकिन जिन्होंने आधा ही खाया था, उन्हें उन्होंने उल्टी कराने वाली दवा दी, और उल्टी होने के बाद उन्होंने उन्हें चार मीठी चीजें दीं, और इस प्रकार अपनी अलौकिक शक्ति से वे ठीक हो गए। बोधिसत्व सुरक्षित रूप से अपने इच्छित स्थान पर पहुँच गए, और अपना सामान बेचने के बाद अपने घर लौट गए।

जहर, दिखने में, स्वाद में और गंध में शहद जैसा।
गुंबिया द्वारा जानबूझकर बिछाया गया था, लेकिन वह गिर गया:
वे सभी जिन्होंने शहद की तरह उस हानिकारक भोजन को खाया,
अपने ही लालच के कारण वे जंगल में नष्ट हो गए।
लेकिन जिन्होंने बुद्धिमानी से प्रलोभन से परहेज किया,
वे यातनाओं से मुक्त रहे और शांति से रहे।
इसलिए कामवासना, विष के चारे की तरह, मनुष्य के लिए रखी जाती है;
उसके दिल की ख्वाहिश अक्सर मौत के मुंह में धकेल दी गई है।
लेकिन जो कमजोर होते हुए भी, पापों के प्रति आसक्त होने से त्याग देता है,
दुख और पीड़ा के बंधनों से मुक्ति।

पूर्ण ज्ञान से प्रेरित इन श्लोकों को सुनाने के बाद, गुरु ने सत्यों को प्रकट किया और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के समापन पर, पथभ्रष्ट भाई (भिक्षु) ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) का फल प्राप्त किया: "उस समय मैं स्वयं वह व्यापारी था।"

फुटनोट:

(1)संख्या 85 की तुलना करें

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सालिया-जातक**
***स्रोत**: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-367-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 367
सालिया-जातक

"जिसने अपने दोस्त को मार डाला," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने बांस के जंगल में रहते हुए सुनाई थी, उस कहावत के संदर्भ में कि देवदत्त भय भी उत्पन्न नहीं कर सकता था।

जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व का जन्म एक गृहस्थ परिवार में हुआ था। बचपन में वे गाँव के प्रवेश द्वार पर स्थित एक बरगद के पेड़ की तलहटी में अन्य लड़कों के साथ खेलते थे। उसी समय एक गरीब, बूढ़ा वैद्य, जिसका कोई व्यवसाय नहीं था, गाँव से भटकते हुए उस स्थान पर आया और उसने पेड़ की शाखाओं के बीच एक साँप को सिर छिपाए सोते हुए देखा। उसने सोचा, "इस गाँव में कुछ नहीं मिलता। मैं इन लड़कों को समझाऊँगा और साँप से उन्हें कटवाऊँगा, फिर मैं उनके इलाज के बदले कुछ कमा लूँगा।" उसने बोधिसत्व से कहा, "यदि आपको एक छोटा सा काँटेदार जानवर दिखाई दे, तो क्या आप उसे पकड़ लेंगे?" बोधिसत्व ने कहा, "हाँ, मैं पकड़ लूँगा।"

"देखो, एक इस पेड़ की शाखा में पड़ा है," बूढ़े आदमी ने कहा।

बोधिसत्व को यह पता नहीं था कि वह एक साँप है, इसलिए वह पेड़ पर चढ़ गए और उसकी गर्दन पकड़ ली। लेकिन जब उन्हें पता चला कि वह एक साँप है, तो उन्होंने उसे अपने ऊपर हमला नहीं करने दिया, बल्कि उसे अच्छी तरह से पकड़कर जल्दी से दूर फेंक दिया। साँप बूढ़े चिकित्सक की गर्दन पर गिरा और उसके चारों ओर लिपटकर उसे इतनी ज़ोर से काटा कि उसके दाँत मांस में धंस गए और बूढ़ा वहीं गिर पड़ा और मर गया, और साँप भाग गया। लोग उनके चारों ओर जमा हो गए, और महान सत्ता ने एकत्रित लोगों को धर्म का मार्ग समझाते हुए ये श्लोक दोहराए:

जिसने अपने दोस्त को कब्जा करने के लिए राजी किया
एक घातक सांप, जिसे आप चाहें तो हेजहॉग कह सकते हैं।
सांप के काटने से उसकी मृत्यु हो गई।
जैसे कोई व्यक्ति अपने पड़ोसी के प्रति बुराई की इच्छा रखता हो।
जिसने प्रहार किया था, वह चला गया
वह आदमी जो कभी पलटवार नहीं करता,
उसे चोट लगी और वह नीचे लेट गया।
इस बेईमान को घातक प्रहार से बहुत पीड़ा हुई।
तो धूल जिसे फेंक देना चाहिए
हवा के विपरीत दिशा में चलने पर हवा चेहरे पर वापस आ जाती है;
और एक के लिए खराब ढंग से डिजाइन किया गया।
जो पवित्र है, और जिसने कोई बुराई नहीं की है,
अंततः मूर्ख के सिर पर
विस्फोट के विपरीत दिशा में फेंकी गई धूल की तरह यह पीछे हटता है।

गुरु ने यहाँ अपना पाठ समाप्त किया और जन्म की पहचान बताई: "उस समय वह बेचारा बूढ़ा चिकित्सक देवदत्त था, और वह बुद्धिमान युवक मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **तकासार-जातक**
***स्रोत**: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-368-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 368
ताकासारा-जातक

"प्रतिद्वंद्वियों के हाथों में पड़ जाना," इत्यादि—यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए ज्ञान की पूर्णता के विषय में सुनाई थी। तब गुरु ने कहा, "हे भिक्षुओं, केवल अब ही नहीं, बल्कि पहले भी तथागत (बुद्ध) ने स्वयं को बुद्धिमान और संसाधन संपन्न सिद्ध किया था।" और इसके साथ ही उन्होंने अतीत की एक प्राचीन कथा सुनाई।

बनारस के राजा ब्रह्मदत्त के शासनकाल में, एक समय की बात है, बोधिसत्व का जन्म एक ग्रामस्वामी के घर में हुआ था। पूरी कहानी पिछले जन्म की कहानी से बिल्कुल मिलती-जुलती है। लेकिन इस कथा के अनुसार, जब वैद्य की मृत्यु हो गई, तो उनके गाँव के पड़ोसियों ने कहा, "इन युवकों ने उस व्यक्ति की मृत्यु का कारण बनाया है। हम इन्हें राजा के समक्ष लाएँगे।" और उन्होंने उन्हें जंजीरों में बाँधकर बनारस ले गए। बोधिसत्व ने यात्रा के दौरान अन्य युवकों को सलाह देते हुए कहा, "डरो मत। राजा के समक्ष लाए जाने पर भी, निडर और प्रसन्न रहना। राजा पहले हमसे बात करेंगे, और उसके बाद मैं निर्णय लूँगा कि क्या करना है।" वे उनकी बात से सहमत हो गए और उन्होंने उसी के अनुसार कार्य किया। जब राजा ने उन्हें शांत और प्रसन्न पाया, तो उसने कहा, "इन बेचारे लोगों को हत्यारों के रूप में जंजीरों में बांधकर यहाँ लाया गया है, और इतनी विपत्ति में होने के बावजूद, वे भयभीत नहीं हैं और प्रसन्न हैं। मैं उनसे पूछूंगा कि वे क्यों परेशान नहीं हैं।"

और उन्होंने पहला छंद दोहराया:

प्रतिद्वंद्वियों के हाथ में पड़ गया
   और बांस की जंजीरों से बंधा हुआ,
तुम अपने कष्टों को कैसे छुपा सकते हो?
   और मुस्कुराते हुए चेहरे के साथ पाया जा सकता है?
यह सुनकर बोधिसत्व ने शेष श्लोक कहे:

   थोड़ी सी भी अच्छाई नहीं होती।
वह व्यक्ति विलाप और शोक से सदा के लिए मुक्त हो जाएगा;
   उसके शत्रु प्रसन्न होते हैं।
जब वे अपने प्रतिद्वंद्वी को दर्द से बेहाल देखते हैं।
   लेकिन शत्रु दुख से भरे हुए हैं
जब वह बड़े साहस के साथ अपने भाग्य से मिलने जाता है,
   और वह घबराता नहीं है, जैसे कोई कुशल व्यक्ति।
विवेक का प्रयोग करके सभी चीजों में अंतर करना चाहिए।
   चाहे वह मंत्रोच्चारण से हो या जादू-टोने से,
महंगे उपहारों से, या शक्तिशाली परिवार की मदद से,
   ताकि वह नुकसान से सर्वोत्तम तरीके से बच सके।
किसी व्यक्ति को जीतने के लिए किसी अनुकूल स्थिति प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए।
   लेकिन अगर वह सफलता हासिल करने में असफल रहता है,
दूसरों की सहायता से या अकेले ही,
   उसे शोक नहीं करना चाहिए बल्कि सहमत होना चाहिए;
भाग्य बहुत शक्तिशाली है, उसने अपनी पूरी कोशिश कर ली है।
बोधिसत्व द्वारा धर्म की व्याख्या सुनने के बाद राजा ने मामले की जांच की और लड़कों की निर्दोषता का पता चलने पर उनकी बेड़ियाँ खुलवा दीं। उन्होंने बोधिसत्व को बहुत सम्मान दिया और उन्हें अपना सांसारिक और आध्यात्मिक सलाहकार तथा अपना विशिष्ट मंत्री नियुक्त किया। उन्होंने अन्य युवकों को भी सम्मान प्रदान किया और उन्हें विभिन्न पदों पर नियुक्त किया।

जब गुरु ने यह पाठ समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उस समय आनंद बनारस के राजा थे, अन्य युवक निम्न श्रेणी के पुरोहित थे, और मैं स्वयं ज्ञानी युवक था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **मित्तविंदा-जातक**3
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-369-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 369
मित्तविन्द-जातक(*1)

"बुराई क्या थी?", इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक उद्दंड भिक्षु के बारे में सुनाई थी। इस कहानी की उत्पत्ति का कारण महामित्तविन्द जन्मग्रंथ में मिलेगा।

अब जब मित्तविन्दका को समुद्र में फेंक दिया गया, तो उसने अत्यंत लालच दिखाया और और भी अधिक लालच करते हुए नरक में जाने वाले प्राणियों के यातनास्थल पर पहुँच गया। उसने उस्सादा नरक को नगर समझकर उसमें प्रवेश किया और वहाँ अपने सिर पर

एक तेज धार वाला पहिया लगवा लिया। तब बोधिसत्व देवदूत के रूप में उस्सादा गए। उन्हें देखकर मित्तविन्दका ने पहले श्लोक को प्रश्नवाचक रूप में दोहराया:-

मेरे कारण क्या बुराई उत्पन्न हुई?
 इस प्रकार स्वर्ग के श्राप को भड़काना,
कि मेरा बेचारा सिर कभी भी
 यातना के घूमते पहिये के टूटने से?
यह सुनकर बोधिसत्व ने दूसरा श्लोक कहा:

आनंद और सुख के घरों को त्यागकर,
यह मोतियों और क्रिस्टल से सजा हुआ है।
और सोने-चांदी की चमक से सजे महल,
आपको इस भयावह दृश्य तक क्या चीज ले आई?
तब मित्तविन्दक ने तीसरे श्लोक में उत्तर दिया:

मुझे वहाँ कहीं अधिक परिपूर्ण आनंद प्राप्त होंगे
 इन गरीब दुनियाओं में से कोई भी इससे बेहतर प्रदर्शन नहीं कर सकता।"
यही विचार मेरी कमजोरी साबित हुआ।
 और इसी वजह से मैं पीड़ा के इस दृश्य तक पहुंचा।
इसके बाद बोधिसत्व ने शेष श्लोकों को दोहराया:

चार से आठ तक, फिर वहां से सोलह तक, और इसी तरह
बत्तीस वर्ष की आयु तक अतृप्त लालच बढ़ता चला गया।
इस प्रकार, हे लालची आत्मा, तुम निरंतर आगे बढ़ते रहे।
जब तक तुम्हें अपने सिर पर यह पहिया ढोने के लिए अभिशप्त न होना पड़े।
अत: सभी, लालच भरी इच्छाओं का पीछा करते हुए,
अब भी अतृप्त हैं, फिर भी और अधिक से अधिक की मांग है:
उनकी भूख का बढ़ता हुआ मार्ग,
और, आपकी ही तरह, वे भी इस चक्र को अपने सिर पर ढोते हैं।
लेकिन जब मित्तविन्दक बोल ही रहे थे कि पहिया उन पर गिर पड़ा और उन्हें कुचल दिया, जिससे वे आगे कुछ बोल नहीं सके। लेकिन वह दिव्य प्राणी सीधे अपने स्वर्गलोक लौट गए।

अपने उपदेश के अंत में, गुरु ने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उस समय उद्दंड भाई (भिक्षु) मित्तविन्दक थे, और मैं स्वयं दिव्य सत्ता था।"

फुटनोट:

(1) क्रमांक 41, 82 और 104 देखें

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **पलास-जातक**2
स्रोत: *एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-370-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 370
पलासा-जातक

"हंस ने यहूदा वृक्ष से कहा," इत्यादि - यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में निवास करते समय पाप के दंड के विषय में सुनाई थी। इस कथा की उत्पत्ति का वर्णन पन्ना जन्म में किया जाएगा। इस अवसर पर गुरु ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा, "भाइयों, पाप को संदेह की दृष्टि से देखना चाहिए। चाहे वह बरगद की छोटी सी टहनी ही क्यों न हो, वह घातक सिद्ध हो सकता है। प्राचीन ऋषि भी हर उस चीज़ पर संदेह करते थे जिस पर संदेह किया जा सकता था।" और इसके साथ ही उन्होंने अतीत की एक कथा सुनाई।

बनारस के राजा ब्रह्मदत्त के शासनकाल में, एक समय की बात है, बोधिसत्व एक सुनहरे हंस के बच्चे के रूप में प्रकट हुए। जब वे बड़े होकर हंस बन गए, तो वे हिमालय क्षेत्र के चित्तकूट पर्वत पर स्थित एक सुनहरी गुफा में रहने लगे और एक प्राकृतिक झील के किनारे उगने वाले जंगली धान को खाने के लिए नियमित रूप से जाया करते थे। उनके आने-जाने के रास्ते में एक विशाल बरगद का पेड़ था। आते-जाते वे हमेशा वहीं रुककर विश्राम करते थे। इस प्रकार, बरगद में निवास करने वाले देवता से उनका मित्रत्व स्थापित हो गया। कुछ समय बाद, एक पक्षी बरगद का पका फल खाकर बरगद के पेड़ पर आकर बैठ गया और उसकी शाखा के बीच में अपनी विष्ठा गिरा दी। वहीं से एक छोटा बरगद का पेड़ उगा, जो चार इंच ऊंचा हो गया और लाल अंकुरों और हरियाली से जगमगा रहा था। यह देखकर शाही हंस ने वृक्ष के संरक्षक देवता से कहा, "मेरे मित्र, जिस भी वृक्ष पर बरगद का अंकुर उगता है, वह उसके बढ़ने से नष्ट हो जाता है। इसे बढ़ने मत दो, वरना यह तुम्हारे निवास स्थान को नष्ट कर देगा। तुरंत वापस जाओ और इसे जड़ से उखाड़कर फेंक दो। जिस बात पर संदेह करना उचित हो, उस पर संदेह करना चाहिए।" और इस प्रकार वृक्ष-परी से बात करते हुए हंस ने पहला श्लोक कहा:

हंस ने यहूदा के पेड़ से कहा,
"एक बरगद की शाखा तुम्हें धमका रही है:
आप अपने सीने के पिछले हिस्से में क्या करते हैं
मुझे डर है कि वो तुम्हारे टुकड़े-टुकड़े कर देगा।
यह सुनकर वृक्ष देवता ने उसकी बातों पर ध्यान न देते हुए दूसरी पंक्ति दोहराई:

अच्छा! इसे बढ़ने दो, और क्या मुझे होना चाहिए?
बरगद के पेड़ के लिए एक शरणस्थल,
और उसकी देखभाल माता-पिता के प्यार से करें।
यह मेरे लिए एक आशीर्वाद साबित होगा।
फिर हंस ने तीसरा छंद बोला:

मुझे डर है कि यह एक शापित अंकुर है।
आप इसे अपने सीने के पिछले हिस्से के भीतर करते हैं।
मैं अलविदा कहता हूँ और भाग जाता हूँ।
अफसोस! यह वृद्धि मुझे पसंद नहीं करती।
इन शब्दों के साथ राजसी हंस ने अपने पंख फैलाए और सीधे चित्तकुटा पर्वत की ओर चल पड़ा। उसके बाद वह कभी वापस नहीं लौटा। कुछ समय बाद बरगद का पौधा उगा। इस वृक्ष का भी अपना संरक्षक देवता था। और अपनी वृद्धि के दौरान, इसने यहूदा वृक्ष को तोड़ दिया, और एक शाखा के साथ वृक्ष-देवता का निवास भी गिर गया। इस समय राजसी हंस के शब्दों पर विचार करते हुए, वृक्ष-देवता ने सोचा, "हंसों के राजा ने भविष्य में इस खतरे को भांप लिया था और मुझे इसके बारे में चेतावनी दी थी, लेकिन मैंने उनकी बात नहीं मानी।" और इस प्रकार शोक करते हुए, उन्होंने चौथा श्लोक कहा:

मेरु की ऊँचाई के समान एक भयानक प्रेत
इसने मुझे एक भयावह स्थिति में डाल दिया है;
मित्र गूसी द्वारा कहे गए शब्दों का तिरस्कार करते हुए,
अब मैं भय से व्याकुल हूँ।
इस प्रकार, जैसे-जैसे बरगद का वृक्ष बढ़ता गया, उसने उस पूरे यहूदा वृक्ष को नष्ट कर दिया और उसे मात्र एक ठूंठ में बदल दिया, और वृक्ष-देवता का निवास स्थान पूरी तरह से गायब हो गया।

बुद्धिमान लोग परजीवी चीजों से घृणा करते हैं।
यह उस रूप का गला घोंट देता है जिससे वह चिपके रहना पसंद करता है।
बुद्धिमान व्यक्ति, खरपतवार से होने वाले खतरे को भांपते हुए,
बीज बनने से पहले ही जड़ को नष्ट कर दें।

यह पांचवां छंद था, जो पूर्ण ज्ञान से प्रेरित था।

यहां गुरु ने अपना पाठ समाप्त करते हुए सत्यों का खुलासा किया और जन्म की पहचान बताई:- सत्यों के समापन पर पांच सौ भिक्षुओं ने संतत्व प्राप्त किया:- "उस समय मैं स्वयं सोने की मुर्गी था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **दिघिटिकोसल-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-371-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 371
दिघितिकोसला-जातक (*1)

“तुम मेरी शक्ति के अधीन हो,” इत्यादि—यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए कोसंबी के कुछ झगड़ालू लोगों के बारे में सुनाई थी। जब वे जेतवन मठ आए, तो गुरु ने उनके बीच सुलह कराते हुए कहा, “भाइयों, तुम मेरे वचनों से उत्पन्न मेरे वैध पुत्र हो। बच्चों को अपने पिता की सलाह को पैरों तले नहीं रौंदना चाहिए, परन्तु तुम मेरी सलाह का पालन नहीं करते। प्राचीन ऋषियों ने जब अपने माता-पिता को मारकर उनके राज्य पर कब्जा करने वाले लोग जंगल में उनके हाथ लग गए, तो उन्होंने उन्हें मृत्युदंड नहीं दिया, यद्यपि वे पक्के विद्रोही थे, बल्कि उन्होंने कहा, “हम अपने माता-पिता की सलाह को नहीं रौंदेंगे।” और इस पर उन्होंने अतीत की एक कथा सुनाई। इस जन्म में, इस कथा से संबंधित घटना और कथा दोनों का संघभेदक जन्म में पूर्ण वर्णन किया जाएगा।

राजकुमार दिघावु ने बनारस के राजा को जंगल में एक तरफ लेटा हुआ पाया, तो उसने उसकी चोटी पकड़कर कहा, "अब मैं उस लुटेरे के चौदह टुकड़े कर दूंगा जिसने मेरे माता-पिता को मार डाला।" और जिस क्षण वह अपनी तलवार लहरा रहा था, उसे अपने माता-पिता की सलाह याद आई और उसने सोचा, "यद्यपि मुझे अपना प्राण भी बलिदान करना पड़े, तो भी मैं उनकी सलाह को पैरों तले नहीं रौंदूंगा। मैं उसे डराकर ही संतुष्ट हो जाऊंगा।" और उसने पहला श्लोक कहा:

हे राजा, आप मेरी शक्ति के अधीन हैं।
   आप यहां जिस प्रकार से लेटे हैं:
आप क्या योजना लेकर आ रहे हैं?
   क्या आप अपने डर से मुक्ति पाना चाहते हैं?
तब राजा ने दूसरा श्लोक बोला:

मेरे मित्र, मैं आपकी शक्ति के भीतर झूठ बोलता हूँ।
   सभी असहाय होकर जमीन पर पड़े हैं,
और न ही मुझे कोई ऐसा साधन ज्ञात है जिससे
   मुक्ति मिल सकती है।
तब बोधिसत्व ने शेष श्लोकों को दोहराया:

हे राजा, धन-दौलत की नहीं, केवल अच्छे कर्म और अच्छे वचन ही काफी हैं।
मृत्यु के क्षण में क्या कोई सांत्वना दे सकता है?
(*2) "इस आदमी ने मुझे गाली दी, इसने मुझे एक मुक्का मारा,
एक तीसरे व्यक्ति ने बहुत पहले ही मुझ पर विजय प्राप्त कर मुझे लूट लिया था।"
इस प्रकार की भावना रखने वाले सभी लोग,
वे अपने गुस्से को शांत करने के लिए कभी इच्छुक नहीं होते।
"उन्होंने अतीत को लेकर मुझे गालियां दीं और मुझे सताया।"
उसने मुझे पराजित किया और मुझे पीड़ा पहुँचाई।

जो लोग ऐसे विचारों को स्वीकार करने से इनकार करते हैं,
उनके गुस्से को शांत करें और फिर से एक साथ रहें।
नफरत नहीं, बल्कि केवल प्रेम ही नफरत को समाप्त कर सकता है:
यह शांति का शाश्वत नियम है।
इन शब्दों के बाद बोधिसत्व ने कहा, "हे महाराज, मैं आपका कोई नुकसान नहीं करूंगा। लेकिन क्या आप मुझे मार डालेंगे?" और उन्होंने अपनी तलवार राजा के हाथ में रख दी। राजा ने भी कहा, "मैं भी आपका कोई नुकसान नहीं करूंगा।" और उन्होंने शपथ ली, और उनके साथ नगर गए, और उन्हें अपने सलाहकारों के सामने पेश करते हुए कहा, "हे महाराज, मैं कोसल के राजा का पुत्र, राजकुमार दिघावु हूं। इसने मेरी जान बख्श दी है। मैं इसे कोई हानि नहीं पहुंचाऊंगा।" और ऐसा कहकर उन्होंने अपनी पुत्री का विवाह उनसे कर दिया, और उन्हें उनके पिता के राज्य में स्थापित कर दिया। तब से दोनों राजा सुखपूर्वक और सौहार्दपूर्वक एक साथ शासन करते रहे।

गुरु ने यहाँ अपना पाठ समाप्त किया और जन्म की पहचान बताई: "उन दिनों के पिता और माता अब शाही परिवार के सदस्य हैं, और राजकुमार दिघावु मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)संख्या 428 की तुलना करें

(2)धम्मपद खंड 3-5.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **मिगपोटक-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-372-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 372
मिगापोताका-जातक

“मृतकों के लिए शोक करना,” इत्यादि—यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक वृद्ध भिक्षु के बारे में सुनाई थी। कहा जाता है कि उन्होंने एक युवक को शिष्यों के पवित्र संघ में प्रवेश दिया, और उस नौसिखिए ने उनकी पूरी लगन से सेवा करने के बाद, कुछ समय बाद बीमार पड़कर उनकी मृत्यु हो गई। युवक की मृत्यु से व्याकुल होकर वृद्ध भिक्षु जोर-जोर से विलाप करने लगे। भिक्षु उन्हें सांत्वना देने में असफल रहे और उन्होंने सत्य कक्ष में चर्चा छेड़ दी, “एक वृद्ध भिक्षु अपने नौसिखिए की मृत्यु पर विलाप कर रहा है। मृत्यु के विचार में जीकर वह निश्चय ही अपंग हो जाएगा।” जब गुरु वहाँ आए, तो उन्होंने भिक्षुओं से पूछा कि वे किस विषय पर चर्चा करने के लिए एकत्रित हुए हैं, और यह सुनकर उन्होंने कहा, “केवल अभी ही नहीं, बल्कि पहले भी, जब इस युवक की मृत्यु हुई थी, तब वृद्ध भिक्षु विलाप करते थे।” और इसके साथ ही उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, बेवारों के राजा ब्रह्मदत्त के शासनकाल में, बोधिसत्व इंद्र (सक्का) के रूप में पैदा हुए। उस समय काशी राज्य में रहने वाला एक व्यक्ति हिमालय क्षेत्र में आया और तपस्वी जीवन अपनाकर जंगली फल खाकर जीवन यापन करने लगा। एक दिन उसे जंगल में एक हिरण का बच्चा मिला जिसकी माँ मर चुकी थी। वह उसे अपने आश्रम में ले आया और उसका पालन-पोषण किया। हिरण का बच्चा बड़ा होकर सुंदर और आकर्षक जानवर बन गया, और तपस्वी ने उसकी देखभाल की और उसे अपने बच्चे की तरह माना। एक दिन घास अधिक खाने से अपच के कारण हिरण की मृत्यु हो गई। तपस्वी शोक मनाते हुए कहने लगे, "मेरा बच्चा मर गया।" तब स्वर्ग के राजा इंद्र (सक्का) ने संसार का भ्रमण करते हुए उस तपस्वी को देखा और उसे डराने के लिए हवा में खड़े होकर पहला श्लोक बोला:

मृतकों के लिए शोक करना उचित नहीं था।

घर-परिवार के बंधनों से मुक्त, एकाकी तपस्वी।
यह सुनते ही तपस्वी ने दूसरा श्लोक बोला:

हे सक्का (इंद्र), क्या पशुवंशी पुरुष को शोक करना चाहिए?
एक बिछड़े हुए साथी को आंसुओं में राहत मिलती है।
तब सक्का (इंद्र) ने दो श्लोक दोहराए:

जो लोग खुशी के आंसू बहाते हैं, वे मृतकों के लिए शोक भी मना सकते हैं।
हे ऋषि, रोओ मत, बुद्धिमानों ने कहा है कि रोना व्यर्थ है।
यदि हमारे आँसुओं से हम मृत्यु पर विजय प्राप्त कर सकें,
इस प्रकार हम सभी अपने प्रियजनों को बचाने के लिए एकजुट होंगे।
जब सक्का (इंद्र) इस प्रकार बोल रहे थे, तब तपस्वी ने यह जानते हुए कि रोना व्यर्थ है, सक्का (इंद्र) की स्तुति करते हुए तीन श्लोक दोहराए (*1):

घी से प्रज्वलित लौ की तरह जो तेजी से भड़क उठती है
उसे पानी से बुझाया गया, इसलिए उसने मेरा दर्द बुझा दिया।
दु:ख के बाण से मेरा हृदय घायल हो गया:
उन्होंने मेरे घाव को ठीक किया और मुझे नया जीवन दिया।
कांटा निकालते समय, आनंद और शांति का अनुभव हुआ।
सक्का (इंद्र) के शब्दों से मेरा दु:ख समाप्त हो गया।
इस प्रकार तपस्वी को सलाह देने के बाद, सक्का (इंद्र) अपने निवास स्थान की ओर प्रस्थान कर गए।

गुरु ने यहाँ अपना पाठ समाप्त किया और जन्म का वर्णन किया:- "उस समय वृद्ध व्यक्ति तपस्वी था, नौसिखिया हिरण था, और मैं स्वयं सक्का (इंद्र) था।"

फुटनोट:

(1) क्रमांक 352 और क्रमांक 410 में भी

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> मुसिका - **जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-373-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 373
मुसिका-जातक

लोग रोते हैं, "वह कहाँ चली गई?" आदि। यह कहानी गुरु ने बाँस के वन में निवास करते हुए अजातशत्रु के बारे में सुनाई थी। इस कहानी की उत्पत्ति का पूरा वर्णन थुसा जन्म (*1) में किया जा चुका है। यहाँ भी गुरु ने राजा को अपने पुत्र के साथ खेलते हुए और धार्मिक मार्ग की बातें सुनते हुए देखा। और यह जानते हुए कि उनके पुत्र के कारण राजा को खतरा होगा, उन्होंने कहा, "महाराज, पुराने समय के राजा संदेह के दायरे में आने वाली बातों पर संदेह करते थे और अपने उत्तराधिकारियों को कैद में रखते हुए कहते थे, "हमारे शरीर को चिता पर जलाने के बाद ही उन्हें शासन करने दें।" और इस प्रकार उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

बनारस के राजा ब्रह्मदत्त के शासनकाल में एक समय की बात है, बोधिसत्व एक ब्राह्मण परिवार में जन्मे और विश्वप्रसिद्ध गुरु बने। बनारस के राजा के पुत्र, राजकुमार यव ने उनसे सभी विद्याओं का गहन अध्ययन करने के बाद, अपने प्रस्थान की इच्छा से उन्हें विदा

किया। गुरु को अपनी दूरदृष्टि से यह ज्ञात हो गया कि उनके पुत्र के कारण राजकुमार को कोई खतरा होगा, इसलिए उन्होंने इस खतरे को दूर करने के उपाय खोजने शुरू किए और अपने आसपास एक उपयुक्त उदाहरण की तलाश करने लगे।

उस समय उनके पास एक घोड़ा था, जिसके पैर में चोट लग गई थी। चोट का ध्यान रखने के लिए घोड़े को अस्तबल में रखा गया था। पास ही एक कुआँ था। एक चूहा अक्सर अपने बिल से निकलकर घोड़े के पैर की चोट को कुतरता था। घोड़ा उसे रोक नहीं पाता था, और एक दिन दर्द सहन न कर पाने पर जब चूहा उसे काटने आया, तो उसने अपने खुर से उसे मारकर कुएँ में लात मार दी। घोड़े की देखभाल करने वालों ने चूहे को न देखकर कहा, "पहले तो चूहा आकर चोट को कुतरता था, लेकिन अब दिखाई नहीं दे रहा। उसका क्या हुआ?" बोधिसत्व ने यह सब देखा और कहा, "दूसरे लोग न जानने के कारण पूछते हैं, 'चूहा कहाँ है?' लेकिन केवल मैं ही जानता हूँ कि चूहे को घोड़े ने मार डाला है और वह कुएँ में गिर गया है।" और इसी घटना को उदाहरण बनाकर उन्होंने पहला श्लोक रचा और उसे युवा राजकुमार को दे दिया।

एक और उदाहरण की तलाश करते हुए, उसने देखा कि वही घोड़ा, जब उसका फोड़ा ठीक हो गया, तो बाहर गया और जौ के खेत में जौ खाने के लिए गया, और बाड़ में एक छेद से अपना सिर बाहर निकाला। इसे एक उदाहरण मानकर उसने दूसरा छंद रचा और राजकुमार को दे दिया। लेकिन तीसरा छंद उसने अपनी सूझबूझ से रचा और उसे भी दे दिया। और उसने कहा, "मेरे मित्र, जब तुम राज्य में स्थापित हो जाओ, तो शाम को स्नानघर जाते समय, सीढ़ियों के सामने तक पहले छंद को दोहराते हुए चलो, और जब तुम अपने महल में प्रवेश करो, तो सीढ़ियों के नीचे तक दूसरे छंद को दोहराते हुए चलो, और वहाँ से सीढ़ियों के ऊपर तक जाते समय तीसरे छंद को दोहराते हुए चलो।" और इन शब्दों के साथ उसने उसे विदा कर दिया।

युवा राजकुमार घर लौट आया और वायसराय के रूप में कार्य किया, और अपने पिता की मृत्यु के बाद वह राजा बन गया। उसका एक ही पुत्र था, और जब वह सोलह वर्ष का हुआ तो वह राजा बनने के लिए उत्सुक था। अपने पिता की हत्या का संदेह होने पर उसने अपने संरक्षकों से कहा, "मेरे पिता अभी युवा हैं। जब मैं उनकी चिता देखूंगा, तब मैं एक बूढ़ा और कमजोर व्यक्ति होऊंगा। तब सिंहासन पर बैठने का क्या लाभ होगा?" उन्होंने कहा, "महाराज, आपके लिए सीमा पर जाकर विद्रोही बनना संभव नहीं है। आपको किसी न किसी तरह अपने पिता को मारना होगा और उनके राज्य पर कब्जा करना होगा।" वह तुरंत सहमत हो गया, और शाम को गया, अपनी तलवार ली और राजा के महल में स्नानकुंड के पास खड़ा हो गया, अपने पिता को मारने के लिए तैयार। शाम को राजा ने मुसिका नामक एक दासी को यह कहते हुए भेजा, "जाओ और स्नानकुंड की सतह को साफ करो। मैं स्नान करूंगा।" वह वहां गई और स्नानकुंड की सफाई करते समय उसकी नजर राजकुमार पर पड़ी। उसे डर था कि उसका भेद खुल जाएगा, इसलिए उसने तलवार से उसे दो टुकड़ों में काट दिया और शव को तालाब में फेंक दिया। राजा स्नान करने आया। सबने कहा, "आज दासी मुसिका वापस नहीं लौटी। वह कहाँ चली गई?" राजा तालाब के किनारे गया और पहली पंक्ति दोहराई:

लोग रोते हुए पूछते हैं, "वह कहाँ चली गई?"
  मुसिका, तुम कहाँ भाग गई हो?
यह बात सिर्फ मुझे ही पता है:
  वह कुएं में मृत पड़ी है।

राजकुमार ने सोचा, "मेरे पिता को पता चल गया है कि मैंने क्या किया है।" और घबराकर वह भाग गया और अपने सेवकों को सब कुछ बता दिया। सात-आठ दिन बीतने के बाद, उन्होंने फिर उससे कहा, "महाराज, यदि राजा को पता चल जाता तो वह चुप नहीं रहते। उन्होंने जो कहा वह महज़ एक अनुमान ही होगा। उन्हें मृत्युदंड दे दीजिए।" इसलिए एक दिन वह सीढ़ियों के नीचे तलवार लिए खड़ा था, और जब राजा आया तो वह उस पर हमला करने का अवसर तलाश रहा था। राजा दूसरी पंक्ति दोहराते हुए आया:

अभी भी बोझ ढोने वाले जानवर की तरह
  आप बार-बार घूमते रहते हैं,
तुमने मुसिका (*2) को मार डाला,
  मुझे संदेह है कि यवा (*2) खुशी से खाएगा।

राजकुमार ने सोचा, "मेरे पिता ने मुझे देख लिया है," और भयभीत होकर भाग गया। लेकिन दो सप्ताह बाद उसने सोचा, "मैं फावड़े के एक ही वार से राजा को मार डालूँगा।" इसलिए उसने लंबे हैंडल वाला चम्मच के आकार का एक औजार लिया और उसे तानकर खड़ा हो गया। राजा सीढ़ी के शीर्ष पर चढ़ गया, और तीसरी पंक्ति को दोहराता रहा:

तुम तो बस एक कमजोर मूर्ख हो।
  जैसे कोई बच्चा अपने खिलौने से खेलता है,
इस लंबे चम्मच जैसे उपकरण को पकड़कर,

मैं तुम्हें मार डालूंगा, बदमाश लड़के।
उस दिन जब वह भागने में असमर्थ था, तो उसने राजा के चरणों में गिरकर कहा, "महाराज, मेरी जान बख्श दीजिए।" राजा ने उसे फटकार लगाने के बाद जंजीरों में जकड़कर जेल में डाल दिया। सफेद छतरी से ढके एक भव्य राजसी आसन पर बैठकर उसने कहा, "हमारे गुरु, एक प्रसिद्ध ब्राह्मण ने हमारे इस खतरे को पहले ही भांप लिया था और हमें ये तीन श्लोक दिए थे।" और अत्यंत प्रसन्न होकर उसने अपनी प्रसन्नता की तीव्रता में शेष श्लोक गाए:

आकाश में रहने से मुझे आजादी नहीं मिलती।
न ही किसी पारिवारिक धार्मिक कृत्य से।
नहीं, जब मेरे बेटे को मेरी जान चाहिए थी,
कविता की शक्ति के माध्यम से मृत्यु से मुक्ति प्राप्त की गई।
वह हर प्रकार का ज्ञान प्राप्त कर सकता है।
और इसका क्या अर्थ हो सकता है, यह समझने का प्रयास करें:
हालाँकि आपको इसका उपयोग नहीं करना चाहिए, समय आ जाएगा
जब आप जो सुनते हैं वह आपके लिए फायदेमंद हो सकता है।
कुछ समय बाद राजा की मृत्यु के बाद युवा राजकुमार सिंहासन पर विराजमान हो गया।

गुरु ने यहाँ अपना पाठ समाप्त किया और जन्म की पहचान बताई: "उस समय वह प्रसिद्ध शिक्षक मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)सं. 338 उपरोक्त.

(2)मुसिका का अर्थ है चूहा, यवा का अर्थ है जौ।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कुलधनुग्गहा-जातक**
***स्रोत**: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-374-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 374
चूलधनुग्गह जातक

“चूंकि तुमने लाभ प्राप्त किया है,” इत्यादि — यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें एक भिक्षु को उसकी अपरिपक्वता के दिनों की पत्नी द्वारा बहकाए जाने की घटना का वर्णन है। जब भिक्षु ने स्वीकार किया कि पत्नी के कारण ही उसने उसे त्याग दिया था और शिष्यों के मार्ग पर चलने का उसे पछतावा है, तो गुरु ने कहा, “हे भिक्षु, इस स्त्री ने केवल आज ही तुम्हें हानि नहीं पहुँचाई। पहले भी इसी के कारण तुम्हारा सिर काट दिया गया था।” और भिक्षुओं के अनुरोध पर उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

बनारस के राजा ब्रह्मदत्त के शासनकाल में, एक समय की बात है, बोधिसत्व इंद्र ने सक्का (इंद्र) के रूप में पुनर्जन्म लिया। उस समय बनारस के एक युवा ब्राह्मण ने तक्षशिला में सभी विद्याओं का ज्ञान प्राप्त कर लिया था और धनुर्विद्या में निपुण होने के कारण वह चतुर धनुर्विद् के नाम से प्रसिद्ध हो गया। तब उसके गुरु ने सोचा, "इस युवक ने मेरे समान कौशल प्राप्त कर लिया है," और उन्होंने अपनी पुत्री का विवाह उससे करवा दिया। वह पुत्री को लेकर बनारस लौटने की इच्छा से यात्रा पर निकल पड़ा। आधे रास्ते में, एक हाथी ने एक स्थान को उजाड़ दिया, और कोई भी उस स्थान पर जाने का साहस नहीं कर रहा था। चतुर धनुर्विद् ने, लोगों के रोकने के बावजूद, अपनी पुत्री को साथ लिया और जंगल के प्रवेश द्वार तक चढ़ गया। जब वह जंगल के बीच में था, तभी हाथी उस पर हमला करने के लिए उठ खड़ा हुआ। धनुर्विद् ने एक तीर से हाथी के माथे पर प्रहार किया, जो उसके शरीर को भेदते हुए उसके सिर के पिछले हिस्से से निकल गया, और हाथी वहीं गिरकर मर गया। चतुर तीरंदाज ने इस जगह को सुरक्षित करने के बाद आगे एक और जंगल की ओर

प्रस्थान किया। वहाँ पचास लुटेरे सड़क पर आतंक मचा रहे थे। कई लोगों के रोकने के बावजूद, वह इस स्थान तक भी चढ़ता चला गया, जहाँ उसे वह नियमित स्थान मिल गया, जहाँ लुटेरे हिरणों को मारकर उनका मांस भूनकर खाते थे, जो सड़क के पास ही था। लुटेरों ने उसे अपनी सजी-धजी पत्नी के साथ आते देख उसे पकड़ने का भरसक प्रयास किया। लुटेरों का सरदार, जो लोगों के चरित्र को परखने में निपुण था, ने उसे एक नज़र देखा और उसे एक विशिष्ट नायक के रूप में पहचानते हुए, उन्हें उसके विरुद्ध विद्रोह करने नहीं दिया, हालाँकि वह अकेला ही था। चतुर तीरंदाज ने अपनी पत्नी को इन लुटेरों के पास भेजा और कहा, "जाओ और उनसे मांस की एक सींक मांगो और मेरे पास ले आओ।" तो वह गई और बोली, "मुझे मांस की एक सींक दो।" लुटेरों के सरदार ने कहा, "यह एक नेक आदमी है," और उन्हें उसे देने के लिए कहा। लुटेरों ने कहा, "क्या! क्या वह हमारा भुना हुआ मांस खाएगा?" और उन्होंने उसे कच्चा मांस का एक टुकड़ा दिया। धनुर्धारी, जो अपने आप को बहुत ऊँचा समझता था, कच्चे मांस की पेशकश करने पर लुटेरों से क्रोधित हो गया। लुटेरों ने कहा, "क्या! क्या वह अकेला पुरुष है, और हम केवल स्त्रियाँ हैं?" और इस प्रकार उसे धमकाते हुए, वे उसके विरुद्ध उठ खड़े हुए। धनुर्धारी ने पचास लुटेरों को, एक को छोड़कर, उतने ही तीरों से घायल कर दिया और जमीन पर गिरा दिया। उसके पास लुटेरों के सरदार को घायल करने के लिए कोई तीर नहीं बचा था। उसके तीरों के थैले में पूरे पचास तीर थे। उनमें से एक से उसने हाथी को घायल कर दिया था, और बाकी से पचास लुटेरों को, एक को छोड़कर। इस प्रकार उसने लुटेरों के सरदार को गिरा दिया, और उसकी छाती पर बैठकर उसकी पत्नी से कहा कि वह अपने हाथ में उसकी तलवार लाए ताकि उसका सिर काट सके। उसी क्षण उसे लुटेरों के सरदार से प्रेम हो गया और उसने तलवार की मूठ उसके हाथ में और म्यान अपने पति के हाथ में रख दी। लुटेरे ने मूठ पकड़कर तलवार निकाली और धनुर्धारी का सिर काट दिया। अपने पति को मारने के बाद वह उस स्त्री को अपने साथ ले गया, और जब वे साथ यात्रा कर रहे थे, तो उसने उससे उसके मूल के बारे में पूछा।उन्होंने कहा, "मैं तक्षशिला के एक विश्वप्रसिद्ध शिक्षक की बेटी हूं।"

"उसने तुम्हें अपनी पत्नी के रूप में कैसे राजी किया?" उसने कहा।

उसने कहा, "मेरे पिता उससे अपने बराबर की संपत्ति पाकर इतने प्रसन्न हुए कि उन्होंने मुझे उससे पत्नी के रूप में दे दिया। और क्योंकि मुझे तुमसे प्यार हो गया, इसलिए मैंने तुम्हें अपने वैध पति की हत्या करने की अनुमति दे दी।"

डाकुओं के सरदार ने सोचा, "इस औरत ने अपने जायज़ पति को मार डाला है। जैसे ही इसे कोई दूसरा आदमी दिखेगा, यह मेरे साथ भी वैसा ही बर्ताव करेगी। मुझे इससे छुटकारा पाना ही होगा।"

और जैसे ही वह आगे बढ़ा, उसने देखा कि उनका रास्ता एक छोटी, उथली नदी से अवरुद्ध हो गया है, जो आमतौर पर उफनती रहती थी, लेकिन अब बाढ़ से भरी हुई थी, और उसने कहा, "मेरी प्यारी, इस नदी में एक खूंखार मगरमच्छ है। हम क्या करें?"

"मेरे स्वामी," उसने कहा, "मेरे पहने हुए सभी आभूषण ले लीजिए, उन्हें अपने ऊपरी वस्त्र में एक गठरी में बांध लीजिए, और उन्हें नदी के उस पार ले जाइए, और फिर वापस आकर मुझे उस पार ले जाइए।"

"बहुत अच्छा," उसने कहा और उसके सारे गहने लेकर, बड़ी जल्दी में नदी की ओर चल पड़ा, दूसरे किनारे पर पहुँचकर उसे वहीं छोड़कर भाग गया।

यह देखकर वह रो पड़ी, "मेरे स्वामी, आप ऐसे जा रहे हैं जैसे मुझे छोड़कर जा रहे हों। आप ऐसा क्यों कर रहे हैं? वापस आइए और मुझे अपने साथ ले जाइए।" और उनसे संबोधित करते हुए उसने पहला छंद कहा:

चूंकि आपने दूसरा पक्ष प्राप्त कर लिया है,
मेरे सारे सामान की पट्टियाँ बंधी हुई थीं,
जितनी जल्दी हो सके लौट आइए।
और मुझे भी अपने साथ पार ले चलो।
लुटेरा, उसकी बात सुनकर, दूसरे किनारे पर खड़ा होकर, दूसरी पंक्ति दोहराता है: (*2)

हे महोदया, आपकी कल्पना तो हमेशा भटकती रहती है।
परखी हुई आस्था से लेकर हल्के-फुल्के प्रेम तक,
मुझे भी तुम जल्द ही धोखा दे दोगे।
क्या मुझे इसलिए दूर भाग नहीं जाना चाहिए?
लेकिन जब लुटेरे ने कहा, "मैं यहाँ से आगे जा रहा हूँ: तुम यहीं रुक जाओ," तो वह ज़ोर से चीखी और वह उसके सारे गहने लेकर भाग गया। यही उस बेचारी मूर्ख स्त्री का हश्र हुआ, जो वासना की अति के कारण हुआ था। और पूरी तरह असहाय होकर वह कैसिया के

पौधों के झुंड के पास आकर बैठ गई और रोने लगी। उसी क्षण इंद्र ने संसार पर दृष्टि डालते हुए उसे वासना से व्याकुल और पति-प्रेमिका दोनों के खोने के गम में रोते हुए देखा।

और यह सोचकर कि वह जाकर उसे फटकारेगा और उसे शर्मिंदा करेगा, वह मताली और पंचसिखा (*3) को अपने साथ लेकर नदी के किनारे जाकर खड़ा हो गया और बोला, "मताली, तुम मछली बन जाओ, पंचसिखा, तुम पक्षी बन जाओ, और मैं सियार बन जाऊँगा। और अपने मुँह में मांस का एक टुकड़ा लेकर मैं इस स्त्री के सामने जाकर खड़ा हो जाऊँगा, और जब तुम मुझे वहाँ देखो, तो मताली, तुम पानी से उछलकर मेरे सामने गिर जाओगी, और जब मैं अपने मुँह में लिया हुआ मांस का टुकड़ा गिरा दूँगा और मछली को पकड़ने के लिए उछलूँगा, उसी क्षण, पंचसिखा, तुम मांस के टुकड़े पर झपटकर हवा में उड़ जाओगी, और मताली, तुम पानी में गिर जाओगी।"

इस प्रकार सक्का (इंद्र) ने उन्हें निर्देश दिया। उन्होंने कहा, "अच्छा, हे स्वामी।" मतली मछली में, पंचसिखा पक्षी में और सक्का (इंद्र) सियार में परिवर्तित हो गए। उन्होंने अपने मुँह में मांस का एक टुकड़ा लेकर स्त्री के सामने जाकर बैठ गए। मछली पानी से उछलकर सियार के सामने गिर पड़ी। सियार ने अपने मुँह में रखा मांस का टुकड़ा गिरा दिया और मछली को पकड़ने के लिए उछल पड़ा। मछली उछलकर पानी में गिर गई और पक्षी ने मांस का टुकड़ा छीनकर हवा में उड़ गया। इस प्रकार सियार ने मछली और मांस दोनों खो दिए और उदास होकर कैसिया के झुंड की ओर देखने लगा। यह देखकर स्त्री ने कहा, "लालच के कारण उसे न तो मांस मिला और न ही मछली," और मानो उसे चाल समझ आ गई हो, वह दिल खोलकर हंस पड़ी।

यह सुनकर सियार ने तीसरा श्लोक बोला:

कैसिया वनस्पति की आभा कौन पैदा करता है?
हंसी के साथ, हालांकि कोई नाचता या गाता नहीं है,
या फिर ताली बजाएं, अच्छा समय बिताने का तरीका?
हे सुंदर, हंसो मत, जब तुम्हें रोना चाहिए।
यह सुनकर उसने चौथा छंद दोहराया:

हे मूर्ख सियार, तुम्हें अवश्य ही कामना करनी चाहिए
आपने मांस और मछली दोनों नहीं खोई हैं।
बेचारा मूर्ख! तुम्हें यह देखकर कितना दुख होगा!
तुम्हारी मूर्खता का क्या परिणाम निकलता है?
फिर सियार ने पाँचवाँ छंद दोहराया:

दूसरे की कमियां स्पष्ट रूप से दिखाई देती हैं।
मुझे लगता है कि खुद को देख पाना मुश्किल है।
मुझे लगता है कि आपको भी इसके परिणाम भुगतने होंगे।
जब जीवनसाथी और प्रेमी दोनों खो जाते हैं।
उनकी बातें सुनकर उसने यह छंद बोला:

किंग जैकाल, यह बिल्कुल वैसा ही है जैसा आपने कहा।
इसलिए मैं बहुत दूर चला जाऊंगा।
और किसी दूसरे वैवाहिक प्रेम की तलाश करो।
और एक वफादार पत्नी साबित होने के लिए कड़ी मेहनत करें।
तब स्वर्ग के राजा सक्का (इंद्र) ने इस दुष्ट और अपवित्र स्त्री के शब्दों को सुनकर अंतिम श्लोक दोहराया:

जो मिट्टी का घड़ा चुराएगा
मैं किसी भी दिन पीतल का एक चुरा लूंगा:
तो वह जो अपने पति की कमजोरी थी
हालात फिर से उतने ही खराब या उससे भी बदतर होंगे।
इस प्रकार सक्का (इंद्र) ने उसे लज्जित किया और पश्चाताप कराया, और फिर अपने निवास स्थान पर लौट गया।

गुरु ने यहाँ अपना पाठ समाप्त किया और सत्यों को प्रकट करते हुए जन्म का वर्णन किया:- सत्यों के समापन पर पथभ्रष्ट भाई (भिक्षु) ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) का फल प्राप्त किया:- "उस समय पथभ्रष्ट भाई धनुर्धर था, उसकी परित्यक्त पत्नी वह स्त्री थी, और मैं स्वयं स्वर्ग का राजा सक्का (इंद्र) था।"

फुटनोट:

(1)संख्या 425 की तुलना करें

(2) इसके अलावा क्रमांक 318 में भी, जिससे इस कहानी की तुलना की जा सकती है।

(3)उनका सारथी और एक गंधर्व।

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कपोता-जातक**2
***स्रोत**: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-375-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 375
कपोता-जातक(*1)

“मैं बिल्कुल ठीक हूँ,” इत्यादि — यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक लालची भिक्षु के बारे में सुनाई थी। इस लालची भिक्षु की कहानी पहले भी कई रूपों में पूरी तरह से सुनाई जा चुकी है। इस मामले में गुरु ने उससे पूछा कि क्या वह लालची है, और जब उसने स्वीकार किया कि वह लालची है, तो गुरु ने कहा, “भाई, न केवल अभी, बल्कि पहले भी तुम लालची थे, और लालच के कारण ही तुम्हारी मृत्यु हुई।” और इसके साथ ही उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

बनारस के राजा ब्रह्मदत्त के शासनकाल में, एक समय की बात है, बोधिसत्व एक युवा कबूतर के रूप में अवतरित हुए और बनारस के एक धनी व्यापारी के रसोईघर में बुने हुए पिंजरे में रहने लगे। मछली और मांस की लालसा में डूबे एक कौवे ने उस कबूतर से मित्रता कर ली और उसी स्थान पर रहने लगा। एक दिन उसने बहुत सारी मछली और मांस देखा और सोचा, "मैं इसे खाऊंगा," और पिंजरे में जोर-जोर से कराहने लगा। जब कबूतर ने कहा, "आओ, मेरे मित्र, चलो जल्दी से भोजन के लिए बाहर चलें," तो उसने जाने से इनकार कर दिया और कहा, "मुझे बदहजमी हो गई है। तुम जाओ।" कबूतर के चले जाने पर उसने कहा, "मेरा कष्टदायक शत्रु चला गया।"

अब मैं जी भर के मछली और मांस खाऊंगा।" और ऐसा सोचते हुए, उसने पहली पंक्ति दोहराई:

मैं काफी स्वस्थ और सहज महसूस कर रहा हूँ।
   मिस्टर पिजन ऑफ जा चुके हैं।
अब मैं अपनी इच्छाओं को शांत करूंगा:
   सब्जियां और मांस खाने से व्यक्ति को ताकत मिलनी चाहिए।
जब मछली और मांस भूनने वाला रसोइया पसीने से तरबतर होकर रसोई से बाहर आया, तो कौआ टोकरी से कूदकर मसालों के बर्तन में छिप गया। बर्तन से 'क्लिक' की आवाज़ आई और रसोइया जल्दी से आया, और कौए को पकड़कर उसके पंख नोच डाले। फिर उसने गीली अदरक और सफेद सरसों को पीसकर एक सड़ी हुई खजूर से कूटा और उसे कौए के पूरे शरीर पर मल दिया, और टूटे हुए मिट्टी के बर्तन से रगड़कर उसे घायल कर दिया। फिर उसने टूटे हुए मिट्टी के बर्तन को रस्सी से कौए के गले में बांध दिया, उसे वापस टोकरी में फेंक दिया और चला गया।

जब कबूतर वापस आया और उसे देखा तो उसने कहा, "मेरे दोस्त की टोकरी में यह सारस कौन है? यह तो बहुत गुस्सैल है और आकर इस अजनबी को मार डालेगा।" और इस प्रकार मजाक करते हुए उसने दूसरा छंद कहा:

"बादलों का बच्चा," (*2) गुच्छेदार कलगी वाला,

तुमने मेरे बेचारे दोस्त का घोंसला क्यों चुराया?
इधर आओ, श्री क्रेन। मेरे दोस्त कौवे।
आपको पता होना चाहिए कि उसका स्वभाव बहुत गुस्सैल है।
यह सुनकर कौवे ने तीसरा छंद बोला:

आप इस दृश्य को देखकर हंस सकते हैं।
क्योंकि मैं अत्यंत दयनीय स्थिति में हूँ।
रसोइए ने मुझे चुन-चुनकर तेल लगा दिया है।
सड़ी हुई खजूर और मसालों के साथ।
कबूतर, अब भी उसका मजाक उड़ाते हुए, चौथे छंद को दोहराता रहा:

मुझे लगता है कि उसे अच्छी तरह से नहलाया और तेल लगाया गया है।
आप जल्दी से अपना पेट भर खाना-पीना कर लेते हैं।
तुम्हारी गर्दन रत्नों की चमक से जगमगा रही है,
क्या तुम बनारस गए हो, मित्र?
फिर कौवे ने पाँचवाँ छंद दोहराया:

मेरे मित्र या कट्टर प्रतिद्वंद्वी को भी ऐसा करने से मत रोको।
बनारस की यात्रा पर जाएं।
उन्होंने मजाक में मुझे नंगा कर दिया।
मैंने टूटे हुए मिट्टी के बर्तन को अपनी छाती पर बांध लिया है।
यह सुनकर कबूतर ने अंतिम छंद दोहराया:

इन बुरी आदतों से छुटकारा पाना
ऐसे स्वभाव वाले कौवे के साथ रहना मुश्किल है।
पक्षियों को सावधान रहना चाहिए ताकि वे इनसे बच सकें।
वे भोजन देखते हैं जिसे मनुष्य आनंदपूर्वक ग्रहण करता है।
इस प्रकार फटकार लगाने के बाद, कबूतर वहाँ नहीं रहा, बल्कि अपने पंख फैलाकर कहीं और उड़ गया। परन्तु कौआ वहीं मर गया।

गुरु ने यहाँ अपना पाठ समाप्त किया और सत्यों को प्रकट करते हुए जन्म की पहचान बताई: सत्यों के समापन पर लालची भाई (भिक्षु) ने द्वितीय मार्ग (सम्मोहन) की प्राप्ति की: "उस समय कौआ लालची भाई था, कबूतर मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) क्रमांक 42 और क्रमांक 274 की तुलना करें

(2) गरजते बादलों की आवाज से सारस उत्पन्न होते हैं।

पुस्तक VI. चानीपाता:

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **अवारिया-जातक**
***स्रोत**: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-376-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 376
अवरिया-जातक

“कभी क्रोधित मत हो, इत्यादि।” गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक नाविक की यह कहानी सुनाई। कहते हैं कि वह व्यक्ति मूर्ख और अज्ञानी था; वह तीन रत्नों और सभी श्रेष्ठ प्राणियों के गुणों से अनभिज्ञ था; वह उतावला, कठोर और हिंसक था। एक ग्रामीण भिक्षु, जो बुद्ध की सेवा करना चाहता था, एक शाम अचिरवती नदी पर नाव के पास आया और नाविक से कहा, “हे भिक्षु, मैं नदी पार करना चाहता हूँ, कृपया मुझे अपनी नाव दे दीजिए।” “महोदय, बहुत देर हो चुकी है, यहीं रुकिए।” “हे भिक्षु, मैं यहाँ नहीं रुक सकता, मुझे नदी पार करा दीजिए।” नाविक ने क्रोधित होकर कहा, “ठीक है, भिक्षु जी,” और उसे नाव में बिठा लिया; परन्तु उसने नाव को बुरी तरह चलाया जिससे नाव में पानी भर गया और भिक्षु का वस्त्र भीग गया, और उसे दूसरी ओर किनारे पर उतारने से पहले ही अंधेरा हो गया। जब भिक्षु मठ पहुँचा, तो वह उस दिन बुद्ध की सेवा नहीं कर सका। अगले दिन वह गुरु के पास गया, प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गया। गुरु ने अभिवादन किया और पूछा कि वह कब आया था। "कल।" "तो फिर आज तक मेरी सेवा क्यों नहीं की?" उसका कारण सुनकर गुरु ने कहा, "न केवल आज, बल्कि पुराने समय में भी वह व्यक्ति कठोर था: और उसने पुराने समय के बुद्धिमानों को भी परेशान किया था, जैसे तुम्हें किया था।" और पूछे जाने पर उसने एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त राजा थे, तब बोधिसत्व का जन्म एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। बड़े होकर उन्होंने तक्षशिला में सभी कलाओं की शिक्षा प्राप्त की और तपस्वी बन गए। हिमालय में जंगली फलों पर जीवन व्यतीत करने के बाद, वे नमक और सिरके के लिए बनारस आए: वे राजमहल के बगीचे में ठहरे और अगले दिन भीख मांगने के लिए शहर गए। राजा ने उन्हें राजमहल के प्रांगण में देखा और उनके व्यवहार से प्रसन्न होकर उन्हें अंदर बुलाया और भोजन कराया: फिर उन्होंने उनसे वचन लिया और उन्हें बगीचे में रहने दिया: और वे प्रतिदिन प्रणाम करने आते थे। बोधिसत्व ने उनसे कहा, "हे महान राजा, एक राजा को अपने राज्य पर धर्मपूर्वक शासन करना चाहिए, चार बुराइयों से बचना चाहिए, उत्साही और धैर्यवान, दयालु और करुणामय होना चाहिए," और इस प्रकार के दैनिक उपदेश के साथ उन्होंने दो श्लोक कहे:

हे योद्धाओं के राजकुमार, कभी क्रोधित मत हो; हे पृथ्वी के स्वामी, कभी क्रोधित मत हो:
क्रोध का बदला क्रोध से नहीं लिया जा सकता: अतः राजा ही पूजा के योग्य है।
गांव में, जंगल में, समुद्र पर या तट पर,
हे योद्धाओं के राजकुमार, कभी क्रोधित मत होना: यही मेरी हमेशा से सलाह रही है।
अतः बोधिसत्व प्रतिदिन राजा को ये श्लोक सुनाते थे। राजा उनसे प्रसन्न हुए और उन्हें एक लाख पीस की आय वाला गाँव भेंट किया, परन्तु उन्होंने इसे अस्वीकार कर दिया। इस प्रकार बोधिसत्व बारह वर्ष तक जीवित रहे। फिर उन्होंने सोचा, "मैं बहुत देर तक यहाँ रह चुका हूँ, मैं देश की यात्रा करके वापस आऊँगा": अतः राजा को बिना बताए, केवल माली से इतना कहकर, "मित्र, मैं थक गया हूँ, मैं देश की यात्रा करके वापस आऊँगा, कृपया राजा को बता देना," वे चले गए और गंगा नदी पर एक घाट पर पहुँचे। वहाँ अवरियापिता नामक एक मूर्ख नाविक रहता था: वह न तो भले लोगों के गुणों को समझता था और न ही अपने लाभ-हानि को: जब लोग गंगा पार करते थे, तो वह पहले उन्हें पार कराता था और फिर अपना किराया माँगता था; जब वे उसे किराया नहीं देते थे, तो वह उनसे झगड़ा करता था, जिससे उसे बहुत गालियाँ और मार पड़ती थी, परन्तु लाभ न के बराबर, वह इतना अंधा मूर्ख था।

उनके विषय में, गुरु ने अपनी पूर्ण बुद्धि से तीसरा श्लोक कहा:

अवरिया के पिता,
   उसकी नाव गंगा की लहरों पर है:
वह पहले लोगों को पार कराता है,
   और फिर उसे अपने भोजन की लालसा होगी:
और इसीलिए वह कमाता तो है लेकिन विवादों में घिरा रहता है।
   एक फिजूलखर्ची करने वाला, बदकिस्मत, बेईमान!
बोधिसत्व एक नाविक के पास आए और बोले, "मित्र, मुझे दूसरे किनारे तक ले चलो।" नाविक ने कहा, "पुजारी, आप मुझे कितना किराया देंगे?" बोधिसत्व ने कहा, "मित्र, मैं तुम्हें धन, कल्याण और पुण्य बढ़ाने के तरीके बताऊंगा।" नाविक ने सोचा, "यह मुझे कुछ न कुछ जरूर देगा," इसलिए वह उन्हें नदी पार ले गया और फिर बोला, "किराया दे दो।" बोधिसत्व ने कहा, "ठीक है, मित्र," और इस प्रकार पहले उन्हें धन बढ़ाने का तरीका बताते हुए उन्होंने यह श्लोक कहा:

नदी पार करने से पहले ही किराया पूछ लें, कभी भी दूसरी तरफ पहुँचने पर न पूछें:
जिन लोगों को आप एक जगह से दूसरी जगह ले जाते हैं, उनके बारे में अलग-अलग विचार होते हैं, पहले और बाद में भी अलग-अलग विचार होते हैं।

नाविक ने सोचा, "यह तो केवल उनकी सलाह होगी, अब वे मुझे कुछ और भी देंगे": लेकिन बोधिसत्व ने कहा, "मित्र, तुम्हें धन बढ़ाने का तरीका मिल गया है, अब कल्याण और सद्गुण बढ़ाने का तरीका सुनो," इस प्रकार उन्होंने सलाह का एक श्लोक सुनाया:

गांव में, जंगल में, समुद्र पर और तट पर,
मेरे अच्छे नाविक, कभी क्रोधित मत होना; यही मेरी हमेशा सलाह रहती है।
तो उसने उसे कल्याण और सद्गुण बढ़ाने का तरीका बताकर कहा, "यह रहा कल्याण बढ़ाने का तरीका और सद्गुण बढ़ाने का तरीका।" तब उस मूर्ख ने, उसकी सलाह को न समझते हुए कहा, "पुजारी, क्या यही मुझे मेरा भोजन है?" "जी, मित्र।" "मुझे इसकी कोई आवश्यकता नहीं है, मुझे कुछ और दीजिए।" "मित्र, सिवाय इसके कि मेरे पास कुछ और नहीं है।" "तो फिर तुम मेरी नाव पर क्यों आए?" उसने कहा और तपस्वी को किनारे पर पटक दिया, उसकी छाती पर बैठ गया और उसके मुंह पर प्रहार किया।

गुरु ने कहा: "तो आप देखते हैं कि जब तपस्वी ने राजा को यह सलाह दी तो उसे एक गाँव का वरदान मिला, और जब उसने वही सलाह एक मूर्ख नाविक को दी तो उसे मुँह पर एक लात पड़ी: इसलिए जब कोई यह सलाह दे तो उसे उपयुक्त लोगों को देना चाहिए, अनुपयुक्त लोगों को नहीं," और इस प्रकार अपनी पूर्ण बुद्धि से उन्होंने एक श्लोक कहा:

अच्छी सलाह के बदले राजा ने एक नगर का राजस्व दे दिया।
उसी सलाह के लिए नाविक ने सलाह देने वाले को ही गिरा दिया।
जब वह व्यक्ति पुजारी को पीट रहा था, तभी उसकी पत्नी चावल लेकर आई और उस तपस्वी को देखकर बोली, "पतिदेव, यह राजा के दरबार का तपस्वी है, इसे मत पीटिए।" वह क्रोधित हो गया और बोला, "तुम मुझे इस झूठे पुजारी को पीटने से मना कर रही हो!" और उसने उठकर उसे नीचे गिरा दिया। चावल की थाली गिरकर टूट गई और उसका गर्भ गिर गया। लोग उसके चारों ओर जमा हो गए और "हत्यारे बदमाश!" चिल्लाते हुए उसे बांधकर राजा के पास ले गए। राजा ने उस पर मुकदमा चलाया और उसे दंडित किया।

गुरु ने अपनी पूर्ण बुद्धि से इस विषय को समझाते हुए अंतिम श्लोक कहा:

चावल गिर गया, उसकी पत्नी को चोट लगी, बच्चा जन्म से पहले ही मर गया।
उसके लिए, जैसे किसी जानवर के लिए कीमती सोना, सलाह का कोई मूल्य नहीं था।

जब गुरु ने अपना पाठ समाप्त किया, तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की: सत्यों के बाद भाई (भिक्षु) प्रथम मार्ग (सम्मोहन) के फल में स्थापित हो गया; और जन्म की पहचान की: "उस समय नाविक आज का नाविक था, राजा आनंद था, तपस्वी मैं स्वयं था।"

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सेतकेतु-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-377-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 377
सेताकेतु-जातक

"मित्र, क्रोधित मत हो," इत्यादि-- गुरु ने जेतवन मठ में एक कपटी भिक्षु की यह कहानी सुनाई। इस कहानी का ज़िक्र उद्दल (*1) जन्म में आएगा।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त राजा थे, तब बोधिसत्व एक विख्यात शिक्षक थे और पाँच सौ शिष्यों को पवित्र ग्रंथों का अध्ययन कराते थे। उनमें से वरिष्ठ शिष्य, सेतकेतु, उत्तर भारत के एक ब्राह्मण परिवार में जन्मे थे और अपनी जाति पर बहुत गर्व करते थे। एक दिन वे अन्य शिष्यों के साथ शहर से बाहर गए और लौटते समय उन्होंने एक चांडाल को देखा। उन्होंने पूछा, "तुम कौन हो?" "मैं एक चांडाल हूँ।" उन्हें डर था कि हवा चांडाल के शरीर से टकराकर कहीं उनके शरीर को भी न छू ले, इसलिए वे चिल्लाए, "तुम्हें श्राप मिले, हे अशुभ चांडाल, हवा की ओर मुड़ो," और तेज़ी से हवा की दिशा में चले गए, लेकिन चांडाल उनसे तेज़ थे और उनके सामने ही खड़े हो गए। तब उन्होंने चांडाल को और भी अधिक अपशब्द कहे और कहा, "तुम्हें श्राप मिले, हे अशुभ।" चांडाल ने पूछा,

"तुम कौन हो?" "मैं एक ब्राह्मण छात्र हूँ।" "अच्छा, अगर तुम हो, तो तुम मेरे एक प्रश्न का उत्तर दे पाओगे।" "हाँ।" "अगर तुम नहीं कर सकते, तो मैं तुम्हें अपने पैरों के बीच रख दूँगा।" ब्राह्मण ने आत्मविश्वास से कहा, "ठीक है।" चांडाल ने सभी को मामला समझाते हुए पूछा, "युवक ब्राह्मण, दिशाएँ क्या हैं?" "चार दिशाएँ हैं, पूर्व और बाकी।" चांडाल ने कहा, "मैं उस तरह की दिशा के बारे में नहीं पूछ रहा हूँ: और तुम, जो यह भी नहीं जानते, मेरे शरीर पर लगी हवा को नापसंद करते हो," इसलिए उसने उसे कंधे से पकड़कर नीचे गिरा दिया और अपने पैरों के बीच रख दिया। अन्य शिष्यों ने अपने गुरु को यह बात बताई। गुरु ने पूछा, "युवक सेताकेतु, क्या तुम्हें एक चांडाल के पैरों के बीच रखा गया है?" "जी गुरु: एक दास के पुत्र ने मुझे अपने पैरों के बीच रख दिया और कहा, "इसे दिशाओं का भी ज्ञान नहीं है"; लेकिन अब मुझे पता है कि इसके साथ क्या करना है," और इस तरह उसने गुस्से में चांडाल का अपमान किया। शिक्षक ने उसे समझाते हुए कहा: "युवा सेताकेतु, उस पर क्रोधित मत हो, वह बुद्धिमान है; वह किसी और प्रकार के स्थान के बारे में पूछ रहा था, इसके बारे में नहीं: जो तुमने नहीं देखा, सुना या समझा है, वह उससे कहीं अधिक है जो तुमने देखा, सुना या समझा है": और उसने सलाह के रूप में दो श्लोक कहे:

मित्र, क्रोधित मत हो, क्रोध करना अच्छा नहीं है।
ज्ञान उस चीज़ से कहीं अधिक है जिसे आपने देखा या सुना है:
"क्वार्टर" से माता-पिता को समझा जा सकता है।
और शिक्षक को इस शब्द से दर्शाया जाता है।
वह गृहस्वामी जो भोजन, वस्त्र और पेय पदार्थ देता है,
जिसके दरवाजे खुले हैं, वह उसका एक "चौथाई" है:
और "क्वार्टर" का मतलब, हमारे विचार से, उच्चतम अर्थ में है।
क्या वह अंतिम अवस्था है जहाँ दुख ही आनंद बन जाएगा? (*2)

तब बोधिसत्व ने युवा ब्राह्मण को अपने निवास स्थान के बारे में बताया: परन्तु वह यह सोचकर, "मुझे चांडाल के चरणों में रखा गया है," उस स्थान को छोड़कर तक्षशिला चला गया और वहाँ के एक प्रसिद्ध गुरु से सभी कलाएँ सीखीं। उस गुरु की अनुमति से वह तक्षशिला छोड़कर चला गया और व्यावहारिक कलाओं का अध्ययन करने के लिए भटकता रहा। एक सीमावर्ती गाँव में पहुँचकर उसने वहाँ पाँच सौ तपस्वियों को रहते हुए पाया और उनसे दीक्षा ली। उसने उनकी सभी कलाएँ, ग्रंथ और विधियाँ सीखीं और वे उसके साथ बनारस गए। अगले दिन वह राजमहल के प्रांगण में भिक्षा माँगने गया। तपस्वियों के व्यवहार से प्रसन्न होकर राजा ने उन्हें राजमहल में भोजन और अपने बगीचे में आवास दिया। एक दिन उसने उन्हें भोजन भेजते हुए कहा, "मैं आज शाम बगीचे में आप सभी को प्रणाम करूँगा।" सेताकेतु उद्यान में गए और तपस्वियों को एकत्रित करके बोले, "महोदय, आज राजा आ रहे हैं; राजाओं को एक बार प्रसन्न करने से मनुष्य जीवन भर सुखी रहता है, इसलिए अब आप में से कुछ झूलते हुए तपस्या करें, कुछ काँटों की सेज पर लेटें, कुछ पाँच अग्नियों को सहन करें, कुछ उकड़ू बैठकर तपस्या करें, कुछ जलप्रपात करें, कुछ ग्रंथों का पाठ करें।" इन आदेशों के बाद वे कुटिया के द्वार पर सिरहाने वाली कुर्सी पर बैठ गए, एक चमकीले लिबास वाली पुस्तक को रंगीन स्टैंड पर रखा और चार-पाँच बुद्धिमान शिष्यों द्वारा पूछे गए प्रश्नों के उत्तर देने लगे। उसी क्षण राजा आ गए और उन्हें ये झूठी तपस्या करते देख प्रसन्न हुए: वे सेताकेतु के पास आए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए: फिर अपने कुल पुरोहित से बात करते हुए उन्होंने तीसरा श्लोक सुनाया।

गंदे दांतों, बकरियों की खाल के वस्त्र और बालों के साथ
सभी उलझे बालों वाले, शांति में पवित्र शब्दों का जाप करते हुए:
निश्चित रूप से वे भलाई के लिए किसी भी मानवीय साधन को नहीं छोड़ते।
वे सत्य को जानते हैं, और उन्होंने मुक्ति प्राप्त कर ली है।

पुजारी ने यह सुना और चौथा श्लोक बोला:

हे राजा, एक विद्वान ऋषि भी बुरे कर्म कर सकता है।
एक विद्वान संत भी सही मार्ग का अनुसरण करने में विफल हो सकता है:
हजार वेद भी सुरक्षा प्रदान नहीं कर सकते।
असफल होना ही काम आता है, या फिर बुरी स्थिति से बचाता है।

जब राजा ने यह सुना, तो उसने तपस्वियों से अपना स्नेह वापस ले लिया। सेताकेतु ने सोचा, "इस राजा को तपस्वियों से लगाव था, लेकिन इस पुजारी ने तो इसे ऐसे नष्ट कर दिया जैसे कुल्हाड़ी से काट डाला हो: मुझे उससे बात करनी ही होगी": इसलिए उससे बात करते हुए उसने पाँचवाँ श्लोक कहा:

"हे राजा, एक विद्वान ऋषि भी बुरे कर्म कर सकता है।"
एक विद्वान संत भी सही मार्ग का अनुसरण करने में असफल हो सकता है।
आप कहते हैं: तो फिर वेद बेकार हैं:

केवल आत्मसंयम के साथ काम करना आवश्यक है।
यह सुनकर पुजारी ने छठा श्लोक बोला:

नहीं, वेद पूरी तरह से बेकार नहीं हैं:
हालांकि आत्मसंयम के साथ काम करना ही सच्चा शिक्षण है:
वेदों का अध्ययन मनुष्य के नाम को ऊंचा उठाता है।
लेकिन आचरण के माध्यम से ही वह परमानंद प्राप्त करता है।
अतः पुजारी ने सेताकेतु की शिक्षा का खंडन किया। उसने उन सभी को साधारण बना दिया, उन्हें ढाल और हथियार दिए, और उन्हें राजा के सेवक के रूप में उच्च अधिकारी नियुक्त किया: और इसीलिए कहा जाता है कि उच्च अधिकारियों का वंश चला।

पाठ के बाद गुरु ने जन्म की पहचान बताई: "उस समय सेताकेतु धोखेबाज पुजारी था, चांडाल सारिपुत्र था, और राजा का पुजारी मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)सं. 487 (2)यह चार क्वार्टरों के नामों पर काल्पनिक शब्दों के खेल पर आधारित है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **दारिमुख-जातक**
***स्रोत** : एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----II-378-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 378
दारिमुख जातक

"इंद्रियों के सुख," इत्यादि - यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जो महान त्याग से संबंधित है। इस कथा की उत्पत्ति का घटनाक्रम पहले ही बताया जा चुका है।

एक समय की बात है, मगध के राजा राजगृह नगर में शासन करते थे। उनकी प्रमुख रानी से बोधिसत्व का जन्म हुआ और उनका नाम ब्रह्मदत्त रखा गया। उनके जन्म के दिन ही कुलपुजारी के भी एक पुत्र का जन्म हुआ: उनका चेहरा अत्यंत सुंदर था, इसलिए उनका नाम दारिमुख रखा गया। दोनों राजा के दरबार में घनिष्ठ मित्र बनकर पले-बढ़े और सोलह वर्ष की आयु में तक्षशिला गए, जहाँ उन्होंने सभी कलाओं का ज्ञान प्राप्त किया। फिर व्यावहारिक रीति-रिवाजों को जानने और ग्रामीण परंपराओं को समझने के उद्देश्य से वे नगरों, गाँवों और पूरे देश में विचरण करने लगे। वे बनारस पहुँचे और एक मंदिर में ठहरकर अगले दिन भीख माँगने के लिए नगर में गए। नगर के एक घर में ब्राह्मणों के लिए चावल की दलिया पकाई गई थी और बैठने की व्यवस्था की गई थी। दोनों युवकों को भीख माँगते देख, उन्होंने सोचा, "ब्राह्मण आ गए हैं," और उन्हें अंदर बुलाकर बोधिसत्व के आसन पर एक सफेद वस्त्र और दारिमुख के आसन पर एक लाल गलीचा बिछा दिया। दारिमुख ने शगुन देखकर समझ लिया कि उनका मित्र बनारस का राजा बनेगा और वह स्वयं सेनापति। उन्होंने भोजन किया और आशीर्वाद लेकर राजा के उद्यान में चले गए। बोधिसत्व राजसी पत्थर के आसन पर विराजमान थे। दारिमुख उनके चरणों को सहलाते हुए बैठे रहे। बनारस के राजा को मरे हुए सात दिन हो चुके थे। कुलपुजारी ने अंतिम संस्कार किया था और सिंहासन का कोई उत्तराधिकारी न होने के कारण सात दिनों तक उत्सव रथ यात्रा कराई थी। इस रथ यात्रा समारोह का वर्णन महाजनक जन्म में किया जाएगा। यह रथ शहर से निकला और उद्यान के द्वार पर पहुँचा, जिसके साथ चार टुकड़ियों की सेना और सैकड़ों वाद्ययंत्रों का संगीत था। दारिमुख ने संगीत सुनकर सोचा, "यह रथ मेरे मित्र के लिए आ रहा है, वह आज राजा बनेगा और मुझे सेनापति का पद देगा, लेकिन मैं गृहस्थ क्यों रहूँ? मैं जाकर संन्यासी बन जाऊँगा"; इसलिए बोधिसत्व से बिना कुछ कहे वह एक तरफ हट गए और छिप गए। पुजारी ने रथ को उद्यान के द्वार पर रोक दिया और प्रवेश करके देखा कि बोधिसत्व राजसी आसन पर लेटे हुए हैं। उनके चरणों पर शुभ चिह्नों को देखकर उन्होंने सोचा, "इनमें गुण हैं और ये चारों महाद्वीपों और उनके चारों ओर फैले दो हजार द्वीपों के राजा बनने के योग्य हैं, लेकिन इनका साहस क्या है?" इसलिए उन्होंने सभी वाद्ययंत्रों को पूरी ध्वनि से बजा दिया। बोधिसत्व जागे और अपने चेहरे से

कपड़ा हटाकर उन्होंने लोगों को देखा। फिर उन्होंने अपना चेहरा दोबारा ढक लिया और थोड़ी देर के लिए लेट गए। रथ के रुकने पर वे उठकर आसन पर पालथी मारकर बैठ गए। पुजारी ने उनके घुटने पर सहारा लेकर कहा, "हे प्रभु, राज्य आपको मिलेगा।" "क्यों, क्या कोई उत्तराधिकारी नहीं है?" "नहीं, प्रभु।" "तो ठीक है," और उन्होंने इसे स्वीकार कर लिया, और उद्यान में ही उनका अभिषेक किया गया। अपनी महान महिमा में वे दारिमुख को भूल गए। वे रथ पर सवार हुए और लोगों के बीच से शहर का चक्कर लगाया। फिर महल के द्वार पर रुककर उन्होंने दरबारियों के स्थान व्यवस्थित किए और चबूतरे पर चले गए।उसी क्षण दारिमुख ने उद्यान को खाली देखकर आकर उद्यान में स्थित राजसी आसन पर बैठ गए। उनके सामने एक सूखा पत्ता गिरा। उसमें उन्होंने क्षय और मृत्यु के सिद्धांतों को देखा, तीनों चिन्हों को समझा और पृथ्वी को आनंद से गुंजायमान करते हुए पच्चेकबोधि में प्रवेश किया। उसी क्षण गृहस्थ के लक्षण उनसे विलीन हो गए, आकाश से एक चमत्कारिक प्याला और वस्त्र गिरे और उनके शरीर से चिपक गए, उन्हें तुरंत आठों आवश्यक वस्तुएँ और शत वर्ष के भिक्षु का पूर्ण व्यवहार प्राप्त हो गया और चमत्कारिक रूप से वे वायु में उड़कर हिमालय की नन्दमूल गुफा में चले गए।

बोधिसत्व ने अपने राज्य पर धर्मपूर्वक शासन किया, परन्तु अपनी महिमा के नशे में चूर होकर वे चालीस वर्षों तक दारिमुख को भूल गए। चालीसवें वर्ष में उन्हें दारिमुख की याद आई और उन्होंने कहा, “मेरा एक मित्र है जिसका नाम दारिमुख है; वह अब कहाँ है?” उन्हें उससे मिलने की तीव्र इच्छा हुई। तब से लेकर हरम में और सभा में भी वे यही कहते, “मेरा मित्र दारिमुख कहाँ है? जो मुझे उसके निवास स्थान का पता बताएगा, मैं उसका बहुत आदर करूँगा।” दस वर्ष और बीत गए, इस दौरान भी वे समय-समय पर दारिमुख को याद करते रहे। दारिमुख, यद्यपि अब पच्चेकबुद्ध हो चुके थे, पचास वर्षों बाद उन्होंने सोचा और जाना कि उनके मित्र उन्हें याद करते हैं: और यह सोचकर, “वह अब बूढ़े हो गए हैं और उनके पुत्र-पुत्रियाँ बढ़ गई हैं, मैं जाकर उन्हें धर्म का उपदेश दूँगा और उन्हें संघ में दीक्षित करूँगा,” वे चमत्कारिक रूप से वायु में प्रकट हुए और उद्यान में उतरकर एक सुनहरी प्रतिमा की तरह पत्थर के आसन पर बैठ गए। माली ने उन्हें देखकर पूछा, “महोदय, आप कहाँ से आए हैं?” “नंदामूलक गुफा से।” "तुम कौन हो?" "मित्र, मैं दारिमुख पच्चेक हूँ।" "महाराज, क्या आप हमारे राजा को जानते हैं?" "जी हाँ, वह मेरे गृहस्थ जीवन में मेरे मित्र थे।" "महाराज, राजा आपसे मिलने के लिए उत्सुक हैं, मैं उन्हें आपके आने की सूचना दे दूँगा।" "जाओ और ऐसा करो।" वह गया और राजा को बताया कि दारिमुख आ गए हैं और पत्थर के आसन पर बैठे हैं। राजा ने कहा, "तो मेरे मित्र आ गए हैं, मैं उनसे मिलूँगा।" अतः वह अपने रथ पर सवार होकर अपने कई सेवकों के साथ उद्यान में गए और पच्चेकबुद्ध को विनम्रतापूर्वक प्रणाम करते हुए एक तरफ बैठ गए। पच्चेकबुद्ध ने कहा, "ब्रह्मदत्त, क्या तुम अपने राज्य पर धर्म से शासन करते हो, कभी बुरे मार्ग नहीं अपनाते, न ही धन के लिए लोगों पर अत्याचार करते हो, और दान से अच्छे कर्म करते हो?" और विनम्रतापूर्वक प्रणाम करने के बाद, "ब्रह्मदत्त, तुम वृद्ध हो गए हो, अब तुम्हारे लिए सुख-सुविधाओं का त्याग करने और दीक्षा लेने का समय आ गया है।" अतः उन्होंने धर्म का उपदेश दिया और पहला श्लोक बोला।

इंद्रियों के सुख दलदल और कीचड़ के समान हैं:
   मैं इन्हें "त्रिस्तरीय आतंक" कहता हूँ।
मैंने इन्हें वाष्प और धूल घोषित किया है, महाराज:
   भाई बनो और उन सबको त्याग दो।
यह सुनकर राजा ने अपनी इच्छाओं के बंधन में बंधे होने का कारण बताते हुए दूसरा श्लोक बोला:

मैं मोहित, बंधा हुआ और गहरे दागों से ग्रसित हूँ।
   ब्राह्मण, सुखों के साथ: वे भयभीत हो सकते हैं,
लेकिन मुझे जीवन से प्यार है, और मैं इसे नकार नहीं सकता:
   मैं निरंतर अच्छे कार्य करता रहता हूँ।
तब दारिमुख ने यद्यपि बोधिसत्व ने कहा, "मैं दीक्षा नहीं ले सकता," फिर भी उन्हें अस्वीकार नहीं किया और उन्हें एक बार फिर प्रोत्साहित किया:

जो अपने मित्र की सलाह को ठुकरा देता है,
   कौन उस पर दया करता है और उसकी बर्बादी को रोकना चाहता है?
यह सोचना कि "यह दुनिया बेहतर है," कभी खत्म नहीं होता।
   गर्भ में लंबे समय तक पुनर्जन्म लेने की मूर्खता।
वह भयानक दंड स्थल उसका है।
   पूरी तरह से मैला, अच्छे लोगों द्वारा बुरा माना जाने वाला:
लालची लोग अपनी इच्छाओं को कभी शांत नहीं कर सकते।
   शरीर सभी सांसारिक प्राणियों को कैद कर लेता है।
अतः दारिमुख पुच्चेकबुद्ध ने गर्भाधान और प्रज्वलन से उत्पन्न होने वाले दुख को दर्शाते हुए, जन्म के दुख को दर्शाने के लिए डेढ़ श्लोक बोले:

खून से लथपथ और दुर्गंध से सना हुआ,
सभी नश्वर प्राणी जन्म से ही उत्पन्न होते हैं:
इसके बाद वे जिस भी चीज को छूते हैं, वही उनके भाग्य पर निर्भर करता है।
ताकि वे धरती पर पीड़ा और दुख ला सकें।
मैं वही बोलता हूँ जो मैंने देखा है, न कि जो मैंने सुना है।
दूसरों से: मुझे पुराने दिन याद हैं।
अब गुरु ने अपनी पूर्ण बुद्धि से कहा, "तो पच्चेकबुद्ध ने राजा की अच्छे शब्दों से सहायता की," और अंत में शेष आधा श्लोक बोला:

दारिमुख ने सुमेधा के कान के साथ जो किया, वह इस प्रकार था:
कई मधुर छंदों में ज्ञान प्रकट होता है।
पच्चेकबुद्ध ने इच्छाओं के कष्टों को दर्शाते हुए, अपने शब्दों को स्पष्ट करते हुए कहा, "हे राजा, दीक्षा लो या न लो, परन्तु मैंने इच्छाओं के कष्ट और दीक्षा के लाभों का वर्णन कर दिया है, इसलिए उत्साहपूर्वक दीक्षा लो।" और इस प्रकार वे एक सुनहरे हंस की तरह आकाश में विलीन हो गए और बादलों पर विचरण करते हुए नंदमूलक गुफा तक पहुँचे। उस महान पुरुष ने अपने सिर पर दस उंगलियों के नाखूनों को मिलाकर तेजस्वी प्रणाम किया और दारिमुख के दृष्टि से ओझल होने तक प्रणाम करते रहे। फिर उन्होंने अपने बड़े पुत्र को बुलवाया और उसे राज्य सौंप दिया। और इच्छाओं का त्याग करते हुए, जब बहुत से लोग रो रहे थे और शोक मना रहे थे, वे हिमालय चले गए और पत्तों की कुटिया बनाकर तपस्वी के रूप में दीक्षा ली। फिर थोड़े ही समय में उन्होंने ज्ञान और सिद्धियाँ प्राप्त कर लीं और अपने जीवन के अंत में ब्रह्मा के उच्चतर स्वर्ग (प्रधान देवदूतों के स्वर्ग) में चले गए।

पाठ समाप्त हुआ, गुरु ने सत्यों की व्याख्या की: तब कई लोगों ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) प्राप्त किया और बाकी लोगों ने भी:-और उन्होंने जन्म की पहचान की: "उस समय राजा मैं स्वयं था।"

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **नेरु-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-379-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 379
नेरु-जातक

"कौवे और कौवे," आदि-- गुरु ने जेतवन मठ में एक भिक्षु के बारे में यह कहानी सुनाई। कहानी यह है कि उन्होंने गुरु से ध्यान के तरीके सीखे और फिर एक सीमावर्ती गाँव में चले गए। वहाँ के लोग उनके व्यवहार से प्रसन्न हुए, उन्हें भोजन कराया, जंगल में उनके लिए एक कुटिया बनाई और वचन लेकर उन्हें वहाँ रहने दिया और उनका बहुत सम्मान किया। लेकिन बाद में उन्होंने उन्हें पदार्थ की नश्वरता के शिक्षकों के लिए छोड़ दिया, फिर उन्हें छोड़कर अमरता का खंडन करने वाले संप्रदाय में चले गए, और फिर उन्हें भी नग्न तपस्वियों के संप्रदाय में चले गए: क्योंकि इन सभी संप्रदायों के शिक्षक बारी-बारी से उनके बीच आते रहे। इसलिए वे उन लोगों के बीच दुखी रहे जो भले-बुरे का ज्ञान नहीं रखते थे, और वर्षा और पवाराना (*1) के बाद वे गुरु के पास वापस गए, और उनके अनुरोध पर उन्हें बताया कि वे वर्षा के दौरान कहाँ रहे थे और भले-बुरे का ज्ञान न रखने वाले लोगों के बीच दुखी रहे थे। गुरु ने कहा, "पुराने समय के ऋषि, भले ही वे पशु रूप में पैदा हुए थे, अच्छे और बुरे के ज्ञान से रहित लोगों के बीच एक दिन भी नहीं रुके, तुमने ऐसा क्यों किया?" और इस तरह उन्होंने कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त राजा थे, तब बोधिसत्व का जन्म एक स्वर्ण हंस के रूप में हुआ। वे अपने छोटे भाई के साथ चित्तकूट पर्वत पर रहते थे और हिमालय में उगने वाले जंगली धान को खाकर अपना जीवन यापन करते थे। एक दिन चित्तकूट लौटते समय, उन्होंने स्वर्ण पर्वत नेहरू को देखा और उसकी चोटी पर बस गए। पर्वत के चारों ओर विभिन्न प्रकार के पक्षी और जानवर भोजन के लिए निवास करते थे: पर्वत पर आने के समय से ही वे उसकी चमक से स्वर्णिम रंग के हो गए। बोधिसत्व के भाई ने यह देखा, लेकिन कारण न जानते हुए उन्होंने पूछा, "इसका कारण क्या है?" और फिर अपने भाई से बात करते हुए उन्होंने दो श्लोक कहे:

कौवे और काले पक्षी, और हम सबसे श्रेष्ठ पक्षी हैं।
 इस पहाड़ पर सब कुछ एक जैसा ही दिखाई देता है।
दुष्ट सियार बाघों और उनके स्वामियों को भी टक्कर देते हैं।
 शेर: इस पहाड़ का क्या नाम हो सकता है?
यह सुनकर बोधिसत्व ने तीसरा श्लोक बोला:

पर्वतों में सर्वोत्कृष्ट, इसका नाम नेरु है।
 यहां सभी जानवरों को देखने में सुंदर बनाया गया है।
यह सुनकर छोटे वाले ने शेष तीन छंद बोले:

जहां भी अच्छे लोगों को सम्मान कम या बिल्कुल न के बराबर मिलता है,
 या फिर दूसरों से कम, जियो मत, बल्कि चले जाओ।
मंदबुद्धि और चतुर, बहादुर और कायर, सभी को समान रूप से सम्मान दिया जाता है:
 भेदभाव न करने वाले पर्वत, अच्छे लोग तुम पर नहीं टिकेंगे!
सर्वश्रेष्ठ, उदासीन और सबसे नीच, नेरु किसी को अलग नहीं करता।
 हे भेदभाव न करने वाले नेरु, अफसोस! हमें तुम्हें सीधे-सीधे छोड़ना होगा।
इसके साथ ही वे दोनों उड़कर चित्तकुटा चले गए।

पाठ के बाद, गुरु ने सत्यों की घोषणा की और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के समापन पर, वह भाई (भिक्षु) प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की सिद्धि में स्थापित हो गया: "उस समय छोटा हंस आनंद था, बड़ा भिक्षु मैं था।"

फुटनोट:

(1)वर्षा ऋतु के अंत में मनाया जाने वाला त्योहार।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **असांक-जातक**
स्रोत : एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।

पिछला <<<<-----||-380-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 380
असांका-जातक

"स्वर्गिक उद्यान में," इत्यादि - गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए यह कथा सुनाई थी, जिसमें एक भिक्षु को उसकी पूर्व पत्नी द्वारा बहकाए जाने की घटना का वर्णन है। यह घटना इंद्रिय जन्म (*1) में वर्णित है। गुरु ने देखा कि भिक्षु अपनी पत्नी के विचारों के कारण पथभ्रष्ट हो रहा था, इसलिए उन्होंने कहा, "महोदय, यह स्त्री आपको हानि पहुँचा रही है: पहले भी आपने इसके लिए चार भागों की सेना का बलिदान दिया था और तीन वर्ष हिमालय में अत्यंत कष्ट भोगते हुए बिताए थे" - इस प्रकार उन्होंने एक पुरानी कथा सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व का जन्म उसी देश के एक गाँव में एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। बड़े होकर उन्होंने तक्षशिला में विद्या सीखी, तपस्वी बन गए और पारलौकिक ज्ञान प्राप्त करके हिमालय में जड़ और फल खाकर जीवन व्यतीत किया। उसी समय तैंतीस लोकों के स्वर्ग से एक परम पुण्यात्मा अवतरित हुए और एक कुंड में कमल के गर्भ में कन्या के रूप में प्रकट हुए। जब अन्य कमल जीर्ण होकर गिर गए, तो वह कमल विशाल होकर स्थिर रहा। स्नान करने आए तपस्वी ने उसे देखा और सोचा, “अन्य कमल तो गिर जाते हैं, लेकिन यह कमल विशाल होकर स्थिर है; ऐसा क्यों है?” इसलिए उन्होंने स्नान वस्त्र धारण किया और कमल को खोलकर उसमें कन्या को देखा। पुत्री के समान स्नेह से वे उसे अपनी कुटिया में ले गए और उसकी देखभाल की। जब वह सोलह वर्ष की हुई, तब वह अत्यंत सुंदर थी और मनुष्य के सौंदर्य से भी अधिक सुंदर थी, परन्तु देवदूतों के सौंदर्य को प्राप्त नहीं कर

सकी। सक्का (इंद्र) बोधिसत्व की सेवा करने आए। उन्होंने उस कन्या को देखा, पूछा और उन्हें बताया गया कि वह कहाँ मिली थी। फिर उन्होंने पूछा, "उसे क्या मिलना चाहिए?" "हे महाराज, एक निवास स्थान, वस्त्र, आभूषण और भोजन।" बोधिसत्व ने उत्तर दिया, "बहुत अच्छा, स्वामी," और उसके रहने के लिए एक क्रिस्टल महल बनाया, उसके लिए पलंग, वस्त्र, आभूषण, और दिव्य भोजन और पेय की व्यवस्था की। जब वह ऊपर जा रही थी, तो महल नीचे उतरकर जमीन पर ठहर गया; जब वह ऊपर पहुँच गई, तो वह ऊपर उठकर हवा में ठहर गया। महल में रहते हुए उसने बोधिसत्व की अनेक सेवाएँ कीं। एक वनपाल ने यह देखा और पूछा, "हे स्वामी, यह कन्या आपके लिए क्या है?" "मेरी पुत्री।" इसलिए वह बनारस गया और राजा को बताया, "हे महाराज, मैंने हिमालय में एक तपस्वी की पुत्री को अत्यंत सुंदर देखा है।" यह सुनकर राजा चौंक गया और वनपाल को अपना मार्गदर्शक बनाकर चार टुकड़ियों की सेना के साथ उस स्थान पर गया। वहाँ डेरा डालकर उसने वनपाल और उसके सेवकों को साथ लेकर आश्रम में प्रवेश किया। उसने बोधिसत्व को प्रणाम किया और कहा, "हे प्रभु, स्त्रियाँ धार्मिक (सन्यासी) जीवन पर कलंक हैं; मैं आपकी पुत्री की सेवा करूँगा।"

बोधिसत्व ने उस कन्या का नाम असंका रखा था क्योंकि वह अपने संदेह (असंका) के कारण जलमार्ग पार करते हुए उसे उनके पास लाई थी, "इस कमल में क्या है?" उन्होंने राजा से सीधे यह नहीं कहा, "इसे ले जाओ और चले जाओ," बल्कि कहा, "हे महाराज, यदि आप इस कन्या का नाम जानते हैं, तो इसे ले जाओ और चले जाओ।" राजा ने कहा, "हे प्रभु, यदि आप बताएँगे, तो मैं जान जाऊँगा।" उन्होंने कहा, "मैं नहीं बताऊँगा, परन्तु जब आप जान लें, तो इसे ले जाओ और चले जाओ।" राजा मान गए और तब से अपने मंत्रियों के साथ विचार करने लगे, "इसका नाम क्या हो सकता है?" उन्होंने सभी कठिन नामों का अनुमान लगाया और बोधिसत्व से कहा, "इसका नाम फलाँ-फलाँ होगा": परन्तु बोधिसत्व ने मना कर दिया। इस प्रकार राजा के विचार करते-करते एक वर्ष बीत गया। शेरों और अन्य जानवरों ने उनके हाथियों, घोड़ों और आदमियों पर हमला किया, साँपों का खतरा था, मक्खियों का खतरा था, और बहुत से लोग ठंड से मर गए। राजा ने बोधिसत्व से कहा, "मुझे उसकी क्या आवश्यकता है?" और वह चल पड़ा। कन्या असंका एक खुली क्रिस्टल खिड़की पर खड़ी थी। राजा ने उसे देखकर कहा, "हमें तुम्हारा नाम नहीं मिल रहा है, तुम यहीं हिमालय में रहो, हम जा रहे हैं।" असंका ने कहा, "महाराज, यदि आप चले गए तो आपको मुझ जैसी पत्नी कभी नहीं मिलेगी। तैंतीस के स्वर्ग में, चित्तलता उद्यान में, असावती नामक एक लता है: इसके फल से एक दिव्य पेय उत्पन्न होता है, और जो इसे एक बार पीते हैं वे चार महीने तक मदहोश रहते हैं और एक दिव्य पलंग पर लेट जाते हैं: यह एक हजार वर्षों में एक बार फल देती है और देवताओं के पुत्र (देवदूत), यद्यपि मादक पेय के आदी होते हैं, उस दिव्य पेय की प्यास को सहन करते हुए कहते हैं, "हम इससे फल प्राप्त करेंगे," और हजार वर्षों तक लगातार पौधे को देखने आते हैं और पूछते हैं, "क्या यह ठीक है?" लेकिन आप एक वर्ष में ही असंतुष्ट हो जाते हैं: जो अपनी आशा का फल प्राप्त करता है वह सुखी होता है, अभी असंतुष्ट मत हो," और इस प्रकार उसने तीन श्लोक कहे:

स्वर्गिक उद्यान में असावती विराजमान होती है;
हजार साल में एक बार, इससे ज्यादा नहीं, वह पेड़
यह फल देता है: इसके लिए देवता (देवदूत) धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा करते हैं।
हे राजा, आशा बनाए रखो, आशा का फल मीठा होता है।
एक पक्षी उड़ता रहा और उसने कभी हार स्वीकार नहीं की।
हालांकि उनकी इच्छा दूर थी, फिर भी उन्होंने उसे पूरी तरह से हासिल कर लिया:
हे राजा, आशा बनाए रखें: आशा का फल मीठा होता है।

राजा उसके शब्दों से मोहित हो गया: उसने अपने मंत्रियों को फिर से इकट्ठा किया और नाम का अनुमान लगाने लगा, हर बार दस बार अनुमान लगाता रहा, जब तक कि एक और वर्ष बीत नहीं गया। लेकिन उसका नाम उन दस नामों में नहीं था, इसलिए बोधिसत्व ने उसे मना कर दिया। राजा ने फिर कहा, "मुझे उसकी क्या आवश्यकता है?" और चला गया। वह खिड़की पर प्रकट हुई: और राजा ने कहा, "तुम यहीं रहो, हम चलते हैं।" "महाराज, क्यों जा रहे हो?" "मुझे आपका नाम नहीं मिल रहा है।" "हे महाराज, आप इसे क्यों नहीं पा सकते? आशा व्यर्थ नहीं जाती; एक सारस पहाड़ी की चोटी पर रहकर अपनी मनोकामना पूरी कर लेता है: आप क्यों नहीं पा सकते? धैर्य रखिए, हे महाराज। एक सारस कमल के तालाब में भोजन करता था, लेकिन उड़कर एक पहाड़ी की चोटी पर उतर आया: वह उस दिन वहीं ठहर गया और अगले दिन सोचने लगा, "मैं इस पहाड़ी की चोटी पर सुखपूर्वक बस गया हूँ: अगर बिना नीचे उतरे यहीं भोजन और पानी पाता रहूँ और इस तरह आज का दिन व्यतीत करूँ, तो कितना आनंद होगा।" उसी दिन स्वर्ग के राजा सक्का (इंद्र) ने असुरों का वध किया था और तैंतीस लोकों के स्वर्ग में विराजमान होकर सोच रहे थे, "मेरी मनोकामनाएँ पूर्ण हो गई हैं, क्या वन में कोई ऐसा है जिसकी मनोकामना अधूरी रह गई हो?" यह सोचते हुए उन्होंने उस सारस को देखा और सोचा, "मैं इस पक्षी की मनोकामना पूरी करूँगा": सारस के बैठने की जगह से कुछ ही दूरी पर एक धारा बहती है, और सक्का (इंद्र) ने धारा को पूरी तरह उफान पर पहाड़ी की चोटी पर भेज दिया: इसलिए सारस बिना हिले-डुले वहीं पहुँच गया। "उसने मछली खाई, पानी पिया और उस दिन वहीं रही; फिर पानी कम हुआ और बह गया; इसलिए, हे महाराज, सारस ने अपनी उस आशा को साकार किया, तो आप क्यों नहीं करेंगे? आशा बनाए रखें," उसने शेष श्लोक के साथ कहा। राजा, उसकी कहानी सुनकर, उसकी सुंदरता और उसके शब्दों से मोहित हो गया: वह वहाँ से जा नहीं सका, बल्कि अपने मंत्रियों को इकट्ठा करके और सौ नाम प्राप्त करके, उन सौ नामों पर अनुमान लगाने में एक और वर्ष व्यतीत

किया। तीन वर्ष के अंत में वह बोधिसत्व के पास आया और पूछा, "क्या वह नाम उन सौ नामों में होगा, हे स्वामी?" "आप नहीं जानते, हे महाराज।" उसने बोधिसत्व को प्रणाम किया और "हम अब चलते हैं" कहकर वह चल पड़ा। कन्या असंका फिर से एक क्रिस्टल खिड़की के पास खड़ी थी। राजा ने उसे देखा और कहा, "तुम यहीं रहो, हम चलते हैं।" "क्यों, हे महाराज?" "तुम मुझे शब्दों से संतुष्ट करती हो, प्रेम से नहीं: तुम्हारे मीठे शब्दों से मोहित होकर मैंने यहाँ तीन वर्ष बिताए हैं, अब मैं चलता हूँ," और उसने ये श्लोक कहे:

तुम मुझे शब्दों से प्रसन्न करते हो, कर्मों से नहीं।
सुगंधहीन फूल, हालांकि देखने में सुंदर होता है, लेकिन वह एक खरपतवार मात्र है।
अपने दोस्तों से बिना किसी परिणाम के अच्छा वादा करना व्यर्थ है।
कभी कुछ न देना, हमेशा संचय करना: यही मित्रता के पतन का निश्चित कारण है।
पुरुषों को तभी बोलना चाहिए जब वे कार्य करने को तैयार हों, न कि उन चीजों का वादा करना चाहिए जिन्हें वे पूरा नहीं कर सकते।
यदि वे केवल बातें करते हैं लेकिन कुछ करके नहीं दिखाते, तो बुद्धिमान लोग उन्हें भली-भांति पहचान लेते हैं।
मेरी सेना बर्बाद हो गई है, मेरा सारा भंडार खत्म हो गया है।
मुझे शक है कि मेरा जीवन बर्बाद हो गया है: अब मेरे जाने का समय आ गया है।
राजा की बातें सुनकर कन्या असंका ने कहा, "महाराज, आप मेरा नाम जानते हैं, आपने अभी-अभी मेरा नाम लिया है; मेरे पिता को मेरा नाम बताइए, मुझे अपने साथ ले जाइए।" इस प्रकार राजा से बात करते हुए उसने कहा:

राजकुमार, तुमने वही शब्द कहा है जो मेरा नाम है:
आइए, महाराज: मेरे पिता इस दावे को स्वीकार कर लेंगे।
राजा बोधिसत्व के पास गए, उन्हें प्रणाम किया और कहा, "हे प्रभु, आपकी पुत्री का नाम असंका है।" बोधिसत्व ने कहा, "जब से आपको उसका नाम पता चले, उसे अपने साथ ले जाइए, महाराज।" उन्होंने बोधिसत्व को प्रणाम किया और रत्न महल में आकर कहा, "देवी, आपके पिता ने आपको मुझे सौंपा है, अब आइए।" असंका ने कहा, "हे महाराज, आइए, मैं अपने पिता से अनुमति लेकर आती हूँ।" वह महल से नीचे उतरकर बोधिसत्व को प्रणाम किया, उनकी अनुमति प्राप्त की और राजा के पास आईं। राजा उन्हें बनारस ले गए और उनके साथ सुखपूर्वक जीवन व्यतीत किया, उनके पुत्र-पुत्रियाँ हुए। बोधिसत्व निरंतर ध्यान में लीन रहे और ब्रह्मलोक में जन्म लिया।

पाठ के बाद, गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के बाद, भाई (भिक्षु) प्रथम मार्ग (समाधि) की सिद्धि में स्थापित हो गए: - "असंका पूर्व पत्नी थी, राजा असंतुष्ट भाई था, तपस्वी मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) संख्या 423

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> मिगालोपा - **जातक**
स्रोत: *एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----II-381-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 381
मिगालोपा-जातक (*1)

"तुम्हारे तौर-तरीके, मेरे पुत्र," इत्यादि-- गुरु ने जेतवन मठ में एक उद्दंड भिक्षु की यह कहानी सुनाई। गुरु ने भिक्षु से पूछा, "क्या तुम सचमुच उद्दंड हो?" उसने कहा, "जी प्रभु": और गुरु ने कहा, "तुम पहली बार उद्दंड नहीं हो; पहले भी उद्दंडता के कारण तुमने ज्ञानियों की बात नहीं मानी और वेरम्भ (*2) हवाओं से तुम्हारी मृत्यु हुई," इस प्रकार उन्होंने एक प्राचीन कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त राजा थे, तब बोधिसत्व अपरन्नगिज्ज नाम के एक गिद्ध के रूप में जन्मे और गिज्जपब्बत (गिद्ध पर्वत) में गिद्धों के एक समूह के साथ रहते थे। उनके पुत्र मिगलोपा अत्यंत बलवान और शक्तिशाली थे; वे अन्य गिद्धों की पहुँच से बहुत ऊपर उड़ते थे। उनके पुत्रों ने राजा को बताया कि उनका पुत्र बहुत दूर उड़ गया है। राजा ने मिगलोपा को बुलाया और कहा, "पुत्र, लोग कहते हैं कि तुम बहुत ऊँचा उड़ते हो: यदि तुम ऐसा करोगे, तो तुम स्वयं पर मृत्यु बुला लोगे," और तीन श्लोक कहे:

मेरे बेटे, तुम्हारे तौर-तरीके मुझे असुरक्षित लगते हैं,
तुम हमारी उचित सीमा से बहुत ऊपर उड़ रहे हो।
जब पृथ्वी तुम्हारी दृष्टि में केवल एक वर्गाकार मैदान के समान हो जाए, तो
मेरे पुत्र, वापस मुड़ जाना और इससे भी ऊँची उड़ान भरने का साहस मत करना।
ऊँची उड़ान भरने की कोशिश में अन्य पक्षियों ने भी कभी-कभार प्रयास किया है, लेकिन
प्रचंड हवा और आंधी की चपेट में आकर वे अपने अभिमान में ही नष्ट हो गए हैं।
मिगालोपा ने अवज्ञा करते हुए अपने पिता की आज्ञा का पालन नहीं किया, बल्कि ऊपर उठते हुए उसने अपने पिता द्वारा निर्धारित सीमा को पार कर लिया, यहाँ तक कि काली हवाओं का भी सामना किया और ऊपर की ओर उड़ता रहा जब तक कि उसका सामना वेरम्भा हवाओं से नहीं हो गया। उन हवाओं ने उस पर प्रहार किया और उनके मात्र प्रहार से ही वह टुकड़े-टुकड़े होकर हवा में विलीन हो गया।

अपने वृद्ध पिता के बुद्धिमानी भरे आदेशों को अनसुना करते हुए,
उसने अंधकार के पार, वेरम्भा हवाओं का मार्ग खोज लिया।
उसकी पत्नी, उसके बच्चे, उसके घर के सारे जानवर,
सब कुछ उस अवज्ञाकारी पक्षी के कारण नष्ट हो गया।
अतः जो अपने बड़ों की बात नहीं मानते, वे
इस अभिमानी गिद्ध की तरह सीमा से बाहर भटक जाते हैं, और
जब वे सत्य के नियमों का उल्लंघन करते हैं, तो उनका विनाश निश्चित होता है।

पाठ के बाद गुरु ने जन्म की पहचान बताई: "उस समय मिगालोपा उद्दंड भाई (भिक्षु) थे, और अपरान्ना मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) क्रमांक 427 देखें

(2) एक हवा जिसे इसी नाम के समुद्र से यह नाम दिया गया है

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सिरिकालकणि-जातक**
***स्रोत** : एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-382-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 382
सिरिकालकन्नी-जातक

“यह कौन है,” इत्यादि—गुरु ने जेतवन मठ में अनाथपिंडिका के विषय में यह कथा सुनाई। प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की सिद्धि प्राप्त करने के समय से ही उन्होंने पाँचों प्रथम आज्ञाओं का अटूट पालन किया; उनकी पत्नी, पुत्र-पुत्रियाँ, सेवक और कर्मचारी भी ऐसा ही करते थे। एक दिन सत्य के हॉल में वे इस बात पर चर्चा करने लगे कि क्या अनाथपिंडिका का आचरण और गृहस्थी भी शुद्ध है। गुरु आए और उन्हें उनका विषय बताया गया: तो उन्होंने कहा, “भाइयों (भिक्षुओं), प्राचीन काल के ज्ञानी पुरुषों के गृहस्थी शुद्ध होते थे,” और एक पुरानी कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त राजा थे, तब बोधिसत्व एक व्यापारी थे, जो दान देते थे, आज्ञाओं का पालन करते थे और व्रत के नियमों का पालन करते थे। उनकी पत्नी, पुत्र, पुत्रियाँ, सेवक और कर्मचारी भी पाँचों आज्ञाओं का पालन करते थे। इसलिए उन्हें व्यापारी सुचिपरिवार (शुद्ध गृहस्थ) कहा जाता था। उन्होंने सोचा, "यदि मुझसे भी अधिक शुद्ध चरित्र वाला कोई आए, तो उसे बैठने के लिए अपना पलंग या लेटने के लिए अपना बिस्तर देना उचित नहीं होगा, बल्कि उसे एक शुद्ध और अप्रयुक्त पलंग देना चाहिए।" अतः उन्होंने अपने दरबार में एक तरफ अप्रयुक्त पलंग और पलंग तैयार करवाए। उस समय चार राजाओं के स्वर्ग (*1) में विरुपाक्खा की पुत्री कलाकन्नी और धतरत्था की पुत्री श्री, दोनों ने मिलकर अनेक इत्र और मालाएँ लीं और अनोटत्ता झील में खेलने गईं। उस झील पर अनेक स्नान स्थल हैं: बुद्ध अपने स्थान पर स्नान करते हैं, पच्चेकबुद्ध अपने स्थान पर, भिक्षु अपने स्थान पर, तपस्वी अपने स्थान पर, छह काम-स्वर्गों (*2) के देवता (देवदूत) अपने स्थान पर और देवियाँ अपने स्थान पर। ये दोनों वहाँ आए और इस बात पर झगड़ने लगे कि उनमें से पहले कौन स्नान करेगा। कालकन्नी ने कहा, "मैं संसार का स्वामी हूँ: इसलिए उचित है कि मैं पहले स्नान करूँ।" श्री ने कहा, "मैं मानव जाति को आधिपत्य दिलाने वाले आचरण का मार्गदर्शन करता हूँ: इसलिए उचित है कि मैं पहले स्नान करूँ।" तब दोनों ने कहा, "चारों राजा जानेंगे कि हममें से पहले कौन स्नान करेगा": अतः वे उनके पास गए और पूछा कि अनोतत्ता में पहले स्नान करने के योग्य कौन है। धतरत्थ और विरुपाक्खा ने कहा, "हम निर्णय नहीं कर सकते," और यह कर्तव्य विरुल्हा और वेसवना पर डाल दिया। उन्होंने भी कहा, "हम निर्णय नहीं कर सकते, हम इसे अपने भगवान के चरणों में भेज देंगे": इसलिए उन्होंने इसे सक्का (इंद्र) के पास भेज दिया। उन्होंने उनकी कहानी सुनी और सोचा, "ये दोनों मेरी सहेलियों की बेटियाँ हैं; मैं इस मामले का फैसला नहीं कर सकता": इसलिए उन्होंने उनसे कहा, "बनारस में सुचिपरिवार नाम का एक व्यापारी है; उसके घर में एक अप्रयुक्त पलंग और पलंग तैयार है: जो पहले वहाँ बैठ या लेट सके, वही पहले स्नान करने के लिए उचित है।" यह सुनकर कलाकन्नी ने तुरंत नीले (*3) वस्त्र धारण किए, नीले रंग का इत्र लगाया और नीले आभूषणों से खुद को सजाया: वह गुलेल से पत्थर की तरह स्वर्ग से उतरी, और रात के मध्य पहर के ठीक बाद वह हवा में खड़ी हो गई, नीली रोशनी बिखेरती हुई, व्यापारी से कुछ ही दूरी पर, जो अपने महल के बैठक कक्ष में पलंग पर लेटा हुआ था। व्यापारी ने उसे देखा: लेकिन उसकी नज़र में वह अरुचिकर और भद्दी थी। उससे बात करते हुए उसने पहला श्लोक कहा:

यह इतने गहरे रंग का कौन है?
क्या यह दृश्य इतना अप्रिय है?
आप कौन हैं, और किसकी बेटी हैं?
कृपया बताएं कि हम आपको कैसे जान सकते हैं?
उनकी बात सुनकर कलाकन्नी ने दूसरा श्लोक बोला:

महान राजा विरुपाक्खा मेरे पिता हैं:
मैं बदकिस्मती हूँ, कलाकन्नी कठिन है:
मुझे वह कमरा दे दो जो मैं तुम्हारे पास चाहता हूँ।
तब बोधिसत्व ने तीसरा श्लोक कहा:

उनका आचरण कैसा था, उनके तौर-तरीके क्या थे?
उन पुरुषों में से जिनके साथ आप रहते हैं
मेरा प्रश्न यही है:
हमें इसका जवाब अच्छी तरह पता होगा।
फिर उन्होंने अपने गुणों का वर्णन करते हुए चौथा छंद बोला:

पाखंडी, व्यभिचारी, चिड़चिड़े स्वभाव का व्यक्ति,
ईर्ष्या, लोभ और कपट का स्वामी:
ये मेरे प्रिय मित्र हैं: और मैं इन्हें त्याग देता हूँ
उनका लाभ यह है कि वे पूरी तरह से नष्ट हो जाएं।
उन्होंने पाँचवें, छठे और सातवें छंद भी पढ़े:

और उससे भी अधिक प्रिय हैं क्रोध और घृणा।
निंदा और विवाद, बदनामी और क्रूरता।
वह निकम्मा प्राणी जो अपना भला नहीं जानता,
सलाह को नापसंद करते हुए, अपने से बड़ों के प्रति असभ्य व्यवहार:
वह व्यक्ति जिसे कुकर्म करने की प्रेरणा मिलती है, जिससे मित्र घृणा करते हैं,
वह मेरा मित्र है, मुझे उसी में आनंद मिलता है।

तब उस महान सत्ता ने उसे दोषी ठहराते हुए आठवां श्लोक कहा:

काली, यहाँ से चली जाओ: यहाँ तुम्हें खुश करने जैसा कुछ नहीं है:
अन्य देशों और शहरों में विलीन हो जाना।
कलाकन्नी ने उसकी बात सुनकर दु:ख व्यक्त किया और एक और श्लोक बोला:

मैं तुम्हें अच्छी तरह जानता हूँ: यहाँ मुझे खुश करने जैसा कुछ भी नहीं है।
कुछ अन्य लोग बदकिस्मत होते हैं, जो बहुत सारा सामान इकट्ठा कर लेते हैं;
मैं और मेरा भाई-ईश्वर इसे गायब कर देंगे।
जब वह चली गई, तो देवी श्री, सुनहरे रंग के वस्त्र और इत्र तथा सुनहरी चमक वाले आभूषणों से सुसज्जित होकर, पीले प्रकाश को बिखेरते हुए, उपस्थिति कक्ष के द्वार पर आईं और समतल भूमि पर सीधे पैर रखकर आदरपूर्वक खड़ी हो गईं। उन्हें देखकर बोधिसत्व ने प्रथम श्लोक दोहराया:

यह रंगीन दिव्य आकृति कौन है?
इतनी दृढ़ और सच्ची जमीन पर?
आप कौन हैं, और किसकी बेटी हैं?
कृपया बताएं कि हम आपको कैसे जान सकते हैं?
सिरी ने उसकी बात सुनकर दूसरा छंद बोला:

महान राजा धतरत्थ मेरे पिता हैं:
मैं भाग्य और सौभाग्य का धनी हूँ, और मेरी बुद्धिमत्ता की लोग प्रशंसा करते हैं:
मुझे वह कमरा प्रदान करें जिसमें मैं आपके साथ रहना चाहता हूँ।
तब

उनका आचरण कैसा था, उनके तरीके कैसे थे
जिन पुरुषों के साथ आप रहते हैं?
मेरा प्रश्न इसी बात का आह्वान करता है;
हमें आपका जवाब अच्छी तरह पता होगा।
जो सर्दी और गर्मी में, हवा और धूप में,
प्यास और भूख के बीच, सांप और जहरीली मक्खी,
वह दिन-रात अपना वर्तमान कर्तव्य निभा रहा है;
मैं उनके साथ निवास करता हूँ और उनसे निष्ठापूर्वक प्रेम करता हूँ।
सौम्य और मित्रवत, धर्मनिष्ठ, उदार,
बिना छल के और ईमानदार, नेक, विजयी, सरल,
उच्च पद पर नम्र: मैं उसके भाग्य को पूरी तरह से प्रभावित करता हूँ।
जैसे लहरें सागर में अपना रंग फैलाती हैं। (*4)
दोस्त बनाना है या दुश्मनी खत्म करनी है, बेहतर है, पसंद है या बुरा है,
सहायक हो या प्रतिद्वंद्वी, चाहे अंधेरा हो या दिन का उजाला,
जो कोई दयालु हो, कठोर शब्द या शाप न बोले,
मैं उसका दोस्त हूँ, चाहे वह जीवित हो या मृत, हमेशा।
लेकिन अगर किसी मूर्ख ने मुझसे कुछ प्यार जीत लिया हो,
और वह घमंडी और अभिमानी हो जाता है।
मैं उसके कुकर्म के अवज्ञाकारी मार्ग से भाग जाता हूँ।
जैसे कोई गंदा दाग।
प्रत्येक व्यक्ति का भाग्य और दुर्भाग्य उसी का कर्म है, किसी और का नहीं।
न तो कोई व्यक्ति अपने भाइयों के लिए सौभाग्य बना सकता है और न ही दुर्भाग्य।
व्यापारी द्वारा पूछे जाने पर सिरी ने यही उत्तर दिया।

बोधिसत्व श्री की बातों से प्रसन्न हुए और बोले, "यह तुम्हारे लिए उपयुक्त पवित्र आसन और पलंग है; यहाँ बैठो और लेट जाओ।" वह वहाँ ठहरीं और सुबह चार महान राजाओं के स्वर्ग के लिए प्रस्थान किया और सर्वप्रथम अनोतत्ता झील में स्नान किया। श्री द्वारा प्रयुक्त पलंग को सिरिसया कहा गया: यहीं से सिरिसयान की उत्पत्ति हुई और इसी कारण से इसे आज भी इसी नाम से जाना जाता है।

पाठ के बाद गुरु ने जन्म का विवरण दिया: "उस समय देवी सिरी उप्पलावन्ना थीं, और व्यापारी सुचिपरिवारा मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)ये उत्तर के राजा धतरत्थ, दक्षिण के विरुल्हा, पश्चिम के विरुपाक्खा और पूर्व के वेसवना हैं।

(2) जिनमें से चार राजाओं का स्वर्ग पहला है।

(3) नीला अशुभ रंग है।

(4)शायद वन्नम वास्तव में संस्कृत वृम्हन वृद्धि के लिए है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कुक्कुट्ट-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-383-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 383
कुक्कुट जातक

"पंखों वाला पक्षी," इत्यादि - गुरु ने जेतवन मठ में एक भिक्षु के बारे में यह कथा सुनाई, जो संसार के प्रति ललक रखता था। गुरु ने उससे पूछा, "तुम संसार के प्रति क्यों ललक रखते हो?" "हे प्रभु, वासना के कारण, क्योंकि मैंने एक सजी-धजी स्त्री को देखा।" "भाई, स्त्रियाँ बिल्लियों के समान होती हैं, छल-कपट और फुसलाकर अपने वश में आए व्यक्ति को बर्बाद कर देती हैं," इस प्रकार उसने एक पुरानी कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त राजा थे, बोधिसत्व एक मुर्गे के रूप में पैदा हुए और सैकड़ों मुर्गों के एक समूह के साथ जंगल में रहते थे। पास ही में एक बिल्ली रहती थी: उसने धूर्तता से बोधिसत्व को छोड़कर बाकी सभी मुर्गों को धोखा दिया और उन्हें खा गई: लेकिन बोधिसत्व उसके वश में नहीं आए। उसने सोचा, "यह मुर्गा बहुत चालाक है, लेकिन वह नहीं जानता कि मैं भी चालाक और कुशल हूं: अच्छा होगा कि मैं उसे यह कहकर बहलाऊं, 'मैं तुम्हारी पत्नी बनूंगी,' और जब वह मेरे वश में आ जाए तो उसे खा जाऊं।" वह उस पेड़ की जड़ के पास गई जहां बोधिसत्व बैठे थे, और उनकी सुंदरता की प्रशंसा करते हुए प्रार्थना करते हुए, उसने पहला श्लोक बोला:

चमकीले रंगों वाले पंखों वाला पक्षी, सुंदर ढंग से झुकी हुई कलगी वाला पक्षी।
मैं मुफ्त में तुम्हारी पत्नी बन जाऊंगी, इस शाखा को छोड़कर मेरे पास आ जाओ।
उसकी बात सुनकर बोधिसत्व ने सोचा, "इसने मेरे सभी रिश्तेदारों को खा लिया है; अब यह मुझे बहला-फुसलाकर मुझे खाना चाहती है: मैं इससे छुटकारा पाऊंगा।" इसलिए उन्होंने दूसरा श्लोक कहा:

हे सुंदर और आकर्षक देवी, आपके चार पैर हैं, मेरे केवल दो।
पशुओं और पक्षियों को कभी विवाह नहीं करना चाहिए: क्योंकि कोई दूसरा पति ढूंढ लेंगे।
फिर उसने सोचा, "वह बहुत ही चालाक है; मैं किसी न किसी चतुराई से उसे धोखा दूंगी और उसे खा जाऊंगी"; इस प्रकार उसने तीसरा छंद बोला:

मैं तुम्हारे लिए यौवन और सौंदर्य, मधुर वाणी और शिष्टाचार लाऊंगा:
आदरणीय पत्नी हो या साधारण दासी, जैसा आप चाहें मेरे साथ व्यवहार करें।
तब बोधिसत्व ने सोचा, "उसे अपमानित करके भगा देना ही सबसे अच्छा है," इसलिए उन्होंने चौथा श्लोक कहा:

तुमने मेरे परिवार का खून पिया है, और उन्हें बेरहमी से लूटा और मार डाला है:
"सम्मानित पत्नी"! मुझे रिझाने के प्रयास में तुम्हारे हृदय में कोई सम्मान नहीं है।
उसे वहां से भगा दिया गया और उसने दोबारा उसकी तरफ देखने की हिम्मत नहीं की।

इसलिए जब वे किसी नायक को देखती हैं, तो महिलाएं चालाक हो जाती हैं,
(बिल्ली और मुर्गे की तुलना करें,) उसे लुभाने की कोशिश करें।
जो महान अवसर पर उठने में विफल रहता है
शत्रु के पैरों तले दु:ख में पड़ा हुआ है।
एक कारण उसके भाग्य में संकट उत्पन्न हो जाता है,
जैसे मुर्गा बिल्ली से बचकर अपने दुश्मन से भाग निकलता है।
ये श्लोक पूर्ण ज्ञान से प्रेरित हैं।

उनका पाठ समाप्त हुआ, गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के बाद, पथभ्रष्ट भाई (भिक्षु) प्रथम मार्ग (समाधि) की सिद्धि में स्थापित हो गया: "उस समय मुर्गा मैं स्वयं था।"

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **धम्मद्धजा-जातबा**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----II-384-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 384. (*1)
धम्मद्धज-जताबा

"सद्गुणों का अभ्यास करो," इत्यादि - गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक कपटी भिक्षु की यह कहानी सुनाई। उन्होंने कहा, "भाइयों, यह व्यक्ति अब पहली बार कपटी नहीं है": इस प्रकार उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त राजा थे, तब बोधिसत्व का जन्म एक पक्षी के रूप में हुआ। बड़े होकर वे समुद्र के बीचोंबीच एक द्वीप पर पक्षियों के एक समूह के साथ रहने लगे। काशी के कुछ व्यापारियों ने एक अनुभवी कौआ लिया और समुद्र यात्रा पर निकल पड़े। समुद्र के बीचोंबीच उनका जहाज़ टूट गया। कौआ उस द्वीप पर पहुँचा और सोचने लगा, "यहाँ पक्षियों का एक बड़ा झुंड है, अच्छा होगा कि मैं उन्हें छल से अपने वश में कर लूँ और उनके अंडे और बच्चे खा जाऊँ।" इसलिए वह उनके बीच उतरा और मुँह खोलकर एक पैर ज़मीन पर रखकर खड़ा हो गया। उन्होंने पूछा, "हे स्वामी, आप कौन हैं?" कौआ ने कहा, "मैं एक पवित्र व्यक्ति हूँ।" "आप एक पैर पर क्यों खड़े हैं?" "अगर मैं दूसरा पैर नीचे रख दूँ, तो धरती मेरा भार नहीं सह पाएगी।" "तो फिर आप मुँह खोलकर क्यों खड़े हैं?" "हम और कुछ नहीं खाते, हम केवल हवा पीते हैं।" और इसी के साथ उसने इन पक्षियों को बुलाया और कहा, "मैं तुम्हें उपदेश दूंगा, तुम सुनो," और उसने उपदेश के रूप में पहला छंद सुनाया:

भाइयों, सद्गुणों का अभ्यास करो, ईश्वर आप पर कृपा करे! सद्गुणों का अभ्यास करो, मैं दोहराता हूँ:
यहां और इसके बाद, गुणी लोगों को पूर्ण सुख प्राप्त होता है।
पक्षियों को यह नहीं पता था कि उसने यह बात उनके अंडे खाने के छल से कही थी, इसलिए उन्होंने उसकी प्रशंसा की और दूसरा छंद गाया:

नि:संदेह एक धर्मी पक्षी, एक धन्य पक्षी।

वह एक पैर पर खड़े होकर पवित्र वचन का प्रचार करता है।
पक्षियों ने उस दुष्ट पर विश्वास करते हुए कहा, "हे प्रभु, आप केवल हवा पर ही निर्भर रहते हैं, और कुछ नहीं खाते। इसलिए, कृपया हमारे अंडों और बच्चों की रखवाली कीजिए।" इस प्रकार वे अपने भोजन स्थल पर चले गए। जब वे चले गए, तो उस पापी ने उनके अंडों और बच्चों को पेट भर खा लिया, और जब वे वापस आए, तो वह एक पैर पर खड़ा होकर शांत भाव से मुंह खोले रहा। जब पक्षी वापस आए, तो उन्होंने अपने बच्चों को न देखकर जोर से चिल्लाया, "इन्हें कौन खा रहा है?" लेकिन यह सोचकर कि "यह कौआ पवित्र है," उन्हें उस पर ज़रा भी संदेह नहीं हुआ। फिर एक दिन बोधिसत्व ने सोचा, "पहले तो यहाँ कुछ भी गलत नहीं था, यह सब तो इसके आने के बाद से ही शुरू हुआ है, इसकी परीक्षा लेना अच्छा रहेगा।" इसलिए, ऐसा दिखावा करते हुए कि वह अन्य पक्षियों के साथ भोजन करने जा रहा है, वह वापस मुड़ा और एक गुप्त स्थान पर खड़ा हो गया। पक्षियों के चले जाने से आश्वस्त होकर कौआ उठा और जाकर अंडों और बच्चों को खा गया, फिर वापस आकर एक पैर पर खड़ा होकर मुंह खोले रहा। जब पक्षी आए, तो उनके राजा ने उन सभी को इकट्ठा किया और कहा, "मैंने आज अपने बच्चों पर मंडरा रहे खतरे का जायजा लिया, और मैंने इस दुष्ट कौवे को उन्हें खाते हुए देखा, हम इसे पकड़ लेंगे": इसलिए पक्षियों को इकट्ठा करके और कौवे को घेरकर उसने कहा, "यदि वह भाग जाए, तो हम उसे पकड़ लेंगे," और शेष छंद बोले:

तुम उसके तौर-तरीकों को नहीं जानते, जब तुम इस पक्षी की प्रशंसा करते हो:
   तुमने मूर्खतापूर्ण बातें कीं:
वह कहेगा, "सद्गुण," और "सद्गुण," हाँ।
   लेकिन वह हमारे अंडे और बच्चों को खा जाता है।
जो बातें वह अपनी वाणी से प्रचारित करता है
   उनके सदस्य ऐसा कभी नहीं करते:
उसका सद्गुण एक खोखला शोर है।
   उसकी धार्मिकता झूठी है।
मन से वह पाखंडी है, लेकिन उसकी भाषा मनमोहक होती है।
   एक काला सांप अपने बिल की ओर रेंगता हुआ जा रहा है:
वह अपने बाहरी प्रतीक चिन्ह के माध्यम से धोखा देता है।
   ग्रामीण लोग अपनी सादगी में।
उसे चोंच और पंखों से मार गिराओ।
   उसे अपने पंजों से फाड़ डालो:
ऐसे नीच चेले का नाश हो।
   हमारे उद्देश्य के गद्दार।
ये कहते ही पक्षियों का सरदार स्वयं उछल पड़ा और उसने अपनी चोंच से कौवे के सिर पर प्रहार किया, और बाकी पक्षियों ने भी अपनी चोंच, पैरों और पंखों से उस पर प्रहार किया: इस प्रकार वह मर गया।

पाठ के अंत में, गुरु ने जन्म की पहचान बताई: "उस समय कौआ कपटी भाई (भिक्षु) था, पक्षियों का राजा मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **नंदियामिगा-जातक**
***स्रोत**: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-385-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 385
नंदीयमिगा-जातक

"क्या तुम राजा के उद्यान जाओगे?" इत्यादि—यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में एक भिक्षु के बारे में सुनाई, जो अपनी माता का भरण-पोषण करता था। उन्होंने भिक्षु से पूछा, "क्या सच में तुम गृहस्थों का भरण-पोषण करते हो?" "जी हाँ, गुरुजी।" "वे कौन हैं?" "मेरे

माताजी, गुरुजी।" "शाबाश, शाबाश, भिक्षु जी: तुम प्राचीन ज्ञानियों के नियम का पालन कर रहे हो, क्योंकि वे भी पशु रूप में जन्म लेकर अपने माता-पिता के लिए प्राण त्याग देते थे," और इस प्रकार उन्होंने एक पुरानी कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब कोसल राजा साकेत (अवध) में कोसलों पर शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व का जन्म हिरण के रूप में हुआ। बड़े होकर उनका नाम नंदीयमिगा रखा गया और वे अपने उत्तम स्वभाव और आचरण के कारण अपने माता-पिता का भरण-पोषण करते थे। कोसल राजा शिकार के प्रति बेहद उत्साही थे और प्रतिदिन अपने साथ बहुत से सेवकों को लेकर शिकार पर जाते थे, जिसके कारण उनकी प्रजा खेती-बाड़ी और व्यापार नहीं कर पाती थी। प्रजा ने आपस में विचार-विमर्श करते हुए कहा, "महाराज, हमारे इस राजा ने हमारे व्यापार को नष्ट कर दिया है, हमारा गृहस्थ जीवन बर्बाद हो रहा है; क्या हम अंजनावन उद्यान को घेर लें, उसमें द्वार लगा दें, एक तालाब खोदकर उसमें घास बो दें, फिर लाठियाँ और डंडे लेकर जंगल में जाएँ, झाड़ियों को पीटें और इस प्रकार हिरणों को भगाकर उन्हें गायों की तरह बाड़े में धकेल दें? फिर हम द्वार बंद कर देंगे, राजा को सूचना भेज देंगे और अपने व्यापार में लग जाएँगे।" "यही रास्ता है," उन्होंने कहा, और एकमत होकर उन्होंने पार्क तैयार किया, और फिर जंगल में प्रवेश करके दोनों ओर एक लीग (4.23 किमी) का क्षेत्र घेर लिया। उस समय नंदिया अपने माता-पिता को जंगल में ले जाकर जमीन पर लेटा हुआ था। हाथों में विभिन्न ढालें और हथियार लिए लोग घनी झाड़ियों को घेरे हुए थे; और कुछ लोग हिरण की तलाश में अंदर घुस गए। नंदिया ने उन्हें देखा और सोचा, "आज अपने माता-पिता के लिए प्राण त्याग देना ही अच्छा है," इसलिए उठकर अपने माता-पिता को प्रणाम करते हुए उसने कहा, "पिता और माता, अगर ये लोग इस घनी झाड़ियों में प्रवेश करेंगे तो हम तीनों को देख लेंगे; आप केवल एक ही तरीके से बच सकते हैं, और आपका जीवन ही सबसे अच्छा है: मैं आपको अपना प्राण त्याग कर दूंगा, घनी झाड़ियों के किनारे खड़ा होकर और जैसे ही वे अंदर घुसें, मैं निकल आऊंगा: तब वे सोचेंगे कि इस घनी झाड़ियों में केवल एक ही हिरण हो सकता है और इसलिए वे अंदर नहीं आएंगे: सावधान रहें": इस प्रकार उसने उनकी अनुमति प्राप्त की और दौड़ने के लिए तैयार हो गया। जैसे ही बाड़े के बाहरी किनारे पर खड़े लोग शोर मचाते हुए झाड़ियों को रौंदने लगे, नंदिया बाहर आ गया, और उन्होंने सोचा कि वहाँ केवल एक ही हिरण होगा, इसलिए वे अंदर नहीं गए। नंदिया अन्य हिरणों के बीच चला गया, और लोग उन्हें लेकर पार्क में चले गए; फिर फाटक बंद करके उन्होंने राजा को सूचना दी और अपने-अपने घरों को चले गए। उस समय से राजा हमेशा स्वयं जाकर एक हिरण का शिकार करते थे; फिर या तो उसे लेकर चले जाते थे, या उसे बुलवाकर मंगवा लेते थे। हिरणों ने अपनी बारी तय कर ली थी, और जिसकी बारी आती थी वह एक तरफ खड़ा हो जाता था: और गोली लगने पर वे उसे ले जाते थे। नंदिया ने तालाब से पानी पिया और घास खाई, लेकिन उसकी बारी अभी तक नहीं आई थी। फिर कई दिनों बाद उसके माता-पिता उसे देखने के लिए तरसते हुए सोचने लगे, "हमारा पुत्र नंदिया, हिरणों का राजा, हाथी के समान बलवान और पूर्ण रूप से स्वस्थ था: यदि वह जीवित है तो वह अवश्य बाड़ फांदकर हमसे मिलने आएगा; हम उसे संदेश भेजेंगे": इसलिए वे सड़क के किनारे खड़े हो गए और एक ब्राह्मण को देखकर उन्होंने मनुष्य की आवाज में पूछा, "महोदय, आप कहाँ जा रहे हैं?" "साकेत जा रहे हैं।"उन्होंने कहा; इस प्रकार अपने बेटे को संदेश भेजते हुए उन्होंने पहला छंद बोला:

हे ब्राह्मण, जब तुम अवध से होकर गुजरोगे तो क्या तुम राजा के उद्यान जाओगे?
हमारे प्यारे बेटे नंदिया को ढूंढो और उसे हमारा संदेश सही-सही बताओ।
"तुम्हारे माता-पिता उम्रदराज हो चुके हैं और वे तुम्हें देखकर बहुत खुश हैं।"
ब्राह्मण ने "ठीक है" कहकर बात मान ली और अगले दिन साकेत जाकर उद्यान में प्रवेश किया और पूछा, "नंदिया कौन है?" हिरण उसके पास आया और बोला, "मैं।" ब्राह्मण ने अपना संदेश दिया। नंदिया ने यह सुनकर कहा, "मैं जा सकता हूँ, ब्राह्मण; मैं बाड़ फांदकर जा सकता हूँ: लेकिन मुझे राजा से नियमित भोजन और पानी मिलता रहा है, और यह मेरे लिए एक ऋण के समान है: इसके अलावा, मैं इन हिरणों के बीच लंबे समय तक रहा हूँ, और इस राजा और उनके प्रति भलाई किए बिना या अपनी शक्ति दिखाए बिना जाना मेरे लिए उचित नहीं है: लेकिन जब मेरी बारी आएगी, तो मैं उनके प्रति भलाई करूँगा और खुशी से वापस आऊँगा": और इस प्रकार समझाते हुए उसने दो श्लोक कहे।

मैं राजा का ऋणी हूँ और उन्हें प्रतिदिन भोजन और पेय प्रदान करता हूँ:
जब तक मैं इसे अच्छे से नहीं बना लेता, मैं नहीं जा सकता।
मैं राजा के तीरों के सामने अपना पक्ष रखूंगा:
फिर मेरी माँ को देखो और न्यायोचित साबित हो जाओ।
यह सुनकर ब्राह्मण चला गया। उसके बाद जिस दिन राजा की बारी आई, वह अपने कई सेवकों के साथ उद्यान में आया। बोधिसत्व एक तरफ खड़े हो गए। राजा ने कहा, "मैं हिरण का शिकार करूँगा," और उन्होंने धनुष पर एक तेज बाण चढ़ाया। बोधिसत्व मृत्यु के भय से अन्य जानवरों की तरह भागे नहीं, बल्कि निर्भय होकर और अपने प्रेम को मार्गदर्शक बनाकर दृढ़ता से खड़े रहे, अपनी मजबूत पसलियों को दिखाते हुए। राजा अपने प्रेम के प्रभाव से बाण नहीं चला सके। बोधिसत्व ने कहा, "महाराज, आप बाण क्यों नहीं चला रहे? चलाइए!" "हिरणों के राजा, मैं नहीं चला सकता।" "तो हे महाराज, गुणी (*1) का पुण्य देखिए।" तब राजा बोधिसत्व से प्रसन्न होकर

अपना धनुष नीचे रख दिया और बोले, "लकड़ी का यह बेजान टुकड़ा आपका पुण्य जानता है: क्या मैं, जो समझदार और मनुष्य हूँ, इसे न जानूँ? मुझे क्षमा कीजिए; मैं आपको सुरक्षा देता हूँ।" "हे महाराज, आप मुझे सुरक्षा तो देते हैं, लेकिन उद्यान में हिरणों का यह झुंड क्या करेगा?" "मैं उन्हें भी सुरक्षा देता हूँ।" इस प्रकार बोधिसत्व ने उद्यान के सभी हिरणों, आकाश में उड़ने वाले पक्षियों और जल में रहने वाली मछलियों के लिए निग्रोध जन्म में वर्णित तरीके से सुरक्षा प्राप्त करने के बाद, राजा को पंच आज्ञाओं में स्थापित किया और कहा, "हे महाराज, किसी राजा के लिए यह अच्छा है कि वह कुकर्मों के मार्ग को त्यागकर, दस राजसी गुणों का उल्लंघन न करके और न्यायपूर्ण आचरण से राज्य पर शासन करे।"

भिक्षा, नैतिकता, दान, न्याय और पश्चाताप
शांति, नम्रता, दया, कोमलता, धैर्य:
मुझे ऐसा महसूस होता है कि ये गुण मेरी आत्मा में समा गए हैं,
वहीं से प्रेम और पूर्ण आंतरिक कल्याण की उत्पत्ति होती है।
इन शब्दों के साथ उन्होंने एक श्लोक के रूप में राजसी गुणों का प्रदर्शन किया, और राजा के साथ कुछ दिन रहने के बाद उन्होंने शहर में एक सोने का ढोल भेजा, जिसमें सभी प्राणियों को सुरक्षा का उपहार देने की घोषणा की गई थी: और फिर यह कहते हुए, "हे राजा, सावधान रहें," वे अपने माता-पिता से मिलने चले गए।

पुराने समय में अवध में हिरणों का एक राजा हुआ करता था,
नाम और स्वभाव से, नंदिया, रमणीय।
मुझे मारने के लिए राजा अपने हिरण-पारागाह में आया था।
उसका धनुष मुड़ा हुआ था, तीर कमान पर लगा हुआ था।
मैंने राजा के तीर के सामने अपनी कमर खुजला दी;
फिर मैंने अपनी माँ को देखा और मेरा निर्णय सही साबित हुआ।
ये छंद परिपूर्ण ज्ञान से प्रेरित थे।

अंत में, गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई:- सत्यों के अंत में, अपनी माता का सहारा देने वाले भाई (भिक्षु) प्रथम मार्ग (समाधि) में स्थापित हुए:- "उस समय पिता और माता राजपरिवार के सदस्य थे, ब्राह्मण सारिपुत्र थे, राजा आनंद थे, और मैं स्वयं हिरण था।"

फुटनोट:

(1)यहाँ गुणम पर एक शब्द-खेल है जिसका अर्थ है योग्यता या स्ट्रिंग।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **खरपुत्त-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-386-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 386
खरपुत्त-जातक

"बकरियां मूर्ख होती हैं," इत्यादि - गुरु ने जेतवन मठ में एक भिक्षु को उसकी पूर्व पत्नी के प्रलोभन में पड़ने की कहानी सुनाई। जब भिक्षु ने संसार के प्रति अपनी लालसा व्यक्त की, तो गुरु ने कहा, "भाई, यह स्त्री तुम्हें हानि पहुँचा रही है: पहले भी तुम इसके कारण अग्नि में गिरे थे और ऋषियों द्वारा मृत्यु से बचाए गए थे," इस प्रकार उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, बनारस में सेनाक नामक राजा का शासन था, और उनके बोधिसत्व इंद्र थे। सेनाक नाम के एक नाग राजा के मित्र थे। कहते हैं कि वह नाग राजा नागलोक छोड़कर भोजन की तलाश में पृथ्वी पर भटकने लगा। गाँव के लड़कों ने उसे देखकर कहा, "यह

तो साँप है," और उस पर पत्थर और अन्य वस्तुएँ फेंकने लगे। राजा अपने बगीचे में मनोरंजन कर रहे थे, तभी उन्होंने उन्हें देखा और जब उन्हें पता चला कि वे साँप को पीट रहे हैं, तो उन्होंने कहा, "इन्हें इसे पीटने मत दो, इन्हें भगा दो।" और ऐसा ही किया गया। इस प्रकार नाग राजा को जीवनदान मिला। जब वह नागलोक लौटा, तो वह अपने साथ बहुत से रत्न ले गया और आधी रात को राजा के शयनकक्ष में आकर उन्हें देते हुए कहा, "मैंने आपके कारण जीवनदान पाया।" इस प्रकार उसने राजा से मित्रता कर ली और बार-बार उनसे मिलने आने लगा। उसने अपनी एक नाग कन्या को, जो सुख-भोग में तृप्त नहीं होती थी, राजा के पास रहने और उसकी रक्षा करने का आदेश दिया। उसने राजा को एक मंत्र दिया और कहा, "यदि तुम उसे न देख पाओ, तो इस मंत्र को दोहराना।" एक दिन राजा नाग कन्या के साथ उद्यान में गया और कमल-तालाब में आनंद ले रहा था। नाग कन्या ने एक जल-सांप को देखकर अपना मानव रूप त्याग दिया और राजा के साथ प्रेम संबंध बनाया। राजा ने कन्या को न देखकर पूछा, "वह कहाँ चली गई?" और मंत्र दोहराया। तब उसने उसे दुराचार करते हुए देखा और उसे बांस के टुकड़े से मारा। वह क्रोधित होकर नागलोक चली गई, और जब उससे पूछा गया, "तुम क्यों आई हो?" तो उसने कहा, "आपके मित्र ने मेरी पीठ पर इसलिए मारा क्योंकि मैंने उसकी बात नहीं मानी," और उसने चोट का निशान दिखाया। नाग राजा सच्चाई से अनजान था, उसने चार नाग युवकों को बुलाया और उन्हें आदेश दिया कि वे सेनाक के शयनकक्ष में प्रवेश करें और अपनी नाक की साँस से उसे भूसे की तरह नष्ट कर दें। वे राजा के सोने के समय शयनकक्ष में प्रवेश कर गए। जब वे अंदर आए, तो राजा रानी से कह रहे थे: "हे देवी, क्या आप जानती हैं कि नाग कन्या कहाँ गई है?" "महाराज, मैं नहीं जानती।" "आज जब हम तालाब में स्नान कर रहे थे, तो उसने अपना रूप त्याग दिया और एक जल सर्प के साथ दुराचार किया। मैंने कहा, 'ऐसा मत करो,' और उसे सबक सिखाने के लिए बांस के टुकड़े से मारा। अब मुझे डर है कि वह नागलोक चली गई होगी और मेरे मित्र से झूठ बोलकर उसके मेरे प्रति सद्भाव को नष्ट कर दिया होगा।" यह सुनकर युवा नाग तुरंत नागलोक लौट गए और अपने राजा को सब कुछ बताया। राजा द्रवित हो गए और तुरंत राजा के कक्ष में गए, उन्हें सब कुछ बताया और उन्हें क्षमा कर दिया गया। फिर उन्होंने कहा, "इस तरह मैं प्रायश्चित करता हूँ," और राजा को सभी ध्वनियों का ज्ञान देने वाला एक मंत्र दिया: "हे महाराज, यह एक अनमोल मंत्र है: यदि आप किसी को यह मंत्र देंगे तो आप तुरंत अग्नि में प्रवेश करेंगे और मर जाएंगे।" राजा ने कहा, "यह ठीक है," और इसे स्वीकार कर लिया। उस समय से वह चींटियों की आवाज भी समझने लगे। एक दिन वह चबूतरे पर बैठकर शहद और गुड़ के साथ ठोस भोजन खा रहा था: तभी शहद की एक बूंद, गुड़ की एक बूंद और केक का एक टुकड़ा जमीन पर गिर गया। यह देखकर एक चींटी रोती हुई आई।"राजा का शहद का घड़ा चबूतरे पर टूट गया है, उनकी गुड़ और रोटी की गाड़ी उलट गई है; आओ और शहद, गुड़ और रोटी खाओ।" यह सुनकर राजा हँस पड़ा। रानी पास ही खड़ी थी और सोचने लगी, "राजा ने ऐसा क्या देख लिया है कि वह हँस रहा है?" जब राजा ने अपना भोजन कर लिया, स्नान कर लिया और पालथी मारकर बैठ गया, तो एक मक्खी ने उसकी पत्नी से कहा, "आओ, देवी, हम प्रेम का आनंद लें।" उसने कहा, "मुझे थोड़ी देर के लिए क्षमा करें, पतिदेव, वे जल्द ही राजा के लिए इत्र ला रहे होंगे; जब वह इत्र लगाएगा तो कुछ पाउडर उसके पैरों पर गिर जाएगा: मैं वहीं रहूँगी और सुगंधित हो जाऊँगी, फिर हम राजा की पीठ पर लेटकर आनंद लेंगे।" यह सुनकर राजा फिर हँस पड़ा। रानी फिर सोचने लगी, "उसने ऐसा क्या देख लिया है कि वह हँस रहा है?" फिर जब राजा अपना रात का भोजन कर रहा था, तो चावल का एक गट्ठा ज़मीन पर गिर गया। चींटियाँ चिल्लाईं, "राजा के महल में चावल की गाड़ी टूट गई है, और इसे खाने वाला कोई नहीं है।" यह सुनकर राजा फिर हँस पड़ा। रानी ने एक सोने का चम्मच लिया और राजा की मदद करते हुए सोचने लगी, "क्या राजा मुझे देखकर हंसते हैं?" वह राजा के साथ शयनकक्ष में गई और सोने के समय उसने पूछा, "हे राजा, आप क्यों हंसे?" राजा ने कहा, "मेरे हंसने से तुम्हारा क्या लेना-देना है?" लेकिन बार-बार पूछे जाने पर उसने उसे बता दिया। तब रानी ने कहा, "मुझे अपना ज्ञान का मंत्र दीजिए।" राजा ने कहा, "यह नहीं दिया जा सकता": लेकिन हालांकि रानी को यह मंत्र पसंद नहीं आया, फिर भी उसने उससे विनती की।

राजा ने कहा, "यदि मैं तुम्हें यह मंत्र दूँ, तो मैं मर जाऊँगा।" राजा ने कहा, "चाहे तुम मर ही जाओ, मुझे यह मंत्र दे दो।" स्त्रियों के वश में होने के कारण राजा ने कहा, "ठीक है," और मान गया। वह रथ पर सवार होकर उद्यान की ओर चल पड़ा और बोला, "मैं यह मंत्र देने के बाद अग्नि में प्रवेश करूँगा।" उसी क्षण, देवदूतों के राजा सक्का (इंद्र) ने पृथ्वी पर दृष्टि डाली और यह देखकर कहा, "यह मूर्ख राजा, यह जानते हुए भी कि वह स्त्रियों के वश में होकर अग्नि में प्रवेश करेगा, अपने मार्ग पर चल रहा है; मैं इसे जीवनदान दूँगा।" अतः उसने असुरों की पुत्री सूजा को अपने साथ लिया और बनारस चला गया। वह एक बकरा बना और सूजा से एक बकरा बनवाया। यह निश्चय करते हुए कि लोग उन्हें न देखें, वह राजा के रथ के सामने खड़ा हो गया। राजा और रथ में जुते हुए सिंधी गधों ने उसे देखा, परन्तु किसी और ने नहीं। मानो बातचीत शुरू करने के लिए वह मानो उस बकरे के साथ प्रेम कर रहा हो। रथ में जुते हुए सिंधी गधों में से एक ने उसे देखकर कहा, "मित्र बकरे, हमने पहले सुना तो है, पर देखा नहीं है, कि बकरे मूर्ख और निर्लज्ज होते हैं: लेकिन तुम हम सबके सामने वह काम कर रहे हो जो गुप्त और एकांत में किया जाना चाहिए, और तुम्हें शर्म नहीं है: जो हमने पहले सुना था वह इस दृश्य से मेल खाता है:" और इस प्रकार उसने पहला श्लोक कहा।

"बकरियां मूर्ख होती हैं," बुद्धिमान व्यक्ति कहता है, और ये शब्द निश्चित रूप से सत्य हैं:
इसे पता ही नहीं है कि वह वह काम कर रहा है जो उसे गुप्त रूप से करना चाहिए।
उसकी बात सुनकर बकरी ने दो पंक्तियाँ बोलीं:

ओह, गधे साहब, सोचो और अपनी मूर्खता को पहचानो।
तुम रस्सियों से बंधे हो, तुम्हारा जबड़ा मरोड़ा हुआ है, और तुम्हारी आंखें बहुत झुकी हुई हैं।
जब आप बंधे होते हैं, तो आप भाग नहीं सकते, महोदय, यह भी एक मूर्खतापूर्ण आदत है:
और जिस सेनाका को तुम अपने साथ लिए फिरते हो, वह तुमसे भी ज्यादा बेवकूफ है।
राजा दोनों जानवरों की बातें समझ गया और सुनकर उसने तुरंत रथ को भेज दिया। गधे ने बकरी की बातें सुनकर चौथा श्लोक बोला:

खैर, बकरियों के राजा महोदय, आप मेरी इस घोर मूर्खता को भलीभांति जानते हैं:
लेकिन सेनाका बेवकूफ कैसे है, कृपया मुझे समझाएं।
इस बात को समझाते हुए बकरी ने पाँचवाँ श्लोक बोला:

जो व्यक्ति अपनी पत्नी के लिए अपने सबसे अनमोल खजाने को भी त्याग देता है,
वह उसे हमेशा वफादार नहीं रख सकता और उसे अपने जीवन के साथ विश्वासघात करना ही होगा।
राजा ने उसकी बातें सुनकर कहा, "बकरियों के राजा, तुम निश्चय ही मेरे हित में कार्य करोगे: अब मुझे बताओ कि मेरे लिए क्या उचित है।" तब बकरी ने कहा, "राजा, सभी प्राणियों में स्वयं से बढ़कर कोई प्रिय नहीं होता: किसी प्रिय वस्तु के लिए स्वयं को नष्ट करना और अर्जित सम्मान को त्याग देना उचित नहीं है।" इस प्रकार उसने छठा श्लोक कहा:-

आप जैसे राजा के मन में भी ऐसी इच्छाएं उत्पन्न हो सकती थीं।
   और फिर भी, अगर इसकी कीमत उसकी जान हो तो वह इसे त्याग देगा:
जीवन ही सर्वोपरि है: मनुष्य इससे बढ़कर और क्या खोज सकता है?
   यदि जीवन सुरक्षित है, तो इच्छाओं को कभी भी बाधित होने की आवश्यकता नहीं होती है।
तब बोधिसत्व ने राजा को प्रोत्साहित किया। राजा प्रसन्न होकर बोला, "बकरियों के राजा, आप कहाँ से आए हैं?" "मैं सक्का (इंद्र) हूँ, हे राजा, आप पर दया करके आपको मृत्यु से बचाने आया हूँ।" "देवताओं के राजा, मैंने उसे ताबीज देने का वादा किया था: अब मैं क्या करूँ?" "तुम दोनों का विनाश करने की कोई आवश्यकता नहीं है: तुम कहो, 'यह जादू-टोने का तरीका है,' और उसे कुछ कोड़े लगवाओ: इस तरह वह ताबीज प्राप्त नहीं कर पाएगी।" राजा ने कहा, "ठीक है," और मान गया। राजा को सलाह देने के बाद बोधिसत्व सक्का (इंद्र) के स्वर्ग चले गए। राजा उद्यान में गए, रानी को बुलवाया और फिर बोला, "देवी, क्या आप ताबीज लेंगी?" "जी, महाराज।" "तो फिर सामान्य विधि का पालन करो।" "क्या विधि?" "पीठ पर सौ कोड़े, लेकिन तुम्हें कोई आवाज़ नहीं करनी है।" ताबीज के लालच में रानी मान गई। राजा ने अपने दासों को कोड़े देकर उसे दोनों तरफ से पिटवाया। उसने दो-तीन कोड़े सहे और फिर रोते हुए कहा, "मुझे ताबीज़ नहीं चाहिए।" राजा ने कहा, "ताबीज़ पाने के लिए तुम मुझे मार डालतीं," और इस तरह उसकी पीठ पर कोड़े मारकर उसे भगा दिया। उसके बाद वह इस घटना के बारे में फिर कभी बात नहीं कर सकी।

पाठ के अंत में गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के अंत में, भाई (भिक्षु) प्रथम पथ (समाधि) में स्थापित हो गए: "उस समय राजा असंतुष्ट भाई थे, रानी उनकी पूर्व पत्नी थीं, घोड़ा सारिपुत्र था, और सक्का (इंद्र) मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सूचि-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-387-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 387
सुचि-जातक

"जल्दी से पिरोया गया," इत्यादि-- यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए ज्ञान की पूर्णता के विषय में सुनाई थी। कथा का अवसर महाउम्मग्ग (*1) में दिया जाएगा। गुरु ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा, "यह पहली बार नहीं है जब तथागत (बुद्ध) बुद्धिमान और चतुराईपूर्ण उपायों में निपुण हैं," और इस प्रकार उन्होंने एक पुरानी कथा सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त राजा थे, तब बोधिसत्व का जन्म काशी राज्य में एक लोहार परिवार में हुआ था। बड़े होकर वे इस शिल्प में निपुण हो गए। उनके माता-पिता गरीब थे। उनके गाँव से कुछ ही दूरी पर एक हजार घरों का एक और लोहारों का गाँव था। उस हजार घरों के मुखिया लोहार राजा के प्रिय, धनी और संपन्न थे। उनकी पुत्री अत्यंत सुंदर थी, मानो स्वर्ग की अप्सरा हो, और उसमें एक सुंदर स्त्री के सभी शुभ लक्षण थे। आसपास के गाँवों से लोग तेज धार वाले औजार, कुल्हाड़ी, हल और चाबुक बनवाने आते थे और अक्सर उस लड़की को देखते थे। जब वे अपने गाँव लौटते थे, तो वे पुरुषों के बीच और अन्य जगहों पर उसकी सुंदरता की प्रशंसा करते थे। बोधिसत्व, उसके बारे में मात्र सुनकर ही आकर्षित हो गए और सोचने लगे, "मैं उसे अपनी पत्नी बनाऊंगा": अतः उन्होंने उत्तम प्रकार का लोहा लिया और एक नाजुक, मजबूत सुई बनाई जो पासे को छेद सकती थी और पानी पर तैरती थी: फिर उन्होंने उसी प्रकार का एक आवरण बनाया और उससे भी पासे को छेदा: और इसी प्रकार उन्होंने सात आवरण बनाए: उन्होंने उन्हें कैसे बनाया, यह बताना उचित नहीं है, क्योंकि ऐसा कार्य बोधिसत्वों के ज्ञान की महानता के कारण ही फलता-फूलता है। फिर उन्होंने सुई को एक नली में डाला और उसे एक डिब्बे में रखकर उस गाँव में गए और उस गली का पता पूछा जहाँ लोहार का घर था: फिर दरवाजे पर खड़े होकर उन्होंने कहा, "कौन मुझसे इस प्रकार की सुई पैसे देकर खरीदेगा?" सुई का वर्णन करते हुए, लोहार के घर के पास खड़े होकर उन्होंने पहला श्लोक कहा:-

तेजी से पिरोया जा सकने वाला, चिकना और सीधा,
  एमरी से पॉलिश किया हुआ।
नुकीला और नाजुक,
  सुइयां! कौन खरीदेगा?
इसके बाद उन्होंने फिर से इसकी प्रशंसा की और दूसरा श्लोक बोला:-

तेजी से पिरोया जा सकने वाला, मजबूत और सीधा,
  ठीक से गोल किया हुआ,
वे लोहे को भी भेद देंगे।
  सुइयां! कौन खरीदेगा?
उस समय वह लड़की अपने पिता को ताड़ के पत्ते से हवा कर रही थी, जो सुबह के भोजन के बाद थोड़ी सी खाँसी पर लेटे हुए थे ताकि उन्हें आराम मिल सके। बोधिसत्व की मधुर आवाज़ सुनकर, मानो उसे मांस का कोई ताजा टुकड़ा खाकर उल्टी आ गई हो और हज़ार घड़े पानी से उसका दर्द दूर हो गया हो, उसने कहा, "लोहारों के इस गाँव में इतनी मधुर आवाज़ में सुई कौन बेच रहा है? ये किसलिए आया है? मैं पता लगाऊँगी।" इस प्रकार उसने ताड़ का पंखा नीचे रखा और बाहर बरामदे में खड़े होकर उनसे बात की। बोधिसत्वों का उद्देश्य अवश्य पूरा होता है: वे उसी के लिए उस गाँव में आए थे। उसने उससे कहा, "हे युवक, राज्य भर के लोग सुई और इसी तरह की चीजें खरीदने के लिए इस गाँव में आते हैं; लोहारों के गाँव में सुई बेचना कुकर्म है; चाहे तुम दिन भर अपनी सुई की प्रशंसा करते रहो, कोई भी उसे तुमसे नहीं लेगा; यदि तुम कीमत पाना चाहते हो, तो किसी दूसरे गाँव में जाओ।" इस प्रकार उसने दो पंक्तियाँ कहीं:-

हमारे हुक ऊपर और नीचे दोनों तरफ से बेचे जाते हैं।
  पुरुष हमारी सुइयों को अच्छी तरह जानते हैं:
हम सभी इस अच्छे शहर में लोहार हैं:
  सुइयां! कौन बेच सकता है?
लोहे के काम में हमारी ख्याति है।
  हथियारों के क्षेत्र में हम उत्कृष्ट हैं:
हम सभी इस अच्छे शहर में लोहार हैं:
  सुइयां! कौन बेच सकता है?
बोधिसत्व ने उनकी बातें सुनकर कहा, "हे देवी, आप यह सब अज्ञानता और अज्ञानता में कह रही हैं" और फिर उन्होंने दो श्लोक कहे:-

हालांकि इस अच्छे शहर में सभी लोहार हैं,
  लेकिन कौशल हमेशा बिकता नहीं है;
क्योंकि इस कला में माहिर लोग मालिक होंगे
  एक उत्कृष्ट लेख।
मैडम, अगर एक बार आपके पिता को पता चल गया
  यह सुई मैंने बनाई है;
वह मुझे तुम्हारा हाथ दे देगा
  और उसकी सारी संपत्ति।

उनकी सारी बातें सुनकर लोहार ने अपनी बेटी को बुलाया और पूछा, "तुम किससे बात कर रही हो?" "पिताजी, एक सुई बेचने वाले से।" "तो उसे यहाँ बुलाओ।" वह गई और उसे बुला लाई। बोधिसत्व ने लोहार को प्रणाम किया और पास खड़े हो गए। लोहार ने पूछा, "आप किस गाँव के हैं?" "मैं फलाँ गाँव का हूँ और फलाँ लोहार का पुत्र हूँ।" "आप यहाँ क्यों आए हैं?" "सुइयाँ बेचने।" "आइए, हमें आपकी सुई दिखाएँ।" बोधिसत्व, उन सबके बीच अपने गुणों का बखान करने की इच्छा से बोले, "क्या सबके बीच देखी गई वस्तु, अकेले देखी गई वस्तु से बेहतर नहीं है?" "बिल्कुल सही, मित्र।" इसलिए उन्होंने सभी लोहारों को इकट्ठा किया और उनके बीच में कहा, "महोदय, सुई लीजिए।" "गुरुजी, एक निहाई और पानी से भरा एक पीतल का बर्तन मंगवाइए।" ऐसा ही किया गया। बोधिसत्व ने सुई को आवरण से निकाला और उन्हें दे दिया। उसे लेकर मुख्य लोहार ने पूछा, "क्या यह सुई है?" "नहीं, यह सुई नहीं है, यह म्यान है।" जाँच करने पर उसे न तो सिरा दिखाई दिया और न ही नोक। बोधिसत्व ने उनसे सुई लेकर अपने नाखून से म्यान हटा दिया और लोगों को दिखाते हुए कहा, "यह सुई है, यह म्यान है।" उन्होंने सुई गुरु के हाथ में और म्यान उनके चरणों में रख दी। जब गुरु ने फिर कहा, "मुझे लगता है यह सुई है," तो उन्होंने उत्तर दिया, "यह भी सुई का म्यान है।" फिर उन्होंने इसे अपने नाखून से तोड़ दिया और इस प्रकार छह म्यान एक के बाद एक मुख्य लोहार के चरणों में रख दिए और यह कहते हुए, "यह रही सुई," उसे उनके हाथ में रख दिया। हज़ार लोहार प्रसन्नता से अपनी उंगलियां चटकाने लगे और कपड़े लहराने लगे; तब मुख्य लोहार ने पूछा, "मित्र, इस सुई की शक्ति क्या है?" "गुरुजी, किसी बलवान व्यक्ति से इस निहाई को उठवाइए और निहाई के नीचे एक जलपात्र रखवाइए; फिर सुई को सीधे निहाई में ठोकिए।" उन्होंने ऐसा ही करवाया और सुई की नोक को निहाई में ठोक दिया। निहाई को भेदती हुई सुई पानी की सतह पर पड़ी रही, जरा भी ऊपर-नीचे नहीं हिली। सभी लोहारों ने कहा, "हमने इतने समय तक कभी किसी से यह भी नहीं सुना कि ऐसे लोहार भी होते हैं।" यह सुनकर उन्होंने उंगलियां चटकाईं और हजार कपड़े लहराए। मुख्य लोहार ने अपनी बेटी को बुलाया और सभा के बीच में यह कहते हुए, "यह लड़की तुम्हारे लिए उपयुक्त है," उसने उन पर जल डाला और उसे विदा कर दिया। बाद में जब मुख्य लोहार की मृत्यु हो गई, तो बोधिसत्व उस गांव में मुख्य लोहार बन गए।

पाठ के बाद, गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: "लोहार की बेटी राहुल की माता (बुद्ध की पत्नी) थी, और वह चतुर युवक लोहार मैं ही था।"

फुटनोट:

(1)सं. 546, खंड VI.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **तुण्डिला-जातक**
***स्रोत**: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-388-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 388
टुंडिला-जातक

"आज कुछ अजीब हुआ," इत्यादि। गुरुजी ने जेतवन मठ में रहते हुए एक भिक्षु के बारे में यह कहानी सुनाई, जिसे मृत्यु का भय था। उसका जन्म श्रावस्ती नगर में एक अच्छे परिवार में हुआ था और उसने धर्म में दीक्षा ली थी। परन्तु उसे मृत्यु का भय था और जब वह किसी शाखा के हिलने, किसी टहनी के गिरने, किसी पक्षी या जानवर की आवाज़, या ऐसी ही किसी भी चीज़ की हल्की सी भी ध्वनि सुनता, तो मृत्यु के भय से भयभीत हो जाता और पेट में चोट लगे खरगोश की तरह कांपते हुए भाग जाता। सत्य के हॉल में भिक्षुओं ने चर्चा शुरू की, "महोदय, लोग कहते हैं कि एक भिक्षु मृत्यु के भय से हल्की सी भी आवाज़ सुनकर कांपते हुए भाग जाता है: अब इस संसार में प्राणियों के लिए मृत्यु निश्चित है, जीवन अनिश्चित, तो क्या हमें इस बात को बुद्धिमानी से ध्यान में नहीं रखना चाहिए?" गुरुजी ने पाया कि यही उनका विषय था और भिक्षु ने स्वीकार किया कि उसे मृत्यु का भय है: इसलिए उन्होंने कहा, "भाइयों, उसे मृत्यु का भय पहली बार नहीं है," और इस प्रकार उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब एक जंगली सूअरनी ने बोधिसत्व को गर्भ धारण कराया। समय आने पर उसने दो नर बच्चों को जन्म दिया। एक दिन उसने उन्हें लेकर एक गड्ढे में लेट गई। बनारस के द्वार पर स्थित एक गाँव की एक बूढ़ी औरत कपास के खेत से कपास से भरी टोकरी लेकर घर आ रही थी और अपनी छड़ी से ज़मीन पर थपथपा रही थी। सूअरनी ने यह आवाज़ सुनी और मृत्यु के भय से अपने बच्चों को छोड़कर भाग गई। बूढ़ी औरत ने उन छोटे सूअरों को देखा और उन्हें अपने बच्चों की तरह मानते हुए टोकरी में रख लिया और घर ले आई। फिर उसने बड़े भिक्षु महातुंडिला (बड़े थूथन वाले) और छोटे भिक्षु कुल्लतुंडिला (छोटे थूथन वाले) को बुलाया और उनका बच्चों की तरह पालन-पोषण किया। समय के साथ वे बड़े हो गए और मोटे-ताज़े हो गए। जब बूढ़ी औरत से उन्हें पैसे के लिए बेचने को कहा गया, तो उसने उत्तर दिया, "ये मेरे बच्चे हैं," और उन्हें बेचने से इनकार कर दिया। एक त्यौहार के दिन कुछ बदचलन लोग शराब पी रहे थे और जब उनका खाना खत्म हो गया तो वे सोचने लगे कि उन्हें मांस कहाँ से मिलेगा। उन्हें पता चला कि एक बुढ़िया के घर में सूअर हैं, तो उन्होंने पैसे लिए और वहाँ जाकर कहा, "माँ, ये पैसे ले लो और हमें इनमें से एक सूअर दे दो।" बुढ़िया ने कहा, "बस करो, नौजवानों: क्या कोई ऐसा इंसान है जो अपने बच्चों को मांस खाने के लिए बेच दे?" और उसने मना कर दिया। उन लोगों ने कहा, "माँ, सूअर इंसानों के बच्चे नहीं हो सकते, इन्हें हमें दे दो": लेकिन बार-बार माँगने पर भी उन्हें यह नहीं मिला। फिर उन्होंने बुढ़िया को शराब पिलाई और जब वह नशे में थी, तो उसने कहा, "माँ, तुम इन सूअरों का क्या करोगी? पैसे ले लो और खर्च कर दो।" उन्होंने उसके हाथ में सिक्के रख दिए। बुढ़िया ने सिक्के लेते हुए कहा, "मैं तुम्हें महातुंडिला नहीं दे सकती, चुल्लातुंडिला ले लो।" "वह कहाँ है?" "वह उस झाड़ी में है।" "उसे बुलाओ।" "मुझे उसके लिए कोई खाना नहीं दिख रहा है।" उन लोगों ने पैसे देकर चावल का एक बर्तन मंगवाया। बुढ़िया ने उसे लिया और दरवाजे पर रखे सूअर के चारे को भरकर उसके पास खड़ी हो गई। तीस लोग हाथों में फंदे लिए खड़े थे। बुढ़िया ने उसे पुकारा, "आओ, नन्हे कुल्लातुंडिला, आओ।" यह सुनकर महातुंडिला ने सोचा, "इतने समय से माँ ने कुल्लातुंडिला को कभी नहीं बुलाया, वह हमेशा मुझे पहले बुलाती है; ज़रूर आज हम पर कोई खतरा मंडरा रहा है।" उसने अपने छोटे भाई से कहा, "भाई, माँ तुम्हें बुला रही है, जाओ जाकर पता करो।" वह बाहर गया और उन्हें चारे के बर्तन के पास खड़ा देखकर उसने सोचा, "आज तो मौत आ गई है," और मृत्यु के भय से वह कांपते हुए अपने भाई की ओर मुड़ा; और जब वह वापस आया तो वह खुद को संभाल नहीं पाया और कांपते हुए इधर-उधर भागने लगा। महातुंडिला ने उसे देखकर कहा, "भाई, तुम आज कांप रहे हो, लड़खड़ा रहे हो और दरवाजे को देख रहे हो: ऐसा क्यों कर रहे हो?" उसने जो कुछ देखा था, उसका वर्णन करते हुए पहला श्लोक कहा:-

मुझे डर है कि आज कुछ अजीब होने वाला है:
  कुंड भरा हुआ है, और मालकिन भी पास में है;
कुछ पुरुष हाथों में फांसी का फंदा लिए पास में खड़े हैं:
  खाना खाना भी एक खतरे की तरह लग रहा है।

तब बोधिसत्व ने उनकी बात सुनकर कहा, "भाई चुल्लातुंडिला, मेरी माता ने इतने समय तक जिस उद्देश्य से सूअर पाले हैं, वह आज पूरा हो गया है: शोक मत करो," और फिर मधुर स्वर और बुद्ध के सहज ज्ञान से उन्होंने धर्ममार्ग समझाया और दो श्लोक कहे:-

तुम डरते हो, मदद की तलाश करते हो, और कांपते हो।
  लेकिन, असहाय होकर आप कहां भाग सकते हैं?
हम अपने शरीर को मोटा करने के लिए ही मोटे होते हैं:
  टुंडिला, खाओ और खुशी-खुशी खाओ।
निर्भीक होकर क्रिस्टल पूल में डुबकी लगाओ,
  पसीने के सारे दाग धो डालें:
आपको हमारा मरहम बहुत पसंद आएगा।
  जिसकी सुगंध कभी क्षीण नहीं होती।

दस सिद्धियों पर विचार करते हुए, प्रेम की सिद्धि को अपना मार्गदर्शक मानकर, जब उन्होंने पहली पंक्ति बोली, तो उनकी वाणी बारह मील (4.23 किमी) दूर बनारस तक पहुँच गई। इसे सुनते ही बनारस के सभी लोग, राजाओं और वायसराय से लेकर नीचे तक, आ गए, और जो नहीं आए वे अपने घरों में खड़े होकर सुनने लगे। राजा के आदमियों ने झाड़ियों को हटाकर ज़मीन समतल की और रेत बिखेरी। व्यभिचारी लोगों का नशा उतर गया, और वे अपने बंधनों को त्यागकर धर्मपरायण मार्ग को सुनने के लिए खड़े हो गए; और उस बूढ़ी औरत का नशा भी उतर गया। बोधिसत्व ने वहाँ मौजूद लोगों में से कुल्लतुंडिला को धर्मपरायण मार्ग का उपदेश देना शुरू किया।

कुल्लतुंडिला ने उसकी बात सुनकर सोचा, "मेरा भाई मुझसे ऐसा कहता है, लेकिन यह तो हमारी प्रथा ही नहीं है कि हम तालाब में डुबकी लगाएं और स्नान करके पसीना धोकर शरीर से पुराने दाग हटाकर नया मरहम लगाएं; मेरा भाई मुझसे ऐसा क्यों कहता है?" इस प्रकार उसने चौथा श्लोक बोला:-

लेकिन वह सुंदर क्रिस्टल पूल आखिर है क्या?

   और पसीने के ये दाग क्या हैं, मैं पूछता हूँ?
और वह मरहम कितना अद्भुत है!
   जिसकी सुगंध कभी क्षीण नहीं होती?
यह सुनकर बोधिसत्व ने कहा, "तो ध्यानपूर्वक सुनो," और बुद्ध की सहजता से धर्ममार्ग समझाते हुए उन्होंने ये श्लोक कहे:-

सही मार्ग निर्मल क्रिस्टल के समान है।
   कहते हैं, पाप पसीने का दाग है।
सद्गुण ही अद्भुत औषधि है।
   जिसकी सुगंध कभी क्षीण नहीं होगी।
जो लोग अपनी जान गंवाते हैं, वे खुश होते हैं।
   जो पुरुष इसे छिपा कर रखते हैं उन्हें झुंझलाहट महसूस होती है:
पुरुषों को मरना चाहिए और दुखी नहीं होना चाहिए।
   जैसे महीने के मध्य में त्योहार की खुशी का माहौल होता है।
तब उस महान सत्ता ने मधुर स्वर में, बुद्ध के आकर्षण से, धर्म मार्ग का उपदेश दिया। हजारों लोगों ने उंगलियां चटकाकर और अपने वस्त्र लहराकर उनका उत्साहवर्धन किया, और पूरा वातावरण "अच्छा, अच्छा" की ध्वनि से गूंज उठा। बनारस के राजा ने बोधिसत्व को राजसी पद से सम्मानित किया, और उस वृद्धावृष्टि को महिमा देते हुए, दोनों सूअरों को सुगंधित जल से नहलाया, वस्त्र पहनाए, गले में गहने पहनाए, और उन्हें नगर में अपने पुत्रों के समान स्थान दिया। उन्होंने बड़ी संख्या में सेवकों के साथ उनकी रक्षा की। बोधिसत्व ने राजा को पांच आज्ञाएं दीं, और बनारस एवं काशी के सभी निवासियों ने उनका पालन किया। बोधिसत्व ने पवित्र दिनों (अमावस्या और पूर्णिमा) पर उन्हें धर्म मार्ग का उपदेश दिया, और न्यायपीठ पर बैठकर मामलों का निर्णय किया। उनके जीवनकाल में कोई भी अन्यायपूर्ण मुकदमा लेकर नहीं आया। बाद में राजा का निधन हो गया। बोधिसत्व ने अपने शरीर का अंतिम संस्कार किया; फिर उन्होंने न्याय-पत्र लिखवाया और कहा, "इस पुस्तक का पालन करके तुम मुकदमों का निपटारा करोगे।" इस प्रकार, लोगों को धर्म का मार्ग समझाकर और उत्साहपूर्वक उपदेश देकर, वे कुल्लतुंडिला के साथ वन में चले गए, जबकि वे सब रोते-शोक मनाते रहे। फिर बोधिसत्व का उपदेश साठ हजार वर्षों तक चलता रहा।

पाठ के बाद, गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के अंत में, मृत्यु से भयभीत भाई (भिक्षु) प्रथम मार्ग (समाधि) की सिद्धि में स्थापित हो गया: "उन दिनों राजा आनंद थे, कुल्लतुंडिला मृत्यु से भयभीत भाई थे, और लॉट में मंडली थी, और महातुंडिला स्वयं थे।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सुवनक्ककक्कट-जातक**
***स्रोत**: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-389-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 389
सुवन्नकक्कटा-जातक

"स्वर्ण-पंजे वाला प्राणी," इत्यादि—गुरु ने बाँस के वन में रहते हुए यह कथा सुनाई थी कि आनंद ने उनके लिए अपनी जान दे दी थी। इस घटना का वर्णन खंडाहल (*1) जन्म में धनुर्धारियों की नियुक्ति के संबंध में और चुल्लहंस (*2) जन्म में हाथी धनपाल (*3) की गर्जना के संबंध में मिलता है। तब उन्होंने सत्य के हॉल में चर्चा शुरू की: "महोदय, क्या धर्ममार्ग के कोषाध्यक्ष, परम भिक्षु आनंद, जिन्होंने अनुशासन में रहते हुए भी सभी ज्ञान प्राप्त कर लिए थे, ने धनपाल के आने पर पूर्ण बुद्ध के लिए अपने प्राण त्याग दिए थे?" गुरु आए और उन्हें उनकी चर्चा का विषय बताया गया: उन्होंने कहा, "भाई (भिक्षु), पुराने समय में भी आनंद ने मेरे लिए अपने प्राण त्याग दिए थे:" और इस प्रकार उन्होंने एक पुरानी कथा सुनाई।

राजगृह नगर के पूर्व दिशा में सालिंदिया नाम का एक ब्राह्मण गाँव था। बोधिसत्व का जन्म उसी गाँव में एक ब्राह्मण किसान परिवार में हुआ था। बड़े होकर वे गाँव के उत्तर-पूर्व में स्थित मगध जिले में एक हजार करिस (*4) के खेत में खेती करने लगे। एक दिन वे अपने आदमियों के साथ खेत में गए और उन्हें हल चलाने का आदेश देकर खेत के अंत में स्थित एक बड़े तालाब में अपना चेहरा धोने गए। उस तालाब में सुनहरे रंग का एक सुंदर और आकर्षक केकड़ा रहता था। बोधिसत्व ने अपनी दाँत चबाकर तालाब में डुबकी लगाई। जब वे अपना मुँह धो रहे थे, तो केकड़ा पास आ गया। तब उन्होंने केकड़े को उठाकर अपने वस्त्र में रख लिया और खेत का काम पूरा करके उसे वापस तालाब में डाल दिया और घर चले गए। उस समय से वे खेत में जाते समय हमेशा पहले उस तालाब में जाते, केकड़े को अपने वस्त्र में रखते और फिर अपना काम करते। इस प्रकार उन दोनों के बीच अटूट विश्वास का भाव उत्पन्न हुआ। बोधिसत्व लगातार खेत में आते थे। उनकी आँखों में पाँचों गुण और तीन अत्यंत शुद्ध वृत्त दिखाई देते थे। खेत के उस कोने में ताड़ के पेड़ पर बने घोंसले में बैठी एक कौवे ने उनकी आँखें देखीं और उन्हें खाने की इच्छा से कौवे से बोली, "पतिदेव, मेरी एक इच्छा है।" "किसकी इच्छा है?" "मैं एक ब्राह्मण की आँखें खाना चाहती हूँ।" "तुम्हारी इच्छा बुरी है: तुम्हारे लिए कौन लाएगा!" "मुझे पता है कि तुम नहीं ला सकते: लेकिन हमारे पेड़ के पास चींटियों के टीले में एक काला साँप रहता है: उसकी प्रतीक्षा करो: वह ब्राह्मण को काट कर मार डालेगा, फिर तुम उसकी आँखें निकालकर मेरे पास ले आना।" बोधिसत्व मान गए और उसके बाद काले साँप की प्रतीक्षा करने लगे। जब बोधिसत्व द्वारा बोया गया बीज अंकुरित हो रहा था, तब तक केकड़ा बहुत बड़ा हो चुका था। एक दिन साँप ने कौवे से कहा, "मित्र, तुम हमेशा मेरी प्रतीक्षा करते हो: मैं तुम्हारे लिए क्या करूँ?" “हे प्रभु, आपकी दासी इस खेत के स्वामी की आँखों के लिए तरस रही है: मैं आपकी कृपा से उनकी आँखें पाने की आशा में आपकी सेवा कर रही हूँ।” साँप ने कहा, “अच्छा, यह मुश्किल नहीं है, तुम्हें मिल जाएँगी,” और इस प्रकार उसे प्रोत्साहित किया। अगले दिन साँप खेत की सीमा पर घास में छिपकर ब्राह्मण के आने की प्रतीक्षा कर रहा था। बोधिसत्व जब तालाब में प्रवेश करके अपना मुँह धो रहे थे, तो उन्हें केकड़े के प्रति स्नेह का अनुभव हुआ। उन्होंने उसे गले लगाया और अपने वस्त्र में लपेटकर खेत की ओर चल दिए। साँप ने उन्हें आते देखा और तेज़ी से आगे बढ़कर उनके बछड़े पर काट लिया और उन्हें वहीं गिराकर अपनी चींटी की बस्ती में भाग गया। बोधिसत्व का गिरना, वस्त्र से सुनहरे केकड़े का उछलना और कौए का बोधिसत्व की छाती पर बैठना एक के बाद एक घटित हुए। कौए ने अपनी चोंच बोधिसत्व की आँखों में डाल दी। केकड़े ने सोचा, "इसी कौवे की वजह से मेरे दोस्त पर खतरा आया है: अगर मैं इसे पकड़ लूँगा तो साँप आ जाएगा।""तो कौवे की गर्दन को अपने पंजे से कसकर जकड़े हुए, मानो किसी शिकंजे में, वह थक गया और फिर उसे थोड़ा ढीला कर दिया। कौवे ने साँप को पुकारा, "मित्र, तुम मुझे छोड़कर क्यों भाग रहे हो? यह केकड़ा मुझे परेशान कर रहा है, मेरे मरने से पहले आ जाओ," और इस प्रकार पहला श्लोक बोला गया:--

उभरी हुई आँखों वाला सुनहरे पंजों वाला प्राणी,
झील में पला-बढ़ा, बाल रहित, हड्डीदार खोल से ढका हुआ,
उसने मुझे पकड़ लिया है: मेरी पीड़ा से भरी चीखें सुनो!
आप ऐसे साथी को क्यों छोड़ देते हैं जो आपसे बहुत प्यार करता है?
उसकी बात सुनकर सांप ने अपना फन बड़ा किया और कौवे को सांत्वना देने के लिए उसके पास आया।

गुरु ने अपनी पूर्ण बुद्धि से मामले की व्याख्या करते हुए दूसरा श्लोक कहा--

सांप तेजी से केकड़े पर झपटा, वह अपने दोस्त को नहीं छोड़ना चाहता था।
अपना विशाल फन उठाकर वह आगे बढ़ा: लेकिन केकड़े ने सांप पर हमला कर दिया।
थककर केकड़े ने उसे थोड़ा खोल दिया। साँप ने सोचा, "केकड़े न तो कौवों का मांस खाते हैं और न ही साँपों का, तो फिर यह हमें क्यों पकड़ रहा है?" यह सोचकर उसने तीसरा श्लोक बोला:-

यह भोजन के लिए नहीं है
   केकड़े सांप या कौवे को पकड़ लेते थे:
मुझे बताओ, तुम जिनकी आंखें उभरी हुई हैं,
   तुम हमें इस तरह क्यों पकड़ते और जकड़ते हो?
उसकी बात सुनकर, केकड़े ने कारण बताते हुए दो छंद बोले:-

इस आदमी ने मुझे पूल से बाहर निकाला।
   उन्होंने जो दयालुता दिखाई है, वह महान है;
यदि उसकी मृत्यु हो जाती है, तो मेरा शोक चरम पर होगा:
   सर्प, वह और मैं एक ही हैं।
मुझे इतना बड़ा होते देखकर
   सभी स्वेच्छा से मुझे मार डालेंगे:

मोटा, मीठा और नाजुक,
   कौवों को देखते ही मैं उन्हें घायल कर देता था!
उसकी बात सुनकर सांप ने सोचा: "किसी भी तरह मुझे उसे धोखा देना होगा और खुद को और कौवे को मुक्त करना होगा।" इसलिए उसे धोखा देने के लिए उसने छठा श्लोक बोला:-

यदि आपने हमें केवल उसके कारण ही पकड़ा है,
   मैं उससे जहर ले लूंगा: उसे उठने दो:
जल्दी करो! कौवे और मुझसे अपने चिमटे छीन लो;
   तब तक जहर शरीर में गहराई तक उतर चुका होता है और उसकी मृत्यु हो जाती है।
उसकी बात सुनकर केकड़े ने सोचा, "यह किसी तरह मुझे इन दोनों को छोड़ने पर मजबूर करके भाग जाना चाहता है; इसे मेरी चालाकी का पता नहीं है; अब मैं अपना पंजा ढीला कर दूंगा ताकि सांप हिल सके, लेकिन मैं कौवे को नहीं छोड़ूंगा," इस प्रकार उसने सातवां श्लोक बोला:-

मैं सांप को तो छोड़ दूंगा, लेकिन कौवे को नहीं;
   कौआ बंधक बनकर बंधा रहेगा:
मैं उसे कभी जाने नहीं दूँगा
   जब तक मेरा दोस्त सुरक्षित और स्वस्थ है।
ऐसा कहकर उन्होंने अपना पंजा ढीला कर दिया ताकि सांप आराम से जा सके। सांप विष ले गया और बोधिसत्व के शरीर को विषमुक्त कर दिया। वे उठ खड़े हुए और अपने स्वाभाविक रंग में आ गए। केकड़े ने सोचा, "अगर ये दोनों ठीक रहे तो मेरे मित्र का कोई कल्याण नहीं होगा, मैं इन्हें मार डालूंगा," और अपने पंजों से दोनों के सिर कमल की कलियों की तरह कुचल दिए और उनकी जान ले ली। मादा कौआ वहां से भाग गई। बोधिसत्व ने एक डंडे से सांप के शरीर में छेद किया और उसे एक झाड़ी पर फेंक दिया, सुनहरे केकड़े को तालाब में छोड़ दिया, स्नान किया और फिर सालिंदिया चले गए। उस समय से उनके और केकड़े के बीच और भी गहरी मित्रता स्थापित हो गई।

पाठ समाप्त हुआ, गुरु ने सत्यों की व्याख्या की, और जन्म की पहचान बताते हुए अंतिम श्लोक बोला:

"मारा, काले रंग का सर्प था, देवदत्त कौवा था।"
बहुत समय पहले, आनंद केकड़े थे और मैं ब्राह्मण था।
सत्यों के अंत में कई लोग प्रथम मार्ग (सम्मोहन) और अन्य मार्गों तक पहुँचे। मादा कौआ चिंचमनविका थी, हालाँकि इसका उल्लेख अंतिम श्लोक में नहीं है।

फुटनोट:

(1) संख्या 542

(2) संख्या 533

(3) खंड 1, संख्या 21 की परिचयात्मक कहानी देखें; मिलिंदपन्हो

(4)लगभग आठ हजार एकड़।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **मायाक-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----II-390-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 390

मयहाका-जातक

“क्या हमने आनंद मनाया,” इत्यादि—गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक अजनबी व्यापारी के बारे में यह कहानी सुनाई। श्रावस्ती नगर में एक धनी और समृद्ध अजनबी व्यापारी रहता था। वह न तो स्वयं अपने धन का आनंद लेता था और न ही दूसरों को देता था। अगर उसे उत्तम स्वाद का भोजन परोसा जाता, तो वह उसे नहीं खाता था, केवल खट्टी दलिया के साथ चावल के चूरे का शोरबा खाता था। अगर उसे अगरमधु से सुगंधित रेशमी वस्त्र लाए जाते, तो वह उन्हें उतारवा देता और चीनी के बदले मोटे कपड़े पहनता था। अगर उसे रत्नों और सोने से सजा हुआ और उत्तम नस्ल के घोड़ों द्वारा खींचा जाने वाला रथ लाया जाता, तो वह उसे वापस ले लेता और पत्तों की छतरी वाले एक जर्जर पुराने रथ में चला जाता था। उसने जीवन भर दान या अन्य पुण्य कर्मों का कोई उपयोग नहीं किया और जब उसकी मृत्यु हुई, तो उसका जन्म रोरुवा नरक में हुआ। उसकी संपत्ति का कोई उत्तराधिकारी नहीं था, और राजा के आदमियों ने सात दिन और सात रातों में उसे महल में पहुँचाया। जब संपत्ति महल में पहुँच गई, तो राजा नाश्ते के बाद जेतवन मठ गया और गुरु को प्रणाम किया। जब उनसे पूछा गया कि वे नियमित रूप से बुद्ध की सेवा क्यों नहीं करते, तो उन्होंने उत्तर दिया, “हे प्रभु, श्रावस्ती नगर में एक अजनबी व्यापारी की मृत्यु हो गई है। सात दिन तक हम उसका सारा धन, जिसका कोई उत्तराधिकारी नहीं था, मेरे घर लाए। परन्तु इतना धन होने के बावजूद उसने न तो स्वयं उसका आनंद लिया और न ही दूसरों को दिया। उसका धन राक्षसों द्वारा संरक्षित कमल-तालाबों के समान था। एक दिन उत्तम मांस और ऐसी ही अन्य चीजों का स्वाद लेने से इनकार करने पर उसकी मृत्यु हो गई। अब उस स्वार्थी और अयोग्य व्यक्ति ने इतना धन कैसे प्राप्त किया और उसने उसका आनंद क्यों नहीं लिया?” यही प्रश्न उन्होंने गुरु से पूछा। “हे महाराज, उसने धन प्राप्त किया और फिर भी उसका आनंद क्यों नहीं लिया, इसका कारण यह है,” और उनके अनुरोध पर गुरु ने उन्हें पुराने समय की एक कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त राजा थे, तब वहाँ एक स्वार्थी और अविश्वासी व्यापारी रहता था। वह किसी को कुछ नहीं देता था, न ही किसी की मदद करता था। एक दिन राजा से मिलने जाते समय उसने तगरसिखी नाम के एक पच्चेकबुद्ध को भिक्षा मांगते देखा। उसने राजा को प्रणाम करते हुए पूछा, "महोदय, क्या आपके पास भिक्षा है?" पच्चेकबुद्ध ने कहा, "क्या मैं भिक्षा नहीं मांग रहा हूँ, व्यापारी?" व्यापारी ने अपने आदमी को आदेश दिया, "जाओ, इसे मेरे घर ले आओ, इसे मेरी कुर्सी पर बिठाओ और इसे मेरे लिए तैयार किया हुआ भोजन से भरा कटोरा दो।" वह आदमी उसे घर ले गया, बिठाया और व्यापारी की पत्नी को बताया। पत्नी ने उसे स्वादिष्ट भोजन से भरा कटोरा दिया। वह भोजन लेकर घर से निकलकर गली में चला गया। दरबार से लौटते समय व्यापारी ने उसे देखा और प्रणाम करते हुए पूछा कि क्या उसे भोजन मिल गया है। पच्चेकबुद्ध ने कहा, "हाँ, व्यापारी।" व्यापारी अपने कटोरे को देखकर इस बात को स्वीकार नहीं कर पा रहा था, बल्कि सोच रहा था, "अगर मेरे दास या काम करने वाले लोग मेरा यह भोजन खाते तो वे मेरी कड़ी सेवा करते: हाय, यह तो मेरा नुकसान है!" और वह अपने इस विचार को पूर्ण नहीं कर सका। अब दान देना केवल उसी को फलदायी होता है जो इन तीन विचारों को पूर्ण कर सके:-

क्या हमें देने की इच्छा महसूस करने में आनंद मिला?
  उपहार दीजिए, और प्रसन्नतापूर्वक दीजिए।
जीते जी दान देने पर कभी पछतावा न करें।
  हमसे पैदा होने वाली संतानें कभी नहीं मरेंगी।
उदारता दिखाने से पहले आनंदित होना, प्रसन्नतापूर्वक दान देना,
इसके बाद इस विचार से प्रसन्न होना ही सच्ची परोपकारिता है।
तो उस अजनबी व्यापारी ने तगरसिखी को दान देकर बहुत धन अर्जित किया, परन्तु वह अपने धन का आनंद नहीं ले सका क्योंकि वह अपने कर्मों को शुद्ध नहीं कर सका। “हे प्रभु, उसका कोई पुत्र क्यों नहीं था?” गुरु ने कहा, “हे राजा, यही उसके पुत्र न होने का कारण था”: और उसके अनुरोध पर उन्होंने एक प्राचीन कथा सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्याभिषेक था, तब बोधिसत्व का जन्म एक व्यापारी परिवार में हुआ, जिसकी संपत्ति अस्सी करोड़ (10 मिलियन) थी। जब वे बड़े हुए, तो माता-पिता की मृत्यु के बाद उन्होंने अपने छोटे भाई का भरण-पोषण किया और घर की बागडोर संभाली। उन्होंने घर के द्वार पर एक भिक्षागृह बनवाया और गृहस्थ जीवन व्यतीत करते हुए खूब दान दिया। उनका एक पुत्र हुआ; जब पुत्र चलना सीख गया, तो उसने इच्छाओं के कष्ट और त्याग के आशीर्वाद को समझा। उसने अपनी सारी संपत्ति, पत्नी और बच्चे सहित, अपने छोटे भाई को सौंप दी और उसे लगन से दान देने के लिए प्रोत्साहित किया। फिर वह संन्यासी बन गया और ज्ञान और सिद्धियों को प्राप्त करके हिमालय में रहने लगा। छोटे भाई ने उस पुत्र को अपने पास रखा, लेकिन उसे बड़ा होते देख उसने सोचा, "यदि मेरा भाई का पुत्र जीवित रहा, तो संपत्ति दो भागों में बंट जाएगी, मैं अपने भाई के पुत्र को मार डालूंगा।" अतः एक दिन उसने उसे नदी में डुबोकर मार डाला। स्नान करके घर लौटने पर उनके भाई की पत्नी ने उनसे पूछा, "मेरा बेटा कहाँ है?" "वह नदी में खेल रहा था: मैंने

उसे ढूँढा लेकिन वह कहीं नहीं मिला।" वह रोने लगी और कुछ नहीं बोली। बोधिसत्व को जब इस बात का पता चला, तो उन्होंने सोचा, "मैं इस बात को सबके सामने लाऊँगा"; और इसलिए वे आकाश में उड़ते हुए बनारस पहुँचे, सुंदर वस्त्र पहने हुए, और द्वार पर खड़े हो गए। भिक्षागृह न देखकर उन्होंने सोचा, "उस दुष्ट ने भिक्षागृह को नष्ट कर दिया है।" उनके आने की खबर सुनकर छोटा भाई आया और बोधिसत्व को प्रणाम किया और उन्हें छत पर ले जाकर भोजन कराया। भोजन समाप्त होने के बाद, वे आपस में बातचीत करने बैठे और बोले, "मेरा बेटा दिखाई नहीं दे रहा: वह कहाँ है?" "मर गया है, महाराज।" "कैसे?" "स्नानघर में: लेकिन मुझे ठीक-ठीक पता नहीं है।" "अरे दुष्ट! मुझे तुम्हारा कर्म ज्ञात है: क्या तुमने उसे उसी प्रकार नहीं मारा? क्या राजाओं और अन्य लोगों द्वारा नष्ट किए जाने पर तुम उस धन को बचा पाओगे? तुममें और मयह पक्षी में क्या अंतर है?" इस प्रकार बोधिसत्व ने बुद्ध के समान सहजता से विधि का वर्णन करते हुए ये श्लोक कहे:-

मयहाका नाम का एक पक्षी है, जो पर्वतीय गुफा में रहता है:
पके हुए फलों से लदे पीपल के पेड़ों पर, "मेरा," "मेरा" की पुकार आती है।
जब वह इस प्रकार गाता है, तो अन्य पक्षी झुंड में उसके चारों ओर उड़ते हैं:
वे फल खाते हैं, लेकिन फिर भी मयहा का दुख भरा विलाप जारी रहता है।
और फिर भी एक अकेला व्यक्ति अपार धन अर्जित कर सकता है।
और फिर भी वह इसे अपने और अपने रिश्तेदारों के बीच उचित रूप से विभाजित नहीं कर सकता है।
उसे कभी भी वस्त्र या भोजन का सुख प्राप्त नहीं होता।
न तो इत्र से और न ही चमकीले रंगों की मालाओं से; और न ही उसके परिवार का भला होता है।
"मेरा, मेरा," वह गिड़गिड़ाते हुए अपने खजाने की लालच से रक्षा करता है:
लेकिन राजा, या लुटेरे, या उसके उत्तराधिकारी जो उसे मरते देखना चाहते हैं
उसकी संपत्ति लूट लो: फिर भी कंजूस का दर्द भरा विलाप जारी रहता है।
एक बुद्धिमान व्यक्ति, अपार धन अर्जित करने के बाद, अपने परिवार के सदस्यों की सहायता करता है:
इस प्रकार वह पृथ्वी पर यश प्राप्त करेगा और परलोक में भी यश पाएगा।
अतः उस महान सत्ता ने उन्हें विधि समझाते हुए उन्हें दान देने का सिलसिला फिर से शुरू करने के लिए प्रेरित किया, और हिमालय जाकर उन्होंने निरंतर ध्यान किया और इस प्रकार ब्रह्मलोक स्वर्ग (देवदूतों का लोक) में प्रवेश किया।

पाठ के बाद, गुरु ने कहा, "तो, महान राजा, उस अजनबी व्यापारी का इतने समय तक न तो कोई पुत्र था और न ही कोई पुत्री, क्योंकि उसने अपने भाई के पुत्र की हत्या कर दी थी," और फिर उन्होंने जन्म की पहचान बताई: "छोटा भाई (भिक्षु) वह अजनबी व्यापारी था, बड़ा भाई मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **धजविहेठ-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-391-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 391
धजविहेत-जातक

"मुखौटे वाले," इत्यादि—गुरु ने ये बातें जेतवन मठ में रहते हुए, समस्त विश्व के कल्याण के लिए अपने भ्रमण के विषय में बताईं। यह घटना महाकान्हा जन्म में प्रकट होगी। (*1) तब गुरु ने कहा, "भाइयों (भिक्षुओं), तथागत (बुद्ध) ने विश्व के कल्याण के लिए भ्रमण किया है, यह पहली बार नहीं है," और इस प्रकार उन्होंने एक पुरानी कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त राजा थे और बोधिसत्व इंद्र थे। उसी समय एक जादूगर आधी रात को आया और बनारस की प्रधान रानी को वश में कर लिया। रानी की दासियों को इसकी जानकारी थी। रानी स्वयं राजा के पास गईं और बोलीं, "महाराज, कोई व्यक्ति आधी रात को राजकक्ष में आता है और मुझे वश में कर लेता है।" राजा ने पूछा, "क्या आप उस पर कोई निशान लगा सकती

हैं?" रानी ने कहा, "हाँ।" तो उन्होंने असली सिंदूर का एक कटोरा लिया और जब वह व्यक्ति रात को आया और भोग-विलास के बाद जाने लगा, तो उन्होंने अपनी पाँच उंगलियों का निशान उसकी पीठ पर लगा दिया और सुबह राजा को बताया। राजा ने अपने सैनिकों को आदेश दिया कि वे हर जगह खोजकर एक ऐसे व्यक्ति को लाएँ जिसकी पीठ पर लाल निशान हो।

रात में दुराचार करने के बाद, वह जादूगर दिन में एक पैर पर खड़े होकर सूर्य की पूजा कर रहा था। राजा के सैनिकों ने उसे देखा और घेर लिया; लेकिन उसने यह सोचकर कि उसका यह काम उनके सामने आ गया है, अपनी जादूगरी का प्रयोग किया और हवा में उड़ गया। जब उसके सैनिक यह देखकर वापस आए, तो राजा ने उनसे पूछा, "क्या तुमने उसे देखा?" "हाँ, हमने उसे देखा।" "वह कौन है?" "महाराज, एक तपस्वी।" क्योंकि रात में दुराचार करने के बाद वह दिन में तपस्वी के वेश में रहता था। राजा ने सोचा, "ये लोग दिन में तपस्वी के वेश में घूमते हैं और रात में दुराचार करते हैं।" इसलिए तपस्वियों से क्रोधित होकर उसने गलत धारणाएँ बना लीं और ढोल बजाकर यह घोषणा करवाई कि सभी तपस्वियों को उसके राज्य से निकल जाना होगा और जहाँ भी वे मिलेंगे, उसके सैनिक उन्हें दंडित करेंगे। तीन सौ मील (4.23 किमी) के क्षेत्रफल वाले काशी राज्य से सभी तपस्वी भागकर अन्य राजसी नगरों में चले गए, और काशी के लोगों को उपदेश देने वाला कोई धर्मनिष्ठ बौद्ध या ब्राह्मण नहीं था; परिणामस्वरूप उपदेश न मिलने से लोग बर्बर हो गए, और दान और आज्ञाओं से विमुख होने के कारण अधिकांशतः मृत्यु के समय दंड की अवस्था में ही जन्म लेते थे, और उन्हें कभी स्वर्ग में जन्म नहीं मिलता था। सक्का (इंद्र), जब उन्हें कोई नए देवता (देवदूत) दिखाई नहीं दिए, तो उन्होंने इसके कारण पर विचार किया और पाया कि बनारस के राजा ने जादूगर के प्रति क्रोधित होकर गलत धारणाएँ अपना ली थीं, जिसके चलते उन्होंने अपने भाइयों को राज्य से निष्कासित कर दिया था। तब उन्होंने सोचा, "मेरे सिवा कोई नहीं है जो इस राजा के गलत विश्वास को नष्ट कर सके; मैं राजा और उसकी प्रजा का सहायक बनूँगा।" इसलिए वे नंदमूल गुफा में स्थित पच्चेकबुद्धों के पास गए और कहा, "महोदय, मुझे एक वृद्ध पच्चेकबुद्ध दीजिए, मैं काशी राज्य का धर्म परिवर्तन कराना चाहता हूँ।" उन्हें उनमें से सबसे वरिष्ठ पच्चेकबुद्ध प्राप्त हुए। जब उन्होंने अपना कुंड और वस्त्र ग्रहण किया, तो सक्का (इंद्र) ने उन्हें आगे स्थापित किया और स्वयं उनके पीछे आकर पच्चेकबुद्ध को आदरपूर्वक प्रणाम किया और उनका सम्मान किया। स्वयं एक सुंदर युवा भाई का रूप धारण करके उन्होंने पूरे शहर का तीन बार चक्कर लगाया और राजा के द्वार पर आकर हवा में खड़े हो गए। उन्होंने राजा से कहा, "महाराज, राजा के द्वार पर एक सुंदर युवक एक पुजारी के साथ हवा में खड़ा है।" राजा अपनी गद्दी से उठे और द्वार के पास खड़े होकर बोले, "युवक, तुम जो इतने सुंदर हो, उस बदसूरत पुजारी का आदर क्यों कर रहे हो और उसका कटोरा और वस्त्र क्यों पकड़े हो?" और फिर उससे बात करते हुए उन्होंने पहला श्लोक कहा:-

आपका चेहरा सुंदर है, आप आदर को कम आंकते हैं;
एक नीच और गरीब दिखने वाले व्यक्ति के पीछे आप जाते हैं:
मान लीजिए, क्या वह आपसे बेहतर है या आपके बराबर है?
कृपया हमें अपना और उनका नाम बताएं।
सक्का (इंद्र) ने उत्तर दिया, "महाराज, पुरोहित गुरु के स्थान पर होते हैं (*2); इसलिए उनका नाम लेना उचित नहीं है: परन्तु मैं अपना नाम बताऊंगा," अतः उन्होंने दूसरा श्लोक कहा:-

देवता (देवदूत) वंश और नाम नहीं बताते।
धर्मनिष्ठ और पूर्ण मार्ग पर चलने वाले संतों के बारे में:
जहां तक मेरा सवाल है, मैं अपनी उपाधि की घोषणा करता हूं।
सक्का (इंद्र), वह स्वामी जिसकी तीस देवता (देवदूत) आज्ञा का पालन करते हैं।
यह सुनकर राजा ने तीसरे श्लोक में पूछा कि भाई का आदर करने का क्या आशीर्वाद है?

जो व्यक्ति पूर्ण गुणों वाले संत को देखता है,
और वह श्रद्धापूर्वक उसके पीछे-पीछे झुककर चलता है:
हे देवदूतों के राजा, मैं पूछता हूँ कि उसे क्या विरासत में मिलेगा?
एक और जीवन से क्या-क्या आशीर्वाद मिलेंगे?
सक्का (इंद्र) ने चौथे श्लोक में उत्तर दिया:-

जो व्यक्ति पूर्ण गुणों वाले संत को देखता है,
जो उनके पीछे श्रद्धापूर्वक सिर झुकाकर चलता है:
इस दुनिया में उसे जो विरासत मिलती है, उसमें पुरुषों से उसे बहुत प्रशंसा मिलती है।
और मृत्यु उसे स्वर्ग का मार्ग दिखाएगी।
सक्का (इंद्र) के वचन सुनकर राजा ने अपने गलत विचारों का त्याग कर दिया और प्रसन्न होकर पाँचवाँ श्लोक बोला:-

ओह, आज मुझ पर भाग्य का सूरज उगा है।
हमने आपकी दिव्य महिमा को अपनी आँखों से देखा है:
हे सक्का (इंद्र), आपके संत हमारे दर्शन कर रहे हैं।
और अब मैं अनेक पुण्य कर्म करूंगा।
अपने स्वामी की प्रशंसा सुनकर इंद्र ने छठा श्लोक कहा:-

बुद्धिमानों का सम्मान करना निस्संदेह अच्छा है।
ज्ञान की ओर वे लोग जिनका विद्वतापूर्ण विचार झुकाव रखता है:
अब जबकि संत और मेरी आंखें आपकी आंखों से मिल चुकी हैं,
हे राजा, आप अनेक पुण्य कर्म करें।
यह सुनकर राजा ने अंतिम श्लोक बोला:-

क्रोध से मुक्त होकर, हर विचार में शालीनता के साथ,
जब भी अजनबी लोग मुकदमा करेंगे, मैं उनकी बात सुनूंगा:
मैंने आपकी सलाह को अच्छे से समझा, लेकिन मेरा कोई योगदान नहीं है।
मुझे गर्व है और मैं आपको उचित श्रद्धा के साथ सेवा करता हूँ, हे प्रभु।
ऐसा कहकर वह छत से नीचे उतरे, पच्चेकबुद्ध को प्रणाम किया और एक तरफ खड़े हो गए। पच्चेकबुद्ध हवा में पालथी मारकर बैठे और राजा को उपदेश देते हुए बोले, “महाराज, वह जादूगर कोई भाई नहीं था: अब से यह जान लो कि संसार व्यर्थ (खोखला) नहीं है, अच्छे बौद्ध और ब्राह्मण भी हैं, इसलिए दान करो, नैतिकता का पालन करो, और त्योहारों का पालन करो।” इंद्र भी अपनी शक्ति से हवा में खड़े होकर नगरवासियों को उपदेश देते हुए बोले, “अब से उत्साह रखो।” उन्होंने ढोल बजाकर यह घोषणा करवाई कि जो बौद्ध और ब्राह्मण भाग गए थे, वे लौट आएं। फिर दोनों अपने-अपने स्थान पर लौट गए। राजा ने उनकी सलाह को दृढ़ता से माना और अच्छे कर्म किए।

पाठ के बाद, गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: "उस समय पच्चेकबुद्ध निर्वाण प्राप्त कर चुके थे, राजा आनंद थे, सक्का (इंद्र) मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)सं. 469

(2) किसी संत शिक्षक का नाम बताना गलत है, महावग्ग 1.74.1.

स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-392-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 392
भीसपुप्प-जातक

“तुम कभी नहीं थे,” इत्यादि — गुरुजी ने जेतवन मठ में रहते हुए एक भिक्षु के बारे में यह कथा सुनाई। कथा यह है कि भिक्षु जेतवन मठ छोड़कर कोसल राज्य में एक वन के पास रहने लगे। एक दिन वे एक कमल-कुंड में उतरे और एक खिला हुआ कमल देखकर हवा की ओर मुंह करके उसे सूंघा। तब उस वन में निवास करने वाली देवी ने उन्हें डराते हुए कहा, “हे प्रभु, आप सुगंधों के चोर हैं, यह एक प्रकार की चोरी है।” वे भयभीत होकर जेतवन मठ लौट आए और गुरुजी को प्रणाम करके बैठ गए। “तुम कहाँ रह रहे थे, भिक्षु?” “अमुक वन में, और देवी ने मुझे अमुक तरीके से डराया।” गुरुजी ने कहा, “तुम पहले नहीं हो जो किसी फूल को सूंघने से देवी द्वारा भयभीत हुए हो; प्राचीन ऋषि भी इसी प्रकार भयभीत हुए हैं,” और भिक्षुजी के अनुरोध पर उन्होंने एक पुरानी कथा सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्य था, बोधिसत्व का जन्म काशी के एक गाँव में एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। बड़े होकर उन्होंने तक्षशिला में विद्या सीखी और बाद में तपस्वी बन गए तथा एक कमल-कुंड के पास रहने लगे। एक दिन वे कुंड में उतरे और खिले हुए कमल को सूंघने लगे। तभी एक पेड़ के खोखले तने में बैठी देवी ने उन्हें सचेत करते हुए पहला श्लोक कहा:-

आपको वह फूल कभी नहीं दिया गया जिसकी खुशबू आपको आ रही है, हालांकि वह केवल एक ही खिला हुआ फूल है;
यह एक प्रकार की चोरी है, महोदय, आप इसकी सुगंध चुरा रहे हैं।
तब बोधिसत्व ने दूसरा श्लोक कहा:-

मैं न तो फूल तोड़ता हूँ और न ही उसे अलग करता हूँ; मैं दूर से ही उसकी सुगंध महसूस करता हूँ।
मुझे नहीं पता कि आप किस सबूत के आधार पर कह रहे हैं कि मैं इत्र चुराती हूँ।
उसी समय एक आदमी कमल के रेशे निकालने के लिए तालाब में खुदाई कर रहा था और कमल के पौधों को तोड़ रहा था। बोधिसत्व ने उसे देखकर कहा, "तुम दूर से फूल की सुगंध सूंघने वाले आदमी को चोर कहते हो: तुम उस दूसरे आदमी से बात क्यों नहीं करते?" तब उससे बात करते हुए उन्होंने तीसरा श्लोक कहा:-

मुझे एक ऐसा आदमी दिखाई देता है जो कमल की जड़ों को खोदता है और डंठलों को तोड़ता है:
आप उस व्यक्ति के आचरण को अव्यवस्थित क्यों नहीं कहते?
देवी ने उससे बात न करने का कारण बताते हुए चौथे और पाँचवें श्लोक कहे:-

नर्स की पोशाक की तरह ही ये पुरुष भी अभद्र व्यवहार करते हैं:
मुझे ऐसे लोगों से बात करने का कोई अधिकार नहीं है, लेकिन मैं आपसे बात करने के लिए बाध्य हूं।
जब कोई व्यक्ति बुराइयों से मुक्त होकर पवित्रता की खोज करता है,
उसके लिए एक बाल के सिरे जितना पाप भी आकाश में छाए काले बादल की तरह दिखाई देता है।
उससे भयभीत होकर बोधिसत्व ने भावुक होकर छठा श्लोक कहा:-

हे परी, तुम मुझे भली-भांति जानती हो, मुझ पर दया करना तो तुम्हारा कर्तव्य है।
यदि आप मुझे ऐसा ही कोई अपराध करते हुए देखें, तो कृपया मुझसे दोबारा बात करें।
तब देवी ने उनसे सातवां श्लोक कहा:-

मैं आपकी सेवा करने के लिए यहां नहीं हूं, हम कोई किराए के कर्मचारी नहीं हैं।
हे भाई, अपने लिए सुख प्राप्त करने का मार्ग खोज लो।
इस प्रकार उन्हें सलाह देकर वह अपने निवास स्थान में प्रवेश कर गईं। बोधिसत्व ने गहन ध्यान में लीन होकर ब्रह्मलोक (देवदूतों के लोक) में जन्म लिया।

पाठ समाप्त हुआ, गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के अंत में, भाई (भिक्षु) प्रथम मार्ग (समाधि) के फल में स्थापित हो गया: "उस समय देवी उप्पलावन्ना थीं, मैं स्वयं तपस्वी था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **विघास-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-393-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 393
विघासा-जातक

“उनका जीवन सुखमय है,” इत्यादि—गुरु ने यह कथा पूर्वी उद्यान में रहते हुए कुछ भिक्षुओं के बारे में सुनाई, जो मौज-मस्ती में लिप्त थे। महान मोग्गल्याना ने उनके जीवन को अस्त-व्यस्त कर दिया था और उन्हें भयभीत कर दिया था। भिक्षु सत्य के हॉल में बैठकर अपनी गलती पर चर्चा कर रहे थे। गुरु को जब यह बताया गया, तो उन्होंने उनसे कहा, “वे पहली बार मौज-मस्ती में लिप्त नहीं हुए हैं,” और फिर उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्याभिषेक था, तब बोधिसत्व सक्का (इंद्र) थे। काशी नामक एक गाँव में सात बंधुओं ने कामवासनाओं के बुरे प्रभाव को देखकर उनका त्याग कर संन्यासी बन गए। वे मेझरन्ना में रहते थे, पर तरह-तरह के भोग-विलास में लिप्त रहते थे, भक्ति का अभ्यास नहीं करते थे और देह-भोग में लिप्त रहते थे। देवदूतों के राजा सक्का (इंद्र) ने कहा, "मैं उन्हें चेतावनी दूंगा;" और इस प्रकार वे एक तोते का रूप धारण करके उनके निवास स्थान पर आए और एक वृक्ष पर बैठकर उन्हें चेतावनी देने के लिए पहला श्लोक बोला:

जो लोग दान से बचे हुए अंशों पर जीवन यापन करते हैं, उनका जीवन सुखमय होता है:
इस दुनिया में प्रशंसा पाना उनका भाग्य है, और अगली दुनिया में सुख-सुविधाएं।
तब उनमें से एक ने तोते की बात सुनकर बाकी लोगों को पुकारा और दूसरी पंक्ति बोली:-

क्या बुद्धिमान लोगों को तब नहीं सुनना चाहिए जब एक तोता मनुष्य की भाषा में बोलता है?
सुनो, भाइयों: यह पक्षी स्पष्ट रूप से हमारी प्रशंसा में गा रहा है।
तब तोते ने इस बात का खंडन करते हुए तीसरा श्लोक बोला:-

मैं तुम्हारी प्रशंसा नहीं कर रहा हूँ, सड़े हुए मांस खाने वालों: मेरी बात सुनो।
कूड़ा वह भोजन है जिसे आप खाते हैं, न कि दान में मिले अवशेष।
जब उन्होंने उसकी बात सुनी, तो वे सब मिलकर चौथा श्लोक बोले:-

सात वर्ष से पुरोहित, विधिवत मुंडा हुआ सिर।
   हम मेज्झारन्ना में अपने दिन बिताते हैं।
बचे-खुचे भोजन पर जीवन यापन करना: यदि आप इसके लिए हमारे भोजन को दोषी ठहराते हैं,
   तो फिर आप किसकी प्रशंसा करते हैं?
उस महान सत्ता ने पाँचवाँ श्लोक बोलकर उन्हें लज्जित कर दिया:-

शेर, बाघ, हिंसक जानवर के बचे हुए हिस्से ही आपकी आपूर्ति हैं:
सचमुच इनकार करो, भले ही तुम इसे दान से बचे हुए अवशेष कहो।
उनकी बात सुनकर तपस्वियों ने कहा, "यदि हम अवशेष खाने वाले नहीं हैं, तो फिर कौन हैं?" तब उन्होंने उन्हें सही अर्थ समझाते हुए छठा श्लोक सुनाया:-

जो लोग पुरोहितों और ब्राह्मणों को दान देते हैं, वे अपनी इच्छा पूरी करना चाहते हैं।
बाकी बचा हुआ खा लो, क्योंकि दान में मिले बचे-खुचे भोजन पर ही तो लोग जीते हैं।
तब बोधिसत्व ने उन्हें शर्मिंदा किया और अपने स्थान पर चले गए।

पाठ के बाद, गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: "उस समय सात भाई क्रीड़ा करने वाले भाई थे, सक्का (इंद्र) मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **वातक-जातक**3
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

जातक क्रमांक 394
वट्टक-जातक

“तेल और मक्खन,” इत्यादि – गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक लालची भिक्षु के बारे में यह कहानी सुनाई। जब उन्होंने देखा कि वह लालची है, तो गुरु ने उससे कहा, “यह पहली बार नहीं है जब तुम लालची हुए हो: एक बार बनारस में लालच के कारण तुम हाथियों, बैलों, घोड़ों और मनुष्यों के शवों से संतुष्ट नहीं हुए थे; और बेहतर भोजन की आशा में जंगल चले गए थे;” और इस प्रकार उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्य था, बोधिसत्व का जन्म एक बटेर के रूप में हुआ और वे जंगल में सूखी घास और बीजों पर जीवन व्यतीत करते थे। उस समय बनारस में एक लालची कौआ था, जो हाथियों और अन्य जानवरों के मृत शरीरों से संतुष्ट नहीं था, इसलिए बेहतर भोजन की आशा में जंगल में गया। वहाँ जंगली फल खाते हुए उसने बोधिसत्व को देखा और सोचा, "यह बटेर बहुत मोटा है: मुझे लगता है कि यह मीठा भोजन खाता है, मैं इससे इसका भोजन माँगूँगा और इसे खाकर खुद भी मोटा हो जाऊँगा।" यह सोचकर वह बोधिसत्व के ऊपर एक शाखा पर बैठ गया। बोधिसत्व ने बिना पूछे ही उसे प्रणाम किया और पहला श्लोक बोला:

चाचाजी, तेल और मक्खन आपका भोजन हैं; मुझे लगता है कि समृद्ध भोजन आपका भोजन है।
तो मुझे बताओ, हे स्वामी कौवे, तुम्हारे दुबलेपन का कारण क्या है?
उसकी बातें सुनकर कौवे ने तीन छंद बोले:-

मैं अनेक प्रतिद्वंद्वियों के बीच रहता हूँ, मेरा दिल धड़कता रहता है
डर के मारे मैं अपना भोजन ढूंढ रहा हूँ: एक कौआ मोटा कैसे हो सकता है?
कौवे अपना जीवन भय में व्यतीत करते हैं, शरारत करने की उनकी बुद्धि हमेशा तेज रहती है;
वे जो टुकड़े चुनते हैं, वे पर्याप्त नहीं होते; अच्छी बटेर, इसीलिए मैं दुबला हूँ।
तुम्हारा सारा भोजन सूखी घास और बीज ही हैं: उनमें पौष्टिकता का नामोनिशान नहीं है।
तो मुझे बताओ, अच्छी बटेर, इतने कम भोजन पर भी तुम इतनी मोटी क्यों हो?
उनकी बात सुनकर बोधिसत्व ने अपने मोटापे का कारण बताते हुए ये श्लोक कहे:-

मैं संतुष्ट और शांत मन का हूं, मुझे ज्यादा दूर नहीं जाना है।
मुझे जो कुछ भी मिलता है, मैं उसी से अपना गुजारा कर लेता हूँ, इसलिए मैं मोटा हूँ, वाह!
मन की शांति और हृदय की कम चिंता के साथ सुख।
एक ऐसा मानक जिसे आसानी से प्राप्त किया जा सकता है: कि जीवन का सबसे अच्छा हिस्सा वही है।

पाठ के बाद, गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के अंत में, भाई (भिक्षु) प्रथम मार्ग (समाधि) की सिद्धि में स्थापित हो गया: "उस समय कौआ लालची भाई था, बटेर मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **काक-जातक**3
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----II-395-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 395
काका-जातक। (*1)

"हमारा पुराना मित्र," इत्यादि - गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक लालची भिक्षु के बारे में यह कहानी सुनाई थी। घटना का विवरण ऊपर दिया गया है।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज था, तब बोधिसत्व एक कबूतर थे और बनारस के एक व्यापारी की रसोई में एक टोकरी में रहते थे। एक कौआ उनसे घनिष्ठ मित्र बन गया और वहीं रहने लगा। यहाँ कहानी को आगे बढ़ाया जाना है। रसोइए ने कौए के पंख नोच लिए और उस पर आटा छिड़क दिया, फिर एक कौड़ी को छेदकर उसके गले में लटका दिया और उसे टोकरी में फेंक दिया। बोधिसत्व जंगल से निकले और उन्हें देखकर एक उपहास किया और पहला श्लोक बोला:-

हमारा पुराना दोस्त! उसे देखो!
वह एक चमकीला रत्न धारण करता है;
उनकी दाढ़ी बड़े ही सलीके से संवारी हुई थी।
हमारा दोस्त कितना चमकीले रंगों वाला दिख रहा है!
कौवे ने उसकी बात सुनकर दूसरा श्लोक बोला:-

मेरे नाखून और बाल इतनी तेजी से बढ़ गए थे।
उन्होंने मेरे हर काम में बाधा डाली:
अंततः एक नाई आ गया,
और मैंने अतिरिक्त बालों से छुटकारा पा लिया है।
तब बोधिसत्व ने तीसरा श्लोक कहा:-

मान लीजिए कि आपके पास नाई है,
आपके बाल इतने अच्छे से किसने काटे हैं?
क्या आप समझा पाएंगे कि यह आपके गले में है?
ये घंटी जैसी झनझनाहट किस बात की है?
तब कौवे ने दो छंद बोले:-

फैशनपरस्त पुरुष एक अनमोल रत्न पहनते हैं।
गले में लपेटना: यह अक्सर किया जाता है:
मैं उनकी नकल कर रहा हूँ:
यह मत सोचो कि यह सिर्फ मनोरंजन के लिए है।
अगर आप सचमुच ईर्ष्यालु हैं
मेरी दाढ़ी, जो बिल्कुल सही ढंग से ट्रिम की गई है:
मैं इस तरह से आपके बाल कटवा सकता हूँ;
आपके पास भी वह रत्न हो सकता है।
उनकी बात सुनकर बोधिसत्व ने छठा श्लोक कहा:-

नहीं, उन्हें तुम्हारे जैसा बनना ही बेहतर होगा।
दाढ़ी और रत्न, जो बिल्कुल सही ढंग से ट्रिम किए गए हैं।
मुझे आपकी उपस्थिति असुविधाजनक लगती है:
आपको शुभ दिन की शुभकामनाएं।
ये शब्द कहकर वह उड़ गया और कहीं और चला गया; और कौआ वहीं मर गया।

पाठ के बाद, गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के बाद, लालची भाई (भिक्षु) तीसरे मार्ग (समाधि) की सिद्धि में स्थापित हो गया: "उस समय कौआ लालची भाई था, कबूतर मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) क्रमांक 42 और क्रमांक 274 देखें

पुस्तक VII. सत्तनिपाता:

स्रोत : एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।

पिछला <<<<-----||-396-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 396
कुक्कू-जातक

"चोटी एक हाथ की दूरी पर है," इत्यादि—गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक राजा को सलाह देते हुए यह बात कही थी। इस घटना का वर्णन तेसाकुना-जन्म में मिलेगा। (*1)

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्याभिषेक था, तब बोधिसत्व उनके सांसारिक और आध्यात्मिक मामलों के सलाहकार थे। राजा बुरे मार्ग पर चल रहे थे, अपने राज्य पर अन्यायपूर्वक शासन कर रहे थे और जनता पर अत्याचार करके धन इकट्ठा कर रहे थे। बोधिसत्व उन्हें उपदेश देने के लिए एक दृष्टांत की तलाश में निकले। राजा का शयनकक्ष अधूरा था और उसकी छत भी पूरी नहीं बनी थी: शहतीरें एक शिखर को सहारा दे रही थीं, लेकिन वे अभी-अभी अपनी जगह पर लगी थीं। राजा कुछ समय पार्क में आनंद लेने गए थे: जब वे अपने घर लौटे तो उन्होंने ऊपर देखा और गोल शिखर को देखा: उन्हें डर था कि वह उन पर गिर जाएगा, इसलिए वे बाहर जाकर खड़े हो गए, फिर ऊपर देखकर उन्होंने सोचा, "यह शिखर इस तरह कैसे टिका हुआ है? और शहतीरें कैसे हैं?" और बोधिसत्व से पूछते हुए उन्होंने पहला श्लोक कहा:-

शिखर की ऊंचाई डेढ़ हाथ की लंबाई के बराबर है।
   आठ फाटक इसे घेरते हुए एक गोलाकार आकृति बनाएंगे।
सिम्सपा और सारा का निर्माण ठीक से हुआ है:
   यह इतनी मजबूती से क्यों खड़ा है?
उनकी बात सुनकर बोधिसत्व ने सोचा, "अब मुझे राजा को समझाने के लिए एक दृष्टांत मिल गया है," और उन्होंने ये श्लोक कहे:-

सारा की लकड़ी के तीस शहतीर झुक गए।
   बराबर दूरी पर रखकर, उसके चारों ओर घेरा बना लिया।
वे इसे कसकर दबाते हैं, क्योंकि उनकी पकड़ मजबूत होती है:
   यह ठीक से स्थापित है और सही स्थिति में है।
इसी प्रकार, वफादार मित्रों से घिरा हुआ बुद्धिमान व्यक्ति भी ऐसा ही होता है।
   समर्पित सलाहकारों और शुद्धता द्वारा:
वह कभी भी सफलता की ऊंचाइयों से नीचे नहीं उतरता:
   जैसे छत की कड़ियाँ शिखर को सुरक्षित रखती हैं।
जब बोधिसत्व बोल रहे थे, राजा अपने आचरण पर विचार कर रहे थे, "यदि शिखर न हो, तो शहतीरें स्थिर नहीं रहतीं; शिखर शहतीरों के सहारे नहीं टिकता; शहतीरें टूट जाएं, तो शिखर गिर जाता है; ठीक उसी प्रकार एक दुष्ट राजा, जो अपने मित्रों और मंत्रियों, अपनी सेनाओं, अपने ब्राह्मणों और गृहस्थों को एकजुट नहीं रखता, यदि ये सब बिखर जाएं, तो वह इनके सहारे नहीं टिकता, बल्कि अपनी सत्ता से गिर जाता है; एक राजा को धर्मपरायण होना चाहिए।" उसी क्षण वे उन्हें भेंट के रूप में एक नींबू लाए। राजा ने बोधिसत्व से कहा, "मित्र, इस नींबू को खाओ।" बोधिसत्व ने उसे लिया और कहा, "हे राजा, जो लोग इसे खाना नहीं जानते, वे इसे कड़वा या खट्टा बना देते हैं; परन्तु जो बुद्धिमान जानते हैं, वे कड़वाहट दूर कर देते हैं और नींबू के स्वाद को बिगाड़े बिना या खट्टापन हटाए बिना इसे खा लेते हैं।" इस दृष्टांत के द्वारा उन्होंने राजा को धन संचय करने का साधन समझाया और दो श्लोक कहे:-

खुरदरी त्वचा वाला नींबू खाने में कड़वा होता है।
   यदि यह नक्काशी करने वाले के स्टील से अछूता रहे:
हे राजा, केवल गूदा ले लो, वह मीठा है।
   अगर आप छिलका डालेंगे तो मिठास खराब हो जाएगी।
फिर भी बुद्धिमान व्यक्ति हिंसा के बिना कार्य करता है।

वह गांव और शहर में राजा का कर वसूलता है।
इससे धन में वृद्धि होती है, फिर भी कोई अपराध नहीं होता:
वह सत्य और यश के मार्ग पर चलता है।

राजा ने बोधिसत्व से सलाह लेकर एक कमल-कुंड में जाकर, नवभूराज के समान रंग का, जल से अछूता एक खिला हुआ कमल देखा और कहा, "मित्र, जल में उगा हुआ वह कमल जल से अछूता रहता है।" तब बोधिसत्व ने कहा, "हे राजा, राजा को ऐसा ही होना चाहिए," और सलाह देते हुए ये श्लोक कहे:-

तालाब में कमल की तरह,
सफेद जड़ें, शुद्ध जल, इसे पोषित करता है;
सूर्य की किरणें पूर्ण रूप से खिल रही हैं,
धूल, कीचड़ या नमी से इस पर दाग नहीं लग सकता।
अतः जिस व्यक्ति पर सद्गुणों का शासन होता है,
हम उन्हें विनम्र, पवित्र और नेक कहते हैं:
तालाब में कमल की तरह
पाप का दाग उसे अपवित्र नहीं कर सकता।

बोधिसत्व की सलाह सुनकर राजा ने बाद में अपने राज्य पर विधिपूर्वक शासन किया और अच्छे कर्म, दान-पुण्य आदि करते हुए स्वर्ग के लिए नियत हो गया।

पाठ के बाद, गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: "उस समय राजा आनंद थे, जो स्वयं एक बुद्धिमान मंत्री थे।"

फुटनोट:

(1) संख्या 521

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **मनोज-जातक**
***स्रोत**: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-397-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 397
मनोजा-जातक

“धनुष मुड़ा हुआ है,” इत्यादि—गुरु ने बाँस के वन में रहते हुए एक भिक्षु (भाई) के बारे में यह कहा था जो बुरी संगत में रहता था। इस घटना का विस्तृत वर्णन महिलामुखता जन्म में किया गया है। (*1) गुरु ने कहा, “भाइयों (भिक्षुओं), वह पहली बार बुरी संगत में नहीं है,” और एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्य था, बोधिसत्व सिंह थे और एक सिंहनी के साथ रहते थे। उनके दो बच्चे थे, एक पुत्र और एक पुत्री। पुत्र का नाम मनोज था। जब वह बड़ा हुआ, तो उसने एक युवा सिंहनी से विवाह किया, और इस प्रकार वे पाँच हो गए। मनोज जंगली भैंसों और अन्य जानवरों का शिकार करता था, और इस प्रकार अपने माता-पिता, बहन और पत्नी के लिए मांस प्राप्त करता था। एक दिन अपने शिकारगाह में उसने गिरिया नामक एक सियार को देखा, जो भागने में असमर्थ था और पेट के बल लेटा हुआ था। उसने कहा, "क्या हाल है, मित्र? मैं आपकी सेवा करना चाहता हूँ, स्वामी।" बोधिसत्व ने कहा, "ठीक है, ऐसा करो।" तो वह सियार को अपनी मांद में ले गया। बोधिसत्व ने उसे देखकर कहा, "प्रिय मनोज, सियार दुष्ट और पापी होते हैं, और गलत सलाह देते हैं; इसे अपने पास मत लाना," लेकिन वह उसे रोक नहीं सका। फिर एक दिन सियार ने घोड़े का मांस खाने की इच्छा व्यक्त की, और मनोज से कहा, "महोदय, घोड़े के मांस के अलावा हमने कुछ भी नहीं खाया है; चलिए एक घोड़ा लेते हैं।" "लेकिन घोड़े कहाँ हैं, मित्र?" "बनारस में नदी के किनारे।" उसने यह सलाह मानी और उसके साथ वहाँ गया जहाँ घोड़े नदी में नहाते थे; उसने एक घोड़ा लिया और

उसे अपनी पीठ पर लादकर तेज़ी से शेर की मांद के मुँह तक पहुँचा। घोड़े का मांस खा रहे उसके पिता ने कहा, "प्रिय, घोड़े राजाओं की संपत्ति हैं, राजाओं के पास कई तरकीबें होती हैं, उनके पास कुशल तीरंदाज होते हैं; जो शेर घोड़े का मांस खाते हैं वे ज़्यादा दिन नहीं जीते, अब से घोड़े मत चुराना।" शेर ने अपने पिता की सलाह नहीं मानी और घोड़े चुराता रहा। राजा ने यह सुनकर कि एक शेर घोड़े चुरा रहा है, शहर के अंदर घोड़ों के लिए एक स्नान-कुंड बनवाया: लेकिन शेर फिर भी आता और घोड़े चुरा लेता। राजा ने एक अस्तबल बनवाया और उसमें घोड़ों के लिए चारा और पानी रखा। शेर दीवार फांदकर अस्तबल से भी घोड़े चुरा लेता था। राजा ने बिजली की गति से तीर चलाने वाले एक तीरंदाज को बुलाया और पूछा कि क्या वह शेर को मार सकता है। उसने कहा कि वह मार सकता है, और जिस दीवार से शेर आता था उसके पास एक मीनार बनाकर वह वहाँ इंतज़ार करने लगा। शेर आया और सियार को बाहर कब्रिस्तान में छिपाकर घोड़ों को लेने के लिए कस्बे में घुस गया। धनुर्धारी ने सोचा, "जब वह आएगा तो उसकी गति बहुत तेज़ होगी," इसलिए उसने शेर पर तीर नहीं चलाया, लेकिन जब वह एक घोड़ा लेकर भारी वजन के कारण लड़खड़ाते हुए जा रहा था, तो उसने शेर के पिछले हिस्से में एक तेज़ तीर मारा। तीर उसके अगले हिस्से से निकलकर हवा में उड़ गया। शेर चिल्लाया, "मैं घायल हो गया।" तीर चलाने के बाद धनुर्धारी ने गरज की तरह अपना धनुष चलाया। शेर और धनुष की आवाज़ सुनकर सियार ने मन ही मन कहा, "मेरा साथी घायल हो गया है और उसे मारना ही होगा, मरे हुओं से कोई दोस्ती नहीं होती, अब मैं जंगल में अपने पुराने घर जाऊंगा," और इस तरह उसने दो पंक्तियाँ कहीं:-

धनुष मुड़ा हुआ है, धनुष की डोरी से मधुर ध्वनि निकल रही है;
मेरे मित्र, पशुओं के राजा मनोज की हत्या कर दी गई है।
अफसोस, मैं यथासंभव जंगलों की तलाश करता हूँ:
ऐसी दोस्ती का कोई महत्व नहीं; मुझे दूसरों का सहारा लेना होगा।
शेर झपट्टा मारकर आया और घोड़े को मांद के मुँह पर पटक दिया, और स्वयं वहीं गिरकर मर गया। उसका परिवार बाहर आया और उसे खून से लथपथ देखा, उसके घावों से खून बह रहा था, दुष्टों का साथ देने के कारण उसकी मृत्यु हो गई थी; और उसके पिता, माता, बहन और पत्नी ने उसे देखकर क्रम से चार पंक्तियाँ कहीं:-

जो लोग दुष्टों के बहकावे में आ जाते हैं, उनका भाग्य उज्ज्वल नहीं होता;
गिरिया की सलाह पर मनोजा वहां लेटी हुई है, उसे देखो।
जिस बेटे के साथी अच्छे न हों, उससे माताओं को कोई खुशी नहीं मिलती।
मनोजा को देखो, वह खून से लथपथ वहां पड़ा है।
और फिर भी उस आदमी का यही हाल रहता है, वह दीन-हीन अवस्था में पड़ा रहता है।
जो सच्चे मित्र और बुद्धिमान व्यक्ति की सलाह का पालन नहीं करता।
यही, या इससे भी बदतर, उसका भाग्य होगा।
जो ऊँचा तो है, पर नीचों पर भरोसा करता है:
देखिए, यह राजशाही अवस्था से ही है।
वह धनुष से गिर गया है।
अंत में, पूर्ण ज्ञान का श्लोक:-

जो बहिष्कृत लोगों का अनुसरण करता है, वह स्वयं बहिष्कृत हो जाता है।
जो अपने समकक्षों से प्रेम करता है, उसे कभी धोखा नहीं दिया जाएगा।
जो परम श्रेष्ठ के सामने नतमस्तक होता है, वह शीघ्र ही उत्थान प्राप्त करता है;
इसलिए सहायता के लिए अपने से श्रेष्ठ लोगों की ओर देखो।

पाठ के बाद, गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई:- सत्यों के बाद, बुरी संगति में रहने वाला भाई (भिक्षु) प्रथम मार्ग (समाधि) की सिद्धि में स्थापित हुआ:- "उस समय सियार देवदत्त था, मनोज बुरी संगति का रक्षक था, उसकी बहन उप्पलावन्ना (भिक्षुणी) थी, उसकी पत्नी बहन (भिक्षुणी) खेमा थी, उसकी माता राहुल (बुद्ध की पत्नी) की माता थी, और उसके पिता मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) संख्या 26

पिछला <<<<-----||-398-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 398
सुतानो-जातक

"राजा ने भेजा है," इत्यादि — गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए यह कथा सुनाई थी, जिसमें एक भिक्षु (भाई) का जिक्र था जो अपनी माता का भरण-पोषण करता था। यह घटना साम (*1) जन्म में वर्णित है।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्याभिषेक हो रहा था, तब एक गरीब गृहस्थ परिवार में बोधिसत्व का जन्म हुआ। उनका नाम सूतना रखा गया। बड़े होकर वे मजदूरी करते थे और अपने माता-पिता का सहारा बनते थे। पिता की मृत्यु के बाद उन्होंने माता का सहारा लिया। उस समय राजा को शिकार का बहुत शौक था। एक दिन वे अपने साथ बहुत से सेवकों को लेकर एक या दो मील (4.23 किमी) लंबे जंगल में गए और सभी को यह घोषणा की, "यदि कोई हिरण किसी व्यक्ति की चौकी से भाग निकले, तो उस व्यक्ति पर हिरण के मूल्य के बराबर जुर्माना लगाया जाएगा।" मंत्रियों ने मुख्य सड़क के किनारे एक गुप्त कुटिया बनाई और उसे राजा को दे दिया। हिरणों के मांदों को घेरने वाले लोगों के रोने की आवाज से वे जाग उठे और एक हिरण राजा की चौकी पर आ गया। राजा ने सोचा, "मैं इसे मारूंगा," और एक तीर चलाया। जानवर, जो एक तरकीब जानता था, उसने देखा कि तीर उसकी ओर आ रहा है और घूमकर ऐसे गिर पड़ा जैसे तीर से घायल हो गया हो। राजा ने सोचा, "मैंने उसे मार गिराया है," और उसे पकड़ने के लिए दौड़ा। हिरण उठा और हवा की तरह भाग गया। मंत्रियों और बाकी लोगों ने राजा का उपहास किया। राजा हिरण का पीछा करता रहा और जब वह थक गया तो उसने अपनी तलवार से उसे दो टुकड़ों में काट दिया: टुकड़ों को एक डंडे पर लटकाकर वह एक डंडा उठाते हुए आया और बोला, "मैं थोड़ा आराम करूँगा," और सड़क के किनारे एक बरगद के पेड़ के पास आकर लेट गया और सो गया। उस बरगद में मखदेव नामक एक यक्ष (राक्षस) का पुनर्जन्म हुआ था, और वह वेसवना (*2) से आने वाले सभी जीवों को अपने भोजन के रूप में ग्रहण करता था। जब राजा उठा तो उसने कहा, "रुको, तुम मेरा भोजन हो," और उसका हाथ पकड़ लिया। राजा ने पूछा, "तुम कौन हो?" "मैं यहाँ जन्मा एक यक्ष (राक्षस) हूँ, मैं यहाँ आने वाले सभी मनुष्यों को अपने भोजन के रूप में ग्रहण करता हूँ।" राजा ने हिम्मत जुटाकर पूछा, "क्या तुम आज ही खाओगे या निरंतर खाओगे?" "मैं जो भी प्राप्त करूँगा, निरंतर खाऊँगा।" "तो आज इस हिरण को खा लो और मुझे जाने दो; कल से मैं तुम्हें प्रतिदिन चावल की थाली के साथ एक आदमी भेजूँगा।" "तो सावधान रहो: जिस दिन कोई नहीं भेजा जाएगा, मैं तुम्हें खा जाऊँगा।" "मैं बनारस का राजा हूँ: ऐसा कुछ भी नहीं है जो मैं नहीं कर सकता।" यक्ष (राक्षस) ने उसका वादा ले लिया और उसे जाने दिया। जब राजा नगर में आया, तो उसने उपस्थित मंत्री को मामला बताया और पूछा कि क्या किया जाना चाहिए।

"क्या कोई समय सीमा तय की गई थी, हे राजा?" "नहीं।" "जब आपने यह तय किया था तब तो गलत था; लेकिन कोई बात नहीं, जेल में बहुत से लोग हैं।" "तो आप इस मामले को संभालिए और मुझे जीवनदान दीजिए।" मंत्री मान गया और प्रतिदिन जेल से एक आदमी को निकालकर बिना कुछ बताए चावल की थाली के साथ यक्ष (राक्षस) के पास भेज देता था। यक्ष (राक्षस) चावल और मनुष्य दोनों को खा जाता है। कुछ समय बाद जेलें खाली हो गईं। राजा को चावल ले जाने वाला कोई नहीं मिला, तो वह मृत्यु के भय से कांप उठा। मंत्री ने उन्हें दिलासा देते हुए कहा, "हे राजा, धन की लालसा जीवन की लालसा से प्रबल होती है: आइए हम एक हाथी की पीठ पर एक हजार सिक्कों का एक पैकेट रखें और ढोल बजाकर घोषणा करें, 'कौन चावल लेकर यक्ष (राक्षस) के पास जाएगा और यह धन लाएगा?'" और उन्होंने ऐसा ही किया। बोधिसत्व ने सोचा, "मुझे मजदूरी के रूप में कुछ पैसे और आधे पैसे मिलते हैं और मैं मुश्किल से अपनी माँ का भरण-पोषण कर पाता हूँ: मैं यह धन लाकर उन्हें दे दूँगा, और फिर यक्ष (राक्षस) के पास जाऊँगा: यदि मैं उसे हरा सकूँ, तो अच्छा है, और यदि नहीं तो वह आराम से जीवन व्यतीत करेंगी।" उन्होंने अपनी माँ को यह बताया, लेकिन उन्होंने कहा, "मेरे पास पर्याप्त है, प्रिय, मुझे धन की आवश्यकता नहीं है," और इस प्रकार उन्हें दो बार रोका; लेकिन तीसरी बार बिना उनसे पूछे, उन्होंने कहा, "महोदय, हजार सिक्के लाएँ, मैं चावल ले जाऊँगा।" तो उन्होंने अपनी माँ को हजार सिक्के दिए और कहा, "चिंता मत करो, प्रिय; मैं यक्ष (राक्षस) पर विजय प्राप्त करूँगा और लोगों को सुख दूँगा: मैं तुम्हारे आँसू भरे चेहरे पर मुस्कान लाऊँगा," और उसे प्रणाम करते हुए वह राजा के आदमियों के साथ राजा के पास गया और वहाँ खड़ा हो गया। राजा ने कहा, "मेरे भले, क्या तुम चावल लोगे?" "जी हाँ, महाराज।" "तुम अपने साथ क्या लोगे?" "आपकी सोने की चप्पलें, महाराज।" "क्यों?" "हे महाराज, वह यक्ष (राक्षस) पेड़ की तलहटी में खड़े सभी लोगों को खा जाता है: मैं चप्पलों पर खड़ा रहूँगा, उसकी ज़मीन पर नहीं।" "और कुछ?" "आपका छाता, महाराज।" "क्यों?" "हे महाराज, वह

यक्ष (राक्षस) अपने ही पेड़ की छाया में खड़े सभी लोगों को खा जाता है: मैं छाते की छाया में खड़ा रहूँगा, उसके पेड़ की नहीं।" "और कुछ?" "आपकी तलवार, महाराज।" "किस उद्देश्य से?" "हे महाराज, यहाँ तक कि जिन्नों के हाथों में हथियार होते हैं, उनसे तो राक्षस भी डरते हैं।" "और कुछ?" "आपका सोने का कटोरा, महाराज, जो आपके चावलों से भरा हो।" "अपने चावल लाओ।" "क्यों, महाराज?" "मुझ जैसे बुद्धिमान व्यक्ति के लिए मिट्टी के बर्तन में मोटा भोजन करना उचित नहीं है।" राजा मान गए और उन्होंने अधिकारियों को भेजकर बोधिसत्व की सभी माँगें पूरी करवाईं। बोधिसत्व ने कहा, "हे महाराज, चिंता न करें, मैं आज यक्ष (राक्षस) पर विजय प्राप्त करके और आपको सुख प्रदान करके वापस आऊँगा," और इसलिए आवश्यक वस्तुएँ लेकर उस स्थान पर जाकर, उन्होंने वृक्ष के कुछ दूर सामने सैनिकों को तैनात किया, सोने की चप्पलें पहनीं, तलवार को सुरक्षित रखा और अपने सिर पर सफेद छत्र डाला।और सोने की थाली में चावल लेकर वह यक्ष (राक्षस) के पास गया। सड़क पर देख रहे यक्ष (राक्षस) ने उसे देखा और सोचा, "यह आदमी वैसे नहीं आया जैसे पहले आते थे, क्या कारण है?" बोधिसत्व पेड़ के पास आकर तलवार की नोक से चावल की थाली को छाया में धकेल दिया, और छाया के पास खड़े होकर पहला श्लोक बोला:-

राजा ने आपके लिए मांस के साथ अच्छी तरह से पका हुआ और मसालेदार चावल भेजा है:
यदि मखादेव घर पर हैं, तो उन्हें आने दीजिए और भोजन करने दीजिए!
उसकी बात सुनकर यक्ष (राक्षस) ने सोचा, "मैं उसे छल करूंगा और जब वह छाया में आएगा तो उसे खा जाऊंगा," और इस प्रकार उसने दूसरा श्लोक कहा:-

अंदर आओ, युवक, अपना मसालेदार भोजन लेकर।
यह और तुम, युवक, दोनों का खाना अच्छा है।
तब बोधिसत्व ने दो श्लोक कहे:-

यक्खा (राक्षस), तुम एक छोटी सी चीज के लिए एक बड़ी चीज खो दोगे।
मृत्यु से भयभीत पुरुष बिल्कुल भी भोजन नहीं लाएंगे।
आपको भरपूर खुशी मिलेगी।
शुद्ध, मधुर और आपके मन को भाने वाला स्वाद:
लेकिन इसे यहाँ लाने वाला एक आदमी,
अगर तुम मुझे खाओगे तो तुम्हें ढूंढना मुश्किल होगा।
यक्ष (राक्षस) ने सोचा, "युवक ने समझदारी की बात कही है," और मित्रता भाव से उसने दो श्लोक कहे:-

युवा सुताना, मेरी रुचियां स्पष्ट रूप से वैसी ही हैं जैसा आपने दिखाया है:
फिर शांति से अपनी मां से मिलें, मैं आपको जाने की अनुमति देता हूं।
हे युवक, तलवार, छाता और थाली लेकर अपने मार्ग पर चल।
अपनी मां से खुशी-खुशी मिलें और उनके जीवन में खुशियां लाएं।
यक्ष (राक्षस) के शब्दों को सुनकर बोधिसत्व प्रसन्न हुए और सोचने लगे, "मेरा कार्य पूरा हो गया, यक्ष (राक्षस) पर विजय प्राप्त हो गई, बहुत धन प्राप्त हुआ और राजा का वचन सिद्ध हो गया।" यक्ष (राक्षस) को धन्यवाद देते हुए उन्होंने अंतिम श्लोक कहा:

हे यक्ष (राक्षस), तुम अपने सभी मित्रों और परिवार के साथ खूब सुखी रहो।
राजा के आदेश का पालन किया गया है, और मुझे धन प्राप्त हुआ है।
अतः उसने यक्ष (राक्षस) को फटकारते हुए कहा, "मित्र, तूने पुराने समय में बुरे कर्म किए, तू क्रूर और निर्दयी था, तूने दूसरों का मांस और रक्त खाया, इसीलिए तू यक्ष (राक्षस) के रूप में जन्मा: अब से हत्या या इस प्रकार का कोई भी काम मत करना।" इस प्रकार उसने यक्ष (राक्षस) को पुण्य के आशीर्वाद और पाप के कष्टों के बारे में बताते हुए उसे पाँच गुणों में स्थापित किया: फिर उसने कहा, "जंगल में क्यों रहते हो? आओ, मैं तुझे नगर द्वार पर बसाऊँगा और तुझे उत्तम चावल दिलाऊँगा।" अतः वह यक्ष (राक्षस) को तलवार और अन्य वस्तुएँ देकर उसके साथ बनारस चला गया। उन्होंने राजा को बताया कि सूतना यक्ष (राक्षस) के साथ आया है। राजा अपने मंत्रियों के साथ बोधिसत्व से मिलने निकला, उसने यक्ष (राक्षस) को नगर द्वार पर ठहराया और उसे सर्वोत्तम चावल दिलवाए; फिर वह नगर में प्रवेश किया, ढोल बजाकर घोषणा की और नगरवासियों की सभा बुलाकर बोधिसत्व की स्तुति की तथा उन्हें सेना का नेतृत्व सौंप दिया; स्वयं बोधिसत्व की शिक्षाओं में स्थापित हुआ, दान-पुण्य और अन्य सद्गुणों का पालन किया और स्वर्ग के लिए नियत हो गया।

पाठ के बाद, गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई:- सत्यों के बाद, अपनी माता का सहारा देने वाले भाई (भिक्षु) प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की सिद्धि में स्थापित हुए:- "उस समय यक्ष (राक्षस) अंगुलिमाला था, राजा आनंद, और मैं स्वयं युवक था।"

फुटनोट:

(1) संख्या 540

(2) यक्षों का राजा।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **गिज्जा-जातक2**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-399-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 399
गिज्जा जातक

"बुजुर्गों का क्या होगा," इत्यादि - गुरु ने ये बातें जेतवन मठ में रहते हुए एक भिक्षु के बारे में बताईं, जो अपनी माँ का भरण-पोषण करता था।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्य था, तब बोधिसत्व का जन्म एक गिद्ध के गर्भ से हुआ। बड़े होकर उन्होंने अपने माता-पिता को, जो अब बूढ़े और कमजोर आँखों वाले थे, एक गिद्ध की गुफा में रखा और उन्हें गाय का मांस और इसी तरह के अन्य जानवर खिलाकर उनका पेट भरते थे। उसी समय एक शिकारी बनारस के एक कब्रिस्तान के चारों ओर गिद्धों के लिए जाल बिछाता था। एक दिन मांस की तलाश में बोधिसत्व कब्रिस्तान आए और उनका पैर जाल में फंस गया। उन्होंने अपने बारे में नहीं सोचा, बल्कि अपने बूढ़े माता-पिता को याद किया। "मेरे माता-पिता अब कैसे जिएंगे? मुझे लगता है कि वे मर जाएंगे, इस बात से अनजान कि मैं फंसा हुआ हूँ, असहाय और निर्धन, उस पहाड़ी गुफा में धीरे-धीरे कमजोर होता जा रहा हूँ।" इस प्रकार शोक करते हुए उन्होंने पहला श्लोक कहा:

अब पहाड़ की गुफा में बुजुर्ग लोग अपना गुजारा कैसे करेंगे?
क्योंकि मैं एक जाल में फंसा हुआ हूँ, क्रूर नीलिया का गुलाम हूँ।
एक शिकारी के बेटे ने, उसके विलाप को सुनकर, दूसरा छंद बोला, गिद्ध ने तीसरा छंद बोला, और इसी तरह बारी-बारी से:-

गिद्ध, तुम्हारे ये कौन से विचित्र विलाप हैं जो मेरे कानों तक पहुँच रहे हैं?
मैंने कभी किसी ऐसे पक्षी को न तो सुना है और न ही देखा है जो मनुष्यों की तरह बोलता हो।
मैं एक पहाड़ी गुफा में अपने वृद्ध माता-पिता की देखभाल करता हूँ।
अब जब मैं तुम्हारा गुलाम बन गया हूँ, तो बूढ़े लोग कैसे गुजारा करेंगे?
एक गिद्ध सौ मील (4.23 किमी) की दूरी पर सड़ते हुए मांस को देखता है;
इतनी नज़दीक मौजूद जाल और फंदे को आप क्यों नहीं देख पा रहे हैं?
जब किसी व्यक्ति पर विपत्ति आ पड़ती है, और भाग्य उसकी मृत्यु की मांग करता है,
वह अपने इतने करीब होने के बावजूद भी फंदे या जाल को देखने में विफल रहता है।
जाओ, पहाड़ों में बनी उनकी गुफा में अपने वृद्ध माता-पिता की देखभाल करो।
जाओ, शांति से उनसे मिलो, मेरी ओर से तुम्हें वो विदाई मिलेगी जिसकी तुम्हें चाहत है।
हे शिकारी, तुम्हें अपने सभी मित्रों और परिवार के साथ सुख मिले।
मैं अपने वृद्ध माता-पिता की देखभाल करूंगा, जो पहाड़ों में बनी अपनी गुफा में रहते हैं।
तब बोधिसत्व, मृत्यु के भय से मुक्त होकर, प्रसन्नतापूर्वक धन्यवाद देते हुए और अंतिम श्लोक बोलते हुए, अपने निवाले में से मांस लेकर चले गए और उसे अपने माता-पिता को दे दिया।

पाठ के बाद, गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई:- सत्यों के बाद, भाई (भिक्षु) प्रथम मार्ग (समाधि) की सिद्धि में स्थापित हो गए:- "उस समय, शिकारी चन्ना था, माता-पिता राजा का परिवार थे, और मैं स्वयं गिद्ध-राजा था।"

पिछला <<<<-----||-400-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 400
दब्बपुप्प-जातक

“मित्र अनुतिराचारी,” इत्यादि—गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए शाक्य वंश (बुद्ध के कुल) के उपनंद के विषय में यह वृत्तांत सुनाया। उपनंद ने धर्म की दीक्षा तो ली, पर संतोष और अन्य सुख-सुविधाओं का त्याग कर अत्यंत लोभी हो गया। वर्षा ऋतु के आरंभ में उसने दो-तीन मठों में ठहरकर देखा, कभी छाता तो कभी जूता, कभी लाठी तो कभी घड़ा छोड़कर वह स्वयं एक में रहने लगा। वर्षा ऋतु की शुरुआत में उसने एक ग्रामीण मठ में ठहरकर कहा, “भिक्षुओं को संतोषपूर्वक जीवन व्यतीत करना चाहिए।” उसने भिक्षुओं को, मानो आकाश में चंद्रमा का उदय कर रहा हो, संतोष की दिव्य अवस्था का मार्ग समझाया और आवश्यक वस्तुओं से संतुष्ट रहने की प्रशंसा की। यह सुनकर भिक्षुओं ने अपने सुंदर वस्त्र और पात्र त्याग दिए और मिट्टी के घड़े तथा चिथड़े ओढ़ लिए। उसने अन्य भिक्षुओं को अपने में ठहराया और वर्षा ऋतु और पवाराना उत्सव समाप्त होने पर एक गाड़ी भरकर जेतवन मठ चला गया। रास्ते में, जंगल में एक मठ के पीछे, अपने पैरों को लताओं से लपेटते हुए और यह कहते हुए कि, "यहाँ कुछ न कुछ तो ज़रूर मिलेगा," वह मठ में प्रवेश कर गया। दो वृद्ध भिक्षुओं ने वहाँ वर्षा ऋतु बिताई थी: उन्हें दो मोटे लबादे और एक बढ़िया कंबल मिला था, और क्योंकि वे उन्हें आपस में बाँट नहीं सकते थे, इसलिए उन्हें देखकर प्रसन्न हुए, यह सोचकर कि, "यह वरिष्ठ भिक्षु इन्हें हमारे बीच बाँट देंगे," और कहा, "महोदय, हम इसे, जो वर्षा ऋतु के वस्त्र हैं, बाँट नहीं सकते; इस पर हमारा विवाद है, क्या आप इसे हमारे बीच बाँट देंगे?" वह मान गया और उन्हें दो मोटे लबादे देकर कंबल ले लिया और कहा, "यह मुझे मिलता है, जो अनुशासन के नियमों को जानता हूँ," और चला गया। ये वरिष्ठ भिक्षु, जिन्हें कंबल बहुत प्रिय था, उसके साथ जेतवन मठ गए और नियमों को जानने वाले भिक्षुओं को यह बात बताई और कहा, "क्या नियमों को जानने वालों के लिए इस तरह लूट का माल खाना उचित है?" भिक्षुओं ने जब वरिष्ठ भिक्षु उपनंद द्वारा लाए गए वस्त्रों और कुंडों का ढेर देखा, तो उन्होंने कहा, “महोदय, आपने बहुत पुण्य कमाया है, आपने बहुत भोजन और वस्त्र अर्जित किए हैं।” उपनंद ने कहा, “महोदय, मेरा पुण्य कहाँ है? मैंने तो यह सब फलाँ-फलाँ तरीके से अर्जित किया है,” और सबको यही बताया। सत्य के हॉल में सबने आपस में चर्चा शुरू कर दी, “महोदय, शाक्य वंश का उपनंद बहुत लालची और लोभी है।” गुरु ने उनकी बात समझकर कहा, “भाइयों (भिक्षुओं), उपनंद के कर्म उन्नति के लिए उपयुक्त नहीं हैं; जब कोई भिक्षु (भिक्षु) दूसरे को उन्नति का उपदेश देता है, तो उसे पहले स्वयं उचित कर्म करके देखना चाहिए और फिर दूसरों को उपदेश देना चाहिए।”

सर्वप्रथम स्वयं को धार्मिकता में स्थापित करो।
फिर सिखाओ; बुद्धिमानों को स्वार्थपरक नहीं होना चाहिए।
धम्मपद के इस श्लोक के द्वारा उन्होंने धर्म का मार्ग दिखाया और कहा, "भाइयों (भिक्षुओं), उपनंद पहली बार लालची नहीं है; वह पहले भी लालची था और उसने पहले भी लोगों की संपत्ति लूटी थी": और इस प्रकार उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्याभिषेक था, तब बोधिसत्व नदी के किनारे एक वृक्ष-आत्मा के रूप में विराजमान थे। मायावी नामक एक सियार ने विवाह किया और उसी नदी के किनारे रहने लगी। एक दिन उसकी साथी ने उससे कहा, "पतिदेव, मुझे एक तीव्र इच्छा हुई है: मुझे ताज़ी रोहिता मछली खाने की इच्छा है।" उन्होंने कहा, "चिंता मत करो, मैं तुम्हारे लिए लाता हूँ," और नदी के किनारे लताओं से अपने पैर लपेटकर चलने लगे। उसी क्षण, दो ऊदबिलाव, गंभीराचारी और अनुतिराचारी, मछली की तलाश में नदी के किनारे खड़े थे। गंभीराचारी ने एक बड़ी रोहिता मछली देखी और पानी में कूदकर उसकी पूंछ पकड़ ली। मछली बलवान थी और उसे घसीटते हुए चली गई। उन्होंने दूसरे को पुकारा, "यह बड़ी मछली हम दोनों के लिए पर्याप्त होगी, आओ और मेरी सहायता करो," और इस प्रकार पहला श्लोक बोला:-

मेरे मित्र अनुतिराकारी, मेरी सहायता के लिए शीघ्र आओ, मैं आपसे विनती करता हूँ:
मैंने एक बड़ी मछली पकड़ी है, लेकिन वह मुझे जबरदस्ती अपने साथ ले जा रहा है।
उसकी बात सुनकर दूसरे ने दूसरा श्लोक बोला:-

गंभीराकारी, आपको सौभाग्य मिले! आपकी पकड़ दृढ़ और मजबूत हो।

और जैसे एक रोक पक्षी सांप को उठाता है, वैसे ही मैं इस साथी को बाहर निकाल लूंगा।
फिर उन दोनों ने मिलकर रोहिता मछली को निकाला, उसे जमीन पर रखा और मार डाला; परन्तु एक दूसरे से "तुम इसे बाँट लो" कहते हुए वे झगड़ पड़े और उसे बाँट नहीं सके; इसलिए उसे वहीं छोड़कर बैठ गए। उसी क्षण सियार वहाँ आया। उसे देखकर दोनों ने उसे प्रणाम किया और कहा, "हे भूरे घास के स्वामी, इस मछली को हम दोनों ने मिलकर पकड़ा था: हम इसे बाँट नहीं सके इसलिए झगड़ा हुआ: क्या आप इसे बराबर बाँटकर अलग कर देंगे?" (तीसरा श्लोक कहते हुए)

हमारे बीच विवाद उत्पन्न हो गया, देखो! हे घास के रंग वाले!
महोदय, कृपया हमारे विवाद का निष्पक्ष निपटारा करें।
उनकी बातें सुनकर सियार ने अपनी शक्ति का बखान करते हुए कहा:-

मैंने कई मामलों में मध्यस्थता की है और शांतिपूर्ण तरीके से ऐसा किया है:
महोदय, आपके इस विवाद का निष्पक्ष निपटारा मैं कर लूँगा।
उस श्लोक को बोलने और विभाजन करने के बाद, उन्होंने यह श्लोक बोला:-

पूँछ, अनुतिराकारी; गंभीराचारी, प्रमुख:
मध्यस्थ को उचित भुगतान किया जाएगा।
मछली को दो भागों में बाँटकर उसने कहा, "तुम बिना झगड़ा किए सिर और पूंछ खा लो," और बीच का हिस्सा अपने मुँह में लेकर वह उनकी आँखों के सामने से भाग गया। वे उदास होकर बैठ गए, मानो उन्होंने अपने हज़ार टुकड़े खो दिए हों, और उन्होंने छठा श्लोक बोला:-

लेकिन हमारे विवाद के कारण ही यह हमारे लिए लंबे समय तक पर्याप्त साबित हुआ:
लेकिन अब सियार मछली ले जाता है और हमें सिर और पूंछ समेत छोड़ देता है।
सियार प्रसन्न हुआ और यह सोचकर कि "अब मैं अपनी पत्नी को रोहिता मछली खिलाऊंगा," वह उसके पास गया। उसने उसे आते देखा और प्रणाम करते हुए एक श्लोक कहा:-

जिस प्रकार एक राजा किसी राज्य को अपने शासन में शामिल करने पर प्रसन्न होता है,
इसलिए मुझे आज अपने प्रभु को मुँह भरकर खाते हुए देखकर खुशी हो रही है।
फिर उसने उससे प्राप्ति के साधनों के बारे में पूछा और एक श्लोक बोला:-

तुम तो जमीन के प्राणी हो, पानी से मछली कैसे पकड़ ली?
हे स्वामी, आपने यह चमत्कार कैसे किया? मैं आपसे निवेदन करता हूँ, मेरी इच्छा का उत्तर दीजिए।
सियार ने उसे साधन समझाते हुए अगला श्लोक कहा:-

विवाद से ही उनकी कमजोरी उत्पन्न होती है, विवाद से ही उनके साधन नष्ट होते हैं।
विवाद के चलते ऊदबिलावों ने अपना इनाम खो दिया: मायावी, शिकार को खाओ।
बुद्ध की पूर्ण बुद्धि द्वारा उच्चारित एक और श्लोक है:-

फिर भी जब पुरुषों के बीच विवाद उत्पन्न होता है,
वे एक मध्यस्थ की तलाश करते हैं: तब वही नेता होता है:
उनकी संपत्ति कम होती जाती है, और राजा का खजाना भरता जाता है।

पाठ के बाद, गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: "उस समय सियार उपनंद था, ऊदबिलाव दो बूढ़े व्यक्ति थे, और कारण देखने वाला वृक्ष-आत्मा मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **दशाननक-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

जातक क्रमांक 401
दशान्नक-जातक

“दासन्ना की उत्तम तलवार,” इत्यादि — गुरु ने ये कथा जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जब एक भिक्षु गृहस्थ था और उसकी पत्नी ने उसे बहकाया था। भिक्षु ने स्वीकार किया कि वह इसी कारण पथभ्रष्ट हो रहा था। गुरु ने कहा, “वह स्त्री तुम्हें हानि पहुँचा रही है: पहले भी तुम उसके कारण मानसिक रोग से मर रहे थे, और ज्ञानी पुरुषों के कारण जीवन पाया,” और इस प्रकार उन्होंने एक प्राचीन कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में महान राजा मद्दवा का शासन था, तब एक ब्राह्मण परिवार में बोधिसत्व का जन्म हुआ। उनका नाम युवा सेनाक रखा गया। बड़े होकर उन्होंने तक्षशिला में सभी विद्याओं की शिक्षा प्राप्त की और बनारस लौटकर राजा मद्दवा के सांसारिक और आध्यात्मिक मामलों के सलाहकार बन गए। बुद्धिमान सेनाक कहलाने के कारण वे पूरे शहर में सूर्य या चंद्रमा के समान पूजनीय थे। राजा के गृह पुरोहित का पुत्र राजा से मिलने आया और सभी आभूषणों से सजी और अत्यंत सुंदर रानी को देखकर मोहित हो गया। घर जाकर वह बिना भोजन किए लेट गया। उसके साथियों ने उससे पूछताछ की और उसने उन्हें सारी बात बताई। राजा ने कहा, "गृह पुरोहित का पुत्र दिखाई नहीं दे रहा, क्या बात है?" कारण सुनकर उन्होंने उसे बुलवाया और कहा, "मैं उसे सात दिनों के लिए तुम्हें सौंपता हूँ, इन दिनों को अपने घर में बिताओ और आठवें दिन उसे वापस भेज दो।" उसने कहा, "ठीक है," और उसे अपने घर ले जाकर उसके साथ आनंद मनाया। वे एक-दूसरे के प्रति आकर्षित हो गए और इसे गुप्त रखते हुए वे घर के द्वार से भाग निकले और दूसरे राजा के देश में आ गए। किसी को भी उस स्थान का पता नहीं था जहाँ वे गए थे, और उनका मार्ग किसी जहाज के मार्ग की तरह था। राजा ने पूरे शहर में ढोल बजाकर घोषणा की, और अनेक मार्गों से खोज करने के बावजूद वह उस स्थान को नहीं पा सका जहाँ वह गई थी। तब उसे उसके लिए गहरा शोक हुआ: उसका हृदय प्रचंड हो गया और रक्त बहने लगा: उसके बाद उसकी अंतड़ियों से रक्त बहने लगा, और उसकी बीमारी गंभीर हो गई। महान राजचिकित्सक भी उसे ठीक नहीं कर सके। बोधिसत्व ने सोचा, "रोग राजा में नहीं है, वह अपनी पत्नी को न देख पाने के कारण मानसिक रूप से बीमार है: मैं उसे एक विशेष उपाय से ठीक करूँगा"; अतः उसने राजा के बुद्धिमान सलाहकारों, आयुरा और पुक्कुसा को निर्देश देते हुए कहा, "राजा को रानी से न मिलने के कारण मानसिक रोग के अलावा कोई और बीमारी नहीं है। अब वह हमारे लिए एक महान सहायक है और हम उसे एक विशेष उपाय से ठीक करेंगे: हम महल के प्रांगण में एक सभा आयोजित करेंगे और एक ऐसे व्यक्ति को, जो तलवार निगलना जानता हो, उससे तलवार निगलवाएंगे। हम राजा को एक खिड़की पर बिठाएंगे और उसे सभा पर नीचे देखने के लिए कहेंगे। तलवार निगलते हुए उस व्यक्ति को देखकर राजा पूछेगा, "क्या इससे कठिन कुछ है?" तब, हे मेरे स्वामी आयुरा, आप उत्तर दें, "यह कहना कि 'मैं फलां वस्तु का त्याग करता हूँ' इससे भी कठिन है।" तब वह आपसे, हे मेरे स्वामी पुक्कुसा, पूछेगा और आप उत्तर दें, "हे राजा, यदि कोई व्यक्ति कहता है, 'मैं फलां वस्तु का त्याग करता हूँ' और उसे नहीं देता, तो उसका वचन व्यर्थ है; ऐसे शब्दों से कोई जीवित नहीं रहता, खाता नहीं, पीता नहीं; परन्तु जो उस वचन के अनुसार कार्य करते हैं और अपने वादे के अनुसार वस्तु देते हैं, वे दूसरे से भी कठिन कार्य करते हैं। तब मैं आगे क्या करना है, यह सोचूंगा।" अतः उसने एक सभा बुलाई। फिर वे तीन ज्ञानी पुरुष राजा के पास गए और उनसे कहा, “हे महाराज, राजमहल के प्रांगण में एक सभा हो रही है; यदि लोग उसे देखें तो उनका दु:ख आनन्द में बदल जाता है, आइए हम वहाँ चलें।” अतः वे राजा को अपने साथ ले गए।खिड़की खोलकर उसने नीचे सभा को देखा। कई लोग अपनी-अपनी कला का प्रदर्शन कर रहे थे, जिसे वह जानता था: और एक आदमी तैंतीस इंच लंबी और तेज धार वाली तलवार निगल रहा था। उसे देखकर राजा ने सोचा, "यह आदमी तलवार निगल रहा है, मैं इन बुद्धिमानों से पूछूंगा कि क्या इससे भी कठिन कुछ है?": इसलिए उसने अयुरा से पूछा, और पहला श्लोक बोला:-

(*1)दासन्ना की उत्तम तलवार रक्त की प्यासी है, उसकी धार उत्तम रूप से तेज की गई है:
फिर भी भीड़ के बीच वह इसे सह लेता है: इससे कठिन कार्य और कोई नहीं हो सकता:
मैं पूछता हूँ कि क्या इससे कठिन कुछ है? मैं आपसे निवेदन करता हूँ, मुझे उत्तर दीजिए। तब उन्होंने उत्तर में दूसरा श्लोक कहा:-
लालच मनुष्य को पूरी तरह से तेज की गई तलवारें भी निगलने के लिए प्रेरित कर सकता है:
लेकिन "मैं इसे स्वेच्छा से देता हूँ" कहना कहीं अधिक कठिन कार्य होगा;
बाकी सब कुछ आसान है; महाराज मगध, मैंने आपको उत्तर दे दिया है।
जब राजा ने बुद्धिमान आयुरा के शब्द सुने, तो उसने सोचा, "तो फिर 'मैं यह वस्तु देता हूँ' कहना तलवार निगलने से भी कठिन है: मैंने कहा, 'मैं अपनी रानी को पुजारी के पुत्र को देता हूँ': मैंने बहुत कठिन कार्य किया है": और इस प्रकार उसके हृदय का दु:ख थोड़ा कम हो गया। फिर यह सोचते हुए, "क्या 'मैं यह वस्तु किसी दूसरे को देता हूँ' कहने से भी कठिन कुछ है?" उसने बुद्धिमान पुक्कुसा से बात की और तीसरा श्लोक कहा:-

आयुरा ने मेरे प्रश्न का उत्तर दे दिया है, वह दर्शनशास्त्र के सभी पहलुओं में पारंगत है:
पुक्कुसा, मैं अब यह सवाल पूछता हूं, क्या इससे भी कठिन कोई उपलब्धि हो सकती है?

क्या इससे भी कठिन कुछ और हो सकता है? कृपया उत्तर दें।
बुद्धिमान पुक्कुसा ने उसे उत्तर देते हुए चौथा श्लोक कहा:-

मनुष्य शब्दों से नहीं जीता, न ही व्यर्थ बोले गए शब्दों से।
लेकिन दान देना और उस पर पछतावा न करना, यह उससे भी बड़ी उपलब्धि होगी:
बाकी सब कुछ आसान है; महाराज मगध, मैंने आपको उत्तर दे दिया है।
यह सुनकर राजा ने सोचा, “मैंने पहले कहा था, ‘मैं रानी को पुरोहित के पुत्र को दे दूंगा,’ और फिर मैंने अपने वचन के अनुसार उसे दे दिया: निश्चय ही मैंने एक कठिन कार्य किया है।” इससे उसका दुःख कुछ कम हुआ। फिर उसके मन में आया, “बुद्धिमान सेनाक से बढ़कर कोई बुद्धिमान नहीं है, मैं यह प्रश्न उनसे पूछूंगा।” और उनसे पूछकर उन्होंने पाँचवाँ श्लोक कहा:-

पुक्कुसा ने मेरे प्रश्न का उत्तर दे दिया है, वह दर्शनशास्त्र के सभी पहलुओं में पारंगत हैं:
सेनाका, मैं अब यह सवाल पूछता हूं, क्या इससे भी कठिन कोई उपलब्धि हो सकती है?
क्या इससे भी कठिन कुछ और हो सकता है? कृपया उत्तर दें।
तब सेनाका ने उसके उत्तर में छठा श्लोक कहा:-

यदि कोई व्यक्ति दान के रूप में छोटी या बड़ी कोई वस्तु दान करे,
और बाद में देने पर पछतावा भी न हो: इससे भी कठिन कार्य होगा:
बाकी सब कुछ आसान है: महाराज मगध, मैंने आपको उत्तर दे दिया है।
बोधिसत्व के वचन सुनकर राजा ने मन ही मन सोचा, “मैंने अपनी इच्छा से रानी को पुरोहित के पुत्र को सौंप दिया; अब मैं अपने विचारों पर नियंत्रण नहीं रख पा रहा, मैं शोक में व्याकुल और कमजोर हो रहा हूँ; यह मेरे योग्य नहीं है। यदि वह मुझसे प्रेम करती तो अपना राज्य छोड़कर भाग न जाती; जब उसने मुझसे प्रेम नहीं किया बल्कि भाग गई, तो मुझे उससे क्या लेना-देना?” ऐसा सोचते ही उसका सारा दुःख कमल के पत्ते पर पानी की बूँद की तरह बह गया और विलीन हो गया। उसी क्षण उसके अंतर्मन को शांति मिली। वह स्वस्थ और प्रसन्न हुआ और बोधिसत्व की स्तुति करते हुए अंतिम श्लोक बोला:-

आयुरा ने प्रश्न का उत्तर दिया, पुक्कुसा भी अच्छा था:
ज्ञानी सेनाका के वचन सभी उत्तरों में श्रेष्ठ हैं।
और इस प्रशंसा के बाद उसने प्रसन्नतावश उसे बहुत धन-दौलत दे दी।

पाठ के बाद, गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के बाद, पथभ्रष्ट भाई (भिक्षु) प्रथम मार्ग (समाधि) की सिद्धि में स्थापित हुए: "उस समय रानी उनके गृहस्थ जीवन की पत्नी थीं, राजा पथभ्रष्ट भाई थे, आयुरा मोग्गल्याना थे, पुक्कुसा सारिपुत्र थे, और बुद्धिमान सेनाक मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) मध्य भारत में राज्य, जाहिरा तौर पर तलवार बनाने की कला का केंद्र।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सत्तुभस्ता-जातक**
__स्रोत__: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।

पिछला <<<<-----||-402-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 402
सत्तुभास्त जातक

“तुम भ्रमित हो,” इत्यादि—गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए, ज्ञान की पूर्णता के विषय में यह कहा था। इस कथा का उल्लेख उम्मग्ग-जन्म में मिलेगा। (*1)

एक समय बनारस में जनक नामक राजा का शासन था। उसी समय बोधिसत्व का जन्म एक ब्राह्मण परिवार में हुआ और उनका नाम युवा सेनाक रखा गया। बड़े होकर उन्होंने तक्षशिला में सभी विद्याओं की शिक्षा प्राप्त की और बनारस लौटकर राजा से मिले। राजा ने उन्हें मंत्री पद पर नियुक्त किया और उनका बहुत सम्मान किया। उन्होंने राजा को सांसारिक और आध्यात्मिक दोनों प्रकार की शिक्षाएँ दीं। धर्म के मार्ग के एक मधुर उपदेशक होने के नाते, उन्होंने राजा को पंच नियमों, दान, व्रत और दस प्रकार के सही कर्मों का पालन करना सिखाया और इस प्रकार उन्हें सद्‌गुण के मार्ग पर स्थापित किया। पूरे राज्य में ऐसा लग रहा था मानो बुद्धों का आगमन हो रहा हो। पखवाड़े के व्रत के दिन राजा, वायसराय और अन्य सभी एकत्रित होते और सभा स्थल को सजाते। बोधिसत्व ने एक सजे-धजे कक्ष में, हिरण की खाल के पलंग पर बैठकर, बुद्ध के समान शक्ति से धर्म का उपदेश दिया और उनके वचन बुद्धों के उपदेश के समान थे। फिर एक बूढ़े ब्राह्मण ने भिक्षा मांगते हुए एक हजार सिक्के जमा किए। उसने उन्हें एक ब्राह्मण परिवार में छोड़ दिया और फिर भिक्षा मांगने चला गया। उसके लौटने पर उस परिवार ने उसके सारे सिक्के खर्च कर दिए। वह वापस आया और अपने सिक्के मंगवाने लगा। ब्राह्मण उन्हें सिक्के नहीं दे सका, इसलिए उसने अपनी बेटी से उसकी शादी करवा दी। दूसरे ब्राह्मण ने उसे अपने साथ ले लिया और बनारस के पास ही एक ब्राह्मण गांव में रहने लगा। उसकी कम उम्र के कारण उसकी पत्नी की इच्छाएं अतृप्त रहीं और उसने एक दूसरे युवा ब्राह्मण के साथ पाप किया। सोलह ऐसी चीजें हैं जिनसे कभी संतुष्टि नहीं मिलती: और ये सोलह चीजें क्या हैं? समुद्र सभी नदियों से संतुष्ट नहीं होता, न ही अग्नि ईंधन से, न ही राजा अपने राज्य से, न ही मूर्ख पापों से, न ही स्त्री तीन चीजों - संभोग, श्रृंगार और संतानोत्पत्ति - से, न ही ब्राह्मण पवित्र ग्रंथों से, न ही ऋषि समाधि जैसी ध्यान साधना से, न ही शिष्य (*2) सम्मान से, न ही इच्छामुक्त व्यक्ति तपस्या से, न ही बलवान पुरुष ऊर्जा से, न ही वाचाल व्यक्ति वाणी से, न ही चतुर व्यक्ति परिषद से, न ही विश्वासी भिक्षुओं के संघ की सेवा से, न ही उदार व्यक्ति दान देने से, न ही विद्वान विधि-विधान सुनने से, और न ही चारों संघ (*3) बुद्ध के दर्शन से। अतः यह ब्राह्मण स्त्री संभोग से असंतुष्ट होकर अपने पति को त्याग कर निर्भीकता से पाप करना चाहती थी। एक दिन अपने इस बुरे इरादे से वह लेट गई। जब उसने पूछा, "कैसी हो पत्नी?" तो उसने उत्तर दिया, "ब्राह्मण, मैं आपके घर का काम नहीं कर सकती, मेरे लिए एक दासी ला दीजिए।" "पत्नी, मेरे पास पैसे नहीं हैं, मैं उसे पाने के लिए क्या दूं?" "भिक्षा मांगकर पैसे जुटाओ और उसे ले आओ।" "तो पत्नी, मेरे सफर के लिए कुछ तैयार करो।" उसने चमड़े के थैले में पका और कच्चा आटा भरकर उसे दे दिया। ब्राह्मण गांवों, कस्बों और शहरों से होते हुए सात सौ टुकड़े इकट्ठा कर लाया और यह सोचकर कि "इससे तो नर और मादा दास खरीदे जा सकते हैं," वह अपने गांव लौट रहा था: पानी के लिए सुविधाजनक एक जगह पर उसने अपना थैला खोला।भोजन करने के बाद वह मुंह बांधे बिना पानी पीने नीचे गया। तभी एक खोखले पेड़ में रहने वाला काला सांप भोजन की गंध सूंघकर थैले में घुस गया और कुंडली मारकर भोजन खाने लगा। ब्राह्मण आया और बिना अंदर देखे ही थैले को बांधकर अपने कंधे पर रखकर चला गया। तभी पेड़ के खोखले तने में बैठी एक आत्मा ने रास्ते में उससे कहा, "ब्राह्मण, यदि तुम रास्ते में रुकोगे तो मर जाओगे, यदि तुम आज घर जाओगे तो तुम्हारी पत्नी मर जाएगी," और गायब हो गई। उसने देखा, लेकिन आत्मा को न देखकर वह भयभीत हो गया और मृत्यु के भय से व्याकुल होकर रोता-बिलखता बनारस के द्वार पर आ गया। यह पंद्रहवें दिन का व्रत था, बोधिसत्व के प्रवचन का दिन था। धर्म के अलंकृत आसन पर बैठे हुए, बहुत से लोग अपने हाथों में इत्र और फूल आदि लिए हुए प्रवचन सुनने के लिए झुंड में आए थे। ब्राह्मण ने पूछा, "तुम कहाँ जा रहे हो?" और उन्हें बताया गया, "हे ब्राह्मण, आज ज्ञानी सेनाक मधुर स्वर और बुद्ध के समान शक्ति से धर्म का उपदेश दे रहे हैं: क्या आप नहीं जानते?" उन्होंने सोचा, "वे कहते हैं कि वे एक ज्ञानी उपदेशक हैं, और मैं मृत्यु के भय से व्याकुल हूँ: ज्ञानी पुरुष बड़े से बड़े दुःख को भी दूर कर सकते हैं: मेरे लिए भी वहाँ जाकर धर्म का उपदेश सुनना उचित है।" अतः वे उनके साथ चले गए, और जब सभा और उनमें से राजा बोधिसत्व के चारों ओर बैठ गए, तो वे धर्म-पीठ से कुछ दूर, बाहर खड़े रहे, अपने कंधे पर अनाज का थैला रखे, मृत्यु के भय से भयभीत। बोधिसत्व का उपदेश ऐसा था मानो वे स्वर्ग की नदी बहा रहे हों या अमृत (देवताओं का भोजन) बरसा रहे हों। सभा के सभी लोग प्रसन्न हुए और तालियाँ बजाते हुए उपदेश सुनने लगे। ज्ञानी पुरुषों की दृष्टि दूरदर्शी होती है। उस समय बोधिसत्व ने पंच गुणों से परिपूर्ण अपनी आँखें खोलकर सभा का चारों ओर अवलोकन किया और उस ब्राह्मण को देखकर सोचा, "यह विशाल सभा प्रसन्न होकर तालियाँ बजाते हुए विधि का पाठ सुन रही है, परन्तु वह ब्राह्मण अप्रसन्न है और रो रहा है: उसके भीतर अवश्य ही कोई दुःख है जिसके कारण वह रो रहा है: जैसे जंग पर तेजाब डाल दिया जाए, या कमल के पत्ते से पानी की बूँद लुढ़का दी जाए, वैसे ही मैं उसे विधि का पाठ पढ़ाऊँगा, जिससे वह दुःख से मुक्त होकर मन से प्रसन्न हो जाएगा।" अतः उन्होंने उसे पुकारा, "ब्राह्मण, मैं ज्ञानी सेनाक हूँ, अब मैं तुम्हें दुःख से मुक्त करूँगा, निडर होकर बोलो," और उससे बात करते हुए उन्होंने पहला श्लोक कहा:-पंद्रहवें दिन व्रत का दिन था, बोधिसत्व के प्रवचन का दिन। वे धर्म के सुशोभित आसन पर विराजमान थे, और बहुत से लोग अपने हाथों में इत्र और फूल आदि लिए हुए प्रवचन सुनने के लिए समूह में आए थे। ब्राह्मण ने पूछा, "आप कहाँ जा रहे हैं?" तो उसे बताया गया, "हे ब्राह्मण, आज ज्ञानी सेनाक मधुर स्वर और बुद्ध के सामर्थ्य से धर्म का प्रवचन दे रहे हैं: क्या आप नहीं जानते?" उसने सोचा, "वे कहते हैं कि वे एक ज्ञानी प्रवचनकर्ता हैं, और मैं मृत्यु के भय से व्याकुल हूँ: ज्ञानी लोग बड़े से बड़े दुख को भी दूर कर सकते हैं: मेरे लिए भी वहाँ जाकर धर्म का प्रवचन सुनना उचित है।" अतः वह उनके साथ चला गया, और जब सभा और उनमें से राजा बोधिसत्व के चारों ओर बैठ गए, तो वह धर्म के आसन से कुछ दूर, अपने कंधे पर अनाज का थैला लिए, मृत्यु के भय से भयभीत होकर बाहर खड़ा रहा। बोधिसत्व का प्रवचन ऐसा था मानो वे स्वर्ग की नदी ला रहे हों या देवताओं (देवदूतों) का भोजन (अमृत) बरसा रहे हों। सभी लोग प्रसन्न हुए और तालियाँ बजाते हुए उपदेश सुनने लगे। बुद्धिमानों की

दृष्टि दूरदर्शी होती है। उसी क्षण बोधिसत्व ने पंच गुणों से परिपूर्ण अपनी आँखें खोलकर सभा का चारों ओर अवलोकन किया और उस ब्राह्मण को देखकर सोचा, "यह विशाल सभा प्रसन्न होकर तालियाँ बजाते हुए प्रवचन सुन रही है, परन्तु वह ब्राह्मण अप्रसन्न है और रो रहा है: उसके भीतर अवश्य ही कोई दुःख होगा जिसके कारण वह रो रहा है: जैसे जंग पर तेजाब डाल दिया जाए, या कमल के पत्ते से पानी की बूँद लुढ़का दी जाए, वैसे ही मैं उसे प्रवचन दूँगा, जिससे वह दुःख से मुक्त होकर मन से प्रसन्न हो जाएगा।" अतः उन्होंने उसे पुकारा, "ब्राह्मण, मैं बुद्धिमान सेनाक हूँ, अब मैं तुम्हें दुःख से मुक्त करूँगा, निडर होकर बोलो," और उससे बात करते हुए उन्होंने पहला श्लोक कहा:-पंद्रहवें दिन व्रत का दिन था, बोधिसत्व के प्रवचन का दिन। वे धर्म के सुशोभित आसन पर विराजमान थे, और बहुत से लोग अपने हाथों में इत्र और फूल आदि लिए हुए प्रवचन सुनने के लिए समूह में आए थे। ब्राह्मण ने पूछा, "आप कहाँ जा रहे हैं?" तो उसे बताया गया, "हे ब्राह्मण, आज ज्ञानी सेनाक मधुर स्वर और बुद्ध के सामर्थ्य से धर्म का प्रवचन दे रहे हैं: क्या आप नहीं जानते?" उसने सोचा, "वे कहते हैं कि वे एक ज्ञानी प्रवचनकर्ता हैं, और मैं मृत्यु के भय से व्याकुल हूँ: ज्ञानी लोग बड़े से बड़े दुख को भी दूर कर सकते हैं: मेरे लिए भी वहाँ जाकर धर्म का प्रवचन सुनना उचित है।" अतः वह उनके साथ चला गया, और जब सभा और उनमें से राजा बोधिसत्व के चारों ओर बैठ गए, तो वह धर्म के आसन से कुछ दूर, अपने कंधे पर अनाज का थैला लिए, मृत्यु के भय से भयभीत होकर बाहर खड़ा रहा। बोधिसत्व का प्रवचन ऐसा था मानो वे स्वर्ग की नदी ला रहे हों या देवताओं (देवदूतों) का भोजन (अमृत) बरसा रहे हों। सभी लोग प्रसन्न हुए और तालियाँ बजाते हुए उपदेश सुनने लगे। बुद्धिमानों की दृष्टि दूरदर्शी होती है। उसी क्षण बोधिसत्व ने पंच गुणों से परिपूर्ण अपनी आँखें खोलकर सभा का चारों ओर अवलोकन किया और उस ब्राह्मण को देखकर सोचा, "यह विशाल सभा प्रसन्न होकर तालियाँ बजाते हुए प्रवचन सुन रही है, परन्तु वह ब्राह्मण अप्रसन्न है और रो रहा है: उसके भीतर अवश्य ही कोई दुःख होगा जिसके कारण वह रो रहा है: जैसे जंग पर तेजाब डाल दिया जाए, या कमल के पत्ते से पानी की बूँद लुढ़का दी जाए, वैसे ही मैं उसे प्रवचन दूँगा, जिससे वह दुःख से मुक्त होकर मन से प्रसन्न हो जाएगा।" अतः उन्होंने उसे पुकारा, "ब्राह्मण, मैं बुद्धिमान सेनाक हूँ, अब मैं तुम्हें दुःख से मुक्त करूँगा, निडर होकर बोलो," और उससे बात करते हुए उन्होंने पहला श्लोक कहा:-"यह विशाल सभा प्रसन्न होकर तालियाँ बजाते हुए विधि-विधान सुन रही है, परन्तु वह ब्राह्मण अप्रसन्न है और रो रहा है: उसके भीतर अवश्य ही कोई दुःख होगा जिसके कारण वह रो रहा है: जैसे जंग पर तेजाब छिड़क दिया जाए, या कमल के पत्ते से पानी की बूँद लुढ़का दी जाए, वैसे ही मैं उसे विधि-विधान सिखाऊँगा, जिससे वह दुःख से मुक्त होकर मन से प्रसन्न हो जाएगा।" अतः उसने उसे पुकारा, "ब्राह्मण, मैं ज्ञानी सेनाक हूँ, अब मैं तुम्हें दुःख से मुक्त करूँगा, निडर होकर बोलो," और उससे बात करते हुए उसने पहला श्लोक कहा:-"यह विशाल सभा प्रसन्न होकर तालियाँ बजाते हुए विधि-विधान सुन रही है, परन्तु वह ब्राह्मण अप्रसन्न है और रो रहा है: उसके भीतर अवश्य ही कोई दुःख होगा जिसके कारण वह रो रहा है: जैसे जंग पर तेजाब छिड़क दिया जाए, या कमल के पत्ते से पानी की बूँद लुढ़का दी जाए, वैसे ही मैं उसे विधि-विधान सिखाऊँगा, जिससे वह दुःख से मुक्त होकर मन से प्रसन्न हो जाएगा।" अतः उसने उसे पुकारा, "ब्राह्मण, मैं ज्ञानी सेनाक हूँ, अब मैं तुम्हें दुःख से मुक्त करूँगा, निडर होकर बोलो," और उससे बात करते हुए उसने पहला श्लोक कहा:-

आप विचारों में उलझे हुए हैं, आपकी चेतना विचलित है।
आपकी आंखों से बहते आंसू ही इसका प्रमाण हैं;
आपने क्या खोया है, या आप क्या पाना चाहते हैं?
यहां आकर? मुझे स्पष्ट उत्तर दो।
तब ब्राह्मण ने अपने दुःख का कारण बताते हुए दूसरा श्लोक कहा:-

अगर मैं घर गया तो मेरी पत्नी को मरना ही होगा।
यक्ष (राक्षस) ने कहा, यदि मैं नहीं गया तो यह मैं ही हूँगा;
यही वह विचार है जो बेरहमी से चुभता है:
सेनाका, मुझे इस मामले को समझाओ।
ब्राह्मण की बातें सुनकर बोधिसत्व ने ज्ञान का जाल इस प्रकार फैलाया मानो समुद्र में जाल फेंक रहे हों, और सोचने लगे, "इस संसार में प्राणियों की मृत्यु के अनेक कारण हैं: कुछ समुद्र में डूबकर मरते हैं, कुछ भूखी मछलियों द्वारा पकड़े जाते हैं, कुछ गंगा में गिरकर मरते हैं, कुछ मगरमच्छों द्वारा पकड़े जाते हैं, कुछ पेड़ से गिरकर मरते हैं, कुछ काँटे से घायल होकर मरते हैं, कुछ विभिन्न प्रकार के हथियारों से घायल होकर मरते हैं, कुछ विष खाने से, फांसी पर लटककर, खाई से गिरकर, अत्यधिक ठंड से या अनेक प्रकार के रोगों से मरते हैं: अब मृत्यु के इतने सारे कारणों में से किस कारण से यह ब्राह्मण आज मार्ग में रहने पर मरेगा, या उसकी पत्नी घर जाने पर किस कारण से मरेगी?" जब वह विचार कर रहा था, तभी उसकी नज़र ब्राह्मण के कंधे पर पड़े बोरे पर पड़ी और उसने सोचा, "ज़रूर कोई साँप उस बोरे में घुस गया होगा। वह भोजन की गंध से अंदर गया होगा, जब ब्राह्मण ने नाश्ता किया और पानी पीने के लिए बोरे का मुँह बंद किए बिना चला गया। पानी पीकर लौटते समय ब्राह्मण ने बोरे का मुँह बंद करके उसे उठा लिया होगा और उसे पता भी नहीं चला होगा कि साँप अंदर घुस गया है। अगर वह रास्ते में ही रुका रहा, तो शाम को विश्राम करते समय वह कहेगा, 'मैं कुछ भोजन करूँगा,' और बोरा खोलकर उसे अपने हाथ में रख लेगा। तब साँप उसके हाथ में काट लेगा और उसकी जान ले लेगा। रास्ते में रुकने पर यही उसकी मृत्यु का कारण होगा। लेकिन अगर वह घर चला गया, तो बोरा उसकी पत्नी के हाथ में आ जाएगा; वह कहेगी, 'मैं अंदर का सामान देख लेती

हूँ,' और बोरा खोलकर उसे अपने हाथ में रख लेगी। तब साँप उसे काट लेगा और उसकी जान ले लेगा। आज घर जाने पर यही उसकी मृत्यु का कारण होगा।" यह बात उसे कर्मों के ज्ञान से पता चली। तब उनके मन में यह विचार आया, "यह सर्प अवश्य ही काला, वीर और निर्भीक सर्प होगा; जब बोरी ब्राह्मण के शरीर से टकराती है, तो वह न तो हिलता है और न ही कांपता है; वह इतनी बड़ी सभा में अपनी उपस्थिति का कोई संकेत नहीं देता: अतः वह अवश्य ही काला, वीर और निर्भीक सर्प होगा।" अपने ज्ञान के बल पर उन्होंने यह बात ऐसे जान ली मानो उन्हें दिव्य दृष्टि प्राप्त हो। अतः, मानो वे स्वयं वहाँ खड़े होकर सर्प को बोरी में प्रवेश करते हुए देख रहे हों, अपने ज्ञान के बल पर निर्णय लेते हुए, बोधिसत्व ने राजसभा में ब्राह्मण के प्रश्न का उत्तर देते हुए तीसरा श्लोक कहा:-

सबसे पहले मैं कई शंकाओं के साथ आगे बढ़ता हूँ,
अब मेरी ज़बान सच बोलती है;
ब्राह्मण, आपके भोजन के थैले में
एक सांप अनजाने में अंदर घुस गया है।

ऐसा कहकर उन्होंने पूछा, "हे ब्राह्मण, क्या तुम्हारे उस थैले में कोई भोजन है?" "हाँ, हे ऋषि।" "क्या तुमने आज नाश्ते में कुछ खाया था?" "हाँ, हे ऋषि।" "तुम कहाँ बैठे थे?" "जंगल में, एक पेड़ की जड़ के पास।" "जब तुमने भोजन किया और पानी पीने गए, तो क्या तुमने थैले का मुँह बंद किया था या नहीं?" "नहीं किया था, हे ऋषि।" "जब तुमने पानी पिया और वापस आए, तो क्या तुमने थैले में देखकर उसे बंद किया था?" "मैंने बिना देखे ही बंद कर दिया था, हे ऋषि।" "हे ब्राह्मण, जब तुम पानी पीने गए, तो मुझे लगता है कि भोजन की गंध से साँप तुम्हारी जानकारी के बिना थैले में घुस गया: ऐसा ही हुआ है: इसलिए अपना थैला नीचे रखो, उसे सभा के बीच में रखो और मुँह खोलकर पीछे हट जाओ और एक छड़ी लेकर थैले को उससे मारो: तब जब तुम एक काले साँप को फन फैलाकर फुफकारते हुए बाहर आते देखोगे, तो तुम्हें कोई संदेह नहीं होगा।" इस प्रकार उन्होंने चौथा श्लोक कहा:-

एक छड़ी लो और अंडकोष को पीटो।
वह मूक और दोहरी वाणी वाला है;
अपने मन को संशय से ग्रस्त होने से रोकें;
बोरी खोलो, तुम्हें सांप दिखाई देगा।

ब्राह्मण ने महापुरुष की बातें सुनकर, यद्यपि भयभीत और भयभीत था, वैसा ही किया। जब छड़ी से सांप के फन पर प्रहार किया गया, तो वह बोरी से बाहर निकला और भीड़ को देखने लगा।

गुरु ने विषय को समझाते हुए पाँचवाँ श्लोक कहा:

पराजित भीड़ के बीच भयभीत होकर,
उसने आटे की बोरी की डोरी खोली;
क्रोधित होकर एक सर्प बाहर निकला।
अपने सिर को पूरी शान से सीधा खड़ा किए हुए।

जब नाग फनाए सीधा करके बाहर आया, तो बोधिसत्व के अनंत ज्ञानी बुद्ध के रूप में प्रकट होने की भविष्यवाणी हुई। हजारों लोग वस्त्र लहराने और उंगलियां चटकाने लगे, सात बहुमूल्य पत्थरों की वर्षा घने बादल से बरसने जैसी थी, लाखों की संख्या में "अच्छा" के स्वर गूंजे, और शोर ऐसा था मानो धरती फट रही हो। बुद्ध की शक्ति से ऐसे प्रश्न का उत्तर देना जन्मजात शक्ति नहीं है, न ही वरदानों से संपन्न और उच्च कुल के पुरुषों की शक्ति है: तो फिर यह किसकी शक्ति है? ज्ञान की शक्ति: ज्ञानी व्यक्ति आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि बढ़ाता है, श्रेष्ठ मार्गों का द्वार खोलता है, महान और अनंत निर्वाण में प्रवेश करता है और शिष्यत्व, सिद्ध बुद्धत्व और पूर्ण बुद्धत्व की पूर्णता प्राप्त करता है: ज्ञान महान और अनंत निर्वाण लाने वाले गुणों में श्रेष्ठ है, बाकी सब ज्ञान के सहायक हैं: और इसलिए कहा जाता है:-

"बुद्धि ही सर्वोत्तम है," अच्छे लोग स्वीकार करते हैं।
तारों भरे आकाश में चंद्रमा की तरह;
सद्गुण, भाग्य, धार्मिकता,
क्या वे बुद्धिमानों की सेविकाएँ हैं?

जब बोधिसत्व ने प्रश्न का उत्तर दे दिया, तो एक सपेरे ने साँप के मुँह में पट्टी बाँधी, उसे पकड़ा और जंगल में छोड़ दिया। ब्राह्मण राजा के पास आकर उन्हें प्रणाम किया और उनकी प्रशंसा करते हुए आधा श्लोक बोला:-

महान, राजा जनक, आपका लाभ हुआ!
बुद्धिमान सेनाका को देखकर।

राजा की प्रशंसा करने के बाद, उसने थैली से सात सौ सिक्के निकाले और बोधिसत्व की प्रशंसा करते हुए, प्रसन्नतापूर्वक दान देने की इच्छा से डेढ़ श्लोक बोले:

अपनी बुद्धिमत्ता से भयभीत रहो; पर्दे व्यर्थ हैं।
ब्राह्मण, तुम्हारी भेदक दृष्टियों के लिए।
ये सात सौ टुकड़े देखिए,
ये सब ले लो, मैं तुम्हें ये देता हूँ;
मैं आपकी वजह से ही जीवित हूं।
और मेरी पत्नी का कल्याण।
यह सुनकर बोधिसत्व ने आठवां श्लोक कहा:-

कविता पाठ के लिए
  बुद्धिमान व्यक्ति वेतन स्वीकार नहीं कर सकते;
बल्कि हम आपको देते हैं,
  घर वापसी की यात्रा शुरू करने से पहले।
ऐसा कहकर बोधिसत्व ने ब्राह्मण को देने के लिए पूरे एक हजार सिक्के बनाए और उससे पूछा, "तुम्हें भीख मांगने किसने भेजा है?" "मेरी पत्नी ने, हे ऋषि।" "तुम्हारी पत्नी बूढ़ी है या जवान?" "जवान, हे ऋषि।" "तो वह किसी और के साथ पाप कर रही है, और उसने तुम्हें यह सोचकर भेजा है कि वह सुरक्षित रहेगी: यदि तुम ये सिक्के घर ले जाओगे, तो वह तुम्हारे परिश्रम से कमाए हुए सिक्के अपने प्रेमी को दे देगी: इसलिए तुम्हें सीधे घर नहीं जाना चाहिए, बल्कि इन सिक्कों को कस्बे के बाहर किसी पेड़ की जड़ में या कहीं और छोड़ देना चाहिए।" ऐसा कहकर उन्होंने उसे विदा कर दिया। वह गाँव के पास आकर अपने सिक्के एक पेड़ की जड़ में छोड़कर शाम को घर लौटा। उस समय उसकी पत्नी अपने प्रेमी के साथ बैठी थी। ब्राह्मण दरवाजे पर खड़ा होकर बोला, "पत्नी।" उसने उसकी आवाज़ पहचान ली और रोशनी बुझाकर दरवाज़ा खोल दिया। जब ब्राह्मण अंदर आया, तो उसने दूसरे को उठाकर दरवाज़े पर खड़ा कर दिया। फिर वापस आकर जब उसने बोरी में कुछ नहीं देखा, तो उसने पूछा, "ब्राह्मण, यात्रा में आपको क्या भिक्षा मिली है?" "हज़ार सिक्के।" "कहाँ है?" "यह फलाँ जगह पर छूट गया है: कोई बात नहीं, हम इसे कल ले लेंगे।" वह गई और अपने प्रेमी को बताया। वह गया और उसे ऐसे ले आया जैसे वह उसका अपना खजाना हो। अगले दिन ब्राह्मण गया और सिक्के न देखकर बोधिसत्व के पास आया, जिन्होंने पूछा, "क्या बात है, ब्राह्मण?" "मुझे सिक्के नहीं दिख रहे हैं, हे ऋषि।" "क्या आपने अपनी पत्नी को बताया?" "जी हाँ, हे ऋषि।" यह जानकर कि पत्नी ने अपने प्रेमी को बता दिया है, बोधिसत्व ने पूछा, "ब्राह्मण, क्या कोई ब्राह्मण है जो आपकी पत्नी का मित्र है?" "हाँ, हे ऋषि।" "क्या कोई है जो आपका मित्र है?" "जी हाँ, हे ऋषि।" तब उस महान पुरुष ने सात दिनों का खर्च दिलवाया और कहा, "जाओ, तुम दोनों पहले दिन चौदह ब्राह्मणों को आमंत्रित करो और उनका सत्कार करो, सात अपने लिए और सात अपनी पत्नी के लिए। अगले दिन से प्रतिदिन एक-एक ब्राह्मण कम करते जाओ, जब तक कि सातवें दिन तुम एक ब्राह्मण और अपनी पत्नी के लिए एक ब्राह्मण को आमंत्रित न करो। फिर यदि तुम देखो कि तुम्हारी पत्नी द्वारा सातवें दिन आमंत्रित किया गया ब्राह्मण हर बार आता है, तो मुझे बताना।" ब्राह्मण ने ऐसा ही किया और बोधिसत्व से कहा, "हे ऋषि, मैंने उस ब्राह्मण को देखा है जो हमेशा हमारा अतिथि होता है।" बोधिसत्व ने अपने साथ कुछ लोगों को उस दूसरे ब्राह्मण को लाने के लिए भेजा और उससे पूछा, "क्या तुमने फलां पेड़ की जड़ से इस ब्राह्मण के हजार टुकड़े लिए थे?" "मैंने नहीं लिए, हे ऋषि।" "तुम नहीं जानते कि मैं ज्ञानी सेनाक हूँ; मैं तुमसे वे टुकड़े वापस लाऊँगा।" वह डर गया और उसने स्वीकार किया, "मैंने उन्हें लिया था।" "तुमने क्या किया?" "मैंने उन्हें फलां जगह रख दिया, हे ऋषि।" बोधिसत्व ने पहले ब्राह्मण से पूछा, "हे ब्राह्मण, क्या तुम अपनी पत्नी को रखोगे या दूसरी से विवाह करोगे?" "हे ऋषि, मैं उसे ही रखूंगा।" बोधिसत्व ने अपने आदमियों को पत्नी और उसके टुकड़े लाने के लिए भेजा।और उसने ब्राह्मण को चोर के हाथ से छीने हुए टुकड़े दे दिए; उसने दूसरे को दंडित किया और उसे शहर से निकाल दिया, उसकी पत्नी को भी दंडित किया और ब्राह्मण को बहुत सम्मान देते हुए उसे अपने पास निवास स्थान दिया।

पाठ के बाद, गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई:- सत्यों के अंत में, कई लोगों ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की प्राप्ति की:- "उस समय ब्राह्मण आनंद थे, आत्मा सारिपुत्र थे, सभा बुद्ध के भिक्षुओं का संघ था, और बुद्धिमान सेनाक मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) संख्या 546

(2) एक पवित्र व्यक्ति जिसने संतत्व प्राप्त नहीं किया है।

(3)भाइयों, बहनों, गृहस्थ पुरुषों और गृहस्थ महिलाओं।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **आथिसेन-जातक**
***स्रोत**: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-403-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 403
अथिसेना-जातक

"अत्थिसेना, अनेक भिखारी," इत्यादि - गुरु ने यह बात अलवी के पास अग्गलावा नामक मंदिर में रहते हुए, कुटियाओं के निर्माण के नियमों के संबंध में कही थी। इस घटना का वर्णन ऊपर मणिकांत जन्म (*1) में मिलता है। गुरु ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा, "भाइयों, बुद्ध के जन्म से पहले, अन्य तपस्वी मार्गों के भिक्षु, राजाओं द्वारा भिक्षा मांगने का अवसर दिए जाने पर भी, कभी भिक्षा नहीं मांगते थे, क्योंकि उनका मानना था कि दूसरों से भीख मांगना उचित या सुखद नहीं है।" इस प्रकार उन्होंने पुराने समय की कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्य था, तब एक ब्राह्मण परिवार में बोधिसत्व का जन्म हुआ और उनका नाम युवा अथिसेना रखा गया। बड़े होकर उन्होंने तक्षशिला में सभी विद्याओं का ज्ञान प्राप्त किया और बाद में कर्मों के कष्टों को देखकर संन्यासी जीवन व्यतीत किया। उच्चतर ज्ञान और सिद्धियों को प्राप्त करके वे हिमालय में दीर्घकालीन निवास करते रहे। फिर नमक और सिरका लेने के लिए वे मनुष्यों के बीच आए और बनारस पहुँचे। एक उद्यान में कुछ दिन बिताने के बाद वे अगले दिन राजा के दरबार में भीख मांगने पहुँचे। राजा उनके रूप और व्यवहार से प्रसन्न हुए और उन्हें अपने पास बुलाकर प्रांगण में बैठाया और उन्हें उत्तम भोजन कराया। बोधिसत्व का धन्यवाद पाकर राजा प्रसन्न हुए और उनसे प्रतिज्ञा लेकर उन्हें राज उद्यान में निवास करने का अधिकार दिया और प्रतिदिन दो-तीन बार उनकी सेवा में जाते रहे। एक दिन, उनके धर्मोपदेश से प्रसन्न होकर राजा ने उन्हें विकल्प देते हुए कहा, "जो कुछ भी तुम चाहो, मेरे राज्य से ही शुरुआत करो।" बोधिसत्व ने यह नहीं कहा, "मुझे फलां वस्तु दो।" दूसरे लोग अपनी इच्छा के अनुसार कुछ भी मांग लेते हैं, यह कहते हुए, "मुझे यह दो," और राजा उसे दे देता है, बशर्ते कि वह उससे आसक्त न हो। एक दिन राजा ने सोचा, "दूसरे दूल्हों और भिक्षुओं ने मुझसे फलां वस्तु मांगी; लेकिन श्रेष्ठ अथिसेना ने, जब से मैंने उन्हें विकल्प दिया है, कुछ नहीं मांगा; वे बुद्धिमान और चतुराई भरे उपायों में निपुण हैं: मैं उनसे ही मांगूंगा।" इसलिए एक दिन सुबह के भोजन के बाद वह एक तरफ बैठ गए, और उनसे यह पूछते हुए कि दूसरे लोग दूल्हों की ओर क्यों दूल्हों की ओर दूल्हों की ओर दूल्हों की ओर दूल्हों की ओर दूल्हों की ओर दूल्हों की ओर दूल्हों की ओर दूल्हों की ओर दूल्हों की ओर से ...

अत्थिसेना में कई भिखारी हैं, हालांकि वे पूरी तरह से अजनबी हैं,
लोग अपनी याचिकाएं लेकर मेरे पास आते हैं: आप मुझसे कोई शिकायत क्यों नहीं करते?
उनकी बात सुनकर बोधिसत्व ने दूसरा श्लोक कहा:-

न तो प्रस्ताव रखने वाला और न ही प्रस्ताव को अस्वीकार करने वाला व्यक्ति सुखद हो सकता है:
इसीलिए, क्रोधित मत होइए, मेरे पास आपके लिए कोई सूट नहीं है।
उनकी बातें सुनकर राजा ने तीन श्लोक कहे:-

जो व्यक्ति मुकदमेबाजी से अपना जीवन यापन करता है, और जिसने उचित समय पर मुकदमेबाजी नहीं की है,
योग्यता के मामले में एक बार फिर गिरावट आई, आजीविका कमाने में असफल रहा।
जो व्यक्ति मुकदमेबाजी से अपना जीवन यापन करता है, और जिसने उचित समय पर मुकदमेबाजी की है,
इससे दूसरे व्यक्ति को पुण्य मिलता है और खुद को जीविका कमाने का जरिया मिल जाता है।
बुद्धिमान पुरुष दूल्हों की भीड़ देखकर क्रोधित नहीं होते;
बोलिए, मेरे पवित्र मित्र; आप जो वरदान मांग रहे हैं वह कभी गलत नहीं हो सकता।
अतः बोधिसत्व ने राज्य चुनने का अवसर दिए जाने पर भी कोई निवेदन नहीं किया। जब राजा ने अपनी इच्छा व्यक्त की, तो बोधिसत्व ने उन्हें पुरोहितों का मार्ग दिखाते हुए कहा, "हे महाराज, ये निवेदन सांसारिक इच्छाओं वाले और गृहस्थों को भाते हैं, पुरोहितों को नहीं:

पुरोहितों को दीक्षा से ही गृहस्थों के विपरीत शुद्ध जीवन व्यतीत करना चाहिए।" और इस प्रकार पुरोहितों का मार्ग दिखाते हुए उन्होंने छठा श्लोक कहा:-

ज्ञानी लोग कभी निवेदन नहीं करते, योग्य गृहस्थों को यह जानना चाहिए:
नेक वरन् मौन खड़ा है: ऋषि भी इसी प्रकार प्रार्थना करते हैं।
बोधिसत्व की बातें सुनकर राजा ने कहा, "हे प्रभु, यदि ज्ञानवान सेवक अपने मित्र को वह देता है जो उसे देना चाहिए, तो मैं भी आपको अमुक वस्तु देता हूँ," और इस प्रकार उन्होंने सातवाँ श्लोक कहा:-

ब्राह्मण, मैं आपको एक हजार गायें भेंट करता हूँ।
   लाल गायें, मेहनती, झुंड की मुखिया:
आपके उन उदार कार्यों के बारे में अभी सुनकर,
   मुझे भी उदारतापूर्ण कार्यों की प्रेरणा मिलती है।
जब उन्होंने यह कहा, तो बोधिसत्व ने यह कहते हुए इनकार कर दिया, "महाराज, मैंने निर्मल संन्यासी जीवन व्यतीत किया है; मुझे गायों की आवश्यकता नहीं है।" राजा ने उनकी सलाह मानकर, भिक्षावृत्ति और अन्य अच्छे कर्म करके स्वर्ग प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त किया और अपनी ध्यान साधना से विचलित न होकर ब्रह्मलोक में जन्म लिया।

पाठ के बाद, गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई:- सत्यों के बाद कई लोग प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की सिद्धि में स्थापित हुए:- "उस समय राजा आनंद थे, अत्तिसेना मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) संख्या 253

स्रोत: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।

पिछला <<<<-----||-404-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 404
कापी-जातक। (*1)

"बुद्धिमान व्यक्ति को ऐसा नहीं करना चाहिए," इत्यादि - गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए देवदत्त के पृथ्वी में समा जाने की कहानी सुनाई। जब उन्होंने देखा कि भिक्षु इस विषय पर सत्य के हॉल में चर्चा कर रहे हैं, तो उन्होंने कहा, "देवदत्त अपने साथियों के साथ पहली बार नष्ट नहीं हुए हैं: वे पहले ही नष्ट हो चुके हैं," और उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व बंदर के गर्भ से पैदा हुए और राजा के उद्यान में पाँच सौ बंदरों के साथ रहते थे। देवदत्त भी बंदर के गर्भ से पैदा हुए और पाँच सौ बंदरों के साथ वहीं रहते थे। एक दिन जब राजा के कुल पुरोहित उद्यान में स्नान करके सज-धज कर गए, तो एक चालाक बंदर उनके आगे-आगे चलकर उद्यान के प्रवेश द्वार के ऊपर बैठ गया और पुरोहित के बाहर निकलते समय उनके सिर पर मल गिरा दिया। जब पुरोहित ने ऊपर देखा, तो उसने फिर से मल उनके मुँह में गिरा दिया। पुरोहित ने मुड़कर बंदरों को धमकी देते हुए कहा, "ठीक है, मैं जानता हूँ कि तुमसे कैसे निपटना है," और स्नान करके चले गए। बंदरों ने बोधिसत्व को बताया कि वे क्रोधित थे और उन्होंने बंदरों को धमकाया था। उन्होंने हज़ार बंदरों से कहा, "क्रोधित व्यक्ति के निवास के पास रहना ठीक नहीं है; बंदरों का पूरा झुंड भागकर कहीं और चला जाए।" एक आज्ञा न मानने वाला बंदर अपने सेवकों के समूह को लेकर भागा नहीं और बोला, "मैं बाद में देख लूँगा।" बोधिसत्व अपने सेवकों के समूह को लेकर जंगल चले गए। एक दिन चावल कूट रही एक दासी

ने कुछ चावल धूप में रख दिए और एक बकरी उन्हें खा रही थी। मशाल से चोट लगने पर वह आग में जलते हुए भाग गई और हाथी के अस्तबल के पास एक घास की झोपड़ी की दीवार पर खुद को रगड़ रही थी। आग झोपड़ी में लग गई और उससे हाथी के अस्तबल तक पहुँच गई; उसमें हाथियों की पीठ जल गई और हाथी चिकित्सक हाथियों का इलाज कर रहे थे। कुलपुजारी हमेशा बंदरों को पकड़ने का मौका ढूंढता रहता था। वह राजा की सेवा में बैठा था और राजा ने कहा, "महाराज, हमारे कई हाथी घायल हो गए हैं और हाथी चिकित्सकों को उनका इलाज नहीं पता; क्या आपको कोई उपाय पता है?" "हाँ, महाराज।" "क्या है?" "बंदर की चर्बी, महाराज।" "यह हमें कैसे मिलेगी?" "बगीचे में बहुत सारे बंदर हैं।" राजा ने कहा, "बगीचे में बंदरों को मार डालो और उनकी चर्बी ले आओ।" तीरंदाज गए और उन्होंने तीरों से पाँच सौ बंदरों को मार डाला। एक बूढ़ा बंदर तीर से घायल होते हुए भी भाग गया, और यद्यपि वह मौके पर नहीं गिरा, लेकिन बोधिसत्व के निवास स्थान पर पहुँचकर गिर पड़ा। बंदरों ने कहा, "वह हमारे निवास स्थान पर पहुँचते ही मर गया," और बोधिसत्व को बताया कि वह एक घाव के कारण मर गया था। वह आया और बंदरों की सभा में बैठ गया, और बुद्धिमानों की सलाह से बंदरों को सलाह देते हुए ये श्लोक कहे, जो इस प्रकार हैं: "अपने शत्रुओं के निकट रहने वाले मनुष्य इस प्रकार नष्ट हो जाते हैं:"

बुद्धिमान व्यक्ति को उस स्थान पर निवास नहीं करना चाहिए जहाँ उसका प्रतिद्वंद्वी निवास करता है:
एक रात, दो रातें, इतनी नज़दीकी उसके लिए कष्ट लाएगी।
जो लोग मूर्ख की बात पर भरोसा करते हैं, वह उनका प्रतिद्वंद्वी होता है।
एक बंदर ने पूरे झुंड पर संकट ला दिया।
एक मूर्ख सरदार, जो अपने अहंकार में ही बुद्धिमान था।
यह बंदर हमेशा हराने के लिए आता है।
झुंड की रखवाली के लिए एक बलवान मूर्ख अच्छा नहीं होता।
उसके परिवार पर श्राप पड़े, जैसे किसी छलावे वाले पक्षी पर।
झुंड की रखवाली के लिए बलवान और बुद्धिमान व्यक्ति ही अच्छा होता है।
जैसे इंद्र देवताओं (देवदूतों) के लिए, अपने परिवार के लिए एक पुरस्कार थे।
जिनके पास सद्गुण, ज्ञान और विद्या थी,
उसके कर्मों से वह स्वयं और अन्य लोग भी आशीर्वाद प्राप्त करेंगे।
इसलिए उसे सद्गुण, ज्ञान, विद्या और स्वयं का ध्यान रखना चाहिए।
या तो एक एकाकी संत बनो या फिर झुंड की रखवाली और सुरक्षा करो।
अतः बोधिसत्व ने वानरों का राजा बनकर, इस साधना को सीखने का तरीका समझाया।

पाठ के बाद, गुरु ने जन्म की पहचान बताई: "उस समय अवज्ञाकारी बंदर देवदत्त था, उसका दल देवदत्त की मंडली थी और बुद्धिमान राजा मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) काकाजातक, सं. 140

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **बका-ब्रह्म-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-405-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 405
बका-ब्रह्म-जातक

"बहत्तर," इत्यादि - गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए ब्रह्मा (प्रधान देवदूत) (*1) बका के विषय में यह कथा सुनाई। उनके मन में एक गलत धारणा उत्पन्न हुई, अर्थात्, "यह वर्तमान जीवन शाश्वत, स्थायी, अपरिवर्तनीय है; इसके बिना कोई मोक्ष (निर्वाण) या मुक्ति नहीं है।" पिछले जन्म में इस ब्रह्मा ने ध्यान का अभ्यास किया था, इसलिए उनका जन्म वेहप्पला स्वर्ग में हुआ था। वहाँ पाँच सौ कल्पों (कल्प = 4320 मिलियन वर्ष, अर्थात् ब्रह्मांड के विस्तार/बिग बैंग से संकुचन/पतन का एक पूर्ण चक्र) का जीवन व्यतीत करने के बाद, उनका

जन्म सुभकिन्न स्वर्ग में हुआ; वहाँ चौंसठ कल्पों के बाद उनका देहांत हुआ और उनका जन्म आभासर स्वर्ग में हुआ, जहाँ जीवन आठ कल्पों का होता है। वहीं उनके मन में यह गलत शिक्षा उत्पन्न हुई। वह भूल गया था कि वह उच्चतर ब्रह्मलोक (देवदूतों का लोक) से आया था और उसी स्वर्ग में जन्मा था, और इन दोनों बातों को न जानते हुए उसने गलत धारणा बना ली थी। भगवान ने उसके विचारों को समझकर, जैसे कोई बलवान व्यक्ति अपनी मुड़ी हुई भुजा को फैला या मोड़ सकता है, उसी सहजता से जेतवन मठ से विलीन होकर उस ब्रह्मलोक (देवदूतों का लोक) में प्रकट हुए। ब्रह्मा (देवदूत) ने भगवान को देखकर कहा, "हे प्रभु, यहाँ आइए; आपका स्वागत है, हे प्रभु; हे प्रभु, आपने बहुत समय बाद यहाँ आने का अवसर लिया है; हे प्रभु, यह संसार शाश्वत है, यह स्थायी है, यह अनंत है, यह निरपेक्ष है, यह अपरिवर्तनीय है; यह संसार न जन्म लेता है, न क्षय होता है, न मरता है, न नष्ट होता है, न पुनर्जन्म लेता है: इस संसार के सिवा कोई अन्य मोक्ष नहीं है।" यह सुनकर भगवान ने बका ब्रह्मा (प्रधान देवदूत) से कहा, "बका ब्रह्मा अज्ञान में डूब गया है, वह अज्ञान में डूब गया है, वह कहता है कि जो चीज स्थायी नहीं है वह स्थायी है, इत्यादि, और यह कि इस मोक्ष के सिवा कोई दूसरा मोक्ष नहीं है जबकि दूसरा मोक्ष (निर्वाण) है।" यह सुनकर ब्रह्मा (प्रधान देवदूत) ने सोचा, "यह तो मुझे बुरी तरह से परख रहा है, ठीक-ठीक जानना चाहता है कि मैं क्या कहता हूँ," और एक डरपोक चोर की तरह, कुछ मार खाने के बाद, कहता है, "क्या मैं अकेला चोर हूँ? फलाँ-फलाँ और फलाँ-फलाँ भी चोर हैं," अपने साथियों को दिखाते हुए; इसलिए, भगवान के प्रश्नों के भय से, यह दिखाते हुए कि अन्य उसके साथी हैं, उसने पहला श्लोक कहा:-

हे गौतम (बुद्ध), हम बहत्तर हैं।
हम धर्मी और महान हैं, जन्म और उम्र से स्वतंत्र हैं:
हमारा स्वर्ग ज्ञान का घर है, उससे ऊपर कुछ भी नहीं है:
और कई अन्य लोग भी इस दृष्टिकोण से सहमत होंगे।
उनकी बात सुनकर गुरु ने दूसरा श्लोक कहा:-

इस संसार में अपना जीवन छोटा करना गलत है।
बेवकूफ, यह सोचना कि यहाँ जीवन लंबा है:
एक लाख युग बीत गए
मैं आपके अस्तित्व के बारे में भलीभांति जानता हूँ।
यह सुनकर बाका ने तीसरा श्लोक बोला:-

हे प्रभु, मैं असीम ज्ञान का स्वामी हूँ।
जन्म, बुढ़ापा और दुःख, सब मेरे नीचे समाए हुए हैं:
मैंने बहुत पहले जो अच्छे काम किए थे, उनका मुझे क्या करना चाहिए?
फिर भी, हे प्रभु, मुझे कुछ ऐसा बताइए जो मुझे पता चले।
तब प्रभु ने उसे अतीत की बातें समझाते और दिखाते हुए चार श्लोक कहे:-

तुमने कई वृद्ध पुरुषों को शराब पिलाई
प्यास और भीषण सूखे से जूझते हुए डूबने के लिए तैयार:
बहुत समय पहले आपके उस नेक काम के लिए
मुझे याद आ रहा है, मानो नींद से जाग गया हो, मुझे पता है।
एनी के बैंक के जरिए आप लोगों को आजादी दिलाते हैं।
जब जंजीरों में बांधकर और तंग कैद में रखा जाता है:
बहुत समय पहले आपके उस नेक काम के लिए
मुझे याद आ रहा है, मानो नींद से जाग गया हो, मुझे पता है।
गंगा की धारा के किनारे तुमने उस आदमी को मुक्त किया था।
जिसकी नाव को नागों ने बेरहमी से छीन लिया था
देह की लालसा से, उसे पूरी शक्ति से बचाओ:
आपका वह पुण्य कर्म, जो आपने बहुत समय पहले किया था
मुझे याद आ रहा है, मानो नींद से जाग गया हो, मुझे पता है।
और मैं कप्पा था, आपका सच्चा शिष्य।
मैं केवल आपकी बुद्धिमत्ता और आपके सद्गुणों को ही जानता था:
और अब तुम्हारे वे पुराने कर्म
मुझे याद आ रहा है, मानो नींद से जाग गया हो, मुझे पता है।

गुरु के प्रवचन से अपने कर्मों का वर्णन सुनकर बाका ने धन्यवाद दिया और यह अंतिम श्लोक बोला:-

आप मेरे हर जीवन को जानते हैं:
आप बुद्ध हैं, समस्त ज्ञान निश्चित रूप से आपका है:
और निश्चित रूप से, आपके गौरवशाली महाराज और राज्य
यह ब्रह्म लोक भी प्रकाशित हो।
अतः गुरु ने बुद्ध के रूप में अपने गुणों को प्रकट करते हुए और धर्म की व्याख्या करते हुए सत्यों का उपदेश दिया। अंत में दस हजार ब्रह्माओं (प्रधान देवदूतों) के विचार आसक्ति और पापों से मुक्त हो गए। इस प्रकार भगवान अनेक ब्रह्माओं (प्रधान देवदूतों) के शरणस्थल बन गए और ब्रह्मलोक (प्रधान देवदूतों का लोक) से लौटकर जेतवन मठ में वर्णित मार्ग का उपदेश देते हुए अपने जन्म का वर्णन किया: "उस समय ब्रह्मा (प्रधान देवदूत) बका तपस्वी केशव थे और शिष्य कप्पा मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)ब्रह्मा का अर्थ ब्रह्मलोक के स्वर्गों में से एक में स्थित प्रधान देवदूत है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **गांधार-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-406-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 406
गांधार जातक

“सोलह हज़ार से भरे गाँव,” इत्यादि—गुरु ने ये बातें जेतवन मठ में रहते हुए औषधियों के भंडारण के नियम के विषय में बताई थीं (*1)। यह घटना राजगृह नगर में घटी। जब पूज्य पिलिंडियावच्च उद्यान रक्षक के परिवार को मुक्त कराने राजा के महल गए (*2), तो राजा ने जादुई शक्ति से महल को सोने का बना दिया। प्रसन्न होकर लोग उस वरिष्ठ भिक्षु के पास पाँच प्रकार की औषधियाँ लेकर आए। उन्होंने उन्हें भिक्षुओं के समूह में बाँट दिया। इस प्रकार भिक्षुओं के समूह के पास बहुत सी औषधियाँ हो गईं। जैसे-जैसे उन्हें औषधियाँ मिलती गईं, वे उन्हें बर्तनों, घड़ों और थैलों में भरकर एक तरफ रख देते गए। यह देखकर लोग आपस में बड़बड़ाने लगे, “ये लालची भिक्षु तो इन्हें अपने घरों में जमा कर रहे हैं।” यह सुनकर गुरु ने नियम बनाया, "बीमार भाइयों के लिए जो भी औषधियाँ प्राप्त हों, उन्हें सात दिनों के भीतर उपयोग कर लेना चाहिए," और कहा, "भाइयों, बुद्ध के प्रकट होने से पहले के प्राचीन ज्ञानी पुरुष, जो अन्य धर्मों में दीक्षित थे और केवल पाँच नियमों का पालन करते थे, उन लोगों को फटकारते थे जो अगले दिन के लिए नमक और चीनी भी बचाकर रखते थे; परन्तु तुम, जो मोक्ष (निर्वाण) के ऐसे मार्ग पर दीक्षित हो, दूसरे और तीसरे दिन के लिए भंडार रखते हो," और इस प्रकार उन्होंने प्राचीन कथा सुनाई।

एक समय की बात है, बोधिसत्व गांधार (कंधार सहित अफगानिस्तान और पाकिस्तान के निकट स्थित क्षेत्र) राज्य के राजा के पुत्र थे; अपने पिता की मृत्यु के बाद वे राजा बने और उन्होंने धर्मपरायणता से शासन किया।

मध्य क्षेत्र में, विदेह राज्य में उस समय विदेह नामक एक राजा शासन कर रहा था। इन दोनों राजाओं ने कभी एक-दूसरे को नहीं देखा था, लेकिन वे मित्र थे और एक-दूसरे पर गहरा विश्वास रखते थे। उस समय मनुष्य दीर्घायु होते थे: उनका जीवन तीस हजार वर्ष का होता था। फिर एक बार, पूर्णिमा के व्रत के दिन, कंधार के राजा ने आज्ञाओं का व्रत लिया (*3), और अपने लिए तैयार किए गए राजसिंहासन के मध्य में बने चबूतरे पर, पूर्व दिशा की ओर खुली खिड़की से देखते हुए, अपने मंत्रियों को धर्ममार्ग के विषय पर प्रवचन दे रहे थे। उसी क्षण राहु (ग्रहण) ने पूर्णिमा के चंद्रमा के चेहरे को ढक लिया, जो आकाश में फैला हुआ था। चंद्रमा का प्रकाश गायब हो गया। मंत्रियों ने चंद्रमा की चमक न देखकर राजा से कहा कि चंद्रमा को राहु (ग्रहण) ने पकड़ लिया है। राजा ने चंद्रमा को देखते हुए सोचा, “उस चंद्रमा का प्रकाश किसी बाहरी विपत्ति से क्षतिग्रस्त होकर फीका पड़ गया है; अब मेरे शाही सेवकों का समूह ही मेरे लिए विपत्ति बन गया है, और यह उचित नहीं कि मैं राहु (ग्रहण) से प्रभावित चंद्रमा की तरह अपना प्रकाश खो दूं: मैं अपने राज्य को निर्मल आकाश में चमकते चंद्रमा के समान त्याग दूंगा और तपस्वी बन जाऊंगा: मुझे किसी और को सलाह क्यों देनी चाहिए? मैं परिवार और लोगों से विरक्त

होकर, केवल स्वयं को अनुशासित करूंगा: यही मेरे लिए उचित है।" अतः उन्होंने कहा, "जैसा आप चाहें वैसा करें," और राज्य अपने मंत्रियों को सौंप दिया। कश्मीर और गांधार (कंधार) के दो राज्यों में अपना राज्य त्यागने के बाद, उन्होंने संन्यासी जीवन व्यतीत किया, और आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करके हिमालय क्षेत्र में वर्षाकाल ध्यान में लीन रहे। विदेह के राजा ने व्यापारियों से पूछा, "क्या मेरे मित्र का हालचाल है?" जब उसने सुना कि उसने संन्यासी जीवन अपना लिया है, तो उसने सोचा, "जब मेरे मित्र ने संन्यासी जीवन अपना लिया है, तो मैं अपने राज्य का क्या करूँ?" इसलिए उसने अपने सात मील (x 4.23 किमी) के नगर मिथिला और तीन सौ मील (x 4.23 किमी) के विदेह राज्य, जिसमें सोलह हजार गाँव, भरे हुए भंडारगृह और सोलह हजार नर्तकियाँ थीं, का शासन त्याग दिया। अपने पुत्र-पुत्रियों की परवाह किए बिना वह हिमालय क्षेत्र में चला गया और संन्यासी जीवन अपना लिया। वहाँ वह केवल फल खाकर शांत अवस्था में रहा। बाद में दोनों इस शांत जीवन का अनुसरण करते हुए मिले, लेकिन एक-दूसरे को पहचान नहीं पाए; फिर भी वे इस शांत जीवन में मित्रतापूर्वक साथ रहे। विदेह के संन्यासी ने गांधार (कंधार सहित अफगानिस्तान और पाकिस्तान के निकट) के संन्यासी की सेवा की। पूर्णिमा के दिन जब वे एक पेड़ की जड़ में बैठकर धर्म से संबंधित विषयों पर चर्चा कर रहे थे, तभी राहु (ग्रहण) ने आकाश में चमकते हुए चंद्रमा के चेहरे को ढक लिया। विदेह के तपस्वी ने ऊपर देखते हुए कहा, "चंद्रमा का प्रकाश क्यों नष्ट हो गया?" और यह देखकर कि राहु (ग्रहण) ने उसे पकड़ लिया है, उन्होंने पूछा, "गुरुजी, उसने चंद्रमा को क्यों ढक दिया है और उसे अंधकारमय कर दिया है?" "विद्वान,चंद्रमा की एक ही समस्या है, जिसे राहु (ग्रहण) के नाम से जाना जाता है; वह इसे चमकने से रोकता है: मैंने राहु (ग्रहण) से प्रभावित चंद्रमा का चेहरा देखकर सोचा, "देखो, चंद्रमा का पवित्र चेहरा बाहरी विपत्ति से अंधकारमय हो गया है; अब यह राज्य मेरे लिए विपत्ति है: मैं संन्यासी जीवन धारण करूँगा ताकि यह राज्य मुझे राहु (ग्रहण) की तरह अंधकारमय न कर दे": और इसलिए राहु (ग्रहण) से प्रभावित चंद्रमा के चेहरे को अपना विषय बनाकर, मैंने अपना महान राज्य त्याग दिया और संन्यासी जीवन धारण कर लिया।" "गुरुजी, क्या आप गांधार (कंधार सहित अफगानिस्तान और पाकिस्तान के निकट) के राजा थे?" "हाँ, मैं था।" "गुरुजी, मैं विदेह राज्य और मिथिला नगर में विदेह का राजा था: क्या हम मित्र नहीं थे, यद्यपि हमने कभी एक-दूसरे को नहीं देखा?" "आपका विषय क्या था?" "मैंने सुना था कि आपने संन्यासी जीवन धारण कर लिया है और यह सोचकर, "निश्चित रूप से उन्होंने उस जीवन का लाभ देखा होगा," मैंने आपको अपना विषय बनाया, और अपना राज्य छोड़कर संन्यासी जीवन धारण कर लिया।" उस समय वे अत्यंत घनिष्ठ और मित्रवत थे, और केवल फल खाकर ही जीवन यापन करते थे। वहाँ लंबे समय तक रहने के बाद वे हिमालय से नमक और सिरका लेने के लिए नीचे आए और एक सीमावर्ती गाँव में पहुँचे। गाँव के लोग उनके व्यवहार से प्रसन्न हुए और उन्हें भिक्षा दी। उन्होंने वादा लेकर जंगल में उनके लिए रात के लिए घर आदि बनवाए और उन्हें वहाँ ठहराया। उन्होंने सड़क के किनारे एक सुखद जलयुक्त स्थान पर भोजन करने के लिए एक कमरा भी बनवाया। सीमावर्ती गाँव में भिक्षा मांगने के बाद, वे पत्तों की उस झोपड़ी में बैठकर भिक्षा ग्रहण करते और फिर अपने निवास स्थान पर चले जाते। एक दिन भोजन देने वाले लोगों ने उन्हें एक पत्ते पर नमक लगाकर दिया, दूसरे दिन बिना नमक का भोजन दिया। एक दिन उन्होंने उन्हें पत्तों की टोकरी में बहुत सारा नमक दिया। विदेह के तपस्वी ने नमक लिया और भोजन के समय बोधिसत्व को पर्याप्त नमक दिया और अपने लिए भी उचित मात्रा में ले लिया। फिर शेष नमक को पत्तों की टोकरी में भरकर घास के गट्ठे में लपेटकर उन्होंने कहा, "यह बिना नमक वाले दिन के लिए पर्याप्त है।" फिर एक दिन जब बिना नमक का भोजन प्राप्त हुआ, तो विदेह के एक व्यक्ति ने गांधार (कंधार सहित अफगानिस्तान और पाकिस्तान के निकट) के व्यक्ति को भिक्षा देते हुए घास के गट्ठे से नमक निकाला और कहा, "गुरुजी, नमक लीजिए।" "आज लोगों ने नमक नहीं दिया, आपको यह कहाँ से मिला?" "गुरुजी, लोगों ने एक दिन पहले बहुत नमक दिया था: तब मैंने बचा हुआ नमक रख लिया और सोचा, 'यह बिना नमक वाले दिन के लिए काफी है।'" तब बोधिसत्व ने उसे डांटते हुए कहा, "हे मूर्ख, तुमने तीन सौ मील (4.23 किमी) के विदेह राज्य को त्याग दिया, संन्यासी जीवन अपनाया और मोह से मुक्ति प्राप्त की, और अब तुम्हें नमक और चीनी की लालसा हो रही है।" और इस प्रकार उसे सलाह देते हुए उन्होंने पहला श्लोक कहा:-"बाहरी विपत्तियों से चंद्रमा का निर्मल चेहरा अंधकारमय हो गया है; अब यह राज्य मेरे लिए विपत्ति बन गया है: मैं संन्यासी जीवन व्यतीत करूँगा ताकि यह राज्य मुझे राहु (ग्रहण) के समान अंधकारमय न कर दे, जैसे राहु चंद्रमा के चेहरे को अंधकारमय कर देता है।" "गुरुजी, क्या आप गांधार (कंधार सहित अफगानिस्तान और पाकिस्तान के निकट) के राजा थे?" "हाँ, मैं था।" "गुरुजी, मैं विदेह राज्य और मिथिला नगर में विदेह का राजा था: क्या हम मित्र नहीं थे, यद्यपि हमने कभी एक-दूसरे को नहीं देखा?" "आपका क्या विचार था?" "मैंने सुना था कि आपने संन्यासी जीवन व्यतीत कर लिया है और यह सोचकर, 'निश्चित रूप से उन्होंने उस जीवन का लाभ देखा होगा,' मैंने आपको अपना विचार बनाया और अपना राज्य छोड़कर संन्यासी जीवन व्यतीत कर लिया।" उस समय से वे अत्यंत घनिष्ठ और मित्रवत हो गए और केवल फल खाकर ही जीवन व्यतीत करने लगे। वहाँ लंबे समय तक रहने के बाद वे हिमालय से नमक और सिरका लेने के लिए एक व्यक्ति आया और सीमावर्ती गाँव में पहुँचा। गाँव के लोग उनके व्यवहार से प्रसन्न हुए और उन्हें भिक्षा दी। उन्होंने वादा लेकर जंगल में उनके लिए रात के लिए घर और इसी तरह की अन्य व्यवस्थाएँ करवाईं और उन्हें वहाँ ठहराया। उन्होंने सड़क के किनारे एक सुंदर, पानी से भरे स्थान पर भोजन करने के लिए एक कमरा भी बनवाया। सीमावर्ती गाँव में भिक्षा मांगने के बाद, वे पत्तों की उस झोपड़ी में बैठकर भिक्षा ग्रहण करते और फिर अपने निवास स्थान पर चले जाते। एक दिन भोजन देने वाले लोगों ने उन्हें एक पत्ते पर नमक लगाकर दिया, दूसरे दिन बिना नमक का भोजन दिया। एक दिन उन्होंने उन्हें पत्तों की टोकरी में बहुत सारा नमक दिया। विदेह के तपस्वी ने नमक लिया और भोजन के समय बोधिसत्व को पर्याप्त नमक दिया और अपने लिए भी उचित मात्रा में नमक रख लिया। फिर शेष नमक को पत्तों की टोकरी में भरकर घास के गट्ठे में लपेटकर उन्होंने कहा, "यह बिना नमक वाले दिन के लिए काफी है।" फिर एक दिन जब बिना नमक का भोजन प्राप्त हुआ, तो विदेह के उस व्यक्ति ने भिक्षा का

भोजन वापस देते हुए कहा, "यह बिना नमक वाले दिन के लिए पर्याप्त है।" गांधार (कंधार सहित अफगानिस्तान और पाकिस्तान के निकट) के एक व्यक्ति ने घास के गट्ठे से नमक उठाया और कहा, "गुरुजी, नमक लीजिए।" "आज लोगों ने नमक नहीं दिया, आपको यह कहाँ से मिला?" "गुरुजी, लोगों ने एक दिन पहले बहुत नमक दिया था: तब मैंने बचा हुआ नमक रख लिया और सोचा, 'यह बिना नमक वाले दिन के लिए काफी है।'" तब बोधिसत्व ने उसे डांटते हुए कहा, "हे मूर्ख, आपने तीन सौ मील (4.23 किमी) के विदेह राज्य को त्याग दिया, संन्यासी जीवन अपनाया और मोह से मुक्ति प्राप्त की, और अब आपको नमक और चीनी की लालसा हो रही है।" और इस प्रकार उसे सलाह देते हुए उन्होंने पहला श्लोक कहा:-"बाहरी विपत्तियों से चंद्रमा का निर्मल चेहरा अंधकारमय हो गया है; अब यह राज्य मेरे लिए विपत्ति बन गया है: मैं संन्यासी जीवन व्यतीत करूँगा ताकि यह राज्य मुझे राहु (ग्रहण) के समान अंधकारमय न कर दे, जैसे राहु चंद्रमा के चेहरे को अंधकारमय कर देता है।" "गुरुजी, क्या आप गांधार (कंधार सहित अफगानिस्तान और पाकिस्तान के निकट) के राजा थे?" "हाँ, मैं था।" "गुरुजी, मैं विदेह राज्य और मिथिला नगर में विदेह का राजा था: क्या हम मित्र नहीं थे, यद्यपि हमने कभी एक-दूसरे को नहीं देखा?" "आपका क्या विचार था?" "मैंने सुना था कि आपने संन्यासी जीवन व्यतीत कर लिया है और यह सोचकर, 'निश्चित रूप से उन्होंने उस जीवन का लाभ देखा होगा,' मैंने आपको अपना विचार बनाया और अपना राज्य छोड़कर संन्यासी जीवन व्यतीत कर लिया।" उस समय से वे अत्यंत घनिष्ठ और मित्रवत हो गए और केवल फल खाकर ही जीवन व्यतीत करने लगे। वहाँ लंबे समय तक रहने के बाद वे हिमालय से नमक और सिरका लेने के लिए एक व्यक्ति आया और सीमावर्ती गाँव में पहुँचा। गाँव के लोग उनके व्यवहार से प्रसन्न हुए और उन्हें भिक्षा दी। उन्होंने वादा लेकर जंगल में उनके लिए रात के लिए घर और इसी तरह की अन्य व्यवस्थाएँ करवाईं और उन्हें वहाँ ठहराया। उन्होंने सड़क के किनारे एक सुंदर, पानी से भरे स्थान पर भोजन करने के लिए एक कमरा भी बनवाया। सीमावर्ती गाँव में भिक्षा मांगने के बाद, वे पत्तों की उस झोपड़ी में बैठकर भिक्षा ग्रहण करते और फिर अपने निवास स्थान पर चले जाते। एक दिन भोजन देने वाले लोगों ने उन्हें एक पत्ते पर नमक लगाकर दिया, दूसरे दिन बिना नमक का भोजन दिया। एक दिन उन्होंने उन्हें पत्तों की टोकरी में बहुत सारा नमक दिया। विदेह के तपस्वी ने नमक लिया और भोजन के समय बोधिसत्व को पर्याप्त नमक दिया और अपने लिए भी उचित मात्रा में नमक रख लिया। फिर शेष नमक को पत्तों की टोकरी में भरकर घास के गट्ठे में लपेटकर उन्होंने कहा, "यह बिना नमक वाले दिन के लिए काफी है।" फिर एक दिन जब बिना नमक का भोजन प्राप्त हुआ, तो विदेह के उस व्यक्ति ने भिक्षा का भोजन वापस देते हुए कहा, "यह बिना नमक वाले दिन के लिए पर्याप्त है।" गांधार (कंधार सहित अफगानिस्तान और पाकिस्तान के निकट) के एक व्यक्ति ने घास के गट्ठे से नमक उठाया और कहा, "गुरुजी, नमक लीजिए।" "आज लोगों ने नमक नहीं दिया, आपको यह कहाँ से मिला?" "गुरुजी, लोगों ने एक दिन पहले बहुत नमक दिया था: तब मैंने बचा हुआ नमक रख लिया और सोचा, 'यह बिना नमक वाले दिन के लिए काफी है।'" तब बोधिसत्व ने उसे डांटते हुए कहा, "हे मूर्ख, आपने तीन सौ मील (4.23 किमी) के विदेह राज्य को त्याग दिया, संन्यासी जीवन अपनाया और मोह से मुक्ति प्राप्त की, और अब आपको नमक और चीनी की लालसा हो रही है।" और इस प्रकार उसे सलाह देते हुए उन्होंने पहला श्लोक कहा:-मैंने अपना महान राज्य त्याग दिया और संन्यासी जीवन व्यतीत किया। "गुरुजी, क्या आप गांधार (कंधार सहित अफगानिस्तान और पाकिस्तान के निकट) के राजा थे?" "हाँ, मैं था।" "गुरुजी, मैं विदेह राज्य और मिथिला नगर में विदेह का राजा था: क्या हम मित्र नहीं थे, यद्यपि हमने कभी एक-दूसरे को नहीं देखा?" "आपका क्या विचार था?" "मैंने सुना था कि आपने संन्यासी जीवन व्यतीत किया है और यह सोचकर कि 'निश्चित रूप से उन्होंने उस जीवन का लाभ देखा होगा', मैंने आपको अपना आदर्श बनाया और अपना राज्य छोड़कर संन्यासी जीवन व्यतीत किया।" उस समय से वे अत्यंत घनिष्ठ और मित्रवत हो गए और केवल फल खाकर जीवन यापन करने लगे। वहाँ लंबे समय तक रहने के बाद वे नमक और सिरका लेने के लिए हिमालय से नीचे आए और एक सीमावर्ती गाँव में पहुँचे। गाँव के लोग उनके व्यवहार से प्रसन्न हुए और उन्हें भिक्षा दी और उनसे वादा लेकर जंगल में उनके लिए रात के लिए घर आदि बनवाए और उन्हें वहाँ ठहराया, और सड़क के किनारे एक सुखद जलयुक्त स्थान पर भोजन करने के लिए एक कमरा बनवाया। वे अपने चक्कर लगाने के बाद सीमावर्ती गाँव में भिक्षा मांगने वाले एक तपस्वी ने पत्तों की झोपड़ी में बैठकर भिक्षा ग्रहण की और फिर अपने निवास स्थान पर चले गए। एक दिन भोजन देने वालों ने एक पत्ते पर नमक लगाकर उन्हें दिया, दूसरे दिन बिना नमक का भोजन दिया। एक दिन उन्होंने पत्तों की टोकरी में बहुत सारा नमक दिया। विदेह के तपस्वी ने नमक लिया और भोजन के समय बोधिसत्व को पर्याप्त नमक दिया और अपने लिए भी उचित मात्रा में रख लिया। फिर बचे हुए नमक को पत्तों की टोकरी में भरकर घास के गट्ठे में लपेटकर कहा, "यह एक दिन बिना नमक के काम चल जाएगा।" फिर एक दिन जब बिना नमक का भोजन मिला, तो विदेह के तपस्वी ने गांधार (कंधार सहित अफगानिस्तान और पाकिस्तान के निकट) के तपस्वी को भिक्षा देते हुए घास के गट्ठे से नमक निकाला और कहा, "गुरुजी, नमक लीजिए।" तपस्वी ने कहा, "आज तो लोगों ने नमक नहीं दिया, यह कहाँ से मिला?" तपस्वी ने कहा, "गुरुजी, लोगों ने एक दिन पहले बहुत नमक दिया था: तब जो बच गया था, मैंने उसे रख लिया और कहा, 'यह एक दिन बिना नमक के काम चल जाएगा।'" दिन।" "तब बोधिसत्व ने उसे फटकारते हुए कहा, "हे मूर्ख, तूने तीन सौ मील (4.23 किमी) के विदेह राज्य को त्याग दिया, संन्यासी जीवन व्यतीत किया और आसक्तियों से मुक्ति प्राप्त की, और अब तुझे नमक और चीनी की लालसा हो रही है।" और इस प्रकार उसे सलाह देते हुए उन्होंने पहला श्लोक कहा:-मैंने अपना महान राज्य त्याग दिया और संन्यासी जीवन व्यतीत किया। "गुरुजी, क्या आप गांधार (कंधार सहित अफगानिस्तान और पाकिस्तान के निकट) के राजा थे?" "हाँ, मैं था।" "गुरुजी, मैं विदेह राज्य और मिथिला नगर में विदेह का राजा था: क्या हम मित्र नहीं थे, यद्यपि हमने कभी एक-दूसरे को नहीं देखा?" "आपका क्या विचार था?" "मैंने सुना था कि आपने संन्यासी जीवन व्यतीत किया है और यह सोचकर कि 'निश्चित रूप से उन्होंने उस जीवन का लाभ देखा होगा', मैंने आपको अपना आदर्श बनाया और अपना राज्य छोड़कर संन्यासी जीवन व्यतीत किया।"

उस समय से वे अत्यंत घनिष्ठ और मित्रवत हो गए और केवल फल खाकर जीवन यापन करने लगे। वहाँ लंबे समय तक रहने के बाद वे नमक और सिरका लेने के लिए हिमालय से नीचे आए और एक सीमावर्ती गाँव में पहुँचे। गाँव के लोग उनके व्यवहार से प्रसन्न हुए और उन्हें भिक्षा दी और उनसे वादा लेकर जंगल में उनके लिए रात के लिए घर आदि बनवाए और उन्हें वहाँ ठहराया, और सड़क के किनारे एक सुखद जलयुक्त स्थान पर भोजन करने के लिए एक कमरा बनवाया। वे अपने चक्कर लगाने के बाद सीमावर्ती गाँव में भिक्षा मांगने वाले एक तपस्वी ने पत्तों की झोपड़ी में बैठकर भिक्षा ग्रहण की और फिर अपने निवास स्थान पर चले गए। एक दिन भोजन देने वालों ने एक पत्ते पर नमक लगाकर उन्हें दिया, दूसरे दिन बिना नमक का भोजन दिया। एक दिन उन्होंने पत्तों की टोकरी में बहुत सारा नमक दिया। विदेह के तपस्वी ने नमक लिया और भोजन के समय बोधिसत्व को पर्याप्त नमक दिया और अपने लिए भी उचित मात्रा में रख लिया। फिर बचे हुए नमक को पत्तों की टोकरी में भरकर घास के गट्ठे में लपेटकर कहा, "यह एक दिन बिना नमक के काम चल जाएगा।" फिर एक दिन जब बिना नमक का भोजन मिला, तो विदेह के तपस्वी ने गांधार (कंधार सहित अफगानिस्तान और पाकिस्तान के निकट) के तपस्वी को भिक्षा देते हुए घास के गट्ठे से नमक निकाला और कहा, "गुरुजी, नमक लीजिए।" तपस्वी ने कहा, "आज तो लोगों ने नमक नहीं दिया, यह कहाँ से मिला?" तपस्वी ने कहा, "गुरुजी, लोगों ने एक दिन पहले बहुत नमक दिया था: तब जो बच गया था, मैंने उसे रख लिया और कहा, 'यह एक दिन बिना नमक के काम चल जाएगा।'" दिन।" "तब बोधिसत्व ने उसे फटकारते हुए कहा, "हे मूर्ख, तूने तीन सौ मील (4.23 किमी) के विदेह राज्य को त्याग दिया, संन्यासी जीवन व्यतीत किया और आसक्तियों से मुक्ति प्राप्त की, और अब तुझे नमक और चीनी की लालसा हो रही है।" और इस प्रकार उसे सलाह देते हुए उन्होंने पहला श्लोक कहा:- उस समय से वे अत्यंत घनिष्ठ और मित्रवत हो गए और केवल फल खाकर ही जीवन यापन करते थे। वहाँ लंबे समय तक रहने के बाद वे हिमालय से नमक और सिरका लेने आए और एक सीमावर्ती गाँव में पहुँचे। गाँव के लोग उनके व्यवहार से प्रसन्न हुए और उन्हें भिक्षा दी। उन्होंने वादा लेकर जंगल में उनके लिए रात के लिए घर आदि बनवाए और उन्हें वहाँ ठहराया। उन्होंने सड़क के किनारे एक सुखद जलयुक्त स्थान पर भोजन करने के लिए एक कमरा भी बनवाया। सीमावर्ती गाँव में भिक्षा मांगने के बाद, वे पत्तों की उस झोपड़ी में बैठकर भिक्षा खाते और फिर अपने निवास स्थान पर चले जाते। एक दिन भोजन देने वाले लोगों ने उन्हें एक पत्ते पर नमक लगाकर दिया, दूसरे दिन बिना नमक का भोजन दिया। एक दिन उन्होंने उन्हें पत्तों की टोकरी में बहुत सारा नमक दिया। विदेह के तपस्वी ने नमक लिया और भोजन के समय बोधिसत्व को पर्याप्त नमक दिया और अपने लिए भी उचित मात्रा में ले लिया। फिर शेष नमक को पत्तों की टोकरी में भरकर घास के एक लोथड़े में लपेटकर उन्होंने कहा, "यह बिना नमक के भोजन के लिए पर्याप्त है।" दिन।" फिर एक दिन जब बिना नमक का भोजन प्राप्त हुआ, तो विदेह के उस व्यक्ति ने गांधार (अफगानिस्तान और पाकिस्तान के पास, कंधार सहित) के व्यक्ति को भिक्षा देते हुए घास के गट्ठे से नमक निकाला और कहा, "गुरुजी, नमक लीजिए।" "आज लोगों ने नमक नहीं दिया, आपको यह कहाँ से मिला?" "गुरुजी, लोगों ने एक दिन पहले बहुत नमक दिया था: तब मैंने बचा हुआ नमक रख लिया और कहा, 'यह बिना नमक वाले दिन के लिए काफी है।' "तब बोधिसत्व ने उसे डांटते हुए कहा, "हे मूर्ख, तुमने तीन सौ मील (4.23 किमी) के विदेह राज्य को त्याग दिया, संन्यासी जीवन अपनाया और आसक्तियों से मुक्ति प्राप्त की, और अब तुम्हें नमक और चीनी की लालसा होती है।" और इस प्रकार उसे सलाह देते हुए उन्होंने पहला श्लोक कहा:-उस समय से वे अत्यंत घनिष्ठ और मित्रवत हो गए और केवल फल खाकर ही जीवन यापन करते थे। वहाँ लंबे समय तक रहने के बाद वे हिमालय से नमक और सिरका लेने आए और एक सीमावर्ती गाँव में पहुँचे। गाँव के लोग उनके व्यवहार से प्रसन्न हुए और उन्हें भिक्षा दी। उन्होंने वादा लेकर जंगल में उनके लिए रात के लिए घर आदि बनवाए और उन्हें वहाँ ठहराया। उन्होंने सड़क के किनारे एक सुखद जलयुक्त स्थान पर भोजन करने के लिए एक कमरा भी बनवाया। सीमावर्ती गाँव में भिक्षा मांगने के बाद, वे पत्तों की उस झोपड़ी में बैठकर भिक्षा खाते और फिर अपने निवास स्थान पर चले जाते। एक दिन भोजन देने वाले लोगों ने उन्हें एक पत्ते पर नमक लगाकर दिया, दूसरे दिन बिना नमक का भोजन दिया। एक दिन उन्होंने उन्हें पत्तों की टोकरी में बहुत सारा नमक दिया। विदेह के तपस्वी ने नमक लिया और भोजन के समय बोधिसत्व को पर्याप्त नमक दिया और अपने लिए भी उचित मात्रा में ले लिया। फिर शेष नमक को पत्तों की टोकरी में भरकर घास के एक लोथड़े में लपेटकर उन्होंने कहा, "यह बिना नमक के भोजन के लिए पर्याप्त है।" दिन।" फिर एक दिन जब बिना नमक का भोजन प्राप्त हुआ, तो विदेह के उस व्यक्ति ने गांधार (अफगानिस्तान और पाकिस्तान के पास, कंधार सहित) के व्यक्ति को भिक्षा देते हुए घास के गट्ठे से नमक निकाला और कहा, "गुरुजी, नमक लीजिए।" "आज लोगों ने नमक नहीं दिया, आपको यह कहाँ से मिला?" "गुरुजी, लोगों ने एक दिन पहले बहुत नमक दिया था: तब मैंने बचा हुआ नमक रख लिया और कहा, 'यह बिना नमक वाले दिन के लिए काफी है।' "तब बोधिसत्व ने उसे डांटते हुए कहा, "हे मूर्ख, तुमने तीन सौ मील (4.23 किमी) के विदेह राज्य को त्याग दिया, संन्यासी जीवन अपनाया और आसक्तियों से मुक्ति प्राप्त की, और अब तुम्हें नमक और चीनी की लालसा होती है।" और इस प्रकार उसे सलाह देते हुए उन्होंने पहला श्लोक कहा:-घास के गट्ठे से नमक लेकर उसने कहा, "गुरुजी, नमक लीजिए।" "आज लोगों ने नमक नहीं दिया, ये कहाँ से लाया?" "गुरुजी, लोगों ने एक दिन पहले बहुत नमक दिया था: तब मैंने बचा हुआ नमक रख लिया और सोचा, 'इससे आज बिना नमक के काम चल जाएगा।'" तब बोधिसत्व ने उसे डांटते हुए कहा, "हे मूर्ख, तूने तीन सौ मील (4.23 किमी) के विदेह राज्य को त्याग दिया, संन्यासी जीवन व्यतीत किया और मोह से मुक्ति पाई, और अब तुझे नमक और चीनी की लालसा हो रही है।" और इस प्रकार उसे सलाह देते हुए उन्होंने पहला श्लोक कहा:-घास के गट्ठे से नमक लेकर उसने कहा, "गुरुजी, नमक लीजिए।" "आज लोगों ने नमक नहीं दिया, ये कहाँ से लाया?" "गुरुजी, लोगों ने एक दिन पहले बहुत नमक दिया था: तब मैंने बचा हुआ नमक रख लिया और सोचा, 'इससे आज बिना नमक के काम चल जाएगा।'" तब बोधिसत्व ने उसे डांटते हुए कहा, "हे मूर्ख, तूने तीन सौ मील (4.23 किमी) के विदेह राज्य को त्याग दिया, संन्यासी जीवन व्यतीत किया

और मोह से मुक्ति पाई, और अब तुझे नमक और चीनी की लालसा हो रही है।" और इस प्रकार उसे सलाह देते हुए उन्होंने पहला श्लोक कहा:-

तुमने सोलह हजार लोगों से भरे गांवों को उनकी संपत्ति समेत लुटा दिया।
धन-संपन्न खजाने: और आप आज यहां धन का भंडार जमा कर रहे हैं!
इस प्रकार उपदेश सुनकर विदेह डांट सहन नहीं कर सका और विमुख होकर बोला, "गुरुजी, आप मेरी गलती देखते हैं, अपनी नहीं; क्या आपने अपना राज्य छोड़कर संन्यासी नहीं बन गए थे, यह कहते हुए कि "मैं किसी और को क्यों सलाह दूं? मैं स्वयं ही अपना अनुशासन संभाल लूंगा": तो फिर अब आप मुझे क्यों सलाह दे रहे हैं?" इस प्रकार उसने दूसरा श्लोक कहा:-

कंधार और उसके पूरे प्रांत, उसकी सारी संपत्ति, तुमने सब कुछ त्याग दिया।
अब और कोई शाही आदेश नहीं देना: और तुम आज मुझे आदेश दे रहे हो!
उनकी बात सुनकर बोधिसत्व ने तीसरा श्लोक कहा:-

मैं धर्म की बात कर रहा हूँ, क्योंकि मुझे अधर्म से घृणा है।
जब मैं धार्मिकता की बात करता हूँ, तो पाप मुझ पर कोई प्रभाव नहीं छोड़ता।
विदेह के तपस्वी ने बोधिसत्व के वचन सुनकर कहा, "गुरुजी, किसी को नाराज़ और क्रोधित करने के बाद बोलना उचित नहीं है, भले ही आप सही बात कह रहे हों: आप मुझसे बहुत कठोर शब्दों में बात कर रहे हैं, मानो मुझे कुंद लोहे से काट रहे हों," और इस प्रकार उन्होंने चौथा श्लोक कहा:-

जो भी शब्द बोले जाने पर दूसरों को ठेस पहुंचाते हों,
बुद्धिमान लोग उन शब्दों को अनकहा छोड़ देते हैं, हालांकि उनका महत्व बहुत अधिक होता है।
तब बोधिसत्व ने पाँचवाँ श्लोक कहा:-

चाहे मेरा श्रोता तुच्छ बातों को उजागर करे या न करे, वह नाराज हो या न हो।
जब मैं बोल रहा होता हूँ तो धार्मिकता मुझ पर कोई दाग नहीं छोड़ सकती।
ऐसा कहकर उन्होंने आगे कहा, "हे आनंद (*4) मैं तुम्हारे साथ केवल कच्ची मिट्टी से काम करने वाले कुम्हार की तरह काम नहीं करूँगा: मैं बार-बार फटकार लगाऊँगा; सत्य क्या है, वह अटल रहेगा।" और इस प्रकार भगवान बुद्ध की उस सलाह के अनुरूप आचरण में समर्पित होकर, जैसे कुम्हार अपने बर्तनों में से कच्ची मिट्टी को बार-बार पीटने के बाद केवल पके हुए बर्तन को ही लेता है, वैसे ही बार-बार उपदेश और फटकार लगाते हुए वे एक व्यक्ति को अच्छे बर्तन के समान लेते हैं, और उसे यह दिखाने के लिए उपदेश देते हुए उन्होंने श्लोकों की यह जोड़ी कही:-

यदि कुछ लोगों के जीवन में ज्ञान और अच्छे आचरण को विकसित होने के लिए प्रशिक्षित न किया जाता,
बहुत से लोग अंधे भैंस की तरह व्यर्थ ही भटकते रहते थे।
लेकिन चूंकि कुछ लोगों को नैतिक आचरण में बुद्धिमानी से प्रशिक्षित किया जाता है, जो विकास के लिए उचित है,
इस प्रकार, जो लोग सद्गुणों के मार्ग पर अनुशासित होकर चलते हैं, वे भी उसी राह पर आगे बढ़ते हैं।
यह सुनकर विदेह तपस्वी ने कहा, "गुरुजी, अब से मुझे फटकारें; मैंने आपसे चिड़चिड़े स्वभाव से बात की, मुझे क्षमा करें।" इस प्रकार आदरपूर्वक उन्होंने बोधिसत्व की क्षमा प्राप्त कर ली। अतः वे शांतिपूर्वक साथ रहे और फिर हिमालय चले गए। तब बोधिसत्व ने विदेह तपस्वी को रहस्यवादी ध्यान की विधि बताई। उन्होंने ऐसा किया और उच्चतर शक्तियों और उपलब्धियों को प्राप्त किया। इस प्रकार दोनों ने निरंतर ध्यान करते हुए ब्रह्मलोक के लिए नियति का मार्ग चुना।

पाठ के बाद, गुरु ने जन्म का विवरण दिया: "उस समय विदेह तपस्वी आनंद थे, और गांधार (कंधार) के राजा मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)महावग्ग vi. 15. 10

(2)महावग्ग vi. 15. 1 देखें

(3) पाँच नैतिक नियमों का पालन करने की प्रतिज्ञा।

(4) तपस्वी को इस नाम से संबोधित किया जाता है, मानो आनंद के रूप में उनके भविष्य के पुनर्जन्म की भविष्यवाणी की गई हो।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **महाकपि-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-407-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 407
महाकपी-जातक

"तुमने स्वयं को बनाया," इत्यादि—गुरु ने ये बातें जेतवन मठ में रहते हुए अपने सगे-संबंधियों के प्रति सत्कार के विषय में कही थीं। इस घटना का वर्णन भद्दसला जन्म (*1) में मिलेगा। वे सत्य के हॉल में चर्चा करने लगे, "परम बुद्ध अपने सगे-संबंधियों के प्रति सत्कार करते हैं।" जब गुरु ने उनसे विषय पूछा और उन्हें बताया गया, तो उन्होंने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि तथागत (बुद्ध) ने अपने सगे-संबंधियों के प्रति सत्कार किया हो," और फिर उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, तब बोधिसत्व का जन्म एक बंदर के गर्भ से हुआ। जब वे बड़े हुए और तंदुरुस्त हुए, तो वे बलवान और शक्तिशाली हो गए और हिमालय में अस्सी हजार बंदरों के एक दल के साथ रहते थे। गंगा के किनारे एक आम का पेड़ था (कुछ लोग कहते हैं कि यह बरगद का पेड़ था), जिसकी शाखाएँ और शाखाएँ घनी थीं, और घनी छाया और घने पत्ते थे, मानो किसी पर्वत की चोटी हो। इसके मीठे फल, दिव्य सुगंध और स्वाद से भरपूर, घड़े जितने बड़े थे: एक शाखा से फल जमीन पर गिरते थे, एक गंगा के पानी में, और दो पेड़ के मुख्य तने पर। बोधिसत्व बंदरों के एक दल के साथ फल खाते हुए सोच रहे थे, "एक दिन इस पेड़ के फल के पानी में गिरने से हम पर खतरा आएगा"; इसलिए, पानी के ऊपर उगी शाखा पर एक भी फल न छोड़ने के लिए, उन्होंने बंदरों को चने के आकार के होने पर ही, उनके मौसम के अनुसार फूल खाने या नीचे फेंकने के लिए कहा। लेकिन फिर भी, एक पका हुआ फल, जो अस्सी हज़ार बंदरों की नज़रों से बचकर चींटियों के घोंसले में छिपा हुआ था, नदी में गिर गया और बनारस के राजा के ऊपर लगे जाल में फंस गया। राजा मनोरंजन के लिए ऊपर और नीचे जाल बिछाकर स्नान कर रहे थे। जब राजा दिन भर मनोरंजन करने के बाद शाम को जाने लगे, तो जाल समेट रहे मछुआरों ने उस फल को देखा और यह न जानते हुए कि वह क्या है, राजा को समझाया। राजा ने पूछा, "यह कौन सा फल है?" "महाराज, हमें नहीं पता।" "किसे पता चलेगा?" "वनपालों को, महाराज।" उन्होंने वनपालों को बुलवाया और उनसे यह जानकर कि यह एक आम है, उन्होंने उसे चाकू से काटा और पहले वनपालों को खिलाया, फिर स्वयं खाया और कुछ अपने हरम और मंत्रियों को भी दिया। पके आम का स्वाद राजा के पूरे शरीर में बसा रहा। स्वाद की लालसा से व्याकुल होकर उन्होंने वनपालों से पूछा कि वह वृक्ष कहाँ स्थित है। यह जानकर कि वह हिमालयी क्षेत्र में एक नदी के किनारे पर है, उन्होंने कई नौकाओं को जोड़कर वनपालों द्वारा बताए गए मार्ग से नदी के ऊपर की ओर प्रस्थान किया। दिनों का सटीक विवरण नहीं दिया गया है। उचित समय पर वे उस स्थान पर पहुँचे और वनपालों ने राजा से कहा, "महाराज, वह रहा वृक्ष।" राजा ने नौकाओं को रोक दिया और अपने साथ बहुत से सेवकों को लेकर पैदल चले और वृक्ष के नीचे एक पलंग तैयार करवाकर आम खाने और उसके विभिन्न उत्तम स्वादों का आनंद लेने के बाद लेट गए। दोनों ओर पहरेदार तैनात किए गए और आग जलाई गई। जब सेवक सो गए, आधी रात को बोधिसत्व अपने सेवकों के साथ सो रहे थे। अस्सी हज़ार बंदर डालियों पर चढ़कर आम खा रहे थे। राजा जागकर बंदरों के झुंड को देखकर अपने सैनिकों को जगाया और अपने धनुर्धारियों को बुलाकर कहा, "आम खाने वाले इन बंदरों को घेर लो ताकि वे भाग न सकें और उन्हें मार गिराओ: कल हम बंदरों के मांस के साथ आम खाएंगे।" धनुर्धारियों ने आज्ञा का पालन करते हुए कहा, "ठीक है।"और पेड़ के चारों ओर तीर तैयार करके खड़े थे। बंदरों ने उन्हें देखकर और मृत्यु से भयभीत होकर, क्योंकि वे भाग नहीं सकते थे, बोधिसत्व के पास आकर कहा, "हे प्रभु, तीरंदाज पेड़ के चारों ओर खड़े हैं और कह रहे हैं, 'हम उन भटकते बंदरों को मार गिराएंगे:' हम क्या करें?" और कांपते हुए खड़े रहे। बोधिसत्व ने कहा, "डरो मत, मैं तुम्हें जीवन दूंगा;" और बंदरों के झुंड को दिलासा देते हुए, वे एक सीधी शाखा पर चढ़ गए, फिर गंगा की ओर फैली दूसरी शाखा पर चले गए, और उसके अंत से छलांग लगाकर सौ धनुष की लंबाई पार कर नदी के किनारे एक झाड़ी पर उतरे (*2)। नीचे आकर, उन्होंने दूरी का अनुमान लगाते हुए कहा, "यह वह दूरी है जो मैंने तय की है:" और एक बांस के अंकुर को जड़ से काटकर और उसे छीलते हुए कहा, "इतना भाग पेड़ से बंधा रहेगा, और इतना भाग हवा में रहेगा," और इस प्रकार दोनों लंबाई को नापा, अपनी कमर पर बंधे हुए भाग को भूलकर। अंकुर को लेकर उन्होंने एक छोर बांध दिया उसने एक धनुष गंगा तट पर स्थित वृक्ष से और दूसरा अपनी कमर से बाँध लिया, और फिर हवा से चीरे हुए बादल की गति से सौ धनुषों की दूरी तय कर ली। कमर से बाँधे हुए धनुष को नापने के कारण वह वृक्ष तक नहीं पहुँच पाया: इसलिए उसने दोनों हाथों से एक शाखा को मजबूती से

पकड़कर बंदरों के झुंड को संकेत दिया, "जल्दी जाओ, मेरी पीठ पर बाँस के अंकुर के सहारे चलते हुए।" अस्सी हजार बंदर बोधिसत्व को प्रणाम करके और उनकी अनुमति लेकर भाग गए। देवदत्त उस झुंड में एक बंदर था: उसने कहा, "यह मेरे लिए अपने शत्रु को अंतिम रूप से देखने का मौका है," इसलिए एक शाखा पर चढ़कर उसने छलांग लगाई और बोधिसत्व की पीठ पर गिर पड़ा। बोधिसत्व का हृदय टूट गया और उन्हें असहनीय पीड़ा हुई। देवदत्त उस असहनीय पीड़ा को उत्पन्न करके चला गया: और बोधिसत्व अकेले रह गए। राजा जागते हुए बंदरों और बोधिसत्व द्वारा किए गए सभी कार्यों को देख रहा था: और वह सोचते हुए लेट गया, "इस जानवर ने अपने जीवन की परवाह न करते हुए अपने समूह की सुरक्षा खतरे में डाल दी है।" जब सूर्योदय हुआ, तो बोधिसत्व से प्रसन्न होकर उसने सोचा, "इस वानरों के राजा को मारना उचित नहीं है: मैं इसे किसी तरह नीचे लाऊंगा और इसकी देखभाल करूंगा।" अतः उसने गंगा में बेड़ा मोड़कर वहाँ एक चबूतरा बनाया और बोधिसत्व को धीरे से नीचे उतारा, और उनकी पीठ पर पीले रंग का वस्त्र पहनाकर उन्हें गंगाजल से नहलाया, उन्हें मीठा जल पिलाया और उनके शरीर को हजार बार शुद्ध किए गए तेल से शुद्ध किया; फिर उसने एक पलंग पर तेल लगी चमड़ी बिछाई और उन्हें उस पर लिटाकर स्वयं एक नीची चौकी पर बैठकर प्रथम श्लोक बोला:-मैं तुम्हें जीवन दूंगा;" और इस प्रकार बंदरों के झुंड को दिलासा देते हुए, वह एक सीधी शाखा पर चढ़ गया, फिर गंगा की ओर फैली दूसरी शाखा पर चला गया, और उसके अंत से छलांग लगाकर सौ धनुष की लंबाई पार कर किनारे पर एक झाड़ी पर उतर गया (*2)। नीचे आकर उसने दूरी का अनुमान लगाते हुए कहा, "यह वह दूरी है जो मैंने तय की है:" और एक बांस के अंकुर को जड़ से काटकर और उसे छीलकर उसने कहा, "इतना भाग पेड़ से बंधा रहेगा, और इतना हवा में रहेगा," और इस प्रकार उसने दोनों लंबाई नापीं, अपनी कमर पर बंधे भाग को भूलकर। उसने अंकुर को लेकर उसका एक सिरा गंगा किनारे के पेड़ से और दूसरा अपनी कमर से बांध लिया, और फिर हवा से चीरे हुए बादल की गति से सौ धनुष की लंबाई की दूरी तय कर ली। अपनी कमर पर बंधे भाग को न नापने के कारण वह पेड़ तक नहीं पहुंच पाया: इसलिए उसने दोनों हाथों से एक शाखा को मजबूती से पकड़कर बंदरों के झुंड को संकेत दिया, "जल्दी जाओ, मेरी पीठ पर पैर रखकर।" बाँस की टहनी।" अस्सी हज़ार बंदर बोधिसत्व को प्रणाम करके और उनकी अनुमति लेकर भाग निकले। देवदत्त उस झुंड में एक बंदर था: उसने कहा, "यह मेरे लिए अपने शत्रु को अंतिम रूप से देखने का मौका है," इसलिए वह एक शाखा पर चढ़कर उछला और बोधिसत्व की पीठ पर गिर पड़ा। बोधिसत्व का हृदय टूट गया और उन्हें असहनीय पीड़ा हुई। देवदत्त उस असहनीय पीड़ा को उत्पन्न करके चला गया: और बोधिसत्व अकेले रह गए। जागते हुए राजा ने बंदरों और बोधिसत्व द्वारा किए गए सभी कार्यों को देखा: और वह यह सोचते हुए लेट गया, "इस जानवर ने अपने जीवन की परवाह न करते हुए अपने झुंड की सुरक्षा को खतरे में डाल दिया है।" जब दिन निकला, तो बोधिसत्व से प्रसन्न होकर उसने सोचा, "बंदरों के इस राजा को नष्ट करना उचित नहीं है: मैं उसे किसी तरह नीचे लाऊंगा और उसका ध्यान रखूंगा:" इसलिए उसने गंगा में बेड़ा मोड़ा और वहाँ एक चबूतरा बनाया, और बोधिसत्व को वहाँ लिटाया। धीरे से नीचे आकर, उसने उसे पीले रंग का वस्त्र पहनाया और गंगाजल से स्नान कराया, उसे मीठा जल पिलाया, और उसके शरीर को शुद्ध करके हजार बार शुद्ध किए गए तेल से लेप किया; फिर उसने एक पलंग पर तेल लगी मशक रखी और उसे उस पर लिटाकर स्वयं एक नीची चौकी पर बैठ गया, और पहला श्लोक बोला:-मैं तुम्हें जीवन दूंगा;" और इस प्रकार बंदरों के झुंड को दिलासा देते हुए, वह एक सीधी शाखा पर चढ़ गया, फिर गंगा की ओर फैली दूसरी शाखा पर चला गया, और उसके अंत से छलांग लगाकर सौ धनुष की लंबाई पार कर किनारे पर एक झाड़ी पर उतर गया (*2)। नीचे आकर उसने दूरी का अनुमान लगाते हुए कहा, "यह वह दूरी है जो मैंने तय की है:" और एक बांस के अंकुर को जड़ से काटकर और उसे छीलकर उसने कहा, "इतना भाग पेड़ से बंधा रहेगा, और इतना हवा में रहेगा," और इस प्रकार उसने दोनों लंबाई नापीं, अपनी कमर पर बंधे भाग को भूलकर। उसने अंकुर को लेकर उसका एक सिरा गंगा किनारे के पेड़ से और दूसरा अपनी कमर से बांध लिया, और फिर हवा से चीरे हुए बादल की गति से सौ धनुष की लंबाई की दूरी तय कर ली। अपनी कमर पर बंधे भाग को न नापने के कारण वह पेड़ तक नहीं पहुंच पाया: इसलिए उसने दोनों हाथों से एक शाखा को मजबूती से पकड़कर बंदरों के झुंड को संकेत दिया, "जल्दी जाओ, मेरी पीठ पर पैर रखकर।" बाँस की टहनी।" अस्सी हज़ार बंदर बोधिसत्व को प्रणाम करके और उनकी अनुमति लेकर भाग निकले। देवदत्त उस झुंड में एक बंदर था: उसने कहा, "यह मेरे लिए अपने शत्रु को अंतिम रूप से देखने का मौका है," इसलिए वह एक शाखा पर चढ़कर उछला और बोधिसत्व की पीठ पर गिर पड़ा। बोधिसत्व का हृदय टूट गया और उन्हें असहनीय पीड़ा हुई। देवदत्त उस असहनीय पीड़ा को उत्पन्न करके चला गया: और बोधिसत्व अकेले रह गए। जागते हुए राजा ने बंदरों और बोधिसत्व द्वारा किए गए सभी कार्यों को देखा: और वह यह सोचते हुए लेट गया, "इस जानवर ने अपने जीवन की परवाह न करते हुए अपने झुंड की सुरक्षा को खतरे में डाल दिया है।" जब दिन निकला, तो बोधिसत्व से प्रसन्न होकर उसने सोचा, "बंदरों के इस राजा को नष्ट करना उचित नहीं है: मैं उसे किसी तरह नीचे लाऊंगा और उसका ध्यान रखूंगा:" इसलिए उसने गंगा में बेड़ा मोड़ा और वहाँ एक चबूतरा बनाया, और बोधिसत्व को वहाँ लिटाया। धीरे से नीचे आकर, उसने उसे पीले रंग का वस्त्र पहनाया और गंगाजल से स्नान कराया, उसे मीठा जल पिलाया, और उसके शरीर को शुद्ध करके हजार बार शुद्ध किए गए तेल से लेप किया; फिर उसने एक पलंग पर तेल लगी मशक रखी और उसे उस पर लिटाकर स्वयं एक नीची चौकी पर बैठ गया, और पहला श्लोक बोला:-फिर उसने हवा से चीरे हुए बादल की गति से सौ धनुषों की दूरी तय कर ली। कमर से बंधे हिस्से को नापने के कारण वह पेड़ तक नहीं पहुँच पाया: इसलिए उसने दोनों हाथों से एक शाखा को मजबूती से पकड़कर बंदरों के झुंड को संकेत दिया, "जल्दी जाओ, मेरी पीठ पर बांस के अंकुर के सहारे चलते हुए।" अस्सी हजार बंदर बोधिसत्व को प्रणाम करके और उनकी अनुमति लेकर भाग गए। देवदत्त उस झुंड में एक बंदर था: उसने कहा, "यह मेरे लिए अपने शत्रु को अंतिम बार देखने का मौका है," इसलिए वह एक शाखा पर चढ़कर उछला और बोधिसत्व की पीठ पर गिर पड़ा। बोधिसत्व का हृदय टूट गया और उन्हें असहनीय पीड़ा हुई। देवदत्त उस असहनीय पीड़ा

को पहुँचाकर चला गया: और बोधिसत्व अकेले रह गए। जागते हुए राजा ने बंदरों और बोधिसत्व द्वारा किए गए सभी कार्यों को देखा और यह सोचते हुए लेट गया, "इस जानवर ने अपने जीवन की परवाह न करते हुए अपने दल की रक्षा की है।" जब दिन निकला, तो बोधिसत्व से प्रसन्न होकर उसने सोचा, "इस बंदरों के राजा को नष्ट करना उचित नहीं है: मैं इसे किसी तरह नीचे लाऊंगा और इसकी देखभाल करूंगा।" अतः उसने गंगा में बेड़ा मोड़कर वहाँ एक चबूतरा बनाया और बोधिसत्व को धीरे से नीचे उतारा, और उनकी पीठ पर पीले रंग का वस्त्र पहनाया और उन्हें गंगाजल से धोया, उन्हें मीठा जल पिलाया और उनके शरीर को हजार बार शुद्ध किए गए तेल से शुद्ध किया; फिर उसने एक पलंग पर तेल लगी हुई चमड़ी बिछाई और उन्हें उस पर लिटाकर स्वयं एक नीची चौकी पर बैठ गया और पहला श्लोक बोला:-फिर उसने हवा से चीरे हुए बादल की गति से सौ धनुषों की दूरी तय कर ली। कमर से बंधे हिस्से को नापने के कारण वह पेड़ तक नहीं पहुँच पाया: इसलिए उसने दोनों हाथों से एक शाखा को मजबूती से पकड़कर बंदरों के झुंड को संकेत दिया, "जल्दी जाओ, मेरी पीठ पर बांस के अंकुर के सहारे चलते हुए।" अस्सी हजार बंदर बोधिसत्व को प्रणाम करके और उनकी अनुमति लेकर भाग गए। देवदत्त उस झुंड में एक बंदर था: उसने कहा, "यह मेरे लिए अपने शत्रु को अंतिम बार देखने का मौका है," इसलिए वह एक शाखा पर चढ़कर उछला और बोधिसत्व की पीठ पर गिर पड़ा। बोधिसत्व का हृदय टूट गया और उन्हें असहनीय पीड़ा हुई। देवदत्त उस असहनीय पीड़ा को पहुँचाकर चला गया: और बोधिसत्व अकेले रह गए। जागते हुए राजा ने बंदरों और बोधिसत्व द्वारा किए गए सभी कार्यों को देखा और यह सोचते हुए लेट गया, "इस जानवर ने अपने जीवन की परवाह न करते हुए अपने दल की रक्षा की है।" जब दिन निकला, तो बोधिसत्व से प्रसन्न होकर उसने सोचा, "इस बंदरों के राजा को नष्ट करना उचित नहीं है: मैं इसे किसी तरह नीचे लाऊंगा और इसकी देखभाल करूंगा।" अतः उसने गंगा में बेड़ा मोड़कर वहाँ एक चबूतरा बनाया और बोधिसत्व को धीरे से नीचे उतारा, और उनकी पीठ पर पीले रंग का वस्त्र पहनाया और उन्हें गंगाजल से धोया, उन्हें मीठा जल पिलाया और उनके शरीर को हजार बार शुद्ध किए गए तेल से शुद्ध किया; फिर उसने एक पलंग पर तेल लगी हुई चमड़ी बिछाई और उन्हें उस पर लिटाकर स्वयं एक नीची चौकी पर बैठ गया और पहला श्लोक बोला:-और उसने उसके शरीर को शुद्ध किया और हजार बार शुद्ध किए गए तेल से अभिषेक किया; फिर उसने एक पलंग पर तेल से सना हुआ चमड़ा रखा और उसे वहाँ लिटाकर स्वयं एक नीची चौकी पर बैठ गया और पहला श्लोक बोला:-और उसने उसके शरीर को शुद्ध किया और हजार बार शुद्ध किए गए तेल से अभिषेक किया; फिर उसने एक पलंग पर तेल से सना हुआ चमड़ा रखा और उसे वहाँ लिटाकर स्वयं एक नीची चौकी पर बैठ गया और पहला श्लोक बोला:-

आपने उनके लिए एक पुल का निर्माण किया ताकि वे सुरक्षित रूप से गुजर सकें:
तो फिर, हे बंदर, तुम उनके लिए क्या हो, और वे तुम्हारे लिए क्या हैं?
उनकी बात सुनकर, राजा को उपदेश दे रहे बोधिसत्व ने अन्य श्लोक कहे:-

विजयी राजा, मैं झुंड की रक्षा करता हूँ, मैं उनका स्वामी और मुखिया हूँ।
जब वे तुमसे भयभीत थे और शोक से व्याकुल थे।
मैंने फैली हुई धनुष की लंबाई से सौ गुना अधिक दूरी तक छलांग लगाई।
जब मैंने अपनी जांघों के चारों ओर बांस की एक शाखा को कसकर बांध लिया था:
मैं आंधी के झोंके से तेजी से आगे बढ़ते हुए गरजते बादल की तरह पेड़ तक पहुंचा;
मेरी ताकत खत्म हो गई, लेकिन मैंने अपने हाथों से एक शाखा को पकड़ लिया और उसे मजबूती से थाम लिया।
और जब मैं वहां टहनियों और शाखाओं से मजबूती से बंधा हुआ लटका हुआ था,
मेरे बंदर मेरी पीठ पर से निकल गए और अब सुरक्षित हैं।
इसलिए मुझे मृत्यु के कष्ट से भय नहीं होता, बंधन मुझे पीड़ा नहीं देते।
मैंने उन लोगों को प्रसन्न किया जिन पर मैंने शासन किया था।
हे राजा, यदि आप सत्य को पढ़ना चाहें तो आपके लिए एक दृष्टांत:
राज्य, सेना और घुड़सवार सेना का सुख
और यदि तुम सचमुच शासन करना चाहते हो, तो यह नगर तुम्हारे लिए प्रिय होना चाहिए।
इस प्रकार राजा को उपदेश और शिक्षा देते हुए बोधिसत्व का निधन हो गया। राजा ने अपने मंत्रियों को बुलाकर आदेश दिया कि वानर-राजा का अंतिम संस्कार राजा के समान किया जाए और उन्होंने हरम में संदेश भेजा, "लाल वस्त्र, बिखरे हुए बाल और हाथों में मशालें लेकर वानर-राजा के परिचारकों के समूह के रूप में श्मशान में आओ।" मंत्रियों ने सौ गाड़ियों में लदी लकड़ियों से चिता बनाई। बोधिसत्व के अंतिम संस्कार की विधिपूर्वक तैयारी करने के बाद, वे उनकी खोपड़ी लेकर राजा के पास आए। राजा ने बोधिसत्व के समाधि स्थल पर एक मंदिर बनवाया, वहाँ मशालें जलाई गईं और धूप और फूल चढ़ाए गए; उन्होंने खोपड़ी को सोने से जड़वाया और उसे भाले की नोक पर ऊँचा करके रखा: धूप और फूलों से उसका सम्मान करते हुए, उन्होंने उसे बनारस आने पर राजा के द्वार पर रखा और पूरे शहर को सजाकर सात दिनों तक उसका सम्मान किया। फिर उसे एक पवित्र अवशेष मानकर और एक मंदिर बनाकर, उन्होंने जीवन भर धूप और मालाओं से उसका सम्मान किया; और बोधिसत्व की शिक्षाओं में स्थापित होकर उन्होंने दान और अन्य अच्छे कर्म किए, और अपने राज्य पर धार्मिक रूप से शासन करते हुए स्वर्ग के लिए नियत हो गए।

पाठ के बाद, गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: "उस समय राजा आनंद थे, वानरों का समूह सभा था, और वानर-राजा मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)सं. 444

(2)भरहुत स्तूप पर बनी आकृति से ऐसा प्रतीत होता है कि वह गंगा के पार कूद गया था।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कुम्भकार-जातक**
***स्रोत**: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-408-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 408
कुंभकर जातक

"जंगल में एक आम," इत्यादि। गुरु ने ये बातें जेतवन मठ में रहते हुए पाप के निवारण के विषय में कही थीं। इसका वर्णन पाणिय जन्म (*1) में मिलेगा। उस समय श्रावस्ती नगर में पाँच सौ मित्र, जो संन्यासी बन चुके थे और स्वर्णमयी भवन में रहते थे, आधी रात को कामुक विचारों से ग्रस्त हो गए। गुरु अपने शिष्यों का रात में तीन बार और दिन में तीन बार, दिन-रात छह बार ध्यान रखते हैं, जैसे नीलकंठ अपने अंडे की रक्षा करता है, या याक अपनी पूंछ की, या माता अपने प्रिय पुत्र की, या काना अपनी आँख की; ठीक उसी क्षण वे आरंभ हो रहे पाप को डांट देते हैं। उस आधी रात को वे जेतवन मठ का अवलोकन कर रहे थे और भिक्षुओं के चिंतन को जानकर उन्होंने सोचा, "यदि इन भिक्षुओं में यह पाप बढ़ता रहा तो यह संतत्व के मार्ग को नष्ट कर देगा। मैं अभी इसी क्षण उनके पाप का निवारण करूंगा और उन्हें संतत्व का मार्ग दिखाऊंगा।" अतः सुगंधित कक्ष छोड़कर उन्होंने आनंद को पुकारा और उनसे वहां रहने वाले सभी भिक्षुओं को एकत्रित करने को कहा। वे सब एकत्रित होकर बुद्ध के लिए तैयार आसन पर बैठ गए। उन्होंने कहा, "भाइयों, पापी विचारों के वश में रहना उचित नहीं है; पाप यदि बढ़ता है तो शत्रु के समान घोर विनाश लाता है। भिक्षुओं को छोटे से छोटे पाप का भी निवारण करना चाहिए। प्राचीन काल के बुद्धिमान पुरुषों ने एक छोटे से कारण को देखकर भी आरंभ हुए पापी विचार का निवारण किया और इस प्रकार सिद्धबुद्धत्व की प्राप्ति हुई।" और इस प्रकार उन्होंने एक पुरानी कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व का जन्म बनारस के उपनगर में एक कुम्हार परिवार में हुआ था। बड़े होकर वे गृहस्थ बन गए, उनके एक पुत्र और एक पुत्री हुई, और वे अपने कुम्हार के काम से अपनी पत्नी और बच्चों का पालन-पोषण करते थे। उसी समय कलिंग राज्य के दंतपुरा नगर में, राजा करंडु अपने साथ बहुत से सेवकों को लेकर अपने उद्यान में गए। उन्होंने उद्यान के द्वार पर मीठे फलों से लदा एक आम का वृक्ष देखा। उन्होंने हाथी पर बैठे-बैठे ही हाथ बढ़ाकर आमों का एक गुच्छा तोड़ लिया। फिर उद्यान में प्रवेश करके वे राजसी आसन पर बैठ गए और एक आम खाया, तथा कुछ आम उन्होंने जरूरतमंदों को भी दिए। राजा के एक आम खाने के बाद, मंत्रियों, ब्राह्मणों और गृहस्थों ने यह सोचकर कि दूसरों को भी ऐसा करना चाहिए, उस वृक्ष से आम तोड़कर खाए। वे बार-बार वृक्ष पर चढ़ते, उसे गदाओं से पीटते और डालियों को तोड़ते हुए सारे फल खा जाते, यहाँ तक कि कच्चे आम भी नहीं छोड़ते। राजा दिनभर बगीचे में आनंद लेते रहे, और शाम को जब वे शाही हाथी पर सवार होकर वहाँ से गुज़रे तो उस वृक्ष को देखकर वे हाथी से उतर गए और उसकी जड़ के पास जाकर ऊपर देखते हुए सोचने लगे, "सुबह तो यह वृक्ष फलों से लदा हुआ कितना सुंदर लग रहा था कि देखने वालों की आँखें चौंधिया जाती थीं: अब तो इसके फल टूटकर गिर जाने से यह सुंदर नहीं लग रहा है।" फिर दूसरी जगह से देखने पर उन्हें एक और आम का पेड़ सूखा पड़ा दिखाई दिया, और उन्होंने सोचा, "यह आम का पेड़ अपनी बंजर अवस्था में रत्नों के नंगे पहाड़ की तरह सुंदर लग रहा है; दूसरा पेड़ अपनी फलदायकता से इस दुर्भाग्य में गिर गया: गृहस्थ जीवन फलदार वृक्ष के समान है, संन्यासी जीवन बंजर वृक्ष के समान है: धनी भयभीत होते हैं, गरीब भयभीत नहीं होते: मैं भी बंजर वृक्ष के समान होना चाहता हूँ।" अतः उस फलदार वृक्ष को अपना विषय बनाकर वे उसकी जड़ के पास खड़े हो गए; और तीनों (*2) गुणों पर विचार करते हुए और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि को पूर्ण करते हुए, उन्होंने पच्चेकबुद्धत्व प्राप्त किया, और यह सोचते हुए, "गर्भ का

आवरण अब मुझसे हट गया है, तीनों जन्मों का चक्र समाप्त हो गया है, जन्म-जन्म का मैल धुल गया है, आँसुओं का सागर सूख गया है, हड्डियों का ढाँचा टूट गया है, अब मेरा कोई पुनर्जन्म नहीं होगा," वे मानो सभी आभूषणों से सुशोभित खड़े थे। तब उनके मंत्रियों ने कहा, "हे महान राजा, आप बहुत देर तक खड़े रहे।" "मैं राजा नहीं, मैं पच्चेकबुद्ध हूँ।" "हे राजा, पच्चेकबुद्ध आपके जैसे नहीं होते।" "तो फिर वे कैसे होते हैं?" "उनके बाल और दाढ़ी मुंडे हुए होते हैं, वे पीले वस्त्र धारण करते हैं, वे परिवार या गोत्र से आसक्त नहीं होते, वे हवा से चीरे हुए बादलों या राहु (ग्रहण) से मुक्त चंद्रमा के चेहरे के समान होते हैं, और वे हिमालय में नंदमूल गुफा में निवास करते हैं: हे राजा, ऐसे ही पच्चेकबुद्ध होते हैं।" उसी क्षण राजा ने अपना हाथ ऊपर उठाया और अपने सिर को छुआ, और तुरंत ही गृहस्थ के लक्षण गायब हो गए, और एक पुजारी के लक्षण दिखाई देने लगे:-

तीन वस्त्र, कटोरा, रेजर, सुइयां, छलनी, क्षेत्र,
एक धर्मनिष्ठ भाई के पास वे आठ चिह्न होने चाहिए।
पुजारी की आवश्यक वस्तुएँ, जैसा कि उन्हें कहा जाता है, उनके शरीर से जुड़ गईं। हवा में खड़े होकर उन्होंने लोगों को उपदेश दिया और फिर आकाश के माध्यम से ऊपरी हिमालय में स्थित नंदामूला पर्वत गुफा में चले गए।

कंधार राज्य के तक्षशिला शहर में, राजा नग्गजी एक चबूतरे पर शाही पलंग के बीच में बैठे थे। उन्होंने देखा कि एक स्त्री ने दोनों हाथों में रत्नजड़ित कंगन पहन रखे थे और पास में बैठकर इत्र पीस रही थी। उन्होंने सोचा, "अलग-अलग होने पर ये रत्नजड़ित कंगन न तो रगड़ते हैं और न ही झनझनाते हैं," और वे बैठकर उसे देखते रहे। फिर उसने दाहिने हाथ का कंगन बाएं हाथ में पहनाकर दाहिने हाथ से इत्र इकट्ठा करते हुए उसे पीसना शुरू कर दिया। बाएं हाथ का कंगन दूसरे हाथ से रगड़ने पर आवाज करने लगा। राजा ने देखा कि ये दोनों कंगन आपस में रगड़ने पर ध्वनि उत्पन्न करते हैं, और उन्होंने सोचा, "जब ये कंगन अलग-अलग थे तो किसी चीज को नहीं छूते थे, अब जब ये दूसरे को छूते हैं तो ध्वनि उत्पन्न करते हैं; ठीक इसी प्रकार, जब जीव अलग-अलग होते हैं तो न तो एक दूसरे को छूते हैं और न ही ध्वनि उत्पन्न करते हैं; जब वे दो या तीन हो जाते हैं तो एक दूसरे से रगड़ते हैं और शोर मचाते हैं; अब मैं कश्मीर और कंधार के दो राज्यों के निवासियों पर शासन करता हूँ, और मुझे भी उस अकेले कंगन की तरह रहना चाहिए जो स्वयं पर शासन करता है, न कि किसी दूसरे पर।" इस प्रकार, कंगनों के रगड़ने को अपना विषय बनाकर, वे बैठे-बैठे ही तीनों गुणों को जान गए, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि प्राप्त की और पच्चेकबुद्धत्व प्राप्त किया। शेष पहले जैसा ही है।

विदेह राज्य के मिथिला नगर में, राजा निमी ने नाश्ते के बाद अपने मंत्रियों से घिरे हुए महल की खुली खिड़की से सड़क की ओर देखा। एक बाज़ मांस बाजार से कुछ मांस लेकर हवा में उड़ रहा था। बाज़ के दोनों ओर कुछ गिद्ध या अन्य पक्षी मंडरा रहे थे और मांस के लिए उसे अपनी चोंचों से नोच रहे थे, अपने पंखों से मार रहे थे और अपने पैरों से पीट रहे थे। मरने की पीड़ा सहन न कर पाने के कारण बाज़ ने मांस गिरा दिया, दूसरे पक्षी ने उसे उठा लिया; बाज़ से बचा हुआ मांस दूसरे पर गिर पड़ा; जब उसने उसे फिर से छोड़ दिया, तो तीसरे ने उसे उठा लिया; और वे उसे भी उसी तरह नोचते रहे। उन पक्षियों को देखकर राजा ने सोचा, "जिसने मांस खाया, उसे दुःख हुआ; जिसने मांस त्यागा, उसे सुख मिला; जिसने पाँचों इंद्रिय सुखों का सेवन किया, उसे दुःख हुआ, दूसरे को सुख मिला; ये तो अनेकों के लिए सामान्य हैं; अब मेरे पास सोलह हजार स्त्रियाँ हैं: मुझे पाँचों इंद्रिय सुखों को त्यागकर सुखमय जीवन व्यतीत करना चाहिए, जैसे बाज मांस का टुकड़ा त्याग देता है।" इस पर बुद्धिमानी से विचार करते हुए, जहाँ वह खड़ा था, उसने तीनों गुणों को जान लिया, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि प्राप्त की और पच्चेकबुद्धत्व का ज्ञान प्राप्त किया। शेष पहले जैसा ही।

उत्तरा पंचाल राज्य के कामपिल्ला नगर में, दुममुख नामक राजा ने नाश्ते के बाद, अपने सभी आभूषणों से सुसज्जित और अपने मंत्रियों से घिरे हुए, महल के प्रांगण की ओर खुली खिड़की से नीचे देखा। जैसे ही उन्होंने गौशाला का द्वार खोला, गौशाला से निकले बैलों ने एक गाय पर वासना से आवेशित होकर हमला कर दिया। एक विशाल, नुकीले सींगों वाले बैल ने दूसरे बैल को आते देख, वासना से ग्रस्त होकर, अपने नुकीले सींगों से उसकी जांघ पर प्रहार किया। प्रहार की शक्ति से उसकी आंतें बाहर निकल आईं और वह मर गया। यह देखकर राजा ने सोचा, "पशुओं से ऊपर के सभी जीव वासना के कारण दुःख भोगते हैं; यह बैल वासना के कारण मृत्यु को प्राप्त हुआ है; अन्य जीव भी वासना से व्याकुल होते हैं; मुझे उन वासनाओं का त्याग करना चाहिए जो इन जीवों को व्याकुल करती हैं।" और इस प्रकार खड़े-खड़े ही उन्होंने तीनों गुणों को जान लिया, आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि प्राप्त की और पच्चेकबुद्धत्व का ज्ञान प्राप्त किया। शेष कहानी पहले जैसी ही है।

फिर एक दिन उन चारों पच्चेकबुद्धों ने यह सोचकर कि उनके परिक्रमा का समय हो गया है, नंदमूल गुफा से प्रस्थान किया। उन्होंने अनोत्तत्ता झील में पान चबाकर अपने दांत साफ किए और मनोशिला में अपनी आवश्यकताओं का ध्यान रखा। फिर उन्होंने भिक्षापात्र और वस्त्र लिए और जादू से हवा में उड़ते हुए, पांच रंगों के बादलों पर चलते हुए, बनारस के उपनगर के पास उतरे। एक उपयुक्त स्थान पर उन्होंने वस्त्र धारण किए, भिक्षापात्र लिया और उपनगर में प्रवेश करके भिक्षा मांगने के लिए परिक्रमा करते हुए बोधिसत्व के घर के द्वार तक पहुंचे। बोधिसत्व ने उन्हें देखकर प्रसन्नता व्यक्त की और उन्हें अपने घर में प्रवेश देकर एक तैयार आसन पर बैठाया, उन्हें आदर का जल दिया और उत्तम भोजन, कठोर और नरम, परोसा। फिर एक तरफ बैठकर उन्होंने उनमें से सबसे बड़े को प्रणाम किया

और कहा, "महोदय, आपका धार्मिक (सन्यासी) जीवन बहुत सुंदर प्रतीत होता है: आपकी इंद्रियाँ बहुत शांत हैं, आपका रंग बहुत निर्मल है: किस विचार ने आपको धार्मिक (सन्यासी) जीवन और दीक्षा लेने के लिए प्रेरित किया?" और जैसे उन्होंने उनमें से सबसे बड़े से पूछा, वैसे ही वे दूसरों के पास गए और उनसे भी पूछा। तब उन चारों ने एक-एक करके कहा, "मैं फलाँ था, फलाँ राज्य के फलाँ शहर का राजा था" और इसी तरह, प्रत्येक ने संसार से संन्यास लेने के कारण बताए और क्रम से एक-एक श्लोक सुनाया।

मैंने जंगल में एक आम देखा
पूर्ण विकसित, गहरे रंग का, अत्यंत फलदायी:
और इसके फल के लिए ही पुरुषों ने आम तोड़ा था।
इसी बात ने मेरे मन को कटोरा लेने के लिए प्रेरित किया।
एक कंगन, जिसे एक प्रसिद्ध कारीगर के हाथों तराशा गया है।
एक महिला ने बिना आवाज किए दोनों कलाई पर पहना हुआ था:
एक ने दूसरे को छुआ और एक आवाज से नींद खुल गई:
इसी बात ने मेरे मन को कटोरा लेने के लिए प्रेरित किया।
पक्षियों के झुंड में से एक पक्षी ने अपने एक मित्र को फाड़ दिया।
जिसने अकेले ही सड़े हुए मांस के एक टुकड़े को सहा:
सड़े हुए मांस के लिए पक्षी को मारा गया।
इसी बात ने मेरे मन को कटोरा लेने के लिए प्रेरित किया।
एक बैल अपने साथियों के बीच गर्व से चहलकदमी कर रहा था;
उनकी पीठ शक्ति और सुंदरता से परिपूर्ण होकर ऊंची उठी हुई थी:
वासना के कारण उसकी मृत्यु हुई: उसके घाव से एक सींग बन गया:
इसी बात ने मेरे मन को कटोरा लेने के लिए प्रेरित किया।
प्रत्येक श्लोक को सुनकर बोधिसत्व ने कहा, "अच्छा, महोदय: आपकी बातें अच्छी हैं," और इस प्रकार प्रत्येक पच्चेकबुद्ध की प्रशंसा की। उन चारों द्वारा दिए गए प्रवचन को सुनकर उनका गृहस्थ जीवन के प्रति विमुखता उत्पन्न हो गई। जब पच्चेकबुद्धों ने प्रवचन जारी रखा, तो नाश्ते के बाद आराम से बैठकर उन्होंने अपनी पत्नी को बुलाया और कहा, "पत्नी, वे चारों पच्चेकबुद्ध राज्य छोड़कर बंधु बन गए और अब पाप रहित, बाधा रहित, धार्मिक (सन्यासी) जीवन के आनंद में रहते हैं। मैं तो भिक्षा मांगकर जीविका कमाता हूँ, तो गृहस्थ जीवन से मेरा क्या लेना-देना? क्या तुम बच्चों को लेकर घर में रहोगी?" और उन्होंने दो श्लोक कहे:

कलंगा के राजा करणदु, गांधार के नग्गाजी,
पांचाल के शासक दुमुख, विदेह के महान निमि,
उन्होंने अपने सिंहासन त्याग दिए हैं और भाइयों की तरह निष्पाप जीवन व्यतीत कर रहे हैं।
यहां वे अपने दिव्य स्वरूपों को प्रदर्शित करते हैं।
प्रत्येक एक धधकती आग की तरह:
भग्गवी, मैं भी जाऊंगी।
पुरुषों की हर इच्छा को त्यागते हुए।
उनकी बातें सुनकर उसने कहा, "पतिदेव, जब से मैंने पच्चेकबुद्धों का प्रवचन सुना है, मुझे भी घर में संतोष नहीं मिलता," और उसने एक श्लोक कहा:-

मुझे पता है, यही नियत समय है:
बेहतर शिक्षक शायद ये न हों:
भगगव, मैं भी जाऊँगा।
जैसे किसी पक्षी को हाथ से मुक्त कर दिया गया हो।
बोधिसत्व ने उसकी बातें सुनकर मौन धारण किया। वह बोधिसत्व को धोखा दे रही थी और उनसे पहले संन्यासी जीवन ग्रहण करने के लिए उत्सुक थी। इसलिए उसने कहा, "पतिदेव, मैं पानी की टंकी में जा रही हूँ, आप बच्चों का ध्यान रखिएगा।" और एक बर्तन लेकर, जैसे वह वहाँ जा रही हो, वह चली गई और नगर के बाहर तपस्वियों के पास आकर उनसे दीक्षा प्राप्त की। बोधिसत्व ने देखा कि वह वापस नहीं लौटी, तो उन्होंने स्वयं बच्चों की देखभाल की। बाद में जब बच्चे थोड़े बड़े हो गए और स्वयं समझने लगे, तो उन्हें सिखाने के लिए, चावल पकाते समय वे कभी थोड़े कच्चे, कभी थोड़े अधपके, कभी अच्छे से पके, कभी गीले, कभी बिना नमक के, कभी बहुत अधिक नमक के साथ पकाते थे। बच्चे कहते, "पिताजी, आज चावल उबले नहीं हैं, आज गीले हैं, आज अच्छे से पके हैं: आज बिना नमक के हैं, आज बहुत नमक है।" बोधिसत्व ने कहा, "जी हाँ, प्यारे बच्चों," और मन ही मन सोचा, "ये बच्चे अब जान गए हैं कि कच्चा क्या है और पका हुआ क्या है, किसमें नमक है और किसमें नहीं: ये अपनी मर्जी से जीवन यापन कर सकेंगे: मुझे दीक्षा ले लेनी चाहिए।"

फिर उन्हें उनके परिवार से मिलवाकर उन्होंने संन्यासी जीवन की दीक्षा ली और नगर से बाहर रहने लगे। एक दिन बनारस में भीख माँग रही एक महिला तपस्वी ने उन्हें देखा और प्रणाम करते हुए कहा, "हे प्रभु, मुझे लगता है आपने बच्चों को मार डाला है।" बोधिसत्व ने कहा, "मैं बच्चों को नहीं मारता: जब वे स्वयं समझ गए, तब मैंने दीक्षा ली: तुम उनकी परवाह नहीं करती थीं और दीक्षा लेकर खुद को प्रसन्न करती रहीं": और इस प्रकार उन्होंने अंतिम श्लोक कहा:-

यह देखकर कि वे नमकीन और बिना नमकीन, उबले हुए और कच्चे में अंतर कर सकते हैं,
मैं एक भाई बन गया हूँ: मुझे छोड़ दो, हम दोनों सही रास्ते पर चल सकते हैं।
इस प्रकार, उन्होंने स्त्री तपस्वी को सलाह देकर उनसे विदा ली। सलाह मानकर उन्होंने बोधिसत्व को प्रणाम किया और अपनी पसंद के स्थान पर चली गईं। उस दिन के बाद उनका फिर कभी आमना-सामना नहीं हुआ। अलौकिक ज्ञान प्राप्त कर बोधिसत्व ब्रह्मलोक (देवदूतों का लोक) के लिए नियत हो गए।

पाठ के बाद, गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: - सत्यों के बाद पाँच सौ भिक्षुओं ने संतत्व प्राप्त किया: - "उस समय पुत्री उप्पलावन्ना थीं, पुत्र राहुल (बुद्ध के पुत्र) थे, महिला तपस्वी राहुल की माता (बुद्ध की पत्नी) थीं, और तपस्वी मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)सं. 459

(2) अनित्यता, पीड़ा, अवास्तविकता।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **दधधम्म-जातक**
***स्रोत**: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-409-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 409
दल्हधम्म-जातक

“मैंने राजा के लिए भार ढोया,” इत्यादि। गुरु ने यह बात कोसंबी के निकट घोसीता वन में रहते हुए राजा उदेना की हथिनी भद्दावतीका के विषय में कही थी। अब इस हथिनी के अलंकरण और उदेना के राजवंश का वर्णन मतंगा (*1) जन्म में किया जाएगा। एक दिन सुबह शहर से बाहर जाते समय एक हाथी ने बुद्ध को अनेक संतों से घिरे हुए, बुद्ध के अतुलनीय वैभव में, भिक्षा मांगने के लिए शहर में प्रवेश करते देखा। उसने तथागत (बुद्ध) के चरणों में गिरकर रोते हुए प्रार्थना की, “हे सर्वज्ञ प्रभु, समस्त जगत के रक्षक, जब मैं युवा और कर्म करने योग्य थी, तब उदेना, जो कि सच्चे राजा थे, ने मुझसे प्रेम किया और कहा, “मेरा जीवन, मेरा राज्य और मेरी रानी सब उसी की देन हैं,” और मुझे बहुत सम्मान दिया, मुझे सभी आभूषणों से सुशोभित किया; उन्होंने मेरे अस्तबल को सुगंधित मिट्टी से लेप किया, उसके चारों ओर रंगीन पर्दे लगाए, सुगंधित तेल से दीपक जलाया और धूपदानी रखी, मेरे गोबर के ढेर पर सोने का पात्र रखा, मुझे रंगीन कालीन पर खड़ा किया और मुझे अनेक प्रकार के स्वादिष्ट राजसी भोजन खिलाया: परन्तु अब जब मैं बूढ़ी हो गई हूँ और कर्म नहीं कर सकती, तो उन्होंने वह सारा सम्मान छीन लिया है; मैं बेसहारा और निर्धन होकर भोजन पर निर्भर हूँ “मैं जंगल में केतका फल खाती हूँ; मेरे पास कोई और सहारा नहीं है: हे प्रभु, उदेना को मेरे गुणों पर विचार करने के लिए प्रेरित करें और मुझे मेरा पुराना सम्मान लौटा दें।” गुरु ने कहा, “आप जाइए, मैं राजा से बात करके आपका पुराना सम्मान वापस दिलवाता हूँ,” और वे राजा के महल के द्वार पर गए। राजा ने बुद्ध को अंदर बुलाया और बुद्ध के अनुयायियों (भिक्षुओं) की सभा को महल में भव्य भोज दिया। भोजन समाप्त होने पर, गुरु ने राजा को धन्यवाद दिया और पूछा, “हे राजा, भद्दावतीका कहां है?” “हे प्रभु, मुझे नहीं पता।” “हे राजा, सेवकों को सम्मान देने के बाद, वृद्धावस्था में उनका सम्मान छीन लेना उचित नहीं है, बल्कि कृतज्ञ और आभारी होना उचित है; भद्दावतीका अब वृद्ध हो चुकी है, वह उम्र से कमजोर और असुरक्षित है, और वह जंगल में केतका फल खाकर जीवन यापन करती है: वृद्धावस्था में उसे असुरक्षित छोड़ना आपके लिए उचित नहीं है”: इस प्रकार भद्दावतीका के गुणों का वर्णन करते हुए और यह कहते हुए कि “उसके सभी पुराने सम्मान लौटा दें,” वे चले गए। राजा ने वैसा ही किया। पूरे शहर में यह बात फैल गई कि बुद्ध द्वारा उनके गुणों का वर्णन करने से उनका पूर्व सम्मान बहाल हो गया है। यह बात भिक्षुओं की सभा में फैल गई और भिक्षुओं ने अपनी बैठक में इस पर चर्चा की। गुरुजी आकर जब उन्होंने

सुना कि यह विषय चर्चा में है, तो उन्होंने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि बुद्ध ने उनके गुणों का वर्णन करके उनका पूर्व सम्मान बहाल करवाया है" और उन्होंने पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, बनारस में दल्हधम्म नाम का एक राजा राज करता था। उस समय बोधिसत्व एक मंत्री परिवार में पैदा हुए थे और बड़े होकर राजा की सेवा करने लगे। उन्हें राजा से बहुत सम्मान प्राप्त हुआ और वे सबसे सम्मानित मंत्री बन गए। राजा के पास एक विशेष, शक्तिशाली और बलवान हथिनी थी। वह एक दिन में सौ मील (4.23 किमी) की दूरी तय कर लेती थी, राजा के लिए दूत का काम करती थी और युद्ध में शत्रु को परास्त कर देती थी। राजा ने कहा, "वह मेरे लिए बहुत उपयोगी है," और उसे सभी आभूषण दिए और उसे वह सम्मान दिलाया जो उदेना ने भद्दावतीका को दिया था। फिर जब वह वृद्धावस्था के कारण कमजोर हो गई, तो राजा ने उसका सारा सम्मान छीन लिया। तब से वह असुरक्षित हो गई और जंगल में घास-फूस खाकर अपना जीवन यापन करने लगी। फिर एक दिन जब राजा के दरबार में बर्तन कम पड़ गए, तो राजा ने एक कुम्हार को बुलवाया और कहा, "बर्तन पर्याप्त नहीं हैं।" "हे राजा, मेरे पास बैल नहीं हैं जिन्हें गाड़ी में जोतकर गोबर ला सकूँ (मिट्टी पकाने के लिए)।" यह सुनकर राजा ने कहा, "हमारी हाथी कहाँ है?" "हे राजा, वह अपनी मर्ज़ी से कहीं जा रही है।" राजा ने उसे कुम्हार को सौंपते हुए कहा, "अब से तुम उसे जोतकर गोबर लाओ।" कुम्हार ने कहा, "ठीक है, हे राजा," और वैसा ही किया। फिर एक दिन वह गाड़ी से बाहर निकली... शहर में, बोधिसत्व को आते देख, वह उनके चरणों में गिरकर विलाप करते हुए बोली, “हे प्रभु, मेरी जवानी में राजा ने मुझे बहुत उपयोगी समझा और मुझे बहुत सम्मान दिया; अब जब मैं बूढ़ी हो गई हूँ, तो उन्होंने सब कुछ छीन लिया है और मेरी कोई परवाह नहीं करते; मैं बेसहारा हूँ और जंगल में घास-पत्ते खाकर जीवन यापन करती हूँ; इस विपत्ति में उन्होंने मुझे एक कुम्हार को गाड़ी में जोतने के लिए दे दिया है; आपके सिवा मेरा कोई सहारा नहीं है: आप राजा के प्रति मेरी सेवाओं को जानते हैं; अब मुझे मेरा खोया हुआ सम्मान लौटा दीजिए”: और उसने तीन श्लोक कहे:-

मैंने पुराने राजा के लिए माल ढोया था: क्या वह संतुष्ट नहीं था?
मैंने अपने सीने पर हथियार रखकर, बड़े ही शक्तिशाली कदमों से लड़ाई का सामना किया।
मेरे पुराने युद्धों के कारनामों को राजा नहीं भूलता।
और मैंने कूरियर सेवाओं के लिए निर्धारित मानकों के अनुसार इतनी अच्छी सेवाएं प्रदान कीं?
अब मैं असहाय और परिवारहीन हूँ: निश्चय ही मेरी मृत्यु निकट है।
जब मैं कुम्हार के लिए गोबर ढोने आया था, तब उसकी सेवा करने के लिए।
बोधिसत्व ने उसकी कहानी सुनकर उसे दिलासा देते हुए कहा, "शोक मत करो, मैं राजा को बता दूंगा और तुम्हारा सम्मान वापस दिला दूंगा।" इसलिए नगर में प्रवेश करके, वे सुबह के भोजन के बाद राजा के पास गए और बातचीत शुरू करते हुए कहा, "महाराज, क्या फलां नाम की एक हथिनी फलां स्थानों पर सीने पर हथियार बांधकर युद्ध में नहीं गई थी, और फलां दिन गले में लेख बांधकर सौ मील (4.23 किमी) की दूरी तय करके संदेश लेकर नहीं गई थी? आपने उसे बहुत सम्मान दिया था: वह अब कहां है?" "मैंने उसे गोबर ढोने के लिए एक कुम्हार को दे दिया था।" तब बोधिसत्व ने कहा, "महाराज, क्या यह उचित है कि आप उसे गाड़ी में जोतने के लिए कुम्हार को दे दें?" और उपदेश देते हुए उन्होंने चार श्लोक कहे:-

स्वार्थपूर्ण आशाओं के कारण ही मनुष्य अपने द्वारा दिए जाने वाले सम्मानों को नियंत्रित करते हैं:
जिस प्रकार आप हाथी को फेंकते हैं, उसी प्रकार वे थके हुए गुलाम को फेंक देते हैं।
अच्छे कर्म और सेवाएँ तब फलदायी होती हैं जब मनुष्य उन्हें भूल जाते हैं।
रुइन अभी भी उस व्यवसाय को आगे बढ़ा रहा है जिस पर उनका दिल लगा हुआ है।
यदि मनुष्य अच्छे कर्मों और सेवाओं को न भूले तो उनका फल मिलेगा।
सफलता उसी व्यवसाय को मिलती है जिसमें उनका दिल लगा होता है।
इस पवित्र सत्य के चारों ओर मौजूद सभी लोगों से मैं कहता हूँ:
सभी कृतज्ञ रहें, और पुरस्कार के रूप में आप स्वर्ग में लंबे समय तक निवास करेंगे।
इस आरंभ के साथ ही बोधिसत्व ने वहाँ एकत्रित सभी लोगों को उपदेश दिया। यह सुनकर राजा ने उस बूढ़े हाथी को उसका पूर्व सम्मान लौटा दिया और बोधिसत्व के उपदेशों का पालन करते हुए दान-पुण्य और पुण्य कर्म किए, जिससे वह स्वर्ग के लिए अर्द्ध हो गया।

पाठ के बाद, गुरु ने जन्म की पहचान बताई:- "उस समय हथिनी भद्दावतीका थी, राजा आनंद थे, और मंत्री मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)सं. 497

पिछला <<<<-----||-410-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 410
सोमदत्त-जातक

"जंगल के भीतर," इत्यादि—गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक वृद्ध भिक्षु के बारे में यह कहानी सुनाई। कहानी यह थी कि उस भिक्षु ने एक नवोदित भिक्षु को दीक्षा दी, जो उनकी सेवा करता था, लेकिन जल्द ही एक घातक बीमारी से मर गया। वह वृद्ध भिक्षु उसकी मृत्यु पर रोता-पीटता फिरने लगा। उसे देखकर भिक्षुओं ने सत्य के हॉल में आपस में बात करना शुरू कर दिया, "महोदय, यह वृद्ध भिक्षु नवोदित भिक्षु की मृत्यु पर रोता-पीटता फिर रहा है: उसने मृत्यु का ध्यान अवश्य नहीं किया होगा।" गुरु वहाँ आए और उनकी बातों का विषय सुनकर बोले, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है जब यह व्यक्ति किसी दूसरे की मृत्यु पर रो रहा है," और फिर उन्होंने वही पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्याभिषेक था, तब बोधिसत्व इंद्र थे। बनारस में रहने वाले एक धनी ब्राह्मण ने सांसारिक जीवन त्याग दिया और हिमालय में तपस्वी बन गए, जहाँ वे जंगल से जड़ और फल चुनकर अपना जीवन यापन करते थे। एक दिन जंगली फल खोजते हुए उन्हें एक हाथी का बच्चा दिखाई दिया और वे उसे अपने आश्रम में ले आए। उन्होंने उसे अपना पुत्र मानकर सोमदत्त नाम दिया और घास-फूस और पत्तों का भोजन देकर उसका पालन-पोषण किया। हाथी बड़ा होकर विशाल हो गया, लेकिन एक दिन उसने अधिक भोजन कर लिया और अधिक खाने से बीमार पड़ गया। तपस्वी उसे आश्रम के भीतर ले गए और जंगली फल लेने चले गए। लेकिन उनके लौटने से पहले ही हाथी की मृत्यु हो गई। फल लेकर लौटते समय तपस्वी ने सोचा, "अन्य दिनों में तो मेरा बच्चा मुझसे मिलने आता है, लेकिन आज नहीं; उसे क्या हुआ है?" इस प्रकार उन्होंने शोक किया और पहला श्लोक कहा:-

वह घने जंगल में मुझसे मिलता था: लेकिन आज
मुझे कोई हाथी दिखाई नहीं दे रहा: वह कहाँ भटक गया है?
इस विलाप के साथ, उसने ढके हुए रास्ते के अंत में लेटे हुए हाथी को देखा और उसकी गर्दन पकड़कर रोते हुए दूसरी पंक्ति बोली:-

वही है जो मृत्यु की गोद में पड़ा है, जैसे कोई कोमल अंकुर चूर-चूर हो जाता है;
वह जमीन पर पड़ा है: हाय, मेरा हाथी मर गया।
उसी क्षण, सक्का (इंद्र) ने संसार का अवलोकन करते हुए सोचा, "इस तपस्वी ने मोक्ष के मार्ग पर चलने के लिए पत्नी और बच्चे को त्याग दिया, अब वह उस युवा हाथी के लिए शोक मना रहा है जिसे वह अपना पुत्र कहता था, मैं उसे जगाऊंगा और उसे सोचने पर मजबूर करूंगा," और इस प्रकार आश्रम में आकर वह हवा में खड़ा हो गया और तीसरा श्लोक बोला:-

मृतकों के लिए शोक करना उचित नहीं था।
घर-परिवार के बंधनों से मुक्त एकाकी तपस्वी।
यह सुनकर तपस्वी ने चौथा श्लोक बोला:-

हे सक्का (इंद्र), क्या पशुवंशी पुरुष को शोक करना चाहिए?
एक बिछड़े हुए साथी को आंसुओं में राहत मिलती है।
सक्का (इंद्र) ने उन्हें संबोधित करते हुए दो श्लोक कहे:-

जो लोग खुशी के आंसू बहाते हैं, वे मृतकों के लिए शोक भी मना सकते हैं।
हे ऋषि, रोओ मत, रोना व्यर्थ है, बुद्धिमानों ने कहा है।
यदि हमारे आँसुओं से हम मृत्यु पर विजय प्राप्त कर सकें,
इस प्रकार हम सभी अपने प्रियजनों को बचाने के लिए एकजुट होंगे।

सक्का (इंद्र) के वचन सुनकर तपस्वी ने चिंतन और सांत्वना पाई, अपने आँसू पोंछे और सक्का (इंद्र) की स्तुति में शेष श्लोक कहे:-

घी से प्रज्वलित लौ की तरह जो तेजी से भड़क उठती है
उसे पानी से बुझाया गया, इसलिए उसने मेरा दर्द बुझा दिया।
दु:ख के बाण से मेरा हृदय घायल हो गया:
उन्होंने मेरे घाव को ठीक किया और मुझे नया जीवन दिया।
कांटा निकालते समय, आनंद और शांति का अनुभव हुआ।
सक्का (इंद्र) के शब्दों से मेरा दु:ख समाप्त हो गया।
ये ऊपर दिए गए हैं।

तपस्वी को संबोधित करने के बाद, सक्का (इंद्र) अपने स्थान पर चले गए।

पाठ समाप्त होने के बाद, गुरु ने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उस समय युवा हाथी नौसिखिया था, तपस्वी वृद्ध भाई (भिक्षु) था, और सक्का (इंद्र) मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सुसीमा-जातक2**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----॥-411-॥----->>>> अगला

जातक क्रमांक 411
सुसीमा जातक

"बालों के अतीत में," इत्यादि—गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए महान त्याग के बारे में यह कथा सुनाई। भिक्षु सत्य के हॉल में बैठे बुद्ध के त्याग की प्रशंसा कर रहे थे। गुरु ने देखा कि वे इसी विषय पर चर्चा कर रहे हैं, तो उन्होंने कहा, "भाइयों, यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि मैं अब महान त्याग कर सांसारिक जीवन से संन्यास ले रहा हूँ, मैंने तो लाखों युगों तक सिद्धि का अभ्यास किया है: प्राचीन काल में भी मैंने तीन सौ मील (4.23 किमी) के काशी राज्य का शासन त्याग कर त्याग दिया था, और इस प्रकार उन्होंने यह पुरानी कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब उनके पुरोहित की प्रमुख पत्नी के गर्भ में बोधिसत्व का जन्म हुआ। उनके जन्म के दिन ही राजा के एक पुत्र का भी जन्म हुआ। नामकरण के दिन उन्होंने बोधिसत्व का नाम सुसीमा-कुमार और उनके पुत्र का नाम ब्रह्मदत्त-कुमार रखा। राजा ने देखा कि दोनों का जन्म एक ही दिन हुआ है, इसलिए उन्होंने बोधिसत्व को दाई को सौंप दिया और अपने पुत्र के साथ उनका पालन-पोषण करवाया। दोनों बड़े होकर देवदूतों के पुत्रों की तरह सुंदर हो गए। दोनों ने तक्षशिला में सभी विद्याओं की शिक्षा प्राप्त की और फिर घर लौट आए। राजकुमार वायसराय बन गया और बोधिसत्व के साथ खाने-पीने और रहने लगा। अपने पिता की मृत्यु के बाद वह राजा बना और बोधिसत्व को बहुत सम्मान देते हुए उन्हें अपना पुरोहित बनाया। एक दिन उसने नगर को सजाया-संवारा और देवताओं (देवदूतों) के राजा सक्का (इंद्र) की तरह सज-धज कर, एरावन (*1) के समान गौरवशाली भाव से शाही हाथी के कंधे पर बैठकर जुलूस निकाला। बोधिसत्व हाथी की पीठ पर पीछे-पीछे चल रहे थे। रानी माँ अपने पुत्र को देखने के लिए शाही खिड़की से बाहर देख रही थी, तभी उसने देखा कि जुलूस से लौटते समय पुरोहित उसके पीछे आ रहा है। वह उससे मोहित हो गई और अपने कक्ष में जाकर सोचने लगी, "यदि मैं उसे नहीं पा सकी, तो मैं यहीं मर जाऊँगी।" इसलिए उसने अपना भोजन छोड़ दिया और वहीं लेट गई। राजा ने उसे न देखकर उसके बारे में पूछा। जब उसे पता चला कि वह बीमार है, तो वह उसके पास गया और आदरपूर्वक पूछा कि उसे क्या कष्ट है। शर्म के मारे उसने कुछ नहीं बताया। वह राजसिंहासन पर बैठा और अपनी मुख्य रानी को अपनी माँ का पता लगाने के लिए भेजा। वह गई और महारानी माँ की पीठ सहलाते हुए उनसे पूछा। स्त्रियाँ स्त्रियों से रहस्य नहीं छिपातीं: और रहस्य बता दिया गया। रानी ने जाकर राजा को बताया। राजा ने कहा, "ठीक है, जाओ और उन्हें दिलासा दो: मैं पुरोहित को राजा बनाऊँगा और उन्हें उनकी प्रधान रानी।" वह गई और उन्हें दिलासा दिया। राजा ने पुरोहित को बुलवाया और उन्हें सारी बात बताई, "मित्र, मेरी माता का जीवन बचाओ: तुम राजा बनोगे, वह तुम्हारी प्रधान रानी और मैं उपसराय।" पुरोहित ने कहा, "ऐसा नहीं हो सकता," लेकिन दोबारा पूछे

जाने पर वह मान गए: और राजा ने पुरोहित को राजा, महारानी माँ को प्रधान रानी और स्वयं को उपसराय बना दिया। वे सब एक साथ सद्भाव से रहने लगे, परन्तु बोधिसत्व गृहस्थ जीवन में दुर्बल महसूस करने लगे: उन्होंने इच्छाओं का त्याग कर एक धार्मिक (सन्यासी) जीवन की ओर रुख किया: इंद्रिय सुखों की परवाह किए बिना वे अकेले खड़े, बैठे और लेटे रहे, जैसे कोई कैदी या पिंजरे में बंद मुर्गा। रानी ने सोचा, "राजा मुझसे दूर भागते हैं, अकेले खड़े रहते हैं, बैठते हैं और लेटते हैं; वे जवान और तरोताज़ा हैं, मैं बूढ़ी और सफ़ेद बालों वाली हूँ: अगर मैं उन्हें एक कहानी सुनाऊँ कि उनके सिर में एक सफ़ेद बाल है, तो क्या होगा, जिससे वे इस पर विश्वास कर लें और मेरी संगति में आएं?" एक दिन, राजा का सिर साफ़ करते हुए, उन्होंने कहा, "महाराज, आप बूढ़े हो रहे हैं, आपके सिर में एक सफ़ेद बाल है। इसे निकाल कर मेरे हाथ में रख दीजिए।" उन्होंने एक बाल निकाला, लेकिन उसे फेंक दिया और अपना एक सफ़ेद बाल उनके हाथ में रख दिया। जब उन्होंने उसे देखा, तो मृत्यु के भय से उनके माथे से पसीना बहने लगा।हालांकि वह सोने की थाली के समान थी। उसने स्वयं को फटकारते हुए कहा, "सुसीमा, तुम जवानी में ही बूढ़ी हो गई हो; इतने समय से तुम इच्छाओं की गंदगी में डूबी हुई हो, जैसे कोई गाँव का सूअर कीचड़ में लोटता रहता है, तुम इसे छोड़ नहीं सकती: इच्छाओं को त्याग दो और हिमालय में तपस्वी बन जाओ: अब धार्मिक जीवन जीने का समय आ गया है," और इसी विचार के साथ उसने पहला श्लोक कहा:-

पहले बाल काले थे
   मेरी भौंहों के आसपास जमाव;
आज सफेद: सुसीमा, ध्यान दो!
   अब धर्म (मुक्ति) का समय आ गया है!
अतः बोधिसत्व ने संन्यासी जीवन की प्रशंसा की; परन्तु रानी ने देखा कि उसने बोधिसत्व को प्रेम करने के बजाय उससे विदा कर दिया है, और भयभीत होकर, उसके शरीर की प्रशंसा करके उसे संन्यासी जीवन से दूर रखने की इच्छा से, उसने दो श्लोक कहे:-

मेरे बाल सफेद हो गए हैं, तुम्हारे नहीं;
   जिस सिर से यह आया है, उसे ही खोदकर निकाल लें:
तुम्हारे भले के लिए मैं झूठ बोलने की हिम्मत करता हूँ:
   ऐसी ही एक गलती के लिए दोषारोपण से बचें!
तुम जवान हो, और देखने में सुंदर हो।
   जैसे वसंत ऋतु में एक कोमल पौधा!
अपना राज्य अपने पास रखो, मुझ पर मुस्कुराओ!
   अभी से यह मत सोचो कि बुढ़ापा क्या लेकर आएगा!
लेकिन बोधिसत्व ने कहा, "हे देवी, आप उस बात का वर्णन कर रही हैं जो अवश्य ही घटित होगी: जैसे-जैसे उम्र बढ़ती है, ये काले बाल पान के समान पीले पड़ जाते हैं: मैं उम्र के साथ शरीर में होने वाले परिवर्तन और विघटन को देखता हूँ, चाहे वे नीले कमल के फूलों की माला के समान कोमल हों, सोने के समान सुंदर हों और अपनी गौरवशाली यौवन के गौरव में डूबी हों: हे देवी, यही प्राणियों का भयानक अंत है," और, इसके अलावा, बुद्ध के आकर्षण के साथ सत्य को दर्शाते हुए, उन्होंने दो श्लोक कहे:-

मैंने उस युवा नौकरानी को देखा है,
   कोमल डंठल की तरह झूलता हुआ,
अपने रूप-रंग के गौरव से सजी हुई;
   वह जहां भी जाती है, पुरुष उस पर मोहित हो जाते हैं।
यह वही है जिसे मैंने स्कैन किया है।
   (अस्सी, नब्बे वर्ष बीत चुके हैं)
थरथराते हुए, कांपते हुए, हाथ में लाठी लिए हुए,
   अंततः पेड़ की छत की तरह झुक गया।
इस श्लोक में महान सत्ता ने सौंदर्य के दुख को दर्शाया है, और अब गृहस्थ जीवन के प्रति अपनी असंतुष्टि व्यक्त की है:-

मैं ऐसे ही विचारों पर चिंतन करता हूँ;
   एकांत रातों में ये विचार आते हैं:
मुझे अब आम आदमी का जीवन पसंद नहीं है:
   अब धर्म (मुक्ति) का समय आ गया है!
सामान्य जीवन में आनंद लेना एक कमजोर सहारा है:
बुद्धिमान व्यक्ति उसे काट देता है और अपने रास्ते चला जाता है।
इंद्रियों के सुखों और उनके सभी प्रभावों का त्याग करना।

इस प्रकार, इच्छाओं के सुख और दुख दोनों का उपदेश देते हुए, उन्होंने बुद्ध के संपूर्ण आकर्षण के साथ सत्य का प्रदर्शन किया; उन्होंने अपने मित्र को बुलवाया और उनसे राज्य पुनः प्राप्त करवाया; उन्होंने अपने सन्यास और सत्ता को अपने सन्यासों और मित्रों के विलाप के बीच त्याग दिया; वे हिमालय में एक तपस्वी ऋषि बन गए, और ध्यान की समाधि में प्रवेश करके ब्रह्मलोक (परमलोक) के लिए नियत हो गए।

पाठ के बाद, गुरु ने सत्यों की व्याख्या की, और कई लोगों को अमृत (देवताओं (देवदूतों) का पेय) पिलाते हुए, उन्होंने जन्म की पहचान बताई: "उस समय प्रधान रानी राहुल की माता थीं, राजा आनंद थे, और राजा सुसीमा मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) सक्का (इंद्र) का हाथी।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कोटिसिंबली-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-412-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 412
कोटिसिम्बली-जातक. (*1)

“मैंने सहन किया” इत्यादि — गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए पाप के दंड के विषय में यह कथा सुनाई थी। इस कथा से संबंधित घटना का वर्णन पन्ना जन्म (जातक 149) में मिलता है। उस अवसर पर गुरु ने देखा कि स्वर्णमयी मठ में पाँच सौ भिक्षु कामुक विचारों से ग्रस्त थे। उन्होंने सभा को एकत्रित किया और कहा, “भाइयों, जहाँ संदेह करना उचित हो, वहाँ संदेह करना सही है; पाप मनुष्य को बरगद के वृक्षों की तरह घेर लेते हैं, जैसे बरगद के वृक्ष पेड़ के चारों ओर उगते हैं। इसी प्रकार, पुराने समय में एक सूती वृक्ष के शीर्ष पर रहने वाली एक आत्मा ने एक पक्षी को बरगद के बीज, जिन्हें उसने खा लिया था, सूती वृक्ष की शाखाओं में त्यागते हुए देखा और भयभीत हो गई कि कहीं उसका निवास स्थान नष्ट न हो जाए।” इस प्रकार उन्होंने एक पुरानी कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व एक वृक्ष-आत्मा के रूप में कपास के वृक्ष के शीर्ष पर निवास करते थे। गरुड़ (एक अलौकिक बाज) के राजा ने एक सौ पचास मील (4.23 किमी) के विशाल आकार में अवतार लिया और अपने पंखों की फड़फड़ाहट से विशाल सागर के जल को दो भागों में बाँटते हुए, एक हजार फुट लंबे (एक अलौकिक) सर्प के राजा को उसकी पूंछ से पकड़ लिया। सर्प ने अपने मुँह में पकड़ी हुई वस्तु को उगलवाकर, वह वृक्षों की चोटियों के साथ-साथ कपास के वृक्ष की ओर उड़ने लगा। सर्प-राज ने सोचा, "मैं उसे मुझे छोड़ने पर मजबूर करूँगा," इसलिए उसने अपना फन एक बरगद के वृक्ष में गाड़ दिया और खुद को मजबूती से उसके चारों ओर लपेट लिया। नाग-राज की शक्ति और सर्प-राज के विशाल आकार के कारण बरगद जड़ से उखड़ गया। लेकिन सर्प-राज ने बरगद को नहीं छोड़ा। रॉक किंग नागराज को बरगद के पेड़ समेत कपास के पेड़ पर ले गया, उसे पेड़ के तने पर लिटाया, उसका पेट चीरा और चर्बी खा ली। फिर उसने बाकी बचे शव को समुद्र में फेंक दिया। अब उस बरगद के पेड़ में एक चिड़िया थी, जो बरगद के फेंके जाने पर उड़कर कपास के पेड़ की एक ऊँची शाखा पर बैठ गई। चिड़िया को देखकर वृक्ष-आत्मा भय से काँप उठी और सोचने लगी, "यह चिड़िया मेरे तने पर बीट गिराएगी; बरगद या अंजीर का पेड़ उगेगा और मेरे पूरे पेड़ पर फैल जाएगा: इस प्रकार मेरा घर नष्ट हो जाएगा।" आत्मा के काँपने से पेड़ जड़ तक हिल गया। रॉक किंग ने काँपना देखा और कारण जानने के लिए दो श्लोक बोले:-

मैंने उस विशाल सांप की हजार फीट (6 फीट) लंबाई को सहन किया:
आपने उसके आकार और मेरे विशालकाय शरीर को सहन किया, फिर भी आप नहीं डरे।
लेकिन अब यह नन्हा पक्षी जिसे तुम धारण किए हुए हो, जो मेरे मुकाबले बहुत छोटा है:
तुम भय से कांपते और थरथराते हो; लेकिन किसलिए, हे कपास के वृक्ष?
तब देवता ने कारण बताते हुए चार श्लोक कहे:-

हे राजा, तुम्हारा भोजन मांस है, पक्षी का भोजन फल है।
वह बरगद और अंजीर के बीजों को निशाना बनाएगा।
और बो (पीपल) का पेड़ भी, और मेरा सारा तना प्रदूषित है;
वे मेरी टहनी की छाया में पेड़ उगाएंगे।
और मैं कोई वृक्ष नहीं बनूंगा, जो इस प्रकार उनके द्वारा छिपा रहे।
अन्य वृक्ष, जो कभी मजबूत जड़ों और घनी शाखाओं वाले थे, स्पष्ट रूप से दिखाते हैं
किस प्रकार पक्षियों द्वारा फैलाए गए विनाशकारी बीज उन्हें नष्ट कर देते हैं।
परजीवी वनस्पतियां विशाल वन वृक्ष को भी ढक लेंगी:
इसीलिए, हे राजा, आने वाले भय को देखकर मैं कांप उठता हूँ।
वृक्ष-आत्मा के शब्दों को सुनकर, रॉक किंग ने अंतिम छंद बोला:-

यदि परिस्थितियाँ डरावनी हों तो भय उचित है: आने वाले खतरे से बचाव करें:
बुद्धिमान लोग दोनों लोकों को शांतिपूर्वक देखते हैं यदि वे भय को त्याग दें।
दूसरे शब्दों में कहें तो, उसके द्वारा पेड़ को हिलाने-डुलाने की शक्ति से पक्षी उस पेड़ से भाग गया।

पाठ के बाद, गुरु ने सत्यों की व्याख्या करते हुए इन शब्दों से शुरुआत की: "जहाँ अविश्वास करना उचित हो, वहाँ अविश्वास करना सही है," और जन्म का उल्लेख किया: सत्यों के बाद पाँच सौ भिक्षुओं को संतत्व प्राप्त हुआ: "उस समय सारिपुत्र चट्टान थे और मैं स्वयं वृक्ष-आत्मा था।"

फुटनोट:

(1)संख्या 370 की तुलना करें

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **धूमकारी-जातक**
स्रोत: *एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-413-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 413
धूमकारी-जातक

“धर्मी राजा,” इत्यादि—गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए कोसल राजा द्वारा एक अजनबी पर किए गए पक्षपात का वर्णन किया। कथा के अनुसार, एक बार उस राजा ने अपने पुराने योद्धाओं पर कोई कृपा नहीं दिखाई जो नियमित रूप से उसके पास आते थे, परन्तु पहली बार आने वाले अजनबियों का आदर और सत्कार किया। वह एक अशांत सीमावर्ती प्रांत में युद्ध करने गया: परन्तु उसके पुराने योद्धाओं ने यह सोचकर युद्ध नहीं किया कि नए योद्धा, जिन पर कृपा थी, वे करेंगे; और नए योद्धाओं ने यह सोचकर युद्ध नहीं किया कि पुराने योद्धा करेंगे। विद्रोहियों की विजय हुई। राजा को यह जानकर कि उसकी पराजय नए योद्धाओं पर पक्षपात करने की गलती के कारण हुई है, श्रावस्ती नगर लौट आया। उसने ज्ञान के स्वामी से यह पूछने का निश्चय किया कि क्या वह एकमात्र ऐसा राजा था जिसे इस कारण पराजित होना पड़ा था: अतः सुबह के भोजन के बाद वह जेतवन मठ गया और गुरु से यह प्रश्न पूछा। गुरु ने उत्तर दिया, "महान राजा, आपका मामला अकेला नहीं है: पूर्व के राजा भी नए क्षेत्रों के प्रति दिखाए गए पक्षपात के कारण पराजित हुए थे," और इसलिए, राजा के अनुरोध पर, उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, कुरुओं के राज्य में स्थित इंद्रप्रस्थ नगर में युधिष्ठिल वंश के धनंजय नामक राजा शासन कर रहे थे। बोधिसत्व का जन्म उनके कुल पुरोहित के घर हुआ था। बड़े होकर उन्होंने तक्षशिला में सभी विद्याओं का ज्ञान प्राप्त किया। पिता की मृत्यु के बाद वे इंद्रप्रस्थ लौट आए और राजा के कुल पुरोहित तथा सांसारिक एवं आध्यात्मिक मामलों में उनके सलाहकार बन गए। उनका नाम विदुरपंडित था।

राजा धनंजय ने अपने पुराने सैनिकों की उपेक्षा की और नए सैनिकों को तरजीह दी। वे एक अशांत सीमावर्ती प्रांत में युद्ध करने गए, लेकिन न तो उनके पुराने योद्धा और न ही नए सैनिक लड़ने को तैयार हुए, दोनों को लगा कि दूसरा पक्ष मामले को संभाल लेगा। राजा पराजित हुए। इंद्रप्रस्थ लौटने पर उन्होंने सोचा कि उनकी पराजय नए सैनिकों को दी गई तरजीह के कारण हुई है। एक दिन उन्होंने सोचा, "क्या मैं अकेला ऐसा राजा हूँ जो नए सैनिकों को दी गई तरजीह के कारण पराजित हुआ हूँ, या क्या पहले भी दूसरों का यही हाल हुआ है? मैं विदुरपांडित से पूछूंगा।" इसलिए उन्होंने राजा की सेना में आए विदुरपांडित से यह प्रश्न पूछा।

गुरु ने अपने प्रश्न का कारण बताते हुए आधा श्लोक बोला:

धर्मात्मा राजा युधिष्ठिल ने एक बार बुद्धिमान विदुर से पूछा,
"हे ब्राह्मण, क्या तुम जानते हो कि किसके अकेले हृदय में अत्यंत तीखा दुख समाया हुआ है?"
उनकी बात सुनकर बोधिसत्व ने कहा, "हे महाराज, आपका दुःख तो छोटा दुःख है। पुराने समय में धूमकारी नाम के एक ब्राह्मण चरवाहे ने बकरियों का एक बड़ा झुंड लिया और जंगल में एक बाड़ा बनाकर उन्हें वहाँ रखा। वह आग जलाकर दूध और अन्य खाद्य पदार्थों से अपना जीवन यापन करता था और बकरियों की देखभाल करता था। कुछ सुनहरे रंग के हिरणों को देखकर, जो वहाँ आए थे, उसे उनसे प्रेम हो गया और उसने अपनी बकरियों की परवाह किए बिना हिरणों को उनका आदर दिया। शरद ऋतु में हिरण हिमालय की ओर चले गए: उसकी बकरियाँ मर गईं और हिरण उसकी दृष्टि से ओझल हो गए; इसलिए दुःख से उसे पीलिया हो गया और उसकी मृत्यु हो गई। उसने नए आने वालों का आदर किया और मर गया, उसका दुःख और कष्ट आपसे सौ-हजार गुना अधिक था।" यह उदाहरण देते हुए उन्होंने कहा,

बकरियों के झुंड के साथ एक ब्राह्मण, जो उच्च वसित्था वंश का था,
जंगल में बने अपने आवास में वे दिन-रात आग जलाकर धुआं करते रहते थे।
धुएं की गंध सूंघते हुए, मच्छरों से बुरी तरह परेशान हिरणों का एक झुंड आया।
धूमकारी के घर के पास बारिश के मौसम में जीविका कमाने के लिए।
अब सारा ध्यान हिरणों पर है; उसकी बकरियों की कोई परवाह नहीं की जाती।
वे आते-जाते रहते हैं, उन पर कोई ध्यान नहीं देता, और इसलिए वे वहीं मर जाते हैं।
लेकिन अब मच्छर जंगल छोड़कर चले गए हैं, शरद ऋतु में बारिश नहीं हो रही है:
हिरण को फिर से पर्वतीय ऊंचाइयों और नदी के उद्गम स्थलों की तलाश करनी होगी।
ब्राह्मण देखता है कि हिरण गायब हो गए हैं और उसकी सारी बकरियां मर चुकी हैं:
दुःख से क्षीण हो चुके उस व्यक्ति को पीलिया हो गया है और उसके चेहरे की सारी रौनक गायब हो गई है।
इसलिए जो व्यक्ति अपनों की उपेक्षा करता है और किसी अजनबी को प्रिय कहता है,
धूमकारी की तरह, वह अकेले ही अनेक कड़वे आँसू बहाते हुए शोक मनाता है।
इस प्रकार की कथा उस महान सत्ता ने राजा को सांत्वना देने के लिए सुनाई। राजा को इससे तसल्ली मिली और वह प्रसन्न हुआ, और उसने उस सत्ता को बहुत धन-दौलत दी। उस समय से उसने अपनी प्रजा पर कृपा दिखाई, और दान-पुण्य और सद्गुणों के कारण वह स्वर्ग के लिए नियत हो गया।

पाठ के बाद, गुरु ने जन्म की पहचान बताई: "उस समय कुरु राजा आनंद थे, धूमकारी कोसल के राजा पसेनदी (प्रसेनजित) थे, और विदुरपंडित मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **जागर-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-414-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 414
जागरा-जातक

"वह कौन है जो जागता है," इत्यादि — गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक गृहस्थ (शिष्य) के विषय में यह कथा सुनाई। वह प्रथम मार्ग (सम्मोहन) में प्रवेश कर चुके थे। श्रावस्ती नगर से वन मार्ग से होते हुए वे रथों के काफिले के साथ निकले। एक रमणीय जलयुक्त स्थान पर काफिले के सरदार ने पाँच सौ रथों को खोलकर भोजन की व्यवस्था की और वहीं डेरा डाला। सभी लोग इधर-उधर लेटकर सो गए। काफिला सरदार के पास एक वृक्ष की जड़ में गृहस्थ परिक्रमा करने लगे। पाँच सौ लुटेरों ने काफिले को लूटने की योजना बनाई: उन्होंने विभिन्न हथियारों से काफिले को घेर लिया और प्रतीक्षा करने लगे। काफिला टहलते हुए देखकर वे उसके सोने के समय लूटपाट शुरू करने के लिए घात लगाकर बैठ गए। वे पूरी रात टहलते रहे। भोर होते ही लुटेरों ने अपने द्वारा उठाए गए डंडे, पत्थर और अन्य हथियार फेंक दिए। वे यह कहते हुए चले गए, "गुरुजी, आप अपनी संपत्ति के स्वामी हैं क्योंकि आपने उस व्यक्ति की कृपा से अपना जीवन बचाया है जो इतनी लगन से जागता रहता है; आपको उसका आदर करना चाहिए।" सुबह जल्दी उठकर लुटेरों द्वारा फेंके गए पत्थरों और अन्य वस्तुओं को देखकर, उन्होंने उस गृहस्थ को आदर दिया, यह मानते हुए कि उन्होंने अपना जीवन उसी के ऋणी बनाया है। गृहस्थ अपने गंतव्य पर गया और अपना काम निपटाया; फिर वह श्रावस्ती नगर लौट आया और जेतवन मठ गया; वहाँ उसने तथागत (बुद्ध) को प्रणाम किया और उनके चरणों में बैठ गया, और जब तथागत ने उसे बोलने का निमंत्रण दिया, तो उसने कथा सुनाई। गुरु ने कहा, "गृहस्थ, जागते और जागते रहने से केवल आपको ही विशेष पुण्य प्राप्त नहीं हुआ है, प्राचीन काल के ज्ञानी पुरुषों ने भी ऐसा ही किया था।" और इस प्रकार गृहस्थ के अनुरोध पर, उन्होंने एक पुरानी कथा सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व का जन्म एक ब्राह्मण परिवार में हुआ। बड़े होकर उन्होंने तक्षशिला में सभी कलाओं का ज्ञान प्राप्त किया और फिर लौटकर गृहस्थ जीवन व्यतीत किया। कुछ समय बाद उन्होंने गृहस्थी त्याग दी और तपस्वी बन गए। शीघ्र ही उन्होंने ध्यान की साधना प्राप्त कर ली और हिमालय पर्वतमाला में केवल खड़े और चलते हुए ही रात भर बिना सोए चलते रहे। उनकी यात्रा के अंत में एक वृक्ष में निवास करने वाली एक आत्मा उनसे प्रसन्न हुई और वृक्ष के एक छिद्र से उनसे प्रश्न पूछते हुए प्रथम श्लोक कहा:

वह कौन है जो दूसरों के सोते समय जागता है और दूसरों के जागते समय सोता है?
मेरी पहेली को कौन पढ़ सकता है, और इसका उत्तर कौन देगा?
आत्मा की वाणी सुनकर बोधिसत्व ने यह श्लोक कहा:-

मैं वह हूं जो दूसरों के सोते समय जागता हूं, और दूसरों के जागते समय सोता हूं।
मैं तुम्हारी पहेली पढ़ सकता हूँ, मैं तुम्हें उत्तर दे सकता हूँ।
आत्मा ने इस श्लोक में फिर से एक प्रश्न पूछा:-

ऐसा कैसे होता है कि आप तब जागते हैं जब दूसरे सोते हैं, और तब सोते हैं जब दूसरे जागते हैं?
आपने मेरी पहेली को कैसे पढ़ा, और इस उत्तर तक कैसे पहुंचे?
उन्होंने इस बात को स्पष्ट किया:-

कुछ लोग यह भूल जाते हैं कि सद्गुण पूरी तरह संयमी रहने में निहित है।
जब वे सो रहे होते हैं, मैं जागता रहता हूँ, हे वृक्ष की आत्मा।
कुछ लोगों में वासना, बुराई और अज्ञानता का अस्तित्व समाप्त हो गया है:
जब ऐसे लोग जागते हैं, तब मैं सोता हूँ, हे वृक्ष की आत्मा।
इसलिए मैं तब जागता हूँ जब दूसरे सोते हैं, और तब सोता हूँ जब दूसरे जागते हैं:
इसलिए मैंने आपकी पहेली पढ़ी, और इसी के अनुसार मैं आपको उत्तर देता हूँ।
जब उस महान सत्ता ने यह उत्तर दिया, तो आत्मा प्रसन्न हुई और उसने उनकी स्तुति में अंतिम श्लोक कहा:-

अच्छी बात यह है कि तुम दूसरों के सोते समय जागते हो, और दूसरों के जागते समय सोते हो।
आपने मेरी पहेली को अच्छे से पढ़ा, और आपने जो उत्तर दिया वह भी अच्छा था।
और इस प्रकार बोधिसत्व की स्तुति करते हुए, आत्मा वृक्ष में स्थित अपने निवास स्थान में प्रवेश कर गई।

पाठ के बाद, गुरु ने जन्म की पहचान बताई: "उस समय, वृक्ष-आत्मा उप्पलावन्ना थी, और तपस्वी मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कुम्मासापिंड-जातक**

***स्रोत**: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----॥-415-॥----->>>> अगला

जातक क्रमांक 415
कुम्मसपिंडा जातक

“सेवा संपन्न हुई,” इत्यादि—गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए रानी मल्लिका के विषय में यह कथा सुनाई। वह श्रावस्ती नगर के माला बनाने वालों के मुखिया की पुत्री थीं, अत्यंत सुंदर और गुणी। जब वह सोलह वर्ष की थीं, तब कुछ अन्य स्त्रियों के साथ एक पुष्प उद्यान में जा रही थीं। उनके पास एक टोकरी में खट्टी दलिया के तीन भाग थे। नगर से निकलते समय उन्होंने भगवान बुद्ध को प्रकाश बिखेरते हुए और भिक्षुओं की सभा से घिरे हुए नगर में प्रवेश करते देखा। उन्होंने भगवान बुद्ध को दलिया के तीन भाग अर्पित कर दिए।

गुरु ने अपना राजसी प्याला आगे बढ़ाते हुए उनका प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। उन्होंने तथागत (बुद्ध) के चरणों को सिर झुकाकर प्रणाम किया और अपनी प्रसन्नता को ध्यान में लीन करते हुए एक तरफ खड़ी हो गईं। उन्हें देखकर गुरु मुस्कुराए। पूज्य आनंद को आश्चर्य हुआ कि तथागत (बुद्ध) क्यों मुस्कुरा रहे हैं और उन्होंने उनसे यह प्रश्न पूछा। गुरु ने उन्हें कारण बताते हुए कहा, "आनंद, आज यह कन्या कोसल राजा की प्रधान रानी बनेगी, क्योंकि उसने दलिया खाया है।" कन्या पुष्प उद्यान की ओर चली गई। उसी दिन कोसल राजा ने अजातशत्रु से युद्ध किया और पराजित होकर भाग गया। जब वह घोड़े पर सवार होकर आ रहा था, तो उसने कन्या के गायन की ध्वनि सुनी और उससे आकर्षित होकर उद्यान की ओर चल पड़ा। कन्या का पुण्य फलदायी था, इसलिए राजा को देखते ही वह बिना भागे उसके पास आई और घोड़े की नाक से लगाम पकड़ ली। राजा ने घोड़े पर सवार होकर उससे पूछा कि क्या वह विवाहित है या नहीं। जब उसे पता चला कि वह नहीं है, तो वह घोड़े से उतरा और हवा व धूप से थककर थोड़ी देर उसकी गोद में विश्राम किया। फिर उसने उसे घोड़े पर बिठाया और एक विशाल सेना के साथ नगर में प्रवेश करके उसे उसके घर ले आया। शाम को उसने एक रथ भेजा और बड़े सम्मान और धूमधाम से उसे उसके घर से लाया, उसे गहनों के ढेर पर बिठाया, उसका अभिषेक किया और उसे प्रधान रानी बना दिया। उस समय से वह राजा की प्रिय, प्रियतम और समर्पित पत्नी बन गई, जिसके पास वफादार सेवक और पाँचों स्त्रीत्व के गुण थे; और वह बुद्धों की प्रिय थी। पूरे नगर में यह बात फैल गई कि उसने गुरु को दलिया के तीन भाग देने के कारण इतनी समृद्धि प्राप्त की है।

एक दिन सत्य के हॉल में वे चर्चा करने लगे: “महोदय, रानी मल्लिका ने बुद्धों को तीन भाग दलिया दिया, और फलस्वरूप उसी दिन उनका राज्याभिषेक हुआ: वास्तव में बुद्धों का पुण्य महान है।” गुरु आए, उन्होंने पूछा और उन्हें भिक्षुओं की चर्चा का विषय बताया गया: उन्होंने कहा, “यह आश्चर्य की बात नहीं है, भिक्षुओं, कि मल्लिका ने केवल असीम ज्ञानी बुद्ध को तीन भाग दलिया देकर कोसल राजा की प्रधान रानी बन गईं: ऐसा क्यों? क्योंकि यह बुद्धों के महान पुण्य के कारण है: प्राचीन काल के ज्ञानी पुरुषों ने पच्चेकबुद्धों को बिना नमक या तेल के दलिया दिया, और इसके कारण उन्हें अपने अगले जन्म में काशी में राजा बनने का गौरव प्राप्त हुआ, जो तीन सौ मील (4.23 किमी) में फैला हुआ था”: और इस प्रकार उन्होंने प्राचीन कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व का जन्म एक गरीब परिवार में हुआ था। बड़े होकर वे एक धनी व्यक्ति के यहाँ मजदूरी करके अपना जीवन यापन करते थे। एक दिन उन्होंने एक दुकान से खट्टी दलिया के चार भाग लिए और सोचा, "यह मेरे नाश्ते के लिए काफी होगा," और अपने खेती के काम पर चले गए। चार पच्चेकबुद्धों को भिक्षा मांगने के लिए बनारस की ओर आते देख उन्होंने सोचा, "मेरे पास दलिया के ये चार भाग हैं, अगर मैं इन्हें बनारस आने वाले इन लोगों को दे दूं तो क्या होगा?" इसलिए वे उनके पास गए और उन्हें प्रणाम करते हुए कहा, "महोदय, मेरे पास दलिया के ये चार भाग हैं: मैं इन्हें आपको अर्पित करता हूँ: मैं आपसे निवेदन करता हूँ, कृपया इन्हें स्वीकार करें, इससे मुझे अपने शाश्वत कल्याण के लिए पुण्य प्राप्त होगा।" यह देखकर कि उन्होंने स्वीकार कर लिया है, उन्होंने रेत बिछाई और चार आसन बनाए और उन पर टूटी हुई शाखाएँ बिछाईं; फिर उन्होंने पच्चेकबुद्धों को क्रम से बैठाया; पत्तों की टोकरी में जल लाकर, उन्होंने दान का जल डाला और फिर चार कटोरों में दलिया के चार भाग रखते हुए प्रणाम किया और कहा, "हे प्रभु, इनके फलस्वरूप मेरा जन्म निर्धन परिवार में न हो; यही मेरे अनंत ज्ञान की प्राप्ति का कारण बने।" पच्चेकबुद्धों ने भोजन किया और धन्यवाद देकर नंदमूल गुफा की ओर प्रस्थान किया। प्रणाम करते हुए बोधिसत्व ने पच्चेकबुद्धों के साथ संगति का आनंद अनुभव किया और उनके दृष्टि से ओझल होने और अपने कार्य पर जाने के बाद भी वे मृत्यु तक उन्हें याद करते रहे। इसी फलस्वरूप उनका जन्म बनारस की प्रमुख रानी के गर्भ में हुआ। उनका नाम ब्रह्मदत्त रखा गया। जब से वह अकेले चलने में सक्षम हुआ, तब से उसे अपने पिछले जन्मों के सभी कर्मों को स्पष्ट रूप से याद करने की शक्ति प्राप्त थी, जैसे किसी साफ दर्पण में उसका

अपना चेहरा प्रतिबिंबित होता है। उसे यह स्पष्ट था कि उसका जन्म इस अवस्था में इसलिए हुआ है क्योंकि उसने उसी शहर में सेवक के रूप में काम पर जाते समय पच्चेकबुद्धों को चार भाग दलिया दिया था। बड़े होकर उसने तक्षशिला में सभी कलाओं का ज्ञान प्राप्त किया। लौटने पर उसके पिता उसकी प्रतिभा से प्रसन्न हुए और उसे वायसराय नियुक्त किया। बाद में, अपने पिता की मृत्यु के बाद, वह राज्य में प्रतिष्ठित हो गया। फिर उसने कोसल राजा की अत्यंत सुंदर पुत्री से विवाह किया और उसे अपनी मुख्य रानी बनाया। उसके छत्र उत्सव के दिन पूरे शहर को इस प्रकार सजाया गया मानो वह देवताओं (देवदूतों) का शहर हो। उसने जुलूस में शहर का चक्कर लगाया; फिर वह सजे-धजे महल में चढ़ा और सफेद छत्र से सुसज्जित सिंहासन पर विराजमान हुआ। वहाँ बैठे हुए उन्होंने उपस्थित सभी लोगों को देखा; एक ओर मंत्री, दूसरी ओर ब्राह्मण और गृहस्थ, जो विभिन्न प्रकार के वस्त्रों में सुशोभित थे; तीसरी ओर नगरवासी, जिनके हाथों में विभिन्न प्रकार के उपहार थे; और चौथी ओर सोलह हजार नर्तकियों का समूह, मानो स्वर्ग की अप्सराओं का समूह, पूर्ण वस्त्रों में सजी हुई थीं। इस मनमोहक वैभव को देखकर उन्हें अपनी पूर्व स्थिति याद आई और उन्होंने सोचा,"यह सफेद छत्र, स्वर्ण माला और विशाल स्वर्ण आधार, ये हजारों हाथी और रथ, मेरा विशाल क्षेत्र जो रत्नों और मोतियों से भरा है, धन और हर प्रकार के अनाज से लबालब है, ये स्त्रीयाँ जो स्वर्ग की अप्सराओं के समान हैं, और यह सारी शान-शौकत, जो केवल मेरी है, चार पच्चेकबुद्धों को दिए गए चार भाग दलिया के दान के कारण ही है: मैंने यह सब उन्हीं के माध्यम से प्राप्त किया है": और इस प्रकार पच्चेकबुद्धों की श्रेष्ठता को याद करते हुए उन्होंने स्पष्ट रूप से अपने पूर्व पुण्य कर्म का वर्णन किया। जैसे ही उन्होंने इस बारे में सोचा, उनका पूरा शरीर आनंद से भर गया। आनंद से उनका हृदय पिघल गया और उन्होंने आनंदमय गीत के दो श्लोक गाए:-

बुद्धों की उच्च सेवा की गई
   वे कहते हैं कि कभी भी सस्ता नहीं माना जाता:
नमक रहित, सूखा दलिया दान में दिया गया।
   मुझे यह इनाम लाओ ताकि मैं इसे प्राप्त कर सकूं।
हाथी, घोड़े और गायें
   सोना, अनाज और सारी ज़मीन,
दिव्य रूप वाली लड़कियों की टोलियाँ:
   दान ने इन्हें मेरे हाथों तक पहुँचाया है।
अतः बोधिसत्व ने अपने छत्र-समारोह के दिन हर्ष और प्रसन्नता में दो छंदों का आनंद गीत गाया। तब से यह गीत राजा का प्रिय गीत कहलाया और सभी इसे गाते थे—बोधिसत्व की नर्तकियाँ, अन्य नर्तक और संगीतकार, महल में रहने वाले लोग, नगरवासी और मंत्री मंडल के सदस्य।

बहुत समय बीत जाने के बाद, रानी उस गीत का अर्थ जानने के लिए उत्सुक हो गईं, लेकिन उन्होंने राजा से पूछने का साहस नहीं किया। एक दिन राजा उनकी किसी खूबी से प्रसन्न हुए और बोले, "हे रानी, मैं तुम्हें वरदान देता हूँ; वरदान स्वीकार करो।" "ठीक है, महाराज, मैं स्वीकार करती हूँ।" "मैं आपको क्या दूँ, हाथी, घोड़े या कुछ और?" "हे महाराज, आपकी कृपा से मुझे किसी चीज की कमी नहीं है, मुझे ऐसी किसी चीज की आवश्यकता नहीं है: लेकिन यदि आप मुझे वरदान देना चाहते हैं, तो मुझे अपने गीत का अर्थ बताकर दीजिए।" "हे रानी, तुम्हें उस वरदान की क्या आवश्यकता है? कुछ और स्वीकार करो।" "हे महाराज, मुझे किसी और चीज की आवश्यकता नहीं है: मैं यही स्वीकार करती हूँ।" "हे देवी, मैं आपको बताऊंगा, लेकिन केवल आपसे ही नहीं: मैं बनारस के पूरे बारह मील (4.23 किमी) में ढोल भेजूंगा, मैं अपने महल के द्वार पर रत्नजड़ित मंडप बनवाऊंगा और वहां रत्नजड़ित सिंहासन स्थापित करूंगा: मैं उस पर मंत्रियों, ब्राह्मणों और शहर के अन्य लोगों तथा सोलह हजार स्त्रियों के बीच बैठूंगा और वहां यह कहानी सुनाऊंगा।" रानी मान गईं। राजा ने सब कुछ वैसा ही किया जैसा उन्होंने कहा था, और फिर देवताओं (देवदूतों) की संगति में इंद्र (सक्का) की तरह, एक विशाल जनसमूह के बीच सिंहासन पर बैठ गए। रानी ने भी अपने सभी आभूषणों के साथ एक स्वर्णमयी कुर्सी सजाई और एक तरफ उचित स्थान पर बैठ गईं, और तिरछी दृष्टि से देखते हुए कहा, "हे राजा, मुझे उस आनंद गीत का अर्थ समझाएं और स्पष्ट करें, जैसे आपने आकाश में चंद्रमा को उदय किया हो, जो आपने प्रसन्नता में गाया था"; और इस प्रकार उन्होंने तीसरा श्लोक बोला:-

गौरवशाली और धर्मात्मा राजा,
कई बार जो गाना आप गाते हैं,
अत्यंत आनंद से:
मैं आपसे अनुरोध करता हूं कि कृपया मुझे इसका कारण बताएं।
उस महान सत्ता ने गीत का अर्थ बताते हुए चार छंद बोले:-

यह वही शहर है, लेकिन मेरे पिछले जन्म में मेरी स्थिति अलग थी:
मैं किसी दूसरे का नौकर था, एक किराए का कर्मचारी, लेकिन ईमानदार और योग्य व्यक्ति।
एक बार मैंने शहर से काम पर जाते हुए चार तपस्वियों को देखा,

भावहीन और शांत दृष्टि वाला, नैतिक नियमों में परिपूर्ण।
मेरे सारे विचार उन बुद्ध प्रतिमाओं की ओर चले गए: जैसे वे पेड़ के नीचे बैठे थे,
मैंने अपने हाथों से उन्हें दलिया लाकर दिया, जो भक्ति का प्रतीक था।
ऐसा पुण्य कर्म: देखो! आज मुझे इसका फल मिल रहा है।
सारी राजसी शान-शौकत और धन-दौलत, सारी भूमि मेरे अधिकार में।
जब रानी ने महान पुरुष को अपने कर्मों के फल का इस प्रकार पूर्ण वर्णन करते सुना, तो उसने प्रसन्नतापूर्वक कहा, "महाराज, यदि आप दान के फल को इतनी स्पष्ट रूप से देख सकते हैं, तो आज से चावल का एक भाग लें और स्वयं तब तक न खाएं जब तक आप उसे धर्मात्मा पुरोहितों और ब्राह्मणों को दान न कर दें"; और उसने बोधिसत्व की स्तुति में एक श्लोक कहा:-

भोजन करो, दान का ध्यान रखो।
   सही-गलत का पहिया घुमाना शुरू करें:
हे शक्तिशाली राजा, अन्याय से भागो।
   अपने राज्य पर धार्मिक रूप से नियंत्रण रखें।
उस महान सत्ता ने उसकी बात स्वीकार करते हुए एक श्लोक कहा:-

फिर भी मैं उस रास्ते को अपना बना लेता हूँ।
   सही मार्ग पर चलते हुए,
जहां पराक्रमी, सुंदर रानी चली गई हैं:
   मुझे संत दृष्टि में सुखद लगते हैं।
यह कहकर उन्होंने रानी की सुंदरता की ओर देखा और कहा, "सुंदर देवी, मैंने अपने पूर्व कर्मों का पूरा वर्णन कर दिया है, परन्तु इन सब स्त्रियों में तुम्हारे समान सुंदर और आकर्षक कोई नहीं है: तुमने यह सुंदरता किस कर्म से प्राप्त की?" और फिर उन्होंने एक श्लोक कहा:-

हे देवी, स्वर्ग की अप्सरा के समान।
   तुम नौकरानियों की भीड़ में सबसे अलग हो:
किस अनुग्रहपूर्ण कार्य के लिए दिया गया था?
   क्या वह दिव्य सौंदर्य की देवी है?
फिर उसने अपने पिछले जन्म में किए गए पुण्य कर्म का वर्णन किया और अंतिम दो छंद कहे:-

मैं कभी एक नौकरानी की गुलाम थी
   अंबत्था के शाही दरबार में,
मैंने अपना हृदय विनम्रता को समर्पित कर दिया।
   सद्गुण और अच्छी प्रतिष्ठा के लिए।
एक भिखारी भिक्षु के कटोरे में
   एक बार मैंने चावल का दान दिया;
दान-पुण्य से मेरी आत्मा भर गई थी:
   ऐसा कर्म किया, और देखो! वैसा ही फल मिला।
ऐसा कहा जाता है कि वह भी पिछले जन्मों के सटीक ज्ञान और स्मरण के साथ बोलती थी।

अतः उन दोनों ने अपने पिछले कर्मों का पूर्णतः वर्णन किया, और उस दिन से उन्होंने शहर के चारों द्वारों पर, केंद्र में और महल के द्वार पर छह दान-पुण्य कक्ष बनवाए, और समस्त भारत में उत्साह जगाते हुए उन्होंने महान दान दिए, नैतिक कर्तव्यों और पवित्र दिनों का पालन किया, और अपने जीवन के अंत में स्वर्ग के लिए नियत हो गए।

पाठ के अंत में, गुरु ने जन्म की पहचान बताई: "उस समय रानी राहुल की माता थीं, और राजा मैं स्वयं था।"

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **परंतप-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----II-416-II---->>>> अगला

जातक क्रमांक 416
परंतप-जातक

"आतंक और भय," इत्यादि - गुरु ने यह बात बाँस के जंगल में रहते हुए देवदत्त द्वारा उन्हें जान से मारने की कोशिश के बारे में बताई। वे सत्य के हॉल में इस विषय पर चर्चा कर रहे थे, "महोदय, देवदत्त तथागत (बुद्ध) को मारने की कोशिश कर रहा है। उसने धनुर्धारियों को किराए पर लिया है, एक चट्टान फेंकी है, नलगिरी छोड़ी है, और तथागत (बुद्ध) के नाश के लिए विशेष उपाय कर रहा है।" गुरु आए और जब वे सब साथ बैठे थे, तो उन्होंने उनसे चर्चा का विषय पूछा। जब उन्होंने उन्हें बताया, तो उन्होंने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है जब उसने मुझे मारने की कोशिश की है: लेकिन वह मुझे डरा भी नहीं सका, और उसे केवल अपने लिए दुख ही मिला।" और इस तरह उन्होंने पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व का जन्म उनकी प्रमुख रानी के पुत्र के रूप में हुआ। बड़े होकर उन्होंने तक्षशिला में सभी कलाओं का ज्ञान प्राप्त किया और सभी पशुओं की आवाजों को समझने का मंत्र भी सीख लिया। अपने गुरु की शिक्षाओं का पालन करने के बाद वे बनारस लौट आए। उनके पिता ने उन्हें अपना प्रतिनिधि नियुक्त किया, लेकिन नियुक्त होने के बावजूद वे उन्हें जान से मारने की इच्छा रखने लगे और उनसे मिलना तक नहीं चाहते थे।

एक मादा सियार अपने दो शावकों के साथ रात में नाले के रास्ते शहर में घुस आई, जब पुरुष आराम करने के लिए सो रहे थे। बोधिसत्व के महल में, उनके शयनकक्ष के पास एक कमरा था, जहाँ एक अकेला यात्री अपने जूते उतारकर ज़मीन पर रखे हुए, अभी तक सोया नहीं था, एक तख़्ते पर लेटा हुआ था। सियार के बच्चे भूखे थे और रोने लगे। उनकी माँ ने सियारों की भाषा में कहा, "शोर मत करो, प्यारे बच्चों: उस कमरे में एक आदमी है जिसने अपने जूते उतारकर ज़मीन पर रखे हैं: वह एक तख़्ते पर लेटा है, लेकिन अभी सोया नहीं है: जब वह सो जाएगा, तो मैं उसके जूते ले लूँगी और तुम्हें खाना दूँगी।" मंत्र के प्रभाव से बोधिसत्व उसकी पुकार समझ गए, और अपने शयनकक्ष से बाहर आकर उन्होंने खिड़की खोली और कहा, "वहाँ कौन है?" "मैं, महाराज, एक यात्री।" "तुम्हारे जूते कहाँ हैं?" "ज़मीन पर।" "उन्हें उठाओ और ज़ोर से पटको।" यह सुनकर सियार बोधिसत्व पर क्रोधित हो गई। एक दिन वह उसी रास्ते से फिर शहर में आई। उस दिन एक शराबी आदमी कमल के कुंड में पानी पीने उतरा: वह उसमें गिर गया और डूब गया। उसके पास वे दो वस्त्र थे जो उसने पहने हुए थे, उसके अंतर्वस्त्र में एक हजार सिक्के थे और उसकी उंगली में एक अंगूठी थी। सियार के बच्चे भूख से रोने लगे, और माँ ने कहा, "शांत हो जाओ, बच्चों: इस कमल के कुंड में एक मृत व्यक्ति है, उसके पास इतनी संपत्ति थी: वह कुंड की सीढ़ी पर मृत पड़ा है, मैं तुम्हें उसका मांस खाने को दूंगी।" बोधिसत्व ने उसकी बात सुनकर खिड़की खोली और पूछा, "कक्ष में कौन है?" एक व्यक्ति उठा और बोला, "मैं।" "जाओ और कमल के कुंड में मृत पड़े व्यक्ति से वस्त्र, एक हजार सिक्के और अंगूठी ले आओ, और उसके शरीर को इस तरह डुबो दो कि वह पानी से बाहर न निकल सके।" उस व्यक्ति ने वैसा ही किया। सियार फिर क्रोधित हो गई: "कल तुमने मेरे बच्चों को जूते खाने से रोका था; आज तुम उन्हें मरे हुए आदमी को खाने से रोक रही हो। ठीक है: इसके तीसरे दिन एक शत्रु राजा आएगा और शहर को घेर लेगा, तुम्हारा पिता तुम्हें युद्ध में भेजेगा, वे तुम्हारा सिर काट देंगे: मैं तुम्हारा गला का खून पीकर अपनी शत्रुता शांत करूँगी: तुमने खुद को मेरा शत्रु बनाया है और मैं इसका हिसाब लूँगी।" उसने बोधिसत्व को कोसते हुए कहा। फिर वह अपने बच्चों को लेकर चली गई। तीसरे दिन शत्रु राजा आया और शहर को घेर लिया। राजा ने बोधिसत्व से कहा, "जाओ, प्रिय पुत्र, और उससे लड़ो।" "हे राजा, मैंने एक दर्शन देखा है: मैं नहीं जा सकता, क्योंकि मुझे अपनी जान जाने का डर है।" "तुम्हारा जीवन या मृत्यु मेरे लिए क्या मायने रखती है? जाओ।" महान बोधिसत्व ने आज्ञा मानी: अपने आदमियों को लेकर वह उस द्वार से बचकर निकल गया जहाँ शत्रु राजा तैनात था, और दूसरे द्वार से बाहर चला गया जिसे उसने खोला था। जैसे ही वह निकला, पूरा शहर मानो वीरान हो गया, क्योंकि सभी लोग उसके साथ निकल गए थे। वह एक खुले स्थान पर डेरा डाले बैठा और प्रतीक्षा करने लगा। राजा ने सोचा, "मेरे प्रतिनिधि ने शहर खाली कर दिया है और मेरी सारी सेना लेकर भाग गया है; शत्रु शहर के चारों ओर घात लगाए बैठा है; मैं तो बस एक मृत व्यक्ति हूँ।"अपनी जान बचाने के लिए, बोधिसत्व ने अपनी मुख्य रानी, अपने कुल पुरोहित और परंतपा नामक एक सेवक को साथ लिया। वे रात में भेस बदलकर जंगल में भाग गए। उनके भागने की खबर सुनकर, बोधिसत्व शहर में प्रवेश कर गए, शत्रु राजा को युद्ध में पराजित किया और राज्य पर कब्जा कर लिया। उनके पिता ने नदी के किनारे पत्तों की एक कुटिया बनाई और जंगली फल खाकर वहीं जीवन यापन करने लगे। वे और कुल पुरोहित जंगली फल लाने जाया करते थे; सेवक परंतपा कुटिया में रानी के साथ रहता था। रानी राजा से गर्भवती थी; लेकिन परंतपा के साथ लगातार रहने के कारण, उसने राजा के साथ पाप किया। एक दिन रानी ने उनसे कहा, "यदि राजा को पता चल गया, तो न तो तुम और न ही मैं जीवित रह पाओगे: उसे मार डालो।" "कैसे?" "वह तुम्हें स्नान करते समय अपनी तलवार और स्नान वस्त्र ले जाने के लिए कहता है: स्नान स्थल पर उसे पकड़ लो, उसका सिर काट दो और तलवार से उसके शरीर के टुकड़े-

टुकड़े कर दो और फिर उसे जमीन में दफना दो।" बोधिसत्व मान गए। एक दिन पुरोहित जंगली फल लाने गए थे; वे राजा के स्नान स्थल के पास एक पेड़ पर चढ़ गए। और वह फल इकट्ठा कर रहा था। राजा स्नान करना चाहता था, इसलिए वह परंतप के साथ, जो उसकी तलवार और स्नान वस्त्र लिए हुए था, जल-किनारे आया। जैसे ही राजा स्नान करने जा रहा था, परंतप ने, राजा की सतर्कता भंग करते हुए, उसकी गर्दन पकड़ ली और तलवार उठा ली। राजा मृत्यु के भय से चिल्ला उठा। पुजारी ने चीख सुनी और ऊपर से देखा कि परंतप उसका वध कर रहा है: लेकिन वह बहुत भयभीत था और पेड़ की डाल से फिसलकर घनी झाड़ियों में छिप गया। परंतप ने उसके फिसलने की आवाज सुनी, और राजा को मारकर दफनाने के बाद उसने सोचा, "आस-पास कहीं किसी डाल से फिसलने की आवाज आई थी; कौन है वहाँ?" लेकिन किसी को न देखकर वह स्नान करके चला गया।उसने राजा की गर्दन पकड़ ली और तलवार उठा ली। राजा मृत्यु के भय से चीख उठा। पुजारी ने चीख सुनी और ऊपर से देखा कि परंतप राजा की हत्या कर रहा है। परंतप बहुत भयभीत था और पेड़ की डाल से फिसलकर घनी झाड़ियों में छिप गया। परंतप ने फिसलते समय अपने द्वारा की गई आवाज सुनी और राजा को मारकर दफनाने के बाद सोचा, "आस-पास कहीं किसी डाल से फिसलने की आवाज आई थी; कौन है यहाँ?" लेकिन किसी को न देखकर वह नहाया और चला गया।उसने राजा की गर्दन पकड़ ली और तलवार उठा ली। राजा मृत्यु के भय से चीख उठा। पुजारी ने चीख सुनी और ऊपर से देखा कि परंतप राजा की हत्या कर रहा है। परंतप बहुत भयभीत था और पेड़ की डाल से फिसलकर घनी झाड़ियों में छिप गया। परंतप ने फिसलते समय अपने द्वारा की गई आवाज सुनी और राजा को मारकर दफनाने के बाद सोचा, "आस-पास कहीं किसी डाल से फिसलने की आवाज आई थी; कौन है यहाँ?" लेकिन किसी को न देखकर वह नहाया और चला गया।

फिर पुजारी अपने छिपने की जगह से बाहर आया; यह जानते हुए कि राजा के टुकड़े-टुकड़े कर दिए गए हैं और उसे एक गड्ढे में दफना दिया गया है, उसने स्नान किया और अपनी जान के डर से कुटिया में लौटकर अंधा होने का नाटक किया। परंतप ने उसे देखा और पूछा कि उसके साथ क्या हुआ है। उसने अनजान होने का नाटक किया और कहा, "हे राजा, मैं अपनी आँखें खोकर लौटा हूँ: मैं साँपों से भरे जंगल में चींटियों के टीले के पास खड़ा था, और किसी विषैले साँप की साँस मुझ पर पड़ गई होगी।" परंतप ने सोचा कि पुजारी अज्ञानता में उसे राजा कह रहा है, और उसे आश्वस्त करने के लिए उसने कहा, "ब्राह्मण, चिंता मत करो, मैं तुम्हारा ख्याल रखूँगा," और इस तरह उसे दिलासा दिया और उसे बहुत सारे जंगली फल दिए। उस समय से परंतप ही फल इकट्ठा करता था। रानी का एक पुत्र हुआ। जब वह बड़ा हो रहा था, तो एक दिन सुबह-सुबह आराम से बैठे हुए रानी ने परंतप से कहा, "किसी ने तुम्हें राजा को मारते हुए देखा था?" "मुझे किसी ने नहीं देखा: लेकिन मैंने किसी चीज़ के शाखा से फिसलने की आवाज़ सुनी, चाहे वह मनुष्य हो या जानवर, मैं नहीं कह सकता: लेकिन जब भी मुझ पर भय आता है तो वह शाखाओं के चरमराने के कारण ही होता है," और इस प्रकार उससे बातचीत करते हुए उसने पहला छंद कहा:-

आज भी मुझ पर आतंक और भय का साया छाया रहता है।
तब किसी मनुष्य या पशु ने एक शाखा को हिलाया।
उन्होंने सोचा कि पुजारी सो रहा है, लेकिन वह जागा हुआ था और उनकी बातें सुन रहा था। एक दिन, जब परंतपा जंगली फल लेने गया था, पुजारी को अपनी ब्राह्मण पत्नी की याद आई और रोते हुए उसने दूसरा श्लोक कहा:-

मेरी सच्ची पत्नी का घर निकट ही है: मेरा प्रेम मुझे ऐसा बना देगा
परंतप की तरह पीला और पतला, पेड़ के कांपने पर।
रानी ने पूछा कि वह क्या कह रहा है। उसने कहा, "मैं तो बस सोच रहा था:" लेकिन एक दिन उसने फिर से तीसरी पंक्ति दोहराई:-

मेरी प्यारी पत्नी बनारस में है: उसकी अनुपस्थिति मुझे अब बहुत परेशान कर रही है।
परंतपा की तरह शाखा के हिलने से भी बीमार पड़ने की स्थिति।
एक दिन फिर उन्होंने चौथा छंद बोला:-

उसकी काली आँखों की चमक, उसकी बातें और सोच में डूबी मुस्कानें मुझे वर्तमान में सुकून देती हैं।
परंतपा की तरह पेड़ की डाल हिलने से भी बीमार पड़ने की स्थिति तक।
समय बीतने पर राजकुमार बड़ा हुआ और सोलह वर्ष का हो गया। तब ब्राह्मण ने उसे एक छड़ी दी और उसके साथ स्नानस्थान पर जाकर उसकी आँखें खोलीं और देखा। राजकुमार ने कहा, “क्या आप अंधे नहीं हैं, ब्राह्मण?” “मैं अंधा नहीं हूँ, लेकिन इस तरह मैंने अपनी जान बचाई है: क्या आप जानते हैं कि आपके पिता कौन हैं?” “हाँ।” “वह व्यक्ति आपके पिता नहीं हैं: आपके पिता बनारस के राजा थे: वह व्यक्ति आपके घर का सेवक है, उसने आपकी माता के साथ पाप किया और इसी स्थान पर आपके पिता की हत्या करके उन्हें दफना दिया।” ऐसा कहकर उन्होंने हड्डियाँ उखाड़कर उसे दिखाईं। राजकुमार बहुत क्रोधित हुआ और पूछा, “मैं क्या करूँ?” “उस व्यक्ति के साथ वही करो जो उसने तुम्हारे पिता के साथ किया,” और उसे पूरी बात समझाते हुए कुछ ही दिनों में उसे तलवार चलाना सिखाया। फिर एक दिन राजकुमार ने तलवार और स्नान वस्त्र लेकर कहा, “पिताजी, चलिए स्नान करते हैं।” परंतपा मान गए और उनके साथ चले गए। जब वह पानी में उतरा, तो राजकुमार ने अपने बाएं हाथ में चोटी और दाएं हाथ में तलवार पकड़ी और कहा, "इसी स्थान

पर तुमने मेरे पिता को चोटी से पकड़कर मार डाला था, जब वे चिल्ला रहे थे: मैं भी तुम्हारे साथ ऐसा ही करूंगा।" परंतपा मृत्यु के भय से विलाप करने लगा और उसने दो श्लोक कहे:-

निश्चित रूप से वह आवाज आप तक पहुंची होगी और आपको बता दी होगी कि क्या हुआ था:
जिस व्यक्ति ने शाखा को मोड़ा, वह निश्चित रूप से कहानी सुनाने आएगा।
वह मूर्खतापूर्ण विचार जो कभी मेरे मन में था, अब आपको भी पता चल गया है:
उस दिन वहां कोई गवाह, चाहे वह मनुष्य हो या पशु, मौजूद था और उसने शाखा को हिलाया।
फिर राजकुमार ने अंतिम श्लोक बोला:-

तुमने मेरे पिता को देशद्रोहियों के झूठे शब्दों से मार डाला था;
तुमने उसके शरीर को शाखाओं में छिपा दिया: अब तुम भयभीत हो गए हो।
ऐसा कहकर उसने उसे वहीं मार डाला, दफना दिया और उस जगह को टहनियों से ढक दिया। फिर तलवार धोकर और स्नान करके वह पत्तों की झोपड़ी में लौट गया। उसने पुजारी को बताया कि उसने परंतपा को कैसे मारा: उसने उसकी माँ की निंदा की, और यह कहते हुए, "अब हम क्या करें?" तीनों बनारस लौट गए। बोधिसत्व ने युवा राजकुमार को अपना प्रतिनिधि बनाया और दान-पुण्य और अन्य अच्छे कर्म करके वह स्वर्ग के मार्ग पर पूर्णतः चल पड़ा।

पाठ के बाद, गुरु ने जन्म का विवरण दिया: "उस समय देवदत्त वृद्ध राजा थे, और मैं स्वयं युवा राजा था।"

पुस्तक VIII. अत्थ-निपाता:

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कक्कानि-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-417-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 417
कच्चानी-जातक

"सफेद वस्त्र पहने हुए," इत्यादि - गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए यह कथा सुनाई थी, जो एक ऐसे व्यक्ति के बारे में थी जो अपनी माता का भरण-पोषण करता था। कथा यह है कि वह व्यक्ति श्रावस्ती नगर में एक अच्छे परिवार और आचरण का था। अपने पिता की मृत्यु के बाद वह अपनी माता के प्रति समर्पित हो गया और मुख धोने, दांत साफ करने, स्नान कराने, पैर धोने आदि के साथ-साथ दलिया, चावल और अन्य भोजन देकर उनकी सेवा करता था। माता ने उससे कहा, "प्रिय पुत्र, गृहस्थ जीवन में और भी कर्तव्य होते हैं: तुम्हें एक अच्छे परिवार की दासी से विवाह करना चाहिए, जो मेरी सेवा करे, और तब तुम अपना उचित कार्य कर सकते हो।" "माता, यह मेरे अपने भले और संतोष के लिए है कि मैं आपकी सेवा करता हूँ: आपकी इतनी अच्छी सेवा और कौन कर सकता है?" "पुत्र, तुम्हें हमारे घर की समृद्धि के लिए कुछ करना चाहिए।" "मुझे गृहस्थ जीवन की कोई परवाह नहीं है; मैं आपकी सेवा करूँगा, और आपके मरने और दफ़नाए जाने के बाद मैं संन्यासी बन जाऊँगा।" उसने बार-बार उस पर दबाव डाला: और अंत में, उसे मनाने या उसकी सहमति प्राप्त करने में असफल रहने पर, वह उसके लिए एक उपयुक्त परिवार से एक नौकरानी ले आई। उसने उससे शादी कर ली और उसके साथ रहने लगा, क्योंकि वह अपनी माँ का विरोध नहीं करना चाहता था। उसने देखा कि उसका पति अपनी माँ की कितनी देखभाल करता है, और उसकी नकल करने की इच्छा से वह भी अपनी माँ की उतनी ही देखभाल करने लगी। अपनी पत्नी की भक्ति को देखकर, उसने उसे तब से हर संभव स्वादिष्ट भोजन देना शुरू कर दिया। समय बीतने के साथ, उसने अपने अहंकार में मूर्खतापूर्ण ढंग से सोचा, "वह मुझे हर संभव स्वादिष्ट भोजन देता है: वह अपनी माँ से छुटकारा पाने के लिए बेचैन होगा और मैं इसके लिए कोई न कोई उपाय जरूर ढूंढ लूंगी।" तो एक दिन उसने कहा, "पतिदेव, जब आप घर से बाहर जाते हैं तो आपकी माँ मुझे डांटती है।" उसने कुछ नहीं कहा। उसने सोचा, "मैं बुढ़िया को परेशान कर दूंगी और उसे अपने बेटे के लिए अप्रिय बना दूंगी": और तब से वह उसे चावल का दलिया या तो बहुत गर्म या बहुत ठंडा या बहुत नमकीन या बिना नमक के देने लगी। जब बुढ़िया शिकायत करती कि पानी बहुत गर्म या बहुत नमकीन है, तो वह बर्तन भरने के लिए पर्याप्त ठंडा पानी डाल देती: और फिर पानी ठंडा और नमकीन होने की शिकायत पर वह ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाती, "अभी तो तुमने कहा था कि पानी बहुत गर्म और नमकीन है: तुम्हें कौन संतुष्ट कर सकता है?" इसलिए स्नान करते समय वह

बुढ़िया की पीठ पर बहुत गर्म पानी डाल देती: जब वह कहती, "बेटी, मेरी पीठ जल रही है," तो दूसरी उस पर थोड़ा ठंडा पानी डाल देती, और इसकी शिकायत पर वह पड़ोसियों को कहानी सुनाती, "इस औरत ने अभी कहा था कि पानी बहुत गर्म है, अब यह चिल्ला रही है कि पानी बहुत ठंडा है: कौन इसकी धृष्टता सहन कर सकता है?" यदि बुढ़िया शिकायत करती कि उसके बिस्तर में पिस्सू भरे हुए हैं, तो वह बिस्तर को बाहर ले जाती और अपने बिस्तर को उस पर झाड़ती और फिर उसे वापस लाकर कहती, "मैंने इसे झाड़ दिया है": भली बुढ़िया, जिसे अब दोगुने पिस्सू काट रहे होते, पूरी रात जागती रहती और रात भर काटे जाने की शिकायत करती रहती; दूसरा पलटकर जवाब देता, "कल और परसों भी तुम्हारा बिस्तर हिलाया गया था।"ऐसी स्त्री की सारी ज़रूरतें कौन पूरी कर सकता है? बुढ़िया के बेटे को उससे भड़काने के लिए, वह जगह-जगह कफ, बलगम और सफ़ेद बाल बिखेर देती थी, और जब वह पूछता कि सारा घर इतना गंदा कौन कर रहा है, तो वह कहती, "तेरी माँ करती है।" लेकिन अगर उसे ऐसा करने से मना किया जाता, तो वह चिल्ला उठती: मैं ऐसी बुढ़िया के साथ एक ही घर में नहीं रह सकती: आपको तय करना होगा कि वह रहे या मैं। उसने उसकी बात सुनी और कहा, "पत्नी, तुम अभी जवान हो और जहाँ भी जाओ, कमा सकती हो: लेकिन मेरी माँ कमज़ोर है और मैं ही उसका सहारा हूँ; जाओ और अपने रिश्तेदारों के पास चली जाओ।" यह सुनकर वह डर गई और सोचने लगी, "वह अपनी माँ से नाता नहीं तोड़ सकता जो उसे इतनी प्यारी है: लेकिन अगर मैं अपने पुराने घर चली गई, तो मुझे वियोग का दुखमय जीवन जीना पड़ेगा: मैं अपनी सास को मनाऊँगी और पहले की तरह उसकी देखभाल करूँगी": और तब से उसने ऐसा ही किया। एक दिन वह गृहस्थ शिष्य जेतवन मठ में धर्ममार्ग का उपदेश सुनने गया: गुरु को प्रणाम करके वह एक तरफ खड़ा हो गया। गुरु ने उससे पूछा कि क्या वह अपने पुराने कर्तव्यों के प्रति लापरवाह तो नहीं है, क्या वह अपनी माँ की देखभाल में कर्तव्यनिष्ठ है। उसने उत्तर दिया, "हाँ, प्रभु: मेरी माँ मेरी इच्छा के विरुद्ध मेरे लिए एक दासी को पत्नी के रूप में लाई, उसने ऐसा-ऐसा किया।" "अनुचित बातें," उसने उसे सब कुछ बताते हुए कहा, "परन्तु वह स्त्री मुझे मेरी माँ से संबंध तोड़ने के लिए विवश नहीं कर सकी, और अब वह उनका पूरे आदर से ध्यान रखती है।" गुरु ने कहानी सुनी और कहा, "इस बार तुमने उसकी विनती नहीं मानी: परन्तु पहले तुमने उसकी विनती पर अपनी माँ को घर से निकाल दिया था और मेरी कृपा से उसे वापस अपने घर ले आए और उसकी देखभाल की": और उस व्यक्ति के अनुरोध पर उसने पुरानी कहानी सुनाई।"इस बार तुम उसकी विनती नहीं करोगे: परन्तु पहले तुमने उसकी विनती पर अपनी माँ को घर से निकाल दिया था और मेरी वजह से उसे वापस अपने घर ले आए और उसकी देखभाल की": और उस आदमी के अनुरोध पर उसने पुरानी कहानी सुनाई।"इस बार तुम उसकी विनती नहीं करोगे: परन्तु पहले तुमने उसकी विनती पर अपनी माँ को घर से निकाल दिया था और मेरी वजह से उसे वापस अपने घर ले आए और उसकी देखभाल की": और उस आदमी के अनुरोध पर उसने पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज था, एक परिवार के युवक ने अपने पिता की मृत्यु के बाद अपनी माँ की देखभाल में अपना जीवन व्यतीत किया, जैसा कि प्रारंभिक कथा में बताया गया है: विवरण ऊपर दिए गए अनुसार विस्तृत हैं। लेकिन इस बार, जब उसकी पत्नी ने कहा कि वह उस बुढ़िया के साथ नहीं रह सकती और उसे यह तय करना होगा कि उनमें से किसे जाना चाहिए, तो उसने उसकी बात मानकर कहा कि गलती उसकी माँ की है और कहा, "माँ, तुम हमेशा घर में झगड़े का कारण बनती हो: अब से कहीं और जाकर रहो, जहाँ तुम चाहो।" वह रोते हुए मान गई और एक सहेली के घर जाकर मजदूरी करने लगी और बड़ी मुश्किल से अपना गुजारा करती थी। उसके जाने के बाद, उसकी बहू गर्भवती हो गई और अपने पति और पड़ोसियों से कहने लगी कि जब तक वह बुढ़िया घर में थी, ऐसा कभी नहीं हो सकता था। बच्चे के जन्म के बाद, उसने अपने पति से कहा, "तुम्हारी माँ के घर में रहने के दौरान मेरा कोई बेटा नहीं हुआ, लेकिन अब हुआ है: तो अब तुम देख सकते हो कि वह कितनी बुरी चुड़ैल थी।" वृद्धा ने सुना कि पुत्र का जन्म उसके घर छोड़ने के कारण हुआ है, और उसने सोचा, "निश्चित रूप से सत्य इस संसार में मर चुका है: यदि ऐसा न होता, तो इन लोगों को अपनी माँ को पीटने और घर से बाहर निकालने के बाद पुत्र और सुखमय जीवन न मिलता: मैं मरे हुए सत्य के लिए भेंट चढ़ाऊँगी।" इसलिए एक दिन उसने पिसा हुआ तिल और चावल, एक छोटा बर्तन और एक चम्मच लिया: वह शवों के कब्रिस्तान में गई और तीन खोपड़ियों से बने चूल्हे के नीचे आग जलाई: फिर वह पानी में उतरी, सिर समेत स्नान किया, अपने वस्त्र धोए और अपने चूल्हे के पास लौटकर अपने बाल खोले और चावल धोने लगी।

उस समय बोधिसत्व स्वर्ग के राजा सक्का (इंद्र) थे; और बोधिसत्व सतर्क रहते हैं। जब उन्होंने संसार का अवलोकन किया, तो उन्होंने देखा कि एक वृद्ध स्त्री सत्य को इस प्रकार अंतिम आहुति दे रही थी मानो सत्य मर चुका हो। उसकी सहायता करने में अपनी शक्ति दिखाने की इच्छा से, वे एक ब्राह्मण का वेश धारण करके मुख्य मार्ग पर यात्रा करते हुए नीचे आए: उसे देखते ही वे मार्ग छोड़कर उसके पास खड़े हो गए और उससे बातचीत शुरू करते हुए कहा, "माँ, लोग श्मशान में भोजन नहीं पकाते: पकने के बाद तुम इस तिल और चावल का क्या करोगी?" इस प्रकार उन्होंने पहला श्लोक कहा:-

सफेद वस्त्र पहने, बालों से पानी टपकता हुआ,
   क्यों, कच्चानी (*1), बर्तन उबालो?
वहाँ चावल और तिल धोते हुए,

क्या आप गर्म होने पर इनका इस्तेमाल करेंगे?
उसने उसे जानकारी देने के लिए दूसरा श्लोक बोला:-

ब्राह्मण, मैं भोजन के लिए नहीं
तिल और चावल का प्रयोग करें:
सही मर चुका है; उसकी स्मृति भी मर चुकी है।
मैं बलिदान से इसे परिपूर्ण बनाऊंगा।
तब इंद्र ने तीसरा श्लोक कहा:-

महोदया, निर्णय लेने से पहले सोचिए:
आपको यह झूठ किसने बताया है?
बलवान और हजार आंखों वाला
पूर्ण सत्य कभी मर नहीं सकता।
उसकी बात सुनकर महिला ने दो पंक्तियाँ बोलीं:-

ब्राह्मण, मैंने मजबूत गवाह देखा है,
मुझे मानना ही होगा कि "दक्षिणपंथी विचारधारा मर चुकी है"।
अब सभी पुरुष जो गलत राह पर चलते हैं
आपको अपार समृद्धि प्राप्त हो।
एक समय बांझ रही, मेरे अच्छे बेटे की पत्नी
मुझे समझ नहीं आया, और उसने एक बेटे को जन्म दिया:
वह हमारे घर की मुखिया हैं।
मैं एक बहिष्कृत और हारा हुआ व्यक्ति हूँ।
तब इंद्र ने छठा श्लोक कहा:-

(*2)नहीं, मैं शाश्वत रूप से जीवित रहता हूँ;
मैं तुम्हारे लिए ही आया था:
उसने तुम्हें हराया; लेकिन उसके बेटे और उसने
मेरी ज्वाला में राख हो जाओगे।
उसकी बात सुनकर वह रो पड़ी, "हाय, तुम क्या कहते हो? मैं अपने पोते को मृत्यु से बचाने की कोशिश करूंगी," और इस प्रकार उसने सातवां श्लोक बोला:-

हे देवताओं (देवदूतों) के राजा, आपकी इच्छा पूरी हो:
अगर तुम मेरे लिए आकाश छोड़ दो,
मेरे बच्चे और उनका बेटा
मेरे साथ सौहार्दपूर्ण जीवन व्यतीत करो।
तब इंद्र ने आठवां श्लोक कहा:-

कटियानी की इच्छा पूरी हो:
हारने के बाद भी, आप सही रास्ते पर भरोसा करते हैं:
आपके बच्चों और उनके बेटे के साथ
सौहार्द के साथ एक ही घर में रहें।
यह कहने के बाद, सक्का (इंद्र), अपने दिव्य वस्त्रों में, अपनी अलौकिक शक्ति से हवा में खड़े हो गए और बोले, "कच्चानी, डरो मत: मेरी शक्ति से तुम्हारा पुत्र और बहू आएंगे, और रास्ते में तुमसे क्षमा प्राप्त करके तुम्हें अपने साथ ले जाएंगे; तुम उनके साथ शांति से रहो।" फिर वे अपने स्थान पर चले गए। सक्का (इंद्र) की शक्ति से उन्हें कच्चानी के अच्छे स्वभाव का ज्ञान हुआ, और गाँव में पूछताछ करने पर उन्हें पता चला कि वह श्मशान की ओर गई हैं। वे सड़क पर उनका नाम पुकारते हुए गए: जब उन्होंने उन्हें देखा तो उनके चरणों में गिर पड़े, और अपने अपराध के लिए क्षमा मांगी और प्राप्त की। उन्होंने अपने पोते का स्वागत किया। इस प्रकार वे सभी प्रसन्न होकर घर लौट आए और तब से साथ रहने लगे।

अपने अच्छे बेटे की पत्नी के साथ आनंदित

फिर कटियानी ने वहीं निवास किया:
इंद्र ने उनके विवाद को सुलझाया।
बेटा और पोता उसकी अच्छी देखभाल करते हैं।
यह श्लोक 'परफेक्ट विजडम' से प्रेरित है।

पाठ के बाद गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के बाद वह शिष्य प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की सिद्धि में स्थापित हो गया:- "उस समय जो व्यक्ति अपनी माता का सहारा था, वही आज भी अपनी माता का सहारा है, उस समय की पत्नी वही आज की पत्नी है, और सक्का (इंद्र) मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)आठवें श्लोक में उसे कटियानी कहा गया है।

(2) सक्का (इंद्र) स्वयं को सही के साथ पहचानता है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **अट्ठसद्दा-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-418-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 418
अत्थासद्दा-जातक

"एक गहरा कुंड," इत्यादि - गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए यह कथा सुनाई थी, जिसमें कोसल के राजा द्वारा आधी रात को सुनी गई एक अस्पष्ट और भयानक ध्वनि का वर्णन था। यह घटना वैसी ही है जैसी लोहकुंभी जन्म में वर्णित है। उस समय जब राजा ने कहा, "हे प्रभु, इन ध्वनियों का मेरे लिए क्या अर्थ है?" तो गुरु ने उत्तर दिया, "महाराज, भयभीत न हों: इन ध्वनियों के कारण आपको कोई खतरा नहीं होगा: ऐसी भयानक और अस्पष्ट ध्वनियाँ केवल आपने ही नहीं सुनी हैं: प्राचीन काल के राजाओं ने भी ऐसी ध्वनियाँ सुनी थीं, और ब्राह्मणों की सलाह मानकर प्रत्येक प्रजाति के चार पशुओं का यज्ञ करने का निश्चय किया था, परन्तु ज्ञानी पुरुषों की बात सुनकर उन्होंने यज्ञ के लिए एकत्रित पशुओं को मुक्त कर दिया और ढोल बजाकर सभी प्रकार के वध के विरुद्ध घोषणा करवाई": और राजा के अनुरोध पर उन्होंने यह प्राचीन कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्याभिषेक था, तब बोधिसत्व का जन्म अस्सी करोड़ (10 मिलियन) की संपत्ति वाले एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। बड़े होकर उन्होंने तक्षशिला में विद्या सीखी। अपने माता-पिता की मृत्यु के बाद उन्होंने अपने सभी खजानों का जायजा लिया, दान देकर अपनी सारी संपत्ति का विमोचन कर दिया, अपनी इच्छाओं का त्याग किया, हिमालय चले गए और तपस्वी बनकर रहस्यवादी ध्यान में लीन हो गए। कुछ समय बाद वे नमक-मिर्च के लिए मनुष्यों के निवास स्थान पर आए और बनारस पहुँचकर एक बगीचे में रहने लगे। उस समय बनारस के राजा आधी रात को अपने शाही पलंग पर बैठे थे, तभी उन्हें आठ आवाजें सुनाई दीं: पहली, महल के पास एक बगीचे में सारस ने आवाज की; दूसरी, सारस के तुरंत बाद, हाथी-घर के द्वार से एक मादा कौवे ने आवाज की; तीसरी, महल की चोटी पर बैठे एक कीड़े ने आवाज की; चौथी, महल में एक पालतू कोयल ने आवाज की; पाँचवीं, उसी स्थान पर एक पालतू हिरण ने आवाज की; छठी, वहीं पर एक पालतू बंदर ने आवाज की। सातवें, महल में रहने वाले एक बौने ने; आठवें, अंतिम के तुरंत बाद, एक पच्चेकबुद्ध ने राजा के निवास की छत से बगीचे की ओर जाते हुए परमानंद की ध्वनि निकाली। इन आठ ध्वनियों को सुनकर राजा भयभीत हो गए और अगले दिन उन्होंने ब्राह्मणों से परामर्श किया। ब्राह्मणों ने कहा, "महाराज, आप पर खतरा है: आइए हम महल के बाहर यज्ञ करें।" और उनकी अनुमति प्राप्त करके वे प्रसन्नतापूर्वक आए और यज्ञ कार्य प्रारंभ किया। अब सबसे वृद्ध यज्ञकारी ब्राह्मण का एक युवा शिष्य बुद्धिमान और विद्वान था: उसने अपने गुरु से कहा, "गुरुजी, इतने सारे प्राणियों का ऐसा कठोर और क्रूर वध न करवाएं।" "शिष्य, तुम्हें क्या पता? अगर कुछ और न भी हो, तो हमें खाने के लिए बहुत सी मछली और मांस मिलेगा।" "गुरुजी, पेट भरने के लिए ऐसा कार्य न करें जिससे नरक में पुनर्जन्म हो।" यह सुनकर अन्य ब्राह्मण अपने लाभ को खतरे में डालने के

कारण शिष्य पर क्रोधित हो गए। भयभीत शिष्य ने कहा, "ठीक है, तो फिर मछली और मांस खाने का कोई उपाय निकालो," और राजा को यज्ञ करने से रोकने में सक्षम किसी धर्मनिष्ठ तपस्वी की तलाश में शहर छोड़ दिया। वह राजमहल में पहुँचा और बोधिसत्व को देखकर उसने उन्हें प्रणाम किया और कहा, "क्या आपको प्राणियों पर दया नहीं आती? राजा ने ऐसा यज्ञ करवाया है जिससे अनेक प्राणियों की मृत्यु होगी: क्या आप इतने सारे प्राणियों का उद्धार नहीं करेंगे?" "युवक ब्राह्मण, मैं इस देश के राजा को नहीं जानता, न ही वह मुझे।" "महोदय, क्या आप जानते हैं कि राजा ने जो आवाजें सुनीं उनका क्या परिणाम होगा?" "हाँ।" "यदि आप जानते हैं, तो राजा को क्यों नहीं बताते?" "युवक ब्राह्मण, मैं अपने माथे पर सींग बांधकर कैसे कह सकता हूँ, 'मैं जानता हूँ?' यदि राजा मुझसे पूछताछ करने यहाँ आए, तो मैं उन्हें बता दूँगा।" वह युवक ब्राह्मण शीघ्रता से राजा के दरबार में गया, और जब उससे उसका उद्देश्य पूछा गया, तो उसने कहा, "महाराज, एक तपस्वी उन ध्वनियों का कारण जानता है जो आपने सुनीं।"वह आपके बगीचे में राजसी आसन पर बैठे हैं, और कहते हैं कि यदि आप उनसे पूछेंगे तो वे आपको बता देंगे: आपको ऐसा ही करना चाहिए।" राजा शीघ्रता से गए, तपस्वी को प्रणाम किया, और मैत्रीपूर्ण अभिवादन के बाद बैठ गए और पूछा, "क्या यह सच है कि आप उन ध्वनियों का अर्थ जानते हैं जो मैंने सुनी हैं?" "जी हां, महाराज।" "तो मैं निवेदन करता हूं, मुझे बताइए।" "महाराज, उन ध्वनियों से कोई खतरा नहीं है: आपके पुराने बगीचे में एक सारस है; वह भोजनहीन था, और भूख से अधमरा होकर उसने पहली ध्वनि उत्पन्न की:" और इस प्रकार अपने ज्ञान से सारस का सटीक अर्थ बताते हुए उन्होंने पहला श्लोक कहा:-

एक इतना गहरा और मछलियों से भरा तालाब जिसे वे अतीत का स्थान कहते थे।
यह सारस राजा का निवास स्थान था, मेरे पूर्वजों का पहले का निवास स्थान था:
और यद्यपि हम आज मेंढकों पर जीवित रहते हैं, हम कभी भी इसके किनारे को नहीं छोड़ते।
"हे महाराज, भूख से व्याकुल सारस ने वह आवाज़ निकाली थी: यदि आप उसे भूख से मुक्त करना चाहते हैं, तो बगीचे की सफाई करवाइए और तालाब को पानी से भर दीजिए।" राजा ने एक मंत्री को ऐसा करने का आदेश दिया। "हे महाराज, आपके हाथी के घर के द्वार पर एक मादा कौआ रहती है: उसने अपने बेटे के लिए शोक करते हुए दूसरी आवाज़ निकाली थी: आपको उससे डरने की कोई आवश्यकता नहीं है," और इस प्रकार उसने दूसरा श्लोक कहा:-

ओह! दुष्ट बंधुरा को कौन देखेगा? एक आँख उसे फाड़ डालेगी!
मेरा घोंसला, मेरे बच्चे और मैं खुद! अब कौन मेरा मित्र बनेगा?
फिर उसने राजा से हाथीशाला के मुख्य सारथी का नाम पूछा। "महाराज, उसका नाम बंधुरा है।" "क्या उसकी एक ही आँख है, महाराज?" "जी हाँ।" "महाराज, एक कौवे ने आपकी हाथीशाला के द्वार पर अपना घोंसला बना लिया है; उसने वहाँ अंडे दिए, और समय आने पर उसके बच्चे भी निकल आए। जब भी सारथी अपने हाथी पर सवार होकर अस्तबल में आता-जाता है, वह कौवे और उसके बच्चों पर अपने हुक से प्रहार करता है और घोंसला नष्ट कर देता है। कौवा इस पीड़ा में उसकी आँख निकाल लेना चाहता है और इसी कारण उसने ऐसा कहा। यदि आप उस पर दया करें, तो बंधुरा को बुलवाकर उसे घोंसला नष्ट करने से रोकें।" राजा ने उसे बुलवाया, उसे डाँटा और वहाँ से हटा दिया, और हाथी दूसरे को दे दिया।

"हे महाराज, आपके महल की छत के शिखर पर एक लकड़ी का कीड़ा है; उसने वहाँ की सारी अंजीर की लकड़ी खा ली है और कठोर लकड़ी नहीं खा सका: भोजन की कमी और भागने में असमर्थ होने के कारण, उसने रोने की तीसरी ध्वनि निकाली: आपको इससे डरने की कोई आवश्यकता नहीं है:" और इस प्रकार अपने ज्ञान से कीड़े का सटीक अर्थ बताते हुए उन्होंने तीसरा छंद कहा:-

मैंने अंजीर की सारी लकड़ी जितनी दूर तक जा सकती थी, खा ली है:
घुन को कठोर लकड़ी पसंद नहीं होती, हालांकि अन्य भोजन की कमी है।
राजा ने एक सेवक को भेजा और किसी तरह घुन को मुक्त करवा दिया।

"हे महाराज, क्या आपके निवास में कोई पालतू कोयल है?" "हाँ, महाराज।" "हे महाराज, वह कोयल जंगल के लिए तरस रही थी, जब उसे अपना पिछला जीवन याद आया, 'मैं इस पिंजरे को छोड़कर अपने प्यारे जंगल में कैसे जा सकती हूँ?' और इसलिए उसने चौथी ध्वनि निकाली: आपको इससे डरने की कोई आवश्यकता नहीं है: " और इस प्रकार उसने चौथा छंद बोला:-

काश, मैं इस राजसी जीवन को छोड़ सकूँ! काश, मुझे अपनी स्वतंत्रता मिल जाए!
मुझे जंगल में घूमने और पेड़ पर अपना घोंसला बनाने में बहुत खुशी होती है।
ऐसा कहते हुए उसने आगे कहा, "हे महाराज, कोयल बड़ी दुखी है, उसे मुक्त कर दीजिए।" राजा ने वैसा ही किया।

"महाराज, क्या आपके निवास में कोई पालतू हिरण है?" "हाँ, महाराज।" "वह झुंड का मुखिया था: अपनी मादा हिरण को याद करते हुए और उसके प्रेम के लिए तरसते हुए उसने पाँचवीं ध्वनि निकाली: तुम्हें इससे डरने की कोई आवश्यकता नहीं है:" और उसने पाँचवाँ छंद बोला:-

काश, मैं इस राजसी जीवन को छोड़ सकूँ! काश, मुझे अपनी स्वतंत्रता मिल जाए!
झरने का शुद्ध जल पियो, मेरे पीछे आने वाले झुंड का नेतृत्व करो!
उस महान प्राणी ने उस हिरण को भी मुक्त कर दिया और आगे बोला, "महाराज, क्या आपके निवास में कोई पालतू बंदर है?" "जी हां, है।" "वह हिमालय में एक झुंड का मुखिया था, और उसे मादा बंदरों का साथ बहुत पसंद था: उसे भरत नामक एक शिकारी यहाँ लाया था: अपने पुराने विश्राम स्थलों की लालसा और तड़प में उसने छठी ध्वनि निकाली: आपको इससे डरने की कोई आवश्यकता नहीं है," और उसने छठा श्लोक बोला:-

मैं भावनाओं से भरा और दागदार था, इच्छाओं से भरा हुआ था,
मुझे शिकारी भरत ने पकड़ा; आशा है मैं आपके लिए शुभ भाग्य लेकर आऊँगा!
उस महान प्राणी ने बंदर को भी मुक्त कर दिया और आगे बोला, "महान राजा, क्या आपके निवास में कोई बौना रहता है?" "जी हाँ, महाराज।" "वह अपनी परी के साथ किए गए अपने कृत्य के बारे में सोच रहा था और इच्छा की पीड़ा में उसने सातवीं ध्वनि उत्पन्न की। एक दिन वह उसके साथ एक ऊँचे पर्वत की चोटी पर चढ़ गया था: उन्होंने उत्तम रंग और सुगंध वाले कई फूल चुने और उनसे खुद को सजाया, और उन्हें पता ही नहीं चला कि सूरज डूब रहा है; जैसे ही वे नीचे उतर रहे थे, अंधेरा छा गया। परी ने कहा, "पतिदेव, अंधेरा हो गया है, बिना ठोकर खाए सावधानी से नीचे आ जाओ," और उसका हाथ पकड़कर उसे नीचे ले गई। उसके शब्दों की स्मृति में ही उसने यह ध्वनि उत्पन्न की: तुम्हें इससे डरने की कोई आवश्यकता नहीं है।" अपने ज्ञान से उसने घटना का सटीक वर्णन किया और सातवाँ श्लोक बोला:-

जब पहाड़ की चोटी पर घना अंधेरा छा गया,
"पत्थर पर पैर रखकर ठोकर मत खाओ," उसने मुझे धीरे से चेतावनी दी।
तब उस महान सत्ता ने समझाया कि बौने ने वह ध्वनि क्यों निकाली थी, और उसे मुक्त कर दिया, और आगे कहा, "हे महाराज, एक आठवीं ध्वनि थी, जो परमानंद (सम्मोहन) की थी। नन्दमूल गुफा में रहने वाला एक पच्चेकबुद्ध, यह जानते हुए कि अब उसके लिए जीवन की परिस्थितियाँ समाप्त हो गई हैं, मनुष्य के निवास पर आया, यह सोचते हुए, "मैं बनारस के राजा के उद्यान में निर्वाण प्राप्त करूँगा: उसके सेवक मुझे दफनाएँगे, पवित्र उत्सव मनाएँगे और मेरे अवशेषों का आदर करेंगे और इस प्रकार स्वर्ग प्राप्त करेंगे।" वह अपनी अलौकिक शक्ति से आ रहा था और जैसे ही वह आपके महल की छत पर पहुँचा, उसने जीवन का बोझ उतार फेंका और परमानंद (सम्मोहन) में वह गीत गाया जो निर्वाण नगर के प्रवेश द्वार को प्रकाशित करता है।" और इस प्रकार उसने पच्चेकबुद्ध द्वारा उच्चारित श्लोक कहा।

मुझे यकीन है कि मुझे जन्म का अंत दिखाई दे रहा है।
मैं फिर कभी गर्भ नहीं देखूंगी:
पृथ्वी पर मेरा अंतिम अस्तित्व
सब कुछ खत्म हो गया है, और इसके साथ-साथ सारी पीड़ा भी।
"इन भावपूर्ण शब्दों के साथ वे आपके उद्यान में पहुँचे और पूर्ण रूप से खिले हुए साल के वृक्ष की तलहटी में निर्वाण प्राप्त कर लिया: हे महाराज, आइए और उनके अंतिम संस्कार कीजिए।" अतः उस महान सत्ता ने राजा को उस स्थान पर ले गए जहाँ पच्चेकबुद्ध ने निर्वाण प्राप्त किया था और उन्हें शरीर के बारे में बताया। शरीर को देखकर राजा ने एक विशाल सेना के साथ इत्र, फूल और इसी प्रकार की भेंट चढ़ाकर सम्मान व्यक्त किया। बोधिसत्व की सलाह पर उन्होंने यज्ञ रोक दिया, सभी प्राणियों को जीवनदान दिया, पूरे नगर में ढोल बजाकर यह घोषणा की कि कोई वध न हो, सात दिनों का पवित्र उत्सव आयोजित करवाया, पच्चेकबुद्ध के शरीर को इत्र से सजी चिता पर पूर्ण सम्मान के साथ दाह संस्कार करवाया और चारों मुख्य सड़कों के संगम स्थल पर एक स्तूप बनवाया। बोधिसत्व ने राजा को धर्म का उपदेश दिया और उसे परिश्रम करने के लिए प्रोत्साहित किया; फिर वह हिमालय गया और वहाँ उसने पूर्ण अवस्था में कर्म किए, और बिना किसी व्यवधान के अपने ध्यान में लीन होकर ब्रह्म स्वर्ग (प्रधान देवदूतों का लोक) के लिए नियत हो गया।

पाठ के बाद, गुरु ने कहा, "हे महाराज, उस ध्वनि से आपको कोई खतरा नहीं है, यज्ञ रोक दीजिए और इन सभी प्राणियों को उनका जीवनदान दे दीजिए": और ढोल से यह घोषणा करवाकर कि उनके जीवनदान दे दिया गया है, उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "उस समय राजा आनंद थे, शिष्य सारिपुत्र थे और तपस्वी मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) गर्व के प्रतीक के रूप में

पिछला <<<<-----||-419-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 419
सुलासा-जातक

“यह सोने का हार है,” इत्यादि — गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए अनाथपिंडिका की एक दासी के बारे में यह कहानी सुनाई। कहानी यह है कि एक पर्व के दिन, जब वह कई दासियों के साथ एक उद्यान में जा रही थी, तो उसने अपनी स्वामिनी पन्नालक्खनादेवी से पहनने के लिए एक आभूषण मांगा।

उसकी मालकिन ने उसे अपना एक आभूषण दिया, जिसकी कीमत एक लाख सिक्के थी। उसने उसे पहना और अन्य नौकरों के साथ आनंद उद्यान में चली गई। एक चोर उस आभूषण को पाने के लिए ललचा रहा था, और उसे मारकर आभूषण छीनने के इरादे से वह उससे बातें करने लगा। उद्यान में उसने उसे मछली, मांस और शराब पिलाई। उसने सोचा, "मुझे लगता है कि वह ऐसा इसलिए कर रहा है क्योंकि वह मुझे चाहता है।" शाम को जब बाकी नौकर खेल-कूद के बाद आराम करने के लिए लेट गए, तो वह उठी और उसके पास गई। उसने कहा, "मालकिन, यह जगह एकांत में नहीं है; चलिए थोड़ा और आगे चलते हैं।" उसने सोचा, "इस जगह पर कोई भी एकांत काम हो सकता है: इसमें कोई शक नहीं कि वह मुझे मारकर मेरा आभूषण छीनने के लिए बेचैन होगा: मैं उसे सबक सिखाऊंगी।" इसलिए उसने कहा, "मालिक, शराब पीने से मुझे प्यास लग रही है: मुझे थोड़ा पानी दीजिए।" और उसे एक कुएँ के पास ले जाकर रस्सी और बाल्टी दिखाते हुए उससे पानी भरने को कहा। चोर ने बाल्टी नीचे डाली। फिर जब वह पानी भरने के लिए झुका, तो बलवान लड़की ने उसे दोनों हाथों से ज़ोर से धक्का दिया और कुएं में फेंक दिया। "तुम इस तरह नहीं मरोगे," उसने कहा और उसके सिर पर एक बड़ी ईंट फेंक दी। उसकी मौके पर ही मृत्यु हो गई। जब वह शहर लौटी और अपनी मालकिन को आभूषण दिया, तो उसने कहा, "आज उस आभूषण के लिए मैं लगभग मर ही गई थी," और पूरी कहानी सुनाई। मालकिन ने अनाथपिंडिका को बताया, और उन्होंने तथागत (बुद्ध) को बताया। स्वामी ने कहा, "गृहस्थ, यह पहली बार नहीं है कि उस दासी ने सूझबूझ का परिचय दिया है; वह पहले भी ऐसा कर चुकी है: यह पहली बार नहीं है कि उसने उस आदमी को मारा है; उसने पहले भी एक बार ऐसा किया है," और अनाथपिंडिका के अनुरोध पर, उन्होंने पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज था, तब शहर में सुलासा नाम की एक खूबसूरत महिला रहती थी, जिसके पास पाँच सौ शाही नर्तकियों और वेश्याओं का एक समूह था, और जिसकी कीमत एक हजार पैसे प्रति रात थी। उसी शहर में सत्तुका नाम का एक डाकू था, जो हाथी के समान बलवान था, और वह रात में अमीरों के घरों में घुसकर मनमाने ढंग से लूटपाट करता था। शहरवासियों ने इकट्ठा होकर राजा से शिकायत की। राजा ने शहर के पहरेदारों को आदेश दिया कि वे जगह-जगह दल तैनात करें, डाकू को पकड़वाएँ और उसका सिर काट दें। उन्होंने उसके हाथ पीछे बाँध दिए और उसे फाँसी के स्थान पर ले गए, रास्ते में हर चौराहे पर कोड़ों से उसकी पिटाई की। उसके पकड़े जाने की खबर से पूरा शहर उत्साहित हो गया। सुलासा एक खिड़की पर खड़ी थी और सड़क पर नीचे देख रही थी, तभी उसकी नज़र उस डाकू पर पड़ी, उसे देखते ही उससे प्रेम हो गया और उसने सोचा, "अगर मैं उस बलवान योद्धा को आज़ाद करा सकूँ, तो मैं अपना यह बुरा जीवन त्याग दूँगी और उसके साथ सम्मानपूर्वक जीवन व्यतीत करूँगी।" कनावेरा जन्म कथा में वर्णित तरीके से, सुलासा ने शहर के मुख्य कांस्टेबल को एक हजार सिक्के भेजकर उसे मुक्त कराया और फिर उसके साथ सुख-शांति से रहने लगी। तीन-चार महीने बाद डाकू ने सोचा, "मैं इस जगह पर कभी नहीं टिक पाऊंगा: लेकिन खाली हाथ तो नहीं जा सकता: सुलासा के आभूषण एक लाख सिक्कों के बराबर हैं: मैं उसे मार डालूंगा और उन्हें ले लूंगा।" इसलिए एक दिन उसने सुलासा से कहा, "प्रिय, जब राजा के आदमी मुझे घसीट रहे थे, तब मैंने एक पर्वत की चोटी पर स्थित वृक्ष देवता को भेंट चढ़ाने का वादा किया था, जो अब मुझे धमकी दे रहा है क्योंकि मैंने भेंट नहीं चढ़ाई है: चलो भेंट चढ़ाते हैं।" "ठीक है, पतिदेव, तैयार करो और भेज दो।" "प्रिय, भेजना ठीक नहीं होगा: चलो हम दोनों अपने सारे आभूषण पहनकर और बहुत सारे सेवकों के साथ जाकर भेंट चढ़ाते हैं।" "ठीक है, पतिदेव, हम ऐसा ही करेंगे।" उसने उससे भेंट तैयार करवाई और जब वे पर्वत की तलहटी पर पहुँचे, तो उसने कहा, "प्रिय, देवता इतनी भीड़ देखकर भेंट स्वीकार नहीं करेंगे; चलो हम दोनों ऊपर जाकर भेंट चढ़ाते हैं।" वह मान गई, और उसने उसे पात्र उठाने को कहा। वह स्वयं हथियारों से लैस था, और जब वे शिखर पर पहुँचे, तो उसने भेंट को एक ऐसे पेड़ के नीचे रख दिया जो एक मनुष्य की ऊँचाई से सौ गुना ऊँची खाई के किनारे उगता था, और कहा, "प्रिय, मैं भेंट चढ़ाने नहीं आया हूँ, मैं तुम्हें मारने और तुम्हारे सारे आभूषण लेकर जाने के

इरादे से आया हूँ: इन्हें उतार दो और अपने बाहरी वस्त्र में बाँध लो।" "पतिदेव, आप मुझे क्यों मारेंगे?" "तुम्हारे धन के लिए।" "पति, मेरे द्वारा आपके लिए किए गए उपकार को याद रखें: जब आपको जंजीरों में जकड़कर घसीटा जा रहा था, तब मैंने आपके लिए एक धनी व्यक्ति के बेटे का बलिदान दिया और एक बड़ी रकम देकर आपकी जान बचाई: भले ही मुझे प्रतिदिन हज़ार सिक्के मिलें, मैं कभी किसी दूसरे पुरुष की ओर नहीं देखती: मैं आपके लिए कितनी उपकारिणी हूँ: मुझे मत मारो, मैं आपको बहुत सारा धन दूंगी और वह आपका दास होगा।" इन निवेदनों के साथ उसने पहला छंद कहा:-

यह सोने का हार है, और पन्ना और मोती भी हैं।
सब कुछ स्वीकार करो और मेरा स्वागत करो: मुझे अपनी दासियों में स्थान दो।
जब सत्तुका ने अपने उद्देश्य के अनुसार दूसरा श्लोक बोल दिया—

हे सुंदर स्त्री, अपने गहने नीचे रख दो और पीड़ा से मत रोओ।
मैं तुम्हें मार डालूंगा: अन्यथा मुझे यकीन नहीं होगा कि तुम मुझे अपना सारा सामान दे दोगे।
सुलासा ने सूझबूझ का परिचय देते हुए सोचा, "यह लुटेरा मुझे मेरी जान नहीं देगा, लेकिन मैं किसी न किसी तरह उसे खाई में फेंककर पहले उसकी जान ले लूंगी," और फिर उसने दो पंक्तियाँ बोलीं:-

मेरी समझ के दायरे में, मेरी सचेत स्मृति के भीतर,
मैं यह बात पूरी ईमानदारी से कहता हूँ कि इस धरती पर मैंने किसी भी पुरुष को तुमसे अधिक प्रेम नहीं किया है।
यहां आओ, मेरी अंतिम सलामी के लिए, मेरे अंतिम आलिंगन को ग्रहण करो:
अब हम धरती पर कभी आमने-सामने नहीं मिलेंगे।
सत्तुका को उसका इरादा समझ नहीं आया, इसलिए उसने कहा, "ठीक है, प्रिय; आओ और मुझे गले लगाओ।" सुलासा ने तीन बार आदरपूर्वक उसके चारों ओर परिक्रमा की, उसे चूमा और कहा, "अब, पतिदेव, मैं चारों ओर से आपको प्रणाम करने जा रही हूँ," उसने अपना सिर उसके चरणों पर रखा, उसके दोनों ओर प्रणाम किया और उसके पीछे प्रणाम करने के लिए चली गई: फिर हाथी के बल से उसने उसे पीछे से पकड़ा और सौ गुना ऊँची उस विनाश स्थल पर सिर के बल फेंक दिया। वह चूर-चूर हो गया और मौके पर ही मर गया। इस घटना को देखकर पर्वत की चोटी पर रहने वाले देवता ने ये श्लोक कहे:-

ज्ञान कभी-कभी केवल पुरुषों तक ही सीमित नहीं होता।
एक महिला भी कभी-कभी बुद्धिमत्तापूर्ण बातें कह सकती है।
ज्ञान कभी-कभी केवल मनुष्यों तक ही सीमित नहीं होता:
महिलाएं कभी-कभी सलाह देने में बहुत तेज होती हैं।
वह यह जानने में कितनी तेज और उत्सुक थी,
उसने उसे ऐसे मार डाला जैसे पूरी ताकत से तीर चलाकर हिरण का शिकार किया जाता है।
जो महान अवसर पर उठने में विफल रहता है
गिरता है, ठीक वैसे ही जैसे कोई सुस्त चोर खाई से गिरता है।
एक कारण उसके भाग्य में संकट उत्पन्न हो जाता है,
उसकी ही तरह, वह भी खतरनाक शत्रु से बच गया।
तब सुलासा ने डाकू को मार डाला। जब वह पहाड़ से उतरकर अपने सेवकों के पास आई, तो उन्होंने उससे उसके पति के बारे में पूछा। उसने कहा, "मुझसे मत पूछो," और अपने रथ पर सवार होकर शहर की ओर चल पड़ी।

पाठ के बाद, गुरु ने जन्म की पहचान बताई: "उस समय वे दोनों वही दो थे जो अब हैं, देवता मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सुमंगल-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----II-420-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 420

सुमंगल जातक

"गुस्से भरी भौंहों से सचेत," इत्यादि - गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक राजा को दी गई सलाह के संबंध में यह कहानी सुनाई। इस अवसर पर गुरु ने राजा के अनुरोध पर एक प्राचीन कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व का जन्म उनकी प्रमुख रानी के पुत्र के रूप में हुआ। बड़े होकर, अपने पिता की मृत्यु के बाद वे राजा बने और उन्होंने भरपूर दान दिया। उनके पास सुमंगला नाम का एक उद्यान रक्षक था। एक पच्चेकबुद्ध नन्दमूल गुफा से भिक्षा मांगने के लिए तीर्थयात्रा पर निकले और बनारस आकर उद्यान में ठहरे। अगले दिन वे भिक्षा मांगने के लिए नगर गए। राजा ने उन्हें कृपापूर्वक देखा, उन्हें महल में बुलाया और सिंहासन पर बैठाया, उनका अनेक प्रकार के स्वादिष्ट भोजन से भली-भांति स्वागत किया और उनका धन्यवाद प्राप्त किया। पच्चेकबुद्ध के अपने उद्यान में ठहरने से प्रसन्न होकर, राजा ने उनसे वचन लिया और उन्हें वापस वहीं भेज दिया। सुबह का भोजन करने के बाद, राजा स्वयं वहाँ गए, उनके रात-दिन के रहने की व्यवस्था की, उद्यान रक्षक सुमंगला को सेवक बनाकर उन्हें दिया और नगर लौट गए। उसके बाद पच्चेकबुद्ध महल में लगातार भोजन करते रहे और वहाँ लंबे समय तक रहे: सुमंगला आदरपूर्वक उनकी सेवा करती रही। एक दिन वे सुमंगला से यह कहकर चले गए, "मैं कुछ दिनों के लिए फलाँ गाँव जा रहा हूँ, लेकिन वापस आ जाऊँगा: राजा को सूचित कर देना।" सुमंगला ने राजा को सूचित कर दिया। उस गाँव में कुछ दिन रहने के बाद पच्चेकबुद्ध सूर्यास्त के बाद शाम को उद्यान में वापस आ गए। सुमंगला को उनके आने की सूचना नहीं थी, इसलिए वे अपने घर चले गए थे। पच्चेकबुद्ध ने अपना कटोरा और वस्त्र एक तरफ रख दिया और थोड़ी दूर चलकर एक पत्थर की पटिया पर बैठ गए। उस दिन उद्यान के रखवाले के घर कुछ अजनबी मेहमान आए थे। उनके लिए सूप और करी लाने के लिए वह धनुष लेकर उद्यान में एक पालतू हिरण का शिकार करने गया था: हिरण वहाँ हिरण की तलाश कर रहा था जब उसने पच्चेकबुद्ध को देखा और उन्हें एक बड़ा हिरण समझकर तीर चला दिया। पच्चेकबुद्ध ने अपना सिर खोला और कहा, "सुमंगला।" अत्यंत व्यथित होकर सुमंगला ने कहा, "महाराज, मुझे आपके आने की सूचना नहीं थी और मैंने आपको हिरण समझकर तीर मार दिया: मुझे क्षमा कर दीजिए।" "ठीक है, लेकिन अब आप क्या करेंगे? आइए, तीर निकालिए।" उन्होंने प्रणाम किया और तीर निकाल दिया। पच्चेकबुद्ध को तीव्र पीड़ा हुई और वे उसी क्षण निर्वाण प्राप्त कर गए। उद्यान के रखवाले ने सोचा कि यदि राजा को पता चलेगा तो वे उसे क्षमा नहीं करेंगे: वह अपनी पत्नी और बच्चों को लेकर भाग गया। अलौकिक शक्ति से पूरे शहर में यह खबर फैल गई कि पच्चेकबुद्ध निर्वाण प्राप्त कर चुके हैं, और सभी अत्यंत उत्साहित हो गए। अगले दिन कुछ लोग उद्यान में आए, उन्होंने शव देखा और राजा को बताया कि पच्चेकबुद्ध को मारने के बाद उद्यान का रखवाला भाग गया था। राजा अपने साथ बड़ी संख्या में सेवकों को लेकर गए और सात दिनों तक शव का सम्मान किया: फिर उन्होंने पूरे विधि-विधान से अवशेष लिए, एक मंदिर बनवाया, और उसका सम्मान करते हुए अपने राज्य पर विधिपूर्वक शासन करना शुरू कर दिया। एक वर्ष बाद, सुमंगला ने राजा के विचार जानने का निश्चय किया: वह वहाँ आए और अपने सामने मौजूद एक मंत्री से पूछा कि राजा उनके बारे में क्या सोचते हैं। मंत्री ने राजा के सामने सुमंगला की प्रशंसा की, लेकिन राजा ने मानो कुछ सुना ही न हो। मंत्री ने और कुछ नहीं कहा, बस सुमंगला को बताया कि राजा उनसे प्रसन्न नहीं हैं।एक वर्ष बाद वह फिर आया, और तीसरे वर्ष वह अपनी पत्नी और बच्चों को लेकर आया। मंत्री जानता था कि राजा प्रसन्न हो गए हैं, और उसने सुमंगला को महल के द्वार पर खड़ा करके राजा को उसके आने की सूचना दी। राजा ने उसे बुलवाया और अभिवादन करने के बाद कहा, "सुमंगला, तुमने उस पच्चेकबुद्ध को क्यों मारा, जिसके द्वारा मुझे पुण्य प्राप्त हो रहा था?" "हे राजा, मेरा उसे मारने का इरादा नहीं था, लेकिन इस तरह मुझसे यह काम हो गया," और उसने पूरी कहानी सुनाई। राजा ने उसे डरने की कोई बात नहीं कही और आश्वस्त करके उसे फिर से उद्यान रक्षक बना दिया। तब मंत्री ने पूछा, "हे राजा, सुमंगला की प्रशंसा दो बार सुनने पर आपने कोई उत्तर क्यों नहीं दिया, और तीसरी बार सुनने पर आपने उसे बुलवाया और क्षमा क्यों कर दी?" राजा ने कहा, "महोदय, राजा के लिए क्रोध में आकर जल्दबाजी करना अनुचित है; इसलिए मैं पहले चुप रहा और तीसरी बार जब मुझे लगा कि मेरा क्रोध शांत हो गया है, तब मैंने सुमंगला को बुलवाया।" और इस प्रकार उन्होंने राजा के कर्तव्य को सिखाने के लिए ये श्लोक कहे:

गुस्से से भरी भौंहों के प्रति सचेत,
   राजा को सजा को लंबा खींचने की अनुमति कभी न दें:
ताज के अयोग्य वस्तुएँ
   फिर वह सिर हिलाकर आगे बढ़ता।
शांत मनोदशा के प्रति सचेत,
   उसे कठोर फैसले सुनाने दो,
जब मामला समझ में आ जाए,
   उचित दंड निर्धारित करें:
वह न तो खुद को और न ही दूसरों को नाराज करेगा।

सही और गलत में स्पष्ट अंतर:
यद्यपि उसका जुआ मनुष्यों की गर्दन पर है,
सद्गुण ही उसे उच्च और शक्तिशाली बनाए रखता है।
राजकुमार अपने कार्यों में लापरवाह थे
निर्दयतापूर्वक दंड लागू करें।
यहां बदनामी ही उनका वेतन है।
मरने के बाद उन्हें नरक का सामना करना पड़ेगा।
जो लोग पवित्र और धार्मिक मार्ग से प्रेम करते हैं,
कर्म, वचन और विचार में शुद्ध
दया, शांति और विस्मय से परिपूर्ण,
दोनों दुनियाओं से वैसे ही गुजरें जैसे उन्हें गुजरना चाहिए।
मैं राजा हूँ, अपनी प्रजा का स्वामी हूँ;
क्रोध मेरी इच्छाशक्ति को नहीं रोक पाएगा:
जब मैं बुराई की ओर तलवार उठाता हूँ,
दया ही दंड का कारण बनती है।
इस प्रकार राजा ने अपने अच्छे गुणों का वर्णन छह छंदों में किया: उनका पूरा दरबार प्रसन्न हुआ और उनके गुणों का वर्णन करते हुए कहा, "महाराज, नैतिक आचरण और गुणों में ऐसी उत्कृष्टता आपके योग्य है।" दरबार के बोलने के बाद, सुमंगला ने राजा को प्रणाम किया और सम्मानपूर्वक तीन छंदों में उनकी प्रशंसा की:-

आपकी महिमा और आपकी शक्ति ऐसी ही है;
उन्हें कभी भी एक घंटे के लिए अकेला न छोड़ें:
क्रोध से मुक्त, भय से मुक्त,
सौ वर्षों तक आनंदपूर्वक शासन करो।
राजकुमार, जिन्हें ये सभी गुण प्राप्त हैं,
हल्का और सादा, लेकिन गुणवत्ता में दृढ़।
धर्म के द्वारा संसार पर शासन करो।
पृथ्वी से मुक्त होकर स्वर्ग में प्रवेश करें।
कथनी और करनी में उत्तम,
अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए हर संभव साधन का उपयोग करें:
परेशान लोगों को शांत करो।
जैसे कोई बादल मधुर वर्षा कर रहा हो।

कोसल राजा को दी गई सलाह से संबंधित पाठ के बाद, गुरु ने जन्म की पहचान बताई: "उस समय पच्चेकबुद्ध निर्वाण में लीन हो गए, सुमंगल आनंद थे, और राजा मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> गंगामाला - **जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-421-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 421
गंगामाला जातक

“धरती अंगारे जैसी है,” इत्यादि — गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए साप्ताहिक पवित्र दिनों के पालन के विषय में यह कथा सुनाई थी। एक दिन गुरु पवित्र दिनों का पालन कर रहे गृहस्थों को संबोधित करते हुए बोले, “गृहस्थों, आपका आचरण अच्छा है; जब मनुष्य पवित्र दिनों का पालन करें तो उन्हें दान देना चाहिए, नैतिक नियमों का पालन करना चाहिए, क्रोध नहीं करना चाहिए, दयालुता का भाव रखना

चाहिए और उस दिन के कर्तव्यों का पालन करना चाहिए: प्राचीन काल के बुद्धिमान पुरुषों ने पवित्र दिनों का आंशिक पालन करके भी महान यश प्राप्त किया था।" और उनके अनुरोध पर उन्होंने यह प्राचीन कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्य था, उस नगर में सुचिपरिवार नाम का एक धनी व्यापारी रहता था, जिसकी संपत्ति अस्सी करोड़ (10 मिलियन) तक पहुँच गई थी और जो दान-पुण्य और अन्य अच्छे कार्यों में प्रसन्न रहता था। उसकी पत्नी, बच्चे, घर के सभी लोग, यहाँ तक कि चरवाहे भी, हर महीने छह पवित्र दिन मनाते थे। उसी समय बोधिसत्व का जन्म एक गरीब परिवार में हुआ था और वे मजदूरी पर कठिन जीवन व्यतीत करते थे। काम की उम्मीद में वे सुचिपरिवार के घर आए: प्रणाम करके एक तरफ बैठ गए, जब उनसे उनका काम पूछा गया तो उन्होंने कहा, "मैं आपके घर में मजदूरी पर काम पाना चाहता था।" जब अन्य मजदूर उनके पास आते थे, तो व्यापारी उनसे कहता था, "इस घर में मजदूर नैतिक नियमों का पालन करते हैं, यदि आप भी उनका पालन कर सकें तो आप मेरे यहाँ काम कर सकते हैं।" लेकिन बोधिसत्व से उन्होंने नैतिक नियमों का कोई जिक्र नहीं किया, बल्कि कहा, "ठीक है, मेरे भले, आप मेरे यहाँ काम कर सकते हैं और अपनी मजदूरी का इंतजाम कर सकते हैं।" तब से बोधिसत्व व्यापारी का सारा काम विनम्रता और लगन से करते थे, अपनी थकान की परवाह किए बिना; वे सुबह जल्दी काम पर जाते और शाम को लौट आते। एक दिन शहर में एक त्योहार की घोषणा हुई। व्यापारी ने एक दासी से कहा, "आज पवित्र दिन है: तुम्हें सुबह कामगारों के लिए चावल पकाने होंगे: वे इसे सुबह खा लेंगे और बाकी दिन उपवास रखेंगे।" बोधिसत्व सुबह जल्दी उठे और काम पर चले गए: किसी ने उन्हें उस दिन उपवास रखने के लिए नहीं कहा था। बाकी कामगारों ने सुबह खाना खाया और फिर उपवास रखा: व्यापारी अपनी पत्नी, बच्चों और सेवकों के साथ उपवास रखा: सभी अपने-अपने घर चले गए और वहाँ बैठकर नैतिक नियमों का ध्यान किया। बोधिसत्व ने सारा दिन काम किया और सूर्यास्त के समय घर लौटे। रसोइया ने उनके हाथों के लिए पानी दिया और उन्हें एक थाली में चूल्हे से निकाला हुआ चावल दिया। बोधिसत्व ने कहा, "आम दिनों में इस समय बहुत शोर होता है: आज ये सब कहाँ चले गए हैं?" "वे सब अपने-अपने घर में व्रत रख रहे हैं।" उसने सोचा, "इतने सारे सदाचारी लोगों के बीच मैं अकेला दुराचारी नहीं होऊँगा।" इसलिए वह व्यापारी के पास गया और उससे पूछा कि क्या उस समय दिन के सारे काम निपटाकर व्रत रखा जा सकता है। व्यापारी ने बताया कि पूरा काम नहीं किया जा सकता, क्योंकि सुबह काम नहीं किया गया था; लेकिन आधा काम किया जा सकता है। "ठीक है," उसने उत्तर दिया और अपने स्वामी की उपस्थिति में काम निपटाकर व्रत रखना शुरू कर दिया। अपने घर जाकर वह व्रत के नियमों पर ध्यान लगाने लगा। उसने दिन भर कुछ नहीं खाया था और अंतिम पहर में उसे भाले के घाव जैसा दर्द हुआ। व्यापारी उसके लिए कई दवाइयाँ लाया और उन्हें खाने को कहा, लेकिन उसने कहा, "मैं अपना व्रत नहीं तोड़ूँगा: मैंने यह व्रत इसलिए रखा है, चाहे इसके लिए मुझे अपनी जान ही क्यों न देनी पड़े।" दर्द बढ़ता गया और सूर्योदय होते-होते वह बेहोश होने लगा। लोगों ने उसे बताया कि वह मर रहा है और उसे बाहर निकालकर आराम करने के लिए एक स्थान पर लिटा दिया।उस समय बनारस के राजा अपने विशाल रथ और सेवकों के साथ नगर का चक्कर लगाते हुए उस स्थान पर पहुँचे थे। बोधिसत्व ने राजसी वैभव देखकर राजसत्ता पाने की इच्छा की और उसके लिए प्रार्थना की। मृत्यु से पहले, आधे व्रत के फलस्वरूप वे मुख्य रानी के गर्भ में पुनर्जन्म लिए। रानी ने गर्भाधान की विधि-विधानी अपनाई और दस माह बाद पुत्र को जन्म दिया। उनका नाम उदय राजकुमार रखा गया। बड़े होकर वे सभी विद्याओं में पारंगत हो गए: पिछले जन्मों की स्मृति से उन्हें अपने पुण्य कर्मों का ज्ञान था और इसे अपने छोटे से कर्म का महान फल समझकर वे बार-बार समाधि गीत गाते थे। अपने पिता की मृत्यु के बाद उन्होंने राज्य प्राप्त किया और अपनी महान महिमा को देखते हुए वे वही समाधि गीत गाते रहे। एक दिन नगर में उत्सव की तैयारी चल रही थी। बहुत से लोग मनोरंजन में लीन थे। बनारस के उत्तरी द्वार के पास रहने वाले एक पानी ढोने वाले ने चारदीवारी की एक ईंट में आधा पैसा छिपा रखा था। वह एक गरीब महिला के साथ रहता था जो पानी ढोकर अपना जीवन यापन करती थी। उसने उससे कहा, "महोदय, शहर में एक उत्सव है: अगर आपके पास कुछ पैसे हों, तो चलिए हम सब मिलकर आनंद लें।" "हाँ, प्रिय।" "कितने?" "आधा पैसा।" "कहाँ है?" "उत्तरी द्वार के पास एक ईंट में, यहाँ से बारह मील (4.23 किमी) दूर, मैं अपना खजाना छोड़ रहा हूँ: लेकिन क्या आपके पास कुछ है?" "हाँ।" "कितने?" "आधा पैसा।" "तो आपके और मेरे मिलाकर पूरा एक पैसा होता है: हम इसके एक हिस्से से एक माला, दूसरे से इत्र और तीसरे से एक शराब खरीदेंगे: जाइए और अपना आधा पैसा वहाँ से ले आइए जहाँ आपने रखा है।" वह अपनी पत्नी के शब्दों से मिले विचार को पाकर प्रसन्न हुआ और यह कहते हुए, "चिंता मत कीजिए, प्रिय, मैं ले आता हूँ," वह चल पड़ा। वह व्यक्ति हाथी के समान बलवान था: वह छह लीग (4.23 किमी) से अधिक की दूरी तय कर गया, और यद्यपि दोपहर का समय था और वह ऐसी गर्म रेत पर चल रहा था मानो उस पर अभी-अभी जले हुए कोयले बिखरे हों, फिर भी वह लाभ की लालसा से प्रसन्न था और पुराने पीले वस्त्र पहने, कान में ताड़ का पत्ता (*1) लगाए, महल के प्रांगण से अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए गीत गाते हुए गुजरा। राजा उदय एक खुली खिड़की पर खड़े थे, और उसे आते देख आश्चर्यचकित हुए कि यह कौन है, जो इतनी हवा और गर्मी की परवाह किए बिना खुशी से गीत गा रहा है, और उन्होंने एक सेवक को उसे बुलाने के लिए भेजा। "राजा आपको बुला रहे हैं," उसे बताया गया: लेकिन उसने कहा, "राजा से मेरा क्या संबंध है? मैं राजा को नहीं जानता।" उसे जबरदस्ती ले जाया गया और एक तरफ खड़ा कर दिया गया। तब राजा ने पूछताछ में दो श्लोक कहे:-उनका नाम उदय राजकुमार रखा गया। बड़े होकर वे सभी विद्याओं में पारंगत हो गए: उन्हें अपने पिछले जन्मों की स्मृति से अपने पुण्य कर्मों का ज्ञान था, और इसे अपने छोटे से कर्म का बड़ा पुरस्कार समझकर वे बार-बार समाधि गीत गाते थे। अपने

पिता की मृत्यु के बाद उन्हें राज्य प्राप्त हुआ, और अपनी महान महिमा को देखते हुए उन्होंने वही समाधि गीत गाया। एक दिन शहर में एक उत्सव की तैयारी चल रही थी। बहुत से लोग मनोरंजन में मग्न थे। बनारस के उत्तरी द्वार के पास रहने वाले एक जलवाहक ने चारदीवारी की एक ईंट में आधा पैसा छिपा रखा था। वह एक गरीब स्त्री के साथ रहता था जो जल ढोकर अपना जीवन यापन करती थी। उसने उससे कहा, "स्वामी, शहर में एक उत्सव है: यदि आपके पास कुछ पैसे हों, तो आइए हम आनंद मनाएं।" "मेरे पास हैं, प्रिय।" "कितने?" "आधा पैसा।" "कहाँ है?" "उत्तर द्वार के पास एक ईंट में, यहाँ से बारह लीग (4.23 किमी) दूर, मैं अपना खजाना छोड़ रही हूँ: लेकिन क्या तुम्हारे पास कुछ है?" "हाँ।" "कितना?" "आधा पैसा।" "तो तुम्हारा और मेरा मिलाकर पूरा एक पैसा होता है: हम इसके एक हिस्से से एक माला, दूसरे से इत्र और तीसरे से एक तेज़ शराब खरीदेंगे: जाओ और अपना आधा पैसा वहाँ से ले आओ जहाँ तुमने रखा है।" वह अपनी पत्नी के शब्दों से मिले सुझाव को पाकर प्रसन्न हुआ और यह कहते हुए, "चिंता मत करो, प्रिय, मैं ले आता हूँ," वह चल पड़ा। वह आदमी हाथी जितना बलवान था: उसने छह लीग (4.23 किमी) से अधिक की दूरी तय की, और यद्यपि दोपहर का समय था और वह ऐसी गर्म रेत पर चल रहा था मानो उस पर अभी-अभी जले हुए कोयले बिखरे हों, फिर भी वह लाभ की लालसा से प्रसन्न था और पुराने पीले कपड़े पहने, कान में ताड़ का पत्ता (*1) लगाए, महल के प्रांगण से होते हुए अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए गीत गाता हुआ चला गया। राजा उदय एक खुली खिड़की पर खड़े थे और उन्हें आते देख आश्चर्यचकित हुए कि कौन है, जो इतनी हवा और गर्मी की परवाह किए बिना खुशी से गीत गाते हुए आ रहा है। उन्होंने एक सेवक को उन्हें बुलाने के लिए भेजा। सेवक ने कहा, "राजा आपको बुला रहे हैं।" लेकिन उन्होंने कहा, "राजा से मेरा क्या संबंध है? मैं राजा को नहीं जानता।" उन्हें जबरदस्ती ले जाकर एक तरफ खड़ा कर दिया गया। तब राजा ने पूछताछ करते हुए दो श्लोक कहे:-उनका नाम उदय राजकुमार रखा गया। बड़े होकर वे सभी विद्याओं में पारंगत हो गए: उन्हें अपने पिछले जन्मों की स्मृति से अपने पुण्य कर्मों का ज्ञान था, और इसे अपने छोटे से कर्म का बड़ा पुरस्कार समझकर वे बार-बार समाधि गीत गाते थे। अपने पिता की मृत्यु के बाद उन्हें राज्य प्राप्त हुआ, और अपनी महान महिमा को देखते हुए उन्होंने वही समाधि गीत गाया। एक दिन शहर में एक उत्सव की तैयारी चल रही थी। बहुत से लोग मनोरंजन में मग्न थे। बनारस के उत्तरी द्वार के पास रहने वाले एक जलवाहक ने चारदीवारी की एक ईंट में आधा पैसा छिपा रखा था। वह एक गरीब स्त्री के साथ रहता था जो जल ढोकर अपना जीवन यापन करती थी। उसने उससे कहा, "स्वामी, शहर में एक उत्सव है: यदि आपके पास कुछ पैसे हों, तो आइए हम आनंद मनाएं।" "मेरे पास हैं, प्रिय।" "कितने?" "आधा पैसा।" "कहाँ है?" "उत्तर द्वार के पास एक ईंट में, यहाँ से बारह लीग (4.23 किमी) दूर, मैं अपना खजाना छोड़ रही हूँ: लेकिन क्या तुम्हारे पास कुछ है?" "हाँ।" "कितना?" "आधा पैसा।" "तो तुम्हारा और मेरा मिलाकर पूरा एक पैसा होता है: हम इसके एक हिस्से से एक माला, दूसरे से इत्र और तीसरे से एक तेज़ शराब खरीदेंगे: जाओ और अपना आधा पैसा वहाँ से ले आओ जहाँ तुमने रखा है।" वह अपनी पत्नी के शब्दों से मिले सुझाव को पाकर प्रसन्न हुआ और यह कहते हुए, "चिंता मत करो, प्रिय, मैं ले आता हूँ," वह चल पड़ा। वह आदमी हाथी जितना बलवान था: उसने छह लीग (4.23 किमी) से अधिक की दूरी तय की, और यद्यपि दोपहर का समय था और वह ऐसी गर्म रेत पर चल रहा था मानो उस पर अभी-अभी जले हुए कोयले बिखरे हों, फिर भी वह लाभ की लालसा से प्रसन्न था और पुराने पीले कपड़े पहने, कान में ताड़ का पत्ता (*1) लगाए, महल के प्रांगण से होते हुए अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए गीत गाता हुआ चला गया। राजा उदय एक खुली खिड़की पर खड़े थे और उन्हें आते देख आश्चर्यचकित हुए कि कौन है, जो इतनी हवा और गर्मी की परवाह किए बिना खुशी से गीत गाते हुए आ रहा है। उन्होंने एक सेवक को उन्हें बुलाने के लिए भेजा। सेवक ने कहा, "राजा आपको बुला रहे हैं।" लेकिन उन्होंने कहा, "राजा से मेरा क्या संबंध है? मैं राजा को नहीं जानता।" उन्हें जबरदस्ती ले जाकर एक तरफ खड़ा कर दिया गया। तब राजा ने पूछताछ करते हुए दो श्लोक कहे:-“कितना?” “आधा पैसा।” “कहाँ है?” “यहाँ से बारह लीग (x 4.23 किमी) दूर उत्तरी द्वार के पास एक ईंट में मैंने अपना खजाना रखा है: लेकिन क्या तुम्हारे पास कुछ है?” “है।” “कितना?” “आधा पैसा।” “तो तुम्हारा और मेरा मिलाकर पूरा पैसा होता है: हम इसके एक हिस्से से एक माला, दूसरे से इत्र और तीसरे से एक तेज़ शराब खरीदेंगे: जाओ और अपना आधा पैसा वहाँ से ले आओ जहाँ तुमने रखा है।” वह अपनी पत्नी के शब्दों से मिले सुझाव को पाकर बहुत खुश हुआ और यह कहते हुए, “चिंता मत करो, प्रिय, मैं ले आता हूँ,” वह चल पड़ा। वह आदमी हाथी जितना बलवान था: उसने छह लीग (x 4.23 किमी) से अधिक की दूरी तय की, और यद्यपि दोपहर का समय था और वह ऐसी गर्म रेत पर चल रहा था मानो उस पर अभी-अभी जले हुए कोयले बिखरे हों, फिर भी वह लाभ की लालसा से प्रसन्न था और पुराने पीले कपड़ों में, कान में ताड़ का पत्ता (*1) लगाए, वह महल के प्रांगण से होकर गुजरा। अपने उद्देश्य की पूर्ति में, वह गीत गाते हुए जा रहा था। राजा उदय एक खुली खिड़की पर खड़े थे और उसे आते देख आश्चर्यचकित हुए कि कौन है, जो इतनी हवा और गर्मी की परवाह किए बिना खुशी से गीत गा रहा है। उन्होंने एक सेवक को उसे बुलाने के लिए भेजा। सेवक ने कहा, "राजा आपको बुला रहे हैं।" लेकिन उसने कहा, "राजा से मेरा क्या संबंध है? मैं राजा को नहीं जानता।" उसे जबरदस्ती ले जाकर एक तरफ खड़ा कर दिया गया। तब राजा ने पूछताछ करते हुए दो श्लोक कहे:-“कितना?” “आधा पैसा।” “कहाँ है?” “यहाँ से बारह लीग (x 4.23 किमी) दूर उत्तरी द्वार के पास एक ईंट में मैंने अपना खजाना रखा है: लेकिन क्या तुम्हारे पास कुछ है?” “है।” “कितना?” “आधा पैसा।” “तो तुम्हारा और मेरा मिलाकर पूरा पैसा होता है: हम इसके एक हिस्से से एक माला, दूसरे से इत्र और तीसरे से एक तेज़ शराब खरीदेंगे: जाओ और अपना आधा पैसा वहाँ से ले आओ जहाँ तुमने रखा है।” वह अपनी पत्नी के शब्दों से मिले सुझाव को पाकर बहुत खुश हुआ और यह कहते हुए, “चिंता मत करो, प्रिय, मैं ले आता हूँ,” वह चल पड़ा। वह आदमी हाथी जितना बलवान था: उसने छह लीग (x 4.23 किमी) से अधिक की दूरी तय की, और यद्यपि दोपहर का समय था और वह ऐसी गर्म रेत पर चल रहा था मानो उस पर अभी-अभी जले हुए कोयले बिखरे हों, फिर भी वह लाभ की लालसा से प्रसन्न था और पुराने पीले कपड़ों में, कान में ताड़ का पत्ता (*1) लगाए, वह महल के

प्रांगण से होकर गुजरा। अपने उद्देश्य की पूर्ति में, वह गीत गाते हुए जा रहा था। राजा उदय एक खुली खिड़की पर खड़े थे और उसे आते देख आश्चर्यचकित हुए कि कौन है, जो इतनी हवा और गर्मी की परवाह किए बिना खुशी से गीत गा रहा है। उन्होंने एक सेवक को उसे बुलाने के लिए भेजा। सेवक ने कहा, "राजा आपको बुला रहे हैं।" लेकिन उसने कहा, "राजा से मेरा क्या संबंध है? मैं राजा को नहीं जानता।" उसे जबरदस्ती ले जाकर एक तरफ खड़ा कर दिया गया। तब राजा ने पूछताछ करते हुए दो श्लोक कहे:-

धरती अंगारों जैसी है, जमीन दहकते अंगारों जैसी है:
तुम अपना गीत गाओ, भीषण गर्मी तुम्हें नहीं जलाएगी।
आसमान में सूरज चमक रहा है, नीचे रेत गर्म है:
तुम अपना गीत गाओ, भीषण गर्मी तुम्हें नहीं जलाएगी।
राजा के वचन सुनकर उसने तीसरा श्लोक बोला:-

ये इच्छाएँ ही जलती हैं, सूर्य नहीं:
ये सभी अत्यावश्यक कार्य हैं जिन्हें पूरा किया जाना चाहिए।
राजा ने पूछा कि उसका क्या काम है। उसने उत्तर दिया, "हे राजा, मैं दक्षिणी द्वार के पास एक गरीब स्त्री के साथ रहता था। उसने प्रस्ताव रखा कि हम दोनों उत्सव में मनोरंजन करें और पूछा कि क्या मेरे पास कुछ है। मैंने उसे बताया कि उत्तरी द्वार के पास एक दीवार के भीतर मैंने खजाना छिपा रखा है। उसने मुझे उसे लाने के लिए भेजा ताकि हम दोनों मनोरंजन कर सकें। उसके वे शब्द मेरे हृदय से कभी नहीं निकलते और जब मैं उन्हें याद करता हूँ तो मेरे मन में तीव्र इच्छा जागृत होती है। यही मेरा काम है।" "तो फिर ऐसी क्या बात है जो तुम्हें इतना प्रसन्न करती है कि तुम हवा और धूप की परवाह किए बिना गाते हुए जाते हो?" "हे राजा, मैं यह सोचकर गाता हूँ कि जब मैं अपना खजाना लाऊंगा तो उसके साथ मनोरंजन करूंगा।" "तो फिर, मेरे भले आदमी, क्या उत्तरी द्वार के पास छिपा हुआ तुम्हारा खजाना एक लाख सिक्कों का है?" "नहीं।" तब राजा ने एक-एक करके पूछा कि क्या वह पचास हजार, चालीस, तीस, बीस, दस, पाँच, चार, तीन, दो सोने के सिक्के, एक सिक्का, आधा सिक्का, एक चौथाई सिक्का, चार पेंस, तीन, दो, एक पेंस का है। उस आदमी ने इन सभी सवालों का जवाब "नहीं" में दिया और फिर बोला, "यह तो आधा पैसा है: हे महाराज, यही तो मेरा सारा खजाना है: लेकिन मैं इसे लाने और फिर उसके साथ आनंद मनाने की उम्मीद में जा रहा हूँ: और इस इच्छा और आनंद में हवा और धूप मुझे परेशान नहीं कर रही हैं।" राजा ने कहा, "हे महाराज, इतनी गर्मी में वहाँ मत जाओ: मैं तुम्हें आधा पैसा दूंगा।" "हे महाराज, मैं आपकी बात मान लेता हूँ और इसे स्वीकार करता हूँ, लेकिन मैं दूसरा नहीं खोऊंगा: मैं वहाँ जाकर उसे भी लाने का प्रयास नहीं छोड़ूंगा।" "हे महाराज, यहीं रुको: मैं तुम्हें एक पैसा, दो पैसे दूंगा:" फिर वह और अधिक राशि देने लगा और एक करोड़ (10 करोड़), सौ करोड़ (10 करोड़), असीमित धन देने की पेशकश करने लगा, अगर वह आदमी रुक जाए। लेकिन वह हमेशा यही कहता रहा, "हे महाराज, मैं इसे ले लूंगा, लेकिन मैं दूसरा भी लाऊंगा।" फिर उन्हें कोषाध्यक्ष और कई अन्य पदों के साथ-साथ वायसराय के पद का भी प्रलोभन दिया गया: अंत में उन्हें राज्य का आधा हिस्सा देने की पेशकश की गई, बशर्ते वे वहीं रुकें। तब वे मान गए। राजा ने अपने मंत्रियों से कहा, "जाओ, मेरे मित्र की दाढ़ी बनवाओ, उन्हें नहलाओ और सजाओ, और उन्हें वापस लाओ।" उन्होंने वैसा ही किया। राजा ने अपने राज्य को दो भागों में बाँटकर उन्हें आधा हिस्सा दे दिया: लेकिन कहते हैं कि उन्होंने अपने प्रिय मित्र के प्रेम के कारण उत्तरी भाग ले लिया। उन्हें प्रिय मित्र के नाम से जाना जाने लगा। उन्होंने मित्रता और सद्भाव से राज्य पर शासन किया। एक दिन वे दोनों साथ में उद्यान गए। मनोरंजन करने के बाद, राजा उदय ने अपना सिर प्रिय मित्र की गोद में रख लिया। वे सो गए, जबकि सेवक इधर-उधर घूमकर अपने मनोरंजन का आनंद ले रहे थे। राजा हाफ-पेनी ने सोचा, "मुझे हमेशा आधा राज्य ही क्यों मिले? मैं उसे मार डालूंगा और अकेला राजा बन जाऊंगा।" इसलिए उसने अपनी तलवार निकाली, लेकिन उस पर वार करने के बारे में सोचते ही उसे याद आया कि राजा ने ही उसे गरीब और निर्धन होने के समय अपना साझेदार बनाया था और उसे इतनी शक्ति प्रदान की थी। उसके मन में अपने सहायक को मारने का जो विचार आया था, वह दुष्टतापूर्ण था। इसलिए उसने तलवार म्यान में रख ली। यही विचार उसके मन में दूसरी और तीसरी बार भी आया।यह महसूस करते हुए कि यह विचार बार-बार उठकर उसे बुरे कर्म की ओर ले जाएगा, उसने तलवार जमीन पर फेंक दी और राजा को जगाया। "हे राजा, मुझे क्षमा करें," उसने कहा और उनके चरणों में गिर पड़ा। "मित्र, आपने मेरा कोई नुकसान नहीं किया है।" "मैंने किया है, हे महान राजा: मैंने ऐसा-ऐसा किया है।" "तो, मित्र, मैं तुम्हें क्षमा करता हूँ: यदि तुम चाहो, तो अकेले राजा बनो, और मैं तुम्हारे अधीन वायसराय के रूप में सेवा करूँगा।" उसने उत्तर दिया, "हे राजा, मुझे राज्य की कोई आवश्यकता नहीं है, ऐसी इच्छा मुझे बुरे कर्मों में पुनर्जन्म दिलाएगी: राज्य आपका है, इसे ले लो: मैं तपस्वी बन जाऊँगा: मैंने इच्छा की जड़ देखी है, यह मनुष्य की इच्छा से उत्पन्न होती है, अब से मेरी ऐसी कोई इच्छा नहीं होगी," और इस प्रकार समाधि की अवस्था में उसने चौथा श्लोक बोला:-

मैंने तुम्हारी जड़ें देखी हैं, इच्छा: वे मनुष्य की अपनी इच्छाशक्ति में निहित होती हैं।
मैं अब तुम्हारे लिए कोई कामना नहीं करूंगा, और तुम, इच्छा, मर जाओगी।
ऐसा कहकर उन्होंने पाँचवाँ श्लोक सुनाया, जिसमें उन्होंने इच्छाओं में लिप्त लोगों के एक बड़े समूह को धार्मिक मार्ग का उपदेश दिया:

कम इच्छा पर्याप्त नहीं होती, और अधिक इच्छा केवल पीड़ा ही लाती है:

अरे! मूर्ख लोगो: हे मित्रों, होश में रहो, यदि तुम ज्ञान प्राप्त करना चाहते हो।
अत:, सभी को धर्म का उपदेश देते हुए, उन्होंने राज्य को राजा उदय के हवाले कर दिया: आँसुओं से भीगी प्रजा को छोड़कर, वे हिमालय चले गए, तपस्वी बन गए और पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर लिया। तपस्वी बनने के समय, राजा उदय ने परमानंद (सम्मोहन) की पूर्ण अभिव्यक्ति में छठे श्लोक का उच्चारण किया:-

थोड़ी सी इच्छा ने ही मुझे सारे फल दिए हैं।
उदय को जो यश प्राप्त होता है वह महान है;
दृढ़ निश्चय होने पर बहुत बड़ा लाभ होता है।
भाई बनना और इच्छाओं का त्याग करना।
इस श्लोक का अर्थ किसी को नहीं पता था। एक दिन मुख्य रानी ने राजा से इसका अर्थ पूछा। राजा ने बताने से इनकार कर दिया। राजा के दरबार में गंगामाला नाम का एक नाई था, जो राजा की सेवा करते समय पहले उस्तरे का इस्तेमाल करता था और फिर चिमटी से बाल पकड़ता था।

राजा को पहला ऑपरेशन पसंद आया, लेकिन दूसरे से उन्हें तकलीफ हुई: पहले ऑपरेशन में तो वे नाई को वरदान दे देते, दूसरे में तो वे अपना सिर ही काट लेते। एक दिन उन्होंने रानी को इसके बारे में बताया और कहा कि उनका दरबारी नाई मूर्ख है। जब रानी ने पूछा कि उसे क्या करना चाहिए, तो उसने उत्तर दिया, "पहले चिमटी का इस्तेमाल करो और फिर तरकश का।" रानी ने नाई को बुलवाया और कहा, "महोदय, जब तुम राजा की दाढ़ी काट रहे हो, तो पहले चिमटी से बाल लो और फिर तरकश का इस्तेमाल करो। फिर अगर राजा तुम्हें वरदान दें, तो कहना कि तुम्हें और कुछ नहीं चाहिए, बस उनके गीत का अर्थ जानना है। अगर तुम ऐसा करोगे, तो मैं तुम्हें बहुत सारा पैसा दूंगी।" नाई मान गया। अगले दिन जब वह राजा की दाढ़ी काट रहा था, तो उसने पहले चिमटी का इस्तेमाल किया। राजा ने कहा, "गंगमाला, क्या यह तुम्हारा नया फैशन है?" "हे महाराज," उसने उत्तर दिया, "नाइयों का नया फैशन चल रहा है।" पहले उसने चिमटी से राजा के बाल पकड़े और फिर उस्तरे का इस्तेमाल किया। राजा ने उसे एक वरदान दिया। नाई ने कहा, "हे महाराज, मुझे और कुछ नहीं चाहिए; मुझे अपने गीत का अर्थ बताइए।" राजा को अपने गरीबी के दिनों के पेशे के बारे में बताने में शर्म आ रही थी, इसलिए उसने कहा, "हे मेरे भले, ऐसे वरदान से आपको क्या लाभ? कुछ और चुन लीजिए।" लेकिन नाई ने विनती की। राजा अपना वचन तोड़ने से डर गया और मान गया। कुम्मसपिंडा जन्म के वर्णन के अनुसार, उसने सारी व्यवस्था की और रत्नजड़ित सिंहासन पर बैठकर उस शहर में अपने पिछले जन्म के पुण्य कर्मों की पूरी कहानी सुनाई। उसने कहा, "इससे आधे श्लोक का अर्थ स्पष्ट होता है: बाकी के लिए, मेरा साथी तपस्वी बन गया: मैं अपने अहंकार में अब अकेला राजा हूँ, और यही मेरे समाधि गीत के दूसरे भाग का अर्थ है।" उनकी बात सुनकर नाई ने सोचा, "राजा को आधा दिन का उपवास रखने से यह यश प्राप्त हुआ: पुण्य ही सही मार्ग है: अगर मैं भी संन्यासी बन जाऊं और अपना मोक्ष (निर्वाण) प्राप्त कर लूं तो क्या होगा?" उन्होंने अपने सभी रिश्तेदारों और सांसारिक वस्तुओं को त्याग दिया, राजा से संन्यासी बनने की अनुमति प्राप्त की और हिमालय जाकर संन्यासी बन गए। उन्होंने सांसारिक वस्तुओं के तीन गुणों को जाना, पूर्ण अंतर्दृष्टि प्राप्त की और पच्चेकबुद्ध बन गए। उन्होंने अलौकिक शक्ति से एक कुंड और वस्त्र बनवाए। गंगामाला पर्वत पर पांच-छह वर्ष बिताने के बाद, उन्हें बनारस के राजा से मिलने की इच्छा हुई और वे वायुमार्ग से वहां के राजमहल में पहुंचे और राजमहल के पत्थर के आसन पर बैठ गए। राजमहल के रखवाले ने राजा को बताया कि गंगामाला, जो अब पच्चेकबुद्ध बन चुके हैं, वायुमार्ग से आए हैं और राजमहल में बैठे हैं। राजा तुरंत पच्चेकबुद्ध को प्रणाम करने गए और महारानी अपने पुत्र के साथ बाहर चली गईं। राजा ने राजमहल में प्रवेश किया, उन्हें प्रणाम किया और अपने सेवकों के साथ एक तरफ बैठ गए। पच्चेकबुद्ध ने उनसे मैत्रीपूर्ण लहजे में कहा, "ब्रह्मदत्त" (उन्हें परिवार के नाम से पुकारते हुए), "क्या आप परिश्रमी हैं और राज्य का शासन विधिपूर्वक कर रहे हैं?""क्या तुम दान-पुण्य और अन्य अच्छे काम कर रहे हो?" महारानी माँ क्रोधित हो गईं। "नाई का यह नीच जाति का शैम्पू लगाने वाला बेटा अपनी औकात नहीं जानता: यह मेरे शाही खानदान के पुत्र को ब्रह्मदत्त कहता है," और उन्होंने सातवाँ श्लोक कहा:-

प्रायश्चित वास्तव में मनुष्यों को उनके पापों से विमुख कर देता है।
उनके नाई की दुकान, कुम्हार की दुकान, हर जगह उनके कारखाने:
तपस्या के माध्यम से गंगामाला की महिमा प्राप्त होती है।
और अब वह मेरे बेटे को "ब्रह्मदत्त" कहकर पुकारता है।
राजा ने अपनी माता की जाँच की और पच्चेकबुद्ध के गुणों का वर्णन करते हुए आठवाँ श्लोक बोला:-

देखो! चाहे उसकी मृत्यु किसी भी तरह से हो जाए,
नम्रता मनुष्य को उसका फल देती है!
वह व्यक्ति जिसने हम सबके सामने सिर झुकाया,
अब राजाओं और सरदारों को सलाम करना होगा।

यद्यपि राजा ने अपनी माता को रोका, फिर भी बाकी सभी उठ खड़े हुए और बोले, "यह उचित नहीं है कि इतनी नीची जाति का व्यक्ति तुम्हें इस प्रकार नाम लेकर संबोधित करे।" राजा ने उन सभी को फटकारा और पच्चेकबुद्ध के गुणों का वर्णन करते हुए अंतिम श्लोक बोला:

गंगामाला का अपमान करना उचित नहीं है।
   तपस्वी (धार्मिक) मार्ग में परिपूर्ण:
वह दुख की लहरों को पार कर चुका है।
   अब दु:ख से मुक्त होकर वह भटकता है।
ऐसा कहकर राजा ने पच्चेकबुद्ध को प्रणाम किया और उनसे महारानी को क्षमा करने का अनुरोध किया। पच्चेकबुद्ध ने ऐसा ही किया और राजा के सेवकों को भी क्षमा मिल गई। राजा ने उनसे वादा करने को कहा कि वे आस-पास ही रहेंगे, लेकिन उन्होंने इनकार कर दिया और पूरे दरबार के सामने हवा में खड़े होकर राजा को आशीर्वाद दिया और गंधमादना चले गए।

पाठ के बाद गुरु ने कहा, "मेरे गृहस्थ भाइयों (शिष्यों), आप देख रहे हैं कि उपवास रखना कितना उचित है," और उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "उस समय पच्चेकबुद्ध निर्वाण में प्रवेश कर गए, राजा आधा-पेनी आनंद थे, प्रधान रानी राहुल की माता थीं, और राजा उदय मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) ताड़ के पत्ते का उपयोग कान के आभूषण के रूप में किया जाता है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **चेतिया-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-422-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 422
चेतिया-जातक

"घायल दायाँ अंग अत्यधिक पीड़ा पहुँचा सकता है," इत्यादि। - गुरुजी ने जेतवन मठ में रहते हुए देवदत्त के पृथ्वी में समा जाने की यह कहानी सुनाई थी। उस दिन सत्य के हॉल में चर्चा हो रही थी कि देवदत्त ने झूठ बोला था, जिसके कारण वह धरती में समा गया और अविची नरक में जाने के लिए अभिशप्त हो गया। गुरुजी आए और उनकी बातें सुनकर बोले, "यह पहली बार नहीं है जब वह धरती में समाया है," और फिर उन्होंने पुरानी कहानी सुनाई।

प्रथम युग में, महासम्मत नामक एक राजा थे, जिनका जीवनकाल एक असंख्य (*1) वर्ष था। उनके पुत्र रोजा, पुत्र वरारोजा, और फिर उनके उत्तराधिकार में कल्याणा, वराकल्याण, उपोसथ, मंधाता, वरमंधता, चरा और उपाकर (जिन्हें अपाकर भी कहा जाता था) थे। वे सोत्थीवती नगर में स्थित चेति राज्य के राजा थे। उन्हें चार अलौकिक वरदान प्राप्त थे - वे ऊँचाई पर चल सकते थे और हवा में उड़ सकते थे, उनकी रक्षा के लिए चारों दिशाओं में चार-चार देवदूत तलवार लिए रहते थे, उनके शरीर से चंदन की सुगंध निकलती थी और उनके मुख से कमल की सुगंध निकलती थी। उनके कुल पुरोहित का नाम कपिला था। इस ब्राह्मण के छोटे भाई कोराकलम्बा ने राजा के साथ ही एक ही गुरु से शिक्षा प्राप्त की थी और वे राजा के सहपाठी थे। जब अपाकर राजकुमार बने, तो उन्होंने कोराकलम्बा को राजा बनने पर अपना कुल पुरोहित बनाने का वचन दिया। अपने पिता की मृत्यु के बाद वह राजा बना, लेकिन वह कपिल को कुलपुजारी के पद से नहीं हटा सका। जब कपिल उससे मिलने आया, तो उसने उसे सम्मान के विशेष नियम समझाए। ब्राह्मण ने यह देखा और सोचा कि राजा अपने ही उम्र के मंत्रियों के साथ बेहतर ढंग से शासन कर सकता है, और शायद उसे स्वयं भी राजा से संन्यासी बनने की अनुमति मिल जाए। इसलिए उसने कहा, "हे राजा, मैं बूढ़ा हो रहा हूँ; मेरा एक पुत्र है, उसे कुलपुजारी बना दीजिए और मैं संन्यासी बन जाऊँगा।" उसे राजा की अनुमति मिल गई और उसने अपने पुत्र को कुलपुजारी नियुक्त करवा दिया। फिर वह राजा के उद्यान में गया, संन्यासी बन गया, पारलौकिक ज्ञान प्राप्त किया और अपने पुत्र के पास वहीं रहने लगा। कोराकलंबक को अपने भाई से इस बात का द्वेष

था कि संन्यासी बनने पर उसने उसे यह पद नहीं दिलवाया था। एक दिन राजा ने उससे मैत्रीपूर्ण बातचीत में कहा, "कोराकलमबक, तुम कुलपुजारी नहीं हो?" "नहीं, हे राजा: मेरे भाई ने यह पद प्राप्त कर लिया है।" "क्या तुम्हारा भाई संन्यासी नहीं बना?" "हाँ, बना तो लिया है, लेकिन उसने यह पद अपने पुत्र को दिलवा दिया है।" "तो फिर आप इसे संभाल लेंगे?" "हे महाराज, मेरे लिए अपने भाई को दरकिनार करके वंशानुगत पद ग्रहण करना असंभव है।" "यदि ऐसा है, तो मैं आपको वरिष्ठ और दूसरे को कनिष्ठ बना दूंगा।" "कैसे, हे महाराज?" "झूठ बोलकर (*2)।" "हे महाराज, क्या आप नहीं जानते कि मेरा भाई एक जादूगर है, जिसे अलौकिक शक्ति प्राप्त है? वह आपको जादुई भ्रमों से धोखा देगा: वह आपके चारों देवदूतों को गायब कर देगा, और आपके शरीर और मुंह से मानो दुर्गंध उत्पन्न कर देगा, वह आपको आकाश से नीचे उतारकर धरती पर खड़ा कर देगा: आप मानो धरती में समा गए हों, और आप अपनी कहानी सुनाने में असमर्थ होंगे।" "चिंता मत कीजिए; मैं इसे संभाल लूंगा।"

“हे राजा, आप यह कब करेंगे?” “आज से सातवें दिन।” यह कहानी पूरे शहर में फैल गई, “राजा झूठ बोलकर वरिष्ठ को कनिष्ठ बना रहा है और पद कनिष्ठ को दे देगा: झूठ किस प्रकार की चीज है? क्या यह नीला है या पीला या कोई और रंग?” लोग इस पर बहुत सोचने लगे। कहते हैं, वह ऐसा समय था जब दुनिया सच बोलती थी: लोगों को “झूठ” शब्द का अर्थ नहीं पता था। पुजारी के बेटे ने यह कहानी सुनी और अपने पिता से कहा, “पिताजी, लोग कहते हैं कि राजा झूठ बोलकर आपको कनिष्ठ बना रहा है और हमारा पद मेरे चाचा को दे देगा।” “मेरे प्यारे, राजा झूठ बोलकर भी हमारा पद हमसे नहीं छीन पाएगा: वह यह किस दिन करने वाला है?” “लोग कहते हैं कि आज से सातवें दिन।” “समय आने पर मुझे बता देना।” सातवें दिन राजा के प्रांगण में बहुत से लोग कतारों में बैठे हुए थे, झूठ देखने की उम्मीद में। युवा पुजारी गया और उसने अपने पिता को बताया। राजा पूरी तरह तैयार थे, वे प्रकट हुए और प्रांगण में लोगों के बीच हवा में खड़े हो गए। तपस्वी हवा में से आए, राजा के सामने अपना आसन बिछाया, हवा में अपने सिंहासन पर बैठे और बोले, "हे राजा, क्या यह सच है कि आप झूठ बोलकर कनिष्ठ को वरिष्ठ बनाना चाहते हैं और उसे पद देना चाहते हैं?" "गुरुजी, मैंने ऐसा ही किया है।" फिर उन्होंने राजा को उपदेश दिया, "हे महान राजा, झूठ अच्छे गुणों का घोर नाश है, यह चार बुरी अवस्थाओं में पुनर्जन्म का कारण बनता है; झूठ बोलने वाला राजा धर्म का नाश करता है, और धर्म का नाश करके वह स्वयं नाश हो जाता है।" और उन्होंने पहला श्लोक कहा:-

घायल धार्मिकता अत्यधिक तीव्रता से चोट पहुंचा सकती है, और बदले में चोट ही पहुंचाती है;
इसलिए धर्म को कभी ठेस नहीं पहुंचानी चाहिए, अन्यथा इसका दुष्परिणाम आप पर ही उल्टा पड़ेगा।
उन्हें और फटकार लगाते हुए उन्होंने कहा, "महान राजा, यदि आप झूठ बोलेंगे, तो आपकी चारों अलौकिक शक्तियां लुप्त हो जाएंगी," और उन्होंने दूसरा श्लोक कहा:-

ईश्वरीय शक्तियां झूठ बोलने वाले व्यक्ति का साथ छोड़ देती हैं।
उसके मुंह से दुर्गंध आती है, वह आकाश में अपना पैर नहीं जमा सकता:
जो भी व्यक्ति प्रश्न का उत्तर जानबूझकर झूठ से देता है।
यह सुनकर राजा भयभीत होकर कोरकलंबक की ओर देखने लगा। उसने कहा, "हे महाराज, भयभीत न हों; क्या मैंने आपको पहले ही ऐसा नहीं कहा था?" और इसी प्रकार आगे भी। यद्यपि राजा ने कपिल की बातें सुनीं, फिर भी उसने अपना कथन दोहराया, "महाराज, आप छोटे हैं, कोरकलंबक बड़े हैं।" जैसे ही उसने यह झूठ बोला, चारों देवदूतों ने कहा कि वे ऐसे झूठे की रक्षा नहीं करेंगे, उन्होंने अपनी तलवारें उसके चरणों में फेंक दीं और गायब हो गए; उसका मुँह टूटे हुए सड़े अंडे की तरह दुर्गंधयुक्त हो गया और उसका शरीर खुले नाले की तरह; और हवा से गिरकर वह पृथ्वी पर आ गिरा: इस प्रकार उसकी सभी चार अलौकिक शक्तियाँ लुप्त हो गईं। उसके मुख्य पुरोहित ने कहा, "महाराज, भयभीत न हों: यदि आप सत्य बोलेंगे, तो मैं आपको सब कुछ लौटा दूँगा," और इस प्रकार उसने तीसरा श्लोक कहा:-

हे राजा, सत्य का एक शब्द और अपने सभी उपहार तुम पुनः प्राप्त कर लोगे।
झूठ बोलने से तुम सेती की मिट्टी में हमेशा के लिए जम जाओगे।
उन्होंने कहा, "हे महाराज, देखिए: आपकी वे चारों अलौकिक शक्तियाँ आपके झूठ के कारण ही लुप्त हुईं; विचार कीजिए, क्योंकि अब उन्हें पुनः प्राप्त करना संभव है।" परन्तु राजा ने उत्तर दिया, "आप मुझे इस बात से धोखा देना चाहते हैं," और दूसरा झूठ बोलकर वे टखनों तक धरती में धंस गए। तब ब्राह्मण ने एक बार फिर कहा, "हे महाराज, विचार कीजिए," और चौथा श्लोक बोला:-

उस पर बारिश के समय सूखा आ पड़ता है, बारिश तब होती है जब सूखा होना चाहिए।
जो भी व्यक्ति प्रश्न का उत्तर जानबूझकर झूठ से देता है।
फिर उसने एक बार फिर कहा, "तुम्हारे झूठ बोलने के कारण तुम टखनों तक धरती में धंस गए हो: हे महान राजा, विचार करो," और पाँचवाँ श्लोक बोला:-

हे राजा, सत्य का एक शब्द कहो, और अपने सभी उपहार पुनः प्राप्त कर लो।

झूठ आपको सेती की मिट्टी में धंसा देगा और आप वहीं रह जाएंगे।
लेकिन तीसरी बार राजा ने कहा, "आप कनिष्ठ हैं और कोरकलंबक कनिष्ठ हैं," और यह झूठ बोलकर वह घुटनों तक जमीन में धंस गए। ब्राह्मण ने एक बार फिर कहा, "हे महान राजा, विचार कीजिए," और दो श्लोक कहे:-

हे राजा, वह मनुष्य दोमुँही जीभ वाला और सर्प की तरह धूर्त है।
जो भी व्यक्ति प्रश्न का उत्तर जानबूझकर झूठ से देता है।
हे राजा, सत्य का एक शब्द कहो, और अपने सभी उपहार पुनः प्राप्त कर लो।
झूठ आपको सेती में और भी गहरे दलदल में धकेल देगा, जहाँ आप हमेशा के लिए फंसे रहेंगे।
आगे उन्होंने कहा, "अब भी सब कुछ बहाल हो सकता है।" राजा ने उनकी बात अनसुनी करते हुए चौथी बार झूठ दोहराया, "महाराज, आप कनिष्ठ हैं और कोराकलंबक वरिष्ठ हैं," और ये सुनकर वे कमर तक धंस गए। ब्राह्मण ने फिर कहा, "हे महाराज, विचार कीजिए," और दो श्लोक बोले:-

हे राजा, वह मनुष्य मछली के समान है, और वह बिना जीभ का होगा।
जो भी व्यक्ति प्रश्न का उत्तर जानबूझकर झूठ से देता है।
हे राजा, सत्य का एक शब्द कहो, और अपने सभी उपहार पुनः प्राप्त कर लो।
झूठ आपको सेती में और भी गहरे दलदल में धकेल देगा, जहाँ आप हमेशा के लिए फंसे रहेंगे।
राजा ने पाँचवीं बार झूठ दोहराया, और ऐसा करते ही वह नाभि तक धंस गया। ब्राह्मण ने एक बार फिर उससे विचार करने की विनती की और दो श्लोक कहे:-

उससे केवल पुत्रियाँ ही उत्पन्न होंगी, उसका कोई पुत्र नहीं होगा।
जो भी व्यक्ति प्रश्न का उत्तर जानबूझकर झूठ से देता है।
हे राजा, सत्य का एक शब्द कहो, और अपने सभी उपहार पुनः प्राप्त कर लो।
झूठ आपको सेती में और भी गहरे दलदल में धकेल देगा, जहाँ आप हमेशा के लिए फंसे रहेंगे।
राजा ने कोई ध्यान नहीं दिया और छठी बार झूठ दोहराते हुए सीने में धंस गया। ब्राह्मण ने एक बार फिर विनती की और दो श्लोक बोले:-

उसके बच्चे उसके साथ नहीं रहेंगे, वे हर तरफ भाग रहे हैं।
जो भी व्यक्ति प्रश्न का उत्तर जानबूझकर झूठ से देता है।
सत्य का एक शब्द कहो, और हे राजा, तुम अपने सभी उपहार पुनः प्राप्त कर लोगे।
झूठ आपको सेती में और भी गहरे दलदल में धकेल देगा, जहाँ आप हमेशा के लिए फंसे रहेंगे।
एक दुष्ट मित्र की संगति के कारण उसने उन शब्दों की अवहेलना की और सातवीं बार वही झूठ दोहराया। तब धरती फट गई और अविची की ज्वालाएं भड़क उठीं और उसे अपनी चपेट में ले लिया।

कहते हैं, एक ऋषि द्वारा शापित, वह राजा जो कभी हवा में चल सकता था।
वह अपने नियत दिन पर खो गया और धरती में समा गया।
इसी कारण बुद्धिमान लोग इसका बिल्कुल भी समर्थन नहीं करते।
जब वह इच्छा हृदय में उत्पन्न हुई:
जो छल से मुक्त है, जिसका हृदय शुद्ध है,
वह जो कुछ भी कहता है, वह हमेशा दृढ़ और निश्चित होता है।
ये दो श्लोक 'पूर्ण ज्ञान' से प्रेरित हैं।

लोगों ने भयभीत होकर कहा, "चेति के राजा ने ऋषि का अपमान किया और झूठ बोला; इसलिए वह अविची में प्रवेश कर गया है।" राजा के पाँचों पुत्र ब्राह्मण के पास आए और बोले, "आप हमारी सहायता कीजिए।" ब्राह्मण ने उत्तर दिया, "तुम्हारे पिता ने सत्य का नाश किया, उन्होंने झूठ बोला और ऋषि का अपमान किया; इसलिए वह अविची में प्रवेश कर गए हैं। यदि सत्य का नाश हो जाए, तो वह सब कुछ नष्ट कर देता है। तुम्हें यहाँ नहीं रहना चाहिए।" उन्होंने अपने सबसे बड़े पुत्र से कहा, "प्रिय, आओ: पूर्वी द्वार से नगर छोड़ो और सीधे जाओ: तुम्हें एक सफेद राज हाथी सात स्थानों से पृथ्वी को स्पर्श करते हुए लेटा हुआ दिखाई देगा (*3): यह तुम्हारे लिए संकेत होगा कि तुम वहाँ एक नगर बसाओ और उसमें निवास करो: और उसका नाम हत्थिपुरा होगा।" दूसरे राजकुमार से उन्होंने कहा, "तुम दक्षिणी द्वार से निकलो और सीधे तब तक जाओ जब तक तुम्हें एक शुद्ध सफेद राज अश्व दिखाई न दे: यह संकेत होगा कि तुम्हें वहाँ एक नगर बसाना है और उसमें निवास करना है: और उसका नाम अस्सपुरा होगा।" तीसरे राजकुमार से उन्होंने कहा, "तुम पश्चिमी द्वार से निकलकर सीधे चलते रहो जब तक तुम्हें अयाल वाला सिंह न दिखाई दे; यह संकेत होगा कि तुम्हें वहाँ एक नगर बसाना है और उसमें

निवास करना है: और उसका नाम सिहापुरा होगा।" चौथे राजकुमार से उन्होंने कहा, "तुम उत्तरी द्वार से निकलकर सीधे चलते रहो जब तक तुम्हें रत्नों से बना एक चक्र-ढांचा (*4) न दिखाई दे: यह संकेत होगा कि तुम्हें वहाँ एक नगर बसाना है और उसमें निवास करना है: और उसका नाम उत्तरा पंचाल होगा।" पाँचवें राजकुमार से उन्होंने कहा, "तुम यहाँ नहीं रह सकते: इस नगर में एक बड़ा मंदिर बनाओ, उत्तर-पश्चिम की ओर जाओ, और सीधे चलते रहो जब तक तुम्हें दो पर्वत आपस में टकराते हुए और दद्दरा की ध्वनि करते हुए दिखाई न दें: यह संकेत होगा कि तुम्हें वहाँ एक नगर बसाना है और उसमें निवास करना है: और उसका नाम दद्दरापुरा होगा।" सभी पाँचों राजकुमार गए, और संकेतों का अनुसरण करते हुए वहाँ नगर बसाए और उनमें निवास किया।

पाठ के बाद, गुरु ने कहा, "तो, भिक्षुओं, यह पहली बार नहीं है कि देवदत्त ने झूठ बोला है और धरती में समा गया है," और फिर उन्होंने जन्म का विवरण दिया: "उस समय चेति का राजा देवदत्त था, और ब्राह्मण कपिल मैं ही था।"

फुटनोट:

(1) वर्षों में, 1 के बाद 140 अंक।

(2) पहले युग में झूठ एक नई बात थी।

(3)दांतों, सूंड और चार पैरों के साथ।

(4) पंच-चक्कम, "पांच पहिये।"

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **इंद्रिय-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-423-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 423
इंद्रिय जातक

“जो इच्छा के कारण,” इत्यादि। गुरुजी ने जेतवन मठ में रहते हुए यह कथा सुनाई, जो पूर्वज पत्नी द्वारा प्रलोभन दिए जाने से संबंधित है। कथा यह है कि श्रावस्ती नगर के एक अच्छे परिवार के युवक ने गुरुजी का उपदेश सुना और गृहस्थ जीवन को पूर्णतः पवित्र और शुद्ध मानना असंभव समझकर, उन्होंने गुरुजी के असाधारण उपदेशों के अधीन संन्यासी बनने और दुःख का अंत करने का निश्चय किया। अतः उन्होंने अपना घर और संपत्ति अपनी पत्नी और बच्चों को सौंप दी और गुरुजी से दीक्षा देने का अनुरोध किया। गुरुजी ने दीक्षा दे दी। भिक्षा मांगने के दौरान वे अपने गुरुओं और प्रशिक्षकों में कनिष्ठ थे और भिक्षुओं की संख्या अधिक थी, इसलिए उन्हें न तो गृहस्थों के घरों में और न ही भोजन कक्ष में बैठने के लिए कोई कुर्सी मिली, बल्कि नौसिखियों के अंत में केवल एक स्टूल या बेंच मिली। उनका भोजन जल्दी से करछुल में उछाला जाता था, उन्हें चावल के टूटे हुए टुकड़ों से बना दलिया, बासी या सड़ा हुआ ठोस भोजन, या सूखे और जले हुए अंकुरित अनाज मिलते थे; और यह उनके जीवनयापन के लिए पर्याप्त नहीं था। वह अपने साथ जो कुछ लाया था, उसे अपनी पत्नी के पास ले गया। पत्नी ने उसका कटोरा लिया, उसे प्रणाम किया, कटोरा खाली किया और बदले में उसे अच्छी तरह पका हुआ दलिया, चावल, चटनी और करी दी। भिक्षु इन स्वादों से इतना मोहित हो गया कि वह अपनी पत्नी को नहीं छोड़ सका। पत्नी ने सोचा कि वह उसके प्रेम की परीक्षा लेगी। एक दिन उसने एक ग्रामीण को सफेद मिट्टी से स्नान कराया और अपने घर में उसके कुछ अन्य लोगों के साथ, जिन्हें उसने बुलवाया था, ठहराया। उसने उन्हें खाने-पीने को दिया। वे सब बैठकर खाने का आनंद ले रहे थे। घर के दरवाजे पर उसने कुछ बैलों को पहियों से बांधकर एक गाड़ी तैयार रखी थी। वह खुद पीछे के कमरे में केक पका रही थी। उसका पति आया और दरवाजे पर खड़ा हो गया। उसे देखकर एक बूढ़े नौकर ने उसकी मालकिन से कहा कि दरवाजे पर एक बुजुर्ग भिक्षु हैं। "उन्हें प्रणाम करो और जाने के लिए कहो।" लेकिन बार-बार ऐसा करने के बावजूद, उसने देखा कि पुजारी वहीं खड़ा है और उसने अपनी मालकिन को बताया। मालकिन आई और पर्दा उठाकर देखा तो वह चिल्लाई, "यह मेरे बेटों के पिता हैं।" वह बाहर आईं और उन्हें प्रणाम किया; उनका कटोरा लेकर उन्हें अंदर बुलाया और भोजन कराया; भोजन करने के बाद उन्होंने फिर प्रणाम किया और कहा, "महोदय, अब आप संत बन गए हैं; हम इतने समय से इसी घर में रह रहे हैं; लेकिन स्वामी के बिना गृहस्थ जीवन संभव नहीं है, इसलिए हम दूसरा घर लेंगे और दूर देश में चले जाएंगे; अपने अच्छे कार्यों में तत्पर रहें, और यदि मैं कोई गलती कर रही हूँ तो मुझे क्षमा कर दें।"

कुछ समय के लिए उनके पति का हृदय मानो टूट गया। फिर उन्होंने कहा, "मैं तुम्हें छोड़कर नहीं जा सकता: मत जाओ, मैं अपने सांसारिक जीवन में लौट जाऊंगा; फलां स्थान पर एक गृहस्थ का वस्त्र भेज दो, मैं अपना कटोरा और वस्त्र त्याग कर तुम्हारे पास लौट आऊंगा।" वह मान गईं। भिक्षु अपने मठ में गए, और अपने शिक्षकों और प्रशिक्षकों को अपना कटोरा और वस्त्र सौंपकर, उनके प्रश्नों के उत्तर में उन्होंने समझाया कि वे अपनी पत्नी को नहीं छोड़ सकते और सांसारिक जीवन में लौट रहे हैं।उनकी इच्छा के विरुद्ध उन्हें गुरु के पास ले जाया गया और बताया गया कि वे पथभ्रष्ट हो रहे हैं और सांसारिक जीवन में लौटना चाहते हैं। गुरु ने पूछा, "क्या यह कहानी सच है?" "जी हाँ, गुरुजी।" "कौन आपको पथभ्रष्ट कर रहा है?" "मेरी पत्नी।" "भाई (भिक्षु), वह स्त्री ही आपके लिए विपत्ति का कारण है: पहले भी उसी के कारण आप ध्यान की चारों अवस्थाओं से विमुख हो गए थे और बहुत दुखी हुए थे: फिर मेरे द्वारा आप अपने दुख से मुक्त हुए और ध्यान की खोई हुई शक्ति को पुनः प्राप्त कर लिया," और फिर उन्होंने पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व का जन्म राजा के कुलपुजारी और उनकी ब्राह्मण पत्नी के पुत्र के रूप में हुआ। उनके जन्म के दिन पूरे शहर में शस्त्रों की गर्जना हुई, इसलिए उनका नाम युवा ज्योतिपाल रखा गया। बड़े होकर उन्होंने तक्षशिला में सभी कलाओं का ज्ञान प्राप्त किया और राजा को अपनी कुशलता दिखाई; परन्तु उन्होंने अपना पद त्याग दिया और किसी को बिना बताए गुप्त द्वार से निकलकर एक वन में प्रवेश कर सक्कदत्तिया नामक कवित्तक आश्रम में तपस्वी बन गए। उन्होंने ध्यान में पूर्णता प्राप्त की। वहाँ रहते हुए सैकड़ों ऋषि उनकी सेवा में रहते थे। उनके साथ एक विशाल मंडली रहती थी और उनके सात प्रमुख शिष्य थे। इनमें से ऋषि सालिसारा कवित्थक आश्रम छोड़कर सूरत्थ देश चले गए और सतोदिका नदी के किनारे हजारों ऋषियों के साथ रहने लगे। मेंडिसारा हजारों ऋषियों के साथ राजा पाजका के देश में लंबकुलक नगर के पास रहने लगे। पब्बटा हजारों ऋषियों के साथ एक वन क्षेत्र में रहने लगे। कालदेवला हजारों ऋषियों के साथ अवंती और दक्कन के एक पर्वतीय वन में रहने लगे। किसावच्छा राजा दंडकी के उद्यान में कुंभवती नगर के पास अकेले रहने लगे। तपस्वी अनुसिसा बोधिसत्व के सेवक थे और उनके साथ रहते थे। कालदेवला के छोटे भाई नारद मध्य क्षेत्र के अरंजारा पर्वतीय क्षेत्र में एक गुफा में अकेले रहने लगे। अब अरंजारा से कुछ ही दूरी पर एक बहुत घनी आबादी वाला नगर है। नगर में एक बड़ी नदी बहती है, जिसमें बहुत से लोग स्नान करते हैं। इसके किनारों पर कई सुंदर नर्तकियां और युवतियां पुरुषों को आकर्षित करती हुई बैठी रहती हैं। तपस्वी नारद ने उनमें से एक को देखा और उस पर मोहित होकर अपनी तपस्या त्याग दी और दुखी होकर, बिना भोजन के सात दिनों तक प्रेम के बंधन में लीन रहे। उनके भाई कालदेवल ने अंतर्दृष्टि से इसका कारण जान लिया और हवा में उड़ते हुए गुफा में आ गए। नारद ने उन्हें देखकर पूछा कि वे क्यों आए हैं। "मुझे पता था कि आप बीमार हैं और मैं आपकी देखभाल करने आया हूँ।" नारद ने झूठ बोलकर उन्हें यह कहकर विदा किया, "तुम बकवास, झूठ और व्यर्थ बातें कर रहे हो।" दूसरे ने उन्हें छोड़ने से इनकार कर दिया और सालिसारा, मेंडिसारा और पब्बतिसारा को ले आए। उन्होंने उन सभी को भी उसी तरह विदा किया। कालदेवल उनके गुरु सरभंग को लाने के लिए उड़कर गए और उन्हें ले आए। जब गुरु आए, तो उन्होंने देखा कि नारद इंद्रियों के वश में आ गए हैं और पूछा कि क्या ऐसा है। नारद यह सुनकर उठे और प्रणाम करके अपनी गलती स्वीकार की। गुरु ने कहा, "नारद, जो लोग इंद्रियों के वश में आ जाते हैं, वे इस जीवन में दुख में त्रस्त हो जाते हैं और अगले जन्म में नरक में जन्म लेते हैं।" और इस प्रकार उन्होंने पहला श्लोक कहा:-

जो इच्छाओं के वश में आकर इंद्रियों के प्रभाव का पालन करता है,
वह दोनों दुनिया खो देता है और अपना पूरा जीवन तड़प-तड़प में बिता देता है।
उनकी बात सुनकर नारद ने उत्तर दिया, "गुरुजी, इच्छाओं का अनुसरण करना ही सुख है; आप ऐसे सुख को दुख क्यों कहते हैं?" सरभंग ने कहा, "तो सुनिए," और दूसरा श्लोक बोला:-

सुख और दुख हमेशा एक दूसरे के पदचिन्हों पर चलते हैं:
आपने उनका परिवर्तन देखा है: सच्ची खुशी की तलाश करना।
नारद ने कहा, "गुरुजी, ऐसा दुख सहना कठिन है, मैं इसे सहन नहीं कर सकता।" उस महान प्राणी ने कहा, "नारद, जो दुख आता है उसे सहना ही पड़ता है," और तीसरा श्लोक बोला:-

जो संकटों से जूझते हुए कठिन समय में धीरज रखता है
उस अंतिम आनंद तक पहुँचने के लिए शक्ति आवश्यक है जहाँ हमारे सभी कष्ट समाप्त हो जाते हैं।
लेकिन नारद ने उत्तर दिया, "गुरुजी, प्रेम की इच्छा का सुख ही सबसे बड़ा सुख है: मैं इसे त्याग नहीं सकता।" उस महान सत्ता ने कहा, "सद्गुण को किसी भी कारण से नहीं त्यागना चाहिए," और चौथा श्लोक कहा:-

वासनाओं के प्रेम के लिए, लाभ की आशाओं के लिए, बड़े और छोटे दुखों के लिए,
अपने पवित्र अतीत को नष्ट मत करो, वरना तुम सद्गुणों से गिर जाओगे।

इस प्रकार सरभंगा द्वारा चार श्लोकों में धर्ममार्ग का दर्शन कराने के बाद, कालदेवला ने अपने छोटे भाई की सलाह पर पाँचवाँ श्लोक कहा:-

जानो (*1) सांसारिक जीवन कष्टदायी है, भोजन नि:शुल्क देना चाहिए।
धन इकट्ठा करने में कोई आनंद नहीं, और उसे खर्च करने पर कोई दु:ख नहीं।
छठा श्लोक गुरु द्वारा अपनी पूर्ण बुद्धि से देवल द्वारा नारद को दी गई सलाह के संबंध में कहा गया है:

अब तक ब्लैक (*2) देवाला ने सबसे बुद्धिमानी से बात कही:
"इंद्रियों के बंधन में बंधने वाले से बुरा कोई नहीं।"
तब सरभंग ने चेतावनी देते हुए कहा, "नारद, यह सुनो: जो पहले उचित कार्य नहीं करेगा, उसे उस युवक की तरह रोना और विलाप करना पड़ेगा जो जंगल में गया था," और इस प्रकार उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले काशी नामक एक नगर में एक सुंदर, बलवान और हाथी के समान हष्ट-पुष्ट ब्राह्मण रहता था। उसके मन में विचार आया, "खेती करके, पत्नी-पुत्र करके, दान-पुण्य करके अपने माता-पिता का भरण-पोषण क्यों करूँ? मैं न तो किसी का भरण-पोषण करूँगा और न ही कोई पुण्य कर्म करूँगा; मैं वन में जाकर हिरण मारकर अपना भरण-पोषण करूँगा।" अत: वह पाँच प्रकार के शस्त्र लेकर हिमालय गया और अनेक हिरणों का शिकार करके उन्हें खाया। हिमालय क्षेत्र में उसे विधावा नदी के किनारे पर्वतों से घिरी एक विशाल घाटी मिली, और वहाँ वह प्रचंड कोयलों पर पकाए गए हिरणों के मांस को खाकर अपना जीवन व्यतीत करता था। उसने सोचा, "मैं सदा बलवान नहीं रहूँगा; जब मैं दुर्बल हो जाऊँगा तो वन में नहीं रह पाऊँगा: अब मैं अनेक प्रकार के जंगली पशुओं को इस घाटी में भगा दूँगा, इसे द्वार से बंद कर दूँगा, और फिर वन में भटके बिना ही अपनी इच्छा अनुसार उनका शिकार करके उन्हें खाऊँगा।" और उसने ऐसा ही किया। जैसे-जैसे समय बीतता गया, वही हुआ और संसार के सारे कष्ट उस पर आ पड़े: उसने अपने हाथों और पैरों पर नियंत्रण खो दिया, वह इधर-उधर स्वतंत्र रूप से चल-फिर नहीं सकता था, उसे भोजन-पानी नहीं मिल रहा था, उसका शरीर सूख गया, वह मनुष्य का भूत बन गया, उसके शरीर पर झुर्रियाँ ऐसे पड़ गईं जैसे गर्मी के मौसम में धरती पर पड़ती हैं; बदसूरत और बेढंगा होकर वह बहुत दुखी हो गया। इसी प्रकार समय बीतने पर, सिवी नामक राजा को जंगल में कोयलों पर भुना हुआ मांस खाने की इच्छा हुई: इसलिए उसने अपना राज्य अपने मंत्रियों को सौंप दिया और पाँच प्रकार के शस्त्रों के साथ जंगल में गया और उसने जिस हिरण का शिकार किया था, उसका मांस खाया: कुछ समय बाद वह उस स्थान पर पहुँचा और उस मनुष्य को देखा। भयभीत होते हुए भी उसने साहस जुटाकर पूछा कि वह कौन है। "हे प्रभु, मैं मनुष्य का भूत हूँ, अपने कर्मों का फल भोग रहा हूँ: आप कौन हैं?" "सिवी का राजा।" "आप यहाँ क्यों आए हैं?" "हिरण का मांस खाने।" उसने कहा, "महाराज, मैं उस उद्देश्य से यहाँ आया था इसलिए मनुष्य का भूत बन गया हूँ," और पूरी कहानी विस्तार से सुनाते हुए और राजा को अपनी बदकिस्मती का कारण बताते हुए, उसने शेष छंद कहे:-

महाराज, मुझे ऐसा लग रहा है मानो मैं प्रतिद्वंद्वियों के साथ भयंकर विवाद में उलझा हुआ हूँ।
श्रम, हस्तशिल्प में निपुणता, एक शांत घर, एक पत्नी,
सब कुछ मुझसे छिन गया है: मेरे कर्म इसी जीवन में फलदायी होते हैं।
मैं हजार बार पराजित हो चुका हूँ, मेरा कोई रिश्तेदार नहीं है और मुझे रहने की जगह से वंचित कर दिया गया है।
मैं धर्म के नियम से भटक गया हूँ, भूत की तरह मैं विमुख हो गया हूँ।
मेरी यह स्थिति इसलिए है क्योंकि मैंने आनंद के बजाय कष्ट उत्पन्न किया।
मैं मानो धधकती आग से घिरा हुआ हूँ, मुझे कोई खुशी नहीं है।
इसके साथ ही उसने कहा, "हे राजा, सुख की लालसा में मैंने दूसरों को दुख पहुँचाया और इस जीवन में भी मनुष्य का भूत बन गया हूँ: आप बुरे कर्म न करें, अपने नगर जाकर दान-पुण्य जैसे अच्छे कर्म करें।" राजा ने ऐसा ही किया और स्वर्ग की यात्रा पूरी की।

सरभंग द्वारा इस घटना का वर्णन सुनकर तपस्वी जागृत हो गया। वह व्याकुल हो गया और गुरु को प्रणाम करके उनसे क्षमा प्राप्त करने के बाद, विधिपूर्वक उसने अपनी खोई हुई ध्यान शक्ति पुनः प्राप्त कर ली। सरभंग ने उसे वहाँ रहने की अनुमति देने से इनकार कर दिया और उसे अपने साथ अपने आश्रम ले गए।

पाठ के बाद, गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई:- सत्यों के बाद, पथभ्रष्ट भाई (भिक्षु) प्रथम मार्ग (समाधि) की सिद्धि में स्थापित हो गया:- "उस समय नारद पथभ्रष्ट भाई थे, सालिसारा सारिपुत्र थे, मेंडिसारा कश्यप थे, पब्बत अनुरुद्ध थे, कालदेवल कच्चन थे, अनुसिस्सा आनंद थे, किसवच्छ मोग्गल्याना थे, और सरभंग मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) गृहस्थी की चिंताएँ अच्छी हैं, दान करना अच्छा है, धन बढ़ने पर घमंड नहीं करना चाहिए, न ही उसके क्षय होने पर शोक करना चाहिए।

(2) कालो और असितो दोनों का अर्थ काला है: यह व्यक्ति असिता है, बौद्ध जन्मकथा का शिमोन।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **आदित्त-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-424-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 424
आदित्य-जातक

"मनुष्य जो कुछ बचा सकता है," इत्यादि—गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक अतुलनीय उपहार के विषय में यह कथा सुनाई थी। इस अतुलनीय उपहार का पूर्ण वर्णन महागोविन्दसुत्त की व्याख्या में मिलता है। जिस दिन यह उपहार दिया गया था, उसके अगले दिन सत्य सभा में लोग इसके विषय में चर्चा कर रहे थे, "महोदय, कोसल राजा ने परीक्षा के बाद पुण्य का उचित क्षेत्र पाया और बुद्ध की अध्यक्षता में सभा को यह महान उपहार दिया।" गुरु वहाँ आए और जब वे सब साथ बैठे थे, तो उन्हें उनकी चर्चा का विषय बताया गया: उन्होंने कहा, "भाइयों, यह आश्चर्य की बात नहीं है कि राजा ने परीक्षा के बाद पुण्य के सर्वोच्च क्षेत्र को महान उपहार दिए हैं: प्राचीन काल के बुद्धिमान पुरुष भी परीक्षा के बाद ऐसे ही उपहार देते थे," और इस प्रकार उन्होंने एक प्राचीन कथा सुनाई।

बहुत समय पहले, भरत नाम का एक राजा रोरुवा राज्य में सोविरा राज्य में शासन करता था। वह दस राजगुणों का पालन करता था, लोकप्रियता के चार तत्वों से लोगों का दिल जीतता था, लोगों के लिए माता-पिता के समान था और गरीबों, तीर्थयात्रियों, भिखारियों, दूल्हों आदि को बड़े दान देता था। उसकी मुख्य रानी समुद्दविजय बुद्धिमान और ज्ञानी थी। एक दिन उसने अपने भिक्षागृह का अवलोकन किया और सोचा, "मेरा भिक्षा निकम्मे और लालची लोगों द्वारा हड़प लिया जाता है: मुझे यह अच्छा नहीं लगता: मैं उन गुणी पच्चेकबुद्धों को भिक्षा देना चाहता हूँ जो सर्वश्रेष्ठ दान के पात्र हैं: वे हिमालय क्षेत्र में रहते हैं: मेरे निमंत्रण पर उन्हें यहाँ कौन लाएगा और मैं इस कार्य के लिए किसे भेजूँ?" उसने रानी से कहा, "हे राजा, चिंता न करें: हम उपयुक्त वस्तुएँ देकर, अपने सद्गुणों और सत्यनिष्ठा के बल पर फूल भेजकर पच्चेकबुद्धों को आमंत्रित करेंगे, और जब वे आएँगे तो हम उन्हें सभी आवश्यक वस्तुओं सहित दान देंगे।" राजा मान गए। उन्होंने ढोल बजाकर घोषणा की कि नगर के सभी लोग नियमों का पालन करें; उन्होंने स्वयं अपने परिवार सहित पवित्र दिनों के सभी कर्तव्यों का निर्वाह किया और दान में बड़ी मात्रा में भेंट दी। उन्होंने चमेली के फूलों से भरा एक सोने का बक्सा मंगवाया, अपने महल से नीचे आए और राजमहल के प्रांगण में खड़े हो गए। वहाँ उन्होंने पाँचों स्पर्शों से जमीन पर प्रणाम किया, पूर्व दिशा की ओर प्रणाम किया और सात मुट्ठी फूल फेंकते हुए कहा, "पूर्व दिशा के संतों को मेरा प्रणाम: यदि हममें कोई पुण्य है, तो हम पर दया कीजिए और हमारी भिक्षा स्वीकार कीजिए।" पूर्व दिशा में कोई पच्चेकबुद्ध नहीं थे, इसलिए वे अगले दिन नहीं आए। दूसरे दिन उन्होंने दक्षिण दिशा को प्रणाम किया, लेकिन वहाँ से कोई नहीं आया। तीसरे दिन उन्होंने पश्चिम दिशा को प्रणाम किया, लेकिन वहाँ से भी कोई नहीं आया। चौथे दिन उन्होंने उत्तर दिशा में प्रणाम किया और प्रणाम करने के बाद सात मुट्ठी फूल फेंकते हुए कहा, "हिमालय के उत्तरी क्षेत्र में निवास करने वाले पच्चेकबुद्धों को हमारी भिक्षा प्राप्त हो।" फूल नन्दमूल गुफा में स्थित पाँच सौ पच्चेकबुद्धों पर गिरे। उन्होंने अंतर्दृष्टि से समझ लिया कि राजा ने उन्हें आमंत्रित किया है; इसलिए उन्होंने अपने सात साथियों को बुलाया और कहा, "महोदय, राजा आपको आमंत्रित करते हैं; उन पर कृपा कीजिए।" ये पच्चेकबुद्ध वायु से प्रकट हुए और राजा के द्वार पर उतरे। उन्हें देखकर राजा ने प्रसन्नतापूर्वक उनका अभिवादन किया, उन्हें महल में बुलाया, उनका सम्मान किया और उन्हें उपहार दिए। भोजन के बाद उन्होंने उनसे अगले दिन के लिए भोजन माँगा और इसी तरह पाँचवें दिन तक छह दिनों तक उन्हें भोजन कराया। सातवें दिन उन्होंने सभी आवश्यक वस्तुओं से युक्त उपहार तैयार किया, सोने से जड़े पलंग और कुर्सियाँ लगाईं और सात पच्चेकबुद्धों के सामने तीन वस्त्रों के जोड़े और अन्य सभी पवित्र पुरुषों द्वारा उपयोग की जाने वाली वस्तुएँ रखीं। राजा और रानी ने भोजन के बाद औपचारिक रूप से उन्हें ये वस्तुएँ भेंट कीं और आदरपूर्वक अभिवादन किया। धन्यवाद व्यक्त करने के लिए सभा के वरिष्ठ ने दो श्लोक कहे:-

जो कुछ भी मनुष्य अपनी आजीविका को नष्ट करने वाली ज्वालाओं से बचा सकता है,
जो कुछ भी उपभोग के लिए बचा है, वह अभी भी उसका अपना ही रहेगा।
दुनिया आग की लपटों में घिरी है, क्षय और मृत्यु आग को हवा दे रहे हैं;

दान देकर जितना हो सके बचत करें, दान करना वास्तव में बचत ही है।
इस प्रकार धन्यवाद व्यक्त करते हुए, बड़े ने राजा को सद्गुणों में लगनशील रहने की सलाह दी: फिर वह हवा में उड़ गया, महल की नुकीली छत को पार करते हुए सीधे नंदमूल गुफा में उतरा: उसके साथ उसे दी गई सभी आवश्यक वस्तुएँ भी उड़कर गुफा में पहुँच गईं: और राजा और रानी के शरीर आनंद से भर गए। उसके जाने के बाद, अन्य छह ने भी एक-एक श्लोक में धन्यवाद व्यक्त किया:

जो धर्मी पुरुषों को देता है,
   पवित्र ऊर्जा से भरपूर,
यमराज (मृत्यु के देवता) की बाढ़ को पार करता है, और फिर
   आकाश में रहकर जीविका कमाता है।
जैसे युद्ध करना दान है:
   कुछ लोगों के भागने से पहले बहुत से लोग भाग सकते हैं:
थोड़ी सी श्रद्धापूर्वक दान करें:
   इसके बाद आपको सुख मिलेगा।
समझदार दानदाता प्रभु को प्रसन्न करते हैं।
   वे अपनी मेहनत को सार्थक रूप से व्यतीत करते हैं।
उनके उपहारों से भरपूर फल प्राप्त होते हैं।
   उपजाऊ मिट्टी में बीज की तरह।
जो कभी भी अभद्र भाषा का प्रयोग नहीं करते,
   जीवित प्राणियों के प्रति अन्याय का त्याग करना:
पुरुष उन्हें डरपोक, कमजोर कह सकते हैं:
   क्योंकि भय ही उन्हें पवित्र रखता है।
कम कर्तव्यों के कारण, पृथ्वी पर पुनर्जन्म लेने वाले मनुष्य को राजसी भाग्य प्राप्त होता है।
मध्यम दर्जे के कर्तव्यों से उन्हें स्वर्ग प्राप्त होता है, सर्वोच्च कर्तव्यों से उन्हें परम पवित्र अवस्था प्राप्त होती है। (*1)
दान करना वास्तव में पुण्य का काम है।
फिर भी, सही मार्ग पर चलने से अधिक प्रतिफल मिलता है:
सदियों पुराने और बीते युगों के प्रमाण इस बात की पुष्टि करते हैं।
इस प्रकार ज्ञानी लोग अपने विश्राम को प्राप्त कर लेते हैं।
इसलिए वे भी उन्हें दी गई आवश्यक वस्तुओं के साथ ही चले गए।

सातवें पच्चेकबुद्ध ने राजा को धन्यवाद देते हुए शाश्वत निर्वाण की प्रशंसा की और उन्हें सावधानीपूर्वक सलाह देकर उनके निवास स्थान पर चले गए, जैसा कि कहा गया है। राजा और रानी ने जीवन भर दान दिया और स्वर्ग के मार्ग पर पूर्णतः व्यतीत हुए।

पाठ के बाद, गुरु ने कहा, "इसी प्रकार प्राचीन काल के बुद्धिमानों ने विवेकपूर्ण तरीके से दान दिए," और जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उस समय पच्चेकबुद्ध निर्वाण प्राप्त कर चुके थे, समुद्दविजय राहुल की माता थीं, और राजा भरत मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) बौद्ध ब्रह्मांड विज्ञान में उच्चतर स्वर्ग।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> आठान - **जातक**
स्रोत : एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।

पिछला <<<<-----||-425-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 425
अत्थाना-जातक

"गंगा को शांत करो," इत्यादि - गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक पथभ्रष्ट भिक्षु के बारे में यह कथा सुनाई। गुरु ने उससे पूछा, "क्या यह कहानी सच है, भिक्षु, कि तुम पथभ्रष्ट हो रहे हो?" "जी, गुरुजी।" "कारण क्या है?" "इच्छाओं का प्रभाव।" "भिक्षु, स्त्री कृतघ्न, कपटी और अविश्वसनीय होती हैं: पुराने समय में बुद्धिमान पुरुष एक स्त्री को प्रतिदिन हजार टुकड़े देकर भी संतुष्ट नहीं कर पाते थे: और एक दिन जब उसे हजार टुकड़े नहीं मिले तो उन्होंने उसका गला पकड़कर उसे बाहर फेंकवा दिया: स्त्री इतनी कृतघ्न होती हैं: ऐसी समस्या के प्रभाव में मत पड़ो," और इस प्रकार उन्होंने एक पुरानी कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे। उनके पुत्र, युवा ब्रह्मदत्त, और बनारस के एक धनी व्यापारी के पुत्र युवा महाधन, सहपाठी और खेलकूद के साथी थे, और एक ही गुरु के घर में शिक्षा प्राप्त करते थे। अपने पिता की मृत्यु के बाद, राजकुमार राजा बने और व्यापारी का पुत्र उनके पास ही रहने लगा। बनारस में एक सुंदर और समृद्ध राजसी नर्तकी और मदिरा-संपन्न थीं। व्यापारी का पुत्र उन्हें प्रतिदिन एक हजार सिक्के देता था और उनके साथ निरंतर मदिरापान करता था। अपने पिता की मृत्यु के बाद, उन्होंने धनी व्यापारी का पदभार संभाला और उन्हें नहीं छोड़ा, बल्कि उन्हें प्रतिदिन एक हजार सिक्के देते रहे। वह दिन में तीन बार राजा से मिलने जाते थे। एक दिन वे शाम को राजा से मिलने गए। जब वे राजा से बात कर रहे थे, तभी सूर्य अस्त हो गया और अंधेरा हो गया। महल से निकलते समय उन्होंने सोचा, "घर जाकर वापस आने का समय नहीं है; मैं सीधे मदिरा-संपन्न के घर जाऊंगा।" इसलिए उन्होंने अपने सेवकों को विदा किया और अकेले ही उसके घर में प्रवेश किया। जब उसने उसे देखा, तो पूछा कि क्या वह हज़ार सिक्के लाया है। "प्रिय, मुझे आज बहुत देर हो गई थी; इसलिए मैं घर जाए बिना ही अपने सेवकों को भेजकर अकेला आ गया हूँ; लेकिन कल मैं तुम्हें दो हज़ार सिक्के दूँगा।" उसने सोचा, "अगर मैं उसे आज अंदर आने दूँगी, तो वह बाकी दिनों में खाली हाथ आएगा, और इस तरह मेरी सारी दौलत बर्बाद हो जाएगी: मैं उसे इस बार अंदर नहीं आने दूँगी।" इसलिए उसने कहा, "महोदय, मैं तो बस एक शाही नर्तकी और वेश्या हूँ: मैं हज़ार सिक्कों के बिना अपनी कृपा नहीं देती: आपको पूरी रकम लानी होगी।" "प्रिय, मैं कल दुगुनी रकम लाऊँगा," और इस तरह वह बार-बार उससे विनती करता रहा। शाही नर्तकी और वेश्या ने अपनी दासियों को आदेश दिया, "उस आदमी को वहाँ खड़े होकर मुझे देखने मत दो: उसकी गर्दन पकड़ो, उसे बाहर फेंक दो, और फिर दरवाज़ा बंद कर दो।" उन्होंने वैसा ही किया। उसने सोचा, "मैंने उस पर अस्सी करोड़ (10 मिलियन) रुपये खर्च कर दिए; फिर भी जिस दिन मैं खाली हाथ लौटा, उसने मेरा गला पकड़कर मुझे बाहर फेंक दिया: हे स्त्री जाति, कितनी दुष्ट, निर्लज्ज, कृतघ्न और धोखेबाज़ है!" वह स्त्री जाति के इन बुरे गुणों के बारे में सोचता रहा, यहाँ तक कि उसे घृणा और अरुचि हो गई और वह गृहस्थ जीवन से असंतुष्ट हो गया। "मैं गृहस्थ जीवन क्यों जीऊँ? मैं आज ही जाकर संन्यासी बन जाऊँगा," उसने सोचा। अतः अपने घर वापस जाए बिना और राजा से दोबारा मिले बिना, वह शहर छोड़कर जंगल में चला गया। उसने गंगा तट पर एक आश्रम बनाया और वहाँ संन्यासी के रूप में निवास किया, ध्यान की पूर्णता प्राप्त की और जंगली जड़ों और फलों पर जीवन व्यतीत किया।

राजा को अपने मित्र की याद सताने लगी और उन्होंने उसे बुलाया। राजसी नर्तकी और वेश्या के आचरण की चर्चा पूरे शहर में फैल चुकी थी, इसलिए उन्होंने राजा को यह बात बताई और कहा, "हे राजा, लोग कहते हैं कि आपका मित्र शर्म के मारे घर नहीं लौटा, बल्कि जंगल में संन्यासी बन गया है।" राजा ने राजसी नर्तकी और वेश्या को बुलाया और पूछा कि क्या उनके मित्र के साथ किए गए व्यवहार की कहानी सच है। उसने स्वीकार किया, "दुष्ट स्त्री, जल्दी जाओ और मेरे मित्र को ले आओ: यदि तुम असफल रही, तो तुम्हारी जान चली जाएगी।" राजा के शब्दों से वह भयभीत हो गई; वह एक रथ पर सवार होकर अपने कई सेवकों के साथ शहर से निकल गई; उसने उसके निवास स्थान की खोज की और जब उसे इसके बारे में पता चला, तो वह वहाँ गई और प्रणाम करते हुए प्रार्थना की, "हे महाराज, मैंने अपनी अज्ञानता और कुकर्म में जो बुराई की है, उसे क्षमा कर दीजिए: मैं फिर कभी ऐसा नहीं करूंगी।" राजा ने कहा, "ठीक है, मैं तुम्हें क्षमा करता हूँ; मैं तुमसे क्रोधित नहीं हूँ।" "यदि आप मुझे क्षमा कर दें, तो मेरे साथ रथ पर सवार हो जाइए: हम शहर चलेंगे, और जैसे ही हम उसमें प्रवेश करेंगे, मैं आपको अपने घर का सारा पैसा दे दूँगा।" जब उसने यह सुना, तो उसने उत्तर दिया, "महोदया, मैं अभी आपके साथ नहीं जा सकता: लेकिन जब इस दुनिया में असंभव सी कोई घटना घटित होगी, तब शायद मैं जाऊँगा;" और इस प्रकार उसने पहला श्लोक कहा:-

गंगा को कमल-तालाब की तरह शांत बना दो, कोयल मोती जैसी सफेद दिखाई दे।
सेबों को ताड़ के पेड़ों के फल देने लायक बनाओ: शायद तब ऐसा हो सके।
लेकिन उसने फिर कहा, "चलो; मैं जा रही हूँ।" उसने उत्तर दिया, "मैं जाऊँगा।" "कब?" "अमुक समय पर," उसने कहा और शेष छंद बोले:-

कछुए के बालों से बुना हुआ तिहरा कपड़ा आपको दिखाई देगा,
सर्दी से बचाव के लिए शायद यह उपयुक्त हो सकता है।
जब तुम मच्छर के दांतों से इतनी कुशलता से मीनार बनाते हो,

वह चीज जल्द ही हिलेगी या डगमगाएगी नहीं, शायद तब ऐसा हो सकता है।
जब आप खरगोश के सींगों से कुशलतापूर्वक सीढ़ी बनाते हैं,
शायद तब ऐसा हो सकता है कि ये सीढ़ियाँ स्वर्ग की ऊँचाई तक ले जाएँ।
जब चूहे उन सीढ़ियों पर चढ़कर चाँद को खाने के लिए सहमत हो जाते हैं,
और राहु (ग्रहण) को आकाश से नीचे लाना शायद यही बात हो सकती है।
जब मक्खियों के झुंड भरे हुए और मुफ्त में उपलब्ध घड़ों में रखी शराब को चट कर जाते हैं,
और शायद वे जलते हुए अंगारों में अपना घर बना लें।
जब गधों के होंठ पके हुए लाल हो जाते हैं और उनके चेहरे देखने में सुंदर हो जाते हैं,
और शायद वे गाने और नाचने में अपनी कुशलता दिखा सकें।
जब कौवे और उल्लू गुप्त रूप से बात करने के लिए मिलेंगे,
और वे एक दूसरे की ओर आकर्षित होते हैं, प्रेमियों की तरह, शायद यही बात हो सकती है।
जब वन वृक्षों की कोमल पत्तियों से बने धूप से बचाव के लिए छाते लगाए जाते हैं,
तेज बारिश के सामने शायद ये मजबूत हों।
जब गौरैया हिमालय की संपूर्ण भव्यता को निहारती हैं,
और शायद वे इसे अपनी छोटी चोंचों में लेकर चलते हों।
और जब एक लड़का प्रकाश को, उसकी सारी बहादुरी के साथ, धारण कर सकता है,
यह शायद दूर-दराज के समुद्रों के लिए पूरी तरह से सुसज्जित जहाज हो सकता है।
अत: उस महान सत्ता ने असंभव (अत्थाना) स्थिति को हल करने के लिए ये ग्यारह श्लोक कहे। उनकी बात सुनकर राजसी नर्तकी और मदिरा कन्या क्षमा प्राप्त कर ली और बनारस लौट गई। उसने राजा को सारी बात बताई और अपने जीवन की भीख मांगी, जिसे स्वीकार कर लिया गया।

पाठ के बाद, गुरु ने कहा, "इसलिए, भिक्षुओं, स्त्रियाँ कृतघ्न और कपटी होती हैं"; फिर उन्होंने सत्यों की व्याख्या की और जन्म का वर्णन किया: सत्यों के बाद, पथभ्रष्ट भिक्षु प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की सिद्धि में स्थापित हुए: "उस समय राजा आनंद थे, और तपस्वी मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **दिपि-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-426-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 426
दीप-जातक

“तुम्हारा हाल कैसा है?” इत्यादि—गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक बकरी के बारे में यह कहानी सुनाई थी। एक समय, वरिष्ठ भिक्षु मोग्गल्याना पहाड़ियों से घिरे एक पहाड़ी बाड़े में एक दरवाजे वाले छोटे से कमरे में रहते थे। उनका ढका हुआ रास्ता दरवाजे के पास ही था। कुछ बकरी चराने वालों ने सोचा कि यह बाड़ा उनकी बकरियों के लिए अच्छा रहेगा, इसलिए वे उन्हें वहाँ ले आए और अपनी मर्जी से वहाँ रहने लगे। एक दिन वे शाम को आए, सारी बकरियों को ले गए और चले गए: लेकिन एक बकरी बहुत दूर भटक गई थी, और बकरियों को जाते हुए न देखकर वह पीछे रह गई। बाद में, जब वह जा रही थी, तो एक तेंदुआ ने उसे देखा और उसे खाने के इरादे से बाड़े के दरवाजे पर खड़ा हो गया। उसने चारों ओर देखा और तेंदुआ को देखा। उसने सोचा, “वह मुझे मारने और खाने के लिए यहाँ है; अगर मैं मुड़कर भागी, तो मेरी जान चली जाएगी; मुझे बहादुरी दिखानी होगी,” और इसलिए उसने अपने सींग हिलाए और पूरी ताकत से उस पर झपट्टा मारा। वह उसकी पकड़ से बच निकली, हालाँकि वह उसे पकड़ने के डर से काँप रहा था: फिर पूरी गति से दौड़ते हुए वह अन्य बकरियों के साथ आ गई। वरिष्ठ भिक्षु ने सभी जानवरों के व्यवहार को देखा: अगले दिन वह तथागत (बुद्ध) के पास गए और उनसे कहा, "हे प्रभु, इस बकरी ने अपनी चतुराई और सूझबूझ से एक अद्भुत कारनामा किया और तेंदुआ से बच निकली।" गुरु ने उत्तर दिया, "मोग्गल्याना, तेंदुआ इस बार उसे पकड़ने में असफल रहा, लेकिन इससे पहले उसने उसे मार डाला था, हालाँकि वह चिल्लाई थी, और उसे खा गया था।" फिर मोग्गल्याना के अनुरोध पर, उन्होंने एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, मगध राज्य के एक गाँव में एक समृद्ध परिवार में बोधिसत्व का जन्म हुआ। बड़े होकर उन्होंने इच्छाओं का त्याग कर संन्यासी जीवन व्यतीत किया और ध्यान की पूर्णता प्राप्त की। हिमालय में दीर्घकाल बिताने के बाद वे नमक और सिरका लेने राजगृह नगर आए और पर्वतीय क्षेत्र में पत्तों से बनी एक कुटिया में रहने लगे। जैसा कि आरंभिक कथा में बताया गया है, चरवाहे अपनी बकरियों को वहाँ ले गए थे; ठीक उसी प्रकार, एक दिन जब एक अकेली बकरी बाकियों से देर से बाहर जा रही थी, तो एक तेंदुआ उसे खाने की योजना बनाकर द्वार पर घात लगाए बैठा था। जब उसने उसे देखा, तो उसने सोचा, "मेरा जीवन समाप्त हो गया है: किसी भी तरह मुझे उससे मधुर और दयालुतापूर्ण बातें करनी होंगी, ताकि उसका हृदय नरम हो जाए और मैं अपना जीवन बचा सकूँ।" कुछ दूरी से उससे मैत्रीपूर्ण बातचीत शुरू करते हुए, उसने पहला श्लोक कहा:-

चाचा जी, आपका हाल कैसा है? और क्या आप ठीक हैं?
मेरी मां ने आपको शुभकामनाएं भेजी हैं: और मैं आपका सच्चा दोस्त हूं।
उसकी बात सुनकर पैंथर ने सोचा, "यह औरत मुझे 'चाचा' कहकर मेरा ध्यान भटकाएगी; उसे नहीं पता कि मैं कितना कठोर हूँ;" और इस तरह उसने दूसरा छंद बोला:-

हे बकरी, तुमने मेरी पूंछ पर पैर रख दिया और मुझे चोट पहुँचाई:
और आपको लगता है कि "हार मान ली" कहकर आप बच निकलेंगे।
जब उसने उसकी बात सुनी, तो उसने कहा, "हे चाचा, इस तरह बात मत करो," और तीसरा छंद बोला:-

जब मैं आया था तो मैंने आपका सामना किया था, महोदय, अब आप बैठते समय मेरा सामना करें:
तुम्हारी पूंछ पूरी तरह से तुम्हारे पीछे है: मैं उस पर कैसे चल सकता हूँ?
उसने उत्तर दिया, "क्या कहती हो, बकरी? क्या कोई ऐसी जगह है जहाँ मेरी पूंछ न हो?" और इस प्रकार उसने चौथा श्लोक बोला:-

समुद्रों और पहाड़ों से घिरे चार विशाल महाद्वीपों तक फैला हुआ,
मेरी पूंछ लंबी है: इतनी लंबी पूंछ के सहारे चलना भला कोई कैसे असफल हो सकता है?
जब बकरी ने यह सुना, तो उसने सोचा, "यह दुष्ट मीठे शब्दों से आकर्षित नहीं होता: मैं इसे शत्रु की तरह जवाब दूंगी," और इस प्रकार उसने पाँचवाँ श्लोक बोला:-

मुझे पता है कि तुम्हारे खलनायक की पूंछ लंबी है, क्योंकि मुझे पहले ही अच्छी तरह से चेतावनी मिल गई थी:
मेरे माता-पिता और भाइयों ने मुझे ऐसा बताया था, लेकिन मैं हवा में उड़ गया।
फिर उसने कहा, "मैं जानता हूँ कि तुम हवा के रास्ते आए हो: लेकिन तुम्हारे आने के तरीके ने मेरा भोजन खराब कर दिया," और इस प्रकार उसने छठा श्लोक कहा:-

हे बकरी जी, तुम्हें इतनी ऊँचाई पर उड़ते हुए देखना, हवा में उड़ते हुए देखना,
तुमने हिरणों के झुंड को डरा दिया, और इस तरह मेरा खाना तुम्हारे कारण खराब हो गया।
यह सुनकर, मृत्यु के भय से बकरी के पास कोई और बहाना नहीं बचा और वह चिल्लाई, "चाचा जी, मुझ पर इतनी क्रूरता मत कीजिए; मेरी जान बख्श दीजिए।" लेकिन उसके चिल्लाने के बावजूद, दूसरे ने उसे कंधे से पकड़कर मार डाला और खा लिया।

इस प्रकार बकरी ने दया की भीख मांगी, लेकिन खून से ही संतुष्टि मिलनी चाहिए।
वह दरिंदा जो उसका गला जकड़ लेता है; वह दुष्ट कोई दया नहीं दिखाएगा।
दुष्ट व्यक्ति न तो आचरण प्रदर्शित करेगा, न ही सत्य और न ही शिष्टाचार;
वह अच्छाई से नफरत करता है: उससे मुकाबला करने का सबसे अच्छा तरीका खुले मैदान में लड़ाई करना है।
ये दो श्लोक 'पूर्ण ज्ञान' से प्रेरित हैं।

एक पवित्र तपस्वी ने उन दोनों जानवरों का पूरा मामला देखा।

इस पाठ के बाद, गुरु ने जन्म की पहचान बताई: "उस समय बकरी और तेंदुआ आज के बकरी और तेंदुआ थे, पवित्र तपस्वी मैं स्वयं था।"

पुस्तक 9. नवनीपाता:

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **गिज्जा-जातक**3
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-427-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 427
गिज्जा-जातक(*1)

"खुरदुरे लट्ठों से निर्मित;" इत्यादि--यह कहानी गुरु (बुद्ध) ने जेतवन मठ में एक अवज्ञाकारी भिक्षु के बारे में सुनाई थी। कहते हैं कि वे कुलीन कुल में जन्मे थे, और यद्यपि उन्हें मोक्ष (निर्वाण) की शिक्षा दी गई थी, फिर भी उनके शुभचिंतकों, गुरुओं, शिक्षकों और सहपाठियों ने उन्हें इस प्रकार उपदेश दिया: "इस प्रकार आगे बढ़ो और इस प्रकार पीछे हटो; इस प्रकार वस्तुओं को देखो या उनसे दूर हटो; इस प्रकार भुजा फैलाओ या पीछे खींचो; इस प्रकार भीतरी और बाहरी वस्त्र धारण करो; इस प्रकार प्याला पकड़ो, और जब जीवन निर्वाह के लिए पर्याप्त भोजन प्राप्त हो जाए, आत्म-परीक्षण के बाद, इस प्रकार उसे खाओ, इंद्रियों पर नियंत्रण रखते हुए; भोजन करते समय संयम बरतो और सतर्कता बरतो; मठ में आने-जाने वाले भिक्षुओं के प्रति अमुक-अमुक कर्तव्यों को पहचानो; ये चौदह (*2) भिक्षुओं के कर्तव्य हैं, और अस्सी महान कर्तव्य हैं जिनका विधिवत पालन किया जाना चाहिए; ये तेरह धूत अभ्यास हैं; इन सभी का सावधानीपूर्वक पालन किया जाना चाहिए।" फिर भी वह अवज्ञाकारी और अधीर था, और उसने आदरपूर्वक उपदेश ग्रहण नहीं किया, बल्कि उनकी बात सुनने से इनकार कर दिया और कहा, "मुझे आपमें कोई दोष नहीं है। आप मुझसे इस प्रकार क्यों बात करते हैं? मैं स्वयं जान लूंगा कि मेरे लिए क्या अच्छा है और क्या नहीं।" तब भिक्षुओं ने उसकी अवज्ञा के बारे में सुनकर सत्य के हॉल में बैठकर उसकी कमियों का बखान किया। गुरु आए और उनसे पूछा कि वे किस बारे में चर्चा कर रहे हैं, और भिक्षु को बुलवाकर कहा, "क्या यह सच है, भाई, कि तुम अवज्ञाकारी हो?" जब उसने स्वीकार किया, तो गुरु ने कहा, "भाई, इतनी उत्तम शिक्षा प्राप्त करने के बाद भी, जो मोक्ष (निर्वाण) की ओर ले जाती है, तुम अपने शुभचिंतकों की बात क्यों नहीं सुनते? पहले भी तुमने ज्ञानियों की बात नहीं मानी थी, और वेरम्बा वायु द्वारा चूर-चूर हो गए थे।" और इसके साथ ही उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, बोधिसत्व ने गिद्ध पर्वत पर एक युवा गिद्ध के रूप में जन्म लिया। उनका पुत्र सुपत्त, जो गिद्धों का राजा था, बहुत बलवान था और उसके साथ हजारों गिद्धों का समूह था। वह अपने माता-पिता पक्षियों का भोजन करता था। अपनी शक्ति के कारण वह बहुत दूर तक उड़ता था। इसलिए उसके पिता ने उसे सलाह दी और कहा, "पुत्र, तुम इतनी दूरी से आगे मत जाना।" उसने कहा, "ठीक है," लेकिन एक दिन जब बारिश हुई, तो वह अन्य गिद्धों के साथ उड़ गया और बाकियों को पीछे छोड़कर निर्धारित सीमा से आगे निकल गया। वह वेरम्बा वायु के प्रभाव में आ गया और चूर-चूर हो गया।

गुरु ने अपनी पूर्ण बुद्धि से इस घटना की व्याख्या करते हुए निम्नलिखित श्लोक कहे:

खुरदुरे लट्ठों से बना एक प्राचीन मार्ग ऊपर की ओर जाता था।
बेहद ऊँचाई पर, जहाँ एक युवा गिद्ध भोजन कर रहा था
माता-पिता पक्षी। पंखों से हृष्ट-पुष्ट और मजबूत।
वह अक्सर उनके लिए सांपों की चर्बी लाया करता था;
और जब उसके पिता ने उसे ऊँची उड़ान भरते देखा
और दूर खेतों में जाकर वह इस प्रकार पुकारता था,
"मेरे बेटे, जब तुम अपने निगरानी कक्ष से स्कैन कर सको।"
पृथ्वी का गोलाकार भाग महासागरों से घिरा हुआ है।
आगे मत जाओ, सीधे वापस लौट आओ, मैं अनुरोध करता हूँ।"
तब पक्षियों का यह राजा अपनी राह पर तेजी से आगे बढ़ेगा,
और पृथ्वी पर झुककर, भेदक दृष्टि से
उसने जंगल और पर्वत की ऊँचाई से नीचे का दृश्य देखा:
और पृथ्वी, जैसा कि उसके पिता ने वर्णन किया था, प्रकट होगी।

चारों ओर से घिरे समुद्र के बीच एक गोलाकार गोला।
लेकिन जब वह इन सीमाओं को पार कर चुका था,
चाहे वह कितना भी शक्तिशाली पक्षी क्यों न हो, एक प्रचंड विस्फोट।
उसे असमय मृत्यु के मुंह में धकेल दिया।
तूफ़ानी हवा की प्रचंड साँसों का सामना करने में असमर्थ।
इस प्रकार पक्षी ने अवज्ञा करके यह सिद्ध कर दिया।
जो लोग उसके प्रेम पर निर्भर थे, उनके लिए घातक:
इसलिए बुढ़ापे का तिरस्कार करने वाले सभी लोग नष्ट हो जाएं।
ऋषि द्वारा दी गई चेतावनियों का उपहास करो।
जैसे ही युवा गिद्ध विजडम की आवाज ने चुनौती दी
और उसने अपने अभिमान को सीमित करने के लिए निर्धारित सीमाओं का तिरस्कार किया।
"अत:, भाई, इस गिद्ध के समान मत बनो, बल्कि अपने शुभचिंतकों से मदद मांगो।" गुरु की इस सलाह को सुनकर वह आज्ञाकारी हो गया।

अपने उपदेश के अंत में गुरु ने जन्म का कारण बताते हुए कहा: "उन दिनों का अवज्ञाकारी गिद्ध अब अवज्ञाकारी भिक्षु है। मूल गिद्ध मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) क्रमांक 381 देखें

(2) इसे खंडकवत्तनी कहा जाता है क्योंकि यह विनय के खंडक विभाजन में निहित है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कोसंबी-जातक**
***स्रोत** : एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-428-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 428
कोसंबी-जातक

"जब भी भिक्षु समुदाय," इत्यादि — यह कहानी गुरु ने कोसंबी के पास स्थित घोषिता उद्यान में रहते हुए कोसंबी के कुछ झगड़ालू लोगों के बारे में सुनाई थी। इस कहानी की उत्पत्ति विनय ग्रंथ के कोसंबी संबंधी खंड (*1) में वर्णित है। इसका संक्षिप्त सारांश इस प्रकार है: उस समय, कहा जाता है कि दो भिक्षु एक ही घर में रहते थे, एक विनय (नियमों) में पारंगत था और दूसरा सूत्रों (शिक्षाओं) में। एक दिन भिक्षु को शौचालय जाने की आवश्यकता हुई और वह अतिरिक्त पानी को एक पात्र में मुंह धोने के लिए छोड़कर बाहर चला गया। बाद में विनय में पारंगत भिक्षु अंदर गया और पानी देखकर बाहर आया और अपने साथी से पूछा कि क्या पानी वहीं छोड़ा था। उसने उत्तर दिया, "जी जी।" "क्या! क्या तुम नहीं जानते कि यह पाप है?" "नहीं, मुझे इसका ज्ञान नहीं था।" "अच्छा, भिक्षु, यह पाप है।" "तो मैं इसका प्रायश्चित करूँगा।" "परन्तु यदि तुमने अनजाने में और लापरवाही से ऐसा किया है, तो यह पाप नहीं है।" इस प्रकार वह ऐसा बन गया मानो पाप में भी पाप न देखता हो। विनय विद्वान ने अपने शिष्यों से कहा, "यह सूत्र विद्वान पाप में पड़कर भी अनभिज्ञ है।" दूसरे भिक्षु के शिष्यों को देखकर उन्होंने कहा, "तुम्हारा गुरु पाप में पड़कर भी उसकी पापमयता को नहीं पहचानता।" वे जाकर अपने गुरु को बताने लगे। गुरु ने कहा, "इस विनय विद्वान ने पहले कहा था कि यह पाप नहीं है, और अब कहता है कि यह पाप है: यह झूठा है।" वे जाकर दूसरों को बताने लगे, "तुम्हारा गुरु झूठा है।" इस प्रकार उन्होंने आपस में झगड़ा शुरू कर दिया। तब विनय विद्वान ने अवसर पाकर भिक्षु को उसके अपराध को नकारने के कारण बहिष्कृत करने की प्रक्रिया शुरू कर दी। तब से भिक्षुओं की जरूरतों को पूरा करने वाले गृहस्थ भी दो गुटों में बँट गए। जिन बहनों (नन) ने उनकी सलाह स्वीकार की, और संरक्षक देवताओं (देवदूतों), उनके मित्रों और घनिष्ठों और देवताओं, अंतरिक्ष में विश्राम करने वालों से लेकर ब्रह्मा (प्रधान देवदूत) जगत के देवताओं तक, यहाँ तक कि सभी जो परिवर्तित नहीं हुए थे, ने दो दल बनाए, और कोलाहल उदात्त देवताओं (देवदूतों) के निवास तक पहुँच गया (*2)।

फिर एक भिक्षु तथागत (बुद्ध) के पास आए और उन्होंने बहिष्कार करने वाले दल का मत बताया, जिन्होंने कहा, "इस व्यक्ति का बहिष्कार विधिवत किया गया है," और बहिष्कार किए गए व्यक्ति के अनुयायियों का मत भी बताया, जिन्होंने कहा, "इसका बहिष्कार अवैध रूप से किया गया है," और उन लोगों के व्यवहार का भी उल्लेख किया जो बहिष्कार करने वाले दल द्वारा मना किए जाने के बावजूद भी तथागत के समर्थन में एकत्रित थे। भगवान बुद्ध ने कहा, "भाईचारे में फूट पड़ गई है, हाँ, विभाजन हो गया है," और वे उनके पास गए और बहिष्कार करने वालों को बहिष्कार से जुड़े कष्टों और विपक्ष को पाप छिपाने से होने वाले कष्टों के बारे में बताया, और फिर चले गए। फिर जब वे उसी स्थान पर, सीमा के भीतर, उपोसथ और इसी प्रकार की पूजा-अर्चना कर रहे थे और भोजन कक्ष और अन्य स्थानों पर झगड़ा कर रहे थे, तो उन्होंने यह नियम बनाया कि वे बारी-बारी से दोनों पक्षों में से एक-एक करके एक साथ बैठें। जब उसने सुना कि वे मठ में अभी भी झगड़ रहे हैं, तो वह वहाँ गया और बोला, "बस करो, भाइयों, अब झगड़ा बंद करो।" तब विपक्ष के एक व्यक्ति ने, भगवान बुद्ध को नाराज़ न करने की इच्छा से, कहा, "परमेश्वर बुद्ध को घर पर ही रहने दो। भगवान बुद्ध को शांतिपूर्वक रहने दो, इस जीवन में प्राप्त आनंद का अनुभव करने दो। हम इस झगड़े, कहा-सुनी, विवाद और कलह से अपनी बदनामी करेंगे।"

लेकिन गुरु ने उनसे कहा, "एक समय की बात है, हे भिक्षुओं, बनारस के काशी राज्य में ब्रह्मदत्त राजा था। उसने कोसल के राजा दिघाटी को उसके राज्य से बेदखल कर मार डाला, जब वह भेस बदलकर रह रहा था। जब राजकुमार दिघावु ने ब्रह्मदत्त का जीवन बख्श दिया, तो वे तब से घनिष्ठ मित्र बन गए। और चूंकि इन राजदंडधारी और तलवारधारी राजाओं का धैर्य और कोमलता ऐसी रही होगी, इसलिए हे भिक्षुओं, आपको यह स्पष्ट कर देना चाहिए कि आप भी, इतनी अच्छी शिक्षा और अनुशासन के अनुसार संन्यासी जीवन अपनाकर, क्षमाशील और कोमल हृदय के हो सकते हैं।" और इस प्रकार उन्हें तीसरी बार समझाते हुए उन्होंने कहा, "बस करो, हे भिक्षुओं, अब झगड़ा बंद करो।" और जब उन्होंने देखा कि उनके कहने पर भी वे नहीं रुके, तो वे यह कहते हुए चले गए, "सचमुच, ये मूर्ख लोग भूत-प्रेत से ग्रसित लोगों की तरह हैं, इन्हें समझाना आसान नहीं है।" अगले दिन भिक्षा एकत्र करके लौटने पर उन्होंने अपने सुगंधित कक्ष में कुछ देर विश्राम किया, अपने कमरे को व्यवस्थित किया और फिर अपना कटोरा और वस्त्र लेकर हवा में खड़े होकर सभा के बीच में ये छंद कहे:

जब भी ब्रदरहुड दो भागों में बंट जाता है,
आम लोग जोर-जोर से चिल्लाकर अपना गुस्सा निकालते हैं:
हर कोई अपने आप को बुद्धिमान समझता है।
और वह अपने पड़ोसी को घृणा भरी निगाहों से देखता है।
भ्रमित आत्माएं, आत्मसम्मान से फूली हुई,
वे खुले मुँह से मूर्खतापूर्ण ढंग से ईश्वर की निंदा करते हैं;
और जैसे-जैसे वे वाणी के पूरे दायरे में भटकते हैं,
उन्हें नहीं पता कि किसका नेतृत्व स्वीकार करना है।
"इस (*3) आदमी ने मुझे गाली दी, जिसने मुझे मुक्का मारा,
एक तीसरे व्यक्ति ने बहुत पहले ही मुझ पर विजय प्राप्त कर मुझे लूट लिया था।"
इस प्रकार की भावना रखने वाले सभी लोग,
वे अपने गुस्से को शांत करने के लिए कभी इच्छुक नहीं होते।
"उसने मुझे अतीत के लिए गाली दी और मुझे सताया।"
उसने मुझे पराजित किया और मुझे पीड़ा पहुँचाई।
जो लोग ऐसे विचारों को स्वीकार करने से इनकार करते हैं,
उनके गुस्से को शांत करें और फिर से एक साथ रहें।
नफरत नहीं, बल्कि केवल प्रेम ही नफरत को समाप्त कर सकता है:
यह शांति का शाश्वत और धर्मपरायण मार्ग है।
कुछ लोग आत्मसंयम के धर्मी मार्ग को तुच्छ समझते हैं।
लेकिन जो लोग अपने झगड़ों को सुलझा लेते हैं, वे बुद्धिमान होते हैं।
यदि सभी पुरुष घातक संघर्ष में घावों से ग्रस्त हों,
लुटेरे और डाकू, जो मानव जीवन छीन लेते हैं।
नहीं, वे जो पूरे राज्य को लूटते हैं, शायद
अपने प्रतिद्वंद्वियों के साथ मित्रता रखने वाले ब्रदरन को क्या इससे सहमत नहीं होना चाहिए?
यदि आपको कोई बुद्धिमान और ईमानदार साथी मिल जाए,

एक परिचित आत्मा, जो आपके साथ रहने को इच्छुक है,
सभी खतरे टल जाने के बाद भी, तुम उसके साथ भटकना चाहोगे।
सारा दिन आनंदमय चिंतन में व्यतीत हुआ।
लेकिन यदि आप ऐसे मित्र से मिलने में असफल रहते हैं,
आपका जीवन एकांत में बिताना ही सबसे अच्छा था।
जैसे कोई राजकुमार सिंहासन त्याग देता है,
या फिर वह हाथी जो बिल्कुल अकेला घूमता है।
विकल्प के तौर पर एकांत जीवन अपनाएं।
मूर्खों की संगति से केवल संघर्ष ही होता है;
अपनी बेपरवाह मासूमियत में अपने रास्ते पर चलते रहो,
जंगल में भटकते हाथी की तरह।
जब गुरुजी ने इस प्रकार कहा, और इन भिक्षुओं को मनाने में असफल रहे, तो वे बालाकालोनकारगामा (नमक बनाने वाले बालाका का गाँव) गए और आदरणीय भगु को एकांतवास के लाभों के बारे में प्रवचन दिया। वहाँ से वे तीन कुलीन युवकों के घर गए और उन्हें सामंजस्य की मिठास में निहित आनंद के बारे में बताया। वहाँ से वे परिलय्यक वन की ओर चले गए और वहाँ तीन माह रहने के बाद, कोसंबी वापस नहीं लौटे, सीधे श्रावस्ती नगर चले गए। कोसंबी के गृहस्थों ने आपस में विचार-विमर्श किया और कहा, "निश्चित रूप से इन पूज्य कोसंबी भिक्षुओं ने हमें बहुत हानि पहुँचाई है; इनके कारण चिंतित होकर भगवान बुद्ध चले गए हैं। हम न तो उन्हें प्रणाम करेंगे, न ही अन्य कोई आदर प्रकट करेंगे, और न ही उनके आने पर उन्हें दान देंगे। इसलिए वे या तो चले जाएँगे, या संसार में लौट जाएँगे, या भगवान बुद्ध को प्रसन्न करेंगे।" और उन्होंने ऐसा ही किया। और इस प्रकार के दंड से व्याकुल होकर ये भिक्षु (भाई) श्रावस्ती नगर गए और भगवान बुद्ध से क्षमा मांगी।

इस प्रकार गुरु ने जन्म का वर्णन किया: "पिता महान राजा शुद्धोदन (बुद्ध के पिता और कपिलवस्तु के राजा) थे, माता महामाया (बुद्ध की दिवंगत जन्म माता) थीं, और राजकुमार दिघावु मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)महावग्ग, x. 1-10.

(2) इनमें सभी देवता (देवदूत) शामिल हैं, सिवाय उन देवताओं के जो चार उच्चतम स्वर्गों (अरूप-ब्रह्मलोक/निराकार-ऊपरी स्वर्ग) में हैं।

(3) धम्मपद, खंड 3-5. क्रमांक 371 भी देखें

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **महासुक-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-429-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 429
महासुका-जातक

"जहाँ भी फलदायी वृक्ष हों," इत्यादि — यह कथा जेतवन मठ में रहने वाले गुरु ने एक भिक्षु के विषय में सुनाई थी। कथा के अनुसार, वह कोसल देश के सीमावर्ती गाँव के पास एक जंगल में रहता था और गुरु से ध्यान की विधियाँ सीखता था। लोगों ने उसके लिए एक ऐसी जगह बनाई जहाँ लोग लगातार आते-जाते रहते थे, उसे दिन-रात रहने की सुविधा दी और उसकी सेवा की। बरसात का मौसम शुरू होने के ठीक पहले महीने में ही गाँव जल गया और लोगों के पास एक बीज तक नहीं बचा था और वे उसके भिक्षापात्र में स्वादिष्ट भोजन भी नहीं भर सके। यद्यपि वह एक सुखद स्थान पर रह रहा था, फिर भी वह भिक्षा के लिए इतना विवश था कि वह न तो मार्ग पर चल सका और न ही उसकी सफलता प्राप्त कर सका। इसलिए जब तीन महीने बाद वह गुरु से मिलने गया, तो गुरु ने स्नेहपूर्वक अभिवादन करने

के बाद आशा व्यक्त की कि भिक्षा के लिए विवश होने के बावजूद उसे रहने के लिए एक सुखद स्थान मिल गया होगा। भिक्षु ने उन्हें स्थिति के बारे में बताया। गुरु ने जब सुना कि उसका निवास स्थान सुखमय है, तो कहा, "भाई, यदि ऐसा है, तो एक तपस्वी को लालच का त्याग करके जो भी भोजन मिले, उसी से संतुष्ट रहना चाहिए और भिक्षु के सभी कर्तव्यों का पालन करना चाहिए। पुराने समय के ऋषि जब संसार में पशु रूप में जन्मे, तो यद्यपि वे उस सड़े हुए वृक्ष की धूल पर ही जीवित रहे, जिसमें वे रहते थे, उन्होंने लालच का त्याग किया और जहाँ थे वहीं संतुष्ट रहे तथा प्रेम के मार्ग का अनुसरण किया। तो फिर तुम सुखमय निवास स्थान क्यों छोड़ रहे हो, क्योंकि तुम्हें जो भोजन मिल रहा है वह कम और मोटा है?" और उसके अनुरोध पर गुरु ने उसे अतीत की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले हिमालय पर्वतमाला में गंगा नदी के किनारे अंजीर के पेड़ों के एक उपवन में तोतों के कई झुंड रहते थे। वहाँ के तोतों के राजा ने, जब उसके वृक्ष का फल समाप्त हो गया, तो जो कुछ भी बचा था, चाहे वह टहनी हो, पत्ती हो, छाल हो या छिलका हो, सब खा लिया और गंगा का जल पिया। वह अत्यंत प्रसन्न और संतुष्ट होकर वहीं बैठा रहा। उसकी प्रसन्नता और संतुष्टि के कारण इंद्र का निवास हिल गया। इंद्र ने कारण जानने की कोशिश की, तोते को देखा और उसकी पुण्यता की परीक्षा लेने के लिए अपनी अलौकिक शक्ति से उस वृक्ष को सुखा दिया। वह वृक्ष केवल छेदों से भरा एक ठूंठ बनकर रह गया, जिस पर हवा के हर झोंके पड़ते थे और छेदों से धूल निकलती थी। तोते के राजा ने उस धूल को खाया और गंगा का जल पिया और कहीं और न जाकर अंजीर के ठूंठ के शीर्ष पर बैठा रहा, हवा और धूप की परवाह किए बिना।

सक्का (इंद्र) ने देखा कि तोता कितना संतुष्ट था, और उन्होंने कहा, "मित्रता के गुण के बारे में उसकी बातें सुनकर, मैं आकर उसे उसकी पसंद का वरदान दूंगा और अंजीर के वृक्ष पर दिव्य फल उत्पन्न करूंगा।" अतः उन्होंने एक राजसी हंस का रूप धारण किया और असुर अप्सरा के रूप में सूजा के साथ अंजीर के वृक्षों के उपवन में गए, और पास के एक वृक्ष की शाखा पर बैठकर तोते से बातचीत करने लगे तथा पहला श्लोक बोला:

जहां फलदार वृक्ष बहुतायत में हों,
भूखे पक्षियों का एक झुंड पाया गया:
लेकिन अगर सारे पेड़ सूख जाएं तो,
पक्षी तुरंत उड़ जाएंगे।
और इन शब्दों के बाद, तोते को वहाँ से भगाने के लिए, उसने दूसरा छंद बोला:

जल्दी करो, सर रेडबीक, यहाँ से चले जाओ;
तुम अकेले बैठकर सपने क्यों देखते हो?
हे वसंत ऋतु के पक्षी, कृपया मुझे बताओ
तुम इस सूखे ठूंठ से क्यों चिपके हुए हो?
तब तोते ने कहा, "हे हंस, कृतज्ञता की भावना से मैं इस पेड़ को नहीं छोड़ता," और उसने दो पंक्तियाँ दोहराईं:

जो बचपन से घनिष्ठ मित्र रहे हैं,
अच्छाई और सत्य के प्रति सचेत,
जीवन और मृत्यु में, सुख और दुख में
दोस्ती के दावे कभी हार नहीं मानते।
मुझे भी दयालु और अच्छा बनना अच्छा लगेगा।
मेरे मित्र ने लंबे समय तक उनका साथ दिया है;
मैं जीना चाहता हूँ, लेकिन मेरे पास जीने की इच्छा नहीं है।
इस पुराने वृक्ष से, भले ही वह मृत हो चुका हो, विदा लेना।
सक्का (इंद्र) ने उसकी बात सुनकर प्रसन्नता व्यक्त की और उसकी प्रशंसा करते हुए उसे एक विकल्प देने की इच्छा व्यक्त की और दो श्लोक कहे:

मैं आपकी मित्रता और आपके कृतज्ञ प्रेम को जानता हूँ।
ये ऐसे गुण हैं जिन्हें बुद्धिमान लोग अवश्य ही पसंद करेंगे।
मैं आपको आपकी पसंद के अनुसार कोई भी विकल्प प्रदान करता हूँ;
तोते, कौन सा वरदान पाकर तुम्हारा दिल सबसे अधिक प्रसन्न होगा?
यह सुनकर, राजा तोते ने अपनी पसंद चुनकर सातवां छंद बोला:

हे हंस, यदि तुम मुझे वह सब कुछ दे दोगी जिसकी मुझे सबसे अधिक इच्छा है,
मुझे यह वरदान दीजिए कि जिस वृक्ष से मुझे प्रेम है, वह फिर से जीवित हो उठे।
इसे एक बार फिर अपनी पुरानी शक्ति के साथ अंकुरित होने दो,
ताजी मिठास इकट्ठा करो और अच्छे फल दो।
तब सक्का (इंद्र) ने वरदान देते हुए आठवां श्लोक कहा:

देखो! मित्र, एक फलदायी और उत्तम वृक्ष!
आपके रहने के स्थान के लिए बिल्कुल उपयुक्त।
इसे एक बार फिर अपनी पुरानी शक्ति के साथ अंकुरित होने दो,
ताजी मिठास इकट्ठा करो और अच्छे फल दो।
इन शब्दों के साथ सक्का (इंद्र) ने अपना वर्तमान स्वरूप त्याग दिया और अपनी तथा सुजा की अलौकिक शक्ति प्रकट करते हुए गंगा का जल हाथ में लेकर अंजीर के वृक्ष के ठूंठ पर छिड़क दिया। तुरंत ही वृक्ष शाखाओं, तनों और शहद जैसे मीठे फलों से लदा हुआ खड़ा हो गया और नंगे रत्न-पर्वत के समान एक मनमोहक दृश्य प्रस्तुत करने लगा। इसे देखकर तोते का राजा अत्यंत प्रसन्न हुआ और सक्का (इंद्र) की स्तुति करते हुए उसने नौवां श्लोक बोला:

सक्का (इंद्र) और सक्का (इंद्र) के सभी प्रिय लोगों को आशीर्वाद मिले।
आज मुझे यह सुंदर दृश्य देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ!
सक्का (इंद्र) ने तोते को उसकी पसंद की चीज देने और अंजीर के पेड़ पर दिव्य फल उत्पन्न करने के बाद, सुजाता के साथ अपने निवास स्थान पर लौट आए।

इस कहानी के उदाहरण स्वरूप, पूर्ण ज्ञान से प्रेरित ये छंद अंत में जोड़े गए हैं:

जैसे ही तोते के राजा ने बुद्धिमानी से अपना चुनाव किया,
पेड़ पर एक बार फिर फल लग गए;
तब इंद्र अपनी रानी के साथ तेजी से उड़ गए।
जहां नंदन में देवता (देवदूत) आनंदित होते हैं।

गुरु ने अपना उपदेश समाप्त करते हुए कहा, "हे भिक्षु, प्राचीन ऋषि भले ही पशु रूप में जन्मे हों, वे भी संपत्ति के लालच से मुक्त थे। तो फिर तुम इतने उत्तम दीक्षा (धर्म) के अंतर्गत दीक्षित होकर लोभ के मार्ग पर क्यों चल रहे हो? यहीं निवास करो।" और उन्होंने उन्हें ध्यान का एक रूप बताया, जिससे उनके जन्म का पता चला। भिक्षु वापस गए और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि से संतत्व प्राप्त किया। "उस समय इंद्र (सक्का) अनुरुद्ध थे, और तोता राजा मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कुलसुका-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-430-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 430
कुल्लासुक-जातक

"देखो! अनगिनत वृक्ष," इत्यादि - यह कथा जेतवन मठ में रहने वाले गुरु ने वेरंजा क्षेत्र (*1) के विषय में सुनाई थी। जब गुरु वेरंजा में वर्षा ऋतु व्यतीत करने के बाद श्रावस्ती नगर पहुँचे, तो सत्य सभा में भिक्षुओं ने चर्चा करते हुए कहा, "महोदय, एक तथागत (बुद्ध), जो कोमल हृदय वाले क्षत्रिय और बुद्ध थे, और अलौकिक शक्तियों से संपन्न थे, वेरंजा के एक ब्राह्मण के निमंत्रण पर उनके साथ तीन माह रहे। जब मार के प्रलोभन के कारण वे ब्राह्मण से एक दिन भी भिक्षा ग्रहण नहीं कर सके, तो उन्होंने सभी लोभ त्याग दिए और तीन माह तक एक ही स्थान पर रहकर जल और थोड़ी मात्रा में पिसी हुई जड़ों के आटे पर जीवन व्यतीत किया। तथागतों का कितना संतोषमय स्वभाव है!" जब गुरुजी आए और पूछताछ करने पर उन्हें उनकी चर्चा का विषय पता चला, तो उन्होंने कहा, "हे भाइयों, यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि तथागत (बुद्ध) ने अब सभी वस्तुओं के प्रति लालसा का त्याग कर दिया है, क्योंकि पहले जब उन्होंने पशु

रूप धारण किया था तब भी उन्होंने वस्तुओं के प्रति लालसा का त्याग किया था।" और इस पर उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई। अब पूरी कहानी को ठीक उसी तरह विस्तार से सुनाया जाना है जैसे पिछली कहानी में सुनाया गया था।

देखो! यहाँ अनगिनत पेड़ हैं, सभी हरे-भरे और फलदार हैं!
हे तोते, तुम इस बेचारे सूखे पेड़ से क्यों चिपके रहते हो?
हमने कई वर्षों तक इसके स्वादिष्ट फलों का आनंद लिया है।
और भले ही अब इसके पास कुछ भी न हो, फिर भी इसे हमारी देखभाल की आवश्यकता है।
इस पेड़ पर न तो पत्ते आते हैं और न ही फल, अफसोस! यह पेड़ मर चुका है।
अपने साथी पक्षियों को दोष क्यों देना, कि वे सभी भाग गए?
वे इसे इसके फलों के लिए पसंद करते थे, और अब जब इसमें फल नहीं हैं,
बेचारे स्वार्थी मूर्ख! उनका प्यार और कृतज्ञता सब खत्म हो गया।
मैं आपकी कृतज्ञता, आपके सच्चे और निरंतर प्रेम को स्वीकार करता हूँ।
इस प्रकार के सद्गुण को बुद्धिमान लोग अवश्य ही सराहेंगे।
हे पक्षी, मैं तुम्हें तुम्हारी इच्छा अनुसार जो कुछ भी चाहिए, वह सब कुछ प्रदान करता हूँ;
मैं आपसे पूछता हूँ, मुझे बताइए, कौन सा वरदान आपके हृदय को सबसे अधिक प्रसन्न करेगा?
काश यह वृक्ष फिर से नए पत्ते और फल उगाए;
मुझे उतनी ही खुशी होगी जितनी उन्हें वह खजाना प्राप्त होगा।
फिर इंद्र (सक्का) के पास एक वृक्ष था जिस पर अमृत (देवताओं/देवदूतों का पेय) छिड़का हुआ था।
और ठंडी छाया देने वाली शाखाएँ उग आईं, जो पहले की तरह ही मनमोहक थीं।
सक्का (इंद्र) और सक्का (इंद्र) के सभी प्रिय लोगों को आशीर्वाद मिले।
आज मुझे यह आनंदमय दृश्य देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है।
इस प्रकार तोते की कृतज्ञतापूर्ण पसंद से वृक्ष फलदायी हो गया।
और नंदना के उपवनों में सक्क (इंद्र) और उनकी रानी आनन्द मनाते हैं।

अपने उपदेश के अंत में गुरु ने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उन दिनों सक्का (इंद्र) अनुराधा थे, और तोते का राजा मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)विनय, पर. i. 1-4 देखें.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **हरिता-जातक**
***स्रोत** : एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-431-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 431
हरित-जातक

"मित्र हरिता," इत्यादि - यह कथा जेतवन मठ में रहने वाले गुरु ने एक असंतुष्ट भिक्षु के बारे में सुनाई। एक सुंदर वस्त्रधारी स्त्री को देखकर वह भिक्षु असंतुष्ट हो गया और उसने अपने बाल और नाखून लंबे कर लिए तथा संसार में लौटने की इच्छा की। जब उसके गुरु और प्रशिक्षक उसे उसकी इच्छा के विरुद्ध गुरु के पास लाए और गुरु ने उससे पूछा कि क्या वह वास्तव में पथभ्रष्ट है, और यदि हाँ, तो क्यों, तो उसने कहा, "जी जी, यह सुंदर स्त्री को देखने के बाद उत्पन्न हुई वासना के कारण है।" गुरु ने कहा, "भाई, पाप सद्गुणों का नाश करता है, और साथ ही उन्हें नीरस बना देता है, और मनुष्य को नरक में पुनर्जन्म लेने का कारण बनता है; तो यह पाप तुम्हारा विनाश क्यों न करे? क्योंकि सिनेरू पर्वत पर आने वाला तूफान एक सूखे पत्ते को भी उड़ा ले जाने में संकोच नहीं करता। परन्तु इस पाप के कारण ज्ञान और बुद्धि के मार्ग पर चलने वाले और पंच शक्तियों एवं अष्टम सिद्धियों को प्राप्त कर चुके मनुष्य, यद्यपि वे महान और

पवित्र पुरुष थे, अपने विचारों को स्थिर न कर पाने के कारण रहस्यवादी ध्यान से विमुख हो गए।" और फिर उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब एक गाँव में अस्सी करोड़ (10 मिलियन) धनवान ब्राह्मण परिवार में बोधिसत्व का जन्म हुआ। उनके सुनहरे रंग के कारण उन्हें हरित्तचकुमार (युवा स्वर्णचमड़ी) कहा जाता था। तक्षशिला में शिक्षा प्राप्त करने के बाद, उन्होंने गृहस्थ जीवन व्यतीत किया। अपने माता-पिता की मृत्यु के बाद, उन्होंने अपने खजाने का निरीक्षण किया और सोचा, "खजाना तो हमेशा रहता है, लेकिन उसे पैदा करने वाले नश्वर हो जाते हैं; मुझे भी मृत्यु के कारण कण-कण में विलीन होना है।" मृत्यु के भय से भयभीत होकर उन्होंने बड़े दान दिए और हिमालय में जाकर संन्यासी जीवन व्यतीत किया। सातवें दिन उन्होंने ज्ञान और सिद्धियाँ प्राप्त कीं। वहाँ वे दीर्घकाल तक जंगली फल और जड़ों का सेवन करते रहे और नमक और सिरका लाने के लिए पर्वत से नीचे उतरते हुए, वे समय के साथ बनारस पहुँचे। वहाँ वह राजमहल में रहने लगा, और अगले दिन भिक्षा माँगते हुए राजा के महल के द्वार पर पहुँचा। राजा उसे देखकर इतना प्रसन्न हुआ कि उसने उसे बुलवाया और सफेद छतरी की छाँव में राजमहल पर बैठाया, और उसे तरह-तरह के उत्तम भोजन परोसे। भिक्षा माँगने पर राजा अत्यंत प्रसन्न हुआ और उससे पूछा, "आदरणीय महोदय, आप कहाँ जा रहे हैं?" भिक्षा ने कहा, "महाराज, हम बरसात के मौसम के लिए रहने की जगह ढूँढ़ रहे हैं।" भिक्षा ने कहा, "पूर्ण है आदरणीय महोदय," और सुबह का भोजन करने के बाद वह उसके साथ राजमहल गया, और उसके लिए दिन-रात के रहने के लिए कमरे बनवाए, और राजमहल के रखवाले को अपना सेवक नियुक्त करके उसे प्रणाम किया और चला गया। उस समय से वह महान व्यक्ति लगातार राजमहल में भोजन करता रहा और वहाँ बारह वर्ष तक रहा।

एक दिन राजा सीमा पर हुई अशांति को शांत करने गए और उन्होंने बोधिसत्व को रानी की देखरेख में सौंपते हुए कहा, "हमारे पुण्य क्षेत्र की उपेक्षा मत करना।" तब से रानी ने स्वयं अपने हाथों से उस महान सत्ता की सेवा की।

एक दिन उसने बोधिसत्व के लिए भोजन तैयार किया, और चूंकि बोधिसत्व को आने में देरी हो रही थी, इसलिए उसने सुगंधित जल से स्नान किया, महीन कपड़े का एक नरम वस्त्र पहना, और खिड़की की जाली खोलकर एक छोटे से पलंग पर लेट गई, और हवा को अपने शरीर पर बहने दिया। उसी दिन बाद में, बोधिसत्व ने एक बड़ा भीतरी और बाहरी वस्त्र धारण किया, अपना भिक्षापात्र लिया और हवा में चलते हुए खिड़की पर आए। जैसे ही रानी उनके वस्त्रों की सरसराहट से जल्दी उठी, उनका महीन वस्त्र उनसे गिर गया। एक असाधारण वस्तु ने बोधिसत्व की दृष्टि को स्तब्ध कर दिया। तब उनके हृदय में असंख्य युगों से बसा हुआ पापी भाव एक डिब्बे में लेटे हुए साँप की तरह उठ खड़ा हुआ, और उनके गहन ध्यान को भंग कर दिया। अपने विचारों को स्थिर न कर पाने के कारण वे गए और रानी का हाथ पकड़ लिया, और फिर उनके चारों ओर एक पर्दा डाल दिया गया। उनके साथ कुछ व्यभिचार करने के बाद, उन्होंने कुछ भोजन किया और उद्यान में लौट गए। और तब से प्रत्येक दिन वे इसी प्रकार व्यवहार करते रहे।

उसके दुराचार की चर्चा पूरे शहर में फैल गई। राजा के मंत्रियों ने उसे पत्र भेजकर कहा, "तपस्वी हरिता इस प्रकार व्यवहार कर रहा है।"

राजा ने सोचा, "वे हमें अलग करने की लालसा में ऐसा कह रहे हैं," और उन्हें इस पर विश्वास नहीं हुआ। सीमावर्ती क्षेत्र में शांति स्थापित करने के बाद वे बनारस लौट आए, और शहर का जुलूस निकालने के बाद वे रानी के पास गए और उनसे पूछा, "क्या यह सच है कि पवित्र तपस्वी हरित ने आपके साथ दुर्व्यवहार किया?" "हाँ, महाराज।" उन्हें रानी की बात पर भी विश्वास नहीं हुआ, और उन्होंने सोचा, "मैं स्वयं उस व्यक्ति से पूछूंगा," और पार्क में जाकर उन्होंने हरित को प्रणाम किया, और एक तरफ आदरपूर्वक बैठकर उन्होंने प्रश्न के रूप में पहला श्लोक कहा:

मित्र हरिता, मैंने अक्सर यह सुना है
आपके आदर के कारण ही पापमय जीवन का मार्ग प्रशस्त होता है;
मुझे विश्वास है कि इस रिपोर्ट में कोई सच्चाई नहीं है।
और क्या आप कर्म और विचार दोनों में निर्दोष हैं?
उन्होंने सोचा, "अगर मैं कहूँ कि मैं पाप नहीं कर रहा हूँ, तो यह राजा मुझ पर विश्वास कर लेगा, लेकिन इस संसार में सत्य बोलने के समान कोई दृढ़ आधार नहीं है। जो सत्य का त्याग करते हैं, वे बोधिवृक्ष (पीपल) के पवित्र स्थान में बैठे रहने पर भी बुद्धत्व प्राप्त नहीं कर सकते। मुझे केवल सत्य बोलना ही चाहिए।" कुछ मामलों में एक बोधिसत्व जीवन का नाश कर सकता है, वह वस्तु ले सकता है जो उसे नहीं दी गई है, व्यभिचार कर सकता है, मादक पेय पी सकता है, लेकिन वह झूठ नहीं बोल सकता, जो छल से युक्त हो और वास्तविकता का उल्लंघन करता हो। इसलिए केवल सत्य बोलते हुए ही उन्होंने दूसरा श्लोक कहा:

हे महाराज, जैसा आपने सुना है, वह बुरे रास्तों पर चल रहा है।

दुनिया की भ्रामक कलाओं में फंसकर मैंने गलती की।
यह सुनकर राजा ने तीसरा श्लोक बोला:

आत्म-प्रशंसा करने वाला अहंकार मनुष्य की सबसे गहरी बुद्धिमत्ता है जिसे दूर करना आवश्यक है।
उसके हृदय में उमड़ती हुई भावनाएँ।
तब हरिता ने उन्हें पाप की शक्ति के बारे में बताया और चौथा श्लोक बोला:

हे महाराज, इस संसार में चार प्रकार की वासनाएँ हैं।
जो अपनी शक्ति में सर्वोपरि हैं:
वासना, घृणा, अति और अज्ञानता इनके नाम हैं;
यहां ज्ञान किसी निश्चित आधार का दावा नहीं कर सकता।
यह सुनकर राजा ने पाँचवाँ श्लोक बोला:

पवित्रता और बुद्धि से परिपूर्ण
संत हरिता हमारे सम्मान के पात्र हैं।
तब हरिता ने छठा श्लोक बोला:

सुखद दुर्गुणों के साथ मिले हुए बुरे विचार,
ऋषि को संत बनने की ओर प्रेरित करना।
तब राजा ने उसे पापी वासनाओं से विमुख होने के लिए प्रोत्साहित करते हुए सातवाँ श्लोक कहा:

वह सुंदरता जो पवित्रतम हृदयों से चमकती थी
   यह नश्वर शरीर से उत्पन्न कामवासना से दूषित है;
इसे हटा दो, और तुम्हें आशीर्वाद प्राप्त होगा।
   और आपकी बुद्धिमत्ता का भरपूर प्रचार होगा।
तब बोधिसत्व ने अपने विचारों को एकाग्र करने की शक्ति पुनः प्राप्त कर ली, और पापी इच्छाओं के कष्ट को देखकर उन्होंने आठवां श्लोक कहा:

क्योंकि अंधाधुंध जुनून से कड़वा फल ही मिलता है,
मैंने वासना की हर वृद्धि को जड़ से काट डाला।
ऐसा कहकर उन्होंने राजा से अनुमति मांगी और उनकी सहमति प्राप्त करके वे अपनी कुटिया में प्रवेश कर गए। उन्होंने रहस्यमयी घेरे पर अपनी दृष्टि टिकाकर समाधि में प्रवेश किया और कुटिया से बाहर आकर हवा में पालथी मारकर बैठे हुए राजा को सच्चा उपदेश दिया और कहा, "महाराज, मैंने जनता के बीच इस कारण निंदा झेली है कि मैं ऐसी जगह पर रह रहा हूँ जहाँ मुझे नहीं रहना चाहिए। परन्तु आप सावधान रहें। अब मैं किसी ऐसे वन में लौटूँगा जो स्त्रीत्व के किसी भी कलंक से मुक्त हो।" राजा के आँसुओं और विलाप के बीच वे हिमालय लौट गए और रहस्यमयी ध्यान से विचलित हुए बिना ब्रह्मा (प्रधान देवदूत) लोक में प्रवेश कर गए।

पूरी कहानी जानने वाले गुरु ने कहा:

इस प्रकार हरिता ने सत्य और न्याय के लिए दृढ़तापूर्वक संघर्ष किया।
और कामवासना का त्याग करके ब्रह्मा (प्रधान देवदूत) ने संसार का आरोहण किया।

और अपनी पूर्ण बुद्धि से इस श्लोक का उच्चारण करते हुए उन्होंने सत्यों की व्याख्या की और जन्म का वर्णन किया:- सत्यों के समापन पर सांसारिक मन वाले भिक्षु ने संतत्व प्राप्त किया:- "उस समय राजा आनंद थे, हरित मैं ही था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **पादकुसलमानव-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

जातक क्रमांक 432
पदकुसलामनव-जातक

"हे पाताल, गंगा की कसम," इत्यादि - यह कथा जेतवन मठ में रहने वाले गुरु ने एक बालक के बारे में सुनाई थी। कहते हैं कि वह श्रावस्ती नगर के एक गृहस्थ का पुत्र था, मात्र सात वर्ष का, और पदचिह्नों को पहचानने में निपुण था। अब उसके पिता ने उसकी परीक्षा लेने के लिए उसे बिना बताए अपने एक मित्र के घर चले गए। बालक ने अपने पिता से पूछे बिना ही, उनके पदचिह्नों का अनुसरण करते हुए आकर उनके सामने खड़ा हो गया। तो एक दिन उसके पिता ने उससे पूछा, "जब मैं तुम्हें बिना बताए चला गया था, तो तुम्हें कैसे पता चला कि मैं कहाँ गया था?" बालक ने कहा, "मेरे प्रिय पिता, मैंने आपके पदचिह्नों को पहचान लिया। मैं इस मामले में निपुण हूँ।" तब उसके पिता ने उसकी परीक्षा लेने के लिए सुबह का भोजन करने के बाद अपने घर से बाहर निकले, और अपने पड़ोसी के घर गए, वहाँ से दूसरे घर गए, और फिर तीसरे घर से अपने घर लौट आए, और वहाँ से उत्तरी द्वार की ओर गए, और वहाँ से निकलकर शहर का दाएँ से बाएँ चक्कर लगाया। जेतवन मठ पहुँचकर उसने गुरु को प्रणाम किया और धार्मिक मार्ग सुनने के लिए बैठ गया। बालक ने पूछा कि उसके पिता कहाँ हैं, और जब उन्होंने कहा, "हमें नहीं पता," तो उसने अपने पिता के पदचिह्नों का अनुसरण करते हुए, पड़ोस के घर से शुरू करके, उसी रास्ते से जेतवन मठ तक गया जिससे उसके पिता आए थे। गुरु को प्रणाम करने के बाद वह अपने पिता के समक्ष खड़ा हो गया, और जब उनके पिता ने उससे पूछा कि उसे कैसे पता चला कि वह यहाँ आया है, तो उसने कहा, "मैंने आपके पदचिह्न पहचान लिए और आपके पदचिह्नों का अनुसरण करते हुए यहाँ आ गया।" गुरु ने पूछा, "शिष्य, तुम क्या कह रहे हो?" उसने उत्तर दिया, "आदरणीय, यह बालक पदचिह्नों को पहचानने में निपुण है। उसकी परीक्षा लेने के लिए मैं इस प्रकार से यहाँ आया था। मुझे घर पर न पाकर, वह मेरे पदचिह्नों का अनुसरण करते हुए यहाँ पहुँच गया।" गुरु ने कहा, "ज़मीन पर पदचिह्नों को पहचानना कोई आश्चर्य की बात नहीं है। प्राचीन ऋषि तो हवा में भी पदचिह्न पहचान लेते थे," और पूछे जाने पर उसने अतीत की एक कहानी सुनाई।

बनारस के राजा ब्रह्मदत्त के शासनकाल में एक समय की बात है, उनकी रानी पत्नी पाप करने के कारण राजा के प्रश्न का उत्तर देने के लिए बाध्य हुईं। रानी ने शपथ लेकर कहा, "यदि मैंने आपके विरुद्ध पाप किया है, तो मैं घोड़े के मुख वाली यक्षिणी बन जाऊंगी।" उनकी मृत्यु के बाद, वे घोड़े के मुख वाली यक्षिणी बन गईं और एक पर्वत की तलहटी में स्थित विशाल वन में एक चट्टानी गुफा में रहने लगीं। वे पूर्व से पश्चिम की ओर जाने वाले मार्ग पर आने-जाने वाले पुरुषों को पकड़कर खा जाती थीं। कहा जाता है कि वेसवना (*1) की तीन वर्ष सेवा करने के बाद, उन्हें तीस मील (4.23 किमी) लंबी और पाँच मील (4.23 किमी) चौड़ी एक निश्चित दूरी में लोगों को खाने की अनुमति मिली। एक दिन एक धनी, सुंदर और प्रभावशाली ब्राह्मण अपने एक बड़े दल के साथ उस मार्ग से गुजरा। यक्षिणी ने उसे देखते ही जोर से हंसते हुए उस पर आक्रमण कर दिया, और उसके सभी सेवक भाग गए। हवा की गति से उसने ब्राह्मण को पकड़कर अपनी पीठ पर लाद लिया और गुफा में प्रवेश करते ही, उस पुरुष के संपर्क में आने से, कामुक आवेश में आकर, उसे उससे स्नेह हो गया। उसने उसे खाने के बजाय अपना पति बना लिया और वे सौहार्दपूर्वक साथ रहने लगे। तब से यक्ष (राक्षस) जब भी पुरुषों को पकड़ती, उनके वस्त्र, चावल, तेल आदि भी ले लेती और उसे विभिन्न प्रकार के स्वादिष्ट भोजन परोसकर स्वयं उनका मांस खा जाती। जब भी वह कहीं जाती, उसके भाग जाने के डर से, गुफा का मुँह एक बड़े पत्थर से बंद कर देती। जब वे इस प्रकार सौहार्दपूर्ण ढंग से साथ रह रहे थे, तभी ब्राह्मण के गर्भ से यक्ष (राक्षस) के गर्भ में बोधिसत्व का जन्म हुआ। दस महीने बाद उसने एक पुत्र को जन्म दिया और ब्राह्मण और अपने बच्चे के प्रति प्रेम से भर कर उसने उन दोनों का पालन-पोषण किया। समय आने पर जब लड़का बड़ा हो गया, तो उसने उसे भी उसके पिता के साथ गुफा में रख दिया और दरवाजा बंद कर दिया। एक दिन बोधिसत्व को जब पता चला कि उसकी माँ चली गई है, तो उसने पत्थर हटाकर अपने पिता को बाहर निकाल दिया। जब माँ ने लौटकर पूछा कि पत्थर किसने हटाया, तो उसने कहा, "मैंने हटाया, माँ: हम अंधेरे में नहीं बैठ सकते।" अपने बच्चे के प्रति प्रेम के कारण उसने एक शब्द भी नहीं कहा। एक दिन बोधिसत्व ने अपने पिता से पूछा, "प्रिय पिता, आपका मुख मेरी माँ के मुख से भिन्न है; इसका क्या कारण है?" "मेरे पुत्र, तुम्हारी माँ यक्ष (राक्षस) है और मनुष्य का मांस खाती है, लेकिन तुम और मैं मनुष्य हैं।" "यदि ऐसा है, तो हम यहाँ क्यों रहते हैं? चलो, हम मनुष्यों के निवास स्थान पर चलते हैं।" "मेरे प्रिय पुत्र, यदि हम भागने का प्रयास करेंगे, तो तुम्हारी माँ हम दोनों को मार डालेगी।" बोधिसत्व ने अपने पिता को आश्वस्त करते हुए कहा, "डरो मत, प्रिय पिता; मनुष्यों के निवास स्थान पर तुम्हारा लौटना मेरी जिम्मेदारी है।" अगले दिन जब उसकी माँ चली गई, तो वह अपने पिता को लेकर भाग गया। जब यक्ष (राक्षस) वापस लौटा और उन्हें न पाकर हैरान रह गया, तो वह हवा की गति से आगे बढ़ी और उन्हें पकड़ लिया और बोली, "हे ब्राह्मण,तुम क्यों भाग रहे हो? क्या तुम्हें यहाँ कुछ चाहिए?" "मेरी प्रिय," उसने कहा, "मुझ पर क्रोधित मत होइए। आपका पुत्र मुझे अपने साथ ले गया था।" और बिना कुछ और कहे, अपने बच्चे के प्रति प्रेम के कारण, उसने उन्हें सांत्वना दी और कुछ दिनों के पलायन के बाद उन्हें अपने निवास स्थान पर वापस ले आई। बोधिसत्व ने सोचा, "मेरी माता का कार्यक्षेत्र सीमित होना चाहिए। मान लीजिए कि मैं उनसे पूछूँ कि उनका अधिकार किस सीमा तक फैला हुआ है। तो मैं उस सीमा से परे जाकर बच निकलूँगा।" इसलिए एक दिन अपनी माता के पास आदरपूर्वक बैठे हुए उन्होंने कहा, "मेरी प्रिय, जो माता का होता है, वह बच्चों को

भी मिलता है; अब मुझे बताओ कि हमारी भूमि की सीमा क्या है?” उसने उसे सभी दिशाओं में सभी स्थलचिह्न, पर्वत और इसी प्रकार की अन्य चीजें बताईं, और अपने पुत्र को तीस लीग (x 4.23 किमी) लंबी और पाँच लीग (x 4.23 किमी) चौड़ी जगह की ओर इशारा करते हुए कहा, “इसे इतना ही समझो, मेरे पुत्र।” दो-तीन दिन बीतने के बाद, जब उसकी माता जंगल चली गई, तो उसने अपने पिता को अपने कंधे पर उठाया और अपनी माता के इशारे पर हवा की गति से दौड़ते हुए उस नदी के किनारे पहुँच गया जो सीमा थी। माता भी, जब लौटते समय उन्हें नहीं देखा, तो उनके पीछे-पीछे चली। बोधिसत्व अपने पिता को नदी के बीच में ले गया, और वह नदी के किनारे आकर खड़ी हो गई, और जब उसने देखा कि वे उसकी सीमा से बाहर निकल गए हैं, तो वह वहीं रुक गई और रोते हुए बोली, “मेरे प्यारे बच्चे, अपने पिता के साथ यहाँ आओ। मेरा क्या कसूर है? किस बात में तुम्हारे साथ सब ठीक नहीं चल रहा है?” "मेरे स्वामी, वापस आ जाइए।" इस प्रकार उसने अपने पुत्र और पति से विनती की। तब ब्राह्मण नदी पार कर गया। उसने अपने पुत्र से भी प्रार्थना की और कहा, "प्रिय पुत्र, ऐसा मत करो: वापस आ जाओ।" "माँ, हम मनुष्य हैं: आप यक्ष (राक्षस) हैं। हम आपके साथ सदा नहीं रह सकते।" "और क्या तुम वापस नहीं लौटोगे?" "नहीं, माँ।" "तो यदि तुम वापस नहीं लौटते—क्योंकि मनुष्यलोक में रहना कष्टदायी है, और जो कोई शिल्प नहीं जानते वे जी नहीं सकते—तो मैं पारस पत्थर की विद्या में निपुण हूँ: इसकी शक्ति से बारह वर्ष बाद भी कोई उन लोगों के पदचिन्हों पर चल सकता है जो चले गए हैं। यह तुम्हारे लिए जीविका का साधन सिद्ध होगा।" "मेरे बच्चे, यह अनमोल ताबीज लो।" और इतने गहरे दुख से व्याकुल होते हुए भी, अपने बच्चे के प्रेम से उसने उसे ताबीज दे दिया। बोधिसत्व नदी में खड़े-खड़े ही कछुए की तरह हाथ जोड़कर ताबीज लेकर अपनी माता को प्रणाम करते हुए रोते हुए बोले, "अलविदा, माता।" यक्ष (राक्षस) ने कहा, "यदि तुम वापस नहीं लौटे, मेरे पुत्र, तो मैं जीवित नहीं रह सकती," और उसने अपनी छाती पर हाथ मारा, और तुरंत अपने पुत्र के शोक में उसका हृदय टूट गया और वह वहीं गिरकर मर गई। बोधिसत्व को जब अपनी माता की मृत्यु का पता चला, तो उसने अपने पिता को पुकारा और जाकर चिता बनाकर उसके शरीर को जला दिया। आग बुझाने के बाद,उसने विभिन्न रंगों के फूलों का अर्पण किया और रोते-बिलखते अपने पिता के साथ बनारस लौट आया।

राजा को बताया गया, “पैरों के निशान पहचानने में माहिर एक युवक द्वार पर खड़ा है।” जब राजा ने उसे अंदर आने को कहा, तो वह अंदर आया और राजा को प्रणाम किया। उसने कहा, “मेरे मित्र, क्या आप कोई हुनर जानते हैं?” राजा ने कहा, “महाराज, बारह वर्ष पहले किसी ने संपत्ति चुराई थी, मैं उसका पीछा कर रहा हूँ और उसे पकड़ सकता हूँ।” राजा ने कहा, “तो मेरी सेवा में आ जाओ। मैं प्रतिदिन एक हजार सिक्के लेकर तुम्हारी सेवा करूँगा।” राजा ने कहा, “ठीक है, मित्र, तुम मेरी सेवा करोगे।” और राजा ने उसे प्रतिदिन एक हजार सिक्के देने का आदेश दिया। एक दिन कुल पुरोहित ने राजा से कहा, “महाराज, क्योंकि यह युवक अपने हुनर से कुछ नहीं करता, इसलिए हम नहीं जानते कि इसमें कोई कौशल है या नहीं: अब हम इसकी परीक्षा लेंगे।” राजा तुरंत मान गया, और दोनों ने विभिन्न खजानों के रखवालों को सूचना दी, और सबसे कीमती गहने लेकर चबूतरे से नीचे उतरे, और महल के चारों ओर तीन बार टटोलने के बाद, उन्होंने दीवार के ऊपर एक सीढ़ी लगाई और उसके सहारे बाहर उतर गए। फिर वे न्याय कक्ष में प्रवेश कर गए, और वहाँ बैठने के बाद वापस आकर सीढ़ी को दीवार पर फिर से रखकर शहर में उतर गए। एक तालाब के किनारे पहुँचकर उन्होंने उसके चारों ओर तीन बार चक्कर लगाया, फिर अपना खजाना तालाब में डाल दिया और वापस चबूतरे पर चढ़ गए। अगले दिन बहुत शोर मच गया और लोग कहने लगे, "महल से खजाना चोरी हो गया है।" राजा ने अनभिज्ञता का नाटक करते हुए बोधिसत्व को बुलाया और कहा, "मित्र, महल से बहुत कीमती खजाना चोरी हो गया है: हमें उसका पता लगाना होगा।" बोधिसत्व ने कहा, "महाराज, जो बारह वर्ष पहले चोरी हुए खजाने को चोरों के निशानों का पीछा करके वापस ला सकता है, उसके लिए एक दिन और रात में चोरी की संपत्ति को वापस लाना कोई आश्चर्य की बात नहीं है। मैं उसे वापस लाऊंगा; आप चिंता न करें।" बोधिसत्व ने कहा, "तो फिर उसे वापस लाओ, मित्र।" बोधिसत्व ने कहा, "ठीक है, महाराज," और जाकर अपनी माता की स्मृति को प्रणाम करते हुए, चबूतरे पर खड़े-खड़े ही मंत्र दोहराया और कहा, "महाराज, दो चोरों के पदचिह्न दिखाई दे रहे हैं।" राजा और पुजारी के पदचिन्हों पर चलते हुए वह राजकक्ष में प्रवेश किया, और वहाँ से निकलकर चबूतरे से नीचे उतरा, और महल का तीन बार चक्कर लगाने के बाद वह दीवार के पास पहुँचा। उस पर खड़े होकर उसने कहा, "महाराज, इस दीवार से शुरू होकर मुझे हवा में पदचिह्न दिखाई दे रहे हैं: मेरे लिए एक सीढ़ी लाओ।" दीवार के सहारे उसके लिए एक सीढ़ी लगवा दी गई, और वह उससे नीचे उतरा, और उनके पदचिह्नों का पीछा करते हुए न्याय कक्ष तक पहुँचा। फिर महल में लौटकर उसने दीवार के सहारे सीढ़ी लगवाई, और उससे नीचे उतरकर वह तालाब के पास पहुँचा। उसके तीन बार चक्कर लगाने के बाद उसने कहा, "महाराज, चोर इस तालाब में उतरे हैं," और खजाना निकालकर, मानो उसने स्वयं उसे वहाँ रखा हो, उसने उसे राजा को दिया और कहा, "महाराज, ये दोनों चोर प्रतिष्ठित व्यक्ति हैं:इस तरह वे महल में चढ़ गए।” लोग खुशी से झूम उठे और ज़ोर-ज़ोर से कपड़े लहराने लगे। राजा ने सोचा, “मुझे लगता है कि यह युवक उनके कदमों का पीछा करके उस जगह को जानता है जहाँ चोरों ने खजाना छिपाया है, लेकिन चोरों को पकड़ नहीं पा रहा है।” फिर उसने कहा, “तुमने चोरों द्वारा चुराया गया माल तो तुरंत हमारे पास ला दिया, लेकिन क्या तुम चोरों को पकड़कर हमारे पास ला पाओगे?” “महाराज, चोर यहीं हैं: वे ज़्यादा दूर नहीं हैं।” “वे कौन हैं?” “महाराज, जिसे चाहे चोर बना लो। जब से आपने अपना खजाना वापस पा लिया है, आपको चोरों की क्या ज़रूरत है? इसके बारे में मत पूछिए।” “मित्र, मैं तुम्हें प्रतिदिन एक हज़ार सिक्के देता हूँ: चोरों को मेरे पास लाओ।” “महाराज, जब खजाना वापस मिल गया है, तो चोरों की क्या ज़रूरत है?” “मित्र, हमारे लिए खजाने को वापस पाने से बेहतर है कि हम चोरों को पकड़ लें।” “तो महाराज, मैं आपको

यह नहीं बताऊंगा कि "फलां-फलां चोर हैं," बल्कि मैं आपको एक घटना बताऊंगा जो बहुत पहले घटी थी।" यदि तुम बुद्धिमान हो, तो तुम इसका अर्थ जान जाओगे।" और इतना कहकर उसने एक पुरानी कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, महाराज, बनारस से कुछ ही दूरी पर नदी के किनारे बसे एक गाँव में पाताल नाम का एक नर्तक रहता था। एक दिन वह अपनी पत्नी के साथ बनारस गया और नाच-गाकर पैसे कमाकर मेले के अंत में उसने कुछ चावल और शराब खरीदी। अपने गाँव लौटते समय वह नदी के किनारे पहुँचा और बहती हुई नदी को देखते हुए अपनी शराब पीने बैठ गया। जब वह नशे में चूर हो गया और अपनी कमजोरी से बेखबर हो गया, तो उसने कहा, "मैं अपना बड़ा वीणा अपने गले में बाँधकर नदी में उतर जाऊँगा।" और उसने अपनी पत्नी का हाथ पकड़कर नदी में उतर गया। पानी वीणा के छेदों में घुस गया और उसके भार से वह डूबने लगा। लेकिन जब उसकी पत्नी ने उसे डूबते देखा, तो उसने उसका हाथ छोड़ दिया और नदी से बाहर निकलकर किनारे पर खड़ी हो गई। नर्तक पाताल कभी ऊपर उठता, कभी नीचे डूबता, और पानी निगलने से उसका पेट फूल गया। तब उसकी पत्नी ने सोचा, "मेरे पति अब मर रहे हैं: मैं उनसे एक गीत माँगूँगी, और लोगों के बीच इसे गाकर मैं अपनी जीविका कमाऊँगी।" और यह कहते हुए, "मेरे स्वामी, आप पानी में डूब रहे हैं: मुझे बस एक गीत दे दीजिए, और मैं उसी से अपनी जीविका कमाऊँगी," उसने यह छंद गाया:

हे पाताल, गंगा ने बहा दिया,
नृत्य में प्रसिद्ध और गायन में निपुण,
पाताला, जय हो! जैसे-जैसे तुम आगे बढ़ते जाओ,
कृपया मुझे कोई छोटा सा गीत सुना दीजिए।
तब नर्तक पाताल ने कहा, "मेरे प्रिय, मैं तुम्हें एक छोटा सा गीत कैसे सुनाऊँ? जो जल लोगों का मोक्ष (निर्वाण) रहा है, वही मुझे मार रहा है," और उसने एक श्लोक बोला:

जिससे पीड़ा से व्याकुल आत्माओं पर पानी छिड़का जाता है,
मुझे सीधे मार दिया गया। मेरी शरण ही मेरी कमजोरी साबित हुई।
इस श्लोक की व्याख्या करते हुए बोधिसत्व ने कहा, "हे प्रभु, जैसे जल मनुष्यों का आश्रय है, वैसे ही राजाओं का भी। यदि उनसे कोई खतरा उत्पन्न हो, तो उसे कौन रोकेगा? हे प्रभु, यह एक गुप्त विषय है। मैंने बुद्धिमानों को बोधगम्य कथा सुनाई है: इसे समझिए।" "मित्र, मैं इस प्रकार की गुप्त कथा नहीं समझ सकता। चोरों को पकड़ो और मेरे पास लाओ।" तब बोधिसत्व ने कहा, "हे प्रभु, इसे सुनिए और समझिए।" और उन्होंने एक और कथा सुनाई।

"मेरे स्वामी, पहले बनारस नगर के द्वार के बाहर एक गाँव में, एक कुम्हार अपने बर्तनों के लिए मिट्टी लाया करता था। वह नियमित रूप से एक ही जगह से मिट्टी लाता था और उसने पहाड़ की गुफा में एक गहरा गड्ढा खोदा था। एक दिन जब वह मिट्टी ला रहा था, अचानक अचानक एक तूफानी बादल उठा और भारी बारिश हुई। बाढ़ ने गड्ढे को बहा दिया और उसकी दीवार को तोड़ दिया, जिससे उस आदमी का सिर टूट गया। जोर-जोर से विलाप करते हुए उसने यह छंद कहा:

जिससे बीज उगते हैं, जिससे मनुष्य का पालन-पोषण होता है।
इसने मेरा सिर चकनाचूर कर दिया। मेरा आश्रय ही मेरी कमजोरी साबित हुआ।
"हे महाराज, जिस प्रकार परम पूज्य पृथ्वी, जो लोगों की शरणस्थली है, ने कुम्हार का सिर चकनाचूर कर दिया, उसी प्रकार जब कोई राजा, जो परम पूज्य पृथ्वी के समान समस्त संसार की शरणस्थली है, उठ खड़ा हो और चोर की तरह व्यवहार करे, तो इस खतरे को कौन रोक सकता है? क्या आप, महाराज, इस कहानी के आवरण में छिपे चोर को पहचान सकते हैं?" "मित्र, हमें कोई छिपा हुआ अर्थ नहीं चाहिए। बस कहिए, 'यह रहा चोर,' और उसे पकड़कर मेरे हवाले कर दीजिए।"

राजा की रक्षा करते हुए और बिना कुछ कहे, "तुम चोर हो," उसने एक और कहानी सुनाई।

महाराज, इसी नगर में एक व्यक्ति के घर में आग लग गई। उसने दूसरे व्यक्ति को घर में जाकर अपना सामान बाहर लाने का आदेश दिया। जब वह व्यक्ति घर में घुसकर अपना सामान बाहर ला रहा था, तभी दरवाजा बंद हो गया। धुएँ से अंधा होकर, बाहर निकलने का रास्ता न देख पाने और बढ़ती लपटों से पीड़ित होकर, वह अंदर ही शोक मनाता रहा और उसने ये पंक्तियाँ कहीं:

जो ठंड को नष्ट करता है और अनाज को सुखा देता है,
यह मेरे अंगों को नष्ट कर देता है। मेरा आश्रय ही मेरी कमजोरी साबित होता है।
"हे महाराज, जो प्रजा के लिए अग्नि के समान शरणस्थल था, उसी ने रत्नों का गड्ढा चुरा लिया। चोर के बारे में मुझसे मत पूछिए।" "मित्र, सीधे चोर को मेरे पास ले आओ।" राजा को यह बताए बिना कि वह चोर है, उसने एक और कहानी सुना दी।

एक बार, महाराज, इसी शहर में एक व्यक्ति ने अत्यधिक भोजन कर लिया और वह उसे पचा नहीं पाया। पीड़ा और शोक से व्याकुल होकर उसने यह छंद कहा:

वह भोजन जिस पर अनगिनत ब्राह्मणों का जीवन निर्भर करता है
इसने मुझे पूरी तरह से मार डाला। मेरा आश्रय ही मेरी कमजोरी साबित हुआ।
“एक व्यक्ति, जो महाराज, चावल की तरह जनता का आश्रय था, उसने संपत्ति चुरा ली। जब वह संपत्ति बरामद हो गई, तो चोर के बारे में क्यों पूछें?” “मित्र, यदि संभव हो तो मुझे चोर को लाओ।” राजा को समझाने के लिए, उसने एक और कहानी सुनाई।

महाराज, पहले इसी शहर में एक हवा चली और एक आदमी के अंग तोड़ दिए। शोक मनाते हुए उसने यह छंद कहा:

जून माह में प्रार्थना द्वारा ज्ञानी लोगों को मिलने वाली हवा,
मेरे अंग टूट गए। मेरा आश्रय ही मेरी कमजोरी साबित हुआ।
"हे महाराज, इस प्रकार मेरे आश्रय से ही खतरा उत्पन्न हुआ। इस कहानी को समझिए।" "मित्र, चोर को मेरे पास लाओ।" राजा को समझाने के लिए उसने एक और कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, महाराज, हिमालय की ढलान पर एक वृक्ष था जिसकी शाखाएँ दो भागों में बँटी हुई थीं, वह असंख्य पक्षियों का निवास स्थान था। उसकी दो शाखाएँ आपस में रगड़ खा गईं। इससे धुआँ उठा और आग की चिंगारियाँ गिरने लगीं। यह देखकर प्रधान पक्षी ने यह छंद बोला:

जिस पेड़ पर हम लेटे हुए थे, उससे आग की लपटें निकल रही हैं:
हे पक्षियों, बिखर जाओ। हमारा आश्रय ही हमारी कमजोरी साबित होता है।
"हे महाराज, जिस प्रकार वृक्ष पक्षियों का आश्रय होता है, उसी प्रकार राजा अपनी प्रजा का आश्रय होता है। यदि वह चोर बन जाए, तो इस खतरे को कौन रोकेगा? इस बात का ध्यान रखिए, महाराज।" "मित्र, मुझे चोर लाकर दो।" फिर उसने राजा को एक और कहानी सुनाई।

महाराज, बनारस के एक गाँव में, एक सज्जन के घर के पश्चिम की ओर खूंखार मगरमच्छों से भरी एक नदी बहती थी। इस परिवार में एक इकलौता बेटा था, जिसने अपने पिता की मृत्यु के बाद अपनी माँ की देखभाल की। उसकी माँ ने उसकी इच्छा के विरुद्ध एक सज्जन की बेटी को उसकी पत्नी के रूप में घर में लाया। पहले तो वह अपनी सास से स्नेह रखती थी, लेकिन बाद में जब उसके अपने कई बेटे-बेटियाँ हुए, तो वह उससे छुटकारा पाना चाहती थी। उसकी अपनी माँ भी उसी घर में रहती थी। अपने पति के सामने उसने अपनी सास की हर तरह से आलोचना की, ताकि वह उससे नाराज़ हो जाए। उसने कहा, "मैं तुम्हारी माँ का भरण-पोषण नहीं कर सकती: तुम्हें उसे मार डालना चाहिए।" जब उसने उत्तर दिया, "हत्या एक गंभीर मामला है: मैं उसे कैसे मारूँ?" तो उसने कहा, "जब वह सो जाएगी, तो हम उसे बिस्तर समेत उठाकर मगरमच्छों वाली नदी में फेंक देंगे। फिर मगरमच्छ उसे खा जाएँगे।" "और तुम्हारी माँ कहाँ है?" उसने कहा। "वह तुम्हारी माँ के साथ उसी कमरे में सोती है।" “तो जाओ और जिस पलंग पर वह लेटी है, उस पर रस्सी बांधकर निशान लगा दो।” उसने ऐसा ही किया और कहा, “मैंने निशान लगा दिया है।” पति ने कहा, “एक पल रुकिए; पहले लोगों को सोने दीजिए।” और वह सोने का नाटक करते हुए लेट गया, और फिर जाकर अपनी सास के पलंग पर रस्सी बांध दी। फिर उसने अपनी पत्नी को जगाया, और वे दोनों मिलकर उसे पलंग समेत उठाकर नदी में फेंक दिया। वहाँ मगरमच्छों ने उसे मार डाला और खा लिया। अगले दिन उसे अपनी माँ के साथ हुई घटना का पता चला और उसने कहा, “मेरे स्वामी, मेरी माँ मर गई है, अब हम आपकी माँ को मार डालें।” “ठीक है,” उसने कहा, “हम कब्रिस्तान में एक चिता बनाएंगे, और उसे आग में डालकर मार डालेंगे।” तो पति-पत्नी उसे सोते हुए ही कब्रिस्तान ले गए और वहाँ रख दिया। फिर पति ने अपनी पत्नी से कहा, “क्या तुम आग लाई हो?” “मैं भूल गई हूँ, मेरे स्वामी।” “तो जाओ और ले आओ।” “मैं जाने की हिम्मत नहीं कर सकती, मेरे स्वामी, और यदि आप जाते हैं, तो मैं यहाँ रहने की हिम्मत नहीं कर सकती: हम साथ चलेंगे।” उनके जाने के बाद, ठंडी हवा से बूढ़ी औरत की नींद खुल गई, और जब उसने देखा कि यह एक कब्रिस्तान है, तो उसने सोचा, “वे मुझे मारना चाहते हैं: वे आग लाने गए हैं। उन्हें नहीं पता कि मैं कितनी शक्तिशाली हूँ।” और उसने एक शव को पलंग पर लिटाया और उसे कपड़े से ढक दिया, और भागकर उसी स्थान पर एक पहाड़ी गुफा में छिप गई। पति-पत्नी आग लाए और शव को बूढ़ी औरत समझकर उसे जला दिया और चले गए। एक डाकू अपना गठरी इसी पहाड़ी गुफा में छोड़ गया था और उसे लेने वापस आते समय उसने बूढ़ी औरत को देखा और सोचा, “यह अवश्य ही कोई यक्ष (राक्षस) है: मेरी गठरी में भूत-प्रेत का वास है,” और वह एक दैत्य चिकित्सक को ले आया। चिकित्सक ने एक मंत्र पढ़ा और गुफा में प्रवेश किया। तब उसने उससे कहा, “मैं कोई यक्ष (राक्षस) नहीं हूँ: आओ, हम इस खजाने का साथ में आनंद लेंगे।”“इस पर कैसे विश्वास किया जाए?” “अपनी जीभ मेरी जीभ पर रखो।” उसने ऐसा ही किया, और उसने उसकी जीभ का एक टुकड़ा काट लिया और उसे ज़मीन पर गिरा दिया। दैत्य चिकित्सक ने सोचा, “यह ज़रूर कोई यक्ष (राक्षस) है,” और वह ज़ोर से चिल्लाया और अपनी जीभ से खून टपकते हुए भाग गया। अगले दिन बुढ़िया ने एक साफ अंतर्वस्त्र पहना और

तरह-तरह के गहनों का गट्ठा लेकर घर चली गई। बहू ने उसे देखकर पूछा, “माँ, यह आपको कहाँ से मिला?” “मेरी प्यारी, इस कब्रिस्तान में लकड़ी के ढेर पर जलाए जाने वाले सभी लोगों को यही मिलता है।” “मेरी प्यारी माँ, क्या मुझे भी यह मिल सकता है?” “अगर तुम मेरी तरह बन जाओगी, तो तुम्हें मिल जाएगा।” इसलिए अपने पति से एक शब्द भी कहे बिना, बहुत सारे गहने पहनने की इच्छा में, वह वहाँ गई और खुद को जला लिया। अगले दिन उसके पति को उसकी याद आई और उसने कहा, “मेरी प्यारी माँ, क्या इस समय आपकी बहू नहीं आ रही है?” तब उसने उसे डांटते हुए कहा, “अरे! "तुम बुरे आदमी, मरे हुए लोग वापस कैसे आते हैं?" और उसने ये पंक्तियाँ कहीं:

एक सुंदर लड़की, जिसके सिर पर फूलों का मुकुट है,
चंदन के तेल की सुगंध से युक्त, मुझे आगे ले जाया गया
मेरे घर में एक खुशहाल दुल्हन राज करेगी:
उसने मुझे आगे बढ़ने के लिए प्रेरित किया। मेरा सहारा ही मेरी कमजोरी साबित हुआ।
"हे महाराज, जैसे बहू अपनी सास के लिए शरणस्थली होती है, वैसे ही राजा अपनी प्रजा के लिए शरणस्थली होता है। यदि वहाँ से कोई खतरा उत्पन्न हो, तो क्या किया जा सकता है? कृपया इस बात का ध्यान रखें।" "मित्र, मुझे तुम्हारी बातें समझ नहीं आ रही हैं: बस चोर को मेरे पास ले आओ।" उसने मन ही मन सोचा, "मैं राजा की रक्षा करूँगा," और उसने एक और कहानी सुनाई।

हे महाराज, पुराने समय में इसी नगर में एक व्यक्ति की प्रार्थना का फल उसे मिला। पुत्र के जन्म पर पिता पुत्र प्राप्ति की खुशी से अत्यंत प्रसन्न हुआ और उसे खूब प्यार किया। पुत्र के बड़े होने पर उसने उसका विवाह कर दिया और समय बीतने पर वह स्वयं वृद्ध हो गया तथा कोई कार्य करने में असमर्थ हो गया। तब पुत्र ने कहा, "आप कोई कार्य नहीं कर सकते: आपको यहाँ से चले जाना चाहिए," और उसने उसे घर से निकाल दिया। बड़ी कठिनाई से वह भीख मांगकर अपना जीवन यापन करता रहा और शोक में उसने यह श्लोक कहा:

जिसके जन्म की मुझे सबसे ज्यादा चाह थी, और किसी चीज की नहीं।
इसने मुझे घर से दूर कर दिया। मेरा आश्रय ही मेरी कमजोरी साबित हुआ।
“हे महाराज, जिस प्रकार एक वृद्ध पिता की देखभाल एक स्वस्थ पुत्र द्वारा की जानी चाहिए, उसी प्रकार समस्त प्रजा की रक्षा राजा द्वारा की जानी चाहिए, और यह वर्तमान खतरा राजा से ही उत्पन्न हुआ है, जो समस्त मनुष्यों का रक्षक है। महाराज, इस तथ्य से जान लीजिए कि चोर फलां व्यक्ति है।” “मुझे यह समझ नहीं आ रहा, चाहे यह तथ्य हो या असत्य: या तो चोर को मेरे पास लाओ, या तुम स्वयं चोर होगे।” इस प्रकार राजा ने बार-बार युवक से प्रश्न किया। तब उसने उससे कहा, “हे महाराज, क्या आप सचमुच चाहते हैं कि चोर पकड़ा जाए?” “जी हां।” “तो मैं सभा के बीच में घोषणा कर दूंगा, फलां व्यक्ति चोर है।” “ठीक है, मित्र।” राजा की बात सुनकर उसने मन ही मन सोचा, “यह राजा मुझे अपनी रक्षा करने नहीं देगा: मैं अब चोर को पकड़ूंगा।” और जब लोग एकत्रित हो गए, तो उसने उन्हें संबोधित करते हुए ये पंक्तियाँ कहीं:

शहर और गांव के सभी उपस्थित लोग ध्यान से सुनें।
देखो! पानी में आग लग गई है। सुरक्षा से डर पैदा होता है।
लूटे गए राज्य के लोग राजा और पुजारी से शिकायत कर सकते हैं;
अब से अपनी रक्षा स्वयं करो। शरण लेना ही तुम्हारी कमजोरी साबित करता है।
जब लोगों ने उसकी बात सुनी, तो उन्होंने सोचा, “राजा ने दूसरों की रक्षा करने के बजाय दोष दूसरे पर डाल दिया। अपने हाथों से खजाना तालाब में रखने के बाद वह चोर की तलाश में निकल पड़ा। ताकि वह भविष्य में फिर कभी चोर की तरह व्यवहार न करे, हम इस दुष्ट राजा को मार डालेंगे।” इसलिए वे लाठियाँ और डंडे लेकर उठे और राजा और पुजारी को वहीं पीट-पीटकर मार डाला। लेकिन उन्होंने बोधिसत्व का अभिषेक किया और उन्हें सिंहासन पर बिठाया।

गुरु ने सत्यों की व्याख्या करने के लिए यह कथा सुनाने के बाद कहा, "हे शिष्य, पृथ्वी पर पदचिह्नों को पहचानना कोई आश्चर्य की बात नहीं है: प्राचीन ऋषि तो उन्हें आकाश में पहचान लेते थे," और उन्होंने जन्म का वर्णन किया: सत्यों के समापन पर, शिष्य और उनके पुत्र ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की सिद्धि प्राप्त की: "उन दिनों पिता कश्यप थे, और पदचिह्नों को पहचानने में कुशल युवक मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) यक्षों का स्वामी।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **लोमासकस्सप-जातक**

स्रोत: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।

पिछला <<<<-----||-433-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 433
लोमसकश्यप-जातक

"इंद्र के समान राजा," इत्यादि — यह कथा जेतवन मठ में रहने वाले गुरु ने एक सांसारिक मन वाले भिक्षु के बारे में सुनाई। गुरु ने उनसे पूछा कि क्या वे संसार के प्रति आसक्त हैं, और जब उन्होंने स्वीकार किया कि वे संसार के प्रति आसक्त हैं, तो गुरु ने कहा, "भाई, उच्चतम ख्याति प्राप्त पुरुष भी कभी-कभी निंदा के पात्र हो जाते हैं। ऐसे पाप पवित्र प्राणियों को भी अपवित्र कर देते हैं; तुम्हारे जैसे व्यक्ति को तो और भी अधिक।" और फिर उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, बनारस के राजा ब्रह्मदत्त के पुत्र राजकुमार ब्रह्मदत्त और उनके कुल पुरोहित के पुत्र कश्यप सहपाठी थे और एक ही गुरु से सभी विद्याओं की शिक्षा प्राप्त करते थे। समय बीतने पर, पिता की मृत्यु के बाद युवा राजकुमार को राज्य का उत्तराधिकार प्राप्त हुआ। कश्यप ने सोचा, "मेरा मित्र राजा बन गया है: वह मुझे बड़ी शक्ति देगा: मुझे शक्ति से क्या लेना-देना? मैं राजा और अपने माता-पिता से विदा लेकर संन्यासी बन जाऊंगा।" अतः वे हिमालय चले गए और संन्यासी जीवन व्यतीत किया। सातवें दिन उन्होंने ज्ञान और ज्ञान प्राप्त कर लिया और खेतों में बचे हुए अनाज से अपना जीवन यापन करने लगे। लोगों ने उन्हें लोमसकश्यप (बालों वाला कश्यप) नाम दिया। अपनी इंद्रियों को वश में करके वे घोर तपस्या करने वाले संन्यासी बन गए। उनकी तपस्या के कारण इंद्र का निवास स्थान हिल गया। कारण पर विचार करते हुए, सक्का (इंद्र) ने उसका अवलोकन किया और सोचा, "यह तपस्वी अपने अत्यंत प्रचंड पुण्य से मुझे सक्का (इंद्र) के निवास से भी गिरा देगा। बनारस के राजा से गुप्त रूप से मिलने के बाद, मैं उसकी तपस्या भंग कर दूंगा।" सक्का (इंद्र) की शक्ति से वह आधी रात को बनारस के राजा के राजकक्ष में प्रवेश कर गया और अपने स्वरूप के प्रकाश से पूरे कक्ष को प्रकाशित कर दिया। राजा के सामने हवा में खड़े होकर उसने उन्हें जगाया और कहा, "महाराज, उठिए।" जब राजा ने पूछा, "आप कौन हैं?" तो उसने उत्तर दिया, "मैं सक्का (इंद्र) हूँ।" "आप किसलिए आए हैं?" "महाराज, क्या आप पूरे भारत पर एकाधिकार चाहते हैं?" "हाँ, बिल्कुल चाहता हूँ।" तब सक्का (इंद्र) ने कहा, "तो लोमसकश्यप को यहाँ लाओ और उससे वध किए गए पशुओं का यज्ञ करने को कहो, और तुम सक्का (इंद्र) के समान वृद्धावस्था और मृत्यु से मुक्त हो जाओगे और समस्त भारत पर शासन करोगे," और उसने पहला श्लोक दोहराया:

तुम इंद्र के समान राजा बनोगे।
बुढ़ापा या मृत्यु को कभी भी दुर्भाग्यवश न देखने की सोची।
क्या कश्यप को आपकी सलाह माननी चाहिए?
जीवित बलिदान अर्पित करें।

उनकी बात सुनकर राजा तुरंत मान गए। सक्का (इंद्र) ने कहा, "तो देर मत करो," और चले गए। अगले दिन राजा ने सयाह नामक एक सलाहकार को बुलाया और कहा, "हे महाराज, मेरे प्रिय मित्र लोमसकश्यप के पास जाइए और मेरी ओर से उनसे यह कहिए: "राजा आपको यज्ञ करने के लिए राजी करके पूरे भारत के एकमात्र शासक बन जाएंगे, और वे आपको आपकी इच्छा अनुसार भूमि प्रदान करेंगे: मेरे साथ यज्ञ करने आइए।" उन्होंने उत्तर दिया, "महाराज," और तपस्वी के निवास स्थान का पता लगाने के लिए ढोल बजाकर घोषणा की, और जब एक वनपाल ने कहा, "मैं जानता हूँ," तो सयाह उनके मार्गदर्शन में अपने एक बड़े अनुयायी दल के साथ वहाँ गए, और ऋषि को प्रणाम करके एक तरफ आदरपूर्वक बैठ गए और अपना संदेश दिया। फिर उन्होंने उससे कहा, "सयाह, यह तुम क्या कह रहे हो?" और उसे मना करते हुए उन्होंने ये चार श्लोक कहे:

(*1) समुद्र में सुरक्षित कोई द्वीप राज्य नहीं,
सायहा, तुम मुझे इस क्रूरता के लिए उकसाओगी।
यश और धन की लालसा पर अभिशाप।
जहां से उन पापों का जन्म होता है जो अंतहीन पीड़ा की ओर ले जाते हैं।
तपस्वी की तरह भीख मांगकर रोटी कमाना बेहतर है।
अपराध करके अपने सिर पर कलंक लगाने से बेहतर है।

हाँ, बेहतर है कि प्याला हाथ में लेकर पाप से भागा जाए।
ऐसी क्रूरता से कोई राज्य नहीं जीता जा सकता।
सलाहकार ने उसकी बात सुनकर राजा को बताया। राजा ने सोचा, "यदि वह आने से इनकार कर दे, तो मैं क्या करूँ?" और चुप रहा। लेकिन आधी रात को इंद्र आए और हवा में खड़े होकर बोले, "हे महाराज, आप लोमसकश्यप को क्यों नहीं बुलवाते और उनसे यज्ञ करने का अनुरोध क्यों नहीं करते? जब उन्हें बुलवाया जाता है, तो वे आने से इनकार कर देते हैं।" "हे महाराज, अपनी पुत्री, राजकुमारी चंदावती को सजाएँ और उसे सायहा के हाथों भेजकर उससे कहें, 'यदि आप आकर यज्ञ करेंगे, तो राजा आपको यह कन्या पत्नी के रूप में दे देंगे।'" "निश्चित रूप से वह कन्या के प्रेम में पड़ जाएगा और आएगा।" राजा तुरंत मान गया और अगले दिन अपनी पुत्री को सायहा के हाथों भेज दिया। सायहा राजा की पुत्री को लेकर वहाँ गया और ऋषि को औपचारिक प्रणाम और सम्मान देने के बाद, उसने अप्सरा के समान सुंदर राजकुमारी को उनके समक्ष प्रस्तुत किया और आदरपूर्वक दूरी पर खड़ा हो गया। तपस्वी ने अपनी नैतिक चेतना खोते हुए उसे देखा और मात्र एक नज़र से ही ध्यान भंग हो गया। सलाहकार ने देखा कि वह प्रेम से अभिभूत है और कहा, "महाराज, यदि आप यज्ञ करेंगे, तो राजा आपको यह कन्या पत्नी के रूप में दे देगा।" वह प्रेम की शक्ति से कांप उठा और बोला, "क्या वह सचमुच उसे मुझे दे देगा?" "हाँ, यदि आप यज्ञ करेंगे, तो वह दे देगा।" "ठीक है," उसने कहा, "यदि मुझे वह मिल जाए, तो मैं यज्ञ करूँगा," और उसे अपने साथ, उसी रूप में, अपने तपस्वी बालों सहित, लेकर एक भव्य रथ पर सवार होकर बनारस चला गया। लेकिन राजा, जैसे ही उसने यह सुना, वह निश्चित रूप से लोमस काश्यप यज्ञ-प्रणाली में तैयार होकर आ रहे थे। जब लोमस काश्यप ने उन्हें आते देखा, तो उन्होंने कहा, "यदि आप यज्ञ करें, तो मैं इंद्र के समर्थ हो जाऊँगा, और यज्ञ पूर्ण होने पर मैं आपको अपनी पुत्री दे दूँगा।" कश्यप तुरंत मान गए। अतः राजा चंदावती के साथ अगले दिन यज्ञ-प्रणाली में गए। वहाँ सभी चौपाये, हाथी, घोड़े, बैल और अन्य जानवर एक पंक्ति में रखे हुए थे। कश्यप ने उन सभी को मारकर यज्ञ करने का प्रयास किया। तब वहाँ एकत्रित लोगों ने कहा, "यह आपके लिए उचित नहीं है, लोमस काश्यप; आप ऐसा क्यों कर रहे हैं?" और शोक मनाते हुए उन्होंने दो श्लोक कहे:

सूर्य और चंद्रमा दोनों का ही प्रबल प्रभाव होता है।
और ज्वार-भाटे को पृथ्वी की कोई भी शक्ति रोक नहीं सकती।
ब्राह्मण और पुरोहित सर्वशक्तिमान हैं,
लेकिन नारी जाति कहीं अधिक शक्तिशाली है।
फिर भी चंदावती की जीत हुई।
क्रूर कश्यपा ने घातक पाप किया,
और उसने अपने पिता की चतुर चालों से उसे प्रेरित किया।
जीवित बलिदान अर्पित करना।
इसी क्षण कश्यप ने यज्ञ करने के लिए अपनी बहुमूल्य तलवार उठाई और राज हाथी की गर्दन पर प्रहार करने को तैयार हुए। तलवार देखते ही हाथी मृत्यु के भय से भयभीत होकर जोर से चिल्लाया। उसकी चीख सुनकर अन्य जानवर, हाथी, घोड़े और बैल भी मृत्यु के भय से जोर से चिल्लाए और मनुष्य भी जोर-जोर से रोने लगे। इन चीखों को सुनकर कश्यप उत्तेजित हो गए और अपने जटाओं के बारे में सोचने लगे। फिर उन्हें अपने जटाओं, दाढ़ी और शरीर एवं छाती के बालों का आभास हुआ। पश्चाताप से भर कर वे रोए, "हाय! मैंने पाप किया है, जो मेरे स्वभाव के विपरीत है," और अपनी भावनाओं को व्यक्त करते हुए उन्होंने आठवां श्लोक कहा:

यह क्रूर कृत्य इच्छा का फल है;
मैं वासना की इस वृद्धि को जड़ से काट डालूंगा।
तब राजा ने कहा, "मित्र, भयभीत न हो: यज्ञ करो, और मैं तुम्हें राजकुमारी चंदावती, अपना राज्य और सातों खजाने दे दूंगा।" यह सुनकर कश्यप ने कहा, "महाराज, मैं अपने प्राणों पर यह पाप नहीं लेना चाहता," और अंतिम श्लोक बोला:

इस धरती पर व्याप्त वासनाओं पर लानत हो!
इन सबसे कहीं बेहतर है तपस्वी जीवन;
मैं पाप का त्याग करके संन्यासी बनूंगा:
अपने राज्य और सुंदर चंदावती को अपने पास रखें।
इन शब्दों के साथ उन्होंने अपना ध्यान उस रहस्यमयी वस्तु पर केंद्रित किया, और खोए हुए विचार को पुनः प्राप्त कर वायु में पालथी मारकर बैठ गए, राजा को विधि का उपदेश दिया, और उन्हें अच्छे कार्यों में तत्पर रहने की सलाह देते हुए, यज्ञकुंड को नष्ट करने और प्रजा को क्षमादान देने का आदेश दिया। राजा के अनुरोध पर, वे वायु में उड़कर अपने निवास स्थान पर लौट आए। और जब तक वे जीवित रहे, उन्होंने ब्रह्मा (प्रधान देवदूत) के गुणों का अभ्यास किया और ब्रह्मा (प्रधान देवदूत) लोक में जन्म लेने के लिए नियत हुए।

गुरु ने अपना पाठ समाप्त करते हुए सत्य प्रकट किए और जन्म का वर्णन किया: सत्यों के समापन पर सांसारिक मन वाले भिक्षु ने संतत्व प्राप्त किया: "उन दिनों महान सलाहकार सयाह सारिपुत्र थे, और लोमसाकश्यप मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) यह संख्या 310 में भी, एक अलग संदर्भ में घटित होती है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **चक्कवाक-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-434-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 434
चक्कवका-जातक

"पक्षियों का जोड़ा," इत्यादि - यह कहानी जेतवन मठ में रहने वाले गुरु ने एक लालची भिक्षु के बारे में सुनाई थी। कहा जाता था कि वह बौद्ध धर्म की आवश्यकताओं के प्रति लालची था और गुरु एवं चरवाहे के सभी कर्तव्यों का त्याग करके श्रावस्ती नगर में भोर में प्रवेश कर गया। विशाखा के घर में उसने उत्तम चावल का दलिया और कई प्रकार के ठोस भोजन खाए, और दिन भर में धान, मांस और उबले हुए चावल जैसे कई उत्तम खाद्य पदार्थ खाए, फिर भी संतुष्ट न होकर वह वहां से कुल्ला-अनाथपिंडिका, कोसल के राजा और अन्य कई लोगों के घर गया। एक दिन सत्य सभा में उसके लालच को लेकर चर्चा हुई। जब गुरु ने उनकी बात सुनी, तो उन्होंने उस भिक्षु को बुलवाया और उससे पूछा कि क्या वह सचमुच लालची है। और जब उसने "हाँ" कहा, तो गुरु ने पूछा, "भाई, तुम इतने लालची क्यों हो? पहले भी अपने लालच के कारण, हाथियों के शवों से संतुष्ट न होकर, तुम बनारस छोड़कर गंगा के किनारे भटकते हुए हिमालय में चले गए थे।" और इस पर उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, एक लालची कौआ मरे हुए हाथियों के शव खा रहा था। उससे संतुष्ट न होकर उसने सोचा, "मैं गंगा के किनारे मछलियों की चर्बी खाऊंगा।" कुछ दिन वहाँ मरी हुई मछलियाँ खाकर वह हिमालय चला गया और वहाँ तरह-तरह के जंगली फल खाकर जीवन यापन करने लगा। मछलियों और कछुओं से भरे एक विशाल कमल-कुंड में पहुँचकर उसने वहाँ दो सुनहरे रंग के हंस देखे जो सेवल के पौधे पर रहते थे। उसने सोचा, "ये पक्षी बहुत सुंदर और आकर्षक हैं: इनका भोजन अवश्य ही स्वादिष्ट होगा। मैं इनसे पूछूंगा कि ये क्या है, और इसे खाकर मैं भी सुनहरे रंग का हो जाऊंगा।" अत: वह उनके पास गया, और शाखा के सिरे पर बैठे हुए उन्हें सामान्य स्नेहपूर्वक नमस्कार करने के बाद, उसने उनकी प्रशंसा में पहला श्लोक बोला:

पीले रंग के वस्त्र पहने पक्षियों का जुड़वां जोड़ा,
   इधर-उधर घूमना कितना आनंददायक है;
पुरुषों को किस प्रकार के पक्षी सबसे अधिक पसंद होते हैं?
   मुझे यह जानकर खुशी हुई।
यह सुनकर लाल हंस ने दूसरा छंद बोला:

हे पक्षी, तुम मानव जाति के लिए विपत्ति हो।
हम अन्य पक्षियों की तुलना में अधिक भाग्यशाली हैं।
हमारी "भक्ति (*1)" वाली सभी भूमि
और मनुष्य और पक्षी हमारी प्रशंसा में गीत गाते हैं।
तो जान लो कि हम लाल हंस हैं।
और सीट पर निडर होकर विचरण करें (*2).
यह सुनकर कौवे ने तीसरा छंद बोला:

समुद्र पर कितने फल उगते हैं?
और हंसों के लिए मांस कहाँ से मिल सकता है?

बताइए आप किस दिव्य भोजन पर निर्भर रहते हैं?
कितनी सुंदरता और देने की कितनी शक्ति।
फिर लाल हंस ने चौथा छंद बोला:

समुद्र में खाने के लिए कोई फल नहीं हैं।
और लाल हंसों को मांस कहाँ से मिलेगा?
सेवाला का पौधा, जिसका छिलका उतार दिया गया हो।
इससे प्राप्त होने वाला भोजन पाप के किसी भी दाग से मुक्त होता है।
तब कौवे ने दो छंद बोले:

मुझे आपके द्वारा इस्तेमाल किए गए शब्द पसंद नहीं हैं, हंस।
मुझे एक समय विश्वास था कि हम जो खाना चुनते हैं, वही मायने रखता है।
हमें पोषण देने के लिए, सहमत होना चाहिए
हमारा बाहरी स्वरूप कैसा भी हो।
लेकिन अब मुझे इस पर संदेह है, क्योंकि मैं खाता हूँ
चावल, नमक, तेल, फल और मांस:
जब वीर युद्ध से लौटकर दावत का आनंद लेने लगे,
इसलिए मैं भी प्रसन्नता से झूम उठा।
लेकिन हालांकि मैं उत्तम दर्जे के भोजन पर ही जीवन यापन करता हूँ,
मेरी शक्ल-सूरत की तुलना तुम्हारी शक्ल-सूरत से नहीं की जा सकती।
फिर लाल हंस ने कारण बताया कि कौआ व्यक्तिगत सौंदर्य को प्राप्त करने में क्यों असफल रहा, जबकि उसने स्वयं इसे प्राप्त कर लिया, और शेष छंद कहे:

मिले हुए फल या कचरे से संतुष्ट नहीं हुए
श्मशान भूमि के परिसर के भीतर,
लालची कौआ व्यर्थ की उड़ान भरता रहता है
वह आकस्मिक शिकार जो उसकी भूख को उत्तेजित करता है।
लेकिन जो भी इस प्रकार अपनी दुष्ट इच्छा पूरी करेंगे,
और वे अपने आनंद के लिए निर्दोष प्राणियों को मार डालते हैं।
अंतरात्मा की फटकार से निराश होकर वे मुरझा जाते हैं।
और उनकी ताकत और सुंदरता को क्षय होते हुए देखें।
इसलिए वे इतने सुखी प्राणी हैं कि किसी भी प्राणी को नुकसान नहीं पहुंचाते।
शारीरिक रूप से चुस्त-दुरुस्त और दिखने में आकर्षक बनो।
सुंदरता को अवश्य ही समझा जाना चाहिए।
यह पूरी तरह से भोजन के प्रकार पर निर्भर नहीं करता है।
इस प्रकार लाल हंस ने कई तरह से कौवे को फटकारा। और कौवे ने खुद ही यह फटकार मोल ली और बोला, "मुझे तुम्हारी सुंदरता नहीं चाहिए।" और "कांव-कांव" की आवाज करते हुए वह उड़ गया।

अपने उपदेश के अंत में, गुरु ने सत्यों का खुलासा किया और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के समापन पर, लालची भाई (भिक्षु) ने द्वितीय मार्ग (सम्मोहन) की सफलता प्राप्त की: "उन दिनों कौआ लालची भाई था, हंसनी राहुल की माता थी, और हंस मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) हिंदू कविता में लाल हंस उनका कबूतर है।

(2) यहाँ "समुद्र" शब्द से गंगा का तात्पर्य है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **हलिद्दिराग-जातक**

स्रोत : एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।

पिछला <<<<-----II-435-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 435
हलीदिराग-जातक

"एकांत वन में," इत्यादि - यह कहानी जेतवन मठ के गुरु ने एक ऐसे युवक के बारे में सुनाई थी जो एक विशिष्ट स्त्री के प्रलोभन में पड़ गया था। परिचयात्मक कहानी कुल्लनारदा जन्म (*1) के तेरहवें खंड में मिलेगी।

अब पुरानी कथा के अनुसार, उस लड़की को पता था कि यदि युवा तपस्वी नैतिक नियम तोड़ दे, तो वह उसके वश में हो जाएगा। उसे समझाने और उसे वापस मनुष्य-आवास में लाने के लिए उसने कहा, "जंगल में सुरक्षित रखा गया सद्गुण, जहाँ सौंदर्य और ऐसे ही अन्य इंद्रिय सुखों का अस्तित्व नहीं होता, बहुत फलदायी सिद्ध नहीं होता, परन्तु मनुष्य-आवास में, सौंदर्य और ऐसे ही अन्य गुणों की उपस्थिति में, वह भरपूर फल देता है। इसलिए मेरे साथ आओ और वहाँ अपने सद्गुण की रक्षा करो। जंगल से तुम्हारा क्या लेना-देना है?" और उसने पहला श्लोक कहा:

एकांत जंगल में व्यक्ति शुद्ध हो सकता है।
वहां प्रलोभनों को सहन करना आसान होता है;
लेकिन एक ऐसे गांव में जहां प्रलोभन व्यापक रूप से प्रचलित हैं,
एक व्यक्ति कहीं अधिक श्रेष्ठ जीवन की ओर अग्रसर हो सकता है।
यह सुनकर उस युवक ने कहा, "मेरे पिता जंगल में गए हैं। जब वे लौटेंगे, तो मैं उनसे अनुमति लेकर आपके साथ चलूँगा।" उसने सोचा, "लगता है उसका पिता है; अगर वह मुझे यहाँ पा गया, तो वह मुझे अपने डंडे के सिरे से मारकर मार डालेगा: मुझे उससे पहले ही निकलना होगा।" इसलिए उसने युवक से कहा, "मैं तुमसे पहले रास्ते पर चलूँगी और अपने पीछे निशान छोड़ जाऊँगी: तुम मेरे पीछे आना।" उसके जाने के बाद, वह न तो लकड़ी लाया, न पीने का पानी लाया, बल्कि बस ध्यान में बैठा रहा, और जब उसके पिता आए, तो वह उनसे मिलने बाहर नहीं आया। तब पिता समझ गया कि उसका बेटा एक स्त्री के वश में आ गया है और उसने कहा, "बेटे, तूने न तो लकड़ी लाई, न पीने का पानी लाया, न खाने का भोजन लाया, बल्कि क्यों तू बस बैठा ध्यान कर रहा है?" उस युवा तपस्वी ने कहा, "हे पिता, लोग कहते हैं कि वन में सद्गुणों की रक्षा करना अधिक फलदायी नहीं होता, परन्तु मनुष्यों के निवास में वह बहुत फलदायी होता है। मैं वहाँ जाकर अपने सद्गुणों की रक्षा करूँगा। मेरा साथी आगे चला गया है और मुझे उसके पीछे आने को कह रहा है, इसलिए मैं उसके साथ चलूँगा। परन्तु जब मैं वहाँ रहूँगा, तो मुझे किस प्रकार का मनुष्य बनना चाहिए?" और यह प्रश्न पूछते हुए उसने दूसरा श्लोक कहा:

(*2) हे मेरे पिता, कृपया मेरे लिए इस संदेह का समाधान करें;
यदि मैं इस जंगल से भटककर किसी गाँव में चला जाऊं,
किस विचारधारा या किस संप्रदाय के लोग?
क्या मुझे अपने दोस्तों के लिए सबसे बुद्धिमानी से काम करना चाहिए?
फिर उनके पिता ने शेष छंदों को दोहराया:

एक ऐसा व्यक्ति जो आपका विश्वास और प्यार जीत सके।
मैं आपके शब्दों पर भरोसा कर सकता हूं, और आपके धैर्य को साबित कर सकता हूं।
विचार, वचन और कर्म से कभी किसी को ठेस नहीं पहुंचाऊंगा--
उसे अपने दिल में बसा लो और एक मित्र की तरह उससे जुड़े रहो।
बंदरों की तरह चंचल स्वभाव वाले पुरुषों के लिए,
और यदि अस्थिर पाया जाए, तो उसकी ओर आकर्षित न हों।
हालांकि, आपका भाग्य कुछ हद तक एकांत में ही सीमित है।
गलत रास्तों से बचो, ठीक वैसे ही जैसे तुम साफ-सुथरा रहना चाहते हो।
क्रोधित सर्प के रूप में, या सारथी के रूप में

ऊबड़-खाबड़ रास्ते से बचता है। दुख अनेक हैं।
जब भी किसी अपराधी का पता चलता है:
मूर्खों से मित्रता मत करो—मेरी बात मानो—
मूर्ख का साथी शिकार को दुखी करना होता है।
पिता की इस सलाह पर युवक ने कहा, "यदि मैं मनुष्यों के निवास में जाऊँ, तो मुझे आप जैसे ऋषि नहीं मिलेंगे। मुझे वहाँ जाने से डर लगता है। मैं यहीं आपकी उपस्थिति में रहूँगा।" तब पिता ने उसे और सलाह दी और उसे रहस्यमय ध्यान में लीन होने के लिए आवश्यक विधियाँ सिखाईं। शीघ्र ही पुत्र ने सभी गुण और योग्यताएँ प्राप्त कर लीं और अपने पिता के साथ ब्रह्मलोक में जन्म लेने के लिए नियत हो गया।

अपने उपदेश के अंत में, गुरु ने सत्यों की घोषणा की और जन्म की पहचान बताई:- सत्यों के समापन पर, संसार की लालसा रखने वाले भिक्षु (भाई) ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की सिद्धि प्राप्त की:- "उन दिनों में युवा तपस्वी सांसारिक मन वाला भिक्षु था, तब की लड़की अब की लड़की है, लेकिन पिता मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)सं. 477

(2) यह श्लोक और इसके बाद के पहले सात श्लोक क्रमांक 348 में पाए जाते हैं।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **समुग्ग-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-436-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 436
समुग्गा-जातक

"हे मित्रों, तुम कहाँ से आए हो?" इत्यादि—यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक सांसारिक भिक्षु के बारे में सुनाई। कहते हैं कि गुरु ने उससे पूछा कि क्या वह संसार के प्रति ललक रखता है, और जब उसने स्वीकार किया कि वह ऐसा ही चाहता है, तो गुरु ने कहा, "हे भिक्षु, तुम स्त्री की इच्छा क्यों रखते हो? वास्तव में स्त्री दुष्ट और कृतघ्न होती है। प्राचीन काल में असुर राक्षस स्त्रियों को निगल जाते थे, और यद्यपि वे उन्हें अपने गर्भ में सुरक्षित रखते थे, फिर भी वे उन्हें एक पुरुष के प्रति वफादार नहीं रख पाते थे। तो तुम ऐसा कैसे कर पाओगे?" और इस पर उन्होंने एक प्राचीन कथा सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, तब पूर्व उल्लेखित बोधिसत्व, जो पापमय सुखों में लिप्त थे, हिमालय में चले गए और संन्यासी जीवन अपना लिया। वे वहाँ जंगली फलों का सेवन करते हुए जीवन व्यतीत करते रहे और अपनी क्षमताओं और उपलब्धियों को विकसित करते रहे। उनकी पर्णपाती कुटिया से कुछ ही दूरी पर एक असुर राक्षस रहता था। वह समय-समय पर उस महान पुरुष के पास आता और धर्म का उपदेश सुनता, परन्तु मनुष्यो के एकत्र होने वाले मार्ग पर जंगल में छिपकर उन्हें पकड़ता और खा जाता। इसी समय काशी राज्य की एक अत्यंत सुंदर कुलीन स्त्री सीमावर्ती गाँव में बस गई। एक दिन वह अपने माता-पिता से मिलने गई, और लौटते समय उस राक्षस ने उसके साथ आए पुरुषों को देख लिया और भयानक रूप धारण करके उन पर टूट पड़ा। पुरुषों ने अपने हाथ के हथियार गिरा दिए और भाग गए। रथ में बैठी उस सुंदर स्त्री को देखकर राक्षस उस पर मोहित हो गया और उसे अपने गुफा में ले जाकर अपनी पत्नी बना लिया। तब से वह उसके लिए घी, भूसे वाले चावल, मछली, मांस और इसी तरह की चीजें, साथ ही पके फल खाने के लिए लाता रहा, उसे वस्त्र और आभूषण पहनाता रहा, और उसकी सुरक्षा के लिए उसे एक डिब्बे में बंद कर दिया जिसे उसने निगल लिया, और इस प्रकार उसे अपने पेट में सुरक्षित रखा। एक दिन उसे स्नान करने की इच्छा हुई, और तालाब के पास आकर उसने डिब्बा ऊपर फेंक दिया और उसे उसमें से निकालकर स्नान कराया और तेल लगाया, और उसे कपड़े पहनाकर कहा, "थोड़ी देर के लिए खुली हवा में आनंद लो," और बिना किसी खतरे की आशंका के वह थोड़ी दूर जाकर स्नान करने लगा। उसी समय वायु का

पुत्र, जो एक जादूगर था, तलवार से लैस होकर हवा में चल रहा था। जब उसने उसे देखा, तो उसने अपने हाथों को एक विशेष मुद्रा में रखा और उसे अपने पास आने का संकेत दिया। जादूगर तुरंत जमीन पर उतर आया। फिर उसने उसे संदूक में रखा और उस पर बैठ गई, असुर के आने की प्रतीक्षा करने लगी। जैसे ही उसने उसे आते देखा, संदूक के पास पहुँचने से पहले ही उसने संदूक खोल दिया और अंदर जाकर जादूगर के ऊपर लेट गई और अपना वस्त्र उसके चारों ओर लपेट दिया। असुर आया और संदूक की जाँच किए बिना ही उसने सोचा कि यह केवल स्त्री है, और उसने संदूक को निगल लिया और अपनी गुफा की ओर चल पड़ा। रास्ते में उसने सोचा, "सन्यासी को देखे हुए बहुत समय हो गया है: मैं आज जाकर उन्हें प्रणाम करूँगा।" अतः वह उनसे मिलने गया। तपस्वी ने उसे दूर से ही देख लिया और जान लिया कि राक्षस के पेट में दो लोग हैं, और पहला श्लोक बोलते हुए उसने कहा:

आप सब कहाँ से आए हैं, मित्रों?
आप तीनों का स्वागत है!
कृपया कुछ समय के लिए मेरे साथ विश्राम करें।
मैं निवेदन करता हूँ: मुझे आशा है कि आप सुखी और आराम से जीवन व्यतीत करेंगे;
आपमें से किसी ने भी बहुत समय से इस रास्ते से यात्रा नहीं की है।
यह सुनकर असुर ने सोचा, "मैं इस तपस्वी से मिलने बिल्कुल अकेला आया हूँ, और ये तीन लोगों की बात कर रहे हैं: इनका क्या मतलब है? क्या ये वास्तविकता को जानकर बोल रहे हैं, या पागल होकर मूर्खतापूर्ण बातें कर रहे हैं?" तब वह तपस्वी के पास आया, उन्हें प्रणाम किया, और आदरपूर्वक दूरी पर बैठकर उनसे बातचीत की और दूसरा श्लोक बोला:

मैं आज आपसे अकेले मिलने आया हूँ।
और न ही कोई प्राणी मेरा साथ देता है।
हे पवित्र साधु, तब आप ऐसा क्यों कहते हैं?
आप सब कहाँ से आए हैं, मित्रों?
आप तीनों का बहुत-बहुत स्वागत है।
तपस्वी ने कहा, "क्या तुम सचमुच कारण सुनना चाहते हो?" "जी हाँ, पूज्यवर।" "तो सुनो," उन्होंने कहा और तीसरा श्लोक सुनाया:

आप और आपकी प्यारी पत्नी दो लोग हैं, इस बात का पूरा यकीन रखें;
वह एक डिब्बे के अंदर सुरक्षित पड़ी है:
वह हमेशा तुम्हारे गर्भ में सुरक्षित रहेगी।
वायु के बेटे के साथ वह खुशी-खुशी खेल रही थी।
यह सुनकर असुर ने सोचा, "जादूगर तो चालबाज़ों से भरे होते हैं: अगर उसके हाथ में तलवार आ जाए तो वह मेरा पेट चीरकर भाग जाएगा।" और वह बहुत घबराकर उस संदूक को उछालकर अपने सामने रख लिया।

विषय को स्पष्ट करने के लिए, गुरु ने अपनी पूर्ण बुद्धिमत्ता से चौथे श्लोक को दोहराया:

तलवार से लैस राक्षस बहुत भयभीत हो गया।
और उसने पेट से डिब्बा उगल कर जमीन पर गिरा दिया;
उनकी पत्नी, सुंदर फूलों की मालाओं से सजी हुई, मानो दुल्हन हो।
वायु के बेटे को वहां खुशी-खुशी खेलते हुए पाया गया।
जैसे ही संदूक खोला गया, जादूगर ने एक मंत्र बुदबुदाया और अपनी तलवार पकड़कर हवा में उछल पड़ा। यह देखकर असुर उस महान प्राणी से इतना प्रसन्न हुआ कि उसने शेष श्लोक दोहराए, जो मुख्यतः उसकी प्रशंसा से प्रेरित थे।

हे कठोर तपस्वी, आपकी स्पष्ट दृष्टि ने देखा
एक महिला का गुलाम, बेचारा आदमी कितना नीचतम स्तर तक गिर सकता है;
जैसे जीवन ही मेरे पेट में सुरक्षित हो,
मुझे लगता है कि उस दुष्ट ने वाकई बुरा बर्ताव किया।
मैंने दिन-रात उसकी देखभाल बड़े ध्यान से की।
जैसे वनवासी संन्यासी लौ को संजोकर रखता है,
और फिर भी उसने हर तरह के न्यायसंगत अर्थों से परे जाकर पाप किया:
महिलाओं की जरूरतों से जुड़ी हर बात का अंत शर्मिंदगी में ही होना चाहिए।
मैं अपने शरीर के भीतर, दृष्टि से छिपा हुआ सोचता हूँ,

वह मेरी ही होनी चाहिए—लेकिन उसका नाम "अनैतिक" था—
और इस प्रकार उसने न्यायसंगतता की सारी सीमाओं को पार करते हुए पाप किया:
महिलाओं की जरूरतों से संबंधित हर बात का अंत शर्मिंदगी में ही होना चाहिए।
उसके हजारों प्रलोभनों के बावजूद मनुष्य ने व्यर्थ ही मुकाबला किया।
उसका यह विश्वास व्यर्थ है कि उसका बचाव पुख्ता है;
जैसे नरक की ओर ढलान वाली खड़ी चट्टानें,
उसने बेचारे लापरवाह लोगों को मोहक आकर्षण के जाल में फंसा दिया।
वह पुरुष जो नारीत्व के मार्ग से विमुख हो जाता है
सुखमय और सभी दुखों से मुक्त जीवन जीता है;
उसे एकांत में ही सच्चा आनंद मिलेगा।
स्त्री और उसके छल से दूर।

ये शब्द कहकर राक्षस महापुरुष के चरणों में गिर पड़ा और उनकी स्तुति करते हुए बोला, "हे प्रभु, आपकी कृपा से मेरा जीवन बच गया। उस दुष्ट स्त्री के कारण जादूगर ने मुझे लगभग मार ही डाला था।" तब बोधिसत्व ने उसे धर्म का मार्ग समझाते हुए कहा, "उसे हानि न पहुँचाओ, आज्ञाओं का पालन करो," और उसे पाँच नैतिक नियमों में स्थापित किया। असुर ने कहा, "यद्यपि मैंने उसे अपने गर्भ में रखा, फिर भी मैं उसे सुरक्षित नहीं रख सका। भला उसे कौन सुरक्षित रखेगा?" इसलिए उसने उसे जाने दिया और सीधे अपने वनवास लौट गया।

अपने उपदेश के अंत में, गुरु ने सत्यों की घोषणा की और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के समापन पर सांसारिक मन वाले भिक्षु ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की सिद्धि प्राप्त की: "उन दिनों अलौकिक दृष्टि शक्तियों वाला तपस्वी मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **पूतिमांसा-जातक**

स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-437-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 437
पुतिमांसा-जातक

"पुतिमांसा ऐसा क्यों करता है?", इत्यादि - यह कथा गुरु (बुद्ध) ने जेतवन मठ में इंद्रियों के वशीकरण के विषय में सुनाई थी। क्योंकि एक समय ऐसा था जब बहुत से भिक्षु (भाई) इंद्रियों के मार्ग पर कोई नियंत्रण नहीं रखते थे। गुरु ने वरिष्ठ भिक्षु आनंद से कहा, "मुझे इन भिक्षुओं को उपदेश देना चाहिए," और उनके आत्मसंयम के अभाव के कारण उन्होंने भिक्षुओं की सभा बुलाई और एक भव्य पलंग के बीच में बैठकर उन्हें संबोधित किया: "भाइयों, यह उचित नहीं है कि कोई भिक्षु अपने शारीरिक सौंदर्य के प्रभाव में आकर मानसिक या शारीरिक गुणों पर अपना आलिंगन लगाए, क्योंकि यदि वह ऐसे क्षण में मर जाता है, तो उसका पुनर्जन्म नरक और इसी प्रकार के बुरे लोकों में होता है; इसलिए भौतिक रूपों और ऐसी ही चीजों पर अपना आलिंगन न लगाएं। किसी भिक्षु को अपने मन को मानसिक और शारीरिक गुणों में नहीं लगाना चाहिए। जो ऐसा करते हैं, वे इस वर्तमान स्थिति में भी पूरी तरह से बर्बाद हो जाते हैं। इसलिए, भाइयों, यह अच्छा है कि इंद्रियों की आंख को गर्म लोहे की सुई से स्पर्श किया जाए।" और यहाँ उन्होंने अन्य विवरण देते हुए कहा, "सौंदर्य का सम्मान करने का भी एक समय होता है और उसकी उपेक्षा करने का भी। जब आप सौंदर्य का सम्मान कर रहे हों, तो उसे सुखद बातों के प्रभाव में नहीं, बल्कि अप्रिय बातों के प्रभाव में देखें। इस प्रकार आप अपने उचित क्षेत्र से नहीं भटकेंगे। तो आपका यह क्षेत्र क्या है? चार गंभीर ध्यान, पवित्र अष्टांग मार्ग और नौ पारलौकिक अवस्थाएँ। यदि आप अपने इस उचित क्षेत्र में चलते हैं, तो मारा को प्रवेश नहीं मिलेगा, लेकिन यदि आप वासना के अधीन होकर और व्यक्तिगत सौंदर्य के प्रभाव में चीजों का सम्मान करते हैं, जैसे सियार पुतिमांसा, तो आप अपने सच्चे क्षेत्र से भटक जाएँगे।" और इन शब्दों के साथ उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

बनारस के राजा ब्रह्मदत्त के शासनकाल में, एक समय की बात है, हिमालय की ढलानों पर स्थित एक वन क्षेत्र में एक पहाड़ी गुफा में सैकड़ों जंगली बकरियाँ रहती थीं। उनके निवास स्थान से कुछ ही दूरी पर, पुतिमांसा नाम का एक सियार अपनी पत्नी वेणी के साथ एक

गुफा में रहता था। एक दिन जब वह अपनी पत्नी के साथ घूम रहा था, तो उसने उन बकरियों को देखा और सोचा, "मुझे इन बकरियों का मांस खाने का कोई उपाय ढूंढना चाहिए," और उसने चतुराई से एक बकरी को मार डाला। बकरी का मांस खाकर वह और उसकी पत्नी दोनों बलवान और तगड़े हो गए। धीरे-धीरे बकरियों की संख्या कम होती गई। उनमें से एक बुद्धिमान बकरी थी जिसका नाम मेलमाता था। सियार, हालांकि धूर्तता में माहिर था, उसे मार नहीं सका। अपनी पत्नी से सलाह लेकर उसने कहा, "मेरी प्रिय, सारी बकरियाँ मर चुकी हैं। हमें इस बकरी को खाने का कोई तरीका सोचना होगा। अब मेरी योजना यह है। तुम अकेले जाओ और उससे दोस्ती कर लो। जब तुम दोनों के बीच विश्वास पैदा हो जाए, तो मैं लेट जाऊँगा और मरने का नाटक करूँगा। फिर तुम बकरी के पास जाकर कहना, 'मेरी प्रिय, मेरे पति की मृत्यु हो गई है और मैं अकेली पड़ गई हूँ; तुम्हारे सिवा मेरा कोई दोस्त नहीं है: आओ, हम रोएँ और शोक मनाएँ और उसके शरीर को दफनाएँ।' और ये कहकर उसे अपने साथ ले आओ। फिर मैं उछलकर उसकी गर्दन पर काट कर उसे मार डालूँगा।" वह तुरंत मान गई और बकरी से दोस्ती करने के बाद, जब विश्वास स्थापित हो गया, तो उसने अपने पति के बताए शब्दों में उससे बात की। बकरी ने उत्तर दिया, "मेरी प्रिय, मेरे पूरे परिवार को तुम्हारे पति ने खा लिया है। मुझे डर लग रहा है; मैं नहीं आ सकती।" "डरो मत; मरे हुए तुम्हें क्या नुकसान पहुँचा सकते हैं?" "तुम्हारा पति क्रूर स्वभाव का है; मुझे डर लग रहा है।" लेकिन बार-बार विनती करने पर बकरी ने सोचा, "वह ज़रूर मर गया होगा," और उसके साथ जाने के लिए राज़ी हो गई। लेकिन रास्ते में उसने सोचा, "पता नहीं क्या होगा?" और संदेह होने पर उसने सियार को आगे भेज दिया और सियार पर पैनी नज़र रखी। सियार ने उनके कदमों की आहट सुनी और सोचा, "देखो, बकरी आ रही है," और अपना सिर उठाकर आँखें घुमाते हुए चारों ओर देखा। उसे ऐसा करते देख बकरी बोली, "यह दुष्ट मुझे पकड़कर मारना चाहता है: यह वहाँ मरने का नाटक कर रहा है," और वह मुड़कर भाग गई। जब सियार ने उससे भागने का कारण पूछा, तो बकरी ने कारण बताया और पहला छंद बोला:

पुतिमाइंसा इस तरह क्यों घूर रही है?
   उसकी नजरें मुझे नापसंद करती हैं:
ऐसे मित्र से सावधान रहना चाहिए।
   और उसे बहुत दूर भाग जाना चाहिए।
ये कहकर वह मुड़ी और सीधे अपने घर की ओर चल पड़ी। सियारिन उसे रोकने में असफल रही तो वह उस पर क्रोधित हो उठी और अपने पति के पास जाकर शोक मनाने बैठ गई। तब सियारिन ने उसे फटकारते हुए दूसरा छंद कहा:

मेरी पत्नी वेनी बुद्धिहीन प्रतीत होती है।
   अपने द्वारा बनाए गए मित्रों पर गर्व करना;
अधर में लटकी हुई वह बस बैठी रह सकती है।
   और शोक मनाओ, क्योंकि मेला के लोगों को धोखा दिया गया है।
यह सुनकर मादा सियार ने तीसरा छंद बोला:

आप भी, मेरे स्वामी, शायद ही बुद्धिमान थे।
   और, हे मूर्ख प्राणी, तुमने अपना सिर उठाया।
खुली आँखों से चारों ओर देखते हुए,
   हालांकि वह मरने का नाटक कर रहा था।
उचित समय पर बुद्धिमान लोग
   उन्हें आंखें कब खोलनी या बंद करनी हैं, यह जानना।
जो गलत समय पर देखते हैं, उनका ही नुकसान होगा।
   पुतिमांसा की तरह, बीमार पड़ो।
यह श्लोक 'परफेक्ट विजडम' से प्रेरित है।

लेकिन सियार ने पुतिमानसा को दिलासा देते हुए कहा, "हे स्वामी, आप परेशान न हों, मैं उसे यहाँ वापस लाने का कोई रास्ता निकाल लूँगी, और जब वह आए, तो सावधान रहना और उसे पकड़ लेना।" फिर उसने बकरी को ढूँढा और कहा, "मेरे मित्र, तुम्हारा आना हमारे लिए उपयोगी साबित हुआ; क्योंकि तुम्हारे आते ही मेरे स्वामी को होश आ गया और अब वे जीवित हैं। आओ और उनसे सौहार्दपूर्ण बातें करो," और ऐसा कहते हुए उसने पाँचवाँ श्लोक कहा:

हमारी पुरानी दोस्ती, बकरी, एक बार फिर से जीवित हो उठे,
   और कृपया हमारे लिए भरा हुआ कटोरा लेकर आइए, मैं आपसे अनुरोध करता हूँ।
मेरे स्वामी, जिन्हें मैंने मृत समझ लिया था, वे अभी भी जीवित हैं।
   आज ही उन्हें विनम्रतापूर्वक नमस्कार करके मिलें।

बकरी ने सोचा, "यह दुष्ट औरत मुझे फंसाना चाहती है। मुझे खुलेआम प्रतिद्वंद्वी की तरह व्यवहार नहीं करना चाहिए; मैं उसे धोखा देने का कोई उपाय ढूंढूंगी," और उसने छठा छंद बोला:

हमारी पुरानी दोस्ती को पुनर्जीवित करने के लिए,
मैं एक भरा हुआ कटोरा सहर्ष देता हूँ:
मैं बड़े सुरक्षा दल के साथ आऊंगा;
हमें अच्छे से दावत देने के लिए, जल्दी घर जाओ।
फिर मादा सियार ने अपने अनुयायियों के बारे में पूछताछ की और सातवां श्लोक बोला:

आप किस तरह की एस्कॉर्ट लाएंगे?
मुझे आपको अच्छे से दावत देने के लिए कहा गया है?
सभी स्मरण के नाम
मैं आपसे निवेदन करता हूं कि आप हमें सच-सच बताएं।
बकरी ने आठवां श्लोक बोला और कहा:

शिकारी कुत्ते (*1) भूरे और हल्के भूरे रंग के, एक चार आंखों वाला भी,
जंबुक के साथ मेरा सच्चा अंगरक्षक:
जल्दी घर जाओ और फटाफट तैयारी करो।
सभी को भरपूर मात्रा में स्वादिष्ट भोजन मिले।
"इनमें से प्रत्येक के साथ पाँच सौ कुत्ते होते हैं: इसलिए मैं दो हज़ार कुत्तों के पहरे के साथ आऊँगी। अगर उन्हें खाना नहीं मिला, तो वे तुम्हें और तुम्हारे साथी को मार कर खा जाएँगे।" यह सुनकर मादा सियार इतनी भयभीत हो गई कि उसने सोचा, "अब बहुत हो गया उसका आना; मैं उसे आने से रोकने का उपाय ढूँढूँगी," और उसने नौवाँ छंद बोला:

घर से बाहर मत निकलो, वरना मुझे डर है
आपका सारा सामान जल्द ही गायब हो जाएगा:
मैं आपका अभिवादन स्वामी जी तक पहुंचा दूंगा;
हिलाओ मत: नहीं, एक शब्द भी नहीं!
ये शब्द कहकर वह अपनी जान बचाने के लिए बड़ी हड़बड़ी में भागी और अपने स्वामी को साथ लेकर वहां से चली गई। और फिर कभी उस जगह पर लौटने की हिम्मत नहीं हुई।

गुरु ने यहाँ अपना पाठ समाप्त किया और जन्म की पहचान बताई: "उन दिनों मैं वह देवत्व था जो वहाँ एक पुराने वन वृक्ष में निवास करता था।"

फुटनोट:

(1) मालिया और पिंगिया संभवतः कुत्तों के रंग को संदर्भित करते हैं; चतुराक्ष ऋग्वेद में यम के कुत्तों में से एक है; जंबुका स्कंद समूह में एक आत्मा है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **तित्तिर-जातक4**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस और आर.ए. नील द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-438-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 438
तित्तिरा-जातक

"आपकी निर्दोष संतान," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने गिद्ध शिखर पर रहते हुए देवदत्त द्वारा उन्हें मारने के प्रयास के बारे में सुनाई थी। उसी समय सत्य के हॉल में चर्चा शुरू हुई और उन्होंने कहा, "हाय! महोदय, देवदत्त कितना निर्लज्ज और नीच था। अजातशत्रु से मिलकर उसने श्रेष्ठ और सर्वोच्च बुद्ध को मारने की साजिश रची, धनुर्धारियों को रिश्वत देकर, एक पत्थर फेंककर और नलगिरि को छोड़ कर।" गुरु आए और भिक्षुओं से पूछा कि वे अपनी सभा में क्या चर्चा कर रहे हैं, और जब उन्हें बताया गया कि क्या हो रहा है, तो उन्होंने कहा, "न केवल अभी, बल्कि पहले भी देवदत्त मुझे मारने के प्रयास करता था, लेकिन अब वह मुझे जरा भी डरा नहीं सकता," और उन्होंने एक प्राचीन कथा सुनाई।

बहुत समय पहले, बनारस के राजा ब्रह्मदत्त के शासनकाल में, बनारस के एक विश्वप्रसिद्ध शिक्षक ने पाँच सौ युवा ब्राह्मणों को विज्ञान की शिक्षा दी। एक दिन उन्होंने सोचा, "जब तक मैं यहाँ रहूँगा,

मुझे धार्मिक (सन्यासी) जीवन जीने में बाधाओं का सामना करना पड़ता है, और मेरे शिष्य अपनी पढ़ाई में निपुण नहीं हो पाते हैं। मैं हिमालय की ढलानों पर स्थित एक वन-गृह में सेवानिवृत्त हो जाऊंगा और वहीं अपना अध्यापन जारी रखूंगा।" उन्होंने अपने शिष्यों से कहा और उनसे तिल, भूसा, तेल, वस्त्र आदि लाने को कहकर जंगल में चले गए और पत्तों की एक झोपड़ी बनाकर राजमार्ग के पास ही अपना निवास स्थान बना लिया। उनके शिष्यों ने भी अपने-अपने लिए एक-एक झोपड़ी बनाई। उनके परिवार ने चावल और अन्य खाद्य सामग्री भेजी, और देश के निवासी यह कहते हुए कि "कहते हैं कि जंगल में फलां-फलां स्थान पर एक प्रसिद्ध शिक्षक रहते हैं और विज्ञान की शिक्षा देते हैं," चावल के उपहार लाए, और वनपालों ने भी अपने उपहार दिए, जबकि एक व्यक्ति ने दूध देने के लिए एक दुधारू गाय और एक बछड़ा दिया। अब एक छिपकली अपने दो बच्चों के साथ शिक्षक की झोपड़ी में रहने लगी, और एक शेर और एक बाघ उनकी सेवा करते थे। एक तीतर भी वहां स्थायी रूप से रहता था, और अपने गुरु को अपने शिष्यों को पवित्र ग्रंथों का अध्यापन करते हुए सुनकर, तीतर ने तीन वेदों का ज्ञान प्राप्त कर लिया। और युवा ब्राह्मण उस पक्षी के साथ बहुत मित्रवत हो गए। समय बीतने के साथ-साथ, युवाओं के विज्ञान में निपुणता प्राप्त करने के बाद, उनके गुरु का निधन हो गया। उनके शिष्यों ने उनके शरीर को जलाया, उनकी राख पर रेत का स्तूप स्थापित किया और रोते-बिलखते उसे तरह-तरह के फूलों से सजाया। तब तीतर ने उनसे पूछा कि वे क्यों रो रहे हैं। उन्होंने उत्तर दिया, "हमारे गुरु का निधन हो गया है जबकि हमारी पढ़ाई अभी अधूरी है।" "यदि ऐसा है, तो दुखी न हों: मैं आपको विज्ञान पढ़ाऊंगा।" "आपको यह कैसे पता?" "मैं आपके गुरु को सुनता था, जब वे आपको पढ़ाते थे, और मैंने तीन वेद कंठस्थ कर लिए।" "तो क्या आप हमें वह ज्ञान देंगे जो आपने कंठस्थ किया है?" तीतर ने कहा, "अच्छा, सुनो," और उन्होंने उन्हें कठिन बातें इतनी सरलता से समझाईं जैसे कोई पर्वत की ऊँचाई से जलधारा बहाता है। युवा ब्राह्मण अत्यंत प्रसन्न हुए और उन्होंने विद्वान तीतर से विज्ञान का ज्ञान प्राप्त किया। और तीतर प्रसिद्ध गुरु के स्थान पर विज्ञान के व्याख्यान देने लगा। युवकों ने उसके लिए एक सोने का पिंजरा बनाया और उस पर एक चंदवा लगाकर उसे शहद और भुना हुआ अनाज खिलाया। एक सुनहरी थाली में भोजन परोसकर और उसे कई रंग-बिरंगे फूल भेंट करके, उन्होंने पक्षी का बहुत सम्मान किया। पूरे भारत में यह बात फैल गई कि जंगल में एक तीतर पाँच सौ युवा ब्राह्मणों को पवित्र ग्रंथों का ज्ञान दे रहा है। उस समय लोगों ने एक भव्य उत्सव का आयोजन किया—यह किसी पर्वत की चोटी पर लोगों के जमावड़े जैसा था। युवकों के माता-पिता ने अपने बेटों को उत्सव देखने के लिए संदेश भेजा। उन्होंने तीतर को बताया और उस विद्वान पक्षी और पूरे आश्रम को छिपकली की देखरेख में सौंपकर अपने-अपने शहरों के लिए प्रस्थान कर दिया। उसी समय इधर-उधर भटकता हुआ एक दुष्ट तपस्वी इस स्थान पर आया। छिपकली ने उसे देखकर उससे मैत्रीपूर्ण बातचीत शुरू की और कहा,"फलां जगह पर चावल, तेल और ऐसी ही चीज़ें मिलेंगी; चावल उबालकर मज़े से खाओ," और ऐसा कहकर वह अपने भोजन की तलाश में निकल पड़ा। सुबह-सुबह उस दुष्ट ने चावल उबाले और दो छोटे छिपकलियों को मारकर बड़े चाव से खाया। दोपहर में उसने विद्वान तीतर और उसके बछड़े को मारकर खाया, और शाम को जैसे ही उसने गाय को घर आते देखा, उसने उसे भी मार डाला और उसका मांस खा लिया। फिर वह एक पेड़ के नीचे लेटकर गुर्राने लगा और सो गया। शाम को छिपकली वापस आई और अपने बच्चों को ढूंढते हुए इधर-उधर भटकने लगी। एक वृक्ष-परी ने अपने बच्चों को न पाकर कांपती हुई छिपकली को देखा और अपनी दिव्य शक्ति का प्रयोग करते हुए वृक्ष के खोखले तने में खड़ी होकर बोली, "कांपना बंद करो, छिपकली: तुम्हारे बच्चे, तीतर, बछड़ा और गाय इस दुष्ट प्राणी ने मार डाले हैं। इसकी गर्दन पर काट लो, और इस तरह इसे मार डालो।" और इस प्रकार छिपकली से बात करते हुए देवी ने पहला श्लोक कहा:

उसने तुम्हारे निर्दोष बच्चे को खा लिया।
  हालांकि आपने भरपूर मात्रा में चावल दिए;
तुम्हारे दांत उसके मांस में घुसकर मिलते हैं,
  और उस दुष्ट को जिंदा भागने मत दो।
फिर छिपकली ने दो छंद दोहराए:

उसकी लालची आत्मा पर गंदगी ने, नर्स के वस्त्र की तरह, दाग लगा दिया।

मुझे डर है कि उसका पूरा व्यक्तित्व मेरे दांतों के सामने अचूक है।
नीच और कृतघ्न लोगों की गलतियाँ हर जगह देखी जाती हैं।
संसार के उपहारों से भी वह संतुष्ट नहीं हो सकता।
छिपकली ने ऐसा कहते हुए सोचा, "यह जाग जाएगा और मुझे खा जाएगा," और अपनी जान बचाने के लिए वह भाग गई। शेर और बाघ का तीतर से बहुत अच्छा रिश्ता था। कभी वे तीतर को देखने आते थे, और कभी तीतर जाकर उन्हें सही राह दिखाता था। आज शेर ने बाघ से कहा, "बहुत दिनों से हमने तीतर को नहीं देखा; सात-आठ दिन हो गए होंगे: जाओ और उसके बारे में खबर लाओ।" बाघ तुरंत मान गया, और वह ठीक उसी समय वहाँ पहुँचा जब छिपकली भाग गई थी, और उसने उस दुष्ट को सोते हुए पाया। उसके उलझे बालों में तीतर के कुछ पंख दिखाई दिए, और पास ही गाय और बछड़े की हड्डियाँ पड़ी थीं। यह सब देखकर और अपने सोने के पिंजरे से तीतर को न पाकर बाघ राजा ने सोचा, "इन जीवों को इस दुष्ट ने मार डाला होगा," और उसने उसे एक लात मारकर जगा दिया। बाघ को देखते ही वह आदमी बुरी तरह डर गया। तब बाघ ने पूछा, "क्या तुमने इन जीवों को मारकर खाया?" "मैंने न तो इन्हें मारा और न ही खाया।" "अरे दुष्ट, अगर तुमने इन्हें नहीं मारा, तो और कौन मार सकता था? और अगर नहीं बताया, तो तुम मरे हुए हो।" अपनी जान के डर से उसने कहा, "जी महाराज, मैंने छोटी छिपकलियों, गाय और बछड़े को मारकर खाया, लेकिन तीतर को नहीं मारा।" उसके बहुत विरोध करने के बावजूद, बाघ ने उस पर विश्वास नहीं किया और पूछा, "तुम यहाँ कहाँ से आए हो?" "महाराज, मैं कलिंग देश में व्यापारियों का सामान बेचकर अपना गुजारा करता था, और कई तरह के काम करने के बाद मैं यहाँ आ गया हूँ।" लेकिन जब उस आदमी ने उसे सब कुछ बता दिया, तो बाघ ने कहा, "अरे दुष्ट, अगर तुमने तीतर को नहीं मारा, तो और कौन मार सकता था? आओ, मैं तुम्हें जानवरों के राजा, शेर के सामने ले चलता हूँ।" यह कहकर बाघ उस आदमी को अपने आगे भगाते हुए चला गया। जब शेर ने बाघ को उस आदमी को अपने साथ लाते हुए देखा, तो उसने इसे प्रश्न के रूप में प्रस्तुत करते हुए चौथा श्लोक बोला:

सुबाहु (*2), तुम इतनी जल्दी में यहाँ क्यों आए हो?
और यह युवा प्रतिभा तुम्हारे साथ ही क्यों प्रकट होती है?
मैं पूछता हूँ, यहाँ इतनी तत्परता की क्या आवश्यकता है?
जल्दी, मुझे सच-सच और बिना देरी किए बताओ।
यह सुनकर बाघ ने पाँचवाँ श्लोक बोला:

हे महाराज, हमारे अत्यंत योग्य मित्र, तीतर पक्षी।
मुझे संदेह है कि आज का दिन बुरा अंत लेकर आया है:
इस व्यक्ति के पिछले रिकॉर्ड देखकर मुझे डर लगता है।
हमें अपने प्यारे तीतर पक्षी के बारे में बुरी खबर सुनने को मिल सकती है।
फिर शेर ने छठा श्लोक बोला:

उस व्यक्ति का पिछला इतिहास क्या हो सकता है?
और उसने तुम्हारे सामने किन पापों को स्वीकार किया?
आपको इस बात पर संदेह करने के लिए कि कोई दुर्भाग्य हो सकता है
क्या आज कोई विद्वान पक्षी आपसे टकरा गया?
तब बाघ राजा ने उसके उत्तर में शेष छंद दोहराए:

कलिंग भूमि में यात्रा करने वाले विक्रेता के रूप में
वह हाथ में लाठी लिए ऊबड़-खाबड़ रास्तों पर सफर करता रहा;
वह कलाबाजों के साथ पाया गया है।
और निर्दोष जानवर को जाल में जकड़ लिया है;
पासे के साथ भी अक्सर खेला जाता रहा है।
और उसने छोटे पक्षियों के लिए जाल बिछाए हैं;
भीड़ में लकड़ी की लाठियों से लड़ाई हुई है।
और अनाज को नापकर लाभ की खोज की है:
अपने वादों के प्रति झूठे, आधी रात की लड़ाई में
घायल अवस्था में उसने खून धो डाला:
अपनी बहादुरी के कारण उसके हाथ जल गए।
इतना गर्म खाना कि उसे पकड़ना मुश्किल हो, उसे झटपट उठा लेना।
मैंने सुना था कि वह ऐसा ही जीवन व्यतीत करता था।

उसके सिर पर यही पाप हैं।
और चूंकि हम जानते हैं कि गाय मर चुकी है,
और उसके बालों के बीच पंख दिखाई देते हैं,
मुझे अपने दोस्त तीतर पक्षी से बहुत डर लगता है।
शेर ने उस आदमी से पूछा, "क्या तुमने विद्वान तीतर को मारा?" "जी महाराज, मैंने मारा।" शेर ने उसकी सच्चाई सुनकर उसे जाने देने की ठान ली, लेकिन बाघ राजा ने कहा, "यह दुष्ट मरने लायक ही है," और वहीं उसे अपने दाँतों से नोंच डाला। फिर उसने एक गड्ढा खोदा और उसके शरीर को उसमें फेंक दिया। जब युवा ब्राह्मण घर लौटे, तो उन्हें तीतर नहीं मिला, वे रोते-बिलखते वहाँ से चले गए।

गुरु ने अपना पाठ समाप्त करते हुए कहा, "इस प्रकार, हे भिक्षुओं, प्राचीन काल में देवदत्त ने भी मुझे मारने का प्रयास किया था," और उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "उस समय तपस्वी देवदत्त थे, छिपकली किसागोतमी, बाघ मोग्गल्याण, सिंह सारिपुत्र, विश्वप्रसिद्ध शिक्षक कश्यप और विद्वान तीतर मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) "नग्न तपस्वी"

(2) सुबाहु (बलवान भुजा वाला) बाघ का नाम है। क्रमांक 361 से तुलना करें।

पुस्तक X. दशा-निपाता:

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **चतु-द्वार-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-439-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 439. (*1)
चतु-द्वार-जातक

"चार द्वार," इत्यादि—यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक उद्दंड व्यक्ति के बारे में सुनाई थी। नौवें खंड के पहले जन्म में इन घटनाओं का वर्णन पहले ही किया जा चुका है। (*2) यहाँ गुरु ने फिर से उस भिक्षु से पूछा, "क्या यह सच है, जैसा कि लोग कहते हैं, कि तुम अवज्ञाकारी हो?" "जी हाँ।" उसने कहा, "बहुत समय पहले, जब तुमने अवज्ञा करके ज्ञानी पुरुषों के अनुरोधों को मानने से इनकार कर दिया था, तो तुम्हें एक तरकश दिया गया था।" और उसने अतीत की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, बुद्ध कश्यप के समय में, बनारस में एक व्यापारी रहता था, जिसकी संपत्ति अस्सी करोड़ (10 मिलियन) थी और उसका एक पुत्र था जिसका नाम मित्तविन्दक था। इस बालक के माता-पिता ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) का मार्ग अपना लिया था, लेकिन वह दुष्ट और नास्तिक था।

समय बीतने पर जब पिता का देहांत हो गया, तो माता, जो उनकी जगह संपत्ति का प्रबंधन कर रही थीं, ने अपने पुत्र से कहा, “पुत्र, मनुष्य का सुख भोगना कठिन है (*3); दान करो, सद्गुणों का पालन करो, पवित्र दिनों का पालन करो, और धर्म के मार्ग पर चलो।” तब पुत्र ने कहा, “माता, मेरे लिए कोई दान-पुण्य या ऐसा कुछ नहीं; मुझे कभी भी इसके बारे में मत बताना; जैसा मैं जी रहा हूँ, वैसा ही मेरा भविष्य होगा।” एक पूर्णिमा के पवित्र दिन, जब वह इस प्रकार बोल रहा था, तो उसकी माता ने उत्तर दिया, “पुत्र, यह दिन विशेष रूप से पवित्र है। आज पवित्र दिन की प्रतिज्ञाएँ लो; आश्रम में जाओ, और रात भर धर्म के मार्ग पर चलो, और जब तुम लौट आओगे तो मैं तुम्हें एक हजार सिक्के दूँगी।”

धन की लालसा में पुत्र मान गया। उपवास तोड़ते ही वह बाड़े में चला गया और पूरा दिन वहीं बिताया; परन्तु रात को किसी को भी धर्म के मार्ग का वचन सुनाई न दे, इसलिए वह एक स्थान पर लेट गया और सो गया। अगले दिन, सुबह तड़के, उसने अपना चेहरा धोया और अपने घर जाकर बैठ गया।

अब माँ ने मन ही मन सोचा, “आज सुबह मेरा बेटा धर्म का मार्ग सुनकर भोर में लौट आएगा, और अपने साथ धर्म के मार्ग का उपदेश देने वाले बड़े-बुजुर्ग को भी लाएगा।” इसलिए उसने दलिया, और हर तरह का खाना तैयार किया, और बैठने की व्यवस्था करके उसके आने की प्रतीक्षा करने लगी। जब उसने अपने बेटे को अकेले आते देखा, तो उसने कहा, “बेटा, तू उपदेशक को अपने साथ क्यों नहीं लाया?” — “माँ, मुझे कोई उपदेशक नहीं चाहिए!” उसने कहा। “तो लो,” स्त्री ने कहा, “तुम यह दलिया पी लो।” उसने कहा, “माँ, तुमने मुझे हज़ार सिक्के देने का वादा किया था, पहले यह मुझे दे दो, फिर मैं पीऊँगा।” “पहले पी लो, बेटा, फिर तुम्हें पैसे मिलेंगे,” उसने कहा, “नहीं, मैं पैसे मिलने तक नहीं पीऊँगा।” तब उसकी माँ ने उसके सामने हज़ार सिक्कों से भरा एक थैला रख दिया। उसने दलिया पिया, हज़ार सिक्कों वाला थैला लिया और अपने काम पर चला गया; और इसी तरह कुछ ही समय में उसने दो मिलियन कमा लिए।

फिर उसके मन में यह विचार आया कि वह एक जहाज़ का इंतज़ाम करे और उससे व्यापार करे। उसने एक जहाज़ का इंतज़ाम किया और अपनी माँ से कहा, “माँ, मैं इस जहाज़ से व्यापार करना चाहता हूँ।” माँ ने कहा, “तुम मेरे इकलौते बेटे हो और इस घर में धन-दौलत की कोई कमी नहीं है; समुद्र खतरों से भरा है। मत जाओ!” लेकिन उसने कहा, “मैं जाऊँगा, और तुम मुझे रोक नहीं सकती।” माँ ने जवाब दिया, “हाँ, मैं तुम्हें रोकूँगी,” और उसका हाथ पकड़ लिया; लेकिन उसने उसका हाथ झटक दिया और उसे धक्का देकर गिरा दिया, और पल भर में वह वहाँ से चला गया।

सातवें दिन, मित्तविन्दका के कारण, जहाज गहरे समुद्र में स्थिर हो गया। पर्ची निकाली गई, और तीनों बार पर्ची मित्तविन्दका के हाथ में आई। तब उन्होंने उसे एक बेड़ा दिया; और यह कहते हुए—"एक के लिए बहुतों को मरने न दो," उन्होंने उसे गहरे समुद्र में बहा दिया। पल भर में जहाज तेजी से गहरे समुद्र पर चलने लगा।

और वह अपनी नाव पर सवार होकर एक द्वीप पर पहुँचा। वहाँ एक क्रिस्टल महल में उसने चार मृत स्त्रियों को देखा। वे सात दिन कष्ट में और सात दिन सुख में रहती थीं। उनकी संगति में उसे दिव्य आनंद का अनुभव हुआ। फिर, जब उनके प्रायश्चित का समय आया, तो उन्होंने कहा, “गुरुजी, हम सात दिनों के लिए आपसे विदा ले रहे हैं; हमारे जाने के दौरान, आप यहीं ठहरिए और दुखी मत होइए।” ऐसा कहकर वे चली गईं।

लेकिन वह लालसा से भरा हुआ, फिर से अपनी नाव पर सवार हुआ और समुद्र पार करते हुए एक और छोटे द्वीप पर पहुँचा; वहाँ उसने चाँदी के महल में आठ अन्य आत्माओं को देखा। इसी तरह, उसने एक और द्वीप पर, रत्नों से सजे महल में सोलह आत्माओं को देखा, और एक अन्य द्वीप पर, सोने के हॉल में बत्तीस आत्माओं को देखा। इनके साथ, पहले की तरह, वह दिव्य आनंद में रहा, और जब वे तपस्या के लिए चले गए, तो वह एक बार फिर समुद्र पार चला गया; अंत में उसने चार द्वारों वाला एक शहर देखा, जो एक दीवार से घिरा हुआ था। कहते हैं कि यह उस्सादा नरक है, वह स्थान जहाँ नरक की सजा पाए अनेक प्राणी अपने कर्मों का फल भोगते हैं: लेकिन मित्तविन्दक को वह एक सुंदर शहर जैसा लगा। उसने सोचा, "मैं इस शहर का दर्शन करूँगा और इसका राजा बनूँगा।" तो वह अंदर गया, और वहाँ उसने एक पीड़ा भोगते हुए प्राणी को देखा, जो एक तेज धार वाला पहिया धारण किए हुए था; लेकिन मित्तविन्दक को ऐसा लगा मानो उसके सिर पर रखा वह तेज धार वाला पहिया कमल का फूल हो; उसके सीने पर पाँचों जंजीरें मानो किसी भव्य और कीमती पोशाक जैसी लग रही थीं; उसके सिर से टपकता खून लाल चंदन की सुगंधित धूल जैसा लग रहा था; उसकी कराहने की आवाज़ किसी मधुर गीत जैसी थी। पास आकर उसने कहा, "अरे, मनुष्य! बहुत देर से तुम उस कमल के फूल को ढो रहे हो; अब मुझे दे दो!" उसने उत्तर दिया, "मेरे स्वामी, यह कमल नहीं, बल्कि एक तेज पत्थर है।" "अरे," पहले ने कहा, "तो तुम ऐसा इसलिए कह रहे हो क्योंकि तुम इसे देना नहीं चाहते?" दोषी ने सोचा: "मेरे पिछले कर्मों का फल मिल चुका होगा। निस्संदेह यह व्यक्ति भी मेरी ही तरह किसी माँ को मारने के लिए यहाँ आया है। ठीक है, मैं इसे तेज पत्थर दे देता हूँ।" फिर उसने कहा, "तो लो, कमल ले लो," और ये कहते हुए उसने तेज पत्थर उसके सिर पर फेंक दिया; और वह उसके सिर पर गिरा, जिससे उसका सिर चकनाचूर हो गया। पल भर में मित्तविन्दक को पता चल गया कि यह एक तेज पहिया है, और वह दर्द से कराहते हुए बोला, "अपना पहिया ले लो, अपना पहिया वापस ले लो!" लेकिन दूसरा पहिया गायब हो चुका था।

उस समय बोधिसत्व अपने विशाल अनुयायियों के साथ उस्सादा नरक का चक्कर लगा रहे थे और उस स्थान पर पहुँचे। उन्हें देखकर मित्तविन्दक ने पुकार कर कहा, "हे देवताओं (देवदूतों) के राजा, यह तेज पहिया मुझे सरसों के दानों को कूटने वाले मूसल की तरह भेद रहा है और चीर रहा है! मैंने क्या पाप किया है?" और यह प्रश्न पूछते हुए उन्होंने इन दो श्लोकों को दोहराया:

"इस लोहे के शहर में चार द्वार हैं, जहाँ मैं फँसा हुआ और पकड़ा हुआ हूँ:
मेरे चारों ओर एक दीवार खड़ी है: मैंने कौन सी बुराई ला दी है?

"अब शहर के द्वार तेजी से बंद हो रहे हैं: यह चक्र मुझे नष्ट कर रहा है:
मुझे पिंजरे में बंद पक्षी की तरह क्यों पकड़ा गया है? हे जिन्पलीन, ऐसा क्यों होना चाहिए?
तब देवदूतों के राजा ने उन्हें यह बात समझाने के लिए ये श्लोक कहे:

"एक लाख, महोदय, आपके स्वामित्व में थे, और बीस की वृद्धि भी थी।"
लेकिन जब कोई मित्र बोले तो तुम उसकी बात ध्यान से नहीं सुनोगे।
"तुम समुद्र पार करके तेजी से भाग निकले, मुझे लगता है यह एक खतरनाक काम था;
चारों, आठ, सीधे मिलने गए, और आठ, सोलह के साथ,
और सोलह से बत्तीस वर्ष की आयु तक; और हमेशा वासना महसूस करती रही।
अब देखो, घोर लालच का फल तुम्हारे सिर पर आ पड़ा है, यह पहिया।
"जो लोग इच्छा के राजमार्ग पर चलते हैं, वह विशाल मार्ग है,
वह विशाल, अतृप्त राजमार्ग, इस पहिए को ढोने का दायित्व उन्हीं का है।
जो अपने धन का त्याग नहीं करेगा, न ही उस मार्ग पर चलेगा,
जो लोग यह नहीं जानते कि ऐसा होना चाहिए, उन्हें ही इस बोझ को उठाना पड़ेगा।
अपने कर्मों के बारे में सोचो और देखो
आपकी संपत्ति कितनी भी अधिक क्यों न हो, उससे कम होने की लालसा न रखें।
अवैध रूप से अर्जित धन का स्वामी; मित्रों की सलाह
ऐसा करो, और पहिया कभी तुम्हारे पास नहीं आएगा।
यह सुनकर मित्तविन्दक ने मन ही मन सोचा, "देवदूतों के इस पुत्र ने मेरे किए का ठीक-ठीक वर्णन कर दिया है। निःसंदेह वह मेरे दंड की मात्रा भी जानता है।" और उसने नौवाँ श्लोक दोहराया:

"हे राक्षस, यह पहिया मेरे सिर पर कब तक रहेगा?"
कितने हजार साल? बता दो, कहीं मेरा सवाल व्यर्थ न हो जाए!
फिर उस महान सत्ता ने दसवें श्लोक में इस विषय को बताया:

"चक्र घूमता रहेगा, और घूमता रहेगा, कोई उद्धारकर्ता प्रकट नहीं होगा।"
हे मिट्टाविंदा, सुनो! यह तुम्हारे सिर पर तब तक टिका रहेगा जब तक तुम मर न जाओ!
ऐसा कहकर, ईश्वर अपने स्थान पर लौट गया, और दूसरा व्यक्ति घोर कष्ट में पड़ गया।

इस प्रवचन को समाप्त करते हुए, गुरु ने जन्म का वर्णन किया: "उस समय उद्दंड भाई (भिक्षु) मित्तविन्दक थे, और मैं स्वयं देवताओं (देवदूतों) का राजा था।"

फुटनोट:

(1) क्रमांक 82, 104, 369 देखें

(2)सं. 427

(3) पाँच गतियों में से.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कान्हा-जातक**2
***स्रोत** : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-440-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 440
कान्हा-जातक

"उस आदमी को देखो," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने कपिलवस्तु (बुद्ध के पिता शुद्धोदन का राज्य) में बरगद के उद्यान में मुस्कुराने के बारे में सुनाई थी।

उस समय कहते हैं कि गुरुदेव अपने भिक्षुओं के समूह के साथ शाम के समय बरगद के उद्यान में टहल रहे थे, तभी एक स्थान पर उन्होंने मुस्कुरा दिया। वरिष्ठ भिक्षु आनंद ने कहा, "भगवान बुद्ध क्यों मुस्कुरा रहे हैं? तथागत बिना कारण के नहीं मुस्कुराते। मैं उनसे ही पूछूंगा।" आदरपूर्वक उन्होंने इस मुस्कान का कारण पूछा। तब गुरुदेव ने उनसे कहा, "आनंद, पुराने समय में इस स्थान पर कान्हा नामक एक ऋषि रहते थे, जो ध्यान में लीन रहते थे; और उनके पुण्य के बल पर इंद्र का निवास हिल गया था।" लेकिन मुस्कान के बारे में यह बात पूरी तरह स्पष्ट नहीं थी, इसलिए वरिष्ठ भिक्षु के अनुरोध पर उन्होंने यह पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब एक निःसंतान ब्राह्मण थे, जिनके पास अस्सी करोड़ (10 मिलियन) की संपत्ति थी। उन्होंने पुण्य व्रत लिए और पुत्र प्राप्ति के लिए प्रार्थना की। इस ब्राह्मण की पत्नी के गर्भ में बोधिसत्व का जन्म हुआ और उनके काले रंग के कारण उनके जन्मदिवस पर उनका नाम कान्हाकुमार रखा गया। सोलह वर्ष की आयु में, वे अत्यंत तेजस्वी थे, मानो किसी अनमोल पत्थर की प्रतिमा हों। उनके पिता ने उन्हें तक्षशिला भेज दिया, जहाँ उन्होंने सभी विद्याओं का ज्ञान प्राप्त किया और वापस लौट आए। तब उनके पिता ने उनके लिए एक उपयुक्त पत्नी का प्रबंध किया। समय आने पर उन्हें अपने माता-पिता की सारी संपत्ति प्राप्त हुई।

एक दिन, अपने खजाने का निरीक्षण करने के बाद, जब वह अपने भव्य सोफे पर बैठे थे, तो उन्होंने एक सोने की थाली हाथ में ली और उस पर अपने पूर्वजों द्वारा उत्कीर्ण इन पंक्तियों को पढ़ा: "इतनी संपत्ति फलां ने अर्जित की, इतनी दूसरे ने। इस धन को अर्जित करने वाले अब नहीं रहे, परन्तु धन तो अब भी है; उनमें से कोई भी इसे अपने साथ नहीं ले जा सका; हम अपने धन को बांधकर परलोक नहीं ले जा सकते। यह देखते हुए कि यह पंच पापों से जुड़ा है, इस व्यर्थ धन को दान में देना श्रेष्ठ है; यह देखते हुए कि यह भौतिक शरीर अनेक रोगों से जुड़ा है, गुणी लोगों के प्रति आदर और दया दिखाना श्रेष्ठ है; यह देखते हुए कि यह क्षणभंगुर और निरर्थक जीवन सदा परिवर्तनशील है, आध्यात्मिक ज्ञान के लिए प्रयास करना श्रेष्ठ है। अतः मैं इन व्यर्थ खजानों को दान में दे दूंगा, ताकि ऐसा करके मैं श्रेष्ठ भाग को प्राप्त कर सकूं।" अत: वह अपने आसन से उठा और राजा की अनुमति लेकर उसने उदारतापूर्वक दान दिया।

सातवें दिन तक अपनी संपत्ति में कोई कमी न देखकर उन्होंने सोचा, "मेरे लिए धन क्या है? जब तक बुढ़ापा मुझ पर हावी नहीं हुआ है, मैं अभी से ही संन्यास का व्रत लूंगा, अपनी इंद्रियों और योग्यताओं का विकास करूंगा, और ब्रह्मा के उच्च स्वर्ग (देवदूतों के स्वर्ग) के लिए नियत हो जाऊंगा!" अतः उन्होंने अपने निवास के सभी द्वार खुलवा दिए और सभी को यह सब मुफ्त में देने को कहा; और इसे अपवित्र मानकर अस्वीकार करते हुए, उन्होंने आंखों की सभी इच्छाओं का त्याग कर दिया, और बहुत से लोगों के रोने-धोने के बीच, शहर छोड़कर हिमालय क्षेत्र की ओर चल दिए। वहां उन्होंने एकांत जीवन को अपनाया; और रहने के लिए एक सुखद स्थान की तलाश करते हुए, उन्हें यह स्थान मिला, और उन्होंने वहीं निवास करने का संकल्प लिया; और भोजन के लिए एक लौकी का वृक्ष चुनकर, वे वहीं बस गए, और उस वृक्ष की जड़ में रहने लगे। वह कभी किसी गाँव में नहीं रहे, बल्कि जंगलों में रहने लगे। उन्होंने कभी पत्तों की झोपड़ी नहीं बनाई, बल्कि इस वृक्ष की तलहटी में, खुले में, बैठे रहते थे, या यदि लेटना चाहते तो ज़मीन पर लेट जाते। वे भोजन पीसने के लिए मूसल का इस्तेमाल नहीं करते थे, केवल दाँतों का उपयोग करते थे, आग पर बिना पकाए भोजन ही खाते थे, और कभी भी छिलके सहित अनाज का एक दाना भी उनके मुँह में नहीं जाता था। वे दिन में एक बार, एक ही बार में भोजन करते थे। ज़मीन पर, मानो वे चारों तत्वों के साथ एक हो गए हों, वे तपस्वी गुणों को अपनाकर जीवन व्यतीत करते थे। उस जन्म में, जैसा कि हम जानते हैं, बोधिसत्व की बहुत कम आवश्यकताएँ थीं।

इस प्रकार शीघ्र ही उन्होंने सभी ज्ञान और योग्यताएँ प्राप्त कर लीं और उस स्थान पर परमानंदमय ध्यान की अवस्था में रहने लगे। जंगली फलों के लिए वे खेतों में दूर तक नहीं जाते थे; जब वृक्ष पर फल लगते थे, तो वे उन्हें खा लेते थे; जब फूल खिलते थे, तो वे फूल खा लेते थे; जब पत्ते उगते थे, तो वे पत्ते खा लेते थे; जब पत्ते नहीं होते थे, तो वे वृक्षों की छाल खा लेते थे। इस प्रकार वे परम संतोष में उस स्थान पर दीर्घकाल व्यतीत करते रहे। जैसे वे सुबह उस वृक्ष के फल तोड़ते थे, वैसे ही कभी लालच में आकर किसी अन्य स्थान से फल नहीं तोड़ते थे। जहाँ वे बैठते थे, वहीं अपना हाथ फैलाकर अपने हाथ की पहुँच में आने वाले सभी फलों को इकट्ठा कर लेते थे; वे उन्हें बिना किसी भेद के, अच्छे और बुरे के बीच अंतर किए बिना, खाते रहते थे। जब वे इसमें आनंद लेते रहे, तो उनके पुण्य के बल पर इंद्र का पीला पत्थर का सिंहासन गर्म हो गया। (वे कहते हैं कि यह सिंहासन तब गर्म हो जाता है जब सक्का (इंद्र) का जीवन अपने अंत की ओर अग्रसर होता है, या जब उसका पुण्य समाप्त हो जाता है और उसका कर्मफल निकल जाता है, या जब कोई शक्तिशाली प्राणी प्रार्थना करता है, या पुरोहितों या सामर्थ्य से परिपूर्ण ब्राह्मणों में सद्गुण के प्रभाव से (*3)।)

तब इंद्र ने सोचा, "अब मुझे कौन हटाएगा?" चारों ओर देखते हुए उन्होंने एक जंगल में एक विशेष स्थान पर ऋषि कान्हा को फल तोड़ते हुए देखा और जाना कि वहाँ घोर तपस्या के ऋषि विराजमान हैं, जिन्होंने अपनी सभी इंद्रियों को वश में कर लिया है; उन्होंने सोचा, "मैं उनके पास जाऊँगा, मैं उनसे तुरही की ध्वनि में धर्म का प्रचार करवाऊँगा, और शांतिदायक उपदेश सुनकर उन्हें वरदान देकर उनके वृक्ष को निरंतर फलदायी बना दूँगा, और फिर मैं यहाँ लौट आऊँगा।" फिर अपनी अपार शक्ति से शीघ्रता से नीचे उतरकर, ऋषि के पीछे उस वृक्ष की जड़ में खड़े होकर, यह परखने के लिए कि क्या ऋषि उनकी कुरूपता का उल्लेख करने पर क्रोधित होंगे, उन्होंने पहला श्लोक कहा:

"उस आदमी को देखो, जो पूरी तरह से काले रंग का है, और इस काले धब्बे पर रहता है।"
उसने जो मांस खाया वह काला था—मेरी आत्मा उसे पसंद नहीं करती!
अंधकारमय कान्हा ने उसकी बात सुनी। "मुझसे कौन बात कर रहा है?" अपनी दिव्य अंतर्दृष्टि से उसने जाना कि यह सक्का (इंद्र) थे; और बिना मुड़े, उन्होंने दूसरे श्लोक से उत्तर दिया:

हे सक्का (इंद्र), यद्यपि तुम काले रंग के हो, फिर भी सच्चे ब्राह्मण हो, देखो:
त्वचा के रंग से नहीं, लेकिन अगर कोई पाप करता है, तो उसे काला होना ही पड़ेगा।
इसके बाद, उन्होंने इन प्राणियों के विभिन्न प्रकारों का वर्णन करते हुए, उन पापों की निंदा की जो इन्हें अंधकारमय बनाते हैं, और सद्गुणों की प्रशंसा करते हुए, सक्का (इंद्र) को प्रवचन दिया, और ऐसा लगा मानो उन्होंने आकाश में चंद्रमा को उदय कर दिया हो। उनके प्रवचन को सुनकर सक्का (इंद्र) मोहित और प्रसन्न हो गए, और उन्होंने उस महान प्राणी को वरदान दिया, और तीसरे श्लोक को दोहराया:

"आपने बहुत ही मधुरता से बात की है, ब्राह्मण, आपने बहुत ही उत्कृष्ट ढंग से कहा है।"
जो भी आपका मन कहे, वही चुनें—जैसा आपका दिल कहे, इसलिए अपना चुनाव कर लें।"
यह सुनकर उस महान ऋषि ने मन ही मन सोचा, "मैं जानता हूँ कि यह कैसे हुआ होगा। वह मेरी परीक्षा लेना चाहता था, और देखना चाहता था कि क्या मैं अपनी कुरूपता का जिक्र सुनकर क्रोधित होता हूँ; इसलिए उसने मेरी त्वचा के रंग, मेरे भोजन, मेरे निवास स्थान का उपहास किया; यह देखकर कि मैं क्रोधित नहीं हुआ, वह प्रसन्न हुआ और मुझे वरदान देने का प्रस्ताव रखा; निस्संदेह वह सोचता है कि मैं सक्का (इंद्र) या ब्रह्मा (प्रधान देवदूत) की शक्ति की लालसा में इस प्रकार जीवन व्यतीत करता हूँ; और अब, उसे आश्वस्त करने के लिए, मुझे ये चार वरदान चुनने होंगे: कि मैं शांत रहूँ, कि मेरे मन में अपने पड़ोसी के प्रति कोई घृणा या द्वेष न हो, और कि मेरे मन में अपने पड़ोसी की महिमा का कोई लालच या वासना न हो।" इस प्रकार सोचते हुए, सक्का (इंद्र) के संदेह को दूर करने के लिए, ऋषि ने इन चार वरदानों का दावा करते हुए चौथा श्लोक बोला:

"सम्मोहन जगत के स्वामी सक्का (इंद्र) ने आशीर्वादों का एक विशेष विकल्प प्रदान किया।"
मैं द्वेष, घृणा, अधिकार की लालसा से मुक्ति चाहता हूँ।
और हर तरह की वासना से मुक्त होना: मैं इन चार वरदानों की कामना करता हूँ।"
इस विचार पर इंद्र ने कहा, "ऋषि कान्हा ने वरदान चुनते समय चार सबसे निष्कलंक वरदान चुने हैं। अब मैं उनसे पूछूंगा कि इन चारों में क्या अच्छा है और क्या बुरा है।" और उन्होंने पाँचवें श्लोक को दोहराते हुए प्रश्न पूछा:

"कामवासना में, घृणा में, अधिकार की लालसा में, द्वेष में, हे ब्राह्मण, कहो
आपको इसमें कौन सी बुरी बात दिखाई देती है? कृपया मुझे इसका उत्तर दें।
"तो सुनो," उस महान सत्ता ने उत्तर दिया और चार श्लोक कहे:

क्योंकि दुर्भावना से उपजी घृणा छोटी सी शुरुआत से ही बड़ी होती जाती है।
यह हमेशा कड़वाहट से भरा रहता है, इसलिए मैं नफरत नहीं चाहता।
दुष्ट लोगों के साथ हमेशा ऐसा ही होता है: पहले शब्द, फिर स्पर्श।
पहले मुट्ठी, फिर लाठी, और अंत में तलवार का तेज प्रहार:
जहां द्वेष होता है, वहां घृणा उत्पन्न होती है—इसलिए मेरे लिए कोई द्वेष नहीं।
"जब लोग लालच से प्रेरित होकर तेजी से काम करते हैं, तो धोखाधड़ी और छल उत्पन्न होते हैं।"
और बर्बर लूट की तीव्र खोज—इसलिए, किसी चीज पर अधिकार करने की कोई इच्छा नहीं।
"वासना से बंधी जंजीरें दृढ़ होती हैं, जो भरपूर फलती-फूलती हैं।"
दिल के भीतर, कड़वी पीड़ा के लिए—तब मेरे लिए कोई वासना नहीं होगी।"
इस प्रकार अपने प्रश्नों का उत्तर पाकर सक्का (इंद्र) ने उत्तर दिया, "हे बुद्धिमान कान्हा, आपने मेरे प्रश्नों का उत्तर बुद्ध की कुशलता से दिया है; मैं आपसे अत्यंत प्रसन्न हूँ; अब कोई दूसरा वरदान चुनिए" और उन्होंने दसवाँ श्लोक दोहराया।

"हे ब्राह्मण, आपने बहुत ही सुंदर बात कही है, उत्कृष्ट ढंग से कहा है।"
जो भी आपका मन कहे, वही चुनें—जैसा आपका दिल कहे, इसलिए अपना चुनाव कर लें।"
तुरंत ही बोधिसत्व ने एक श्लोक दोहराया:

"हे सक्का (इंद्र), समस्त जगत के स्वामी, आपने मुझे एक वरदान दिया है, मैं रो पड़ा।"
मैं जंगल में जहाँ रहता हूँ, जहाँ मैं बिल्कुल अकेला रहता हूँ,
ईश्वर करे कोई भी बीमारी मेरी शांति भंग न करे, न ही मेरे परमानंद (सम्मोहन) को भंग करे।
यह सुनकर इंद्र ने सोचा, "बुद्धिमान कान्हा वरदान चुनते समय भोजन से संबंधित कोई वस्तु नहीं चुनते; वे जो कुछ भी चुनते हैं वह तपस्वी जीवन से संबंधित है।" और अधिक प्रसन्न होकर उन्होंने एक और वरदान जोड़ा और एक और श्लोक पढ़ा:

"हे ब्राह्मण, आपने बहुत ही सुंदर बात कही है, उत्कृष्ट ढंग से कहा है।"
जो भी आपका मन कहे, वही चुनें—जैसा आपका दिल कहे, इसलिए अपना चुनाव कर लें।"
और बोधिसत्व ने अपने वरदान का वर्णन करते हुए अंतिम श्लोक में नियम बताया:

हे सक्का (इंद्र), समस्त जगत के स्वामी, आपने मुझे जो विकल्प चुनने को कहा था, वह यह है:
हे सक्का (इंद्र), मेरी ओर से किसी भी प्राणी को कहीं भी हानि न पहुंचाई जाए।
न शरीर से, न मन से: हे सक्का (इंद्र), यही मेरी प्रार्थना है (*4)।"
इस प्रकार, उस महान प्राणी ने छह अवसरों पर वरदान चुनते समय केवल वही वरदान चुना जो त्याग के जीवन से संबंधित था। वे भली-भांति जानते थे कि शरीर रोगग्रस्त है, और न ही सक्का (इंद्र) इसे दूर कर सकते हैं; न ही सक्का (इंद्र) के पास तीन द्वारों (*5) में जीवों को शुद्ध करने का अधिकार है; फिर भी, उन्होंने यह वरदान इसलिए चुना ताकि वे उन्हें धर्म का उपदेश दे सकें। और सक्का (इंद्र) ने उस वृक्ष को बारहमासी फलदायी बना दिया, और हाथ जोड़कर उनके सिर को स्पर्श करते हुए उन्हें प्रणाम किया और कहा, "यहाँ सदा रोगमुक्त रहो," और अपने स्थान पर चले गए। परन्तु बोधिसत्व ने कभी भी अपनी समाधि (तल्ली) भंग नहीं की, और वे ब्रह्मा के लोक (प्रधान देवदूतों के उच्चतर स्वर्ग) के लिए नियत हो गए।

यह पाठ समाप्त होने पर, गुरु ने कहा, "आनंद, यही वह स्थान है जहाँ मैं पहले रहता था," और इस प्रकार उन्होंने अपने जन्म का उल्लेख किया: "उस समय अनुरुद्ध सक्का (इंद्र) थे, और मैं स्वयं ज्ञानी कान्हा था।"

फुटनोट:

(1)अर्थात उसके पास इन भावनाओं से अधिक कोई भावना नहीं थी।

(2) इन तेरह तपस्वी प्रथाओं में पेड़ के नीचे रहना, अकेले रहना, जंगल में रहना, बैठकर सोना शामिल है, जैसा कि पाठ में पहले ही उल्लेख किया जा चुका है।

(3) इंद्र के सिंहासन के बारे में: उस समय राजाओं को एक विरासत मिली थी। जब वे उचित न्याय करना नहीं जानते थे, तो न्यायपीठ लात मारने लगती थी, और राजा की गर्दन मुड़ जाती थी जब वह उचित न्याय नहीं करता था।

(4)ये पंक्तियाँ मिलिंडा, पृष्ठ 384 में मिलती हैं।

(5) शरीर, वाणी, मन: वे तीन द्वार जिनसे बुराई प्रवेश करती है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कान्हा-जातक2**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-440-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 440

कान्हा-जातक

"उस आदमी को देखो," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने कपिलवस्तु (बुद्ध के पिता शुद्धोदन का राज्य) में बरगद के उद्यान में मुस्कुराने के बारे में सुनाई थी।

उस समय कहते हैं कि गुरुदेव अपने भिक्षुओं के समूह के साथ शाम के समय बरगद के उद्यान में टहल रहे थे, तभी एक स्थान पर उन्होंने मुस्कुरा दिया। वरिष्ठ भिक्षु आनंद ने कहा, "भगवान बुद्ध क्यों मुस्कुरा रहे हैं? तथागत बिना कारण के नहीं मुस्कुराते। मैं उनसे ही पूछूंगा।" आदरपूर्वक उन्होंने इस मुस्कान का कारण पूछा। तब गुरुदेव ने उनसे कहा, "आनंद, पुराने समय में इस स्थान पर कान्हा नामक एक ऋषि रहते थे, जो ध्यान में लीन रहते थे; और उनके पुण्य के बल पर इंद्र का निवास हिल गया था।" लेकिन मुस्कान के बारे में यह बात पूरी तरह स्पष्ट नहीं थी, इसलिए वरिष्ठ भिक्षु के अनुरोध पर उन्होंने यह पुरानी कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब एक निःसंतान ब्राह्मण थे, जिनके पास अस्सी करोड़ (10 मिलियन) की संपत्ति थी। उन्होंने पुण्य व्रत लिए और पुत्र प्राप्ति के लिए प्रार्थना की। इस ब्राह्मण की पत्नी के गर्भ में बोधिसत्व का जन्म हुआ और उनके काले रंग के कारण उनके जन्मदिवस पर उनका नाम कान्हाकुमार रखा गया। सोलह वर्ष की आयु में, वे अत्यंत तेजस्वी थे, मानो किसी अनमोल पत्थर की प्रतिमा हों। उनके पिता ने उन्हें तक्षशिला भेज दिया, जहाँ उन्होंने सभी विद्याओं का ज्ञान प्राप्त किया और वापस लौट आए। तब उनके पिता ने उनके लिए एक उपयुक्त पत्नी का प्रबंध किया। समय आने पर उन्हें अपने माता-पिता की सारी संपत्ति प्राप्त हुई।

एक दिन, अपने खजाने का निरीक्षण करने के बाद, जब वह अपने भव्य सोफे पर बैठे थे, तो उन्होंने एक सोने की थाली हाथ में ली और उस पर अपने पूर्वजों द्वारा उत्कीर्ण इन पंक्तियों को पढ़ा: "इतनी संपत्ति फलां ने अर्जित की, इतनी दूसरे ने। इस धन को अर्जित करने वाले अब नहीं रहे, परन्तु धन तो अब भी है; उनमें से कोई भी इसे अपने साथ नहीं ले जा सका; हम अपने धन को बांधकर परलोक नहीं ले जा सकते। यह देखते हुए कि यह पंच पापों से जुड़ा है, इस व्यर्थ धन को दान में देना श्रेष्ठ है; यह देखते हुए कि यह भौतिक शरीर अनेक रोगों से जुड़ा है, गुणी लोगों के प्रति आदर और दया दिखाना श्रेष्ठ है; यह देखते हुए कि यह क्षणभंगुर और निरर्थक जीवन सदा परिवर्तनशील है, आध्यात्मिक ज्ञान के लिए प्रयास करना श्रेष्ठ है। अतः मैं इन व्यर्थ खजानों को दान में दे दूंगा, ताकि ऐसा करके मैं श्रेष्ठ भाग को प्राप्त कर सकूं।" अत: वह अपने आसन से उठा और राजा की अनुमति लेकर उसने उदारतापूर्वक दान दिया।

सातवें दिन तक अपनी संपत्ति में कोई कमी न देखकर उन्होंने सोचा, "मेरे लिए धन क्या है? जब तक बुढ़ापा मुझ पर हावी नहीं हुआ है, मैं अभी से ही संन्यास का व्रत लूंगा, अपनी इंद्रियों और योग्यताओं का विकास करूंगा, और ब्रह्मा के उच्च स्वर्ग (देवदूतों के स्वर्ग) के लिए नियत हो जाऊंगा!" अतः उन्होंने अपने निवास के सभी द्वार खुलवा दिए और सभी को यह सब मुफ्त में देने को कहा; और इसे अपवित्र मानकर अस्वीकार करते हुए, उन्होंने आंखों की सभी इच्छाओं का त्याग कर दिया, और बहुत से लोगों के रोने-धोने के बीच, शहर छोड़कर हिमालय क्षेत्र की ओर चल दिए। वहां उन्होंने एकांत जीवन को अपनाया; और रहने के लिए एक सुखद स्थान की तलाश करते हुए, उन्हें यह स्थान मिला, और उन्होंने वहीं निवास करने का संकल्प लिया; और भोजन के लिए एक लौकी का वृक्ष चुनकर, वे वहीं बस गए, और उस वृक्ष की जड़ में रहने लगे। वह कभी किसी गाँव में नहीं रहे, बल्कि जंगलों में रहने लगे। उन्होंने कभी पत्तों की झोपड़ी नहीं बनाई, बल्कि इस वृक्ष की तलहटी में, खुले में, बैठे रहते थे, या यदि लेटना चाहते तो ज़मीन पर लेट जाते। वे भोजन पीसने के लिए मूसल का इस्तेमाल नहीं करते थे, केवल दाँतों का उपयोग करते थे, आग पर बिना पकाए भोजन ही खाते थे, और कभी भी छिलके सहित अनाज का एक दाना भी उनके मुँह में नहीं जाता था। वे दिन में एक बार, एक ही बार में भोजन करते थे। ज़मीन पर, मानो वे चारों तत्वों के साथ एक हो गए हों, वे तपस्वी गुणों को अपनाकर जीवन व्यतीत करते थे। उस जन्म में, जैसा कि हम जानते हैं, बोधिसत्व की बहुत कम आवश्यकताएँ थीं।

इस प्रकार शीघ्र ही उन्होंने सभी ज्ञान और योग्यताएँ प्राप्त कर लीं और उस स्थान पर परमानंदमय ध्यान की अवस्था में रहने लगे। जंगली फलों के लिए वे खेतों में दूर तक नहीं जाते थे; जब वृक्ष पर फल लगते थे, तो वे उन्हें खा लेते थे; जब फूल खिलते थे, तो वे फूल खा लेते थे; जब पत्ते उगते थे, तो वे पत्ते खा लेते थे; जब पत्ते नहीं होते थे, तो वे वृक्षों की छाल खा लेते थे। इस प्रकार वे परम संतोष में उस स्थान पर दीर्घकाल व्यतीत करते रहे। जैसे वे सुबह उस वृक्ष के फल तोड़ते थे, वैसे ही कभी लालच में आकर किसी अन्य स्थान से फल नहीं तोड़ते थे। जहाँ वे बैठते थे, वहीं अपना हाथ फैलाकर अपने हाथ की पहुँच में आने वाले सभी फलों को इकट्ठा कर लेते थे; वे उन्हें बिना किसी भेद के, अच्छे और बुरे के बीच अंतर किए बिना, खाते रहते थे। जब वे इसमें आनंद लेते रहे, तो उनके पुण्य के बल पर इंद्र का पीला पत्थर का सिंहासन गर्म हो गया। (वे कहते हैं कि यह सिंहासन तब गर्म हो जाता है जब सक्का (इंद्र) का जीवन अपने अंत की ओर अग्रसर होता है, या जब उसका पुण्य समाप्त हो जाता है और उसका कर्मफल निकल जाता है, या जब कोई शक्तिशाली प्राणी प्रार्थना करता है, या पुरोहितों या सामर्थ्य से परिपूर्ण ब्राह्मणों में सद्गुण के प्रभाव से (*3)।)

तब इंद्र ने सोचा, "अब मुझे कौन हटाएगा?" चारों ओर देखते हुए उन्होंने एक जंगल में एक विशेष स्थान पर ऋषि कान्हा को फल तोड़ते हुए देखा और जाना कि वहाँ घोर तपस्या के ऋषि विराजमान हैं, जिन्होंने अपनी सभी इंद्रियों को वश में कर लिया है; उन्होंने सोचा, "मैं उनके पास जाऊँगा, मैं उनसे तुरही की ध्वनि में धर्म का प्रचार करवाऊँगा, और शांतिदायक उपदेश सुनकर उन्हें वरदान देकर उनके वृक्ष को निरंतर फलदायी बना दूँगा, और फिर मैं यहाँ लौट आऊँगा।" फिर अपनी अपार शक्ति से शीघ्रता से नीचे उतरकर, ऋषि के पीछे उस वृक्ष की जड़ में खड़े होकर, यह परखने के लिए कि क्या ऋषि उनकी कुरूपता का उल्लेख करने पर क्रोधित होंगे, उन्होंने पहला श्लोक कहा:

"उस आदमी को देखो, जो पूरी तरह से काले रंग का है, और इस काले धब्बे पर रहता है।"
उसने जो मांस खाया वह काला था—मेरी आत्मा उसे पसंद नहीं करती!
अंधकारमय कान्हा ने उसकी बात सुनी। "मुझसे कौन बात कर रहा है?" अपनी दिव्य अंतर्दृष्टि से उसने जाना कि यह सक्का (इंद्र) थे; और बिना मुड़े, उन्होंने दूसरे श्लोक से उत्तर दिया:

हे सक्का (इंद्र), यद्यपि तुम काले रंग के हो, फिर भी सच्चे ब्राह्मण हो, देखो:
त्वचा के रंग से नहीं, लेकिन अगर कोई पाप करता है, तो उसे काला होना ही पड़ेगा।
इसके बाद, उन्होंने इन प्राणियों के विभिन्न प्रकारों का वर्णन करते हुए, उन पापों की निंदा की जो इन्हें अंधकारमय बनाते हैं, और सद्गुणों की प्रशंसा करते हुए, सक्का (इंद्र) को प्रवचन दिया, और ऐसा लगा मानो उन्होंने आकाश में चंद्रमा को उदय कर दिया हो। उनके प्रवचन को सुनकर सक्का (इंद्र) मोहित और प्रसन्न हो गए, और उन्होंने उस महान प्राणी को वरदान दिया, और तीसरे श्लोक को दोहराया:

"आपने बहुत ही मधुरता से बात की है, ब्राह्मण, आपने बहुत ही उत्कृष्ट ढंग से कहा है।"
जो भी आपका मन कहे, वही चुनें—जैसा आपका दिल कहे, इसलिए अपना चुनाव कर लें।"
यह सुनकर उस महान ऋषि ने मन ही मन सोचा, "मैं जानता हूँ कि यह कैसे हुआ होगा। वह मेरी परीक्षा लेना चाहता था, और देखना चाहता था कि क्या मैं अपनी कुरूपता का जिक्र सुनकर क्रोधित होता हूँ; इसलिए उसने मेरी त्वचा के रंग, मेरे भोजन, मेरे निवास स्थान का उपहास किया; यह देखकर कि मैं क्रोधित नहीं हुआ, वह प्रसन्न हुआ और मुझे वरदान देने का प्रस्ताव रखा; निस्संदेह वह सोचता है कि मैं सक्का (इंद्र) या ब्रह्मा (प्रधान देवदूत) की शक्ति की लालसा में इस प्रकार जीवन व्यतीत करता हूँ; और अब, उसे आश्वस्त करने के लिए, मुझे ये चार वरदान चुनने होंगे: कि मैं शांत रहूँ, कि मेरे मन में अपने पड़ोसी के प्रति कोई घृणा या द्वेष न हो, और कि मेरे मन में अपने पड़ोसी की महिमा का कोई लालच या वासना न हो।" इस प्रकार सोचते हुए, सक्का (इंद्र) के संदेह को दूर करने के लिए, ऋषि ने इन चार वरदानों का दावा करते हुए चौथा श्लोक बोला:

"सम्मोहन जगत के स्वामी सक्का (इंद्र) ने आशीर्वादों का एक विशेष विकल्प प्रदान किया।"
मैं द्वेष, घृणा, अधिकार की लालसा से मुक्ति चाहता हूँ।
और हर तरह की वासना से मुक्त होना: मैं इन चार वरदानों की कामना करता हूँ।"
इस विचार पर इंद्र ने कहा, "ऋषि कान्हा ने वरदान चुनते समय चार सबसे निष्कलंक वरदान चुने हैं। अब मैं उनसे पूछूंगा कि इन चारों में क्या अच्छा है और क्या बुरा है।" और उन्होंने पाँचवें श्लोक को दोहराते हुए प्रश्न पूछा:

"कामवासना में, घृणा में, अधिकार की लालसा में, द्वेष में, हे ब्राह्मण, कहो
आपको इसमें कौन सी बुरी बात दिखाई देती है? कृपया मुझे इसका उत्तर दें।
"तो सुनो," उस महान सत्ता ने उत्तर दिया और चार श्लोक कहे:

क्योंकि दुर्भावना से उपजी घृणा छोटी सी शुरुआत से ही बड़ी होती जाती है।
यह हमेशा कड़वाहट से भरा रहता है, इसलिए मैं नफरत नहीं चाहता।
दुष्ट लोगों के साथ हमेशा ऐसा ही होता है: पहले शब्द, फिर स्पर्श।
पहले मुट्ठी, फिर लाठी, और अंत में तलवार का तेज प्रहार:
जहां द्वेष होता है, वहां घृणा उत्पन्न होती है—इसलिए मेरे लिए कोई द्वेष नहीं।
"जब लोग लालच से प्रेरित होकर तेजी से काम करते हैं, तो धोखाधड़ी और छल उत्पन्न होते हैं।"
और बर्बर लूट की तीव्र खोज—इसलिए, किसी चीज पर अधिकार करने की कोई इच्छा नहीं।
"वासना से बंधी जंजीरें दृढ़ होती हैं, जो भरपूर फलती-फूलती हैं।"
दिल के भीतर, कड़वी पीड़ा के लिए—तब मेरे लिए कोई वासना नहीं होगी।"
इस प्रकार अपने प्रश्नों का उत्तर पाकर सक्का (इंद्र) ने उत्तर दिया, "हे बुद्धिमान कान्हा, आपने मेरे प्रश्नों का उत्तर बुद्ध की कुशलता से दिया है; मैं आपसे अत्यंत प्रसन्न हूँ; अब कोई दूसरा वरदान चुनिए" और उन्होंने दसवाँ श्लोक दोहराया।

"हे ब्राह्मण, आपने बहुत ही सुंदर बात कही है, उत्कृष्ट ढंग से कहा है।"
जो भी आपका मन कहे, वही चुनें—जैसा आपका दिल कहे, इसलिए अपना चुनाव कर लें।"
तुरंत ही बोधिसत्व ने एक श्लोक दोहराया:

"हे सक्का (इंद्र), समस्त जगत के स्वामी, आपने मुझे एक वरदान दिया है, मैं रो पड़ा।"
मैं जंगल में जहाँ रहता हूँ, जहाँ मैं बिल्कुल अकेला रहता हूँ,
ईश्वर करे कोई भी बीमारी मेरी शांति भंग न करे, न ही मेरे परमानंद (सम्मोहन) को भंग करे।
यह सुनकर इंद्र ने सोचा, "बुद्धिमान कान्हा वरदान चुनते समय भोजन से संबंधित कोई वस्तु नहीं चुनते; वे जो कुछ भी चुनते हैं वह तपस्वी जीवन से संबंधित है।" और अधिक प्रसन्न होकर उन्होंने एक और वरदान जोड़ा और एक और श्लोक पढ़ा:

"हे ब्राह्मण, आपने बहुत ही सुंदर बात कही है, उत्कृष्ट ढंग से कहा है।"
जो भी आपका मन कहे, वही चुनें—जैसा आपका दिल कहे, इसलिए अपना चुनाव कर लें।"
और बोधिसत्व ने अपने वरदान का वर्णन करते हुए अंतिम श्लोक में नियम बताया:

हे सक्का (इंद्र), समस्त जगत के स्वामी, आपने मुझे जो विकल्प चुनने को कहा था, वह यह है:
हे सक्का (इंद्र), मेरी ओर से किसी भी प्राणी को कहीं भी हानि न पहुंचाई जाए।
न शरीर से, न मन से: हे सक्का (इंद्र), यही मेरी प्रार्थना है (*4)।"
इस प्रकार, उस महान प्राणी ने छह अवसरों पर वरदान चुनते समय केवल वही वरदान चुना जो त्याग के जीवन से संबंधित था। वे भली-भांति जानते थे कि शरीर रोगग्रस्त है, और न ही सक्का (इंद्र) इसे दूर कर सकते हैं; न ही सक्का (इंद्र) के पास तीन द्वारों (*5) में जीवों को शुद्ध करने का अधिकार है; फिर भी, उन्होंने यह वरदान इसलिए चुना ताकि वे उन्हें धर्म का उपदेश दे सकें। और सक्का (इंद्र) ने उस वृक्ष को बारहमासी फलदायी बना दिया, और हाथ जोड़कर उनके सिर को स्पर्श करते हुए उन्हें प्रणाम किया और कहा, "यहाँ सदा रोगमुक्त रहो," और अपने स्थान पर चले गए। परन्तु बोधिसत्व ने कभी भी अपनी समाधि (तल्ली) भंग नहीं की, और वे ब्रह्मा के लोक (प्रधान देवदूतों के उच्चतर स्वर्ग) के लिए नियत हो गए।

यह पाठ समाप्त होने पर, गुरु ने कहा, "आनंद, यही वह स्थान है जहाँ मैं पहले रहता था," और इस प्रकार उन्होंने अपने जन्म का उल्लेख किया: "उस समय अनुरुद्ध सक्का (इंद्र) थे, और मैं स्वयं ज्ञानी कान्हा था।"

फुटनोट:

(1)अर्थात उसके पास इन भावनाओं से अधिक कोई भावना नहीं थी।

(2) इन तेरह तपस्वी प्रथाओं में पेड़ के नीचे रहना, अकेले रहना, जंगल में रहना, बैठकर सोना शामिल है, जैसा कि पाठ में पहले ही उल्लेख किया जा चुका है।

(3) इंद्र के सिंहासन के बारे में: उस समय राजाओं को एक विरासत मिली थी। जब वे उचित न्याय करना नहीं जानते थे, तो न्यायपीठ लात मारने लगती थी, और राजा की गर्दन मुड़ जाती थी जब वह उचित न्याय नहीं करता था।

(4)ये पंक्तियाँ मिलिंडा, पृष्ठ 384 में मिलती हैं।

(5) शरीर, वाणी, मन: वे तीन द्वार जिनसे बुराई प्रवेश करती है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **चतु-पोसथिका-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-441-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 441

चतु-पोसथिका-जातक

इस जन्म का वर्णन पुन्नक जन्म में किया जाएगा।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **शंख-जातक**
स्रोत: *डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-442-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 442
शंख-जातक

"हे विद्वान ब्राह्मण," इत्यादि - यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में सभी आवश्यक वस्तुओं के दान के बारे में सुनाई थी।

श्रावस्ती नगर में, ऐसा कहा जाता है कि तथागत (बुद्ध) के प्रवचन सुनकर एक गृहस्थ शिष्य प्रसन्न हुआ और उसने अगले दिन के लिए निमंत्रण दिया। उसने अपने द्वार पर भव्य रूप से सजा हुआ मंडप बनवाया और यह संदेश भेजा कि समय हो गया है। गुरु पाँच सौ भिक्षुओं के साथ आए और अपने लिए निर्धारित भव्य आसन पर विराजमान हुए। उस गृहस्थ ने बुद्ध के नेतृत्व में भिक्षुओं के समूह को बहुमूल्य उपहार दिए और उन्हें अगले दिन के लिए फिर से आमंत्रित किया। इस प्रकार सात दिनों तक उसने उन्हें आमंत्रित किया और उपहार दिए, और सातवें दिन उसने सभी भिक्षुओं को उनकी आवश्यक वस्तुएँ भेंट कीं। इस भेंट में उसने विशेष रूप से जूते भेंट किए। बुद्ध को भेंट किए गए जूतों का मूल्य एक हजार सिक्कों के बराबर था, दो मुख्य शिष्यों को भेंट किए गए जूतों का मूल्य पाँच सौ सिक्कों के बराबर था, और शेष पाँच सौ भिक्षुओं में से प्रत्येक को सौ सिक्कों के बराबर जूते दिए गए। भिक्षुओं को उनकी सभी आवश्यक वस्तुएँ भेंट करने के बाद, वह अपने साथियों के साथ भगवान बुद्ध के समक्ष बैठ गया। तब गुरु ने अत्यंत मधुर स्वर में धन्यवाद देते हुए कहा, "हे गृहस्थ, आपका दान अत्यंत उदार है; प्रसन्न होइए। पुराने समय में, बुद्ध के जन्म से पहले, ऐसे लोग थे जिन्होंने पच्चेक बुद्ध को एक जोड़ी जूते दान किए थे और उस दान के फलस्वरूप उन्हें समुद्र में शरण मिली थी, जहाँ कोई शरण नहीं थी; और आपने बुद्ध के पूरे समुदाय को वह सब कुछ दिया है जिसकी एक भिक्षु को आवश्यकता हो सकती है - यह कैसे संभव है कि आपके जूतों का दान आपके लिए शरण का स्रोत न बने?" और उनके अनुरोध पर, उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, इस बनारस का नाम मोलिनी था। जब ब्रह्मदत्त मोलिनी के राजा थे, तब एक धनी ब्राह्मण शंख ने शहर के चारों द्वारों पर एक-एक, शहर के मध्य में एक और अपने घर के पास एक-एक करके छह स्थानों पर भिक्षागृह बनवाए थे। वे प्रतिदिन छह लाख सिक्के दान करते थे और संन्यासियों एवं भिखारियों पर बहुत दया दिखाते थे।

एक दिन उसने मन ही मन सोचा, "मेरी सारी दौलत खत्म हो गई तो मेरे पास देने के लिए कुछ नहीं बचेगा। अभी जब तक यह बची है, मैं जहाज लेकर सोने के देश के लिए रवाना होऊंगा, जहाँ से मैं धन लेकर लौटूँगा।" इसलिए उसने एक जहाज बनवाया; उसे माल से भर दिया; और पत्नी और बच्चे को विदाई देते हुए कहा, "जब तक मैं वापस न आऊँ, तब तक दान बाँटने में कोई कसर मत छोड़ना।" इतना कहकर उसने अपना छाता उठाया, जूते पहने और अपने नौकरों के साथ, बंदरगाह की ओर मुँह करके, दोपहर के समय रवाना हो गया।

उसी क्षण, गंधमदन पर्वत पर ध्यानमग्न पच्चेक बुद्ध ने धन प्राप्ति के मार्ग पर चल रहे ब्राह्मण को देखा और सोचा, "एक महान व्यक्ति धन प्राप्ति के लिए यात्रा कर रहा है: क्या समुद्र में कोई बाधा होगी या नहीं? - होगी। यदि वह मुझे देखेगा तो मुझे जूते और धूप से बचाव के लिए छाता भेंट करेगा; और जूतों के इस दान के कारण, जब उसका जहाज समुद्र में डूब जाएगा तो उसे शरण मिलेगी। मैं उसकी सहायता करूँगा।" अतः वायु में उड़ते हुए, वे यात्री से कुछ ही दूरी पर उतरे और उससे मिलने के लिए आगे बढ़े, तेज हवा और धूप में जलते अंगारों की तरह गर्म रेत पर पैर रखते हुए। ब्राह्मण ने सोचा, "यहाँ पुण्य कमाने का अवसर है; मुझे आज यहाँ एक बीज बोना चाहिए।" अत्यंत प्रसन्न होकर वे उससे मिलने और अभिवादन करने के लिए शीघ्रता से आगे बढ़े। उन्होंने कहा, "महोदय, कृपया कुछ समय के लिए सड़क से हटकर इस वृक्ष के नीचे आ जाएँ।" फिर जब वह व्यक्ति वृक्ष के नीचे आया, तो उसने उसके लिए रेत साफ की, उसका ऊपरी वस्त्र बिछाया और उसे बिठाया; उसने सुगंधित जल से उसके पैर धोए, सुगंधित तेल से उसका लेप किया; उसने अपने पैरों से जूते उतारे, उन्हें साफ किया और सुगंधित तेल से लेप किया और उसे पहना दिए, और उसे जूते और धूप से बचने के लिए छाता भेंट किया, और उससे कहा कि वह एक जूता पहने और दूसरा अपने रास्ते जाते समय सिर पर फैला दे। दूसरे ने उसे प्रसन्न करने के लिए

उपहार स्वीकार किया, और ब्राह्मण ने अपनी आस्था में वृद्धि के लिए उसे देखते हुए, उड़कर गंधमदन की ओर अपने रास्ते पर फिर से चल दिया।

बोधिसत्व प्रसन्न होकर बंदरगाह की ओर बढ़े और जहाज पर सवार हो गए।

जब वे खुले समुद्र में पहुँचे, तो सातवें दिन जहाज में रिसाव हो गया और वे पानी को साफ नहीं कर सके। सभी लोग अपनी जान के डर से जोर-जोर से चिल्लाने लगे और अपने-अपने देवता (देवदूत) को पुकारने लगे। उस महान सत्ता ने अपने लिए एक सहायक चुना और अपने पूरे शरीर पर तेल लगाकर, अपनी इच्छा अनुसार घी में पिसी हुई चीनी खाई, और उस व्यक्ति को भी खाने को देकर, वह मस्तूल पर चढ़ गया। उसने कहा, "उस दिशा में हमारा शहर है"; दिशा बताते हुए और मछलियों और कछुओं के भय को त्यागकर, वह उस व्यक्ति के साथ डेढ़ सौ भुजाओं से भी अधिक दूर समुद्र में गोता लगा गया। बहुत से लोग मारे गए; लेकिन वह महान सत्ता अपने सेवक के साथ समुद्र में आगे बढ़ने लगी। वह सात दिनों तक तैरता रहा। इस दौरान भी उसने पवित्र उपवास रखा और खारे पानी से अपना मुँह धोया।

उस समय मणि-मेखला नामक एक देवी को, जिसका अर्थ रत्न-क्षेत्र है, लोक के चार स्वामियों ने आदेश दिया था, "यदि किसी भी मनुष्य के साथ, जिसने तीन शरणस्थलों की शरण ली हो, या जो सद्गुणों से संपन्न हो, या जो अपने माता-पिता की पूजा करता हो, कोई दुर्घटना हो जाए, तो आप उसकी रक्षा करें"; और ऐसे किसी भी व्यक्ति की रक्षा के लिए, देवी ने समुद्र पर विराजमान होकर स्थान ग्रहण किया। अपनी दिव्य शक्ति के कारण वह सात दिनों तक समुद्र की ओर नहीं देखीं, लेकिन सातवें दिन, समुद्र को देखते हुए, उन्होंने गुणी ब्राह्मण शंख को देखा और सोचा, "उस व्यक्ति को समुद्र में फेंके हुए अब सात दिन हो गए हैं: यदि वह मर गया, तो यह मेरा बड़ा दोष होगा।" हृदय से व्याकुल होकर देवी ने एक सोने की थाली में सभी प्रकार के दिव्य मांस भर दिए, और तेज हवा की गति से उसकी ओर बढ़ते हुए, उसके सामने हवा में रुक गईं और बोलीं, "सात दिनों से, ब्राह्मण, तुमने कुछ नहीं खाया है: इसे खाओ!" ब्राह्मण ने उनकी ओर देखा और उत्तर दिया, "अपना भोजन ले जाओ, क्योंकि मैं उपवास कर रहा हूँ।"

उसके पीछे आए उसके सेवक ने देवता को तो नहीं देखा, लेकिन केवल ध्वनि सुनी; और उसने सोचा, "मुझे लगता है कि ब्राह्मण कोमल शरीर का होने और सात दिनों के उपवास के कारण पीड़ा और मृत्यु के भय से बड़बड़ा रहा है; मैं उसे सांत्वना दूंगा।" और उसने पहला श्लोक दोहराया:

हे विद्वान ब्राह्मण, पवित्रता से परिपूर्ण,
अनेक पवित्र शिक्षकों का शिष्य, क्यों?
तर्कहीन होकर व्यर्थ की बकवास करना
जब मेरे सिवा कोई जवाब देने के लिए यहाँ मौजूद ही न हो?
ब्राह्मण ने सुना, और यह जानते हुए कि उसने देवता को नहीं देखा था, उसने कहा, "हे स्वामी, मृत्यु का भय नहीं है; बल्कि मेरे पास यहाँ एक और व्यक्ति है जिससे मैं बात कर सकता हूँ"; और उसने दूसरा श्लोक दोहराया:

"यह एक सुंदर, दीप्तिमान उपस्थिति है, जिस पर सोने की चमक बिखरी हुई है।"
इससे मुझे पोषण के लिए भोजन मिलता है।
सभी को साहसपूर्वक सोने की थाली में सजाया गया:
मैं उसे पूरे मन से 'नहीं' कहता हूँ।
फिर उस व्यक्ति ने तीसरी पंक्ति दोहराई:

"यदि कोई ऐसे अद्भुत प्राणी को देख ले,
मनुष्य को आशापूर्वक आशीर्वाद मांगना चाहिए।
उठो, उससे विनती करो, हाथ जोड़कर:
"बताइए, आप मनुष्य हैं या देवता?"
"तुमने ठीक कहा," ब्राह्मण ने कहा और चौथे श्लोक को दोहराते हुए अपना प्रश्न पूछा:

"जैसा कि आप मुझे देखते हैं, दयालु तरीके से"
और मुझसे कहो, "यह भोजन लो और खाओ।"
मैं आपसे पूछता हूँ, हे शक्ति में श्रेष्ठ महिला,
मैं पूछता हूँ, क्या तुम देवी हो या स्त्री?
इस पर देवता ने दो श्लोक दोहराए:

मैं शक्ति में श्रेष्ठ देवी हूँ;
और वह मध्य महासागर की ओर आगे बढ़ता गया।
करुणा से परिपूर्ण और हृदय से प्रसन्न,
तुम्हारे लिए इस चरम स्थिति में आया हूँ।
"यहाँ भोजन, पेय और विश्राम स्थल उपलब्ध हैं।"
विभिन्न प्रकार के और कई बार वाहन;
शंख, मैं तुम्हें सर्वस्व का स्वामी बनाता हूँ।
जिसे आपका दिल वांछनीय मान सकता है।
यह सुनकर उस महान प्राणी ने मन ही मन सोचा, "यह देवी (उसने सोचा), सागर के बीच में विराजमान होकर मुझे यह और वह वस्तु भेंट कर रही है। वह मुझे ये वस्तुएँ क्यों भेंट करना चाहती है? क्या यह मेरे किसी पुण्य कर्म के कारण है, या वह अपनी शक्ति से ऐसा कर रही है? खैर, मैं यह प्रश्न पूछूंगा।" और उसने सातवें श्लोक के शब्दों में यह प्रश्न पूछा:

मेरे सभी बलिदानों और भेंटों में से
आप रानी हैं, और शासन करने का अधिकार भी आपका ही है;
सुडौल कमर वाली, सुंदर भौंहों वाली तुम:
मेरे किस कर्म के कारण यह सब हुआ?
देवी ने उसकी बात सुनी और सोचा, "मुझे लगता है कि इस ब्राह्मण ने यह प्रश्न इसलिए पूछा है क्योंकि वह सोचता है कि मुझे नहीं पता कि उसने कौन सा पुण्य कर्म किया है। मैं उसे बता दूंगी।" अतः उन्होंने उसे आठवें श्लोक के शब्दों में बताया:

"एक अकेला, जलते हुए रास्ते पर,"
थके-हारे, पैरों में छाले पड़े हुए, प्यासे होने के बावजूद, तुम वहीं रुके रहे।
हे ब्राह्मण शंख, मुझे चप्पल भेंट करो:
"आज का दिन आपके लिए समृद्धि का उपहार है।"
जब उस महान प्राणी ने यह सुना, तो उसने मन ही मन सोचा, "वाह! इस अथाह सागर में मेरे द्वारा दिया गया जूतों का उपहार मेरे लिए सर्वदान बन गया! आह, पच्चेक बुद्ध को दिया गया मेरा उपहार कितना भाग्यशाली रहा!" फिर, अत्यंत संतोष के साथ, उसने नौवें श्लोक को दोहराया:

"मज़बूत तख्तों से बना एक जहाज हो।"
अनुकूल हवाओं के सहारे तेजी से आगे बढ़ा, समुद्र की लहरों से अप्रभावित;
यहां अन्य वाहनों के लिए कोई जगह नहीं है;
आज ही मुझे मोलिनी ले चलो।
ये शब्द सुनकर देवी अत्यंत प्रसन्न हुईं और उन्होंने सात बहुमूल्य वस्तुओं से निर्मित एक पोत प्रकट किया; उसकी लंबाई आठ सौ भुजाएँ, चौड़ाई छह सौ भुजाएँ और गहराई बीस फ़ैदम (छह फ़ीट) थी; उसमें नीलम के तीन मस्तूल, सोने की रस्सियाँ, चाँदी के पाल और चप्पू एवं पतवार भी सोने के थे। देवी ने इस पोत को सात बहुमूल्य वस्तुओं से भर दिया; फिर ब्राह्मण को आलिंगन देकर उसे उस भव्य पोत पर बिठा दिया। उन्होंने सेवक पर ध्यान नहीं दिया; परन्तु ब्राह्मण ने उसे अपने सौभाग्य का एक हिस्सा दे दिया; वह प्रसन्न हुआ, देवी ने उसे भी आलिंगन दिया और पोत पर बिठा दिया। फिर उन्होंने पोत को मोलिनी नगर की ओर ले जाकर, इस समस्त धन को ब्राह्मण के घर में रखकर अपने निवास स्थान पर लौट गईं।

गुरु ने अपनी पूर्ण बुद्धि से अंतिम श्लोक कहा:

वह प्रसन्न, आनंदित और प्रसन्न थी।
एक अद्भुत पोत प्रकट हुआ;
फिर, अपने सेवक के साथ शंखा को लेकर,
उस सबसे सुंदर शहर ने उन्हें करीब ला दिया।
और वह ब्राह्मण जीवन भर घर में ही रहा, असीम उदारता का वितरण करता रहा और सद्गुणों का पालन करता रहा; और अपने जीवन के अंत में वह अपने पति के साथ स्वर्ग चला गया।

जब गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त किया तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की: सत्यों की व्याख्या के बाद, गृहस्थ ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) में प्रवेश किया: और इस प्रकार उसने जन्म की पहचान की; "उस समय उप्पलावन्ना देवता थे, आनंद सेवक थे, और मैं स्वयं ब्राह्मण शंख था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कुल्ल-बोधि-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-443-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 443
कुल्ला-बोधि-जातक। (*1)

“यदि कोई आवेशित हो जाए,” इत्यादि—यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में एक आवेशित व्यक्ति के बारे में सुनाई थी। यह व्यक्ति संन्यासी बनने के बाद, मोक्ष (निर्वाण) के समस्त आशीर्वादों की ओर ले जाने वाले मार्ग का अनुसरण करते हुए, अपने आवेश पर नियंत्रण नहीं रख पा रहा था: वह आवेशित और द्वेषपूर्ण था; ज़रा सी बात पर वह क्रोधित हो जाता, आवेश में आ जाता, कड़वे और हठी स्वभाव का हो जाता। गुरु ने उसके आवेशित व्यवहार के बारे में सुनकर उसे बुलवाया और पूछा कि क्या यह सच है कि वह आवेशित है, जैसा कि अफवाह थी? “जी, महाराज,” उस व्यक्ति ने उत्तर दिया। “भाई (भिक्षु),” गुरु ने कहा, “आवेश को नियंत्रित करना चाहिए; ऐसे दुष्ट का न तो इस लोक में और न ही परलोक में कोई स्थान है। परम बुद्ध, जो आवेशित नहीं हैं, उनके मोक्ष (निर्वाण) मार्ग को अपनाने के बाद भी तुम आवेशित क्यों हो? प्राचीन काल के बुद्धिमान पुरुष, यहाँ तक कि वे भी जिन्होंने हमारे मार्ग से भिन्न संन्यासी मार्ग अपनाया, क्रोध से दूर रहे।” और उन्होंने उसे एक प्राचीन कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, काशी नामक एक नगर में एक धनी, समृद्ध और संपत्ति संपन्न ब्राह्मण रहता था, परन्तु उसकी पत्नी पुत्र की कामना करती थी। उसी समय ब्रह्मा के लोक (प्रधान देवदूतों) से अवतरित बोधिसत्व उस स्त्री के गर्भ में उत्पन्न हुए; और उनके नामकरण के दिन उनका नाम बोधिकुमार रखा गया। जब वे वयस्क हुए तो तक्षशिला गए, जहाँ उन्होंने सभी विद्याओं का अध्ययन किया; और घर लौटने पर, उनकी इच्छा के विरुद्ध, उनके माता-पिता ने उनके लिए उसी जाति के परिवार से एक कन्या का विवाह किया। वह कन्या भी ब्रह्मा के लोक (परमलोक) से इस लोक में अवतरित हुई थी और अप्सरा के समान अत्यंत सुंदर थी। इन दोनों का विवाह हुआ, यद्यपि दोनों में से किसी की भी इच्छा नहीं थी। दोनों ने कभी कोई पाप नहीं किया था, और न ही प्रेम-प्रसंग में एक-दूसरे की ओर दृष्टि डाली थी; यहाँ तक कि स्वप्न में भी उन्होंने कभी प्रेम-प्रसंग नहीं किया था, वे इतने पवित्र थे।

कुछ समय बाद, जब उनके माता-पिता का देहांत हो गया और उन्होंने उनके पार्थिव शरीरों का विधिवत अंतिम संस्कार कर दिया, तब उस महान पुरुष ने अपनी पत्नी को बुलाकर कहा, "हे देवी, आप यह अस्सी करोड़ (10 मिलियन) की संपत्ति ले लीजिए और सुखमय जीवन व्यतीत कीजिए।" - "नहीं, बल्कि आप, महाराज।" उन्होंने कहा, "मुझे धन की कोई इच्छा नहीं है; मैं हिमालय क्षेत्र में जाकर संन्यासी बन जाऊंगा और वहीं शरण पाऊंगा।" - "अच्छा, महाराज, क्या केवल पुरुषों को ही तपस्वी जीवन जीना चाहिए?" "नहीं," उन्होंने कहा, "स्त्रियों को भी।" "तो मैं आपकी इस व्यर्थ की बात को नहीं मानूंगा; मुझे धन की उतनी ही परवाह नहीं है जितनी आपको, और मैं भी आपकी ही तरह संन्यासी जीवन व्यतीत करूंगा।"

“बहुत अच्छा, महिला,” उसने कहा। और उन दोनों ने बड़ी मात्रा में दान दिया; और एक रमणीय स्थान पर जाकर उन्होंने एक आश्रम बनाया। वहाँ वे दस वर्षों तक जंगली फलों को इकट्ठा करके खाते रहे, फिर भी उन्हें समाधि की अवस्था प्राप्त नहीं हुई।

और वहां दस वर्षों तक तपस्वी जीवन के सुख में रहने के बाद, वे नमक और मसाले प्राप्त करने के लिए देश भर में यात्रा करते हुए, उचित समय पर बनारस पहुंचे, जहां वे शाही उद्यान में रहने लगे।

एक दिन राजा ने हाथ में उपहार लेकर आए उद्यान-रक्षक को देखकर कहा, "हम अपने उद्यान में आनंद मनाएंगे, इसलिए इसे व्यवस्थित करो।" उद्यान की सफाई और उसे तैयार करने के बाद, राजा अपने कई सेवकों के साथ उसमें प्रवेश कर गया। उस समय ये दोनों भी उद्यान के एक भाग में बैठे हुए थे और संन्यासी जीवन के आनंद में लीन थे। राजा जब उद्यान से गुजर रहा था, तो उसने उन दोनों को वहाँ बैठे देखा; और जैसे ही उसकी दृष्टि इस सुंदर और मनमोहक स्त्री पर पड़ी, वह उससे प्रेम करने लगा। इच्छा से कांपते हुए, उसने यह

जानने का निश्चय किया कि वह उस तपस्वी के लिए क्या है; इसलिए बोधिसत्व के पास जाकर उसने उनसे यह प्रश्न पूछा। बोधिसत्व ने कहा, "महाराज, वह मेरे लिए कुछ भी नहीं है; वह केवल मेरे संन्यासी जीवन की सहचर है, परन्तु संसार में रहते हुए वह मेरी पत्नी थी।" यह सुनकर राजा मन ही मन सोचने लगा, "तो वह कहता है कि वह उसके लिए कुछ भी नहीं है, जबकि सांसारिक जीवन में वह उसकी पत्नी थी। अच्छा, अगर मैं अपनी संप्रभु शक्ति से उसे छीन लूँ तो वह क्या करेगा? मैं उसे ले ही लूँगा।" और इस प्रकार पास आकर उसने पहली पंक्ति दोहराई:

"यदि कोई उस बड़ी-बड़ी आँखों वाली महिला को पकड़कर आपसे दूर ले जाए,
हे ब्राह्मण, जो वहां मुस्कुराते हुए बैठा है, तुम क्या करोगे?
इस प्रश्न के उत्तर में, उस महान सत्ता ने दूसरे श्लोक को दोहराया:

"एक बार उठ खड़ा होने के बाद, यह जीवन भर मुझे कभी नहीं छोड़ेगा, बिल्कुल भी नहीं।"
जैसे बारिश की बौछार धूल को फिर से बिछा देती है, वैसे ही उसे बुझा दो जब वह अभी छोटी हो।
इस प्रकार महान सत्ता ने सिंह की दहाड़ के समान बुलंद स्वर में उत्तर दिया। यद्यपि राजा ने यह सुना, फिर भी अज्ञानता और कुकर्म के आवेश में आकर उसका हृदय मोहित हो गया और उसने अपने एक दरबारी को आदेश दिया, "कि वह उस स्त्री को महल में ले जाए।" दरबारी ने आज्ञाकारी होकर, उसके बार-बार कहने और रोने के बावजूद कि अराजकता और अन्याय ही संसार का मार्ग है, उसे अपने साथ ले गया। बोधिसत्व ने उसकी चीखें सुनीं, एक बार देखा और फिर नहीं देखा। इस प्रकार रोती-बिलखती हुई उसे महल ले जाया गया।

बनारस के राजा ने अपने उद्यान में देर नहीं की, बल्कि तुरंत अंदर लौट आए और उस स्त्री को बुलवाकर उसका बहुत सम्मान किया। उसने ऐसे सम्मान की निरर्थकता और एकांत जीवन के एकमात्र महत्व के बारे में बताया। राजा ने देखा कि वह किसी भी तरह से उसका मन नहीं जीत सकते, इसलिए उन्होंने उसे एक अलग कमरे में रखवाया और सोचने लगे, "यह एक तपस्वी स्त्री है जिसे इस सम्मान की कोई परवाह नहीं है, और उस साधु ने तो तब भी क्रोधित दृष्टि नहीं डाली जब वह पुरुष इतनी सुंदर स्त्री को अपने साथ ले गया! साधुओं का आकर्षण बहुत गहरा होता है; वह अवश्य ही कोई साजिश रचेगा और मुझे नुकसान पहुंचाएगा। अच्छा, मैं उसके पास वापस जाऊंगा और पता लगाऊंगा कि वह वहां क्यों बैठा है।" और इस प्रकार, वह शांत नहीं रह सके और उद्यान में चले गए।

बोधिसत्व अपना लबादा सिल रहे थे। राजा लगभग अकेले ही, बिना किसी आहट के, दबे पांव आए। राजा की ओर देखे बिना ही, दूसरे बोधिसत्व अपना काम करते रहे। राजा ने सोचा, "यह व्यक्ति मुझसे बात नहीं कर रहा है क्योंकि वह क्रोधित है। यह पाखंडी तपस्वी पहले तो दहाड़ता है, 'मैं क्रोध को बिल्कुल भी उत्पन्न नहीं होने दूंगा, लेकिन यदि यह उत्पन्न हुआ, तो मैं इसे शुरुआत में ही कुचल दूंगा,' और फिर क्रोध में इतना अड़ियल हो जाता है कि मुझसे बात तक नहीं करता!" इसी विचार के साथ राजा ने तीसरा श्लोक दोहराया:

तुम जो कुछ समय पहले तक शेखी बघारने में माहिर थे,
अब तुम गुस्से में आकर चुपचाप बैठो और सिलाई करो!
जब उस महान सत्ता ने यह सुना, तो उसने समझा कि राजा उसे क्रोध के कारण चुप समझ रहा है; और यह दिखाने की इच्छा से कि वह क्रोध से प्रभावित नहीं है, उसने चौथे श्लोक को दोहराया:

"एक बार उठने के बाद, इसने मुझे कभी नहीं छोड़ा, और यह मुझे कभी नहीं छोड़ेगा।"
जैसे ही बारिश की बौछार धूल को फिर से बिछा देती है, मैंने उसे तब बुझा दिया जब वह छोटी थी।"
ये शब्द सुनकर राजा ने सोचा, "क्या वह क्रोध की बात कर रहा है, या किसी और बात की? मैं उससे पूछूंगा।" और उसने पाँचवें श्लोक को दोहराते हुए प्रश्न पूछा:

"ऐसी कौन सी चीज है जो जीवन भर आपको कभी नहीं छोड़ती, कभी भी नहीं?"
जब बारिश की बौछार धूल को फिर से उड़ा देती है, तो उस छोटी सी चीज ने तुम्हारी प्यास बुझाई थी?
दूसरे ने कहा, "महाराज, इस प्रकार क्रोध बहुत दुख और विनाश लाता है; यह मेरे भीतर अभी-अभी शुरू हुआ था, लेकिन दयालु भावनाओं को पोषित करके मैंने इसे शांत कर दिया," और फिर उसने क्रोध के दुख के बारे में सिखाने के लिए निम्नलिखित छंदों को दोहराया।

"वह चीज जिसके बिना मनुष्य स्पष्ट रूप से नहीं देख पाता, जिसके सहारे वह अंधाधुंध आगे बढ़ता रहता है।"
मेरे भीतर क्रोध उत्पन्न हुआ, लेकिन उसे मुक्त नहीं होने दिया गया—मूर्खता से पोषित क्रोध।
"हमारे प्रतिद्वंद्वियों को किस बात से संतुष्टि मिलती है, जो हमारे सिर पर कष्ट लाना चाहते हैं?"
मेरे भीतर क्रोध उत्पन्न हुआ, लेकिन उसे मुक्त नहीं होने दिया गया—मूर्खता से पोषित क्रोध।

"जो चीज हमारे भीतर जागृत हो जाए तो वह हमारे आध्यात्मिक कल्याण के प्रति पूरी तरह से अंधा कर देती है।"
मेरे भीतर क्रोध उत्पन्न हुआ, लेकिन वह मुक्त नहीं हो सका—अधर्म, जिसका पोषण कुकर्म ने किया।
"वह जो सर्वोच्च रूप से प्रत्येक महान आशीर्वाद को नष्ट कर देता है,"
जिसके कारण इसके शिकार हर अच्छी चीज को त्याग देते हैं।
शक्तिशाली, विनाशकारी, अपने भय के झुंड के साथ,
हे महान राजा, क्रोध ने मेरा पीछा नहीं छोड़ा!
"ईंधन को हिलाने और पलटने से आग और भी ऊंची उठेगी।"
और क्योंकि आग ऊपर उठती है, इसलिए ईंधन भी जल जाता है।
और इस प्रकार मूर्ख के मन में, जो व्यक्ति विवेक नहीं कर सकता,
झगड़े से क्रोध उत्पन्न होता है, और उसी से व्यक्ति स्वयं भी जल उठेगा।
जिसका क्रोध ईंधन और घास से जलती हुई आग की तरह बढ़ता है,
जैसे अंधकारमय पखवाड़े में चंद्रमा का रंग घटता है, वैसे ही उसका सम्मान भी घटता-बढ़ता रहता है।
जो व्यक्ति अपने क्रोध को शांत कर लेता है, वह उस आग की तरह हो जाता है जिसे ईंधन नहीं मिलता।
जैसे शुक्ल पक्ष में चंद्रमा चमकता है, वैसे ही उनका सम्मान भी बढ़ता जाता है।
जब राजा ने उस महान व्यक्ति का प्रवचन सुना, तो वह अत्यंत प्रसन्न हुआ और उसने अपने एक दरबारी को उस स्त्री को वापस लाने का आदेश दिया; और उस भावहीन संन्यासी को उस उद्यान में उसके साथ एकांत जीवन का आनंद लेने के लिए आमंत्रित किया, और वादा किया कि वह उनकी रक्षा करेगा और उनकी देखभाल करेगा। फिर क्षमा मांगकर उसने विनम्रतापूर्वक विदा ली। और वे दोनों वहीं रहने लगे। कुछ समय बाद स्त्री की मृत्यु हो गई, और उसकी मृत्यु के बाद, वह पुरुष हिमालय लौट गया, और अपनी क्षमताओं और उपलब्धियों को विकसित करते हुए, और अपने भीतर श्रेष्ठता को उत्पन्न करते हुए, वह ब्रह्मा के स्वर्ग (प्रधान देवदूतों के स्वर्ग) के लिए नियत हो गया।

जब गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई;--(अब सत्यों के समापन पर भावुक भाई (भिक्षु) तीसरे मार्ग (सम्मोहन) के फल में स्थापित हो गए)--"उस समय राहुल की माता (बुद्ध की पत्नी) तपस्वी थीं, आनंद राजा थे, और मैं स्वयं तपस्वी था।"

फुटनोट:

(1)अनानुसोसिया-जातक, संख्या 328

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कान्हादीपायन-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-444-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 444
कन्हादीपायना-जातक

"सात दिन," इत्यादि—यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में एक धर्मभ्रष्ट भिक्षु के बारे में सुनाई थी। इस घटना का वर्णन कुश जन्म (*1) के अंतर्गत किया जाएगा। जब गुरु ने पूछा कि क्या यह कथन सत्य है, और उस व्यक्ति ने कहा कि यह सत्य है, तो उन्होंने कहा, "भाई, बुद्ध के उदय से पहले, पुराने समय में, यहाँ तक कि वे बुद्धिमान लोग भी जिन्होंने पचास वर्षों से अधिक समय तक धर्मविहीन (सन्यासी) जीवन व्यतीत किया, अपनी संवेदनशील प्रकृति के संदेहों के कारण कभी किसी को अपने धर्मभ्रष्ट होने की बात नहीं बताई; और तुम, जिसने हमारे जैसे मोक्ष (निर्वाण) की ओर ले जाने वाले धर्म (धार्मिक मार्ग) को अपनाया है, और जो मुझ जैसे पूजनीय बुद्ध की उपस्थिति में खड़े हो, तुमने अपने धर्मभ्रष्ट होने की बात चारों प्रकार के शिष्यों के सामने क्यों बताई? तुम अपने संदेहों को क्यों नहीं छिपाते?" ऐसा कहकर उन्होंने एक प्राचीन कथा सुनाई।

एक समय की बात है, वंश राज्य में कोसंबी (*2) नामक एक राजा का शासन था, जिसका नाम कोसंबिका था। उस समय एक नगर में दो ब्राह्मण रहते थे, जिनमें से प्रत्येक के पास अस्सी करोड़ (10 मिलियन) धन था, और वे एक दूसरे के घनिष्ठ मित्र थे। कामवासना के दुराचार को जानकर, उन्होंने बहुत सी संपत्ति दान में दी और संसार त्याग दिया। अनेक लोगों के विलाप के बीच वे हिमालय चले गए और वहाँ एक आश्रम बनाया। वहाँ वे पचास वर्षों तक तपस्वी जीवन व्यतीत करते रहे, जहाँ भी उन्हें वनों के फल और जड़ें मिलतीं, उन्हें खाकर अपना जीवन व्यतीत करते रहे; परन्तु वे समाधि की अवस्था को प्राप्त करने में असमर्थ रहे।

पचास वर्ष बीत जाने के बाद, वे नमक और मसाले लेने के लिए देश भर में तीर्थयात्रा पर निकले और काशी राज्य में पहुँचे। इस राज्य के एक नगर में मांडव्य नामक एक गृहस्थ रहता था, जो तपस्वी दिपायन का गृहस्थ जीवन में मित्र था। हमारे दोनों मित्र मांडव्य के पास गए; उन्हें देखकर मांडव्य मुग्ध हो गया और उसने उनके लिए पत्तों की एक कुटिया बनाई और उन्हें जीवन की चारों आवश्यक वस्तुएँ प्रदान कीं। वे तीन-चार ऋतुओं तक वहाँ रहे और फिर दिपायन से विदा लेकर बनारस की तीर्थयात्रा पर चले गए, जहाँ वे अतिमुत्तक वृक्षों से आच्छादित एक कब्रिस्तान में रहने लगे। जब दिपायन वहाँ अपनी इच्छा अनुसार कुछ समय तक रहे, तो वे अपने पुराने मित्र के पास लौट आए; दूसरा तपस्वी मांडव्य अभी भी उसी स्थान पर रहता था। (*3)

एक दिन एक लुटेरा शहर में चोरी करके लौट रहा था और अपने साथ काफी सारा माल लेकर जा रहा था। घर के मालिक और पहरेदार जाग उठे और ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने लगे, "चोर!"। लुटेरा उनके पीछे भागते हुए नाले से निकल गया और कब्रिस्तान के पास से तेज़ी से भागते हुए उसने अपना गठ्ठा तपस्वी की कुटिया के दरवाज़े पर गिरा दिया। जब घर के मालिकों ने गठ्ठा देखा, तो वे चिल्लाए, "अरे, बदमाश! तू रात में लुटेरा है और दिन में तपस्वी का वेश धारण करके घूमता है!" इसलिए, उसे गालियाँ और मारते-पीटते हुए वे राजा के सामने ले गए।

राजा ने कोई पूछताछ नहीं की, बल्कि केवल इतना कहा, "इसे ले जाओ, इसे खंभे पर लटका दो!" वे उसे श्मशान ले गए और बबूल की लकड़ी के खंभे पर खड़ा कर दिया; लेकिन खंभा तपस्वी के शरीर में नहीं घुसा। फिर वे नीम की लकड़ी का खंभा लाए, लेकिन यह भी उसे नहीं भेद पाया: फिर लोहे का कीला लाया गया, और वह भी उसके शरीर में नहीं घुसा। तपस्वी को आश्चर्य हुआ कि उसके किस पिछले कर्म के कारण ऐसा हुआ होगा, और उसने अतीत का अवलोकन किया; तब उसे पूर्व जन्मों का ज्ञान प्राप्त हुआ, और इस तरह अतीत का अवलोकन करते हुए उसने देखा कि उसने बहुत पहले क्या किया था; और वह यह था - आबनूस की लकड़ी के टुकड़े पर मक्खी को चुभना।

कहा जाता है कि पिछले जन्म में वह एक बढ़ई का पुत्र था। एक बार वह उस स्थान पर गया जहाँ उसका पिता पेड़ काटने का काम करता था, और उसने आबनूस की लकड़ी के टुकड़े से एक मक्खी को इस प्रकार छेद दिया जैसे उसे सूली पर चढ़ा रहा हो। और यही पाप उसके जीवन के अंतिम क्षण में उसके सामने आया। उसने महसूस किया कि अब पाप से मुक्ति पाना असंभव है; इसलिए उसने राजा के सैनिकों से कहा, "यदि तुम मुझे सूली पर चढ़ाना चाहते हो, तो आबनूस की लकड़ी का एक खंभा ले आओ।" उन्होंने ऐसा ही किया, उसे उस पर गाड़ दिया और एक पहरेदार को उसकी निगरानी के लिए छोड़कर चले गए।

छुपकर पहरेदार उसे देखने आने वाले सभी लोगों पर नज़र रख रहे थे। अब दिपायन ने सोचा, "अपने तपस्वी साथी को देखे हुए बहुत समय हो गया है," और उसे ढूंढने आया। उसने सुना कि वह दिन भर सड़क किनारे सूली पर लटका रहा है, तो वह उसके पास गया और एक तरफ खड़े होकर पूछा कि उसने क्या किया है। "कुछ नहीं," उसने कहा। "क्या तुम द्वेष भाव से बच सकते हो या नहीं?" दूसरे ने पूछा। "हे मित्र," उसने कहा, "न तो मुझे पकड़ने वालों के प्रति, न ही राजा के प्रति, मेरे मन में कोई द्वेष है।" - "यदि ऐसा है, तो इतने गुणी व्यक्ति की छाया मुझे सुखद लगती है," और ये कहकर वह सूली के किनारे बैठ गया। फिर मांडव्य के शरीर से उसके शरीर पर रक्त की बूंदें गिरीं; और ये बूंदें सुनहरी त्वचा पर गिरकर सूख गईं, जिससे उसे कान्हा या काला दिपायन नाम मिला। और वह पूरी रात वहीं बैठा रहा।

अगले दिन पहरेदार राजा के पास गए और उन्हें सारी बात बताई। राजा ने कहा, "मैंने जल्दबाजी में काम किया है।" वे तुरंत उस स्थान पर पहुँचे और दिपायन से पूछा कि वह सूली के पास क्यों बैठा है। दिपायन ने उत्तर दिया, "महाराज, मैं यहाँ उसकी रक्षा के लिए बैठा हूँ। लेकिन बताइए, उसने ऐसा क्या किया है या क्या नहीं किया है कि आप उसके साथ ऐसा व्यवहार कर रहे हैं?" दिपायन ने बताया कि मामले की जाँच नहीं हुई है। दूसरे ने उत्तर दिया, "महाराज, राजा को सावधानी से काम लेना चाहिए; एक आलसी गृहस्थ जो सुख-सुविधाओं में लिप्त रहता है, अच्छा नहीं होता," और इसी तरह की अन्य नसीहतें देते हुए उसने दिपायन को समझाया।

जब राजा को पता चला कि मांडव्य निर्दोष है, तो उसने सूली निकालने का आदेश दिया। लेकिन लाख कोशिश करने पर भी सूली नहीं निकली। मांडव्य ने कहा, "महाराज, मुझे बहुत पहले किए गए एक अपराध के लिए यह घोर अपमान सहना पड़ा है, और मेरे शरीर से सूली निकालना असंभव है। लेकिन यदि आप मेरी जान बचाना चाहते हैं, तो एक आरी लाएँ और इसे त्वचा के बराबर काट दें।" राजा ने ऐसा ही करवाया; और सूली का वह हिस्सा उसके शरीर में ही रह गया। क्योंकि कहते हैं कि उस पिछली घटना में उसने हीरे का एक

छोटा टुकड़ा लेकर मक्खी की नलिका में छेद कर दिया था, जिससे वह तब भी नहीं मरी और न ही अपने जीवन के अंत तक; और इसलिए वह आदमी भी नहीं मरा, ऐसा कहा जाता है।

राजा ने उन तपस्वियों को प्रणाम किया और क्षमा मांगी; उन्हें अपने उद्यान में ठहराकर उनकी देखभाल की। तब से मांडव्य को पेग वाला मांडव्य कहा जाने लगा। वह राजा के पास ही इस स्थान पर रहने लगा; और दीपायान ने अपने मित्र के घाव को ठीक करने के बाद अपने गृहस्थ मित्र मांडव्य के पास वापस गया। जब उन्होंने उसे पत्तिपर्ण-शैतान में प्रवेश करते देखा, तो उन्होंने यह बात उसके मित्र को बताई। यह सुनकर वह प्रसन्न हुआ; और अपनी पत्नी और बच्चे के साथ, ढेर सारी सुगंध, मालाएं, तेल, चीनी आदि लेकर वह पत्तिपर्ण-शैतान के पास आया; दीपायान का अभिवादन करके, उसके पैर धोकर और मालिश करके, उसे पानी पिलाकर, वह पेग वाले मांडव्य की कहानी सुनने बैठ गया। फिर उसका पुत्र, यन्ना-दत्त नामक एक युवक, ढके हुए रास्ते के अंत में गेंद से खेल रहा था। वहाँ एक चींटी के टीले में एक साँप रहता था। लड़के की गेंद जमीन पर गिरी और चींटी के टीले के छेद में जाकर साँप पर जा गिरी। यह जाने बिना, लड़के ने अपना हाथ छेद में डाल दिया। क्रोधित साँप ने लड़के के हाथ पर काट लिया; साँप के विष की तीव्रता से वह बेहोश होकर गिर पड़ा। यह देखकर उसके माता-पिता ने अपने बेटे को साँप से काटा हुआ पाया, उसे उठाया और तपस्वी के पास ले गए; उसे तपस्वी के चरणों में रखकर उन्होंने कहा, "हे प्रभु, धार्मिक लोग औषधीय जड़ी-बूटियों और मंत्रों को जानते हैं; कृपया हमारे बेटे का इलाज करें।" - "मैं किसी औषधीय जड़ी-बूटी को नहीं जानता; मैं चिकित्सक नहीं हूँ।" - "आप धर्मी (धार्मिक) व्यक्ति हैं। तो कृपया इस लड़के पर दया करें, और सत्य का कार्य करें।" "अच्छा," तपस्वी ने कहा, "मैं सत्य का कार्य करूँगा।" और यन्ना-दत्ता के सिर पर हाथ रखकर उन्होंने पहला श्लोक पढ़ा:-

"सात दिन मैंने शांत हृदय से शुद्ध होकर , पुण्य की कामना करते हुए बिताए:
तब से लेकर पचास वर्षों तक,
स्वार्थ में डूबे हुए, मैं
यहाँ अनिच्छा से जी रहा हूँ:
ईश्वर करे यह सत्य आशीर्वाद दे:
विष दूर हो जाए, बालक पुनर्जीवित हो जाए!"

जैसे ही यन्ना-दत्ता ने सत्य का यह कार्य किया, उसके सीने से विष निकला और ज़मीन में समा गया। बालक ने आँखें खोलीं और अपने माता-पिता की ओर देखकर "माँ!" कहकर पुकारा, फिर करवट बदलकर लेट गया। तब काले दिपायन ने पिता से कहा, "देखो, मैंने अपनी शक्ति का प्रयोग कर लिया है; अब तुम्हारी बारी है।" पिता ने उत्तर दिया, "तो मैं भी सत्य का कार्य करूँगा"; और अपने पुत्र की छाती पर हाथ रखकर उसने दूसरा श्लोक दोहराया:

"यदि मैं उपहारों की जरा भी परवाह न करता,
सभी आने-जाने वालों का स्वागत करता,
तब भी भले और बुद्धिमान लोग यह नहीं जानते कि
मैं अपने सच्चे स्वरूप को नियंत्रित कर रहा था;
यदि मैं अनिच्छा से देता हूँ,
तो यह सत्य आशीर्वाद दे,
विष दूर हो जाए, और लड़का पुनर्जीवित हो जाए!"

सत्य के इस कार्य के बाद, उसकी पीठ से विष निकला और ज़मीन में समा गया। लड़का उठ बैठा, लेकिन खड़ा नहीं हो सका। तब पिता ने माता से कहा, "देवी, मैंने अपनी शक्ति का प्रयोग कर लिया है; अब सत्य के कार्य द्वारा अपने पुत्र को उठाकर चलने योग्य बनाना आपकी ज़िम्मेदारी है।" माता ने कहा, "मुझे भी एक सत्य कहना है, लेकिन आपकी उपस्थिति में मैं उसे नहीं कह सकती।" पिता ने कहा, "देवी, किसी भी तरह से मेरे पुत्र को स्वस्थ कर दीजिए।" माता ने उत्तर दिया, "ठीक है," और उनके सत्य के कार्य का वर्णन तीसरे छंद में किया गया है।

"मेरे बेटे, आज जिस साँप ने तुम्हें
गड्ढे में काटा,
और तुम्हारा यह पिता, मैं
अपनी उदासीनता में कहता हूँ, एक ही हैं:
यह सत्य आशीर्वाद दे:
विष निकल जाए, बेटा फिर से जीवित हो जाए!"

सत्य के इस कार्य के होते ही, सारा विष गिरकर जमीन में समा गया; और यन्नादत्त, विष से पूरी तरह मुक्त होकर उठ खड़े हुए और खेलने लगे। जब पुत्र इस प्रकार उठ खड़ा हुआ, तो मांडव्य ने चौथे श्लोक में दिपायन के मन में चल रही बातों के बारे में पूछा:

"जो शांत और संयमित होते हैं, वे संसार को त्याग देते हैं,
कान्हा को छोड़कर, बाकी सभी अनिच्छुक होते हैं;
दीपायना, आपको पीछे हटने के लिए क्या प्रेरित करता है, और आप
अनिच्छा से पवित्रता के मार्ग पर क्यों चलते हैं?"
इसका उत्तर देने के लिए, दूसरे ने पाँचवाँ छंद दोहराया:

वह संसार को छोड़ देता है, और फिर वापस लौट आता है;
"एक मूर्ख, एक बेवकूफ!" ऐसा कोई सोच सकता है:-
यही बात मुझे पीछे हटने पर मजबूर करती है,
इस प्रकार मैं पवित्र मार्ग पर चलता हूँ, यद्यपि मुझमें इच्छा की कमी है,
मेरे अच्छे कर्मों का कारण यह है--
(*4) बुद्धिमानों द्वारा अच्छे मनुष्य के जीवन की प्रशंसा की जाती है।"
इस प्रकार अपने विचार को स्पष्ट करने के बाद, उन्होंने छठे श्लोक में मांडव्य से एक बार फिर पूछा:

"यह तुम्हारा घर मात्र (*5) था,
जिसमें भोजन और पेय का भंडार था:
ऋषि, तीर्थयात्री, ब्राह्मण यहाँ
प्यास और भूख मिटाते थे।
क्या तुम्हें किसी बदनामी का डर था, फिर भी
तुम दे रहे थे, अपनी इच्छा के विरुद्ध?"
फिर मांडव्य ने सातवें श्लोक में अपने विचारों को स्पष्ट किया:

"मेरे पिता और दादा पवित्र थे,
दान देने में सबसे उदार थे;
और मैंने
अपने पूर्वजों के जीवन जीने के तरीके का पूरी सावधानी से पालन किया;
अन्यथा मैं पतित हो जाता।
मैंने अनिच्छा से दान दिए।"
यह कहने के बाद, मांडव्य ने अपनी पत्नी से आठवें श्लोक के शब्दों में एक प्रश्न पूछा:

"जब मैं एक अपरिपक्व युवती थी और
तुम्हें तुम्हारे घर से अपनी पत्नी बनाने के लिए लाई थी, तब
तुमने मुझे अपनी उदासीनता नहीं बताई,
कि कैसे तुमने अपना सारा जीवन बिना प्रेम के बिताया।
तो फिर, हे सुंदर स्त्री, तुम क्यों रुकी रहीं
और मेरे साथ इस प्रेमहीन तरीके से रहीं?"
और उसने नौवें श्लोक को दोहराकर उसे उत्तर दिया:

"इस परिवार में विवाहित पत्नी का नया साथी चुनने का रिवाज नहीं है ,
न ही कभी रहा है; और मैं इस रिवाज का
पालन करना चाहती हूँ, अन्यथा मुझे पतित कहा जाएगा।
इसी डर से मैंने
तुम्हारे साथ इस प्रेमहीन तरीके से रहने का फैसला किया है।"

लेकिन जब यह कहा गया, तो उसके मन में एक विचार आया, "मेरा रहस्य मेरे पति को पता चल गया है, वह रहस्य जो पहले कभी किसी को नहीं पता था! वह मुझसे नाराज़ होंगे; मैं इस तपस्वी, हमारे विश्वासपात्र के सामने क्षमा मांगूंगी।" और इसी उद्देश्य से उसने दसवां श्लोक दोहराया:

"अब मैंने वो बात कह दी है जो नहीं कहनी चाहिए थी:
हमारे बेटे की खातिर मुझे क्षमा कर दिया जाए।
माता-पिता के प्यार से बढ़कर कुछ नहीं है;
हमारा यान्ना-दत्ता जीवित है, जो मानो मर ही गया था!"
"उठो, देवी," मांडव्य ने कहा, "मैं तुम्हें क्षमा करता हूँ। अब से मेरे प्रति कठोर मत होना; मैं तुम्हें कभी दुखी नहीं करूँगा।" बोधिसत्व ने मांडव्य को संबोधित करते हुए कहा, "अवैध धन इकट्ठा करने और यह विश्वास न करने में कि उदारतापूर्वक दान करने से फल मिलता है, तुमने पाप किया है। भविष्य में दान के पुण्य में विश्वास रखो और दान करो।" दूसरे ने भी यही प्रतिज्ञा की और बोधिसत्व से कहा, "महोदय, आपने स्वयं पाप किया है जब आपने अपनी इच्छा के विरुद्ध पवित्रता के मार्ग पर चलते हुए हमारे दान स्वीकार किए। अब ताकि आपके कर्मों का भरपूर फल मिले, आप भविष्य में शांत हृदय और शुद्ध, परमानंद से परिपूर्ण होकर पवित्रता के मार्ग पर चलें।" तब उन्होंने उस महान सत्ता से विदा ली और प्रस्थान कर गए।

उस समय से पत्नी अपने पति से प्रेम करने लगी; मांडव्य ने शांत हृदय से श्रद्धापूर्वक दान दिया; बोधिसत्व ने अपनी अनिच्छा को दूर करते हुए परमानंद की क्षमता विकसित की और ब्रह्मा के स्वर्ग (प्रधान देवदूतों के स्वर्ग) के लिए नियत हो गए।

यह प्रवचन समाप्त होने पर, गुरु ने सत्यों की व्याख्या की: (सत्यों के समापन पर, पथभ्रष्ट व्यक्ति प्रथम मार्ग (सम्मोहन) के फल में स्थापित हो गया:) और जन्म का वर्णन किया:- "उस समय आनंद मांडव्य थे, विशाखा उनकी पत्नी थीं, राहुल पुत्र थे, सारिपुत्र खूंटी के मांडव्य थे, और मैं स्वयं काला दीपायना था।"

फुटनोट:

(1)सं. 531.

(2)गंगा पर.

(3) इस भ्रामक कथा में, मांडव्य तपस्वियों में से एक का नाम है और गृहस्थ का भी, दीपायना दूसरे तपस्वी का नाम है।

(4)या, बुद्धिमान और अच्छे धर्म की प्रशंसा की जाती है।

(5) इस शब्द का अर्थ संभवतः सार्वजनिक घर हो सकता है: दोनों ही "पीने की जगह" (अवपना) हैं।

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **निग्रोध-जातक**
***स्रोत**: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-445-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 445
निग्रोध-जातक

"वह कौन है?", इत्यादि — यह कहानी गुरु ने बाँस के वन में देवदत्त के बारे में सुनाई थी। एक दिन भिक्षुओं ने उनसे कहा, "मित्र देवदत्त, गुरु आपके लिए अत्यंत सहायक हैं! गुरु से ही आपने शिष्यों का पवित्र क्रम प्राप्त किया है, छोटे-बड़े सभी; आपने त्रिपिटक (बुद्ध के सभी उपदेशों का तीन भागों वाला संग्रह) और बुद्ध की वाणी को सीखा है; आपने अपने भीतर समाधि (सम्मोहन) की अवस्था उत्पन्न की है; दशबल (बुद्ध) (*1) की महिमा और लाभ आपके हैं।" यह कहते हुए उन्होंने घास का एक तिनका उठाया और कहा, "मुझे कोई लाभ नहीं दिखता जो तपस्वी गौतम (बुद्ध) ने मेरे लिए किया हो, इतना भी नहीं!" उन्होंने सत्य के हॉल में इस पर चर्चा की। जब गुरु आए, तो

उन्होंने पूछा कि वे सब बैठकर क्या बातें कर रहे थे। उन्होंने उन्हें बताया। उन्होंने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है, बल्कि बहुत पहले भी देवदत्त अपने मित्रों के प्रति कृतघ्न और विश्वासघाती था।" और उन्होंने उन्हें पुराने समय की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, राजगृह नगरी में मगध नामक एक महान राजा का शासन था। उस नगरी के एक व्यापारी ने अपने पुत्र के लिए किसी ग्रामीण व्यापारी की पुत्री को विवाह के बंधन में बांधा। परन्तु वह बांझ थी। समय बीतने के साथ-साथ इस कारण उसका सम्मान कम होता गया; सब लोग उससे कहते थे, "जब तक हमारे पुत्र के घर में बांझ पत्नी रहेगी, वंश कैसे चलेगा?" यह बात बार-बार उसके कानों तक पहुँचती रही, उसने मन ही मन सोचा, "ठीक है, मैं गर्भवती होने का नाटक करूँगी और सबको धोखा दूँगी।" इसलिए उसने अपनी एक भली-भांति अनुभवी दाई से पूछा, "गर्भावस्था के दौरान स्त्रियाँ क्या करती हैं?" और जब उसे गर्भावस्था के दौरान क्या करना चाहिए, यह बताया गया (*2), तो उसने अपने मासिक धर्म का समय छुपाया; खट्टे और विचित्र स्वादों का शौक दिखाया; जब उसके हाथ-पैर सूजने लगे, तो उसने उन्हें तब तक हाथों, पैरों और पीठ पर पीटने को कहा जब तक कि वे सूज न जाएँ; वह दिन-प्रतिदिन अपने शरीर को चिथड़ों और कपड़ों से लपेटती रही और उसे बड़ा दिखाने का प्रयास करती रही; उसने अपने स्तनों के निप्पल काले कर लिए थे; और उस नर्स के अलावा किसी और को अपने कमरे में आने की अनुमति नहीं दी। उसके पति ने भी उसकी स्थिति के अनुसार उसका पूरा ख्याल रखा। इस तरह नौ महीने बीत जाने के बाद, उसने घर लौटने और अपने पिता के घर में बच्चे को जन्म देने की इच्छा जताई। इसलिए अपने पति के माता-पिता से विदा लेकर, वह एक रथ पर सवार हुई और कई परिचारिकाओं के साथ राजगृह शहर को पीछे छोड़कर सड़क पर चल पड़ी।

उसके आगे एक काफिला चल रहा था; और वह हमेशा नाश्ते के समय उस जगह पहुँच जाती जहाँ से वह काफिला अभी-अभी गया था। एक रात, उस काफिले की एक गरीब औरत ने बरगद के पेड़ के नीचे एक बेटे को जन्म दिया; और यह सोचकर कि काफिले के बिना उसका गुजारा नहीं चलेगा, लेकिन अगर वह जीवित रही तो उसे बच्चे को गोद लेने का मौका मिल जाएगा, उसने बच्चे को उसी हालत में ढक दिया और उसे बरगद के पेड़ के नीचे वहीं छोड़ दिया। और पेड़ के देवता ने उसकी देखभाल की; वह कोई साधारण बच्चा नहीं था, बल्कि स्वयं बोधिसत्व उस रूप में संसार में आए थे।

नाश्ते के समय बाकी यात्री भी वहाँ पहुँच गए। वह स्त्री, अपनी दाई के साथ, बरगद के पेड़ की छाँव में श्रृंगार के लिए अलग गई, तो उसने वहाँ सुनहरे रंग का एक शिशु देखा। थोड़ी देर बाद उसने दाई को पुकार कर बताया कि उनका उद्देश्य पूरा हो गया है; उसने अपने पेट से पट्टियाँ खोलीं और कहा कि यह शिशु उसका अपना है और उसने अभी-अभी उसे जन्म दिया है।

परिचारकों ने तुरंत उसे एकांत में रखने के लिए एक तम्बू खड़ा किया और अत्यंत प्रसन्नता से राजगृह नगर को पत्र भेजा। उसके पति के माता-पिता ने उत्तर में लिखा कि चूंकि शिशु का जन्म हो चुका है, इसलिए अब उसे अपने पिता के घर जाने की आवश्यकता नहीं है; वह वापस लौट सकती है। अतः वह तुरंत राजगृह नगर लौट आई। और उन्होंने शिशु को स्वीकार किया: और जब शिशु का नामकरण करने का समय आया, तो उसका नाम उसके जन्मस्थान के नाम पर निग्रोध-कुमार रखा गया, जिसका अर्थ है मास्टर बरगद। उसी दिन, एक व्यापारी की बहू, अपने पिता के घर प्रसव के लिए लौटते समय, एक वृक्ष की शाखाओं के नीचे एक पुत्र को जन्म दिया; और उन्होंने उसका नाम शाखा-कुमार रखा। और उसी दिन, इस व्यापारी के यहाँ काम करने वाले एक दर्जी की पत्नी ने उसके कपड़ों के बीच एक पुत्र को जन्म दिया; और उन्होंने उसका नाम पोट्टिका रखा।

उस महान व्यापारी ने इन दोनों बच्चों को, क्योंकि वे स्वामी बनयान के जन्मदिन पर पैदा हुए थे, बुलवाया और उन्हें अपने साथ पाला-पोसा।

वे सब एक साथ पले-बढ़े और धीरे-धीरे अपनी शिक्षा पूरी करने के लिए तक्षशिला चले गए। दोनों व्यापारियों के बेटों के पास अपने शिक्षक को शुल्क के रूप में देने के लिए दो हजार सिक्के थे; मास्टर बनयान ने पोट्टिका को अपने संरक्षण में शिक्षा प्रदान की।

जब उनकी शिक्षा पूरी हो गई, तो उन्होंने अपने शिक्षक से विदा ली और देशवासियों के रीति-रिवाज सीखने के इरादे से उन्हें छोड़कर चले गए; और यात्रा करते-करते वे बनारस पहुँचे और एक मंदिर में विश्राम करने के लिए लेट गए। बनारस के राजा की मृत्यु को सात दिन हो चुके थे। ढोल बजाकर पूरे शहर में यह घोषणा की गई कि अगले दिन उत्सव का रथ तैयार किया जाएगा। तीनों साथी एक पेड़ के नीचे सो रहे थे, तभी भोर में पोट्टिका जाग उठी और उठकर बरगद के पैर खुजलाने लगी। उस पेड़ पर कुछ मुर्गे बैठे थे, और सबसे ऊपर वाले मुर्गे ने नीचे वाले मुर्गे पर बीट गिरा दी (*3)। "मुझ पर क्या गिरा?" उस मुर्गे ने पूछा। "गुस्सा मत होइए, साहब," दूसरे ने उत्तर दिया, "मैंने जानबूझकर ऐसा नहीं किया।" "ओह, तो आपको लगता है कि मेरा शरीर आपकी बीट के लिए जगह है! आप मेरी अहमियत नहीं जानते, यह तो साफ है!" इस पर दूसरे ने कहा, "अरे, अब भी गुस्सा हो, जबकि मैंने कहा था कि मेरा ऐसा कोई इरादा नहीं था! और तुम्हारी अहमियत क्या है, बताओ ना?" - "जो कोई मुझे मारकर मेरा मांस खाएगा, उसे आज सुबह ही हज़ार सिक्के मिलेंगे! क्या यह गर्व

की बात नहीं है?" "छी, छी," दूसरे ने कहा, "ऐसी छोटी सी बात पर गर्व! अरे, अगर कोई मुझे मारकर मेरी चर्बी खाएगा, तो वह आज सुबह ही राजा बन जाएगा; जो बीच का मांस खाएगा, वह सेनापति बनेगा; और जो हड्डियों के आसपास का मांस खाएगा, वह कोषाध्यक्ष बनेगा!"

यह सब पोट्टिका ने सुन लिया। "हजारों सिक्के—" उसने सोचा, "यह क्या है? राजा बनना ही सबसे अच्छा है!" तो वह धीरे से पेड़ पर चढ़ गया, ऊपर बैठे मुर्गे को पकड़ा, उसे मार डाला और अंगारों में पकाया; चर्बी उसने बरगद को दी, बीच का मांस शाखा को दिया, और खुद हड्डियों के आसपास का मांस खा लिया। जब वे खा चुके, तो उसने कहा, "बरगद, महाराज, आज आप राजा होंगे; शाखा, महाराज, आप सेनापति होंगे; और मैं, मैं कोषाध्यक्ष हूँ!" उन्होंने उससे पूछा कि उसे कैसे पता चला; उसने उन्हें बताया।

दिन के पहले भोजन के समय के आसपास, वे बनारस नगर में प्रवेश कर गए। एक ब्राह्मण के घर पर उन्होंने घी और चीनी के साथ चावल की दलिया का भोजन किया; और फिर नगर से निकलकर वे राजमहल में प्रवेश कर गए।

बरगद एक पत्थर की पटिया पर लेट गया, बाकी दो उसके बगल में लेट गए। संयोग से उसी समय राजसी प्रतीक (*4) से सुसज्जित औपचारिक रथ रवाना किया जा रहा था। (इसका विस्तृत विवरण महाजनक जन्म (*5) में दिया जाएगा।) रथ आ पहुँचा और रुककर उनके प्रवेश के लिए तैयार खड़ा हो गया। पुजारी ने मन ही मन सोचा, "यहाँ कोई महान पुण्यात्मा उपस्थित होना चाहिए!" वह उद्यान में दाखिल हुआ और उस युवक को देखा; फिर उसके पैरों से कपड़ा हटाकर उसने उन पर बने निशानों को देखा। उसने कहा, "अरे वाह, यह तो बनारस ही नहीं, पूरे भारत का राजा बनने वाला है!" और उसने सभी घंटियों और झांझों को एक साथ बजाने का आदेश दिया।

बरगद जाग उठा और उसने अपने चेहरे से कपड़ा हटा दिया, और देखा कि उसके चारों ओर भीड़ जमा है! वह मुड़ा और एक-दो पल के लिए लेटा रहा; फिर उठा और पैर मोड़कर बैठ गया। पुजारी एक घुटने पर गिर पड़ा और बोला, "हे ईश्वर, यह राज्य आपका है!" "ऐसा ही हो," युवक ने कहा; पुजारी ने उसे कीमती रत्नों के ढेर पर बिठाया और उसे राजा का ताज पहनाया।

इस प्रकार राजा बनने पर, उसने अपने मित्र शाखा को सेनापति का पद दिया और बड़े धूमधाम से शहर में प्रवेश किया; और पोट्टिका (*6) उनके साथ गई।

उस दिन से महान सत्ता ने बनारस में न्यायपूर्वक शासन किया।

एक दिन उसे अपने माता-पिता की याद आ गई; और शाखा से उसने कहा, "महोदय, माता-पिता के बिना जीना असंभव है; बहुत सारे लोगों को साथ लेकर उन्हें बुला लाओ।" लेकिन शाखा ने मना कर दिया; उसने कहा, "यह मेरा काम नहीं है।" तब उसने पोट्टिका को यह काम करने को कहा। पोट्टिका मान गया, और बनयान के माता-पिता के पास जाकर उन्हें बताया कि उनका बेटा राजा बन गया है, और उनसे विनती की कि वे उसके पास आएं। लेकिन उन्होंने यह कहते हुए मना कर दिया कि उनके पास शक्ति और धन है: बस बहुत हो गया, वे नहीं जाएंगे। उसने शाखा के माता-पिता को भी आने के लिए कहा, और उन्होंने भी वहीं रहना पसंद किया; और जब उसने अपने माता-पिता को आमंत्रित किया, तो उन्होंने कहा, "हम सिलाई का काम करके गुजारा करते हैं; बस बहुत हो गया," और बाकी लोगों की तरह मना कर दिया।

उनकी इच्छा पूरी न कर पाने के कारण वह बनारस लौट आया। उसने सोचा कि बनयान से मिलने से पहले वह सेनापति के घर में यात्रा की थकान से विश्राम कर लेगा, इसलिए वह उसी घर की ओर चल पड़ा।

“कमांडर-इन-चीफ को बता दो,” उसने द्वारपाल से कहा, “कि उसका साथी पोट्टिका यहाँ है।” उस आदमी ने वैसा ही किया। लेकिन ब्रांच को उससे द्वेष था, क्योंकि उसने कहा कि उस आदमी ने अपने साथी बनयान को राज्य दे दिया था, खुद को छोड़कर; इसलिए यह संदेश सुनकर वह क्रोधित हो गया। “सचमुच साथी! कौन है उसका साथी? एक पागल नीच देहाती! उसे पकड़ो!” तो उन्होंने उसे पीटा, लात मारी, लात-घूंसे मारे और कोहनी-पैर से घूंसे मारे, फिर उसका गला पकड़कर उसे फेंक दिया।

“ब्रांच ने मेरे ज़रिए सेनापति का पद हासिल किया, और अब वह कृतघ्न और द्वेषपूर्ण है, उसने मुझे पीटा और मुझे त्याग दिया। लेकिन बनयान एक बुद्धिमान, कृतज्ञ और नेक इंसान है, और मैं उसी के पास जाऊँगा।” अतः वह राजा के द्वार पर गया और राजा को संदेश भेजा कि उसका साथी पोट्टिका द्वार पर प्रतीक्षा कर रहा है। राजा ने उसे अंदर बुलाया और जैसे ही उसने उसे आते देखा, वह अपनी कुर्सी से उठकर उससे मिलने गया और स्नेहपूर्वक उसका अभिवादन किया; उसने उसकी दाढ़ी बनवाई और उसकी देखभाल की, उसे हर तरह के आभूषण पहनाए, फिर उसे हर प्रकार का स्वादिष्ट भोजन कराया; और यह सब करने के बाद, वह उसके साथ आदरपूर्वक बैठा और उसके माता-पिता के बारे में पूछा, जिन्होंने दूसरे के बताए अनुसार आने से इनकार कर दिया था।

अब शाखा ने मन ही मन सोचा, "पोटिका राजा के कान में मेरी निंदा करेगी, लेकिन अगर मैं वहाँ रहा तो वह कुछ बोल नहीं पाएगा"; इसलिए वह भी वहाँ चला गया। और पोटिका ने राजा की उपस्थिति में ही उससे कहा, "महाराज, जब मैं यात्रा से थक गया था, तो मैं शाखा के घर गया, यह सोचकर कि पहले वहाँ विश्राम कर लूँ और फिर आपसे मिलने आऊँ। लेकिन शाखा ने कहा, "मैं उसे नहीं जानता!" और मुझ पर विपत्ति आ पड़ी, और उसने मुझे गर्दन से पकड़कर खींच लिया! क्या आप विश्वास कर सकते हैं!" और इन शब्दों के साथ उसने कविता के तीन छंद कहे:

"वह आदमी कौन है? मैं उसे नहीं जानता! और उस आदमी का पिता कौन है?"
"वह आदमी कौन है?" तब सखा ने कहा:- निग्रोधा, तुम क्या सोचती हो?
"तब सखा के कहने पर उसके आदमियों ने मेरे चेहरे पर घूंसे बरसाए।"
और उसने मेरा गला पकड़कर मुझे उस जगह से बाहर फेंक दिया।
"ऐसा छल-कपट किसी दुष्ट व्यक्ति को ही करना चाहिए!"
हे राजा, कृतघ्न होना शर्म की बात है—और वह तुम्हारा साथी भी!
यह सुनकर बनयान ने चार श्लोक पढ़े:

मुझे नहीं पता, और न ही मैंने कभी किसी से इस बारे में सुना है।
आप बताइए कि सखा ने अब तक ऐसा कोई बुरा काम किया है या नहीं।
तुम मेरे और सखा के साथ रहे हो; हम दोनों तुम्हारे साथी थे;
आपने मानवजाति के बीच अपने साम्राज्य का एक हिस्सा हम सभी को दिया है:
हमें आपकी कृपा से ही यह गौरव प्राप्त हुआ है, इसमें कोई संदेह नहीं है।
"जैसे आग में बीज फेंकने पर वह जल जाता है और उग नहीं पाता;
बुरे लोगों के साथ भलाई करो, फिर भी वह व्यर्थ ही नष्ट हो जाती है।
"कृतज्ञ, भले और गुणी लोग, ऐसे लोग नहीं होते;
अच्छी मिट्टी में बोए गए बीज और अच्छे लोगों के कर्म कभी व्यर्थ नहीं जाते।
जब बनयान ये पंक्तियाँ पढ़ रहा था, तब शाखा वहीं स्थिर खड़ी रही। तब राजा ने उससे पूछा, "अच्छा, शाखा, क्या तुम इस पोत्तिका को पहचानते हो?" वह चुप रहा। और राजा ने आठवें श्लोक के शब्दों में उस व्यक्ति से यह प्रश्न पूछा:

"इस निकम्मे गद्दार को पकड़ो, जिसके विचार इतने बुरे हैं;
उसे भाले से मार डालो! क्योंकि मैं उसे मरते हुए देखना चाहता हूँ—उसकी जान मेरे लिए कुछ भी मायने नहीं रखती!
लेकिन पोत्तिका ने यह सुनकर मन ही मन सोचा—"मेरे लिए इस मूर्ख को मरने मत दो!" और नौवां श्लोक बोला:

"हे महान राजा, दया करो! एक बार जीवन चला गया तो उसे वापस लाना कठिन है।"
हे प्रभु, क्षमा कर दे और उसे जीने दे! मैं उस देहाती व्यक्ति को कोई कष्ट नहीं देना चाहता।
जब राजा ने यह सुना, तो उसने ब्रांच को क्षमा कर दिया; और वह पोट्टिका को सेनापति का पद देना चाहता था, पर पोट्टिका ने मना कर दिया। तब राजा ने उसे कोषाध्यक्ष का पद दिया, और इसके साथ ही उसे सभी व्यापारी संघों का न्यायाधीश भी बना दिया। इससे पहले ऐसा कोई पद नहीं था, लेकिन इसके बाद यह पद हमेशा के लिए अस्तित्व में आ गया। और कुछ समय बाद, शाही कोषाध्यक्ष पोट्टिका को पुत्र और पुत्रियाँ हुईं, और उसने उनकी सलाह पर अंतिम श्लोक कहा:

"निग्रोधा के साथ निवास करना चाहिए;"
सखा की सेवा करना ठीक नहीं है।
निग्रोधा की मृत्यु के साथ बेहतर
"साखा के साथ सांस लेने से बेहतर है।"

प्रवचन समाप्त होने पर गुरु ने कहा, "तो, भिक्षुओं, आप देख सकते हैं कि देवदत्त पहले कृतघ्न था," और फिर उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "उस समय, देवदत्त सखा थे, आनंद पोत्तिका थे, और मैं स्वयं निग्रोध था।"

फुटनोट:

(1)बुद्ध; "वह जो दस शक्तियों का स्वामी है।"

(2) यह एक धार्मिक अनुष्ठान हो सकता है।

(3) क्रमांक 284 में मुर्गों का प्रकरण पहले ही आ चुका है।

(4) तलवार, छाता, मुकुट, चप्पल, पंखा।

(5) संख्या 539

(6) इसके बाद उन्हें कई बार पोट्ठिया कहा जाता है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **तक्कड-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-446-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 446
तक्कला-जातक

"यहाँ बल्ब नहीं हैं," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में एक गृहस्थ व्यक्ति के बारे में सुनाई थी जो अपने पिता का सहारा था।

हमें पता चलता है कि इस व्यक्ति का पुनर्जन्म एक जरूरतमंद परिवार में हुआ था। अपनी माता की मृत्यु के बाद, वह सुबह जल्दी उठकर मुँह साफ करने के लिए दाँत साफ करने वाली टहनियाँ और पानी तैयार करता था; फिर मजदूरी करके या खेतों में हल चलाकर चावल की दलिया जुटाता था और इस तरह अपने पिता का भरण-पोषण उनकी सामाजिक स्थिति के अनुसार करता था। उसके पिता ने उससे कहा, "बेटा, घर के सारे काम तुम अकेले करो। मैं तुम्हारे लिए एक पत्नी ढूँढ देता हूँ, वह तुम्हारे लिए घर का सारा काम कर देगी।" - "पिताजी," उसने कहा, "अगर घर में औरतें आ जाएँगी तो न तो मुझे और न ही आपको मन की शांति मिलेगी। कृपया ऐसा सपना भी मत देखिए! जब तक आप जीवित हैं, मैं आपका भरण-पोषण करूँगा; और आपके जाने के बाद, मुझे पता होगा कि क्या करना है।"

लेकिन पिता ने अपने बेटे की इच्छा के विरुद्ध एक लड़की को बुलवाया; और वह अपने पति और उसके पिता की देखभाल करने लगी; पर वह एक नीच स्वभाव की महिला थी। अब उसका पति अपने पिता की सेवा करने के कारण उससे प्रसन्न था; और जो कुछ भी उसे प्रसन्न करने के लिए मिलता, वह उसे लाकर देता; और वह उसे अपने ससुर को भेंट करती। एक समय ऐसा आया जब उस स्त्री ने सोचा, "मेरे पति को जो कुछ भी मिलता है, वह मुझे दे देता है, लेकिन अपने पिता को कुछ नहीं। यह स्पष्ट है कि उसे अपने पिता की कोई परवाह नहीं है। मुझे किसी तरह अपने पति को बूढ़े से अलग करना होगा, और फिर मैं उसे घर से निकाल दूंगी।" इसलिए उस समय से उसने उसके लिए पानी को कभी ठंडा तो कभी गर्म करना शुरू कर दिया, और खाने में कभी बहुत नमक डालती तो कभी बिल्कुल नहीं, और चावल कभी सख्त तो कभी गीला परोसती; और इस तरह वह उसे चिढ़ाने के लिए हर संभव प्रयास करती। फिर, जब वह क्रोधित हो जाता, तो वह उसे डांटती: "इस बूढ़े की सेवा कौन करेगा!" और झगड़ा शुरू कर देती। वह ज़मीन पर थूकती और फिर अपने पति को उकसाती— "देखो!" वह कहती, "यह तुम्हारे पिता की करतूत है! मैं उनसे बार-बार ये-वो न करने की विनती करती हूँ, पर वे बस गुस्सा हो जाते हैं। या तो तुम्हारे पिता को यह घर छोड़ना होगा, या मुझे!" तब पति ने उत्तर दिया, "महोदय, आप जवान हैं, और जहाँ चाहें रह सकती हैं; लेकिन मेरे पिता बूढ़े हैं। अगर आपको वे पसंद नहीं हैं, तो आप घर छोड़ सकती हैं।" यह सुनकर वह डर गई। वह बूढ़े आदमी के पैरों में गिर पड़ी और क्षमा माँगते हुए वादा किया कि वह ऐसा दोबारा कभी नहीं करेगी; और पहले की तरह उसकी देखभाल करने लगी।

वह नेक आम आदमी पहले तो उसके व्यवहार से इतना परेशान था कि उसने गुरु से प्रवचन सुनने के लिए उनके पास जाना छोड़ दिया; लेकिन जब वह फिर से शांत हो गई, तो वह गया। गुरु ने पूछा कि वह पिछले सात-आठ दिनों से उनका प्रवचन सुनने क्यों नहीं आया। उस आदमी ने सारी बात बताई। गुरु ने कहा, "इस बार तुमने उसकी बात नहीं मानी और अपने पिता को घर से नहीं निकाला; लेकिन पहले तुमने उसकी बात मानी थी; तुम उसे कब्रिस्तान ले गए और उसके लिए एक गड्ढा खोदा। जब तुम उसे मारने ही वाले थे, तब मैं सात साल का था, और मैंने माता-पिता की अच्छाई का वर्णन करके तुम्हें पिता की हत्या करने से रोका था। उस समय तुमने मेरी बात सुनी थी; और अपने पिता की देखभाल करके तुम स्वर्ग के पात्र बन गए थे। मैंने तब तुम्हें समझाया था और चेतावनी दी थी कि जब तुम

दूसरे जीवन में जाओ तो उन्हें मत छोड़ना; इसी कारण तुमने अब उस स्त्री की बात नहीं मानी है, और तुम्हारे पिता की हत्या नहीं हुई है।" ऐसा कहकर, उस आदमी के अनुरोध पर, उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, काशी के एक गाँव में वसित्तक नाम का एक इकलौता बेटा था। वह अपने माता-पिता का भरण-पोषण करता था, और अपनी माँ की मृत्यु के बाद, जैसा कि प्रस्तावना में वर्णित है, वह अपने पिता का भी भरण-पोषण करता था। लेकिन एक अंतर है। जब स्त्री ने कहा, "देखो! यह सब तुम्हारे पिता की करतूत है! मैं उनसे बार-बार यह और वह न करने की विनती करती हूँ, और वे केवल क्रोधित होते हैं!" तो उसने आगे कहा, "महाराज, आपके पिता बहुत क्रूर और हिंसक हैं, हमेशा झगड़े करते रहते हैं। ऐसे बूढ़े और बीमार व्यक्ति की जल्द ही मृत्यु हो जाएगी; और मैं उनके साथ एक ही घर में नहीं रह सकती। कुछ ही दिनों में उनकी स्वयं मृत्यु हो जाएगी; ठीक है, उन्हें कब्रिस्तान ले जाओ, एक गड्ढा खोदो, उन्हें उसमें फेंक दो और फावड़े से उनका सिर फोड़ दो; और जब वे मर जाएँ, तो उन पर मिट्टी डाल दो और उन्हें वहीं छोड़ दो।" अंततः, कानों में गूंजती इस आवाज़ से तंग आकर उसने कहा, "पत्नी, किसी पुरुष को मारना एक गंभीर मामला है: मैं यह कैसे करूँ?" "मैं तुम्हें एक तरीका बताती हूँ," उसने कहा।--"तो बताओ।"--"ठीक है, महाराज, सूर्योदय होते ही, उस स्थान पर जाओ जहाँ आपके पिता सोते हैं; उन्हें ज़ोर से बताओ, ताकि सब सुन सकें, कि उनका एक ऋणी किसी गाँव में है, कि आप वहाँ गए थे और उसने आपको पैसे नहीं दिए, और यदि वह मर गया तो वह कभी पैसे नहीं चुकाएगा; और कहो कि तुम दोनों सुबह साथ-साथ वहाँ जाओगे। फिर नियत समय पर उठो, जानवरों को गाड़ी में बाँधो, और उन्हें उसमें बिठाकर श्मशान ले जाओ। वहाँ पहुँचकर, उन्हें एक गड्ढे में दफना दो, ऐसा शोर मचाओ जैसे तुम्हें लूट लिया गया हो, अपने सिर को ज़ख्मी करो और धो लो, और वापस आ जाओ।" "जी हाँ, यह योजना ठीक रहेगी," वसित्तक ने कहा। वह उसके प्रस्ताव पर सहमत हो गया, और यात्रा के लिए गाड़ी तैयार कर ली।

उस आदमी का एक सात साल का बेटा था, जो बुद्धिमान और चतुर था। लड़के ने अपनी माँ की बातें सुन लीं और सोचा, "मेरी माँ एक दुष्ट स्त्री है और पिताजी को उनके पिता की हत्या करने के लिए उकसा रही है। मैं अपने पिता को यह हत्या करने से रोकूँगा।" वह जल्दी से भागा और अपने दादा के पास लेट गया। पत्नी के कहने पर वसित्तक ने गाड़ी तैयार की। उसने कहा, "आओ, पिताजी, चलो वह कर्ज़ चुकाते हैं!" और अपने पिता को गाड़ी में बिठा दिया। लेकिन लड़का सबसे पहले गाड़ी में बैठ गया। वसित्तक उसे रोक नहीं सका, इसलिए वह उसे अपने साथ कब्रिस्तान ले गया। फिर, अपने पिता और बेटे को गाड़ी के साथ एक अलग जगह पर रखकर, वह नीचे उतरा, फावड़ा और टोकरी ली, और एक ऐसी जगह पर छिपकर जहाँ वह उनसे छिपा हुआ था, एक चौकोर गड्ढा खोदने लगा। लड़का भी नीचे उतरा और उसके पीछे-पीछे गया, और मानो उसे कुछ पता ही न हो, उसने पहली पंक्ति दोहराकर बातचीत शुरू कर दी।

"यहाँ न तो कंद हैं, न ही मांस पकाने के लिए जड़ी-बूटियाँ।"
न तो कैटमिंट है, न ही खाने के लिए कोई अन्य पौधा।
तो पिताजी, इस गड्ढे की क्या आवश्यकता है, जबकि इसकी कोई जरूरत ही नहीं है?
क्या आप अकेले ही उस भयानक जंगल में प्रवेश करेंगे?
तब उनके पिता ने दूसरे श्लोक को दोहराते हुए उत्तर दिया:

"बेटा, तुम्हारे दादाजी बहुत कमजोर और बूढ़े हैं।"
कई बार बीमारियों के दर्द से पीड़ित:
मैं आज उसे गड्ढे में दफना दूंगा;
ऐसे जीवन में मैं नहीं चाह सकता कि वह रुके।
यह सुनकर लड़के ने आधी पंक्ति दोहराते हुए उत्तर दिया:

"ऐसा चाहकर तुमने पाप किया है।"
और यह कृत्य एक क्रूर कृत्य है।"
ये कहते हुए उसने अपने पिता के हाथों से फावड़ा छीन लिया और थोड़ी ही दूरी पर एक और गड्ढा खोदना शुरू कर दिया।

उसके पिता ने पास आकर पूछा कि उसने वह गड्ढा क्यों खोदा; जिसका उत्तर उसने तीसरे छंद को पूरा करके दिया:

"मैं भी, जब आप बूढ़े हो जाएँगे, मेरे पिता,
मैं अपने पिता के साथ वैसा ही व्यवहार करूंगा जैसा आप अपने पिता के साथ करते हैं;
परिवार की परंपरा का पालन करते हुए
मैं भी तुम्हें एक गहरे गड्ढे में दफना दूंगा।

इस पर पिता ने चौथे श्लोक को दोहराते हुए उत्तर दिया:

"एक लड़के के लिए इस तरह की कठोर बात कहना कितना बुरा है।"
और इस तरह से एक पिता में दोष ढूंढना!
यह सोचकर ही दुख होता है कि मेरा अपना बेटा मुझ पर गुस्सा करे।
और अपने सबसे सच्चे मित्र के प्रति निर्दयी होना चाहिए!
जब पिता ने इस प्रकार कहा, तो उस बुद्धिमान बालक ने तीन श्लोक सुनाए, एक उत्तर के रूप में और दो एक पवित्र भजन के रूप में:

"मैं कठोर नहीं हूँ, मेरे पिता, न ही निर्दयी हूँ।"
नहीं, मैं आपको मित्रतापूर्ण भाव से देखता हूँ:
लेकिन तुम यह करते हो, यह पाप का काम, तुम्हारे बेटे
एक बार हो जाने के बाद, उसे वापस ठीक करने की ताकत नहीं बचेगी।
"हे वसित्था, जो कोई भी बुरे इरादे से किसी को हानि पहुँचाता है,
उसकी माँ हो या उसका पिता, निर्दोष हैं।
जब शरीर नष्ट हो जाएगा, तब वह होगा
अगले जन्म में वह निस्संदेह नरक में जाएगा।
जो कोई भी भोजन और पेय के साथ, वसित्था,
इसके अलावा, उसकी माँ या उसके पिता भी उसे भोजन कराते हैं।
जब शरीर नष्ट हो जाएगा, तब वह होगा
"निस्संदेह, वह अगले जीवन में स्वर्ग में होगा।"
पुत्र के इस प्रकार के प्रवचन को सुनकर पिता ने आठवाँ श्लोक दोहराया:

"बेटे, मुझे लगता है तुम निर्दयी और कृतघ्न नहीं हो।"
लेकिन हे मेरे पुत्र, मेरे प्रति दयालु हृदय रखना;
यह तुम्हारी माँ के वचन का पालन करने के कारण था।
मुझे यह घिनौना काम करने से नफरत थी।"
यह सुनकर लड़के ने कहा, "पिताजी, जब स्त्रियाँ कोई गलत काम करती हैं और उन्हें डाँटा नहीं जाता, तो वे बार-बार पाप करती हैं। आपको मेरी माँ को सुधारना होगा, ताकि वह फिर कभी ऐसा काम न करे।" और उसने नौवाँ श्लोक दोहराया:

"तुम्हारी वह पत्नी, वह कुटिल स्वभाव वाली महिला,"
मेरी माँ, जिसने मुझे पाला-पोसा—वही,
आइए हम अपने जीवन से दूर होकर उन्हें निष्कासित कर दें।
अन्यथा वह तुम पर और भी कष्ट भोगेगी।"
अपने बुद्धिमान पुत्र के शब्दों को सुनकर वासित्थक अत्यंत प्रसन्न हुए और बोले, "चलो चलें, मेरे पुत्र!" और वे पुत्र और पिता के साथ रथ में बैठ गए।

अब वह स्त्री, यह पापी भी, मन ही मन प्रसन्न हुई; क्योंकि उसने सोचा, अब यह दुर्भाग्य घर से चला गया है। उसने गीले गोबर से घर को लेप किया और चावल की खिचड़ी पकाई। लेकिन जब वह उस रास्ते को देख रही थी जिससे वे लौटेंगे, तो उसने उन्हें आते देखा। "देखो, वह फिर से अपने पुराने दुर्भाग्य के साथ लौट आया है!" उसने क्रोध से सोचा। "अरे, निकम्मे!" वह चिल्लाई, "क्या, अपने साथ लाया दुर्भाग्य वापस ले आए!" वसित्तका ने एक शब्द भी नहीं कहा, बल्कि गाड़ी को खोल दिया।

फिर उसने कहा, "हे दुष्ट स्त्री, तू क्या कह रही है?" उसने उसे खूब पीटा और घसीटते हुए घर से बाहर निकाल दिया, और उससे कहा कि वह फिर कभी उसके घर न आए। फिर उसने अपने पिता और पुत्र को नहलाया, और स्वयं भी नहाया, और तीनों ने चावल का दलिया खाया। वह पापी स्त्री कुछ दिनों तक दूसरे घर में रही।

तब बेटे ने अपने पिता से कहा, "पिताजी, मेरी माँ को यह सब समझ नहीं आ रहा है। चलिए, अब हम उन्हें परेशान करने की कोशिश करते हैं। आप यह बात फैला दीजिए कि फलाँ गाँव में आपकी एक भतीजी रहती है, जो आपके पिता, आपके बेटे और आपकी सेवा करेगी; तो आप जाकर उसे ले आइए। फिर फूल और इत्र लेकर अपनी गाड़ी में बैठिए और दिन भर गाँव-गाँव घूमते रहिए, शाम को लौट आइए।" और उसने ऐसा ही किया। पड़ोस के परिवार की महिलाओं ने उसकी पत्नी को यह बताया;--उन्होंने कहा, "क्या आपने सुना है कि आपके पति फलाँ जगह पर दूसरी पत्नी लाने गए हैं?" "अरे, मैं तो बर्बाद हो गई!" उसने कहा, "और मेरे लिए कोई जगह नहीं बची!"

लेकिन वह अपने बेटे से पूछना चाहती थी; इसलिए वह जल्दी से उसके पास आई और उसके पैरों पर गिरकर रोने लगी--“आपके सिवा मेरा कोई सहारा नहीं! अब से मैं आपके पिता और दादाजी की देखभाल ऐसे करूँगी जैसे किसी सुंदर मंदिर की! मुझे एक बार फिर इस घर में प्रवेश दीजिए!” “जी माँ,” लड़के ने उत्तर दिया, “यदि आप ऐसा दोबारा न करें, तो मैं करूँगा; निश्चिंत रहिए!” और अपने पिता के आने पर उसने दसवाँ श्लोक दोहराया:

"तुम्हारी वह पत्नी, वह कुटिल स्वभाव वाली महिला,"
मेरी माँ, जिसने मुझे पाला-पोसा, वही,
एक पालतू हाथी की तरह, पूर्ण नियंत्रण में,
वह पापी आत्मा फिर से लौट आए।
उसने अपने पिता से ऐसा कहा और फिर जाकर अपनी माता को बुलाया। माता का अपने पति और उसके पिता से मेल-मिलाप हो गया, और तब से वह शांत और धर्मपरायण हो गई, और अपने पति, उसके पिता और अपने पुत्र की देखभाल करने लगी। ये दोनों अपने पुत्र की सलाह का दृढ़तापूर्वक पालन करते हुए दान-पुण्य और अच्छे कर्म करते रहे और स्वर्ग में जाने के योग्य हो गए।

इस प्रवचन को समाप्त करते हुए, गुरु ने सत्यों की व्याख्या की: (सत्यों के समापन पर, आज्ञाकारी पुत्र प्रथम मार्ग (सम्मोहन) के फल में स्थापित हो गया): फिर उन्होंने जन्म की पहचान बताई:- "उस समय, पिता, पुत्र और बहू वही थे जो अब हैं, और वह बुद्धिमान बालक मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **महा-धम्म-पाल-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-447-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 447
महा-धम्म-पाल-जातक

"यह कैसी प्रथा है," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने कपिलपुरा (जिसे कपिलवस्तु भी कहा जाता है, बुद्ध के पिता शुद्धोदन का राज्य) की अपनी पहली यात्रा (बुद्ध के रूप में) के बाद सुनाई, जब वे अपने पिता के बरगद के जंगल में ठहरे हुए थे, और इसमें राजा और उनके पिता के विश्वास से इनकार करने के बारे में बताया गया था।

उस समय, ऐसा कहा जाता है कि महान राजा शुद्धोदन (बुद्ध के पिता और कपिलवस्तु के राजा) ने अपने निवास पर बीस हजार भिक्षुओं के समूह के साथ बुद्ध को चावल की दलिया का भोज दिया। भोज के दौरान, शुद्धोदन ने उनसे मधुरता से कहा, "महोदय, आपके परिश्रम के समय (*1), कुछ देवता मेरे पास आए और हवा में स्थिर होकर बोले, 'आपके पुत्र, राजकुमार सिद्धार्थ, भूख से मर गए हैं।' इस पर गुरु ने उत्तर दिया, 'क्या आपने इस पर विश्वास किया, महाराज?' - 'महोदय, मैंने इस पर विश्वास नहीं किया!'" जब देवता वायु में मंडराते हुए आए और उन्होंने मुझे यह बताया, तब भी मैंने इस पर विश्वास करने से इनकार कर दिया, यह कहते हुए कि मेरे पुत्र की मृत्यु तब तक नहीं होगी जब तक वह बोधि वृक्ष की चरणों में बुद्धत्व प्राप्त नहीं कर लेता। गुरु ने कहा, "महाराज, बहुत समय पहले महान धम्मपाल के समय में, जब एक विश्वप्रसिद्ध शिक्षक ने कहा था - "आपका पुत्र मर गया है, ये उसकी हड्डियाँ हैं," तब भी आपने विश्वास करने से इनकार कर दिया था, यह कहते हुए, "हमारे परिवार में कोई भी कम उम्र में नहीं मरता; तो अब आपको क्यों विश्वास करना चाहिए?" और अपने पिता के अनुरोध पर, गुरु ने बहुत समय पहले की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, काशी राज्य में धम्मपाला नामक एक गाँव था, और इसका यह नाम धम्मपाला के परिवार के निवास स्थान के कारण पड़ा था। दस पुण्यमार्गों का पालन करने के कारण, यह ब्राह्मण अपने निवास स्थान में धम्मपाला या विधिपालक के नाम से प्रसिद्ध था। उनके घर में, सेवक भी दान देते थे, सद्गुणों का पालन करते थे और पवित्र दिन मनाते थे।

उसी समय उस घर में बोधिसत्व का जन्म हुआ और उनका नाम धम्मपाल-कुमार रखा गया, जिसका अर्थ है लघु विधिपाल। जैसे ही वे वयस्क हुए, उनके पिता ने उन्हें एक हजार सिक्के दिए और तक्षशिला में अध्ययन के लिए भेज दिया। वहाँ उन्होंने एक विश्वप्रसिद्ध गुरु से शिक्षा प्राप्त की और पाँच सौ युवकों के समूह में अग्रणी शिष्य बन गए।

उसी समय गुरु के सबसे बड़े पुत्र का निधन हो गया; और गुरु अपने शिष्यों से घिरे हुए, अपने मित्रों और परिवार के बीच, रोते हुए श्मशान में बालक का अंतिम संस्कार किया। तब गुरु अपने परिवार और सभी शिष्यों के साथ रो रहे थे और विलाप कर रहे थे, परन्तु धम्मपाला न तो रोए और न विलाप किया। जब पाँच सौ युवक श्मशान से लौटे, तो वे अपने गुरु के समक्ष बैठ गए और बोले, "अरे, कितना उत्तम बालक, कितना अच्छा, कितना कोमल बच्चा, इतनी कम उम्र में माता-पिता से बिछड़ गया!" धम्मपाला ने उत्तर दिया, "सचमुच कोमल, जैसा तुम कहते हो! अच्छा, वह इतनी कम उम्र में क्यों मर गया? यह उचित नहीं है कि कम उम्र के बच्चे मरें।" तब उन्होंने उनसे कहा, "हे गुरु, क्या आप नहीं जानते कि ऐसे व्यक्ति नश्वर हैं?" — "मैं जानता हूँ; परन्तु कम उम्र में तो वे नहीं मरते; लोग वृद्ध होने पर मरते हैं।" — "तो क्या सभी सांसारिक वस्तुएँ क्षणभंगुर और अवास्तविक नहीं हैं?" "यह सच है कि वे क्षणभंगुर हैं; लेकिन जवानी में प्राणी नहीं मरते; वे केवल बुढ़ापे में ही मरते हैं।"--"ओह, क्या यही आपके परिवार की परंपरा है?"--"हाँ, यही मेरे परिवार की परंपरा है।" लड़कों ने यह बातचीत अपने गुरु को बताई। उन्होंने धम्मपाला को बुलवाया और उनसे पूछा, "धम्मपाला, मेरे पुत्र, क्या यह सच है कि तुम्हारे परिवार में लोग कम उम्र में नहीं मरते?" "जी हाँ, गुरुजी," उन्होंने कहा, "यह सच है।"

यह सुनकर शिक्षक ने सोचा, "यह तो बहुत ही अद्‌भुत बात है! मैं उसके पिता के पास जाकर इस बारे में पूछूंगा; और यदि यह सच हुआ, तो मैं उसके बताए सही-गलत के नियमों के अनुसार जीवन व्यतीत करूंगा।"

जब उन्होंने अपने पुत्र के लिए सभी कार्य संपन्न कर लिए, तो सात-आठ दिन बाद उन्होंने धम्मपाल को बुलवाया और कहा, "पुत्र, मैं घर से दूर जा रहा हूँ; मेरे जाने के दौरान तुम मेरे इन शिष्यों को शिक्षा दोगे।" ऐसा कहकर उन्होंने एक जंगली बकरी की हड्डियाँ प्राप्त कीं, उन्हें धोकर सुगंधित किया और एक थैले में रख दिया; फिर एक छोटे सेवक को साथ लेकर वे तक्षशिला से निकल पड़े और कुछ समय बाद उस गाँव में पहुँचे। वहाँ उन्होंने महा-धम्मपाल के घर का रास्ता पूछा और द्वार पर रुक गए।

ब्राह्मण के पहले सेवक ने, चाहे वह कोई भी हो, उसके हाथ से धूप से बचने का छाता, जूते और थैली ले ली। उसने उनसे कहा कि वे बालक के पिता को बता दें कि उनके पुत्र धम्मपाल लघु के गुरु द्वार पर खड़े हैं। "अच्छा," सेवकों ने कहा और पिता को अपने पास बुलाया। वे जल्दी से दहलीज पर आए और "अंदर आइए!" कहते हुए अपने घर में प्रवेश किया। उन्होंने अतिथि को पलंग पर बैठाया और मेज़बान के कर्तव्य निभाते हुए उनके पैर धोए, इत्यादि।

जब गुरु ने भोजन कर लिया और वे दोनों सौहार्दपूर्ण बातचीत के लिए बैठ गए, तो उन्होंने कहा, "ब्राह्मण, आपका पुत्र युवा धम्मपाल, जो ज्ञान से परिपूर्ण और तीनों वेदों तथा अठारह सिद्धियों का पूर्ण ज्ञाता था, दुर्भाग्यवश अपनी जान गंवा बैठा। समस्त सांसारिक वस्तुएँ क्षणभंगुर हैं; उसके लिए शोक न कीजिए!" ब्राह्मण ने ताली बजाई और ज़ोर से हँसे। "आप क्यों हँस रहे हैं, ब्राह्मण?" दूसरे ने पूछा। "क्योंकि," उन्होंने कहा, "मेरा पुत्र नहीं मरा है; कोई और मरा होगा।" "नहीं, ब्राह्मण," उत्तर आया, "आपका पुत्र ही मरा है, कोई और नहीं। उसकी हड्डियों को देखिए और विश्वास कीजिए।" ऐसा कहकर उन्होंने हड्डियों को खोला। "ये आपके पुत्र की हड्डियाँ हैं," उन्होंने कहा। "शायद किसी जंगली बकरी की हड्डियाँ हों," दूसरे ने कहा, "या किसी कुत्ते की; लेकिन मेरा पुत्र मरा नहीं है। हमारे परिवार में सात पीढ़ियों से ऐसा कुछ नहीं हुआ है, जैसे कम उम्र में मृत्यु; और आप झूठ बोल रहे हैं।" फिर सबने ताली बजाई और जोर से हंसने लगे।

जब गुरु ने यह अद्‌भुत बात देखी, तो वे बहुत प्रसन्न हुए और बोले, "ब्राह्मण, तुम्हारे वंश में यह परंपरा व्यर्थ नहीं है कि युवा मरते नहीं। तो फिर तुम युवावस्था में क्यों नहीं मरते?" और उन्होंने पहले श्लोक को दोहराते हुए अपना प्रश्न पूछा:

यह कौन सी प्रथा है, या कौन सा पवित्र मार्ग है?
मैं पूछता हूँ, यह किस अच्छे कर्म का फल है?
  हे ब्राह्मण, मुझे कारण बताओ।
बताओ, तुम्हारे वंश में युवा क्यों नहीं मरते!
तब ब्राह्मण ने यह समझाने के लिए कि किन गुणों के कारण उसके परिवार में कोई भी कम उम्र में नहीं मरा, निम्नलिखित श्लोकों को दोहराया:

हम सच्चाई के मार्ग पर चलते हैं, हम झूठ नहीं बोलते।
हम सभी घृणित और दुष्ट पापों से दूर रहते हैं।
हम उन सभी चीजों से दूर रहते हैं जो बुरी हैं।
इसलिए हममें से कोई भी जवानी में नहीं मरता।

हम मूर्खों और बुद्धिमानों दोनों के कर्मों के बारे में सुनते हैं;
जो बातें मूर्ख लोग नजरअंदाज करते हैं, हम वही करते हैं।
हम बुद्धिमानों का अनुसरण करते हैं और मूर्खों का त्याग करते हैं;
इसलिए हममें से कोई भी जवानी में नहीं मरता।
"पूर्व में प्राप्त उपहारों में ही हमारी संतुष्टि निहित है।"
देते हुए भी हम पूरी तरह संतुष्ट रहते हैं;
और न ही हम देने के बाद पश्चाताप करते हैं:
इसलिए हममें से कोई भी जवानी में नहीं मरता।
हम पुरोहितों, ब्राह्मणों, तीर्थयात्रियों को संतुष्ट करते हैं।
भिखारी, भिक्षु और सभी जरूरतमंद
हम उन्हें पानी पिलाते हैं, और भूखे लोगों को भोजन कराते हैं:
इसलिए हमारे बीच के युवा नहीं मरते।
"विवाहित होने पर, हम दूसरों की पत्नियों के लिए आहें नहीं भरते।"
लेकिन हम विवाह की प्रतिज्ञा के प्रति निष्ठावान हैं;
और मुझे लगता है कि हमारी पत्नियां हमारे प्रति वफादार हैं:
इसलिए हमारे बीच के युवा नहीं मरते।
"इन सच्ची पत्नियों से जो संतानें पैदा होती हैं
वे अत्यंत बुद्धिमान हैं, और सीखने के लिए प्रवृत्त हैं।
वेदों में पारंगत और सर्वगुण संपन्न;
इसलिए हममें से कोई भी जवान रहते हुए नहीं मरता।
"स्वर्ग की खातिर सही काम करने का हर कोई प्रयास करता है:
पिता का जीवन भी ऐसा ही होता है, और माता का जीवन भी ऐसा ही होता है।
अतः पुत्र और पुत्री, बहन और भाई:
इसलिए हममें से कोई भी जवानी में नहीं मरता।
"स्वर्ग के खातिर हमारे सेवक भी आवेदन करें।"
उनका जीवन अच्छाई के लिए समर्पित हो, चाहे पुरुष हों या महिलाएं।
संरक्षक, सेवक, प्रत्येक निम्नतम कैदी:
इसलिए हमारे बीच के युवा नहीं मरते।
और अंत में, इन दो छंदों के माध्यम से उन्होंने उन लोगों की अच्छाई का वर्णन किया जो धार्मिकता के मार्ग पर चलते हैं:

जो व्यक्ति धर्म की ओर उन्मुख होता है, धर्म उसे बचाता है;
धर्मपरायणता का सही ढंग से पालन करने से सुख मिलता है;
जो लोग धार्मिक कार्यों को अंजाम देते हैं, उन्हें यह वरदान प्राप्त होता है।
धर्मी व्यक्ति को दंड नहीं मिलता।
धर्म धर्मी को बचाता है, जैसे छाया
बारिश के समय भी बचाव: लड़का अभी भी जीवित है।
धम्मपाला को सद्भावना से सुरक्षा मिलती है;
आपने जिन हड्डियों के बारे में बताया है, वे किसी और की हड्डियां हैं।
यह सुनकर गुरु ने उत्तर दिया, "मेरी यह यात्रा सुखद, फलदायी और फलदायी रही!" फिर प्रसन्न होकर उन्होंने धम्मपाला के पिता से क्षमा मांगी और कहा, "मैं यहाँ आया था और आपके परीक्षण के उद्देश्य से जंगली बकरी की ये हड्डियाँ अपने साथ लाया था। आपका पुत्र सुरक्षित और स्वस्थ है। मैं आपसे निवेदन करता हूँ कि मुझे जीवन रक्षा का अपना नियम बताएँ।" फिर दूसरे गुरु ने इसे एक पत्ते पर लिख लिया; और कुछ दिन वहाँ रहने के बाद वे तक्षशिला लौट आए, और धम्मपाला को सभी प्रकार के कौशल और ज्ञान में दीक्षित करने के बाद, उन्होंने अपने अनुयायियों के एक बड़े दल के साथ उन्हें विदा कर दिया।

जब गुरु ने महान राजा शुद्धोदन (बुद्ध के पिता और कपिलवस्तु के राजा) को इस प्रकार प्रवचन दिया, तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की और जन्म का वर्णन किया: (सत्यों के समापन पर राजा तृतीय मार्ग (सम्मोहन) के फल में स्थापित हो गए):--"उस समय, माता-पिता

महाराजा का परिवार (बुद्ध के माता-पिता) थे, शिक्षक सारिपुत्र थे, सेवकों का समूह बुद्ध का सेवकों का समूह था, और मैं स्वयं लघु धम्मपाल था।"

फुटनोट:

(1) बुद्ध द्वारा निर्वाण की ज्ञान प्राप्ति से पहले किए गए छह वर्षों के तपस्या/ध्यान।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कुक्कुट्ट-जातक**2
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-448-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 448
कुक्कुट जातक

"उन पर भरोसा मत करो," इत्यादि। यह कहानी गुरु ने बाँस के जंगल में हत्या करने के विषय पर सुनाई थी। सत्य के हॉल में भिक्षु देवदत्त के दुष्ट स्वभाव पर चर्चा कर रहे थे। "हे महाराज, देवदत्त धनुर्धारियों और अन्य लोगों को रिश्वत देकर दशबल (बुद्ध) की हत्या करने का प्रयास कर रहा है!" गुरु ने प्रवेश करते हुए पूछा, "भाइयों, आप यहाँ बैठकर किस बारे में बात कर रहे हैं?" उन्होंने गुरु को बताया। गुरु ने कहा, "यह पहली बार नहीं है जब उसने मेरी हत्या करने का प्रयास किया है, बल्कि पहले भी ऐसा ही हुआ था"; और उन्होंने उन्हें अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, कोसंबी (*1) में कोसंबक नाम का एक राजा राज करता था। उस समय बोधिसत्व बाँस के पेड़ों के झुरमुट में रहने वाली एक जंगली मुर्गी की संतान थे, और बाद में जंगल में सैकड़ों पक्षियों के झुंड के मुखिया बन गए। पास ही में एक बाज़ रहता था, जो मौका मिलते ही पक्षियों को एक-एक करके पकड़ लेता और खा जाता था। समय के साथ उसने सभी बाज़ों को खा डाला, और बोधिसत्व अकेले रह गए। लेकिन उन्होंने भोजन की तलाश में बहुत सावधानी बरती और बाँस के घने जंगल में रहने लगे। यहाँ बाज़ उन तक नहीं पहुँच सकता था, इसलिए वे सोचने लगे कि किस तरकीब से उसे फंसाया जाए।

फिर वह पास ही की एक शाखा पर उतरे और पुकार कर बोले, "हे आदरणीय पक्षी, तुम मुझसे क्यों डरते हो? मैं तुमसे मित्रता करना चाहता हूँ। अब ऐसे स्थान पर (उसका नाम बताते हुए) भोजन प्रचुर मात्रा में है; आओ हम वहाँ साथ भोजन करें और मित्रों की तरह साथ रहें।" - "नहीं, हे प्रभु," बोधिसत्व ने उत्तर दिया, "आपके और मेरे बीच कभी मित्रता नहीं हो सकती; इसलिए चले जाइए!" - "हे प्रभु, मेरे पूर्व पापों के कारण आप मुझ पर अब भरोसा नहीं कर सकते; लेकिन मैं वादा करता हूँ कि मैं फिर कभी ऐसा नहीं करूँगा!" - "नहीं, मुझे ऐसे मित्र की परवाह नहीं है; चले जाइए!" तीसरी बार भी बोधिसत्व ने इनकार कर दिया: "ऐसे गुणों वाले प्राणी के साथ," उन्होंने कहा, "मित्रता कभी नहीं हो सकती"; और उन्होंने इस प्रवचन को कहते हुए विशाल जंगल को गूंजाया, देवता उनकी प्रशंसा में जयजयकार कर रहे थे।

उन लोगों पर भरोसा मत करो जिनके शब्द झूठ हैं, न ही उन लोगों पर जो केवल जानते हैं
न तो स्वार्थ, न ही पापी लोग, और न ही अत्यधिक धार्मिकता दिखाने वाले लोग।
कुछ पुरुषों का स्वभाव गायों जैसा होता है, जो प्यासे और लालची होते हैं।
सच के शब्द दिलासा देने वाले मित्र की भूमिका निभाते हैं, लेकिन उन पर अमल कभी मत करो।
"ये सूखे और खाली हाथ फैलाते हैं; आवाज उनके दिल की बात छुपाती है;
कृतज्ञता का ज्ञान न रखने वालों (घमंडी प्राणियों!) से दूर रहो।
"स्त्री या दुर्बल मन वाले पुरुष पर भरोसा मत करो।"
और न ही वे लोग जिन्होंने समझौता किया है, उसे तोड़ने के लिए इच्छुक हैं।
जो व्यक्ति बुरे रास्तों पर चलता है, जो हर उस चीज़ की ओर जाता है जो मृत्यु का खतरा पैदा करती है,
दृढ़ मत रहो, उस पर भरोसा मत करो, जैसे म्यान में रखी सबसे तेज तलवार।
कुछ लोग दिल से नहीं बल्कि मीठी-मीठी बातें करते हैं और दूसरों को खुश करने की कोशिश करते हैं।

कई लोग दोस्ती का दिखावा करते हैं: ऐसे लोगों पर भरोसा न करें।
जब ऐसा दुष्ट व्यक्ति भोजन या लाभ देखता है,
वह बहुत बुरा काम करता है, और वह जाएगा, लेकिन पहले तुम्हारी कमजोरी सामने आएगी।"
पक्षियों के राजा ने इन सात श्लोकों को दोहराया। फिर धर्म के राजा ने अगले चार श्लोकों का पाठ किया, जो बुद्ध की अंतर्दृष्टि से प्रेरित थे:

"मैत्रीपूर्ण प्रदर्शन में कई प्रतिद्वंद्वी उसका समर्थन करने के लिए उसका अनुसरण करते हैं;"
जिस प्रकार पक्षी बाज़ को छोड़कर चला गया, उसी प्रकार बुरे लोगों के लिए भी चले जाना ही सबसे अच्छा था।
घटनाओं के अर्थ को पहचानने में कौन शीघ्रता नहीं दिखाता?
वह अपने प्रतिद्वंद्वियों के नियंत्रण में चला जाता है, और बाद में पछताता है।
जो भी व्यक्ति घटनाओं के अर्थ को शीघ्रता से पहचान लेता है,
जैसे बाज़ अपने परिश्रम से पक्षी को बचा लेता है, वैसे ही वह अपने प्रतिद्वंद्वियों से दूर भाग जाता है।
"ऐसे अपरिहार्य और कपटपूर्ण जाल से,
घातक, कई वन वृक्षों के बीच गहराई में स्थित,
जैसे ही पक्षी बाज से दूर भागा,
दूरदृष्टि रखने वाले व्यक्ति को सफलता मिलनी चाहिए।
और इन छंदों का पाठ करने के बाद, उसने फिर बाज़ को बुलाया और उसे फटकारते हुए कहा, "यदि तू इस स्थान पर रहना जारी रखेगा, तो मैं जान जाऊँगा कि मुझे क्या करना है।" बाज़ वहाँ से उड़कर दूसरे स्थान पर चला गया।

गुरु ने प्रवचन समाप्त करते हुए कहा, "भाइयों (भिक्षुओं), बहुत समय पहले भी देवदत्त ने मेरा नाश करने का प्रयास किया था," और फिर उन्होंने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उस समय देवदत्त बाज़ था, और मैं स्वयं पक्षी था।"

फुटनोट:

(1) गंगा नदी पर स्थित एक शहर।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> मत - **कुंडली-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-449-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 449
मत्त-कुंडली-जातक। (*1)

“वन में क्यों?” इत्यादि। यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, एक जमींदार के बारे में जिसके बेटे की मृत्यु हो गई थी। श्रावस्ती नगर में हमें पता चलता है कि बुद्ध की सेवा करने वाले एक जमींदार के प्रिय पुत्र की मृत्यु हो गई। पुत्र के शोक से व्याकुल होकर वह व्यक्ति न स्नान करता, न भोजन करता, न अपने काम करता और न ही बुद्ध की सेवा करता, बल्कि केवल रोता रहा, “हे मेरे प्रिय पुत्र, तू मुझे छोड़कर चला गया!”

सुबह के समय जब गुरुजी समाधि में संसार का अवलोकन कर रहे थे, तब उन्होंने महसूस किया कि यह व्यक्ति प्रथम मार्ग (समाधि) का फल प्राप्त करने के योग्य है। अतः अगले दिन, अपने अनुयायियों को श्रावस्ती नगर में भिक्षा मांगने के लिए ले जाने के बाद, भोजन करने हेतु उन्होंने भिक्षुओं को विदा किया और वरिष्ठ भिक्षु आनंद के साथ उस स्थान पर गए जहाँ यह व्यक्ति रहता था। उन्होंने ज़मींदार को बताया कि गुरुजी आए हैं। तब उनके परिवार ने एक आसन तैयार किया और गुरुजी को उस पर बैठाया तथा ज़मींदार को गुरुजी के समक्ष ले आए। प्रणाम करने के बाद, जब वह एक तरफ बैठे, तो गुरुजी ने करुणा से भरे स्वर में कहा, "हे गृहस्थ शिष्य, क्या तुम अपने इकलौते पुत्र के लिए शोक मना रहे हो?" उसने उत्तर दिया, "जी हाँ।" गुरुजी ने कहा, "बहुत समय पहले, हे गृहस्थ शिष्य, पुत्र की मृत्यु के

शोक में व्याकुल होकर, ज्ञानी पुरुषों ने ज्ञानियों के वचन सुने और यह स्पष्ट रूप से जानते हुए भी कि खोए हुए को वापस नहीं लाया जा सकता, फिर भी उन्हें कोई शोक नहीं हुआ, जरा सा भी नहीं।" ऐसा कहकर, उनके अनुरोध पर गुरु ने अतीत की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्य था, एक अत्यंत धनी ब्राह्मण का पुत्र पंद्रह-सोलह वर्ष की आयु में एक बीमारी से ग्रसित हो गया और मृत्यु के समय देवदूतों के लोक में पुनर्जन्म लिया। पुत्र की मृत्यु के बाद से ब्राह्मण श्मशान जाकर राख के ढेर के चारों ओर घूम-घूम कर विलाप करता था; अपने सभी कर्तव्यों को अधूरा छोड़कर वह व्यथित होकर इधर-उधर भटकता रहता था। एक देवदूत पुत्र ने घूमते हुए पिता को देखा और उसके दुःख को कम करने की योजना बनाई। वह शोक के समय श्मशान गया, पुत्र का वेश धारण किया और सभी प्रकार के आभूषणों से सुसज्जित होकर एक तरफ खड़ा हो गया, दोनों हाथों से अपना सिर थामे हुए और जोर-जोर से विलाप करने लगा। आवाज सुनकर ब्राह्मण ने देखा और अपने पुत्र के प्रति प्रेम से भरकर उसके सामने रुक गया और बोला, "मेरे पुत्र, प्यारे बच्चे, तुम इस श्मशान के बीच में शोक क्यों मना रहे हो?" उसने यही प्रश्न निम्नलिखित श्लोक के शब्दों में व्यक्त किया:

"तुम यहाँ जंगल में क्यों खड़े हो?"
मालाओं के साथ, प्रत्येक कान में बालियां पहने हुए,
चंदन की खुशबू से महकते हुए, अपने हाथ फैलाए हुए?
किस दुःख के कारण तुम्हारे आंसू बहने लगते हैं?
और फिर युवक ने दूसरी पंक्ति को दोहराते हुए अपनी कहानी सुनाई:

शुद्ध सोने से बना और शानदार ढंग से चमकता हुआ
मेरा रथ वह है, जिसमें मैं लेटा रहता था:
इसके लिए मुझे पहियों का एक जोड़ा नहीं मिल पा रहा है;
इसलिए मैं इतना पीड़ा से व्याकुल हूँ कि मुझे मरना ही पड़ेगा!
ब्राह्मण ने सुना और तीसरा श्लोक दोहराया:

"सुनहरा, या रत्नों से जड़ा हुआ, किसी भी प्रकार का।"
पीतल का हो या चांदी का, जो भी आपके मन में हो।
बस एक शब्द बोलो, रथ बन जाएगा।
और मैं इसके लिए एक जोड़ी पहिए ढूंढ लूंगा!
अब गुरु ने स्वयं, अपनी पूर्ण बुद्धिमत्ता से, युवक द्वारा दोहराई गई पंक्ति को सुनकर, दूसरी पंक्ति की पहली पंक्ति दोहराई—

"ब्राह्मण युवक ने अपनी बात पूरी करने के बाद उत्तर दिया";

जबकि युवक शेष भाग को दोहराता है:

"वहाँ ऊपर भाई चाँद और सूरज हैं!"
ऐसे पहियों के जोड़े द्वारा जैसे कि दो
मेरे सुनहरे रथ ने नई चमक हासिल कर ली है!
और ठीक उसके बाद:

तुमने जो किया है उसके लिए तुम मूर्ख हो।
उस चीज की मांग करना जिसकी किसी को भी लालसा नहीं करनी चाहिए;
मुझे लगता है, हे युवक, आपकी मृत्यु शीघ्र ही होनी चाहिए।
क्योंकि तुम्हें न तो चाँद मिलेगा और न ही सूरज!
तब--

"हमारी आँखों के सामने वे अस्त होते हैं और उदय होते हैं, उनका रंग और मार्ग अटल रहता है।"
किसी को भूत दिखाई नहीं देता: तो फिर विलाप करने में कौन अधिक मूर्ख है?
युवक ने ऐसा कहा; और ब्राह्मण ने समझकर एक श्लोक दोहराया:

"हे सबसे बुद्धिमान युवक, हम दोनों शोक करने वालों में से,

मैं ही सबसे बड़ा मूर्ख हूँ—तुम सच कहते हो।
 मृतकों की आत्मा की लालसा में,
बिल्कुल वैसे ही जैसे कोई बच्चा चाँद के लिए रोता है!
तब ब्राह्मण युवक के शब्दों से सांत्वना पाकर शेष श्लोकों का पाठ करके उसे धन्यवाद दिया:

मैं ऐसे भड़क उठा जैसे कोई व्यक्ति आग पर तेल डालता है।
तुम पानी लाए और मेरी इच्छा की पीड़ा को शांत किया।
"मेरे बेटे के लिए शोक—एक क्रूर तीर मेरे दिल में धंस गया था;
आपने मेरे दु:ख में मुझे सांत्वना दी और मेरे अंदर से तीर निकाल दिया।
"वह तीर निकल जाने के बाद, दर्द से मुक्त होकर, मैं शांत और स्थिर रहता हूँ;
हे युवक, तुम्हारे सत्य के वचन सुनकर अब मैं शोक नहीं करता, न ही रोता हूँ (*2)।"
तब उस युवक ने कहा, "हे ब्राह्मण, मैं वही पुत्र हूँ जिसके लिए आप शोक मना रहे हैं; मेरा जन्म देवदूतों के लोक में हुआ है। अब से मेरे लिए शोक न कीजिए, बल्कि दान दीजिए, सद्गुणों का पालन कीजिए और व्रत रखिए।" यह सलाह देकर वह अपने स्थान पर चला गया। उस ब्राह्मण ने उसकी सलाह मानकर, बहुत दान और अन्य अच्छे कर्म करने के बाद प्राण त्याग दिए और उसका पुनर्जन्म हुआ।

इस प्रवचन को समाप्त करते हुए, गुरु ने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: (सत्यों के समापन पर, भूस्वामी प्रथम मार्ग (सम्मोहन) के फल में स्थापित हो गया था): "उस समय, मैं स्वयं उन देवताओं (देवदूतों) का पुत्र था जिन्होंने यह सलाह दी थी।"

फुटनोट:

(1) कहानी धम्मपद, पृष्ठ 93 में दी गई है, जहाँ नाम मद्धकुंडली है।

(2) ये छंद 157, 215, 390 में पुनः आते हैं

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **बिसारि-कोसिय-जातक**
स्रोत: *डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-450-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 450
बिलारी-कोसिया-जातक

"जब भोजन न हो," इत्यादि। यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक भिक्षु के बारे में सुनाई थी, जो दान देने के लिए समर्पित था।

हमें बताया जाता है कि इस व्यक्ति ने धर्म के मार्ग का उपदेश सुनकर, जब से उसने इस शिक्षा को अपनाया, तब से वह दान देने में लीन रहा, दान देने के लिए उत्सुक रहा। वह कभी भी एक कटोरा भरकर भोजन तब तक नहीं खाता था जब तक कि उसे किसी दूसरे के साथ साझा न कर दे; यहाँ तक कि वह पानी भी तब तक नहीं पीता था जब तक कि उसे किसी दूसरे को न दे दे; वह दान देने में इतना लीन था।

फिर वे सत्य के हॉल में उनके अच्छे गुणों के बारे में बातें करने लगे। गुरुजी वहाँ आए और पूछा कि वे लोग क्या बातें कर रहे हैं। उन्होंने गुरुजी को बताया। उन्होंने भिक्षु को बुलवाकर पूछा, "क्या यह सच है जो मैंने सुना है, भिक्षुजी, कि आप दान देने के लिए समर्पित हैं, दान देने के लिए उत्सुक हैं?" उन्होंने उत्तर दिया, "जी हाँ।" गुरुजी ने कहा, "बहुत समय पहले, भिक्षुजी, यह व्यक्ति विश्वासहीन और नास्तिक था; वह किसी को घास के तिनके के सिरे पर तेल की एक बूँद तक नहीं देता था; तब मैंने उसे विनम्र बनाया, उसका परिवर्तन किया और उसे विनम्र बनाया और उसे दान का फल सिखाया; और उसका यह दान-प्रसन्न हृदय दूसरे जन्म में भी उसका साथ नहीं छोड़ता।" ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई (*1)।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था, तब बोधिसत्व का जन्म एक धनी परिवार में हुआ था; और वयस्क होने पर उन्होंने संपत्ति अर्जित की, और अपने पिता की मृत्यु के बाद व्यापारी के रूप में उनका स्थान ग्रहण किया।

एक दिन, जब वह अपनी संपत्ति का जायजा ले रहा था, तो उसने सोचा, "मेरी संपत्ति तो यहाँ है, लेकिन इसे इकट्ठा करने वाले कहाँ हैं? मुझे अपनी संपत्ति दान में बाँटनी चाहिए और दान देना चाहिए।" इसलिए उसने एक दान-पुण्य स्थल बनवाया और अपने जीवनकाल में बहुत दान दिया; और जब उसके दिन समाप्त होने वाले थे, तो उसने अपने पुत्र को दान देने का कार्य न छोड़ने का आदेश दिया और तैंतीस के स्वर्ग में सक्का (इंद्र) के रूप में पुनर्जन्म लिया। पुत्र ने अपने पिता की तरह दान दिया और अपने पुत्र को भी यही आदेश देते हुए, देवताओं (देवदूतों) के बीच चंदा, चंद्रमा के रूप में जन्म लिया। उसका पुत्र सूर्य बना, जिसने एक और पुत्र को जन्म दिया जो सारथी मताली (*2) बना, और उसका पुत्र पंचशिखा के रूप में पुनर्जन्म लिया, जो गंधर्वों में से एक था। लेकिन इस वंश का छठा व्यक्ति आस्थाहीन, कठोर हृदय वाला, प्रेमहीन और कंजूस था; और उसने भिक्षा देने के स्थान को ध्वस्त कर दिया, उसे जला दिया, भिखारियों को पीटा और उन्हें उनके काम पर भेज दिया; किसी को घास के तिनके के सिरे पर तेल की एक बूंद तक नहीं दी।

तब देवताओं (देवदूतों) के राजा सक्का (इंद्र) ने अपने अतीत के कार्यों पर विचार करते हुए आश्चर्य किया, "क्या मेरी दान देने की परंपरा जारी है या नहीं?" यह सोचते हुए उन्हें यह समझ आया: "मेरे पुत्र ने दान देना जारी रखा और वह चंदा बन गया; उसका पुत्र सूर्य, उसका पुत्र मतली और उसका पुत्र पंचशिखा बन गया; परन्तु छठे ने परंपरा तोड़ दी है।" तब उनके मन में यह विचार आया कि वे उस पापी व्यक्ति को सबक सिखाएंगे और उसे दान का फल बताएंगे। अतः उन्होंने चंदा, सूर्य, मतली और पंचशिखा को अपने पास बुलाया और कहा, "महोदय, हमारे वंश के छठे ने हमारे परिवार की परंपरा तोड़ दी है; उसने दान देने के स्थान को जला दिया है, भिखारियों को भगा दिया है; वह किसी को कुछ नहीं देता। तो आइए हम उसे सबक सिखाएं!" अतः वे उनके साथ बनारस के लिए रवाना हुए।

उस समय व्यापारी राजा से मिलने गया था और लौटकर सातवें द्वार के नीचे इधर-उधर टहल रहा था, सड़क को देख रहा था। सक्का (इंद्र) ने दूसरों से कहा, "मेरे अंदर जाने तक तुम सब रुको, फिर एक-एक करके मेरे पीछे आना।" ये कहकर वह आगे बढ़ा और धनी व्यापारी के सामने खड़े होकर उससे बोला, "हे महाराज! मुझे भोजन दीजिए!" - "यहाँ तुम्हारे लिए कुछ नहीं है, ब्राह्मण; कहीं और जाओ।" - "हे महाराज! जब ब्राह्मण भोजन मांगते हैं, तो उन्हें मना नहीं किया जाना चाहिए!" - "मेरे घर में, ब्राह्मण, न तो भोजन पका है और न ही पकने के लिए तैयार है; यहाँ से चले जाओ!" - "महाराज, मैं आपको एक श्लोक सुनाता हूँ, सुनिए।" उसने कहा, "मुझे तुम्हारी कविता नहीं चाहिए; चले जाओ, और यहाँ खड़े मत रहो।" लेकिन सक्का (इंद्र) ने उसकी बात पर ध्यान दिए बिना दो श्लोक सुना दिए:

"जब बर्तन में भोजन न हो, तो भलाई करने वाले को भोजन मिल जाएगा, और वह इससे इनकार नहीं करेगा।"
और आप खाना बना रहे हैं! यह अच्छा नहीं था, अगर आप अब खाना नहीं बनाते तो खाने की कोई आपूर्ति नहीं होती।
जो व्यक्ति लापरवाह और उदार नहीं होता, वह हमेशा देने से इनकार करता है;
लेकिन जो व्यक्ति सद्गुण से प्रेम करता है, उसे अवश्य देना चाहिए, और जिसका मन बुद्धिमान हो उसे भी।
यह सुनकर उस व्यक्ति ने उत्तर दिया, "ठीक है, अंदर आओ और बैठो; तुम्हें थोड़ा सा मिलेगा।" सक्का (इंद्र) इन श्लोकों को दोहराते हुए अंदर आया और बैठ गया।

फिर चंदा आया और भोजन मांगा। उस व्यक्ति ने कहा, "तुम्हारे लिए भोजन नहीं है, चले जाओ!" चंदा ने उत्तर दिया, "महाराज, अंदर एक ब्राह्मण बैठा है; मुझे लगता है कि ब्राह्मण के लिए मुफ्त भोजन होगा, इसलिए मैं भी अंदर आ जाता हूँ।" उस व्यक्ति ने कहा, "ब्राह्मण के लिए कोई मुफ्त भोजन नहीं है! चले जाओ!" तब चंदा ने कहा, "महाराज, कृपया एक-दो श्लोक सुनिए," और दो श्लोक दोहराए: (जब भी कोई भयभीत कंजूस किसी को कुछ नहीं देता, तो जिस चीज से वह डरता है वही उसके पास आ जाती है क्योंकि वह कुछ नहीं देता):--

जब भूख या प्यास का भय निर्दयी आत्माओं को भयभीत कर देता है,
इस दुनिया में और अगली दुनिया में उन मूर्खों को पूरा दंड मिलेगा।
अतः दान करो, धन-संपत्ति की लालसा से दूर रहो, लोभ की गंदगी को दूर करो।
परलोक में मनुष्यों के सद्गुण ही उनका सबसे मजबूत सहारा होंगे।
ये बातें सुनकर उस व्यक्ति ने कहा, "ठीक है, अंदर आ जाओ, तुम्हें थोड़ा मिलेगा।" वह अंदर आया और सक्का (इंद्र) के साथ बैठ गया।

कुछ देर इंतजार करने के बाद, सूर्या आगे आया और दो श्लोक दोहराते हुए भोजन मांगा:

"अच्छे लोगों की तरह करना, उनकी क्षमता के अनुसार देना कठिन है।"
बुरे लोग अच्छे लोगों के जीवन की नकल शायद ही कर सकते हैं।

और इसलिए, जब अच्छाई और बुराई पृथ्वी से मिट जाएंगी,
बुरे लोग नरक में जन्म लेते हैं, अच्छे लोग स्वर्ग में जन्म लेते हैं।
धनी व्यक्ति को कोई उपाय न सूझने पर उसने उससे कहा, "ठीक है, अंदर आओ और इन ब्राह्मणों के साथ बैठो, तुम्हें थोड़ा भोजन मिल जाएगा।" और मताली थोड़ी देर प्रतीक्षा करने के बाद आया और भोजन माँगा; और जब उसे बताया गया कि भोजन नहीं है, तो उसने यह कहते ही सातवाँ श्लोक दोहराया:

कुछ लोग थोड़े में से देते हैं, कुछ लोग भरपूर भंडार होने के बावजूद नहीं देते।
जो व्यक्ति थोड़ी सी राशि से दान करता है, यदि वह हजार भी दे दे तो भी कुछ नहीं बचेगा।
उस व्यक्ति ने उससे भी कहा, "ठीक है, अंदर आओ और बैठो।" थोड़ी देर प्रतीक्षा करने के बाद, पंचसिखा आया और भोजन माँगा। उत्तर मिला, "यहाँ कुछ नहीं है, चले जाओ।" उसने कहा, "मैंने कितनी जगहें देखी हैं! मुझे लगता है कि यहाँ ब्राह्मणों के लिए मुफ्त भोजन अवश्य होगा!" और वह उसे पकड़कर आठवाँ श्लोक दोहराने लगा।

"जो जूठे भोजन पर जीवन यापन करता है, उसे भी धर्मी होना चाहिए।"
अपने पुत्रों के होते हुए भी वह अपने सीमित भंडार से देता है;
धनी लोगों द्वारा दान किए गए एक लाख रुपये,
ऐसे व्यक्ति से एक छोटा सा उपहार भी पाने के लायक नहीं हैं।"
पंचसिखा का भाषण सुनकर धनी व्यक्ति सोचने लगा। फिर उसने नौवां श्लोक दोहराया, ताकि ऐसे उपहारों के अल्प मूल्य का कारण पूछ सके।

"एक समृद्ध और उदार बलिदान क्यों है?"
उचित मूल्य के मामले में यह किसी धार्मिक दान के बराबर नहीं है।
धनवान व्यक्ति जो हजार रुपये देता है, उसका क्या अर्थ है?
भले ही आकार में छोटा हो, क्या यह किसी गरीब आदमी के उपहार के लायक नहीं है?
उत्तर में, पंचसिखा ने अंतिम श्लोक का पाठ किया:

कुछ लोग बुरे रास्तों पर चलते हुए जीवन यापन करते हैं
अत्याचार करो, हत्या करो, फिर सांत्वना दो:
उनके क्रूर और चिड़चिड़े उपहार कम हैं
किसी भी धार्मिकता से प्रदत्त व्यक्ति की तुलना में।
इस प्रकार धनी लोगों में से एक हजार भी नहीं हो सकते
ऐसे व्यक्ति के छोटे से उपहार के बराबर ही उपहार दें।"
पंचसिखा की सलाह सुनकर उसने कहा, "ठीक है, अंदर जाओ और बैठ जाओ; तुम्हें थोड़ा मिलेगा।" और वह भी अंदर गया और बाकियों के साथ बैठ गया।

तब धनी व्यापारी बिलारिकोसिया ने एक दासी की ओर इशारा करते हुए कहा, "ब्राह्मणों को एक-एक माप छिले हुए चावल दो।" वह चावल ले आई और उनके पास जाकर उन्हें चावल भूनने और कहीं पकाकर खाने को कहा। उन्होंने कहा, "हम छिले हुए चावल कभी नहीं खाते।" - "मालिक, वे कहते हैं कि वे छिले हुए चावल कभी नहीं खाते!" - "ठीक है, उन्हें छिले हुए चावल दो।" वह उनके लिए छिले हुए चावल ले आई और उन्हें लेने को कहा। उन्होंने कहा, "हम कुछ भी कच्चा नहीं खाते।" - "मालिक, वे कुछ भी कच्चा नहीं खाते!" - "तो फिर एक बर्तन में उनके लिए गाय का चारा पकाओ और उन्हें दो।" उसने एक बर्तन में गाय का चारा पकाया और उन्हें दे दिया। उन पाँचों ने एक-एक निवाला लिया और अपने मुँह में डाला, लेकिन वह गले में अटक गया; फिर आँखें घुमाते हुए वे बेहोश हो गए और मानो मर गए हों। यह देखकर दासी को लगा कि वे मर गए होंगे, और वह बहुत डरकर व्यापारी के पास गई और बोली, "मालिक, वे ब्राह्मण गाय का चारा नहीं पचा पाए और मर गए!" उसने सोचा, "अब लोग मुझे धिक्कारेंगे, कहेंगे कि इस व्यभिचारी ने कोमल ब्राह्मणों को गाय का चारा खिलाया, जो वे नहीं पचा पाए और मर गए!" तब उसने दासी से कहा, "जल्दी जाओ, उनके कटोरे से चारा हटाओ और उनके लिए उत्तम किस्म के चावल पकाओ।" उसने वैसा ही किया। व्यापारी ने सड़क से राहगीरों को अंदर बुलाया, और जब उसने उनमें से कुछ को इकट्ठा किया तो उसने कहा, "मैंने इन ब्राह्मणों को अपने तरीके से भोजन कराया, और वे लालची थे और उन्होंने बड़े-बड़े टुकड़े बना लिए, और इस तरह खाते समय भोजन उनके गले में अटक गया और वे मर गए। मैं तुम्हें गवाह बनाता हूँ कि मैं निर्दोष हूँ।" भीड़ के इकट्ठा होते ही ब्राह्मण उठे और पर्ची देखकर बोले, "देखो इस व्यापारी का छल! इसने हमें अपना ही भोजन दिया! पहले तो इसने हमें केवल गाय का चारा दिया, और फिर जब हम मृत समान पड़े थे, तब इसने यह भोजन तैयार करवाया।" और उन्होंने अपने मुँह से लिया हुआ भोजन फेंक दिया और दिखाया। भीड़ ने व्यापारी को फटकारा और चिल्लाई, "अंधे मूर्ख! तूने अपने

परिवार की परंपरा तोड़ दी; तूने भिक्षागृह जला दिया; तूने भिखारियों का गला पकड़कर फेंक दिया; और अब जब तू इन कोमल ब्राह्मणों को भोजन दे रहा था, तो तूने केवल गाय का चारा दिया! मुझे लगता है कि जब तू परलोक जाएगा, तो अपने घर की सारी संपत्ति अपने गले में फँसाकर ले जाएगा!"

इस समय, सक्का (इंद्र) ने भीड़ से पूछा, "क्या तुम जानते हो कि इस घर की संपत्ति किसकी है?" उन्होंने उत्तर दिया, "हम नहीं जानते।" उन्होंने कहा, "तुमने बनारस के एक महान व्यापारी के बारे में सुना है, जो एक समय इस शहर में रहता था, और उसने भिक्षा वितरण के लिए भवन बनवाए थे, और बहुत दान दिया था?" उन्होंने कहा, "हाँ, हमने उसके बारे में सुना है।" उन्होंने कहा, "मैं ही वह व्यापारी हूँ, और उन दान के कारण अब मैं सक्का (इंद्र), देवताओं (देवदूतों) का राजा बन गया हूँ; और मेरा पुत्र, जिसने मेरी परंपरा नहीं तोड़ी, चंदा (देवदूत) बन गया है; और उसका पुत्र सूर्य है, और उसका पुत्र मतली है, और उसका पुत्र पंचशिखा है; इनमें से, वहाँ चंदा है, और वह सूर्य है, और यह सारथी मतली है, और यह पंचशिखा है, जो अब एक दिव्य संगीतकार है, जो कभी उस व्यभिचारी का पिता था! इस प्रकार दान देना शक्तिशाली है।" इसलिए बुद्धिमानों को सद्गुणों का पालन करना चाहिए।" ऐसा कहकर, वहाँ एकत्रित लोगों के संदेह दूर करने के उद्देश्य से, वे वायु में उठे और स्थिर अवस्था में रहे, अपनी अपार शक्ति से उन्होंने अपने चारों ओर एक विशाल जनसमूह को घेर लिया, उनके शरीर अग्नि से प्रज्वलित थे, जिससे ऐसा प्रतीत हुआ मानो पूरा शहर आग की लपटों में घिरा हो। तब सक्का (इंद्र) ने भीड़ को संबोधित करते हुए कहा: "हम यहाँ आने के लिए अपनी स्वर्गीय महिमा को त्यागकर आए हैं, और हम इस पापी बिलारिकोसिया के कारण आए हैं, जो अपने वंश का अंतिम है, अपने पूरे वंश का नाश करने वाला है।" हम उस पर दया करके आए हैं, क्योंकि हम जानते थे कि इस पापी ने अपने परिवार की परंपरा को तोड़ा है, दान देने के स्थान को जला दिया है, भिखारियों का गला खींचा है, और हमारी प्रथा का उल्लंघन किया है, और दान देना बंद करने पर वह नरक में फिर से जन्म लेगा। इस प्रकार उसने भीड़ को दान की शक्ति के बारे में बताया। बिलारिकोसिया ने हाथ जोड़कर विनती की, और प्रतिज्ञा की; "हे प्रभु, आज से मैं परिवार की परंपरा को नहीं तोडूंगा, बल्कि दान दूंगा; और आज से मैं कभी भी अपने भोजन, यहाँ तक कि पीने का पानी और दांत साफ करने वाला पदार्थ भी, दूसरों के साथ बाँटे बिना नहीं खाऊंगा।"

इस प्रकार इंद्र ने उसे विनम्र बनाकर, आत्म-त्यागी बनाकर और पंच सद्गुणों में स्थापित करके, चारों देवदूतों को अपने साथ लेकर अपने स्थान पर प्रस्थान किया। और वह व्यापारी जीवन भर दान देता रहा और तैंतीसवें स्वर्ग में जन्मा।

गुरु ने प्रवचन समाप्त करते हुए कहा, "हे भिक्षुओं, पूर्व में यह भिक्षु अविश्वासी था और किसी को भी दान नहीं देता था, परन्तु मैंने उसे विनम्र बनाया और दान का फल सिखाया; और यह भाव उसके मन से नहीं निकला, यहाँ तक कि परलोक में प्रवेश करने पर भी नहीं।" फिर उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "उस समय, उदार भिक्षु धनी थे, सारिपुत्र चंदा थे, मोग्गल्याण सूर्य थे, कश्यप मतली थे, आनंद पंचशिखा थे, और मैं स्वयं सक्का (इंद्र) था।"

फुटनोट:

(1) इस कहानी का कुछ भाग क्रमांक 313 में मिलता है

(2) सक्का या इंद्र का।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **चक्क-वाक-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-451-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 451
चक्क-वका-जातक। (*1)

"तुम तो सुंदर रंग के हो," इत्यादि—यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक लालची भिक्षु के बारे में सुनाई थी। कहा जाता है कि वह भिक्षु अपने वस्त्रों आदि से असंतुष्ट होकर इधर-उधर घूमता रहता था और पूछता था, "सामुदायिक भोजन कहाँ है? निमंत्रण कहाँ है?" और जब उसे मांस का नाम सुनाई देता, तो वह अत्यंत प्रसन्न हो उठता था। तब कुछ दयालु भिक्षुओं ने उसके प्रति सहानुभूति दिखाते हुए गुरु को इस बारे में बताया। गुरु ने उसे बुलाकर पूछा, "क्या यह सच है, भिक्षु, जैसा मैंने सुना है, कि तुम लालची हो?" "जी, महाराज, यह

सच है," उसने कहा। "भाई," गुरु ने कहा, "हमारे जैसे मोक्ष (निर्वाण) की ओर ले जाने वाले धर्म को अपनाने के बाद भी तुम लालची क्यों हो? लालच पाप है; बहुत समय पहले, लालच के कारण ही तुम बनारस में हाथियों के शवों और अन्य जानवरों के अंगों से संतुष्ट नहीं हुए और घने जंगल में चले गए थे।" ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस राज्य के राजा थे, एक लालची कौआ बनारस में हाथियों के शवों और अन्य सभी जानवरों के आंतरिक अंगों से संतुष्ट नहीं था। उसने सोचा, "अब मुझे आश्चर्य होता है कि जंगल कैसे होंगे?" इसलिए वह जंगल की ओर चल पड़ा; लेकिन वहाँ मिले जंगली फलों से भी वह संतुष्ट नहीं हुआ और गंगा की ओर चल पड़ा। गंगा के किनारे चलते हुए, उसने लाल हंसों का एक जोड़ा देखा (*2), और सोचा, "ये पक्षी बहुत सुंदर हैं; मुझे लगता है कि उन्हें गंगा के किनारे खाने के लिए भरपूर मांस मिलता है। मैं उनसे पूछूंगा, और अगर मैं भी उनका भोजन खा सकूं तो निस्संदेह मेरा रंग भी उनके जैसा सुंदर हो जाएगा।" इसलिए जोड़े से कुछ ही दूरी पर बैठकर, उसने दो श्लोक सुनाकर लाल हंसों से अपना प्रश्न पूछा:

"तुम सुंदर रंग की हो, आकर्षक आकृति की, भरी-पूरी काया की, लाल रंग की हो।"
ओ हंस! मैं कसम खाता हूँ कि तुम अत्यंत सुंदर हो, तुम्हारा चेहरा और तुम्हारी इंद्रियाँ स्पष्ट और सच्ची हैं!
"गंगा के किनारे बैठकर तुम पाइक और ब्रीम मछली खाते हो,"
रोच, कार्प और गंगा की धारा में तैरने वाली अन्य सभी मछलियाँ (*3)!"
लाल हंस ने तीसरे छंद का पाठ करके उसका खंडन किया:

मैं ज्वार से बहकर आने वाले शवों को नहीं खाता, न ही जंगल में पड़े हुए शवों को।
मैं हर तरह की जंगली घास खाता हूँ; दोस्त, यही मेरा सारा भोजन है।
फिर कौवे ने दो छंद पढ़े:

"मैं हंस की मांस के बारे में कही गई बातों पर विश्वास नहीं कर सकता।"
मैं गांव में नमक और तेल मिलाकर बनाई गई चीजें खाता हूँ।
"चावलों का ढेर, एकदम साफ-सुथरा और बढ़िया, जिसे एक आदमी बनाता है और डालता है।"
उसके भोजन पर; लेकिन फिर भी, गूज, मेरा रंग तुम्हारे जैसा नहीं है।"
इस पर लाल हंस ने उसे शेष छंद सुनाए, जिनमें उसके बदसूरत रंग का कारण बताया गया था और उसकी धार्मिकता का वर्णन किया गया था।

अपने हृदय में पाप को देखकर, जो मानव जाति का विनाश कर रहा है,
भय और घबराहट में तुम अपना भोजन खाते हो; इसीलिए तुम्हें यह रंग मिलता है।
"कौवे, तूने अपने पूर्व जन्मों के पापों के कारण संसार में हर जगह गलती की है।"
आपको अपने भोजन में आनंद नहीं आता; यह आपके रंग के कारण है।
लेकिन, मित्र, मैं खाता हूँ और किसी को नुकसान नहीं पहुँचाता, चिंतित नहीं हूँ, आराम से हूँ।
बिना किसी परेशानी के, किसी भी शत्रु से भयभीत नहीं।
"तुम्हें यही करना चाहिए, और शक्तिशाली बनना चाहिए, अपने बुरे मार्गों का त्याग कर देना चाहिए।"
संसार में चलो और किसी को दुख मत पहुंचाओ; तब सब तुमसे प्रेम करेंगे और तुम्हारी प्रशंसा करेंगे।
जो सभी प्राणियों के प्रति दयालु है, न तो उन्हें चोट पहुँचाता है और न ही किसी को चोट पहुँचाने का कारण बनता है।
जो किसी को ठेस नहीं पहुंचाता, उसे कोई ठेस नहीं पहुंचाता, उसके प्रति कोई घृणा नहीं पाई जाती।
"इसलिए यदि तुम संसार के प्रिय बनना चाहते हो, तो सभी बुरी वासनाओं से दूर रहो," लाल हंस ने धर्म का उपदेश देते हुए कहा। कौए ने उत्तर दिया, "अपने खान-पान के बारे में मुझसे व्यर्थ की बातें मत करो!" और "कांव! कांव!" चिल्लाते हुए बनारस के गोबर के ढेर की ओर उड़ गया।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की: (सत्यों के समापन पर, लालची भाई (भिक्षु) तृतीय मार्ग (सम्मोहन) के फल में स्थापित हो गया): "उस समय, लालची भाई कौवा था, राहुल की माता (बुद्ध की पत्नी) लाल हंस की साथी थी, और मैं स्वयं लाल हंस था।"

फुटनोट:

(1)सं. 434

(2)cakkavako, Anas Casarca.

(3)मछलियों के नाम हैं: पावुसा, वलजा, मुंजा, रोहिता (साइप्रिनस रोहिता), और पाथिना (सिल्वंस बोआलिस)।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **भूरी-पन्हा-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-452-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 452
भूरी-पन्हा-जातक

"क्या यह सचमुच सच है?" इत्यादि--यह भूरी-पन्हा जन्म उम्मग्ग जन्म में प्रकट होगा।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **महा-मंगल-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-453-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 453
महा-मंगल-जातक

"सत्य का उपदेश दो," इत्यादि। यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए महा-मंगल शास्त्र, या शकुन ग्रंथ (*1) के बारे में सुनाई थी। राजगृह नगर में किसी कारणवश राजगृह में एक बड़ी भीड़ जमा हो गई थी, और उनमें से एक व्यक्ति उठा और यह कहते हुए बाहर चला गया, "आज शुभ शगुन का दिन है।" किसी और ने यह सुना और कहा, "यह व्यक्ति 'शगुन' की बातें करते हुए बाहर चला गया है; शगुन से उसका क्या तात्पर्य है?" तीसरे ने कहा, "किसी भी शुभ दिखने वाली चीज का दर्शन शुभ शगुन होता है; मान लीजिए कोई व्यक्ति सुबह जल्दी उठता है और उसे एक बिल्कुल सफेद बैल, या गर्भवती स्त्री, या लाल मछली (*2), या लबालब भरा हुआ घड़ा, या गाय के दूध का ताजा पिघला हुआ घी, या नया बिना धुला वस्त्र, या चावल का दलिया दिखाई देता है, तो इससे बेहतर शगुन और कोई नहीं हो सकता।" कुछ उपस्थित लोगों ने इस व्याख्या की प्रशंसा की; उन्होंने कहा, "बहुत अच्छा कहा।" लेकिन एक अन्य व्यक्ति ने बीच में ही कहा, "नहीं, इनमें कोई अपशगुन नहीं है; जो आप सुनते हैं वही अपशगुन है। एक व्यक्ति लोगों को 'भरा हुआ' कहते हुए सुनता है, फिर वह 'पूर्ण विकसित' या 'बढ़ रहा है' सुनता है, या वह उन्हें 'खाओ' या 'चबाओ' कहते हुए सुनता है: इससे बेहतर कोई अपशगुन नहीं है।" कुछ उपस्थित लोगों ने कहा, "बहुत अच्छी बात कही," और इस व्याख्या की प्रशंसा की। एक अन्य व्यक्ति ने कहा, "इन सब में कोई अपशगुन नहीं है; जो आप छूते हैं (*3) वही अपशगुन है। यदि कोई व्यक्ति सुबह जल्दी उठता है, और धरती को छूता है, या हरी घास, ताजा गोबर, साफ वस्त्र, लाल मछली, सोना या चांदी, भोजन को छूता है, तो इससे बेहतर कोई अपशगुन नहीं है।" और यहाँ भी कुछ उपस्थित लोगों ने सहमति जताई और कहा कि यह बात अच्छी तरह से कही गई है। और फिर दृष्टि, ध्वनि और स्पर्श के अपशगुन के समर्थक तीन समूहों में बंट गए, और एक-दूसरे को समझाने में असमर्थ रहे। पृथ्वी के देवताओं से लेकर ब्रह्मा के स्वर्ग (प्रधान देवदूतों के स्वर्ग) तक, कोई भी शगुन का सटीक अर्थ नहीं बता सका। सक्का (इंद्र) ने सोचा, "देवदूतों और मनुष्यों में से केवल भगवान बुद्ध ही शगुन के इस प्रश्न का उत्तर दे सकते हैं। मैं भगवान बुद्ध के पास जाऊँगा और उनसे यह प्रश्न पूछूँगा।" अतः रात्रि में वे भगवान बुद्ध के दर्शन करने गए, उन्हें प्रणाम किया और हाथ जोड़कर प्रार्थना करते हुए प्रश्न पूछा, "बहुत से देवता और मनुष्य हैं।" तब गुरु ने बारह श्लोकों में उन्हें अड़तीस महान शगुन बताए। और जैसे-जैसे उन्होंने एक-एक करके शगुन-शास्त्रों का पाठ किया, दस हजार करोड़ देवताओं ने संतत्व प्राप्त किया, और अन्य तीन मार्गों में प्रवेश करने वालों की संख्या अनगिनत है। शगुन सुनकर सक्का (इंद्र) अपने

स्थान पर लौट आए। जब गुरु ने शकुन बताए, तो मनुष्यों की दुनिया और देवताओं (देवदूतों) की दुनिया ने सहमति जताते हुए कहा, "बहुत अच्छा कहा।"

फिर सत्य के हॉल में वे तथागत (बुद्ध) के गुणों पर चर्चा करने लगे: "महोदय, शकुन का रहस्य दूसरों की समझ से परे था, परन्तु उन्होंने मनुष्यों और देवताओं (देवदूतों) के हृदयों को समझ लिया और उनके संदेहों को ऐसे दूर किया जैसे आकाश में चंद्रमा को उदय कर रहे हों! आह, तथागत (बुद्ध) कितने बुद्धिमान हैं, मेरे मित्रों!" गुरु ने प्रवेश किया और उनसे पूछा कि वे किस विषय पर चर्चा कर रहे हैं। उन्होंने उन्हें बताया। उन्होंने कहा, "यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है, भिक्षुओं, कि अब जब मैं पूर्ण ज्ञान से परिपूर्ण हूँ, तो मैंने शकुन के रहस्य को सुलझा लिया है; परन्तु जब मैं बोधिसत्व के रूप में पृथ्वी पर विचरण करता था, तब भी मैंने शकुन के रहस्य का उत्तर देकर मनुष्यों और देवताओं (देवदूतों) के संदेहों को दूर किया था।" ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, बोधिसत्व का जन्म एक धनी ब्राह्मण परिवार में एक नगर में हुआ और उनका नाम रक्षितकुमार रखा गया। तक्षशिला में शिक्षा पूर्ण करने के बाद, उन्होंने विवाह किया और अपने माता-पिता के देहांत के बाद, उन्होंने अपनी संपत्ति का जायजा लिया। मन में व्याकुलता के कारण, उन्होंने दान-पुण्य किया और अपने कर्मों पर विजय प्राप्त करके हिमालय के क्षेत्रों में एक संन्यासी बन गए, जहाँ उन्होंने अलौकिक शक्तियाँ प्राप्त कीं और एक स्थान पर रहकर वन की जड़ों और फलों से अपना जीवन यापन किया। समय के साथ, उनके अनुयायियों की संख्या बहुत बढ़ गई, लगभग पाँच सौ शिष्य उनके साथ रहने लगे।

एक दिन, ये तपस्वी बोधिसत्व के पास पहुँचे और उनसे कहा, "गुरुजी, वर्षा ऋतु आने पर हम हिमालय से नीचे उतरकर नमक और मसाले लाने के लिए देश-क्षेत्र की यात्रा करें; इससे हमारा शरीर बलवान होगा और हमारी तीर्थयात्रा पूर्ण हो जाएगी।" बोधिसत्व ने कहा, "ठीक है, आप जा सकते हैं, लेकिन मैं यहीं रहूँगा।" इस प्रकार उन्होंने बोधिसत्व से विदा ली और हिमालय से नीचे उतरकर अपनी यात्रा जारी रखी, और बनारस पहुँचे, जहाँ उन्होंने राजा के उद्यान में अपना निवास स्थान बनाया। उनका बहुत आदर और आतिथ्य सत्कार किया गया।

एक दिन बनारस के राजमहल में एक बड़ी भीड़ जमा हुई और शकुन की समस्या पर चर्चा हुई। इस कहानी की प्रस्तावना में वर्णित घटनाक्रम को ही समझना होगा। फिर, पहले की तरह, भीड़ को कोई ऐसा व्यक्ति नहीं मिला जो मनुष्यों के संदेह दूर कर शकुन की समस्या का समाधान कर सके; इसलिए वे उद्यान में गए और ऋषियों के समक्ष अपनी समस्या रखी। ऋषियों ने राजा से कहा, "महाराज, हम इस प्रश्न का उत्तर नहीं दे सकते, परन्तु हमारे गुरु, परम बुद्धिमान ऋषि रक्षित, हिमालय में निवास करते हैं; वे इस प्रश्न का उत्तर देंगे, क्योंकि वे मनुष्यों और देवताओं (देवदूतों) के विचारों को समझते हैं।" राजा ने कहा, "महोदय, हिमालय बहुत दूर है और वहाँ पहुँचना कठिन है; हम वहाँ नहीं जा सकते। क्या आप स्वयं अपने गुरु के पास जाकर उनसे प्रश्न नहीं पूछेंगे, और जब आपको उत्तर मिल जाए, तो लौटकर हमें बताएँगे?" ऋषियों ने ऐसा करने का वचन दिया। और जब वे अपने गुरु के पास लौट आए और उन्हें प्रणाम किया, और गुरु ने राजा के कुशल-मंगल और देशवासियों के रीति-रिवाजों के बारे में पूछा, तो उन्होंने उन्हें शकुन-दर्शन आदि की पूरी कहानी शुरू से अंत तक सुनाई, और समझाया कि वे राजा के काम पर कैसे आए, ताकि वे स्वयं इस प्रश्न का उत्तर सुन सकें; "अब, महाराज," उन्होंने कहा, "कृपा करके हमें इस शकुन-दर्शन की समस्या को स्पष्ट करें और सत्य बताएं।" तब सबसे बड़े शिष्य ने गुरु से पहला श्लोक सुनाकर अपना प्रश्न पूछा:

"भ्रमित मनुष्य को सत्य का उपदेश दो।"
और बताइए कि कौन सा धर्मग्रंथ, या कौन सा पवित्र ग्रंथ,
  शुभ मुहूर्त में अध्ययन किया और कहा,
क्या यह इस दुनिया में और अगली दुनिया में भी आशीर्वाद देता है?
जब वरिष्ठ शिष्य ने अपशकुन की समस्या को इन शब्दों में व्यक्त किया, तो उस महान सत्ता ने देवताओं (देवदूतों) और मनुष्यों के संदेह दूर करते हुए उत्तर दिया, "यह और यह अपशकुन है," और इस प्रकार बुद्ध की कुशलता से अपशकुनों का वर्णन करते हुए कहा,

"जो भी देवता (देवदूत) हों, और सभी पिता (*4) हों,
और सरीसृप, और वे सभी प्राणी जिन्हें हम देखते हैं,
  सदा के लिए सम्मान, दयालु हृदय के साथ।
वह निःसंदेह सभी प्राणियों के लिए एक आशीर्वाद है।
इस प्रकार उस महान सत्ता ने पहले शगुन के बारे में बताया, फिर दूसरे शगुन के बारे में और बाकी सभी शगुन के बारे में बताया:

जो पूरी दुनिया के सामने विनम्रतापूर्वक प्रसन्नता प्रकट करता है,

प्रिय पुरुषों और महिलाओं, पुत्रों और पुत्रियों को,
जो अपमानजनक जवाबों का उसी तरह से जवाब नहीं देते,
वह निश्चित रूप से सभी के लिए एक आशीर्वाद हैं।
"जो बुद्धि से स्पष्ट हो, संकट में समझदार हो,"
न तो वह अपने खेल के साथियों को और न ही अपने दोस्तों को तुच्छ समझता है।
न तो वह जन्म, ज्ञान, जाति या धन का घमंड करता है।
उनके साथियों के बीच एक आशीर्वाद की प्राप्ति हुई।
जो व्यक्ति अच्छे और सच्चे लोगों को अपना मित्र मानता है,
उस पर भरोसा करो, क्योंकि उसकी जुबान जहर से मुक्त है।
जो कभी किसी मित्र को हानि नहीं पहुँचाता, जो अपना धन साझा करता है,
वह निश्चित रूप से मित्रों में एक आशीर्वाद है।
"जिसकी पत्नी मिलनसार है और उम्र में बराबर है,"
समर्पित, अच्छे और कई बच्चों वाले भालू,
निष्ठावान, गुणी और कुलीन कुल का।
पत्नियों में यही आशीर्वाद प्रकट होता है।
"जिसका राजा सर्वशक्तिमान ईश्वर है,
जो शुद्ध जीवन और सभी क्षमताओं को जानता है,
और कहता है, "वह मेरा दोस्त है," और उसका इरादा छल करने का नहीं है।
यही वह आशीर्वाद है जो सम्राटों में निहित होता है।
"सच्चा विश्वासी, भोजन और पेय पदार्थ देता है,"
फूल और मालाएँ, इत्र, हमेशा अच्छे होते हैं।
मन में शांति लिए और चारों ओर खुशियाँ फैलाते हुए--
इससे समस्त स्वर्गों में आशीर्वाद प्राप्त होता है।
"जिनका सद्गुणी जीवन निर्वाह करके गुणी ऋषि परीक्षण करते हैं"
शुद्धिकरण के लिए अथक प्रयास करने पर,
अच्छे और बुद्धिमान पुरुष, शांत जीवन से संपन्न।
वह संतों की संगति में एक आशीर्वाद है।"
इस प्रकार उस महान सत्ता ने अपने प्रवचन को संतत्व के उच्चतम स्तर तक पहुँचाया; और आठ श्लोकों में शकुनों की व्याख्या करने के बाद, उन्हीं शकुनों की प्रशंसा में अंतिम श्लोक का पाठ किया:

"तो ये आशीर्वाद, जो संसार में घटित होते हैं,
सभी बुद्धिमानों द्वारा सम्मानित, शानदार,
जो मनुष्य बुद्धिमान है, वह इन बातों का पालन करे।
शकुनों में कोई सच्चाई नहीं होती।
इन शकुनों के बारे में सुनकर ऋषि-मुनि सात-आठ दिन तक वहाँ रुके, फिर विदा लेकर उसी स्थान पर वापस चले गए।

राजा ने उनसे मुलाकात की और अपना प्रश्न पूछा। उन्होंने शकुनों की समस्या को उसी प्रकार समझाया जैसे उन्हें बताया गया था, और हिमालय लौट गए। तब से शकुनों का रहस्य संसार में समझ में आ गया। शकुनों के विषय पर ध्यान देने के बाद, वे सभी स्वर्ग चले गए। बोधिसत्व ने श्रेष्ठ गुणों का अभ्यास किया और अपने अनुयायियों के साथ ब्रह्मा के स्वर्ग (प्रधान देवदूतों के स्वर्ग) में जन्म लिया।

गुरु ने प्रवचन समाप्त करते हुए कहा: "केवल अभी ही नहीं, भिक्षुओं, बल्कि प्राचीन काल में भी मैंने शकुनों की समस्या समझाई थी"; और फिर उन्होंने जन्म का वर्णन किया—"उस समय, बुद्ध के अनुयायियों का समूह ऋषियों का समूह था; सारिपुत्र शिष्यों में वरिष्ठ थे, जिन्होंने शकुनों के बारे में प्रश्न पूछा था; और मैं स्वयं गुरु था।"

फुटनोट:

(1) संख्या 546.

(2)सुत्तनिपात, द्वितीय, चतुर्थ देखें।

(3) साइप्रिनस रोहिता.

(4)मुतम यहाँ संस्कृत म्रस्तम "छुआ हुआ" का बिगड़ा हुआ रूप होना चाहिए।

(5) "रूप और निराकार जगत के ब्राह्मण।" स्कोल.

पिछला <<<<-----||-454-||----->>>> अगला

अंतर्वस्तु

जातक क्रमांक 454 घाटा-जातक

उपस्थित

"कान्हा, उठो," इत्यादि। यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में पुत्र की मृत्यु के बारे में सुनाई थी। परिस्थितियाँ मठ-कुंडली जन्म (*1) जैसी ही थीं। यहाँ भी गुरु ने शिष्य से पूछा, "क्या तुम शोक में हो, गृहस्थ?" शिष्य ने उत्तर दिया, "जी, गुरुजी।" गुरु ने कहा, "गृहस्थ, बहुत समय पहले बुद्धिमानों ने बुद्धिमानों की बात सुनी थी और पुत्र की मृत्यु पर शोक नहीं किया था।" और उनके अनुरोध पर उन्होंने अतीत की एक कथा सुनाई।

पिछला जन्म

एक समय की बात है, कंस जिले के उत्तरपथ में असितंजन नगर में महाकंस नाम का एक राजा रहता था। उसके दो पुत्र थे, कंस और उपकंस, और एक पुत्री थी जिसका नाम देवगब्भा था। उसके जन्मदिन पर भविष्य बताने वाले ब्राह्मणों ने उसके बारे में कहा, "इस कन्या से जन्मा पुत्र एक दिन देश और कंस के वंश का नाश करेगा।" राजा अपनी पुत्री से इतना प्रेम करता था कि उसे मृत्युदंड नहीं दे सका; बल्कि उसके भाइयों को मामला सौंपकर, उसने अपने दिन व्यतीत किए और फिर उसकी मृत्यु हो गई। उसकी मृत्यु के बाद कंस राजा बना और उपकंस उसका वायसराय बना। उन्होंने सोचा कि यदि वे अपनी पुत्री को मृत्युदंड देंगे तो हंगामा मच जाएगा, इसलिए उन्होंने उसका विवाह किसी से न करने का निश्चय किया, बल्कि उसे अविवाहित रखने और उसकी निगरानी करने का निर्णय लिया; और उन्होंने उसके रहने के लिए एक गोलाकार मीनार बनवाई।

अब उसके पास नंदगोपा नाम की एक सेविका थी, और उस महिला का पति, अंधकवेनहु, उसकी देखभाल करने वाला सेवक था। उस समय ऊपरी मथुरा में महासागर नाम का एक राजा राज करता था, जिसके दो पुत्र थे, सागर और उपसागर। अपने पिता की मृत्यु के बाद, सागर राजा बना और उपसागर उसका उपसराय बना। यह लड़का उपकम्सा का मित्र था, जो उसके साथ पला-बढ़ा था और उसी गुरु से शिक्षा प्राप्त की थी। लेकिन वह अपने भाई के ज़नाना (हरम) में लिप्त हो गया, और पकड़े जाने पर कंस की जागीर में उपकम्सा के पास भाग गया। उपकम्सा ने उसे राजा कंस से मिलवाया, और राजा ने उसका बहुत सम्मान किया।

उपसागर राजा की सेवा करते हुए उस मीनार पर नज़र रखे हुए थे जहाँ देवगब् रहती थीं। जब उन्होंने पूछा कि वहाँ कौन रहता है, तो उन्हें कहानी सुनाई दी और वे उस लड़की से प्रेम करने लगे। एक दिन देवगब् ने उन्हें उपकांशा के साथ राजा की सेवा करने जाते हुए देखा। उन्होंने पूछा कि कौन है; नंदगोपा ने उन्हें बताया कि वे महान राजा सागर के पुत्र उपसागर हैं, और वे भी उनसे प्रेम करने लगीं। उपसागर ने नंदगोपा को एक उपहार देते हुए कहा, "बहन, आप देवगब् से मेरी मुलाकात करवा सकती हैं।" नंदगोपा ने कहा, "आसान है," और

लड़की को इसके बारे में बताया। देवगब् पहले से ही उनसे प्रेम करती थीं, इसलिए वे तुरंत मान गईं। एक रात नंदगोपा ने मुलाकात का समय तय किया और उपसागर को मीनार में ले गए; और वहाँ वे देवगब् के साथ रहे। उनके निरंतर मेलजोल और शारीरिक संबंध से देवगब् गर्भवती हो गईं। कुछ समय बाद यह बात सबको पता चली कि वह गर्भवती हैं, और भाइयों ने नंदगोपा से पूछताछ की। उसने उनसे क्षमादान का वादा लिया और फिर उन्हें सारी बात विस्तार से बताई। जब उन्होंने पूरी कहानी सुनी, तो उन्होंने सोचा, "हम अपनी बहन को मृत्युदंड नहीं दे सकते। यदि वह पुत्री को जन्म देती है, तो हम उसे भी छोड़ देंगे; यदि पुत्र को जन्म देती है, तो हम उसे मार डालेंगे।" और उन्होंने देवगब्हा को उपसागर को पत्नी के रूप में दे दिया।

जब प्रसव का समय आया, तो उसने एक पुत्री को जन्म दिया। यह सुनकर भाई अत्यंत प्रसन्न हुए और उन्होंने उसका नाम अंजना रखा। उन्होंने उन्हें गोवर्धन नामक एक गाँव जागीर के रूप में आवंटित किया। उपासगर ने देवगम्भा को अपने साथ गोवर्धन गाँव में ले जाकर उसके साथ निवास किया।

देवगब्हा फिर से गर्भवती हुईं और उसी दिन नंदगोपा भी गर्भ धारण कर लीं। जब उनका प्रसव का समय आया, तो दोनों ने एक ही दिन जन्म दिया - देवगब्हा को पुत्र और नंदगोपा को पुत्री। लेकिन देवगब्हा को डर था कि कहीं उनके पुत्र को मार न डाला जाए, इसलिए उन्होंने उसे चुपके से नंदगोपा के पास भेज दिया और बदले में नंदगोपा की पुत्री को प्राप्त कर लिया। उन्होंने अपने भाइयों को जन्म की सूचना दी। उन्होंने पूछा, "पुत्र या पुत्री?" उत्तर था, "पुत्री।" भाइयों ने कहा, "तो देखो उसका पालन-पोषण कैसे किया जाता है।" इसी प्रकार देवगब्हा के दस पुत्र और नंदगोपा की दस पुत्रियाँ हुईं। पुत्र नंदगोपा के साथ और पुत्रियाँ देवगब्हा के साथ रहती थीं, और इस रहस्य को किसी को भी पता नहीं था।

देवगब्भा के सबसे बड़े पुत्र का नाम वासु-देव, दूसरे का बलदेव, तीसरे का चंदा-देव, चौथे का सूर्य-देव, पाँचवें का अग्गी-देव, छठे का वरुण-देव, सातवें का अज्जुन, आठवें का पज्जुन, नौवें का घटा-पंडित और दसवें का अमकुरा (*2) था। वे अंधकवेनहु नामक सेवक के पुत्रों के रूप में प्रसिद्ध थे, जिन्हें दस दास-भाई कहा जाता था।

समय बीतने के साथ वे बड़े हो गए, और बहुत बलवान, साथ ही क्रूर और हिंसक होने के कारण वे लूटपाट करने लगे। यहाँ तक कि उन्होंने राजा के लिए लाए जा रहे उपहार को भी लूट लिया। लोग राजा के प्रांगण में जमा होकर शिकायत करने लगे, “अंधकवेनहु के पुत्र, दस भाई, देश को लूट रहे हैं!” तब राजा ने अंधकवेनहु को बुलाया और अपने पुत्रों को लूटपाट की अनुमति देने के लिए उसे फटकारा। इसी तरह तीन-चार बार शिकायत की गई और राजा ने उसे धमकी दी। अपने जीवन के भय से वह राजा से सुरक्षा का वरदान माँगने लगा और यह रहस्य बताया कि ये उसके पुत्र नहीं, बल्कि उपसागर के पुत्र हैं। राजा घबरा गया। उसने अपने दरबारियों से पूछा, “हम उन्हें कैसे पकड़ें?” उन्होंने उत्तर दिया, “महाराज, वे पहलवान हैं। आइए शहर में कुश्ती का मुकाबला करवाएँ, और जब वे अखाड़े में प्रवेश करेंगे तो हम उन्हें पकड़कर मार डालेंगे।” इसलिए उन्होंने दो पहलवानों, कैनुरा और मुथिका को बुलवाया और ढोल बजाकर पूरे शहर में यह घोषणा करवाई कि "सातवें दिन कुश्ती का मुकाबला होगा।"

राजा के द्वार के सामने कुश्ती का अखाड़ा तैयार था; खेल के लिए एक घेरा बनाया गया था, अखाड़ा चमकीले रंगों से सजाया गया था, विजय के झंडे पहले से ही बंधे हुए थे। पूरा शहर उत्साह से भरा हुआ था; एक के ऊपर एक कतार में कुर्सियाँ लगी हुई थीं। कैनुरा और मुथिका अखाड़े में उतरे और उछलते-कूदते, चिल्लाते और ताली बजाते हुए इधर-उधर घूमने लगे। उनके दस भाई भी आ गए। रास्ते में उन्होंने धोबियों की गली लूट ली और चमकीले रंगों के वस्त्र पहन लिए, इत्र की दुकानों से इत्र और फूलों की दुकानों से फूलों की मालाएँ चुरा लीं। शरीर पर इत्र लगाकर, सिर पर मालाएँ और कानों में बालियाँ पहनकर वे अखाड़े में कूदते, चिल्लाते और ताली बजाते हुए चले गए।

उस समय, कैनुरा इधर-उधर घूम रहा था और ताली बजा रहा था। बलदेव ने उसे देखकर सोचा, "मैं इसे अपने हाथ से नहीं छूऊँगा!" इसलिए उसने हाथी के अस्तबल से एक मोटा पट्टा उठाया, उछलते-कूदते और चिल्लाते हुए उसे कैनुरा के पेट के चारों ओर फेंक दिया, और दोनों सिरों को कसकर बांधकर उसे ऊपर उठाया, उसके सिर के ऊपर घुमाया, और ज़मीन पर पटक कर अखाड़े से बाहर लुढ़का दिया। कैनुरा की मृत्यु के बाद, राजा ने मुत्थिका को बुलवाया। मुत्थिका उछलता-कूदता, चिल्लाता और ताली बजाता हुआ उठा। बलदेव ने उस पर प्रहार किया और उसकी आँखें फोड़ दीं; और जब वह चिल्लाया--"मैं पहलवान नहीं हूँ! मैं पहलवान नहीं हूँ!" बलदेव ने उसके हाथ बांधते हुए कहा, "पहलवान हो या न हो, मेरे लिए सब एक समान है," और उसे ज़मीन पर पटक कर मार डाला और अखाड़े से बाहर फेंक दिया।

मृत्यु पीड़ा में मुथिका ने प्रार्थना की—"काश मैं पिशाच बन जाऊं और उसे खा जाऊं!" और वह कलामत्तिया नामक वन में पिशाच बन गया। राजा ने कहा, "इन दस दास-भाइयों को ले जाओ।" उसी क्षण वासुदेव ने एक चक्र (*3) फेंका, जिससे दोनों भाइयों के सिर कट गए (*4)। भयभीत भीड़ उनके चरणों में गिर पड़ी और उनसे अपने रक्षक बनने की विनती की।

इस प्रकार दस बंधुओं ने अपने दो चाचाओं की हत्या करके असितांजना शहर के शासन की शक्ति अपने हाथ में ले ली और अपने माता-पिता को वहां ले आए।

अब वे पूरे भारत को जीतने के इरादे से निकल पड़े। कुछ ही समय में वे राजा कालसेना की राजधानी अयोध्या पहुँचे। उन्होंने शहर को चारों ओर से घेर लिया, उसके चारों ओर के जंगल को नष्ट कर दिया, दीवार तोड़कर राजा को बंदी बना लिया और शहर का शासन अपने हाथों में ले लिया। वहाँ से वे द्वारवती (द्वारका) की ओर बढ़े। इस शहर के एक ओर समुद्र और दूसरी ओर पहाड़ थे। कहते हैं कि यह स्थान भूतों से प्रेतवाधित था। एक भूत पहरा देता था, जो अपने शत्रुओं को देखकर गधे के समान रेंकता था। भूतों के जादू से पूरा शहर हवा में उठ जाता और समुद्र के बीचोंबीच एक द्वीप पर स्थापित हो जाता; शत्रु के चले जाने पर वह वापस आकर अपने स्थान पर फिर से बस जाता। इस बार भी, हमेशा की तरह, जैसे ही गधे ने उन दस भाइयों को आते देखा, उसने गधे के समान रेंकना शुरू कर दिया। शहर हवा में उठ गया और द्वीप पर बस गया। उन्हें कोई नगर दिखाई नहीं दिया और वे वापस लौट गए; फिर नगर अपनी जगह पर वापस आ गया। वे लौट आए—गधे ने फिर वही किया जो पहले हुआ था। वे द्वारवती (द्वारका) नगर की शासन शक्ति को अपने हाथ में नहीं ले सके।

अतः वे कान्हादीपायन (*5) के पास गए और बोले, "महोदय, हम द्वारवती (द्वारका) राज्य पर कब्जा करने में असफल रहे हैं; हमें बताइए कि यह कैसे किया जाए।" उन्होंने कहा, "एक खाई में, ऐसी जगह पर, एक गधा घूमता रहता है। जब वह किसी शत्रु को देखता है, तो वह रेंकता है, और तुरंत ही नगर हवा में उठ उठता है। आपको उसके पैर पकड़ने होंगे (*6), और यही आपके लक्ष्य की प्राप्ति का मार्ग है।" तब उन्होंने तपस्वी से विदा ली; और वे सभी दस लोग गधे के पास गए, और उसके चरणों में गिरकर बोले, "महोदय, आपके सिवा हमारा कोई सहारा नहीं है! जब हम नगर पर कब्जा करने आएं, तो रेंकना मत!" गधे ने उत्तर दिया, "मैं रेंकने से खुद को नहीं रोक सकता। लेकिन यदि आप पहले आएं, और आप में से चार लोग बड़े लोहे के हल लाएं, और नगर के चारों द्वारों पर जमीन में बड़े लोहे के खंभे गाड़ दें, और जब नगर उठने लगे, तो यदि आप हल से बंधी लोहे की जंजीर खंभे पर लगा दें, तो नगर उठ नहीं पाएगा।" उन्होंने उसका धन्यवाद किया; और जब तक वे हल लेकर नगर के चारों द्वारों पर खंभे गाड़कर प्रतीक्षा करने लगे, तब तक वह एक शब्द भी नहीं बोला। फिर गधे ने रेंककर कहा, नगर उठने लगा, परन्तु जो लोग चारों द्वारों पर हल लेकर खड़े थे, उन्होंने हलों में लोहे की जंजीरें ठोंक दीं, जिससे नगर नहीं उठ सका। इस पर दस बंधुओं ने नगर में प्रवेश किया, राजा को मार डाला और उसका राज्य छीन लिया।

इस प्रकार उन्होंने पूरे भारत पर विजय प्राप्त की और 360 हजार नगरों में से सभी के राजाओं को उन्होंने चक्र से मार डाला और द्वारवाती (द्वारका) में निवास किया, राज्य को दस भागों में बाँट लिया। परन्तु वे अपनी बहन अंजना को भूल गए थे। इसलिए उन्होंने कहा, "चलो इसे ग्यारह भागों में बाँट लेते हैं।" परन्तु अमकुरा ने उत्तर दिया, "मेरा भाग उसे दे दो, और मैं जीविका के लिए कोई व्यापार करूँगा; बस तुम दोनों अपने-अपने देश में मेरे कर माफ कर दो।" वे मान गए और उन्होंने अमकुरा का भाग उसकी बहन को दे दिया; और नौ राजा उसके साथ द्वारवाती (द्वारका) में रहने लगे, जबकि अमकुरा व्यापार के लिए निकल गया।

समय बीतने के साथ-साथ उनके पुत्र और पुत्रियाँ बढ़ते गए; और बहुत समय बीतने के बाद उनके माता-पिता की मृत्यु हो गई। उस समय कहते थे कि मनुष्य का जीवन बीस हजार वर्ष होता था।

फिर महान राजा वासुदेव के एक प्रिय पुत्र का निधन हो गया। शोक से अधमरे राजा ने सब कुछ त्याग दिया और पलंग को थामे शोक में डूबे रहे। तब घटपांडित ने मन ही मन सोचा, "मेरे सिवा कोई और मेरे भाई के शोक को शांत नहीं कर सकता; मैं उसके शोक को शांत करने का कोई उपाय ढूंढूंगा।" इसलिए पागलपन का रूप धारण करके वह पूरे शहर में चक्कर लगाने लगा, आकाश की ओर देखते हुए चिल्लाने लगा, "मुझे एक खरगोश दो! मुझे एक खरगोश दो!" सारा शहर उत्तेजित हो गया: "घटपांडित पागल हो गया है!" सब कहने लगे। तभी रोहिणीय नामक एक दरबारी राजा वासुदेव के पास गया और उनसे बातचीत शुरू करते हुए पहला श्लोक सुनाया:

"कान्हा, उठो! सोने के लिए आंखें क्यों बंद कर रहे हो? वहां क्यों लेटे हो?"
अपने सगे भाई को देखो, वह अपना मानसिक संतुलन खो बैठता है।
और उसकी बुद्धिमत्ता (*7)! घटा बड़बड़ा रहा है, सुनो तुम लंबे काले बालों वाले!"
जब दरबारी ने इस प्रकार कहा, तो गुरु ने देखा कि वह उठ खड़ा हुआ है, और अपनी पूर्ण बुद्धि से उसने दूसरा श्लोक कहा:

"तभी लंबे बालों वाले केशवा ने रोहिनेय्या की चीख सुनी,
वह घाटा की पीड़ा देखकर अत्यंत चिंतित और व्याकुल होकर उठा।
राजा उठे और जल्दी से अपने कक्ष से नीचे आए; और घटपांडित के पास जाकर, उन्होंने दोनों हाथों से उन्हें कसकर पकड़ लिया; और उनसे बात करते हुए, तीसरा श्लोक सुनाया:

"पागलपन भरे अंदाज में, तुम द्वारका में हर समय चक्कर क्यों लगाते रहते हो?"

और चिल्लाओ, "खरगोश, खरगोश!" कहो, किसने तुमसे खरगोश छीन लिया है?"
राजा के इन शब्दों के जवाब में उसने बार-बार वही चीख दोहराई। लेकिन राजा ने दो और छंद पढ़े:

चाहे वह सोने का हो या उत्तम रत्नों का,
या पीतल, या चांदी, जैसा आप चाहें (*8)
मैं घोषणा करता हूँ, चाहे वह शंख हो, पत्थर हो या मूंगा।
मैं एक खरगोश बनाऊंगा।
और भी बहुत से खरगोश हैं, जो विशाल जंगल में घूमते रहते हैं।
उन्हें लाया जाएगा, मैं उन्हें पकड़वा लूंगा; बताओ, तुम्हारा क्या फैसला है?
राजा की बातें सुनकर, ज्ञानी व्यक्ति ने छठे श्लोक को दोहराते हुए उत्तर दिया:

"मुझे पृथ्वी पर रहने वाले किसी खरगोश की लालसा नहीं है, बल्कि चंद्रमा के भीतर रहने वाले खरगोश की लालसा है (*9)।"
हे केशव, उसे नीचे उतारो! मैं और कोई वरदान नहीं मांगता!
यह सुनकर राजा ने सोचा, "निस्संदेह मेरा भाई पागल हो गया है।" गहरे दुःख में उसने सातवाँ श्लोक दोहराया:

"सच तो ये है कि मेरे भाई, अगर तुम ऐसी प्रार्थना करोगे तो तुम्हारी मृत्यु हो जाएगी।"
और वह मांगो जिसकी कोई मनुष्य प्रार्थना नहीं कर सकता, चंद्रमा का दिव्य खरगोश।
राजा का उत्तर सुनकर घटपांडित वहीं स्थिर खड़े रह गए और बोले, "मेरे भाई, आप जानते हैं कि यदि कोई व्यक्ति चंद्रमा में खरगोश के लिए प्रार्थना करता है और उसे प्राप्त नहीं कर पाता है, तो वह मर जाएगा; तो फिर आप अपने मृत पुत्र के लिए क्यों शोक मना रहे हैं?"

"यदि हे कान्हा, तुम यह जानते हो, और दूसरों के दुख को कम कर सकते हो,"
आप उस बेटे के लिए अभी भी शोक क्यों मना रहे हैं जिसकी मृत्यु इतने समय पहले हो गई थी?
फिर वह सड़क पर खड़े-खड़े बोले—"भाई, मैं तो केवल अस्तित्व में मौजूद चीजों की ही कामना करता हूँ, परन्तु तुम तो अस्तित्वहीन चीजों के लिए शोक मना रहे हो।" फिर उन्होंने दो और छंद दोहराते हुए उन्हें उपदेश दिया:

"मेरा बेटा पैदा हुआ है, उसे मरने मत दो!" न मनुष्य, न देवता
अगर वह वरदान मिल सकता है; तो फिर उस चीज की मांग क्यों करें जो कभी मिल ही नहीं सकती?
न तो रहस्यमय आकर्षण, न ही जादुई जड़ें, न ही जड़ी-बूटियाँ, न ही खर्च किया गया पैसा,
"वह भूत को फिर से जीवित कर सकता है, जिसके लिए, कान्हा, तुम शोक मना रहे हो।"
यह सुनकर राजा ने उत्तर दिया, "प्रिय, तुम्हारा इरादा अच्छा था। तुमने मेरी परेशानी दूर करने के लिए ऐसा किया।" फिर घटपांडित की प्रशंसा में उन्होंने चार श्लोक दोहराए:

"मुझे ऐसे बुद्धिमान और उत्कृष्ट पुरुष मिले जिन्होंने मुझे अच्छी सलाह दी।"
लेकिन आज घटपांडिता ने मेरी आंखें कैसे खोल दीं!
मैं ऐसे भड़क उठा जैसे कोई व्यक्ति आग पर तेल डालता है;
तुम पानी लाए और मेरी इच्छा की पीड़ा को शांत किया।
"मेरे बेटे के शोक ने मेरे दिल में एक क्रूर तीर की तरह घाव कर दिया था।"
आपने मेरे दुःख में मुझे सांत्वना दी और मेरे अंदर से तीर निकाल दिया।
"वह तीर निकल जाने के बाद, दर्द से मुक्त होकर, मैं शांत और स्थिर रहता हूँ;
हे युवक, तुम्हारे सत्य वचन सुनकर अब मुझे न तो शोक होता है और न ही मैं रोता हूँ।
और अंत में:

दयालु लोग ऐसा ही करते हैं, और जो वास्तव में बुद्धिमान हैं वे भी ऐसा ही करते हैं।
वे दर्द से मुक्त हैं, जैसे यहाँ घटा ने अपने बड़े भाई को मुक्त किया था।"
यह पूर्ण ज्ञान का श्लोक है।

इस प्रकार राजकुमार घटा ने वासुदेव को सांत्वना दी।

बहुत समय बीत जाने के बाद, जब कन्हदीपायन ने अपने राज्य पर शासन किया, तो दस भाइयों के पुत्रों ने सोचा: "कहते हैं कि कन्हदीपायन (एक तपस्वी) को दिव्य अंतर्दृष्टि प्राप्त है। चलो उसकी परीक्षा लेते हैं।" इसलिए उन्होंने एक लड़के को बुलाया, उसे

सजाया-संवारा और उसके पेट पर तकिया बांधकर ऐसा दिखाया मानो वह गर्भवती हो। फिर वे उसे कन्हदीपायन के समक्ष लाए और उससे पूछा, "हे महाराज, यह स्त्री कब प्रसव करेगी?" तपस्वी को समझ आ गया (*10) कि दस शाही भाइयों के विनाश का समय आ गया है; फिर अपने जीवन की अवधि जानने के लिए उन्होंने देखा कि उन्हें उसी दिन मरना होगा। तब उन्होंने कहा, "हे बालकों, यह व्यक्ति तुम्हारे लिए क्या है?" "हमें उत्तर दीजिए," उन्होंने दृढ़ता से उत्तर दिया। उन्होंने उत्तर दिया, "यह व्यक्ति आज से सातवें दिन बबूल की एक गांठ उत्पन्न करेगा। इससे वह वासुदेव वंश का नाश करेगा, चाहे तुम उस लकड़ी को जलाकर उसकी राख नदी में फेंक दो।" "अरे, झूठे तपस्वी!" उन्होंने कहा, "मनुष्य कभी संतान उत्पन्न नहीं कर सकता!" और उन्होंने रस्सी और धागे का काम किया और उसे तुरंत मार डाला। राजाओं ने उन युवकों को बुलवाया और उनसे पूछा कि उन्होंने तपस्वी को क्यों मारा। जब उन्होंने सब कुछ सुना, तो वे भयभीत हो गए। उन्होंने उस व्यक्ति पर पहरा बिठा दिया; और जब सातवें दिन उसने बबूल की एक गांठ उत्पन्न की, तो उन्होंने उसे जलाकर उसकी राख नदी में फेंक दी। राख नदी में बहती हुई एक पिछले द्वार के पास एक किनारे पर आकर रुक गई; वहाँ से एक एरका का पौधा उगा।

एक दिन राजाओं ने जल में आनंद लेने का प्रस्ताव रखा। अतः वे पिछले द्वार से आए और एक भव्य तंबू बनवाया। उस तंबू में उन्होंने भोजन और पेय किया। फिर खेल-खेल में वे एक-दूसरे का हाथ-पैर पकड़ने लगे और दो गुटों में बँटकर आपस में बहुत झगड़ा करने लगे। अंत में उनमें से एक को जब लाठी के लिए कुछ बेहतर नहीं मिला, तो उसने एरका के पौधे से एक पत्ता तोड़ा, और तोड़ते ही वह पत्ता उसके हाथ में बबूल की लाठी बन गया। इससे उसने कई लोगों को पीटा। फिर अन्य राजाओं ने भी तोड़ा और जैसे ही उन्होंने उसे पकड़ा, वह लाठी बन गई। उनसे वे एक-दूसरे को लाठियों से पीटते रहे, जब तक कि सब मर नहीं गए। जब वे एक-दूसरे को मार रहे थे, तभी केवल चार लोग - वासुदेव, बलदेव, उनकी बहन अंजना और पुजारी - रथ पर सवार होकर भाग गए; बाकी सब मारे गए।

अब ये चारों रथ में सवार होकर भागते हुए कलामत्तिका के वन में पहुँचे। वहाँ पहलवान मुथिका का जन्म हुआ था, जो अपनी प्रार्थना के फलस्वरूप एक राक्षस बन गया था। बलदेव के आने का आभास होते ही उसने उस स्थान पर एक गाँव बसा लिया; और पहलवान का रूप धारण करके उछल-कूद करने लगा और उंगलियाँ चटकाते हुए चिल्लाने लगा, "लड़ने के लिए कौन तैयार है?" बलदेव ने उसे देखते ही कहा, "भाई, मैं इससे मुकाबला करने की कोशिश करूँगा।" वासुदेव ने उसे रोकने का भरसक प्रयास किया; लेकिन वह रथ से नीचे उतरा और उंगलियाँ चटकाते हुए उसके पास गया। दूसरे राक्षस ने उसे हथेली में ही पकड़ लिया और मूली की तरह निगल गया। वासुदेव ने जब देखा कि वह मर गया है, तो वह अपनी बहन और पुजारी के साथ पूरी रात भटकता रहा और सूर्योदय के समय एक सीमावर्ती गाँव में पहुँचा। वह एक झाड़ी की आड़ में लेट गया और अपनी बहन और पुजारी को गाँव में कुछ खाना पकाकर लाने का आदेश देकर भेजा। एक शिकारी (जिसका नाम जरा या वृद्धावस्था था) ने झाड़ी को हिलते हुए देखा। उसने सोचा, "ज़रूर कोई सूअर होगा!" उसने एक भाला फेंका और उसके पैरों में जा लगा। वासुदेव चिल्लाया, "मुझे किसने घायल किया है?" शिकारी ने जब देखा कि उसने एक आदमी को घायल किया है, तो वह डर के मारे भागने लगा। राजा ने होश में आकर उठकर शिकारी को पुकारा, "मामा, इधर आइए, डरिए मत!" जब वह आया, तो वासुदेव ने पूछा, "आप कौन हैं?" "मेरा नाम जरा है, महाराज।" राजा ने सोचा, "उदासी जिसे घायल करती है, वह मर जाता है, ऐसा पूर्वज कहते थे। निःसंदेह आज मुझे मरना ही है।" फिर उसने कहा, "डरो मत, मामा; "आओ, मेरे घाव पर पट्टी बाँध दो।" घाव पर पट्टी बाँधकर राजा ने उसे जाने दिया। उसे बहुत कष्ट हुआ; वह दूसरों द्वारा लाया गया भोजन नहीं खा सका। तब वासुदेव ने दूसरों से कहा, "आज मुझे मरना है। तुम नाज़ुक प्राणी हो, और जीविका के लिए कुछ और नहीं सीख पाओगे; इसलिए मुझसे यह विद्या सीख लो।" ऐसा कहकर उसने उन्हें एक विद्या सिखाई और उन्हें जाने दिया; और फिर तुरंत उसकी मृत्यु हो गई।

इस प्रकार, कहा जाता है कि अंजना को छोड़कर बाकी सभी लोग मारे गए।

जब गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने कहा, "हे शिष्य, इस प्रकार प्राचीन काल के बुद्धिमानों के वचनों का पालन करके लोग पुत्र मृत्यु के शोक से मुक्त हो गए; तुम इस विषय में मत सोचो।" फिर उन्होंने सत्यों की व्याख्या की (सत्यों की व्याख्या के समापन पर शिष्य प्रथम मार्ग (सम्मोहन) के फल में स्थापित हो गया), और जन्म का वर्णन किया: "उस समय, आनंद रोहिणीय थे, सारिपुत्र वासुदेव (कान्हा) थे, बुद्ध के अनुयायी अन्य व्यक्ति थे, और मैं स्वयं घटपांडित था।"

फुटनोट:

(1)सं. 449.

(2)कृष्ण, बलराम (कृष्ण के भाई), चंद्रमा, सूर्य, अग्नि, वरुण (स्वर्ग के देवता), अर्जुन वृक्ष, वर्षा प्रभात (? पज्जुन्नो, संस्कृत, जबकि यह कामदेव का एक नाम है), घी ऋषि (? या घट-प., एक तपस्वी), अंकुर। इस कथा में प्रकृति-कथा का सार प्रतीत होता है।

(3) एक प्रकार का हथियार.

(4)अर्थात राजा और उसका भाई।

(5) क्रमांक 444 में पहले से उल्लिखित ऋषि

(6) वे उससे विनती करते हैं.

(7) शाब्दिक अर्थ "उसका हृदय और उसकी दाहिनी आँख" (श्.): तुलना करें संस्कृत वायु-ग्रस्त "पागल."

(8)ये पंक्तियाँ पहले ही क्रमांक 449 में आ चुकी हैं।

(9) जिसे हम चंद्रमा में आदमी कहते हैं, उसे भारत में चंद्रमा में खरगोश कहा जाता है, जातक, संख्या 316 देखें।

(10) यानी उनके चमत्कारी दर्शन द्वारा।

लिंक:
कान्हा (कृष्ण) की कहानी: पेटवत्थु (भूत-प्रेत की कहानियां) 1.18
अंकुर (कृष्ण के भाई) की कहानी: पेटवत्थु (भूत-प्रेत की कहानियां) 1.21

पिछला <<<<-----||-454-||----->>>> अगला

पाली-रोमन संस्करण

(स्रोत: https://tipitaka.org/)
[454] 16. **घटपंडितजातकवन्ना**

उत्थेहिकंहति इदं सत्था जेतवने विहारन्तो मतपुत्तं कुटुम्बिकं अरब्भ कथेसि। वत्थु मथकुंडलिसादीसमेव। इधा पण सत्ता तं उपासकं "कीं, उपासक, सोकासि"ति वट्वा" अमा, भंते"न्ति वुत्ते" उपासक, पोराणकपंडिता पंडितानं कथं सुत्वा मतपुत्तन नानुसोचिंसु'ति वत्वा तेन याचितो अतीतं अहारी।

अतिते उत्तरपथे कंसभोगे असितञ्जनगारे महाकंसो नाम राजा रज्जन करेसि। तस्स कांसो च, उपाकांसो चति दवे पुत्त अहेसुं, देवगब्भा नाम एक धीता। तस्स जातदिवसे नेमित्तका ब्राह्मणा "एतिस्सा कुच्चियं निब्बट्टपुत्तं कंसगोट्टं कंसावंसं नास्सेसंती बयाकारिंसु।" राजा बलवसिनेहेन धीतरं विनाशेतुं नासक्खि, भतरो जनिसंति यावतायुकां यथात्व कालमकसि। तस्मिन कालकते कंसो राजा अहोसि, उपकंसो उपराज। ते चिंतायिन्सु "ससे मयां भगिनीं नासेस्सामा, गरेहा भविस्सामा, एतं कस्सासि अदत्वा निस्सामिकं कत्वा पतिजग्गिस्समा"ति। ते एकथुनकं पसादं करेत्वा तं तत्थ वसापेसुम्। नंदीगोपा नाम तस्स परिचारिका अहोसि। अंधकवेन्दो नाम दासो तस्स सामिको अरक्खमकासि।

तदा उत्तरमधुराय महासागरो नाम राजा रज्जन करेसि। तस्स सागारो, उपसागारो चति द्वे पुत्ता अहेसुम। तेसु पितु अक्येन सागरो राजा अहोसि, उपसागरो उपराजा। तो उपकंस्सास सहयाको एककारियाकुले एकतो उग्गहितसिप्पो। तो सागरस्स भतु अन्तेपुरे दुब्भित्वा भयमानो पलयित्वा कंसभोगे उपकंसस्स शान्तिकं अगमसि। उपाकांसो तं रणनो दस्सेसि, राजा तस्स महन्तं यसं अदासि। तो राजुपत्थानं गच्छन्तो देवगब्भाय निवासं एकथंभं पसादं दिसवा "कस्सेसो निवासो"ति पुच्छित्वा तं कारणं सुत्वा देवगब्भाय पतिबद्धचित्तो अहोसी. देवगब्भापि एकदिवासं तं उपकंसेन सद्धिं राजुपत्थानं आगच्छन्तं दिस्व "को एसो"ति पुच्छित्वा "महासागरस्स पुत्तो उपसागरो नामा'ति नंदीगोपाय संतिका सुत्वा तस्मिं पतिबद्धचित्त अहोसि। उपसागरो नंदीगोपाय लांजं दत्वा "भगिनी, सक्खिस्ससि मे देवगभं दस्सेतु'न्ति अहा। स"न एतं सामि, गरुका'न्ति वत्वा तं कारणं देवगभय अरोसेसि। स पकतियाव तस्मिन पतिबद्धचित्त तं वचनं सुत्वा साधु'ति संपतिचित्वा नंदीगोपा उपसागरस्स संन्नं दत्वा रतिभागे तं पसादं अरोपेसि। तो देवगभय सद्धिमं संवासं कप्पेसि । अथ नेसं पुनप्पुनं संवसेन देवगब्भा गभभः पतीलाभि।

अपराभागे तस्स गभपतिट्ठानं पाकतं अहोसि। भतारो नंदीगोपं पुच्चिंसु, स अभयं यचित्वा तं अंतरं कथेसि। ते सुत्वा " भगिनिं नासेतुं न सक्का, ससे धीतरं विजयिस्सति, तम्पि न नासेस्सामा, ससे पण पुत्तो भविष्यसति, नासेस्सामा'ति चिन्तेत्वा देवगब्भं उपसागरसेव अदांसु। सा परिपुणगब्भा धीतरं विजयी। भतरो सुत्वा हत्थुत्था तस्सा "अंजनादेवी'ति नामं करिणसु। तेसं भोगवधमानं नाम भोगागम अदांसु। उपसागरो देवगभं गहेत्वा भोगवधमानागमे वसि। देवगब्भाय पुनापि गब्बो पतिथसि, नंदीगोपि तं दिवासमेव गभभ पतिलाभि। तासु परिपुन्नगभासु एकादिवासमेव देवगब्भा पुत्तं विजई, नंदीगोपा धीतरं विजई। देवगभा पुत्तस्स विनाशनभयेन पुत्तं नंदीगोपाय रहस्सेन पेसत्व तस्स धीतरं आहारपसि। तस्स विजातभावं भयानकं अरोसेसुं । ते " पुत्तं विजेता, धीतर"न्ति पुच्छित्वा "धीतर"न्ति वुत्ते "तेन हि पोसेथा"ति अहंकारसु। एतेनुपायेन देवगब्भा दास पुत्ते विजई, दास धीतरो नंदीगोपा विजई। दश पुत्त नन्दीगोपाय संतिके वन्धन्ति, धीतरो देवगभाय। तं अंतरं कोचि न जानाति। देवगभाय जेट्ठापुट्टो वासुदेवो नाम अहोसी, दुतियो बलदेवो, ततियो चंदादेवो, कैटुथो सूर्यदेवो, पंचमो अग्गीदेवो, चाथो वरुणदेवो, सत्तमो अज्जुनो, अठमो पज्जुनो, नवामो घटपंडितो, दशमो अंकुरो नाम अहोसि। ते अंधकवेन्ददासपुत्त दास भाटिका चेताकाति पकाटा अहेसुम्।

ते अपराभागे वुद्धिमान्वय थम्बलसम्पन्ना कक्खहा फारुसा हुत्वा विलोपं करोंता विकारन्ति, रणनो गच्छन्ते पणनाकारेपि विलुमपंतेव। मनुस्सा सन्निपतित्व' अंधकवेन्ददासपुत्त दश भाटिका रथं विलुमपंती'ति राजांगने उपक्कोसिंसु। राजा अंधकवेन्दं पक्कोसपेत्वा "कस्मा पुत्तेहि विलोपं करापेसि"ति तज्जेसि। एवं दुतियामपि ततियामपि मनुस्सेही उपक्कोसे कते राजा तं संतज्जेसि। तो मरणभयभीतो राजनं अभयं यचित्व "देवा, एते न मयहं पुत्त, उपसागरस्स पुत्त'ति तं अंतरं अरोससि। राजा भीतो" केन ते उपयेन गन्हामा'ति अमास्से पुच्छित्वा' एते, देवा, मल्लयुद्धवित्तका, नगरे युद्धं करतेत्व तथा ने युद्धमंडलं अगते गहापेत्वा मरेस्सामा'ति वुट्टे चारुरणचा, मुथिकांचाति द्वे मल्ले पोसेत्वा "इतो सत्तामे दिवसे युद्धं भविष्यति"ति नगरे भेरिं कारपेट्वा राजंगने युद्धमंडलम सज्जापेतवा अक्खावंतं करेत्वा युद्धमंडलं अलंकारपेत्वा धजपताकं बंधपेसि। सकलानगरं संखुभिः। चक्कतिचक्कं मन्चतिमञ्चं बंधित्वा चारुरामुथिका युद्धमंडलं अगन्त्वा वग्गन्ता गज्जन्ता अफोटेन्टा विचारिन्सु। दश भाटिकापि अगन्त्वा राजकविथिं विलम्पित्वा वनसातके निवासेत्व गन्धपनेसु गंधम्, मालाकारपनेसु मलं विलिम्पित्वा विलत्तगट्टा मालाधारिनो कटकण्पुरा वग्गंता गज्जंता अप्पोटेन्ता युद्धमंडलं पविसिंसु।

तस्मिं खाने कारुरो अप्फोटेन्टो विकारति। बलदेवो तं दिस्वा "न नं हत्थेन छुपिसामि"ति हट्ठिसलातो महंतं हत्थियोत्तं अहारित्वा वाग्गित्वा गज्जित्वा योत्तं खिपित्वा चारूरं उदारे वेथेट्वा द्वे योट्टकोटियो एकतो कत्वा वत्तेत्वा उक्खिपित्वा सीसमत्थके भमेत्वा भूमियां पोथेत्वा बहि अक्खवते खिपि। चारुरे मते राजा मुथिकमल्लं अनापेसि। तो उत्थाय वाग्गित्वा गज्जित्वा अपफोतेसि । बलदेवो तं पोथेत्वा अथिनि संकुणेत्वा"अमल्लोमहि, अमललोमहि"ति वदंतमेव" नाहं तव मल्लभवं वा अमल्भवं वा जानामि"ति हत्थे गहेत्वा भूमियां पोथेत्व जीविताक्खायं पपेत्वा बहि अक्खावते खिपि। मुतिहिको मरान्तो " यक्खो हुत्वा तम् खदितुं लभिस्सामि'ति पत्थानं पथपेसि। तो कालमत्तिकातवियां नाम यक्खो हुत्वा निब्बत्ती। राजा "गणहठ दासा भातिके चेताके"ति उठही। तस्मिं खने वासुदेवो चक्कं खिपि। तं द्विन्नमपि भयावहं सिसानि पतेसि। महाजनो भीतत्सितो "अवस्सया नो होथा"ति तेसं पदेसु पतित्व निपज्जि। ते द्वेपि मातुले मारेत्वा असितंजनगारे रज्जं गहेत्वा मातापितारो तत्थ कत्वा सकलजंबुदीपे रज्जं गणहिस्सामा'ति निक्खमित्वा अनुपुब्बेना कलयोनकरणो निवासं अयुज्झानगरं गन्त्वा तं परिक्खिपित्वा स्थितं परिखारुक्खगहनं विद्धनसेत्व पकारं भिंडित्वा राजनं गहेत्वा तं रज्जं अत्तनो हत्थागतं कट्वा द्वारवतीम् पापुनिसु. तस्सा पना नागरस्सा एकतो समुद्दो एकतो पब्बतो, अमानुस्सापरिग्गहितं किरा तां अहोसि।

तस्स अरक्खं गहेत्वा थितायक्खो पच्चमिते दिस्व गद्रभवेसेन गद्रभरवं रवति। तस्मिं खाने यक्खानुभावेन सकलानगरं उपपतित्व महासमुद्दे एकस्मिं दीपके तिथति। पच्चमित्तेसु गतेसु पुनगन्त्वा सकत्थनेयेव पतितथति। तदापि सो गद्रभो तेसं दशन्नं भयानकं अगमनं नात्वा गद्रभरवं रवि। नागरं उपपतित्व दीपके पतिथया तेसु नागरं अदिस्वा निवतंतेसु पुनगंत्वा सकथाने पतिथसि। ते पुना निवत्तिन्सु, पुनापि गद्रभो तथेव आकाशि। ते द्वारवतिनगरे राजजं गनहितुं असक्कोंता कण्हादिपयानस्सा इसिनो संतिकां गन्त्वा वंदित्वा "भंते, मयां द्वारवतियां रज्जं गहेतुं न सक्कोमा, एकं नो उपायं करोथा'ति पुच्छित्वा' परिखापिथे असुकास्मिन नाम ठाणे एको गद्रभो कैरति। तो हि अमिते दिवविरवती, तस्मिं खाने नागरं उप्पतित्व गच्छति, तुम्हें तस्स पदे गन्हथ, अयं वो निप्पज्जनुपायो'ति वुत्ते तपसं वंदित्वा गन्त्वा गद्रभस्सा पदेसु गहेत्वा निपतित्वा "सामि, थपेत्वा तुम्हें अन्नो अम्हाकं अवस्सयो नत्थि, अम्हाकं नागारं गन्नाकाले मा रवित्था'ति याचिंसु। गद्रभो "न सक्का न विरवितुं, तुम्हें पण पथमात्रं अगन्त्वा चत्तारो जन महन्तनि अयनांगलानि गहेत्वा कैटुसु नगरद्वारेसु महन्ते अयाखानुके भूमियां अकोतेत्वा नागरस्सा उप्पटनकाले नंगलानी गहेत्वा नंगलबद्धं अयासंखलिकां अयखानुके बंधेयथा, नागरं उप्पतितुं न सक्खिसति अहा।

ते "साधु'ति वत्वा तस्मिं अविरवंतयेव नंगलानी आदया कटुसु नगरद्वारेसु खनुके भूमियां अकोतेत्वा अथाहंसु।' तस्मिं खाने गद्रभो विरावि, नागरं उपपतितुमाराभि। कैटुसु द्वारेसु थिता कैटुहि अयानंगलेहि गहेत्वा नंगलबद्धा अयासंखलिका खनुकेसु बंधिंसु, नागरं उप्पतितुं नासक्खि। दश भाटिका ततो नागरं पविसित्वा राजनं मारेत्व रज्जं गणहिंसु। एवं ते सकलजम्बुदीपे तेसत्थिया नगरसहस्सेसु सब्बाराजनो चक्केन जीविताक्खयं पपेत्वा द्वारवतियां वसमाना रज्जं दासा कोठहासे कट्वा विभाजिंसु, भगिनीं पण अंजनदेविं न सरिणसु। ततो पुना "एकादसा कोठहासे करोमा"ति वुत्ते अंकुरो "मम कोठासां तस्स देथा, अहं वोहारं कत्वा जीविसामि, केवलं तुम्हें अत्तनो जनपद मयहं

सुंकम् विसज्जेथा'ति आहा। ते "साधु'ति संपतिचित्व तस्स कोठसां भगिनिया दत्वा सद्धिं तय नव राजनो द्वारवतियां वसिंसु।' अंकुरो पण वनिज्जमकासी। एवं तेसु अपारपरं पुत्तधिताहि वधमनेसु अद्धाने गते मतापित्रो कालमकंसु।

तदा किरा मनुस्सनं विसातिवस्ससहस्सयुकाकालो अहोसि। तदा वासुदेवमहाराजस्स एको पुत्तो कालमकसि। राजा सोकापरेतो सब्बाकिच्चानि पहाय मनकस्सा अटानिं परिग्गहेत्वा विलापंतो निपज्जि। तस्मिं काले घटपंडितो सिंतेसि "थपेत्वा मं आन्नो कोसि मम भातु सोकं हरितुं समत्थो नाम नत्थि, उपयेनस्सा सोकं हरिस्सामि"ति। तो उम्मत्तकवेसं गहेत्वा "ससं मे देथा, ससं मे देथा'ति आकाशं उल्लोकेनतो सकलानगरं विचारी। "घटपंडितो उम्मत्तको जातो'ति सकलानगरं संखुभि।' तस्मिं काले रोहिणीयो नाम अमाको वासुदेवराणो संतिकां गन्त्वा तेन सद्धिं कथं समुत्थापेन्टो पथमं गथमः -

165.

"उथेहि कान्हा किं सेसि, को अत्थो सुपानेना ते;

योपि तुयहं सको भता, हदयं चक्खु च दक्खिनं;

तस्स वाता बल्यन्ति, घटो जपपति केशव'ति।

तत्थ कान्हाति गोत्तेनालापति, कान्हायनगोत्तो किरेसा। को अत्थोति कटारा नाम वधि। हदायं चक्खु च दक्खिन्ति हदायेन सेवा दक्खिनचक्कुना च समानोति अथो। तस्स वात बल्यन्तिति तस्स हदयं अपस्मारवत अवत्थरन्ति अत्थो। जपतिति "सासं मे देथा"ति विप्पलपति। केशवति सो किरा केससोभनताय "केशव'ति पन्नयित्था, तेन तं नामेनालपति।

एवं अमास्सेन वुट्टे तस्स उम्मत्तकभावं नात्वा सत्ता अभिसंबुद्धो हुत्वा दुतियाम् गथमः -

166.

"तस्सा तं वचनं सुत्वा, रोहिणीयस्सा केसवो;

तारामनारूपो वुथसि, भातुसोकेन एतितो"ति।

राजा उत्थय सिघं पसाद ओतरित्वा घटपंडितस्स शांतिकं गन्त्वा उभोसु हत्थेसु दढहं गहेत्वा तेन सद्धिं सल्लपन्तो तत्यं गथमः -

167.

"किं नु उम्मत्तारूपोवा, केवलं द्वारकं इमाम;

ससो ससोति लापसि, को नू ते ससमाहरि'ति।

तत्थ केवलं द्वारकं इमान्ति कस्मा उम्मत्तको विया हुत्वा सकलं इमं द्वारवतीनगरम विकारन्तो "ससो ससो"ति लापसि। को तव ससं हरि, केना ते ससो गहितोति पुच्छति।

तो ऋणा एवं वुत्तेपि पुनप्पुनं तदेव वचनं वदति। राजा पुना द्वे गाथा अभ्यास -

168.

" सोवणमायं मणिमायं, लोहमायं अथ रुपियामयं;

संखशिलापवदामयं, कार्यिस्सामि ते ससां।

169.

"संति अण्णेपि ससाका, अरण्ये वनागोकरा;

तेपि ते अनायिस्सामि, किदिसं ससामिच्चसि'ति।

तत्रायं सांखेपत्थो — तेसु सुवन्नमायादिसु यां इच्छासि, तं वद, अहं ते करेत्वा दशमि, अथापि ते न रोसेसि, अण्णेपि अरण्ये वनगोचरा ससाका अङ्घि, तपि ते अनयिस्सामि, वदा भद्रमुख, किदिसं ससामिच्चसिति।

राणो कथं सुत्वा घटपंडितो चाथं गथमः -

170.

"न चाहमेते इच्छामि, ये ससा पथविसिता;

चंडतो ससामिच्छामि, तं मे ओहारा केशव'ति।

Tattha oharāti otārehi.

राजा तस्स कथं सुत्वा " निस्सांसयं मे भता उम्मत्तकोवा जातो'ति दोमनस्सप्पत्तो सत्तमं गथमः -

171.

"सो नुना मधुरं नाति, जीवितं विजाहिस्सासि;

अपत्थियं यो पत्थयसि, चंडातो ससामिच्चसि'ति।

तत्थ नातिति कनिष्ठं अलापन्तो अहा। इदं वुत्तं होति - "तता, मयहं पियानति सो त्वं नुना अतिमधुरं अत्तनो जीवितं विजाहिस्सासि, यो आपत्थेतबं पथयसि"ति।

घटपंडितो रणनो वचनं सुत्वा निकललो तत्त्वा "भटिका, त्वं चंदतो ससाकं पत्थेनत्सा तं अलभित्वा जीविताखयभवं जानंतो किं करण मतपुत्तम् अनुसोकासि'ति वत्वा अष्ठमं गथमः -

172.

"एवं सी कान्हा जानासि, यदान्नमनुसासि;

कस्मा शुद्ध मतं पुत्तं, अजजापि मनुसोकासि'ति।

तत्थ एवन्ति इदं अलब्भनेयत्थानं नाम न पत्थेतब्बन्ति यदि एवं जानासी। यदान्नमनुसससिति एवं जनंतोवा यदि अण्णां अनुसससिति अथो। शुद्धि अथ कस्मा इतो कैटुमासमत्थके मतपुत्तं अज्जपि अनुसोकसति वदति।

एवं सो अंतरविथीयं हितकोवा भाटिका, अहं तव पन्नयामनं पत्थेमि, त्वं पण अपान्यामानस सोकासि'ति वत्वा तस्स धम्मं देसेंटो पुना द्वे गाथा अभासी -

173.

"यं न लब्भा मनुस्सेन, अमानुस्सेन वा पुना;

जातो मे मा मरी पुत्तो, कुतो लब्भा अलब्भ्यं।

174.

"न मंता मुलाभेसज्जा, ओसाधेहि धनेन वा;

सक्क अनैयितुं कान्हा, यं पेटमनुसोकासि'ति।

तत्थ यान्ति भाटिका यम एवं जातो मे पुत्तो मा मरिति मनुस्सेन वा देवेना वा पुना न लब्भा न सक्का लधुं, तं त्वं पत्थेसि, तदेतम कुतो लब्भा केन करणेन सक्का लधुं, न सक्कति दिपेति। कस्मा? यस्मा अलब्भ्यं, अलब्भनेयथनान्हि नमेतन्ति अत्थो। मंताति मंतपयोगेन। मूलभेषजति मूलभेषजजेण। ओसाधेहिति नानाविधोसाधेहि। धनेन वती कोटिसातसंख्येनपि धनेन वा। इदं वुट्टं होति - "यं त्वं पेटमानुसोकसि, तं एतेहि मंतपयोगादिहि अनेतुं न सक्क'ति।

राजा तं सुत्वा "युत्तं, तत, सल्लक्खितं मे, मम सोखहरणत्थाय तय इदं कत'न्ति घटपंडितं वन्नेनतो काटासो गाथा अभ्यास -

175.

"यस्सा एतादिसा अस्सु, अमाक्का पुरीसपंडिता;

यथा निज्झापये अज, घटो पुरिसपण्डितो।

176.

"अदित्तं वात मम् संतं, घटसित्तव पावकम्;

वारिणा विया ओसिंकं, सब्बं निब्बापये दरं।

177.

"अब्बाहि वात मे सल्लं, यमसि हदयस्सीतम्;

यो मे सोकापरेतस्सा, पुत्तसोकं अपानुदि।

178.

"सोहं अब्बुधसलोस्मि, वितासोको अनाविलो;

न सोकामि न रोदामि, तव सुत्वान् मनाव'ति।

तथा पठमगाथाय सांखेपत्तो — यथा येन करणेन अजजा मम् पुत्तसोकापरेतं घाटो पुरिसपंडितो सोखहरणत्थाय निज्झापे निज्झापेसि बोधेसि। यस्सा अण्णास्सपि एतादिसा पुरिसपंडिता अमाक्का अस्सु, तस्स कुतो सोकोटि। शेषगाथा वुट्टथयेव।

Avasāne —

179.

"एवं करोंति सप्पन्न, ये होंति अनुकम्पका;

निवत्तयन्ति सोकम्हा, घाटो जेत्थैव भतार'न्ति। —

अयं अभिसंबुद्धगाथा उत्तानत्थयेव।

एवं घटकुमारेण वितासोके कते वासुदेवे रज्जं अनुसासंते दीघस्सा अधुनो अच्चयेन दशभातिकापुत्त कुमार चिंतायिन्सु "कान्हादीपायनं 'दिब्बकक्खुको'ति वदन्ति, विमानसिस्साम तव न'अन्ति। ते एकं दहरकुमारं अलंकारित्वा गब्बिनिकारेण दस्सेत्वा उदारे मसूरकं बंधित्वा तस्स संतिकां नेत्वा भंते, अयं कुमारिका किं विजयिसति पुच्चिंसु। तपसो "दशभतिकारजुनं विनाशकलो पत्तो, मयहं नु खो आयुसंखारो किदिसो होती"ति ओलोकेंटो "अज्जेवा मरणं भविसति"ति नात्वा"कुमारा इमिना" तुम्हकं को अत्थो"ति वट्वा"कथेथेव नो, भंते"ति निबद्धो'अयं इतो सत्तमे दिवसे खदिराघातिकं विजयस्सति, तया वासुदेवकुलं नस्सीस्सति, अपिका खो पाना तुम्हें तां खादिराघातिकं गहेतवा झपेतवा चारिकं नादियां पक्खिपेयथा'ति आहा। अथ नं ते " कुटजटिला, पुरिसो विजयानको नाम नत्थि"ति वट्वा तन्तरज्जुकं नाम कम्मकारणं कट्वा तत्थेव जीवितक्खयं पापयिन्सु। राजणो कुमारे पक्कोसपेत्वा "किं कारण तपसं मरयित्था"ति पुच्छित्वा सब्बं सुत्वा भीता तस्स अरक्खं दत्वा सत्तामे दिवसे तस्स कुच्चितो निकखंतं खदिराघातिकं झपेत्वा चारिकं नादियां खिपिंसु। सा नदिया वुयहमाना मुखद्वारे एकपासे लग्गी, ततो एरकं निब्बति।

अथेकादिवासं ते राजनो "समुद्दकीडनं किदिस्सामा'ति मुखद्वारं गन्त्वा महामण्डपं करापेत्वा अलंकटमण्डपे खदन्त पिवंता किषावसेनेव पवत्तहत्थपादपरमसा द्विधा भिज्जित्वा महाकालहं करिणसु। अथेको अन्नं मुग्गरां अलभन्तो एरकवनतो एकं एरकपट्टं गाणहि। तं गहितमत्तमेव खादिरमुसलं अहोसि। तो तेन महाजनं पोथेसि । अथन्नैहि सब्बेहि गहितागहितं खादिरमुसलमेव अहोसि। ते अण्णामन्नं पहारित्वा महाविनासं पापुनिंसु। तेसु महाविनाशं विनाशंतेसु वासुदेवो च बलदेवो च भगिनी अंजनदेवी च पुरोहितो बिल्ली कटारो जन रथं अभिरुहित्वा पलयिन्सु, शेषा सब्बेपि विनथः। तेपि कटारो रथेन पलयंता कादमत्तिकातविं पापुनिसु। तो हि मुथिकमल्लो पत्तनं कत्वा

यक्खो हुत्वा तत्थ निब्बत्तो बलदेवस्सा अगतभावं नात्वा तत्थ गमं मपेत्वा मल्लवेसं गहेत्वा "को युज्हितुकामो"ति वाग्गंतो गज्जंतो एफोटेन्टो विकारी। बलदेवो तं दिस्ववा "भटिका, अहं इमिना सद्धिं युज्हिस्सामि वट्वा वासुदेवे वारेन्तेयेव रथ ओरुयहा तस्स सान्तिकं गन्त्वा वाग्गान्तो गज्जन्तो एपफोतेसि। अथ नं सो पसारितहत्थयेव गहेत्वा मूलकंदं विया खादी। वासुदेवो तस्स मतभावं नात्वा भगिनीञ्च पुरोहितञ्च आदया सब्बरत्तीं गन्त्वा सूर्योदये एकं पच्चन्तगामं पटवा " आहारं पचित्वा आहारा'ति भगिनीञ्च पुरोहितान्च गमं पहिणित्वा सयं एकस्मिं गच्छन्तरे पतिच्चन्नो निपज्जि।

अथ नं जरा नाम एको लुद्दको गच्छं कलन्तं दिस्वा "सुकारो एत्थ भविसति"ति संन्याय सत्तीं खिपित्वा पदे विज्झित्वा "को मां विज्हि"ति वुत्ते मनुस्सास विद्धभवं नात्वा भीतो पलयितुं अरबीः। राजा सतिं पक्कुपत्थपेत्वा उथथया" मातुल, मा भायी, एहि"ति पक्कोसित्वा अगतं "कोसि नाम त्वा"न्ति पुच्छित्वा" अहं सामि, जरा नामा"ति वुत्ते" जराया विद्धो मरिसातीति किरा मां पोराणा बयाकारिन्सु, निस्सांसयं अज माया मरितब्बा'न्ति नात्वा'मातुला, मा भयी, एहि पहरं मे बंधा'ति तेना पहारमुखं बंधपेत्वा तं उयोजेसि. बलववेदना पवत्तिन्सु, इतरेहि अभातं आहारं परिभुञ्जितुं नासक्खि। अथा ते अमनतेत्वा "अज्ज अहं मारिसामि, तुम्हें पण सुखुमाला अन्नं कम्मं कट्वा जीवितं न सक्खिस्सथा, इमं विज्जं सिक्खथा'ति एकं विज्जं सिक्खपेत्वा ते उय्योजेत्वा तत्थेव जीविताक्खयं पापुनि। एवं अंजनदेविं थपेत्वा सब्बेव विनाशं पापुनिसुति।

सत्था इमं धम्मदेसनं अहारित्वा'उपासक, एवं पोराणकपंडिता पंडितानं कथं सुत्वा अत्तनो पुत्तसोकं हरिंसु, मा चिंतायि'ति वट्वा सच्चनि पाकसेत्व जातकं समोधनेसि, सक्कपरियोसाने उपासको सोतापत्तिफले पतितहि। तदा रोहिणीयो आनंदो अहोसि, वासुदेवो सारिपुत्तो, अवसेसा बुद्धपरिसा, घटपंडितो पना अहमेव अहोसिंति।

घटपंडितजातकवन्नाना सोषासमा।

इति सोससाजातकापतिमन्दितस्स

दशकनिपतजातकस्सा अत्थवन्ना निथिता।

Jātakuddānaṃ —

Catudvāro kaṇhuposo, saṅkha bodhi dīpāyano;

निग्रोधा तक्कल धम्म-पालो कुक्कुता कुंडलि;

बिलारा चक्क भूरि च, मंगला घाट सोसासा।

दसकनिपतवन्नान निथिता।

पाली-देवनागरी संस्करण

[454] 16. **घटपण्डितजातकवन्न**

उत्थेहि कन्हति इदं सत्था जेतवने विहरन्तो मतपुत्तं कुटुम्बिकं अर्भ कथेसि। वत्थु मत्थकुंडलिसदिसमेव। इध पण सत्था तं उपासकं "किं, उपासक, सोचसी"ति वत्वा "अम, भंते"न्ति वुत्ते" उपासक, पोराणकपंडिता पंडितानं कथं सुत्वा मतपुत्तं नानुसोचिन्सु"ति वत्वा तेन याचितो अगस्तं अहरि।

अस्ते उत्तरपथे कंसभोगे असितञ्जनगारे महाकंसो नाम राजा राजजं करेसि। तस्स कंसो च, उपकंसो चाति द्वे पुत्ता अहेसुं, देवगभा नाम एका धीता। तस्सा जातदैसे नेमित्तका ब्राह्मणा "एतिस्सा कुच्छियं निब्बत्तपुत्ता कंसगोत्तं कंसवांसं नासेस्संति"ति ब्याकरिन्सु। राजावसिनेहेन धीतरं विनाशेतुं नासक्खि, "भत्रो जानिस्संति"ति यावतायुकं तत्वा कालमाकासि। तस्मिं कालकते कंसो राजा अहोसि, उपकंसो उपराजा। ते चिन्तयिन्सु "सच्चे मयं भगिनं नासेस्साम, गरयहा भविस्साम, एतं कास्सि अदत्वा निस्सामिकं कत्वा पतिजग्गिस्समा"ति। ते एकथूनकं पासादं करेत्वा तं तत्थ वसापेसुं। नंदीगोपा नाम तस्सा परिचारिका अहोसि। अंधकवेन्दो नाम दासो तस्सा सामिको अरखमकासि।

तदा उत्तरमधुराय महासागरो नाम राजा रजजं करेसि। तस्स सगो, उपसगरो चाति दवे पुत्ता अहेसुं। तेसु पितु आच्छयेन सगुरो राजा अहोसि, उपसागरो उपराजा। सो उपकंसस सहायको एकाचारियकुले एकतो उग्गहितसिप्पो। सो सागरस्स भातु अन्तेपुरे दुब्भित्वा

भयमानो पलयित्वा कंसभोगे उपकंसस्स शांतिकं अगमासि। उपकांसो तं रञ्चो दस्सेसि, राजा तस्स महन्तं यसं अदासि। सो राजुपट्ठानं गच्छन्तो देवगभय निवासं एकथंभं पासादं दिस्वा "कस्सेसो निवासो"ति पुच्छित्वा तं कारणं सुत्वा देवगभय पतिबद्धचित्तो अहोसि। देवगभापि एकदिवसं तं उपकंसेन सद्धिं राजुपट्ठानं आगच्छन्तं दिस्वा "को एसो"ति पुच्छित्वा "महासागरस्स पुत्तो उपसागरो नामा"ति नन्दिगोपाय संतिका सुत्वा तस्मिं पतिबद्धचित्ता अहोसि। उपसागरो नन्दिगोपाय लञ्जं दत्वा "भगिनी, सक्खिस्ससि मे देवगभं दस्सेतु"न्ति अह। सा "न एतं सामि, गुरुक्"न्ति वत्वा तं कारणं देवगभय अरोचेसि। सा पकतियाव तस्मिं पतिबद्धचित्ता तं वचनं सुत्वा "साधु"ति संपतिच्छित्वा नन्दिगोपा उपसागरस्स संज्ञं दत्वा रतिभागे तं पासादं आरोपेसि। सो देवगभय सद्धिं संवासं कप्पेसि। अथ नेसं पुन्नप्पुनं संवासेन देवगब्भा गभभं पाटिलभि।

अपरभागे तस्सा गब्बपतित्थानं पाकतं अहोसि। भतरो नन्दिगोपं पुच्छिंसु, सा अभयं यचित्वा तं अंतरं कथेसि। ते सुत्वा "भगिनिन नासेतुं न सचित्रका, सचे धीतरं विजेयिस्सित, तम्पि न नासेस्साम, सचे पण पुत्तो भविष्यसति, नासेस्सामा'ति चिंतातेत्वा देवगभं उपसागरस्सेव अदंसु। सा परिपुन्नग्भा धीतरं विजयि। भतरो सुत्वा हत्थतुत्था तस्सा "अञ्जनदेवी"ति नामं करिंसु। तेसं भोगवन्नमानं नाम भोगगामं अदंसु। उपसागरो देवगभं गहेत्वा भोगवन्नमांगामे वसि। देवगभय पुनपि गब्बो पतित्थसि, नन्दिगोपापि तं दयमेव गभभं पतिलाभि। तासु परिपुन्नगभासु एकदिवसमेव देवग्भ पुत्तं विजयी, नंदीगोपा धीतरं विजयी। देवगभा पुत्तस्स विनाशनभयेन पुत्तं नन्दिगोपाय रहस्सेन पेसेत्वा तस्सा धीतरं अहारापेसि। तस्सा विजातभावं भातिकानं अरोचेसुं। ते "पुत्तं विजता, धीतर"न्ति पुच्छित्वा "धीतर"न्ति बुत्ते "तेन हि पोसेथा"ति अहंसु। एतेनुपायेन देवगभा दस पुत्ते विजयि, दस धितरो नंदीगोपा विजयि। दश पुत्ता नन्दिगोपाय शांतिके वन्नन्ति, धीतरो देवगभय। तं अन्तरं कोच्चि न जानाति। गभ्भाय जेट्ठपुत्तो वासुदेवो नाम अहोसि, दुतियो बलदेवो, ततियो चंददेवो, चतुत्थो सूर्यदेवो, पंचमो अग्गिदेवो, छट्ठो वरुणदेवो, सत्तमो अजदजुनो, अट्ठमो पज्ज देवजुनो, नवमो घटपंडितो, दशमो अङ्कुरो नाम अहोसि। ते अंधकवेन्ददासपुत्ता दस भाटिका चेटकति पाकता अहेसुं।

ते अपरभागे वुद्धिमन्वाय थम्बलसम्प नयना कक्खला फरुसा हुत्वा विलोपं करोन्ता विचरन्ति, रञ्चो गच्छन्ते पन्नकारेपि विलुम्पन्तेव। मनुस्सा स साइनापतित्वा "अंधकवेन्ददासपुत्ता दस भाटिका रत्थं विलुमपंती"ति राजङ्गाने उप्ट्रैक्टकोसिंसु। राजा अंधकवेन्दं प्रकाशपेत्वा "कस्मा पुत्तेहि विलोपं करापेसी"ति तजदजेसि। एवं दुतयम्पि ततियम्पि मनुस्सेहि उपक्राकोसे कते राजा तं सन्तजजसि। सो मरणभयभितो राजानं अभयं यचित्वा "देव, एते न म्याहं पुत्ता, उपसागरस्स पुत्त"ति तं अंतरं अरोचेसि। राजा भीतो "केन ते मेयेन गंघामा"ति अमचच्छे पुच्छित्वा "एते, देव, माललयुद्धवित्तका, नगरे युद्धं करेत्वा तथा ने युद्धमंडलं आगते गहापेत्वा मारेस्मामा"ति वुत्ते चारुंदच, मुत्थिकञ्चाति द्वे मालले पोसेत्वा "इतो सत्तमे दये युद्धं भविष्यस्ति"ति नगरे भेरीं चरापेत्वा राजङ्गाने युद्धमंडलं सज्जापेत्वा अक्खावतं करेत्वा युद्धमंडलं अलङकारापेट्वा धजपताकं बंधपेसि। सकलनगरं सङखुभिः। चार्टकातिचकं मञ्चातिमनदचं बंधित्वा चारुरमुट्ठिका युद्धमंडलं आगन्त्वा वग्गन्ता गज्जन्ता अप्फोटेन्टा विचारिंसु। भा दसतिकापि आगन्त्वा रजकविथिं विलुम्पित्वा वन्सातके निवासेत्वा गंधापनेसु गंधं, मंगलकारापनेसु मालं विलुम्पित्वा विलिटगत्ता मालधारिनो कटकन्नपूरा वग्गन्ता गजदजंता अप्फोटेन्ता युद्धमंडलं पविसिंसु।

तस्मिं खने चारुरो अप्फोतेन्तो विचारति। बलदेवो तं दिस्वा "न नं हत्थेन छुपिस्सामि"ति हत्थिसालतो महन्तं हत्थियोत्तं अहारित्वा वग्गित्वा गजित्वा योत्तं खिपित्वा चारुरं उड्रे वेथेत्वा द्वे योत्तकोटियो एकतो कत्वा वत्तेत्वा उखिपित्वा सीसमथके भमेत्वा भूमियं पोथेत्वा बहि अखवते खिपि। चारुरे मते राजा मुट्ठिकमल्लं अनापेसि। सो उत्थय वग्गित्वा गजजित्वा अपफोटेसि। बलदेवो तं पोथेत्वा अट्ठिनी संदचुन्नतेव "अमल्लोम्हि, अमललोम्हि"ति वदन्तमेव "नहं तव मल्ल्भावं वा अमललभावं वा जानामि"ति हत्थे गहेत्वा भूमियं पोथेत्वा सजीवखयं पापेत्वा बहि अखवते खिपि। मुट्ठिको मरन्तो "यक्खो हुत्वा तं खादितुं लभिस्सामि"ति पत्थानं पत्थपेसि। सो कालमत्तिकअटवियं नाम यक्खो हुत्वा निब्बति। राजा "गणहथ दश भातिके चेटके"ति उत्त्थहि। तस्मिं खने वासुदेवो चकं खीपि। तं द्विसन्नमपि भातिकानं सीसानि सोसि। महाजनो हितत्सितो "अवस्सया नो होथा"ति तेसं पदेसु पतित्वा निपजजि। ते द्वेपि मातुले मर्त्वा असितञ्जनगांगेरे राजदजं गहेत्वा मातापितरो तथा कत्वा "सकलजम्बुदीपे राजदजं गंहिसामा"ति निखमित्वा अणुपुब्बेन कालयोनकरनदनो निवासं अयुज्जनगरं गन्त्वा तं परिक्खिपित थ्वितं परिहारुक्खघनं विध्नसेत्वा पाकरं भिन्दित्वा राजानं गहेत्वा तं रजदजं अत्तनो हत्थगतं कत्वा द्वारवतीं पापुनिंसु। तस्स नगरपनस्स एकतो समुद्दो एकतो पब्बतो, अमानुस्सपरिग्गहितं किर तं अहोसि।

तस्स अरक्खं गहेत्वा ठितयक्खो पच्चामित्ते दिस्वा गद्रभवेसेन गद्रभर्वं रवति। तस्मिं खने यक्खानुभावेन सकलनगरं उपपतित्व महासमुद्दे एकस्मिं दीपके तिट्ठति। पचदचामित्तेसु गतेसु पुनागन्त्वा सकत्थानेयेव पतित्थति। तदापि सो गद्रभो तेसं दास नारायणं भातिकानं आगमनं ञत्वा गद्रभर्वं रवि। नगरं उपपतित्व दिकेके पतित्थाय तेसु नगरं आदिस्वा निवत्तन्तेसु पुनागन्त्वा सकने पतित्थसि। ते पुन निवत्तिन्सु, पुनपि गर्भो तथेव अकासि। ते द्वारवतीनगरे रजदजं गंहितं अस्कोन्ता कन्दिपायन्सस इसिनो शांतिकं गन्त्वा वंदित्वा "भंते, मयां द्वावतियां रजजं गहेतुं न सृक्तकोम, एकं नो उपायं करोथा'ति पुच्छित्वा' परिखापित्थे असुकास्मिं नाम थाने एको गद्रभो चरति। सो हि अमित्ते दिशव विरवति, तस्मिं खने नगरं उपपतित्व गच्छति, आप तस्स पदे गच्छति, अयं वो निपफजजनुपायो"ति वुत्ते तपसं वंदित्वा गन्त्वा गद्रभस्स पदेसु गहेत्वा निपतित्व "सामि, सूर्येत्वा हरि अंडग्नो अम्हाकं अवस्स्यो नत्थि, अम्हाकं नगरं घनकाले मा रवित्था'ति याचिंसु। गद्रभो "न सचित्र न विरवितुं, आपका पन पतमतरं आगन्त्वा चतारौ जना महन्तनि अयनङगलानि गहेत्वा चतुसु नगरद्वारेसु महन्ते अयखानुके

भूमियं अकोतेत्वा नगरस्स उप्पटनकाले नङगलानि गहेत्वा नङ्गलबृधं अयसङखलिकं अयखानुके बन्धेयथ, नगरं उपपतितुं न सक्खिस्सति"ति अह।

ते "साधु"ति वत्वा तस्मिं अविरवन्तेयेव नङ्गलानि आद्य चतुसु नगरद्वारेसु खानुके भूमियं अकोतेत्वा अट्ठंसु। तस्मिं खने गर्भो विरवि, नगरं उपपतितुमाराभि। चतुसु द्वारेसु थिता चतुहि अयनङ्गलेहि गहेत्वा नङ्गलबद्धा अयसङ्खलिका खानुकेसु बंधिन्सु, नगरं उपपतितुं नासक्खि। भा दसतिका ततो नगरं पविसीत्वा राजानं मारेत्व रजदजं गांहिंसु। एवं ते सकलजम्बुदीपे तेसत्थिया नगरसहस्सेसु सब्बराजानो चक्केन सजीवखयं पपेत्वा द्वारवतियां वसमानाद रज्जं दस कोत्थासे कत्वा विभजिंसु, भगिनीं पन अंजनदेविं न सरिंसु। ततो पुन" एकादस कोत्थासे करोमा"ति वुत्ते अङ्कुरो "मम कोत्थासन तस्सा देथ, अहं वोहारं कत्वा जीविस्सामि, केवलं आपके अत्तनो जिलें मयहं सुङकं विस्सज्जजेथा"ति अह। ते "साधु"ति सम्पतिच्छित्वा तस्स कोत्थसं भगिनिया दत्व सद्धिं तै नव राजानो द्वारवतियां वसिंसु। अङ्कुरो पण वणिजजमकासि। एवं तेसु अपरापारं पुत्तधीताहि वन्नमनेसु अणेद्ध गते मातापितरो कालमकंसु।

तदा किर मनुस्साणं विसतिवस्ससहस्सयुक्कालो अहोसि। तदा वासुदेवमहाराजस्स एको पुत्तो कालमकसि। राजा सोकपरेतो सब्बकिचाचानि पहाय मन्डचस्स अतनिं परिग्गहेत्वा विलपन्तो निपज्जजि। तस्मिं काले घटपंडितो चिन्तेसि "ठपेत्वा मं अञ्जनो कोचि मम भातु सोकं हरितुं समथो नाम नत्थि, मेहेनस्स सोकं हरिस्सामि"ति। सो उम्मत्तकवेसं गहेत्वा "ससं मे देथ, ससं मे देथा"ति एकासं उल्लोकांतो सकलनगरं विचारी। घटपण्डितो उम्मत्तको जातो'ति सकलनगरं सङ्खुभि। तस्मिं काले रोहिणेय्यो नाम अमच्छो वासुदेवाञ्जो शांतिकं गन्त्वा तेन सद्धिं कथं समुत्थापेन्टो पथमं गथाः -

16.

"उत्थेहि कान्ह किं सेसि, को अत्थो सुपनेन ते।"

योपि तुयहं सको भता, हदयं चक्खु च दक्खिनं।

तस्स वाता बलीयन्ति, घटो जप्पति केसव"ति॥

तत्थ कन्हति गोत्तेनाल्पि, कन्हयानगोत्तो किरेस। को अथोति कतरा नाम वन्नि। हदयं चक्खु च दक्खिनन्ति हदयेन चेव दक्खिनचक्खुना च समनोति अथो। तस्स वाता बलीयन्तीति तस्स हदयं अपस्मारवता अवथरन्तिति अथो। जप्तेति "ससं मे देथा"ति विप्पलपति। केशवति सो किर केशोभनताय "केसवा"ति पञ्जयित्थ, तेन तं नामेनालपति।

एवं अमच्छेन वुत्ते तस्स उम्मत्तकभावं नत्वा सत्था अभिसंबुद्धो हुत्वा दुतियां गथमः -

.

"तस्स तं वचनं सुत्वा, रोहिनेय्यस्स केसवो।

तर्मन्नूपो वुट्ठसि, भातुसोकेन अत्तितो"ति॥

राजा उत्थाय सीघं पसदा ओतरित्वा घटपंडितस्स शांतिकं गन्त्वा उभोसु हत्थेसु दळहं गहेत्वा तेन सद्धिं सल्लल्पंतो ततियां गथामह -

.

"किं नु उम्मत्तरूपोव, केवलं द्वारकं इमं।

ससो ससोति लपसी, को नु ते ससमाहरि"ति॥

तत् केवलं द्वारकं इमन्ति कस्मा उम्मत्तको वि हुत्वा सकलं इमं द्वारतिनगरं विचारन्तो "ससो ससो"ति लपसि। को तव ससं हरि, केन ते ससो गहितोति पुच्छति।

सो रञ्जा एवं वुत्तेपि पुनप्पुनं तदेव वचनं वदति। राजा पुन द्वे गाथा अबसि -

एक पाउंड फ्लैश.

"सौसन्नमयं मणिमयं, लोहमायं अथ रूपियामयं।

सङ्क्षशिलापवाळमयं, कार्यिस्सामि ते ससं॥

156.

"सन्ति अञ्चेपि सस्का, अञ्जने वनगोचरा।

तेपि ते अनैयिसामि, किदिसं समिच्छसी"ति॥

तत्रायं सङ्खेपत्थो — तेसु सुवन्नमयादिसु यं इच्छसि, तं वद, अहं ते करेत्वा दशमि, अथापि ते न रोचेसि, अंडनेपि अरनदने वनगोचरा सस्का अथि, तेपि ते अनायिसामि, वद भद्रमुख, किदिसं सस्मिचसीति।

रञ्जो कथं सुत्वा घटपण्डितो छट्ठं गतः -

1 वर्ष।

"न इच्छामेते इच्छामि, ये ससा पथविस्सिता।"

छंदतो समिच्छामि, तं मे ओहर केसवा"ति॥

तथा ओहरति ओतारहि।

राजा तस्स कथं सुत्वा "निस्सांसयं मे भता उम्मत्तकोव जातो"ति दोमनस्सप्पत्तो सत्तमं गथमः -

1711.

"सो नून मधुरं ज्ञाति, जीवितं विघिस्सि।

अपथ्यं यो पथयसि, चंडतो सस्मिचसी"ति॥

तत्थ ज्ञातिति कनिट्ठं अलपन्तो अहः। इदं वुत्तं होति - "तत्, मयहं पियञाति सो त्वं नून अतिमधुरं अत्तनो जीवितं विघिस्सि, यो अपत्थेतब्बं पथयसी"ति।

घटपंडितो रञ्चो वचनं सुत्वा निच्चलो तत्वा "भटिक, त्वं चंदतो सस्कं पत्थेनतस्स तं अलभित्वा सजीवखयभावं जानन्तो किं कारण मतपुत्तं अनुसोचसी"ति वत वा अट्ठमं गथमः -

172

"एवं चे कन्ह जानासि, यदञ्चमनुससि।

कस्मा पूरे मतं पुत्तं, अजादजापि मनुसोचसि"ति॥

तथा एवन्ति इदं अलभनेय्यत्थानं नाम न पत्थेत्ब्बन्ति यदि एवं जानासि। यदञ्चमनुसासीति एव जानन्तोव यदि अञ्जनं अनुसससीति अथो। पूर्ति अथ कस्मा इतो चातुमासमत्थके मतपुत्तं अजदजापि अनुसोचसीति वदति।

एव सो अंतरविथ्यं थितकोवा "भाटिक, अहं तव पञ्चयामानं पत्थेमि, त्वं पण अपञ्जनयामानस्स सोचसी"ति वत्वा तस्स धम्मं देसेन्तो पुन द्वे गाथा आभासि -

17

"यं न लब्भा मनुस्सेन, अमानुस्सेन वा पुनः।

जातो मे मा मेरी पुत्तो, कुतो लब्भा अलब्भ्यं॥

174.

"न मन्ता मूलभेसज्जा, ओस्धेहि धनेन वा।

सचित्रका अन्यितुं कन्ह, यं पेतमनुसोचसी"ति॥

तत्थ यंति भातिक यं एवं जातो मे पुत्तो मा मेरति मनुस्सेन वा देवेन वा पुन न लब्भा न सक्क्रा लधुं, तं त्वं पथेसि, तदेतं कुतो लब्भा के कारणेन सक्काका लद्धुं, न सचित्रकाति दीपेति। कसम? यस्मा अलब्भ्यं, अलब्भनेय्यत्थाञ्जहि नमेतन्ति अथो। मंतति मंतपयोगेन। मूलभेसजजाति मूलभेसजदजेन। ओसधेहिति नानाविधोसधेहि। धनेन वती कोतिसत्सङ्ख्येनपि धनेन वा। इदं वुत्तं होति - "यं त्वं पेटमनुसोचसि, तं एतेहि मंतपयोगदिहि अनेतुं न सक्क्रा"ति।

राजा तं सुत्वा "युत्तं, तत्, सल्ललक्खितं मे, मम सोखरणथय तय इदं कत"न्ति घटपंडितं वन्नेन्तो चट्सो गाथा आभासि -

17

"यस्स एतादिसा अस्सु, अमच्चा पुरिस्पंदिता।

यथा निज्झपये अजदज, घटो पुरिस्पण्डितो॥

17

"आदित्तं वत मं सन्तं, घटसित्त्व पावकं।

वारिणा वय ओसिंदचं, सब्बं निब्बापये दरं॥

1 7.

"अब्बही वत मे सल्लं, यमासि हद्यस्सीतं।"

यो मे सोकपेरेटस्स, पुत्तसोकं अपानुदि॥

11 तिमाही.

"सोहं अ उबोल्हसल्लोस्मि, वीत्सोको अनाविलो।

न सोयामि न रोदामि, तव सुत्वान् मन्वा"ति॥

तत्थ पथमगाथाय सङ्खेपत्थो - यथा येन कारणेन अजदज मन पुत्तसोकपरेतं घटो पुरिसपण्डितो सोखरणथय निज्झापये निज्झपेसि बोधेसि। यस अञ्जनस्सपि एतादिसा पुरिसपण्डिता अमच्छ अस्सु, तस्स कुतो सोकोटि। शेषगाथा वुत्तत्थायेव।

अवसाने —

.

"एवं करोंती सप्पञ्जा, ये होनीति अनुकंपका।"

निवत्तयन्ति सोख्म्हा, घटो जेट्ठ्व भतर"न्ति॥ —

अयं अभिसम्बुद्धगाथा उत्तानथयेव।

एवं घटकुमारेण वीतसोके कटे वासुदेवे रजदजं अनुसासन्ते दीघसस अधुनो अचदचयेन दशभातिकपुत्त कुमार चिन्तयिन्सु "कण्हदिपायनं 'दिब्बचक्खुकोऽति वदन्ति, विमांसिसाम तव न"न्ति। ते एकं दहर्कुमारं अलङ्कारित्वा गब्बिनियाकारेण दस्सेत्वा उड्रे मसूरकं बंधित्वा तस्स शांतिकं नेत्वा "भंते, अयं कुमारिका किं विजायिस्स्ति"ति पुच्छिंसु। तापसो" दसभातिराजूनं विनाशकालो पत्तो, मइहं नु खो आयुसङ्खारो किदिसो होता"ति ओलोकेंतो "अजदजेव मरणं भविष्यति"ति नत्वा "कुमारा इमिना तुम्हाकं को अथो"ति वत्वा "कथेथेव नो, भंते"ति निबद्धो "अयं इतो सत्तमे दये खादिरघटिकं विजयिस्स्ति, तय वासुदेवकुलं नस्सीस्स्ति, अपिच खो पन हर तं खदिरघटिकं गहेत्वा झपेत्वा चारिकं नदियां पक्खिपेयथा"ति अह। अथ नं ते "कूटजतिल, पुरिसो विजयंको नाम नत्थि"ति वत्वा तन्तर्जजुकं नाम

कम्मकरणं कत्वा तत्थेव जीवितखयं पापयिन्सु। राजानो कुमारे पकोसपेत्वा "किं कारण तपसं मरयित्था"ति पुच्छित्वा सब्बं सुत्व भीता तस्स अरखं दत्वा सत्तमे दये तस्स कुच्छितो निखकांतं खादिरघटिकं झपेत्वा चारिकं नादियं हिपिन्सु। सा नादिया वुयहमाना मुखद्वारे एकपस्से लंबी, ततो एरकं निब्बति।

अथेकदिवसं ते राजानो "समुद्दकीळं कीळिस्समा"ति मुखद्वारं गन्त्वा महामण्डपं करापेत्वा अलक्तमण्डपे खदन्त पिवंता किळावसेनेव पवत्तहत्थपादपरमासा द्विधा भिज्जित्वा महाकलहं करिन्सु। अथेको अञ्जनं मुग्गरं अलभन्तो अरकवन्तो एकं अरकपत्तं गंहि। तं गहितमत्तमेव खादिरमुसलं अहोसि। सो तेन महाजनं पोथेसि। अथञ्जेहि सब्बेहि गहितघातं खादिरमुसलमेव अहोसि। ते अञ्जमञ्चन परीत्वा महाविनासं पापुनिंसु। तेसु महाविनास विंसंस्तेसु वासुदेवो चदेवो च भगिनी अंजनदेवी च पुरोहितो चाति छत्रो जन रथं अभिरुहित्वा पलयिन्सु, सेसा सब्बेपि विन्था। तेपि चत्तारो रथेन पलायनता काळमत्तिकअटविं पापुनिंसु। सो हि मुत्थिकमलदल्लो पत्थनं कत्वा यक्खो हुत्वा तत्थ निब्बत्तो बलदेवस्स आगत्भावं ञत्व तत् गामं मापेत्वा मल्लवेसं गहेत्वा "को युज्जितुकामो"ति वग्गन्तो गज्जजन्तो अपफोटेनतो विचारी। बलदेवो तं दिसव "भटिक, अहं इमिना सद्धिं युज्झिअस्सामी"ति वत्वा वासुदेवे वारेन्तेयेव रथा ओरुयह तस्स संतिकं गन्त्वा वाग्गन्तो गजदजन्तो अपफोतेसि। अथ नं सो पसारितहत्थेयेव गहेत्वा मूलकन्दं विय खादि। वासुदेवो तस्स मत्भावं नट्वा भगिनीञ्च पुरोहितञ्च आदय सब्बरत्तीं गन्त्वा सूर्योदये एकं पचदचन्त्गमं पट्वा "आहारं पछित्वा आहाराति" भगिनीञ्जादच पुरोहितञ्च गामं पहिणित्वा सयं एकस्मिं गच्छन्तरे पतीच्छ शयनो निपजजि।

अथ नं जरा नाम एको लुद्दको गच्छं चलंतं दिस्वा "सुकरो एत्थ भाविस्सति"ति संज्ञय सत्तीं खिपित्वा पदे विज्जित्वा "को मं विज्जी"ति वुत्ते मानुस्सस विद्धभावं ञत्वा हितो पलायितुं आरभि। राजा सतीं पच्चुपत्थपेत्वा उत्थय "मातुल, मा भायि, एही"ति प्रकाशोसित्वा आगतं "कोसि नाम त्व"न्ति पुच्छित्वा "अहं सामि, जरा नामा"ति वुत्ते" जराय विद्धो मरिस्सतिति किर मन पोराना ब्याकरिन्सु, निस्सांसयं अजदज मया मरित्ब"न्ति नत्वा "मातुल, मा भयि, एहि पहारं मे बंधा"ति तेन पहारमुखं बंधपेत्वा तं उयोजेसि। बलववेदना पवत्तिनसु, इतरेहि आभतं आहारं परिभुञ्जितुं नासक्खि। अथ ते अम्नतेत्वा "अजज अहं मरिस्सामि, तुम पन सुखुमला आनंदं कम्मं कत्वा सजीवं न सखिस्सथ, इमं विज्जं सिक्खथा"ति एकं विज्जं सिक्खपेतवा ते उय्योत्जे तत्थेव सजीवखयं पापुनि। एवं अञ्जनदेविं ओक्षेत्वा सब्बेव विनाशं पापुनिंसुति।

सत्था इमं धम्मदेसनं अहारित्वा "पासौक, एवं पोराणकपंडिता पंडितानं कथं सुत्वा अट्टनो पुत्तसोकं हरिंसु, मा चिन्तये"ति वत्वा सच्दाचानि पाकसेत्वा जातकं समोधनसि, सचदाचापरियोसाने उपासको सोतापत्तिफले पतित्थि। तदा रोहिणीयो आनंदो अहोसि, वासुदेवो सारिपुत्तो, अवसेसा बुद्धपरिसा, घटपंडितो पण अहमेव अहोसिंति।

घटपंडितजातकवन्नना सोळसमा।

इति सोळसजातकपतिमण्डितस्स

दशकनिपातजातकस्स अत्थवन्न निट्ठिता।

जातकुद्दनं —

चतुद्वारो कान्हुपोसो, सङ्ख बोधि दीपायनो।

निग्रोध तककल धम्म-पालो कुकुट कुंडली।

बिलार चक भूरि च, मंगल घट सोळस॥

दशकनिपातवन्ना नित्थिता।

पुस्तक XI. एकादशी-निपाता:

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **मति-पोसाका-जातक**
स्रोत : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित

जातक क्रमांक 455
मति-पोषक-जातक

“यद्यपि दूर,” इत्यादि। यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक ऐसे वृद्ध भिक्षु के बारे में सुनाई, जिन्हें अपनी माता का भरण-पोषण करना था। इस घटना की परिस्थितियाँ साम जन्म (*1) के समान हैं। इस अवसर पर भी गुरु ने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा, “भाइयों, इस व्यक्ति पर क्रोधित न हों; प्राचीन काल में ऐसे बुद्धिमान पुरुष हुए हैं, जो पशु गर्भ से जन्म लेने पर भी, अपनी माता से विमुख होकर सात दिनों तक भोजन नहीं ग्रहण करते रहे और दुर्बल होते चले गए; और जब उन्हें राजा के योग्य भोजन दिया गया, तब भी उन्होंने यही कहा, “माँ के बिना मैं नहीं खाऊँगा”; फिर भी माता को देखकर उन्होंने भोजन ग्रहण कर लिया।” ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की एक कथा सुनाई।

बहुत समय पहले, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्य था, तब हिमालय क्षेत्र में बोधिसत्व का जन्म एक हाथी के रूप में हुआ। वे पूर्णतः श्वेत, एक भव्य प्राणी थे और उनके चारों ओर अस्सी हजार हाथियों का झुंड रहता था; परन्तु उनकी माता अंधी थीं। वे अपने हाथियों को मीठे-मीठे जंगली फल उनकी माता के लिए देते थे; परन्तु हाथियों ने उन्हें एक भी फल नहीं दिया, बल्कि वे सब स्वयं खा गए। जब उन्होंने पूछताछ की और यह खबर सुनी, तो उन्होंने कहा, "मैं झुंड छोड़कर अपनी माता की देखभाल करूंगा।" अतः रात्रि के समय, अन्य हाथियों को बिना बताए, वे अपनी माता को साथ लेकर चंदोराणा पर्वत की ओर चल पड़े; और वहाँ उन्होंने अपनी माता को पहाड़ियों की एक गुफा में, एक झील के किनारे रखा और उनकी देखभाल की।

बनारस में रहने वाला एक वनपाल रास्ता भटक गया; दिशा का पता न चलने पर वह जोर-जोर से रोने लगा। यह आवाज सुनकर बोधिसत्व ने मन ही मन सोचा, "एक आदमी मुसीबत में है, और मेरे यहाँ रहते हुए उसका दुख सहना उचित नहीं है।" इसलिए वह उस आदमी के पास गया; लेकिन वह डरकर भाग गया। यह देखकर हाथी ने उससे कहा, "हे मनुष्य! तुम्हें मुझसे डरने की कोई जरूरत नहीं है। भागो मत, बल्कि बताओ कि तुम रोते हुए क्यों घूम रहे हो?"

"मेरे स्वामी," उस व्यक्ति ने कहा, "मैं पिछले सात दिनों से रास्ता भटक गया हूँ।"

हाथी ने कहा, "हे मनुष्य, डरो मत; मैं तुझे मनुष्यों के मार्ग पर ले चलूँगा।" फिर उसने मनुष्य को अपनी पीठ पर बिठाया और उसे जंगल से बाहर ले जाकर लौट आया।

उस दुष्ट व्यक्ति ने नगर में जाकर राजा को बताने का निश्चय किया। उसने वृक्षों और पहाड़ियों पर निशान लगाए और बनारस की ओर चल पड़ा। उस समय राजा का राजसी हाथी मर गया था। राजा ने ढोल बजवाकर यह घोषणा करवाई, “यदि किसी ने कहीं भी राजा की सवारी के योग्य हाथी देखा हो, तो वह बताए!” तब वह व्यक्ति राजा के सामने आया और बोला, “हे महाराज, मैंने एक शानदार, पूर्णतः सफेद और उत्तम हाथी देखा है, जो राजा की सवारी के योग्य है। मैं मार्ग दिखाऊंगा; बस मेरे साथ हाथी प्रशिक्षकों को भेज दीजिए, और आप उसे पकड़ लेंगे।” राजा मान गया और उसने उस व्यक्ति के साथ एक वनपाल और अनुयायियों की एक बड़ी टुकड़ी भेजी।

वह आदमी उसके साथ गया और उसने बोधिसत्व को झील में भोजन करते हुए पाया। जब बोधिसत्व ने वनपाल को देखा, तो उन्होंने सोचा, "यह खतरा निःसंदेह उसी आदमी से आया है। लेकिन मैं बहुत बलवान हूँ; मैं हज़ार हाथियों को भी तितर-बितर कर सकता हूँ; क्रोध में मैं पूरे राज्य की सेना को ढोने वाले सभी जानवरों को नष्ट कर सकता हूँ। लेकिन अगर मैं क्रोध में आ गया, तो मेरा पुण्य कलंकित हो जाएगा। इसलिए आज मैं क्रोधित नहीं होऊंगा, चाहे मुझे चाकुओं से ही क्यों न घायल कर दिया जाए।" इस संकल्प के साथ, सिर झुकाकर वे अडिग रहे।

वनपाल कमल-झील में उतरा और उसके सुंदर सींग देखकर बोला, "आओ, मेरे बेटे!" फिर उसने उसका धड़ पकड़कर (जो चांदी की रस्सी जैसा था) उसे सात दिनों में बनारस ले गया।

जब बोधिसत्व की माता ने देखा कि उनका पुत्र नहीं आया, तो उन्होंने सोचा कि वह राजा के सरदारों द्वारा पकड़ लिया गया होगा। "और अब," वह विलाप करते हुए बोलीं, "ये सभी वृक्ष बढ़ते रहेंगे, लेकिन वह बहुत दूर रहेगा"; और उन्होंने दो श्लोक दोहराए:

"भले ही यह हाथी बहुत दूर चला जाए,
फिर भी ओलिबाने और कुताजा (*2) उगेंगे,
   अनाज, घास, और ओलियंडर, सफेद लिली,
आश्रय स्थलों पर गहरे नीले रंग के फूल अभी भी खिलते हैं।

"उस शाही हाथी को कहीं न कहीं तो जाना ही होगा।"
जिनके स्तन और शरीर दिखाई देते हैं, उनसे पूर्ण रूप से तृप्त।
पूरी तरह सोने से ढका हुआ, ताकि राजा या राजकुमार उस पर सवार हो सकें
कवचधारी शत्रु पर विजय प्राप्त करने के लिए निडर।"
प्रशिक्षक ने रास्ते में ही राजा को संदेश भेजा। राजा ने नगर को सजाने का आदेश दिया। प्रशिक्षक बोधिसत्व को एक सजे-धजे अस्तबल में ले गया, जो मालाओं और झालरों से सुशोभित था, और रंग-बिरंगे पर्दे से उन्हें घेरकर राजा को संदेश भेजा। राजा ने हर प्रकार का उत्तम भोजन मंगवाया और बोधिसत्व को परोसा। परन्तु उन्होंने एक निवाला भी नहीं खाया: "माँ के बिना मैं कुछ नहीं खाऊँगा," उन्होंने कहा। राजा ने उनसे भोजन करने की विनती करते हुए तीसरा श्लोक दोहराया:

"आओ, एक निवाला लो, हाथी, और कभी कमजोर मत पड़ो;
अपने राजा की सेवा करने के लिए ऐसे बहुत से काम हैं जो तुम्हें एक दिन करने होंगे।
यह सुनकर बोधिसत्व ने चौथा श्लोक दोहराया:

नहीं, वह चंदोराणा पर्वत के पास रहने वाली, बेचारी अंधी और दुखी स्त्री थी।
वह अपने शाही बेटे के बिना, किसी पेड़ की जड़ पर पैर रखकर मारती है।"
राजा ने पाँचवाँ श्लोक यह पूछने के लिए कहा कि उसका क्या अर्थ है:

चंदोराणा पर्वत के पास कौन है, वह अंधा और दुखी प्राणी कौन है?
क्या वह अपने शाही बेटे के बिना, किसी पेड़ की जड़ पर पैर रखकर मारती है?
जिस पर दूसरे ने छठे छंद में उत्तर दिया:

"मेरी माँ चंदोराना से, आह अंधी, आह दुखी!"
वह अपने बेटे, यानी मेरी गैरमौजूदगी में किसी पेड़ की जड़ पर पैर पटककर पीटती है!
यह सुनकर राजा ने सातवां श्लोक सुनाते हुए उसे स्वतंत्रता दे दी:

"यह शक्तिशाली हाथी, जो अपनी माँ का पेट भरता है, उसे मुक्त छोड़ दिया गया है:
और उसे उसकी माँ और उसके पूरे परिवार के पास जाने दो।
आठवां और नौवां श्लोक बुद्ध के पूर्ण ज्ञान के दर्शन हैं:

"हाथी को जेल से रिहा कर दिया गया, जानवर को जंजीरों से मुक्त कर दिया गया।"
सांत्वना भरे शब्दों के साथ (*3) फिर से पहाड़ियों पर लौट गया।
फिर उस ठंडे और साफ पानी के कुंड से, जहाँ हाथी अक्सर आते-जाते हैं,
उसने अपनी सूंड से पानी निकाला, और उसकी माँ ने सारा पानी उस पर छिड़क दिया।
लेकिन बोधिसत्व की माता ने सोचा कि बारिश शुरू हो गई है, और उन्होंने बारिश को फटकारते हुए दसवें श्लोक को दोहराया:

"असमय बारिश कौन लाता है—कौन सा दुष्ट देवता?"
क्योंकि वह चला गया, मेरा अपना, मेरा बेटा, जो मेरी देखभाल करता था।"
तब बोधिसत्व ने उसे आश्वस्त करने के लिए ग्यारहवें श्लोक को दोहराया:

"उठो माँ! तुम वहाँ क्यों लेटी हो? तुम्हारा अपना, तुम्हारा बेटा आ गया है!"
काशी के गौरवशाली राजा वेदेह ने मुझे सुरक्षित घर पहुंचा दिया है।"
और उसने अंतिम छंद को दोहराते हुए राजा को धन्यवाद दिया:

"उस राजा की जय हो! वह अपने राज्य में समृद्धि लाता रहे।"
उस बेटे को किसने मुक्त किया जिसने हमेशा मेरा इतना सम्मान किया है!

राजा बोधिसत्व के गुणों से प्रसन्न हुए और उन्होंने झील के निकट एक नगर बसाया तथा बोधिसत्व और उनकी माता की निरंतर सेवा की। बाद में, जब उनकी माता का देहांत हो गया और बोधिसत्व ने उनके अंतिम संस्कार करंदक नामक एक मठ में निवास किया, तो वे वहाँ चले गए। इस मठ में पाँच सौ ऋषि आकर बस गए और राजा ने उनकी भी वैसी ही सेवा की। राजा ने बोधिसत्व की एक पत्थर की प्रतिमा बनवाई और उसका बहुत सम्मान किया। वहाँ प्रतिवर्ष भारत के सभी निवासी एकत्रित होकर हाथी उत्सव मनाते थे।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की और जन्म का वर्णन किया: (सत्यों के समापन पर, अपनी माता का सहारा देने वाला भिक्षु प्रथम मार्ग (सम्मोहन) के फल में स्थापित हो गया था): "उस समय, आनंद राजा थे, महामाया (बुद्ध की दिवंगत जन्मदाता माता) हथिनी थीं, और मैं स्वयं वह हाथी था जो उनकी माता को भोजन कराता था।"

फुटनोट:

(1) संख्या 540

(2) एक औषधीय पौधा।

(3) विद्वान बताते हैं कि हाथी ने राजा को सद्गुणों पर प्रवचन दिया, फिर उसे सावधान रहने की चेतावनी दी और फूलों की वर्षा करते हुए लोगों की प्रशंसा के बीच विदा हो गया। फिर वह घर गया और अपनी माँ को भोजन कराया और नहलाया। इसे समझाने के लिए गुरु ने दो श्लोक दोहराए।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **जुन्हा-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-456-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 456
जुन्हा-जातक

"हे मनुष्यों के राजा," इत्यादि। यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए वरिष्ठ भिक्षु आनंद को प्राप्त वरदानों के बारे में सुनाई थी। अपने पहले बीस वर्षों के बुद्धत्व काल में भगवान बुद्ध के सेवक हमेशा एक जैसे नहीं रहते थे: कभी वरिष्ठ भिक्षु नागसमला, कभी नागिता, उपवन, सुनक्खत्त, चुंडा, सगाला, कभी मेघिया भगवान बुद्ध की सेवा करते थे। एक दिन भगवान बुद्ध ने भिक्षुओं से कहा, "हे भिक्षुओं, अब मैं बूढ़ा हो गया हूँ: और जब मैं कहता हूँ, चलो इस रास्ते से चलें, तो कुछ भिक्षु दूसरे रास्ते से चले जाते हैं, कुछ मेरा पान और वस्त्र ज़मीन पर गिरा देते हैं। मेरे लिए एक भिक्षु को चुन लो जो सदा मेरी सेवा करे।" तब सभी भिक्षु, वरिष्ठ भिक्षु सारिपुत्र सहित, उठ खड़े हुए और अपने हाथ सिर पर रखकर बोले, "हे प्रभु, मैं आपकी सेवा करूँगा, मैं आपकी सेवा करूँगा!" लेकिन उन्होंने यह कहते हुए उन्हें मना कर दिया, "तुम्हारी प्रार्थना पहले ही पूरी हो चुकी है! बस करो।" तब भिक्षुओं ने वरिष्ठ भिक्षु आनंद से कहा, “हे मित्र, क्या आप सेवक का पद मांगना चाहते हैं?” वरिष्ठ भिक्षु ने कहा, “यदि भगवान बुद्ध मुझे वह वस्त्र न दें जो उन्होंने स्वयं ग्रहण किया है, यदि वे मुझे अपना भिक्षादान न दें, यदि वे मुझे अपने साथ उस स्थान पर न ले जाएं जहां उन्हें आमंत्रित किया जाता है: परन्तु यदि भगवान बुद्ध मुझे उस स्थान पर ले जाएं जहां मुझे आमंत्रित किया जाता है, यदि मुझे उस समय उस समूह का परिचय कराने का वरदान दिया जाए जो भगवान बुद्ध के दर्शन करने के लिए दूर-दूर से आता है, यदि मुझे संदेह उत्पन्न होते ही भगवान बुद्ध के पास जाने का वरदान दिया जाए, यदि जब भी भगवान बुद्ध मेरी अनुपस्थिति में प्रवचन दें, तो मेरे लौटने पर वे मुझे अपना प्रवचन दोहराएं: तो मैं भगवान बुद्ध की सेवा करूंगा।” उन्होंने ये आठ वरदान मांगे, चार ऋणात्मक और चार धनात्मक। और भगवान बुद्ध ने उन्हें ये वरदान प्रदान किए।

इसके बाद उन्होंने पच्चीस वर्षों तक निरंतर अपने गुरु की सेवा की। इस प्रकार पाँचों बिंदुओं में श्रेष्ठता प्राप्त करके और सात वरदान प्राप्त करके - अध्यापन का वरदान, उपदेश का वरदान, कारणों के ज्ञान का वरदान, अपने भले के लिए जिज्ञासा का वरदान, पवित्र स्थान में रहने का वरदान, प्रबुद्ध भक्ति का वरदान और बुद्धत्व की संभावना का वरदान - उन्होंने बुद्ध की उपस्थिति में आठ वरदानों की विरासत प्राप्त की और बुद्ध के धर्म (मुक्ति के मार्ग) में प्रसिद्ध हुए तथा आकाश में चंद्रमा के समान चमक उठे।

एक दिन वे सत्य के हॉल में इस विषय पर चर्चा करने लगे: “मित्र, तथागत (बुद्ध) ने वरिष्ठ भिक्षु आनंद को वरदान देकर प्रसन्न किया है।” गुरुजी वहाँ आए और पूछा, “भाइयों, आप यहाँ बैठे किस विषय पर चर्चा कर रहे हैं?” उन्होंने गुरुजी को बताया। तब गुरुजी ने कहा, “भाइयों, यह पहली बार नहीं है, बल्कि पहले भी, जैसे अब, मैंने आनंद को वरदान देकर प्रसन्न किया था; पहले भी, जैसे अब, उन्होंने जो कुछ भी माँगा, मैंने उन्हें दिया।” और ऐसा कहते हुए उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज्य था, उनके पुत्र राजकुमार जुन्ह, जिन्हें चंद्रराज भी कहा जाता था, तक्षशिला में अध्ययन कर रहे थे। एक रात, अपने गुरु की शिक्षा ध्यानपूर्वक सुनने के बाद, वे अंधेरे में अपने गुरु के घर से निकले और घर की ओर चल पड़े। एक ब्राह्मण भिक्षा मांग रहा था और घर जा रहा था। राजकुमार ने उसे देखा नहीं और दौड़कर उसके पास पहुंचे और अपने हाथ के प्रहार से उसका भिक्षापात्र तोड़ दिया। ब्राह्मण दर्द से कराहते हुए गिर पड़ा। दया से राजकुमार मुड़े और उसके हाथ पकड़कर उसे उठाया। ब्राह्मण ने कहा, "पुत्र, तुमने मेरा भिक्षापात्र तोड़ दिया है, इसलिए मुझे भोजन का मूल्य दे दो।" राजकुमार ने कहा, "मैं अभी आपको भोजन का मूल्य नहीं दे सकता, ब्राह्मण; लेकिन मैं काशी के राजा का पुत्र राजकुमार जुन्ह हूं, और जब मैं अपने राज्य में आऊंगा, तो आप मेरे पास आकर धन मांग सकते हैं।"

जब उनकी शिक्षा पूरी हो गई, तो उन्होंने अपने शिक्षक से विदा ली और बनारस लौटकर अपने पिता को वह सब दिखाया जो उन्होंने सीखा था।

“मैंने अपनी मृत्यु से पहले अपने पुत्र को देख लिया है,” राजा ने कहा, “और मैं उसे सचमुच राजा बनते हुए देखूंगा।” फिर उन्होंने उसका राज्याभिषेक किया और उसे राजा बना दिया। राजकुमार ने राजा जुन्हा के नाम से धर्मपरायणता से शासन किया। जब ब्राह्मण ने यह सुना, तो उसने सोचा कि अब वह अपने भोजन का मूल्य वसूल कर लेगा। अतः वह बनारस आया और उसने देखा कि नगर पूरी तरह से सजा हुआ है और राजा उसके चारों ओर जुलूस में चल रहा है। एक ऊंचे स्थान पर खड़े होकर ब्राह्मण ने अपना हाथ फैलाया और पुकारा, “राजा की जय हो!” राजा ने उसकी ओर देखे बिना ही आगे बढ़ गया। जब ब्राह्मण ने देखा कि उसकी ओर ध्यान नहीं दिया जा रहा है, तो उसने पहले श्लोक को दोहराते हुए स्पष्टीकरण मांगा:

हे मनुष्यों के राजा, मेरी बात सुनो!
मैं आज बिना किसी कारण के यहां नहीं आया हूं।
   कहा जाता है, हे श्रेष्ठ पुरुष, किसी को भी आगे नहीं बढ़ना चाहिए।
एक भटकता हुआ ब्राह्मण रास्ते में खड़ा है।"
ये शब्द सुनकर राजा ने अपने रत्नजड़ित डंडे से हाथी को वापस मोड़ दिया और दूसरी पंक्ति दोहराई:

मैंने सुना, मैं खड़ा हूँ: आओ ब्राह्मण, जल्दी बोलो,
आज आपको यहां लाने वाला कारण क्या है?
   तुम मुझसे कौन सा वरदान चाहते हो?
क्या तुम मुझसे मिलने आए हो? बोलो, मैं पूछता हूँ!
राजा और ब्राह्मण के बीच प्रश्न-उत्तर के रूप में आगे जो कुछ कहा गया, उसका वर्णन शेष श्लोकों में किया गया है:

मुझे पांच गांव दीजिए, सभी उत्तम और शानदार हों।
सौ दासियाँ, सात सौ गायें,
   सोने के एक हजार से अधिक आभूषण,
और मुझे दो पत्नियां दो, जो मेरी ही संतान हों।"
"क्या आपका कोई प्रायश्चित है, ब्राह्मण, जिसे बताने में मुझे डर लगता है?"
या फिर तुम्हारे पास अनेक ताबीज और अनेक जादू हैं?
   या फिर भूत-प्रेतों, अपने आदेशों का पालन करने के लिए तैयार हो जाओ।
या मेरे लिए अच्छा काम करने का कोई दावा?
"मैंने न तो कोई तपस्या की है, न ही कोई जादू-टोना किया है।"
कोई भी दानव मेरी बात मानने को तैयार नहीं है।
   और न ही मैं सेवा के बदले किसी वेतन का दावा कर सकता हूँ;
लेकिन सच तो ये है कि हम पहले भी मिल चुके हैं।
मुझे बीते समय की कोई बात याद नहीं आ रही है।
मैंने तुम्हारा चेहरा पहले कभी देखा है।
   कृपया मुझे बताइए, मुझे यह बात बताइए।
हम कब मिले थे, या कहाँ मिले थे, बीते दिनों में?
"गांधार के राजा के सुंदर नगर में,
हे मेरे स्वामी, तक्षशिला ही हमारी आजीविका थी।
   वहाँ रात के घोर अंधेरे में

हम दोनों कंधे से कंधा मिलाकर फेंक रहे थे।
और जब हम दोनों वहाँ खड़े थे, हे राजकुमार,
हमारे बीच तुरंत ही सौहार्दपूर्ण बातचीत शुरू हो जाती है।
फिर हम दोनों मिले, और केवल तभी,
न तो इससे पहले कभी, न ही इसके बाद कभी।"
"हे ब्राह्मण, जब भी किसी बुद्धिमान व्यक्ति से मुलाकात हुई हो
दुनिया में एक अच्छा आदमी, उसे ऐसा नहीं होने देना चाहिए
एक बार बनी दोस्ती हो या पुराना परिचय, सब कुछ खत्म हो जाए।
जो काम हो गया उसे कभी मत भूलो।
जो काम हो चुका है उसे नकारना मूर्खता है, और उसे होने देना भी मूर्खता है।
पुराने रिश्ते उन लोगों के साथ टूट जाते हैं जिनसे वे कभी मिले थे।
कई बार मूर्खों के कर्म व्यर्थ ही हो जाते हैं।
वे कृतघ्न हैं, और वे भूल सकते हैं।
लेकिन भरोसेमंद लोग अतीत को नहीं भूल सकते।
उनकी दोस्ती और जान-पहचान बहुत तेजी से बढ़ी।
ऐसे व्यक्ति द्वारा किया गया निम्न स्तर का अपराध अस्वीकार नहीं किया जाता:
इसलिए भरोसेमंद लोग अंत तक कृतज्ञ रहते हैं।
मैं तुम्हें पाँच गाँव देता हूँ, उत्तम और बेहतरीन।
सौ दासियाँ और सात सौ गायें
सोने के एक हजार से अधिक आभूषण,
और इतना ही नहीं, तुम्हारी ही जाति की दो पत्नियां भी।
"हे राजा, जब अच्छे लोग सहमत होते हैं तो ऐसा ही होता है:
जैसे तारों के बीच पूर्णिमा का चंद्रमा हमें दिखाई देता है,
फिर भी, हे काशी के स्वामी, मैं भी वैसा ही हूँ।
अब तुमने मुझसे किया हुआ वादा पूरा कर दिया है।
बोधिसत्व ने उन्हें बहुत सम्मान दिलाया।

जब गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने कहा, "हे भिक्षुओं, यह पहली बार नहीं है कि मैंने आनंद को वरदान देकर संतुष्ट किया है, बल्कि मैंने यह पहले भी किया है।" इन शब्दों के साथ उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "उस समय आनंद ब्राह्मण थे और मैं स्वयं राजा था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **धम्म-जातक**
***स्रोत**: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-457-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 457
धम्म-जातक

"मैं सही करता हूँ," इत्यादि—यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, कि कैसे देवदत्त पृथ्वी में समा गया। वे सत्य के हॉल में चर्चा करने के लिए एकत्रित हुए: "मित्र, देवदत्त तथागत (बुद्ध) के शत्रु बन गया और पृथ्वी में समा गया।" गुरु ने प्रवेश करते हुए पूछा कि वे किस बारे में बात कर रहे हैं। उन्होंने उन्हें बताया। गुरु ने उत्तर दिया, "हे भिक्षुओं, वह पृथ्वी में समा गया क्योंकि उसने मेरे विजयी अधिकार पर प्रहार किया; परन्तु पहले उसने सही के अधिकार पर प्रहार किया और पृथ्वी में समा गया और सबसे गहरे नरक की ओर चल पड़ा।" ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त राजा थे, तब बोधिसत्व ने देवताओं (देवदूतों) में से एक के रूप में इंद्रियों के संसार में जन्म लिया और उनका नाम धम्म, यानी सही, रखा गया, जबकि देवदत्त को अधम्म, यानी गलत कहा गया।

जैसे पूर्णिमा के व्रत के दिन, शाम को जब भोजन हो चुका था और गाँव-नगर तथा राजधानियों में लोग अपने-अपने घर के द्वार पर बैठकर आनंद ले रहे थे, तभी धम्म अपने दिव्य रथ पर सवार होकर, दिव्य वस्त्रों से सुशोभित होकर, अप्सराओं के समूह के बीच में प्रकट हुए और उन्हें संबोधित किया:

"जीवित प्राणियों का वध न करो, और अन्य दस प्रकार के पाप से दूर रहो, माता और पिता की सेवा का कर्तव्य निभाओ और तीनों समय धर्म का पालन करो (*1); इस प्रकार तुम स्वर्ग के पात्र बनोगे और महान यश प्राप्त करोगे।" इस प्रकार उन्होंने मनुष्यों को दस प्रकार के धर्मों का अनुसरण करने के लिए प्रेरित किया और भारत का सही मार्ग पर भ्रमण किया। परन्तु अधम ने उन्हें सिखाया, "जीवित प्राणियों का वध करो," और इसी प्रकार मनुष्यों को अन्य दस प्रकार के पापों का अनुसरण करने के लिए प्रेरित किया और भारत का गलत मार्ग पर भ्रमण किया।

अब उनके रथ हवा में आमने-सामने आ गए, और उनके सेवकों ने एक-दूसरे से पूछा, "तुम किसके हो? और तुम किसके हो?" उन्होंने उत्तर दिया, "हम धम्म के हैं, हम अधम्म के हैं," और रास्ता बना लिया, जिससे उनके मार्ग अलग हो गए। लेकिन धम्म ने अधम्म से कहा, "हे प्रभु, आप अधम्म हैं, और मैं धम्म हूँ; मुझे मार्ग का अधिकार है; अपना रथ एक तरफ मोड़िए, और मुझे रास्ता दीजिए," पहले श्लोक को दोहराते हुए:

मैं सही काम करता हूँ, लोगों की प्रसिद्धि मेरी कृपा से ही संभव हो पाती है।
हे ऋषियों और हे ब्राह्मणों, सदा मेरी स्तुति करो।
मनुष्यों और देवताओं (देवदूतों) द्वारा पूजित, मार्ग का अधिकार
यह मेरा है। मैं सही हूँ: तो, हे गलत, रास्ता दो!
इसके बाद ये बातें आती हैं:

"ऊपर सिंहासन पर विराजमान अन्याय के शक्तिशाली रथ में"
हे सर्वशक्तिमान, मुझे कोई भी चीज भयभीत नहीं कर सकती:
तो फिर मैं क्यों ऐसा करूं, जिसने कभी किसी को जगह नहीं दी?
क्या आज अधिकार को मेरे आगे से गुजरने का रास्ता मिलेगा?
"सत्य का अधिकार सर्वप्रथम प्रकट हुआ।"
वह आदिम है, सबसे पुराना और सबसे अच्छा;
रॉन्ग छोटा था, जिसका जन्म बाद में हुआ था।
बहुत छोटा, बड़े वंशज के कहने पर!
न तो तुम योग्य हो, न ही तुम मांगो,
और अगर यह उचित हो तो मैं पीछे नहीं हटूंगा:
आइए आज हम दोनों युद्ध करें;
जो भी लड़ाई जीतेगा, उसे जगह मिलेगी।
मैं दूर-दूर तक सभी क्षेत्रों में जाना जाता हूँ।
शक्तिशाली, असीम महिमा वाला, अद्वितीय,
मेरे स्वरूप में समस्त सद्गुण समाहित हैं।
मैं सही हूँ: गलत, तुम यहाँ कैसे जीत हासिल कर सकते हो?
"लोहे से सोना पीटा जाता है, न ही हम।"
क्या आपने कभी लोहे को पीटने के लिए सोने का उपयोग देखा है?
यदि आज सही के विरुद्ध गलत की लड़ाई जीत जाए,
लोहा सोने जितना सुंदर होगा।"
"यदि तुम सचमुच युद्ध में पराक्रमी हो,
हालांकि आपकी कही बात न तो अच्छी है और न ही बुद्धिमानी भरी।
मैं तुम्हारे इन सभी बुरे शब्दों को निगल लूंगा;

और चाहे जो भी हो, मैं तुम्हारे लिए रास्ता बना दूंगा।"
उन्होंने इन छह छंदों को दोहराया, एक दूसरे का उत्तर देते हुए।

लेकिन जिस क्षण बोधिसत्व ने इस श्लोक को दोहराया, उसी क्षण अधम्मा अपने रथ में खड़े नहीं रह सके, बल्कि सिर के बल धरती में जा गिरे, जो उन्हें ग्रहण करने के लिए फट गई, और उनका पुनर्जन्म सबसे गहरे नरक में हुआ।

भगवान बुद्ध ने जैसे ही इस घटना को समझा, उन्होंने अपनी पूर्ण बुद्धि से शेष श्लोकों का पाठ किया:

ये शब्द सुनते ही, ऊंचाई से गलत साबित हुए
सिर के बल लुढ़कते हुए, नजरों से ओझल हो गया:
  यह रॉन्ग का अंत और भयावह नियति थी।
मुझे कोई लड़ाई नहीं लड़नी पड़ी, हालांकि मेरी लड़ने की बहुत इच्छा थी।
इस प्रकार संयम में रहने वाले सर्वशक्तिमान के द्वारा ही सफलता प्राप्त होती है।
शक्तिशाली योद्धा को गलत तरीके से हराया, और उसकी मृत्यु हो गई।
  धरती में समा गया: दूसरा, आनंदित, बलवान,
सत्य के कवच से सुसज्जित होकर, वह अपने रथ पर सवार होकर दूर चला जाता है।
जो अपने घर में उचित अनुष्ठान नहीं करता है
जब वह अपने माता-पिता, ऋषियों, ब्राह्मणों के समक्ष लेटता है
  शरीर नीचे गिरता है, और अपने बंधनों को तोड़ देता है,
वह इस दुनिया से भी सीधे नरक में जाता है।
अधम्मा सिर के बल नीचे गिर पड़ा।
जो अपने घर में सभी उचित नियमों का पालन करता है
जब वह अपने माता-पिता, ऋषियों, ब्राह्मणों के समक्ष लेटता है
  शरीर नीचे गिरता है, और अपने बंधनों को तोड़ देता है,
वह इस दुनिया से सीधे स्वर्ग की ओर प्रस्थान करता है।
जैसे धम्म (धर्म) अपने रथ में सवार होकर आकाश को प्राप्त करने का प्रयास कर रहा था।

जब गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने कहा, "केवल अभी ही नहीं, भिक्षुओं, बल्कि पहले भी देवदत्त ने मुझ पर आक्रमण किया था और वह पृथ्वी में समा गया था": फिर उन्होंने जन्म का वर्णन किया—"उस समय देवदत्त अधर्म था, और उसके सेवक देवदत्त के सेवक थे, और मैं धर्म था, और बुद्ध के सेवक धर्म के सेवक थे।"

फुटनोट:

(1) सही काम करना, सही बोलना, सही सोचना।

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **उदय-जातक**
***स्रोत**: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-458-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 458
उदय-जातक (*1)

“तुम निष्कलंक हो,” इत्यादि। यह कथा गुरु (बुद्ध) ने जेतवन मठ में रहते हुए एक पथभ्रष्ट भिक्षु के बारे में सुनाई थी। इस घटना का वर्णन कुश जन्म (*2) के अंतर्गत किया जाएगा। गुरु ने फिर उस भिक्षु से पूछा, “क्या यह सच है, भिक्षु, कि तुम पथभ्रष्ट हो गए हो, जैसा कि लोग कहते हैं?” उसने उत्तर दिया, “जी, श्रीमान।” तब उन्होंने कहा, “हे भिक्षु, तुम हमारे जैसे धर्म (धर्म के मार्ग) से, जो मोक्ष (निर्वाण) की ओर ले जाता है, क्यों पथभ्रष्ट हो रहे हो, और वह भी सांसारिक वासनाओं के लिए? प्राचीन काल के ज्ञानी पुरुष, जो सुरुंधा नगर के

राजा थे, जो एक समृद्ध नगर था और जिसकी लंबाई बारह मील (x 4.23 किमी) थी, सात सौ वर्षों तक अप्सराओं के समान सुंदर स्त्री के साथ एक ही कक्ष में रहे, फिर भी उन्होंने अपनी इंद्रियों के वश में नहीं रहे और कभी भी उस स्त्री की ओर वासना भरी दृष्टि से नहीं देखा।" ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की एक कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब राजा काशी अपने नगर सुरुंध में शासन कर रहे थे, तब उनके न पुत्र थे और न पुत्री। उन्होंने अपनी रानियों से पुत्र प्राप्ति के लिए प्रार्थना करने को कहा। तब ब्रह्मा के लोक (प्रधान देवदूतों) से बोधिसत्व का जन्म हुआ और वे उनकी मुख्य रानी के गर्भ में आए। उनके जन्म से अनेकों का हृदय प्रसन्न हुआ, इसलिए उनका नाम उदयभद्दा रखा गया। जब बालक चलना सीख गया, तब ब्रह्मा के लोक (परमलोक) से एक और प्राणी इस संसार में आया और राजा की एक अन्य पत्नी के गर्भ में कन्या के रूप में जन्म लिया। उसका नाम भी उदयभद्दा ही रखा गया।

जब राजकुमार वयस्क हुए, तो उन्होंने शिक्षा के सभी क्षेत्रों में पारंगत हो गए; इसके अलावा, वे अत्यंत पवित्र थे और स्वप्न में भी देह-सम्मोहन के बारे में नहीं जानते थे, न ही उनका मन पाप की ओर झुका था। राजा अपने पुत्र को राजा बनाना चाहते थे, उनके अभिषेक के लिए विधिपूर्वक जल छिड़काव करना चाहते थे और उनकी प्रसन्नता के लिए खेल-कूद का आयोजन करना चाहते थे; और उन्होंने आदेश भी दे दिया। परन्तु बोधिसत्व ने उत्तर दिया, "मुझे राज्य नहीं चाहिए, और मेरा मन पाप की ओर नहीं झुका है।" बार-बार उनसे विनती की गई, परन्तु उनका उत्तर था कि उन्होंने लाल सोने की एक स्त्री की प्रतिमा बनवाई, जिसे उन्होंने अपने माता-पिता को यह संदेश भेजकर भेजा, "जब मुझे ऐसी स्त्री मिलेगी, तभी मैं राज्य स्वीकार करूँगा।" इस स्वर्ण प्रतिमा को पूरे भारत में भेजा गया, परन्तु इसके समान कोई स्त्री नहीं मिली। तब उन्होंने उदयभद्दा को बहुत सुंदर ढंग से सजाया और प्रतिमा के सामने उनकी प्रतिमा रखी; और प्रतिमा के सामने खड़े होने पर उनकी सुंदरता प्रतिमा से कहीं अधिक थी। फिर उन्होंने अपनी इच्छा के विरुद्ध ही सही, बोधिसत्व की अपनी बहन, राजकुमारी उदयभद्दा से उसका विवाह करा दिया, जो कि एक अलग माता से जन्मी थी, और उसे राजा के रूप में ताज पहनाया।

ये दोनों ब्रह्मचर्य का जीवन साथ-साथ व्यतीत करते रहे। समय बीतने पर, जब उनके माता-पिता का देहांत हो गया, तो बोधिसत्व ने राज्य पर शासन किया। दोनों एक ही कक्ष में साथ रहते थे, फिर भी अपनी इंद्रियों को वश में रखते थे और कभी भी एक-दूसरे को वासना भरी दृष्टि से नहीं देखते थे; बल्कि उन्होंने यह प्रतिज्ञा भी की थी कि उनमें से जो भी पहले मरेगा, वह अपने पुनर्जन्म स्थान से दूसरे के पास लौटकर कहेगा, "मैं इस स्थान पर पुनर्जन्म लेता हूँ।"

बोधिसत्व के राज्याभिषेक के समय से वे सात सौ वर्ष तक जीवित रहे और फिर उनका निधन हो गया। उनके बाद कोई अन्य राजा नहीं हुआ, उदयभद्दा के आदेश लागू रहे और दरबारी राज्य का संचालन करते रहे। बोधिसत्व तैंतीस देवताओं के स्वर्ग में सक्का (इंद्र) बन गए थे और अपनी महिमा के कारण सात दिनों तक अतीत को भूल गए थे। इसलिए सात सौ वर्षों के बाद, मनुष्य की समझ के अनुसार, उन्हें याद आया और उन्होंने मन ही मन कहा, "मैं राजा की पुत्री उदयभद्दा के पास जाऊंगा, धन-दौलत से उसकी परीक्षा लूंगा, सिंह की गर्जना करते हुए प्रवचन दूंगा और अपना वचन पूरा करूंगा!"

उस युग में कहते थे कि मनुष्य का जीवनकाल दस हजार वर्ष होता था। उस समय, रात्रि का समय था, महल के द्वार कसकर बंद थे, पहरेदार तैनात थे, और राजा की पुत्री अपने सात मंजिला महल की भव्य छत पर बने एक आलीशान कक्ष में चुपचाप अकेली बैठी अपने सद्गुणों का ध्यान कर रही थी। तभी इंद्र ने सोने के सिक्कों से भरा एक सोने का पात्र लिया और उसके विश्राम कक्ष में उसके सामने प्रकट हुए; और एक तरफ खड़े होकर, पहले श्लोक का पाठ करते हुए उससे बातचीत शुरू की:

"तुम अपनी सुंदरता में बेदाग, पवित्र और उज्ज्वल हो,"
तुम इस चबूतरे की ऊंचाई पर अकेले बैठे हो,
    अत्यंत सुंदर मुद्रा में, स्वर्ग की अप्सराओं जैसी आंखों वाली,
मैं आपसे निवेदन करता हूँ, मुझे आज रात आपके साथ बिताने दीजिए!
इस पर राजकुमारी ने निम्नलिखित दो छंदों में उत्तर दिया:

"इस किलेबंद शहर तक, जिसमें चारों ओर खाई खोदी गई है, पहुंचना कठिन है।"
जबकि इसकी खाइयाँ और इसके बुर्ज हाथ और तलवार से मिलकर रक्षा करते हैं।
"न तो युवा और न ही शक्तिशाली लोग आसानी से यहां प्रवेश कर सकते हैं;
मुझे बताइए—मुझसे मिलने का क्या कारण हो सकता है?
तब सक्का (इंद्र) ने चौथा श्लोक पढ़ा:

"मैं, हे सुंदरी, एक जिन्न हूँ, मैं जो अब तुम्हारे सामने प्रकट हो रहा हूँ।"
हे देवी, मुझ पर कृपा कीजिए, यह भरा हुआ कटोरा मुझसे ग्रहण कीजिए।
यह सुनकर राजकुमारी ने पाँचवाँ श्लोक दोहराते हुए उत्तर दिया:

"मैं कुछ नहीं मांगता, क्योंकि उदय की मृत्यु हो चुकी है।"
न तो देवता (देवदूत), न भूत, न ही मनुष्य, इनके अलावा:
इसलिए, हे शक्तिशाली जिन्न, चले जाओ।
अब और पास मत आओ, बल्कि दूर ही रहो।"
उसके शेर की आवाज सुनकर वह रुका नहीं, बल्कि जाने का नाटक किया और तुरंत गायब हो गया। अगले दिन उसी समय, उसने सोने के सिक्कों से भरा एक चांदी का कटोरा लिया और छठे श्लोक को दोहराते हुए उससे बात की:

"वह सर्वोच्च आनंद, जिसे प्रेमी पूरी तरह से जान पाते हैं,"
जिसके कारण मनुष्य अनेक बुरे कार्य कर बैठते हैं।
हे मधुर मुस्कान वाली महिला, तुम्हें तुच्छ न समझो:
देखो, मैं चांदी से भरा एक पूरा कटोरा लेकर आया हूँ!
तब राजकुमारी सोचने लगी, "अगर मैं उसे बोलने और व्यर्थ की बातें करने दूँगी, तो वह बार-बार आएगा। अब तो मेरे पास उससे कहने के लिए कुछ नहीं बचेगा।" इसलिए उसने कुछ नहीं कहा। जब उसने देखा कि राजकुमारी के पास कहने के लिए कुछ नहीं है, तो इंद्र तुरंत वहाँ से चले गए।

अगले दिन, उसी समय, उसने सिक्कों से भरा एक लोहे का कटोरा लिया और कहा, "हे देवी, यदि आप मुझे अपने प्रेम से आशीर्वाद देंगी, तो मैं यह सिक्कों से भरा लोहे का कटोरा आपको दे दूंगा।" जब राजकुमारी ने उसे देखा, तो उसने सातवीं पंक्ति दोहराई:

"जो पुरुष किसी महिला को आकर्षित करते हैं, वे उसका पालन-पोषण करते हैं और उसे आगे बढ़ाते रहते हैं।"
जब तक वह उनकी इच्छा का पालन नहीं करती, तब तक सोने का प्रस्ताव दिया जाएगा।
आपके आधार पर मेरा अनुमान है कि देवताओं (देवदूतों) के तरीके भिन्न-भिन्न हैं:
आप आज पहले के दिनों की तुलना में कम सामान लेकर आ रहे हैं।
जब उस महान प्राणी ने ये शब्द सुने, तो उसने उत्तर दिया, "राजकुमारी, मैं एक समझदार व्यापारी हूँ और मैं अपना धन व्यर्थ नहीं लुटाता। यदि आपकी युवावस्था और सुंदरता बढ़ रही होती, तो मैं भी आपको भेंट की जाने वाली राशि बढ़ा देता; परन्तु आप वृद्ध होती जा रही हैं, इसलिए मैं भेंट कम कर रहा हूँ।" ऐसा कहकर उसने तीन श्लोक दोहराए।

"हे स्त्री! जवानी की रौनक और सुंदरता फीकी पड़ जाती है!"
पुरुषों की इस दुनिया में, हे सुंदर कन्या!
और आज आप पहले से अधिक उम्रदराज हो गए हैं।
इसलिए मेरे द्वारा भुगतान की जाने वाली राशि में कमी नहीं आती।
"इस प्रकार, हे राजा की गौरवशाली पुत्री, मेरी निगाहों के सामने
दिन और रात के बीतने के साथ-साथ तुम्हारी सुंदरता फीकी पड़ जाती है और मर जाती है।
लेकिन हे परम बुद्धिमान राजा की पुत्री, यदि यह तुम्हें पसंद हो
पवित्र और शुद्ध बने रहने से तुम और भी प्यारे बन जाओगे!
इस पर राजकुमारी ने एक और छंद दोहराया:

"देवता (देवदूत) मनुष्यों के समान नहीं हैं, वे बूढ़े नहीं होते;
उनकी त्वचा पर कोई झुर्रीदार सिलवटें दिखाई नहीं देतीं।
आखिर देवताओं (देवदूतों) का कोई भौतिक शरीर क्यों नहीं होता?
हे शक्तिशाली गोब्लिन, अब मुझे यह बताया जाए!
तब सक्का (इंद्र) ने एक और श्लोक दोहराकर इस मामले को समझाया:

"देवता (देवदूत) मनुष्यों के समान नहीं हैं; वे बूढ़े नहीं होते;
उनकी त्वचा पर कोई झुर्रीदार सिलवटें दिखाई नहीं देतीं:
कल और आने वाला कल और भी अधिक
दिव्य सौंदर्य बढ़ता है, और असीम आनंद प्राप्त होता है।"

जब उसने देवताओं (देवदूतों) के लोक की सुंदरता के बारे में सुना, तो उसने एक अन्य श्लोक में वहाँ जाने का मार्ग पूछा:

"यहाँ इतने सारे मनुष्यों को किस बात से डर लगता है?"
हे शक्तिशाली गोब्लिन, मैं तुमसे यह स्पष्ट करने का अनुरोध करता हूँ।
उस मार्ग को इतने विस्तार से समझाया गया है:
स्वर्ग की ओर यात्रा करते समय किसी को डरने की आवश्यकता क्यों नहीं है?
तब सक्का (इंद्र) ने एक अन्य श्लोक में इस मामले की व्याख्या की:

जो अपनी वाणी और मन दोनों पर उचित नियंत्रण रखता है,
जो शरीर के साथ पाप करना पसंद नहीं करता,
जिसके घर में हमें बहुत सारा भोजन और पेय पदार्थ मिलता है।
उदार, दयालु, सच्चे दिल का,
निःस्वार्थ अनुग्रह, मृदुभाषी बातें, दयालु उत्साह—
जो इस मार्ग से स्वर्ग की ओर जाता है उसे किसी बात का भय नहीं होना चाहिए।
जब राजकुमारी ने उसके शब्द सुने, तो उसने एक और छंद में धन्यवाद व्यक्त किया:

"माँ की तरह, पिता की तरह, गोब्लिन, तुम मुझे सलाह देते हो:
हे महानुभाव, हे सुंदर आत्मा, मुझे बताओ, मुझे बताओ तुम कौन हो?
फिर बोधिसत्व ने एक और श्लोक दोहराया:

"मैं उदय हूं, हे सुंदर स्त्री, मैं अपना वादा निभाने तुम्हारे पास आता हूं।"
अब मैं जाता हूँ, क्योंकि मैंने बोल दिया है; मैं प्रतिज्ञा से मुक्त हूँ।"
राजकुमारी ने गहरी सांस ली और बोली, "आप ही राजा उदयभद्दा हैं, मेरे स्वामी!" फिर वह फूट-फूटकर रोने लगी और बोली, "आपके बिना मैं जी नहीं सकती! मुझे मार्गदर्शन दीजिए, ताकि मैं हमेशा आपके साथ रह सकूँ!" ऐसा कहते हुए उसने एक और श्लोक दोहराया:

"यदि तुम उदय हो, तो अपने वादे के लिए यहाँ आओ—वास्तव में वही—"
तो मुझे निर्देश दीजिए, ताकि हम, हे राजकुमार, फिर से एक साथ हो सकें!
फिर उन्होंने निर्देश के रूप में चार छंद दोहराए:

"जवानी जल्दी बीत जाती है: एक पल—यह गुजर जाता है;
कोई भी स्थान स्थिर नहीं है: सभी प्राणी मरते हैं
नए जीवन के जन्म के साथ: यह नश्वर शरीर क्षीण हो जाता है:
इसलिए लापरवाह मत बनो, धर्मपरायणता के मार्ग पर चलो।
"अगर पूरी पृथ्वी अपनी सारी संपत्ति के साथ हो सकती है
एक ही राजा के अधिकार क्षेत्र में रहने वाला राज्य।
एक पवित्र संत उसे दौड़ में छोड़ देगा:
इसलिए लापरवाह मत बनो, धर्मपरायणता के मार्ग पर चलो।
"माँ और पिता, भाई-भाई, और वह
(वह पत्नी) जिसे कीमत देकर खरीदा जा सकता है,
वे चले जाते हैं, और एक दूसरे को पीछे छोड़ जाते हैं:
इसलिए लापरवाह मत बनो, धर्मपरायणता के मार्ग पर चलो।
"याद रखें कि यह शरीर का भोजन होगा
दूसरों के लिए; सुख और दुःख दोनों समान रूप से।
एक गुजरता हुआ घंटा, जैसे-जैसे जीवन एक के बाद एक आगे बढ़ता है:
इसलिए लापरवाह मत बनो, धर्मपरायणता के मार्ग पर चलो।
इस प्रकार महान सत्ता ने प्रवचन दिया। प्रवचन से प्रसन्न होकर स्त्री ने अंतिम श्लोक के शब्दों में धन्यवाद व्यक्त किया:

"इस जिन्न का कथन कितना मधुर है: मनुष्यों का जीवन छोटा होता है।"
यह दुखद है, और क्षणिक है, और इसके साथ अविभाज्य पीड़ा जुड़ी हुई है।
मैं संसार का त्याग करता हूँ: काशी से, सुरुंधना से, मैं जाता हूँ।

इस प्रकार उससे प्रवचन देने के बाद बोधिसत्व अपने स्थान पर लौट गए।

अगले दिन राजकुमारी ने अपने दरबारियों को शासन की बागडोर सौंप दी; और अपने ही शहर के एक रमणीय उद्यान में वह एक संन्यासिनी बन गईं। वहाँ उन्होंने धार्मिक जीवन व्यतीत किया, और अपने जीवन के अंत में तैंतीस देवताओं के स्वर्ग में बोधिसत्व की सेविका के रूप में उनका पुनर्जन्म हुआ।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने सत्यों की व्याख्या की और जन्म की पहचान बताई: (अब सत्यों के समापन पर, पथभ्रष्ट भाई (भिक्षु) प्रथम मार्ग (सम्मोहन) के फल में स्थापित हो गया:)--"उस समय राहुल की माता (बुद्ध की पत्नी) राजकुमारी थीं, और सक्का (इंद्र) मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)अनुनुसोसिया-जातक, संख्या 328 देखें

(2) संख्या 531.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> पाणिय - **जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-459-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 459
पनिया-जातक

"जल," इत्यादि। यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए बुरी भावनाओं को वश में करने के बारे में सुनाई थी।

हमें पता चलता है कि एक समय श्रावस्ती नगर के पाँच सौ गृहस्थ और तथागत (बुद्ध) के मित्र नागरिकों ने धर्म का मार्ग सुनकर संसार त्याग दिया और भिक्षु बन गए। स्वर्णमयी भवन में रहते हुए, वे आधी रात को पाप के विचारों में लीन हो गए। (सभी विवरण पिछली कहानी (*1) के अनुसार ही समझे जाने चाहिए।) भगवान बुद्ध के आदेश पर, पूज्य आनंद ने भिक्षुओं को एकत्रित किया। गुरु निर्धारित आसन पर बैठे और उनसे यह पूछे बिना कि, "क्या आप पाप के विचारों में लीन हैं?" उन्होंने उन्हें व्यापक और सामान्य शब्दों में संबोधित किया: "भाइयों, कोई भी पाप छोटा नहीं होता। एक भिक्षु को अपने सभी पापों को उत्पन्न होते ही रोकना चाहिए। बुद्ध के आने से पहले, प्राचीन काल के ज्ञानी पुरुषों ने अपने पापों पर विजय प्राप्त की और पच्चेक-बुद्ध का ज्ञान प्राप्त किया।" इन शब्दों के साथ, उन्होंने उन्हें अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त राजा थे, काशी राज्य के एक गाँव में दो मित्र रहते थे। वे पीने के बर्तन लेकर खेत में गए, जिन्हें उन्होंने रास्ते में एक तरफ रख दिया, और प्यास लगने पर उनमें से पानी पीते थे। उनमें से एक ने पानी पीने के लिए जाते समय अपने बर्तन में पानी डाला और दूसरे के बर्तन से पी लिया। शाम को जब वह जंगल से बाहर आया और स्नान कर लिया, तो वह सोचने लगा, “क्या मैंने आज कोई पाप किया है, चाहे शरीर के माध्यम से हो या किसी और तरह से?” (*2) तब उसे याद आया कि उसने चोरी का पानी पिया था, और उसे बहुत दुख हुआ, और वह रो पड़ा, “अगर यह प्यास बढ़ती रही, तो यह मुझे किसी बुरे जन्म की ओर ले जाएगी! मैं अपने पाप को वश में करूँगा।” इस प्रकार, कारणवश चोरी का पानी पीने से (*3), उसने धीरे-धीरे अलौकिक अंतर्दृष्टि प्राप्त की, और पच्चेक-बुद्ध का ज्ञान प्राप्त किया; और वह वहीं खड़ा होकर अपने द्वारा प्राप्त ज्ञान पर विचार करने लगा।

अब दूसरा व्यक्ति स्नान करके उठा और बोला, "चलो मित्र, घर चलते हैं।" दूसरे ने कहा, "घर जाओ तुम, घर मेरे लिए कुछ भी नहीं है, मैं तो पच्चेक-बुद्ध हूँ।" "छी! क्या पच्चेक-बुद्ध तुम्हारे जैसे होते हैं?" "तो फिर वे कैसे होते हैं?" "उनके बाल दो उंगल लंबे होते हैं, वे पीले

वस्त्र पहनते हैं, और वे हिमालय की ऊँची चोटियों पर नंदमूल गुफा में रहते हैं।" दूसरे ने अपना सिर सहलाया: उसी क्षण एक आम आदमी के निशान गायब हो गए, उसके चारों ओर लाल वस्त्र लिपटे हुए थे, बिजली की चमक के समान पीली कमरबंद बंधी हुई थी, लाल लाख के रंग का ऊपरी वस्त्र एक कंधे पर था, उसके कंधे पर धूल से सना हुआ फटा हुआ कपड़ा था, और उसके बाएँ कंधे से भूरे रंग का मिट्टी का कटोरा लटक रहा था; वह हवा में स्थिर खड़ा था, और प्रवचन देने के बाद, वह उठा और तब तक नीचे नहीं उतरा जब तक कि वह नंदमूल की पर्वत-गुफा तक नहीं पहुँच गया।

काशी के एक गाँव में रहने वाला एक अन्य व्यक्ति, जो एक भूस्वामी था, बाज़ार में बैठा था, तभी उसने एक व्यक्ति को अपनी पत्नी को साथ लाते हुए देखा। उसे देखकर (वह अत्यंत सुंदर स्त्री थी) उसने नैतिक सिद्धांतों का उल्लंघन किया और उसे घूरने लगा; फिर उसने सोचा, "यह इच्छा, यदि बढ़ती रही, तो मुझे किसी बुरे जन्म में धकेल देगी।" मन में व्याकुल होकर, उसने अलौकिक अंतर्दृष्टि प्राप्त की और पच्चेक बुद्ध का ज्ञान प्राप्त किया; फिर हवा में स्थिर होकर उसने प्रवचन दिया और वह नंदमूल गुफा (*4) भी गया।

काशी गांव के एक ग्रामीण में दो लोग, एक पिता और पुत्र, एक साथ यात्रा पर जा रहे थे। जंगल के प्रवेश द्वार पर लुटेरे घात लगाए बैठे थे। ये लुटेरे अगर पिता और पुत्र को पकड़ लेते, तो पुत्र को अपने साथ रख लेते और पिता को यह कहकर भेज देते, "अपने पुत्र को छुड़ाने के लिए फिरौती लाओ।" या अगर दो भाई होते, तो वे छोटे भाई को रख लेते और बड़े को भेज देते; या अगर गुरु और शिष्य होते, तो वे गुरु को रख लेते और शिष्य को भेज देते, और शिष्य विद्या के प्रति प्रेम के कारण फिरौती लाकर गुरु को छुड़ा लेता। अब जब इस पिता और पुत्र ने लुटेरों को घात लगाए देखा, तो पिता ने कहा, "मुझे 'पिता' मत कहो, और मैं तुम्हें 'पुत्र' नहीं कहूँगा।" और वे मान गए। जब लुटेरे उनके पास आए और उनसे पूछा कि उनका आपस में क्या रिश्ता है, तो उन्होंने जवाब दिया, "हमारा आपस में कोई रिश्ता नहीं है," इस प्रकार उन्होंने जानबूझकर झूठ बोला। जब वे जंगल से बाहर आए और शाम के स्नान के बाद विश्राम कर रहे थे, तब पुत्र ने अपने पुण्य का आत्मनिरीक्षण किया और इस झूठ को याद करके सोचा, "यह पाप यदि बढ़ता रहा तो मुझे किसी बुरे जन्म में डाल देगा। मैं अपने पाप को वश में करूँगा!" तब उसे अलौकिक अंतर्दृष्टि प्राप्त हुई और उसने पच्चेक-बुद्ध का ज्ञान प्राप्त किया। उसने वायु में स्थिर होकर अपने पिता को प्रवचन दिया और वह भी नन्दमूल गुफा की ओर चल पड़ा।

काशी के एक गाँव में एक ज़मींदार रहता था, जिसने सभी प्रकार के वध पर प्रतिबंध लगा रखा था। जब आत्माओं को अर्पण करने का समय आया, तो एक बड़ी भीड़ इकट्ठा हुई और बोली, "हे स्वामी! यह यज्ञ का समय है: आइए हम हिरण, सूअर और अन्य जानवरों को मारकर आत्माओं को अर्पण करें।" ज़मींदार ने उत्तर दिया, "जैसा तुम पहले करते आए हो, वैसा ही करो।" लोगों ने बड़े पैमाने पर वध किया। उस व्यक्ति ने बड़ी मात्रा में मछली और मांस देखकर मन ही मन सोचा, "इन सभी जीवित प्राणियों को इन मनुष्यों ने मार डाला, और वह भी केवल मेरे कहने मात्र से!" उसे पश्चाताप हुआ और खिड़की के पास खड़े-खड़े ही उसे अलौकिक अंतर्दृष्टि प्राप्त हुई और उसने पच्चेक-बुद्ध का ज्ञान प्राप्त कर लिया। उसने वायु में स्थिर होकर प्रवचन दिया और फिर वह भी नन्दमूल गुफा चला गया।

काशी राज्य में रहने वाले एक अन्य जमींदार ने शराब की बिक्री पर प्रतिबंध लगा दिया। भीड़ ने उससे कहा, "महाराज, हम क्या करें? यह सदियों पुराना शराब उत्सव है!" उसने उत्तर दिया, "पहले की तरह ही करते रहो।" लोगों ने उत्सव मनाया, शराब पी और आपस में झगड़ने लगे; कई लोगों के पैर और हाथ टूट गए, खोपड़ियाँ फट गईं, कान कट गए और इसके लिए कई लोगों को दंडित किया गया। यह देखकर जमींदार ने मन ही मन सोचा, "अगर मैंने इसकी अनुमति न दी होती, तो उन्हें यह कष्ट न सहना पड़ता।" उसे अपने इस तुच्छ कार्य के लिए भी पश्चाताप हुआ: फिर उसे अलौकिक अंतर्दृष्टि प्राप्त हुई और उसने पच्चेक-बुद्ध का ज्ञान प्राप्त किया। वायु में स्थिर होकर उसने प्रवचन दिया और लोगों को सतर्क रहने के लिए कहा, फिर वह भी नन्दमूल गुफा चला गया।

कुछ समय बाद, पाँचों पच्चेक-बुद्ध भिक्षा माँगते हुए बनारस के द्वार पर उतरे। अपने ऊपरी और निचले वस्त्रों को सुव्यवस्थित ढंग से धारण करके, वे विनम्रतापूर्वक परिक्रमा करते हुए राजा के महल के द्वार पर पहुँचे। राजा उन्हें देखकर बहुत प्रसन्न हुए; उन्होंने उन्हें अपने महल में आमंत्रित किया, उनके पैर धोए, सुगंधित तेल से उनका अभिषेक किया, उनके सामने स्वादिष्ट भोजन परोसा, जिसमें कठोर और नरम दोनों प्रकार के व्यंजन थे, और एक तरफ बैठकर उनसे कहा: "महोदय, आपने युवावस्था में ही तपस्वी जीवन को अपनाया है, यह सुंदर है; इस आयु में आप तपस्वी बन गए हैं, और आप बुरी वासनाओं के कष्टों को देख रहे हैं। आपके इस कार्य का कारण क्या था?" उन्होंने इस प्रकार उत्तर दिया:

मैंने अपने ही मित्र का पानी चुरा लिया।
मैंने जो पाप किया था, उससे घृणा करते हुए, मुझे बाद में खुशी हुई।
संसार को त्यागकर संन्यासी बन जाना चाहिए, अन्यथा मैं फिर से पाप कर बैठूंगा।
मैंने दूसरे की पत्नी को देखा; मेरे मन में वासना जागृत हुई।
मैंने जो पाप किया था, उससे घृणा करते हुए, मुझे बाद में खुशी हुई।
संसार को त्यागकर संन्यासी बन जाना चाहिए, अन्यथा मैं फिर से पाप कर बैठूंगा।

चोरों ने मेरे पिता को जंगल में पकड़ लिया: मैंने उन्हें ही बताया
वह जैसा था उससे अलग था—यह झूठ था, मैं यह अच्छी तरह जानता था:
पाप से घृणा करते हुए," इत्यादि।
"एक भोज में लोगों ने बहुत सारे जानवरों को मार डाला।"
और मेरी इच्छा के विरुद्ध नहीं:
पाप से घृणा करते हुए," इत्यादि।
"वे लोग जो पुराने समय में शराब का भरपूर सेवन करते थे,
अब एक शराब पीने का सत्र आयोजित किया गया, जिसमें कई लोग बीमार पड़ गए।
और मेरी इच्छा के विरुद्ध नहीं।
मैंने जो पाप किया था, उससे घृणा करते हुए, मुझे बाद में खुशी हुई।
संसार को त्यागकर संन्यासी बन जाना चाहिए, अन्यथा मैं फिर से पाप कर बैठूंगा।
उन्होंने इन पांचों छंदों को एक के बाद एक दोहराया।

जब राजा ने प्रत्येक की व्याख्या सुन ली, तो उसने प्रशंसा करते हुए कहा, "महोदय, आपकी तपस्या आपको शोभा देती है।"

राजा इन पुरुषों के प्रवचन से प्रसन्न हुए। उन्होंने उन्हें भीतरी और बाहरी वस्त्र तथा औषधियाँ दीं, फिर पच्चेक-बुद्धों को विदा किया। उन्होंने राजा को धन्यवाद दिया और जहाँ से आए थे वहीं लौट गए। उसके बाद से राजा इंद्रिय सुखों से विमुख हो गए, इच्छा से मुक्त हो गए, अपनी पसंद का उत्तम भोजन करते थे, परन्तु स्त्रियों से न तो बात करते थे, न ही उनकी ओर देखते थे, हृदय से घृणा करते हुए उठते और अपने भव्य कक्ष में चले जाते, और वहाँ बैठकर एक सफेद दीवार को तब तक घूरते रहे जब तक वे समाधि में नहीं चले गए, और अपने भीतर रहस्यमय ध्यान की परमानंद की अनुभूति की। इसी परमानंदमय मन से उन्होंने इच्छा की निंदा करते हुए एक श्लोक का पाठ किया।

"इससे दूर रहो, वासना से दूर रहो, मैं कहता हूँ, बुरा, काँटों से ग्रस्त!"
मैंने चाहे कितनी ही लंबी गलत राह पर चला हो, कभी भी ऐसा आनंद नहीं पाया जैसा मैंने इस बार पाया!
तब उनकी प्रधान रानी ने मन ही मन सोचा, "उस राजा ने पच्चेक-बुद्धों का प्रवचन सुना, और अब वह हमसे बात नहीं करता, बल्कि निराश होकर अपने आलीशान कक्ष में ही सिमट जाता है। मुझे उसे सबक सिखाना ही होगा।" अतः वह उस भव्य कक्ष के द्वार पर आई, और द्वार पर खड़ी होकर उसने राजा के प्रेम भरे शब्दों को सुना, जो कामवासना की निंदा कर रहे थे। उसने कहा, "हे शक्तिशाली राजा, आप कामवासना की निंदा करते हैं! परन्तु मीठी कामवासना के आनंद के समान कोई आनंद नहीं है!" फिर कामवासना की प्रशंसा में उसने एक और श्लोक दोहराया:

"मधुर इच्छा का आनंद महान है: प्रेम से बढ़कर कोई आनंद नहीं है।"
जो इसका अनुसरण करते हैं, उन्हें स्वर्ग के परम आनंद की प्राप्ति होती है!
यह सुनकर राजा ने उत्तर दिया: "नष्ट हो जा, दुष्ट दुष्ट! तू क्या कहता है? इच्छा का आनंद कहाँ से आता है? इसके बदले में दुख ही मिलते हैं" - और इसके साथ ही उसने शेष छंदों की आलोचना की।

"इच्छा अप्रिय और कष्टदायी होती है, इससे बुरी पीड़ा और कोई नहीं होती।"
जो लोग पाप का अनुसरण करते हैं, उन्हें निश्चित रूप से नरक की पीड़ा भोगनी पड़ेगी।
"तेज धार वाली तलवार या प्यासी, कभी न तृप्त होने वाली तलवार से भी बेहतर है।"
दिल में गहरे धंसे हुए चाकुओं से भी ज्यादा घृणित तो इच्छाएं होती हैं।
"एक गड्ढा जो आदमियों की लंबाई जितना गहरा है, जहाँ धधकते हुए अंगारे हैं,"
धूप में तपते हल की इच्छाएँ कहीं अधिक भयावह होती हैं।
"अत्यंत विषैला जहर, कम आराम देने वाला तेल (*6)
या फिर वो घिनौनी चीज जो तांबे से चिपकी रहती है (*7), इच्छाएं इन सबसे भी बदतर हैं।"
इस प्रकार उस महान पुरुष ने अपनी पत्नी से प्रवचन दिया। फिर उन्होंने अपने दरबारियों को एकत्रित किया और कहा, "हे दरबारियों, तुम राज्य का संचालन करो: मैं संसार त्यागने जा रहा हूँ।" अनेक दरबारियों के विलाप और रोने-धोने के बीच वे उनके सामने उठे और वायु में स्थिर होकर प्रवचन दिया। फिर वे वायु के मार्ग पर चलते हुए सुदूर हिमालय की ओर गए और एक रमणीय स्थान पर एक आश्रम बनाया; वहाँ उन्होंने ऋषि का जीवन व्यतीत किया, और अंत में ब्रह्मालोक (परमलोक) के लिए नियत हो गए।

गुरु ने प्रवचन समाप्त करते हुए कहा, "भाइयों, कोई भी पाप छोटा नहीं होता: छोटे से छोटा पाप भी एक बुद्धिमान व्यक्ति द्वारा ही रोका जाना चाहिए।" फिर उन्होंने सत्यों की व्याख्या की और जन्म का वर्णन किया (सत्यों के समापन पर पाँच सौ भिक्षु संतत्व प्राप्त कर चुके थे):- "उस समय पच्चेक-बुद्धों ने निर्वाण प्राप्त किया, राहुल की माता (बुद्ध की पत्नी) रानी थीं और मैं स्वयं राजा था।"

फुटनोट:

(1) क्रमांक 412 देखें

(2)अर्थात शब्द, या विचार।

(3)अर्थात, उसने इसे अपने ध्यान का विषय बनाया (अरम्मनम्, हिंदी-आलंबन), और इस प्रकार वह एक परमानंदमय समाधि में चला गया।

(4)सीएफ., विदभ-जातक, सं. 48

(5) क्या हमें abhunjitva को "खाने की परवाह नहीं की" पढ़ना चाहिए?

(6) "निकाला गया तेल"? (देखें सुक्रुत, 181)। जाहिरा तौर पर किसी प्रकार का जहर।

(7) वर्डीग्रिस, हरा तांबा जंग/तांबा सल्फेट।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **युवंजय-जातक**
***स्रोत**: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-460-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 460
युवंजय जातक

"मैं प्रभु को प्रणाम करता हूँ," इत्यादि। यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जो महान त्याग (*1) के बारे में है। एक दिन भिक्षु सत्य के हॉल में एकत्रित हुए। एक भिक्षु अपने साथी से कहता, "भाई (भिक्षु) बुद्ध (*2) भले ही एक घर में रहते हों, भले ही वे महान जगत के केंद्र में सर्वव्यापी सम्राट रहे हों, सात अनमोल चीजों से परिपूर्ण हों, चार अलौकिक शक्तियों (*3) से परिपूर्ण हों, और उनके चारों ओर एक हजार से अधिक पुत्र हों! फिर भी उन्होंने अपनी सारी शान-शौकत का त्याग कर दिया जब उन्हें इच्छाओं में निहित कमजोरी का ज्ञान हुआ। आधी रात को, चन्ना के साथ, वे अपने घोड़े कंठक पर सवार होकर चले गए: अनोमा नदी के तट पर, उन्होंने संसार का त्याग किया, और छह वर्षों तक तपस्या की, और फिर पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया।" इस प्रकार उन्होंने बुद्ध के गुणों का वर्णन किया। गुरुजी ने प्रवेश करते हुए पूछा, "भाइयों, आप यहाँ बैठे-बैठे किस विषय पर चर्चा कर रहे हैं?" उन्होंने बताया। गुरुजी ने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि तथागत (बुद्ध) ने महान त्याग किया है। अतीत में उन्होंने बारह लीग (4.23 किमी) के क्षेत्र में फैले बनारस राज्य का त्याग कर दिया था।" ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, रामा नगर में सब्बदत्त नामक राजा का शासन था। उदय जन्म (*4) में जिस स्थान को हम अब बनारस कहते हैं, उसका नाम सुरुंधना नगर, चुल्लासुतसोमा (*5) जन्म में सुदस्सन, सोनन्दना (*6) जन्म में ब्रह्मवद्धना और खंडाहल (*7) जन्म में पुप्फवती था; परन्तु युवंजय जन्म में इसका नाम रामा नगर है। इस प्रकार समय-समय पर इसका नाम बदलता रहता है। उस समय राजा सब्बदत्त के एक हजार पुत्र थे; और उन्होंने अपने सबसे बड़े पुत्र युवंजना को उपसदन का पद दिया।

एक दिन सुबह-सुबह राजकुमार अपने भव्य रथ पर सवार होकर बड़े ठाठ-बाठ से उद्यान में घूमने निकल पड़ा। वृक्षों की चोटियों पर, घास की नोकों पर, शाखाओं के सिरों पर, मकड़ियों के जालों और धागों पर, सरकंडों की शाखाओं पर, उसने ओस की बूंदों को मोतियों की मालाओं की तरह लटकते देखा। "मित्र सारथी," उसने कहा, "यह क्या है?" "यह, महाराज," उसने उत्तर दिया, "वह है जो ठंड के मौसम में गिरती है, और इसे ओस कहते हैं।" राजकुमार ने दिन का कुछ भाग उद्यान में आनंद लेते हुए बिताया। शाम को जब वह घर लौट रहा

था, तो उसे कुछ भी दिखाई नहीं दिया। "मित्र सारथी," उसने कहा, "ओस की बूंदें कहाँ हैं? मुझे अब दिखाई नहीं दे रही हैं।" "महाराज," दूसरे ने कहा, "जैसे-जैसे सूर्य ऊपर चढ़ता है, वे सब पिघलकर जमीन में समा जाती हैं।" यह सुनकर राजकुमार व्याकुल हो गया और बोला, "हम प्राणियों का जीवन घास पर पड़ी ओस की बूंदों के समान है। मुझे रोग, वृद्धावस्था और मृत्यु के बोझ से मुक्ति पानी है; मुझे अपने माता-पिता से विदा लेकर संसार का त्याग करना होगा।" ओस की बूंदों के कारण उसने तीनों स्वरूपों (*8) को धधकती आग में देखा। जब वह घर लौटा, तो अपने पिता के भव्य न्याय कक्ष में उनके समक्ष गया और उन्हें प्रणाम करते हुए एक तरफ खड़ा हो गया और संसार का त्याग करने की अनुमति मांगते हुए पहला श्लोक दोहराया।

मैं रथ चालकों के स्वामी को मित्रों और दरबारियों के साथ इस प्रकार प्रणाम करता हूँ:
हे राजा! मैं संसार का त्याग करना चाहता हूँ: हे मेरे स्वामी, कृपया मुझे मना न करें।
तब राजा ने दूसरे श्लोक को दोहराते हुए उसे समझाया:

"युवंजना, अगर तुम्हारी कोई इच्छा हो तो मैं उसे पूरा कर दूंगा।"
यदि कोई तुम्हें चोट पहुंचाए, तो मैं तुम्हारी रक्षा करूंगा: तुम संन्यासी मत बनो।"
यह सुनकर राजकुमार ने तीसरा श्लोक पढ़ा:

"ऐसा कोई पुरुष नहीं है जो मुझे नुकसान पहुंचा सके: मेरी इच्छाओं में कोई कमी नहीं है।"
लेकिन मैं एक ऐसी शरणस्थली की तलाश करूंगा, जहां बुढ़ापा मुझ पर हावी न हो सके।"
इस मामले को समझाते हुए गुरु ने आधा श्लोक कहा:

पुत्र अपने पिता से इस प्रकार बात करता है, और पिता अपने पुत्र से इस प्रकार बात करता है:
शेष आधा श्लोक राजा द्वारा बोला गया था:

"हे राजकुमार, संसार को मत छोड़ो! नगरवासी यही पुकार रहे थे।"
राजकुमार ने फिर से इस श्लोक को दोहराया:

"हे महान सम्राट, मुझे सांसारिक जीवन से विमुख मत करो,"
अन्यथा मैं वासनाओं के नशे में चूर होकर बुढ़ापे में शिकार बन जाऊँगा!
यह सुनकर राजा झिझक गया। फिर माता को बताया गया, "महाराज, आपका पुत्र संसार त्यागने के लिए अपने पिता से अनुमति मांग रहा है।" "आप क्या कहते हैं?" उसने पूछा। वह स्तब्ध रह गई। सोने के पलंग में बैठी वह तेजी से न्याय कक्ष में गई और छठे श्लोक को दोहराते हुए पूछा:

"मैं आपसे विनती करता हूँ, मैं ही हूँ, मेरी प्रिय, और मैं आपको रोक लूँगा!"
हे मेरे पुत्र, मैं तुम्हें देखने की पुरजोर इच्छा रखता हूँ: हे मुझसे दूर मत जाना!
यह सुनकर राजकुमार ने सातवां श्लोक दोहराया:

"जैसे सूरज की तेज गर्मी में घास पर ओस की बूँदें पड़ती हैं,"
मनुष्य का जीवन ऐसा ही होता है: हे माता, मुझे मत रोको!
जब उसने यह कहा, तो उसने बार-बार उससे यही विनती की। फिर उस महान सत्ता ने आठवें श्लोक में अपने पिता को संबोधित किया:

"जो लोग इस जगह का भार उठा रहे हैं, वे इसे उठा लें: मेरी माँ को यहाँ न रहने दें।"
हे पराक्रमी राजा! मुझे मेरे पवित्र मार्ग पर प्रवेश करने से रोको (*9)।"
जब राजा ने अपने पुत्र की बातें सुनीं, तो उन्होंने कहा, "हे देवी, अपने कक्ष में जाइए, हमारे शाश्वत आनंद के महल में लौट आइए।" उनके ये शब्द सुनकर उनके पैर लड़खड़ा गए: और अपनी सहेलियों के साथ वे चली गईं, और महल में प्रवेश करके न्याय कक्ष की ओर देखने लगीं, और अपने पुत्र के समाचार की प्रतीक्षा करने लगीं। माता के जाने के बाद बोधिसत्व ने फिर अपने पिता से विदा मांगी। राजा उन्हें मना नहीं कर सके, और बोले, "हे प्रिय पुत्र, अपनी इच्छा पूरी कीजिए, संसार का त्याग कर दीजिए।"

जब यह सहमति प्राप्त हो गई, तो बोधिसत्व के सबसे छोटे भाई, राजकुमार युधिष्ठिल ने अपने पिता को प्रणाम किया और संन्यासी जीवन जीने की अनुमति मांगी, जिसे राजा ने स्वीकार कर लिया। दोनों भाइयों ने अपने पिता को विदाई दी और सांसारिक इच्छाओं का त्याग करके, बड़ी संख्या में लोगों के बीच न्याय कक्ष से प्रस्थान किया। रानी ने उस महान व्यक्तित्व को देखकर विलाप करते हुए कहा, "मेरे पुत्र ने संसार का त्याग कर दिया है, और राम नगर खाली हो जाएगा!" फिर उन्होंने कुछ श्लोक दोहराए:

जल्दी करो, और तुम्हें आशीर्वाद मिले! मुझे लगता है कि राममका अब खाली है।
राजा सब्बदत्त ने युवंजना को जाने की अनुमति दे दी है।
"हजारों में सबसे बड़ा, वह, देखने में सोने के समान।"
इस पराक्रमी राजकुमार ने सांसारिक जीवन त्याग दिया है और पीले वस्त्र धारण किए हैं।
बोधिसत्व ने तुरंत संन्यासी जीवन नहीं अपनाया। उन्होंने पहले अपने माता-पिता को विदा किया; फिर अपने सबसे छोटे भाई, राजकुमार युधिष्ठिल को साथ लेकर वे नगर छोड़कर चले गए, और अपने पीछे आए हुए सभी लोगों को विदा करके वे दोनों हिमालय की ओर चल पड़े। वहाँ एक रमणीय स्थान पर उन्होंने एक आश्रम बनाया और एक पवित्र ऋषि का जीवन व्यतीत किया। ध्यान की दिव्य अवस्था में लीन होकर उन्होंने अपना सारा जीवन वन के फलों और जड़ों पर व्यतीत किया और ब्रह्मलोक (परमलोक) के लिए नियत हो गए।

इस विषय को अंतिम श्लोक में पूर्ण ज्ञान के साथ समझाया गया है:

युवंजन, युधित्थिला, पवित्र जीवन में बने रहो:
उनके पिता और उनकी माता चले गए, उन्होंने मृत्यु की दो कड़ियों को तोड़ दिया।"

जब गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने कहा, "हे भिक्षुओं, यह पहली बार नहीं है कि तथागत (बुद्ध) ने राज्य का त्याग कर धार्मिक (सन्यासी) जीवन व्यतीत किया हो, बल्कि पहले भी ऐसा ही हुआ था;" फिर उन्होंने जन्म का वर्णन किया:- "उस समय वर्तमान राजा के परिवार के सदस्य पिता और माता थे, आनंद युधिष्ठिल थे, और मैं स्वयं युवंजन था।"

फुटनोट:

(1) बुद्ध का सांसारिक जीवन त्यागकर संन्यासी बनना।

(2)बुद्ध: वह व्यक्ति जो दस शक्तियों या दस प्रकार के ज्ञान से युक्त हो।

(3)देखें 454

(4)सं. 458.

(5)सं. 525.

(6) संख्या 532.

(7) संख्या 542.

(8) कामभावो, रूपभावो, अरूपभावो: इंद्रिय-अस्तित्व, शरीर-अस्तित्व (जहाँ रूप है, परन्तु कोई इंद्रिय सुख नहीं), निराकार-अस्तित्व।

(9) तराती का तकनीकी अर्थ है "विनाश से भागना।"

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **दशरथ-जातक**
स्रोत : पुरानी पुरातन अंग्रेज़ी अनुवाद से रूपांतरित और पाली से तुलना की गई

पिछला <<<<-----||-461-||----->>>> अगला

अंतर्वस्तु

जातक क्रमांक 461

दशरथ-जातक (*1)

"लक्खना और सीता," आदि - यह कथा गुरु (भगवान बुद्ध) ने जेतवन मठ में एक जमींदार के बारे में सुनाई थी, जिसके पिता का निधन हो गया था। पिता की मृत्यु पर वह व्यक्ति गहरे शोक में डूब गया: अपने सभी कर्तव्यों को अधूरा छोड़कर, उसने स्वयं को पूरी तरह से अपने शोक में लीन कर लिया। भोर में गुरु ने मानवजाति को देखते हुए महसूस किया कि वह प्रथम मार्ग (सम्मोहन) का फल प्राप्त करने के योग्य है। अगले दिन, श्रावस्ती नगर में भिक्षा मांगने के बाद, भोजन करने पर, उन्होंने भिक्षुओं को विदा किया और अपने साथ एक कनिष्ठ भिक्षु को लेकर उस व्यक्ति के घर गए, और उसे प्रणाम किया, और जब वह वहाँ बैठा था तो मधुर शब्दों में उससे बात की। "आप शोक में हैं, हे गृहस्थ शिष्य?" उसने कहा। "जी, महाराज, अपने पिता के कारण शोक में व्याकुल हूँ।" गुरु ने कहा, "हे गृहस्थ शिष्य, प्राचीन काल के वे बुद्धिमान पुरुष जो इस संसार की आठ अवस्थाओं को भली-भांति जानते थे (*2), पिता की मृत्यु पर जरा भी शोक नहीं करते थे।" फिर उनके अनुरोध पर उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, बनारस में दशरथ नामक एक महान राजा ने बुराई के मार्ग का त्याग कर धर्मपरायणता से शासन किया। उनकी सोलह हजार पत्नियों में से सबसे बड़ी और रानी पत्नी के दो पुत्र थे। बड़े पुत्र का नाम राम-पंडित, अर्थात् ज्ञानी राम, और दूसरे पुत्र का नाम राजकुमार लखण था।

समय बीतने के साथ ही महारानी का देहांत हो गया। उनकी मृत्यु से राजा दीर्घायु शोक में डूबे रहे, परन्तु दरबारियों के आग्रह पर उन्होंने उनका अंतिम संस्कार किया और उनकी स्थान पर दूसरी को महारानी नियुक्त किया। वह राजा की प्रिय और प्रेममयी थीं। कुछ समय बाद वह भी गर्भ धारण कर लीं और उनकी पूरी देखभाल करने पर उन्होंने पुत्र को जन्म दिया, जिसका नाम राजकुमार भरत रखा गया।

राजा अपने पुत्र से बहुत प्रेम करता था और उसने रानी से कहा, "श्रीमती, मैं आपको एक वरदान देता हूँ: आप चुनिए।" रानी ने प्रस्ताव स्वीकार कर लिया, लेकिन कुछ समय के लिए टाल दिया। जब पुत्र सात वर्ष का हुआ, तो वह राजा के पास गई और बोली, "महाराज, आपने मेरे पुत्र के लिए वरदान का वादा किया था। क्या आप अब मुझे वह वरदान देंगे?" राजा ने कहा, "चुनिए, रानी।" रानी ने कहा, "महाराज, मेरे पुत्र को राज्य दे दीजिए।" राजा ने उंगली उसकी ओर उठाई और क्रोधित होकर बोला, "निकल जा, दुष्ट स्त्री! मेरे दो पुत्र तो धधकती आग की तरह चमक रहे हैं; क्या तू उन्हें मारकर अपने पुत्र के बदले राज्य मांगेगी?" वह भयभीत होकर अपने आलीशान कक्ष में भाग गई और कई दिनों तक राजा से बार-बार यही वरदान मांगती रही। राजा ने उसे यह वरदान नहीं दिया। राजा मन ही मन सोचने लगा, "स्त्रियाँ कृतघ्न और कपटी होती हैं। यह स्त्री जाली पत्र या रिश्वत देकर मेरे पुत्रों की हत्या करवा सकती है।" इसलिए उन्होंने अपने पुत्रों को बुलवाया और उन्हें सब कुछ बताते हुए कहा, “मेरे पुत्रों, यदि तुम यहाँ रहोगे तो तुम पर कोई विपत्ति आ सकती है। किसी पड़ोसी राज्य में या वन में चले जाओ, और जब मेरा शरीर दफ़न हो जाए, तब लौटकर अपने परिवार के राज्य का उत्तराधिकार ग्रहण करना।” फिर उन्होंने ज्योतिषियों को बुलाया और उनसे अपने जीवनकाल की अवधि पूछी। उन्होंने बताया कि वे अभी बारह वर्ष और जीवित रहेंगे। तब उन्होंने कहा, “अब, मेरे पुत्रों, बारह वर्ष बाद तुम्हें लौटकर राजसी छत्रछाया को बुलंद करना होगा।” उन्होंने प्रतिज्ञा की और अपने पिता से विदा लेकर रोते हुए महल से चले गए। सीता देवी ने कहा, “मैं भी जाऊंगी,” उन्होंने उन्हें विदाई दी और रोती हुई आगे बढ़ गईं।

ये तीनों लोगों की एक बड़ी भीड़ के बीच से रवाना हुए। उन्होंने लोगों को वापस भेज दिया और आगे बढ़ते रहे, अंततः वे हिमालय पहुँचे। वहाँ एक ऐसे स्थान पर जहाँ पानी की अच्छी व्यवस्था थी और जंगली फल आसानी से मिल जाते थे, उन्होंने एक आश्रम बनाया और वहीं जंगली फलों को खाकर अपना जीवन व्यतीत करने लगे।

लक्खना-पंडित और सीता ने राम-पंडित से कहा, "आप हमारे लिए पिता समान हैं; इसलिए कुटिया में ही रहिए, हम जंगली फल लाकर आपको खिलाएंगे।" राम-पंडित मान गए: तब से राम-पंडित वहीं ठहर गए, और बाकी लोग जंगली फल लाकर उन्हें खिलाते रहे। (राम तपस्या, ध्यान, ब्रह्मचर्य और वासनाओं पर नियंत्रण के प्रति समर्पित थे, इसलिए सीता उनके लिए बहन समान थीं।)

इस प्रकार वे वहाँ जंगली फल खाकर जीवन व्यतीत करते रहे; परन्तु राजा दशरथ अपने पुत्रों के विरह में क्षीण हो गए और नौवें वर्ष में उनका प्राणत्याग हो गया। जब उनके अंतिम संस्कार किए गए, तो रानी ने आदेश दिया कि उनके पुत्र, राजकुमार भरत के ऊपर राजसी छत्र उठाया जाए। परन्तु दरबारियों ने कहा, “राजसी छत्र के स्वामी वन में निवास कर रहे हैं,” और उन्होंने इसकी अनुमति नहीं दी। राजकुमार भरत ने कहा, “मैं अपने भाई रामपंडित को वन से लाऊंगा और उनके ऊपर राजसी छत्र उठाऊंगा।” राजसी प्रतीक (*3) लेकर वे चारों भुजाओं (*4) की पूर्ण सेना के साथ उनके निवास स्थान की ओर चल पड़े। कुछ ही दूरी पर उन्होंने शिविर लगवाया और फिर कुछ दरबारियों के साथ वे आश्रम गए, उस समय जब लक्खना-पंडित और सीता वन में विराजमान थे। आश्रम के द्वार पर रामपंडित

निडर और शांत भाव से बैठे थे, मानो सोने की कोई सुगठित प्रतिमा हों। राजकुमार ने प्रणाम करते हुए उनके पास आकर एक तरफ खड़े होकर राज्य में घटी सारी बातें बताईं और दरबारियों के साथ उनके चरणों में गिरकर रोने लगे। राम-पंडित न तो दुखी हुए और न ही रोए; उनके मन में कोई भावना नहीं थी। जब भरत का रोना समाप्त हुआ और वे बैठ गए, तो शाम होते-होते बाकी दोनों जंगली फल लेकर लौट आए। राम-पंडित ने सोचा—"ये दोनों तो युवा हैं: मेरे जैसी सर्वज्ञानी बुद्धि इनके पास नहीं है। अगर इन्हें अचानक पता चल जाए कि हमारे पिता का निधन हो गया है, तो इनका दर्द असहनीय होगा और कौन जाने, शायद इनका हृदय टूट जाए। मैं इन्हें पानी में उतरने के लिए मनाऊंगा और सच्चाई जानने का कोई उपाय ढूंढूंगा।" फिर उन्होंने सामने एक जगह की ओर इशारा करते हुए कहा, जहाँ पानी था, "तुम बहुत देर से बाहर हो: यही तुम्हारा प्रायश्चित होगा—उस पानी में जाओ और वहाँ खड़े हो जाओ।" फिर उन्होंने आधा श्लोक दोहराया:
"लक्खना और सीता दोनों को उस तालाब में उतर जाने दो।"

एक शब्द ही काफी था, वे पानी में उतरे और वहीं खड़े हो गए। फिर उन्होंने दूसरे आधे छंद को दोहराते हुए उन्हें खबर सुनाई:
भरत कहते हैं, राजा दशरथ का जीवन समाप्त हो गया है।

अपने पिता की मृत्यु का समाचार सुनकर वे बेहोश हो गए। उन्होंने फिर से वही बात दोहराई, फिर वे बेहोश हो गए, और जब तीसरी बार भी वे बेहोश हो गए, तो दरबारियों ने उन्हें उठाया और पानी से बाहर निकालकर सूखी ज़मीन पर लिटा दिया। जब उन्हें सांत्वना दी गई, तो वे सब एक साथ बैठकर रोने-बिलखने लगे। तब राजकुमार भरत ने सोचा: "मेरे भाई राजकुमार लक्खना और सीता माता अपने पिता की मृत्यु का समाचार सुनकर अपने शोक को रोक नहीं पा रहे हैं; परन्तु राम-पंडित न तो विलाप कर रहे हैं और न ही रो रहे हैं। मुझे आश्चर्य है कि इसका क्या कारण हो सकता है कि वे शोक नहीं कर रहे हैं? मैं उनसे पूछूंगा।" फिर उन्होंने दूसरा श्लोक दोहराया और प्रश्न पूछा:
"हे राम, तुम किस शक्ति से शोक नहीं करते, जबकि तुम्हें शोक करना चाहिए?
यद्यपि तुम्हारे पिता की मृत्यु हो गई है, फिर भी तुम शोक से अभिभूत नहीं हो!"

तब राम-पंडित ने अपने शोक न करने का कारण बताते हुए कहा,
जब मनुष्य किसी बात को अपने पास नहीं रख पाता, चाहे वह कितना भी रोए, तो
बुद्धिमान बुद्धि को उस बात से क्यों कष्ट सहना चाहिए?
युवा, वृद्ध, मूर्ख और बुद्धिमान,
अमीर हो या गरीब, सभी का अंत निश्चित है: उनमें से प्रत्येक की मृत्यु होती है।

जैसे पके फल के गिरने का भय निश्चित होता है,
वैसे ही मृत्यु का भय सभी मनुष्यों को सताता है।

सुबह के उजाले में दिखने वाले अक्सर शाम तक गायब हो जाते हैं,
और शाम को दिखने वाले कई लोग सुबह तक गायब हो जाते हैं।

यदि किसी मूर्ख को
आंसुओं से खुद को कष्ट देने से आशीर्वाद मिल सकता है, तो बुद्धिमान भी यही करेगा।

स्वयं को कष्ट देने से वह दुबला-पतला और पीला पड़ जाता है;
इससे मुर्दा जीवित नहीं हो सकता, और आंसुओं का कोई लाभ नहीं है।

जैसे जलते हुए घर को पानी से बुझाया जा सकता है, वैसे ही
बलवान, बुद्धिमान और समझदार लोग,
जो शास्त्रों को भली-भांति जानते हैं,
तूफानी हवाओं के चलने पर अपने दु:ख को रुई की तरह बिखेर देते हैं।

"एक नश्वर प्राणी मरता है—और दूसरा सीधे पारिवारिक संबंधों से जुड़ जाता है:
प्रत्येक प्राणी का सुख उसके साथी संबंधों पर निर्भर करता है।"

"इसलिए बलवान पुरुष, जो पवित्र ग्रंथों में निपुण है,

इस संसार और परलोक का गहन चिंतन करता है, और
उनके स्वरूप को जानता है, किसी भी दुःख से,
चाहे वह कितना भी बड़ा क्यों न हो, मन और हृदय में विचलित नहीं होता।"

"इसलिए मैं अपने परिवार को सब कुछ दूंगा, उनकी रक्षा करूंगा और उनका पालन-पोषण करूंगा, और
जो कुछ भी शेष बचेगा, उसका भरण-पोषण करूंगा: यही बुद्धिमान व्यक्ति का कर्म है (*5)।"

इन छंदों में उन्होंने वस्तुओं की अनित्यता को समझाया है।

जब सभा ने राम-पंडित का अनित्यता का उपदेश सुना, तो उनका सारा दुःख दूर हो गया। तब राजकुमार भरत ने राम-पंडित को प्रणाम किया और उनसे बनारस राज्य स्वीकार करने का निवेदन किया। राम ने कहा, "भाई, लक्खना और सीता को अपने साथ ले जाओ और स्वयं राज्य का शासन करो।" राम ने कहा, "नहीं, महाराज, आप ही शासन करें।" राम ने कहा, "भाई, मेरे पिता ने मुझे बारह वर्ष बाद राज्य ग्रहण करने का आदेश दिया है। यदि मैं अभी जाऊँगा, तो मैं उनकी आज्ञा का पालन नहीं करूँगा। मैं तीन वर्ष बाद आऊँगा।" राम ने पूछा, "इतने समय तक शासन कौन संभालेगा?" राम ने कहा, "आप संभालिए।" राम ने कहा, "मैं नहीं।" राम ने कहा, "तो जब तक मैं नहीं आता, ये चप्पलें ही कार्य करेंगी।" उन्होंने अपनी पुआल की चप्पलें उतारकर अपने भाई को दे दीं। इस प्रकार तीनों ने चप्पलें लीं और ज्ञानी पुरुष को विदाई देकर अपने अनुयायियों की विशाल भीड़ के साथ बनारस के लिए प्रस्थान किया।

तीन वर्षों तक चप्पलों का राज रहा। दरबारी किसी मामले पर फैसला सुनाते समय इन भूसे की चप्पलों को राजगद्दी पर रख देते थे। यदि फैसला गलत होता, तो चप्पलें आपस में टकरातीं और इस संकेत पर मामले की दोबारा जांच की जाती; जब फैसला सही होता, तो चप्पलें शांत हो जातीं।(*6)

तीन वर्ष बीत जाने पर, ज्ञानी पुरुष वन से निकलकर बनारस आए और उद्यान में प्रवेश किया। उनके आगमन की सूचना पाकर राजकुमार एक विशाल दल के साथ उद्यान में पहुँचे और सीता को अपना स्वामी बनाकर दोनों का अभिषेक किया। इस प्रकार अभिषेक संपन्न होने पर, महान पुरुष एक भव्य रथ पर सवार होकर और एक विशाल दल से घिरे हुए नगर में प्रवेश किया और दाहिनी ओर परिक्रमा की; फिर अपने भव्य महल सुचंदक के विशाल चबूतरे पर चढ़कर उन्होंने सोलह हजार वर्षों तक धर्मप्रधानता से शासन किया और फिर स्वर्ग चले गए।

पूर्ण ज्ञान की यह पंक्ति इसके परिणाम को स्पष्ट करती है:
"साठ गुना सौ और दस हजार और वर्षों तक, कुल मिलाकर,
बलवान भुजाओं वाले राम ने शासन किया, उनके गले में धन्य त्रिगुणा था।" (*7)

गुरु ने प्रवचन समाप्त करते हुए सत्यों की व्याख्या की और जन्म का वर्णन किया: (सत्यों के समापन पर, भूस्वामी प्रथम मार्ग (सम्मोहन) के फल में स्थापित हो गया): "उस समय राजा शुद्धोदन (बुद्ध के पिता और कपिलवस्तु के राजा) राजा दशरथ थे, महामाया (बुद्ध की दिवंगत जन्म माता) माता थीं, राहुल की माता (बुद्ध की पत्नी) सीता थीं, आनंद भरत थे और मैं स्वयं राम-पंडित था।"

फुटनोट:

(अनुवादक द्वारा)

(1) दशरथ जातक की कहानी रामायण की कहानी के समान है।

(2) लाभ और हानि, यश और अपमान, प्रशंसा और निंदा, सुख और दुख।

(3) तलवार, छाता, मुकुट, चप्पल और पंखा।

(4) हाथी, घुड़सवार सेना, रथ, पैदल सेना।

(5) विद्वान कलाबाहु जन्म, क्रमांक 329 में उल्लिखित एक श्लोक का उद्धरण देते हैं, जो "लाभ और हानि" से शुरू होता है।

(6) यह अंतिम घटना रामायण में नहीं पाई जाती, न ही तुलसीदास के हिंदी संस्करण में पाई जाती है।

(7) गर्दन पर तीन बार, शंख-सर्पिलों की तरह, सौभाग्य का प्रतीक था।

नोट: यह समझना आवश्यक है कि उस समय बनारस एक विशाल राज्य का नाम था। अयोध्या शहर को साकेत के नाम से जाना जाता था।

पिछला <<<<-----II-461-II----->>>> अगला

पाली-रोमन संस्करण
(स्रोत: tipitaka.org)

---

[461] 7. दशरथजातकवन्ना

एथा लक्षणा सीता चति इदं सत्था जेतवने विहारन्तो एकं मतापिटिकं कुटुम्बिकं अरब कथेसि। तो हि पिटारी कालकते सोकाभिभूतो सब्बाकिच्चानि पहाय सोकनुवत्तकोवा अहोसि। सत्थ पच्चुससमाये लोकं ओलोकेनतो तस्स सोतापत्तिफलोपनिस्सायं दिव पुनादिवसे सवत्थियं पिंडाय चरित्वा कटभट्टकिको भिक्खु उय्योजेत्वा एकं पच्चसामानं गहेत्वा तस्स गेहं गनत्वा वंदित्वा निस्न्नं मधुरवाकेन अलापंतो "किं सोकासी उपासका"ति वट्वा" अमा, भंते, पितुसोको मा बधाति"ति वुत्ते" उपासक, पोराणकपण्डिता अठविधे लोकधम्मे तथातो जानंता पिटारी कालकते अप्पमट्टकमपि सोकं न करिंसु'ति वत्वा तेन याचितो अतीतं अहारी।

अतिते बरणसियं दशरथमहाराज नाम अगतिगमनं पाहाय धम्मेन रज्जन करेसि। तस्स सोसासन्नं इत्थिससहासनं जेठिका अग्गमहेसि द्वे पुत्ते एकान्च धीतरं विजयी। जेट्ठपुत्तो रामपंडितो नाम अहोसि, कर्तव्यो लक्खनकुमारो नाम, धीता सीता देवी नाम। अपराभागे महेसि कालमकसी। राजा तस्स कालकटाय चित्रं सोकावासं गन्त्वा अमाच्छेहि सन्नापितो तस्सा कट्टब्बापरिहारं कट्वा अण्णं अग्गमहेसित्थाने थपेसि। सा राननो पिया अहोसी मनापा। सापि अपराभागे गभं गणित्वा लद्धगभपरिहार पुत्तं विजयी, भरतकुमारो'तिस्सा नामं अकांशु। राजा पुत्तसिनेहेन "भड्डे, वरं ते दम्मी, गन्हाहि'ति आहा। स गहितकं कत्वा थपेत्वा कुमारस्स सत्ताथवस्सकाले राजनं उपसंकमित्वा "देवा, तुमहेहि मयहं पुत्तस्सा वरो दिन्नो, इदानिस्सा वरं देथा'ति आहा। गौंहा, भद्देति. "देव, पुत्तस्स मे रज्जं देथा'ति वुत्ते राजा आचारं पहारित्वा" नस्सा, वसालि, मयहं दवे पुत्त अग्गिकखंडा विया जलन्ति, ते मारापेत्वा तव पुत्तस्स रज्जं यकासी'ति तज्जेसि। स भीता सिरिगभं पविसित्वा अन्नेसुपि दिवासेसु राजनं पुनप्पुनं राजमेव याचि।

राजा तस्स तं वरं अदतव चिन्तेसि "मातुगामो नाम अकातन्नि मित्तदुब्भि, अयं मे कुण्तापणं वा कुन्तलंजं वा कट्वा पुट्टे घटापेययाति. तो पुत्ते पक्कोसापेतवा तमत्थं अरोचेत्वा "तता, तुम्हाकं इधा वसंतानां अंतरायोपि भवेया, तुम्हें समन्तरज्जं वा अरण्यं वा गन्त्वा मम मरणकाले आगन्त्वा कुलसन्तकं रज्जन गन्हेयथा'ति वट्वा पुना नेमित्तके ब्राह्मणे पक्कोसपेत्व अत्तनो अयुपरिच्छेदं पुच्छित्वा' अण्णानि द्वादसा वस्सानि पवत्तिस्सति" सुतवा "ताता, इतो द्वादसवसच्चयेन आगन्त्वा चट्टं उस्सपेयथा'ति अहा। ते "साधु'ति वत्वा पितरं वंदित्वा रोदंता पसाद ओतरिंसु। सीता देवी "अहम्पि भातिकेहि सद्धिं गमिसामि"ति पितरं वंदित्वा रोदन्ति निक्खमि। तयोपि जना महापरिवार निक्खमित्वा महाजनं निवत्तेत्वा अनुपुब्बेन हिमवन्तं पविसीत्वा सम्पन्नोदके सुलभफलाफले पदेसे असमम मापेत्वा फलाफलेना यापेंटा वसिंसु।

लक्खाणपंडितो च सीता च रामपंडितं यचित्व "तुम्हे अम्हकं पितुत्थाने स्थित, तस्मा अस्समेयेव होथा, मायं फलफलं अहरित्व तुम्हें पोसेसामा'ति पतिन्नं गानहिंसु। ततो पथाय रामपण्डितो तत्थेव होति। इतरे दवे फलाफलं अहारित्वा तं पतिजग्गिंसु। एवं तेसं फलफलेण यापेत्वा वसंतानां दशरथमहाराजा पुत्तसोकेन नवमे संवच्चरे कालमकासि। तस्स सारिरकिक्कं करेत्वा देवी"अत्तनो पुत्तस्स भरतकुमारस्स चट्टं उस्सापेथा"ति आहा। अमाक्का पना "चट्टसामिका अरण्ये वसंती"ति न अदंसु। भरतकुमारो "मम भतरं रामपंडितं अरण्यतो अनेत्व चट्टं उस्सपेस्सामि'ति पंचराजककुधभंडानि गहेत्वा चतुरंगिनिय सेनाय तस्स वसनत्थानं पट्वा अविदुरे खंडावरं कत्वा तथा निवासेत्व कटिपयेहि अमाच्छेहि सद्धिं लक्खाणपणितस्स च सीताय च अरण्यं गतकाले अस्समापदं पविसीत्वा असमपदद्वारे थपितकंचनरूपकं विया रामपंडितं निरासंकं सुखनिसिंन्न उपसंकमित्वा वंदित्वा एकमंतं धिठितो राणनो पवत्तिन अरोचेत्वा सद्धिं अमाच्छेहि पदेसु पतित्व

रोदति. रामपंडितो पना नेव सोसि, न परिदेवी, इंद्रियविकारमत्तमपिस्सा नहोसि। भरतस्सा पना रोदित्वा निसिंन्नाकाले सयानहसामय इतारे दवे फलाफलं आदया अगामिन्सु। रामपंडितो सिंतेसि "इमे दहारा मयहं विया परिग्गानपन्न एतेसं नत्थि, सहसा 'पिता वो मतोति वुत्ते सोकं संधारेतुं असक्कोंताणं हदयमपि तेसां फलेया, उपयेन" ते उदकं ओटरेत्वा एतं पवत्तीं अरोसेसामि'ति। अथ नेसं पुरतो एकं उदकथनं दस्सेत्व"तुम्हे अतिचिरेण अगाता, इदं वो दंडकम्मं होतु, इमं उदकं ओटरित्व तिथथ"ति उपान्धगाथं तव अहा -

84.

"एथा लक्षणा सीता च, उभो ओटराथोडका"न्ति।

तस्सत्थो – एथा लक्खण सीता च आगच्छथा, उभोपि ओतारथा उदकान्ति;

ते एकवाकानेनेव ओतरित्वा अथान्सु। अथ नेसं पितु पवत्तिं अरोसेंटो सेसं उपाढगथमहा -

"एवायं भारतो अहा, राजा दशरथो मतो"ति।

ते पितु मतासासनं सुत्वव विसान्या अहेसुं। पुनापि नेसं कथेसी, पुनापि ते विसान्या अहेसुन्ति एवं यावततियां विसानितां पत्ते ते अमाक्का उक्खीपित्वा उदका निहारित्वा थले निसीदापेट्वा लद्धसासेसु तेसु सब्बे अण्णामन्नं रोदित्वा परिदेवित्वा निसिदिंसु। तदा भरतकुमारो सिंतेसी - "मयहं भता लक्खनकुमारो च भगिनी च सीता देवी पितु मतासासनं सुत्वव सोकं संधारेतुं न सक्कोंति, रामपंडितो पना नेव सोकाति, न परिदेवति, किं नु खो तस्स असोकनकारणं, पुच्चिसामि न'अन्ति। तो तं पुच्चन्तो दुतीयं गथमः -

85.

"केना रामप्पाभावेन, सोसिताबं न सोकासि;

पितरं कालकटं सुत्वा, न तं पसहते दुःख'न्ति।

तत्थ पभावेनति अनुभावेन। न तं पसहते दुखंति एवरूपं दुक्खं केन कारणेन तं न पीड़ाति, किं ते अशोकनकारणं, कथेहि तव नन्ति।

अथस्सा रामपंडितो अत्तानो अशोकाकरणं कथेंटो -

86.

"यं न सक्क निपालेतुं, पोसेन लपतं बहुं;

सा किस्सा विष्णु मेधावी, अत्तनमुपतपये।

87.

"दहरा च हि वुधा च, ये बाला ये च पंडिता;

अद्धा सेवा दलिद्दा च, सब्बे मक्कूपरायणा।

88.

" फलानामिव पक्कनं, निच्चं पतनतो भयं;

एवं जटां मक्कणं, निक्कं मरणतो भयं।

89.

"सयामेके न डिस्संति, पतो दिट्ठा बहुज्जना;

पतो एके न दिसंति, सयं दिट्ठा बहुज्जना।

90.

"परिदेवयामानो सी, किञ्चिदत्थं उदाब्बहे;

सम्मूढो हिंसमत्तनं, कयिरा तं विकक्खणो।

91.

"किसो विवाणो भवति, हिंसामत्तनमत्तनो;

न तेन पेटा पलेन्ति, निरत्था परिदेवना।

92.

"यथा शरणमादित्तं, वारिणा परिनिब्बये;

एवमपि धीरो सुतवा, मेधावी पण्डितो नरो;

खिप्पमुप्पतितं सोकं, वातो तुलनव धंसये।

93.

"मैकको एकोवा एक्सेति, एकोवा जायते कुले;

संयोगपरमत्वेव, सम्भोगा सब्बपाणिणं।

94.

"Tasmā hi dhīrassa bahussutassa, sampassato lokamimaṃ parañca;

अनन्याय धम्मं हदायं मनञ्च, सोका महन्तपि न तपयन्ति।

95.

"सोहं दसांचा भोक्खाञ्च, भरिसामि च नाताके;

सेसांका पालयिस्सामि, किच्चेमेतम विजानातो"ति। —

इमहि दशहि गाथाहि अनिच्चतं पकासेति।

तत्थ निपालेतुन्ति रक्खितुम्। लपटन्ति लपन्तानां। इदं वुट्टं होति - "तत् भारत, यं सत्तनं जीवितं बहुमपि विलापंतानां पुरिसानां एकेनापि मा उच्छिज्जिति न सक्क रक्खितुं, सो दानि मदिसो अथा।" लोकाधम्मे तथातो जानन्तो विन्निउ मेधावी पण्डितो मरणपरियोसनजीवितेसु सत्तेसु किस्सा अत्तनमुपतपये, किंकरण अनुपकारेण सोकादुक्खेन अत्तनं संतापेय्यति।

दहरा बिल्ली गाथा" मक्कु नामेसा तत् भारत, नेव सुवन्नारूपकसदिसानं दहरणं खट्टियकुमारकादीनं, न वुद्धिपट्टानां महायोधनं, न बलानां पुथुज्जनसत्तनं, न बुद्धदीनं पंडितानं, न चक्कवत्तिदीनं इस्सरणं, न निधनं दलिद्दिनां लज्जति, सब्बेपिमे सत्ता मक्कुपरायणं मरणमुखे संभग्गविभग्गा भवन्तियेवति दस्सानत्थं वुत्ता।

निक्कं पतनतोति इदं वुत्तं होति - यथा हि तत् भारत, पक्कणं फलानां पक्ककालतो पठया "इदानि वंता चिज्जित्वा पतिसन्ति, इदानि पतिसंति"ति पतनतो भयं निच्चं धुवं एकांशिकमेव भवति, एवं असांकनियातो एवं जातनं मक्कनमपि एकांशिक्येव मरणतो भयं, नत्थि सो खणो वा लयो वा यत्थ तेसं मरणं न असंकिताबं भवेयति।

सायन्ति विकले. इमिना रतिभागे च दिट्ठानं दिवासभागे अदस्सानं, दिवाभागे च दित्थानं रतिभागे अदस्सानं दीपेति। किञ्चिदत्थन्ति "पिता मे, पुत्तो मे"तिदिहि परिदेवमनोवा पोसो सम्मुधो अत्तनं हिंसान्तो किलामेंटो अप्पमत्तकम्पि अत्थं अहारेया। कयिरतां विकक्खनोति अथ पण्डितो पुरिसो एवं परिदेवं करेया, यस्मा पना परिदेवन्तो मतं वा अनेतुं अन्नं वा तस्स वधिं कटुं न सक्कोति, तस्मा निरत्थकत्ता परिदेवित्स्सा पंडिता न परिदेवन्ति।

अत्तनमत्तनोति अत्तनो अत्तभावं सोकापरिदेवदुक्खेन हिंसान्तो। न तेनाति तेन परिदेवेन परलोकं गता सत्ता न पलेन्ति न यापेन्ति। निरत्थति तस्मा तेसं मतसत्तनं अयं परिदेवाना निरत्थका। सरणन्ति निवासाघं। इदं वुट्टं होति - यथा पंडितो पुरिसो अत्तनो वसनगारे अदित्ते मुहुत्तमपि वोसनं अनपज्जित्वा घटसतेन घटसहस्सेन वारिणा निब्बापयतेव, एवं धीरो उपपतितं सोकं खिप्पमेव निब्बापये। तुलां विय च वातो यथा संथातुं न सक्कोति, एवं धंसये विद्धंसेयति अत्थो।

मैको एकोवा एकेतिति एत्था ताता भारत, इमे सत्त कम्मस्सका नाम, तथा हि इतो परलोकं गच्चन्तो सत्तो एकोवा एकेति अतिक्कमति, खटियादिकुले जयामानोपि एकोवा गन्त्वा जयति। तत्थ तथा पना नातिमित्तसंयोगेन "अयं मे पिता, अयं मे माता, अयं मे मिटो"ति संयोगपरमत्वेव सम्भोगा सब्बपाणिनं, परमत्थेन पना तिसुपि भावेसु कम्मासससकावेते सत्ताति अत्थो.

तस्माति यस्मा एतेसं सत्तनं नातिमित्तसंयोगम् नातिमित्तपरिभोगमत्तं थपेत्वा इतो परं अन्नं नत्थि, तस्मा। सम्पस्सतोति इमान्च पराञ्च लोकं नानाभावविनाभावमेव सम्मा पस्सतो। अनन्या धम्मन्ति अष्टविधलोकधम्मं जनित्वा। हदयं मनञ्चति इदं उभयम्पि चित्तसेवा नामम्। इदं वुत्तं होति -

"लाभो अलाभो यशो अयासो च, निन्दा पसांसा च सुखञ्च दुक्खं;

एते अनिच्च मनुजेसु धम्म, मा सोका किं सोकासी पोथपदा'ति। (जा. 1.4.114)-

इमेसं अट्ठन्नं लोकधम्मनं येन केनचि चित्तं परियादीयति, तस्स च अनिच्चतं नात्वा ऋहितस्स धीरस्सा पितुपुत्तमरणादिवत्थुका महंतापि सोका हदयं न तपयन्तीति. एतं वा आठविधं लोकधम्मं नट्वा ऋतस्स हदयवत्थुञ्च मनञ्च महन्तपि सोका न तपयन्तीति एवमपेट्ठा अत्थो दतहब्बो।

सोहंदासांचा भोक्खाञ्चति गाथाय - तत् भारत, अन्धबलानां सत्तानं विया मम रोदनपरिदेवानां नाम न अनुच्चविकं, अहं पण पितु अचयेना तस्स ठाणे ठत्वा कपानादीनं दानराहनं दानं, थनंतराहणं थनंतरम, यसराहनं यसं दशमि, पितर मे परिभुत्तनयेन इस्सरियम् परिभुञ्जिस्सामि, नाताके च पोसेस्सामि, अवसेसंच अंतोपरिजनादिकं जनं पलेसामि, धम्मिकासमानब्राह्मणं धम्मिकां रक्खावरनगुत्तीं करिस्सामिति इवन्हि जानतो पण्डितपुरिसस्सा अनुरूपं किक्कन्ति अथो।

परिसा इमं रामपंडितस्सा अनिच्चतापकासनं धम्मदेसनं सुत्वा निस्सोका एहेसुं। ततो भरतकुमारो रामपंडितं वंदित्वा "बाराणसिराजं सम्पतिच्चता" आहा। तता लक्षणाञ्च, सीतादेविञ्च गहेत्वा गन्त्वा रज्जं अनुसासाथति। तुम्हें पाना, देवता. ताता, मम पिता "द्वादसवसच्चयेन आगन्त्वा रज्जं कार्यासि'ति मन अवोका, अहं इदानेव गच्छन्तो तस्स वचनाकारो नाम न होमि, आन्यानिपि तिनि वस्सनि अतिक्कमित्वा। अगामिस्सामिति. "एट्टकं कालं को रज्जं करस्सति?" "तुम्हे करता'ति. "न मयां करेसमा'ति।' "तेन हि याव ममगमना इमा पादुका करेसंती अत्तनो तिनपादुका ओमुन्चित्वा अदासि।" ते तैयोपि जन पादुका गहेत्वा रामपंडितं वंदित्वा महाजनपरिवुता बाराणसीं अगमंसु। तिनि संवच्चराणि पादुका रज्जं करेसुम्। अमाक्का तिनपादुका राजपल्लंके थापेत्वा विनिच्चिन्ति। ससे दुब्बिनिचितो होति, पादुका अण्णामन्नं पतिहन्नन्ति। तया संन्या पुना विनिच्चिन्ति। सम्मा विनिच्चिटकाले पादुका निस्सादा सन्निसिडन्ति। रामपंडितो तिन्नं संवच्चरणं अच्चयेन अरण्यं निक्खमित्वा बाराणसिनगरं पट्वा उय्यनं पविसि। तस्स अगमनाभवं नात्वा कुमारा अमाच्छगणपरिवुता उय्यनं गन्त्वा सीतां अग्गमहेसिं कत्वा उभिनमपि अभिषेकं अकांशु। एवं अभिषेकप्पत्तो महासत्तो अलंक्तराथे तथ्वा महान्तेन परिवारेण नगरं पविसीत्व पदक्खिनं कत्वा चंडकपासादवरस्स महतलं अभिरुहि। ततो पठया सोसासा वाससासहसानि धम्मेण रज्जं करेत्व अयुपरियोसाने सग्गपुराम शुद्धि।

96.

"दसा वाससाहस्सानि, सत्थि वाससातानि च;

कम्बुगीवो महाबाहु, रामो राजमकारयि'ति। —

अयं अभिसंबुद्धगाथा तमत्थं दिपेति।

तत्थ कम्बुगीवोति सुवन्नानगसादिसागिवो। सुवन्नाहि कंबुति वुच्चति।

सत्था इमं धम्मदेसनं अहारित्वा सच्चानि पाकसेत्व जातकं समोधनेसि, सैकापरियोसाने कुटुंबिको सोतापत्तिफले पतितहि। तदा दशरथमहाराज शुद्धोदनमहाराज अहोसि, माता महामायादेवी, सीता राहुलमाता, भरतो आनंदो, लक्खानो सारिपुत्तो, परिसा बुद्धपरिसा, रामपण्डितो पना अहमेव अहोसिन्ति।

दशरथजातकवन्नान सत्तमा।

पाली-देवनागरी संस्करण
(स्रोत: tipitaka.org)

[461] 7. दसरथजातकवन्न

एथ लक्खन सीता चति इदं सत्था जेतवने विहरन्तो एकं मात्पिटिकं कुटुम्बिकं अर्भ कथेसि। सो हि पितृ कालकते सोकाभिभूतो सब्बकिचचानि पहाय सोकानुवत्सकोव अहोसि। सत्था पचाचूससमये लोकं ओलोकेन्तो तस्स सोतापट्टफालूपनिस्सयं दिसवापुनदिवसे सावत्थियां पिण्डाय चरित्वा कटभत्तकिच्चो भिक्खु उयोजेत्वा एकं पच्चासमनं गहेत्वा तस्स गेहं गन्त्वा वंदित्वा निसि साइनंमधुवचनेन अलपन्तो "किं सोचसि उपासका"ति वत्वा "अम, भन्ते, पितुसोको मं बधति"ति वुत्ते" उपासक, पोराणकपंडिता अट्ठविधे लोकधम्मे तत्थो जानंता पितृ कालकते अप्पमत्तकम्पि सोकं न करिंसु"ति वत्वा तेन याचितो अस्तं अहारी।

अस्ते बरनसियं दशरथमहाराजा नाम अगतिगमनं पहाय धम्मेन राजमजं करेसि। तस्स सोळस नामकरणं इत्थिसहस्सानं जेट्ठिका अग्गमहेसि द्वे पुत्ते एकञ्च धीतरं विजयि। जेत्थपुत्तो रामपंडितो नाम अहोसि, दुतियो लक्षणकुमारो नाम, धीता सीता देवी नाम। अपरभागे महेसि कालमकसि। राजा तस्सा कालकटय चित्रारं सोकवसं गन्त्वा अमचच्छेहि संजनापितो तस्सा कट्टब्बपरिहारं कत्वा अञ्जनं अग्गमहेसित्थाने ओमेसि। सा रञ्चो पिया अहोसि मनापा। सापि अपरभागे गभं गण्हित्वा लद्धगभ्परिहार पुत्तं विजयि, "भारतकुमारो"तिस्स नामं अकंसु। राजा पुत्तसिनेहेन " भद्दे, वरं ते दम्मि, गंहाहि"ति आह। सा गहितकं कत्वा ओकेत्वा कुमारस्स सत्तत्थवस्सकाले राजानं उपसङ्कमित्वा "देव, तुमहि मयहं पुत्तस्स वरो दिन्नो, इदानिस्स वरं देथा"ति अह। गंह, भद्देति। "देव, पुत्तस्स मे रजदजं देथा"ति वुत्ते राजा अच्छरं पहरित्वा "नस्स, वसलि, मयहं द्वे पुत्त अग्गिखन्धा विय जलति, ते मरापेत्वा तव पुत्तस्स राजदजं याचसी"ति तज्जजेसि। सा भीता सिरिगभं पविसीत्वा अञ्जेसुपि दयेसु राजानं पुन्पपुनं रजदमेव याचि।

राजा तस्सा तं वरं अदत्वाव चिन्तेसि "मातुगामो नाम अकतञ्जु मित्तदुब्भि, अयं मे कूटपन्नं वा कुटलञ्जं वा कत्वा पुत्ते घटपेय"ति। सो पुत्ते पत्कोसापेत्वा तमत्थं अरोचेत्वा "ताता, तुम्हाकं इध वसंतानं अंतरायोपि भवेय, अरि समन्तर्जादजं वा अरंड्नं वा गन्त्वा मम मर्मणकालेन्त्वा कुलसन्तकंन्द रज्जं गन्धे अगायथा"ति वत्वा पुन नेमित्तके ब्राह्मणे पकोसपेत्वा अत्तनो अपरिच्छेदं पुच्छित्वा "अञ्जनानि द्वादस वस्सनि पवत्तिस्स्ति"ति सुत्वा "ताता, इतो द्वादसवस्सच्चचयेन आगन्त्वा छत्तं उस्सापेयथा"ति अह। ते "साधु"ति वत्वा पितरं वंदित्वा रोदंता पासादा ओतरिंसु। सीता देवी "अहम्पि भातिकेहि सद्धिं गमिस्सामि"ति पितरं वंदित्वा रोदन्ति निक्खामि। तयोपि जना महापरिवार निकमित्वा माजं निवत्तेत्वा अनुपुब्बेन हिमवन्तं पविसीत्वा स नग्नोदके सरलफलाफले पदेसे असमं मापेत्वा फलाफलेन यापेंटा वासिंसु।

लक्खणपंडितो च सीता च रामपंडितं यचित्वा "तुम्हे अम्हकं पितुत्थाने थिता, तस्मा अस्समेयेव होथ, मयं फलफलं आहार्वा तुम पोसेसामा"ति पतिञ्चं गांहिंसु। ततो पत्थाय रामपण्डितो तत्थेव होति। इतरे द्वे फलाफलं अहारित्वा तं पतिजग्गिंसु। एव तेसं फलाफलेन यापेत्वा वसंतानं दशरथमहाराजा पुत्तसोकेन नवमे संवच्छरे कालमकासि। तस्स सरीरकिच्चं करेत्वा देवी "अत्तनो पुत्तस्स भरतकुमारस्स छत्तं उस्सापेथा"ति अह। अमचच्चा पन "छत्तस्मामिका अरञ्जे वसन्ति"ति न अदंसु। भरतकुमारो "मम भतरं रामपंडितं अरंडन्तो अनेत्वा छत्तं उस्सापेस्सामि"ति पञ्चराजककुधभंडानि गहेत्वा चतुर्गिनीय सेनाय तस्स वसनत्थानं पट्वा अविदूरेण खंडावारं कत्वा तत्थ अंगेत्वा कटिपयेहि अमचदचेहि सद्धिं लाखनपंडितस्स च सीताय चन्नदं गटकले असमपदं पविसीत्वा असमपदद्वारे योगितकञ्चनरूपकं विय रामपंडितं निरासङ्कं सुखनिसि दर्शनं उपसङ्कमित्वा वंदित्वा एकमंतं ठितो रञ्जनो पतितं अरोचेत्वा सद्धिं अमचच्छेहि पदेसु पतित्व रोदति। रामपंडितो पन नेव सोचि, न परिदेवि, इन्द्रियविकारमत्तमपिस्स नहोसि। भरतस्स पन रोदित्वा निसि गानकाले संयन्हसमये इतरे द्वे फलाफलं आदाय अग्मिन्सु। रामपंडितो चिन्तेसि "इमे दाहरा मयहं विय परिग्गनघनपञ्जा एतेसं नत्थि, सहसा 'पिता वो मतो'ति वुत्ते सोकं संधारेतुं ट्रैक्ट असकोन्तानं हदयमपि तेसं फलेयय, उपायेन ते उदकं ओतारेत्वा एतं पवत्तिं अरोचेसामि"ति। अथ नेसं पुरतो एकं उदकट्ठानं दस्सेत्वा "तुम्हे अतिचिरेन आगता, इदं वो दंडकम्मं होतु, इमं उदकं ओतरित्वा तिट्ठत्था"ति उपन्नगाथं तव अह -

व्हाट.

"एथ लक्षं सीता च, उभो ओतरथोडक"न्ति॥

तस्सत्थो — एथ लक्खां सीता च आगच्छथ, उभोपि ओतरथ उदकन्ति।

ते एकवचनेनेव ओतरित्वा अट्ठंसु। अथ नेसं पितु पवत्तिं अरोचेनतो सेसं उपन्नगतः -

"एवायं भरतो अह, राजा दशरथो मतो"ति॥

ते पितु मत्सासनं सुत्वाव विज्ञान अहेसुं। पुनपि नेसं कथेसि, पुनपि ते विसं ज्ञान अहेसुन्ति एवं यावत्तियं विसंज्ञितं फूल ते अमचदचा उखिपित्वा उदका निहारित्वा थले निसीदापेट्वा लद्धस्ससेसु तेसु सब्बे अञ्जनमनदं रोदित्वा परिदेवित निवासिडिन्सु। तदा भरतकुमारो चिन्तेसि - "मयहं भाता लक्षणकुमारो च भगिनी च सीता देवी पितु मत्सासनं सुत्वाव सोकं संधारेतुं न सक्रोन्ति, रामपंडितो पण नेव सोचति, न परिदेवति, किं नु खो तस्स असोचनकारणं, पुच्छिसामि न"न्ति। सो तं पुच्छन्तो दूतीयं गतः -

85.

"केन रामप्पभावेन, सोचितब्बं न सोचसी।"

पितरं कालकतं सुत्वा, न तं पसहते दुःख"न्ति॥

तत् पभावेनति अनुभावेन। न तं पसहते दुखन्ति एवरूपं दुक्खं केन कारणेन तं न पियेति, किं ते असोचनकारणं, कथेहि तव नन्ति।

अथस्स रामपंडितो अत्तनो असोचनकारणं कथेन्टो -

6.

"यं न सका निपालेतुं, पोसेन लपतं बहुं।

स किस्स विञ्चु मेधावी, अत्तनमुपतपये॥

.

"धारा च हि वुधा च, ये बाला ये च पंडिता।"

अन्ना चेव दलिद्दा च, सब्बे मचचुपरायणा॥

88.

"फलानामिव पकनं, निच्चं च पतनतो भयं।

एवं जतन मचदचनं, निच्चचं मरन्तो भयं॥

.

"सायमेके न दिसंति, पतो दिट्ठा बहुजजना।"

पतो एके न दिसंति, सयं दिट्ठा बहुजजना॥

90.

"परिदेवयमानो चे, किञ्चिदत्थं उद्ब्बहे।"

सम्मूळधो हिंसमतानां, कयिरा तं विचखणो॥

.

"किसो विवन्नो भवति, हिंसमत्तनमत्तनो।

न तेन पेटा पलेन्ति, निरथा परिदेवना॥

.

"यथा शरणमादित्तं, वारिणा परिणिबये।

एवमपि धीरो सुतवा, मेधावी पंडितो नरो।

खिप्पमुप्पितं सोकं, वातो तुलव धंसये॥

.

"मच्चो एकोव अच्छाचेति, एकोव जायते कुले।

संयोगपरमात्वेव, सम्भोगा सब्बपाणिनं॥

.

"तस्मा हि धीरेस्स बहुसुत्सुस्स, सम्पस्सतो लोकमिमं पञ्च।

अञ्जन्या धम्मं हदयं मन्नच, सोका महन्तपि न तपयन्ति॥

.

"सोहं दशस्ञ्च भोक्ञ्च, भृस्सामि च नाटकके।"

सेसञ्च पालयिस्सामि, किच्चमेतं विजानतो"ति॥ –

इमाहि दशहि गाथाहि अनिच्छतं पकासेति।

तत् निपालेतुन्ति रक्खितुं। लपटन्ति लपन्तनं। इदं वुत्तं होति -"तत् भारत, यं सत्यानं जीवितं बहुमपि विल्पनतानं पुरिसानं एकेनापि मा उच्छिज्जिति न सक्रका रक्खितुं, सो दानि मादिसो अट्ठ लोकधम्मे तत्थो जानंतो विञ्चु मेधावी पंडितो मरणपरियोसानजीवितेसु सत्तेसु किस्स अत्तनमुपतपये, किंकारणा अनुपकारेण सोकदुक्खेन अत्तानां सन्तापेय"ति।

धरा चाति गाथा" मच्छु नामेस तात भरत, नेव सुवन्नरूपकसदिसानं दहराणं खत्तियकुमारकादिनं, न वुद्धिप्पत्तनं महायोधनं, न बालानं पुथुजह्नसत्तानं, न बुद्धादीनं पंडितानं, न च खंडावतिआदीनं इस्सरानं, न निद्धधानां दलिदादीनं लज्जति, सब्बेपिमे सत्य मच्छुपरायणा मरणमुखे संभग्गविभग्गा भवन्तियेवा"ति दस्सन्तं वुत्ता।

निचदचं पतनतोति इदं वुत्तं होति - यथा हि तत् भारत, पक्कनं फलानं पककलतो पट्ठय "इदानि वंता छिज्डजित्वा पतिसंति, इदानि पतिसंति"ति पतनतो भयं निचदचं धुवं एकंसिकमेव भवति, एवं असङ्कनीयतो एवं जन्मनं मच्छनंमपि एकंसिकंयेव मरणतो भयं, नत्थि सो खणो वा लयो वा यथा तेसं मरणं न असङ्किकत्बं भवेयति।

सायन्ति विकाले। इमिना रत्तिभागे च दिट्ठानं दयभागे अडस्सनं, दयभागे च दिट्ठानं रतिभागे अडस्सनं दीपेति। किञ्चिदत्थन्ति "पिता मे, पुत्तो मे"तिआधिहि परिदेवमनोव पोसो सम्मुळधो अत्तानं हिंसान्तो किलमेंन्तो अप्पमत्तकम्पि अथं अहरेय। कयिरा तं विचखनोति अथ पण्डितो पुरिसो एवं परिदेवं करेय, यस्मा पण परिदेवन्तो मतं वा एनेतुं अञ्जन वा तस्स वन्निं कटुं न सस्क्रकोति, तस्मा निर्थक्ता परिदेवित्स्स पण्डिता न परिदेवन्ति।

अत्तनमत्तनोति अत्तनो अत्तभावं सोकपरिदेवदुक्खेन हिंसान्तो। न तेनाति तेन परिदेवेन परलोकं गता सत्य न पलेन्ति न यापेन्ति। निरथति तस्मा तेसं मत्सत्तनं अयं परिदेवना निरथका। शरणन्ति निवासगेहं। इदं वुत्तं होति - यथा पंडितो पुरिसो अत्तनो वासनागारे आदित्ते मुहुत्तमपि वोसानं अनपजदजित्वा घटसतेन घटसहस्सेन वारिना निब्बापयेव, एवं धीरो उप्पतितं सोकं खिप्पमेव निब्बापये। तुलं विय च वातो यथा संथातुं न सचित्रकोति, एवं धनसये विद्धंसैयति अथो।

मचचो एकोव अचच्छेति एत तत् भारत, इमे सत्य कम्मस्सका नाम, तथा हि इतो परलोकं गच्छन्तो सत्तो एकोव अचच्छेति अति त्रैकमति, खत्तियादिकुले जायमानोपि एकोव गन्त्वा जायति। तत्थ तथा पण ज्ञातिमितसंयोगेन "अयं मे पिता, अयं मे माता, अयं मे मित्तो"ति संयोगपरमत्वेव सम्भोग सब्बपणिनं, परमत्थेन पन तीसुपि भवेसु कम्मस्सकावेते सत्ताति अथो।

तस्माति यस्मा एतेसं सत्यानं नातिमित्तसंयोगं नातिमित्तपरिभोगमत्तं ओगेत्वा इतो परं अञ्जन नत्थि, तस्मा। सम्पासस्तोति इमाञ्च पञ्च लोकं नानाभावविनाभावमेव सम्मा पससतो। अञ्जन्या धम्मन्ति अट्ठविधलोकधम्मं जनित्वा। हदयं मन्नचाति इदं उभयम्पि चित्तस्सेव नमं। इदं वुत्तं होति -

"लाभो अलभो यसो अयसो च, निन्दा पसंसा च सुखञ्च दुक्खं।

एते अनिच्चचा मनुजेसु धम्मा, मा सोच किं सोचसि पोट्ठपदा"ति॥ (जा॰ 1.4.114) —

इमेसं अट्ठ नयनं लोकधम्मनं येन केनचि चित्तं परियादीयति, तस्स च अनिचदचतं ञत्वा थित्स्स धीरेस्स पितुपुत्तमरणादिवत्थुका महन्तपि सोका हदयं न तपयन्तिति। एतं वा अट्ठविधं लोकधम्मं ञत्वा ठितस्स हदयवत्थुञ्च मन्नच महन्तपि सोका न तपयन्तिति एवेम्पेत्थ अत्थो दत्थब्बो।

सोहं दशञ्च भोक्ञ्चाति गाथाय - तत् भारत, अन्धबलानं सत्तानं विय मम रोडनपरिदेवनं नाम नच्छविकं, अहं पण पितु आचचयेन तस्स ठाणे तत्त्व कपानादीनं दनारहनं दानं, थनान्तराहनं थनान्तरं, यसारहनं यसं दशमि, पितरा मे परिभुत्तनयेन इस्सिरीयं अनुनां। परिभुञ्जिसामि, नत्के च पोसेसामि, अवसेसंच अंतोपरिजनादिकं जनं पलेसामि, धम्मिकसमन्ब्राह्मणां धम्मिकं रक्खारनगुत्तिं करिसामिति एवञ्हि जानतो पण्डितपुरिस्स्स श्रीं किच्चन्ति अथो।

परिसा इमं रामपंडितस्स अनिच्छतापकासनं धम्मदेसनं सुत्वा निस्सोका अहेसुं। ततो भरतकुमारो रामपंडितं वंदित्वा "बरनसिरजजं सम्पतिच्छथा"ति अह। तत् लक्षाञ्च, सीतादेविञ्च गहेत्वा गन्त्वा रज्जं अनुसास्थति। हे पन, देवाति। तात, मम पिता "द्वादसवस्सच्चयेन आगन्त्वा रज्जं करेयसी"ति मन अवोच, अहं इदानेव गच्छन्तो तस्स वचनकरो नाम न होमि, अञ्जनानिपि तेनि वस्सनि अति तृक्कमित्वा आगमिस्सामीति। "एत्तकं कालं को रज्जं कैरेस्सति"ति? "तुम्हे करेथा"ति। "न मयं करेस्सामा"ति। "तेन हि याव ममागमना इमा पादुका कैरेस्सन्ति"ति अत्तानो तिनपादुका ओमञ्चित्व अदासि। ते तयोपि जन पादुका गहेत्वा रामपंडितं वंदित्वा महाजनपरिवुता बारांसिं अगमंसु। तेनि संवच्छराणि पादुका राजमजं करेसुं। आमचा तिनपदुका राजपललङके ओगेत्वा अद्दं विनिच्छिन्ति। सचे दुब्बिनिचितो होति, पादुका अञ्जमञ्चं पतिहञ्चन्ति। ताई संज्ञय पुन विनिच्छिन्ति। सम्मा विनिचितकाले पादुका निस्सद्द स नारायणिसिदन्ति। रामपंडितो तिन्नं संवच्छरणं अच्चादच्येन अरञ्जन निखमित्वा बाराणसिनगरं पट्वा उययानं पविसि। तस्स आगमनभावं ञत्वा कुमारा अमचत्गणपरिवुता उययानं गन्त्वा सीतं अग्गमहेसिं कत्वा उभि साइनमपि अभिसेकं अकांसु। एवं अभिसेकप्पत्तो महासत्तो अलङ्कत्रथे तत्त्वा महन्तेन परिवारेन नगरं पविसीत्वा पदक्खिनं कत्वा चण्डकपासादवर्सस्स महतलं अभिरुहि। ततो पट्ठाय सोळस वस्ससहस्सनि धम्मेन राजजं कैरेत्वा अयुपेरियोसाने सग्गपुरं पूरसि।

.

"दस वस्ससहस्सनि, सत्थि वस्सस्सतानि च।'

कम्बुगीवो महाबाहु, रामो रजमकार्यि"ति॥ —

अयं अभिसंबुद्धगाथा तमथं दीपेति।

तत्थ कम्बुगीवोति सुवन्नाळीङ्गसदिसगीवो। सुवन्नञ्हि कम्बूति वुचदचति।

सत्था इमं धम्मदेसनं अहारित्वा सच्चानि पाकसेत्वा जातकं समोधनसि, सचदचपरियोसाने कुटुम्बिको सोतापट्टफले पतित्थहि। तदा दशरथमहाराजा शुद्धोदनमहाराजा अहोसि, माता महामायादेवी, सीता राहुलमाता, भरतो आनंदो, लक्खणो सारिपुत्तो, परिसा बुद्धपरिसा, रामपंडितो पणेव अहम अहोसिंति।

दसार्थजातकवन्नना सत्तमा।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **संवर-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

जातक क्रमांक 462
संवर-जातक

"हे महामहिम, आपका स्वभाव," इत्यादि। यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक भिक्षु के बारे में सुनाई थी, जिसने साधना करना छोड़ दिया था। हमें पता चलता है कि वह श्रावस्ती नगर का एक संपन्न युवक था। गुरु के प्रवचन सुनकर उसने संसार त्याग दिया। अपने गुरुओं और प्रशिक्षकों द्वारा दिए गए कार्यों को पूरा करते हुए उसने पतिमोक्ख के दोनों भागों को कंठस्थ कर लिया। पाँच वर्ष बीत जाने पर उसने कहा, "जब मुझे मृदु समाधि प्राप्त करने का मार्ग ज्ञात हो जाएगा, तब मैं वन में निवास करूँगा।" तब उसने अपने गुरुओं और प्रशिक्षकों से विदा ली और कोसल राज्य के एक सीमावर्ती गाँव में चला गया। वहाँ के लोग उसके व्यवहार से प्रसन्न हुए और उसने पत्तों की एक कुटिया बनाई और वहाँ उसकी सेवा की गई। वर्षा ऋतु में प्रवेश करते ही, उसने उत्साहपूर्वक, उत्सुकता से और कठिन परिश्रम करते हुए तीन महीने तक मृदु समाधि प्राप्त करने का प्रयास किया, परन्तु इसका कोई प्रमाण नहीं मिला। तब उसने सोचा, “सचमुच मैं सांसारिक हो गया हूँ! जंगल में रहने का मेरा क्या काम?” तब उसने मन ही मन कहा, “मैं जेतवन मठ लौटूँगा, और वहाँ तथागत (बुद्ध) की कृपा के दर्शन करके और उनके मधुर प्रवचन सुनकर अपने दिन व्यतीत करूँगा।” इस प्रकार उसने अपने परिश्रम को त्याग दिया; और प्रस्थान करते हुए वह कुछ समय बाद जेतवन मठ पहुँच गया। उसके गुरुओं, मित्रों और परिचितों ने उससे उसके आने का कारण पूछा। उसने उन्हें बताया, और उन्होंने उसे फटकारा और पूछा कि उसने ऐसा क्यों किया। फिर वे उसे गुरु के समक्ष ले गए। गुरु ने कहा, “भाइयों, तुम यहाँ एक भिक्षु को उसकी इच्छा के विरुद्ध क्यों लाए हो?” उन्होंने उत्तर दिया, “यह भिक्षु यहाँ इसलिए आया है क्योंकि उसने अपने परिश्रम को त्याग दिया है।” गुरु ने पूछा, “क्या यह सच है, जैसा कि वे मुझे बता रहे हैं?” “जी हाँ,” उस भिक्षु ने कहा। गुरु ने कहा, "भाई, तुमने प्रयास करना क्यों छोड़ दिया? इस धम्म (धार्मिक मार्ग) में कमजोर और आलसी व्यक्ति के लिए कोई उच्च फल या संतत्व नहीं है: केवल वे ही इसे प्राप्त करते हैं जो अथक प्रयास करते हैं। बहुत समय पहले तुम बलवान थे, तुम्हें सिखाना आसान था: और इस प्रकार, बनारस के राजा के सौ पुत्रों में सबसे छोटे होते हुए भी, तुमने ज्ञानियों की सलाह का पालन करके श्वेत छत्र प्राप्त किया।" ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, उनके सौ पुत्रों में सबसे छोटे पुत्र का नाम राजकुमार सम्वर रखा गया। राजा ने अपने प्रत्येक पुत्र को एक-एक दरबारी की देखरेख में नियुक्त किया और उन्हें निर्देश दिया कि वे प्रत्येक पुत्र को वह शिक्षा दें जो उन्हें प्राप्त करनी चाहिए। राजकुमार सम्वर को शिक्षा देने वाला दरबारी बोधिसत्व था, जो ज्ञानवान और विद्वान था और राजा के पुत्र के लिए पिता के समान था। जैसे-जैसे पुत्रों की शिक्षा पूरी होती गई, दरबारी उन्हें राजा के दर्शन के लिए लाते रहे। राजा ने प्रत्येक पुत्र को एक-एक प्रांत सौंप दिया और उन्हें विदा कर दिया।

जब राजकुमार सम्वर ने सभी विद्याओं में पारंगत हो गए, तो उन्होंने बोधिसत्व से पूछा, "हे पिता, यदि मेरे पिता मुझे किसी प्रांत में भेजें, तो मुझे क्या करना चाहिए?" उन्होंने उत्तर दिया, "हे मेरे पुत्र, जब तुम्हें कोई प्रांत दिया जाए, तो उसे अस्वीकार कर देना और कहना, हे प्रभु, मैं सबसे छोटा हूँ: यदि मैं भी जाऊँगा, तो आपके चरणों में कोई नहीं रहेगा: मैं यहीं रहूँगा, आपके चरणों में।" फिर एक दिन, जब राजकुमार सम्वर ने उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ खड़े थे, तो राजा ने उनसे पूछा, "हे मेरे पुत्र, क्या तुमने अपनी विद्या पूर्ण कर ली है?" "जी हे प्रभु।" "एक प्रांत चुन लो।" "हे प्रभु, आपके चरणों में कोई नहीं रहेगा: मुझे यहीं आपके चरणों में रहने दो, और कहीं नहीं!" राजा प्रसन्न हुए और उन्होंने सहमति दे दी।

उसके बाद वह राजा के चरणों में वहीं बैठा रहा; और फिर बोधिसत्व से पूछा, "हे पिता, मुझे और क्या करना चाहिए?" राजा ने कहा, "राजा से किसी पुराने उद्यान की मांग करो।" राजकुमार ने बात मान ली और एक उद्यान मांगा: वहां उगने वाले फलों और फूलों से उसने शहर के प्रभावशाली लोगों से मित्रता कर ली। उसने फिर पूछा कि उसे क्या करना चाहिए। बोधिसत्व ने कहा, "मेरे पुत्र, राजा से शहर में अन्न-भंडार के पैसे बांटने की अनुमति मांगो।" उसने ऐसा ही किया, और किसी की भी उपेक्षा किए बिना उसने शहर में अन्न-भंडार के पैसे बांट दिए। उसने फिर बोधिसत्व से सलाह मांगी, और राजा की सहमति प्राप्त करने के बाद, उसने महल में सेवकों, घोड़ों और सेना को बिना किसी चूक के भोजन वितरित किया: विदेशों से आए दूतों के लिए उसने आवास की व्यवस्था की, व्यापारियों के लिए कर निर्धारित किए, जो भी व्यवस्था करनी थी, उसने अकेले ही की। इस प्रकार, उस महान सत्ता की सलाह का पालन करते हुए, उसने घर के सदस्यों और घर के बाहर के लोगों, शहर के सभी लोगों, राज्य की प्रजा और अजनबियों, सभी से मित्रता कर ली; अपनी सुंदरता से उसने उन सभी को मानो लोहे के बंधन से बांध लिया था: वह उन सभी का प्रिय और चहेता था।

जब उचित समय पर राजा अपनी मृत्युशय्या पर लेटे थे, तब दरबारियों ने उनसे पूछा, “महाराज, आपकी मृत्यु के बाद हम श्वेत छत्र किसे देंगे?” उन्होंने कहा, “मित्रों, मेरे सभी पुत्रों का श्वेत छत्र पर अधिकार है। परन्तु आप इसे उसे दे सकते हैं जिसे आप प्रसन्न करना चाहें।” अतः उनकी मृत्यु के बाद, और अंतिम संस्कार संपन्न होने के बाद, सातवें दिन वे सब एकत्रित हुए और बोले, “हमारे राजा ने हमें कहा है

कि हम छत्र उसे दें जिसे हम प्रसन्न करना चाहें। जिसे हम प्रसन्न करना चाहते हैं, वह राजकुमार सम्वर हैं।" अतः उनके ऊपर सोने के झालरों से सुसज्जित श्वेत छत्र उठाया गया, और उनके संबंधी उन्हें ले गए।

महान राजा संवर ने बोधिसत्व की सलाह का पालन करते हुए धर्मपरायणता से शासन किया।

अन्य निन्यानवे राजकुमारों ने सुना कि उनके पिता की मृत्यु हो गई है और संवरा के ऊपर छत्र उठा दिया गया है। उन्होंने कहा, "परन्तु वह तो सबसे छोटा है; छत्र उसका नहीं है। चलो हम सब में सबसे बड़े के ऊपर छत्र उठाएँ।" वे सब एकजुट हो गए और संवरा को पत्र भेजकर उससे छत्र छोड़ने या युद्ध करने की विनती की; फिर उन्होंने नगर को घेर लिया। राजा ने यह समाचार बोधिसत्व को बताया और पूछा कि अब उन्हें क्या करना चाहिए। उन्होंने उत्तर दिया, "महाराज, आपको अपने भाइयों से युद्ध नहीं करना चाहिए। अपने पिता के खजाने को सौ भागों में बाँट लें और उनमें से निन्यानवे भाग अपने भाइयों को यह संदेश देकर भेज दें, "अपने पिता के खजाने का यह हिस्सा स्वीकार करो, क्योंकि मैं तुमसे युद्ध नहीं करूँगा।" संवरा ने वैसा ही किया।

तब सभी भाइयों में सबसे बड़े, उपोसथा नामक राजकुमार ने बाकी सभी को बुलाया और उनसे कहा, "मित्रों, राजा को हराने वाला कोई नहीं है; और हमारा यह छोटा भाई, यद्यपि वह हमारा शत्रु रहा है, अब शत्रु नहीं रहा: बल्कि वह हमें अपना धन भेजता है और हमसे लड़ने से इनकार करता है। अब हम सभी एक साथ छत्र नहीं उठा सकते; आइए हम केवल एक पर ही छत्र उठाएँ और उसे ही राजा बनाएँ; ताकि जब हम उससे मिलें, तो हम राजकोष उसे सौंप दें और अपने-अपने प्रांतों में लौट जाएँ।" तब इन सभी राजकुमारों ने नगर की घेराबंदी हटा ली और उसमें प्रवेश कर गए, अब वे प्रतिद्वंद्वी नहीं रहे। राजा ने अपने दरबारियों को उनका स्वागत करने का आदेश दिया और उन्हें राजकुमारों से मिलने के लिए भेजा। राजकुमार अपने साथ बड़ी संख्या में लोगों को लेकर पैदल ही प्रवेश किया और महल की सीढ़ियों पर चढ़कर, महान राजा सम्वर के प्रति पूर्ण विनम्रता दिखाते हुए, एक नीची जगह पर बैठ गए। राजा सम्वर श्वेत छत्र के नीचे सिंहासन पर विराजमान थे: उनका वैभव और वैभव अद्भुत था; वह जिस भी स्थान पर दृष्टि डालता, वह कांप उठता और थरथराने लगता। शक्तिशाली राजा संवरा की भव्यता देखकर राजकुमार उपोसथा ने मन ही मन सोचा, "मुझे लगता है कि हमारे पिता को यह ज्ञात था कि उनकी मृत्यु के बाद राजकुमार संवरा राजा बनेंगे, इसलिए उन्होंने हमें प्रांत दिए और उन्हें एक भी नहीं दिया;" फिर उनसे बात करते हुए उन्होंने तीन श्लोक दोहराए:

"हे महान सम्राट, आप अपने स्वभाव को भली-भांति जानते थे, मनुष्यों के स्वामी।
अन्य राजकुमारों ने उनका सम्मान किया, लेकिन आपको कुछ नहीं दिया।
"क्या यह राजा के जीवित रहते हुआ था, या जब कोई देवता (देवदूत) स्वर्ग गया था?"
क्या आपके रिश्तेदारों ने अपना हित देखकर सहमति दी?
"हे सम्वर, बताइए कि किस शक्ति से आप अपने कुल से श्रेष्ठ हैं?"
तुम्हारे भाई-बंधु जीत हासिल करने के लिए तुमसे अलग होकर एकजुट क्यों नहीं होते?
यह सुनकर राजा संवर ने अपने चरित्र को समझाने के लिए छह श्लोक दोहराए:

"क्योंकि, हे राजकुमार, मैं सही-गलत के बारे में महान ऋषियों से कभी ईर्ष्या नहीं करता।"
मैं उन्हें उचित सम्मान देने के लिए तैयार हूं, मैं उनके चरणों में गिर पड़ता हूं।
मैं किसी से ईर्ष्या नहीं करता, और उचित एवं सही आचरण के सभी सिद्धांतों को अवश्य सीखूंगा।
बुद्धिमान ऋषि उन सभी अच्छे नियमों का उपदेश देते हैं जिनमें उन्हें आनंद मिलता है।
मैं इन महान और बुद्धिमान ऋषियों के प्रश्नों को सुनता हूँ:
मेरा हृदय नेक इरादों से भरा है, मैं किसी भी सलाह को तुच्छ नहीं समझता।
"हाथी सेना और रथ सैनिक, शाही रक्षक, पैदल सेना--"
मैंने दैनिक भत्ते का कोई हिस्सा नहीं लिया, बल्कि उन्हें उनका पूरा शुल्क चुका दिया।
"महान कुलीन और बुद्धिमान सलाहकार मेरी सेवा में उपस्थित हैं;
खाने-पीने, शराब और पानी के मामले में (जैसा कि वे दावा करते हैं) बनारस ने उम्मीदों से कहीं बेहतर प्रदर्शन किया।
इस प्रकार व्यापारी समृद्ध होते हैं, और वे अनेक राज्यों से आते-जाते रहते हैं।
और मैं उनकी रक्षा करता हूँ। अब सच्चाई, उपोसथा, तुम जानती हो।"
राजकुमार उपोसथा ने अपने चरित्र के इस विवरण को सुना और फिर दो छंद दोहराए:

"फिर अपने मित्रों और परिवार से ऊपर रहो, और धर्मपूर्वक शासन करो।"
हे समवर, तुम बुद्धिमान और समझदार हो, अपने भाइयों को आशीर्वाद दो।
"तुम्हारे खजाने की रक्षा तुम्हारे भाई करेंगे, और तुम सुरक्षित रहोगे।"

आप अपने शत्रुओं से उसी प्रकार सुरक्षित रहेंगे जैसे इंद्र स्वयं अपने कट्टर शत्रु से सुरक्षित रहे थे (*1)।"
राजा सम्वर ने अपने सभी भाइयों का बहुत सम्मान किया। वे डेढ़ महीने तक उनके साथ रहे; फिर उन्होंने उनसे कहा, "महाराज, हम जाकर देखना चाहते हैं कि क्या हमारे प्रांतों में कोई लुटेरे घूम रहे हैं; आपके शासन की जय हो!" वे सब अपने-अपने प्रांतों के लिए रवाना हो गए। और राजा ने बोधिसत्व की सलाह मानकर अपने जीवन के अंत में स्वर्ग देह धारण किया।

गुरु ने प्रवचन समाप्त करने के बाद कहा, "बहुत समय पहले, हे भिक्षु, तुमने उपदेशों का पालन किया था, तो अब तुम अपने प्रयास को क्यों नहीं जारी रखते?" फिर उन्होंने सत्यों की व्याख्या की और जन्म का वर्णन किया: (सत्यों के समापन पर यह भिक्षु प्रथम मार्ग (सम्मोहन) के फल में स्थापित हो गया था): "उस समय यह भिक्षु महान राजा संवर थे, सारिपुत्र राजकुमार उपोसथ थे, अन्य भिक्षु वरिष्ठ और द्वितीयक भिक्षु थे, उनके अनुयायी बुद्ध के अनुयायी थे, और मैं स्वयं राजा को सलाह देने वाला दरबारी था।"

फुटनोट:

(1) असुरों या टाइटनों का राजा (असुर लोक में, जो बुरे पुनर्जन्म का स्थान है, हिंसक प्राणी रहते हैं, जिनका कर्म मुख्य रूप से हिंसा, रक्तपात और हत्या के कृत्यों के कारण होता है। यही कारण है कि बौद्ध धर्म सभी हिंसा के विरुद्ध है, ताकि असुर लोक में बुरे पुनर्जन्म को रोका जा सके)।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सुपारक-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-463-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 463
सुप्पाराका-जातक

"तेज धार वाले पुरुष," इत्यादि। यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए ज्ञान की पूर्णता के बारे में सुनाई थी। बताया जाता है कि एक दिन शाम को भिक्षु तथागत बुद्ध के आने और उन्हें उपदेश देने की प्रतीक्षा कर रहे थे। वे सत्य के हॉल में बैठे हुए आपस में कह रहे थे, "सचमुच, भिक्षुओं के पास महान ज्ञान है! व्यापक ज्ञान है! तत्पर ज्ञान है! तीव्र ज्ञान है! तीक्ष्ण ज्ञान है! मर्मस्पर्शी ज्ञान है! उनका ज्ञान सही समय पर सही योजना पर लगता है; संसार के समान विशाल, अथाह सागर के समान, आकाश के समान फैला हुआ: पूरे भारत में कोई भी ऐसा बुद्धिमान व्यक्ति नहीं है जो दशबल (बुद्ध) के समर्थ हो। जैसे विशाल समुद्र पर उठने वाली लहर तट तक नहीं पहुँच सकती, या पहुँचकर टूट जाती है; वैसे ही कोई भी मनुष्य दशबल (बुद्ध) के ज्ञान तक नहीं पहुँच सकता, या गुरु के चरणों में आने पर वह विलीन हो जाता है।" इन शब्दों में उन्होंने दशाबल (बुद्ध) की परिपूर्ण बुद्धि की प्रशंसा की। गुरुजी अंदर आए और पूछा, "भाइयों, आप यहाँ बैठे किस विषय पर चर्चा कर रहे हैं?" उन्होंने उन्हें बताया। गुरुजी ने कहा, "तथागत (बुद्ध) केवल अब ही ज्ञान से परिपूर्ण नहीं हैं। पूर्वकाल में, जब उनका ज्ञान अपरिपक्व था, तब भी वे बुद्धिमान थे। दृष्टिहीन होते हुए भी, उन्होंने सागर के संकेतों से जान लिया था कि सागर में अमुक रत्न छिपा है।" फिर उन्होंने अतीत की एक कथा सुनाई।

बहुत समय पहले, भारू नाम का एक राजा भारू राज्य में शासन करता था। वहाँ भारूकच्छ (गुजरात में भारूच?) या भारू का दलदल नामक एक बंदरगाह नगर था। उसी समय बोधिसत्व का जन्म एक कुशल नाविक के परिवार में हुआ था; वे सौम्य स्वभाव के और सुनहरे भूरे रंग के थे। उनका नाम सुप्पारक-कुमार रखा गया। वे उच्च कोटि के धनी थे; और सोलह वर्ष की आयु में ही उन्होंने नौकायन में पूर्ण निपुणता प्राप्त कर ली थी। बाद में जब उनके पिता का देहांत हो गया, तो वे नाविकों के मुखिया बन गए और नौकायन के कार्य में जुट गए; वे बुद्धिमान और ज्ञानी थे; उनके साथ जहाज पर सवार कोई भी जहाज कभी भी संकट में नहीं पड़ा।

समय बीतने के साथ ऐसा हुआ कि खारे पानी से घायल होने के कारण उनकी दोनों आँखों की रोशनी चली गई। इसके बाद, हालाँकि वे नाविकों के मुखिया थे, उन्होंने नाविकों का काम छोड़ दिया; बल्कि राजा की सेवा में जीवन यापन करने का निश्चय करके वे राजा के पास गए। राजा ने उन्हें मूल्यांकक और आकलनकर्ता के पद पर नियुक्त कर दिया। तब से वे मूल्यवान हाथियों, कीमती घोड़ों, उत्तम मोतियों और रत्नों का मूल्यांकन करने लगे।

एक दिन राजा के पास एक हाथी लाया गया, जिसका रंग काले पत्थर जैसा था, ताकि उसे राजसी हाथी बनाया जा सके। राजा ने उसे सरसरी नजर से देखा और आदेश दिया कि उसे एक ज्ञानी व्यक्ति को दिखाया जाए। वे हाथी को उसके सामने ले गए। ज्ञानी व्यक्ति ने हाथी के शरीर पर हाथ फेरते हुए कहा, "यह हाथी राजसी हाथी बनने के योग्य नहीं है। इसमें तो विकृत पिछले पैरों वाले हाथी के लक्षण हैं। जब उसकी माँ उसे लेकर आई थी, तो वह उसे अपने कंधे पर नहीं उठा सकी; इसलिए उसने उसे जमीन पर गिरा दिया, और इस प्रकार उसके पिछले पैर विकृत हो गए।" उन्होंने हाथी लाने वालों से पूछताछ की; और उन्होंने उत्तर दिया कि ज्ञानी व्यक्ति ने सत्य कहा था। यह सुनकर राजा प्रसन्न हुए और उन्होंने आठ सिक्के देने का आदेश दिया।

एक दिन राजा के राजसी घोड़े के लिए एक घोड़ा लाया गया। इसे भी उस ज्ञानी व्यक्ति के पास भेजा गया। उसने घोड़े को हाथ से छूकर देखा और कहा, "यह राजा के राजसी घोड़े के योग्य नहीं है। जिस दिन यह घोड़ा पैदा हुआ, उसी दिन इसकी माँ का निधन हो गया, और इसलिए घोड़ी का दूध न मिलने के कारण इसका विकास ठीक से नहीं हुआ।" उसकी यह बात भी सच निकली। जब राजा ने यह सुना, तो वह प्रसन्न हुआ और उसने उसे आठ और घोड़े भेंट करवाए।

एक दिन राजा के राजसी रथ के रूप में एक रथ लाया गया। राजा ने इसे भी उसके पास भेज दिया। उसने हाथ से छूकर रथ को देखा और कहा, "यह रथ खोखले पेड़ की लकड़ी से बना है, इसलिए यह राजा के योग्य नहीं है।" उसकी यह बात भी पिछली बातों की तरह सच निकली। यह सुनकर राजा फिर प्रसन्न हुआ और उसे आठ और रथ दे दिए।

फिर वे उसके लिए एक कीमती और बहुमूल्य कालीन लाए, जिसे राजा ने पहले की तरह उस व्यक्ति को भेजा। उसने उसे चारों ओर से छूकर देखा और कहा, "यहाँ एक जगह चूहे ने छेद कर दिया है।" उन्होंने जाँच की और वह जगह ढूंढ ली, फिर राजा को बताया। राजा प्रसन्न हुआ और उसने आठ और कालीन भेजने का आदेश दिया।

अब उस आदमी ने सोचा, "सिर्फ आठ सिक्के, और ये सब अद्भुत चीजें देखना! ये तो किसी नाई का तोहफा है; ये राजा जरूर किसी नाई का लाडला होगा। मैं ऐसे राजा की सेवा क्यों करूँ? मैं अपने घर लौट जाऊँगा।" इसलिए वह वापस भरुकच्छा के बंदरगाह पर चला गया और वहीं रहने लगा।

कुछ व्यापारियों ने एक जहाज तैयार किया और कप्तान की तलाश कर रहे थे। उन्होंने सोचा, “वह चतुर सुप्पारका एक बुद्धिमान और कुशल व्यक्ति है; उसके साथ जहाज को कोई नुकसान नहीं हो सकता। हालांकि वह अंधा है, बुद्धिमान सुप्पारका ही सर्वश्रेष्ठ है।” इसलिए वे उसके पास गए और उससे अपना कप्तान बनने का अनुरोध किया। उसने उत्तर दिया, “मैं अंधा हूँ, मित्रों, और मैं आपका जहाज कैसे चला सकता हूँ?” व्यापारियों ने कहा, “मालिक, आप अंधे हो सकते हैं, लेकिन आप ही सर्वश्रेष्ठ हैं।” उनके लगातार आग्रह करने पर अंततः वह मान गया: “जैसा आप कहते हैं, मैं आपका कप्तान बनूँगा।” फिर वह उनके जहाज पर सवार हो गया।

वे अपने जहाज में खुले समुद्र में रवाना हुए। सात दिनों तक जहाज बिना किसी दुर्घटना के चलता रहा: फिर अचानक एक अप्रत्याशित हवा चलने लगी। चार महीने तक जहाज एक विशाल महासागर में हिचकोले खाता रहा, जब तक कि वह खुरमाला सागर नामक स्थान पर नहीं पहुँच गया। यहाँ मनुष्य जैसे शरीर और तेज धार वाले थूथन वाली मछलियाँ पानी में गोता लगाती और बाहर निकलती रहती हैं। इन मछलियों को देखकर व्यापारियों ने ईश्वर से पूछा कि इस सागर का नाम क्या है, और उन्होंने पहली पंक्ति को दोहराया:

"तेज धार वाली नाक वाले पुरुष ऊपर उठते हैं और नीचे गोता लगाते हैं!"
"हे सुप्पाराका, बोलो और हमें बताओ कि इस समुद्र को किस नाम से जाना जाता है?"
इस प्रश्न पर, महान सत्ता ने अपने नाविकों की परंपरा को ध्यान में रखते हुए, दूसरे श्लोक को दोहराकर उत्तर दिया:

"भरुकच्छ से व्यापारी धन-संपत्ति की तलाश में आते हैं, ताकि उसका व्यापार कर सकें।"
यह खुरमाली सागर है जहाँ आपका जहाज भटक गया है।
अब संयोगवश इस सागर में हीरे पाए जाते हैं। उस महान प्राणी ने सोचा कि यदि वह उन्हें बता दे कि यह हीरों का सागर है, तो वे हीरे इकट्ठा करने के लालच में जहाज़ को डुबो देंगे। इसलिए उसने उन्हें कुछ नहीं बताया; बल्कि जहाज़ को रोककर उसने एक रस्सी ली और मछली पकड़ने के लिए जाल डाला। इससे उसने हीरों का ढेर पकड़ा और उन्हें जहाज़ में जमा कर लिया; फिर उसने कम मूल्य की वस्तुओं को समुद्र में फेंक दिया।

जहाज इस समुद्र को पार करके अग्गिमाला नामक दूसरे समुद्र पर पहुँचा। इस समुद्र से ऐसी आभा निकल रही थी मानो धधकती हुई आग हो, जैसे दोपहर का सूरज। व्यापारियों ने उससे इस श्लोक में प्रश्न किया:

"देखो! हमें जलती हुई आग की तरह एक महासागर दिखाई देता है, सूर्य की तरह!"
बोलो, सुप्पाराका, और हमें बताओ कि इसका नाम क्या हो सकता है?

उस महान सत्ता ने अगले श्लोक में उन्हें उत्तर दिया:

"भरुकच्छ से व्यापारी धन-संपत्ति की तलाश में आते हैं, ताकि उसका व्यापार कर सकें।"
यह अग्गिमाली सागर है जहाँ आपका जहाज भटक गया है।"
अब इस सागर में सोने का भंडार था। पहले की तरह ही उसने इसमें से सोना निकाला और जहाज पर लाद दिया। इस सागर को पार करते हुए जहाज दधिमाला नामक एक सागर के पास पहुँचा, जो दूध या दही की तरह चमक रहा था। व्यापारियों ने एक श्लोक में इसके बारे में पूछा:

"देखो! हमें एक सफेद और दूधिया सागर दिखाई दे रहा है, बिल्कुल दही जैसा सफेद!"
बोलो, सुप्पाराका, और हमें बताओ कि इसका नाम क्या हो सकता है?
उस महान सत्ता ने उन्हें अगले श्लोक से उत्तर दिया:

"भरुकच्छ से व्यापारी धन-संपत्ति की तलाश में आते हैं, ताकि उसका व्यापार कर सकें।"
यह दाधिमाली सागर है जहाँ आपका जहाज भटक गया है।
इस समुद्र में चांदी प्रचुर मात्रा में थी। उसने पहले की तरह ही चांदी प्राप्त की और उसे जहाज पर रख दिया। जहाज इस समुद्र पर आगे बढ़ा और नीलावन्नकुसा-माला नामक एक महासागर में पहुँचा, जो देखने में गहरे कुश घास के मैदान या अनाज के खेत जैसा था। व्यापारियों ने एक श्लोक में इसका नाम पूछा:

"देखो! हमें हरे-भरे और घास से भरा एक महासागर दिखाई दे रहा है, मानो हम युवा मक्का देख रहे हों!"
बोलो, सुप्पाराका, और हमें बताओ कि इसका नाम क्या हो सकता है?
उन्होंने अगले श्लोक के शब्दों में उत्तर दिया:

"भरुकच्छ से व्यापारी धन-संपत्ति की तलाश में आते हैं, ताकि उसका व्यापार कर सकें।"
यह कुसमाली सागर है जहाँ आपका जहाज भटक गया है।
अब इस सागर में बड़ी मात्रा में बहुमूल्य पन्ना रत्न थे। पहले की तरह, उसने उन्हें इकट्ठा किया और जहाज पर रख लिया। इस सागर को पार करते हुए, जहाज नालमाला नामक एक सागर पर पहुँचा, जो देखने में सरकंडों के मैदान या बांस के झुरमुट जैसा था। व्यापारियों ने एक छंद में उसका नाम पूछा:

"देखो! हमें एक ऐसा सागर दिखाई देता है जो सरकंडों के बिस्तर जैसा, बांस के झुरमुट जैसा है!"
बोलो, सुप्पाराका, और हमें बताओ कि इसका नाम क्या हो सकता है?
उस महान सत्ता ने निम्नलिखित श्लोक में उत्तर दिया:

"भरुकच्छ से व्यापारी धन-संपत्ति की तलाश में आते हैं, ताकि उसका व्यापार कर सकें।"
यह नालामली सागर है जहाँ आपका जहाज भटक गया है।"
अब यह महासागर बांस के रंग के मूंगे से भरा हुआ था। उसने इसे भी इकट्ठा किया और जहाज पर लाद लिया।

नलमाली सागर पार करने के बाद व्यापारी वल्लभमुख नामक सागर पर पहुँचे। यहाँ जल चारों ओर खिंचकर ऊपर उठता है; और इस प्रकार चारों ओर से खिंचा हुआ जल खड़ी चट्टानों के रूप में ऊपर उठता है, जिससे एक विशाल गड्ढे जैसा दृश्य दिखाई देता है। एक लहर एक तरफ दीवार की तरह उठती है: एक भयानक गर्जना सुनाई देती है, जो कान फाड़ देने वाली और हृदय को क्षत-विक्षत कर देने वाली प्रतीत होती है। इसे देखकर व्यापारी भयभीत हो गए और उन्होंने एक श्लोक में इसका नाम पूछा:

"एक विशाल, अलौकिक समुद्र की भयानक ध्वनि सुनो!"
देखो, एक गड्ढा है, और पानी की ओर एक तीव्र ढलान है!
बोलो, सुप्पाराका, और हमें बताओ कि इसका नाम क्या हो सकता है?
बोधिसत्व ने निम्नलिखित श्लोक में उत्तर दिया, "व्यापारी," इत्यादि, और अंत में कहा--"यह वल्लभमुखी सागर," इत्यादि।

उन्होंने आगे कहा, "मित्रों, एक बार कोई जहाज वल्लभमुख सागर में प्रवेश कर जाए तो वापस लौटना असंभव है। यदि यह जहाज वहाँ पहुँच गया, तो वह डूब जाएगा और नष्ट हो जाएगा।" अब उस जहाज पर सात सौ आत्माएँ सवार थीं, और वे मृत्यु के भय से भयभीत थीं; उन्होंने एक स्वर में अत्यंत व्यथित विलाप किया, मानो वे सबसे निचले नरक में जल रहे हों (*1)। उस महान सत्ता ने सोचा, "मेरे सिवा कोई और इन्हें नहीं बचा सकता; मैं सत्य के एक कर्म द्वारा इन्हें बचाऊँगा।" तब उन्होंने ज़ोर से कहा, "मित्रों, मुझे शीघ्र सुगंधित जल से स्नान कराओ, और मुझे नए वस्त्र पहनाओ, एक भरा हुआ कटोरा तैयार करो, और मुझे जहाज के आगे रख दो।" उन्होंने तुरंत

ऐसा किया। उस महान सत्ता ने भरे हुए कटोरे को दोनों हाथों में लिया, और जहाज के आगे खड़े होकर, अंतिम श्लोक को दोहराते हुए, सत्य का एक कर्म किया:

"जबसे मुझे स्वयं याद है, जबसे बुद्धि का विकास शुरू हुआ,
मैंने किसी भी जीवित प्राणी की जान नहीं ली है, जिसे मैं जानता था।
अगर मेरी कही बातें सच हैं तो आशा है कि यह जहाज सुरक्षित लौट आएगा!
चार महीने तक वह पोत सुदूर क्षेत्रों में यात्रा करता रहा; और अब मानो किसी अलौकिक शक्ति से संपन्न होकर, वह एक ही दिन में भारुकच्छा के बंदरगाह पर लौट आया, और ग्यारह सौ भुजाओं की दूरी तय करके सीधे सूखी भूमि पर आ पहुँचा, जब तक कि वह नाविकों के द्वार के सामने आकर नहीं रुका। उस महान सत्ता ने व्यापारियों में सारा सोना, चांदी, रत्न, मूंगा और हीरे बाँट दिए और कहा, "यह खजाना तुम्हारे लिए काफी है; अब समुद्र में यात्रा करने की कोई आवश्यकता नहीं है।" फिर उन्होंने उन्हें प्रवचन दिया; और जीवन भर दान-पुण्य करते और भलाई करते रहने के बाद वे स्वर्ग चले गए।

गुरु ने प्रवचन समाप्त करते हुए कहा, "तो, भिक्षुओं, तथागत (बुद्ध) पूर्वकाल में भी अत्यंत बुद्धिमान थे, जैसे वे अब हैं," और उन्होंने जन्म का उल्लेख करते हुए कहा: "उस समय बुद्ध के अनुयायी व्यापारियों का समूह थे, और मैं स्वयं बुद्धिमान सुप्पारक था।"

फुटनोट:

(1) अविसी हेल

पुस्तक XII. द्वादश-निपात:

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कुल्ल-कुणाल-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-464-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 464
CULLA-KUNALA-JATAKA

"कम बुद्धि वाला," इत्यादि--यह जन्म कुणाल जन्म के अंतर्गत दिया जाएगा।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **भद्द-शाला-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-465-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 465
भद्दा-शाला-जातक(*1)

“तुम कौन हो?” इत्यादि। यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए अपने मित्रों और परिवार के प्रति सद्भावना बरतने के बारे में सुनाई थी। श्रावस्ती नगर में अनाथपिंडिका के घर में पाँच सौ भिक्षुओं के लिए हमेशा भरपूर भोजन उपलब्ध रहता था, और यही हाल विशाखा (*2) और कोसल के राजा का भी था। परन्तु राजा के महल में, चाहे भोजन कितना भी स्वादिष्ट और उत्तम क्यों न हो, भिक्षुओं के प्रति कोई मित्रतापूर्ण व्यवहार नहीं करता था। इसका परिणाम यह हुआ कि भिक्षु महल में कभी भोजन नहीं करते थे, बल्कि अपना भोजन लेकर अनाथपिंडिका, विशाखा या अपने किसी अन्य विश्वसनीय मित्र के घर जाकर खाते थे।

एक दिन राजा ने कहा, "एक उपहार लाया गया है: इसे भिक्षुओं के पास ले जाओ," और उसे भोजन कक्ष में भेज दिया। जवाब आया कि भोजन कक्ष में कोई भिक्षु नहीं है। राजा ने पूछा, "वे कहाँ गए हैं?" उत्तर मिला, "वे अपने मित्रों के घरों में भोजन कर रहे हैं।" इसलिए राजा सुबह का भोजन करने के बाद गुरु के पास आए और उनसे पूछा, "हे महाराज, सबसे अच्छा भोजन क्या है?" गुरु ने कहा, "मित्रता का भोजन सबसे अच्छा है; मित्र द्वारा दिया गया खट्टा चावल का दलिया भी मीठा हो जाता है।" राजा ने पूछा, "अच्छा, महाराज, भिक्षु किसके साथ मित्रता करते हैं?" "अपने परिचितों के साथ, महाराज, या शाक्य (कपिलवस्तु के बुद्ध वंश) परिवारों के साथ।" तब राजा ने सोचा, यदि वह किसी शाक्य कन्या को अपनी रानी बना लें, तो भिक्षु उनके मित्र बन जाएँगे, मानो वे उनके अपने परिवार के साथ हों।

अतः वे अपने आसन से उठकर महल लौट आए और कपिलवस्तु (बुद्ध के कुल का राज्य) (*3) को यह संदेश भेजा: "कृपया मुझे अपनी एक पुत्री का विवाह दे दीजिए, क्योंकि मैं आपके कुल से संबंध स्थापित करना चाहता हूँ।" यह संदेश प्राप्त होने पर शाक्यों एकत्रित हुए और विचार-विमर्श करने लगे। "हम कोसल के राजा के अधीन एक स्थान पर रहते हैं; यदि हम पुत्री देने से इनकार करते हैं, तो वह बहुत क्रोधित होंगे, और यदि हम उसे दे देते हैं, तो हमारे कुल की परंपरा भंग हो जाएगी। हम क्या करें?" तब कपिलवस्तु के राजा महानामा (बुद्ध के सौतेले भाई) (*4) ने उनसे कहा, "चिंता मत कीजिए। मेरी एक पुत्री है, जिसका नाम वसभक्षत्रिय है। उसकी माता नागमुंडा नाम की एक दासी है; वह लगभग सोलह वर्ष की है, अत्यंत सुंदर और उज्ज्वल भविष्य वाली है, और अपने पिता की ओर से कुलीन (*5) है। हम उसे कुलीन कन्या मानकर भेजेंगे।" शाक्यों मान गए और दूतों को बुलवाकर कहा कि वे अपने कुल की एक पुत्री देने को तैयार हैं और उसे तुरंत अपने साथ ले जा सकते हैं। लेकिन दूतों ने सोचा, "ये शाक्यों जन्म के मामले में बेहद अभिमानी हैं। मान लीजिए कि वे किसी ऐसी लड़की को भेज दें जो उनके कुल की न हो और दावा करें कि वह उनकी कुल की है? हम तो केवल उसी को लेंगे जो उनके साथ भोजन करे।" तो उन्होंने उत्तर दिया, "ठीक है, हम उसे ले लेंगे, लेकिन हम उसे लेंगे जो आपके साथ भोजन करे।"

शाक्यों ने दूतों के लिए एक आवास का प्रबंध किया और फिर सोचने लगे कि क्या करें। राजा महानामा ने कहा: "अब चिंता मत करो; मैं कोई उपाय निकाल लूँगा। मेरे भोजन के समय वासभक्षत्रिय को उसके उत्तम वस्त्रों में सज-धज कर लाओ; फिर जैसे ही मैं एक निवाला लूँ, एक पत्र प्रस्तुत करो और कहो, हे महाराज, फलाँ राजा ने आपको पत्र भेजा है; कृपया उनका संदेश शीघ्र सुनिए।"

वे मान गए; और जब राजा महानामा भोजन कर रहे थे, उन्होंने दासी को कपड़े पहनाकर सजाया। राजा महानामा ने कहा, "मेरी पुत्री को लाओ, और उसे मेरे साथ भोजन करने दो।" उन्होंने कहा, "एक क्षण में, जैसे ही वह ठीक से सज जाए," और थोड़ी देर बाद वे उसे ले आए। अपने पिता के साथ भोजन करने की उम्मीद में, उसने अपना हाथ उसी थाली में डाला। राजा महानामा ने उसके साथ एक निवाला लिया और उसे अपने मुँह में डाला; लेकिन जैसे ही उन्होंने दूसरा निवाला लेने के लिए हाथ बढ़ाया, वे उनके लिए एक पत्र लाए, जिसमें लिखा था, "महाराज, फलाँ राजा ने आपको पत्र भेजा है: कृपया उनका संदेश तुरंत सुनें।" राजा महानामा ने कहा, "अपनी प्रिय, भोजन करते रहो," और अपना दाहिना हाथ थाली में रखे हुए, अपने बाएँ हाथ से पत्र लिया और उसे देखा। जब वे संदेश पढ़ रहे थे, तब भी लड़की भोजन करती रही। भोजन समाप्त होने पर, उन्होंने अपना हाथ धोया और मुँह साफ किया। दूतों को पूरा विश्वास था कि वह उनकी पुत्री है, क्योंकि उन्होंने यह रहस्य किसी को नहीं बताया।

अतः राजा महानामा ने अपनी पुत्री को बड़े धूमधाम से विदा किया। दूत उसे श्रावस्ती नगर में लाए और बताया कि यह कन्या राजा महानामा की वास्तविक पुत्री है। राजा प्रसन्न हुए और उन्होंने पूरे नगर को सजाया-संवारा, उसे खजाने के ढेर पर बिठाया और एक विधिपूर्वक जल छिड़काव करके उसे अपनी प्रधान रानी घोषित किया। वह राजा की प्रिय और प्रियतम थी।

कुछ ही समय में रानी गर्भवती हो गईं और राजा ने उचित उपचार करवाया; दस महीने बाद उन्होंने एक पुत्र को जन्म दिया जिसका रंग सुनहरा भूरा था। नामकरण के दिन राजा ने उनकी दादी को संदेश भेजा, "शाक्यों राजा की पुत्री वासभक्षत्रिय को पुत्र हुआ है; उसका नाम क्या रखा जाए?" यह संदेश ले जाने वाला दरबारी थोड़ा बहरा था; फिर भी वह गया और राजा की दादी को बताया। जब उन्होंने यह सुना, तो उन्होंने कहा, "वासभक्षत्रिय ने भले ही कभी पुत्र को जन्म नहीं दिया था, फिर भी वह समस्त संसार से बढ़कर थीं; और अब वह राजा की प्रियतम होंगी (*6)।" बहरे व्यक्ति ने "प्रियतम" शब्द ठीक से नहीं सुना, बल्कि उन्हें लगा कि दादी ने "विदुदभा" कहा है; इसलिए वह राजा के पास वापस गए और उन्हें बताया कि राजकुमार का नाम विदुदभा रखा जाए। राजा ने सोचा कि यह कोई खानदानी नाम होगा, और इसलिए उन्होंने उसका नाम विदुदभा रख दिया।

इसके बाद राजकुमार का पालन-पोषण उसी तरह हुआ जैसा एक राजकुमार का होना चाहिए।

जब वह सात वर्ष का था, तब उसने देखा कि अन्य राजकुमारों को उनके माता-पिता के परिवार से खिलौने वाले हाथी, घोड़े और अन्य खिलौने उपहार में मिलते हैं। तब उसने अपनी माँ से कहा, "माँ, बाकी सबको तो उनके माता-पिता के परिवार से उपहार मिलते हैं, लेकिन मुझे कोई कुछ नहीं भेजता। क्या तुम अनाथ हो?" तब उसकी माँ ने उत्तर दिया, "बेटा, तुम्हारे दादा शाक्य वंश के राजा हैं, लेकिन वे बहुत दूर रहते हैं, इसलिए वे तुम्हें कुछ नहीं भेजते।" फिर जब वह सोलह वर्ष का हुआ, तब उसने कहा, "माँ, मैं तुम्हारे पिता के परिवार से मिलना चाहता हूँ।" "इस बारे में बात मत करो, बेटा," उसकी माँ ने कहा। "वहाँ पहुँचकर तुम क्या करोगे?" हालाँकि उसकी

माँ ने उसे टाल दिया, फिर भी वह बार-बार पूछता रहा। अंत में उसकी माँ ने कहा, "ठीक है, जाओ।" तब उस लड़के को अपने पिता की अनुमति मिल गई और वह कुछ अनुयायियों के साथ चल पड़ा। वासभक्षत्रिय ने उससे पहले यह पत्र भेजा: "मैं यहाँ सुख से रह रहा हूँ; मेरे स्वामियों को इस रहस्य के बारे में कुछ भी न बताने दें।" लेकिन शाक्यों ने विदूदभा के आने की खबर सुनकर अपने सभी छोटे बच्चों को गाँव भेज दिया। उन्होंने कहा, "उनका आदरपूर्वक स्वागत करना असंभव है।"

जब राजकुमार कपिलवस्तु (बुद्ध के वंश का राज्य) पहुँचे, तो शाक्यों राजगृह में एकत्रित थे। राजकुमार विश्रामगृह के पास पहुँचे और प्रतीक्षा करने लगे। तब उन्होंने राजकुमार से कहा, "ये तुम्हारी माता के पिता हैं, ये उनके भाई हैं," और उनकी ओर इशारा किया। राजकुमार एक-एक करके सभी को प्रणाम करते हुए आगे बढ़े। यद्यपि वे इतनी देर तक प्रणाम करते रहे कि उनकी कमर दुखने लगी, फिर भी किसी ने भी उन्हें प्रणाम नहीं किया; इसलिए उन्होंने पूछा, "आपमें से कोई भी मुझे प्रणाम क्यों नहीं कर रहा है?" शाक्यों ने उत्तर दिया, "मेरे प्रिय, सभी युवा राजकुमार देश में हैं;" तब उन्होंने राजकुमार का भव्य स्वागत किया।

कुछ दिन ठहरने के बाद, वह अपने सभी सेवकों के साथ घर के लिए निकल पड़ा। तभी एक दासी ने विश्रामगृह में उसके द्वारा इस्तेमाल किए गए आसन को दूध-जल से धोते हुए अपमानजनक ढंग से कहा, "यह वह आसन है जिस पर दासी वासभक्षत्रिय का पुत्र बैठा था!" एक व्यक्ति जो अपना भाला वहीं छोड़ आया था, उसे लेने ही जा रहा था कि उसने राजकुमार विदूदभा की गाली-गलौज सुन ली। उसने पूछा कि इसका क्या अर्थ है। उसे बताया गया कि वासभक्षत्रिय शाक्य राजा महानामा की दासी का पुत्र था। उसने यह बात सैनिकों को बताई: वहाँ बहुत शोर मच गया, सब चिल्लाने लगे—"ऐसा कहते हैं कि वासभक्षत्रिय एक दासी की पुत्री है!" राजकुमार ने यह सुना। "हाँ," उसने सोचा, "जिस आसन पर मैं बैठा था, उस पर दूध-जल डाल दें, उसे धोएँ! जब मैं राजा बनूँगा, तो मैं उस स्थान को उनके हृदय के रक्त से धो दूँगा!"

जब वह श्रावस्ती नगर लौटा, तो दरबारियों ने राजा को सारी बात बता दी। राजा शाक्यों द्वारा दासी की पुत्री से विवाह करने पर क्रोधित हो गया। उसने वासभक्षत्रिय और उसके पुत्र को दी जाने वाली सभी भत्तियाँ बंद कर दीं और उन्हें केवल वही दिया जो दास पुरुषों और स्त्रियों को दिया जाना उचित था।

कुछ दिनों बाद स्वामी महल में आया और बैठ गया। राजा उसके पास गया और अभिवादन करते हुए बोला, "महोदय, मुझे पता चला है कि आपके कुल के लोगों ने मुझे एक दासी की बेटी से विवाह करने के लिए दी है। मैंने माता-पिता दोनों का भत्ता बंद कर दिया है और अब उन्हें केवल उतना ही भत्ता देता हूँ जितना दासों को मिलता है।" गुरु ने कहा, "हे महान राजा, शाक्यों ने अन्याय किया है! यदि उन्हें किसी को पुत्र देना था, तो उन्हें अपने ही रक्त की पुत्री देनी चाहिए थी। परन्तु हे राजा, मैं यह कहता हूँ: वासभक्षत्रिय एक राजा की पुत्री है, और एक श्रेष्ठ राजा के घर में उसका अभिषेक हुआ है; विदूदभ भी एक श्रेष्ठ राजा की संतान था। प्राचीन काल के बुद्धिमानों ने कहा है, माता का जन्म क्या मायने रखता है? पिता का जन्म ही मायने रखता है: और एक निर्धन, लकड़ियाँ बीनने वाली पत्नी को उन्होंने रानी का पद दिया; और उससे जन्मे पुत्र ने बारह मील (4.23 किमी) के क्षेत्र में फैले बनारस पर शासन किया और वह कत्थवाहन राजा बना।" इस पर उन्होंने उन्हें कत्थहारी जन्म की कथा सुनाई (*7)।

जब राजा ने यह बात सुनी तो वह प्रसन्न हुआ; और मन ही मन यह कहते हुए कि, "पिता का वंश ही मनुष्य की पहचान है," उसने फिर से माता और पुत्र के साथ उनके अनुरूप व्यवहार किया।

राजा का सेनापति बंधुला नाम का एक व्यक्ति था। उसकी पत्नी मल्लिका बांझ थी, इसलिए उसने उसे कुशीनारा भेज दिया और कहा कि वह अपने परिवार के पास लौट जाए। मल्लिका ने कहा, "मैं गुरु को प्रणाम करने के बाद जाऊंगी।" वह जेतवन मठ गई और तथागत (बुद्ध) को प्रणाम करते हुए एक तरफ खड़ी हो गई। उन्होंने पूछा, "तुम कहाँ जा रही हो?" मल्लिका ने उत्तर दिया, "मेरे पति ने मुझे घर भेजा है, महाराज।" गुरु ने पूछा, "क्यों?" मल्लिका ने उत्तर दिया, "मैं बांझ हूँ, महाराज, मेरा कोई पुत्र नहीं है।" उन्होंने कहा, "यदि यही कारण है, तो तुम्हारे जाने का कोई कारण नहीं है। वापस लौट जाओ।" मल्लिका बहुत प्रसन्न हुई और गुरु को प्रणाम करके वापस घर चली गई। उसके पति ने उससे पूछा कि वह क्यों लौटी है। मल्लिका ने उत्तर दिया, "दशबल (बुद्ध) ने मुझे वापस भेजा है, महाराज।" सेनापति ने कहा, "तो तथागत (बुद्ध) को अवश्य ही कोई उचित कारण लगा होगा।" कुछ ही समय बाद स्त्री गर्भवती हो गई और जब उसे गर्भाधान की इच्छा हुई, तो उसने उसे बताया। उसने पूछा, "तुम क्या चाहती हो?" उसने कहा, "हे स्वामी, मैं वैशाली नगर में उस तालाब में स्नान करना और उसका जल पीना चाहती हूँ जहाँ राजाओं के परिवार धार्मिक अनुष्ठानों के लिए जल लेते हैं।" सेनापति ने प्रयास करने का वादा किया। उसने अपना, हजार धनुषों के समान शक्तिशाली धनुष उठाया, अपनी पत्नी को रथ में बिठाया और श्रावस्ती नगर छोड़कर वैशाली नगर की ओर चल पड़ा।

उस समय द्वार के पास महाली (*8) नामक एक लिच्छवी रहता था, जिसने कोसल के राजा के सेनापति बंधुला के ही गुरु से शिक्षा प्राप्त की थी। वह अंधा था और लिच्छवियों को सांसारिक और आध्यात्मिक मामलों में सलाह देता था। रथ के द्वार से गुजरते ही उसकी खड़खड़ाहट सुनकर उसने कहा, "मल्लिका बंधुला के रथ का शोर! आज लिच्छवियों में भय उत्पन्न होगा!" तालाब के चारों ओर और

बाहर कड़ी सुरक्षा व्यवस्था थी; ऊपर लोहे का जाल बिछा था; यहाँ तक कि एक पक्षी भी उसमें से नहीं निकल सकता था। परन्तु सेनापति ने रथ से उतरकर अपनी तलवार के प्रहारों से पहरेदारों को भगा दिया और लोहे के जाल को तोड़कर तालाब में अपनी पत्नी को स्नान कराया और उसे जल पिलाया; फिर स्वयं स्नान करके उसने मल्लिका को रथ में बिठाया और नगर छोड़कर उसी मार्ग से वापस चला गया जिससे वह आया था।

पहरेदार गए और उन्होंने सारी बात लिच्छवियों को बता दी। तब लिच्छवी राजा क्रोधित हो गए; और उनमें से पाँच सौ, पाँच सौ रथों में सवार होकर मल्लियन बंधुला को पकड़ने के लिए निकल पड़े। उन्होंने महाली को इसकी सूचना दी, और उन्होंने कहा, "मत जाओ! क्योंकि वह तुम सबको मार डालेगा।" लेकिन उन्होंने कहा, "नहीं, हम जाएंगे।" "फिर यदि तुम किसी ऐसी जगह पर पहुँचो जहाँ कोई पहिया आधा धंसा हुआ हो, तो तुम्हें लौटना होगा। यदि तब भी न लौटो, तो वज्रपात की आवाज सुनते ही उस स्थान से वापस लौट आना। यदि तब भी न लौटो, तो उस स्थान से वापस लौट आना जहाँ तुम्हें अपने रथों के सामने एक गड्ढा दिखाई दे। आगे मत जाओ!" लेकिन वे उनके कहे अनुसार नहीं लौटे, बल्कि उनका पीछा करते रहे। मल्लिका ने उन्हें देखा और कहा, "हे स्वामी, रथ दिखाई दे रहे हैं।" "तो मुझे बताओ," उन्होंने कहा, "जब वे सभी एक रथ की तरह दिखने लगें।" जब वे सभी एक पंक्ति में एक रथ की तरह दिखने लगे, तो उसने कहा, "हे स्वामी, मुझे ऐसा लग रहा है जैसे एक रथ का सिरा दिखाई दे रहा है।" "तो लगाम पकड़ो," उसने कहा और लगाम उसके हाथ में थमा दी। वह रथ में सीधा खड़ा हो गया और धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ा दी। रथ का पहिया आधा ज़मीन में धंस गया। लिच्छवी वहाँ आए और यह देखा, पर वापस नहीं लौटे। दूसरे थोड़ा आगे गए और धनुष की प्रत्यंचा खींची; तब बिजली गिरने जैसी आवाज़ आई, फिर भी वे नहीं मुड़े, बल्कि आगे बढ़ते रहे। बंधुला रथ में खड़ा हुआ और एक बाण चलाया, जिसने पाँच सौ रथों के सिर चीर दिए और पाँच सौ राजाओं के कमरबंद के ठीक बीच से होकर ज़मीन में धंस गया। उन्हें पता ही नहीं चला कि वे घायल हो गए हैं और वे चिल्लाते हुए आगे बढ़ते रहे, "रुको, रुको!" बंधुला ने अपना रथ रोका और कहा, "तुम मरे हुए हो, और मैं मरे हुओं से नहीं लड़ सकता।" "क्या!" उन्होंने कहा, "मरे हुए, जैसे हम अब हैं?" "पहले आदमी की कमरबंद ढीली करो," बंधुला ने कहा।

उन्होंने उसकी कमरबंद खोली, और कमरबंद खुलते ही वह मर गया। फिर उसने उनसे कहा, "तुम सब एक ही हालत में हो: अपने-अपने घरों को जाओ, और जो व्यवस्था होनी चाहिए उसे ठीक करो, और अपनी पत्नियों और परिवारों को निर्देश दो, और फिर अपना कवच उतार दो।" उन्होंने ऐसा ही किया, और फिर उन सबने प्राण त्याग दिए (*9)।

और बंधुला मल्लिका को श्रावस्ती नगर ले गया। मल्लिका के सोलह पुत्र हुए, और वे सभी बलवान और वीर पुरुष थे, और सभी प्रकार की विद्याओं में निपुण थे। उनमें से प्रत्येक के साथ एक हजार सैनिक होते थे, और जब वे अपने पिता के साथ राजा की सेवा करने जाते थे, तो वे अकेले ही महल के प्रांगण को खचाखच भर देते थे।

एक दिन कुछ लोग, जो झूठे आरोप में अदालत में हार गए थे, बंधुला को आते देख ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाए और उन्हें बताया कि अदालत के न्यायाधीशों ने झूठे आरोप का समर्थन किया है। तब बंधुला अदालत में गए और मामले का फैसला सुनाया, और हर व्यक्ति को उसकी करनी का फल दिया। भीड़ ने तालियों की गड़गड़ाहट से उनका स्वागत किया। राजा ने पूछा कि इसका क्या मतलब है, और सुनकर बहुत प्रसन्न हुए; उन्होंने उन सभी अधिकारियों को विदा कर दिया और बंधुला को न्याय अदालत का कार्यभार सौंप दिया, और तब से उन्होंने न्यायपूर्वक फैसले सुनाए। तब पूर्व न्यायाधीश गरीब हो गए, क्योंकि उन्हें अब रिश्वत नहीं मिलती थी, और उन्होंने राजा के कान में बंधुला की निंदा करते हुए उन पर राज्य पर कब्जा करने का आरोप लगाया। राजा ने उनकी बातें सुनीं और अपने संदेह को नियंत्रित नहीं कर सके। उन्होंने सोचा, "लेकिन अगर वह यहाँ मारा गया, तो दोष मेरा होगा।" उन्होंने कुछ लोगों को रिश्वत देकर सीमावर्ती जिलों में उपद्रव करने का आदेश दिया; फिर बंधुला को बुलवाकर कहा, "सीमाओं में आग लगी हुई है; अपने बेटों के साथ जाओ और लुटेरों को पकड़ो।" उसके साथ उसने कुछ और सक्षम, पराक्रमी योद्धाओं को भी भेजा, जिन्हें यह निर्देश दिया गया था कि वे उसे और उसके बत्तीस बेटों को मार डालें, उनके सिर काट दें और उन्हें वापस ले आएं।

जब वह रास्ते में ही था कि भाड़े के लुटेरों को सेनापति के आने की खबर मिल गई और वे भाग गए। उसने उस जिले के लोगों को उनके घरों में बसाया, प्रांत में शांति स्थापित की और घर के लिए निकल पड़ा। फिर जब वह शहर से कुछ ही दूर था, तो उन योद्धाओं ने उसका और उसके बेटों का सिर काट डाला।

उस दिन मल्लिका ने दो प्रमुख शिष्यों और पाँच सौ भिक्षुओं को निमंत्रण भेजा था। दोपहर होते-होते उन्हें एक पत्र मिला, जिसमें उनके पति और पुत्रों के सिर कलम किए जाने की खबर थी। यह सुनकर उन्होंने किसी से कुछ कहे बिना पत्र को अपने वस्त्र में छिपा लिया और भिक्षुओं की सेवा में लग गईं। उनके सेवकों ने भिक्षुओं को चावल दिए, और घी का कटोरा लाते समय वे भिक्षुओं के सामने ही कटोरा तोड़ बैठे। तब धर्म के प्रमुख (सारिपुत्र) ने कहा, "बर्तन टूटने के लिए ही बने हैं; इसकी चिंता मत करो।" मल्लिका ने अपने वस्त्र की तह से पत्र निकालते हुए कहा, "यह पत्र मुझे सूचित करता है कि मेरे पति और उनके बत्तीस पुत्रों के सिर कलम कर दिए गए हैं। अगर मैं इसकी चिंता नहीं करती, तो कटोरा टूटने पर क्या मैं चिंता करूंगी?" धर्माध्यक्ष (सारिपुत्र) ने अब "अदृश्य, अज्ञात (*10)" और इसी

प्रकार आगे बढ़ते हुए प्रवचन दिया और घर चले गए। उन्होंने अपनी बत्तीस बहुओं को बुलाया और उनसे कहा, "तुम्हारे पति निर्दोष होते हुए भी अपने कर्मों का फल भोग चुके हैं। शोक मत करो और राजा से भी बड़ा पाप मत करो।" यह उनकी सलाह थी। राजा के जासूसों ने यह सुनकर उन्हें सूचना दी कि वे क्रोधित नहीं हैं। तब राजा व्याकुल हो गए और मल्लिका और उनके पुत्रों की पत्नियों के लिए क्षमा मांगते हुए एक वरदान की पेशकश की। मल्लिका ने उत्तर दिया, "इसे स्वीकार करो।" उन्होंने अंत्येष्टि भोज तैयार किया, स्नान किया और फिर राजा के समक्ष गईं। उन्होंने कहा, "हे मेरे स्वामी, आपने मुझे वरदान दिया था। मुझे बस यही चाहिए कि आप मेरी बत्तीस बहुओं और मुझे अपने-अपने घर लौटने की अनुमति दें।" राजा ने स्वीकार कर लिया। उसने अपने बत्तीस पुत्रों की पत्नियों को उनके घर भेज दिया और स्वयं कुसिनारा नगर में अपने परिवार के घर लौट गई। राजा ने सेनापति बंधुला के पुत्र दीघा-करायण को सेनापति का पद दिया। परन्तु वह राजा की आलोचना करता फिरता था और कहता था, "उसने मेरे चाचा की हत्या की।"

निर्दोष बंधुला की हत्या के बाद से राजा पश्चाताप से व्याकुल हो गया, उसे मन की शांति नहीं मिली, राजा होने का उसे कोई आनंद नहीं रहा। उस समय गुरु शाक्यों के एक कस्बे उलुम्पा के पास रहते थे। राजा वहाँ गए, उद्यान से कुछ दूर एक शिविर लगाया और कुछ सेवकों के साथ गुरु को प्रणाम करने के लिए मठ गए। उन्होंने राजत्व के पाँच प्रतीक करायान को सौंप दिए और अकेले ही सुगंधित कक्ष में प्रवेश किया। इसके बाद जो कुछ हुआ, उसका वर्णन धम्मचेतिया सूत्र में दिया गया है। सुगंधित कक्ष में प्रवेश करते ही करायान ने राजत्व के उन प्रतीकों को लेकर विदूदभ को राजा बनाया; और राजा के लिए एक घोड़ा और एक सेविका छोड़कर वे श्रावस्ती नगर चले गए।

गुरु से सुखद वार्तालाप के बाद, राजा जब वापस लौटे तो उन्हें कोई सेना नहीं मिली। उन्होंने उस स्त्री से पूछताछ की और पता लगाया कि क्या हुआ था। फिर वे राजगृह नगर के लिए निकल पड़े, अपने भतीजे को साथ ले जाने और विदूदभा को पकड़ने का निश्चय किया। जब वे नगर पहुँचे तो काफी रात हो चुकी थी और द्वार बंद थे। धूप और हवा से बेहाल होकर एक झोपड़ी में लेटते ही उनकी मृत्यु हो गई।

जब रात उजाला होने लगी, तो स्त्री विलाप करने लगी, “हे स्वामी, कोसल के राजा की जान बच नहीं सकती!” यह आवाज सुनी गई और राजा को खबर मिली। उन्होंने अपने चाचा का अंतिम संस्कार बड़े ही भव्य तरीके से किया।

जब विदुदाभा सिंहासन पर दृढ़ता से विराजमान हो गया, तो उसे अपना पुराना द्वेष याद आया और उसने शाक्यों वंश को पूरी तरह नष्ट करने का निश्चय किया; इसी उद्देश्य से वह एक विशाल सेना लेकर निकल पड़ा। उस दिन भोर में, गुरु ने संसार पर दृष्टि डालते हुए अपने परिवार को विनाश के मंडराते देखा। उन्होंने सोचा, "मुझे अपने परिवार की रक्षा करनी चाहिए।" दोपहर में वे भिक्षा मांगने गए, फिर भोजन करने के बाद अपने सुगंधित कक्ष में सिंह की तरह लेट गए, और शाम को कपिलवस्तु (बुद्ध के वंश का राज्य) के निकट वायुमार्ग से यात्रा करके एक कम छायादार वृक्ष के नीचे बैठ गए। उस स्थान के निकट ही, विदुदाभा के राज्य की सीमा पर एक विशाल और छायादार बरगद का वृक्ष खड़ा था। गुरु को पास आते देख विदुदाभा ने उन्हें प्रणाम किया और कहा, "हे महाराज, इस भीषण गर्मी में इतने कम छायादार वृक्ष के नीचे क्यों बैठे हैं? कृपया इस छायादार बरगद के नीचे बैठें।" उसने उत्तर दिया, “रहने दो, हे महाराज! मेरे कुल की छाया मुझे शीतलता प्रदान करती है।” दूसरे ने सोचा, “गुरुजी अपने कुलवासियों की रक्षा के लिए यहाँ आए होंगे।” अतः उसने गुरुजी को प्रणाम किया और श्रावस्ती नगर लौट गया। गुरुजी उठकर जेतवन मठ चले गए। राजा को शाक्यों के प्रति अपने द्वेष की याद फिर आई, वह फिर चल पड़ा, और उसने गुरुजी को उसी स्थान पर बैठे हुए देखा, फिर लौट आया। चौथी बार वह चला; और गुरुजी ने शाक्यों के पूर्व कर्मों का अध्ययन करके यह जान लिया कि नदी में विष डालने के उनके दुष्ट कर्मों का प्रभाव निष्प्रभावी है; अतः वह चौथी बार वहाँ नहीं गया। तब राजा विदूदभ ने सभी शाक्यों को मार डाला, सबसे पहले दूध पीते शिशुओं को, और उनके रक्त से वेदी धोकर लौट आया।

गुरुजी के तीसरी बार बाहर जाने और लौटने के अगले दिन, भिक्षा मांगने और भोजन करने के बाद, जब वे अपने सुगंधित कक्ष में विश्राम कर रहे थे, तभी सभी दिशाओं से भिक्षु सत्य के हॉल में एकत्रित हुए और बैठकर उस महान व्यक्ति के गुणों का वर्णन करने लगे: “महोदय, गुरुजी ने अभी-अभी स्वयं को प्रकट किया और राजा को वापस लौटा दिया, और अपने कुल को मृत्यु के भय से मुक्त कर दिया। गुरुजी अपने कुल के लिए एक सहायक मित्र हैं!” गुरुजी प्रवेश कर गए और उनसे पूछा कि वे क्या बातें कर रहे हैं। उन्होंने उन्हें बताया। तब उन्होंने कहा, “भाइयों, तथागत (बुद्ध) केवल आज ही अपने कुल के हित में कार्य नहीं करते; उन्होंने बहुत पहले भी ऐसा ही किया था।” इन शब्दों के साथ, उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे और दस राजगुणों का पालन करते हुए उन्होंने मन ही मन सोचा, "पूरे भारत में राजा कई स्तंभों पर टिके महलों में रहते हैं। तो फिर कई स्तंभों पर टिके महल में कोई आश्चर्य की बात नहीं है; लेकिन अगर मैं केवल एक स्तंभ पर टिका महल बनाऊं तो क्या होगा? तब मैं सभी राजाओं में श्रेष्ठ हो जाऊंगा!" इसलिए उन्होंने अपने शिल्पकारों को बुलाया और उनसे एक स्तंभ पर टिका एक भव्य महल बनाने को कहा। "ठीक है," उन्होंने कहा और जंगल की ओर चल दिए।

वहाँ उन्होंने कई सीधे और विशाल वृक्ष देखे, जो किसी महल के एकमात्र स्तंभ बनने के योग्य थे। उन्होंने कहा, "ये वृक्ष तो यहाँ हैं, लेकिन रास्ता ऊबड़-खाबड़ है और हम इन्हें कभी नहीं ले जा सकते; हम राजा से इसके बारे में पूछेंगे।" जब उन्होंने ऐसा किया, तो राजा ने कहा, "किसी भी तरह से, चाहे जैसे भी हो, तुम्हें इन्हें लाना ही होगा, और वह भी जल्दी।" लेकिन उन्होंने उत्तर दिया, "न तो जैसे भी हो, यह संभव है।" तब राजा ने कहा, "तो मेरे उद्यान में एक वृक्ष खोजो।"

कारीगर उद्यान में गए और वहाँ उन्होंने एक भव्य साल का वृक्ष देखा, जो सीधा और सुगठित था, जिसकी गाँव-नगर के लोग पूजा करते थे, और शाही परिवार भी नियमित रूप से उसे भेंट और पूजा अर्पित करता था। उन्होंने राजा को यह बात बताई। राजा ने कहा, "मेरे उद्यान में तुम्हें एक वृक्ष मिला है: अच्छा—जाओ और इसे काट डालो।" उन्होंने कहा, "ठीक है," और सुगंधित मालाओं से भरे हाथों के साथ उद्यान की ओर चल पड़े; फिर उन्होंने उस पर पाँच गुच्छों की माला टांगी, उसे एक डोरी से घेरा, उस पर फूलों का गुलदस्ता बाँधा और एक दीपक जलाकर पूजा की, और समझाया, "आज से सातवें दिन हम इस वृक्ष को काट डालेंगे: यह राजा का आदेश है। इस वृक्ष में निवास करने वाले देवता कहीं और चले जाएँ, और इसके लिए हम दोषी न हों।"

वृक्ष में निवास करने वाले देवदूत ने यह सुनकर मन ही मन सोचा, "ये निर्माता इस वृक्ष को काटने और मेरे निवास स्थान को नष्ट करने पर तुले हुए हैं। अब मेरा जीवन केवल इस निवास स्थान तक ही सीमित है। और इसके चारों ओर खड़े सभी युवा साल के वृक्ष, जहाँ मेरे परिवार के देवता निवास करते हैं, और वे अनेक हैं, नष्ट हो जाएँगे। मेरे स्वयं के विनाश से अधिक मुझे मेरे बच्चों के विनाश का भय नहीं है: इसलिए मुझे उनके जीवन की रक्षा करनी चाहिए।" तदनुसार, आधी रात को, दिव्य वैभव से सुसज्जित होकर, वह राजा के भव्य कक्ष में प्रवेश किया और पूरे कक्ष को प्रकाश से भरते हुए, राजा के तकिये के पास रोने लगा। उसे देखकर राजा भयभीत होकर प्रथम श्लोक बोला:

"तुम कौन हो, जो आकाश में ऊँचे खड़े हो, दिव्य वस्त्र धारण किए हुए?"
तुम्हारे डर कहाँ से आते हैं, तुम्हारी आँखों से ये आँसू क्यों बह रहे हैं?
यह सुनकर देवताओं (देवदूतों) के राजा ने दो श्लोक दोहराए:

"हे राजा, आपके राज्य में लोग मुझे भाग्यशाली वृक्ष के रूप में जानते हैं।"
मैं साठ हजार वर्षों तक यहाँ खड़ा रहा, और सभी ने मेरी पूजा की।
"यद्यपि उन्होंने अनेक नगर और घर बनाए, और अनेक राजाओं की संपत्तियाँ नष्ट कीं,
फिर भी उन्होंने मुझे कभी परेशान नहीं किया, मुझे कोई नुकसान नहीं पहुंचाया।
फिर जिस प्रकार वे आपकी उपासना करते हैं, उसी प्रकार वे भी आपकी उपासना करें, हे राजा!
फिर राजा ने दो छंद दोहराए:

लेकिन मैंने ऐसा दूसरा विशालकाय तना आज तक कभी नहीं देखा।
आकार और ऊंचाई में इतना उत्तम, इतना घना और मजबूत पेड़।
"मैं एक सुंदर महल बनाऊंगा, जिसमें सहारे के लिए एक ही स्तंभ होगा।"
मैं तुम्हें वहीं रखूंगा—तुम्हारा जीवन छोटा नहीं होगा।"
यह सुनकर देवताओं (देवदूतों) के राजा ने दो छंद दोहराए:

"चूंकि तुम मेरे शरीर को मुझसे अलग करने पर तुले हो, तो मुझे छोटे-छोटे टुकड़ों में काट दो,"
हे राजा, या तो मुझे टुकड़ों-टुकड़ों में काट दो, या बिल्कुल मत काटो।
"पहले ऊपरी भाग को काटो, फिर मध्य भाग को, और अंत में मेरी जड़ को काटो।"
और हे राजा, यदि आप मुझे इस प्रकार काटेंगे, तो मृत्यु कष्टदायी नहीं होगी।
फिर राजा ने दो छंद दोहराए:

"पहले हाथ और पैर, फिर नाक और कान, जब तक पीड़ित जीवित है।"
और अंत में सिर को अलग कर दिया जाता है—यह एक दर्दनाक मौत होती है।
"हे भाग्यशाली वृक्ष! हे वन के राजा! आपको कितना सुख प्राप्त हो सकता है,"
आप किसलिए, किस कारण से अपने शरीर के टुकड़े-टुकड़े करवाना चाहते हैं?
तब भाग्यशाली वृक्ष ने दो छंदों को दोहराते हुए उत्तर दिया:

"इसका कारण (और यह एक बेहद नेक कारण है) कि टुकड़ों में
हे सर्वशक्तिमान राजा, मैं कट जाना चाहता हूँ! आओ, सुनो, मैं क्या कहता हूँ।

मेरे चारों ओर मेरे सभी मित्र और परिवार के सदस्य समृद्ध और सुरक्षित माहौल में पल-बढ़ रहे हैं।
मैं इन्हें एक ही झटके में कुचल दूंगा, और तब इन्हें बहुत कष्ट सहना पड़ेगा।"
यह सुनकर राजा बहुत प्रसन्न हुआ: "यह तो एक योग्य देवदूत है, यह नहीं चाहता कि उसका परिवार अपना निवास स्थान खो दे; यह अपने परिवार के भले के लिए कार्य करता है।" और उसने शेष श्लोक दोहराया:

हे भाग्यशाली वृक्ष! हे वन के राजा! आपके विचार महान होने चाहिए।
तुम अपने परिवार से दोस्ती कर लोगे, इसलिए डर के मारे मैंने तुम्हें आज़ाद कर दिया।"
देवदूतों के राजा (इंद्र) ने इस राजा को प्रवचन देकर प्रस्थान किया। राजा ने उनकी सलाह मानकर दान-पुण्य किया और अन्य अच्छे कर्म करते हुए स्वर्ग विदा हो गया।

गुरु ने प्रवचन समाप्त करते हुए कहा: "हे भिक्षुओं, तथागत बुद्ध अपने मित्रों और परिवार का भला करने के लिए ही कार्य करते हैं;" और फिर उन्होंने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उस समय आनंद राजा थे, बुद्ध के अनुयायी साल के वृक्ष के नन्हे पौधों में अवतरित देवता थे, और मैं स्वयं भाग्यशाली वृक्ष, देवताओं (देवदूतों) का राजा था।"

फुटनोट:

(1)सं. 536.

(2) एक प्रसिद्ध महिला शिष्या

(3) शाक्य वंश का मुख्यालय, और बुद्ध का जन्मस्थान।

(4) एक शाक्य राजकुमार, बुद्ध के पिता राजा शुद्धोदन का पुत्र

(5) क्षत्रिय.

(6) वल्लभ.

(7)सं. 7.

(8)धम्मपद में महालिच्छवी कहा जाता है

(9) यह एक प्रसिद्ध घटना का एक रूपांतर है। एक जल्लाद इतनी कुशलता से एक आदमी का सिर काट देता है कि पीड़ित को पता ही नहीं चलता कि ऐसा हुआ है। फिर पीड़ित एक चुटकी तंबाकू लेता है, छींकता है, और उसका सिर धड़ से अलग हो जाता है। एक अन्य रूप यह है: दो आदमी बहस करते हैं, और एक अपनी तलवार घुमाता है। वे बातें करते रहते हैं, और कुछ समय बाद दूसरा जाने के लिए उठता है, और दो टुकड़ों में गिर जाता है।

(10)सुत्त-निपात 574: "अदृश्य, अज्ञात है यहाँ नीचे मनुष्यों का जीवन:" और इसी प्रकार बीस श्लोकों तक। यह सल्लसुत है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **समुद्द-वणिज-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-466-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 466
समुद्दा-वनिज-जातक

"दूसरे बोते हैं," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए देवदत्त के बारे में सुनाई थी, जब वह पांच सौ परिवारों को अपने साथ लेकर नरक में गया था।

जब प्रमुख शिष्य (*1) अपने अनुयायियों को साथ लेकर चले गए, तो देवदत्त अपने दर्द को सहन न कर पाने के कारण अपने मुँह से गर्म खून थूक कर चले गए; फिर अत्यंत पीड़ा से पीड़ित होकर, तथागत (बुद्ध) के गुणों को याद करते हुए उन्होंने मन ही मन कहा, "मैंने नौ महीनों तक तथागत (बुद्ध) के प्रति दुर्भावना रखी, परन्तु गुरु के हृदय में मेरे लिए कभी कोई पापी विचार नहीं आया; अस्सी प्रमुख ऋषियों के मन में मेरे प्रति कोई द्वेष नहीं है; अपने कर्मों के कारण मैं बहुत दुखी हो गया हूँ, और गुरु, महान ऋषियों, मेरे कुल के मुखिया (*2) ऋषि राहुल (बुद्ध के पुत्र) और शाक्यों (कपिलवस्तु में बुद्ध का कुल) के सभी राजवंशों ने मुझे त्याग दिया है। मैं गुरु के पास जाऊँगा और उनसे मेल-मिलाप करूँगा।" इसलिए अपने अनुयायियों को इशारा करते हुए, उन्होंने खुद को एक स्ट्रेचर पर ले जाने का इंतजाम किया, और हमेशा रात के समय यात्रा करते हुए कोसला शहर की ओर चल पड़े।

आनंद भिक्षु ने गुरु से कहा, "कहते हैं कि देवदत्त आपसे सुलह करने आ रहे हैं।" — "आनंद, देवदत्त मुझे नहीं देख पाएंगे।" श्रावस्ती नगर पहुँचकर, गुरु ने गुरु को फिर यही बात बताई; और भगवान बुद्ध ने पहले की तरह ही उत्तर दिया। जब वे जेतवन मठ के द्वार पर थे और जेतवन झील की ओर बढ़ रहे थे, तब उनका पाप चरम पर पहुँच गया: उनके शरीर में बुखार आ गया, और स्नान और पानी पीने की इच्छा से उन्होंने उन्हें स्ट्रेचर से उतारने का आदेश दिया ताकि वे पानी पी सकें। जैसे ही वे नीचे उतरे और ज़मीन पर खड़े हुए, इससे पहले कि वे खुद को तरोताज़ा कर पाते, धरती फट गई, अविची के सबसे गहरे नरक से एक ज्वाला उठी और उन्हें घेर लिया। तब उन्हें पता चला कि उनके पाप का फल चरम पर पहुँच गया है, और तथागत (बुद्ध) के गुणों को याद करते हुए, उन्होंने इस श्लोक को दोहराया:

"मैं अपनी इन अस्थियों को उस परम सत्ता को अर्पित करता हूँ।"
सौ शुभ चिह्नों से सुशोभित, सर्वदर्शी,
ईश्वर, ईश्वर से भी बढ़कर, जो मनुष्य के उग्र स्वभाव को वश में करता है।
मैं अपने पूरे मन से बुद्ध की शरण में जा रहा हूँ!
लेकिन शरण लेने के क्षण भर में ही वह अविची नरक में जाने के लिए अभिशप्त हो गया। उसके साथ पाँच सौ परिवार थे, जिन्होंने उसका अनुसरण करते हुए दशबल (बुद्ध) का अपमान किया और उन्हें अपशब्द कहे, और वे भी अविची नरक में ही जन्म लिए। इस प्रकार वह पाँच सौ परिवारों को साथ लेकर अविची गया।

एक दिन वे सत्य के हॉल में बातें कर रहे थे: "भाई, पापी देवदत्त ने लाभ के लालच में आकर अकारण ही परम बुद्ध पर क्रोध किया और भविष्य के भय की परवाह न करते हुए अपने पाँच सौ परिवारों सहित नरक में जाने का ऋणी हुआ।" गुरुजी ने अंदर आकर उनसे पूछा कि वे क्या कह रहे हैं: उन्होंने उन्हें बताया। गुरुजी ने कहा, "भाइयों, देवदत्त लाभ और मान-सम्मान का लालची था और उसने भविष्य के भय पर ध्यान नहीं दिया; और पहले भी, और अब भी, भविष्य के भय की परवाह न करते हुए, वह अपने अनुयायियों के साथ वर्तमान सुख के लालच में पूरी तरह से नष्ट हो गया।" ऐसा कहकर उन्होंने उन्हें अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, बनारस के पास बढ़ईयों का एक बड़ा शहर था, जिसमें एक हजार परिवार रहते थे। इस शहर के बढ़ई कहते थे कि वे पलंग, कुर्सी या घर बना देंगे, लेकिन ग्राहकों से बड़ी रकम उधार लेने के बाद भी वे कुछ भी नहीं बना पाते थे। लोग हर बढ़ई को डांटते और उनके काम में दखल देते थे। इस तरह वे कर्जदार इतने परेशान हो गए कि वहां रहना उनके लिए मुश्किल हो गया। उन्होंने कहा, "चलो कहीं दूर जाकर रहने की जगह ढूंढते हैं।" इसलिए वे जंगल की ओर चल पड़े। उन्होंने पेड़ काटे, एक बड़ा जहाज बनाया और उसे नदी में उतारा। वे उस शहर से दूर लगभग तीन चौथाई मील (4.23 किमी) की दूरी पर जहाज को किनारे लगा दिया। फिर आधी रात को वे अपने परिवार को लाने के लिए शहर लौटे। उन्होंने अपने परिवार को जहाज पर बिठाया और फिर समुद्र की ओर चल दिए। वहाँ वे हवा के रुख के अनुसार चलते रहे, जब तक कि वे समुद्र के बीचोंबीच स्थित एक द्वीप पर नहीं पहुँच गए। उस द्वीप पर हर तरह के जंगली पौधे और फलदार पेड़, चावल, गन्ना, केला, आम, गुलाब सेब, कटहल, नारियल और न जाने क्या-क्या उगते थे। एक और आदमी था जो जहाज़ टूटने के कारण उस द्वीप पर उनसे पहले ही बस गया था और वहाँ चावल और गन्ने का सेवन करके रहता था, जिससे वह हष्ट-पुष्ट और तगड़ा हो गया था; वह नंगा रहता था और उसके बाल और दाढ़ी लंबी हो गई थी। बढ़ईयों ने सोचा, "अगर द्वीप पर भूत-प्रेत का वास है, तो हम सब मर जाएँगे; इसलिए हम इसकी खोज करेंगे।" तब सात वीर और बलवान पुरुषों ने पाँच प्रकार के हथियारों (*3) से लैस होकर उस द्वीप पर उतरे और उसकी खोजबीन की।

उस समय, जहाज़ टूटने के बाद, वह अकेला व्यक्ति अपना उपवास तोड़कर गन्ने का रस पी चुका था और अत्यंत प्रसन्न होकर एक सुंदर, ठंडी छायादार जगह पर, चांदी की थाली की तरह चमकती रेत पर पीठ के बल लेटा हुआ था। वह सोच रहा था, "भारत में रहने वालों को, जो खेती और बुवाई करते हैं, ऐसा सुख नहीं मिलता; मुझे तो यह द्वीप भारत से कहीं अधिक अच्छा लगता है!" वह खुशी से गीत गा रहा था और परमानंद में डूबा हुआ था।

गुरु ने यह समझाने के लिए कि कैसे उस परित्यक्त व्यक्ति ने आनंद और परमानंद के लिए गीत गाए, पहले छंद को दोहराया:

कुछ लोग बीज बोते हैं और कुछ लोग हल चलाते हैं।
कड़ी मेहनत से जीवन यापन करना;
मेरे राज्य में उनका कोई हिस्सा नहीं है:
भारत? यह तो कहीं बेहतर है!
छोटे से द्वीप की खोज कर रहे खोजकर्ताओं ने उसके गाने की आवाज़ सुनी और कहा, "लगता है किसी इंसान की आवाज़ है; चलो उससे जान-पहचान करते हैं।" आवाज़ का पीछा करते हुए वे उस आदमी के पास पहुँचे, लेकिन उसका चेहरा देखकर वे डर गए। "यह तो जिन्न है!" वे चिल्लाए और धनुष पर तीर चढ़ा लिया। जब उस आदमी ने उन्हें देखा, तो उसे घायल होने का डर सताने लगा, इसलिए वह चिल्लाया—"मैं जिन्न नहीं हूँ, सज्जनों, बल्कि एक इंसान हूँ: मेरी जान बख्श दो!"—"क्या!" वे बोले, "क्या इंसान तुम्हारी तरह नंगे और निहत्थे घूमते हैं?" और बार-बार उससे यही पूछते रहे, लेकिन उन्हें वही जवाब मिला कि वह एक इंसान है। आखिरकार वे उसके पास पहुँचे और सब आपस में मजे से बातें करने लगे। नए आए लोगों ने पूछा कि वह यहाँ कैसे आया। दूसरे ने उन्हें सच बताया। "तुम्हारे अच्छे कर्मों के फल के रूप में तुम यहाँ आए हो," उसने कहा, "यह एक बेहतरीन द्वीप है। यहाँ जीवनयापन के लिए हाथ से काम करने की कोई ज़रूरत नहीं है; चावल, गन्ना और बाकी सब कुछ यहाँ भरपूर मात्रा में उगता है, और सब कुछ जंगली है; तुम यहाँ निश्चिंत होकर रह सकते हो।" "क्या यहाँ रहने में कोई और बाधा नहीं है?" उन्होंने पूछा, "डरने की कोई बात नहीं है सिवाय इसके कि यह द्वीप राक्षसों से भरा हुआ है, और राक्षस तुम्हारे मल-मूत्र को देखकर क्रोधित हो जाएँगे; इसलिए जब तुम शौच करो, तो रेत में एक गड्ढा खोदकर उसे वहाँ छिपा देना। बस यही एक खतरा है; और कोई नहीं; बस इस बात का हमेशा ध्यान रखना।"

फिर वे उस स्थान पर रहने लगे।

लेकिन इन हजार परिवारों में दो कुशल कारीगर थे, प्रत्येक पांच सौ परिवारों में से एक का मुखिया था; और इनमें से एक मूर्ख और सर्वोत्तम भोजन का लालची था, जबकि दूसरा बुद्धिमान था और हर चीज में सर्वश्रेष्ठ पाने के लिए उत्सुक नहीं था।

समय बीतने के साथ-साथ, जब वे वहाँ रहने लगे, तो वे सब हट्टे-कट्टे और तगड़े हो गए। तब उन्होंने सोचा, "इतने लंबे समय से हमने मौज-मस्ती नहीं की है: चलो गन्ने के रस से ताड़ी बनाते हैं।" तो उन्होंने तेज़ शराब बनवाई और नशे में चूर होकर गाने, नाचने, खेलने-कूदने लगे, फिर लापरवाही से इधर-उधर और बिना छुपाए पेशाब करने लगे, जिससे द्वीप गंदा और घिनौना हो गया। देवता क्रोधित हो गए क्योंकि इन लोगों ने उनके खेल के मैदान को गंदा कर दिया था। उन्होंने विचार किया, "क्या हम समुद्र को इस पर लाकर द्वीप को शुद्ध कर दें? - यह अंधकारमय पखवाड़ा है: अब हमारा जमावड़ा टूट गया है। ठीक है, आज से पंद्रहवें दिन, पूर्णिमा के पहले दिन, चंद्रमा के उदय के समय, हम समुद्र को लाकर इन सबको खत्म कर देंगे।" इस प्रकार उन्होंने दिन तय किया। इस पर उनमें से एक धर्मात्मा देवता ने सोचा, "मैं नहीं चाहता कि ये सब मेरी आँखों के सामने नष्ट हो जाएँ।" अत: करुणावश, जब वे लोग शाम के भोजन के बाद अपने दरवाजों पर बैठकर सुखद बातें कर रहे थे, तब उन्होंने पूरे द्वीप को प्रकाश से जगमगा दिया, और समस्त वैभव से सुशोभित होकर उत्तर दिशा की ओर हवा में स्थिर रहे, और उनसे इस प्रकार कहा: "हे बढ़ई! देवता तुमसे क्रोधित हैं। इस स्थान पर अब और मत रहो, क्योंकि आधे महीने बाद देवता समुद्र को उफान पर लाएंगे और तुम सबको नष्ट कर देंगे। इसलिए इस स्थान से भाग जाओ।" और उन्होंने दूसरा श्लोक दोहराया:

"तीन बार पांच दिनों में चंद्रमा दिखाई देगा:
फिर समुद्र से एक भयंकर बाढ़ आने वाली है
इस विशाल द्वीप को अपने वश में करने के लिए: तो जल्दी करो,
कहीं और शरण लो, ताकि तुम्हें कोई हानि न हो।
यह सलाह देकर वह अपने स्थान पर लौट गया। उसके जाने पर, उसका एक और साथी, एक क्रूर देवता, सोचने लगा, "शायद वे उसकी सलाह मानकर भाग जाएँगे; मैं उन्हें जाने से रोकूँगा और उन सबको पूरी तरह नष्ट कर दूँगा।" दिव्य वैभव से सुशोभित होकर, उसने पूरे स्थान पर प्रकाश की एक प्रचंड ज्वाला उत्पन्न की और उनके पास आकर दक्षिण की ओर हवा में स्थिर हो गया, और पूछा, "क्या यहाँ कोई देवता (देवदूत) आया था?" "हाँ," उत्तर मिला। "उसने तुम्हें क्या बताया?" उन्होंने उत्तर दिया, "यह और यह, मेरे स्वामी।" तब उसने कहा, "यह देवता नहीं चाहता कि तुम यहाँ रहो, और क्रोधित होकर बोल रहा है। कहीं और मत जाओ, यहीं रहो।" और इन शब्दों के साथ, उसने दो छंद दोहराए:

मुझे अनेक संकेतों से यह स्पष्ट हो गया है,
उस विशाल समुद्री बाढ़ के बारे में जो तुम सुनते हो
क्या यह महान द्वीप कभी डूब नहीं पाएगा?
तो फिर आनंद लो, शोक मत करो, कभी डरो मत।
"यहाँ आपको एक विशाल आवास मिल गया है,"

खाने-पीने और भोजन की सभी वस्तुओं से परिपूर्ण;
मुझे आपके लिए कोई खतरा नहीं दिखता: आइए, आनंद लीजिए
यह भलाई आपकी सभी पीढ़ियों के लिए अच्छी रहे।"
इस प्रकार इन दो छंदों में उनकी चिंता दूर करने का प्रस्ताव देकर वह चला गया। उसके जाने के बाद, मूर्ख बढ़ई ने ऊँची आवाज़ में, धर्मात्मा देवता के वचन की परवाह न करते हुए, चिल्लाकर कहा, "हे प्रभु, मेरी बात सुनो!" और पाँचवें छंद में सभी बढ़इयों को संबोधित किया:

"वह देवता, जो दक्षिणी दिशा से स्पष्ट है

वह पुकारता है, सब सुरक्षित हैं! हम उससे ही सत्य सुनते हैं;
डरो या न डरो, उत्तर को कुछ नहीं पता:
तो फिर शोक क्यों करें? आनंद लें—कभी डरें नहीं!
उसकी बात सुनकर, अच्छी चीजों के लालची पाँच सौ बढ़ई मूर्ख बढ़ई की सलाह मानने को तैयार हो गए। लेकिन तब बुद्धिमान बढ़ई ने उसकी बात सुनने से इनकार कर दिया और बढ़इयों को संबोधित करते हुए चार छंद दोहराए:

"जब ये दोनों राक्षस एक-दूसरे के खिलाफ रोते हैं,
एक भय का आह्वान करता है, और दूसरा सुरक्षा का।
मेरी सलाह सुनो, अन्यथा जल्द ही हालात बेकाबू हो जाएंगे।
तुम सब मिलकर पूरी तरह से नष्ट हो जाओगे।
आइए हम सब मिलकर एक विशाल नौका का निर्माण करें।
एक मजबूत पात्र लाओ, और उसे इस नाव के भीतर रखो।
सभी फिटिंग: अगर इस दक्षिणी व्यक्ति ने सच कहा,
और दूसरे ने कहा, लेकिन गलत काम, गलत बात है।
"यह पात्र हमारे लिए आवश्यकता के समय उपयोगी साबित होगा।"
और न ही हम इस द्वीप को असंयमित छोड़ेंगे;
लेकिन अगर उत्तरी देवता ने सच कहा हो,
दक्षिण की ओर से तो केवल मूर्खता ही प्रस्तुत की गई—
फिर हम सब एक साथ जहाज में सवार हो जाते हैं।
और जहां हमारी सुरक्षा है, वहीं सब हमें दौड़ाते हैं।
"जो बात आप पहली बार सुनते हैं, उसे अच्छा या बुरा न मानें;
लेकिन जो कोई भी सब कुछ कान के भीतर से गुजरने देता है,
और फिर विचार-विमर्श में औसत निकाला जाता है।
वह व्यक्ति सबसे सुरक्षित आश्रय की ओर मार्ग प्रशस्त करेगा।
इसके बाद उसने फिर कहा: "चलो, अब हम दोनों देवताओं की बात मानें। चलो एक जहाज़ बनाएँ, और अगर पहले देवता की बात सच हुई, तो हम उस जहाज़ में चढ़कर चले जाएँगे; लेकिन अगर दूसरे देवता की बात सच हुई, तो हम जहाज़ को एक तरफ़ रख देंगे और यहीं बस जाएँगे।" जब उसने ऐसा कहा, तो मूर्ख बढ़ई बोला: "अरे! तुम तो चाय के प्याले में मगरमच्छ देख रहे हो! तुम बहुत ही सुस्त हो! पहले देवता ने क्रोध में हमसे बात की, दूसरे ने स्नेह में। अगर हम इस सबसे सुंदर द्वीप को छोड़ दें, तो कहाँ जाएँगे? लेकिन अगर तुम्हें जाना ही है, तो अपनी पूंछ साथ ले जाओ और अपना जहाज़ बना लो: हमें जहाज़ की ज़रूरत नहीं है!"

बुद्धिमान व्यक्ति और उसके साथियों ने एक जहाज़ बनाया, उस पर सभी साज-सामान लाद दिए और वह और उसके सभी साथी जहाज़ में खड़े हो गए। फिर पूर्णिमा के दिन, चंद्रमा उदय होते ही, समुद्र में एक लहर उठी और घुटनों तक गहरी होकर पूरे द्वीप को अपनी चपेट में ले ली। बुद्धिमान व्यक्ति ने लहर को उठते हुए देखकर जहाज़ को समुद्र में छोड़ दिया। मूर्ख बढ़ई के दल के पाँच सौ परिवार चुपचाप बैठे रहे और आपस में कहने लगे, "एक लहर उठी है, जो द्वीप को बहा ले जाएगी, लेकिन यह इससे ज़्यादा गहरी नहीं होगी।" फिर समुद्र की लहर कमर तक गहरी, मनुष्य के बराबर, एक ताड़ के पेड़ जितनी, सात ताड़ के पेड़ों जितनी गहरी उठी और पूरे द्वीप को अपनी चपेट में ले ली। बुद्धिमान व्यक्ति, जो संसाधनों से भरपूर था और अच्छी चीजों के लालच में नहीं फंसा था, सुरक्षित निकल गया; लेकिन मूर्ख बढ़ई, जो अच्छी चीजों का लालची था और भविष्य के भय की परवाह नहीं करता था, अपने पाँच सौ परिवारों के साथ नष्ट हो गया।

अन्य तीन श्लोक, जो इस विषय को स्पष्ट करने वाले उपदेशों से परिपूर्ण हैं, पूर्ण ज्ञान के श्लोक हैं:

जैसे कि मध्य सागर में, उनके कर्मों के द्वारा,
   व्यापारी खुशी-खुशी वहां से भाग निकले:
इसलिए बुद्धिमान लोग, छिपी हुई बातों को समझ लेते हैं।
   भविष्य में कोई भी उल्लंघन नहीं करेगा।
"अपने कुकर्मों में मूर्ख, लालच में डूबे हुए"
   जो भविष्य के खतरों को नहीं समझते,
वर्तमान आवश्यकता के सामने सिंक पूरी तरह से अभिभूत है।
   जैसे ही ये लोग समुद्र के बीचोंबीच अपनी अंतिम यात्रा पर पहुंचे।
"जरूरत पड़ने से पहले ही काम पूरा कर लो।"
   मुझे आवश्यक वस्तु की कमी से वंचित न होने दें।
जो समय रहते आवश्यक कार्य करते हैं
   समय आने पर कभी भी कष्ट में न पड़ें।

जब गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने कहा: "हे भिक्षुओं, यह पहली बार नहीं है, बल्कि पहले भी कई बार देवदत्त वर्तमान सुखों के जाल में फँसकर अपने सभी साथियों सहित विनाश की ओर अग्रसर हुआ है।" ऐसा कहते हुए उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "उस समय देवदत्त मूर्ख बढ़ई था, कोकालिका दक्षिण क्षेत्र में विराजमान अधर्मी देवता थी, सारिपुत्र उत्तर क्षेत्र में विराजमान देवता था, और मैं स्वयं बुद्धिमान बढ़ई था।"

फुटनोट:

(1)सारिपुत्र और मोग्गल्याना.

(2) देवदत्त बुद्ध के चचेरे भाई थे।

(3) तलवार, भाला, धनुष, ढाल, कुल्हाड़ी।

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **काम-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-467-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 467
कामजातक (*1)

"जो इच्छा करता है," इत्यादि। यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक ब्राह्मण के बारे में सुनाई थी।

कहते हैं कि श्रावस्ती नगर में रहने वाला एक ब्राह्मण अचिरवती (राप्ती नदी) के किनारे खेती करने के लिए पेड़ काट रहा था। गुरु ने उसका भाग्य भांपते हुए (*2) जब भिक्षा मांगने श्रावस्ती नगर आए, तो वे अपने रास्ते से हटकर उससे मधुरता से बातें करने लगे। उन्होंने पूछा, "क्या कर रहे हो, ब्राह्मण?" उस व्यक्ति ने कहा, "हे गौतम (बुद्ध), मैं खेती के लिए जगह साफ कर रहा हूँ।" गुरु ने उत्तर दिया, "बहुत अच्छा, अपना काम जारी रखो, ब्राह्मण।" इसी तरह गुरु उससे तब भी बात करने आए जब सारे कटे हुए पेड़ हटा दिए गए थे और वह अपनी ज़मीन साफ कर रहा था, और फिर जुताई के समय और पानी के लिए छोटे-छोटे मेड़ बनाते समय भी। बुवाई के दिन ब्राह्मण ने कहा, "हे गौतम (बुद्ध) आज मेरा हल चलाने का पर्व है (*3)। जब यह फसल पक जाएगी, तो मैं बुद्ध के नेतृत्व में संघ को भरपूर दान दूंगा।" गुरु ने उनका प्रस्ताव स्वीकार कर लिया और चले गए। एक और दिन वे आए और ब्राह्मण को फसल की देखभाल करते देखा। उन्होंने पूछा, "क्या कर रहे हो, ब्राह्मण?" ब्राह्मण ने कहा, "फसल की देखभाल कर रहा हूँ, हे गौतम (बुद्ध)!" गुरु ने कहा, "बहुत अच्छा, ब्राह्मण," और वे चले गए। तब ब्राह्मण ने सोचा, "तपस्वी गौतम (बुद्ध) कितनी बार इस रास्ते से आते हैं! निःसंदेह उन्हें भोजन की आवश्यकता होगी। ठीक है, मैं उन्हें भोजन दूंगा।" जिस दिन यह विचार उनके मन में आया, जब वे घर गए, तो उन्होंने गुरु को भी वहाँ पाया। इससे ब्राह्मण के मन में अद्भुत आत्मविश्वास उत्पन्न हुआ।

कुछ समय बाद, जब फसल पक गई, तो ब्राह्मण ने कल खेत काटने का निश्चय किया। लेकिन जब वह बिस्तर पर लेटा था, अचिरवती नदी के ऊपरी इलाकों में मूसलाधार बारिश हुई: बाढ़ आई और सारी फसल को समुद्र में बहा ले गई, एक भी पौधा नहीं बचा। जब बाढ़ थम गई और ब्राह्मण ने अपनी फसलों का विनाश देखा, तो वह खड़ा नहीं रह सका: गहरे दुःख से व्याकुल होकर उसने अपना हाथ अपने हृदय पर रखा और रोते हुए घर गया और मातम मनाने लगा। सुबह गुरु ने ब्राह्मण को दुःख से व्याकुल देखा और सोचा, "मैं इस ब्राह्मण का सहारा बनूंगा।" इसलिए अगले दिन, श्रावस्ती नगर में भिक्षा मांगने के बाद, भोजन ग्रहण करके लौटने पर उन्होंने भिक्षुओं को उनके मठ में वापस भेज दिया और स्वयं अपने सहायक भिक्षु के साथ उस व्यक्ति के घर गए। जब ब्राह्मण ने उनके आने की सूचना सुनी, तो उसे यह सोचकर तसल्ली हुई कि "मेरा मित्र अवश्य ही आपसे प्रेम निवेदन करने आया होगा।" उन्होंने उसे बैठने के लिए कहा; गुरुजी अंदर आए और बताए गए आसन पर बैठ गए और पूछा, "हे ब्राह्मण, तुम उदास क्यों हो? क्या हुआ है जिससे तुम दुखी हो?" "हे गौतम (बुद्ध)!" उस व्यक्ति ने कहा, "जब से मैंने अचिरावती नदी के किनारे पेड़ काटे हैं, आप जानते हैं कि मैं क्या कर रहा हूँ। मैं घूम-घूम कर आपको फसल पकने पर उपहार देने का वादा कर रहा था: अब बाढ़ सारी फसल बहाकर समुद्र में ले गई है, कुछ भी नहीं बचा! सौ बैलगाड़ियों के बराबर अनाज नष्ट हो गया है, इसलिए मैं बहुत दुखी हूँ!" - "क्यों, क्या शोक करने से जो खो गया है वह वापस आ जाएगा?" - "नहीं, गौतम (बुद्ध), ऐसा नहीं होगा।" - "यदि ऐसा है, तो शोक क्यों? इस संसार में प्राणियों का धन, या उनका अनाज, जब उनके पास होता है, तब तक उनके पास होता है, और जब वह चला जाता है, तो चला जाता है। कोई भी सांसारिक वस्तु विनाश के अधीन नहीं है; इसके बारे में मत सोचो।" इस प्रकार उन्हें सांत्वना देते हुए, गुरु ने उनकी स्थिति के अनुसार काम शास्त्र (*4) का पाठ दोहराया। काम शास्त्र के समापन पर, शोकग्रस्त ब्राह्मण प्रथम मार्ग के फल (सम्मोहन) की अवस्था में स्थापित हो गया। गुरु ने उनका दर्द दूर करके, अपनी सीट से उठकर मठ लौट गए।

पूरे नगर में यह बात फैल गई कि गुरु ने एक ब्राह्मण को दुःख से व्याकुल पाया, उसे सांत्वना दी और उसे प्रथम मार्ग (सम्मोहन) के फल में स्थापित किया। भिक्षुओं ने सत्य के हॉल में इस विषय पर चर्चा की: "सुनो, महोदय! दशबल (बुद्ध) ने एक ब्राह्मण से मित्रता की, उससे घनिष्ठ संबंध स्थापित किया, दुःख से व्याकुल होने पर उसे धर्म का उपदेश दिया, उसकी पीड़ा दूर की और उसे प्रथम मार्ग (सम्मोहन) के फल में स्थापित किया!" गुरु अंदर आए और पूछा, "भाइयों, आप सब यहाँ बैठे हैं, किस विषय पर चर्चा कर रहे हैं?" उन्होंने उन्हें बताया। गुरु ने उत्तर दिया, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है जब मैंने उसके दुःख को दूर किया है, बल्कि मैंने यही कार्य बहुत समय पहले भी किया था।" और इन शब्दों के साथ उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, बनारस के राजा ब्रह्मदत्त के दो पुत्र थे। उन्होंने बड़े पुत्र को उपसभापति बनाया और छोटे पुत्र को सेनापति नियुक्त किया। बाद में जब ब्रह्मदत्त की मृत्यु हो गई, तो दरबारी बड़े पुत्र को औपचारिक जल छिड़काव द्वारा राजा बनाना चाहते थे। लेकिन उन्होंने कहा, "मुझे राज्य की कोई परवाह नहीं है: मेरे छोटे भाई को ही राज्य मिले।" उन्होंने उनसे बहुत विनती की, लेकिन वे नहीं माने; और छोटे पुत्र को राजा नियुक्त किया गया। बड़े पुत्र को उपसभापति पद या ऐसी किसी भी चीज़ की परवाह नहीं थी; और जब उन्होंने उनसे कहा कि वे यहीं रहें और राज्य की समृद्धि का आनंद लें, तो उन्होंने कहा, "नहीं," "मुझे इस शहर में कोई काम नहीं है," और वे बनारस छोड़कर चले गए। वे सीमावर्ती क्षेत्र में गए; और एक धनी व्यापारी के परिवार के साथ रहने लगे, और अपने हाथों से काम करने लगे। कुछ समय बाद, जब उन्हें पता चला कि वे राजा के पुत्र हैं, तो उन्होंने उन्हें काम करने की अनुमति नहीं दी, बल्कि एक राजकुमार की तरह उनकी सेवा करने लगे।

कुछ समय बाद राजा के अधिकारी खेतों का सर्वेक्षण करने के लिए उस गाँव में आए। तब व्यापारी राजकुमार के पास आया और बोला, "महाराज, हम आपका समर्थन करते हैं; क्या आप अपने छोटे भाई को पत्र भेजकर हमारे कर माफ करवा देंगे?" राजा मान गया और उसने इस प्रकार लिखा: "मैं एक व्यापारी के परिवार के साथ रह रहा हूँ; मैं आपसे निवेदन करता हूँ कि मेरे लिए उनके कर माफ कर दें।" राजा मान गया और उसने कर माफ कर दिया। इसके बाद सभी गाँववाले और आसपास के लोग उसके पास आए और बोले, "हमारे कर माफ करवा दीजिए, हम आपको कर देंगे।" उनके लिए भी उसने याचिका भेजी और कर माफ करवा दिए। इसके बाद लोग उसे कर देने लगे। तब उसकी आमदनी और मान-सम्मान बहुत बढ़ गया; और इस वृद्धि के साथ-साथ उसकी सत्ता हथियाने की इच्छा भी बढ़ती गई। धीरे-धीरे उसने पूरे जिले पर अधिकार माँग लिया, उसने वायसराय का पद माँगा, और छोटे भाई ने उसे सब कुछ दे दिया। फिर जैसे-जैसे उसका लालच बढ़ता गया, वह वायसराय के पद से भी संतुष्ट नहीं हुआ और उसने राज्य पर कब्जा करने का निश्चय कर लिया; इसी उद्देश्य से वह लोगों की एक सेना लेकर निकला और शहर के बाहर एक स्थान ग्रहण करके अपने छोटे भाई को एक पत्र भेजा— "मुझे राज्य दे दो, या इसके लिए लड़ो।"

छोटे भाई ने सोचा, "इस मूर्ख ने एक बार राज्य, उपसराय पद और सब कुछ ठुकरा दिया था; और अब कहता है, मैं इसे युद्ध से प्राप्त करूँगा! अगर मैं इसे युद्ध में मार डालूँ, तो यह मेरी शर्म होगी; मुझे राजा होने की क्या परवाह?" इसलिए उसने संदेश भेजा, "मुझे लड़ने की कोई इच्छा नहीं है: आप राज्य ले सकते हैं।" दूसरे ने इसे स्वीकार कर लिया और अपने छोटे भाई को उपसराय बना दिया।

तब से उसने राज्य पर शासन किया। परन्तु वह इतना लालची था कि एक राज्य से उसका मन नहीं भरा, वह दो राज्यों की लालसा करने लगा, फिर तीन की, और उसकी लालसा का कोई अंत नहीं था।

उस समय देवताओं के राजा सक्का (इंद्र) ने चारों ओर देखा: "ये कौन हैं जो अपने माता-पिता की देखभाल करते हैं? जो दान देते हैं और अच्छे काम करते हैं? जो लोभ के वश में हैं?" उन्होंने देखा कि यह व्यक्ति लोभ के वश में है: "मूर्ख," उन्होंने सोचा, "बनारस का राजा बनकर संतुष्ट नहीं है। चलो, मैं इसे सबक सिखाऊंगा।" अतः एक युवा ब्राह्मण का वेश धारण करके वे महल के द्वार पर खड़े हो गए और संदेश भेजा कि द्वार पर एक चतुर युवक खड़ा है। उसे अंदर आने दिया गया और उसने राजा को विजय की शुभकामनाएं दीं; तब राजा ने पूछा, "तुम क्यों आए हो?" "महाराज!" उसने उत्तर दिया, "मुझे आपसे कुछ कहना है, लेकिन मुझे एकांत चाहिए।" सक्का (इंद्र) की शक्ति से उसी क्षण लोग अंदर चले गए। तब उस युवक ने कहा, "हे महाराज! मैं तीन नगरों को जानता हूँ, जो समृद्ध हैं, जन-जनता से भरे हैं, और सेना एवं अश्वों से परिपूर्ण हैं। मैं अपनी शक्ति से इन नगरों का आधिपत्य प्राप्त करूँगा और आपको सौंप दूँगा। परन्तु आपको विलंब नहीं करना चाहिए, शीघ्र जाना चाहिए।" राजा, जो अधिकार की लालसा से परिपूर्ण था, ने अपनी सहमति दे दी। (परन्तु सक्का (इंद्र) की शक्ति से वह यह पूछने से विवश था, "तुम कौन हो? कहाँ से आए हो? और तुम्हें क्या मिलेगा?") सक्का (इंद्र) ने इतना कहा और तैंतीस के निवास पर लौट गया।

तब राजा ने अपने दरबारियों को बुलाया और उनसे इस प्रकार कहा:

"एक युवक यहाँ आया था, जिसने तीन राज्यों पर कब्ज़ा करके मुझे उनका आधिपत्य दिलाने का वादा किया था! जाओ, उसे ढूँढ़ो! शहर में ढोल बजवाओ, सेना इकट्ठा करो, देर मत करो, क्योंकि मैं तीन राज्यों पर कब्ज़ा करने ही वाला हूँ!" "हे महान राजा!" उन्होंने कहा, "क्या आपने उस युवक का आतिथ्य सत्कार किया था, या आपने उससे पता पूछा था?" "नहीं, नहीं, मैंने उसका आतिथ्य सत्कार नहीं किया, मैंने उससे पता नहीं पूछा: जाओ, और उसे ढूँढ़ो!" उन्होंने ढूँढ़ा, लेकिन वह नहीं मिला; उन्होंने राजा को बताया कि वे पूरे शहर में उस युवक को नहीं ढूँढ़ पाए। यह सुनकर राजा उदास हो गया। "तीन शहरों का आधिपत्य खो गया," वह बार-बार सोचने लगा: "मेरी महान महिमा छिन गई। निस्संदेह वह युवक मुझसे नाराज़ होकर चला गया होगा, क्योंकि मैंने उसे उसके खर्चों के लिए पैसे नहीं दिए, न ही रहने के लिए जगह दी।" फिर उसके शरीर में, लालच से भरा हुआ, एक जलन उठी; जैसे-जैसे शरीर जलता गया, उसकी आंतें खूनी दस्त से भर गईं; जैसे भोजन अंदर जाता था, वैसे ही बाहर आ जाता था; चिकित्सक उनका इलाज नहीं कर सके, राजा बहुत कमजोर हो गए थे। उनकी बीमारी की खबर पूरे शहर में फैल गई थी।

उस समय बोधिसत्व तक्षशिला से सभी विद्याओं में निपुण होकर बनारस में अपने माता-पिता के पास लौट आए थे। राजा के बारे में खबर सुनकर वे उनका इलाज करने के इरादे से महल के द्वार पर पहुँचे और संदेश भेजा कि एक युवक राजा का इलाज करने के लिए तैयार है। राजा ने कहा, "दूर-दूर तक प्रसिद्ध और विख्यात चिकित्सक भी मेरा इलाज नहीं कर पा रहे हैं: तो एक युवक क्या कर सकता है? उसका खर्च चुका दीजिए और उसे जाने दीजिए।" युवक ने उत्तर दिया, "मैं अपने इलाज के लिए कोई शुल्क नहीं लेता, मैं उनका इलाज करूँगा; वे केवल मुझे मेरी दवा का शुल्क दें।" यह सुनकर राजा मान गए और उन्होंने युवक को अंदर आने दिया। युवक ने राजा को प्रणाम करते हुए कहा, "हे राजा, भयभीत न हों! मैं आपका इलाज करूँगा; बस मुझे अपनी बीमारी का कारण बता दीजिए।" राजा ने क्रोधित होकर उत्तर दिया, "तुम्हें इससे क्या लेना-देना? अपनी दवा बनाइए।" "हे महाराज," उसने कहा, "चिकित्सकों का यही तरीका होता है कि वे पहले रोग के स्रोत का पता लगाते हैं, फिर उसके अनुसार उपचार करते हैं।" "अच्छा, अच्छा, मेरे पुत्र," राजा ने कहा और फिर रोग की उत्पत्ति बताने लगे, जहाँ से वह युवक आया था और उसने वादा किया था कि वह उसे तीन नगरों का आधिपत्य सौंप देगा। "इस प्रकार, मेरे पुत्र, यह रोग लालच से उत्पन्न हुआ है; अब यदि तुम कर सको तो इसका उपचार करो।" "क्या, हे महाराज!" उसने कहा, "क्या आप शोक करके उन नगरों पर कब्जा कर सकते हैं?" — "नहीं, मेरे पुत्र।" — "यदि ऐसा है, तो शोक क्यों करें, हे महाराज? प्रत्येक सजीव या निर्जीव वस्तु का नश्वर अस्तित्व है और वह अपने पीछे सब कुछ छोड़ जाती है, यहाँ तक कि अपने शरीर को भी। यदि आप चार नगरों पर शासन प्राप्त कर भी लें, तो भी आप एक ही समय में चार थाली भोजन नहीं कर सकते, चार पलंगों पर नहीं लेट सकते, चार वस्त्र नहीं पहन सकते। आपको कामवासना का दास नहीं बनना चाहिए; क्योंकि कामवासना जब बढ़ जाती है, तो वह चारों प्रकार के कष्टों से मुक्ति नहीं दिलाती।" इस प्रकार उसे उपदेश देने के बाद, उस महान सत्ता ने निम्नलिखित श्लोकों में विधि का वर्णन किया:

जो किसी वस्तु की इच्छा करता है, और फिर उसकी इच्छा की पूर्ति से प्रसन्न होता है,
वह निश्चित रूप से प्रसन्न हृदय वाला व्यक्ति है, क्योंकि उसकी इच्छा अब पूरी हो चुकी है। (*5)
जो किसी वस्तु की इच्छा करता है, और फिर उसकी इच्छा की पूर्ति से प्रसन्न होता है,
उस पर इच्छाएँ दिन-ब-दिन बढ़ती जाती हैं, जैसे भीषण गर्मी में प्यास उसे सताती है।
"जैसे सींग वाली गायों में, उनके सींग बढ़ने के साथ-साथ बड़े होते जाते हैं:
अतः, एक मूर्ख और अविवेकी व्यक्ति में, जिसे कुछ भी ज्ञात नहीं होता,

जैसे-जैसे मनुष्य बड़ा होता जाता है, उसकी प्यास और लालसा बढ़ती जाती है।
"धरती पर मौजूद सारे चावल और अनाज, दास, गाय और घोड़े सब कुछ दे दो।"
इतना ही काफी नहीं है कि एक व्यक्ति यह जान ले और सही मार्ग पर चलता रहे।
"एक ऐसा राजा जो पूरी दुनिया को अपने अधीन कर ले,"
समुद्र तक फैली पूरी दुनिया,
समुद्र के इस हिस्से से असंतुष्टि के साथ
समुद्र के उस पार जो कुछ भी मिल सकता है, उसकी लालसा रहेगी।
"मन की इच्छाओं में लिप्त रहो—संतोष कभी प्राप्त नहीं होगा।"
जो इन सब से मुंह मोड़ लेता है, और सच्चे इलाज को पहचान लेता है,
वह व्यक्ति संतुष्ट रहता है, जिसे ज्ञान से तृप्ति मिलती है।
"ज्ञान से परिपूर्ण रहना ही सर्वोत्तम है: इसे कोई वासना प्रज्वलित नहीं कर सकती।"
ज्ञान से परिपूर्ण व्यक्ति कभी भी इच्छाओं का गुलाम नहीं होता।
अपनी इच्छाओं को कुचल दो, और कम ही चाहो, सब कुछ पाने के लिए लालची मत बनो।
जो सागर के समान है, उसके भीतर इच्छाओं की आग नहीं भड़कती।
लेकिन एक मोची की तरह, वह जूते को चमड़ी के अनुसार काटता है।
"प्रत्येक इच्छा को त्यागने से सुख प्राप्त होता है।"
जो व्यक्ति सभी सुखों को प्राप्त करना चाहता है, उसे सभी वासनाओं का त्याग करना होगा।
लेकिन जब बोधिसत्व इन श्लोकों को दोहरा रहे थे, उनका मन राजा के सफेद धूपदान पर केंद्रित था, तभी उनमें श्वेत प्रकाश से प्राप्त रहस्यमय परमानंद की अनुभूति हुई (*6)। राजा भी पूर्णतः स्वस्थ हो गए; वे प्रसन्न होकर अपने आसन से उठे और उन्हें इस प्रकार संबोधित किया: "जब सभी चिकित्सक मुझे ठीक नहीं कर सके, तब एक बुद्धिमान युवक ने अपने ज्ञान के औषधि से मुझे पूर्ण कर दिया!" और फिर उन्होंने दसवाँ श्लोक दोहराया:

"तुमने आठ श्लोक कहे हैं, जिनमें से प्रत्येक हजार टुकड़ों के बराबर है:
हे महान ब्राह्मण! इस सार को ग्रहण करो, क्योंकि तुम्हारी यह वाणी मधुर है।
इस पर उस महान सत्ता ने ग्यारहवीं बात दोहराई:

"हजारों, सैकड़ों, लाखों बार लाखों (*7) के लिए, मुझे किसी बात की परवाह नहीं है:
जैसे ही मैंने आखिरी श्लोक बोला, मेरे दिल की इच्छा मर गई।
और भी अधिक प्रसन्न होकर, राजा ने महान सत्ता की स्तुति में अंतिम श्लोक का पाठ किया:

"यह युवक वास्तव में बुद्धिमान और नेक है, जो समस्त लोकों का ज्ञान रखता है।"
वास्तव में, सभी इच्छाएँ अपने प्रकटीकरण से दुख की जननी होती हैं।
“महाराज!” बोधिसत्व ने कहा, “सावधान रहें और धर्म के मार्ग पर चलें।” राजा को इस प्रकार संबोधित करते हुए वे वायुमार्ग से हिमालय की ओर प्रस्थान कर गए और अपने जीवनकाल में एक तपस्वी का जीवन व्यतीत करते हुए श्रेष्ठ गुणों का विकास किया और ब्रह्मलोक (परमलोक) के लिए नियत हो गए।

प्रवचन समाप्त होने पर गुरु ने कहा, "इस प्रकार, हे भिक्षुओं, पूर्वकाल में भी, और अब भी, मैंने इस ब्राह्मण को पूर्ण बनाया था।" ऐसा कहते हुए उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "उस समय यह ब्राह्मण राजा था, और मैं ज्ञानी युवक था।"

फुटनोट:

(1) क्रमांक 228 देखें

(2)अर्थात आध्यात्मिक जीवन में उसकी क्षमता।

(3) इस प्रकार का एक बड़ा वार्षिक समारोह होता था, जिसमें राजा हल चलाते थे।

(4) कामसुत्तम: सुत्त-निपाता में, चतुर्थ। मैं।

(5)सुट्टा-निपाता, IV. 1 श्लोक 766.

(6) यह कसीना के दस प्रकारों में से एक है, या वह तरीका है जिससे भक्त रहस्यमय समाधि में गिर सकता है।

(7) संख्या नहुतम 1 के बाद 28 अंक है।

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **जनसंध-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-468-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 468
जनसन्ध जातक

"इस प्रकार कहा गया," इत्यादि। यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए कोसल के राजा को शिक्षा देने के लिए सुनाई थी।

कहते हैं कि एक समय राजा सत्ता के नशे में चूर और पाप के सुखों में लिप्त होकर न्याय न्यायालय नहीं लगाता था और बुद्ध की सेवा में भी लापरवाही बरतता था। एक दिन उसे दशाबल (बुद्ध) की याद आई; उसने सोचा, "मुझे उनसे मिलना ही चाहिए।" इसलिए उपवास तोड़ने के बाद वह अपने भव्य रथ पर सवार हुआ और मठ जाकर उन्हें प्रणाम किया और बैठ गया। बोधिसत्व ने पूछा, "हे महाराज, आपने इतने लंबे समय तक दर्शन क्यों नहीं दिए?" राजा ने उत्तर दिया, "जी, मैं इतना व्यस्त था कि आपसे मिलने का अवसर ही नहीं मिला।" "महाराज," उन्होंने कहा, "मुझ जैसे, जो सलाह दे सकते हैं, परम बुद्धों जैसे, जो सामने एक मठ में निवास करते हैं, उनकी उपेक्षा करना उचित नहीं है। एक राजा को अपने सभी राजसी कर्तव्यों का पालन करते हुए, अपनी प्रजा के प्रति माता-पिता के समान श्रद्धा रखते हुए, सभी बुरे मार्गों का त्याग करते हुए, राजा के दस गुणों का निरंतर पालन करना चाहिए। जब राजा धर्मपरायण होता है, तो उसके आसपास के लोग भी धर्मपरायण होते हैं। वास्तव में, यदि आप मेरे मार्गदर्शन में धर्मपरायणता से शासन करें तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है; परन्तु प्राचीन काल के बुद्धिमान पुरुषों ने, जब उन्हें सिखाने वाला कोई गुरु नहीं था, तब भी अपने तीन वक्त के अच्छे कर्मों के अभ्यास से प्राप्त ज्ञान के बल पर, बहुत से लोगों को धर्म का उपदेश दिया और अपने सभी सेवकों सहित स्वर्गलोक गए।" इन शब्दों के साथ, उनके अनुरोध पर, गुरु ने अतीत की एक कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब उनकी रानी पत्नी से बोधिसत्व का जन्म हुआ। उनका नाम राजकुमार जनसंध रखा गया। जब वे वयस्क हुए और तक्षशिला से लौटे, जहाँ उन्होंने सभी विद्याओं की शिक्षा प्राप्त की थी, तो राजा ने सभी कैदियों को क्षमा कर दिया और उन्हें उपसभापति बना दिया। बाद में जब उनके पिता का देहांत हुआ, तो वे राजा बने और उन्होंने शहर के चारों द्वारों पर, शहर के मध्य में और राजमहल के द्वार पर छह भिक्षागृह बनवाए। वहाँ वे प्रतिदिन छह लाख सिक्के वितरित करते थे और अपने भिक्षादान से पूरे भारत को प्रेरित करते थे: उन्होंने सभी के लिए कारागारों के द्वार खोल दिए, फाँसी के स्थानों को नष्ट कर दिया, चारों प्रकार के परोपकार (*1) से पूरे विश्व की रक्षा की, पाँच सद्गुणों का पालन किया, पवित्र व्रत का पालन किया और धर्मपरायणता से शासन किया। समय-समय पर वह अपने अनुयायियों को एकत्रित करता और उन्हें धर्म की शिक्षा देता: "दान करो, सद्गुणों का पालन करो, अपने व्यवसाय और पेशे को ईमानदारी से निभाओ, जवानी में शिक्षा प्राप्त करो, धन अर्जित करो, गाँव के धोखेबाज़ या कुत्ते जैसा व्यवहार न करो, कठोर और निर्दयी न बनो, माता-पिता की देखभाल में अपना कर्तव्य निभाओ, पारिवारिक जीवन में बड़ों का आदर करो।" इस प्रकार उसने बहुत से लोगों को अच्छे जीवन का मार्ग प्रशस्त किया।

एक बार पवित्र दिन, यानी पखवाड़े की पंद्रहवीं तिथि को, पवित्र दिन मनाने का संकल्प लेकर उन्होंने मन ही मन सोचा, "मैं इन लोगों को विधि सिखाऊँगा, ताकि उनकी भलाई और आशीष निरंतर बढ़ती रहे और वे अपने जीवन में सचेत रहें।" तब उन्होंने ढोल बजवाया और अपने घर की स्त्रियों से शुरू करके नगर के सभी लोगों को इकट्ठा किया। अपने महल के प्रांगण में, रत्नों से सजे एक मंडप के नीचे, एक भव्य पलंग पर बैठकर उन्होंने इन शब्दों में विधि का उपदेश दिया: "हे नगर के लोगों! मैं तुम्हें उन प्रथाओं के बारे में सिखाऊँगा जो तुम्हें कष्ट पहुँचाएँगी और जो नहीं पहुँचाएँगी। सचेत रहो और ध्यान से सुनो।"

गुरु ने अपना मुख खोला, जो सत्य से परिपूर्ण, अनमोल मुखों में से एक था, और शहद के समान मधुर स्वर में कोसल के राजा के इस संबोधन की व्याख्या की:

राजा जनसंध ने कहा: सत्य में दस बातें हैं।
यदि कोई व्यक्ति ऐसा करने में चूक करता है, तो उसे तुरंत इसका परिणाम भुगतना पड़ता है।
समय रहते धन-संग्रह न कर पाने से हृदय व्यथित होता है;
यह सोचना अजीब है कि उसने पहले कभी धन की तलाश नहीं की, और बाद में उसे पछतावा हुआ।
"अशिक्षित पुरुषों के लिए जीवन कितना कठिन है!" वह पीड़ा में पश्चाताप करते हुए सोचता है।
वह ज्ञान, जिसका उपयोग वह अब कर सकता है, वह पहले कभी नहीं सीखता।
एक समय निंदा करने वाला, एक समय बेईमान, एक निर्दयी चुगलखोर,
मैं कितना क्रूर और कठोर था: अब मुझे इस बात पर पछताने का अच्छा कारण मिल रहा है।
मैं एक हत्यारा था, निर्दयी था, और किसी भी प्राणी को दया नहीं दिखाता था।
घृणित: इसके लिए (उसने कहा) अब मुझे बहुत दुख है।
"जब मेरी कई पत्नियां थीं (वह सोचता है) जिनके प्रति मेरा कर्तव्य था,
मैंने उन्हें किसी और की पत्नी के लिए छोड़ दिया; जिसका मुझे अब बहुत पछतावा है।
"जब खाने-पीने का पर्याप्त भंडार था, तब भी वह पीड़ा से व्याकुल था।"
यह सोचकर हैरानी होती है कि पुराने समय में उन्होंने कभी कोई उपहार नहीं दिया था।
उसे यह सोचकर दुख होता है कि जब वह कर सकता था, तब भी उसने परवाह नहीं की और ध्यान नहीं रखा।
माता-पिता, अब बूढ़े हो चुके हैं, उनकी जवानी अब समाप्त हो चुकी है। (*2)
"किसी शिक्षक, पर्यवेक्षक या पिता का अपमान करना, जो प्रयास करता हो
उसकी हर इच्छा पूरी करने से गहरा दुख होता है।
"ब्राह्मणों के साथ उपेक्षा का व्यवहार करना, अनेक तपस्वियों के साथ भी उपेक्षा का व्यवहार करना"
अतीत में पवित्र और विद्वान होने के कारण वह शीघ्र ही पश्चाताप करता है।
"संयम का पालन करना मधुर है, एक अच्छे व्यक्ति का सम्मान करना मधुर है।"
यह बताते हुए दुख हो रहा है कि उन्होंने इससे पहले ऐसा कुछ नहीं किया था।
जो इन दस बातों को बुद्धिमत्ता से पूर्ण रूप से सिद्ध करता है,
और जो सभी मनुष्यों के प्रति अपना कर्तव्य निभाता है, उसे कभी पश्चाताप करने की आवश्यकता नहीं होगी।"
इस प्रकार महीने में दो बार उस महान सत्ता ने लोगों को इसी प्रकार उपदेश दिया। और लोगों ने उनकी सलाह में दृढ़ होकर इन दस बातों का पालन किया और स्वर्ग के लिए योग्य हो गए।

जब गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने कहा, “हे महान राजा, प्राचीन काल के ज्ञानी पुरुषों ने, जो अशिक्षित थे और अपनी बुद्धि से ही, धर्म की स्थापना की और स्वर्ग के मार्ग में परास्नाय स्थापित किए।” इन शब्दों के साथ उन्होंने जन्म का परिचय दिया: “उस समय बुद्ध के अनुयायी ही लोग थे, और मैं स्वयं राजा जनसंध था।”

फुटनोट:

(1) उदारता, सौहार्द, निष्पक्षता, सुशासन।

(2) सुट्टा-निपाता, 95, 124 की तुलना करें।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **महा-कान्हा-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-469-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 469

महा-कान्हा-जातक

"एक काला, काला शिकारी कुत्ता," इत्यादि। यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जो संसार के कल्याण के लिए जीने के बारे में थी।

कहते हैं कि एक दिन भिक्षु (ब्रदरन) सत्य के हॉल में बैठे हुए आपस में बातचीत कर रहे थे। "महोदय," कोई कहेगा, "गुरुजी, जो सदा जनमानस के प्रति मित्रता भाव रखते हैं, उन्होंने सुखमय निवास त्याग दिया और संसार के कल्याण के लिए ही जीवन व्यतीत करते हैं। उन्होंने परम ज्ञान प्राप्त कर लिया है, फिर भी स्वेच्छा से भिक्षापात्र और वस्त्र धारण करके अठारह मील (4.23 किमी) या उससे अधिक की यात्रा पर निकल पड़ते हैं। पाँच वरिष्ठों (*1) के लिए उन्होंने धर्ममार्ग का चक्र चलाया; अर्धमाह के पाँचवें दिन उन्होंने अनत्तलक्खना शास्त्रों का पाठ किया और उन सभी को संतत्व प्रदान किया; वे उरुवेला (*2) गए और जटाधारी तपस्वियों को साढ़े तीन हजार चमत्कार दिखाए और उन्हें पवित्र संघ में शामिल होने के लिए प्रेरित किया; गयासिसा (*3) में उन्होंने अग्नि पर प्रवचन दिया और एक हजार तपस्वियों को संतत्व प्रदान किया; महाकश्यप से मिलने के लिए तीन मील आगे जाने पर, तीन प्रवचनों के बाद उन्होंने उन्हें उच्चतर पवित्र आदेश दिए। शिष्यों; दोपहर के भोजन के बाद, वे अकेले ही पैंतालीस मील (x 4.23 किमी) की यात्रा पर गए, और फिर पुक्कुसा (अत्यंत उत्तम कुल के एक युवक) को तृतीय मार्ग (सम्मोहन) के फल में स्थापित किया; महाकप्पिना से मिलने के लिए वे दो हजार मील (x 4.23 किमी) आगे गए, और उन्हें संतत्व प्रदान किया; दोपहर में वे अकेले ही तीस मील (x 4.23 किमी) की यात्रा पर गए, और उस क्रूर और निर्दयी पुरुष अंगुलिमाला को संतत्व में स्थापित किया; तीस मील (x 4.23 किमी) की दूरी तय करके उन्होंने अलावक (*4) को प्रथम मार्ग (सम्मोहन) के फल में स्थापित किया, और राजकुमार का उद्धार किया; तैंतीस के स्वर्ग में वे तीन महीने रहे, और आठ सौ करोड़ देवताओं को धर्म मार्ग की पूर्ण समझ प्रदान की; वे ब्रह्मा के लोक (प्रधान देवदूतों) में गए, और बका ब्रह्मा (प्रधान देवदूत) (*5) की झूठी शिक्षा का नाश किया, और उन्होंने दस हजार ब्रह्माओं (प्रधान देवदूतों) को संतत्व प्रदान किया; वे प्रतिवर्ष तीन क्षेत्रों में तीर्थयात्रा करते हैं, और जो भी ग्रहणशील होते हैं, उन्हें वे शरण, सद्गुण और विभिन्न चरणों के फल प्रदान करते हैं; वे अनेक प्रकार से नागों, गरुड़ों और इसी प्रकार के अन्य जीवों के कल्याण के लिए भी कार्य करते हैं। ऐसे शब्दों में उन्होंने संसार के कल्याण के लिए दशबल (बुद्ध) के जीवन की अच्छाई और महत्व की प्रशंसा की। गुरुजी अंदर आए और पूछा कि वे बैठे-बैठे क्या बातें कर रहे थे? उन्होंने उन्हें बताया। "और इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है, भाइयों," उन्होंने कहा। "मैं जो अब अपनी पूर्ण बुद्धि से संसार के कल्याण के लिए जीना चाहता हूँ, मैंने भी अतीत में, रजोनिवृत्ति के दिनों में, संसार के कल्याण के लिए ही जीवन व्यतीत किया था।" ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, परम बुद्ध कश्यप के समय में, उसिनारा नामक एक राजा का शासन था। परम बुद्ध कश्यप द्वारा चार सत्यों का उपदेश देने, अनेक लोगों को बंधनों से मुक्त करने और निर्वाण में निवास करने वालों की संख्या बढ़ाने के लिए स्वर्गारोहण करने के बहुत समय बाद, धम्म (मुक्ति का मार्ग) पतन की ओर अग्रसर था। भिक्षु इक्कीस कुकर्मों से अपनी जीविका कमाते थे; वे भिक्षुणियों के साथ संबंध रखते थे और उनसे पुत्र-पुत्रियाँ उत्पन्न होती थीं; भिक्षुओं ने भिक्षु संघ के कर्तव्यों का त्याग कर दिया था, भिक्षुणियों ने भिक्षुणियों के कर्तव्यों का त्याग कर दिया था, गृहस्थ भाइयों और बहनों ने उनके कर्तव्यों का त्याग कर दिया था, ब्राह्मणों ने ब्राह्मणों के कर्तव्यों का पालन करना छोड़ दिया था: अधिकांश मनुष्य दस कुकर्मों के मार्गों का अनुसरण करते थे और इस प्रकार मृत्यु के समय सभी प्रकार के दुखों का अनुभव करते थे।

तब इंद्र ने देखा कि कोई नए देवता अस्तित्व में नहीं आ रहे हैं, तो उन्होंने संसार पर नजर डाली; और तब उन्हें एहसास हुआ कि मनुष्य दुख की अवस्थाओं में जन्म ले रहे हैं, और बुद्ध का धम्म (धार्मिक मार्ग) पतित हो गया है। "अब मैं क्या करूँ?" उन्होंने सोचा। "अहा, मुझे मिल गया!" उन्होंने सोचा: "मैं मानवजाति को डराऊँगा और भयभीत करूँगा; और जब मैं देखूँगा कि वे भयभीत हैं, तो मैं उन्हें सांत्वना दूँगा, मैं धार्मिक मार्ग का उपदेश दूँगा, मैं पतित हो चुके धम्म (धार्मिक मार्ग) को पुनर्जीवित करूँगा, मैं इसे और एक हजार वर्षों तक कायम रखूँगा!" इस संकल्प के साथ, उन्होंने देवता (देवदूत) मतली (*6) को एक विशाल काले कुत्ते के रूप में बनाया, जो शुद्ध नस्ल का था, जिसके केले के आकार के चार दांत थे, भयानक, विकृत आकृति और मोटा पेट था, जैसे कोई गर्भवती स्त्री हो; उसे पाँच गुना जंजीर से बाँधकर और उस पर लाल पुष्पमाला पहनाकर, उन्होंने उसे एक रस्सी से खींच कर ले गए। उसने स्वयं पीले वस्त्र धारण किए, अपने बालों को पीछे बाँधा और लाल मुकुट पहना; मूंगे के रंग की डोरी से जड़ा एक विशाल धनुष लेकर और उंगलियों में हीरा जड़ा भाला घुमाते हुए, उसने वनपाल का वेश धारण किया और नगर से एक मील (4.23 किमी) दूर एक स्थान पर उतरा। "यह संसार विनाश के लिए अभिशप्त है, विनाश के लिए अभिशप्त है!" उसने तीन बार ज़ोर से पुकारा, जिससे लोग भयभीत हो गए; और नगर के प्रवेश द्वार पर पहुँचकर उसने फिर से यही पुकारा। कुत्ते को देखकर लोग डर गए और नगर में भागकर राजा को सारी घटना बताई। राजा ने तुरंत नगर के द्वार बंद करवा दिए। परन्तु सक्का (इंद्र) अठारह भुजाओं जितनी ऊँची दीवार फांदकर अपने कुत्ते के साथ नगर के भीतर आ गया। लोग भयभीत होकर घरों में भाग गए और दरवाज़े बंद कर लिए। बिग ब्लैकी ने हर उस आदमी का पीछा किया जिसे उसने

देखा, उन्हें डराया और अंत में राजा के महल में प्रवेश कर गया। जो लोग डर के मारे आंगन में शरण लिए हुए थे, वे महल में भागे और दरवाजा बंद कर लिया। राजा अपने घर की महिलाओं के साथ छत पर चले गए। बिग ब्लैकी ने अपने अगले पैर उठाए और उन्हें खिड़की में रखकर एक जोरदार दहाड़ लगाई। उसकी दहाड़ की आवाज नरक से लेकर स्वर्ग तक गूंजी: पूरा ब्रह्मांड एक जोरदार दहाड़ में बदल गया। भारत में अब तक सुनी गई तीन सबसे तेज दहाड़ें ये हैं: पुन्नक जन्म में राजा पुन्नक की चीख, भूरिदत्त जन्म (*7) में नागराज सुदस्सन की चीख और महाकान्हा जन्म में यह दहाड़, या बिग ब्लैकी की कहानी। लोग भयभीत और आतंकित थे, और उनमें से कोई भी सक्का (इंद्र) से एक शब्द भी नहीं कह सका।

राजा का हौसला बढ़ा और वह खिड़की के पास जाकर इंद्र से पुकारा, "हे शिकारी! तुम्हारा कुत्ता क्यों दहाड़ रहा है?" इंद्र ने कहा, "कुत्ता भूखा है।" राजा ने कहा, "ठीक है, मैं उसे कुछ भोजन देने का आदेश देता हूँ।" इसलिए उसने उन्हें आदेश दिया कि उसे उसका अपना भोजन और उसके परिवार के सभी लोगों का भोजन दिया जाए। कुत्ते ने मानो एक ही निवाला खाया और फिर दहाड़ने लगा। राजा ने फिर पूछा। उत्तर मिला, "मेरा कुत्ता अभी भी भूखा है।" तब उसने अपने हाथियों, घोड़ों आदि का सारा भोजन मंगवाकर उसे दिया। उसने वह भी एक ही बार में चट कर लिया; फिर राजा ने शहर का सारा भोजन मंगवाया। उसने उसे भी उसी तरह निगल लिया और फिर दहाड़ने लगा। राजा ने कहा, "यह कुत्ता नहीं है। निस्संदेह यह एक जिन्न है। मैं इससे पूछूंगा कि यह किस उद्देश्य से आया है।" भय से भयभीत होकर उसने पहला श्लोक दोहराते हुए अपना प्रश्न पूछा:

"एक काला, काला शिकारी कुत्ता, पाँच डोरियों से बंधा हुआ, जिसके दाँत पूरी तरह से सफेद रंग के हैं।"
महान, भयानक—शक्तिशाली! वह यहाँ आपके साथ क्यों है?
यह सुनकर सक्का (इंद्र) ने दूसरा श्लोक दोहराया:

"काला शिकारी कुत्ता शिकार करने नहीं आया था, बल्कि वह किसी काम आएगा।"
"उसीनारा, जब मैं उसे मुक्त कर दूंगा, तब मैं पुरुषों को दंडित करूंगा।"
तब राजा ने कहा, "हे शिकारी! क्या कुत्ता सभी मनुष्यों का मांस खाएगा, या केवल तुम्हारे शत्रुओं का?" "केवल मेरे शत्रुओं का, महाराज।" "और तुम्हारे शत्रु कौन हैं?" "हे महाराज, वे जो अधर्म से प्रेम करते हैं और दुष्टता का मार्ग अपनाते हैं।" "उनका वर्णन कीजिए," उसने पूछा। और देवताओं (देवदूतों) के राजा ने उनका वर्णन इन छंदों में किया:

"जब झूठे भिक्षु, हाथ में कटोरा लिए, एक ही वस्त्र पहने हुए, चुनाव करेंगे
मुंडा हुआ सिर, हल का अनुसरण करूंगा, फिर काले शिकारी कुत्ते को छोड़ दूंगा।
"जब मठ की ननें एक ही वस्त्र में पाई जाएँगी,
मुंडा सिर, फिर भी दुनिया के तौर-तरीकों पर चलता हुआ, मैं अपने शिकारी कुत्ते को खुला छोड़ दूंगा।
"उस समय तपस्वी, सूदखोर, ऊपरी होंठ बाहर निकालते हुए,
गंदे दांतों और मैले बालों वाला होगा—वह काला शिकारी कुत्ता जिसे मैं जाने दूंगा।
जब ब्राह्मण, जो पवित्र ग्रंथों और धार्मिक अनुष्ठानों में निपुण हों, इनका उपयोग करेंगे
धन के लिए प्राणियों की बलि देने की उनकी कुशलता के कारण, ब्लैक हाउंड को खुला छोड़ दिया जाएगा।
जिसके माता-पिता अब बूढ़े हो गए हैं, जिनकी जवानी अब समाप्त हो गई है,
हालांकि वह ऐसा कर सकता है, फिर भी मैं उसके खिलाफ शिकारी कुत्ते को भेजूंगा।
"जिसके माता-पिता अब बूढ़े हो चुके हैं, और जिनकी जवानी अब समाप्त हो चुकी है,"
वह चिल्लाता है, तुम मूर्ख हो! ऐसे लोगों के विरुद्ध मैं काले कुत्ते को भेजूंगा।
जब पुरुष किसी शिक्षक या मित्र की पत्नियों के पीछे पड़ते हैं,
पिता की बहन, चाचा की पत्नी, मैं ब्लैक हाउंड को भेजूंगा।
"जब कंधे पर ढाल, हाथ में तलवार, पूरी तरह से हथियारों से लैस होकर लुटेरों की तरह"
वे हत्या और लूटपाट करने के लिए सड़क पर उतरेंगे, तब मैं ब्लैक हाउंड को छोड़ दूंगा।
"जब विधवाओं के पुत्र, जिनकी त्वचा को सफेद रंग से संवारा गया था, कौशल में पूरी तरह से बेकार पाए गए,
बलवान होकर झगड़ा और लड़ाई होगी, तब मैं शिकारी कुत्ते को छोड़ दूंगा।
"जब दुष्ट हृदय वाले लोग, झूठे और कपटी लोग,
मैं दुनिया में इधर-उधर घूमता रहूंगा, फिर मैं ब्लैक हाउंड को छोड़ दूंगा।"
इस प्रकार कहने के बाद, उसने कहा, "हे राजा!" और उसने ऐसा दिखाया मानो वह कुत्ते को उन सभी को खा जाने के लिए छोड़ देगा जिन्होंने शत्रुओं के कर्म किए थे। परन्तु समस्त प्रजा भयभीत हो गई, इसलिए उसने कुत्ते को रस्सी से रोक लिया और मानो उसे वहीं स्थिर कर दिया हो; फिर शिकारी का वेश उतारकर, अपनी शक्ति से वह वायु में उठा और बलिष्ठा हो गया, मानो आग उगल रहा हो, और बोला: "हे महान राजा, मैं देवताओं (देवदूतों) का राजा सक्का (इंद्र) हूँ! यह देखकर कि संसार का विनाश होने वाला है, मैं यहाँ

आया हूँ। अब वास्तव में मनुष्य मरते समय दु:ख भोग रहे हैं, क्योंकि उनके कर्म बुरे हैं, और स्वर्ग निर्जन हो गया है। अब से मैं दुष्टों से निपटने का तरीका जानता हूँ, परन्तु तुम सावधान रहो।" फिर उन्होंने चार सुपुर्दगी भरे श्लोकों में धर्म का उपदेश दिया और लोगों को उदारता के गुणों में स्थापित किया, जिससे धम्म (मुक्ति का धर्मी मार्ग) की क्षीण होती शक्ति को सुदृढ़ किया गया ताकि यह एक हजार वर्षों तक कायम रहे, और फिर मताली के साथ अपने स्थान पर लौट आए।

जब गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने आगे कहा: "इस प्रकार, हे भिक्षुओं, पूर्व काल में भी और अब भी मैं संसार के कल्याण के लिए ही जीवित रहा हूँ;" और फिर उन्होंने अपने जन्म का वर्णन किया: "उस समय आनंद मतली थे और मैं सक्का (इंद्र) था।"

फुटनोट:

(1)वे पांच जो बुद्ध के साथ थे जब उन्होंने एक तपस्वी के रूप में अपना जीवन शुरू किया: अन्नकोंडन्ना, भद्दिया, वप्पा, अस्सजी, महानमा।

(2) उसने वहाँ अग्नि उपासकों को उपदेश दिया।

(3) अब ब्रह्मयोनि, गया के पास एक पर्वत।

(4) एक राक्षस जो प्रतिदिन बलिदान की मांग करता था।

(5)ब्रह्मा के तीनों लोकों (ऊपरी स्वर्गों) में रहने वाले प्राणियों को "ब्रह्मा" कहा जाता था। (प्रधान देवदूत)

(6) उसका सारथी.

(7) संख्या 543

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कोसीय-जातक**3
स्रोत : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित

पिछला <<<<-----||-470-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 470
कोसिया-जातक

कोसिया जन्म का विवरण सुधाभोजन जन्म के अंतर्गत दिया जाएगा।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **मेन्दक-जातक**
स्रोत : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित

पिछला <<<<-----||-471-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 471
मेंडका-जातक

मेंदका की समस्या उम्मागगा जन्म (*1) के अंतर्गत दी जाएगी।

फुटनोट:

(1) संख्या 535

स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-472-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 472
महा-पदुम-जातक

"किसी राजा को नहीं होना चाहिए," इत्यादि। यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए चिंचमनविका (*1) के बारे में सुनाई थी।

जब दसबाला (बुद्ध) ने सर्वप्रथम परम ज्ञान प्राप्त किया, शिष्यों की संख्या बढ़ गई, असंख्य देवी-देवता और मनुष्य स्वर्गलोक में जन्म ले चुके थे, और अच्छाई के बीज चारों ओर बो दिए गए थे, तब उन्हें बहुत सम्मान दिया गया और बड़े-बड़े उपहार दिए गए। गलत अनुयायी सूर्योदय के बाद जुगनुओं के समान थे; उन्हें न तो सम्मान मिला और न ही उपहार; वे सड़कों पर खड़े होकर लोगों से चिल्लाते थे, "क्या, तपस्वी गौतम बुद्ध हैं? हम भी बुद्ध हैं! क्या केवल वही उपहार महान फल देता है जो उन्हें दिया जाता है? जो हमें दिया जाता है वह भी आपके लिए महान फल देता है! हमें भी दीजिए, हमारे लिए काम कीजिए!" लेकिन वे चाहे जितना भी चिल्लाते, उन्हें न तो सम्मान मिला और न ही उपहार। तब वे गुप्त रूप से एकत्रित हुए और विचार-विमर्श किया: "हम कैसे तपस्वी गौतम (बुद्ध) पर मनुष्यों के सामने कलंक लगा सकते हैं और उनके सम्मान और उपहारों का अंत कर सकते हैं?"

उस समय श्रावस्ती नगर में चिंचमनविका नाम की एक नन रहती थीं; वे अत्यंत सुंदर, अत्यंत आकर्षक और सौंदर्यपूर्ण थीं; उनके शरीर से तेज की किरणें निकलती थीं। किसी ने क्रूरतापूर्वक यह सलाह दी: "हम चिंचमनविका की सहायता से तपस्वी गौतम (बुद्ध) पर कलंक लगाएंगे और उनके सम्मान तथा उन्हें मिलने वाले सभी दान को समाप्त कर देंगे।" "हाँ," सभी सहमत हुए, "यही तरीका है।"

वह कुटिल अनुयायियों के मठ में आई, उन्हें प्रणाम किया और वहीं खड़ी हो गई। कुटिल अनुयायियों ने उससे कुछ नहीं कहा। उसने कहा, "मुझमें क्या दोष है? मैंने तीन बार आपको प्रणाम किया है!" उसने फिर कहा, "महोदय, मुझमें क्या दोष है? आप मुझसे बात क्यों नहीं करते?" उन्होंने उत्तर दिया, "क्या आप नहीं जानतीं, बहन, कि गौतम (बुद्ध) नामक तपस्वी घूम-घूम कर हमें हानि पहुँचा रहे हैं, और हमें जो सम्मान और उदारता दिखाई गई थी, उसे छीन रहे हैं?" - "मुझे पता नहीं था, महोदय; लेकिन मैं क्या कर सकती हूँ?" - "यदि आप हमारा भला चाहती हैं, तो बहन, अपने कर्मों से तपस्वी गौतम (बुद्ध) पर कलंक लगाएँ, और उनके सम्मान और उन्हें मिलने वाले दान को समाप्त कर दें।" उसने उत्तर दिया, "बहुत अच्छा, महोदय, यह मुझ पर छोड़ दीजिए; इसकी चिंता न कीजिए।" ये कहकर वह चली गई।

उसके बाद उसने छल-कपट में स्त्री के सारे कौशल का प्रयोग किया। जब श्रावस्ती नगर के लोगों ने धर्म मार्ग के बारे में सुना और जेतवन मठ से लौट रहे थे, तो वह लाल रंग से रंगे वस्त्र और हाथों में सुगंधित मालाएँ लिए जेतवन मठ की ओर जाती थी। जब कोई उससे पूछता, "इस समय तुम कहाँ जा रही हो?" तो वह उत्तर देती, "मेरे आने-जाने से तुम्हारा क्या लेना-देना?" वह जेतवन मठ के पास ही स्थित कुटिल अनुयायियों के मठ में रात बिताती थी; और जब सुबह तड़के संघ के अनुयायी नगर से सुबह की प्रार्थना करने आते, तो वह उनसे ऐसे मिलती जैसे उसने जेतवन मठ में रात बिताई हो और नगर की ओर जा रही हो। यदि कोई पूछता कि वह कहाँ ठहरी थी, तो वह उत्तर देती, "मेरे ठहरने और रहने से तुम्हारा क्या लेना-देना है?" लेकिन लगभग छह सप्ताह बाद, उसने उत्तर दिया, "मैंने जेतवन मठ में गौतम (बुद्ध) तपस्वी के साथ एक सुगंधित कुटिया में रात बिताई।" तब जो लोग परिवर्तित नहीं हुए थे, वे सोचने लगे कि क्या यह सच है या नहीं। तीन-चार महीने बाद, उसने अपने पेट पर पट्टियाँ बाँधीं और ऐसा दिखाया जैसे वह गर्भवती हो, और अपने ऊपर एक लाल वस्त्र लपेट लिया। फिर उसने बताया कि वह तपस्वी गौतम (बुद्ध) से गर्भवती है, और अंधे मूर्खों को विश्वास दिला दिया। आठ-नौ महीने बाद, उसने अपने चारों ओर लकड़ी के टुकड़े बाँध लिए और अपने लाल वस्त्र के ऊपर उन्हें लपेट लिया; उसने अपने हाथों, पैरों और पीठ पर बैल की हड्डी से इस प्रकार चोट पहुँचाई कि सूजन आ गई; और ऐसा दिखाया जैसे उसकी सभी इंद्रियाँ थक गई हों। एक संध्या पर, जब तथागत (बुद्ध) अपने तेजस्वी उपदेश आसन पर विराजमान थे और धर्ममार्ग का उपदेश दे रहे थे, तब वह सभा में गईं और तथागत (बुद्ध) के सामने खड़ी होकर बोलीं—"हे महान तपस्वी! आप वास्तव में बहुतों को उपदेश देते हैं; आपकी वाणी मधुर है और आपके होंठ कोमल हैं; परन्तु आपने मुझे गर्भवती कर दिया है और मेरा प्रसव निकट है; फिर भी आप मुझे प्रसव के लिए कोई कक्ष नहीं देते, न घी देते हैं और न तेल; जो आप स्वयं नहीं करते, वह आप अपने किसी साथी भिक्षु से भी नहीं करवाते, चाहे वह कोसल का राजा हो, अनाथपिंडिका हो या महान गृहस्थ बहन विशाखा। आप उनमें से किसी को मेरे लिए वह करने के लिए क्यों नहीं कहते जो किया

जाना चाहिए? आप स्वयं सुख भोगना जानते हैं, परन्तु जन्म लेने वाले की देखभाल करना नहीं जानते!” इसलिए उसने सभा के बीच तथागत (बुद्ध) का अपमान किया, मानो कोई मुट्ठी भर मिट्टी से चंद्रमा के चेहरे को कलंकित करने का प्रयास कर रहा हो। तथागत (बुद्ध) ने अपना प्रवचन रोक दिया और सिंह की तरह दहाड़ते हुए कहा, "बहन, तुमने जो कहा है वह सत्य है या असत्य, यह केवल तुम जानती हो और मैं ही जानता हूँ।" "जी हाँ, बिल्कुल," उसने कहा, "यह किसी ऐसी बात के कारण हुआ है जिसे केवल आप और मैं ही जानते हैं।"

ठीक उसी क्षण, सक्का (इंद्र) का सिंहासन गर्म हो गया। इस पर विचार करते हुए, उन्हें कारण समझ में आया: "चिंचमनविका तथागत (बुद्ध) पर असत्य आरोप लगा रही है।" इस मामले को सुलझाने के लिए दृढ़ निश्चय करके, वे अपने साथ चार देवदूतों को लेकर वहाँ पहुँचे। देवदूतों ने चूहे का रूप धारण कर लिया और एक ही झटके में लकड़ी के गट्ठे को बाँधने वाली रस्सियों को कुतर दिया: हवा के एक झोंके से चिंचमनविका का वस्त्र उड़ गया और लकड़ी का गट्ठा प्रकट होकर उसके पैरों पर गिर गया: उसके दोनों पैरों की उंगलियाँ कट गईं। लोग चिल्ला उठे - "एक डायन सर्वोच्च बुद्ध पर आरोप लगा रही है!" उन्होंने उसके सिर पर थूका और लाठियों और पत्थरों से उसे जेतवन मठ से भगा दिया। और जैसे ही वह तथागत (बुद्ध) दृष्टि की सीमा से बाहर निकली, विशाल पृथ्वी फट पड़ी और उसमें एक बड़ी दरार दिखाई दी, सबसे निचले नरक से ज्वालाएं उठीं, और वह मानो किसी वस्त्र (*2) में लिपटी हुई, जिसे उसके मित्र उसे ओढ़ा दें, सबसे निचले नरक में गिर पड़ी और वहाँ उसका पुनर्जन्म हुआ। अन्य पथभ्रष्ट विश्वासियों का मान-सम्मान और लाभ समाप्त हो गया, जबकि दशबल (बुद्ध) का मान-सम्मान और लाभ प्रचुर मात्रा में बढ़ गया।

अगले दिन वे सत्य के हॉल में बातचीत कर रहे थे: "भाई, चिंचमनविका ने परम गुणवान, सभी वरदानों के योग्य, परम बुद्ध पर झूठा आरोप लगाया! और उसका भयानक विनाश हुआ।" गुरुजी अंदर आए और पूछा कि वे सब यहाँ बैठकर क्या बात कर रहे हैं। उन्होंने उन्हें बताया। गुरुजी ने कहा, "भाइयों (भिक्षुओं), इस स्त्री ने न केवल अभी मुझ पर झूठा आरोप लगाया है और उसका भयानक विनाश हुआ है, बल्कि पहले भी ऐसा ही हुआ था।" ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब उनकी प्रधान रानी के पुत्र के रूप में बोधिसत्व का जन्म हुआ। उनका शांत और सौम्य स्वभाव खिले हुए कमल के समान था, इसलिए उनका नाम पद्मकुमार रखा गया, जिसका अर्थ है कमल राजकुमार। बड़े होकर उन्होंने सभी कलाओं और निपुणताओं की शिक्षा प्राप्त की। फिर उनकी माता का देहांत हो गया; राजा ने दूसरी पत्नी से विवाह किया और अपने पुत्र को राजा का प्रतिनिधि नियुक्त किया।

इसके बाद, सीमा पर हुए विद्रोह को दबाने के लिए निकलने से पहले राजा ने अपनी पत्नी से कहा, "हे देवी, क्या तुम यहीं ठहरोगी, जब तक मैं सीमा पर हुए विद्रोह को दबाने जाता हूँ?" लेकिन उसने उत्तर दिया, "नहीं, महाराज, मैं यहाँ नहीं ठहरूँगी, बल्कि आपके साथ चलूँगी।" तब उसने उसे युद्ध के मैदान में मंडरा रहे खतरे के बारे में बताया और आगे कहा, "तो मेरे लौटने तक तुम यहाँ बिना किसी बाधा के ठहरो, और मैं राजकुमार पद्मा को यह आदेश दूँगा कि वह तुम्हारे लिए जो भी कार्य करे, उसमें सावधानी बरते, और फिर मैं चला जाऊँगा।" ऐसा ही हुआ और वह चला गया।

जब उसने अपने शत्रुओं को तितर-बितर कर दिया और देश में शांति स्थापित कर दी, तो वह लौट आया और नगर के बाहर अपना शिविर लगाया। बोधिसत्व को अपने पिता के लौटने का पता चला, तो उसने नगर को सजाया-संवारा और राजमहल की निगरानी करते हुए अकेले अपने पिता से मिलने चला गया। रानी ने उसके सुंदर रूप को देखकर उस पर मोहित हो गई। विदा लेते समय बोधिसत्व ने कहा, "माँ, क्या मैं आपके लिए कुछ कर सकता हूँ?" रानी ने कहा, "माँ, क्या आप मुझे बुला रहे हैं?" वह उठी और उसके हाथ पकड़कर बोली, "मेरे पलंग पर लेट जाइए!" उसने पूछा, "क्यों?" रानी ने कहा, "राजा के आने तक, हम दोनों प्रेम के आनंद का अनुभव करें!" "माँ, आप मेरी माँ हैं और आपका पति जीवित है। ऐसा पहले कभी नहीं सुना गया कि कोई स्त्री, एक संभ्रांत महिला, शारीरिक वासना के मार्ग पर चलकर नैतिक नियम का उल्लंघन करे। मैं आपके साथ ऐसा अपवित्र कार्य कैसे कर सकता हूँ?" उसने दो-तीन बार उससे विनती की, और जब उसने नहीं माना, तो उसने कहा, "तो क्या तुम मेरी बात मानने से इनकार करते हो?" - "हाँ, मैं इनकार करता हूँ।" - "तो मैं राजा से बात करूँगी और तुम्हारा सिर कलम करवा दूँगी।" "जैसा तुम चाहो," उस महान प्राणी ने उत्तर दिया; और उसे शर्मिंदा छोड़कर चला गया। तब वह बड़े भय से सोचने लगी: "अगर वह पहले राजा को बता दे, तो मेरा जीवन नहीं बचेगा! मुझे पहले खुद उससे बात करनी होगी।" तदनुसार, उसने अपना भोजन बिना छुए एक गंदा वस्त्र (*3) पहन लिया, और अपने शरीर पर नाखूनों से खरोंचें बना लीं; अपने परिचारकों को आदेश दिया कि जब भी राजा रानी के बारे में पूछे, तो उसे बताया जाए कि वह बीमार है, और वह बीमारी का आभास देते हुए लेट गई।

अब राजा ने शहर में सीधे जुलूस निकाला और अपने निवास स्थान पर गए। जब उन्होंने उसे नहीं देखा, तो उन्होंने पूछा, "रानी कहाँ है?" "वह बीमार है," उन्होंने कहा। वे राजकक्ष में गए और उनसे पूछा, "क्या हुआ है, महारानी?" उन्होंने ऐसा दिखाया जैसे उन्होंने कुछ सुना

ही न हो। उन्होंने दो-तीन बार पूछा, और फिर उन्होंने उत्तर दिया, "हे महाराज, आप क्यों पूछ रहे हैं? चुप रहिए: जिन स्त्रियों का पति होता है, उन्हें मेरे जैसी ही होना चाहिए।" "किसने तुम्हें नाराज़ किया है?" उन्होंने कहा। "मुझे जल्दी बताओ, वरना मैं उसका सिर कलम करवा दूँगा।" - "जब तुम यहाँ से गई थीं, तो इस शहर में किसे छोड़कर गई थीं?" - "राजकुमार पद्मा।" "और वह," उसने आगे कहा, "मेरे कमरे में आया, और मैंने कहा, 'मेरे बेटे, ऐसा मत करो, मैं तुम्हारी माँ हूँ': लेकिन मैं जो भी कहूँ, वह चिल्लाया, 'यहाँ मेरे सिवा कोई राजा नहीं है, और मैं तुम्हें अपने साथ ले जाऊँगा, और तुम्हारे प्रेम का आनंद लूँगा'; फिर उसने मेरे सिर के बाल पकड़ लिए, और बार-बार नोचे, और क्योंकि मैंने उसकी इच्छा के आगे घुटने नहीं टेके, उसने मुझे घायल किया और पीटा, और चला गया।" राजा ने कोई जाँच नहीं की, बल्कि साँप की तरह क्रोधित होकर अपने आदमियों को आदेश दिया, "जाओ और राजकुमार पदुमा को बाँधो, और उसे मेरे पास लाओ!" वे उसके घर गए, मानो पूरे शहर में भीड़ उमड़ पड़ी हो, और उसे बाँधकर पीटा, उसके हाथ पीछे बाँध दिए, उसके गले में लाल फूलों की माला (*4) डाल दी, उसे एक दोषी अपराधी बना दिया, और उसे वहाँ ले गए, रास्ते भर पीटते रहे। उसे स्पष्ट था कि यह रानी का काम है, और जाते हुए वह चिल्लाया, "हे साथियों, मैंने राजा के विरुद्ध कोई अपराध नहीं किया है! मैं निर्दोष हूँ।" पूरे शहर में यह खबर गूंज रही थी: "लोग कहते हैं कि राजा एक स्त्री के कहने पर राजकुमार पद्मा को मृत्युदंड देने जा रहे हैं!" सब लोग इकट्ठा हो गए, राजकुमार के चरणों में गिर पड़े और जोर-जोर से विलाप करते हुए बोले, "हे स्वामी, आप इसके योग्य नहीं हैं!"

अंततः वे उसे राजा के सामने ले आए। उसे देखते ही राजा अपने हृदय में उमड़ रहे आवेश को रोक नहीं सका और चिल्ला उठा, "यह व्यक्ति राजा तो नहीं है, पर राजा होने का ढोंग बखूबी करता है! यह मेरा पुत्र है, फिर भी इसने रानी का अपमान किया है। इसे यहाँ से हटाओ, चोरों की चट्टान से नीचे फेंक दो, इसका अंत कर दो!" परन्तु राजकुमार ने अपने पिता से कहा, "पिताजी, मेरे ऊपर ऐसा कोई अपराध नहीं है। एक स्त्री के कहने पर मुझे मत मार डालो।" राजा ने उसकी बात नहीं सुनी। तब सोलह हजार की संख्या में राजहरम के सभी लोगों ने एक साथ जोर से चिल्लाते हुए कहा, "प्रिय पद्म, शक्तिशाली राजकुमार, आप इस दंड के पात्र नहीं हैं!" और देश के सभी योद्धा सरदारों, बड़े सामंतों और सभी दरबारी चिल्ला उठे, "महाराज! राजकुमार एक नेक और सदाचारी व्यक्ति है, अपने वंश की परंपराओं का पालन करता है, राज्य का उत्तराधिकारी है! बिना सुने एक स्त्री के कहने पर उसे मत मार डालो! राजा का कर्तव्य है कि वह पूरी सावधानी से कार्य करे।" ऐसा कहकर उन्होंने सात छंद दोहराए:

"किसी भी राजा को अपराध के लिए दंड नहीं देना चाहिए और किसी भी प्रकार की दलीलें नहीं सुननी चाहिए।"
उन्होंने स्वयं हर पहलू, चाहे वह छोटा हो या बड़ा, की पूरी तरह से जांच नहीं की।
"वह योद्धा सरदार जो किसी गलती को आज़माने से पहले ही उसे दंडित करता है,"
यह उस जन्म से अंधे व्यक्ति के समान है जो अपना भोजन केवल हड्डियों और मक्खियों को खाकर गुजारता है।
जो निर्दोषों को दंडित करता है और दोषियों को छोड़ देता है, वही जानता है
किसी ऊबड़-खाबड़ राजमार्ग पर अंधा व्यक्ति जितना खतरनाक हो सकता है, उतना ही खतरनाक भी हो सकता है।
जो व्यक्ति इन सभी बातों का अच्छी तरह से विश्लेषण करता है, चाहे वे छोटी हों या बड़ी,
और इसलिए, वह प्रशासक है और सभी का मुखिया बनने का हकदार है।
जो व्यक्ति स्वयं को उच्च स्थान पर स्थापित करना चाहता है, उसे सर्व-विनम्र नहीं होना चाहिए।
न ही पूरी तरह कठोर होना चाहिए: बल्कि इन दोनों बातों का अभ्यास संगति में करना चाहिए।
"जो अत्यंत सौम्य है उसका तिरस्कार करने वाला विजयी होता है, और जो अत्यंत कठोर है, उसे क्रोध का सामना करना पड़ता है।"
इसलिए दोनों के बारे में अच्छी तरह से जागरूक रहें और बीच का रास्ता अपनाएं।
"हे राजा, क्रोधित व्यक्ति बहुत कुछ कह सकता है, और बेईमान व्यक्ति भी बहुत कुछ कह सकता है।"
इसलिए स्त्री के खातिर अपने बेटे की हत्या मत करो।
लेकिन दरबारी चाहे कितनी भी कोशिश कर लें, वे उसे अपनी बात मनवाने में सफल नहीं हुए। बोधिसत्व भी, अपनी तमाम विनतियों के बावजूद, उसे सुनने के लिए राजी नहीं कर सके: नहीं, राजा ने कहा, अंधे मूर्ख—"दूर हो जाओ! इसे चोरों की चट्टान से नीचे फेंक दो!" आठवें श्लोक को दोहराते हुए:

"एक तरफ पूरी दुनिया खड़ी है, दूसरी तरफ मेरी रानी बिल्कुल अकेली है;"
फिर भी मैं अपनी बात पर अडिग हूं: उसे चट्टान से नीचे फेंक दो और चले जाओ!
ये शब्द सुनकर सोलह हज़ार महिलाओं में से कोई भी विचलित हुए बिना नहीं रह सकी, जबकि समस्त जनता ने हाथ फैलाकर रोते हुए अपने बाल नोच लिए। राजा ने कहा, "ये लोग इस आदमी को चट्टान से नीचे फेंकने से रोकने की कोशिश तो करें!" और अपने अनुयायियों के बीच, भीड़ के विलाप के बावजूद, उसने राजकुमार को पकड़वाकर उसे सिर के बल खाई में फेंक दिया।

तब पर्वत पर निवास करने वाले देवता ने अपनी दयालुता से राजकुमार को दिलासा देते हुए कहा, "डरो मत, पद्मा!" और दोनों हाथों से उन्हें थामकर अपने हृदय से लगा लिया, उनके शरीर में दिव्य स्पंदन उत्पन्न किया और उन्हें आठ कोष्ठों के सर्पों के निवास में, सर्पों के राजा के फन के भीतर स्थापित कर दिया। सर्पों के राजा ने बोधिसत्व को सर्पों के निवास में ग्रहण किया और उन्हें अपनी आधी महिमा

और स्थिति प्रदान की। वहाँ वे एक वर्ष तक रहे। फिर उन्होंने कहा, "मैं मनुष्यों के मार्ग पर लौटना चाहता हूँ।" "कहाँ?" उन्होंने पूछा। "हिमालय, जहाँ मैं एक संन्यासी जीवन व्यतीत करूँगा।" सर्पों के राजा ने अपनी सहमति दी; उन्हें लेकर वे उस स्थान पर ले गए जहाँ मनुष्य आते-जाते हैं, और उन्हें संन्यासियों की आवश्यक वस्तुएँ प्रदान कीं, और अपने स्थान पर लौट गए।

अतः वह हिमालय चले गए और उन्होंने धार्मिक (सन्यासी) जीवन को अपना लिया तथा परमानंद की अनुभूति को विकसित किया; वहाँ वे निवास करते हुए वन के फलों और जड़ों का सेवन करते थे।

बनारस में रहने वाला एक लकड़हारा उस स्थान पर आया और उसने उस महान व्यक्ति को पहचान लिया। उसने पूछा, “क्या आप महान राजकुमार पद्मा ही हैं, महाराज?” पद्मा ने उत्तर दिया, “जी हां।” दूसरे ने उन्हें प्रणाम किया और कुछ दिनों तक वहीं रहा। फिर वह बनारस लौट आया और राजा से कहा, “महाराज, आपके पुत्र ने हिमालय क्षेत्र में संन्यासी जीवन अपना लिया है और पत्तों की कुटिया में रहते हैं। मैं उनके साथ रह रहा था और वहीं से आया हूं।” राजा ने पूछा, “क्या आपने उन्हें अपनी आंखों से देखा है?” पद्मा ने उत्तर दिया, “जी हां, महाराज।” राजा एक विशाल सेना के साथ वहां गया और जंगल के बाहरी इलाके में अपना शिविर लगाया; फिर अपने दरबारियों के साथ उस महान व्यक्ति को प्रणाम करने गया, जो अपने सुनहरे रूप में पत्तों की कुटिया के द्वार पर विराजमान थे, और पद्मा एक तरफ बैठ गए; दरबारियों ने भी उन्हें प्रणाम किया और उनसे मधुरता से बातें कीं और एक तरफ बैठ गए। बोधिसत्व ने राजा को अपने जंगली फल खाने के लिए आमंत्रित किया और उनसे मधुरता से बातें कीं। तब राजा ने कहा, "मेरे पुत्र, मैंने ही तुम्हें एक गहरी खाई में फेंक दिया था, और तुम अभी तक कैसे जीवित हो?" यह सुनकर उन्होंने नौवां श्लोक दोहराया:

"जैसे तुम्हें किसी लटकती हुई पहाड़ी से नीचे फेंक दिया गया हो, मानो नरक के द्वार में।"
कोई राहत नहीं—खजूर के पेड़ों की घनी छाया: तुम अब भी कैसे जी रहे हो?
ये शेष श्लोक हैं, और पाँचों में से, बारी-बारी से, तीन बोधिसत्व द्वारा बोले गए थे, और दो राजा द्वारा।

"एक शक्तिशाली सर्प, सामर्थ्य से परिपूर्ण, उस पर्वतीय भूमि पर जन्मा।"
उसने मुझे अपने फंदों में जकड़ लिया; और इसलिए मैं यहाँ मृत्यु से सुरक्षित खड़ा हूँ।"
"देखो! मैं तुम्हें वापस अपने घर ले जाऊंगी, हे राजकुमार।"
और वहाँ—तुम्हें लकड़ी से क्या लेना-देना है?—तुम आशीर्वाद के साथ राज करोगे।
"जैसे किसी को कांटा निगल गया हो और वह सारा खून चूस रहा हो,"
इसे जारी रखने से खुशी मिलती है: इसलिए मैं अपने भीतर इस आनंद और अच्छाई को देखता हूं।"
"तुम हुक के बारे में इस तरह क्यों बोलते हो, तुम खून-खराबे के बारे में इस तरह क्यों बोलते हो?"
समलैंगिक होने की बात क्यों करें? आकर मुझे बताएं, मैं आपसे विनती करता हूँ।
"वासना ही जाल है: मैं बेहतरीन हाथियों और घोड़ों को उनके रक्त से दिखाता हूँ;
इन सब का त्याग करके ही मैंने इन्हें प्राप्त किया है; हे सरदार, यह बात तुम्हें अवश्य जाननी चाहिए।
“हे महान राजा, राजा बनना मेरे लिए कुछ भी नहीं है; परन्तु ध्यान रखना कि तुम दस राजसी गुणों का उल्लंघन न करो, बल्कि बुराई से दूर रहकर धर्म के मार्ग पर शासन करो।” इन शब्दों में उस महान सत्ता ने राजा को संबोधित किया। राजा रोते-बिलखते विरह करते हुए विदा हुआ और अपने नगर की ओर जाते हुए उसने अपने दरबारियों से पूछा, “मैंने इतने गुणी पुत्र से किस कारण विमुखता की?” उन्होंने उत्तर दिया, “रानी के कारण।” राजा ने रानी को पकड़वाकर चोरों की चट्टान से नीचे फेंकवा दिया और अपने नगर में प्रवेश करके धर्म के मार्ग पर शासन किया।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने कहा, "इस प्रकार, भाइयों (भिक्षुओं), इस स्त्री ने अतीत में मेरी निंदा की और गंभीर विनाश का शिकार हुई;" और फिर अंतिम श्लोक को दोहराते हुए जन्म की पहचान बताई:

"लेडी चिंचा मेरी मां थीं।"
देवदत्त मेरे पिता थे।
मैं उस समय उनका पुत्र राजकुमार था:
सारिपुत्र आत्मा थे।
और मैं इसे अच्छा सांप घोषित करता हूँ।
वह आनंद था। मैंने कर दिया है।"

फुटनोट:

(1)जिन्होंने बुद्ध पर झूठा आरोप लगाया

(2) दुल्हन को दिया जाने वाला "शाही ऊनी वस्त्र" या "विवाह वस्त्र"

(3)पढ़ना, लामकवत्थम.

(4) यह वज्झमाला थी, जिसे मृत्युदंड पाए अपराधी के सिर या गर्दन पर रखा जाता था।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **मित्तमित्त-जातक2**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-473-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 473
मित्तमित्त-जातक

"बुद्धिमान को कैसे व्यवहार करना चाहिए," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए कोसल के राजा के एक धर्मनिष्ठ दरबारी के बारे में सुनाई थी।

कहते हैं कि यह व्यक्ति राजा के लिए बहुत उपयोगी था, और राजा ने उसे बहुत सम्मान दिया। अन्य दरबारी उसे पसंद नहीं करते थे, इसलिए उन्होंने राजा के सामने उस पर राजा को हानि पहुँचाने का आरोप लगाया। राजा ने उसके बारे में पूछताछ की और उसमें कोई दोष न पाकर सोचा, "मुझे इस व्यक्ति में कोई दोष नहीं दिखता; मैं कैसे जानूँ कि यह मेरा मित्र है या शत्रु?" फिर उन्होंने सोचा, "तथागत (बुद्ध) के सिवा कोई भी इस प्रश्न का उत्तर नहीं दे सकता; मैं जाकर उनसे ही पूछूँगा।" इसलिए उपवास तोड़ने के बाद वे गुरु के पास गए और कहा, "हे महाराज, कोई कैसे जान सकता है कि कोई व्यक्ति मित्र है या शत्रु?" तब गुरु ने उत्तर दिया, "हे महाराज, प्राचीन काल के बुद्धिमानों ने इस समस्या पर विचार किया है और बुद्धिमानों से इस विषय पर प्रश्न पूछे हैं, और उनकी सलाह का पालन करते हुए सत्य का पता लगाया है, और अपने शत्रुओं का त्याग करके अपने मित्रों पर ध्यान दिया है।" यह कहकर, उनके अनुरोध पर, उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व उनके दरबारी थे जो उन्हें आध्यात्मिक और सांसारिक मामलों में सलाह देते थे। उस समय, बाकी लोगों ने एक ईमानदार दरबारी की निंदा की। राजा को उसमें कोई दोष नहीं दिखा, इसलिए उन्होंने उस महान सत्ता से पूछा, "अब कोई मित्र या शत्रु को किस बात में दोषी ठहरा सकता है?" (पहले श्लोक को दोहराते हुए):

"बुद्धिमान और समझदार व्यक्ति को किस प्रकार प्रयास करने चाहिए, विवेक कैसे जान सकता है?"
"किस कर्म से आंख या कान से पता चलता है कि कौन सा व्यक्ति शत्रु है?"
फिर उस महान सत्ता ने शत्रु के लक्षणों को समझाने के लिए इन पांच श्लोकों को दोहराया:

"जब आप उसे देखते हैं तो वह मुस्कुराता नहीं है, वह कोई स्वागत नहीं दिखाता।"
वह उस ओर अपनी नज़रें नहीं घुमाएगा, और आपको जवाब देगा...
वह तुम्हारे शत्रुओं का सम्मान करता है, तुम्हारे मित्रों की उसे परवाह नहीं है।
जो लोग आपकी योग्यता की प्रशंसा करना चाहते हैं, वह उनके साथ रहता है, और आपके निंदकों की सराहना करता है।
"वह तुम्हें कोई रहस्य नहीं बताता, बल्कि तुम्हारे ही रहस्य को उजागर कर देता है।"
जो लोग आपके काम की कभी तारीफ नहीं करते, वे आपकी बुद्धिमत्ता की प्रशंसा नहीं करेंगे।
वह तुम्हारे कल्याण से नहीं, बल्कि तुम्हारी बदनामी से प्रसन्न होता है।
यदि उसे कोई शानदार उपहार मिले, तो वह आपके नाम के बारे में नहीं सोचेगा।
न तो वह तुम पर दया करता है, न ही जोर से रोता है—काश मेरे दोस्त के साथ भी ऐसा ही होता!
"ये सोलह चिह्न हैं जिनके द्वारा आप अपने शत्रु को देख सकते हैं।"
यदि कोई बुद्धिमान व्यक्ति इन्हें देख या सुन ले तो वह अपने शत्रु को पहचान लेता है।

"बुद्धिमान और समझदार व्यक्ति को किस प्रकार प्रयास करने चाहिए, विवेक से क्या लाभ होगा?"
"कौन से कर्म आंखों और कानों को यह बताते हैं कि कौन सा व्यक्ति सच्चा मित्र है?"
दूसरे व्यक्ति ने, इन पंक्तियों में पूछे गए प्रश्नों का उत्तर देते हुए, शेष छंदों का पाठ किया:

वह अनुपस्थित को याद रखता है; लौटकर वह प्रसन्न होगा।
फिर वह अपनी अत्यधिक प्रसन्नता में आपको अपनी आवाज से नमस्कार करता है।
वह तुम्हारे शत्रुओं का कभी सम्मान नहीं करता, वह तुम्हारे मित्रों की सेवा करना पसंद करता है।
जो लोग तुम्हारी निंदा करते हैं, वह उनके साथ रहता है; जो तुम्हारी प्रशंसा करते हैं, वह उनकी सराहना करता है।
वह तुम्हें अपने रहस्य बताता है, तुम्हारा रहस्य कभी उजागर नहीं होता।
आपके हर कार्य की हमेशा प्रशंसा होती है, आपकी बुद्धिमत्ता प्रशंसा करना पसंद करती है।
वह तुम्हारी भलाई की खबर सुनकर प्रसन्न होता है, तुम्हारी बदनामी से नहीं।
अगर उसे कोई शानदार उपहार मिलता है, तो वह सीधे आपके नाम के बारे में सोचता है।
और वह तुम पर तरस खाता है, और जोर-जोर से रोता है- काश मेरे दोस्त के साथ भी ऐसा ही हुआ होता!
"ये सोलह संकेत हैं जो अच्छे संबंध रखने वाले मित्रों में पाए जाते हैं।"
जिसे यदि कोई बुद्धिमान व्यक्ति देखे या सुने तो वह एक सच्चे मित्र को बता सकता है।
महान व्यक्तित्व के भाषण से प्रसन्न होकर राजा ने उन्हें सर्वोच्च सम्मान दिया।

गुरु ने प्रवचन समाप्त करते हुए कहा, “हे महाराज, यह प्रश्न अतीत में भी उठा था, ठीक वैसे ही जैसे अब उठा है, और बुद्धिमानों ने इस पर अपनी राय दी थी; इन बत्तीस चिह्नों से मित्र और शत्रु की पहचान की जा सकती है।” इन शब्दों के साथ उन्होंने जन्म का वर्णन किया: “उस समय आनंद राजा थे, और मैं स्वयं बुद्धिमान दरबारी था।”

पुस्तक XIII. तेरसा-निपाता:

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **अम्बा-जातक**2
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-474-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 474
अम्बा-जातक

"हे शिष्य, कब?" इत्यादि। यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए देवदत्त के बारे में सुनाई थी। देवदत्त ने अपने गुरु का खंडन करते हुए कहा, "मैं स्वयं बुद्ध बनूँगा, और गौतम (बुद्ध) तपस्वी मेरे गुरु या मार्गदर्शक नहीं हैं!" इस प्रकार, अपनी रहस्यमयी ध्यान साधना से जागृत होकर, उन्होंने संघ में विमुख हो गए। फिर वे धीरे-धीरे श्रावस्ती नगर की ओर बढ़े, और जेतवन मठ के बाहर, पृथ्वी फट पड़ी, और वे अविची नरक में उतर गए।

तब सत्य के हॉल में सब लोग इस विषय पर चर्चा कर रहे थे: “भाई, देवदत्त ने अपने गुरु को त्याग दिया और घोर विनाश का भागी, अविची नामक गहरे नरक में उसका पुनर्जन्म हुआ!” गुरुजी ने प्रवेश किया और उनसे पूछा कि वे किस बारे में बात कर रहे हैं, तो उन्होंने उन्हें बताया। गुरुजी ने कहा, “केवल अभी ही नहीं, बल्कि पहले भी, जैसे अभी, देवदत्त ने अपने गुरु को त्याग दिया था और घोर विनाश का भागी था।” ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, उनके पुरोहित परिवार का मलेरिया बुखार (*1) से विनाश हो गया। उनका एक पुत्र ही दीवार तोड़कर (*2) बच निकला। वह तक्षशिला आया और एक विश्वप्रसिद्ध गुरु से सभी कलाएँ और सिद्धियाँ सीखीं। फिर उसने अपने गुरु को विदाई दी और विभिन्न क्षेत्रों की यात्रा करने के इरादे से प्रस्थान किया; और अपनी यात्रा के दौरान वह एक सीमावर्ती गाँव में पहुँचा। इसके पास ही निम्न जाति के चांडालों का एक बड़ा गाँव था। फिर इस गाँव में रहने वाले एक बोधिसत्व, एक विद्वान

ऋषि, एक ऐसा मंत्र जानते थे जिससे समय से पहले फल तोड़े जा सकते थे। वे सुबह सवेरे अपनी लाठी लेकर उस गाँव से तब तक चलते थे जब तक कि वे जंगल में उगने वाले एक आम के पेड़ तक नहीं पहुँच जाते; और सात फुट की दूरी पर खड़े होकर, वे उस मंत्र का जाप करते और मुट्ठी भर पानी उस पेड़ पर डालते। पलक झपकते ही सूखे पत्ते झड़ जाते हैं, नए पत्ते उग आते हैं, फूल खिलते हैं और मुरझा जाते हैं, आम फल पककर तैयार हो जाते हैं: लेकिन एक पल में—वे पक जाते हैं, मीठे और स्वादिष्ट हो जाते हैं, दिव्य फल की तरह बढ़ते हैं, और पेड़ से गिर जाते हैं! महान सत्ता अपनी इच्छा अनुसार फल चुनकर खा लेते हैं, फिर अपने खंभे से लटकी टोकरियों को भरते हैं, घर जाते हैं और फल बेचकर पत्नी और बच्चे का भरण-पोषण करते हैं।

अब उस युवा ब्राह्मण ने देखा कि महापुरुष बेमौसम पके आम बेच रहे हैं। उसने सोचा, "निस्संदेह, ये किसी मंत्र के प्रभाव से ही उगे हैं। यह व्यक्ति मुझे एक ऐसा मंत्र सिखा सकता है जिसका कोई मोल नहीं है।" उसने ध्यान से देखा कि महापुरुष किस प्रकार फल प्राप्त करते हैं, और उसे ठीक-ठीक पता चल गया। फिर वह उस समय महापुरुष के घर गया जब वे अभी जंगल से नहीं लौटे थे, और ऐसा दिखावा करते हुए कि उसे कुछ पता ही नहीं है, उसने ज्ञानी पुरुष की पत्नी से पूछा, "गुरुजी कहाँ हैं?" पत्नी ने कहा, "जंगल गए हैं।" वह उनके आने तक प्रतीक्षा करता रहा, फिर उनके पास गया, और उनसे डंडा और टोकरियाँ लेकर घर में ले गया और वहाँ रख दीं। महापुरुष ने उसकी ओर देखा और अपनी पत्नी से कहा, "श्रीमती, यह युवक मंत्र लेने आया है; परन्तु कोई मंत्र इसके पास नहीं टिकेगा, क्योंकि यह अच्छा आदमी नहीं है।" परन्तु युवक सोच रहा था, "मैं अपने गुरु का सेवक बनकर ही मंत्र प्राप्त करूँगा;" और तब से वह घर के सारे काम करने लगा: लकड़ी लाता, चावल कूटता, खाना बनाता, चेहरा धोने के लिए आवश्यक सभी चीजें लाता, पैर धोता।

एक दिन जब उस महान पुरुष ने उससे कहा, "मेरे पुत्र, मेरे पैरों को सहारा देने के लिए एक चौकी लाओ," तो युवक ने कोई और उपाय न देखकर रात भर उस महान गुरु के पैर अपनी जांघ पर रखे। कुछ समय बाद जब उस महान पुरुष की पत्नी ने पुत्र को जन्म दिया, तो उसने प्रसव के समय किए जाने वाले सभी कार्य किए। एक दिन पत्नी ने उस महान पुरुष से कहा, "पतिदेव, यह बालक, भले ही उच्च कुल का हो, इस मंत्र के कारण हमारे लिए यह छोटा-मोटा काम करता है। इसे यह मंत्र दे दीजिए, चाहे यह उसके पास रहे या न रहे।" इस पर वह सहमत हो गए। उन्होंने उसे मंत्र सिखाया और इस प्रकार कहा, "मेरे पुत्र, यह एक अनमोल मंत्र है; और इससे तुम्हें बहुत लाभ और सम्मान मिलेगा। लेकिन जब राजा या उसका महान मंत्री तुमसे पूछे कि तुम्हारा गुरु कौन था, तो मेरा नाम मत छिपाना; क्योंकि यदि तुम इस बात से शर्मिंदा होगे कि एक नीच जाति के व्यक्ति ने तुम्हें यह मंत्र सिखाया है, और कहोगे कि तुम्हारा गुरु ब्राह्मणों का एक महान सरदार था, तो तुम्हें इस मंत्र का कोई लाभ नहीं मिलेगा।" "मैं आपका नाम क्यों छिपाऊँ?" लड़के ने कहा, "जब भी मुझसे पूछा जाएगा, मैं कहूंगा कि यह आप हैं।" फिर उसने अपने गुरु को प्रणाम किया और उस नीच जाति के गाँव से मंत्र का स्मरण करते हुए चला गया और उचित समय पर बनारस पहुँच गया। वहाँ उसने आम बेचकर खूब धन अर्जित किया।

एक दिन उद्यान के रखवाले ने राजा को एक आम भेंट किया, जो उसने राजा से खरीदा था। राजा ने आम खाकर पूछा कि उसे इतना उत्तम फल कहाँ से मिला? उत्तर मिला, "महाराज, एक युवक है जो बेमौसम आम लाता है और बेचता है: मैंने यह आम उसी से लिया है।" राजा ने कहा, "उसे कह दो कि अब से वह आम यहीं मेरे पास लाए।" युवक ने ऐसा ही किया; और तब से वह युवक राजा के घर आम लाने लगा। राजा ने उसे अपने यहाँ काम करने का निमंत्रण दिया और वह राजा का सेवक बन गया; और धीरे-धीरे धनवान होकर वह राजा का विश्वासपात्र बन गया।

एक दिन राजा ने उससे पूछा, "हे युवक, तुम्हें ये बेमौसम, इतने मीठे, सुगंधित और सुंदर रंग के आम कहाँ से मिलते हैं? क्या कोई नाग या गरुला तुम्हें ये देता है, या कोई देवता (देवदूत), या यह जादू की शक्ति है?" "हे महामहिम, मुझे कोई नहीं देता!" युवक ने उत्तर दिया, "लेकिन मेरे पास एक अनमोल मंत्र है, और यही उस मंत्र की शक्ति है।" "अच्छा, क्या तुम मुझे किसी दिन इस मंत्र की शक्ति दिखाना चाहोगे?" "ज़रूर, महाराज, और मैं ऐसा ही करूँगा," उसने कहा। अगले दिन राजा उसके साथ उद्यान में गए और उससे वह मंत्र दिखाने को कहा। युवक तैयार हो गया और एक आम के पेड़ के पास जाकर, उससे सात फुट की दूरी पर खड़ा हो गया, और पेड़ पर पानी फेंकते हुए मंत्र दोहराया। उसी क्षण आम के पेड़ पर ऊपर वर्णित तरीके से फल लग गए: आमों की बौछार हुई, मानो तूफान आ गया हो; सभी लोग बड़े हर्षोल्लास से अपने रुमाल लहराने लगे; राजा ने फल खाया और उसे बड़ा इनाम दिया, और कहा, "हे युवक, तुझे यह अद्भुत मंत्र किसने सिखाया?" युवक ने सोचा, अगर मैं कहूँ कि मुझे किसी नीच जाति के चांडाल ने सिखाया है, तो मेरी बेइज्जती होगी और वे मेरा उपहास करेंगे; मुझे यह मंत्र कंठस्थ है और अब मैं इसे कभी नहीं भूल सकता; अच्छा, मैं कह दूँगा कि यह किसी विश्वप्रसिद्ध गुरु ने सिखाया है। इसलिए उसने झूठ बोला और कहा, "मैंने इसे तक्षशिला में एक विश्वप्रसिद्ध गुरु से सीखा है।" जैसे ही उसने अपने गुरु का नाम छिपाते हुए ये शब्द कहे, उसी क्षण मंत्र गायब हो गया। लेकिन राजा बहुत प्रसन्न हुए और उसके साथ नगर लौट गए।

एक दिन राजा को आम खाने की इच्छा हुई; वे उद्यान में गए और राजकीय अवसरों पर इस्तेमाल होने वाली एक पत्थर की बेंच पर बैठ गए। उन्होंने युवक से आम लाने को कहा। युवक बड़ी उत्सुकता से एक आम के पेड़ के पास गया और पेड़ से सात फुट की दूरी पर खड़े होकर मंत्र जपने लगा; लेकिन मंत्र का कोई असर नहीं हुआ। तब उसे समझ आ गया कि उसका मंत्र खो गया है और वह शर्मिंदा होकर वहीं खड़ा रह गया। राजा ने सोचा, "पहले तो यह युवक भीड़ के बीच भी मुझे आम लाकर देता था, और आमों की बारिश होती थी। अब

यह तो एक लकड़ी के लट्ठे की तरह खड़ा है: इसका क्या कारण हो सकता है?" जिसका उत्तर उन्होंने पहली पंक्ति को दोहराकर जानने का प्रयास किया।

"युवा विद्यार्थी, जब मैंने हाल ही में तुमसे यह पूछा था,
तुम मेरे लिए छोटे और बड़े दोनों तरह के आम लाए थे:
अब, हे ब्राह्मण, वृक्ष पर कोई फल नहीं दिखाई देता।
हालांकि आप उसी आकर्षण को बार-बार दोहराते हैं!
यह सुनकर युवक ने मन ही मन सोचा, यदि वह कह दे कि आज कोई फल नहीं मिलेगा, तो राजा क्रोधित हो जाएगा; इसीलिए उसने झूठ बोलकर राजा को धोखा देने का सोचा और दूसरी पंक्ति दोहराई।

"समय और क्षण अनुकूल नहीं हैं: इसलिए प्रतीक्षा करें।"
आकाश में ग्रहों का उपयुक्त मिलन बिंदु।
उचित संयोग और वह क्षण आ गया,
तब मैं तुम्हारे लिए ढेर सारे आम लाऊंगा।
"यह क्या है?" राजा ने आश्चर्य से कहा। "इस व्यक्ति ने पहले ग्रहों के संयोजन के बारे में कुछ नहीं कहा!" इन प्रश्नों का उत्तर देने के लिए, उसने दो छंद दोहराए:

आपने समय और ऋतुओं के बारे में एक शब्द भी नहीं कहा, न ही
अतीत में ग्रहों के मिलन के बारे में:
लेकिन आम, सुगंधित, स्वाद में नाजुक,
रंग तो बढ़िया है, आप भरपूर सामान लेकर आए हैं।
"हे ब्राह्मण, अतीत में तुमने बहुत अच्छा उत्पादन किया था।"
अपने मंत्र का जाप करने से पेड़ पर फल लग जाएंगे:
आज आप ऐसा नहीं कर सकते, चाहे आप कितना भी बड़बड़ाएं।
इस व्यवहार का क्या अर्थ है, कृपया मुझे बताएं?
यह सुनकर युवक ने सोचा, "झूठ बोलकर राजा को धोखा नहीं दिया जा सकता। यदि सच बोलने पर वह मुझे दंडित करे, तो करे, पर मैं सच जरूर बोलूंगा।" फिर उसने दो श्लोक पढ़े:

"मेरे शिक्षक एक निम्न जाति के व्यक्ति थे, जो मुझे पढ़ाते थे।"
इसका आकर्षण उचित और प्रभावी था, और इसने क्या-क्या परिणाम दिए:
यह कहते हुए, "यदि आपसे मेरा नाम और जन्मतिथि पूछी जाए,
कुछ भी मत छिपाओ, वरना सारा आकर्षण व्यर्थ हो जाएगा।
"मनुष्यों के स्वामी ने मुझसे पूछा, हालांकि मैं यह अच्छी तरह जानता था,"
फिर भी मैंने छल में वह बात कही जो सच नहीं थी;
मैंने झूठ बोलते हुए कहा, "एक ब्राह्मण के मंत्र"; और अब,
आकर्षण खो गया, मुझे अपने गलत काम पर गहरा अफसोस है।"
यह सुनकर राजा मन ही मन सोचने लगा, "पापी मनुष्य ऐसे अनमोल खजाने की परवाह क्यों नहीं करता! जब किसी के पास इतना अनमोल खजाना हो, तो जन्म का क्या लेना-देना?" और क्रोधित होकर उसने निम्नलिखित पंक्तियाँ दोहराईं:

नीम, अरंडी का तेल, या प्लासी का पेड़ (*3), चाहे जो भी पेड़ हो
जहां खोज करने वाले को मधुकोश मिल जाए, वह सोचता है कि वह सबसे अच्छा पेड़ है।
"क्षत्रिय हो, ब्राह्मण हो, वैश्य हो, जिससे मनुष्य सही सीखता है--
शूद्र, चांडाल, पुक्कुसा--उनकी दृष्टि में सर्वोच्च लगते हैं (*4)।"
"उस निकम्मे देहाती को दंडित करो, या फिर जान से मार डालो।"
अत: बिना विलंब किए उसका गला पकड़ लो।
जिसने बड़ी मेहनत से खजाना अर्जित किया,
अति आत्मविश्वास और गर्व के साथ इसे फेंक देता है!

राजा के आदमियों ने वैसा ही किया और कहा, "अपने गुरु के पास लौट जाओ और उनसे क्षमा मांग लो; फिर, यदि तुम वह मंत्र फिर से सीख सको, तो तुम यहाँ दोबारा आ सकते हो, लेकिन यदि नहीं, तो फिर कभी इस देश की ओर मत देखना।" इस प्रकार उन्होंने उसे निर्वासित कर दिया।

वह आदमी बहुत दुखी था। उसने सोचा, "मेरे लिए कोई सहारा नहीं है, सिवाय मेरे गुरु के। मैं उनके पास जाऊँगा, उनकी क्षमा प्राप्त करूँगा और फिर से मंत्र सीखूँगा।" शोक में डूबा हुआ वह उस गाँव की ओर चल पड़ा। उस महान सत्ता ने उसे आते हुए देखा और अपनी पत्नी को उसकी ओर इशारा करते हुए कहा, "देखो, महिला, वह दुष्ट फिर आ गया, उसका मंत्र खो गया है!" वह आदमी उस महान सत्ता के पास पहुँचा, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गया। "तुम यहाँ क्यों आए हो?" दूसरी तरफ ने पूछा। "हे मेरे गुरु!" उस आदमी ने कहा, "मैंने झूठ बोला, अपने गुरु का इनकार किया, और मैं पूरी तरह बर्बाद हो गया हूँ!" फिर उसने अपने अपराध को एक श्लोक में सुनाया और फिर से मंत्र माँगे।

"अक्सर वही व्यक्ति जो सोचता है कि समतल जमीन उसके पैरों के नीचे पड़ी है,
तालाब, गड्ढे, चट्टान में गिर जाना, सड़ी हुई जड़ से ठोकर लग जाना;
एक और व्यक्ति एक रस्सी जैसी दिखने वाली चीज पर कदम रखता है, एक काले रंग के सांप को खोजने के लिए;
एक अन्य व्यक्ति अपनी आंखों की रोशनी खो देने के कारण आग में कूद जाता है:
इसलिए मैंने पाप किया है और अपना जादू खो दिया है; लेकिन हे बुद्धिमान गुरु,
मुझे क्षमा कर दो! और मुझे एक बार फिर अपनी दृष्टि में कृपा प्राप्त करने का अवसर दो!
तब उनके शिक्षक ने उत्तर दिया, "क्या कहते हो मेरे बेटे? अंधे को बस एक इशारा दे दो, वो मुझे तालाबों और न जाने क्या-क्या से बचा लेगा; लेकिन मैंने तुम्हें एक बार बता दिया है, तो अब तुम्हें यहाँ क्या चाहिए?" फिर उन्होंने निम्नलिखित छंद दोहराए:

मैंने तुम्हें उचित तरीके से बताया था,
आपने उचित तरीके से सही मंत्र सीख लिया।
  मैंने पूरी स्वेच्छा से इसकी प्रकृति समझाई:
अगर तुमने अच्छा व्यवहार किया होता, तो यह बात तुम्हें कभी नहीं छोड़ती।
"हे मूर्ख! किसने बड़ी मेहनत से जादू सीखा है?"
जो लोग इस संसार में निवास करते हैं, उनके लिए यह बहुत कठिन है।
  तो फिर, मूर्ख! अंततः जीविका प्राप्त हो ही गई!
वह सब कुछ त्याग देता है, क्योंकि वह झूठ का पर्दाफाश कर देगा।
"ऐसे मूर्ख, नासमझ व्यक्ति के लिए, जो खुशी-खुशी झूठ बोलता है,"
कृतघ्न, जो स्वयं को संयमित नहीं कर सकता।
  हम उसे शक्तिशाली मंत्र नहीं देते:
आप यहाँ से चले जाइए, और मुझसे दोबारा मत पूछिएगा!
इस प्रकार अपने शिक्षक द्वारा बर्खास्त किए जाने पर, उस व्यक्ति ने सोचा, "मेरे लिए जीवन का क्या अर्थ है?" और जंगल में जाकर दुखी मन से मर गया।

गुरु ने प्रवचन समाप्त करते हुए कहा, "भाई, केवल अब ही नहीं, देवदत्त ने अपने गुरु का अनादर किया है और गंभीर विनाश का शिकार हुआ है;" और ऐसा कहते हुए उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "उस समय देवदत्त कृतघ्न व्यक्ति था, आनंद राजा था और मैं नीच जाति का व्यक्ति था।"

फुटनोट:

(1) क्रमांक 178 देखें

(2) एक प्राचीन मान्यता है कि इस बीमारी से ठीक होने के लिए, घर की दीवार तोड़कर बीमारी पैदा करने वाली आत्मा से भागना पड़ता है।

(3)ब्यूटिया फ्रोंडोसा। चूंकि प्लासी का नाम इसी वृक्ष से पड़ा है, इसलिए शायद इसे वृक्ष के नाम के रूप में स्वीकार किया जा सकता है।

(4) ये छह जातियों के नाम हैं: क्षत्रिय, ब्राह्मण, वैश्य, शूद्र, ये चार जातियाँ संस्कृत ग्रंथों में प्रचलित हैं, साथ ही चांडाल और पुक्कास, ये दोनों मिश्रित जातियाँ हैं और गैर-आर्य (गैर-यूरोपीय) प्रजाजन जातियाँ हैं जिन्हें बहुत तिरस्कृत किया जाता है, लगभग दास के समान। जातक क्षत्रियों, या योद्धाओं को ब्राह्मणों पर वरीयता देता है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **फंदन-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-475-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 475
फंदना-जातक

"हे मनुष्य, जो खड़े हो जाओ," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने रोहिणी नदी के किनारे एक पारिवारिक कलह के बारे में सुनाई थी। कुणाल (*1) जन्म के अंतर्गत परिस्थितियों का विस्तृत वर्णन किया जाएगा। इस अवसर पर गुरु ने अपने सगे-संबंधियों को संबोधित करते हुए कहा, "हे राजा,"

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब शहर के बाहर बढ़ईयों का एक गाँव था। उसमें एक ब्राह्मण बढ़ई रहता था, जो जंगल से लकड़ी लाकर और गाड़ियाँ बनाकर अपना जीवन यापन करता था।

उस समय हिमालय क्षेत्र में एक विशाल प्लासी (*2) का पेड़ था। एक काला शेर शिकार करते समय उसकी जड़ में लेट जाता था। एक दिन तेज़ हवा चली और पेड़ की एक सूखी शाखा टूटकर उसके कंधे पर जा गिरी। चोट से उसे दर्द हुआ और वह डर के मारे तुरंत उठा और भाग गया; फिर मुड़कर उसने उस रास्ते पर देखा जिससे वह आया था, और कुछ भी न देखकर उसने सोचा, "यहाँ न तो कोई दूसरा शेर है, न बाघ, न ही कोई मेरा पीछा कर रहा है। लगता है पेड़ का देवता मुझे वहाँ लेटे हुए देखकर नाराज़ होगा। मैं पता लगाऊंगा कि ऐसा है या नहीं।" ऐसा सोचते हुए वह बेवजह क्रोधित हो गया और पेड़ पर प्रहार करते हुए चिल्लाया—"मैं तेरे पेड़ का एक पत्ता भी नहीं खाता, न ही कोई शाखा तोड़ता हूँ; तू यहाँ दूसरे जीवों को बर्दाश्त कर सकता है, और मुझे नहीं! मुझमें क्या खराबी है? कुछ दिन रुक जा, मैं तुझे जड़ से उखाड़ फेंकूँगा, तुझे टुकड़े-टुकड़े कर दूँगा!" इस प्रकार उसने वृक्ष के देवता को फटकारा और फिर एक आदमी की तलाश में चला गया।

उस समय उपर्युक्त ब्राह्मण बढ़ई अपने दो-तीन अन्य साथियों के साथ गाड़ी में बैठकर उस इलाके में लकड़ी लेने आया था, क्योंकि वह गाड़ी बनाने का काम करता था। उसने अपनी गाड़ी एक जगह खड़ी की और कुल्हाड़ी व हथौड़ा लेकर पेड़ों की तलाश में निकल पड़ा। संयोगवश वह इस प्लासी के पेड़ के पास आ पहुँचा। शेर ने उसे देखकर पेड़ के नीचे जाकर खड़ा हो गया, क्योंकि उसने सोचा, "आज मुझे अपने शत्रु की पीठ देखनी ही है!" लेकिन बढ़ई इधर-उधर देखकर पेड़ के पास से भाग गया। शेर ने सोचा, "उसके पूरी तरह चले जाने से पहले मैं उससे बात करूँगा," और उसने पहली पंक्ति दोहराई:

"हे मनुष्य, जो इस वनक्षेत्र में हाथ में कुल्हाड़ी लिए खड़ा है,
मुझे सच-सच बताओ, मैं तुमसे पूछता हूँ, तुम्हें कौन सा पेड़ चाहिए?
“देखो, चमत्कार!” यह सुनकर उस आदमी ने कहा, “मैं कसम खाता हूँ, मैंने आज तक ऐसा कोई जानवर नहीं देखा जो मनुष्य की तरह बोल सके। उसे तो पता ही होगा कि गाड़ी बनाने वाले के लिए किस तरह की लकड़ी अच्छी होती है। मैं उससे पूछूँगा।” ऐसा सोचते हुए उसने दूसरा छंद दोहराया:

"पहाड़ी पर चढ़ो, घाटी में उतरो, मैदान में चलो, जंगल में तुम एक राजा की तरह विचरण करते हो:
मुझे सच-सच बताओ, मैं तुमसे पूछता हूँ—पहियों के लिए कौन सा पेड़ अच्छा होता है?
शेर ने सुना और मन ही मन कहा, "अब मुझे मेरी दिली इच्छा पूरी होगी!" फिर उसने तीसरा छंद दोहराया:

"साल, बबूल, घोड़ी का कान (*3) नहीं, झाड़ी (*4) तो बिल्कुल भी अच्छी नहीं है;
एक पेड़ होता है जिसे प्लासी कहते हैं, और वही आपकी सबसे अच्छी पहिए वाली लकड़ी होती है।"

यह सुनकर वह व्यक्ति प्रसन्न हुआ और सोचने लगा, "आज का दिन कितना सुखद है, जो मुझे जंगल में ले आया। यहाँ एक जानवर के रूप में एक प्राणी है जो मुझे बता रहा है कि पहिया बनाने वाले के लिए कौन सी लकड़ी अच्छी है! अरे वाह, यह तो बढ़िया है!" इसलिए उसने चौथे छंद में शेर से प्रश्न पूछा:

"पत्तियों का स्वरूप कैसा है, तना किस प्रकार का दिखता है?"
मुझे सच-सच बताओ, मैं तुमसे विनती करता हूँ, ताकि मैं उस पेड़ को जान सकूँ?
इसके जवाब में शेर ने दो छंद दोहराए:

"यह वह वृक्ष है जिसकी शाखा को आप झुकते, मुड़ते हुए देखते हैं, लेकिन वह कभी टूटती नहीं है;
यह वह प्लासी है, जिसकी जड़ों पर मैं अपना स्थान ग्रहण करता हूँ।
"रथ की तीलियों या उनके किनारे, रथ के ध्रुव, या पहिए, या किसी भी भाग के लिए,"
यह प्लासी का पेड़ आपके लिए गाड़ी बनाने में काम आएगा।
इस घोषणा के बाद, शेर खुशी से झूमते हुए एक तरफ हट गया। वृक्ष-देवता ने पेड़ काटना शुरू किया। तभी वृक्ष-देवता ने सोचा, "मैंने उस जानवर पर कुछ नहीं गिराया; वह बेमौसम गुस्से में गिर पड़ा, और अब वह मेरा घर नष्ट करने पर तुला है, और मैं भी नष्ट हो जाऊंगा। मुझे उसके महामहिम को नष्ट करने का कोई तरीका ढूंढना होगा।" इसलिए लकड़हारे का रूप धारण करके वह वृक्ष-देवता के पास आया और उससे बोला, "अरे! आपके पास तो बहुत बढ़िया पेड़ है! जब यह गिर जाएगा तो आप इसका क्या करेंगे?" - "गाड़ी का पहिया बनाऊंगा।" - "क्या! क्या किसी ने आपको बताया है कि यह पेड़ गाड़ी के लिए अच्छा है?" "हाँ, एक काला शेर।" -- "बहुत खूब, काले शेर, तुमने सही कहा। तुम उस पेड़ से एक बढ़िया गाड़ी बना सकते हो," उसने कहा। "लेकिन मैं तुमसे कहता हूँ कि अगर तुम एक काले शेर की गर्दन से खाल उतारकर, उसे लोहे के आवरण की तरह पहिये के बाहरी किनारे पर, केवल चार उंगल चौड़ी पट्टी की तरह, लगा दो, तो पहिया बहुत मजबूत हो जाएगा, और तुम्हें इससे बहुत फायदा होगा।" -- "लेकिन मुझे काले शेर की खाल कहाँ से मिलेगी?" -- "कितने मूर्ख हो तुम! पेड़ जंगल में मजबूती से खड़ा है, और भागेगा नहीं। तुम जाओ और उस शेर को ढूंढो जिसने तुम्हें इस पेड़ के बारे में बताया था, और उससे पूछो कि पेड़ के किस हिस्से को काटना है, और उसे यहाँ ले आओ। फिर जब उसे कुछ शक न हो, और वह इधर-उधर इशारा करे, तब तक इंतज़ार करो जब तक वह अपना जबड़ा बाहर न निकाल दे, और जब वह बोल रहा हो, तभी अपनी सबसे तेज कुल्हाड़ी से उस पर वार करो, उसे मार डालो, खाल ले लो, सबसे अच्छा मांस खा लो, और आराम से पेड़ काट दो।" इस तरह उसने अपना गुस्सा निकाला।

इस बात को समझाने के लिए गुरु ने निम्नलिखित श्लोकों को दोहराया:

इस प्रकार प्लासी के वृक्ष ने तुरंत ही अपनी इच्छा और अभिलाषा स्पष्ट कर दी:
मुझे भी एक संदेश देना है: हे भारद्वाज, सुनो!
"पशुओं के राजा के कंधे से चार इंच चौड़ा टुकड़ा काट कर निकाल दिया गया।"
और इसे पहिये के चारों ओर लगा दो, इससे यह और भी मजबूती से टिका रहेगा।"
"तो थोड़ी देर में प्लासी का पेड़, अपने क्रोध में लिप्त होकर,
जन्म लेने वाले और जन्म न लेने वाले शेरों ने मिलकर भीषण विनाश किया।"
वृक्ष देवता के निर्देश सुनकर रथ बनाने वाला चिल्ला उठा, "आह, आज तो मेरे लिए सौभाग्य का दिन है!" उसने शेर को मार डाला, पेड़ को काट डाला और चला गया।

गुरु ने निम्नलिखित वचन सुनाकर बात समझाई:

"इस प्रकार प्लासी वृक्ष पशु से लड़ता है (*5), और पशु वृक्ष से लड़ता है,
इसलिए दोनों आपस में विवाद करते हुए एक दूसरे को मौत के घाट उतार देते हैं।
अतः मनुष्यों के बीच जहाँ कहीं भी कोई झगड़ा या कलह उत्पन्न होता था,
उन्होंने, जैसे ही जानवर और पेड़ ने अब किया, मोर की तरह केपर्स काटे (*6)।
"मैं तुम्हें यह बताता हूँ कि तुम किस समय एक पर हो, यह तुम्हारे लिए अच्छा है।"
सब एकमत रहो और झगड़ा मत करो, जैसा कि जानवर और पेड़ ने किया था।
सभी मनुष्यों के साथ शांति बनाए रखना सीखो; बुद्धिमान लोग इसी की प्रशंसा करते हैं; और जो प्रसन्न होता है
वह निश्चित रूप से शांति और धार्मिकता की अंतिम शांति प्राप्त करेगा।
जब उन्होंने राजा का प्रवचन सुना, तो वे आपस में सहमत हो गए।

गुरु ने इस प्रवचन को समाप्त करते हुए जन्म की पहचान बताई: "उस समय, मैं उस जंगल में रहने वाला देवता था, और मैंने सारी घटना देखी।"

फुटनोट:

(1)सं. 536.

(2)फंदना पलासा, "ब्यूटिया फ्रोंडोसा" के समान ही एक वृक्ष है।

(3) वैटिका रोबस्टा: इसके पत्तों के आकार के कारण ऐसा कहा जाता है।

(4)dhavo: Grislea Tomentosa.

(5)शब्द is is is is is, “स्वामी,” यानी शेर, पशुओं का राजा। जैसा ऊपर बताया गया है।

(6) टीकाकार समझाते हैं कि पुरुष झगड़े में खुद को उजागर करते हैं, जैसे मोर अपने गुप्तांगों को उजागर करते हैं। यह शायद क्रमांक 32 का संकेत है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **जावना-हंस-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-476-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 476
जवाना-हंसा-जातक

"आओ, हंस," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में दलहधम्म सूत्रंत या बलवान पुरुषों के दृष्टांत के बारे में सुनाई थी। भगवान बुद्ध ने कहा: “मान लीजिए, भिक्षुओं, कि चार धनुर्धारी चारों दिशाओं में खड़े हों, बलवान, प्रशिक्षित और कुशल, तीरंदाजी में निपुण। फिर एक व्यक्ति आकर कहे, “यदि ये चारों धनुर्धारी, बलवान, प्रशिक्षित और कुशल, तीरंदाजी में निपुण, चारों दिशाओं से तीर चलाएँ, तो मैं उन तीरों को चलते ही, जमीन पर गिरने से पहले ही पकड़ लूँगा”: क्या आप निश्चित रूप से सहमत नहीं होंगे कि वह अत्यंत फुर्तीला और फुर्ती का साक्षात उदाहरण होगा? खैर, भिक्षुओं, ऐसे व्यक्ति की फुर्ती चाहे कितनी भी महान हो, सूर्य और चंद्रमा की फुर्ती के समान, फिर भी उससे भी अधिक तीव्र कुछ है: मैं कहता हूँ, भिक्षुओं, ऐसे व्यक्ति की फुर्ती चाहे कितनी भी महान हो, सूर्य और चंद्रमा की फुर्ती के समान, और यद्यपि देवता (देवदूत) सूर्य या चंद्रमा से भी तेज गति से उड़ते हैं, फिर भी देवताओं (देवदूतों) से भी अधिक तीव्र कुछ है: भिक्षुओं, उस व्यक्ति की फुर्ती (और इसी प्रकार), फिर भी उससे भी अधिक तीव्र देवता (देवदूत) जा सकते हैं, जीवन के तत्व नष्ट हो जाते हैं। इसलिए, हे भाइयों, आपको यह सीखना चाहिए, सावधान रहना चाहिए; मैं सचमुच आपसे कहता हूँ, आपको यह सीखना चाहिए।” इस उपदेश के दो दिन बाद, वे सत्य के हॉल में इस विषय पर चर्चा कर रहे थे: “हे भाइयों, गुरु ने बुद्ध के रूप में अपने विशिष्ट क्षेत्र में, जीवन के तत्वों की प्रकृति की व्याख्या करते हुए, इसे क्षणभंगुर और दुर्बल दिखाया, और हे भाइयों और गैर-धर्मांतरित लोगों को समान रूप से अत्यंत भयभीत कर दिया। ओह, बुद्ध की शक्ति!” गुरु ने प्रवेश करते हुए पूछा कि वे किस बारे में बात कर रहे हैं। उन्होंने उन्हें बताया; और उन्होंने कहा, “हे भाइयों, इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि मैं अपने असीम ज्ञान से अपने उपदेशों द्वारा भाइयों को भयभीत करूँ, और दिखाऊँ कि जीवन के तत्व कितने क्षणभंगुर हैं। यहाँ तक कि जब मैं अप्राकृतिक कारण (*1) एक हंस द्वारा गर्भ में आया, तब भी मैंने जीवन के तत्वों की क्षणभंगुर प्रकृति को दिखाया, और अपने उपदेशों द्वारा एक राजा के पूरे दरबार को, यहाँ तक कि बनारस के राजा को भी भयभीत कर दिया।” ऐसा कहकर, उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब परमपिता का जन्म एक तेज हंस के रूप में हुआ, जो चित्तकूट पर्वत पर नब्बे हजार अन्य हंसों के झुंड में रहता था। एक दिन, भारत के मैदानी इलाकों में एक तालाब में उगे जंगली चावल खाकर, वह अपने झुंड के साथ हवा में उड़ने लगा (ऐसा लग रहा था मानो बनारस शहर के एक छोर से दूसरे छोर तक सोने की चटाई बिछी हो), और खेल-खेल में धीरे-धीरे चित्तकूट की ओर उड़ गया। बनारस के राजा ने उसे देखा और अपने दरबारियों से कहा, "यह पक्षी अवश्य ही राजा होगा, जैसा

कि मैं हूँ।" राजा को वह पक्षी बहुत पसंद आया, और वह अपने साथ मालाएँ, इत्र और मलहम लेकर परमपिता की खोज में निकल पड़ा; और अपने साथ तरह-तरह के संगीत की धुनें भी बजाईं। जब परमपिता ने उसे इस प्रकार सम्मान देते हुए देखा, तो उसने अन्य हंसों से पूछा, "जब एक राजा मुझे इतना सम्मान दे रहा है, तो वह क्या चाहता है?" "वह आपसे मित्रता करना चाहता है, महाराज।" "ठीक है, मुझे राजा से दोस्ती करने दो," उसने कहा; और उसने राजा से दोस्ती कर ली, और फिर लौट आया।

इसके एक दिन बाद, जब राजा अपने उद्यान में थे और अनोतात्ता झील गए, तो एक पक्षी राजा के पास उड़कर आया, जिसके एक पंख पर पानी और दूसरे पर चंदन का पाउडर था। उसने राजा पर पानी छिड़का और पाउडर भी डाल दिया। फिर, जब सभी लोग देख रहे थे, वह अपने झुंड के साथ चित्तकुटा की ओर उड़ गया। तब से राजा उस महान प्राणी के लिए तरसने लगे; वे रुक-रुक कर उस रास्ते को देखते रहते जिससे वह आया था और सोचते—"आज मेरा साथी आएगा।"

अब महापुरुष के झुंड के दो सबसे छोटे हंसों ने सूर्य के साथ दौड़ लगाने का निश्चय किया; इसलिए उन्होंने महापुरुष से सूर्य के साथ दौड़ लगाने की अनुमति मांगी। महापुरुष ने कहा, “मेरे बच्चों, सूर्य की गति बहुत तीव्र है, और तुम कभी भी उसके साथ दौड़ नहीं लगा पाओगे। तुम दौड़ में ही मर जाओगे, इसलिए मत जाओ।” उन्होंने दूसरी बार और तीसरी बार भी अनुमति मांगी; लेकिन बोधिसत्व ने तीसरी बार तक उनकी अनुमति नहीं दी। फिर भी वे अपनी शक्ति को न जानते हुए दृढ़ रहे और राजा को बिना बताए सूर्य के साथ उड़ने का निश्चय कर लिया। इसलिए सूर्योदय से पहले ही वे युगंधर पर्वत (*2) की चोटी पर पहुंच गए। महापुरुष ने उन्हें नहीं देखा और पूछा कि वे कहां गए। जब उन्होंने सब कुछ सुना, तो उन्होंने सोचा, “वे कभी भी सूर्य के साथ नहीं उड़ पाएंगे, बल्कि दौड़ में ही मर जाएंगे। मैं उनकी जान बचाऊंगा।” इसलिए वे भी युगंधर पर्वत की चोटी पर गए और उनके पास बैठ गए। जब सूर्य क्षितिज पर दिखाई दिया, तो युवा हंस उठे और सूर्य के साथ-साथ आगे बढ़े; महापुरुष भी उनके साथ उड़ते हुए आगे बढ़े। सबसे छोटा हंस दोपहर तक उड़ता रहा, फिर कमजोर पड़ने लगा; उसे अपने पंखों के जोड़ों में आग सी लग गई। तब उसने महापुरुष को संकेत दिया: "भाई, मैं नहीं कर सकता!" महापुरुष ने कहा, "डरो मत, मैं तुम्हें बचाऊंगा;" और उसे अपने फैले हुए पंखों पर उठाकर, उसे शांत किया और चित्तकुटा पर्वत पर ले जाकर हंसों के बीच में रख दिया। फिर वह उड़ गया और सूर्य को पकड़ते हुए दूसरे हंस के साथ-साथ चलने लगा। दोपहर तक दूसरा हंस सूर्य के साथ उड़ता रहा, फिर वह कमजोर पड़ने लगा और उसे ऐसा लगा जैसे उसके पंखों के जोड़ों में आग लग गई हो। महापुरुष को संकेत देते हुए वह रोया, "भाई, मैं नहीं कर सकता!" उस महान प्राणी ने उसे भी उसी प्रकार सांत्वना दी और अपने फैले हुए पंखों पर बिठाकर चित्तकुटा ले गया। उस समय सूर्य ठीक सिर के ऊपर था। उस महान प्राणी ने सोचा, "आज मैं सूर्य की शक्ति की परीक्षा लूँगा;" और एक ही झटके में वापस आकर वह युगंधरा पर बैठ गया। फिर एक ही झटके में ऊपर उठकर उसने सूर्य को पीछे छोड़ दिया और कभी आगे, कभी पीछे उड़ते हुए मन ही मन सोचा, "मेरे लिए सूर्य के साथ उड़ना व्यर्थ है, यह तो केवल पाप का फल है: वह मेरे लिए क्या है? मैं बनारस जाऊँगा और वहाँ अपने साथी राजा को धर्म और सत्य का संदेश सुनाऊँगा।" फिर मुड़कर, सूर्य के आकाश के मध्य से हटने से पहले ही, वह पूरी दुनिया को एक छोर से दूसरे छोर तक पार कर गया; फिर अपनी गति धीमी करके, पूरे भारत को एक छोर से दूसरे छोर तक पार किया और अंत में बनारस पहुँचा। बारह लीग (x 4.23 किमी) के दायरे में फैला पूरा शहर, मानो पक्षी की छाया में था (*3), कहीं कोई दरार या छेद नहीं था; फिर जैसे-जैसे गति धीमी होती गई, आकाश में छेद और दरारें दिखाई देने लगीं। महान प्राणी की गति धीमी हो गई, और वह हवा से नीचे उतरकर एक खिड़की के सामने आ गिरा। "मेरा साथी आ गया है!"राजा अत्यंत प्रसन्न होकर चिल्लाया; और पक्षी के बैठने के लिए एक सोने का आसन लाकर बोला, "अंदर आओ, मित्र, और यहाँ बैठो," और उसने पहला श्लोक सुनाया।

"आओ, हे महान हंस, आओ यहाँ बैठो; तुम्हारा नजारा मुझे बहुत प्रिय है;
अब आप इस जगह के मालिक हैं; जो कुछ भी आपको दिखे, उसे चुन लीजिए।

महान प्राणी स्वर्ण सिंहासन पर विराजमान थे। राजा ने उनके पंखों के नीचे सौ गुना नहीं, बल्कि हज़ार गुना शुद्ध किए गए इत्र से अभिषेक किया, उन्हें स्वर्ण थाली में मीठे चावल और चीनी युक्त जल दिया और मधुर स्वर में उनसे कहा— "हे मित्र, तुम अकेले आए हो; अब कहाँ से आए हो?" पक्षी ने उन्हें सारी बात विस्तार से बताई। तब राजा ने उनसे कहा: "मित्र, मुझे भी सूर्य के विरुद्ध अपनी शीघ्रता दिखाओ।"—"हे शक्तिशाली राजा, वह शीघ्रता दिखाई नहीं जा सकती।"—"तो मुझे कुछ वैसा ही दिखाओ।" "बहुत अच्छा, हे राजा, मैं आपको कुछ वैसा ही दिखाऊंगा। अपने उन धनुर्धारियों को बुलाओ जो बिजली की तरह तेज़ तीर चला सकते हैं।" राजा ने उन्हें बुलवाया। महान प्राणी ने उनमें से चार को चुना और उनके साथ महल से नीचे प्रांगण में गए। वहाँ उन्होंने ज़मीन में एक पत्थर का स्तंभ स्थापित करवाया और अपने गले में एक घंटी बंधवाई। फिर वह पत्थर के खंभे के शीर्ष पर बैठ गया और चारों तीरंदाजों को खंभे से दूर चारों दिशाओं की ओर मुंह करके खड़ा करते हुए बोला, "हे महाराज, इन चारों को एक ही क्षण में चार अलग-अलग दिशाओं में चार-चार तीर चलाने दीजिए, और मैं जमीन पर गिरने से पहले ही इन तीरों को पकड़ लूंगा और उनके चरणों में रख दूंगा। जब मैं तीर लेने जाऊंगा तो इस घंटी की झंकार से आपको पता चल जाएगा, लेकिन मैं दिखाई नहीं दूंगा।" फिर एक ही क्षण में सभी पुरुषों ने चारों तीर चला दिए; उसने उन्हें पकड़ लिया और उनके चरणों में रख दिया, और वह खंभे पर बैठा हुआ दिखाई दिया। "क्या आपने मेरी गति देखी, हे महाराज?" उसने पूछा; फिर आगे बोला, "हे महान महाराज, यह गति न तो मेरी सबसे तेज है और न ही मध्यम गति, यह मेरी सबसे धीमी गति है: और इससे आपको पता चलेगा कि मैं कितना तेज हूं।" तब राजा ने उससे पूछा, "अच्छा, मित्र, क्या कोई गति आपकी गति

से तेज है?" "हाँ, मेरे मित्र। मेरी सबसे तेज़ गति से भी सौ गुना, हज़ार गुना, नहीं, एक लाख गुना, सजीव प्राणियों में जीवन के तत्वों का क्षय होता है: वे चूर-चूर हो जाते हैं, वे नष्ट हो जाते हैं।" इस प्रकार उन्होंने स्पष्ट किया कि कैसे रूप का संसार पल-पल नष्ट होता हुआ चूर-चूर हो जाता है। यह सुनकर राजा मृत्यु के भय से भयभीत हो गया, होश खो बैठा और बेहोश हो गया। लोग व्याकुल हो गए, उन्होंने राजा का चेहरा पानी से धोया और उसे होश में लाया। तब उस महान सत्ता ने उससे कहा, "हे महान राजा, भयभीत न हों; परन्तु मृत्यु को याद रखें। धर्म के मार्ग पर चलें, दान दें और भलाई करें, सावधान रहें।" तब राजा ने उत्तर दिया, "हे मेरे स्वामी, आप जैसे बुद्धिमान गुरु के बिना मैं जीवित नहीं रह सकता, चित्तकूट पर्वत पर वापस न लौटें, बल्कि यहीं रहें, मुझे शिक्षा दें, मेरे गुरु बनें और मुझे सिखाएँ!" और उसने यह निवेदन दो छंदों में व्यक्त किया:

प्रियजन के बारे में सुनकर प्रेम को पोषण मिलता है।
दृष्टि से ही खोए हुए की लालसा समाप्त हो जाती है:
क्योंकि देखना और सुनना मनुष्यों को प्रसन्न और प्रिय बनाता है,
आपको देखकर मुझे कृपा प्राप्त हो।
"आपकी आवाज प्यारी है, और जब मैं आपको देखता हूँ तो आपकी उपस्थिति उससे भी कहीं अधिक प्यारी लगती है।"
तो चूंकि मुझे तुम्हारा दर्शन करना अच्छा लगता है, हे हंस, मेरे साथ रहने आ जाओ!
बोधिसत्व ने कहा:

"इस प्रकार प्रदत्त सम्मान में मैं सदा आपके साथ रहना चाहूंगा;"
लेकिन एक दिन तुम शराब के नशे में कह सकते हो—"मेरे लिए उस शाही पक्षी को भून दो!"
"नहीं," राजा ने कहा, "तो मैं कभी शराब या मादक पेय को हाथ नहीं लगाऊंगा," और उन्होंने यह प्रतिज्ञा निम्नलिखित छंद में की:

"धिक्कार हो उन सभी भोजन और पेय पदार्थों पर जिन्हें मैं तुमसे अधिक प्रेम करता हूँ।"
और जब तक तुम मेरे साथ रहोगे, मैं एक बूंद भी नहीं पीऊंगा!
इसके बाद बोधिसत्व ने छह श्लोक पढ़े:

सियार या पक्षियों की आवाज आसानी से समझ में आ जाती है;
हाँ, परन्तु हे राजा, मनुष्यों के वचन इन सबसे कहीं अधिक अंधकारमय हैं!
एक व्यक्ति सोच सकता है, "यह मेरा दोस्त है, मेरा साथी है, मेरे परिवार का सदस्य है।"
लेकिन दोस्ती खत्म हो जाती है, और अक्सर नफरत और दुश्मनी शुरू हो जाती है (*5)।
"जिसके दिल में तुम्हारा दिल बसता है, वह तुम्हारे पास है, तुम्हारे साथ है, चाहे वह कहीं भी हो।"
लेकिन जो तुम्हारे साथ रहता है, और तुम्हारा हृदय उससे विमुख हो जाता है, वह तुमसे बहुत दूर रहता है।
"आपके दयालु हृदय वाले घर में कौन होगा?"
वह अब भी दयालु है, हालांकि वह समुद्र के उस पार बहुत दूर है:
तुम्हारे घर में कौन शत्रुतापूर्ण हृदय रखेगा?
हालांकि वह समुद्र जितनी दूरी पर है, फिर भी वह शत्रुतापूर्ण है।
"हे रथों के स्वामी, आपके शत्रु आपके निकट होते हुए भी दूर हैं।"
लेकिन, हे अपने राज्य के पालक! अच्छे हृदय वाले आपस में घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए हैं।
"जो लोग बहुत देर तक एक ही जगह पर रहते हैं, उन्हें अक्सर पता चलता है कि उनका दोस्त दुश्मन में बदल गया है।"
फिर, इससे पहले कि मैं तुम्हारी दोस्ती खो दूं, मैं तुमसे विदा लूंगा और चला जाऊंगा।
तब राजा ने उससे कहा:

"यद्यपि मैं हाथ जोड़कर आपसे विनती करता हूँ, तो भी आप मेरी बात नहीं सुनते;
आप हमारे लिए एक शब्द भी नहीं छोड़ते, जिनके लिए आपकी सेवा अत्यंत महत्वपूर्ण होगी।
मेरी आपसे बस एक ही गुजारिश है: दोबारा आइए और यहां जरूर आइए।
तब बोधिसत्व ने कहा:

"अगर कुछ भी ऐसा न हो जो हमारे जीवन को तोड़ दे, हे राजा! अगर आप और मैं
हे जनमानस के पालनहार, अब भी जीवित रहो! शायद मैं यहीं उड़कर आऊँगा।
और दिन-रात बीतने के साथ-साथ शायद हम फिर से एक-दूसरे से मिलें।"
राजा को यह संबोधन देकर वह महान व्यक्तित्व चित्तकुटा के लिए प्रस्थान कर गया।

जब गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने कहा: "इस प्रकार, हे भिक्षुओं, बहुत समय पहले, जब मैं एक पशु के रूप में जन्मा था, तब मैंने जीवन के सभी तत्वों की कमजोरी को दर्शाया और सत्य का उपदेश दिया।" ऐसा कहते हुए उन्होंने अपने जन्म का वर्णन किया: "उस समय आनंद राजा थे, मोग्गल्याण सबसे छोटा पक्षी थे, सारिपुत्र दूसरे थे, बुद्ध के सभी अनुयायी झुंड के हंस थे, और मैं स्वयं तेज गति वाला हंस था।"

फुटनोट:

(1) प्राकृतिक प्रक्रियाओं के बिना, अचानक अस्तित्व में आने का एक तरीका।

(2) मेरु पर्वत को घेरने वाली सात महान पर्वत श्रृंखलाओं में से एक।

(3) इसका अर्थ है कि पक्षी उसके ऊपर इतनी तेज़ी से चक्कर लगा रहा था कि वह छत्रछाया जैसा प्रतीत हो रहा था।

(4)अगंत्वा पढ़ना

(5) ये दोनों दोहे क्रमांक 478 में पुनः आते हैं

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कुल्ल-नारद-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-477-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 477
कुल्ला-नारदा-जातक

"कोई लकड़ी नहीं काटी जाती," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक साधारण लड़की के आकर्षण के बारे में सुनाई थी।

हमें पता चला कि श्रावस्ती नगर के एक नागरिक की लगभग सोलह वर्ष की एक युवती थी, जो किसी पुरुष के लिए सौभाग्य ला सकती थी, फिर भी कोई पुरुष उसे नहीं चुनता था। तब उसकी माता ने मन ही मन सोचा, "मेरी यह पुत्री अब बालिग हो चुकी है, फिर भी कोई उसे नहीं चुनता। मैं उसे मछली के लिए चारा बनाऊंगी और शाक्य (बुद्ध वंश) के किसी तपस्वी को संसार में वापस लाऊंगी और उसी से अपना जीवन यापन करूंगी।" उस समय श्रावस्ती नगर में एक कुलीन युवक रहता था, जिसने धम्म (बुद्ध के मार्ग) को अपना हृदय समर्पित कर दिया था और भिक्षु संघ में शामिल हो गया था। परन्तु शिष्यत्व की पूर्ण दीक्षा प्राप्त करने के बाद से ही उसने विद्या की सारी इच्छा खो दी थी और अपने श्रृंगार में लीन हो गया था। वह गृहस्थ नन अपने घर में चावल की दलिया और अन्य प्रकार के नरम-कच्चे व्यंजन बनाती और द्वार पर खड़ी होकर भिक्षुओं के आने-जाने पर ऐसे किसी व्यक्ति की तलाश करती जो स्वादिष्ट भोजन की लालसा से ललचा जाए। तेपितक, अभिधम्म और विनय का पालन करने वाले पुरुषों की भीड़ उमड़ पड़ी; लेकिन उनमें से कोई भी उसके जाल में फँसने को तैयार नहीं था। कटोरे और वस्त्र धारण किए, मधुर स्वर में सत्य का प्रचार करने वाले, हवा में मटमैले पक्षियों की तरह गतिमान, उन आकृतियों में से उसे एक भी नज़र नहीं आया। लेकिन अंत में उसने एक व्यक्ति को आते देखा, जिसकी आँखों के बाहरी कोने सुगंधित थे, बाल लटके हुए थे, उसने उत्तम वस्त्र का अंतर्वस्त्र और झाड़ा हुआ और शुद्ध बाहरी वस्त्र पहना हुआ था, उसके हाथ में किसी कीमती रत्न के समान रंग का कटोरा था और मनपसंद धूप से बचने के लिए एक छाता था, एक ऐसा व्यक्ति जो अपनी इंद्रियों को अपने वश में रखता था, उसका शरीर काँच-सा तंदुरुस्त था। "यही वह व्यक्ति है जिसे मैं अपने जाल में फँसा सकती हूँ!" उसने सोचा; और उसका अभिवादन करते हुए, उसने उसका कटोरा लिया और उसे घर में आमंत्रित किया। उसने उसके लिए बैठने की व्यवस्था की और चावल का दलिया और अन्य सभी व्यंजन परोसे; फिर भोजन के बाद, उसने उससे विनती की कि वह भविष्य में उसी घर में आए। इसलिए वह उसके बाद से उस घर में आने लगा और समय के साथ घनिष्ठ हो गया।

एक दिन, गृहस्थी साध्वी ने उसके सामने कहा, "इस घर में हम काफी सुखी हैं, बस मेरे पास कोई ऐसा पुत्र या दामाद नहीं है जो इसे संभाल सके।" उस व्यक्ति ने यह सुना और यह सोचकर कि वह ऐसा क्यों कह रही है, कुछ ही क्षण में उसका हृदय मानो भेद उठा। उसने

अपनी पुत्री से कहा, "इस पुरुष को लुभाओ और उसे अपने वश में करो।" इसके बाद, उस लड़की ने स्वयं को सजाया-संवारा और स्त्री के सभी छल-कपटों से उसे लुभाने का प्रयास किया। (आपको यह समझना चाहिए कि "अशिष्ट" कन्या का अर्थ केवल मोटी कन्या नहीं है, बल्कि चाहे वह मोटी हो या पतली, पाँचों इंद्रिय सुखों के कारण उसे "अशिष्ट" कहा जाता है।) तब वह व्यक्ति, जो युवा था और वासनाओं के वश में था, अपने मन में सोचने लगा, "मैं अब बुद्ध के धर्म (धार्मिक मार्ग) पर नहीं चल सकता"; और वह मठ में गया, और पान-पात्र और वस्त्र रखकर अपने आध्यात्मिक गुरुओं से कहा, "मैं असंतुष्ट हूँ।" फिर वे उसे गुरु के पास ले गए और बोले, "महोदय, यह भिक्षु असंतुष्ट है।" उसने पूछा, "क्या यह सच है कि आप असंतुष्ट हैं, भिक्षु?" "जी हाँ, सच है।" "तो फिर किस बात ने आपको असंतुष्ट किया?" "एक कुटिल लड़की की वजह से, भिक्षु।" गुरु ने कहा, "भिक्षु, बहुत समय पहले, जब आप जंगल में रहते थे, तो यही लड़की आपकी पवित्रता में बाधा बनी थी और उसने आपको बहुत हानि पहुँचाई थी; तो फिर आप उसके कारण फिर से असंतुष्ट क्यों हैं?" तब भिक्षुओं के अनुरोध पर उसने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व एक धनी ब्राह्मण परिवार में जन्मे और अपनी शिक्षा पूरी करने के बाद जागीर का प्रबंधन करने लगे। फिर उनकी पत्नी ने एक पुत्र को जन्म दिया और उनका निधन हो गया। उन्होंने सोचा, "जैसे मेरी प्रिय पत्नी के साथ हुआ, वैसे ही मेरे साथ भी मृत्यु लज्जित नहीं होगी (*1); मेरे लिए घर क्या है? मैं तपस्वी बन जाऊंगा।" अतः अपनी वासनाओं का त्याग करके वे अपने पुत्र के साथ हिमालय चले गए; और वहाँ उन्होंने तपस्वी जीवन व्यतीत किया, रहस्यमय समाधि और पारलौकिक ज्ञान प्राप्त किया, और जंगलों में फल और जड़ों को खाकर जीवन यापन करने लगे।

उस समय सीमावर्ती लुटेरों ने ग्रामीण इलाकों पर हमला किया; एक कस्बे पर आक्रमण करके, कैदियों को पकड़कर, लूट का माल लादकर वे सीमा की ओर लौट गए। उनमें एक लड़की थी, जो सुंदर तो थी, लेकिन पाखंडी की सारी चालाकी उसमें कूट-कूटकर भरी थी। उस लड़की ने मन ही मन सोचा, "ये लोग हमें अपने घर ले जाकर गुलामों की तरह इस्तेमाल करेंगे; मुझे किसी तरह भागने का रास्ता खोजना होगा।" इसलिए उसने कहा, "मेरे स्वामी, मैं एकांतवास करना चाहती हूँ; मुझे थोड़ी देर के लिए दूर जाने दीजिए।" इस प्रकार उसने लुटेरों को धोखा दिया और भाग गई।

अब बोधिसत्व फल और अन्य वस्तुएँ लाने के लिए बाहर गए थे (*2), अपने पुत्र को कुटिया में छोड़कर। उनके जाने के दौरान, यह लड़की जंगल में भटकती हुई सुबह कुटिया में आई; और प्रेम की इच्छा से तपस्वी पुत्र को बहकाकर, उसके सद्गुणों को नष्ट कर दिया और उसे अपने वश में कर लिया। उसने उससे कहा, "यहाँ जंगल में क्यों रहना? चलो, हम किसी गाँव में जाकर अपना घर बसाएँ। वहाँ सभी इंद्रिय सुखों और वासनाओं का आनंद लेना आसान है।" उसने सहमति जताते हुए कहा, "मेरे पिता अभी जंगल में जंगली फल ढूँढ़ रहे हैं। जब हम उनसे मिल लेंगे, तो हम दोनों साथ चले जाएँगे।" तब लड़की ने सोचा, "यह भोला-भाला लड़का कुछ नहीं जानता; लेकिन उसके पिता बुढ़ापे में तपस्वी बन गए होंगे। जब वह आएगा, तो वह जानना चाहेगा कि मैं यहाँ क्या कर रही हूँ, और मुझे पीटेगा, मेरे पैर पकड़कर घसीटेगा और जंगल में फेंक देगा। मैं उसके आने से पहले ही भाग जाऊँगी।" तब उसने लड़के से कहा, "मैं पहले चलती हूँ, तुम मेरे पीछे आ जाना"; फिर उसने रास्ते के निशान दिखाते हुए प्रस्थान किया। उसके जाने के बाद लड़का उदास हो गया और उसने अपने सारे कर्तव्य नहीं निभाए; बल्कि सिर समेत खुद को लपेटकर झोपड़ी में लेट गया और बेचैनी से बड़बड़ाने लगा।

जब महान प्राणी जंगली फल लेकर आए, तो उन्होंने लड़की के पदचिह्न को देखा। उन्होंने सोचा, "यह तो एक स्त्री का पदचिह्न है; मेरे बेटे का सतीत्व नष्ट हो गया होगा।" फिर वे झोपड़ी में गए, जंगली फल नीचे रखे और पहले श्लोक को दोहराते हुए अपने बेटे से वही प्रश्न पूछा:

"न तो लकड़ी काटी गई है और न ही तुम तालाब से पानी लाए हो।"
आग नहीं जल रही है: तुम मूर्ख की तरह क्यों पड़े हो?
अपने पिता की आवाज सुनकर लड़का उठा और उन्हें प्रणाम किया; और पूरे आदर के साथ यह बताया कि वह वन जीवन सहन नहीं कर सकता, और कुछ पंक्तियाँ दोहराईं:

"मैं जंगलों में नहीं रह सकता: हे कश्यप, मैं शपथ लेता हूँ;
जंगल का जीवन कठिन है, और मैं वापस पुरुषों (*3) के पास चला जाऊँगा।
हे ब्राह्मण, मुझे यह सिखाओ कि जब मैं जाऊँ, तो जहाँ कहीं भी जाऊँ,
ग्रामीण इलाकों के रीति-रिवाजों को मैं सबसे अच्छी तरह से जान सकता हूँ।
“बहुत अच्छा, मेरे पुत्र,” उस महान प्राणी ने कहा, “मैं तुम्हें इस देश के रीति-रिवाजों के बारे में बताऊंगा।” और उन्होंने ये दो पंक्तियाँ दोहराईं:

"यदि आपका मन जंगल के फलों और जड़ों को पीछे छोड़ने का है
और शहरों में निवास करो, मेरी बात सुनो और मुझे वह मार्ग सिखाओ जो उस जीवन के लिए उपयुक्त है:
हर खाई से दूर रहो, जहर से बचो।
कभी भी कीचड़ में मत बैठो, और जहां सांप हों वहां सावधानी से चलो।"
तपस्वी के पुत्र को यह संक्षिप्त सलाह समझ में न आई और उसने पूछा:

"तुम्हारे इस पतन का धार्मिक (तपस्वी) मार्ग से क्या संबंध है?"
तुम्हारा कीचड़, तुम्हारा जहर और तुम्हारा सांप? आओ, मुझे ये सब बताओ, मैं तुमसे विनती करता हूँ।"
दूसरे ने समझाया--

"मेरे बेटे, दुनिया में एक ऐसा पेय है जिसे लोग शराब कहते हैं।"
सुगंधित, स्वादिष्ट, शहद जैसी मीठी और सस्ती, उत्तम स्वाद वाली:
हे नारद, ज्ञानी लोग कहते हैं कि यह पवित्र पुरुषों के लिए विष है।
और दुनिया की औरतें मूर्खों की बुद्धि को चकनाचूर कर सकती हैं।
वे युवा दिलों को अपनी गिरफ्त में ले लेते हैं, जैसे तूफान जमीन से कपास को उखाड़ लेते हैं:
मेरा तात्पर्य उस कगार से है जिसके ठीक सामने वह नेक इंसान लेट जाता है।
"अन्य पुरुषों द्वारा दिखाए गए उच्च सम्मान, आदर, प्रसिद्धि और लाभ,"
हे नारद, यही वह कीचड़ है जिससे पवित्र पुरुष भी अपवित्र हो सकते हैं।
"महान सम्राट अपने सेवकों के समूह के साथ उस दुनिया में रहते हैं,
और हे नारद, वे महान हैं, और उनमें से प्रत्येक एक शक्तिशाली राजा है:
"सर्वशक्तिमान स्वामियों और सम्राटों के चरणों में तुम मत चलो।"
क्योंकि, नारद, ये वही सर्प हैं जिनके बारे में मैंने अभी बात की थी।
"जिस घर में तुम भोजन करने आ रहे हो, जब पुरुष भोजन करने बैठते हैं,
यदि आपको उस घर में कुछ अच्छा दिखाई दे, तो वहाँ से जी भर कर खा लें।
जब कोई दूसरा व्यक्ति आपको भोजन या पेय पदार्थ से दावत दे, तो ऐसा करें:
बहुत अधिक मत खाओ, बहुत अधिक मत पियो, और शारीरिक वासनाओं से दूर रहो।
गपशप, शराब, अश्लील संगति और सुनार के सामान की दुकानों से दूर,
आपको दूर रखा जाएगा, जैसे वे लोग जो ऊबड़-खाबड़ रास्ते पर चलते हैं।"
पिता के लगातार बोलते रहने से बालक को होश आया और उसने कहा, "पिताजी, अब संसार से मेरा मन भर गया!" तब पिता ने उसे दयालुता और अन्य अच्छे भाव विकसित करने का तरीका बताया। पुत्र ने पिता के निर्देशों का पालन किया और शीघ्र ही उसे रहस्यमयी ध्यान की अवस्था प्राप्त हो गई। और पिता-पुत्र दोनों बिना समाधि भंग हुए ब्रह्मलोक (स्वर्ग) में पुनर्जन्म ले लिया।

जब गुरु ने यह प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म की पहचान बताई: "उस समय यह खुरदरी लड़की युवती थी, असंतुष्ट भाई (भिक्षु) तपस्वी का पुत्र था, और मैं पिता था।"

फुटनोट:

(1)अर्थात् यह एक दिन मुझ पर भी हावी हो जाएगा।

(2) संख्या 435

(3) शाब्दिक रूप से "राज्य।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **दूत-जातक2**
***स्रोत** : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

जातक क्रमांक 478
दूता-जातक

"ओ, चिंतन में डूबे हुए," इत्यादि - यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए अपनी बुद्धिमत्ता की प्रशंसा करते हुए सुनाई थी। सत्य के हॉल में वे कानाफूसी कर रहे थे: "देखो, भिक्षुओं, दसबल (बुद्ध) की सूझबूझ! उन्होंने उस युवक नंदा (*1) को अप्सराओं के चित्र दिखाए और उन्हें संतत्व प्रदान किया; उन्होंने अपने छोटे सेवक (*2) को एक वस्त्र दिया और उन्हें रहस्यवाद की चार शाखाओं (*3) के साथ संतत्व प्रदान किया; उन्होंने लोहार को एक कमल दिखाया और उन्हें संतत्व प्रदान किया; वे प्राणियों को कितनी ही चीजों का ज्ञान देते हैं!" गुरु ने प्रवेश करते हुए पूछा कि वे किस बारे में बात कर रहे हैं; उन्होंने उन्हें बताया। उन्होंने कहा, "यह पहली बार नहीं है कि तथागत (बुद्ध) सूझबूझ में कुशल हैं और वांछित प्रभाव जानने में चतुर हैं; वे पहले भी चतुर थे।" ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब देश में सोने की कमी थी; क्योंकि राजा ने देश पर अत्याचार करके धन इकट्ठा किया था। उसी समय बोधिसत्व का जन्म काशी के एक गाँव के ब्राह्मण परिवार में हुआ। जब वे वयस्क हुए, तो वे तक्षशिला गए और बोले, "मैं बाद में अपने गुरु को भिक्षा देने के लिए ईमानदारी से भिक्षा माँगकर धन जुटा लूँगा।" उन्होंने विद्या प्राप्त की और जब उनकी शिक्षा पूरी हो गई, तो उन्होंने कहा, "हे गुरु, मैं आपको आपके शिक्षण के लिए देय धन लाने में पूरी लगन लगाऊँगा।" फिर उनसे विदा लेकर वे चले गए और भिक्षा माँगते हुए देश-विदेश घूमने लगे। जब उन्होंने ईमानदारी से कुछ औंस (*4) सोना इकट्ठा कर लिया, तो वे उसे अपने गुरु को देने के लिए निकल पड़े; और रास्ते में गंगा नदी पार करने के लिए एक नाव पर सवार हो गए। जैसे ही नाव पानी पर आगे-पीछे हिलने लगी, सोना पानी में गिरने लगा। तब उसने सोचा, "यह ऐसा देश है जहाँ सोना मिलना मुश्किल है; अगर मैं अपने गुरु को भुगतान करने के लिए फिर से धन जुटाने जाऊँगा, तो बहुत समय लग जाएगा। क्या होगा अगर मैं गंगा के किनारे उपवास करूँ? समय आने पर राजा को मेरे यहाँ बैठने का पता चल जाएगा, और वह अपने कुछ दरबारियों को भेजेगा, लेकिन मेरे पास उनसे कहने के लिए कुछ नहीं होगा। फिर राजा स्वयं आएगा, और इस तरह मुझे अपने गुरु का शुल्क उससे मिल जाएगा।" इसलिए उसने अपना ऊपरी वस्त्र लपेट लिया, और यज्ञ का धागा उतारकर गंगा के किनारे ऐसे बैठ गया जैसे चाँदी की रेत पर सोने की मूर्ति हो। वहाँ से गुजरने वाली भीड़ ने उसे वहाँ बैठे और कुछ न खाते देखकर पूछा कि वह क्यों बैठा है। लेकिन उसने उनमें से किसी को एक शब्द भी नहीं कहा। अगले दिन उपनगर के ग्रामीणों को उसके वहाँ बैठे होने की खबर मिली, और वे भी आए और पूछा, लेकिन उसने उन्हें कुछ नहीं बताया; ग्रामीण उसकी थकी हुई हालत देखकर शोक मनाते हुए चले गए। तीसरे दिन शहर से लोग आए, चौथे दिन शहर के बड़े लोग आए, पाँचवें दिन राजा के करीबी लोग आए, छठे दिन राजा ने अपने मंत्रियों को भेजा; लेकिन उस व्यक्ति ने उनमें से किसी से भी बात नहीं की।

सातवें दिन राजा घबराकर उस व्यक्ति के पास आया और पहला श्लोक सुनाते हुए स्पष्टीकरण मांगा:

हे गंगा तट पर चिंतन में डूबे हुए, तुमने फिर क्यों नहीं बोला?
मेरे संदेशों के जवाब में? क्या तुम अपना दर्द छुपाओगे?
यह सुनकर उस महान सत्ता ने उत्तर दिया, "हे महान राजा! यह दुःख केवल उसी को बताया जाना चाहिए जो इसे दूर कर सकता है, और किसी और को नहीं।" और उन्होंने सात छंद दोहराए:

"हे काशी भूमि के पितृवत स्वामी! यदि दुख ही आपका भाग्य हो,
यदि कोई व्यक्ति ऐसा करने से बच सकता है, तो उसे अपने दुख के बारे में न बताएं।
लेकिन जो कोई भी अधिकार के बल पर इसके एक हिस्से को मुक्त कर सकता है,
वह अपनी सारी इच्छाएँ प्रत्येक दुखी प्राणी को बता दे।
सियार या पक्षियों की आवाज आसानी से समझ में आ जाती है;
हाँ, परन्तु हे राजा, मनुष्यों का वचन इन सबसे कहीं अधिक अंधकारमय है। (*5)
एक व्यक्ति सोच सकता है, "यह मेरा मित्र है, मेरा साथी है, मेरे परिवार का सदस्य है":
लेकिन दोस्ती टूट जाती है, और अक्सर नफरत और दुश्मनी शुरू हो जाती है! (*5)
वह व्यक्ति जिससे बार-बार पूछे जाने पर भी नहीं पूछा जाता
समय से परे जाकर ही उसके दर्द का पता चलेगा।
इससे निश्चित रूप से उसके मित्र नाराज होंगे।

और जो लोग उसका भला चाहते हैं, वे बहुत शोक मनाते हैं।
बोलने का सही समय जानना और उसे ढूंढना
समान विचारधारा वाले एक बुद्धिमान व्यक्ति को जानकर,
  बुद्धिमान व्यक्ति ऐसे व्यक्ति को उसके कष्टों के बारे में बताता है।
कोमल शब्दों में, जिनके पीछे गहरा अर्थ छिपा होता है।
लेकिन अगर उसे यह पता चले कि कुछ भी सुधार नहीं कर सकता
उनकी कठिनाइयाँ, और यह कि उन्हें बताने से मदद मिलेगी
  किसी भी अच्छे मुद्दे में बुद्धिमानों को ही शामिल करना उचित नहीं है।
अंत तक संयमित, शांत और निर्लज्ज बने रहो।"
इस प्रकार महान सत्ता ने राजा को शिक्षा देने के लिए इन सात श्लोकों में प्रवचन दिया; और फिर शिक्षक को भुगतान करने के लिए धन की तलाश दिखाने के लिए चार अन्य श्लोकों को दोहराया:

"हे राजा! मैंने सारे राज्य छान मारे हैं, प्रत्येक राजा के नगरों को छान मारा है,
भिक्षा मांगने वाले प्रत्येक कस्बे या गांव को मेरे गुरु की फीस लानी होती थी।
गृहस्थ, दरबारी, धनी व्यक्ति, ब्राह्मण—हर दरवाजे पर
खोजते-खोजते मुझे थोड़ा सा सोना मिला, एक या दो औंस, इससे ज्यादा नहीं।
अब वह भी खो गया, हे महान राजा! और इसलिए मैं अत्यंत पीड़ा से शोकग्रस्त हूँ।
"आपके दूतों में मुझे मेरे दर्द से मुक्त करने की कोई शक्ति नहीं थी।"
मैंने इन बातों का अच्छी तरह से मूल्यांकन किया, हे महामहिम! इसलिए मैंने कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया।
"परन्तु हे पराक्रमी राजा! आप मुझे मेरे दर्द से मुक्त करने की शक्ति रखते हैं।"
मैंने तुम्हारे गुणों का अच्छी तरह से मूल्यांकन किया है; मैं तुम्हें इसका स्पष्टीकरण देता हूँ।
जब राजा ने उसकी बात पढ़ी, तो उसने उत्तर दिया, "चिंता मत करो, ब्राह्मण, मैं तुम्हें तुम्हारे गुरु की फीस वापस कर दूंगा;" और उसने उसे दुगुना लौटा दिया।

इसे स्पष्ट करने के लिए गुरु ने अंतिम श्लोक को दोहराया:

कासी भूमि के सहायक स्वामी ने इस व्यक्ति को पुनर्स्थापित किया।
(पूरे भरोसे के साथ) उसके पास पहले से दुगुना शुद्ध सोना था।"
जब उस महान व्यक्ति ने इस प्रकार स्वयं को मुक्त कर दिया, तो उसने अपने गुरु की फीस अदा की; और राजा ने भी उसी प्रकार उनके उपदेशों का पालन करते हुए दान-पुण्य किया और भलाई के कार्य करते हुए धर्मपरायणता से शासन किया। इस प्रकार अंततः वे दोनों अपने कर्मों के अनुसार परलोक विदा हो गए।

जब गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने कहा: "तो, भिक्षुओं, यह केवल अब ही नहीं है कि तथागत (बुद्ध) संसाधनों से भरपूर हैं, बल्कि वे हमेशा से ऐसे ही थे।" फिर उन्होंने जन्म का विवरण दिया: "उस समय आनंद राजा थे, सारिपुत्र गुरु थे और मैं युवक था।"

फुटनोट:

(1)बुद्ध के सौतेले भाई। संदर्भ के लिए देखें क्रमांक 182, सम्गवचार जातक, और हार्डी, मैनुअल, पृष्ठ 204; वारेन, अनुवाद में बौद्ध धर्म, 269 आगे।

(2) पढ़ना cullupatthakassa.

(3)अत्थ-, धम्म-, निरुति-, पतिभन- का।

(4) "सात निक्खा।" निक्खा एक परिवर्तनीय भार है, जो 250 फला के बराबर है, जिसे हम अनाज कह सकते हैं।

(5)ये दो दोहे ऊपर क्रमांक 476 (पृष्ठ 135) में आते हैं।

स्रोत : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित

पिछला <<<<-----||-479-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 479
कलिंग-बोधि-जातक

"राजा कलिंग," आदि--यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें वरिष्ठ भिक्षु आनंद द्वारा बोधि वृक्ष (पीपल) की पूजा का वर्णन है।

जब तथागत (बुद्ध) धर्म परिवर्तन के लिए तैयार लोगों को एकत्रित करने के उद्देश्य से यात्रा पर निकले, तो श्रावस्ती नगर के नागरिक अपने हाथों में सुगंधित पुष्पमालाएँ लिए जेतवन मठ की ओर चल पड़े। उन्हें श्रद्धा अर्पित करने के लिए कोई और स्थान न मिला, इसलिए उन्होंने उन्हें सुगंधित कक्ष के द्वार पर रख दिया और चले गए। इससे बहुत हर्षोल्लास हुआ। परन्तु अनाथपिंडिका को इसकी सूचना मिली; तथागत (बुद्ध) के लौटने पर उन्होंने वरिष्ठ भिक्षु आनंद से मुलाकात की और उनसे कहा, "हे प्रभु, तथागत (बुद्ध) की यात्रा के दौरान यह मठ अनुपलब्ध है, और लोगों के लिए सुगंधित पुष्पमालाएँ अर्पित करके श्रद्धा अर्पित करने का कोई स्थान नहीं है। क्या आप कृपा करके तथागत (बुद्ध) को इस विषय में सूचित करेंगे और उनसे यह पता लगाएँगे कि क्या इसके लिए कोई स्थान उपलब्ध कराया जा सकता है या नहीं?" दूसरे ने, बिना किसी हिचकिचाहट के, ऐसा किया और पूछा, "कितने मंदिर हैं?" - "तीन, आनंद।" - "वे कौन से हैं?" - "शरीर के अवशेष के लिए मंदिर, उपयोग या पहनने के अवशेष के लिए मंदिर, स्मृति अवशेष के लिए मंदिर (*1)।" - "क्या आपके जीवनकाल में मंदिर बनाया जा सकता है, महोदय?" - "नहीं, आनंद, शरीर-मंदिर नहीं; उस प्रकार का मंदिर तब बनाया जाता है जब बुद्ध निर्वाण प्राप्त करते हैं। स्मृति मंदिर उचित नहीं है क्योंकि संबंध केवल कल्पना पर निर्भर करता है। लेकिन बुद्धों द्वारा उपयोग किया जाने वाला महान बोधि वृक्ष (पीपल का पेड़) मंदिर के लिए उपयुक्त है, चाहे वे जीवित हों या मृत।" - "महोदय, जब आप तीर्थयात्रा पर जा रहे हैं, तो जेतवन मठ असुरक्षित है, और लोगों के पास कोई स्थान नहीं है जहाँ वे अपनी श्रद्धा प्रकट कर सकें। क्या मैं जेतवन मठ के द्वार के सामने महान बोधि वृक्ष का बीज लगाऊँ?" - "ज़रूर लगाएँ, आनंद, और यह ठीक रहेगा।" यह मेरे लिए एक स्थायी स्थान था।"

वरिष्ठ भिक्षु ने यह बात अनाथपिंडिका, विशाखा और राजा को बताई। फिर जेतवन मठ के द्वार पर उन्होंने बोधिपीपल के वृक्ष के लिए एक गड्ढा खोदा और प्रधान वरिष्ठ भिक्षु मोग्गल्याना से कहा, "मैं जेतवन मठ के सामने एक बोधिपीपल का वृक्ष लगाना चाहता हूँ। क्या आप मुझे उस महान बोधिपीपल वृक्ष का एक फल लाकर देंगे?" वरिष्ठ भिक्षु सहर्ष तैयार होकर हवा में उड़ते हुए बोधिपीपल के वृक्ष के नीचे बने चबूतरे पर पहुँचे। उन्होंने अपने वस्त्र में एक फल रखा जो पेड़ की डंठल से गिर रहा था लेकिन अभी जमीन पर नहीं पहुँचा था, उसे वापस लाए और आनंद को दे दिया। वरिष्ठ भिक्षु ने कोसल के राजा को सूचित किया कि उन्हें उसी दिन बोधिपीपल का वृक्ष लगाना है। अतः शाम को राजा एक विशाल सभा के साथ सभी आवश्यक सामग्री लेकर आए; उनके साथ अनाथपिंडिका, विशाखा और श्रद्धालुओं की भीड़ भी आई।

जिस स्थान पर बोपड़ी का वृक्ष लगाया जाना था, वहाँ एक भिक्षु ने सोने का घड़ा रखा था, जिसके तल में एक गड्ढा था; वह सुगंधित जल से भीगी मिट्टी से भरा हुआ था। उन्होंने कहा, "हे महाराज, बोपड़ी के इस वृक्ष का बीज बोइए," और वह बीज राजा को दे दिया। लेकिन राजा ने सोचा कि उनका राज्य सदा उनके हाथ में नहीं रहेगा, और यह बीज अनाथपिंडिका को ही लगाना चाहिए, इसलिए उन्होंने वह बीज महान व्यापारी अनाथपिंडिका को दे दिया। अनाथपिंडिका ने सुगंधित मिट्टी को उछाला और बीज उसमें डाल दिया। जैसे ही वह बीज उनके हाथ से गिरा, सबके सामने हल के सिरे जितना चौड़ा, पचास भुजाओं जितना लंबा बोपड़ी का पौधा उग आया; चारों ओर और ऊपर की ओर तना के समान पचास भुजाओं जितनी लंबी पाँच बड़ी शाखाएँ निकल आईं। इस प्रकार वह वृक्ष जंगल का स्वामी बनकर खड़ा हो गया; एक अद्भुत चमत्कार! राजा ने वृक्ष के चारों ओर आठ सौ सोने और चांदी के कलश रखे, जो सुगंधित जल से भरे हुए थे और नीली कमल के फूलों से सुशोभित थे। उसने वहाँ भरे हुए बर्तनों की एक लंबी कतार स्थापित करवाई, और सात बहुमूल्य वस्तुओं से एक आसन बनवाया, जिस पर सोने की धूल छिड़की गई थी। उसने परिसर के चारों ओर एक दीवार बनवाई और सात बहुमूल्य वस्तुओं से एक द्वार कक्ष बनवाया। उस कक्ष को बहुत सम्मान दिया गया।

वरिष्ठ भिक्षु तथागत (बुद्ध) के पास आकर उनसे बोले, "हे प्रभु, जन कल्याण के लिए, मेरे द्वारा रोपित बोधि-वृक्ष के नीचे उस सिद्धि को प्राप्त कीजिए जो आपने उस विशाल बोधि-वृक्ष के नीचे प्राप्त की थी।" "यह क्या कह रहे हो, आनंद?" उन्होंने उत्तर दिया। "यदि मैं वहाँ बैठकर उस सिद्धि को प्राप्त करूँ जो मैंने उस विशाल बोधि-वृक्ष के बीच प्राप्त की थी, तो कोई अन्य स्थान मुझे सहारा नहीं दे सकता।"

"हे प्रभु," आनंद ने कहा, "मैं आपसे जन कल्याण के लिए निवेदन करता हूँ कि इस वृक्ष का उपयोग सिद्धि की अनुभूति के लिए कीजिए, जहाँ तक यह स्थान भार सहन कर सकता है।" गुरु ने एक रात उस स्थान का उपयोग सिद्धि की अनुभूति के लिए किया।

वरिष्ठ भिक्षु ने राजा और अन्य सभी को सूचित किया और इसे बो (पीपल) उत्सव का नाम दिया। और यह वृक्ष, जिसे आनंद ने लगाया था, आनंद के बो (पीपल) वृक्ष के नाम से जाना जाने लगा।

उस समय सत्य के हॉल में वे इस विषय पर चर्चा करने लगे। “भाई (भिक्षु), तथागत (बुद्ध) के जीवित रहते हुए, पूज्य आनंद ने एक बोधि वृक्ष (पीपल का पेड़) लगवाया और उसकी अत्यंत श्रद्धापूर्वक पूजा की। हे, गुरु की शक्ति कितनी महान है!” गुरु ने प्रवेश करते हुए पूछा कि वे किस विषय पर चर्चा कर रहे हैं। उन्होंने उन्हें बताया। गुरु ने कहा, “भाई (भिक्षुओं), यह पहली बार नहीं है कि आनंद ने चारों महाद्वीपों में बंदी मानवजाति को, चारों ओर फैली भीड़ के साथ, बड़ी मात्रा में सुगंधित मालाएँ मंगवाईं और उस विशाल बोधि वृक्ष के परिसर में बोधि वृक्ष उत्सव का आयोजन किया।” ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, कलिंग राज्य में, दंतपुरा नगर में, कलिंग नामक एक राजा का शासन था। उनके दो पुत्र थे, महा-कलिंग और चुल्ला-कलिंग, अर्थात् महान कलिंग और लघु कलिंग। ज्योतिषियों ने भविष्यवाणी की थी कि पिता की मृत्यु के बाद बड़ा पुत्र शासन करेगा; परन्तु छोटा पुत्र तपस्वी जीवन व्यतीत करेगा और भिक्षा मांगकर जीवन यापन करेगा, जबकि उसका पुत्र सर्वशक्तिमान सम्राट होगा।

समय बीतता गया और पिता की मृत्यु के बाद सबसे बड़ा पुत्र राजा बना और सबसे छोटा पुत्र उपसराय। सबसे छोटा पुत्र, हमेशा यह सोचकर कि उसका पुत्र सर्वशक्तिमान सम्राट बनेगा, अहंकारी हो गया। राजा को यह बात सहन नहीं हुई, इसलिए उसने छोटे कलिंग को गिरफ्तार करने के लिए एक दूत भेजा। दूत आया और बोला, "राजकुमार, राजा आपको गिरफ्तार करवाना चाहते हैं, इसलिए अपनी जान बचा लीजिए।" राजकुमार ने इस कार्य पर भेजे गए दरबारी को अपनी मुहर लगी अंगूठी, एक उत्तम कालीन और अपनी तलवार दिखाई। फिर उसने कहा, "इन चिह्नों (*3) से तुम मेरे पुत्र को पहचानोगे और उसे राजा बनाओगे।" ये कहकर वह जंगल में भाग गया। वहाँ उसने एक रमणीय स्थान पर एक कुटिया बनाई और नदी के किनारे तपस्वी के रूप में रहने लगा।

मद्दा राज्य में, सगला नगर में, मद्दा के राजा की एक पुत्री का जन्म हुआ। राजकुमार की ही तरह, ज्योतिषियों ने भविष्यवाणी की कि वह एक तपस्वी जीवन व्यतीत करेगी, जबकि उसका पुत्र सर्वशक्तिशाली सम्राट बनेगा। भारत के सभी राजाओं ने यह अफवाह सुनकर एकमत होकर नगर को घेर लिया। राजा ने मन ही मन सोचा, "यदि मैं अपनी पुत्री को किसी एक को दे दूँ, तो सभी राजा क्रोधित हो जाएँगे। मैं उसे बचाने का प्रयास करूँगा।" अतः वह अपनी पत्नी और पुत्री के साथ वेश बदलकर जंगल में भाग गया; और नदी के किनारे, राजकुमार कलिंग की कुटिया से कुछ दूरी पर एक कुटिया बनाकर, वहाँ एक तपस्वी के रूप में रहने लगा और जो कुछ भी भोजन मिलता, वही खाता था।

माता-पिता अपनी बेटी को बचाने की इच्छा से उसे झोपड़ी में छोड़कर जंगली फल इकट्ठा करने चले गए। उनके जाने के बाद उसने तरह-तरह के फूल इकट्ठा किए और उनकी माला बनाई। गंगा के किनारे एक आम का पेड़ है जिस पर सुंदर फूल लगते हैं, जो एक तरह की प्राकृतिक सीढ़ी का काम करता है। वह उस पर चढ़ी और खेलते-खेलते फूलों की माला पानी में गिरा दी (*4)।

एक दिन, जब राजकुमार कलिंग स्नान करके नदी से बाहर आ रहे थे, तो फूलों की यह माला उनके बालों में फंस गई।

उसने उसे देखा और कहा, "इसे किसी स्त्री ने बनाया है, कोई वयस्क स्त्री नहीं, बल्कि एक कोमल कन्या। मुझे उसे ढूंढना होगा।" प्रेम में इतना डूबा हुआ वह गंगा नदी में ऊपर की ओर यात्रा करता रहा, जब तक कि उसने उसे आम के पेड़ पर बैठी मधुर स्वर में गाते हुए नहीं सुना। वह पेड़ के नीचे पहुंचा और उसे देखकर बोला, "सुंदर देवी, तुम कौन हो?" "मैं मनुष्य हूं, महाराज," उसने उत्तर दिया। "तो नीचे आ जाओ," उसने कहा। "महाराज, मैं नहीं आ सकती; मैं योद्धा जाति की हूं (*5)।" "मैं भी वही हूं, देवी: नीचे आ जाओ!" "नहीं, नहीं महाराज, मैं ऐसा नहीं कर सकती। कहने से योद्धा नहीं बन जाते; यदि आप हैं, तो मुझे उस रहस्य का राज बताइए।" तब उन्होंने एक-दूसरे को अपने गुप्त ज्ञान के रहस्य बताए। और राजकुमारी नीचे आ गई, और उन्होंने एक-दूसरे के साथ संबंध बनाए।

जब उसके माता-पिता लौटे, तो उसने उन्हें कलिंग के राजा के पुत्र के बारे में विस्तार से बताया और यह भी बताया कि वह जंगल में कैसे आया था। उन्होंने उसे उससे विदा करने की सहमति दे दी। जब वे सुखमय वैवाहिक जीवन व्यतीत कर रहे थे, तब राजकुमारी गर्भवती हुई और दस महीने बाद उसने सौभाग्य और सद्गुणों से परिपूर्ण पुत्र को जन्म दिया; जिसका नाम उन्होंने कलिंग रखा। वह बड़ा हुआ और अपने पिता और दादा से सभी कलाएँ और निपुणताएँ सीखीं।

अंततः उसके पिता को नक्षत्रों की स्थिति देखकर पता चला कि उसका भाई मर गया है। इसलिए उन्होंने अपने पुत्र को बुलाया और कहा, “मेरे पुत्र, तुम अपना जीवन वन में न व्यतीत करो। तुम्हारे पिता के भाई, कलिंग महापुरुष, मर गए हैं; तुम्हें दंतपुरा जाना चाहिए और अपना पैतृक राज्य ग्रहण करना चाहिए।” फिर उन्होंने उसे वे वस्तुएँ दीं जो वे अपने साथ लाए थे, जैसे कि मुहर, कालीन और तलवार, और कहा, “मेरे पुत्र, दंतपुरा नगर में, इस गली में, एक दरबारी रहता है जो मेरा बहुत अच्छा सेवक है। उसके घर जाओ और उसके शयनकक्ष में प्रवेश करो, और उसे ये तीनों वस्तुएँ दिखाओ और कहो कि तुम मेरे पुत्र हो। वह तुम्हें सिंहासन पर बिठा देगा।”

उस बालक ने अपने माता-पिता और दादा-दादी को विदाई दी; और अपने पुण्य के बल पर वह वायु में विचरण करते हुए उस दरबारी के घर में उतरा और उसके शयनकक्ष में प्रवेश किया। दूसरे ने पूछा, "तुम कौन हो?" उसने तीन चिन्ह प्रकट करते हुए कहा, "मैं कलिंग का पुत्र हूँ।" दरबारी ने यह बात महल में सबको बता दी, और दरबार के सभी लोगों ने शहर को सजाया और उसके सिर पर राजसी छत्र फैला दिया। तब कलिंग-भरद्वाज नामक पुरोहित ने उसे दस विधियाँ सिखाईं जो एक सर्वशक्तिशाली सम्राट को अदा करनी होती हैं, और उसने उन सभी कर्तव्यों का पालन किया। फिर पंद्रहवें दिन, उपवास के दिन, उसे चक्रदहा से साम्राज्य का बहुमूल्य चक्र, उपोसथ वंश से बहुमूल्य हाथी, राजसी वलाहा नस्ल से बहुमूल्य अश्व, वेपुल्ला से बहुमूल्य रत्न प्राप्त हुए; और उसकी पत्नी, सेवकों का समूह और राजकुमार प्रकट हुए (*6)। तब उसने समस्त पृथ्वी पर शासन करने की शक्ति प्राप्त कर ली।

एक दिन, छत्तीस मील (4.23 किमी) के विशाल दल से घिरे हुए, और कैलाश पर्वत की चोटी के समान ऊँचे, पूरी तरह से सफेद हाथी पर सवार होकर, वह बड़े ठाठ-बाठ और वैभव के साथ अपने माता-पिता से मिलने गए। लेकिन विशाल बोधि वृक्ष (पीपल) के चारों ओर बने घेरे (*7) से आगे, जो सभी बुद्धों का विजय सिंहासन है और पृथ्वी की नाभि बन चुका है, हाथी आगे नहीं जा सका: राजा ने बार-बार उसे आगे बढ़ने के लिए प्रेरित किया, लेकिन वह आगे नहीं बढ़ सका।

इसे समझाते हुए, गुरु ने पहला श्लोक सुनाया:

"सर्वोच्च स्वामी, राजा कलिंग,
उन्होंने कानून और अधिकार के बल पर पृथ्वी पर शासन किया।
एक बार वह बो (पीपल) के पेड़ के पास आया।
एक शक्तिशाली हाथी पर सवार होकर।"

इस पर राजा के साथ यात्रा कर रहे उनके पुरोहित ने मन ही मन सोचा, “हवा में तो कोई बाधा नहीं है; राजा अपने हाथी को आगे क्यों नहीं बढ़ा पा रहे? मैं जाकर देखता हूँ।” फिर हवा से नीचे उतरकर उन्होंने समस्त बुद्धों के विजय सिंहासन, पृथ्वी की नाभि, विशाल बोधि वृक्ष के चारों ओर बने घेरे को देखा। कहा जाता है कि उस समय एक राजसी करिषा (*8) के स्थान में घास का एक तिनका भी नहीं था, जो खरगोश की मूंछ जितना बड़ा भी न हो; वह मानो चांदी की थाली की तरह चिकनी फैली रेत हो; परन्तु चारों ओर घास, लताएँ, वन के स्वामियों के समान विशाल वृक्ष थे, मानो बोधि वृक्ष के सिंहासन की ओर मुख किए आदरपूर्वक खड़े हों। जब ब्राह्मण ने पृथ्वी के इस स्थान को देखा, तो उसने सोचा, “यह वह स्थान है जहाँ समस्त बुद्धों ने देह की समस्त इच्छाओं का नाश किया है; और इसके आगे कोई नहीं जा सकता, चाहे वह स्वयं सक्का (इंद्र) ही क्यों न हो।” फिर राजा के पास जाकर उसने उन्हें बोधि वृक्ष के मार्ग की विशेषताओं के बारे में बताया और उनसे नीचे उतरने का अनुरोध किया।

इसे समझाने के लिए गुरु ने निम्नलिखित श्लोक पढ़े:

"कलिंग-भरद्वाज ने अपने राजा, तपस्वी के पुत्र से कहा,
जैसे-जैसे वह साम्राज्य के पहिये को घुमाता गया, जो उसका मार्गदर्शन कर रहा था, वैसे-वैसे सम्मान के कार्य किए गए:
"यही वह स्थान है जिसका कवि गुणगान करते हैं; हे पराक्रमी राजा, यहीं अवतरित हो!"
यहां पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने वाले, परिपूर्ण बुद्ध प्रकाशमान हैं।
"विश्व में, परंपरा के अनुसार, यह एक स्थान पवित्र भूमि है।"
जहां श्रद्धा भाव से जड़ी-बूटियां और लताएं चारों ओर खड़ी हैं (*9)।
आओ, नीचे उतरो और श्रद्धा अर्पित करो; क्योंकि जहाँ तक समुद्र की सीमा है, वहाँ तक हम पहुँच सकते हैं।
इस उपजाऊ धरती में, जो सर्वपोषक है, यह एक स्थान पवित्र भूमि है।
आपके पास जितने भी हाथी हैं, वे सभी शुद्ध नस्ल के हैं।
उन्हें यहाँ ले आओ, वे निश्चित रूप से यहाँ तक आ जाएँगे, लेकिन इससे आगे नहीं बढ़ पाएँगे।
"वह एक बेहतरीन नस्ल का घोड़ा है जिस पर आप सवारी कर रहे हैं; आप उस प्राणी को अपनी इच्छानुसार चला सकते हैं।"
वह एक कदम भी आगे नहीं जा सकता: हाथी यहीं खड़ा है।
ज्योतिषी ने कहा, कलिंग ने सुना; फिर राजा ने उससे कहा,

उसे गहराई से यह बात समझाते हुए—"यही सच है, हम जल्द ही इसका पता लगा लेंगे।"
"छेदित होने पर, प्राणी जोर से चिंघाड़ता है, उसकी आवाज किसी बगुले की चीख की तरह तीखी होती है।"
वह हिलने लगा, फिर वजन के कारण अपने घुटनों के बल गिर पड़ा और उठ नहीं सका।
राजा द्वारा बार-बार घायल किए जाने पर, हाथी दर्द सहन नहीं कर सका और मर गया; परन्तु राजा को पता ही नहीं चला कि वह मर गया है और वह उसकी पीठ पर बैठा रहा। तब कलिंगभरद्वाज ने कहा, "हे महान राजा! आपका हाथी मर गया है; अब दूसरे हाथी पर सवार हो जाइए।"

इस बात को समझाने के लिए गुरु ने दसवां श्लोक सुनाया:

"जब कालिंग-भरद्वाज ने देखा कि हाथी मर गया है,
तब उसने भयभीत होकर राजा कलिंग से कहा:
"किसी दूसरे शक्तिशाली सम्राट की तलाश करो: तुम्हारा यह हाथी मर चुका है।"
राजा के पुण्य और जादुई शक्ति से उपोसथा नस्ल का एक और जानवर प्रकट हुआ और उसने अपनी पीठ पेश की। राजा उसकी पीठ पर बैठ गया। उसी क्षण मृत हाथी धरती पर गिर पड़ा।

इस बात को समझाने के लिए गुरु ने एक और श्लोक दोहराया:

"यह सुनकर कलिंग निराश हो गया।"
दूसरे पर सवार हुए, और तुरंत
शव धरती पर धंस गया।
और ज्योतिषी का वचन बिल्कुल सत्य साबित हो गया।
तब राजा आकाश से नीचे उतरे और बोधि वृक्ष के परिसर और हुए चमत्कार को देखकर भारद्वाज की प्रशंसा करते हुए कहा--

"कलिंग-भारद्वाज राजा कलिंग ने इस प्रकार कहा:
"आप सब कुछ जानते और समझते हैं, और आप हमेशा सब कुछ देखते हैं।"
अब ब्राह्मण ने इस प्रशंसा को स्वीकार नहीं किया; बल्कि अपने विनम्र स्थान पर खड़े होकर उन्होंने बुद्धों की प्रशंसा की, और उनकी स्तुति करते रहे।

इसे समझाने के लिए, गुरु ने इन छंदों को दोहराया:

लेकिन ब्राह्मण ने तुरंत इसका खंडन किया और राजा से इस प्रकार कहा:
मैं चिह्नों और प्रतीकों की सच्चाई जानता हूँ: लेकिन बुद्ध, सब कुछ जानते हैं।
"यद्यपि वे सर्वज्ञ और सर्वदर्शी हैं, फिर भी उन्हें चिह्नों में कोई निपुणता नहीं है।"
वे सब कुछ जानते हैं, लेकिन अंतर्दृष्टि से जानते हैं: मैं अभी भी किताबों का आदमी हूँ।"
बुद्धों के गुणों के बारे में सुनकर राजा का मन प्रसन्न हुआ; और उसने संसार के सभी निवासियों को प्रचुर मात्रा में सुगंधित पुष्पमालाएँ लाने का आदेश दिया, और सात दिनों तक उन्हें महान बोधि वृक्ष (पीपल वृक्ष) की परिक्रमा करने के लिए कहा।

स्पष्टीकरण के तौर पर, गुरु ने कुछ श्लोक सुनाए:

इस प्रकार उन्होंने मधुर ध्वनि के साथ महान बोधि वृक्ष की पूजा की।
संगीत से, और सुगंधित मालाओं से: उसने चारों ओर एक दीवार खड़ी कर दी।
और उसके बाद राजा अपने रास्ते पर चल पड़ा—

"साठ हजार गाड़ियों में फूल लाए गए, भेंट के रूप में।"
इस प्रकार राजा कलिंग ने वृक्ष की परिक्रमा की पूजा की।
इस प्रकार बोधिवृक्ष (पीपल वृक्ष) की पूजा करने के बाद, उन्होंने अपने माता-पिता से मुलाकात की और उन्हें अपने साथ दंतपुरा वापस ले आए; जहाँ उन्होंने दान दिया और अच्छे कर्म किए, जब तक कि उनका तैंतीस के स्वर्ग में पुनर्जन्म नहीं हो गया।

गुरु ने प्रवचन समाप्त करने के बाद कहा: "हे भिक्षुओं, यह पहली बार नहीं है कि आनंद ने बोधि वृक्ष की पूजा की, बल्कि अतीत में भी ऐसा किया था;" और फिर उन्होंने जन्म का उल्लेख किया: "उस समय आनंद कलिंग थे, और मैं स्वयं कलिंग-भरद्वाज था।"

फुटनोट:

(1) अंतिम वर्ग को बुद्ध की प्रतिमाएँ कहा जाता है।

(2) परिगलन्तम पढ़ना.

(3) ये प्रतीक लोककथाओं की एक परिचित विशेषता हैं।

(4) यह आमतौर पर महिला के सिर का बाल होता है जो गिरता है।

(5) क्षत्रिय.

(6)चक्कवत्ती का विवरण और उनके प्रकट होने पर हुए चमत्कारों के लिए,

(7) यह शब्द वृक्ष के नीचे की सीट और उसके चारों ओर निर्मित ऊंचे चबूतरे दोनों के लिए प्रयोग किया जाता है।

(8)या फिर राजा के चारों ओर करिसा होनी चाहिए?

(9) विद्वान इस मांडो के बारे में कहते हैं: "जैसे-जैसे युग आगे बढ़ता है, पहले तो यह वैसा ही बना रहता है, फिर युग के घटने के साथ-साथ यह फिर से घटता जाता है और कम होता जाता है।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **अकित्ता-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-480-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 480
अकित्त-जातक (अगत्स्य ऋषि)

"सक्का (इंद्र), प्राणियों के स्वामी," इत्यादि - यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए श्रावस्ती नगर में रहने वाले एक उदार दाता के बारे में सुनाई थी। कहा जाता है कि उस व्यक्ति ने गुरु को आमंत्रित किया और सात दिनों तक उनके साथ आए समूह को अनेक उपहार दिए; अंतिम दिन उन्होंने संतों के समूह को उनकी सभी आवश्यक वस्तुएँ भेंट कीं। तब गुरु ने उनका धन्यवाद करते हुए कहा, "हे शिष्य, आपकी उदारता महान है: आपने अत्यंत कठिन कार्य किया है। दान देने की यह प्रथा प्राचीन काल के ज्ञानी पुरुषों की प्रथा है। दान देना आवश्यक है, चाहे आप सांसारिक जीवन में हों या सांसारिक जीवन का त्याग कर रहे हों; प्राचीन काल के ज्ञानी पुरुष, जब उन्होंने सांसारिक जीवन त्याग दिया था और वन में रहते थे, जब उन्हें केवल जल में छिड़के हुए करौंदे (*1) खाने पड़ते थे, बिना नमक या मसाले के, तब भी वे राहगीरों को दान देते थे और स्वयं अपने आनंद और प्रसन्नता में जीते थे।" उस व्यक्ति ने उत्तर दिया, "महोदय, कंपनी को सभी आवश्यक वस्तुएँ देने की बात तो स्पष्ट है, लेकिन आपकी बात स्पष्ट नहीं है। क्या आप हमें समझाएँगे?" तब गुरु ने उसके अनुरोध पर अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त राजा थे, तब बोधिसत्व का जन्म एक ब्राह्मण सरदार के परिवार में हुआ, जिनकी संपत्ति अस्सी करोड़ (10 मिलियन) थी। उनका नाम अकित्ति (अगत्स्य) रखा गया। जब वे चलने-फिरने लायक हुए, तो उनकी एक बहन का जन्म हुआ, जिसका नाम यशवती रखा गया। सोलह वर्ष की आयु में बोधिसत्व बनारस गए, जहाँ उन्होंने अपनी शिक्षा पूरी की और फिर लौट आए। इसके बाद उनके माता-पिता का देहांत हो गया। उन्होंने मृतकों की आत्माओं के लिए सभी आवश्यक कार्य कर दिए थे और अपने खजाने का निरीक्षण कर रहे थे (*2): "फलां व्यक्ति ने इतना धन इकट्ठा किया और मर गया, फलां व्यक्ति ने इतना।" यह सुनकर वे व्याकुल हो गए और सोचने लगे, "यह खजाना सबके सामने है, लेकिन इसे इकट्ठा करने वाले अब कहीं नहीं हैं: वे सब चले गए हैं

और खजाना पीछे छोड़ गए हैं, लेकिन जब मैं मर जाऊंगा तो इसे अपने साथ ले जाऊंगा।" इसलिए उन्होंने अपनी बहन को बुलवाकर कहा, "इस खजाने की जिम्मेदारी तुम ले लो।" "तुम्हारा इरादा क्या है?" उसने पूछा। उसने उत्तर दिया, "सन्यासी बनना।" "प्रिय," उसने कहा, "तुम्हारे मुंह से निकली इस बात को मैं अपने ऊपर नहीं लूंगी; मैं इसे नहीं लूंगी, बल्कि मैं भी तपस्वी बनूंगी।" फिर राजा से अनुमति लेकर उसने पूरे शहर में ढोल बजवाया और घोषणा करवाई: "हे! धन चाहने वाले सभी लोग ज्ञानी पुरुष के घर जाएं!" सात दिनों तक उसने बहुत दान दिया, फिर भी खजाना खत्म नहीं हुआ। तब उसने मन ही मन सोचा, "मेरे शरीर के तत्व नष्ट हो रहे हैं, और इस धन-दौलत के खेल से मुझे क्या चाहिए? जो चाहें ले लें।" फिर उसने घर के दरवाजे खोलते हुए कहा, "यह एक उपहार है; लोग इसे ले लें।" इस प्रकार, अपने परिवार को रोते हुए छोड़कर, घर को उसके सारे सोने और कीमती धातुओं के साथ छोड़कर, वह और उसकी बहन चले गए। और बनारस का वह द्वार जिससे होकर वे गए थे, अकित्ती का द्वार कहलाता था, और वह घाट जिससे होकर वे नदी में उतरे थे, वह भी अकित्ती का घाट कहलाता था।

वह तीन लीग (4.23 किमी) की दूरी तय करके एक रमणीय स्थान पर पहुंचा और वहां पत्तों और शाखाओं से एक झोपड़ी बनाई और अपनी बहन के साथ उसमें एक तपस्वी के रूप में रहने लगा।

उनके संसार से संन्यास लेने के बाद, कई अन्य लोगों ने भी ऐसा ही किया, गाँव वालों, नगरवासियों, राज नगर के नागरिकों ने; उनकी संगति विशाल थी, उन्हें मिले उपहार और सम्मान भी विशाल थे; यह किसी बुद्ध के पुनर्जन्म के समान था। तब उस महान सत्ता ने मन ही मन सोचा, "यहाँ तो बहुत सम्मान और भिक्षा का भंडार है, यहाँ तो बहुत बड़ी संगति है, हाँ, बहुत बड़ी, लेकिन मुझे तो एकांत में रहना चाहिए।" अतः, जब किसी को इसकी उम्मीद नहीं थी, अपनी बहन को बिना बताए ही वे अकेले ही चले गए, और समय आने पर दमिला (*3) राज्य पहुँचे, जहाँ कविरापट्टन के सामने एक उद्यान में रहकर उन्होंने रहस्यमय समाधि (सम्मोहन) और अलौकिक शक्तियों का अभ्यास किया। वहाँ भी उन्हें बहुत सम्मान और उपहार प्राप्त हुए। यह उन्हें पसंद नहीं आया, और उन्होंने इसे त्याग दिया, और वायु में विचरण करते हुए नाग (*4) द्वीप के सामने स्थित कारा द्वीप पर अवतरित हुए। उस समय, काराद्वीप का नाम अहिद्वीप था, जिसका अर्थ है नागों का द्वीप। वहाँ उसने एक विशाल करा-वृक्ष के पास एक कुटिया बनाई और उसमें रहने लगा। परन्तु उसके वहाँ रहने की बात किसी को पता नहीं थी।

अब उनकी बहन अपने भाई की खोज में निकल पड़ीं और कुछ समय बाद दमिला राज्य पहुँचीं, उन्हें वहाँ नहीं पाया, फिर भी उसी स्थान पर रहीं जहाँ वे रहते थे, पर उन्हें समाधि की अवस्था प्राप्त नहीं हुई। महापुरुष इतने संतुष्ट थे कि वे कहीं नहीं गए, बल्कि फल लगने के समय उसी वृक्ष का फल खाते थे और पत्तियाँ धारण करने के समय जल से भीगी हुई पत्तियों को खाते थे। उनके पुण्य की अग्नि से सक्का (इंद्र) का संगमरमर का सिंहासन प्रज्वलित हो गया। "मुझे मेरे स्थान से कौन उतारेगा?" सक्का (इंद्र) ने सोचा, और विचार करते हुए उन्होंने उस ज्ञानी पुरुष को देखा। "यह तपस्वी अपने पुण्य की रक्षा क्यों करता है? क्या वह सक्का (इंद्र) बनने की इच्छा रखता है, या किसी अन्य कारण से? मैं उसकी परीक्षा लूँगा। वह दुखी जीवन जीता है, जल से भीगी हुई करप की पत्तियाँ खाता है: यदि वह सक्का (इंद्र) बनना चाहता है, तो वह मुझे अपनी भीगी हुई पत्तियाँ देगा; यदि नहीं, तो वह नहीं देगा।" फिर ब्राह्मण का वेश धारण करके वह बोधिसत्व के पास गया।

बोधिसत्व अपने पत्तिपर्ण-शैक्ष के द्वार पर बैठे थे, उन्होंने पत्तियाँ गीली करके बिछा दी थीं: "जब ये ठंडी हो जाएँगी, तब मैं इन्हें खाऊँगा," उन्होंने सोचा। उसी क्षण सक्का (इंद्र) उनके सामने भिक्षा माँगते हुए खड़े थे। जब बोधिसत्व ने उन्हें देखा, तो वे प्रसन्न हुए; "मेरे लिए आशीर्वाद है, मैं एक भिखारी को देख रहा हूँ; आज मैं अपने हृदय की इच्छा पूरी करूँगा और भिक्षा दूँगा।" जब भोजन तैयार हो गया, तो उन्होंने तुरंत उसे अपने कटोरे में ले लिया और सक्का (इंद्र) की ओर बढ़ते हुए उनसे कहा, "यह मेरा दान है: यही मेरे अनंत ज्ञान प्राप्ति का साधन बने!" फिर अपने लिए कुछ भी छोड़े बिना, उन्होंने भोजन दूसरे के कटोरे में रख दिया। ब्राह्मण ने उसे लिया और थोड़ी दूर जाकर अंतर्धान हो गए। लेकिन बोधिसत्व ने अपना दान देने के बाद फिर कभी भोजन नहीं पकाया, बल्कि आनंद और प्रसन्नता में बैठे रहे। अगले दिन उन्होंने फिर भोजन पकाया और पहले की तरह शैक्ष के प्रवेश द्वार पर बैठ गए। फिर सक्का (इंद्र) ब्राह्मण के वेश में आए, और फिर उस महान सत्ता ने उन्हें भोजन कराया और आनंद और प्रसन्नता में लीन रहे। तीसरे दिन भी उन्होंने पहले की तरह ही दान दिया और कहा, "देखो, मेरे लिए कितना बड़ा आशीर्वाद है! कुछ कराली के पत्तों ने मेरे लिए महान पुण्य उत्पन्न किया है।" इस प्रकार, तीन दिनों से भोजन न मिलने के कारण दुर्बल होते हुए भी, वे दोपहर के समय अपनी कुटिया से बाहर निकले और द्वार पर बैठकर अपने दिए गए दान पर विचार करने लगे। सक्का (इंद्र) ने सोचा, "यह ब्राह्मण तीन दिनों से उपवास कर रहा है, दुर्बल होते हुए भी मुझे दान दे रहा है और अपने दान में प्रसन्न है। उसके विचारों में कोई अन्य अर्थ नहीं है; मैं नहीं समझ पा रहा हूँ कि वह क्या चाहता है और ये दान क्यों दे रहा है, इसलिए मुझे उससे पूछना चाहिए, उसका अर्थ जानना चाहिए और उसके दान का कारण समझना चाहिए।" तदनुसार, उन्होंने दोपहर तक प्रतीक्षा की, और फिर युवा सूर्य के समान तेजस्वी और वैभवशाली रूप में उस महान सत्ता के पास आए; और उसके सामने खड़े होकर उससे यह प्रश्न पूछा: "हे तपस्वी! आप इस खारे समुद्र से घिरे जंगल में, गर्म हवाओं के बीच तपस्वी जीवन का अभ्यास क्यों करते हैं?"

इस बात को स्पष्ट करने के लिए, गुरु ने पहला श्लोक दोहराया:

"सक्का (इंद्र), प्राणियों के स्वामी ने अकिति को सम्मानित होते देखा:
"हे महान ब्राह्मण, आप यहाँ भीषण गर्मी में क्यों विश्राम कर रहे हैं?" उसने कहा।
जब उस महान प्राणी ने यह सुना और जाना कि यह सक्का (इंद्र) हैं, तो उन्होंने उत्तर देते हुए कहा, "मैं उन उपलब्धियों की लालसा नहीं करता; परन्तु अनंत ज्ञान की लालसा में मैं एक संन्यासी का जीवन व्यतीत करता हूँ।" इसे स्पष्ट करने के लिए उन्होंने दूसरा श्लोक पढ़ा:

"पुनर्जन्म, शरीर का टूटना, मृत्यु, सब कुछ पीड़ादायक है।"
अत: हे सक्का (इंद्र) वासव! मैं यहाँ शांति से रहता हूँ।
ये शब्द सुनकर इंद्र प्रसन्न हुए और सोचने लगे, "यह तो सभी प्राणियों से असंतुष्ट है और निर्वाण की प्राप्ति के लिए वन में निवास करता है। मैं इसे वरदान दूंगा।" फिर उन्होंने तीसरे श्लोक के शब्दों में उसे वरदान चुनने के लिए आमंत्रित किया:

"काश्यपा, आपने बहुत अच्छी बात कही, बहुत ही बढ़िया ढंग से कहा, उत्कृष्ट ढंग से कहा।"
अब एक वरदान चुनो—जैसा तुम्हारा हृदय पूछे, तो चुनाव कर लो (*5)।"
उस महान सत्ता ने अपना वरदान चुनते हुए चौथे श्लोक को दोहराया:

"सभी प्राणियों के स्वामी सक्का (इंद्र) ने मुझे वरदान दिया है।"
पुत्र, पत्नी या खजाना, भंडार में अनाज, सब कुछ प्राप्त होने पर भी संतुष्ट नहीं:
मैं प्रार्थना करता हूँ कि मेरे हृदय में ऐसे लोगों के प्रति कोई वासना उत्पन्न न हो।
तब इंद्र (सक्का) अत्यंत प्रसन्न होकर और भी वरदानों की पेशकश की, और उस महान आत्मा ने उन्हें स्वीकार कर लिया, और बारी-बारी से प्रत्येक वरदान ने निम्नलिखित श्लोकों को दोहराया:

"काश्यप, आपने बहुत अच्छी बात कही, बहुत ही सटीक और उत्कृष्ट ढंग से कहा: अब अपने हृदय की पुकार के अनुसार वरदान चुनिए, और वही चुनाव कीजिए।"

"सभी प्राणियों के स्वामी सक्का (इंद्र) ने मुझे वरदान दिया है।"
भूमि, सामान और सोना, गुलाम, घोड़े और गायें, सब बूढ़े होकर नष्ट हो जाते हैं:
मैं प्रार्थना करता हूँ कि मैं उनके जैसा न बनूँ, और न ही मुझमें यह दोष हो।
"अच्छी बातें कही हैं," इत्यादि (पहले की तरह ही)

"संपूर्ण जगत के स्वामी सक्का (इंद्र) ने मुझे वरदान दिया है।"
मुझे कभी किसी मूर्ख को देखना या सुनना न पड़े, और न ही कोई ऐसा व्यक्ति मेरे साथ रहे।
किसी मूर्ख से बात मत करो, न ही उसकी संगति पसंद करो।
"हे कश्यप, मूर्ख ने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है? मुझे बताइए, मूर्खों की संगति तुम्हारे लिए असहनीय क्यों है?"

मूर्ख व्यक्ति दुष्टतापूर्ण कार्य करता है, वह अपने ऊपर ऐसा बोझ लाद लेता है जिसे कोई भी सहन नहीं कर सकता।
बुराई करना उसे अच्छा लगता है, और जब उसकी तारीफ की जाती है तो वह क्रोधित हो जाता है।
उसे सही आचरण का ज्ञान नहीं है; इसीलिए मैं वहाँ किसी मूर्ख को नहीं रखना चाहता।
"आपने सही कहा, कश्यप," इत्यादि।

"सभी प्राणियों के स्वामी सक्का (इंद्र) ने मुझे वरदान दिया है।"
मुझे यह सौभाग्य प्राप्त हो कि मैं उस बुद्धिमान व्यक्ति को देख और सुन सकूँ, और वह मेरे साथ निवास करे।
क्या मैं बुद्धिमानों से बातचीत कर सकता हूँ और उनकी संगति का आनंद ले सकता हूँ?
"हे कश्यप, कृपया बताइए, उस ज्ञानी व्यक्ति ने आपके साथ क्या किया है? आप ऐसा क्यों चाहते हैं कि जहाँ आप हैं, वहाँ वह ज्ञानी व्यक्ति भी हो?"

बुद्धिमान व्यक्ति अच्छा काम करता है, वह कभी भी ऐसा बोझ अपने ऊपर नहीं लेता जिसे कोई उठा न सके।
भलाई करना उसका गुण है, और वह अच्छी बातें सुनने पर क्रोधित नहीं होता।
वह उचित आचरण को भली-भांति जानता है; इसीलिए उसका वहां होना उचित है।"
"आपने सही कहा, कश्यप," इत्यादि।

सभी प्राणियों के स्वामी सक्का (इंद्र) ने मुझे वरदान दिया है।
मैं वासनाओं से मुक्त हो जाऊं, और जब सूरज चमकने लगे
हे पवित्र भिक्षुओं, प्रकट होइए और मुझे दिव्य भोजन प्रदान कीजिए;
"कृपा हो कि मेरे देने से यह कम न हो, और न ही मुझे अपने कर्म पर पछतावा हो।"
लेकिन मेरा हृदय देने में प्रसन्न रहे; मैं इसी को अपना प्रतिफल मानता हूँ।
"काश्यप, आपने बहुत अच्छी बात कही, बहुत ही सटीक और उत्कृष्ट ढंग से कहा: अब अपने हृदय की पुकार के अनुसार वरदान चुनिए, और वही चुनाव कीजिए।"

"सभी प्राणियों के स्वामी सक्का (इंद्र) ने मुझे वरदान दिया।"
हे सक्का (इंद्र), अब मेरे पास मत आना: मुझे बस यही वरदान चाहिए।
लेकिन बहुत से पुरुष और महिलाएं, जो सही ढंग से जीवन जीते हैं, मुझे देखना चाहते हैं: क्या मुझे देखने में कोई खतरा हो सकता है?

आपका स्वरूप इतना दिव्य है, आप इतनी महिमावान और आनंदमय हैं।
इसे देखकर मैं अपनी प्रतिज्ञाएँ भूल सकता हूँ: यह खतरा स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहा है।"
"जी, श्रीमान," सक्का (इंद्र) ने कहा, "मैं अब कभी आपके पास नहीं आऊंगा"; और उन्हें प्रणाम करके और क्षमा मांगकर सक्का (इंद्र) चले गए। इसके बाद उस महान प्राणी ने अपना पूरा जीवन गुणों का अभ्यास करते हुए बिताया और ब्रह्मा लोक (परमलोक) में पुनर्जन्म लिया।

इस प्रवचन को समाप्त करने के बाद, गुरु ने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उस समय अनुरुद्ध सक्का (इंद्र) थे, और मैं स्वयं बुद्धिमान अकित्ति (अगत्स्य) था।"

फुटनोट:

(1)रीडिंग टैन बोधिम.

(2) कैंथियम पार्विफ्लोरम (कारा)।

(3)सं. 313

(4) मालाबार तट या उत्तरी सीलोन।

(5) सीलोन के निकट, या उसका भाग।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **तककारिया-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-481-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 481
ताक्करिया-जातक

"मैंने कहा," इत्यादि। यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए कोकालिका के बारे में सुनाई थी।

एक बरसात के मौसम में, दो प्रमुख शिष्य (*1) अपने समूह को छोड़कर अलग रहने की इच्छा से गुरु से विदा लेकर उस राज्य में चले गए जहाँ कोकालिका (विधर्मी और देवदत्त का मित्र, जिसने बुद्ध की हत्या का प्रयास किया था) रहता था। वे कोकालिका के घर गए और उससे कहा, "भाई (भिक्षु) कोकालिका, क्योंकि हमें आपके साथ रहना सुखद है और आपको हमारे साथ, इसलिए हम यहाँ तीन महीने रहना चाहेंगे।" दूसरे ने पूछा, "मेरे साथ रहना आपको कैसे सुखद लगेगा?" उन्होंने उत्तर दिया, "यदि आप किसी को भी न बताएँ कि दो प्रमुख शिष्य यहाँ रह रहे हैं, तो हम प्रसन्न रहेंगे और यही आपके साथ रहने का हमारा सुख होगा।" "और आपके साथ रहना मुझे कैसे

सुखद लगेगा?" "हम आपके घर में तीन महीने तक आपको धर्म का उपदेश देंगे और आपसे प्रवचन करेंगे, और यही आपके लिए हमारे साथ रहने का सुख होगा।" उन्होंने कहा, "हे भिक्षुओं, जब तक चाहो यहाँ निवास करो," और उन्होंने उन्हें एक सुखमय निवास स्थान आवंटित किया। वहाँ वे सिद्धि की प्राप्ति में व्यतीत हुए, और किसी को भी उनके वहाँ रहने की जानकारी नहीं थी।

बरसात का मौसम बीत जाने पर उन्होंने उनसे कहा, "भाई, अब हम आपके साथ रह चुके हैं, और अब हम गुरु से मिलने जा रहे हैं," और उनसे जाने की अनुमति मांगी। वे मान गए और उनके साथ उस गाँव के सामने वाले गाँव में भिक्षा मांगने के लिए गए जहाँ वे ठहरे हुए थे। भोजन के बाद, बड़े-बुजुर्ग गाँव से चले गए। कोकालिका उन्हें छोड़कर पीछे मुड़े और लोगों से कहा, "भाइयों, तुम जंगली जानवरों की तरह हो। यहाँ दो मुख्य शिष्य तीन महीने से सामने वाले मठ में रह रहे थे, और तुम्हें इसकी कोई जानकारी नहीं थी: अब वे चले गए हैं।" लोगों ने पूछा, "आपने हमें क्यों नहीं बताया, महाराज?" तब वे घी, तेल, औषधीय जड़ी-बूटियाँ, वस्त्र और कपड़े लेकर बड़े-बुजुर्गों के पास गए, उन्हें प्रणाम किया और कहा, "क्षमा कीजिए, महाराज, हमें नहीं पता था कि आप मुख्य शिष्य हैं, हमें यह आज ही पूज्य भाई कोकालिका के शब्दों से पता चला है। कृपया हम पर दया करें और ये औषधीय जड़ी-बूटियाँ और वस्त्र स्वीकार करें।" कोकालिका बड़ों के साथ उनके पीछे गया, क्योंकि उसने सोचा, "ये बड़े मितव्ययी हैं और थोड़े में ही संतुष्ट रहते हैं; वे ये चीजें स्वीकार नहीं करेंगे, और फिर ये मुझे दे दी जाएंगी।" लेकिन बड़ों ने, क्योंकि यह भेंट एक भाई के कहने पर दी गई थी, न तो स्वयं स्वीकार की और न ही कोकालिका को दिलवाई। तब आम लोगों ने कहा, "महोदय, यदि आप इन्हें स्वीकार नहीं करेंगे, तो एक बार फिर यहाँ आकर हमें आशीर्वाद दें।" बड़ों ने वादा किया और गुरु के पास चले गए।

अब कोकालिका क्रोधित हो गया, क्योंकि बुजुर्गों ने न तो स्वयं उन वस्तुओं को स्वीकार किया और न ही उन्हें कोकालिका को दिया। परन्तु बुजुर्गों ने गुरु के साथ कुछ समय व्यतीत करने के बाद, प्रत्येक ने पाँच सौ भाइयों को अपने अनुयायी के रूप में चुना और इन एक हजार भाइयों के साथ भिक्षा मांगने के लिए कोकालिका के देश तक तीर्थयात्रा की। आम लोग उनसे मिलने आए और उन्हें उसी मठ में ले गए और प्रतिदिन उनका बहुत सम्मान किया।

उन्हें वस्त्रों और औषधियों का विशाल भंडार दिया गया था। जो भिक्षु बड़ों के साथ वस्त्र बाँटने गए थे, उन्होंने उनमें से कुछ वस्त्र सभी आए हुए भिक्षुओं को दे दिए, लेकिन कोकालिका को एक भी वस्त्र नहीं दिया, और न ही बड़ों ने उसे कुछ दिया। वस्त्र न मिलने पर कोकालिका बड़ों को अपशब्द कहने और उनका अपमान करने लगा: "सारिपुत्र और मोग्गल्याण पापमय इच्छाओं से भरे हुए हैं; वे पहले जो कुछ भी उन्हें दिया जाता था, उसे स्वीकार नहीं करते थे, लेकिन ये सब स्वीकार कर लेते हैं। उन्हें संतुष्ट करना असंभव है, वे एक-दूसरे का सम्मान नहीं करते।" लेकिन बड़ों ने यह समझ लिया कि वह व्यक्ति उनके प्रति दुर्भावना रख रहा है, इसलिए वे अपने अनुयायियों के साथ वहाँ से चले गए; और वे वापस नहीं लौटे, भले ही लोगों ने उनसे कुछ और दिन रुकने की विनती की। तब एक युवा भिक्षु ने कहा: "हे गृहस्थों, बड़े कहाँ ठहरेंगे? आपके अपने विशेष भिक्षु उन्हें यहाँ ठहराना नहीं चाहते।" तब लोग कोकालिका गए और बोले, "महोदय, हमें बताया गया है कि आप नहीं चाहते कि बड़े-बुजुर्ग यहाँ रहें। जाइए! या तो उन्हें मनाकर वापस ले आइए, या आप यहाँ से चले जाइए और कहीं और रहिए!" लोगों के डर से वह व्यक्ति गया और उसने बड़े-बुजुर्गों से विनती की। बड़े-बुजुर्गों ने उत्तर दिया, "भाई, वापस जाइए, हम नहीं लौटेंगे।" इसलिए वह उन्हें मनाने में असफल होकर मठ लौट आया। तब मठवासियों ने उससे पूछा कि क्या बड़े-बुजुर्ग लौट आए हैं। उसने कहा, "मैं उन्हें वापस लौटने के लिए राजी नहीं कर सका।" उन्होंने पूछा, "क्यों नहीं, भाई?" तब वे सोचने लगे कि शायद कोई अच्छा मठवासी यहाँ नहीं रहेगा क्योंकि वह व्यक्ति पाप में डूबा हुआ है; उन्हें उससे छुटकारा पाना ही होगा। उन्होंने कहा, "महोदय, यहाँ मत रहिए; हमारे पास आपके लिए यहाँ कुछ नहीं है।"

इस प्रकार उनके द्वारा अपमानित होकर, उसने कुंड और वस्त्र धारण किया और जेतवन मठ चला गया। गुरु को प्रणाम करने के बाद उसने कहा, "हे गुरु, सारिपुत्र और मोग्गल्याण पापमय इच्छाओं से भरे हुए हैं, वे पापमय इच्छाओं के वश में हैं!" गुरु ने उत्तर दिया, "ऐसा मत कहो, कोकालिका; हे कोकालिका, अपने हृदय को सारिपुत्र और मोग्गल्याण के प्रति शांत रखो; यह जान लो कि वे अच्छे भाई हैं।" कोकालिका ने कहा, "हे गुरु, आप अपने दो प्रमुख शिष्यों पर विश्वास करते हैं; मैंने अपनी आँखों से देखा है; उनमें पापमय इच्छाएँ हैं, उनके भीतर गुप्त बातें हैं, वे दुष्ट पुरुष हैं।" उसने ऐसा तीन बार कहा (यद्यपि गुरु उसे रोकना चाहते थे), फिर अपने आसन से उठा और चला गया। जैसे ही वह रास्ते में गया, उसके पूरे शरीर पर सरसों के दाने के आकार के फोड़े निकल आए, बढ़ते-बढ़ते विल्व वृक्ष के पके बीज के आकार के हो गए (*2), फूट गए और पूरे शरीर पर खून बहने लगा। दर्द से कराहते हुए वह जेतवन मठ के द्वार पर गिर पड़ा। ज़ोरदार आवाज़ उठी और ब्रह्मा के लोक तक पहुँच गई—"कोकालिका ने दो प्रमुख शिष्यों का अपमान किया है!" तब उसके आध्यात्मिक गुरु, ब्रह्मा प्रधान देवदूत, तुदु, को यह जानकर बड़ों को शांत करने के इरादे से आए और हवा में स्थिर होकर बोले, "कोकालिका, तुमने यह बहुत क्रूर काम किया है; प्रमुख शिष्यों से सुलह कर लो।" "भाई, आप कौन हैं?" उस व्यक्ति ने पूछा। "मेरा नाम तुदु ब्रह्मा है," उसने कहा। "क्या भगवान बुद्ध ने तुम्हें नहीं बताया," उस व्यक्ति ने कहा, "कि तुम उन लोगों में से हो जो वापस नहीं आते (अनगामी) (*3)? उस शब्द का अर्थ है कि ऐसे लोग इस पृथ्वी पर वापस नहीं आते। तुम गोबर के ढेर पर एक जिन्न बन जाओगे!" इस प्रकार उसने महान ब्रह्मा प्रधान देवदूत को फटकारा। और जब वे उस व्यक्ति को अपनी सलाह मानने के लिए राजी नहीं कर सके, तो उन्होंने उससे कहा, "तुम्हें अपने वचन के अनुसार भोगना पड़े।" फिर वह अपने आनंदमय निवास में लौट आया। और कोकालिका की

मृत्यु हो गई और उसका पुनर्जन्म कमल नरक (*4) में हुआ। उसके वहाँ जन्म लेने की बात महान और शक्तिशाली ब्रह्मा भगवान (*5) ने तथागत (बुद्ध) को बताई, और गुरु ने यह बात अपने भाइयों को सुनाई। सत्य के हॉल में भाइयों ने उस व्यक्ति के दुष्ट कर्मों के बारे में बात की: "भाई, लोग कहते हैं कि कोकालिका ने सारिपुत्र और मोग्गल्याण का अपमान किया और अपने ही शब्दों के कारण कमल नरक में आ गया।" गुरु अंदर आए और उन्होंने कहा, "भाई, तुम यहाँ बैठे-बैठे क्या बात कर रहे हो?" उन्होंने उन्हें बताया। तब उन्होंने कहा, "भाई, यह पहली बार नहीं है कि कोकालिका अपने ही शब्दों के कारण नष्ट हुआ है और अपने ही शब्दों के कारण दुख भोगने के लिए अभिशप्त हुआ है; पहले भी ऐसा ही हुआ था।" और उन्होंने उन्हें अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, उनके पुजारी का रंग भूरा था (*6) और उनके सारे दांत झड़ चुके थे। उनकी पत्नी ने एक दूसरे ब्राह्मण के साथ पाप किया। वह पुरुष भी बिल्कुल पहले वाले ब्राह्मण जैसा ही था। पुजारी ने बार-बार अपनी पत्नी को रोकने की कोशिश की, लेकिन सफल नहीं हो सके। तब उन्होंने सोचा, "मैं अपने इस शत्रु को अपने हाथों से नहीं मार सकता, लेकिन मुझे उसे मारने की कोई योजना बनानी होगी।"

तो वह राजा के सामने आया और बोला, "हे महाराज, आपका नगर पूरे भारत का सर्वोच्च नगर है और आप सर्वोच्च राजा हैं, परन्तु आप सर्वोच्च राजा होते हुए भी, आपका दक्षिणी द्वार अशुभ और कुनिर्मित है।" "तो गुरुजी, क्या किया जाए?" "इसमें सौभाग्य लाना होगा और इसे ठीक करना होगा।" "क्या किया जाए?" "हमें पुराना द्वार गिराना होगा, नई और शुभ लकड़ियाँ लगानी होंगी, नगर की रक्षा करने वाले देवताओं को यज्ञ करना होगा और नक्षत्रों की शुभ स्थिति में नया द्वार स्थापित करना होगा।" "ठीक है," राजा ने कहा।

उस समय बोधिसत्व तकरिया नामक एक युवक थे, जो इस व्यक्ति के अधीन अध्ययन कर रहे थे।

पुरोहित ने पुराने द्वार को तुड़वा दिया और नया द्वार तैयार करवाया। इसके बाद वह राजा के पास गया और बोला, "महाराज, द्वार तैयार है: कल शुभ संयोग है; कल के समाप्त होने से पहले हमें यज्ञ करना चाहिए और नया द्वार स्थापित करना चाहिए।" "अच्छे गुरुदेव, इस विधि के लिए क्या आवश्यक है?" "महाराज, एक विशाल द्वार पर महान आत्माओं का वास है और वे उसकी रक्षा करते हैं। एक भूरे रंग के, बिना दांत वाले, दोनों ओर से शुद्ध रक्त वाले ब्राह्मण की हत्या करनी होगी; उसके मांस और रक्त को पूजा में अर्पित करना होगा, उसके शरीर को नीचे रखकर द्वार को उस पर स्थापित करना होगा। इससे आपको और आपके नगर को सौभाग्य प्राप्त होगा (*7)।" "बहुत अच्छा, गुरुदेव, ऐसे ब्राह्मण की हत्या करवाइए और उसके ऊपर द्वार स्थापित कीजिए।"

पुजारी प्रसन्न हुआ। उसने कहा, "कल मैं अपने शत्रु को देख लूँगा!" वह जोश से भरा हुआ अपने घर लौटा, लेकिन अपनी ज़बान पर काबू नहीं रख सका और जल्दी से अपनी पत्नी से बोला, "अरे, हे कुरूप बुढ़िया, अब तुम किसके साथ मजे करोगी? कल मैं तुम्हारे प्रेमी को मार डालूँगा और उसकी बलि चढ़ा दूँगा!" "तुम एक निर्दोष व्यक्ति को क्यों मारोगे?" "राजा ने मुझे एक भूरे रंग के ब्राह्मण को मारने और उसकी बलि चढ़ाने और उस पर नगर का द्वार स्थापित करने का आदेश दिया है।"

तुम्हारा प्रेमी सांवले रंग का है, और मैं उसे बलि के लिए मारना चाहती हूँ। उसने अपने प्रेमी को संदेश भेजा, "लोग कहते हैं कि राजा बलि में एक सांवले रंग के ब्राह्मण को मारना चाहता है; यदि तुम अपनी जान बचाना चाहते हो, तो समय रहते भाग जाओ, और अपने साथ उन सभी को भी ले जाओ जो तुम्हारे जैसे हैं।" तो उस आदमी ने वैसा ही किया: यह खबर पूरे शहर में फैल गई, और शहर के सभी सांवले रंग के लोग भाग गए।

अपने शत्रु के भाग जाने से अनभिज्ञ पुजारी अगली सुबह तड़के राजा के पास गया और बोला, "महाराज, इस स्थान पर एक भूरे रंग का ब्राह्मण है; उसे पकड़ लीजिए।" राजा ने कुछ लोगों को उसे लाने के लिए भेजा, पर उन्हें कोई नहीं मिला और लौटकर उन्होंने राजा को बताया कि वह भाग गया है। राजा ने कहा, "अन्यत्र खोजो।" उन्होंने पूरे शहर में खोज की, पर कोई नहीं मिला। राजा ने कहा, "जल्दी खोजो!" उन्होंने उत्तर दिया, "महाराज, आपके पुजारी के सिवा ऐसा कोई दूसरा नहीं है।" राजा ने कहा, "एक पुजारी को मारा नहीं जा सकता।" राजा ने कहा, "महाराज, आप क्या कहते हैं? पुजारी के अनुसार, यदि आज द्वार नहीं लगाया गया, तो शहर खतरे में पड़ जाएगा। पुजारी ने जब अपनी बात समझाई, तो उसने कहा कि यदि हम आज का दिन बीतने देंगे, तो एक वर्ष के अंत तक फिर से शुभ मुहूर्त नहीं आएगा। एक वर्ष तक बिना द्वार वाला शहर, हमारे शत्रुओं के लिए कितना बड़ा अवसर! आइए हम किसी को मार डालें और किसी अन्य बुद्धिमान ब्राह्मण की सहायता से यज्ञ करें और द्वार लगा दें।" "पर क्या मेरे गुरु के समान कोई और बुद्धिमान ब्राह्मण है?" "जी, उनके शिष्य, तक्करिया नामक एक युवक; उन्हें अपना पुरोहित बनाइए और शुभ अनुष्ठान कीजिए।" राजा ने उन्हें बुलवाया, उनका आदर किया, उन्हें पुरोहित बनाया और आदेश दिया कि जैसा कहा गया है वैसा ही करें। वह युवक एक बड़ी भीड़ के साथ द्वार पर गया। राजा के नाम पर उन्होंने पुरोहित को बांधकर लाया। उस महान सत्ता ने उस स्थान पर एक गड्ढा खुदवाया जहाँ द्वार स्थापित होना था, और उस पर एक तम्बू लगवाया, और अपने गुरु के साथ तम्बू में प्रवेश किया। गुरु ने गड्ढा देखकर और बचने का कोई रास्ता न देखकर उस

महान सत्ता से कहा, “मेरा उद्देश्य पूरा हो गया। मूर्खतावश, मैं चुप नहीं रह सका और उस दुष्ट स्त्री को शीघ्र ही बता दिया। मैंने अपने ही हथियार से स्वयं को मार डाला।” फिर उन्होंने पहला श्लोक पढ़ा:

मैंने गलत काम करते हुए बात की, जैसे कोई मेंढक पुकारता है
जंगल में एक सांप पर: इसलिए मैं गिर पड़ा
इस गड्ढे में, तकरिया (*8)। कितना सच है,
पहले सीज़न में बोले गए शब्दों पर पछतावा होना ही चाहिए!
फिर दूसरे ने उसे संबोधित करते हुए यह श्लोक सुनाया:

जो व्यक्ति अनुचित समय पर बोलता है, वह चला जाएगा।
इस तरह बर्बाद होना, रोना, पीड़ा सहना:
यहां आपको खुद को दोषी ठहराना चाहिए, अब आपको ऐसा करना ही होगा।
हे मेरे गुरु, यह गड्ढा आपकी कब्र के लिए खोदा गया है।
इन शब्दों के साथ उन्होंने यह भी जोड़ा: "हे गुरु, केवल आप ही नहीं, बल्कि कई अन्य लोग भी अपने शब्दों पर ध्यान न देने के कारण कष्ट भोग चुके हैं।" ऐसा कहकर उन्होंने इसे सिद्ध करने के लिए अतीत की एक कहानी सुनाई।

कहते हैं, एक समय की बात है, बनारस में काली नाम की एक शाही नर्तकी और वेश्या रहती थी, और उसका एक भाई था जिसका नाम तुंडिला था। काली एक दिन में हज़ार सिक्के कमा लेती थी। तुंडिला अय्याश, शराबी और जुआरी था; काली उसे पैसे देती थी, लेकिन वह सब कुछ लुटा देता था। काली उसे रोकने की हर संभव कोशिश करती थी, पर वह नहीं रोक पाती थी। एक दिन जुए में उसकी हार हुई और उसके सारे कपड़े भी छिन गए। उसने लंगोटी का एक टुकड़ा अपने चारों ओर लपेटा और अपनी बहन के घर चला गया। लेकिन बहन ने अपनी दासियों को आदेश दिया था कि अगर तुंडिला घर आए, तो उसे कुछ न दें, बल्कि उसका गला पकड़कर उसे बाहर फेंक दें। और उन्होंने वैसा ही किया: वह दहलीज पर खड़ा होकर विलाप करने लगा। उसी दिन एक धनी व्यापारी का पुत्र, जो काली को अक्सर हज़ार सिक्के देता था, वहाँ से गुज़रा और बोला, "तुंडिला, तुम क्यों रो रहे हो?" “मालिक,” उसने कहा, “मैं जुए में हार गया और अपनी बहन के पास आया; नौकरानियों ने मेरा गला पकड़कर मुझे बाहर फेंक दिया।” “ठीक है, यहीं ठहरो,” दूसरे ने कहा, “मैं तुम्हारी बहन से बात करता हूँ।” वह घर में दाखिल हुआ और बोला, “तुम्हारा भाई फटी हुई धोती पहने इंतज़ार कर रहा है। तुम उसे पहनने के लिए कुछ क्यों नहीं देती?” “हाँ,” उसने जवाब दिया, “मैं कुछ नहीं दूँगी। अगर तुम्हें उससे प्यार है, तो तुम खुद दे दो।” उस बदनाम घर में यह रिवाज था: हर हज़ार सिक्कों में से पाँच सौ सिक्के औरत के लिए होते थे, पाँच सौ कपड़े, इत्र और मालाओं के लिए; उस घर में आने वाले पुरुषों को पहनने के लिए कपड़े दिए जाते थे और वे रात वहीं बिताते थे, फिर अगले दिन वे अपने मिले हुए कपड़े उतारकर अपने लाए हुए कपड़े पहन लेते थे और अपने-अपने रास्ते चले जाते थे। इस बार व्यापारी के बेटे ने अपने लिए दिए गए कपड़े पहन लिए और अपने कपड़े टुंडिला को दे दिए। उसने उन्हें पहना और जोर-जोर से चिल्लाते हुए सराय की ओर तेजी से बढ़ा। लेकिन काली ने अपनी स्त्रियों को आदेश दिया कि जब वह युवक अगले दिन जाए, तो वे उसके कपड़े छीन लें। तदनुसार, जब वह आया, तो वे लुटेरों की तरह इधर-उधर से दौड़कर आईं और उसके कपड़े छीन लिए, और उसे नंगा कर दिया, यह कहते हुए, "अब, युवक, चले जाओ!" इस प्रकार उन्होंने उससे छुटकारा पा लिया। वह नंगा ही चला गया: लोगों ने उसका मजाक उड़ाया, और वह शर्मिंदा हुआ, और विलाप करते हुए बोला, "यह मेरी ही गलती है, क्योंकि मैं अपने होंठों पर काबू नहीं रख सका!" इसे स्पष्ट करने के लिए, महान सत्ता ने तीसरा श्लोक पढ़ा:

"टुंडिला से यह क्यों पूछा जाए कि उसका क्या हाल होगा?"
कालिका के हाथों? अब देखो!
मेरे कपड़े चले गए हैं, मैं नंगा और निर्वस्त्र हूँ;
यह उतना ही भयावह है जितना कि आपके साथ हाल ही में हुआ था।"
एक और व्यक्ति यह कहानी सुनाता है। बकरियों के चरवाहों की लापरवाही के कारण, बनारस के एक चरागाह में दो मेढ़े आपस में लड़ने लगे। जब वे बुरी तरह लड़ रहे थे, तो एक पूंछ वाले मेढ़े ने मन ही मन सोचा, "ये दोनों अपना सिर फोड़कर मर जाएंगे; मुझे इन्हें रोकना होगा।" इसलिए उसने पुकार कर उन्हें रोकने की कोशिश की—"चाचा जी, लड़ाई मत करो!" उनकी ओर से उसे एक शब्द भी सुनाई नहीं दिया: लड़ाई के बीच में, पहले पीठ पर, फिर सिर पर चढ़कर, उसने उनसे रुकने की विनती की, लेकिन कुछ नहीं कर सका। अंत में वह चिल्लाया, "लड़ो, फिर मुझे पहले मार डालो!" और खुद को दोनों सिरों के बीच खड़ा कर दिया। वे एक-दूसरे को टक्कर मारते रहे। पक्षी एक धक्के से कुचल गया, और अपने ही कर्मों से मारा गया। इस दूसरी कहानी को समझाने के लिए, महान सत्ता ने चौथे श्लोक को दोहराया:

दो लड़ते हुए भेड़ों के बीच से एक दोमुंही पूंछ वाला पक्षी उड़ गया।
हालांकि उस लड़ाई में उसकी कोई भूमिका नहीं थी।

दोनों भेड़ों के सिरों ने उसे वहीं कुचल दिया।
उसका भाग्य भी तुम्हारी ही तरह भयानक था!
एक और कहानी। एक ताल का पेड़ था, जिसे चरवाहे बहुत महत्व देते थे। बनारस के लोगों ने उसे देखकर एक आदमी को पेड़ पर फल तोड़ने के लिए भेजा। जैसे ही वह फल नीचे फेंक रहा था, एक चींटी के टीले से एक काला सांप पेड़ पर चढ़ने लगा; नीचे खड़े लोगों ने उसे लाठियों और अन्य चीजों से मारकर भगाने की कोशिश की, लेकिन वे सफल नहीं हुए। तब उन्होंने दूसरे को पुकारा, "एक सांप पेड़ पर चढ़ रहा है!" और वह डर के मारे जोर से चिल्लाया। नीचे खड़े लोगों ने एक मोटे कपड़े को चारों कोनों से पकड़ लिया और उसे कपड़े में गिरने के लिए कहा। उसने खुद को छोड़ दिया और उन चारों के बीच कपड़े के बीचोंबीच गिर गया; वह हवा की तरह तेज आया और आदमी उसे पकड़ नहीं सके, बल्कि उन्होंने अपने चारों सिर आपस में टकराकर तोड़ दिए और इस तरह उनकी मृत्यु हो गई। इस कहानी को समझाने के लिए महान सत्ता ने पांचवां श्लोक सुनाया:

"चार आदमी, एक साथी को उसके भाग्य से बचाने के लिए,"
   नीचे रखे कपड़े के चारों कोनों को पकड़ रखा था।
वे सभी मृत अवस्था में गिर पड़े, प्रत्येक की खोपड़ी टूटी हुई थी।
   मुझे लगता है कि ये लोग भी तुम्हारी तरह ही भयानक थे।
कुछ लोग यह कहानी सुनाते हैं। बनारस में रहने वाले कुछ बकरी चोरों ने एक रात एक बकरी चुराई और जंगल में उसका शिकार करने का निश्चय किया। उसकी आवाज रोकने के लिए उन्होंने उसका मुंह बंद कर दिया और उसे बांस के झुंड में बांध दिया। अगले दिन, उसे मारने जाते समय वे कुल्हाड़ी लाना भूल गए। उन्होंने कहा, "अब हम बकरी को मारेंगे और पकाएंगे; कुल्हाड़ी लाओ!" लेकिन किसी के पास कुल्हाड़ी नहीं थी। उन्होंने कहा, "बिना कुल्हाड़ी के हम उसे मार भी दें तो भी नहीं खा सकते; उसे छोड़ दो! यह उसके किसी अच्छे कर्म का फल है।" इसलिए उन्होंने उसे छोड़ दिया। फिर संयोग से, बांस काटने वाला एक मजदूर, जो वहां से एक गठरी लेने आया था, टोकरी बनाने का चाकू वहीं पत्तों के बीच छिपाकर छोड़ गया, ताकि अगली बार आने पर उसका इस्तेमाल कर सके। लेकिन बकरी ने खुद को आज़ाद समझकर बांस के झुंड के नीचे खेलना शुरू कर दिया और अपने पिछले पैरों से लात मारकर चाकू गिरा दिया। चोरों ने चाकू गिरने की आवाज़ सुनी और जब वे यह जानने के लिए आए कि यह क्या है, तो उन्होंने उसे देखकर बड़ी प्रसन्नता व्यक्त की; फिर उन्होंने बकरी को मार डाला और उसका मांस खा लिया। इस प्रकार यह समझाने के लिए कि यह बकरी अपने ही कर्म से कैसे मारी गई, उस महान सत्ता ने छठा श्लोक सुनाया:

"बांस की झाड़ियों में एक बकरी,
तलाशी लेते हुए उसे एक चाकू मिला।
उसी चाकू से उन्होंने उस प्राणी का गला काट दिया।
मुझे लगता है कि तुम उस बकरी की तरह ही राक्षसी हो।
यह बताने के बाद, उन्होंने समझाया, "लेकिन जो लोग बोलने में संयमी होते हैं, वे अपने शब्दों पर ध्यान देकर अक्सर मृत्यु के भाग्य से मुक्त हो जाते हैं," और फिर परियों की एक कहानी सुनाई (*9)।

कहा जाता है कि बनारस में रहने वाला एक शिकारी एक बार हिमालय क्षेत्र में था, जहाँ उसने किसी तरह दो अलौकिक प्राणियों, एक अप्सरा और उसके पति को पकड़ लिया और उन्हें राजा के सामने पेश किया। राजा ने ऐसे प्राणी पहले कभी नहीं देखे थे। राजा ने कहा, "शिकारी, ये किस प्रकार के प्राणी हैं?" उस व्यक्ति ने कहा, "महाराज, ये मधुर स्वर में गा सकते हैं, इनका नृत्य इतना मनमोहक है कि कोई भी मनुष्य इनके समान नृत्य या गायन नहीं कर सकता।" राजा ने शिकारी को बड़ा इनाम दिया और अप्सराओं को गाने और नाचने का आदेश दिया। लेकिन उन्होंने सोचा, "यदि हम अपने गीत का पूरा अर्थ नहीं समझा पाए, तो गीत व्यर्थ हो जाएगा, वे हमें गाली देंगे और हमें चोट पहुँचाएँगे; और फिर, जो बहुत बोलते हैं वे झूठ भी बोलते हैं।" इसलिए किसी झूठ के डर से उन्होंने न तो गाया और न ही नृत्य किया, क्योंकि राजा बार-बार उनसे विनती करता रहा। अंत में राजा क्रोधित हो गया और बोला, "इन प्राणियों को मार डालो, पकाओ और मुझे परोस दो।" उन्होंने सातवें श्लोक के शब्दों में यह आदेश दिया:

"ये न तो देवता (देवदूत) हैं और न ही स्वर्ग के संगीतकार (*10) हैं,
ऐसे जानवर जिन्हें एक ऐसा व्यक्ति लाया था जो खुशी-खुशी अपनी जेब भरना चाहता था।
तो मेरे रात के खाने के लिए वे मेरे लिए एक खाना बना दें।
और एक अगले दिन सूरज उगने से पहले नाश्ते के लिए।
तब परी ने मन ही मन सोचा, "अब राजा क्रोधित हैं; निःसंदेह वे हमें मार डालेंगे। अब बोलने का समय आ गया है।" और तुरंत ही उन्होंने एक श्लोक सुनाया:

एक लाख गाने, सब गलत तरीके से गाए गए

ये सभी एक अच्छे गाने के दसवें हिस्से के बराबर भी नहीं हैं।
खराब गाना एक अपराध है; और यही कारण है
(गलत काम करने के कारण नहीं) परी ऐसा करने की कोशिश नहीं करेगी।"
परी से प्रसन्न होकर राजा ने तुरंत एक श्लोक सुनाया:

जिसने बात की है, उसे जाने दो, वह
हिमालय पर्वतमाला फिर से दिखाई दे सकती है,
लेकिन उन्हें दूसरे को ले जाकर मार डालने दो।
और कल के नाश्ते के लिए उसे तैयार कर देना।
लेकिन दूसरे परी ने सोचा, "अगर मैं चुप रहा तो राजा मुझे मार डालेगा; अब बोलने का समय है;" और फिर उसने एक और छंद सुनाया:

"गाय बादलों पर निर्भर करती हैं (*11), और मनुष्य गायों पर निर्भर करते हैं।"
और हे राजा! मैं आप पर, और अपनी इस पत्नी पर निर्भर हूँ।
पहाड़ों की ओर जाने से पहले, एक को दूसरे के भाग्य का अंदाजा हो जाना चाहिए।"
यह कहने के बाद, उन्होंने कुछ छंदों को दोहराया, ताकि यह स्पष्ट हो सके कि वे राजा के वचन का पालन करने की अनिच्छा के कारण चुप नहीं रहे थे, बल्कि इसलिए चुप रहे थे क्योंकि उन्हें पता था कि बोलना एक गलती होगी।

"हे सम्राट! अन्य राष्ट्र, अन्य मार्ग:
आपको दोषमुक्त रखना बहुत मुश्किल है।
जिस चीज के लिए किसी को प्रशंसा मिलती है,
एक अन्य व्यक्ति को इसी बात के लिए फटकार मिलती है।
"कोई न कोई तो ऐसा है जिसे हर मूर्ख व्यक्ति पाता है (*12);
प्रत्येक की कल्पना अलग-अलग होती है;
सभी अलग-अलग, कई पुरुष और कई विचार।
कोई भी सार्वभौमिक कानून किसी एक व्यक्ति की इच्छा नहीं होता।
राजा ने कहा, "वह सच कह रहा है; वह एक बुद्धिमान परी है;" और बहुत प्रसन्न होकर उसने अंतिम छंद का पाठ किया:

"परी और उसकी साथी चुप थे:
और जो अब भय के मारे बोलने लगा,
बिना चोट के, स्वतंत्र, खुश, उसे अपनी चाल से चलने दो।
यह भाषण शुभ होता है, जैसा कि हम अक्सर सुनते हैं।"
फिर राजा ने दोनों परियों को एक सुनहरे पिंजरे में रखा और शिकारी को बुलवाकर उन्हें उसी स्थान पर मुक्त कर दिया जहाँ उसने उन्हें पकड़ा था।

महान पुरुष ने आगे कहा, "देखिए, मेरे गुरुजी! परियाँ इसी प्रकार अपने वचनों पर ध्यान रखती थीं और सही समय पर बोलकर अच्छे वचन बोलकर मुक्त हो जाती थीं; परन्तु आप अपने बुरे वचनों के कारण घोर विपत्ति में पड़ गए हैं।" फिर यह उदाहरण देकर उन्होंने उसे दिलासा देते हुए कहा, "भयभीत न हों, मेरे गुरुजी; मैं आपका जीवन बचा लूँगा।" दूसरे ने पूछा, "क्या सचमुच कोई उपाय है? आप मुझे कैसे बचा सकते हैं?" उन्होंने उत्तर दिया, "ग्रहों की अनुकूल स्थिति अभी नहीं आई है।" उन्होंने दिन बीतने दिया और रात के मध्य पहर में एक मृत बकरी वहाँ ले आए। उन्होंने कहा, "जहाँ चाहो जाइए, ब्राह्मण, और जीवन व्यतीत कीजिए," फिर उसे जाने दिया और किसी को कुछ पता नहीं चला। फिर उन्होंने बकरी के मांस का यज्ञ किया और उस पर द्वार स्थापित कर दिया।

जब गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने कहा: "हे भिक्षुओं, यह पहली बार नहीं है कि कोकालिका अपने ही शब्दों से नष्ट हुआ है, बल्कि पहले भी ऐसा ही हुआ था;" इसके बाद उन्होंने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उस समय कोकालिका भूरे रंग का पुरुष था, और मैं स्वयं बुद्धिमान तकरिया था।"

फुटनोट:

(1)सारिपुत्र और मोग्गल्याना.

(2)एगल मार्मेलोस.

(3) अनागामी, तृतीय मार्ग (सम्मोहन) के वे लोग जो पृथ्वी पर पुनर्जन्म लेने के लिए वापस नहीं लौटते। जातक संख्या 1 के नोट 12 देखें।

(4) उनमें से 136 थे।

(5) सहमपति; पहले भाग का अर्थ अज्ञात है; वह ब्रह्म स्वर्ग (प्रधान देवदूतों का क्षेत्र) का प्रमुख है, जिसमें तुदु एक प्रधान देवदूत है।

(6)पिंगालो एक उचित नाम नहीं है

(7) किसी भवन की नींव रखने के समय मानव बलि, या इसी तरह की कोई प्रथा प्राचीन काल में आम रही होगी, क्योंकि इसके बारे में परंपराएँ बहुत प्रचलित हैं।

(8) यहाँ नाम स्त्रीलिंग है

(9)किन्नारा.

(10)गंधब्बपुत्त.

(11)क्योंकि उनका भोजन (घास आदि) बारिश पर निर्भर करता है।

(12)पराचित्त पढ़ना: "हर कोई किसी न किसी दूसरे आदमी की राय में मूर्ख है।"

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **रुरु-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-482-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 482
रुरु-जातक

“मैं तुम्हारे लिए समाचार लाया हूँ,” इत्यादि। यह कहानी गुरु ने बाँस के वन में रहते हुए देवदत्त के बारे में सुनाई थी। कोई उनसे कह सकता था, “हे मित्र देवदत्त, गुरु (बुद्ध) आपके लिए अत्यंत उपयोगी हैं। आपने तथागत (बुद्ध) से शिष्यत्व की दीक्षा प्राप्त की, उनसे त्रिपिटक (बुद्ध के सभी उपदेशों का तीन भागों का संग्रह) सीखा, और वरदान एवं सम्मान प्राप्त किया।” जब ऐसी बातें कही जातीं, तो ऐसा माना जाता है कि वे उत्तर देते, “नहीं, मित्र; गुरु ने मेरा कोई भला नहीं किया, एक तिनके के बराबर भी नहीं। मैंने स्वयं शिष्यत्व की दीक्षा प्राप्त की, स्वयं त्रिपिटक सीखा, और स्वयं वरदान एवं सम्मान अर्जित किया।” सत्य के हॉल में भिक्षु इस सब पर चर्चा कर रहे थे: “हे मित्र, देवदत्त कृतघ्न है, और किए गए उपकार को भूल जाता है।” गुरु वहाँ आए और उन्हें पता चल गया कि वे क्या कह रहे हैं। उन्होंने गुरु को बताया। उन्होंने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि देवदत्त कृतघ्न है, बल्कि वह पहले भी कृतघ्न था; और बहुत समय पहले मैंने उसकी जान बचाई थी, फिर भी वह मेरे पुण्य का महत्व नहीं जानता।" ऐसा कहते हुए उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस के राजा ब्रह्मदत्त थे, तब एक महान व्यापारी, जिनके पास अस्सी करोड़ (10 मिलियन) की संपत्ति थी, का एक पुत्र जन्मा; उन्होंने उसका नाम महाधनक रखा। लेकिन उन्होंने उसे कभी कुछ नहीं सिखाया; क्योंकि उनका कहना था, "मेरे पुत्र को पढ़ाई शारीरिक थकावट लगेगी।" गाने-नाचने, खाने-पीने और दावतों के अलावा उस लड़के को कुछ नहीं आता था। जब वह बड़ा हुआ, तो उसके माता-पिता ने उसके लिए एक उपयुक्त पत्नी का विवाह किया और बाद में उनका देहांत हो गया। उनकी मृत्यु के बाद, वह युवक अय्याशों, शराबी और जुआरियों की संगति में रहा और उसने अपनी सारी संपत्ति फिजूलखर्ची में उड़ा दी। फिर उसने कर्ज लिया, लेकिन उसे चुका नहीं सका और उसके लेनदारों ने उससे पैसे वसूलने की कोशिश की। अंत में उसने सोचा, "मेरे लिए जीवन का

क्या महत्व है? इस एक जन्म में तो मैं मानो किसी दूसरे प्राणी में परिवर्तित हो चुका हूँ; मर जाना ही बेहतर है।" इस पर उसने अपने लेनदारों से कहा, "अपने बिल लेकर यहाँ आओ। मैंने गंगा के किनारे अपना पारिवारिक खजाना छिपा रखा है, और वह तुम्हें मिलेगा।" वे उसके साथ चल दिए। वह मानो जगह-जगह अपने खजाने की छुपी जगहें दिखा रहा था (परन्तु उसका इरादा नदी में गिरकर डूबने का था), और अंत में दौड़कर गंगा में कूद गया। जैसे ही तेज धारा उसे बहा ले गई, वह दर्द भरी चीख के साथ चिल्ला उठा।

उस समय उस महान प्राणी का जन्म हिरण के रूप में हुआ था, और झुंड को छोड़कर, वह नदी के मोड़ के पास, साल के पेड़ों और सुंदर फूलों वाले आमों के झुरमुट में अकेला रह रहा था। उसके शरीर की त्वचा चमकदार सोने की थाली जैसी थी, उसके आगे और पीछे के पैर मानो लाख से ढके हुए थे, उसकी पूंछ जंगली बैल की पूंछ जैसी थी, उसके सींग चांदी के सर्पिल जैसे थे, उसकी आंखें चमकीले रत्नों जैसी थीं, और जब वह अपना मुंह किसी भी दिशा में घुमाता था तो वह लाल कपड़े के गोले जैसा लगता था। आधी रात के करीब उसने एक दुख भरी पुकार सुनी और सोचा, "मुझे एक आदमी की आवाज सुनाई दे रही है। जब तक मैं जीवित हूं, वह न मरे! मैं उसकी जान बचाऊंगा।" झाड़ियों में अपने विश्राम स्थल से उठकर वह नदी के किनारे गया और सांत्वना भरी आवाज में पुकारा, "हे मनुष्य! डरो मत, मैं तुम्हें जीवित बचाऊंगा।" फिर उसने धारा को चीरते हुए उसके पास तैरकर गया, उसे अपनी पीठ पर लादकर किनारे पर अपने निवास स्थान पर ले आया; जहां उसने दो-तीन दिन तक उसे जंगली फल खिलाए (*1) इसके बाद उसने उस आदमी से कहा, "हे मनुष्य, मैं अब तुझे इस जंगल से निकालकर बनारस के रास्ते पर ले चलूँगा, और तू शांति से जाएगा। परन्तु मैं तुझसे विनती करता हूँ कि लाभ के लालच में आकर राजा या किसी बड़े आदमी को यह मत बताना कि इस स्थान पर सोने का हिरण पाया जाता है।" उस आदमी ने अपने वचन का पालन करने का वादा किया; और उस महान सत्ता ने उसका वादा पाकर उसे अपनी पीठ पर उठाया और बनारस के रास्ते पर ले जाकर अपने मार्ग पर चल दिया।

जिस दिन वह बनारस पहुँचा, रानी की पत्नी, जिसका नाम खेमा था, ने सुबह सपने में देखा कि एक सुनहरे रंग का हिरण उसे धर्म का उपदेश दे रहा है; और उसने सोचा, "यदि ऐसा कोई प्राणी न होता, तो मैं उसे अपने सपने में न देखती। निश्चित रूप से ऐसा कोई प्राणी होगा; मैं राजा को इसकी सूचना दूंगी।"

तब वह राजा के पास गई और बोली, "महाराज! मैं एक सुनहरे हिरण के बारे में सुनना चाहती हूँ। यदि ऐसा संभव हुआ तो मैं जीवित रहूँगी, अन्यथा मेरा कोई जीवन नहीं।" राजा ने उसे दिलासा देते हुए कहा, "यदि ऐसा कोई प्राणी मनुष्य जगत में विद्यमान है, तो वह तुम्हें अवश्य मिलेगा।" तब उसने ब्राह्मणों को बुलवाया और उनसे पूछा, "क्या सुनहरे रंग के हिरण जैसी कोई वस्तु होती है?" "जी हाँ, महाराज।" राजा ने एक अलंकृत काठी वाले हाथी की पीठ पर सोने के संदूक में बंद एक हजार सिक्कों से भरा थैला रख दिया: जो कोई भी सुनहरे हिरण के बारे में सूचना लाएगा, राजा उसे हजार सिक्कों वाला थैला, सोने का संदूक और इसके अतिरिक्त या इससे भी बेहतर हाथी देने को तैयार था। उसने सोने की एक पट्टिका पर एक श्लोक खुदवाया और उसे अपने एक दरबारी को सौंपकर उससे कहा कि वह अपने नाम से उस श्लोक का पाठ नगरवासियों के बीच करे। तब उसने उस श्लोक का पाठ किया जो इस जन्म में सबसे पहले आता है:

"मुझे उस हिरण के बारे में कौन खबर देता है, जो अपनी नस्ल में सबसे उत्तम है?"
सुंदर महिलाएं और गांव की एक ऐसी महिला जिसे उसकी मजदूरी के बदले में कौन जीत सकता है?
दरबारी ने सोने की थाली ली और पूरे शहर में इसकी घोषणा करवाई। उसी समय एक युवक का पुत्र बनारस में प्रवेश कर रहा था; घोषणा सुनकर वह दरबारी के पास गया और बोला, "मैं राजा को एक हिरण के बारे में खबर दे सकता हूँ; मुझे उनके समक्ष ले चलिए।" दरबारी अपने हाथी से उतरा और उसे राजा के सामने ले जाकर बोला, "महाराज, यह व्यक्ति कहता है कि वह आपको हिरण के बारे में खबर दे सकता है।" राजा ने कहा, "क्या यह सच है, महोदय?" उसने उत्तर दिया, "यह सच है, हे महाराज! आप मुझे यह सम्मान प्रदान करेंगे।" और उसने दूसरा श्लोक सुनाया:

मैं आपको उस हिरण के बारे में खबर देता हूँ, जो इस नस्ल में सबसे उत्तम है:
फिर मुझे मेरी मजदूरी के बदले सुंदर महिलाएं और गांव में रहने का विकल्प दे दो।"
अपने विश्वासघाती मित्र की ये बातें सुनकर राजा प्रसन्न हुआ। उसने कहा, "चलो, यह हिरण कहाँ मिलेगा?" "यहाँ, महाराज," उसने उत्तर दिया और उन्हें जाने का मार्ग बताया। अपने दल-पतियों के साथ राजा ने विश्वासघाती को उस स्थान तक ले जाने का आदेश दिया और फिर कहा, "सेना को रुकने का आदेश दो।" सेना के रुकने पर राजा ने हाथ से इशारा करते हुए कहा, "वह सुनहरा हिरण उस जगह पर है," और उसने तीसरा श्लोक दोहराया।

"फूलों वाले साल और आम के पेड़ों के झुंड के भीतर, जहाँ ज़मीन
"सब कुछ लाल रंग की तरह लाल है, यहीं पर यह हिरण मिलेगा।"
जब राजा ने ये शब्द सुने, तो उसने अपने दरबारियों से कहा, "हिरण को भागने मत दो, बल्कि पूरी तेज़ी से वन के चारों ओर घेरा बना लो, अपने हथियारबंद सैनिकों को साथ लेकर।" उन्होंने वैसा ही किया और ज़ोर से आवाज़ लगाई। राजा कुछ अन्य लोगों के साथ

अलग खड़ा था, और यह व्यक्ति भी कुछ ही दूरी पर खड़ा था। उस महान प्राणी ने आवाज़ सुनी और सोचा, “यह एक विशाल सेना की आवाज़ है, इसलिए मुझे इनसे सावधान रहना चाहिए (*2)।” वह उठा और सभी सैनिकों पर नज़र डालते हुए राजा के खड़े होने का स्थान देखा। उसने सोचा, “जहाँ राजा खड़ा है, मैं सुरक्षित रहूँगा, और मुझे वहीं जाना चाहिए;” और वह राजा की ओर दौड़ा। जब राजा ने उसे आते देखा, तो उसने कहा, “हाथी के समान बलवान प्राणी अपने रास्ते में आने वाली हर चीज़ को गिरा देगा। मैं तीर चढ़ाकर उस जानवर को डराऊँगा; यदि वह भागने की कोशिश करेगा तो मैं उसे तीर मारकर कमज़ोर कर दूँगा, ताकि मैं उसे पकड़ सकूँ।” फिर अपना धनुष चढ़ाकर वह बोधिसत्व के सामने खड़ा हो गया।

इस बात को समझाने के लिए गुरु ने कुछ छंद दोहराए:

वह आगे बढ़ा: धनुष झुका हुआ था, तीर कमान पर था;
जब हिरण ने राजा को देखा तो दूर से ही पुकार लगाई:
"हे रथ चालकों के स्वामी, महान राजा, स्थिर रहो! और चोट मत पहुँचाओ।"
आपको यह खबर किसने दी कि यह हिरण यहाँ पाया जाता है?
राजा उनकी मधुर वाणी से मुग्ध हो गए; उन्होंने अपना धनुष नीचे रख दिया और श्रद्धापूर्वक स्थिर खड़े रहे। तभी वह महान प्राणी राजा के पास आए और एक तरफ खड़े होकर उनसे मधुरतापूर्वक बातें करने लगे। सभी उपस्थित लोगों ने भी अपने हथियार नीचे रख दिए और राजा को घेर लिया। उसी क्षण उस महान प्राणी ने राजा से मधुर स्वर में (जैसे कोई सोने की घंटी बजा रहा हो) प्रश्न पूछा: "आपको यह खबर किसने दी कि यहाँ यह हिरण पाया जाता है?" तभी वह दुष्ट व्यक्ति पास आया और सुनने की दूरी पर खड़ा हो गया। राजा ने उसकी ओर इशारा करते हुए कहा, "वही है जिसने मुझे सूचना दी है," और छठा श्लोक सुनाया:

"मेरे प्रिय मित्र, वह पापी मनुष्य जो वहाँ डटा हुआ है,"
वह मुझे यह खबर लेकर आया कि हिरण यहीं पाया जाता है।
यह सुनकर उस महान सत्ता ने अपने विश्वासघाती मित्र को फटकारा और राजा को संबोधित करते हुए सातवां श्लोक सुनाया:

पृथ्वी पर बहुत से ऐसे मनुष्य हैं जिनके बारे में यह कहावत सत्य है:
तुम्हारे जैसे व्यक्ति को बचाने से बेहतर तो डूबते हुए लट्ठे को बचाना होता।
यह सुनकर राजा ने एक और श्लोक दोहराया:

"हे हिरण, इस मामले में तुम किसे दोषी ठहराओगे?"
क्या यह कोई मनुष्य है, या कोई जानवर या पक्षी है?
मैं असीम भय से ग्रस्त हूँ।
यह आपकी वह मानवीय वाणी है जो मैंने हाल ही में सुनी।
इस पर उस महान सत्ता ने उत्तर दिया, "हे महान राजा, मैं किसी जानवर या पक्षी को दोष नहीं देता, केवल मनुष्य को दोष देता हूँ," जिसकी व्याख्या करने के लिए उन्होंने नौवें श्लोक को दोहराया।

मैंने उसे एक बार बचाया था, जब वह डूबने वाला था।
उस तीव्र लहर पर जो उसे बहा ले गई:
और अब मैं इसके कारण खतरे में हूँ।
दुष्टों का साथ दोगे तो तुम्हें इसका पछतावा जरूर होगा।
यह सुनकर राजा उस आदमी पर क्रोधित हो गया। उसने कहा, "क्या? इतनी अच्छी सेवा के बाद भी उसकी योग्यता को न पहचानना! मैं उसे गोली मारकर मार डालूँगा!" फिर उसने दसवाँ श्लोक दोहराया:

"इस चार पंखों वाले जीव को मैं उड़ने दूंगा,"
और उसके हृदय में छेद कर दो! उसे मर जाने दो।
दुष्ट ने अपने छल में,
जिसने ऐसी दयालुता के लिए धन्यवाद नहीं दिया, उसने इसकी सराहना की!
तब उस महान सत्ता ने सोचा, "मैं नहीं चाहता कि वह मेरे कारण नष्ट हो जाए," और ग्यारहवाँ श्लोक बोला:

"हे राजा, मूर्ख पर सचमुच शर्म आती है!"
लेकिन कोई भी नेक इंसान हत्या को सही नहीं मानता;
उस अभागे को जाने दो और उसकी मजदूरी दे दो।

आपने उससे जो भी वादा किया था, उसे पूरा किया:
और मैं आपकी जरूरत के समय आपकी सेवा करूंगा।
यह सुनकर राजा बहुत प्रसन्न हुआ और उसकी प्रशंसा करते हुए उसने अगला श्लोक कहा:

"यह हिरण वाकई बहुत अच्छा है।"
बुराई का बदला बुराई से चुकाना, अनिच्छुक होने के कारण।
उस दुष्ट को जाने दो! मैं उसे उसकी मजदूरी देता हूँ।
मैंने उससे जो भी वादा किया था, वह सब पूरा किया।
और आप जहां चाहें वहां जाइए—शुभ यात्रा!
इस पर उस महान सत्ता ने कहा, "हे पराक्रमी राजा, मनुष्य अपने मुख से कुछ कहते हैं और करते कुछ और हैं;" इस बात को समझाने के लिए उन्होंने दो श्लोक सुनाए:

सियार और पक्षियों की आवाज आसानी से समझ में आ जाती है;
हाँ, परन्तु हे राजा, मनुष्यों के वचन इन सबसे कहीं अधिक कठोर होते हैं।
एक व्यक्ति सोच सकता है, "यह मेरा मित्र है, मेरा साथी है, मेरे रिश्तेदार है;"
लेकिन दोस्ती टूट जाती है, और अक्सर नफरत और दुश्मनी शुरू हो जाती है।
जब राजा ने ये शब्द सुने, तो उसने उत्तर दिया, "हे हिरणों के राजा! यह मत समझिए कि मैं उस प्रकार का हूँ; क्योंकि मैंने आपको जो वरदान दिया है, उसे मैं कभी नहीं नकारूँगा, चाहे इसके लिए मुझे अपना राज्य ही क्यों न खोना पड़े। मुझ पर भरोसा रखिए।" और उसने उसे वरदान चुनने का विकल्प दिया। उस महान प्राणी ने उसके हाथों से यह वरदान स्वीकार किया और यह चुना: कि सभी प्राणी, स्वयं से प्रारंभ होकर, खतरे से मुक्त हो जाएँ। राजा ने यह वरदान दिया और फिर उसे बनारस नगर में वापस ले गया। नगर और उस महान प्राणी को सजाने के बाद, उसने अपनी पत्नी रानी से बात की। उस महान प्राणी ने रानी से, और बाद में राजा और उसके पूरे दरबार से, शहद के समान मधुर मानवीय स्वर में बात की; उसने राजा को राजाओं के दस गुणों का दृढ़ता से पालन करने के लिए कहा, और उस महान प्राणी को सांत्वना दी, और फिर जंगल में लौट गया, जहाँ वह हिरणों के झुंड के बीच रहने लगा।

राजा ने शहर में ढोल बजवाते हुए यह घोषणा करवाई: "मैं सभी प्राणियों की रक्षा करता हूँ!" उस समय से किसी ने भी पशु या पक्षी के विरुद्ध हाथ उठाने का साहस नहीं किया।

हिरणों के झुंडों ने मनुष्यों की फसलों को चट कर दिया, और कोई भी उन्हें भगाने में सक्षम नहीं था। राजा के प्रांगण में एक भीड़ जमा हो गई और उन्होंने शिकायत की।

इसे स्पष्ट करने के लिए, गुरु ने निम्नलिखित श्लोक को दोहराया:

"गांव और शहर के सभी लोग सीधे राजा के पास चले गए।"
"हिरण हमारी फसलें खा रहे हैं: राजा इसे रोकें!"
यह सुनकर राजा ने कुछ श्लोक पढ़े:

"जनता की इच्छा हो या न हो, भले ही मेरा राज्य समाप्त हो जाए,
मैं उस हिरण के साथ अन्याय नहीं कर सकता, जिसे मैंने जीवन और शांति का वादा किया था।
"हो सकता है कि जनता मेरा साथ छोड़ दे, मेरी राजसत्ता नष्ट हो जाए।"
मैंने उस शाही हिरण को जो वरदान दिया था, उसे मैं कभी नहीं नकारूंगा।
लोगों ने राजा की बातें सुनीं और कुछ न कह पाने के कारण वहाँ से चले गए। यह बात दूर-दूर तक फैल गई। परमेश्वर ने इसके बारे में सुना और सभी हिरणों को इकट्ठा करके उनसे कहा: "अब से तुम मनुष्यों की फसलें मत खाना।" फिर उन्होंने मनुष्यों को संदेश भेजा कि प्रत्येक मनुष्य अपनी भूमि पर एक तख्ती लगा ले। मनुष्यों ने ऐसा ही किया; और उस तख्ती के कारण आज तक हिरण फसलें नहीं खाते।

जब गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने कहा, "यह पहली बार नहीं है, भिक्षुओं, कि देवदत्त ने कृतघ्नता दिखाई है;" और फिर उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "उस समय, देवदत्त व्यापारी का पुत्र था, आनंद राजा था, और मैं स्वयं हिरण था।"

फुटनोट:

(1)फलाफलानी पढ़ें.

(2)पुरिसभयेना पढ़ना, या मुझे छोड़ देना (इसके साथ यह होगा "मुझे उस आदमी से सावधान रहना चाहिए")।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सरभ-मिगा-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-483-||---->>>> अगला

जातक क्रमांक 483
सरभ-मिगा-जातक। (*1)

"हे मनुष्य, परिश्रम करते रहो," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, ताकि धर्म के सेनापति से स्वयं द्वारा संक्षेप में पूछे गए एक प्रश्न का पूर्णतः उत्तर दिया जा सके।

उस समय गुरु ने उस वरिष्ठ भिक्षु से संक्षेप में एक प्रश्न पूछा। देवताओं (देवदूतों) के लोक से अवतरण की पूरी कहानी संक्षेप में इस प्रकार है। जब पूज्य पिंडोला-भारद्वाज ने राजगृह नगर के महान व्यापारी (*2) की उपस्थिति में अपनी अलौकिक शक्ति से चंदन का कटोरा प्राप्त किया, तो गुरु ने भिक्षुओं को अपनी चमत्कारी शक्तियों का प्रयोग न करने के लिए कहा।

तब षड्यंत्रकारियों ने सोचा, "संन्यासी गौतम (बुद्ध) ने चमत्कारिक शक्तियों के प्रयोग को वर्जित किया है: अब वे स्वयं कोई चमत्कार नहीं करेंगे।" उनके शिष्य व्याकुल हो गए और षड्यंत्रकारियों से बोले, "तुमने अपनी अलौकिक शक्ति से वह कटोरा क्यों नहीं लिया?" उन्होंने उत्तर दिया, "मित्र, यह हमारे लिए कोई कठिन बात नहीं है। परन्तु हम सोचते हैं, भला कौन साधारण लोगों के सामने अपनी उत्तम और अलौकिक शक्तियों का प्रदर्शन एक तुच्छ लकड़ी के कटोरे के लिए करेगा? इसीलिए हमने उसे नहीं लिया। शाक्य वर्ग के तपस्वियों (बुद्ध के अनुयायियों) ने उसे लिया और केवल मूर्खतापूर्ण लालच के कारण अपनी अलौकिक शक्ति का प्रदर्शन किया। चमत्कार करना हमारे लिए कोई कठिन बात नहीं है। मान लीजिए कि हम तपस्वी गौतम (बुद्ध) के शिष्यों को छोड़ दें: यदि हम चाहें, तो हम भी तपस्वी गौतम (बुद्ध) के सामने अपनी अलौकिक शक्तियाँ दिखाएँगे: यदि तपस्वी गौतम (बुद्ध) एक चमत्कार करते हैं, तो हम उससे दुगुना चमत्कार करेंगे।"

यह सुनकर भिक्षुओं ने भगवान बुद्ध को बताया, "हे प्रभु, षड्यंत्रकारी कह रहे हैं कि वे चमत्कार करेंगे।" गुरु ने कहा, "उन्हें करने दो, भिक्षुओं; मैं भी वैसा ही करूंगा।" यह सुनकर बिम्बिसार ने जाकर भगवान बुद्ध से पूछा, "क्या आप चमत्कार करेंगे, प्रभु?" "जी, हे महाराज।" "क्या इस विषय में कोई आदेश नहीं दिया गया था, प्रभु?" "यह आदेश, हे महाराज, मेरे शिष्यों को दिया गया था; बुद्धों पर कोई आदेश लागू नहीं होता। जब आपके उद्यान के फूल और फल दूसरों के लिए वर्जित हैं (*3), तो यह नियम आप पर लागू नहीं होता।" "तो आप यह चमत्कार कहाँ करेंगे, प्रभु?" "श्रावस्ती नगर में, एक गांठदार आम के वृक्ष के नीचे।" "तो मुझे क्या करना होगा?" "कुछ नहीं, महाराज।"

अगले दिन, व्रत तोड़ने के बाद, गुरु भिक्षा मांगने गए। लोगों ने पूछा, "गुरु कहाँ गए?" भाइयों ने उत्तर दिया, "श्रावस्ती नगर के द्वार पर, एक गांठदार आम के वृक्ष के नीचे, वे षड्यंत्रकारियों को भ्रमित करने के लिए दो बार चमत्कार करने वाले हैं।" भीड़ ने कहा, "यह चमत्कार एक उत्कृष्ट कृति होगा; हम इसे देखने जाएंगे।" अपने घरों के द्वार छोड़कर वे गुरु के साथ चल पड़े। कुछ षड्यंत्रकारी भी अपने शिष्यों के साथ गुरु के पीछे-पीछे चले: उन्होंने कहा, "हम भी उसी स्थान पर चमत्कार करेंगे जहाँ तपस्वी गौतम (बुद्ध) ने अपना चमत्कार किया था।"

कुछ समय बाद गुरु श्रावस्ती नगर पहुंचे। राजा ने उनसे पूछा, "क्या यह सच है, महाराज, कि आप चमत्कार करने वाले हैं, जैसा कि लोग कहते हैं?" "जी हां, यह सच है," उन्होंने कहा। "कब?" राजा ने पूछा। "आज से सात दिन बाद, जून माह की पूर्णिमा को।" "क्या मैं एक मंडप बनाऊं, महाराज?" "शांति, महाराज: जिस स्थान पर मैं अपना चमत्कार करूंगा, वहां सक्का (इंद्र) बारह कुंड (4.23 किमी) के घेरे में रत्नों का एक मंडप बनाएंगे।" "क्या मैं इस बात की घोषणा नगर में करूं, महाराज?" "घोषणा कीजिए, महाराज।" राजा ने सत्य के उद्घोषक को एक अलंकृत हाथी पर सवार करके यह घोषणा करने के लिए भेजा: "सुसमाचार! गुरु सात दिन बाद श्रावस्ती नगर के द्वार पर, एक गांठदार आम के वृक्ष के नीचे, षड्यंत्रकारियों को भ्रमित करने के लिए चमत्कार करने वाले हैं!" यह घोषणा प्रतिदिन की जाती

थी। जब साजिशकर्ताओं को यह खबर मिली कि चमत्कार एक गांठदार आम के पेड़ के नीचे होगा, तो उन्होंने श्रावस्ती शहर के पास के सभी आम के पेड़ों को कटवा दिया और उनके मालिकों को इसके लिए पैसे दिए।

पूर्णिमा की रात सत्य के उद्घोषक ने घोषणा की, "आज (*4) सुबह चमत्कार होगा।" देवताओं (देवदूतों) की शक्ति से ऐसा लगा मानो सारा भारत द्वार पर खड़ा हो और घोषणा सुन रहा हो; जिसके मन में जाने की इच्छा थी, वह सब श्रावस्ती नगर में पहुँच गया: बारह मील (x 4.23 किमी) तक भीड़ फैली हुई थी।

सुबह-सुबह गुरुजी भिक्षा मांगने निकले। राजा का माली, गंडा या नॉट नाम का व्यक्ति, राजा के लिए एक बढ़िया पका हुआ आम लेकर जा रहा था; आम पूरी तरह पका हुआ था, एक टोकरी जितना बड़ा, तभी उसने गुरुजी को नगर द्वार पर देखा। "यह फल गुरुजी के योग्य है," उसने कहा और उन्हें दे दिया। गुरुजी ने उसे लिया और वहीं एक तरफ बैठकर खा लिया। खाने के बाद उन्होंने कहा, "आनंद, माली को यह पत्थर दे दो, ताकि वह इसे यहाँ लगा दे; यही नॉट-आम का वृक्ष होगा।" बड़े भिक्षु ने वैसा ही किया। माली ने जमीन में एक गड्ढा खोदा और उसमें पत्थर लगा दिया। जैसे ही पत्थर फटा, जड़ें फूट पड़ीं और हल के डंडे जितना लंबा एक लाल अंकुर फूट पड़ा; भीड़ के देखते ही देखते वह सौ भुजाओं जितना लंबा आम का वृक्ष बन गया, जिसका तना पचास भुजाओं जितना और शाखाएँ भी पचास भुजाओं जितनी ऊँची थीं; उसी समय फूल खिले और फल पक गए; आकाश को भर देने वाला वह वृक्ष मधुमक्खियों से आच्छादित था, सुनहरे फलों से लदा हुआ था; जब हवा चलती तो मीठे फल गिरते; तब भक्तगण आकर फल खाते और विश्राम करते। संध्याकाल में देवदूतों के राजा ने इस विषय पर विचार करते हुए यह समझा कि उन्हें सात अनमोल वस्तुओं का एक मंडप बनाने का कार्य सौंपा गया है। अतः उन्होंने विश्वकर्मा को भेजा और उनसे सात अनमोल वस्तुओं का बारह कुंड (4.23 किमी) का एक मंडप बनवाया, जो चारों ओर से नीले कमलों से ढका हुआ था। इस प्रकार दस हजार लोकों के देवदूत एकत्रित हुए। गुरु ने षड्यंत्रकारियों को भ्रमित करने के लिए अपने शिष्यों के बीच असाधारण चमत्कार किया, जिससे अनेकों शिष्यों में आस्था उत्पन्न हुई, फिर वे उठे और बुद्ध के आसन पर बैठकर निर्वाण/मुक्ति की ओर ले जाने वाले धर्ममार्ग का उपदेश दिया। बीस करोड़ (10 मिलियन) प्राणियों ने जीवन के जल का पान किया। फिर, यह देखने के लिए ध्यान करते हुए कि पूर्व बुद्ध चमत्कार करने पर कहाँ जाते थे, और यह जानकर कि वे तैंतीस के स्वर्ग में जाते थे, वे बुद्ध के आसन से उठे, अपना दाहिना पैर युगंधरा पर्वत (*5) के शिखर पर रखा, और अपने बाएं पैर से सिनेरू की चोटी पर चले गए, उन्होंने पीले पत्थर के सिंहासन पर बैठकर महान मूंगा वृक्ष (*6) के नीचे वर्षा ऋतु का आरंभ किया; तीन महीने तक उन्होंने देवताओं (देवदूतों) को पारलौकिक शिक्षा (*7) पर प्रवचन दिया।

लोगों को पता नहीं था कि गुरु कहाँ गए हैं; उन्होंने देखा और कहा, "चलो घर चलते हैं," और बरसात के मौसम में वहीं रहने लगे। जब धार्मिक पर्व समाप्त होने वाला था और पर्व निकट था, तब महान भिक्षु मोग्गल्याना ने जाकर भगवान बुद्ध को इसकी सूचना दी। इस पर गुरु ने उनसे पूछा, "सारिपुत्र अब कहाँ हैं?" "हे प्रभु, उस चमत्कार के बाद जिससे वे प्रसन्न हुए, वे पाँच सौ भिक्षुओं के साथ समकस्सा नगर में रहे और अभी भी वहीं हैं।" "मोग्गल्याना, आज से सातवें दिन मैं समकस्सा के द्वार से उतरूँगा। तथागत (बुद्ध) के दर्शन की इच्छा रखने वाले समकस्सा नगर में एकत्रित हों।" भिक्षु मान गए, गए और लोगों को बताया: उन्होंने पलक झपकते ही श्रावस्ती नगर से समकस्सा तक, तीस मील (4.23 किमी) की दूरी, पूरी मंडली को पहुँचा दिया। उपवास समाप्त होने और पर्व मनाए जाने पर, गुरु ने राजा सक्का (इंद्र) को बताया कि वे मनुष्यलोक में लौटने वाले हैं। तब सक्का (इंद्र) ने विश्वकर्मा को बुलवाया और उनसे कहा, "दशबल (बुद्ध) के मनुष्यलोक में उतरने के लिए एक सीढ़ी बनाओ।" उन्होंने सीढ़ी का शीर्ष सिनेरु पर्वत की चोटी पर और उसका निचला भाग समकस्सा द्वार के पास रखा, और इनके बीच में तीन सीढ़ियाँ अगल-बगल बनाईं: एक रत्नों की, एक चाँदी की और एक सोने की। रेलिंग और कंगनी सात बहुमूल्य वस्तुओं से बनी थीं। गुरु ने जगत के उद्धार के लिए चमत्कार किया और रत्नों से बनी मध्य सीढ़ी से नीचे उतरे। सक्का (इंद्र) ने कुंड और वस्त्र धारण किए, सूर्य ने याक की पूंछ का पंखा, समस्त प्राणियों के स्वामी ब्रह्मा ने धूप सेंकने के लिए छत्र धारण किया, और दस हजार लोकों के देवताओं ने दिव्य मालाओं और सुगंधों से पूजा की। जब गुरुजी सीढ़ियों के नीचे खड़े हुए, तो सबसे पहले वरिष्ठ भिक्षु सारिपुत्र ने उनका अभिवादन किया, उसके बाद बाकी साथियों ने।

इस सभा के बीच गुरु ने सोचा, "मोग्गल्याना को अलौकिक शक्ति से युक्त दिखाया गया है, उपाली को धर्म, पवित्र धार्मिक मार्ग में पारंगत दिखाया गया है, परन्तु सारिपुत्र के पास मौजूद उच्च ज्ञान का गुण प्रकट नहीं हुआ है। मेरे सिवा किसी और के पास उनके जैसा पूर्ण और संपूर्ण ज्ञान नहीं है; मैं उनके ज्ञान के गुण को प्रकट करूँगा।" सबसे पहले उन्होंने एक ऐसा प्रश्न पूछा जो सामान्य लोगों से पूछा जाता है, और सामान्य लोगों ने उसका उत्तर दिया। फिर उन्होंने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) के दायरे में आने वाला एक प्रश्न पूछा, और प्रथम मार्ग (सम्मोहन) के लोगों ने उसका उत्तर दिया, परन्तु सामान्य लोगों को इसके बारे में कुछ भी पता नहीं था। इसी प्रकार उन्होंने द्वितीय और तृतीय मार्ग (सम्मोहन) के लोगों, संतों, प्रमुख शिष्यों के दायरे में आने वाले प्रश्न पूछे; और प्रत्येक मामले में, उनसे नीचे के लोग उत्तर देने में असमर्थ थे, परन्तु उनसे ऊपर के लोग उत्तर दे सके। फिर उन्होंने सारिपुत्र की क्षमता के भीतर एक प्रश्न पूछा, और इसका उत्तर वरिष्ठ भिक्षु दे सके, परन्तु अन्य नहीं। लोगों ने पूछा, "गुरु को उत्तर देने वाले ये वरिष्ठ भिक्षु कौन हैं?" उन्हें बताया गया कि वे धर्म के सेनापति थे और उनका नाम सारिपुत्र था। "अहा, उनकी बुद्धि कितनी महान है!" उन्होंने कहा। इसके बाद से वरिष्ठ भिक्षु की महान बुद्धि का गुण मनुष्यों और देवताओं (देवदूतों) को ज्ञात हो गया। तब गुरु ने उनसे कहा,

"कुछ लोगों को अभी परिवीक्षा अवधि पूरी करनी बाकी है, और कुछ लोग लक्ष्य तक पहुंच चुके हैं:
उनके अलग-अलग तौर-तरीके यही कहते हैं, क्योंकि आप तो पूरी बात जानते ही हैं (*8)।"
इस प्रकार एक ऐसा प्रश्न पूछकर जो बुद्ध के दायरे में आता है, उन्होंने आगे कहा, "सारिपुत्र, संक्षेप में कहें तो, इस विषय का सभी अर्थों में क्या अर्थ है?" वरिष्ठ भिक्षु ने इस समस्या पर विचार किया। उन्होंने सोचा, "गुरुजी यह पूछ रहे हैं कि भिक्षुओं को किस उचित तरीके से प्रगति प्राप्त करनी चाहिए, चाहे वे निम्न मार्गों पर हों या संत?" सामान्य प्रश्न के संबंध में उन्हें कोई संदेह नहीं था। लेकिन फिर उन्होंने सोचा, "व्यवहार के उचित तरीके को अस्तित्व के मूल तत्वों (*9) के अनुसार अनेक तरीकों से वर्णित किया जा सकता है, और इसी प्रकार आगे भी; अब मैं गुरुजी के अर्थ को किस प्रकार समझाऊं?" वे अर्थ को लेकर संशय में थे। गुरुजी ने सोचा, "सारिपुत्र को सामान्य प्रश्न में तो कोई संदेह नहीं है, लेकिन इस बात को लेकर संशय है कि मैं इसके किस विशेष पहलू पर विचार कर रहा हूं। यदि मैं कोई संकेत नहीं दूंगा, तो वह कभी उत्तर नहीं दे पाएगा, इसलिए मैं उसे एक संकेत दूंगा।" यह संकेत उन्होंने यह कहकर दिया, "देखो, सारिपुत्र: क्या तुम इसे सत्य मानते हो?" (किसी बिंदु का उल्लेख करते हुए)। सारिपुत्र ने इस बात को स्वीकार कर लिया।

इस प्रकार दिए गए संकेत से, वह समझ गया कि सारिपुत्र ने उसका अर्थ समझ लिया है और अस्तित्व के मूल तत्वों से शुरू करते हुए पूर्ण उत्तर देगा। तब वह प्रश्न वरिष्ठ भिक्षु के समक्ष सौ संकेतों की तरह, नहीं, बल्कि हज़ार संकेतों की तरह स्पष्ट हो गया; और उन्होंने गुरु द्वारा दिए गए संकेत पर उस प्रश्न का उत्तर दिया जो बुद्ध के दायरे में आता था।

गुरु ने बारह लीग (x 4.23 किमी) भूमि में फैले इस समूह को (निर्वाण/मोक्ष के लिए) धार्मिक मार्ग का उपदेश दिया: तीस करोड़ (x 10 मिलियन) प्राणियों ने जीवन के जल का सेवन किया।

कंपनी भंग कर दी गई, और गुरुजी भिक्षा मांगने के लिए तीर्थयात्रा पर निकले और कुछ समय बाद श्रावस्ती नगर पहुंचे। अगले दिन, श्रावस्ती नगर में भिक्षा मांगने के बाद, वे अपने भ्रमण से लौटे और भिक्षुओं को उनके कर्तव्य के बारे में बताकर अपने सुगंधित कक्ष में प्रवेश किया। शाम के समय, भिक्षुओं ने सत्य के हॉल में बैठकर गुरुजी के उच्च गुणों की चर्चा की। "हे सज्जनों, सारिपुत्र ज्ञान में महान हैं; उनका ज्ञान व्यापक, तीव्र, तीक्ष्ण और तीव्र है। गुरुजी ने एक प्रश्न संक्षिप्त में पूछा, और उसका विस्तृत उत्तर दिया।" गुरुजी ने प्रवेश करते हुए पूछा कि वे वहां बैठकर क्या बातें कर रहे थे। उन्होंने उन्हें बताया। "यह पहली बार नहीं है, भिक्षुओं," उन्होंने कहा, "कि उन्होंने संक्षिप्त प्रश्न का विस्तृत उत्तर दिया है, बल्कि उन्होंने पहले भी ऐसा किया है;" और उन्होंने उन्हें अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व वन में रहते थे, उनका जन्म एक हिरण के रूप में हुआ था। राजा को शिकार का बहुत शौक था और वे एक शक्तिशाली पुरुष थे: वे अपने आप को पुरुष कहलाने के योग्य नहीं समझते थे। एक दिन जब वे शिकार पर गए, तो उन्होंने अपने दरबारियों से कहा, "जो कोई भी हिरण को जाने देगा, उसे ऐसा दंड मिलेगा।" उन्होंने सोचा, "कोई घर में खड़ा रहे तो अन्न भंडार न मिले (*10)। जब कोई हिरण आ जाए, तो उसे किसी भी तरह राजा के पास ले जाना ही होगा।" उन्होंने आपस में एक समझौता किया और राजा को रास्ते के अंत में बिठा दिया। फिर उन्होंने एक बड़े जंगल को घेर लिया और लकड़ी की छड़ियों और इसी तरह की चीजों से जमीन पर पीटना शुरू कर दिया। सबसे पहले हमारे हिरण को बुलाया गया। वह घनी वनस्पति के चारों ओर तीन बार चक्कर लगाता रहा, भागने का मौका ढूंढता रहा: चारों ओर उसने देखा कि आदमी बिना रुके खड़े हैं, एक दूसरे से धक्का-मुक्की कर रहे हैं और तीर चला रहे हैं; केवल राजा के पास ही उसे मौका दिखाई दिया। आँखों में चमक लिए वह राजा की ओर झपटा, मानो उसकी आँखों में रेत फेंक दी हो। राजा ने उसे तुरंत देख लिया, तीर चलाया, लेकिन निशाना चूक गया। आपको पता होना चाहिए कि ये हिरण तीरों से बचने में बहुत चतुर होते हैं। जब तीर सीधे उनकी ओर आते हैं, तो हिरण स्थिर खड़े रहते हैं और उन्हें उड़ने देते हैं; अगर तीर पीछे से आते हैं, तो वे उनसे भी तेज़ उड़ जाते हैं; अगर ऊपर से गिरते हैं, तो वे अपनी पीठ झुका लेते हैं; अगर बगल से आते हैं, तो वे थोड़ा सा मुड़ जाते हैं; अगर तीर पेट पर लगते हैं, तो वे लुढ़क जाते हैं, और तीर निकल जाने के बाद हिरण हवा में उड़ते बादल की तरह तेज़ी से निकल जाते हैं। इस प्रकार, जब राजा ने इस हिरण को लुढ़कते देखा, तो उसे लगा कि उसे तीर लग गया है और उसने ज़ोर से पुकारा। हिरण हवा की तरह तेज़ी से उठा और आदमियों के घेरे को तोड़ते हुए भाग गया। हिरण को जाते देख दोनों ओर के दरबारी इकट्ठा हो गए और पूछा, "हिरण किसके पास गया?" "राजा के पास!" "लेकिन राजा चिल्ला रहा है, मैंने उसे मारा! उसने किसे मारा? हमारे राजा का निशाना चूक गया, मैं तुम्हें बताता हूँ! उसने ज़मीन पर मारा!" इस प्रकार उन्होंने राजा का भरपूर मज़ाक उड़ाया। "ये लोग मेरा मज़ाक उड़ा रहे हैं," राजा ने सोचा; "ये मेरी कीमत नहीं जानते।" फिर अपनी कमर कस कर, पैदल और हाथ में तलवार लिए, वह तेज़ी से दौड़ पड़ा और चिल्लाया, "मैं हिरण को पकड़ लूँगा!" उसने उसे अपनी नज़र में रखा और तीन मील (4.23 किमी) तक उसका पीछा किया। हिरण जंगल में घुस गया, और राजा भी उसमें घुस गया। अब हिरण के रास्ते में एक गड्ढा था, एक बड़ा गड्ढा जहाँ एक पेड़ सड़ गया था, साठ भुजाओं जितना गहरा, और तीस भुजाओं की गहराई तक पानी से भरा हुआ, फिर भी खरपतवारों से ढका हुआ। हिरण ने पानी की गंध सूँघी, और यह जानते हुए कि यह एक गड्ढा है, अपने रास्ते से थोड़ा हट गया। लेकिन राजा सीधे आगे बढ़ता गया और गड्ढे में गिर गया। हिरण को उसके कदमों की आहट सुनाई नहीं दी, इसलिए वह मुड़ा; और किसी को न देखकर समझ गया कि

वह गड्ढे में गिर गया होगा। इसलिए वह जाकर देखने लगा और उसे गंभीर संकट में पाया।गहरे पानी में संघर्ष करते हुए, हिरण ने अपने किए पर कोई द्वेष नहीं दिखाया, बल्कि दयापूर्वक सोचा, "राजा को मेरी आँखों के सामने मरने मत दो: मैं उसे इस कष्ट से मुक्त करूँगा।" गड्ढे के किनारे खड़े होकर उसने पुकारा, "हे राजा, भयभीत मत हो, मैं तुम्हें तुम्हारे कष्ट से बचाऊँगा।" फिर उसने उतनी ही लगन से, मानो वह अपने प्रिय पुत्र को बचा रहा हो, चट्टान पर सहारा लिया; और उस राजा को, जो उसे मारने आया था, साठ भुजाओं की गहराई वाले गड्ढे से बाहर निकाला, उसे सांत्वना दी, अपनी पीठ पर बिठाया, जंगल से दूर ले गया और उसकी सेना से कुछ दूरी पर उसे उतार दिया। फिर उसने राजा को उपदेश दिया और उसे पंच सद्‌गुणों में स्थापित किया। लेकिन राजा उस महान प्राणी को छोड़कर नहीं जा सका, इसलिए उसने उससे कहा, “हे हिरणों के स्वामी, मेरे साथ बनारस चलिए, मैं आपको बनारस का आधिपत्य देता हूँ, जो बारह मील (4.23 किमी) में फैला हुआ है, ताकि आप इस पर शासन कर सकें।” लेकिन उसने कहा, “हे महाराज, मैं एक प्राणी हूँ, और मुझे कोई राज्य नहीं चाहिए। यदि आपको मेरी थोड़ी भी परवाह है, तो मैंने आपको जो अच्छे नियम सिखाए हैं, उनका पालन कीजिए, और अपनी प्रजा को भी उनका पालन करना सिखाइए।” यह सलाह देकर वह जंगल में लौट गया। राजा अपनी सेना के पास लौटा, और हिरण के नेक गुणों को याद करके उसकी आँखों में आँसू भर आए। अपनी सेना के एक दल से घिरा हुआ वह शहर में घूमा, जबकि धर्म के मार्ग का ढोल बज रहा था, और उसने यह घोषणा करवाई: “आज से इस शहर के सभी निवासी पाँच सद्‌गुणों का पालन करें।”और यह घोषणा करवाई गई: "आज से इस नगर के सभी निवासी पाँचों सद्‌गुणों का पालन करें।"और यह घोषणा करवाई गई: "आज से इस नगर के सभी निवासी पाँचों सद्‌गुणों का पालन करें।"

लेकिन उन्होंने किसी को भी उस महान सत्ता द्वारा उन पर किए गए उपकार के बारे में नहीं बताया। अनेक उत्तम मांस खाने के बाद, शाम के समय, वे अपने भव्य पलंग पर लेट गए, और भोर होते ही महान सत्ता के महान गुणों को याद करते हुए, वे उठे और पलंग पर पालथी मारकर बैठ गए, और आनंद से भरे हृदय से छह श्लोकों में अपनी आकांक्षाओं का जाप किया:

हे बुद्धिमान मनुष्य, आशा बनाए रखो, और अपने साहस को कमजोर मत पड़ने दो।
मैं स्वयं को देखता हूँ, जिसने अब अपनी इच्छा का लक्ष्य प्राप्त कर लिया है।
"हे मनुष्य, आशा बनाए रखो, यदि तुम बुद्धिमान हो, तो कष्ट सहते हुए भी मत थको।"
मैं स्वयं को देखता हूँ, जो लहरों से लड़ते हुए किनारे तक पहुँचा हूँ।
हे मनुष्य, यदि तुम बुद्धिमान हो तो परिश्रम करते रहो, और अपने साहस को शिथिल न होने दो।
मैं स्वयं को देखता हूँ, जिसने अब अपनी इच्छा का लक्ष्य प्राप्त कर लिया है।
हे मनुष्य, यदि तुम बुद्धिमान हो तो परिश्रम करते रहो, कष्ट सहते हुए भी मत थको।
मैं स्वयं को देखता हूँ, जो लहरों से लड़ते हुए किनारे तक पहुँचा हूँ।
"जो बुद्धिमान है, वह पीड़ा से अभिभूत होने पर भी,
मैं फिर कभी सुख की आशा करना नहीं छोडूंगा।
इनमें से कई पुरुषों की भावनाएं हैं, जिनमें खुशी और दुख दोनों शामिल हैं:
वे इसके बारे में सोचते भी नहीं, फिर भी मृत्यु की ओर चल पड़ते हैं।
जो सोचा नहीं जाता, वह घटित हो जाता है; और जिसके बारे में सोचा जाता है, वह असफल हो जाता है।
किसी पुरुष या स्त्री की खुशी के लिए केवल विचार ही पर्याप्त नहीं होते।
जब राजा इन पंक्तियों का जाप कर रहे थे, तभी सूर्योदय हो गया। उनके पुजारी राजा का हालचाल जानने के लिए सुबह-सुबह आए थे और द्वार पर खड़े होकर उन्होंने इस जाप की आवाज़ सुनी और मन ही मन सोचा, "कल राजा शिकार पर गए थे। निःसंदेह उनका हिरण चूक गया होगा और दरबारियों द्वारा उपहास किए जाने पर उन्होंने कहा होगा कि वे स्वयं शिकार को पकड़कर मार डालेंगे। फिर निस्संदेह उन्होंने एक योद्धा होने के नाते अपने अभिमान में आकर हिरण का पीछा किया होगा और साठ भुजाओं के बराबर गहरे गड्ढे में गिर गए होंगे; और दयालु हिरण ने राजा के इस अपराध की परवाह किए बिना उन्हें बाहर निकाल लिया होगा। इसीलिए राजा यह जाप कर रहे हैं, मुझे लगता है।" इस प्रकार ब्राह्मण ने राजा के जाप का प्रत्येक शब्द सुना; और राजा और हिरण के बीच जो कुछ भी हुआ, वह एक पॉलिश किए हुए दर्पण में प्रतिबिंबित चेहरे की तरह स्पष्ट हो गया। उन्होंने अपनी उंगलियों से द्वार पर दस्तक दी। राजा ने पूछा, "कौन है?" "मैं हूँ, महाराज, आपका पुजारी।" “अंदर आइए, गुरुजी,” राजा ने कहा और द्वार खोल दिया। वह अंदर आया और राजा की विजय के लिए प्रार्थना करते हुए एक तरफ खड़ा हो गया। फिर उसने कहा, “हे महान राजा! मैं जानता हूँ कि जंगल में आपके साथ क्या हुआ था। जब आप एक हिरण का पीछा कर रहे थे, तो आप एक गड्ढे में गिर गए, और हिरण गड्ढे की पत्थर की दीवारों पर आराम करते हुए (*11) आपको बाहर ले आया। इसलिए आपने उसकी उदारता को याद करते हुए एक भजन गाया।” फिर उसने दो छंद पढ़े:

"वह हिरण जो हाल ही में एक खड़ी पहाड़ी पर आपका शिकार था,
उन्होंने साहसपूर्वक आपको जीवनदान दिया, क्योंकि वे लोभ और घृणा से मुक्त थे।
"भयानक गड्ढे से, मृत्यु के चंगुल से बाहर,"
एक चट्टान पर झुकना (*11) (जरूरत के समय एक दोस्त)

उस विशाल हिरण ने तुम्हारी रक्षा की: तुमने यह बात सही कही थी।
उनका मन घृणा या लोभ से बहुत दूर है।
यह सुनकर राजा ने सोचा, "क्या!" "वह आदमी मेरे साथ शिकार पर नहीं गया था, फिर भी उसे सारी बात पता है! उसे कैसे पता चल सकता है? मैं उससे पूछूंगा"; और उसने नौवां श्लोक दोहराया:

"हे ब्राह्मण! क्या तुम उस दिन वहाँ थे?"
या आपने किसी अन्य गवाह से सुना?
आपने जुनून का पर्दा हटा दिया है:
आप जानते हैं, आपकी सारी बुद्धिमत्ता मुझे भयभीत करती है।
लेकिन ब्राह्मण ने कहा, "मैं कोई सर्वज्ञानी बुद्ध नहीं हूँ; मैंने केवल आपके द्वारा गाए गए भजन को बिना अर्थ खोए सुना, और इस प्रकार तथ्य मेरे सामने स्पष्ट हो गया।" इसे समझाने के लिए उन्होंने दसवाँ श्लोक दोहराया:

हे मनुष्यों के स्वामी! मैंने वह बात नहीं सुनी,
और मैं उस दिन वहां मौजूद भी नहीं था:
लेकिन आपने जिन छंदों को मधुरता से गाया,
बुद्धिमान लोग मामले की असलियत समझ सकते हैं।
राजा प्रसन्न हुआ और उसने उसे एक बहुमूल्य उपहार दिया।

तब से राजा दान-पुण्य और अच्छे कर्मों में लीन हो गया, और उसकी प्रजा भी अच्छे कर्मों में लीन होकर स्वर्ग में चली गई।

एक दिन ऐसा हुआ कि राजा अपने पुरोहित के साथ अपने उद्यान में लक्ष्य पर निशाना लगाने गए। उस समय इंद्र यह सोच रहे थे कि उनके चारों ओर इतने असंख्य देवदूत (पुत्र और पुत्रियाँ) कहाँ से आए। सोचते-सोचते उन्हें पूरी कहानी समझ में आ गई: कैसे उस हिरण ने राजा को गड्ढे से बचाया था, कैसे वह सद्‌गुणों में स्थिर हुए थे, और कैसे इस राजा की शक्ति से बहुतों ने अच्छे कर्म किए और स्वर्ग भर गया था; और अब राजा अपने उद्यान में लक्ष्य पर निशाना लगाने गए थे। फिर वे भी वहाँ गए ताकि सिंह की वाणी से हिरण की महानता का बखान कर सकें, और यह बता सकें कि वे इंद्र हैं, और वायु में स्थिर होकर धर्म के मार्ग पर प्रवचन दे सकें, दया और पंच सद्‌गुणों का उपदेश दे सकें, और फिर लौट आएँ। अब राजा ने लक्ष्य पर निशाना लगाने के लिए धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ाई और बाण को प्रत्यंचा पर जड़ा। उसी क्षण इंद्र ने अपनी शक्ति से राजा और लक्ष्य के बीच हिरण को प्रकट कर दिया; राजा ने उसे देखकर अपना शिकार नहीं छोड़ा। तब इंद्र ने पुरोहित के शरीर में प्रवेश करके राजा को निम्नलिखित श्लोक सुनाया:

"तुम्हारा बाण कई शक्तिशाली चीजों के लिए मृत्यु का कारण है।"
आप इसे तार पर चुपचाप क्यों पकड़े रहते हैं?
फिर तीर चलाओ और हिरण को मार डालो:
हे सबसे बुद्धिमान राजा, यह तो सम्राटों का भोजन है!
इस पर राजा ने एक श्लोक में उत्तर दिया:

"मैं जानता हूँ, ब्राह्मण, मुझे उतना ही यकीन है जितना आपको।"
मैं कसम खाता हूँ, हिरण योद्धाओं का मांस है।
लेकिन मैं किए गए सेवा कार्य के लिए आभारी हूं।
इसलिए अब मुझे हत्या करने से रोको।
तब सक्का (इंद्र) ने कुछ श्लोक दोहराए:

"हे महामहिम सम्राट, यह कोई हिरण नहीं है! बल्कि यह एक दानव है।"
तुम मनुष्यों के राजा हो; परन्तु इसे मार डालो— तुम देवताओं (देवदूतों) के राजा बनोगे।
लेकिन अगर तुम संकोच करो, हे वीर राजा!
हिरण को मारना, क्योंकि वह तुम्हारा मित्र है:
मृत्यु की ठंडी नदी (*12) और मृत्यु के भयानक राजा (*13) के लिए
आप, आपकी पत्नी और आपके बच्चे नीचे उतरेंगे।
इस पर राजा ने दो छंद दोहराए:

ऐसा ही हो: मृत्यु की नदी और मृत्यु के राजा के लिए

मुझे, मेरी पत्नियों और बच्चों को, मेरे पूरे समूह को भेज दो।
दोस्तों और साथियों की कसम; मैं यह काम नहीं करूंगा।
और मेरे हाथों से इस हिरण को नहीं मारा जाएगा।
एक बार एक भयानक, खौफनाक जंगल में
उसी हिरण ने मुझे असहनीय पीड़ा से बचाया।
मैं अपने सहायक की मृत्यु की कामना कैसे कर सकता हूँ?
इतनी सेवा तो आपने बहुत पहले ही कर दी थी?
तब सक्का (इंद्र) पुरोहित के शरीर से प्रकट हुए, अपना वास्तविक रूप धारण किया और वायु में स्थिर होकर दो श्लोकों का पाठ किया, जो राजा के महान गुणों को दर्शाते थे।

"हे सच्चे और वफादार मित्र, पृथ्वी पर दीर्घायु हो!"
इस क्षेत्र में सत्य और अच्छाई से सुकून मिलता है;
फिर आपके आसपास की बहुत सी लड़कियां आएंगी
जबकि आप इंद्र (*14) के रूप में देवताओं (देवदूतों) के बीच शासन करेंगे।
"भावुकता से मुक्त, सदा शांत हृदय के साथ,"
जब अजनबी किसी चीज की चाहत रखते हैं, तो उनकी अधूरी जरूरत को पूरा करें;
जैसे ही आपको शक्ति दी जाती है, वैसे ही दें और अपनी भूमिका निभाएं (*15),
निर्दोष रहो, जब तक स्वर्ग तुम्हारा अंतिम प्रतिफल न हो।
इस प्रकार कहते हुए, देवताओं (देवदूतों) के राजा सक्का (इंद्र) ने आगे कहा, "हे राजा, मैं यहाँ आपकी परीक्षा लेने आया था, और आपने मुझे कोई मौका नहीं दिया। बस सावधान रहें।" और यह सलाह देकर वे अपने स्थान लौट गए।

जब गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने कहा: "यह पहली बार नहीं है, भिक्षुओं, कि सारिपुत्र को वह सब कुछ विस्तार से पता था जो केवल सामान्य शब्दों में कहा गया था; बल्कि ऐसा पहले भी हो चुका है।" फिर उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "उस समय आनंद राजा थे, सारिपुत्र पुरोहित थे, और मैं स्वयं हिरण था।"

फुटनोट:

(1) जयद्दीसा जातक, संख्या 513

(2) सेठी ने चंदन का कटोरा एक ऊँचे खंभे पर रख दिया था और किसी भी पवित्र व्यक्ति को उसे नीचे उतारने की चुनौती दी थी। पिंडोला जादुई शक्ति से हवा में उठ खड़ा हुआ और उसे ले आया। इसके लिए गुरु ने उसे फटकारा, क्योंकि उसने अपनी महान शक्ति का उपयोग अनुचित उद्देश्य के लिए किया था।

(3)वरितम पढ़ना.

(4) पूर्वी दिन सूर्यास्त से सूर्यास्त तक माना जाता है।

(5) माउंट मेरु या सिनेरू, भारतीय ओलंपस, पहाड़ियों के सात संकेंद्रित वृत्तों से घिरा हुआ है, जिनमें से सबसे भीतरी युगंधरा है।

(6) उस वृक्ष का नाम एरिथमिया इंडिका है; इंद्र के स्वर्ग में एक विशाल वृक्ष उगता था।

(7)अभिधम्म.

(8)संखतधम्म का अर्थ अराहा या अशेखा प्रतीत होता है।

(9) पाँच खंड।

(10)निस्संदेह एक कहावत है: कोई सबसे स्पष्ट चीजों को भी नज़रअंदाज़ कर सकता है।

(11) इसका अर्थ हो सकता है "पहले पत्थर से अपनी ताकत आज़माना"।

(12) वेटरानी.

(13) यम.

(14)वासावो.

(15) भूत्वा, "खाया हुआ", समय पर लागू, का अर्थ है "पास करना": भूत्वा द्वादसा वासनि, मह। 253.

पुस्तक XIV. पकिन्नाका-निपाता :

स्रोत : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित

पिछला <<<<-----||-484-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 484
सालिकेदारा जातक

"चावल की फसल," इत्यादि—यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, एक भिक्षु के बारे में जो अपनी माता का सहारा था। इस घटना का वर्णन साम जन्म (*1) में किया जाएगा। तब गुरु ने उस भिक्षु को बुलवाया और पूछा, "भाई, क्या यह सच है कि तुम गृहस्थों का सहारा हो?" "जी हाँ।" "वे कौन हैं?" "मेरे माता-पिता।" गुरु ने कहा, "शाबाश, भाई! पुराने समय के बुद्धिमान लोग, यहाँ तक कि जब वे निम्न प्राणियों के रूप में, तोते के रूप में जन्म लेकर भी, अपने माता-पिता के बूढ़े हो जाने पर उन्हें घोंसले में रखते थे और अपनी चोंच में भोजन लाकर उन्हें खिलाते थे।" ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की एक कथा सुनाई।

एक समय की बात है, राजगृह नगरी में मगध नामक एक राजा का शासन था। उस समय नगरी से उत्तर-पूर्व दिशा में सालिंदिया नामक एक ब्राह्मण गाँव था। इसी उत्तर-पूर्वी क्षेत्र में मगध की संपत्ति थी। सालिंदिया में कोसियागोट्टा (*2) नामक एक ब्राह्मण रहता था, जिसके पास एक हजार एकड़ (*3) भूमि थी, जहाँ वह धान उगाता था। जब फसल तैयार हो जाती थी, तो वह एक मजबूत बाड़ बनवाता था और भूमि का प्रबंधन अपने लोगों को सौंप देता था, एक को पचास एकड़, दूसरे को साठ एकड़, इस प्रकार वह अपनी संपत्ति का लगभग पाँच सौ एकड़ हिस्सा बाँट देता था। शेष पाँच सौ एकड़ भूमि उसने एक मजदूर को मजदूरी पर दे दी, और वह वहाँ एक झोपड़ी बनाकर दिन-रात रहता था। अब इस संपत्ति के उत्तर-पूर्व में एक पहाड़ी की चोटी पर रेशम-कपास के पेड़ों का एक विशाल वन (*4) था, और इस वन में बड़ी संख्या में तोते रहते थे।

उस समय बोधिसत्व का जन्म तोतों के इस झुंड में, तोतों के राजा के पुत्र के रूप में हुआ। वे बड़े होकर सुंदर और बलवान हुए, उनका शरीर बैलगाड़ी के पहिये के आधे के बराबर था। उनके पिता, जो अब बूढ़े हो चुके थे, ने उनसे कहा, "मैं अब दूर खेतों में नहीं जा सकता; तुम इस झुंड की देखभाल करो," और इसका आधिपत्य अपने पुत्र को सौंप दिया। अगले दिन से उन्होंने अपने माता-पिता को भोजन की तलाश में जाने से मना कर दिया; लेकिन जब पूरा झुंड चला गया, तो वे हिमालय की पहाड़ियों पर उड़ गए, और वहाँ उगे जंगली धान के ढेर खाकर तृप्त होकर लौटे, और अपने माता-पिता के लिए पर्याप्त भोजन लाए, और उन्हें खिलाया।

एक दिन तोतों ने उनसे एक सवाल पूछा। उन्होंने कहा, "पहले मगध के खेत में इस समय तक चावल पक जाते थे; क्या अब चावल उगे हैं या नहीं?" उन्होंने जवाब दिया, "जाकर देख लो," और फिर दो तोतों को पता लगाने के लिए भेजा। तोते चले गए और मगध की भूमि में उस हिस्से में उतरे जहाँ एक मज़दूर पहरा दे रहा था; उन्होंने चावल खाए और एक बाली चावल अपने साथ अपने जंगल में ले गए और उसे उस महान व्यक्ति के चरणों में रखकर कहा, "यहाँ ऐसे ही चावल उगते हैं।" अगले दिन वह अपने सारे तोतों के साथ खेत में गए और उतरे। वह आदमी इधर-उधर भागता रहा, पक्षियों को भगाने की कोशिश करता रहा, लेकिन उन्हें भगा नहीं सका। बाकी तोतों ने चावल खाए और खाली चोंच लेकर चले गए; लेकिन तोतों के राजा ने बहुत सारा चावल इकट्ठा किया और उसे अपने माता-पिता के पास ले आए। अगले दिन तोतों ने वहाँ फिर से चावल खाए, और ऐसा ही चलता रहा। तब उस आदमी ने सोचना शुरू किया, "अगर ये जीव कुछ और दिन ऐसे ही खाते रहे तो एक दाना भी नहीं बचेगा। ब्राह्मण चावल की कीमत लगवाएगा और मुझ पर जुर्माना लगाएगा। मैं जाकर उसे बताता हूँ।" मुट्ठी भर चावल और एक भेंट लेकर वह ब्राह्मण से मिलने गया, उसे प्रणाम किया और एक तरफ खड़ा हो

गया। "हे मेरे भले आदमी," गुरु ने कहा, "क्या चावल की अच्छी फसल हुई है?" "जी हाँ, ब्राह्मण, हुई है," उसने उत्तर दिया और दो श्लोक दोहराए:

"चावल की फसल बहुत अच्छी है, लेकिन मैं आपको बताना चाहता हूँ,
तोते इसे चट कर रहे हैं, मैं उन्हें वहां से हटा नहीं सकता।
"उस झुंड में एक पक्षी सबसे उत्तम होता है, जो सबसे पहले भोजन करता है।"
फिर वह अपनी चोंच में एक गठरी लेकर अपनी भविष्य की जरूरतों को पूरा करने के लिए पैसे जुटाता है।
जब ब्राह्मण ने यह सुना, तो उसे तोते के राजा से स्नेह हो गया। उसने कहा, "मेरे स्वामी, क्या आप जाल बिछाना जानते हैं?" "हाँ, मैं जानता हूँ।" तब स्वामी ने उससे इस श्लोक में कहा:

फिर घोड़े के बालों का एक फंदा लगाओ जिससे वह पकड़ा जा सके;
और तुम उस पक्षी को जिंदा पकड़कर मेरे पास यहाँ ले आओ।
खेत का रखवाला इस बात से बहुत प्रसन्न हुआ कि चावल पर कोई कीमत नहीं लगाई गई थी और न ही किसी कर्ज की बात हुई थी। वह तुरंत गया और घोड़े के बालों का एक फंदा बनाया। फिर उसने पता लगाया कि वे उस दिन कब उतरने वाले थे; और अगले दिन सुबह-सुबह उसने उस जगह की जासूसी की जहाँ तोते राजा उतरते थे, और पानी के घड़े के आकार का एक पिंजरा बनाया, उसमें फंदा लगाया और अपनी झोपड़ी में बैठकर तोतों के आने का इंतजार करने लगा। तोते राजा अपने पूरे झुंड के बीच आया; और वह बिल्कुल भी लालची नहीं था, इसलिए वह उसी जगह उतरा जहाँ कल उतरा था, उसका पैर फंदे में फंसा हुआ था। जब उसने पाया कि उसका पैर फंस गया है, तो उसने सोचा, "अब अगर मैं पकड़े जाने की आवाज लगाऊँगा, तो मेरा परिवार इतना डर जाएगा कि वे बिना भोजन के ही उड़ जाएँगे। मुझे तब तक सहना होगा जब तक वे अपना भोजन खत्म नहीं कर लेते।" जब उसने देखा कि उन्होंने पेट भर खा लिया है, तो अपनी जान के डर से उसने तीन बार पकड़े जाने की आवाज लगाई। सभी पक्षी उड़ गए। तब तोतों के राजा ने कहा, "ये सब मेरे मित्र और परिवार हैं, और एक भी मेरी ओर मुड़कर नहीं देखता! मैंने क्या पाप किया है?" और उन्हें फटकारते हुए उसने एक श्लोक कहा:

उन्होंने खाया, पिया और अब वे सब जल्दी से चले गए।
मैं तो बस एक जाल में फंस गया: मैंने आखिर क्या गलती की है?
चौकीदार ने तोते के राजा की पुकार और दूसरे तोतों के हवा में उड़ने की आवाज़ सुनी। "यह क्या है?" उसने सोचा। वह अपनी झोपड़ी से उठा और अपने जाल वाली जगह पर गया, और वहाँ उसने तोतों के राजा को देखा। "जिस पक्षी के लिए मैंने जाल बिछाया था, वही पकड़ा गया!" वह अत्यंत प्रसन्न होकर चिल्लाया। उसने तोते को जाल से निकाला और उसके दोनों पैर बाँध दिए, और सालिंदिया गाँव की ओर चल पड़ा, जहाँ उसने पक्षी को ब्राह्मण को सौंप दिया। महान सत्ता के प्रति अपने गहरे स्नेह से ब्राह्मण ने उसे दोनों हाथों से कसकर पकड़ लिया और अपनी कमर पर बिठाकर उससे इन दो श्लोकों में बात की:

"तुम्हारे पेट तो बाकियों के पेट से कहीं बड़े हैं।"
पहले भरपेट भोजन करो, फिर चोंच भरकर उड़ान भरो।
क्या आपके पास वहाँ भरने के लिए कोई अन्न भंडार है? या आप मुझसे बहुत नफरत करते हैं?
मैं आपसे पूछता हूं, मुझे सच-सच बताइए—आप अपनी दुकान कहां खोलेंगे?
यह सुनकर तोते के राजा ने शहद जैसी मीठी मानवीय आवाज में सातवें श्लोक को दोहराते हुए उत्तर दिया:

"मैं तुमसे नफरत नहीं करता, हे कोसिया! मेरे पास कोई अन्न भंडार नहीं है;
मैं अपने जंगल में एक बार कर्ज चुकाता हूँ और एक बार ऋण भी देता हूँ।
और मैं वहाँ खजाना जमा करता हूँ: इसलिए मेरा जवाब सबको पता चल जाए।"
तब ब्राह्मण ने उससे पूछा:

आप कौन सा ऋण देते हैं? आप कौन सा कर्ज चुकाते हैं?
मुझे अपने संचित खजाने के बारे में बताओ, और फिर स्वतंत्र होकर उड़ जाओ।"
ब्राह्मण के इस अनुरोध के उत्तर में तोते के राजा ने चार श्लोकों में अपने इरादे को स्पष्ट करते हुए उत्तर दिया:

"मेरे अपरिपक्व चूजे, मेरे कोमल बच्चे, जिनके पंख अभी तक विकसित नहीं हुए हैं,
जो भी समय आने पर मेरा भरण-पोषण करेगा, मैं उसे ऋण देता हूँ।
फिर मेरे बूढ़े माता-पिता, जो जवानी की सीमाओं से बहुत दूर हैं,
जो कुछ मैं अपनी चोंच में लेकर आता हूँ, उसी से मैं उनका कर्ज चुकाता हूँ।
और भी बहुत से असहाय पंखों वाले और कमजोर पक्षी हैं।

मैं इन्हें दान देता हूँ: ऋषि इसे मेरा भंडार कहते हैं।
"यह वह ऋण है जो मैं देता हूँ, यह वह कर्ज है जो मैं चुकाता हूँ।"
और यही वह खजाना है जिसे मैं संजोकर रखता हूँ: अब मैंने अपनी बात कह दी है।"
उस महान सत्ता से यह पुण्यमय प्रवचन सुनकर ब्राह्मण प्रसन्न हुआ और उसने दो श्लोक दोहराए:

"जीवन के कितने महान सिद्धांत हैं! यह पक्षी कितना भाग्यशाली है!"
पृथ्वी पर रहने वाले कई मनुष्यों से ऐसे नियम कभी सुनने को नहीं मिलते।
"जहां भी संभव हो, अपने परिवार के साथ जी भरकर खाएं।"
और, तोते! हम फिर मिलेंगे: मुझे तुम्हें देखना बहुत अच्छा लगता है।
इन शब्दों के साथ, उसने उस महान प्राणी को कोमल हृदय से देखा, मानो वह उसका सबसे प्रिय पुत्र हो; और उसके पैरों से बंधन खोलकर, उसने सौ बार शुद्ध किए गए तेल से उसकी मालिश की, उसे सम्मान के आसन पर बैठाया, उसे सोने की थाली में मीठा भुट्टा खिलाया और उसे चीनी का पानी पिलाया। इसके बाद, तोतों के राजा ने ब्राह्मण को सावधान करते हुए यह श्लोक सुनाया:

"हे कोसिया! यहाँ रहते हुए
मुझे भोजन, पेय और प्रिय मित्रता, तीनों ही प्राप्त हुए।
उन लोगों को अपना बोझ दो जिनका बोझ उतार दिया गया है।
जब आपके माता-पिता बूढ़े और वयस्क हो जाएं तो उनका सहारा बनें।
तब ब्राह्मण ने हृदय से प्रसन्न होकर अपनी प्रसन्नता को इस श्लोक में व्यक्त किया:

"आज तो भाग्य की देवी स्वयं प्रकट हुई होंगी।"
जब मेरी नजर इस असाधारण पक्षी पर पड़ी!
मैं अच्छे कर्म करूंगा और कभी नहीं रुकूंगा।
अब मैंने तोते की मीठी आवाज सुन ली है।
लेकिन उस महान प्राणी ने ब्राह्मण द्वारा दिए गए एक हजार एकड़ जमीन को स्वीकार करने से इनकार कर दिया और केवल आठ एकड़ जमीन ही ली। ब्राह्मण ने सीमा पत्थर स्थापित किए और यह जमीन उन्हें सौंप दी; फिर आदरपूर्वक अपने सिर पर हाथ रखकर कहा, "हे स्वामी, शांति से जाइए और अपने रोते हुए माता-पिता को सांत्वना दीजिए," और फिर उन्हें जाने दिया। बहुत प्रसन्न होकर, उन्होंने चावल की एक बाली ली और उसे अपने माता-पिता के पास ले जाकर उनके सामने रख दिया और कहा, "अब उठिए, मेरे प्रिय माता-पिता!" उनके शब्द सुनकर वे रोते हुए चेहरों के साथ उठ खड़े हुए। तब तोतों के झुंड एक साथ आने लगे और पूछने लगे, "हे स्वामी, आप कैसे मुक्त हुए?" उन्होंने उन्हें पूरी कहानी शुरू से अंत तक सुनाई। और कोसिया ने तोतों के राजा की सलाह का पालन किया और धर्मात्माओं, तपस्वियों और ब्राह्मणों को बहुत दान दिया।

गुरु ने इस बात को समझाते हुए अंतिम श्लोक को दोहराया:

"यह कोसिया अत्यंत हर्ष और आनंद के साथ है।"
आम तौर पर और प्रचुर मात्रा में उपलब्ध पेय और भोजन:
वह खाने-पीने से पूरी तरह संतुष्ट हो गया।
ब्राह्मण और साधु, स्वयं सर्वगुण संपन्न।"

जब गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने कहा, "इस प्रकार, भिक्षुओं, अपने माता-पिता का सहारा देना बुद्धिमान और भले लोगों का पारंपरिक मार्ग है।" फिर, सत्यों की व्याख्या करने के बाद, उन्होंने जन्म का वर्णन किया: (अब सत्यों के समापन पर, भिक्षु प्रथम मार्ग (सम्मोहन) के फल में स्थापित हो गए):--"उस समय बुद्ध के अनुयायी तोतों का झुंड थे, राजा के परिवार के दो सदस्य पिता और माता थे, चन्ना पहरेदार थे, आनंद ब्राह्मण थे, और मैं स्वयं तोतों का राजा था।"

फुटनोट:

(1) संख्या 540

(2) "कौसिका (उल्लू) या विक्वामित्र वंश" में से एक।

(3)करिसा.

(4)सिम्बली: बॉम्बैक्स हेप्टाफिलम।

(5)दत्व के स्थान पर कत्वा पढ़ना, जो संदर्भ के विपरीत है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कैंड-किन्नर-जातक**
***स्रोत** : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-485-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 485
चंदा-किन्नर-जातक

"यह बीत रहा है," इत्यादि। यह कहानी गुरु ने कपिलपुरा (बुद्ध के पिता शुद्धोदन का राज्य कपिलवस्तु) के निकट बरगद के वन में रहते हुए, राहुल की माता (बुद्ध की पत्नी) के बारे में सुनाई थी, जब वह महल में थीं।

इस जन्म की कथा बुद्ध के अस्तित्व के सुदूर युग (*1) से शुरू होनी चाहिए। लेकिन युगों की कथा, उरुवेला के कश्यप (*2) के सिंह गर्जना तक, लत्थिवना (*3) के मठ में, बाँस के वन में, अपन्नक जन्म (*4) में पहले ही बताई जा चुकी है। उस बिंदु से शुरू करते हुए आप वेस्सन्तर जन्म (*5) में कपिलवस्तु (बुद्ध के पिता शुद्धोदन का राज्य) आगमन तक की उसकी निरंतरता पढ़ेंगे। गुरु अपने पिता के घर में भोजन के दौरान बैठे हुए महाधम्मपाल जन्म (*6) सुनाते हैं; और भोजन समाप्त होने के बाद उन्होंने कहा, "मैं राहुल की माता (बुद्ध की पत्नी) के उत्तम गुणों की प्रशंसा उनके घर में चंदा-किन्नर जन्म सुनाकर करूँगा।" फिर राजा को अपना कुंड सौंपकर, वे अपने दो प्रमुख शिष्यों के साथ राहुल की माता (बुद्ध की पत्नी) के घर चले गए। उस समय उनकी सेवा में चालीस हजार दासियाँ रहती थीं, जिनमें से एक हजार नब्बे योद्धा जाति की थीं। जब उस महिला ने तथागत (बुद्ध) के आने का समाचार सुना, तो उसने उन सभी को पीले वस्त्र पहनने को कहा, और उन्होंने वैसा ही किया। गुरु आए और अपने लिए निर्धारित स्थान पर बैठ गए। तब सभी स्त्रियों ने एक स्वर में पुकार लगाई, जिससे रोने की एक बड़ी आवाज गूंज उठी। राहुल की माता (बुद्ध की पत्नी) ने रो-रोकर अपना दु:ख दूर किया और गुरु का स्वागत करते हुए राजा के समान आदरपूर्वक बैठ गईं। तब राजा (बुद्ध के पिता) ने उनके गुणों का वर्णन शुरू किया: "हे महाराज, मेरी बात सुनिए; उन्होंने सुना कि आप पीले वस्त्र पहनते हैं, इसलिए उन्होंने भी पीले वस्त्र पहन लिए; उन्होंने यह भी सुना कि मालाएँ और ऐसी वस्तुएँ त्याग देनी चाहिए, और देखिए, उन्होंने मालाएँ त्याग दी हैं और ज़मीन पर बैठ गई हैं। जब आपने संन्यासी जीवन अपनाया, तब वह विधवा हो गईं; और उन्होंने अन्य राजाओं द्वारा भेजे गए उपहारों को भी अस्वीकार कर दिया। उनका हृदय आपके प्रति इतना निष्ठावान है।" इस प्रकार उन्होंने उनके गुणों का वर्णन अनेक तरीकों से किया। गुरु ने कहा, "हे महाराज, इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि अब अपने अंतिम जन्म में भी वह स्त्री मुझसे प्रेम करती हैं, और उनका हृदय निष्ठावान है और वह केवल मेरे द्वारा ही निर्देशित होती हैं। यहाँ तक कि जब उन्होंने पशु रूप में जन्म लिया, तब भी वह निष्ठावान थीं और केवल मेरी ही थीं।" तब राजा के अनुरोध पर उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त राजा थे, तब हिमालय क्षेत्र में एक परी के रूप में महान पुरुष का जन्म हुआ (*7)। उनकी पत्नी का नाम चंदा था (*8)। ये दोनों चंदापब्बता नामक एक चांदी के पर्वत पर रहते थे, जिसे चंद्र पर्वत भी कहा जाता है। उस समय बनारस के राजा ने अपना शासन अपने मंत्रियों को सौंप दिया था, और अकेले ही दो पीले वस्त्र धारण करके और पाँचों शस्त्रों से सुसज्जित होकर (*9), वे हिमालय की ओर चल पड़े।

हिरण का मांस खाते हुए उसे एक छोटी सी धारा याद आई और वह पहाड़ी पर चढ़ने लगा। वर्षा ऋतु में चंद्र पर्वत पर रहने वाली परियाँ वहीं रहती हैं और केवल गर्म मौसम में ही नीचे आती हैं। उसी समय चंदा नाम का यह परी अपनी साथी के साथ नीचे आया और इधर-उधर घूमने लगा। वह अपने शरीर पर इत्र लगाता, फूलों का पराग खाता, फूलों से बने वस्त्र पहनता, लताओं में झूलता और मधुर स्वर में गीत गाता रहा। वह भी इस धारा के पास पहुँचा; और एक जगह रुककर अपनी पत्नी के साथ उसमें उतर गया, फूल बिखेरते हुए पानी में खेलने लगा। फिर उन्होंने फूलों के वस्त्र पहने और चाँदी की थाली जैसी सफेद रेत पर फूलों का पलंग बिछाकर लेट गए। नर परी ने बाँस का एक टुकड़ा उठाया और उस पर बजाने लगा, और मधुर स्वर में गाने लगा; वहीं उसकी साथी अपने कोमल हाथों को हिलाते हुए पास में नाचने लगी और साथ में गाने भी गाती रही। राजा को आवाज़ सुनाई दी, और दबे पांव, ताकि किसी को उसके कदमों की आहट सुनाई न दे, वह पास आया और एक गुप्त स्थान पर परियों को देखने लगा। उसे तुरंत ही एक परी से प्रेम हो गया। उसने सोचा, "मैं उसके

पति को मार डालूंगा, और मैं उसकी पत्नी के साथ यहीं रहूंगा।" फिर उसने चंदा नाम की परी को तीर मारा, जिसने दर्द में विलाप करते हुए चार श्लोक कहे:

"मुझे लगता है कि यह बीत रहा है, और मेरा खून बह रहा है, बह रहा है।"
हे चंदा! मैं जीवन से अपना बंधन खो रहा हूँ! मेरी साँसें रुक रही हैं!
"यह डूब रहा है, मुझे दर्द हो रहा है, मेरा दिल जल रहा है, जल रहा है।"
लेकिन चंदा, तुम्हारे दुख के लिए ही मेरे हृदय में व्याकुलता है।
"मैं घास की तरह, पेड़ की तरह नष्ट हो जाता हूँ, पानी रहित नदी की तरह सूख जाता हूँ।"
लेकिन चंदा, मेरे दिल में तुम्हारे दुख के लिए ही तड़प है।
"पहाड़ की तलहटी में स्थित झील पर बारिश की बूंदों की तरह मेरी आंखों से आंसू गिरते हैं।"
लेकिन चंदा, तुम्हारे दुख के लिए ही मेरा हृदय तड़प रहा है।
इस प्रकार महान प्राणी ने चार छंदों में शोक व्यक्त किया; और फूलों के पलंग पर लेटे-लेटे वे बेहोश हो गए और मुंह फेर लिया। राजा वहीं खड़े रहे। लेकिन दूसरी परी को पता ही नहीं चला कि महान प्राणी घायल हैं, यहाँ तक कि उनके शोक व्यक्त करने पर भी नहीं, क्योंकि वह अपने आनंद में डूबी हुई थी। उन्हें मुंह फेरे बेजान पड़ा देखकर वह सोचने लगी कि उसके स्वामी को क्या हुआ है। जब उसने उनकी जांच की तो उसने घाव से खून बहता देखा, और अपने प्रिय पति के लिए असहनीय पीड़ा सहन न कर पाने के कारण वह जोर से चिल्लाई। राजा ने सोचा, "परी मर गई होगी," और वह बाहर आकर प्रकट हुए। चंदा ने उन्हें देखकर सोचा, "यही तो वह डाकू होगा जिसने मेरे प्रिय पति को मार डाला है!" और कांपते हुए वह भाग गई। पहाड़ी की चोटी पर खड़े होकर उसने पाँच छंदों में राजा की निंदा की:

"दुष्ट राजकुमार—आह, मैं पीड़ा सह रही हूँ!—मेरे प्यारे पति ने मुझे चोट पहुँचाई।"
जो व्यक्ति जंगल के एक पेड़ के नीचे था, वह अब जमीन पर पड़ा है।
"हे राजकुमार! मेरे हृदय को जो पीड़ा हो रही है, उसका प्रायश्चित आपकी माता स्वयं करें।"
मेरी परी को आज मृत देखकर मेरा दिल कितना दुखी है!
"जी हां, राजकुमार! मेरे हृदय को जो पीड़ा हो रही है, उसका बदला आपकी पत्नी ही चुकाए।"
मेरी परी को आज मृत देखकर मेरा दिल कितना दुखी है!
और तुम्हारी माता अपने स्वामी के लिए शोक करे, और वह अपने पुत्र के लिए शोक करे।
हे मेरे प्रभु, जिसने वासना के कारण यह कृत्य किया है, वह अत्यंत निर्दोष है।
और आपकी पत्नी को अपने स्वामी और पुत्र के खोने का दुख सहना पड़े।
"मेरे निर्दोष स्वामी, तुमने वासना के कारण यह कृत्य किया है।"
जब उसने इस प्रकार इन पांच छंदों में अपना विलाप व्यक्त कर दिया, तो पर्वत की चोटी पर खड़े होकर राजा ने एक और छंद से उसे सांत्वना दी:

"रोओ मत, शोक मत करो: मुझे लगता है कि जंगल के अंधेरे ने तुम्हें अंधा कर दिया है।"
एक राजपरिवार आपका सम्मान करेगा, और आप मेरी रानी होंगी।"
"यह कौन सा शब्द है जो तुमने कहा?" चंदा ने यह सुनकर चीख मारी; और शेरनी की दहाड़ की तरह ऊँची आवाज में उसने अगला श्लोक सुनाया:

नहीं! मैं अवश्य ही आत्महत्या कर लूंगी! मैं तुम्हारी कभी नहीं बनूंगी।
मेरे निर्दोष पति की हत्या किसने की, वह भी सिर्फ मेरे प्रति हवस के कारण?
यह सुनकर उसका जोश ठंडा पड़ गया और उसने एक और श्लोक पढ़ा:

"हे डरपोक, अगर चाहो तो जियो! हिमालय जाओ:
झाड़ियों और पेड़ों पर भोजन करने वाले जीव (*10) जंगल को पसंद करते हैं, मुझे पता है।"
इन शब्दों के साथ वह उदासीन भाव से विदा हो गया। चंदा ने जैसे ही उसके जाने का पता लगाया, वह तुरंत ऊपर आई और उस महान पुरुष को गले लगाकर पहाड़ी की चोटी पर ले गई और वहाँ समतल भूमि पर लिटा दिया; उसका सिर अपनी गोद में रखकर उसने बारह छंदों में विलाप किया:

"यहाँ पहाड़ियों और पर्वतीय गुफाओं में, अनेक घाटियों और कंदराओं में,
हे मेरी परी! अब जब मैं तुम्हें देख नहीं पा रहा हूँ, तो मैं क्या करूँ?

जंगली जानवर घूमते हैं, पत्ते कई खूबसूरत जगहों पर फैले हुए हैं:
हे मेरी परी, अब जब मैं तुम्हें देख नहीं पा रहा हूँ, तो मैं क्या करूँ?
जंगली जानवर घूमते हैं, कई सुंदर स्थानों पर मीठे फूल खिले हुए हैं:
हे मेरी परी, अब जब मैं तुम्हें देख नहीं पा रहा हूँ, तो मैं क्या करूँ?
"पहाड़ियों से नीचे बहती नदियाँ निर्मल हैं, और चारों ओर फूल खिले हुए हैं:
हे मेरी परी, अब जब तुमने मुझे अकेला छोड़ दिया है, तो मैं क्या करूँ?
"हिमालय की पहाड़ियाँ नीली हैं, देखने में अत्यंत सुंदर हैं।"
हे मेरी परी, अब जब मैं तुम्हें देख नहीं पा रहा हूँ, तो मैं क्या करूँ?
"हिमालय की चोटियाँ सोने से लथपथ हैं, वे देखने में बेहद खूबसूरत हैं।"
हे मेरी परी, अब जब मैं तुम्हें देख नहीं पा रहा हूँ, तो मैं क्या करूँ?
हिमालय की पहाड़ियाँ लाल रंग से जगमगा रही हैं, देखने में वे अत्यंत सुंदर हैं:
हे मेरी परी, अब जब मैं तुम्हें देख नहीं पा रहा हूँ, तो मैं क्या करूँ?
"हिमालय की चोटियाँ नुकीली हैं, वे देखने में सबसे सुंदर हैं।"
हे मेरी परी, अब जब मैं तुम्हें देख नहीं पा रहा हूँ, तो मैं क्या करूँ?
"हिमालय की चोटियाँ सफेद चमकती हैं, वे देखने में अत्यंत सुंदर हैं।"
हे मेरी परी, अब जब मैं तुम्हें देख नहीं पा रहा हूँ, तो मैं क्या करूँ?
"हिमालय इंद्रधनुषी रंगों से भरा है, इसे देखना अत्यंत सुंदर है।"
हे मेरी परी, अब जब मैं तुम्हें देख नहीं पा रहा हूँ, तो मैं क्या करूँ?
"पहाड़ी सुगंधित (*11) जिन्नों को प्रिय है; पौधे हर जगह को ढक लेते हैं
हे मेरी परी, अब जब मैं तुम्हें देख नहीं पा रहा हूँ, तो मैं क्या करूँ?
"परियों को सुगंधित पहाड़ी बहुत पसंद है, वहां हर जगह पेड़-पौधे उगे हुए हैं।"
हे मेरी परी, अब जब मैं तुम्हें देख नहीं पा रहा हूँ, तो मैं क्या करूँ?
उसने विलाप किया; और महापुरुष का हाथ अपने सीने पर रखकर उसने महसूस किया कि वह अभी भी गर्म है। "चंदा अभी जीवित है!" उसने सोचा: "मैं देवताओं (देवदूतों) (*12) को तब तक ताना मारूंगी जब तक मैं उसे फिर से जीवित न कर दूं!" फिर वह जोर से चिल्लाई, उन्हें ताना मारते हुए, "क्या संसार पर शासन करने वाला कोई नहीं है? क्या वे यात्रा पर हैं? या शायद वे मर चुके हैं, और इसलिए मेरे प्रिय पति को नहीं बचा सकते!" उसके दर्द की शक्ति से सक्का (इंद्र) का सिंहासन गर्म हो गया। कारण जानकर, वह एक ब्राह्मण के रूप में पास आया, और एक मटके से जल लेकर महापुरुष पर छिड़का। तुरंत ही विष का प्रभाव समाप्त हो गया, उसका रंग लौट आया, उसे घाव का स्थान तक नहीं पता चला: महापुरुष पूरी तरह से ठीक होकर खड़ा हो गया। चंदा ने अपने प्रिय पति को स्वस्थ देखकर, प्रसन्नता से सक्का (इंद्र) के चरणों में गिर पड़ी, और निम्नलिखित श्लोक में उनकी स्तुति की:

हे पवित्र ब्राह्मण, आपकी स्तुति हो! जिन्होंने एक असहाय पत्नी को अपना वरदान दिया।
अपने प्रिय पति पर जीवन का अमृत छिड़कते हुए!
तब सक्का (इंद्र) ने यह सलाह दी: "अब से चंद्र पर्वत से नीचे मनुष्यों के मार्ग पर मत उतरना, बल्कि यहीं रहना।" उन्होंने यह बात दो बार दोहराई और फिर अपने स्थान पर लौट गए। चंदा ने अपने पति से कहा, "हे स्वामी, यहाँ खतरे में क्यों रहना? आइए, चंद्र पर्वत पर चलें," और अंतिम श्लोक का पाठ किया।

"चलो पहाड़ की ओर चलते हैं।"
जहां सुंदर नदियां बहती हैं,
   नदियाँ फूलों से पूरी तरह ढकी हुई हैं:
वहाँ हमेशा के लिए, जब हवा चलती है
हजारों पेड़ों में फुसफुसाहट,
   खुशनुमा पलों में बातचीत से सबका दिल जीत लें।"

जब गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने कहा: "न केवल अभी, बल्कि बहुत पहले भी, वह मेरे प्रति समर्पित और निष्ठावान थीं।" फिर उन्होंने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उस समय अनुराधा राजा थे, राहुल की माता (बुद्ध की पत्नी) चंदा थीं, और मैं स्वयं परी था।"

फुटनोट:

(1) बुद्ध के अस्तित्व को तीन कालों में विभाजित किया गया है: सुदूर काल (दुरेनिदानम), मध्य काल (अविदुरे डिग्री) और निकट काल (सान्तिके डिग्री)। सुदूर काल "उस समय से शुरू होता है जब वे दीपांकर के चरणों में गिरे थे और तुषिता देवताओं (देवदूतों) के नगर में उनका जन्म हुआ था" (जाट. आईपी 47, पाली पाठ): मध्य काल उस समय से शुरू होता है जब तक उन्होंने बुद्धत्व प्राप्त नहीं किया (जाट. आई. 76); निकट काल उनकी मृत्यु तक। --देखें राइस डेविड की बौद्ध जन्म कथाएँ, पृष्ठ 2, 58; वॉरेन, अनुवादों में बौद्ध धर्म, पृष्ठ 38, 82।

(2) उरुवेला में रहने वाले तीन ब्राह्मण भाइयों में से एक, बुद्ध द्वारा परिवर्तित।

(3) राजगृह नगर के निकट: जाट. 84

(4) निदान-कथा

(5) संख्या 547

(6)सं. 447

(7) किन्नरा.

(8)चांदो एम. का अर्थ है चंद्रमा। कहानी में प्रकृति से संबंधित मिथक प्रतीत होता है।

(9) तलवार, भाला, धनुष, युद्ध कुल्हाड़ी, ढाल।

(10)दो का नाम है, कोरीफा तालिएरा और टैबरनेमोंटाना कोरोनारिया।

(11)गंध-मदन.

(12)उज्जनकम्मम कट्वा, यानी सक्का (इंद्र) को मदद के लिए "उकसाना"।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **महा-उक्कुसा-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-486-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 486
महा-उक्कुसा-जातक

"ग्रामीण लोग," इत्यादि—यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए अपने एक शिष्य, मित्तगंधक के बारे में सुनाई थी। कहते हैं कि श्रावस्ती नगर के एक पतित परिवार में जन्मे इस शिष्य ने एक साथी को एक युवती से विवाह का प्रस्ताव देने भेजा। प्रश्न पूछा गया, "क्या उसका कोई मित्र या साथी है जो किसी भी आवश्यक कार्य को संभाल सके?" उत्तर मिला, "नहीं, ऐसा कोई नहीं था।" तब उन्होंने उससे कहा, "तो उसे पहले कुछ मित्र बनाने चाहिए।" उस व्यक्ति ने यह सलाह मानी और चारों द्वारपालों से मित्रता स्थापित की। इसके बाद उसने धीरे-धीरे नगर रक्षकों, ज्योतिषियों, दरबार के कुलीनों, यहाँ तक कि सेनापति और वायसराय से भी मित्रता कर ली; और उनके साथ संगति के कारण वह राजा का मित्र बन गया, और उसके बाद अस्सी प्रमुख भिक्षुओं का मित्र बन गया, और भिक्षु आनंद के माध्यम से स्वयं तथागत (बुद्ध) का मित्र बन गया। तब गुरु ने शरण और सद्गुणों में अपना परिवार स्थापित किया, राजा ने उन्हें उच्च पद दिया, और वे मित्त-गंधक, यानी "अनेक मित्रों के पुरुष" (*1) के नाम से जाने गए। राजा ने उन्हें एक भव्य घर दिया, उनका विवाह भोज आयोजित करवाया, और राजा से लेकर सभी लोगों ने उन्हें उपहार भेजे। फिर उनकी पत्नी को राजा द्वारा भेजा गया उपहार, वायसराय द्वारा भेजा गया उपहार, सेनापति का उपहार, और इसी प्रकार नगर के सभी लोग उनसे जुड़ गए। सातवें दिन, नवविवाहित जोड़े ने भव्य समारोह के साथ दशबल (बुद्ध) को आमंत्रित किया, बुद्ध और उनके साथियों को पाँच सौ की संख्या में बड़े-बड़े उपहार दिए गए; भोज के अंत में उन्होंने गुरु का धन्यवाद ग्रहण किया और दोनों प्रथम मार्ग (सम्मोहन) के फल में स्थापित हो गए।

सत्य के हॉल में सभी इस विषय पर चर्चा कर रहे थे। “भाइयों (भिक्षुओं), गृहस्थ मित्त-गंधक ने अपनी पत्नी की सलाह मानी और उनकी कृपा से सभी के मित्र बन गए तथा राजा के हाथों उन्हें महान सम्मान प्राप्त हुआ; और गुरु के मित्र बनने पर पति-पत्नी दोनों प्रथम मार्ग (सम्मोहन) के फल में स्थापित हो गए।” गुरु ने प्रवेश करते हुए पूछा कि वे किस बारे में बात कर रहे हैं। उन्होंने उन्हें बताया। गुरु ने कहा, “भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि इस पुरुष को इस स्त्री के कारण महान सम्मान प्राप्त हुआ है। बहुत समय पहले, जब वह पशुवत थे, उनकी सलाह से उन्होंने अनेक मित्र बनाए और पुत्र की चिंता से मुक्त हुए।” ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब सीमावर्ती इलाकों के कुछ लोग जंगल में बस जाते थे, जहाँ उन्हें भोजन आसानी से मिल जाता था। वे जंगल में रहते थे और अपने और अपने परिवार के लिए शिकार करते थे। उनके गाँव से कुछ ही दूरी पर एक बड़ी प्राकृतिक झील थी। उसके दक्षिणी किनारे पर एक बाज़ रहता था, पश्चिम में एक मादा बाज़; उत्तर में जानवरों का राजा शेर; पूर्व में पक्षियों का राजा शंख; और बीच में एक छोटे से द्वीप पर एक कछुआ रहता था। बाज़ ने मादा बाज़ से विवाह का प्रस्ताव रखा। उसने उससे पूछा, "क्या तुम्हारा कोई मित्र है?" "नहीं, महोदया," उसने उत्तर दिया। "हमें किसी भी खतरे या मुसीबत से बचाने के लिए किसी की आवश्यकता है, और आपको कुछ मित्र बनाने होंगे।" "मैं किससे मित्र बनाऊँ?" "क्यों, पूर्वी किनारे पर रहने वाले शंख के राजा से, उत्तर में रहने वाले शेर से और इस झील के बीच में रहने वाले कछुए से।" उसने उसकी सलाह मानी और वैसा ही किया। फिर वे दोनों एक साथ रहने लगे (यह बताना जरूरी है कि उसी झील में एक छोटे से द्वीप पर एक कदंब का पेड़ उगा हुआ था, जो चारों ओर से पानी से घिरा हुआ था) एक घोंसले में जिसे उन्होंने बनाया था।

बाद में उन्हें दो पुत्र हुए। एक दिन, जब छोटे बच्चों के पंख अभी पूरी तरह विकसित नहीं हुए थे, कुछ ग्रामीण दिनभर जंगल में भोजन की तलाश करते रहे, लेकिन उन्हें कुछ नहीं मिला। खाली हाथ घर न लौटना चाहते हुए, वे मछली या कछुआ पकड़ने के लिए झील पर गए। वे द्वीप पर पहुँचे और कदंब के पेड़ के नीचे लेट गए। वहाँ मच्छरों और मक्खियों के काटने से परेशान होकर, उन्हें भगाने के लिए उन्होंने लकड़ियों को आपस में रगड़कर आग जलाई और धुआँ किया। धुएँ से पक्षी परेशान हो गए और उनके बच्चे रोने लगे। ग्रामीण बोले, "यह पक्षियों की आवाज़ है! उठो, आग जलाओ: हम यहाँ भूखे नहीं लेट सकते, लेकिन लेटने से पहले हम पक्षियों का मांस खाएँगे।" उन्होंने आग जलाई और उसे तेज़ किया। लेकिन मादा पक्षी ने आवाज़ सुनकर सोचा, "ये लोग हमारे बच्चों को खाना चाहते हैं। हमने इस खतरे से बचाने के लिए दोस्त बनाए हैं। मैं अपने साथी को विशाल ओस्प्रे के पास भेज दूँगी।" फिर उसने कहा, "जाओ, मेरे पति, ओस्प्रे को उस खतरे के बारे में बताओ जो हमारे बच्चों को धमका रहा है," और इस पंक्ति को दोहराया:

"द्वीप पर देहाती लोग आग जलाते हैं,"
थोड़ी देर में अपने बच्चों को खाने के लिए:
हे बाज़! अपने मित्र और साथी को संदेश दे दो,
मेरे बच्चों के खतरे के बारे में हर पक्षी को बता दो!
नर पक्षी पूरी तेज़ी से उस स्थान पर पहुँचा और अपने आगमन की सूचना देते हुए एक आवाज़ निकाली। अनुमति मिलने पर, वह ओस्प्रे के पास आया और अभिवादन किया। ओस्प्रे ने पूछा, "तुम क्यों आए हो?" तब नर पक्षी ने दूसरी पंक्ति दोहराई:

हे पंख वाले पक्षी! तुम पक्षियों में श्रेष्ठ हो।
इसलिए, ओस्प्रे राजा, मैं अब आपकी शरण चाहता हूँ।
कुछ ग्रामीण लोग जो अब शिकार कर रहे हैं, खुश हैं
मेरे बच्चों को खाने के लिए: तुम फिर से मेरी खुशी बनो!
"डरो मत," ओस्प्रे ने बाज़ से कहा, और उसे दिलासा देते हुए उसने तीसरा छंद दोहराया:

"समय हो या न हो, बुद्धिमान लोग निर्णय लेते हैं।"
रक्षा के लिए मित्र और साथी दोनों:
हे बाज! मैं तुम्हारे लिए यह कार्य करूंगा;
अच्छे लोगों को जरूरत के समय एक दूसरे की मदद करनी चाहिए।
फिर उसने पूछा, "क्या देहाती लोग पेड़ पर चढ़ गए हैं, मेरे दोस्त?" "वे अभी नहीं चढ़ रहे हैं; वे बस आग में लकड़ियाँ डाल रहे हैं।" "तो बेहतर होगा कि तुम जल्दी जाओ और अपने साथी को दिलासा दो, और कहो कि मैं आ रहा हूँ।" उसने वैसा ही किया। ओस्प्रे भी गया, और कदंब के पेड़ के पास एक जगह से पेड़ की चोटी पर बैठकर आदमियों के चढ़ने का इंतज़ार करने लगा। जैसे ही पेड़ पर चढ़ रहे देहातियों में से एक घोंसले के पास पहुँचा, ओस्प्रे झील में कूद गया, और अपने पंखों और चोंच से जलती हुई लकड़ियों पर पानी छिड़का, जिससे वे बुझ गईं। आदमी नीचे उतरे, और पक्षी और उसके बच्चों को पकाने के लिए दूसरी आग जलाई; जब वे फिर से चढ़े, तो ओस्प्रे

ने एक बार फिर आग बुझा दी। इस तरह जब भी आग जलाई जाती, पक्षी उसे बुझा देता, और आधी रात हो गई। पक्षी बहुत परेशान था: उसके पेट के नीचे की त्वचा बिल्कुल पतली हो गई थी, उसकी आँखें लाल हो गई थीं। उसे देखकर मुर्गी ने अपने साथी से कहा, "मेरे स्वामी, ओस्प्रे थक गया है; जाओ और कछुए को बता दो कि वह आराम कर ले।" यह सुनकर, पक्षी ओस्प्रे के पास पहुँचकर उससे एक छंद में बोली:

"अच्छे लोग अच्छे की मदद करते हैं: यह एक आवश्यक कार्य है।"
आपने दया करके हमारी जरूरत के समय हमारी सहायता की है।
हमारे बच्चे सुरक्षित हैं, आप जीवित हैं: अपना ख्याल रखें।
न तो अपने आप पर और न ही अपनी सारी ताकत को बाहरी रूप से प्रकट करने पर।
ये शब्द सुनकर, शेर की दहाड़ की तरह जोर से उसने पाँचवाँ छंद दोहराया:

"जब मैं इस पेड़ की रखवाली कर रहा हूँ,
मुझे इस बात की परवाह नहीं कि मैं तुम्हारे लिए अपनी जान गंवा दूं।
इसलिए अच्छाई का उपयोग करें: इस प्रकार मित्र मित्र के लिए करेगा।
हां, भले ही अंत में उसकी मृत्यु हो जाए।"
लेकिन गुरु ने अपनी पूर्ण बुद्धि से पक्षी की अच्छाई की प्रशंसा करते हुए छठे श्लोक को दोहराया:

"अंडे से जन्म लेने वाला पक्षी जो हवा में उड़ता है, उसने एक अत्यंत कष्टदायक कार्य किया।"
आधी रात के अंधेरे से पहले, ओस्प्रे पक्षी चूजों की अच्छी तरह से रखवाली कर रहा है।
फिर बाज़ ने कहा, "कुछ देर आराम करो, मेरे दोस्त ओस्प्रे," और फिर कछुए के पास गया, जिसे उसने जगाया। कछुए ने पूछा, "तुम्हारा क्या काम है, दोस्त?" बाज़ ने जवाब दिया, "हम पर ऐसा-ऐसा खतरा मंडरा रहा है, और शाही ओस्प्रे सुबह से ही लगातार मेहनत कर रहा है, और बहुत थक गया है; इसीलिए मैं तुम्हारे पास आया हूँ।" इन शब्दों के साथ उसने सातवाँ श्लोक दोहराया।

"यहां तक कि वे भी जो पाप या बुरे कर्म के कारण गिर जाते हैं
यदि उन्हें जरूरत पड़ने पर मदद मिले तो वे फिर से उठ खड़े हो सकते हैं।
मेरा बच्चा खतरे में है, मैं सीधे तुम्हारे पास आता हूँ:
हे झील में रहने वाले, आओ, मुझे सांत्वना दो!
यह सुनकर कछुए ने एक और छंद दोहराया:

"एक नेक इंसान अपने मित्र के प्रति कैसा व्यवहार करता है?"
भोजन और सामान, यहाँ तक कि स्वयं जीवन भी उधार देगा।
हे बाज़! मैं तेरे लिए यह कार्य करूंगा:
अच्छे लोगों को जरूरत के समय एक दूसरे की मदद करनी चाहिए।
पास ही लेटे उनके बेटे ने अपने पिता के शब्दों को सुनकर सोचा, "मैं अपने पिता को परेशान नहीं करना चाहता, लेकिन मैं अपने पिता का कर्तव्य निभाऊंगा," और इसलिए उसने नौवां छंद दोहराया:

"यहाँ आराम से रहो, हे मेरे पिता,"
और मैं, आपका पुत्र, आपका यह कार्य पूरा करूंगा।
पुत्र को पिता की सेवा करनी चाहिए, यही सर्वोत्तम है;
मैं बाज के बच्चों को घोंसले में ही बचा लूंगा।
पिता कछुए ने अपने बेटे को एक छंद में संबोधित किया:

"इसलिए, मेरे बेटे, अच्छा काम करो, और यही सच है।"
पिता की सेवा के लिए पुत्र को यही करना चाहिए।
फिर भी वे बाज के बच्चों को अकेला छोड़ सकते हैं।
शायद, अगर वे मुझे इतना परिपक्व देख लें।"
इन शब्दों के साथ कछुए ने बाज़ को विदा किया और कहा, "डरो मत, मेरे मित्र, तुम आगे जाओ, मैं थोड़ी देर में आता हूँ।" वह पानी में कूदा, थोड़ी मिट्टी ली और द्वीप पर जाकर आग बुझाई और वहीं लेट गया। तब गाँव वालों ने कहा, "हम छोटे बाज़ों की चिंता क्यों करें? चलो इस शापित (*2) कछुए को पलटकर मार डालें! यह हम सबके लिए काफी होगा।" तो उन्होंने कुछ लताएँ और रस्सियाँ लीं, लेकिन जब उन्होंने उन्हें इधर-उधर बाँध दिया और इसके लिए अपने कपड़े फाड़ डाले, तब भी वे कछुए को पलट नहीं पाए। कछुआ उन्हें अपने

साथ घसीटता हुआ गहरे पानी में कूद गया। लोग उसे पाने के लिए इतने उत्सुक थे कि वे भी उसके पीछे पानी में गिर पड़े: पानी में छपछपाते हुए, और पानी से भरे पेट के साथ बाहर निकले। "देखो तो ज़रा," उन्होंने कहा: "आधी रात तक एक ओस्प्रे हमारी आग बुझाता रहा, और अब इस कछुए ने हमें पानी में गिरा दिया और हमें पानी निगलने पर मजबूर कर दिया, जिससे हमें बहुत तकलीफ़ हुई। चलो, हम एक और आग जलाते हैं, और सूर्योदय के समय हम उन छोटे बाज़ों को खा जाएँगे।" फिर वे आग जलाने लगे। मुर्गी ने उनके शोर को सुना और कहा, "मेरे पति, देर-सवेर ये लोग हमारे बच्चों को खा जाएँगे और चले जाएँगे: तुम जाओ और हमारे दोस्त शेर को बताओ।" वह तुरंत शेर के पास गया, जिसने उससे पूछा कि वह इतने असमय क्यों आया है। चिड़िया ने उसे शुरू से सब कुछ बताया और ग्यारहवाँ श्लोक दोहराया:

सभी जानवरों में सबसे शक्तिशाली, चाहे वे जानवर हों या मनुष्य।
  जब भय से परेशान हों तो सबसे शक्तिशाली की शरण में जाएं।
मेरे बच्चे खतरे में हैं; कृपया मेरी मदद करें।
  आप हमारे राजा हैं, इसलिए मैं यहां हूं।"
यह कहकर शेर ने एक श्लोक दोहराया:

"हां, मैं यह सेवा आपके लिए करूंगा, हॉक।"
  चलो, हम जाकर दुश्मनों के इस गिरोह का सफाया कर देते हैं!
  निःसंदेह, समझदार व्यक्ति, वह जो ज्ञान को जानता है,
एक मित्र का रक्षक बनने का प्रयास करना चाहिए।
इतना कहकर उसने उसे विदा किया और कहा, "अब जाओ और अपने बच्चों को दिलासा दो।" फिर वह आगे बढ़ा और निर्मल जल को मथने लगा।

जब ग्रामीणों ने उसे आते देखा, तो वे बुरी तरह डर गए: "ओस्प्रे," वे चिल्लाए, "उसने हमारी मशालें बुझा दीं; कछुए ने हमारे कपड़े उतार दिए: लेकिन अब तो हम गए काम से। यह शेर हमें पल भर में मार डालेगा।" वे इधर-उधर भागने लगे: जब शेर पेड़ के नीचे पहुँचा, तो उसे कुछ भी दिखाई नहीं दिया। तभी ओस्प्रे, बाज़ और कछुआ आए और उसके पास पहुँचे। उसने उन्हें मित्रता का महत्व बताया और कहा, "अब से मित्रता के बंधन को कभी न तोड़ना।" यह सलाह देकर वह चला गया: और वे भी अपने-अपने स्थान पर चले गए। मादा बाज़ अपने बच्चों को देखकर सोचने लगी—"आह, दोस्तों की वजह से मेरे बच्चे मुझे वापस मिल गए!" और प्रसन्न होकर उसने अपने साथी से बात की और मित्रता के प्रभाव को बताते हुए छह छंद सुनाए:

"दोस्त बनाओ, घर भर के दोस्त बनाओ, बिना किसी असफलता के।"
  एक अच्छा दोस्त पाओ: वह एक आशीर्वाद साबित होगा (*3):
व्यर्थ ही कवच पर तीर चलाना।
  और हम खुश हैं कि हमारे बच्चे सुरक्षित और स्वस्थ हैं।
"अपने ही साथी की मदद से, उस मित्र की मदद से जो उनका साथ देने के लिए रुका रहा,"
एक चिड़िया चहचहाती है, तो नन्हे पक्षी भी चहचहाकर जवाब देते हैं, उनकी आवाज़ें मन को मोह लेती हैं।
बुद्धिमान व्यक्ति मित्र या साथी से सहायता मांगता है।
  वह अपनी संपत्ति और संतान के साथ सुखी जीवन व्यतीत करता है:
इसलिए मैं, मेरा साथी और मैं, तीनों एक साथ खड़े हैं।
  क्योंकि हमारा मित्र दया भाव से प्रेरित था।
"मनुष्य को सुरक्षा के लिए राजा और योद्धाओं की आवश्यकता होती है।"
और ये वे लोग हैं जिनकी मित्रता परिपूर्ण है:
तुम सुख की लालसा रखते हो: वह प्रसिद्ध और शक्तिशाली है;
जिसके मित्र होते हैं, वह निश्चय ही समृद्ध होता है।
"हे बाज़, गरीबों और कमजोरों में भी अच्छे मित्र अवश्य पाए जा सकते हैं।"
अब देखो, दयालुता के कारण हम और हमारे सभी लोग सुरक्षित और स्वस्थ हैं।
"वह पक्षी जो एक मजबूत नायक को जीतता है, वह मित्रतापूर्ण भूमिका निभाने के लिए तैयार रहता है।"
जैसे आप और मैं खुश हैं, हॉक भी अपने दिल में खुश है।"
इस प्रकार उन्होंने छह छंदों में मित्रता के गुण का वर्णन किया। और मित्रों का यह सारा समूह जीवन भर मित्रता के बंधन को तोड़े बिना जिया, और फिर अपने कर्मों के अनुसार इस दुनिया से विदा हो गया।

गुरु ने प्रवचन समाप्त करते हुए कहा, "यह पहली बार नहीं है, भिक्षुओं, कि उन्होंने अपनी पत्नी के माध्यम से आनंद प्राप्त किया; पहले भी ऐसा ही हुआ था।" इन शब्दों के साथ उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "उस समय विवाहित जोड़ा बाज़ का जोड़ा था, राहुल युवा कछुआ था, मोग्गल्याना बूढ़ा कछुआ था, सारिपुत्र शरमाया था, और मैं स्वयं सिंह था।"

फुटनोट:

(1) शाब्दिक रूप से "मित्रों का बंधन।"

(2)कला पढ़ना-.

(3)सुखगमया पढ़ना।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **उद्दालक-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-487-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 487
उद्दलक-जातक। (*1)

"गंदे दाँतों वाला," इत्यादि—यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक बेईमान व्यक्ति के बारे में सुनाई थी। यह व्यक्ति मोक्ष (निर्वाण) की ओर ले जाने वाले धर्म के प्रति समर्पित होते हुए भी, जीवन की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए तीन बार बेईमानी करता था। भिक्षुओं ने सत्य कक्ष में आपस में बातचीत करते हुए उस व्यक्ति के सभी दोषों को उजागर किया: "हे भिक्षुओं, ऐसा व्यक्ति, जिसने स्वयं को बुद्ध के इस महान धर्म के प्रति समर्पित कर दिया है जो मोक्ष (निर्वाण) की ओर ले जाता है, फिर भी छल में जीवन व्यतीत करता है!" गुरु अंदर आए और यह जानने के लिए उत्सुक थे कि वे किस बारे में बात कर रहे हैं। उन्होंने गुरु को बताया। गुरु ने कहा, "यह पहली बार नहीं है; वह पहले भी छल करता रहा है," और ऐसा कहते हुए उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व एक पुरोहित थे और वे एक बुद्धिमान और विद्वान व्यक्ति थे। एक दिन वे अपने उद्यान में घूमने गए और वहाँ एक सुंदर कन्या को देखकर उन पर मोहित हो गए और उसके साथ रहने लगे। उन्होंने उसे गर्भवती कर दिया और जब उसे इस बात का एहसास हुआ तो उसने उनसे कहा, "हे प्रभु, मैं गर्भवती हूँ; जब बच्चा पैदा होगा और मैं उसका नाम रखूँगी, तो मैं उसे उसके दादा का नाम दूँगी।" लेकिन उन्होंने सोचा, "किसी दासी के नाजायज बच्चे को किसी कुलीन परिवार का नाम देना तो संभव ही नहीं है।" तब उन्होंने उससे कहा, "मेरी प्रिय, यहाँ इस वृक्ष का नाम उद्दला (*2) है, और तुम बच्चे का नाम उद्दलाका रख सकती हो क्योंकि उसका गर्भ यहीं पर धारण हुआ है।" फिर उन्होंने उसे एक मुहरबंद दी और कहा, "यदि पुत्री हो तो इसका उपयोग उसके पालन-पोषण में करना; परन्तु यदि पुत्र हो तो उसे बड़ा होकर मेरे पास ले आना।"

समय आने पर उसने एक पुत्र को जन्म दिया और उसका नाम उद्दालक रखा। जब वह बड़ा हुआ, तो उसने अपनी माँ से पूछा, "माँ, मेरे पिता कौन हैं?" - "पुजारी, मेरे बेटे।" - "अगर ऐसा है, तो मैं पवित्र ग्रंथों का अध्ययन करूँगा।" इसलिए अपनी माँ से अंगूठी और गुरु की फीस लेकर वह तक्षशिला गया और वहाँ एक विश्वप्रसिद्ध गुरु से शिक्षा प्राप्त की। अपनी पढ़ाई के दौरान उसने तपस्वियों का एक समूह देखा। उसने सोचा, "इन्हें अवश्य ही पूर्ण ज्ञान होगा, मैं इनसे सीखूँगा।" तदनुसार, ज्ञान की इतनी तीव्र इच्छा से उसने संसार त्याग दिया और उनकी सेवा में लगाम लगाई, बदले में उनसे अपना ज्ञान सिखाने की विनती की। तो उन्होंने उसे अपना सारा ज्ञान सिखाया; लेकिन उन पाँच सौ तपस्वियों में से कोई भी ज्ञान में उससे आगे नहीं था; वह उन सब में सबसे बुद्धिमान था। तब वे सब एकत्रित हुए और उसे अपना गुरु नियुक्त किया। उन्होंने उनसे कहा, “आदरणीय महोदय, आप सदा वन में फल और कंद खाकर जीवन व्यतीत करते हैं; आप मनुष्यों के मार्ग पर क्यों नहीं चलते?” उन्होंने कहा, “महोदय, मनुष्य हमें दान देने को तो तत्पर रहते हैं, परन्तु वे हमें धर्म का उपदेश देकर कृतज्ञता प्रकट करने के लिए विवश करते हैं, वे हमसे प्रश्न पूछते हैं: इसी भय से हम उनके बीच नहीं जाते।” उन्होंने उत्तर दिया, “महोदय, यदि आप मुझे अपने साथ रखते हैं, तो चाहे कोई सर्वशक्तिमान राजा प्रश्न पूछे, उन्हें हल करने का कार्य मुझ पर छोड़ दीजिए,

और आप किसी बात से भयभीत न हों।" अतः वे उनके साथ तीर्थयात्रा पर निकल पड़े, भिक्षा माँगते हुए, और अंत में बनारस पहुँचे तथा राजा के उद्यान में ठहरे। अगले दिन, उन सभी के साथ, वे नगर द्वार के समक्ष एक गाँव में भिक्षा माँगने गए। लोगों ने उन्हें भरपूर भिक्षा दी। उसके अगले दिन तपस्वी नगर में घूमे, लोगों ने उन्हें भरपूर भिक्षा दी। तपस्वी उद्दालक ने धन्यवाद दिया, उन्हें आशीर्वाद दिया और उनके प्रश्नों के उत्तर दिए। लोगों को धर्म का उपदेश दिया गया और उन्होंने अपनी आवश्यकता की सभी वस्तुएँ प्रचुर मात्रा में दान कर दीं। पूरे शहर में यह खबर फैल गई, "एक ज्ञानी गुरु, एक पवित्र तपस्वी आए हैं," और राजा को भी इसकी सूचना मिल गई। राजा ने पूछा, "वे कहाँ रहते हैं?" उन्होंने बताया, "पार्क में।" राजा ने कहा, "अच्छा, आज मैं उनसे मिलने जाऊंगा।" एक व्यक्ति उद्दालक के पास गया और उसे बताया, "राजा आज आपसे मिलने आ रहे हैं।" उसने सभी को बुलाया और कहा, "महोदय, राजा आ रहे हैं: एक दिन के लिए महान व्यक्ति की कृपा प्राप्त कर लो, यह जीवन भर के लिए पर्याप्त है।" उन्होंने पूछा, "गुरुजी, हमें क्या करना चाहिए?" तब उन्होंने कहा, "तुममें से कुछ को झूलते हुए तपस्या करनी चाहिए (*3), कुछ को जमीन पर बैठना चाहिए (*4), कुछ को कीलों के बिस्तरों पर लेटना चाहिए, कुछ को पंच अग्नियों की तपस्या करनी चाहिए (*5), कुछ को जल में उतरना चाहिए, और कुछ को इस या उस स्थान पर पवित्र श्लोकों का पाठ करना चाहिए।" उन्होंने वैसा ही किया जैसा उन्होंने कहा था। वह स्वयं आठ-दस बुद्धिमान पुरुषों के साथ एक तैयार आसन पर सिरहाने के साथ बैठकर वाद-विवाद कर रहे थे, उनके बगल में एक सुंदर मंच पर एक अच्छी किताब रखी थी, और चारों ओर श्रोता मौजूद थे। उसी क्षण राजा अपने पुजारी और एक विशाल दल के साथ पार्क में आए।और जब उसने उन सभी को उनकी दिखावटी तपस्या में डूबा हुआ देखा, तो वह प्रसन्न हुआ और सोचने लगा, "वे भविष्य में किसी भी बुरी स्थिति के भय से मुक्त हैं।" उद्दालक के पास पहुँचकर, उसने उनका विनम्रतापूर्वक अभिवादन किया और एक तरफ बैठ गया; फिर अपने हृदय की प्रसन्नता में पुजारी से बात करने लगा और पहला श्लोक (*6) सुनाने लगा:

"गंदे दांतों, बकरियों की खाल के वस्त्र और बालों के साथ"
सभी उलझे बालों वाले, शांति में पवित्र शब्दों का जाप करते हुए:
निश्चित रूप से वे भलाई के लिए किसी भी मानवीय साधन को नहीं छोड़ते।
निश्चित रूप से वे सत्य को जानते हैं, उन्हें मुक्ति मिल चुकी है।"
यह सुनकर पुजारी ने उत्तर दिया, "राजा वहाँ प्रसन्न है जहाँ उसे प्रसन्न नहीं होना चाहिए, और मुझे चुप नहीं रहना चाहिए।" फिर उसने दूसरा श्लोक दोहराया:

"हे राजा, एक विद्वान ऋषि भी बुरे कर्म कर सकता है।"
  एक विद्वान संत भी सही मार्ग का अनुसरण करने में विफल हो सकता है।
हजार वेद भी सुरक्षा प्रदान नहीं कर सकते।
  असफल होना ही काम करता है, या फिर बुरी स्थिति से बचाता है।"
उद्दालक ने ये शब्द सुनकर मन ही मन सोचा, "राजा तपस्वियों से प्रसन्न थे, चाहे वे जैसे भी हों; परन्तु यह व्यक्ति जब बैल बहुत तेज दौड़ता है तो उसकी थूथन पर थप्पड़ मारता है, तैयार भोजन में गंदगी गिरा देता है: मुझे इससे बात करनी ही होगी।" अतः उसने उसे तीसरा श्लोक सुनाया।

"हजारों वेद भी सुरक्षा नहीं ला सकते।"
  असफल होना ही काम करता है, या बुरी स्थिति से बचाता है:
तो फिर वेद तो निरर्थक ही होंगे:
  सच्ची शिक्षा यही है—स्वयं पर नियंत्रण रखो, सही काम करो।
इस पर पुजारी ने चौथा श्लोक पढ़ा:

ऐसा नहीं है: वेद कोई व्यर्थ वस्तु नहीं हैं।
  हालांकि आत्म-संयम के साथ काम करना ही सच्चा शिक्षण है।
वेदों का अच्छी तरह अध्ययन करने से प्रसिद्धि प्राप्त होती है।
  लेकिन उचित आचरण से ही हम आनंद प्राप्त करते हैं।"
अब उद्दालक ने सोचा, "इस आदमी से दुर्भावना रखना ठीक नहीं होगा। अगर मैं उसे बता दूं कि मैं उसका बेटा हूं, तो वह मुझे जरूर प्यार करेगा; मैं उसे बता दूंगा कि मैं उसका बेटा हूं।" फिर उसने पांचवां श्लोक पढ़ा:

माता-पिता और रिश्तेदार किसी की देखभाल का दावा करते हैं;
हमारे माता-पिता का एक दूसरा स्वरूप इस प्रकार है:
मैं उद्दालका हूँ, एक फोटोग्राफर।
हे श्रेष्ठ ब्राह्मण, आप ही की जड़ से हैं।

“क्या आप सचमुच उद्दालक हैं?” उसने पूछा। “हाँ,” दूसरे ने कहा। फिर उसने कहा, “मैंने आपकी माता को एक चिन्ह दिया था, वह कहाँ है?” उसने कहा, “यह रहा, ब्राह्मण,” और उसे अंगूठी दे दी। ब्राह्मण ने अंगूठी को फिर से पहचान लिया और कहा, “निस्संदेह आप एक ब्राह्मण हैं; लेकिन क्या आप ब्राह्मण के कर्तव्यों को जानते हैं?” उसने छठे श्लोक के शब्दों में इन कर्तव्यों के बारे में पूछा:

"ब्राह्मण क्या होता है? वह परिपूर्ण कैसे हो सकता है? मुझे यह बताओ:
धर्मात्मा कौन होता है, और वह निर्वाण की प्राप्ति कैसे करता है?
उद्दालक ने सातवें श्लोक में इसकी व्याख्या की है:

संसार का त्याग करके, वह अग्नि से पूजा करके कीमत चुकाता है।
पानी डालता है, बलि का खंभा उठाता है:
जो व्यक्ति अपना कर्तव्य निभाता है, लोग उसकी प्रशंसा करते हैं।
और ऐसा ब्राह्मण उसे मन की शांति दिलाता है।
पुजारी ने ब्राह्मण के कर्तव्यों के बारे में उसका विवरण सुना, लेकिन उसमें त्रुटि पाई और आठवें श्लोक का पाठ इस प्रकार किया:

"पवित्र जल का छिड़काव न करने से ब्राह्मण शुद्ध नहीं हो जाता, पूर्णता इससे नहीं मिलती।"
इस प्रकार न तो उसे शांति मिलती है, न दया, और न ही निर्वाण का आनंद प्राप्त होता है।
इस पर उद्दालक ने नौवें श्लोक का पाठ करते हुए पूछा, "यदि इससे ब्राह्मण नहीं बनता, तो फिर किससे बनता है?"

"ब्राह्मण क्या होता है? वह परिपूर्ण कैसे हो सकता है? मुझे यह बताओ:
धर्मात्मा कौन होता है? और वह निर्वाण की प्राप्ति कैसे करता है?
पुजारी ने एक और श्लोक सुनाकर उत्तर दिया:

उसके पास न खेत है, न संपत्ति है, न कोई इच्छा है, न परिवार है।
जीवन के प्रति लापरवाह, वासनाओं से रहित, बुरे मार्गों से दूर:
ऐसे ब्राह्मण को भी मन की शांति प्राप्त होगी।
इसलिए, अपने कर्तव्य के प्रति सच्चे व्यक्ति के रूप में, उसकी प्रशंसा करें।"
इसके बाद उद्दालक ने एक श्लोक का पाठ किया:

"क्षत्रिय, ब्राह्मण, वैश्य, शूद्र, चांडाल और पुक्कुसा (*7),
ये सभी करुणामय हो सकते हैं, निर्वाण की प्राप्ति कर सकते हैं:
सभी संतों में से कौन ऐसा है जो बेहतर या बदतर है?
तब ब्राह्मण ने एक श्लोक का पाठ किया, यह दर्शाने के लिए कि संतत्व प्राप्त होने के क्षण से ही कोई ऊँच-नीच नहीं रह जाती:

"क्षत्रिय, ब्राह्मण, वैश्य, शूद्र, चांडाल और पुक्कुसा,
ये सभी करुणामय हो सकते हैं, निर्वाण की प्राप्ति कर सकते हैं:
सभी संतों में से कोई भी ऐसा नहीं पाया जाता जो किसी से बुरा या बेहतर हो।
लेकिन उद्दालक ने इस पर आपत्ति जताते हुए कुछ श्लोक सुनाए:

"क्षत्रिय, ब्राह्मण, वैश्य, शूद्र, चांडाल और पुक्कुसा,
ये सभी गुणी हो सकते हैं और निर्वाण की अनुभूति प्राप्त कर सकते हैं।
सभी संतों में से कोई भी ऐसा नहीं पाया जाता जो किसी से बुरा या बेहतर हो।
तो फिर तुम्हारा ब्राह्मण होना व्यर्थ है: मुझे लगता है तुम्हारा पद व्यर्थ है।
यहां पुजारी ने एक उपमा के साथ दो और छंदों का पाठ किया:

"कई रंगों में रंगे कैनवास से मंडप बनाए जा सकते हैं:
छत, एक बहुरंगी गुंबद: एक रंग छाया का प्रतीक है।
"फिर भी, जब मनुष्य शुद्ध हो जाते हैं, तो पृथ्वी पर भी ऐसा ही होता है।"
अच्छे लोग यह जानते हैं कि वे संत हैं, और वे कभी भी उनके जन्म के बारे में नहीं पूछते।
अब उद्दालक इस बात को मना नहीं कर सका, इसलिए वह चुपचाप बैठ गया। तब ब्राह्मण ने राजा से कहा, “हे महाराज, ये सब बेईमान हैं; बेईमानी से समस्त भारत का विनाश हो जाएगा। उद्दालक को समझाइए कि वह अपनी तपस्या त्याग दे और मेरे अधीन पुरोहित बन

जाए; बाकी सब भी अपनी तपस्या छोड़ दें, उन्हें ढाल और भाला दें और उन्हें अपना सेवक बना लें।" राजा मान गया और उसने ऐसा ही किया, और वे सब राजा की सेवा में लग गए।

जब गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने कहा, "भाइयों (भिक्षुओं), यह पहली बार नहीं है कि वह व्यक्ति बेईमान था।" फिर उन्होंने जन्म का विवरण देते हुए कहा, "उस समय बेईमान भिक्षु उद्दालक थे, आनंद राजा थे और मैं पुरोहित था।"

फुटनोट:

(1) इस अनुवाद का क्रमांक 153)।

(2) कैसिया फिस्टुला.

(3) "मुर्गी-संत" (एक पैर पर) और "गाय संत" (चार पैरों पर)

(4) मानो वे कुछ आधुनिक जालसाजों की तरह वर्षों तक ऐसे ही बने रहे हों।

(5) प्रत्येक दिशा के लिए एक, और ऊपर सूर्य।

(6) पहले चार छंदों को इस अनुवाद संख्या 155 में क्रमांक 236-7 से दोहराया गया है।

(7) पहले दो का क्रम नोट करें। सं. 194.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **भिसा-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-488-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 488
भीसा जातक

"घोड़े और गायों की जय हो," इत्यादि। यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक पथभ्रष्ट भिक्षु के बारे में सुनाई थी। इसका वर्णन कुश जन्म (*1) के अंतर्गत मिलेगा। यहाँ गुरु ने फिर पूछा—"क्या सच है, भिक्षु, कि तुम पथभ्रष्ट हो गए हो?" "जी, श्रीमान, सच है।" "किस कारण?" "पाप के कारण।" "भिक्षु, मोक्ष (निर्वाण) की ओर ले जाने वाले इस धर्म को अपनाने के बाद तुम क्यों पथभ्रष्ट हो गए; और वह भी पाप के कारण? पुराने समय में, बुद्ध के उदय से पहले, जो ज्ञानी लोग धार्मिक (सन्यासी) जीवन व्यतीत करते थे, यहाँ तक कि जो साधु-संतों से परे थे, वे भी शपथ लेकर किसी भी प्रलोभन या इच्छा से जुड़े विचार का त्याग कर देते थे!" ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की एक कथा सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब बोधिसत्व का जन्म एक महान ब्राह्मण के पुत्र के रूप में हुआ, जिनके पास अस्सी करोड़ (10 मिलियन) की संपत्ति थी। उनका नाम महा-कंचना रखा गया, जिसका अर्थ है स्वर्ण के स्वामी। जब वे अभी चलना ही सीखे थे, तभी उस ब्राह्मण के एक और पुत्र का जन्म हुआ, जिसका नाम उप-कंचना रखा गया, जिसका अर्थ है स्वर्ण के छोटे स्वामी। इस प्रकार क्रमानुसार सात पुत्र हुए, और सबसे छोटी पुत्री का जन्म हुआ, जिसका नाम कंचना-देवी रखा गया।

महा-कंचना जब बड़े हुए तो उन्होंने तक्षशिला में सभी कलाओं और विज्ञानों की शिक्षा प्राप्त की और घर लौट आए। तब उनके माता-पिता ने उनका अपना गृहस्थी बसाने की इच्छा व्यक्त की। उन्होंने कहा, "हम तुम्हारे लिए एक परिवार से एक अच्छी कन्या लाएँगे, जो तुम्हारे लिए उपयुक्त होगी, और फिर तुम्हारा अपना गृहस्थी हो जाएगा।" लेकिन उन्होंने कहा, "माँ और पिताजी, मुझे गृहस्थी नहीं चाहिए। मेरे लिए तीनों प्रकार के जीवन (*2) आग के समान भयानक हैं, जेल की जंजीरों के समान जकड़े हुए हैं, कूड़े के ढेर के समान

घृणित हैं। मैंने कभी भी दयालुता का कार्य नहीं किया, सपने में भी नहीं। आपके अन्य पुत्र हैं, उन्हें गृहस्थी का मुखिया बनने के लिए कहें और मुझे अकेला छोड़ दें।" यद्यपि उन्होंने बार-बार उनसे विनती की, उनके मित्रों को उनके पास भेजा और उनसे अपने मुख से आग्रह किया, फिर भी उन्होंने उनकी बात नहीं मानी। तब उनके मित्रों ने उनसे पूछा, "हे मेरे मित्र, तुम क्या चाहते हो कि तुम्हें प्रेम और इच्छा के भोग में कोई रुचि नहीं है?" उन्होंने उन्हें बताया कि कैसे उन्होंने समस्त संसार का त्याग कर दिया था। जब माता-पिता को यह बात समझ आई, तो उन्होंने यही प्रस्ताव अपने अन्य पुत्रों के सामने भी रखा, परन्तु किसी ने भी इसे नहीं माना; और न ही कन्या कंचना ने। कुछ समय बाद माता-पिता का देहांत हो गया। ज्ञानी महा-कंचना ने अपने माता-पिता का अंतिम संस्कार किया; अस्सी करोड़ (10 मिलियन) के खजाने से उन्होंने भिखारियों और यात्रियों को उदारतापूर्वक दान दिया; फिर अपने छह भाइयों, बहन, एक नौकर और एक दासी तथा एक साथी को साथ लेकर उन्होंने महान वैराग्य धारण किया और हिमालय क्षेत्र में शरण ली। वहाँ एक कमल-झील के पास एक रमणीय स्थान पर उन्होंने एक आश्रम बनाया और वन के फल और जड़ों का सेवन करते हुए पवित्र जीवन व्यतीत किया। जब वे वन में जाते, तो एक-एक करके जाते, और यदि उनमें से किसी को कोई फल या पत्ता दिखाई देता, तो वह बाकी सबको बुला लेता: वहाँ वे जो कुछ देखते और सुनते, सब बताते और जो कुछ मिलता, उसे उठा लेते—वह किसी गाँव के बाज़ार जैसा लगता था। लेकिन गुरु, तपस्वी महा-कंचना ने मन ही मन सोचा, "हमने अस्सी करोड़ (10 मिलियन) की संपत्ति त्याग कर संन्यासी जीवन व्यतीत किया है, और अब लालच से जंगली फल लाना उचित नहीं है। अब से मैं स्वयं जंगली फल लाऊंगा।" शाम को आश्रम लौटकर उन्होंने सभी को एकत्रित किया और उन्हें अपना विचार बताया। उन्होंने कहा, "तुम यहीं रहो और संन्यासी जीवन व्यतीत करो, मैं तुम्हारे लिए फल लाऊंगा।" यह सुनकर उप-कंचना और बाकी सभी ने कहा, "हम आपके मार्गदर्शन में संन्यासी बन गए हैं, आपको यहीं रुककर संन्यासी जीवन व्यतीत करना चाहिए। हमारी बहन भी यहीं रहें और दासी भी उनके साथ रहें: हम आठों बारी-बारी से फल लाएंगे, लेकिन तुम तीनों को बारी-बारी से फल लाने की आवश्यकता नहीं है।" वे मान गए। तब से ये आठों बारी-बारी से फल लाने लगे; बाकी सभी को उनका हिस्सा मिल जाता था, और वे उसे अपने-अपने रहने की जगह पर ले जाकर अपनी-अपनी झोपड़ी में रहने लगते थे। इस प्रकार वे बिना किसी कारण या वजह के एक साथ नहीं रह सकते थे।जिसकी बारी होती, वह भोजन लाता (वहाँ एक ही बाड़ा था), और उसे एक समतल पत्थर पर रखकर उसके ग्यारह भाग बनाता; फिर घंटा बजाकर वह अपना भाग लेता और अपने निवास स्थान पर चला जाता; बाकी लोग घंटा बजते ही आते, बिना हड़बड़ी किए, लेकिन पूरी विधि-विधानी से, अपना-अपना भाग लेते, फिर अपने-अपने स्थान पर लौटकर उसे खाते और ध्यान व धार्मिक तपस्या में लग जाते। कुछ समय बाद वे कमल के रेशे इकट्ठा करके खाते और वहीं रहकर, झुलसा देने वाली गर्मी और अन्य प्रकार की यातनाओं से स्वयं को कष्ट देते, अपनी सभी इंद्रियों को निष्क्रिय करके, परमानंद की अवस्था प्राप्त करने का प्रयास करते।

उनके पुण्य की महिमा से इंद्र का सिंहासन कांप उठा। उन्होंने कहा, "क्या ये केवल कामवासना से मुक्त हैं, या ये ऋषि हैं? क्या ये ऋषि हैं? मैं अभी पता लगाऊंगा।" अतः उन्होंने अपनी अलौकिक शक्ति से तीन दिनों तक उस महान प्राणी का हिस्सा गायब कर दिया। पहले दिन, अपना हिस्सा न देखकर उन्होंने सोचा, "मेरा हिस्सा अवश्य ही भुला दिया गया होगा।" दूसरे दिन, "मुझमें ही कोई दोष है: (*3) उन्होंने उचित सम्मान के साथ मेरा हिस्सा नहीं दिया।" तीसरे दिन, "ऐसा क्यों हो सकता है कि उन्होंने मुझे हिस्सा न दिया हो? यदि मुझमें कोई दोष है तो मैं क्षमा मांग लूंगा।" अतः शाम को उन्होंने घंटा बजाया। वे सब एकत्रित हुए और पूछा कि घंटा किसने बजाया था। "मैंने बजाया, मेरे भाइयों।" "हे स्वामी?" "मेरे भाइयों, तीन दिन पहले भोजन कौन लाया था?" एक भाई उठा और सम्मानपूर्वक खड़े होकर बोला, "मैं लाया था।" "जब आपने भोजन का बंटवारा किया था, तो क्या आपने मेरे लिए भी हिस्सा अलग रखा था?" "जी हां, मालिक, सबसे बड़े का हिस्सा।" "और कल खाना कौन लाया था?" एक और उठा और बोला, "मैं लाया था," फिर आदरपूर्वक प्रतीक्षा करने लगा। "क्या तुम्हें मेरी याद थी?" "मैंने तुम्हारे लिए सबसे बड़े का हिस्सा अलग रख दिया था।" "आज खाना कौन लाया था?" एक और उठा और आदरपूर्वक प्रतीक्षा करने लगा। "क्या तुमने बंटवारा करते समय मेरी याद रखी थी?" "मैंने तुम्हारे लिए सबसे बड़े का हिस्सा अलग रख दिया था।" फिर उसने कहा, "भाइयों, आज तीसरा दिन है जब मुझे हिस्सा नहीं मिला। पहले दिन जब मुझे कुछ नहीं मिला, तो मैंने सोचा, निःसंदेह जिसने बंटवारा किया है, वह मेरा हिस्सा भूल गया है। दूसरे दिन, मैंने सोचा कि मुझमें ही कोई गलती होगी। लेकिन आज मैंने ठान लिया है कि अगर गलती है भी, तो मैं उससे छुटकारा पा लूँगा, और इसीलिए मैंने इस घंटे की आवाज़ से तुम्हें बुलाया है। तुम बताओ कि तुमने मेरे लिए कमल के रेशों के ये हिस्से अलग रखे हैं: मुझे उनमें से एक भी नहीं मिला। मुझे पता लगाना होगा कि किसने इन्हें चुराया और खा लिया है। जब कोई संसार और उसकी सभी वासनाओं का त्याग कर देता है, तो चोरी करना अशोभनीय है, चाहे वह कमल की डंठल ही क्यों न हो।" ये शब्द सुनकर वे सब चिल्ला उठे, "अरे, यह कितना क्रूर काम है!" और वे सब बहुत विचलित हो गए।

अब उस आश्रम के पास स्थित जंगल के सबसे ऊंचे पेड़ पर रहने वाले देवता बाहर आए और उनके बीच बैठ गए। वहाँ एक हाथी भी था, जो अपने प्रशिक्षण के बावजूद अविचल नहीं रह सका था और जिस खूंटी से बंधा था उसे तोड़कर जंगल में भाग गया था। वह समय-समय पर आकर ऋषियों के समूह को प्रणाम करता था और आज भी आकर एक तरफ खड़ा हो गया। वहाँ एक बंदर भी था, जो नागों से खेलता था और सपेरे के हाथों से छूटकर जंगल में भाग गया था। वह उस आश्रम में रहता था और उस दिन उसने भी तपस्वियों के समूह को प्रणाम किया और एक तरफ खड़ा हो गया। तपस्वियों की परीक्षा लेने के लिए सक्का (इंद्र) भी अदृश्य रूप में उनके बगल में

उपस्थित थे। उसी क्षण बोधिसत्व के छोटे भाई, तपस्वी उप-कंचना, अपने आसन से उठे और बुद्ध को प्रणाम करते हुए, अन्य सभी को प्रणाम करते हुए, इस प्रकार बोले: "गुरुजी, बाकी सभी को छोड़कर, क्या मैं इस आरोप से मुक्त हो सकता हूँ?" "हाँ, भाई।" वे ऋषियों के बीच खड़े होकर बोले, "यदि मैंने आपके वे रेशे खा लिए होते, तो मैं ऐसा होता," और प्रथम श्लोक के शब्दों में दृढ़ शपथ ली:

"उसके घोड़े और गाय हों, चांदी और सोना हो,"
एक प्रेममयी पत्नी, ये अनमोल चीजें उसके लिए अनमोल हों।
ईश्वर करे कि उन्हें अनेक पुत्र और पुत्रियाँ हों।
ब्राह्मण, जिसने तुम्हारा भोजन का हिस्सा चुरा लिया (*4)।"

इस पर तपस्वियों ने अपने कान ढक लिए और रोते हुए कहा, "नहीं, नहीं, महाराज, यह शपथ बहुत भारी है!" तब बोधिसत्व ने भी कहा, "भाई, तुम्हारी शपथ बहुत भारी है: तुमने भोजन नहीं किया, अपनी गद्दी पर बैठ जाओ।" इस प्रकार शपथ लेकर बैठ जाने पर दूसरा भाई उठा और उस महान सत्ता को प्रणाम करते हुए, अपने दोषमुक्ति के लिए दूसरा श्लोक पढ़ा।

"ईश्वर करे कि उसे अपनी इच्छा अनुसार पुत्र और वस्त्र प्राप्त हों।"
उसके हाथों में फूलों की मालाएँ और मधुर चंदन भर दें।
उसका हृदय अब भी वासना और लालसा से प्रज्वलित है।
"ब्राह्मण, जिसने तुम्हारा हिस्सा चुरा लिया।"

जब वह बैठ गया, तो बाकी सभी ने बारी-बारी से अपनी-अपनी भावनाओं को व्यक्त करने के लिए अपनी-अपनी कविताएँ सुनाईं:

"ईश्वर करे उसे भरपूर समृद्धि मिले, वह यश और भूमि दोनों प्राप्त करे।"
पुत्र, घर, खजाने, सब कुछ उसके अधीन था।
शायद वह बीतते वर्षों को समझ न पाए।
"ब्राह्मण, जिसने तुम्हारा हिस्सा चुरा लिया।"
"उन्हें एक महान योद्धा प्रमुख के रूप में जाना जाए।"
राजाओं के राजा के रूप में, एक भव्य सिंहासन पर विराजमान,
धरती और उसके चारों कोने पूरी तरह से उसके स्वामित्व में थे।
"ब्राह्मण, जिसने तुम्हारा हिस्सा चुरा लिया।"
चाहे वह ब्राह्मण हो, उसकी वासना अनियंत्रित हो,
सितारों में विश्वास और सौभाग्यशाली दिनों के अस्तित्व के साथ,
महान सम्राटों की कृतज्ञता से सम्मानित,
"ब्राह्मण, जिसने तुम्हारा हिस्सा चुरा लिया।"
"वैदिक परंपरा का एक विद्यार्थी गहन अध्ययन करता है,
सभी मनुष्य उनकी पवित्रता का आदर करें।
और लोग उसकी पूजा करते हैं।
"ब्राह्मण, जिसने तुम्हारा हिस्सा चुरा लिया।"
इंद्र (*5) के उपहार से वह एक गाँव धारण करे,
धनी, उत्तम, सभी वस्तुओं से चार गुना संपन्न (*6),
और ईश्वर करे कि उसकी मृत्यु अनियंत्रित भावनाओं के साथ हो।
"ब्राह्मण, जिसने तुम्हारा हिस्सा चुरा लिया।"
"एक ग्राम प्रधान, उसके चारों ओर उसके साथी,
नृत्य और मधुर संगीत की ध्वनि में उनका आनंद;
राजा की कृपा उस पर अत्यधिक बनी रहे।
ब्राह्मण, जिसने तुम्हारा भोजन का हिस्सा चुरा लिया (*7)।"
"वह समस्त स्त्री जाति में सबसे सुंदर हो।"
विश्व के सर्वोच्च सम्राट को यह प्राप्त हो
उसके मन में दस हजार लोगों में से वह सबसे श्रेष्ठ थी।
ब्राह्मण, जिसने तुम्हारा भोजन का हिस्सा चुरा लिया (*8)।"
जब सभी नौकरानियाँ मिलती हैं,
वह निडर होकर अपनी सीट पर बैठ जाए।
अपनी उपलब्धियों पर गर्व हो, और उसका भोजन स्वादिष्ट हो।

ब्राह्मण, जिसने तुम्हारा भोजन का हिस्सा चुरा लिया (*9)।"
"काजंगल का विशाल परिसर उनकी देखरेख में हो।"
और ईश्वर खंडहरों की मरम्मत करे।
और हर दिन वहां एक नई खिड़की बनाएं,
ब्राह्मण, जिसने तुम्हारा भोजन का हिस्सा चुरा लिया (*10)।"
उसे छह सौ बंधनों में जकड़कर पकड़ा जाए।
प्यारे जंगल से शहर में लाया गया,
कोड़ों और भाले से क्षत-विक्षत, घायल,
ब्राह्मण, जिसने तुम्हारा भोजन का हिस्सा चुरा लिया (*11)।"
गले में माला, दोनों कानों में टिन की बाली।
उसे बांधकर, भय से भरकर राजमार्ग पर चलने दो।
और लाठियों से प्रशिक्षित होकर सर्प जाति (*12) पास आओ,
"ब्राह्मण, जिसने तुम्हारा हिस्सा चुरा लिया।"
जब इन तेरह श्लोकों में शपथ ली गई, तो महान सत्ता ने सोचा, "शायद वे सोचते हैं कि मैं स्वयं झूठ बोल रहा हूँ, और कह रहा हूँ कि भोजन वहाँ नहीं था जबकि वह था।" इसलिए उन्होंने चौदहवें श्लोक में अपनी ओर से शपथ ली:

"अगर खाना गायब नहीं हुआ था, तो कौन कसम खाकर कह सकता है कि खाना गायब हो गया था?"
उसे इच्छा और उसके प्रभाव का आनंद लेने दो।
अंत में उसका भाग्य सांसारिक मृत्यु ही हो।
यही बात आप पर भी लागू होती है, महोदय, यदि अब आपको संदेह है।
जब ऋषियों ने इस प्रकार शपथ ली, तो इंद्र ने मन ही मन सोचा, "डरने की कोई बात नहीं; मैंने इन कमल के रेशों को इन मनुष्यों की परीक्षा लेने के लिए गायब कर दिया था, और ये सब शपथ ले रहे हैं, मानो इस कर्म से घृणा कर रहे हों, मानो यह थूक का एक टुकड़ा हो। अब मैं उनसे पूछूंगा कि वे कामवासना और वासना से क्यों घृणा करते हैं।" यह प्रश्न उन्होंने अगले श्लोक में बोधिसत्व से पूछा, दृश्य रूप धारण करने के बाद।

"आखिर लोग यहाँ किस बात की तलाश में आते हैं?"
वह चीज कई लोगों को प्यारी और प्रिय लगती है।
इस जीवन में जिसकी प्रबल इच्छा थी, जो आनंददायक है: तो फिर क्यों?
क्या संत उन चीजों की प्रशंसा नहीं करते जो मनुष्य उनसे चाहते हैं?
इस प्रश्न के उत्तर में, उस महान सत्ता ने दो श्लोक पढ़े:

"इच्छाएं घातक प्रहार और बांधने वाली जंजीरें हैं।"
इन दोनों दुखों और भय में ही हमें ये चीजें मिलती हैं:
जब इच्छाओं से प्रेरित होकर शाही राजा (*13)
आसक्ति में आकर लोग घृणित और पापपूर्ण कार्य करते हैं।
ये पापी पाप को जन्म देते हैं, इसलिए नरक में ही जाएंगे।
इस नश्वर शरीर के अंत के समय।
क्योंकि वे कामवासना के दुख को जानते हैं (*14)
इसलिए संत वासना की प्रशंसा नहीं करते, बल्कि केवल निंदा करते हैं।
जब इंद्र ने महान प्राणी का स्पष्टीकरण सुना, तो वे अत्यंत द्रवित होकर निम्नलिखित श्लोक को दोहराया:

"मैंने इन ऋषियों की परीक्षा लेने के लिए चुपके से प्रस्थान किया।"
वह भोजन, जिसे मैंने झील के किनारे रखा था।
वे सचमुच ऋषि हैं, पवित्र और अच्छे हैं।
हे पवित्र जीवन के स्वामी, अपने भोजन पर ध्यान दो!
यह सुनकर बोधिसत्व ने एक श्लोक का पाठ किया:

"हम कोई कलाबाज नहीं हैं, जो आपके लिए मनोरंजन का साधन बन सकें।"
हम न तो आपके रिश्तेदार हैं और न ही आपके मित्र।

तो फिर, हे दिव्य राजा, हे हजार नेत्रों वाले,
आपको लगता है कि ऋषियों को आपके खेल के माध्यम से यह सुविधा प्रदान करनी चाहिए?
और सक्का (इंद्र) ने बीसवां श्लोक पढ़कर उससे सुलह कर ली:

आप मेरे गुरु हैं, और आप मेरे पिता हैं।
मेरे अपराध से अब यह मेरी रक्षा करे।
हे ज्ञानी ऋषि, मेरी एक गलती के लिए मुझे क्षमा कर दीजिए!
जो बुद्धिमान होते हैं वे क्रोध में कभी उग्र नहीं होते।
तब उस महान सत्ता ने देवताओं (देवदूतों) के राजा सक्का (इंद्र) को क्षमा कर दिया और ऋषियों के समूह से उनका मेल कराने के लिए स्वयं एक और श्लोक का पाठ किया:

"पवित्र पुरुषों के लिए एक रात खुशी भरी रही है,"
जब हमें भगवान वासव के दर्शन हुए।
और महोदय, यह देखकर मन ही मन प्रसन्न होइए।
जो खाना मुझसे चुराया गया था, वह अब मुझे वापस मिल गया है।"
सक्का (इंद्र) ने ऋषियों के समूह को प्रणाम किया और देवदूतों के लोक में लौट आए। वहाँ उन्होंने रहस्यमय समाधि और अलौकिक शक्तियों का संचार किया और ब्रह्मा के लोक (प्रधान देवदूतों) के लिए नियत हो गए।

जब गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने कहा, "हे भिक्षुओं, प्राचीन काल के ज्ञानी पुरुषों ने पाप का त्याग करने की शपथ ली थी।" यह कहकर उन्होंने सत्यों की व्याख्या की। सत्यों के समापन पर, पथभ्रष्ट भिक्षु प्रथम मार्ग (सम्मोहन) के फल में स्थापित हो गया। जन्म की पहचान करते हुए, उसने तीन श्लोक पढ़े:

"सारिपुत्र, मोग्गलायन, पुन्ना, कश्यप, और मैं,
अनुरुद्ध और आनंद, फिर सात भाई थे।
उप्पलावन्ना बहन थी और खुज्जुत्तारा दासी थी।
सतागिरा आत्मा थी, चित्त गृहस्थ दास था।
"हाथी परिलेय्या था, मधुवसेठ वानर था,
तब कलुदयी सक्का (इंद्र) थे। अब आपको जन्म की प्रक्रिया समझ आ गई होगी।
फुटनोट:

(1) संख्या 531

(2) इंद्रियों का, शरीर का, शरीर या रूप के बिना (काम-, रूप-, अरूप-लोक में)।

(3)या "यह मुझे सम्मानपूर्वक याद दिलाने के लिए है कि वह मेरे लिए कोई हिस्सा प्रदान नहीं करता है।"

(4) इसका अर्थ यह है कि जिस व्यक्ति का हृदय इन चीजों पर लगा होता है, उसे इनसे वियोग करने में पीड़ा होती है, और इसलिए बौद्ध दृष्टिकोण से वह मरने के योग्य नहीं है। अतः यह श्लोक अभिशाप है।

(5) वासावा.

(6) विद्वान इसकी व्याख्या इस प्रकार करते हैं: घनी आबादी वाला, अनाज, लकड़ी और पानी से समृद्ध। यह श्लोक मित्रवत तपस्वी द्वारा कहा गया है।

(7) दास व्यक्ति द्वारा बोला गया।

(8) कंचना द्वारा बोला गया।

(9) दासी लड़की द्वारा बोला गया।

(10)वृक्ष-आत्मा द्वारा कहा गया। विद्वान हमें बताते हैं कि कजंगला एक ऐसा नगर था जहाँ सामग्री मिलना कठिन था। वहाँ बुद्ध कश्यप के समय में एक देवता (देवदूत) को एक पुराने मठ के खंडहरों की मरम्मत का कठिन कार्य करना पड़ा।

(11) हाथी द्वारा बोला गया.

(12)बंदर यह कहता है: उसका काम साँप के साथ खेलना था।

(13) प्राणियों के स्वामी, "सक्का (इंद्र) का संकेत" (विद्वत्ता)

(14)सुत्त निपाता, 50.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सुरुचि-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-489-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 489
सुरुचि-जातक

"मैं हूँ," इत्यादि। यह कथा गुरु ने श्रावस्ती नगर के निकट मिगारा की माता (*1) के महल में रहते हुए सुनाई थी, कि कैसे महान संन्यासिनी विशाखा को आठ वरदान प्राप्त हुए। एक दिन उन्होंने जेतवन मठ में धर्म मार्ग का उपदेश सुना और बुद्ध और उनके अनुयायियों को अगले दिन के लिए आमंत्रित करके घर लौट आईं। परन्तु उसी रात एक भयंकर तूफान ने विश्व के चारों महाद्वीपों को जलमग्न कर दिया। भगवान बुद्ध ने भिक्षुओं को इस प्रकार संबोधित किया, "जैसे जेतवन मठ में वर्षा हो रही है, वैसे ही हे भिक्षुओं, विश्व के चारों महाद्वीपों में वर्षा हो रही है। अपने आप को पूरी तरह भीग जाने दो: यह मेरा अंतिम विश्व-तूफान है!" इस प्रकार, भिक्षुओं के शरीर पहले से ही भीग चुके थे, और अपनी अलौकिक शक्ति से वे जेतवन मठ से विमुख होकर विशाखा के महल के एक कमरे में प्रकट हुए। वह रोते हुए बोली, "सचमुच अद्भुत! एक रहस्यमयी बात! तथागत (बुद्ध) की शक्ति से हुआ चमत्कार! बाढ़ घुटनों तक, जी हाँ, कमर तक भरी हो, तब भी किसी भिक्षु का पैर या वस्त्र तक नहीं भीगा!" वह हर्ष और प्रसन्नता से बुद्ध और उनके सभी साथियों की सेवा करने लगी। भोजन समाप्त होने के बाद उसने बुद्ध से कहा, "मैं सचमुच भगवान बुद्ध से वरदान माँगना चाहती हूँ।" "विशाखा, तथागतों (बुद्धों) के वरदान असीम हैं (*2)।" "परन्तु वे वरदान जो जायज़ हों, जो निष्कलंक हों?" "बोलिए, विशाखा।" "मेरी यह तमन्ना है कि जीवन भर मुझे भिक्षुओं को बरसात के मौसम में वस्त्र, आने वाले सभी अतिथियों को भोजन, यात्रा करने वाले भिक्षुओं को भोजन, बीमारों को भोजन, बीमारों की सेवा करने वालों को भोजन, बीमारों को औषधि, चावल की दलिया का निरंतर वितरण और जीवन भर भिक्षुणियों को स्नान के लिए वस्त्र देने का अधिकार प्राप्त हो।" गुरु ने उत्तर दिया, "विशाखा, तथागत (बुद्ध) से ये आठ वरदान माँगकर तुम क्या वरदान चाहती हो?" उसने उन्हें अपनी इच्छा बताई और गुरु ने कहा, "यह अच्छा है, यह अच्छा है, विशाखा, यह सचमुच अच्छा है, विशाखा, कि तथागत (बुद्ध) से आठ वरदान माँगकर तुम यही वरदान चाहती हो।" फिर उन्होंने कहा, "मैं तुम्हें आठ वरदान प्रदान करता हूँ, विशाखा।" आठ वरदान प्रदान करके और धन्यवाद कहकर वे विदा हो गए।

एक दिन जब गुरुजी पूर्वी उद्यान में रह रहे थे, तब सत्य के हॉल में इस विषय पर चर्चा शुरू हुई: "भाई (भिक्षु), महान गृहस्थ बहन विशाखा ने अपने स्त्रीत्व के बावजूद दशबल (बुद्ध) के हाथों से आठ वरदान प्राप्त किए। आह, उनके गुण कितने महान हैं!" गुरुजी अंदर आए और उन्होंने पूछा कि वे किस बारे में बात कर रहे हैं। उन्होंने बताया। गुरुजी ने कहा, "यह पहली बार नहीं है जब इस स्त्री ने मुझसे वरदान प्राप्त किए हैं, क्योंकि उन्होंने पहले भी ऐसे वरदान प्राप्त किए हैं"; और उन्होंने उन्हें अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, मिथिला में सुरुचि नाम का एक राजा राज करता था। उसके एक पुत्र का जन्म हुआ और उसने उसका नाम सुरुचि-कुमार रखा। जब वह बड़ा हुआ, तो उसने तक्षशिला में अध्ययन करने का निश्चय किया; इसलिए वह वहाँ गया और नगर द्वार पर एक हॉल में बैठ गया। बनारस के राजा का पुत्र, जिसका नाम राजकुमार ब्रह्मदत्त था, भी उसी स्थान पर गया और उसी आसन पर बैठ गया जहाँ राजकुमार सुरुचि बैठे थे। दोनों ने आपस में बातचीत की और मित्र बन गए, और दोनों एक साथ गुरु के पास गए। उन्होंने शुल्क अदा किया और अध्ययन किया, और कुछ ही समय में उनकी शिक्षा पूरी हो गई। फिर उन्होंने अपने गुरु से विदा ली और अपने-अपने रास्ते पर चल दिए। थोड़ी दूर चलने के बाद, वे एक ऐसे स्थान पर रुके जहाँ सड़क दो भागों में बँट जाती थी। तब उन्होंने गले

लगाया और अपनी मित्रता को कायम रखने के लिए एक प्रतिज्ञा की: "यदि मुझे पुत्र और तुम्हें पुत्री हो, या यदि तुम्हें पुत्र और मुझे पुत्री हो, तो हम उन दोनों का विवाह करा देंगे।"

जब वे सिंहासन पर आसीन हुए, तब राजा सुरुचि के पुत्र का जन्म हुआ और उनका नाम राजकुमार सुरुचि रखा गया। ब्रह्मदत्त की एक पुत्री थी, जिसका नाम सुमेधा (ज्ञानी देवी) था। राजकुमार सुरुचि समय के साथ बड़े हुए, शिक्षा के लिए तक्षशिला गए और शिक्षा पूरी करके लौट आए। तब उनके पिता ने अपने पुत्र को राजा बनाने की विधि के लिए जल छिड़काव करने की इच्छा से मन ही मन सोचा, "मेरे मित्र बनारस के राजा की एक पुत्री है, ऐसा कहा जाता है: मैं उसे अपने पुत्र की पत्नी बनाऊंगा।" इसके लिए उन्होंने एक व्यक्ति को बहुमूल्य उपहारों के साथ भेजा।

लेकिन उनके आने से पहले ही बनारस के राजा ने अपनी रानी से यह प्रश्न पूछा: "महारानी, एक स्त्री के लिए सबसे बड़ा दुख क्या है?" "अपनी सहेलियों से झगड़ा करना।" "तो, महाराज, हमारी इकलौती पुत्री राजकुमारी सुमेधा को इस दुख से बचाने के लिए, हम उसे केवल उसी को देंगे जो उससे विवाह करना चाहेगा, किसी और को नहीं।" इसलिए जब दूत आए और उन्होंने अपनी पुत्री का नाम बताया, तो राजा ने उनसे कहा, "प्रिय मित्रों, यह सच है कि मैंने बहुत पहले अपनी पुत्री का विवाह अपने पुराने मित्र से तय कर दिया था। लेकिन हम उसे स्त्रियों की भीड़ में नहीं डालना चाहते, और हम उसे केवल उसी को देंगे जो उससे विवाह करना चाहेगा, किसी और को नहीं।" यह संदेश वे राजा तक ले आए। लेकिन राजा अप्रसन्न थे। उन्होंने कहा, "हमारा राज्य विशाल है, मिथिला नगर सात कुंड (x 4.23 किमी) में फैला है, पूरे राज्य का क्षेत्रफल तीन सौ कुंड (x 4.23 किमी) है। ऐसे राजा के पास कम से कम सोलह हजार स्त्रियाँ होनी चाहिए।" लेकिन राजकुमार सुरुचि ने सुमेधा की अपार सुंदरता के बारे में सुनकर ही उस पर मोहित हो गए। उन्होंने अपने माता-पिता को संदेश भेजा, "मैं उसे ही लूंगा, किसी और को नहीं: मुझे बहुत सी स्त्रियों की क्या आवश्यकता है? उसे ही लाया जाए।" उनके माता-पिता ने उनकी इच्छा को नहीं रोका, बल्कि एक बहुमूल्य उपहार और एक भव्य सभा भेजकर उसे घर लाने का आह्वान किया। तब सुमेधा को उनकी रानी पत्नी बनाया गया और उन दोनों का राज्याभिषेक किया गया।

वह राजा सुरुचि बने और न्यायपूर्वक शासन करते हुए अपनी रानी के साथ सुखमय जीवन व्यतीत किया। यद्यपि उनकी रानी दस हजार वर्षों तक उनके महल में रहीं, फिर भी उन्हें न तो कोई पुत्र हुआ और न ही कोई पुत्री।

तब सभी नगरवासी सलाह लेने के लिए महल के प्रांगण में एकत्रित हुए। राजा ने पूछा, "क्या बात है?" उन्होंने कहा, "हमें इसके अलावा कोई और दोष नहीं दिखता, सिवाय इसके कि आपके वंश को आगे बढ़ाने के लिए आपका कोई पुत्र नहीं है।"

आपके पास तो केवल एक रानी है, जबकि एक राजकुमार के पास कम से कम सोलह हजार होनी चाहिए। हे महाराज, कुछ महिलाओं का समूह चुनिए: कोई योग्य पत्नी आपको पुत्र देगी। "प्रिय मित्रों, आप लोग क्या कह रहे हैं? मैंने वचन दिया था कि मैं एक के अलावा किसी और को नहीं लूंगा, और उसी शर्त पर मैंने उसे पा लिया।" मैं झूठ नहीं बोल सकता, मेरे लिए कोई स्त्री-समूह नहीं है।" इसलिए उन्होंने उनका अनुरोध ठुकरा दिया और वे चली गईं। लेकिन सुमेधा ने सब कुछ सुन लिया। उसने सोचा, "राजा अपनी सच्चाई के लिए रखैलें नहीं चुन रहे हैं; अच्छा, मैं उनके लिए कोई ढूंढ लूंगी।" राजा की माता और पत्नी की भूमिका निभाते हुए, उसने अपनी इच्छा से एक हजार योद्धा कन्याओं, एक हजार दरबारी कन्याओं, एक हजार गृहस्थ पुत्रियों, एक हजार हर तरह की नर्तकियों, कुल मिलाकर चार हजार कन्याओं को चुना और उन्हें राजा को सौंप दिया। और ये सभी दस हजार वर्षों तक महल में रहीं, और उनके बीच कभी कोई पुत्र या पुत्री नहीं हुई। इस तरह वह तीन बार चार हजार कन्याएं लाई, लेकिन उनके न तो कोई पुत्र हुआ और न ही कोई पुत्री। इस प्रकार वह कुल मिलाकर सोलह हजार पत्नियां लाई। चालीस हजार वर्ष बीत गए, यानी कुल मिलाकर पचास हजार वर्ष, जिसमें दस हजार वर्ष शामिल हैं जो राजा ने अकेले सुमेधा के साथ बिताए थे। तब नगरवासी फिर से इकट्ठा होकर निंदा करने लगे। राजा ने पूछा, "अब क्या हुआ?" "महाराज, अपनी स्त्रियों को पुत्र प्राप्ति के लिए प्रार्थना करने का आदेश दीजिए।" राजा संतुष्ट नहीं थे। अनिच्छुक होने के कारण, उन्हें प्रार्थना करने का आदेश दिया गया। तब से पुत्र प्राप्ति के लिए प्रार्थना करते हुए, उन्होंने सभी प्रकार के देवताओं की पूजा की और सभी प्रकार के व्रत रखे; फिर भी कोई पुत्र प्राप्त नहीं हुआ। तब राजा ने सुमेधा को पुत्र प्राप्ति के लिए प्रार्थना करने का आदेश दिया। वह मान गई। महीने के पंद्रहवें दिन के व्रत में, उसने आठों वक्त के व्रत (*3) धारण किए और एक भव्य कमरे में एक आरामदायक पलंग पर बैठकर सद्गुणों का ध्यान किया। अन्य लोग पार्क में बकरियों या गायों का यज्ञ करने का व्रत ले रहे थे। सुमेधा के सद्गुणों की महिमा से सक्का (इंद्र) का निवास स्थान कांपने लगा। सक्का (इंद्र) ने सोचा और समझा कि सुमेधा ने पुत्र प्राप्ति के लिए प्रार्थना की है; ठीक है, उसे पुत्र प्राप्त होना चाहिए। "पर मैं उसे यह या वह पुत्र यूं ही नहीं दे सकता; मैं एक उपयुक्त व्यक्ति की खोज करूँगा। तभी उन्होंने नलकारा नामक एक युवा देवदूत को देखा, जो टोकरी बुनने वाला था। वह पुण्य से संपन्न प्राणी था, जो पिछले जन्म में बनारस में रहता था, जब उस पर यह विपत्ति आई। बुवाई के समय जब वह खेतों की ओर जा रहा था, तो उसने पच्चेक बुद्ध को देखा। उसने अपने हिरनों को बीज बोने के लिए भेजा, लेकिन स्वयं वापस लौट आया और पच्चेक बुद्ध को घर ले गया, उन्हें भोजन कराया और फिर उन्हें गंगा तट पर ले गया। उसने और उसके पुत्र ने मिलकर एक कुटिया बनाई, जिसकी नींव अंजीर के तनों से और दीवारें सरकंडों से बुनी हुई थीं; उसने उसमें एक दरवाजा लगाया और चलने के लिए एक रास्ता बनाया। वहाँ उन्होंने पच्चेक बुद्ध को तीन महीने तक ठहराया; और वर्षा

ऋतु समाप्त होने के बाद, पिता और पुत्र दोनों ने उन्हें तीन वस्त्र पहनाए और उन्हें विदा किया। इसी प्रकार उन्होंने उस कुटिया में सात पच्चेक बुद्धों का सत्कार किया।और उन्हें तीन वस्त्र दिए और उन्हें अपने-अपने मार्ग पर जाने दिया। आज भी लोग बताते हैं कि कैसे ये दोनों, पिता और पुत्र, टोकरी बुनने लगे और गंगा के किनारे सरकंडे इकट्ठा करते थे, और जब भी वे किसी पच्चेक बुद्ध को देखते, तो वही करते थे जो हमने बताया है। जब उनकी मृत्यु हुई, तो उनका जन्म तैंतीस के स्वर्ग में हुआ और वे एक के बाद एक, प्रत्यक्ष और विपरीत क्रम में, इंद्रियों के छह स्वर्गों में रहे, और देवताओं (देवदूतों) के बीच महान महिमा का आनंद लिया। उस लोक में मरने के बाद, ये दोनों उच्च देवलोक में जाने की इच्छा रखते थे। सक्का (इंद्र) ने यह जानकर कि उनमें से एक तथागत (बुद्ध) होंगे, उनके महल के द्वार पर गए और जब वे उठे और उनसे मिलने आए तो उन्हें प्रणाम करते हुए कहा, "महोदय, आपको मनुष्यलोक में जाना होगा।" लेकिन उसने कहा, "हे राजा, मनुष्यों का संसार घृणित और नफरत से भरा है: वहाँ रहने वाले लोग देवताओं (देवदूतों) के लोक की लालसा में अच्छे काम करते हैं और दान देते हैं। वहाँ जाकर मैं क्या करूँ?" "हे महाराज, उस लोक में आपको जो कुछ भी आनंदित किया जा सकता है, वह सब आपको परिपूर्णता से प्राप्त होगा; आप बहुमूल्य पत्थरों से बने एक महल में निवास करेंगे, जो पच्चीस लीग (4.23 किमी) ऊँचा होगा। कृपया स्वीकार कीजिए।" उसने स्वीकार कर लिया। जब इंद्र को अपना वचन मिल गया, तो वे एक ऋषि के वेश में राजा के उद्यान में उतरे और उन स्त्रियों के ऊपर हवा में इधर-उधर उड़ते हुए यह मंत्रोच्चार किया, "पुत्र की कामना करने वाले को मैं पुत्र का आशीर्वाद दूँ?" "मुझे, महाराज, मुझे!" हजारों हाथ ऊपर उठे। फिर उन्होंने कहा, "मैं गुणी लोगों को पुत्र देता हूँ: तुम्हारा गुण क्या है, तुम्हारा जीवन और आचरण कैसा है?" उन्होंने अपने उठे हुए हाथ नीचे कर लिए और कहा, "यदि आप गुण का पुरस्कार चाहते हैं, तो सुमेध के पास जाइए।" वह वायु में उड़ते हुए आए और उनके शयनकक्ष की खिड़की पर ठहर गए। फिर वे उनके पास गए और उन्हें बताया, “देखिए, मेरी स्वामिनी, देवताओं का एक राजा (देवदूत) वायु में उतरकर आपके शयनकक्ष की खिड़की पर खड़ा है और आपको पुत्र का वरदान दे रहा है!” वह बड़े धूमधाम से वहाँ गईं और खिड़की खोलकर बोलीं, “क्या यह सच है, महाराज, जो मैं सुन रही हूँ, कि आप एक गुणी स्त्री को पुत्र का आशीर्वाद दे रहे हैं?” “हाँ, और मैं ऐसा ही कर रहा हूँ।” “तो मुझे यह वरदान दीजिए।” “आपका गुण क्या है, बताइए; और यदि आप मुझे प्रसन्न करें, तो मैं आपको वरदान दे दूँगा।” फिर उन्होंने अपने गुण बताते हुए ये पंद्रह श्लोक सुनाए।जब इंद्र उठे और उनसे मिलने आए तो उन्होंने उन्हें प्रणाम करते हुए कहा, "हे महाराज, आपको मनुष्यलोक में जाना होगा।" लेकिन उन्होंने कहा, "हे महाराज, मनुष्यलोक घृणित और अप्रिय है; वहाँ रहने वाले लोग देवताओं (देवदूतों) के लोक की लालसा में अच्छे काम करते हैं और दान देते हैं। वहाँ जाकर मैं क्या करूँ?" "हे महाराज, आपको उस लोक में जो कुछ भी भोगा जा सकता है, वह सब पूर्ण रूप से प्राप्त होगा; आप बहुमूल्य पत्थरों से बने एक महल में निवास करेंगे, जो पच्चीस मील (4.23 किमी) ऊँचा होगा। कृपया स्वीकार कीजिए।" उन्होंने स्वीकार कर लिया। जब इंद्र को अपना वचन मिल गया, तो वे एक ऋषि के वेश में राजा के उद्यान में उतरे और उन स्त्रियों के ऊपर हवा में इधर-उधर उड़ते हुए यह मंत्रोच्चार किया, "पुत्र की कामना करने वाले को मैं पुत्र का आशीर्वाद दूँ?" "मुझे, हे महाराज, मुझे!" हजारों हाथ ऊपर उठ गए। तब उन्होंने कहा, "मैं गुणी महिलाओं को पुत्र प्रदान करता हूँ: तुम्हारा गुण क्या है, तुम्हारा जीवन और आचरण कैसा है?" उन्होंने अपने उठे हुए हाथ नीचे करते हुए कहा, "यदि आप गुण का पुरस्कार चाहते हैं, तो सुमेधा के पास जाएँ।" वह वायु में विचरण करते हुए उनके शयनकक्ष की खिड़की पर ठहर गए। तब वे उनके पास गए और उन्हें बताया, "देखिए, मेरी स्वामिनी, देवताओं का एक राजा (देवदूत) वायु में उतरकर आपके शयनकक्ष की खिड़की पर खड़ा है और आपको पुत्र का वरदान दे रहा है!" वह बड़े धूमधाम से वहाँ गईं और खिड़की खोलकर बोलीं, "क्या यह सच है, महाराज, कि आप एक गुणी स्त्री को पुत्र का आशीर्वाद दे रहे हैं?" "हाँ, और मैं ऐसा ही करता हूँ।" "तो मुझे यह वरदान दीजिए।" "तुम्हारा गुण क्या है, मुझे बताइए; और यदि आप मुझे प्रसन्न करें, तो मैं आपको वरदान प्रदान करता हूँ।" तब उन्होंने अपने गुण का वर्णन करते हुए ये पंद्रह श्लोक सुनाए।जब इंद्र उठे और उनसे मिलने आए तो उन्होंने उन्हें प्रणाम करते हुए कहा, "हे महाराज, आपको मनुष्यलोक में जाना होगा।" लेकिन उन्होंने कहा, "हे महाराज, मनुष्यलोक घृणित और अप्रिय है; वहाँ रहने वाले लोग देवताओं (देवदूतों) के लोक की लालसा में अच्छे काम करते हैं और दान देते हैं। वहाँ जाकर मैं क्या करूँ?" "हे महाराज, आपको उस लोक में जो कुछ भी भोगा जा सकता है, वह सब पूर्ण रूप से प्राप्त होगा; आप बहुमूल्य पत्थरों से बने एक महल में निवास करेंगे, जो पच्चीस मील (4.23 किमी) ऊँचा होगा। कृपया स्वीकार कीजिए।" उन्होंने स्वीकार कर लिया। जब इंद्र को अपना वचन मिल गया, तो वे एक ऋषि के वेश में राजा के उद्यान में उतरे और उन स्त्रियों के ऊपर हवा में इधर-उधर उड़ते हुए यह मंत्रोच्चार किया, "पुत्र की कामना करने वाले को मैं पुत्र का आशीर्वाद दूँ?" "मुझे, हे महाराज, मुझे!" हजारों हाथ ऊपर उठ गए। तब उन्होंने कहा, "मैं गुणी महिलाओं को पुत्र प्रदान करता हूँ: तुम्हारा गुण क्या है, तुम्हारा जीवन और आचरण कैसा है?" उन्होंने अपने उठे हुए हाथ नीचे करते हुए कहा, "यदि आप गुण का पुरस्कार चाहते हैं, तो सुमेधा के पास जाएँ।" वह वायु में विचरण करते हुए उनके शयनकक्ष की खिड़की पर ठहर गए। तब वे उनके पास गए और उन्हें बताया, "देखिए, मेरी स्वामिनी, देवताओं का एक राजा (देवदूत) वायु में उतरकर आपके शयनकक्ष की खिड़की पर खड़ा है और आपको पुत्र का वरदान दे रहा है!" वह बड़े धूमधाम से वहाँ गईं और खिड़की खोलकर बोलीं, "क्या यह सच है, महाराज, कि आप एक गुणी स्त्री को पुत्र का आशीर्वाद दे रहे हैं?" "हाँ, और मैं ऐसा ही करता हूँ।" "तो मुझे यह वरदान दीजिए।" "तुम्हारा गुण क्या है, मुझे बताइए; और यदि आप मुझे प्रसन्न करें, तो मैं आपको वरदान प्रदान करता हूँ।" तब उन्होंने अपने गुण का वर्णन करते हुए ये पंद्रह श्लोक सुनाए।और वह आपके शयनकक्ष की खिड़की पर खड़ी होकर आपको पुत्र का वरदान दे रही है!” वह बड़े धूमधाम से वहाँ पहुँची और खिड़की खोलकर बोली, “क्या यह सच है, महाराज, जो मैंने सुना है कि आप एक गुणी स्त्री को पुत्र का आशीर्वाद दे रहे हैं?” “हाँ, और मैं ऐसा ही कर रहा हूँ।” “तो मुझे यह वरदान दीजिए।” “आपका गुण क्या है, बताइए; और यदि आप मुझे प्रसन्न करें, तो मैं आपको यह वरदान दे दूँगी।” फिर अपने गुण का वर्णन करते हुए

उसने ये पंद्रह श्लोक सुनाए।और वह आपके शयनकक्ष की खिड़की पर खड़ी होकर आपको पुत्र का वरदान दे रही है!" वह बड़े धूमधाम से वहाँ पहुँची और खिड़की खोलकर बोली, "क्या यह सच है, महाराज, जो मैंने सुना है कि आप एक गुणी स्त्री को पुत्र का आशीर्वाद दे रहे हैं?" "हाँ, और मैं ऐसा ही कर रहा हूँ।" "तो मुझे यह वरदान दीजिए।" "आपका गुण क्या है, बताइए; और यदि आप मुझे प्रसन्न करें, तो मैं आपको यह वरदान दे दूँगी।" फिर अपने गुण का वर्णन करते हुए उसने ये पंद्रह श्लोक सुनाए।

"मैं राजा रुसी की पत्नी-रानी हूँ, जिनसे उन्होंने सबसे पहले विवाह किया था।"
मैंने सुरुचि के साथ दस हजार वर्षों तक वैवाहिक जीवन व्यतीत किया।
"मिथिला के राजा सुरुचि, विदेह का सर्वोच्च स्थान,
मैंने उसकी इच्छा को कभी हल्के में नहीं लिया, न ही उसे नीच या तुच्छ समझा।
कर्म से हो, विचार से हो या शब्दों से, न तो उसकी पीठ पीछे, न ही उसके सामने।
"यदि यह सच है, हे पवित्र आत्मा, तो ऐसा ही पुत्र दिया जाए; परन्तु यदि मेरे होंठ झूठ बोल रहे हैं, तो मेरा सिर सात टुकड़ों में तोड़ दो।"

"मेरे प्रिय पति के माता-पिता, जब तक उनका प्रभाव था,
और जब तक वे जीवित रहेंगे, वे मुझे सदा उस मार्ग का प्रशिक्षण देते रहेंगे।
"मेरा जुनून किसी भी जीव को नुकसान न पहुंचाना और स्वेच्छा से सही काम करना था।"
मैंने दिन-रात बिना थके अत्यंत सावधानी से उनकी सेवा की।
"यदि यह सच है, इत्यादि।"

"मेरी सहेलियों में सोलह हजार से कम महिलाएं नहीं रही हैं:
फिर भी, हे ब्राह्मण, ईर्ष्या या क्रोध कभी भी बीच में नहीं आए।
"उनकी खुशकिस्मती पर मुझे आनंद आता है; उनमें से हर एक मुझे प्रिय है।"
इन सभी पत्नियों के प्रति मेरा हृदय इतना कोमल है मानो वह स्वयं मैं ही हूँ।
"यदि यह सच है, इत्यादि।"

"सभी दास, संदेशवाहक और नौकर, और चारों ओर यही हाल था।"
मैं उन्हें खाना देता हूँ, मैं उनके साथ अच्छा व्यवहार करता हूँ, और मेरा चेहरा हंसमुख और प्रसन्न रहता है।
"यदि यह सच है, इत्यादि।"

"तपस्वी, ब्राह्मण, यहाँ भीख माँगने वाला कोई भी व्यक्ति दिखाई देता है,"
मैं सभी को भोजन और पेय से दिलासा देता हूँ, मेरे हाथ पूरी तरह से साफ धुले हुए हैं।
"यदि यह सच है, इत्यादि।"

"किसी भी पखवाड़े का आठवां दिन, चौदहवां, पंद्रहवां दिन,"
और मैं जो विशेष उपवास रखता हूँ, मैं पवित्र मार्गों पर चलता हूँ (*4)।
"यदि यह सच है, हे पवित्र आत्मा, तो ऐसा ही पुत्र दिया जाए; परन्तु यदि मेरे होंठ झूठ बोल रहे हैं, तो मेरा सिर सात टुकड़ों में तोड़ दो।"

वास्तव में, सौ या हज़ार श्लोक भी उनके गुणों की प्रशंसा करने के लिए पर्याप्त नहीं होते: फिर भी इंद्र ने उन्हें इन पंद्रह श्लोकों में अपनी ही प्रशंसा करने की अनुमति दी, और उन्होंने वृत्तांत को संक्षिप्त नहीं किया, यद्यपि उन्हें अन्यत्र बहुत कुछ करना था; फिर उन्होंने कहा, "आपके गुण प्रचुर और अद्भुत हैं"; फिर उनकी प्रशंसा में उन्होंने दो श्लोक पढ़े:

"हे गौरवशाली देवी, हे राजा की पुत्री, ये सभी महान गुण..."
हे देवी, आप स्वयं के बारे में जो गाती हैं, वे आप में ही पाई जाती हैं।
"कुलीन वंश में जन्मा एक योद्धा, सर्वोपरि, बुद्धिमान और गौरवशाली।"
विदेह के धर्मी सम्राट, आपके पुत्र, शीघ्र ही उदय होंगे।"
ये शब्द सुनकर उसने अत्यंत प्रसन्नता से दो छंद सुनाए और उससे एक प्रश्न पूछा:

"अव्यवस्थित, धूल और गंदगी से सना हुआ, आकाश में ऊँचाई पर स्थित,"
आपकी आवाज़ इतनी मधुर है कि मेरा दिल छू जाती है।
"हे ऋषि, क्या आप एक शक्तिशाली देवता (देवदूत) हैं और स्वर्ग में निवास करते हैं?"
मुझे बताओ तुम यहाँ कहाँ से आ रहे हो, मुझे बताओ तुम कौन हो!

उसने उसे छह छंदों में बताया:

"सौ नेत्रों वाले इंद्र (सक्का) को आप देख सकते हैं, क्योंकि देवता (देवदूत) मुझे इसी नाम से पुकारते हैं।"
जब वे स्वर्गिक न्याय कक्ष में एकत्रित होने के आदी हो जाते हैं।
"जब संसार में गुणी, बुद्धिमान और नेक स्त्रियाँ पाई जाती हैं,
सच्ची पत्नियाँ, पति की माँ के प्रति कर्तव्यबद्ध होने के समान दयालु होती हैं (*5)
"जब उन्हें ऐसी बुद्धिमान और नेक स्वभाव वाली स्त्री का ज्ञान हो,
हालांकि वह स्त्री है, फिर भी वे मानते हैं कि स्वयं देवता (देवदूत) उसके पास जाएंगे।
"तो हे महिला, आप एक नेक जीवन जीकर, अच्छे कर्मों का भंडार करके,
एक राजकुमारी का जन्म हुआ है, दिल की सारी खुशियाँ उसने पा ली हैं।
"इसलिए, हे राजकुमारी, तुम पृथ्वी पर यश प्राप्त करके अपने कर्मों का फल भोगोगी।"
और उसके बाद देवताओं (देवदूतों) के लोक में एक नया और दिव्य जन्म।
हे बुद्धिमान, हे धन्य! इसी प्रकार जीवन व्यतीत करो, अपने आचरण को सही बनाए रखो।
अब मुझे स्वर्ग लौटना होगा, आपके दर्शन से प्रसन्न होकर।
उन्होंने कहा, "मुझे देवदूतों के लोक में कुछ काम है, इसलिए मैं जा रहा हूँ; लेकिन तुम सावधान रहना।" यह सलाह देकर वे चले गए।

सुबह के समय, नालकारा देवता का गर्भ उनके गर्भ में आया। जब उन्हें इसका पता चला, तो उन्होंने राजा को बताया, और राजा ने गर्भवती स्त्री के लिए जो आवश्यक था वह किया (*6)। दस महीने बाद उन्होंने एक पुत्र को जन्म दिया, और उन्होंने उसका नाम महा-पानादा रखा। दोनों देशों के सभी लोग यह कहते हुए आए, "हे स्वामी, हम यह पुत्र के दूध के लिए लाए हैं," और प्रत्येक ने राजा के प्रांगण में एक सिक्का डाल दिया; सिक्कों का एक बड़ा ढेर लग गया। राजा इसे स्वीकार नहीं करना चाहते थे, लेकिन उन्होंने पैसा वापस नहीं लिया, बल्कि जाते समय कहा, "हे स्वामी, जब पुत्र बड़ा हो जाएगा, तो इससे उसका भरण-पोषण हो जाएगा।"

बालक का पालन-पोषण अत्यंत वैभवपूर्ण वातावरण में हुआ; और जब वह सोलह वर्ष की आयु तक पहुंचा, तो वह सभी गुणों में निपुण हो चुका था। राजा ने अपने पुत्र की आयु देखकर रानी से कहा, "महारानी, जब हमारे पुत्र के अभिषेक का समय आएगा, तो हम उसके लिए एक सुंदर महल बनवाएंगे।" रानी सहर्ष सहमत हो गईं। राजा ने भवन निर्माण के लिए शुभ स्थान का पता लगाने में कुशल लोगों को बुलवाया (*7), और उनसे कहा, "मेरे मित्रों, एक कुशल राजमिस्त्री (*8) को बुलाओ और मेरे महल से कुछ ही दूरी पर मेरे लिए एक महल बनवाओ। यह मेरे पुत्र के लिए है, जिसे हम अपना उत्तराधिकारी नियुक्त करने वाले हैं।" उन्होंने कहा कि यह ठीक है, और वे जमीन की सतह की जांच करने लगे। उसी क्षण इंद्र का सिंहासन गर्म हो गया। यह देखकर उसने तुरंत विश्वकर्मा (*9) को बुलाया और कहा, "हे मेरे भले विश्वकर्मा, जाइए और राजकुमार महापानाद के लिए आधा लीग (4.23 किमी) लंबाई और चौड़ाई तथा पच्चीस लीग (4.23 किमी) ऊँचाई का एक महल बनाइए, जो सभी कीमती पत्थरों से बना हो।" विश्वकर्मा ने राजमिस्त्री का रूप धारण किया और कामगारों के पास जाकर कहा, "जाइए, नाश्ता कीजिए, फिर लौट आइए।" इस प्रकार कामगारों को विदा करके उसने अपनी लाठी से धरती पर प्रहार किया; उसी क्षण उपर्युक्त आकार का सात मंजिला महल खड़ा हो गया। अब महापानाद के लिए ये तीन समारोह एक साथ संपन्न हुए: महल का समारोह, उनके ऊपर राजसी छत्र फैलाने का समारोह और उनका विवाह समारोह। समारोह के समय दोनों देशों के सभी लोग एकत्रित हुए और सात वर्षों तक दावत में शामिल रहे, और राजा ने उन्हें विदा नहीं किया: उनके वस्त्र, उनके आभूषण, उनका भोजन और उनका पेय और बाकी सभी चीजें राजपरिवार द्वारा प्रदान की गईं। सात वर्ष बीतने पर वे बड़बड़ाने लगे, और राजा सुरुचि ने पूछा, क्यों? उन्होंने कहा, "हे राजा, इस उत्सव में मौज-मस्ती करते-करते सात वर्ष बीत गए। यह उत्सव कब समाप्त होगा?" राजा ने उत्तर दिया, "मेरे मित्रों, इतने समय में मेरे पुत्र ने एक बार भी नहीं हँसा। जैसे ही वह हँसेगा, हम फिर से तितर-बितर हो जाएँगे।" तब भीड़ ढोल बजाते हुए गई और कलाबाजों और बाज़ीगरों को इकट्ठा किया। हजारों कलाबाज इकट्ठा हुए, और उन्होंने खुद को सात समूहों में बाँट लिया और नृत्य किया; लेकिन वे राजकुमार को हँसा नहीं सके। ज़ाहिर है, जिसने दिव्य नर्तकों का नृत्य देखा था, वह ऐसे नर्तकों की परवाह नहीं कर सकता था। तब दो चतुर बाज़ीगर, भांडू-कन्ना और पांडू-कन्ना, यानी क्रॉप-ईयर और येलो-ईयर आए और उन्होंने कहा, "हम राजकुमार को हँसा देंगे।" भंडु-कन्ना ने महल के द्वार के सामने एक विशाल आम का पेड़ उगाया, जिसका नाम उन्होंने संस्पेरिल रखा। फिर उन्होंने एक डोरी उछाली और उसे पेड़ की एक शाखा में फंसा दिया, और फिर वे आम संस्पेरिल पर चढ़ गए। अब लोग कहते हैं कि आम संस्पेरिल वेसवना का आम है (*10)। और वेसवना के दासों ने हमेशा की तरह उन्हें पकड़ा, उनके टुकड़े-टुकड़े कर दिए और उन टुकड़ों को नीचे फेंक दिया।अन्य बाज़ीगरों ने टुकड़ों को जोड़ा और उन पर पानी डाला। उस व्यक्ति ने फूलों के वस्त्र पहने और उठकर फिर से नाचने लगा। यह देखकर भी राजकुमार नहीं हँसा। तब पांडु-कन्ना ने प्रांगण में कुछ लकड़ियाँ जमा करवाईं और अपने दल के साथ आग में उतर गया। जब आग बुझ गई, तो लोगों ने लकड़ियों के ढेर पर पानी छिड़का। पांडु-कन्ना अपने दल के साथ फूलों के वस्त्र पहने नाचते हुए उठ खड़ा हुआ। जब लोगों ने देखा कि वे उसे हँसा नहीं पा रहे हैं, तो वे क्रोधित हो गए। यह देखकर इंद्र ने एक दिव्य नर्तक को भेजा और उससे राजकुमार महा-पानाद को हँसाने का अनुरोध किया। तब वह आया और राजमहल के ऊपर हवा में स्थिर हो गया और उसने अर्ध-शरीर नृत्य किया: एक हाथ, एक पैर, एक आँख, एक दाँत नाचते हुए, फड़फड़ाते हुए, इधर-उधर

झिलमिलाते हुए, बाकी सब पत्थर की तरह स्थिर। महा-पानाद ने यह देखकर हल्की सी मुस्कान दी। लेकिन भीड़ ठहाकों से लोटपोट हो गई, हँसी रुक ही नहीं रही थी, हँसते-हँसते उनका दिमाग खराब हो गया, वे अपने अंगों पर नियंत्रण खो बैठे, शाही प्रांगण में लोटपोट होते रहे। उत्सव यहीं समाप्त हुआ। बाकी का...

महान पनादा, पराक्रमी राजा,
उसका महल पूरी तरह सोने का था, (*12)
महा-पानादा जन्म (*13) में इसकी व्याख्या की जानी चाहिए।

राजा महापाणद ने अच्छे कर्म किए और दान दिया, और अपने जीवन के अंत में देवताओं (देवदूतों) के लोक में चले गए।

जब गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने कहा, "इस प्रकार, भिक्षुओं, विशाखा को मुझसे पहले ही वरदान प्राप्त हो चुका है," और फिर उन्होंने जन्म का विवरण दिया: "उस समय, भद्दाजी महापाणद थे, विशाखा सुमेधा देवी थीं, आनंद विश्वकर्मा थे, और मैं स्वयं सक्का (इंद्र) था।"

फुटनोट:

(1) उनका असली नाम विशाखा था; वे बुद्ध की महिला शिष्यों में सबसे विशिष्ट थीं। महावग्ग, 8:15 में कहानी देखें।

(2)या “वरदान देने से ऊपर हैं (जब तक वे यह नहीं जान लेते कि वे क्या हैं)”: महावग्ग, i. 54. 4, viii. 15. 6.

(3) आठ सिलानी: जीवन लेना, चोरी, अशुद्धता, झूठ बोलना, मादक पेय, निषिद्ध समय पर भोजन करना, सांसारिक मनोरंजन, मलहम और आभूषण।

(4)पतिहरियापक्खो

(5)ससुदेव-पतिबत्ता। ससुदेव एक अलग शब्द होना चाहिए।

(6) गर्भरक्षण नामक एक समारोह था जो गर्भपात से बचाता था।

(7)संख्या 297 की तुलना करें

(8) बढ़ई या राजमिस्त्री।

(9)देवताओं (देवदूतों) का वास्तुकार।

(10)संख्या 281 देखें। यहाँ वर्णित करतबों के बारे में मध्ययुगीन यात्रियों ने बात की है।

(11)na ca के लिए एक गलत मुद्रण है।

(12)ये शब्द क्रमांक 264 में छंदों की शुरुआत हैं।

(13)सं. 264

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **पञ्च-स्पोसथ-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-490-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 490
पंच-उपोस्थ-जातक

“आप संतुष्ट हैं,” इत्यादि। यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें लगभग पाँच सौ गृहस्थ भिक्षु (भिक्षु) उपवास व्रत धारण किए हुए थे। उस समय, कहते हैं कि गुरु बुद्ध के तेजस्वी आसन पर, सत्य के हॉल में, चारों प्रकार के लोगों के बीच (*1), उपस्थित लोगों को सौम्य हृदय से देखते हुए, यह समझ गए कि आज का प्रवचन गृहस्थ भिक्षुओं की कथा पर आधारित होगा (*2)। तब उन्होंने इन भिक्षुओं से पूछा, “क्या गृहस्थ भिक्षुओं ने उपवास व्रत धारण किया है?” उत्तर मिला, “जी हाँ, उन्होंने किया है।” “यह उचित था, यह उपवास प्राचीन काल के ज्ञानी पुरुषों की प्रथा थी: प्राचीन काल के ज्ञानी पुरुष, कामवासना और वासना के पापों को वश में करने के लिए उपवास करते थे।” तब उनके अनुरोध पर उन्होंने अतीत की एक कथा सुनाई।

बहुत समय पहले, मगध राज्य को उससे सटे दो राज्यों से अलग करने वाला एक विशाल वन था। बोधिसत्व का जन्म मगध में एक महान ब्राह्मण परिवार में हुआ था। बड़े होकर उन्होंने अपनी इच्छाओं का त्याग कर उस वन में शरण ली और वहीं रहने लगे। उस शरण से कुछ ही दूरी पर, बांस के एक झुरमुट में एक जंगली कबूतर अपनी मादा साथी के साथ रहता था; एक चींटी के टीले में एक साँप रहता था; एक झाड़ी में सियार का मांद था और दूसरी में भालू का। ये चारों जीव समय-समय पर ऋषि के पास आते और उनके प्रवचन सुनते थे।

एक दिन कबूतर और उसकी मादा भोजन की तलाश में अपने घोंसले से निकले। मादा कबूतर पीछे-पीछे गई, और जैसे ही वह गई, एक बाज़ ने उस पर झपट्टा मारा और उसे उठा ले गया। उसकी चीख सुनकर नर कबूतर मुड़ा और देखा कि बाज़ उसे ले जा रहा है! बाज़ ने चीखते-चिल्लाते ही उसे मार डाला और खा गया। अब नर कबूतर अपनी मादा कबूतर के बिछड़ने से प्रेम की आग में जल रहा था। तब उसने सोचा, "यह वासना मुझे बहुत सता रही है; मैं तब तक भोजन की तलाश में नहीं जाऊँगा जब तक मुझे इसे वश में करने का उपाय न मिल जाए।" इसलिए अपनी खोज को बीच में ही रोककर वह एक तपस्वी के पास गया और वासना को वश में करने का व्रत लेकर एक करवट लेट गया।

साँप ने भी भोजन की तलाश करने का सोचा; इसलिए वह अपने बिल से बाहर निकला और सीमावर्ती गाँवों में से एक के पास एक गायों के रास्ते पर खाने की खोज करने लगा। तभी वहाँ गाँव के मुखिया का एक बैल था, जो पूरी तरह से सफेद और शानदार था। भोजन करने के बाद वह एक चींटी के टीले के नीचे घुटनों के बल बैठ गया और खेल-खेल में अपने सींगों से मिट्टी उछालने लगा। साँप बैल के खुरों की आवाज़ से भयभीत हो गया और चींटी के टीले में छिपने के लिए तेज़ी से आगे बढ़ा। साँप गलती से उस पर चल पड़ा, जिससे साँप क्रोधित हो गया और उसने बैल को काट लिया; और बैल वहीं मर गया। जब ग्रामीणों को बैल की मृत्यु का पता चला, तो वे सब रोते हुए एक साथ दौड़े और मृत बैल को माला पहनाकर श्रद्धांजलि दी, उसे कब्र में दफनाया और अपने-अपने घरों को लौट गए। उनके चले जाने के बाद सर्प आया और सोचने लगा, "क्रोध के कारण मैंने इस प्राणी का जीवन छीन लिया है और अनेकों के हृदयों को दुःख पहुँचाया है। जब तक मैं क्रोध को वश में करना नहीं सीख लेता, तब तक मैं भोजन लेने के लिए बाहर नहीं जाऊँगा।" फिर वह मुड़ा और आश्रम की ओर गया, और क्रोध को वश में करने का व्रत लेकर एक करवट लेट गया।

सियार भी भोजन की तलाश में निकला और उसे एक मरा हुआ हाथी मिला (*3)। वह बहुत प्रसन्न हुआ: "यहाँ तो खूब खाना है!" वह चिल्लाया और हाथी की सूंड को काटने लगा—ऐसा लगा जैसे वह किसी पेड़ के तने को काट रहा हो। उसे इससे कोई आनंद नहीं मिला और उसने हाथी के दांत को काटा—ऐसा लगा जैसे वह किसी पत्थर को काट रहा हो। उसने हाथी का पेट भी चखा—ऐसा लगा जैसे वह कोई टोकरी हो। इसलिए वह हाथी की पूंछ पर टूट पड़ा, जो लोहे के कटोरे जैसी थी। फिर उसने हाथी के पिछले हिस्से पर हमला किया और देखो! वह घी की टिकिया की तरह नरम था। उसे वह इतना पसंद आया कि वह उसे खाते हुए अंदर तक घुस गया। वह वहीं रहा, भूख लगने पर खाता और प्यास लगने पर खून पीता; और लेटने के लिए हाथी के अंदरूनी अंगों और फेफड़ों को बिस्तर की तरह फैला लेता। "यहाँ," उसने सोचा, "मुझे खाना-पीना और बिस्तर दोनों मिल गए; कहीं और जाने का क्या फायदा?" इसलिए वह हाथी के पेट में ही संतुष्ट होकर रहा और फिर कभी बाहर नहीं निकला। लेकिन समय बीतने के साथ-साथ हवा और गर्मी से शव सूख गया और पीछे का रास्ता बंद हो गया। सियार अंदर ही अंदर क्षीण होता जा रहा था, उसका शरीर पीला पड़ गया था, लेकिन उसे बाहर निकलने का कोई रास्ता नहीं दिख रहा था। तभी एक दिन अचानक तेज़ आंधी आई; नाला पानी से भीग गया और नरम होकर फटने लगा। दरार देखकर सियार चिल्लाया, "मैं बहुत दिनों से यहाँ कष्ट भोग रहा हूँ, अब मैं इसी छेद से बाहर निकलूँगा।" फिर वह सिर के बल उस जगह की ओर दौड़ा। रास्ता संकरा था और वह तेज़ी से भागा, जिससे उसका शरीर छिल गया और उसके सारे बाल पीछे छूट गए। जब वह बाहर निकला तो वह ताड़ के पेड़ के तने की तरह नंगा था, उस पर एक भी बाल नहीं था। "आह," उसने सोचा, "यह मेरे लालच ने ही मुझे यह सब मुसीबत दी है। जब तक मैं अपने लालच को वश में करना नहीं सीख लेता, तब तक मैं फिर कभी भोजन के लिए बाहर नहीं जाऊँगा।" फिर वह आश्रम गया और लालच को वश में करने का व्रत लिया और एक करवट लेट गया।

भालू भी जंगल से बाहर आया और लालच का गुलाम होने के कारण माला राज्य के सीमावर्ती गाँव में चला गया। "देखो, भालू है!" गाँव वाले सब चिल्लाए; और वे धनुष, लाठी और न जाने क्या-क्या लेकर बाहर आए और उस घनी वनस्पति को घेर लिया जिसमें वह लेटा हुआ था। भीड़ से घिरे होने पर वह बाहर भागा और भागने लगा, और भागते समय उन्होंने उसे धनुष और लाठियों से पीटा। वह टूटे सिर और खून से लथपथ घर लौटा। "अरे," उसने सोचा, "यह मेरा अत्यधिक लालच ही है जिसने मुझ पर यह सारी मुसीबत ला दी है। जब तक मैं इसे वश में करना नहीं सीख लेता, तब तक मैं फिर कभी भोजन के लिए बाहर नहीं जाऊँगा।" इसलिए वह आश्रम गया और लालच को वश में करने का व्रत लिया और एक तरफ लेट गया।

लेकिन तपस्वी अपने उच्च कुल में जन्म लेने के अहंकार के कारण रहस्यमयी समाधि (सम्मोहन) प्राप्त करने में असमर्थ था। पच्चेक बुद्ध ने यह जानकर कि वह अहंकार से ग्रस्त है, यह भी पहचाना कि वह कोई साधारण प्राणी नहीं है। उन्होंने सोचा, "यह व्यक्ति बुद्ध बनने के लिए ही जन्मा है, और इसी चक्र में वह पूर्ण ज्ञान प्राप्त करेगा। मैं उसके अहंकार को वश में करने में उसकी सहायता करूँगा और उसे सिद्धियाँ प्राप्त करने में मदद करूँगा।" जब वह अपने पत्तों की कुटिया में बैठा था, पच्चेक बुद्ध उच्च हिमालय से नीचे आए और तपस्वी की शिला पर बैठ गए। तपस्वी बाहर आया और उन्हें अपने आसन पर बैठा देखकर अपने अहंकार में वश में नहीं रहा। वह उनके पास गया और उंगली उठाकर चिल्लाया, "तुम्हें धिक्कार है, निकम्मे, गंजे पाखंडी, तुम मेरे आसन पर क्यों बैठे हो?" “हे पवित्र पुरुष,” दूसरे ने कहा, “आप इतने अभिमानी क्यों हैं? मैंने पच्चेक बुद्ध के ज्ञान को आत्मसात कर लिया है, और मैं आपको बताता हूँ कि इसी चक्र में आप असीम ज्ञानी हो जाएँगे; आप बुद्ध बनने के लिए ही पैदा हुए हैं! जब आप पूर्ण सद्‌गुणों (*4) को सिद्ध कर लेंगे, तो एक और ऐसे ही समय के बाद आप बुद्ध बन जाएँगे; और जब आप बुद्ध बन जाएँगे, तो आपका नाम सिद्धार्थ होगा।” फिर उन्होंने उसे नाम, कुल, परिवार, प्रमुख शिष्यों आदि के बारे में बताया और कहा, “अब आप इतने अभिमानी और भावुक क्यों हैं? यह बात आपके योग्य नहीं है।” पच्चेक बुद्ध की यही सलाह थी। इन शब्दों पर दूसरे ने कुछ नहीं कहा: न तो अभिवादन किया, न ही यह पूछा कि वह कब, कहाँ और कैसे बुद्ध बनेगा। तब आगंतुक ने कहा, “इस बात से अपने जन्म और मेरी शक्तियों (*5) का अंदाजा लगाइए: यदि आप कर सकते हैं, तो मेरी तरह हवा में उठिए।” ऐसा कहकर वह आकाश में उठा और दूसरे के सिर पर बंधी बालों की लटों पर अपने पैरों की धूल झाड़कर वापस उच्च हिमालय लौट गया। उसके जाने पर तपस्वी व्यथित हो उठा। उसने कहा, “एक पवित्र पुरुष है, जिसका शरीर इतना भारी है, वह हवा में रुई के कण की तरह उड़ता है! वह पच्चेक बुद्ध हैं, और मैंने जन्म के अहंकार के कारण उनके चरणों को कभी नहीं चूमा, उनसे यह भी नहीं पूछा कि मैं बुद्ध कब बनूंगा। यह जन्म मेरे लिए क्या कर सकता है? इस संसार में शक्ति ही सुखदायी जीवन है; परन्तु मेरा यह अहंकार मुझे नरक में ले जाएगा। जब तक मैं अपने अहंकार को वश में करना नहीं सीख लेता, तब तक मैं फिर कभी जंगली फल लाने नहीं जाऊंगा।” फिर वह अपने पत्तों के बने कुटिया में प्रवेश कर गया और अहंकार को वश में करने का व्रत लिया। टहनियों से बने अपने गद्दे पर बैठे हुए, उस बुद्धिमान युवा रईस ने अपने अहंकार को वश में किया, रहस्यमय समाधि की अवस्था में प्रवेश किया, अपनी क्षमताओं और उपलब्धियों को विकसित किया, फिर आगे बढ़कर उस पत्थर की चौकी पर बैठ गया जो ढके हुए रास्ते के अंत में थी।

फिर कबूतर और बाकी सब आए, उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। उस महान प्राणी ने कबूतर से कहा, "आम दिनों में तुम इस समय यहाँ नहीं आते, बल्कि भोजन की तलाश में जाते हो: क्या आज तुम उपवास रख रहे हो?" "जी हाँ, मैं रख रहा हूँ।" तब उसने पूछा, "क्यों?" और पहला श्लोक सुनाया।

मुझे यकीन है कि आप थोड़े में ही संतुष्ट हैं।
   हे उड़ते हुए कबूतर, क्या अब तुम्हें भोजन नहीं चाहिए?
भूख और प्यास को स्वेच्छा से क्यों सहन करें?
   महोदय, आप उपवास का व्रत क्यों धारण कर रहे हैं?
जिस पर कबूतर ने दो छंदों में उत्तर दिया:

एक समय था जब मैं और मेरा साथी लालच से भरे हुए थे।
   वे दोनों इस जगह को लेकर प्रेमियों की तरह मस्ती कर रहे थे।
उस पर एक बाज झपटा और वह उड़ गया:
   तो, मुझसे छीन ली गई, वह नहीं रही जिससे मैं प्यार करता था!
मैं अपने इस भीषण नुकसान को कई तरह से जानता हूँ;
   मैं जो कुछ भी देखता हूँ, उसमें मुझे एक पीड़ा महसूस होती है;
इसलिए मैं सहायता के लिए व्रत रखने जाता हूँ।
   वह जुनून शायद मुझमें कभी वापस न आए।"
जब कबूतर ने प्रतिज्ञाओं के संबंध में अपने कार्य की प्रशंसा की, तो उस महान प्राणी ने वही प्रश्न सर्प से और बाकी सभी से एक-एक करके पूछा। उन्होंने एक-एक करके सब कुछ स्पष्ट-स्पष्ट बताया।

"पेड़ों पर रहने वाला, कुंडली मारकर पेट के बल रेंगने वाला सांप,"
अपने मजबूत नुकीले दांतों और त्वरित एवं अचूक जहर से लैस,
आप ये व्रत क्यों रखना चाहते हैं?
प्यास और भूख को स्वेच्छा से क्यों सहन करें?
मुखिया का बैल, जो पूरी तरह से शक्ति और सामर्थ्य से परिपूर्ण था,
कूबड़ पूरी तरह से कांप रहा था, सुंदर और आकर्षक,
वह मेरे ऊपर से गुजरा: गुस्से में मैंने उसे काट लिया:
असहनीय पीड़ा से तड़प कर वह वहीं दम तोड़ बैठा।
"गांव के सभी लोग बाहर निकल आते हैं।"
वे जो दृश्य देखते हैं, उसे देखकर रोते-बिलखते हैं।
इसलिए मैं उपवास के दिन सहायता के लिए प्रार्थना करने दौड़ता हूँ।
वह जुनून मुझमें फिर कभी वापस नहीं आएगा।"
"सड़ा हुआ मांस तुम्हारे लिए समृद्ध और दुर्लभ भोजन है।"
कब्रिस्तान में सड़ती हुई लाशें पड़ी हैं।
एक सियार को प्यास और भूख क्यों सहनी पड़ी?
उस पर उपवास के व्रत क्यों थोपे गए, क्यों?
मुझे एक हाथी मिला और मुझे उसका मांस पसंद आया।
तो ठीक है, मैं उसके गर्भ में ही रहा।
लेकिन गर्म हवा और सूरज की झुलसा देने वाली गर्मी
जिस रास्ते से मैं जबरदस्ती आगे बढ़ा, वह सूख गया।
"मैं एकदम दुबली-पतली और पीली पड़ गई थी, मेरे स्वामी!"
जाने का कोई रास्ता नहीं था, मुझे यहीं रुकना होगा।
फिर एक भयंकर तूफान आया और मूसलाधार बारिश होने लगी।
उस पिछले हिस्से को नरम और सुचारु बनाना।
"फिर बाहर निकलने में मुझे देर नहीं लगी,
जैसे राहु (ग्रहण) के जबड़ों से चंद्रमा निकलता है (*6):
इसलिए मैं उपवास के दिन सहायता के लिए प्रार्थना करता हूँ।
वह लालच मुझसे दूर रहे: यही कारण है।
"एक समय था जब आप खाना बनाते थे।"
चींटियों के ढेर पर चींटियों के बारे में, मास्टर भालू:
अब भूख और प्यास महसूस करने की इच्छा क्यों?
अब उपवास के दिन शपथ लेने की इच्छा क्यों है?
"अत्यधिक लालच के कारण मैंने अपने ही घर का अपमान किया।"
मैं मलाटा की ओर भागने के लिए पूरी तेजी से जुट गया।
गांव से सभी लोग बाहर आ गए।
उन्होंने मुझे धनुष और लाठियों से बुरी तरह पीटा।
खून से लथपथ और टूटे हुए सिर के साथ
मैं अपनी रोजी-रोटी की ओर भागने में जल्दी करने लगा।
इसलिए अब मैं उपवास के व्रतों से दूर भाग गया हूँ।
"वह लालच फिर कभी मेरे पास न आए।"

इस प्रकार उन चारों ने अपने द्वारा लिए गए व्रतों की सराहना की; फिर उठकर परमेश्वर को प्रणाम करते हुए उन्होंने उनसे यह प्रश्न पूछा, "हे प्रभु, अन्य दिनों में आप इस समय जंगली फल लाने जाते हैं। आज आप क्यों नहीं जा रहे हैं, बल्कि व्रत के व्रतों का पालन कर रहे हैं?" उन्होंने यह श्लोक पढ़ा:

"वह बात, महोदय, जिसे आप सीखना चाहते हैं।"
हमारी जानकारी के अनुसार हमने अब तक यह बात बता दी है:
लेकिन हम भी बदले में एक सवाल पूछेंगे:
हे ब्राह्मण, तुम उपवास का व्रत क्यों लेते हो?

उन्होंने उन्हें समझाया:

"यह एक पच्चेका बुद्ध थे, जो आए थे।"
   और मेरी झोपड़ी में एक पल रुका, और दिखाया
मेरा आना-जाना, नाम और शोहरत,
   मेरा परिवार, और मेरा पूरा भविष्य।
"फिर अहंकार से भर कर मैंने फेंका नहीं।"
   मैं उनके चरणों में नतमस्तक हो गया; मैंने और कुछ नहीं माँगा।
इसलिए मैं सहायता के लिए व्रत रखने जाता हूँ।
   वह गर्व शायद अब पहले की तरह मेरे पास न आए।
इस प्रकार उस महान पुरुष ने अपने द्वारा इन प्रतिज्ञाओं के पालन का स्पष्टीकरण दिया। फिर उन्होंने उन्हें संबोधित किया, विदा किया और अपनी कुटिया में चले गए। बाकी सभी अपने-अपने स्थान पर लौट गए। उस महान पुरुष ने अपनी समाधि (तल्ली) को भंग किए बिना ब्रह्मालोक (परमलोक) के लिए प्रस्थान किया, और बाकी सभी ने उनकी सलाह का पालन करते हुए स्वर्ग की ओर प्रस्थान किया।

गुरु ने प्रवचन समाप्त करते हुए कहा, “इस प्रकार, हे गृहस्थ भाइयों, उपवास के व्रत प्राचीन काल के बुद्धिमान पुरुषों की प्रथा थे, और अब भी इनका पालन करना आवश्यक है।” फिर उन्होंने जन्म का वर्णन किया। “उस समय अनुराधा कबूतर थे, कश्यप भालू थे, मोग्गल्याण सियार थे, सारिपुत्र नाग थे, और मैं स्वयं तपस्वी था।”

फुटनोट:

(1) यह कहानी उस पुरुष या स्त्री के प्रकरण का एक नया चरण दर्शाती है जिसे हँसाया नहीं जा सकता। इससे निकटता से संबंधित वे कहानियाँ हैं जिनमें कोई काँप नहीं सकता या डर नहीं सकता।

(2) भिक्षु, भिक्षुणियाँ, गृहस्थ भिक्षु, गृहस्थ भिक्षुणियाँ।

(3)परिचयात्मक कहानी संख्या 148 देखें।

(4)संख्या 148, i. 502 (अनुवाद i. 315) की तुलना करें।

(5) ये दस हैं, जो बुद्ध की अवस्था प्राप्त करने के लिए प्रारंभिक हैं। अर्थात् तुम्हारा जन्म मेरी शक्तियों के सामने कुछ भी नहीं है।

(6) एक राक्षस जो ग्रहण में चंद्रमा को निगलने वाला था।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **महा-मोरा-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-491-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 491
महा-मोरा-जातक(*1)

“यदि मुझे पकड़ लिया जाए,” इत्यादि। यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक पथभ्रष्ट भिक्षु के बारे में सुनाई थी। उस भिक्षु से गुरु ने पूछा, “क्या यह सच है, जैसा कि मुझे बताया गया है, कि तुम पथभ्रष्ट हो गए हो?” “जी, महाराज, यह सच है।” “भिक्षु,” उन्होंने कहा, “क्या सुख की यह लालसा तुम जैसे मनुष्य को भ्रमित नहीं करेगी? सिनेरु पर्वत को प्रचंड करने वाला तूफान भी एक सूखे पत्ते के सामने फीका नहीं पड़ता। बीते समय में इस वासना ने उन पवित्र प्राणियों को भ्रमित किया है, जिन्होंने सात हजार वर्षों तक भीतर उठने वाली वासनाओं से खुद को दूर रखा।” इन शब्दों के साथ उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब सीमावर्ती देश में एक मोरनी ने बोधिसत्व को गर्भ धारण कराया। उचित समय बीतने पर, मोरनी ने अपना अंडा वहीं रखा जहाँ वह चर रही थी और चली गई। स्वस्थ मोरनी का अंडा सुरक्षित रहता है, बशर्ते साँपों या ऐसे ही हानिकारक जीवों से कोई खतरा न हो। यह अंडा कनिकारा (*2) कली के समान सुनहरे रंग का था, और पकने पर यह अपने आप फट गया, जिससे एक सुनहरे रंग का मोर निकला, जिसकी दो आँखें गुंजा फल जैसी थीं, चोंच मूंगे जैसी थी, और उसके गले से लेकर पीठ के मध्य तक तीन लाल धारियाँ थीं। जब वह बड़ा हुआ तो उसका शरीर व्यापारी के ठेले जितना बड़ा था, देखने में बहुत सुंदर था, और सभी काले मोर इकट्ठा होकर उसे अपना राजा चुन लिया।

एक दिन, जब वह एक तालाब से पानी पी रहा था, तो उसने अपनी सुंदरता देखी और सोचा, "मैं सभी मोरों में सबसे सुंदर हूँ। यदि मैं मनुष्यों के बीच उनके साथ रहूँगा, तो मैं किसी खतरे में पड़ जाऊँगा: मैं हिमालय चला जाऊँगा और वहाँ एक शांत स्थान पर अकेला रहूँगा।" अतः रात के समय, जब सभी मोर अपने गुप्त ठिकानों में थे, वह किसी को बिना बताए हिमालय के लिए निकल पड़ा और तीन पर्वत श्रृंखलाओं को पार करते हुए चौथी में बस गया। यह एक जंगल था जहाँ उसे कमलों से ढकी एक विशाल प्राकृतिक झील मिली, और पास ही एक पहाड़ी के किनारे एक विशाल बरगद का पेड़ था; वह इस पेड़ की शाखाओं में उतर गया। इस पहाड़ी के बीचोंबीच एक सुंदर गुफा थी; और वहाँ रहने की इच्छा से, वह उसके मुहाने पर स्थित एक समतल भूमि पर उतर गया। अब इस स्थान पर चढ़ना असंभव था, न नीचे से ऊपर और न ऊपर से नीचे; यह पक्षियों, जंगली बिल्लियों, साँपों या मनुष्यों के किसी भी भय से मुक्त था। "यह मेरे लिए एक रमणीय स्थान है!" उसने सोचा। उस दिन वह वहीं रुका रहा, और अगली बार गुफा से निकलकर वह पहाड़ी की चोटी पर पूर्व दिशा की ओर मुख करके बैठ गया। जब उसने सूर्य को उदय होते देखा, तो उसने आने वाले दिन के लिए "देखो, सर्वदर्शी राजा उदय हो रहा है" (*3) श्लोक का जाप करके स्वयं को सुरक्षित किया। इसके बाद वह भोजन की तलाश में निकल गया। शाम को वह फिर लौटा, और पहाड़ी की चोटी पर पश्चिम दिशा की ओर मुख करके बैठ गया; फिर, जब उसने सूर्य को डूबते हुए देखा, तो उसने आने वाली रात के लिए "देखो, सर्वदर्शी राजा अस्त हो रहा है" श्लोक का जाप करके स्वयं को सुरक्षित किया। इस प्रकार उसका जीवन व्यतीत हुआ।

लेकिन एक दिन जंगल में रहने वाले एक शिकारी ने उसे पहाड़ी की चोटी पर बैठे हुए देखा और वापस घर चला गया। जब उसका मरने का समय आया, तो उसने अपने बेटे को बताया: "मेरे बेटे, पहाड़ों की चौथी श्रृंखला में, जंगल में, एक सुनहरा मोर रहता है। अगर राजा को ऐसा ही कोई मोर चाहिए, तो तुम जानते हो कि वह कहाँ मिलेगा।"

एक दिन बनारस के राजा की प्रधान रानी (उनका नाम खेमा था) ने भोर में एक सपना देखा, जो इस प्रकार था: एक सुनहरा मोर धर्म का उपदेश दे रहा था, रानी उसे ध्यान से सुन रही थी। मोर ने अपना उपदेश समाप्त करके जाने के लिए उठा, तो रानी ने उस पर चिल्लाकर कहा, "मोरों का राजा भाग रहा है, उसे पकड़ो!" और ये कहते ही वह जाग गई। जब वह जागी और उसे पता चला कि यह एक सपना था, तो उसने सोचा, "अगर मैं राजा को बताऊँ कि यह एक सपना था, तो वह इस पर ध्यान नहीं देगा; लेकिन अगर मैं कहूँ कि यह एक गर्भवती स्त्री की तमन्ना थी, तो वह ध्यान देगा।" इसलिए उसने गर्भवती स्त्रियों की तरह तमन्ना का नाटक किया और लेट गई। राजा उसके पास आया और पूछा कि क्या हुआ है। "मुझे एक तमन्ना है," उसने कहा। "तुम्हारी क्या इच्छा है?" "हे महाराज, मैं एक सुनहरे रंग के मोर का उपदेश सुनना चाहती हूँ।" "लेकिन ऐसा मोर हमें कहाँ मिलेगा, हे देवी?" “अगर ऐसा मोर नहीं मिला, महाराज, तो मैं मर जाऊंगी।” “चिंता मत कीजिए, महारानी; अगर कहीं ऐसा मोर है, तो उसे आपके लिए लाया जाएगा।” इस प्रकार उन्होंने महारानी को सांत्वना दी और फिर चले गए। बैठकर उन्होंने अपने दरबारियों से पूछा: “देखिए, महारानी एक सुनहरे मोर के बारे में सुनना चाहती हैं। क्या सच में सुनहरे मोर होते हैं?” “यह तो ब्राह्मणों को पता होगा, महाराज।” राजा ने ब्राह्मणों से पूछा। ब्राह्मणों ने उत्तर दिया: “हे महाराज! हमारे शुभ संकेतों के श्लोकों में लिखा है कि जल जीव जैसे मछली, कछुआ और केकड़ा, और भूमि जीव जैसे हिरण, हंस, मोर और तीतर, ये सभी जीव और मनुष्य सुनहरे रंग के हो सकते हैं।” तब राजा ने अपने राज्य के सभी शिकारियों को इकट्ठा किया और उनसे पूछा कि क्या उन्होंने कभी सुनहरा मोर देखा है। सभी ने उत्तर दिया, नहीं, सिवाय उस एक शिकारी के जिसके पिता ने उसे बताया था कि उसने क्या देखा था। उस व्यक्ति ने कहा, “मैंने स्वयं तो कभी मोर नहीं देखा, परन्तु मेरे पिता ने मुझे एक ऐसे स्थान के बारे में बताया है जहाँ एक स्वर्ण मोर पाया जाता है।” तब राजा ने कहा, “हे जन, यह मेरे और मेरी रानी के लिए जीवन और मृत्यु का प्रश्न है: इसे पकड़ो और यहाँ ले आओ।” उसने उस व्यक्ति को खूब धन दिया और उसे भेज दिया। उस व्यक्ति ने धन अपनी पत्नी और पुत्र को दे दिया और उस स्थान पर गया, जहाँ उसने उस महान प्राणी को देखा। उसने उसके लिए जाल बिछाए, प्रतिदिन स्वयं से कहता रहा कि वह प्राणी अवश्य पकड़ा जाएगा; फिर भी वह उसे पकड़े बिना ही मर गया। और रानी भी अपनी मनोकामना पूरी किए बिना ही मर गई। राजा बहुत क्रोधित हुआ, क्योंकि उसने कहा, “मेरी प्रिय रानी इस मोर के कारण मर गई”; और उसने एक स्वर्ण थाली पर यह कहानी लिखवाई कि हिमालय की चौथी पर्वत श्रृंखला में एक स्वर्ण मोर रहता है, और जो उसका मांस खाएगा वह सदा युवा और अमर रहेगा। उसने उस थाली को अपने खजाने में रख दिया, और बाद में उसकी मृत्यु हो गई। उसके बाद एक और राजा उठा, जिसने उस थाली पर लिखी हुई बातें पढ़ीं, और अमर और सदा युवा रहने की इच्छा से प्रेरित होकर,उसे पकड़ने के लिए एक शिकारी भेजा गया; लेकिन वह भी बाकी शिकारियों की तरह पहले ही मर गया। इस तरह छह राजा आए और चले गए, छह शिकारी हिमालय में असफल रहे। लेकिन सातवें राजा द्वारा भेजा गया सातवां शिकारी, सात वर्षों तक उस पक्षी को पकड़ने में असमर्थ रहा, हालांकि वह हर दिन उसे पकड़ने की उम्मीद करता था, तो

उसे आश्चर्य होने लगा कि आखिर इस मोर के पैर जाल में क्यों नहीं फंस रहे हैं। इसलिए उसने पक्षी को देखा और पाया कि वह सुबह-शाम सुरक्षा के लिए प्रार्थना कर रहा है, और इस प्रकार उसने तर्क दिया: "इस जगह पर कोई दूसरा मोर नहीं है, और यह स्पष्ट है कि यह एक पवित्र पक्षी होना चाहिए। यह उसकी पवित्रता और सुरक्षात्मक मंत्र की शक्ति है, जिसके कारण उसके पैर कभी मेरे जाल में नहीं फंसते।" इस निष्कर्ष पर पहुँचकर, वह सीमावर्ती क्षेत्र में गया और एक मोरनी को पकड़ा, जिसे उसने उंगली के इशारे पर अपनी आवाज निकालने और हाथ की ताली पर नाचने का प्रशिक्षण दिया। उसे अपने साथ लेकर वह लौट आया; फिर बोधिसत्व के मंत्रोच्चार से पहले ही उसने अपना जाल बिछा दिया और उंगलियां चटकाकर उसे चीखने पर मजबूर कर दिया। मोर ने यह चीख सुनी: उसी क्षण, सात हजार वर्षों से निष्क्रिय पड़ा पाप, एक झटके में फन फैलाए हुए नाग की तरह भड़क उठा। कामवासना से ग्रस्त होने के कारण वह अपना रक्षा मंत्रोच्चार नहीं कर सका, बल्कि उसकी ओर तेजी से बढ़ते हुए, वह हवा से सीधे जाल में आ गिरा: वह जाल जो सात हजार वर्षों से उसे पकड़ने में असमर्थ था, अब उसके पैर को जकड़ लिया। जब शिकारी ने उसे छड़ी के सिरे पर लटकते देखा, तो उसने मन ही मन सोचा, "छह शिकारी इस मोर के राजा को पकड़ने में नाकाम रहे, और मैं सात साल से नहीं पकड़ पाया। लेकिन आज, जैसे ही वह इस मोरनी के लिए वासना से ग्रस्त हुआ, वह अपना जादू नहीं चला सका, जाल में आ गया और पकड़ा गया, और अब वह सिर नीचे करके लटक रहा है। कितना पुण्यशील प्राणी है जिसे मैंने चोट पहुँचाई है! रिश्वत के लिए ऐसे प्राणी को किसी दूसरे के हवाले करना अशोभनीय है। राजा के सम्मान का मेरे लिए क्या महत्व है? मैं उसे जाने देता हूँ।" लेकिन फिर उसने सोचा, "यह एक विशालकाय, शक्तिशाली और बलवान पक्षी है, और अगर मैं उसके पास गया तो वह सोचेगा कि मैं उसे मारने आया हूँ, वह अपनी जान के डर से काँप जाएगा, और संघर्ष में उसकी टांग या पंख टूट सकता है। मैं उसके पास नहीं जाऊँगा, बल्कि छिपकर खड़ा रहूँगा और तीर से जाल काट दूँगा। फिर वह अपनी मर्जी से चला जाएगा।" इसलिए वह छिप गया, और अपने धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ाकर उस पर तीर लगाया और उसे वापस ले आया।और उस रक्षा मंत्र के बारे में, जो उसके पैरों को मेरे जाल में कभी नहीं फँसने देता है।" इस निष्कर्ष पर पहुँचकर वह सीमावर्ती क्षेत्र में गया और एक मोरनी को पकड़ा, जिसे उसने उंगली के इशारे पर सुर निकालने और ताली बजाने पर नाचने का प्रशिक्षण दिया। उसे अपने साथ लेकर वह लौट आया; फिर बोधिसत्व के मंत्र जाप करने से पहले ही उसने अपना जाल बिछा दिया, उंगलियां चटकाईं और मोरनी से चीख निकलवाई। मोर ने यह सुना: उसी क्षण, सात हजार वर्षों से निष्क्रिय पड़ा पाप, एक झटके में फन फैलाए हुए कोबरा की तरह उठ खड़ा हुआ। कामवासना से ग्रस्त होने के कारण वह अपना रक्षा मंत्र नहीं जाप सका, बल्कि उसकी ओर तेजी से बढ़ते हुए, वह हवा से सीधे जाल में फँस गया: वह जाल जो सात हजार वर्षों से उसे पकड़ने में असमर्थ था, अब उसके पैर को जकड़ लिया। जब शिकारी ने उसे छड़ी के सिरे पर लटकते देखा, तो उसने मन ही मन सोचा, "छह शिकारी इस मोर के राजा को पकड़ने में असफल रहे, और मैं सात वर्षों से नहीं पकड़ पाया।" लेकिन आज, जैसे ही वह इस मोरनी के लिए वासना से ग्रस्त हुआ, वह अपना जादू दोहरा नहीं सका, जाल में फंस गया और वहीं सिर नीचे करके लटका हुआ है। मैंने जिस प्राणी को चोट पहुंचाई है, वह कितना पुण्यशील है! रिश्वत के लिए ऐसे प्राणी को किसी दूसरे के हवाले करना अशोभनीय है। राजा के सम्मान का मेरे लिए क्या महत्व है? मैं उसे जाने दूंगा। लेकिन फिर उसने सोचा, "यह एक विशालकाय, शक्तिशाली और बलवान पक्षी है, और अगर मैं उसके पास गया तो वह सोचेगा कि मैं उसे मारने आया हूं, वह अपनी जान के डर से कांप जाएगा, और संघर्ष में उसकी टांग या पंख टूट सकते हैं। मैं उसके पास नहीं जाऊंगा, बल्कि छिपकर खड़ा रहूंगा और तीर से जाल काट दूंगा। फिर वह अपनी मर्जी से जा सकता है।" इसलिए वह छिप गया, और अपने धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ाकर तीर को प्रत्यंचा पर चढ़ाया और वापस आ गया।और उस रक्षा मंत्र के बारे में, जो उसके पैरों को मेरे जाल में कभी नहीं फँसने देता है।" इस निष्कर्ष पर पहुँचकर वह सीमावर्ती क्षेत्र में गया और एक मोरनी को पकड़ा, जिसे उसने उंगली के इशारे पर सुर निकालने और ताली बजाने पर नाचने का प्रशिक्षण दिया। उसे अपने साथ लेकर वह लौट आया; फिर बोधिसत्व के मंत्र जाप करने से पहले ही उसने अपना जाल बिछा दिया, उंगलियां चटकाईं और मोरनी से चीख निकलवाई। मोर ने यह सुना: उसी क्षण, सात हजार वर्षों से निष्क्रिय पड़ा पाप, एक झटके में फन फैलाए हुए कोबरा की तरह उठ खड़ा हुआ। कामवासना से ग्रस्त होने के कारण वह अपना रक्षा मंत्र नहीं जाप सका, बल्कि उसकी ओर तेजी से बढ़ते हुए, वह हवा से सीधे जाल में फँस गया: वह जाल जो सात हजार वर्षों से उसे पकड़ने में असमर्थ था, अब उसके पैर को जकड़ लिया। जब शिकारी ने उसे छड़ी के सिरे पर लटकते देखा, तो उसने मन ही मन सोचा, "छह शिकारी इस मोर के राजा को पकड़ने में असफल रहे, और मैं सात वर्षों से नहीं पकड़ पाया।" लेकिन आज, जैसे ही वह इस मोरनी के लिए वासना से ग्रस्त हुआ, वह अपना जादू दोहरा नहीं सका, जाल में फंस गया और वहीं सिर नीचे करके लटका हुआ है। मैंने जिस प्राणी को चोट पहुंचाई है, वह कितना पुण्यशील है! रिश्वत के लिए ऐसे प्राणी को किसी दूसरे के हवाले करना अशोभनीय है। राजा के सम्मान का मेरे लिए क्या महत्व है? मैं उसे जाने दूंगा। लेकिन फिर उसने सोचा, "यह एक विशालकाय, शक्तिशाली और बलवान पक्षी है, और अगर मैं उसके पास गया तो वह सोचेगा कि मैं उसे मारने आया हूं, वह अपनी जान के डर से कांप जाएगा, और संघर्ष में उसकी टांग या पंख टूट सकते हैं। मैं उसके पास नहीं जाऊंगा, बल्कि छिपकर खड़ा रहूंगा और तीर से जाल काट दूंगा। फिर वह अपनी मर्जी से जा सकता है।" इसलिए वह छिप गया, और अपने धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ाकर तीर को प्रत्यंचा पर चढ़ाया और वापस आ गया।रिश्वत के लिए ऐसे प्राणी को किसी दूसरे के हवाले करना अशोभनीय है। राजा के सम्मान से मुझे क्या लेना-देना? मैं उसे जाने दूंगा।" लेकिन फिर उसने सोचा, "यह एक विशालकाय, शक्तिशाली और बलवान पक्षी है, और अगर मैं उसके पास गया तो वह सोचेगा कि मैं उसे मारने आया हूँ, वह अपनी जान के डर से कांप उठेगा, और संघर्ष में उसका पैर या पंख टूट सकता है। मैं उसके पास नहीं जाऊंगा, बल्कि छिपकर खड़ा रहूंगा और तीर से फंदा काट दूंगा। फिर वह अपनी मर्जी से चला जाएगा।" इसलिए वह छिप गया, और धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ाकर तीर को प्रत्यंचा पर चढ़ाया और वापस आ गया।रिश्वत के लिए ऐसे प्राणी को किसी दूसरे

के हवाले करना अशोभनीय है। राजा के सम्मान से मुझे क्या लेना-देना? मैं उसे जाने दूंगा।" लेकिन फिर उसने सोचा, "यह एक विशालकाय, शक्तिशाली और बलवान पक्षी है, और अगर मैं उसके पास गया तो वह सोचेगा कि मैं उसे मारने आया हूँ, वह अपनी जान के डर से कांप उठेगा, और संघर्ष में उसका पैर या पंख टूट सकता है। मैं उसके पास नहीं जाऊंगा, बल्कि छिपकर खड़ा रहूंगा और तीर से फंदा काट दूंगा। फिर वह अपनी मर्जी से चला जाएगा।" इसलिए वह छिप गया, और धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ाकर तीर को प्रत्यंचा पर चढ़ाया और वापस आ गया।

अब मोर सोच रहा था, "इस शिकारी ने मुझे वासना से व्याकुल कर दिया है, और जब वह मुझे पकड़ा हुआ देखेगा तो मुझे नहीं छोड़ेगा। वह कहाँ हो सकता है?" उसने इधर-उधर देखा, और उसने उस आदमी को धनुष लिए तीर चलाने को तैयार खड़ा देखा। "निस्संदेह वह मुझे मारकर भाग जाना चाहता है," उसने सोचा, और मृत्यु के भय से उसने अपनी जान की भीख मांगते हुए पहली पंक्ति दोहराई।

"यदि मुझे बंदी बनाकर तुम्हारे पास धन लाया जाए,
तो मुझे घायल मत करो, बल्कि मुझे जीवित ही ले जाओ।
हे मित्र, मैं आपसे निवेदन करता हूँ कि मुझे राजा के पास ले चलें।
मुझे लगता है कि वह बहुत ही अच्छा इनाम देगा।
इस पर शिकारी ने सोचा, "बड़ा मोर सोच रहा होगा कि मैं उसे इस तीर से मार गिराने वाला हूँ: मुझे उसकी इस चिंता को दूर करना होगा," और इसी उद्देश्य से उसने दूसरी पंक्ति का पाठ किया।

मैंने इस तीर को धनुष पर नहीं चढ़ाया है।
हे मोर राजा, आज तुम्हें कष्ट पहुँचाने के लिए:
मैं इस जाल को काटकर तुम्हें जाने देना चाहता हूँ।
फिर अपनी इच्छा का पालन करो और उड़ जाओ।"
इस पर मोर ने दो छंदों में उत्तर दिया:

"हे शिकारी, तुमने पहले सात वर्षों तक पीछा किया,"
दिन-रात प्यास और भूख सहन करना:
अब मैं जाल में फंस गया हूँ, तुम क्या करोगे?
मुझे खोने की, मुझे उड़ने देने की इच्छा क्यों रखते हो?
"निश्चित रूप से सभी जीवित प्राणी आपके लिए सुरक्षित हैं:
आज तुमने जीवन लेने का संकल्प त्याग दिया है:
मैं तो जाल में फंसा हुआ हूँ, फिर भी तुम मुझे मुक्त करना चाहते हो।
फिर भी तुम मुझे मुक्त करना चाहते हो, मुझे उड़ जाने देना चाहते हो।"
इसके बाद यह आता है:

जब कोई व्यक्ति किसी भी जीवित प्राणी को हानि न पहुँचाने की शपथ लेता है:
जब उसके लिए सभी जीवित प्राणी भय से मुक्त हो जाएंगे:
इससे अगले जन्म में क्या आशीर्वाद प्राप्त होगा?
हे राजसी मोर, मेरे इस प्रश्न का उत्तर दो!
"जब उसके लिए सभी जीवित प्राणी भय से मुक्त हो जाते हैं,
जब कोई व्यक्ति किसी भी जीवित प्राणी को हानि न पहुँचाने की शपथ लेता है,
आज भी उनकी खूब प्रशंसा होती है।
मृत्यु के बाद उसे उसके गुणों के अनुसार स्वर्ग में ले जाया जाएगा।
"कोई देवता (देवदूत) नहीं हैं, ऐसा बहुत से लोग कहते हैं:
इस जीवन में मिलने वाला सर्वोच्च आनंद केवल यही है;
इससे अच्छे या बुरे मार्ग का फल प्राप्त होता है;
और दान देना एक मूर्खतापूर्ण बात बताई जाती है।
इसलिए मैं पक्षियों को फंदे में फंसाता हूँ, क्योंकि पवित्र पुरुषों ने ऐसा कहा है:
मैं पूछता हूँ, क्या उनके शब्दों पर मुझे विश्वास नहीं करना चाहिए?
तब उस महान सत्ता ने उस व्यक्ति को दूसरे संसार की वास्तविकता बताने का निश्चय किया; और जब वह छड़ी के सिरे पर सिर नीचे करके झूल रहा था, तब उसने एक श्लोक दोहराया:

सब कुछ स्पष्ट दिखाई दे रहा है, सूर्य और चंद्रमा दोनों चल रहे हैं
वे अपने उज्ज्वल मार्ग पर आकाश की ऊंचाइयों पर विचरण कर रहे हैं।
इस दुनिया में पुरुष उन्हें क्या कहकर पुकारते हैं?
बताइए, वे इस दुनिया के हैं या किसी और दुनिया के!
शिकारी ने एक श्लोक दोहराया:

सब कुछ स्पष्ट दिखाई दे रहा है, सूर्य और चंद्रमा दोनों चल रहे हैं
वे अपने उज्ज्वल मार्ग पर आकाश की ऊंचाइयों पर विचरण कर रहे हैं।
वे हमारी इस निचली दुनिया का हिस्सा नहीं हैं।
लेकिन दूसरी बात यह है: "पुरुष ऐसा कहते हैं।"
तब उस महान सत्ता ने उससे कहा:

"तो वे गलत हैं, वे झूठ बोलते हैं जो ऐसी बातें कहते हैं;
बिना किसी कारण के, कौन कहता है कि यह दुनिया ला सकती है
अच्छे या बुरे मार्ग का फल ही सब कुछ होता है।
या जो कोई मूर्खतापूर्ण बात कहते हैं।"
जब उस महान प्राणी ने बोलना शुरू किया, तो शिकारी ने सोचा और फिर कुछ छंदों को दोहराया:

"आप जो कह रहे हैं वह बिल्कुल सही है:
कोई यह कैसे कह सकता है कि उपहारों के साथ-साथ कोई फल भी नहीं मिल सकता?
यहाँ तो व्यक्ति बुरे कर्मों का फल भोगता है।
या अच्छा है; क्या दान देना मूर्खतापूर्ण बात है?
मुझे कैसे व्यवहार करना चाहिए, क्या करना चाहिए, कौन सा पवित्र मार्ग अपनाना चाहिए?
क्या मुझे तुम्हारा अनुसरण करना चाहिए, हे मोर राजा, बताओ!
किस प्रकार का तपस्वी सद्गुण—उदाहरण के लिए,
मुझे नरक में डूबने से बचाया जाए!
यह सुनकर उस महान प्राणी ने सोचा, "यदि मैं उसकी इस समस्या का समाधान कर दूं, तो संसार उसे निरर्थक और व्यर्थ लगेगा। मैं उसे फिलहाल धर्मनिष्ठ और पवित्र तपस्वी ब्राह्मणों का स्वरूप बता देता हूं।" इसी इरादे से उन्होंने दो श्लोक दोहराए:

पृथ्वी पर वे लोग, जिन्होंने तपस्वी व्रत धारण किए हैं,
पीले कपड़े पहने हुए, घर में नहीं रहते हुए,
जो लोग अपना खाना लेने के लिए सुबह जल्दी निकल जाते हैं,
दोपहर में नहीं (*4): ये आदमी अच्छे हैं।
समय आने पर ऐसे भले लोगों से मिलने जाएं।
और आप जिससे चाहें उससे प्रश्न पूछ सकते हैं:
वे इस मामले को समझाएंगे, क्योंकि वे जानते हैं।
दूसरी दुनिया और इस नीचे की दुनिया के बारे में।"
इस प्रकार बोलते हुए, उन्होंने उस व्यक्ति को नरक के भय से भयभीत कर दिया। दूसरे ने पच्चेक बोधिसत्व की पूर्ण अवस्था प्राप्त कर ली; क्योंकि वे परिपक्व होते ज्ञान के साथ, सूर्य की किरणों के स्पर्श की प्रतीक्षा करते पके कमल की कली के समान जीवन व्यतीत कर रहे थे। शिकारी ने जहाँ खड़ा होकर उनका प्रवचन सुना, क्षण भर में ही उसने विद्यमान वस्तुओं के सभी घटकों को समझ लिया, उनके तीन गुणों (*5) को ग्रहण कर लिया और पच्चेक बुद्ध के ज्ञान को प्राप्त कर लिया। उनकी यह समझ और उस महान सत्ता का फंदे से मुक्त होना, दोनों एक ही क्षण में घटित हुए। पच्चेक बुद्ध ने अपनी वासनाओं और इच्छाओं का नाश करते हुए, अस्तित्व के चरम सीमा (*6) पर खड़े होकर, इस श्लोक में अपनी आकांक्षा व्यक्त की:

"जैसे सर्प अपनी सूखी त्वचा को उतार फेंकता है,
जब पेड़ पर हरियाली शुरू होती है तो उसके सूखे पत्ते झड़ जाते हैं:
अतः मैं आज से शिकारी का पेशा त्यागता हूँ।
मैंने शिकारी के अपने हुनर को हमेशा के लिए त्याग दिया है।"

इस उदात्त आकांक्षा को व्यक्त करते हुए, उन्होंने सोचा, "मैं अभी-अभी पाप के बंधनों से मुक्त हुआ हूँ; परन्तु घर पर मेरे अनेक पक्षी बंधन में जकड़े हुए हैं, मैं उन्हें कैसे मुक्त करूँ?" अतः उन्होंने महापुरुष से पूछा: "मोरराज, मैंने घर पर अनेक पक्षी बंधन में छोड़ दिए हैं, मैं उन्हें कैसे मुक्त करूँ?" अब बोधिसत्व, जो असीम ज्ञानी हैं, पच्चेक बुद्ध से कहीं अधिक ज्ञान और साधनों की समझ रखते हैं; अतः उन्होंने उत्तर दिया, "चूंकि तुमने कामवासना की शक्ति को तोड़कर पच्चेक बुद्ध के ज्ञान को प्राप्त कर लिया है, इसी आधार पर सत्य का कार्य करो, और समस्त भारत में कोई भी प्राणी बंधन में नहीं रहेगा।" तब दूसरे ने, बोधिसत्व द्वारा उसके लिए खोले गए द्वार से प्रवेश करते हुए, इस श्लोक को दोहराया और सत्य का कार्य किया।

"वे सभी मेरे पंख वाले पक्षी जिन्हें मैंने बांधा था,
मेरे घर में सैकड़ों-सैकड़ों लोग कैद हैं।
आज मैं उन सभी को अपना प्राण अर्पित करता हूँ।
और स्वतंत्रता: उन्हें अपने घर की ओर उड़ जाने दो।"

फिर उनके सत्य कर्म के फलस्वरूप, यद्यपि विलंब से, वे सब बंधन से मुक्त हो गए और आनंदपूर्वक चहचहाते हुए अपने-अपने स्थानों पर लौट गए। उसी क्षण पूरे भारत में सभी बंधनों में जकड़े प्राणी मुक्त हो गए और एक भी प्राणी बंधन में नहीं रहा, यहाँ तक कि एक बिल्ली भी नहीं। पच्चेक बुद्ध ने अपना हाथ उठाया और अपना माथा रगड़ा: तुरंत ही कुलचिह्न गायब हो गया और उसके स्थान पर धर्मी (तपस्वी) चिह्न प्रकट हो गया। फिर उन्होंने साठ वर्ष के एक बुजुर्ग की तरह, पूर्ण वस्त्र पहने हुए, आठ आवश्यक वस्तुएँ (*7) धारण करके, राजसी मोर को आदरपूर्वक प्रणाम किया और उसके चारों ओर दाहिनी ओर परिक्रमा करते हुए वायु में ऊपर उठे और नंदा पर्वत की चोटी पर स्थित गुफा में चले गए। मोर भी फंदे से उठकर अपना भोजन ग्रहण करके अपने निवास स्थान पर चला गया।

गुरु ने अंतिम श्लोक को दोहराया, जिसमें बताया गया कि कैसे शिकारी सात वर्षों तक हाथ में फंदा लिए घूमता रहा, और अंत में मोर राजा द्वारा उसे दर्द से मुक्त किया गया:

शिकारी पूरे जंगल में घूमता रहा
मोरों के राजा को पकड़ने के लिए, हाथ में फंदा लिए।
उसने मोरों के गौरवशाली स्वामी को मुक्त कर दिया।
मुझे भी पकड़े जाने के तुरंत बाद दर्द होने लगा।

इस प्रवचन के अंत में, गुरु ने सत्यों की व्याख्या की: सत्यों के समापन पर, पथभ्रष्ट भिक्षु ने संतत्व प्राप्त किया: फिर उसने जन्म का उल्लेख करते हुए कहा, "उस समय मैं मोर राजा था।"

फुटनोट:

(1)मोरा जातक की तुलना करें, नहीं। 159.

(2) टेरोस्पर्मम एसरीफोलियम.

(3) प्रथम मोर जन्म (ii. 33) में दिए गए भजन की पहली पंक्ति।

(4) यह भिक्षुओं के लिए सख्ती से निषिद्ध था।

(5) अनित्यता, पीड़ा, अवास्तविकता।

(6)अर्थात निर्वाण में प्रवेश करने के कगार पर।

(7) कटोरा, तीन वस्त्र, कमरबंद, रेज़र, सुई, पानी छानने वाला यंत्र।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **तच्च-सूकर-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

जातक क्रमांक 492
तच्चा-सुकरा-जातक (*1)

"मैं दूर-दूर तक खोजता हुआ भटकता रहा," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए दो वृद्ध बुजुर्गों के बारे में सुनाई थी।

कहते हैं कि महाकोसल ने अपनी पुत्री को राजा बिम्बिसार (*2) को देते समय, स्नान के बदले उसे काशी गाँव आवंटित किया था। अजातशत्रु द्वारा अपने पिता की हत्या (*3) के बाद, राजा पसेनदी (प्रसेनजित) ने उस गाँव को नष्ट कर दिया। उस गाँव के लिए दोनों के बीच हुए युद्धों में, प्रथम विजय अजातशत्रु की हुई। कोसल के राजा ने, जो बुरी तरह हार गए थे, अपने सलाहकारों से पूछा, "हम अजातशत्रु को पकड़ने के लिए क्या उपाय कर सकते हैं?" उन्होंने उत्तर दिया, "महाराज, भिक्षुओं को मंत्रों का बहुत ज्ञान है। उनके पास दूत भेजिए और मठ में भिक्षुओं की राय प्राप्त कीजिए।" यह सुनकर राजा प्रसन्न हुए। तदनुसार, उन्होंने कुछ लोगों को भेजा और उन्हें वहाँ छिपकर भिक्षुओं की बातें सुनने को कहा। अब जेतवन मठ में राजा के कई अधिकारी हैं जिन्होंने संसार का त्याग कर दिया है। इनमें से दो, दो वृद्ध भिक्षु, मठ के बाहरी इलाके में पत्तों की झोपड़ी में रहते थे: उनमें से एक का नाम वृद्ध भिक्षु धनुग्गहा-तिस्सा था, दूसरे का नाम वृद्ध भिक्षु मंतिदत्ता। ये दोनों रात भर सोए रहे और सुबह होते ही जाग गए। वृद्ध भिक्षु धनुग्गहा-तिस्सा ने आग जलाते हुए कहा, "वृद्ध भिक्षु दत्ता, महोदय।" "क्या आप सो रहे हैं?" "नहीं, मैं नहीं सो रहा हूँ: अब क्या करें?" "कोसल का राजा तो जन्म से ही मूर्ख है; उसे बस खाना खाना आता है।" "आपका क्या मतलब है, महोदय?" "वह अजातशत्रु से पिट जाता है, जो उसके पेट में कीड़े से कम नहीं है।" "तो फिर उसे क्या करना चाहिए?" "हे भिक्षु दत्ता, आप जानते हैं कि युद्ध की विधि तीन प्रकार की होती है: रथ युद्ध, चक्र युद्ध और कमल युद्ध (*4)। अजातशत्रु को पकड़ने के लिए उसे रथ युद्ध विधि का प्रयोग करना चाहिए। वह पहाड़ी की चोटी पर अपने दोनों किनारों पर वीर सैनिकों को तैनात करे और फिर सामने से मुख्य सेना उतारे: जैसे ही वह बीच में आए, जोर से चिल्लाते हुए और छलांग लगाते हुए उस पर झपट्टा मारो, और उसे मछली की तरह पकड़ लो। यही उसे पकड़ने का तरीका है।" यह सब दूतों ने सुना और फिर वापस जाकर राजा को बताया। राजा तुरंत एक विशाल सेना लेकर निकला और अजातशत्रु को बंदी बनाकर जंजीरों में जकड़ दिया। कुछ दिनों तक उसे इस प्रकार दंडित करने के बाद, उसने उसे रिहा कर दिया और चेतावनी दी कि वह ऐसा दोबारा न करे। सांत्वना के रूप में उसने अपनी पुत्री, राजकुमारी वजिरा का विवाह उससे कर दिया और अंत में बड़े धूमधाम से उसे विदा कर दिया।

भिक्षुओं के बीच इस बात की खूब चर्चा हो रही थी: "अजातशत्रु को कोसल के राजा ने पकड़ लिया, क्योंकि उन्होंने वरिष्ठ भिक्षु धनुग्गहा-तिस्सा के निर्देशों का पालन किया था!" वे सत्य के हॉल में भी इसी विषय पर बात कर रहे थे, और गुरुजी ने प्रवेश करके उनसे पूछा कि क्या चर्चा हो रही है। उन्होंने उन्हें बताया। तब उन्होंने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि धनुग्गहा-तिस्सा ने रणनीति में अपनी कुशलता साबित की है।" और उन्होंने उन्हें अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, बनारस शहर के द्वार के पास एक गाँव में रहने वाला एक बढ़ई लकड़ी काटने के लिए जंगल में गया। वहाँ उसे एक छोटा जंगली सूअर गड्ढे में गिरा हुआ मिला, जिसे वह घर ले आया और उसका पालन-पोषण करते हुए उसका नाम 'बढ़ई का सूअर' रख दिया। वह सूअर उसका सेवक बन गया: वह अपनी थूथन से पेड़ पलटता और उसके पास लाता; वह अपने दांत में नापने वाली रस्सी बाँधकर उसे खींचता था; और अपने दाँतों में कुल्हाड़ी, छेनी और हथौड़ा उठाकर लाता-ले जाता था।

जब वह बड़ा हुआ, तो वह एक विशालकाय, बलिष्ठ जानवर बन गया। बढ़ई, जो उसे अपने बेटे की तरह प्यार करता था और इस डर से कि कहीं कोई उसे नुकसान न पहुँचा दे, उसे जंगल में आज़ाद छोड़ दिया। सूअर ने सोचा, "मैं इस जंगल में अकेला नहीं रह सकता: अगर मैं अपने परिवार को खोज निकालूँ और उनके बीच रहूँ तो क्या होगा?" इसलिए उसने पेड़ों के उस पूरे झुंड में सूअरों को खोजा, जब तक कि उसे उनका एक झुंड नहीं दिख गया। उसे देखकर वह प्रसन्न हुआ और उसने तीन श्लोक पढ़े:-

मैं दूर-दूर तक जंगलों और पहाड़ियों में भटकता रहा और खोजता रहा:
मैं अपने रिश्तेदारों की तलाश में भटकता रहा: और देखो, मुझे मेरा परिवार मिल गया!
"यहाँ प्रचुर मात्रा में जड़ें और फल हैं, साथ ही भोजन का भरपूर भंडार भी है;
कितनी सुंदर पहाड़ियाँ और मनमोहक झरने हैं! यहाँ रहना अच्छा रहेगा।
मैं यहाँ अपने पूरे परिवार के साथ निश्चिंत होकर, आराम से रहूँगा।
मुझे कोई परेशानी नहीं है, किसी भी दुश्मन से डर नहीं है।"
इस श्लोक को सुनकर सूअरों ने चौथे छंद के साथ उत्तर दिया:-

"यहाँ एक शत्रु है! कहीं और शरण लो, अपने-अपने रास्ते जाओ।"
हे बढ़ई, वह तो झुंड में सबसे उत्तम को ही चुनकर मारता है!

"वह शत्रु कौन है? मुझे सच-सच बताओ, मेरे परिवार, जिनसे आपका बहुत अच्छा परिचय हुआ था।"
वह कौन है जो तुम्हें नष्ट कर रहा है? हालांकि उसने अभी तक तुम्हें पूरी तरह से नष्ट नहीं किया है।
"एक पशु राजा! वह ऊपर से नीचे तक धारीदार है, काटने के लिए दांतों से लैस है:
वह झुंड में से सबसे बेहतरीन को ही मारता है—एक शक्तिशाली जानवर!
"क्या हमारे शरीर अपनी शक्ति खो चुके हैं? क्या हमारे पास दिखाने के लिए कोई दांत नहीं हैं?"
हम मिलकर काम करके उसे हरा सकते हैं: केवल इसी तरह।
"हे बढ़ई, ये मधुर शब्द सुनकर मेरा हृदय प्रसन्न हो गया है।"
किसी भी सूअर को भागने न दो! अन्यथा युद्ध के बाद उसे मार डाला जाएगा!
बढ़ई के सूअर ने उन सबको एकमत करके पूछा, "बाघ किस समय आएगा?" "आज वह सुबह जल्दी आया और एक को ले गया, कल भी वह सुबह जल्दी आएगा।" सूअर युद्धकला में निपुण था और विजय प्राप्त करने के लिए उपयुक्त स्थान जानता था। उसने एक स्थान की खोज की और रात रहते ही उन्हें भोजन कराया; फिर सुबह बहुत जल्दी उसने उन्हें समझाया कि युद्ध की विधि तीन प्रकार की होती है, वैगन युद्ध इत्यादि; इसके बाद उसने कमल (*5) युद्ध को इस प्रकार व्यवस्थित किया। बीच में उसने दूध पीते सूअरों को रखा, और उनके चारों ओर उनकी माताओं को, इनके बगल में बांझ मादा सूअरों को, फिर छोटे सूअरों का एक घेरा, फिर दांत निकल रहे छोटे सूअरों को, फिर बड़े दांत वाले सूअरों को, और सबसे बाहर बूढ़े सूअरों को रखा। फिर उसने दस, बीस, तीस के छोटे-छोटे दल इधर-उधर तैनात किए। उसने अपने लिए एक गड्ढा खुदवाया और बाघ के लिए सूप के आकार का एक छेद खुदवाया: दोनों छेदों के बीच में खड़े होने के लिए ज़मीन का एक टुकड़ा छोड़ा। फिर वह बलवान लड़ाकू सूअरों के साथ चारों ओर घूमकर उन्हें उकसाता रहा।

जब वह इस काम में मशगूल था, तभी सूर्योदय हुआ। एक पाखंडी तपस्वी के आश्रम से निकलता हुआ बाघ पहाड़ी की चोटी पर प्रकट हुआ। सूअर चिल्लाए, "महाराज, हमारा शत्रु आ गया है!" बाघ ने कहा, "डरो मत, वह जो भी करे, तुम भी वही करना।" बाघ ने खुद को झटका दिया और जैसे जाने ही वाला हो, पेशाब किया; सूअरों ने भी ऐसा ही किया। बाघ ने सूअरों की ओर देखा और ज़ोर से दहाड़ा; उन्होंने भी ऐसा ही किया। उनकी हरकतों को देखकर उसने सोचा, "ये लोग बदल गए हैं; आज ये मेरे सामने शत्रुओं की तरह, संगठित समूहों में खड़े हैं: किसी योद्धा ने इन्हें इकट्ठा किया है; मुझे आज इनके पास नहीं जाना चाहिए।" मृत्यु के भय से वह दुम दबाकर पाखंडी तपस्वी के पास भाग गया; और उसने बाघ को खाली हाथ देखकर नौवां श्लोक पढ़ा:-

क्या तुमने हत्या के सभी रूपों का त्याग कर दिया है? क्या तुमने शपथ ली है?
जन्म लेने वाले प्रत्येक जीवित प्राणी के लिए सुरक्षा?
निश्चित रूप से आपके दांतों में उनकी पहले जैसी मजबूती नहीं रही।
तुम जानवरों का झुंड पाते हो, और भिखारी बनकर लौटते हो!
बाघ ने उस पर तीन छंद दोहराए:-

"मेरे दांत अब काट नहीं पाते।"
मेरी सारी ताकत खत्म हो गई:
सभी भाई-भाई एक साथ खड़े थे:
इसलिए मैं जंगल में अकेला भटकता हूँ।
एक समय था जब वे चारों ओर हड़बड़ी मचाते थे।
अपनी कमजोरियों को ढूंढने के लिए, एक घबराहटपूर्ण वापसी।
लेकिन अब वे घनी पंक्तियों में एकजुट होकर गुर्राते हैं:
वे अजेय हैं, डटकर मेरा सामना करते हैं। (*6)
"अब वे सभी इस बात पर सहमत हैं कि उन्हें एक नेता मिल गया है।"
जब सब सहमत हों तो वे मुझे नुकसान पहुंचा सकते हैं: इसलिए मैं उन्हें नहीं चाहता।"
इस पर उस पाखंडी तपस्वी ने निम्नलिखित श्लोक से उत्तर दिया:-

बाज़ अकेले ही पक्षियों को वश में करता है, अकेले ही।
इंद्र द्वारा टाइटन्स का वध किया गया:
और जब शक्तिशाली बाघ जानवरों के झुंड को देखता है,
वह हमेशा सर्वश्रेष्ठ शिकारियों को चुनता है और उन्हें बड़ी आसानी से मार डालता है।
फिर बाघ ने एक कविता सुनाई:-

न बाज़, न बाघ, न ही दैत्यों का स्वामी इंद्र किसी को आदेश दे सकते हैं।

एक समान समूह जो बाघ की तरह (*7) मिलकर डटकर मुकाबला करता है।"
इसलिए उस पाखंडी तपस्वी ने उसे उकसाने के लिए दो श्लोक पढ़े:-

"छोटे-छोटे पंखों वाले पक्षी झुंडों में उड़ते हैं,"
वे एक साथ ढेर की तरह ऊपर उठते हैं, एक साथ आकाश को छूते हैं।
बाज़ नीचे झुकता है, और बिल्कुल अकेला, उन पर झपटता है जब वे खेल रहे होते हैं।
वह अपनी इच्छा से उन पर हमला करता है और उन्हें मार डालता है: यही तुम्हारे बाघ का तरीका है।"
इतना कहकर उसने उसे और प्रोत्साहित किया: "शाही बाघ, तुम अपनी शक्ति को नहीं जानते। बस एक दहाड़ और एक छलांग—फिर तुम दोनों एक साथ नहीं बचोगे, मैं कसम खाकर कहता हूँ!" बाघ ने वैसा ही किया।

इसे समझाने के लिए गुरु ने एक श्लोक कहा:-

"तब उसने क्रूर लालची दृष्टि से, इन शब्दों को सत्य मानकर,
उसने हिम्मत जुटाई और अपने सारे नुकीले दांत दिखाते हुए सूंड वाले दल पर छलांग लगा दी।
खैर, बाघ वापस गया और कुछ देर पहाड़ी पर खड़ा रहा। सूअरों ने बढ़ई के सूअर को बताया कि वह फिर आ गया है। "डरो मत," उसने उन्हें दिलासा देते हुए कहा और फिर दोनों गड्ढों के बीच की पहाड़ी पर खड़ा हो गया। बाघ पूरी तेज़ी से सूअर की ओर झपटा, लेकिन सूअर पहले गड्ढे में पूंछ और थूथन के बल लुढ़क गया। बाघ अपने हमले को रोक नहीं सका और सरकंडे के पंखे जैसे आकार के गड्ढे में ढेर हो गया। थोड़ी ही देर में सूअर उछल पड़ा, अपने दांत बाघ की जांघ में गाड़ दिए, उसे दिल तक छेद दिया, मांस को चट कर गया, उसे काटता रहा और उसे दूसरे गड्ढे में धकेलते हुए चिल्लाया, "लो, बदमाश को ले जाओ!" जो पहले आए थे उन्हें एक-एक निवाला चखने का मौका मिला, जो बाद में आए वे पूछने लगे, "बाघ का मांस कैसा लगता है?"

बढ़ई का सूअर गड्ढे से बाहर आया और बाकियों की ओर देखते हुए बोला, "वाह, क्या आपको यह पसंद नहीं आया?" लेकिन उन्होंने उत्तर दिया, "महाराज, आपने बाघ का तो काम तमाम कर दिया, और यह तो एक था; लेकिन एक और बचा है जो दस बाघों से भी बदतर है।" "बताइए, वह कौन है?" "एक पाखंडी तपस्वी, जो बाघ द्वारा समय-समय पर लाया गया मांस खाता है।" "चलिए, हम उसे पकड़ लेते हैं।" यह सुनकर वे सब झटपट एक साथ चल पड़े।

अब वह पाखंडी तपस्वी सड़क पर नज़र रखे हुए था और हर पल बाघ के आने की आशंका कर रहा था। और तभी उसने देखा कि जंगली सूअर आ रहे हैं! "मुझे लगता है उन्होंने बाघ को मार डाला है, और अब वे मुझे मारने आए हैं!" वह भागा और एक जंगली अंजीर के पेड़ पर चढ़ गया। "वह पेड़ पर चढ़ गया?" सूअरों ने अपने सरदार से कहा। "कौन सा पेड़?" "एक अंजीर का पेड़।" "ठीक है, हम उसे तुरंत पकड़ लेंगे।" उसने जवान सूअरों से पेड़ की जड़ों से मिट्टी खुदवाई और मादा सूअरों से उनके मुंह में जितना पानी समा सकता था उतना पानी लाने को कहा, जब तक कि पेड़ जड़ों तक नंगा सीधा खड़ा नहीं हो गया। फिर उसने बाकी सूअरों को रास्ते से हटा दिया और घुटनों के बल बैठकर अपने दांत से जड़ पर वार किया: उसने कुल्हाड़ी की तरह जड़ को चीर दिया, पेड़ नीचे गिर गया, लेकिन वह आदमी ज़मीन तक नहीं पहुँच पाया: रास्ते में ही उसके टुकड़े-टुकड़े कर दिए गए और उसे खा लिया गया। इस चमत्कार को देखकर वृक्ष-आत्मा ने एक श्लोक सुनाया:-

"जंगल के पेड़ों की तरह एकजुट मित्र—यह एक सुखद दृश्य है:
सूअर एकजुट हो गए, एक ही हमले में बाघ ने उसे तुरंत मार डाला।
और गुरु ने एक और श्लोक सुनाया, जिसमें बताया गया था कि वे दोनों कैसे नष्ट हो गए:-

इस प्रकार जंगली सूअरों ने ब्राह्मण और बाघ दोनों का वध कर दिया।
और वे अत्यधिक खुशी में जोर-जोर से दहाड़ने लगे।
फिर सूअर ने पूछा, "क्या तुम्हारा कोई और शत्रु है?" "नहीं, महाराज," उन्होंने उत्तर दिया। तब उन्होंने उसे अपना राजा बनाने का प्रस्ताव रखा। पानी लाया गया। उस शंख को देखकर, जिसका उपयोग वह पाखंडी तपस्वी पीने के लिए करता था, जो दाहिनी ओर मुड़ी हुई सर्पिल वाली एक कीमती शंख थी (*8), उन्होंने उसे पानी से भर दिया, और बढ़ई के सूअर को अंजीर के पेड़ की जड़ पर बिठाकर उस पर आशीर्वाद का जल उंडेला। उन्होंने एक जवान मादा सूअर को उसकी पत्नी बनाया। इस प्रकार वह प्रथा शुरू हुई जो आज भी प्रचलित है, कि राजा नियुक्त करते समय उसे अंजीर की लकड़ी की कुर्सी पर बिठाया जाता है, और दाहिनी ओर मुड़ी हुई सर्पिल वाली शंख से उस पर जल छिड़का जाता है।

गुरु ने अंतिम श्लोक का पाठ करके इसे भी समझाया:-

जंगली अंजीर के पेड़ के नीचे सूअरों पर पवित्र जल उंडेला गया।
मैंने बढ़ई पर चढ़कर कहा, "आप हमारे राजा और स्वामी हैं!"

जब उन्होंने अपना प्रवचन समाप्त किया, तो गुरु ने कहा, "नहीं, भिक्षुओं, यह पहली बार नहीं है कि धनुग्गहा-तिस्सा ने रणनीति में अपनी चतुराई दिखाई है, बल्कि वह पहले भी ऐसा ही था।" इन शब्दों के साथ, उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "उस समय देवदत्त पाखंडी तपस्वी था, धनुग्गहा-तिस्सा बढ़ई का सूअर था, और मैं स्वयं वृक्ष-परी था।"

फुटनोट:

(1)संख्या 283 की तुलना करें

(2)देखें 275.

(3)पसेनदी (प्रसेनजित) महा-कोशल का पुत्र था, अजजशत्रु ने उसके पिता बिम्बिसार की हत्या कर दी थी।

(4) क्रमांक 275 देखें

(5) ध्यान दें कि यह प्रस्तावना से असहमत है।

(6)वही श्लोक क्रमांक 407 में भी आता है।

(7) पाठ अनिश्चित है। निस्संदेह इसका मतलब है कि समूह बाघ का मुकाबला कर सकता है।

(8) एक दुर्लभ वस्तु, बहुत मूल्यवान, और राजा के आशीर्वाद के लिए प्रयुक्त।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **महा-वणिज-जातक**
***स्रोत** : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-493-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 493
महा-वनिजा-जातक

"कई जगहों से व्यापारी," इत्यादि। यह कहानी गुरुजी ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जो श्रावस्ती नगर में रहने वाले कुछ व्यापारियों के बारे में थी। सुना है कि ये व्यापारी व्यापार के सिलसिले में जाते समय गुरुजी के पास उपहार लेकर आए और उनके चरणों में शरण ली। उन्होंने कहा, "हे प्रभु, यदि हम सुरक्षित लौट आए तो आपके चरण चूम लेंगे।" वे पाँच सौ बैलगाड़ियों में माल लेकर निकले और जल्द ही एक घने जंगल में पहुँच गए, जहाँ उन्हें कोई रास्ता दिखाई नहीं दिया। भटकते हुए, पानी और भोजन के बिना, वे जंगल में भटकते रहे, जब तक कि उन्हें एक विशाल बरगद का पेड़ दिखाई नहीं दिया, जिस पर अजगरों का साया था। उन्होंने अपनी बैलगाड़ियाँ खोलीं और उसके नीचे बैठ गए। उसके पत्तों को देखकर वे इतने चमकदार लग रहे थे मानो पानी से भीगे हों, और डालियाँ भी पानी से भरी हुई प्रतीत हो रही थीं, जिससे उनके मन में यह विचार आया: "ऐसा लगता है जैसे इस पेड़ से पानी बह रहा हो। अगर हम इसकी पूर्व दिशा की ओर वाली एक डाल काट लें तो क्या होगा? हमें पीने के लिए कुछ मिल जाएगा।" इस पर एक व्यक्ति वृक्ष पर चढ़ा और एक शाखा काट डाली: उसमें से ताड़ के तने के समान मोटी जलधारा निकली, और उन्होंने उसमें स्नान किया और उसका जल पिया। फिर उन्होंने दक्षिणी दिशा की एक शाखा काटी: उसमें से उत्तम खाद्य पदार्थ निकले, और उन्होंने उन्हें खाया। फिर उन्होंने वृक्ष की पश्चिमी दिशा की एक शाखा काटी: उसमें से सुंदर और अलंकृत स्त्रियाँ निकलीं, जिनके साथ उन्होंने आनंद लिया। अंत में, उन्होंने उत्तरी शाखा का एक भाग काटा: उसमें से सात बहुमूल्य वस्तुएँ गिरीं, और उन्होंने उन्हें लेकर पाँच सौ रथ भर दिए, और श्रावस्ती नगर लौट आए। वहाँ उन्होंने खजाने की सावधानीपूर्वक रखवाली करवाई। अपने हाथों में मालाएँ, इत्र और इसी प्रकार की वस्तुएँ लिए वे जेतवन मठ गए और गुरु को प्रणाम किया और उनकी पूजा की, और फिर एक तरफ बैठ गए। उस दिन उन्होंने धर्ममार्ग के उपदेश सुने; अगले दिन, वे एक बड़ा उपहार लेकर आए और उसका सारा पुण्य त्यागते हुए बोले, "हे प्रभु, हम इस उपहार का पुण्य उस वृक्ष देवता को अर्पित करते

हैं जिसने हमें यह सारा खजाना दिया है।" भोजन समाप्त होने पर, गुरु ने उनसे पूछा, "तुम यह पुण्य किस वृक्ष देवता को अर्पित करते हो?" व्यापारियों ने तथागत (बुद्ध) को बताया कि उन्हें बरगद के वृक्ष से यह खजाना कैसे प्राप्त हुआ। गुरु ने कहा, "यह खजाना तुम्हें संयम के कारण और इसलिए प्राप्त हुआ है क्योंकि तुमने अपने आप को इच्छाओं के वश में नहीं किया; परन्तु पुराने समय में मनुष्य आत्मसंयम का अभाव रखते थे और इच्छाओं के वश में रहते थे, और इसी कारण उन्होंने धन और जीवन दोनों खो दिए।" फिर उनके अनुरोध पर उन्होंने उन्हें अतीत की एक कथा सुनाई।

बहुत समय पहले, बनारस के पास ही (*1) यही घना जंगल और यही बरगद का पेड़ था। व्यापारी रास्ते से भटक गए और उन्होंने बरगद का पेड़ देखा।

गुरु ने अपनी पूर्ण बुद्धि से इस विषय को इन श्लोकों में समझाया है:-

अनेक राज्यों से व्यापारी आए और सब आपस में मिले।
उनमें से एक मुखिया चुन लो, और तुरंत ही खजाना ढूंढने निकल पड़ो।
"भोजन की कमी वाले इस सूखे जंगल की ओर यात्री अपना रास्ता बनाते हुए आगे बढ़े।"
और मैंने एक विशाल बरगद का पेड़ देखा जिसकी छाया ठंडी और सुखद थी।
"उस घने पेड़ की छाया में वे सभी व्यापारी बैठे थे।"
और उसने कुकर्म को कुंठित करते हुए, बुद्धिहीनता का प्रयोग करते हुए इस प्रकार तर्क दिया:
"पेड़ पूरी तरह से नम है, और ऐसा लगता है जैसे उसमें पानी बह रहा हो।"
"आइए हम उसकी एक शाखा को काट दें जो पूर्व दिशा की ओर बढ़ती है।"
शाखा काट दी गई; फिर शुद्ध और निर्मल जल की धारा बहने लगी।
व्यापारियों ने हाथ धोए, व्यापारियों ने तब तक पानी पिया जब तक वे तृप्त नहीं हो गए।
वे कहते हैं, "बुद्धिहीनता के कारण, वे फिर से कुकर्म को अपराध का आवरण चढ़ा देते हैं।"
"दक्षिण की ओर की एक शाखा को हम काट कर अलग कर देते हैं।"
"इस शाखा के कटने से चावल और मांस दोनों इसके साथ बहकर धारा में चले जाते हैं।"
गाढ़ा दलिया, अदरक, दाल का सूप और कई अन्य चीजें।
व्यापारियों ने खाया, व्यापारियों ने पिया, उन्होंने जी भरकर खाया।
फिर उसने कुकर्म को बुद्धिहीनता के आवरण में लपेटकर दोबारा कहा:
"आओ, साथी व्यापारियों, हम पश्चिम की ओर एक शाखा काट लें।"
सुंदर युवतियों का एक समूह बाहर आया और सभी ने साहसपूर्वक अनुशासन में चलना शुरू कर दिया।
और हे रंग-बिरंगे वस्त्र, ढेरों गहने और अंगूठियां!
प्रत्येक व्यापारी के पास एक सुंदर नौकरानी थी, उन पच्चीस व्यापारियों में से प्रत्येक के पास।
ये सभी लोग पत्तों की छांव के नीचे एक साथ खड़े थे:
इन लोगों और बीच में बैठे व्यापारियों ने मिलकर खूब मौज-मस्ती की।
वे कहते हैं, "बुद्धिहीनता के कारण, वे फिर से कुकर्म को अपराध का आवरण चढ़ा देते हैं।"
"उत्तर दिशा की एक शाखा को आओ, चलो उसे काट देते हैं।"
लेकिन जब उत्तरी शाखा को काटा गया, तो उसमें से सोने की एक धारा बह निकली।
मुट्ठी भर चांदी, कीमती कालीन और कई बार गहने;
और उत्तम बनारस के वस्त्र, और मोटे-पतले कंबल।
तब व्यापारियों ने उन्हें बंडलों में लपेटना शुरू कर दिया।
उन्होंने फिर से नासमझी और कुकर्म में, पहले की तरह कहा:
"चलो इसे जड़ से काट देते हैं, फिर शायद हमें और अधिक मिल सके।"
तब उनके सरदार उठे और आदरपूर्वक झुकते हुए बोले,
"बरगद का पेड़ क्या शरारत करता है, सज्जनों? भगवान आपका भला करे!"
"पूर्वी शाखा से जलधाराएँ प्राप्त हुईं, दक्षिणी शाखा से हमें भोजन मिला।"
पश्चिमी देशों ने हमें सुंदर युवतियाँ दीं, उत्तरी देशों ने हमें हर अच्छी चीज़ दी:
बरगद का पेड़ क्या शरारत करता है, सज्जनों? भगवान आपका भला करे!
"वह वृक्ष जो आपको सुखद छाया प्रदान करता है, जिस पर आप आवश्यकतानुसार बैठ या लेट सकते हैं,"

आपको इसकी शाखाओं को नहीं तोड़ना चाहिए, यह एक क्रूर और गलत काम होगा।
"लेकिन वे बहुत थे, वह उनमें से एक था जिसकी आवाज ने उन्हें ऐसा करने से रोक दिया।"
उन्होंने धारदार कुल्हाड़ियों से प्रहार करके उसे जड़ से उखाड़ दिया।
तब नागराज ने उन्हें वृक्ष की जड़ के पास आते देखा ताकि वे वृक्ष को काट सकें। उसने मन ही मन सोचा, "मैंने इन लोगों को प्यास लगने पर पानी पिलाया, फिर उन्हें पवित्र भोजन दिया, फिर सोने के लिए पलंग दिए और उनकी सेवा के लिए स्त्रियाँ दीं, फिर पाँच सौ गाड़ियों को भरने लायक खजाना दिया, और अब ये कहते हैं, चलो वृक्ष को जड़ से काट डालें! ये हद से ज्यादा लालची हैं, और कारवां के मुखिया को छोड़कर बाकी सब मर जाएँगे।" तब उसने एक सेना तैयार की: "इतने सारे कवचधारी, इतने सारे तीरंदाज, इतने सारे तलवार और ढालधारी सैनिक तैयार खड़े हो जाओ।"

इसे समझाने के लिए गुरु ने एक श्लोक दोहराया:

फिर पच्चीस कवचधारी सांप मैदान में उतरे और आक्रमण करने लगे।
तीन सौ धनुर्धारी और छह हजार तलवार और ढाल से लैस सैनिक।
निम्नलिखित श्लोक सर्पराज द्वारा कहा गया है:

"उन आदमियों को मार गिराओ और उन्हें कसकर बांध दो, किसी की भी जान मत बख्शो।"
मुखिया को छोड़कर बाकी सबको जलाकर राख कर दो, फिर तुम्हारा काम पूरा हो जाएगा।"
और सर्पों ने भी ऐसा ही किया। फिर उन्होंने उत्तरी शाखा से कालीन और बाकी सारा सामान पाँच सौ गाड़ियों पर लाद दिया, और गाड़ियों और कारवां के मुखिया को बनारस ले गए, और सामान उसके घर में रख दिया, और उससे विदा लेकर अपने निवास स्थान लौट गए।

जब गुरु ने यह देखा, तो उन्होंने दो श्लोकों में सलाह दोहराई:

इसलिए बुद्धिमान व्यक्ति को अपना भला देखना चाहिए, और उसे कभी नहीं जाना चाहिए।
लोभ का गुलाम होकर वह अपने शत्रु के उद्देश्य को विफल कर देता है।
"तो उसे, इस बुरी चीज को देखकर, इच्छा से उपजी पीड़ा को देखकर,
इच्छाओं और बंधनों को त्याग दो, और पवित्र जीवन की आकांक्षा रखो।

यह प्रवचन समाप्त करते हुए उन्होंने कहा, "इस प्रकार, भिक्षुओं, अतीत में लोभ से ग्रस्त व्यापारियों का भारी विनाश हुआ, इसलिए आपको लोभ को स्थान नहीं देना चाहिए।" फिर सत्यों की व्याख्या करते हुए (सत्यों के समापन पर वे व्यापारी प्रथम मार्ग (सम्मोहन) के फल में स्थापित हो गए) उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "उस समय सारिपुत्र नागों के राजा थे और मैं कारवां का मुखिया था।"

फुटनोट:

(1)निस्साया पढ़ना ---

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **साधिन-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-494-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 494
साधना-जातक

"दुनिया में एक अजूबा," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, उन गृहस्थ भिक्षुओं के बारे में जिन्होंने व्रत का व्रत लिया था। उस अवसर पर गुरु ने कहा: "पुराने समय के ज्ञानी गृहस्थ भिक्षुओं ने व्रत के व्रत का पालन करने के कारण शरीर सहित स्वर्ग में जाकर वहाँ दीर्घकाल बिताया।" फिर उनके अनुरोध पर उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, मिथिला में राजा साधना रहते थे, जो धर्मपरायण थे। उन्होंने नगर के चारों द्वारों पर, नगर के मध्य में और अपने महल के द्वार पर छह भिक्षागृह बनवाए और अपने दान-पुण्य से पूरे भारत में हलचल मचा दी। प्रतिदिन छह लाख सिक्के दान में खर्च होते थे। वे पंच सद्गुणों का पालन करते थे और व्रत रखते थे। नगरवासियों ने भी उनकी सलाह मानकर दान दिया और अच्छे कार्य किए, और उनकी मृत्यु होते ही वे देवदूतों के नगर में पुनर्जीवित हो गए।

सक्का (इंद्र) के न्याय कक्ष में पूर्ण सभा में बैठे स्वर्ग के राजकुमारों ने साधना के सदाचारी जीवन और अच्छे गुणों की प्रशंसा की। उनके बारे में सुनकर अन्य सभी देवता (देवदूत) उनसे मिलने के लिए उत्सुक हो गए। देवताओं (देवदूतों) के राजा सक्का (इंद्र) ने उनके मन की बात जानकर पूछा, "क्या तुम राजा साधना को देखना चाहते हो?" उन्होंने उत्तर दिया, हाँ, वे देखना चाहते हैं। तब उन्होंने मतली को आदेश दिया, "मेरे महल वेजयंत जाओ, मेरा रथ जोतो और साधना को यहाँ ले आओ।" उन्होंने आदेश का पालन किया और रथ जोतकर विदेह राज्य की ओर चल दिए।

उस दिन पूर्णिमा थी। जब लोग शाम का भोजन कर चुके थे और आराम से अपने दरवाजों के पास बैठे थे, तब मताली ने अपना रथ चंद्रमा के साथ-साथ चलाया। सभी लोग चिल्ला उठे, "देखो, आकाश में दो चंद्रमा हैं!" लेकिन जब उन्होंने रथ को चंद्रमा के पास से गुजरते हुए अपनी ओर आते देखा, तो वे चिल्लाए, "यह चंद्रमा नहीं, बल्कि रथ है; लगता है यह देवताओं (देवदूतों) का पुत्र है। यह दिव्य रथ, अपने सामंती घोड़ों के दल के साथ, किसके लिए ला रहा है? क्या यह हमारे राजा के लिए नहीं होगा? हाँ, हमारे राजा धर्मात्मा और भले राजा हैं!" प्रसन्नता में उन्होंने श्रद्धापूर्वक हाथ जोड़े और खड़े होकर पहला श्लोक दोहराया:

"दुनिया में एक ऐसा अजूबा देखा गया, जिसे देखकर रोंगटे खड़े हो गए।"
महान विदेह के राजा के लिए आकाश से एक रथ भेजा गया है!
मताली रथ को पास ले आया, और जब लोग फूलों और इत्रों से उसकी पूजा कर रहे थे, तब उसने रथ को शहर के तीन चक्कर दाहिनी ओर घुमाया। फिर वह राजा के द्वार पर पहुँचा, और वहाँ रथ को रोककर पश्चिमी खिड़की के सामने खड़ा हो गया, मानो उसने अंदर आने का संकेत दिया हो। उस दिन राजा ने स्वयं अपने दान-गृहों का निरीक्षण किया था और दान वितरण के निर्देश दिए थे; इसके बाद उसने उपवास के व्रत लिए और इस प्रकार दिन व्यतीत किया। तभी वह पूर्वी खिड़की के सामने एक भव्य चबूतरे पर बैठा था, उसके चारों ओर दरबारी थे, और वह उन्हें न्याय और सही-गलत के विषय पर प्रवचन दे रहा था। उसी क्षण मताली ने उसे रथ में बैठने का निमंत्रण दिया और ऐसा करने के बाद वह उसके साथ चला गया।

इसे समझाने के लिए, गुरु ने निम्नलिखित छंदों को दोहराया:

"सर्वोच्च देवता (देवदूत), सारथी मताली ने लाया।"
मिथिला के राजा वेदेह को एक सम्मन भेजा गया।
"हे पराक्रमी सम्राट, महान राजा, मेरे साथ इस रथ पर सवार होइए:
इंद्र तुम्हें देखेंगे, और देवता (देवदूत), वो तैंतीस गौरवशाली देवदूत।
और अब वे सब सभा में बैठे हैं और आपके बारे में सोच रहे हैं।"
तब राजा साधना ने अपना मुख फेरा और रथ पर सवार हो गए:
फिर वह अपने हजार घोड़ों के साथ उसे दूर स्थित देवताओं (देवदूतों) के पास ले गया।
"देवताओं (देवदूतों) ने राजा को आते देखा: और फिर, अपने अतिथि का स्वागत करने के लिए आए..."
उन्होंने कहा, "आपका स्वागत है, महामहिम सम्राट, जिनसे मिलकर हमें बहुत खुशी हुई!"
हे राजा! हम आपसे विनती करते हैं कि आप देवताओं (देवदूतों) के राजा के पास बैठें।
और सक्का (इंद्र) ने मिथिला नगर के राजा वेदेह का स्वागत किया।
हाँ, वासवा (*1) ने उसे सभी सुखों का प्रस्ताव दिया और उससे बैठने का अनुरोध किया।
"विश्व के शासकों के बीच, हमारे देश में आपका स्वागत है:
हे राजा, उन देवताओं (देवदूतों) के साथ निवास करो, जिनके पास सभी इच्छाओं की पूर्ति का अधिकार है।
अमर सुखों का आनंद लें, जहाँ 33 का स्थान है।"
देवताओं के राजा सक्का (इंद्र) ने उन्हें देवताओं के नगर का आधा भाग, दस हजार मील (4.23 किमी) क्षेत्रफल वाला, पच्चीस करोड़ अप्सराओं का नगर और वेजयंत महल प्रदान किया। वहाँ उन्होंने मनुष्य की समझ के अनुसार सात सौ वर्षों तक सुख भोगा। परन्तु स्वर्ग में उस पद पर रहते हुए उनका पुण्य समाप्त हो गया; उनके मन में असंतोष उत्पन्न हुआ और उन्होंने सक्का (इंद्र) से एक श्लोक को दोहराते हुए इन शब्दों में कहा:

"जब मैं पहले स्वर्ग में आया था, तब मुझे बहुत आनंद हुआ था।"

नृत्य, गीत और संगीत में स्पष्ट:
अब मुझे पहले जैसा महसूस नहीं होता।
क्या मेरा जीवन समाप्त हो गया है, क्या मृत्यु निकट आ रही है?
या फिर, हे महाराज, क्या मुझे किसी कुकर्म से डरना चाहिए?
तब सक्का (इंद्र) ने उससे कहा:

"तुम्हारा जीवन अभी समाप्त नहीं हुआ है, और मृत्यु अभी दूर है।"
और हे महापुरुष, तुम मूर्ख भी नहीं हो:
लेकिन आपके अच्छे कर्म समाप्त हो गए हैं
और अब आपके सारे पुण्य कर्म पूरे हो गए हैं।
"हे महामहिम राजा, मेरी दिव्य आज्ञा से यहीं निवास करो;"
अमर सुखों का आनंद लें, जहाँ 33 लोग खड़े हैं (*2)।"
लेकिन उस महान सत्ता ने इनकार कर दिया और उससे कहा:

"जैसे जब कोई रथ दिया जाता है, या जब मांग पर सामान दिया जाता है,"
किसी दूसरे के हाथों से प्राप्त आनंद का अनुभव करना भी ऐसा ही है।
मुझे दूसरों के हाथों से दिए गए आशीर्वादों की परवाह नहीं है।
जब मैं अपने कर्मों के आधार पर खड़ा होता हूँ, तो मेरी संपत्ति मेरी ही होती है और केवल मेरी ही होती है।
मैं जाकर मनुष्यों का बहुत भला करूंगा, पूरे देश में दान दूंगा।
सद्गुणों का पालन करेंगे, संयम और आत्म-नियंत्रण का अभ्यास करेंगे:
जो इस प्रकार कार्य करता है वह सुखी रहता है और उसे पश्चाताप का कोई भय नहीं होता।
यह सुनकर इंद्र ने मतली को आदेश दिया: “जाओ, राजा साधिना को मिथिला ले जाओ और उन्हें उनके उद्यान में ठहरा दो।” उसने वैसा ही किया। राजा अपने उद्यान में इधर-उधर टहल रहे थे; उद्यान के रखवाले ने उन्हें देखा और उनका परिचय पूछकर यह खबर राजा नारद को दी। राजा के आगमन की सूचना पाकर उन्होंने रखवाले को यह कहकर भेजा: “तुम आगे जाओ और दो आसन तैयार करो, एक उनके लिए और एक मेरे लिए।” उसने वैसा ही किया। तब राजा ने उससे पूछा, “तुम ये दो आसन किसके लिए तैयार कर रहे हो?” उन्होंने उत्तर दिया, "एक आपके लिए, और एक हमारे राजा के लिए।" तब राजा ने कहा, "मेरे समक्ष और कौन बैठेगा?" वे एक आसन पर बैठ गए और अपने पैर दूसरे आसन पर रख दिए। राजा नारद आए और उनके चरणों को प्रणाम करके एक तरफ बैठ गए: कहा जाता है कि वे राजा के सातवें वंशज थे और उस समय मनुष्य की आयु पचहत्तर (20) वर्ष थी। इतना समय उस महान प्राणी ने अपनी कृपा से व्यतीत किया था। उन्होंने नारद का हाथ पकड़ा और उद्यान में इधर-उधर घूमते हुए तीन श्लोक पढ़े:

"ये भूमि हैं, वो मार्ग जिसके चारों ओर से जलधारा बहती है।"
इसे ढकने वाली हरी घास, बहने वाली छोटी-छोटी नदियाँ,
"सुंदर झीलें, जो लाल हंसों की पुकार सुनती हैं,"
जहां सफेद कमल और नीले कमल तथा मूंगे जैसे वृक्ष (*3) उगते हैं,
लेकिन जो लोग मेरे साथ इस जगह से प्यार करते थे, हे भगवान, वे सब कहाँ हैं?
ये एकड़ जमीन है, ये जगह है,
बगीचा और खेत यहीं हैं:
लेकिन कोई परिचित चेहरा न देखकर,
मुझे तो यह एक भयानक रेगिस्तान जैसा लगता है।"
इस पर नारद ने उनसे कहा, “हे मेरे स्वामी, आपके देवलोक जाने के बाद से सात सौ वर्ष बीत चुके हैं; मैं आपसे सातवां वंशज हूँ, आपके सभी सेवक मृत्यु के मुंह में जा चुके हैं। परन्तु यह आपका उचित राज्य है, और मैं आपसे इसे स्वीकार करने का निवेदन करता हूँ।” राजा ने उत्तर दिया, “हे मेरे प्रिय नारद, मैं यहाँ राजा बनने नहीं, बल्कि भलाई करने आया हूँ, और मैं भलाई ही करूँगा।” फिर उन्होंने आगे कहा:

मैंने हर जगह चमकते हुए दिव्य महल देखे हैं।
तैंतीस प्रधान देवदूत और उनके सम्राट आमने-सामने।
मैंने मानवीय भावनाओं से परे आनंद का अनुभव किया है, मेरा घर स्वर्ग जैसा था।
दिल की हर इच्छा पूरी हो, तैंतीस दिव्य देवताओं के बीच।
"मैंने यह देखा है, और पुण्य कर्म करने के लिए मैं नीचे आया हूँ।"

और मैं एक पवित्र जीवन जीऊंगा: मुझे कोई राजसी मुकुट नहीं चाहिए।
"वह मार्ग जो कभी दुख की ओर नहीं ले जाता, वह मार्ग जो बुद्धों ने दिखाया है।"
अब मैं उसी मार्ग पर चल रहा हूँ जिस पर पवित्र लोग चलते हैं।
इस प्रकार परमपिता ने अपने असीम ज्ञान से सब कुछ इन श्लोकों में समेटते हुए कहा। तब नारद ने उनसे फिर कहा, "राज्य का शासन अपने ऊपर ले लो।" उन्होंने उत्तर दिया, "मेरे प्रिय पुत्र, मुझे राज्य नहीं चाहिए; परन्तु मैं सात दिनों तक उन सात सौ वर्षों में दिए गए दान को पुनः वितरित करना चाहता हूँ।" नारद तैयार हो गए और राजा के अनुरोध के अनुसार उन्होंने वितरण के लिए विशाल दान तैयार किया। सात दिनों तक राजा ने दान दिया; और सातवें दिन उनकी मृत्यु हो गई और वे तैंतीसवें स्वर्ग में पुनर्जन्म हुए।

जब गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने कहा, "पवित्र दिनों के व्रतों का पालन करना कर्तव्य है," और सत्यों की व्याख्या की: (सत्यों के समापन पर, कुछ गृहस्थ भाइयों ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की प्राप्ति की, और कुछ ने द्वितीय मार्ग की:) और उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "उस समय आनंद राजा नारद थे, अनुरुद्ध सक्का (इंद्र) थे, और मैं स्वयं राजा साधना था।"

फुटनोट:

(1) इंद्र का दूसरा नाम शक्र।

(2) विद्वान समझाते हैं: "मैं तुम्हें अपने पुण्य का आधा भाग दूंगा, इसलिए मेरी शक्ति से यहीं रहो।"

(3) एरिथ्रिना इंडिका.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **दास-ब्राह्मण-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-495-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 495
दशा-ब्राह्मण-जातक

“धर्मी राजा,” इत्यादि—यह कथा गुरु (बुद्ध) ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें एक अतुलनीय दान का वर्णन है। इसका वर्णन आठवें ग्रंथ सुचिरा (*1) में मिलता है। हमें पता चलता है कि राजा ने दान बांटते समय, गुरु सहित पाँच सौ भिक्षुओं की परीक्षा ली और उनमें से सबसे पवित्र संतों को दान दिया। फिर वे सत्य के हॉल में बैठकर बातें करने लगे और राजा के पुण्य का गुणगान करते हुए बोले, “हे भिक्षु, राजा ने अतुलनीय दान देकर एक अत्यंत पुण्य कर्म का फल पाया है।” गुरु वहाँ आकर यह जानने को उत्सुक थे कि वे किस विषय पर चर्चा कर रहे हैं, इसलिए उन्होंने गुरु को सब कुछ बताया। गुरु ने कहा, “हे भिक्षुओं, यह आश्चर्य की बात नहीं है कि कोसल के राजा, जो मेरे जैसे शिष्य हैं, विवेक से दान देते हैं। पुराने समय के बुद्धिमान पुरुष, बुद्ध के उदय से पहले भी, विवेक से दान देते थे।” इन शब्दों के साथ उन्होंने उन्हें अतीत की एक कथा सुनाई।

बहुत समय पहले, कुरु राज्य और इंद्रप्रस्थ नगर में, युद्धित्तिल वंश के राजा कोरव्य का शासन था। उनके सांसारिक और आध्यात्मिक मामलों के सलाहकार विदुर नामक मंत्री थे। राजा के दान-पुण्य से पूरे भारत में हलचल मच गई थी; परन्तु दान प्राप्त करने और उसका लाभ उठाने वालों में से एक भी ऐसा नहीं था जिसने पंच सद्गुणों का पालन किया हो; सब दुष्ट थे, और राजा के दान से उन्हें कोई संतुष्टि नहीं मिली। राजा ने सोचा, "विवेचपूर्ण दान का फल महान होता है;" और सद्गुणी लोगों को दान देने की इच्छा से उन्होंने बुद्धिमान विदुर से परामर्श करने का निश्चय किया। जब विदुर उनसे मिलने आए, तो राजा ने उन्हें बैठने के लिए कहा और उनसे प्रश्न पूछा।

इसे समझाते हुए, गुरु ने पहले श्लोक का आधा भाग सुनाया। शेष सभी भाग राजा और विदुर के प्रश्न और उत्तर हैं।

"धर्मी राजा युधित्थिल ने एक बार बुद्धिमान विदुर से पूछा (*2):

"विधुर, मेरे लिए अच्छे ब्राह्मणों की खोज करो, जिनमें अपार ज्ञान निहित है।"
"वे मनुष्य जो बुरी वासनाओं से मुक्त हों, वे मेरा भोजन खा सकें।"
इसलिए मैं दान दूंगा, मेरे मित्र, ताकि मुझे अच्छा फल मिल सके।"
"ऐसे पवित्र पुरुष, ऐसे ब्राह्मण, जो बुद्धिमान और अच्छे हों, मिलना कठिन है।"
जो उन्हें हर तरह की वासना से बचाकर रखते हैं, ताकि वे आपका भोजन खा सकें।
"हे परम शक्तिशाली राजा, ब्राह्मणों के दस प्रकार होते हैं।
सुनो, मैं इनमें अंतर स्पष्ट करता हूँ, और इन सभी प्रकारों का वर्णन करता हूँ।
कुछ लोग अपनी पीठ पर जड़ों से भरे और कसकर बंधे बोरे ढोते हैं;
वे औषधीय जड़ी-बूटियाँ इकट्ठा करते हैं, स्नान करते हैं और जादू के मंत्रों का जाप करते हैं।
"हे महाराज, ये चिकित्सक के समान हैं और ब्राह्मण भी कहलाते हैं।"
अब आप इस प्रकार के ब्राह्मणों को ठीक से जान गए हैं, तो हमें ऐसे ब्राह्मणों की ही तलाश करनी चाहिए?
राजा कोरव्य ने कहा:

"इन्हें ऐसा नाम पाने का कोई अधिकार नहीं है: इनका ब्राह्मणत्व खो गया है।"
विदुर, मेरे लिए कुछ ऐसे अन्य पुरुषों को ढूंढो जो बुद्धिमान और अच्छे हों।
"वे मनुष्य जो बुरी वासनाओं से मुक्त हों, वे मेरा भोजन खा सकें।"
इसलिए मैं भी दान दूंगा, ताकि मुझे स्वयं अच्छा फल प्राप्त हो सके।"
कुछ लोग घंटियाँ लेकर आगे-आगे चलते हैं और चलते समय उन्हें बजाते हैं।
एक रथ जिसे वे कुशलता से चला सकते हैं, और संदेश पहुंचा सकते हैं:
"ये सेवकों के समान हैं, हे पराक्रमी राजा, और इन्हें ब्राह्मण भी कहा जाता है।"
अब आप इस प्रकार के ब्राह्मणों को ठीक से जान गए हैं, तो हमें ऐसे ब्राह्मणों की ही तलाश करनी चाहिए?
राजा कोरव्य ने कहा:

"इन्हें ऐसा नाम पाने का कोई अधिकार नहीं है: इनका ब्राह्मणत्व खो गया है।"
विदुर, मेरे लिए कुछ ऐसे अन्य पुरुषों को ढूंढो जो बुद्धिमान और अच्छे हों।
"वे मनुष्य जो बुरी वासनाओं से मुक्त हों, वे मेरा भोजन खा सकें।"
इसलिए मैं भी दान दूंगा, ताकि मुझे स्वयं अच्छा फल प्राप्त हो सके।"
कुछ लोग पानी का घड़ा और टेढ़ी लाठी लेकर राजा से मिलने दौड़ते हैं।
सभी कस्बों और गांवों से गुजरते हुए, और जैसे-जैसे वे आगे बढ़ते हैं, गाते हुए—
"जंगल हो या शहर, हम कभी नहीं हिलते, जब तक आप कोई उपहार नहीं लाते!"
"ये लोग कर वसूलने वालों की तरह हड़बड़ी करते हैं, और ब्राह्मण भी कहलाते हैं।"
अब आप इस प्रकार के ब्राह्मणों को ठीक से जान गए हैं, तो हमें ऐसे ब्राह्मणों की ही तलाश करनी चाहिए?
राजा कोरव्य ने कहा:

"इन्हें ऐसा नाम पाने का कोई अधिकार नहीं है: इनका ब्राह्मणत्व खो गया है।"
विदुर, मेरे लिए कुछ ऐसे अन्य पुरुषों को ढूंढो जो बुद्धिमान और अच्छे हों।
"वे मनुष्य जो बुरी वासनाओं से मुक्त हों, वे मेरा भोजन खा सकें।"
इसलिए मैं भी दान दूंगा, ताकि मुझे स्वयं अच्छा फल प्राप्त हो सके।"
कुछ के नाखून लंबे थे, हाथ-पैर बालों से ढके थे, दांत गंदे थे और बाल उलझे हुए थे।
धूल और गंदगी से सने हुए, भिखारियों की तरह उनका हाल है:
"हे महामहिम, इन्हें लकड़ी काटने वाले और ब्राह्मण भी कहा जाता है।"
अब आप इस प्रकार के ब्राह्मणों को ठीक से जान गए हैं, तो हमें ऐसे ब्राह्मणों की ही तलाश करनी चाहिए?
राजा कोरव्य ने कहा:

"इन्हें ऐसा नाम पाने का कोई अधिकार नहीं है: इनका ब्राह्मणत्व खो गया है।"
विदुर, मेरे लिए कुछ ऐसे अन्य पुरुषों को ढूंढो जो बुद्धिमान और अच्छे हों।
"वे मनुष्य जो बुरी वासनाओं से मुक्त हों, वे मेरा भोजन खा सकें।"
इसलिए मैं भी दान दूंगा, ताकि मुझे स्वयं अच्छा फल प्राप्त हो सके।"
चेरी बेर और विल्वा फल, गुलाब सेब, पके आम (*3)

लाबुज फल, लकड़ी के तख्ते, टूथब्रश और धूम्रपान पाइप।
"गन्ने की टोकरियाँ, मीठा शहद और मरहम भी, हे राजा।"
वे इन सभी चीजों का और कई अन्य चीजों का भी व्यापार करते हैं।
"हे महाराज, ये व्यापारियों के समान हैं, और इन्हें ब्राह्मण भी कहा जाता है।"
अब आप इस प्रकार के ब्राह्मणों को ठीक से जान गए हैं, तो हमें ऐसे ब्राह्मणों की ही तलाश करनी चाहिए?
राजा कोरव्य ने कहा:

"इन्हें ऐसा नाम पाने का कोई अधिकार नहीं है: इनका ब्राह्मणत्व खो गया है।"
विदुर, मेरे लिए कुछ ऐसे अन्य पुरुषों को ढूंढो जो बुद्धिमान और अच्छे हों।
"वे मनुष्य जो बुरी वासनाओं से मुक्त हों, वे मेरा भोजन खा सकें।"
इसलिए मैं भी दान दूंगा, ताकि मुझे स्वयं अच्छा फल प्राप्त हो सके।"
कुछ लोग व्यापार और पशुपालन करते हैं, कुछ लोग बकरियों के झुंड पालते हैं।
वे विवाह में देते और लेते हैं, और उनकी बेटियाँ सोने के लिए बेची जाती हैं (*4)।
वैश्य और अंबत्थ (*5) की तरह ये भी ब्राह्मण कहलाते हैं:
अब आप इस प्रकार के ब्राह्मणों को ठीक से जान गए हैं, तो हमें ऐसे ब्राह्मणों की तलाश करनी चाहिए?
राजा कोरव्य ने कहा:

"इन्हें ऐसा नाम पाने का कोई अधिकार नहीं है: इनका ब्राह्मणत्व खो गया है।"
विदुर, मेरे लिए कुछ ऐसे अन्य पुरुषों को ढूंढो जो बुद्धिमान और अच्छे हों।
"वे मनुष्य जो बुरी वासनाओं से मुक्त हों, वे मेरा भोजन खा सकें।"
इसलिए मैं भी दान दूंगा, ताकि मुझे स्वयं अच्छा फल प्राप्त हो सके।"
"कुछ पुजारी पैसे लेकर भविष्य बताते हैं, या जानवरों को नपुंसक बनाकर उन पर निशान लगाते हैं।"
भोजन उपलब्ध कराकर, गांववाले अक्सर उन्हें अपने यहां ठहरने के लिए आमंत्रित करते हैं।
वहां प्रतिदिन कई बार गायों, बैलों, सूअरों और बकरियों का वध किया जाता है।
"हे राजा, ये कसाइयों के समान नीच हैं, और इन्हें ब्राह्मण भी कहा जाता है।"
अब आप इस प्रकार के ब्राह्मणों को ठीक से जान गए हैं, तो हमें ऐसे ब्राह्मणों की ही तलाश करनी चाहिए?
राजा कोरव्य ने कहा:

"इन्हें ऐसा नाम पाने का कोई अधिकार नहीं है: इनका ब्राह्मणत्व खो गया है।"
विदुर, मेरे लिए कुछ ऐसे अन्य पुरुषों को ढूंढो जो बुद्धिमान और अच्छे हों।
"वे मनुष्य जो बुरी वासनाओं से मुक्त हों, वे मेरा भोजन खा सकें।"
इसलिए मैं भी दान दूंगा, ताकि मुझे स्वयं अच्छा फल प्राप्त हो सके।"
कुछ ब्राह्मण, तलवार और ढाल से लैस, हाथ में युद्ध कुल्हाड़ी लिए हुए,
व्यापारियों के खड़े होने से पहले कारवां का मार्गदर्शन करने के लिए तैयार।
"ये चरवाहों या साहसी डाकुओं की तरह हैं, फिर भी इन्हें ब्राह्मण भी कहा जाता है:
अब आप इस प्रकार के ब्राह्मणों को ठीक से जान गए हैं, तो हमें ऐसे ब्राह्मणों की ही तलाश करनी चाहिए?
राजा कोरव्य ने कहा:

"इन्हें ऐसा नाम पाने का कोई अधिकार नहीं है: इनका ब्राह्मणत्व खो गया है।"
विदुर, मेरे लिए कुछ ऐसे अन्य पुरुषों को ढूंढो जो बुद्धिमान और अच्छे हों।
"वे मनुष्य जो बुरी वासनाओं से मुक्त हों, वे मेरा भोजन खा सकें।"
इसलिए मैं भी दान दूंगा, ताकि मुझे स्वयं अच्छा फल प्राप्त हो सके।"
कुछ लोग उनके लिए झोपड़ियाँ बनाते हैं और किसी भी जंगली इलाके में उनके लिए जाल बिछाते हैं।
मछलियों और कछुओं को पकड़ो, खरगोश, जंगली बिल्ली और छिपकली का पीछा करो।
"हे महाराज, ये शिकारी हैं, और इन्हें ब्राह्मण भी कहा जाता है।"
अब आप इस प्रकार के ब्राह्मणों को ठीक से जान गए हैं, तो हमें ऐसे ब्राह्मणों की ही तलाश करनी चाहिए?
राजा कोरव्य ने कहा:

"इन्हें ऐसा नाम पाने का कोई अधिकार नहीं है: इनका ब्राह्मणत्व खो गया है।"

विदुर, मेरे लिए कुछ ऐसे अन्य पुरुषों को ढूंढो जो बुद्धिमान और अच्छे हों।
"वे पुरुष जो बुरे कर्मों से मुक्त हैं, वे मेरा भोजन खा सकें।"
इसलिए मैं भी दान दूंगा, ताकि मुझे स्वयं अच्छा फल प्राप्त हो सके।"
कुछ लोग सोने के लालच में शाही पलंग के नीचे लेट जाते हैं।
सोमा-बलिदान पर: राजा उनके सिर के ऊपर स्नान कर रहे हैं (*6)।
"ये नाई जैसे हैं? हे महाराज, इन्हें ब्राह्मण भी कहा जाता है।"
अब आप इस प्रकार के ब्राह्मणों को ठीक से जान गए हैं, तो हमें ऐसे ब्राह्मणों की ही तलाश करनी चाहिए?
राजा कोरव्य ने कहा:

"इन्हें ऐसा नाम पाने का कोई अधिकार नहीं है: इनका ब्राह्मणत्व खो गया है।"
विदुर, मेरे लिए कुछ ऐसे अन्य पुरुषों को ढूंढो जो बुद्धिमान और अच्छे हों।
"वे मनुष्य जो बुरी वासनाओं से मुक्त हों, वे मेरा भोजन खा सकें।"
इसलिए मैं भी दान दूंगा, ताकि मुझे स्वयं अच्छा फल प्राप्त हो सके।"
इस प्रकार, नाममात्र के ब्राह्मणों का वर्णन करने के बाद, उन्होंने अगले दो श्लोकों में उच्चतम अर्थों में ब्राह्मणों का वर्णन किया:

लेकिन हे प्रभु, ब्राह्मण भी हैं, जो बहुत बुद्धिमान और अच्छे पुरुष हैं।
बुरी वासनाओं से मुक्त होकर, तुम्हारे द्वारा अर्पित भोजन ग्रहण करो।
"वे केवल एक ही बार चावल का भोजन करते हैं: वे कभी भी मादक पेय को हाथ नहीं लगाते।"
अब जब आप इस प्रकार को अच्छी तरह से जान गए हैं, तो क्या हम इस तरह की तलाश करें?
जब राजा ने उनकी बात सुनी, तो उन्होंने पूछा, “हे मित्र विदुर, ये श्रेष्ठ गुणों वाले ब्राह्मण कहाँ निवास करते हैं?” “हे महाराज, सुदूर हिमालय में, नंदा पर्वत की एक गुफा में।” “तो हे ज्ञानी महाराज, अपनी शक्ति से उन ब्राह्मणों को यहाँ ले आइए।” तब राजा ने अत्यंत प्रसन्नता से यह श्लोक सुनाया:

"विधुर, उन ब्राह्मणों को यहाँ लाओ, वे कितने पवित्र और बुद्धिमान हैं।"
हे विदुर, उन्हें यहाँ आमंत्रित करो, विलंब न होने दो!
महान पुरुष ने अनुरोध के अनुसार कार्य करने की सहमति देते हुए कहा: "हे राजा! अब नगर में ढोल बजवाकर यह घोषणा करवाइए कि नगर को भव्य रूप से सजाया जाए, और नगर के सभी लोग दान दें, पवित्र दिन की प्रतिज्ञाएँ लें और सद्‌गुणों के प्रति समर्पित रहें; और आप भी अपने पूरे दरबार के साथ पवित्र दिन की प्रतिज्ञाएँ लें।" स्वयं उन्होंने भोर में भोजन किया और पवित्र दिन की प्रतिज्ञाएँ लीं, फिर शाम को चमेली के रंग की एक टोकरी मंगवाई और राजा के साथ पूर्ण प्रणाम करते हुए (*7) पच्चेक बुद्धों के गुणों का स्मरण करते हुए कहा: "उत्तरी हिमालय में, नंदा पर्वत की गुफा में निवास करने वाले पाँच सौ पच्चेक बुद्ध कल हमारा भोजन करें!" उन्होंने आठ मुट्ठी फूल हवा में उछाले। ये फूल तुरंत पाँच सौ पच्चेक बुद्धों पर, उनके निवास स्थान पर गिरे। उन्होंने विचार किया, तथ्य को समझा और निमंत्रण स्वीकार करते हुए कहा, "आदरणीय महोदय, हमें ज्ञानी विदुर ने आमंत्रित किया है, और वे कोई साधारण प्राणी नहीं हैं: उनके भीतर बुद्ध का बीज है, और इसी चक्र में वे बुद्ध बनेंगे। आइए हम उन पर कृपा करें।" महान सत्ता ने यह समझ लिया कि वे आज्ञा का पालन करेंगे, क्योंकि फूल वापस नहीं लौटे। तब उन्होंने कहा, "हे महान राजा! कल पच्चेक बुद्ध आएंगे; उनका आदर और पूजा कीजिए।" अगले दिन राजा ने उनका बड़ा आदर किया और उनके लिए एक विशाल चबूतरे पर कीमती आसन तैयार किए। पच्चेक बुद्ध, अनोत्तट्टा झील में, अपनी शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति की प्रतीक्षा करते हुए, वायु में यात्रा करके राजमहल में उतरे। राजा और बोधिसत्व ने श्रद्धापूर्वक उनके हाथों से प्याले ग्रहण किए और उन्हें चबूतरे पर बुलाया, उन्हें बैठाया, उनके हाथों में उपहार जल (*8) दिया और उन्हें अत्यंत स्वादिष्ट कठोर और कोमल भोजन परोसा।

भोजन के बाद, उसने उन्हें अगले दिन के लिए आमंत्रित किया, और इसी तरह अगले सात दिनों तक उन्हें कई उपहार दिए, और सातवें दिन उसने उन्हें सभी आवश्यक वस्तुएँ प्रदान कीं। तब उन्होंने उसका धन्यवाद किया, और हवा में उड़ते हुए उसी स्थान पर लौट गए, और आवश्यक वस्तुएँ भी उनके साथ चली गईं।

यह प्रवचन समाप्त करने के बाद गुरु ने कहा: "हे भिक्षुओं, इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि कोसल के राजा मेरे अनुयायी होने के कारण मुझे अतुलनीय वरदान दे रहे हैं, क्योंकि प्राचीन काल में, जब बुद्ध का अस्तित्व भी नहीं था, तब भी बुद्धिमानों ने ऐसा ही किया था।" फिर उन्होंने अपने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उस समय आनंद राजा थे और मैं स्वयं वह बुद्धिमान विदुर था।"

फुटनोट:

(1) अतुलनीय उपहार का उल्लेख संख्या 424, अदित्त जातक में किया गया है, लेकिन पाठक को महागोविन्द सूत्र की ओर निर्देशित किया जाता है।

(2) यह पंक्ति क्रमांक 401 में आती है

(3) उल्लिखित फल और वृक्ष हैं: मायरोबोलन (टर्मिनलिया चेबुला), एम्ब्लिक मायरोबोलन (एम्ब्लिका ऑफिसिनैलिस), आम, गुलाब-सेब (यूजेनिया जांबू/जामुन), बेलेरिक मायरोबोलन, आर्टोकार्पस लाकुचा, विल्वा (एगल मार्मेलोस), राजयतन की लकड़ी (? बुचानिया लैटिफोलिया)। ब्राह्मणों को फल या औषधीय जड़ी-बूटियाँ, शहद और मलहम बेचने की मनाही थी, अन्य चीजों का तो जिक्र ही नहीं।

(4) वे एक ऐसा विवाह आयोजित करते हैं जिसमें पुरुष उन्हें कीमत चुकाता है।

(5) एक मिश्रित जाति, एक ब्राह्मण पिता और एक वैश्य स्त्री से आई।

(6)सोमा अर्पण के बाद, राजा के लिए एक भव्य पलंग पर स्नान करने की प्रथा थी। एक ब्राह्मण नीचे लेटता था, और पवित्र जल, राजा के पापों को धोकर ब्राह्मण पर डाल देता था, जिसे बलि का बकरा बनने के बदले पलंग और उसके सभी आभूषण प्राप्त होते थे।

(7) शाब्दिक रूप से "पांच विश्राम" का प्रणाम, जिससे माथे, दोनों कोहनियों, कमर, घुटनों और पैरों से जमीन को स्पर्श किया जा सके।

(8) किसी वादे या दिए गए उपहार की पुष्टि में दाहिने हाथ में डाला गया पानी।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **भिक्खा-परंपरा-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-496-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 496
भिक्ख-परंपरा-जातक

“मैंने एक को बैठे हुए देखा,” इत्यादि—यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक जमींदार के बारे में सुनाई थी। वह एक सच्चे और निष्ठावान भक्त थे और तथागत (बुद्ध) तथा संघ का निरंतर सम्मान करते थे। एक दिन उनके मन में ये विचार आया, “मैं बुद्ध, जो एक अनमोल रत्न हैं, और पवित्र संघ, जो एक अनमोल रत्न हैं, को उत्तम भोजन और कोमल वस्त्र देकर निरंतर सम्मान करता हूँ। अब मैं उस अनमोल रत्न धम्म, निर्वाण के मार्ग का सम्मान करना चाहता हूँ: परन्तु उसका सम्मान कैसे किया जाए?” इसलिए उन्होंने बहुत सारी सुगंधित मालाएँ और इसी प्रकार की वस्तुएँ लीं और जेतवन मठ गए, और गुरु को प्रणाम करते हुए उनसे यह प्रश्न पूछा, “हे गुरु, मेरी इच्छा है कि मैं धर्म के रत्न का सम्मान करूँ: मनुष्य इसे कैसे कर सकता है?” गुरु ने उत्तर दिया, “यदि तुम्हारी इच्छा धर्म के रत्न का सम्मान करने की है, तो धर्म के कोषाध्यक्ष आनंद का सम्मान करो।” “यह ठीक है,” उन्होंने कहा और ऐसा करने का वादा किया। उन्होंने वरिष्ठ भिक्षु को अपने यहाँ आने का निमंत्रण दिया और अगले दिन उन्हें बड़े धूमधाम से अपने घर ले आए; उन्होंने वरिष्ठ भिक्षु को एक भव्य आसन पर बिठाया और सुगंधित मालाओं आदि से उनका आदर-आराम किया, उन्हें कई प्रकार के उत्तम भोजन दिए और तीनों वस्त्रों के लिए पर्याप्त कीमती वस्त्र भेंट किए। वरिष्ठ भिक्षु ने सोचा, “यह सम्मान धर्म के रत्न को दिया गया है; यह मुझे नहीं, बल्कि धर्म के प्रमुख सेनापति को शोभा देता है।” अतः उन्होंने कटोरे में रखा भोजन और वस्त्र मठ में ले जाकर वरिष्ठ भिक्षु सारिपुत्र को दे दिए। उन्होंने भी सोचा, “यह सम्मान धर्म के रत्न को दिया गया है; यह केवल और केवल धर्म के स्वामी, सर्वोच्च बुद्ध को शोभा देता है,” और उन्होंने इसे दशबल (बुद्ध) को दे दिया। गुरु ने अपने से ऊपर किसी को न समझते हुए भोजन ग्रहण किया और वस्त्र स्वीकार किए। और भिक्षुओं ने सत्य के हॉल में इस विषय पर चर्चा की: "भाइयों, फलां जमींदार ने धर्म के मार्ग का सम्मान करते हुए धर्म के कोषाध्यक्ष, वरिष्ठ भिक्षु आनंद को दान दिया; उन्होंने स्वयं को इसके योग्य न समझते हुए इसे धर्म के सेनापति को दे दिया; और उन्होंने भी स्वयं को योग्य न समझते हुए तथागत (बुद्ध) को दे दिया। परन्तु तथागत (बुद्ध) ने अपने से ऊपर किसी को न देखकर यह जान लिया कि धर्म के स्वामी होने के नाते वे इसके योग्य हैं, और उन्होंने भोजन ग्रहण किया तथा उस वस्त्र को अपने वस्त्र के रूप में धारण कर लिया। इस प्रकार, भोजन का दान अपने वास्तविक स्वामी तक पहुँच गया।" गुरु ने प्रवेश करते हुए उनसे पूछा कि वे वहाँ बैठे-बैठे क्या बातें कर रहे हैं। उन्होंने उन्हें बताया। गुरु ने कहा, "भाइयों, यह पहली बार नहीं है कि दान दिया गया भोजन क्रमिक रूप से योग्यों के हिस्से में आया है; ऐसा बहुत पहले, बुद्ध के समय से पहले भी होता था।" इन शब्दों के साथ, उन्होंने उन्हें अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, ब्रह्मदत्त बनारस में धर्मपूर्वक शासन कर रहे थे। उन्होंने पाप के मार्ग त्याग दिए थे और दस राजगुणों का पालन करते थे। इस कारण उनका न्यायालय लगभग खाली हो गया। राजा ने अपने दोषों की खोज में अपने आसपास रहने वालों से लेकर सभी से पूछताछ शुरू की; परन्तु न तो स्त्रियों के कक्षों में, न नगर में, न ही आसपास के गांवों में, उन्हें कोई ऐसा व्यक्ति मिला जो उनके विरुद्ध कोई दोष बता सके (*1)। तब उन्होंने गांववासियों से पूछताछ करने का निश्चय किया। अतः उन्होंने शासन अपने दरबारियों को सौंप दिया और पुरोहित को अपने साथ लेकर काशी राज्य में भेष बदलकर यात्रा की; फिर भी उन्हें कोई ऐसा व्यक्ति नहीं मिला जो उनके विरुद्ध कोई दोष बता सके।

अंततः वह सीमावर्ती गाँव में पहुँचा और द्वार के बाहर एक सभागृह में बैठ गया। उसी समय, उस गाँव का एक ज़मींदार, जो अस्सी करोड़ (10 मिलियन) की संपत्ति का धनी था, अपने दल के साथ स्नान करने जा रहा था, तभी उसने राजा को सभागृह में बैठे देखा। राजा का शरीर सुशोभित था और उसकी त्वचा सुनहरे रंग की थी। वह राजा पर मोहित हो गया और सभागृह में प्रवेश करते हुए बोला, "कुछ देर यहाँ ठहरिए।" फिर वह अपने घर गया और तरह-तरह के उत्तम भोजन की व्यवस्था करवाकर अपने भव्य सेवकों के साथ भोजन के पात्र लेकर लौटा। उसी समय, हिमालय से एक तपस्वी आया और वहाँ बैठ गया। वह पाँचों दिव्य शक्तियों से युक्त था। और नंदा पर्वत की एक गुफा से पच्चेक बुद्ध भी आकर वहाँ बैठ गए। ज़मींदार ने राजा को हाथ धोने के लिए जल दिया और तरह-तरह की उत्तम चटनी और मसालों (मिठाइयों) से युक्त भोजन की थाली राजा के समक्ष रख दी। राजा ने उसे ग्रहण किया और ब्राह्मण पुरोहित को दे दिया। पुजारी ने उसे लिया और तपस्वी को दे दिया। तपस्वी अपने बाएँ हाथ में भोजन का पात्र और दाएँ हाथ में जलपात्र लिए पच्चेक बुद्ध के पास गए, पहले उन्होंने दान का जल अर्पित किया और फिर भोजन को कटोरे में रखा। उन्होंने बिना किसी को भोजन में भाग लेने के लिए आमंत्रित किए या अनुमति मांगे ही भोजन करना शुरू कर दिया। भोजन समाप्त होने पर, जमींदार ने सोचा: "मैंने यह भोजन राजा को दिया, राजा ने अपने पुजारी को, पुजारी ने तपस्वी को और तपस्वी ने पच्चेक बुद्ध को; पच्चेक बुद्ध ने बिना अनुमति मांगे ही इसे खा लिया। इस तरह से देने का क्या अर्थ है? अंतिम व्यक्ति ने बिना अनुमति के या बिना अनुमति के क्यों खाया? मैं उनसे एक-एक करके पूछूंगा।" फिर वह बारी-बारी से प्रत्येक के पास गए और उन्हें प्रणाम करके अपना प्रश्न पूछा, जिस पर उन्होंने उत्तर दिया।

मैंने एक ऐसे व्यक्ति को देखा जो सिंहासन के योग्य था, जो एक राज्य से आया था।
महलों से रहित रेगिस्तानों तक, सबसे नाजुक संरचना।
"मैंने दया करके उसे खाने के लिए धान के दाने दिए।"
चावल का एक ऐसा ढेर जो इतनी अच्छी तरह से पका हुआ है जैसे पुरुष मांस पर डालते हैं।
"तुमने भोजन लिया और ब्राह्मण को दे दिया, स्वयं स्वयं कुछ नहीं खाया।"
मैं अत्यंत सम्मानपूर्वक पूछना चाहता हूँ, आपने क्या किया है?
"मेरे शिक्षक, मेरे पादरी, वे छोटे-बड़े सभी कर्तव्यों के प्रति उत्साही थे,
मुझे खाना उसे दे देना चाहिए, क्योंकि वह इसका हकदार है।
"हे ब्राह्मण, जिनका राजा भी आदर करते हैं, कहो कि तुमने भोजन क्यों नहीं किया (*2)
चावल का वह ढेर, जो बहुत अच्छे से पका हुआ है, जिसे पुरुष मांस के ऊपर डालते हैं।
"आपको इस उपहार के दायरे का ज्ञान नहीं था, लेकिन आपने इसे उस ऋषि को सौंप दिया।"
मैं पूरे सम्मान के साथ पूछना चाहता हूँ, आपने क्या किया है?
मैं पत्नी और परिवार का भरण-पोषण करता हूँ, घरों में भी रहता हूँ।
मैं एक राजा की तरह अपनी वासनाओं पर शासन करता हूँ, और अपनी स्वयं की वासनाओं को भी पूरा करता हूँ।
"जंगल में लंबे समय से रह रहे एक बुद्धिमान तपस्वी पुरुष के पास,
मुझे, जो वृद्ध और धार्मिक (तपस्वी) परंपरा में अभ्यस्त हूँ, भोजन देना चाहिए।
अब मैं उस दुबले-पतले ऋषि से पूछता हूँ, जिसकी त्वचा पर नीचे की सभी नसें दिखाई देती हैं,
लंबे नाखून, बिखरे बाल, गंदा सिर और दांत:
"क्या तुम्हें जीवन की कोई परवाह नहीं है, हे जंगल में अकेले रहने वाले?"
जिस भिक्षु को आपने भोजन दिया, वह बेहतर इंसान कैसे बन गया?
मैं जंगली कंद और मूली खोदता हूँ, कैटमिंट और जड़ी-बूटियाँ खोजता हूँ।
जंगली चावल और काली सरसों को तोड़कर या झाड़कर सुखा लें।
बेर, जड़ी-बूटियाँ, शहद, कमल के रेशे, चेरी बेर, मांस के टुकड़े,
यह मेरी संपत्ति है, और मैं इन्हें लेकर खाने योग्य बनाता हूँ।
मैं खाना बनाती हूँ, वो नहीं बनाता: मेरे पास धन है, उसके पास कुछ नहीं: मैं बुरी तरह बंधी हुई हूँ

सांसारिक चीजों के प्रति तो वह स्वतंत्र है, लेकिन भोजन उसका स्वाभाविक अधिकार है।
"मैं वहां बैठे भाई से पूछता हूं, जिनकी सारी इच्छाएं दबी हुई हैं;
चावल का यह ढेर, पूरी तरह पका हुआ और स्वादिष्ट, जिसे लोग अपने भोजन पर डालते हैं।
"तुमने इसे लिया, और बड़े चाव से खाया, और किसी के साथ साझा नहीं किया;"
मैं पूरे सम्मान के साथ पूछना चाहता हूँ, आपने क्या किया है?
मैं न तो खाना पकाता हूँ, न ही खाना पकवाता हूँ, न ही नष्ट करता हूँ और न ही नष्ट करवाता हूँ;
वह जानता था कि मेरे पास कोई धन-दौलत नहीं है, मैं सभी पापों से दूर रहता हूँ।
"उसने अपने दाहिने हाथ में बर्तन और अपने बाएं हाथ में भोजन रखा हुआ था।"
मुझे वो शोरबा दिया जो लोग मांस पर डालते हैं, चावल का वो मिश्रण बहुत स्वादिष्ट था;
उनके पास संपत्ति है, उनके पास धन है, उनका कर्तव्य है देना:
जो दाता से खाने की मांग करता है, वह शत्रु है, यह बात अच्छी तरह जान लो।
ये शब्द सुनकर, जमींदार ने अत्यंत प्रसन्नता से अंतिम दो छंद दोहराए:

"आज मेरे लिए यह एक सुखद संयोग था कि राजा यहाँ आए।"
मुझे पहले कभी पता नहीं था कि भरपूर फल मिलने से कितने बड़े उपहार मिलते हैं।
"राजा अपने राज्यों में, ब्राह्मण अपने काम में लोभ से भरे हुए हैं।"
फल और जड़ें चुनते समय ज्ञानी लोग कहते हैं: "भाई-बहन पाप से मुक्त हो जाते हैं।"
पच्चेक बुद्ध ने उन्हें प्रवचन देने के बाद, तपस्वी सहित अपने स्थान के लिए प्रस्थान किया। राजा कुछ दिन उनके साथ रहने के बाद बनारस के लिए रवाना हो गया।

जब गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने कहा: "हे भिक्षुओं, यह पहली बार नहीं है कि भोजन उसे मिला जो उसका हकदार था, क्योंकि ऐसा पहले भी हो चुका है।" फिर उन्होंने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उस समय, धर्म मार्ग का पालन करने वाला जमींदार कथा का जमींदार था, आनंद राजा थे, सारिपुत्र पुरोहित थे, और मैं स्वयं हिमालय में रहने वाला तपस्वी था।"

फुटनोट:

(1)संख्या 151 की तुलना करें

(2)गौतम यहाँ केवल ब्राह्मण का गोत्र-नाम है, वड्ढम सही पाठ है, उबले हुए चावल।

पुस्तक XV. VISATI-NIPATA:

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **मातंग-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-497-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 497
मातंग-जातक

“आप कहाँ से आए हैं,” इत्यादि — यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए राजा उदेना के बारे में सुनाई थी। उस समय, पूज्य पिंडोला-भरद्वाज जेतवन मठ से वायु मार्ग से गुजरते हुए अक्सर दिन की तपिश कोसंबी स्थित राजा उदेना के उद्यान में बिताते थे। कहा जाता है कि पूर्व जन्म में वे राजा थे और अपने सेवकों के साथ लंबे समय तक उसी उद्यान में वैभव का आनंद लेते रहे थे। उनके द्वारा किए गए पुण्य कर्मों के फलस्वरूप वे दिन की तपिश में वहाँ बैठकर समाधि की प्राप्ति का आनंद लेते थे।

एक दिन वह उस स्थान पर, फूलों से लदे साल के पेड़ के नीचे बैठे थे, तभी उडेना अपने कई अनुयायियों के साथ उद्यान में आए। वे सात दिनों से शराब पी रहे थे और उद्यान में आनंद लेना चाहते थे। वे अपनी एक दासी की बाहों में राजसी आसन पर लेट गए और नशे में धुत्त

होकर जल्दी ही सो गए। तब आसपास बैठीं गीत गा रही स्त्रियों ने अपने वाद्य यंत्र नीचे रख दिए और फूल-फल इकट्ठा करने के लिए बगीचे में घूमने लगीं। कुछ समय बाद उन्होंने उस वृहत्तर भिक्षु को देखा और उनके पास आकर प्रणाम किया और बैठ गईं। वृहत्तर भिक्षु वहीं बैठे रहे और उन्हें प्रवचन देने लगे। दूसरी स्त्री ने अपनी बाहें हिलाकर राजा को जगाया और कहा, "ये मूर्ख कहाँ गए?" उसने उत्तर दिया, "ये एक तपस्वी के चारों ओर घेरा बनाकर बैठे हैं।" राजा क्रोधित हो गए और वृहत्तर भिक्षु के पास जाकर उन्हें अपशब्द कहने लगे, "भाड़ में जाए ये! मैं इसे लाल चींटियों से कुतरवा दूँगा!" क्रोधित होकर उन्होंने लाल चींटियों से भरी टोकरी वृहत्तर भिक्षु के शरीर पर तुड़वा दी। लेकिन वरिष्ठ भिक्षु वायु में उठे और राजा को फटकारा; फिर वे जेतवन मठ गए और सुगंधित कक्ष के द्वार पर उतरे। तथागत (बुद्ध) ने पूछा, "तुम कहाँ से आए हो?" और उन्होंने उन्हें सच्चाई बताई। उन्होंने कहा, "भारद्वाज, यह पहली बार नहीं है कि उदेना ने किसी धार्मिक व्यक्ति का अपमान किया है, बल्कि उसने पहले भी ऐसा किया था।" फिर वरिष्ठ भिक्षु के अनुरोध पर उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, तब महान पुरुष का जन्म नगर के बाहर एक चांडाल के पुत्र के रूप में हुआ और उनका नाम मतंग (हाथी) रखा गया (*1)। बाद में उन्होंने ज्ञान प्राप्त किया और ज्ञानी मतंग के रूप में उनकी प्रसिद्धि दूर-दूर तक फैल गई। उस समय बनारस के एक व्यापारी की पुत्री दित्था-मंगलिका (*2) हर दो महीने में एक बार अपने साथियों के साथ उद्यान में घूमने आती थी। एक दिन, महान पुरुष किसी काम से नगर गए थे और द्वार से प्रवेश करते समय उनकी मुलाकात दित्था-मंगलिका से हुई। वे एक तरफ हट गए और वहीं खड़े रह गए। दित्था-मंगलिका ने अपने पर्दे के पीछे से उन्हें देखा और पूछा, "यह कौन है?" "एक चांडाल, मेरी स्वामिनी।" "अरे!" दित्था-मंगलिका बोली, "मैंने कुछ ऐसा देख लिया है जो दुर्भाग्य लाता है," और सुगंधित जल से अपनी आँखें धोकर वह वापस मुड़ गई। उसके साथ आए लोग चिल्लाए, "अरे, नीच अछूत, तुमने आज हमारा मुफ्त खाना और शराब छीन ली!" गुस्से में आकर उन्होंने ज्ञानी मतंगा को हाथों-पैरों से पीटा, उसे बेहोश कर दिया और चले गए। कुछ देर बाद जब उसे होश आया तो उसने सोचा, "दित्था-मंगलिका के चारों ओर मौजूद भीड़ ने मुझे बेवजह पीटा, मैं तो निर्दोष हूँ। जब तक मैं उसे पा नहीं लेता, तब तक मैं हिलूंगा नहीं, एक पल भी नहीं।" इसी दृढ़ निश्चय के साथ वह गया और उसके पिता के घर के दरवाजे पर लेट गया। जब लोगों ने उससे पूछा कि वह वहाँ क्यों लेटा है, तो उसने उत्तर दिया, "मुझे बस दित्था-मंगलिका चाहिए।" एक दिन बीता, फिर दूसरा, तीसरा, चौथा, पाँचवाँ और छठा। बुद्धों का संकल्प अटल होता है; इसलिए सातवें दिन वे उस लड़की को बाहर लाए और उसे मतंगा को सौंप दिया। तब उसने कहा, "उठिए, गुरुजी, चलिए हम आपके घर चलते हैं।" लेकिन मतंगा ने कहा, "देवी, आपके लोगों ने मुझे बहुत पीटा है, मैं कमजोर हूँ, मुझे अपनी पीठ पर उठा लीजिए और ले जाइए।" तो उसने वैसा ही किया, और नागरिकों की पूरी नजरों के सामने शहर से निकलकर चंदाला बस्ती की ओर चली गई।

कुछ दिनों तक उस महान पुरुष ने उसे वहाँ रखा, जाति के नियमों का किसी भी प्रकार से उल्लंघन किए बिना। फिर उन्होंने सोचा, "संसार का त्याग करके ही, और किसी अन्य तरीके से नहीं, मैं इस महिला को सर्वोच्च सम्मान दे पाऊँगा और उसे सर्वोत्तम उपहार दे पाऊँगा।" अतः उन्होंने उससे कहा, "देवी, यदि मैं वन से कुछ नहीं लाता, तो हम जीवित नहीं रह सकते। मैं वन में जाता हूँ; मेरे लौटने तक प्रतीक्षा करो, लेकिन चिंता मत करो।" उन्होंने गृहस्थों को आदेश दिया कि वे उसकी उपेक्षा न करें, और स्वयं वन में चले गए, और पूरी लगन से एक तपस्वी का जीवन व्यतीत किया; इस प्रकार सात दिनों में उन्होंने अष्टम सिद्धियाँ और पाँच अलौकिक शक्तियाँ प्राप्त कर लीं। फिर उन्होंने सोचा, "अब मैं दित्था-मंगलिका की रक्षा कर पाऊँगा।" अपनी अलौकिक शक्ति से वे वापस लौटे, और चंदाल गाँव के द्वार पर उतरे, जहाँ से वे दित्था-मंगलिका के घर के द्वार की ओर बढ़े। जब उसने उसके लौटने की खबर सुनी, तो वह बाहर आई और रोने लगी, "हे गुरुदेव, आपने मुझे क्यों त्याग दिया और संन्यासी बन गए?" उसने कहा, "कोई बात नहीं, देवी, अब मैं तुम्हें तुम्हारी पिछली महिमा से भी अधिक गौरवशाली बना दूंगा। क्या तुम लोगों के बीच यह कह पाओगी: "मेरे पति मतंग नहीं, बल्कि महान ब्रह्मा हैं?" "जी, गुरुदेव, मैं कह सकती हूँ।" "अच्छा, जब लोग तुमसे पूछें कि तुम्हारे पति कहाँ हैं, तो तुम्हें उत्तर देना, वे ब्रह्मा के स्वर्ग (देवदूतों के स्वर्ग) में गए हैं। यदि वे पूछें कि वे कब लौटेंगे, तो तुम्हें कहना, वे सात दिनों में पूर्णिमा के दिन चंद्रमा को चीरते हुए लौटेंगे।" ये कहकर वे हिमालय चले गए।

दित्था-मंगलिका ने बनारस में इधर-उधर से सुनी हुई बातें एक विशाल जनसमूह के सामने बताईं। लोगों ने विश्वास करते हुए कहा, "अरे, ये तो ब्रह्मा हैं, इसलिए दित्था-मंगलिका के पास नहीं आते, बल्कि ऐसा ही होगा।" पूर्णिमा की रात, जब चंद्रमा मध्य पथ पर स्थिर होता है, तब बोधिसत्व ने ब्रह्मा का रूप धारण किया और काशी राज्य और बनारस नगर (12 लीग x 4.23 किमी) में फैले हुए प्रकाश की तेज किरण के बीच चंद्रमा को भेदकर पृथ्वी पर उतरे। उन्होंने बनारस नगर के ऊपर तीन बार परिक्रमा की और विशाल जनसमूह से सुगंधित मालाएँ और अन्य भेंटें प्राप्त कीं, फिर अपना मुख चांडाल गाँव की ओर किया। ब्रह्मा के भक्त एकत्रित होकर चांडाल गाँव गए। उन्होंने दित्था-मंगलिका के घर को सफेद वस्त्रों से ढक दिया, जमीन को चार प्रकार की सुगंधित वस्तुओं से साफ किया, फूल बिखेरे, अगरबत्ती जलाई, शामियाना लगाया, एक भव्य आसन तैयार किया, सुगंधित तेल का दीपक जलाया, द्वार पर चांदी की थाली के समान सफेद और चिकनी रेत रखी, फूल बिखेरे और झंडे लगाए। इस प्रकार सजे हुए घर के सामने भगवान नीचे आए, प्रवेश किया और थोड़ी

देर आसन पर बैठे। उस समय दित्था-मंगलिका मासिक धर्म में थीं। उनके (*3) अंगूठे ने उनकी नाभि को छुआ और वे गर्भवती हो गईं। तब उस महान प्राणी ने उससे कहा, "हे देवी, तुम गर्भवती हो और पुत्र को जन्म दोगी; तुम्हें और तुम्हारे पुत्र को सर्वोच्च सम्मान और भेंट प्राप्त होगी; जिस जल से तुम अपने पैर धोओगी, उसका उपयोग भारत भर में राजा धार्मिक अनुष्ठानों में छिड़काव के लिए करेंगे; जिस जल से तुम स्नान करोगी, वह अमरता का अमृत होगा; जो इसे अपने सिर पर छिड़केंगे, वे सभी रोगों से मुक्त हो जाएंगे और उन पर कभी दुर्भाग्य नहीं आएगा; जो तुम्हारे चरणों में सिर रखकर तुम्हें प्रणाम करेंगे, उन्हें एक हजार सिक्के देने होंगे; जो तुम्हारी उपस्थिति में तुम्हें प्रणाम करेंगे, उन्हें सौ सिक्के देने होंगे; जो तुम्हारी दृष्टि में आकर तुम्हें प्रणाम करेंगे, उन्हें एक-एक रुपया देना होगा। सावधान रहो!" यह सलाह देकर, भीड़ के सामने, वह उठ खड़ा हुआ और चंद्रमा में समा गया।

ब्रह्मा के भक्त एकत्रित हुए और पूरी रात वहीं खड़े रहे; सुबह उन्होंने उन्हें सोने की पालकी में बिठाया और उसे अपने सिर पर उठाकर नगर में ले गए। एक विशाल जनसमूह उनके पास आया और जोर-जोर से पुकारने लगा, "महान ब्रह्मा की पत्नी!" और सुगंधित मालाओं और अन्य वस्तुओं से उनकी पूजा की; जिन्हें उनके चरणों में सिर रखकर प्रणाम करने की अनुमति मिली, उन्होंने एक हजार सिक्कों का थैला दिया, जिन्हें उनकी उपस्थिति में प्रणाम करने की अनुमति मिली, उन्होंने सौ सिक्के दिए और जिन्हें उनकी दृष्टि में खड़े होकर प्रणाम करने की अनुमति मिली, उन्होंने एक-एक रुपया दिया। इस प्रकार उन्होंने अपने मार्ग में बारह लीग (4.23 किमी) के पूरे बनारस नगर को शामिल किया और अठारह करोड़ (10 मिलियन) रुपये की राशि प्राप्त की।

इस प्रकार उस नगर का चक्कर लगाने के बाद, वे उसे नगर के केंद्र में ले आए, और वहाँ एक विशाल मंडप बनवाया, उसके चारों ओर पर्दे लगवाए, और उसे वहाँ वैभव और समृद्धि के बीच निवास करने का प्रबंध किया। मंडप के सामने, उन्होंने सात विशाल प्रवेश द्वार और सात मंजिला महल का निर्माण शुरू किया: इससे उनके खाते में बहुत बड़ा पुण्य जुड़ गया।

उसी मंडप में दित्था-मंगलिका ने पुत्र को जन्म दिया। उसके जन्मदिवस पर ब्राह्मण एकत्रित हुए और उसका नाम मांडव्य-कुमार रखा, अर्थात् मंडप का राजकुमार, क्योंकि उसका जन्म वहीं हुआ था। दस महीनों में महल बनकर तैयार हो गया: तब से वह (*4) उसमें अत्यंत सम्मान के साथ रहने लगी। और राजकुमार मांडव्य का पालन-पोषण अत्यंत वैभव के बीच हुआ। जब वह सात या आठ वर्ष का था, तब भारत के कोने-कोने से सर्वश्रेष्ठ शिक्षक एकत्रित हुए और उन्होंने उसे तीनों वेदों की शिक्षा दी। सोलह वर्ष की आयु से वह ब्राह्मणों को भोजन उपलब्ध कराने लगा और सोलह हजार ब्राह्मणों को निरंतर भोजन कराया जाता था; चौथे प्राचीर द्वार पर ब्राह्मणों को भिक्षा दी जाती थी।

एक बड़े उत्सव के दिन उन्होंने बड़ी मात्रा में चावल का दलिया तैयार किया, और सोलह हजार ब्राह्मण चौथे द्वार पर बैठकर इस भोजन का आनंद लिया। भोजन के साथ उन्होंने सुनहरे पीले रंग का ताजा घी, शहद और चीनी का मिश्रण भी खाया। राजकुमार स्वयं गहनों से सुसज्जित, पैरों में सोने की चप्पलें और हाथ में सोने की छड़ी लिए हुए घूम रहे थे और निर्देश दे रहे थे, "घी यहाँ, शहद यहाँ।" उसी समय हिमालय में अपने आश्रम में बैठे ज्ञानी मतंग ने दित्था-मंगलिका के पुत्र के बारे में जानने के लिए विचार किया। यह देखकर कि वह गलत रास्ते पर जा रहे हैं, उन्होंने सोचा, "आज मैं जाकर उस युवक का धर्म परिवर्तन कराऊंगा और उसे दान देने का तरीका सिखाऊंगा ताकि दान से भरपूर फल मिले।" वे वायुमार्ग से अनोटत्ता झील गए और वहाँ उन्होंने अपना मुँह धोया, इत्यादि। मनोशिला (*5) जिले में खड़े होकर, उन्होंने रंगीन वस्त्रों का जोड़ा पहना, कमरबंद बांधा, फटे-पुराने वस्त्र ओढ़े, मिट्टी का कटोरा लिया और हवा में उड़ते हुए चौथे द्वार तक गए, जहाँ वे भिक्षागृह के ठीक बगल में उतरे और एक तरफ खड़े हो गए। मांडव्य ने इधर-उधर देखते हुए उन्हें देखा। "तुम कहाँ से आए हो?" वह चिल्लाया, "हे तपस्वी, हे अपराधी, हे कुकुल के बहिष्कृत, हे राक्षस, न कि मनुष्य?" और उसने पहला श्लोक दोहराया:

"तुम जहां से आए हो, गंदे वस्त्र पहने हुए,
मैं कसम खाता हूँ, वह एक घिनौना और भूतिया प्राणी था।
तुम्हारे सीने पर चिथड़ों से बना एक लबादा,
उपहार के अयोग्य—कहिए, आप कौन हैं?
उस महान सत्ता ने सुना, फिर कोमल हृदय से दूसरे श्लोक के शब्दों में उससे कहा:

"हे महोदय, भोजन तैयार है।"
लोग इसका स्वाद लेते हैं, खाते हैं और पीते हैं:
आप जानते हैं कि हम जो कुछ भी संयोगवश प्राप्त होता है, उसी से अपना जीवन यापन करते हैं;
उठो! नीची जाति के देहाती को भी थोड़ा आनंद लेने दो।
तब मांडव्य ने तीसरा श्लोक पढ़ा:

"ब्राह्मणों के लिए, मेरे आशीर्वाद के लिए, मेरे हाथों से"
यह भोजन प्राप्त हुआ है, निष्ठावान हृदय का उपहार।

दूर हटो! मेरी नजरों में यहाँ खड़े रहने का क्या मतलब है?
यह तुम्हारे जैसे लोगों के लिए नहीं है: नीच दुष्ट, यहाँ से चले जाओ!
इस पर उस महान सत्ता ने एक श्लोक दोहराया:

वे ऊँची और नीची दोनों जगहों पर बीज बोते हैं।
फल की उम्मीद में, और दलदली मैदान पर:
इसी विश्वास के साथ अपने उपहार दें;
योग्य प्राप्तकर्ताओं को यह अवश्य प्राप्त होगा।
तब मांडव्य ने एक श्लोक दोहराया:

मैं उन जमीनों को जानता हूँ जिनमें मैं बीज बोना चाहता हूँ।
इस संसार में बीज बोने के लिए उपयुक्त स्थान,
उच्च कुल के ब्राह्मण, जिन्हें पवित्र शास्त्रों का ज्ञान है:
ये ज़मीनें वाकई अच्छी और उपजाऊ हैं।
फिर उस महान सत्ता ने दो छंद दोहराए:

जन्म का गौरव, अति आत्मविश्वास और आत्म-अभिमान,
नशा, घृणा, अज्ञानता और लोभ
जिनके हृदयों में ये बुराइयाँ घर कर जाती हैं,
ये सभी बीज बोने के लिए बंजर और अनुपयुक्त खेत हैं।
जन्म का गर्व, अति आत्मविश्वास, आत्म-अभिमान,
नशा, घृणा, अज्ञानता और लोभ
जिनके हृदय में इन बुराइयों के लिए कोई स्थान नहीं है,
ये सभी बीज बोने के लिए अच्छे और उपजाऊ खेत हैं।"
ये शब्द उस महान प्राणी ने बार-बार दोहराए; लेकिन दूसरा क्रोधित हो गया और चिल्लाया—"यह आदमी बहुत ज्यादा फिजूलखर्ची करता है। मेरे कुली कहाँ गए हैं कि वे इस देहाती को बाहर नहीं निकाल देते?" फिर उसने एक श्लोक दोहराया:

"हे भंडाकुच्ची, उपज्झाय हो!
और उपजोतिया कहाँ है, मैं पूछता हूँ?
उस आदमी को सज़ा दो, उसे मार डालो, जाओ--
और उस बदतमीज़ देहाती को गले से पकड़कर घसीट कर ले जाओ!
उसकी पुकार सुनकर वे लोग दौड़ते हुए आए और उसे प्रणाम करते हुए पूछा, "हम क्या करें, महाराज?" "क्या तुमने कभी इस नीच, बहिष्कृत व्यक्ति को देखा है?" "नहीं, महाराज, हमें पता ही नहीं चला कि वह यहाँ आया है: वह कोई जादूगर है, या कोई धूर्त बदमाश।" "तो फिर तुम यहाँ क्यों खड़े हो?" "हम क्या करें, महाराज?" "क्यों, इसके मुँह पर प्रहार करो, इसका जबड़ा तोड़ दो, इसकी पीठ छड़ियों और लकड़ी के डंडों से फाड़ दो, इसे दंडित करो, इस दुष्ट का गला पकड़ो, इसे नीचे गिरा दो, इसे इस जगह से भगा दो!" लेकिन इससे पहले कि वे उस पर हमला कर पाते, वह महान प्राणी हवा में ऊपर उठ गया और वहाँ स्थिर होकर एक श्लोक दोहराया:

"किसी ऋषि का अपमान करना! धधकती आग को निगलने से भी कोई लाभ नहीं होता।"
या फिर कठोर लोहे को दांतों से काट लो, या अपने नाखूनों से पहाड़ को खोद डालो।"
ये शब्द कहते ही वह महान सत्ता आकाश में बहुत ऊपर उठ गई, जबकि युवक और ब्राह्मण उस दृश्य को देखते रह गए।

इस बात को समझाते हुए गुरु ने एक श्लोक सुनाया:

सत्य और न्याय के रक्षक ऋषि मतंगा ने ऐसा कहा था।
फिर वह ब्राह्मणों की दृष्टि के सामने आकाश में बहुत ऊपर उठ गया।
उसने अपना मुख पूर्व दिशा की ओर किया और एक गली में उतरकर, इस इरादे से कि उसके पदचिह्न दिखाई दें, पूर्वी द्वार के पास भिक्षा माँगने लगा; फिर, कुछ मिश्रित भोजन एकत्र करके, वह एक विशेष कक्ष में बैठ गया और खाने लगा। परन्तु नगर के देवता वहाँ आ गए, क्योंकि उन्हें यह असहनीय लगा कि राजा ने ऐसा कुछ कहा जिससे उनके ऋषि को ठेस पहुँची। अतः उनमें से सबसे बड़े राक्षस ने मांडव्य की गर्दन पकड़कर मरोड़ दी, और अन्य राक्षसों ने दूसरे ब्राह्मणों को पकड़कर उनकी गर्दनें मरोड़ दीं। परन्तु बोधिसत्व पर दया करके उन्होंने मांडव्य को नहीं मारा: "वह उनका पुत्र है," उन्होंने कहा, और केवल उसे कष्ट दिया। मांडव्य का सिर इस प्रकार मुड़ा हुआ

था कि वह उसके कंधों के ऊपर पीछे की ओर देख रहा था; हाथ-पैर अकड़े हुए और बेजान थे; उसकी आँखें ऊपर की ओर उठी हुई थीं, मानो वह मृत हो: वह वहीं बेजान पड़ा रहा। अन्य ब्राह्मण मुँह से झाग उगलते हुए गोल-गोल घूमने लगे। लोग दित्था-मंगलिका के पास गए और उनसे कहा, "हे देवी, आपके पुत्र को कुछ हो गया है!" वह तुरंत वहाँ पहुँचीं और उसे देखकर रो पड़ीं, "अरे, यह क्या है!" और एक श्लोक सुनाया:

"उसका सिर कंधे के ऊपर मुड़ा हुआ है;"
देखो वह कैसे बेबस होकर अपना हाथ फैला रहा है!
उसकी आंखें इतनी सफेद हैं मानो वह बिल्कुल मर चुका हो:
हे, मेरे बेटे को यह हानि किसने पहुंचाई है?
फिर वहां मौजूद लोगों ने एक श्लोक दोहराया और उसे इसके बारे में बताया:

"एक साधु आया, गंदे वस्त्र पहने हुए,
देखने में एक घिनौना और भूतिया सा प्राणी।
उसके सीने पर चिथड़ों से बना एक लबादा था:
जिस व्यक्ति ने आपके बेटे के साथ ऐसा व्यवहार किया, वही वह व्यक्ति है।
यह सुनकर उसने सोचा: "किसी और के पास यह शक्ति नहीं है, निस्संदेह यह बुद्धिमान मतंगा के पास ही होगी! लेकिन जो दृढ़ है और सभी प्राणियों के प्रति सद्भावना रखता है, वह कभी भी इन सभी लोगों को कष्ट में छोड़कर नहीं जाएगा। अब वह किस दिशा में गया होगा?" यही प्रश्न उसने निम्नलिखित श्लोक में पूछा:

"वह ज्ञानी व्यक्ति किस दिशा में गया?"
हे महानुभावों, कृपया मुझे इस प्रश्न का उत्तर दें!
आओ, हम इस अपराध के लिए प्रायश्चित करें।
हम अपने बेटे को फिर से जीवित कर सकें।"
उन युवकों ने उसे इस प्रकार उत्तर दिया:

वह बुद्धिमान व्यक्ति आकाश में ऊपर उठ गया।
जैसे चंद्रमा अपने मध्यकाल में पंद्रहवें दिन हो:
सत्य में स्थापित ऋषि, दर्शन में सुंदर।
इसके अलावा वह पूर्व दिशा की ओर मुड़ गया।
यह उत्तर मिलने पर उसने कहा, "मैं अपने पति को ढूँढूँगी!" और सोने के घड़े और सोने के प्याले लेकर, दासियों के एक समूह से घिरी हुई, वह उस स्थान पर गई जहाँ उसके पदचिह्न पड़े थे; वह उनका पीछा करती हुई तब तक गई जब तक वह उसे एक आसन पर बैठे भोजन करते हुए नहीं देख लिया। पास आकर उसने उसे प्रणाम किया और वहीं खड़ी हो गई। उसे देखकर उसने अपने कटोरे में कुछ उबले हुए चावल डाले। दित्था मंगलिका ने सोने के घड़े से उसके लिए पानी डाला; उसने तुरंत अपने हाथ धोए और मुँह साफ किया। फिर उसने कहा, "मेरे बेटे के साथ यह क्रूरता किसने की है?" इस श्लोक को दोहराते हुए:

"उसका सिर कंधे के ऊपर मुड़ा हुआ है;"
देखो वह कैसे बेबस होकर अपना हाथ फैला रहा है!
उसकी आंखें सफेद हैं, मानो वह बिल्कुल मर चुका हो:
हे, मेरे बेटे को यह हानि किसने पहुंचाई है?
इसके बाद के छंदों को दोनों बारी-बारी से पढ़ते हैं:

"वहाँ ऐसे पिशाच हैं, जिनकी शक्ति और सामर्थ्य बहुत अधिक है।"
जो ऋषियों का अनुसरण करते हैं, उन्हें देखना सुंदर है:
उन्होंने आपके बेटे को दुष्ट स्वभाव वाला, भावुक देखा।
और उन्होंने तुम्हारे बेटे के साथ तुम्हारे लिए ऐसा व्यवहार किया है।"
"तो फिर ये काम जिन्नों ने किया है।"
हे पवित्र पुरुष, मुझ पर क्रोधित मत हो!
हे भाई! मेरे बेटे के प्रति प्रेम से परिपूर्ण!
मैं शरण लेने के लिए आपके चरणों में आता हूँ!

"तो मैं आपको बता दूं कि मेरे दिमाग ने छिपा लिया था।"
न तब, न अब, शत्रुता का कोई विचार:
आपका पुत्र, काल्पनिक ज्ञान के बल पर, अभिमान में चूर होकर,
तीनों वेदों का अर्थ नहीं जानता।"
"हे भाई! सचमुच एक आदमी पा सकता है
थोड़े ही समय में उसकी सारी इंद्रियां सुन्न हो गईं।
हे ज्ञानी ऋषि, मेरी एक गलती के लिए मुझे क्षमा कर दीजिए!
जो बुद्धिमान होते हैं वे क्रोध में कभी उग्र नहीं होते।
इस प्रकार उसके द्वारा शांत किए जाने पर उस महान प्राणी ने उत्तर दिया, "ठीक है, मैं तुम्हें अमर जीवन का अमृत दूंगा, जिससे भूत-प्रेत चले जाएंगे"; और उसने यह श्लोक सुनाया:

"मेरे बचे हुए भोजन का यह टुकड़ा अपने साथ ले जाओ,"
बेचारे मूर्ख मांडव्य को भी एक टुकड़ा खाने दो:
आपका पुत्र स्वस्थ होकर आपको वापस मिल जाएगा।
और इस प्रकार पिशाच अपने शिकार को मुक्त कर देंगे।
जब उसने उस महान प्राणी के शब्द सुने, तो उसने एक सोने का कटोरा आगे बढ़ाते हुए कहा, "हे स्वामी, मुझे अमरत्व का अमृत दीजिए!" उस महान प्राणी ने उसमें अपने चावल के दलिया की कुछ बूँदें डालीं और कहा, "पहले इसका आधा भाग अपने पुत्र के मुँह में डालो; शेष भाग को एक पात्र में पानी में मिलाकर अन्य ब्राह्मणों के मुँह में डाल दो; वे सब स्वस्थ हो जाएँगे।" फिर वह उठा और हिमालय की ओर प्रस्थान कर गया। वह घड़ा अपने सिर पर उठाकर चिल्लाई, "मुझे अमरत्व का अमृत मिल गया!" घर पहुँचकर उसने सबसे पहले उसमें से कुछ अपने पुत्र के मुँह में डाला। जिन्न भाग गया; राजा उठा और धूल झाड़ते हुए पूछा, "यह क्या है, माँ?" - "तुम अच्छी तरह जानती हो कि तुमने क्या किया है; अब अपने भिक्षा मांगने वालों की दयनीय स्थिति देखो!" जब उसने उन्हें देखा, तो वह पश्चाताप से भर गया। तब उसकी माता ने कहा, "मांडव्य, मेरे प्रिय पुत्र, तुम मूर्ख हो और तुम्हें यह नहीं पता कि दान कैसे देना चाहिए जिससे फल मिले। ऐसे लोग तुम्हारे दान के योग्य नहीं हैं, केवल वे ही जो बुद्धिमान मतंग के समान हैं। अब से ऐसे दुष्ट लोगों को कुछ मत दो, बल्कि गुणी लोगों को दो।" फिर उसने कहा:-

"तुम मूर्ख हो, मांडव्य, बुद्धिहीन हो।"
अच्छे कर्म कब करने चाहिए, यह न जानना:
आप उन लोगों को देते हैं जिनका पाप बहुत बड़ा होता है।
दुष्ट कर्म करने वालों और आत्मसंयम की कमी वाले लोगों के लिए।
"चमड़े के वस्त्र, घने बालों का गुच्छा,"
घास से ढका हुआ प्राचीन कुएं जैसा मुँह।
और देखो ये जीव कैसे फटे-पुराने कपड़े पहने हुए हैं!
लेकिन मूर्खों का उद्धार केवल ऐसी चीजों से ही नहीं होता।
जब वासना, घृणा और अज्ञानता को मनुष्यों से दूर कर दिया जाता है,
ऐसे शांत और पवित्र पुरुषों को दान दें: इससे बहुत फल मिलता है।
अत: अब से ऐसे दुष्टों को दान न दो; परन्तु इस संसार में जिन्होंने भी अष्टम सिद्धियाँ प्राप्त की हों, धर्मात्मा तपस्वियों और ब्राह्मणों जिन्होंने पंच पारलौकिक शक्तियाँ प्राप्त की हों, पच्चेक बुद्धों को दान दो। आओ मेरे पुत्र, मैं इन सेवकों को अमरत्व का अमृत पिलाकर उन्हें पूर्ण कर दूँ। ऐसा कहकर उसने चावल के दलिया का बचा हुआ भाग एक घड़े में पानी में डालकर सोलह हजार ब्राह्मणों के मुखों पर छिड़क दिया। प्रत्येक ब्राह्मण उठ खड़ा हुआ और धूल झाड़ ली।

फिर इन ब्राह्मणों को चांडाल के अवशेष चखाए जाने के बाद अन्य ब्राह्मणों ने उन्हें जाति से बहिष्कृत कर दिया। लज्जित होकर वे बनारस छोड़कर मेझ्झा राज्य चले गए, जहाँ वे उस देश के राजा के साथ रहने लगे। परन्तु मांडव्य वहीं रहा।

उस समय जातिमंत नाम का एक ब्राह्मण रहता था, जो धार्मिक (तपस्वी) था और वेट्टावती नगर के पास उसी नाम की नदी के किनारे बसा हुआ था। वह अपने जन्म पर बहुत घमंड करता था। भगवान वहाँ गए और उस व्यक्ति के घमंड को तोड़ने का निश्चय किया। उन्होंने उसके पास ही, नदी के थोड़ा ऊपर की ओर अपना निवास स्थान बनाया। एक दिन, जातिमंत ने एक दाँत-छड़ी (*6) चबाई और उसे नदी में गिरा दिया, यह सोचकर कि वह जातिमंत के बालों में फँस जाएगी। जब वह पानी में स्नान कर रहा था, तो वह छड़ी उसके बालों में फँस गई। जब उसने उसे देखा, तो वह बोला, "इस जानवर को धिक्कार है! यह कहाँ से आई है, यहाँ तक कि एक बीमारी भी! मैं पता लगाऊँगा।" वह नदी के ऊपर की ओर बढ़ा और उस महान पुरुष को पाकर उससे पूछा, "तुम किस जाति के हो?" - "मैं चांडाल

हूँ।" - "क्या तुमने नदी में दाँत-छड़ी डाली थी?" - "हाँ, डाली थी।" - "अरे जानवर! धिक्कार है तुम पर, नीच जाति के, धिक्कार है तुम पर, यहाँ मत रुको, बल्कि नदी के नीचे की ओर जाओ।" लेकिन जब वह नदी के नीचे रहने गया, तो उसके द्वारा डाली गई दाँत-छड़ी धारा के विपरीत बहकर जातिमंत के बालों में फंस गई। "धिक्कार है तुम पर!" उसने कहा, "यदि तुम यहाँ रुके, तो सात दिनों में तुम्हारा सिर सात टुकड़ों में फट जाएगा!" महान पुरुष ने सोचा, "यदि मैं इस आदमी पर क्रोधित हुआ, तो मैं अपने सद्‌गुणों को नष्ट कर दूँगा; लेकिन मैं इसके अहंकार को तोड़ने का कोई न कोई तरीका ज़रूर ढूँढूँगा।" सातवें दिन, उसने सूर्योदय को रोक दिया। सारी दुनिया परेशान हो गई: वे तपस्वी जातिमंत के पास आए और पूछा, "हे प्रभु, क्या आप ही हैं जो सूर्य को उदय होने से रोकते हैं?" उन्होंने कहा, "यह मेरा काम नहीं है; बल्कि नदी किनारे एक चांडाल रहता है, और यह उसी का काम होगा।" तब लोग उस महान व्यक्ति के पास आए और उनसे पूछा, "हे प्रभु, क्या आप ही हैं जो सूर्य को उदय होने से रोकते हैं?" "जी हां, मित्रों," उन्होंने कहा। "क्यों?" उन्होंने पूछा। "वह तपस्वी जो आपका प्रिय है, मेरा, एक निर्दोष व्यक्ति का अपमान करता है; जब वह आकर मेरे चरणों में गिरकर दया की भीख मांगेगा, तब मैं सूर्य को उदय होने दूंगा।" वे गए और उसे घसीटकर लाए और उस महान व्यक्ति के चरणों में गिरा दिया, और उन्हें शांत करने का प्रयास करते हुए कहा, "हे प्रभु, कृपया सूर्य को उदय होने दें।" लेकिन उन्होंने कहा, "मैं उसे उदय नहीं होने दे सकता; यदि मैंने ऐसा किया, तो इस व्यक्ति का सिर सात टुकड़ों में फट जाएगा।" उन्होंने कहा, "तो फिर, हे प्रभु, हम क्या करें?" "मुझे मिट्टी का एक ढेला लाओ।" वे उसे ले आए। "अब इसे इस तपस्वी के सिर पर रखो, और तपस्वी को पानी में डुबो दो।" ये व्यवस्था करने के बाद, उन्होंने सूर्य को उदय होने दिया। सूर्य अस्त होते ही (*7), मिट्टी का ढेर सात भागों में फट गया और तपस्वी जल में डूब गया। इस प्रकार उसे अपमानित करके, उस महान सत्ता ने सोचा: "अब वे सोलह हजार ब्राह्मण कहाँ हैं?" उसने देखा कि वे मेज्झा के राजा के साथ हैं, और उन्हें अपमानित करने का निश्चय किया; अपनी अलौकिक शक्ति से वह नगर के आसपास के क्षेत्र में उतरा।हाथ में कटोरा लिए वह नगर में भिक्षा माँगता फिर रहा था। जब ब्राह्मणों ने उसे देखा, तो उन्होंने कहा, "इसे यहाँ दो दिन ही रहने दो, नहीं तो यह हमें बेसहारा छोड़ जाएगा!" वे शीघ्रता से राजा के पास गए और चिल्लाए, "हे महामहिम, देखो एक बाज़ीगर और बाजीगर आया है: इसे बंदी बना लो!" राजा तैयार था। वह महान पुरुष अपने मिश्रित भोजन के साथ एक दीवार के किनारे एक बेंच पर बैठा भोजन कर रहा था। जब वह भोजन में व्यस्त था, तभी राजा के दूतों ने उसे पाया और तलवार से प्रहार करके उसे मार डाला। उसकी मृत्यु के बाद, उसका जन्म ब्रह्मलोक (प्रधान देवदूतों) में हुआ। कहा जाता है कि इस जन्म में बोधिसत्व नेवला पालक था और इसी दासतापूर्ण कार्य में उसकी मृत्यु हो गई। देवता क्रोधित हुए और उन्होंने मेज्झा राज्य पर गर्म राख की बाढ़ ला दी और उसे राज्यों में से मिटा दिया। इसलिए कहा जाता है:

"तो, जैसा कि वे कहते हैं, मेज्जा के कारण सारा राष्ट्र नष्ट हो गया।"
महान मतंगा की मृत्यु के कारण राज्य में उथल-पुथल मच गई।

जब गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने कहा: "यह पहली बार नहीं है कि उदेना ने धार्मिक (तपस्वी) पुरुषों का अपमान किया है, बल्कि उसने पहले भी ऐसा ही किया था।" फिर उन्होंने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उस समय उदेना मांडव्य थे, और मैं स्वयं ज्ञानी मतंग था।"

फुटनोट:

(1)चांडाल जाति के एक व्यक्ति का नाम भी, जो सबसे नीच और घृणित थी।

(2) शाब्दिक अर्थ: "वह जिसने अच्छे शगुन देखे हों।"

(3)रीडिंग असा.

(4) एक एमएस के साथ सा जोड़ना।

(5) हिमालय क्षेत्र का भाग।

(6) भारतीय लोग दांतों को साफ करने के लिए रेशेदार छड़ी का उपयोग करते हैं।

(7) पहाता लेना- जैसा कि पहिना- के लिए प्रयोग किया जाता है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **चित्त-संभूत-जातक**
__स्रोत__: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित

पिछला <<<<-----II-498-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 498
चित्त-संभूत-जातक

"हर अच्छे कर्म" आदि — यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें पूज्य महा-कश्यप के दो साथी भिक्षुओं का वर्णन है, जो सुखपूर्वक साथ रहते थे। बताया जाता है कि ये दोनों अत्यंत मित्रवत थे और हर काम में पूर्ण निष्पक्षता से बराबर हिस्सा लेते थे: यहाँ तक कि भिक्षा मांगने जाते समय भी वे साथ जाते और साथ लौटते थे, और अलग रहना उन्हें कतई पसंद नहीं था। सत्य के कुंड में भिक्षु बैठे उनकी मित्रता की प्रशंसा कर रहे थे, तभी गुरु आए और उनसे पूछा कि वे क्या बातें कर रहे हैं। उन्होंने बताया; और गुरु ने उत्तर दिया, "भाइयों, एक ही जन्म में उनकी मित्रता कोई आश्चर्य की बात नहीं है; क्योंकि प्राचीन काल के बुद्धिमान पुरुष तीन-चार जन्मों तक अटूट मित्रता बनाए रखते थे।" ऐसा कहकर उन्होंने उन्हें अतीत की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, अवंती राज्य और उज्जैनी नगर में, अवंती नामक एक महान राजा का शासन था। उस समय उज्जैनी के बाहर एक चांडाल गाँव था, जहाँ अवंती का जन्म हुआ। उनकी माता की बहन से एक और पुत्र का जन्म हुआ। इन दोनों में से एक का नाम चित्त और दूसरे का नाम संभूत रखा गया।

जब ये दोनों बड़े हुए और चंदाल जाति में झाड़ू लगाने की कला सीख ली, तो एक दिन उन्होंने शहर के द्वार पर जाकर अपनी कला का प्रदर्शन करने का सोचा। तो उनमें से एक ने उत्तरी द्वार पर और दूसरे ने पूर्वी द्वार पर प्रदर्शन किया। इस शहर में शकुन देखने में माहिर दो स्त्रियाँ थीं, एक व्यापारी की पुत्री और दूसरी पुजारी की। वे दोनों उद्यान में मौज-मस्ती करने गईं, उन्होंने नरम-कठोर भोजन, मालाएँ और इत्र मंगवाए थे; और संयोग से एक उत्तरी द्वार से और दूसरी पूर्वी द्वार से बाहर निकली। दोनों युवा चंदालों को अपनी कला का प्रदर्शन करते देख, लड़कियों ने पूछा, "ये कौन हैं?" उन्हें बताया गया, "ये चंदाल हैं।" उन्होंने कहा, "यह एक अपशगुन है!" और सुगंधित जल से अपनी आँखें धोकर वापस लौट आईं। तब सभी चिल्लाए, "हे दुष्टों, तुमने हमारा भोजन और पेय छीन लिया जो हमें मुफ्त में मिलता!" उन्होंने दोनों रिश्तेदारों को पीटा और उन्हें खूब सताया-पीड़ा की। जब उन्हें होश आया, तो वे उठ खड़े हुए और एक साथ मिलकर एक-दूसरे को अपने कष्टों के बारे में बताने लगे। वे रोते-बिलखते हुए यह सोचने लगे कि अब क्या करें। उन्होंने सोचा, "यह सारा दुख हम पर जन्म के कारण आया है। हम कभी चांडाल नहीं बन पाएंगे; चलो अपना जन्म छुपा लेते हैं और युवा ब्राह्मणों के वेश में तक्षशिला जाकर वहाँ अध्ययन करते हैं।" यह निर्णय लेकर वे वहाँ गए और एक प्रसिद्ध गुरु के अधीन विधि का अध्ययन किया। पूरे भारत में यह अफवाह फैल गई कि दो युवा चांडाल विद्यार्थी हैं और उन्होंने अपना जन्म छुपा लिया है। बुद्धिमान चित्त अपनी पढ़ाई में सफल रहा, लेकिन संभूत नहीं।

एक दिन एक ग्रामीण ने ब्राह्मणों को भोजन कराने के उद्देश्य से गुरु को आमंत्रित किया। संयोगवश, रात में बारिश हुई और सड़क के सभी गड्ढे पानी से भर गए। सुबह तड़के गुरु ने बुद्धिमान चित्त को बुलाया और कहा, "मेरे बालक, मैं नहीं जा सकता, तुम इन युवकों के साथ जाओ और आशीर्वाद दो, अपने लिए जो लाओ उसे खा लो और मेरे लिए जो बचे उसे घर ले आओ।" तदनुसार, वह युवकों को लेकर चले गए। जब युवक स्नान कर रहे थे और कुल्ला कर रहे थे, तब लोगों ने चावल का दलिया तैयार किया और उन्हें परोसते हुए कहा, "इसे ठंडा होने दो।" ठंडा होने से पहले ही युवक आकर बैठ गए। लोगों ने उन्हें अर्पण का जल दिया और उनके सामने कटोरे रख दिए। संभूत कुछ भ्रमित थे और ठंडा समझकर उन्होंने चावल का एक गोला उठाया और अपने मुँह में डाल लिया, लेकिन वह उन्हें धातु के लाल गोले की तरह जला गया। दर्द में वह अपना हिस्सा पूरी तरह भूल गया और बुद्धिमान चित्त की ओर देखते हुए चांडाल बोली में बोला, "गर्म है ना?" दूसरा भी अपना आपा खो बैठा और उनकी बोली में बोला, "बोल दो, बोल दो।" यह सुनकर दोनों युवक एक-दूसरे को देखकर बोले, "ये कैसी भाषा है?" बुद्धिमान चित्त ने आशीर्वाद दिया।

जब वे युवक घर लौटे, तो छोटे-छोटे समूहों में इकट्ठा होकर इधर-उधर बैठकर उन शब्दों पर चर्चा करने लगे। जब उन्हें पता चला कि यह चांडालों की बोली है, तो वे उन पर चिल्लाए, "अरे नीच अछूतों! तुम इतने समय से हमें धोखा दे रहे हो और ब्राह्मण होने का ढोंग कर रहे हो!" और उन्होंने उन दोनों की पिटाई कर दी। एक भले आदमी ने उन्हें भगाते हुए कहा, "चले जाओ! कलंक लग गया है। चले जाओ! कहीं जाकर तपस्वी बन जाओ।" उन युवा ब्राह्मणों ने अपने गुरु को बताया कि ये दोनों चांडाल हैं।

वे दोनों जंगल में चले गए और वहाँ तपस्वी जीवन व्यतीत करने लगे। कुछ ही समय बाद उनकी मृत्यु हो गई और वे नेरंजारा नदी के किनारे एक हिरणी के बच्चे के रूप में पुनर्जन्म लेकर लौटे। जन्म से ही वे हमेशा साथ-साथ रहते थे। एक दिन जब वे भोजन कर चुके थे,

तो एक शिकारी ने उन्हें एक पेड़ के नीचे जुगाली करते और एक-दूसरे से लिपटे हुए देखा। वे बहुत खुश थे, सिर से सिर, नाक से नाक, सींग से सींग मिलाकर। उसने उन पर भाला फेंका और एक ही वार में दोनों को मार डाला।

इसके बाद वे नरबुद्दा नदी के किनारे एक जलपक्षी के बच्चे के रूप में पैदा हुए। वहीं बड़े होकर, भोजन करने के बाद वे एक-दूसरे से सिर मिलाकर और चोंच से चोंच मिलाकर सोते थे। एक पक्षी पकड़ने वाले ने उन्हें देखा, उन्हें एक साथ पकड़ा और दोनों को मार डाला।

इसके बाद ज्ञानी चित्त का जन्म कोसंबी में एक पुजारी के पुत्र के रूप में हुआ; ज्ञानी संभूता का जन्म उत्तरापंचल के राजा के पुत्र के रूप में हुआ। अपने जन्म-दिवसों से ही उन्हें अपने पिछले जन्म याद थे। लेकिन संभूता को सभी जन्म बिना किसी रुकावट के याद नहीं थे, और उन्हें केवल चौथा या चांडाल जन्म ही याद था; जबकि चित्त को अपने चारों जन्म क्रम से याद थे। जब चित्त सोलह वर्ष के हुए, तो वे हिमालय चले गए और एक तपस्वी बन गए, और उन्होंने ध्यान की अवस्था (सम्मोहन) की क्षमता विकसित की, और समाधि के आनंद में लीन रहे। ज्ञानी संभूता ने अपने पिता की मृत्यु के बाद अपने ऊपर छत्र डलवाया, और छत्र डलवाने की रस्म के दिन ही, एक विशाल सभा के बीच, एक औपचारिक भजन गाया और आकांक्षा में दो श्लोक बोले। यह सुनकर, राजपत्नियों और संगीतकारों ने एक साथ कहा, "हमारे राजा का अपना राज्याभिषेक भजन!" समय बीतने के साथ-साथ सभी नागरिक इसे अपने राजा के प्रिय भजन के रूप में गाने लगे। हिमालय में स्थित अपने निवास स्थान पर बुद्धिमान चित्त यह सोच रहे थे कि क्या उनके भाई संभूता ने छत्र धारण किया है या नहीं। जब उन्हें पता चला कि उन्होंने कर लिया है, तो उन्होंने सोचा, "मैं कभी भी किसी युवा शासक को शिक्षा नहीं दे पाऊंगा; लेकिन जब वह वृद्ध हो जाएगा, तो मैं उससे मिलने जाऊंगा और उसे तपस्वी बनने के लिए प्रेरित करूंगा।" पचास वर्षों तक वे नहीं गए, और तब तक राजा के पुत्र-पुत्रियों की संख्या बढ़ चुकी थी; फिर अपनी अलौकिक शक्ति से वे गए और उद्यान में उतरकर सोने की प्रतिमा के समान पूजा-अर्चना के आसन पर बैठ गए। तभी एक लड़का लकड़ियाँ उठा रहा था और ऐसा करते हुए वह वही भजन गा रहा था। बुद्धिमान चित्त ने उसे पास बुलाया; वह प्रणाम करते हुए आया और प्रतीक्षा करने लगा। चित्त ने उससे कहा, "तुम सुबह से यही भजन गा रहे हो; क्या तुम्हें कोई और भजन नहीं आता?" - "जी हाँ, महाराज, मुझे और भी बहुत से भजन आते हैं, लेकिन ये वे श्लोक हैं जो राजा को प्रिय हैं, इसीलिए मैं कोई और भजन नहीं गाता।" - "क्या कोई है जो राजा के भजन के उत्तर में गा सके?" - "नहीं, महाराज।" - "क्या तुम गा सकते हो?" - "हाँ, अगर मुझे सिखाया जाए।" - "अच्छा, जब राजा ये दो श्लोक गाएँ, तो तुम इसे तीसरे श्लोक के रूप में गाओ," और उसने एक भजन सुनाया। "अब," उसने कहा, "जाओ और इसे राजा के सामने गाओ, राजा तुमसे प्रसन्न होंगे और तुम्हारा सम्मान करेंगे।" लड़का जल्दी से अपनी माँ के पास गया और तैयार हुआ; फिर राजा के द्वार पर गया और संदेश भेजा कि एक लड़का उनके भजन के उत्तर में उन्हें भजन सुनाएगा। राजा ने कहा, "उसे आने दो।" जब लड़का अंदर आया और उसने राजा को प्रणाम किया, तो राजा ने कहा, "कहते हैं कि तुम मेरे भजन का उत्तर गाओगे?" "जी महाराज," उसने कहा, "पूरे दरबार को सुनने के लिए बुला लीजिए।" जैसे ही दरबार इकट्ठा हुआ, लड़के ने कहा, "आप अपना भजन गाइए, महाराज, और मैं अपना भजन गाकर उत्तर दूंगा।" राजा ने दो छंद दोहराए:

हर अच्छे कर्म का फल देर-सवेर अवश्य मिलता है।
   कोई भी कर्म व्यर्थ नहीं होता, और कोई भी कार्य निरर्थक नहीं होता।
मैं संभूता को बहुत शक्तिशाली और महान देखता हूँ।
   इस प्रकार उसके सद्गुण उसे पुनः फल प्रदान करते हैं।
हर अच्छे कर्म का फल देर-सवेर अवश्य मिलता है।
   कोई भी कार्य व्यर्थ नहीं होता, और कुछ भी निरर्थक नहीं होता।
कौन जाने, शायद चित्ता भी महान हो।
   और मेरी तरह, उसके दिल ने भी उसे लाभ पहुंचाया है?
इस भजन के अंत में, लड़के ने तीसरा छंद गाया:

हर अच्छे कर्म का फल देर-सवेर अवश्य मिलता है।
   कोई भी कर्म व्यर्थ नहीं होता, और कुछ भी निरर्थक नहीं है।
देखिए, मेरे स्वामी, देखिए चित्त आपके द्वार पर खड़ी है।
   और तुम्हारी ही तरह, उसके दिल ने भी उसे लाभ पहुंचाया है।"
यह सुनकर राजा ने चौथा श्लोक दोहराया:

"तो क्या तुम चित्त हो, या तुमने यह कहानी सुनी है?"
   क्या आपको यह जानकारी उनसे मिली, या किसी और ने दी?
आपका भजन बहुत मधुर है: मुझे कोई डर नहीं है;
   मैं एक गाँव और एक उपहार (*1) देता हूँ।"

फिर लड़के ने पाँचवाँ श्लोक दोहराया:

"मैं चित्ता नहीं हूँ, लेकिन मैंने वह बात सुनी है।"
एक ऋषि ने मुझे यह आदेश दिया था--
जाओ और राजा को उत्तर सुनाओ।
और उसके कृतज्ञ हाथों से पुरस्कृत हो जाओ।"
यह सुनकर राजा ने सोचा, "यह मेरा भाई चित्त ही होगा; अब मैं जाकर उससे मिलूंगा"; फिर उसने अपने आदमियों से इन दो छंदों में यह अनुरोध किया:

"आओ, इन राजसी रथों को जोत दो, जो इतने सुंदर ढंग से गढ़े और बनाए गए हैं:
हाथियों की कमर पर बेल्ट बांधें, और उन्हें चमकीले हार पहनाएं।
"खुशी से ढोल बजाओ, और शंख बजाओ।"
मेरे पास मौजूद सबसे तेज रथों को तैयार करो:
मैं उस आश्रम की ओर प्रस्थान करूंगा।
आज अपने भीतर विराजमान ऋषि को देखने के लिए।"
ऐसा कहकर उन्होंने अपने उत्तम रथ पर सवार होकर शीघ्रता से उद्यान के द्वार की ओर प्रस्थान किया। वहाँ उन्होंने रथ रोककर, ज्ञानी चित्त के समक्ष आदरपूर्वक प्रणाम किया और एक ओर बैठ गए; अत्यंत प्रसन्न होकर उन्होंने आठवें श्लोक का पाठ किया:

"मैंने एक अनमोल भजन गाया, वह बहुत मधुर था।"
मेरे चारों ओर भीड़भाड़ होने के कारण काफी दबाव महसूस हो रहा था;
फिलहाल मैं इस पवित्र ऋषि को प्रणाम करने आया हूँ।
और मेरे हृदय में आनंद और प्रसन्नता व्याप्त है।
बुद्धिमान चित्त को देखते ही प्रसन्न होकर उसने सभी आवश्यक निर्देश दिए, अपने भाई के लिए आसन तैयार करने को कहा और नौवें श्लोक को दोहराया:

बैठ जाइए, और अपने पैरों के लिए ताज़ा पानी लीजिए: यही उचित है।
मेहमानों को भोजन भेंट करना: स्वीकार करें, क्योंकि हम आपको आमंत्रित करते हैं।"
इस मधुर निमंत्रण के बाद, राजा ने एक और छंद दोहराया, जिसमें उसने उसे अपने राज्य का आधा हिस्सा देने की पेशकश की:

"वे उस स्थान को प्रसन्न करें जहाँ तुम निवास करोगे।"
प्रतीक्षा कर रही महिलाओं की भीड़ को आपकी सेवा करने दें;
ओह, मुझे यह दिखाने दो कि मैं तुमसे कितना प्यार करता हूँ।
और हम दोनों यहाँ एक साथ राजा बनें।"
ये शब्द सुनकर बुद्धिमान चित्त ने उन्हें छह श्लोकों में प्रवचन दिया:

"हे राजा, बुरे कर्मों का फल देखकर,
अच्छे कर्मों से मिलने वाले लाभ को देखकर,
मैं खुशी-खुशी कठोर आत्म-संयम का अभ्यास करूंगा।
पुत्र, धन और पशुधन मेरी आत्मा को मोहित नहीं कर सकते।
"इस नश्वर जीवन के दस दशक होते हैं, जो प्रत्येक व्यक्ति के लिए एक दूसरे के बाद आते हैं।"
इस सीमा तक पहुँचने पर, मनुष्य टूटे हुए सरकंडे की तरह तेजी से मुरझा जाता है।
"तो फिर मेरे लिए सुख क्या है, प्रेम क्या है, धन की लालसा क्या है?"
हे राजा, क्या आप जानते हैं कि मैं किन पुत्रों और पुत्रियों को जंजीरों से मुक्त कर चुका हूँ?
"यह सच है, मैं इसे अच्छी तरह जानता हूँ—मृत्यु मुझे नहीं छोड़ेगी।"
और जब मृत्यु ही आनी है, तो प्रेम या धन का क्या अर्थ है?
"सबसे नीच जाति जो दो पैरों पर चलती है"
क्या चांडाल, पृथ्वी पर सबसे नीच मनुष्य हैं?
जब हमारे सभी कर्म फलदायी हुए, तब उचित भाग्य प्राप्त हुआ।
हम दोनों युवा चांडाल के रूप में पैदा हुए थे।

"अवंती भूमि में चांडाल, नेरनजारा द्वारा हिरण,
नर्बुद्दा द्वारा पाले गए ओस्प्रे (मछली बाज), जो अब ब्राह्मण और क्षत्रिय हैं।
इस प्रकार अतीत में अपने साधारण जन्मों का स्पष्टीकरण देने के बाद, उन्होंने इस जन्म में भी सृष्टि की अनित्यता का उपदेश दिया और चार श्लोक सुनाए।

जीवन छोटा है, और मृत्यु ही अंत है।
वृद्ध लोगों के पास छिपने के लिए कोई जगह नहीं होती।
तो हे पांचाल, मैं तुमसे जो करने का अनुरोध करता हूँ, वह यह है:
वे सभी कर्म जिनसे कष्ट होता है, उनसे कृपया बचें।
जीवन छोटा है, और मृत्यु ही अंत है।
वृद्ध लोगों के पास छिपने के लिए कोई जगह नहीं होती।
तो हे पांचाल, मैं तुमसे जो करने का अनुरोध करता हूँ, वह यह है:
वे सभी कर्म जिनसे कष्ट प्राप्त होता है, उनसे कृपया बचें।
जीवन छोटा है, और मृत्यु ही अंत है।
वृद्ध लोगों के पास छिपने के लिए कोई जगह नहीं होती।
तो हे पांचाल, मैं तुमसे जो करने का अनुरोध करता हूँ, वह यह है:
वासना से प्रेरित सभी कार्यों से कृपया बचें।
जीवन छोटा है, और मृत्यु ही अंत है।
बुढ़ापा हमारी ताकत को क्षीण कर देगा, हम इससे भाग नहीं सकते।
तो हे पांचाल, मैं तुमसे जो करने का अनुरोध करता हूँ, वह यह है:
वे सभी कर्म जिनसे निम्नतम नरक की ओर ले जाया जा सकता है, कृपया उनसे बचें।
जब उस महान सत्ता ने बोलना शुरू किया और तीन छंद दोहराए तो राजा प्रसन्न हो उठा:

"हे भाई! जो तुम कहते हो, वह सत्य है।"
आप किसी पवित्र संत की तरह हैं, आपके शब्द मार्गदर्शन करते हैं:
लेकिन मेरी इच्छाओं को त्यागना कठिन है।
मेरे जैसे लोगों के लिए, वे बहुत महान हैं।
"जैसे हाथी कीचड़ में गहरे धंसे हुए हों
वे जमीन देख तो सकते हैं, लेकिन बाहर नहीं निकल सकते:
तो, तीव्र इच्छा की सर्पकाली त्वचा में धंसा हुआ
मैं ब्रदरन के पथ पर खड़ा नहीं हो सकता।
"जैसे पिता या माता अपने बेटे से करते हैं"
अच्छी सलाह दें, और खुशहाल विकास के तरीके बताएं:
मुझे बताएं कि खुशी कैसे प्राप्त की जाती है।
और मुझे यह भी बताइए कि मुझे किस रास्ते से जाना चाहिए।
तब उस महान सत्ता ने उससे कहा:

हे मनुष्यों के स्वामी! आप इसे त्याग नहीं सकते।
ये वे भावनाएँ हैं जो मानव जाति में समान हैं:
अपने लोगों से अन्यायपूर्ण कर न वसूलें।
उन्हें समान और न्यायपूर्ण शासन मिले।
उत्तर, दक्षिण, पूर्व और पश्चिम की ओर दूत भेजो
ब्राह्मणों और तपस्वियों को आमंत्रित करने के लिए:
उन्हें भोजन और पानी उपलब्ध कराएं, आराम करने के लिए जगह दें,
कपड़े और अन्य सभी आवश्यक वस्तुएं।
हम आपको वह भोजन और पेय देंगे जो आपको तृप्त करेगा।
आस्थावान ऋषि और पवित्र ब्राह्मण:
जो देता भी है और शासन भी करता है, और उसी में निहित भी है।
मृत्यु के बाद सभी निर्दोष होकर स्वर्ग जाएंगे।

लेकिन अगर, अपनी नारी जाति से घिरे हुए
  आपको अपनी भावनाओं और इच्छाओं की प्रबलता महसूस होती है।
कविता की इस पंक्ति को ध्यान में रखें
  और इसे सारी भीड़ के बीच में गाओ:
"आसमान से बचने के लिए कोई छत नहीं थी, वह कुत्तों के बीच लेटा हुआ था।"
चलते-चलते उसकी मां उसे दूध पिलाती थी, लेकिन आज वह राजा है।
यह उस महान पुरुष का उपदेश था। फिर उन्होंने कहा, "मैंने तुम्हें अपना उपदेश दे दिया है। अब तुम संन्यासी बनना चाहो या न बनना, यह तुम्हारी इच्छा है; परन्तु मैं अपने कर्मों का फल भुगतूँगा।" फिर वे आकाश में उठे, अपने चरणों की धूल झाड़कर हिमालय की ओर प्रस्थान कर गए। राजा ने यह देखकर अत्यंत व्यथित हुआ; और अपने राज्य को अपने वृहत्तर पुत्र को सौंपकर, उसने अपनी सेना को बुलाया और हिमालय की ओर मुख करके चल पड़ा। जब उस महान पुरुष ने उसके आने का आशय सुना, तो वे अपने ऋषियों के साथ गए और उसका स्वागत किया, उसे संन्यासी जीवन का दीक्षा दी और उसे समाधि की विधि सिखाई। उसने समाधि की विधि का विकास किया। इस प्रकार ये दोनों ब्रह्मा के लोक के लिए नियत हुए।

जब गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने कहा: "इस प्रकार, हे भिक्षुओं, प्राचीन काल के ज्ञानी पुरुष तीन या चार जन्मों तक पक्के मित्र बने रहे।" फिर उन्होंने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उस समय आनंद ज्ञानी संभूत थे, और मैं स्वयं ज्ञानी चित्त था।"

फुटनोट:

(1) शाब्दिक रूप से सौ (पैसे): या (टीकाकार के साथ) "मैं सौ गाँव देता हूँ।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सिवि-जातक**
***स्रोत** : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-499-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 499
शिवी जातक (*1)

“यदि कोई मनुष्य हो,” इत्यादि—यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए अतुलनीय दान के बारे में सुनाई थी। इसका पूर्ण वर्णन आठवीं पुस्तक में सोविरा जन्म (*2) के अंतर्गत दिया गया है। परन्तु यहाँ राजा ने सातवें दिन सभी आवश्यक वस्तुएँ दान कीं और धन्यवाद माँगी; परन्तु गुरु बिना धन्यवाद दिए ही चले गए। नाश्ते के बाद राजा मठ गए और बोले, “महाराज, आपने धन्यवाद क्यों नहीं दिया?” गुरु ने कहा, “महाराज, लोग अपवित्र थे।” उन्होंने “लालची स्वर्ग नहीं जाएँगे (*3)” से शुरू होने वाले श्लोक का पाठ करते हुए धर्ममार्ग का उपदेश देना जारी रखा। राजा प्रसन्न होकर तथागत (बुद्ध) को एक हजार सिक्कों के मूल्य का शिव देश का वस्त्र भेंट करके आदर किया; फिर वे नगर लौट गए।

अगले दिन वे सत्य के हॉल में इस विषय पर चर्चा कर रहे थे: "महोदय, कोसल के राजा ने अतुलनीय उपहार दिया: और इतने से संतुष्ट न होकर, जब दशबल (बुद्ध) ने उन्हें प्रवचन दिया, तो राजा ने उन्हें एक हजार सिक्कों के बराबर मूल्य का शिव वस्त्र भेंट किया! राजा दान देने में कितना लालची है, यह तो निश्चित ही है!" गुरुजी अंदर आए और उन्होंने पूछा कि वे किस विषय पर चर्चा कर रहे हैं: उन्होंने उन्हें बताया। उन्होंने कहा, "भाइयों (भिक्षुओं), बाहरी वस्तुएँ स्वीकार्य हैं, यह सत्य है: परन्तु प्राचीन काल के बुद्धिमान पुरुष, जिन्होंने प्रतिदिन छह लाख सिक्कों तक का दान देकर पूरे भारत को गौरवान्वित कर दिया, वे बाहरी उपहारों से संतुष्ट नहीं थे; और यह कहावत याद रखते हुए कि 'जिसका तुम सम्मान करते हो, वही दो, प्रेम अपने आप उत्पन्न होगा', उन्होंने अपनी आँखें भी निकालकर माँगने वालों को दे दीं।" इन शब्दों के साथ उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब शक्तिशाली राजा शिवी अपने राज्य के अरित्थपुरा नगर में शासन कर रहे थे, तब उनके पुत्र के रूप में एक महान व्यक्तित्व का जन्म हुआ। उनका नाम राजकुमार शिवी रखा गया। बड़े होकर वे तक्षशिला गए और वहाँ अध्ययन किया; फिर लौटकर

उन्होंने अपने ज्ञान का प्रमाण अपने पिता राजा को दिया और उनके द्वारा उन्हें वायसराय नियुक्त किया गया। अपने पिता की मृत्यु के बाद वे स्वयं राजा बने और बुराई के मार्ग को त्यागकर दस राजगुणों का पालन करते हुए धर्मपरायणता से शासन किया। उन्होंने नगर के चारों द्वारों पर, नगर के मध्य में और अपने गृह नगर के द्वार पर छह भिक्षागृह बनवाए। वे प्रतिदिन छह लाख सिक्के दान करते थे। आठवें, चौदहवें और पंद्रहवें दिन वे भिक्षागृह जाकर दान वितरण देखना कभी नहीं भूलते थे।

एक बार पूर्णिमा के दिन, सुबह-सुबह राजकीय छत्र फहराया गया और वह शाही सिंहासन पर बैठकर अपने द्वारा दिए गए उपहारों के बारे में सोचने लगे। उसने मन ही मन सोचा, "बाहरी चीज़ों में से मैंने सब कुछ दे दिया है; परन्तु इस प्रकार का दान मुझे तृप्त नहीं करता। मैं कुछ ऐसा देना चाहता हूँ जो मेरा ही अंश हो। ठीक है, आज जब मैं भिक्षागृह जाऊँगा, तो मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि यदि कोई मुझसे कुछ बाहरी न माँगे, बल्कि मेरे ही अंश का नाम ले, यदि वह मेरे हृदय का ज़िक्र करे, तो मैं भाले से अपनी छाती चीर दूँगा, और जैसे किसी शांत झील से कमल का फूल, डंठल समेत, तोड़ रहा हो, वैसे ही खून से लथपथ अपना हृदय निकालकर उसे दे दूँगा; यदि वह मेरे शरीर के मांस का ज़िक्र करे, तो मैं अपने शरीर से मांस काटकर दे दूँगा, जैसे किसी औज़ार से नक्काशी कर रहा हो; यदि वह मेरे रक्त का ज़िक्र करे, तो मैं उसे अपना रक्त दे दूँगा, उसके मुँह में बूँद डाल दूँगा या एक कटोरा भर दूँगा; या फिर, यदि कोई कहे, मैं अपने घर का काम नहीं कर पा रहा/रही, आओ और घर पर दास का काम कर दो, तो मैं अपने शाही वस्त्र छोड़कर बाहर खड़ा हो जाऊँगा, और स्वयं को दास घोषित करूँगा।" और मैं दासों का काम करूँगा: यदि कोई मेरी आँखें माँगे, तो मैं अपनी आँखें निकाल कर दे दूँगा, जैसे कोई ताड़ के पेड़ का गूदा निकालता है। उसने मन ही मन सोचा:

"अगर कोई ऐसा मानवीय उपहार है जो मैंने कभी नहीं दिया है,"
चाहे मेरी आंखें ही क्यों न हों, मैं इसे अभी दे दूंगा, पूरी दृढ़ता और निडरता के साथ।"
फिर उसने सोलह घड़े सुगंधित जल से स्नान किया और अपने पूरे वैभव से सुसज्जित हुआ, और उत्तम भोजन करने के बाद वह एक शानदार ढंग से सजे हुए हाथी पर सवार होकर भिक्षागृह गया।

सक्का (इंद्र) ने उनके संकल्प को भांपते हुए सोचा, "राजा शिव ने निश्चय किया है कि वे किसी भी आने-जाने वाले को अपनी आंखें दे देंगे जो भी उनसे मांगेगा। क्या आप ऐसा कर पाएंगे या नहीं?" उन्होंने सक्का की परीक्षा लेने का निश्चय किया; और एक बूढ़े और अंधे ब्राह्मण का रूप धारण करके वे एक ऊंचे स्थान पर बैठ गए। जब राजा अपने भिक्षागृह में आए, तो उन्होंने हाथ फैलाकर कहा, "राजा की जय हो!" तब राजा ने अपने हाथी को उनकी ओर दौड़ाया और कहा, "क्या कहते हो, ब्राह्मण?" सक्का (इंद्र) ने उनसे कहा, "हे महान राजा! समस्त संसार में ऐसा कोई स्थान नहीं है जहां आपके उदार हृदय की प्रसिद्धि न फैली हो। मैं अंधा हूं, और आपके पास दो आंखें हैं।" फिर उन्होंने आंख मांगने के लिए पहली पंक्ति दोहराई।

"आँख मांगने के लिए बूढ़ा आदमी दूर से आता है, क्योंकि मेरे पास आँख नहीं है।"
"ओह, कृपया मुझे अपना एक दे दीजिए, फिर हम दोनों के पास एक-एक हो जाएगा।"
जब उस महान प्राणी ने यह सुना, तो उसने सोचा, "अरे वाह, यही तो मैं अपने महल में आने से पहले सोच रहा था! कितना अच्छा संयोग है! आज मेरे दिल की इच्छा पूरी होगी; मैं एक ऐसा उपहार दूंगा जो आज तक किसी ने नहीं दिया।" और उसने दूसरा श्लोक सुनाया:

"तुम्हें यहाँ से आगे अपना रास्ता तय करना किसने सिखाया?"
हे भिक्षु, क्या आप आँख से विनती करेंगे?
मनुष्य का सर्वोच्च गुण यही है,
और कहते हैं कि पुरुषों के लिए इससे अलग होना मुश्किल होता है।
(जैसा कि आसानी से देखा जा सकता है, आगे के छंदों को दो-दो करके पढ़ा जाना चाहिए।)

"देवताओं (देवदूतों) में सुजामपति, वही
यहां मगहावा नाम के पुरुषों के बीच,
उन्होंने मुझे यहाँ से आगे बढ़कर अपना रास्ता खुद तय करना सिखाया।
भीख मांगना, और अपनी बात मनवाने के लिए किसी की नजर पाने की कोशिश करना।
"यह सर्वोच्च उपहार है जिसके लिए मैं अनुरोध करता हूँ (*4)।
मुझे एक नज़र दो! मुझे मना मत करो!
मुझे एक आंख दे दो, जो सर्वोच्च उपहार है।
कहते हैं ना, पुरुषों के लिए इससे अलग होना कितना मुश्किल होता है!
"वह इच्छा जो आपको यहाँ लाई, वह इच्छा जो उत्पन्न हुई"
हे ब्राह्मण, अपनी उस मनोकामना को अपने भीतर साकार करो। लो, मेरी आँखें ले लो।

"तुमने मुझसे एक आंख मांगी थी: देखो, मैं तुम्हें दो आंखें देता हूँ!"
अच्छी दृष्टि के साथ, सभी लोगों की नजरों में रहो;
तो आपकी मनोकामना पूरी हो और अब सच हो जाए।"
राजा ने इतना कहा। लेकिन, यह उचित न समझते हुए कि वह ब्राह्मण की आँखें निकाल कर वहीं दान कर दे, वह ब्राह्मण को अपने साथ अंदर ले आया और राजसिंहासन पर बैठकर शिवका नामक एक सर्जन को बुलवाया। फिर उसने कहा, "मेरी आँख निकाल दो।"

अब पूरे शहर में यह खबर फैल गई कि राजा अपनी आंखें निकालकर एक ब्राह्मण को देना चाहता है। तब सेनापति, सभी अधिकारी और राजा के प्रियतम लोग शहर और हरम से एकत्रित हुए और राजा को उसके इरादे से विमुख करने के लिए तीन श्लोक पढ़े:

"हे मेरे स्वामी, अपनी आँख मत फेरो; हे राजा, हमें मत त्यागो!"
पैसा दो, मोती और मूंगा दो, और कई अनमोल चीजें दो:
"उत्कृष्ट नस्ल के घोड़ों को काठी पहनाओ, रथों को उन पर लाद दो,"
हे राजा, सोने के वस्त्र से सजे हुए सुंदर हाथियों को ले आओ।
"हे राजा! ये हमें दीजिए, ताकि हम सब आपकी रक्षा कर सकें।"
आपके वफादार लोग, अपने रथों और गाड़ियों के साथ चारों ओर तैनात हैं।"
इस पर राजा ने तीन श्लोक पढ़े:

"वह आत्मा जिसने देने की शपथ ली हो, और फिर विश्वासघाती पाई जाए,"
वह अपनी गर्दन को जमीन पर छिपे हुए एक जाल में फंसा लेता है।
"वह आत्मा जिसने देने की शपथ ली हो, और फिर विश्वासघाती पाई जाए,"
पाप से भी अधिक पापी है, और वह यमराज (*5) के घर जाने के लिए बाध्य है।
बिना मांगे कुछ मत दो; न ही वह चीज दो जो वह न मांगे।
अतः ब्राह्मण जो कुछ भी मांगता है, मैं उसे तुरंत दे देता हूँ।
तब दरबारियों ने पूछा, "अपनी आँखें देने में तुम्हारी क्या इच्छा है?" एक श्लोक को दोहराते हुए:

"जीवन, सौंदर्य, आनंद या शक्ति—इनमें से असली पुरस्कार क्या है?"
हे राजा, आपके इस कार्य के पीछे क्या प्रेरणा है?
शिवी भूमि का राजा सर्वोच्च क्यों होना चाहिए?
क्या वह परलोक के लिए अपनी आँखें त्याग देगा?
राजा ने उन्हें एक श्लोक में उत्तर दिया:

"इस प्रकार दान देने में मेरा लक्ष्य यश प्राप्त करना नहीं है।"
न तो पुत्र, न धन-दौलत, न ही शासन करने के लिए राज्य:
यह पवित्र पुरुषों का पुराना और अच्छा तरीका है;
उपहार देने से मेरी आत्मा मोहित हो जाती है।" (*6)
महान सत्ता के शब्दों का दरबारियों ने कोई उत्तर नहीं दिया; इसलिए महान सत्ता ने चिकित्सक शिवका को एक श्लोक में संबोधित किया:

"मेरे मित्र और साथी, शिवका, क्या तुम हो?
जैसा मैं कहूँ वैसा करो—तुम्हारे पास पर्याप्त कौशल है—
मेरी आँखें निकाल लो, क्योंकि यही मेरी इच्छा है।
और अब इन्हें भिखारी के हाथों में दे दो।
लेकिन शिवक ने कहा, "महोदय, सोच-विचार कीजिए! अपनी आँखें देना कोई मामूली बात नहीं है।" - "शिवक, मैंने विचार कर लिया है; देर मत कीजिए, और मेरे सामने ज़्यादा बात मत कीजिए।" फिर उन्होंने सोचा, "मेरे जैसे कुशल सर्जन के लिए राजा की आँखों में तलवार चलाना उचित नहीं है," इसलिए उन्होंने कई औषधीय जड़ी-बूटियों को पीसकर, एक नीले कमल को उस पाउडर से रगड़ा और दाहिनी आँख पर मल दिया: आँख गोल-गोल घूमने लगी और बहुत दर्द हुआ। "महोदय, फिर से सोचिए, मैं इसे ठीक कर सकता हूँ।" - "लगे रहिए, मित्र, देर मत कीजिए।" उन्होंने फिर से पाउडर को रगड़ा और आँख पर मल दिया: आँख सॉकेट से बाहर निकल आई, दर्द पहले से भी ज़्यादा बढ़ गया। "महोदय, फिर से सोचिए, मैं इसे अभी भी ठीक कर सकता हूँ।" - "जल्दी कीजिए!" तीसरी बार उन्होंने एक तेज़ पाउडर को मलकर लगाया: औषधि के प्रभाव से आँख गोल-गोल घूमने लगी, सॉकेट से बाहर आ गई और नस के सिरे पर लटकने लगी। "पुनः विचार कीजिए, महाराज, मैं इसे फिर से ठीक कर सकता हूँ।" - "जल्दी कीजिए।" पीड़ा असहनीय थी, खून बह रहा था,

राजा के वस्त्र खून से सने हुए थे। राजा की स्त्रियाँ और दरबारी उनके चरणों में गिर पड़े और रोने लगे, "हे महाराज, अपनी आँखें मत चढ़ाइए!" वे ज़ोर-ज़ोर से रोते और विलाप करते रहे। राजा ने पीड़ा सहन की और कहा, "मेरे मित्र, जल्दी कीजिए।" "बहुत अच्छा, महाराज," चिकित्सक ने कहा; और अपने बाएँ हाथ से आँख की पुतली को पकड़कर, अपने दाहिने हाथ में चाकू लेकर, नस को काटकर आँख को महाराज के हाथ में रख दिया (*8)। उन्होंने अपनी बाईं आँख से दाहिनी आँख को देखते हुए और पीड़ा सहन करते हुए कहा, "ब्राह्मण, इधर आइए।" जब ब्राह्मण पास आया, तो उन्होंने आगे कहा - "अनंत ज्ञान की आँख इस आँख से सौ गुना, बल्कि हज़ार गुना अधिक प्रिय है: यही मेरे इस कार्य का कारण है," और उन्होंने वह आँख ब्राह्मण को दे दी, जिसने उसे उठाकर अपनी आँख में लगा लिया। वहाँ वह आँख उनकी शक्ति से खिले हुए नीले कमल की तरह स्थिर रही। जब उस महान प्राणी ने अपनी बाईं आँख से अपने सिर में उस आँख को देखा, तो वह चिल्लाया—"आह, मेरी यह आँख का उपहार कितना अच्छा है!" और अपने भीतर उत्पन्न आनंद से भर कर उसने दूसरी आँख भी दे दी। इंद्र ने उसे भी अपनी आँख के स्थान पर स्थापित किया और राजा के महल से, फिर शहर से, सभी की निगाहें अपने ऊपर लिए हुए, देवताओं (देवदूतों) के लोक में चला गया।

गुरु ने इसकी व्याख्या करते हुए डेढ़ श्लोक दोहराया:

"इस प्रकार सिवी ने शिवका को प्रेरित किया, और उसने अपनी इच्छा पूरी की।"
उसने राजा की आंखें निकाल लीं और उन्हें ब्राह्मण को सौंप दिया:
और अब ब्राह्मण को आंखें मिल गईं, और राजा अंधा हो गया।
कुछ ही समय में राजा की आँखें बढ़ने लगीं; जैसे-जैसे वे बढ़ती गईं और छेदों के ऊपरी भाग तक पहुँचने से पहले ही, ऊन के गोले की तरह मांस का एक गोला अंदर उठ खड़ा हुआ और उस खाली जगह को भर दिया; वे गुड़िया की आँखों जैसी लग रही थीं, लेकिन दर्द थम गया। महान व्यक्ति कुछ दिनों तक महल में ही रहे। फिर उन्होंने सोचा, "एक अंधे व्यक्ति का शासन से क्या लेना-देना? मैं अपना राज्य दरबारियों को सौंप दूँगा, और अपने उद्यान में जाकर तपस्वी बन जाऊँगा, और एक पवित्र व्यक्ति की तरह जीवन व्यतीत करूँगा।" उन्होंने अपने दरबारियों को बुलाया और उन्हें अपनी योजना बताई। उन्होंने कहा, "एक व्यक्ति मेरे साथ रहेगा, मेरा चेहरा धोने आदि के लिए, और जो भी उचित हो, वह सब करने के लिए, और तुम्हें मुझे विश्राम स्थलों तक ले जाने के लिए एक रस्सी बाँधनी होगी।" फिर उन्होंने अपने सारथी को बुलाया और उसे रथ तैयार करने को कहा। लेकिन दरबारियों ने उन्हें रथ में नहीं बैठने दिया; वे उन्हें एक सोने की गाड़ी में (पुरुषों द्वारा उठाई गई) बाहर लाए और झील के किनारे उतार दिया, और फिर चारों ओर उनकी रक्षा करते हुए लौट गए। राजा रथ में बैठे-बैठे अपने उपहार के बारे में सोच रहे थे।

उसी क्षण इंद्र का सिंहासन गर्म हो गया; और उन्होंने सोच-विचार करके इसका कारण समझ लिया। उन्होंने सोचा, "मैं राजा को वरदान दूंगा और उनकी आँख ठीक कर दूंगा।" इसलिए वे उस स्थान पर आए; और उस महान सत्ता से कुछ ही दूरी पर इधर-उधर, इधर-उधर चलने लगे।

इसे समझाने के लिए गुरु ने निम्नलिखित श्लोकों का पाठ किया:

कुछ दिन बीत गए; आंखें ठीक होने लगीं और आवाज आने लगी:
तब सिवी के समर्थक राजा ने अपने सारथी को बुलवाया।
"हे सारथी, रथ तैयार करो; फिर मुझे यह बात बता दो।"
मैं पार्क, जंगल और झील पर जाता हूँ जहाँ लिली के फूल बहुतायत में उगे होते हैं।"
"उसने उसे नदी किनारे एक गाड़ी में बिठाया, और यहाँ
देवताओं (देवदूतों) के राजा, महान सक्का (इंद्र), सुजामपति प्रकट हुए।
“वह कौन है?” महान प्राणी ने पदचिन्हों की आवाज सुनकर पुकारा। सक्का (इंद्र) ने एक श्लोक दोहराया:

मैं सक्का (इंद्र), देवताओं (देवदूतों) का राजा हूँ; मैं आपसे मिलने आया हूँ।
हे राजमहिम, आप वरदान चुन लें! आपकी जो भी इच्छा हो।
राजा ने एक और छंद के साथ उत्तर दिया:

"मैं अपने पीछे अनंत धन-दौलत, शक्ति और खजाना छोड़ आया हूँ।"
हे सक्का (इंद्र), मुझे मृत्यु ही चाहिए, और कुछ नहीं: क्योंकि मैं अंधा हूँ।
तब इंद्र ने कहा, "हे राजा शिवी, क्या तुम मृत्यु की याचना इसलिए कर रहे हो क्योंकि तुम मरना चाहते हो, या इसलिए कि तुम अंधे हो?" - "क्योंकि मैं अंधा हूँ, महाराज।" - "यह वरदान अपने आप में सब कुछ नहीं है, महाराज, यह भविष्य को ध्यान में रखकर दिया गया है। फिर भी इस दृश्य संसार से संबंधित एक उद्देश्य है। अब तुमसे एक आँख माँगी गई थी, और तुमने दो आँखें दे दीं; इसे सत्य का कार्य बनाओ।" फिर उन्होंने एक श्लोक शुरू किया:

हे योद्धा, दो पैरों वाले जीवों के स्वामी, सच बोलो:
यदि तुम सच बोलोगे, तो तुम्हारी आंख तुम्हें वापस मिल जाएगी।
यह सुनकर उस महान प्राणी ने उत्तर दिया, "यदि तुम मुझे आँख देना चाहते हो, सक्का (इंद्र), तो कोई और उपाय मत करो, बल्कि मेरे दान के फलस्वरूप ही मेरी आँख तुम्हें वापस मिल जाए।" सक्का (इंद्र) ने कहा, "यद्यपि लोग मुझे सक्का (इंद्र), देवताओं का राजा, महाराज, कहते हैं, फिर भी मैं किसी और को आँख नहीं दे सकता; केवल आपके द्वारा दिए गए दान के फलस्वरूप ही, और किसी अन्य कारण से नहीं, तुम्हारी आँख तुम्हें वापस मिल जाएगी।" तब दूसरे ने एक श्लोक दोहराया, जिसमें उसने कहा कि उसका दान उचित था।

चाहे किसी भी प्रकार का, किसी भी किस्म का वर आए,
जो कोई भी मुझसे कुछ मांगने आता है, वह मेरे दिल के बहुत करीब होता है।
यदि मेरी ये सच्ची बातें सच हैं, तो अब मेरी आंख प्रकट हो!
जैसे ही उसने ये शब्द कहे, उसकी एक आँख सॉकेट में बड़ी हो गई। फिर उसने दूसरी आँख को वापस लाने के लिए कुछ छंद दोहराए:

"एक ब्राह्मण मुझसे मिलने आया, मेरी एक आंख को पाने की लालसा में।"
मैंने वे दोनों वस्तुएँ उस ब्राह्मण भिक्षु को दे दीं।
"उस कार्य से कहीं अधिक आनंद और प्रसन्नता प्राप्त हुई।"
यदि मेरी ये सच्ची बातें सच हैं, तो मेरी दूसरी आंख भी ठीक हो जाए!
उसी क्षण उनकी दूसरी आँख प्रकट हुई। परन्तु उनकी ये आँखें न तो प्राकृतिक थीं और न ही दिव्य। हम जानते हैं कि ब्राह्मण के रूप में सक्का (इंद्र) द्वारा दी गई आँख प्राकृतिक नहीं हो सकती; दूसरी ओर, किसी भी क्षतिग्रस्त वस्तु में दिव्य आँख उत्पन्न नहीं हो सकती। परन्तु इन आँखों को परम सत्य की आँखें कहा जाता है। जिस समय ये आँखें प्रकट हुईं, सक्का (इंद्र) की शक्ति से समस्त शाही सेवक एकत्रित हुए; और सक्का (इंद्र) भीड़ के बीच खड़े होकर दो श्लोकों में स्तुतिगान किया:

"हे सिवी भूमि के पितामह राजा, आपके ये पवित्र भजन..."
मैंने आपके लिए उपहार के रूप में ये दिव्य आँखें प्राप्त की हैं।
"चट्टानों और दीवारों के बीच से, पहाड़ियों और घाटियों के ऊपर से, चाहे कितनी भी बाधा क्यों न हो,"
तुम्हारी आँखें चारों ओर सौ मील (x 4.23 किमी) तक देख सकेंगी।
इन श्लोकों का उच्चारण करने के बाद, लोगों के सामने वायु में स्थिर होकर, महान सत्ता को सतर्क रहने की अंतिम सलाह देते हुए, सक्का (इंद्र) देवताओं (देवदूतों) के लोक में लौट गए। और महान सत्ता, अपने सेवकों के समूह से घिरे हुए, भव्यता के साथ नगर में लौटे और चंदाका नामक महल में प्रवेश किया, जिसे मोर की आँख कहा जाता है। उनकी आँखें पुनः प्राप्त होने की खबर शिवी राज्य में फैल गई। सभी लोग अपने हाथों में उपहार लेकर उन्हें देखने के लिए एकत्रित हुए। महान सत्ता ने सोचा, "अब ये सभी लोग एकत्रित हो गए हैं, मैं अपने दिए हुए उपहार की प्रशंसा करूँ।" उन्होंने महल के द्वार पर एक विशाल मंडप बनवाया, जहाँ वे राजसिंहासन पर विराजमान हुए, उनके ऊपर सफेद छत्र फैला हुआ था। फिर शहर में ढोल बजाया गया, ताकि सभी व्यापारिक संघ एकत्रित हो सकें (*9)। फिर उन्होंने कहा, "हे शिवी गण! अब तुमने ये दिव्य आँखें देख ली हैं, बिना कुछ दान किए कभी भोजन मत करो!" और उन्होंने धर्म मार्ग का उपदेश देते हुए चार श्लोक दोहराए:

"अगर उससे देने के लिए कहा जाए तो कौन मना करेगा?"
भले ही यह उसका सबसे अच्छा और पसंदीदा पुरस्कार हो?
सिवी के लोग सभा में उमड़ पड़े, हो!
इधर आओ, मेरी आँखों से ईश्वर का दिया हुआ उपहार देखो!
"चट्टानों और दीवारों के बीच से, पहाड़ियों और घाटियों के ऊपर से, चाहे कितनी भी बाधा क्यों न हो,"
मेरी ये आंखें हर दिशा में सौ लीग (x 4.23 किमी) तक देख सकती हैं।
सभी नश्वर मनुष्यों में आत्म-बलिदान की भावना होती है।
इन सब चीजों में सबसे उत्तम है:
मैंने अपनी एक नश्वर आँख का बलिदान दिया; और उसे देते हुए,
मुझे दिव्य दृष्टि प्राप्त हुई।
"देखो, लोगों! देखो, खाने से पहले दूसरों को भी हिस्सा दो।"
यह सब आपकी पूरी इच्छा और सावधानी के साथ किया गया है।
तुम निर्दोष होकर स्वर्ग जाओगे।

इन चार आयतों में उन्होंने धर्म का मार्ग सिखाया; और उसके बाद, हर पखवाड़े, पवित्र दिन पर, यानी हर पंद्रहवें दिन, वे इन्हीं आयतों में निरंतर रूप से लोगों की एक बड़ी सभा को धर्म का मार्ग सिखाते थे। यह सुनकर लोग दान देते और अच्छे कर्म करते थे, और स्वर्ग चले जाते थे।

जब गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने कहा, "इस प्रकार, हे भिक्षुओं, प्राचीन काल के बुद्धिमान पुरुषों ने किसी भी ऐसे व्यक्ति को, जो बाहरी उपहारों से संतुष्ट नहीं होता था, अपने सिर से निकालकर अपनी आँखें तक दे दीं।" फिर उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "उस समय आनंद चिकित्सक शिवक थे, अनरुद्ध इंद्र थे, बुद्ध के अनुयायी आम लोग थे, और मैं स्वयं राजा शिवी था।"

फुटनोट:

(1) मिलिंडा-पन्हा देखें, iv. मैं। 42

(2) यह अदित्त जातक, क्रमांक 424 है

(3)धम्मपद, 177.

(4) वैनिब्बाको को डिट्टोग्राफी द्वारा लिखा गया प्रतीत होता है।

(5) विद्वान इसे नरक के रूप में समझाते हैं।

(6) विद्वान आगे कहते हैं: "सर्वोच्च बुद्ध ने धर्म के सेनापति सारिपुत्र को चरिया-पिटक की व्याख्या करते हुए यह स्पष्ट किया कि अनंत ज्ञान दोनों आँखों से भी अधिक प्रिय है।"

(7)लद्धा त्वम् को दो शब्दों के रूप में पढ़ना।

(8) ऐसा प्रतीत होता है कि यह दृश्य भरहुत के स्तूप पर चित्रित है।

(9) यह सख्ती से -सेनिओ होना चाहिए: शायद सभी अधिकारी या सैनिक

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सिरिमंदा-जातक**
स्रोत : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित

पिछला <<<<-----||-500-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 500
सिरिमंडा-जातक

"ज्ञान से परिपूर्ण," इत्यादि--सिरीमांडा की यह समस्या महा-उम्मग्ग जातक संख्या 546 में विस्तार से दी जाएगी।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **रोहंता-मिगा-जातक**
स्रोत : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित

पिछला <<<<-----||-501-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 501
रोहंता-मिगा-जातक

"मृत्यु के भय से," इत्यादि—यह कथा गुरु ने बाँस के वन में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें पूज्य आनंद के प्राण त्यागने का वर्णन है। इस संन्यास का वर्णन पुस्तक 21 में, चुल्ला-हंस जन्म (*1) और धनपाल पर विजय के अंतर्गत किया जाएगा। जब इस पूज्य व्यक्ति ने गुरु के लिए प्राण त्यागे, तो सत्य के हॉल में कानाफूसी होने लगी: "महोदय, पूज्य आनंद ने धार्मिक (तपस्वी) साधना के विस्तृत ज्ञान को प्राप्त कर दशबल (बुद्ध) के लिए प्राण त्यागे।" गुरु अंदर आए और उनसे पूछा कि वे क्या बातें कर रहे हैं। उन्होंने बताया। गुरु ने कहा, "भाइयों (भिक्षुओं), यह पहली बार नहीं है जब उन्होंने मेरे लिए प्राण त्यागे हैं; वे पहले भी ऐसा कर चुके हैं।" फिर उन्होंने उन्हें अतीत की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, जब ब्रह्मदत्त बनारस के राजा थे, उनकी प्रमुख पत्नी का नाम खेमा था। उसी समय हिमालय क्षेत्र में बोधिसत्व का जन्म एक हिरण के रूप में हुआ था: वे सुनहरे रंग के और सुंदर थे, और उनके छोटे भाई, चित्तमिगा, या चितकबरा हिरण, भी सुनहरे रंग के थे, और उनकी छोटी बहन सुताना भी सुनहरे रंग की थीं। उस महान पुरुष का नाम रोहंत था, और वे हिरणों के राजा थे। दो पर्वत श्रृंखलाओं को पार करते हुए, वे तीसरी श्रृंखला में रोहंत झील के किनारे रहते थे, जो अस्सी हजार हिरणों के झुंड से घिरी हुई थी। वे अपने माता-पिता का भरण-पोषण करते थे, जो बूढ़े और अंधे थे।

बनारस के पास शिकारियों के एक गाँव में रहने वाला एक शिकारी हिमालय आया और उसने उस महान प्राणी के दर्शन किए। वह अपने गाँव लौटा और अपनी मृत्युशय्या पर अपने बेटे से कहा, "मेरे बेटे, हमारे शिकारगाह के एक हिस्से में एक सुनहरा हिरण है; यदि राजा पूछे तो तुम उसे इसके बारे में बता देना।"

एक दिन सुबह-सुबह रानी खेमा ने एक सपना देखा। सपने में एक सुनहरे रंग का हिरण सोने के आसन पर बैठा था और मीठी आवाज़ में, मानो किसी सुनहरी घंटी की झंकार जैसी, रानी को धर्म के मार्ग पर उपदेश दे रहा था। रानी बड़े आनंद से उसका उपदेश सुन रही थी, लेकिन उपदेश समाप्त होने से पहले ही हिरण उठकर चला गया। रानी जाग उठी और चिल्लाई, "हिरण को पकड़ो!" उसकी चीख सुनकर सेवक हंसने लगे। "घर पूरी तरह बंद है, दरवाजे-खिड़कियां बंद हैं; हवा का एक झोंका भी अंदर नहीं आ सकता, और ऐसे समय में मेरी मालकिन हिरण को पकड़ने के लिए पुकार रही हैं!" तब तक वह समझ चुकी थी कि यह एक सपना था। लेकिन उसने मन ही मन कहा, "अगर मैं कहूँ कि यह सपना है, तो राजा इस पर ध्यान नहीं देगा; लेकिन अगर मैं कहूँ कि यह मेरी पत्नी की इच्छा है, तो वह पूरी तत्परता से मेरी बात सुनेगा। मैं सुनहरे हिरण का उपदेश ज़रूर सुनूँगी!" फिर वह बीमार होने का नाटक करते हुए लेट गई। राजा अंदर आया और बोला, "मेरी रानी को क्या हुआ है?" रानी ने कहा, "हे महाराज, बस मेरी स्वाभाविक इच्छा है।" "तुम क्या चाहती हो?" "मैं एक धर्मात्मा सुनहरे हिरण का प्रवचन सुनना चाहती हूँ।" "हे महारानी, तुम्हारी इच्छा तो है ही नहीं: सुनहरा हिरण जैसी कोई चीज नहीं होती।" रानी ने कहा, "अगर मुझे वह नहीं मिला, तो मैं यहीं मर जाऊँगी।" उसने राजा की ओर पीठ फेर ली और वहीं लेट गई। राजा ने कहा, "अगर ऐसा कोई हिरण है, तो उसे पकड़ लिया जाएगा।" फिर उसने अपने दरबारियों और ब्राह्मणों से, ठीक उसी तरह जैसे मयूर जन्म (*2) में बताया गया है, पूछा कि क्या सुनहरे हिरण जैसी कोई चीज होती है। जब उसे पता चला कि सुनहरे हिरण होते हैं, तो उसने शिकारियों को बुलाया और पूछा, "तुममें से किसने ऐसा प्राणी देखा या सुना है?" जिस शिकारी की हमने बात की थी, उसके बेटे ने सुनी-सुनाई कहानी सुनाई। "मेरे सेवक," राजा ने कहा, "जब तुम मुझे यह हिरण लाकर दोगे, तो मैं तुम्हें भरपूर इनाम दूंगा; जाओ और इसे यहाँ ले आओ।" उन्होंने उसे खर्च के लिए पैसे दिए और उसे विदा कर दिया। उस व्यक्ति ने कहा, "चिंता मत करो: अगर मैं हिरण नहीं ला सका तो उसकी खाल लाऊंगा; अगर वह भी नहीं तो उसके बाल लाऊंगा।" फिर वह व्यक्ति घर लौटा और राजा के पैसे अपने परिवार को दे दिए। फिर वह बाहर गया और उसने शाही हिरण को देखा। "मैं उसे पकड़ने के लिए अपना जाल कहाँ लगाऊं?" उसने पानी पीने की जगह पर अपना मौका देखा। उसने चमड़े की पट्टियों से एक मजबूत रस्सी बनाई और उसे एक खंभे के साथ उस जगह पर गाड़ दिया जहाँ महान प्राणी पानी पीने के लिए उतरता था।

अगले दिन, भोजन की तलाश में निकले महापुरुष अस्सी हज़ार हिरणों के साथ हमेशा की तरह घाट पर पानी पीने आए। जैसे ही वे नीचे उतर रहे थे, वे फंदे में फंस गए। तब उन्होंने सोचा, "अगर मैं पकड़े जाने की चीख (*4) मारूँ, तो मेरे सारे हिरण बिना पानी पिए ही डर के मारे भाग जाएँगे।" हालाँकि वे फंदे के अंत में जकड़े हुए थे, फिर भी वे पीने का नाटक करते रहे, मानो वे आज़ाद हों। जब अस्सी हज़ार हिरण पानी पीकर पानी से बाहर आ गए, तो उन्होंने फंदे को तोड़ने के लिए तीन बार झटका दिया। पहली बार में उनकी त्वचा कट गई, दूसरी बार में मांस में कट लगा, और तीसरी बार में उन्होंने एक नस को इतना खींचा कि फंदा हड्डी को छू गया। फिर, फंदा तोड़ने में असमर्थ होकर, उन्होंने पकड़े जाने की चीख मारी: हिरणों का सारा झुंड तीन समूहों में डर के मारे भाग गया। चित्तमिगा को तीनों समूहों में से किसी में भी महापुरुष दिखाई नहीं दिया: "यह खतरा," उन्होंने सोचा, "जो हम पर आया है, वह मेरे भाई पर आ पड़ा है।" फिर लौटकर उसने उसे वहाँ फँसा हुआ पाया। उस महान सत्ता ने उसे देखते ही कहा, "भाई, वहाँ मत खड़े रहो, यहाँ खतरा है!" फिर उसे भागने के लिए उकसाते हुए उसने पहला श्लोक दोहराया:

"हे चित्तक, मृत्यु के भय से वे जीव-जंतुओं के झुंड भाग जाते हैं:
तुम उनके साथ जाओ, और देर मत करो, क्योंकि वे तुम्हारे साथ ही रहेंगे।
इसके बाद आने वाले तीन छंदों को दोनों बारी-बारी से पढ़ते हैं:

"नहीं, नहीं, रोहंता, मैं नहीं जाऊँगा; मेरा दिल मुझे पास खींच लाया है।"
मैं अपनी जान कुर्बान करने को तैयार हूं, मैं तुम्हें यहां नहीं छोडूंगा।"
"तब अंधे होकर, उनकी देखभाल करने वाला कोई न होने के कारण, हमारे माता-पिता (*5) दोनों को मरना होगा:
जाओ, और उन्हें अपने साथ रहने दो: पास में मत ठहरो!
"नहीं, नहीं, रोहंता, मैं नहीं जाऊँगा; मेरा दिल मुझे पास खींच लाया है।"
मैं अपनी जान कुर्बान करने को तैयार हूं, मैं तुम्हें यहां नहीं छोडूंगा।"
वह दाईं ओर बोधिसत्व का समर्थन करते हुए खड़ा हो गया और उनका उत्साहवर्धन करने लगा।

युवा हिरणी सुताना भी हिरणों के बीच दौड़ती रही, लेकिन उसे अपने भाई कहीं नहीं मिले। उसने सोचा, "यह खतरा मेरे भाइयों पर आ पड़ा होगा।" वह वापस मुड़ी और उनके पास आई; और जैसे ही उस महान सत्ता ने उसे आते देखा, उसने पाँचवाँ श्लोक दोहराया:

"हे डरपोक हिरणी, भाग जा; लोहे के फंदे में मैं फंसा हुआ हूँ।"
बाकियों के साथ जाओ, देर मत करो, वे तुम्हारे साथ रहेंगे।"
अगले तीन छंदों को पहले की तरह बारी-बारी से पढ़ा जाता है:

"नहीं, नहीं, रोहंता, मैं नहीं जाऊँगा; मेरा दिल मुझे पास खींच लाया है।"
मैं अपनी जान कुर्बान करने को तैयार हूं, मैं तुम्हें यहां नहीं छोडूंगा।"
"फिर अंधे होकर, उनकी देखभाल करने वाला कोई न होने के कारण, हमारे माता-पिता दोनों को मरना होगा:
जाओ, और उन्हें अपने साथ रहने दो: पास में मत ठहरो!
"नहीं, नहीं, रोहंता, मैं नहीं जाऊँगा; मेरा दिल मुझे पास खींच लाया है।"
मैं अपनी जान गंवा दूंगा, लेकिन तुम्हें कभी भी यहाँ फँसाकर कैद नहीं होने दूंगा।"
इसलिए उसने भी आज्ञा मानने से इनकार कर दिया; और उसके बाईं ओर खड़ी होकर उसे सांत्वना देने लगी।

अब शिकारी ने हिरण को भागते हुए देखा और पकड़े जाने की आवाज़ सुनी। "ज़रूर झुंड का राजा पकड़ा गया है!" उसने कहा; और अपनी कमर कस कर, उसे मृत्यु देने के लिए भाला उठाया और तेज़ी से दौड़ पड़ा। जैसे ही उस महान सत्ता ने उसे आते देखा, उसने नौवाँ श्लोक दोहराया:

"क्रोधित शिकारी, हाथों में हथियार लिए, उसे पास आते हुए देखता है!"
और वह आज हमें यहीं तीर या भाले से मार डालेगा।
चित्त ने उस आदमी को देखकर भी भागने की कोशिश नहीं की। लेकिन सूतना, स्थिर खड़े रहने की शक्ति न होने के कारण, मृत्यु के भय से थोड़ी दूर भागी। फिर यह सोचकर कि "यदि मैं अपने दोनों भाइयों को छोड़कर भाग जाऊँ तो कहाँ जाऊँगी?" वह अपने प्राण त्यागकर (*6) मृत्यु का भाव लिए वापस लौट आई और अपने भाई के बाईं ओर खड़ी हो गई।

इसे समझाने के लिए, गुरु ने दसवां श्लोक सुनाया:

"घबराहट और डर के मारे वह कोमल हिरणी थोड़ी दूर तक भाग गई।"
फिर उसने वह काम किया जो करना सबसे कठिन था, क्योंकि वह मरने के लिए लौट आई।
जब शिकारी वहाँ पहुँचा, तो उसने इन तीनों प्राणियों को एक साथ खड़े देखा। उसके मन में एक दयनीय विचार आया, क्योंकि उसने अनुमान लगाया कि वे एक ही गर्भ से जन्मे भाई-बहन हैं। उसने सोचा, "केवल झुंड का राजा ही फँसा है; बाकी दोनों सम्मान के बंधन में बंधे हैं। वे उसके लिए किस परिवार के सदस्य हो सकते हैं?" और उसने यह प्रश्न इस प्रकार पूछा:

"ये हिरण कौन हैं जो कैदी की प्रतीक्षा कर रहे हैं, जबकि वह स्वतंत्र है?"
और न ही मैं अपनी जान की खातिर उसे यहाँ छोड़कर भाग जाऊँगी?
तब बोधिसत्व ने उत्तर दिया:

"मेरे भाई और मेरी बहन, ये दोनों एक ही माँ की संतान हैं:
और न ही मैं अपनी जान की खातिर यहां उदास होकर जाऊंगा।"

इन शब्दों ने उसके हृदय को अत्यंत कोमल बना दिया। चित्त, वह राजसी हिरण, ने देखा कि उसका हृदय कोमल हो गया है, तो उसने कहा, "मित्र शिकारी, यह मत समझो कि यह प्राणी केवल एक हिरण है। यह अस्सी (20) हजार हिरणों का राजा है, सदाचारी जीवन जीने वाला, सभी प्राणियों के प्रति दयालु, महान बुद्धि वाला है; यह अपने माता-पिता का भरण-पोषण करता है, जो अब अंधे और बूढ़े हैं। यदि तुम इस धर्मात्मा प्राणी को मारोगे, तो उसे मारकर तुम माता-पिता, मेरी बहन और मुझे, हम पाँचों को मारोगे; परन्तु यदि तुम मेरे भाई को जीवनदान दोगे, तो तुम हम पाँचों को जीवनदान दोगे।" फिर उसने एक श्लोक दोहराया:

"अंधे हो जाने के कारण, उनकी देखभाल करने वाला कोई न होने के कारण, वे दोनों इसी तरह मर जाएंगे।"
हे प्रभु, इन पाँचों को जीवनदान दे और मेरे भाई को जाने दे!
जब शिकारी ने यह धार्मिक प्रवचन सुना, तो वह मन ही मन प्रसन्न हुआ। "भयभीत न हों, मेरे स्वामी," उसने कहा और अगली पंक्ति दोहराई:

"ऐसा ही हो: देखो, मैं अब माता-पिता का सहारा देने वाले हिरण को मुक्त कर रहा हूँ:
जब उसके माता-पिता उसे सुरक्षित पाएंगे तो वे खुशी से जयजयकार करेंगे।
यह कहते हुए उसने सोचा: "मुझे राजा और उसके सम्मान से क्या लेना-देना? अगर मैंने इस राजसी हिरण को चोट पहुँचाई, तो या तो धरती फटकर मुझे निगल जाएगी, या बिजली गिरकर मुझे मार डालेगी। मैं इसे जाने दूँगा।" अतः उस महान सत्ता के पास पहुँचकर उसने खंभा नीचे गिराया और चमड़े की डोरी काट दी; फिर उसने हिरण को गले लगाया और उसे पानी के पास लिटाया, कोमलता से उसके फंदे को खोला, नसों के सिरों को जोड़ा, घाव के किनारों को मिलाया और त्वचा के किनारों को भी, पानी से खून धोया और दयापूर्वक बार-बार उसे सहलाया। उसके प्रेम और उस महान सत्ता की पूर्णता से सब कुछ फिर से ठीक हो गया, नसें, मांस और त्वचा: पैर पर खाल और बाल आ गए: कोई अनुमान भी नहीं लगा सकता था कि उसे कहाँ चोट लगी थी। वह महान सत्ता वहाँ प्रसन्नता से खड़ी थी। चित्त ने उसे देखा और प्रसन्न हुआ, और इस श्लोक में शिकारी को धन्यवाद दिया:

"हंटर, अब खुश रहो, और तुम्हारा परिवार भी खुश रहे।"
मुझे इस विशाल हिरण को मुक्त देखकर खुशी हो रही है।"
अब उस महान प्राणी ने सोचा, "क्या इस शिकारी ने मुझे अपनी मर्जी से फंसाया है, या किसी और के कहने पर?" और उसने अपने पकड़े जाने का कारण पूछा। शिकारी ने कहा, "महाराज, मेरा आपसे कोई लेना-देना नहीं है; लेकिन राजा की पत्नी खेमा आपसे धर्म के प्रवचन सुनना चाहती हैं; इसलिए मैंने राजा के कहने पर आपको फंसाया।" - "अगर ऐसा है, तो मेरे मित्र, आपने मुझे मुक्त करके बड़ा साहस दिखाया है। आइए, मुझे राजा के पास ले चलें, और मैं रानी के सामने प्रवचन दूंगा।" - "सचमुच, महाराज, राजा क्रूर होते हैं। कौन जाने इसका क्या परिणाम होगा? राजा मुझे जो भी सम्मान दें, मुझे उसकी परवाह नहीं: आप जहां चाहें जाएं।" लेकिन फिर उस महान प्राणी ने सोचा कि उसे मुक्त करना एक साहसिक कार्य था; उसे वादा किया गया सम्मान पाने का मौका देना ही होगा। इसलिए उसने कहा, "मित्र, अपने हाथ से मेरी पीठ खुजलाओ।" उसने ऐसा किया; उसका हाथ सुनहरे बालों से ढक गया। "हे स्वामी, मैं इन बालों का क्या करूँ?" — "मेरे मित्र, इन्हें ले लो, राजा और रानी को दिखाओ, उन्हें बताओ कि ये उस सुनहरे हिरण के बाल हैं; मेरी जगह ले लो और उन्हें उन श्लोकों का पाठ करो जिन्हें मैं दोहराऊँगा: जब वह तुम्हें सुनेगी, तो उसकी जिज्ञासा शांत हो जाएगी।" "हे राजा, विधि का पाठ करो!" उस व्यक्ति ने कहा; और दूसरे ने उसे पवित्र जीवन के दस श्लोक सिखाए, पाँच सद्गुणों का वर्णन किया और उसे सतर्क रहने की चेतावनी देकर विदा किया। शिकारी ने उस महान व्यक्ति के साथ वैसा ही व्यवहार किया जैसा कोई गुरु के साथ करता है: उसने तीन बार उनके चारों ओर विधिपूर्वक परिक्रमा की, चारों प्रकार के प्रणाम किए और बालों को कमल के पत्ते में लपेटकर चला गया। तीनों जानवर थोड़ी दूर तक उसके साथ गए, फिर भोजन और पानी पीने के बाद अपने माता-पिता के पास लौट गए।

माता-पिता ने उससे पूछा: "रोहंता, मेरे बेटे, हमने सुना था कि तुम पकड़े गए थे, और तुम कैसे छूट गए?" उन्होंने इस प्रश्न को एक छंद में पिरोया:

"जब जीवन लगभग समाप्त हो चुका था, तब आपने अपनी स्वतंत्रता कैसे प्राप्त की?"
मेरे बेटे, शिकारी ने तुम्हें उस खतरनाक जाल से कैसे मुक्त किया?
इसके उत्तर में बोधिसत्व ने तीन श्लोक दोहराए:

"चित्तका ने मुझे अपने मधुर शब्दों से स्वतंत्रता दिलाई।"
वो शब्द दिल को छू गए, दिल को भेद गए, मीठे और स्पष्ट शब्दों से कहे गए।
"सुताना ने अपने मधुर शब्दों से मुझे आजादी दिलाई।"
वो शब्द दिल को छू गए, दिल को भेद गए, मीठे और स्पष्ट शब्दों से कहे गए।
"शिकारी ने मुझे ये मनमोहक शब्द सुनने की आजादी दी।"

वो शब्द दिल को छू गए, दिल को भेद गए, शब्द मधुर और स्पष्ट थे।
उनके माता-पिता ने आभार व्यक्त करते हुए कहा:

"वह अपनी पत्नी और परिवार के साथ, हे भगवान, वे कितने सुखी हों!"
हमें रोहंता को अब मुक्त देखकर बहुत खुशी हो रही है!
फिर शिकारी जंगल से बाहर आया और राजा के पास गया; फिर उसने राजा को प्रणाम किया और एक तरफ खड़ा हो गया। राजा ने उसे देखकर कहा:

"मुझे बताओ, शिकारी: क्या तुम कहते हो, 'देखो मैं हिरण की खाल लाया हूँ':
या फिर किसी भी कारण से आपके पास दिखाने के लिए हिरण की खाल ही नहीं है?
शिकारी ने उत्तर दिया:

"वह प्राणी मेरे हाथों में आ गया, मेरे गुप्त जाल में फंस गया।"
और वह तुरंत पकड़ा गया: लेकिन अन्य लोग, जो स्वतंत्र थे, वहीं उसकी सेवा में लगे रहे।
"तब दया ने मेरे रोंगटे खड़े कर दिए, एक अजीब और नई दया।"
मैंने सोचा, "अगर मैं इस हिरण को मार डालूँ तो मैं भी मर जाऊँगा।"
"हे शिकारी, ये हिरण कौन थे, इनका स्वभाव और इनके तौर-तरीके क्या थे?"
उनका रंग कैसा था, उनमें क्या गुणवत्ता थी, जिसके कारण वे इतनी उच्च्य प्रशंसा के पात्र हैं?
राजा ने अत्यंत आश्चर्यचकित होकर यह प्रश्न कई बार पूछा। शिकारी ने इस छंद में उत्तर दिया:

"चांदी जैसे सींगों और सुंदर आकृति के साथ, अत्यंत चमकदार खाल और रोएँ के साथ,"
लाल छेद, और चमकती हुई खूबसूरत आंखें, सब कुछ देखने में बहुत सुंदर है।"
जैसे ही उसने इस श्लोक को दोहराया, शिकारी ने राजा के हाथ में उस महान सत्ता के सुनहरे बाल रख दिए, और एक अन्य श्लोक में इन हिरणों के चरित्र का वर्णन संक्षेप में प्रस्तुत किया:

"हे प्रभु, इनका स्वभाव और तौर-तरीके ऐसे ही हैं, और ये हिरण भी ऐसे ही हैं।"
वे अपने माता-पिता के लिए खाना ढूंढते थे: मैं उनके लिए यहां खाना नहीं ला सकता था।"
इन शब्दों में उन्होंने महान सत्ता, चित्त नामक हिरण और हिरणी सूतना के गुणों का वर्णन किया; और आगे कहा, "हे राजा, राजसी हिरण ने मुझे अपने बाल दिखाए और मुझे आदेश दिया कि मैं उसका स्थान लूँ और रानी के समक्ष दस श्लोकों में पवित्र जीवन का उपदेश दूँ (*7)।" फिर स्वर्ण सिंहासन पर बैठकर उन्होंने उन श्लोकों में धर्म का उपदेश दिया।

रानी की इच्छा पूरी हो गई। राजा प्रसन्न हुए और उन्होंने शिकारी को बड़ा सम्मान देते हुए इन छंदों को दोहराया।

मैं तुम्हें एक रत्नजड़ित बाली और सौ ड्रैचम सोना देता हूँ।
सन के फूल के समान एक सुंदर सिंहासन, जिस पर चार बार तकिए बिछे हुए हैं (*8),
"समान पद और योग्यता वाली दो पत्नियाँ, एक बैल और पचास गायें (x20)।"
प्रिय सहायक! और मैं हमेशा न्याय के साथ शासन करूंगा।
"व्यापार, खेती, खेतों से बचे हुए अवशेष एकत्र करना (*9), सूदखोरी,
आपका जो भी पेशा हो,
ध्यान रखो कि तुम पाप न करो, बल्कि इन्हीं से अपने परिवार का भरण-पोषण करो।
राजा के ये शब्द सुनकर उसने कहा, "मेरे लिए कोई घर-बार नहीं; हे स्वामी, मुझे संन्यासी बनने की अनुमति दीजिए।" राजा की सहमति पाकर उसने राजा के बहुमूल्य उपहार अपनी पत्नी और परिवार को सौंप दिए और हिमालय की ओर प्रस्थान किया, जहाँ उसने संन्यासी जीवन अपनाया, अष्टगुणों का अभ्यास किया और ब्रह्मा के लोक में प्रवेश किया। राजा ने परमपिता के उपदेशों का पालन किया और स्वर्ग की प्राप्ति की। ये उपदेश एक हजार वर्षों तक कायम रहे।

प्रवचन समाप्त होने पर गुरु ने कहा, "हे भिक्षुओं, बहुत समय पहले आनंद ने मेरे लिए प्राण त्याग दिए थे।" फिर उन्होंने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उस समय चन्ना शिकारी थे और सारिपुत्र राजा, उनकी बहन रानी खेमा थीं; राजा के परिवार के कुछ सदस्य माता-पिता थे, उप्पलावन्ना सुताना थे, आनंद चित्त थे, शाक्य (बुद्ध का वंश) अस्सी हजार हिरण थे, और मैं स्वयं राजसी हिरण रोहंत था।"

"हे योद्धा राजा, अपने मित्रों और दरबारियों के प्रति न्यायसंगत व्यवहार करो; और इसलिए
धर्मपरायण जीवन का अनुसरण करने से राजा स्वर्ग में जाएगा।
"युद्ध और यात्रा में, हे योद्धा राजा, न्यायसंगत आचरण करो; और इसलिए
धर्मपरायण जीवन का अनुसरण करने से राजा स्वर्ग में जाएगा।
"हे योद्धा राजा, नगर और गाँव में न्यायपूर्वक आचरण करो; और इस प्रकार"
धर्मपरायण जीवन का अनुसरण करने से राजा स्वर्ग में जाएगा।
"हे राजा, प्रत्येक देश और राज्य में न्यायपूर्वक आचरण करो; और इस प्रकार
धर्मपरायण जीवन का अनुसरण करने से राजा स्वर्ग में जाएगा।
सभी ब्राह्मणों और तपस्वियों से निवेदन है कि वे धार्मिक आचरण करें; और इस प्रकार
धर्मपरायण जीवन का अनुसरण करने से राजा स्वर्ग में जाएगा।
"हे योद्धा राजा, पशुओं और पक्षियों के साथ न्यायपूर्वक व्यवहार करो; और इसलिए
धर्मपरायण जीवन का अनुसरण करने से राजा स्वर्ग में जाएगा।
"हे योद्धा राजा, धार्मिक आचरण करो; इसी से समस्त आशीर्वाद प्राप्त होते हैं।"
धर्मपरायण जीवन का अनुसरण करने से राजा स्वर्ग में जाएगा।
"हे राजा, सतर्कतापूर्वक अच्छाई के मार्ग पर चलो।"
ब्राह्मणों, इंद्र और देवताओं (देवदूतों) ने अपनी देवत्व प्राप्ति कर ली है।
ये वे सिद्धांत हैं जो प्राचीन काल से चले आ रहे हैं: और ज्ञान के मार्ग का अनुसरण करना चाहिए।
समस्त सुख की देवी ने स्वयं को स्वर्ग में उठा लिया।
इस प्रकार शिकारी ने धर्म का उपदेश दिया, जैसा कि उस महान सत्ता ने उसे दिखाया था, बुद्ध की कुशलता से, मानो वह स्वर्ग की गंगा को पृथ्वी पर अवतरित कर रहा हो। हजारों लोगों की भीड़ ने तालियों की गड़गड़ाहट के साथ इसका स्वागत किया। प्रवचन सुनकर रानी की हार्दिक इच्छा पूरी हुई।

फुटनोट:

(1) संख्या 546

(2) संख्या 533

(3) मोरा जातक: क्रमांक 129

(4) खंड संख्या 153 और 184 "जोरदार और लंबा," "चीखों की एक श्रृंखला।"

(5) "माता-पिता" शब्द विद्वान द्वारा जोड़ा गया है, पाठ में यह "वे" है।

(6) यानी मृत्यु को अपने भाग्य के रूप में स्वीकार करना (माथे पर लिखा हुआ)।

(7) तब राजा ने उसे सात प्रकार के रत्नों से जड़े अपने राजसिंहासन पर बैठाया; और स्वयं अपनी रानी के साथ एक किनारे पर रखी एक साधारण चौकी पर बैठकर, आदरपूर्वक प्रणाम करते हुए, उससे बोलने का अनुरोध किया। शिकारी ने इस प्रकार विधि का वर्णन किया:

"हे योद्धा राजा, अपने माता-पिता के प्रति न्यायसंगत व्यवहार करो; और इसलिए
धर्मपरायण जीवन का अनुसरण करने से राजा स्वर्ग में जाएगा।
"हे योद्धा राजा, अपनी पत्नी और संतान के प्रति न्यायसंगत व्यवहार करो; और इस प्रकार

धर्मपरायण जीवन का अनुसरण करने से राजा स्वर्ग में जाएगा।
(8)chatussado "चार अलग-अलग चीजों में समृद्ध"

(9) उंचचरियाया में एक अक्षर अधिक है, और शायद उंचचरिया होना चाहिए।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **हंस-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-502-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 502
हम्सा-जातक

“देखो, पक्षी जा रहे हैं,” इत्यादि — यह कहानी गुरु ने बाँस के वन में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें उन्होंने वरिष्ठ भिक्षु आनंद के संन्यास का वर्णन किया था। तब भी भिक्षु (भाईचारे के भिक्षु) सत्य के हॉल में वरिष्ठ भिक्षु के अच्छे गुणों के बारे में बातें कर रहे थे, तभी गुरु वहाँ आए और उनसे पूछा कि वे किस बारे में बात कर रहे हैं। उन्होंने कहा, “भाइयों (भिक्षुओं) यह पहली बार नहीं है कि आनंद ने मेरे लिए अपना प्राण त्यागा है, बल्कि उन्होंने पहले भी ऐसा किया था।” और फिर उन्होंने उन्हें अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, बनारस में बहुपुत्तक नामक राजा का शासन था, जिन्हें अनेक पुत्रों का पिता भी कहा जाता था। उनकी पत्नी का नाम खेमा था। उस समय बहुपुत्तक चित्तकूट पर्वत पर निवास करते थे और नब्बे हजार जंगली हंसों के मुखिया थे, जिनका जन्म एक स्वर्ण हंस के रूप में हुआ था। जैसा कि पहले बताया गया है, रानी ने एक सपना देखा और राजा को बताया कि उनके गर्भ में स्वर्ण हंस द्वारा धर्म के मार्ग पर दिए गए प्रवचन को सुनने की तीव्र इच्छा जागृत हुई है। जब राजा ने पूछा कि क्या स्वर्ण हंस जैसे कोई प्राणी होते हैं, तो उन्हें बताया गया कि हाँ, चित्तकूट पर्वत पर होते हैं। तब उन्होंने एक झील बनवाई जिसका नाम उन्होंने खेमा रखा और उसमें हर प्रकार के अनाज बोए। वे प्रतिदिन चारों दिशाओं में सुरक्षा की घोषणा करवाते थे और हंसों को पकड़ने के लिए शिकारी भेजते थे। इस व्यक्ति को कैसे भेजा गया, पक्षियों पर उसकी निगरानी, सुनहरे हंसों के आने पर राजा को कैसे सूचना दी गई, किस प्रकार फंदा बिछाया गया और महापुरुष फंदे में कैसे फँसे, हंसों के मुख्य सेनापति सुमुख ने उन्हें हंसों के तीन समूहों में कैसे नहीं देखा और वापस लौट गया, यह सब महाहंस जन्म (*1) में वर्णित किया जाएगा। अब, जैसे उस समय महापुरुष फंदे और छड़ी में फँसे थे; और छड़ी के अंत में फंदे में लटकते हुए, उन्होंने अपनी गर्दन फैलाकर उस रास्ते की ओर देखा जहाँ से हंस गए थे, और सुमुख को आते हुए देखकर सोचा, "जब वह आएगा तो मैं उसकी परीक्षा लूँगा।" इसलिए जब वह आया, तो महापुरुष ने तीन श्लोक दोहराए:

"देखो, पक्षी जा रहे हैं, लाल हंस, सब डर से कांप रहे हैं:
हे सुनहरे पीले रंग की सुमुखा, यहाँ से चली जाओ! तुम्हें यहाँ क्या करना है?
मेरे दोस्तों और परिवार ने मुझे छोड़ दिया, वे सब मुझसे दूर चले गए।
बिना सोचे समझे वे उड़ जाते हैं: तुम्हें अकेला क्यों छोड़ दिया गया है?
"उड़ो, हे महान पक्षी! कैदियों के साथ कोई संगति नहीं हो सकती।"
सुमुखा, उड़ जाओ! जब तक तुम स्वतंत्र हो, इस अवसर को मत गंवाओ।
इस पर सुमुखा ने मिट्टी पर बैठे हुए उत्तर दिया--

"नहीं, मैं तुम्हें नहीं छोड़ूंगा, रॉयल गूज, जब मुसीबत करीब आएगी;
लेकिन मैं यहीं रुकूंगा, और तुम्हारे साथ ही जिऊंगा या मरूंगा।"
इस प्रकार सुमुख ने सिंह स्वर में कहा; और धतरत्थ ने इस श्लोक से उत्तर दिया:

"सुमुख, आपके ये शब्द एक महान हृदय और साहस का प्रतीक हैं:
मैंने तुम्हें सिर्फ तुम्हारी परीक्षा लेने के लिए ही उड़ जाने को कहा था।
जब वे आपस में बातचीत कर रहे थे, तभी एक शिकारी हाथ में लाठी लिए पूरी गति से आता हुआ दिखाई दिया। सुमुखा ने धतरत्था को प्रोत्साहित किया और उस व्यक्ति से मिलने के लिए उड़ गई, तथा आदरपूर्वक शाही पक्षी के गुणों का वर्णन किया। तुरंत ही शिकारी का हृदय नरम पड़ गया; यह देखकर सुमुखा वापस लौट गई और हंसों के राजा को प्रोत्साहित करने लगी। शिकारी हंसों के राजा के पास पहुँचकर छठा श्लोक सुनाने लगा:

वे अनछुए रास्तों से पैदल चलते हैं, जैसे पक्षी आकाश में उड़ते हैं:
और क्या तुमने, हे महान हंस, दूर से ही जाल नहीं देखा था?
उस महान सत्ता ने कहा:

जब जीवन का अंत निकट आ रहा हो, और मृत्यु का समय नजदीक आ रहा हो,
यद्यपि आप इसके करीब आ सकते हैं, लेकिन आप जाल या फंदे में जासूसी नहीं करते (*2)।"

पक्षी की टिप्पणी से प्रसन्न होकर शिकारी ने सुमुखा को तीन श्लोक संबोधित किए।

"देखो, पक्षी जा रहे हैं, लाल हंस, सब डर से कांप रहे हैं:
और हे सुनहरे पीले पक्षी, तुम अभी भी यहीं प्रतीक्षा कर रहे हो।
"लाल हंसों ने खाया-पिया; वे बेपरवाह होकर उड़ गए।"
वे हवा में तेजी से उड़ जाते हैं, और आप अकेले रह जाते हैं।
"यह कौन सा पक्षी है, जो बाकियों के उसे छोड़कर उड़ जाने पर भी,
हालांकि आप स्वतंत्र हैं, फिर भी आप कैदी के साथ शामिल हो जाते हैं—आपको अकेला क्यों छोड़ दिया गया है?
सुमुखा ने उत्तर दिया:

"वह मेरे साथी, मित्र और राजा हैं, वे मेरे जीवन के समान ही प्रिय हैं।"
मैं उसे कभी नहीं छोड़ूंगी—नहीं, मैं ऐसा कभी नहीं करूंगी, जब तक कि मृत्यु मुझे अपने पास न बुला ले।"
यह सुनकर शिकारी बहुत प्रसन्न हुआ और मन ही मन सोचने लगा—"यदि मैं इन जैसे गुणी प्राणियों को हानि पहुँचाऊँ तो पृथ्वी फट जाएगी और मुझे निगल जाएगी। मुझे राजा के पुरस्कार की क्या परवाह? मैं इन्हें मुक्त कर दूँगा।" और उसने एक श्लोक दोहराया:

अब यह देखकर कि तुम मित्रता की खातिर मरने को तैयार हो,
मैंने तुम्हारे राजा और साथी को मुक्त कर दिया है, ताकि वे तुम्हारे पीछे-पीछे उड़ सकें।"
यह कहकर, उन्होंने धतरत्था को छड़ी से नीचे उतारा, फंदा खोला, और उन्हें किनारे पर ले गए, और दयापूर्वक उनका खून धोया, और उनकी उखड़ी हुई मांसपेशियों और नसों को ठीक किया। और उनके दयालु हृदय और महापुरुष की पूर्णता (*3) की शक्ति के कारण, पल भर में उनका पैर फिर से ठीक हो गया, और जहाँ उन्हें फँसाया गया था, वहाँ कोई निशान नहीं बचा। सुमुख ने महापुरुष को प्रसन्नता से देखा और इन शब्दों में धन्यवाद दिया:

"अपने पूरे परिवार और दोस्तों के साथ, हे शिकारी, खुश रहो (*4)
मुझे पक्षियों के राजा को मुक्त देखकर खुशी हो रही है।
जब शिकारी ने यह सुना, तो उसने कहा, "अब आप जा सकते हैं, मित्र।" तब उस महान प्राणी ने उससे कहा, "क्या तुमने मुझे अपने स्वार्थ के लिए पकड़ा है, मेरे भले, या किसी और के कहने पर?" उसने उसे सारी बात बता दी। दूसरा सोचने लगा कि चित्तकुटा लौटना बेहतर होगा या शहर जाना। उसने सोचा, "अगर मैं शहर जाऊँगा, तो शिकारी को इनाम मिलेगा, रानी की इच्छा पूरी होगी, सुमुखा की मित्रता का पता चलेगा, और फिर अपनी बुद्धिमत्ता के बल पर मुझे खेमा झील मुफ्त उपहार में मिलेगी। इसलिए शहर जाना ही बेहतर है।" यह तय करके उसने कहा, "शिकारी, हमें अपने डंडे पर राजा के पास ले चलो, और अगर वह चाहे तो मुझे रिहा कर देगा।" - "मेरे स्वामी, राजा कठोर होते हैं; आप अपने रास्ते जाओ।" - "क्या! मैंने तुम्हारे जैसे शिकारी को नरम कर दिया है, और क्या मुझे राजा की कृपा नहीं मिलेगी? यह मुझ पर छोड़ दो; तुम्हारा काम, मित्र, हमें उसके पास पहुँचाना है।" उस व्यक्ति ने वैसा ही किया।

जब राजा की नज़र हंसों पर पड़ी, तो वह प्रसन्न हुआ। उसने दोनों हंसों को एक सुनहरे तंबू पर बिठाया, उन्हें खाने के लिए शहद और भुना हुआ अनाज दिया और पीने के लिए मीठा पानी दिया, और हाथ जोड़कर उनसे प्रार्थना की कि वे उन्हें विधि के बारे में बताएं। हंसों के राजा ने राजा की उत्सुकता देखकर पहले उनसे मधुर शब्दों में बात की। ये छंद राजा और हंसों के बीच हुई बातचीत को दर्शाते हैं।

अब उसके पास सम्मान, स्वास्थ्य और धन है, और राज्य परिपूर्ण है।
क्या वह कल्याण और समृद्धि के बारे में न्यायपूर्वक शासन करता है?
"ओह, यहाँ स्वास्थ्य और धन है, हे हंस, और यहाँ एक परिपूर्ण राज्य है।"
कल्याण और समृद्धि का, न्यायपूर्ण और धर्मपरायण शासन के साथ।"
क्या आपके दरबार में कोई दाग नहीं दिखता, और क्या आपके शत्रु
बहुत दूर; और दक्षिण की ओर पड़ने वाली उस छाया की तरह, जो कभी बढ़ती नहीं।
मेरे दरबारियों और मेरे शत्रुओं में कोई दाग नहीं दिखता।
दूर-दूर तक फैली हुई चीजें दक्षिण की ओर पड़ने वाली उस छाया के समान हैं, जो कभी बढ़ती नहीं।
और क्या तुम्हारी रानी समान वंश की, आज्ञाकारी और मधुर वाणी वाली है?
फलदायी, निष्पक्ष, प्रसिद्ध, आपकी इच्छाओं की प्रतीक्षा में, प्रत्येक कार्य को पूरा करने वाला?
"ओह हाँ, मेरी रानी समान कुल की है, आज्ञाकारी है, मधुर वाणी वाली है।"
फलदायी, निष्पक्ष, प्रसिद्ध, मेरी इच्छाओं की प्रतीक्षा करने वाला, हर काम करने वाला।"
"हे पिता तुल्य शासक! आपके अनेक, कुलीन पुत्र हों,"

तेज बुद्धि वाले, आसानी से प्रसन्न हो जाने वाले पुरुष, चाहे कुछ भी हो जाए?
"हे धतरत्था! मेरे यशवान पुत्रों की संख्या पचास (20) है:
उन्हें उनका कर्तव्य बताएं: वे आपकी अच्छी सलाह को अनदेखा नहीं करेंगे।
यह सुनकर उस महान सत्ता ने उन्हें पाँच श्लोकों में सलाह दी:

जो व्यक्ति भलाई करने के प्रयास को बहुत देर तक टालता रहता है,
उच्च कुल में जन्म लेने के बावजूद, सद्गुणों से संपन्न होने के बावजूद, वह बाढ़ में डूब जाता है।
"उसका ज्ञान लुप्त हो रहा है, उसे भारी हानि हो रही है; जैसे रात में कोई चाँदनी रात में अंधा हो जाता है।"
अपनी अपूर्ण दृष्टि के कारण उसे सभी चीजें अपने वास्तविक आकार से दोगुनी बड़ी दिखाई देती हैं।
जो असत्य में सत्य देखता है, उसे किसी प्रकार की बुद्धि प्राप्त नहीं होती।
जैसे किसी ऊबड़-खाबड़ पहाड़ी रास्ते पर हिरण अक्सर गिर जाते हैं।
यदि कोई बलवान साहसी व्यक्ति सद्गुण से प्रेम करता है, सही मार्ग का अनुसरण करता है,
हालांकि वह एक निम्न कुल का देहाती व्यक्ति है, फिर भी वह रात में जलती हुई आग की तरह दमकता है।
"इस उपमा का उपयोग करके ज्ञान के सभी सत्यों की व्याख्या की जा सकती है।"
अपने बेटों को तब तक प्यार करो जब तक वे समझदार न हो जाएं, जैसे बारिश में अंकुरित पौधे।
इस प्रकार उस महान सत्ता ने राजा से पूरी रात प्रवचन दिए। रानी की तृप्ति हुई। सूर्योदय होते ही उन्होंने राजा को राजाओं के गुणों से सुसज्जित किया और उन्हें सतर्क रहने के लिए प्रोत्साहित किया, फिर सुमुखा के साथ उत्तरी खिड़की से उड़कर चित्तकुटा चले गए।

इस प्रवचन के बाद, गुरु ने कहा, "इस प्रकार, भिक्षुओं, इस व्यक्ति ने पहले मेरे लिए अपना प्राण बलिदान कर दिए थे," और फिर उन्होंने जन्म का विवरण दिया: "उस समय चन्ना शिकारी थे, सारिपुत्र राजा थे, एक बहन रानी खेमा थीं, शाक्य गोत्र (बुद्ध का कुल) हंसों का झुंड था, आनंद सुमुख थे, और मैं स्वयं हंसों का राजा था।"

फुटनोट:

(1) संख्या 534, जहाँ हंसों के राजा का नाम धतरत्था है।

(2) यह दोहा क्रमांक 52 और क्रमांक 331 ("जब विनाश...") में आता है।

(3) बोधिसत्व की दस सिद्धियाँ।

(4) यह पंक्ति क्रमांक 331 ("ओ शिकारी...") में आती है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सत्तीगुम्बा-जातक**
स्रोत: *डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-503-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 503
सत्तिगुम्बा-जातक। (*1)

“एक विशाल सेना के साथ,” इत्यादि — यह कथा गुरु ने मद्दकुच्ची के हिरण उद्यान में रहते हुए देवदत्त के बारे में सुनाई थी। जब देवदत्त ने पत्थर फेंका और उसका एक टुकड़ा भगवान बुद्ध के पैर में जा लगा, तो उन्हें बहुत पीड़ा हुई। असंख्य भिक्षु तथागत (बुद्ध) के दर्शन करने के लिए एकत्रित हुए। जब भगवान बुद्ध ने इतने लोगों को एकत्रित देखा, तो उन्होंने उनसे कहा, “भाइयों, यहाँ बहुत भीड़ है: बहुत बड़ी सभा होगी। आइए, मुझे हाथगाड़ी में बिठाकर मद्दकुच्ची ले चलें।” तब भिक्षुओं ने वैसा ही किया। जीवक ने तथागत (बुद्ध) के पैर का उपचार किया। गुरु के समक्ष बैठे भिक्षु इस विषय पर चर्चा करने लगे: “महोदय, देवदत्त पापी है और उसके सभी अनुयायी पापी हैं; पापी पापियों की संगति में रहता है।” गुरु ने पूछा, “भाइयों, आप क्या कह रहे हैं?” उन्होंने उन्हें बताया। उन्होंने कहा, "ऐसा पहले भी हो चुका है, और यह पहली बार नहीं है जब पापी देवदत्त ने पापी संगति की है।" फिर उन्होंने उन्हें अतीत की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, उत्तरा-पंचाल नगर में पंचाल नामक राजा का शासन था। महान पुरुष पंचाल का जन्म एक ऊंचे पठार पर स्थित रेशम-कपास के पेड़ों से घिरे जंगल में तोतों के राजा के पुत्र के रूप में हुआ था। उनके दो भाई थे। इस पहाड़ी से हवा की दिशा में एक डाकुओं का गांव था, जहां पांच सौ डाकू रहते थे, और उसके नीचे पांच सौ ऋषियों का एक आश्रम था।

जब तोते अपने पंख बदल रहे थे, उसी समय एक बवंडर आया और एक तोते को उड़ा ले गया। वह तोता डाकुओं के गाँव में, उनके हथियारों के बीच जा गिरा। वहाँ गिरने के कारण उसका नाम सत्तिगुम्बा या काँटेदार भाला रखा गया। दूसरा तोता आश्रम में, रेतीले स्थान पर उगे फूलों के बीच गिरा, इसलिए उसका नाम पुप्पका रखा गया। सत्तिगुम्बा डाकुओं के बीच पला-बढ़ा, जबकि पुप्पका ऋषियों के साथ।

एक दिन, राजा भव्य वस्त्रों में, एक विशाल सेना के साथ, अपने शानदार रथ पर सवार होकर हिरण का शिकार करने निकले। नगर से कुछ ही दूरी पर, वे फूलों और फलों से लदे एक सुंदर उपवन में प्रवेश कर गए। उन्होंने कहा, "यदि कोई हिरण को उनके पास से जाने देगा, तो उन्हें इसका हिसाब चुकाना होगा!" फिर वे रथ से उतरे और अपने लिए निर्धारित कुटिया में धनुष हाथ में लिए खड़े हो गए। शिकारियों ने झाड़ियों को पीटकर शिकार को बाहर निकालने का प्रयास किया। एक हिरण उठा और रास्ता खोजने लगा; उसने राजा के पास एक रास्ता देखा, उसमें से निकलकर भाग गया। सबने पूछा कि हिरण को किसने जाने दिया। जवाब था राजा! यह सुनकर सब लोग उनका मज़ाक उड़ाने लगे। राजा अपने अहंकार में इतना डूबे हुए थे कि उन्हें यह मज़ाक सहन नहीं हुआ। "अब मैं उस हिरण को पकड़ूंगा!" वे चिल्लाए और अपने रथ पर सवार हो गए। "पूरी गति से चलो!" उन्होंने सारथी से कहा और हिरण के पीछे चल पड़े। राजा इतनी तेज़ी से भागा कि बाकी लोग उसका साथ नहीं दे पाए: राजा और सारथी, ये दोनों ही दोपहर तक चलते रहे, लेकिन उन्हें कोई हिरण नहीं दिखा। तब राजा वापस मुड़ा; और डाकुओं के गाँव के पास एक सुंदर घाटी देखकर, वह नीचे उतरा, स्नान किया, पानी पिया और पानी से बाहर आ गया। फिर सारथी रथ से एक चटाई लाया और उसे एक पेड़ की छाया में बिछा दिया; राजा उस पर लेट गया, सारथी उसके पैरों की मालिश करने के लिए उसके पास बैठ गया: राजा कभी ऊंघता, कभी जागता। डाकुओं के गाँव के लोग, यहाँ तक कि सभी डाकू भी, राजा की सेवा में जंगल में चले गए थे: इस प्रकार गाँव में सत्तिगुम्बा और रसोइया, पतिकोलम्बा नामक व्यक्ति के अलावा कोई नहीं बचा था। उसी क्षण सत्तिगुम्बा गाँव से बाहर आया और राजा को देखकर सोचा, "अगर हम सोते हुए ही उसे मार डालें और उसके गहने ले लें तो क्या होगा!" इसलिए वह पतिकोलम्बा के पास लौटा और उसे सारी बात बताई।

इसे समझाने के लिए गुरु ने पाँच श्लोक सुनाए:

"पांचाल का राजा एक विशाल सेना के साथ हिरण का शिकार करने निकला था;
घने जंगलों में वह सम्राट भटक गया, और उसके आसपास कोई भी नहीं था।
"देखो, उसने जंगल के भीतर चोरों द्वारा बनाया गया एक आश्रय देखा,"
एक तोता बाहर आया और फिर उसने ये क्रूर शब्द कहे:-
"एक युवक रथ पर सवार था, जिसके पास अनेक आभूषण थे।"
और उसके माथे पर सोने का मुकुट सूर्य की तरह लाल चमक रहा है!
दोपहर के समय राजा और सारथी दोनों वहीं सो रहे थे।
आओ, हम उनकी संपत्ति लूट लें और उसे जल्दी से ले जाएं!
"आधी रात की तरह सन्नाटा छाया हुआ है: राजा और सारथी दोनों सो रहे हैं।"
उनकी संपत्ति और गहने हमें लेने और अपने पास रखने दो।
उन्हें मार डालो और उन पर टहनियों का ढेर लगा दो।"
इस प्रकार संबोधित किए जाने पर, वह व्यक्ति बाहर गया और देखा, और यह देखकर कि वह एक राजा था, वह भयभीत हो गया, और उसने यह श्लोक पढ़ा:

"सत्तिगुम्बा, क्या तुम पागल हो गए हो? ये मैं कैसे शब्द सुन रहा हूँ?"
राजा धधकती आग के समान होते हैं, और उनके पास जाना अत्यंत खतरनाक होता है।
पक्षी ने एक और छंद में उत्तर दिया:

"ये सब बेवकूफी भरी बातें हैं, पतिकोलम्बा; और पागल तुम हो, मैं नहीं।"
मेरी माँ नग्न है; हम जिस कर्तव्य के लिए जीते हैं, उसका तिरस्कार क्यों करें (*2)?"
अब राजा जाग उठा, और उन्हें मनुष्यों की भाषा में बात करते हुए सुनकर, खतरे को भांपते हुए, उसने अपने सारथी को जगाने के लिए निम्नलिखित श्लोक पढ़ा:

"हे सारथी, जल्दी उठो और रथ को जोतो।"
हमें कोई और आश्रय ढूंढना होगा, क्योंकि मुझे यह तोता पसंद नहीं है।"
वह जल्दी से उठा और टीम के सामने खड़ा हो गया, फिर उसने एक श्लोक सुनाया:

"हे महामहिम, रथ तैयार है, तैयार है और वहाँ मौजूद है।"
हे राजा, प्रवेश कीजिए! और हमें कहीं और शरण लेने दीजिए।"
जैसे ही वह अंदर दाखिल हुआ, वैसे ही तेज रफ्तार से घोड़े हवा की तरह उड़ गए। जब सत्तिगुम्बा ने रथ को जाते देखा, तो उत्साह से भर कर उसने दो श्लोक दोहराए:

"अब वे सभी लोग कहाँ चले गए जो कभी इस जगह पर हुआ करते थे?"
पंचाला उड़ गया, उसे जाने दिया गया क्योंकि उन्होंने उसे नहीं देखा।
क्या वह बिना जान गंवाए बच जाएगा? भाला, बरछी और धनुष ले लो:
देखो, पंचाल उड़ रहा है! हे भगवान, उसे जाने मत दो!
तो वह बड़बड़ाते हुए इधर-उधर फड़फड़ाने लगा: इसी बीच कुछ समय बाद राजा ऋषियों के आश्रम में आ पहुँचे। उस समय सभी ऋषि फल और जड़ें इकट्ठा करने गए हुए थे, और आश्रम में केवल तोता पुप्पा ही रह गया था। जब उसने राजा को देखा, तो वह उनसे मिलने गया और विनम्रतापूर्वक उनका अभिवादन किया।

फिर गुरु ने समझाने के लिए चार श्लोक पढ़े:

लाल चोंच वाले तोते ने बड़े ही विनम्रतापूर्वक कहा,

"स्वागत है, हे राजा! एक सुखद संयोग ने आपको इस ओर निर्देशित किया है!"
आप कितने महान और गौरवशाली हैं: कृपया बताइए, आपका काम क्या है?
"टिंडूक और पियाल के पत्ते, और कसुमरी मिठाई (*3)
हे राजा, भले ही हम थोड़े-थोड़े हों, फिर भी हमारे पास जो सबसे अच्छा है, वही लो और खाओ।
और यह ठंडा पानी, एक पहाड़ी पर छिपी हुई गुफा से आता है,
हे महामहिम सम्राट, इसे ग्रहण कीजिए, यदि आपकी इच्छा हो तो पीजिए।
"जंगल में इकट्ठा होने वाले सभी लोग वे हैं जो यहाँ रहने के आदी हैं।"
हे राजा, उठो और ले लो: मेरे पास देने के लिए हाथ नहीं हैं।
इस विनम्र संबोधन से प्रसन्न होकर राजा ने दो छंदों में उत्तर दिया:

इससे बेहतर पक्षी कभी पैदा नहीं हुआ; एक बहुत ही नेक पक्षी।
लेकिन वहाँ मौजूद दूसरे तोते ने कई क्रूर शब्द कहे।
"हे भगवान, उसे यहाँ से जीवित न जाने दो, आओ और मार डालो या बाँध दो!"
वह रोते हुए बोला, "मैंने इस आश्रम की तलाश की, और मुझे यहाँ सुरक्षा मिल गई।"
राजा द्वारा इस प्रकार संबोधित किए जाने पर, पुप्पका ने दो श्लोक कहे:

"हे सर्वशक्तिमान राजा, हम भाई हैं, एक ही माता से उत्पन्न हुए हैं।"
दोनों को एक ही पेड़ पर एक साथ पाला गया, अलग-अलग चरागाहों में चरने के लिए छोड़ा गया।
"सत्तिगुम्बा के चोरों के लिए, मैं ऋषियों के पास आया;"
ये बुरे हैं, ये अच्छे हैं, और इसी वजह से हमारे रास्ते एक जैसे नहीं रह गए हैं।"
फिर उन्होंने दो छंदों को दोहराते हुए, अंतरों को विस्तार से समझाया:

"वहाँ घाव हैं, बंधन हैं, छल-कपट है, बेईमानी है और घटिया मोड़ हैं।"
लूटपाट और हिंसात्मक कृत्य: यही वह परंपरा है जो वह सीखता है।
"यहाँ आत्मसंयम, संयम, दयालुता, सही और सच्चा मार्ग है,
अजनबियों के लिए आश्रय और पानी: ये चीजें मेरे आसपास तब मौजूद थीं जब मैं बड़ा हो रहा था।
इसके बाद उन्होंने राजा को निम्नलिखित छंदों में कानून सुनाया:

"जिस किसी को भी, चाहे वह अच्छा हो या बुरा, सम्मान देना चाहिए,"

चाहे वह व्यक्ति दुष्ट हो या सदाचारी, वह उसे अपने वश में रखता है।
"जैसे कोई प्रशंसनीय साथी, जैसे कोई चुना हुआ मित्र,"
अंततः, जो व्यक्ति उसके साथ रहेगा, उसका भी यही हाल होगा।
"दोस्ती पसंद पैदा करती है, और स्पर्श से फैलती है, आपको यह सच लगेगा।"
तीर में जहर डालो, और कुछ ही समय में तीर का खोल भी जहर से भर जाएगा।
बुद्धिमान व्यक्ति बुरी संगति से दूर रहता है, क्योंकि उसे दूषित स्पर्श का डर रहता है।
सड़ी हुई मछली को घास में लपेट दो, तुम्हें पता चलेगा कि घास से भी उतनी ही बदबू आती है।
और जो मूर्खों की संगति में रहते हैं, वे भी शीघ्र ही मूर्ख बन जाते हैं।
"अगर किसी पत्ते में मीठी अगरबत्ती लपेट दी जाए, तो पत्ता भी उतनी ही मीठी खुशबू देने लगेगा।"
इसलिए जो लोग बुद्धिमानों के चरणों में बैठते हैं, वे स्वयं शीघ्र ही बुद्धिमान हो जाएंगे।
इस उदाहरण से बुद्धिमान व्यक्ति को अपना लाभ अवश्य पता होना चाहिए।
उसे बुरी संगति से दूर रहना चाहिए और धर्मी लोगों के साथ रहना चाहिए:
नेक लोगों के लिए स्वर्ग है, लेकिन बुरे लोग नरक में जाने के लिए अभिशप्त हैं।
राजा इस व्याख्या से प्रसन्न हुए। तब ऋषि भी लौट आए। राजा ने ऋषियों का अभिवादन करते हुए कहा, "कृपा करके मेरे प्रांगण में निवास करें," और उन्हें निमंत्रण स्वीकार करने के लिए राजी कर लिया। जब वे घर लौटे, तो उन्होंने सभी तोतों के लिए सुरक्षा की घोषणा कर दी। ऋषि भी वहाँ आए और उनसे मिलने गए। राजा ने उन्हें अपना उद्यान रहने के लिए दे दिया और अपने जीवनकाल तक उनकी देखभाल की। जब उनका स्वर्गवास हुआ, तो उनके पुत्र ने उनके ऊपर राजसी छत्र उठवाया और ऋषियों की भी देखभाल की, और इस प्रकार यह परंपरा सात पीढ़ियों तक, सभी ऋषियों के बीच, पिता से पुत्र तक चलती रही। और महान पुरुष अपने कर्मों के अनुसार परलोक जाने तक वनों में रहे।

जब यह पाठ समाप्त हुआ, तो गुरु ने कहा, "इस प्रकार, भिक्षुओं, आप देखते हैं कि देवदत्त पहले भी बुरी संगत में था, जैसा कि वह अब है।" फिर उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "उस समय, देवदत्त सत्तिगुम्बा था, उसके अनुयायी डाकू थे, आनंद राजा था, बुद्ध के अनुयायी ऋषि थे, और मैं स्वयं तोता पुप्फक था।"

फुटनोट:

(1) शिकायत संख्या 513 (जयद्दीसा)

(2) "उसका मतलब लुटेरों के सरदार की पत्नी से है, जो टहनियों से बने वस्त्र पहनकर घूमती थी। "मेरी माँ नंगी है": तुम लुटेरों के धंधे से इतनी घृणा क्यों करते हो?"--विद्वान।

(3) डायोस्पायरोस एम्ब्रियोप्टेरिस और बुकानिया लैटिफोलिया का नाम लिया गया है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **भल्लातिया-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-504-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 504
भल्लतिया जातक

"एक राजा भल्लतिया थे," इत्यादि - यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए मल्लिका (मसूड़ों की दुल्हन) के बारे में सुनाई थी (*1)। एक दिन मल्लिका और राजा के बीच वैवाहिक अधिकारों को लेकर झगड़ा हुआ। राजा क्रोधित थे और उनकी ओर देख भी नहीं रहे थे। मल्लिका ने सोचा, "मुझे लगता है कि तथागत (बुद्ध) को नहीं पता कि राजा मुझसे क्रोधित हैं।" जब गुरु को इस बात का पता चला, तो अगले दिन वे भिक्षुओं के साथ बनारस में भिक्षा मांगने गए और फिर राजा के महल के द्वार पर गए। राजा उनसे मिलने आए, उनका भिक्षापात्र ले लिया, उन्हें छत पर ले गए, भिक्षुओं को उचित क्रम में बैठाया, उनका स्वागत जल पिलाया और उन्हें उत्तम भोजन कराया;

भोजन के बाद वे एक तरफ बैठ गए। गुरु ने पूछा, "मल्लिका क्यों नहीं आ रही हैं?" राजा ने कहा, "यह उनकी समृद्धि का उनका मूर्खतापूर्ण अभिमान है।" गुरु ने कहा, "हे महान राजा! बहुत समय पहले जब आप एक परी थे, तब आप एक रात के लिए अपने साथी से अलग रहे और फिर सात सौ वर्षों तक शोक मनाते रहे।" फिर उनके अनुरोध पर, उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, बनारस में भल्लतिया नाम का एक राजा राज करता था। कोयले पर भुना हुआ हिरण का मांस खाने की तीव्र इच्छा से प्रेरित होकर, उसने राज्य का कार्यभार अपने दरबारियों को सौंप दिया, पाँचों शस्त्रों से सुसज्जित होकर और अपने प्रशिक्षित, कुशल शिकारी कुत्तों के झुंड के साथ शहर से निकलकर हिमालय की ओर प्रस्थान किया। वह गंगा नदी के किनारे-किनारे तब तक चलता रहा जब तक कि वह और ऊपर नहीं जा सका, फिर एक सहायक नदी के साथ कुछ दूर तक चला, हिरण और सूअर का शिकार करता रहा और उनका भुना हुआ मांस खाता रहा, जब तक कि वह एक ऊँचाई पर नहीं पहुँच गया। वहाँ जब सुहावनी नदी पूरी तरह से भरी होती थी, तो पानी छाती तक होता था, लेकिन अन्य समय में यह केवल घुटनों तक ही होता था। उस समय वहाँ तरह-तरह की मछलियाँ और कछुए उछल-कूद करते थे, पानी के किनारे की रेत चाँदी जैसी चमकती थी, दोनों किनारों पर पेड़ फूलों और फलों के भार से झुके होते थे, कई पक्षी और मधुमक्खियाँ फलों के रस और फूलों के शहद से मदहोश होकर छाया में घूमती रहती थीं, जहाँ तरह-तरह के हिरणों के झुंड अक्सर आते-जाते थे। अब इस खूबसूरत पहाड़ी झरने के किनारे दो परियां एक-दूसरे को प्यार से गले लगाती और चूमती रहीं, फिर बड़ी दयनीयता से रोने और विलाप करने लगीं।

जब राजा इस नदी के किनारे से होते हुए गंधमादन पर्वत पर चढ़ रहे थे, तो उन्होंने दो परियों को देखा। उन्होंने सोचा, "ये इस तरह क्यों रो रही हैं? मैं इनसे सवाल करूंगा।" उन्होंने अपने कुत्तों की ओर एक नज़र डाली, उंगली चटकाई, और इस इशारे पर, अपने काम में माहिर वे बेहतरीन कुत्ते झाड़ियों में घुस गए और पेट के बल बैठ गए। जैसे ही उन्होंने देखा कि वे रास्ते से हट गई हैं, उन्होंने अपना धनुष, बाण और अन्य हथियार पास के एक पेड़ के पास रख दिए, और बिना किसी को आहट दिए चुपके से परियों के पास गए और उनसे पूछा, "तुम क्यों रो रही हो?"

इसे समझाने के लिए, गुरु ने तीन श्लोक दोहराए:

"क्या राजा भल्लातियो थे?"
और वह शिकार पर निकल जाता था;
   सुगंधित पर्वत पर चढ़ता है, और उसे पा लेता है
परियों और हवा में उड़ने वाले फूलों से भरा हुआ।
वह तुरंत ही हर शिकारी कुत्ते को शांत कर देता है।
धनुष और बाण का खोल जमीन पर रख देता है।
   आगे बढ़ने के लिए, एक प्रश्न पूछना
जहां परियों का एक जोड़ा मिला था।
"सर्दी चली गई: तो फिर वापस क्यों लौटें?"
जलती हुई जगह के किनारे बैठकर बातें करना?
   हे मनुष्य जैसे दिखने वाले प्राणियों,
मैं यह सीख लूंगी कि पुरुष तुम्हें क्या कहकर पुकारते हैं।
राजा के प्रश्न पर नर परी ने कुछ नहीं कहा; लेकिन उसकी साथी ने इस प्रकार उत्तर दिया:

"मल्ला, त्रि-शिखर, पीली पहाड़ी (*2)
हम ठंडी-ठंडी धाराओं का अनुसरण करते हुए आगे बढ़ते हैं।
   जंगली जीव हमें मनुष्य के समान मानते हैं:
शिकारी हमें (*3) अब भी भूत कहते हैं।"
तब राजा ने तीन श्लोक पढ़े:

"हालाँकि तुम प्रेमियों की तरह एक दूसरे को सहलाते हो..."
तुम गहरे दुख से भरे हुए रोते हो।
   हे मनुष्य जैसे दिखने वाले प्राणियों,
इतना रोना क्यों? आओ, सच बताओ!
"हालाँकि तुम प्रेमियों की तरह एक दूसरे को सहलाते हो..."

तुम गहरे दुख से भरे हुए रोते हो।
हे मनुष्य जैसे दिखने वाले प्राणियों,
इतना शोक क्यों? आओ, स्वीकार करो!
"हालाँकि तुम प्रेमियों की तरह एक दूसरे को सहलाते हो..."
तुम गहरे दुख से भरे हुए रोते हो।
हे मनुष्य जैसे दिखने वाले प्राणियों,
ये मातम क्यों? आओ, कबूल करो!
निम्नलिखित छंदों को प्रत्येक व्यक्ति ने संबोधन और उत्तर के दौरान कहा था:

"हम एक रात अलग-अलग लेटे थे,"
दोनों प्रेमहीन, कड़वी पीड़ा से भरे हुए।
प्रत्येक के बारे में सोचना: लेकिन कभी नहीं
क्या वो रात फिर कभी आएगी?
तो फिर वो रात अकेले क्यों बितानी है?
जिसकी वजह से आपको कई आहें और कराहें भरनी पड़ीं।
हे मनुष्य-दृष्टि वाले प्राणियों--
पैसा खो गया? पिता बिछड़ गया?
घनी छाया में नदी बहती है
चट्टानों के बीच: एक तूफान उठ खड़ा हुआ:
फिर बड़ी चिंता से मुझे ढूंढने के लिए
मेरे प्रियजन ठीक सामने से गुजरते हैं।
"लगातार व्यस्त पैरों के साथ"
मैंने तुम्हारा मुझे और घास के मैदान को मीठा (*4) इकट्ठा किया
मेरे प्यार को एक माला बनाने के लिए सब कुछ।
और मैं, जब हमारी मुलाकात होनी चाहिए।
"गुच्छेदार हरेबेल, बैंगनी नीला,
और ओस से भीगा हुआ सफेद डैफोडिल का फूल,
मेरे प्यार को एक माला बनाने के लिए सब कुछ।
और मैं, जब हमारी मुलाकात होनी चाहिए।
"फिर मैंने गुलाबों का एक गुच्छा तोड़ा,
वह सबसे सुंदर फूल है जो उगता है।
मेरे प्यार को एक माला बनाने के लिए सब कुछ।
और मैं, जब हमारी मुलाकात होनी चाहिए।
"मुझे आगे फूल और पत्तियां मिलीं।"
और उन्हें जमीन पर घनी मात्रा में फैला दो।
जहां पूरी रात एक साथ बिताई जाए
हम चैन की नींद सो सकते हैं।
चंदन और मीठी लकड़ियाँ जल्द ही
मैंने एक पत्थर पर धीरे-धीरे प्रहार किया,
मेरी प्रेमिका के अंगों को सुकून देने वाला इत्र,
मेरे लिए सबसे प्यारी खुशबू।
"तेजी से बहती नदी के किनारे"
मैंने अंत तक लिली (*5) एकत्र कीं:
शाम हो गई—नदी उफान पर थी
इससे आगे बढ़ना नामुमकिन हो गया था।
हम दोनों किनारों पर खड़े थे,
एक दूसरे को निहारते हुए।
हम साथ-साथ कितना हंसे और रोए!

आह! उस रात हमने बहुत पीड़ा सहन की।
सुबह हुई, सूरज आसमान में काफी ऊपर था।
और जल्द ही हमने नदी को सूखते हुए देखा।
फिर हम पार गए और एक दूसरे को गले लगाया।
हम एक ही समय में हंसते भी हैं और रोते भी हैं।
"सात सौ साल लेकिन तीन
जब से हम अलग हुए हैं, मैं और वह।
जब दो प्यार भरे दिल अलग हो जाते हैं
लगता है कि अभी पूरा जीवन जीना बाकी है।"
"आपकी उम्र की सीमा क्या है?"
अगर यह अफवाह से पुरानी बात लगती है तो।
या फिर बड़ों की शिक्षा,
मुझे बताओ, और डरो मत।
"हजारों ग्रीष्मकाल, मजबूत और स्वस्थ,
कभी भी जानलेवा पीड़ा हमला नहीं करती,
कम दुःख, भरपूर आनंद।
अंत में प्रेम के आनंद की ही जीत होती है।
राजा ने सुनते हुए मन ही मन सोचा, "ये प्राणी, जो मनुष्य से भी नीच हैं, एक रात के बिछड़ने के लिए सात सौ वर्षों तक रोते रहते हैं: और मैं, तीन सौ मील (4.23 किमी) के विशाल राज्य का स्वामी, अपनी सारी शान-शौकत छोड़कर जंगल में भटक रहा हूँ। यह एक बड़ी गलती है।" वह तुरंत लौट आया। बनारस पहुँचकर दरबारियों ने उससे पूछा कि क्या उसने हिमालय में कोई अद्भुत चीज़ देखी है। उसने उन्हें पूरी कहानी सुनाई और तब से दान-पुण्य करने लगा और अपनी संपत्ति का आनंद लेने लगा।

इस विषय को समझाते हुए गुरु ने इस श्लोक को दोहराया:

इस प्रकार परियों द्वारा निर्देश दिया गया
राजा अपने मार्ग पर लौट गया।
शिकार करना बंद कर दिया और जरूरतमंदों को भोजन कराया।
और उन्होंने उन क्षणभंगुर दिनों का आनंद लिया।
उन्होंने दो और छंद जोड़े:

परियों से सबक लें:
और झगड़ा मत करो, बल्कि अपने आचरण में सुधार करो।
अन्यथा तुम परी की तरह कष्ट भोगोगे।
अपने जीवन भर की अपनी ही गलती।
परियों से सबक लें:
और आपस में झगड़ा मत करो, बल्कि अपने तौर-तरीकों को सुधारो।
अन्यथा तुम परी की तरह कष्ट भोगोगे।
तुम्हारे सारे दिन तुम्हारी अपनी ही गलती के होंगे।"
तथागत (बुद्ध) की सलाह सुनकर मल्लिका देवी अपने पलंग से उठीं और हाथ जोड़कर आदरपूर्वक प्रणाम करते हुए अंतिम श्लोक का पाठ किया।

"पवित्र पुरुष, स्वेच्छा से"
मुझे आपके शब्द बहुत अच्छे और दयालु लगे।
आप पर ईश्वर की कृपा बनी रहे! आपने सही कहा।
मेरे सारे दुख पीछे छूट गए हैं।
इसके बाद कोसला का राजा उसके साथ सौहार्दपूर्ण ढंग से रहने लगा।

यह प्रवचन समाप्त होने पर, गुरु ने जन्म का वर्णन किया: "उस समय कोसल के राजा परी थे, देवी मल्लिका उनकी साथी थीं, और मैं स्वयं राजा भल्लतिया था।"

फुटनोट:

(1) राजा पसेनादि (प्रसेनाजित) और इस "भिखारी-दासी" की सुंदर कहानी संख्या 306

(2) दिए गए नाम मल्लमगिरि, टिकुटा, पंडारक हैं।

(3) va के लिए ti पढ़ना

(4) अनुवाद में दिए गए फूल, मूल पाठ में उल्लिखित फूलों से भिन्न हैं, जो गर्व से अंग्रेजी कविता को चुनौती देते हैं। उनमें से कुछ हैं: अलंगियम हेक्सापेटालम, गार्टनेरा रेसमोसा, कैसिया फिस्टुला, बिगोनिया सुवेओलेंस, विटेक्स निगुंडो, शोरिया रोबस्टा।

(5) टेरोस्पर्मम एसरीफोलियम.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सोमनस्सा-जातक**
स्रोत : डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित

पिछला <<<<-----||-505-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 505
सोमनस्सा-जातक

“तुम्हें किसने हानि पहुँचाई, इत्यादि”—यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, कि कैसे देवदत्त ने उन्हें जान से मारने की कोशिश की। फिर गुरु ने कहा, “भाइयों (भिक्षुओं), यह पहली बार नहीं है कि देवदत्त ने मुझे मारने की कोशिश की है, बल्कि उसने पहले भी ऐसा ही किया था।” फिर उन्होंने उन्हें अतीत की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, कुरु राज्य और उत्तरा पंचाल नगर में रेणु नामक राजा का शासन था। उस समय हिमालय में पाँच सौ अन्य तपस्वियों के साथ एक महारक्षित तपस्वी रहते थे। नमक और मसाले लेने के लिए वे उत्तरा पंचाल आए और राजमहल में ठहरने लगे। अपने अनुयायियों के साथ भिक्षा माँगते हुए वे राजा के द्वार पर पहुँचे। राजा ने उन तपस्वियों को देखकर उनका व्यवहार प्रसन्न हुआ और उन्हें एक भव्य मंच पर बैठने के लिए आमंत्रित किया तथा उन्हें उत्तम भोजन कराया। फिर उन्होंने उनसे वर्षा ऋतु में अपने राजमहल में रहने का अनुरोध किया। वे उनके साथ राजमहल में गए, उन्हें रहने के लिए स्थान दिए, उन्हें संन्यासी जीवन के लिए आवश्यक वस्तुएँ प्रदान कीं और उनसे विदा ली। इसके बाद उन सभी ने राजमहल में भोजन किया। राजा निःसंतान थे और पुत्रों की कामना करते थे, परन्तु उन्हें कोई पुत्र जन्म नहीं हुआ।

वर्षा ऋतु समाप्त होने पर महारक्षित ने कहा, "अब हिमालय क्षेत्र सुहावना है; चलो वहीं लौट चलें।" फिर उन्होंने राजा से विदा ली, जिन्होंने उनका पूर्ण आदर और उदारता से स्वागत किया, और प्रस्थान किया। दोपहर के समय यात्रा के दौरान वे मुख्य मार्ग छोड़कर अपने लोगों के साथ एक छायादार वृक्ष के नीचे नरम घास पर बैठ गए। तपस्वी बातें करने लगे। उन्होंने कहा, "राजमहल में कोई पुत्र नहीं है जो वंश को आगे बढ़ा सके। यदि राजा को पुत्र हो जाए और वंश आगे बढ़े तो यह सौभाग्य की बात होगी।" उनकी बातें सुनकर महारक्षित ने सोचा, "क्या राजा को पुत्र होगा या नहीं?" उन्हें आभास हुआ कि राजा को पुत्र होगा, और उन्होंने कहा, "चिंता न करें, महाराज; आज रात भोर में देवताओं का पुत्र (देवदूतों का पुत्र) अवतरित होगा और रानी की पत्नी उसे गर्भ धारण करेंगी।" एक पाखंडी तपस्वी ने यह सुना और सोचा, "अब मैं राजपरिवार का विश्वासपात्र बनूंगा।" जब तपस्वियों के जाने का समय आया, तो वह लेट गया और बीमार होने का नाटक करने लगा। "चलो, हम चलते हैं," उन्होंने कहा। "मैं नहीं चल सकता," उसने कहा। महाराज को समझ में आया कि वह क्यों लेटा हुआ है। "जब तुम चल सको, तब हमारे पीछे आना," उन्होंने कहा और बाकी ऋषियों के साथ हिमालय की ओर चल दिए।

अब वह धूर्त जितनी तेज़ी से हो सकता था भागा और महल के द्वार पर खड़े होकर यह संदेश भेजा कि महारक्षित का एक सेवक आया है। राजा ने उसे तुरंत बुलाया और वह चबूतरे पर जाकर उस आसन पर बैठ गया जो उसे दिखाया गया था। राजा ने उसका अभिवादन किया और एक तरफ बैठकर ऋषियों के स्वास्थ्य के बारे में पूछा। "तुम बहुत जल्दी लौट आए," उन्होंने कहा; "तुम्हारी इतनी जल्दी वापसी का क्या कारण है?" "हे महामहिम," उसने उत्तर दिया, "जब सभी ऋषि आराम से एक साथ बैठे थे, तो वे कहने लगे कि यदि राजा को पुत्र हो, तो यह कितना बड़ा सौभाग्य होगा, जिससे उनका वंश आगे बढ़ेगा। यह सुनकर मैं सोचने लगा कि क्या राजा को पुत्र होगा या नहीं; तभी मुझे दिव्य दृष्टि से देवताओं (देवदूतों) का एक शक्तिशाली पुत्र दिखाई दिया, और मैंने देखा कि वह पृथ्वी पर उतरने वाला है, ताकि वह आपकी रानी पत्नी सुधम्मा से गर्भ धारण कर सके। तब मैंने सोचा, यदि उन्हें पता नहीं चला, तो वे गर्भ में पल रहे बच्चे को नष्ट कर देंगे, इसलिए मुझे उन्हें बताना ही होगा; और आपको यह समाचार देने के लिए, हे राजा, मैं आया हूँ। अब मैंने बता दिया है, मुझे वापस जाने दीजिए।" "नहीं, नहीं, मित्र," राजा ने कहा, "ऐसा नहीं होना चाहिए"; और अत्यंत प्रसन्न होकर उन्होंने उस धूर्त को अपने उद्यान में ले आए और उसके रहने के लिए एक स्थान दिया। तब से वह राजा के घर में रहने लगा और वहीं भोजन प्राप्त करता था, और उसका नाम दिब्बचक्खुका, दिव्य दृष्टि वाला पुरुष, पड़ गया।

फिर बोधिसत्व तैंतीस के स्वर्ग से नीचे आए और वहीं उनका गर्भ धारण हुआ; और जब उनका जन्म हुआ तो उन्हें सोमनस्स कुमार, यानी आनंद के राजकुमार का नाम दिया गया और उनका पालन-पोषण राजकुमारों की तरह किया गया।

अब उद्यान के एक कोने में वह पाखंडी तपस्वी सब्जियां, जड़ी-बूटियां और बेलें उगाता था और उन्हें बाज़ार के बागवानों को बेचकर बहुत धन कमाता था। जब बोधिसत्व सात वर्ष के थे, तब सीमावर्ती क्षेत्र में विद्रोह हो गया। राजा उसे शांत करने के लिए निकले और तपस्वी दिब्बचक्खुका को राजकुमार के हवाले कर दिया, साथ ही यह आदेश भी दिया कि उसकी उपेक्षा न करें। एक दिन राजकुमार तपस्वी से मिलने गए। उन्होंने देखा कि वह दोनों पीले वस्त्र, ऊपरी और निचले, बांधे हुए थे, प्रत्येक हाथ में पानी का घड़ा लिए अपने पौधों को पानी दे रहे थे। उन्होंने सोचा, "यह पाखंडी तपस्वी, तपस्वी का कर्तव्य निभाने के बजाय माली का काम कर रहा है।" फिर उन्होंने पूछा, "क्या कर रहे हो, माली, सांसारिक?" इस प्रकार उन्होंने उसे लज्जित किया और बिना प्रणाम किए ही चले गए। राजकुमार ने सोचा, "अब मैंने इस व्यक्ति को अपना शत्रु बना लिया है। कौन जाने यह क्या करेगा? मुझे इसका तुरंत अंत करना होगा।"

राजा के लौटने के समय के आसपास, उस व्यक्ति ने अपनी पत्थर की बेंच एक तरफ फेंक दी, अपना पानी का घड़ा तोड़ दिया, अपनी झोपड़ी में घास बिखेर दी, अपने पूरे शरीर पर तेल मल लिया, झोपड़ी में गया और अपने पुआल के गद्दे पर सिर समेत लिपटकर लेट गया, मानो उसे बहुत दर्द हो रहा हो। राजा लौटा और शहर का सीधा चक्कर लगाया। लेकिन अपने घर में प्रवेश करने से पहले, वह अपने मित्र दिब्बाचक्खुका से मिलने गया। झोपड़ी के द्वार पर खड़े होकर उसने देखा कि सब कुछ अस्त-व्यस्त है, और यह सोचकर अंदर गया कि क्या बात है। वहाँ वह व्यक्ति लेटा हुआ था। राजा ने उसके पैर छुए और पहली पंक्ति दोहराई:

"किसने आपको हानि पहुंचाई है या आपका अपमान किया है?"
   तुम पीड़ा में क्यों दुखी होते हो?
अब किनके माता-पिता को शोक मनाना पड़ेगा?
   यहां फर्श पर कौन लेटा है?
इस पर वह धोखेबाज कराहते हुए उठा और दूसरा छंद बोला:

तुम्हें देखकर मुझे बहुत खुशी होती है
   हे राजा, यद्यपि आप लंबे समय से अनुपस्थित हैं!
 आपका बेटा, जो मेरे पास आया था,
   बिना किसी उकसावे के यह अन्याय हुआ।"
निम्नलिखित श्लोकों का संबंध स्पष्ट है; इन्हें उचित क्रम में व्यवस्थित किया गया है।

"जल्लादों, क्या हाल है!"
सेवको, अपनी तलवारें उठाओ और जाओ।
राजकुमार सोमनासा की हत्या कर दी गई।
यहां उसका पवित्र सिर लाओ!
"राजकीय दूत आगे बढ़े और राजकुमार से पुकार कर बोले--"
"महाराज ने तुम्हें पदच्युत कर दिया है; और हे राजकुमार, तुम्हें मरना होगा!"
"वहाँ राजकुमार शोक में खड़ा है,"
हाथ जोड़कर कृपा की कामना करना:

मुझे अभी कुछ समय के लिए बख्श दो, और मुझे ले आओ।
मैं राजा को देखने के लिए जीवित रहूंगा!
उन्होंने उसकी प्रार्थना सुनी, और सेवक उसके पुत्र को राजा के पास ले गए।
उसने दूर से अपने पिता को देखा और उनसे कहा:
"अपने आदमियों को तलवार उठाने और मारने दो,"
कृपया पहले मेरी बात सुन लें!
हे महान सम्राट! मुझे यह बताइए--
मैंने क्या गलती की है?
राजा ने उत्तर दिया, "उच्च पद बहुत नीचे गिर गया है: तुम्हारी गलती बहुत बड़ी है," और इसे इस श्लोक में समझाया:

वह सुबह और शाम को पानी भरता है।
बिना रुके आग को संभाले रखता है।
क्या तुम इस आदमी को पवित्र कहने की हिम्मत करते हो?
दुनियादार? अगर जवाब दे सकते हो तो दो!
"मेरे स्वामी," राजकुमार ने कहा, "यदि मैं किसी सांसारिक को सांसारिक कहूँ तो क्या हानि होगी!" और उसने एक श्लोक दोहराया:

उसके पास पेड़ और फल हैं।
और, मेरे प्रभु, सभी प्रकार की जड़ें,
वह उनकी निरंतर देखभाल करता है:
तो फिर वो दुनियादारी जानता है, मैं कहता हूँ।
“और यही कारण है,” उन्होंने आगे कहा, “कि मैंने उसे सांसारिक कहा। यदि आपको मेरी बात पर विश्वास नहीं है, तो चारों द्वारों पर स्थित सब्जी विक्रेताओं से पूछ लीजिए।” राजा ने पूछताछ की। उन्होंने कहा, “जी हाँ, हम उससे सब्जियाँ और सभी प्रकार के फल खरीदते हैं।” जब उन्हें इस सब्जी के कारोबार का पता चला, तो उन्होंने इसकी सूचना दी। राजकुमार के लोग उस व्यक्ति की झोपड़ी में गए और रुपये और छोटे सिक्कों का एक गड्डा, हरी सब्जियों की कीमत, राजा को दिखाया। तब राजा को पता चला कि महान व्यक्ति निर्दोष है, और उन्होंने एक श्लोक कहा:

"यह सच था कि पेड़ और जड़ें
उसके पास कई फलों सहित बहुत कुछ था।
असीम देखभाल के साथ,
जैसा कि आपने कहा, सांसारिक।
तब उस महान प्राणी ने सोचा, "जब तक ऐसा अज्ञानी मूर्ख राजा के परिवार में है, तब तक सबसे अच्छा यही होगा कि वह हिमालय जाकर संन्यासी जीवन अपना ले। पहले मैं यहाँ एकत्रित सभी लोगों के सामने उसके पाप का खुलासा करूँगा, और फिर आज ही जाकर संन्यासी बन जाऊँगा।" अतः उसने सभी को प्रणाम करते हुए कहा,

"मेरी पुकार सुनो,"
सभी ग्रामीण और शहरी निवासी:
इस मूर्ख की सलाह पर राजा ने
निर्दोष लोगों को भी मौत के घाट उतार दिया जाएगा।
यह कहकर उन्होंने अगले छंद में ऐसा करने की अनुमति मांगी:

"तुम एक बलवान, विस्तृत रूप से फैले हुए वृक्ष हो,"
मैं तुममें लीन एक शाखा की तरह हूं,
मैं आपसे यहाँ निवेदन करता हूँ, झुककर,
दुनिया को छोड़कर चले जाओ!
निम्नलिखित छंदों में राजा और उसके पुत्र के बीच हुई बातचीत का वर्णन है।

"राजकुमार, अपनी संपत्ति का आनंद लें।"
और कुरु सिंहासन पर आसीन हों।
दुनिया को मत छोड़ो, लाने के लिए

अपने आप पर शोक करो—राजा बनो!
"यह दुनिया किस प्रकार का आनंद दे सकती है?"
जब मैं स्वर्ग में रहता था
वहाँ दृश्य, ध्वनियाँ और गंध थीं।
स्वाद और स्पर्श (*1), दिल खूब प्यार करता है!
"स्वर्ग के आनंद और दिव्य अप्सराएँ,
मैंने उन चीजों का त्याग कर दिया जो कभी मेरी थीं।
आप जैसे कमजोर राजा के साथ
मैं अब और नहीं रुकूंगा।
"यदि मैं मूर्ख-कमजोर हूँ, मेरे बेटे,
इस बार मुझे मेरे किए के लिए क्षमा कर दीजिए।
और अगर मैं वही काम दोबारा करूं,
आप जो चाहें करें, मुझे कोई शिकायत नहीं होगी।
इसके बाद उस महान प्राणी ने राजा को संबोधित करते हुए आठ छंदों को दोहराया।

"एक विचारहीन कार्य, या बिना पूर्वचिंता के किया गया कार्य,
किसी दवा के असफल होने की तरह, यह मामला भी गंभीर होना चाहिए।
"एक विचारपूर्ण कार्य, जिसमें सावधानीपूर्वक नीति का पालन किया जाता है,"
किसी सफल दवा की तरह, समस्या भी अच्छी होनी चाहिए।
"मैं आलसी, कामुक और उदासीन व्यक्ति से घृणा करता हूँ।"
झूठा तपस्वी एक धोखेबाज प्रतियोगिता है;
एक दुष्ट राजा बिना सुने ही किसी मामले का फैसला कर देगा;
एक ऋषि का क्रोध कभी भी उचित नहीं ठहराया जा सकता।
योद्धा राजकुमार सावधानीपूर्वक विचार करता है और सोच-समझकर निर्णय लेता है:
जब राजा अपने निर्णय को अच्छी तरह समझते हैं, तो उनकी प्रसिद्धि हमेशा के लिए जीवित रहती है (*2)।
"राजाओं को सावधानीपूर्वक दंड देना चाहिए।"
जल्दबाजी में किए गए कार्यों के लिए उन्हें फुर्सत में पछतावा होगा।
क्या हृदय में अच्छे संकल्प होते हैं?
देर से किए गए पश्चाताप से उसे कोई कड़वी पीड़ा नहीं मिलती।
जो लोग ऐसे कर्म करते हैं जिनसे पश्चाताप नहीं होता,
हर एक चीज का सावधानीपूर्वक मूल्यांकन करते हुए,
जो अच्छा है उसे प्राप्त करो, और जो तुम्हें संतुष्टि दे वह करो।
पवित्र लोग बुद्धिमानों की स्वीकृति प्राप्त करते हैं।
"हे मेरे जल्लादों!" तुम चिल्लाए,
"जाओ मेरे बेटे को ढूंढो, और जहाँ वह मिले, उसे मार डालो!"
मैं अपनी माँ के बगल में बैठा था
उन्होंने मुझे ढूंढ लिया और बेरहमी से घसीटकर ले गए।
"एक कोमल शिशु, जिसके साथ इस तरह का व्यवहार किया जाता है,"
मुझे उनका क्रूर व्यवहार बहुत दर्दनाक लगा।
आज एक क्रूर विनाश से मुक्ति मिली
मैं इस दुनिया को छोड़कर चला जाऊंगा और इसमें फिर कभी नहीं जिऊंगा।
जब उस महान व्यक्ति ने इस प्रकार प्रवचन दिया, तो राजा ने अपनी रानी से कहा,

"तो मेरे छोटे बेटे सुधम्मा ने मुझे मना कर दिया,"
राजकुमार सोमानासा, कोमल और दयालु।
अब चूंकि मैं आज अपना लक्ष्य प्राप्त नहीं कर सकता,
आपको खुद देखना होगा कि क्या आप उसका मन बदल सकते हैं।
लेकिन इस श्लोक में उसने उससे संसार का त्याग करने का आग्रह किया:

"हे पुत्र, पवित्र जीवन ही तुम्हारा सुख हो!"
संसार का त्याग करो, धर्म के मार्ग पर दृढ़ रहो:
जो सभी प्राणियों में से किसी के प्रति क्रूर नहीं है,
अंत में निर्दोष लोग ब्रह्मा के लोक में पहुँचेंगे।
फिर राजा ने एक श्लोक दोहराया:

"यह एक आश्चर्य की बात है जो मैं आपसे सुन रहा हूँ।"
मुझ पर दुखों का अंबार लगता जा रहा है।
मैंने आपसे हमारे बेटे को रुकने के लिए मनाने को कहा था।
तुम तो उसे और जल्दी जाने के लिए उकसा रहे हो।"
रानी ने फिर से एक श्लोक दोहराया:

"ऐसे लोग भी हैं जो पाप और दुःख से मुक्त जीवन जीते हैं।"
निर्दोष, और जो निर्वाण की ऊँचाई को प्राप्त करते हैं:
यदि राजकुमार उनके नेक मार्ग पर चलता तो
अपने साथी को उससे दूर रखना स्वार्थीपन है।
उत्तर में राजा ने अंतिम श्लोक का पाठ किया:

"बुद्धिमानों का सम्मान करना निःसंदेह अच्छा है।"
जिनमें गहन ज्ञान और उच्च विचार उत्पन्न होते हैं।
रानी ने उनकी बातें सुनी हैं और उनकी परंपरा को समझा है।
उसे अब कोई दर्द महसूस नहीं होता और न ही उसकी कोई इच्छा बची है।"
तब उस महान पुरुष ने अपने माता-पिता को प्रणाम किया और उनसे क्षमा मांगी यदि उन्होंने कोई गलती की हो, और समूह को आदरपूर्वक प्रणाम करते हुए हिमालय की ओर मुख कर लिया। जब लोग लौट आए, तो वे मानव रूप में आए देवताओं के साथ सात पर्वत श्रृंखलाओं को पार करते हुए हिमालय पहुंचे। स्वर्ग के वास्तुकार विश्वकर्मा द्वारा निर्मित एक पर्णपाती में उन्होंने संन्यासी जीवन व्यतीत किया और सोलह वर्ष की आयु तक देवताओं के एक शाही समूह ने उनकी सेवा की। परन्तु उस कपटी तपस्वी पर भीड़ ने हमला कर दिया और उसे पीट-पीटकर मार डाला। उस महान पुरुष ने समाधि की साधना की और ब्रह्मा के स्वर्ग (देवदूतों के स्वर्ग) में जाने का निश्चय किया।

यह प्रवचन समाप्त होने पर, गुरु ने कहा, "इस प्रकार, हे भिक्षुओं, उसने पूर्व में भी मुझे मारने का प्रयास किया था, जैसा कि अब कर रहा है," और फिर उन्होंने जन्म का विवरण दिया: "उस समय देवदत्त धोखेबाज था, महामाया (बुद्ध की दिवंगत जन्म माता) माता थी, सारिपुत्र रक्षित था, और मैं स्वयं राजकुमार सोमनस्सा था।"

फुटनोट:

(1)passehi संभवतः phassehi (स्पर्श की वस्तुएँ) के लिए है: rupa आँख से मेल खाता है।

(3) ये दोनों पंक्तियाँ क्रमांक 306 में आती हैं

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कैम्पेय्य-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-506-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 506
कैम्पेय्य-जातक

“यह किसके समान है,” इत्यादि — यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए व्रतों के बारे में सुनाई थी। गुरु ने कहा, “हे भिक्षुओं, आपने व्रतों का व्रत लेकर अच्छा कार्य किया है। प्राचीन काल के ज्ञानी पुरुषों ने भी नागराज होने का गौरव त्याग दिया था और इन व्रतों का पालन करते हुए जीवन व्यतीत किया था।” फिर उनके अनुरोध पर उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब अंग राज्य में अंग राजा थे और मगध राज्य में मगध राजा थे, अंग और मगध राज्यों के बीच चंपा नामक एक नदी थी, जहाँ सर्प रहते थे और यहाँ सर्प राजा चंपेय्या का राज था।

कभी मगध राजा अंग देश पर विजय प्राप्त करता था, कभी अंग राजा मगध पर। एक दिन मगध राजा अंग से युद्ध में पराजित होकर घोड़े पर सवार होकर भागने लगा, अंग के योद्धा उसका पीछा कर रहे थे। जब वह चंपा नदी के पास पहुँचा, तो नदी में बाढ़ आई हुई थी। परन्तु उसने कहा, “शत्रु हाथों मरने से बेहतर है इस नदी में डूबकर मरना!” फिर वह और उसका घोड़ा नदी में कूद पड़े।

नागराज कैम्पेय ने जलमग्न एक रत्नजड़ित मंडप बनवाया था; और उस समय वह अपने दरबार में गहरे भोज में मग्न था। लेकिन राजा और उसका घोड़ा नागराज के ठीक सामने नदी में कूद पड़े। नागराज ने इस भव्य राजा को देखकर उस पर मोहित हो गया। वह अपने सिंहासन से उठकर राजा को अपने सिंहासन पर बैठाया और उससे कहा कि वह किसी बात से न डरे, और पूछा कि वह जलमग्न क्यों हुआ। राजा ने उसे सब कुछ सच-सच बता दिया। तब नागराज ने कहा, "हे महान राजा, डरो मत! मैं तुम्हें दोनों राज्यों का स्वामी बनाऊँगा।" इस प्रकार उसने राजा को सांत्वना दी और सात दिनों तक उसका उच्च सम्मान किया। सातवें दिन वह राजा मगध के साथ नागमहल से निकल गया। फिर नागराज की शक्ति से राजा मगध ने राजा अंग को वश में कर लिया और उसे मार डाला, और दोनों राज्यों पर संयुक्त रूप से शासन किया। उस समय से राजा और नागराज के बीच दृढ़ संबंध स्थापित हो गया। वह वर्ष दर वर्ष कैम्पा नदी के किनारे एक रत्नजड़ित मंडप का निर्माण करवाता था और भारी खर्च पर सर्पराज को भेंट चढ़ाता था: सर्पराज अपने महल से सेवकों के एक बड़े समूह के साथ भेंट स्वीकार करने आता था, और सभी लोग सर्पराज की महिमा देखते थे।

उस समय बोधिसत्व एक गरीब परिवार से थे और राजा के लोगों के साथ नदी किनारे जाया करते थे। वहाँ सर्पराज की महिमा देखकर वे उसके प्रति ललचा गए; और इसी लालसा (*1) में उनका अवतरण हो गया। सर्पराज चम्पेय की मृत्यु के सात दिन बाद, बोधिसत्व ने दान देकर और सदाचारी जीवन व्यतीत करते हुए अपने महल में अपने पलंग पर जन्म लिया: उनका शरीर चमेली की एक बड़ी माला के समान था। जब उन्होंने इसे देखा, तो वे पश्चाताप से भर गए। उन्होंने कहा, “मेरे अच्छे कर्मों के फलस्वरूप, मेरे पास छह प्रमुख इंद्रियों (*2) में शक्ति संचित है, जैसे अन्न भंडार में अनाज संचित होता है। लेकिन देखो, मैं इस सरीसृप रूप में जन्मा हूँ; मुझे जीवन की क्या परवाह!” और इस प्रकार उन्होंने आत्महत्या करने का विचार किया। लेकिन सुमना नाम की एक युवा नागनी ने उसे देखकर बाकी नागियों को आगे बढ़कर कहा, "यह अवश्य ही साक्का (इंद्र) होंगे, जो शक्ति में महान हैं और यहीं हमारे यहाँ जन्म लिए हैं!" तब वे सभी आए और अपने हाथों में तरह-तरह के वाद्ययंत्र लिए उन्हें भेंट अर्पित की। उनका वह नाग महल मानो साक्का (इंद्र) का महल बन गया, मृत्यु का विचार उनके मन से निकल गया: उन्होंने अपना नाग रूप त्याग दिया और भव्य वस्त्रों और आभूषणों से सुसज्जित पलंग पर बैठ गए। उस समय से उनका वैभव महान हो गया और उन्होंने नागों पर शासन किया। एक बार फिर उन्हें पश्चाताप हुआ, यह सोचकर, "मुझे इस नाग रूप की क्या परवाह? मैं उपवास के व्रतों का पालन करूँगा और यहीं से अपने आप को मुक्त करूँगा, मनुष्यों के बीच जाऊँगा, सत्य का ज्ञान प्राप्त करूँगा और कष्टों का अंत करूँगा।" लेकिन बाद में भी वे उसी महल में उपवास के व्रतों का पालन करते रहे, और जब रंग-बिरंगे वस्त्रों से सजी युवा नागनी उनके आसपास आईं, तो उन्होंने अपने सदाचार के नियम का उल्लंघन किया। उसके बाद वह महल से निकलकर पार्क में चला गया, लेकिन वे लोग उसके पीछे-पीछे वहाँ भी आ गए, और उसका व्रत पहले की तरह टूट गया। तब उसने सोचा: "मुझे यह महल छोड़कर मनुष्यों की दुनिया में जाना होगा, और वहाँ मुझे उपवास के व्रतों का पालन करना होगा।" इसलिए उपवास के दिनों में वह महल से निकलकर एक सीमावर्ती गाँव के पास, मुख्य सड़क के किनारे चींटियों के ढेर पर लेट गया। उसने कहा, "जो कोई मेरी खाल या मेरे शरीर का कोई भी हिस्सा चाहता है, वह ले ले; या यदि कोई मुझे नाचता हुआ साँप बनाना चाहता है, तो वह मुझे वैसा बना दे।" इस प्रकार उसने अपना शरीर दान कर दिया, और अपना फन समेटकर वहीं लेटकर उपवास के व्रतों का पालन किया।

राजमार्ग पर आने-जाने वाले लोग उसे देखकर सुगंध और इत्र से उसकी पूजा करते थे। उस सीमावर्ती गाँव के निवासी उसे महान शक्ति का सर्प राजा मानकर उसके ऊपर एक मंडप बनाते, उसके सामने रेत बिछाते और सुगंध और इत्र से उसकी पूजा करते थे। अब लोग उसकी सहायता से पुत्र प्राप्ति की कामना करने लगे, क्योंकि वे उस महान सत्ता में आस्था रखते थे और उसकी पूजा करते थे। वह महान सत्ता अर्धचंद्र के चौदहवें और पंद्रहवें दिन चींटियों के ढेर पर लेटकर उपवास रखता था; और अर्धचंद्र के पहले दिन अपने महल में लौट जाता था; और इस प्रकार अपने व्रतों को पूरा करते हुए समय बीतता गया।

एक दिन उनकी पत्नी सुमना ने उनसे कहा, “हे स्वामी, आप व्रत रखने के लिए मनुष्यों के बीच जाने के आदी हैं। मनुष्यलोक खतरनाक और भय से भरा है। मान लीजिए आप पर कोई संकट आ जाए, तो मुझे अभी बताइए कि मुझे किस संकेत से इसकी जानकारी होगी।” तब उस महान प्राणी ने उन्हें एक शुभ तालाब के किनारे ले जाकर कहा, “यदि कोई मुझे मारे या मुझे चोट पहुँचाए, तो इस तालाब का पानी मटमैला हो जाएगा। यदि कोई बगुला मुझे उठा ले जाए, तो पानी गायब हो जाएगा। यदि कोई सपेरा मुझे पकड़ ले, तो पानी खून के रंग का हो जाएगा।” इन तीन संकेतों का अर्थ समझाने के बाद, वे अपने महल से चौदहवें दिन का व्रत रखने के लिए निकले, और चींटियों के ढेर पर लेट गए, जिससे उनके शरीर की चमक से चींटियों का ढेर प्रकाशित हो गया। उसका शरीर शुद्ध चांदी की कुंडली की तरह सफेद था, उसका सिर लाल ऊन के गोले जैसा था: अब इस जन्म में बोधिसत्व का शरीर हल के सिर की तरह मोटा था, भूरिदत्त जन्म (*3) में जांघ की तरह मोटा था, शंखपाल जन्म (*4) में आउट्रिगर वाली गर्त-कश्ती की तरह बड़ा गोल था।

उन दिनों बनारस का एक युवक तक्षशिला में विश्वप्रसिद्ध गुरु के चरणों में अध्ययन करने आया था, जिनसे उसने सभी इंद्रियों को वश में करने का मंत्र सीखा था। घर लौटते समय, उसे अचानक एक महान प्राणी दिखाई दिया। उसने सोचा, "मैं इस सर्प को पकड़ूंगा और इसे नगर, गाँव और राजमहल में नचाऊंगा और खूब धन कमाऊंगा।" फिर उसने कुछ जादुई जड़ी-बूटियाँ प्राप्त कीं और मंत्र का जाप करते हुए सर्प के पास पहुँचा। मंत्र की ध्वनि सुनते ही, महान प्राणी को ऐसा लगा जैसे उसके कान जलते हुए टुकड़ों से छेद दिए गए हों, और उसका सिर तलवार के प्रहार से टूट गया हो। "यह क्या हो रहा है!" उसने सोचा; सिर से फन हटाकर उसने देखा कि वह सपेरा है। फिर उसने सोचा, "मेरा विष शक्तिशाली है, और यदि मैं क्रोधित होकर अपनी नाक से निकलने वाली श्वास (*5) उस पर डालूँ तो उसका शरीर भूसे की मुट्ठी भर के समान चूर-चूर हो जाएगा; तब मेरा पुण्य नष्ट हो जाएगा। मैं उसकी ओर नहीं देखूँगा।" आँखें बंद करके उसने अपना सिर फन के भीतर कर लिया। ब्राह्मण सपेरे ने एक जड़ी बूटी खाई, अपना मंत्र दोहराया, और उस पर थूका: जड़ी बूटी और मंत्र के प्रभाव से, जहाँ-जहाँ थूक लगा, वहाँ त्वचा पर सूजन आ गई। फिर उस व्यक्ति ने उसकी पूंछ पकड़ ली, उसे घसीटा, और उसे पूरी लंबाई में लिटा दिया: उसने बकरी के पैर के डंडे से उसे तब तक दबाया जब तक वह कमजोर नहीं हो गया, फिर उसका सिर कसकर पकड़कर उसे जोर से कुचल दिया। महान प्राणी ने अपना मुँह चौड़ा खोला; उस व्यक्ति ने उसमें थूक डाला, और जड़ी बूटी और मंत्र के प्रभाव से उसके दाँत टूट गए; मुँह खून से भर गया। लेकिन महान प्राणी को अपने पुण्य के नष्ट होने का इतना भय था कि उसने यह सारी यातना सहन की और उसकी ओर देखने के लिए एक आँख तक नहीं खोली। तब उस आदमी ने कहा, "मैं इस राजसी सर्प को कमजोर कर दूंगा!" उसने सर्प के शरीर को पूंछ से सिर तक ऐसे निचोड़ा मानो उसकी हड्डियों को चूर-चूर कर देगा। फिर उसने उसे कपड़े में लपेटा, रस्सी से रगड़ा, पूंछ से पकड़ा और रुई से मारा (*6)। महापुरुष का शरीर खून से लथपथ था और वह बहुत पीड़ा में था। सर्प को कमजोर देखकर उस आदमी ने सीप की टोकरी बनाई और उसमें सर्प को रख दिया। फिर वह उसे गांव ले गया और भीड़ के सामने उसका प्रदर्शन करवाया। काला हो या नीला, गोल हो या चौकोर, छोटा हो या बड़ा—ब्राह्मण जो चाहे, महापुरुष वही करता, नाचता, अपना फन फैलाता मानो सैकड़ों या हजारों की संख्या में हो (*7)। लोग इतने प्रसन्न हुए कि उन्होंने बहुत सारा पैसा दिया: एक दिन में वह हजार रुपये और हजार रुपये की वस्तुएँ ले लेता था। पहले तो उस आदमी का इरादा था कि जब वह हजार रुपये कमा लेगा तो उसे मुक्त कर देगा; लेकिन जब उसे वह मिल गया, तो उसने सोचा, "एक छोटे से सीमावर्ती गाँव में मैंने यह सब हासिल कर लिया है: राजाओं और दरबारियों से मैं कितना धन जीत सकता हूँ!" इसलिए उसने एक गाड़ी और एक आनंद रथ खरीदा, और गाड़ी में अपना सामान लाद दिया।जब वह रथ में बैठा था। इस प्रकार वह अपने अनुयायियों के साथ शहर और गाँव में घूमता रहा, महान हस्ती से प्रदर्शन करवाता रहा, और उसे बनारस के राजा उगसेना के सामने प्रदर्शित करने के इरादे से आगे बढ़ता रहा; और फिर राजा उसे जाने देगा।

वह मेंढकों को मारकर राजसी सर्प को खिलाता था। परन्तु सर्प हर बार खाने से इनकार कर देता था, ताकि उसके लिए किसी को मारा न जाए। तब उस व्यक्ति ने उसे शहद और भुट्टा दिया। परन्तु उस महान प्राणी ने इन्हें भी खाने से इनकार कर दिया; क्योंकि उसने सोचा, "यदि मैं भोजन कर लूँगा, तो मैं मरने तक इसी टोकरी में पड़ा रहूँगा।"

एक महीने के भीतर ब्राह्मण बनारस आ गया। वहाँ उसने नगर के प्रांगण में नाग का प्रदर्शन करवाकर खूब धन कमाया। राजा ने भी उसे बुलवाया और प्रदर्शन का आदेश दिया। उस व्यक्ति ने अगले दिन, जो कि अर्धमाह का अंतिम दिन था, प्रदर्शन करने का वादा किया। तब राजा ने शहर में ढोल बजवाकर यह घोषणा करवाई कि अगले दिन राजमहल के प्रांगण में एक शाही नाग नृत्य करेगा; लोग अपने-अपने स्थानों पर इकट्ठा होकर उसे देखें। अगले दिन राजमहल का प्रांगण सजाया गया और ब्राह्मण को बुलाया गया। वह एक चमकीले रंग के कालीन पर रत्नजड़ित टोकरी में उस महान प्राणी को लेकर आया, जिसे उसने नीचे रखा और स्वयं बैठ गया। राजा ऊपरी मंजिल से नीचे आया और लोगों की एक विशाल सभा के बीच अपने राजमहल पर बैठ गया। ब्राह्मण ने उस महान प्राणी को बाहर निकाला और उसे नृत्य करवाया। लोग अपनी जगह पर स्थिर नहीं रह सके: हजारों रूमाल हवा में लहराने लगे; बोधिसत्व के चारों ओर सातों प्रकार के रत्नों की वर्षा हुई।

सर्प को पकड़े हुए अब पूरा एक महीना बीत चुका था; और इस पूरे समय में उसने कुछ भी नहीं खाया था। अब सुमना सोचने लगी--

"मेरे प्यारे पति बहुत देर कर रहे हैं। एक महीना हो गया है उन्हें लौटे नहीं; आखिर क्या बात है?" तो वह गई और तालाब को देखा: देखो, पानी खून की तरह लाल था! तब उसे समझ आया कि उसे किसी सपेरे ने पकड़ लिया होगा। वह महल से आगे बढ़कर चींटियों के ढेर के पास गई; उसने वह जगह देखी जहाँ उसे पकड़ा गया था, और वह जगह जहाँ वह कष्ट भोग रहा था, और वह रो पड़ी। फिर वह सीमावर्ती गाँव गई और पूछताछ की; और सारी बात जानकर वह बनारस चली गई, और लोगों के बीच, महल के प्रांगण के ऊपर हवा में खड़ी होकर शोक मनाने लगी। महान देवता नाचते हुए ऊपर हवा में देखने लगे, और उसे देखकर शर्मिंदा होकर अपनी टोकरी में घुस गए, और वहीं लेट गए। जब वह टोकरी में घुसे, तो राजा चिल्लाए, "अब क्या बात है?" इधर-उधर देखते हुए, उन्होंने उसे हवा में तैरती हुई देखा, और पहला श्लोक पढ़ा:

"कौन है जो बिजली की तरह चमकता है, या किसी धधकते तारे की तरह?"
देवी या दानव? मुझे लगता है कि तुम बिल्कुल भी इंसान नहीं हो।
उनकी बातचीत निम्नलिखित छंदों में दी गई है:

न मैं देवी हूँ, न ही दानव, न ही कोई मानव, पराक्रमी राजा
"नाग प्रजाति की एक मादा, किसी खास काम से आई है।"
तुम क्रोध और रोष से भरे हुए दिखते हो।
तुम्हारी आँखों से आँसू बहते हैं:
   बताइए क्या गलत है या क्या इच्छा है
क्या आप मुझे यहाँ ला रही हैं, मैडम? मुझे पता है।
रेंगता हुआ सर्प, ज्वाला की तरह भयंकर!
तो उन्होंने उसे बुलाया: एक आया,
   उसने अपने लाभ के लिए उसे पकड़ लिया, महाराज:
मैं अपने स्वामी के लिए स्वतंत्रता का दावा करता हूँ!
"ऐसा भूखा प्राणी भला कैसे..."
क्या आप किसी शक्तिशाली प्राणी को पकड़ना चाहते हैं?
   नागों की पुत्री, कहो,
सांप की सही पहचान कैसे करें?
"उसकी शक्ति इतनी अधिक थी कि इस शहर को भी
वह जलकर राख हो सकता था।
   लेकिन वह पवित्र मार्ग से प्रेम करता है।
और वह मितव्ययिता की प्रसिद्धि चाहता है।"
तब राजा ने पूछा कि उस आदमी ने उसे कैसे पकड़ा। उसने निम्नलिखित छंद में उत्तर दिया:

"पवित्र दिनों (*8) पर शाही साँप
चारों रास्तों पर लिया जाता था
   पवित्र प्रतिज्ञाएँ: एक बाज़ीगर ने उसे पकड़ लिया।
मेरे पति को मेरी खातिर रिहा कर दो!
इन शब्दों के बाद उसने दो और छंद जोड़े, जिसमें उसने उसकी रिहाई की गुहार लगाई:

"देखो, सोलह हजार स्त्रियाँ गहनों और अंगूठियों से सजी हुई हैं।"
जल के नीचे रहने वाले लोग उसे अपना आश्रय और अपना राजा मानते थे।
"उसे न्यायपूर्वक, विनम्रता से मुक्त कर दो,"
सर्प स्वतंत्रता खरीदो,
   सोने के साथ, सौ गायों के साथ, एक गाँव के साथ:
इससे आपको जीत मिलेगी।
तब राजा ने तीन श्लोक पढ़े:

"अभी न्यायपूर्वक और धीरे से देखें"
मैं सर्पेंट लिबर्टी खरीदता हूँ
   सोने के साथ, सौ गायें, एक गाँव,

इससे मुझे जीत मिलेगी।
मैं तुम्हें एक रत्नजड़ित बाली और सौ ड्रैचम सोना देता हूँ।
सन के फूल से बना एक सुंदर सिंहासन, जिस पर चार-चार तकिए बिछे हुए हैं!
"एक बैल, सौ गायें, और तुम्हारे समान कुल की दो पत्नियाँ:
पवित्र सर्प को छोड़ दो: यह कर्म पुण्य सिद्ध होगा।
इस पर शिकारी ने उत्तर दिया:

"महाराज, मुझे कोई उपहार नहीं चाहिए।"
लेकिन अब सर्प को मुक्त जाने दो।
अतः अब मैं सर्प को मुक्त करता हूँ:
यह कर्म पुण्यकारी होगा।
इस भाषण के बाद उन्होंने महान प्राणी को टोकरी से बाहर निकाला। सर्पराज आगे बढ़े और एक फूल में घुस गए, जहाँ उन्होंने अपना रूप बदलकर एक भव्य वस्त्रधारी युवक का रूप धारण किया: वे वहाँ ऐसे खड़े थे मानो उन्होंने धरती को चीरकर बाहर आए हों। और आकाश से सुमना नीचे आए और उनके बगल में खड़े हो गए। सर्पराज ने राजा के प्रति आदरपूर्वक हाथ जोड़कर उनका सम्मान किया।

सब कुछ स्पष्ट करने के लिए, गुरु ने दो श्लोक पढ़े:

"नागराज कैम्पेयका ने अब मुक्त हो चुके राजा को संबोधित किया:
"हे काशी के राजा, पिता तुल्य स्वामी, अब आपको ही सर्वोपरि सम्मान!"
मैं आपको प्रणाम करता हूँ, घर लौटने से पहले आपसे मिलने जाता हूँ।
"अलौकिक प्राणी शायद
उनका कहना है कि इस पर विश्वास करना मुश्किल है।
हे सर्प, यदि तू सत्य बोलेगा,
तुम्हारा महल कहाँ है? रास्ता दिखाओ।
लेकिन उस महान सत्ता ने उसे विश्वास दिलाने के लिए, इन दो श्लोकों में इस प्रकार शपथ ली:

यदि हवा ऊंचे पहाड़ों को हिला दे,
आकाश से चंद्रमा और सूर्य गिर पड़ते हैं।
बहती नदियों के विपरीत दिशा में बहना,
हे राजा! मैं कभी झूठ नहीं बोल सकता।
आकाश फट जाए, सागर सूख जाए,
उदार धरती माता गड़बड़
क्रम्पलिंग (*9) रोल, उखड़ना माउंट मेरु,
फिर भी, हे राजा, मैं झूठ नहीं बोल सकता!
लेकिन इस आश्वासन के बावजूद, उसने उस महान सत्ता पर विश्वास नहीं किया और कहा--

"अलौकिक प्राणी शायद
उनका कहना है कि इस पर विश्वास करना मुश्किल है।
हे सर्प! यदि तू सत्य बोले तो!
तुम्हारा महल कहाँ है? रास्ता दिखाओ।
उन्होंने फिर से वही छंद दोहराया और आगे कहा, "तुम्हें मेरे द्वारा किए गए अच्छे कर्मों के लिए आभारी होना चाहिए: हालांकि, मुझे तुम्हें सही मानना चाहिए या नहीं, यह तो मुझे तय करना है।" अगले छंद में उन्होंने इसे स्पष्ट कर दिया:

"अत्यधिक विषैला, शक्ति से परिपूर्ण,"
झगड़े में तेज, चमकीला,
मैंने तुम्हें कारागार से मुक्त कराया है:
तब कृतज्ञता मेरा अधिकार है।"
उस महान सत्ता ने उसका विश्वास जीतने के लिए इस प्रकार शपथ ली:

जो धन्यवाद नहीं लौटाएगा,

खुशी को कभी सीखना नहीं चाहिए:
उसे टोकरीनुमा जेल में ही मरना चाहिए।
उसे भयानक नरक में जलना चाहिए!
अब राजा ने उसकी बात पर विश्वास किया और उसे इस प्रकार धन्यवाद दिया:

"चूंकि आपकी वह प्रतिज्ञा सत्य है,
क्रोध से दूर रहो और घृणा से बचो:
जैसे हम गर्मी में आग से भागते हैं,
"तुम्हारे पास से रॉक पक्षी भाग जाएं!" (*10)
उस महान सत्ता ने भी राजा को धन्यवाद देने के अर्थ में एक और श्लोक कहा:

"जैसे एक माँ करती।"
एक इकलौते, प्रिय पुत्र को,
आप सभी सर्पों के प्रति दयालु हैं:
हम आप सभी की सेवा करेंगे।
अब राजा सर्पों की दुनिया में जाने के लिए उत्सुक था, उसने आदेश दिया कि उसकी सेना को निम्नलिखित श्लोक में जाने के लिए तैयार किया जाए:

शाही रथों को जोड़ो और खड़े हो जाओ
प्रशिक्षित कंबोडियन खच्चर उपलब्ध हैं।
सुनहरे अलंकृत वस्त्रों में सजे हाथी:
हम सर्पों की भूमि की यात्रा करेंगे!
अगला श्लोक पूर्ण ज्ञान का है:

ढोल बजाओ, ढोल की थाप दो,
शंख और झांझ की ध्वनियाँ और झंकार,
शानदार मध्य में बहुत सी महिलाएं
देखो, राजा उगासेना आ रहे हैं।
जिस क्षण राजा ने नगर छोड़ा, उसी क्षण उस महान सत्ता ने अपनी शक्ति से सर्पलोक में सात बहुमूल्य वस्तुओं से बनी एक दीवार, द्वार-मीनारें प्रकट कीं और सर्पलोक तक जाने वाले मार्ग को भव्य रूप से सुशोभित किया। इसी मार्ग से राजा अपने अनुयायियों के साथ महल में प्रवेश किया और वहाँ महलों से सुसज्जित एक रमणीय स्थान देखा।

इस बात को समझाते हुए गुरु ने कहा:

काशी के स्वामी ने देखा कि धरती सुनहरी रेत से ढकी हुई है।
चारों ओर मूंगे के सुंदर फूल बिखरे हुए हैं, हर तरफ सोने के टावर हैं।
"तब राजा कैम्पेय्या के दिव्य महलों में प्रवेश कर गया,
जो पीतल की वज्र (*11) या लाल सूरज की तरह चमकता था।
"राजा ने कैम्पेय्या के महलों में प्रवेश किया:
हजारों सुगंध हवा में घुल जाती हैं, हजारों पेड़ छाया प्रदान करते हैं।
"जैसे ही राजा ने कैम्पेय्या के महल में कदम बढ़ाया,
दिव्य वीणाओं ने मधुर संगीत रचा, सुंदर नाग-स्त्रियों ने नृत्य किया।
उन्हें सोने की कुर्सी दिखाई जाती है
गद्देदार और सैंडल की तरह सुंदर,
जहां सुंदर लड़कियों की संगति
भीड़ भरे कदमों से गलियारों में घूमो।"
वहाँ बैठते ही उनके सामने उत्तम स्वाद का दिव्य भोजन परोसा गया, और सोलह हज़ार स्त्रियों और बाकी सभी को भी दिया गया। सात दिनों तक उन्होंने अपने सेवकों के साथ दिव्य भोजन और पेय का आनंद लिया और हर तरह के सुखों का लुत्फ़ उठाया। अपने सुंदर

आसन पर बैठे हुए उन्होंने ईश्वर की महिमा का गुणगान किया। उन्होंने कहा, "हे सर्पों के राजा, आपने यह सारी शान-शौकत छोड़कर चींटियों के ढेर पर लेटने और मनुष्यों के संसार में व्रत रखने का फैसला क्यों किया?" दूसरे ने उन्हें जवाब दिया।

इसे समझाने के लिए गुरु ने कहा:

"वहाँ राजा प्रसन्नतापूर्वक ठहरे रहे।"
फिर उसने कैम्पेय्या से कहा:
"ये आपके महल तो वाकई शानदार हैं!"
वे सूर्य के समान लाल रंग से चमकते हैं।
पृथ्वी पर ऐसे प्राणी न ही देखने को मिलते हैं:
आप संन्यासी क्यों बनना चाहेंगे?
"ये महिलाएं बेहद खूबसूरत और आकर्षक दिख रही हैं।"
जो नुकीली उंगलियों से पकड़ते हैं
दोनों लाल रंग से सने हाथों में से किसी एक से पेय लें।
स्तन और शरीर सोने से घिरे हुए हैं।
पृथ्वी पर ऐसे प्राणी न ही देखने को मिलते हैं:
आप संन्यासी क्यों बनना चाहेंगे?
नदी, मछली का तालाब, कांच जैसा साफ पानी,
प्रत्येक में अच्छी तरह से निर्मित लैंडिंग-सीढ़ी है,
पृथ्वी पर ऐसे प्राणी न ही देखने को मिलते हैं:
आप संन्यासी क्यों बनना चाहेंगे?
"बगुला, मोर, स्वर्गीय हंस,
कोयल के आकर्षण इस प्रकार हैं,
पृथ्वी पर ऐसे प्राणी न ही देखने को मिलते हैं:
आप संन्यासी क्यों बनना चाहेंगे?
आम, साल और तिलक की खेती की जाती है।
कैसिया (*12), तुरही-फूल (*13) पूरी तरह से खिला हुआ,
पृथ्वी पर ऐसे प्राणी न ही देखने को मिलते हैं:
आप संन्यासी क्यों बनना चाहेंगे?
"झीलें देखो!" और वह ऊपर की ओर बह गई।
हर तट पर दिव्य सुगंध:
पृथ्वी पर ऐसे प्राणी न ही देखने को मिलते हैं:
आप संन्यासी क्यों बनना चाहेंगे?
न जीवन के लिए, न पुत्रों के लिए, न धन के लिए।
क्या मैं स्वयं से संघर्ष करता हूँ?
अगर संभव हो तो, यही मेरी दिली इच्छा है।
मनुष्य के रूप में पुनः जन्म लेना।"
इस उत्तर पर राजा ने कहा:

"साहसपूर्वक कपड़े पहने, आंखें लाल और धुंधली,
चौड़े कंधे, मुंडा हुआ सिर और दाढ़ी,
जैसे कोई देवदूत-राजा संबोधित कर रहा हो
सारी दुनिया, चंदन के रंग से सनी हुई।
"शक्ति में महान, दिव्य सामर्थ्य में महान,"
हे समस्त इच्छाओं के स्वामी, मेरी ओर ध्यान दें।
सर्पराज, मेरे प्रश्न का उत्तर दो—
हमारी दुनिया आपकी दुनिया से किस प्रकार श्रेष्ठ है?
सर्पराज ने इसका उत्तर इस प्रकार दिया:
"नियंत्रण और शुद्धि तब आती है जब

एक तो पुरुषों की दुनिया में है,
केवल वहीं: एक बार आदमी, मैं कभी नहीं
फिर कभी जन्म न देखो, न मृत्यु।
तब राजा ने सुना और इस प्रकार उत्तर दिया:

"बुद्धिमानों का सम्मान करना निःसंदेह अच्छा है।"
जिनमें गहन ज्ञान और उच्च विचार उत्पन्न होते हैं (*14)।
जब तुम और ये सारी नौकरानियाँ मुझे दिखती हैं,
मैं अनेक बार पुण्य कर्म करूंगा।
सर्पराज ने उससे कहा:

"बुद्धिमानों का सम्मान करना निःसंदेह अच्छा है।"
जिनमें गहन ज्ञान और उच्च विचार उत्पन्न होते हैं।
जब मुझे और इन सभी नौकरानियों को आप देखते हैं,
तो फिर तुम अनेक बार पुण्य कर्म करो।
इस भाषण के बाद, उगासेना जाने के लिए उत्सुक हो गया और उसने विदा लेते हुए कहा, "सर्पराज, मैं यहाँ बहुत देर तक रुका रहा, अब मुझे जाना होगा।" उस महान प्राणी ने अपने खजाने की ओर इशारा करते हुए उसे जो कुछ भी लेना चाहता था, वह देते हुए कहा,

मैं इसका त्याग करता हूँ, अथाह सोने का भी।
देखो, पेड़ जितने ऊंचे चांदी के ढेर!
चांदी लो और उससे दीवारें बनाओ।
सोने के घर बनाओ और ले जाओ।
"मोती, पांच हजार भार, मुझे लगता है।"
बीच में मूंगा रंग की हल्की सी लाली,
इन्हें ले जाकर अपने महल में फैला दें
न तो मिट्टी दिखाई देती है और न ही धूल।
"ऐसा महल जैसा कि मैं बताता हूँ
निर्माण करो, और वहाँ, हे सम्राट! निवास करो:
बनारस शहर समृद्ध होगा:
इस पर बुद्धिमानी से शासन करो, अच्छे से शासन करो।"
राजा ने यह सुझाव मान लिया। तब उस महान शक्ति ने ढोल बजाकर नगर में यह घोषणा करवाई: "राजा के सभी सेवक मेरी संपत्ति, सोना और उत्तम सोना, में से जो चाहें ले लें!" और उन्होंने सैकड़ों रथों में भरकर खजाना राजा को भेज दिया। इसके बाद राजा ने धूमधाम से सर्पलोक छोड़ा और बनारस लौट आए। कहते हैं कि तब से पूरे भारत में धरती सोने से भर गई।

प्रवचन समाप्त होने पर गुरु ने कहा, "इस प्रकार प्राचीन काल के ज्ञानी पुरुषों ने सर्प लोक की महिमा को त्यागकर व्रत का पालन किया।" फिर उन्होंने अपने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उस समय देवदत्त नाग-सन्यासी थे, राहुल की माता (बुद्ध की पत्नी) सुमना थीं, सारिपुत्र उगसेना थे और मैं स्वयं नागों का राजा कैम्पेज्य था।"

फुटनोट:

(1)पत्थयामानो पढ़ना.

(2) छह देवलोक (देवदूत लोक)।

(3) संख्या 543

(4) संख्या 524

(5) विषैला माना जाता है। क्रमांक 55 और 206 की तुलना करें।

(6)ये तकनीकी शब्द प्रतीत होते हैं।

(7)अर्थात्, अपनी तीव्र गति से हजारों हुडों का आभास देते हुए।

(8) चौदहवें और पंद्रहवें का नाम लिया गया है।

(9) पढ़ना samvattaye

(10) "सर्प जनजाति" शाब्दिक अनुवाद है।

(11) उत्तर भारत में कांस्य वज्र का प्रयोग ताबीज के रूप में किया जाता था।

(12) कैसिया फिस्टुला.

(13) बिगोनिया सुवेओलेन्स.

(14)संख्या 306 देखें

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **महा-पलोभन-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-507-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 507
महा-पालोभना-जातक

"ब्रह्मा के स्वर्ग (प्रधान देवदूतों के स्वर्ग) से," इत्यादि - यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें पवित्र आत्माओं के अपवित्र होने का वर्णन था। परिस्थितियाँ पहले ही बताई जा चुकी हैं। यहाँ गुरु ने फिर कहा, "स्त्रियाँ पवित्र आत्माओं को भी अपवित्र कर देती हैं," और फिर अतीत की यह कथा सुनाई।

बहुत समय पहले बनारस में—यहाँ अतीत की कहानी को कुल्ला-पालोभना जन्म (*1) की तरह विस्तार से बताया जाना है। अब एक बार फिर महान सत्ता ब्रह्मा के लोक से काशी के राजा के पुत्र के रूप में अवतरित हुई, और उनका नाम राजकुमार अनित्थि-गंध था, जो स्त्री-द्वेषी थे। वे किसी स्त्री के हाथों में नहीं रहना चाहते थे; उन्हें स्तनपान कराने के लिए स्त्रियों को पुरुषों का वेश धारण करना पड़ता था; वे ध्यान कक्ष में रहते थे, और उन्होंने कभी किसी स्त्री को नहीं देखा। (*2)

इसे समझाने के लिए गुरु ने चार श्लोक दोहराए।

ब्रह्मा के उच्च स्वर्ग से एक प्रधान देवदूत इस पृथ्वी पर अवतरित हुए।
एक राजा के पुत्र के रूप में, जिसकी हर इच्छा कानून थी, उसका जन्म हुआ था।
ब्रह्मा के स्वर्ग (प्रधान देवदूतों के स्वर्ग) में कभी भी कामवासना का कोई कार्य, कोई उल्लेख, नहीं आया।
इस संसार में जन्म लेने के बाद, राजकुमार को अब इसका नाम तक नापसंद था।
"महल के भीतर उसने अपना एक कमरा निजी तौर पर बना लिया था।"
जहां वह गहन ध्यान में लीन होकर अकेले ही दिन गुजारता था।
"राजा अपने पुत्र के लिए चिंतित हो गया और उसे वहाँ देखकर शोकग्रस्त हो गया।"
मेरा एक ही बेटा है, और उसे सुख-सुविधाओं की परवाह नहीं है।"
पांचवें श्लोक में राजा के रोने का वर्णन है:

"ओह, मुझे कौन बताएगा कि मुझे क्या करना चाहिए! क्या कोई कारगर उपाय नहीं है?"
उसे प्रेम की लालसा के आनंद कौन सिखाएगा, और कौन उसे लुभा सकता है?
अगले छंद और आधा छंद पूर्ण ज्ञान के हैं:

"वहाँ एक लड़की थी, सुडौल शरीर वाली, गोरी और सुंदर त्वचा वाली।"
उसे सुरीले गीतों की दुनिया का ज्ञान था, और वह अच्छी तरह से नृत्य और चक्कर लगा सकती थी।
इस लड़की ने महाराज को ढूँढा और इस प्रकार उसने शुरुआत की।
दूसरी पंक्ति उस युवा लड़की द्वारा बोली गई है:

"अगर आप मुझसे उसका विवाह करवा देंगी तो मैं उसे बहला-फुसला लूंगी।"
राजा ने दासी को उत्तर दिया और इस प्रकार कहा:

"यदि तुम उसे लुभाने में सफल हो जाओ, तो वही तुम्हारा पति होगा।"
राजा ने आदेश दिया कि उसे हर संभव अवसर दिया जाए और उसे राजकुमार की सेवा में भेज दिया। सुबह वह अपना वीणा लेकर राजकुमार के शयनकक्ष के ठीक बाहर जाकर खड़ी हो गई और अपनी उंगलियों से वीणा को छूते हुए मधुर स्वर में गाकर उसे लुभाने का प्रयास करने लगी।

इसे समझाने के लिए गुरु ने कहा:

"लड़की घर के अंदर गई और जहाँ वह अलग खड़ी थी,
प्रेमी के दिल को भेदने के लिए मधुर और लंबे गीत गाए।
"जब वह लड़की खड़ी होकर गा रही थी, तभी राजकुमार ने वह आवाज़ सुनी,
स्ट्रेट को वह चीज़ पसंद आ गई और उसने आसपास इंतज़ार कर रहे नौकरों से पूछा--
"वह मधुर ध्वनि क्या है जो मुझे इतनी स्पष्ट रूप से सुनाई दे रही है?"
प्रेम के विचारों से हृदय को भेदते हुए, मेरे कानों को कितना आनंद आता है?
"एक युवती, महाराज, देखने में सुंदर, असीम नखरे वाली।"
क्या तुम प्रेम की मिठास का आनंद लेना चाहते हो, इस आनंद के आगे झुक जाओ, इस प्रसन्नता के वश में हो जाओ।
"अरे, यहाँ आओ, वह और पास आए, और वह और गाए।"
यहां वह मेरे कमरे के दरवाजे के भीतर मेरे सामने गाए!
"जो महिला दीवार के बाहर गाती थी, वह वहाँ उस कमरे में खड़ी थी:
उसने उसे ऐसे पकड़ा जैसे जंगल में हाथी को जाल में फंसा लिया जाता है।
"उसने प्रेम का आनंद महसूस किया, और देखो! ईर्ष्या अपने चरम पर पहुँच गई थी।"
"कोई और पुरुष मुझसे प्रेम नहीं करेगा!" वह चिल्लाता है, "केवल मैं ही प्रेम करूंगा!"
"मेरे सिवा कोई और नहीं!" वह चिल्लाता है; और फिर चला जाता है--
तलवार छीनकर वह उन्माद में आकर बाकी सभी पुरुषों को मारने के लिए दौड़ पड़ता है!
"लोग घबराकर चिल्लाते हुए महल की ओर भागे:
वे चिल्लाते हैं, "तुम्हारा बेटा बिना किसी उकसावे के सबको मार रहा है!"
"योद्धा राजा ने उसे गिरफ्तार किया और उसके सामने से निकाल दिया।"
"मेरे राज्य की सीमाओं के भीतर तुम्हें कोई स्थान नहीं मिलेगा।"
वह अपनी पत्नी को लेकर आगे बढ़ता रहा और समुद्र के किनारे आकर रुक गया।
उन्होंने पत्तों की एक झोपड़ी बनाई और जंगल से भोजन इकट्ठा करके अपना जीवन यापन किया।
"एक पवित्र साधु उड़ते हुए समुद्र के ऊपर से आया,
जब मैं झोपड़ी में दाखिल हुआ तो खाना तैयार था।
"उस स्त्री ने उसे बहकाया: अब देखो कितना घिनौना काम हुआ!"
वह ब्रह्मचर्य से विमुख हो गया, और उसकी सारी जादुई शक्ति समाप्त हो गई!
शाम हो गई; राजकुमार लौट आया, और अपने संग्रह से लाया
उसने अपने खंभे पर जड़ों और जंगली लकड़ी की चीजों का प्रचुर भंडार लटका दिया।
"सन्यासी ने राजकुमार को आते देखा: वह किनारे की ओर चल पड़ा,
हवा में उड़ने की सोच रहा था, लेकिन समुद्र में डूब गया!

लेकिन जब राजकुमार ने ऋषि को समुद्र में डूबते हुए देखा,
उसके मन में दया का भाव जागा, और फिर उसने ये पंक्तियाँ कहीं:-
"तुम यहाँ समुद्र में नौकायन करके नहीं, बल्कि जादुई शक्ति से आए हो।"
लेकिन अब तुम डूब रहे हो; एक दुष्ट पत्नी ने तुम्हें इस शर्मिंदगी तक पहुँचाया है।
"वे गद्दारियों को बहकाकर सबसे पवित्र व्यक्ति को भी उसके पतन की ओर ले जाते हैं।"
वे नीचे की ओर डूबते जाते हैं: जिन महिलाओं को वे जानती हैं, उन्हें सबसे दूर भाग जाना चाहिए।
"मधुर भाषी, संतुष्ट करना कठिन, जैसे नदियों को भरना कठिन होता है;"
वे नीचे की ओर धंसते जाते हैं: जिन महिलाओं को वे जानती हैं, उन्हें उनसे और भी दूर भाग जाना चाहिए।
और वे जिसकी भी सेवा सोने के लिए या इच्छा के लिए करें,
वे उसे जलाकर राख कर देते हैं, जैसे भयंकर आग में ईंधन जलता है।
"सन्यासी ने राजकुमार की बात सुनी; उसे यह स्वार्थी संसार नापसंद था।"
अपने पूर्व पथ (*3) की ओर मुड़ा, और फिर से हवा में ऊपर उठ गया।
राजकुमार ने जैसे ही देखा कि वह हवा में ऊपर उठ रहा है,
वह दुखी था और उसने दृढ़ संकल्प के साथ पवित्र जीवन जीने का मार्ग चुना;
फिर, धार्मिक (तपस्वी) बनकर, उसने अपनी कामवासना और तीव्र इच्छा को पूरी तरह से वश में कर लिया;
और वासना को वश में करके, अब से वह ब्रह्मा के लोक की ओर जाने की आकांक्षा रखने लगा।

प्रवचन समाप्त होने पर गुरु ने कहा, "इस प्रकार, भिक्षुओं, स्त्री के कारण पवित्र आत्माएँ भी पाप कर बैठती हैं;" फिर उन्होंने सत्यों की व्याख्या की: (सत्यों के समापन पर, पथभ्रष्ट भिक्षु ने संतत्व प्राप्त किया:) जिसके बाद उन्होंने जन्म का उल्लेख करते हुए कहा, "उस समय मैं स्वयं राजकुमार अनित्तिगंधा था।"

फुटनोट:

(1) संख्या 263

(2)पढ़ना, अगच्चत

(3)अर्थात, वह पवित्रता के मार्ग पर लौट आया।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> पंच **-पंडित जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-508-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 508
पंच-पंडित जातक

पांच ज्ञानी पुरुषों के जन्म का वर्णन महा-उम्मग्ग जातक क्रमांक 546 में दिया जाएगा।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **हत्थि-पाल जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-509-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 509
हाथी-पाल जातक

"अंततः हमें समझ आ गया," इत्यादि—यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए त्याग के विषय में सुनाई थी। फिर इन शब्दों के साथ, "हे भिक्षुओं, तथागत (बुद्ध) ने पहली बार त्याग नहीं किया है, बल्कि इससे पहले भी ऐसा हुआ था,"—गुरु ने उन्हें अतीत की एक कथा सुनाई।

एक समय की बात है, बनारस में एसुकारी नाम का एक राजा राज करता था। उसका पुजारी बचपन से ही उसका प्रिय साथी था। दोनों निःसंतान थे। एक दिन दोनों मित्रवत भाव से बैठे थे, तभी उन्होंने सोचा, "हमारे पास महान यश तो है, पर पुत्र-पुत्री नहीं है; अब क्या करें?" तब राजा ने पुजारी से कहा, "मित्र, यदि तुम्हारे घर में पुत्र उत्पन्न हो, तो वह मेरे राज्य का स्वामी होगा; परन्तु यदि मेरा पुत्र हो, तो वह तुम्हारी संपत्ति का स्वामी होगा।" दोनों ने इन शर्तों पर समझौता कर लिया।

एक दिन, जब पुजारी अपने राजस्व-गाँव के पास पहुँचा और दक्षिणी द्वार से प्रवेश किया, तो द्वार के बाहर उसने एक दुखी स्त्री को देखा जिसके कई पुत्र थे: उसके सात पुत्र थे, सभी स्वस्थ और तंदुरुस्त; एक खाना पकाने के लिए बर्तन और थाली पकड़े हुए था, एक चटाई और बिस्तर, एक आगे चल रहा था और एक पीछे, एक ने उसकी उंगली पकड़ी हुई थी, एक उसकी कमर पर बैठा था और एक उसके कंधे पर। पुजारी ने पूछा, "इन लड़कों का पिता कहाँ है?" उसने उत्तर दिया, "महोदय, इन लड़कों का कोई पिता नहीं है।" पुजारी ने कहा, "तो फिर, तुम्हें ऐसे सात अच्छे पुत्र कैसे मिले?" (*1) जंगल के बाकी हिस्से को अनदेखा करते हुए, उसने शहर के द्वार के पास खड़े एक बरगद के पेड़ की ओर इशारा किया और कहा, "महोदय, मैंने इस पेड़ में निवास करने वाले देवता से प्रार्थना की थी, और उन्होंने मुझे ये लड़के देकर मेरी प्रार्थना का उत्तर दिया।" पुजारी ने कहा, "तो तुम जा सकती हो; अपने रथ से उतरकर वह वृक्ष के पास गया और एक शाखा को पकड़कर उसे हिलाते हुए बोला, "हे देवता, राजा ने आपको क्या नहीं दिया? वह हर साल आपको हज़ार सिक्के भेंट करता है, पर आप उसे एक भी पुत्र नहीं देते। इस भिखारी पत्नी ने आपके लिए ऐसा क्या किया है कि आप उसे सात पुत्र देते हैं? आप सात दिनों के भीतर राजा को एक पुत्र प्रदान करें, अन्यथा मैं आपको जड़ से उखाड़कर टुकड़े-टुकड़े कर दूंगा।" बरगद के वृक्ष के देवता को इस प्रकार संबोधित करते हुए वह चला गया। छह दिनों तक उसने यही किया, और छठे दिन शाखा को पकड़कर बोला—"हे वृक्ष-देव, केवल एक रात शेष है; यदि आप मेरे राजा को पुत्र प्रदान नहीं करेंगे, तो आप नीचे गिर जाएंगे!"

वृक्ष की देवी ने तब तक विचार किया, जब तक उन्हें पूरी तरह से पता नहीं चल गया कि मामला क्या है। उन्होंने सोचा, "यदि ब्राह्मण को पुत्र नहीं हुआ, तो वह मेरा घर नष्ट कर देगा: भला मैं उसे पुत्र कैसे दिला सकती हूँ?" फिर वे चार महान राजाओं (*2) के समक्ष गईं और उन्हें बताया। उन्होंने कहा, "हम उस व्यक्ति को पुत्र नहीं दे सकते।" इसके बाद वे अट्ठाईस योद्धाओं के पास गईं, और उन सभी ने भी यही कहा। अंत में वे देवताओं (देवदूतों) के राजा सक्का (इंद्र) के पास गईं और उन्हें बताया। उन्होंने मन ही मन सोचा, "क्या राजा को अपने योग्य पुत्र मिलेंगे या नहीं?" फिर उन्होंने चारों ओर देखा और देवताओं (देवदूतों) के चार गुणी पुत्रों को देखा। कहा जाता है कि ये पूर्वज बनारस के बुनकर थे; और उस व्यापार से होने वाली अपनी सारी कमाई को वे पाँच ढेरों में बाँटते थे; इनमें से चार उनके अपने हिस्से थे, परन्तु पाँचवाँ उन्होंने सबको बाँट दिया। उस स्थान से पुनर्जन्म लेकर वे तैंतीसों के स्वर्ग में आए, वहाँ से उनका पुनर्जन्म यमलोक (*3) में हुआ, और वहाँ से वे क्रमानुसार छहों लोकों में विचरण करते हुए अनेक यश का अनुभव किया। ठीक उसी समय उनका तैंतीसों के स्वर्ग से यमलोक जाने का समय आ गया। सक्का (इंद्र) उन्हें खोजने गए, उन्हें बुलाया और कहा, "हे पूज्यवर, आपको मनुष्यलोक में जाकर राजा एशुकारी की मुख्य पत्नी के गर्भ में जन्म लेना होगा।" उन्होंने कहा, "हे स्वामी, हम जाएँगे। परन्तु हमारा राजपरिवार से कोई संबंध नहीं है: हम पुरोहित परिवार में जन्म लेंगे और युवावस्था में ही संसार का त्याग कर देंगे।" तब सक्का (इंद्र) ने उनके वचन को स्वीकार कर लिया और लौटकर वृक्ष में निवास करने वाली देवी को सब कुछ बताया। बहुत प्रसन्न होकर वृक्ष-देवी ने सक्का (इंद्र) से विदा ली और अपने निवास स्थान पर चली गईं।

लेकिन अगले दिन पुजारी आया, और उसके साथ उसने कुछ बलवान पुरुष भी एकत्र किए थे, जिनमें से प्रत्येक के पास एक तेज धार वाली कुल्हाड़ी या इसी तरह का कोई हथियार था। पुजारी पेड़ के पास पहुँचा और एक शाखा पकड़कर चिल्लाया—"हे वृक्ष के देवता! आज सातवाँ दिन है जब से मैंने आपसे कृपा माँगी है: आपके विनाश का समय आ गया है!" वृक्ष देवी ने अपनी महान शक्ति से पेड़ के तने को दो भागों में बाँट दिया और आगे आकर मधुर स्वर में उससे कहा, "एक पुत्र, ब्राह्मण? छी! मैं तुम्हें चार दूँगी।" उसने कहा, "मुझे पुत्र नहीं चाहिए; मेरे राजा को एक दे दीजिए।" "नहीं," उसने कहा, "मैं केवल तुम्हें ही दूँगी।" "तो दो राजा को और दो मुझे दे दीजिए।" "नहीं, राजा को कोई पुत्र नहीं होगा, चारों पुत्र तुम्हें ही मिलेंगे; लेकिन वे केवल तुम्हें ही दिए जाएँगे, क्योंकि वे सांसारिक गृहस्थी में नहीं रहेंगे: अपनी युवावस्था में वे संसार का त्याग कर देंगे।" "बस मुझे पुत्र दे दो, मैं देख लूँगा कि वे संसार का त्याग न करें," उसने कहा। इस प्रकार देवी ने उसकी संतान प्राप्ति की प्रार्थना स्वीकार कर ली और अपने निवास स्थान पर लौट गई। उसके बाद से उस देवी को अत्यंत सम्मान प्राप्त हुआ।

अब सबसे बड़े देवदूत (देवदूत) का जन्म हुआ और वे ब्राह्मण की पत्नी के गर्भ में आए। उनके नामकरण के दिन उनका नाम हाथीपाल रखा गया; और उन्हें संसार त्यागने से रोकने के लिए, उन्हें कुछ हाथी पालकों की देखरेख में सौंप दिया गया, जिनके बीच वे पले-बढ़े। जब वे चलने लायक हुए, तो उसी स्त्री से दूसरे देवदूत का जन्म हुआ। उनके जन्म पर उनका नाम अस्सपाल रखा गया, और वे घोड़े पालने वालों के बीच पले-बढ़े। तीसरे देवदूत का नाम गोपाल रखा गया, और वे पशुपालकों के बीच पले-बढ़े। चौथे देवदूत का नाम अजपाल रखा गया, और वे बकरी पालकों के बीच पले-बढ़े। जब वे बड़े हुए तो वे शुभ शगुन वाले बालक थे।

अब संसार त्यागने के भय से, ऐसा करने वाले सभी तपस्वियों को राज्य से निर्वासित कर दिया गया: काशी राज्य में एक भी नहीं बचा। वे युवक उतावले थे: वे जहाँ भी जाते, वहाँ भेजे गए धार्मिक उपहारों को लूट लेते थे।

जब हत्थिपाला सोलह वर्ष का हुआ, तो राजा और पुजारी ने उसके शारीरिक सौंदर्य को देखकर मन ही मन सोचा, "लड़के बड़े हो गए हैं। जब राजसी साक्षात सत्ता में आएगी, तो इनका क्या किया जाए? जैसे ही इन पर जल छिड़काव किया जाएगा, ये अत्यंत कुशल हो जाएँगे: तपस्वी आएँगे, उन्हें देखेंगे और वे भी तपस्वी बन जाएँगे; एक बार ऐसा हो जाने पर, सारा देश अस्त-व्यस्त हो जाएगा। पहले इनकी परीक्षा ले लें, फिर जल छिड़काव करें।" अतः वे दोनों तपस्वियों के वेश में भिक्षा माँगते हुए हत्थिपाला के घर के द्वार तक पहुँचे। लड़का उन्हें देखकर प्रसन्न और आनंदित हुआ; पास आकर उसने आदरपूर्वक उनका अभिवादन किया और तीन श्लोक पढ़े:

"अंततः हमें एक ब्राह्मण देवता (देवदूत) के समान दिखाई देता है, जिसकी चोटी बहुत बड़ी है।"
दांतों को साफ नहीं किया गया, धूल से सना हुआ, और भार से बोझिल (*4)।
अंततः हमें एक ऐसा ऋषि मिलता है, जो धर्म में आनंदित होता है।
उसे छाल के वस्त्रों से ढका गया था, और उसने पीले रंग की पोशाक पहनी हुई थी।
बैठ जाइए, और अपने पैरों के लिए ताज़ा पानी ले लीजिए; यह उचित है।
मेहमानों को भोजन भेंट करना—जैसे हम आमंत्रित करते हैं, वैसे ही स्वीकार करें।"
इस प्रकार उन्होंने एक-एक करके उन सभी को संबोधित किया। फिर पुजारी ने उससे कहा: "मेरे पुत्र हत्थिपाला, तुम यह इसलिए कह रहे हो क्योंकि तुम हमें नहीं जानते। तुम सोचते हो कि हम हिमालय के ऋषि हैं, लेकिन ऐसा नहीं है, मेरे पुत्र। मैं राजा एसुकारी हूँ और मैं तुम्हारा पिता, पुजारी हूँ।" "तो फिर," लड़के ने कहा, "आप ऋषियों की तरह क्यों सजे हैं?" "तुम्हें परखने के लिए," उन्होंने कहा। "मुझे क्यों परख रहे हो?" उसने पूछा। "क्योंकि, यदि तुम संसार का त्याग किए बिना हमें देखोगे, तो हम छिड़काव की रस्म अदा करने और तुम्हें राजा बनाने के लिए तैयार हैं।" "हे मेरे पिता," उसने कहा, "मुझे राजसी पद नहीं चाहिए; मैं संसार का त्याग करूँगा।" तब उसके पिता ने उत्तर दिया, "पुत्र हत्थिपाला, यह संसार का त्याग करने का समय नहीं है;" और उन्होंने चौथे श्लोक में अपना उद्देश्य स्पष्ट किया:

पहले वेदों का अध्ययन करो, धन और पत्नी प्राप्त करो।
और पुत्रों, जीवन के सुखद अनुभवों का आनंद लो।
गंध, स्वाद और हर इंद्रिय: लकड़ी मीठी है
तब जीवन व्यतीत करना अच्छा है, और तब ऋषि का ज्ञान भी अच्छा होता है।"
हत्थिपाला ने एक श्लोक में उत्तर दिया:

सत्य न तो वेदों से मिलता है और न ही सोने से;
पुत्र होने से भी बुढ़ापा नहीं रुकेगा;
बुद्धिमान लोग जानते हैं कि इंद्रियों से मुक्ति मिलती है;
अगले जन्म में हम वही काटेंगे जो हमने अभी बोया है।
युवक के प्रश्न के उत्तर में राजा ने एक श्लोक सुनाया:

आपके मुख से निकले शब्द अत्यंत सत्य हैं:
अगले जन्म में हम वही काटेंगे जो हमने अभी बोया है।
आपके माता-पिता अब बूढ़े हो गए हैं: लेकिन ईश्वर करे वे देख सकें
आपके लिए सौ वर्षों का स्वस्थ जीवन इंतजार कर रहा है।"
"आपका क्या तात्पर्य है, महाराज?" राजकुमार ने पूछा और दो छंद दोहराए:

"हे राजा, जो मृत्यु में भी मित्र पा सके,"
और बुढ़ापे के साथ एक समझौता हो चुका है;
जो मरना नहीं चाहता, उसके लिए यही प्रार्थना करो।
उसे सौ साल का जीवन मिलेगा।

"जैसे कोई नदी पर नाव चलाता है
एक नाव, और दूसरे किनारे की यात्रा,
इसलिए नश्वर प्राणी अनिवार्य रूप से इस ओर प्रवृत्त होते हैं।
बीमारी और बुढ़ापे का अंत मृत्यु में ही होता है।
इस प्रकार उन्होंने इन लोगों को नश्वर जीवन की क्षणभंगुरता का परिचय देते हुए यह सलाह दी: "हे महाराज, जब आप यहाँ खड़े हैं और मैं आपसे बात कर रहा हूँ, तब भी रोग, वृद्धावस्था और मृत्यु मेरे निकट आ रही हैं। इसलिए सावधान रहें!" राजा और उनके पिता को प्रणाम करके वे अपने सेवकों को साथ लेकर बनारस राज्य का त्याग कर संन्यासी जीवन व्यतीत करने के उद्देश्य से प्रस्थान कर गए। हत्थिपाला के साथ बहुत से लोग गए; उन्होंने कहा, "यह संन्यासी जीवन एक महान कार्य है।" यह समूह एक मील (4.23 किमी) लंबा था। वे इस समूह के साथ गंगा तट तक पहुँचे। वहाँ उन्होंने गंगा के जल को निहारते हुए आध्यात्मिक समाधि प्राप्त की। उन्होंने सोचा, "यहाँ एक बड़ी सभा होगी।" "मेरे तीनों छोटे भाई, मेरे माता-पिता, राजा, रानी और सभी अपने सेवकों के साथ आएंगे और संन्यासी जीवन अपना लेंगे। बनारस वीरान हो जाएगा। उनके आने तक मैं यहीं रहूंगा।" इस प्रकार वे वहां बैठकर एकत्रित लोगों को उपदेश देने लगे।

अगले दिन राजा और उनके पुजारी ने सोचा, "तो राजकुमार हाथीपाला ने सचमुच राज्य पर अपना दावा त्याग दिया है और गंगा के किनारे बैठे हैं, जहाँ वे संन्यासी जीवन जीने के लिए गए हैं और अपने साथ बहुत सारा धन ले गए हैं। लेकिन चलो असपाला को परखते हैं और विधिपूर्वक उन्हें राजा घोषित करते हैं।" अतः पहले की तरह वे तपस्वियों के वेश में उनके द्वार पर गए। उन्हें देखकर वह प्रसन्न हुए और उनके पास जाकर "अंततः" आदि पंक्तियाँ दोहराते हुए उन्होंने भी वही किया जो अन्य ने किया था। अन्य ने भी पहले की तरह ही किया और उन्हें अपने आने का कारण बताया। उन्होंने कहा, "राजकुमार हाथीपाला नाम का मेरा भाई है, फिर भी मुझे ही श्वेत छत्र क्यों दिया जा रहा है?" उन्होंने उत्तर दिया, "पुत्र, तुम्हारा भाई संन्यासी जीवन जीने के लिए चला गया है; उसे राज-पाट से कोई लेना-देना नहीं है।" "वह अब कहाँ है?" लड़के ने पूछा। "गंगा के किनारे बैठा है।" "प्रियजनों," उसने कहा, "मेरे भाई ने जो कुछ भी कहा है, मुझे उसकी परवाह नहीं है। मूर्ख और बुद्धिहीन लोग इस पाप का त्याग नहीं कर सकते, परन्तु मैं इसका त्याग करूँगा।" फिर उसने पिता और राजा को दो श्लोकों में विधि सुनाई:

"इंद्रियों के सुख तो केवल दलदल और कीचड़ हैं (*5);
मन की प्रसन्नता मृत्यु लाती है और कष्टों को पीड़ा देती है।
जो इन दलदलों में डूब जाते हैं, वे कभी भी लक्ष्य के करीब नहीं पहुँच पाते।
मूर्खतापूर्ण पागलपन में दूर किनारे तक (*6).
"यह वह व्यक्ति है जिसने कभी दुख और पीड़ा पहुंचाई थी:
अब वह पकड़ा जा चुका है, और उसकी रिहाई का कोई रास्ता नहीं है।
ताकि वह फिर कभी ऐसी हरकतें न करे।
मैं इसके चारों ओर अभेद्य दीवारें बनाऊंगा।
"तुम यहीं खड़े हो, और जैसे ही मैं तुमसे बात कर रहा हूँ, बीमारी, बुढ़ापा और मृत्यु निकट आ रही हैं।" इस चेतावनी के साथ, और एक मील (4.23 किमी) लंबी सेना के साथ, वह अपने भाई राजकुमार हाथीपाला के पास गया। हाथीपाला ने हवा में स्थिर खड़े होकर उसे विधि बताई और कहा, "भाई, यहाँ एक बड़ी सभा होगी; हम दोनों यहीं ठहरें।" दूसरा वहाँ ठहरने के लिए सहमत हो गया।

अगले दिन राजा और पुजारी उसी प्रकार राजकुमार गोपाल के घर गए। उनका भी उसी हर्षोल्लास से स्वागत किया गया, तो उन्होंने अपने आने का कारण बताया। गोपाल ने भी अस्सपाल की तरह उनका प्रस्ताव ठुकरा दिया। उन्होंने कहा, "बहुत समय से मेरी इच्छा संन्यासी जीवन अपनाने की रही है; जंगल में भटकी गाय की तरह मैं इस जीवन की खोज में भटक रहा हूँ। मैंने अपने भाइयों के मार्ग को खोई हुई गाय के पदचिह्नों की तरह देखा है; और मैं भी उसी मार्ग पर चलूँगा।" फिर उन्होंने एक श्लोक दोहराया:

"जैसे कोई गाय की तलाश में रास्ता भटक जाए,"
लकड़ी को लेकर जो भी लोग असमंजस में थे, वे सब भटक गए।
तो क्या मेरा कल्याण खतरे में है; फिर पीछे क्यों हटूं?
क्या राजा एसुकारी इस राह पर आगे बढ़ेंगे?
"पर," उन्होंने उत्तर दिया, "हे गोपालक पुत्र, एक दिन के लिए हमारे साथ आओ, दो-तीन दिन के लिए हमारे साथ आओ; हमें प्रसन्न करो और फिर संसार का त्याग कर दो।" उन्होंने कहा, "हे महान राजा! जो काम आज करना है उसे कल पर मत टालो; यदि भाग्य चाहिए तो आज को ही पकड़ लो।" फिर उन्होंने एक और श्लोक सुनाया:

"कल!" मूर्ख चिल्लाता है; "अगले दिन!" वह चिल्लाता है।

बुद्धिमानों का कहना है, भविष्य में कोई स्वस्वाधिकार नहीं!
जो अच्छाई उसकी पहुंच में है, उसे वह कभी तुच्छ नहीं समझेगा।
इस प्रकार गोपाल ने दो श्लोकों में विधि का वर्णन करते हुए कहा, “तुम यहाँ खड़े हो, और जैसे ही मैं तुमसे बात कर रहा हूँ, तुम रोग, वृद्धावस्था और मृत्यु की ओर अग्रसर हो रहे हो।” फिर एक मील (4.23 किमी) लंबी मंडली के साथ वह अपने दो भाइयों के पास पहुँचा। वहाँ वायु में स्थित हाथीपाला ने उसे भी विधि का वर्णन किया।

अगले दिन उसी प्रकार राजा और पुजारी राजकुमार अजपाला के घर गए, जिन्होंने अन्य लोगों की तरह ही उनका हर्षोल्लास से स्वागत किया। उन्होंने अपने आने का कारण बताया और राजसी छत्र फहराने का प्रस्ताव रखा। राजकुमार ने पूछा, "मेरे भाई कहाँ हैं?" उन्होंने उत्तर दिया, "आपके भाइयों का राज्य से कोई संबंध नहीं है; उन्होंने श्वेत छत्र का त्याग कर दिया है और तीन मील (4.23 किमी) के क्षेत्र में फैले एक समूह के साथ गंगा तट पर विराजमान हैं।" राजकुमार ने कहा, "मैं अपने भाइयों द्वारा उगले गए इस प्रकार के उपदेशों को अपने सिर पर नहीं धारण करूँगा; मैं भी संन्यासी जीवन अपनाऊँगा।" उन्होंने आगे कहा, "मेरे पुत्र, तुम अभी बहुत छोटे हो; तुम्हारा कल्याण हमारी चिंता है; बड़े हो जाओ, तब तुम संन्यासी जीवन अपनाओगे।" लेकिन लड़के ने कहा, "यह आप क्या कह रहे हैं? निश्चित रूप से मृत्यु जवानी में भी आती है, जैसे बुढ़ापे में! किसी के हाथ या पैर में कोई निशान नहीं होता जिससे पता चले कि वह जवान मरेगा या बूढ़ा। मुझे अपनी मृत्यु का समय नहीं पता, इसलिए मैं अब संसार का पूर्णतः त्याग कर दूंगा।" फिर उसने दो श्लोक सुनाए:

मैंने अक्सर एक युवा और सुंदर लड़की को देखा है,
चमकीली आँखों वाली (*7), जीवन के नशे में चूर, उसका हिस्सा
जवानी के पहले वसंत में, अभी तक अनछुए आनंद का अनुभव:
मृत्यु आई और उस कोमल आत्मा को अपने साथ ले गई।
"कितने नेक, सुंदर, सुगठित और युवा लड़के हैं,"
जिसकी काली ठुड्डी के चारों ओर दाढ़ी (*8) गुच्छों में चिपकी हुई थी--
मैं संसार और उसकी समस्त वासनाओं को त्यागकर,
एक संन्यासी: तुम घर जाओ, और मुझे क्षमा कर दो।"
फिर उन्होंने आगे कहा, "आप लोग वहीं खड़े हैं, और जब मैं आपसे बात कर रहा हूँ, तब भी रोग, बुढ़ापा और मृत्यु मेरे निकट आ रहे हैं।" उन्होंने उन दोनों को प्रणाम किया और एक मील (4.23 किमी) लंबी टुकड़ी के आगे बढ़ते हुए गंगा तट पर चले गए। हत्थिपाला ने हवा में स्थिर होकर उन्हें भी विधि का उपदेश दिया और उस विशाल सभा की प्रतीक्षा में बैठ गए जिसकी उन्हें उम्मीद थी।

अगले दिन पुजारी अपने पलंग पर बैठकर ध्यान करने लगे। उन्होंने सोचा, “मेरे पुत्रों ने संन्यासी जीवन अपना लिया है; और अब मैं अकेला एक मुरझाया हुआ इंसान हूँ। मैं भी संन्यासी जीवन का अनुसरण करूँगा।” फिर उन्होंने अपनी पत्नी को यह श्लोक संबोधित किया:

"जिसकी शाखाएँ निकलती हों, उसे वृक्ष कहते हैं।"
शाखाओं को हटा देने पर, यह एक तना रह जाता है, पेड़ बिल्कुल नहीं रहता।
इसी प्रकार, मेरी उच्च कुल की पत्नी, एक निःसंतान पुरुष है:
अब मेरे लिए पवित्र जीवन को अपनाने का समय आ गया है।"
यह कहकर उन्होंने ब्राह्मणों को अपने समक्ष बुलाया: साठ हज़ार ब्राह्मण उपस्थित हुए। फिर उन्होंने उनसे पूछा कि वे क्या करने जा रहे हैं। उन्होंने कहा, "आप हमारे गुरु हैं।" उन्होंने कहा, "ठीक है, मैं अपने पुत्र को खोजूंगा और संन्यासी जीवन अपनाऊंगा।" उन्होंने उत्तर दिया, "नरक केवल आपके लिए ही गर्म नहीं है; हम भी उसके लिए तरसेंगे।" उन्होंने अपना 80 करोड़ का खजाना अपनी पत्नी को सौंप दिया और ब्राह्मणों की एक लंबी कतार के आगे-आगे अपने पुत्रों के स्थान की ओर चल दिए। और इस समूह को, पहले की तरह, हाथीपाल ने वायु में विराजमान होकर विधि का उपदेश दिया।

अगले दिन पत्नी मन ही मन सोचने लगी, "मेरे चारों बेटों ने श्वेत छत्र धारण करने से इनकार कर दिया और धार्मिक (तपस्वी) जीवन व्यतीत करने का मार्ग चुना; मेरे पति ने अपनी अस्सी हज़ार की संपत्ति और राजपुजारी का पद भी त्याग दिया और अपने बेटों के पास चले गए: मैं अकेले क्या करूँ? जिस राह पर मेरा बेटा गया है, मैं भी जाऊँगी।" और एक प्राचीन नियम का हवाला देते हुए उसने आकांक्षा से भरी यह पंक्ति दोहराई:

"बारिश के महीने बीत गए, हंस जाल और फंदे तोड़ देते हैं,
आकाश में बगुले की तरह स्वतंत्र उड़ान भरते हुए; (*9)

अतः पति और पुत्र के मार्ग से
मैं भी उन्हीं की तरह ज्ञान की खोज करूंगा।
“जब मुझे यह पता चल गया है,” उसने मन ही मन कहा, “तो मैं संसार का त्याग क्यों न करूँ?” इसी उद्देश्य से उसने ब्राह्मण स्त्रियों को बुलाया और उनसे पूछा, “तुम क्या करने जा रही हो?” उन्होंने पूछा, “तुम क्या?” — “मैं संसार का त्याग करूँगी।” — “तो हम भी ऐसा ही करेंगे।” इस प्रकार, अपना सारा वैभव छोड़कर, वह अपने पुत्रों के पीछे चल पड़ी, अपने साथ स्त्रियों का एक दल लेकर। इस दल को भी हत्थिपाला ने वायु में स्थिर बैठे हुए विधि का उपदेश दिया।

अगले दिन राजा ने पूछा, "मेरा पुजारी कहाँ है?" "महाराज," उन्होंने उत्तर दिया, "पुजारी और उसकी पत्नी अपना सारा धन छोड़कर अपने पुत्रों के पीछे दो-तीन मील (4.23 किमी) की दूरी तय करने वाले दल के साथ चले गए हैं।" राजा ने कहा, "बिना स्वामी का धन मेरे पास आता है," और पुजारी के घर से उसे लाने के लिए संदेश भेजा। अब रानी यह जानना चाहती थी कि राजा क्या कर रहा है। उसे बताया गया, "वह पुजारी के घर से खजाना ला रहा है।" "और पुजारी कहाँ है?" उसने पूछा। "वह संन्यासी बनने चला गया है, अपनी पत्नी समेत।" "अरे," उसने सोचा, "राजा अपने घर में इस ब्राह्मण और उसकी पत्नी और उसके चार पुत्रों द्वारा गिराए गए गोबर और थूक को ला रहा है! मूर्ख मूर्ख!" मैं उसे एक दृष्टांत से सिखाऊँगी।” उसने कुत्ते का मांस लिया और महल के प्रांगण में उसका ढेर लगा दिया। फिर उसने उसके चारों ओर एक फंदा लगा दिया, जिससे ऊपर जाने का रास्ता सीधा खुला रहे। दूर से गिद्धों ने उसे देखकर नीचे झपट्टा मारा। लेकिन उनमें से बुद्धिमानों ने देखा कि उसके चारों ओर फंदा लगा है; और यह महसूस करते हुए कि वे सीधे उठने के लिए बहुत भारी हैं, उन्होंने जो खाया था उसे उगल दिया, और फंदे में फंसे बिना ऊपर उठकर उड़ गए। अन्य जो पाप में अंधे थे, उन्होंने पहले वालों की उल्टी खा ली, और भारी होने के कारण वे बच नहीं पाए और फंदे में फंस गए। वे एक गिद्ध को रानी के पास लाए, और रानी उसे राजा के पास ले गई। “देखिए, हे राजा!” उसने कहा, “प्रांगण में हमारे लिए एक अद्भुत दृश्य है।” फिर एक खिड़की खोलकर, “उन गिद्धों को देखिए, महाराज!” फिर उसने दो छंद दोहराए:

"जो पक्षी खाकर हवा में उल्टी कर देते हैं, वे अब स्वतंत्र रूप से उड़ रहे हैं।"
लेकिन जिन्होंने इसे खाया और पचाया, वे अब मेरे द्वारा पकड़े गए हैं।
एक ब्राह्मण अपनी वासनाओं को उबार कर देता है, तो क्या तुम वही खाओगे?
"जो व्यक्ति उल्टी खाता है, महाराज, वह सबसे गहरे दंड का पात्र है।"
इन शब्दों को सुनकर राजा को पश्चाताप हुआ; तीनों अवस्थाएँ (*10) धधकती आग के समान प्रतीत हुईं; और उसने कहा, "आज ही मुझे अपना राज्य छोड़कर संन्यासी जीवन अपनाना होगा।" शोक से व्याकुल होकर उसने एक श्लोक में अपनी रानी की प्रशंसा की:

जैसे कोई बलवान व्यक्ति मदद का हाथ बढ़ाता है
कमजोर, कीचड़ में धंसा हुआ या दलदल में फंसा हुआ:
तो, रानी पंचाटी, आपने मुझे यहाँ बचा लिया।
मेरे कानों में मधुरता से गाए गए छंदों के साथ।"
जैसे ही उन्होंने ऐसा कहा, उन्होंने तुरंत अपने दरबारियों को बुलवाया, जो संन्यासी जीवन अपनाने के लिए उत्सुक थे, और उनसे पूछा, "तुम क्या करोगे?" उन्होंने उत्तर दिया, "आप क्या करेंगे?" उन्होंने कहा, "मैं हत्थिपाला की शरण में जाकर संन्यासी बनूँगा।" "तो फिर," उन्होंने कहा, "महाराज, हम भी यही करेंगे।" राजा ने बारह मील (4.23 किमी) के विशाल शहर बनारस पर अपना प्रभुत्व त्याग दिया और कहा, "जो चाहे श्वेत छत्र उठाए।" फिर अपने दरबारियों से घिरे हुए, तीन मील (4.23 किमी) लंबी एक पंक्ति के आगे, वे उस युवक के समक्ष गए। हत्थिपाला ने आकाश में ऊँचे स्थान पर बैठकर उस युवक को भी विधि का उपदेश दिया।

गुरु ने एक श्लोक दोहराया जिसमें बताया गया था कि राजा ने किस प्रकार इस संसार का त्याग किया।

"इस प्रकार एज़ुकारी, पराक्रमी राजा, अनेक देशों के स्वामी,
राजा से संन्यासी बने व्यक्ति की तरह, जैसे कोई हाथी अपने बंधन तोड़कर भाग जाता है।
अगले दिन शहर में बचे हुए लोग महल के द्वार के सामने एकत्र हुए और रानी को संदेश भेजा। वे अंदर गए और रानी को प्रणाम करके एक तरफ खड़े हो गए, और एक श्लोक दोहराया:

"यह हमारे महान राजा की इच्छा है।"
एकांतवासी बनना, सब कुछ छोड़ देना।
अतः अब हम आपसे राजा के स्थान पर खड़े होने का अनुरोध करते हैं;
हमारे हाथों से संरक्षित इस राज्य को संजोकर रखें।"
उसने भीड़ की बातें सुनीं और फिर शेष छंदों को दोहराया:

"यह महान राजा की इच्छा है।"
एकांतवासी बनना, सब कुछ छोड़ देना।
अब जान लो कि मैं इस दुनिया में अकेला ही चलूंगा।
सभी को वासनाओं और सुखों का त्याग करना चाहिए।
"यह महान राजा की इच्छा है।"
एकांतवासी बनना, सब कुछ छोड़ देना।
अब जान लो कि मैं इस दुनिया में अकेला ही चलूंगा।
वे जहाँ कहीं भी हों, सभी अपनी वासनाओं का त्याग कर दें।
समय बीतता जाता है, रात के बाद रात गुज़रती जाती है (*11)
यौवन की सुंदरता एक-एक करके फीकी पड़ जाती है और समाप्त हो जाती है:
अब जान लो कि मैं इस दुनिया में अकेला ही चलूंगा।
सभी को वासनाओं और सुखों का त्याग करना चाहिए।
समय बीतता जाता है, रात के बाद रात गुज़रती जाती है।
यौवन की सुंदरता एक-एक करके फीकी पड़ जाती है और समाप्त हो जाती है:
अब जान लो कि मैं इस दुनिया में अकेला ही चलूंगा।
वे जहाँ कहीं भी हों, सभी अपनी वासनाओं का त्याग कर दें।
समय बीतता जाता है, रात के बाद रात गुज़रती जाती है।
यौवन की सुंदरता एक-एक करके फीकी पड़ जाती है और समाप्त हो जाती है:
अब जान लो कि मैं इस दुनिया में अकेला ही चलूंगा।
हर बंधन टूट जाता है, न ही जुनून की शक्ति मेरे पास होती है।"
इन छंदों में उन्होंने विशाल जनसमूह को विधि का उपदेश दिया; फिर दरबारियों की पत्नियों को बुलाकर उनसे पूछा, "तुम क्या करोगी?" उन्होंने कहा, "महोदया, आप क्या करेंगी?" - "मैं संन्यासी जीवन अपनाऊँगी।" - "तो हम भी ऐसा ही करेंगे।" अतः रानी ने महल के सभी सोने के भंडारगृहों के द्वार खोल दिए और एक सोने की थाली पर उत्कीर्ण करवाया, "इस स्थान पर एक बड़ा खजाना छिपा है; जो चाहे उसे प्राप्त कर सकता है।" उन्होंने इस सोने की थाली को विशाल चबूतरे पर एक खंभे से बाँध दिया और ढोल बजाकर पूरे शहर में यह घोषणा करवाई। फिर अपनी सारी शान-शौकत छोड़कर वह शहर से चली गईं। तब पूरा शहर अचंभित हो गया: सब चिल्ला रहे थे, "हमारे राजा और रानी संन्यासी बनने के लिए शहर छोड़कर चले गए हैं; अब हम क्या करें?" इस पर सभी लोग अपने-अपने घर और उनमें जो कुछ भी था, सब छोड़कर अपने बेटों का हाथ पकड़कर निकल पड़े। सभी दुकानें खुली थीं, लेकिन किसी ने उनकी तरफ मुड़कर देखा तक नहीं: पूरा शहर खाली था।

और रानी अपने परिचारकों के साथ तीन मील (4.23 किमी) लंबी पंक्ति में खड़ी होकर अन्य परिचारकों के साथ उसी स्थान पर गईं। इस दल को भी हत्थिपाला ने उनके ऊपर हवा में खड़े होकर विधि का उपदेश दिया; और फिर बारह मील (4.23 किमी) लंबी पंक्ति में खड़े होकर वह हिमालय के लिए रवाना हो गए।

सारा काशी शोर मचा रहा था, लोग चिल्ला रहे थे कि युवा हाथीपाला ने बारह लीग (4.23 किमी) क्षेत्रफल वाले बनारस शहर को खाली कर दिया है और वह अपने विशाल दल के साथ हिमालय में संन्यासी जीवन अपनाने जा रहा है; उन्होंने कहा, "तो फिर हमें तो और भी ज्यादा करना चाहिए!" अंत में यह दल इतना बढ़ गया कि यह तीस लीग (4.23 किमी) तक फैल गया; और वह अपने इस विशाल दल के साथ हिमालय चला गया।

सक्का (इंद्र) ध्यान में लीन होकर आने वाली घटनाओं को भलीभांति समझ गए। उन्होंने सोचा, "राजकुमार हत्थिपाला ने संन्यास ले लिया है; यहाँ लोगों का एक बड़ा जमावड़ा होगा, और उनके रहने के लिए जगह चाहिए होगी।" उन्होंने विश्वकर्मा को आदेश दिया: "जाओ, छत्तीस मील (4.23 किमी) लंबा और पंद्रह मील चौड़ा एक आश्रम बनाओ, और उसमें धार्मिक (तपस्वी) व्यवस्था के लिए आवश्यक सभी चीजें एकत्र करो।" विश्वकर्मा ने आज्ञा का पालन किया; और गंगा तट पर एक रमणीय स्थान पर आवश्यक आकार का एक आश्रम बनाया, पत्तों से बनी झोपड़ियों में टहनियों या पत्तों से गद्दे बिछाए, और धार्मिक (तपस्वी) व्यवस्था के लिए आवश्यक सभी चीजें तैयार कीं। प्रत्येक झोपड़ी का अपना द्वार था, प्रत्येक का अपना सैरगाह; रात और दिन के रहने के लिए अलग-अलग स्थान थे; सब कुछ साफ-सुथरा सफेदी से पुता हुआ था; विश्राम के लिए बेंचें थीं। जगह-जगह रंग-बिरंगे सुगंधित फूलों से लदे हुए पुष्पवृंत थे। प्रत्येक सैरगाह के अंत में पानी निकालने के लिए एक कुआँ था, और उसके पास एक फलदार वृक्ष था, और प्रत्येक वृक्ष पर तरह-तरह के फल लगे थे। यह सब दिव्य शक्ति से हुआ था। जब विश्वकर्मा ने आश्रम का निर्माण पूरा कर लिया और पत्तों की झोपड़ियों में सभी आवश्यक वस्तुएँ उपलब्ध करा दीं, तो उन्होंने लाल अक्षरों में एक दीवार पर लिखा, "जो कोई भी धार्मिक (सन्यासी) जीवन अपनाना

चाहे, इन आवश्यक वस्तुओं का स्वागत है।" फिर अपनी अलौकिक शक्ति से उन्होंने उस स्थान से सभी भयानक ध्वनियों, सभी घृणित जानवरों और पक्षियों, सभी अमानवीय प्राणियों को भगा दिया और अपने स्थान पर लौट गए।

हत्थिपाला को एक पगडंडी पर यह आश्रम मिला, जो सक्का (इंद्र) का उपहार था, और उन्होंने उस पर लिखावट देखी। तब उन्होंने सोचा, "सक्का (इंद्र) ने अवश्य ही देख लिया होगा कि मैंने महान त्याग कर लिया है।" उन्होंने एक द्वार खोला और एक कुटिया में प्रवेश किया, और तपस्वी की पहचान वाली वस्तुएँ लेकर बाहर निकले और सैरगाह पर कुछ देर तक आगे-पीछे चले। फिर उन्होंने बाकी साथियों को भी तपस्वी जीवन में शामिल किया और आश्रम का निरीक्षण करने गए। उन्होंने बीच में छोटे बच्चों वाली महिलाओं के लिए एक आवास बनाया, उसके बगल में वृद्ध महिलाओं के लिए, उसके बगल में निःसंतान महिलाओं के लिए; बाकी सभी कुटियाएँ उन्होंने चारों ओर पुरुषों के लिए आरक्षित कर दीं।

फिर एक राजा ने सुना कि बनारस में कोई राजा नहीं है, तो वह देखने गया और उसने शहर को सजा-संवरा पाया। राजमहल में प्रवेश करते ही उसने खजाना ढेर में पड़ा देखा। "वाह!" उसने कहा, "इस तरह के शहर को त्यागकर, मौका मिलते ही संन्यासी बन जाना, यह तो सचमुच महान कार्य है!" किसी नशे में धुत व्यक्ति से रास्ता पूछकर वह हत्थिपाला को खोजने निकल पड़ा। जब हत्थिपाला ने देखा कि वह जंगल के किनारे आ गया है, तो वह उससे मिलने बाहर आया और हवा में स्थिर होकर उसके साथियों को धर्म का उपदेश दिया। फिर वह उन्हें आश्रम ले गया और पूरे समूह को भिक्षु संघ में शामिल कर लिया। इसी प्रकार छह अन्य राजा भी उनके साथ जुड़ गए। इन सात राजाओं ने अपना धन त्याग दिया। छत्तीस मील (4.23 किमी) में फैला वह आश्रम हमेशा भरा रहता था। जब किसी महान व्यक्ति के मन में कामवासना या ऐसी ही कोई बात आती, तो वह उसे धर्म का उपदेश देता और उसे पूर्णता और समाधि की अवस्था का ज्ञान कराता; इसके बाद इनमें से आम तौर पर रहस्यमय समाधि अवस्था प्राप्त हुई; और इनमें से दो तिहाई ब्रह्मा के लोक में पुनर्जन्म लेकर आए, जबकि एक तिहाई तीन भागों में विभाजित हो गए - एक भाग ब्रह्मा के लोक में, एक इंद्रिय लोक के छह लोकों में, और एक ऋषि का कार्य पूरा करके मनुष्य लोक में जन्म लिया। इस प्रकार तीनों ने अपने-अपने पुण्य का फल भोगा। इस प्रकार हत्थिपाला की शिक्षा ने सभी को नरक, पशु जन्म, प्रेत लोक और दैत्य रूप धारण करने से बचाया।

इस द्वीप में, जिन लोगों ने संन्यास लिया, वे थे: धम्मगुट्टा, जिन्होंने पृथ्वी को कंपकंपा दिया; फुस्सदेव, जो कटकन्धकारा के निवासी थे; महासंघरक्षित, जो उपरिमंडलकमलय से थे; मालिमहादेव; महादेव, जो भग्गिरी से थे; महाशिव, जो वामंतपभरा से थे; महानगा, जो कलावल्लीमंडप से थे; कुद्दला, मुगपक्खा, चुलसुतसोमा, ज्ञानी अयोगरा के अनुयायी और अंत में हत्थिपाला। इसलिए भगवान बुद्ध ने कहा, "जल्दी करो, हे सुखी!" इत्यादि, यानी, सुख तभी प्राप्त होगा जब वे पूरी गति से प्रयास करेंगे।

जब उन्होंने अपना प्रवचन समाप्त किया, तो गुरु ने कहा, "इस प्रकार, भिक्षुओं, तथागत (बुद्ध) ने बहुत पहले महान त्याग किया था, ठीक वैसे ही जैसे अब किया है"; इस प्रकार उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "उस समय, राजा शुद्धोदन (बुद्ध के पिता और कपिलवस्तु के राजा) राजा एशुकारी थे, महामाया (बुद्ध की दिवंगत माता) उनकी रानी थीं, कश्यप पुरोहित थे, भद्दकपिलानी उनकी पत्नी थीं, अनुराद्ध अजपाल थे, मोग्गल्याण गोपाल थे, सारिपुत्र हत्थिपाला थे, बुद्ध के अनुयायी शेष थे, और मैं स्वयं हत्थिपाला था।"

फुटनोट:

(1)या "इससे बाहर निकलने का कोई और रास्ता न देखकर।" भारत में शाही नर्तकियों और आनंद लेने वाली लड़कियों की शादी कुछ पेड़ों से कर दी जाती थी: शायद यह महिला उसी वर्ग से संबंधित है।

(2) पृथ्वी के चार स्वामी, उत्तर, दक्षिण, पूर्व और पश्चिम।

(3) इंद्रियों के स्वर्गों का तीसरा भाग

(4) स्मन्यूत्त निकया देखें

(5) यह पंक्ति क्रमांक 241 (अनुवाद का क्रमांक 158) में आती है।

(6) निर्वाण.

(7) "पैंडनस ओडोरैटिसिमस के फूल जैसी आँखों के साथ।"

(8) "दाढ़ी मानो कार्थमस टिंक्टोरियस से ढकी हुई हो।"

(9) टीकाकार एक कहानी का जिक्र करते हैं जिसमें बताया गया है कि बारिश में एक मकड़ी ने एक जाल बुना जिसमें सुनहरे हंसों का झुंड फंस गया, बारिश खत्म होने पर दो छोटे पक्षी बलपूर्वक जाल तोड़कर बाहर निकल गए, और बाकी भी उसी अंतराल से निकलकर उड़ गए।

(10)इंद्रिय, देह और निराकार, तीन संबंधित दिव्य लोकों का जिक्र करते हुए।

(11) देखें समन्युत्त निकया, I.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **अयोघर-जातक**
स्रोत *: डब्ल्यूएचडी राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-510-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 510
योगाहार-जातक

“जीवन की उत्पत्ति हो गई, इत्यादि।” यह कथा गुरु ने महान त्याग के बारे में सुनाई। फिर उन्होंने कहा, “हे भिक्षुओं, तथागत (बुद्ध) ने पहले भी महान त्याग किया है, यह पहली बार नहीं है।” और उन्होंने उन्हें अतीत की एक कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में राज कर रहे थे, तब उनकी पत्नी गर्भवती हुईं और प्रसव के समय उन्होंने भोर होते ही एक पुत्र को जन्म दिया। कहा जाता है कि पिछले जन्म में, उसी पति की एक अन्य पत्नी ने प्रार्थना की थी कि वह इस स्त्री के बच्चे को खा जाए। वह बांझ थी और माता-पुत्र से क्रोधित होकर उसने यह प्रार्थना की थी, जिसके कारण वह एक राक्षसी के रूप में प्रकट हुई। दूसरी स्त्री राजा की पत्नी बनी और उसने इस पुत्र को जन्म दिया। राक्षसी स्त्री को मौका मिल गया और उसने भयानक रूप धारण करके बच्चे को माँ की आँखों के सामने से छीन लिया और भाग गई। रानी जोर से चिल्लाई, "एक राक्षसी मेरे बेटे को ले जा रही है!" दूसरी राक्षसी स्त्री ने उसे प्याज की तरह चबाया और निगल लिया; फिर अपने अंगों के कई रूप परिवर्तन करके, जिससे रानी क्रोधित और भयभीत हो गईं, वहाँ से चली गई। जब राजा ने यह सुना, तो वह अवाक रह गया: उसने सोचा, एक राक्षसी के विरुद्ध क्या किया जा सकता है?

अगली बार जब रानी प्रसव पीड़ा में थी, तो उसने उसके चारों ओर कड़ी सुरक्षा व्यवस्था कर दी। रानी ने एक और पुत्र को जन्म दिया; राक्षस फिर आया, उसे भी खा गया और चला गया।

तीसरी बार रानी के गर्भ में महान प्राणी का जन्म हुआ। राजा ने कई लोगों को इकट्ठा किया और कहा, "मेरी रानी जब भी जन्म देती है, एक राक्षसी आकर उसे खा जाती है। अब क्या किया जाए?" तब किसी ने कहा, "राक्षस ताड़ के पत्ते से डरते हैं; रानी के दोनों हाथों और पैरों पर एक-एक पत्ता बाँध दो।" दूसरे ने कहा, "वे लोहे के घर से डरते हैं; एक लोहे का घर बनवाना चाहिए।" राजा मान गया। उसने अपने राज्य के सभी लोहारों को बुलाया और उनसे एक लोहे का घर बनाने को कहा, और उन पर निरीक्षक नियुक्त किए। शहर के बीचोंबीच एक सुंदर जगह पर उन्होंने घर बनाया; उसमें खंभे थे, और घर के सभी हिस्से, सब कुछ केवल लोहे का बना था: नौ महीनों में वह बनकर तैयार हो गया, एक विशाल चौकोर हॉल: वह चमकता था, लगातार दीपों से जगमगाता रहता था।

जब राजा को पता चला कि उसकी मृत्यु का समय निकट है, तो उसने लोहे का घर तैयार करवाया और उसे उसमें ले गया। उसने एक पुत्र को जन्म दिया, जो सौभाग्य और अच्छे गुणों से परिपूर्ण था, और उन्होंने उसका नाम अयोघरा-कुमार रखा, जो लोहे के घर का राजकुमार था। राजा ने उसे दाइयों की देखरेख में सौंप दिया और उस स्थान के चारों ओर भारी पहरा लगा दिया, जबकि वह अपनी रानी के साथ पूरे शहर का चक्कर लगाकर अपने भव्य चबूतरे पर चला गया। इसी बीच, पानी की प्यास से व्याकुल स्त्री वेसवना का पानी लाने के प्रयास में नष्ट हो गई।

लोहे के घर में महान प्राणी का पालन-पोषण हुआ, उनकी बुद्धि में वृद्धि हुई और वहीं उन्होंने सभी विज्ञानों की शिक्षा प्राप्त की।

राजा ने अपने दरबारियों से पूछा, "मेरे पुत्र की आयु क्या है?" उन्होंने उत्तर दिया, "वह सोलह वर्ष का है, महाराज: एक वीर, पराक्रमी और बलवान, जो हज़ारों राक्षसों को परास्त करने में सक्षम है!" राजा ने राज्य को अपने पुत्र के हाथों में सौंपने का निश्चय किया। उन्होंने

नगर को सजाया-संवारा और आदेश दिया कि बालक को लोहे के महल से उनके पास लाया जाए। दरबारियों ने आज्ञा का पालन किया: बारह मील (4.23 किमी) के विशाल शहर बनारस को सजाया गया; राजसी हाथी को शानदार काठी से सजाया गया, बालक को उसके सर्वोत्तम वस्त्र पहनाए गए और उसे हाथी की पीठ पर बिठाते हुए कहा गया, "महाराज, अपने राज्य, इस आनंदित नगर का सही-सही चक्कर लगाइए और अपने पिता, काशी के राजा को प्रणाम कीजिए; क्योंकि आज आपको श्वेत छत्र प्राप्त होगा।" महान सत्ता ने अपना विधिवत चक्कर दाहिनी ओर लगाया और सुंदर उद्यानों, मनमोहक रंगों, झीलों, भूखंडों, सभी सुंदर घरों आदि को देखकर मन ही मन सोचा: "इतने समय तक मेरे पिता ने मुझे कैद में रखा, मुझे कभी इस इतने भव्य रूप से सजे शहर को देखने नहीं दिया। मेरी क्या गलती हो सकती है?" उन्होंने यह प्रश्न दरबारियों से पूछा। उन्होंने कहा, "महाराज, आपकी कोई गलती नहीं है; बल्कि एक राक्षसी ने आपके दो भाइयों को खा लिया था, इसलिए आपके पिता ने आपको लोहे के घर में रखा, और लोहे के घर ने आपकी जान बचाई।" इन शब्दों ने उन्हें फिर सोचने पर मजबूर कर दिया, "दस महीने तक मैं अपनी माँ के गर्भ में रहा, मानो वह लोहे की भट्टी का नरक या गोबर का नरक हो (*1); और गर्भ से बाहर आने के बाद, सोलह साल तक मैं इसी कारागार में रहा, बाहर देखने का कभी मौका ही नहीं मिला। हालाँकि मैं राक्षस के चंगुल से बच निकला हूँ, पर बुढ़ापे और मृत्यु से मुक्ति नहीं मिली है। मुझे राज-पाट की क्या परवाह? एक बार राज-पाट में स्थापित हो जाने के बाद वहाँ से निकलना मुश्किल होता है। आज ही मैं अपने पिता से संन्यासी जीवन अपनाने की अनुमति माँगूँगा और हिमालय जाकर ऐसा करूँगा।"

इसलिए नगर में अपनी शोभायात्रा समाप्त करने के बाद, वह राजा के महल में गया, राजा को प्रणाम किया और प्रतीक्षा करने लगा। राजा ने उसकी शारीरिक सुंदरता देखकर अपने दरबारियों को प्रेम भरी निगाहों से देखा। उन्होंने पूछा, "महाराज, आप हमसे क्या करवाना चाहते हैं?" राजा ने कहा, "मेरे पुत्र को ले जाइए और उसे रत्नों के ढेर पर रखिए, तीनों शंखों से विधिपूर्वक उस पर जल छिड़किए, और सोने की मालाओं से सजे श्वेत छत्र को ऊपर उठाइए।" लेकिन उस महान प्राणी ने अपने पिता को प्रणाम किया और कहा, "पिताजी, मुझे राज-पाट से कोई संबंध नहीं है। मैं संन्यासी जीवन अपनाना चाहता हूँ, और इसके लिए मैं आपकी अनुमति चाहता हूँ।" “हे मेरे पुत्र, तुम अपना राज-पाट छोड़कर संन्यासी जीवन क्यों अपना रहे हो?” — “हे मेरे स्वामी, मैं दस महीने तक अपनी माता के गर्भ में मानो नरक में था; जन्म के बाद, एक प्रेत के भय से सोलह वर्ष तक कारागार में रहा, बाहर देखने का भी अवसर नहीं मिला, मानो मुझे उस्सादा के नरक में फेंक दिया गया हो। अब प्रेत से तो सुरक्षित हूँ, पर बुढ़ापे और मृत्यु से नहीं, क्योंकि मृत्यु पर कोई विजय नहीं पा सकता। मैं जीवन से व्याकुल हूँ। जब तक रोग, बुढ़ापा या मृत्यु मुझ पर न आ जाए, मैं धर्मपरायण जीवन का अनुसरण करूँगा, धर्म के मार्ग पर चलूँगा। मेरे लिए कोई राज्य नहीं! हे मेरे स्वामी, कृपया अनुमति दीजिए!” तब उसने अपने पिता को इस प्रकार विधि बताई:

गर्भ में जीवन की उत्पत्ति होते ही,
फिर यह निरंतर चलता रहता है, इसका मार्ग कभी समाप्त नहीं होता (*2)।
न तो युद्ध कौशल, न ही कोई प्रखर शक्ति
यह पुरुषों को बुढ़ापे और मृत्यु से लंबे समय तक बचा सकता है;
मुझे लगता है कि सभी जन्म और बुढ़ापे की समस्या से ग्रस्त हैं:
इसलिए मैंने दृढ़ निश्चय कर लिया है—मैं एक पवित्र जीवन जीऊंगा।
महान राजा बल और हिंसा द्वारा अधीन करते हैं
चार भुजाओं वाली सेना (*3), देखने में भयानक;
वे मृत्यु की सेना पर विजय प्राप्त नहीं कर सकते:
इसलिए मैंने दृढ़ निश्चय कर लिया है—मैं एक पवित्र जीवन जीऊंगा।
"हालाँकि घोड़े, हाथी, गाड़ियाँ और मनुष्य
उन्हें घेर लो, कुछ लोग फिर से मुक्त हो गए हैं;
लेकिन मृत्यु के चंगुल से कोई भी नहीं बच सकता:
इसलिए मैंने दृढ़ निश्चय कर लिया है—मैं एक पवित्र जीवन जीऊंगा।
घोड़ों, हाथियों, गाड़ियों और आदमियों के साथ,
नायक विनाश करते हैं, कुचलते हैं और फिर से कुचलते हैं;
लेकिन मौत को कुचलने के लिए मुझे कोई इतना शक्तिशाली आदमी नहीं दिखता:
इसलिए मैंने दृढ़ निश्चय कर लिया है—मैं एक पवित्र जीवन जीऊंगा।
"मादा हाथी संभोग के दौरान रिसती त्वचा के साथ पागल हो जाते हैं"
पूरे-पूरे शहरों को रौंद डालो और अंदर मौजूद पुरुषों को मार डालो।
मृत्यु को कुचलने के लिए मुझे इतना शक्तिशाली कोई नहीं दिखता:
इसलिए मैंने दृढ़ निश्चय कर लिया है—मैं एक पवित्र जीवन जीऊंगा।
"सबसे बलवान और कुशल तीरंदाज,

दूर से बिजली की चमक की तरह घाव,
लेकिन मौत को घायल करने के लिए मुझे इतना शक्तिशाली कोई आदमी नहीं दिखता:
इसलिए मैंने दृढ़ निश्चय कर लिया है—मैं एक पवित्र जीवन जीऊंगा।
"विशाल झीलें, उनके जंगल और चट्टानें खंडहर में तब्दील हो जाती हैं।"
कुछ समय बाद सबका विनाश हो जाएगा।
समय आने पर ये सब नष्ट हो जाएंगे।
इसलिए मैंने दृढ़ निश्चय कर लिया है—मैं एक पवित्र जीवन जीऊंगा।
"जैसे नदी के किनारे खड़ा पेड़,
या जैसे कोई शराबी शराब के लिए अपना कोट बेच देता है (*4),
मनुष्यों का जीवन ऐसा ही होता है:
इसलिए मैंने दृढ़ निश्चय कर लिया है—मैं एक पवित्र जीवन जीऊंगा।"
शरीर के तत्व घुल जाते हैं—वे गिर जाते हैं
युवा, बूढ़े, अधेड़, पुरुष, महिलाएं—सभी
जैसे हिलते हुए पेड़ से फल गिरते हैं, वैसे ही गिरना:
इसलिए मैंने दृढ़ निश्चय कर लिया है—मैं एक पवित्र जीवन जीऊंगा।
मनुष्य का यौवनार युग उस रानी से बिलकुल अलग है जिसके शासनकाल
सितारों पर नियम (*5): यह फिर कभी नहीं आएगा।
थकी-हारी बुढ़ापे में आनंद या प्रेम क्या हो सकता है?
इसलिए मैंने दृढ़ निश्चय कर लिया है—मैं एक पवित्र जीवन जीऊंगा।
जबकि भूत, परी और भयानक जिन्न कर सकते हैं
जब क्रोधित होकर वे मनुष्य पर अपनी विषैली साँस छोड़ते हैं,
उनकी जहरीली सांसें मौत के आगे कोई मदद नहीं कर सकतीं:
इसलिए मैंने दृढ़ निश्चय कर लिया है—मैं एक पवित्र जीवन जीऊंगा।
जबकि भूत, परी और भयानक जिन्न कर सकते हैं
जब क्रोधित हों, तो मनुष्य के कर्मों से शांत हों।
इसे मृत्यु के साथ करो, वह कभी नरम नहीं पड़ता:
इसलिए मैंने दृढ़ निश्चय कर लिया है—मैं एक पवित्र जीवन जीऊंगा।
जो लोग अपराध करते हैं, गलत काम करते हैं और नुकसान पहुंचाते हैं,
जब इनका पता चलता है, तो राजाओं द्वारा इन्हें दंडित किया जाता है।
लेकिन मृत्यु के विरुद्ध कोई दंड नहीं हो सकता:
इसलिए मैंने दृढ़ निश्चय कर लिया है—मैं एक पवित्र जीवन जीऊंगा।
जो लोग अपराध करते हैं, गलत काम करते हैं और नुकसान पहुंचाते हैं
राजाओं के हाथों को रोकने का कोई रास्ता निकाला जा सकता है।
लेकिन मौत के चंगुल से कैसे बचा जाए, यह संभव नहीं है:
इसलिए मैंने दृढ़ निश्चय कर लिया है—मैं एक पवित्र जीवन जीऊंगा।
"योद्धा या ब्राह्मण, उच्च पदस्थ पुरुष,
अत्यंत धनवान पुरुष, शक्तिशाली और महान लोग,
मृत्यु के राजा को न दया आती है, न करुणा।
इसलिए मैंने दृढ़ निश्चय कर लिया है—मैं एक पवित्र जीवन जीऊंगा।
शेर, बाघ, तेंदुआ अपने शिकार को पकड़ लेते हैं।
और सभी इसे खा जाते हैं, चाहे इसके लिए कितना भी संघर्ष करना पड़े;
उनके विनाशकारी मृत्यु के भय से मुक्ति:
इसलिए मैंने दृढ़ निश्चय कर लिया है—मैं एक पवित्र जीवन जीऊंगा।
मंच पर एक बाज़ीगर अपनी छड़ी से करतब दिखा रहा था।
प्रदर्शन लोगों की दृष्टि को धोखा दे सकता है।
मौत को चकमा देने के लिए, इससे तेज़ कोई तरकीब नहीं हो सकती:
इसलिए मैंने दृढ़ निश्चय कर लिया है—मैं एक पवित्र जीवन जीऊंगा।
क्रोधित सर्प विषैले डंक से हमला करेंगे

तुरंत हमला करो और आदमी को तुरंत मार डालो;
मृत्यु के लिए विषैले काटने का कोई भय नहीं हो सकता:
इसलिए मैंने दृढ़ निश्चय कर लिया है—मैं एक पवित्र जीवन जीऊंगा।
विषैले दांतों वाले क्रोधित सर्प काट सकते हैं।
कुशल जोंक जहर की शक्ति को कम कर सकती है;
मृत्यु के घाव को ठीक करने के लिए कोई भी व्यक्ति इतना शक्तिशाली नहीं हो सकता:
इसलिए मैंने दृढ़ निश्चय कर लिया है—मैं एक पवित्र जीवन जीऊंगा।
चिकित्सकों के कौशल से सांप के काटने का इलाज हो सकता था;
अब वे स्वयं मर चुके हैं और नजरों से ओझल हो गए हैं।
भोग, वेतरानी, धम्मंतरी
इसलिए मैंने दृढ़ निश्चय कर लिया है—मैं एक पवित्र जीवन जीऊंगा।
कुछ लोग जो जादू-टोने और तंत्र-मंत्र की परंपरा में बुद्धिमान हैं
दूसरों की नजरों से अदृश्य होकर चल सकता है।
फिर भी इतना अदृश्य नहीं कि मृत्यु उसे देख न सके:
इसलिए मैंने दृढ़ निश्चय कर लिया है—मैं एक पवित्र जीवन जीऊंगा।
"जो व्यक्ति धर्म के मार्ग पर चलता है, वह सुरक्षित है।"
धर्म (धर्म) का सही ढंग से पालन करने से आशीर्वाद प्राप्त करने की शक्ति मिलती है;
धर्मी व्यक्ति धन्य है, और वह कभी नहीं।
जबकि वह धर्मी है, दुख में गिर जाता है (*6)।
"क्या यह सच नहीं है कि उसका उचित फल सही या गलत से ही उत्पन्न होगा?"
सही राह स्वर्ग की ओर ले जाती है, जबकि अधर्म मनुष्य को नरक की ओर ले जाता है।
जब उस महान सत्ता ने चौबीस श्लोकों में इस प्रकार विधि का वर्णन किया, तो उन्होंने कहा, “हे महाराज! अपना राज्य अपने पास ही रखें; मुझे इसकी कोई आवश्यकता नहीं है। आपसे बात करते-करते ही रोग, वृद्धावस्था और मृत्यु मेरे निकट आ रहे हैं। आप जहाँ हैं वहीं ठहरें।” फिर, जैसे कोई क्रोधित हाथी अपनी लोहे की जंजीरें तोड़ देता है, जैसे कोई जवान शेर सोने के पिंजरे से बाहर निकल आता है, वैसे ही उन्होंने अपनी सांसारिक इच्छाओं को त्याग दिया; और अपने माता-पिता को प्रणाम करके वे चले गए। तब उनके पिता ने कहा, “मुझे राज्य की कोई आवश्यकता नहीं है!” और उसे छोड़कर वे उनके साथ चले गए। उनके जाने के बाद, रानी, दरबारी, ब्राह्मण, गृहस्थ और नगर में रहने वाले सभी लोग अपने-अपने घर छोड़कर चले गए। वहाँ एक विशाल जनसमूह था; भीड़ बारह कुंड (4.23 किमी) के क्षेत्र में फैली हुई थी। इसी भीड़ के साथ वे हिमालय के लिए रवाना हुए।

जब इंद्र को पता चला कि विश्वकर्मा चले गए हैं, तो उन्होंने विश्वकर्मा को बारह कुंड (4.23 किमी) लंबा और सात कुंड चौड़ा एक आश्रम बनाने के लिए भेजा और उनसे उसमें तपस्वी जीवन के लिए आवश्यक सभी चीजें रखने को कहा। महान सत्ता ने किस प्रकार इन सभी को भिक्षु समुदाय में शामिल किया, उन्हें शिक्षा दी और वे ब्रह्मा के लोक के लिए नियत हुए या तीसरे मार्ग (सम्मोहन) में प्रवेश किया, यह सब पहले की तरह फिर से बताना होगा।

प्रवचन समाप्त होने पर गुरु ने कहा: "इस प्रकार, भिक्षुओं, तथागत (बुद्ध) ने पहले महान त्याग किया था"; जिसके बाद उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "उस समय राजा के माता-पिता माता-पिता थे, बुद्ध के अनुयायी उनके अनुयायी थे, और मैं स्वयं ज्ञानी अयोघरा था।"

फुटनोट:

(1) गुथानिरायो.

(2)इसकी व्याख्या करते हुए विद्वान निम्नलिखित पंक्तियाँ उद्धृत करते हैं:

"पहले बीज, फिर भ्रूण, फिर आकारहीन मांस,"
फिर कोई ठोस चीज, जिससे जल्द ही विकास होता है
जांघें, सिर और शरीर के बाल, नाखूनों सहित:
मां जो भी भोजन या पेय पदार्थ ग्रहण करती है,
बच्चा अपनी मां के गर्भ में जीवित रहता है।"

(3) घोड़े, पैदल सैनिक, रथ, हाथी।

(4) पाठ है: "शराबी के कपड़े की तरह," लेकिन इस गूढ़ कथन की व्याख्या विद्वान ने इस प्रकार की है।

(5) चंद्रमा.

(6)सं. 224 , थेरागाथा. 35.

पुस्तक XVI. तिमसानिपाटा:

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **किंचंद-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-511-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 511
किमचंदा-जातक

"तुम ऐसा क्यों करते हो," इत्यादि--यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए उपवास के दिनों के पालन के बारे में सुनाई थी (*1)।

एक दिन जब कई गृहस्थ शिष्याएँ और बहनें, जो उपवास रख रही थीं, विधि सुनने के लिए आईं और सत्य के हॉल में बैठ गईं, तो गुरु ने उनसे पूछा कि क्या वे उपवास रख रही हैं, और उनके हाँ कहने पर उन्होंने कहा, "और उपवास रखना अच्छा है: पुराने समय के लोग, आधा उपवास रखने के परिणामस्वरूप, महान यश प्राप्त करते थे," और उनके अनुरोध पर उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, बनारस में ब्रह्मदत्त अपने राज्य पर विधिपूर्वक शासन कर रहे थे। वे एक सच्चे विश्वासी थे और व्रत के कर्तव्यों का पालन करने, आज्ञाओं का पालन करने और दान देने में अत्यंत तत्पर रहते थे। उन्होंने अपने मंत्रियों और अन्य लोगों को भी दान-पुण्य आदि की प्रतिज्ञा लेने के लिए प्रेरित किया। परन्तु उनके कुल पुरोहित चुगली करने वाले, रिश्वतखोर और अन्यायपूर्ण निर्णय देने वाले थे। एक व्रत के दिन राजा ने अपने सलाहकारों को बुलाया और उनसे व्रत रखने को कहा। पुरोहित ने व्रत के कर्तव्यों का पालन नहीं किया। इसलिए जब वह दिन भर रिश्वत लेकर और झूठे निर्णय देकर दरबार में आए, तो राजा ने पहले अपने प्रत्येक मंत्री से पूछा कि क्या वे व्रत रख रहे हैं, और फिर पुरोहित से पूछा, "क्या आप व्रत रख रहे हैं, महाराज?" पुरोहित ने झूठ बोला और कहा, "हाँ," और महल से चले गए। तब एक मंत्री ने उन्हें फटकारा और कहा, "क्या आप व्रत रख रहे हैं?" उन्होंने कहा, “मैंने सुबह जल्दी भोजन कर लिया है, लेकिन घर जाकर मैं कुल्ला करूँगा और व्रत के नियमों का पालन करते हुए शाम को कुछ नहीं खाऊँगा, और पूरी रात नैतिक नियमों का पालन करूँगा, इस तरह मेरा आधा व्रत पूरा हो जाएगा।” उन्होंने कहा, “बहुत अच्छा, महाराज।” और वे घर गए और उन्होंने ऐसा ही किया। एक दिन जब वे न्याय कर रहे थे, एक महिला, जो नैतिक नियमों का पालन करती थी, का एक मामला चल रहा था। घर न जा पाने के कारण उसने सोचा, “मैं व्रत का उल्लंघन नहीं करूँगी,” और जैसे ही समय नजदीक आया, उसने कुल्ला करना शुरू कर दिया। उसी समय ब्राह्मण के पास पके आमों का एक गुच्छा लाया गया। उन्होंने देखा कि महिला व्रत रख रही है और कहा, “इसे खाओ और व्रत पूरा करो।” उसने ऐसा ही किया। ब्राह्मण के इस कार्य का यही उदाहरण है। समय बीतने पर उनका निधन हो गया और हिमालयी क्षेत्र में, गंगा की कोसिकी शाखा के तट पर स्थित एक रमणीय स्थान पर, तीन मील (4.23 किमी) चौड़े आमों के बाग में, एक भव्य स्वर्ण महल में शाही पलंग पर उनका पुनर्जन्म हुआ। उनका पुनर्जन्म ऐसे हुआ मानो वे अभी-अभी नींद से जागे हों, सुशोभित और अलंकृत, अत्यंत सुंदर रूप वाले, और सोलह हजार अप्सराओं से सजे हुए। वे रात भर इस महिमा का आनंद लेते हैं, क्योंकि एक प्रेत के रूप में एक मायावी महल में जन्म लेने के कारण उन्हें उनके कर्मों के अनुरूप प्रतिफल प्राप्त होता है। इसलिए भोर होते ही वे आमों के बाग में प्रवेश करते हैं, और उनके प्रवेश करते ही उनका दिव्य शरीर लुप्त हो जाता है, वे एक विशाल ताड़ के पेड़ के समान, अस्सी भुजाओं की ऊँचाई वाले रूप में प्रकट होते हैं, और उनका पूरा शरीर खिले हुए जुडास वृक्ष की तरह अग्नि से प्रज्वलित होता है। उसके प्रत्येक हाथ में केवल एक उंगली है, जबकि उसके नाखून कुदाल जितने बड़े हैं, और इन्हीं नाखूनों से वह अपनी पीठ की त्वचा को खोदता है और उसे फाड़कर खाता है, और दर्द से पागल होकर वह जोर से चीखता है। सूर्यास्त के समय उसका शरीर गायब हो जाता है और उसका दिव्य रूप पुनः प्रकट होता है। स्वर्ग की नर्तकियां, अपने हाथों में विभिन्न वाद्ययंत्र लिए, उसकी सेवा करती हैं।और महान सम्मान का आनंद लेते हुए वह एक रमणीय आम के बाग में स्थित एक दिव्य महल में विराजमान होता है। इस प्रकार, उपवास रखने

वाली एक स्त्री को आम देने के फल से उसे तीन लीग (x 4.23 किमी) का एक आम का बाग प्राप्त हुआ, परन्तु रिश्वत लेने और झूठे फैसले सुनाने के कारण वह अपनी ही पीठ से मांस नोचकर खाता है, जबकि आधा उपवास रखने के कारण वह हर रात सोलह हजार नृत्य करती अप्सराओं के दल से घिरा हुआ यश का अनुभव करता है।

लगभग इसी समय बनारस के राजा ने, अपनी इच्छाओं के पापमय स्वभाव को समझते हुए, तपस्वी जीवन अपना लिया और गंगा के निचले हिस्से में एक रमणीय स्थान पर पत्तों की कुटिया में रहने लगे, जहाँ वे जो कुछ भी तोड़ पाते थे, उसी से अपना जीवन यापन करते थे। एक दिन उसी कुटिया से एक पका हुआ आम, जो एक बड़े कटोरे के आकार का था, गंगा में गिर गया और धारा के साथ बहकर उस स्थान के ठीक सामने आ गया जहाँ तपस्वी भोजन करते थे। जब वे कुल्ला कर रहे थे, तो उन्होंने आम को नदी के बीच में तैरते हुए देखा। नदी पार करके वे उसे उठाकर अपनी कुटिया में ले आए और उसे उस कोठरी में रख दिया जहाँ उनकी पवित्र अग्नि जलती थी (*2)। फिर उन्होंने आम को चाकू से काटकर उतना ही खाया जितना उनके जीवन के लिए आवश्यक था, और शेष को केले के पत्तों से ढककर वे प्रतिदिन तब तक खाते रहे जब तक वह बचा रहा। और जब वह सब खा गया, तो वह किसी और प्रकार का फल नहीं खा सका, लेकिन उत्तम भोजन की लालसा का गुलाम होने के कारण उसने प्रतिज्ञा की कि वह केवल पका हुआ आम ही खाएगा, और नदी के किनारे जाकर वह नदी को निहारने लगा, यह निश्चय करते हुए कि जब तक उसे आम न मिल जाए, तब तक वह नहीं उठेगा। इस प्रकार उसने वहाँ लगातार छह दिनों तक उपवास किया और फल की खोज में बैठा रहा, जब तक कि हवा और गर्मी से वह सूख नहीं गया। सातवें दिन नदी की देवी ने इस विषय पर विचार करते हुए उसके इस कार्य का कारण जान लिया और सोचा, "यह तपस्वी अपनी लालसा का गुलाम होकर सात दिनों तक गंगा को निहारते हुए उपवास कर रहा है; उसे पका हुआ आम न देना अनुचित है; क्योंकि इसके बिना वह मर जाएगा; मैं उसे एक आम दूंगी।" इसलिए वह आई और गंगा के ऊपर आकाश में खड़ी हो गई, और उससे बातचीत करते हुए पहला श्लोक बोला:

आप भीषण गर्मी में भी इस नदी किनारे क्यों टिके रहते हैं?
ब्राह्मण, तुम्हारी गुप्त आशा क्या है? इससे तुम्हें क्या लाभ होगा?
यह सुनकर तपस्वी ने नौ छंद दोहराए:

नदी पर तैरती हुई, सुंदर अप्सरा, मैंने एक आम देखा;
मैंने हाथ बढ़ाकर फल को पकड़ा और उसे अपने साथ घर ले आया।
स्वाद और सुगंध में यह इतना मीठा था कि मैंने इसे एक अनमोल वस्तु समझा;
इसका आकर्षक आकार शायद सबसे बड़े पानी के जार को भी टक्कर दे सकता है।
मैंने इसे केले के पत्तों के बीच छिपा दिया और चाकू से काट दिया;
साधारण जीवन जीने वाले व्यक्ति के लिए भोजन और पेय के रूप में थोड़ी मात्रा ही पर्याप्त होती थी।
मेरा भंडार खाली हो गया है, मेरी पीड़ा शांत हो गई है, लेकिन फिर भी मुझे पछतावा करना ही होगा।
मुझे जो अन्य फल मिलते हैं, उनमें मुझे कोई स्वाद नहीं मिलता।
मैं मुरझा जाता हूँ; वह मीठा आम जिसे मैंने लहर से बचाया था
मुझे डर है कि इससे मेरी मृत्यु हो जाएगी। मुझे किसी और फल की लालसा नहीं है।
मैंने आपको बताया है कि मैं उपवास क्यों करता हूँ, हालाँकि मैं एक नदी के किनारे रहता हूँ।
जिसकी चौड़ी होती लहरों में तैरने वाली हर मछली की भरमार होती है।
और अब मैं आपसे विनती करता हूँ कि मुझे बताएं, और आप डरकर भागें नहीं।
ओ प्यारी लड़की, तुम कौन हो और तुम यहाँ किस कारण से हो?
देवताओं (देवदूतों) की सेविकाएँ सुंदर हैं, वे चमकीले सोने के समान हैं।
पहाड़ों की ढलानों पर खेलते हुए बाघ के बच्चों की तरह सुंदर।
यहां भी पुरुषों की दुनिया में सुंदर स्त्रियां देखने को मिलती हैं।
लेकिन हमारे देवताओं (देवदूतों) या मनुष्यों में से कोई भी आपकी तुलना में नहीं है।
हे दिव्य कृपा से परिपूर्ण सुंदर अप्सरा, मैं तुमसे यह विनती करता हूँ,
अपना नाम, परिवार और अपनी जाति के बारे में बताएं।
तब देवी ने आठ श्लोक कहे:

हे ब्राह्मण, जिस सुंदर नदी के किनारे तुम बैठे हो, उस पर मेरा आधिपत्य है।
और गंगा की लहरों के नीचे, विशाल गहराइयों में निवास करते हैं।
मेरे पास हजारों पर्वतीय गुफाएं हैं जो पूरी तरह से वनों से ढकी हुई हैं।
जहां से अनेक उफनती धाराएँ बहकर मेरी लहरों में मिल जाती हैं।

नागों को प्रिय प्रत्येक वन और उपवन से अनेक जलधाराएँ प्रवाहित होती हैं।
और यह अपने नीले जल का भंडार प्रदान करता है, जिससे मेरा भरपूर मार्ग भर जाता है।
अक्सर इन सहायक धाराओं के साथ-साथ हर पेड़ के फल भी बहकर आते हैं।
गुलाब सेब, ब्रेड फ्रूट, खजूर और अंजीर के साथ-साथ आम भी देखने को मिल सकते हैं।
और दोनों किनारों पर जो कुछ भी उगता है और मेरी पहुँच में आता है,
मैं इसे वैध पुरस्कार के रूप में दावा करता हूं, और कोई भी मेरे अधिकार को चुनौती नहीं दे सकता।
यह भली-भांति जानकर, हे बुद्धिमान और विद्वान राजा, मेरी बात सुनिए।
अपने मन की इच्छाओं को पूरा करना बंद करो—इस अभिशापित वस्तु का त्याग करो।
हे विशाल साम्राज्य के पूर्व शासक, मैं आपके इस कार्य की प्रशंसा नहीं कर सकता।
जवानी के चरम पर मौत की कामना करना, निश्चित रूप से एक बड़ा गुनाह है, जो विश्वासघात को दर्शाता है।
ब्राह्मण और देवदूत, देवता (देवदूत) और मनुष्य, सभी आपके कर्म और नाम को जानते हैं।
और वे संत जो अपनी पवित्रता से पृथ्वी पर प्रसिद्धि प्राप्त करते हैं—
हाँ, सभी बुद्धिमान और प्रसिद्ध लोगों के पापपूर्ण कर्म ही इस बात का प्रमाण हैं।
तब तपस्वी ने चार श्लोक कहे:

जो जानता है कि हमारा जीवन कितना कमजोर है, और इंद्रियों से मिलने वाली वस्तुएँ कितनी क्षणभंगुर हैं,
वह कभी किसी दूसरे को मारने के बारे में नहीं सोचता, बल्कि निर्दोषता में रहता है।
संतों की सभा द्वारा एक बार सम्मानित, एक सदाचारी नाम के स्वामी,
अब पापी पुरुषों की बातचीत से तुम्हें बदनामी ही मिलेगी।
हे सुंदर रूप वाली अप्सरा, यदि मैं तुम्हारे तट पर ही मर जाऊं,
बदनामी तुम पर बादल की छाया की तरह छा जाएगी।
अत: हे सुंदर देवी, मैं आपसे निवेदन करता हूँ कि आप सभी पाप कर्मों से दूर रहें।
अन्यथा, जनता के बीच तुम एक कहावत बनकर रह जाओगे, जिसके कारण मुझे अपनी मृत्यु पर खेद होगा।
उनकी बात सुनकर देवी ने पाँच श्लोकों में उत्तर दिया:

मैं तुम्हारी उस गुप्त इच्छा को अच्छी तरह जानता हूँ, जिसे तुम इतने धैर्य से सहन कर रहे हो।
और मैं स्वयं को आपका सेवक मानता हूँ और आपको आम अर्पित करता हूँ।
देखो! पूर्व के पापपूर्ण सुख, वे सुख जिन्हें छोड़ना कठिन है,
आपने सदा के लिए पवित्रता और मन की शांति प्राप्त कर ली है।
जो व्यक्ति बचपन की गुलामी से मुक्त होकर भी उन्हीं जंजीरों को गले लगाता है जिन्हें उसने कभी त्याग दिया था।
अपवित्र मार्गों पर अविवेकी रूप से चलने से पाप और भी अधिक बढ़ते जाते हैं।
मैं तुम्हारी दिली इच्छा पूरी करूंगा और तुम्हारे कष्टों का अंत करूंगा।
हम आपको शांत और एकांत स्थानों की ओर मार्गदर्शन करेंगे, जहाँ आप शांति से रह सकें।
बगुले, मैना पक्षी और कोयल, साथ ही लाल हंस जो इन्हें पसंद करते हैं
फूलों से अमृत इकट्ठा करना, हंसों के झुंड ऊँचाई पर विचरण करते हैं,
धान के पक्षी और राजसी मोर अपने गीत से उपवन को जगा देते हैं।
केसर और कदंब के फूल भूसे की तरह जमीन पर पड़े हैं।
खजूर के सबसे पके हुए टुकड़े, ताड़ के पेड़ों की शोभा बढ़ाते हुए, चारों ओर गुच्छों में लटके हुए हैं।
और, लदे हुए पेड़ों की शाखाओं के बीच, देखो यहाँ कितने सारे आम लगे हुए हैं!
उस स्थान की प्रशंसा करते हुए वह तपस्वी को वहाँ ले गई और उससे कहा कि वह इस बाग में आम खाकर अपनी भूख मिटा ले, फिर वह चली गई। तपस्वी ने आम खाकर अपनी भूख शांत की और कुछ देर विश्राम किया। फिर, जब वह बाग में घूम रहा था, तो उसने उस आत्मा को कष्ट की अवस्था में देखा और उसका मन नहीं हुआ कि वह उससे एक शब्द भी कहे, लेकिन सूर्यास्त के समय उसने उसे अप्सराओं से घिरा हुआ और दिव्य महिमा का आनंद लेते हुए देखा और तीन छंदों में उससे बात की:

पूरी रात अभिषेक किया गया, सम्मान दिया गया, माथे पर ताज पहनाया गया,
गर्दन और बाजू गहनों से सजी हुई—दिनभर तुम पीड़ा में तड़पती रहती हो!
हजारों अप्सराएं आपकी सेवा में हैं। यह कितनी अद्भुत जादुई शक्ति है!
दुख की अवस्था से आनंद की अवस्था में परिवर्तन होना कितना अद्भुत है!
आपकी बर्बादी का कारण क्या था? वह कौन सा पाप है जिसका आपको पछतावा है?

तुम अपनी ही पीठ से मांस क्यों खाते हो, हर रोज?
पवित्र आत्मा ने उसे पहचान लिया और कहा, "तुम मुझे नहीं पहचानते, परन्तु मैं एक समय तुम्हारा याजक था। रात में मुझे जो सुख मिलता है, वह तुम्हारी कृपा से है, क्योंकि मैंने आधा उपवास रखा था; जबकि दिन में जो कष्ट सहता हूँ, वह मेरे द्वारा किए गए बुरे कर्मों का परिणाम है। क्योंकि तुमने मुझे न्याय के सिंहासन पर बिठाया था, और मैंने रिश्वत ली, झूठे निर्णय दिए, और चुगली की, और दिन में किए गए बुरे कर्मों के फलस्वरूप अब मैं यह कष्ट सह रहा हूँ," और उसने कुछ पंक्तियाँ कहीं:

एक बार पवित्र परंपरा में आनंद लेते हुए, मैं पापपूर्ण कार्यों में लिप्त होकर गिर गया था।
बीते वर्षों में, मैं अपने पड़ोसी के लिए बुराई करता रहा।
जो दूसरों की चुगली करके उनकी प्रतिष्ठा का लाभ उठाता है,
वह अपनी ही पीठ से मांस नोचकर खाएगा, जैसा कि मैं आज कर रहा हूँ।
ऐसा कहकर उसने तपस्वी से पूछा कि वह यहाँ क्यों आया है। तपस्वी ने विस्तार से अपनी पूरी कहानी सुनाई। आत्मा ने कहा, "हे पूज्यवर, क्या आप यहाँ ठहरेंगे या चले जाएँगे?" तपस्वी ने कहा, "मैं नहीं ठहरूँगा, मैं अपने आश्रम लौट जाऊँगा।" आत्मा ने कहा, "बहुत अच्छा, पूज्यवर, मैं आपको लगातार पका हुआ आम देता रहूँगा," और अपनी जादुई शक्ति से उसने उन्हें उनके आश्रम में पहुँचा दिया, और उनसे वहाँ संतुष्ट रहने का अनुरोध करके उनसे वचन प्राप्त किया और अपने मार्ग पर चला गया। तब से आत्मा उन्हें लगातार आम देता रहा। तपस्वी ने आम का आनंद लेते हुए रहस्यमय ध्यान के लिए प्रारंभिक अनुष्ठान किए और (प्रधान देवदूतों के लोक) के लिए नियत हो गया।

गुरु ने आम लोगों को अपना पाठ समाप्त करने के बाद सत्यों को प्रकट किया और जन्म का वर्णन किया:- सत्यों के समापन पर, कुछ ने प्रथम मार्ग (सम्मोहन) को, कुछ ने द्वितीय मार्ग को और अन्य ने तृतीय मार्ग (सम्मोहन) को प्राप्त किया:- "उस समय देवी उप्पलावन्ना थीं, और तपस्वी मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) पोया (उपोसथा) दिनों का पालन, "उपवास" में अपने पड़ोसी के साथ कोई अन्याय न करना शामिल है।

(2)तुलना करें महावग्ग, इ. 15. 2.

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कुम्भ-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-512-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 512
कुंभ जातक

“तुम कौन हो?” इत्यादि—यह कथा गुरुजी ने जेतवन मठ में रहते हुए विशाखा की पाँच सौ सहेलियों के बारे में सुनाई, जो मादक पेय पीती थीं। कथा के अनुसार, श्रावस्ती नगर में एक मादक पेय उत्सव का आयोजन हुआ। इन पाँच सौ सहेलियों ने अपने गुरुओं को मादक पेय पिलाने के बाद उत्सव के अंत में सोचा, “हम भी इस उत्सव में शामिल होंगी।” वे सब विशाखा के पास गईं और बोलीं, “सहेली, हम भी इस उत्सव में शामिल होंगी।” विशाखा ने उत्तर दिया, “यह तो मादक पेय उत्सव है। मैं मादक पेय नहीं पीऊँगी।” उन्होंने कहा, “तो आप बुद्ध को भेंट चढ़ाएँ, हम भी इस उत्सव में शामिल होंगी।” विशाखा ने तुरंत सहमति दे दी और उन्हें विदा कर दिया। गुरुजी का सत्कार करने और उन्हें बड़ी भेंट चढ़ाने के बाद, वे शाम को अपने हाथों में कई सुगंधित पुष्पमालाएँ लिए, इन सहेलियों के साथ जेतवन मठ के लिए रवाना हुईं, ताकि धार्मिक मार्ग का उपदेश सुन सकें। अब वे पीने के लिए बेताब थीं, जब वे उसके साथ निकलीं, और जब वे छज्जे वाले कक्ष में खड़ी हुईं, तो उन्होंने खूब शराब पी और फिर विशाखा के साथ गुरु के समक्ष गईं। विशाखा ने गुरु को प्रणाम किया और आदरपूर्वक एक तरफ बैठ गईं। कुछ अन्य स्त्रियाँ गुरु के सामने ही नाचने लगीं; कुछ गाने लगीं; कुछ ने हाथों और पैरों से अनुचित हरकतें कीं; कुछ आपस में झगड़ने लगीं। गुरु ने उन्हें चौंकाने के लिए अपनी भौंहों से प्रकाश की एक किरण निकाली; और इसके बाद घोर अंधकार छा गया। ये स्त्रियाँ मृत्यु के भय से भयभीत और डरी हुई थीं, और इस प्रकार शराब का असर

खत्म हो गया। गुरु अपने सिंहासन से विदा होकर सिनेरू पर्वत की चोटी पर खड़े हो गए और अपनी भौंहों के बीच के बालों से प्रकाश की एक किरण निकाली (*1), मानो हजारों चंद्रमा उदय हो गए हों। गुरु ने वहाँ खड़े होकर, इन स्त्रियों में सनसनी पैदा करने के लिए, यह श्लोक बोला:

(*2) यहां हंसी की कोई जगह नहीं, खुशी के लिए कोई गुंजाइश नहीं,
जुनून की ज्वालाएं पीड़ादायक संसारों को नष्ट कर देती हैं।
मैं पूछता हूँ, घोर अंधकार में भी हम क्यों अभिभूत हो जाते हैं?
क्या तुम अपने मार्ग को रोशन करने के लिए किसी मशाल की तलाश नहीं करोगे?
श्लोक के अंत में, सभी पाँच सौ स्त्रियाँ प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की सिद्धि प्राप्त कर चुकी थीं। गुरुदेव आकर सुगंधित कक्ष की छाया में बुद्ध आसन पर बैठ गए। तब विशाखा ने उन्हें प्रणाम किया और पूछा, "हे परम पूज्य, यह मादक पेय पीने की लत कहाँ से आई, जो मनुष्य के सम्मान और कोमल अंतरात्मा को ठेस पहुँचाती है?" और उन्होंने उसे अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज था, काशी राज्य में रहने वाला सूरा नामक एक वनपाल व्यापारिक वस्तुओं की खोज में हिमालय गया। वहाँ एक वृक्ष था जो एक आदमी की भुजाओं को सिर के ऊपर फैलाकर खड़ी होने जितनी ऊँचाई का था और फिर तीन भागों में बँट गया। उसकी तीनों शाखाओं के बीच में एक मदिरा घड़े जितना बड़ा छेद था, और जब बारिश होती थी तो यह छेद पानी से भर जाता था। उसके चारों ओर दो मरुबलन (*3) के पौधे और एक काली मिर्च का पौधा था; और इनके पके फल जब तोड़े जाते थे तो छेद में गिर जाते थे। इस वृक्ष से कुछ ही दूरी पर कुछ धान अपने आप उग आया था। तोते इस वृक्ष पर बैठकर धान की बालियाँ तोड़कर खाते थे। खाते समय धान और चावल के छिलके वहाँ गिर जाते थे। इस प्रकार सूर्य की गर्मी से किण्वित होकर पानी का रंग गहरा लाल हो गया। गर्मी के मौसम में प्यास से व्याकुल पक्षियों के झुंड इसे पीते थे और मदहोश होकर वृक्ष की तलहटी में गिर पड़ते थे। कुछ देर सोने के बाद वे चहचहाते हुए उड़ जाते थे। जंगली कुत्तों, बंदरों और अन्य प्राणियों के साथ भी ऐसा ही होता था। यह देखकर वनपाल ने कहा, "यदि यह विष होता तो मर जाते, लेकिन थोड़ी देर सोने के बाद वे अपनी मर्जी से चले जाते हैं; यह विष नहीं है।" उसने स्वयं भी इसे पिया और मदहोश होकर उसे मांस खाने की इच्छा हुई। फिर उसने आग जलाकर वृक्ष की तलहटी में गिरे तीतरों और मुर्गों को मार डाला और जलते कोयलों पर उनका मांस भूनकर एक हाथ से इशारा करते हुए दूसरे हाथ से मांस खाते हुए एक-दो दिन वहीं बैठा रहा। अब यहाँ से कुछ ही दूरी पर वरुण नाम का एक तपस्वी रहता था। वनपाल अन्य समयों पर भी उससे मिलने जाता था, और अब उसके मन में यह विचार आया, "मैं भी इस तपस्वी के साथ यह पेय पीऊँगा।" इसलिए उन्होंने एक बांसुरी में वह पेय भर लिया और कुछ भुने हुए मांस के साथ उसे लेकर पत्तों की झोपड़ी में आए और कहा, "हे पूज्यवर, इस पेय का स्वाद चखिए।" दोनों ने उसे पिया और मांस खाया। इस पेय की खोज सूर और वरुण ने की थी, इसलिए इसका नाम उनके नाम पर (सूर और वरुण) पड़ गया। दोनों ने सोचा, "इसे पीने का यही तरीका है," और उन्होंने अपनी बांसुरियों में वह पेय भर लिया और उसे एक डंडे पर लादकर पास के एक गाँव में गए और राजा को संदेश भेजा कि कुछ शराब व्यापारी आए हैं। राजा ने उन्हें बुलवाया और उन्होंने राजा को वह पेय दिया। राजा ने उसे दो-तीन बार पिया और मदहोश हो गए। यह मदहोशी उन्हें केवल एक-दो दिन तक ही रही। फिर उन्होंने उनसे पूछा कि क्या और पेय है? "जी जी," उन्होंने कहा। "कहाँ?" "हिमालय में, महाराज।" "तो उसे यहाँ ले आओ।" वे गए और दो-तीन बार उसे ले आए। फिर यह सोचकर कि "हम हमेशा वहाँ नहीं जा सकते," उन्होंने सभी घटकों पर ध्यान दिया, और पेड़ की छाल से शुरू करके, उन्होंने बाकी सभी सामग्रियाँ मिला दीं, और शहर में वह पेय बनाया। शहर के लोगों ने उसे पिया और वे निकम्मे और निकम्मे हो गए।और वह स्थान वीरान शहर जैसा हो गया। तब ये शराब व्यापारी वहाँ से भागकर बनारस आ गए और राजा को अपने आने की सूचना दी। राजा ने उन्हें बुलवाया और पैसे देकर वहाँ भी शराब बनाई। और वह शहर भी उसी तरह नष्ट हो गया। वहाँ से वे साकेत भाग गए और साकेत से श्रावस्ती शहर आ गए। उस समय श्रावस्ती शहर में सब्बामित्त नाम का एक राजा था। उसने इन व्यापारियों पर कृपा की और उनसे पूछा कि उन्हें क्या चाहिए। जब उन्होंने कहा, "हमें मुख्य सामग्री, पिसा हुआ चावल और पाँच सौ घड़े चाहिए," तो राजा ने उन्हें सब कुछ दे दिया। इसलिए उन्होंने शराब को पाँच सौ घड़ों में भर दिया और उनकी रखवाली के लिए प्रत्येक घड़े पर एक बिल्ली बाँध दी। जब शराब किण्वित होकर बहने लगी, तो बिल्लियों ने घड़ों के अंदर से बहने वाली तेज़ शराब पी ली और नशे में चूर होकर सो गईं; और चूहे आए और बिल्लियों के कान, नाक, दाँत और पूंछ काट डाले। राजा के अधिकारी आए और राजा को बताया, "बिल्लियाँ शराब पीने से मर गई हैं।" राजा ने कहा, "ज़रूर ये लोग ज़हर बनाने वाले होंगे," और उसने उन दोनों का सिर कलम करने का आदेश दिया। वे चिल्लाते हुए मर गए, "हमें तेज़ शराब दो, हमें शहद से बना मादक पेय दो (*4)।" राजा ने उन लोगों को मौत के घाट उतारने के बाद, घड़े तोड़ने का आदेश दिया। लेकिन जब शराब का असर उतरा, तो बिल्लियाँ उठ गईं और इधर-उधर चलने और खेलने लगीं। जब उन्होंने यह देखा, तो उन्होंने राजा को बताया। राजा ने कहा, "अगर यह ज़हर होता, तो वे मर गए होते; यह ज़रूर शहद से बना मादक पेय होगा; हम इसे पिएंगे।" इसलिए उसने शहर को सजाया, और महल के प्रांगण में एक मंडप बनवाया और अपने दरबारियों से घिरे हुए, एक सफेद छतरी वाले शाही सिंहासन पर बैठकर, इस भव्य मंडप में बैठकर, शराब पीने लगा। तब स्वर्ग के राजा सक्का (इंद्र) ने कहा, "माता की सेवा और इसी

प्रकार के कर्तव्यों का पालन करते हुए तीन प्रकार के सही आचरणों का पालन कौन करता है?" और संसार पर दृष्टि डालते हुए उन्होंने राजा को मादक पेय पीते हुए देखा और सोचा, "यदि वह मादक पेय पिएगा, तो सारा भारत नष्ट हो जाएगा: मैं देखूंगा कि वह इसे न पिए।" अतः, उन्होंने अपने हाथ की हथेली में मादक पेय से भरा एक घड़ा रखा और ब्राह्मण का वेश धारण करके राजा के सामने हवा में खड़े होकर पुकारा, "यह घड़ा खरीदो, यह घड़ा खरीदो।" राजा सब्बमित्त ने उन्हें हवा में खड़े होकर इस प्रकार बोलते हुए देखकर कहा, "यह ब्राह्मण कहाँ से आया है?" और उनसे बातचीत करते हुए उन्होंने तीन श्लोक दोहराए:उस समय श्रावस्ती नगर में सब्बामित्त नामक एक राजा था। उसने उन लोगों पर कृपा की और उनसे पूछा कि उन्हें क्या चाहिए। जब उन्होंने कहा, "हमें मुख्य सामग्री, पिसा हुआ चावल और पाँच सौ घड़े चाहिए," तो राजा ने उन्हें वह सब कुछ दे दिया जो उन्होंने माँगा था। इसलिए उन्होंने पाँच सौ घड़ों में शराब भर दी और उनकी रखवाली के लिए प्रत्येक घड़े के साथ एक बिल्ली बाँध दी। जब शराब किण्वित होकर बहने लगी, तो बिल्लियों ने घड़ों के अंदर से बहने वाली तेज़ शराब पी ली और नशे में चूर होकर सो गईं; तभी चूहे आए और बिल्लियों के कान, नाक, दाँत और पूंछ काट डाले। राजा के अधिकारी आए और राजा को बताया, "बिल्लियाँ शराब पीने से मर गई हैं।" राजा ने कहा, "ज़रूर ये लोग ज़हर बनाने वाले होंगे," और उसने उन दोनों का सिर कलम करने का आदेश दिया और वे चिल्लाते हुए मर गए, "हमें तेज़ शराब दो, हमें शहद से बनी मादक शराब दो (*4)।" राजा ने आदमियों को मौत के घाट उतारने के बाद आदेश दिया कि घड़े तोड़ दिए जाएँ। लेकिन जब शराब का असर उतर गया, तो बिल्लियाँ उठ खड़ी हुईं और इधर-उधर घूमने और खेलने लगीं। यह देखकर उन्होंने राजा को बताया। राजा ने कहा, "अगर यह ज़हर होता, तो वे मर जाते; यह ज़रूर शहद से बना मादक पेय होगा; हम इसे पिएँगे।" इसलिए उसने शहर को सजाया और महल के प्रांगण में एक मंडप बनवाया। वह अपने दरबारियों से घिरे एक भव्य मंडप में सफेद छतरी वाले राजसिंहासन पर विराजमान होकर पीने लगा। तब स्वर्ग के राजा इंद्र ने कहा, "माता की सेवा और इसी तरह के कर्तव्यों का पालन करते हुए तीन प्रकार के सही आचरण कौन करता है?" और संसार पर नज़र डालते हुए उसने राजा को शराब पीते हुए देखा और सोचा, "अगर वह शराब पिएगा, तो सारा भारत नष्ट हो जाएगा: मैं देखूँगा कि वह इसे न पिए।" अत: उसने शराब से भरा एक घड़ा अपनी हथेली पर रखा और ब्राह्मण का वेश धारण करके राजा के सामने हवा में खड़ा हो गया तथा चिल्लाया, "यह घड़ा खरीदो, यह घड़ा खरीदो।" राजा सब्बामित्त ने उसे हवा में खड़े होकर इस प्रकार बोलते हुए देखकर कहा, "यह ब्राह्मण कहाँ से आया है?" और उससे बातचीत करते हुए उसने तीन श्लोक दोहराए:उस समय श्रावस्ती नगर में सब्बामित्त नामक एक राजा था। उसने उन लोगों पर कृपा की और उनसे पूछा कि उन्हें क्या चाहिए। जब उन्होंने कहा, "हमें मुख्य सामग्री, पिसा हुआ चावल और पाँच सौ घड़े चाहिए," तो राजा ने उन्हें वह सब कुछ दे दिया जो उन्होंने माँगा था। इसलिए उन्होंने पाँच सौ घड़ों में शराब भर दी और उनकी रखवाली के लिए प्रत्येक घड़े के साथ एक बिल्ली बाँध दी। जब शराब किण्वित होकर बहने लगी, तो बिल्लियों ने घड़ों के अंदर से बहने वाली तेज़ शराब पी ली और नशे में चूर होकर सो गईं; तभी चूहे आए और बिल्लियों के कान, नाक, दाँत और पूंछ काट डाले। राजा के अधिकारी आए और राजा को बताया, "बिल्लियाँ शराब पीने से मर गई हैं।" राजा ने कहा, "ज़रूर ये लोग ज़हर बनाने वाले होंगे," और उसने उन दोनों का सिर कलम करने का आदेश दिया और वे चिल्लाते हुए मर गए, "हमें तेज़ शराब दो, हमें शहद से बनी मादक शराब दो (*4)।" राजा ने आदमियों को मौत के घाट उतारने के बाद आदेश दिया कि घड़े तोड़ दिए जाएँ। लेकिन जब शराब का असर उतर गया, तो बिल्लियाँ उठ खड़ी हुईं और इधर-उधर घूमने और खेलने लगीं। यह देखकर उन्होंने राजा को बताया। राजा ने कहा, "अगर यह ज़हर होता, तो वे मर जाते; यह ज़रूर शहद से बना मादक पेय होगा; हम इसे पिएँगे।" इसलिए उसने शहर को सजाया और महल के प्रांगण में एक मंडप बनवाया। वह अपने दरबारियों से घिरे एक भव्य मंडप में सफेद छतरी वाले राजसिंहासन पर विराजमान होकर पीने लगा। तब स्वर्ग के राजा इंद्र ने कहा, "माता की सेवा और इसी तरह के कर्तव्यों का पालन करते हुए तीन प्रकार के सही आचरण कौन करता है?" और संसार पर नज़र डालते हुए उसने राजा को शराब पीते हुए देखा और सोचा, "अगर वह शराब पिएगा, तो सारा भारत नष्ट हो जाएगा: मैं देखूँगा कि वह इसे न पिए।" अत: उसने शराब से भरा एक घड़ा अपनी हथेली पर रखा और ब्राह्मण का वेश धारण करके राजा के सामने हवा में खड़ा हो गया तथा चिल्लाया, "यह घड़ा खरीदो, यह घड़ा खरीदो।" राजा सब्बामित्त ने उसे हवा में खड़े होकर इस प्रकार बोलते हुए देखकर कहा, "यह ब्राह्मण कहाँ से आया है?" और उससे बातचीत करते हुए उसने तीन श्लोक दोहराए:"ज़रूर ये लोग ज़हर बनाने वाले होंगे," और उसने उन दोनों का सिर कलम करने का आदेश दिया। वे चिल्लाते हुए मर गए, "हमें तेज़ शराब दो, हमें शहद से बना मादक पेय दो (*4)।" राजा ने उन आदमियों को मार डालने के बाद, घड़े तोड़ने का आदेश दिया। लेकिन जब शराब का असर उतरा, तो बिल्लियाँ उठ गईं और इधर-उधर घूमने और खेलने लगीं। जब उन्होंने यह देखा, तो उन्होंने राजा को बताया। राजा ने कहा, "अगर यह ज़हर होता, तो वे मर जाते; यह शहद से बना मादक पेय ही होगा; हम इसे पिएंगे।" इसलिए उसने शहर को सजाया, और महल के प्रांगण में एक मंडप बनवाया और अपने दरबारियों से घिरे हुए, एक सफेद छतरी वाले राजसी सिंहासन पर इस भव्य मंडप में बैठकर, पीने लगा। तब स्वर्ग के राजा सक्का (इंद्र) ने कहा, "माता की सेवा और इसी तरह के कर्तव्यों में तीन प्रकार के सही आचरण का पालन करने वाले कौन हैं?" और, संसार पर नज़र डालते हुए उसने राजा को शराब पीते हुए देखा और सोचा, "यदि वह शराब पी लेगा, तो सारा भारत नष्ट हो जाएगा: मैं देखूंगा कि वह इसे न पिए।" अतः, उसने शराब से भरा एक घड़ा अपनी हथेली पर रखकर, ब्राह्मण का वेश धारण करके राजा के सामने हवा में खड़ा हो गया और चिल्लाया, "यह घड़ा खरीदो, यह घड़ा खरीदो।" राजा सब्बामित्त ने उसे हवा में खड़े होकर इस प्रकार बोलते हुए देखकर कहा, "यह ब्राह्मण कहाँ से आया है?" और उससे बातचीत करते हुए उसने तीन श्लोक दोहराए:"ज़रूर ये लोग ज़हर बनाने वाले होंगे," और उसने उन दोनों का सिर कलम करने का आदेश दिया। वे चिल्लाते हुए मर गए, "हमें तेज़ शराब दो, हमें शहद से बना मादक पेय दो (*4)।" राजा ने उन आदमियों को मार डालने के बाद, घड़े तोड़ने का आदेश दिया। लेकिन जब शराब का असर उतरा, तो बिल्लियाँ उठ गईं

और इधर-उधर घूमने और खेलने लगीं। जब उन्होंने यह देखा, तो उन्होंने राजा को बताया। राजा ने कहा, “अगर यह ज़हर होता, तो वे मर जाते; यह शहद से बना मादक पेय ही होगा; हम इसे पिएंगे।” इसलिए उसने शहर को सजाया, और महल के प्रांगण में एक मंडप बनवाया और अपने दरबारियों से घिरे हुए, एक सफेद छतरी वाले राजसी सिंहासन पर इस भव्य मंडप में बैठकर, पीने लगा। तब स्वर्ग के राजा सक्का (इंद्र) ने कहा, “माता की सेवा और इसी तरह के कर्तव्यों में तीन प्रकार के सही आचरण का पालन करने वाले कौन हैं?” और, संसार पर नज़र डालते हुए उसने राजा को शराब पीते हुए देखा और सोचा, "यदि वह शराब पी लेगा, तो सारा भारत नष्ट हो जाएगा: मैं देखूंगा कि वह इसे न पिए।" अतः, उसने शराब से भरा एक घड़ा अपनी हथेली पर रखकर, ब्राह्मण का वेश धारण करके राजा के सामने हवा में खड़ा हो गया और चिल्लाया, "यह घड़ा खरीदो, यह घड़ा खरीदो।" राजा सब्बामित्त ने उसे हवा में खड़े होकर इस प्रकार बोलते हुए देखकर कहा, "यह ब्राह्मण कहाँ से आया है?" और उससे बातचीत करते हुए उसने तीन श्लोक दोहराए:"यह ब्राह्मण कहाँ से आया है?" और उससे बातचीत करते हुए उसने तीन श्लोक दोहराए:"यह ब्राह्मण कहाँ से आया है?" और उससे बातचीत करते हुए उसने तीन श्लोक दोहराए:

तुम कौन हो, जो ऊपर से आए हो?
जिसका स्वरूप प्रकाश की चमकीली किरणें उत्सर्जित करता है,
आकाश में बिजली की चमक की तरह,
या फिर चांद की रोशनी से सबसे अंधेरी रात रोशन होना?
पथहीन हवा पर सवार होने के लिए,
शांत स्थान में हिलना या खड़े रहना--
असली शक्ति तो वही है जो आपने हासिल की है।
और यह साबित करता है कि आप ईश्वरीय वंश के हैं।
तो फिर, ब्राह्मण, तुम किसे बताओगे?
और आपके जार के अंदर क्या हो सकता है,
इस प्रकार वह हवा में प्रकट होता है,
आप खुशी-खुशी अपना सामान मुझे बेच देंगे।
तब सक्का (इंद्र) ने कहा, "तो मेरी बात सुनो," और शराब के बुरे गुणों को समझाते हुए उन्होंने कहा:

इस बर्तन में न तो तेल और न ही घी (स्पष्ट मक्खन) समा पाता था।
यहां शहद या गुड़ नहीं है।
लेकिन ऐसी बुराइयाँ जिनका वर्णन नहीं किया जा सकता
ये इसके गोलाकार गोले के भीतर संग्रहित होते हैं।
जो शराब पिएगा वो गिरेगा, बेचारा मूर्ख।
किसी गड्ढे या छेद में अशुद्ध रूप से,
या फिर घृणा के दलदल में पूरी तरह डूब जाओ
और वह वह चीज खाए जिसे वह सहर्ष त्याग देना चाहेगा।
हे राजा, तो मेरा यह घड़ा खरीद लो।
सबसे तेज शराब से लबालब भरा हुआ।
जो व्यक्ति पूरी तरह से होश खोकर शराब पीता है,
चरते हुए बैल की तरह, जिसे भटकना पसंद होता है,
मन में भटकता रहता है, एक असहाय प्राणी।
और वह दिन भर गाती और नाचती रहती है।
फिर खरीद लें...(और पहले जैसा ही)।
जो शराब पिएगा वो बेशर्मी से भाग जाएगा।
जैसे कोई नग्न तपस्वी शहर से होकर गुजरता है,
और वह देर से आराम करता है—वह इतना स्तब्ध है—
उसे कब लिटाना है, यह भूल जाना।
फिर खरीद लें...(और पहले जैसा ही)।
कौन पीता है, मानो कोई भयभीत हो गया हो?
वह लड़खड़ाता है, मानो खड़ा नहीं हो सकता हो।
और कांपते हुए वह अपना सिर और हाथ हिलाता है।

जैसे हाथ से बनाई गई लकड़ी की कठपुतली।
फिर खरीद लें...(और पहले जैसा ही)।
जो लोग शराब पीते हैं, वे बिस्तर पर ही जलकर मर जाते हैं।
अन्यथा सियार का शिकार बन जाओगे।
उन्हें गुलामी या मृत्यु की ओर ले जाया जाता है।
और इसके अतिरिक्त उन्हें माल का नुकसान भी उठाना पड़ेगा।
फिर खरीद लें...(और पहले जैसा ही)।
जो शराब पीता है, वह शालीनता खो देता है।
और अश्लील बातों का जिक्र करता है।
लोगों के बीच बिना कपड़ों के बैठेगा।
वह बीमार है और हर तरह से अशुद्ध है।
फिर खरीद लें...(और पहले जैसा ही)।
जो व्यक्ति शराब पीता है, उसका उत्थान होता है।
उनकी दृष्टि बिल्कुल भी स्पष्ट नहीं है।
वह सोचता है, यह दुनिया पूरी तरह से मेरी है।
मैं किसी भी सांसारिक स्वामी को अपने समान नहीं मानता।
फिर खरीद लें...(और पहले जैसा ही)।
शराब गर्व और घमंड का प्रतीक है।
एक बदसूरत, नंगा, कायर राक्षस,
विवाद और मानहानि आपस में जुड़े हुए हैं,
चोर और दलाल को पनाह देने वाला घर।
फिर खरीद लें...(और पहले जैसा ही)।
भले ही परिवार धनी हों,
और अनगिनत खजानों का आनंद लिया जा सकता है,
पृथ्वी के सबसे समृद्ध उपहारों को स्वामित्व में रखते हुए,
इससे उनकी विरासत नष्ट हो जाएगी।
फिर खरीद लें...(और पहले जैसा ही)।
चांदी, सोना और घरेलू सामान
बैल, खेत और अनाज के भंडार--
सब कुछ, सब कुछ खत्म हो गया: मुझे डर है कि यह शराब का ही नतीजा है।
इससे धनी घरों की कमजोरी साबित हुई है।
फिर खरीद लें...(और पहले जैसा ही)।
शराब पीने वाला व्यक्ति घमंड से भरा होता है।
और उसके अपने माता-पिता भी उसका अपमान करेंगे।
या, रक्त और पारिवारिक संबंधों का उल्लंघन किया गया,
विवाह के बिस्तर को अपवित्र करने का साहस करेगा।
फिर खरीद लें...(और पहले जैसा ही)।
वह भी जो शराब पीती है, अपने स्वाभिमान में डूबी रहेगी।
उसके पति और उसके पिता ने अपमान किया,
और, नस्लीय गरिमा का उल्लंघन हुआ,
कुकर्म का गुलाम धोखा देगा।
फिर खरीद लें...(और पहले जैसा ही)।
जो शराब पीता है, वह हत्या करने की हिम्मत भी करेगा।
एक धर्मनिष्ठ पुरोहित या सच्चा ब्राह्मण,
और फिर दुख भरी दुनियाओं में तो निश्चित रूप से।
इस पापपूर्ण कर्म का पछतावा अवश्य होगा।
फिर खरीद लें...(और पहले जैसा ही)।
जो शराब पिएगा उसे तीन गुना पाप करना पड़ेगा।

शब्दों में, कार्यों में और विचारों में,
फिर नरक में डूब जाओ, कष्ट भोगने के लिए
उन सभी बुराइयों के लिए जो वे लेकर आए हैं।
फिर खरीद लें...(और पहले जैसा ही)।
वह व्यक्ति जिससे लोग व्यर्थ में भीख मांगते हैं,
यहां तक कि भारी मात्रा में सोने की कीमत पर भी,
जब वे नशे में होते हैं तो उससे अपना प्रभाव प्राप्त कर लेते हैं।
और झूठ आसानी से बोल दिया जाता है।
फिर खरीद लें...(और पहले जैसा ही)।
क्या किसी को संदेश ले जाने वाले व्यक्ति को पीना चाहिए?
और देखो! कोई बड़ी आपात स्थिति आ गई।
अगर अचानक कोई मुद्दा उठता है, तो वह कसम खाएगा।
वह बात उसके दिमाग से निकल गई है।
फिर खरीद लें...(और पहले जैसा ही)।
यहां तक कि साधारण लोग भी नशे में धुत हो जाते हैं।
शराब के साथ, यह सबसे अशोभनीय होगा।
और सबसे बुद्धिमान व्यक्ति भी नशे में धुत्त होकर व्यर्थ की बातें करने लगते हैं।
और वे बहुत ही मूर्खतापूर्ण बातें करते हैं।
फिर खरीद लें...(और पहले जैसा ही)।
शराब के नशे में, उपवास करते हुए, झूठ बोलते हुए,
कठोर बंजर भूमि ही उनका विश्राम स्थल थी।
सूअरों की तरह दुबके हुए, एक निर्लज्ज वापसी,
उन्हें घोर अपमान का सामना करना पड़ता है।
फिर खरीद लें...(और पहले जैसा ही)।
जैसे बैल जमीन पर गिर पड़े हों
(*5) ढहते हुए, वे ढेर में पड़े हैं;
इस प्रकार की आग तेज शराब में पाई जाती है।
मनुष्य की कोई भी शक्ति इसका मुकाबला नहीं कर सकती।
फिर खरीद लें...(और पहले जैसा ही)।
जब सभी मनुष्य, घातक सांप की तरह,
विष से भयभीत होकर पीछे हटते हुए,
कौन सा नायक इतना साहसी है जो संतुष्ट कर सके?
क्या उसे ऐसे घातक पेय की प्यास थी?
फिर खरीद लें...(और पहले जैसा ही)।
मुझे लगता है कि इसे पीने के बाद ऐसा हुआ था।
(*6)अंधक और वृष्णि जाति,
समुद्र तट पर घूमते हुए देखा गया
अपने-अपने रिश्तेदारों के गदा से गिर पड़ना।
फिर खरीद लें...(और पहले जैसा ही)।
देवदूत शराब के दीवाने हैं
हे राजा, तुम शाश्वत स्वर्ग से गिर पड़े।
अपनी समस्त दैवीय जादुई शक्ति के साथ:
फिर उस शापित चीज का स्वाद कौन चखेगा?
फिर खरीद लें...(और पहले जैसा ही)।
यहां न तो दही है और न ही मीठा शहद।
लेकिन हमेशा याद रखना
इस गोलाकार गोले के अंदर क्या संग्रहित है?
हे राजा, कृपया मेरा घड़ा खरीद लीजिए।

यह सुनकर राजा ने शराब के कारण होने वाले कष्टों को पहचानते हुए सक्का (इंद्र) से इतना प्रसन्न हुआ कि उसने दो श्लोकों में उनकी प्रशंसा की:

किसी भी माता-पिता के पास आपको सिखाने के लिए कोई ज्ञानी व्यक्ति नहीं था।
लेकिन मुझे लगता है कि आप दयालु और कृपालु हैं;
सर्वोच्च सत्य का सदा खोजी;
इसलिए मैं आज आपकी बात मानूंगा।
देखो! मेरे स्वामित्व वाले पाँच चुनिंदा गाँव अब तुम्हारे हैं।
ढाई सौ नौकरानियाँ, सात सौ गायें,
और ये दस गाड़ियाँ जिनमें सबसे शुद्ध नस्ल के घोड़े लगे हैं,
आपने मुझे मेरे भले के लिए ही सलाह दी है।
यह सुनकर इंद्र ने अपने देवत्व का प्रकटीकरण किया और हवा में खड़े होकर दो श्लोक दोहराए:

हे राजा, ये सौ दास अभी भी आपके ही रहेंगे।
और गाँव और गायों के झुंड;
मैं उच्च नस्ल के घोड़ों से जुते हुए रथों का दावा नहीं करता;
सक्का (इंद्र), तैंतीस देवताओं के प्रमुख (देवदूत), मेरा नाम।
अपने घी (शुद्ध मक्खन), चावल, दूध और स्वादिष्ट मांस का आनंद लें।
फिर भी अपने शहद के केक खाकर संतुष्ट रहें।
अतः, महाराज, मेरे द्वारा प्रचारित सत्यों में आनंदित होकर,
अपने निष्कलंक मार्ग पर चलते रहो, जब तक कि स्वर्ग न पहुँच जाओ।
इस प्रकार इंद्र ने उनसे बात की और फिर स्वर्ग में अपने निवास स्थान पर लौट गए। राजा ने मादक पेय पदार्थों का सेवन न करते हुए, पीने के बर्तनों को तुड़वाने का आदेश दिया। नियमों का पालन करने और दान देने का वचन लेकर वे स्वर्ग के लिए नियत हो गए। परन्तु भारत में मादक पेय पदार्थों का सेवन धीरे-धीरे प्रचलित हो गया।

गुरु ने यहाँ अपना पाठ समाप्त किया और जन्म का वर्णन किया: "उस समय आनंद राजा थे, और मैं स्वयं सक्का (इंद्र) था।"

फुटनोट:

(1) इस अभिव्यक्ति को बौद्ध कला में, विशेषकर महायान संप्रदाय की कला में, प्रचुर मात्रा में समझाया गया है।

(2) धम्मपद

(3)विभिन्न प्रकार के, टर्मिनलिया चेबुला और एम्ब्लिका ऑफिसिनैलिस।

(4) एक अन्य पाठ में है, "वाइन, हे राजा, मीड (शहद से बना मादक पेय), हे राजा।"

(5)पट्टक्खंधा.

(6)देखें विष्णु पुराण, जातक, सं. 81

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **जयाद्दिसा-जातक**
***स्रोत**: एच.टी. फ्रांसिस द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-513-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 513

जयदिशा-जातक

"देखो! इसके बाद," इत्यादि—गुरु ने एक भिक्षु भाई की कहानी सुनाई, जिसने अपनी माता का सहारा दिया। प्रारंभिक कहानी (*1) समा जन्म में वर्णित कहानी के समान है। लेकिन इस अवसर पर गुरु ने कहा, "प्राचीन काल के ऋषियों ने अपने माता-पिता का सहारा देने के लिए सोने की माला से युक्त सफेद छत्र त्याग दिया था," और इन शब्दों के साथ उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, उत्तरी पंचालों के एक नगर, कम्पिला राज्य में पंचाल नामक एक राजा रहता था। उसकी रानी गर्भवती हुई और उसने एक पुत्र को जन्म दिया। पिछले जन्म में, हरम में उसकी प्रतिद्वंदी क्रोधित होकर बोली, "एक दिन मैं तुम्हारे बच्चे को खा जाऊंगी।" ऐसा करने की प्रार्थना करने पर वह एक राक्षसी में परिवर्तित हो गई। फिर उसे मौका मिला और उसने रानी की आँखों के सामने ही बच्चे को छीन लिया और उसे कच्चे मांस के टुकड़े की तरह चबाकर खा गई और भाग गई। दूसरी बार भी उसने ठीक यही किया, लेकिन तीसरी बार जब रानी अपने प्रसव कक्ष में गई, तो महल के चारों ओर पहरेदार तैनात हो गए और कड़ी निगरानी रखने लगे। जिस दिन रानी का प्रसव हुआ, उसी दिन राक्षसी फिर प्रकट हुई और बच्चे को छीन लिया। रानी ने जोर से "राक्षसी" चिल्लाया और रानी के चेतावनी देने पर सशस्त्र सैनिक दौड़कर राक्षसी का पीछा करने लगे। बच्चे को खाने का समय न मिलने पर, वह भाग गई और एक नाले में छिप गई। बच्चे ने राक्षसी को अपनी माँ समझकर उसके स्तन से अपने होंठ लगाए, और माँ के मन में बच्चे के लिए मातृत्व प्रेम जागा। वह एक श्मशान में जाकर उसे एक चट्टानी गुफा में छिपाकर उसकी देखभाल करने लगी। जैसे-जैसे वह बड़ा होता गया, रानी उसके लिए मानव मांस लाती और खिलाती रही, और दोनों उसी पर जीवित रहे। लड़के को यह नहीं पता था कि वह मनुष्य है; यद्यपि वह स्वयं को राक्षसी का पुत्र मानता था, फिर भी वह अपने शरीर को छिपा नहीं सका। इसलिए रानी ने उसे एक विशेष जड़ दी। इस जड़ के कारण उसने अपना रूप छिपा लिया और मानव मांस खाकर जीवित रहा। अब राक्षसी महान राजा वेसवना (*2) की सेवा करने चली गई और वहीं उसकी मृत्यु हो गई। लेकिन रानी ने चौथी बार एक बालक को जन्म दिया, और क्योंकि राक्षसी अब मर चुकी थी, इसलिए वह सुरक्षित था, और अपने शत्रु राक्षसी पर विजय प्राप्त करने के कारण, उसे जयअदिशा (राजकुमार विजेता) कहा गया। जैसे ही वह वयस्क हुआ और सभी विद्याओं में पूर्णतः शिक्षित हो गया, उसने छत्र उठाकर शासन की बागडोर संभाली और राज्य पर शासन किया। उसी समय उसकी रानी पत्नी ने बोधिसत्व को जन्म दिया, और उन्होंने उसका नाम राजकुमार अलिनासत्तु रखा। जब वह वयस्क हुआ और सभी विद्याओं में पूर्णतः शिक्षित हो गया, तो वह वायसराय बन गया। लेकिन राक्षसी का पुत्र लापरवाही से जड़ को नष्ट कर देने के कारण स्वयं को छिपा नहीं सका, और श्मशान में छिपकर मानव मांस खाने लगा। उसे देखकर लोग भयभीत हो गए और राजा के पास आकर शिकायत की: “महाराज, एक राक्षस श्मशान में मानव मांस खा रहा है। समय आने पर वह नगर में घुसकर लोगों को मार डालेगा और खा जाएगा। कृपया उसे पकड़वा दें।” राजा तुरंत सहमत हो गया और उसे पकड़ने का आदेश दिया। नगर के चारों ओर सशस्त्र सेना तैनात कर दी गई। राक्षसी का पुत्र, नग्न और भयानक रूप में, मृत्यु के भय से व्याकुल होकर, जोर से चिल्लाया और सैनिकों के बीच कूद पड़ा। वे चिल्लाते हुए बोले, "ये रहा राक्षस,"अपनी जान के डर से घबराकर, वे दो समूहों में बंट गए और भाग गए। और राक्षस वहाँ से बचकर जंगल में छिप गया और फिर कभी मनुष्यों के घरों के पास नहीं आया। उसने जंगल से गुजरने वाली एक मुख्य सड़क के पास एक बरगद के पेड़ की तलहटी में अपना निवास स्थान बनाया, और जब लोग वहाँ से गुजरते, तो वह उन्हें एक-एक करके पकड़ लेता और जंगल में घुसकर उन्हें मार डालता और खा जाता। अब एक ब्राह्मण, जो एक कारवां का नेतृत्व कर रहा था, ने वन रक्षकों को एक हजार सिक्के दिए और पाँच सौ गाड़ियों के साथ सड़क पर यात्रा कर रहा था। मानव रूप धारण किए हुए राक्षस ने दहाड़ते हुए उन पर हमला कर दिया। लोग भय से भाग गए और जमीन पर लोटने लगे। उसने ब्राह्मण को पकड़ लिया, और भागते समय लकड़ी के एक टुकड़े से घायल हो गया, और वन रक्षकों द्वारा पीछा किए जाने पर, उसने ब्राह्मण को छोड़ दिया और जाकर उसी पेड़ की तलहटी में लेट गया जहाँ वह रहता था। इसके सातवें दिन, राजा जयदिशा ने शिकार की घोषणा की और जंगल से निकल पड़े। शहर। जैसे ही वह चलने लगा, तक्षशिला का एक ब्राह्मण, नंदा, जो अपने माता-पिता का सहारा था, राजा के समक्ष आया और अपने साथ चार श्लोक लाया, जिनमें से प्रत्येक सौ सिक्कों के बराबर था (*3)। राजा उन्हें सुनने के लिए रुक गया और उसके लिए एक निवास स्थान आवंटित करने का आदेश दिया। फिर शिकार पर जाते हुए उसने कहा, "जिस व्यक्ति की ओर से हिरण बच निकलेगा, वह ब्राह्मण को उसके श्लोकों का भुगतान करेगा।" तभी एक चित्तीदार मृग को छोड़ा गया और वह सीधे राजा की ओर भागा। दरबारी सब जोर से हँसे। राजा ने अपनी तलवार उठाई और जानवर का पीछा करते हुए तीन मील (4.23 किमी) की दूरी पर पहुँच गया और अपनी तलवार के एक ही प्रहार से उसे दो टुकड़ों में काट दिया और मृत शरीर को अपने डंडे पर लटका दिया। फिर लौटते समय वह उस स्थान पर आया जहाँ नर-राक्षस बैठा था, और कुश घास पर थोड़ी देर विश्राम करने के बाद उसने आगे बढ़ने का प्रयास किया। तभी राक्षस उठ खड़ा हुआ और चिल्लाया, "रुको!" तुम कहाँ जा रहे हो? तुम मेरे शिकार हो," और उसका हाथ पकड़कर उसने पहला छंद बोला:अपने माता-पिता का सहारा देने वाला एक व्यक्ति राजा के समक्ष चार श्लोक लेकर आया, जिनमें से प्रत्येक का मूल्य सौ सिक्कों के बराबर था (*3)। राजा उन्हें सुनने के लिए रुका और उसके लिए एक निवास स्थान आवंटित करने का आदेश दिया। फिर शिकार पर जाते हुए उसने कहा, "जिस व्यक्ति की ओर से हिरण बच निकलेगा, वह ब्राह्मण को उसके श्लोकों का भुगतान करेगा।" तभी एक चित्तीदार मृग को छोड़ा

गया और वह सीधे राजा की ओर भागा। दरबारी सब जोर से हँसे। राजा ने अपनी तलवार उठाई और जानवर का पीछा करते हुए तीन मील (x 4.23 किमी) की दूरी तय करके उसे पकड़ लिया और अपनी तलवार से एक ही प्रहार में उसे दो टुकड़ों में काट दिया और मृत शरीर को अपने डंडे पर लटका दिया। फिर लौटते समय वह उस स्थान पर आया जहाँ नर-राक्षस बैठा था और कुश घास पर थोड़ी देर विश्राम करने के बाद आगे बढ़ने का प्रयास किया। तब राक्षस उठ खड़ा हुआ और चिल्लाया, "रुको! कहाँ जा रहे हो? तुम मेरे शिकार हो," और उसका हाथ पकड़कर उसने पहला श्लोक बोला:अपने माता-पिता का सहारा देने वाला एक व्यक्ति राजा के समक्ष चार श्लोक लेकर आया, जिनमें से प्रत्येक का मूल्य सौ सिक्कों के बराबर था (*3)। राजा उन्हें सुनने के लिए रुका और उसके लिए एक निवास स्थान आवंटित करने का आदेश दिया। फिर शिकार पर जाते हुए उसने कहा, "जिस व्यक्ति की ओर से हिरण बच निकलेगा, वह ब्राह्मण को उसके श्लोकों का भुगतान करेगा।" तभी एक चित्तीदार मृग को छोड़ा गया और वह सीधे राजा की ओर भागा। दरबारी सब जोर से हँसे। राजा ने अपनी तलवार उठाई और जानवर का पीछा करते हुए तीन मील (x 4.23 किमी) की दूरी तय करके उसे पकड़ लिया और अपनी तलवार से एक ही प्रहार में उसे दो टुकड़ों में काट दिया और मृत शरीर को अपने डंडे पर लटका दिया। फिर लौटते समय वह उस स्थान पर आया जहाँ नर-राक्षस बैठा था और कुश घास पर थोड़ी देर विश्राम करने के बाद आगे बढ़ने का प्रयास किया। तब राक्षस उठ खड़ा हुआ और चिल्लाया, "रुको! कहाँ जा रहे हो? तुम मेरे शिकार हो," और उसका हाथ पकड़कर उसने पहला श्लोक बोला:

देखो! मेरे सात दिनों के लंबे उपवास के बाद
अंततः एक विशाल शिकार प्रकट हुआ!
कृपया मुझे बताएं, क्या आप प्रसिद्धि के लिए जाने जाते हैं?
मुझे आपकी जाति और नाम सुनकर खुशी होगी।
राक्षस को देखकर राजा भयभीत हो गया और एक खंभे की तरह अकड़कर भागने में असमर्थ हो गया; लेकिन, होश में आकर उसने दूसरा श्लोक बोला:

जयअदिसा, अगर आप मुझे जानते हों तो,
मैं पंचाल का राजा होने का दावा करता हूँ:
मैं दलदल और जंगल में भटकता हुआ शिकार ढूंढता हूँ:
तुम इस हिरण को खा जाओ; मुझे छोड़ दो, मैं तुमसे विनती करता हूँ।
यह सुनकर राक्षस ने तीसरी पंक्ति दोहराई:

अपनी जान बचाने के लिए, तुम मुझे खाने के बदले में देते हो।
हे महाराज, यह वह खदान है जिस पर मेरा दावा उचित है:
जान लो मैं तुम्हें पहले खाऊंगा, फिर भी इनकार नहीं करूंगा।
मुझे हिरण का मांस पसंद है: व्यर्थ की बातें बंद करो।
यह सुनकर राजा को ब्राह्मण नंदा की याद आई और उन्होंने चौथा श्लोक कहा:

क्या मुझे वह रिलीज नहीं खरीदनी चाहिए जिसकी मुझे बहुत चाहत है?
फिर भी, मुझे अपना वादा निभाने दीजिए।
एक ब्राह्मण मित्र। कल सुबह देखेंगे
मेरी इज्जत बच गई, और मैं आपके पास लौट आया।
यह सुनकर राक्षस ने पाँचवाँ श्लोक बोला:

मौत के इतने करीब खड़े होकर, क्या बात है?
हे राजा, क्या इसी बात ने आपको अत्यंत चिंतित किया?
मुझे सच बताओ, ताकि शायद हम ऐसा कर सकें
आपको एक संक्षिप्त दिन के लिए जाने की अनुमति दी जाती है।
मामले को समझाते हुए राजा ने छठा श्लोक कहा:

मैंने एक बार एक ब्राह्मण से वादा किया था;
वह वादा अभी भी बाकी है, वह कर्ज अभी तक चुकाया नहीं गया है:
प्रतिज्ञा पूरी हुई, कल सुबह देखने को मिलेगी
मेरी इज्जत बच गई, और मैं आपके पास लौट आया।
यह सुनकर राक्षस ने सातवां श्लोक बोला:

आपने एक ब्राह्मण से वादा किया है;
वह वादा अभी भी बाकी है, वह प्रतिज्ञा अभी भी अदा नहीं हुई है।
अपनी प्रतिज्ञा पूरी करो, और कल को देखने दो।
आपकी प्रतिष्ठा बच गई और आप मेरे पास लौट आए।
इतना कहकर उसने राजा को जाने दिया। राजा ने विदा लेते हुए कहा, "मेरे बारे में चिंता मत करो; मैं भोर होते ही लौट आऊंगा।" रास्ते में कुछ चिन्ह देखकर वह अपनी सेना के पास लौट आया और अपने दल के साथ नगर में प्रवेश किया। फिर उसने ब्राह्मण नंदा को बुलाया, उन्हें एक भव्य सिंहासन पर बैठाया और उनकी कविताएँ सुनने के बाद उन्हें चार हजार सिक्के भेंट किए। उसने ब्राह्मण को रथ पर बिठाकर विदा किया और अपने सेवकों को आदेश दिया कि उन्हें सीधे तक्षशिला ले चलें। अगले दिन, लौटने की तीव्र इच्छा से उसने अपने पुत्र को बुलाया और उसे यही निर्देश दिए।

गुरु ने इस विषय को समझाने के लिए दो श्लोक कहे:

वह एक क्रूर जिन्न से बच निकला था।
अपने प्यारे घर के लिए मीठी यादों से भरा हुआ:
उन्होंने अपने ब्राह्मण मित्र से किया वचन कभी नहीं तोड़ा।
लेकिन प्रिय अलीनासत्तु से उसने इस प्रकार कहा।
"मेरे पुत्र, आज से अभिषिक्त राजा के रूप में शासन करो।"
धार्मिक शासन द्वारा मित्र और शत्रु दोनों पर शासन करना;
किसी भी अन्याय को आपकी खुशहाल स्थिति को भंग न करने दें;
अब मैं उस क्रूर जिन्न से अपना भाग्य तलाश रहा हूँ।"
यह सुनकर राजकुमार ने दसवां श्लोक बोला:

मुझे यह जानकर खुशी होगी कि वह कौन सा कार्य या शब्द है।
इससे मैं अपने स्वामी की कृपा खो बैठा।
कि आप मुझे सिंहासन पर बिठाएँ
जिसे खोना, मैं स्वीकार नहीं कर सकता, क्योंकि मैं तुम्हें खोना नहीं चाहता।
यह सुनकर राजा ने अगला श्लोक बोला:

प्रिय पुत्र, मुझे याद नहीं आ रहा है
एक शब्द या एक भी निर्दयी कार्य,
लेकिन अब सम्मान का कर्ज चुका दिया गया है,
मैं राक्षस से किया हुआ वचन निभाऊंगा।
यह सुनकर राजकुमार ने एक श्लोक बोला:

नहीं, मैं जाऊंगा और तुम यहीं रहो;
मुझे डर है कि सुरक्षित वापसी की कोई उम्मीद नहीं है।
लेकिन अगर तुम जाओगे तो मैं तुम्हारे पीछे आऊंगा।
और दोनों का अस्तित्व एक समान रूप से समाप्त हो जाएगा।
यह सुनकर राजा ने एक श्लोक कहा:

नैतिक कानून आपसे सहमत था।
लेकिन तब मेरे लिए जीवन का सारा आकर्षण खत्म हो जाएगा।
अगर लकड़ी की सींक पर यह भयानक राक्षस
तुम्हें भूनकर, अंग-अंग करके खा जाना चाहिए।
यह सुनकर राजकुमार ने एक श्लोक बोला:

यदि तुम इस राक्षस से भागोगे,
मैं तुम्हारे लिए मरने को भी तैयार हूँ।
जी हाँ, मैं सहर्ष मरना स्वीकार करूँगा, हे राजा।
काश मैं तुम्हें जीवन दे पाता।

यह सुनकर राजा ने अपने पुत्र के सद्गुण को पहचानते हुए उसका प्रस्ताव स्वीकार कर लिया और कहा, "ठीक है, जाओ, प्रिय पुत्र।" इस प्रकार उसने अपने माता-पिता को विदाई दी और शहर छोड़ दिया।

विषय को स्पष्ट करने के लिए, गुरु ने आधा श्लोक बोला:

तब उस वीर राजकुमार ने अपने प्रिय माता-पिता से कहा
अंतिम विदाई, अत्यंत श्रद्धापूर्वक दी गई।
फिर उसके माता-पिता, बहन, पत्नी और दरबारी उसके साथ शहर से आगे बढ़े। राजकुमार ने वहाँ अपने पिता से रास्ता पूछा, और सावधानीपूर्वक व्यवस्था करने और अन्य लोगों से बात करने के बाद, वह सड़क पर चढ़ गया और उस राक्षस के निवास की ओर चल पड़ा, जो अयाल वाले शेर की तरह निर्भीक था। उसकी माँ उसे जाते देख खुद को रोक नहीं पाई और बेहोश होकर ज़मीन पर गिर पड़ी। उसके पिता बाहें फैलाकर ज़ोर-ज़ोर से रोने लगे।

गुरु ने बात स्पष्ट करते हुए श्लोक का दूसरा भाग कहा:

उसके पिता ने बाहें फैलाकर अपने बेटे को वहीं रहने के लिए कहा।
वह दर्द से रो पड़ा। उसकी माँ शोक में व्याकुल होकर बेहोश हो गई।
और इस प्रकार पिता द्वारा कही गई प्रार्थना और माता, बहन और पत्नी द्वारा दोहराए गए सत्य के कार्य को स्पष्ट करते हुए, उन्होंने चार और छंद कहे:

लेकिन जब उसका बेटा पूरी तरह से गायब हो गया
अपने हताश पिता की दृष्टि से,
उसने हाथ उठाकर देवताओं (देवदूतों) की स्तुति की।
राजा वरुण और सोम के नाम इस प्रकार हैं:
ब्रह्मा और दिन-रात के स्वामी।
इनके द्वारा अंगों को सुरक्षित और स्वस्थ रखा गया।
"प्रिय पुत्र, उस भयानक राक्षस से बच निकलो।"
"जैसे राम की सुंदर अंगों वाली माता ने जीत हासिल की (*4)
अपने अनुपस्थित पुत्र के लिए मोक्ष (निर्वाण) प्राप्त करना।
जब उसने दंडक के जंगलों की खोज की,
इसलिए मेरे बच्चे के लिए स्वतंत्रता लाई गई है;
और सत्य के इस कार्य से मैंने मोहित कर लिया है
देवता (देवदूत) आपको सुरक्षित घर वापस लाएंगे।
भाई, इसमें तुम्हारी कोई गलती नहीं है।
मुझे याद है कि वह खुला था या गुप्त;
और सत्य के इस कार्य से मैंने मोहित कर लिया है
देवता (देवदूत) आपको सुरक्षित घर वापस लाएंगे।
"तुम मेरे लिए किसी भी प्रकार से अपराधरहित हो।"
मैं भी, मेरे स्वामी, आपसे प्रेम करता हूँ;
और सत्य के इस कार्य से मैंने मोहित कर लिया है
देवता (देवदूत) आपको सुरक्षित घर वापस लाएंगे।
और राजकुमार अपने पिता के निर्देशों का पालन करते हुए राक्षस के निवास की ओर चल पड़ा। लेकिन राक्षस ने सोचा, "क्षत्रियों के पास अनेक प्रलोभन होते हैं: कौन जाने क्या हो जाए?" और वह वृक्ष पर चढ़कर राजा के आने की प्रतीक्षा करने लगा। राजकुमार को देखकर उसने सोचा, "पुत्र ने अपने पिता को रोक दिया है और स्वयं आ रहा है। उससे डरने की कोई बात नहीं है।" और वृक्ष से उतरकर वह उसकी ओर पीठ करके बैठ गया। उठकर युवक राक्षस के सामने खड़ा हो गया, तब राक्षस ने यह श्लोक कहा:

तुम कहाँ से आए हो, हे सुंदर और आकर्षक युवक?
क्या तुम जानते हो कि यह वन क्षेत्र मेरा है?
वे अपनी जान बचाते हैं लेकिन सस्ते में आते हैं
जहां क्रूर राक्षस अपना घर पाते हैं।

यह सुनकर युवक ने यह श्लोक बोला:

मैं तुम्हें अच्छी तरह जानता हूँ, निर्दयी राक्षस;
आप इसी जंगल में निवास करते हैं।
जयअद्दीसा का असली बेटा यहाँ खड़ा है:
मुझे खा लो और मेरे प्यारे पिता को मुक्त कर दो।
तब राक्षस ने यह श्लोक बोला:

मैं जानता हूँ कि जयअदिसा का असली बेटा कौन है;
आपके चेहरे के हाव-भाव से यह बात स्पष्ट हो जाती है।
यह आपके लिए निश्चित रूप से एक कठिन समय है।
अपने पिता को मुक्त कराने के लिए मर जाना।
तब युवक ने यह श्लोक बोला:

मुझे लगता है कि यह कोई महान कार्य नहीं है।
मरने के लिए, और पिता के कल्याण के लिए
और माँ का प्यार बिछड़ जाना
और निश्चित रूप से स्वर्ग के आनंद की प्राप्ति होगी।
यह सुनकर राक्षस ने कहा, "हे राजकुमार, ऐसा कोई प्राणी नहीं है जो मृत्यु से भयभीत न हो। तुम क्यों नहीं भयभीत हो?" फिर उसने कारण बताया और दो श्लोक सुनाए:

मैंने कोई भी बुरा काम नहीं किया है।
मुझे याद है, चाहे वह खुला हो या गुप्त:
मैं जन्म और मृत्यु को अच्छी तरह से परखता हूँ।
जैसा यहाँ है, वैसा ही भविष्य के संसारों में भी होगा।
हे सर्वशक्तिमान, आज मुझे खा जाओ।
और जो कार्य करना आवश्यक है, उसे करो।
मैं किसी ऊंचे पेड़ से गिरकर मर जाऊंगा।
फिर मेरी देह को अपनी इच्छानुसार खाओ।
उसकी बात सुनकर राक्षस भयभीत हो गया और बोला, "इस आदमी का मांस नहीं खाया जा सकता"; और उसे भगाने की कोई योजना सोचकर उसने कहा:

यदि यह आपकी इच्छा है बलिदान देने की
हे राजकुमार, अपने पिता को मुक्त कराने के लिए अपना जीवन दांव पर लगा दो।
तो मेरी सलाह है कि जल्दी जाओ।
और आग जलाने के लिए लकड़ियाँ इकट्ठा करें।
ऐसा करने के बाद, युवक उसके पास लौट आया।

विषय को स्पष्ट करने के लिए, गुरु ने एक और श्लोक कहा:

तब बहादुर राजकुमार ने लकड़ी इकट्ठा की।
और, एक विशाल चिता खड़ी करते हुए,
उसने आग जलाते हुए रोते हुए कहा, "अपना खाना तैयार करो;
देखो! मैंने बड़ी आग जला दी है।"
जब राक्षस ने देखा कि राजकुमार लौट आया है और आग जला रहा है, तो उसने कहा, "यह तो शेर जैसा साहसी है। मृत्यु से भी इसे डर नहीं लगता। आज तक मैंने इतना निडर व्यक्ति कभी नहीं देखा।" और वह वहाँ अचंभित होकर बैठा रहा, बीच-बीच में उस युवक को देखता रहा। और जब उसने देखा कि राक्षस क्या करने वाला है, तो उसने यह छंद कहा:

खड़े होकर अवाक होकर विस्मय से मत देखो,
मुझे ले जाओ, मार डालो और खा जाओ, मैं विनती करता हूँ।

जब तक मैं जीवित हूँ, मैं योजना बनाऊंगा
ताकि आज आपको खाना खाकर खुशी हो।
तब राक्षस ने उसकी बातें सुनकर यह श्लोक बोला:

एक ऐसा व्यक्ति जो इतना सच्चा, दयालु और न्यायप्रिय हो।
इसे शायद कभी खाया नहीं जा सकता।
या फिर उसका सिर, जो तुम्हें खाता है, अवश्य
सात बार टुकड़ों को पीटा जाए।
यह सुनकर राजकुमार ने कहा, "यदि तुम मुझे खाना नहीं चाहते, तो तुमने मुझे लकड़ियाँ तोड़कर आग जलाने को क्यों कहा?" जब राक्षस ने उत्तर दिया, "यह तुम्हारी परीक्षा लेने के लिए था; क्योंकि मुझे लगा था कि तुम भाग जाओगे," तो राजकुमार ने कहा, "अब तुम मेरी परीक्षा कैसे लोगे, जबकि मैंने पशु रूप में रहते हुए स्वर्ग के राजा सक्का (इंद्र) को अपने सद्गुणों की परीक्षा लेने की अनुमति दी थी?" और इन शब्दों के साथ उसने यह श्लोक कहा:-

(*5) एक बार इंद्र के लिए, किसी गरीब ब्राह्मण की तरह कपड़े पहने हुए
खरगोश ने अपना मांस खाने के लिए पेश किया;
तब से उसकी आकृति चंद्रमा पर अंकित हो गई;
अब हम उस सुंदर चेहरे को यक्ष (राक्षस) के रूप में नमस्कार करते हैं।
यह सुनकर राक्षस ने राजकुमार को जाने दिया और कहा,

जैसे ही राहु (ग्रहण) की पकड़ से साफ चंद्रमा मुक्त हुआ
मध्य माह में हमेशा की तरह शानदार चमक बिखेरता है।
और आप भी, हे कामपिला के पराक्रमी स्वामी,
राक्षस से बचकर, आनंदमय प्रकाश फैलाया
आपकी उज्ज्वल उपस्थिति से, शोक संतप्त मित्रों को सांत्वना मिलती है।
और अपने माता-पिता के जीवन में फिर से खुशियाँ लाओ, प्रिय।
और "जाओ, वीर आत्मा," कहकर उन्होंने उस महान व्यक्ति को विदा किया। राक्षस को वश में करके उन्होंने उसे पाँच नैतिक नियम सिखाए, और यह परखने की इच्छा से कि वह राक्षस है या नहीं, उन्होंने सोचा, "राक्षसों की आँखें लाल होती हैं और पलकें नहीं झपकातीं। उनकी कोई परछाई नहीं होती और वे किसी भी भय से मुक्त होते हैं। यह कोई राक्षस नहीं है; यह एक मनुष्य है। कहते हैं कि मेरे पिता के तीन भाइयों को एक राक्षसी ले गई थी; उनमें से दो को उसने खा लिया होगा, और एक को उसने माँ के अपने बच्चे के प्यार से पाला होगा: यही वह होना चाहिए। मैं उसे अपने साथ ले जाऊँगा और अपने पिता को बताऊँगा, और उसे सिंहासन पर बिठाऊँगा।" और ऐसा सोचते हुए उन्होंने पुकारा, "अरे! महाराज, आप कोई राक्षस नहीं हैं; आप मेरे पिता के बड़े भाई हैं। अच्छा, मेरे साथ आइए और अपने पैतृक राज्य में शासन करने की शक्ति के प्रतीक के रूप में अपना छाता उठाइए।" जब उसने उत्तर दिया, "मैं मनुष्य नहीं हूँ," तो राजकुमार ने कहा, "तुम मेरी बात पर विश्वास नहीं करते। क्या कोई ऐसा है जिस पर तुम विश्वास करोगे?" "हाँ," उसने कहा, "फलां स्थान पर एक तपस्वी है जिसे अलौकिक दृष्टि का वरदान प्राप्त है।" इसलिए वह उस राक्षस को अपने साथ लेकर वहाँ गया। तपस्वी ने उन्हें देखते ही कहा, "तुम दोनों एक ही पूर्वज की संतान होकर यहाँ किसलिए आए हो?" और इन शब्दों के साथ उसने उन्हें अपने रिश्ते के बारे में बताया। नरभक्षी ने विश्वास किया और कहा, "प्रिय मित्र, आप घर जाइए; मैं तो एक ही रूप में दो स्वभावों के साथ पैदा हुआ हूँ। मुझे राजा बनने की कोई इच्छा नहीं है। मैं तपस्वी बनूँगा।" इस प्रकार तपस्वी ने उसे संन्यासी जीवन की दीक्षा दी। फिर राजकुमार ने उसे प्रणाम किया और नगर लौट गया।

गुरु ने बात स्पष्ट करने के लिए यह श्लोक कहा:

तब क्या साहसी राजकुमार अलीनासत्तु ने भुगतान किया?
उस भयानक राक्षस के प्रति सभी उचित सम्मान व्यक्त करते हुए,
और वह एक बार फिर आज़ाद होकर अपने सुखमय मार्ग पर चल पड़ा।
कम्पिला वापस लौट आया, पूरी तरह से सुरक्षित और स्वस्थ।
और जब युवक शहर पहुँचा, तो गुरु ने नगरवासियों और अन्य लोगों को समझाया कि राजकुमार ने क्या किया था, और अंतिम छंद कहा:

इस प्रकार वे पैदल ही शहर और ग्रामीण इलाकों से आगे बढ़ते रहे,

देखो! उत्सुक भीड़ घोषणा करती है
उस वीर नायक का नाम,
या फिर रथ या हाथी पर सवार होकर वे कितनी ऊँचाई पर जाते हैं
वे उचित सम्मान के साथ आते हैं
विजेता को घर ले जाने के लिए।

राजा को पता चला कि राजकुमार लौट आया है और वह उससे मिलने के लिए निकल पड़ा। राजकुमार अपने साथ बहुत से लोगों को लेकर आया और राजा को प्रणाम किया। राजा ने उससे पूछा, "प्रिय पुत्र, तुम इतने भयानक राक्षस से कैसे बच निकले?" राजकुमार ने कहा, "प्रिय पिता, वह राक्षस नहीं है; वह आपका बड़ा भाई और मेरा चाचा है।" उसने राजा को सारी बात बताई और कहा, "आपको मेरे चाचा से मिलने जाना चाहिए।" राजा ने तुरंत ढोल बजवाने का आदेश दिया और अपने साथ बहुत से सेवकों को लेकर तपस्वियों से मिलने निकल पड़ा। मुख्य तपस्वी ने उन्हें पूरी कहानी विस्तार से सुनाई; कैसे एक राक्षसी बच्चे को अगवा कर ले गई थी, और कैसे उसने उसे खाने के बजाय एक राक्षस की तरह पाला-पोसा, और कैसे वे आपस में रिश्तेदार थे। राजा ने कहा, "आओ, भाई, क्या तुम राजा बनोगे?" राजकुमार ने उत्तर दिया, "नहीं, महाराज।" राजा ने कहा, "तो आओ और हमारे उद्यान में निवास करो, मैं तुम्हें चारों आवश्यक वस्तुएँ उपलब्ध कराऊँगा।" उसने आने से इनकार कर दिया। तब राजा ने उनके आश्रम से कुछ ही दूरी पर स्थित एक पर्वत पर बस्ती बसाई, वहाँ एक झील बनवाई, खेती योग्य खेत तैयार किए और एक हजार परिवारों को धन-संपत्ति के साथ लाकर एक बड़ा गाँव बसाया तथा तपस्वियों के लिए दान-पुण्य की व्यवस्था शुरू की। यही गाँव विकसित होकर कुल्लाकम्मासदम्मा नगर बन गया।

जिस क्षेत्र में महान प्राणी सुतासोमा द्वारा राक्षस को वश में किया गया था, उसे महाकम्मसदम्मा (*6) नगर के नाम से जाना जाना था।

गुरु ने अपना पाठ समाप्त करने के बाद सत्य प्रकट किए और जन्म की पहचान बताई:- सत्यों के समापन पर, अपनी माता का सहारा देने वाले वरिष्ठ भिक्षु प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की सिद्धि में स्थापित हुए:- "उस समय पिता और माता राजा के परिवार के सदस्य थे, तपस्वी सारिपुत्र थे, नरभक्षी अंगुलिमाला थे, छोटी बहन उप्पलावन्ना थीं, रानी पत्नी राहुल की माता (बुद्ध की पत्नी) थीं, राजकुमार अलिनासत्तु मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)सं.540. ,सं.510 अयोगराजजातक.

(2)चार महान दानव-राजाओं में से एक।

(3) अंततः उसे चार हजार टुकड़े मिलते हैं।

(4) रामायण देखें

(5)सं. 316 ससाजातक देखें। टिप्पणी में कहा गया है कि वर्तमान कल्प में चंद्रमा पर खरगोश के बजाय यक्खा (राक्षस) अंकित है।

(6) इस नाम के एक स्थान की स्थापना का उल्लेख महासुतासोमा-जातक के अंत में मिलता है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **चद्दंत-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-514-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 514
छद्दंत-जातक। (*1)

"बड़ी-बड़ी आँखों वाली और असाधारण" इत्यादि—यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक ननद के बारे में सुनाई थी। कहते हैं कि श्रावस्ती नगर के एक अच्छे परिवार की लड़की ने गृहस्थ जीवन के कष्टों को पहचानकर वैराग्य का मार्ग अपनाया और एक दिन

अन्य ननों के साथ बुद्ध से धार्मिक मार्ग सुनने गई, जब वे एक भव्य सिंहासन पर बैठकर उपदेश दे रहे थे। बुद्ध के असीम पुण्य से उत्पन्न अत्यंत सुंदर रूप को देखकर उसने सोचा, "क्या पिछले जन्म में वे महिलाएं, जिनकी मैंने सेवा की थी, इस पुरुष की पत्नियां थीं?" तभी उसे अपने पिछले जन्मों की याद आ गई। "छद्दंत हाथी के समय में, मैं इस पुरुष की पत्नी थी।" और इस स्मृति से उसके हृदय में अपार आनंद और प्रसन्नता का संचार हुआ। अपनी खुशी और उत्साह में वह ज़ोर से हंस पड़ी और सोचने लगी, "बहुत कम पत्नियां अपने पतियों के प्रति सहानुभूति रखती हैं; उनमें से अधिकतर सहानुभूतिहीन होती हैं। मुझे आश्चर्य है कि क्या मैं इस आदमी के प्रति सहानुभूति रखती थी या नहीं।" और अपनी यादों को याद करते हुए, उसने पाया कि उसके मन में एक सौ बीस भुजाओं के बलाक्रमी हाथी स्वामी चद्दंता के प्रति थोड़ी सी द्वेष भावना थी, जिसने सोनोत्तरा नामक शिकारी को भेजा था, जिसने विषैले तीर से उसे घायल कर दिया था। तब उसका दुख जागृत हुआ और उसका हृदय प्रचंड हो गया, और अपने भावों को वश में न कर पाने के कारण वह फूट-फूट कर रोने लगी। यह देखकर गुरु (बुद्ध) मुस्कुरा उठे, और भिक्षुओं की सभा द्वारा पूछे जाने पर, "हे प्रभु, आपके मुस्कुराने का कारण क्या था?" उन्होंने कहा, "भाइयों, इस युवती (भिक्षुणी) ने मेरे विरुद्ध किए गए अपने एक पाप को याद करके रो दिया।" और ऐसा कहते हुए उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, हिमालय में चद्दंता झील के पास आठ हजार राजसी हाथी रहते थे, जो अलौकिक शक्तियों से वायु में विचरण करते थे। इसी समय बोधिसत्व ने हाथी के मुखिया के पुत्र के रूप में जन्म लिया। उनका रंग शुद्ध सफेद था, उनके पैर और चेहरा लाल थे। समय बीतने पर, जब वे वयस्क हुए, तो उनकी ऊंचाई अस्सी-आठ भुजाओं जितनी और लंबाई एक सौ बीस भुजाओं जितनी थी। उनकी सूंड चांदी की रस्सी जैसी थी, जो अट्ठावन भुजाओं जितनी लंबी थी, और उनके दांत पंद्रह भुजाओं की परिधि के बराबर और तीस भुजाओं जितने लंबे थे, जिनसे छह रंगों की किरणें निकलती थीं। वे आठ हजार हाथियों के झुंड के मुखिया थे और पच्चेक बुद्धों को सम्मान देते थे। उनकी दो प्रमुख रानियां कुल्शुभद्दा और महासुभद्दा थीं। आठ हजार हाथियों के अपने झुंड के साथ राजा हाथी एक स्वर्ण गुफा में निवास करते थे। चद्दंता झील पचास मील (4.23 किमी) लंबी और पचास मील चौड़ी थी। इसके मध्य में, बारह लीग (4.23 किमी) के विस्तार में, कोई सेवाला या पनाका पौधा नहीं पाया जाता, और यह जल किसी जादुई रत्न की तरह प्रतीत होता है। इसके आगे, इस जल को घेरे हुए, एक लीग (4.23 किमी) चौड़ाई में शुद्ध सफेद लिली की वनस्पति थी। इसके आगे, इसे घेरे हुए, एक लीग (4.23 किमी) विस्तार में शुद्ध नीले कमल की वनस्पति थी। फिर सफेद और लाल कमल, लाल और सफेद लिली, और सफेद खाद्य लिली थीं, जिनमें से प्रत्येक एक लीग (4.23 किमी) विस्तार में थी और प्रत्येक पिछली लिली को घेरे हुए थी। इन सातों के आगे सफेद और अन्य लिली का मिश्रित जाल था, जो एक लीग (4.23 किमी) विस्तार में था और पिछली सभी लिली को घेरे हुए था। इसके आगे, हाथियों के खड़े होने की गहराई तक पानी में, लाल धान की वनस्पति थी। इसके बाद, आसपास के जल में, छोटे-छोटे झाड़ियों का एक छोटा सा उपवन था, जो नीले, पीले, लाल और सफेद रंग के नाजुक और सुगंधित फूलों से भरा हुआ था। इस प्रकार ये दस उपवन प्रत्येक एक लीग (4.23 किमी) के क्षेत्र में फैले हुए थे। इसके बाद विभिन्न प्रकार की राजमाओं की वनस्पति थी। फिर कंवोल्वुलस, खीरा, कद्दू, लौकी और अन्य लताओं का घना जंगल था। फिर सुपारी के पेड़ के आकार का गन्ने का उपवन था। फिर हाथी के दांत जितने बड़े केले के पेड़ों का उपवन था। फिर धान का खेत था। फिर पानी के घड़े के आकार का ब्रेडफ्रूट का उपवन था। इसके बाद स्वादिष्ट फलों से लदे इमली के पेड़ों का उपवन था। फिर हाथी सेब के पेड़ों का उपवन था। फिर विभिन्न प्रकार के पेड़ों का एक विशाल जंगल था। फिर बांस का उपवन था। उस समय इस क्षेत्र की ऐसी ही भव्यता थी - इसकी वर्तमान भव्यता का वर्णन संयुत्त टीका में किया गया है - लेकिन बांस के उपवन के चारों ओर सात पर्वत थे। सबसे बाहरी छोर से शुरू करते हुए, सबसे पहले छोटा काला पर्वत, फिर बड़ा काला पर्वत, उसके बाद जल पर्वत, चंद्रमा पर्वत, सूर्य पर्वत, रत्न पर्वत, और फिर सातवें स्थान पर स्वर्ण पर्वत था। इसकी ऊँचाई सात लीग (4.23 किमी) थी, जो चद्दंता झील के चारों ओर एक कटोरे के किनारे की तरह फैली हुई थी। इसका भीतरी भाग सुनहरे रंग का था। इससे निकलने वाले प्रकाश से चद्दंता झील नवभू सूर्योदय की तरह चमकती थी। लेकिन बाहरी पर्वतों की बात करें तो,एक पर्वत छह लीग (x 4.23 किमी) ऊँचा था, एक पाँच लीग, एक चार लीग, एक तीन लीग, एक दो लीग और एक केवल एक लीग (x 4.23 किमी) ऊँचा था। अब झील के उत्तर-पूर्वी कोने में, जो लगभग सात पर्वतों से घिरा हुआ था, एक ऐसी जगह पर जहाँ हवा पानी पर पड़ती थी, एक विशाल बरगद का वृक्ष उगा हुआ था। उसका तना पाँच लीग (x 4.23 किमी) परिधि का और सात लीग (x 4.23 किमी) ऊँचा था। उसकी चार शाखाएँ चारों दिशाओं में छह लीग (x 4.23 किमी) तक फैली हुई थीं, और जो शाखा सीधी ऊपर की ओर उठती थी, वह भी छह लीग (x 4.23 किमी) लंबी थी। इस प्रकार जड़ से ऊपर की ओर उसकी ऊँचाई तेरह लीग (x 4.23 किमी) थी, और एक दिशा में शाखाओं के सिरे से दूसरी दिशा में शाखाओं के सिरे तक उसकी ऊँचाई बारह लीग (x 4.23 किमी) थी। वृक्ष में आठ हज़ार शाखाएँ थीं और वह अपनी पूरी सुंदरता में नंगे रत्न पर्वत की तरह खड़ा था। चद्दंता झील के पश्चिम में, स्वर्ण पर्वत पर, बारह मील (4.23 किमी) लंबी एक स्वर्ण गुफा थी। हाथी राजा चद्दंता अपने आठ हजार हाथियों के दल के साथ वर्षा ऋतु में उस स्वर्ण गुफा में रहते थे; ग्रीष्म ऋतु में वे विशाल बरगद के वृक्ष की शाखाओं के बीच खड़े होकर जल से आने वाली ठंडी हवा का स्वागत करते थे। एक दिन उन्हें सूचना मिली, "विशाल साल वन में फूल खिले हैं।" इसलिए अपने हाथियों के साथ वे साल वन में मौज-मस्ती करने के लिए निकले और वहाँ जाकर उन्होंने अपने माथे के गोले से एक खिले हुए साल के वृक्ष पर प्रहार किया। उसी क्षण कुलसुभद्दा हवा की दिशा में खड़ी थीं, और सूखी

टहनियाँ, मृत पत्तियाँ और लाल चींटियाँ उन पर गिरीं। लेकिन महासुभद्दा हवा की ओर खड़ी थीं, और पराग, डंठल और हरी पत्तियों वाले फूल उन पर गिरे। कुलसुभद्दा ने सोचा, "उसने अपनी प्रिय पत्नी पर फूल, पराग, ताजे तने और पत्ते बरसाए, लेकिन मुझ पर सूखी टहनियाँ, सूखे पत्ते और लाल चींटियों का मिश्रण गिरा दिया। अब मुझे पता है मुझे क्या करना है!" और उसने महापुरुष के प्रति द्वेष पाल लिया। एक और दिन, हाथी राजा और उसके साथी छद्दंत झील में स्नान करने गए। तब दो युवा हाथियों ने अपनी सूंड में उशीरा की गठरियाँ लेकर उसे स्नान कराया, मानो केलसा पर्वत को रगड़ रहे हों। जब वह पानी से बाहर आया, तो उन्होंने दोनों रानियों को स्नान कराया, और वे भी पानी से बाहर आकर महापुरुष के सामने खड़ी हो गईं। तब आठ हजार हाथी झील में उतरे और पानी में खेलते हुए झील से तरह-तरह के फूल तोड़े, और महापुरुष को ऐसे सजाया जैसे वह कोई चांदी का मंदिर हो, और बाद में रानियों को भी सजाया। फिर एक हाथी झील में तैरते हुए सात कोंपलों वाला एक बड़ा कमल लाया और उसे महापुरुष को अर्पित किया। और उसने उसे अपनी सूंड में लेकर, पराग को अपने माथे पर छिड़का और उस फूल को महासुभद्दा नामक हाथी के मुखिया को भेंट कर दिया। यह देखकर उसकी प्रतिद्वंदी ने कहा, "सात पंखुड़ियों वाला यह कमल भी वह अपनी प्रिय रानी को दे रहा है, मुझे नहीं," और फिर से उसके मन में उसके प्रति द्वेष उत्पन्न हो गया।एक दिन जब बोधिसत्व ने स्वादिष्ट फलों, कमल की डंठलों और रेशों को फूलों के रस से सजाकर पाँच सौ पच्चेक बुद्धों का सत्कार किया, तब कुल्लासुभद्दा ने अपने द्वारा प्राप्त जंगली फल पच्चेक बुद्धों को अर्पित किए और यह प्रार्थना की: "इसके बाद, जब मैं इसलोक से विदा हो जाऊँ, तो मुझे मद्दा राजा के परिवार में सुभद्दा कन्या के रूप में पुनर्जन्म मिले और वयस्क होने पर मुझे बनारस के राजा की रानी का पद प्राप्त हो। तब मैं उनकी दृष्टि में प्रिय और आकर्षक हो जाऊँगी और जो चाहूँ वह कर सकूँगी। इसलिए मैं राजा से बात करूँगी और एक शिकारी को विषैले तीर के साथ इस हाथी को घायल करके मारने के लिए भेजूँगी। और इस प्रकार मुझे उसके छह रंगों की किरणें उत्सर्जित करने वाले दो दाँत प्राप्त हों।" उसके बाद उसने कुछ नहीं खाया और कुछ ही समय में दुर्बल होकर उसकी मृत्यु हो गई। फिर वह मद्दा राज्य की रानी की संतान के रूप में पुनर्जीवित हुई और उसका नाम सुभद्दा रखा गया। जब वह वयस्क हुई, तो उसका विवाह बनारस के राजा से कर दिया गया। वह राजा की प्रिय और आकर्षक थी, और सोलह हजार पत्नियों में सबसे श्रेष्ठ थी। उसे अपने पिछले जन्म याद आए और उसने सोचा, "मेरी प्रार्थना पूरी हो गई है; अब मुझे हाथी के दांत लाकर दिए जाएं।" फिर उसने अपने शरीर पर साधारण तेल लगाया, एक गंदा वस्त्र पहना और बीमार होने का नाटक करते हुए बिस्तर पर लेट गई। राजा ने पूछा, "सुभद्दा कहाँ है?" यह सुनकर कि वह बीमार है, वह राजकक्ष में गया और बिस्तर पर बैठकर उसकी पीठ सहलाते हुए पहला श्लोक बोला:"सुभद्दा कहाँ है?" यह सुनकर कि वह बीमार है, वह राजमहल में गया और पलंग पर बैठकर उसकी पीठ सहलाते हुए पहला श्लोक बोला:"सुभद्दा कहाँ है?" यह सुनकर कि वह बीमार है, वह राजमहल में गया और पलंग पर बैठकर उसकी पीठ सहलाते हुए पहला श्लोक बोला:

बड़ी-बड़ी आंखों वाली और असाधारण, मेरी रानी, इतनी पीली, शोक की शिकार।
जैसे पैरों तले रौंदी गई माला, तुम क्यों धीरे-धीरे मिट जाते हो?
यह सुनकर उसने दूसरा छंद बोला:

ऐसा प्रतीत होता है जैसे यह सब एक सपने में हो रहा हो, एक ऐसी लालसा जो मेरे मन में बहुत गहरी थी;
मेरी इच्छा वरदान पाने की है, और इसीलिए मैं दुखी हूँ।
यह सुनकर राजा ने एक श्लोक कहा:

इस आनंदमय संसार में मनुष्य जिन सभी सुखों की आकांक्षा कर सकता है,
वे जो भी चाहें, मैं उन्हें पूरा कर सकता हूँ, इसलिए अपनी इच्छा मुझे बताएँ।
यह सुनकर रानी ने कहा, "महाराज, मेरी इच्छा पूरी करना कठिन है; मैं अभी यह नहीं बताऊंगी कि वह क्या है, लेकिन मैं चाहती हूं कि आपके राज्य में जितने भी शिकारी हैं, वे सब एकत्रित हों। तब मैं उनके बीच अपनी इच्छा बताऊंगी।" और अपनी बात समझाने के लिए उन्होंने अगला श्लोक कहा:

इस क्षेत्र में निवास करने वाले सभी शिकारी आपकी पुकार का पालन करें।
और जो कुछ मैं उनसे खुशी-खुशी प्राप्त करना चाहूंगा, वह मैं उनकी उपस्थिति में बताऊंगा।
राजा मान गया और राजकक्ष से निकलकर अपने मंत्रियों को आदेश दिया, "ढोल बजाकर यह घोषणा करवाओ कि काशी राज्य में, जो तीन सौ मील (4.23 किमी) में फैला है, सभी शिकारी इकट्ठा हों।" उन्होंने वैसा ही किया और कुछ ही समय में काशी राज्य में रहने वाले शिकारी अपनी सामर्थ्य के अनुसार भेंट लेकर राजा के पास पहुँच गए। अब उनकी कुल संख्या लगभग साठ हज़ार थी। राजा ने जब उनके आने की सूचना सुनी, तो वह एक खुली खिड़की पर खड़ा हो गया और हाथ फैलाकर रानी को उनके आने की सूचना दी और कहा:

तो यहाँ हमारे साहसी और शिकार में कुशल शिकारी देखें।
उनमें जंगली जानवरों को मारने का कौशल है, और वे सभी मेरे लिए अपनी जान दे देंगे।

यह सुनकर रानी ने उन्हें संबोधित किया और एक और छंद बोला:

हे साहसी शिकारीगण, जो यहाँ एकत्रित हुए हो,
मेरी बातों पर ध्यान दीजिए, मैं आपसे निवेदन करता हूँ:
सपने में, मुझे लगता है मैंने एक हाथी देखा था।
छह दांतों वाला (*2) और बिना किसी दोष के सफेद:
मुझे उसके दांत पाने की तीव्र इच्छा है और मैं उन्हें सहर्ष प्राप्त करना चाहूंगा;
इस जीवन को बचाने के लिए और कुछ भी काम का नहीं है।
यह सुनकर शिकारियों ने उत्तर दिया:

हमारे पूर्वजों ने पुराने समय में कभी ऐसा नहीं किया था।
छह दांतों वाला हाथी:
हमें बताएं कि यह किस प्रकार का जानवर हो सकता है।
जो तुम्हें सपनों में दिखाई दिया।
इसके बाद उन्होंने एक और छंद पढ़ा:

चार दिशाएँ दिखाई देती हैं: उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम।
इनसे चार मध्यवर्ती हैं,
नादिर और ज़ेनिथ जुड़ते हैं, और फिर
बताइए कि उन दस बिंदुओं में से किस बिंदु पर।
यह शाही हाथी शायद हो सकता है,
वह आपको सपने में दिखाई दिया।
इन शब्दों के बाद सुभद्दा ने सभी शिकारियों को देखते हुए उनमें से एक को देखा जो चौड़े पैरों वाला, भिक्षापात्र की तरह फूली हुई पिंडली वाला, मजबूत घुटनों और पसलियों वाला, घनी दाढ़ी वाला, पीले दांतों वाला, घावों से विकृत, उन सभी में एक बदसूरत, भारी-भरकम व्यक्ति के रूप में अलग दिख रहा था, जिसका नाम सोनुत्तरा था, जो कभी महापुरुष का शत्रु था। और उसने सोचा, "वह मेरी प्रार्थना पूरी कर सकेगा," और राजा की अनुमति से वह उसे अपने साथ ले गई और सात मंजिला महल की सबसे ऊपरी मंजिल पर चढ़कर उसने उत्तर की ओर एक खिड़की खोली, और उत्तरी हिमालय की ओर हाथ फैलाकर चार श्लोक पढ़े:

उत्तर दिशा की ओर, सात विशाल पर्वतों के पार,
अंततः गोल्डन क्लिफ तक पहुँच ही जाते हैं।
एक ऊँचाई जो गोबलिन रूपों के कब्जे में थी
और पैर से लेकर चोटी तक फूलों से जगमगा रहा है।
इस गोब्लिन शिखर के नीचे दिखाई देता है
गहरे हरे रंग का बादल के आकार का पिंड,
एक शाही बरगद का पेड़ जिसकी जड़ें
आठ हजार शाखाओं को मजबूती प्रदान करें।
वहाँ अजेय शक्ति का निवास है।
यह हाथी, छह दांतों वाला और सफेद रंग का,
आठ हजार जानवरों के झुंड के साथ लड़ाई के लिए।
उनके दांत रथ के डंडों के समान हैं,
वे रक्षा करने या प्रहार करने में हवा की तरह तेज होते हैं।
हांफते और गंभीर भाव से वे खड़े होकर घूरते हैं।
हवा के जरा से झोंके से भी उत्तेजित होकर,
यदि कोई मनुष्य से जन्मा व्यक्ति उसे देख ले,
उनका क्रोध उसे पूरी तरह से भस्म कर देता है।
यह सुनकर सोनट्टारा बुरी तरह भयभीत हो गया और बोला:

चमकीली चमक वाले फ़िरोज़ा या मोती,
अनेक स्वर्ण आभूषणों से सुसज्जित, रानी,

राजमहलों में इन्हें देखा जा सकता है।
तो फिर आप हाथीदांत का क्या करेंगे?
या फिर तुम सचमुच इन शिकारियों को मार डालोगे?
तब रानी ने एक श्लोक बोला:

मैं दुःख और द्वेष से ग्रस्त हूँ।
जब मुझे अपनी चोट याद आती है।
हे शिकारी, मुझे वह प्रदान करो जिसकी मुझे लालसा है।
और तुम्हें पाँच चुनिंदा गाँव मिलेंगे।
और इसके साथ ही उसने कहा, "मित्र शिकारी, जब मैंने पच्चेक बुद्धों को उपहार दिया, तो मैंने यह प्रार्थना की कि मुझे इस छह दांत वाले हाथी को मारने और उसके दांतों का एक जोड़ा प्राप्त करने की शक्ति प्राप्त हो।"

यह मैंने केवल सपने में नहीं देखा, बल्कि मेरी प्रार्थना भी पूरी होगी। आप जाइए और डरिए मत।" ऐसा कहकर उसने उसे आश्वस्त किया। उसने उसकी बात मान ली और कहा, "ठीक है, महोदया; लेकिन पहले मुझे स्पष्ट कर दीजिए और बताइए कि उसका निवास स्थान कहाँ है," और उससे पूछते हुए उसने यह छंद कहा:

वह कहाँ रहता है? उसे कहाँ पाया जा सकता है?
स्नान करने के लिए उसका रास्ता कौन सा है?
यह शाही प्राणी कहाँ तैरता है?
हमें उसे पकड़ने का तरीका बताएं।
फिर अपने पूर्व जीवन को याद करते हुए उसने उस स्थान को स्पष्ट रूप से देखा और इन दो छंदों में उसके बारे में उसे बताया:

उसका यह स्नानस्थल ज़्यादा दूर नहीं था,
यह एक गहरा और बड़ा तालाब है:
वहां मधुमक्खियां झुंड में रहती हैं और फूल भी बहुत हैं।
और वहीं यह शाही जानवर पाया जाता है।
अब कमल के मुकुट से सजे, स्नान से तरोताजा होकर
वह प्रसन्नतापूर्वक अपने घर की ओर चल पड़ता है।
वह बिल्कुल सफेद और लंबा होकर चलता है।
उस रानी के पीछे जिसे वह बेहद प्यार करता है।
यह सुनकर सोनत्तरा मान गया और बोला, "हे देवी, मैं हाथी को मारकर उसके दांत आपके पास लाऊंगा।" फिर प्रसन्न होकर उसने उसे एक हजार दांत दिए और कहा, "इस बीच तुम घर जाओ, और सात दिन बाद वहां से निकल पड़ना।" उसे विदा करते हुए उसने लोहारों को बुलाया और उन्हें आदेश दिया, "महोदय, हमें एक कुल्हाड़ी, एक फावड़ा, एक बरमा, एक हथौड़ा, बांस काटने का औजार, एक घास काटने की मशीन, एक लोहे का डंडा, एक खूंटी, एक लोहे का तीन मुंह वाला कांटा चाहिए; इन्हें शीघ्रता से बनाओ और हमारे पास लाओ।" फिर चमड़े का काम करने वालों को बुलाकर उसने उन्हें आदेश दिया, "महोदय, आपको हमारे लिए एक चमड़े का थैला बनाना होगा, जिसमें एक बड़े गट्ठे का वजन समा सके; हमें चमड़े की रस्सियों और पट्टियों, हाथी के लिए पर्याप्त बड़े जूते और एक चमड़े का पैराशूट चाहिए: इन्हें शीघ्रता से बनाओ और हमारे पास लाओ।" और लोहारों और चमड़े का काम करने वालों दोनों ने जल्दी से सब कुछ बनाया और लाकर उसे भेंट कर दिया। यात्रा के लिए आवश्यक सभी सामान, जैसे जलाऊ लकड़ी और अन्य सामग्री, उपलब्ध कराने के बाद, उसने यात्रा के लिए आवश्यक सभी उपकरण और सामान, जैसे पका हुआ आटा आदि, चमड़े के थैले में भर दिए। कुल मिलाकर उसका वजन लगभग एक बड़ा गट्ठा था। सोनोत्तरा ने अपनी सारी व्यवस्था पूरी कर ली और सातवें दिन पहुँचकर रानी के समक्ष आदरपूर्वक खड़ा हुआ। तब रानी ने कहा, "मित्र, तुम्हारी यात्रा के लिए सभी उपकरण तैयार हैं: तो यह थैला ले लो।" सोनोत्तरा, जो पाँच हाथियों के बराबर बलवान और हट्टा-कट्टा बेईमान था, ने थैले को ऐसे उठाया जैसे वह केक की थैली हो, और उसे अपनी कमर पर रखकर मानो खाली हाथ खड़ा हो गया। कुल्लासुभद्दा ने वह सामान शिकारी के सेवकों को दे दिया और राजा को बताकर सोनोत्तरा को विदा कर दिया। सोनोत्तरा ने राजा और रानी को आदरपूर्वक प्रणाम करते हुए महल से नीचे उतरकर अपना सामान रथ में रखा और सेवकों के एक बड़े समूह के साथ नगर से निकल पड़ा। वह कई गाँवों से होते हुए सीमा तक पहुँचा। फिर उसने देशवासियों को वापस मोड़ दिया और सीमावर्ती निवासियों के साथ जंगल में प्रवेश किया। मानव बस्तियों से आगे बढ़कर उसने सीमावर्ती लोगों को भी वापस भेज दिया और तीस मील (4.23 किमी) की दूरी तक बिल्कुल अकेले ही एक सड़क पर आगे बढ़ा। इस दौरान वह कुश और अन्य घासों, तुलसी की झाड़ियों, सरकंडों और बेंत के घने झुरमुटों, मिश्रित वनस्पतियों, सरकंडों और बेंत के जंगलों, घने वनों, जहाँ साँप भी नहीं घुस सकता था, पेड़ों और बाँसों की घनी वनस्पतियों, कीचड़ और पानी के रास्तों, पहाड़ी इलाकों से होकर गुजरा। कुल मिलाकर

अठारह क्षेत्र एक के बाद एक पार हुए। उसने घास के जंगलों को हंसिया से काटा, तुलसी और इसी तरह की झाड़ियों को बाँस काटने के औजार से साफ किया, पेड़ों को कुल्हाड़ी से काटा और बड़े पेड़ों को पहले बरमे से छेदा। फिर, अपने रास्ते पर चलते हुए, उसने बांस के झुरमुट में एक सीढ़ी बनाई और घनी वनस्पति के शीर्ष पर चढ़कर, उसने एक बांस रखा, जिसे उसने काटा था।अगले बांस के झुंड को पार करते हुए, घनी वनस्पति के ऊपर रेंगते हुए वह एक दलदल तक पहुँचा। फिर उसने कीचड़ पर एक सूखा तख्ता बिछाया और उस पर कदम रखते हुए एक और तख्ता अपने आगे फेंक दिया और इस तरह दलदल पार किया। फिर उसने एक डोंगी बनाई और उसकी मदद से बाढ़ वाले क्षेत्र को पार किया और अंत में पहाड़ों की तलहटी में पहुँच गया। फिर उसने एक तीन नोक वाले लोहे के डंडे को रस्सी से बांधा और उसे पहाड़ में ऊपर फेंककर मजबूती से गाड़ दिया। फिर रस्सी के सहारे ऊपर चढ़कर उसने हीरे की नोक वाले लोहे के डंडे से पहाड़ में छेद किया और छेद में एक खूंटी ठोककर उस पर खड़ा हो गया। फिर लोहे के डंडे को बाहर निकालकर उसने उसे एक बार फिर पहाड़ में ऊपर गाड़ दिया और इस स्थिति से चमड़े की रस्सी को नीचे लटकाकर उसे पकड़ लिया और नीचे उतरकर रस्सी को नीचे की खूंटी से बांध दिया। फिर अपने बाएं हाथ से रस्सी को पकड़कर और दाएं हाथ में हथौड़ा लेकर उसने रस्सी पर प्रहार किया और इस तरह खूंटी को उखाड़कर वह एक बार फिर ऊपर चढ़ गया। इस प्रकार वह पहले पर्वत की चोटी पर चढ़ गया और फिर दूसरी ओर उतरना शुरू करते हुए, पहले की तरह ही उसने पहले पर्वत की चोटी पर एक खूंटी गाड़ दी और अपने चमड़े के थैले पर रस्सी बांधकर उसे खूंटी के चारों ओर लपेट दिया। फिर वह थैले के अंदर बैठ गया और मकड़ी की तरह धागा फैलाते हुए रस्सी को खोलता हुआ नीचे उतर गया। फिर अपने चमड़े के पैराशूट को हवा में छोड़ते हुए वह एक पक्षी की तरह नीचे उतरा—कम से कम ऐसा कहा जाता है। इस प्रकार गुरु ने बताया कि कैसे सुभद्दा के वचनों का पालन करते हुए शिकारी तेजी से शहर से आगे बढ़ा और सत्रह अलग-अलग रास्तों को पार करते हुए एक पहाड़ी क्षेत्र में पहुंचा, और कैसे उसने वहां छह पर्वतों को पार किया और स्वर्ण चट्टान की चोटी पर चढ़ गया।मकड़ी की तरह रस्सी खोलते हुए, जैसे कोई मकड़ी अपना धागा फैलाती है। फिर अपने चमड़े के पैराशूट को हवा में लहराते हुए, वह एक पक्षी की तरह नीचे उतरा—कम से कम ऐसा कहा जाता है। इस प्रकार गुरु ने बताया कि कैसे सुभद्दा के वचनों का पालन करते हुए शिकारी तेजी से शहर से आगे बढ़ा और सत्रह अलग-अलग रास्तों को पार करते हुए एक पहाड़ी क्षेत्र में पहुँचा, और कैसे उसने वहाँ छह पहाड़ों को पार किया और स्वर्ण चट्टान की चोटी पर चढ़ गया।मकड़ी की तरह रस्सी खोलते हुए, जैसे कोई मकड़ी अपना धागा फैलाती है। फिर अपने चमड़े के पैराशूट को हवा में लहराते हुए, वह एक पक्षी की तरह नीचे उतरा—कम से कम ऐसा कहा जाता है। इस प्रकार गुरु ने बताया कि कैसे सुभद्दा के वचनों का पालन करते हुए शिकारी तेजी से शहर से आगे बढ़ा और सत्रह अलग-अलग रास्तों को पार करते हुए एक पहाड़ी क्षेत्र में पहुँचा, और कैसे उसने वहाँ छह पहाड़ों को पार किया और स्वर्ण चट्टान की चोटी पर चढ़ गया।

शिकारी ने यह सुना, लेकिन वह अविचलित रहा।
धनुष और बाण से लैस होकर आगे बढ़ो,
और सात विशाल पर्वतों को पार करते हुए
अंततः भव्य गोल्डन क्लिफ पर पहुँच गए।
भूत-प्रेतों से ग्रस्त ऊँचाई पर पहुँचते हुए,
उसकी नजरों के सामने बादल के आकार का कौन सा पिंड फट गया?
यह एक शाही बरगद है जिसकी जड़ें
आठ हजार फैलने वाली शाखाओं को सहारा दें।
वह शक्ति में अजेय खड़ा था।
एक हाथी जिसके छह दांत हैं और वह सफेद रंग का है।
आठ हजार पशुओं के झुंड के साथ युद्ध के लिए;
उनके दांत रथ के डंडों के समान हैं:
वे रक्षा करने या प्रहार करने में हवा की तरह तेज होते हैं।
पास ही में एक स्विमिंग पूल है—जो पानी से लबालब भरा हुआ है।
शाही जानवरों के तैरने के लिए उपयुक्त स्थान;
इसके सुंदर किनारे फूलों से लदे हुए हैं
और चारों ओर मधुमक्खियाँ भिनभिनाती हुई मंडरा रही हैं।
उस प्राणी के जाने के तरीके को देखकर
जब भी नहाते समय कोई विचार मन में आता है,
उसने इतना नीच काम करने के लिए एक गड्ढा खोदा।
दुष्ट रानी के क्रोध से प्रेरित होकर।
कहानी शुरू से अंत तक इस प्रकार है: कहा जाता है कि शिकारी सात वर्ष, सात महीने और सात दिन बाद, ऊपर वर्णित तरीके से महापुरुष के निवास स्थान पर पहुँचकर, उनके निवास स्थान को पहचान कर वहाँ एक गड्ढा खोदा, यह सोचकर कि, "मैं यहाँ घात लगाकर हाथियों के सरदार को घायल करूँगा और उसकी मृत्यु का कारण बनूँगा।" उसने ऐसा ही किया और जंगल में जाकर खंभे

बनाने के लिए पेड़ काटे और बहुत सारा सामान इकट्ठा किया। फिर जब हाथी स्नान करने गए, तो उसने उस स्थान पर जहाँ हाथी का सरदार खड़ा होता था, एक बड़े कुदाल से एक चौकोर गड्ढा खोदा, और खोदी गई मिट्टी को पानी के ऊपर छिड़क दिया, मानो वह बीज बो रहा हो, और पत्थरों को ओखली की तरह ऊपर रखकर खंभे गाड़ दिए, उन पर भार और रस्सियाँ बाँध दीं और उनके ऊपर तख्ते बिछा दिए। इसके बाद उसने तीर के आकार का एक गड्ढा खोदा और उसके ऊपर मिट्टी और कूड़ा-करकट डाल दिया, और एक तरफ उसने अपने लिए प्रवेश द्वार बना लिया, और इस प्रकार, जब गड्ढा बनकर तैयार हो गया, तो सूर्योदय होते ही उसने एक नकली चोटी बांधी और पीले वस्त्र पहने और अपना धनुष और एक विषैला तीर लेकर नीचे उतर गया और गड्ढे में खड़ा हो गया।

गुरु ने सारी बात स्पष्ट करने के लिए कहा:

उसने सबसे पहले गड्ढे को तख्तों से ढककर छिपाया था।
फिर हाथ में धनुष लिए वह अंदर चला गया।
और जब हाथी वहाँ से गुजरा,
उस दुष्ट ने एक शक्तिशाली तीर चलाया।
घायल जानवर दर्द से कराह उठा।
और सारा झुंड फिर से दहाड़ उठा:
कुचली हुई शाखाएँ और रौंदी हुई घासें सच्चाई बयां करती हैं।
जहां घबराहट के मारे भागने की प्रवृत्ति उन्हें ले जाती है।
उनके स्वामी ने लगभग अपने शत्रु को मार ही डाला था।
वह दर्द से इतना पागल हो गया था कि तभी अचानक!
उसकी नजर पीले रंग के वस्त्र पर पड़ी।
संतत्व का प्रतीक, पुरोहित का वेश
और बुद्धिमानों द्वारा इसे पवित्र माना जाता है।
गुरु ने शिकारी से बातचीत करते हुए कुछ पंक्तियाँ कहीं:

जो कोई भी पापमय दाग से दूषित है
और सत्य और आत्मसंयम से रहित,
भले ही उसने पीले रंग के वस्त्र पहने हों,
वह किसी भी प्रकार से पवित्र होने का दावा नहीं करता।
लेकिन जो पाप के दाग से मुक्त हो,
सत्य और आत्मसंयम से संपन्न,
और धर्म में दृढ़तापूर्वक स्थिर,
पीली पोशाक पहनने की हकदार है।
ऐसा कहकर, उस महान सत्ता ने उसके प्रति अपने सारे क्रोध को बुझाते हुए उससे पूछा, "तुमने मुझे क्यों घायल किया? क्या यह तुम्हारे अपने फायदे के लिए था या किसी और ने तुम्हें रिश्वत दी थी?"

फिर गुरु ने मामले की व्याख्या करते हुए कहा:

उस विशालकाय बाण ने जानवर को मार गिराया।
अब भी अविचलित होकर, उसने अपने शत्रु को संबोधित किया:
"मित्र, मुझे मारने का तुम्हारा क्या उद्देश्य है?"
और, कृपया बताएं, आपको किसने उकसाया?
तब शिकारी ने उससे कहा और यह छंद सुनाया:

काशी के राजा की प्रिय रानी
सुभद्दा ने मुझे बताया कि उसने देखा था
"सपनों में तुम्हारा रूप," उसने कहा।
"मुझे उसके दांत चाहिए; जाओ, उन्हें मेरे पास ले आओ।"

यह सुनकर और यह पहचानते हुए कि यह कुल्लासुभद्दा का काम था, उसने धैर्यपूर्वक अपने कष्टों को सहन किया और सोचा, "उसे मेरे दांत नहीं चाहिए; उसने उसे इसलिए भेजा क्योंकि वह मुझे मारना चाहती थी," और, इस मामले को समझाने के लिए, उसने कुछ छंद कहे:

मेरे पास बड़े-बड़े दांतों का भरपूर भंडार है।
मेरे दिवंगत पूर्वजों के अवशेष,
और यह बात उस शापित स्त्री को भलीभांति पता है।
उस दुष्ट ने मेरी जान को निशाना बनाया था।
उठो, शिकारी, या इससे पहले कि मैं मर जाऊं।
इन हाथीदांतों को काटकर अलग कर दिया:
जाओ, उस चिड़चिड़े व्यक्ति को कहो कि वह खुश रहे।
"जानवर मारा गया है; उसके दांत यहीं हैं।"
उसकी बात सुनकर शिकारी अपनी जगह से उठा और हाथ में आरी लेकर उसके दांत काटने के लिए उसके पास आया। हाथी अस्सी भुजाओं जितने ऊंचे पर्वत के समान था, इसलिए उसे काटना व्यर्थ था। क्योंकि आदमी उसके दांतों तक नहीं पहुंच पा रहा था। तब वह विशालकाय प्राणी अपना शरीर उसकी ओर झुकाकर सिर नीचे करके लेट गया। फिर शिकारी उस विशालकाय प्राणी की सूंड पर चढ़ गया, उसे अपने पैरों से ऐसे दबा रहा था मानो वह चांदी की रस्सी हो, और उसके माथे पर ऐसे खड़ा हो गया मानो वह केलाश की चोटी हो। फिर उसने अपना पैर उसके मुंह में डाला और उसके मांसल हिस्से पर घुटने से प्रहार करते हुए, वह जानवर के माथे से नीचे उतरा और आरी उसके मुंह में घुसा दी। उस विशालकाय प्राणी को असहनीय पीड़ा हुई और उसका मुंह खून से लथपथ हो गया। शिकारी इधर-उधर खिसकता रहा, फिर भी आरी से दांत नहीं काट पा रहा था। तब उस विशालकाय प्राणी ने मुंह से खून टपकने दिया और पीड़ा में तड़पते हुए पूछा, "महोदय, क्या आप इन्हें नहीं काट सकते?" जब उसने "नहीं" कहा, तो उसने होश में आकर कहा, "अच्छा, क्योंकि मुझमें अपनी सूंड उठाने की शक्ति नहीं है, तो क्या तुम इसे मेरे लिए उठाओगे और आरी के सिरे को पकड़ोगे?" शिकारी ने वैसा ही किया: और उस महान प्राणी ने अपनी सूंड से आरी को पकड़ लिया और उसे आगे-पीछे घुमाया, और उसके दांत ऐसे कट गए जैसे अंकुर हों। फिर उसे दांत लेने के लिए कहते हुए उसने कहा, "हे मित्र शिकारी, मैं तुम्हें ये नहीं देता, क्योंकि मैं इन्हें महत्व नहीं देता, न ही मैं सक्का (इंद्र), मार या ब्रह्मा के पद की इच्छा रखता हूँ, बल्कि अनंत ज्ञान के दांत मुझे इनसे एक लाख गुना अधिक प्रिय हैं, और यह पुण्य कर्म मुझे अनंत ज्ञान की प्राप्ति का कारण बने।" और जब उसने उसे दांत दिए, तो उसने पूछा, "तुम यहाँ कितने समय से आ रहे थे?" "सात वर्ष, सात महीने और सात दिन।" "तो इन दांतों की जादुई शक्ति से जाओ, और तुम सात दिनों में बनारस पहुँच जाओगे।" और उसने उसे सुरक्षित मार्ग बताकर जाने दिया। और उसके जाने के बाद, अन्य हाथियों और सुभद्दा के लौटने से पहले ही, वह मर चुका था।

मास्टर ने मामले को स्पष्ट करते हुए कहा:

शिकारी ने तब हाथीदांत को देखा
उस महान प्राणी के जबड़े से,
और अपने शानदार, बेजोड़ पुरस्कार के साथ
वह पूरी तेज़ी से घर की ओर चल पड़ा।
उसके जाने के बाद, हाथियों का झुंड अपने दुश्मन को न पाकर वापस लौट आया।

मास्टर ने मामले को स्पष्ट करते हुए कहा:

उनकी मृत्यु से दुखी और भयभीत,
वह झुंड जो घबराकर भागने लगा,
क्रूर शत्रु का कोई निशान न देखकर,
वापस लौटने पर उन्होंने अपने सरदार को बुरी तरह घायल पाया।
और उनके साथ सुभद्दा भी आईं, और वे सब रोते-बिलखते उन्हें पच्चेक बुद्धों के पास ले गए, जो उस महान सत्ता के प्रति अत्यंत मित्रवत थे, और कहा, "महोदय, जिसने आपको जीवन की आवश्यक वस्तुएँ प्रदान कीं, वह विषैले बाण के घाव से मर गया है। आइए और देखिए कि उसका शव कहाँ रखा है।" और पाँच सौ पच्चेक बुद्ध वायु में विचरण करते हुए पवित्र स्थान पर उतरे। उसी क्षण दो युवा हाथियों ने अपने दाँतों से हाथी के राजा के शरीर को उठाकर, उसे पच्चेक बुद्धों को प्रणाम करवाते हुए, एक ऊँची चिता पर रखा और उसे जला दिया। पच्चेक बुद्धों ने पूरी रात श्मशान में शास्त्रों का पाठ किया। आठ हज़ार हाथियों ने आग बुझाने के बाद, पहले स्नान किया और फिर, सुभद्दा के नेतृत्व में, अपने निवास स्थान पर लौट गए।

इस मामले को स्पष्ट करने के लिए गुरु ने कहा:

वे रोए और विलाप किया, ऐसा कहा जाता है।
उसके सिर पर धूल का ढेर लग रहा था,
फिर धीरे-धीरे घर लौटने का सिलसिला शुरू हुआ।
अपनी सदा दयालु रानी के पीछे।
और सोनोत्तरा सात दिनों के भीतर अपने दांतों के साथ बनारस पहुँच गया।

मास्टर ने मामले को स्पष्ट करते हुए कहा:

शिकारी सीधे काशी की ओर यात्रा करता है
अपना उज्ज्वल और अद्वितीय पुरस्कार लिए हुए
मेरा मतलब उस महान प्राणी के दांतों से है।
सुनहरी चमक से सभी दिलों को प्रसन्न करते हुए--
और उन्होंने उस शाही महिला से कहा,
"ये रहे उसके दांत: वह जानवर मर चुका है।"
रानी को वे दांत भेंट करते हुए उसने कहा, “महारानी, जिस हाथी से आपने एक छोटी सी गलती पर द्वेष रखा था, उसे मैंने मार डाला है।” रानी रो पड़ीं, “क्या आप मुझे बता रहे हैं कि वह मर गया है?” तब उसने रानी को दांत देते हुए कहा, “निश्चिंत हो जाइए, वह मर गया है: ये रहे उसके दांत।” रानी ने अपने रत्नजड़ित पंखे पर छह अलग-अलग रंगों की किरणों से सजे दांत ग्रहण किए और उन्हें अपनी गोद में रखकर, अपने प्रिय स्वामी के दांतों को निहारने लगीं और सोचने लगीं, “यह व्यक्ति उन दांतों को लेकर आया है जिन्हें उसने उस शुभ हाथी से काटा था जिसे उसने विषैले बाण से मारा था।” और उस महान प्राणी की याद से वह इतने गहरे दुःख से भर उठीं कि वह सहन नहीं कर सकीं, उनका हृदय वहीं टूट गया और उसी दिन उनकी मृत्यु हो गई।

गुरु ने कहानी को स्पष्ट करने के लिए कहा:

जैसे ही उसने उसके दांत देखे, वह तुरंत ही
वह उसका प्रिय प्राचीन स्वामी था
फिर दुख से उसका दिल तुरंत टूट गया
और वह बेचारी मूर्ख, उसके लिए मर गई।
जब वह, सर्वशक्तिमान और सर्वज्ञानी,
उनकी आंखों के सामने ही उनके चेहरे पर मुस्कान खिल उठी।
तब इन पवित्र भिक्षुओं ने तुरंत सोचा,
"निश्चित रूप से बुद्ध बिना किसी कारण के नहीं मुस्कुराते।"
"वह जिसे तुम पहले देखा करते थे," उसने कहा।
"पीले वस्त्र पहने एक तपस्वी दासी,
"पहले मैं एक रानी थी," वह रोते हुए बोला।
क्या वह हाथी राजा था जिसकी मृत्यु हुई थी?
"उस नीच ने उन सफेद दांतों को चुरा लिया,"
धरती पर अद्वितीय, अत्यंत उज्ज्वल,
और उन्हें बनारस शहर ले आए।
अब उन्हें देवदत्त के नाम से जाना जाता है।
बुद्ध ने अपने ज्ञान के आधार पर बताया
पुराने समय की यह लंबी कहानी,
अपनी तमाम दुखद विविधताओं के साथ,
हालांकि वह दर्द और दुख से मुक्त था।
बहुत समय पहले का वह हाथी
क्या मैं उस बैंड का राजा था?

और, भाइयों (भिक्षुओं), मैं चाहता हूँ कि आप ऐसा करें।
इस जन्म को ठीक से समझना आवश्यक है।
इन छंदों को बुजुर्गों ने शास्त्र का पाठ करते हुए और सर्वशक्तिमान ईश्वर की स्तुति गाते हुए रिकॉर्ड किया था।

और इस प्रवचन को सुनकर बहुत से लोग प्रथम मार्ग (समाधि) में प्रवेश कर गए, लेकिन बाद में उस बहन ने आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि से संतत्व प्राप्त कर लिया।

फुटनोट:

(1) छद्दंत-जातक

(2) विद्वान छब्बिसना (संस्कृत षडविशना) छह दांत वाले को छब्बन्ना छह रंग का बताते हैं, शायद कहानी के नायक को बुद्ध के साथ अधिक पूर्ण रूप से पहचानने के लिए।

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **संभव-जातक**
स्रोत : एच.टी. फ्रांसिस द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित

पिछला <<<<-----||-515-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 515
संभव-जातक

"यह नियम," इत्यादि—यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में निवास करते समय ज्ञान की पूर्णता के विषय में सुनाई थी। इस प्रारंभिक कथा की ओर ले जाने वाली परिस्थितियाँ महाउम्मग्ग जन्म (*1) में वर्णित की जाएँगी।

एक समय की बात है, कुरु राज्य के इंद्रप्रस्थ नगर में धनंजय कोरब्य नामक एक राजा का राज्य था। सुचिराता नामक एक ब्राह्मण उनका पुरोहित और सांसारिक एवं आध्यात्मिक मामलों का सलाहकार था। राजा ने दान-पुण्य और अन्य अच्छे कार्यों का पालन करते हुए अपने राज्य पर विधिपूर्वक शासन किया। एक दिन उन्होंने सत्य की सेवा के विषय में एक प्रश्न तैयार किया और ब्राह्मण सुचिराता को बिठाकर उनका उचित सम्मान करते हुए उनसे चार श्लोकों में अपना प्रश्न पूछा:

मैं इस शासन और प्रभुत्व को अस्वीकार करता हूँ।
सुसिराटा, क्योंकि मुझे खुशी होगी
महान बनो और पूरी दुनिया पर राज करो।
मैं केवल सही के मार्ग पर चलता हूँ—गलत से बचता हूँ—
क्योंकि जो कुछ भी अच्छा और सच्चा है
सभी मनुष्यों को राजाओं से ऊपर लक्ष्य रखना चाहिए।
इससे वह हमेशा के लिए दोषमुक्त हो जाएगा,
यहां और भविष्य में, हम दावा कर सकते हैं
देवताओं (देवदूतों) और मनुष्यों के बीच एक गौरवशाली नाम।
हे ब्राह्मण, जान लो कि मैं सहर्ष ऐसा करूँगा।
जो कुछ भी अच्छा और सत्य माना जाता है,
इसलिए कृपया बताएं, जब पूछा जाए, तो मुझे बताएं
जो भी अच्छा और सच्चा हो।
यह एक कठिन प्रश्न था, जो बुद्ध के दायरे में आता था। यह प्रश्न किसी को असीम ज्ञान से परिपूर्ण बुद्ध से पूछना चाहिए, और यदि वे न हों तो किसी ऐसे बोधिसत्व से पूछना चाहिए जो असीम ज्ञान का वरदान प्राप्त करना चाहता हो। लेकिन सुचिराता, बोधिसत्व न होने के कारण, इस प्रश्न का उत्तर नहीं दे सका, और ज्ञान का दिखावा करने के बजाय, उसने निम्नलिखित श्लोक में अपनी अक्षमता स्वीकार की:

विधुर (*2) के अलावा कोई नहीं, हे राजा!
इस अद्भुत बात को बताने की शक्ति रखता है,
हे प्रभु, अच्छा और सच्चा क्या है?
जिसे करने में आपको हमेशा खुशी होगी।
राजा ने उसकी बात सुनकर कहा, "तो जाओ, ब्राह्मण, तुरंत जाओ," और उसे साथ ले जाने के लिए एक उपहार दिया, और उसे विदा करने की हड़बड़ी में उसने यह श्लोक दोहराया:

देखो! सीधे इस सोने के वजन को, मेरे मित्र,
मैं आपके द्वारा विदुर को भेजता हूँ;
उस ज्ञानी व्यक्ति के लिए उपयुक्त उपहार जो सबसे अच्छा प्रदर्शन कर सकता है
मैं उस अच्छाई और सच्चाई को जानना चाहता हूँ।
और इन शब्दों के साथ उन्होंने उसे एक लाख सिक्कों के मूल्य की सोने की एक पट्टिका दी, जिस पर प्रश्न का उत्तर लिखना था, यात्रा के लिए एक रथ, उसकी सुरक्षा के लिए एक सेना और भेंट के रूप में एक उपहार दिया, और उसे तुरंत भेज दिया। इंद्रप्रस्थ नगर से निकलकर, वह सीधे बनारस नहीं गए, बल्कि उन्होंने पहले उन सभी स्थानों का भ्रमण किया जहाँ ऋषि निवास करते थे, और पूरे भारत में प्रश्न का उत्तर देने वाला कोई न पाकर वे धीरे-धीरे बनारस पहुँचे। वहाँ निवास करने के बाद, वे कुछ अनुयायियों के साथ सुबह के भोजन के समय विदुर के घर गए, और अपने आगमन की सूचना देने पर उन्हें अंदर आमंत्रित किया गया और उन्होंने विदुर को अपने घर में नाश्ता करते हुए पाया।

विषय को स्पष्ट करने के लिए, गुरु ने सातवें श्लोक को दोहराया:

तब भारद्वाज (*3) शीघ्रता से सीधे चलने लगे।
वह विदुर की ओर गया और वहाँ उसे अपना मित्र मिला।
घर पर बैठे हैं, और खाने के लिए तैयार हैं।
साधारण भोजन से, उसने अपना सुबह का उपवास तोड़ा।
अब विदुर उनके बचपन के मित्र थे और उन्होंने एक ही गुरु के परिवार में शिक्षा प्राप्त की थी, इसलिए उनके साथ भोजन करने के बाद, जब नाश्ता समाप्त हो गया और सुचिराता आराम से बैठ गए, तो विदुर द्वारा पूछे जाने पर, "मित्र, आप यहाँ क्यों आए हैं?" उन्होंने उन्हें अपने आने का कारण बताया और आठवें श्लोक को दोहराया:

मैं सुप्रसिद्ध कुरु राजा के आदेश पर आया हूँ।
युधिष्ठिल (*4) से आया, और यही उसकी खोज थी,
मैं आपसे पूछना चाहता हूँ, विदुर, कि आप मुझे बताएं
सत्य और अच्छा, जो निश्चित रूप से हो सकता है।
उस समय ब्राह्मण अनेक लोगों के विचारों को एकत्रित करने के लिए इस खोज में जुट जाता है, मानो वह गंगा की बाढ़ की तरह विचारों का ढेर लगा रहा हो, और समस्या को हल करने का समय ही नहीं बचता। इस प्रकार, उसने नौवें श्लोक को दोहराया:

इतने शक्तिशाली विषय से अभिभूत
क्योंकि यह गंगा की बाढ़ वाली धारा के किनारे स्थित था,
मैं यह नहीं बता सकता कि यह क्या हो सकता है।
तुम मुझसे अच्छाई और सच्चाई की तलाश कर रहे हो।
और ऐसा कहते हुए उन्होंने आगे कहा: "मेरा एक चतुर पुत्र है, जो मुझसे कहीं अधिक बुद्धिमान है: वह तुम्हें सब कुछ स्पष्ट कर देगा। उसके पास जाओ।" और उन्होंने दसवाँ श्लोक दोहराया:

मेरा एक बेटा है, मेरा अपना इकलौता बेटा।
पुरुषों में भद्रकारा के नाम से जाना जाता है;
उससे संपर्क करो, वह तुम्हें सिखाएगा।
आपके लिए सत्य और अच्छाई का क्या अर्थ है?
यह सुनकर सुचिराता विदुर का घर छोड़कर भद्रकारा के निवास स्थान पर गया और उसे अपने लोगों के बीच नाश्ता करते हुए पाया।

मामले को स्पष्ट करने के लिए, गुरु ने ग्यारहवें श्लोक को दोहराया:

तब भारद्वाज ने जल्दी से
वह भद्रकारा के घर चला गया।
जहां दोस्तों के बीच, सभी लोग एकत्रित थे,
युवक आराम से बैठा हुआ पाया गया।
वहाँ पहुँचने पर युवक भद्रकारा ने उनका आतिथ्य सत्कार किया और उन्हें कुर्सी और उपहार भेंट किए। जब वे अपनी जगह पर बैठे, तो उनसे पूछा गया कि वे क्यों आए हैं, तो उन्होंने बारहवाँ श्लोक दोहराया:

मैं सुप्रसिद्ध कुरु राजा के आदेश पर आया हूँ।
युधिष्ठिल से आया था, और यही उसकी खोज थी।
भद्रकारा, मैं आपसे यह पूछना चाहता हूँ कि मुझे दिखाएँ
अच्छाई और सच्चाई, वे निश्चित रूप से जो भी हों।
तब भद्रकारा ने उससे कहा, "हे महाराज, अभी मैं दूसरे आदमी की पत्नी के साथ षड्यंत्र रच रहा हूँ। मेरा मन बेचैन है, इसलिए मैं आपके प्रश्न का उत्तर नहीं दे सकता, लेकिन मेरे छोटे भाई संजय की बुद्धि मुझसे कहीं अधिक स्पष्ट है। आप उससे पूछिए: वह आपके प्रश्न का उत्तर देगा।" और उसे वहाँ भेजने के लिए उसने दो श्लोक दोहराए:

मैं अच्छा हिरण का मांस छोड़ देता हूँ, अब एक छिपकली का पीछा करूँगा:
तो फिर मुझे अच्छाई और सच्चाई के बारे में कैसे पता चलेगा?
आपको पता ही होगा कि मेरा एक छोटा भाई है।
संजय नाम दिया गया. तो, ब्राह्मण, जाओ
और उसे ढूंढो, वह तुम्हें सिखाएगा।
आपके लिए सत्य और अच्छाई का क्या अर्थ है?
वह तुरंत संजय के घर के लिए रवाना हुआ, जहाँ संजय ने उसका स्वागत किया और जब उससे आने का कारण पूछा गया तो उसने कारण बताया।

विषय को स्पष्ट करने के लिए गुरु ने दो श्लोक कहे:

तब भारद्वाज ने जल्दी से
संजय के घर की ओर प्रस्थान किया।
जहां दोस्तों के बीच, सभी लोग एकत्रित थे,
युवक आराम से बैठा हुआ पाया गया।
मैं सुप्रसिद्ध कुरु राजा के आदेश पर आया हूँ।
युधिष्ठिल से आया था, और यही उसकी खोज थी।
संजय, मैं आपसे पूछना चाहता हूँ कि आप मुझे दिखाएँ।
अच्छाई और सच्चाई, वे निश्चित रूप से जो भी हों।
लेकिन संजय भी एक षड्यंत्र में लिप्त था और उसने उससे कहा, "महोदय, मैं किसी दूसरे पुरुष की पत्नी का पीछा कर रहा हूँ, और गंगा नदी में उतरकर दूसरी ओर जाता हूँ। शाम और सुबह नदी पार करते समय मैं मृत्यु के मुँह में होता हूँ: इसलिए मेरा मन व्याकुल है, और मैं आपके प्रश्न का उत्तर नहीं दे पाऊँगा, लेकिन मेरा सात वर्षीय छोटा भाई संभव ज्ञान में मुझसे एक लाख गुना श्रेष्ठ है। वह आपको बताएगा: जाकर उससे पूछिए।"

विषय को स्पष्ट करने के लिए, गुरु ने दो छंद दोहराए:

मृत्यु मेरे लिए अपने जबड़े खोल देती है।
सुबह और शाम। मैं आपको कैसे बताऊँ?
सत्य और अच्छाई क्या हैं?
आपको पता ही होगा कि मेरा एक छोटा भाई है।
संभव को बुलाया. तो, ब्राह्मण, जाओ,
और उसे खोजो। वह तुम्हें सिखाएगा।
आपके लिए सत्य और अच्छाई का क्या अर्थ है?

यह सुनकर सुचिराता ने सोचा, "यह प्रश्न दुनिया की सबसे अद्‌भुत बात होनी चाहिए। मुझे लगता है कि कोई भी इसका उत्तर देने में सक्षम नहीं है," और ऐसा सोचते हुए उन्होंने दो छंद दोहराए:

यह विचित्र चमत्कार मुझे नापसंद करता है,
न पिता, न पुत्र, तीनों में से कोई नहीं।
वह इस रहस्य को सुलझाने का तरीका जानता है।
यदि तुम इस प्रकार असफल हो जाते हो, तो क्या यह नन्हा युवक
क्या आप अच्छाई और सच्चाई के बारे में कुछ जानते हैं?
यह सुनकर संजय ने कहा, "हे प्रभु, युवा संभव को मात्र बालक न समझें। यदि कोई आपके प्रश्न का उत्तर न दे सके, तो जाकर उससे पूछ लें।" और युवक के गुणों का वर्णन करते हुए, उपमाओं के माध्यम से उन्होंने बारह श्लोक दोहराए:

संभवा से प्रश्न न करो और उसकी युवावस्था का तिरस्कार न करो।
वह अच्छी तरह जानता है और बता भी सकता है।
अच्छाई और सत्य के बारे में।
जैसे ही स्वच्छ चंद्रमा तारों के समूह को फीका कर देता है,
उनकी तुच्छ उपलब्धियाँ उनकी शान में खो गईं।
फिर भी युवा संभव प्रकट होता है
अपनी उम्र से कहीं अधिक ज्ञान में उत्कृष्टता प्राप्त करना;
संभवा से प्रश्न न करो और उसकी युवावस्था का तिरस्कार न करो।
वह अच्छी तरह जानता है और बता भी सकता है।
अच्छाई और सत्य के बारे में।
अप्रैल का महीना इतना मनमोहक था कि उसने सभी महीनों को पीछे छोड़ दिया।
खिलते फूलों और जंगल की हरियाली के साथ,
फिर भी युवा संभव प्रकट होता है (और पहले जैसा ही)।
गंधमादन की तरह, इसकी बर्फीली ऊँचाई
वन से आच्छादित और दिव्य जड़ी-बूटियों से सुशोभित,
प्रकाश और सुगंध को चारों ओर फैलाते हुए,
कई देवताओं (देवदूतों) के लिए निश्चित रूप से एक शरणस्थल पाया जाता है।
फिर भी युवा लोग...(और पहले जैसे ही)।
किसी दलदल में धधकती हुई शानदार आग की तरह।
ऊंचाइयों को घेरते हुए, अतृप्त होकर, घास खाता है
यह जहां से भी गुजरता है, अपने पीछे एक काला निशान छोड़ जाता है।
या फिर घोर अंधेरी रात में घी से प्रज्वलित लौ की तरह।
सर्वोत्तम लकड़ी पर इसने अपनी भूख मिटाई।
दूर किसी ऊँचाई पर स्पष्ट रूप से चमकता हुआ,
फिर भी युवा लोग...(और पहले जैसे ही)।
बल में बैल, गति में घोड़ा।
अपनी उत्कृष्ट नस्ल का प्रदर्शन करता है।
दूध से भरपूर गाय
हम किसी ऋषि को उसके ज्ञानवर्धक शब्दों से पहचानते हैं।
फिर भी युवा लोग...(और पहले जैसे ही)।
जब संजय संभव की स्तुति कर रहे थे, तब सुचिराता ने सोचा, "मैं उनसे पूछकर ही पता लगाऊंगा," इसलिए उन्होंने पूछा, "आपका छोटा भाई कहाँ है?" फिर उन्होंने खिड़की खोली और हाथ फैलाकर कहा, "आप उस लड़के को देख रहे हैं जिसका रंग सोने जैसा है, जो महल के द्वार के सामने गली में अन्य युवकों के साथ खेल रहा है: वही मेरा छोटा भाई है। उसके पास जाओ और उससे पूछो; वह बुद्ध के समान आकर्षण के साथ तुम्हारे प्रश्न का उत्तर देगा।" सुचिराता ने उनकी बात सुनकर महल से नीचे उतरकर उस लड़के के पास पहुँच गए, ठीक उसी समय जब वह अपने वस्त्र ढीले ढाले कंधे पर डाले खड़ा था और दोनों हाथों से कुछ मिट्टी उठा रहा था।

गुरु ने इस मामले को समझाने के लिए एक श्लोक दोहराया:

तब भारद्वाज ने जल्दी से
संभवा के घर की ओर प्रस्थान किया।
और वहाँ सार्वजनिक मार्ग पर
वह छोटा लड़का खेलते हुए मिला।
जब उस महान पुरुष ने ब्राह्मण को अपने सामने आकर खड़े होते देखा, तो उन्होंने पूछा, "मित्र, यहाँ क्यों आए हो?" ब्राह्मण ने उत्तर दिया, "प्रिय युवक, मैं पूरे भारत में भटक रहा हूँ, और मुझे कोई ऐसा व्यक्ति नहीं मिला जो मेरे प्रश्न का उत्तर दे सके, इसलिए मैं आपके पास आया हूँ।" बालक ने सोचा, "कहते हैं कि एक प्रश्न है जिसका उत्तर पूरे भारत में नहीं मिला है। ये मेरे पास आए हैं। मैं तो ज्ञान में वृद्ध हूँ।" और लज्जित होकर उसने अपने हाथ में पकड़ी मिट्टी गिरा दी, अपने वस्त्र ठीक किए और कहा, "ब्राह्मण, पूछो, मैं तुम्हें बुद्ध के समान धाराप्रवाह उत्तर दूँगा।" और अपने असीम ज्ञान से उन्होंने ब्राह्मण को प्रश्न पूछने के लिए आमंत्रित किया। तब ब्राह्मण ने अपना प्रश्न एक श्लोक के रूप में पूछा।

मैं सुप्रसिद्ध कुरु राजा के आदेश पर आया हूँ।
युधिष्ठिल से आया था, और यही उसकी खोज थी।
संभवा, मैं आपसे यह पूछना चाहता हूँ कि आप मुझे दिखाएँ।
अच्छाई और सच्चाई, वे निश्चित रूप से जो भी हों।
संभवा को मानो आकाश के मध्य में पूर्णिमा का चंद्रमा चमक उठा हो और उसे अपने मन की बात स्पष्ट हो गई। उसने कहा, "तो मेरी बात सुनो," और सत्य की सेवा के विषय में पूछे गए प्रश्न का उत्तर देते हुए उसने यह श्लोक कहा:

मैं आपको बताऊंगा, महोदय, और पूरी तरह से बताऊंगा।
एक बुद्धिमान व्यक्ति भी ऐसा ही करे,
राजा को अच्छाई और सच्चाई का ज्ञान होना चाहिए।
लेकिन कौन जाने राजा क्या करेगा?
और जब वह सड़क पर खड़े होकर शहद के समान मधुर स्वर में सत्य का उपदेश दे रहे थे, तो वह ध्वनि बनारस शहर में चारों ओर बारह लीग (4.23 किमी) तक फैल गई। तब राजा और उनके सभी वायसराय और अन्य शासक एकत्रित हुए, और महान सत्ता ने समूह के बीच में सत्य का उपदेश देना शुरू किया।

इस श्लोक में प्रश्न का उत्तर देने का वादा करने के बाद, उन्होंने अब सत्य की सेवा के बारे में उत्तर दिया:

राजा सुचिराता को उत्तर देते हुए, घोषणा करो,
"कल और आज कभी भी बिल्कुल एक जैसे नहीं होते।"
हे राजा युधित्थिल, मैं आपसे विनती करता हूँ, बुद्धिमान बनिए।
और जो भी अवसर उत्पन्न हो, उसे तुरंत भुनाने के लिए तत्पर रहें।"
सुसिराता, मुझे खुशी होगी अगर आप भी सुझाव दें।
एक ऐसा विचार जिसमें उसका मन लाभप्रद रूप से विश्राम कर सके।
एक राजा को सभी बुरे मार्गों से सावधानीपूर्वक बचना चाहिए।
और न ही किसी भ्रमित मूर्ख की तरह बुराई का मार्ग अपनाओ।
उसे कभी भी अपनी आत्मा की हानि करने का अपराध नहीं करना चाहिए।
और कभी भी अधर्म के कर्मों में लिप्त मत रहो।
स्वयं कभी किसी बुरे मार्ग में संलग्न न हो।
और न ही कभी किसी भाई को गलत रास्ते पर ले जाया जाए।
इन बिंदुओं का पालन उन सभी को करना चाहिए जो इन्हें सही ढंग से जानते हैं।
जैसे चंद्रमा बढ़ता है, वैसे ही राजा की प्रसिद्धि भी बढ़ती जाती है।
वह अपने दोस्तों के लिए एक चमकता सितारा और अपने परिवार के प्रिय थे।
और जब उसका शरीर कमजोर हो जाएगा, तो वह ऋषि स्वर्ग की ओर अग्रसर होगा।
इस प्रकार, जैसे कोई आकाश में चंद्रमा को उदय करता है, वैसे ही उस महान पुरुष ने बुद्ध के पूर्ण कौशल से ब्राह्मण के प्रश्न का उत्तर दिया। लोग जयजयकार करने लगे, चिल्लाने लगे और तालियाँ बजाने लगे। हजारों लोगों ने अपने वस्त्र लहराते हुए और उंगलियां चटकाते हुए जयकार की आवाजें लगाईं। उन्होंने अपने हाथों में धारण किए हुए गहने फेंक दिए। फेंके गए गहनों का मूल्य लगभग एक करोड़ (10 करोड़) था। बनारस के राजा ने प्रसन्नतावश उनका बहुत आदर किया। सुचिराता ने उन्हें एक हजार वजन सोना भेंट करने के

बाद, सिंदूर से एक स्वर्ण पट्टिका पर प्रश्न का उत्तर लिखा और इंद्रप्रस्थ नगर आकर राजा को सत्य की सेवा का उपदेश दिया। राजा ने धर्म में लीन रहकर स्वर्ग की प्राप्ति की।

पाठ के अंत में गुरु ने कहा, "हे भिक्षुओं, न केवल अभी, बल्कि पहले भी तथागत (बुद्ध) प्रश्नों के उत्तर देने में महान थे," और उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "उस समय आनंद राजा धनंजय थे, अनुरुद्ध सुचिराता थे, कश्यप विदुर थे, मोग्गल्याना भद्रकार थे, सारिपुत्र युवक संजय थे, और मैं स्वयं बुद्धिमान संभव था।"

फुटनोट:

(1) जातक, संख्या 546.

(2) विधुरा, बनारस के राजा का पुरोहित था।

(3) भारद्वाज सुचिराता का पारिवारिक नाम है।

(4) कुरु युधिष्ठिर के वंशज थे।

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **महाकपि-जातक2**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-516-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 516
महाकपी-जातक

"काशी का एक राजा," इत्यादि - यह कहानी गुरु ने बाँस के वन में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें देवदत्त द्वारा उन पर पत्थर फेंकने की घटना का वर्णन है। जब भिक्षुओं ने देवदत्त पर बुद्ध को तीरंदाजों से छुरा घोंपने और बाद में उन पर पत्थर फेंकने का आरोप लगाया, तो गुरु ने कहा, "अभी ही नहीं, बल्कि पहले भी देवदत्त ने मुझ पर पत्थर फेंका था," और इस प्रकार उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त का राज था, काशी के एक गाँव में एक ब्राह्मण किसान ने अपने खेतों की जुताई करने के बाद अपने बैलों को खोल दिया और फावड़े से काम करने लगा। बैल पेड़ों के एक झुंड में पत्तियाँ चरते हुए धीरे-धीरे जंगल में भाग गए। जब किसान को पता चला कि बहुत देर हो चुकी है, तो उसने फावड़ा एक तरफ रख दिया और अपने बैलों को खोजने लगा। उन्हें न पाकर वह व्याकुल हो गया और जंगल में भटकता रहा, यहाँ तक कि हिमालय क्षेत्र में पहुँच गया। वहाँ रास्ता भटककर वह सात दिन तक उपवास करता रहा, लेकिन एक तिन्दुका वृक्ष देखकर वह उस पर चढ़कर फल खाने लगा। पेड़ से फिसलकर वह साठ भुजाओं की दूरी पर एक भयानक खाई में गिर गया, जहाँ उसने दस दिन बिताए। उस समय बोधिसत्व बंदर के रूप में रह रहे थे और जंगली फल खाते हुए उनकी नज़र उस व्यक्ति पर पड़ी। उन्होंने पत्थर से अभ्यास करने के बाद उसे बाहर निकाल लिया। जब बंदर सो रहा था, तब उस आदमी ने पत्थर से उसका सिर फोड़ दिया। भगवान को जब इस बात का पता चला, तो वे उछलकर पेड़ की एक शाखा पर बैठ गए और बोले, "अरे! तुम ज़मीन पर चलो; मैं तुम्हें पेड़ की चोटी से रास्ता दिखा देता हूँ और फिर चला जाता हूँ।" इस तरह उन्होंने उस आदमी को जंगल से बचाया, उसे सही रास्ते पर पहुँचाया और फिर खुद पहाड़ी इलाके में गायब हो गए। उस आदमी ने भगवान के खिलाफ पाप किया था, इसलिए उसे कुष्ठ रोग हो गया और इस दुनिया में भी वह प्रेत (भूत) के रूप में इंसानी रूप में दिखाई देता रहा। सात साल तक वह दर्द से तड़पता रहा और भटकते-भटकते बनारस के मिगासिरा पार्क में पहुँच गया। वहाँ उसने केले का पत्ता बिछाकर लेट गया, अपने कष्टों से आधा पागल सा हो गया था। उसी समय बनारस का राजा पार्क में आया और घूमते हुए उसने उस आदमी को देखा और उससे पूछा, "तुम कौन हो और तुमने ऐसा क्या किया है कि तुम्हें यह कष्ट झेलना पड़ रहा है?" और उसने राजा को पूरी कहानी विस्तार से सुनाई।

मास्टर ने मामले को स्पष्ट करते हुए कहा:

कहते हैं कि काशी का एक राजा, जिसने कभी महान बनारस पर अपना प्रभुत्व जमाया था, अपने दरबारी मित्रों के साथ, मिगासिरा जाने वाले रास्ते से पास आया।

वहाँ राजा ने एक ब्राह्मण को देखा, वह चलता-फिरता कंकाल था। उसकी त्वचा कुष्ठ रोग के खून से सफेद थी और टेढ़ी-मेढ़ी आबनूस की लकड़ी की तरह खुरदरी थी (*1)।

इस अत्यंत पीड़ित, दुर्भाग्यशाली प्राणी की दयनीय स्थिति देखकर मैं स्तब्ध रह गया।

"हाय! बेचारा!" वह चिल्लाया, "बताओ।"
राक्षसों के बीच तुम्हारा क्या नाम है?
तुम्हारे हाथ और पैर बर्फ की तरह सफेद हैं।
मुझे लगता है तुम्हारा सिर और भी ज्यादा सफेद हो गया है।
आपके शरीर पर कुष्ठ रोग के धब्बे बढ़ गए हैं,
बीमारी ने आपको अपना निशाना बना लिया है।
"तुम्हारी पीठ एक कतार में लगे तकुओं जैसी है।"
एक लंबी असमान वक्र रेखा दिखाई दी;
तुम्हारे जोड़ काले गांठों जैसे हैं; मुझे लगता है,
आपके जैसा पहले कभी नहीं देखा गया था।
"तुम कहाँ से आए हो, इतने थके-हारे?"
मात्र हड्डियों का ढांचा, एक दुखी और लाचार इंसान।
तेज धूप की गर्मी से पीड़ित,
प्यास और भूख से पीड़ा में व्याकुल?
"शरीर इस तरह क्षतिग्रस्त है, यह एक भयानक दृश्य है।"
प्रकाश की ओर देखने के भी लगभग अयोग्य।
तुम्हारी माँ—नहीं, वो नहीं।
वह अपने बेचारे बेटे को देखना चाहती थी।
"आपने कौन सा पाप किया था, मैं आपसे यह पूछना चाहता हूँ?"
या आपने गैरकानूनी रूप से किसकी हत्या की?
मुझे यह जानकर खुशी होगी कि अपराध क्या है।
क्या इसी वजह से तुम इस पीड़ादायक अवस्था में पहुँच गए?
तब ब्राह्मण ने कहा:

मैं आपको बताऊंगा, महोदय, और सच-सच बताऊंगा।
एक अच्छे इंसान को यही करना चाहिए:
जो कभी झूठ नहीं बोलता
इस संसार में बुद्धिमानों द्वारा इसकी प्रशंसा की जाती है।
एक बार मैं एक सुनसान जंगल में अपने रास्ते पर चल पड़ा,
मैं अपनी उन गायों को ढूंढ रहा था जो देर रात भटक गई थीं;
जंगल के दुर्गम रास्तों से गुज़रते हुए, एक उपयुक्त घर की ओर
मैं जंगली हाथी के लिए, बिना किसी परवाह के घूमता रहता हूँ।
इस विशाल वन्य जीवन के भूलभुलैया में खो गया,
प्यास और भूख से पीड़ित होकर पीड़ादायक कष्ट सहना पड़ रहा है।
मैं सात लंबे दिनों तक जंगल में भटकता रहा।
जहां खूंखार बाघ अपने क्रूर बच्चों का पालन-पोषण करता है।
मैं सबसे भयानक जहर भी खुशी-खुशी खा लेता।
तभी अचानक मेरी नजर एक सुंदर वृक्ष पर पड़ी;
एक खड़ी चट्टान के ऊपर से वह झूलता हुआ नीचे गिर गया।

और उसकी सभी शाखाओं से सुगंधित फल लटक रहे थे।
ठंडी हवा के स्पर्श से जो कुछ भी गिर गया था
मैंने बड़ी लालसा से खाया और खूब आनंद लिया।
फिर भी संतुष्ट न होकर, मैं पेड़ पर चढ़ गया।
मुझे लगता है, "इस तरह से पूर्ण तृप्ति मिलती है।"
मैंने इससे पहले कभी इतने पके फल नहीं चखे थे।
और अधिक इकट्ठा करने के लिए अपना हाथ फैलाते हुए,
जिस शाखा पर मेरा शरीर टिका हुआ था, वह टूट गई।
मानो लकड़हारे के प्रहार से बिल्कुल अलग हो गया हो।
टूटी हुई डाल को सिर के बल पकड़े मैं लुढ़कता हुआ चला गया,
मेरी तीव्र गति से नीचे उतरने की राह में मुझे रोकने वाला कोई नहीं था।
चट्टानी खाई के किनारे से नीचे,
अथाह खाई से कोई बच नहीं सकता।
नीचे स्थित कुंड में पानी की गहराई
मुझे बेरहमी से कुचलकर मरने से बचा लिया।
तो वहाँ, बेचारा अभागा प्राणी, बिना किसी प्रकाश की किरण के।
मुझे खुश करने की उम्मीद में, मैं दस लंबी रातें लेटा रहा।
अंततः एक बंदर आया—उसकी पूंछ लंबी थी।
और उसने किसी चट्टानी गुफा में अपना घर बना लिया।
और जैसे ही वह एक शाखा से दूसरी शाखा पर कदम रखता गया, वह क्रूर व्यक्ति
क्या आपने कभी उस खूबसूरत फल को तोड़कर खाया है?
लेकिन जब उसने मेरा दुबला-पतला और थका हुआ रूप देखा,
मेरी पीड़ाओं पर दया से द्रवित होकर वह रो पड़ा।
हाय! बेचारा, जिसे मैं वहाँ पड़ा हुआ देख रहा हूँ।
इस प्रकार पीड़ा और निराशा से अभिभूत होकर,
चाहे तुम मनुष्य हो या जिन्न, बताओ तुम कौन हो।
तब मैंने पूरे आदर के साथ उत्तर दिया;
मैं एक ऐसा व्यक्ति हूँ जिसका कोई बचाव नहीं है और जो बर्बाद हो चुका है।
लेकिन मैं यह कहता हूँ, "सभी आशीर्वाद आप पर बरसें,"
अगर आप मुझे बचाने का कोई रास्ता ढूंढ सकें।
बंदर ऊपर की ऊंचाई पर कदम रख रहा है
उसने अपनी ताकत साबित करने के लिए एक भारी पत्थर उठाया।
और जब अभ्यास से वह पूर्ण रूप से परिपक्व हो गया,
उस महानुभाव ने इस प्रकार अपना उद्देश्य प्रकट किया।
"आप मेरी पीठ पर चढ़ जाइए, सज्जन, और मुझे फेंक दीजिए।"
अपनी बाहों से मेरी गर्दन को पकड़ लो और मुझे कसकर थामे रहो;
तब मैं पूरी तेजी से तुम्हें पहुंचा दूंगा
तुम्हारी कैद की पत्थर की दीवारों से।'
मैंने प्रसन्नतापूर्वक सुना, मुझे अच्छी तरह याद था।
महान वानर राजा की सलाहें,
और, उसकी पीठ पर चढ़कर, मैंने अपनी बाहें फैला दीं।
उसने उस बुद्धिमान प्राणी की गर्दन के चारों ओर घेरा बनाकर उसे कसकर पकड़ लिया।
वह बंदर इतना बहादुर और बलवान था—
हालांकि वह प्रयास से थक चुका था,
पथरीले रास्ते से पीछे हटने के बाद मुझे जल्द ही बहुत अच्छा महसूस हुआ।
और मुझे बाहर निकालने के बाद, नायक रो पड़ा,
मैं थक गया हूँ: कृपया मेरे साथ रहकर मेरी रक्षा करें, महोदय।
मैं जल्द ही शांतिपूर्ण नींद में सो जाऊंगा।

शेर और बाघ, तेंदुआ और भालू,
अगर वे कभी मुझे अचानक पकड़ लें,
इससे मेरी जान ही चली जाएगी। देखना तुम्हारी जिम्मेदारी होगी।
मेरी नज़र उस पर थी, तभी उसने थोड़ी देर आराम किया।
मेरे मन में एक अप्रिय विचार पनप रहा था।
"बंदर और हिरण जैसे जानवर खाने में अच्छे होते हैं।"
अगर मैं उसे मार दूं और मेरी भूख शांत हो जाए तो क्या होगा?
अगर उस जानवर को मार दिया जाए तो उसका मांस स्वादिष्ट होगा।
"जब मेरी इच्छा पूरी हो जाएगी, तो मैं यहाँ नहीं रहूँगा।"
लेकिन कई दिनों तक अच्छी तरह से व्यवस्था की गई थी।
मैं इस जंगल से बाहर निकलने का रास्ता ढूंढ लूंगा।
मैंने पत्थर से उसकी खोपड़ी लगभग तोड़ ही दी थी।
लेकिन एक लंगड़े हाथ ने कमजोर प्रहार किया।
बंदर झटपट एक पेड़ पर चढ़ गया।
और खून से सने सभी लोग मुझे देख रहे थे
दूर से, नम आंखों से, अस्वीकृति के भाव से।
"ईश्वर आपका भला करे, कृपया ऐसा व्यवहार न करें, महोदय।"
अन्यथा, मेरा मानना है कि आपका भाग्य यही होगा।
क्या इससे अन्य सभी लोग ऐसे कृत्यों से हतोत्साहित होंगे?
"हाय! कितनी शर्म की बात है। यह कैसा प्रतिफल है!"
आपको उस भयानक खाई से बचाने के लिए धन्यवाद!
"मौत से बचाए जाने के बावजूद तुमने विश्वासघाती भूमिका निभाई।"
और दुष्टों ने बुरे हृदय से योजना बनाई है।
"दुष्ट प्राणी, सावधान रहो अन्यथा तुम्हें घोर पीड़ा सहनी पड़ेगी।"
बुरे कर्मों का फल ही मृत्यु का कारण बनेगा।
जबकि इसका फल बांस के पेड़ को नष्ट कर देता है (*2)।
मुझे तुम पर भरोसा नहीं है, क्योंकि तुम मुझे बीमार कर दोगे।
आगे अच्छे से चलो ताकि मैं तुम्हें देख सकूँ।
"एक हिंसक जानवर से बचकर, आप फिर से स्वस्थ हो सकते हैं।"
मनुष्यों के निवास स्थान: वह पथ जो समतल रूप से फैला हुआ है
अपनी आंखों के सामने, खुशी-खुशी अनुसरण करो।"
यह सुनकर बंदर ने अपने आंसू पोंछे और भाग गया।
एक पहाड़ी झील तक गया और अपने सिर को धोया।
खून के धब्बे से—हाय! यह मेरे द्वारा बहाया गया था—
वहाँ भी, उसे असहनीय पीड़ा के साथ शाप दिया गया,
मैं अपने पीड़ा से व्याकुल शरीर को घसीटते हुए, अपनी प्यास बुझाने के लिए निकला।
लेकिन जब मैं उस रक्तरंजित झील के पास आया,
लाल रंग की बाढ़ आग के एक विशाल पिंड की तरह प्रतीत हो रही थी।
उससे गिरी हर बूंद जो नमी पैदा करती थी
मेरे शरीर में सीधे घाव बन गया,
आकार और रंग में यह विल्वा फल के फटे हुए टुकड़े जैसा दिखता है।
घावों से निकलने वाले द्रव से दुर्गंध आती है।
और मैं जहाँ कहीं भी खुशी से रहना चाहूँगा
शहर हो या गांव, सभी लोग हड़बड़ी में इधर-उधर भाग रहे हैं।
दुर्गंध से बिखरे हुए, जबकि वे लहराते हैं
उनकी लाठियाँ और पत्थर, और "तुम बहुत पास मत आना"
'हे बेचारे, हमारे लिए,' सभी पुरुष और महिलाएं पुकारते हैं।
सात लंबे वर्षों तक मैंने यही पीड़ा सहन की है;

हर व्यक्ति का अंजाम उसके कर्मों के अनुसार ही निकला।
आप सभी का भला हो, जिन्हें मैं यहाँ देख रहा हूँ:
अपने दोस्तों को धोखा मत दो। वह कितना नीच है!
विश्वासघात करना मित्र के विरुद्ध पाप है।
इस धरती पर वे सभी लोग जिन्होंने मित्रों के प्रति विश्वासघात किया है,
कोढ़ी होने के नाते उन्हें अपने पाप पर सदा पछतावा करना पड़ेगा।
और जब शरीर विफल हो जाता है, तो नरक में उनका पुनर्जन्म होता है।
और जब वह व्यक्ति राजा से बात कर रहा था, तभी अचानक धरती खुल गई और उसी क्षण वह व्यक्ति गायब हो गया और नरक में पुनर्जन्म लिया। जब वह व्यक्ति धरती में समा गया, तो राजा पार्क से निकलकर शहर में प्रवेश कर गया।

गुरु ने अपना पाठ समाप्त करते हुए कहा, "केवल अभी ही नहीं, भिक्षुओं, बल्कि पहले भी देवदत्त ने मुझ पर पत्थर फेंका था," और उन्होंने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उस समय वह कपटी मित्र देवदत्त था, और मैं स्वयं वानर-राजा था।"

फुटनोट:

(1) बौहिनिया वेरीगेटा.

(2) फल लगने के बाद बांस सूख जाता है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **डकारक्खास-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-517-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 517
दकारक्खास-जातक

यह सब महाउम्मग्गा जन्म में निर्धारित किया जाएगा।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **पण्डारा-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-518-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 518
पांडारा-जातक

"कोई भी व्यक्ति जो झूठ बोलता है," इत्यादि – यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें बताया गया था कि कैसे देवदत्त ने झूठ बोला और धरती फटकर उसे निगल गई। उस समय जब भिक्षु देवदत्त पर दोषारोपण कर रहे थे, तब गुरु ने कहा, "भाइयों, केवल आज ही नहीं, बल्कि पुराने समय में भी देवदत्त ने झूठ बोला था और धरती में समा गया था," और ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस में ब्रह्मदत्त राजा थे, पाँच सौ व्यापारी एक जहाज़ पर सवार होकर रवाना हुए। सातवें दिन जब वे तट से ओझल हो गए, तो उनका जहाज़ समुद्र के बीचोंबीच टूट गया और एक को छोड़कर बाकी सभी मछलियों का भोजन बन गए। वह एक व्यक्ति हवा के सहारे करम्बिया बंदरगाह पर पहुँचा और नग्न और निर्धन अवस्था में वहाँ पहुँचकर भीख माँगने लगा। लोगों ने सोचा, "देखो, यह तो एक तपस्वी है, जो थोड़े में ही सुखी और संतुष्ट है," और उन्होंने उसका भरपूर आतिथ्य सत्कार किया। लेकिन उसने कहा, "मेरे पास जीवनयापन के लिए पर्याप्त है," और जब उन्होंने उसे अंतर्वस्त्र और अंतर्वस्त्र दिए, तो उसने उन्हें भी नहीं लिया। लोगों ने कहा, "कोई भी तपस्वी इससे अधिक संतोष की स्थिति में नहीं पहुँच सकता," और उससे अत्यंत प्रसन्न होकर उन्होंने उसके लिए एक आश्रम बनवाया, और वह करम्बिया तपस्वी के नाम से जाना जाने लगा। जब वह यहाँ रह रहे थे, तब उन्हें बहुत सम्मान और लाभ प्राप्त हुआ। एक नागराज और एक गरुड़राज उनसे मिलने आए, नागराज का नाम पंडारा था। एक दिन गरुड़राज उस तपस्वी के पास आए और प्रणाम करके एक तरफ बैठ गए और बोले, "हे प्रभु, हमारे लोग जब नागों पर आक्रमण करते हैं, तो उनमें से बहुत से मारे जाते हैं। हमें नागों को पकड़ने का सही तरीका नहीं पता। कहा जाता है कि इसमें कोई रहस्य है। शायद आप चापलूसी करके उनसे यह रहस्य जान सकें।" तपस्वी ने कहा, "ठीक है।" जब गरुड़राज विदा लेकर चले गए, तो नागराज तुरंत आए और आदरपूर्वक प्रणाम करके बैठ गए। उन्होंने उनसे पूछा, "हे नागराज, गरुड़ कहते हैं कि आपको पकड़ने में उनमें से बहुत से मारे जाते हैं। आप पर आक्रमण करते समय वे आपको सुरक्षित रूप से कैसे पकड़ सकते हैं?" "महाराज," उसने उत्तर दिया, "यह हमारा रहस्य है; यदि मैं इसे बता दूँ, तो मेरे पूरे परिवार का विनाश हो जाएगा।" "तुम्हें क्या संदेह है कि मैं किसी और को बता दूँगा? मैं किसी को नहीं बताऊँगा। मैं तो बस अपनी जिज्ञासा शांत करने के लिए पूछ रहा हूँ। तुम निश्चिंत होकर मुझे बता सकते हो।" नागराज ने उसे बताने का वादा किया और विदा हो गया। अगले दिन तपस्वी ने फिर उससे पूछा, और तब भी उसने उसे नहीं बताया। लेकिन तीसरे दिन जब नागराज आकर बैठ गया, तो तपस्वी ने कहा, "आज तीसरा दिन है जब मैंने तुमसे पूछा था। तुम मुझे क्यों नहीं बता रहे हो?" "मुझे डर है, महाराज, कि आप किसी और को बता देंगे।" "मैं किसी प्राणी से एक शब्द भी नहीं कहूँगा: मुझे निश्चिंत होकर बता दो।" फिर सांप ने उससे वादा लिया कि वह किसी को नहीं बताएगा, और कहा, "महोदय, हम बहुत बड़े-बड़े पत्थर निगलकर अपना वजन बढ़ा लेते हैं और लेट जाते हैं, और जब गरुड़ आते हैं, तो हम अपना मुंह चौड़ा खोलकर अपने दांत दिखाते हैं और उन पर टूट पड़ते हैं। वे आते हैं और हमें सिर से पकड़ लेते हैं, और जब वे हमें भारी वजन होने के बावजूद जमीन से उठाने की कोशिश करते हैं, तो हमारे मुंह से पानी बह निकलता है, और वे उसी के बीच में गिरकर मर जाते हैं। इस तरह कई गरुड़ मारे जाते हैं। जब वे हम पर हमला करते हैं,आखिर वे हमें सिर से क्यों पकड़ते हैं? अगर वे मूर्ख प्राणी हमें पूंछ से पकड़कर सिर नीचे की ओर झुका दें, तो वे हमें निगले हुए पत्थरों को उगलने पर मजबूर कर सकते हैं, और इस तरह हमें हल्का बनाकर अपने साथ ले जा सकते हैं।" इस प्रकार सर्प ने उस दुष्ट को अपना रहस्य बता दिया। फिर, जब सर्प चला गया, तो गरुड़ राजा आए और करंबिया तपस्वी को प्रणाम करते हुए पूछा, "अच्छा! महाराज, क्या आपने सर्प राजा से उनका रहस्य जान लिया है?" "जी महाराज," उन्होंने कहा और उन्हें सब कुछ वैसे ही बताया जैसा उन्हें बताया गया था। यह सुनकर गरुड़ ने कहा, "सर्प राजा ने बहुत बड़ी गलती की है। उन्हें किसी दूसरे को अपने परिवार को नष्ट करने का तरीका नहीं बताना चाहिए था।" "आज मुझे सबसे पहले गरुड़ (*1) वायु उत्पन्न करके उसे पकड़ना होगा।" अतः वायु उत्पन्न करके उसने नागराज पंडारा को पूंछ से पकड़ लिया और उसका सिर नीचे की ओर झुका दिया; और इस प्रकार उसके द्वारा निगले गए पत्थरों को उगलवाकर वह उसे लेकर हवा में उड़ गया। पंडारा, जब हवा में सिर नीचे की ओर लटका हुआ था, अत्यंत शोक करते हुए रोया, "मैंने अपने ऊपर दुःख लाद लिया है," और उसने ये पंक्तियाँ दोहराईं:

वह व्यक्ति जो अपने गुप्त विचार को प्रकट होने देता है,
बोलने में अनियमितता, अविवेकपूर्ण व्यवहार की प्रवृत्ति,
  बेचारा मूर्ख, तुरंत ही भय से कांपने लगा।
जैसे मैं, नागराज, एक पक्षी द्वारा पराजित हो गया।
वह व्यक्ति जो अपने कुकर्म में विश्वासघात कर सकता था
यह सोचकर कि उसे दिन के उजाले से छिप जाना चाहिए,
  अपनी उतावली बातों से वह भय से अभिभूत हो जाता है।
जैसे ही एक राजा-सांप इस पक्षी का शिकार बन जाता है।
अपने अंतर्मन के विचार किसी भी साथी के साथ साझा न करें।
सबसे अच्छे दोस्त भी कई बार सबसे मूर्ख होते हैं।
और यदि आप बहुत बुद्धिमान हैं, तो विश्वासघात से सावधान रहें।
मैंने उस पर भरोसा किया, अफसोस! क्योंकि वह ऐसा नहीं था
एक पवित्र व्यक्ति, कठोर तपस्या करने वाला?
  मैंने अपना राज़ खोल दिया; काम हो गया।
और अब मैं अत्यंत दुख के कारण रो रहा हूँ।
उस दुष्ट ने मेरा विश्वास जीत लिया।

और मैं उससे कोई भी रहस्य छिपा नहीं सकता था:
उसी से वह खतरा उत्पन्न हुआ है जिसका मुझे डर था।
और अब मैं अत्यंत दु:ख से रो रहा हूँ।
अपने मित्र को पूर्णतः निष्ठावान मानते हुए
और भय से प्रेरित होकर, या अपने प्रबल प्रेम से प्रेरित होकर,
किसी नीच व्यक्ति के सामने उसका रहस्य उजागर हो जाता है
और वह पराजित हो गया, बेचारा मूर्ख, अब कभी उठ नहीं पाएगा।
जो कोई भी बुरी संगति में प्रचार करता है
वह गुप्त विचार जो अभी भी छिपा रहना चाहिए,
पुरुषों में इसे विषैले सांप के समान माना जाता है:
"ऐसे व्यक्ति से कृपया दूर रहें," वे चिल्लाते हैं।
सुंदर स्त्रियाँ, रेशमी वस्त्र और चंदन की लकड़ी,
फूलों की मालाएँ और इत्र, यहाँ तक कि पेय और भोजन भी,
हाँ, सारी इच्छाएँ—काश तुम ही होतीं, हे पक्षी,
हमारी सहायता के लिए आओ—हम तुमसे बच निकलेंगे।
इस प्रकार पांडारका, सिर नीचे की ओर करके हवा में लटके हुए, आठ श्लोकों में अपना विलाप व्यक्त किया। गरुड़ ने उनके विलाप की ध्वनि सुनकर उन्हें फटकारा और कहा, "हे नागराज, तपस्वी को अपना रहस्य बताने के बाद अब तुम किस कारण विलाप कर रहे हो?" और उन्होंने यह श्लोक कहा:

हम तीनों प्राणियों में से, जो यहाँ रहते हैं, कृपया नाम बताइए
जिस पर दोष सिद्ध होना उचित है।
न तो पुजारी, न ही पक्षी, बल्कि तुम्हारा मूर्खतापूर्ण कार्य।
हे सर्प, तुझे शर्मिंदगी की इस गहराई तक ले आया है।
यह सुनकर पांडारका ने एक और श्लोक दोहराया:

मुझे लगता है कि पादरी मेरा मित्र होगा।
कठोर तपस्या करने वाला एक पवित्र व्यक्ति:
मैंने अपना रहस्य उजागर कर दिया: काम हो चुका है।
और अब मैं अत्यंत दुख के कारण रो रहा हूँ।
तब गरुड़ ने चार श्लोक दोहराए:

इस संसार में जन्म लेने वाले सभी प्राणियों को मरना ही है;
फिर भी, विजडम के तौर-तरीके उसके बच्चों को उचित ठहराते हैं:
ज्ञान, न्याय, आत्मसंयम और सत्य के द्वारा
अंततः एक व्यक्ति अपने उच्च उद्देश्य को प्राप्त कर लेता है।
माता-पिता परिवार के अन्य सभी सदस्यों से ऊपर होते हैं।
कोई तीसरा व्यक्ति नहीं है जो हमें समान प्रेम दिखाए।
अपने गुप्त विचार का खुलासा उनसे भी मत करना।
अन्यथा शायद वे देशद्रोही साबित हो जाएं।
माता-पिता और परिवार के सभी सदस्य,
सभी सहयोगी और साथी मित्रवत हों:
अपने गुप्त विचार उनमें से किसी को भी मत सौंपो।
वरना बाद में आपको उनके विश्वासघात पर पछतावा होगा।
पत्नी चाहे युवा हो, अच्छी हो और सुंदर हो,
अपने दोस्तों के समूह और बच्चों के प्यार को साझा कर सकते हैं:
अपने गुप्त विचार भी उसे मत बताना।
या फिर आपको उसके छल से सावधान रहना चाहिए।
फिर इन छंदों का अनुसरण करें:

उसका रहस्य किसी को भी प्रकट नहीं करना चाहिए, बल्कि उसे खजाने की तरह सुरक्षित रखना चाहिए:
किसी गुप्त बात का खुलासा करना कोई भी बुद्धिमान व्यक्ति स्वीकार नहीं करेगा।
बुद्धिमान व्यक्ति किसी स्त्री या शत्रु से अपने रहस्य कभी प्रकट नहीं करते;
इच्छाओं के गुलामों पर भरोसा मत करो; वे आवेग के वश में रहने वाले प्राणी हैं।
जो कोई भी अपने गुप्त विचार को किसी कम बुद्धिमान व्यक्ति को प्रकट करता है,
उसे अपने भरोसे के टूटने का डर है और वह उसी की दया पर निर्भर है।
वे सभी उस गुप्त बात को जानते हैं जिसे आपको छिपा कर रखना चाहिए।
इससे आपकी मानसिक शांति को खतरा हो सकता है; उस गुप्त बात को किसी को न बताएं।
दिन के समय अकेले में ही उस रहस्य को नाम देने का साहस करो,
लेकिन आधी रात को उस रहस्य को प्रकट करने का साहस मत करना;
क्योंकि आस-पास ही ऐसे लोग खड़े हैं जो धोखा देने के लिए तैयार हैं।
उन्होंने शायद एक छोटी सी बात भी सुन ली हो: इसलिए मेरा अनुरोध है कि उन पर भरोसा न करें।
ये पाँच श्लोक 'उम्मग्गा जन्म में पाँच ऋषियों की समस्या' में प्रकाशित होंगे।

फिर इन छंदों का अनुसरण करें:

जैसे कोई विशाल शहर चारों ओर से बाड़ से घिरा हो
लोहे की बनी खाई के साथ, यह लंबे समय से चुनौती देता रहा है।
परीलोक में शत्रु के प्रवेश के सभी रास्ते,
तो वे लोग भी ऐसे ही हैं जो अपनी सलाह छुपाते हैं।
जो जल्दबाजी में बोले गए शब्दों से रहस्यों का कोई सुराग नहीं देते,
लेकिन जो स्वयं के प्रति समर्पित रहते हैं, वे सच्चे होते हैं।
उन सभी से शत्रु दूरी बनाए रखते हैं।
जैसे घातक सांपों का पीछा करने पर लोग दूर भाग जाते हैं।
जब गरुड़ ने इस प्रकार सत्य का उद्घोष कर दिया, तब पांडारक ने कहा:

एक मुंडा हुआ सिर और नग्न तपस्वी अपने घर से निकल गया।
और भीख मांगते हुए वे देश भर में विचरण करते थे।
अफसोस! मैंने उसे अपना रहस्य बता दिया।
और सीधे सुख और सद्गुण से गिर पड़ा।
एक पुजारी को किस प्रकार का आचरण अपनाना चाहिए?
वह किन प्रतिज्ञाओं का पालन करता है और किन दोषों से बचता है?
वह अपने इस जुनूनी पाप से खुद को कैसे मुक्त करे?
और अंत में एक स्वर्गीय महल में विजय?
गरुड़ ने कहा:

धैर्य, आत्मसंयम और सहनशीलता से
मानहानि और क्रोध त्यागने से,
इस प्रकार एक पुजारी सभी पापों से मुक्ति दिला सकता है।
और अंत में एक स्वर्गीय महल में विजय प्राप्त हुई।
गरुड़राज द्वारा सत्य का इस प्रकार वर्णन सुनकर पांडारक ने अपने जीवन की भीख मांगी और यह श्लोक दोहराया:

एक माँ अपने नन्हे बेटे को निहार रही है
पवित्र आनंद से उसके शरीर के हर अंग में रोमांच उत्पन्न हो रहा है।
इसलिए, हे पक्षियों के राजा, मुझे दे दो
वह दया जो माताएं अपने बच्चों के प्रति दिखाती हैं।
तब गरुड़ ने उसे जीवनदान देते हुए एक और श्लोक दोहराया:

हे सर्प, आज मैं तुझे मृत्यु से मुक्त करता हूँ;

बच्चों की केवल तीन ही किस्में हैं।
शिष्य, दत्तक पुत्र और वास्तविक पुत्र:
इस बात पर प्रसन्न होइए कि आप निश्चित रूप से उनमें से एक हैं।
इतना कहकर वह हवा से नीचे उतरा और सांप को जमीन पर रख दिया।

विषय को स्पष्ट करने के लिए, गुरु ने दो छंद दोहराए:

ऐसा कहते हुए पक्षी ने तुरंत अपने दुश्मन को छोड़ दिया।
और धीरे से उसे नीचे धरती पर ले गए;
आज ही मुक्त हो जाओ, जाओ, खतरे से सुरक्षित रहो
पानी में हो या ज़मीन पर, मैं तुम्हारी अच्छी तरह रक्षा करूँगा।
बीमारियों के इलाज के लिए लोगों को लुभाने वाले एक कुशल परजीवी के रूप में,
या फिर प्यासे लोगों के लिए एक ठंडा टैंक।
जैसे घर कड़ाके की ठंड से आश्रय देता है,
इसलिए, जब तुम भटक जाओ, तो मैं तुम्हारे लिए एक शरणस्थल साबित होऊंगा।"
और "चले जाओ" कहकर उसने उसे जाने दिया। और साँप नागों के निवास में विलीन हो गया। परन्तु पक्षी गरुड़ों के निवास पर लौटकर बोला, "साँप पांडारक ने शपथ लेकर मेरा विश्वास जीत लिया है और मैंने उसे मुक्त कर दिया है। अब मैं उसकी परीक्षा लूँगा, यह देखने के लिए कि उसके मन में मेरे प्रति क्या भाव हैं।" और नागों के निवास पर जाकर उसने गरुड़ वायु प्रज्वलित की। उसे देखकर नागराज ने सोचा कि गरुड़राज उसे पकड़ने आया होगा, इसलिए उसने एक हजार फुट (6 फुट) तक फैला हुआ रूप धारण कर लिया और पत्थर और रेत निगलकर स्वयं को भारी बनाकर लेट गया, अपनी पूंछ को नीचे दबाए और अपने सिर पर फन उठाकर, मानो गरुड़राज को काटने का निश्चय कर रहा हो। यह देखकर गरुड़ ने एक और श्लोक दोहराया:

हे सर्प, तुमने अपने पुराने शत्रु से सुलह कर ली;
लेकिन अब तुम अपने दांत दिखा रहे हो। यह डर तुम्हें कहां से आया?
यह सुनकर नागराज ने तीन छंद दोहराए:

कभी भी दुश्मन पर शक न करें, और न ही अपने दोस्त पर वफादार होने का भरोसा करें;
सुरक्षा भय को जन्म देती है, जो आपको जड़ से खत्म कर देती है।
क्या! उस आदमी पर भरोसा करो जिससे बहुत पहले झगड़ा हुआ था!
नहीं, सावधान रहो। कोई भी अपने शत्रु से प्रेम नहीं कर सकता।
सभी में विश्वास जगाओ, लेकिन किसी पर भी भरोसा मत करो।
आपको स्वयं पर संदेह नहीं है, संदेह करने की प्रवृत्ति न रखें।
जो वास्तव में बुद्धिमान है, उसे अपनी हर नस को तनाव में डाल देना चाहिए।
ताकि उसका असली स्वभाव कभी दूसरों के सामने स्पष्ट रूप से प्रकट न हो सके।
इस प्रकार उन्होंने आपस में बातचीत की और सुलह और मित्रता स्थापित करके वे साथ-साथ तपस्वी के आश्रम में चले गए।

मास्टर ने बात स्पष्ट करने के लिए कहा,

अब उन दोनों दिव्य और आकर्षक पात्रों को यह सब दिखाई देता है।
पवित्रता की हवा में सांस लेना;
वे समान जुए के नीचे अच्छी तरह से मेल खाने वाले घोड़ों की तरह दौड़े।
उस संत पुरुष के जीवन की खोज करना।
इस विषय में गुरु ने एक और श्लोक कहा:

तब वह सीधा राजा-सांप तपस्वी के पास गया।
और इस प्रकार पंडारका ने अपने शत्रु को संबोधित किया,
"जान लो कि आज, सारे खतरे टल गए हैं, मैं मुक्त हूँ।"
लेकिन यह तुम्हारे मेरे प्रति प्रेम के कारण नहीं है।
फिर तपस्वी ने एक और श्लोक दोहराया:

उस पक्षी-राजा से मैं हार्दिक कहता हूँ,
मैंने तुम्हारे लिए पहले से कहीं अधिक प्रेम धारण किया।
उस शाही पक्षी के प्रति स्नेह से प्रेरित होकर,
मैंने जानबूझकर, न कि किसी कुकर्म के कारण, गलती की।
यह सुनकर नागराज ने दो छंद दोहराए:

वह व्यक्ति जो इस दुनिया और अगली दुनिया को देखता है,
वह कभी भी प्रेम या घृणा से नाराज नहीं होता।
आप आत्मसंयम के आवरण के नीचे खुशी-खुशी छिप जाएंगे
लेकिन पवित्र वस्त्रों से ढके हुए गैरकानूनी कृत्य उन कृत्यों का खंडन करते थे।
तुम, जो देखने में नेक लगते हो, असल में नीचता से कलंकित हो।
और, तपस्वी वस्त्र धारण किए हुए, वे अप्रतिबंधित हैं;
स्वभाव से ही घृणित और नीच विचारों से युक्त,
आप हर प्रकार के पाप कर्मों में पारंगत हैं।
अतः उसे फटकारने के लिए उसने यह श्लोक कहा, जिसमें उसका अपमान किया गया था:

मुखबिर, गद्दार, जो हत्या कर देगा
 एक कपटी मित्र, तेरा सिर धड़ से अलग हो जाए
सत्य के अपने इस कार्य के द्वारा, मैं निवेदन करता हूँ,
 टुकड़ों में, सभी सात भागों में।
नागराज की आँखों के सामने ही तपस्वी का सिर सात टुकड़ों में फट गया, और जिस स्थान पर वह बैठा था, वहाँ की भूमि फट गई। पृथ्वी में विलीन होकर वह अविची नरक में पुनर्जन्म लिया, और नागराज और गरुड़राज दोनों अपने-अपने निवास स्थान लौट गए।

गुरु ने यह स्पष्ट करने के लिए कि वे पृथ्वी में समा चुके हैं, अंतिम श्लोक को दोहराया:

इसलिए मैं कहता हूं, दोस्तों को कभी विश्वासघात नहीं करना चाहिए;
झूठे दोस्त से भी बुरा वह आदमी होता है जिसे देखना ही न पड़े।
धरती में दबा हुआ वह विषैला जीव पड़ा है।
और नागराज के कहने पर तपस्वी की मृत्यु हो जाती है।

गुरु ने यहाँ अपना प्रवचन समाप्त करते हुए कहा, "केवल अभी ही नहीं, भिक्षुओं, बल्कि प्राचीन काल में भी देवदत्त ने झूठ बोला था और पृथ्वी में समा गया था," और उन्होंने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उस समय तपस्वी देवदत्त थे, नागराज सारिपुत्र थे और गरुड़राज मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) गरुड़ के पंखों से चलने वाली हवा। नागानंद: "गरुड़ प्रतिदिन एक सर्प को नरक से पकड़कर निगल जाता था, जबकि उसके पंखों की हवा से समुद्र ऊपर से नीचे तक फट जाता था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **संबुला-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-519-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 519
संबुला-जातक

"एक ही स्थान पर बंधी हुई," इत्यादि। यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए रानी मल्लिका के बारे में सुनाई थी। प्रारंभिक कथा का विस्तृत वर्णन कुम्मसपिंड (*1) जन्म ग्रंथ में मिलता है। तथागत (बुद्ध) को खट्टी दलिया के तीन भाग दान करने के फलस्वरूप, वह उसी दिन प्रधान रानी बन गईं। उनके पास वफादार सेवक थे, पाँच स्त्री गुणों से परिपूर्ण थीं, ज्ञान से परिपूर्ण थीं और बुद्ध की शिष्या थीं। उन्होंने स्वयं को एक समर्पित पत्नी के रूप में सिद्ध किया। उनकी भक्ति पूरे नगर में प्रसिद्ध थी। एक दिन सत्य के हॉल में इस बात पर चर्चा शुरू हुई कि रानी मल्लिका कितनी वफादार और समर्पित पत्नी थीं। गुरु वहाँ आकर भिक्षुओं से पूछने लगे कि वे किस विषय पर चर्चा कर रहे हैं। यह सुनकर उन्होंने कहा, "भाइयों, वह न केवल आज, बल्कि पहले भी एक समर्पित पत्नी थीं।" ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की एक कथा सुनाई।

एक समय की बात है, राजा ब्रह्मदत्त का एक पुत्र था जिसका नाम सोत्थिसेना था। जब वह वयस्क हुआ तो राजा ने उसे अपना प्रतिनिधि नियुक्त किया। उसकी मुख्य पत्नी, सांबुला, अत्यंत सुंदर और इतनी तेजस्वी थी कि वह किसी छायादार स्थान में जलती हुई दीपक की लौ के समान प्रतीत होती थी। समय बीतने पर सोत्थिसेना को कुष्ठ रोग हो गया और चिकित्सक उसे ठीक करने में असफल रहे। जब घावों से मवाद निकलने लगा, तो वह इतना क्रोधित हो गया कि अवसाद में उसने कहा, "मेरा राज्य मेरे लिए किस काम का? मैं जंगल में बिना किसी मित्र के मर जाऊंगा।" और राजा को यह बताने के लिए कहकर वह अपने हरम को छोड़कर चला गया। सांबुला ने उसे रोकने के कई प्रयास किए, लेकिन वह वापस नहीं लौटी और यह कहते हुए, "मैं जंगल में आपकी रक्षा करूंगी, महाराज," उसके साथ शहर से चली गई। जंगल में प्रवेश करके उसने पत्तों की एक कुटिया बनाई और एक छायादार और अच्छी तरह से सिंचित स्थान पर रहने लगा, जहाँ जंगली फल बहुतायत में थे। तो फिर राजसी पत्नी ने उसकी रक्षा कैसे की? वह सुबह जल्दी उठी, उसकी कुटिया साफ की, उसके लिए पीने का पानी रखा, उसे दांत साफ करने के लिए लकड़ी और मुंह धोने के लिए पानी दिया, और जब उसका मुंह साफ हो गया, तो उसने कई औषधीय जड़ी-बूटियां पीसकर उसके घावों पर पट्टी बांधी और उसे स्वादिष्ट फल खाने को दिए; जब उसने कुल्ला और हाथ धो लिए, तो उसने उसे प्रणाम किया और कहा, "हे स्वामी, अच्छे कामों में तत्पर रहें।" फिर एक टोकरी, एक फावड़ा और एक हुक लेकर वह जंगल में जंगली फल लाने गई, और उन्हें लाकर एक तरफ रख दिया, और एक घड़े में पानी भरकर, उसने कई तरह के पाउडर और मिट्टी से सोत्थिसेना को धोया और फिर उसे जंगली फल दिए। जब उसने भोजन समाप्त कर लिया, तो वह उसके लिए सुगंधित जल लाई और स्वयं फल खा लिए। फिर उसने एक तख्ती पर चादर बिछाई, और जब वह उस पर लेटा, तो उसने उसके पैर धोए, और उसके सिर, पीठ और पैरों की पट्टी और सफाई करने के बाद, वह आकर पलंग के किनारे लेट गई। इस प्रकार उसने अपने स्वामी की देखभाल की। एक दिन, जब वह जंगल से फल ला रही थी, तो उसे एक पहाड़ी गुफा दिखाई दी। उसने अपने सिर से टोकरी नीचे रखी और गुफा के किनारे पर खड़ी हो गई। नीचे उतरकर उसने अपने पूरे शरीर पर पीला रंग मल लिया और स्नान किया। स्नान करने के बाद, वह फिर से ऊपर चढ़ी और अपने छाल के वस्त्र पहनकर तालाब के किनारे खड़ी हो गई। उसके शरीर से निकलने वाली चमक से पूरा जंगल जगमगा उठा। उसी क्षण, अपने शिकार की तलाश में जा रहा एक जिन्न उसे देख लिया और उस पर मोहित होकर उसने कुछ पंक्तियाँ दोहराईं:

वहीं पर बंधा हुआ और भय से कांपता हुआ,
इस पथरीली गुफा में कौन खड़ा है?
हे पतली कमर वाली स्त्री, कृपया हमें बताइए।
आपके रिश्तेदार कौन-कौन हैं और आपका नाम क्या है?
आप कौन हैं, हे सदा सुंदर और तेजस्वी महिला?
और तुम्हारा जन्म ऐसा हो कि तुम उसे प्रकाश से भर सको।
क्या यह वनक्षेत्र हर शिकारी जानवर का उपयुक्त घर है?
हे राक्षस, मैं तुम्हें उचित सम्मान अर्पित करता हूँ।
उसकी बात सुनकर उसने तीन पंक्तियों में उत्तर दिया:

यह सर्वविदित है कि राजकुमार सोथिसेना काशी सिंहासन के उत्तराधिकारी हैं।
और मैं, इस राजकुमार की विवाहित पत्नी, जिसे सांबुला के नाम से जाना जाता है।
विदेह का राजपुत्र बीमार है और जंगल में पड़ा हुआ है;
मैं अकेले ही उसकी देखभाल करता हूँ, दर्द से पागल हो चुका हूँ, वरना वह निश्चित रूप से मर जाएगा।
जंगल में मुझे हिरण के मांस का यह स्वादिष्ट टुकड़ा मिला।
और इसे आज मेरे स्वामी के पास ले जाओ, जो भोजन की कमी से कमजोर हो गए हैं।
इसके बाद गोब्लिन और महिला द्वारा बारी-बारी से बोले गए छंद आते हैं:

हे संबुला, तुम्हारा यह बीमार स्वामी तुम्हारे किस काम का है?
उसे पत्नी नहीं, बल्कि नर्स बनने की चाहत है। मैं तुम्हारा पति बनूंगा।
दु:ख से व्याकुल, एक दुखी अभागी, मुझमें सुंदरता का कोई अंश नहीं है।
यदि आप खुशी-खुशी दुल्हन बनना चाहते हैं, तो किसी और खूबसूरत महिला को आकर्षित करें।
मेरे पास चार सौ पत्नियां हैं जो पहाड़ी पर स्थित मेरे घर की शोभा बढ़ाती हैं;
हे देवी, उन पर शासन करने की कृपा कीजिए और उनकी प्रत्येक प्रिय इच्छा पूरी कीजिए।
सुनहरी रोशनी से जगमगाती सुंदर कन्या, जो कुछ भी तुम्हें प्रिय हो
यह सब कुछ मेरा देने का अधिकार है, इसलिए आओ और मेरे साथ आनंदमय जीवन व्यतीत करो।
लेकिन यदि मुझे दुल्हन के रूप में स्वीकार करने से इनकार किया जाता है, तो तुम मेरे वैध शिकार हो।
और आज व्रत तोड़ने के लिए यह भोजन के रूप में अच्छा रहेगा।
(सात बालों की चोटी वाले उस भयानक राक्षस ने, जो खौफ पैदा कर रहा था, असहाय सांबुला को भटकता हुआ पाया और उसे बांह से पकड़ लिया।)

इस प्रकार उस क्रूर राक्षस, उसके वासनापूर्ण, निर्दयी शत्रु द्वारा बंदी बनाए जाने पर भी, वह अपने अनुपस्थित स्वामी के लिए शोक मनाती रही और उसके कष्टों को कभी नहीं भूली।

मुझे इस बात का कोई दुख नहीं है कि मैं इस घृणित राक्षस का शिकार बनूँ।
लेकिन ऐसा न हो कि मेरे प्रिय स्वामी के प्रति मेरा प्रेम मुझसे विमुख हो जाए।
यहां कोई देवता (देवदूत) नहीं हैं, बल्कि वे बहुत दूर भाग गए हैं।
और न ही मुझे दुनिया के कोई रक्षक दिखाई देते हैं।
आक्रोश की दिशा को नियंत्रित करने और उसे दबाने के लिए
यौन अश्लीलता के सभी अनियंत्रित कृत्य।
तब उसके पुण्य के प्रभाव से सक्का (इंद्र) का निवास स्थान कांप उठा, और उनके पीले संगमरमर के सिंहासन से ताप निकलने लगा। सक्का (इंद्र) ने अंतर्दृष्टि से कारण का पता लगाया, और अपना वज्र लेकर पूरी गति से आए, और राक्षस के ऊपर खड़े होकर एक और श्लोक बोला:

महिलाओं में सबसे अधिक प्रसिद्धि प्राप्त,
वह बुद्धिमान और परिपूर्ण है, लौ की तरह उज्ज्वल है।
यदि तुम उसे खाओगे, तो तुम्हारी खोपड़ी फट जाएगी।
हे दानव, सात टुकड़ों में विभाजित हो जाओ।
इसलिए उसे नुकसान मत पहुंचाओ; उसे स्वतंत्र छोड़ दो।
वह एक समर्पित पत्नी है।
यह सुनकर राक्षस ने संबुला को छोड़ दिया। इंद्र ने सोचा, "यह राक्षस फिर वही गलती करेगा," इसलिए उन्होंने उसे दिव्य जंजीरों से बांधकर वहाँ से तीसरे पर्वत पर छोड़ दिया ताकि वह वापस न लौट सके; और राजकुमारी को गंभीरता से समझाकर अपने निवास स्थान पर चले गए। सूर्यास्त के बाद, चंद्रमा के प्रकाश में राजकुमारी आश्रम पहुँचीं।

इस विषय को समझाने के लिए गुरु ने आठ श्लोक दोहराए:

राक्षस से बचकर वह अपनी झोपड़ी की ओर भागी।
लौटते समय जब पक्षी अपने बच्चों को मृत पाता है,
या फिर, अपने बछड़े से वंचित गाय, खाली बाड़े में शोक मनाती है।
इस प्रकार राजसी प्रसिद्धि प्राप्त सांबुला विलाप करने लगा।
जंगल में अकेला, बेबस और हताश।
हे पुरोहितों, ब्राह्मणों और धर्मात्मा ऋषियों, सभी को नमस्कार!
मैं अकेला पड़ गया हूँ, इसलिए शरण लेने के लिए तुम्हारे पास आता हूँ।
हे शेरों और गिरे हुए बाघों, जय हो!
और अन्य जानवर जो जंगल में निवास करते हैं।
हे घास, जड़ी-बूटियों और रेंगने वाले पौधों, आपका स्वागत है!
हरे-भरे जंगलों और ऊंचे पहाड़ों को नमस्कार!

आकाश में तारों से सजी रात्रि को नमस्कार!
गहरे नीले रंग के कमल की तरह गहरा।
गंगा की जय हो: वह नदियों की जननी है।
लोगों के बीच प्रसिद्ध भागीरथी के नाम से विख्यात।
हे हिमवत (हिमालय), समस्त पर्वतों के राजा!
विशाल चट्टानों का ढेर, जो हर चीज को ढक रहा है।
जब वह रो रही थी, तो सोत्थिसेना ने सोचा, "वह कुछ ज़्यादा ही रो रही है: मुझे समझ नहीं आ रहा कि इसका क्या मतलब है। अगर वह मेरे प्यार के कारण ऐसा कर रही है, तो उसका दिल टूट गया होगा। मैं उसकी परीक्षा लूँगा।" और वह जाकर अपनी कुटिया के द्वार पर बैठ गया। वह, अभी भी शोक मना रही थी, द्वार पर आई और विनम्रता से प्रणाम करते हुए बोली, "मेरे स्वामी कहाँ थे?" "देवी," उसने कहा, "अन्य दिनों में आप इस समय कभी नहीं आतीं; आज तो आप बहुत देर से आई हैं," और प्रश्नवाचक रूप में उसने यह पंक्ति कही:

महोदया, आज इतनी देर क्यों हो गई?
किस प्रिय प्रेमी के कारण यह देरी हुई?
तब उसने उत्तर दिया, "मेरे स्वामी, मैं अपने फल लेकर लौट रही थी तभी मैंने एक जिन्न को देखा, और वह मुझ पर मोहित हो गया, और मेरा हाथ पकड़कर चिल्लाया: "यदि तुम मेरी बात नहीं मानोगी, तो मैं तुम्हें जीवित खा जाऊंगा।" और उस क्षण, केवल आपके लिए दुखी होकर, मैंने यह विलाप किया; और उसने इस छंद को दोहराया:

अपने शत्रु द्वारा बंदी बनाए जाने पर, मैं पीड़ा से व्याकुल होकर उससे ये शब्द कहे;
मुझे इस बात का कोई दुख नहीं है कि मैं एक घृणित राक्षस का शिकार बन जाऊं।
लेकिन ऐसा न हो कि मेरे प्रिय स्वामी के प्रति मेरा प्रेम मुझसे विमुख हो जाए।
फिर उसने उसे बाकी की कहानी सुनाते हुए कहा, "जब इस जिन्न ने मुझे पकड़ लिया और मैं उसे छुड़ाने में असमर्थ थी, तो मैंने ऐसा काम किया जिससे देवदूत का ध्यान मेरी ओर आकर्षित हो। तब सक्का (इंद्र) वज्र लिए हुए आए और हवा में खड़े होकर उन्होंने जिन्न को धमकाया और मुझे छुड़वा दिया। फिर उन्होंने उसे जादुई जंजीरों से बांधकर यहाँ से तीसरी पर्वत श्रृंखला पर रख दिया और चले गए। इस प्रकार सक्का (इंद्र) के द्वारा मेरी मुक्ति हुई।" यह सुनकर सोत्थिसेना ने उत्तर दिया, "अच्छा, हे देवी, ऐसा हो सकता है। स्त्रियों के साथ सत्य का पता लगाना कठिन है। हिमालय क्षेत्र में अनेक वनवासी, तपस्वी और जादूगर रहते हैं। कौन आपकी बात पर विश्वास करेगा?" और ऐसा कहकर उन्होंने एक श्लोक दोहराया:

तुम बदमाश लोग हमेशा की तरह बहुत चालाक हो।
ऐसे लोगों के बीच सत्य का मिलना एक बड़ी दुर्लभता है।
कामवासना के रास्ते इतने पेचीदा हैं कि समझ ही नहीं आता।
समुद्र में मछली के तैरने के तरीके की तरह।
उनकी बातें सुनकर उसने कहा, "हे मेरे स्वामी, भले ही आप मुझ पर विश्वास न करें, लेकिन मेरे सत्य के बल पर मैं आपको ठीक कर दूंगी।" अतः उसने एक घड़ा पानी भरकर और सत्य का कार्य करते हुए, पानी उनके सिर पर डाला और यह श्लोक बोला:

सत्य ही मेरा आश्रय हो,
मैं तुमसे बढ़कर किसी और पुरुष से प्यार नहीं करती।
और सत्य के इस कार्य के द्वारा, मैं निवेदन करता हूँ,
आज ही आपकी बीमारी ठीक हो जाए।
जब उसने सत्य का यह कार्य किया, तो सोत्थिसेना पर जल छिड़कते ही कुष्ठ रोग तुरंत दूर हो गया, मानो किसी तेजाब में तांबे की जंग धुल गई हो। कुछ दिन वहाँ रहने के बाद, वे जंगल से निकलकर बनारस पहुँचे और उद्यान में प्रवेश किया। राजा को उनके आगमन की सूचना मिली, तो वह उद्यान में गया और वहीं सोत्थिसेना पर राजसी छत्र उठाने का आदेश दिया तथा सांबुला को औपचारिक जल छिड़काव द्वारा मुख्य रानी के पद पर आसीन करने का आदेश दिया। फिर उन्हें नगर में ले जाकर, राजा ने स्वयं तपस्वी जीवन अपना लिया और उद्यान में रहने लगा, परन्तु वह अपना भोजन महल में ही करता रहा। सोत्थिसेना ने सांबुला को केवल मुख्य पत्नी का पद दिया, परन्तु उसका कोई सम्मान नहीं किया और राजा ने उसकी उपेक्षा करते हुए अन्य स्त्रियों के साथ भोग-विलास किया। अपनी प्रतिद्वंद्वियों से ईर्ष्या के कारण सांबुला दुबली-पतली और पीली पड़ गई, और उसकी नसें उभरने लगीं। एक दिन जब उसके ससुर, जो एक तपस्वी थे, भोजन करने आए, तो अपने दुःख को दूर करने के लिए वह उनके पास भोजन समाप्त होने के बाद आई और उन्हें प्रणाम करके एक तरफ बैठ गई। उसे इस उदास अवस्था में देखकर उन्होंने एक श्लोक दोहराया:

सात सौ हाथी दिन-रात
वे आपकी रक्षा कर रहे हैं, लड़ाई के लिए पूरी तरह तैयार हैं।
सैकड़ों तीरंदाज आपको नुकसान से बचा रहे हैं;
आपको भयभीत करने वाले शत्रु कहाँ से आते हैं?
उनकी बातें सुनकर उसने कहा, "हे स्वामी, आपका पुत्र अब मेरे लिए पहले जैसा नहीं रहा"; और उसने पाँच छंद दोहराए:

उसकी प्रेमिकाएं कमल के समान सुंदर हैं।
उनकी हंस जैसी आवाज उनकी गहरी भावनाओं को जगा देती है।
और जब वह उनकी लयबद्ध धुन सुनता है,
अब उसके स्नेह में मेरा कोई प्रभुत्व नहीं है।
मानव रूप में, लेकिन दिव्य अप्सराओं के समान,
सोने के आभूषणों से सजे हुए वे चमकते हैं।
उत्तम रूप में वे कुलीन लड़कियाँ लेटी हैं
आकर्षक मुद्रा में, शाही निगाहों को मोहित करने के लिए।
अगर मुझे एक बार फिर जंगल में घूमने का मौका मिले,
अपने दैनिक भोजन के लिए एक हिस्सा इकट्ठा करने के लिए,
मुझे एक बार फिर पति का प्यार वापस पाना होगा।
और वनक्षेत्रों में शासन करने के लिए दरबार छोड़ दिया।
एक महिला को सबसे कोमल वस्त्रों में भी सजाया जा सकता है।
और भरपूर भोजन से धन्य हो।
चाहे वह कितनी भी सुंदर क्यों न हो, फिर भी यदि वह एक अवांछित पत्नी है,
बेहतर होगा कि रस्सी बांधकर उसकी जान ले ली जाए।
हाँ, बेचारा पुआल के बिस्तर पर लेटा हुआ है (*2),
यदि वह अपने पति की नजरों में कृपापात्र हो जाए,
एक ऐसी खुशी का अनुभव करता है जिसका उसे पहले कभी अनुभव नहीं हुआ।
अन्य सभी चीजों में समृद्ध, लेकिन प्रेम में गरीब।
जब उसने तपस्वी को अपनी इस प्रकार दुर्बलता का कारण समझाया, तो उसने राजा को बुलाया और कहा, "प्रिय सोत्थिसेना, जब आप कुष्ठ रोग से क्षत-विक्षत होकर जंगल में छिपे थे, तब वह आपके साथ गई और आपकी जरूरतों को पूरा किया, और सत्य की शक्ति से आपके रोग को ठीक किया, और अब जब वह आपके सिंहासन पर विराजमान होने का माध्यम बनी है, तब भी आप उसके बैठने और उठने का स्थान तक नहीं जानते; यह आपका बहुत बड़ा अपराध है। इस प्रकार मित्र के साथ विश्वासघात करना पाप है," और अपने पुत्र को डांटते हुए उसने यह श्लोक दोहराया:

एक प्यार करने वाली पत्नी मिलना हमेशा मुश्किल होता है।
जैसे वह पुरुष जो अपनी पत्नी के प्रति दयालु होता है:
आपकी पत्नी भी गुणी और प्रेममयी थीं;
हे राजा, क्या आप सांबुला के प्रति वफादार रहेंगे?
अपने पुत्र को इस प्रकार फटकार लगाने के बाद, वह उठा और चला गया। पिता के जाने के बाद, राजा ने सांबुला को बुलाया और कहा, "मेरे प्रिय, मैंने तुम्हें इतने समय तक जो अन्याय किया है, उसके लिए क्षमा कर दो। अब से मैं तुम्हें समस्त शक्ति प्रदान करता हूँ," और उसने अंतिम श्लोक दोहराया:

यदि आप अपार धन-दौलत से धन्य हों,
ईर्ष्या से पीड़ित होकर भी वे मुरझा जाते हैं।
मैं और ये लड़कियाँ, तुम्हारी रचनाएँ हैं।
मैं आपके आदेश का पालन करूंगा।
तब से वे दोनों सुखपूर्वक साथ रहने लगे और दान-पुण्य और अच्छे कर्मों का जीवन व्यतीत करने के बाद अपने कर्मों के फल के अनुसार इस दुनिया से विदा हो गए। तपस्वी ने समाधि की अवस्था में प्रवेश करने के बाद ब्रह्मा के स्वर्ग में देहांत प्राप्त किया।

गुरु ने यहाँ अपना पाठ समाप्त करते हुए कहा, "न केवल अभी, बल्कि पहले भी मल्लिका एक समर्पित पत्नी थीं," और उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "उस समय संबुल मल्लिका थीं, सोत्थिसेना कोसल के राजा थे, और तपस्वी पिता मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)सं. 415

(2) कटादुतिया पढ़ना.

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **गंडतिन्दु-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-520-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 520
गंडातिन्दु-जातक

"उत्साह ही मार्ग है," इत्यादि। यह कहानी जेतवन मठ में रहने वाले गुरु ने एक राजा को दी गई सलाह के बारे में सुनाई थी। राजा को दी गई यह सलाह पहले ही पूरी तरह से बताई जा चुकी है (*1)।

बहुत समय पहले उत्तरी पंचालों के एक नगर, कामपिल्ला राज्य में, पंचाल नामक एक राजा था, जो दुष्ट और निर्दयी आचरण में लिप्त होकर अपने राज्य पर अधर्मी शासन करता था। उसके सभी मंत्री भी अधर्मी हो गए। करों से पीड़ित होकर उसकी प्रजा अपने परिवार और पत्नियों को लेकर जंगली पशुओं की तरह जंगलों में भटकने लगी। जहाँ कभी गाँव हुआ करते थे, वहाँ अब कोई गाँव नहीं था, और लोग राजा के आदमियों के भय से दिन में अपने घरों में रहने का साहस नहीं करते थे, बल्कि काँटेदार शाखाओं से बाड़ लगाकर दिन निकलते ही जंगल में गायब हो जाते थे। दिन में राजा के आदमी उन्हें लूट लेते थे और रात में लुटेरे। उस समय बोधिसत्व नगर के बाहर एक तिन्दुका वृक्ष के देवता के रूप में अवतरित हुए। वे प्रतिवर्ष राजा से एक हजार सिक्कों के बराबर भेंट प्राप्त करते थे। उन्होंने सोचा, "यह राजा तो निकम्मा है; इसका पूरा राज्य बर्बाद हो रहा है; मेरे सिवा कोई नहीं है जो राजा को सही राह पर ला सके। यह तो मेरा समर्थक है और प्रतिवर्ष मुझे एक हजार सिक्कों की भेंट देता है। मैं इसे नसीहत और सलाह दूंगा।" अत: रात में वे राजकक्ष में प्रवेश कर गए और पलंग के सिरहाने पर खड़े होकर हवा में स्थिर हो गए, जिससे एक तेज प्रकाश निकल रहा था। राजा ने जब उन्हें उगते सूरज की तरह चमकते देखा, तो उनसे पूछा कि वे कौन हैं और किसलिए आए हैं। उनकी बात सुनकर उन्होंने कहा, "महाराज, मैं तिन्दुका वृक्ष का देवता हूं और आपको अच्छी सलाह देने आया हूं।" राजा ने कहा, "आप मुझे क्या सलाह देंगे?" “महाराज,” उस महान सत्ता ने कहा, “आप अपने शासन में लापरवाह हैं, और इसलिए आपका सारा राज्य बर्बाद हो रहा है, मानो भाड़े के सैनिकों का शिकार हो। जो राजा अपने शासन में लापरवाह होते हैं, वे अपने राज्य के स्वामी नहीं होते, बल्कि इस संसार में उनका विनाश होता है और परलोक में उनका पुनर्जन्म नरक में होता है, और जब वे लापरवाह होते हैं तो उनके राज्य के भीतर और बाहर दोनों ही लापरवाह हो जाते हैं, इसलिए एक राजा को अत्यंत सावधान रहना चाहिए,” और ऐसा कहते हुए, नैतिक शिक्षा देने के लिए, उन्होंने इन छंदों को दोहराया:

ऐसा कहा जाता है कि उत्साह निर्वाण का मार्ग है, जबकि आलस्य मृत्यु की ओर ले जाता है।
सतर्क आत्माएं कभी नहीं मरतीं, जबकि लापरवाह लोग तो मानो मरे हुए के समान ही होते हैं।
अहंकार से आलस्य उत्पन्न होता है, और आलस्य से हानि और पतन होता है।
पतन पाप का जनक है। हे महान राजा, समस्त आलस्य को त्याग दो।
आलस्य के कारण साहसी आत्माओं ने कई बार धन और राज्य से वंचित रह गए।
और इस प्रकार ग्राम स्वामी एकांतवासी के समान हो सकते हैं, जो बेघर और बेहद दुखी होते हैं।
जब कोई राजकुमार अपने शासनकाल में लापरवाह हो जाता है, अपने नाम और प्रसिद्धि के प्रति असत्य व्यवहार करता है,
यदि राजकुमार की सारी संपत्ति अचानक गायब हो जाए, तो इसे उसके लिए शर्म की बात माना जाता है।
हे राजा, आप समय से पहले ही शिथिल हो गए हैं, आप अपने सही मार्ग से भटक गए हैं।
आपका वह राज्य जो प्राचीन काल में इतना समृद्ध था, अब लुटेरों के हाथों में चला गया।

आपके राज्य का कोई पुत्र उत्तराधिकारी नहीं होगा, चाहे उसमें सोने और अनाज का खजाना ही क्यों न हो।
आपका राज्य बिगाड़ने वाले का शिकार बन जाता है और आपकी सारी संपत्ति कट जाती है।
वह राजकुमार जिसका राज्य, उसके भंडार और धन सहित कई बार छीन लिया जाता है,
उनके मित्र, परिचित और परिवार के सदस्य अब उन्हें पहले की तरह सम्मान नहीं देते।
उसके अंगरक्षक और उसके सारथी, उसके घोड़े और उसके साहसी पैदल सैनिक,
जब वे उसे सभी बेदखल लोगों में से एक के रूप में देखते हैं, तो वे उसे पहले की तरह महत्व नहीं देते।
अव्यवस्थित जीवन का मूर्ख व्यक्ति बुरी सलाह से गुमराह हो जाता है।
मूर्ख की प्रसिद्धि शीघ्र ही छिन जाती है, जैसे सांप अपनी पुरानी केंचुली उतार फेंकता है।
लेकिन जो व्यक्ति सुबह जल्दी उठकर, बिना थके और व्यवस्थित तरीके से काम करता है,
उसके बैल और गाय तेजी से फल-फूल रहे हैं, और उसकी संपत्ति लगातार बढ़ रही है।
हे महान राजा, सदा अपने कान खुले रखो और लोगों की बातें सुनो।
सत्य को देखकर और सुनकर, आप सौभाग्य की प्राप्ति कर सकते हैं।
इस प्रकार महान सत्ता ने राजा को ग्यारह छंदों में संबोधित किया और कहा, "जाओ, बिना विलंब किए अपने राज्य की रक्षा करो, उसे नष्ट मत करो," और फिर अपने निवास स्थान की ओर प्रस्थान किया। राजा ने उनकी बातें सुनीं और अत्यंत द्रवित होकर अगले दिन अपना राज्य अपने मंत्रियों को सौंप दिया और अपने पुजारी के साथ सुबह-सुबह पूर्वी द्वार से शहर छोड़कर एक फर्लांग की दूरी पर चला गया। वहाँ गाँव के एक निवासी, एक बूढ़े व्यक्ति ने जंगल से काँटेदार टहनियाँ लाकर अपने घर के चारों ओर लगा दीं और दरवाजा बंद कर लिया, और अपनी पत्नी और बच्चों के साथ जंगल में चला गया। शाम को जब राजा के आदमी चले गए, तो वह अपने घर लौटा और दरवाजे पर ही उसके पैर में एक काँटा चुभ गया। वह पालथी मारकर बैठा और काँटा निकालते हुए, उसने राजा को निम्नलिखित छंद में शाप दिया:

लड़ाई में तीर लगने से घायल हो गया,
　इसलिए पंचाल शोक मनाए।
आज मुझे शोक करने का कारण है,
　इस प्रकार कांटे से घायल हो गया।
राजा पर यह अभिशाप बोधिसत्व की शक्ति से उत्पन्न हुआ था, और बोधिसत्व द्वारा आवेशित होकर ही उसने राजा को शाप दिया था। इसी दृष्टि से उसके इस कार्य को समझा जाना चाहिए। अब इसी समय राजा और उसका पुरोहित भेस बदलकर उसके समक्ष उपस्थित थे। पुरोहित ने उसके वचन सुनकर एक और श्लोक कहा:

आप वृद्ध हैं, मेरे सज्जन, और आपकी दृष्टि कमजोर हो गई है।
　चीजों को ठीक से समझने के लिए, मैं शपथ लेता हूँ;
जहां तक राजा ब्रह्मदत्त का सवाल है, उन्हें इससे क्या लेना-देना है?
　आपके पैर में कांटा चुभ गया है
यह सुनकर बूढ़े व्यक्ति ने तीन छंद दोहराए:

मुझे जो पीड़ा हो रही है, वह निश्चित रूप से ब्रह्मदत्त के कारण ही है।
जिस प्रकार निहत्थे लोगों को अक्सर उनके उत्पीड़कों द्वारा मार डाला जाता है।
रात में हम चोरों का शिकार बन जाते हैं, दिन में साहूकारों का।
जब दुष्ट राजाओं का शासन होता है, तब उस क्षेत्र में अनैतिक लोगों की संख्या चरम पर पहुंच जाती है।
इस प्रकार के भय से व्याकुल होकर लोग जंगल की ओर भाग जाते हैं।
और उनकी आजीविका के चारों ओर कांटे बिखेर दें, उनकी सुरक्षा के लिए।
यह सुनकर राजा ने अपने पुजारी से कहा, "गुरुजी, बूढ़े ने सच कहा है: यह हमारी गलती है। आइए, हम लौटकर राज्य पर विधिपूर्वक शासन करें।" तब बोधिसत्व ने पुजारी के शरीर में प्रवेश करके उसके सामने खड़े होकर कहा, "महाराज, आइए हम इस मामले की जांच करें।" और उस गाँव से दूसरे गाँव जाते हुए उन्होंने एक बूढ़ी औरत की बातें सुनीं। कहा जाता है कि वह एक गरीब औरत थी, जिसकी दो वयस्क बेटियाँ थीं, जिन्हें वह जंगल में जाने नहीं देती थी। वह स्वयं लकड़ियाँ और पेड़ों के पत्ते लाती थी और अपनी बेटियों को खिलाती थी। एक दिन वह पत्ते इकट्ठा करने के लिए एक झाड़ी पर चढ़ी और गिरकर ज़मीन पर लुढ़क गई, और उसने राजा को मृत्युदंड देते हुए शाप दिया और यह श्लोक कहा:

ओह! ब्रह्मदत्त की मृत्यु कब होगी, वह तो बहुत लंबे समय तक शासन करेगा!
हमारी बेटियां अविवाहित रहती हैं और पतियों के लिए व्यर्थ ही आहें भरती हैं?

तब उसकी जाँच कर रहे पुजारी ने यह श्लोक कहा:

हे दुष्ट, तेरे ये शब्द भी दुष्टतापूर्ण और निरर्थक हैं।
राजा अपने राज्य में प्रत्येक कन्या के लिए पति कहाँ से लाएगा?
यह सुनकर बूढ़ी औरत ने दो पंक्तियाँ दोहराईं:

मेरे ये शब्द बुरे नहीं हैं, न ही व्यर्थ बोले गए हैं।
जब तक तुम्हारे निहत्थे लोगों को अत्याचारियों द्वारा मारा जाता रहेगा।
रात में हम चोरों का शिकार बन जाते हैं, दिन में साहूकारों का।
जब दुष्ट राजाओं का शासन होता है, तब उस क्षेत्र में कामुक लोगों की संख्या चरम सीमा पर पहुंच जाती है।
जब हालात खराब होते हैं, तो बेचारी नौकरानियां उदास हो जाती हैं, क्योंकि उनके पास पति नहीं होते।
उसकी बातें सुनकर उन्होंने सोचा, "वह बिल्कुल सही बात कह रही है," और आगे बढ़ते हुए उन्होंने एक किसान की बात सुनी। कहते हैं कि जब वह हल चला रहा था, तो हल के फाल से चोट लगने से उसका बैल, जिसका नाम सालिया था, गिर पड़ा, और उसके मालिक ने राजा को शाप दिया और यह श्लोक दोहराया:

इसलिए पंचाल अपने शत्रु के भाले के प्रहार से पृथ्वी पर गिर पड़े।
हल से घायल हुई सलिया, बेचारी, यहाँ गिरी पड़ी है।
तब पुजारी ने उसे रोकने के लिए यह श्लोक बोला:

आप ब्रह्मदत्त से नाराज हैं, जबकि इसका कोई उचित कारण नहीं बताया गया है।
और यदि आप राजा का अपमान करते हैं, तो इसका सारा दोष आपका ही है।
यह सुनकर किसान ने तीन छंदों में उत्तर दिया:

मुझे ब्रह्मदत्त पर गुस्सा है, और मेरा यह कहना उचित ही है;
निहत्थे लोगों को उनके उत्पीड़क द्वारा इसी प्रकार मार डाला जाता है।
रात में हम चोरों का शिकार बन जाते हैं...(और पहले जैसा ही)।
दास को दो बार (*2) खाना पकाना पड़ा और वह उसे मेरे पास देर से लाया;
जब सभी लोग उसे देखकर मुंह खोले खड़े थे, तभी मेरा बैल बुरी तरह घायल हो गया और उसकी मृत्यु हो गई।
आगे बढ़ते हुए वे एक गाँव में रुके। अगले दिन सुबह-सुबह एक गुस्सैल गाय ने एक दूधवाले को लात मारी और उसका सारा दूध गिरा दिया। उस आदमी ने ब्रह्मदत्त को कोसते हुए यह श्लोक दोहराया:

तलवार के प्रहार से पंचाल का स्वामी युद्ध के बीच में ही गिर जाएगा।
आज गाय की लात से मैं बुरी तरह घायल हो गया हूँ, दूध का बर्तन भी मेरे ऊपर गिर पड़ा है।
ब्राह्मण ने एक श्लोक में कहा:

मान लीजिए, कोई गाय कांटों के खिलाफ लात मारती है, या दूध की बाल्टी उलट जाती है—
ब्रह्मदत्त को इस सब गाली-गलौज से क्या लेना-देना है?
यह सुनकर दूधवाले ने तीन पंक्तियाँ दोहराईं:

हे ब्राह्मण, पंचाल का राजा दोषी है, क्योंकि उसके शासनकाल में
निहत्थे लोगों को उनके उत्पीड़कों द्वारा मारते हुए देखा जा रहा है।
रात तक...(और पहले जैसा ही)।
एक जंगली और उग्र गाय जिसे हमने पहले कभी दुहा नहीं था
हमने आज दूध दुहा: दूध की मांग दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही है।
उन्होंने कहा, "वह सच कहता है," और उस गाँव से आगे बढ़कर वे राजमार्ग पर चढ़ गए और शहर की ओर चल पड़े। एक गाँव में कर वसूलने वालों ने एक चित्तीदार बछड़े को मार डाला और उसकी खाल उतारकर तलवार का म्यान बना लिया। बछड़े की माँ अपने बच्चे के खोने से इतनी दुखी हुई कि उसने न घास खाई और न पानी पिया, बल्कि इधर-उधर भटकती रही और शोक मनाती रही। उसे देखकर गाँव के लड़कों ने राजा को शाप दिया और यह श्लोक बोला:

तो पंचाल को सूखने दो और निःसंतान व्यर्थ में रोने दो।

यह बेचारी गाय विचलित होकर उस बछड़े को ढूंढ रही है जिसे आदमियों ने मार डाला है।
फिर पुजारी ने एक और श्लोक पढ़ा:

जब झुंड से कोई जानवर भाग निकलता है और अपनी पीड़ा को कम करने के लिए दहाड़ता है,
इस संदर्भ में ब्रह्मदत्त के बारे में आपको शिकायत करने का क्या कारण है?
फिर गांव के लड़कों ने दो छंद दोहराए:

हे ब्राह्मण, इस मामले में राजा ब्रह्मदत्त का पाप मुझे स्पष्ट प्रतीत होता है।
निहत्थे लोगों को उनके उत्पीड़कों द्वारा इसी प्रकार मार डाला जाता है।
रात में हम चोरों का शिकार बन जाते हैं, दिन में साहूकारों का।
जब दुष्ट राजाओं का शासन होता है, तब उस क्षेत्र में अनैतिक लोगों की संख्या चरम पर पहुंच जाती है।
मैं यह जानना चाहता हूँ कि एक कोमल बछड़े को सिर्फ एक खोल के लिए क्यों मारा जाना चाहिए?
"तुम सत्य कहते हो," उन्होंने कहा और चले गए। फिर, आगे बढ़ते हुए, उन्होंने एक सूखे तालाब में देखा कि कौवे अपनी चोंच से मेंढकों पर प्रहार कर उन्हें खा रहे थे। जब वे उस स्थान पर पहुँचे, तो बोधिसत्व ने अपनी शक्ति का प्रयोग करते हुए राजा को मेंढक के मुख से शाप दिया और कहा,

इसलिए, युद्ध में मारे गए पांचाल को उसके पुत्रों सहित खा लिया जाए।
जैसे जंगल का मेंढक गांव के कौवों का शिकार बनता है, वैसे ही आज मैं भी शिकार बन जाता हूँ।
यह सुनकर मेंढक से बात कर रहे पुजारी ने इस श्लोक को दोहराया:

राजा ऐसा नहीं कर सकते, मेंढक, जैसा कि तुम जानते ही हो।
नीचे मौजूद हर प्राणी की रक्षा करो।
इस मामले में वह कोई दुष्ट राजा नहीं है।
कौवे तुम्हारे जैसे जीवित प्राणियों को खाते हैं।
यह सुनकर मेंढक ने दो पंक्तियाँ दोहराईं:

पुजारी ने अत्यधिक चापलूसी भरे शब्दों का प्रयोग किया
इस प्रकार वह दुष्टतापूर्वक राजा को धोखा देता है;
हालांकि जनता पर अत्याचार हो रहा है, फिर भी राजा
पुजारी की नीति को सर्वोत्तम मानता है।
यदि सभी प्रकार की समृद्धि से परिपूर्ण हो
यह राज्य प्रसन्न और शांतिपूर्ण होना चाहिए।
कौवे अपनी सबसे समृद्ध भेंटों (*3) का आनंद ले सकते हैं,
और न ही नष्ट करने के लिए किसी जीवित चीज की आवश्यकता है।
यह सुनकर राजा और पुजारी ने सोचा, "जंगल में रहने वाले मेंढक समेत सभी प्राणी हमें श्राप देते हैं," और वहां से शहर जाकर उन्होंने अपने राज्य पर विधिपूर्वक शासन किया, और ईश्वर की सलाह का पालन करते हुए उन्होंने स्वयं को दान और अन्य अच्छे कार्यों में समर्पित कर दिया।

गुरु ने कोसला के राजा को दिए अपने प्रवचन का समापन इन शब्दों में किया, "हे महाराज, एक राजा को बुरे मार्गों को त्यागकर अपने राज्य पर विधिपूर्वक शासन करना चाहिए," और उन्होंने जन्म का उल्लेख करते हुए कहा: "उस समय तिन्दुका वृक्ष की दिव्यता मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)नहीं. 334, राजोवदा-जातक। क्रमांक 521

(2) विद्वान बताते हैं कि शाही कर वसूलने वालों ने वह भोजन खाया था जो दासी ने अपने स्वामी के लिए पहले पकाया था।

(3) कौवे को बलिपुत्थो कहा जाता था, जिसका अर्थ है "अर्पण से पोषित"।

पुस्तक XVII. कैटलिसानीपाटा:

***स्रोत** : एच.टी. फ्रांसिस द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-521-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 521
तेसाकुना-जातक

"मैं यही पूछता हूँ," इत्यादि। यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए कोसल के राजा को सलाह के रूप में सुनाई थी। राजा धर्म मार्ग का उपदेश सुनने आया था और गुरु ने उससे कहा, "हे महाराज, राजा को अपने राज्य पर धर्मपूर्वक शासन करना चाहिए, क्योंकि जब राजा अधर्मी होते हैं, तो उनके अधिकारी भी अधर्मी होते हैं।" और चतुक्कनिपात (चौथा खंड) में वर्णित सही मार्ग का उपदेश देते हुए, उन्होंने बुरे मार्गों का अनुसरण करने या उनसे दूर रहने में निहित कष्ट और आशीर्वाद की ओर इशारा किया, और इंद्रिय सुखों से उत्पन्न होने वाले दुख को विस्तार से समझाया, उनकी तुलना स्वप्नों आदि से करते हुए कहा, "इन पुरुषों के मामले में,

कोई रिश्वत निर्दयी मृत्यु को नहीं रोक सकती, कोई दया उसे नरम नहीं कर सकती।
युद्ध में कोई भी मृत्यु को नहीं जीत सकता। क्योंकि सभी को मरना ही है।
और जब वे दूसरे लोक में जाते हैं, तो अपने स्वयं के सद्गुणी कर्मों के अलावा उनके पास कोई और निश्चित शरण नहीं होती, इसलिए उन्हें अनिवार्य रूप से निम्न संगति का त्याग करना पड़ता है, और अपनी प्रतिष्ठा के लिए उन्हें लापरवाह नहीं होना चाहिए, बल्कि गंभीर होना चाहिए और धार्मिकता में शासन करना चाहिए, जैसे पुराने समय के राजा, बुद्ध के उदय से पहले, बुद्धिमानों की सलाह का पालन करते हुए, धार्मिकता से शासन करते थे और स्वर्गलोक में जाते थे," और राजा के अनुरोध पर उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, बनारस में ब्रह्मदत्त का शासन था और उनका कोई उत्तराधिकारी नहीं था। पुत्र या पुत्री की उनकी प्रार्थना भी पूरी नहीं हुई थी। एक दिन वे अपने साथ एक बड़े दल को लेकर अपने उद्यान में गए और दिन का कुछ समय उद्यान में बिताने के बाद, उन्होंने राजसी साल के वृक्ष के नीचे अपने लिए एक पलंग बिछाया। थोड़ी देर आराम करने के बाद जब वे उठे, तो उन्होंने साल के वृक्ष की ओर देखा और उसमें एक चिड़िया का घोंसला देखा। उसे देखकर उनके मन में उसे पाने की इच्छा जागी। उन्होंने अपने एक सेवक को बुलाया और कहा, "वृक्ष पर चढ़ो और देखो कि घोंसले में कुछ है या नहीं।" सेवक ऊपर चढ़ा और उसमें तीन अंडे पाकर राजा को बताया। राजा ने कहा, "ध्यान रखना, इन पर साँस मत लेना।" उन्होंने एक डिब्बे में रुई बिछाकर सेवक को धीरे से नीचे आने और अंडों को उसमें रखने को कहा। अंडे नीचे लाने के बाद, उन्होंने डिब्बा उठाया और अपने दरबारियों से पूछा कि ये अंडे किस पक्षी के हैं। उन्होंने उत्तर दिया, "हमें नहीं पता: शिकारी ही जानते होंगे।" राजा ने शिकारियों को बुलवाया और उनसे पूछा, "महाराज, एक उल्लू का अंडा है, दूसरा मैना का और तीसरा तोते का।" राजा ने पूछा, "क्या एक ही घोंसले में तीन अलग-अलग पक्षियों के अंडे हैं?" "जी महाराज, जब डरने की कोई बात नहीं होती, तो सावधानी से रखा गया अंडा नष्ट नहीं होता।" राजा प्रसन्न हुए और बोले, "ये मेरे बच्चे होंगे।" उन्होंने तीनों अंडों को तीन दरबारियों के हवाले करते हुए कहा, "ये मेरे बच्चे होंगे। तुम इनकी अच्छी तरह देखभाल करना और जब बच्चे अंडे से बाहर आ जाएं, तो मुझे बताना।" उन्होंने बच्चों की अच्छी देखभाल की। सबसे पहले उल्लू का अंडा फूटा, और दरबारी ने एक शिकारी को बुलवाया और कहा, "बच्चे का लिंग पता करो, कि वह नर है या मादा।" जब शिकारी ने जांच कर बताया कि वह नर है, तो दरबारी राजा के पास गया और बोला, "महाराज, आपके घर एक पुत्र का जन्म हुआ है।" राजा प्रसन्न हुए और उसे बहुत धन दिया और कहा, "इसकी अच्छी तरह देखभाल करना और इसका नाम वेसंतारा रखना," और उसे विदा कर दिया। उसने वैसा ही किया जैसा उसे कहा गया था। फिर कुछ दिनों बाद मैना पक्षी का अंडा फूटा, और दूसरे दरबारी ने भी शिकारी से उसकी जाँच करवाकर, जब यह पता चला कि वह मुर्गी है, तो राजा के पास जाकर उन्हें पुत्री के जन्म की सूचना दी। राजा प्रसन्न हुए और उसे भी बहुत खजाना दिया और कहा, "मेरी पुत्री की अच्छी तरह देखभाल करना और उसका नाम कुंडलिनी रखना," और उसे विदा कर दिया। उसने भी वैसा ही किया जैसा उसे कहा गया था। फिर कुछ दिनों बाद तोते का अंडा फूटा और तीसरे दरबारी ने, जब शिकारी ने जाँच करके बताया कि वह मुर्गा है, तो राजा के पास जाकर उन्हें पुत्र के जन्म की सूचना दी। राजा प्रसन्न हुए और उसे उदारतापूर्वक भुगतान करते हुए कहा, "मेरे पुत्र के सम्मान में भव्य उत्सव मनाओ और उसका नाम जंबुका रखना," और फिर उसे विदा कर दिया। उसने भी वैसा ही किया जैसा उसे कहा गया था।और ये तीनों पक्षी तीनों दरबारियों के घरों में राजसी रीति-रिवाजों के साथ पले-बढ़े। राजा उन्हें अक्सर "मेरा बेटा" और "मेरी बेटी"

कहकर पुकारते थे। उनके दरबारी आपस में हँसते हुए कहते थे, "देखो राजा क्या कर रहे हैं: पक्षियों को अपना बेटा और बेटी कहकर पुकारते फिरते हैं।" राजा ने सोचा, "ये दरबारी मेरे बच्चों की बुद्धिमत्ता को नहीं जानते। मैं उन्हें यह दिखा दूँगा।" इसलिए उन्होंने अपने एक मंत्री को वेसंतारा के पास यह कहने के लिए भेजा, "आपके पिता आपसे एक प्रश्न पूछना चाहते हैं। वे कब आएँगे और पूछेंगे?" मंत्री आया और वेसंतारा को प्रणाम करके संदेश दिया। वेसंतारा ने अपने दरबारी को बुलवाया और कहा, "मुझे बताया गया है कि मेरे पिता मुझसे एक प्रश्न पूछना चाहते हैं। जब वे आएँ, तो हमें उनका पूरा सम्मान करना चाहिए।" और उन्होंने पूछा, "वे कब आएँगे?" दरबारी ने कहा, "वे आज से सातवें दिन आएँ।" यह सुनकर वेसंतारा ने कहा, "मेरे पिता को आज से सातवें दिन आने दीजिए," और यह कहकर उसने मंत्री को विदा कर दिया। वह जाकर राजा को यह बात बताई। सातवें दिन राजा ने पूरे शहर में ढोल बजवाने का आदेश दिया और अपने पुत्र के घर गया। वेसंतारा ने राजा का बहुत आदर किया और यहाँ तक कि दासों और नौकरों का भी बहुत आदर करवाया। वेसंतारा के घर में भोजन करने और भव्य भोज का आनंद लेने के बाद राजा अपने निवास स्थान पर लौट आया। फिर उसने महल के प्रांगण में एक बड़ा मंडप बनवाया और पूरे शहर में ढोल बजवाकर घोषणा की। वह अपने भव्य मंडप में, सेवकों के एक बड़े समूह से घिरा हुआ बैठा और एक दरबारी को वेसंतारा को लाने का संदेश भेजा। दरबारी वेसंतारा को एक सोने की चौकी पर बिठाकर लाया। वेसंतारा अपने पिता की गोद में बैठा और उनके साथ खेला, फिर जाकर चौकी पर बैठ गया। तब राजा ने लोगों की भीड़ के बीच उससे राजा के कर्तव्य के बारे में पूछा और पहला श्लोक बोला:यह सुनकर वेसंतारा ने कहा, “मेरे पिता को आज से सातवें दिन आने दीजिए,” और यह कहकर उसने मंत्री को विदा कर दिया। वह जाकर राजा को यह बात बताई। सातवें दिन राजा ने पूरे शहर में ढोल बजवाने का आदेश दिया और अपने पुत्र के घर गया। वेसंतारा ने राजा का बहुत आदर किया और अपने दासों और नौकरों का भी बहुत आदर करवाया। वेसंतारा के घर में भोजन करने और भव्य भोज का आनंद लेने के बाद राजा अपने निवास स्थान पर लौट आया। फिर उसने महल के प्रांगण में एक बड़ा मंडप बनवाया और पूरे शहर में ढोल बजवाकर घोषणा की। वह अपने भव्य मंडप में, सेवकों के एक बड़े समूह से घिरा हुआ बैठा और एक दरबारी को वेसंतारा को लाने का संदेश भेजा। दरबारी वेसंतारा को एक सोने की चौकी पर बिठाकर लाया। वेसंतारा अपने पिता की गोद में बैठा और उनके साथ खेला, फिर जाकर चौकी पर बैठ गया। तब राजा ने लोगों की भीड़ के बीच उससे राजा के कर्तव्य के बारे में पूछा और पहला श्लोक बोला:यह सुनकर वेसंतारा ने कहा, “मेरे पिता को आज से सातवें दिन आने दीजिए,” और यह कहकर उसने मंत्री को विदा कर दिया। वह जाकर राजा को यह बात बताई। सातवें दिन राजा ने पूरे शहर में ढोल बजवाने का आदेश दिया और अपने पुत्र के घर गया। वेसंतारा ने राजा का बहुत आदर किया और अपने दासों और नौकरों का भी बहुत आदर करवाया। वेसंतारा के घर में भोजन करने और भव्य भोज का आनंद लेने के बाद राजा अपने निवास स्थान पर लौट आया। फिर उसने महल के प्रांगण में एक बड़ा मंडप बनवाया और पूरे शहर में ढोल बजवाकर घोषणा की। वह अपने भव्य मंडप में, सेवकों के एक बड़े समूह से घिरा हुआ बैठा और एक दरबारी को वेसंतारा को लाने का संदेश भेजा। दरबारी वेसंतारा को एक सोने की चौकी पर बिठाकर लाया। वेसंतारा अपने पिता की गोद में बैठा और उनके साथ खेला, फिर जाकर चौकी पर बैठ गया। तब राजा ने लोगों की भीड़ के बीच उससे राजा के कर्तव्य के बारे में पूछा और पहला श्लोक बोला:

मैं वेसंतारा से यही प्रार्थना करता हूँ—प्रिय पक्षी, तुम पर कृपा बनी रहे।
जो व्यक्ति मनुष्यों पर शासन करने का आनंद लेता है, उसके लिए जीवन का सबसे अच्छा मार्ग कौन सा है?
वेसंतारा ने प्रश्न का सीधा उत्तर दिए बिना, राजा को उसकी लापरवाही के लिए फटकारा और दूसरा श्लोक बोला:

हे मेरे पिता कंस, काशी के स्वामी, तुमने बहुत समय पहले लापरवाही बरती थी।
उन्होंने अपने बेटे से आग्रह किया कि वह उत्साह से भरपूर होने के बावजूद और भी अधिक उत्साह दिखाए।
इस श्लोक में राजा को फटकारते हुए और यह कहते हुए कि, "महाराज, एक राजा को अपने राज्य पर न्यायपूर्वक शासन करना चाहिए, तीन सत्यों का पालन करना चाहिए," और राजा के कर्तव्य का वर्णन करते हुए उन्होंने ये श्लोक कहे:

सबसे पहले राजा को सभी प्रकार के झूठ, क्रोध और तिरस्कार का त्याग करना चाहिए;
उसे वही करने दो जो एक राजा को करना चाहिए, अन्यथा वह अपनी शपथ तोड़ देगा।
वासना और पाप के कारण भटककर, यदि उसने अतीत में कोई गलती की हो, तो यह स्पष्ट है।
वह अपने किए पर पश्चाताप करेगा और यह सीखेगा कि दोबारा ऐसा न करे।
जब कोई राजकुमार अपने शासनकाल में लापरवाह हो जाता है, अपने नाम और प्रसिद्धि के प्रति असत्य व्यवहार करता है,
यदि राजकुमार की सारी संपत्ति अचानक गायब हो जाए, तो इसे उसके लिए शर्म की बात माना जाता है।
इस प्रकार, जब मैंने सौभाग्य और भाग्य से पूछा, तो उन्होंने मुझे उत्तर दिया।
"एक ऊर्जावान और साहसी व्यक्ति में हमें प्रसन्नता होती है, बशर्ते वह ईर्ष्या से मुक्त हो।"
दुर्भाग्य, जो हमेशा सौभाग्य को नष्ट कर देता है, बुरे कर्म करने वाले लोगों में आनंदित होता है।
वे कठोर हृदय प्राणी जिनमें ईर्ष्या की भावना पनपती है।
हे महान राजा, सभी के मित्र बनो, ताकि सभी आपकी सुरक्षा सुनिश्चित कर सकें।
दुर्भाग्य दूर हो जाए, लेकिन सौभाग्य सुरक्षित जीवन सुनिश्चित करता है।

हे काशी पर राज करने वाले, जो भाग्यशाली और साहसी है,
उसके शत्रु उसे जड़ से उखाड़ फेंकेंगे और वह निश्चित रूप से महानता प्राप्त करेगा।
महान इंद्र (सक्का) मनुष्य के सभी साहस को सतर्क दृष्टि से देखते रहते हैं।
वह साहस को एक सद्गुण मानता है और उसमें सच्ची अच्छाई को देखता है।
गंधर्व, देवता, देवदूत और मनुष्य, सभी ऐसे राजा का अनुकरण करते हैं।
और उनकी गायन की उमंग और जोश को दर्शाते हुए, आत्माएं प्रकट होकर खड़ी रहती हैं।
सही काम करने के लिए उत्सुक रहो, और चाहे कितना भी अपमानित हो जाओ, पाप के आगे मत झुको।
अच्छे कार्यों के लिए लगन से प्रयास करें—आलसी व्यक्ति कभी सुख प्राप्त नहीं कर सकता।
इस संदर्भ में, आपका कर्तव्य यही है कि आपको वह मार्ग सिखाया जाए जिस पर आपको चलना चाहिए:
किसी मित्र को सुख दिलाना या किसी शत्रु को घोर हानि पहुंचाना ही काफी है।
इस प्रकार पक्षी वेसंतारा ने एक ही श्लोक में राजा की लापरवाही की निंदा की, और फिर ग्यारह श्लोकों में राजा के कर्तव्य का वर्णन करते हुए बुद्ध के समान आकर्षण के साथ उनके प्रश्न का उत्तर दिया। सभी के हृदय आश्चर्य और विस्मय से भर गए और अनगिनत तालियों की गड़गड़ाहट गूंज उठी। राजा प्रसन्नता से झूम उठे और अपने दरबारियों से पूछा कि उनके पुत्र के लिए क्या किया जाए, क्योंकि उन्होंने ऐसा कहा था। "महाराज, उसे सेनापति बनाया जाए।" "ठीक है, मैं उसे सेनापति का पद देता हूँ," और उन्होंने वेसंतारा को उस रिक्त पद पर नियुक्त कर दिया। तब से इस पद पर आसीन होकर उसने अपने पिता की इच्छाओं का पालन किया। यहीं वेसंतारा के प्रश्न की कहानी समाप्त होती है।

कुछ दिनों बाद राजा ने पहले की तरह ही कुंडलिनी को संदेश भेजा, और सातवें दिन उनसे मिलने गए और घर लौटकर एक मंडप के बीच में बैठ गए और कुंडलिनी को अपने पास लाने का आदेश दिया। जब कुंडलिनी एक स्वर्ण सिंहासन पर बैठीं, तो उन्होंने उनसे राजा के कर्तव्य के बारे में पूछा और यह श्लोक कहा:

हे राजसी वंश की कुंडलिनी, क्या तुम मेरी समस्या का समाधान कर सकती हो?
जो व्यक्ति मनुष्यों पर शासन करने का आनंद लेता है, उसके लिए जीवन का सबसे अच्छा मार्ग कौन सा है?
जब राजा ने उससे राजा के कर्तव्यों के बारे में पूछा, तो उसने कहा, "मुझे लगता है, महाराज, आप मेरी परीक्षा ले रहे हैं, यह सोचकर कि 'एक स्त्री मुझे क्या बता पाएगी?' इसलिए मैं आपको बताऊंगी, राजा के रूप में आपके सभी कर्तव्यों को केवल दो सिद्धांतों में समेटते हुए," और उसने इन छंदों को दोहराया:

मेरे मित्र, यह मामला दो स्पष्ट सिद्धांतों में समाहित है--
जो कुछ भी अपने पास है उसे बनाए रखना, और जो कुछ भी अपने पास है उसे हासिल करने की कोशिश न करना।
अपने हितों को स्पष्ट रूप से समझने के लिए बुद्धिमान व्यक्तियों को सलाहकार के रूप में लें।
दंगा-फसाद और फिजूलखर्ची में लिप्त नहीं, जुआ और शराबखोरी से मुक्त।
ऐसा व्यक्ति जो आपकी और आपके खजाने की पूरी लगन से रक्षा कर सके।
जिस प्रकार एक सारथी अपने रथ को चलाता है, उसी प्रकार वह कुशलता से राज्य के सामूहिक कल्याण का मार्गदर्शन करता है।
अपने परिवार को सदा अच्छी तरह संभाल कर रखें; और अपनी संपत्ति का समय-समय पर हिसाब रखें।
किसी दूसरे से ऋण या जमा राशि लेने के लिए कभी भी उस पर भरोसा न करें, बल्कि स्वयं निर्णय लें।
इससे आपके लाभ और हानि पर क्या प्रभाव पड़ता है, यह आपको अच्छी तरह से पता होना चाहिए।
हमेशा दोषी को ही दोषी ठहराएं और उन्हीं का पक्ष लें जो इसके पात्र हों।
हे महान राजा, आप अपनी प्रजा को हर अच्छे मार्ग की शिक्षा दें।
अन्यथा तुम्हारा राज्य और तुम्हारी संपत्ति अधर्मी अधिकारियों के हाथों शिकार बन जाएगी।
यह सुनिश्चित करें कि आप स्वयं या दूसरों द्वारा कोई भी कार्य अत्यधिक जल्दबाजी में न किया जाए।
जो मूर्ख ऐसा कार्य करता है, वह निःसंदेह अपने कर्मों पर पश्चाताप करेगा।
क्रोध के आगे कभी भी झुकना नहीं चाहिए, क्योंकि यदि वह अपनी सीमाएँ पार कर जाए तो
इससे राजाओं का पतन होगा और सबसे गौरवशाली घराने भी नष्ट हो जाएंगे।
यह सुनिश्चित करें कि राजा के रूप में आप कभी भी अपनी प्रजा को गुमराह न करें, जिससे उन्हें नुकसान उठाना पड़े।
अन्यथा सभी पुरुष और महिलाएं समान रूप से संकटों के सागर में खो जाएंगे।
जब राजा सभी भय से मुक्त हो जाता है और इंद्रियों के सुख ही उसका लक्ष्य होते हैं,
यदि उसकी सारी दौलत और संपत्ति नष्ट हो जाए, तो उस राजा के लिए यह एक कलंक माना जाएगा।
इसमें आपके कर्तव्य का पाठ है, जो आपको सही मार्ग सिखाता है।
हर अच्छे काम में निपुण बनो, शत्रु को अति और उग्रता से पराजित करो।

सद्‌गुणों का अध्ययन करो, क्योंकि दुर्गुण सदा दुख और पीड़ा से भरे जीवन की ओर ले जाते हैं।
इस प्रकार कुंडलिनी ने ग्यारह श्लोकों में राजा को उनके कर्तव्य का उपदेश दिया। राजा प्रसन्न हुए और अपने दरबारियों से पूछा, "मेरी पुत्री ने ऐसा कहा है, इसके लिए उसे क्या पुरस्कार दिया जाए?" राजा ने उत्तर दिया, "महाराज, उसे कोषाध्यक्ष का पद।" "ठीक है, मैं उसे कोषाध्यक्ष का पद देता हूँ," और उन्होंने कुंडलिनी को इस रिक्त पद पर नियुक्त कर दिया। तब से वह इस पद पर आसीन रहीं और राजा के लिए कार्य करती रहीं। कुंडलिनी के प्रश्न की कहानी यहीं समाप्त होती है।

कुछ दिनों के अंतराल के बाद, राजा ने पहले की तरह ही, बुद्धिमान जंबुका के पास एक दूत भेजा। सातवें दिन वहाँ जाकर, भव्य स्वागत पाकर, वह घर लौटा और उसी प्रकार एक मंडप के बीच में बैठ गया। एक दरबारी ने बुद्धिमान जंबुका को सोने से जड़ी एक चौकी पर बिठाया और चौकी को अपने सिर पर रखकर आया। बुद्धिमान पक्षी अपने पिता की गोद में बैठा और उनके साथ खेलता हुआ अंततः सोने की चौकी पर बैठ गया। तब राजा ने उससे एक प्रश्न पूछकर यह श्लोक कहा:

हमने आपके भाई राजकुमार और सुंदर कुंडलिनी दोनों से पूछताछ की है;
अब, जंबुका, क्या तुम मुझे सर्वोच्च शक्ति के बारे में बताओगे?
इस प्रकार राजा ने जब उस महान सत्ता से प्रश्न पूछा, तो उसने अन्य लोगों की तरह नहीं, बल्कि एक विशेष तरीके से पूछा। तब उस बुद्धिमान पक्षी ने उससे कहा, "महाराज, ध्यान से सुनिए, मैं आपको सब कुछ बताता हूँ," और जैसे कोई व्यक्ति किसी के फैले हुए हाथ में हज़ार सिक्कों से भरा पर्स रख देता है, वैसे ही उसने राजा के कर्तव्य का वर्णन करना शुरू किया।

पृथ्वी के महान लोगों के बीच हमें पांच गुना अधिक शक्ति दिखाई देती है;
इनमें से अंगों की शक्ति निस्संदेह सबसे कम है।
और हे सर्वशक्तिमान स्वामी, धन की शक्ति को अगला स्थान दिया जाता है।
हे राजा, मैं इन सबमें तीसरे स्थान पर परामर्श की शक्ति का नाम लेता हूँ;
जाति व्यवस्था की शक्ति को निःसंदेह प्रसिद्धि में चौथे स्थान पर माना जाता है।
और एक बुद्धिमान व्यक्ति निश्चित रूप से इन सभी बातों का दावा करेगा।
इन सभी शक्तियों में से जो शक्ति सर्वश्रेष्ठ है, वह है ज्ञान की शक्ति।
इसी के बल पर मनुष्य बुद्धिमान बनता है और सफलता को अपना बनाता है।
यदि सबसे समृद्ध राज्य किसी बेचारे मूर्ख प्राणी के हिस्से में आ जाए,
दूसरा व्यक्ति अपनी अवज्ञा के चलते हिंसा के बल पर इसे हथिया लेगा।
शासन करने का दायित्व पाने वाला राजकुमार चाहे कितना भी महान क्यों न हो,
यदि वह मूर्ख साबित हुआ तो उसका जीवन यापन करना बेहद मुश्किल हो जाएगा।
बुद्धिमत्ता कर्मों की रिपोर्टों की जांच करती है और मनुष्यों की प्रसिद्धि को बढ़ाती है।
जिसे बुद्धि का वरदान प्राप्त है, वह दुख में भी सुख पा लेता है।
जो लोग ज्ञान के प्रति उदासीन रवैया रखते हैं, वे उसे प्राप्त नहीं कर सकते।
लेकिन बुद्धिमान और न्यायप्रिय लोगों से परामर्श अवश्य लेना चाहिए, अन्यथा अज्ञानी ही बने रहना पड़ेगा।
जो सुबह जल्दी उठकर बिना थके ध्यान देते हैं
कर्तव्य की विभिन्न पुकारों को स्वीकार करने पर, जीवन में सफलता निश्चित है।
कोई भी ऐसा व्यक्ति नहीं जो दूसरों को चोट पहुँचाने पर तुला हो या उदासीन मनोदशा में व्यवहार करता हो।
वह जो भी काम हाथ में लेगा, उसका परिणाम अच्छा ही होगा।
लेकिन एक ऐसा व्यक्ति जो अथक रूप से सही मार्ग का अनुसरण करेगा,
वह जो भी काम करेगा, उसमें पूर्णता अवश्य प्राप्त करेगा।
अपनी दुकान की रक्षा करना ही अधिकाधिक लाभ प्राप्त करना है।
और ये वो बातें हैं जिनका आपको ध्यान रखना चाहिए;
मूर्ख व्यक्ति अपने बुरे कर्मों के कारण नरकट से बने घर के समान होता है।
पतन होता है और अपने पीछे दर्द और विनाश छोड़ जाता है।
इस प्रकार बोधिसत्व ने इन सभी बिंदुओं में पंच शक्तियों की स्तुति की और ज्ञान की शक्ति का गुणगान करते हुए, मानो कोई अपने शब्दों से चंद्रमा के मुख को प्रहार कर रहा हो, उन्होंने ग्यारह श्लोकों में राजा को संबोधित किया:

हे योद्धा राजा, अपने माता-पिता के प्रति न्यायसंगत व्यवहार करो; और इस प्रकार
हे महाराज, धार्मिक जीवन का अनुसरण करके आप स्वर्ग में जाएंगे।
धर्म के मार्ग के बारे में दस छंदों का उच्चारण करने के बाद, राजा को संबोधित करते हुए उन्होंने अंतिम छंद कहा:

इसमें आपके कर्तव्य का पाठ है, जो आपको सही मार्ग सिखाता है:
ज्ञान का अनुसरण करो और सदा सुखी रहो, सत्य को उसकी पूर्णता में जानो।
इस प्रकार, मानो स्वर्ग की गंगा नदी को बहाते हुए, उस महान सत्ता ने बुद्ध के समान आकर्षण के साथ धर्म का उपदेश दिया। सभी ने उनका आदर किया और अनगिनत जयकारे लगाए। राजा प्रसन्न हुए और अपने सलाहकारों से पूछा, "मेरे पुत्र, बुद्धिमान जंबुका, जिसकी चोंच गुलाब-सेब के ताजे फल जैसी है, को इस प्रकार बोलने के लिए क्या पुरस्कार दिया जाए?" "महाराज, सेनापति का पद।" "तो मैं उसे यह पद प्रदान करता हूँ," उन्होंने कहा और उसे रिक्त पद पर नियुक्त कर दिया, और तब से सेनापति के पद पर वह अपने पिता के आदेशों का पालन करता रहा। तीनों पक्षियों का आदर किया गया, और तीनों ने सांसारिक और आध्यात्मिक मामलों में उपदेश दिया। राजा ने महान सत्ता की सलाह का पालन करते हुए, दान और अन्य अच्छे कार्यों से स्वर्ग का मार्ग प्रशस्त किया। राजा के अंतिम संस्कार के बाद सलाहकारों ने पक्षियों से कहा, "मेरे स्वामी, जंबु, राजा ने आपके ऊपर राजसी छत्र उठाने का आदेश दिया है।" उस महान सत्ता ने कहा, "मुझे राज्य की कोई आवश्यकता नहीं है, तुम सब पूरी सतर्कता से शासन करो।" लोगों को नैतिक नियमों में स्थापित करने के बाद उन्होंने कहा, "न्याय का पालन करो।" फिर उन्होंने एक स्वर्ण पट्टिका पर न्यायपूर्ण निर्णय लिखवाया और वन में विलीन हो गए। उनका उपदेश चालीस हजार वर्षों तक प्रभावी रहा।

गुरु (बुद्ध) ने राजा को अपने उपदेश के माध्यम से यह पाठ पढ़ाया और जन्म का वर्णन किया: "उस समय राजा आनंद थे, कुंडलिनी उप्पलावन्ना थीं, वेसंतारा सारिपुत्र थे, और पक्षी जंबू मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सरभंग-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-522-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 522
सरभंग-जातक

"अंगूठियों के साथ और वीरतापूर्वक," इत्यादि - यह कथा गुरु ने बाँस के वन में रहते हुए सुनाई थी, जो वरिष्ठ भिक्षु महान मोग्गल्याना (*1) की मृत्यु से संबंधित थी। वरिष्ठ भिक्षु सारिपुत्र (*2) ने जेतवन मठ में रहते हुए तथागत (बुद्ध) की सहमति प्राप्त करने के बाद, नाला गाँव में उसी कमरे में जाकर उनका निधन हो गया जहाँ उनका जन्म हुआ था। उनकी मृत्यु की सूचना पाकर गुरु राजगृह नगर गए और बाँस के वन में रहने लगे। वहाँ एक वरिष्ठ भिक्षु इसिगिली (संतों का पर्वत) की ढलानों पर काले पत्थर के पास रहते थे। इस व्यक्ति ने अलौकिक शक्ति में पूर्णता प्राप्त कर स्वर्ग और नरक दोनों में प्रवेश करने की क्षमता प्राप्त कर ली थी। देवलोक में उन्होंने बुद्ध के एक शिष्य को अपार शक्ति का आनंद लेते देखा, और मनुष्यलोक में उन्होंने पथभ्रष्ट अनुयायियों के एक शिष्य को घोर पीड़ा भोगते देखा। मनुष्यलोक में लौटकर उन्होंने उन्हें बताया कि कैसे एक विशेष देवलोक में फलां शिष्या (या साध्वी) का पुनर्जन्म हुआ है और वह महान सम्मान का आनंद ले रही है, जबकि पथभ्रष्ट अनुयायियों में फलां पुरुष या स्त्री का पुनर्जन्म नरक या अन्य कष्टमय अवस्थाओं में हुआ है। लोगों ने सहर्ष उनकी शिक्षा को स्वीकार किया और षड्यंत्रकारियों की शिक्षा को अस्वीकार कर दिया। बुद्ध के शिष्यों को महान सम्मान प्राप्त हुआ, जबकि षड्यंत्रकारियों का सम्मान कम हो गया। उन्होंने उस वरिष्ठ भिक्षु के प्रति द्वेष पाल लिया और कहा, "जब तक यह जीवित है, हमारे अनुयायियों में फूट बनी रहेगी और हमारा सम्मान कम होता जाएगा; हम इसे मार डालेंगे।" और उन्होंने तपस्वियों की रक्षा करने वाले एक लुटेरे को वरिष्ठ भिक्षु को मारने के लिए एक हजार सिक्के दिए। लुटेरे ने वरिष्ठ भिक्षु को मारने का निश्चय किया और अपने साथ बड़ी संख्या में अनुयायियों को लेकर ब्लैक रॉक आया। जब बड़े भिक्षु ने उसे आते देखा, तो अपनी जादुई शक्ति से हवा में उड़ गए और गायब हो गए। उस दिन डाकू को बड़े भिक्षु नहीं मिले, इसलिए वह घर लौट आया और लगातार छह दिनों तक हर दिन आता रहा। लेकिन बड़े भिक्षु अपनी जादुई शक्ति से हमेशा उसी तरह गायब हो जाते थे। सातवें दिन बड़े भिक्षु द्वारा किया गया एक पुराना काम, जिसके परिणाम भविष्य में भुगतने को थे, अपना असर दिखाने का मौका पा गया। कहानी यह है कि एक बार अपनी पत्नी की बातें सुनकर, वह अपने माता-पिता को मार डालना चाहता था; और उन्हें एक गाड़ी में बिठाकर जंगल में ले गया, जहाँ उसने बहाना बनाया कि उन पर डाकुओं ने हमला कर दिया है, और अपने माता-पिता को पीटा। दृष्टिहीनता के कारण, वे अपने बेटे को पहचान नहीं पाए और उन्हें डाकू समझकर बोले: "प्यारे बेटे, कुछ डाकू हमें मार रहे हैं: भाग जाओ," और केवल उसके लिए शोक मनाया। उसने सोचा, "भले ही मैं उन्हें पीट रहा हूँ, लेकिन वे केवल मेरे कारण रो रहे हैं। मैं शर्मनाक काम कर रहा हूँ।" इसलिए उसने उन्हें आश्वस्त किया और यह दिखावा करते हुए कि लुटेरे भाग गए हैं, उसने उनके हाथों और पैरों को सहलाते हुए कहा, "प्यारे पिता

और माता, डरो मत, लुटेरे भाग गए हैं।"और उन्हें वापस उनके घर ले आया। यह क्रिया, जो बहुत लंबे समय से अपना अवसर नहीं पा रही थी, बल्कि राख के नीचे छिपी लौ की तरह अपने समय की प्रतीक्षा कर रही थी, अंततः उस व्यक्ति को पकड़ लिया जब उसने अंतिम बार पुनर्जन्म लिया, और इस क्रिया के परिणामस्वरूप, वरिष्ठ भिक्षु हवा में उड़ने में असमर्थ हो गए। उनकी जादुई शक्ति, जो कभी नंदा (*3) और उपनंद को वश में कर सकती थी और वेजयंत को कांपने पर मजबूर कर सकती थी, उनकी क्रिया के परिणामस्वरूप मात्र दुर्बलता बन गई। लुटेरे ने उनकी सभी हड्डियों को कुचल दिया, उन्हें भूसे और आटे की यातना (*4) दी, और यह सोचकर कि वह मर गए हैं, अपने अनुयायियों के साथ चले गए। लेकिन वरिष्ठ भिक्षु ने होश में आने पर ध्यान को वस्त्र की तरह धारण किया, और गुरु के समक्ष उड़कर उन्हें प्रणाम किया और कहा, "पवित्र गुरु, मेरा जीवन समाप्त हो गया है: मैं मरना चाहता हूँ," और गुरु की सहमति प्राप्त करके, वे वहीं पर मर गए। उस क्षण छह देव-लोकों में अफरा-तफरी मच गई। "हमारे “गुरुजी,” वे पुकारे, “मृत हो गए हैं।” और वे धूप, इत्र, दिव्य सुगंध से युक्त मालाएँ और हर तरह की लकड़ियाँ लेकर आए, और चिता चंदन और निन्यानवे कीमती वस्तुओं से बनी थी। गुरुजी, वरिष्ठ भिक्षु के पास खड़े होकर, उनके अवशेषों को दफनाने का आदेश दिया, और जिस स्थान पर शरीर जलाया गया था, उसके चारों ओर एक मील (4.23 किमी) की दूरी तक फूलों की वर्षा हुई, और मनुष्य और देवता (देवदूत) एक साथ खड़े रहे, और सात दिनों तक एक पवित्र उत्सव मनाया। गुरुजी ने वरिष्ठ भिक्षु के अवशेषों को एकत्रित करवाया और बांस के जंगल में एक छज्जे वाले कक्ष में एक मंदिर बनवाया। उस समय उन्होंने सत्य के हॉल में यह विषय उठाया, “महोदय, सारिपुत्र, क्योंकि वे तथागत (बुद्ध) की उपस्थिति में नहीं मरे, इसलिए उन्हें बुद्ध के हाथों महान सम्मान प्राप्त नहीं हुआ, परन्तु महान वरिष्ठ भिक्षु मोग्गल्याना, क्योंकि वे गुरुजी के पास मरे, इसलिए उन्हें महान सम्मान प्राप्त हुआ।” गुरुजी आए उठकर, उसने भाइयों से पूछा कि वे किस विषय पर चर्चा करने के लिए एकत्रित हुए हैं, और जब उसने सुना तो कहा: "भाइयों, केवल अभी ही नहीं, बल्कि पहले भी मोग्गल्याना को मेरे हाथों से बहुत सम्मान प्राप्त हुआ था"; और ऐसा कहते हुए उसने अतीत की एक कहानी सुनाई।उन्होंने उन्हें प्रणाम किया और कहा, "हे परम पूज्य, मेरा जीवन समाप्त हो गया है: मैं मरना चाहता हूँ," और गुरु की सहमति प्राप्त करके वे वहीं पर प्राण त्याग बैठे। उसी क्षण छह देवलोकों में हलचल मच गई। "हमारे गुरु मर गए हैं," वे पुकारे। और वे धूप, इत्र, दिव्य सुगंध से युक्त पुष्पमालाएँ और हर प्रकार की लकड़ियाँ लेकर आए, और चिता चंदन और निन्यानवे बहुमूल्य वस्तुओं से बनाई गई। गुरु, वरिष्ठ भिक्षु के पास खड़े होकर, उनके अवशेषों को विसर्जित करने का आदेश दिया, और जिस स्थान पर शरीर को जलाया गया था, उसके चारों ओर एक मील (4.23 किमी) की दूरी तक फूलों की वर्षा हुई, और मनुष्य और देवदूत एक साथ मिलकर खड़े रहे, और सात दिनों तक एक पवित्र उत्सव मनाया। गुरु ने वरिष्ठ भिक्षु के अवशेषों को एकत्रित करवाया, और बाँस के वन में एक छज्जे वाले कक्ष में एक मंदिर बनवाया। उस समय उन्होंने सत्य के हॉल में यह विषय उठाया और कहा, “महोदय, सारिपुत्र, क्योंकि उनकी मृत्यु तथागत (बुद्ध) की उपस्थिति में नहीं हुई, इसलिए उन्हें बुद्ध के हाथों से उतना सम्मान नहीं मिला, परन्तु महान भिक्षु मोग्गल्याना, क्योंकि उनकी मृत्यु गुरु के निकट हुई, इसलिए उन्हें बहुत सम्मान प्राप्त हुआ।” गुरु आगे आए और भिक्षुओं से पूछा कि वे किस विषय पर चर्चा करने के लिए एकत्रित हुए हैं। जब उन्होंने यह सुना, तो उन्होंने कहा, “भाइयों, केवल अभी ही नहीं, बल्कि पहले भी मोग्गल्याना को मेरे हाथों से बहुत सम्मान प्राप्त हुआ था”; और ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।उन्होंने उन्हें प्रणाम किया और कहा, "हे परम पूज्य, मेरा जीवन समाप्त हो गया है: मैं मरना चाहता हूँ," और गुरु की सहमति प्राप्त करके वे वहीं पर प्राण त्याग बैठे। उसी क्षण छह देवलोकों में हलचल मच गई। "हमारे गुरु मर गए हैं," वे पुकारे। और वे धूप, इत्र, दिव्य सुगंध से युक्त पुष्पमालाएँ और हर प्रकार की लकड़ियाँ लेकर आए, और चिता चंदन और निन्यानवे बहुमूल्य वस्तुओं से बनाई गई। गुरु, वरिष्ठ भिक्षु के पास खड़े होकर, उनके अवशेषों को विसर्जित करने का आदेश दिया, और जिस स्थान पर शरीर को जलाया गया था, उसके चारों ओर एक मील (4.23 किमी) की दूरी तक फूलों की वर्षा हुई, और मनुष्य और देवदूत एक साथ मिलकर खड़े रहे, और सात दिनों तक एक पवित्र उत्सव मनाया। गुरु ने वरिष्ठ भिक्षु के अवशेषों को एकत्रित करवाया, और बाँस के वन में एक छज्जे वाले कक्ष में एक मंदिर बनवाया। उस समय उन्होंने सत्य के हॉल में यह विषय उठाया और कहा, “महोदय, सारिपुत्र, क्योंकि उनकी मृत्यु तथागत (बुद्ध) की उपस्थिति में नहीं हुई, इसलिए उन्हें बुद्ध के हाथों से उतना सम्मान नहीं मिला, परन्तु महान भिक्षु मोग्गल्याना, क्योंकि उनकी मृत्यु गुरु के निकट हुई, इसलिए उन्हें बहुत सम्मान प्राप्त हुआ।” गुरु आगे आए और भिक्षुओं से पूछा कि वे किस विषय पर चर्चा करने के लिए एकत्रित हुए हैं। जब उन्होंने यह सुना, तो उन्होंने कहा, “भाइयों, केवल अभी ही नहीं, बल्कि पहले भी मोग्गल्याना को मेरे हाथों से बहुत सम्मान प्राप्त हुआ था”; और ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

(*5) एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब राजपुजारी की ब्राह्मण पत्नी ने बोधिसत्व को गर्भ धारण कराया और दस माह के बाद सुबह तड़के उनका जन्म हुआ। उसी क्षण बनारस नगर में बारह मील (x 4.23 किमी) के क्षेत्र में सभी प्रकार के शस्त्रों की ज्वाला फैल गई। बालक के जन्म पर पुरोहित घर से बाहर निकले और अपने पुत्र के भाग्य का पता लगाने के उद्देश्य से आकाश की ओर देखा, और उन्हें पता चला कि आकाश में एक विशेष संयोग के तहत जन्म लेने के कारण यह बालक निश्चित रूप से पूरे भारत का प्रमुख धनुर्धर होगा। इसलिए वे सुबह-सुबह महल गए और राजा के स्वास्थ्य के बारे में जानकारी ली। जब उसने उत्तर दिया, “हे स्वामी, मैं कैसे ठीक हो सकता हूँ? आज तो मेरे निवास स्थान में शस्त्रों की ज्वाला गूंज रही है।” तो पुजारी ने कहा, “भयभीत न हों, महाराज; केवल आपके घर में ही नहीं, बल्कि पूरे नगर में शस्त्रों की यह ज्वाला दिखाई दे रही है। ऐसा इसलिए है क्योंकि आज हमारे

घर में एक बालक का जन्म हुआ है।" "हे स्वामी, इन परिस्थितियों में बालक के जन्म का क्या परिणाम होगा?" "कुछ नहीं, महाराज, वह पूरे भारत का सर्वश्रेष्ठ धनुर्धर सिद्ध होगा।" "ठीक है, महाराज, तो आप उसकी देखभाल कीजिए और जब वह बड़ा हो जाए, तो उसे हमारे समक्ष प्रस्तुत कीजिए।" ऐसा कहकर पुजारी ने उसके पालन-पोषण के लिए एक हजार सिक्के देने का आदेश दिया (*6)। पुजारी ने वह राशि ली और घर चला गया। अपने पुत्र के नामकरण के दिन, उसके जन्म के समय शस्त्रों की ज्वाला के कारण, उसने उसका नाम ज्योतिपाला रखा। उसका पालन-पोषण बड़े ही शान-शौकत से हुआ और सोलह वर्ष की आयु में वह अत्यंत सुंदर था। तब उनके पिता ने उनकी विशिष्टता को देखते हुए कहा, "प्रिय पुत्र, तक्षशिला जाओ और विश्वप्रसिद्ध गुरु से समस्त विद्या की शिक्षा प्राप्त करो।" उन्होंने ऐसा करने की सहमति दी और गुरु की फीस लेकर अपने माता-पिता को विदा किया और वहाँ चले गए। उन्होंने एक हजार सिक्के फीस के रूप में दिए और शिक्षा प्राप्त करने में जुट गए, और सात दिनों के भीतर ही उन्होंने सिद्धि प्राप्त कर ली। उनके गुरु उनसे इतने प्रसन्न हुए कि उन्होंने उन्हें अपनी एक बहुमूल्य तलवार, मेढ़े के सींग से बना धनुष और बाण का खोल, दोनों को सुंदर ढंग से जोड़कर, अपना कवच और मुकुट भेंट किया और कहा, "प्रिय ज्योतिपाल, मैं बूढ़ा हो गया हूँ, क्या अब आप इन शिष्यों को प्रशिक्षण देंगे?" और उन्होंने पाँच सौ शिष्यों को उनके हवाले कर दिया। बोधिसत्व ने सब कुछ अपने साथ लेकर अपने गुरु को विदाई दी और बनारस लौटकर अपने माता-पिता से मिलने गए। तब उनके पिता ने उन्हें अपने सामने आदरपूर्वक खड़े देखकर कहा, "पुत्र, क्या तुमने अपनी पढ़ाई पूरी कर ली है?" "जी हाँ।" उसका जवाब सुनकर वह महल गया और बोला, "महाराज, मेरे बेटे ने अपनी शिक्षा पूरी कर ली है: अब वह क्या करे?" "मालिक, उसे हमारी सेवा करने दो।" "महाराज, उसके खर्चों के बारे में आपका क्या निर्णय है?" "उसे प्रतिदिन एक हजार सिक्के दिए जाएं।" वह तुरंत मान गया, और घर लौटकर उसने अपने बेटे को अपने पास बुलाया और कहा,"प्रिय पुत्र, तुम्हें राजा की सेवा करनी है।" तब से उसे प्रतिदिन एक हजार सिक्के मिलते थे और वह राजा की सेवा में तत्पर रहता था। राजा के सेवक नाराज़ हो गए; "हमें तो ज्योतिपाला का कोई काम नज़र नहीं आता, उसे तो प्रतिदिन एक हजार सिक्के मिलते हैं। हम तो उसकी कला का नमूना देखना चाहते हैं।" राजा ने उनकी बात सुनी और पुजारी को बताया। पुजारी ने कहा, "ठीक है महाराज," और अपने पुत्र को बताया। "बहुत अच्छा, प्रिय पिता," उसने कहा, "इस दिन के सातवें दिन मैं उन्हें दिखाऊंगा: राजा अपने राज्य के सभी धनुर्धारियों को इकट्ठा करें।" पुजारी गया और उसने राजा को वही बात दोहराई। राजा ने ढोल बजाकर पूरे शहर में अपने सभी धनुर्धारियों को इकट्ठा करवाया। जब वे एकत्रित हुए, तो उनकी संख्या साठ हजार थी। राजा ने यह सुनकर कि वे एकत्रित हो गए हैं, कहा: "शहर में रहने वाले सभी लोग ज्योतिपाला की कला देखें।" ढोल बजाकर घोषणा करते हुए उन्होंने महल के प्रांगण को तैयार करवाया और एक विशाल जनसमूह के साथ भव्य सिंहासन पर विराजमान हुए। धनुर्धारियों को बुलाकर उन्होंने ज्योतिपाला को बुलवाया। ज्योतिपाला ने अपने गुरु द्वारा दिए गए धनुष, बाण-कोष, कवच और मुकुट को अपने अंतर्वस्त्र के नीचे छिपा लिया और तलवार मंगवाकर राजा के सामने साधारण वेश में उपस्थित हुए और एक ओर आदरपूर्वक खड़े हो गए। धनुर्धारियों ने सोचा, "ज्योतिपाला हमें अपने कौशल का प्रदर्शन करने आए हैं, लेकिन उनके बिना धनुष के आने से स्पष्ट है कि वे हमसे धनुष लेना चाहेंगे।" परन्तु वे सब इस बात पर सहमत हुए कि वे उन्हें धनुष नहीं देंगे। राजा ने ज्योतिपाला से कहा, "अपने कौशल का प्रमाण दिखाओ।" अतः ज्योतिपाला ने अपने चारों ओर तंबू जैसा पर्दा डलवाया और उसके भीतर खड़े होकर अपना लबादा उतारकर कवच पहन लिया और मुकुट को अपने सिर पर धारण कर लिया। फिर उसने अपने मेढ़े के रंग के धनुष पर मूंगे की डोरी लगाई, अपने बाण का थैला पीठ पर बाँधा और अपनी तलवार बाएँ कमर पर बाँधी, फिर उसने अपने नाखून पर हीरे जड़ा बाण घुमाया, और पर्दा हटाकर नाग राजकुमार की तरह पृथ्वी से प्रकट होते हुए तेज गति से आगे बढ़ा, भव्य रूप से सुसज्जित होकर, और राजा को प्रणाम किया। उसे देखकर सभी उछल पड़े, चिल्लाए और तालियाँ बजाईं। राजा ने कहा, "ज्योतिपाला, हमें अपनी कुशलता का एक नमूना दिखाओ।" उसने कहा, "महाराज, आपके धनुर्धारियों में ऐसे पुरुष हैं जो बिजली की तरह भेदन करते हैं (*7), बाल को भी चीर सकते हैं, आवाज सुनकर (बिना देखे) तीर चला सकते हैं और गिरते हुए बाण को भी चीर सकते हैं। इनमें से चार धनुर्धारियों को बुलाइए।" राजा ने उन्हें बुलाया। उस महान प्राणी ने महल के प्रांगण में एक वर्गाकार घेरे में एक मंडप स्थापित किया, और चारों कोनों पर उसने चार धनुर्धारियों को तैनात किया, और उनमें से प्रत्येक को तीस हजार तीर आवंटित किए, और प्रत्येक को तीर देने के लिए आदमी नियुक्त किए, और स्वयं हीरे की नोक वाला एक तीर लेकर मंडप के बीच में खड़ा हो गया और चिल्लाया।"हे महाराज, इन चारों धनुर्धारियों को एक साथ अपने बाण चलाकर मुझे घायल करने दीजिए; मैं उनके बाणों को रोक लूँगा।" राजा ने उन्हें ऐसा करने का आदेश दिया। "महाराज," उन्होंने कहा, "हम बिजली की गति से तीर चलाते हैं, बाल को भी चीर सकते हैं, आवाज सुनकर (बिना देखे) तीर चला सकते हैं, और गिरते हुए बाण को भी चीर सकते हैं, लेकिन ज्योतिपाल तो अभी बच्चा है; हम उसे तीर नहीं चलाएँगे।" महापुरुष ने कहा, "यदि कर सकते हो, तो मुझे तीर चलाओ।" "सहमत," उन्होंने कहा, और एकमत होकर अपने बाण चला दिए। उस महान प्राणी ने अपने लोहे के बाण से उन पर ज़ोरदार प्रहार किया और किसी न किसी तरह उन्हें ज़मीन पर गिरा दिया। फिर उसने उनके चारों ओर एक दीवार (*8) खड़ी कर दी और उन्हें एक साथ ढेर कर बाणों का भंडार बना लिया। उसने हर बाण को इस तरह फिट किया कि हैंडल हैंडल से, बट बट से, पंख पंख से, जब तक कि सभी धनुर्धारियों के बाण समाप्त नहीं हो गए। जब उसने देखा कि ऐसा हो गया है, तो उसने अपने बाणों के भंडार को खाली किए बिना ही हवा में उड़कर राजा के सामने खड़ा हो गया। जनता ने ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाना, नाचना और तालियाँ बजाना शुरू कर दिया। उन्होंने अपने वस्त्र और आभूषण उतार फेंके, जिससे अठारह करोड़ (10 मिलियन) रुपये का खजाना ढेर हो गया। तब राजा ने उससे पूछा, "ज्योतिपाल, तुम इस चाल को क्या कहते हो?" "महाराज, इसे बाण-रक्षा कहते हैं।" "क्या इसे जानने वाला कोई और है?" "महाराज, मेरे सिवा पूरे भारत में कोई नहीं।" "मित्र, हमें कोई और चाल दिखाओ।" "महाराज, चारों कोनों पर तैनात ये चारों आदमी मुझे घायल नहीं कर पाए। लेकिन अगर इन्हें चारों कोनों पर तैनात किया जाए, तो मैं एक ही तीर से

इन्हें घायल कर दूंगा।" तीरंदाज वहाँ खड़े होने की हिम्मत नहीं कर पाए। इसलिए उस महान शक्ति ने चारों कोनों पर चार केले गाड़ दिए, और तीर के पंख वाले हिस्से पर लाल धागा बाँधकर, एक केले पर निशाना साधते हुए तीर चलाया। तीर पहले केले पर लगा, फिर दूसरे, तीसरे और चौथे पर, एक के बाद एक, और फिर पहले केले पर लगा, जिसे वह पहले ही भेद चुका था, और इस तरह तीरंदाज के हाथ में लौट आया; जबकि केले धागे से घिरे रहे। लोगों ने खूब तालियाँ बजाईं। राजा ने पूछा, "मित्र, इस करतब को क्या कहते हो?" "भेदा हुआ घेरा, महाराज।" "हमें कुछ और दिखाओ।" उस महान प्राणी ने उन्हें बाण-छड़ी, बाण-रस्सी, बाण-बुनाई दिखाई और बाण-छतरी, बाण-मंडप, बाण-दीवार, बाण-सीढ़ी, बाण-तालाब जैसे अन्य करतब दिखाए और बाण-कमल को खिलाया तथा उससे बाणों की बौछार करवाई।मुझे तीर मारो।" "सहमत," उन्होंने कहा और एकमत होकर अपने तीर चला दिए। उस महान प्राणी ने अपने लोहे के तीर से उन पर ज़ोरदार प्रहार किया और किसी न किसी तरह उन्हें ज़मीन पर गिरा दिया। फिर उसने उनके चारों ओर एक दीवार (*8) खड़ी कर दी और उन्हें एक साथ ढेर कर तीरों का भंडार बना लिया। उसने हर तीर को इस तरह फिट किया कि हैंडल हैंडल से, बट बट से, पंख पंख से, जब तक कि सभी धनुर्धारियों के तीर खत्म नहीं हो गए। जब उसने देखा कि ऐसा हो गया है, तो उसने अपने तीरों के भंडार को बर्बाद किए बिना हवा में उड़कर राजा के सामने खड़ा हो गया। जनता ने ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाते हुए, नाचते हुए और तालियाँ बजाते हुए शोर मचाया और अपने वस्त्र और आभूषण उतार फेंके, जिससे अठारह करोड़ (10 मिलियन) रुपये का खजाना ढेर हो गया। तब राजा ने उससे पूछा, "ज्योतिपाल, तुम इस चाल को क्या कहते हो?" "महाराज, इसे तीर-रक्षा कहते हैं।" "क्या इसे जानने वाला कोई और है?" "महाराज, मेरे सिवा पूरे भारत में कोई नहीं।" "मित्र, हमें कोई और चाल दिखाओ।" "महाराज, चारों कोनों पर तैनात ये चारों आदमी मुझे घायल करने में असफल रहे।" लेकिन अगर उन्हें चारों कोनों पर रखा जाए, तो मैं उन्हें एक ही तीर से घायल कर दूंगा।" तीरंदाज वहाँ खड़े होने की हिम्मत नहीं कर पाए। इसलिए उस महान प्राणी ने चारों कोनों पर चार केले गाड़ दिए, और तीर के पंख वाले हिस्से पर लाल धागा बांधकर, एक केले पर निशाना साधते हुए तीर चलाया। तीर पहले केले को लगा, फिर दूसरे, तीसरे और चौथे को, एक के बाद एक, और फिर पहले केले को लगा, जिसे वह पहले ही भेद चुका था, और इस तरह तीरंदाज के हाथ में लौट आया; जबकि केले धागे से घिरे रहे। लोगों ने खूब तालियाँ बजाईं। राजा ने पूछा, "मित्र, इस करतब को क्या कहते हो?" "भेदा हुआ घेरा, महाराज।" "हमें कुछ और दिखाओ।" उस महान प्राणी ने उन्हें तीर-छड़ी, तीर-रस्सी, तीर-बुनाई दिखाई, और तीर-छतरी, तीर-मंडप, तीर-दीवार, तीर-सीढ़ी, तीर-तालाब जैसे अन्य करतब दिखाए, और तीर-कमल को खिलाया और उससे तीरों की बौछार करवाई।मुझे तीर मारो।" "सहमत," उन्होंने कहा और एकमत होकर अपने तीर चला दिए। उस महान प्राणी ने अपने लोहे के तीर से उन पर ज़ोरदार प्रहार किया और किसी न किसी तरह उन्हें ज़मीन पर गिरा दिया। फिर उसने उनके चारों ओर एक दीवार (*8) खड़ी कर दी और उन्हें एक साथ ढेर कर तीरों का भंडार बना लिया। उसने हर तीर को इस तरह फिट किया कि हैंडल हैंडल से, बट बट से, पंख पंख से, जब तक कि सभी धनुर्धारियों के तीर खत्म नहीं हो गए। जब उसने देखा कि ऐसा हो गया है, तो उसने अपने तीरों के भंडार को बर्बाद किए बिना हवा में उड़कर राजा के सामने खड़ा हो गया। जनता ने ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाते हुए, नाचते हुए और तालियाँ बजाते हुए शोर मचाया और अपने वस्त्र और आभूषण उतार फेंके, जिससे अठारह करोड़ (10 मिलियन) रुपये का खजाना ढेर हो गया। तब राजा ने उससे पूछा, "ज्योतिपाल, तुम इस चाल को क्या कहते हो?" "महाराज, इसे तीर-रक्षा कहते हैं।" "क्या इसे जानने वाला कोई और है?" "महाराज, मेरे सिवा पूरे भारत में कोई नहीं।" "मित्र, हमें कोई और चाल दिखाओ।" "महाराज, चारों कोनों पर तैनात ये चारों आदमी मुझे घायल करने में असफल रहे।" लेकिन अगर उन्हें चारों कोनों पर रखा जाए, तो मैं उन्हें एक ही तीर से घायल कर दूंगा।" तीरंदाज वहाँ खड़े होने की हिम्मत नहीं कर पाए। इसलिए उस महान प्राणी ने चारों कोनों पर चार केले गाड़ दिए, और तीर के पंख वाले हिस्से पर लाल धागा बांधकर, एक केले पर निशाना साधते हुए तीर चलाया। तीर पहले केले को लगा, फिर दूसरे, तीसरे और चौथे को, एक के बाद एक, और फिर पहले केले को लगा, जिसे वह पहले ही भेद चुका था, और इस तरह तीरंदाज के हाथ में लौट आया; जबकि केले धागे से घिरे रहे। लोगों ने खूब तालियाँ बजाईं। राजा ने पूछा, "मित्र, इस करतब को क्या कहते हो?" "भेदा हुआ घेरा, महाराज।" "हमें कुछ और दिखाओ।" उस महान प्राणी ने उन्हें तीर-छड़ी, तीर-रस्सी, तीर-बुनाई दिखाई, और तीर-छतरी, तीर-मंडप, तीर-दीवार, तीर-सीढ़ी, तीर-तालाब जैसे अन्य करतब दिखाए, और तीर-कमल को खिलाया और उससे तीरों की बौछार करवाई।"क्या इसे जानने वाला कोई और है?" "महाराज, मेरे सिवा पूरे भारत में कोई नहीं।" "कोई और तरकीब दिखाओ, दोस्त।" "महाराज, चारों कोनों पर तैनात ये चारों आदमी मुझे घायल करने में नाकाम रहे।" लेकिन अगर उन्हें चारों कोनों पर रखा जाए, तो मैं उन्हें एक ही तीर से घायल कर दूंगा।" तीरंदाज वहाँ खड़े होने की हिम्मत नहीं कर पाए। इसलिए उस महान प्राणी ने चारों कोनों पर चार केले गाड़ दिए, और तीर के पंख वाले हिस्से पर लाल धागा बांधकर, एक केले पर निशाना साधते हुए तीर चलाया। तीर पहले केले को लगा, फिर दूसरे, तीसरे और चौथे को, एक के बाद एक, और फिर पहले केले को लगा, जिसे वह पहले ही भेद चुका था, और इस तरह तीरंदाज के हाथ में लौट आया; जबकि केले धागे से घिरे रहे। लोगों ने खूब तालियाँ बजाईं। राजा ने पूछा, "मित्र, इस करतब को क्या कहते हो?" "भेदा हुआ घेरा, महाराज।" "हमें कुछ और दिखाओ।" उस महान प्राणी ने उन्हें तीर-छड़ी, तीर-रस्सी, तीर-बुनाई दिखाई, और तीर-छतरी, तीर-मंडप, तीर-दीवार, तीर-सीढ़ी, तीर-तालाब जैसे अन्य करतब दिखाए, और तीर-कमल को खिलाया और उससे तीरों की बौछार करवाई।"क्या इसे जानने वाला कोई और है?" "महाराज, मेरे सिवा पूरे भारत में कोई नहीं।" "कोई और तरकीब दिखाओ, दोस्त।" "महाराज, चारों कोनों पर तैनात ये चारों आदमी मुझे घायल करने में नाकाम रहे।" लेकिन अगर उन्हें चारों कोनों पर रखा जाए, तो मैं उन्हें एक ही तीर से घायल कर दूंगा।" तीरंदाज वहाँ खड़े होने की हिम्मत नहीं कर पाए। इसलिए उस महान प्राणी ने चारों कोनों पर चार केले गाड़ दिए, और तीर के पंख वाले हिस्से पर लाल धागा बांधकर, एक केले पर निशाना साधते हुए तीर चलाया। तीर पहले केले को लगा, फिर दूसरे, तीसरे और चौथे को, एक के बाद एक, और फिर पहले केले को लगा, जिसे वह पहले

ही भेद चुका था, और इस तरह तीरंदाज के हाथ में लौट आया; जबकि केले धागे से घिरे रहे। लोगों ने खूब तालियाँ बजाईं। राजा ने पूछा, “मित्र, इस करतब को क्या कहते हो?” “भेदा हुआ घेरा, महाराज।” “हमें कुछ और दिखाओ।” उस महान प्राणी ने उन्हें तीर-छड़ी, तीर-रस्सी, तीर-बुनाई दिखाई, और तीर-छतरी, तीर-मंडप, तीर-दीवार, तीर-सीढ़ी, तीर-तालाब जैसे अन्य करतब दिखाए, और तीर-कमल को खिलाया और उससे तीरों की बौछार करवाई।

इस प्रकार उन्होंने कौशल के ये बारह अद्वितीय कारनामे दिखाए, और फिर उन्होंने सात अतुलनीय विशाल वस्तुओं को विच्छेदित किया। उन्होंने आठ इंच मोटी अंजीर की लकड़ी का तख्ता, चार इंच मोटी आसन की लकड़ी का तख्ता, दो इंच मोटी तांबे की थाली, एक इंच मोटी लोहे की थाली को भेदा, और सौ तख्तों को एक के बाद एक भेदने के बाद, उन्होंने भूसे, रेत और तख्तों से भरी गाड़ियों के आगे के हिस्से पर तीर चलाया और उसे पीछे से निकाल दिया; और गाड़ियों के पीछे तीर चलाकर, उन्होंने तीर को आगे से निकाल दिया। उन्होंने एक फर्लांग से अधिक पानी और दो फर्लांग से अधिक मिट्टी में तीर चलाया, और हवा के चलने के पहले संकेत पर ही आधे फर्लांग की दूरी पर एक बाल को भेद दिया। और जब उन्होंने कौशल के ये सभी कारनामे प्रदर्शित कर दिए, तब सूर्य अस्त हो गया। तब राजा ने उन्हें सेनापति का पद देने का वादा करते हुए कहा, "ज्योतिपाल, आज बहुत देर हो चुकी है; कल तुम्हें सेनापति का पदभार ग्रहण करने का सम्मान मिलेगा। जाओ, अपनी दाढ़ी मुंडवा लो और स्नान कर लो।" उसी दिन राजा ने उनके खर्चों के लिए उन्हें एक लाख सिक्के दिए। ज्योतिपाल ने कहा, "मुझे इसकी आवश्यकता नहीं है," और उन्होंने अपने सामंतों को अठारह करोड़ (10 मिलियन) का खजाना दिया और एक बड़े दल के साथ स्नान करने चले गए। दाढ़ी मुंडवाने और स्नान करने के बाद, वे सभी प्रकार के आभूषणों से सज-धज कर अपने निवास में अभूतपूर्व वैभव के साथ प्रवेश किया। विभिन्न प्रकार के लज़ीज़ भोजन का आनंद लेने के बाद, वे उठे और राजसी पलंग पर लेट गए। दो पहरों तक सोने के बाद, अंतिम पहर में वे जागे और अपने पलंग पर पालथी मारकर बैठ गए, अपने कौशल के आरंभ, मध्य और अंत पर विचार करने लगे। “मेरी कुशलता,” उसने सोचा, “शुरुआत में स्पष्ट रूप से मृत्यु है, मध्य में पाप का भोग है, और अंत में नरक में पुनर्जन्म है: क्योंकि जीवन का विनाश और पापमय भोग में अत्यधिक लापरवाही नरक में पुनर्जन्म का कारण बनती है। सेनापति का पद मुझे राजा द्वारा दिया गया है, और मुझे महान शक्ति प्राप्त होगी, और मेरी एक पत्नी और कई संतानें होंगी; लेकिन यदि इच्छाओं की पूर्ति न हो, तो इच्छाओं से छुटकारा पाना कठिन होगा। मैं अकेले ही संसार छोड़कर वन में प्रवेश करूँगा: मेरे लिए तपस्वी का जीवन अपनाना उचित है।” अतः वह महान पुरुष अपने पलंग से उठा, और किसी को बताए बिना, वह चबूतरे से नीचे उतरा, और घर के द्वार (*9) से बाहर निकलकर अकेले ही वन में चला गया, और गोदावरी नदी के किनारे कवित्था (*10) वन के पास, तीन कुंड (x 4.23 किमी) के विस्तार वाले एक स्थान पर गया। सक्का (इंद्र) ने जगत के त्याग के बारे में सुनकर विश्वकर्मा को बुलाया और कहा, "मित्र, ज्योतिपाल ने जगत का त्याग कर दिया है; उनके चारों ओर एक बड़ा समूह एकत्रित होगा। कवित्थ वन में गोदावरी नदी के किनारे एक आश्रम बनवाओ और उन्हें तपस्वी जीवन के लिए आवश्यक सभी चीजें प्रदान करो।" विश्वकर्मा ने वैसा ही किया। जब वह महान प्राणी उस स्थान पर पहुँचे,एक पैदल यात्री के लिए बनी सड़क देखकर उन्होंने सोचा, "यह अवश्य ही तपस्वियों के रहने का स्थान होगा।" इस सड़क पर चलते हुए, जब उन्हें कोई नहीं मिला, तो वे पत्तों की कुटिया में प्रवेश कर गए। तपस्वी जीवन की आवश्यक वस्तुएँ देखकर उन्होंने कहा, "मुझे लगता है कि स्वर्ग के राजा सक्का (इंद्र) जानते थे कि मैंने संसार का त्याग कर दिया है।" उन्होंने अपना लबादा उतारकर, रंगे हुए छाल के भीतरी और बाहरी वस्त्र धारण किए और एक कंधे पर हिरण की खाल डाल ली। फिर उन्होंने अपनी जटाओं को बांधा, तीन बोरी अनाज की थैली कंधे पर रखी, भिक्षु की लाठी ली और तेजी से अपनी कुटिया से निकल पड़े। वे ढके हुए रास्ते पर चढ़कर कई बार चक्कर लगाने लगे। इस प्रकार उन्होंने तपस्या के सौंदर्य से वन को सुशोभित किया, और कसीना अनुष्ठान संपन्न करने के बाद, अपने संन्यासी जीवन के सातवें दिन उन्होंने आठों सिद्धियाँ और पाँचों इंद्रियाँ प्राप्त कीं, और एकांतवास में रहकर जो कुछ वे एकत्रित कर पाते थे, उसे खाकर तथा जड़ों और बेरों का सेवन करके अपना जीवन व्यतीत किया। उनके माता-पिता और मित्रों, परिवार और परिचितों की भीड़ उन्हें न देखकर व्याकुल होकर भटकती रही। तब एक वनपाल ने, जिसने कवित्था आश्रम में उस महान पुरुष को देखा और पहचाना था, उनके माता-पिता को सूचना दी और उन्होंने राजा को सूचित किया। राजा ने कहा, "चलो, हम उनसे मिलने चलते हैं," और माता-पिता को लेकर, और बहुत से लोगों के साथ, वे उस मार्ग से गोदावरी नदी के तट पर पहुँचे जो वनपाल ने उन्हें दिखाया था। नदी के किनारे आकर बोधिसत्व वायु में विराजमान हो गए और उन्हें धर्म का उपदेश देने के बाद अपने आश्रम में ले आए। वहाँ भी वे वायु में ही विराजमान होकर उन्हें इंद्रिय सुखों के कष्टों के बारे में बताते हुए धर्म का उपदेश देते रहे। राजा समेत सभी ने संन्यासी जीवन व्यतीत करना शुरू कर दिया। बोधिसत्व तपस्वियों के समूह से घिरे हुए वहीं निवास करते रहे। उनके वहाँ निवास करने की खबर पूरे भारत में फैल गई। राजा और उनकी प्रजा उनके पास आकर शिष्यत्व ग्रहण करने लगे और उनकी एक विशाल सभा होने लगी, जिनकी संख्या धीरे-धीरे हजारों तक पहुँच गई। जो भी व्यक्ति कामवासना के विचार करता, या दूसरों को दुख पहुँचाने की इच्छा रखता, बोधिसत्व उसके पास प्रकट होते और वायु में विराजमान होकर उसे धर्म का उपदेश देते तथा कसीना विधि का प्रशिक्षण देते। उनके सात प्रमुख शिष्य थे: सालिसारा (*11), मेंडिसारा, पब्बटा, कलादेवला, किसावच्छा, अनुसिस्सा और नारद। उन्होंने उनकी सलाह का पालन करते हुए समाधि अवस्था में पहुंचकर पूर्णता प्राप्त की। समय बीतने के साथ कवित्थ आश्रम में भीड़ बढ़ गई और इतने सारे तपस्वियों के रहने के लिए जगह नहीं बची। तब भगवान ने सालिसारा से कहा, "सालिसारा, यह आश्रम इतने सारे तपस्वियों के लिए पर्याप्त नहीं है; क्या आप अपने साथ इन तपस्वियों को लेकर राजा चंदापज्जोत के प्रांत में स्थित लंबकुलक नगर के पास चले जाएंगे?" सालिसारा मान गए और हजारों तपस्वियों को लेकर वहां जाकर रहने लगे।लेकिन जैसे-जैसे लोग आते रहे और

तपस्वियों से जुड़ते रहे, आश्रम फिर से भर गया। बोधिसत्व ने मेंडिसारा को संबोधित करते हुए कहा, "सुरत्था देश की सीमा पर सतोदिका नामक एक नदी है। तपस्वियों के इस समूह को लेकर उस नदी के किनारे निवास करो।" और उन्होंने उसे विदा कर दिया। इसी प्रकार तीसरी बार उन्होंने पब्बता को यह कहते हुए भेजा, "बड़े जंगल में अंजना पर्वत है: जाओ और उसके पास निवास करो।" चौथी बार उन्होंने कालदेवला को यह कहते हुए भेजा, "दक्षिण देश में अवंती राज्य में घनसेल पर्वत है: उसके पास निवास करो।" कवित्था आश्रम फिर से भर गया, हालांकि पाँच अलग-अलग स्थानों पर उन्नीस हज़ार तपस्वियों का समूह था। और किसावच्छ ने महापुरुष से अनुमति लेकर दंडकी के प्रांत में कुंभवती नगर में सेनापति के पास स्थित उद्यान में अपना निवास स्थान बनाया। नारद मध्य प्रांत में अरंजारा पर्वत श्रृंखला में बस गए, और अनुसिसा उनके साथ रहीं। इसी समय राजा दंडकी ने एक शाही नर्तकी और वेश्या को, जिसे उन्होंने बहुत सम्मान दिया था, उसके पद से हटा दिया। अनुसिसा अपनी इच्छा से घूमते हुए एक उद्यान में आईं और तपस्वी किसावच्छ को देखकर उन्होंने सोचा, "यह तो दुर्भाग्य है। मैं अपना पाप इन पर त्याग दूंगी और फिर स्नान करूंगी।" उन्होंने पहले अपने दांत से बलगम को दांतों से दबाकर थूका और न केवल तपस्वी की जटाओं पर थूका, बल्कि अपना दांत भी उनके सिर पर फेंक दिया और स्नान करने चली गईं। राजा ने उन्हें याद दिलाकर अनुसिसा को उनके पुराने पद पर बहाल कर दिया। अपने इस कुकर्म से आहत होकर अनुसिसा इस निष्कर्ष पर पहुंची कि उन्होंने यह सम्मान इसलिए वापस पाया है क्योंकि उन्होंने दुर्भाग्य के व्यक्ति पर अपना पाप त्याग दिया था। इसके कुछ समय बाद ही राजा ने अपने पारिवारिक पुजारी को पद से हटा दिया और उस स्त्री से पूछा कि उसने अपना पद कैसे पुनः प्राप्त किया। उसने बताया कि उसने राजमहल में दुर्भाग्य के देवता पर पाप का प्रायश्चित कर लिया था। पुजारी ने भी उसी प्रकार अपने पाप का प्रायश्चित किया और राजा ने उसे भी उसके पद पर पुनः स्थापित कर दिया। कुछ समय बाद राजा की सीमा पर अशांति फैल गई और वह अपनी सेना की एक टुकड़ी के साथ लड़ने के लिए आगे बढ़ा। तब उस मोहित पुजारी ने राजा से पूछा, "महाराज, आप विजय चाहते हैं या पराजय?" जब राजा ने उत्तर दिया, "विजय," तो उसने कहा, "राजमहल में दुर्भाग्य का देवता निवास करता है; जाओ और अपने पाप का प्रायश्चित उसके पास करो।" राजा को यह सुझाव पसंद आया और उसने कहा, "इन लोगों को मेरे साथ राजमहल में चलने दो और दुर्भाग्य के देवता पर अपने पाप का प्रायश्चित करने दो।" और पार्क में जाकर, उसने सबसे पहले अपनी दाढ़ चबाई और थूक तथा दाढ़ को तपस्वी की जटाओं पर गिराया और फिर उसका सिर धोया, और उसकी सेना ने भी ऐसा ही किया। जब राजा चला गया तो सेनापति आया, और तपस्वी को देखकर उसने उसकी जटाओं से दाढ़ निकाली और उसे अच्छी तरह से धुलवाया और फिर पूछा,"राजा का क्या होगा?" "महाराज, मेरे मन में कोई बुरा विचार नहीं है, परन्तु देवता (देवदूत) क्रोधित हैं और सातवें दिन उनका सारा राज्य नष्ट हो जाएगा: आप शीघ्रता से भागकर कहीं और चले जाइए।" वह अत्यंत भयभीत हो गया और जाकर राजा को यह बात बताई। राजा ने उसकी बात पर विश्वास नहीं किया, इसलिए वह अपने घर लौट आया और अपनी पत्नी एवं बच्चों को साथ लेकर दूसरे राज्य में भाग गया। गुरु सरभंग (*12) ने यह सुनकर दो युवा तपस्वियों को भेजा और किसावच्छ को पालकी में हवा के द्वारा अपने पास बुलवाया। राजा ने युद्ध लड़ा और विद्रोहियों को बंदी बनाकर नगर लौट आया। उसके लौटने पर देवताओं (देवदूतों) ने सबसे पहले स्वर्ग से वर्षा कराई, और जब सभी मृत शरीर वर्षा की बाढ़ में बह गए, तो निर्मल सफेद रेत पर दिव्य फूलों की बौछार हुई, और उन फूलों पर छोटे सिक्कों की वर्षा हुई, और उनके बाद बड़े सिक्कों की बौछार हुई, और फिर दिव्य आभूषणों की बौछार हुई। लोग अत्यंत प्रसन्न हुए और सोने के आभूषण, यहाँ तक कि शुद्ध सोने के आभूषण भी उठाने लगे। फिर उन पर हर प्रकार के धधकते हथियारों की बौछार हुई, और लोग टुकड़े-टुकड़े हो गए। फिर उन पर धधकते अंगारों की बौछार हुई, और इन विशाल धधकती पर्वत चोटियों पर, साठ भुजाओं के बराबर क्षेत्र में महीन रेत की बौछार हुई। इस प्रकार उसके राज्य का साठ लीग (x 4.23 किमी) का एक भाग नष्ट हो गया, और उसकी तबाही की खबर पूरे भारत में फैल गई। तब उनके राज्य के अधीन अधीनस्थ राज्यों के तीनों राजा, कलिंग, अत्तक और भीमरथ, सोचने लगे, "एक समय बनारस में, काशी के राजा कलाबु (*13) ने तपस्वी खन्तीवादी के विरुद्ध पाप किया था, जिसके कारण वे पृथ्वी में समा गए थे। इसी प्रकार नालिकीरा ने भी तपस्वियों को कुत्तों के द्वारा खा जाने के लिए सौंप दिया था, और हजार भुजाओं वाले अज्जुन (*14) ने भी अंगिरस के विरुद्ध पाप किया था, जिसके कारण उनका भी नाश हो गया। अब फिर से दंडकी राजा ने किसावच्छ के विरुद्ध पाप किया था, जिसके कारण उनका राज्य भी नष्ट हो गया है। हमें नहीं पता कि ये चारों राजा कहाँ पुनर्जन्म लेते हैं: हमारे स्वामी सरभंग के सिवा कोई भी हमें यह नहीं बता सकता। हम जाकर उनसे पूछेंगे।" और तीनों राजा बड़े धूमधाम से यह प्रश्न पूछने के लिए चल पड़े। यद्यपि उन्होंने यह अफवाह सुनी थी कि फलां व्यक्ति चला गया है, फिर भी उन्हें वास्तव में इसका पता नहीं था, परन्तु प्रत्येक ने यह कल्पना की कि वह अकेला ही जा रहा है। गोदावरी से कुछ ही दूरी पर वे सब मिले और अपने रथों से उतरकर तीनों एक ही रथ पर सवार होकर गोदावरी के तट की ओर चल पड़े। इस समय सक्का (इंद्र), अपने पीले संगमरमर के सिंहासन पर बैठे हुए, सात प्रश्नों पर विचार करने लगे और मन ही मन बोले, "सर्वोच्च स्वामी सरभंग के सिवा इस संसार में या देव-लोक में कोई और ऐसा नहीं है जो इन प्रश्नों का उत्तर दे सके: मैं उनसे ही ये प्रश्न पूछूंगा। ये तीनों राजा सर्वोच्च स्वामी सरभंग से पूछताछ करने गोदावरी के तट पर आए हैं।"मैं उनके द्वारा पूछे गए प्रश्नों के बारे में भी उनसे परामर्श करूँगा।" और, दो देवलोकों के देवताओं के साथ, वे स्वर्ग से अवतरित हुए। उसी दिन किसावच्छा का निधन हो गया, और उनके अंतिम संस्कार के लिए, चार अलग-अलग स्थानों में रहने वाले असंख्य तपस्वियों के समूहों ने चंदन की लकड़ियों का ढेर लगाकर उनके शरीर को जला दिया, और उनके दाह संस्कार स्थल के चारों ओर आधा मील (4.23 किमी) के दायरे में दिव्य पुष्पों की वर्षा हुई। महापुरुष ने अपने अवशेषों को विसर्जित करने के बाद, आश्रम में प्रवेश किया और तपस्वियों के इन समूहों के साथ बैठ गए। जब राजा नदी के किनारे पहुँचे तो उन्हें युद्ध संगीत की ध्वनि सुनाई दी।

महापुरुष ने इसे सुनकर तपस्वी अनुसिस्सा को संबोधित किया और कहा, "जाओ और जानो कि इस संगीत का क्या अर्थ है"; और पीने के पानी का कटोरा लेकर वे वहाँ गए, और इन राजाओं को देखकर उन्होंने प्रश्न के रूप में यह पहला श्लोक कहा:

अंगूठियों से सुसज्जित और शानदार ढंग से कपड़े पहने हुए,
सभी को रत्नजड़ित मूठ वाले ब्लेड से सुरक्षित किया गया है।
हे महान सरदारों, रुकिए और सीधे बताइए
आप मनुष्यों की दुनिया में किस नाम से जाने जाते हैं?
उनकी बातें सुनकर वे रथ से उतरकर उन्हें प्रणाम करने लगे। उनमें से राजा अट्ठक ने उनसे बातचीत करते हुए दूसरा श्लोक कहा:

भीमरथ, कलिंग के प्रसिद्ध व्यक्ति,
और अत्थका—इसी नाम से हम जाने जाते हैं—
जीवन के संतों को संयमी दृष्टि से देखना
और उनसे पूछें, क्या हम यहां आए हैं?
तब तपस्वी ने उनसे कहा, "हे महाराज, आप उस स्थान पर पहुँच गए हैं जहाँ आप प्रसन्नतापूर्वक रहना चाहते हैं: इसलिए, स्नान करने के बाद विश्राम करें, और आश्रम में प्रवेश करके तपस्वियों के समूह को प्रणाम करें, और गुरु से अपना प्रश्न पूछें"; और इस प्रकार, उनसे मैत्रीपूर्ण बातचीत करते हुए, उन्होंने जल का घड़ा उछाला और गिरी हुई बूंदों को पोंछते हुए आकाश की ओर देखा और स्वर्ग के स्वामी सक्का (इंद्र) को देवताओं (देवदूतों) के समूह से घिरे हुए देखा, और एरवन (*15) की पीठ पर सवार होकर स्वर्ग से उतरते हुए, उनसे बातचीत करते हुए, उन्होंने तीसरा श्लोक दोहराया:

आप (*16) मध्य आकाश में ऊँचाई पर स्थिर हैं
जैसे पूर्णिमा का चंद्रमा आकाश को सुनहरा कर देता है,
हे सर्वशक्तिमान आत्मा, मैं आपसे विनती करता हूँ, कहिए
मैं आपसे यह जानना चाहता हूँ कि आप पृथ्वी पर किस नाम से जाने जाते हैं?
यह सुनकर सक्का (इंद्र) ने चौथा श्लोक दोहराया:

स्वर्ग में सुजामपति ने घोषणा की
पृथ्वी पर मगहवा का यही नाम है;
आज देवदूतों का यह राजा यहाँ आता है
जीवन के इन संतों को संयमी अवस्था में देखना।
तब अनुसिसा ने उनसे कहा: "हे महाराज, क्या आप हमारे साथ आएंगे?" और पीने का पात्र लेकर वे आश्रम में प्रवेश कर गए, और जल का घड़ा एक तरफ रखकर उन्होंने महापुरुष को सूचित किया कि तीनों राजा और स्वर्ग के स्वामी उनसे कुछ प्रश्न पूछने आए हैं। तपस्वियों के एक समूह से घिरे सरभंग एक विशाल, विस्तृत बंद स्थान में बैठे थे। तीनों राजा आए और तपस्वियों के समूह को प्रणाम करके एक तरफ बैठ गए। और सक्का (इंद्र) आकाश से उतरकर तपस्वियों के पास आए और हाथ जोड़कर उन्हें प्रणाम करते हुए और उनकी स्तुति करते हुए पाँचवाँ श्लोक दोहराया:

यह संत मंडली अपनी व्यापक प्रसिद्धि के लिए जानी जाती है,
उनके पास अपार शक्तियां थीं:
मैं खुशी से आपकी प्रशंसा करता हूँ: योग्यता में
आप धरती पर सर्वश्रेष्ठ लोगों से कहीं अधिक श्रेष्ठ हैं।
इस प्रकार इंद्र ने तपस्वियों के समूह को प्रणाम किया और बैठने के छह दोषों से सावधान रहते हुए अलग बैठ गए। तब अनुसिसा ने उन्हें तपस्वियों की ओर हवा की दिशा में बैठे देखकर छठा श्लोक कहा:

एक वृद्ध संत का व्यक्तित्व
यह देखने में भद्दा है और इससे हवा भी प्रदूषित हो जाती है।
हे महान सक्का (इंद्र/देवदूतों के मुखिया), शीघ्र पीछे हट जाओ।
बुजुर्गों की गंध, जो बिल्कुल भी मीठी नहीं होती।
यह सुनकर सक्का (इंद्र) ने एक और श्लोक दोहराया:

हालांकि वृद्ध संत नाक को अप्रिय लगते हैं
और बहने वाली सबसे मधुर हवा को भी दूषित कर देता है:

लेकिन ताजे फूलों की सुगंधित माला की तरह ऊपर
यह उन संतों की सुगंध है जिनसे हम प्रेम करते हैं;
देवताओं (देवदूतों) के प्रति ऐसी कोई अरुचि नहीं होती जिससे विचलित हुआ जा सके।
और इतना कहकर उन्होंने आगे कहा, "आदरणीय अनुसिस्सा, मैंने यहाँ आने और एक प्रश्न पूछने के लिए बहुत प्रयास किया है: मुझे ऐसा करने की अनुमति दें।" और सक्का (इंद्र) की बात सुनकर अनुसिस्सा अपने आसन से उठे और उन्हें अनुमति देकर तपस्वियों के समूह के समक्ष कुछ श्लोक दोहराए।

प्रसिद्ध मगहवा, सुजम्पति
दानदाता, परियों का स्वामी है वह--
राक्षसों पर विजय प्राप्त करने वाला, स्वर्ग का राजा,
क्रेव्स अपने सवालों को आगे बढ़ाने के लिए छुट्टी ले लेता है।
यहां उपस्थित ऋषियों में से कौन
वे अपने सूक्ष्म प्रश्नों को स्पष्ट कर देंगे।
उन तीन लोगों के लिए जिनका पुरुषों पर प्रभुत्व है,
और सक्का (इंद्र) जिसकी देवता (देवदूत) आज्ञा का पालन करते हैं?
यह सुनकर तपस्वियों के समूह ने कहा, "आदरणीय अनुसिस्सा, आप ऐसे बोल रहे हैं मानो आपने उस धरती को देखा ही न हो जिस पर आप खड़े हैं; हमारे गुरु सरभंग के अलावा, इन प्रश्नों का उत्तर देने में और कौन सक्षम है?" और ऐसा कहते हुए उन्होंने एक श्लोक दोहराया:

यह सरभंगा, ऋषि और संत हैं,
इतनी पवित्र और वासना के दाग से मुक्त,
शिक्षक का बेटा, जो बहुत अनुशासित था,
उन्हें अपनी शंकाओं का समाधान मिल जाएगा।
और ऐसा कहकर, तपस्वियों के समूह ने अनुसिसा से कहा, "हे प्रभु, संतों के समूह की ओर से गुरु को प्रणाम कीजिए और उन्हें सक्का (इंद्र) द्वारा पूछे गए प्रश्न के बारे में बताने का अवसर ढूंढिए।" अनुसिसा ने सहर्ष सहमति व्यक्त की और अवसर पाकर एक और श्लोक दोहराया:

हे पवित्र पुरुषों, कोंडन्ना (*17), मैं आपसे निवेदन करता हूँ
कि आप उनके संदेह दूर कर देंगे;
यह बोझ, मनुष्यों के समान, बना रहता है।
उम्र और ज्ञान में परिपक्व पुरुषों पर।
तब उस महान सत्ता ने अपनी सहमति देते हुए निम्नलिखित श्लोक दोहराया:

मैं आपको जो कुछ भी पूछना हो, पूछने की अनुमति देता हूँ।
आप हृदय से यह सुनकर प्रसन्न होंगे;
मैं इस दुनिया और अगली दुनिया दोनों को जानता हूँ;
कोई भी प्रश्न मुझे असमंजस में नहीं डालता।
इस प्रकार अनुमति प्राप्त करने के बाद, सक्का (इंद्र) ने स्वयं तैयार किया हुआ एक प्रश्न पूछा:

मास्टर ने मामले को स्पष्ट करते हुए कहा:

सक्का (इंद्र), उदार नगरों के प्रति उदार, जो चीजों की सच्चाई को देखता है,
जो बात वह जानना चाहता था, उसे जानने के लिए उसने पूछताछ शुरू की।
वह क्या चीज है जिसे कोई व्यक्ति सीधे तौर पर मार सकता है और फिर कभी पछतावा नहीं करता?
ऐसी कौन सी चीज़ है जिसे सभी भले लोगों की सहमति से फेंका जा सकता है?
किसी को किसके शब्दों को सहन करना चाहिए, चाहे वे कितने भी कठोर क्यों न हों?
यही वो बात है जो मैं कोंडन्ना से सुनना चाहता हूँ।
फिर प्रश्न को समझाते हुए उन्होंने कहा:

क्रोध वह चीज है जिसके कारण मनुष्य मृत्यु को प्राप्त हो सकता है और फिर कभी पश्चाताप नहीं करता;

वह सभी भले लोगों की सहमति से पाखंड को त्याग देता है;
उसे हर तरह की वाणी सहन करनी चाहिए, चाहे वह कितनी भी कठोर क्यों न हो।
बुद्धिमान लोगों का कहना है कि धैर्य का यह रूप उच्चतम स्तर का होता है।
दो लोगों की अभद्र भाषा को धैर्य से सुना जा सकता है।
अपने से वरिष्ठ व्यक्ति से, या अपने समकक्ष से,
लेकिन नीच लोगों के असभ्य भाषण को कैसे सहन किया जाए?
कोंडन्ना मुझे यही सिखाना पसंद करेंगी, इसमें मुझे कोई संकोच नहीं होगा।
बड़प्पन से मिली अभद्र बातों को कोई डर के मारे सह सकता है।
या, किसी समकक्ष से झगड़े से बचने के लिए,
लेकिन अभद्र भाषा को सहन करने की प्रवृत्ति से परे।
यह पूर्ण धैर्य है, जैसा कि ऋषि-मुनि सिखाते हैं।
इस प्रकार के श्लोकों को प्रश्न और उत्तर के रूप में आपस में जुड़ा हुआ समझना चाहिए।

इस प्रकार कहने के बाद, सक्का (इंद्र) ने महापुरुष से कहा, "हे प्रभु, पहले आपने कहा था, 'सभी की कठोर वाणी सहन करो; लोग कहते हैं कि यही धैर्य का सर्वोच्च रूप है,' लेकिन अब आप कहते हैं, 'यहाँ एक निम्न व्यक्ति की वाणी सहन करो; लोग कहते हैं कि यही धैर्य का सर्वोच्च रूप है'; यह बाद वाला कथन आपके पहले वाले कथन से मेल नहीं खाता।" तब महापुरुष ने उनसे कहा, "सक्का (इंद्र), मेरा यह अंतिम कथन उस व्यक्ति के लिए है जो कठोर वाणी सहन करता है, क्योंकि वह जानता है कि बोलने वाला उससे निम्न है, लेकिन मैंने जो पहले कहा था वह इसलिए था क्योंकि केवल लोगों के बाहरी रूप को देखकर उनकी स्थिति का निश्चित रूप से पता नहीं लगाया जा सकता है, चाहे वे स्वयं से श्रेष्ठ हों या नहीं," और यह स्पष्ट करने के लिए कि केवल बाहरी रूप को देखकर व्यक्तियों की स्थिति, चाहे वे निम्न हों या नहीं, घनिष्ठ संपर्क के बिना कैसे भेदना कितना कठिन है, उन्होंने यह श्लोक कहा:

बाहरी दिखावे से परिपूर्ण व्यक्ति का आकलन करना कितना कठिन होता है!
चाहे वह किसी से बेहतर हो, बराबर हो या फिर किसी से हीन हो।
सर्वश्रेष्ठ पुरुष भी कई बार निम्नतम रूपों में भेस बदलकर संसार में आते-जाते हैं;
इसलिए, यदि आप, मेरे मित्र, सही सलाह मानते हैं, तो सभी की कठोर भाषा को सहन करें।
यह सुनकर इंद्र (सक्का) ने श्रद्धापूर्वक उनसे विनती की, "हे परम पूज्य, हमें इस धैर्य में निहित आशीर्वाद के बारे में बताइए," और उस महान सत्ता ने यह श्लोक दोहराया:

कोई भी शाही सेना, चाहे उसकी शक्ति कितनी भी विशाल क्यों न हो,
लड़ाई में बहुत बड़ा फायदा मिल सकता है।
जिस प्रकार धैर्य से नेक व्यक्ति इसे प्राप्त कर सकता है:
सबसे भयंकर झगड़ों का इलाज दृढ़ धैर्य से ही होता है।
जब उस महान सत्ता ने धैर्य के गुणों का इस प्रकार वर्णन किया, तो राजाओं ने सोचा, "इंद्र तो अपना प्रश्न स्वयं ही पूछ रहे हैं; वे हमें अपना प्रश्न पूछने का अवसर ही नहीं देंगे।" अतः उनकी इच्छा को समझते हुए उन्होंने अपने द्वारा तैयार किए गए चार प्रश्नों को एक तरफ रख दिया और अपने संदेह व्यक्त करते हुए इस श्लोक को दोहराया:

आपके शब्द सुनकर मुझे बहुत अच्छा लगा।
लेकिन एक और बात मैं सहर्ष सुनना चाहूंगा;
हमें दंडकी के भविष्य के बारे में बताएं।
और उसके तीन सह-पापी,
किस प्रकार के कष्ट भोगने के लिए नियत हैं ये पुनर्जन्म?
पृथ्वी पर संतों को सताने के लिए।
तब उस महान सत्ता ने उसके प्रश्न का उत्तर देते हुए पाँच श्लोक दोहराए:

कुछ समय पहले, राज्य समेत सब कुछ उखाड़ दिया गया था।
जिसे किसावच्छ ने अपवित्र किया,
धधकती चिंगारियों से अभिभूत, देखो,
कुक्कुला में दंडाकी स्थित है।
जिसने उसे पुजारी और संत का मजाक बना दिया

और उपदेशक, पापमय दाग से मुक्त,
यह नालिकिरा कांपते हुए गिर पड़ी
नरक में कुत्तों के जबड़ों में।
तो अजजूना, जिसने सीधे तौर पर हत्या कर दी
वह पवित्र, निर्मल, सहनशील प्राणी,
अंगिरासा को सिर के बल फेंक दिया गया।
पीड़ा से भरी दुनिया में यातनाओं के लिए।
जिसने कभी एक निष्पाप संत को अपंग किया था
उनका नाम धैर्य का उपदेशक था।
कलाबू अब नरक की आग में झुलस रहा था।
पीड़ा के बीच, दर्दनाक और भयानक।
जो बुद्धिमान व्यक्ति सुनता है, वही बताता है।
ऐसी कहानियों या नरक की इससे भी बदतर कहानियों के बारे में,
पुजारी या ब्राह्मण के पापों के विरुद्ध कभी नहीं।
और स्वर्ग उसके सही कर्मों से विजय प्राप्त करता है।
जब उस महान सत्ता ने उन स्थानों का उल्लेख किया जहाँ चारों राजाओं का पुनर्जन्म हुआ था, तो तीनों राजा सभी संदेहों से मुक्त हो गए। तब इंद्र ने अपने शेष चार प्रश्न पूछते हुए इस श्लोक का पाठ किया:

आपके शब्द सुनकर मुझे बहुत अच्छा लगा।
लेकिन एक और बात मैं सहर्ष सुनना चाहूंगा:
दुनिया किसे "नैतिक" नाम देती है?
और यह किसे "बुद्धिमान" घोषित करता है?
दुनिया किसे "धार्मिक" मानती है?
और भाग्य किसे कभी नहीं छोड़ता?
फिर उन्हें उत्तर देते हुए उस महान सत्ता ने चार श्लोक दोहराए:

जो कोई भी अपने कर्मों और वचनों में संयम दिखाता है,
और विचारों में भी वह पापमयता से मुक्त है।
न ही वह अपने नीच उद्देश्यों की पूर्ति के लिए झूठ बोलता है—वही
सभी पुरुष स्वयं को "नैतिक" घोषित करते हैं।
जो अपने मन में गहन प्रश्नों का मंथन करता है
फिर भी वह किसी भी प्रकार की क्रूरता या निर्दयता नहीं करता।
सही समय पर अच्छे शब्दों से सलाह देना।
उस व्यक्ति को सर्वथा बुद्धिमान माना जाता है।
जो व्यक्ति एक बार प्राप्त हुई कृपा के लिए आभारी होता है,
और दु:ख की आवश्यकता को सावधानीपूर्वक दूर किया गया है,
उन्होंने स्वयं को एक अच्छा और समर्पित मित्र साबित किया है--
सभी लोग उन्हें एक धर्मनिष्ठ आत्मा के रूप में सराहते हैं।
वह व्यक्ति जिसके पास हर प्रतिभा मौजूद थी,
सच्चा, कोमल, उदार और दयालु,
दिल जीतने वाला, विनम्र, और वाक्पटुता से भरपूर—
ऐसे व्यक्ति से भाग्य कभी नहीं गिरेगा।
इस प्रकार उस महान सत्ता ने, मानो आकाश में चंद्रमा को उदय कर रहे हों, चारों प्रश्नों के उत्तर दिए। फिर अन्य प्रश्न पूछे गए और उनके उत्तर दिए गए।

आपके दयालु शब्द सुनकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई।
लेकिन एक और बात सुनकर मुझे खुशी हुई:
सद्‌गुण, सौभाग्य, अच्छाई, ज्ञान—कहें
मैं पूछना चाहता हूं कि इन सबमें से पुरुष किसे सर्वश्रेष्ठ मानते हैं?

अच्छे लोगों द्वारा कही गई ज्ञान की बातें सर्वोत्कृष्ट होती हैं।
यहां तक कि जब चंद्रमा हर तारे को ग्रहण लगा देता है
सद्गुण, सौभाग्य, अच्छाई, यह स्पष्ट है।
सभी लोग विधिवत रूप से उस बुद्धिमान व्यक्ति के मार्ग का अनुसरण करते हैं।
आपके दयालु शब्द सुनकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई।
लेकिन एक और बात सुनकर मुझे खुशी हुई:
इस ज्ञान को प्राप्त करने के लिए क्या करना चाहिए?
किस प्रकार की कार्यप्रणाली अपनाई जाए या कौन सा मार्ग अपनाया जाए?
हमें बताइए कि ज्ञान का मार्ग किस ओर जाता है
और किन कर्मों से मनुष्य बुद्धिमान बनता है?
एक चतुर, अनुभवी और विद्वान पुरुष से शादी करने वाली पत्नी के साथ,
उनसे प्रश्न पूछकर ज्ञान प्राप्त करना:
उनकी अच्छी सलाह को सुनना और उसका महत्व समझना चाहिए।
क्योंकि इसी प्रकार एक नश्वर मनुष्य बुद्धिमान बनता है।
ऋषि इंद्रिय सुख की वस्तुओं की लालसा को महत्व देते हैं।
बीमारी, दर्द और नश्वरता को देखते हुए;
दुःखों, वासनाओं और भय के बीच,
शांत और अविचलित होकर ऋषि उन सभी को नजरअंदाज कर देते हैं।
इस प्रकार वह पाप पर विजय प्राप्त करेगा, वासना से मुक्त होगा।
और असीम परोपकार की भावना विकसित करें;
हर जीवित प्राणी पर दया दिखाओ।
और हे निष्कलंक आत्मा, ब्रह्मलोक (परम स्वर्ग) में जाओ।
जब परमेश्वर इंद्रिय सुख के पापों के बारे में बोल ही रहे थे, तब इन तीनों राजाओं ने अपनी सेनाओं सहित विपरीत गुण के द्वारा इंद्रिय सुख की वासना से मुक्ति पा ली। यह जानकर परमेश्वर ने उनकी प्रशंसा करते हुए यह श्लोक पढ़ा:

भीमरथ जादू की शक्ति से आया
हे अत्थका, आपके साथ, और प्रसिद्धि की ओर जाने वाले एक व्यक्ति के साथ।
जैसा कि राजा कलिंग को ज्ञात है, और अब तीनों को,
कभी कामुकता के गुलाम रहे लोग अब मुक्त हो गए हैं।
यह सुनकर, महान सत्ता की स्तुति करते हुए शक्तिशाली राजाओं ने यह श्लोक पढ़ा:

हे पुरुषों के विचारों के पाठक, यह सच है: तीनों
हममें से कुछ लोग कामुकता से मुक्त हैं।
हमें वह वरदान प्रदान करें जिसके हम हकदार हैं।
ताकि हम आपकी सुखी अवस्था को प्राप्त कर सकें।
तब उस महान सत्ता ने उन्हें यह कृपा प्रदान करते हुए एक और श्लोक दोहराया:

मैं आपको वह वरदान प्रदान करता हूँ जो आप मुझसे चाहते हैं (*18),
जितना अधिक आप कामुक विकारों से मुक्त होंगे:
इसलिए आप असीम आनंद से भर उठें।
वह सुखद अवस्था जिसे आप प्राप्त करना चाहते हैं।
यह सुनकर उन्होंने सहमति जताते हुए इस छंद को दोहराया:

हम आपके आदेशानुसार सब कुछ करेंगे।
जो भी आप अपनी बुद्धिमत्ता से सर्वोत्तम समझते हैं;
तो क्या हम असीम आनंद से भर उठेंगे?
वह सुखद अवस्था जिसे हम प्राप्त करना चाहते हैं।
तब उस महान सत्ता ने अपनी सेनाओं को आदेश दिए और तपस्वियों के समूह को विदा करते हुए इस श्लोक को दोहराया:

किसवच्छ को उचित सम्मान दिया गया;
तो अब प्रस्थान करो, हे महान प्रसिद्धि के संतों!
परमानंद (सम्मोहन) में आनंदित होकर शांत भाव से विश्राम करना;
पवित्रता का यह आनंद सर्वोत्कृष्ट है।
संतों ने उनके वचनों से सहमत होते हुए उन्हें प्रणाम किया और वायु में उड़कर अपने-अपने निवास स्थानों की ओर प्रस्थान कर गए। वहीं, इंद्र (सक्का) अपने आसन से उठकर, हाथ जोड़कर, सूर्य की पूजा के समान ही उस महान सत्ता को प्रणाम करते हुए, अपने साथियों के साथ प्रस्थान कर गए।

यह देखकर गुरु ने इन छंदों को दोहराया:-

सर्वोच्च सत्य द्वारा सिखाए गए इन शब्दों को सुनकर
एक पवित्र ऋषि द्वारा दिए गए एक बड़े भाषण से प्रेरित होकर,
वे गौरवशाली प्राणी अपने स्वर्गिक घर की ओर
एक बार फिर खुशी और कृतज्ञता के साथ वह आया।
पवित्र ऋषि के शब्द कानों को बहुत भाते हैं।
अर्थ से परिपूर्ण और स्पष्ट लहजे में;
जो ध्यान से सुनता है और अपना मन एकाग्र रखता है
उनके विशेष विचार से निश्चित रूप से लाभ होगा
परमानंद (सम्मोहन) की प्रत्येक अवस्था तक पहुँचने का मार्ग,
और अत्याचारी मृत्यु के चंगुल से उसे मुक्ति मिल जाती है।

इस प्रकार गुरु (बुद्ध) ने अर्हतत्व में अपने उपदेश का समापन करते हुए कहा, "न केवल अभी, बल्कि पहले भी, मोगल्लाना के शरीर के दाह संस्कार के समय फूलों की वर्षा हुई थी," और उन्होंने सत्यों को प्रकट करते हुए जन्म का वर्णन किया: "सलिसारा सारिपुत्र थे, मेंडिसारा कश्यप थे, पब्बत अनुरुद्ध थे, देवल कच्चयन थे, अनुसिस्सा आनंद थे, किसवच्छ कोलिता थे, सरभंग बोधिसत्व थे: इस प्रकार आपको जन्म को समझना चाहिए।"

फुटनोट:

(1) मोग्गल्याना की मृत्यु

(2) सारिपुत्र की मृत्यु, सं. 95, महासुदासन-जातक

(3)नंदा और उपनंदा नागों के दो राजा थे, वेजयंत इंद्र का महल था।

(4) अंगुत्तरा निकया,

(5)वॉल्यूम की तुलना करें। क्रमांक 423, इन्द्रिय जातक।

(6)khiramulam, ie trofeia.

(7)अक्खनवेधी, "लक्ष्य भेदन" के रूप में

(8)महाभारत, VI देखें। 58. 2 और 101. 32, कोष्ठकि-कृत्य, घेरना, घेरना।

(9)अग्गदवरम शायद मुख्य प्रवेश द्वार के विपरीत एक घर का दरवाजा।

(10) कवित्था फेरोनिया एलिफेंटम या हाथी सेब का पेड़ है।

(11) ये सभी नाम इंद्रिय जातक के क्रमांक 423 में मिलते हैं।

(12) कहानी के शुरुआती भाग के ज्योतिपाला को यहाँ बोधिसत्व सरभंग के साथ पहचाना गया है।

(13)नहीं. 313, खांतिवादी जातक.

(14)अर्जुन को कार्तवीर्य कहा जाता है।

(15इंद्र का हाथी.

(16) कर्ता भावम् के साथ तीसरा व्यक्ति यहाँ दूसरे व्यक्ति के लिए प्रयोग किया गया प्रतीत होता है।

(17) विद्वान बताते हैं कि यह सरभंगा का पारिवारिक नाम है।

(18) कारोही के लिए करोमी पढ़ना।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **अलम्बुसा-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-523-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 523
अलंबुसा-जातक

"तब हे पराक्रमी इंद्र," इत्यादि। यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में निवास करते हुए एक भिक्षु को उसकी पूर्व पत्नी द्वारा प्रलोभित किए जाने के बारे में सुनाई थी। इस कथा का पूर्ण वर्णन इंद्रिय जन्म (*1) में मिलता है। गुरु ने भिक्षु से पूछा, "क्या यह सच है, भिक्षु, कि तुम असंतुष्ट हो गए थे?" "जी हाँ, पूज्यवर।" "किसके कारण?" "मेरी पूर्व पत्नी के कारण।" "भिक्षु," उन्होंने कहा, "इस स्त्री ने तुम्हारे लिए विपत्ति लाई: इसी के कारण तुम ध्यान से विमुख हो गए, और तीन वर्ष तक व्यथित और विचलित अवस्था में रहे, और जब तुम्हें होश आया तो तुम बहुत रोए।" ऐसा कहकर उन्होंने उसे अतीत की एक कहानी सुनाई।

बनारस में ब्रह्मदत्त के शासनकाल में, एक समय की बात है, काशी राज्य में एक ब्राह्मण परिवार में बोधिसत्व का जन्म हुआ। वयस्क होने पर उन्होंने सभी कलाओं में निपुणता प्राप्त की और तपस्वी जीवन अपनाकर वन में जंगली बेर और जड़ों का सेवन करते हुए अपना जीवन व्यतीत किया। अब ब्राह्मण के विश्राम स्थल में एक हिरणी ने घास खाई और उनके वीर्य से मिश्रित जल पिया, और वह उनसे इतनी मोहित हो गई कि गर्भवती हो गई और तब से वह आश्रम के पास ही उस स्थान पर आने लगी। इस मामले की जांच करते हुए भगवान ने मामले के तथ्यों का पता लगाया। समय बीतने पर हिरणी ने एक बालक को जन्म दिया, और भगवान ने पिता के स्नेह से उसकी देखभाल की। उसका नाम इसीसिंह (*2) रखा गया। जब बालक समझदार हुआ, तो उन्होंने उसे संन्यासियों के पवित्र संघ में प्रवेश दिया, और जब वे स्वयं वृद्ध हो गए, तो वे उसके साथ नारी वन गए और उससे कहा, "मेरे प्रिय बालक, इस हिमालयी देश में इन फूलों के समान सुंदर स्त्रियाँ हैं: वे अपने वश में आने वाले सभी का पूर्ण विनाश करती हैं: तुम्हें उनके प्रभाव में नहीं आना चाहिए।" और कुछ ही समय बाद उनका ब्रह्मलोक में जन्म होना निर्धारित हुआ। परन्तु ईसिंघा, रहस्यवादी ध्यान में लीन होकर, हिमालय क्षेत्र में एक कठोर तपस्वी के रूप में अपना जीवन व्यतीत करते रहे, अपनी सभी इंद्रियों को वश में रखते हुए। इस प्रकार उनके पुण्य के बल पर इंद्र का निवास स्थान हिल गया। सक्का (इंद्र) ने अंतर्दृष्टि से कारण का पता लगाया और सोचा, "यह व्यक्ति मुझे सक्का (इंद्र) पद से हटा देगा, इसलिए मैं एक अप्सरा को भेजकर उसके पुण्य का नाश करवाऊंगा।" उन्होंने संपूर्ण देवलोक की जांच की और पच्चीस करोड़ दासियों में से, अप्सरा अलंबुसा के अलावा, उन्हें कोई और ऐसी नहीं मिली जो इस कार्य के योग्य हो। इसलिए उन्होंने उसे बुलाकर संत के पुण्य का नाश करने का आदेश दिया।

गुरु ने इस विषय की व्याख्या करते हुए यह श्लोक कहा:

फिर पराक्रमी इंद्र, देवताओं के स्वामी, वह देवता जिसे वत्र ने मारा था,
वह अप्सरा को अपने महल में बुलाता था, क्योंकि वह उसके आकर्षणों को भलीभांति जानता था।
और "हे प्यारे अलम्बुसा," वह चिल्लाया, "ऊपर स्वर्गदूतों का समूह है।"
मैं तुमसे इसिंगा जाने का आग्रह करता हूँ, ताकि तुम उसे अपने प्रेम से लुभा सको।

सक्का (इंद्र) ने अलम्बुसा को आदेश देते हुए कहा, "जाओ और इसीसिंह के पास आओ, और उसे अपने वश में करके उसके पुण्य का नाश करो," और उसने ये शब्द कहे:

हे मोहक स्त्री, जाओ, सदा उसके पदचिन्हों पर चलो, क्योंकि वह एक पवित्र ऋषि है।
और, सर्वोच्च आनंद की खोज में, वह मुझ पर विजय प्राप्त कर लेता है।
यह सुनकर अलंबुसा ने कुछ छंद दोहराए:

हे देवदूतों के राजा, समस्त अप्सराओं में से, केवल मुझे ही क्यों महत्व देते हो?
और मुझसे यह अपेक्षा करोगे कि मैं उस संत पुरुष को बहकाऊं जो तुम्हारे सिंहासन के लिए खतरा है?
नंदना के आनंदमय उपवन में अनेक दिव्य अप्सराएँ विराजमान हैं।
अब उनमें से किसी एक को—उनकी बारी है—यह घृणित कार्य सौंपा जाए।
तब सक्का (इंद्र) ने तीन श्लोक दोहराए:

आप सच कहते हैं; नंदना के सुखद उपवन में, मैं सोचता हूँ,
आशा है कि अनेक अप्सराएँ आपकी सुंदरता में प्रतिस्पर्धा करने के लिए उत्पन्न होंगी।
लेकिन हे असाधारण कन्या, तुम्हारे जैसी कोई नहीं, तुममें नारीत्व का सारा आकर्षण है।
यह पवित्र व्यक्ति कुकर्म के मार्गों में इतना निपुण था कि वह धोखा देने में माहिर था।
हे स्त्री-राजकुमारी, तुम जाओ, प्यारी अप्सरा, अपने मार्ग पर।
और सौंदर्य की शक्ति से संत को अपना प्रभुत्व स्वीकार करने के लिए मजबूर करें।
यह सुनकर अलम्बुसा ने दो छंद दोहराए:

हे देवदूत-राजा, मैं आपके आदेश का पालन करने में कोई कसर नहीं छोड़ूंगा।
लेकिन फिर भी भय के साथ मैं इस गंभीर ऋषि को परेशान करने का साहस करता हूँ।
कई लोग, बेचारे मूर्ख, चले गए हैं (यह सोचकर ही मुझे कंपकंपी आ जाती है)
नरक में उसे उन संतों के प्रति अपने द्वारा किए गए अन्याय के कारण उत्पन्न पीड़ा का पश्चाताप करना होगा।
यह सुनकर, सुंदर अप्सरा अलम्बुसा पूरी तेज़ी से प्रसिद्ध इसिसिंगा को किसी अपवित्र कार्य के लिए लुभाने के लिए रवाना हो गई।

लाल रंग के चमकीले बेरों से लदे उस बाग में, जहाँ इसिसिंगा रहती थी, वह आँखों से ओझल हो गई।

भोर होते ही, सूरज के आसमान में ठीक से जागने से पहले ही, अपनी कोठरी की सफाई कर रहे इसिसिंगा के पास अप्सरा आई।

इन छंदों की प्रेरणा पूर्ण ज्ञान से मिली थी।

तब तपस्वी ने उससे प्रश्न किया और कहा:

तुम कौन हो, बिजली की चमक की तरह, या सुबह के तारे की तरह उज्ज्वल?
क्या वो कान और हाथ रत्नों से ढके हुए हैं जो दूर से ही चमकते हैं?
सुनहरे चंदन की तरह सुगंधित, सूर्य के समान चमक से भरपूर,
तुम दुबली-पतली और आकर्षक नौकरानी हो, देखने में बहुत सुंदर हो।
इतनी कोमल और पवित्र, पतली कमर और दृढ़ उछाल भरी चाल के साथ,
आपकी चाल-ढाल इतनी सुंदर है कि मेरा दिल मोह लेती है।
आपकी जांघें, हाथी की सूंड की तरह, धीरे-धीरे पतली होती जाती हैं।
आपके नितंब छूने में मुलायम हैं और किसी भी पासे के बोर्ड के गोलों की तरह लगते हैं।
कमल के तंतुओं जैसे मुलायम पंखों से तुम्हारी नाभि पर निशान बना हुआ था, मुझे लगता है।
दूर से देखने पर ऐसा प्रतीत होता है मानो इसे काले काजल से अभिमंत्रित किया गया हो।
दो दूध से भरे स्तन, आधे कटे कद्दू की तरह, उनके फूले हुए गोले प्रदर्शित करते हैं,
वे मजबूती से जमे हुए हैं, हालांकि बिना डंठल के वे पूरी तरह से असमर्थित हैं।
तुम्हारे होंठ और जीभ दोनों लाल हैं, और हे शुभ चिन्ह,
आपकी गर्दन मृग जितनी लंबी है, उस पर तिहरी रेखा (*3) अंकित है।
लकड़ी के टुकड़े से दांत साफ करने से वे हमेशा साफ और चमकदार रहते थे।

अपने ऊपरी और निचले जबड़े को शुद्ध सफेद रंग की चमक से जगमगाएं।
तुम्हारी आंखें लंबी और बड़ी हैं, देखने में बहुत सुंदर लगती हैं।
जैसे काले रंग के गुंजा फल, जिन पर लाल रंग की धारियाँ बनी होती हैं।
आपके बाल चिकने हों, बहुत लंबे न हों और सबसे करीने से गुंथे हुए हों।
इन पर सोने की परत चढ़ी होती है और इनमें बेहतरीन चंदन के तेल की खुशबू होती है।
जो लोग व्यापार, पशुपालन या हल से अपना जीवन यापन करते हैं, उनमें से
उन सभी महान संतों में से जो तपस्या की प्रतिज्ञा का पालन करते हुए जीवन व्यतीत करते हैं।
इस विशाल संसार में, तुम्हारे समान मुझे शायद ही कोई दिखे।
तो आपका नाम क्या है और आपके पिता कौन हैं, यह हम आपसे सहर्ष जानना चाहेंगे।
जब तपस्वी अलंबुसा की इस प्रकार स्तुति कर रहा था, अपने पैरों से लेकर सिर के बालों तक, वह चुप रही, और उसके लंबे भाषण से उसकी व्याकुलता को देखते हुए उसने इस श्लोक को दोहराया:

हे मेरे मित्र, कश्यप (इसीसिंघा) (*4), ईश्वर आपको आशीर्वाद दे; वह समय बीत चुका है।
ऐसे निरर्थक प्रश्नों के लिए—क्या हम अकेले नहीं हैं?—
आइए, हम आपके आश्रम में आकर जल्दबाजी को स्वीकार करें और साबित करें
प्रेम के सभी उपासकों को ज्ञात हजारों आनंद।
यह कहते हुए अलंबुसा ने सोचा, "अगर मैं स्थिर खड़ी रहूँ, तो वह मेरे पास नहीं आ पाएगा; मैं ऐसा दिखावा करूँगी जैसे मैं भाग रही हूँ," और एक स्त्री के प्रलोभन की सारी चालाकी से उसने तपस्वी के इरादे को झकझोर दिया, और उसी दिशा में भाग गई जहाँ से वह उसके पास आई थी।

गुरु ने बात स्पष्ट करने के लिए यह श्लोक कहा:

यह सुनकर अप्सरा अलंबुसा अत्यंत शीघ्रता से प्रस्थान कर गई।
प्रसिद्ध इसिसिंगा को किसी अपवित्र कृत्य के लिए उकसाने के लिए।
तब तपस्वी ने उसे जाते हुए देखकर कहा, "वह चली गई है;" और उसने फुर्ती से उसे जाते हुए ही रोक लिया और अपने हाथ से उसके बालों को पकड़ लिया।

मास्टर ने मामले को स्पष्ट करते हुए कहा:

उसकी उड़ान रोकने के लिए, पवित्र पुरुष ने हवा के समान तेज गति से उसका पीछा किया और उसे बालों से पकड़ लिया।

जहां वह खड़ा था, वहीं उस सुंदर युवती ने उसे अपनी बाहों में भर लिया, और तुरंत ही उसका सद्गुण उसके आकर्षण के जादू के आगे झुक गया।

वह मन ही मन दूर नंदन में स्थित इंद्र के सिंहासन की ओर उड़ गई; देवदूत ने तुरंत उसकी इच्छा को भांप लिया और एक स्वर्ण रथ भेज दिया।

अलंकृत वस्त्र फैले हुए थे और सब कुछ अनेक प्रकार के वस्त्रों से सजा हुआ था: और वहाँ संत कई दिनों तक उसकी बाहों में लेटे रहे।

तीन साल उसके सिर के ऊपर से ऐसे गुजर गए मानो एक पल का अंतराल हो, जब तक कि अंत में वह पवित्र व्यक्ति उसके आलिंगन से जाग नहीं गया।

उसे चारों ओर हरे-भरे पेड़ दिखाई दिए; पास ही एक वेदी थी, और हरे-भरे उपवन कोयल की तेज आवाज से गूंज रहे थे।

उसने चारों ओर देखा और बहुत रोते हुए एक आंसू बहाया;

मैं कोई भेंट नहीं चढ़ाता, कोई भजन नहीं गाता; यहाँ कोई बलिदान नहीं है।
इस जंगल में अकेले रहते हुए, मुझे कौन बहका सकता है?
जिसने कुटिल आचरण से मुझमें सत्य की सारी भावना को नष्ट कर दिया है,
क्या तब भी कोई ऐसा ही होगा जब कीमती माल से लदा जहाज समुद्र में डूब जाए?

यह सुनकर अलंबुसा ने सोचा: "अगर मैं उसे नहीं बताऊंगी तो वह मुझे श्राप देगा; सच में, मैं उसे बताऊंगी," और उसके पास प्रत्यक्ष रूप में खड़ी होकर उसने यह श्लोक दोहराया:

मैं राजा सक्का (इंद्र) द्वारा भेजा गया हूँ और यहाँ खड़ा हूँ।
आपकी आज्ञा का स्वेच्छा से पालन करने वाला गुलाम;
हालांकि मैं इस बात को लेकर बहुत लापरवाह था,
मेरे बारे में सोचकर ही तुम्हारी खुशी भंग हुई।
उसके शब्दों को सुनकर उसे अपने पिता की सलाह याद आ गई, और अपने पिता की बात न मानने के कारण अपने पूर्ण पतन पर शोक व्यक्त करते हुए उसने चार छंद दोहराए:

इस प्रकार, मेरे पिता दयालु कश्यप ऐसा करेंगे,
विवेक के साथ युवा प्रेरणा देते हैं:
"स्त्रियाँ कमल के फूल के समान सुंदर होती हैं।"
हे युवाओं, सावधान रहो, उनकी शक्ति सूक्ष्म होती है।
स्त्री के नवोदित आकर्षण से सावधान रहें।
वहां छिपे खतरे से सावधान रहें।
इस प्रकार, दया से प्रेरित होकर मेरे पिता ने ऐसा किया।
वह अपने प्रिय पुत्र को चेतावनी देने में प्रसन्न होता।
मेरे बुद्धिमान बूढ़े पिता के शब्द, अफसोस!
मैंने अनसुना करके उसे गुजरने दिया।
और इस प्रकार अकेले, अत्यंत कष्ट में
मैं आज भी इस वीरान इलाके में भटकता रहता हूँ।
वृद्धावस्था का जीवन अभिशापित हो!
अब से मैं वही करूंगा जो मुझे कहा जाएगा।
मृत्यु का सामना करना कहीं बेहतर है।
फिर से ऐसी स्थिति में होना।
अत: उन्होंने कामुक इच्छाओं का त्याग कर रहस्यमयी ध्यानमग्न अवस्था में प्रवेश किया। तब अलंबुसा ने उनके तपस्वी गुणों को देखकर और यह जानकर कि वे समाधि की अवस्था में पहुँच चुके हैं, भयभीत हो गए और उनसे क्षमा मांगी।

विषय को स्पष्ट करने के लिए, गुरु ने दो छंद दोहराए:

अलम्बुसा को जैसे ही उनकी सच्ची भक्ति और साहस का ज्ञान हुआ, वैसे ही उन्होंने झुककर ऋषि का अभिवादन किया और अप्सरा ने तुरंत उनके चरणों को गले लगा लिया।

"हे संत, अपना सारा क्रोध त्याग दो,"
"मैं एक महान कृति लेकर आई थी," वह चिल्लाई।
जब स्वर्ग स्वयं और प्रसिद्धि के देवता (देवदूत)
तुम्हारा नाम सुनकर मैं भय से कांप उठा।
फिर उसने उसे जाने दिया और कहा, "मैं तुम्हें क्षमा करता हूँ, सुंदर स्त्री; तुम जैसे चाहो जा सकती हो।" और उसने एक छंद दोहराया:

तैंतीसवें वर्ष पर मेरा आशीर्वाद
और वासव, उनके स्वामी, और आप:
जाओ, सुंदर कन्या, क्योंकि तुम स्वतंत्र हो।
उन्हें प्रणाम करके वह उसी सुनहरे रथ में सवार होकर देवताओं (देवदूतों) के निवास स्थान की ओर प्रस्थान कर गई।

विषय को स्पष्ट करने के लिए, गुरु ने तीन छंद दोहराए:

फिर ऋषि के चरणों को गले लगाते हुए और दाहिनी ओर चक्कर लगाते हुए,
हाथ जोड़कर विनती भरे भाव से वह उसकी नजरों से ओझल हो गई।
और सुनहरे रथ पर सवार होकर, अलंकृत और अलंकृत वस्त्रों से सुशोभित होकर,

वह शानदार ढंग से सजी-धजी, स्वर्ग की ऊंचाइयों की ओर दौड़ पड़ी।
जैसे धधकती मशाल या बिजली की चमक, वह आकाश में से गुज़र गई।
और सक्का (इंद्र), प्रसन्न होकर बोले, "मैं किसी वरदान को अस्वीकार नहीं कर सकता।"
उससे वरदान प्राप्त करके उसने अंतिम श्लोक दोहराया:

हे परियों के स्वामी, यदि आप मेरी हृदय की इच्छा पूरी करने की अनुमति दें,
मैं फिर कभी किसी संत को उसकी प्रतिज्ञा तोड़ने के लिए उकसाऊंगा नहीं।

गुरु ने यहाँ उस भिक्षु भाई को अपना पाठ समाप्त किया और सत्य प्रकट करते हुए जन्म की पहचान बताई: सत्यों के समापन पर वह भिक्षु प्रथम मार्ग (समाधि) के फल में स्थापित हो गया - "उस समय अलंबुसा उसके अपवित्र दिनों की पत्नी थी, इसिसिंगा पथभ्रष्ट भिक्षु था, और महान संत उसके पिता मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) खंड III. संख्या 423.

(2) रामायण प्रथम 9. ऋष्यश्रृंग की कथा;

(3) कंबुगीवा: गर्दन पर शंख-सर्पिलों जैसी तीन तहें सौभाग्य का प्रतीक थीं, जातक चतुर्थ. 130

(4)कश्यपा इसिसिंगा का पारिवारिक नाम था।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **शंखपाल-जातक**
***स्रोत** : एच.टी. फ्रांसिस द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-524-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 524
संखपाल-जातक

"आकर्षक उपस्थिति," इत्यादि। यह कथा गुरुजी ने जेतवन मठ में रहते हुए पवित्र दिनों के कर्तव्यों के संबंध में सुनाई थी। इस अवसर पर गुरुजी ने पवित्र दिनों का पालन करने वाले कुछ गृहस्थों की प्रशंसा करते हुए कहा: "प्राचीन काल के बुद्धिमान पुरुषों ने नाग लोक की महान महिमा का त्याग करके पवित्र दिनों का पालन किया था," और उनके अनुरोध पर उन्होंने अतीत की एक कथा सुनाई।

एक समय की बात है, मगध के राजगृह नगर में एक राजा शासन करता था। उसी समय बोधिसत्व का जन्म राजा की प्रमुख पत्नी के पुत्र के रूप में हुआ और उनका नाम दुय्योधन रखा गया। वयस्क होने पर उन्होंने तक्षशिला में विद्या की शिक्षा प्राप्त की और अपने पिता से मिलने घर लौट आए। उनके पिता ने उन्हें राज्य में स्थान दिया और स्वयं संन्यासी जीवन अपनाकर उद्यान में निवास करने लगे। बोधिसत्व दिन में तीन बार अपने पिता से मिलने आते थे, जिससे उनके पिता को बहुत लाभ और सम्मान प्राप्त होता था। इस बाधा के कारण वे ध्यान साधना की पूर्वसूचनाओं का भी पालन नहीं कर पाते थे और सोचने लगे, "मुझे तो बहुत लाभ और सम्मान प्राप्त हो रहा है, लेकिन जब तक मैं यहाँ जीवित हूँ, मेरे लिए अपनी इस वासना को नष्ट करना असंभव होगा। अपने पुत्र से बिना कुछ कहे, मैं कहीं और चला जाऊँगा।" अत: किसी को बताए बिना वह उद्यान छोड़कर मगध राज्य की सीमा पार कर गया और महिंसक राज्य में, चंदाका पर्वत के निकट, कन्नपेन्ना नदी के मोड़ पर, जहाँ से शंखपाल झील निकलती है, उसने पत्तों की एक कुटिया बनाई। वहाँ उसने निवास किया और प्रारंभिक अनुष्ठान करते हुए उसने रहस्यमय ध्यान की कला विकसित की और जो कुछ भी उसे मिलता, उसी से अपना जीवन यापन किया। कन्नपेन्ना नदी से निकलने वाले नागों के एक राजा, शंखपाल, समय-समय पर नागों के एक बड़े समूह के साथ उस तपस्वी से मिलने आते थे, और उसने नाग राजा को विधि का ज्ञान दिया। अब पुत्र अपने पिता से मिलने के लिए उत्सुक था और यह न जानते हुए कि वे कहाँ गए हैं, उसने खोजबीन शुरू की। जब उसे पता चला कि वे फलाँ स्थान पर रह रहे हैं, तो वह अपने साथ कई

सेवकों को लेकर उनसे मिलने गया। कुछ दूरी पर रुककर, कुछ दरबारियों के साथ वह आश्रम की ओर चल पड़ा। उस समय शंखपाल अपने कई अनुयायियों के साथ धर्मोपदेश सुन रहे थे, परन्तु राजा को आते देख वे उठ खड़े हुए और ऋषि को प्रणाम करके विदा हो गए। राजा ने अपने पिता को प्रणाम किया और औपचारिक शिष्टाचार के बाद पूछा, “आदरणीय महोदय, आपसे मिलने कौन से राजा आए हैं?” “प्रिय पुत्र, ये नाग राजा शंखपाल हैं।” नाग की महान भव्यता देखकर पुत्र के मन में नागलोक जाने की लालसा उत्पन्न हुई। कुछ दिन वहाँ रहकर उन्होंने अपने पिता को भोजन की निरंतर आपूर्ति की और फिर अपने नगर लौट आए। वहाँ उन्होंने नगर के चारों द्वारों पर भिक्षागृह बनवाया और अपने भिक्षादान से पूरे भारत में ख्याति अर्जित की। नागलोक जाने की आकांक्षा में वे सदा नैतिक नियमों का पालन करते रहे और पवित्र दिनों के कर्तव्यों का अनुपालन करते रहे। अंत में उनका नागलोक में राजा शंखपाल के रूप में पुनर्जन्म हुआ। समय बीतने के साथ-साथ वह इस वैभव से ऊब गया और उस दिन से मनुष्य के रूप में जन्म लेने की इच्छा से उसने पवित्र दिनों का पालन करना शुरू कर दिया, लेकिन नागलोक में रहने के कारण वह उनका पालन करने में सफल नहीं हो सका और उसके नैतिक मूल्यों में गिरावट आई। उस दिन से उसने नागलोक छोड़ दिया और कन्नपेन्ना नदी से कुछ ही दूरी पर,मुख्य सड़क और संकरे रास्ते के बीच चींटियों के टीले पर कुंडली मारकर, उसने वहाँ पवित्र दिन मनाने का संकल्प लिया और नैतिक नियम का पालन करने का निश्चय किया। उसने कहा, "जो मेरी खाल या मेरा मांस चाहते हैं, वे सब ले लें," और इस प्रकार दान के रूप में स्वयं को बलिदान करते हुए वह चींटियों के टीले के ऊपर लेट गया और महीने के पखवाड़े की चौदहवीं और पंद्रहवीं तारीख को वहाँ ठहरता रहा, और प्रत्येक पखवाड़े के पहले दिन नाग लोक लौट जाता था। एक दिन जब वह वहाँ लेटा हुआ था, नैतिक नियम का पालन करते हुए, पास के एक गाँव में रहने वाले सोलह पुरुषों का एक समूह, मांस खाने की इच्छा से, अपने हाथों में हथियार लेकर जंगल में घूम रहा था। जब वे कुछ भी न पाकर लौटे, तो उन्होंने उसे चींटियों के टीले पर लेटा हुआ देखा और सोचा, "आज तो हमें एक छोटी छिपकली भी नहीं मिली, हम इस नाग-राजा को मार कर खा जाएँगे।" लेकिन इस डर से कि उसके विशाल आकार के कारण, अगर वे उसे पकड़ भी लें, तो वह उनसे बच निकलेगा, उन्होंने सोचा कि वे उसे वहीं कुंडली मारकर लेटे हुए ही डंडों से छेद देंगे और इस तरह उसे निष्क्रिय करके पकड़ लेंगे। इस प्रकार, डंडे हाथ में लेकर वे उसके पास पहुँचे। और बोधिसत्व ने अपने शरीर को एक नाली के आकार का विशाल बना लिया, और वह अत्यंत सुंदर दिखाई दिए, मानो जमीन पर रखी चमेली की माला हो, उनकी आंखें गुंजा झाड़ी के फल के समान थीं और उनका सिर जयसूमन (*1) फूल के समान था। सोलह पुरुषों के कदमों की आहट सुनकर, उन्होंने अपने कुंडलियों से अपना सिर बाहर निकाला और अपनी ज्वलंत आंखें खोलीं, तो उन्होंने देखा कि वे अपने हाथों में भाले लिए आ रहे हैं और उन्होंने सोचा, "आज मेरी इच्छा पूरी होगी, मैं अपने संकल्प में दृढ़ रहूंगा और स्वयं को उनके सामने बलिदान के रूप में प्रस्तुत करूंगा, और जब वे मुझे अपने भालों से मारेंगे और मुझे घावों से भर देंगे, तो मैं अपनी आंखें नहीं खोलूंगा और क्रोध से उनकी ओर नहीं देखूंगा।" नैतिक नियम को तोड़ने के भय से इस दृढ़ संकल्प को धारण करते हुए, उन्होंने अपना सिर अपने फन में छिपा लिया और लेट गए। फिर वे उनके पास आए और उनकी पूंछ पकड़कर उन्हें जमीन पर घसीटने लगे। उन्हें फिर से नीचे गिराकर, उन्होंने नुकीले डंडों से आठ अलग-अलग जगहों पर घायल कर दिया और काले बांस के डंडों को, कांटों समेत, उनके खुले घावों में ठोक दिया। फिर वे आठों जगहों पर रस्सियों से उन्हें बांधकर अपने साथ ले जाते हुए आगे बढ़ गए। डंडों से घायल होने के क्षण से ही उस महान प्राणी ने एक बार भी अपनी आँखें नहीं खोलीं और न ही उन आदमियों को गुस्से से देखा, लेकिन जैसे ही उन्हें आठ डंडों से घसीटा जा रहा था, उनका सिर नीचे झुक गया और जमीन से टकराया। इसलिए जब उन्होंने देखा कि उनका सिर नीचे झुक गया है, तो उन्होंने उन्हें मुख्य सड़क पर लिटा दिया और एक पतले डंडे से उनकी नाक में छेद करके उनका सिर ऊपर उठाया और उसमें एक रस्सी डाली, और उसे अंत में बांधकर उन्होंने एक बार फिर उनका सिर ऊपर उठाया और अपने रास्ते पर चल पड़े। उसी समय, विदेह राज्य के मिथिला शहर में रहने वाला अलारा नाम का एक जमींदार, एक आरामदायक रथ में बैठा हुआ, पाँच सौ गाड़ियों के साथ यात्रा कर रहा था।बोधिसत्व के साथ इन दुराचारी पुरुषों को देखकर, उन्होंने उन सोलहों को, प्रत्येक को एक-एक बैल, मुट्ठी भर सोने के सिक्के, भीतरी और बाहरी वस्त्र और उनकी पत्नियों को पहनने के लिए आभूषण दिए, और इस प्रकार उन्हें बोधिसत्व को छोड़ने के लिए राजी कर लिया। बोधिसत्व नाग महल लौट आए और बिना किसी देरी के, अपने साथ बड़ी संख्या में सेवकों को लेकर अलारा के पास पहुँचे, और नाग महल की प्रशंसा करने के बाद, उन्हें अपने साथ ले गए और वहाँ लौट आए। फिर उन्होंने अलारा और तीन सौ नाग कन्याओं का भव्य स्वागत किया और उन्हें दिव्य सुखों से तृप्त किया। अलारा ने नाग महल में पूरे एक वर्ष तक दिव्य सुखों का आनंद लिया, और फिर नाग राजा से कहा, "मेरे मित्र, मैं तपस्वी बनना चाहता हूँ," और तपस्वी जीवन के लिए आवश्यक सभी सामान लेकर नागों का निवास छोड़कर हिमालय क्षेत्र की ओर चल दिए और शिष्यों के पवित्र मार्ग में प्रवेश करके वहाँ दीर्घकाल तक रहे। कुछ समय बाद वे तीर्थयात्रा पर निकले और बनारस पहुँचे, जहाँ उन्होंने राजा के उद्यान में अपना निवास स्थान बनाया। अगले दिन वे भिक्षा मांगने के लिए शहर में प्रवेश किया और राजा के महल के द्वार पर पहुँचे। बनारस के राजा उन्हें देखकर इतने प्रसन्न हुए कि उन्होंने उन्हें अपने समक्ष बुलाया, उनके लिए निर्धारित विशेष आसन पर बैठाया और उन्हें विभिन्न प्रकार के स्वादिष्ट भोजन परोसे। फिर राजा ने एक नीची कुर्सी पर बैठकर उन्हें प्रणाम किया और उनसे बातचीत करते हुए प्रथम श्लोक का पाठ किया:

आकर्षक व्यक्तित्व और सुंदर रूप वाली,
मुझे लगता है कि आप एक कुलीन परिवार के वंशज हैं;
तो फिर पृथ्वी के सुखों और सांसारिक वस्तुओं का त्याग क्यों करें?

क्या संन्यासी का वस्त्र धारण करके कठोर शासन करना चाहिए?
आगे के भाग में श्लोकों के संबंध को तपस्वी और राजा के बीच बारी-बारी से दिए गए भाषणों के रूप में समझा जाना चाहिए।

हे मनुष्यों के स्वामी, मुझे अच्छी तरह याद है
उस सर्वशक्तिमान नाग राजा का निवास स्थान,
मैंने पवित्रता से उत्पन्न होने वाले भरपूर फल को देखा।
और सच्चे विश्वासियों ने पुरोहितों का वस्त्र धारण किया।
न तो भय, न वासना, न ही घृणा स्वयं
एक पवित्र व्यक्ति सत्य के वचनों का त्याग कर देता है:
मुझे वह बात बताओ जिसे जानकर मुझे खुशी होगी।
और मेरे हृदय में विश्वास और शांति बढ़ेगी।
हे राजा, मैं व्यापारिक यात्रा पर जा रहा था।
जब मेरे रास्ते में ये दुष्ट और नीच लोग मिले,
जंजीरों में जकड़े एक पूर्ण विकसित सांप को ले जाया गया।
और वे विजय की खुशी में झूमते हुए तेजी से घर की ओर चल पड़े।
जब मैं उनके साथ आया, हे राजा, मैंने पुकार लगाई,
मैं आश्चर्यचकित और बेहद भयभीत था।
"आप लोग इस भयानक राक्षस को कहाँ घसीट रहे हैं, महोदय?"
और तुम लोग, उसके साथ क्या करोगे?'
"यह पूरी तरह से विकसित सांप जिसे आप इस प्रकार जंजीरों से बंधा हुआ देख रहे हैं"
अपने विशाल आकार के कारण यह हमें भोजन प्रदान करेगा।
अलारा, इससे ज़्यादा की तुम शायद ही कुछ और चाह सकती हो।
किसी बेहतर या अधिक स्वादिष्ट व्यंजन का स्वाद लेने के लिए।"
इसलिए हम अपने घर के लिए उड़ान भरेंगे और थोड़ी ही देर में पहुँच जाएँगे।
प्रत्येक ने अपनी-अपनी छुरी से एक सुंदर टुकड़ा काटा
और खुशी से उसका मांस खाओ, क्योंकि जैसा कि तुम जानते हो,
सांपों को हममें हमेशा एक घातक शत्रु मिलता है।"
"अगर यह विशालकाय सांप, जिसे हाल ही में जंगल में पकड़ा गया था,
उसे भोजन के रूप में इस्तेमाल करने के लिए घसीटा जा रहा है।
मैं प्रत्येक को एक-एक बैल भेंट करता हूँ।
क्या तुम इस सर्प को उसकी जंजीरों से मुक्त कर दोगे?
"हमें गोमांस की आवाज़ सुखद लगती है, मैं कसम खाता हूँ।"
इससे पहले हम अक्सर सांप का मांस खाकर पेट भरते थे।
हे अलारा, आपकी प्रार्थना है, हम उसे पूरा करेंगे;
अब से हम दोनों के बीच मित्रता का राज कायम रहे।
फिर उन्होंने उसे उस रस्सी से मुक्त कर दिया जो उसके पास से गुजर रही थी।
उसकी नाक के आर-पार होकर गांठों से उसे कसकर पकड़ लिया गया था।
सर्प-राजा ने कष्ट सहने की क्षमता से मुक्ति पाई
उसने उसे पूर्व दिशा की ओर मोड़ा, फिर कुछ देर रुका।
और पूर्व दिशा की ओर मुख किए, उड़ने के लिए तैयार,
उसने नम आंखों से मेरी ओर देखा।
मैं उसके रास्ते में उसका पीछा कर रहा था
हाथों को आपस में जोड़कर फैलाया हुआ, मानो कोई प्रार्थना करने वाला हो।
"तेजी से चलो, मेरे मित्र, जैसे कोई जल्दी में जा रहा हो।"
अन्यथा तुम एक बार फिर अपने शत्रुओं के बीच गिर जाओगे।
ऐसे बदमाशों को देखकर लोग मुंह फेर लेते हैं।
या फिर आपको अपनी ही इच्छा के विरुद्ध कष्ट भोगना पड़ सकता है।
फिर वह एक मनमोहक स्वच्छ तालाब की ओर तेजी से बढ़ा।

इसके किनारों पर गन्ने और गुलाब सेब दोनों फैले हुए हैं--
वह अत्यंत प्रसन्न था, उसे अब किसी बात का डर नहीं था।
लेकिन पानी की गहराई में डूब जाने के कारण वह नजरों से ओझल हो गया।
सांप के गायब होते ही, उसने
उन्होंने अपनी दिव्यता को पूर्णतया स्पष्ट रूप से प्रकट किया।
उन्होंने अपने दयालु कार्यों से दयालुता की भूमिका निभाई।
और उनके कृतज्ञतापूर्ण भाषणों ने मेरे हृदय को छू लिया।
"तुम मेरे माता-पिता से भी अधिक प्रिय हो, तुमने मुझे सब कुछ वापस लौटा दिया।"
मेरे जीवन, सच्चे मित्र, तुम्हारे अंतर्मन तक भी।
आपके कारण मुझे मेरा पूर्वज आनंद पुनः प्राप्त हो गया है।
तो आओ, अलारा, देखो जहाँ कभी मैंने राज किया था।
इंद्र के नगर की तरह, भोजन से भरपूर जीवन यापन करने वाला एक स्थान।
मसक्कसारा, उच्च प्रसिद्धि का स्थान।"
हे प्रभु, सर्पराज ने ये शब्द कहने के बाद, अपने निवास स्थान की और भी अधिक प्रशंसा करते हुए, कुछ छंद दोहराए:

मेरे क्षेत्र में कितने मनमोहक स्थान दिखाई देते हैं!
चलने में कोमल और सदाबहार पेड़ों से ढका हुआ!
हमारे रास्ते में न तो धूल है और न ही कंकड़।
और वहीं सुखी आत्माएं अपने दुख को पीछे छोड़ देती हैं।
नीलम की दीवारों से घिरे समतल प्रांगण के बीच में
चारों ओर सुंदर आम के बाग ही बाग हैं।
जिस पर भरपूर फलों के पके हुए गुच्छे दिखाई देते हैं
साल भर के सभी बदलते मौसमों के दौरान।
इन उपवनों के बीच सोने का एक कपड़ा लाया गया।
और आप देख सकते हैं कि ये चांदी के बोल्ट से जड़े हुए हैं।
एक जीवंत, वैभवशाली जीवन, जो सभी को पीछे छोड़ दे।
आकाश में चमकती बिजली की चमक।
रत्नों और सोने से निर्मित, दिव्य रूप से सुंदर,
और कई बार दुर्लभ चित्रों से सजा हुआ।
यह भव्य वस्त्रों से सजी अप्सराओं से भरा हुआ है।
सभी ने अपनी छाती पर सोने की जंजीरें पहन रखी थीं।
फिर समखापाला ने बड़ी जल्दबाजी में चढ़ाई की।
सीढ़ीदार ऊँचाई, जिस पर सत्ता में उदात्त
हजारों खंभों पर उठा हुआ देखा गया
उनकी विवाहित पत्नी और रानी का महल।
जल्दी ही उस गर्ल बैंड में से एक
हाथ में एक कीमती गहना लिए हुए,
जादुई शक्तियों से परिपूर्ण एक दुर्लभ फ़िरोज़ा,
और बिना पूछे ही सभी ने मुझे बैठने के लिए जगह दी।
फिर सांप ने मेरी बांह पकड़ ली और मुझे वहां ले गया जहां
वहाँ एक भव्य और राजसी कुर्सी खड़ी थी।
कृपया, माननीय महोदय मेरे बगल में बैठें।
"आप मेरे लिए सबसे प्रिय अभिभावक हैं," वह रोते हुए बोला।
फिर एक दूसरी अप्सरा उसके आदेश पर तुरंत आ गई।
वह हाथ में पानी का कटोरा लेकर आई थी।
और उन्होंने मेरे पैर धोए, दयालुतापूर्वक सेवा करते हुए।
रानी ने भी अपने प्रिय स्वामी राजा के लिए ऐसा ही किया।
फिर कुछ ही समय में एक और लड़की।

सुनहरी थाली में करी चावल परोसा गया।
कई तरह की चटनी के साथ, जो संयोगवश हो सकती हैं
तीव्र लालसा भूख को उत्तेजित करती है।
फिर संगीत की धुनें बजने लगीं—क्योंकि वे ऐसी ही धुनें जानते थे।
क्या उनके स्वामी की यही इच्छा थी—वे प्रसन्नतापूर्वक उन्हें वश में करने को तैयार थे
न तो मेरी इच्छा कभी विफल हुई और न ही स्वयं राजा कभी विफल हुए।
मेरी आत्मा दिव्य इच्छाओं से व्याकुल है।
मेरे पास आकर उसने एक और छंद दोहराया:

अलारा, मेरे पास तीन सौ पत्नियां हैं।
पतली कमर वाली, सुंदरता में वे सब से बढ़कर हैं।
कमल का फूल। देखो, वे केवल जीवित रहते हैं
आपकी इच्छा पूरी करने के लिए: मेरे द्वारा दिए गए वरदान को स्वीकार करें।
अलारा ने कहा:

मुझे एक वर्ष तक परम सुखों का आशीर्वाद प्राप्त हुआ।
जब मैंने राजा से यह प्रश्न पूछा,
"नागा, यह महल हमारा घर कैसे है?"
और आपको अपना हिस्सा कैसे मिला?
क्या यह सुंदर स्थान संयोगवश प्राप्त हुआ था?
क्या यह तुमने स्वयं लाया है, या स्वर्गदूतों से प्राप्त उपहार है?
मैं आपसे पूछता हूँ, नागों के राजा, सच बताओ,
आप इस खूबसूरत जगह पर रहने के लिए कैसे आए?
इसके बाद दोनों (*2) द्वारा बारी-बारी से बोले गए छंद आए।

यह किसी संयोग या प्राकृतिक नियम से प्राप्त नहीं हुआ था।
यह मेरे द्वारा नहीं लाया गया है, न ही मुझे स्वर्गदूतों से कोई वरदान प्राप्त हुआ है;
लेकिन मेरे अच्छे कर्मों के बारे में आपको अवश्य ही जानना चाहिए।
और मेरी योग्यताओं के कारण ही मुझे ये सुंदर महल मिले हैं।
क्या पवित्र प्रतिज्ञा है, क्या पवित्र और शुद्ध जीवन है!
इस प्रकार के आनंद से पुण्य का कौन सा भंडार सुरक्षित हो सकता है?
हे सर्पराज, मुझे बताओ, क्योंकि मैं बहुत उत्सुक हूँ।
यह जानने के लिए कि आप इस खूबसूरत हवेली को कैसे प्राप्त कर सकते हैं।
मैं एक समय मगध का राजा था, मेरा नाम
दुय्योधन, एक प्रखर ख्यातिप्राप्त राजकुमार:
मुझे अपना जीवन घृणित और असुरक्षित लगता था।
परिपक्वता की पूरी शक्ति के बिना।
मुझे नियमित रूप से मांस और पेय पदार्थ की आपूर्ति की जाती है।
और दूर-दूर तक सभी को दान दिया गया।
मेरा घर एक सराय जैसा था, जहाँ सभी लोग आते थे।
ऋषियों और संतों ने अपने थके हुए शरीर को तरोताजा किया।
मैंने ऐसी प्रतिज्ञाओं से बंधे हुए ही जीवन व्यतीत किया।
और इस प्रकार मैंने पुण्य का भंडार संचित किया,
जिसके द्वारा अंततः इस हवेली को प्राप्त किया गया।
और भरपूर मात्रा में भोजन और पेय प्राप्त हुए।
यह जीवन, चाहे कितने ही दिनों तक उज्ज्वल क्यों न हो
नृत्य और गीत के साथ, लेकिन यह निश्चित रूप से कब तक चलेगा, यह कहना मुश्किल है।
कमजोर प्राणी आपकी पूरी ताकत के बावजूद आपको परेशान करते हैं।
और कमजोर प्राणी बलवानों को भगा देते हैं।

ऐसे असमान संघर्ष में पूरी तरह से हथियारों से लैस होकर क्यों?
क्या तुम्हें उन नीच भिखारियों का शिकार बनना चाहिए?
किस भय पर विजय पाने के कारण आप पराजित हुए?
तुम्हारे जहर का वायरस कहाँ चला गया था?
तुम तो हथियारों से लैस और शक्तिशाली थे, फिर भी...
क्या तुमने ऐसे बेचारे प्राणियों से पीड़ा सहन की?
किसी भी भय पर विजय प्राप्त करने से मैं पराजित नहीं हुआ।
और न ही कोई मेरी शक्तियों को कुचल सकता था।
अच्छाई का महत्व सभी स्वीकार करते हैं;
समुद्र तट की तरह इसकी सीमाओं का कभी उल्लंघन नहीं किया जाता।
मैं महीने में दो बार एक पवित्र दिन मनाता था;
तभी, अलारा, मेरा रास्ता उससे टकरा गया।
दो बार आठ व्यभिचारी पुरुष, अपने हाथों में लिए हुए
सबसे महीन धागे से बनी एक रस्सी और गांठदार फंदा।
बदमाशों ने मेरी नाक में छेद कर दिया, और उस छेद के माध्यम से
रस्सी को आगे बढ़ाते हुए, वह मुझे अपने साथ घसीटता हुआ ले गया।
मुझे कितना दर्द सहना पड़ा—अरे! कितनी निर्दयी किस्मत थी!
पवित्र दिनों को अक्षुण्ण रखने के लिए।
उस एकांत पथ पर, जो पूरी लंबाई तक फैला हुआ था, देखकर
सुंदरता और अपार शक्ति का एक अनूठा संगम।
मैंने पुकारा, "हे ज्ञानी और महिमावान, क्या तुम ऐसा करोगे?"
क्या आप यह कठोर तपस्वी व्रत ग्रहण करेंगे?
न तो मुझे संतान की इच्छा है और न ही धन की।
और न ही मैं लंबे दिनों की आकांक्षा रखता हूँ;
लेकिन मैं पुरुषों की दुनिया के बीच रहना पसंद करूंगी।
और इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए वीरतापूर्वक प्रयास करें।
अच्छी तरह से ट्रिम किए हुए बाल और दाढ़ी के साथ, आपका मजबूत शरीर
भव्य वस्त्रों से सुशोभित, ज्वाला जैसी आंख,
लाल चंदन के तेल में नहाए हुए तुम चमकते हुए प्रतीत होते हो।
दूर से, मानो कोई संगीतकार दिव्य राजा हो।
दिव्य उपहारों से चमत्कारिक रूप से धन्य
और जो कुछ भी तुम्हारा हृदय चाहे, वह तुम्हें प्राप्त हो जाए।
हे सर्पराज, मैं आपसे सत्य जानने का अनुरोध करता हूँ।
आप पुरुषों की दुनिया में रहना क्यों पसंद करते हैं?
मेरे ख्याल से, सिर्फ पुरुषों की दुनिया में ही ऐसा संभव है।
पवित्रता और आत्मसंयम दिखाई दे:
काश, मुझे एक बार भी मनुष्यों के बीच सांस लेने का मौका मिले।
मैं जन्म और मृत्यु के इस चक्र को समाप्त कर दूंगा।
हमेशा उदारता और उत्साह से भरपूर,
हे राजा, मैं आपके साथ एक वर्ष तक रहा हूँ।
अब मुझे विदाई लेकर भाग जाना चाहिए।
घर से दूर रहकर मैं अब और नहीं रह सकता।
मेरी पत्नी, बच्चे और हमारा नौकरों का दल
क्या वे हमेशा आपके आदेश का इंतजार करने के लिए प्रशिक्षित होते हैं?
मुझे पूरा भरोसा है कि किसी ने भी आपको थोड़ी सी भी पेशकश नहीं की है।
क्योंकि तुम मुझे बहुत प्रिय हो, अलारा।
दयालु माता-पिता की उपस्थिति घर को आनंद से भर देती है।
फिर भी, वे किसी प्रिय लड़के को बहुत प्यार करते थे:

लेकिन मुझे सबसे बड़ा आनंद यहीं मिला है।
हे राजा, आपने मुझे सदा प्रिय माना है।
मेरे पास खून जैसे लाल धब्बे वाला एक दुर्लभ रत्न है।
इससे उन लोगों को अपार धन प्राप्त होता है जिनके पास यह नहीं है।
इसे ले जाओ और अपने घर जाओ, और जब
आप अमीर हो गए हैं, कृपया इसे वापस भेज दें।
अलारा ने ये शब्द कहकर आगे कहा: "हे महाराज, मैंने नागराज से कहा, 'मुझे धन की कोई आवश्यकता नहीं है, परन्तु मैं संन्यासी बनने के लिए उत्सुक हूँ' और तपस्वी जीवन के लिए आवश्यक सब कुछ माँगकर, मैं राजा के साथ नाग महल छोड़कर चला गया, और उसे वापस भेजकर हिमालय देश में प्रवेश किया और संन्यासी बन गया।" इन शब्दों के बाद उन्होंने बनारस के राजा को प्रवचन दिया और कुछ और श्लोक दोहराए।

मनुष्य की इच्छाएँ क्षणभंगुर होती हैं, और न ही वे स्थिर हो सकती हैं।
परिपक्वता परिवर्तन के उच्च नियम का पालन करें:
पापी वासनाओं से उत्पन्न होने वाले कष्टों को देखकर,
हे राजा, विश्वास ने मुझे पुरोहित बनने के लिए प्रेरित किया।
मनुष्य फल की तरह गिरते हैं, तुरंत नष्ट हो जाते हैं।
सभी शरीर, चाहे युवा हों या वृद्ध, क्षय होते हैं:
मुझे केवल तपस्या (वैराग्य) में ही विश्राम मिलता है।
जो सत्य और सार्वभौमिक है, वही सर्वश्रेष्ठ है।
यह सुनकर राजा ने एक और श्लोक दोहराया:

बुद्धिमान और विद्वान, जैसे कि ध्यान करते हैं
हमें महत्वपूर्ण विषयों पर चिंतन करना चाहिए;
अलारा, मैं सांप और तुम्हारी बात सुन रही हूँ।
देखो! मैं सभी प्रकार के धार्मिक कार्य करता हूँ।
तब तपस्वी ने अपनी शक्ति का संचार करते हुए समापन श्लोक कहा:

बुद्धिमान और विद्वान, जैसे कि ध्यान करते हैं
हमें इन महत्वपूर्ण विषयों पर विचार-विमर्श करना चाहिए:
हे सम्राट, मेरी और साँप की बातें सुनो।
क्या आप सभी धार्मिक कार्यों का पालन करते हैं?
इस प्रकार उन्होंने राजा को धार्मिक शिक्षा दी, और वर्षा ऋतु के चार महीने एक ही स्थान पर रहने के बाद वे फिर से हिमालय लौट आए, और जब तक वे जीवित रहे, उन्होंने चारों सिद्ध अवस्थाओं का अभ्यास किया, जब तक कि वे ब्रह्मलोक (देवदूतों का लोक) में नहीं चले गए, और जब तक वे जीवित रहे, उन्होंने शंखपाल के दिनों का पालन किया, और राजा ने दान और अन्य अच्छे कार्यों में व्यतीत जीवन के बाद अपने कर्मों के अनुसार फल प्राप्त किया।

इस प्रवचन के अंत में गुरु ने जन्म की पहचान इस प्रकार की: "उस समय जो पिता तपस्वी बने वे कश्यप थे, बनारस के राजा आनंद थे, अलारा सारिपुत्र थे और शंखपाल मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)पेंटापेट्स फोनीसिया.

(2) दो वार्ताकार नाग राजा और अलारा हैं।

टिपिटका >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कुला-सुतसोम-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-525-||---->>>> अगला

जातक क्रमांक 525
CULLA-SUTASOMA-JATAKA

"अच्छे दोस्तों," इत्यादि। यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में निवास करते हुए आत्म-त्याग के पूर्ण अभ्यास के विषय में सुनाई थी। प्रारंभिक कथा महानारद कश्यप (*1) के जन्म की कथा से मेल खाती है।

बहुत समय पहले, जिसे अब बनारस कहा जाता है, वहाँ सुदस्सन नामक नगर हुआ करता था और वहाँ राजा ब्रह्मदत्त रहते थे। उनकी प्रमुख पत्नी ने बोधिसत्व को जन्म दिया। उनका चेहरा पूर्णिमा के चंद्रमा के समान तेजस्वी था, इसलिए उनका नाम सोमकुमार रखा गया। जब वे वयस्क हुए, तो सोम रस के प्रति उनके प्रेम और इसे दूसरों को अर्पित करने की आदत के कारण, लोग उन्हें सुतासोमा (सोम-आसुत) के नाम से जानने लगे। जब वे वयस्क हुए, तो उन्होंने तक्षशिला में कलाओं की शिक्षा प्राप्त की, और घर लौटने पर उनके पिता ने उन्हें एक सफेद छत्र भेंट किया। उन्होंने अपने राज्य पर विधिपूर्वक शासन किया और एक विशाल साम्राज्य के स्वामी थे, जिनके सोलह हजार पत्नियाँ थीं, जिनमें चंदादेवी प्रमुख पत्नी थीं। समय बीतने के साथ, जब उनका परिवार बहुत बड़ा हो गया, तो वे गृहस्थ जीवन से असंतुष्ट हो गए और तपस्वी जीवन अपनाने की इच्छा से वन में चले गए। एक दिन उन्होंने अपने नाई को बुलाया और उससे कहा, "जब मेरे सिर पर एक भी सफेद बाल दिखाई दे, तो मुझे बताना।" नाई मान गया और कुछ समय बाद उसने एक सफेद बाल देखा और उसे इसके बारे में बताया। राजा ने कहा, "तो, महाराज नाई, इसे निकाल कर मेरे हाथ में रख दीजिए।" नाई ने सोने की चिमटी से उसे निकाला और उसके हाथ में रख दिया। जब राजा ने उसे देखा, तो वह चिल्लाया, "मेरा शरीर बुढ़ापे का शिकार हो रहा है," और भयभीत होकर उसने सफेद बाल उठाया और चबूतरे से नीचे उतरकर लोगों के सामने रखे सिंहासन पर बैठ गया। फिर उसने अपने सेनापति के नेतृत्व में अस्सी हजार सलाहकारों और अपने पुजारी के नेतृत्व में साठ हजार ब्राह्मणों और अपने कई अन्य प्रजाजनों और नागरिकों को बुलाया और उनसे कहा, "मेरे सिर पर एक सफेद बाल आ गया है; मैं बूढ़ा हो गया हूँ, और आप जान लें कि मैं संन्यासी बन गया हूँ," और उसने पहला श्लोक दोहराया:

यहां अच्छे मित्र और नागरिक एकत्रित हुए हैं।
   मेरे विश्वसनीय सलाहकारों, मेरी बात सुनो।
अब मेरे सिर पर सफेद बाल दिखने लगे हैं,
   अब से मेरी यही इच्छा है कि मैं भिक्षु बनूं।
यह सुनकर उनमें से प्रत्येक ने निराशा के आवेश में आकर इस छंद को दोहराया:

उच्चारण में ऐसे यादृच्छिक (*2) शब्द
   तुम मेरे दिल में तीर चला रहे हो:
हे राजा, अपनी सात सौ पत्नियों को याद रखना;
   आपके चले जाने पर उनका क्या होगा?
तब उस महान सत्ता ने तीसरा श्लोक बोला:

उनके दुखों को जल्द ही कोई और दिलासा देगा।
   क्योंकि वे उम्र में युवा हैं और देखने में सुंदर हैं।
लेकिन मैं एक दिव्य लक्ष्य की ओर अग्रसर हूँ।
   और इसलिए मुझे भिक्षु बनकर बहुत खुशी है।
राजा के सलाहकारों के पास कोई जवाब न होने पर वे उनकी माता के पास गए और उन्हें इस बारे में बताया। माता जल्दी से आईं और उनसे पूछा, "प्रिय पुत्र, क्या यह सच है कि तुम तपस्वी बनना चाहते हो?" उन्होंने दो श्लोक दोहराए:

वह दिन कितना दुर्भाग्यपूर्ण था, अफसोस! कि मैं
   मुझे तुम्हारे जैसे बेटे की माँ होने के लिए सराहा जाता था।
मेरे आंसुओं और कड़वी चीखों के बावजूद,
   हे राजा, आपने भिक्षु बनने का निश्चय कर लिया है।
हाय! वह दिन कितना अभिशापपूर्ण था, जब मैं

हे प्रिय सुतासोमा, तुमने तुम्हें जन्म दिया।
मेरे आंसुओं और कड़वी चीखों के बावजूद,
हे राजा, आपने भिक्षु बनने का निश्चय कर लिया है।
जब उनकी माता इस प्रकार शोक मना रही थीं, बोधिसत्व ने एक शब्द भी नहीं कहा। वह एकांत में बैठकर रोती रहीं। फिर उन्होंने उनके पिता को बताया। और वे आए और उन्होंने एक श्लोक दोहराया:

यह कौन सा नियम है जो आपको बनने की ओर ले जाता है?
क्या आप अपना राज्य और अपना घर छोड़ने के लिए उत्सुक हैं?
अपने बूढ़े माता-पिता को पीछे छोड़कर अकेले रहने के लिए
क्या तुम यहाँ बिल्कुल अकेले एक साधु की कुटिया की तलाश में हो?
यह सुनकर महापुरुष चुप हो गए। तब उनके पिता ने कहा, "मेरे प्रिय सुतासोमा, भले ही तुम्हें अपने माता-पिता से स्नेह न हो, तुम्हारे कई छोटे बेटे-बेटियाँ हैं। वे तुम्हारे बिना नहीं रह सकेंगे। जिस क्षण वे बड़े हो जाएँगे, क्या तुम संन्यासी बन जाओगे?" और उन्होंने सातवाँ श्लोक दोहराया:

लेकिन मुझे लगता है कि आपके कई बच्चे हैं।
और उन सभी कोमल वर्षों में,
जब आप अब दिखाई न दें,
उन्हें कितना दुख सहना पड़ेगा!
यह सुनकर उस महान सत्ता ने एक श्लोक दोहराया:

हां, मेरे कई बच्चे हैं, मुझे लगता है।
वे अभी कम उम्र के हैं।
हालांकि मैं उनके साथ काफी लंबे समय से रहा हूँ,
अब मुझे निश्चित रूप से विदा लेना होगा।
इस प्रकार उस महान सत्ता ने अपने पिता को विधि का उपदेश दिया। जब उन्होंने विधि का उपदेश सुना, तो वे चुप रहे। तब उन्होंने उनकी सात सौ पत्नियों को यह बात बताई। और वे महल के शिखर से उतरकर उनके समक्ष आईं और उनके चरणों को गले लगाकर रोने लगीं और इस श्लोक को दोहराया:

दुःख में तुम्हारा हृदय अवश्य टूट जाएगा।
या फिर दया भाव तुम्हारे लिए अज्ञात है,
आप धार्मिक अनुष्ठान (तपस्या) कर सकते हैं।
और हमें यहाँ अकेले रोने के लिए छोड़ दिया।
जब उस महान सत्ता ने उनके चरणों में गिरकर जोर-जोर से रोने की आवाज़ सुनी, तो उन्होंने एक और श्लोक दोहराया:

दुःख में भी मेरा हृदय न टूटे,
हालांकि मुझे आपके दर्द पर दया आती है,
लेकिन मुझे पवित्र तपस्या करनी ही होगी।
ताकि मैं स्वर्गिक आनंद प्राप्त कर सकूं।
तब उन्होंने उसकी रानी पत्नी को बताया, और वह गर्भवती होने के बावजूद, हालांकि उसका प्रसव समय निकट आ चुका था, उस महान व्यक्ति के पास गई और उसे प्रणाम करते हुए आदरपूर्वक एक तरफ खड़ी हो गई और तीन श्लोक दोहराए:

वह दिन कितना दुर्भाग्यपूर्ण था, अफसोस! कि मैं
हे प्रिय सुतासोमा, मैंने तुमसे विवाह कर लिया है।
मेरे आंसुओं और कड़वी चीखों के बावजूद
हे राजा, आपने भिक्षु बनने का निश्चय कर लिया है।
वह दिन कितना बुरा था, हाय! कि मैं
हे प्रिय सुतासोमा, मैंने तुमसे विवाह कर लिया है।
क्योंकि तुम मुझे मेरी पीड़ा में मरने के लिए छोड़ दोगे।
आप एक भिक्षु बनने के लिए दृढ़ संकल्पित हैं।

मेरी प्रसव की घड़ी नजदीक आ रही है।
और मुझे खुशी होगी अगर मेरे स्वामी मेरे साथ रहें
जब तक मेरा बच्चा पैदा नहीं होता, उससे पहले मैं
देखो, तुम्हारे बिना मेरा दिन कितना दुखद है।
फिर उस महान सत्ता ने एक श्लोक दोहराया:

आपकी डिलीवरी का समय नजदीक आ रहा है।
जब तक बच्चा पैदा नहीं हो जाता, मैं तुम्हारे साथ रहूंगी।
तब क्या मैं उस शाही छोटे शैतान को छोड़कर उड़ जाऊँगा?
संसार से दूर, एक पवित्र भिक्षु बनने की राह पर।
उनकी बातें सुनकर वह अपने दुःख को संभाल नहीं पाईं और दोनों हाथों से अपना दिल थामकर बोलीं, "हे प्रभु, अब से हमारी शान नहीं रहेगी।" फिर अपने आँसू पोंछते हुए वह ज़ोर-ज़ोर से विलाप करने लगीं। उस महान सत्ता ने उन्हें सांत्वना देने के लिए एक श्लोक दोहराया:

मेरी रानी, जिसकी आंखें काले फूल जैसी हैं,
प्रिय चंदा, मेरे लिए मत रोओ।
लेकिन एक बार फिर अपने महल के बुर्ज पर चढ़ें:
मुझे तुम्हारी कोई परवाह नहीं है।
उसके शब्दों को सहन न कर पाने के कारण वह महल के शिखर पर चढ़ गई और वहाँ बैठकर रोने लगी। तब बोधिसत्व के बड़े पुत्र ने यह देखकर कहा, "मेरी माँ यहाँ बैठकर क्यों रो रही है?" और उसने इस श्लोक को प्रश्नवाचक रूप में दोहराया:

माँ, किसने आपको नाराज़ किया है?
तुम क्यों रोते हो और मुझे घूरते हो?
मेरे परिवार का कौन सा सदस्य मुझे यहाँ दिख रहा है?
क्या मुझे, भले ही मैं पूरी तरह गलत हूँ, तुम्हारे लिए किसी को मारना चाहिए?
तब रानी ने यह श्लोक कहा:

हे प्रिय पुत्र, उसके सिर को कोई हानि न पहुँचे।
कौन मेरे लिए इस तरह का कष्ट सहने के लिए जीवित है?
क्योंकि यह तुम्हारे पिता ने ही कहा था,
मुझे तुम्हारी कोई परवाह नहीं है।
उसकी बातें सुनकर उसने कहा, "प्यारी माँ, तुम ये क्या कह रही हो? अगर ऐसा है तो हम बेबस हो जाएँगे," और रोते हुए उसने ये पंक्तियाँ कहीं:

मैं, जो कभी पार्क में घूमने गया था, यह देखने के लिए
जंगली हाथी आपस में लड़ते हैं।
यदि मेरे प्रिय स्वामी, कोई भिक्षु हों,
मैं क्या करूँ, बेचारा बदनसीब प्राणी?
फिर उनका सात वर्षीय छोटा भाई, जब उन दोनों को रोते हुए देखा, तो अपनी माँ के पास आया और बोला, "मेरे प्यारे बच्चों, तुम क्यों रो रहे हो?" और कारण सुनकर माँ ने कहा, "ठीक है, रोना बंद करो;

मैं उसे संन्यासी नहीं बनने दूँगा," और उसने उन दोनों को दिलासा दिया, और अपनी नर्स के साथ महल के बुर्ज से नीचे उतरकर वह अपने पिता के पास गया और बोला, "प्रिय पिता, लोग मुझसे कहते हैं कि आप हमारी इच्छा के विरुद्ध हमें छोड़कर जा रहे हैं और कहते हैं कि आप संन्यासी बनेंगे; मैं आपको संन्यासी नहीं बनने दूँगा," और अपने पिता की गर्दन को कसकर पकड़ते हुए उसने यह श्लोक कहा:

देखो, मेरी माँ रो रही है!
मेरा भाई तुम्हें खुशी-खुशी रोके रखेगा।
मैं भी तुम्हारा हाथ थाम लूंगा
और न ही हम आपको अपनी इच्छा के विरुद्ध जाने देंगे।

उस महान प्राणी ने सोचा, "यह बच्चा मेरे लिए खतरे का स्रोत है; मैं इससे कैसे छुटकारा पाऊँ?" फिर अपनी नर्स की ओर देखकर उसने कहा, "अच्छी नर्स, यह गहना देखो: यह तुम्हारा है: बस बच्चे को यहाँ से ले जाओ, ताकि वह मेरे लिए बाधा न बने।" और जब वह स्वयं उस बच्चे को, जिसने उसका हाथ पकड़ रखा था, छुड़ाने में असमर्थ हुआ, तो उसने उसे रिश्वत देने का वादा किया और इस श्लोक को दोहराया:

नर्स उठो और छोटे लड़के को जाने दो
  उसके साथ किसी और जगह पर खेलो।
अन्यथा कहीं वह मेरी खुशी को खराब न कर दे।
  और स्वर्ग की ओर मेरी यात्रा में बाधा उत्पन्न करते हैं।
उसने रिश्वत ली और बच्चे को दिलासा देते हुए उसके साथ दूसरी जगह चली गई, और इस प्रकार शोक मनाते हुए उसने इस छंद को दोहराया:

अगर मैं सीधे-सीधे अस्वीकार कर दूं तो क्या होगा?
मुझे इसकी जरूरत नहीं है--क्या यह चमकीला रत्न है?
यदि मेरे स्वामी एक संन्यासी हों,
मुझे गहनों से क्या फायदा होगा?
तब उसके सेनापति ने सोचा, "मुझे लगता है कि इस राजा ने यह निष्कर्ष निकाल लिया है कि उसके महल में बहुत कम खजाना है; मैं उसे बता दूंगा कि उसके पास बहुत अधिक धन है," इसलिए वह खड़ा हुआ और उसने उसे प्रणाम किया और इस श्लोक को दोहराया:

आपके खजाने विशाल भंडार से भरे हुए हैं।
हे राजा, आपने अपार धन-संपत्ति एकत्रित कर ली है।
पूरी दुनिया तुम्हारे वश में है।
आप आराम करें; संन्यासी न बनें।
यह सुनकर उस महान सत्ता ने इस श्लोक को दोहराया:

मेरे खजाने विशाल खजानों से भरे हुए हैं,
मैंने अपार धन-संपत्ति अर्जित की है:
मैंने पूरी दुनिया को अपने अधीन कर लिया है;
मैं इसे एक साधु की तरह जीना छोड़ देता हूँ।
यह सुनकर जब वह चला गया, तो कुलवद्धन नामक एक धनी व्यापारी खड़ा हुआ और राजा को प्रणाम करते हुए उसने यह श्लोक दोहराया:

हे राजा, मैंने अपार धन-संपत्ति एकत्रित कर ली है।
समझ की सारी शक्ति से परे विशालता:
देखो, मैं यह सब तुम्हें देता हूँ।
आप आराम करें; संन्यासी न बनें।
यह सुनकर उस महान सत्ता ने एक श्लोक दोहराया:

हे कुलवद्धन, मैं जानता हूँ,
तुम अपनी सारी संपत्ति मुझे दे दोगे,
लेकिन अगर मेरा लक्ष्य दिव्य हो तो मैं जीत जाऊंगा।
अतः मैं इस पापमय संसार का त्याग करता हूँ।
कुलवद्धन ने यह सुनकर जैसे ही वहां से चले गए, उन्होंने अपने छोटे भाई सोमदत्त को संबोधित करते हुए कहा, "प्रिय भाई, मैं पिंजरे में बंद जंगली मुर्गे की तरह असंतुष्ट हूँ, गृहस्थ जीवन के प्रति मेरी अरुचि मुझ पर हावी हो गई है; आज ही मैं संन्यासी बन जाऊँगा; क्या तुम इस राज्य का शासन संभालोगे?" और राज्य का कार्यभार उन्हें सौंपते हुए उन्होंने यह श्लोक दोहराया:

ओ सोमदत्ता, मुझे यकीन है
मेरी इंद्रियों पर अजीब सी घृणा हावी हो जाती है
अपने उन जुनूनी पापों के बारे में सोचकर:
आज से मेरा एकांत जीवन शुरू होता है।

ये शब्द सुनकर सोमदत्त के मन में भी संन्यासी बनने की इच्छा जागृत हुई और इसे स्पष्ट करने के लिए उन्होंने एक और श्लोक दोहराया:

प्रिय सुतासोमा, जाओ और निवास करो
एकांतवास में जैसा आपको अच्छा लगे;
मैं भी खुशी-खुशी संन्यासी बनना चाहूंगा।
तुम्हारे बिना जीवन का कोई अर्थ नहीं है।
तब इसे अस्वीकार करते हुए सुतासोमा ने एक आधा श्लोक दोहराया:

आप न तो जा सकते हैं, न ही उस भूमि से होकर जा सकते हैं।
घरेलू जीवन पूरी तरह से ठप हो जाएगा (*3)।
यह सुनकर लोग उस महान सत्ता के चरणों में गिर पड़े और शोक मनाते हुए बोले

यदि सुतासोमा चला जाए,
हम पूछते हैं, हमारा क्या होगा?
तब उस महान सत्ता ने कहा, "शोक मत करो: यद्यपि मैं तुम्हारे साथ लंबे समय तक रहा हूँ, अब मुझे तुमसे विदा होना पड़ेगा; किसी भी वस्तु में स्थायित्व नहीं है," और लोगों को धर्म का उपदेश देते हुए उन्होंने कहा,

जैसे छलनी से पानी छनता है (*4), हमारा दिन
अफसोस! कितना क्षणिक है! पल भर में बीत जाता है:
जीवन इस प्रकार सीमित हो जाने पर, मुझे लगता है,
लापरवाही की कोई गुंजाइश नहीं दिखती।
जैसे छलनी से पानी छनता है, वैसे ही हमारा दिन भी छनता है।
अफसोस! कितना क्षणिक है! पल भर में बीत जाता है:
इस प्रकार जीवन चारों ओर से सीमित हो जाने के कारण,
केवल मूर्ख ही लापरवाह पाया जाता है।
वासनाओं के बंधन में जकड़े हुए, जिनमें वे पड़ गए,
ऐसे लोग नरक की सीमाओं को बढ़ाते हैं।
क्रूर दुनिया और भूतों के दायरे में भीड़ जमा हो जाती है,
और राक्षसों की सेनाओं को बढ़ाओ।
इस प्रकार उस महान सत्ता ने लोगों को धर्म का उपदेश दिया, और पुष्पमहल की सातवीं मंजिल पर चढ़कर, तलवार से अपनी चोटी काट दी और पुकार कर कहा, "अब मैं तुम्हारे लिए कुछ भी नहीं हूँ; तुम अपना राजा चुन लो।" इन शब्दों के साथ ही उसने अपनी चोटी, पगड़ी समेत, लोगों के बीच फेंक दी। लोगों ने उसे पकड़ लिया और ज़मीन पर लोटते हुए ज़ोर-ज़ोर से विलाप करने लगे। उस स्थान पर धूल का एक बादल बहुत ऊँचा उठ उठा। लोग पीछे हटकर खड़े हो गए और उसे देखते हुए बोले, "राजा ने अपनी चोटी, पगड़ी समेत, काटकर भीड़ के बीच फेंक दी होगी, इसीलिए महल के पास धूल का बादल उठा है।" विलाप करते हुए उन्होंने यह श्लोक कहा:

धूल का बादल देखो कितना ऊंचा उठता है
रॉयल हाउस ऑफ फ्लावर्स के ठीक बगल में;
मुझे लगता है, न्याय के प्रसिद्ध राजा, हमारे प्रभु
उसने तलवार से अपने बाल काट लिए हैं।
लेकिन उस महान सत्ता ने एक सेवक भेजा और तपस्वी के लिए सभी आवश्यक वस्तुएँ मंगवाईं, और एक नाई से अपने बाल और दाढ़ी कटवाईं। उन्होंने अपना भव्य वस्त्र पलंग पर फेंककर रंगे हुए कपड़े की पट्टियाँ काटीं और उन्हें पहनकर अपने बाएँ कंधे पर एक मिट्टी का कटोरा बाँधा और हाथ में भिक्षु की लाठी लेकर सबसे ऊपरी मंजिल पर आगे-पीछे चहलकदमी की। फिर वे महल के शिखर से नीचे उतरकर सड़क पर आ गए, लेकिन जाते समय किसी ने उन्हें पहचाना नहीं। तब उनकी सात सौ राजसी पत्नियाँ शिखर पर चढ़ीं और उन्हें न पाकर, केवल उनके आभूषणों का गट्ठा देखकर नीचे आईं और अन्य सोलह हजार स्त्रियों को बताया, "शक्तिशाली सुतासोमा, आपके प्रिय स्वामी, तपस्वी बन गए हैं," और वे जोर-जोर से विलाप करते हुए बाहर चली गईं। इसी क्षण लोगों को पता चला कि वह संन्यासी बन गए हैं, और पूरा शहर बहुत हलचल में डूब गया, और लोग कहने लगे, "वे हमें बता रहे हैं कि हमारे राजा भिक्षु बन गए हैं," और वे महल के द्वार पर एकत्रित हो गए, और "राजा अवश्य ही यहाँ या वहाँ होंगे" चिल्लाते हुए, वे उन सभी स्थानों पर दौड़े जहाँ वह अक्सर जाया करते थे, और राजा को न पाकर वे इधर-उधर भटकते रहे, और इन छंदों में अपना शोक व्यक्त किया:

(*5)ये उनके स्वर्णिम महल-मीनार हैं
सभी सुगंधित फूलों की मालाओं से सजे हुए थे।
जहां कई सुंदर महिलाओं से घिरा हुआ है
हमारे राजा कई बार जाया करते थे।
यहां फूलों से सजा हुआ और सोने से निर्मित।
उनकी छत ढलान वाली है, जिसे देखकर कोई भी उनका हॉल देख सकता है।
जहां, उसका पूरा परिवार उसके साथ था,
हमारा राजा पूरे गौरव के साथ इतराता था।
यह फूलों से भरा उसका बगीचा है।
मौसम के बदलते घंटों के दौरान,
जहां घिरा हुआ हो, ..(और पहले जैसा ही)।
उसकी झील कमल के नीले फूलों से ढकी हुई थी।
यहां जंगली पक्षियों का निवास स्थान दिखाई देता है।
जहां, उसका पूरा परिवार, ..(और पहले जैसा ही)।
इस प्रकार लोगों ने विभिन्न स्थानों पर विलाप किया, और फिर महल के प्रांगण में लौटकर उन्होंने इस छंद को दोहराया:

राजा सुतासोमा, यह बताते हुए मुझे खेद है,
उसने अपना सिंहासन छोड़कर एकांतवास में शरण ले ली है।
और, पीले वस्त्र पहने हुए, वह अपने रास्ते चला जाता है।
जैसे कोई अकेला हाथी रास्ता भटक गया हो।
फिर वे अपना सारा घरेलू सामान छोड़कर अपने बच्चों का हाथ थामकर बोधिसत्व के पास गए, और उनके साथ उनके माता-पिता, छोटे बच्चे और सोलह हजार नर्तकियाँ भी थीं। पूरा शहर वीरान लग रहा था, और उनके पीछे-पीछे गाँव के लोग चल रहे थे। बोधिसत्व बारह कुंड (x 4.23 किमी) की दूरी तय करने वाले दल के साथ हिमालय की दिशा में चल पड़े। तब इंद्र ने विश्वकर्मा के संसार त्याग को ध्यान में रखते हुए उनसे कहा, "मित्र विश्वकर्मा, राजा सुतसोमा संसार त्याग रहे हैं। उनके रहने के लिए एक स्थान होना चाहिए: वहाँ लोगों का एक विशाल समूह होगा।" और उन्होंने विश्वकर्मा को यह कहकर भेजा, "हिमालय में गंगा नदी के किनारे तीस कुंड (x 4.23 किमी) लंबा और पाँच कुंड (x 4.23 किमी) चौड़ा एक आश्रम बनवाओ।" उन्होंने ऐसा ही किया, और इस आश्रम में तपस्वी जीवन के लिए आवश्यक सभी चीजें उपलब्ध कराकर, उन्होंने सीधे आश्रम तक एक पगडंडी बनाई और फिर देवदूत लोक लौट गए। महान पुरुष ने इसी मार्ग से आश्रम में प्रवेश किया, और स्वयं के पहले दीक्षा लेने के बाद, उन्होंने अन्य लोगों को तपस्वी जीवन में प्रवेश दिया, और समय के साथ-साथ बड़ी संख्या में लोगों ने दीक्षा ली, यहाँ तक कि तीस मील (4.23 किमी) का क्षेत्र उनसे भर गया। अब विश्वकर्मा द्वारा आश्रम का निर्माण कैसे हुआ, बड़ी संख्या में लोगों ने तपस्वी जीवन कैसे ग्रहण किया और बोधिसत्व के आश्रम की व्यवस्था कैसे की गई - यह सब हत्थिपाला (*6) जन्म में वर्णित तरीके से समझा जाना चाहिए। इस स्थिति में यदि किसी के मन में इच्छा का विचार या कोई अन्य झूठा विचार उत्पन्न होता, तो महान पुरुष वायु के माध्यम से उसके पास पहुँचते, और अंतरिक्ष में पालथी मारकर बैठते हुए, उसे दो श्लोकों में उपदेश देते:

अतीत के प्रेम के खेलों को याद मत करो
जब तक आपके चेहरे पर मुस्कान बरकरार थी,
अन्यथा वह सुंदर आनंदमय शहर
इससे वासना जागृत होगी और तुम्हारी जान जा सकती है।
बिना किसी रोक-टोक के अभ्यास करो।
दिन-रात मनुष्यों के प्रति सद्भावना।
इस प्रकार तुम देवदूत को घर वापस लाने में सफल हो जाओगे।
जहां सभी अच्छे कर्म करने वाले लोग आएंगे।
और संतों का यह समूह, जिसने उनकी सलाह का पालन किया, ब्रह्मलोक के लिए नियत हो गया, और यह कहानी हत्थिपाला जन्म में बताई गई कथा के अनुसार ही सुनाई जानी है।

गुरु ने प्रवचन समाप्त करते हुए कहा, "हे भिक्षुओं, न केवल अभी, बल्कि पहले भी तथागत (बुद्ध) ने महान त्याग किया था," और उन्होंने जन्म का वर्णन किया। "उस समय माता-पिता महान राजा के दरबार के सदस्य थे, चंदा राहुल की माता थीं, पुत्र सारिपुत्र थे, छोटा

पुत्र राहुल था, धाय खुज्जुत्तारा थीं, धनी व्यापारी कुलवद्धन कश्यप थे, सेनापति मोग्गल्याना थे, राजकुमार सोमदत्त आनंद थे और राजा सुतसोमा मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)सं. 544.

(2)अभुम्मा, किसी की सीमा या क्षेत्र से बाहर, अनुपयुक्त, अनुचित।

(3) शाब्दिक अर्थ: "खाना नहीं पकाया जा रहा है," या "कोई भी चूल्हे में आग नहीं जलाता है।"

(4) कैमगावरा। "रंगसाज़ों का छानने वाला कपड़ा।" मज्झिमा निकया I. 144 देखें, या टोकरी का काम।

(5) पाठ, जो एक दूसरे से अधिकतर एक शब्द से भिन्न होते हैं, आमतौर पर किसी पेड़ या फूल का नाम।

(6) संख्या 509

पुस्तक XVIII. पन्नासानिपाटा:

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> नादिनिका - जातक
***स्रोत**: एच.टी. फ्रांसिस द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-526-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 526
नलिनीका-जातक

"देखो! यह भूमि," इत्यादि। यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में निवास करते हुए सुनाई थी, जिसमें एक भिक्षु को उसकी पूर्व पत्नी द्वारा बहकाए जाने का वर्णन था। कथा सुनाते हुए उन्होंने भिक्षु से पूछा कि उसे किसने गुमराह किया था। भिक्षु ने कहा, "एक पूर्व पत्नी ने।" गुरु ने कहा, "सचमुच, भिक्षु, वह तुम्हारे लिए बुराई का कारण है। पुराने समय में उसी के कारण तुम ध्यान से विमुख हो गए और तुम्हारा घोर विनाश हुआ।" और ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की एक कथा सुनाई।

एक समय की बात है, जब ब्रह्मदत्त बनारस में शासन कर रहे थे, तब बोधिसत्व का जन्म उत्तर के ब्राह्मणों के एक धनी परिवार में हुआ। जब वे वयस्क हुए और सभी कलाओं में प्रशिक्षित हुए, तो उन्होंने तपस्वी जीवन अपना लिया और रहस्यमय ध्यान के अभ्यास से अलौकिक शक्तियां प्राप्त करने के बाद हिमालय में निवास करने लगे। ठीक उसी प्रकार जैसे (*1) अलंबुसा जन्म में वर्णित है, एक हिरणी ने उन्हें गर्भ धारण कराया और एक पुत्र को जन्म दिया जिसका नाम ईसिंघा रखा गया। जब वह बड़े हुए, तो उनके पिता ने उन्हें तपस्वी जीवन में प्रवेश कराया और उन्हें रहस्यमय ध्यान के अनुष्ठानों का प्रशिक्षण दिया। कुछ ही समय में उन्होंने इस प्रकार अलौकिक शक्तियां प्राप्त कर लीं और हिमालय क्षेत्र में समाधि (सम्मोहन) के आनंद का अनुभव किया। इंद्रियों को वश में करके वे इतने कठोर तपस्वी बन गए कि उनके सद्गुणों की शक्ति से इंद्र का निवास भी कांप उठा। सक्का (इंद्र) ने अंतर्दृष्टि से इसका कारण जान लिया और यह सोचकर कि "मैं उसके पुण्य को नष्ट करने का कोई तरीका ढूंढूंगा," उन्होंने तीन वर्षों तक काशी राज्य में वर्षा रोक दी। देश मानो झुलस गया और जब कोई फसल नहीं हुई, तो अकाल से व्याकुल होकर लोग महल के प्रांगण में एकत्रित हो गए और राजा को फटकारा। एक खुली खिड़की पर खड़े होकर उन्होंने पूछा कि क्या बात है। उन्होंने कहा, "महाराज, तीन वर्षों से आकाश से वर्षा नहीं हुई है, और सारा राज्य जल गया है और लोग बहुत कष्ट भोग रहे हैं; हे महाराज, वर्षा कीजिए।" राजा ने नैतिक व्रत लिए और उपवास रखा, फिर भी वर्षा नहीं हुई। तभी आधी रात को सक्का (इंद्र) राजकक्ष में प्रवेश कर गए और चारों ओर प्रकाश फैलाते हुए हवा में खड़े दिखाई दिए। राजा ने उन्हें देखकर पूछा, "आप कौन हैं?" उन्होंने कहा, "मैं सक्का (इंद्र) हूं। राजा ने पूछा, "आप किसलिए आए हैं?" "हे महाराज, क्या आपके राज्य में वर्षा होती है?" "नहीं, वर्षा नहीं होती।" "क्या आप जानते हैं कि वर्षा क्यों नहीं होती?" "मुझे नहीं पता।" "हे महाराज, हिमालय देश में इसीसिंघा नाम का एक तपस्वी रहता है, जो अपनी इंद्रियों को कष्ट देकर घोर तपस्या करता है। जब भी वर्षा

शुरू होती है, वह क्रोध से आकाश की ओर देखता है और वर्षा रुक जाती है।" "तो अब क्या किया जाए?" "यदि उसका पुण्य भंग हो जाए, तो वर्षा होगी।" "पर कौन उसके पुण्य को भंग कर सकता है?" "हे महाराज, आपकी पुत्री नलिनिका यह कर सकती है। उसे यहाँ बुलाइए और उसे अमुक स्थान पर जाकर तपस्वी के पुण्य में विच्छेद करने के लिए कहिए।" और इस प्रकार राजा को सलाह देकर इंद्र अपने निवास स्थान पर लौट गए। अगले दिन राजा ने अपने दरबारियों से परामर्श लिया और अपनी पुत्री को बुलाकर उससे प्रथम श्लोक में कहा:

देखो! धरती झुलसी हुई और खंडहर पड़ी है और मेरा राज्य पतन की ओर अग्रसर है:
जाओ, नलिनिका, और कृपया इस ब्राह्मण को अपने वश में कर लो।
यह सुनकर उसने दूसरा छंद दोहराया:

मैं इस कठिनाई को कैसे सहन करूँ, कैसे, भटके हुए हाथियों के बीच?
क्या मैं जंगल के संकरे रास्तों से सुरक्षित रूप से अपना मार्ग तय कर पाऊंगा?
फिर राजा ने दो छंद दोहराए:

मेरी बेटी, अपना सुखमय घर ढूंढो और वहां से बिना देरी किए निकल जाओ।
लकड़ी के उस रथ में सवार होकर, जिसे इतनी कुशलता से गढ़ा गया है, आप अपनी यात्रा पर निकल पड़ें।
घोड़े, हाथी और पैदल सैनिक—शानदार पोशाक पहनकर जाओ।
और अपनी सुंदरता के आकर्षण से तुम उसे शीघ्र ही अपने वश में कर लोगी।
इस प्रकार अपने राज्य की रक्षा के लिए उन्होंने अपनी पुत्री से उन बातों का भी ज़िक्र किया जो शब्दों में नहीं कही जानी चाहिए थीं। और उसने सहर्ष उनकी बातें सुनीं। फिर, उसकी सभी आवश्यकताओं को पूरा करने के बाद, उन्होंने उसे अपने मंत्रियों के साथ विदा कर दिया। वे सीमा पर गए और वहाँ अपना शिविर लगाने के बाद, उन्होंने राजकुमारी को कुछ वनपालों द्वारा बताए गए मार्ग से वहाँ पहुँचाया, और सूर्योदय होते ही हिमालयी क्षेत्र में प्रवेश करके वे तपस्वी के आश्रम के निकट पहुँचे। ठीक उसी समय बोधिसत्व अपने पुत्र को आश्रम में छोड़कर जंगली फल इकट्ठा करने के लिए जंगल में गए थे। वनपाल स्वयं आश्रम के पास पहुँचे और जहाँ से वे उसे देख सकते थे, वहाँ खड़े होकर उन्होंने नलिनिका को आश्रम दिखाया और दो श्लोक दोहराए:

भूरजा के हरे-भरे पेड़ों के बीच केले के पेड़ दिखाई दिए।
देखो! इसिसिंगा की सुंदर झोपड़ी दिखाई दे रही है।
मुझे लगता है कि धुआं आग की लपटों से उठता है।
चमत्कारिक कार्यों के लिए प्रसिद्ध उस संत की देखरेख में पला-बढ़ा।
जिस क्षण बोधिसत्व वन में गए, उसी समय राजा के मंत्रियों ने आश्रम को घेर लिया और उस पर पहरा बिठा दिया। उन्होंने राजकुमारी को तपस्वी का वेश धारण कराया और उन्हें सुंदर छाल से बने आभूषणों से सजे वस्त्र पहनाए। उन्होंने राजकुमारी से एक रंगीन गेंद हाथ में लेने को कहा और उन्हें आश्रम परिसर में भेज दिया, जबकि वे स्वयं बाहर पहरा देते रहे। इस प्रकार, गेंद से खेलते हुए वह परिसर में प्रवेश कर गईं। उस समय, इसीसिंघा अपने पत्तों से बने कुटिया के द्वार पर एक बेंच पर बैठे थे। जब उन्होंने राजकुमारी को आते देखा, तो वे भयभीत हो गए और उठकर कुटिया में जाकर छिप गए। राजकुमारी द्वार के पास आईं और गेंद से खेलती रहीं।

इस बात को और अन्य बातों को स्पष्ट करने के लिए, गुरु ने इन छंदों को दोहराया:

रत्नों से सजी हुई, एक उज्ज्वल और प्यारी दासी पास आती हुई दिखाई दी।
बेचारा इसिसिंगा डर के मारे अपनी कोठरी की सुरक्षात्मक छाया की तलाश कर रहा था।
और जब लड़की साधु के द्वार के सामने गेंद से खेल रही थी,
उसने अपने सुंदर अंगों को पूरी तरह नग्न अवस्था में उसकी निगाहों के सामने प्रकट कर दिया।
लेकिन जब उसने उसे इस तरह खेलते हुए देखा, तो वह अपनी कोठरी से बाहर निकल आया।
और पत्तों से घिरी झोपड़ी से भागते हुए उसने कुछ इस तरह के शब्द कहे।
महोदय, यह किस वृक्ष का फल है जो चाहे कितनी भी दूर फेंका जाए, फिर भी नहीं गिरता?
यह फिर भी आपके पास वापस आ जाएगा और फिर कभी खोएगा नहीं?
फिर उसने उस वृक्ष के बारे में बताते हुए यह छंद कहा:

गंधमादना पर्वत, जिस पर मैं निवास करता हूँ, गर्व कर सकता है।
कई फलदार वृक्ष ऐसे भी होते हैं कि भले ही उन्हें दूर तक फेंका जाए,
यह फिर से मेरे पास लौट आएगा और फिर कभी कुछ खोएगा नहीं।

इस प्रकार उसने झूठ बोला, लेकिन उसने उस पर विश्वास कर लिया, और यह सोचकर कि वह एक तपस्वी है, उसने विनम्रतापूर्वक उसका अभिवादन किया और यह श्लोक कहा:

कृपया, आदरणीय महोदय, अंदर आइए और बैठ जाइए।
अपने पैरों के लिए कुछ खाना और पानी ले लें।
और यहाँ कुछ देर आराम करो, मेरे साथ आनंद लो।
मैं आपको ऐसी ही जड़ें और फलियाँ भेंट करता हूँ।
(*2) भोला-भाला युवक होने के कारण और पहले कभी किसी स्त्री को न देखने के कारण, वह उसके द्वारा सुनाई गई असाधारण कहानी पर विश्वास करने के लिए प्रेरित हुआ, और उसके प्रलोभनों से उसका सजगता हुआ गुण भंग हो गया और उसकी रहस्यमयी ध्यान साधना टूट गई। उसके साथ आनंद लेने के बाद जब वह थक गया, तो वह शीघ्रता से आगे बढ़ा और तालाब तक पहुँचकर स्नान किया, और जब उसकी थकान दूर हो गई, तो वह लौटकर अपनी कुटिया में बैठ गया। और एक बार फिर, उसे अभी भी एक तपस्वी मानते हुए, उसने पूछा कि वह कहाँ रहती है, और यह श्लोक बोला:

आप यहाँ किस रास्ते से आए हैं?
और क्या आपको अपना जंगल वाला घर पसंद है?
क्या जड़ों और बेरों की भूख बनी रह सकती है?
और तुम शिकारी जानवर कैसे बच निकलते हो?
तब नलिनिका ने चार श्लोक पढ़े:

इसके उत्तर में खेमा नदी बहती है
सीधे हिमालय की बर्फ से:
इसके किनारे पर एक मनमोहक स्थान है,
मेरी एकांतवास वाली कुटिया दिखाई दे सकती है।
आम, तिलक, साल (पूरी तरह से विकसित)
कैसिया, तुरही के आकार का फूल पूरी तरह से खिल चुका है--
सभी जगह परियों के गीत गूंज रहे हैं:
महोदय, मेरा घर यहीं स्थित है।
यहां तारीखों और जड़ों के साथ, मुझे लगता है,
यहां हर तरह के फल देखने को मिलते हैं:
यह एक चमकीले रंग का और सुगंधित स्थान है।
यह मेरी किस्मत में लिखा है।
यहां कई प्रकार की जड़ें और बेर पाए जाते हैं।
मीठा, सुंदर और स्वादिष्ट पाया गया।
लेकिन मुझे डर है, अगर लुटेरे आ गए तो,
वे मेरे खुशहाल घर को लूट लेंगे।
यह सुनकर तपस्वी ने अपने पिता के लौटने तक उसे टालने के लिए यह श्लोक कहा:

मेरे पिता फल ढूंढने गए थे, लेकिन अब वे नहीं रहे;
सूरज डूब रहा है, वह जल्द ही यहाँ आ जाएगा।
जब वह फल तोड़ने के बाद वापस आता है,
हम मिलकर आपके एकांतवास की शुरुआत करेंगे।
फिर उसने सोचा: "यह लड़का जंगल में पला-बढ़ा है, इसलिए उसे नहीं पता कि मैं एक औरत हूँ, लेकिन उसका पिता मुझे देखते ही जान जाएगा और मुझसे पूछेगा कि मैं यहाँ क्या काम से आई हूँ और अपनी लाठी के सिरे से मुझे मारकर मेरा सिर फोड़ देगा। मुझे उसके लौटने से पहले यहाँ से चले जाना चाहिए, वरना मेरे आने का उद्देश्य पूरा हो चुका होगा।" और उसे अपने घर का रास्ता बताते हुए उसने एक और पंक्ति दोहराई:

हाय! मुझे डर है कि मैं अब और नहीं रुक पाऊंगा।
लेकिन कई शाही संत रास्ते में ही रहते हैं:
उनमें से किसी एक से रास्ता बताने के लिए कहें;

वह खुशी-खुशी मेरे घर तक गाइड का काम करेगा।
जब उसने भागने की योजना बना ली, तो वह आश्रम छोड़कर चली गई, और जब युवक उसे उदास निगाहों से देख रहा था, तो उसने उसे वहीं रुकने के लिए कहा। फिर वह उसी रास्ते से मंत्रियों के पास लौट गई जिससे वह आई थी। मंत्री उसे अपने साथ अपने शिविर में ले गए और कई पड़ावों से होते हुए बनारस पहुँचे। उसी दिन इंद्र इतना प्रसन्न हुआ कि उसने पूरे राज्य में वर्षा करवा दी। लेकिन जैसे ही वह तपस्वी, इसीसिंह को छोड़कर गई, उसे बुखार हो गया और वह कांपते हुए पत्तों की कुटिया में गया और छाल का वस्त्र पहनकर कराहने लगा। शाम को उसके पिता लौटे और अपने पुत्र को न पाकर बोले, "वह कहाँ चला गया?" उन्होंने अपना डंडा नीचे रखा और कुटिया में गए, और जब उन्होंने उसे वहाँ लेटा हुआ पाया तो कहा, "क्या हुआ है मेरे प्यारे पुत्र?" और उसकी पीठ छूकर उन्होंने तीन श्लोक कहे:

न लकड़ी काटी गई, न पानी लाया गया, न आग जलाई गई। मैं निवेदन करता हूँ।
मुझे बताओ, हे मूर्ख लड़के, तुम सारा दिन ऐसे सपने क्यों देखते रहते हो?
आज तक लकड़ी की कटाई होती रही है।
आग जल उठी और उस पर बर्तन रख दिया गया।
मेरी सीट लग गई, पानी मंगवा दिया गया। सचमुच
तुमने अपने काम में ही खुशी पाई, अच्छे युवक!
आज न तो लकड़ी काटी गई, न पानी लाया गया।
आग नहीं जल रही; पका हुआ भोजन पाने की इच्छा व्यर्थ है।
आज आपने मेरा स्वागत नहीं किया:
आपने क्या खोया है? आपको किस बात का दुख सता रहा है?
अपने पिता की बातें सुनकर, जो मामले को समझा रहे थे, उसने कहा:

महाराज, आज यहाँ एक पवित्र युवक आया है।
एक सुंदर, आकर्षक लड़का, जिसका रूप-रंग मनमोहक है:
वह न तो बहुत लंबा था और न ही बहुत छोटा।
उसके बाल गहरे काले थे, बिल्कुल काले।
चिकने गालों वाला और बिना दाढ़ी वाला यह बालक जैसा प्राणी था।
और उसके गले में एक चमकीला रत्न लटका हुआ था;
उसकी सुंदर छाती पर दो प्यारे उभार थे,
शुद्धतम किरण से बने चमकीले सोने के गोलों की तरह।
उसका चेहरा बेहद सुंदर था, और प्रत्येक कान से
एक घुमावदार अंगूठी लटकती हुई दिखाई दी;
ये और उसके सिर पर लगा मांस का टुकड़ा टूट गया
जब भी वह हिलता-डुलता था, प्रकाश की चमक दिखाई देती थी।
फिर भी युवक ने अन्य आभूषण भी पहन रखे थे।
या फिर उसके कपड़ों और बालों पर नीला या लाल रंग हो;
जब भी वह हिलता, वे झनझनाते और फिर बजने लगते।
जैसे छोटी चिड़ियाएँ (*3) जो बारिश के समय चहचहाती हैं।
छाल का कोई वस्त्र नहीं, कठोर तपस्वी का चिन्ह।
उसके लिए मुंजा घास से बनी कोई कमरबंद नहीं।
उसके वस्त्र चमक रहे हैं, जांघों से चिपके हुए हैं।
आकाश में बिजली की चमक की तरह तेज।
किस वृक्ष के फल उसकी कमर के नीचे बंधे हुए हैं?
--क्या यह चिकना है और इसमें कोई डंठल या कांटे नहीं पाए जाते हैं?--
उसके वस्त्र में सिला हुआ, ढीला लेकिन मोटा,
वे एक दूसरे से टकराते हैं और "क्लिक" की आवाज़ आती है।
उसके सिर के बाल बेहद सुंदर थे।
सैकड़ों घुंघराले बालों की खुशबू से पूरा वातावरण महक रहा था:
ये ताले बीच से ही खुल गए थे, क्या उसने ऐसा किया था?
वह चाहता था कि मेरे बाल भी वैसे ही सजे-धजे हों जैसे वह चाहता था।

लेकिन जब उसने संयोगवश अपने ताले खोल दिए
और अपनी सारी सुंदरता के साथ हवा में लहराते हुए,
उनकी सुगंध से जंगल के पेड़ों के बीच बसा हमारा घर भर गया।
जैसे कमल की सुगंध हवा के साथ बहती है।
उनकी अस्थियां भी देखने में सुंदर थीं।
उनका व्यक्तित्व आपके बेटे से बिल्कुल अलग था:
इससे निकलने वाली गंध हर जगह फैल गई,
जैसे गर्मियों की हवा में झाड़ियाँ खिल उठती हैं।
उसके फल इतने चमकीले और सुंदर थे, अनेक रंगों के थे।
उसने उसे उससे दूर जमीन पर फेंक दिया,
लेकिन यह हमेशा उसी के पास वापस लौटकर आता था:
मैं आपसे यह जानना चाहूंगा कि यह कौन सा फल है।
उसके दांत सीधी पंक्तियों में थे, एकदम शुद्ध और सफेद।
सर्वश्रेष्ठ मोतियों से प्रतिस्पर्धा करना, एक मनमोहक दृश्य;
जब भी वह अपने होंठ खोलता है, कितना मनमोहक लगता है!
हमारे जैसा खाना तो उसे मिलता ही नहीं, बस जड़ वाली सब्जियां और सड़ी हुई जड़ी-बूटियां ही मिलती हैं!
उनकी आवाज इतनी कोमल और मधुर थी, फिर भी दृढ़ और स्पष्ट थी।
मधुर स्वर में ये ध्वनि कानों को भा गई;
इसने मेरे दिल को छू लिया: कितना मधुर स्वर था!
यह मधुर आवाज वाली कोयल के गले से कभी नहीं निकली।
मुझे इसकी आवाज़ दबी हुई, बहुत धीमी लगी।
मेरे विचार से, किसी पवित्र परंपरा का पालन करने वाले व्यक्ति के लिए;
लेकिन—उनकी दयालुता इतनी महान है—मुझे खुशी होगी
इस युवक के साथ अपनी दोस्ती को फिर से मजबूत करना चाहता हूँ।
सुनहरे रंग की पोशाक में उनकी गर्म बाहें चमक रही थीं।
मेरे चारों ओर चमकती बिजली की तरह खेलो।
वे रुई से ढके हुए थे, जो आंखों में लगाने वाले मरहम की तरह कोमल थी।
उसकी उंगलियां गोल थीं और मूंगे की तरह लाल हो गई थीं।
उसके अंग चिकने थे, उसके लंबे बाल खुले हुए थे।
उसके नाखून भी लंबे थे और उनके सिरे गहरे लाल रंग से रंगे हुए थे:
उसकी कोमल बाहें मुझे कसकर घेरे हुए थीं
उस सुंदर लड़के ने मेरी सेवा करके मुझे बेहद प्रसन्न किया।
उसके हाथ रुई की तरह सफेद और चमकदार थे।
जैसे सुनहरा दर्पण जो प्रकाश को परावर्तित करता है;
उनके कोमल स्पर्श से मुझे एक तीव्र रोमांच का अनुभव हुआ।
और हालांकि वह अब हमारे बीच नहीं हैं, फिर भी उनकी याद मुझे हमेशा प्रेरित करती है।
वह अनाज का कोई बोझ नहीं लाया, और न ही कभी ला सकता था।
वह अपने हाथों से हमारी लकड़ी काटने के लिए राजी हो जाए।
और न ही वह अपनी कुल्हाड़ी से पेड़ काटेगा।
और मुझे खुश करने के लिए कोई नुकीली कील भी मत लाओ।
लताओं की पत्तियों से ढका यह सिकुड़ा हुआ सोफा
भालू हमारे द्वारा की गई मजेदार शरारतों को देख रहे थे:
फिर हम झील में अपने थके हुए अंगों को धोते हैं।
और एक बार फिर हम जिस विश्राम की लालसा रखते हैं, उसे पाने के लिए घर के भीतर ही तलाश करते हैं।
आज मैं किसी भी पवित्र ग्रंथ का पाठ नहीं कर सकता।
बलिदान के लिए कोई अग्नि प्रज्वलित नहीं पाई गई:
हाँ, मैं सभी जड़ वाली सब्जियों और बेरीज से परहेज करूंगा।
जब तक मैं इस धर्मनिष्ठ युवक से दोबारा न मिल जाऊं।

मुझे बताइए, प्रिय पिताजी, क्योंकि आप इसे भली-भांति जानते हैं।
यह पवित्र युवक संसार में कहाँ निवास करता होगा?
और कृपया हमें पूरी गति से उड़ने दें।
या फिर मेरी मृत्यु निश्चित रूप से तुम्हारे दरवाजे पर ही होगी।
मैंने उसे रंग-बिरंगे फूलों से भरे मैदानों के बारे में बात करते सुना है।
और यह पक्षियों से भरा हुआ है जो दिन भर गाते रहते हैं।
यह वहाँ पूरी गति से है, मैं खुशी-खुशी उड़ जाऊंगा।
या फिर मैं यहीं लेटकर मर जाऊँगा।
उस महान सत्ता ने लड़के की ऐसी निरर्थक बातें सुनकर तुरंत जान लिया कि किसी स्त्री के कारण उसने अपना सतीत्व खो दिया है, और उसे चेतावनी देते हुए उसने छह श्लोक दोहराए:

एक प्राचीन घर सदियों से यहाँ खड़ा है
इस जंगल के धूप से रोशन परिसर के भीतर;
देवदूतों और अप्सराओं के लोकों में,
यह बेचैनी की भावना आपको कभी नहीं होनी चाहिए।
मित्रताएँ अस्तित्व में आती हैं और फिर समाप्त हो जाती हैं;
प्रत्येक व्यक्ति अपने परिवार के प्रति प्रेम प्रदर्शित करता है;
लेकिन बेचारे वे प्राणी हैं जो नहीं जानते
वे अपनी उत्पत्ति और प्रेम के लिए किसके ऋणी हैं?
दोस्ती निरंतर संपर्क से बनती है;
जब यह बंधन टूट जाता है, तो दोस्ती का टूटना अपरिहार्य हो जाता है।
यदि आपको इस युवक पर एक बार फिर नजर आ जाए,
या फिर उससे पहले की तरह बातचीत करो।
जैसे बाढ़ पके हुए मक्के को बहा ले जाती है,
तो सद्गुण की शक्ति आगे ले जाई जाएगी(*4)।
ऐसे राक्षस हैं जो पूरी पृथ्वी पर विचरण करते हैं।
विभिन्न रूपों में भेस बदलकर। सावधान रहो, मेरे बेटे!
जो बुद्धिमान है उसे ऐसी स्त्री से विवाह नहीं करना चाहिए;
उनके स्पर्श से स्वयं सद्गुण नष्ट हो जाता है (*5)।
अपने पिता की बातें सुनकर युवक ने सोचा, "वह तो एक स्त्री यक्ष (राक्षस) है," और वह भयभीत हो गया तथा उसके बारे में सोचना बंद कर दिया। फिर उसने अपने पिता से क्षमा मांगते हुए कहा, "मुझे क्षमा कर दीजिए, प्रिय पिता, मैं इस स्थान को नहीं छोड़ूंगा।" उसके पिता ने उसे दिलासा देते हुए कहा, "आओ, मेरे पुत्र, दान, दया, सहानुभूति और समभाव का अभ्यास करो," और उसे सिद्ध अवस्थाओं की प्राप्ति का उपदेश दिया। पुत्र ने उसी मार्ग पर चलते हुए एक बार फिर रहस्यमय ध्यान (सम्मोहन) का अभ्यास किया।

गुरु ने अपना पाठ समाप्त करने के बाद सत्य प्रकट किए और जन्म की पहचान बताई: सत्यों के समापन पर पथभ्रष्ट भाई (भिक्षु) प्रथम मार्ग (समाधि) की सिद्धि में स्थापित हो गया: "उस समय उसके अपवित्र दिनों की पत्नी नलिनिका थी, पथभ्रष्ट भाई इसिसिंगा था, और मैं स्वयं पिता था।"

फुटनोट:

(1)सं. 523.

(2) नलिनिका, भालू द्वारा घायल होने का बहाना करके, तपस्वी युवक की सादगी का अभ्यास करती है।

(3) काराका भाषा में सिरिटाका एक पक्षी का नाम है।

(4) पांचवां छंद पिछले छंद की पुनरावृति है।

(5)पढ़ना, नस्साती.

स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-527-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 527
उम्मदन्ति-जातक

"यह किसका घर है?" इत्यादि। यह कथा गुरुजी ने जेतवन मठ में निवास करते हुए एक पथभ्रष्ट भिक्षु के बारे में सुनाई थी। कथा के अनुसार, एक दिन जब वह श्रावस्ती नगर में भिक्षा मांगने के लिए चक्कर लगा रहे थे, तो उन्होंने एक अत्यंत सुंदर, भव्य वस्त्रधारी स्त्री को देखा और उस पर मोहित हो गए। अपने मठ लौटने पर उनका ध्यान उससे हट ही नहीं रहा था। उस समय से, मानो प्रेम के बाणों से ग्रस्त और वासना से बीमार होकर, वह जंगली हिरण की तरह दुबले-पतले हो गए, उनकी नसें उभरने लगीं और उनका रंग पीला पड़ गया। उन्हें चारों प्रकार की ध्यान विधियों में आनंद नहीं मिलता था, न ही अपने विचारों में सुख मिलता था। गुरु की सभी सेवाओं का त्याग करके उन्होंने उपदेश, पूछताछ और ध्यान का भी त्याग कर दिया। उनके साथी भिक्षुओं ने कहा, "महोदय, एक समय आप मन से शांत और गंभीर थे, लेकिन अब ऐसा नहीं है। इसका क्या कारण हो सकता है?" उन्होंने पूछा। "महोदय," उसने उत्तर दिया, "मुझे किसी भी चीज़ में खुशी नहीं है।" तब उन्होंने उससे प्रसन्न होने को कहा, "बुद्ध के रूप में जन्म लेना कठिन है: वैसे ही सच्चे धर्म को सुनना और मनुष्य के रूप में जन्म लेना भी कठिन है। परन्तु तुमने यह प्राप्त कर लिया है, और दुःख का अंत करने की लालसा में तुमने अपने रोते-बिलखते परिवार को छोड़कर विश्वासी बनकर तपस्वी जीवन अपना लिया। तो फिर अब तुम कामवासना के वश में क्यों हो रहे हो? ये बुरी कामवासनाएँ सभी अज्ञानी प्राणियों में पाई जाती हैं, जीवित कीड़े से लेकर ऊपर तक, और इनमें से जो कामवासनाएँ भौतिक उत्पत्ति की हैं, वे भी निरर्थक हैं। इच्छाएँ दुःख और निराशा से भरी होती हैं: इस स्थिति में दुःख निरंतर बढ़ता ही जाता है। इच्छा एक कंकाल या मांस के टुकड़े के समान है। इच्छा भूसे के ढेर से बनी मशाल या अंगारों से निकली रोशनी के समान है। इच्छा एक सपने या ऋण या पेड़ के फल की तरह लुप्त हो जाती है। इच्छा एक नुकीले भाले या साँप के सिर की तरह चुभती है। परन्तु तुम, वास्तव में, इतने गौरवशाली को अपनाने के बाद इस तरह का विश्वास और तपस्वी बनना, अब ऐसी हानिकारक वासनाओं के वश में आ गया है। जब वे अपनी शिक्षाओं से उसे अपनी शिक्षा समझाने में असफल रहे, तो वे उसे सत्य के हॉल में गुरु के समक्ष ले आए। और जब उसने कहा, "भाइयों, आप इस भिक्षु को उसकी इच्छा के विरुद्ध यहाँ क्यों लाए हैं?" तो उन्होंने उत्तर दिया, "हमें बताया गया है कि वह पथभ्रष्ट है।" गुरु ने पूछा कि क्या यह सच है, और जब उसने स्वीकार किया कि यह सच है, तो गुरु ने कहा, "भाइयों, प्राचीन काल के ऋषि, यद्यपि एक राज्य पर शासन करते थे, जब भी उनके हृदय में वासना उत्पन्न होती थी, वे कुछ समय के लिए उसके वश में आ जाते थे, परन्तु अपने भटकते विचारों को नियंत्रित करते थे और किसी भी अनुचित आचरण के दोषी नहीं होते थे।" और इन शब्दों के साथ उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, शिव राज्य के अरित्थपुरा नगर में शिव नाम का एक राजा रहता था। बोधिसत्व राजा की प्रधान रानी के पुत्र के रूप में उनका जन्म हुआ और उन्हें राजकुमार शिव कहा जाने लगा। उनके सेनापति का भी एक पुत्र हुआ, जिसका नाम उन्होंने अहिपरक रखा। दोनों बालक बचपन से मित्र थे और सोलह वर्ष की आयु में वे तक्षशिला गए और अपनी शिक्षा पूरी करने के बाद घर लौट आए। राजा ने अपना राज्य अपने पुत्र को सौंप दिया, जिसने अहिपरक को सेनापति नियुक्त किया और अपने राज्य पर विधिपूर्वक शासन किया। उसी नगर में तिरितवच्छ नामक एक धनी व्यापारी रहता था, जिसकी संपत्ति अस्सी करोड़ (10 मिलियन) थी। उसकी एक पुत्री थी, जो अत्यंत सुंदर और आकर्षक थी, और सौभाग्य के सभी लक्षणों से परिपूर्ण थी। नामकरण के दिन उसका नाम उम्मदंती रखा गया। सोलह वर्ष की आयु में वह किसी अप्सरा के समान सुंदर थी, उसकी सुंदरता मनुष्य से कहीं अधिक थी। उसे देखने वाले सभी सांसारिक प्राणी अपने आप को वश में नहीं कर सके, मानो वे मादक पेय के नशे में चूर हो गए हों और अपना संयम खो बैठे हों। तब उसके पिता, तिरितवच्छ, राजा के पास आए और बोले, "महाराज, मेरे घर में एक अनमोल पुत्री है, जो राजा के लिए भी उपयुक्त है। अपने ज्योतिषियों को बुलाइए, जो शारीरिक बनावट को पढ़ सकते हैं, और उनसे उसकी परीक्षा करवाइए, फिर अपनी इच्छा अनुसार उसके साथ व्यवहार कीजिए।" राजा मान गए और अपने ब्राह्मणों को भेजा। वे व्यापारी के घर गए और उनका बड़े सम्मान और आतिथ्य सत्कार के साथ स्वागत किया गया, जहाँ उन्होंने चावल-दूध ग्रहण किया। उसी क्षण उमदंती भव्य वस्त्रों में उनके समक्ष प्रकट हुईं। उन्हें देखते ही वे अपना संयम खो बैठे, मानो वे कामुक नशे में चूर हो गए हों, और यह भूल गए कि उन्होंने अपना भोजन अधूरा छोड़ दिया था। उनमें से कुछ ने

एक निवाला उठाया और यह सोचकर कि वे उसे खा लेंगे, उसे अपने सिर पर रख लिया। कुछ ने उसे अपनी कमर पर गिरा दिया। कुछ ने उसे दीवार पर फेंक दिया। सब लोग गुस्से से बौखला गए थे। जब उसने उन्हें इस हालत में देखा, तो उसने कहा, "वे कहते हैं कि ये लोग मेरे चुने हुए लोगों के चरित्र की परीक्षा लेने आए हैं," और उसने उन्हें गर्दन से पकड़कर बाहर निकालने का आदेश दिया। वे बहुत नाराज़ हुए और उम्मदंती के साथ महल लौट आए और बोले, "महाराज, यह स्त्री आपके लिए उपयुक्त नहीं है: यह एक डायन है।" राजा ने सोचा, "वे कहते हैं कि यह एक डायन है," और उसने उसे नहीं बुलाया। जब उसने यह सब सुना, तो उसने कहा, "राजा ने मुझे इसलिए नहीं चुना क्योंकि वे कहते हैं कि मैं एक डायन हूँ: डायनें सचमुच मेरे जैसी ही होती हैं। ठीक है, अगर कभी राजा से मिलूँ, तो मुझे पता है कि क्या करना है।" और उसके मन में राजा के प्रति द्वेष पैदा हो गया। इसलिए उसके पिता ने उसका विवाह अहिपारका से कर दिया, और वह अपने पति की प्रिय और प्रियतम बन गई। अब उसके किस कर्म के फलस्वरूप वह इतनी सुंदर हो गई थी? लाल वस्त्र के उपहार से। कहते हैं कि एक समय की बात है, उनका जन्म बनारस के एक गरीब परिवार में हुआ था और किसी त्योहार के दिन उन्होंने कुछ पवित्र महिलाओं को देखा,लाल रंग के केसर से रंगे हुए भव्य वस्त्र पहने और आनंदित होते हुए, उसने अपने माता-पिता से कहा कि वह भी ऐसा ही वस्त्र पहनकर प्रसन्न होना चाहती है। जब उन्होंने कहा, "मेरी प्यारी, हम गरीब हैं: तुम्हें ऐसा वस्त्र कहाँ से मिलेगा?" तो उसने कहा, "ठीक है, मुझे किसी धनी परिवार में मजदूरी करने दीजिए, और जैसे ही वे मेरी योग्यता को पहचानेंगे, वे मुझे एक वस्त्र भेंट करेंगे।" उनकी सहमति प्राप्त करने के बाद, वह एक परिवार के पास गई और उन्हें लाल वस्त्र के बदले अपनी सेवा देने का प्रस्ताव रखा। उन्होंने कहा, "हमारे लिए तीन साल काम करने के बाद, हम तुम्हारी योग्यता को पहचानते हुए तुम्हें एक वस्त्र देंगे।" वह तुरंत सहमत हो गई और काम में जुट गई। तीन साल पूरे होने से पहले ही, उन्होंने उसकी योग्यता को पहचानते हुए, उसे केसर से रंगे हुए एक मोटे वस्त्र के साथ एक और वस्त्र दिया, और उसे यह कहते हुए विदा किया, "अपने साथियों के साथ जाओ, और स्नान करने के बाद, इन वस्त्रों को पहन लो।" इसलिए वह अपने साथियों के साथ स्नान करने चली गई और लाल वस्त्र को किनारे पर ही छोड़ दिया। उसी समय कश्यप बुद्ध का एक शिष्य, जिसके वस्त्र छीन लिए गए थे और जिसने टूटी हुई शाखा के टुकड़ों को भीतरी और बाहरी वस्त्र के रूप में पहन रखा था, वहाँ पहुँचा। उसे देखकर उसने सोचा, "इस संत के वस्त्र अवश्य ही छीन लिए गए होंगे। पुराने समय में मुझे भी वस्त्र न मिलने के कारण वस्त्र प्राप्त करने में कठिनाई हुई थी," और उसने अपने वस्त्र को दो भागों में बाँटकर आधा भाग उन्हें देने का निश्चय किया। इसलिए वह पानी से बाहर निकली और अपने पुराने वस्त्र पहनकर, "हे संत, ठहरिए," कहकर उसने संत को प्रणाम किया और अपने वस्त्र को दो भागों में फाड़कर आधा भाग उन्हें दे दिया। फिर वह एक सुरक्षित स्थान पर एक तरफ खड़ा हो गया और अपने टहनियों से बने वस्त्र को उतार फेंककर, एक भाग को भीतरी वस्त्र और दूसरे भाग को बाहरी वस्त्र बना लिया और खुले में बाहर निकल आया। वस्त्र की चमक से उसका पूरा शरीर नवभू सूर्य के समान दमक रहा था। यह देखकर उसने सोचा, "यह पवित्र पुरुष पहले तो तेजस्वी नहीं था, लेकिन अब नवभू सूर्य के समान चमक रहा है। मैं इसे भी उसे दे दूंगी।" अतः उसने वस्त्र का दूसरा भाग उसे दे दिया और यह प्रार्थना की, "हे पवित्र पुरुष, मैं भविष्य में किसी जन्म में इतनी सुंदर होना चाहती हूँ कि जो भी मुझे देखे, वह अपने आप पर नियंत्रण न रख पाए और कोई भी स्त्री मुझसे अधिक सुंदर न हो।" बड़े ने उसे धन्यवाद दिया और अपने मार्ग पर चल दिया। देवताओं (देवदूतों) के लोक में कुछ जन्म-मृत्यु के बाद, वह इस समय अरित्थपुरा में जन्मी और उतनी ही सुंदर थी जितनी उसका वर्णन किया गया था। अब इस नगर में कट्टिका उत्सव की घोषणा की गई और पूर्णिमा के दिन नगर को सजाया गया। अहिपरका, अपने पहरे पर जाते समय, उससे कहा, "देवी उम्मदंती, आज कट्टिका उत्सव है; राजा नगर में जुलूस निकालते हुए सबसे पहले इस घर के द्वार पर आएंगे। ध्यान रहे कि आप उन्हें दर्शन न दें।"क्योंकि तुम्हें देखकर वह अपने विचारों पर काबू नहीं रख पाएगा।" जब वह उससे विदा लेने लगा, तो उसने उससे कहा, "मैं देख लूंगी।" और उसके जाते ही उसने अपनी दासी को आदेश दिया कि राजा के द्वार पर आने पर उसे सूचित करे। सूर्यास्त के समय, जब पूर्णिमा का चंद्रमा निकल आया था और शहर के हर कोने में मशालें जल रही थीं, जो मानो देवताओं (देवदूतों) के नगर की तरह सजा हुआ था, राजा अपने पूरे वैभव में, उत्तम नस्ल के घोड़ों द्वारा खींचे गए एक भव्य रथ पर सवार होकर और दरबारियों की भीड़ के साथ, बड़े धूमधाम से शहर का चक्कर लगाते हुए, सबसे पहले अहिपरक के घर के द्वार पर आया। अब यह घर, जो लाल रंग की दीवार से घिरा हुआ था, फाटकों और मीनारों से सुसज्जित था, एक सुंदर और आकर्षक स्थान था। इसी क्षण दासी ने अपनी मालकिन को राजा के आगमन की सूचना दी, और उम्मदंती ने उसे फूलों की टोकरी लाने को कहा, और खिड़की के पास खड़ी होकर उसने परी के आकर्षण से राजा पर फूल बरसाए। और ऊपर उसकी ओर देखते हुए राजा वासना से पागल हो गया था और अपने विचारों पर बिल्कुल नियंत्रण नहीं रख पा रहा था, और वह उस घर को अहिपारका का घर पहचानने में असफल रहा। इसलिए उसने अपने सारथी को संबोधित करते हुए दो श्लोक प्रश्नवाचक रूप में दोहराए:

सुनंदा, ये किसका घर है, सच-सच बताओ।
क्या चारों ओर सुनहरे रंग की दीवार है?
यह कैसा नजारा है, उल्कापिंड की तरह चमकीला?
या फिर किसी पर्वत की चोटी पर पड़ती सूर्य की किरण?
संयोगवश वह घर की ही बेटी है।
वह स्वयं उसकी रखैल थी, या शायद बेटे की पत्नी?
आपका उत्तर संक्षेप में एक शब्द में--

क्या वह अविवाहित है (*1) या क्या वह अभी भी एक स्वामी है?
फिर राजा को उत्तर देते हुए उन्होंने दो छंद दोहराए:

महाराज आपसे जो कुछ भी पूछ रहे हैं, मैं भली-भांति जानता हूँ।
और उसके माता-पिता दोनों तरफ से बता सकते हैं:
हे राजा, उसके पति के बारे में, दिन-रात,
वह हर काम में पूरी लगन से आपके उद्देश्य की सेवा करता है।
वह आपका एक शक्तिशाली मंत्री है।
उसके पास अपार संपत्ति और अपार समृद्धि है;
वह प्रसिद्ध अहीपरका की पत्नी हैं।
और जन्म के समय उनका नाम उम्मदंती रखा गया।
यह सुनकर राजा ने उसके नाम की प्रशंसा करते हुए एक और श्लोक दोहराया:

हाय! यह नाम कितना अशुभ है!
इस प्यारी बच्ची को उसके माता-पिता ने दिया था;
जब से उम्मादंती ने अपनी निगाहें मुझ पर टिका दीं,
देखो! मैं एक पागल, प्रेतवाधित इंसान बन गया था।
उसकी घबराहट देखकर उसने खिड़की बंद कर दी और सीधे अपने सुंदर कक्ष में चली गई। और जिस क्षण राजा की नज़र उस पर पड़ी, उसने शहर में जुलूस निकालने का विचार छोड़ दिया। अपने सारथी से उसने कहा, "मित्र सुनंदा, रथ रोक दो; यह उत्सव हमारे लिए उपयुक्त नहीं है; यह केवल मेरे सेनापति अहिपारक के लिए ही उपयुक्त है, और सिंहासन भी उसी के लिए अधिक उपयुक्त है।" रथ रोककर वह अपने महल में चढ़ गया और राजसी पलंग पर लेटकर बड़बड़ाते हुए बोला,

एक नन्ही सी कन्या, जिसकी आंखें हिरणी की तरह कोमल थीं,
मेरे सामने पूर्णिमा के निर्मल प्रकाश में,
उसे कबूतर जैसे रंग के वस्त्र में देखकर,
मुझे ऐसा लगा जैसे एक साथ दो चंद्रमा दिखाई दिए हों।
उसकी चमकीली, प्यारी आँखों से एक नजर हटाते हुए,
उस मोहक स्त्री ने मुझे अचानक ही अपने वश में कर लिया।
किसी पर्वत की ऊँचाई पर स्थित वनवासी बौने की तरह,
उसकी मनमोहक चाल ने पहली नजर में ही मेरा दिल जीत लिया।
वह युवती सांवली, लंबी और गोरी थी, जिसके कानों में गहने थे।
एक ही वस्त्र पहने, डरपोक हिरणी की तरह, वह प्रकट होती है।
लंबे बालों और पूरी तरह से लाल रंग से रंगे नाखूनों के साथ,
उसकी कोमल बाहों पर चंदन की समृद्ध सुगंध बिखरी हुई थी,
पतली उंगलियों और शालीन भाव के साथ,
हे मेरी प्यारी, वो कब मुझ पर मुस्कुराएगी?
तिरिटी की पतली कमर वाली दासी कब आएगी?
उसके स्तनों पर सोने का आभूषण प्रदर्शित था।
अपनी कोमल बाहों से मुझे गले लगा लो,
क्या किसी वन वृक्ष पर लता के रूप में भी?
वह कब लाख के इतने चमकीले रंग से रंगी जाएगी?
उभरे हुए वक्षस्थल वाली, निर्मल श्वेत कन्या,
मेरे साथ एक चुंबन का आदान-प्रदान करो, जितनी बार एक गिलास
क्या एक शराबी से दूसरे शराबी तक का संक्रमण स्वीकार्य होगा?
जैसे ही मैंने उसे इस प्रकार खड़ी देखा, जो देखने में इतनी सुंदर थी,
अब मैं स्वयं का स्वामी नहीं रहा, तर्क को त्यागकर दूर फेंक देता हूँ।
जब मैंने उम्मदंती को देखा, तो उसने चमकीले रत्नजड़ित झुमके पहने हुए थे,
जैसे किसी को भारी सजा मिली हो, मैं दिन-रात सो नहीं पाया।
यदि सक्का (इंद्र) मुझे वरदान प्रदान करें, तो मैं तुरंत निर्णय ले लूंगा।

मैं एक रात या संयोगवश दो रातों के लिए अहीपाराका बन जाऊंगा।
और इस प्रकार उम्मदंती को सुख प्राप्त होता, तो वह सिवी पर शासन कर सकता था।
तब उन सलाहकारों ने अहिपारका से कहा, “महाराज, राजा नगर में जुलूस निकालते हुए आपके घर के द्वार तक आए और फिर वापस मुड़कर अपने महल में चढ़ गए।” तो अहिपारका घर गए और उम्मदंती से पूछा कि क्या उसने राजा को दर्शन दिए थे। उम्मदंती ने कहा, “महाराज, एक मोटे पेट वाला, बड़े-बड़े दाँतों वाला व्यक्ति अपने रथ में खड़ा होकर यहाँ आया था। मुझे नहीं पता कि वह राजा था या राजकुमार, लेकिन मुझे बताया गया कि वह किसी प्रकार का सरदार था, और मैंने खुली खिड़की पर खड़े होकर उस पर फूल फेंके। इसी बीच वह वापस मुड़कर चला गया।” यह सुनकर अहिपारका ने कहा, “तुमने मुझे बर्बाद कर दिया।” और अगली सुबह जल्दी राजा के घर जाकर वह राजकक्ष के द्वार पर खड़ा हो गया और राजा को उम्मदंती के बारे में बड़बड़ाते हुए सुनकर उसने सोचा, “उम्मदंती को उससे प्रेम हो गया है; अगर वह उसे नहीं पा सका, तो वह मर जाएगा: मेरा कर्तव्य है कि मैं उसे जीवनदान दूं, यदि यह राजा या मेरे पाप के बिना संभव हो।” अतः वह घर गया और एक साहसी, बेईमान या सेवक को बुलाया और कहा, "मित्र, फलाँ स्थान पर एक खोखला वृक्ष है जो एक पवित्र स्थान है। किसी से कुछ कहे बिना, सूर्यास्त के समय वहाँ जाओ और वृक्ष के भीतर बैठ जाओ। फिर मैं आकर वहाँ भेंट चढ़ाऊँगा और देवताओं की आराधना करते हुए यह प्रार्थना करूँगा: "हे स्वर्ग के राजा, हमारे राजा एक उत्सव के दौरान, उसमें भाग लिए बिना, अपने राजकक्ष में चले गए हैं और वहाँ व्यर्थ की बातें कर रहे हैं; हमें नहीं पता कि वे ऐसा क्यों कर रहे हैं। राजा देवताओं (देवदूतों) के बड़े समर्थक रहे हैं और वर्ष दर वर्ष यज्ञों में हज़ारों सिक्के खर्च करते रहे हैं। हमें बताइए कि राजा इस प्रकार मूर्खतापूर्ण बातें क्यों कर रहे हैं और हमें राजा के जीवन का वरदान दीजिए।" इस प्रकार मैं प्रार्थना करूँगा और इस समय आपको ये शब्द दोहराने हैं, "हे सेनापति, आपके राजा बीमार नहीं हैं, बल्कि वे आपकी पत्नी उम्मदंती पर मोहित हैं। यदि वे उसे प्राप्त कर लें, तो वे जीवित रहेंगे; अन्यथा वह मर जाएगा। यदि आप उसे जीवित रखना चाहते हैं, तो उसे उम्मदन्ती अर्पित कर दीजिए। आपको यही कहना है। इस प्रकार उसे समझाकर उसने उसे विदा कर दिया। अतः सेवक अगले दिन गया और वृक्ष के भीतर बैठ गया। जब सेनापति वहाँ आया और प्रार्थना करने लगा, तो उसने उसे अपना पाठ दोहराया। सेनापति ने कहा, "यह अच्छा है," और देवता को प्रणाम करते हुए वह राजा के मंत्रियों को बताने गया, और नगर में प्रवेश करके वह महल पर चढ़ गया और राजकक्ष के द्वार पर दस्तक दी। राजा ने होश में आकर पूछा कि कौन है। "मैं हूँ, अहिपरक, महाराज।" तब उसने राजा का द्वार खोला और अंदर जाकर राजा को प्रणाम किया और एक श्लोक दोहराया:

हे राजा, पवित्र मंदिर में घुटने टेकते हुए,
एक यक्ष (राक्षस) आया और उसने मुझे एक अजीब बात बताई।
उम्मदंती ने आपकी इच्छाशक्ति को किस प्रकार गुलाम बना लिया था:
उसे अपने साथ ले जाओ और इस तरह तुम्हारे दिल की इच्छा पूरी हो जाएगी।
तब राजा ने पूछा, “मित्र अहिपरक, क्या यक्ष भी जानते हैं कि मैं उम्मदंती के प्रति अपने मोह में मूर्खतापूर्ण बातें कर रहा हूँ?” “जी, महाराज,” उसने कहा। राजा ने सोचा, “मेरी नीचता पूरी दुनिया में फैल गई है,” और उसे शर्म महसूस हुई। और सत्य की राह पर चलते हुए उसने एक और श्लोक कहा:

मैं अपनी कृपा से विमुख हो गया हूँ, मुझे कोई देवत्व प्राप्त नहीं होगा।
और सारी दुनिया मेरे इस बड़े पाप के बारे में सुनेगी:
यह भी सोचो कि तुम्हारा मानसिक दुःख कितना गहरा होगा।
यदि आप अपने उम्मादंती को और नहीं देख पाते हैं
शेष छंदों को दोनों बारी-बारी से दोहराते हैं।

हे राजा, आपके और मेरे सिवा, कोई नहीं।
पूरी दुनिया को पता चल जाएगा कि क्या हुआ है:
देखो! उम्मदंती मेरी ओर से तुम्हारे लिए उपहार है।
तुम्हारी इच्छा पूरी हो गई, उसे मेरे पास वापस भेज दो।
पापी सोचता है, "कोई भी नश्वर मनुष्य ऐसा नहीं हुआ है।"
मुझे लगता है, वह मेरे गुनाह का गवाह है।
फिर भी, वह जो कुछ भी करेगा, वह सब उसकी नजरों के दायरे में आएगा।
प्रेतात्माओं और पवित्र पुरुषों के बारे में।
इस दुनिया में, मान लीजिए आप कहें,
"मैंने उससे प्यार नहीं किया," क्या कोई इसकी कीमत चुकाएगा?
यह भी सोचो कि तुम्हारा मानसिक दुःख कितना गहरा होगा।
यदि आप अपने उम्मादंती को और नहीं देख पाते हैं

हे महान राजा, वह मेरे लिए जीवन के समान प्रिय थी।
वास्तव में एक बेहद प्रिय पत्नी;
फिर भी, श्रीमान, सीधे उम्मादंती के पास जाएँ,
ठीक वैसे ही जैसे शेर अपनी पथरीली मांद में जाता है।
लेकिन स्वयं के कष्टों से व्याकुल होकर,
वह शायद ही कभी ऐसा कोई कार्य करेगा जिससे उसे पूर्ण समर्पण के साथ आनंद प्राप्त हो।
आनंद में डूबा हुआ मूर्ख भी
मैं कभी भी इस तरह का पाप नहीं करूंगा।
हे राजा, आप मेरे लिए पिता समान हैं।
पति और स्वामी, हाँ, आप ही मेरे लिए ईश्वर (देवदूत) हैं।
मेरी पत्नी और बच्चा तुम्हारी दासियाँ हैं, और मैं तुम्हारा बंदी हूँ।
हे सिवी, हम सबके साथ अपनी इच्छा पूरी करो।
जो कोई अपने पड़ोसी के साथ अन्याय करे और पश्चाताप न करे,
यह कहते हुए, "यहाँ एक सर्वशक्तिमान स्वामी को देखो,"
वह अपने जीवन के आधे दिन भी जी नहीं पाएगा।
और देवता (देवदूत) उसके आचरण की आलोचना करेंगे।
क्या धर्मी पुरुषों को उपहार के रूप में कोई वस्तु स्वीकार करनी चाहिए?
हे राजा, दूसरों द्वारा स्वेच्छा से दिया गया।
प्राप्त करने वाले और देने वाले दोनों ने ही यह किया है।
ऐसा कर्म जिससे आनंद का फल प्राप्त होता है।
इस दुनिया में, मान लीजिए आप कहें,
क्या इस बात पर विश्वास करना सही होगा कि "मैं उससे प्यार नहीं करता?"
यह भी सोचो कि तुम्हारा मानसिक दुःख कितना गहरा होगा।
यदि आप अपने उम्मादंती को और नहीं देख पाते हैं
हे महान राजा, वह मेरे लिए जीवन के समान प्रिय थी।
वास्तव में एक बेहद प्रिय पत्नी;
देखो! उम्मदंती मेरी ओर से तुम्हारे लिए उपहार है।
तुम्हारी इच्छा पूरी हो गई, उसे मेरे पास वापस भेज दो।
जो दूसरों के कष्टों की कीमत पर स्वयं को पीड़ा से मुक्त करता है,
दूसरों की खुशी छिन जाने पर भी प्रसन्न रहना,
वह नहीं, बल्कि वह जो दूसरे के दुख को महसूस करता है
क्योंकि यह उसका अपना था, इसलिए सच्ची धार्मिकता इसे जान सकती है।
हे महान राजा, वह मेरे लिए जीवन के समान प्रिय थी।
वास्तव में एक बेहद प्रिय पत्नी।
मैं वही देता हूँ जिसे मैं सबसे अधिक महत्व देता हूँ, व्यर्थ में नहीं देता।
जो लोग इस प्रकार देते हैं, उन्हें उतना ही वापस मिलता है।
मैं शारीरिक वासना के कारण स्वयं को नष्ट कर सकता हूँ।
लेकिन मैं कभी भी गलत तरीके से सही को नष्ट करने का साहस नहीं करूंगा।
हे महान राजकुमार, क्या आपको अपने प्रेम का त्याग करना चाहिए?
क्योंकि वह मेरी पत्नी है, इसलिए मैं यह कहता हूँ।
अब से वह तलाकशुदा है और सभी के लिए स्वतंत्र है।
आपका गुलाम, जो आपके हर इशारे पर काम करेगा।
यदि आप, मेरे श्रेष्ठ, अपने ही नुकसान के लिए,
तुम्हें अपनी पत्नी को त्याग देना चाहिए, भले ही वह निर्दोष हो।
मुझे लगता है कि आपको भारी दोष स्वीकार करना पड़ेगा।
और कभी कोई भी व्यक्ति तुम्हारे बारे में अच्छी बातें नहीं कहता।
हे मेरे राजा, इन सभी दोषों के साथ, मैं दूर जा सकता था।
चाहे आलोचना हो, प्रशंसा हो, या जो भी हो,

सिवी, जो भी होना है, होने दो।
पहले अपनी इच्छा पूरी करो।
जो सम्मान या निंदा करता है, वह ध्यान नहीं देता।
क्योंकि प्रशंसा हो या आलोचना, उसे जरा भी परवाह नहीं होती--
उसी से यश और सौभाग्य दूर हो जाएंगे।
जैसे-जैसे बाढ़ का पानी कम होता है, जमीन सूखी और ऊँची रह जाती है।
इससे चाहे सुख हो या दुख, जो भी उत्पन्न हो,
अधिकार की सीमा पार करना, या दिल को इतना दुख पहुंचाना,
चाहे खुशी हो या दुख, मैं उसका स्वागत करूंगा।
पृथ्वी अच्छे और बुरे, दोनों तरह के कष्टों को सहन करती है।
मैं एक और कष्ट नहीं सहना चाहता।
किसी ऐसे गलत काम से जिससे उसका हृदय पीड़ा से भर जाए,
मैं अपने दुखों का बोझ अकेले ही उठाऊंगा।
सत्य के मार्ग पर चलने वाला, किसी की शांति भंग न करने वाला।
पुण्य कर्म स्वर्ग की ओर ले जाता है,
आप ऐसे कार्य में बाधा न बनें;
मैं उम्मादंती एक निशुल्क भेंट भेजता हूँ,
ब्राह्मण पुरोहितों पर राजा बहुत धन खर्च करते थे।
आपने मुझ पर सचमुच बहुत दया दिखाई है।
आपकी पत्नी और आप दोनों मेरे दोस्त हैं, मैं मालिक हूँ।
ब्राह्मण और देवता (देवदूत) दोनों ही मुझे बहुत दोषी ठहराएंगे।
और मुझ पर सदा के लिए अभिशाप बना रहेगा।
मुझे विश्वास है कि इस मामले में शहर और गांव के लोग सहमत होंगे।
हे सिवी राजा, मैं तुम्हें कभी अन्यायपूर्ण नहीं कहूँगा।
क्योंकि उम्मदंती मेरी ओर से आपको उपहार है,
तुम्हारी इच्छा पूरी हो गई, उसे मेरे पास वापस भेज दो।
आपने मुझ पर सचमुच बहुत दया दिखाई है।
आप और आपकी पत्नी दोनों मेरे दोस्त हैं, मैं मालिक हूँ।
नेक लोगों के सही कार्यों की प्रसिद्धि दूर-दूर तक फैली हुई है।
सही का उल्लंघन करना कठिन है, जैसे सागर की लहरें।
आदरणीय गुरुजी, देने के लिए प्रतीक्षारत
मेरी हर इच्छा पूरी हो, हे मेरे सदा के समर्थक, तुम।
मैं तुम्हें जो कुछ भी दूं, उसका सात गुना चुकाना;
उम्मदंती को ले लो; वह मेरी ओर से मुफ्त उपहार है।
मेरा श्रेष्ठ, अहिपरका, सच में,
तुमने बचपन से ही सही राह का अनुसरण किया है;
मैं निवेदन करता हूँ कि जीवित पुरुषों में से और कौन ऐसा करेगा जो...
क्या सुबह और शाम दोनों ने मिलकर मेरी भलाई के लिए कड़ी मेहनत की है?
हे महान राजकुमार, आपकी ख्याति असाधारण है।
बुद्धिमान, सही को जानने वाला और उसी मार्ग पर चलने वाला।
न्याय की रक्षा से परिपूर्ण, हे राजा, आपकी दीर्घायु हो।
और, हे धर्म के स्वामी, मुझे अधर्म से दूर रहना सिखाओ।
आओ, सुनो, अहिपरका, मेरी ये बातें और फिर
मैं तुम्हें अच्छे लोगों द्वारा अपनाए जाने वाले धार्मिकता के मार्ग सिखाऊंगा।
जो राजा कानून का पालन करने में आनंद लेता है, वह धन्य है।
और सभी पुरुषों में विद्वान व्यक्ति सर्वश्रेष्ठ होता है।
किसी मित्र को धोखा न देना अच्छी बात है, यह मैं अच्छी तरह जानता हूँ।
लेकिन जिस बुराई से बचा जा सके, वही परम आनंद है।

धर्मात्मा राजा के सौम्य प्रभाव में,
जैसे धूप से बचाव के लिए छाया प्रदान करना,
उनकी सभी प्रजा शांति से निवास करे।
अपनी संपत्ति में हुई वृद्धि पर प्रसन्नता व्यक्त करते हुए।
कोई भी बुरा कर्म मेरी स्वीकृति प्राप्त नहीं कर पाएगा।
लेकिन फिर भी यह एक पाप ही है:
लेकिन ज्ञान के विरुद्ध किए गए ऐसे पाप से मुझे घृणा है;
मेरी कहानी ध्यान से सुनो; इसे समझो और आत्मसात करो।
बाढ़ के बीच से बैल टेढ़ा-मेढ़ा रास्ता अपनाएगा।
गायों का पूरा झुंड उसके पीछे-पीछे चल रहा था।
इसलिए यदि कोई नेता कठिन रास्तों का अनुसरण करता है,
वह इस अशिष्ट समूह को नीच उद्देश्यों की ओर ले जाएगा।
और संपूर्ण राज्य उस तरह के पछतावे के युग में डूबा हुआ है।
लेकिन यदि बैल सीधे मार्ग पर चलने लगे,
गायों का झुंड सीधे उसके पीछे-पीछे चलता है।
इसलिए उनका मुख्य उद्देश्य सही मार्ग अपनाना होना चाहिए।
आम जनता अन्याय से बच जाएगी।
और पूरे राज्य में पवित्र शांति का प्रसार होगा।
मैं अन्यायपूर्ण कार्य करके स्वर्ग को भी प्राप्त नहीं करना चाहता।
नहीं, ऐसा नहीं होगा, अहिपारका, भले ही मुझे पूरी दुनिया मिल जाए।
मनुष्यों के बीच जो भी मूल्यवान वस्तुएँ अच्छी मानी जाती हैं,
बैल, गुलाम, सोना, वस्त्र और चंदन।
युवा घोड़ियां, समृद्ध खजाना, चमकीले रत्न
और सूर्य और चंद्रमा दिन-रात सबकी रक्षा करते हैं,
मैं इन सब के लिए अन्याय नहीं करूंगा।
मैं सिविस में जन्मा एक सच्चा नेता हूँ।
हमारे देश के पिता, मुखिया और संरक्षक
इसके अधिकारों के रक्षक के रूप में मैं अपना रुख अपनाता हूं।
इसलिए मैं धार्मिक इरादे से शासन करूंगा।
मैं अपनी इच्छा के आगे और अधीन नहीं रहूंगा।
हे महान राजा, आपका शासन शुभ हो, आपकी दीर्घायु हो।
राज्य को सुखद भाग्य और अपनी मजबूत बुद्धिमत्ता के साथ मार्गदर्शन प्रदान करें।
हे राजा, आपने न्याय के प्रति जो उत्साह दिखाया है, उससे हमें अत्यंत प्रसन्नता हुई है।
बलवान राजकुमारों ने न्याय का उल्लंघन करते हुए, पहले भी अपना ताज खोया है।
हे योद्धा राजा, अपने प्रिय माता-पिता के प्रति न्यायसंगत व्यवहार करो; और इस प्रकार
हे महाराज, आप धर्मी मार्ग का अनुसरण करके स्वर्ग की ओर अग्रसर होंगे।
हे योद्धा राजा, अपनी पत्नी और बच्चों के प्रति न्यायसंगत व्यवहार करो; और इस प्रकार
हे महाराज, आप धर्मी मार्ग का अनुसरण करके स्वर्ग की ओर अग्रसर होंगे।
हे योद्धा राजा, अपने मित्रों और दरबारियों के प्रति न्यायसंगत व्यवहार करो; और इस प्रकार
हे महाराज, आप धर्मी मार्ग का अनुसरण करके स्वर्ग की ओर अग्रसर होंगे।
युद्ध और यात्रा में, हे योद्धा राजा, न्यायसंगत आचरण करो; और इसलिए
हे महाराज, आप धर्मी मार्ग का अनुसरण करके स्वर्ग की ओर अग्रसर होंगे।
हे योद्धा राजा, नगर और गाँव में न्यायपूर्वक आचरण करो; और ऐसा ही हो।
हे महाराज, आप धर्मी मार्ग का अनुसरण करके स्वर्ग की ओर अग्रसर होंगे।
हे राजा, प्रत्येक देश और राज्य में न्यायपूर्वक आचरण करो; और इस प्रकार
हे महाराज, आप धर्मी मार्ग का अनुसरण करके स्वर्ग की ओर अग्रसर होंगे।
सभी ब्राह्मणों और तपस्वियों के साथ धार्मिक व्यवहार करो; और ऐसा ही हो।
हे महाराज, आप धर्मी मार्ग का अनुसरण करके स्वर्ग की ओर अग्रसर होंगे।

हे योद्धा राजा, पशुओं और पक्षियों के साथ न्यायपूर्वक व्यवहार करो; और इसलिए
हे महाराज, आप धर्मी मार्ग का अनुसरण करके स्वर्ग की ओर अग्रसर होंगे।
हे योद्धा राजा, धार्मिक आचरण करो; इसी से समस्त आशीर्वाद प्राप्त होते हैं।
हे महाराज, आप धर्मपरायण मार्ग का अनुसरण करके स्वर्ग की ओर अग्रसर होंगे।
हे राजा, सतर्कतापूर्वक अच्छाई के मार्ग पर चलो।
ब्राह्मणों, इंद्र और देवताओं (देवदूतों) ने अपनी देवत्व प्राप्ति कर ली है।
जब राजा को उसके सेनापति अहिपरका द्वारा कानून की शिक्षा दी गई, तो उसने उम्मदंती के प्रति अपने मोह से मुक्ति पा ली।

गुरु (बुद्ध) ने अपना उपदेश समाप्त करते हुए सत्य का प्रकटीकरण किया और जन्म का वर्णन किया। सत्यों के अंत में, भिक्षु प्रथम मार्ग (सम्मोहन) में स्थापित हुए। उस समय आनंद सारथी सुनंदा थे, सारिपुत्र अहिपरक थे, उप्पलावन्ना उमदंती थे, बुद्ध के अनुयायी शेष दरबारी थे, और मैं स्वयं राजा शिवी था।

फुटनोट:

(1) अववता, अर्थात् अव्यवृत्त, विवाह में चयनित नहीं।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **महाबोधि-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-528-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 528
महाबोधि-जातक। (*1)

"इन बातों का क्या अर्थ है?" इत्यादि। यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में निवास करते हुए प्रज्ञापारमिता के विषय में सुनाई थी। इस घटना का वर्णन महाउम्मग्ग (*2) में मिलता है। इस अवसर पर गुरु ने कहा, "केवल आज ही नहीं, बल्कि पहले भी तथागत (बुद्ध) ज्ञानवान थे और उन्होंने सभी विवाद करने वालों को कुचल दिया था।" इन शब्दों के साथ उन्होंने अतीत की एक कथा सुनाई।

ब्रह्मदत्त के शासनकाल में, काशी राज्य के बनारस में, बोधिसत्व का जन्म हुआ। उनका परिवार उत्तरी ब्राह्मणों का था, जिनकी संपत्ति अस्सी करोड़ (10 मिलियन) थी। उनका नाम बालक बोधि रखा गया। जब वे वयस्क हुए, तो उन्होंने तक्षशिला में सर्वोपयोगी शिक्षा प्राप्त की और घर लौटकर गृहस्थी के कार्यों में लीन हो गए। कुछ समय बाद, उन्होंने बुरी इच्छाओं का त्याग कर हिमालय क्षेत्र में शरण ली और एक घुमंतू भिक्षु का जीवन व्यतीत किया। वे वहाँ लंबे समय तक जंगली बेर और जड़-जड़ी-बूटियाँ खाकर जीवन यापन करते रहे। वर्षा ऋतु में वे हिमालय से नीचे उतरे और भिक्षा माँगते हुए धीरे-धीरे बनारस पहुँचे। वहाँ उन्होंने राजमहल के प्रांगण में अपना निवास स्थान बनाया और अगले दिन भिक्षा माँगते हुए भिक्षु के वेश में राजमहल के द्वार के पास पहुँचे। राजा ने खिड़की पर खड़े होकर उन्हें देखा और उनके शांत स्वभाव से प्रसन्न होकर उन्हें अपने महल में आमंत्रित किया और राजमहल पर बैठाया। कुछ देर सौहार्दपूर्ण बातचीत के बाद, राजा ने धर्म की व्याख्या सुनी और फिर उन्हें विभिन्न प्रकार के स्वादिष्ट भोजन परोसे। महानुभाव ने भोजन ग्रहण किया और मन ही मन सोचा, "सचमुच इस राजा का दरबार घृणा से भरा है और शत्रुओं की भरमार है। हे भगवान, मुझे इस भय से कौन मुक्ति दिलाएगा जो मेरे मन में उठ खड़ा हुआ है?" राजा के प्रिय भूरे रंग के कुत्ते को अपने पास खड़ा देखकर, उन्होंने भोजन का एक टुकड़ा उठाया और उसे कुत्ते को देने का नाटक किया। राजा को यह भलीभांति पता चल गया और उन्होंने कुत्ते का बर्तन मंगवाया और उनसे कहा कि वे भोजन कुत्ते को दे दें। महानुभाव ने ऐसा ही किया और फिर अपना भोजन समाप्त किया। राजा ने उनकी सहमति प्राप्त कर ली और शहर के भीतर राजमहल में उनके लिए पत्तों की एक कुटिया बनवाई, और उन्हें एक तपस्वी की सभी आवश्यक वस्तुएँ प्रदान करते हुए, उन्हें वहाँ रहने दिया। राजा प्रतिदिन दो या तीन बार उनसे मिलने आते थे। भोजन के समय महानुभाव राजमहल पर बैठते और राजमहल का भोजन ग्रहण करते रहते थे। इस प्रकार बारह वर्ष बीत गए। अब राजा के पाँच सलाहकार थे जो उन्हें सांसारिक और आध्यात्मिक कर्तव्यों का ज्ञान देते थे। उनमें से एक कर्म के अस्तित्व को नकारता था। दूसरा मानता था कि सब कुछ एक परम सत्ता का कार्य है।

तीसरा पूर्व कर्मों का उपदेश देता था। चौथा मृत्यु के बाद विनाश में विश्वास रखता था। पाँचवाँ क्षत्रिय दर्शन का अनुयायी था। कर्म के अस्तित्व को नकारने वाला व्यक्ति लोगों को सिखाता था कि इस संसार में प्राणी पुनर्जन्म द्वारा शुद्ध होते हैं। परम सत्ता के कार्य में विश्वास रखने वाला व्यक्ति सिखाता था कि संसार उसी ने सृजित किया है। पूर्व कर्मों के फल में विश्वास रखने वाला व्यक्ति सिखाता था कि मनुष्य को इस संसार में जो भी दुख या सुख प्राप्त होता है, वह किसी पूर्व कर्म का परिणाम है। विनाश में विश्वास रखने वाला व्यक्ति सिखाता था कि कोई भी इस संसार से दूसरे लोक में नहीं जाता, बल्कि यह संसार ही नष्ट हो जाता है। क्षत्रिय दर्शन का अनुयायी सिखाता था कि अपने हित की पूर्ति के लिए माता-पिता की हत्या भी करनी पड़े तो भी उचित है।इन लोगों को राजा के दरबार में न्याय करने के लिए नियुक्त किया गया था, और रिश्वत के लालच में उन्होंने संपत्ति के असली मालिक को बेदखल कर दिया। एक दिन एक व्यक्ति, झूठे मुकदमे में हारने के बाद, परमेश्वर को महल में भिक्षा मांगते हुए देखा, और उसने उन्हें प्रणाम किया और अपना दुख उनके कानों में सुनाते हुए कहा, "हे परम पूज्य, आप जो राजा के महल में भोजन करते हैं, उन न्यायाधीशों के कार्यों को क्यों अनदेखा करते हैं जो रिश्वत लेकर सभी मनुष्यों को बर्बाद कर देते हैं? अभी-अभी इन पांच सलाहकारों ने झूठे मुकदमे में शामिल एक व्यक्ति से रिश्वत लेकर मुझे मेरी संपत्ति से गलत तरीके से वंचित कर दिया है।" तब परमेश्वर को उस पर दया आई और वे दरबार में गए, और न्यायपूर्ण निर्णय देते हुए उसे उसकी संपत्ति वापस दिला दी। लोगों ने एकमत होकर उनके इस कार्य की सराहना की। शोर सुनकर राजा ने पूछा कि इसका क्या अर्थ है। जब राजा ने भोजन समाप्त कर लिया, तो वह उनके पास बैठ गया और पूछा, "हे पूज्यवर, क्या यह सच है कि आपने किसी मुकदमे का फैसला किया है?" राजा ने कहा, "जीव जी, यह सच है। जनता के हित में होगा यदि आप मामलों का फैसला करें: अब से आप न्याय करेंगे।" राजा ने उत्तर दिया, "महाराज, हम तपस्वी हैं; यह हमारा काम नहीं है।" राजा ने कहा, "जी, जनता पर दया करके आप ऐसा करें। आपको पूरा दिन न्याय करने की आवश्यकता नहीं है, बल्कि जब आप उद्यान से यहाँ आएँ, तो सुबह तड़के न्याय स्थल पर जाकर चार मामलों का फैसला करें; फिर उद्यान लौटकर भोजन करने के बाद चार और मामलों का फैसला करें, इस प्रकार जनता को लाभ होगा।" बार-बार विनती करने पर राजा मान गया और अब से वह इसी के अनुसार कार्य करने लगा। धोखाधड़ी करने वालों को आगे कोई अवसर नहीं मिला, और रिश्वत न मिलने से सलाहकारों की हालत खराब हो गई और वे सोचने लगे, "जब से इस भिक्षु बोधि ने न्याय करना शुरू किया है, हमें कुछ भी नहीं मिल रहा है।" और उन्हें राजा का शत्रु बताते हुए उन्होंने कहा, "चलो, हम राजा के सामने उनकी निंदा करें और उनकी मृत्यु करवा दें।" राजा के पास आकर उन्होंने कहा, "महाराज, भिक्षु बोधि आपका बुरा चाहते हैं।" राजा ने उनकी बात पर विश्वास नहीं किया और कहा, "नहीं, वह एक अच्छे और विद्वान व्यक्ति हैं; वह ऐसा नहीं करेंगे।" उन्होंने उत्तर दिया, "महाराज, सभी नागरिक उनके गुलाम हैं: हम पाँच ही ऐसे लोग हैं जिन्हें वह अपने वश में नहीं कर सकते। यदि आप हमारी बात पर विश्वास नहीं करते हैं, तो अगली बार जब वह यहाँ आएँ, तो उनके अनुयायियों पर ध्यान दें।" राजा मान गए, और अपनी खिड़की पर खड़े होकर उनके आने का इंतजार करने लगे, और बोधि के पीछे बिना उनकी जानकारी के आए हुए लोगों की भीड़ को देखकर, राजा ने सोचा कि वे उनके सेवक हैं, और उनके प्रति पूर्वाग्रह रखते हुए उन्होंने अपने सलाहकारों को बुलाया और पूछा, "हम क्या करें?" "महाराज," उन्होंने कहा। "जब तक हमें उसकी ओर से कोई गंभीर अपराध न दिख जाए," उन्होंने कहा।"हम उसे कैसे गिरफ्तार करें?" "तो फिर उसका सम्मान कम कर दो, और जब वह देखेगा कि उसका सम्मान कम हो रहा है, तो एक बुद्धिमान भिक्षु होने के नाते वह बिना किसी से कुछ कहे स्वयं ही भाग जाएगा।" राजा को यह सुझाव पसंद आया और उसने धीरे-धीरे अपना सम्मान कम कर दिया। इसके अगले दिन उसे एक साधारण पलंग पर बैठाया गया। उसने यह देखा और तुरंत समझ गया कि राजा के सामने उसकी निंदा की गई है। वह उद्यान लौटकर उसी दिन वहाँ से जाने का मन बना रहा था, लेकिन उसने सोचा, "जब मुझे पक्का पता चल जाएगा, तभी मैं जाऊँगा," और वह नहीं गया। इसलिए अगले दिन जब वह साधारण पलंग पर बैठा था, तो वे राजा के लिए तैयार किया गया भोजन और अन्य भोजन भी लेकर आए और उसे दोनों का मिश्रण दिया। तीसरे दिन उसे मंच के पास नहीं जाने दिया गया, बल्कि उसे सीढ़ियों के शीर्ष पर बैठाकर उसे मिश्रित भोजन दिया गया। उसने उसे ग्रहण किया और उद्यान में जाकर वहीं भोजन किया। चौथे दिन उन्होंने उसे नीचे चबूतरे पर लिटाया और चावल के चूर्ण से बना शोरबा पिलाया। वह उसे भी लेकर पार्क में गया और वहीं भोजन किया। राजा ने कहा, "यद्यपि उसका सम्मान कम हो गया है, फिर भी महान बोधि भिक्षु जा नहीं रहा है। हम क्या करें?" उन्होंने कहा, "महाराज, वह यहाँ भिक्षा मांगने नहीं आया है; बल्कि शासन करने की शक्ति चाहता है। यदि वह केवल भिक्षा मांगने आया होता, तो अपमानित होते ही पहले दिन भाग जाता।" राजा ने फिर कहा, "तो फिर हम क्या करें?" राजा ने कहा, "महाराज, कल उसे मरवा दीजिए।" राजा ने कहा, "ठीक है," और उन्हीं आदमियों के हाथों में तलवारें थमाते हुए कहा, "कल जब वह आए और द्वार के अंदर खड़ा हो, तो उसका सिर काट देना और उसके टुकड़े-टुकड़े कर देना, और बिना किसी को कुछ कहे उसके शरीर को गोबर के ढेर पर फेंक देना, फिर स्नान करके यहाँ वापस आ जाना।"भिक्षु जा नहीं रहा है। हम क्या करें?" उन्होंने कहा, "महाराज, वह भिक्षा मांगने नहीं आया है; बल्कि शासन करने की शक्ति चाहता है। यदि वह केवल भिक्षा के लिए आया होता, तो अपमान होते ही पहले दिन भाग जाता।" "तो फिर हम क्या करें?" उन्होंने कहा, "महाराज, कल उसे मरवा दीजिए।" उन्होंने कहा, "ठीक है," और उन्हीं आदमियों के हाथों में तलवारें थमाते हुए कहा, "कल जब वह आए और द्वार के अंदर खड़ा हो, तो उसका सिर काट देना और उसके टुकड़े-टुकड़े कर देना, और बिना किसी को कुछ कहे उसके शरीर को गोबर के ढेर पर फेंक देना, फिर स्नान करके यहाँ वापस आ जाना।"भिक्षु जा नहीं रहा है। हम क्या करें?" उन्होंने कहा, "महाराज, वह भिक्षा मांगने नहीं आया है; बल्कि शासन करने की शक्ति चाहता है। यदि वह केवल भिक्षा के लिए आया होता, तो अपमान होते ही पहले दिन भाग जाता।" "तो फिर हम क्या करें?" उन्होंने कहा, "महाराज, कल उसे मरवा दीजिए।" उन्होंने कहा, "ठीक है," और उन्हीं आदमियों के हाथों में तलवारें थमाते हुए कहा, "कल जब वह आए और द्वार के अंदर खड़ा हो, तो उसका सिर काट देना

और उसके टुकड़े-टुकड़े कर देना, और बिना किसी को कुछ कहे उसके शरीर को गोबर के ढेर पर फेंक देना, फिर स्नान करके यहाँ वापस आ जाना।"

वे तुरंत सहमत हो गए और बोले, "कल हम आकर ऐसा करेंगे," और आपस में बातचीत करके वे अपने-अपने घर चले गए। राजा भी भोजन के बाद राजसी पलंग पर लेट गए और ईश्वर के गुणों का स्मरण करने लगे। तभी अचानक उन पर दुःख छा गया और उनके शरीर से पसीना बहने लगा। पलंग पर आराम न मिलने पर वे करवटें बदलते रहे। उनकी मुख्य रानी उनके बगल में लेटी थीं, लेकिन उन्होंने उनसे एक शब्द भी नहीं कहा।

तब उसने उससे पूछा, "महाराज, आप मुझसे एक शब्द भी क्यों नहीं कहते? क्या मैंने आपको किसी तरह से नाराज किया है?" "नहीं, देवी," उसने कहा, "परन्तु लोग कहते हैं कि भिक्षु बोधि हमारे शत्रु बन गए हैं। मैंने अपने पाँच सलाहकारों को कल उन्हें मारने का आदेश दिया है। मारने के बाद वे उनके टुकड़े-टुकड़े कर देंगे और उनके शरीर को कूड़े के ढेर पर फेंक देंगे। परन्तु बारह वर्षों से उन्होंने हमें अनेक सत्य सिखाए हैं। मुझे उनसे पहले कभी कोई दोष नहीं दिखाई दिया, परन्तु दूसरों के उकसावे पर मैंने उन्हें मृत्युदंड देने का आदेश दिया है, और इसीलिए मैं दुखी हूँ।" तब उसने उन्हें दिलासा देते हुए कहा, "महाराज, यदि वे आपके शत्रु हैं, तो उन्हें मारने पर आप दुखी क्यों हैं? आपकी अपनी सुरक्षा का ध्यान रखना आवश्यक है, चाहे आप अपने पुत्र को ही क्यों न मारें। इसे दिल पर मत लीजिए।" उसके शब्दों से उन्हें तसल्ली मिली और वे सो गए। उस क्षण, अच्छी नस्ल के भूरे रंग के शिकारी कुत्ते ने बातें सुनकर सोचा, "कल मुझे अपनी शक्ति से इस आदमी की जान बचानी होगी।" अतः अगली सुबह सवेरे वह कुत्ता छत से नीचे उतरा और बड़े द्वार पर आकर दहलीज पर सिर रखकर लेट गया, उस रास्ते को देखता रहा जिससे वह महान व्यक्ति आ रहा था। परन्तु तलवार लिए वे सलाहकार सुबह जल्दी आ गए और द्वार के भीतर खड़े हो गए। बोधि समय देखकर पार्क से महल के द्वार के पास पहुँचे। तब कुत्ते ने उन्हें देखकर अपना मुँह खोला और अपने चारों बड़े दाँत दिखाते हुए सोचा, "हे परम पूज्य, आप भारत में कहीं और भिक्षा क्यों नहीं माँगते? हमारे राजा ने आपको मारने के लिए पाँच तलवारों से लैस सलाहकारों को द्वार के भीतर तैनात किया है। मृत्यु को अपना भाग्य मानकर मत आइए (*4), बल्कि शीघ्रता से यहाँ से चले जाइए," और उसने ज़ोर से भौंका। सभी ध्वनियों के अर्थ के ज्ञान से बोधि बात समझ गए और पार्क लौटकर अपनी यात्रा के लिए आवश्यक सभी सामान ले आए। लेकिन जब राजा ने अपनी खिड़की पर खड़े होकर देखा कि वह नहीं आ रहा है, तो उसने सोचा, "अगर यह आदमी मेरा दुश्मन है, तो वह पार्क में लौटकर अपनी सारी सेना इकट्ठा कर लेगा और युद्ध के लिए तैयार हो जाएगा, लेकिन अगर ऐसा नहीं है, तो वह निश्चित रूप से अपनी ज़रूरत का सारा सामान लेकर जाने के लिए तैयार हो जाएगा। मैं पता लगाऊंगा कि वह क्या कर रहा है।" और पार्क जाकर उसने उस महान व्यक्ति को अपने पत्तों की झोपड़ी से बाहर आते हुए और अपने बाड़े के अंत में अपनी सभी ज़रूरतों के साथ, जाने के लिए तैयार पाया, और उसे प्रणाम करते हुए वह एक तरफ खड़ा हो गया और पहला श्लोक बोला:

इन चीजों का क्या मतलब है, छाता, जूते, चमड़े का लबादा और हाथ में लाठी?
इस लबादे, कटोरे और हुक का क्या? मैं खुशी से समझ लूंगा।
आप इतनी जल्दबाजी में क्यों प्रस्थान करना चाहते हैं और किस दूर देश में जा रहे हैं?
यह सुनकर उस महान प्राणी ने सोचा, "मुझे लगता है कि उसे समझ नहीं आया कि उसने क्या किया है। मैं उसे बता दूंगा।" और उसने दो श्लोक दोहराए:

हे राजा, इन बारह लंबे वर्षों तक मैंने आपके राजमहल में ही अपना जीवन व्यतीत किया है;
और आज से पहले इस कुत्ते को कभी भौंकते हुए नहीं देखा गया था।
आज वह अपने दांत इतने सफेद दिखा रहा है, अब वह अडिग और गर्वित है।
और आपने रानी को जो कुछ कहा, मुझे चेतावनी देने के लिए, वह बात स्पष्ट रूप से कहती है।
तब राजा ने अपने पाप को स्वीकार किया और क्षमा मांगते हुए चौथे श्लोक को दोहराया:

पाप मेरा था: हे पवित्र महोदय, मेरा उद्देश्य आपको मारना था;
लेकिन अब मैं एक बार फिर आपका पक्ष लेता हूँ, और खुशी-खुशी चाहता हूँ कि आप यहीं रहें।
यह सुनकर उस महान प्राणी ने कहा, "सचमुच, महाराज, बुद्धिमान लोग ऐसे व्यक्ति के साथ नहीं रहते जो किसी चीज को अपनी आँखों से देखे बिना दूसरों का अनुसरण करता है," और ऐसा कहकर उन्होंने उसके दुराचार को उजागर किया और इस प्रकार कहा:

मेरा पुराना भोजन शुद्ध और सफेद होता था, उसके बाद उसमें रंग मिलाना शुरू हुआ।
अब यह पूरी तरह से भूरा हो चुका है। अब मेरे जाने का समय आ गया है।
पहले मंच पर, फिर ऊपर और अंत में नीचे मैं भोजन करता हूँ;
इससे पहले कि मुझे गर्दन और बालों से पकड़कर बाहर धकेल दिया जाए, मैं अपना स्थान छोड़ दूंगा।

विश्वासघाती मित्र से मत पछताओ: वह सूखे कुएँ के समान है।
चाहे कितनी भी गहराई तक खुदाई कर ली जाए, धारा मैली ही रहेगी।
एक सच्चे मित्र से अवश्य संबंध बनाओ, एक विश्वासघाती मित्र से दूर रहो।
जैसे कोई प्यासा व्यक्ति तालाब की ओर दौड़ता है, वैसे ही एक वफादार दोस्त उसका पीछा करता है।
जो मित्र आपसे प्रेम करता है, उससे जुड़े रहो, उसका प्रेम तुम्हें प्रेम से लौटाएगा;
जो व्यक्ति अपने वफादार मित्र को त्याग देता है, उसे ही सबसे दयनीय प्राणी माना जाता है।
जो अपने सच्चे मित्र को छोड़कर नहीं जाता, प्रेम का प्रतिफल प्रेम से नहीं मिलता।
वह सबसे नीच मनुष्य है, और बंदरों की जाति भी उससे श्रेष्ठ नहीं है।
बहुत बार मिलना उतना ही बुरा है जितना कि बिल्कुल न मिलना;
किसी वरदान की अपेक्षा बहुत जल्दी कर लेना—यह भी प्रेम को फीका कर देता है।
किसी मित्र से मिलने जाएं, लेकिन बहुत बार नहीं, और न ही अपने प्रवास की अवधि बढ़ाएं;
सही समय पर ही कृपा की भीख मांगनी चाहिए: इसलिए प्रेम कभी क्षीण नहीं होता।
जो लोग बहुत लंबे समय तक एक ही जगह पर रहते हैं, उन्हें अक्सर यह पता चलता है कि उनका दोस्त दुश्मन में बदल गया है;
इसलिए, आपकी दोस्ती खोने से पहले मैं आपसे विदा लेता हूँ और चला जाता हूँ।
राजा ने कहा:

यद्यपि मैं हाथ जोड़कर आपसे विनती करता हूँ, आप मेरी ओर ध्यान नहीं देते।
आपके पास हमारे लिए कोई शब्द नहीं है, जिनके लिए आपकी सेवा अत्यंत महत्वपूर्ण होगी।
मेरी आपसे एक ही गुजारिश है: दोबारा आइए और यहां जरूर आइए।
बोधिसत्व ने कहा:

हे राजा, यदि कुछ भी हमारे जीवन को समाप्त करने के लिए नहीं आता, यदि आप और मैं
हे अपने राज्य के पालनहार, अब भी जीवित रहो, शायद मैं यहाँ आकर उड़ जाऊँगा।
और दिन-रात बीतने के साथ-साथ शायद हम फिर से एक-दूसरे से मिलें।
इस प्रकार महान पुरुष ने राजा से कहा और सत्य का उपदेश देते हुए कहा, "हे महाराज, सावधान रहें।" और अपने क्षेत्र में भिक्षा मांगने के बाद, वे बनारस से निकलकर धीरे-धीरे हिमालय में एक स्थान पर पहुँचे, और कुछ समय वहाँ रहने के बाद, वे पहाड़ियों से नीचे उतरकर सीमावर्ती गाँव के पास एक जंगल में बस गए। उनके जाते ही, वे सलाहकार एक बार फिर न्याय करने बैठ गए, लोगों को लूटने लगे, और सोचने लगे, "यदि महान बोधि, भिक्षु, लौट आए, तो हमारी आजीविका छिन जाएगी। हम उन्हें वापस आने से रोकने के लिए क्या करें?" तब उन्हें यह विचार आया: "ऐसे लोग किसी भी वस्तु को नहीं छोड़ सकते जिससे वे आसक्त हों। यहाँ वह कौन सी वस्तु हो सकती है जिससे वे आसक्त हों?" तब उन्हें यकीन हो गया कि यह राजा की मुख्य पत्नी ही होगी, और उन्होंने सोचा, "यही कारण है कि वह यहाँ लौटेंगे। हम उनसे पहले ही (*5) मिलकर उसे मार डालेंगे।" और उन्होंने राजा से यही बात दोहराई, "महाराज, आज शहर में एक अफवाह फैली हुई है।" "क्या खबर है?" उसने कहा। "महान भिक्षु बोधि और रानी एक-दूसरे को संदेश भेजते हैं।" "किन वस्तुओं के साथ?" कहते हैं, राजा ने रानी को यह संदेश दिया, “क्या तुम अपनी शक्ति से राजा को मृत्युदंड दे सकती हो और मुझे सफेद छत्र प्रदान कर सकती हो?” रानी ने राजा को यह संदेश दिया, “राजा की मृत्यु का दायित्व सचमुच मेरा है: तुम्हें शीघ्र आना होगा।” उन्होंने यह बात बार-बार दोहराई, यहाँ तक कि राजा को इस पर विश्वास हो गया और उसने पूछा, “तो फिर क्या किया जाए?” उन्होंने उत्तर दिया, “हमें रानी को मृत्युदंड देना होगा।” और मामले की सच्चाई जाने बिना ही उसने कहा, “ठीक है, तो उसे मृत्युदंड दे दो: और उसके शरीर के टुकड़े-टुकड़े करके कूड़े के ढेर पर फेंक दो।” उन्होंने ऐसा ही किया, और उसकी मृत्यु की खबर पूरे शहर में फैल गई। तब उसके चारों पुत्रों ने कहा, “हमारी माता, जो निर्दोष थी, को इस व्यक्ति ने मृत्युदंड दे दिया है,” और वे राजा के शत्रु बन गए। और राजा बहुत भयभीत हो गया। कुछ समय बाद परमेश्वर ने जो कुछ हुआ, वह सुना और सोचा, “मेरे सिवा कोई नहीं है जो इन राजकुमारों को शांत कर सके और उन्हें अपने पिता को क्षमा करने के लिए राजी कर सके; मैं राजा का जीवन बचाऊंगा और इन राजकुमारों को उनके बुरे इरादों से मुक्त करूंगा।” अगले दिन वह एक सीमावर्ती गाँव में गया और वहाँ के निवासियों द्वारा दिए गए बंदर का मांस खाने के बाद उसने उसकी खाल माँगी, जिसे उसने अपनी कुटिया में तब तक सुखाया जब तक उसकी गंध पूरी तरह खत्म नहीं हो गई। फिर उसने उससे एक भीतरी और एक बाहरी वस्त्र बनाया और उसे अपने कंधे पर डाल लिया। उसने ऐसा क्यों किया? ताकि वह कह सके, “यह मेरे लिए बहुत उपयोगी है।” खाल लेकर वह धीरे-धीरे बनारस की ओर बढ़ा और युवा राजकुमारों के पास आकर उनसे कहा, “अपने पिता की हत्या करना एक भयानक काम है: तुम्हें ऐसा नहीं करना चाहिए। कोई भी मनुष्य नाश और मृत्यु से मुक्त नहीं है। मैं यहाँ तुम्हें समझाने आया हूँ; जब मैं कोई संदेश भेजूँ, तो तुम्हें मेरे पास आना है।”"इस प्रकार युवकों को प्रोत्साहित करने के बाद, वह शहर के भीतर स्थित पार्क में गया और एक पत्थर की पटिया पर बैठ गया, और उस पर बंदर की खाल बिछा दी।"

जब उद्यान के रखवाले ने यह देखा, तो वह जल्दी से राजा को बताने गया। राजा यह सुनकर प्रसन्न हुए और अपने उन सलाहकारों को साथ लेकर उस महान प्राणी को प्रणाम करने गए और बैठकर उनसे मधुर वार्तालाप करने लगे। महान प्राणी ने बिना किसी मैत्रीपूर्ण अभिवादन के अपनी बंदर की खाल को सहलाना जारी रखा। राजा ने कहा, "महाराज, मेरे लिए कोई व्यवस्था किए बिना आप अपनी बंदर की खाल को सहलाते रहते हैं। क्या यह आपके लिए मुझसे अधिक उपयोगी है?" "जी महाराज, यह बंदर मेरे लिए सबसे बड़ा सेवक है। मैं इसकी पीठ पर बैठकर यात्रा करता था। इसने मेरे लिए पानी का घड़ा ढोया। इसने मेरे रहने की जगह की सफाई की।"

इसने मेरे लिए अनेक छोटे-मोटे काम किए। इसकी सादगी के कारण मैंने इसका मांस खाया और इसकी सूखी खाल को बिछाकर उस पर बैठा और लेटा, अतः यह मेरे लिए बहुत उपयोगी है। इस प्रकार, इन गलत धारणाओं का खंडन करने के लिए, उसने बंदर की खाल को बंदर के कार्यों से जोड़ा और इसी उद्देश्य से उसने ऐसा कहा। पहले इसकी खाल पहनने के कारण उसने कहा, "मैं इसकी पीठ पर बैठकर यात्रा करता था।" इसे अपने कंधे पर रखकर और इस प्रकार अपना पीने का बर्तन ढोने के कारण उसने कहा, "इसने मेरा पीने का बर्तन ढोया।" खाल से ज़मीन साफ़ करने के कारण उसने कहा, "यह मेरे रहने की जगह को साफ़ करती है।" जब वह लेटता है, क्योंकि उसकी पीठ इस खाल से छूती है, और जब वह इस पर कदम रखता है, क्योंकि यह उसके पैरों को छूती है, तो वह कहता है, "इसने मेरे लिए अमुक-अमुक काम किए": जब उसे भूख लगती है, क्योंकि उसने इसका मांस लिया और खाया, तो वह कहता है, "इतना सरल प्राणी होने के कारण, मैंने इसका मांस खाया।" यह सुनकर उन सलाहकारों ने सोचा, "यह आदमी हत्या का दोषी है।" कृपया इस तपस्वी के कार्य पर विचार करें: वह कहता है कि उसने एक बंदर को मारा, उसका मांस खाया और उसकी खाल लेकर घूमता है," और तालियाँ बजाकर उसका उपहास किया। यह देखकर उस महान सत्ता ने कहा, "ये लोग नहीं जानते कि मैं इस खाल के साथ उनके पाखंडों का खंडन करने आया हूँ: मैं उन्हें नहीं बताऊंगा।" और धर्म का खंडन करने वाले को संबोधित करते हुए उन्होंने पूछा, "हे प्रभु, आप मुझे क्यों दोष दे रहे हैं?" "क्योंकि तुमने एक मित्र के साथ विश्वासघात किया है और हत्या की है।" तब उस महान सत्ता ने कहा, "यदि कोई आप पर और आपकी शिक्षाओं पर विश्वास करे और उसके अनुसार कार्य करे, तो क्या बुराई हुई है?" और उसके गलत विश्वास का खंडन करते हुए उन्होंने कहा:

यदि आपका यही मानना है कि, "मनुष्यों के सभी कर्म, चाहे अच्छे हों या बुरे,
मेरा मानना है कि हर मामले में उत्पत्ति प्राकृतिक कारणों से ही होती है।
अनैच्छिक कृत्यों में पाप का स्थान कहाँ हो सकता है?
यदि आपका यही विश्वास है और यह शिक्षा सत्य है,
उस बंदर को मारना मेरा सही कदम था।
काश तुम देख पाते कि तुम्हारा यह विश्वास कितना पापपूर्ण है?
तब आप मेरे कृत्य को उचित रूप से दोष नहीं दे पाएंगे।
इस प्रकार उस महान सत्ता ने उसे फटकारा और उसे चुप करा दिया। सभा के समक्ष फटकार से नाराज़ होकर राजा गिर पड़ा (*7) और बैठ गया। उस महान सत्ता ने उसकी गलत धारणा का खंडन करने के बाद, उस व्यक्ति को संबोधित किया जो मानता था कि सब कुछ एक सर्वोच्च सत्ता द्वारा बनाया गया है और कहा, "हे महाराज, यदि आप वास्तव में इस शिक्षा का पालन करते हैं कि सब कुछ एक सर्वोच्च सत्ता की रचना है, तो आप मुझे दोष क्यों देते हैं?" और उन्होंने इस श्लोक को दोहराया।

यदि कोई सर्वशक्तिमान ईश्वर विद्यमान है जो इन आवश्यकताओं को पूरा कर सकता है
प्रत्येक प्राणी में सुख या दुख, और कर्म या तो अच्छा होता है या बुरा।
प्रभु भी पाप से दूषित है। मनुष्य तो केवल उसकी इच्छा का फल भोगता है।
यदि आपका यही विश्वास है और यह शिक्षा सत्य है,
उस बंदर को मारना मेरा सही कदम था।
काश तुम देख पाते कि तुम्हारा यह विश्वास कितना पापपूर्ण है?
तब आप मेरे कृत्य को उचित रूप से दोष नहीं दे पाएंगे।
इस प्रकार, जैसे कोई आम के पेड़ से तोड़ी हुई लाठी से आम को गिरा देता है, उसने उसी के उपदेश से उस व्यक्ति का खंडन किया जो किसी सर्वोच्च सत्ता की क्रिया में विश्वास करता था, और फिर उसने उस विश्वासी को संबोधित करते हुए कहा, "महोदय, यदि आप इस उपदेश की सत्यता में विश्वास करते हैं कि सब कुछ पहले से घटित है, तो आप मुझे दोष क्यों देते हैं?" और उसने इस श्लोक को दोहराया:

पूर्व कर्मों से ही सुख और दुख दोनों उत्पन्न होते हैं;
यह बंदर अपने किसी पुराने पाप का कर्ज चुका रहा है:
प्रत्येक कर्म एक ऋण का भुगतान है। तो फिर अपराधबोध कहाँ से आता है?
यदि आपका यही विश्वास है और यह शिक्षा सत्य है,

उस बंदर को मारना मेरा सही कदम था।
क्या तुम यह देख सकते हो कि तुम्हारी शिक्षा कितनी पापपूर्ण है?
तब आप मेरे कृत्य को उचित रूप से दोष नहीं दे पाएंगे।
इस प्रकार उस व्यक्ति के गलत विश्वास का भी खंडन करने के बाद, उसने विनाश में विश्वास करने वाले (*8) की ओर मुड़कर कहा, "महोदय, आप मानते हैं कि कोई पुरस्कार नहीं है और इसी प्रकार की बातें हैं, यह मानते हुए कि सभी नश्वर प्राणी यहाँ विनाश का शिकार होते हैं, और कोई भी भविष्य के लोक में नहीं जाता है। तो फिर आप मुझे क्यों दोष देते हैं?" और उसे फटकारते हुए उसने कहा:

प्रत्येक जीवित प्राणी का स्वरूप चार तत्वों (पृथ्वी, अग्नि, जल, आकाश) से मिलकर बना होता है;
शरीर धीरे-धीरे अपने प्रत्येक घटक भाग में घुल जाता है।
मृत व्यक्ति का अस्तित्व समाप्त हो जाता है, जीवित व्यक्ति का जीवन अभी भी जारी रहता है;
यदि यह संसार नष्ट हो जाए, तो बुद्धिमान और मूर्ख दोनों ही चले जाएंगे:
एक तबाह दुनिया के बीच, अपराध का दाग किसी को भी अपवित्र नहीं करता।
यदि आपका यही विश्वास है और यह शिक्षा सत्य है,
उस बंदर को मारना मेरा सही कदम था।
काश तुम देख पाते कि तुम्हारा यह विश्वास कितना पापपूर्ण है?
तब आप मेरे कृत्य को उचित रूप से दोष नहीं दे पाएंगे।
इस प्रकार उन्होंने इस व्यक्ति की भी गलत धारणा का खंडन किया और फिर क्षत्रिय शिक्षा मानने वाले को संबोधित करते हुए कहा, "महोदय, आप मानते हैं कि मनुष्य को अपने हितों की पूर्ति करनी चाहिए, भले ही इसके लिए उसे अपने माता-पिता को मारना पड़े। यदि आप इस मान्यता का प्रचार करते हैं, तो आप मुझे क्यों दोष देते हैं?" और उन्होंने इस श्लोक को दोहराया:

क्षत्रिय कहते हैं, बेचारे भोले-भाले मूर्ख जो खुद को इतना बुद्धिमान समझते हैं।
यदि परिस्थिति उचित हो तो एक व्यक्ति अपने माता-पिता की हत्या कर सकता है।
या फिर बड़े भाई, बच्चे, पत्नी, यदि इसकी आवश्यकता हो।
इस प्रकार उन्होंने इस व्यक्ति के विचारों का भी विरोध किया और अपना विचार प्रकट करते हुए कहा:

"एक ऐसे पेड़ से, जिसकी छाया में एक आदमी बैठकर आराम करता था,"
शाखा काटना विश्वासघात था। हम दोनों को झूठे दोस्त बिल्कुल पसंद नहीं थे।
लेकिन यदि ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाए, तो उस पेड़ को नष्ट कर देना।
फिर, मेरी जरूरतों को पूरा करने के लिए, उस बंदर को मेरे द्वारा मार देना उचित ही था।
यदि आपका यह विश्वास और यह शिक्षा सत्य है,
तब उस बंदर को मारना मेरा सही कदम था।
काश तुम देख पाते कि तुम्हारा यह विश्वास कितना पापपूर्ण है?
तब आप मेरे कृत्य को उचित रूप से दोष नहीं दे पाएंगे।
इस प्रकार उन्होंने इस व्यक्ति की शिक्षा का भी खंडन किया, और अब जब ये पाँचों गलत मानने वाले हक्का-बक्का और भ्रमित हो गए (*9), तो उन्होंने राजा को संबोधित करते हुए कहा, "महाराज, ये लोग जिनके साथ आप घूमते हैं, बड़े चोर हैं जो आपके राज्य को लूटते हैं। अरे! मूर्ख! जो मनुष्य इस संसार में और आने वाले संसार में भी ऐसे लोगों की संगति करेगा, उसे बड़ा दुख भोगना पड़ेगा।" और ऐसा कहकर उन्होंने राजा को सत्य का उपदेश दिया और कहा:

यह व्यक्ति सिखाता है, "कोई कारण नहीं है।" दूसरा कहता है, "एक (ईश्वर) ही सबका स्वामी है।"
कुछ लोगों का मानना है, "हर कर्म पुराने कर्मों के कारण हुआ है।" वहीं कुछ अन्य लोगों का मानना है, "सारा संसार विनाश की ओर अग्रसर है।"
ये और क्षत्रिय गलत धारणा रखने वाले मूर्ख हैं जो खुद को बुद्धिमान समझते हैं।
बुरे लोग वे हैं जो स्वयं पाप करते हैं और दूसरों को भी बुरी सलाह देते हैं।
बुरी सलाह का परिणाम निश्चित रूप से कष्ट और दंड होता है।
अब उदाहरण के तौर पर, अपने उपदेश के पाठ की व्याख्या करते हुए उन्होंने कहा:

एक भेड़िया जो पुराने जमाने के मेढ़े का वेश धारण किए हुए है
वह अनजाने में ही झुंड के पास आ गया।
(*10) आतंकित झुंड को इसने मार डाला,

फिर वह नई राहों की तलाश में निकल पड़ा।
इस प्रकार भिक्षु और ब्राह्मण अक्सर इनका उपयोग करते हैं।
भोले-भाले लोगों का शोषण करने के लिए एक आवरण।
कुछ लोग नंगी जमीन पर गंदे पड़े हैं,
कुछ तेजी से दौड़ते हैं, कुछ दर्द से कराहते हुए उकड़ू बैठ जाते हैं।
कुछ लोग शराब नहीं पीते, कुछ लोग नियमों के अनुसार भोजन करते हैं।
ये सभी संत होने का दिखावा करते हैं, लेकिन असल में दुष्ट मूर्ख हैं।
वे दुष्ट जाति के लोग हैं, और वे मूर्ख हैं जो खुद को बुद्धिमान समझते हैं।
ऐसे सभी लोग न केवल स्वयं पाप करते हैं, बल्कि दूसरों को भी दुष्टतापूर्ण सलाह देते हैं।
बुरी सलाह का परिणाम निश्चित रूप से कष्ट और दंड होता है।
जो कहते हैं, "किसी भी चीज में कोई बल मौजूद नहीं है,"
सभी के उद्देश्य को नकारना, निंदा करना
हे राजा, उनके अपने और दूसरों के कर्म व्यर्थ हैं।
ये दुष्ट प्रकार के लोग हैं, और वे मूर्ख हैं जो स्वयं को बुद्धिमान समझते हैं।
ऐसे सभी लोग न केवल स्वयं पाप करते हैं, बल्कि दूसरों को भी दुष्टतापूर्ण सलाह देते हैं।
बुरी सलाह का परिणाम निश्चित रूप से कष्ट और दंड होता है।
यदि बल का अस्तित्व कहीं नहीं है और न ही कर्म अच्छे या बुरे हैं,
एक राजा को कारीगरों को क्यों रखना चाहिए, ताकि वह उनके कौशल से लाभ कमा सके?
क्योंकि बल का अस्तित्व है और कर्म अच्छे हों या बुरे, यह बल ही मायने रखता है।
राजा हमेशा कारीगरों को अपने पास रखते हैं और उनकी कुशलता से लाभ कमाते हैं।
यदि सौ वर्षों या उससे अधिक समय तक बारिश या बर्फबारी न हो,
एक तबाह दुनिया के बीच, हमारी पूरी जाति का नाश हो जाएगा।
लेकिन जैसे-जैसे बारिश और बर्फबारी होती है, साल का बदलता स्वरूप सुनिश्चित होता है,
वह फसल पकती है और हमारी भूमि युगों-युगों तक बनी रहती है।
बाढ़ के बीच से बैल एक टेढ़ा-मेढ़ा रास्ता अपनाएगा (और पहले जैसा ही)।
पेड़ पर फल पूरी तरह पकने से पहले कौन तोड़ता है?
इसके बीज नष्ट हो जाते हैं और उसे कभी पता नहीं चलता कि फल कितना मीठा हो सकता है।
अतः जिसने अन्यायपूर्ण शासन द्वारा अपने देश को नष्ट किया है,
धर्म से उत्पन्न होने वाली मिठाइयों का उसने कभी आनंद नहीं उठाया।
लेकिन जो व्यक्ति फल तोड़ने के बाद उसे पेड़ पर ही पकने देता है,
यह अपने बीज को सुरक्षित रखता है और यह भलीभांति जानता है कि फल कितना मीठा हो सकता है।
इसलिए उसने भी अपने धर्मपरायण शासन द्वारा इस भूमि की रक्षा की है।
न्याय के फल कितने मीठे होते हैं, यह बात पूरी तरह से समझी जा सकती है।
वह योद्धा राजा जो इस धरती पर अन्याय का शासन स्थापित करेगा
जमीन से जो भी उपज होगी, उसमें पेड़-पौधों और जड़ी-बूटियों की कमी होगी।
तो क्या उसे अपने उन नागरिकों को बिगाड़ देना चाहिए जिन्हें व्यापार से लाभ होने की इतनी संभावना है?
राजस्व के असफल होने से उनके खजाने पर बोझ पड़ेगा।
और यदि वह अपने उन बहादुर सैनिकों को नाराज कर दे, जो युद्ध में महारत हासिल करने में इतने कुशल हैं,
उसकी सेना उससे अलग हो जाएगी और उसकी शक्ति छीन लेगी।
इसलिए चाहे वह गलत हो, बुद्धिमान हो या संत, उसे अपने कर्मों का फल अवश्य मिलता है।
और अपने पाप के कारण, चाहे वह कितना भी ऊंचे कुल में जन्मा हो, स्वर्ग से वंचित कर दिया जाएगा।
और यदि किसी दुष्ट राजा द्वारा किसी निर्दोष पत्नी की हत्या कर दी जाए,
वह अपने बच्चों के कारण कष्ट भोगता है और नरक में पीड़ा से व्याकुल रहता है।
शहर और गांव के लोगों के साथ न्याय करो और अपने सैनिकों के साथ अच्छा व्यवहार करो।
पत्नी और बच्चों के प्रति दयालु रहें और संतों को सुरक्षित निवास करने दें।
हे महाराज, यदि ऐसा सम्राट वासना से मुक्त पाया जाए,
इंद्र और असुरों के स्वामी की तरह, वह चारों ओर आतंक फैलाता है।

इस प्रकार राजा को सत्य का उपदेश देने के बाद, उस महान सत्ता ने चारों युवा राजकुमारों को बुलाया और उन्हें संबोधित करते हुए राजा के कार्य का कारण समझाया। उन्होंने कहा, "राजा से क्षमा मांगो।" राजा को उन्हें क्षमा करने के लिए राजी करने के बाद, उन्होंने कहा, "महाराज, अब से निंदा करने वालों के कथनों को बिना सोचे-समझे स्वीकार न करें, और किसी भी प्रकार की हिंसा न करें। और तुम युवा राजकुमारों, राजा के प्रति विश्वासघात न करो।" इस प्रकार उन्होंने उन सभी को उपदेश दिया। तब राजा ने उनसे कहा, "हे प्रभु, इन्हीं लोगों के कारण मैंने आपके और रानी के विरुद्ध पाप किया, और उनके कथन को स्वीकार करके मैंने यह बुरा कार्य किया। मैं इन पाँचों को मृत्युदंड दूंगा।" "महाराज, आपको ऐसा नहीं करना चाहिए।" "तो मैं उनके पैर और हाथ काटने का आदेश दूंगा।" "यह भी आपको नहीं करना चाहिए।" राजा ने "यह ठीक है" कहकर सहमति जताई और उनकी सारी संपत्ति छीन ली और उन्हें अनेक प्रकार से अपमानित किया, उनके बालों को पाँच लटों में बाँध दिया (*11), उन्हें जंजीरों में जकड़ दिया और उन पर गोबर मल दिया, और उन्हें अपने राज्य से निकाल दिया। बोधिसत्व ने वहाँ कुछ दिन रहकर राजा को सलाह दी, उन्हें सतर्क रहने को कहा, और फिर हिमालय की ओर प्रस्थान किया तथा रहस्यमय ध्यान से अलौकिक शक्ति प्राप्त की। जीवन भर वे सिद्ध अवस्थाओं का अभ्यास करते रहे और ब्रह्मलोक के निवासी बन गए।

गुरु (बुद्ध) ने यहाँ अपना पाठ समाप्त करते हुए कहा, "न केवल अब, भाइयों (भिक्षुओं), बल्कि पहले भी तथागत (बुद्ध) बुद्धिमान थे और उन्होंने सभी विवाद करने वालों को कुचल दिया था," इस प्रकार उन्होंने जन्म की पहचान की: "उस समय पाँच गलत विश्वासी (*12) पुराण कश्यप, मक्खली गोसला, पकुधा कच्चना, अजित केशकंबली, निगंथ नटपुत्त (जैनों के गुरु महावीर) थे, भूरे रंग का कुत्ता आनंद था, और विचरण करने वाला भिक्षु महाबोधि मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)दिघ निकाय, II देखें। समन्ना-फला

(2) जातक, संख्या 546.

(3)अज्झुपेक्खति. जातक, 147, कुलवग्गा, चतुर्थ। 4. 8.

(4) जातक, 417, "माथे पर मृत्यु लिखी हुई।"

(5)पतिगाकसेवा, पतिककसेवा।

(6) एक और पाठ है अकाथेटवा, "मुझसे एक शब्द भी कहे बिना।"

(7)पट्टकखंड

(8)उच्चेदावदा. विनय ग्रंथ, II देखें। 111, कथा वत्थु, पकाराना अट्ठकथा

(9) निप्पतिभाना, सीएफ। अप्पतिभना, कुलवग्गा, चतुर्थ। 4. 8.

(10) चित्रसयित्व के लिए वित्तसयित्व का पाठ करना।

(11) अपमान के प्रतीक के रूप में स्त्री का सिर इस प्रकार मुंडवाया जाता है कि पाँच लटें रह जाती हैं। जातक 135 दर्शाता है कि चुला कभी-कभी दासता का प्रतीक होता था।

(12) विधर्मी, पुराण, ककुधा कक्कायन और निगंथा नटपुत्त (जैनियों के गुरु महावीर)।

पुस्तक XIX. सत्थिनीपाता:

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सोनक-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

जातक क्रमांक 529
सोनाका-जातक। (*1)

"हजारों सिक्के," इत्यादि। यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जो वैराग्य की पूर्णता से संबंधित है। इस अवसर पर, भिक्षुओं के बीच सत्य कक्ष में बैठे बोधिसत्व, वैराग्य की पूर्णता की स्तुति कर रहे थे, तब उन्होंने कहा, "भाइयों, न केवल आज, बल्कि प्राचीन काल में भी तथागत (बुद्ध) ने सांसारिक जीवन का पूर्णतः त्याग कर महान वैराग्य ग्रहण किया था," और ऐसा कहते हुए उन्होंने अतीत की एक कथा सुनाई।

एक समय की बात है, मगध के राजा राजगृह नगर में शासन करते थे। उनकी प्रमुख रानी के पुत्र एक बोधिसत्व का जन्म हुआ और नामकरण के दिन उनका नाम राजकुमार अरिंदमा रखा गया। उनके जन्म के दिन ही राजपुजारी के पुत्र का भी जन्म हुआ और उनका नाम सोनक रखा गया। दोनों बालक साथ-साथ पले-बढ़े और जब वे वयस्क हुए तो अत्यंत सुंदर थे, उनकी सुंदरता में कोई अंतर नहीं था। वे तक्षशिला गए और सभी विद्याओं का ज्ञान प्राप्त करने के बाद कलाओं और स्थानीय रीति-रिवाजों के व्यावहारिक उपयोगों को सीखने के उद्देश्य से तक्षशिला छोड़ गए। धीरे-धीरे भटकते हुए वे बनारस पहुँचे। वहाँ उन्होंने राजगृह में अपना निवास स्थान बनाया और अगले दिन नगर में प्रवेश किया। उसी दिन कुछ लोगों ने ब्राह्मणों को भोजन दान करने के उद्देश्य से चावल का दलिया तैयार किया और बैठने की व्यवस्था की। इन युवकों को आते देख वे उन्हें घर में ले आए और उन्हें अपने द्वारा तैयार की गई सीटों पर बैठाया। बोधिसत्व के लिए निर्धारित आसन पर एक सफेद वस्त्र बिछाया गया था, और सोनाका के लिए निर्धारित आसन पर एक लाल ऊनी गलीचा। इस शगुन को देखकर सोनाका तुरंत समझ गया कि आज उसका प्रिय मित्र अरिंदमा बनारस का राजा बनेगा, और वह उसे सेनापति का पद प्रदान करेगा। भोजन करने के बाद वे दोनों साथ में उद्यान लौट आए। बनारस के राजा की मृत्यु को सात दिन हो चुके थे और राजपरिवार का कोई उत्तराधिकारी नहीं था। इसलिए सलाहकारों और अन्य लोगों ने सिर और शरीर को धोकर, एक साथ इकट्ठा होकर कहा, "तुम्हें उस व्यक्ति के घर जाना है जो राजा बनने के योग्य है," और उन्होंने उत्सव रथ (*2) को रवाना किया। शहर से निकलते ही रथ धीरे-धीरे उद्यान की ओर बढ़ा और उद्यान के द्वार पर रुककर खड़ा हो गया, मानो किसी के भी उस पर सवार होने के लिए तैयार हो। बोधिसत्व अपने बाहरी वस्त्र को सिर पर लपेटे हुए राजसी पत्थर की शिला पर लेटे थे, जबकि बालक सोनाका उनके पास बैठा था। वाद्ययंत्रों की ध्वनि सुनकर सोनाका ने सोचा, "अरिंदमा का उत्सव रथ आ रहा है। आज वह राजा बनेगा और मुझे सेनापति का पद देगा। परन्तु मुझे शासन करने की कोई इच्छा नहीं है: उसके जाने के बाद मैं संसार त्यागकर संन्यासी बन जाऊँगा।" यह सोचकर वह एक तरफ छिप गया। पुरोहित ने उद्यान में प्रवेश करते ही उस महान पुरुष को वहाँ लेटा हुआ देखा और तुरही बजाने का आदेश दिया। महान पुरुष जागा और कुछ देर करवटें बदलने और लेटने के बाद उठकर पत्थर के आसन पर पालथी मारकर बैठ गया। तब पुरोहित ने विनती भरे स्वर में हाथ फैलाकर कहा, "हे महाराज, राज्य आपको प्राप्त होगा।" "क्यों, क्या सिंहासन का कोई उत्तराधिकारी नहीं है?" "हाँ, महाराज।" "तो ठीक है," उसने कहा। अतः उन्होंने उसी क्षण उसे राजा नियुक्त कर दिया। और रथ पर बिठाकर वे उसे विशाल दल-बल के साथ नगर में ले आए। नगर का चक्कर लगाने के बाद वह अपने महल में गया और अपनी महिमा के वैभव में वह युवा सोनाका को पूरी तरह भूल गया।लेकिन जब राजा चले गए, तो सोनाका लौट आए और पत्थर के आसन पर बैठ गए। तभी उनके सामने साल के पेड़ का एक सूखा पत्ता गिर पड़ा। उसे देखकर वे रो पड़े, "जिस प्रकार यह पत्ता गल जाएगा, उसी प्रकार मेरा शरीर भी गल जाएगा।" सभी चीजों की अनित्यता का ज्ञान प्राप्त करके उन्होंने अलौकिक अंतर्दृष्टि से सिद्ध होकर पच्चेकबुद्ध का रूप धारण कर लिया। उसी क्षण उनका गृहस्थ स्वरूप लुप्त हो गया और एक तपस्वी के लक्षण प्रकट हो गए। उन्होंने कहा, "अब मेरा कोई पुनर्जन्म नहीं होगा," और इसी उद्बोधन के साथ वे नंदमूल की गुफा के लिए निकल पड़े। चालीस वर्ष बाद, उस महान सत्ता को सोनाका की याद आई और उन्होंने पूछा, "सोनाका कहाँ हो सकते हैं?" बार-बार याद करने पर भी उन्हें कोई ऐसा व्यक्ति नहीं मिला जो यह बता सके, "मैंने उनके बारे में सुना है या उन्हें देखा है।" और एक भव्य मंच पर राजसी सिंहासन पर पालथी मारकर बैठे हुए, संगीतकारों और नृत्यकलाकारों के एक समूह से घिरे हुए, अपनी महिमा का आनंद लेते हुए, उन्होंने कहा, "जो कोई भी किसी से यह सुनेगा कि सोनाका फलां स्थान पर निवास करते हैं और मुझे बताएगा, उसे मैं सौ सिक्के देने का वादा करता हूँ, परन्तु जो कोई भी उन्हें अपनी आँखों से देखेगा और मुझे बताएगा, उसे मैं हजार सिक्के देने का वादा करता हूँ," और इस प्रेरणादायक कथन को एक गीत के रूप में व्यक्त करते हुए, उन्होंने पहले छंद को दोहराया:

मेरे प्यारे दोस्त और खेल साथी को देखने वाले के लिए एक हजार सिक्के।
मैं सौ लो! देता हूँ अगर सोनाका में से एक भी सुन ले।
फिर एक नर्तकी ने मानो राजा के मुख से ही गीत के बोल सीख लिए हों, और फिर एक के बाद एक, और अंत में पूरे हरम की सभी कन्याएँ, यह सोचकर कि यह राजा का पसंदीदा गीत है, उसे गाने लगीं। धीरे-धीरे नगर और गाँव दोनों के लोग वही गीत गाने लगे और

राजा भी नियमित रूप से उसे गाने लगे। पचास वर्षों के अंत में राजा के कई पुत्र और पुत्रियाँ हुईं, और सबसे बड़े पुत्र का नाम राजकुमार दिघावु रखा गया। इस समय पच्चेकबुद्ध सोनाका ने सोचा, "राजा अरिंदमा मुझसे मिलने के लिए उत्सुक हैं। मैं जाकर उन्हें बुरी इच्छाओं के कष्ट और त्याग के आशीर्वाद के बारे में समझाऊंगा और उन्हें तपस्वी बनने का मार्ग दिखाऊंगा।" और अपनी अलौकिक शक्ति से वे वहां पहुंचे और उद्यान में बैठ गए। उसी क्षण सात वर्ष का एक लड़का, जिसके बालों में पांच चोटियां थीं, उसकी मां द्वारा वहां भेजा गया था, और वह उद्यान में लकड़ियां इकट्ठा करते हुए बार-बार यही गीत गा रहा था। सोनाका ने लड़के को अपने पास बुलाया और उससे पूछा, "मेरे बच्चे, तुम हमेशा यही गीत क्यों गाते हो और कुछ और क्यों नहीं गाते?" क्या तुम्हें कोई और गीत नहीं आता?" "मुझे और भी गीत आते हैं, महाराज, लेकिन यह राजा का सबसे प्रिय गीत है, इसलिए मैं इसे लगातार गाता रहता हूँ।" "क्या किसी ने इस गीत का उत्तर गाया है?" "नहीं, महाराज।" "मैं तुम्हें एक उत्तर सिखाता हूँ और फिर तुम जाकर राजा के सामने उत्तर गा सकते हो।" "जी, महाराज।" तो उन्होंने उसे उत्तर "हजार सिक्के" और बाकी गीत सिखाया, और जब लड़के ने इसे अच्छी तरह से सीख लिया, तो उन्होंने उसे यह कहते हुए विदा किया, "जाओ, मेरे बच्चे, और राजा के सामने यह उत्तर गाओ और वह तुम्हें महान शक्ति प्रदान करेगा। लकड़ियाँ इकट्ठा करने से तुम्हारा क्या लेना-देना है?" "जल्दी से जल्दी यहाँ से चले जाओ।" "ठीक है," लड़के ने कहा, और जवाब को अच्छी तरह समझकर और सोनाका को प्रणाम करके बोला, "हे प्रभु, जब तक मैं राजा को न ले आऊं, आप यहीं रहें।" ये कहकर वह जितनी जल्दी हो सके अपनी माँ के पास गया और उनसे कहा, "प्यारी माँ, मुझे नहला दो और मुझे मेरे सबसे अच्छे कपड़े पहना दो: आज मैं तुम्हें तुम्हारी गरीबी से मुक्ति दिलाऊंगा।" और जब उसने नहा लिया और अच्छे कपड़े पहन लिए, तो वह महल के द्वार पर गया और बोला, "द्वारपाल, जाओ और राजा को बताओ, 'एक लड़का आया है और अभी द्वार पर खड़ा है, आपके साथ गाना गाने के लिए तैयार है।' तो द्वारपाल जल्दी से गया और राजा को बताया। राजा ने उसे अपने पास बुलाया और बोला, "मित्र, क्या तुम मेरे साथ गाना गाओगे?" "जी महाराज।" "तो गाओ।" "महाराज, मैं यहाँ नहीं गाऊंगा, बल्कि पूरे शहर में ढोल बजवाऊंगा और लोगों को इकट्ठा होने के लिए कहूंगा। मैं लोगों के सामने गाऊंगा।" राजा ने ऐसा करने का आदेश दिया, और एक भव्य मंडप के नीचे एक पलंग के बीच में बैठकर, लड़के को भी एक उपयुक्त स्थान देते हुए कहा, "अब अपना गीत गाओ।" लड़के ने कहा, "महाराज, आप पहले गाइए, फिर मैं उसका उत्तर दूंगा।" तब राजा ने पहले गीत गाया।इस श्लोक को दोहराते हुए:

मेरे प्यारे दोस्त और खेल साथी को देखने वाले के लिए हजार सिक्के।
मैं सौ लो! देता हूँ अगर सोनाका में से एक भी सुन ले।
तब गुरु ने यह स्पष्ट करने के लिए कि पाँच गांठों में बंधे बालों वाले लड़के ने राजा द्वारा शुरू किए गए गीत का उत्तर दिया था, अपनी पूर्ण बुद्धि से दो पंक्तियाँ दोहराईं:

फिर वह छोटा लड़का बोला—जिसके बालों में पाँच उलझी हुई लटें थीं—
"जिन्होंने देखा, उन्हें हज़ारों और जिन्होंने सुना, उन्हें सौ और दो।"
मैं तुम्हें सोनाका के बारे में खबर सुनाऊंगा, जो तुम्हारा पुराना खेल साथी था।
आगे आने वाले श्लोकों को उनके स्पष्ट संदर्भ में ही लिया जाना चाहिए।

कृपया बताइए, आप किस देश, क्षेत्र या शहर में घूम रहे हैं?
और सोनाका कहाँ थी, मेरे दोस्त? कृपया मुझे बताएं, क्या आपने उसे देखा था?
इस क्षेत्र में, आपके अपने पार्क में कई बड़े साल के पेड़ हैं।
गहरे हरे पत्तों और सीधे तनों के साथ, यह एक सुखद दृश्य है;
उनकी शाखाएँ घनी रूप से आपस में गुंथी हुई हैं, बादल की तरह, वे स्वर्ग की ओर उठती हैं।
और देखो, उनके चरणों में सोनाका ध्यानमग्न लेटे हुए हैं।
जब मानवीय वासना समाप्त हो जाती है, तब अर्हत (बुद्ध के समान प्रबुद्ध व्यक्ति) की पवित्र शांति से परिपूर्ण।
तब राजा ने पूरी ताकत से सड़क को समतल करते हुए सीधे सोनाका के निवास स्थान की ओर प्रस्थान किया।

वहाँ अपने आनंद स्थल के भीतर एक विशाल उपवन में विचरण करते हुए, पूर्ण भावहीनता से, संतमय आनंद में, उसने अपने मित्र को विश्राम करते हुए पाया।

उसे प्रणाम किए बिना वह एक तरफ बैठ गया और, स्वयं बुरी भावनाओं में डूबे होने के कारण, उसने उसे किसी बेचारे अभागे के रूप में समझा और इस छंद में उसे संबोधित किया:

मैंने देखा कि उसके माता-पिता मर चुके हैं, उसका सिर मुंडा हुआ है और उसने भिक्षु का वस्त्र पहना हुआ है।
एक बेचारा भाई बेहोशी की हालत में इस पेड़ के नीचे लेटा हुआ है।
यह सुनकर सोनाका ने कहा, "हे महाराज, जो अपने प्रत्येक कार्य में निश्चय ही न्याय का मार्ग अपनाता है, वह कोई नीच प्राणी नहीं है।"

बल्कि वे लोग अधिक दयनीय हैं जो सही की उपेक्षा करते हैं और बुराई का अभ्यास करते हैं।
बुराई करने वाले को बुराई का ही फल भुगतना पड़ता है।
इस प्रकार उन्होंने बोधिसत्व को फटकारा, और बोधिसत्व ने यह जताते हुए कि उन्हें फटकार नहीं लगाई जा रही है, उनसे मैत्रीपूर्ण ढंग से बात की, अपना नाम और परिवार बताया और यह श्लोक कहा:

मैं काशी के राजा के रूप में जाना जाता हूँ, मेरा नाम अरिंदमा है।
महोदय, यहां आने के बाद से क्या आपके साथ कुछ ऐसा हुआ है जिसके लिए आपको दोषी ठहराया जा सके?
तब पच्चेकबुद्ध ने कहा, "न केवल यहाँ रहते हुए बल्कि कहीं और भी मुझे कोई असुविधा नहीं हुई है," और उन्होंने भिक्षु के आशीर्वादों का काव्यात्मक वर्णन करना शुरू किया:

मैं उस निर्धन भिक्षु के आशीर्वादों में से एक इसे भी गिनता हूँ।
उसने किसी बर्तन, बुनी हुई टोकरी या अन्न भंडार में कुछ भी जमा नहीं किया है।
लेकिन वह केवल दूसरों द्वारा छोड़ी गई चीजों की लालसा करता है और उसी से संतुष्ट होकर जीवन व्यतीत करता है।
उनकी तमाम नेमतों में से अगली नेमत प्रशंसा के योग्य है।
वह दोषमुक्त होकर अपने भोजन का आनंद लेता है और कोई भी उससे विवाद नहीं करता।
मेरे अनुसार भिक्षु का तीसरा आशीर्वाद यह है कि उसके सभी दिनों
वह प्रसन्नतापूर्वक भोजन करता है और कोई भी उससे विवाद नहीं करता।
उनकी चौथी सबसे बड़ी नेमत यह है कि वे जहाँ कहीं भी जाते हैं,
वह पूरे जगत में स्वतंत्र रूप से विचरण करता है और किसी भी आसक्ति से अनजान है।
पांचवां आशीर्वाद यह है कि यदि वह नगर, चाहे वह कहीं भी हो,
वह आग की लपटों में जलकर मर जाए, उसे कोई कष्ट नहीं होता, क्योंकि उसके पास जलाने के लिए कुछ भी नहीं है।
वह अपने भाग्य में प्राप्त सभी आशीर्वादों में से छठे आशीर्वाद पर विचार कर सकता है।
यदि राज्य को लूटा भी जाए, तो उसे जरा भी हानि नहीं होगी।
गरीबी के कारण उसे जो सातवां आशीर्वाद प्राप्त हुआ, वह यह है कि...
भले ही उसके रास्ते में लुटेरे बाधा डालें और कई खतरनाक दुश्मन हों,
पवित्र व्यक्ति कटोरे और वस्त्र के साथ हमेशा सुरक्षित रहता है।
अंत में यही आशीर्वाद है कि हमारा यात्री जहाँ कहीं भी जाए,
वह एकांतवासी और गरीब व्यक्ति है, जो बिना किसी पछतावे या चिंता के अपनी यात्रा जारी रखता है।
इस प्रकार पच्चेकबुद्ध सोनाका ने भिक्षु के आठ आशीर्वादों का वर्णन किया, और इससे भी आगे वे सौ नहीं, बल्कि हज़ार अनगिनत आशीर्वादों का वर्णन कर सकते थे, लेकिन राजा कामुक इच्छाओं में लिप्त होने के कारण अपना भाषण छोटा करते हुए बोले, "मुझे भिक्षु आशीर्वादों की कोई आवश्यकता नहीं है," और यह स्पष्ट करने के लिए कि वे बुरी वासनाओं के प्रति कितने समर्पित थे, उन्होंने कहा:

आप अपनी अनेक आशीषों की प्रशंसा कर सकते हैं, लेकिन मैं क्या करूँ?
सोनाका, सांसारिक सुखों के पीछे इतनी लालसा से कौन भागता है?
प्रियतम, मेरे लिए सभी मानवीय सुख और साथ ही स्वर्गीय सुख भी हैं।
लेकिन दोनों दुनियाओं को एक साथ कैसे हासिल किया जाए, कृपया मुझे बताएं।
तब पच्चेकबुद्ध ने उसे उत्तर दिया:

जो लोग सांसारिक सुखों में लिप्त होकर, लालचवश अपनी सांसारिक इच्छाओं पर निर्भर हो जाते हैं,
कुछ समय तक दुष्ट कर्म करो, अन्यथा दुखमय अवस्था में पुनर्जन्म होगा।
लेकिन जो लोग इच्छाओं को त्यागकर निर्भय होकर जीवन व्यतीत करते हैं,
और एकाग्रता (*3) प्राप्त करने वाले शुद्ध लोग कभी भी दुख में पुनर्जन्म नहीं लेते।
मैं तुम्हें एक दृष्टांत सुनाता हूँ; अरिंदमा, ध्यान से सुनो।
जो लोग दृष्टांतों के माध्यम से ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं, वे मेरे अर्थ को बेहतर ढंग से समझ सकते हैं।
देखो! गंगा नदी की उफनती लहरों पर कई विशाल शव बहते जा रहे थे।
एक मूर्ख कौवे ने मन ही मन सोचा, क्योंकि उसके सामने से एक रथ गुजर रहा था।
"ओह, मुझे तो एक शानदार गाड़ी और खाने-पीने का बड़ा भंडार मिल गया है।"
मैं यहीं दिन-रात रहूंगा और आनंदमय वातावरण का आनंद लूंगा।"
इसलिए वह हाथी का मांस खाता है और गंगा का पानी पीता है।

और वह बिना हिले-डुले सपने में उपवन और मंदिर को अपने सामने से गुजरते हुए देखता है।
अत: चाहे कुछ भी हो और सड़ते हुए मांस पर ही उसका सारा इरादा था,
गंगा नदी उसे बहाकर समुद्र के खतरों की ओर ले गई।
लेकिन जब भोजन समाप्त हो गया तो बेचारे पक्षी ने उड़ने का प्रयास किया।
न तो पूरब, न पश्चिम, न दक्षिण, न उत्तर की ओर कोई भूमि दिखाई दे रही थी।
समुद्र में बहुत दूर, वह इतना कमजोर था कि तट तक पहुँचने में उसे बहुत समय लगा।
अथाह सागर के अनगिनत खतरों के बीच वह गिर पड़ा और फिर कभी उठ नहीं पाया।
मगरमच्छों और विशालकाय मछलियों के लिए, जहाँ हमारी बेचारी मछली पड़ी थी,
वे चारों ओर से व्याकुल होकर आए और अपने कांपते हुए शिकार को झट से निगल गए।
इसलिए तुम और वे सभी जो इंद्रिय सुखों के लालच में लिप्त हैं
जब तक तुम सभी वासनाओं से दूर नहीं हो जाते, तब तक तुम्हें इस कौवे के समान बुद्धिमान समझा जाता है।
मेरी दृष्टांत कथा सत्य का बखान करती है। हे राजा, इस पर ध्यान दीजिए।
आपके कर्मों के अनुसार ही आपकी प्रसिद्धि बढ़ेगी, चाहे वह अच्छे के लिए हो या बुरे के लिए।
इस प्रकार इस दृष्टांत के माध्यम से उसने राजा को शिक्षा दी और इसे उसके मन में दृढ़ता से बिठाने के लिए उसने इस श्लोक को दोहराया:

दया भाव से एक बार, नहीं दो बार भी नहीं, चेतावनी भरे शब्द का उच्चारण करो,
लेकिन इसे बार-बार न दोहराओ, जैसे कोई गुलाम अपने स्वामी के सामने करता है।
इस प्रकार असीम ज्ञान से ऋषि सोनाका ने यह बात समझी।
राजा को निर्देश दिया, और फिर तुरंत अंतरिक्ष में गायब हो गया।
यह श्लोक 'परफेक्ट विजडम' से प्रेरित है।

और बोधिसत्व उसे तब तक देखते रहे जब तक वह उनकी दृष्टि में रहा, लेकिन जब वह दृष्टि से ओझल हो गया, तो वे बहुत व्याकुल हो गए और सोचने लगे, "यह नीच कुल का ब्राह्मण, मेरे सिर पर अपने चरणों की धूल बिखेरने के बाद, जबकि मैं कुलीन वंश से आया हूँ, आकाश में विलीन हो गया है: मुझे आज ही संसार का त्याग करके संन्यासी बनना होगा।" अतः संन्यासी बनने और अपने राज्य को त्यागने की इच्छा से उन्होंने दो श्लोक दोहराए:

मेरे सारथी कहाँ हैं, जिन्हें खोजने के लिए एक योग्य राजा को भेजा गया था?
मैं अब और शासन नहीं करूंगा; अब से मैं अपना ताज त्याग देता हूं।
कल शायद किसी की मृत्यु हो जाए, कौन जाने? आज मेरा अभिषेक हो जाएगा;
अन्यथा, मूर्ख कौवे की तरह, मैं भी वासना के हानिकारक प्रभाव में आ जाता हूँ।
जब उनके इस प्रकार सिंहासन त्यागने की बात सुनी तो उनके सलाहकारों ने कहा:

आपका एक पुत्र है, जिसका नाम दिघावु है, वह एक सुंदर राजकुमार है।
विधिपूर्वक जल छिड़काव द्वारा उन्हें सिंहासन पर विराजमान करें, क्योंकि वे हमारे राजा होंगे।
फिर, राजा द्वारा बोले गए श्लोक से शुरू करते हुए, उचित क्रम में अन्य श्लोकों को उनके स्पष्ट संबंध के अनुसार समझा जाना चाहिए:

तो जल्दी से दिघावु को यहाँ लाओ, वह एक सुंदर राजकुमार है।
विधिपूर्वक जल छिड़काव द्वारा उसे सिंहासन पर विराजमान करो, क्योंकि वही तुम्हारा राजा होगा।
जब वे दिघावु को, जो उनका भावी राजा था, वहाँ लेकर आए, तो उसके पिता ने अपने प्रिय पुत्र को संबोधित किया - वह उनका इकलौता पुत्र था।

मैंने एक समय में पूरे साठ हजार गांवों को अपना बताया था।
मेरे पुत्र, इन्हें अपने साथ ले जाओ; अब से मैं अपने राज्य का त्याग करता हूँ।
कल शायद किसी की मृत्यु हो जाए, कौन जाने? आज मेरा अभिषेक हो जाएगा;
अन्यथा, मूर्ख कौवे की तरह, मैं भी वासना के हानिकारक प्रभाव में आ जाता हूँ।
देखो! साठ हजार हाथी वैभव से सजे हुए हैं,
सोने की कमरबंद के साथ, सुनहरे रंग के अलंकृत वस्त्रों से सजी काठी,
प्रत्येक व्यक्ति अपने-अपने महावत पर सवार होता है, जिसके हाथ में नुकीला हुक होता है।

इन्हें ले लो, मेरे पुत्र, मैं इन्हें तुम्हें इस देश के शासक के रूप में सौंपता हूँ।
कल शायद किसी की मृत्यु हो जाए, कौन जाने? आज मेरा अभिषेक हो जाएगा;
अन्यथा, मूर्ख कौवे की तरह, मैं भी वासना के हानिकारक प्रभाव में आ जाता हूँ।
देखो! यहाँ साठ हज़ार घोड़े हैं, चमकीले वस्त्रों से सजे हुए।
सिंध के घोड़े, सभी श्रेष्ठ नस्ल के और फुर्तीले होते हैं--
प्रत्येक घोड़े पर तलवार और धनुष लिए एक साहसी साथी सवार था।
इन्हें ले लो, मेरे पुत्र, मैं इन्हें तुम्हें इस देश के शासक के रूप में सौंपता हूँ।
कल शायद किसी की मृत्यु हो जाए, कौन जाने? आज मेरा अभिषेक हो जाएगा;
अन्यथा, मूर्ख कौवे की तरह, मैं भी वासना के हानिकारक प्रभाव में आ जाता हूँ।
देखो! साठ हजार गाड़ियाँ एक साथ जुती हुई हैं, जिन पर झंडे लहरा रहे हैं।
बाघ की खाल और पैंथर की खाल से बना, एक अद्भुत दृश्य।
प्रत्येक रथ को बख्तरबंद रथ चालकों द्वारा चलाया जा रहा था, जो सभी हाथों में धनुष लिए हुए थे।
इन्हें ले लो, मेरे पुत्र, मैं इन्हें तुम्हें देता हूँ, क्योंकि तुम इस देश के शासक हो।
कल शायद किसी की मृत्यु हो जाए, कौन जाने? आज मेरा अभिषेक हो जाएगा;
अन्यथा, मूर्ख कौवे की तरह, मैं भी वासना के हानिकारक प्रभाव में आ जाता हूँ।
देखो! साठ हजार लाल रंग की गायें, हर तरफ बैलों के साथ।
इन्हें ले लो, मेरे पुत्र, मैं इन्हें तुम्हें इस देश के शासक के रूप में सौंपता हूँ।
कल शायद किसी की मृत्यु हो जाए, कौन जाने? आज मेरा अभिषेक हो जाएगा;
अन्यथा, मूर्ख कौवे की तरह, मैं भी वासना के हानिकारक प्रभाव में आ जाता हूँ।
यहां बारह हजार सुंदर युवतियां अच्छे वस्त्रों में सजी खड़ी हैं।
कई रत्नजड़ित कंगन और दोनों हाथों में अंगूठियों से सजी हुई,
इन्हें ले लो, मेरे पुत्र, मैं इन्हें तुम्हें देता हूँ, क्योंकि तुम इस देश के शासक हो।
कल शायद किसी की मृत्यु हो जाए, कौन जाने? आज मेरा अभिषेक हो जाएगा;
अन्यथा, मूर्ख कौवे की तरह, मैं भी वासना के हानिकारक प्रभाव में आ जाता हूँ।
(*5)वे मुझसे कहते हैं, "तुम्हारी प्यारी माँ, हाय! बेचारे लड़के, मर गई है।"
मैं तुम्हारे बिना भी नहीं जी सकता। जीवन से सारी खुशियाँ छिन गई हैं।
एक बूढ़े हाथी के ठीक पीछे अक्सर एक जवान हाथी दिखाई देता है।
पहाड़ी दर्रों या जंगलों से होते हुए, ऊबड़-खाबड़ या समतल जमीन पर चलना,
इसलिए मैं कटोरा हाथ में लेकर आपके पीछे चलूंगा, आप मुझे जहाँ भी ले जाएं।
और न ही आपको मुझे बोझ या भोजन कराने में मुश्किल लगेगी।
(*6) अक्सर ऐसा होता है कि व्यापारियों का कोई जहाज किसी भी कीमत पर लाभ कमाने की कोशिश करता है
एक भंवर (*7) में समा जाता है और जहाज और चालक दल दोनों खो जाते हैं,
अन्यथा मुझे इस मनहूस लड़के में एक बाधा नज़र आती है।
उसे मेरे महल में स्थापित करो, जहाँ वह सभी सुखों का आनंद ले सके।
सुनहरे रंग से सजे हाथों से उसे सहलाने वाली दासियों के साथ, जैसे सक्का (इंद्र) अपनी दिव्य अप्सराओं के बीच आनंदित होते हैं, वह सदा आनंदित रहेगा।

फिर वे राजकुमार दिघावु को आनंद के घर, महल में ले आए, और उन्हें देखकर उन सुंदर युवतियों ने राजकुमार से बात की।

"तुम कौन हो? देवदूत, संगीतकार-देवता, या प्रसिद्धि प्राप्त सक्का (इंद्र)?"
क्या आप हर कस्बे में दान-पुण्य करते हैं? हमें आपका नाम जानकर खुशी होगी।
न तो मैं कोई देवदूत हूँ, न ही संगीतकार-देवता, और न ही सक्का (इंद्र) जो प्रसिद्धि प्राप्त कर सके।
लेकिन काशी के राजा के उत्तराधिकारी, राजकुमार दिघावु मेरा नाम है।
इसलिए मुझे प्यार करो और खुश रहो: मैं हर एक को अपनी पत्नी के रूप में स्वीकार करती हूँ।
तब उन कन्याओं ने अपने स्वामी दिघावु से कहा, "राजा ने कहाँ शरण ली है और वह कहाँ भाग गया है?"

कीचड़ भरे रास्तों से बचकर राजा सूखी जमीन पर सुरक्षित है।
अंततः कांटों और घने जंगल से मुक्त होकर उसे वह ऊंचा रास्ता मिल गया है।
लेकिन मैं एक ऐसे मार्ग पर चल पड़ा हूँ जो मुझे अत्यंत कष्टमय अवस्था की ओर ले जाता है।

कांटों और घने जंगल से होते हुए मैं एक भयानक नियति की ओर बढ़ता रहता हूँ।
हमारा स्वागत वैसे ही करें जैसे शेर अपने शावकों का पहाड़ों की गुफा में स्वागत करता है।
अब से, हमारे संप्रभु स्वामी, सच्चे और न्यायसंगत उत्तराधिकारी, भालू ही शासन करेंगे।
ऐसा कहते ही सबने अपने वाद्ययंत्र बजाए और तरह-तरह के गीत-नृत्य शुरू हो गए। उनकी महिमा इतनी महान थी कि राजकुमार उसमें मदहोश होकर अपने पिता को भूल गया, परन्तु न्यायपूर्वक शासन करते हुए उसने अपने कर्मों का फल पाया। परन्तु बोधिसत्व ने ध्यान से प्राप्त अलौकिक शक्ति (सम्मोहन अवस्था) विकसित कर ली और ब्रह्मलोक में देहान्त हो गए।

गुरु ने यहाँ अपना उपदेश समाप्त करते हुए कहा, "केवल अभी ही नहीं, भिक्षुओं, बल्कि प्राचीन काल में तथागत (बुद्ध) ने भी वास्तव में महान त्याग किया था," और उन्होंने जन्म का उल्लेख करते हुए कहा, "उस समय पच्चेकबुद्ध ने निर्वाण प्राप्त किया, पुत्र युवा राहुल थे, और राजा अरिंदमा मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)दारिमुख की कहानी देखें, क्रमांक 378,

(2) फुस्सरथ, जातक 238, 39, और महाजनक, संख्या 539।

(3) एकोदिभाव, मन की एकाग्रता,

(4) किसी ब्राह्मण को हिना जैको कहा जाए

(5) यह और इसके बाद के दो छंद युवा राजकुमार द्वारा बोले गए हैं।

(6) यह और इसके बाद के दो श्लोक राजा अरिंदमा द्वारा बोले गए हैं।

(7) टीका में वोहारा को "राक्षसी मछली" या "भंवर" के रूप में समझाया गया है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सांकिच्च-जातक**
***स्रोत** : एच.टी. फ्रांसिस द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-530-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 530
समकिच्च-जातक

"ब्रह्मदत्त को देखते ही," इत्यादि। यह कथा गुरु ने जीवक के आम के बाग में रहते हुए सुनाई, जिसमें उन्होंने अजातशत्रु द्वारा अपने पिता की हत्या का वर्णन किया था। देवदत्त के उकसावे पर ही अजातशत्रु ने अपने पिता की हत्या करवाई थी। परन्तु संघ में विभाजन के बाद जब षड्यंत्रकारी समुदाय में बीमारी फैल गई, तो देवदत्त ने तथागत (बुद्ध) से क्षमा मांगने का निश्चय किया। श्रावस्ती नगरी जाते समय जब वह हाथगाड़ी में यात्रा कर रहा था, तो जेतवन मठ के द्वार पर ही वह पृथ्वी में समा गया। यह सुनकर अजातशत्रु ने सोचा, "देवदत्त परम बुद्ध का शत्रु था, इसलिए वह पृथ्वी में विलीन हो गया और अविची नरक में जाएगा। उसी के कारण मैंने अपने परम पूज्य पिता, धर्म के राजा, की हत्या की थी। मैं भी निश्चय ही पृथ्वी में समा जाऊंगा।" और वह इतना भयभीत था कि उसे अपने राजसी वैभव में भी कोई आनंद नहीं मिल रहा था, और यह सोचकर कि वह कुछ देर आराम करेगा, जैसे ही वह सो गया, उसे ऐसा लगा मानो उसे नौ मील (x 4.23 किमी) मोटी लोहे की दुनिया में गिरा दिया गया हो, और मानो लोहे की कीलों से पीटा जा रहा हो और कुत्ते लगातार उस पर झपट रहे हों, और वह एक भयानक चीख के साथ उठ खड़ा हुआ। तो एक दिन पूर्णिमा (*1) को चतुर्मास्य उत्सव के दौरान, जब वह दरबारी सेवकों के एक बड़े समूह से घिरा हुआ था, उसने अपनी महिमा के बारे में सोचा, उसने सोचा कि उसके पिता की महिमा इससे कहीं अधिक थी, और देवदत्त के कारण ही उसने इतने उत्तम धर्मी राजा को मारा था, और जब वह इस बारे में सोच रहा था, उसके अंगों में बुखार आ गया और उसका पूरा शरीर पसीने से भीग गया। और यह सोचते हुए कि कौन उसके इस भय को दूर कर सकता है, उसने

निष्कर्ष निकाला कि दशाबल (बुद्ध) के सिवा कोई नहीं है, और यह सोचते हुए, "मैंने तथागत (बुद्ध) के विरुद्ध बहुत बड़ा पाप किया है: वास्तव में कौन मुझे उनकी उपस्थिति में ले जाएगा?" और यह निष्कर्ष निकालते हुए कि जीवक के सिवा कोई नहीं है, उसने उसे अपने साथ ले जाने का कोई उपाय सोचा, और आनंद से चिल्लाते हुए, "हे प्रभु, कितनी सुंदर निर्मल रात है," उसने कहा, "क्या होगा यदि आज हम किसी भिक्षु या ब्राह्मण को प्रणाम करें?" और जब पुराण (*2) और अन्य गुरुओं के गुणों का उनके संबंधित शिष्यों द्वारा गुणगान किया गया, तो उनकी बातों पर ध्यान दिए बिना उसने जीवक से प्रश्न पूछे, और जब जीवक ने तथागत (बुद्ध) के गुणों का वर्णन करते हुए कहा, "महाराज भगवान बुद्ध को प्रणाम करें," तो उसने हाथी रथ तैयार करने का आदेश दिया और जीवक के आम के बाग में चला गया। तथागत (बुद्ध) के समक्ष प्रणाम करते हुए और उनके स्नेहपूर्ण अभिवादन को स्वीकार करते हुए, उन्होंने इस जीवन में तपस्या के फल के बारे में पूछा, तथागत (बुद्ध) से इस विषय पर मधुर प्रवचन सुनने के बाद, प्रवचन के अंत में उन्होंने अपने शिष्यत्व की घोषणा की, और तथागत (बुद्ध) से मेल-मिलाप होने के बाद वे अपने मार्ग पर चले गए। तब से वे दान-पुण्य करते हुए और नैतिक नियमों का पालन करते हुए तथागत (बुद्ध) के साथ जुड़े रहे।और उनके धार्मिक मार्ग पर दिए गए मधुर प्रवचन को सुनकर और एक गुणी मित्र की संगति में रहकर, उनके भय कम हो गए और उनका डर गायब हो गया, और उन्हें मन की शांति प्राप्त हुई और उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक चारों प्रकार के आचरणों का पालन किया। फिर एक दिन उन्होंने सत्य के हॉल में चर्चा शुरू की और कहा, "महोदय, अजातशत्रु ने अपने पिता की हत्या करने के बाद भय का अनुभव किया और अपने राजसी वैभव में आनंद न पाकर प्रत्येक आसन में पीड़ा का अनुभव किया। तब वे तथागत (बुद्ध) के पास गए और एक गुणी मित्र की संगति से उनका भय दूर हो गया और उन्होंने प्रभुत्व के सुख का अनुभव किया।" गुरु आए और पूछा, "भाइयों, आप लोग इस सभा में किस विषय पर चर्चा कर रहे हैं?" और जब उन्होंने उन्हें विषय बताया, तो उन्होंने कहा, "न केवल अभी, बल्कि पुराने समय में भी, इस व्यक्ति ने अपने पिता की हत्या करने के बाद, मेरे माध्यम से मन की शांति प्राप्त की थी," और उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले बनारस में ब्रह्मदत्त के एक पुत्र, राजकुमार ब्रह्मदत्त का जन्म हुआ। उसी समय कुलपुजारी के घर में बोधिसत्व का गर्भ धारण हुआ। जन्म के समय उनका नाम नन्हा सामकिच्चा रखा गया। दोनों बालक महल में साथ पले-बढ़े और घनिष्ठ मित्र बन गए। तक्षशिला में सर्वप्रसिद्धि प्राप्त करने के बाद जब वे वयस्क हुए तो घर लौट आए। तब राजा ने अपने पुत्र को उपसराय नियुक्त किया और बोधिसत्व अब भी उसके साथ ही रहते थे। एक दिन उपसराय ने जब अपने पिता को आनंद उद्यान में विश्राम करने के लिए भेजा, तो उनकी महान महिमा को देखकर उसके मन में उसे पाने की लालसा उत्पन्न हुई। उसने सोचा, "मेरे पिता तो भाई के समान हैं; यदि मैं उनकी मृत्यु की प्रतीक्षा करता रहूँ, तो सिंहासन पर बैठने से पहले ही मैं बूढ़ा हो जाऊँगा। तब राज्य प्राप्त करने का क्या लाभ? मैं अपने पिता को मार डालूँगा और स्वयं राजा बन जाऊँगा।" उसने बोधिसत्व को अपने विचार बताए। बोधिसत्व ने इस विचार को अस्वीकार करते हुए कहा, "मित्र, पिता की हत्या एक गंभीर मामला है। यह नरक का मार्ग है। तुम्हें यह कार्य नहीं करना चाहिए। कृपया उसे मत मारो।" लेकिन उन्होंने बार-बार इस बात का जिक्र किया और उनके मित्र ने तीसरी बार उनका विरोध किया। तब उन्होंने अपने सेवकों से परामर्श किया और वे इस विचार से सहमत हो गए और राजा की हत्या की योजना बनाई। लेकिन बोधिसत्व ने यह सुनकर सोचा, "मैं ऐसे लोगों के साथ विवाह नहीं करूंगा," और अपने माता-पिता से विदा लिए बिना एक घर के द्वार (*3) से भाग निकले और हिमालयी क्षेत्र में छिप गए। वहाँ उन्होंने तपस्वी जीवन को अपनाया और समाधि-स्थल ध्यान से उत्पन्न अलौकिक शक्तियों को प्राप्त किया, जड़ों और जंगली बेरों पर जीवन व्यतीत किया। लेकिन राजकुमार ने, अपने मित्र के चले जाने के बाद, अपने पिता की हत्या कर दी और महान यश प्राप्त किया। यह सुनकर कि युवा समकिच्च ने तपस्वी जीवन अपना लिया है, अच्छे परिवारों के कई युवकों ने संसार त्याग दिया और उनसे तपस्वी जीवन की दीक्षा ली। और वह वहाँ तपस्वियों के एक विशाल समूह से घिरे हुए रहते थे, जिनमें से सभी सिद्धियाँ प्राप्त कर चुके थे। राजा ने अपने पिता की हत्या करने के बाद थोड़े समय के लिए राज-काज का आनंद लिया, फिर भयभीत होकर उनका मन विचलित हो गया और वे नरक में दंड पाकर (*4) मानो नरक में पहुँच गए हों। तब बोधिसत्व को याद करते हुए उन्होंने सोचा, "मेरे मित्र ने मुझे रोकने का प्रयास किया था, यह कहते हुए कि पिता की हत्या एक गंभीर अपराध है, लेकिन मुझे समझाने में असफल होकर वे अपराधबोध से बचने के लिए भाग गए। यदि वे यहाँ होते, तो वे मुझे अपने पिता की हत्या नहीं करने देते और मुझे इस भय से मुक्त कर देते। वे कहाँ रह रहे होंगे? यदि मुझे पता होता कि वे कहाँ रह रहे हैं, तो मैं उन्हें बुलवा लेता। कौन मुझे उनका पता बता सकता है?" तब से वे हरम और दरबार दोनों में बोधिसत्व की स्तुति करते रहे। बहुत समय बाद, जब वे हिमालय में पचास वर्ष बिता चुके थे, तब बोधिसत्व ने सोचा, "राजा मुझे याद करते हैं। मुझे उनके पास जाना चाहिए और उन्हें धर्म का मार्ग सिखाना चाहिए और उनके भय को दूर करना चाहिए।""पचास सौ तपस्वियों के साथ वे वायु में विचरण करते हुए दयापस्सा नामक उद्यान में उतरे और अपने तपस्वियों के समूह से घिरे हुए एक पत्थर की शिला पर बैठ गए। उद्यान के रखवाले ने उन्हें देखकर पूछा, "हे पूज्यवर, तपस्वियों के इस समूह के नेता कौन हैं?" यह जानकर कि वे ऋषि समकिच्च हैं, और उन्हें पहचानते हुए उन्होंने कहा, "हे प्रभु, जब तक मैं राजा को न ले आऊं, तब तक यहीं ठहरिए। वे आपसे मिलने के लिए उत्सुक हैं।" और प्रणाम करते हुए वे शीघ्र ही महल गए और राजा को अपने मित्र के आगमन की सूचना दी। राजा उनसे मिलने आए और सभी शिष्टाचार का पालन करते हुए उनसे एक प्रश्न पूछा।"

मास्टर ने मामले को स्पष्ट करते हुए कहा:

ब्रह्मदत्त को इस प्रकार राजसी ठाठ-बाठ में सिंहासन पर विराजमान देखकर उन्होंने कहा, "हे महाराज, वह मित्र जिस पर आप दया करते हैं,

देखो! समकिक्का यहाँ हैं—वे संतों में सर्वोपरि हैं।
जल्दी से निकल पड़ो और इस पवित्र ऋषि से मिलने में देरी मत करो।
इसलिए, अपने आदेश पर तैयार किए गए रथ पर शीघ्रता से सवार होकर, दरबारी मित्रों से घिरे राजा अपने लक्ष्य की ओर चल पड़े।

राजसी वैभव के पांच प्रतीक चिन्हों को काशी स्वामी ने सीधे हटा दिया, जिनमें छाता, पगड़ी, याक की पूंछ का पंखा, जूते और उनकी तलवार शामिल थे।

फिर राजा अपने रथ से उतरकर, अपने चमकीले वस्त्रों को उतारकर, दयापस्सा उद्यान की ओर चल पड़े, जहाँ समकिच्चा विराजमान थे।

राजा पास आया और दरबारी भाषा में उनका अभिवादन करते हुए, पुराने दिनों में हुई उनकी बातचीत को याद किया।

और जब वह उसके बगल में बैठा था, तभी उचित अवसर आने पर, उसने तुरंत पाप कर्मों के बारे में एक प्रश्न पूछने का निर्णय लिया।

"संतों के समूह के स्वामी, महान ऋषि, समकिच्चा, जिन्हें मैं यहाँ देखता हूँ"
दयापासा पार्क में बैठकर, मैं खुशी-खुशी आपसे सवाल पूछूंगा।
मृत्यु के बाद पापियों का क्या होता है? वे किस अवस्था में जन्म लेते हैं?
मैंने भी धार्मिक मार्ग से भटककर गलती की है। कृपया शीघ्र उत्तर दें।
मास्टर ने मामले को स्पष्ट करते हुए कहा:

समकिक्का ने दयापस्सा के मैदानों में बैठे काशी राज्य के शासक राजा को संबोधित करते हुए कहा, "हे महाराज, जान लीजिए और समझ लीजिए:

यदि आप किसी ऐसे व्यक्ति को सही राह दिखाएँ जो पूरी तरह से भटक गया हो,
और उसे आपकी सलाह माननी चाहिए, उसके रास्ते में कोई बाधा नहीं आएगी।
लेकिन जो बुरे रास्तों पर चलता है, यदि तुम उसे सही ढंग से निर्देशित करो,
और उसे आपकी सलाह माननी चाहिए, जिससे वह कष्टों से भरी विकट स्थिति से बच सके।
इस प्रकार उन्होंने राजा को सलाह दी और उन्हें धर्म की शिक्षा भी दी, यह कहते हुए--

दायाँ रास्ता, उच्च मार्ग के समान है।
गलत होना तो बस एक गौण मार्ग है।
स्वर्ग का अधिकार तो अवश्य ही अपना रास्ता बना लेता है।
गलत राह पर चलना मनुष्य को नरक की ओर ले जाता है।
हे प्रभु, जो मनुष्य व्यवस्था का उल्लंघन करते हैं और अधर्मी जीवन जीते हैं,
मृत्यु के बाद नरक में उनका क्या हश्र होता है, यह मुझसे सुनो।
संजीव, कलासुत्त और रोरुवा, बड़े और छोटे,
संघता, महान अविची, ये ऐसे नाम हैं जो शायद भयभीत कर सकते हैं।
तपना और पटापना सहित कुल आठ प्रमुख नरक हैं।
यहां से भागना असंभव है, और वे उस्सादास के बारे में बताते हैं।
(*5) संख्या में दुगुना आठ गुना अधिक, एक प्रकार का छोटा नरक--
यहां भयानक ज्वालाएं पापी मनुष्यों को यातना देती हैं, अनेक प्रकार के क्रूर कर्म होते हैं।
भय, विस्मय, पीड़ा, कष्ट और आतंक का माहौल छाया हुआ है।
चार दरवाजों वाला चार वर्गाकार भाग उचित अनुपात में दूरी पर स्थित है।
लोहे के गुंबद से ढका हुआ, लोहे की दीवार से घिरा हुआ,
लोहे से बना इसका आधार ऐसा है कि तेज आग भी इसे पिघला नहीं सकती।
हालांकि, इसके चारों ओर सौ लीग (x 4.23 किमी) के दायरे में भी इसकी प्रचंड शक्ति का अनुभव होता है।
जिन लोगों ने संतों का अपमान किया है या पवित्र पुरुषों को चोट पहुंचाई है, उन सभी के साथ ऐसा हुआ है।

सीधे नरक की खाई में गिर जाओ, फिर कभी उठ न पाओ।
उनकी क्षत-विक्षत काया दयनीय स्थिति में थी, टुकड़ों-टुकड़ों में बिखरी हुई उनकी काया, जैसे टोस्ट पर मछली।
अपने कुकर्मों के कारण अनगिनत वर्षों तक नरक में जलने के लिए अभिशप्त हैं।
उनके अंग जलती हुई गर्मी से झुलस गए थे, वे भय को शिकार बनाकर यातना देने लगे थे।
नरक से भागने की उनकी तीव्र इच्छा के बावजूद, उन्हें कभी कोई रास्ता नहीं मिलता।
पूरब या पश्चिम की ओर आने-जाने का रास्ता ढूंढते हुए वे उड़ान भरते हैं।
या फिर हताशा में उत्तर या दक्षिण की ओर हड़बड़ी मचाते हुए, एक निंदनीय खोज को अंजाम देना।
क्योंकि देवता (देवदूत) वहां मौजूद हैं जो उनके रास्ते में रुकावट डालेंगे, चाहे वे कोई भी दरवाजा खोलने की कोशिश करें।
बेचारे, हजारों वर्षों तक वे नरक के क्षेत्र में निवास करते हैं।
वे बाहें फैलाकर अपने असहनीय दर्द पर शोक व्यक्त करते हैं।
जैसे घातक विषैले सांप को भड़काना ही घातक होता है,
तपस्वी व्रतों से बंधे हुए संतों पर आक्रमण करने से बचें।
अज्जुना (*6), केककास के स्वामी, महान धनुर्धर, जिन्होंने नाराज किया
गौतम, अपने भारी-भरकम शरीर और हजार भुजाओं के बावजूद, नष्ट हो गया।
तो दण्डकी (*6) ने किसवाच्चा को, पापरहित को अपवित्र किया,
जैसे ताड़ के पेड़ को जड़ से काट दिया जाए, वह पूरी तरह से नष्ट हो जाता है।
मेज्जा (*7) प्रसिद्ध मतंगा के कारण अपने गौरवशाली स्थान से गिर गया,
वह भूमि वीरान हो गई और राजा और लोग मर गए।
विष्णु वंश के पुरुषों ने काले दीपायाना (*8) पर आक्रमण किया।
अंधकों (*9) ने यमलोक की खोज की, और दोनों एक दूसरे की गदा से मारे गए।
एक ऋषि द्वारा शापित, सेक्का, जो कभी हवा में चल सकती थी, ऐसा कहते हैं।
वह अपने नियत दिन पर खो गया और धरती में समा गया।
अपनी मनमानी करने वाला मूर्ख कभी भी बुद्धिमानों की स्वीकृति प्राप्त नहीं कर सकता।
लेकिन कपट रहित आत्माएं, सत्य से परिपूर्ण होने के कारण, झूठ बोलने में संकोच करती हैं।
जो कोई भी किसी बुद्धिमान और पवित्र व्यक्ति को पकड़ने के लिए घात लगाकर बैठा हो,
नरक में धकेले जाने पर उसे जल्द ही अपने दुष्ट इरादे पर पछतावा होगा।
लेकिन कौन विश्वासघाती क्रूरता से वृद्ध संतों पर हमला करेगा?
यह मरते हुए ताड़ के पेड़ के ठूंठ की तरह, निःसंतान और उत्तराधिकारीहीन होकर विफल हो जाएगा।
जिस किसी को भी कोई महान ऋषि, तपस्वी जीवन का पुरोहित, मार डाले,
कलासुत्त नरक में अनेक दिनों तक यातनाएं सहनी पड़ेंगी।
और यदि कोई दुष्ट मागा राजा अपने राज्य पर कब्जा कर ले,
तपना में मरने के बाद उसे भी वैसी ही पीड़ा सहनी पड़ेगी।
एक लाख वर्षों तक, जिस प्रकार देवता (देवदूत) वर्षों की गणना करते हैं, उसे निवास करने के लिए अभिशप्त होना पड़ेगा।
जलती हुई ज्वाला के वस्त्र में लिपटा हुआ, नरक की पीड़ाओं के बीच।
उसके पीड़ाग्रस्त शरीर से चारों ओर से आग की तेज लपटें निकल रही थीं।
उसके अंग, बाल, नाखून और सब कुछ, आग को और भड़काने का काम करते हैं।
और जैसे-जैसे उसका शरीर तेजी से जलने लगता है, वह दर्द से पूरी तरह तड़पने लगता है,
जैसे किसी कोड़े से घायल हाथी, बेचारा, वह बहुत दहाड़ता है।
हे नीच प्राणी, जो कोई लोभ या घृणा के कारण अपने पिता की हत्या करेगा,
कलासुत्त नरक में लंबे समय तक अग्नि में कष्ट भोगना पड़ेगा।
लोहे के कड़ाहे में तब तक उबाला गया जब तक उसकी त्वचा न छिल जाए।
माता-पिता के हत्यारे को लोहे के भालों से छेद दिया गया।
फिर अंधा करके और गंदगी में खाने के लिए अभिशप्त कर दिया गया
उसे अपने किए का प्रायश्चित करने के लिए खारे पानी में डुबो दिया गया है।
फिर उसके जबड़ों के बीच में भूत-प्रेत आ जाते हैं, अन्यथा वे बंद हो जाने चाहिए।
बीच में गर्म लोहे की गेंद या हल का फाल,
इन रस्सियों से उसके मुंह को इतनी मजबूती से सहारा दिया गया था,
उसमें गंदगी की धारा गिर सकती है।

काले और भूरे दोनों प्रकार के गिद्ध, और कौवे भी।
और लोहे की चोंच वाले पक्षी, एक विविध दल,
अपनी जीभ को छोटे-छोटे टुकड़ों में फाड़ते हुए,
कांपते हुए उस टुकड़े को खून समेत निगल जाओ।
बौने इधर-उधर घूम रहे थे
उस दुष्ट पर अनेक प्रहार करो।
उसकी झुलसी हुई छाती या टूटे हुए अंग पर
वे क्रूरतापूर्वक खुशी से उसे घूंसे मारते हैं।
उन्हें आनंद तो मिलेगा, लेकिन कष्ट भी सहने पड़ेंगे।
ऐसे नरक में रहने वाले सभी लोग
माता-पिता की हत्या जैसे सांसारिक अपराध के लिए।
जो पुत्र अपनी माता की हत्या करता है, उसे सीधे यमलोक भेजा जाता है।
अपने इस कृत्य के प्रतिशोध में उसे उचित दंड मिले।
वहां शक्तिशाली राक्षस दोषी मां के हत्यारे को जकड़ लेते हैं।
और लोहे के फालों से हल चलाते हुए उसकी पीठ पर गहरी और चौड़ी क्यारियाँ बन जाती हैं।
उसके घावों से बहता खून पिघले हुए तांबे की तरह था, वे उसे ले गए।
और इसे उस पापी को दे दो, ताकि उसकी जलती हुई प्यास मिट सके।
वह खून के थक्के से भरे लाल रंग के तालाब में डूबा खड़ा है।
सड़ते हुए मांस की दुर्गंध, घिनौनी या बदबूदार मिट्टी में सांस लेना।
लोहे के मुंह वाले विशालकाय कीड़े, जो अपने शिकार की त्वचा को छेदते हैं,
उसके मांस को बड़े लालच से खाओ और उसका खून चूस लो।
नरक में सौ फैदम (6 फीट) की गहराई में पीड़ित डूबता जाता है।
जबकि सौ मील (4.23 किमी) के दायरे में मृत शरीर से बदबू आ रही थी।
हे राजा, दुर्गंध के कारण ही उसकी यह दयनीय स्थिति है।
हालांकि कभी उनकी दृष्टि बहुत तेज थी, लेकिन अब वे अपनी दृष्टि खो बैठे हैं।
खुराधारा के नरक से बाहर निकला, उस भयानक कारागार से भागना मुश्किल था,
गर्भपात के पैरोकार आपकी भयानक धारा से नहीं बचेंगे, वेतरानी (*10)।
कहा जाता है कि रेशम-कपास के पेड़ों पर लोहे से बने एक फुट लंबे कांटे होते हैं।
वेतरानी नदी के दोनों किनारों पर, तुम्हारी उदास पलंग की छाया छाई रहती है।
सभी ज्वालाओं से घिरे हुए, आग के एक विशाल पिंड की तरह, वे आकाश के विरुद्ध खड़े हैं।
और सभी ऊंचे टावर शानदार रोशनी से जगमगा रहे थे, जो पूरी एक लीग (4.23 किमी) की ऊंचाई पर स्थित थे।
यहां नुकीले कांटों पर जड़े हुए, नरक में धधकते हुए दिखाई देते हैं।
बेवफा पति, दोषी पत्नियां, पूरा व्यभिचारी गिरोह।
कोड़ों की मार से बेहाल होकर वे सिर के बल गिरते हैं, उड़ान भरते हुए चक्कर लगाते हैं।
और वहां वे क्षत-विक्षत अंगों के साथ पूरी रात जागते रहते हैं।
भोर होते ही वे लोहे के कड़ाहे (*11) में छिप जाते हैं, जो प्रसिद्धि के लिए जाना जाता है।
यह पहाड़ जितना विशाल है और आग की लपटों की तरह पानी से भरा हुआ है।
इस प्रकार, ये पापी दिन-रात कुकर्मों के आवरण में लिपटे रहते हैं, मानो कोई चोला पहने हों।
उनके पुराने बुरे कर्मों का उचित दंड उन्हें भुगतना पड़ेगा।
जो कोई पत्नी बनकर अपने सोने से किसी की वस्तु खरीदती है, वह अपने पति को तुच्छ समझेगी।
या वह अपने मित्रों और परिवार को सदा तिरस्कार भरी नजरों से देखेगा।
हुक और धागे से खींची गई उसकी जीभ असहनीय पीड़ा झेलेगी।
वह अपनी जीभ को कीड़ों से भरी हुई देखती है, फिर भी शिकायत नहीं कर सकती।
तपना में असहनीय पीड़ा सहते हुए, वह अनिवार्य रूप से चुप रही।
भेड़ों, सूअरों और गायों के हत्यारे, और शिकार के अनुयायी,
मछुआरे, लुटेरे, सभी क्रूर, बहाने बना रहे हैं मानो ये सब जायज हो।
तलवारों और लोहे के डंडों से हमला किए गए, ये खूनी लोग,
भाले और बाणों से पीछा किए जाने पर वे खारे पानी की बाढ़ में गिर जाते हैं।

जाली दस्तावेज़ बनाने वाला, लोहे के डंडे से दिन-रात परेशान होता रहा।
यह केवल किसी बदकिस्मत बदमाश द्वारा की गई गंदी उल्टी से ही अपना पेट भरता है।
कौवे, रेवेन, गिद्ध, सियार भी, सभी लोहे के जबड़े से लैस हैं।
उस तड़पते हुए बेचारे को उनके अतृप्त पेट में जिंदा दफना दिया गया।
जो कोई पशु (*12) से पशु का शिकार करके उसे मार डालेगा, या पक्षी से पक्षी को मार डालेगा,
पाप से व्याकुल होकर नरक में गिरेंगे, और उस शापित दिन पर पछताएंगे।
इस प्रकार राजा ने इन सभी नरकों का वर्णन किया, और फिर पृथ्वी में एक छेद बनाकर उसने राजा को स्वर्गदूतों के लोक दिखाए और कहा:

प्राचीन काल से पृथ्वी पर संचित सद्गुणों के माध्यम से अच्छे लोग स्वर्ग प्राप्त करते हैं।
यहां ब्रह्मा (प्रधान देवदूत), देव (देवदूत), इंद्र (देवदूतों के राजा), देखो! पुण्य का पका हुआ फल प्राप्त करो।
इसलिए मैं कहता हूँ, हे मेरे राजा, अपने राज्य में न्यायपूर्ण शासन करो।
क्योंकि न्याय किया जाना ही पुण्य का फल है, और इससे कभी पछतावा नहीं होता।
उस महान सत्ता के धार्मिक प्रवचन को सुनकर राजा को तुरंत शांति मिली। और बोधिसत्व कुछ समय वहाँ रहने के बाद अपने निवास स्थान पर लौट गए।

गुरु ने यहाँ अपनी कहानी समाप्त करते हुए कहा, "न केवल अभी, बल्कि पुराने समय में भी मैंने ही उन्हें सांत्वना दी थी," और उन्होंने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उस समय अजातशत्रु राजा थे, बुद्ध के अनुयायी तपस्वियों का समूह बनाते थे, और मैं स्वयं ऋषि समकिच्चा था।"

फुटनोट:

(1) कोमुदी, कत्तिका माह की पूर्णिमा का दिन।

(2)पुराण के स्थान पर पुराण, अर्थात् पुराण कश्यप। देखें दीघा निकाय, द्वितीय. 2, जहाँ नाम पुराण के रूप में प्रकट होता है।

(3) जब भी कोई व्यक्ति बिना किसी की नज़र में आए घर से बाहर जाना चाहता है, तो वह मुख्य द्वार के बजाय अगदवरम (संभवतः बगल का या पीछे का द्वार) से बाहर जाता है। (तुलना करें जातक, खंड I. 114, खंड V. 132, पाली पाठ)

(4)कम्मकरण पढ़ना। पाली टेक्स्ट सोसाइटी जर्नल, 1884, पृष्ठ 76 में इस शब्द पर मॉरिस की टिप्पणी देखें।

(5)विद्वानों ने उस्सादा नरकों की संख्या 128 बताई है। सी.एफ. एल'एनफर इंडियन पार एमएल फीयर, जर्नल एशियाटिक, 1892 (VIII. क्रमांक 20), पीपी. 185 वर्गमीटर। पंचगती-दीपना, पाली पाठ सोसायटी। जर्नल. 1884. सेनार्ट का महावस्तु, I. 4. 12--27. 1 (पृष्ठ XXII पर सारांश)। शिक्षासमुक्कया, एड. बेंडल, पीपी. 69-73.

(6)वॉल्यूम. वि. सं. 522, सरभंगा जातक, पृ. 72, अंग्रेजी संस्करण.

(7)वॉल्यूम. चतुर्थ. क्रमांक 497, मतंग जातक, पृ. 244, अंग्रेजी संस्करण।

(8)वॉल्यूम. चतुर्थ. क्रमांक 454, घट जातक, पृ. 53-7, अंग्रेजी संस्करण।

(9) खंड V. संख्या 512, कुंभ जातक, पृष्ठ 10, अंग्रेजी संस्करण।

(10) नरक में एक नदी.

(11) जातक, तृतीय पृ. 29 (अंग्रेजी संस्करण).

(12) इसका तात्पर्य कुत्तों या चीता से हिरण का शिकार करना होगा।

पुस्तक XX. सत्ततिनिपाता:

जातक क्रमांक 531
कुसा जातक। (*1)

"यह लोक," इत्यादि। यह कथा गुरुजी ने जेतवन मठ में रहते हुए एक पथभ्रष्ट भिक्षु के बारे में सुनाई थी। कथा के अनुसार, वह कुलीन कुल में जन्मे थे और श्रावस्ती नगर में रहते थे। उन्होंने धर्म को पूर्णतः ग्रहण कर लिया और तपस्वी जीवन व्यतीत करने लगे। एक दिन जब वे श्रावस्ती नगर में भिक्षा मांगने निकले, तो उनकी मुलाकात एक सुंदर स्त्री से हुई और पहली ही नज़र में वे उससे मोहित हो गए। अपने प्रेम में व्याकुल होकर वे दुखी जीवन व्यतीत करने लगे। उन्होंने अपने नाखून और बाल लंबे कर लिए और गंदे वस्त्र धारण कर लिए। हृदय विक्षिप्त होकर वे दुर्बल हो गए और पीले पड़ गए, उनके शरीर की नसें उभरने लगीं। और जैसे स्वर्गदूतों की दुनिया में, जो लोग अपने स्वर्गीय अस्तित्व से गिरने वाले होते हैं, उनमें पाँच सुप्रसिद्ध लक्षण प्रकट होते हैं, अर्थात् उनके हार मुरझा जाते हैं, उनके वस्त्र मैले हो जाते हैं, उनका शरीर कुरूप हो जाता है, उनकी बगलों से पसीना बहता है, और उन्हें अपने स्वर्गदूतों के घर में आनंद नहीं मिलता, वैसे ही सांसारिक भाइयों के मामले में, जो विश्वास से गिर जाते हैं, वही पाँच लक्षण दिखाई देते हैं: विश्वास के फूल मुरझा जाते हैं, धर्म के वस्त्र मैले हो जाते हैं, असंतोष और बदनामी के प्रभाव से उनका शरीर कुरूप हो जाता है, भ्रष्टाचार का पसीना उनसे बहता है और उन्हें वन वृक्षों की तलहटी में एकांत जीवन में आनंद नहीं मिलता—ये सभी लक्षण उसमें पाए गए। इसलिए वे उसे गुरु के समक्ष लाए और कहा, "हे प्रभु, यह व्यक्ति असंतुष्ट है।" गुरु ने पूछा कि क्या यह सच है, और जब उन्होंने स्वीकार किया कि यह सच है, तो उन्होंने कहा, "भाई (भिक्षु), पाप के गुलाम मत बनो। यह एक दुष्ट स्त्री है; उसके प्रति अपने प्रेम पर काबू पाओ, धर्म में सुख पाओ। सचमुच, स्त्री के प्रेम में पड़ने से प्राचीन काल के ऋषि, चाहे वे कितने भी शक्तिशाली क्यों न हों, अपनी शक्ति खो बैठे और दुख और विनाश की ओर बढ़ गए।" और ऐसा कहते हुए उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, मल्ल राज्य में, कुसावती (*2) के राज नगर में, राजा ओक्काका (इक्ष्वाकु) अपने राज्य पर विधिपूर्वक शासन करते थे। उनकी सोलह हजार पत्नियों में प्रमुख उनकी रानी सिलावती थीं। अब उनके न तो पुत्र थे और न ही पुत्री, और नगर के पुरुष और उनकी सारी प्रजा महल के द्वार पर एकत्रित होकर शिकायत करने लगे कि राज्य का विनाश हो जाएगा। राजा ने अपनी खिड़की खोली और कहा, "मेरे शासन में कोई भी पाप नहीं करता। तुम मुझे क्यों धिक्कारते हो?" "जी महाराज, यह सच है, कोई पाप नहीं करता, लेकिन आपके यहाँ कोई पुत्र उत्पन्न नहीं हुआ है जो वंश को आगे बढ़ा सके: कोई अजनबी राज्य पर कब्जा कर लेगा और उसे नष्ट कर देगा। इसलिए एक ऐसे पुत्र के लिए प्रार्थना करें जो आपके राज्य पर विधिपूर्वक शासन कर सके।" "पुत्र की मेरी इच्छा में मैं क्या करूँ?" "सबसे पहले, एक सप्ताह तक निम्न श्रेणी की नाचने वाली स्त्रियों का एक समूह (*3) सड़कों पर भेजो—इस कार्य को धार्मिक अर्थ देते हुए—और यदि उनमें से कोई पुत्र को जन्म दे, तो अच्छा है। अन्यथा, अच्छी प्रतिष्ठा वाली स्त्रियों का एक समूह भेजो, और अंत में उच्च श्रेणी की स्त्रियों का एक समूह भेजो। निश्चित रूप से इतनी स्त्रियों में से कोई न कोई स्त्री पुत्र को जन्म देने के लिए पर्याप्त गुणवान होगी।" राजा ने वैसा ही किया जैसा उन्होंने उससे कहा था, और हर सातवें दिन वह उन सभी से पूछता जो आनंद लेने के बाद लौट आई थीं, कि क्या उनमें से कोई गर्भवती हुई है। और जब सभी ने उत्तर दिया, "नहीं, महाराज," तो राजा निराश हो गया और रोते हुए बोला, "मुझे कोई पुत्र नहीं होगा।" नगरवासियों ने फिर से पहले की तरह उसे फटकारा। राजा ने कहा, "तुम मुझे क्यों फटकारते हो? तुम्हारे कहने पर स्त्रियों के समूह सड़कों पर उतारे गए, और उनमें से कोई भी गर्भवती नहीं हुई। अब मैं क्या करूँ?" "महाराज," उन्होंने उत्तर दिया, "ये स्त्रियाँ अवश्य ही अनैतिक और पुण्यहीन हैं। इनमें पुत्र को जन्म देने की पर्याप्त योग्यता नहीं है। परन्तु यद्यपि वे गर्भ धारण नहीं कर पा रही हैं, इसलिए आप अपने प्रयास न छोड़ें। रानी की पत्नी, सिलावती, एक गुणी स्त्री हैं। उन्हें सड़कों पर भेज दीजिए। उन्हें पुत्र का जन्म होगा।" राजा तुरंत सहमत हो गए और ढोल बजाकर घोषणा की कि उस समय से सातवें दिन जनता एकत्रित होगी और राजा सिलावती को सड़कों पर छोड़ देंगे—इस प्रकार उन्होंने इस कार्य को धार्मिक स्वरूप दिया। और सातवें दिन उन्होंने रानी को भव्य वस्त्र पहनाकर महल से नीचे उतारा और सड़कों पर छोड़ दिया। उनके पुण्य के प्रभाव से सक्का (इंद्र) के निवास में ऊष्मा के लक्षण प्रकट हुए। सक्का (इंद्र) ने इसका अर्थ समझते हुए पाया कि रानी पुत्र के लिए व्याकुल थीं और उन्होंने सोचा, "मुझे उन्हें पुत्र प्रदान करना चाहिए," और यह सोचते हुए कि क्या देवदूतों के लोक में कोई ऐसा है जो उनका पुत्र बनने योग्य हो, उन्होंने बोधिसत्व को देखा। ऐसा कहा जाता है कि उस समय, तैंतीस स्वर्ग में अपना जीवन व्यतीत करने के बाद, वे उच्चतर लोक में जन्म लेने की लालसा रखते थे। सक्का (इंद्र) उनके निवास स्थान के द्वार पर आकर उन्हें बुलाते हुए बोले, "महोदय, आपको मनुष्यलोक में जाना है और ओक्काका (इक्ष्वाकु) की प्रमुख पत्नी के पुत्र के

रूप में जन्म लेना है।"फिर उन्होंने एक अन्य दिव्य प्राणी की सहमति प्राप्त की और कहा, "और तुम भी उसके पुत्र बनोगे," और ताकि कोई भी पुरुष उसकी पवित्रता को भंग न कर सके, सक्का (इंद्र) एक वृद्ध ब्राह्मण का वेश धारण करके महल के द्वार पर गए। लोग, स्नान और श्रृंगार करने के बाद, रानी को पाने की इच्छा से राज द्वार पर एकत्रित हुए, लेकिन सक्का (इंद्र) को देखकर वे हँसने लगे और उनसे पूछने लगे कि वे क्यों आए हैं। सक्का (इंद्र) ने कहा, "मुझे दोष क्यों दे रहे हो?" "भले ही मैं शारीरिक रूप से बूढ़ा हूँ, मेरी वासनाएँ अभी भी अनियंत्रित हैं, और मैं सिलावती को अपने साथ ले जाने की आशा से आया हूँ, अगर वह मुझे मिल जाए।" और इन शब्दों के साथ, अपनी दिव्य शक्ति से वह उन सबके सामने आ गया, और अपने भीतर के सद्‌गुण के कारण कोई भी उसके सामने खड़ा नहीं हो सका, और जैसे ही रानी अपने पूरे वैभव के साथ महल से बाहर निकली, उसने उसका हाथ पकड़ा और उसे अपने साथ ले गया। तब वहाँ खड़े लोगों ने उसे कोसते हुए कहा, "उस पर लानत है, एक बूढ़ा ब्राह्मण असाधारण सुंदरता वाली रानी को ले गया है: उसे पता नहीं कि उसे क्या शोभा नहीं देता।" रानी ने भी सोचा, "एक बूढ़ा आदमी मुझे ले जा रहा है।" और वह नाराज़ और क्रोधित (*4) थी, बल्कि घृणा से भर गई। राजा खुली खिड़की पर खड़ा यह देखने के लिए देख रहा था कि रानी को कौन ले जा रहा है, उसे देखकर वह बहुत अप्रसन्न हुआ। सक्का (इंद्र), उसे लेकर नगर द्वार से भागते हुए, चमत्कारिक रूप से पास ही एक घर प्रकट कर दिया, जिसका दरवाजा खुला था और लकड़ियों का एक गट्ठा तैयार रखा था। "क्या यह "आपका निवास?" उसने पूछा। "जी, देवी, अब तक मैं अकेला था: अब हम दो हैं। मैं अपने चक्कर लगाता हूँ और कुछ भुट्टा घर लाता हूँ। इस बीच आप लकड़ियों के इस ढेर पर लेट जाइए।" ऐसा कहकर उसने धीरे से उसे अपने हाथ से सहलाया, जिससे दिव्य स्पर्श से वह सिहर उठी। फिर उसने उसे वहीं लिटा दिया, और उसके स्पर्श से वह बेहोश हो गई। फिर उसने अपनी अलौकिक शक्ति से उसे तैंतीसवें स्वर्ग में पहुँचाया और एक भव्य महल में एक दिव्य पलंग पर बिठा दिया। सातवें दिन जागने पर उसने यह वैभव देखा और जान गई कि यह कोई ब्राह्मण नहीं, बल्कि स्वयं सक्का (इंद्र) हैं। उस समय सक्का (इंद्र) एक मूंगा वृक्ष के चरणों में बैठे थे, उनके चारों ओर दिव्य नर्तकियाँ थीं। अपने पलंग से उठकर वह उनके पास गई और देवदूत को प्रणाम किया और आदरपूर्वक एक तरफ खड़ी हो गई। तब सक्का (इंद्र) ने कहा, "मैं तुम्हें एक वरदान देता हूँ: जो चाहो चुन लो।" "तो मुझे एक पुत्र प्रदान कीजिए, महाराज।" "केवल एक नहीं, देवी। मैं आपको दो पुत्र प्रदान करूँगा। उनमें से एक बुद्धिमान लेकिन बदसूरत होगा, दूसरा सुंदर लेकिन मूर्ख होगा। आप उनमें से पहले किसे चाहेंगी?" "बुद्धिमान को," उसने उत्तर दिया। "अच्छा," उसने कहा, और उसने उसे कुश घास का एक टुकड़ा, एक दिव्य वस्त्र, चंदन, मूंगा वृक्ष का फूल और एक कोकनादा (*5) वीणा भेंट की। फिर वह उसे राजा के शयनकक्ष में ले गया और उसे राजा के साथ उसी पलंग पर लिटा दिया, और केवल अपने अंगूठे से उसके शरीर को छुआ।और उसी क्षण बोधिसत्व का गर्भ उनके गर्भ में धारण हुआ। और सक्का (इंद्र) तुरंत अपने निवास स्थान लौट गए। बुद्धिमान रानी को पता चल गया था कि वह गर्भवती हैं। तब राजा ने जागकर उन्हें देखकर पूछा कि उन्हें यहाँ कौन लाया है। "सक्का (इंद्र) द्वारा, महाराज।" "अरे! मैंने अपनी आँखों से एक वृद्ध ब्राह्मण को आपको ले जाते हुए देखा है। आप मुझे धोखा क्यों दे रही हैं?" "मान लीजिए, महाराज, सक्का (इंद्र) मुझे अपने साथ देवलोक ले गए।" "देवी, मुझे विश्वास नहीं हो रहा।" तब उन्होंने राजा को वह कुश घास दिखाई जो सक्का (इंद्र) ने उन्हें दी थी और कहा, "अब विश्वास कीजिए।" राजा ने सोचा, "कुश घास तो कहीं भी मिल जाती है," और फिर भी उन्हें विश्वास नहीं हुआ। तब उन्होंने राजा को अपने दिव्य वस्त्र दिखाए। इन्हें देखकर राजा को विश्वास हो गया और उन्होंने कहा, "प्रिय देवी, मान लिया कि सक्का (इंद्र) आपको ले गए, लेकिन क्या आप गर्भवती हैं?" "जी, महाराज, मैं गर्भवती हूँ।" राजा बहुत प्रसन्न हुए और गर्भवती महिला के कारण विवाह समारोह संपन्न कराया। दस महीने बाद उसने एक पुत्र को जन्म दिया। उसका कोई नाम न रखते हुए, उसका नाम घास के नाम पर कुशा रखा गया। जब राजकुमार कुशा चलने-फिरने लायक हुआ, तभी एक दूसरे दिव्य प्राणी का जन्म हुआ। उनका नाम जयमपति रखा गया। दोनों पुत्रों का पालन-पोषण बड़े ही शान-शौकत से हुआ। बोधिसत्व इतने बुद्धिमान थे कि अपने गुरु से कुछ भी सीखे बिना, उन्होंने अपनी योग्यता से सभी कलाओं में निपुणता प्राप्त कर ली। जब वे सोलह वर्ष के हुए, तो राजा उन्हें राज्य सौंपने के लिए उत्सुक थे और उन्होंने रानी से कहा, "महारानी, आपके पुत्र को राज्य सौंपते समय, हम भव्य समारोह आयोजित करेंगे और अपने जीवनकाल में ही उन्हें सिंहासन पर स्थापित होते देखेंगे। यदि पूरे भारत में कोई ऐसी राजा की पुत्री हो जिसे आप पसंद करें, तो उनके यहाँ लाने पर हम उन्हें उनकी रानी बना देंगे। उनसे पूछिए कि वे किस राजा की पुत्री को पसंद करते हैं।" रानी तुरंत सहमत हो गईं और उन्होंने एक दासी को राजकुमार को यह बात बताने और उनकी राय जानने के लिए भेजा। वह गई और राजकुमार को सारी स्थिति बताई। उसकी बात सुनकर महान पुरुष ने सोचा, "मैं भाग्यशाली नहीं हूँ। एक सुंदर राजकुमारी, भले ही उसे मेरी दुल्हन बनाकर यहाँ लाया जाए, मुझे देखकर कहेगी, 'इस बदसूरत आदमी से मेरा क्या लेना-देना?' और भाग जाएगी, और हम शर्मिंदा होंगे। गृहस्थी से मेरा क्या लेना-देना? मैं अपने माता-पिता का जीवन भर भरण-पोषण करूँगा, और उनकी मृत्यु के बाद संसार त्यागकर संन्यासी बन जाऊँगा।" इसलिए उन्होंने कहा, "मुझे राज्य या उत्सवों की क्या आवश्यकता है? मेरे माता-पिता की मृत्यु के बाद, मैं संन्यासी जीवन अपना लूँगा।" दासी लौटकर रानी को उनके कहे हुए शब्द बताए। राजा बहुत दुखी हुए और कुछ दिनों बाद फिर संदेश भेजा, लेकिन उन्होंने फिर भी उसे सुनने से इनकार कर दिया। तीन बार प्रस्ताव ठुकराने के बाद, चौथी बार उन्होंने सोचा, "अपने माता-पिता के पूर्ण विरोध में रहना उचित नहीं है: मुझे कुछ उपाय करना होगा।" इसलिए उन्होंने मुख्य लोहार को बुलाया, और उसे कुछ सोना देकर,उसे एक स्त्री की मूर्ति बनाने को कहा गया। जब वह चला गया, तो उसने और सोना लिया और उससे स्वयं एक स्त्री की मूर्ति बनाई। सचमुच बुद्धों के उद्देश्य पूरे होते हैं। यह मूर्ति इतनी सुंदर थी कि उसका वर्णन शब्दों में नहीं किया जा सकता। फिर उस महान व्यक्ति ने उसे लिनेन का वस्त्र पहनाकर राजकक्ष में रख दिया। जब मुख्य सुनार द्वारा लाई गई मूर्ति को देखकर उसने उसमें कुछ कमियां निकालीं और कहा, "जाओ और राजकक्ष में रखी मूर्ति को ले आओ।" वह व्यक्ति कमरे में गया और उसे देखकर सोचा, "यह अवश्य

ही कोई अप्सरा होगी, जो राजकुमार के साथ आनंद लेने आई होगी," और वह हाथ बढ़ाने का साहस न कर पाने के कारण कमरे से बाहर निकल गया और बोला, "महाराज, आपके राजकक्ष में देवदूतों की एक कुलीन पुत्री खड़ी है: मैं उसके पास जाने का साहस नहीं कर सकता।" "मित्र," उसने कहा, "जाओ और सोने की मूर्ति ले आओ," और दोबारा आदेश दिए जाने पर वह उसे ले आया। राजकुमार ने लोहार द्वारा बनाई गई मूर्ति को स्वर्ण कक्ष में फेंकने का आदेश दिया, और स्वयं द्वारा बनाई गई मूर्ति को सुशोभित करके रथ में स्थापित करवाया और अपनी माता को यह कहते हुए भेजा, "जब मुझे इस जैसी स्त्री मिलेगी, तो मैं उससे विवाह करूंगा।" उसकी माता ने अपने सलाहकारों को बुलाया और उनसे कहा, "मित्रों, हमारा पुत्र महान गुणों से परिपूर्ण है और इंद्र का वरदान है; उसे अपने योग्य राजकुमारी अवश्य मिलनी चाहिए। तो आप इस मूर्ति को एक रथ में स्थापित करवाकर भारत के कोने-कोने की यात्रा करें, और जो भी राजा की पुत्री इस मूर्ति के समान दिखाई दे, उसे उस राजा के समक्ष प्रस्तुत करें और कहें, 'राजा ओक्काका (इक्ष्वाकु) आपकी पुत्री से विवाह करेंगे।' फिर अपने लौटने का दिन तय करके घर आ जाएं।" उन्होंने कहा, "ठीक है," और मूर्ति लेकर अपने साथ बहुत से सेवकों को लेकर चल पड़े। और अपनी यात्राओं में, वे जिस भी राजनगर में जाते, शाम को जहाँ भी लोग एकत्रित होते, वे इस मूर्ति को वस्त्रों, फूलों और अन्य आभूषणों से सजाकर, उसे एक स्वर्ण रथ पर रखकर घाट की ओर जाने वाले मार्ग पर रख देते और स्वयं एक तरफ हटकर खड़े हो जाते, ताकि वहाँ से गुजरने वाले सभी लोग उसकी बातें सुनें। लोग उसे देखकर, यह जाने बिना कि वह एक स्वर्ण प्रतिमा है, कहते, "यह, यद्यपि वास्तव में केवल एक स्त्री है, अत्यंत सुंदर है, किसी अप्सरा के समान। यह यहाँ क्यों विराजमान है, और कहाँ से आई है? हमारे नगर में इसके समान कोई नहीं है।" और इस प्रकार उसकी सुंदरता की प्रशंसा करके वे अपने-अपने मार्ग चले जाते। सलाहकारों ने कहा, "यदि यहाँ इसके समान कोई कन्या होती, तो वे कहते, 'यह फलाँ-फलाँ की पुत्री या फलाँ-फलाँ की मंत्री की पुत्री के समान है'; वास्तव में यहाँ ऐसी कोई कन्या नहीं है।" और वे उसे लेकर किसी अन्य नगर में चले जाते। भटकते-भटकते वे मद्दा राज्य के सागाला नगर में पहुँचे। मद्दा के राजा की सात पुत्रियाँ थीं, जो असाधारण रूप से सुंदर थीं, मानो स्वर्ग की अप्सराओं के समान हों।उनमें सबसे बड़ी का नाम पभवति था। उनके शरीर से प्रकाश की किरणें ऐसे निकलती थीं मानो नवजन्मे सूर्य की किरणें। चार भुजाओं के बराबर क्षेत्रफल वाले उनके कक्ष में जब अंधेरा होता था, तब किसी दीपक की आवश्यकता नहीं होती थी। पूरा कक्ष प्रकाश से जगमगा उठता था। अब उसके पास एक कुबड़ी नर्स थी, जिसने पाभवति को भोजन कराने के बाद, शाम को उसका सिर धोने के इरादे से, आठ दासियों के साथ पानी लाने के लिए घाट की ओर प्रस्थान किया। प्रत्येक दासी के हाथ में एक घड़ा था। घाट जाते समय उसकी नज़र इस मूर्ति पर पड़ी और उसने इसे पाभवति समझकर कहा, "बदतमीज़ लड़की, सिर धुलवाने का बहाना करके हमें पानी लाने भेज दिया और हमसे पहले वहाँ सड़क पर खड़ी है।" क्रोधित होकर वह चिल्लाई, "बुरी! तू परिवार के लिए कलंक है: यहाँ हमसे पहले पहुँच गई। अगर राजा को पता चला तो वह हमें मार डालेगा।" यह कहते हुए उसने मूर्ति के गाल पर एक प्रहार किया, जिससे उसकी हथेली के बराबर जगह फट गई। फिर जब उसे पता चला कि यह सोने की मूर्ति है, तो वह खिलखिलाकर हंस पड़ी और दासियों के पास जाकर बोली, "देखो मैंने क्या कर दिया। अपनी पाली हुई बेटी समझकर मैंने इसे मार डाला। मेरी बच्ची के सामने इस मूर्ति की क्या कीमत है? मुझे तो बस अपने हाथ में चोट लगी है।" तब राजा के दूतों ने उसे पकड़ लिया और कहा, "यह कैसी कहानी है जो तुम सुना रही हो, कि तुम्हारी बेटी इस मूर्ति से भी सुंदर है?" "मेरा मतलब है मद्दा राजा की पुत्री पभवती। यह मूर्ति उसके सोलहवें हिस्से के बराबर भी नहीं है।" मन ही मन प्रसन्न होकर वे महल के प्रवेश द्वार की ओर गए और राजा को यह सूचना भेज दी कि राजा ओक्काका (इक्ष्वाकु) के दूत उनके द्वार पर खड़े हैं। राजा अपनी गद्दी से उठे और खड़े होकर उन्हें अंदर आने का आदेश दिया। प्रवेश करते ही उन्होंने राजा को प्रणाम किया और कहा, "महाराज, हमारे राजा आपका हालचाल जानना चाहते हैं।" राजा ने उनका गर्मजोशी से स्वागत किया और जब उनसे पूछा गया कि वे क्यों आए हैं, तो उन्होंने उत्तर दिया, "हमारे राजा का एक पुत्र है, वीर राजकुमार कुसा। राजा उसे अपना राज्य सौंपना चाहते हैं और उन्होंने हमें आपसे यह निवेदन करने के लिए भेजा है कि आप अपनी पुत्री पभवती का विवाह उन्हें सौंप दें और इस स्वर्ण प्रतिमा को भेंट के रूप में स्वीकार करें।" इतना कहकर उन्होंने राजा को प्रतिमा भेंट कर दी। राजा ने सहर्ष स्वीकार कर लिया, क्योंकि उन्हें लगा कि इतने महान राजा के साथ विवाह करना शुभ होगा। तब दूतों ने कहा, "महाराज, हम यहाँ प्रतीक्षा नहीं कर सकते: हम जाकर अपने राजा को बताएँगे कि हमने राजकुमारी का हाथ प्राप्त कर लिया है, और फिर वे आकर उसे ले जाएँगे।" राजा ने यह स्वीकार कर लिया और उनका आतिथ्य सत्कार करने के बाद उन्हें जाने दिया। लौटने पर उन्होंने राजा और रानी को अपनी सूचना दी। राजा अपने साथ बहुत से सेवकों को लेकर कुसावती से रवाना हुए और कुछ समय बाद सगला नगर पहुँचे। मद्दा का राजा उससे मिलने आया, उसे शहर में ले आया और उसका बहुत सम्मान किया। रानी सिलावती, जो एक बुद्धिमान स्त्री थी, सोचने लगी,"इन सब का क्या नतीजा निकलेगा?" एक-दो दिन बाद उसने राजा से कहा, "हम अपनी बहू को देखने के लिए बहुत उत्सुक हैं।" राजा तुरंत मान गया और अपनी बेटी को बुलवाया। भव्य वस्त्र पहने और अपने सेवकों के दल से घिरी हुई पर्ववती आई और उसने अपनी सास को प्रणाम किया। उसे देखते ही रानी ने सोचा, "यह लड़की बहुत सुंदर है और मेरा बेटा बदसूरत है। अगर वह उसे देख लेगी, तो एक दिन भी नहीं रुकेगी बल्कि भाग जाएगी। मुझे कोई उपाय सोचना होगा।" मद्दा राजा को संबोधित करते हुए उसने कहा, "मेरी बहू मेरे बेटे के योग्य है: लेकिन हमारे परिवार में एक पुरानी परंपरा है। अगर वह इस रीति-रिवाज का पालन करेगी, तो हम उसे उसकी दुल्हन बना लेंगे।" "तुम्हारी यह परंपरा क्या है?" "हमारे परिवार में गर्भवती होने तक पत्नी को दिन के उजाले में अपने पति को देखने की अनुमति नहीं है। अगर वह इसका पालन करेगी, तो हम उसे ले लेंगे।" राजा ने अपनी बेटी से पूछा, "मेरी प्यारी, क्या तुम ऐसा कर पाओगी?" "जी, प्रिय पिता," उसने उत्तर दिया। तब राजा ओक्काका (इक्ष्वाकु) ने मद्दा राजा को बहुत साजो-सामान दिया और उसके साथ प्रस्थान किया। मद्दा राजा ने अपनी पुत्री को सेवकों के एक विशाल दल के साथ भेजा। कुसावती पहुँचकर ओक्काका (इक्ष्वाकु) ने नगर को सजाने, सभी कैदियों को रिहा करने

और अपने पुत्र को राजा के रूप में औपचारिक रूप से अभिषेक करने तथा पाभवति को अपनी मुख्य पत्नी नियुक्त करने के बाद ढोल की थाप से राजा कुसा के शासन की घोषणा की। भारत भर के सभी राजाओं, जिनकी पुत्रियाँ थीं, ने उन्हें राजा कुसा के दरबार में भेजा, और जिनके पुत्र थे, वे उनसे मित्रता की इच्छा रखते हुए अपने पुत्रों को उनके सेवक के रूप में भेजते थे। बोधिसत्व के पास नर्तकियों का एक विशाल दल था और उन्होंने भव्यता से शासन किया। परन्तु उन्हें दिन में पाभवति से मिलने की अनुमति नहीं थी, और न ही पाभवति को उनसे मिलने की अनुमति थी, परन्तु रात में वे एक-दूसरे से स्वतंत्र रूप से मिल सकते थे। उस समय पाभवति के शरीर से असाधारण (*9) तेज निकला, लेकिन बोधिसत्व अंधेरा रहते ही राजकक्ष से निकल गए। कुछ दिनों बाद उन्होंने अपनी माता से कहा कि वे दिन में पाभवति को देखने के लिए तरस रहे हैं। माता ने उनका अनुरोध अस्वीकार करते हुए कहा, "यह तुम्हारी इच्छा नहीं है, बल्कि उसके गर्भ धारण करने तक प्रतीक्षा करो।" उन्होंने बार-बार उनसे विनती की। तब माता ने कहा, "ठीक है, हाथी के अस्तबल में जाओ और हाथी के रखवाले का वेश धारण करके वहाँ खड़े हो जाओ। मैं उसे वहाँ ले आऊँगी, ताकि तुम उसे जी भर कर देख सको, लेकिन ध्यान रखना कि तुम उसे अपनी पहचान न बता सको।" वे मान गए और हाथी के अस्तबल में चले गए। महारानी ने हाथी उत्सव की घोषणा की और पाभवति से कहा, "चलो, हम तुम्हारे स्वामी के हाथी देखने चलते हैं।" उन्हें वहाँ ले जाकर उन्होंने एक-एक हाथी का नाम लेकर उन्हें दिखाया। तभी, जब पाभवति अपनी माता के पीछे चल रही थीं, राजा ने हाथी के गोबर के ढेर से उनकी पीठ पर प्रहार किया। वह क्रोधित हो गई और बोली, "मैं राजा से तुम्हारा हाथ कटवा दूंगी," और अपने शब्दों से उसने महारानी को नाराज कर दिया, जिन्होंने उसकी पीठ सहलाकर उसे शांत किया।दूसरी बार राजा उससे मिलने के लिए बेचैन हुए और पहले की तरह ही घोड़े के अस्तबल में एक नौकर का वेश बनाकर उसे घोड़े की लीद से मारा। तब भी जब वह क्रोधित हुई तो उसकी सास ने उसे शांत किया। एक दिन पाभवती ने अपनी सास से कहा कि वह भगवान के दर्शन करना चाहती है। जब उसकी माँ ने यह कहकर उसकी विनती ठुकरा दी, "नहीं, ऐसा न हो," तो उसने बार-बार विनती की, और अंत में उसकी माँ ने कहा, "ठीक है, कल मेरा पुत्र शहर में जुलूस निकालेगा। आप अपनी खिड़की खोलकर उसे देख सकती हैं।" ऐसा कहने के बाद, अगले दिन उसने शहर को सजाया और राजकुमार जयमपति को राजसी वस्त्र पहनाकर हाथी पर सवार होकर शहर में विजय जुलूस निकालने का आदेश दिया। पाभवती के साथ खिड़की पर खड़ी होकर उसने कहा, "अपने स्वामी की महिमा देखो।" उसने कहा, "मुझे एक ऐसा पति मिला है जो मेरे योग्य है," और वह अत्यंत प्रसन्न थी। लेकिन उसी दिन, हाथी के रखवाले के वेश में, महान पुरुष जयमपति के पीछे बैठे थे और पाभवति को जितना चाहें उतना निहार रहे थे। अपने हृदय की प्रसन्नता में वे हाथों से इशारे कर रहे थे। जब हाथी उनके पास से गुजर गया, तो महारानी माँ ने उनसे पूछा कि क्या उन्होंने अपने पति को देखा है। "जी हाँ, महाराज, लेकिन उनके पीछे एक हाथी का रखवाला बैठा था, एक बहुत ही बदतमीज़ आदमी, जिसने मुझे हाथों से इशारे किए। ऐसे बदसूरत, अशुभ प्राणी को राजा के पीछे क्यों बैठने देते हैं?" "प्रिय, राजा के पीछे रक्षक का बैठना उचित है।" "यह हाथी का रखवाला," उन्होंने सोचा, "बड़ा दुस्साहसी है, और राजा का ज़रा भी आदर नहीं करता। क्या यह राजा कुश हो सकता है? निस्संदेह वह बदसूरत है, और इसीलिए वे मुझे उसे देखने नहीं देते।" तो उन्होंने अपनी कुबड़ी नर्स से फुसफुसाकर कहा, "जाओ, प्रिय, तुरंत पता लगाओ कि राजा आगे बैठे थे या पीछे।" "मुझे यह कैसे पता चलेगा?" "यदि वह राजा है, तो वह हाथी से सबसे पहले उतरेगा: तुम्हें इस संकेत से पता चल जाएगा।" वह दूर जाकर खड़ी हो गई और उसने देखा कि महापुरुष सबसे पहले उतरे, और उसके बाद राजकुमार जयमपति। महापुरुष ने चारों ओर देखा, पहले एक तरफ और फिर दूसरी तरफ, कुबड़ी बूढ़ी औरत को देखकर वह तुरंत समझ गया कि वह क्यों आई होगी, और उसे बुलवाकर सख्ती से हिदायत दी कि वह उसका रहस्य किसी को न बताए, और उसे जाने दिया। वह आई और अपनी स्वामिनी को बताया, "जो आगे बैठा था, वह सबसे पहले उतरा," और पाभवति ने उसकी बात मान ली। राजा को एक बार फिर उससे मिलने की तीव्र इच्छा हुई और उसने अपनी माता से इसका प्रबंध करने की विनती की। माता उसे मना नहीं कर सकी और बोली, "ठीक है, तो अपना वेश बदलकर बगीचे में जाओ।" वह गया और कमल के तालाब में गर्दन तक डूब गया, पानी में खड़ा होकर उसने अपना सिर कमल के पत्ते से ढका और चेहरा उसके फूल से ढक लिया। और शाम को उसकी माँ पाभवति को बगीचे में ले आई और कहने लगी, "इन पेड़ों को देखो, या इन पक्षियों या हिरणों को देखो,इस प्रकार वह उसे बहलाती-फुसलाती रही, जब तक कि वह कमल-कुंड के किनारे नहीं पहुँच गई। जब उसने कुंड को पाँच प्रकार के कमलों से ढका देखा, तो उसे स्नान करने की तीव्र इच्छा हुई और वह अपनी सहेलियों के साथ कुंड के किनारे चली गई। आनंद लेते हुए उसने एक कमल देखा और उसे तोड़ने के लिए अपना हाथ बढ़ाया। तभी राजा ने कमल का पत्ता एक तरफ रखकर उसका हाथ पकड़ लिया और कहा, "मैं राजा कुश हूँ।" उसका चेहरा देखकर वह चिल्लाई, "कोई जिन्न मुझे पकड़ रहा है," और वहीं बेहोश हो गई। तब राजा ने उसका हाथ छोड़ दिया। होश में आने पर उसने सोचा, "लोग कहते हैं कि राजा कुश ने मेरा हाथ पकड़ा था, और उसी ने मुझे हाथी के अस्तबल में हाथी की लीद से मारा था, और घोड़े के अस्तबल में घोड़े की लीद से मारा था, और उसी ने हाथी के पीछे बैठकर मेरा मज़ाक उड़ाया था। ऐसे बदसूरत, घिनौने पति से मेरा क्या लेना-देना है?" अगर मैं जीवित रही, तो मैं दूसरा पति ढूंढ लूंगी।" इसलिए उसने अपने साथ आए सलाहकारों को बुलाया और कहा, "मेरा रथ तैयार करो। आज ही मैं रवाना हो जाऊंगी।" उन्होंने यह बात राजा को बताई और राजा ने सोचा, "अगर वह बच नहीं पाई, तो उसका दिल टूट जाएगा: उसे जाने दो।" मैं अपनी शक्ति से उसे वापस लाऊंगा।" इसलिए उसने उसे जाने दिया, और वह सीधे अपने पिता के नगर लौट गई। और वह महान प्राणी उद्यान से नगर में प्रवेश करके अपने भव्य महल में चढ़ गया। सचमुच, पिछले जन्म की किसी इच्छा के कारण ही वह बोधिसत्व से घृणा करती थी, और उसके किसी पूर्व कर्म के कारण ही वह इतना कुरूप था। कहते हैं, पुराने समय में, बनारस के एक उपनगर में, ऊपरी और निचली गलियों में, एक परिवार के दो पुत्र और एक पुत्री थी। दोनों पुत्रों में बोधिसत्व छोटा पुत्र था, और पुत्री का विवाह बड़े पुत्र से हुआ था, परन्तु छोटा पुत्र अविवाहित (*11) अपने भाई के साथ रहता था। एक दिन इस घर

में उन्होंने कुछ बहुत ही सुंदर केक बनाए, और बोधिसत्व वन में गए हुए थे; इसलिए उनके लिए एक केक अलग रखकर उन्होंने बाकी बाँट लिए और स्वयं खा लिए। उसी क्षण एक पच्चेकबुद्ध भिक्षा मांगने द्वार पर आया। बोधिसत्व की भाभी ने सोचा कि वह युवा स्वामी के लिए एक और केक बनाएँगी और उन्होंने उनका केक लेकर पच्चेकबुद्ध को दे दिया, और ठीक उसी क्षण वह वन से लौट आए। तब उन्होंने कहा, "हे स्वामी, क्रोधित न हों, मैंने आपका भाग पच्चेकबुद्ध को दे दिया है।" उन्होंने कहा, "अपना भाग खाने के बाद मेरा भाग दे दो, और मेरे लिए एक और केक अवश्य बनाओगी!" और वह क्रोधित हो गए और जाकर भिखारी के कटोरे से केक ले लिया। वह अपनी माँ के घर गईं और चंपक के फूल के रंग का कुछ ताजा पिघला हुआ घी (स्पष्ट मक्खन) लेकर कटोरा भर दिया, और उससे प्रकाश की एक तेज किरण निकली। यह देखकर उन्होंने प्रार्थना की, "हे परम पूज्य, मैं जहाँ कहीं भी जन्म लूँ, मेरा शरीर प्रकाश से परिपूर्ण हो और मैं अत्यंत सुंदर होऊँ, और मुझे फिर कभी इस व्यभिचारी के साथ एक ही स्थान पर न रहना पड़े।"इस प्रकार, उस प्राचीन प्रार्थना के फलस्वरूप उसने उसे स्वीकार नहीं किया। बोधिसत्व ने केक को वापस कटोरे में डालते हुए प्रार्थना की: "हे प्रभु, चाहे वह सौ मील (4.23 किमी) दूर ही क्यों न रहती हो, मुझे उसे अपनी दुल्हन बनाकर ले जाने की शक्ति प्रदान करें।" क्रोधित होकर केक लेने के कारण ही वह जन्म से इतना कुरूप था।

पाभवति के चले जाने से कुशा इतना गहरे शोक में डूब गया कि अन्य स्त्रियाँ, यद्यपि उसकी हर प्रकार से सेवा कर रही थीं, उसकी ओर देखने की हिम्मत भी नहीं कर पा रही थीं, और पाभवति के बिना उसका सारा महल मानो वीरान सा लग रहा था। तब उसने सोचा, "अब तक तो वह सागला नगर पहुँच चुकी होगी," और सूर्योदय होते ही उसने अपनी माता को ढूँढा और कहा, "प्रिय माता, मैं जाकर पाभवति को ले आता हूँ। आप मेरे राज्य पर शासन करेंगी," और उसने पहला श्लोक कहा:

यह लोक असीम आनंद और परमानंद से भरा है,
राजसी वस्त्र और सोने का खजाना
मैं कहता हूँ, यह राज्य मेरे लिए तुम पर शासन करे:
मैं पभवती को खोजने जाता हूँ।

उसकी माता ने उसकी बातें सुनकर कहा, “बेटा, तुम्हें बहुत सावधान रहना चाहिए: स्त्रियाँ सचमुच अपवित्र स्वभाव की होती हैं।” उसने एक सोने के कटोरे में तरह-तरह के स्वादिष्ट व्यंजन भर दिए और कहा, “यह तुम्हारे लिए यात्रा में खाने के लिए है,” और उससे विदा ली। कटोरा लेकर और माता को तीन बार प्रणाम करके उसने कहा, “अगर मैं जीवित रहा, तो आपसे फिर मिलूंगा,” और इस तरह वह राजमहल की ओर चल पड़ा। फिर उसने पाँचों प्रकार के शस्त्र धारण किए और एक हजार सिक्के एक थैले में रखकर अपना भोजन का कटोरा और एक कोकण वीणा ली और शहर छोड़कर अपनी यात्रा पर निकल पड़ा। दोपहर तक वह बहुत बलवान और चुस्त-दुरुस्त था और उसने पचास मील (4.23 किमी) की दूरी तय कर ली थी और भोजन करने के बाद, बचे हुए आधे दिन में उसने पचास मील (4.23 किमी) की दूरी और तय कर ली, इस प्रकार एक ही दिन में उसने सौ मील (4.23 किमी) की यात्रा पूरी कर ली। शाम को उन्होंने स्नान किया और फिर सगला नगर में प्रवेश किया। जैसे ही उन्होंने नगर में कदम रखा, उनके पुण्य के प्रभाव से पभवति अपने पलंग पर चैन से नहीं सो सकीं और उठकर जमीन पर लेट गईं। बोधिसत्व यात्रा से बहुत थक गए थे और सड़क पर भटकते हुए एक स्त्री ने उन्हें देखा और अपने घर में विश्राम करने के लिए आमंत्रित किया। उनके पैर धोने के बाद, उसने उन्हें बिस्तर दिया। जब वे सो रहे थे, तब उसने उनके लिए भोजन तैयार किया और उन्हें जगाकर खिलाया। वे उससे इतने प्रसन्न हुए कि उन्होंने उसे हजार सिक्के और सोने का कटोरा भेंट किया। अपने पांच प्रकार के शस्त्र वहीं छोड़कर उन्होंने कहा, "मुझे कहीं जाना है," और अपना वीणा लेकर वे एक हाथी के अस्तबल में गए और हाथी पालकों से कहा, "मुझे यहाँ रहने दीजिए, मैं आपके लिए संगीत बजाऊंगा।" उन्होंने उन्हें ऐसा करने की अनुमति दी और वे अलग जाकर लेट गए। जब उनकी थकान दूर हो गई, तो वे उठे और अपना वीणा खोलकर बजाने और गाने लगे, यह सोचकर कि शहर में रहने वाले सभी लोग इसे सुनें। पाभवति, जो जमीन पर लेटी हुई थीं, ने इसे सुना और सोचा, "यह ध्वनि केवल उनकी वीणा से ही आ सकती है," और उन्हें विश्वास हो गया कि राजा कुश उन्हीं के लिए आए हैं। मद्दा के राजा ने भी इसे सुनकर सोचा, "यह बहुत मधुर बजाते हैं। कल मैं उन्हें बुलवाऊंगा और उन्हें अपना संगीतकार बनाऊंगा।" बोधिसत्व ने सोचा, "अगर मैं यहाँ रुका रहा तो पाभवति को देखना मेरे लिए असंभव होगा: यह मेरे लिए उपयुक्त स्थान नहीं है," और जल्दी से सुबह-सुबह वहाँ से चले गए और एक भोजनालय में सुबह का भोजन करने के बाद उन्होंने अपनी वीणा वहीं छोड़ दी और राजा के कुम्हार के पास जाकर उसके शिष्य बन गए। एक दिन जब उन्होंने घर को कुम्हार की मिट्टी से भर दिया, तो उन्होंने पूछा कि क्या उन्हें कुछ बर्तन बनाने चाहिए और जब कुम्हार ने उत्तर दिया, "हाँ, बनाओ," तो उन्होंने मिट्टी का एक टुकड़ा चाक पर रखा और उसे घुमाया। एक बार जब इसे चालू कर दिया गया, तो यह दोपहर तक तेजी से चलता रहा। सभी प्रकार के छोटे-बड़े बर्तन बनाने के बाद,उसने विशेष रूप से पाभवति के लिए एक बर्तन बनाना शुरू किया जिस पर विभिन्न आकृतियाँ बनी हुई थीं। सचमुच बुद्धों के उद्देश्य पूरे होते हैं। उसने निश्चय किया कि केवल पाभवति ही इन आकृतियों को देखेंगी। जब उसने बर्तनों को सुखाकर पका लिया, तो महल उनसे भर गया। कुम्हार विभिन्न नमूनों के साथ महल गया। राजा ने उन्हें देखकर पूछा, "मैंने बनाया है, महाराज।" "मुझे यकीन है कि तुमने नहीं बनाया। किसने बनाया है?" "मेरे शिष्य ने, महाराज।" "तुम्हारा शिष्य नहीं, बल्कि तुम्हारा गुरु। उससे अपना हुनर सीखो। अब से वह मेरी बेटियों के लिए बर्तन बनाए।" और उसने उसे एक हजार सिक्के देते हुए कहा, "उसे ये दे दो, और ये सभी छोटे बर्तन मेरी बेटियों को भेंट कर दो।" वह बर्तन उनके पास ले गया और कहा, "ये

तुम्हारे मनोरंजन के लिए बनाए गए हैं।" वे सभी उन्हें लेने के लिए उपस्थित थीं। तब कुम्हार ने पाभवति को वह बर्तन दिया जो उस महान व्यक्ति ने विशेष रूप से उनके लिए बनाया था। उसे लेते ही उसने तुरंत अपनी और कुबड़ी नर्स की आकृति पहचान ली और जान गई कि यह केवल राजा कुशाग्र की ही रचना हो सकती है। क्रोधित होकर उसने कहा, "मुझे यह नहीं चाहिए: इसे चाहने वालों को दे दो।" तब उसकी बहनों ने उसे क्रोधित देखकर हंसते हुए कहा, "तुम्हें लगता है कि यह राजा कुशाग्र की रचना है। इसे कुम्हार ने बनाया है, उसने नहीं। इसे ले लो।" उसने उन्हें यह नहीं बताया कि वह स्वयं वहाँ आया था और उसने ही इसे बनाया था। कुम्हार ने बोधिसत्व को हज़ार सिक्के दिए और कहा, "मेरे पुत्र, राजा तुमसे प्रसन्न हैं। अब से तुम उनकी पुत्रियों के लिए पात्र बनाओगे और मैं उन्हें उनके पास ले जाऊंगा।" उसने सोचा, "यद्यपि मैं यहाँ रहता हूँ, तो भी मेरे लिए पाभवती को देखना असंभव है," और उसने उसे पैसे लौटा दिए और राजा के सेवक टोकरी बनाने वाले के पास गया। उसका शिष्य बनकर उसने पाभवती के लिए ताड़ के पत्तों का पंखा बनाया और उस पर एक सफेद छतरी (राजशाही के प्रतीक के रूप में) चित्रित की। उसने भोज-कक्ष को विषय बनाकर (*13) अन्य अनेक आकृतियों के साथ पाभवती की खड़ी हुई आकृति भी बनाई। टोकरी बनाने वाला कुश की कारीगरी की ये और अन्य वस्तुएँ महल में ले गया। राजा ने उन्हें देखकर पूछा कि इन्हें किसने बनाया है और पहले की तरह ही उस व्यक्ति को एक हजार सिक्के भेंट करते हुए कहा, "बुनाई की ये वस्तुएँ मेरी बेटियों को दे देना।" और उसने वह पंखा जो विशेष रूप से उसके लिए बनाया गया था, पाभवति को दे दिया। इस मामले में भी किसी ने उस पर बनी आकृतियों को नहीं पहचाना, लेकिन पाभवति ने उन्हें देखकर जान लिया कि यह राजा की कारीगरी है और कहा, "जो चाहे ले ले," और क्रोधित होकर उसने पंखा ज़मीन पर फेंक दिया। इस पर सब लोग उस पर हँसे। टोकरी बनाने वाला धन लेकर आया और बोधिसत्व को दे दिया। यह सोचकर कि यह उसके रहने के लिए उपयुक्त स्थान नहीं है, उसने धन टोकरी बनाने वाले को लौटा दिया और राजा के माली के पास जाकर उसका शिष्य बन गया। तरह-तरह की मालाएँ बनाते हुए उसने पाभवति के लिए एक विशेष माला बनाई, जिस पर विभिन्न आकृतियाँ उकेरी गई थीं।माली उन्हें महल ले गया। जब राजा ने उन्हें देखा, तो उन्होंने पूछा कि ये मालाएँ किसने बनाई हैं? "मैंने बनाई हैं, महाराज।" "मुझे यकीन है कि तुमने नहीं बनाईं। किसने बनाईं?" "मेरे शिष्य ने, महाराज।" "वह तुम्हारा शिष्य नहीं, बल्कि तुम्हारा गुरु है। उससे अपना हुनर सीखो। अब से वह मेरी बेटियों के लिए फूलों की मालाएँ बनाएगा, और उसे ये एक हजार सिक्के दे दो।" और उसे सिक्के देते हुए उसने कहा, "ये फूल मेरी बेटियों को दे दो।" और माली ने बोधिसत्व द्वारा विशेष रूप से बनाई गई पुष्पमाला पाभवति को भेंट की। यहाँ भी विभिन्न आकृतियों के बीच अपनी और राजा की छवि देखकर उसने कुशा की कारीगरी पहचान ली और क्रोध में पुष्पमाला को ज़मीन पर फेंक दिया। उसकी सभी बहनें, पहले की तरह, उस पर हँस पड़ीं। माली ने भी एक हजार सिक्के लिए और बोधिसत्व को दे दिए, और उन्हें सारी घटना बताई। उसने सोचा, "यह जगह भी मेरे लिए नहीं है," और माली को पैसे लौटाकर वह राजा के रसोइए के यहाँ प्रशिक्षु के रूप में काम करने चला गया। एक दिन रसोइए राजा के लिए तरह-तरह के व्यंजन ले जाते समय बोधिसत्व को अपने लिए पकाने के लिए मांस की एक हड्डी दे दी। उसने उसे इस तरह पकाया कि उसकी गंध पूरे शहर में फैल गई। राजा ने उसे सूंघा और पूछा कि क्या वह रसोई में और मांस पका रहा है। बोधिसत्व ने कहा, "नहीं महाराज, मैंने अपने प्रशिक्षु को पकाने के लिए मांस की एक हड्डी दी है। अवश्य ही आपको उसी की गंध आ रही होगी।" राजा ने उसे मंगवाया और उसका एक टुकड़ा अपनी जीभ पर रखा, जिससे उसकी सात हजार नसें जागृत हो उठीं और उनमें झनझनाहट पैदा हो गई। राजा को उत्तम भोजन की इतनी लालसा हुई कि उसने बोधिसत्व को एक हजार सिक्के दिए और कहा, "अब से तुम मेरे और मेरी बेटियों के लिए अपने प्रशिक्षु से भोजन पकवाओगे, और मेरा भोजन तुम स्वयं मेरे पास लाओगे, जबकि तुम्हारा प्रशिक्षु उनका भोजन मेरी बेटियों के पास लाएगा।" रसोइया जाकर उसे सब बता दिया। यह सुनकर उसने सोचा, "अब मेरी इच्छा पूरी हो गई: अब मैं पाभवती को देख पाऊंगा।" प्रसन्न होकर उसने रसोइया को हज़ार सिक्के लौटा दिए और अगले दिन उसने राजा के लिए भोजन तैयार करके भेजा और स्वयं पाभवती के महल में, राजा की पुत्रियों के लिए भोजन डंडे पर लादकर चढ़ गया। पाभवती ने उसे बोझ लेकर चढ़ते देखा और सोचा, "यह दासों और दिहाड़ी मजदूरों का काम कर रहा है, जो इसके लिए बिल्कुल भी उपयुक्त नहीं है। लेकिन अगर मैं चुप रही, तो वह सोचेगा कि मैं उसे पसंद करती हूं और कहीं और न जाकर यहीं रुककर मुझे देखता रहेगा। मैं तुरंत उसे गाली-गलौज और अपमान करूंगी और उसे भगा दूंगी, उसे एक पल भी यहां नहीं रहने दूंगी।" इसलिए उसने दरवाजा आधा खुला छोड़ दिया और एक हाथ से पैनल को पकड़कर दूसरे हाथ से कुंडी दबा दी, और उसने दूसरा श्लोक दोहराया:महाराज। "वह आपका शिष्य नहीं, बल्कि आपका गुरु है। उससे अपना हुनर सीखिए।" अब से वह मेरी बेटियों के लिए फूलों की मालाएँ बनाएगा, और उसे ये एक हजार सिक्के दे दो"; और उसे सिक्के देते हुए उसने कहा, "ये फूल मेरी बेटियों को दे दो।" और माली ने पाभवति को वह माला भेंट की जो बोधिसत्व ने विशेष रूप से उसके लिए बनाई थी। यहाँ भी विभिन्न आकृतियों के बीच अपनी और राजा की एक आकृति देखकर उसने कुशा की कारीगरी पहचान ली और क्रोध में आकर माला को ज़मीन पर फेंक दिया। उसकी सभी बहनें, पहले की तरह, उस पर हँसीं। माली ने भी एक हजार सिक्के लिए और बोधिसत्व को देते हुए उन्हें सारी घटना बताई। उन्होंने सोचा, "यह जगह भी मेरे लिए नहीं है," और माली को सिक्के लौटाकर वे राजा के रसोइए के यहाँ प्रशिक्षु के रूप में काम करने चले गए। अब एक दिन रसोइए राजा के लिए तरह-तरह के व्यंजन ले जाते समय बोधिसत्व को अपने लिए पकाने के लिए मांस की एक हड्डी दे दी। उन्होंने उसे इस तरह पकाया कि उसकी गंध पूरे शहर में फैल गई। राजा ने उसे सूंघा और पूछा कि क्या वह रसोई में कुछ और मांस पका रहे थे। "नहीं, महाराज, लेकिन मैंने अपने प्रशिक्षु को पकाने के लिए मांस की एक हड्डी दी थी।" "ज़रूर यही गंध है जो तुम्हें आ रही है।" राजा ने उसे मंगवाया और एक टुकड़ा अपनी जीभ पर रखा, जिससे उसकी सात हज़ार नसें जागृत हो उठीं और उनमें झनझनाहट पैदा हो गई। राजा को उत्तम भोजन की इतनी लालसा थी कि उसने उसे एक हज़ार सिक्के दिए और कहा, "अब से तुम मेरे और मेरी बेटियों के लिए अपने शिष्य से भोजन बनवाओगे, और मेरा भोजन तुम स्वयं मेरे पास

लाओगे, जबकि तुम्हारा शिष्य उनका भोजन मेरी बेटियों के लिए लाएगा।" रसोइया गया और उसने राजा को यह बात बताई। यह सुनकर उसने सोचा, "अब मेरी इच्छा पूरी हो गई: अब मैं पाभवती को देख पाऊँगा।" प्रसन्न होकर उसने रसोइया को एक हज़ार सिक्के लौटा दिए और अगले दिन उसने राजा के लिए भोजन तैयार करके भेजा और स्वयं पाभवती के महल में एक डंडे पर भोजन लेकर चढ़ गया। पाभवती ने उसे बोझ लेकर चढ़ते देखा और सोचा, "यह तो दासों और दिहाड़ी मजदूरों का काम कर रहा है, जो इसके लिए बिलकुल भी उपयुक्त नहीं है।" लेकिन अगर मैं चुप रही, तो वह सोचेगा कि मैं उसे पसंद करती हूँ और कहीं और न जाकर वह यहीं रुका रहेगा, मुझे घूरता रहेगा। मैं तुरंत उसे गाली-गलौज और अपमान करूँगी और उसे भगा दूँगी, उसे यहाँ एक पल भी नहीं रहने दूँगी।" इसलिए उसने दरवाजा आधा खुला छोड़ दिया और एक हाथ से पैनल को पकड़े हुए दूसरे हाथ से कुंडी को दबाते हुए, उसने दूसरी पंक्ति दोहराई:महाराज। "वह आपका शिष्य नहीं, बल्कि आपका गुरु है। उससे अपना हुनर सीखिए।" अब से वह मेरी बेटियों के लिए फूलों की मालाएँ बनाएगा, और उसे ये एक हजार सिक्के दे दो"; और उसे सिक्के देते हुए उसने कहा, "ये फूल मेरी बेटियों को दे दो।" और माली ने पाभवति को वह माला भेंट की जो बोधिसत्व ने विशेष रूप से उसके लिए बनाई थी। यहाँ भी विभिन्न आकृतियों के बीच अपनी और राजा की एक आकृति देखकर उसने कुशा की कारीगरी पहचान ली और क्रोध में आकर माला को ज़मीन पर फेंक दिया। उसकी सभी बहनें, पहले की तरह, उस पर हँसीं। माली ने भी एक हजार सिक्के लिए और बोधिसत्व को देते हुए उन्हें सारी घटना बताई। उन्होंने सोचा, "यह जगह भी मेरे लिए नहीं है," और माली को सिक्के लौटाकर वे राजा के रसोइए के यहाँ प्रशिक्षु के रूप में काम करने चले गए। अब एक दिन रसोइए राजा के लिए तरह-तरह के व्यंजन ले जाते समय बोधिसत्व को अपने लिए पकाने के लिए मांस की एक हड्डी दे दी। उन्होंने उसे इस तरह पकाया कि उसकी गंध पूरे शहर में फैल गई। राजा ने उसे सूंघा और पूछा कि क्या वह रसोई में कुछ और मांस पका रहे थे। "नहीं, महाराज, लेकिन मैंने अपने प्रशिक्षु को पकाने के लिए मांस की एक हड्डी दी थी।" "ज़रूर यही गंध है जो तुम्हें आ रही है।" राजा ने उसे मंगवाया और एक टुकड़ा अपनी जीभ पर रखा, जिससे उसकी सात हज़ार नसें जागृत हो उठीं और उनमें झनझनाहट पैदा हो गई। राजा को उत्तम भोजन की इतनी लालसा थी कि उसने उसे एक हज़ार सिक्के दिए और कहा, "अब से तुम मेरे और मेरी बेटियों के लिए अपने शिष्य से भोजन बनवाओगे, और मेरा भोजन तुम स्वयं मेरे पास लाओगे, जबकि तुम्हारा शिष्य उनका भोजन मेरी बेटियों के लिए लाएगा।" रसोइया गया और उसने राजा को यह बात बताई। यह सुनकर उसने सोचा, "अब मेरी इच्छा पूरी हो गई: अब मैं पाभवती को देख पाऊँगा।" प्रसन्न होकर उसने रसोइया को एक हज़ार सिक्के लौटा दिए और अगले दिन उसने राजा के लिए भोजन तैयार करके भेजा और स्वयं पाभवती के महल में एक डंडे पर भोजन लेकर चढ़ गया। पाभवती ने उसे बोझ लेकर चढ़ते देखा और सोचा, "यह तो दासों और दिहाड़ी मजदूरों का काम कर रहा है, जो इसके लिए बिलकुल भी उपयुक्त नहीं है।" लेकिन अगर मैं चुप रही, तो वह सोचेगा कि मैं उसे पसंद करती हूँ और कहीं और न जाकर वह यहीं रुका रहेगा, मुझे घूरता रहेगा। मैं तुरंत उसे गाली-गलौज और अपमान करूँगी और उसे भगा दूँगी, उसे यहाँ एक पल भी नहीं रहने दूँगी।" इसलिए उसने दरवाजा आधा खुला छोड़ दिया और एक हाथ से पैनल को पकड़े हुए दूसरे हाथ से कुंडी को दबाते हुए, उसने दूसरी पंक्ति दोहराई:यहाँ भी, अनेक आकृतियों के बीच अपनी और राजा की एक आकृति देखकर उसने कुशा की कारीगरी पहचान ली और क्रोधित होकर माला को ज़मीन पर फेंक दिया। उसकी सभी बहनें, पहले की तरह ही, उस पर हँस पड़ीं। माली ने भी हज़ार सिक्के लिए और बोधिसत्व को देते हुए उन्हें सारी घटना बताई। बोधिसत्व ने सोचा, "यह जगह मेरे लिए नहीं है," और माली को पैसे लौटाकर वे राजा के रसोइए के यहाँ प्रशिक्षु के रूप में काम करने चले गए। एक दिन रसोइए राजा के लिए तरह-तरह के व्यंजन ले जाते समय बोधिसत्व को पकाने के लिए मांस की एक हड्डी दे दी। उन्होंने उसे इस तरह पकाया कि उसकी गंध पूरे शहर में फैल गई। राजा ने उसे सूंघा और पूछा कि क्या वह रसोई में और मांस पका रहे हैं। बोधिसत्व ने कहा, "नहीं महाराज, मैंने अपने प्रशिक्षु को पकाने के लिए मांस की एक हड्डी दी थी। शायद यही वह गंध है जो आपको आ रही है।" राजा ने उसे मंगवाया और उसका एक टुकड़ा अपनी जीभ पर रखा, जिससे उसकी सात हजार नसें जागृत हो उठीं और उनमें रोमांच भर गया। राजा को उत्तम भोजन की इतनी लालसा थी कि उसने उसे एक हजार सिक्के दिए और कहा, "अब से तुम मेरे और मेरी बेटियों के लिए अपने शिष्य से भोजन बनवाओगे, और मेरा भोजन तुम स्वयं मेरे पास लाओगे, जबकि तुम्हारा शिष्य उनका भोजन मेरी बेटियों के लिए लाएगा।" रसोइया गया और उसने राजा को यह बात बताई। यह सुनकर राजा ने सोचा, "अब मेरी इच्छा पूरी हो गई: अब मैं पाभवती के दर्शन कर पाऊंगा।" प्रसन्न होकर उसने रसोइया को एक हजार सिक्के लौटा दिए और अगले दिन उसने राजा के लिए भोजन तैयार करके भेजा और स्वयं एक डंडे पर राजा की बेटियों के लिए भोजन लेकर उस महल में चढ़ गया जहाँ पाभवती रहती थी। पभवति ने उसे बोझ लेकर ऊपर चढ़ते देखा और सोचा, "यह तो गुलामों और दिहाड़ी मजदूरों का काम कर रहा है, जो इसके लिए बिलकुल भी उपयुक्त नहीं है। लेकिन अगर मैं चुप रही, तो वह सोचेगा कि मैं उसे पसंद करती हूँ और कहीं और न जाकर यहीं रुककर मुझे देखता रहेगा। मैं तुरंत उसे गाली-गलौज और अपमान करूँगी और उसे भगा दूँगी, उसे यहाँ एक पल भी नहीं रहने दूँगी।" इसलिए उसने दरवाजा आधा खुला छोड़ दिया और एक हाथ से पैनल को पकड़कर दूसरे हाथ से कुंडी दबा दी, और उसने दूसरी पंक्ति दोहराई:यहाँ भी, अनेक आकृतियों के बीच अपनी और राजा की एक आकृति देखकर उसने कुशा की कारीगरी पहचान ली और क्रोधित होकर माला को ज़मीन पर फेंक दिया। उसकी सभी बहनें, पहले की तरह ही, उस पर हँस पड़ीं। माली ने भी हज़ार सिक्के लिए और बोधिसत्व को देते हुए उन्हें सारी घटना बताई। बोधिसत्व ने सोचा, "यह जगह मेरे लिए नहीं है," और माली को पैसे लौटाकर वे राजा के रसोइए के यहाँ प्रशिक्षु के रूप में काम करने चले गए। एक दिन रसोइए राजा के लिए तरह-तरह के व्यंजन ले जाते समय बोधिसत्व को पकाने के लिए मांस की एक हड्डी दे दी। उन्होंने उसे इस तरह पकाया कि उसकी गंध पूरे शहर में फैल गई। राजा ने उसे सूंघा और पूछा कि क्या वह रसोई में और मांस पका रहे हैं। बोधिसत्व ने कहा, "नहीं महाराज, मैंने अपने प्रशिक्षु को पकाने के लिए मांस की एक हड्डी दी थी। शायद यही वह गंध है जो

आपको आ रही है।" राजा ने उसे मंगवाया और उसका एक टुकड़ा अपनी जीभ पर रखा, जिससे उसकी सात हजार नसें जागृत हो उठीं और उनमें रोमांच भर गया। राजा को उत्तम भोजन की इतनी लालसा थी कि उसने उसे एक हजार सिक्के दिए और कहा, "अब से तुम मेरे और मेरी बेटियों के लिए अपने शिष्य से भोजन बनवाओगे, और मेरा भोजन तुम स्वयं मेरे पास लाओगे, जबकि तुम्हारा शिष्य उनका भोजन मेरी बेटियों के लिए लाएगा।" रसोइया गया और उसने राजा को यह बात बताई। यह सुनकर राजा ने सोचा, "अब मेरी इच्छा पूरी हो गई: अब मैं पाभवती के दर्शन कर पाऊंगा।" प्रसन्न होकर उसने रसोइया को एक हजार सिक्के लौटा दिए और अगले दिन उसने राजा के लिए भोजन तैयार करके भेजा और स्वयं एक डंडे पर राजा की बेटियों के लिए भोजन लेकर उस महल में चढ़ गया जहाँ पाभवती रहती थी। पभवति ने उसे बोझ लेकर ऊपर चढ़ते देखा और सोचा, "यह तो गुलामों और दिहाड़ी मजदूरों का काम कर रहा है, जो इसके लिए बिलकुल भी उपयुक्त नहीं है। लेकिन अगर मैं चुप रही, तो वह सोचेगा कि मैं उसे पसंद करती हूँ और कहीं और न जाकर यहीं रुककर मुझे देखता रहेगा। मैं तुरंत उसे गाली-गलौज और अपमान करूँगी और उसे भगा दूँगी, उसे यहाँ एक पल भी नहीं रहने दूँगी।" इसलिए उसने दरवाजा आधा खुला छोड़ दिया और एक हाथ से पैनल को पकड़कर दूसरे हाथ से कुंडी दबा दी, और उसने दूसरी पंक्ति दोहराई:लेकिन मैंने अपने शागिर्द को पकाने के लिए मांस की एक हड्डी दी थी। अवश्य ही, आपको उसी की गंध आ रही होगी।" राजा ने उसे मंगवाया और उसका एक टुकड़ा अपनी जीभ पर रखा, जिससे उनकी सात हजार स्वाद इंद्रियां जागृत हो उठीं और उनमें झनझनाहट पैदा हो गई। राजा को उत्तम भोजन की इतनी लालसा थी कि उन्होंने शागिर्द को एक हजार सिक्के दिए और कहा, "अब से तुम मेरे और मेरी बेटियों के लिए अपने शागिर्द से भोजन बनवाओगे, और मेरा भोजन तुम स्वयं मेरे पास लाओगे, जबकि तुम्हारा शागिर्द उनका भोजन मेरी बेटियों के लिए लाएगा।" रसोइया गया और उसने राजा को यह बात बताई। यह सुनकर राजा ने सोचा, "अब मेरी इच्छा पूरी हो गई: अब मैं पाभवती को देख पाऊंगा।" प्रसन्न होकर उसने रसोइया को एक हजार सिक्के लौटा दिए और अगले दिन उसने राजा के लिए भोजन तैयार करके भेजा और स्वयं एक डंडे पर राजा की बेटियों के लिए भोजन लेकर उस महल में चढ़ गया जहाँ पाभवती रहती थी। पाभवती ने उसे बोझ लेकर ऊपर चढ़ते देखा और सोचा, "यह तो दासों और दिहाड़ी मजदूरों का काम कर रहा है, जो इसके लिए बिल्कुल भी उपयुक्त नहीं है।" लेकिन अगर मैं चुप रही, तो वह सोचेगा कि मैं उसे पसंद करती हूँ और कहीं और न जाकर वह यहीं रुका रहेगा, मुझे घूरता रहेगा। मैं तुरंत उसे गाली-गलौज और अपमान करूँगी और उसे भगा दूँगी, उसे यहाँ एक पल भी नहीं रहने दूँगी।" इसलिए उसने दरवाजा आधा खुला छोड़ दिया और एक हाथ से पैनल को पकड़े हुए दूसरे हाथ से कुंडी को दबाते हुए, उसने दूसरी पंक्ति दोहराई:लेकिन मैंने अपने शागिर्द को पकाने के लिए मांस की एक हड्डी दी थी। अवश्य ही, आपको उसी की गंध आ रही होगी।" राजा ने उसे मंगवाया और उसका एक टुकड़ा अपनी जीभ पर रखा, जिससे उनकी सात हजार स्वाद इंद्रियां जागृत हो उठीं और उनमें झनझनाहट पैदा हो गई। राजा को उत्तम भोजन की इतनी लालसा थी कि उन्होंने शागिर्द को एक हजार सिक्के दिए और कहा, "अब से तुम मेरे और मेरी बेटियों के लिए अपने शागिर्द से भोजन बनवाओगे, और मेरा भोजन तुम स्वयं मेरे पास लाओगे, जबकि तुम्हारा शागिर्द उनका भोजन मेरी बेटियों के लिए लाएगा।" रसोइया गया और उसने राजा को यह बात बताई। यह सुनकर राजा ने सोचा, "अब मेरी इच्छा पूरी हो गई: अब मैं पाभवती को देख पाऊंगा।" प्रसन्न होकर उसने रसोइया को एक हजार सिक्के लौटा दिए और अगले दिन उसने राजा के लिए भोजन तैयार करके भेजा और स्वयं एक डंडे पर राजा की बेटियों के लिए भोजन लेकर उस महल में चढ़ गया जहाँ पाभवती रहती थी। पाभवती ने उसे बोझ लेकर ऊपर चढ़ते देखा और सोचा, "यह तो दासों और दिहाड़ी मजदूरों का काम कर रहा है, जो इसके लिए बिल्कुल भी उपयुक्त नहीं है।" लेकिन अगर मैं चुप रही, तो वह सोचेगा कि मैं उसे पसंद करती हूँ और कहीं और न जाकर वह यहीं रुका रहेगा, मुझे घूरता रहेगा। मैं तुरंत उसे गाली-गलौज और अपमान करूँगी और उसे भगा दूँगी, उसे यहाँ एक पल भी नहीं रहने दूँगी।" इसलिए उसने दरवाजा आधा खुला छोड़ दिया और एक हाथ से पैनल को पकड़े हुए दूसरे हाथ से कुंडी को दबाते हुए, उसने दूसरी पंक्ति दोहराई:

कुसा, दिन-रात तुम्हारे लिए
इस बोझ को उठाना उचित नहीं है।
कृपया जल्दी से कुसावती लौट आइए;
मैं तुम्हारा कुरूप रूप देखने को तैयार नहीं हूँ।
उन्होंने सोचा, "मुझे पाभवति के शब्द मिल गए हैं," और प्रसन्न होकर उन्होंने तीन श्लोक दोहराए:

हे पभावती, तुम्हारी सुंदरता के जादू में बंधा हुआ।
मुझे अपनी जन्मभूमि में कोई खास आकर्षण नहीं दिखता;
मद्दा का सुंदर राज्य हमेशा से मेरा आनंद रहा है।
मैंने अपना मुकुट उतार दिया, ताकि मैं तुम्हारी प्रिय दृष्टि में रह सकूँ।
हे कोमल नेत्रों वाली कन्या, सुंदर पभवती,
यह कौन सा पागलपन है जो मुझ पर हावी हो जाता है?
जिस भूमि पर मेरा जन्म हुआ, उसे भली-भांति जानते हुए,
मैं लगभग पागल होकर पूरी पृथ्वी पर भटकता रहता हूँ।

चमकीले रंग की छाल से ढका हुआ और सुनहरे क्षेत्र से घिरा हुआ,
हे सुंदर कन्या, मुझे तुम्हारा प्रेम चाहिए, न कि कोई सांसारिक सिंहासन।
जब उसने ऐसा कहा, तो उसने सोचा, "मैं उसका अपमान कर रही हूँ, यह सोचकर कि शायद उसमें आक्रोश पैदा हो जाए, लेकिन वह मानो अपने शब्दों से मुझे शांत करने की कोशिश कर रहा है। मान लो अगर वह कहे, 'मैं राजा कुश हूँ,' और मेरा हाथ पकड़ ले, तो उसे कौन रोक सकता है? और कोई हमारी बातें सुन भी सकता है।" इसलिए उसने दरवाजा बंद कर दिया और अंदर से कुंडी लगा दी (*14)। और उसने अपना डंडा उठाया और दूसरी राजकुमारियों के लिए भोजन ले आया। पाभवती ने अपने कुबड़ वाले दास को राजा कुश द्वारा पकाया गया भोजन लाने के लिए भेजा। वह भोजन लेकर आई और बोली, "अब खाओ।" पाभवती ने कहा, "मैं उसका पकाया हुआ भोजन नहीं खाऊँगी। तुम इसे खाओ और जाओ अपने लिए भोजन लाओ, पकाओ और यहाँ लाओ, लेकिन किसी को मत बताना कि राजा कुश आए हैं।" अब से कुबड़ वाला दास राजकुमारी का हिस्सा लाता और खाता था और अपना हिस्सा पाभवती को दे देता था। उस समय राजा कुश, जो पाभवति को देख नहीं पा रहे थे, सोचने लगे, "पता नहीं पाभवति को मुझसे कोई स्नेह है या नहीं। मैं उसकी परीक्षा लूँगा।" इसलिए राजकुमारियों को भोजन देने के बाद, उन्होंने अपना भोजन का बोझ उठाया और बाहर जाकर पाभवति के कक्ष के द्वार पर अपने पैर पटके, जिससे बर्तन आपस में टकराए और वे कराहते हुए ढेर हो गए (*15) और बेहोश हो गए। उनकी कराह सुनकर पाभवति ने अपना द्वार खोला और उन्हें बोझ के नीचे दबा हुआ देखकर सोचा, "यह राजा है, पूरे भारत का प्रमुख शासक, और मेरे लिए दिन-रात पीड़ा सहता है, और अब, इतने कोमल पालन-पोषण के बावजूद, वह अपने साथ लाए भोजन के बोझ तले गिर पड़ा है। पता नहीं वह अभी भी जीवित है या नहीं।" अपने कक्ष से बाहर निकलकर उन्होंने गर्दन झुकाकर उनके मुँह की ओर देखा, उनकी साँसों को देखने के लिए। उन्होंने अपने मुँह में थूक भर लिया और उसे पाभवति पर गिरा दिया। उसने उसका अपमान करते हुए अपने कमरे में प्रवेश किया और आधा खुला दरवाजा छोड़कर खड़ी होकर इस छंद को दोहराया:

दुर्भाग्य (*16) उसी का है, जिसकी इच्छाएं हमेशा अस्वीकृत होती रहती हैं।
हे राजा, आप जिस प्रेम से अभी तक प्रतिदान न किए गए प्रेम को भी आकर्षित करते हैं।
लेकिन क्योंकि वह उससे बेइंतहा प्यार करता था, इसलिए चाहे वह उसे कितना भी अपमानित और गाली दे, उसने कोई नाराजगी नहीं दिखाई बल्कि इस छंद को दोहराया:

जो कोई भी अपनी प्रिय वस्तु को प्राप्त कर लेता है, चाहे वह प्रिय हो या अप्रिय,
हम केवल सफलता की प्रशंसा करते हैं, हार तो दुख का कारण है।
जब वह अभी भी बोल ही रहा था, तब उसने बिना रुके दृढ़ स्वर में कहा, मानो उसे भगा देने का इरादा रखती हो, और इस छंद को दोहराया:

साथ ही चट्टान की सतह को कुदाल की तरह भंगुर लकड़ी (*17) से खोदना,
या फिर किसी जाल में हवा को पकड़ लें, जैसे अनिच्छुक नौकरानी को आकर्षित करना।
यह सुनकर राजा ने तीन छंद दोहराए:

तुम पत्थर की तरह कठोर हृदय के हो, लेकिन बाहर से इतने कोमल दिखते हो।
हालांकि मैं आपके प्यार के लिए मुकदमा करने आया हूं, फिर भी मेरा स्वागत नहीं किया गया।
जब तुम मेरे प्रति तिरछी नज़रें डालती हो, हे अभिमानी महिला, उदास चेहरे के साथ,
तो फिर मैं शाही मद्दा के महलों में एक रसोइया के अलावा कुछ नहीं हूँ।
लेकिन हे रानी, यदि आप दयावश मुझ पर मुस्कुरा दें,
अब मैं खाना नहीं पकाऊँगा, मैं एक बार फिर कुसावती का स्वामी हूँ।
उसकी बातें सुनकर उसने सोचा, "वह अपनी हर बात में बहुत हठी है। मुझे उसे यहाँ से भगाने के लिए कोई झूठ गढ़ना होगा," और उसने यह पंक्ति कही:

यदि ज्योतिषी सच बोलते थे, तो वे यही बात सच कहते थे:
"तुम्हारे सात टुकड़े कर दिए जाएं, इससे पहले कि तुम राजा कुशा से विवाह करो।"
यह सुनकर राजा ने उसका खंडन करते हुए कहा, "हे देवी, मैंने भी अपने राज्य में ज्योतिषियों से परामर्श लिया था और उन्होंने भविष्यवाणी की थी कि सिंह स्वर वाले राजा कुश के सिवा आपके लिए कोई और पति नहीं है, और अपने ज्ञान से प्राप्त संकेतों के आधार पर मैं भी यही कहता हूँ," और उसने एक और श्लोक दोहराया:

यदि मैंने और यहां मौजूद अन्य भविष्यवक्ताओं ने सच कहा है,
मुझे बचाओ, राजा कुसा, तुम किसी और को अपना स्वामी नहीं मानोगे।

उसकी बातें सुनकर उसने कहा, "उसे शर्मिंदा नहीं किया जा सकता। मुझे क्या फर्क पड़ता है कि वह भाग जाए या न भागे?" और दरवाजा बंद करके उसने खुद को दिखाने से इनकार कर दिया। और वह अपना बोझ उठाकर नीचे चला गया। उस दिन से वह उसे देख भी नहीं सका और अपने रसोइए के काम से बुरी तरह तंग आ गया। नाश्ते के बाद वह लकड़ियाँ काटता, बर्तन धोता और अपने डंडे पर पानी लाता, और फिर अनाज के ढेर पर लेटकर आराम करता। सुबह जल्दी उठकर वह चावल की दलिया और इसी तरह की चीजें पकाता, फिर खाना परोसता और पाभवति के प्रति अपने तीव्र प्रेम के कारण यह सब कष्ट सहता। एक दिन उसने कुबड़ी को रसोई के दरवाजे से गुजरते देखा और उसे आवाज़ दी। पाभवति के डर से वह उसके पास आने की हिम्मत नहीं कर पाई, बल्कि जल्दी में होने का नाटक करते हुए आगे बढ़ गई। इसलिए वह जल्दी से उसके पास दौड़ा और चिल्लाया, "कुबड़ी।" वह मुड़ी और रुक गई, और बोली, "कौन है यहाँ? मैं तुम्हारी बात नहीं सुन सकती।" फिर उसने कहा, "तुम और तुम्हारी प्रेमिका दोनों बहुत हठी हो। तुम्हारे पास इतने लंबे समय से रहने के बावजूद, हमें उसकी सेहत के बारे में कोई खबर नहीं मिल पा रही है।" उसने कहा, "क्या आप मुझे कोई उपहार देंगे?" उसने उत्तर दिया, "अगर मैं ऐसा करूँ, तो क्या तुम पाभवति को मनाकर मुझे उसके सामने ला सकोगी?" उसके सहमत होने पर उसने कहा, "अगर तुम ऐसा कर सको, तो मैं तुम्हारा कुबड़ापन ठीक कर दूँगा और तुम्हारे गले में एक आभूषण दूँगा," और उसे लुभाते हुए उसने पाँच श्लोक कहे:

मैं तुम्हें सोने का हार दूंगा।
कुसावती पहुँचने पर,
यदि सुडौल अंगों वाली (*19) पभावती
उसे बस मेरी तरफ देखना चाहिए।
मैं तुम्हें सोने का हार दूंगा।
कुसावती पहुँचने पर,
यदि सुडौल अंगों वाली पभावती
उन्हें बस मुझसे बात करने की कृपा करनी चाहिए।
मैं तुम्हें सोने का हार दूंगा।
कुसावती पहुँचने पर,
यदि सुडौल अंगों वाली पभावती
उसे बस मुझ पर मुस्कुराना चाहिए।
मैं तुम्हें सोने का हार दूंगा।
कुसावती पहुँचने पर,
यदि सुडौल अंगों वाली पभावती
मुझे देखकर उन्हें खुशी से हंसना चाहिए।
मैं तुम्हें सोने का हार दूंगा।
कुसावती पहुँचने पर,
यदि सुडौल अंगों वाली पभावती
मुझे प्यार से स्पर्श करना चाहिए।

उनकी बात सुनकर उसने कहा, "महाराजा, चले जाइए: कुछ ही दिनों में मैं उसे आपके हवाले कर दूंगी। आप देखेंगे कि मैं कितनी शक्तिशाली हो सकती हूँ।" ऐसा कहकर उसने अपनी कार्ययोजना तय कर ली और पाभवति के पास जाकर उसने ऐसा दिखाया जैसे वह उसका कमरा साफ कर रही हो, और एक भी गंदगी का टुकड़ा न छोड़ते हुए, यहाँ तक कि अपने जूते भी उतारकर, उसने पूरे कमरे की सफाई की। फिर उसने द्वार पर (दहलीज से काफी दूर रहते हुए) अपने लिए एक ऊँची चौकी लगाई और पाभवति के लिए एक छोटी सी चौकी पर चादर बिछाकर कहा, "आओ, मेरी प्रिय, मैं तुम्हारे सिर में जूँ ढूँढती हूँ," और उसे वहाँ बिठाकर उसका सिर अपनी गोद में रखवाकर, थोड़ा सा खुजलाते हुए और यह कहते हुए, "अरे! यहाँ तो बहुत सारी जूँ हैं," उसने अपने सिर से कुछ जूँ निकालकर राजकुमारी के सिर पर रख दीं, और उस महान सत्ता के प्रति स्नेह भरे शब्दों में इस श्लोक में उनकी स्तुति की:

इस शाही महिला को कुसा को एक बार फिर देखकर कोई खुशी नहीं होती।
हालांकि, उसे कुछ भी नहीं चाहिए, इसलिए वह एक साधारण किराए के व्यक्ति के वेतन पर रसोइया के रूप में काम करता है।
पभवति कुबड़ी पर क्रोधित हो गई। इसलिए बूढ़ी औरत ने उसकी गर्दन पकड़कर उसे कमरे के अंदर धकेल दिया, और खुद बाहर रहकर उसने दरवाजा बंद कर दिया और दरवाजे को खींचने वाली रस्सी को पकड़कर खड़ी हो गई (*20)। पभवति उस तक पहुँचने में असमर्थ होकर दरवाजे के पास खड़ी रही, उसे कोसती रही और एक और श्लोक बोला:

यह कुबड़ा गुलाम निःसंदेह,
ऐसा शब्द बोलने के लिए,

उसकी जीभ काट देनी चाहिए
सबसे तेज धार वाली तलवार से।

तो कुबड़ा भालू नीचे लटकती रस्सी को पकड़े खड़ा रहा और बोला, "अरे निकम्मे, बदतमीज़ प्राणी, तेरे सुंदर रूप से किसी का क्या भला होगा? क्या हम तेरे सौंदर्य पर पलकर जीवित रह सकते हैं?" और ऐसा कहते हुए उसने बोधिसत्व के गुणों का बखान किया, कुबड़े भालू की कर्कश आवाज में तेरह छंदों में चिल्लाते हुए।

हे पाभवति, उसका आदर उसके बाहरी रूप या कद से मत करो।
उसकी महिमा महान है, इसलिए वही करो जो उसकी दृष्टि में प्रसन्न करे।
हे पाभवति, उसका आदर उसके बाहरी रूप या कद से मत करो।
उसके पास अपार धन है, इसलिए वही करो जो उसकी दृष्टि में प्रसन्न करे।
हे पाभवति, उसका आदर उसके बाहरी रूप या कद से मत करो।
उनकी शक्ति सर्वोपरि है, इसलिए वही करो जो उनकी दृष्टि में प्रसन्न करे।
हे पाभवति, उसका आदर उसके बाहरी रूप या कद से मत करो।
उनका शासन सर्वोपरि है, इसलिए वही करो जो उनकी दृष्टि में प्रसन्न करे।
हे पाभवति, उसका आदर उसके बाहरी रूप या कद से मत करो।
वह महान राजा है, इसलिए वही करो जो उसकी दृष्टि में प्रसन्न हो।
हे पाभवति, उसका आदर उसके बाहरी रूप या कद से मत करो।
उसकी आवाज सिंह समान है, इसलिए वही करो जो उसकी दृष्टि में प्रसन्न करे।
हे पाभवति, उसका आदर उसके बाहरी रूप या कद से मत करो।
उसकी वाणी स्पष्ट है, इसलिए वही करो जो उसकी दृष्टि में प्रसन्न करे।
हे पाभवति, उसका आदर उसके बाहरी रूप या कद से मत करो।
उनकी आवाज गहरी है, इसलिए वही करो जो उन्हें अच्छा लगे।
हे पाभवति, उसका आदर उसके बाहरी रूप या कद से मत करो।
उनकी वाणी मधुर है, इसलिए वही करो जो उनकी दृष्टि में प्रसन्न करे।
हे पाभवति, उसका आदर उसके बाहरी रूप या कद से मत करो।
उनकी आवाज मधुर है, इसलिए वही करो जो उन्हें अच्छा लगे।
हे पाभवति, उसका आदर उसके बाहरी रूप या कद से मत करो।
उनकी सौ कलाएँ हैं, इसलिए वही करो जो उनकी दृष्टि में प्रसन्न करे।
हे पाभवति, उसका आदर उसके बाहरी रूप या कद से मत करो।
वह एक योद्धा राजा है, इसलिए वही करो जो उसकी दृष्टि में प्रसन्न करे।
हे पाभवति, उसका आदर उसके बाहरी रूप या कद से मत करो।
यह राजा कुसा है, इसलिए वही करो जो उसकी दृष्टि में प्रसन्न हो।

उसकी बात सुनकर पाभवति ने कुबड़ वाले को धमकाते हुए कहा, "कुबड़ वाले, तू बहुत जोर से दहाड़ रहा है। अगर मैंने तुझे पकड़ लिया, तो तुझे बता दूँगी कि तेरी एक रखैल है।" उसने उत्तर दिया, "तेरे प्रति दया भाव से मैंने तेरे पिता को राजा कुश के आगमन की सूचना नहीं दी। खैर, आज मैं राजा को बता दूँगी," और ऊँची आवाज़ में बोलकर उसने उसे डरा दिया। पाभवति ने यह सोचकर कि कोई सुन न ले, कुबड़ वाले को शांत कर दिया। सात महीने तक कठोर बिस्तर और घटिया भोजन से तंग आकर बोधिसत्व को पाभवति का दर्शन न हो पाने पर उसने सोचा, "मुझे उसकी क्या आवश्यकता है? यहाँ सात महीने रहने के बाद भी मैं उसका दर्शन तक नहीं कर पाया। वह बहुत कठोर और निर्दयी है। मैं जाकर अपने माता-पिता से मिलूँगा।" इसी क्षण इंद्र ने इस मामले पर विचार करते हुए पाया कि कुश कितना असंतुष्ट है, और उसने सोचा, "सात महीने बाद भी वह पाभवति को देख तक नहीं पाया। मैं उसे पाभवति से मिलवाने का कोई उपाय ढूँढूँगा।" इसलिए उसने राजा मद्दा के दूतों को यह कहकर सात राजाओं के पास भेजा कि, "पभवति ने राजा कुश को त्याग दिया है और घर लौट आई है। तुम सब आओ और उससे विवाह करो।" उसने यही संदेश सातों राजाओं को अलग-अलग भेजा। वे सब अपने साथ बड़ी संख्या में अनुयायियों को लेकर नगर में पहुँचे, और एक-दूसरे के आने का कारण नहीं जानते थे। उन्होंने एक-दूसरे से पूछा, "तुम यहाँ क्यों आए हो?" और जब उन्हें स्थिति का पता चला, तो वे क्रोधित हो गए और बोले, "क्या वह अपनी बेटी का विवाह हम सातों से करेगा? देखो उसका व्यवहार कितना बुरा है। वह हमारा उपहास करते हुए कहता है, "उससे विवाह करो।" या तो वह पभवति का विवाह हम सातों से करे, या फिर हमसे युद्ध करे।" और उन्होंने राजा मद्दा को यह संदेश भेजा और नगर को सशस्त्र कर दिया। संदेश सुनकर राजा मद्दा घबरा गया और अपने मंत्रियों से सलाह मशवरा करते हुए बोला, "अब हम क्या करें?" तब उनके मंत्रियों ने उत्तर दिया, "महाराज, ये सात राजा पाभवति को लेने आए हैं। यदि आप उसे देने से इनकार करते हैं, तो वे दीवार तोड़कर नगर में प्रवेश करेंगे और

हमें नष्ट करने के बाद आपके राज्य पर कब्जा कर लेंगे। जब तक दीवार अक्षुण्ण खड़ी है, तब तक हम पाभवति को उनके पास भेज दें"; और उन्होंने इस श्लोक को दोहराया:

वे गर्वित हाथियों की तरह कवच पहने खड़े हैं।
इससे पहले कि वे हमारी दीवारों को रौंद डालें, नौकरानी को जल्दी से भेज दो।
यह सुनकर राजा ने कहा, "यदि मैं पाभवति को उनमें से किसी के भी पास भेज दूँ, तो बाकी सब मुझसे युद्ध करेंगे। उसे उनमें से किसी को भी सौंपना असंभव है। पूरे भारत के प्रमुख राजा को हराने के बाद, उसे घर लौटने का उचित पुरस्कार मिले। मैं उसे मार डालूँगा और उसके शरीर के सात टुकड़े काटकर एक-एक टुकड़ा सातों राजाओं को भेज दूँगा।" ऐसा कहकर उसने एक और श्लोक दोहराया:

मेरी इच्छा है कि पाभवति के सात टुकड़े कर दिए जाएं।
इन सात राजाओं में से प्रत्येक के लिए एक-एक टुकड़ा, जो उसके पिता को मारने आए थे।
उनकी यह बात महल में हर जगह फैल गई। उनकी परिचारिकाएँ आईं और पाभवति को बताया, "लोग कहते हैं कि राजा तुम्हें सात टुकड़ों में काटकर सात राजाओं के पास भेज देंगे।" वह अत्यंत भयभीत हो गईं और अपनी सीट से उठकर अपनी बहनों के साथ अपनी माता के राजकक्ष में चली गईं।

मास्टर ने मामले को स्पष्ट करते हुए कहा:

सांवले रंग की होने के बावजूद आकर्षक दिखने वाली रानी उठी और रेशमी वस्त्र पहने अपनी दासियों के समूह के आगे बढ़ी, जो बहुत रो रही थीं।

वह अपनी मां के सामने आई और उन्हें प्रणाम करते हुए फूट-फूटकर रोने लगी:

पाउडर से सुशोभित यह चेहरा, यहाँ एक शीशे में प्रतिबिंबित हो रहा है।
हाथीदांत का हैंडल बड़ी खूबसूरती से लगा हुआ था, कितना आकर्षक था वो!
हर पंक्ति में मासूमियत और पवित्रता का भाव व्यक्त किया गया है,
किसी एकांत जंगल में योद्धा राजकुमारों द्वारा ठुकराया गया वह जल्द ही विश्राम करेगा।
बालों की ये काली लटें, राजसी ढंग से कुंडलित,
स्पर्श करने में कोमल और उत्तम चंदन के तेल से सुगंधित।
श्मशान भूमि भले ही ढकी हुई हो, गिद्ध जल्द ही उसे ढूंढ लेंगे।
और वे अपने पंजों से चीरते-फाड़ते हैं और हवा में बिखेर देते हैं।
ये भुजाएँ जिनकी उंगलियों के सिरे तांबे की तरह गहरे लाल रंग से रंगे हुए हैं,
सर्वोत्तम चंदन के तेल में नहाया हुआ और मुलायम रुई से ढका हुआ,
अलग-थलग कर दिया गया और अभिमानी राजाओं द्वारा किसी एकांत जंगल में फेंक दिया गया,
एक भेड़िया जहां भी छिपना चाहेगा, उसे पकड़कर ले जाएगा।
मेरे स्तन खजूर की तरह हैं जो पकने पर ताड़ के पेड़ों पर फूल जाते हैं।
चंदन की सुगंध से महकते हुए काशी के पुरुष मोहित हो गए:
मुझे लगता है कि जल्द ही कोई सियार उन पर झपट्टा मारेगा और उन्हें खींचेगा।
ठीक वैसे ही जैसे एक छोटा बच्चा अपनी माँ की छाती से लिपटता है।
मेरी ये कूल्हे, सुगठित और चौड़ी, एक भरपूर सांचे में ढली हुई,
शुद्ध सोने से बनी चमकीले रंग की कमरबंद से घिरी हुई,
अलग-थलग कर दिया गया और अभिमानी राजाओं द्वारा किसी एकांत जंगल में फेंक दिया गया,
एक भेड़िया जहां भी छिपना चाहेगा, उसे पकड़कर ले जाएगा।
कुत्ते, भेड़िये, सियार और ऐसे ही अन्य जानवर शिकारी जानवर कहलाते हैं।
यदि एक बार वे पाभवति का सेवन कर लें, तो उन्हें कोई क्षय नहीं हो सकता।
क्या दूर-दूर से आए योद्धा राजाओं को आपकी बेटी के शरीर को मारने की अनुमति दी जानी चाहिए?
मेरी हड्डियों से विनती है, उन्हें किसी गुप्त तरीके से आग में जला दो।
फिर उसके पास एक बगीचा बनाएं और उसमें कनिकारा का पेड़ लगाएं।
और जब सर्दियों के अंत में यह खिलता है, माँ, मुझे याद करते हुए,
फूल की ओर इशारा करते हुए कहिए, "बिल्कुल ऐसी ही थीं प्यारी पभवती।"

इस प्रकार, मृत्यु के भय से भयभीत होकर वह अपनी माता के समक्ष व्यर्थ ही विलाप करती रही। तब मद्दा राजा ने आदेश दिया कि जल्लाद अपनी कुल्हाड़ी और तख्ते के साथ आए (*21)। उसके आने की खबर पूरे महल में फैल गई। उसके आगमन की सूचना पाकर महारानी माता अपने सिंहासन से उठीं और दु:ख से व्याकुल होकर राजा के समक्ष उपस्थित हुईं।

मास्टर ने मामले को स्पष्ट करते हुए कहा:

घातक घेरे के भीतर रखी तलवार और ढाल को देखकर, देवी के समान सुंदर राजसी महिला उठी और राजा की तलाश करने लगी।

तब रानी ने यह श्लोक कहा:

इसी तलवार से मद्दा राजा अपनी सुंदर पुत्री की हत्या करेगा।
और उसके क्षत-विक्षत अंगों को टुकड़ों में बांटकर प्रतिद्वंद्वी सरदारों के पास शिकार के रूप में भेज दिया जाता था।
राजा ने उसे शांत करने का प्रयास किया और कहा, "हे देवी, आप ये क्या कह रही हैं? आपकी पुत्री ने भारत के सर्वोपरि राजा को उसकी कुरूपता का बहाना बनाकर ठुकरा दिया और मृत्यु को अपना भाग्य मानकर, जिस रास्ते से वह गई थी, उस पर उसके पैरों के निशान पूरी तरह मिटने से पहले ही घर लौट आई। अब उसे अपनी सुंदरता से उपजे ईर्ष्या के परिणाम भुगतने दो।" राजा की बात सुनकर रानी अपनी पुत्री के पास गई और विलाप करते हुए बोली:

आपने मेरी बात नहीं सुनी, जब मैंने आपको अपने भले के लिए सलाह दी थी।
आज तुम यमलोक में जाओगे, तुम्हारा शरीर रक्त से लथपथ होगा।
हर इंसान का यही हश्र हुआ, या इससे भी बदतर अंत हुआ।
जो व्यक्ति अच्छी सलाह को अनसुना कर देता है, वह मित्र की चेतावनियों की भी उपेक्षा करता है।
यदि आज कोई वीर राजकुमार आपके स्वामी से विवाह करे,
सोने और रत्नों से सजे क्षेत्र में, कुसा की भूमि में जन्मा,
आप बहुत सारे दोस्तों के साथ यमलोक नहीं गए होंगे।
जब ढोल बजते हैं और हाथियों की तेज चिंघाड़ गूंजती है,
राजमहलों में, इस दुनिया में इससे अधिक आनंद और कहाँ मिल सकता है?
जब घोड़े हिनहिनाते हैं (*22) और संगीतकार राजाओं के लिए कोई उदास गीत बजाते हैं,
राजमहलों में इस तरह के आनंद के साथ भला तुलना करने लायक क्या हो सकता है?
जब मोर और बगुले की चीखों से दरबार गूंज उठता है,
और कोयल की पुकार, मैं निवेदन करता हूँ, ऐसी खुशी और कहाँ मिल सकती है?
इन सभी छंदों में उससे इस प्रकार बात करने के बाद उसने सोचा, "काश आज राजा कुश यहाँ होते, तो वे इन सात राजाओं को भगा देते और मेरी बेटी को उसके कष्टों से मुक्त करने के बाद उसे अपने साथ ले जाते," और उसने इस छंद को दोहराया:

वह कहाँ है जो शत्रु राज्यों को कुचल देता है और अपने दुश्मनों को वश में कर लेता है?
कुसा, जो श्रेष्ठ और बुद्धिमान हैं, हमें हमारे दुखों से मुक्ति दिलाएंगे।
तब पाभवति ने सोचा, "मेरी मातृभाषा कुश की स्तुति करने के लिए पर्याप्त नहीं है। मैं उन्हें बता दूँगी कि वह यहाँ रसोइया का काम करते हुए रह रहे हैं," और उन्होंने यह श्लोक दोहराया:

वह विजेता जो अपने सभी शत्रुओं को कुचल देता है, देखो! वह यहाँ है;
कुसा, तुम इतने महान और इतने बुद्धिमान हो कि तुम्हारे सभी शत्रु मेरे लिए जान देने को तैयार हो जाएंगे।
तब उसकी माँ ने सोचा, "वह मृत्यु के भय से भयभीत है और बड़बड़ा रही है," और फिर यह छंद बोला:

क्या तुम पागल हो गए हो, या मूर्ख की तरह यूं ही बेतरतीब ढंग से बोल रहे हो?
अगर कुसा वापस आ गया है, तो कृपया हमें इसके बारे में क्यों नहीं बताया?
यह सुनकर पभवति ने सोचा, "मेरी माँ मेरी बात पर विश्वास नहीं करती। उन्हें नहीं पता कि वह लौट आया है और सात महीने से यहाँ रह रहा है। मैं उन्हें यह साबित कर दूँगी"; और अपनी माँ का हाथ पकड़कर उसने खिड़की खोली और हाथ फैलाकर उसकी ओर इशारा करते हुए यह श्लोक दोहराया:

अरे माँ, रसोइए को देखो, कमर को अच्छे से कस कर रखा है!
वह अपने बर्तनों को धोने के लिए झुकता है, जहाँ शाही युवतियाँ निवास करती हैं।

तब कुशा ने सोचा, “आज मेरी दिली इच्छा पूरी होगी। सचमुच, पाभवति मृत्यु के भय से भयभीत है और मेरे यहाँ आने की खबर सबको बता देगी। मैं अपने बर्तन धोकर रख देता हूँ”; और वह पानी लेकर आया और बर्तन धोने लगा। तब उसकी माँ ने उसे समझाते हुए यह श्लोक कहा:

क्या तुम नीच कुल की हो या फिर शाही खानदान की दासी की सेवा करोगी?
क्या किसी गुलाम को अपना सच्चा प्यार बनाना, मद्दा के लिए घोर अपमान की बात है?
तब पाभवति ने सोचा, "मुझे लगता है मेरी माँ को यह नहीं पता कि वह मेरे लिए ही इस तरह यहाँ रह रहा है," और उसने एक और श्लोक कहा:

मैं नीच जाति का नहीं हूँ, न ही मैं अपने शाही नाम को कलंकित करूँगा, मैं शपथ लेता हूँ।
आपको शुभकामनाएं, वह कोई दास नहीं बल्कि राजा ओक्काका (इक्ष्वाकु) का उत्तराधिकारी है।
और अब उनकी प्रसिद्धि की प्रशंसा करते हुए उन्होंने कहा:

वह बीस हजार ब्राह्मणों का भोजन कराता है, किसी का गुलाम नहीं, मैं शपथ लेता हूँ।
वहां खड़े हुए आपको ओक्काका (इक्ष्वाकु) के राजपुत्र ही दिखाई दे रहे हैं।
वह निश्चित रूप से बीस हजार हाथियों को जुताई में बांधता है, कोई गुलाम नहीं, मैं कसम खाता हूँ।
वहां खड़े हुए आपको ओक्काका (इक्ष्वाकु) के राजपुत्र ही दिखाई दे रहे हैं।
वह बीस हजार घोड़ों को जोतता है, कोई गुलाम नहीं, मैं कसम खाता हूँ।
वहां खड़े हुए आपको ओक्काका (इक्ष्वाकु) के राजपुत्र ही दिखाई दे रहे हैं।
वह बीस हजार रथों को जुताता है, किसी को गुलाम नहीं बनाता, मैं कसम खाता हूँ।
वहां खड़े हुए आपको ओक्काका (इक्ष्वाकु) के राजपुत्र ही दिखाई दे रहे हैं।
वह निश्चित रूप से बीस हजार शाही बैलों को जुए में बांधता है, कोई गुलाम नहीं, मैं कसम खाता हूँ।
वहां खड़े हुए आपको ओक्काका (इक्ष्वाकु) के राजपुत्र ही दिखाई दे रहे हैं।
वह निश्चित रूप से बीस हजार शाही गायों का दूध दुहता है, कोई गुलाम नहीं, मैं कसम खाता हूँ।
वहां खड़े हुए आपको ओक्काका (इक्ष्वाकु) के राजपुत्र ही दिखाई दे रहे हैं।
इस प्रकार उसने छह श्लोकों में उस महान सत्ता की महिमा का गुणगान किया। तब उसकी माता ने सोचा, "वह तो बड़े विश्वास से बोल रही है। ऐसा ही होगा," और उस पर विश्वास करके वह राजा के पास गई और उसे सारी कहानी सुनाई। राजा बड़ी जल्दी से पाभवति के पास आया और पूछा, "क्या यह सच है कि राजा कुश आ गए हैं?" "जी, पिताजी। आज से सात महीने हो गए हैं कि वह आपकी बेटियों के लिए रसोइया का काम कर रहे हैं।" उस पर विश्वास न करते हुए उसने कुबड़ी से पूछताछ की और उससे सारी बात सुनकर उसने अपनी बेटी को फटकारा और यह श्लोक बोला:

जैसे हाथी मेंढक का रूप धारण कर लेता है,
 जब यह सर्वशक्तिमान राजकुमार यहाँ आया,
यह आपकी गलती थी और आपने गलत सलाह दी थी।
 इसे अपने माता-पिता से छिपाना, प्रिये।
इस प्रकार उन्होंने अपनी पुत्री को फटकारा और फिर शीघ्रता से कुशा चले गए तथा औपचारिक अभिवादन और अभिवादन के बाद, अपनी गलती स्वीकार करते हुए, उन्होंने यह श्लोक दोहराया:

इसमें हम पहचानने में असफल रहे
महाराज, इस वेश में,
यदि, महाराज, हमने आपको ठेस पहुंचाई हो,
हम विनम्रतापूर्वक क्षमा की प्रार्थना करते हैं।
यह सुनकर उस महान प्राणी ने सोचा, "यदि मैं उससे कठोर शब्दों में बात करूँ तो उसका हृदय तुरंत टूट जाएगा। मैं उससे सांत्वना के शब्द बोलूँगा"; और अपने थालों के बीच खड़े होकर उन्होंने यह श्लोक कहा:

मेरे लिए रसोई के नौकर की भूमिका निभाना बहुत गलत था, मैं यह स्वीकार करता हूं।
आप निश्चिंत रहें, इसमें आपकी कोई गलती नहीं थी कि मैं अनजान था।
इस प्रकार स्नेहपूर्ण शब्दों से संबोधित किए जाने के बाद, राजा महल में चढ़े और पाभवती को बुलाकर उनसे क्षमा मांगने के लिए कहा, और उन्होंने यह श्लोक कहा:

जाओ, भोली लड़की, महान राजा कुसा से क्षमा पाने की लालसा रखो।
उसका क्रोध शांत हो गया, शायद वह प्रसन्न हो, शायद उसने आपकी जान बचा ली हो।
अपने पिता की बात सुनकर वह अपनी बहनों और दासियों के साथ उनके पास गई। जब पिता अपने मजदूर के वेश में खड़े थे, तो उन्होंने उसे अपनी ओर आते देखा और सोचा, "आज मैं पाभवति का अभिमान चूर-चूर कर दूंगा और उसे कीचड़ में अपने पैरों तले गिरा दूंगा।" और वहाँ लाया सारा पानी ज़मीन पर उंडेलकर उन्होंने खलिहान के बराबर जगह को कीचड़ से भर दिया। पाभवति पास आई और उनके पैरों पर गिर पड़ी और कीचड़ में लोटते हुए उनसे क्षमा मांगी।

गुरु ने बात स्पष्ट करने के लिए यह श्लोक कहा:

देवी समान पाभवति ने अपने पिता के वचन का पालन किया: उन्होंने नम्र सिर झुकाकर पराक्रमी स्वामी कुश के चरणों को थाम लिया।

फिर उसने ये पंक्तियाँ बोलीं:

हे राजा, आपसे अलग होकर मेरे दिन और रात (*23) बीत गए हैं:
देखिए, मैं आपके चरणों को चूमने के लिए झुकता हूँ। कृपया क्रोध छोड़ दें।
मैं आपसे वादा करता हूँ, यदि आप मेरी बात ध्यान से सुनें,
मैं अपने किसी भी कार्य से फिर कभी भी आपको नाराज नहीं करूंगा, मेरे प्रभु।
लेकिन यदि तुम मेरी प्रार्थना को अस्वीकार कर दोगे, तो मेरे पिता तुम्हें मार डालेंगे।
और उसने अपनी बेटी को, अंग-अंग करके, योद्धा राजाओं के शिकार के रूप में भेज दिया।
यह सुनकर राजा ने सोचा, "अगर मैं उससे कहूँ, 'यह तुम्हें देखना है,' तो उसका दिल टूट जाएगा। मैं उसे सांत्वना के शब्द कहूँगा," और उसने कहा:

हे सुंदर महिला, मैं आपकी बात मानूंगा, जहाँ तक मेरे लिए संभव होगा;
मेरे हृदय में कोई क्रोध नहीं है। भय न करो, पभवति।
सुनो, हे राजसी कन्या, मैं भी अपने वादे को पूरा करता हूँ;
मैं भविष्य में कभी भी अपने किसी भी कार्य से किसी को ठेस नहीं पहुंचाऊंगा।
हे सुंदरी, तुम्हारे प्रेम के लिए मैं अनेकों दुःख सहने को तैयार हूँ।
और पाभवती से विवाह करने के लिए कई मद्दा सरदारों को मार डाला।
कुसा, स्वर्ग के राजा इंद्र की एक सेविका को अपने पास देखकर राजसी गर्व से फूल गया और सोचने लगा, "जब तक मैं जीवित हूँ, क्या कोई और आकर मेरी दुल्हन को ले जाएगा?" और महल के प्रांगण में सिंह की तरह उत्तेजित होकर उसने कहा, "इस नगर में रहने वाले सभी लोग मेरे आने की खबर सुनें," और नाचते-नाचते, चिल्लाते और ताली बजाते हुए उसने कहा, "अब मैं उन्हें जीवित पकड़ लूँगा, जाकर उनसे कहूँगा कि मेरे रथों में घोड़े लगाएँ," और उसने निम्नलिखित श्लोक दोहराया:

जाओ, जल्दी से मेरे प्रशिक्षित घोड़ों को कई रंगीन रथों से जोड़ दो।
और मुझे देखो, मैं साहसपूर्वक तेजी से आगे बढ़ता हूँ, दुश्मनों को दूर-दूर तक तितर-बितर करने के लिए।
अब उसने पाभवति को विदाई देते हुए कहा, "तुम्हारे शत्रुओं को पकड़ना मेरी ज़िम्मेदारी है। तुम जाओ, स्नान करो, सज-धज कर अपने महल में जाओ।" मद्दा के राजा ने अपने सलाहकारों को उसकी सुरक्षा के लिए भेजा। उन्होंने रसोई के द्वार पर उसके चारों ओर एक घेरा लगा दिया और उसके लिए नाई का इंतज़ाम किया। जब उसकी दाढ़ी कट गई, उसके बाल धो दिए गए और वह अपने पूरे वैभव के साथ अपने अंगरक्षकों से घिरा हुआ था, तब उसने कहा, "मैं महल में जाऊंगा।" वहाँ से चारों ओर देखते हुए उसने ताली बजाई, और जहाँ भी उसकी नज़र गई, धरती काँप उठी, और उसने पुकार कर कहा, "अब देखो मेरी शक्ति कितनी महान है।"

विषय को स्पष्ट करने के लिए गुरु ने निम्नलिखित श्लोक कहा:

राजा मद्दा के दरबार की महिलाओं ने उसे वहाँ खड़े देखा।
जैसे कोई दहाड़ता हुआ शेर, वह अपने दोनों हाथों से हवा में प्रहार करता है।
तब मद्दा राजा ने उसे एक हाथी भेजा जो आक्रमण के दौरान भी अविचलित रहने के लिए प्रशिक्षित था (*24), और उस पर उत्तम साज-सज्जा थी। कुश सफेद छत्र धारण किए हाथी की पीठ पर सवार हुए और उन्होंने पभवती को वहाँ लाने का आदेश दिया। उन्हें अपने पीछे बैठाकर वे पूर्वी द्वार से शहर से बाहर निकल गए, उनके साथ चारों भुजाओं की पूरी सेना थी (*25)। शत्रु की सेना को देखते ही वे पुकार उठे, "मैं राजा कुश हूँ: जो भी अपने प्राणों को प्रिय समझते हैं, वे मेरे सामने पेट के बल लेट जाएँ।" उन्होंने तीन बार सिंह की गर्जना की और अपने शत्रुओं को पूर्णतः कुचल दिया।

गुरु ने मामले को समझाते हुए कहा:

हाथी की पीठ पर सवार रानी अपने स्वामी के पीछे-पीछे चल रही थी, तभी शेर की दहाड़ के साथ कुशा युद्ध के लिए नीचे उतरा।

जब कुशा की शेर जैसी दहाड़ इतनी तेज सुनाई देती है, तो सभी जानवर और योद्धा राजा दहशत और भय से मैदान से भाग जाते हैं।

जीवनरक्षक, सैनिक, घुड़सवार और पैदल सैनिक, कई रथ चालकों के साथ, कुसा की आवाज पर टूट पड़ते हैं (*26) और भाग जाते हैं, सभी भय से लकवाग्रस्त हो जाते हैं।

सक्का (इंद्र) अत्यंत प्रसन्न होकर युद्ध के अग्रभाग में देख रहे थे, और उन्होंने राजा कुसा को एक रत्न भेंट किया, जिसका नाम वेरोचना रखा गया।

युद्ध जीतने के बाद, राजा कुसा ने जादुई रत्न ले लिया और फिर हाथी की पीठ पर सवार होकर मद्दा के नगर की ओर फिर से निकल पड़ा।

वह राजाओं को जीवित पकड़ता है और उन्हें जंजीरों में बांधकर अपने साथ ले जाता है, और अपने राजपिता से कहता है, "देखिए, मेरे स्वामी, आपके शत्रु।"

देखो, अब वे तुम्हारी दया पर निर्भर हैं, युद्ध में घायल होकर पीड़ा सह रहे हैं।
आपकी इच्छा के अनुसार या तो आप उन सभी को मार डालेंगे या उन्हें फिर से मुक्त कर देंगे।"
राजा ने कहा:

ये दुश्मन मेरे नहीं, बल्कि तुम्हारे हैं। ये सब तुम्हारे ही हैं।
आप ही हमारे सर्वोपरि स्वामी हैं, जो हमें मार भी सकते हैं और मुक्त भी कर सकते हैं।
इस प्रकार कहे जाने पर, उस महान सत्ता ने सोचा, "एक बार मर जाने पर मैं इन पुरुषों का क्या करूँ? इनका यहाँ आना व्यर्थ न जाए। पाभवति की राजा मद्दा की सात छोटी बहनें हैं। मैं इन सात राजकुमारों से उनका विवाह करा दूँगा," और उन्होंने यह श्लोक दोहराया:

ये सातों बेटियाँ स्वर्ग की अप्सराओं के समान अत्यंत सुंदर हैं।
इन्हें अपने होने वाले दामादों, इन सात राजाओं को एक-एक करके दे दो।
तब राजा ने कहा:

आप हम सब पर और उन पर सर्वोच्च हैं, अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए आप ही समर्पित हैं।
हे प्रभु, आप ही हमारे सर्वशक्तिमान ईश्वर हैं, अपनी इच्छा के अनुसार उन्हें दीजिए।
इसलिए उसने उन सभी को सुंदर वस्त्र पहनाए और प्रत्येक राजा से एक-एक करके उनका विवाह करा दिया।

विषय को स्पष्ट करने के लिए गुरु ने पाँच श्लोक कहे:

इसलिए सिंह-स्वर वाले राजा मद्दा की पुत्रियों में से कुसा ने सात राजकुमारों में से प्रत्येक को एक-एक दासी दी, और वीर योद्धाओं को सुंदर दासियाँ दीं।

कुशाराज के हाथों से प्राप्त वरदान से प्रसन्न होकर, ये सातों राजकुमार अपने-अपने देश लौट गए।

अपने जादुई रत्न को चमकीला बनाकर, पराक्रमी वीर राजा कुसा, सुंदर पभवती को कुसावती के पास वापस ले आए।

एक ही रथ में सवार होकर शाही जोड़ा घर लौटा, दोनों में से कोई भी दूसरे से कम सुंदर नहीं था, क्योंकि दोनों ही समान रूप से सुंदर थे।

माता अपने पुत्र से मिलने आई। अब से पति और पत्नी शांति और समृद्धि के राज्य में सुखी जीवन व्यतीत करने लगे।

गुरु ने अपना पाठ समाप्त करते हुए सत्यों का खुलासा किया और जन्म की पहचान बताई:- सत्यों के अंत में पथभ्रष्ट भाई (भिक्षु) प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की सिद्धि में स्थापित हो गया:- "उस समय पिता और माता राजपरिवार के सदस्य थे, छोटा भाई आनंद था, कुबड़ा खुज्जुत्तारा था, पाभवति राहुल की माता थी, सेवकों का समूह बुद्ध के अनुयायी थे, राजा कुसा मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) कुसा की कहानी को "ब्यूटी एंड द बीस्ट" की कहानी के यूरोपीय संस्करणों से जोड़ा जा सकता है।

(2) कुसिनारा का पूर्व नाम।

(3) इस अंश में नाचम शब्द का प्रयोग नर्तकियों के समूह के संदर्भ में किया गया प्रतीत होता है। 'चुल्ला', 'मज्झिमा', 'जेत्था' जैसे विशेषण स्त्री की आयु पर उपयुक्त नहीं हो सकते; बल्कि ये संभवतः उनके पद या योग्यता को दर्शाते हैं, जैसे कि 'चुल्ला-मज्झिमा-महा-शीलम' के संदर्भ में। ये स्त्रियाँ निस्संदेह किसी न किसी रूप में राजा के दरबार से जुड़ी हुई हैं या उनके हरम की सदस्य हैं: अन्यथा राजा शायद ही उनमें से किसी से जन्मे पुत्र को अपना उत्तराधिकारी मानता। स्त्रियों की बांझपन दूर करने की इच्छा से संबंधित कामुक अनुष्ठानों के संदर्भ में पाठक कोलमैन की 'हिंदुओं की पौराणिक कथा', पृष्ठ 378, और डुबोइस और ब्यूचैम्प की 'हिंदू रीति-रिवाज और प्रथाएँ', भाग III, अध्याय IV, पृष्ठ 600 देख सकते हैं।

(4)हरयति, महावग्ग I. 63 और 64, जातक, संख्या देखें। 143, नहीं. 171. वैदिक ह्रणयति, ह्नीते।

(5) शायद इसका नाम लाल कमल (कोकनाड़ा) के रंग से या उस नाम के देश से पड़ा हो। जातक, क्रमांक 157 में यह एक महल के नाम के रूप में आता है।

(6) पियादशी के नौवें शिलालेख में 'अवहा' पुत्र का विवाह है, पुत्री के विवाह (विवाह) के विपरीत। जातक, क्रमांक 452; क्रमांक 316 और क्रमांक 71

(7) संस्कृत प्रतिहारयति, स्वयं की घोषणा करना। जाट सं. 266 और 295 देखें।

(8)अकामखांता पढ़ना.

(9)अबोहारिका, स्कट अव्यवाहरिका। जाट देखें. नहीं। 309

(10)हत्थ-विकारा महावग्ग चतुर्थ. 1. 4 में आता है, लेकिन वहाँ सटीक अर्थ स्पष्ट नहीं है।

(11)अदरभरणे पढ़ना। एक अन्य पाठ "काफी लड़का होना" देता है।

(12) अविज्झी. जाट. सं. 313, अविज्झीत्व, घूमना.

(13)वत्थम पढ़ना.

(14) शाब्दिक रूप से, "बोल्ट में पिन लगाकर, वह अंदर ही रही।" देखें कुलावग्गा, VI. 2. 1.

(15)अवकुज्जा. देखें. जाट. सं. 13.

(16) संस्कृत अवृद्धि के स्थान पर अब्बुद्धि पढ़ना। अवृत, "अनुशासनहीन" के स्थान पर अब्बुत की तुलना करें। टीका में अभूति दिया गया है, जिसका वैदिक और महाकाव्य संस्कृत में अर्थ "विपदा" है।

(17)कनिकारा, टेरोस्पर्मम एसेरीफोलियम।

(18)अम्माना, लगभग चार बुशेल का एक माप, मिल. IV. 1, 19.

(19) शाब्दिक रूप से "हाथी की सूंड जैसी जांघों के साथ।"

(20) भारतीय दरवाजे के तंत्र के लिए कुल्लवग्गा, संख्या देखें। 2, यहाँ की तरह अविंजनारज्जु के स्थान पर वहाँ अविंचनराजजू पढ़ा जाता है।

(21)धम्मगंथिका या धम्मगंडिका जातक क्रमांक में आता है। 150, नहीं. 124, नहीं. 41, नहीं. 176. देखिये. कुलवग्गा, विनय ग्रंथ, पं. iii. बंगाली में गांडी एक "अपराधी के चारों ओर घेरा" है, और यह अर्थ ऊपर उद्धृत कुछ अंशों के संदर्भ में उपयुक्त है।

(22)हिंसाती पढ़ना, स्पष्ट रूप से हेसाती के बराबर है।

(23) शायद रत्या के स्थान पर हमें रत्यो को रत्तियो के समतुल्य पढ़ना चाहिए।

(24)अनंजकरणम के लिए देखें। जाट. नहीं। 415., नहीं. 325, नहीं. 308

(25) हाथी, घुड़सवार सेना, रथ और पैदल सेना।

(26)खुन्दंती, संस्कृत मूल क्षुद के पाली समकक्ष की एक अनूठी घटना, जिसे संस्कृत व्याकरणविदों द्वारा वैकल्पिक रूप से अनुनासिक (7वें) संयुग्मन के रूप में अनुमति दी गई है। मुलर की पाली व्याकरण। पृ. 103. यह टिप्पणी प्रोफेसर बेंडाल को समर्पित है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सोना-नंद-जातक**
***स्रोत**: एच.टी. फ्रांसिस द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-532-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 532
सोना-नंद-जातक

"देवदूत या संगीतकार-देवता," आदि। यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए सुनाई थी, जिसमें एक भिक्षु (भाई) का ज़िक्र था जो अपनी माता का सहारा था। इसके पीछे की परिस्थितियाँ वही थीं जो साम (*1) जन्म में वर्णित हैं। लेकिन इस बार गुरु ने कहा, "भाइयों, इस भिक्षु से नाराज़ मत होइए। पुराने समय के ऋषियों को भले ही पूरे भारत पर शासन करने का प्रस्ताव दिया गया था, उन्होंने इसे स्वीकार नहीं किया और अपने माता-पिता का सहारा बने": और ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, बनारस नगर ब्रह्मवद्धन कहलाता था। उस समय मनोज (*2) नामक एक राजा वहाँ शासन करता था, और एक ब्राह्मण धनाढ्य, जिसके पास अस्सी करोड़ (10 मिलियन) की संपत्ति थी, का कोई उत्तराधिकारी नहीं था। उसकी ब्राह्मण पत्नी ने अपने पति के कहने पर पुत्र की कामना की। तब ब्रह्मलोक से बोधिसत्व उसकी कोख में आ गए, और जन्म के समय उनका नाम नन्हा सोना रखा गया। जब वह दौड़ने-भागने लायक हुआ, तभी एक और प्राणी ब्रह्मलोक छोड़कर उसकी कोख में आ गया, और जन्म के समय उनका नाम नन्द रखा गया। जैसे ही उन्हें वेदों का ज्ञान प्राप्त हुआ और उन्होंने विद्याओं में निपुणता प्राप्त की, ब्राह्मण ने अपने पुत्रों की सुंदरता देखकर अपनी पत्नी से कहा, "हे देवी, हम अपने पुत्र, नन्हे सोना का विवाह करेंगे।" पत्नी ने तुरंत सहमति दे दी और अपने पुत्र को यह बात बताई। उन्होंने कहा, "गृहस्थी जीवन से ही मैं संतुष्ट हूँ। जब तक तुम जीवित रहोगी, मैं तुम्हारी देखभाल करूँगा, और तुम्हारी मृत्यु के बाद मैं हिमालय में जाकर संन्यासी बन जाऊँगा।" उसने यही बात ब्राह्मण को भी बताई, और जब उन्होंने बार-बार उससे बात की, पर उसे मना नहीं पाए, तो उन्होंने युवा नंदा से कहा, "प्रिय पुत्र, क्या तुम कोई आश्रम स्थापित करोगे?" उसने उत्तर दिया, "मैं उस चीज़ को नहीं अपनाऊँगा जिसे मेरे भाई ने त्याग दिया है, मानो वह कफ का ढेर हो (*3)। मैं भी तुम्हारी मृत्यु के बाद अपने भाई के साथ संन्यासियों में शामिल हो जाऊँगा।" माता-पिता ने सोचा, "यदि वे, जो अभी इतने छोटे हैं, इस प्रकार देह की वासनाओं का त्याग कर देते हैं, तो हम सबको संन्यासी जीवन अपनाना कितना अधिक चाहिए," और उन्होंने कहा, "प्रिय पुत्र, मरने के बाद संन्यासी बनने की बात क्यों करें? हम सब व्रत लेंगे।" राजा को अपना उद्देश्य बताकर उन्होंने अपनी सारी संपत्ति दान में दे दी, अपने दासों को मुक्त कर दिया और अपने परिवार में उचित और उपयुक्त हिस्सा बाँट दिया। फिर वे चारों ब्रह्मवद्धन नगर से निकलकर हिमालय क्षेत्र में एक रमणीय उपवन में, पाँच प्रकार के कमलों से ढकी एक झील के पास, एक आश्रम बनाकर वहाँ तपस्वी जीवन व्यतीत करने लगे। दोनों भाई अपने माता-पिता की देखभाल करते थे। वे सुबह सवेरे उनके दाँत साफ करने के लिए लकड़ी के टुकड़े और कुल्ला करने के लिए पानी लाते थे। वे कुटिया, कोठरी और सब कुछ साफ करते थे, उन्हें पीने का पानी देते थे, खाने के लिए जंगल से मीठे बेर लाते थे, स्नान के लिए गर्म या ठंडा पानी उपलब्ध कराते थे, उनकी जटाएँ संवारते थे, उनके पैरों में शैम्पू करते थे और इसी तरह की सभी सेवाएँ प्रदान करते थे। समय बीतने के साथ-साथ, ऋषि नंदा ने सोचा, "मुझे अपने माता-पिता के लिए सभी प्रकार के फल भोजन के रूप में उपलब्ध कराने होंगे," इसलिए उन्होंने कल या उससे पहले परसों जो भी साधारण फल एकत्र किए थे (*4), वे सुबह जल्दी लाकर अपने माता-पिता को खाने के लिए देते थे। वे उसे खाते और कुल्ला करने के बाद उपवास रखते थे।लेकिन बुद्धिमान सोना बहुत दूर गया और मीठे और पके फल लाकर उन्हें भेंट किए। तब उन्होंने कहा, "प्रिय पुत्र, हमने आज सुबह तुम्हारे छोटे भाई द्वारा लाए गए फल खा लिए हैं और

अब हम उपवास कर रहे हैं। हमें अभी इस फल की आवश्यकता नहीं है।" इस प्रकार उसके फल खाए नहीं गए बल्कि बर्बाद हो गए, और अगले दिन और उसके बाद भी यही सिलसिला चलता रहा। इस प्रकार अपनी पांच अलौकिक शक्तियों के बल पर वह फल लाने के लिए बहुत दूर तक यात्रा करता रहा, लेकिन उन्होंने उसे खाने से इनकार कर दिया। तब उस महान प्राणी ने सोचा, "मेरे माता-पिता बहुत कमजोर हैं, और नंदा उनके लिए हर तरह के कच्चे या अधपके फल लाता है, और इस तरह वे अधिक समय तक जीवित नहीं रहेंगे। मैं उसे ऐसा करने से रोकूंगा।" इसलिए उसने नंदा से कहा, "नंदा, अब से जब भी तुम उनके लिए फल लाओ, तो मेरे आने तक प्रतीक्षा करना, और हम दोनों एक साथ उन्हें भोजन देंगे।" यद्यपि उससे ऐसा कहा गया था, फिर भी केवल अपने पुण्य की इच्छा रखते हुए, नंदा ने अपने भाई की बातों पर ध्यान नहीं दिया। भगवान ने सोचा, "नंदा ने मेरी अवज्ञा करके अनुचित कार्य किया है: मैं उसे यहाँ से भेज दूँगा (*6)।" फिर यह सोचकर कि वह स्वयं अपने माता-पिता की देखभाल करेगा, उसने कहा, "नंदा, तुम शिक्षा के योग्य नहीं रहे और बुद्धिमानों की बातों पर ध्यान नहीं देते। मैं बड़ा हूँ। मेरे माता-पिता मेरी जिम्मेदारी हैं: मैं ही उनकी देखभाल करूँगा। तुम यहाँ नहीं रह सकते: कहीं और चले जाओ," और उसने उंगली चटकाकर उसे फटकारा। इस प्रकार विदा होने के बाद, नंदा अपने भाई के सामने और नहीं रह सका, और विदाई लेकर वह अपने माता-पिता के पास आया और उन्हें सारी घटना बताई। फिर पत्तों से बनी अपनी कुटिया में लौटकर, उन्होंने अपना ध्यान उस रहस्यमयी घेरे पर केंद्रित किया और उसी दिन उन्होंने पाँच अलौकिक शक्तियों और आठ सिद्धियों को प्राप्त कर लिया। उन्होंने सोचा, "मैं सिनेरु पर्वत की तलहटी से बहुमूल्य रेत लाकर अपने भाई की कुटिया में छिड़क कर उनसे क्षमा मांग सकता हूँ, और यदि फिर भी वे शांत न हों, तो मैं अनोत्तट्टा झील से जल लाकर उनसे क्षमा मांगूंगा, और यदि फिर भी वे शांत न हों, मान लीजिए कि मेरा भाई देवदूतों के कारण मुझे क्षमा न करे, तो मैं चारों महाराजों और सक्का (इंद्र) को लाकर उनसे क्षमा मांगूंगा, और यदि फिर भी वे शांत न हों, तो मैं भारत के प्रमुख राजा मनोज और बाकी सभी राजाओं को लाकर उनसे क्षमा मांगूंगा। और ऐसा होने पर, मेरे भाई के पुण्य का यश पूरे भारत में फैल जाएगा और सूर्य और चंद्रमा के समान चमक उठेगा।" इसी बीच, अपनी जादुई शक्ति से वह ब्रह्मवद्धन नगर में राजा के महल के द्वार पर अवतरित हुआ और राजा को संदेश भेजा, "एक तपस्वी आपसे मिलना चाहता है।" राजा ने कहा, "एक तपस्वी को मुझसे मिलने की क्या आवश्यकता है? वह भोजन के लिए आया होगा।" उसने उसे चावल भेजे, परन्तु उसने उन्हें ग्रहण नहीं किया। फिर उसने छिले हुए चावल, वस्त्र और जड़ें भेजीं, परन्तु उसने उन्हें भी ग्रहण नहीं किया।अंततः उसने एक दूत को यह पूछने के लिए भेजा कि वह क्यों आया है, और दूत के उत्तर में उसने कहा, "मैं राजा की सेवा करने आया हूँ।" यह सुनकर राजा ने संदेश भेजा, "मेरे पास बहुत सारे सेवक हैं, इसे तपस्वी के रूप में अपना कर्तव्य निभाने के लिए कहो।" यह सुनकर उसने कहा, "मैं अपनी शक्ति से पूरे भारत पर शासन करने की शक्ति प्राप्त करूँगा और उसे आपके राजा को सौंप दूँगा।" यह सुनकर राजा ने सोचा, "सचमुच तपस्वी बुद्धिमान होते हैं: वे ज़रूर कुछ चतुर तरकीबें जानते होंगे।" तब उसने उसे अपने समक्ष बुलाया, उसे बैठने के लिए जगह दी और प्रणाम करते हुए पूछा, "हे पूज्यवर, क्या आप, जैसा कि हमें बताया गया है, पूरे भारत पर शासन प्राप्त करेंगे और उसे मुझे सौंप देंगे?" "जी महाराज।" "आप इसे कैसे करेंगे?" "महाराज, किसी का भी खून बहाए बिना, यहाँ तक कि एक नन्ही मक्खी का खून भी नहीं, और आपके खजाने को बर्बाद किए बिना, मैं अपनी जादुई शक्ति से शासन का अधिकार प्राप्त करूँगा और इसे आपको सौंप दूँगा। बस, बिना एक पल भी विलंब किए, आपको आज ही शीघ्र चलना होगा।" राजा ने उनकी बात पर विश्वास किया और सेना के एक दल के साथ चल पड़े। यदि सेना को गर्मी लगती, तो ऋषि नंदा अपनी जादुई शक्ति से छाया बनाकर उसे ठंडा कर देते। यदि वर्षा होती, तो वे सेना पर वर्षा नहीं गिरने देते। वे गर्म हवा को रोकते। वे रास्ते में पड़े ठूंठों और कांटों को हटाकर हर प्रकार के खतरे को दूर करते। उन्होंने सड़क को कसीना अनुष्ठान में प्रयुक्त वृत्त के समान समतल बनाया, और एक चमड़ा बिछाकर उस पर पालथी मारकर हवा में बैठ गए, और इस प्रकार सेना के आगे-आगे चलने लगे। इस प्रकार, सर्वप्रथम वह अपनी सेना के साथ कोसल राज्य में आया और नगर के निकट अपना शिविर लगाकर कोसल के राजा को संदेश भेजा कि या तो वह युद्ध करे या उसके अधीन हो जाए। राजा क्रोधित हुआ और बोला, "तो फिर क्या, मैं राजा नहीं हूँ? मैं तुमसे युद्ध करूँगा"; और वह शीघ्र ही अपनी सेना के साथ आगे बढ़ा, और दोनों सेनाओं के बीच युद्ध छिड़ गया। ऋषि नंदा ने जिस हिरण की खाल पर वे बैठे थे, उसे दोनों सेनाओं के बीच फैला दिया, और दोनों पक्षों के योद्धाओं द्वारा चलाए गए सभी बाणों को उसमें समाहित कर लिया, और किसी भी सेना में एक भी सैनिक बाण से घायल नहीं हुआ, और जब उनके पास मौजूद सभी बाण समाप्त हो गए, तो दोनों सेनाएँ असहाय खड़ी रह गईं। ऋषि नंदा कोसल के राजा के पास गए और उन्हें आश्वस्त करते हुए कहा, "महाराज, भयभीत न हों। आपको कोई खतरा नहीं है: राज्य आपका ही रहेगा। केवल राजा मनोज के अधीन हो जाइए।" राजा ने नंदा की बात पर विश्वास किया और ऐसा करने के लिए सहमत हो गया। फिर नंदा ने उसे मनोज के समक्ष ले जाकर कहा, "महाराज, कोसल का राजा आपके समक्ष आत्मसमर्पण करता है: राज्य उसी का रहने दीजिए।" मनोज ने सहर्ष सहमति दी और आत्मसमर्पण स्वीकार कर, वह दोनों सेनाओं के साथ अंग राज्य की ओर अग्रसर हुआ और अंग पर विजय प्राप्त की, फिर उसी नाम के राज्य में मगध पर विजय प्राप्त की, और इस प्रकार उसने समस्त भारत के राजाओं पर अपना प्रभुत्व स्थापित किया, और उनके साथ वह सीधे ब्रह्मवद्धन नगर लौट आया। अब उसकी आयु सात वर्ष और सात महीने थी।सात दिनों तक उसने इन सभी राजाओं के राज्य अपने अधिकार में लिए, और प्रत्येक राजनगर से उसने हर प्रकार का भोजन, कठोर और नरम, मंगवाया, और एक सौ एक राजाओं को अपने साथ लेकर सात दिनों तक भव्य भोज किया। ऋषि नंदा ने सोचा, "जब तक राजा सात दिनों तक शासन के सुख का आनंद न ले लें, मैं उन्हें दर्शन नहीं दूंगा।" उत्तरी कुरु देश में भिक्षा मांगने के बाद, वे सात दिनों तक हिमालय में, स्वर्ण गुफा के प्रवेश द्वार पर रहे। सातवें दिन मनोज ने उनकी महान महिमा और शक्ति का चिंतन करने के बाद सोचा, "यह महिमा मुझे मेरे माता-पिता या किसी और ने नहीं दी। यह तपस्वी नंदा के माध्यम से उत्पन्न हुई है, और निश्चित रूप से अब सात दिन हो गए हैं जब मैंने उन्हें देखा था। भला वह मित्र कहाँ है

जिसने मुझे यह महिमा दी?" और उसने ऋषि नंदा को याद किया। और नंदा ने यह जानकर कि उन्हें याद किया गया है, आकर हवा में उनके सामने खड़े हो गए। राजा ने सोचा, "मुझे नहीं पता कि यह तपस्वी मनुष्य है या देवता। यदि वह मनुष्य है, तो मैं उसे पूरे भारत पर शासन करने की शक्ति दूंगा, लेकिन यदि वह देवता है, तो मैं उसे एक देवदूत के समान सम्मान दूंगा," और इसे सिद्ध करने के लिए उसने पहला श्लोक कहा:

क्या आप देवदूत हैं या संगीतकार-देवता, या क्या हम आपको संयोगवश देख रहे हैं?
सक्का (इंद्र), शहरों के प्रति उदार हो सकता है, या नश्वर जन्म का हो सकता है।
क्या आपको जादुई शक्तियां प्राप्त हैं? आपका नाम जानना हमें अत्यंत प्रसन्नता होगी।
उनकी बातें सुनकर नंदा ने अपने स्वभाव का वर्णन करते हुए दूसरी पंक्ति दोहराई:

न तो मुझे, न ही संगीतकार-देवता को, और न ही सक्का (इंद्र) को आप देखते हैं:
मैं एक नश्वर प्राणी हूँ जिसके पास जादुई शक्तियाँ हैं। यही सच मैं तुम्हें बताता हूँ।
यह सुनकर राजा ने सोचा, "वह कहता है कि वह एक मनुष्य है; फिर भी वह मेरे लिए उपयोगी रहा है। मैं उसे वह महान सम्मान देकर संतुष्ट करूँगा जो मैं उसे दे रहा हूँ," और उसने कहा:

आपने हमें बेहतरीन सेवा प्रदान की है, जिसका वर्णन शब्दों में नहीं किया जा सकता।
मूसलाधार बारिश के बीच भी हम पर एक बूंद भी नहीं गिरी।
जब झुलसा देने वाली हवाएं चलीं, तब आपने हमारे लिए ठंडी छाया बनाई।
घातक शाफ्ट (*7) से आपने हमें ढाल बनाया, हमारे अनगिनत दुश्मनों के बीच।
इसके बाद आपने अनेक सुखी राज्यों में मुझे संप्रभु स्वामी के रूप में स्थापित किया।
सौ से अधिक राजा हमारे वचन के आज्ञाकारी हो गए।
हमारे खजानों में से आप जो भी चुनना चाहें, हम खुशी-खुशी छोड़ देते हैं।
घोड़ों या हाथियों से जुते हुए रथ, या बेहद सुंदर वस्त्रों से सजी अप्सराएँ,
या यदि आप एक सुंदर महल चाहते हैं, तो वह आपका ही होगा।
अंग लोकों में या मगध में, यदि आप जीने से प्रसन्न हैं,
अवंती और असाका पर शासन करना—यह भी हम सहर्ष प्रदान करते हैं।
हाँ, हम अपने राज्य के आधे हिस्से को भी खुशी-खुशी छोड़ देते हैं।
बस एक शब्द कह दीजिए, जो कुछ भी आप चाहते हैं, वह तुरंत आपका हो जाएगा।
यह सुनकर ऋषि नंदा ने अपनी इच्छा बताते हुए कहा:

मुझे किसी राज्य की, न किसी नगर या भूमि की लालसा है।
और न ही मैं आपके हाथों अपार धन-दौलत अर्जित करना चाहता हूँ।
"लेकिन अगर तुम्हारे मन में मेरे लिए जरा भी स्नेह है," उसने कहा, "तो मेरी इस एक बात को मान लो।"

आपके प्रभुत्व के अधीन मेरे वृद्ध माता-पिता निवास करते हैं।
किसी एकांत वन कोठरी में पवित्र शांति का आनंद लेना।
इन वृद्ध ऋषियों से मुझे कोई पुण्य प्राप्त करने की अनुमति नहीं है।
यदि आप और आपके परिवार वाले मेरी ओर से पैरवी करेंगे, तो सोना अपना क्रोध शांत कर देगा।
तब राजा ने उससे कहा:

हे ब्राह्मण, मैं प्रसन्नतापूर्वक आपकी आज्ञा का पालन करूंगा।
लेकिन वे कौन हैं जिन्हें मैं आपकी विनती को आगे बढ़ाने के लिए साथ ले जाऊं?
ऋषि नंदा ने कहा:

सौ से अधिक गृहस्थ, जिनमें धनी ब्राह्मण भी शामिल हैं, मैं उनका नाम लेता हूँ।
और ये सभी महान कुल के और प्रसिद्ध योद्धा सरदार,
राजा मनोजा के साथ, मेरी मांग को पूरा करने के लिए पर्याप्त सबूत हैं।
तब राजा ने कहा:

जाओ, घोड़ों और हाथियों को जोतकर रथ में जोड़ दो।

जाओ, मेरे झंडे हवा में उड़ा दो, गाड़ी के खंभों और डंडों से।
मैं उस जगह की तलाश में जाता हूँ जहाँ कोसिया (*8), साधु, दूर निवास करता है।
फिर राजा अपनी चार गुना सेना के साथ उस स्थान की खोज में निकल पड़ा जहाँ वह एक रमणीय कुटिया में निवास करता था, एक सौम्य और शांत साधु।

ये श्लोक पूर्ण ज्ञान से प्रेरित हैं।

जिस दिन राजा आश्रम पहुँचे, उस दिन ऋषि सोना ने सोचा, "मेरे छोटे भाई के हमसे बिछड़ने के बाद से सात वर्ष, सात महीने और सात दिन से अधिक समय बीत चुका है। वह अब कहाँ हो सकता है?" और दिव्य दृष्टि से देखते हुए उन्होंने उसे देखा और मन ही मन कहा, "वह एक सौ एक राजाओं और चौबीस सेनाओं के दल के साथ मुझसे क्षमा मांगने आ रहा है। इन राजाओं और उनके सेवकों ने मेरे छोटे भाई द्वारा किए गए अनेक चमत्कार देखे हैं, और मेरी अलौकिक शक्ति से अनभिज्ञ होकर वे मेरे बारे में कहते हैं, "यह झूठा तपस्वी अपनी शक्ति का अधिक अनुमान लगाता है और स्वयं को हमारे प्रभु के बराबर समझता है।" ऐसे घमंड से वे नरक में जाने के लिए अभिशप्त होंगे। मैं उन्हें अपनी जादुई शक्तियों का एक नमूना दिखाऊंगा," और अपने कंधे से चार इंच की दूरी पर एक डंडा हवा में रखकर, वे राजा के निकट से गुजरते हुए, अनोत्तट्टा झील से जल लाने के लिए अंतरिक्ष में चले गए। लेकिन ऋषि नंदा ने जब उन्हें आते देखा, तो स्वयं को प्रकट करने का साहस नहीं किया, बल्कि जहाँ वे बैठे थे वहीं गायब होकर भाग गए और हिमालय में छिप गए। हालांकि, राजा मनोज ने जब सोना को एक तपस्वी के आकर्षक वेश में आते देखा, तो उन्होंने यह श्लोक कहा:

इतनी तेज गति से हवा में उड़ते हुए उसके लिए पानी लाने कौन जाता है?
लकड़ी का खंभा उससे लगभग चार इंच की दूरी पर था?
इस प्रकार संबोधित किए जाने पर उस महान सत्ता ने दो छंद कहे:

मैं सोना हूँ; मैं कभी भी तपस्वी जीवन से विचलित नहीं होती।
मैं दिन-रात बिना थके अपने माता-पिता का भरण-पोषण करता हूँ।
मैं उनके भोजन के लिए जंगल से बेर और जड़ें इकट्ठा करता हूँ।
मुझे हमेशा याद रहता है कि कैसे उन्होंने एक समय मुझे फायदा पहुंचाया था।
यह सुनकर राजा ने उससे मित्रता करने की इच्छा से एक और श्लोक कहा:

हम प्रसन्नतापूर्वक उस आश्रम तक पहुँचेंगे जहाँ कोसिया निवास करती थी।
हे सोना, हमें वह रास्ता दिखाओ जो हमें उसकी कोठरी तक ले जाएगा।
तब उस महान सत्ता ने अपनी अलौकिक शक्ति से आश्रम तक जाने वाला एक मार्ग बनाया और यह श्लोक बोला:

यही मार्ग है: हे राजा, गहरे हरे रंग के उस समूह को भलीभांति जानो;
वहाँ काले पेड़ों के झुरमुट के बीच में आश्रम दिखाई देता है।
इस प्रकार उस महान ऋषि ने इन योद्धा राजाओं को उपदेश दिया, और फिर
एक बार फिर उसने हवा में उड़ान भरी और जल्दी से घर की ओर चल पड़ा।
इसके बाद आश्रम की तलाशी लेने के बाद उसने अपने पिता के विश्राम स्थल की खोज की।
और उस वृद्ध संत को जगाकर उसने उन्हें बैठने के लिए जगह दी।
"आइए," वह चिल्लाया, "हे पवित्र ऋषि, कृपया यहाँ बैठिए, मैं आपसे विनती करता हूँ, क्योंकि महान प्रसिद्धि वाले उच्च कुल के राजा इस मार्ग से गुजरेंगे।"

अपने बेटे को इस प्रकार अपनी उपस्थिति के लिए विनती करते हुए सुनकर बूढ़े व्यक्ति ने
वह अपनी झोपड़ी से जल्दी से बाहर आया और दरवाजे के पास बैठ गया।
ये श्लोक पूर्ण ज्ञान से प्रेरित हैं।

और ऋषि नंदा राजा के पास ठीक उसी समय पहुँचे जब बोधिसत्व आश्रम पहुँचे थे। वे अपने साथ अनोतत्ता से जल लाए थे और नंदा ने आश्रम से कुछ ही दूरी पर अपना डेरा डाला। राजा ने स्नान किया और अपने पूरे वैभव के साथ वस्त्र धारण किए, और एक सौ एक राजाओं के साथ भव्यता से ऋषि नंदा के साथ आश्रम में प्रवेश किया, ताकि बोधिसत्व से अपने भाई को क्षमा करने की विनती कर सकें। तब बोधिसत्व के पिता ने राजा को आते देख बोधिसत्व से पूछताछ की और बोधिसत्व ने उन्हें सारी बात समझा दी।

गुरु ने इसे स्पष्ट करते हुए कहा:

उसे समस्त वैभव के साथ निकट खड़ा देखकर, राजाओं के एक समूह से घिरा हुआ, वृद्ध द्रष्टा ने इस प्रकार कहा:

कौन यहाँ ढोल, शंख और ढोल की थाप के साथ मार्च कर रहा है?
राजाओं के दिलों को खुश करने वाला संगीत? यहाँ विजय का संदेश लेकर कौन आया है?
इस वैभवशाली आभा में कौन आता है, सोने की पगड़ी धारण किए हुए?
तेज बिजली की तरह चमकीला, और तीरों से लैस, एक युवा और साहसी नायक?
जो अत्यंत तेजस्वी और गौरवशाली, सुनहरे रंग से जगमगाते चेहरे के साथ आता है,
क्या आप भट्ठी में जलते हुए बबूल की लकड़ी के अंगारों की तरह देख रहे हैं?
जो व्यक्ति इस तरह से अपना छाता ऊँचा करके आता है,
क्या यह स्पष्ट रूप से उभरी हुई पसलियों के साथ सूर्य की तीव्र किरणों को रोकती है?
यह कौन है, जिसने अपने बगल में याक की पूंछ से बना पंखा फैला रखा है?
क्या वह किसी ज्ञानी ऋषि की तरह हाथी की पीठ पर सवार दिखाई देता है?
कौन आता है सफेद पैराशूटों की शान और वैभव के साथ?
और क्या कुलीन नस्ल के कवचधारी घोड़े, बाएं और दाएं घेरा बनाकर खड़े होंगे?
जो यहाँ सौ या उससे अधिक राजाओं से घिरा हुआ आता है,
क्या उनके आगे और पीछे महान राजाओं का एक दल था?
हाथियों के साथ, रथों के साथ और घुड़सवार एवं पैदल सेना के साथ,
कौन युद्ध की सारी शान-शौकत के साथ, चार गुना (*10) सेना की वर्दी में आता है?
जो अपने मार्ग का अनुसरण करने वाली विशाल सेनाओं के साथ आता है,
क्या वे अटूट और असीम हैं, जैसे समुद्र की लहरें?
मनोज, राजाओं का राजा, नंदा के साथ यहाँ आया है।
मानो स्वर्ग के स्वामी इंद्र हमारे इस एकांतवास में आए हों।
उसकी सेना अत्यंत शक्तिशाली है, और वह आज्ञाकारी होकर उसका अनुसरण करती है।
समुद्र की लहरों की तरह अटूट, असीम।
गुरु ने कहा:

उत्तम रेशम के वस्त्र पहने, चंदन के तेल से तर किए हुए, ये राजा निंदक भाव से संतों के पास पहुंचते हैं।

तब राजा मनोज ने अभिवादन करते हुए अलग स्थान पर बैठकर, मैत्रीपूर्ण अभिवादन करते हुए दो श्लोक कहे:

हे पवित्र पुरुषों, हमें आशा है कि आप समृद्ध और कुशल होंगे।
आपके निवास स्थान पर अनाज इकट्ठा करने के लिए है और जड़ और फल प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं।
क्या आप मक्खियों, मच्छरों और रेंगने वाले कीड़ों से बहुत परेशान हुए हैं?
या फिर क्या आपको जंगली जानवरों से सुरक्षा प्राप्त है?
फिर उन्होंने प्रश्न और उत्तर के रूप में इन छंदों का पाठ किया:

हम आपको धन्यवाद देते हैं, महाराज, और इस प्रकार उत्तर देते हैं: हम समृद्ध हैं और कुशल मंगल हैं।
हमारे निवास स्थान पर अनाज इकट्ठा करने के लिए पर्याप्त अनाज है और जड़ और फल बहुतायत में उपलब्ध हैं।
हम मक्खियों, मच्छरों और रेंगने वाले कीड़ों से परेशान नहीं होते।
और जंगली जानवरों से हमें यहां सुरक्षा प्राप्त है।
यहां संन्यासियों की तरह रहने वाले लोगों के लिए सुपारी बहुत उपयोगी है।
मेरी जानकारी के अनुसार, यहाँ आज तक कोई भी हानिकारक बीमारी नहीं पाई गई है।
स्वागत है (*11), हे राजा, एक सुखद संयोग ने आपको इस मार्ग पर निर्देशित किया है।
आप कितने महान और गौरवशाली हैं: कृपया बताइए, आपका काम क्या है?
टिंडूक और पियाल के पत्ते, और कसुमरी मिठाई,
और शहद जैसे फल, हे राजा, हमारे पास जो सबसे अच्छे फल हैं, उन्हें ले लो और खाओ।
और पहाड़ी पर छिपी एक गुफा से निकलता यह ठंडा पानी,
हे महान सम्राट, इसे ग्रहण करें, यदि आपकी इच्छा हो तो पी लें।
आपका दान मुझे और सभी को स्वीकार है, लेकिन कृपया

हमारे मित्र, बुद्धिमान नंदा, जो कुछ कहना चाहते हैं, उसे ध्यान से सुनें।
हम सभी नंदा के अनुयायी आपसे विनती करते हुए आपके पास आते हैं।
गरीब नंदा की विनम्र विनती को सहर्ष सुनने की याचना करना।
इस प्रकार संबोधित किए जाने पर ऋषि नंदा अपने आसन से उठे और अपने पिता, माता और भाई को प्रणाम किया, तथा अपने अनुयायियों से संवाद करते हुए बोले:

देश के लगभग सौ लोग और महान ख्याति प्राप्त ब्राह्मण,
और ये सभी महान योद्धा सरदार, अपने नाम से प्रसिद्ध,
हमारे महान स्वामी राजा मनोजा सहित सभी लोग मेरे इस दावे का समर्थन करते हैं।
इस आश्रम में एकत्रित हुए यक्षों,
और वन की आत्माएं, बूढ़ी और जवान (*12), मेरी कही हुई बातों पर ध्यान देती हैं।
इन सभी को मेरा नमन अर्पित है, इसके बाद मैं इस पवित्र ऋषि के संबोधन पर आगे बढ़ता हूँ।
आपने पहले मुझमें एक भाई को अपने दाहिने हाथ के समान अधिकार दिया था।
मैं आपसे यही वरदान मांगता हूँ कि मैं अपने वृद्ध माता-पिता की सेवा कर सकूँ।
हे महान संत, मेरे इस पवित्र कार्य में बाधा डालना बंद करो।
आपने लंबे समय से हमारे माता-पिता की सेवा की है;
भले लोग ऐसे कार्यों को पसंद करते हैं - तो बदले में मुझे भी ऐसा क्यों न करने दिया जाए?
और इस प्रकार प्राप्त पुण्य के कारण स्वर्ग का मार्ग मेरे लिए सुगम हो जाता है।
कुछ अन्य लोग भी हैं जो जानते हैं कि कर्तव्य का मार्ग इसी में निहित है।
हे ऋषि, जैसा कि आप स्वयं जानते हैं, यही स्वर्ग का मार्ग है।
और फिर भी एक पवित्र व्यक्ति मुझे इस प्रकार के पुण्य से वंचित करता है।
जब मैं अपनी सेवा से अपने माता-पिता को परम सुख प्रदान करूंगा।
इस प्रकार नंदा द्वारा संबोधित किए जाने पर, उस महान सत्ता ने कहा, "तुमने उसकी बातें सुन लीं; अब मेरी बात सुनो," और उन्होंने ये श्लोक कहे:

मेरे भाई के साथ जो भी हैं, मेरी बात एक-एक करके सुनो;
जो कोई भी अपने पूर्वजों की प्राचीन परंपरा को अस्वीकार करता है,
बड़ों के विरुद्ध पाप करने के कारण, वह नरक में पुनर्जन्म लेकर जलेगा।
लेकिन जो लोग पवित्र परंपराओं में निपुण हैं, वे सत्य के मार्ग को जान सकते हैं।
नैतिक नियमों का पालन करने से कभी भी दुखों के संसार में नहीं जाना पड़ेगा।
भाई-बहन, माता-पिता, सभी पारिवारिक बंधनों से जुड़े हुए हैं।
सबसे बड़े बेटे पर लगा दायित्व हमेशा बना रहेगा।
सबसे बड़े पुत्र होने के नाते, मैं इस भारी जिम्मेदारी को सहर्ष स्वीकार करता हूँ।
और जिस प्रकार एक पायलट अपने जहाज की रक्षा करता है, मैं अपने अधिकार का कभी त्याग नहीं करूंगा।
यह सुनकर सभी राजा अत्यंत प्रसन्न हुए और बोले, "आज हमें पता चला कि परिवार के शेष सभी सदस्यों का दायित्व सबसे बड़े सदस्य पर होता है," और उन्होंने ऋषि नंदा का त्याग कर उस महान सत्ता के प्रति समर्पित हो गए और उनकी स्तुति करते हुए दो श्लोकों का पाठ किया:

हमें ज्ञान उस लौ की तरह मिला है जो आधी रात के अंधेरे में चमकती है।
फिर भी पवित्र कोसिया ने हमें सही मार्ग दिखाया है।
जिस प्रकार सूर्यदेव अपनी किरणों से पूरे समुद्र को प्रकाशित करते हैं,
जीवित प्राणियों के रूप को दर्शाना, चाहे वे अच्छे हों या बुरे।
इसलिए पवित्र कोसिया मुझे और आपको सही मार्ग दिखाता है।
इस प्रकार, यद्यपि इन राजाओं ने ऋषि नंदा के अद्भुत कार्यों को देखकर लंबे समय तक उन पर विश्वास किया था, फिर भी उस महान सत्ता ने ज्ञान की शक्ति से उनके विश्वास को नष्ट कर दिया और उन्हें अपने वचनों को स्वीकार करवाकर, उन सभी को अपना परम आज्ञाकारी सेवक बना लिया। तब ऋषि नंदा ने सोचा, "मेरा भाई बुद्धिमान और चतुर है तथा शास्त्रों में पारंगत है। उसने इन राजाओं को पराजित कर दिया है और उन्हें अपने पक्ष में कर लिया है। उसके सिवा मेरा कोई और आश्रय नहीं है। मैं केवल उसी से प्रार्थना करूंगा।" और उन्होंने यह श्लोक कहा:

क्योंकि आप मेरी विनती भरी मनोवृत्ति और न ही मेरे फैले हुए हाथ पर ध्यान नहीं देते।
मैं आपका विनम्र दास बनकर आपके आदेश की प्रतीक्षा करूंगा।
स्वाभाविक रूप से उस महान सत्ता के मन में नंदा के प्रति कोई क्रोध या शत्रुता का भाव नहीं था, परन्तु उन्होंने ऐसा इसलिए किया था ताकि उसके अहंकार को कम किया जा सके, क्योंकि उसने अत्यधिक घमंड से बात की थी। परन्तु अब उसकी बातें सुनकर वे अत्यंत प्रसन्न हुए और उस पर कृपा करते हुए बोले, "अब मैं तुम्हें क्षमा करता हूँ और तुम्हें अपने माता-पिता की देखभाल करने की अनुमति देता हूँ," और उसके गुणों का बखान करते हुए उन्होंने कहा:

नंदा, तुम सच्चे धर्म को भली-भांति जानते हो, क्योंकि संतों ने तुम्हें यही सिखाया है।
"अच्छा होना ही महान कार्य है"—आपने मुझे बहुत प्रसन्न किया।
मेरे आदरणीय माता-पिता, मैं उन्हें प्रणाम करता हूँ: मेरी बात ध्यान से सुनो।
आप पर बोझ होने का आरोप कभी किसी भी तरह से महसूस नहीं किया गया।
मैंने लंबे समय तक अपने माता-पिता की सेवा की है, उनकी खुशी के लिए।
अब नंदा आकर विनम्रतापूर्वक आपसे अपनी बारी में सेवा करने की विनती करता है।
तुम दोनों संतों में से जो भी नंदा की सेवा करना चाहे,
बस एक शब्द बोलो और वह आकर केवल तुम्हारी सेवा करेगा।
तब उसकी माताजी अपनी सीट से उठकर बोलीं, "प्यारी सोना, तुम्हारा छोटा भाई बहुत दिनों से घर से अनुपस्थित था। अब जब वह लौट आया है, तो मैं स्वयं उससे पूछने का साहस नहीं करती, क्योंकि हम पूरी तरह से तुम पर निर्भर हैं, लेकिन तुम्हारी अनुमति से मुझे इस पवित्र युवक को अपनी बाहों में लेने और उसके माथे पर चुंबन करने की अनुमति दी जाए," और अपनी बात स्पष्ट करने के लिए उन्होंने यह श्लोक कहा:

सोना, प्यारे बेटे, जिस पर हम भरोसा करते हैं, अगर तुम इसकी अनुमति दो,
उन्हें एक बार फिर गले लगाकर मैं पवित्र नंदा चुंबन दूंगी।
तब उस महान पुरुष ने उससे कहा, "हे प्रिय माता, मैं तुम्हें अनुमति देता हूँ: जाओ और अपने पुत्र नंदा को गले लगाओ, उसके सिर को सूंघो और चूमो, और अपने हृदय के दुःख को शांत करो।" अतः वह ऋषि नंदा के पास गई और समस्त सभा के समक्ष उन्हें गले लगाकर उनके सिर को सूंघा और चूमा, जिससे उसके हृदय का दुःख समाप्त हो गया, और उस महान पुरुष से संवाद करते हुए उसने यह श्लोक कहा:

जिस प्रकार विस्फोट से बोधि वृक्ष की कोमल शाखाएँ हिल जाती हैं,
नंदा को आखिरकार आते देख मेरा दिल खुशी से झूम उठा।
नंदा, मुझे लगता है, जैसे मैं सपने में वापस लौटकर उसे देख रहा हूँ,
मैं आधे पागल और आधे उल्लास से चिल्लाता हूँ, "नंदा मेरे पास वापस आ गया है।"
लेकिन अगर जागने पर मुझे पता चले कि मेरी नंदा जा चुकी है,
मेरी आत्मा पहले से भी अधिक दुःख का शिकार हो जाएगी।
आज नंदा आखिरकार अपने प्रिय माता-पिता के पास लौट आया है।
मेरे पति और मुझे समान रूप से प्रिय, वह हमारे साथ ही अपना घर बनाता है।
यद्यपि नंदा अपने पिता को प्रिय है, फिर भी वह जहाँ चाहे वहाँ रहे।
तुम अपने पिता की इच्छाओं का ध्यान रखो—नंदा मेरी इच्छाओं को पूरा करेगा।
उस महान प्राणी ने अपनी माता की बात मान ली और कहा, "ऐसा ही हो," और उन्होंने अपने भाई को संबोधित करते हुए कहा, "नंदा, तुम्हें बड़े पुत्र का हिस्सा मिला है; सचमुच एक माता सबसे बड़ी शुभचिंतक होती है। उसकी देखभाल में सावधान रहना," और माता के गुणों का गुणगान करते हुए उन्होंने दो श्लोक कहे:

दयालु, करुणामयी, हमारी शरणस्थली वह जिसने हमें अपने स्तनों से दूध पिलाया।
माँ स्वर्ग का मार्ग है, और वह तुम्हें सबसे अधिक प्यार करती है।
उन्होंने हमारा पालन-पोषण बड़े प्यार से किया; वे अच्छे गुणों से परिपूर्ण हैं।
माँ स्वर्ग का मार्ग है, और सबसे अच्छी बात यह है कि वह आपसे प्यार करती है।
इस प्रकार उस महान पुरुष ने दो श्लोकों में माता के गुणों का वर्णन किया, और जब उनकी माता पुनः अपने आसन पर बैठ गईं, तो उन्होंने कहा, "हे नंदा, तुम्हारी माता ने बहुत कष्ट सहे हैं। हम दोनों का पालन-पोषण हमारी माता ने अत्यंत पीड़ापूर्वक किया है। अब तुम उनकी सावधानीपूर्वक देखभाल करना और उन्हें खट्टे बेर न खिलाना," और उपस्थित लोगों के बीच यह स्पष्ट करने के लिए कि अत्यंत कठिन कार्य माता के भागी हैं, उन्होंने कहा:

संतान प्राप्ति की चाह में वह प्रार्थना करते हुए प्रत्येक पवित्र मंदिर के समक्ष घुटने टेकती है।
बदलते मौसम खगोलीय परंपरा का गहन अध्ययन और अवलोकन करते हैं।
समय बीतने के साथ-साथ गर्भावस्था के दौरान उसकी कोमल इच्छाएं बढ़ती जाती हैं।
और जल्द ही बेहोश बच्चा एक प्यारे दोस्त को जानने लगता है।
वह अपने खजाने को एक वर्ष या उससे कम समय के लिए अत्यंत सावधानी से सुरक्षित रखती है।
फिर इसे आगे बढ़ाया जाता है और उस दिन से एक माँ का नाम इसे धारण करेगा।
वह अपने दूध से भरे स्तनों और लोरी से परेशान बच्चे को शांत करती है।
अपने कंबल की गर्म बाहों में लिपटे हुए उसके कष्ट जल्द ही दूर हो जाते हैं।
उस बेचारे मासूम की देखभाल करते हुए, वरना हवा या गर्मी उसे परेशान कर देगी।
उसे उसकी ममतामयी नर्स कहा जा सकता है, क्योंकि वह अपने बेटे की इस प्रकार देखभाल करती है।
उसके माता-पिता ने उसके लिए क्या-क्या सामान रखा है, "शायद।"
वह सोचती है, "मेरे प्यारे बच्चे, एक दिन यह सब तुम्हें भी मिल जाएगा।"
"मेरे प्यारे बेटे, ये करो या वो करो," चिंतित माँ रोते हुए कहती है।
और जब वह जवान होकर पुरुष बन जाता है, तब भी वह शोक मनाती है और आहें भरती है।
वह बेपरवाही में रात को पड़ोसी की पत्नी से मिलने जाता है।
वह गुस्से से भड़क उठी और परेशान होकर बोली, "वह उजाले में ही क्यों नहीं लौट रहा है?"
यदि कोई बच्चा इस प्रकार चिंता और कष्टों से पाला-पोसा जाए और उसकी माँ उसकी उपेक्षा करे,
उसके साथ धोखा करना, उसका क्या हश्र होगा, मैं पूछता हूँ, लेकिन वह किस नरक की उम्मीद कर सकता है?
यदि किसी बच्चे का पालन-पोषण बड़ी चिंता और परिश्रम से हुआ हो और उसके पिता उसकी उपेक्षा करें,
उसके साथ धोखा करना, उसका क्या हश्र होगा, मैं पूछता हूँ, लेकिन वह किस नरक की उम्मीद कर सकता है?
ऐसा कहा जाता है कि जो लोग धन से अत्यधिक प्रेम करते हैं, उनका धन शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।
जो व्यक्ति अपनी माँ की उपेक्षा करता है, उसे जल्द ही इसका खामियाजा भुगतना पड़ता है।
ऐसा कहा जाता है कि जो लोग धन से अत्यधिक प्रेम करते हैं, उनका धन शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।
जो अपने पिता की उपेक्षा करता है, उसे जल्द ही इसका खामियाजा भुगतना पड़ेगा।
आनंद, बेफिक्र सहजता, हंसी और खेल, यही हमारी सच्ची विरासत है।
उस व्यक्ति के बारे में जो वृद्धावस्था में अपनी माँ की लगन से देखभाल करता है।
आनंद, बेफिक्र सहजता, हंसी और खेल, यही हमारी सच्ची विरासत है।
उस व्यक्ति के बारे में जो वृद्धावस्था में अपने पिता की लगन से देखभाल करता है।
उपहार (*13), प्रेमपूर्ण वाणी, दयालु सेवाभाव, अनुग्रह के साथ
उचित समय और स्थान पर दिखाई गई मन की शांत उदासीनता—
ये सद्‌गुण संसार के लिए रथ के पहिये के समान ही महत्वपूर्ण हैं।
इन कमियों के बावजूद, बच्चों के लिए माँ का नाम आकर्षक रहेगा।
माता को भी पिता के समान आदरपूर्वक ताज पहनाया जाना चाहिए।
ऋषि-मुनि उस व्यक्ति को पसंद करते हैं जिसमें ये गुण पाए जाते हैं।
अत: माता-पिता, जो सभी प्रशंसा के पात्र हैं, एक उच्च स्थान के हकदार हैं।
प्राचीन ऋषियों द्वारा ब्रह्मा कहलाए गए। उनकी ख्याति इतनी महान थी।
अपने बच्चों से दयालु माता-पिता को पूरा सम्मान मिलना चाहिए।
जो बुद्धिमान है वह सच्ची और नेक सेवा से उनका सम्मान करेगा।
उसे उन्हें उपयुक्त भोजन, पेय पदार्थ, बिस्तर और वस्त्र उपलब्ध कराने चाहिए।
उन्हें स्नान कराना चाहिए, तेल लगाना चाहिए और उनके पैरों को विधिपूर्वक धोना चाहिए।
इन ऋषियों जैसी दयालु सेवाओं के लिए उनकी प्रशंसा करना उचित है।
इस संसार में और मृत्यु के बाद स्वर्ग में, उसे अनेक आनंद प्राप्त होंगे।

इस प्रकार, मानो वह सिनेरु पर्वत को हिला देने वाले हों, उस महान सत्ता ने अपना उपदेश समाप्त किया। उनकी बातें सुनकर सभी राजा और उनके अनुयायी आस्तिक हो गए। फिर उन्होंने उन्हें पाँच नैतिक नियमों में स्थापित किया और दान-पुण्य और इसी प्रकार के सद्‌गुणों में तत्पर रहने की सलाह देकर विदा किया, और वे सभी अपने-अपने राज्यों पर विधिपूर्वक शासन करने के बाद अपने जीवन के अंत में स्वर्ग चले गए। ऋषि सोना और नंदा, जब तक जीवित रहे, अपने माता-पिता की सेवा करते रहे और ब्रह्मलोक के लिए नियत हुए।

गुरु (बुद्ध) ने यहाँ अपना उपदेश समाप्त किया और सत्यों को प्रकट करते हुए जन्म की पहचान बताई:- सत्यों के अंत में, अपनी माता का स्नेह करने वाले भिक्षु (भाई) प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की सिद्धि में स्थापित हुए:- "उस समय माता-पिता महान राजा के दरबार के सदस्य थे, ऋषि नंदा आनंद थे, राजा मनोज सारिपुत्र थे, एक सौ एक राजा अस्सी प्रमुख वरिष्ठ और कुछ अन्य थे, चौबीस पूर्ण सेनाएँ बुद्ध के शिष्य थे, लेकिन ऋषि सोना मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)सं. 540.

(2) जातक, संख्या 397.

(3)खेलम पढ़ना.

(4) पाठ संभवतः दूषित है; शायद paraha, para(m)aho में छिपा हुआ है। देखें pare, जाट. सं. 279, सं. 423, "परसों," लेकिन जाट. सं. 481 में इसका अर्थ "परसों" प्रतीत होता है।

(5)पतिमनेति, प्रतीक्षा करना। जातक संख्या 258, संख्या 288, संख्या 203, मिल. I. 14

(6)पनामेती को बर्खास्त करना। मिल. I. 258, कुल्लवग्गा, XII। 2.3, जाट. नहीं। 28

(7) सरत्तनम पढ़ना.

(8) सोना और उसके पिता का पारिवारिक नाम।

(9)वम्भेति

(10) हाथी, घुड़सवार सेना, रथ और पैदल सेना।

(11)ये पंक्तियाँ क्रमांक 503, सत्तिगुम्बा जातक में आती हैं।

(12) भूतभव्यनी, पूर्ण विकसित और भ्रूण देवता: भव्य के लिए, देवताओं (देवदूतों) का एक वर्ग, विष्णु पुराण, III. 12 देखें।

(13)चाइल्डर्स राजाओं के संबंध में चार संगहवत्थु इस प्रकार बताते हैं: उदारता, सौहार्द, परोपकारी शासन और निष्पक्षता।

पुस्तक XXI. असितिनिपता:

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कुलहंस-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-533-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 533
कुल्लाहंस-जातक। (*1)

"अन्य सभी पक्षी, आदि।" यह कथा गुरु ने बाँस के वन में रहते हुए सुनाई थी, कि कैसे पूज्य आनंद ने अपने प्राण त्याग दिए। जब तथागत (बुद्ध) को मारने के लिए धनुर्धारियों को रिश्वत दी गई, और देवदत्त (*2) द्वारा इस कार्य पर भेजा गया पहला धनुर्धारी लौटकर बोला, "हे परम पूज्य, मैं भगवान बुद्ध का प्राण नहीं छीन सकता: वे महान अलौकिक शक्तियों से परिपूर्ण हैं," तो देवदत्त ने उत्तर दिया, "हे परम पूज्य, आपको तपस्वी गौतम (बुद्ध) को मारने की आवश्यकता नहीं है। मैं स्वयं उनका प्राण छीन लूँगा।" जब तथागत (बुद्ध) गिद्ध शिखर (*3) द्वारा पश्चिम की ओर डाली गई छाया में चल रहे थे, तब देवदत्त पर्वत की चोटी पर चढ़ गया और उसने गुलेल से छोड़े

गए एक शक्तिशाली पत्थर को यह सोचकर फेंका, "इस पत्थर से मैं तपस्वी गौतम (बुद्ध) को मार डालूँगा," लेकिन दो पर्वत चोटियों के आपस में मिलने से पत्थर रुक गया, और उसका एक टुकड़ा उड़कर भगवान बुद्ध के पैर पर लगा, जिससे खून बहने लगा और तीव्र पीड़ा होने लगी। जीवक ने चाकू से तथागत (बुद्ध) के पैर को चीरकर दूषित खून निकाला और उस पर औषधीय औषधि लगाकर उसे ठीक कर दिया। गुरु अपने सेवकों से घिरे हुए, पहले की तरह ही, बुद्ध के सभी महान आकर्षण के साथ विचरण करते रहे। तो देवदत्त ने उसे देखकर सोचा, "सचमुच कोई भी मनुष्य गौतम (बुद्ध) के उत्कृष्ट सौंदर्य को देखकर उनके पास जाने का साहस नहीं करेगा, परन्तु राजा का हाथी नलगिरि तो एक क्रूर और हिंसक जानवर है और बुद्ध के गुणों, धर्ममार्ग और सभा के बारे में कुछ भी नहीं जानता। वह तपस्वी का नाश करेगा।" अतः वह राजा के पास गया और उसे यह बात बताई। राजा ने तुरंत सुझाव मान लिया और अपने हाथीपालक को बुलाकर उससे कहा, "महाराज, कल आप नलगिरि को शराब पिलाकर मदमस्त कर दें और सूर्योदय होते ही उसे उस गली में छोड़ दें जहाँ तपस्वी गौतम (बुद्ध) आते-जाते हैं।" देवदत्त ने हाथीपालक से पूछा कि हाथी सामान्य दिनों में कितनी शराब पीता है, और जब उसने उत्तर दिया, "आठ घड़े," तो देवदत्त ने कहा, "कल उसे सोलह घड़े शराब पिलाएँ और उसे उस गली की ओर भेज दें जहाँ तपस्वी गौतम (बुद्ध) आते-जाते हैं।" "बहुत अच्छा," हाथीपालक ने कहा। राजा ने पूरे शहर में ढोल बजवाकर ऐलान किया, "कल नालगिरि को शराब पिलाकर मदहोश कर दिया जाएगा और शहर में छोड़ दिया जाएगा। शहर के सभी लोग सुबह जल्दी अपना काम निपटा लें और उसके बाद कोई भी सड़क पर न निकले।" देवदत्त महल से नीचे उतरकर हाथी के अस्तबल में गए और रखवालों से कहा, "मैं तुमसे कहता हूँ, हम ऊँचे पद से भी किसी को नीच बना सकते हैं और नीच पद से ऊँचा उठा सकते हैं। अगर तुम सम्मान के लिए तरसते हो, तो कल सुबह जल्दी नालगिरि को सोलह घड़े तेज़ शराब पिलाओ, और जब तपस्वी गौतम (बुद्ध) उस रास्ते से गुजरें,हाथी को नुकीले कोड़ों से घायल करो, और जब वह क्रोध में आकर अपना अस्तबल तोड़ दे, तो उसे उस गली की ओर भगाओ जहाँ गौतम (बुद्ध) अक्सर चलते थे, और इस प्रकार उस तपस्वी का नाश करो।" वे तुरंत ऐसा करने के लिए सहमत हो गए। यह अफवाह पूरे शहर में फैल गई। बुद्ध, धर्ममार्ग और भिक्षुत्व से जुड़े हुए गृहस्थ शिष्यों ने यह सुनकर गुरु के पास आकर कहा, "हे परम पूज्य, देवदत्त राजा के बहुत करीब है और कल वह नालगिरी को उस गली में छोड़ देगा जहाँ आप चलते हैं। कल भिक्षा मांगने के लिए शहर मत जाओ, यहीं रहो। हम मठ में भिक्षुओं के लिए भोजन की व्यवस्था करेंगे, जिनके मुखिया बुद्ध होंगे।" गुरु ने सीधे "मैं कल भिक्षा मांगने के लिए शहर नहीं जाऊंगा" कहे बिना उत्तर दिया, "कल मैं चमत्कार करूंगा और नालगिरी को वश में कर लूंगा और गलत अनुयायियों को कुचल दूंगा।" और राजगृह नगर में भिक्षा मांगने के लिए अपना चक्कर लगाए बिना, मैं भिक्षुओं के एक समूह के साथ नगर छोड़कर सीधे बाँस के वन में जाऊँगा, और राजगृह नगर के लोग वहाँ अनेक कटोरे भोजन लेकर जाएँगे और कल मठ के भोजन कक्ष में भोजन की व्यवस्था होगी।" इस प्रकार गुरु ने उनकी प्रार्थना स्वीकार कर ली। और यह जानकर कि तथागत (बुद्ध) उनकी इच्छा के अनुसार चल दिए हैं, वे भोजन के कटोरे लेकर नगर से निकल पड़े और बोले, "हम अपने दान मठ में ही बाँटेंगे।" और गुरु ने (हमेशा की तरह) पहले पहर में धर्म का उपदेश दिया, मध्य पहर में कठिन प्रश्नों का हल किया, अंतिम पहर के पहले भाग में सिंह की तरह अपनी दाहिनी ओर लेट गए, और दूसरे भाग में उन्होंने मोक्ष प्राप्ति (सम्मोहन) में समय बिताया, तीसरे भाग में, मानवता के कष्टों के प्रति गहरी करुणा की समाधि में प्रवेश करते हुए, उन्होंने दिव्य अंतर्दृष्टि से दूर से ही समस्त मानवता का अवलोकन किया, उन नए शिष्यों की खोज में जो मार्ग के लिए तैयार थे। दुखों से मुक्ति, सांसारिक पुनर्जन्मों से छुटकारा, अर्थात् निर्वाण, शाश्वत जीवन/मोक्ष (*4) की ओर ले जाने वाले मार्ग पर चलते हुए, और यह देखकर कि नालगिरि हाथी पर विजय प्राप्त करने के फलस्वरूप चौरासी हजार प्राणी धर्ममार्ग को स्पष्ट रूप से समझ पाएंगे, भोर होते ही, अपनी शारीरिक आवश्यकताओं को पूरा करने के बाद, उन्होंने आनंद को संबोधित करते हुए कहा, "आनंद, आज राजगृह नगर के चारों ओर स्थित अठारह मठों में रहने वाले सभी भिक्षुओं से कहो कि वे मेरे साथ उस नगर में चलें।" वरिष्ठ भिक्षु ने ऐसा ही किया, और सभी भिक्षु बांस के वन में एकत्रित हो गए। भिक्षुओं के एक विशाल समूह के साथ गुरु राजगृह नगर में प्रवेश कर गए और हाथीपालक अपने निर्देशों के अनुसार आगे बढ़े और वहाँ लोगों की भारी भीड़ जमा हो गई। भक्तों ने सोचा, "आज भगवान हाथी बुद्ध और इस पशु जगत के हाथी के बीच एक भयंकर युद्ध होगा। हम बुद्ध के अतुलनीय कौशल से नालगिरि की पराजय देखेंगे।"और वे ऊपर चढ़कर ऊपरी मंजिलों, छतों और घरों की छतों पर खड़े हो गए। लेकिन अविश्वासी और गलत विश्वासियों ने सोचा, "नालागिरी एक क्रूर, हिंसक प्राणी है, और बुद्धों और उनके गुणों के बारे में कुछ नहीं जानता। आज वह तपस्वी गौतम (बुद्ध) के महिमामय स्वरूप को कुचल देगा और उनकी मृत्यु का कारण बनेगा। आज हम अपने शत्रु की पीठ देखेंगे।" और वे ऊपरी मंजिलों और अन्य ऊँचे स्थानों पर खड़े हो गए। और हाथी ने भगवान बुद्ध को अपनी ओर आते देख लोगों को भयभीत कर दिया, घरों को ध्वस्त कर दिया और अपनी सूंड उठाकर गाड़ियों को चूर-चूर कर दिया, और उत्तेजना से अपने कान और पूंछ खड़ी करके, वह किसी ऊँचे पर्वत की तरह भगवान बुद्ध की दिशा में दौड़ पड़ा। उसे देखकर भाइयों ने भगवान बुद्ध से इस प्रकार कहा, "हे पूज्यवर, यह नालगिरी, एक क्रूर और हिंसक प्राणी, और मनुष्यों का हत्यारा, इस मार्ग से आ रहा है (*5)। वास्तव में वह बुद्धों और उनके गुणों के बारे में कुछ नहीं जानता।" "हे शुभ भगवान बुद्ध, कृपया वापस चले जाएं।" "भयभीत न हों," उन्होंने कहा, "मैं नालगिरि पर विजय प्राप्त कर सकता हूँ।" तब पूज्य सारिपुत्र ने गुरु से प्रार्थना करते हुए कहा, "हे परम पूज्य, जब किसी पिता की सेवा करनी होती है, तो वह उनके सबसे बड़े पुत्र पर डाला गया बोझ होता है।" मैं इस प्राणी को वश में कर लूँगा।" तब गुरु ने कहा, "सारिपुत्र, बुद्ध की शक्ति एक बात है, उनके शिष्यों की शक्ति दूसरी बात," और उन्होंने सारिपुत्र के प्रस्ताव को अस्वीकार करते हुए कहा, "तुम्हें यहीं रहना है।" अस्सी प्रमुख भिक्षुओं की भी यही प्रार्थना थी, पर उन्होंने सबकी प्रार्थना ठुकरा दी। तब पूज्य आनंद, गुरु के प्रति अपने प्रबल स्नेह के कारण, इस बात से सहमत नहीं हो सके और रोते हुए बोले, "यह हाथी पहले मुझे मार डाले," और वे गुरु के सामने खड़े हो गए, तथागत (बुद्ध) के लिए अपना प्राण बलिदान करने को

तैयार। तब गुरु ने उनसे कहा, “चले जाओ, आनंद, मेरे सामने मत खड़े रहो।” गुरु ने कहा, “हे प्रभु, यह हाथी भयंकर और हिंसक है, मनुष्यों का वध करने वाला है, जैसे किसी चक्र की शुरुआत में ज्वाला होती है।” पहले उसे मुझे मार डालने दो, उसके बाद वह तुम्हारे पास आए।” और यद्यपि उनसे तीसरी बार कहा गया, फिर भी वरिष्ठ भिक्षु उसी स्थान पर डटे रहे और पीछे नहीं हटे। तब भगवान बुद्ध ने अपनी अलौकिक शक्ति का प्रयोग करते हुए उन्हें पीछे धकेल दिया और भिक्षुओं के बीच में खड़ा कर दिया। उसी क्षण एक स्त्री ने नलगिरि को देखकर मृत्यु के भय से भयभीत होकर भागते समय अपने कूल्हे पर लिए हुए बच्चे को तथागत (बुद्ध) और हाथी के बीच गिरा दिया और बच निकली। हाथी उस स्त्री का पीछा करते हुए बच्चे के साथ वहाँ पहुँचा, जिसने ज़ोर से रोना शुरू कर दिया। गुरु, जो स्पष्ट रूप से आज्ञा दी गई दानशीलता (*6) से प्रेरित थे, और ब्रह्मा के समान मधुर स्वर में नलगिरि को पुकारते हुए बोले, “हे! नलगिरि, जिन्होंने तुम्हें सोलह घड़े शराब पिलाकर पागल किया है, उन्होंने ऐसा इसलिए तो नहीं किया कि तुम किसी और पर हमला करो,लेकिन तुमने ऐसा इसलिए किया क्योंकि तुम्हें लगा कि तुम मुझ पर हमला करोगे। व्यर्थ में इधर-उधर भागकर अपनी शक्ति बर्बाद मत करो, बल्कि यहाँ आओ।" गुरु की वाणी सुनकर उसने अपनी आँखें खोलीं और भगवान बुद्ध का तेजस्वी रूप देखा, और वह अत्यंत व्याकुल हो गया तथा बुद्ध की शक्ति से मादक पेय का नशा उतर गया। अपनी सूंड छोड़कर और कान झटकते हुए वह तथागत (बुद्ध) के चरणों में गिर पड़ा। तब गुरु ने उसे संबोधित करते हुए कहा, "नालागिरि, तुम एक क्रूर हाथी हो, मैं बुद्ध हाथी हूँ। अब से क्रूर और हिंसक मत बनो, न ही मनुष्यों का वध करो, बल्कि दान के भाव का अभ्यास करो।" ऐसा कहकर उन्होंने अपना दाहिना हाथ फैलाकर हाथी के माथे को सहलाया और उसे इन शब्दों में धर्म का मार्ग सिखाया:

(*7) यदि तुम इस हाथी पर हमला करने का साहस करो,
एक भयानक विपत्ति जिस पर आप जल्द ही शोक मनाएंगे।
इस हाथी पर प्रहार करना तुम्हारा भाग्य तय कर देगा।
आने वाले संसारों में दुख की अवस्था में होना।
पागलपन और मूर्खतापूर्ण लापरवाही से दूर रहो।
लापरवाह मूर्ख कभी स्वर्ग प्राप्त नहीं कर पाएगा।
यदि परलोक में तुम स्वर्ग का सुख प्राप्त कर लो,
इस मामले में आप वही करें जो सही हो।

हाथी का पूरा शरीर आनंद से झकझोर रहा था, और यदि वह केवल चौपाया न होता, तो वह प्रथम मार्ग (सम्मोहन) की सिद्धि प्राप्त कर लेता। इस चमत्कार को देखकर लोग खुशी से चिल्ला उठे और उंगलियां चटकाने लगे। उन्होंने आनंद में आकर हाथी पर तरह-तरह के आभूषण फेंके और उसके पूरे शरीर को ढक दिया। तब से नालगिरि को धनपालक (खजाने का रक्षक) के नाम से जाना जाने लगा। धनपालक से हुई इस मुलाकात के अवसर पर चौरासी हजार प्राणियों ने अमरत्व का अमृत पिया। और गुरु ने धनपालक को पंच नैतिक नियमों में स्थापित किया। हाथी ने अपनी सूंड से भगवान बुद्ध के चरणों की धूल उठाकर अपने सिर पर छिड़की, और झुके हुए शरीर के साथ पीछे हटते हुए जब तक बुद्ध दृष्टि में रहे, उन्हें प्रणाम करता रहा, फिर मुड़कर हाथी के बाड़े में चला गया। तब से वह बिल्कुल शांत हो गया और उसने किसी को हानि नहीं पहुंचाई। गुरु ने अपनी इच्छा पूर्ण होते देख निश्चय किया कि खजाना उन्हीं के पास रहे जिन्होंने उसे हाथी पर लादा था। उन्होंने सोचा, "आज मैंने एक बड़ा चमत्कार किया है। इस नगर में भिक्षा मांगने के लिए घूमना उचित नहीं है।" गलत विश्वासियों को वश में करने के बाद, भिक्षुओं के एक समूह से घिरे हुए, वे एक विजयी योद्धा सरदार की तरह तेजी से नगर से निकल पड़े और सीधे बांस के वन की ओर चल दिए। नगरवासी अपने साथ उबले हुए चावल, पेय और कुछ ठोस भोजन लेकर मठ गए और बड़े पैमाने पर भिक्षादान का कार्य शुरू किया। उस दिन शाम को, जब वे सत्य के हॉल में बैठे थे, तब भिक्षुओं ने एक विषय शुरू किया और कहा, “आदरणीय आनंद ने तथागत (बुद्ध) के लिए अपने प्राणों का बलिदान देकर एक अद्‌भुत कार्य किया। नालगिरि को देखकर, गुरु द्वारा तीन बार मना किए जाने के बावजूद, उन्होंने जाने से इनकार कर दिया। हे सज्जनों, वास्तव में उस वरिष्ठ भिक्षु ने एक अद्‌भुत कार्य किया।” गुरु ने सोचा, “यह चर्चा आनंद के गुणों पर केंद्रित है, मुझे इसमें उपस्थित होना चाहिए,” इसलिए वे अपने सुगंधित कक्ष से उठकर आए और उनसे पूछा, “भाइयों, आप यहाँ किस विषय पर चर्चा कर रहे हैं?” जब उन्होंने उत्तर दिया, “अमुक विषय पर,” तो उन्होंने कहा, “न केवल अभी, बल्कि पहले भी, आनंद ने पशु रूप में जन्म लेकर भी मेरे लिए अपने प्राणों का त्याग किया था,” और ऐसा कहते हुए उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले महिंसक राज्य में शकुल नगर के एक राजा शकुल ने अपने राज्य पर विधिपूर्वक शासन किया। उस समय नगर से कुछ ही दूरी पर स्थित एक शिकारी गाँव में एक शिकारी पक्षियों को फँसाकर नगर में बेचकर अपना जीवन यापन करता था। नगर के निकट ही मानुसिया नामक एक कमल-झील थी, जिसका घेरा बारह मील (4.23 किमी) था और वह पाँच प्रकार के कमलों से आच्छादित थी। वहाँ विभिन्न प्रकार के पक्षियों का झुंड आता-जाता रहता था और शिकारी वहाँ निःसंकोच अपने फंदे लगाता था। उसी समय धतरत्थ हंसों का राजा, अपने छियानवे हजार हंसों के दल के साथ, चित्तकूट पर्वत पर स्थित स्वर्ण गुफा में रहता था और उसका सेनापति सुमुख था।

एक दिन कुछ सुनहरे हंसों का झुंड मनुसिया झील पर आया और भरपूर चारागाह में जी भरकर चरने के बाद, वे सुंदर चित्तकुटा की ओर उड़ गए और धतरत्थ राजा से कहा, “महाराज, मनुष्यिया नाम की एक कमल-झील है, जो मनुष्यों के निवास स्थानों के बीच स्थित एक समृद्ध चारागाह है। हम वहाँ चरने जाएँगे।” राजा ने उत्तर दिया, “मनुष्यों के निवास स्थान खतरनाक हैं: इसे अपने लिए उपयुक्त न समझें।” यद्यपि उन्होंने जाने से इनकार कर दिया, फिर भी विनती करने पर उन्होंने कहा, “यदि आपकी इच्छा हो, तो हम जाएँगे,” और अपने साथियों के साथ वे उस झील की ओर चल पड़े। हवा से उतरते ही जैसे ही उन्होंने जमीन पर पैर रखा, उनका पैर एक फंदे में फंस गया। फंदे ने मानो लोहे के शिकंजे में जकड़कर उनके पैर को जकड़ लिया। फिर फंदे को तोड़ने के इरादे से उसने उसे खींचा, पहले चमड़ी फटी, फिर मांस फटा, और अंत में नसें कट गईं, जब तक कि फंदा हड्डी तक नहीं पहुँच गया और खून बहने लगा तथा असहनीय दर्द होने लगा। उसने सोचा, "अगर मैं पकड़े जाने की चीख निकाल दूँ, तो मेरा परिवार घबरा जाएगा और बिना भोजन के भूखा-प्यासा उड़ जाएगा और कमजोरी से पानी में गिर जाएगा।" इसलिए उसने दर्द सहन किया और जब उसके परिवार ने पेट भर खा लिया और हंसों की तरह आनंद ले रहे थे, तब उसने पकड़े गए पक्षी की तरह जोर से चीख मारी। यह सुनकर हंस मृत्यु के भय से भयभीत हो गए और चित्तकुटा की दिशा में उड़ गए। उनके जाते ही हंसों के सरदार सुमुख ने सोचा, "क्या इसका मतलब यह है कि महान राजा के साथ कुछ भयानक घटित हुआ है?"

मैं पता लगाऊंगा कि यह क्या है," और पूरी गति से उड़ते हुए, हंसों की पीछे हटती सेना के अग्रभाग में उस महान प्राणी को न देखकर, उसने पक्षियों के विशाल समूह में उसकी तलाश की और वहाँ भी उसे न पाकर उसने कहा, "निस्संदेह कुछ भयानक घटित हुआ है," और वह वापस मुड़ा और उसने उस महान प्राणी को एक फंदे में फंसा हुआ, खून से लथपथ और अत्यधिक पीड़ा से पीड़ित, कीचड़ भरे मैदान पर पड़ा पाया। और वह नीचे उतरा और जमीन पर बैठ गया और उस महान प्राणी को सांत्वना देने का प्रयास करते हुए कहा, "भयभीत न हों, महाराज: मैं अपने प्राणों का बलिदान देकर आपको फंदे से मुक्त कर दूंगा।"

फिर उसकी परीक्षा लेने के लिए उस महान सत्ता ने पहला श्लोक बोला:

मेरी परवाह किए बिना, बाकी सभी पक्षी जल्दी से उड़ गए;
एक कैदी किस तरह की दोस्ती को जान सकता है? जल्दी चलो, देर मत करो।
इसके बाद ये छंद आए (*8):

चाहे मैं तुम्हारे साथ जाऊं या रहूं, मुझे एक दिन मरना ही है।
मैंने कल्याणकारी योजनाओं में आपका साथ दिया है, लेकिन आपके कारण होने वाली पीड़ा में शायद मैं उड़ न पाऊं।
या तो मुझे तुम्हारे साथ मरना होगा, या फिर दुख भरी जिंदगी जीनी होगी।
अपने नुकसान का शोक मनाने के बजाय तुरंत मर जाना कहीं बेहतर था।
महाराज, आपको ऐसी दयनीय स्थिति में छोड़ना उचित नहीं है;
नहीं, मुझे आपके भाग्य में जो भी लिखा हो, उसे स्वीकार करने में कोई आपत्ति नहीं है।
जाल में फंसे व्यक्ति का क्या हश्र होगा सिवाय उस क्रूर भाले के?
आप होश में रहते हुए और स्वतंत्र रहते हुए यह प्रस्ताव कैसे प्रस्तुत कर सकते हैं?
हे पक्षी, इसमें तुम्हें और मुझे क्या लाभ है, यह तुम समझ पाते हो?
या फिर, अगर हम दोनों की मृत्यु हो जाए तो हमारे परिवार का क्या होगा?
सुनहरे पंखों वाले, रात में लिपटे हुए, तुम्हारा सार्थक कर्म होगा;
यदि ऐसे बलिदान का खुलासा हो जाए तो इससे क्या नैतिक संदेश मिलेगा?
हे पक्षियों के राजा, क्या तुम नहीं देखते कि आशीर्वाद अवश्य प्राप्त होते हैं?
न्याय का उचित सम्मान करने से मनुष्यों को यह पता चलता है कि उनका सच्चा हित क्या हो सकता है।
सही को देखकर और उन सभी अच्छाइयों को देखकर जो सही से अभी भी उत्पन्न हो सकती हैं,
तुम्हारे प्रेम में मैं खुशी-खुशी अपना प्राण त्याग दूंगा।
सही मार्ग का ध्यान रखने वाला व्यक्ति कभी भी पीड़ित मित्र का साथ नहीं छोड़ता।
अपने जीवन को बचाने के लिए भी, ऐसा कार्य करना बुद्धिमानों द्वारा प्रशंसनीय माना जाता है।
आपने अपना कर्तव्य बखूबी निभाया, और मैं आपके प्रेम को पहचानता हूँ।
यदि तुम वह काम करना चाहते हो जिसे मैं सबसे अधिक पसंद करता हूँ, तो तुरंत चले जाओ।
शायद समय के साथ, मेरे प्रभाव में मेरे परिवार को बांधने वाले बंधन टूट जाएं,
अधिक जानकारी और नियंत्रण के साथ, यह अधिकार एक दिन आपको मिल सकता है।
इस प्रकार जब ये महान पक्षी आपस में उच्च विचारों का आदान-प्रदान कर रहे थे, तो उन्हें देखो,
किसी बिस्तर पर पड़े हुए पीड़ित के लिए मृत्यु के समान, यह साहसी शिकारी प्रकट हुआ।

उसके मित्र अपने शत्रु को भली-भांति पहचानते हैं, जिससे उन्हें भय लगता है।
जब वह उनके पास आया तो वे काफी देर तक चुपचाप और बिना हिले-डुले बैठे रहे।
हंसों को इधर-उधर उड़ते और अंतरिक्ष में गायब होते देखना,
जहां ये महान पक्षी बैठे थे, वहां उनका शत्रु तेजी से उस स्थान की ओर बढ़ा।
और जैसे ही वह पूरी गति से दौड़ा और नियति स्थल पर पहुंचा,
यह सोचकर शिकारी कांप उठा और चिल्लाया, "क्या वे पकड़े गए या नहीं?"
एक पक्षी को उसने जाल में फंसा हुआ देखा, दूसरे पक्षी को उसने पाया
अपने बंदी मित्र को देखते हुए, जो स्वयं जंजीरों और बंधनों से मुक्त हो चुका था।
अपने मन में असमंजस और संदेह से भरे हुए उसने उस महान जोड़े को देखा, -वे पूरी तरह से विकसित थे, दो आकर्षक पक्षी--और इस प्रकार उसने उनके बारे में अच्छी बातें कहीं।

यह मानते हुए कि जाल में फंसा व्यक्ति कभी उड़ नहीं सकता (*9),
हे शक्तिशाली पक्षी, तुम अभी भी स्वतंत्र होकर उसके साथ रहने का निश्चय क्यों करते हो?
यह पक्षी तुम्हारे लिए क्या मायने रखता है, जो बाकी सब के उड़ जाने के बाद भी चला जाता है?
हालांकि तुम स्वतंत्र हो, फिर भी पिंजरे में बंद पक्षी के बगल में अकेले बैठे हो?
(*10)0 पक्षियों का शत्रु, मेरा मित्र और राजा, वह मेरे जीवन के समान प्रिय है;
मैं उसे कभी नहीं छोड़ूंगी—नहीं, मैं ऐसा कभी नहीं करूंगी, जब तक कि मृत्यु मुझे अपने पास न बुला ले।
यह पक्षी शिकारी के गुप्त जाल को कैसे नहीं देख पाया?
शक्तिशाली सरदारों का कार्य खतरे से सावधान रहना है।
(*11)जब किसी व्यक्ति पर विनाश आ पड़ता है और मृत्यु का समय निकट आ जाता है,
भले ही आप इसके करीब आ जाएं, लेकिन न तो कोई जाल बिछा पाएंगे और न ही कोई फंदा।
हे पवित्रजनों, हर प्रकार के जाल अक्सर व्यर्थ ही बिछाए जाते हैं।
अंततः मृत्यु के क्षण में एक व्यक्ति छिपे हुए जाल में फंस जाता है और मारा जाता है।
इस प्रकार उसने उससे बातचीत करके शिकारी का हृदय नरम किया और उस महान सत्ता से जीवन की भीख मांगते हुए यह श्लोक कहा:

क्या यही आपके साथ मैत्रीपूर्ण बातचीत का सुखद पहलू (*12) है?
और क्या आप कृपया हमारी जान बख्श देंगे और हम दोनों को रिहा कर देंगे?
सुमुखा के मधुर शब्दों से मोहित होकर शिकारी ने यह श्लोक कहा:

तुम मेरे कैदी नहीं हो; जल्दी से यहाँ से चले जाओ;
मैं तुम्हारा खून नहीं बहाऊंगा; तुम बेदाग होकर कई दिनों तक जीवित रहोगे।
फिर सुमुखा ने चार श्लोक दोहराए:

अगर मेरा यह दोस्त मर जाए तो मुझे जीने की कोई इच्छा नहीं रहेगी।
एक से संतुष्ट होकर, उसे मुक्त जाने दो, और बदले में मेरा मांस खाओ।
हम दोनों की उम्र, लंबाई और शारीरिक बनावट लगभग एक जैसी है;
अगर आप मुझे उसके बदले में ले लें तो इसमें आपका कोई नुकसान नहीं है।
इसे इस नजरिए से देखो और मुझ पर अपनी भूख मिटाओ;
पहले मुझे फंदे में बांधो, फिर पक्षियों के इस राजा को मुक्त छोड़ दो।
इस प्रकार तुम्हारी इच्छा पूरी हो जाएगी और मेरी हृदय की मनोकामना भी सिद्ध हो जाएगी।
और जब तक जीवन कायम रहेगा, हंसों और तुम्हारे बीच शांति बनी रहेगी।
इस प्रकार, धर्म के उपदेश से उस शिकारी का हृदय तेल में डूबे रुई के समान कोमल हो गया, और उसने उस महान सत्ता को अपने स्वामी के दास के समान समर्पित करते हुए कहा:

अपने सभी ऋषियों, मित्रों, सेवकों और परिवार के सदस्यों को साक्षी मानो।
केवल तुम्हारे माध्यम से ही पक्षियों के इस राजा को स्वतंत्रता प्राप्त हुई।
आप जैसा मित्र मिलना, जो सब कुछ साझा करने को तैयार हो, यह सौभाग्य नसीब में ही मिलता है।
यह एक आम नियति है, जैसा कि तब हुआ था जब आपका राजा एक घातक जाल में फंस गया था।

इसलिए मैं तुम्हारे मित्र राजा को रिहा करता हूँ, ताकि वह दूर तक तुम्हारा अनुसरण करे।
जल्दी करो, यहाँ से निकल जाओ, अपने परिवार के बीच एक तारे की तरह चमकने के लिए।
ऐसा कहकर शिकारी दयालु हृदय से उस महान प्राणी के पास आया, और उसके बंधन काटकर उसे अपनी बाहों में उठा लिया और पानी से बाहर निकालकर झील के किनारे ताज़ी घास पर लिटा दिया। उसने बड़े ही कोमल भाव से उसके पैर में बंधी हुई फंदे को धीरे से खोलकर दूर फेंक दिया। फिर उस महान प्राणी के प्रति गहरा स्नेह रखते हुए, प्रेम से भरे हृदय से उसने थोड़ा पानी लेकर उसके घाव से खून धोया और बार-बार पोंछा। उसकी दया से बोधिसत्व के पैर का घाव भर गया, नसें नस से, मांस मांस से, चमड़ी चमड़ी से जुड़ गई। नई चमड़ी बन गई और उस पर नए रोएँ उग आए। बोधिसत्व ऐसे हो गए मानो उनका पैर कभी फंसा ही न हो और अपने सामान्य रूप में आनंदित होकर बैठ गए। तब सुमुख ने अपने इस कार्य से उस महान प्राणी को इतना प्रसन्न देखकर, प्रसन्नता में शिकारी की प्रशंसा की।

मास्टर ने मामले को स्पष्ट करते हुए कहा:

राजा की रिहाई से प्रसन्न हंस ने अपने स्वामी के सम्मान में अपने सहायक के कान में ये अत्यंत मधुर शब्द कहे:

"हंटर, तुम अपने सभी दोस्तों और परिवार के साथ खूब खुश रहो।"
मुझे पक्षियों के राजा को मुक्त देखकर खुशी हो रही है।"
शिकारी की इतनी प्रशंसा करने के बाद, सुमुखा ने बोधिसत्व से कहा, "हे प्रभु, इस व्यक्ति ने हमारी बड़ी सेवा की है: यदि उसने हमारी बात न मानी होती, तो वह या तो हमें पालतू पक्षी बनाकर, जिन्हें वह अपने आनंद के लिए रखता और किसी बड़े स्वामी को भेंट करता, या फिर हमें मारकर और बेचकर भोजन के रूप में बहुत धन कमा सकता था। परन्तु उसने अपनी आजीविका की परवाह न करते हुए हमारी बात मानी। आइए हम उसे राजा के समक्ष ले चलें और उसे जीवन भर सुखी बनाएं।" बोधिसत्व इस बात पर सहमत हो गए। तब सुमुखा ने बोधिसत्व से उनकी अपनी भाषा में बातचीत करने के बाद, शिकारी से मनुष्य भाषा में पूछा, "मित्र, तुमने जाल क्यों बिछाए?" और उसके उत्तर देने पर, "लाभ के लिए," सुमुखा ने कहा, "इसलिए, हमें अपने साथ नगर ले चलो और अपने राजा के समक्ष प्रस्तुत करो, और मैं उसे तुम्हें बहुत धन देने के लिए मना लूंगा," और उन्होंने ये श्लोक कहे:

आओ, मैं तुम्हें सिखाऊंगा कि तुम अपने लिए महान लाभ कैसे प्राप्त कर सकते हो।
इस हंस की प्रतिष्ठा पर जरा सा भी दाग लगने की कोई गुंजाइश नहीं है।
जल्दी करो, हमें शाही दरबार में ले चलो, पूरी तरह से स्वस्थ और तंदुरुस्त होकर।
इस भारवाहक डंडे के दोनों सिरों पर स्वतंत्र रूप से खड़े रहो।
और कहो, "हे महाराज, देखिए! हम आपके लिए दो लाल हंस लाए हैं,
एक लॉटरी का कप्तान है, दूसरा उनका राजा है।
मनुष्यों का यह स्वामी इस शाही हंस को देखकर
वह अत्यंत प्रसन्न और आनंदित होकर तुम्हें अपार धन-दौलत प्रदान करेगा।
जब उसने ऐसा कहा, तो शिकारी ने उत्तर दिया, "राजा से मिलने की इच्छा मत रखो। सचमुच राजा कमजोर दिल के होते हैं: वे या तो तुम्हें अपने मनोरंजन के लिए बंदी बना लेंगे या तुम्हें मार डालेंगे।" सुमुख ने कहा, "डरो मत, मेरे मित्र। धर्म के उपदेश से मैंने तुम्हारे जैसे क्रूर प्राणी का हृदय नरम कर दिया है और तुम्हें अपने चरणों में ले आया हूँ, एक शिकारी जिसका हाथ खून से सना है। राजा सचमुच अच्छे और बुद्धिमान होते हैं, और वे अच्छे और बुरे शब्दों में भेद कर सकते हैं। इसलिए जल्दी करो और हमें अपने राजा के समक्ष ले चलो।" शिकारी ने कहा, "ठीक है, मुझसे नाराज मत हो। यदि आप चाहें, तो मैं आपको उनके पास ले जाऊँगा।" तब उसने पक्षियों के जोड़े को अपने डंडे पर बिठाया और दरबार में जाकर उन्हें राजा से मिलवाया, और राजा द्वारा पूछे जाने पर शिकारी ने मामले के सभी तथ्य बता दिए।

मास्टर ने मामले को स्पष्ट करते हुए कहा:

यह सुनकर वह उनके लिए वह चीज लेकर आया जिसकी उन्हें दिल से चाह थी।
और जल्दी से हंसों को, शारीरिक रूप से स्वस्थ और पूरी तरह से ठीक-ठाक, अदालत में ले गए।
वे दोनों खड़े थे, बंधे हुए नहीं थे, और एक-एक उनके लंबे डंडे के दोनों सिरों पर था।
"देखो! ये लो," उसने कहा, "हे महाराज, हम आपके लिए दो लाल हंस लाए हैं।"
एक लॉटरी का कप्तान है, दूसरा उनका राजा है।
हे शिकारी, ये शक्तिशाली पंखों वाले जीव तुम्हारे शिकार कैसे बन गए?
आप चुपके से उनके इतने करीब कैसे पहुंच गए, और उन्हें डराकर भगाए बिना कैसे चले गए?
हे मनुष्यों के स्वामी, प्रत्येक तालाब में फंदा या जाल देखो।

मुझे लगता है कि पक्षियों के हर (*13) ठिकाने में एक घातक जाल बिछाया गया था।
मैंने हंसों के राजा को इसी तरह के किसी छिपे हुए जाल में पकड़ा था।
उसका दोस्त, जो अभी भी स्वतंत्र था, उसके बगल में बैठा रहा और अपने स्वामी की रिहाई की प्रतीक्षा करता रहा।
इस पक्षी ने एक ऐसा कार्य करने का प्रयास किया जो तुच्छ प्राणियों की क्षमता से परे है।
उसने अपने स्वामी को राहत दिलाने के लिए अपनी हर नस को तनाव में डालने का दृढ़ संकल्प किया।
वह वहाँ बैठा था, जीवन जीने के योग्य, अपना जीवन देने में संतुष्ट।
काश, उसके स्वामी को, जिसकी वह प्रशंसा करता था, जीवित रहने की अनुमति मिल जाती।
उनके शब्दों को सुनकर मुझे तुरंत ही दिव्य अवस्था प्राप्त हो गई।
उन्होंने खुशी-खुशी पिंजरे में बंद पक्षी को मुक्त कर दिया और उनसे जगह छोड़ने को कहा।
अपनी रिहाई से प्रसन्न होकर हंस ने अपने स्वामी के सम्मान में अपने सहायक के कान में ये अत्यंत मधुर शब्द कहे:

"हंटर, तुम अपने सभी दोस्तों और परिवार के साथ खूब खुश रहो।"
मुझे पक्षियों के राजा को स्वतंत्र होते देखकर खुशी हो रही है।
आओ, मैं तुम्हें सिखाऊंगा कि तुम अपने लिए महान लाभ कैसे प्राप्त कर सकते हो।
इस हंस की प्रतिष्ठा पर जरा सा भी दाग लगने की कोई गुंजाइश नहीं है।
जल्दी करो, हमें शाही दरबार में ले चलो, पूरी तरह से स्वस्थ और तंदुरुस्त होकर।
इस भारवाहक डंडे के दोनों सिरों पर, बिना बंधे, खड़े रहो।
और कहो, "हे महाराज, देखिए! हम आपके लिए दो लाल हंस लाए हैं,
एक लॉटरी का कप्तान है, दूसरा उनका राजा है।
हे मनुष्यों के स्वामी, इस शाही हंस को देखकर
वह अत्यंत प्रसन्न और आनंदित होकर तुम्हें अपार धन-दौलत प्रदान करेगा।
अत: उनके कहने पर, मेरे नेतृत्व में ये दोनों यहाँ आए हैं।
हालांकि मेरे लिए वे दोनों अपने पहाड़ी घर की तलाश करने के लिए स्वतंत्र थे।
इस बेचारे पक्षी का यही हश्र हुआ, हालांकि वह बहुत ही नेक था।
इतना अधिक कि उसने मुझ जैसे क्रूर शिकारी को भी दया से भर दिया।
हे मनुष्यों के स्वामी, मैं इस हंस को आपके लिए भेंट के रूप में लाता हूँ।
शिकारियों के बीच शायद ही कोई उनके जैसा मिल पाता था।
वहाँ खड़े होकर उसने सुमुखा के गुणों का बखान किया। फिर राजा शकुल ने हंस-राजा को एक कीमती सिंहासन और सुमुखा को एक बहुमूल्य सोने की कुर्सी भेंट की। जब वे बैठ गए, तो उसने उन्हें सोने के बर्तनों में भुना हुआ अनाज, शहद, गुड़ आदि परोसा। भोजन समाप्त होने पर उसने हाथ फैलाकर ईश्वर से धर्म का उपदेश देने की प्रार्थना की और स्वयं सोने की कुर्सी पर बैठ गया। उसके अनुरोध पर हंस-राजा ने उससे मधुर वार्तालाप किया।

गुरु ने सब कुछ स्पष्ट करने के लिए कहा:

अब राजा को एक सुंदर सुनहरी कुर्सी पर बैठे देखकर,
हंस ने मधुर स्वर में उसकी सुंदरता का बखान किया।
हे प्रभु, क्या आप स्वस्थ हैं और सब कुछ ठीक है?
मुझे विश्वास है कि आपका राज्य समृद्ध है और न्यायपूर्ण शासन से संचालित होता है।
हे हंसों के राजा, मेरा स्वास्थ्य अच्छा है और मैं पूरी तरह से स्वस्थ हूँ;
मेरा राज्य बहुत समृद्ध है और न्यायपूर्ण शासन से संचालित होता है।
क्या आपके पास ऐसे सच्चे सलाहकार हैं जो हर तरह के दाग या दोष से मुक्त हों?
क्या आप अपने नेक उद्देश्य और नाम के लिए, यदि आवश्यक हो तो, मरने के लिए तैयार हैं?
मुझे सलाह देने के लिए सच्चे पुरुष मौजूद हैं, जो हर तरह के दाग या दोष से मुक्त हैं।
अपने नेक उद्देश्य और नाम के लिए, यदि आवश्यक हो तो, मरने को तैयार हूँ।
क्या आपकी पत्नी आपके समान कुल की, आज्ञाकारी और वाक्पटु है?
क्या वह संतानोत्पत्ति से संपन्न है, सुंदर दिखती है, उसका नाम अच्छा है, और वह अपने स्वामी की आज्ञा का पालन करती है?
मेरी पत्नी मेरे समतुल्य कुल की है, आज्ञाकारी है और वाक्पटु है।
संतान की देवी, सुंदर रूप, सुसंस्कृत नाम, अपने स्वामी के प्रति आज्ञाकारी।
जब बोधिसत्व ने अपने सौहार्दपूर्ण अभिवादन के शब्द समाप्त कर दिए, तो राजा ने उनसे फिर बातचीत करते हुए कहा:

जब किसी दुर्भाग्यपूर्ण घटना ने आपको आपके सबसे घातक शत्रु के सामने ला खड़ा किया,
हे पक्षी, क्या तुमने उसके हाथों भीषण पीड़ा सहन की?
क्या उसने दौड़कर आकर आपको अपनी लाठी से पीटा था? मैं यह जानना चाहता हूँ।
मैंने सुना है कि ऐसे घिनौने प्राणियों का यही हाल होता है।
मुझे याद है कि मैं कभी खतरे में नहीं था, और मैं इसके लिए आभारी हूं।
और न ही उन्होंने हमारे साथ किसी भी तरह से शत्रुओं जैसा व्यवहार किया।
शिकारी, कांपते और आश्चर्यचकित होते हुए, हमसे प्रश्न करने के लिए तैयार था, और पक्षियों में सबसे बुद्धिमान सुमुख ने जवाब दिया।

उनकी बातें सुनकर वह तुरंत ही कृपा की अवस्था में पहुँच गए, उन्होंने खुशी-खुशी मुझे जाल से मुक्त कर दिया और हमें उस स्थान से चले जाने के लिए कहा।

हे राजा, आपसे मिलने आना सुमुखा की इच्छा थी।
हमें लगा कि इस तरह हमारा मित्र शिकारी अपार धन अर्जित कर सकता है।
आपका हार्दिक स्वागत है, महोदय। निश्चिंत रहिए, मुझे आपको यहाँ देखकर बहुत खुशी हुई।
और अपने शिकारी मित्र को सांसारिक साजो-सामान से भरपूर होने दो।
और ऐसा कहकर राजा ने एक सलाहकार पर दृष्टि डाली और जब उसने पूछा, "महाराज, आपकी क्या इच्छा है?" तो उसने कहा, "इस शिकारी के बाल और दाढ़ी मुंडवा दें और उसे स्नान और अभिषेक के बाद उत्तम वस्त्र पहनाकर यहाँ ले आएं।" और जब ऐसा किया गया और शिकारी को वापस लाया गया, तो राजा ने उसे एक ऐसा गाँव भेंट किया जो प्रतिवर्ष एक लाख सिक्के उत्पन्न करता था, साथ ही दो सड़कों से सटे एक घर, एक शानदार रथ और बहुत सारा पीला सोना भी दिया।

मास्टर ने मामले को स्पष्ट करते हुए कहा:

धनवान राजा ने शिकारी को भरपूर आशीर्वाद दिया, और फिर मधुर स्वर में लाल हंस ने संबोधित किया।

तब उस महान सत्ता ने राजा को धर्म का उपदेश दिया, और उनकी व्याख्या सुनकर राजा प्रसन्न हुआ, और धर्म के उपदेशक के प्रति सम्मान प्रकट करने के उद्देश्य से उसने उन्हें सफेद छत्र भेंट किया और अपना राज्य उन्हें सौंप दिया और ये श्लोक कहे:

जो कुछ भी मेरे पास कानूनी रूप से है, जो कुछ भी मैं विधिवत दावा करता हूं,
यदि तुम अपने दिल की इच्छा का नाम लोगे, तो वह तुम्हारे वश में आ जाएगा।
चाहे दान के लिए हो या अपने निजी उपयोग के लिए,
मैं अपना सारा साजो-सामान तुम्हें सौंपता हूँ, अपना सिंहासन भी तुम्हारे लिए छोड़ता हूँ।
तब उस महान सत्ता ने राजा द्वारा दिया गया सफेद छाता लौटा दिया। राजा ने सोचा, "मैंने हंस-राजा द्वारा उपदेशित धर्म को तो सुन लिया है, परन्तु इस सुमुख की तो शिकारी ने इतनी प्रशंसा की है कि उसके शब्द शहद के समान मधुर हैं, मुझे भी उससे धर्म का उपदेश सुनना होगा।" अतः उससे बातचीत करते हुए उसने एक और श्लोक कहा:

यदि बुद्धिमान और विद्वान सुमुखा अपनी स्वतंत्र इच्छा के बारे में बात करे
एक-दो शब्द, मेरी खुशी और भी बढ़ जाएगी।
तब सुमुख ने कहा:

मैं आपकी उपस्थिति में, सही ढंग से, ऐसा नहीं कर सका, मेरे प्रभु।
मानो मैं कोई नाग राजकुमार हूँ, एक शब्द भी न बोलूँ।
इसके लिए लाल हंसों का मुखिया, और हे पराक्रमी राजा, आप भी।
कई आधारों पर मेरे द्वारा दी गई श्रद्धांजलि को उचित ठहराया जा सकता है।
मैं तो एक मामूली कर्मचारी हूँ, महाराज, इसलिए शायद ही हस्तक्षेप कर सकूँ।
जब महामहिमों के बीच उच्च स्तरीय बहस चल रही हो।
राजा ने उसकी बात सुनकर मन ही मन प्रसन्न होकर कहा, "शिकारी ने आपकी प्रशंसा की है, और निश्चय ही आपके जैसा कोई दूसरा नहीं हो सकता, आप धर्म के इतने मधुर उपदेशक हैं," और उन्होंने ये पंक्तियाँ दोहराईं:

शिकारी ने इस पक्षी की बुद्धिमत्ता की सही ही प्रशंसा की थी:
ऐसा विवेक मन से अनुशासनहीन व्यक्ति में नहीं पाया जाता। (*14)

मैंने ऐसे महान प्राणी देखे हैं, जो उच्चतम प्रकृति से धन्य हैं।
निश्चित रूप से इन सबमें यह अद्वितीय पक्षी सबसे अच्छा है (*15)।
आपके उदात्त रूप और मधुर वाणी ने मुझ पर ऐसा जादू कर दिया,
मेरी बस यही इच्छा है कि आप दोनों मेरे साथ लंबा समय बिताएं।
तब उस महान सत्ता ने राजा की प्रशंसा करते हुए कहा:

आपने हमारे साथ वैसा ही व्यवहार किया जैसा कोई व्यक्ति अपने सबसे प्रिय मित्र के साथ करता है:
महोदय, आपने हम जैसे गरीब पक्षियों पर इतनी दया दिखाई।
फिर भी हमारे परिवार के दायरे में एक बहुत बड़ा खालीपन है जिसका हमें अफसोस करना होगा।
और कई पक्षी हमारा चेहरा फिर कभी न देखकर बेहद दुखी होते हैं।
हे राजा, आपने हमारे दुःखों को दूर करने के लिए हमें मुक्त किया है।
अतः विनम्रतापूर्वक विदा लेते हुए हम अपने दोस्तों को एक बार फिर देखने के लिए उड़ान भरते हैं।
मुझे आपके महामहिम से परिचय प्राप्त करके बहुत खुशी हुई।
मुझे उम्मीद है कि अब से मेरे दोस्तों को डरने की कम वजह होगी।
जब उन्होंने ऐसा कहा तो राजा ने उन्हें जाने को कहा। और उस महान सत्ता ने राजा को पाँच प्रकार के दुर्गुणों से होने वाले कष्ट और सद्गुणों से मिलने वाले आशीर्वाद के बारे में बताया और उन्हें प्रोत्साहित करते हुए कहा, "नैतिक नियमों का पालन करो और अपने राज्य पर धार्मिकता से शासन करो, और चार प्रकार के मेल-मिलाप (*16) से अपनी प्रजा का दिल जीत लो," और फिर वह चित्तकुटा के लिए रवाना हो गए।

मास्टर ने मामले को स्पष्ट करते हुए कहा:

इस प्रकार धतरत्थ राजा ने मनुष्यों के स्वामी से कहा, फिर उसने पंखों की अधिकतम गति से इन हंसों के भीतर उनके मित्रों और परिवार की खोज की।

अपने सरदारों को मनुष्यों के आवासों से सुरक्षित और स्वस्थ लौटते देख, पंखों वाले पक्षियों के झुंड ने शोरगुल के साथ उनका स्वागत किया।

इस प्रकार अपने स्वामी के चारों ओर चक्कर लगाते हुए, जिन पर उन्हें पूरा भरोसा था, इन लाल हंसों ने अपने राजा को पूरा सम्मान दिया और उनकी रिहाई पर खुशी मनाई।

अपने राजा की यात्रा करते हुए इन हंसों ने उनसे पूछा, "महाराज, आप कैसे बच निकले?" राजा ने उन्हें सुमुख की सहायता से अपनी मुक्ति और शकुल राजा और शिकारी की कार्रवाई के बारे में बताया। यह सुनकर हंसों के झुंड ने प्रसन्नता से गीत गाते हुए कहा, "हमारे समूह के सेनापति सुमुख, शकुल राजा और शिकारी की जय हो। वे सुखी और दुःखमुक्त रहें।"

विषय को स्पष्ट करने के लिए, गुरु ने अंतिम श्लोक को दोहराया:

इस प्रकार जिनके हृदय प्रेम से भरे होते हैं, वे अपने कार्यों में सफल होते हैं, ठीक वैसे ही जैसे ये हंस सुरक्षित रूप से अपने मित्रों के पास लौट आए।

गुरु ने यहाँ अपनी कहानी समाप्त करते हुए कहा, "भाइयों (भिक्षुओं), न केवल अभी, बल्कि प्राचीन काल में भी, आनंद ने मेरे लिए अपने प्राण त्यागे थे," और उन्होंने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उस समय चन्ना शिकारी थे, सारिपुत्र राजा थे, आनंद सुमुख थे, बुद्ध के अनुयायी नब्बे हजार हंस थे, और मैं स्वयं हंसों का राजा था।"

फुटनोट:

(1) इस हंस-जातक, क्रमांक 502 से तुलना करें। पवित्र हंसों की कहानी।

(2) देवदत्त की कहानी के लिए, cf. कुल्लवग्गा, VII.

(3)कुलवग्गा, VII..3.8 में संगत परिच्छेद में, पचचय्या के स्थान पर पच्चयायम (संस्कृत प्रा-च्चया) पढ़ा जाता है।

(4)बोधनेय्या

(5) रचा, संस्कृत रथ्य, एक वाहन मार्ग या गली। जाट. सं. 346

(6) ओडिसाकमेट्टा. जाट. सं. 61, सं. 146 देखें

(7)ये छंद कुलवग्गा, VII में पाए जाते हैं। 3. 12.

(8)कैद हंस-राजा और उसके वफादार दोस्त सुमुखा के बीच संवाद के रूप में। बाद में शिकारी हस्तक्षेप करता है।

(9) कुरुते दिसम, उड़ जाना। पाठ देसम, विद्वान दिसम, जैसा कि मीटर द्वारा आवश्यक है।

(10) यह दोहा खंड IV में पहले आता है।

(11) यह दोहा इससे पहले तीन बार आता है।

(12)सुखुद्रय, जाट। नहीं। 451, नहीं. 389, दुक्खुद्रय नं. 398, कटुकुद्रय नं. 241

(13) yam yad ayatanam पढ़ना.

(14)अकात्ता, स्कट अक्रिताततनियन, देखें नं। 296

(15)उत्तमसत्व, "सर्वश्रेष्ठ प्राणी," सत्त्व=सत्त, यानी सत्त्व।

(16) संगाहावत्थु,

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **महाहंस-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----II-534-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 534
महाहंस-जातक। (*1)

"देखो, पक्षी जा रहे हैं," इत्यादि। यह कहानी गुरु ने बाँस के वन में निवास करते हुए, वरिष्ठ भिक्षु आनंद के संन्यास के बारे में सुनाई थी। प्रारंभिक कहानी बिल्कुल वैसी ही है जैसी पहले बताई जा चुकी है, लेकिन इस बार गुरु ने अतीत की एक कहानी सुनाते हुए निम्नलिखित कथा सुनाई।

एक समय की बात है, बनारस में संयमा नामक राजा की पत्नी का नाम खेमा था। उस समय चित्तकूट पर्वत पर बोधिसत्व अपने साथ नब्बे हजार हंसों का झुंड लेकर निवास करते थे। एक दिन सुबह होते ही रानी खेमा को एक दर्शन हुआ। कुछ सुनहरे रंग के हंस आए और राजसिंहासन पर बैठकर मधुर स्वर में धर्म का उपदेश देने लगे। रानी सुनती और प्रशंसा करती रहीं, और अभी धर्म के उपदेश से उनकी तृप्ति भी नहीं हुई थी कि उजाला हो गया, और हंसों ने अपना उपदेश समाप्त कर खुली खिड़की से बाहर निकल गए। रानी जल्दी से उठीं और बोलीं, "इन्हें पकड़ो, हंसों को पकड़ो, इससे पहले कि वे भाग जाएं," और हाथ फैलाते-फैलाते उनकी नींद खुल गई। उनकी यह बात सुनकर उनकी दासियों ने पूछा, "हंस कहां गए?" और धीरे से हंस पड़ीं। इस क्षण रानी को अहसास हुआ कि यह एक सपना है, और उसने सोचा, "मैं वह चीज़ नहीं देख रही जो है ही नहीं: इस दुनिया में सोने के हंस ज़रूर होंगे, लेकिन अगर मैं राजा से कहूँ, 'मैं सोने के हंसों द्वारा धर्म का उपदेश सुनने के लिए उत्सुक हूँ,' तो वह कहेंगे, 'हमने आज तक कोई सोने का हंस नहीं देखा; हंसों द्वारा उपदेश जैसी कोई बात नहीं होती,' और वह इस मामले में कोई प्रयास नहीं करेंगे: लेकिन अगर मैं कहूँ, 'यह मेरी दिली इच्छा है,' तो वह हर संभव तरीके से उनकी खोज करेंगे और इस तरह मेरे दिल की इच्छा पूरी हो जाएगी।" इसलिए बीमार होने का बहाना बनाकर उसने अपने सेवकों को निर्देश दिए और लेट गई। राजा जब अपने सिंहासन पर बैठे, तो उन्हें रानी खेमा अपने सामान्य समय पर दिखाई नहीं दीं,

इसलिए उन्होंने पूछा कि रानी खेमा कहाँ हैं, और यह सुनकर कि वह बीमार हैं, वह उनके पास गए और पलंग के एक किनारे बैठकर उनकी पीठ छुई और पूछा कि क्या वह बीमार हैं। “महाराज,” उसने कहा, “मैं बीमार नहीं हूँ, बस एक गर्भवती महिला की तरह मेरी कुछ इच्छाएँ जाग उठी हैं।” “बताइए, देवी, आपको क्या चाहिए, मैं जल्दी ही आपके लिए ले आता हूँ।” “महाराज, मेरी बहुत इच्छा है कि मैं एक सुनहरे हंस द्वारा दिए गए उपदेश को सुनूँ, जब वह राजसिंहासन पर सफेद छतरी के नीचे बैठा हो, और मैं उसे सुगंधित मालाएँ और इसी तरह के सम्मान चिन्ह भेंट कर अपना आभार व्यक्त करूँ। अगर मुझे यह मिल जाए, तो अच्छा है; वरना मेरे जीवन में कोई जीवन नहीं है।” तब राजा ने उसे दिलासा देते हुए कहा, “अगर मनुष्य जगत में ऐसी कोई चीज है, तो तुम्हें वह जरूर मिलेगी; चिंता मत करो।” रानी के कक्ष से आगे बढ़ते हुए उन्होंने अपने मंत्रियों से सलाह ली और कहा, "देखो, रानी खेमा कहती हैं, 'यदि मुझे कोई सोने की हंसनी धर्म का उपदेश देती हुई सुनाई दे, तो मैं जीवित रहूंगी, अन्यथा मैं मर जाऊंगी'; कृपया बताइए, क्या कोई सोने की हंसनी होती है?" "महाराज," उन्होंने उत्तर दिया, "हमने उन्हें न तो कभी देखा है और न ही उनके बारे में सुना है।" "कौन जानेगा?" "ब्राह्मण, महाराज," राजा ने ब्राह्मणों को बुलाया और उनसे पूछा, "क्या सोने की हंसनी जैसी कोई चीज होती है जो धर्म का उपदेश देती है (*2)?" "जी महाराज, हमें परंपरा से पता चला है कि मछली, केकड़े, कछुए, हिरण,मोर, हंस, ये सभी सुनहरे रंग के पाए जाते हैं। इनमें से, कहते हैं कि धतरत्था हंसों का परिवार बुद्धिमान और विद्वान होता है। पुरुषों सहित सात ऐसे प्राणी हैं जिनका रंग सुनहरा है। राजा अत्यंत प्रसन्न हुए और उन्होंने पूछा, "ये विद्वान लाल हंस कहाँ रहते हैं?" "हमें नहीं पता, महाराज।" "तो फिर कौन जानेगा?" जब उन्होंने उत्तर दिया, "शिकारियों का कबीला," तो उन्होंने अपने राज्य के सभी शिकारियों को इकट्ठा किया और उनसे पूछा, "मेरे मित्रों, धतरत्थ वंश के सुनहरे हंस कहाँ रहते हैं?" तब एक शिकारी ने कहा, "हमें पीढ़ी दर पीढ़ी परंपरा से पता चला है, महाराज, कि वे हिमालय में, चित्तकूट पर्वत पर रहते हैं।" "क्या आप उन्हें पकड़ने का तरीका जानते हैं?" "मुझे नहीं पता, महाराज।" उन्होंने अपने बुद्धिमान ब्राह्मणों को बुलाया और उन्हें बताया कि चित्तकूट पर्वत पर सुनहरे हंस हैं, और फिर उनसे पूछा कि क्या वे उन्हें पकड़ने का कोई तरीका जानते हैं। उन्होंने कहा, "महाराज, हमें जाकर उन्हें पकड़ने की क्या आवश्यकता है?" "एक योजना बनाकर हम उन्हें शहर के पास लाएंगे और पकड़ लेंगे।" "यह योजना क्या है?" "महाराज, शहर के उत्तर में, तीन मील (4.23 किमी) चौड़ी एक झील खुदवाएं, जो एक सुरक्षित और शांत स्थान हो। उसमें पानी भरकर, सभी प्रकार के अनाज बोएं और झील को पांच प्रकार के कमलों से ढक दें। फिर इसे एक कुशल शिकारी की देखरेख में सौंप दें और किसी को भी इसके पास आने की अनुमति न दें। चारों कोनों पर तैनात लोगों के माध्यम से इसे एक पवित्र झील घोषित करवाएं। यह सुनकर सभी प्रकार के पक्षी वहां उतरेंगे। और ये हंस, एक-दूसरे से इस झील की सुरक्षा के बारे में सुनकर, वहां आएंगे और फिर आप उन्हें बालों के फंदों से फंसाकर पकड़ सकते हैं।" यह सुनकर राजा ने बताए गए स्थान पर वैसी ही झील खुदवाई, और एक कुशल शिकारी को बुलाकर उसे एक हजार सिक्के भेंट किए और कहा, "अब से अपना काम छोड़ दें: मैं आपकी पत्नी और परिवार का भरण-पोषण करूंगा।" इस शांत झील की सावधानीपूर्वक रक्षा करते हुए और सभी को इससे दूर रखते हुए, इसके चारों कोनों पर इसे अभयारण्य घोषित करवाओ, और कहो कि यहाँ आने-जाने वाले सभी पक्षी मेरे हैं, और जब सुनहरे हंस आएँ तो तुम्हें बड़ा सम्मान मिलेगा।” इन प्रोत्साहन भरे शब्दों के साथ राजा ने उसे अभयारण्य झील का प्रभारी बना दिया। उस दिन से शिकारी ने राजा के आदेशानुसार कार्य किया और उस स्थान की रखवाली की, और झील में शांति बनाए रखने वाले के रूप में वह शिकारी खेमा (शांति) के नाम से जाना जाने लगा। तब से सभी प्रकार के पक्षी वहाँ आने लगे, और एक-दूसरे को यह बताने से कि झील शांत और सुरक्षित है, विभिन्न प्रकार के हंस आने लगे। सबसे पहले घास के हंस आए, फिर उनकी सूचना पर पीले हंस आए, उसके बाद लाल हंस, सफेद हंस और ओका हंस आए। उनके आने पर खेमाका ने राजा को इस प्रकार सूचना दी: “महाराज, पाँच प्रकार के हंस आए हैं,और वे लगातार झील में भोजन करते रहते हैं। अब जबकि पाका हंस आ चुके हैं, कुछ ही दिनों में स्वर्ण हंस भी आ जाएँगे: महाराज, चिंता करना छोड़ दें।” यह सुनकर राजा ने ढोल बजाकर नगर में यह घोषणा करवाई कि कोई भी वहाँ न जाए, और जो कोई भी ऐसा करेगा उसके हाथ-पैर काट दिए जाएँगे और उसके घर का सारा सामान लूट लिया जाएगा; और तब से कोई भी वहाँ नहीं गया। अब पाका हंस चित्तकुट से कुछ ही दूरी पर स्वर्ण गुफा में रहते हैं। वे बहुत शक्तिशाली पक्षी हैं और धतरत्थ हंस परिवार की तरह ही उनके शरीर का रंग विशिष्ट होता है, लेकिन पाका हंसों के राजा की पुत्री स्वर्ण रंग की है। इसलिए उसके पिता ने यह सोचकर कि वह धतरत्थ राजा के लिए उपयुक्त है, उसे उनकी पत्नी बनाकर भेज दिया। वह अपने स्वामी की दृष्टि में प्रिय और अनमोल थी, और इसी कारण हंसों के दोनों परिवार बहुत मित्रवत हो गए। अब एक दिन बोधिसत्व की सेवा में रहने वाले हंसों ने पाका हंसों से पूछा, “आप अपना यह रंग कहाँ से ला रहे हैं?” "अभी खाना खाया?" "हम बनारस के पास एक शांत जगह पर भोजन कर रहे हैं; लेकिन तुम कहाँ घूम रहे हो?" "अमुक जगह पर," उन्होंने उत्तर दिया। "तुम हमारे अभयारण्य में क्यों नहीं आते? यह एक सुंदर झील है, जो हर तरह के पक्षियों से भरी है, पाँच प्रकार के कमलों से ढकी है, और विभिन्न प्रकार के अनाज और फलों से भरपूर है, और कई प्रकार की मधुमक्खियों के झुंडों से भिनभिनाती है। इसके चारों कोनों पर एक आदमी हमेशा के लिए खतरे से सुरक्षा की घोषणा करता है। किसी को भी पास आने की अनुमति नहीं है: किसी को नुकसान पहुँचाना तो दूर की बात है।" इस तरह उन्होंने शांत झील की प्रशंसा की। पाका हंसों की बात सुनकर उन्होंने सुमुखा से कहा, "वे हमें बताते हैं कि बनारस के पास एक ऐसी शांत झील है: वहाँ पाका हंस भोजन करने जाते हैं।" "क्या आप धतरत्था के राजा को बताएँगे, और यदि वह हमें अनुमति दे, तो हम भी वहाँ जाकर भोजन करेंगे।" सुमुखा ने राजा से कहा, जिस पर राजा ने सोचा, "मनुष्य सचमुच प्रलोभनों से भरे हुए हैं और चालाकी से काम करते हैं: इसके पीछे कोई कारण अवश्य होगा। इतने लंबे समय तक ऐसी कोई झील नहीं थी: इसे हमें फंसाने के लिए अभी बनाया गया होगा।" और उसने सुमुखा से कहा, "कृपया वहाँ जाने को अपनी स्वीकृति न दें। यह झील उन्होंने सद्भावना से नहीं बनाई थी; इसे हमें फंसाने के लिए बनाया गया था।" मनुष्य निःसंदेह क्रूर और अनेक विद्याओं

में निपुण हैं: अपने ही क्षेत्र में रहो। सुनहरे हंसों ने दूसरी बार सुमुख से कहा कि वे शांति की झील देखने के लिए उत्सुक हैं और सुमुख ने उनकी इच्छा राजा को बता दी। महापुरुष ने सोचा, "मेरे कारण मेरा परिवार नाराज़ न हो: हम वहाँ जाएँगे।" अतः नब्बे हज़ार हंसों के साथ वह वहाँ गए और हंसों की तरह भोजन किया और आनंद लिया, फिर चित्तकुटा लौट आए। खेमाका ने उनके भोजन करने और विदा होने के बाद बनारस के राजा को उनके आगमन की सूचना दी। राजा अत्यंत प्रसन्न हुए और बोले, "मित्र खेमाका, एक-दो हंस पकड़ने का प्रयास करो और मैं तुम्हें महान सम्मान प्रदान करूँगा।"इन शब्दों के साथ उसने उसका खर्च चुकाया और उसे विदा कर दिया। वहाँ लौटकर शिकारी एक कंकालनुमा बर्तन में बैठ गया और हंसों की गतिविधियों को देखने लगा। बोधिसत्व सचमुच सभी लोभ से मुक्त होते हैं। इसलिए, महापुरुष, जहाँ से वे उतरे थे, वहाँ से शुरू करके, उचित क्रम में धान खाने लगे। बाकी सभी इधर-उधर भटकते रहे, इधर-उधर खाते रहे। तो शिकारी ने सोचा, "यह हंस लोभ से मुक्त है: मुझे इसी को पकड़ना चाहिए।" अगले दिन हंसों के झील पर उतरने से पहले, वह पास ही एक जगह पर गया और अपने बर्तन के ढांचे में छिपकर वहीं बैठा रहा और ढांचे की एक दरार से देखता रहा। उसी क्षण महापुरुष नब्बे हजार हंसों के साथ उसी स्थान पर उतरे जहाँ वे कल उतरे थे, और कल के चारागाह की सीमा पर बैठकर चरने लगे। शिकारी ने अपने पिंजरे की एक दरार से देखते हुए और पक्षी की असाधारण सुंदरता को देखकर सोचा, "यह हंस एक गाड़ी जितना बड़ा है, सुनहरे रंग का है और इसकी गर्दन लाल रंग की तीन पट्टियों से घिरा हुआ। गले से नीचे जाती तीन रेखाएँ पेट के मध्य से होकर गुजरती हैं, जबकि अन्य तीन पट्टियाँ पीठ को अलग करती हैं, और उसका शरीर लाल ऊन के धागे से बनी डोरी पर रखे सोने के ढेर की तरह चमकता है। यही उनका राजा होना चाहिए, और यही वह है जिसे मैं पकड़ूंगा। और हंस-राजा, एक विस्तृत मैदान में चरने के बाद, पानी में मस्ती करने लगा और फिर अपने झुंड से घिरा हुआ चित्तकुटा लौट आया। उसने छह दिनों तक इसी तरह भोजन किया। सातवें दिन खेमाका ने काले घोड़े के बालों की एक बड़ी मजबूत रस्सी बनाई और एक छड़ी पर फंदा लगाया, और यह निश्चित रूप से जानते हुए कि हंस-राजा कल उसी स्थान पर उतरेगा, उसने फंदे वाली छड़ी को पानी में गाड़ दिया।जबकि तीन धारियाँ पीठ पर नीचे की ओर जाती हैं और उसका शरीर लाल ऊन के धागे से बनी डोरी पर टिके सोने के ढेर की तरह चमकता है। यही उनका राजा होना चाहिए, और यही वह है जिसे मैं पकड़ूंगा। और हंस-राजा एक विस्तृत मैदान में चरने के बाद पानी में खेलने लगा और फिर अपने झुंड से घिरा हुआ चित्तकुटा लौट आया। उसने छह दिनों तक इसी तरह भोजन किया। सातवें दिन खेमाका ने काले घोड़े के बालों की एक बड़ी मजबूत रस्सी बनाई और एक छड़ी पर फंदा लगाया, और यह जानते हुए कि हंस-राजा कल उसी स्थान पर आएगा, उसने फंदे वाली छड़ी को पानी में गाड़ दिया।जबकि तीन धारियाँ पीठ पर नीचे की ओर जाती हैं और उसका शरीर लाल ऊन के धागे से बनी डोरी पर टिके सोने के ढेर की तरह चमकता है। यही उनका राजा होना चाहिए, और यही वह है जिसे मैं पकड़ूंगा। और हंस-राजा एक विस्तृत मैदान में चरने के बाद पानी में खेलने लगा और फिर अपने झुंड से घिरा हुआ चित्तकुटा लौट आया। उसने छह दिनों तक इसी तरह भोजन किया। सातवें दिन खेमाका ने काले घोड़े के बालों की एक बड़ी मजबूत रस्सी बनाई और एक छड़ी पर फंदा लगाया, और यह जानते हुए कि हंस-राजा कल उसी स्थान पर आएगा, उसने फंदे वाली छड़ी को पानी में गाड़ दिया।

अगले दिन हंसों का राजा नीचे उतरते समय अपना पैर फंदे में फंसा बैठा। फंदे ने मानो लोहे के पट्टे से उसके पैर को जकड़ लिया था। पक्षी ने फंदे को तोड़ने की सोचकर उसे घसीटा और पूरी ताकत से उस पर प्रहार किया। पहले उसकी सुनहरी त्वचा पर खरोंचें आईं, फिर लाल ऊन के रंग का मांस कट गया, उसके बाद नसें टूट गईं और अंत में उसका पैर (*3) लगभग टूट ही गया था, लेकिन एक राजा के लिए घायल शरीर शोभा नहीं देता, इसलिए उसने संघर्ष करना छोड़ दिया। जब उसे असहनीय दर्द होने लगा, तो उसने सोचा, "अगर मैं पकड़े जाने की चीख निकालूंगा, तो मेरा परिवार घबरा जाएगा और ठीक से भोजन न मिलने के कारण वे उड़ जाएंगे, और आधे भूखे रहकर पानी में गिर जाएंगे।" इसलिए दर्द सहते हुए वह फंदे में ही फंसा रहा, धान चरने का नाटक करता रहा, लेकिन जब झुंड ने पेट भर खा लिया और हंसों की तरह आनंद लेने लगे, तो उसने पकड़े जाने की ज़ोरदार चीख निकाली। यह सुनकर हंस पहले बताए अनुसार उड़ गए। सुमुख ने भी, पहले बताए अनुसार, इस मामले पर विचार करते हुए, हंसों के तीन मुख्य समूहों में महापुरुष को न पाकर सोचा, "सचमुच राजा पर कोई भयानक विपत्ति आ पड़ी है," और वह लौटकर बोला, "हे महाराज, भयभीत न हों, मैं अपने प्राणों का बलिदान देकर आपको मुक्त करूँगा," और कीचड़ पर बैठकर महापुरुष को सांत्वना दी। महापुरुष ने सोचा, "नब्बे हजार हंस मुझे छोड़कर भाग गए और केवल यही एक लौटा है। मुझे आश्चर्य है कि जब शिकारी आएगा, तो क्या सुमुख भी मुझे छोड़कर भाग जाएगा।" और उसकी परीक्षा लेने के लिए, रक्त से लथपथ होकर, फंदे से बंधी छड़ी के सहारे, उसने तीन श्लोक दोहराए:

देखो, पक्षी जा रहे हैं, लाल हंस, सब डर से कांप रहे हैं।
हे सुनहरे पीले रंग की सुमुखा, यहाँ से चली जाओ! तुम्हें यहाँ क्या चाहिए?
मेरे दोस्तों और परिवार ने मुझे छोड़ दिया, वे सब मुझसे दूर चले गए;
वे बिना सोचे-समझे उड़ जाते हैं। तुम अकेले क्यों रह गए?
हे महान पक्षी, उड़ो! कैदियों के साथ कैसी संगति हो सकती है?
सुमुखा, उड़ो! मौका मत गंवाओ (*4), जबकि तुम अभी भी आज़ाद हो सकते हो।
यह सुनकर सुमुख ने सोचा, "यह हंस-राजा मेरे वास्तविक स्वभाव से अनभिज्ञ है; वह सोचता है कि मैं चापलूसी करने वाला मित्र हूँ। मैं उसे दिखाऊंगा कि मैं कितना प्रेममय हूँ," और उसने चार श्लोक दोहराए:

नहीं, मैं तुम्हें नहीं छोड़ूंगा, हे शाही हंस, जब मुसीबत करीब आएगी।
लेकिन मैं यहीं रुकूंगा, और तुम्हारे साथ ही जिऊंगा या मरूंगा।
हे राजसी पक्षी, जब संकट निकट आएगा, मैं तुम्हें नहीं छोड़ूंगा।
न ही मैं दूसरों के साथ ऐसे नीच कृत्य में शामिल होऊंगा, नहीं, मैं ऐसा कभी नहीं करूंगा।
मैं दिल और आत्मा से तुम्हारे साथ एक हूं, मेरे पुराने साथी और दोस्त।
हे महान राजा, अपने सभी भाग्य में सर्वश्रेष्ठ, साहसी नेता के रूप में प्रसिद्ध।
आपके दोस्तों और परिवार के पास लौटते हुए मैं क्या कह सकता हूँ?
अगर मैं तुम्हें तुम्हारे भाग्य पर छोड़ दूं और बिना परवाह किए उड़ जाऊं?
नहीं, मैं जीने से बेहतर मरना पसंद करूंगा, इतनी तुच्छ भूमिका निभाने के लिए।
जब सुमुख ने इस प्रकार चार श्लोकों में सिंह की गर्जना का उच्चारण किया, तो उस महान सत्ता ने अपने गुणों को प्रकट करते हुए कहा:

हे सुमुख, तुम्हारा स्वभाव ही यही है, सही मार्ग पर स्थिर रहना।
अपने स्वामी और मित्र को कभी न त्यागें और न ही भागकर सुरक्षा की तलाश करें।
आपको देखकर मेरे मन में भय का कोई विचार नहीं उठता।
इस दयनीय स्थिति में भी, आप मुझे बचाने का कोई न कोई रास्ता जरूर ढूंढ लेंगे।
जब वे इस प्रकार बातचीत कर रहे थे, तभी झील के किनारे खड़ा शिकारी हंसों को तीन समूहों में उड़ते हुए देखकर हैरान रह गया। यह सोचकर कि इसका क्या अर्थ हो सकता है, उसने उस स्थान की ओर देखा जहाँ उसने फंदा लगाया था और वहाँ उसने बोधिसत्व को उस डंडे पर झुके हुए देखा जिससे फंदा बंधा हुआ था। अत्यंत प्रसन्न होकर उसने अपनी कमर कसी और एक गदा लेकर जल्दी से पास आया और पक्षियों के सामने खड़ा हो गया, मानो किसी चक्र की शुरुआत में आग जल रही हो, उसका सिर पक्षियों से ऊपर उठा हुआ था और उसकी एड़ी कीचड़ में गड़ी हुई थी।

मास्टर ने मामले को स्पष्ट करते हुए कहा:

जब ये महान पक्षी आपस में उच्च विचारों का आदान-प्रदान कर रहे थे, तभी देखो! वे सब बड़ी तेजी से, हाथों में लाठी लिए, इस साहसी शिकारी के पास आ आए।

उसे देखकर विश्वासयोग्य सुमुख राजा के सामने खड़ा हो गया, उसके चिंतित स्वामी ने उसकी परेशानी में उसे दृढ़ता से प्रोत्साहित किया (*5)।

हे श्रेष्ठ पक्षी, भयभीत मत हो, क्योंकि भय तुम जैसे प्राणी को शोभा नहीं देता।
मैं न्याय को अपनी दलील बनाकर इस दिशा में उचित प्रयास करूंगा।
और जल्द ही मेरे वीरतापूर्ण कार्य से तुम एक बार फिर मुक्त हो जाओगे।
इस प्रकार सुमुख ने उस महान प्राणी को सांत्वना दी और शिकारी के पास जाकर मधुर मानवीय स्वर में पूछा, "मित्र, तुम्हारा नाम क्या है?" तब उसने उत्तर दिया, "हे स्वर्ण रंग के हंसों के राजा, मेरा नाम खेमाका है।" सुमुख ने कहा, “मित्र, यह मत सोचो कि तुम्हारे द्वारा बिछाए गए घोड़े के बालों के फंदे में कोई साधारण हंस फँस गया है। नब्बे हजार हंसों का सरदार, धतरत्थ राजा, तुम्हारे जाल में फँसा है। वह बुद्धिमान और गुणी है और सुलह के मार्ग पर चलता है। उसे मृत्युदंड नहीं दिया जाना चाहिए। वह जो कुछ भी तुम्हारे लिए करने वाला था, मैं वह सब करूँगा। मैं भी स्वर्ण रंग का हूँ और उसके लिए अपना प्राण दे दूँगा। यदि तुम उसके पंख लेना चाहते हो, तो मेरे ले लो; या यदि तुम उसकी कोई और वस्तु, जैसे खाल, मांस, नस या हड्डी, लेना चाहते हो, तो मेरे शरीर से ले लो। फिर, यदि तुम उसे पालतू पक्षी बनाना चाहते हो, तो मुझे जीवित रहते हुए बेचकर पालतू पक्षी बना लो, या यदि तुम धन कमाना चाहते हो, तो मुझे बेचकर कमा लो: उसे मत मारो, क्योंकि वह बुद्धि और ऐसे ही गुणों से संपन्न है। यदि तुम उसे मारोगे, तो तुम नरक और इसी प्रकार के कष्टों से कभी नहीं बच पाओगे।” इस प्रकार शिकारी को नरक के भय से भयभीत करके और उसे अपने मधुर प्रवचन सुनने के लिए विवश करके, सुमुख एक बार फिर पास आया और बोधिसत्व के पास खड़ा होकर उन्हें सांत्वना देने लगा। सुमुख के शब्दों को सुनकर शिकारी ने सोचा, "यह तो मात्र एक पक्षी है, फिर भी यह वह कर सकता है जो मनुष्यों के लिए असंभव है। क्योंकि मनुष्य मित्रता में स्थिर नहीं रह सकते। ओह! यह कितना बुद्धिमान, वाक्पटु और पवित्र प्राणी है!" उसका पूरा शरीर आनंद और परमानंद (सम्मोहन) से कांप उठा, और आश्चर्य से उसके रोंगटे खड़े हो गए। उसने अपनी छड़ी छोड़ दी और सूर्य की पूजा करने वाले की तरह अपने दोनों हाथों को माथे पर उठाकर सुमुख के गुणों का बखान करने लगा।

मास्टर ने मामले को स्पष्ट करते हुए कहा:

पक्षी की इतनी सुंदर वाणी सुनकर शिकारी चौंक गया।

बाल खड़े करके और हाथ जोड़कर उन्होंने विधिवत श्रद्धांजलि अर्पित की।
इससे पहले ऐसा कभी सुना या देखा नहीं गया था कि मानव भाषा का प्रयोग किया जाए,
किसी मनुष्य को उसकी अपनी भाषा में सबसे उत्कृष्ट सत्य का उपदेश देना चाहिए।
(*8) यह पक्षी तुम्हारे लिए क्या है, कि जब बाकी सब उड़कर चले गए,
हालांकि आप स्वतंत्र हैं, फिर भी यहाँ पिंजरे में बंद पक्षी के अलावा आप अकेले रह गए हैं?
जब दुष्ट शिकारी ने सुमुख से यह प्रश्न पूछा, तो सुमुख ने सोचा, "वह नरम पड़ रहा है: उसके हृदय को और अधिक नरम करने के लिए मैं अब उसे अपनी खूबी दिखाऊंगा," और उसने कहा:

वह मेरा राजा है, हे पक्षियों के शत्रु, मैं उसका सेनापति प्रमुख हूँ;
मैं उसे उसके भाग्य पर नहीं छोड़ सकता, जबकि मैं खुद सुरक्षा के लिए उड़ान भरूं।
इस महान भाग्य के स्वामी को यहाँ अकेले ही नष्ट न होने दें;
मुझे उन्हीं के पास अपना सुख मिलता है: मैं उन्हें ही अपना स्वामी मानती हूँ।
कर्तव्य के प्रति उनके इस मधुर प्रवचन को सुनकर शिकारी अत्यंत प्रसन्न हुआ और आश्चर्य से उसके बाल खड़े हो गए। उसने सोचा, "यदि मैं इस सद्गुण और इसी प्रकार के अच्छे गुणों से संपन्न शाही हंस को मार डालूँ, तो मैं कभी भी चारों दुखों से मुक्त नहीं हो पाऊँगा: बनारस का राजा मेरे साथ जो चाहे करे; मैं इस बंदी को सुमुख को मुफ्त उपहार के रूप में दे दूँगा और उसे जाने दूँगा।" और उसने यह श्लोक कहा:

आप कितने महान हैं, कि आप उस व्यक्ति का सम्मान करते हैं जिसके माध्यम से आप आज भी जीवित हैं;
जहां चाहो वहां उड़ो: मैं अब अपने प्रभु को उसकी स्वतंत्रता सौंपता हूं।
ऐसा कहकर शिकारी दयालु भाव से उस महान पुरुष के पास आया और छड़ी मोड़कर पक्षी को कीचड़ पर लिटा दिया, और छड़ी खींचकर उसे फंदे से मुक्त कर दिया। फिर वह पक्षी को झील से लाया और उसे कुछ ताज़ी कुश घास पर लिटाकर उसके पैर में बंधी हुई रस्सी को धीरे से खोल दिया। उस महान पुरुष के प्रति गहरी श्रद्धा से प्रेरित होकर, उसने दयालु भाव से कुछ पानी लिया और बार-बार पोंछकर खून साफ किया। फिर उसकी दानशीलता की शक्ति से नसें नसें से, मांस मांस से और चमड़ी चमड़ी से जुड़ गईं, और पैर पहले जैसा हो गया, दूसरे पैर से अलग नहीं दिखता था, और बोधिसत्व अपनी मूल अवस्था में आनंदित होकर बैठ गए। सुमुख ने राजा को अपने इस कार्य से इतना प्रसन्न देखकर अत्यंत प्रसन्नता का अनुभव किया और सोचा, "इस व्यक्ति ने हमारी बड़ी सेवा की है, पर हमने उसके लिए कुछ नहीं किया। यदि वह हमें राजा के राज्य मंत्रियों के लिए पकड़कर उनके पास ले जाता, तो उसे बड़ी धनराशि प्राप्त होती, और यदि वह हमें अपने लिए पकड़ता, तो वह हमें बेचकर भी बड़ा लाभ कमा सकता था: मैं उससे कुछ प्रश्न पूछूंगा।" अतः राजा की सेवा करने की इच्छा से उसने यह प्रश्न पूछा और कहा

यदि आपने अपने स्वार्थ के लिए हमारे लिए यह जाल बिछाया है,
हम आपसे बिना सोचे-समझे या परवाह किए अपनी स्वतंत्रता स्वीकार करते हैं।
लेकिन हे साहसी शिकारी, हमें मुक्त करने में,
राजा की अनुमति के बिना, यह निश्चित रूप से डकैती के अलावा और कुछ नहीं था।
यह सुनकर शिकारी ने कहा, "मैंने तुम्हें अपने लिए नहीं पकड़ा, मुझे बनारस के राजा सम्यम ने काम पर रखा था।" फिर उसने उन्हें पूरी कहानी सुनाई, रानी के दर्शन से लेकर उस समय तक जब राजा को हंसों के आने की खबर मिली और उन्होंने कहा, "मित्र खेमाका, एक-दो हंस पकड़ने की कोशिश करो, मैं तुम्हें बड़ा सम्मान दूंगा," और उसे यात्रा के लिए भोजन सामग्री के साथ भेज दिया।

यह सुनकर सुमुख ने सोचा, "इस शिकारी ने अपनी जीविका की परवाह किए बिना हमें मुक्त करके बड़ी मुसीबत मोल ले ली है। यदि हम यहाँ से चित्तकुटा लौटेंगे, तो न तो धतरत्थ राजा की अलौकिक बुद्धि प्रकट होगी और न ही मेरी मित्रता का कार्य, न ही शिकारी को सम्मान मिलेगा, न ही राजा पाँच नैतिक नियमों में दृढ़ होगा और न ही रानी की इच्छा पूरी होगी।" तब उसने उत्तर दिया, "मित्र, ऐसा होने पर तुम हमें जाने नहीं दे सकते: हमें राजा के समक्ष प्रस्तुत करो, वह हमारे साथ अपनी इच्छा अनुसार व्यवहार करेगा।"

इसे स्पष्ट करने के लिए, उन्होंने यह छंद बोला:

तुम राजा के सेवक हो; इसलिए उसकी इच्छाओं को पूरा करो;
राजा सम्यामा (*9) अपनी इच्छा के अनुसार हमारे साथ व्यवहार करेंगे।
यह सुनकर शिकारी ने कहा, "हे महाराज, राजा से मिलने की इच्छा न करें। राजा सचमुच खतरनाक होते हैं। वे या तो आपको पालतू हंस बना देंगे या फिर आपको मार डालेंगे।" तब सुमुखा ने कहा, "मित्र शिकारी, हमारे बारे में चिंता न करें। धर्म के उपदेश से मैंने आप जैसे क्रूर व्यक्ति को भी कोमल बना दिया। तो मैं राजा के मामले में ऐसा क्यों न करूँ? राजा बुद्धिमान होते हैं और बड़ी बातें समझते हैं: जल्दी

करो और हमें राजा के पास ले चलो। और हमें ले जाते समय बंदी बनाकर मत ले जाना, बल्कि फूलों के पिंजरे में रखकर ले जाना। धतरत्थ राजा के लिए सफेद कमलों से ढका एक बड़ा पिंजरा बनवाओ, और मेरे लिए लाल कमलों से ढका एक छोटा पिंजरा बनवाओ, और उन्हें आगे और मुझे थोड़ा नीचे पीछे रखकर हमें शीघ्रता से राजा के समक्ष प्रस्तुत करो।" सुमुखा की बातें सुनकर शिकारी ने सोचा, "राजा को देखकर सुमुखा मुझे बहुत सम्मान देना चाहता होगा," और अत्यंत प्रसन्न होकर उसने कोमल सरकंडों के पिंजरे बनाए और उन्हें कमलों से ढककर पहले से वर्णित तरीके से पक्षियों के साथ निकल पड़ा।

मामले को स्पष्ट करने के लिए, मास्टर ने कहा:

शिकारी ने निर्देशानुसार उन्हें दोनों हाथों से पकड़ लिया।
पीले सुनहरे रंग की त्वचा वाले इन लाल हंसों को उनके पिंजरे में रखा गया है।
हंसों का राजा और सुमुखा, जिनके पंख चमकीले दिखाई देते हैं,
शिकारी ने उन्हें पिंजरे में सुरक्षित पाया और उन्हें लेकर चल पड़ा।
जैसे ही शिकारी उनके साथ रवाना हुआ, धतरत्था हंस को अपनी पत्नी, पाका हंस-राजा की पुत्री, की याद आ गई और उसने अपने आवेश में आकर सुमुखा को संबोधित करते हुए इस प्रकार शोक व्यक्त किया।

मामले को स्पष्ट करने के लिए, मास्टर ने कहा:

राजा को जब सुमुख ले जाया गया तो उन्होंने इस प्रकार कहा;

"मेरी सुंदर और दयालु (*10) पत्नी, मुझे लगता है, अब मेरे लिए शोक मना रही है,
अगर उसे पता चल जाए कि मैं मर गया हूँ, तो मुझे डर है कि उसकी जान भी जा सकती है।
जैसे कोई बगुला एकांत सागर के किनारे अपने साथी के लिए शोक मना रहा हो,
सुहेमा—जिसकी त्वचा सोने के समान उज्ज्वल है—उसका स्वामी फिर भी विलाप करेगा (*11)।"
यह सुनकर सुमुख ने सोचा, "यह हंस, जो दूसरों को सलाह देने के लिए तत्पर तो है, लेकिन एक स्त्री के कारण, वासना के वश में आकर ऐसे बड़बड़ाता है जैसे पानी गर्म हो जाता है (*12), या जैसे पक्षी किनारे से उड़कर अनाज के खेत को चट कर जाते हैं। क्या होगा यदि मैं अपनी बुद्धि से उसे स्त्री जाति के दोषों के बारे में स्पष्ट कर दूं और उसे होश में ला दूं?" और उसने कहा:

वह एक महान और असाधारण विचारक, अपनी तरह का एक नेता,
मादा पक्षी के लिए शोक करना मानसिक दृढ़ता की कमी दर्शाता है।
क्योंकि हवा किसी भी गंध को अपने साथ ले जाती है, चाहे वह अच्छी हो या बुरी।
या फिर लालची बच्चा, मानो अंधा हो, कच्चा या अच्छी तरह पका हुआ खाना खा लेता है।
हे मूर्ख, सही निर्णय क्षमता के बिना तुम देख नहीं सकते।
प्रत्येक आपात स्थिति में क्या करना चाहिए या किन चीजों से बचना चाहिए।
तुम आधे पागल होकर नारी जाति को हर तरह की सुंदरता से परिपूर्ण बताते हो।
फिर भी, शराबी के शराब पीने के स्थान पुरुषों के लिए उतने ही आम हैं।
दुःख, रोग, विपत्ति, ये सब सबसे कठोर जंजीरों की तरह बांधते हैं।
मृगतृष्णा, छल, मृत्यु का जाल मन में गहराई से बैठा हुआ है--
ऐसी स्त्रियाँ ही होती हैं: जो उन पर भरोसा करता है वह अपने आप में सबसे नीच होता है।
तब धतरत्थ हंस, नारी जाति के प्रति अपने मोह में, बोला, "तुम नारी जाति के गुणों को नहीं जानते, परन्तु ऋषि जानते हैं: वे आलोचना के योग्य नहीं हैं।" और स्पष्टीकरण देते हुए उसने कहा:

जिस सत्य को ऋषियों ने सिद्ध किया है, उसे दोष देने का साहस कौन कर सकता है?
इस दुनिया में महिलाएं महान शक्ति और प्रसिद्धि प्राप्त करने के लिए ही जन्म लेती हैं।
वे इश्कबाजी के लिए बने हैं, उनके लिए प्रेम के आनंद निर्धारित हैं।
उनके भीतर बीज अंकुरित होते हैं, वह स्रोत जहाँ से समस्त जीवन का पोषण होता है।
जिनसे मनुष्य को सांस लेने में भी कठिनाई होती है, उन्हें अस्वीकार किया जा सकता है।
सुमुखा, क्या तुम ही अकेली हो जो स्त्रियों के तौर-तरीकों से भली-भांति परिचित हो?
क्या तुम्हें यह देर से मिली समझ केवल भय से प्रेरित होकर ही प्राप्त हुई?
खतरे का सामना करते हुए हर व्यक्ति भय के बीच भी बहादुरी से डटा रहता है।
संकट के समय सभी ऋषि-मुनि हमें नुकसान से बचाने का प्रयास करते हैं।

राजकुमार तब खुशी-खुशी उन्हें सलाह देने के लिए एक बहादुर नायक को चुन लेंगे।
दुर्भाग्य के आघात से बचाव के लिए, अच्छी सलाह देना और मजबूत बचाव करना आवश्यक है।
मैं आपसे निवेदन करता हूँ कि शाही रसोइये आज हमारे क्षत-विक्षत अंगों को न भूनें।
जिस प्रकार बांस अपने फल से जान लेता है, उसी प्रकार सुनहरे पंख हमें भी मार सकते हैं।
तुम अपनी स्वतंत्र इच्छा के बंदी होकर मुझसे भाग नहीं पाओगे।
खतरे की घड़ी में शब्दों का प्रयोग बंद करो, उठो, एक पुरुषोचित भूमिका निभाओ।
उस महान प्राणी ने नारी जाति की प्रशंसा करते हुए सुमुख को मौन कर दिया (*14), लेकिन उसकी पीड़ा देखकर, उसने उसे शांत करने के लिए यह श्लोक दोहराया:

न्याय को अपना आधार बनाकर उचित प्रयास करें।
और हे मेरे प्रिय मित्र, अपने वीरतापूर्ण कार्य से मुझे मेरा जीवन लौटा दो।
तब सुमुख ने सोचा, "वह मृत्यु के भय से बहुत भयभीत है; वह मेरी शक्तियों को नहीं जानता। बनारस के राजा से मिलने और उनसे थोड़ी बातचीत करने के बाद, मुझे पता चल जाएगा कि मुझे क्या करना है: इस बीच मैं अपने राजा को सांत्वना दूंगा," और उसने यह श्लोक कहा:

हे श्रेष्ठ पक्षी, भयभीत मत हो, क्योंकि भय तुम जैसे प्राणी को शोभा नहीं देता।
मैं न्याय को अपना आधार बनाकर उचित प्रयास करूंगा।
और जल्द ही मेरे वीरतापूर्ण कार्य से तुम एक बार फिर स्वतंत्र हो जाओगे।
जब वे पक्षी भाषा में बातें कर रहे थे, शिकारी को उनकी एक भी बात समझ नहीं आई, लेकिन उन्हें अपने डंडे पर बिठाकर वह बनारस में प्रवेश कर गया। उसके पीछे बहुत से लोग चल रहे थे, जो आश्चर्य और विस्मय से भर कर विनती की मुद्रा में हाथ फैलाए खड़े थे। महल के द्वार पर पहुँचकर शिकारी ने राजा को अपने आगमन की सूचना दी।

मास्टर ने मामले को स्पष्ट करते हुए कहा:

अपना बोझ ढोने वाला शिकारी महल के द्वार के पास पहुंचा;
"राजा को मेरी सूचना दो," वह चिल्लाया, "लाल हंस यहाँ है।"
द्वारपाल ने जाकर उसके आगमन की सूचना दी। राजा अत्यंत प्रसन्न हुए और बोले, "उसे तुरंत यहाँ आने दो।" दरबारियों की भीड़ से घिरे और सफेद छतरी से ढके सिंहासन पर विराजमान राजा ने खेमाका को अपने भार के साथ मंच पर आते देखा। सुनहरे रंग के हंसों को देखकर उन्होंने कहा, "मेरी मनोकामना पूरी हो गई है।" उन्होंने अपने दरबारियों को आदेश दिया कि शिकारी की पूरी सेवा की जाए।

मामले को स्पष्ट करने के लिए, मास्टर ने कहा:

इन पवित्र रूप और शुभ चिह्नों वाले पक्षियों को देखकर, राजा संयमा ने अपने सलाहकारों को इन शब्दों से संबोधित किया:

शिकारी को मांस और पेय, नरम भोजन, बहादुरों के वस्त्र दो।
और लाल सोने का इतना भंडार, जितना मनुष्य का हृदय तरस सकता है।"
अत्यंत प्रसन्न होकर उसने अपनी प्रसन्नता प्रकट करते हुए कहा, "जाओ और शिकारी को सजाओ और उसे मेरे पास वापस लाओ।"
अतः दरबारी उसे महल से नीचे लाए, उसके बाल और दाढ़ी संवारे, और जब उसने स्नान कर लिया, अभिषेक कर लिया और उसे उत्तम वस्त्र पहना दिए गए, तो वे उसे राजा के समक्ष ले आए। तब राजा ने उसे बारह गाँव दिए, जिनसे प्रतिवर्ष एक लाख सिक्के प्राप्त होते थे, एक रथ जोतकर दिया गया, एक बड़ा सुसज्जित घर और बहुत बड़ा सम्मान प्रदान किया। इतना बड़ा सम्मान पाकर शिकारी ने अपने कार्य का स्पष्टीकरण देते हुए कहा, "महाराज, यह कोई साधारण हंस नहीं है जिसे मैं आपके लिए लाया हूँ; यह नब्बे हजार हंसों का राजा है, जिसका नाम धतरत्था है, और यह मुख्य सेनापति है, सुमुखा।" तब राजा ने पूछा, "मित्र, तुमने इन्हें कैसे पकड़ा?"

मास्टर ने मामले को स्पष्ट करते हुए कहा:

शिकारी को अत्यंत प्रसन्न देखकर काशी के राजा ने कहा,

"अगर, खेमाका, झील पर हजारों हंस भोजन करते थे,
एक जैसे पक्षियों के समूह के बीच, कृपया बताएं कि आपने यह योजना कैसे बनाई।
इस प्यारे पक्षी को चुनकर उसे जिंदा पकड़ना?
शिकारी ने उत्तर देते हुए कहा:

(*15)सात लंबे दिनों तक मैंने व्यर्थ ही चिंतापूर्वक उस स्थान को चिह्नित किया,
उस सुंदर हंस के पदचिह्न की खोज में, जो एक बर्तन के भीतर छिपा हुआ है (*16)।
आज मुझे वह चारागाह मिल गया जहाँ हंस जाता था।
और मैंने तुरंत वहाँ जाल बिछाया और देखो! वह जल्दी ही फँस गया।
यह सुनकर राजा ने सोचा, "द्वार पर खड़ा यह व्यक्ति जो अपनी कहानी सुना रहा था, उसने तो केवल धतरत्थ राजा के आगमन की ही बात की थी, और अब भी वह केवल इसी की बात कर रहा है। इसका क्या अर्थ हो सकता है?" और उसने यह श्लोक कहा:

शिकारी, तुम तो सिर्फ एक की बात कर रहे हो, लेकिन यहाँ मुझे दो पक्षी दिखाई दे रहे हैं;
यह कोई गलती है, आप मेरे पास यह दूसरा पक्षी क्यों लाए?
तब शिकारी ने कहा, "मेरे इरादे में कोई बदलाव नहीं आया है, और न ही मैं दूसरे हंस को किसी और को भेंट करने के लिए उत्सुक हूं: इसके अलावा, मेरे बिछाए जाल में केवल एक ही हंस फंसा था," और स्पष्टीकरण देते हुए उसने कहा:

हंस की छाती पर लाल सोने जैसी धारियाँ बनी हुई थीं।
मैं अपने जाल में फंसा हुआ, हे राजा, आपके आदेश पर यहाँ उपस्थित हुआ हूँ।
यह शानदार पक्षी, जो अभी भी स्वतंत्र था, बंदी के पास बैठा था।
इस दौरान उसने अपने मित्र को विनम्र मानवीय शब्दों से प्रोत्साहित करने का प्रयास किया।
फिर उन्होंने सुमुखा के गुणों का बखान किया। "जैसे ही उन्हें पता चला कि धतरत्था हंस फँस गया है, वे वहीं रुक गए और अपने मित्र को सांत्वना दी। मेरे आने पर वे मुझसे मिलने आए और हवा में स्थिर होकर मुझसे मानवीय भाषा में मधुरता से बातें करने लगे और धतरत्था के गुणों का वर्णन करने लगे। इस प्रकार मेरा हृदय प्रसन्न करने के बाद वे एक बार फिर अपने मित्र के सामने खड़े हो गए। तब, महाराज, सुमुखा के शब्दों को सुनकर मेरा मन बदल गया और मैंने धतरत्था को मुक्त कर दिया। इस प्रकार धतरत्था का फंदे से मुक्त होना और इन हंसों के साथ मेरा यहाँ आना, सब सुमुखा की कृपा से ही संभव हुआ।" यह सुनकर राजा सुमुखा से प्रवचन सुनने के लिए उत्सुक हो गया, और जब शिकारी अभी भी उसे सम्मान दे ही रहा था, तभी सूर्यास्त हो गया, दीपक जलाए गए, और योद्धा सरदारों और अन्य लोगों की भीड़ जमा हो गई, और रानी खेमा कई नर्तकियों के दल के साथ राजा के दाहिनी ओर बैठ गई, और इस समय राजा ने सुमुखा को बोलने के लिए प्रेरित करने की इच्छा से यह श्लोक कहा:

सुमुखा, तुम चुप क्यों रहती हो? क्या यह भय के कारण है, मैं तुमसे पूछना चाहती हूँ?
क्या मेरी राजसी उपस्थिति में आपके पास कहने के लिए एक शब्द भी नहीं है?
यह सुनकर सुमुखा ने निडरता दिखाते हुए कहा:

हे काशी स्वामी, मुझे आपके शाही समारोह के बीच बोलने से कोई भय नहीं है।
और यदि उपयुक्त अवसर आ जाए, तो मैं शब्दों से परहेज नहीं करूंगा।
यह सुनकर राजा ने उसे और अधिक बोलने के लिए उकसाने और उसका अपमान करने की इच्छा से कहा:

मुझे कवचधारी तीरंदाज, पहिया (*17), चमड़े की ढाल दिखाई नहीं देती।
न तो घुड़सवार सेना का कोई दल, न पैदल सेना का कोई दस्ता, न गाड़ियाँ, न पैदल सेना।
मुझे न तो पीला सोना दिखाई देता है, न ही भव्य इमारतों से सुसज्जित कोई शहर।
चारों ओर खाई से घिरी कोई निगरानी मीनार नहीं थी,
जिसमें सुमुखा की रक्षा से डरने की कोई बात नहीं होगी।
जब राजा ने इस प्रकार पूछा कि वह भयभीत क्यों नहीं है, तो सुमुख ने इस श्लोक में उत्तर दिया:

मुझे किसी गार्ड के लिए एस्कॉर्ट नहीं चाहिए, मुझे किसी शहर या धन की आवश्यकता नहीं है।
पथहीन आकाश के बीच हम एक रास्ता खोजते हैं और आकाश में यात्रा करते हैं।
यदि तुम सत्य में दृढ़ हो, तो हम तुम्हें सहर्ष शिक्षा देंगे।
बुद्धिमानी और सूक्ष्म वाणी में आपके भले के लिए कुछ उपयोगी सबक।
लेकिन यदि तुम झूठे हो, कपटी हो, नीच प्रवृत्ति के हो,
इस हंटर के वाक्पटुतापूर्ण शब्द आप पर व्यर्थ ही प्रभाव डालते हैं।
यह सुनकर राजा ने कहा, "तुम मुझे झूठा और नीच क्यों कहते हो? मैंने क्या किया है?" तब सुमुख ने कहा, "अच्छा, मेरी बात सुनो," और उसने इस प्रकार कहा:

ब्राह्मणों के कहने पर ही आपने यह खेमा, यश का सरोवर बनाया था।

और पक्षियों को दो बार पांच अंकों की प्रतिरक्षा की घोषणा की।
इस शांत और निर्मल तालाब में, जहाँ से निर्मल और शुद्ध धाराओं का जल प्रवाहित होता है,
पक्षियों को हमेशा प्रचुर मात्रा में भोजन मिलता था और वे सुरक्षित जीवन जीते थे।
यह शोर सुनकर हम उस खूबसूरत दृश्य को देखने आए।
और हम तुम्हारे जाल में फंस गए, अफसोस! तुम्हारा वादा झूठा निकला।
लेकिन झूठ की आड़ में पापपूर्ण लालच का प्रत्येक कृत्य
मनुष्य या देवदूत (परमेश्वर) के रूप में पुनर्जन्म का अधिकार खो देता है, और सीधे नरक की ओर ले जाता है।
इस प्रकार उसने अपने सेवकों के बीच भी राजा को लज्जित कर दिया। तब राजा ने उससे कहा, "सुमुख, मैंने तुम्हें इसलिए नहीं पकड़ा कि मार डालूँ और तुम्हारा मांस खाऊँ, बल्कि तुम्हारी बुद्धिमत्ता सुनकर मैं तुम्हारी वाक्पटुता सुनने के लिए उत्सुक हुआ," और बात स्पष्ट करते हुए उसने कहा:

हे सुमुख, मेरा कोई पाप नहीं था, न ही मैंने लालच के कारण तुम्हें अपने वश में किया।
आपकी बुद्धिमत्ता और गहन चिंतन की ख्याति ही उस कृत्य का कारण बनी।
"अगर संयोग से वे यहाँ कोई सच्ची और मददगार बात कह दें,"
इसलिए मैंने शिकारी से कहा कि वह तुम्हें पकड़कर यहाँ ले आए, हे पक्षी।
यह सुनकर सुमुख ने कहा, "महाराज, आपने गलत कार्य किया है," और उन्होंने इस प्रकार कहा:

मृत्यु के निकट आने के भय से हम सत्य का एक शब्द भी नहीं बोल सके।
और न ही मृत्यु की अंतिम पीड़ा में हमारी अंतिम सांस के समय।
नकली पक्षी से या जानवर से, कौन किसका पीछा करेगा?
या फिर किसी उपदेशक के जाल में फंसने पर, वह किसी भी बुरी चीज से नहीं बच पाएगा।
और जो कोई भी बुरे कर्म करने के इरादे से नेक बातें कहता है,
इस लोक में और परलोक में भी, आनंद से पीड़ामय स्थान में परिवर्तन होता है।
गौरव के क्षण में अतिप्रसन्न न हो, संकट में भयभीत न हो।
अपनी कमियों को सुधारें, मुश्किल समय में भी अपना सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन करने के लिए कड़ी मेहनत करें।
ऋषि-मुनि जीवन के अंतिम चरण में पहुँच गए, मृत्यु उनके सामने थी।
पृथ्वी पर धार्मिक मार्ग का अनुसरण करने के बाद, वे स्वर्ग की ओर अपना मार्ग अपनाते हैं।
हे प्रभु, यह सुनकर धर्म के मार्ग पर दृढ़ रहो और तुरंत मुक्ति पाओ।
यह शाही धतरत्था पक्षी, हंसों का एक आदर्श उदाहरण है।
यह सुनकर राजा ने कहा:

जाओ, उनके चरणों के लिए पानी और एक ठोस सिंहासन ले आओ।
देखो! मैंने पिंजरे से पृथ्वी के सबसे श्रेष्ठ पक्षी को मुक्त कर दिया है।
अपने साहसी, सक्षम और बुद्धिमान कप्तान के साथ,
उसे अपने राजा के साथ सुख-दुख में हमेशा सहानुभूति रखना सिखाया गया था।
निःसंदेह, ऐसा व्यक्ति अपने स्वामी के समान ही सुख-शांति का पात्र है।
जिस प्रकार वह उसके साथ जीवन और मृत्यु दोनों को साझा करने के लिए तैयार था।
राजा की बातें सुनकर उन्होंने उनके लिए कुर्सियाँ मंगवाईं और जब वे वहाँ बैठे तो उन्होंने सुगंधित जल से अपने पैर धोए और सौ गुना शुद्ध किए गए तेल से उनका लेप किया।

गुरु ने इस मामले को समझाते हुए कहा:

राजसी पक्षी आठ पैरों वाले, चमकते हुए सिंहासन पर बैठा था, जो पूरी तरह से ठोस सोने का बना था और उस पर काशी का कपड़ा बिछा हुआ था, एक शानदार दृश्य।

और फिर उनके राजा सुमुखा, उनके भरोसेमंद और बहादुर सेनापति, बाघ की खाल से ढके और सोने से सजे पलंग पर बैठे।

उनके लिए अनेक काशी सरदारों ने सोने के कटोरे भरकर लाए, उत्तम भोजन के उत्तम उपहार, जो उनके राजा की ओर से भेंट थे।

जब उन्हें भोजन परोसा गया, तो काशी के राजा ने उनका स्वागत करते हुए स्वयं एक सोने का कटोरा लिया और उन्हें भेंट किया। उन्होंने उसमें से शहद, भुना हुआ अनाज खाया और चीनी का पानी पिया। तब उस महान सत्ता ने राजा की भेंट और उसमें निहित कृपा को देखकर उनसे मैत्रीपूर्ण वार्तालाप किया।

मास्टर ने मामले को स्पष्ट करते हुए कहा:

यह सोचते हुए कि "काशी के इस स्वामी ने हमें कितने उत्तम उपहार दिए हैं," राजाओं के तौर-तरीकों में निपुण पक्षी ने इस प्रकार पूछताछ की:

हे प्रभु, क्या आप स्वस्थ हैं और सब कुछ ठीक है?
मुझे विश्वास है कि आपका राज्य समृद्ध है और न्यायपूर्वक शासित है।
हे हंसों के राजा, मेरा स्वास्थ्य अच्छा है और मैं पूरी तरह से स्वस्थ हूँ;
मेरा राज्य बहुत समृद्ध है और न्यायपूर्ण शासन से संचालित होता है।
क्या आपके पास ऐसे सच्चे सलाहकार हैं जो हर तरह के दाग और दोष से मुक्त हों?
क्या आप अपने नेक उद्देश्य और नाम के लिए, यदि आवश्यक हो तो, मरने के लिए तैयार हैं?
मुझे सलाह देने के लिए सच्चे पुरुष मौजूद हैं, जो हर तरह के दाग और दोष से मुक्त हैं।
अपने नेक उद्देश्य और नाम के लिए, यदि आवश्यक हुआ तो, मरने को भी तैयार हूँ।
क्या आपकी पत्नी आपके समान कुल की, आज्ञाकारी और वाक्पटु है?
क्या वह संतानोत्पत्ति से संपन्न है, सुंदर दिखती है, उसका नाम अच्छा है, और वह अपने स्वामी की आज्ञा का पालन करती है?
मेरी पत्नी मेरे समतुल्य कुल की है, आज्ञाकारी है और वाक्पटु है।
संतान की देवी, सुंदर रूप, सुसंस्कृत नाम, अपने स्वामी के प्रति आज्ञाकारी।
और क्या आपका राज्य सुखमय है, सभी प्रकार के उत्पीड़न से मुक्त है?
क्या यह मनमानी के अधीन नहीं, बल्कि निष्पक्षता से शासित है?
मेरा राज्य सुखमय स्थिति में है, सभी प्रकार के उत्पीड़न से मुक्त है।
किसी मनमानी के प्रभाव में नहीं, बल्कि निष्पक्षता से शासित।
देश से बुरे लोगों को निकाल दो, अच्छे लोगों का सम्मान बढ़ाओ।
या क्या तुम धर्म से विमुख होकर बुरे मार्गों का अनुसरण करोगे?
मैं बुरे लोगों को देश से निकाल देता हूँ, अच्छे लोगों को सम्मान दिलाता हूँ।
मैं हर प्रकार की बुराई से दूर रहता हूँ और धार्मिक मार्ग का अनुसरण करता हूँ।
हे राजा, जीवन की अवधि पर ध्यान दें, यह कितनी जल्दी बीत जाती है।
या फिर क्या वे पागलपन के नशे में चूर होकर परलोक को भय से मुक्त मानते हैं?
हे पक्षी, मैंने जीवन की अवधि पर ध्यान दिया है, यह कितनी जल्दी बीत जाती है।
और, दस सद्गुणों में दृढ़ रहकर, परलोक से कभी भयभीत न हों।
दान-पुण्य, न्याय, पश्चाताप, नम्र स्वभाव, सौम्य मिजाज
शांति, दया, धैर्य, दान, और निर्मल नैतिकता—
मेरी आत्मा में दृढ़ता से विराजमान ये गुण स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं।
जिससे मुझे अपार आनंद और खुशी की भरपूर फसल मिलती है।
लेकिन सुमुखा, हालांकि हमारे द्वारा किए गए बुरे कामों से अनजान थी, फिर भी उसने कठोर और क्रोधित स्वर में शब्द कहे।

इस पक्षी द्वारा गलत तरीके से दिए गए अंडे की वजह से मुझे कुछ ऐसी बातें पता नहीं थीं जिनका मुझे जिम्मा उठाना पड़ा।
भाषा कठोर थी। इस संदर्भ में, मुझे लगता है कि बुद्धिमत्ता का अभाव था।
यह सुनकर सुमुख ने सोचा, "यह गुणी राजा क्रोधित है, क्योंकि मैंने उसे फटकारा है; मैं उसकी क्षमा प्राप्त करूँगा," और उसने कहा:

हे मनुष्यों के स्वामी, मैंने आपके विरुद्ध पाप किया और उतावलेपन में शब्द बोल दिए।
लेकिन जब इस शाही हंस को पकड़ा गया तो मेरा दिल मानो टूट गया।
जैसे पृथ्वी सभी जीवित प्राणियों को धारण करती है, जैसे पिता अपने पुत्र को धारण करता है,
हे सर्वशक्तिमान राजा, क्या आप हमारे द्वारा किए गए अपराध को क्षमा करेंगे?
तब राजा ने पक्षी को उठाया और उसे गले लगाया, और उसे एक सुनहरे सिंहासन पर बैठाकर उसकी गलती स्वीकार कर ली और कहा:

हे पक्षी, मैं तुम्हारा धन्यवाद करता हूँ कि तुम कभी भी अपने वास्तविक स्वभाव को नहीं छिपाते।
(*20)आप मेरी हठी इच्छा को तोड़ देते हैं; मुझे लगता है आप धर्मी हैं।
और इन शब्दों के साथ, महान सत्ता द्वारा विधि की व्याख्या और सुमुख के सीधे-सादे शब्दों से अत्यंत प्रसन्न होकर, राजा ने सोचा, "जब कोई प्रसन्न हो, तो उसे अपनी प्रसन्नता प्रकट करने के लिए कार्य करना चाहिए," और अपने राजसी वैभव को पक्षियों को अर्पित करते हुए उसने कहा:

चांदी, सोना और मोती, कीमती रत्न और बहुमूल्य सामान जो भी हो।
काशी के शाही शहर में स्थित यह वस्तु मेरे महल में यहीं संग्रहित है।
तांबा और लोहा, सीप और मोती, और अनगिनत रत्न,
हाथीदांत, पीली चंदन की लकड़ी, हिरण की खाल और कीमती वस्त्र
यह धन और सर्वाधिकार मैं तुम्हें प्रदान करता हूँ।
और इसी प्रकार के शब्दों से दोनों पक्षियों को श्वेत छत्र से आदर देते हुए उन्होंने अपना राज्य उन्हें सौंप दिया। फिर उस महान सत्ता ने राजा से बातचीत करते हुए कहा:

हे मनुष्यों के स्वामी, क्योंकि आप हमें सम्मानित करने में प्रसन्न हैं, इसलिए प्रसन्न होइए।
हमारे गुरु बनकर हमें उन दस शाही गुणों की शिक्षा दें।
और फिर यदि आपकी स्वीकृति और सहमति से हम संयोगवश जीत जाते हैं,
हम आपसे औपचारिक रूप से विदा लेंगे और अपने परिजनों से मिलने जाएंगे।
उन्होंने उन्हें जाने की अनुमति दी, और जब बोधिसत्व अभी भी धर्म का उपदेश दे ही रहे थे, तभी सूर्य उदय हो गया।

मास्टर ने मामले को स्पष्ट करते हुए कहा:

काशी के राजा ने पूरी रात गहन चिंतन में बिताई।
तब उन्होंने उस महान पक्षी के अनुरोध पर तुरंत अपनी सहमति दे दी।
जब उन्हें प्रस्थान की अनुमति मिल गई, तो बोधिसत्व ने कहा, "सावधान रहो और अपने राज्य पर धर्मपूर्वक शासन करो," और राजा को पाँच नैतिक नियमों में स्थापित किया। राजा ने उन्हें सोने के थालों में शहद और चीनी-पानी के साथ भुना हुआ अनाज परोसा, और जब उन्होंने भोजन समाप्त कर लिया, तो सुगंधित मालाओं और इसी तरह की भेंटों से उनका सम्मान करने के बाद, राजा ने स्वयं बोधिसत्व को सोने के पिंजरे में ऊँचा उठा लिया, और रानी खेमा ने सुमुखा को ऊँचा उठा लिया। फिर सूर्योदय के समय उन्होंने खिड़की खोली और "महोदय, चले जाओ," कहकर उन्हें छोड़ दिया।

मास्टर ने मामले को स्पष्ट करते हुए कहा:

फिर जैसे ही सूरज उगने लगा और दिन का उजाला होने लगा (*21), जल्द ही वे उनकी दृष्टि से नीले आकाश की गहराई में पूरी तरह से गायब हो गए।

उनमें से एक, महान प्राणी, स्वर्ण पिंजरे से उड़कर हवा में स्थिर हो गया और बोला, "हे महाराज, चिंता न करें, बल्कि सतर्क रहें और हमारी सलाह मानें।" इस प्रकार उसने राजा को सांत्वना दी और सुमुख को अपने साथ लेकर सीधे चित्तकुटा की ओर चल पड़ा। स्वर्ण गुफा से निकले वे नब्बे हजार हंस ऊंचे पठार पर आकर बैठ गए और उन दोनों पक्षियों को आते देख उनसे मिलने और उन्हें घर तक पहुंचाने के लिए निकल पड़े। इस प्रकार अपने परिवार के झुंड के साथ वे चित्तकुटा के पठार पर पहुंच गए।

मास्टर ने मामले को स्पष्ट करते हुए कहा:

अपने सरदारों को मनुष्यों के आवासों से सुरक्षित और स्वस्थ लौटते देख, पंखों वाले पक्षियों के झुंड ने शोरगुल के साथ उनका स्वागत किया।

इस प्रकार अपने स्वामी के चारों ओर चक्कर लगाते हुए, जिन पर उन्हें पूरा भरोसा था, इन लाल हंसों ने अपने राजा को पूरा सम्मान दिया और उनकी रिहाई पर खुशी मनाई।

अपने राजा की यात्रा करते हुए, इन हंसों ने उनसे पूछा, "महाराज, आप कैसे बच निकले?" राजा ने उन्हें सुमुख की सहायता से अपनी मुक्ति और राजा संयम और उनके दरबारियों की कार्रवाई के बारे में बताया। यह सुनकर हंसों के झुंड ने प्रसन्नतापूर्वक गीत गाते हुए कहा, "हमारे समूह के सेनापति सुमुख की जय हो, और राजा और शिकारी की भी जय हो। वे सुखी और दुःखमुक्त रहें।"

मास्टर ने मामले को स्पष्ट करते हुए कहा:

इस प्रकार, जिनके हृदय प्रेम से भरे होते हैं, वे अपने कार्यों में सफल होते हैं।
ये हंस सुरक्षित रूप से अपने दोस्तों के पास वापस उड़ गए।
इसका पूरा विवरण कुल्लाहमसा जन्म ग्रंथ में दिया गया है।

गुरु (बुद्ध) ने यहाँ अपनी कथा समाप्त की और जन्म की पहचान बताई: "उस समय शिकारी चन्ना था, रानी खेमा भिक्षुणी खेमा थी, राजा सारिपुत्र था, राजा के सेवकों का समूह बुद्ध के अनुयायी थे, सुमुख आनंद था, और हंस-राजा मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)चुल्लमसा-जातक

(2) एक पाठ से आचार्य का कथन मिलता है, "मेरे स्वामियों, क्या यहाँ कोई सोने की हंस हैं?"

(3) क्रिया 1. पदो चिज्जेय्या को लेते हुए। पाठ में बहुवचन पद गलत होना चाहिए, क्योंकि शाही हंस का केवल एक पैर फंसा हुआ था।

(4)मा अनिघया हपेसी, जाट. सं. 424 देखें, हपेति यहाँ अधिक सामान्य कर्म कारक के बजाय कर्म कारक के साथ निर्मित है।

(5)अपरिब्रुहयी। अर्थ के लिए जाट सं. 31 और 191 देखें।

(6) यो वा सो वा के इस प्रयोग के लिए जाट. सं. 38, सं. 313, सं. 31 देखें

(7) संगहक, जाट. सं. 262, सं. 110, को "संघवत्थुस नामक चार राजसी गुणों के माध्यम से सामंजस्य स्थापित करने" के रूप में समझाया गया है।

(8) यह पंक्ति पिछली कहानी में आती है

(9) सम्यामा नो को पढ़ना

(10) शाब्दिक रूप से "जांघ पर शुभ चिह्नों के साथ।"

(11)रोदिस्साती के लिए रुच्छिति, जाट. सं. 80 देखें

(12) मूर्खतापूर्ण बात की तुलना यहाँ उबलते पानी की आवाज़ से या शायद बर्तन के नीचे कांटों की चटकने की आवाज़ से, और साथ ही अनाज के खेत पर झपट्टा मारते पक्षियों के शोर से की गई है।

(14) "उत्तर देने के लिए तैयार न होना" के अर्थ में अप्पतिभाना के लिए जाट. सं. 304, सं. 246 देखें।

(15)यहाँ पाठ असंतोषजनक है, जिसमें अदनानी दिया गया है, जबकि टीकाकार की व्याख्या में "चारागाह" दिया गया है, मानो यह अदनानी हो, इसलिए अदनेसनम शायद अदनेसनम होना चाहिए, जाट. सं. 223, घसेसनम देखें।

(16)घाटास्सिटो.

(17) यह संभवतः कोई हथियार या रक्षात्मक कवच का टुकड़ा है।

(20)खिलम् पभिन्दति वाक्यांश के लिए, सुत्त निपाता, 973 देखें

(21)रत्या विवासने। रतिया के लिए नोट रत्या। रेखा जाट में होती है। नहीं। 241

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **सुधाभोजन-जातक**

***स्रोत**: एच.टी. फ्रांसिस द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-535-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 535
सुधाभोजन-जातक (*1)

"मैं फेरीवाला नहीं हूँ," इत्यादि। यह कहानी गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए एक उदार भिक्षु के बारे में सुनाई थी। कहा जाता है कि वह श्रावस्ती नगर में रहने वाला एक कुलीन परिवार का व्यक्ति था, जिसने गुरु द्वारा उपदेशित धर्ममार्ग सुनकर धर्म परिवर्तन किया और संन्यासी जीवन अपना लिया। नैतिक गुणों में परिपूर्ण और धूत नियमों (*2) से युक्त, तथा अपने साथी भिक्षुओं के प्रति प्रेम से परिपूर्ण, वह दिन में तीन बार उत्साहपूर्वक बुद्ध, धर्ममार्ग और सभा की सेवा करता था, और अपने आचरण में अनुकरणीय तथा दानशील था। शिष्टता और विनम्रता के दायित्वों को पूरा करते हुए, वह जो कुछ भी प्राप्त करता, जब तक कोई प्राप्तकर्ता होता, तब तक देता रहता, यहाँ तक कि स्वयं भूखा भी हो जाता। उसकी उदारता और दानशील स्वभाव की चर्चा भिक्षुओं की सभा में दूर-दूर तक होती रही। एक दिन सत्य के हॉल में यह चर्चा शुरू हुई कि एक भिक्षु इतने उदार और दानशील थे कि यदि उन्हें केवल हथेली भरने लायक पेय भी मिले, तो वे निस्वार्थ भाव से उसे अपने साथी भिक्षुओं को दे देते थे—उनकी इच्छा बोधिसत्व के समान थी। गुरु ने अपनी दिव्य श्रवण शक्ति से उनकी बातें सुन लीं और अपने सुगंधित कक्ष से निकलकर पास आकर पूछा कि वे किस विषय पर चर्चा कर रहे हैं। और जब उन्होंने उत्तर दिया, "यह ऐसा था," तो उन्होंने कहा, "भाइयों, यह भाई बहुत उदार नहीं था, बल्कि इतना कंजूस था कि घास के तिनके की नोक पर तेल की एक बूंद तक नहीं देता था। इसलिए मैंने उसका परिवर्तन कराया और उसे आत्म-त्यागी बनाया तथा दान के फलों की प्रशंसा करके उसे दान देने में दृढ़ रूप से स्थापित किया; यहाँ तक कि जब उसे हथेली भरने लायक पानी मिलता था, तो वह कहता था, "मैं एक बूंद भी बिना दान दिए नहीं पीऊँगा," और उसे मेरे हाथों से वरदान प्राप्त हुआ, और उसके दान देने के फलस्वरूप वह उदार हृदय और दान के प्रति समर्पित हो गया," और इन शब्दों के साथ उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, जब बनारस के राजा ब्रह्मदत्त थे, तब एक धनी गृहस्थ रहते थे जिनके पास अस्सी करोड़ (10 मिलियन) की संपत्ति थी। राजा ने उन्हें कोषाध्यक्ष का पद दिया। राजा द्वारा सम्मानित और देशवासियों द्वारा समान रूप से आदरणीय होने के कारण, वे एक दिन अपनी इस सांसारिक समृद्धि का आनंद ले रहे थे। उन्होंने सोचा, "यह वैभव मुझे पिछले जन्म में आलस्य और पाप कर्मों से नहीं मिला, बल्कि पुण्य कर्मों से प्राप्त हुआ है; इससे मुझे भविष्य में मोक्ष (निर्वाण) प्राप्त होगा।" इसलिए उन्होंने राजा से मिलने की इच्छा जताई और उनसे कहा, "हे महाराज, मेरे घर में अस्सी करोड़ (10 मिलियन) का खजाना है: इसे स्वीकार कीजिए।" जब राजा ने कहा, "मुझे तुम्हारी संपत्ति की कोई आवश्यकता नहीं है; मेरे पास प्रचुर धन है: अब से इसे ले लो और जो चाहो करो," तो उन्होंने कहा, "हे महाराज, क्या मैं अपना धन दान में दे सकता हूँ?" राजा ने कहा, "जैसा चाहो वैसा करो": और उसने छह भिक्षागृह बनवाए, एक-एक नगर के चारों द्वारों पर, एक नगर के केंद्र में और एक अपने निवास स्थान के द्वार पर। प्रतिदिन छह लाख सिक्कों के व्यय से उसने बड़े पैमाने पर भिक्षादान का कार्य शुरू किया। अपने जीवनकाल में वह भिक्षा देता रहा और अपने पुत्रों को यह निर्देश देता रहा, "ध्यान रखना कि तुम मेरी इस भिक्षा देने की परंपरा को न तोड़ो।" अपने जीवन के अंत में उसका पुनर्जन्म सक्का (इंद्र) के रूप में हुआ। उसके पुत्र ने भी इसी प्रकार भिक्षा देते हुए चंदा का पुनर्जन्म लिया, चंदा के पुत्र का नाम सूर्य, सूर्य के पुत्र का नाम मतली और मतली के पुत्र का नाम पंचसिखा। अब पंचसिखा का पुत्र, जो छठी पीढ़ी में था, कोषाध्यक्ष मच्छरिकोसिया (कई करोड़पति कंजूस) था और उसके पास अभी भी अस्सी करोड़ (10 मिलियन) रुपये की संपत्ति थी। लेकिन उसने सोचा, "मेरे पूर्वज मूर्ख थे। उन्होंने बड़ी मेहनत से जमा की गई दौलत लुटा दी, लेकिन मैं अपने खजाने की रक्षा करूँगा। मैं किसी को एक पैसा भी नहीं दूँगा।" और उसने भिक्षागृह को तोड़कर जला दिया और पक्का कंजूस बन गया। तब भिखारी उसके द्वार पर जमा हो गए और बाहें फैलाकर ऊँची आवाज़ में चिल्लाए, "हे महाधन, अपने पूर्वजों की परंपरा को मत तोड़ो, बल्कि दान दो।" यह सुनकर लोगों ने उसे कोसते हुए कहा, "मच्छरिकोसिया ने अपने परिवार की परंपरा को नष्ट कर दिया है।" शर्मिंदा होकर उसने पहरा बिठा दिया ताकि भिखारी उसके द्वार पर न खड़े हो सकें, और इस प्रकार पूरी तरह से बेसहारा हो जाने पर उन्होंने फिर कभी उसके दरवाजे की ओर नहीं देखा। तब से वह धन इकट्ठा करता रहा (*4), लेकिन न तो उसने स्वयं उसका आनंद लिया और न ही अपनी पत्नी और बच्चों के साथ साझा किया। वह लाल पाउडर मिले चावल खाकर गुजारा करता था, जिसे खट्टी दलिया के साथ परोसा जाता था, और वह खुरदुरे वस्त्र पहनता था, जो केवल बेर की जड़ों और डंठलों के रेशों से बने होते थे, अपने सिर को पत्तों की छतरी से ढकता था, और वह थके-हारे बैलों से जुते एक पुराने, पागल रथ पर सवार होता था। इस प्रकार इस दुष्ट व्यक्ति का सारा धन मानो किसी कुत्ते द्वारा पाया गया नारियल था (*5)।एक दिन जब वह राजा से मिलने जा रहा था, तो उसने सोचा कि वह अपने साथ उप-कोषाध्यक्ष (*6) को भी ले जाएगा। जैसे ही वह उसके घर पहुँचा, उसने देखा कि उप-कोषाध्यक्ष अपनी

पत्नी और बच्चों के बीच बैठा है और पिसी हुई चीनी से मीठा किया हुआ और ताज़ा घी में पका हुआ चावल का दलिया खा रहा है (*7)। मच्छरिकोसिया को देखकर वह अपनी कुर्सी से उठा और बोला, "हे उच्च्य कोषाध्यक्ष, आइए और इस पलंग पर बैठिए और मेरे साथ थोड़ा चावल का दलिया खाइए।" जब उसने चावल का दलिया देखा, तो उसके मुँह में पानी आ गया और उसे खाने की तीव्र इच्छा हुई, लेकिन उसके मन में यह विचार आया, "यदि मैं दलिया खा लूँ, तो जब उप-कोषाध्यक्ष मेरे घर आएगा, तो मुझे उसे आतिथ्य के बदले कुछ देना पड़ेगा और इस तरह मेरा पैसा बर्बाद हो जाएगा। मैं इसे नहीं खाऊँगा।" बार-बार आग्रह करने पर भी उसने मना कर दिया और कहा, "मैंने भोजन कर लिया है; मैं तृप्त हूँ।" लेकिन जब उप-कोषाध्यक्ष भोजन का आनंद ले रहे थे, तो वे मुँह में पानी लिए उन्हें देखते रहे, और भोजन समाप्त होने पर वे उनके साथ महल चले गए। घर लौटकर उन्हें चावल की दलिया खाने की तीव्र इच्छा हुई, लेकिन उन्होंने सोचा, "अगर मैं कहूँ कि मुझे चावल की दलिया खानी है, तो बहुत से लोग भी इसे खाना चाहेंगे और बहुत सारा चावल और अन्य सामग्री बर्बाद हो जाएगी। मैं किसी को एक शब्द भी नहीं कहूँगा।" इसलिए वे दिन-रात दलिया के बारे में सोचते रहे, लेकिन अपने पैसे खर्च होने के डर से उन्होंने किसी को नहीं बताया और अपनी इच्छा को अपने तक ही सीमित रखा। लेकिन सहन न कर पाने के कारण वे धीरे-धीरे पीले पड़ते गए, और अपने धन के बर्बाद होने के डर से उन्होंने अपनी इच्छा के बारे में किसी से बात नहीं की, और कुछ समय बाद बहुत कमजोर होकर वे बिस्तर पर लेट गए। तभी उनकी पत्नी उनसे मिलने आईं और उनकी पीठ सहलाते हुए पूछा, "क्या स्वामी जी बीमार हैं?" "आप बीमार हैं!" वे चिल्लाए, "मैं बिल्कुल ठीक हूँ।" "महाराज, आपका चेहरा पीला पड़ गया है। क्या आपके मन में कुछ चल रहा है? क्या राजा आपसे नाराज़ हैं या आपके बच्चों ने आपका अपमान किया है? या क्या आपको किसी चीज़ की तीव्र इच्छा हो रही है?" "हाँ, मुझे एक तीव्र इच्छा हो रही है।" "बताइए क्या है महाराज।" "क्या आप इसे गुप्त रख सकते हैं?" "हाँ, मैं किसी भी ऐसी इच्छा के बारे में चुप रहूँगा जिसे गुप्त रखना चाहिए।" फिर भी, अपनी संपत्ति के बर्बाद होने के डर से उनमें उसे बताने का साहस नहीं था, लेकिन उसके बार-बार आग्रह करने पर उन्होंने कहा, "मेरी प्रिय, एक दिन मैंने उप-कोषाध्यक्ष को घी, शहद और पिसी हुई चीनी से बनी चावल की दलिया खाते देखा, और उस दिन से मुझे भी वैसी ही दलिया खाने की तीव्र इच्छा हो रही है।" "बेचारे, क्या तुम्हारी हालत इतनी खराब है? मैं बनारस के सभी निवासियों के लिए पर्याप्त दलिया बना दूँगी।" तब उन्हें ऐसा लगा जैसे किसी ने उनके सिर पर डंडे से वार किया हो। उस पर क्रोधित होकर उसने कहा, "मैं भली-भांति जानता हूँ कि तुम बहुत धनी हो। यदि यह तुम्हारे परिवार से आता है, तो तुम पूरे शहर को चावल का दलिया बनाकर खिला सकती हो।"“तो फिर मैं एक ही गली के निवासियों के लिए पर्याप्त खाना बनाऊँगा।” “तुम्हें उनसे क्या लेना-देना है? उन्हें अपना खाना खाने दो।” “तो फिर मैं इधर-उधर से चुने गए सात परिवारों के लिए पर्याप्त खाना बनाऊँगा।” “वे तुम्हें क्या लेते हैं?” “तो फिर मैं इस घर के नौकरों के लिए खाना बनाऊँगा।” “वे तुम्हें क्या लेते हैं?” “तो फिर मैं सिर्फ अपने परिवार के लिए खाना बनाऊँगा।” “वे तुम्हें क्या लेते हैं?” “तो फिर मैं खाना बनाऊँगा, महाराज, आपके और मेरे लिए।” “और कृपया बताइए, आप कौन हैं? आपके मामले में यह जायज़ नहीं है।” “मैं खाना सिर्फ आपके लिए बनाऊँगा, महाराज।” “कृपया मेरे लिए मत बनाइए: अगर आप इसे घर में बनाएँगे, तो बहुत से लोग इसे ढूँढ़ेंगे।” लेकिन मुझे बस एक माप छिला हुआ चावल, एक चौथाई दूध, एक पौंड (*8) चीनी, एक बर्तन शहद और एक खाना पकाने का बर्तन दे दो, और मैं जंगल में जाकर वहाँ अपना दलिया पकाकर खाऊँगी।” उसने ऐसा ही किया, और एक दास को यह सब लाने के लिए कहकर उसे फलाँ स्थान पर जाकर खड़े होने का आदेश दिया। फिर दास को आगे भेजकर, उसने अकेले ही अपने लिए एक घूंघट बनाया और इस वेश में वह वहाँ गया और नदी के किनारे एक झाड़ी के नीचे उसने एक चूल्हा बनवाया और अपने लिए लकड़ी और पानी मंगवाया और उसने दास से कहा, “जाओ और सड़क पर खड़े हो जाओ और, अगर तुम किसी को देखो, तो मुझे इशारा करना, और जब मैं तुम्हें बुलाऊँ तो मेरे पास वापस आ जाना।” दास को भेजकर उसने आग जलाई और अपना दलिया पकाया। उसी क्षण स्वर्ग के राजा सक्का (इंद्र), देवताओं (देवदूतों) के शानदार शहर, दस हजार मील (x 4.23 किमी) के विस्तार और साठ मील (x 4.23 किमी) लंबी सुनहरी सड़क, और वेजयंत (*9) को देखते हुए... हजार मील (4.23 किमी) ऊँचा, और सुधम्म (*10) जो पाँच सौ मील (4.23 किमी) में फैला हुआ है, और उसका पीले संगमरमर का सिंहासन, जो साठ मील (4.23 किमी) तक फैला हुआ है, और उसका सफेद छाता जिस पर सोने की माला है, जिसकी परिधि पाँच मील (4.23 किमी) है, और स्वयं उसके साथ पच्चीस करोड़ अप्सराओं का एक भव्य समूह है—मैं कहता हूँ, अपनी इस सारी महिमा को देखते हुए उसने सोचा, "मैंने ऐसा क्या किया होगा कि मुझे यह सम्मान प्राप्त हुआ?" और उसने अपने मन में बनारस के प्रधान कोषाध्यक्ष रहते हुए स्थापित किए गए दान-पुण्य को देखा, और फिर उसने सोचा, "मेरे वंशज कहाँ पैदा हुए?" और इस विषय पर विचार करते हुए उसने कहा, "मेरा पुत्र चंदा देवदूत रूप में पैदा हुआ था, और उसका पुत्र सूर्य था।" और उन सभी के जन्म को देखकर, "पंचसिखा के पुत्र का क्या भाग्य रहा है?" और अंतर्दृष्टि से उसने देखा कि वंश की परंपरा का नाश हो चुका है, और उसके मन में यह विचार आया, "यह दुष्ट कंजूस न तो स्वयं अपनी संपत्ति का आनंद लेता है और न ही दूसरों को कुछ देता है: इसने वंश की परंपरा को नष्ट कर दिया है। जब वह मरेगा तो नरक में पुनर्जन्म लेगा।"उसे शिक्षा देकर और अपनी परंपरा को पुनः स्थापित करके मैं उसे दिखाऊंगा कि देवताओं (देवदूतों) के नगर में पुनर्जन्म कैसे लिया जाता है।" इसलिए उसने चंदा और बाकी लोगों को बुलाया और कहा, "आओ, हम मनुष्यों के निवास स्थानों पर चलते हैं: हमारे परिवार की परंपरा को मच्छरकोसिया ने नष्ट कर दिया है, भिक्षागृह जला दिए गए हैं और वह न तो स्वयं धनवान है और न ही दूसरों को कुछ देता है, लेकिन अब दलिया खाने की इच्छा से और यह सोचकर कि "यदि इसे घर में पकाया जाए, तो दलिया किसी और को भी देना पड़ेगा," वह जंगल में चला गया है और अकेले ही पका रहा है। हम जाकर उसका धर्म परिवर्तन करवाएंगे और उसे भिक्षा देने के फल सिखाएंगे। लेकिन यदि हम सब मिलकर उससे एक साथ भोजन मांगें, तो वह वहीं मर जाएगा।" मैं पहले जाता हूँ और जब मैं उनसे दलिया माँगकर बैठ जाऊँगा, तब तुम एक-एक करके ब्राह्मणों का वेश धारण करके उनसे भीख

माँगना।" ऐसा कहकर वे स्वयं ब्राह्मण का वेश धारण करके उनके पास पहुँचे और चिल्लाए, "अरे! बनारस का रास्ता कहाँ है?" तब मच्छरिकोसिया ने कहा, "क्या तुम्हारा दिमाग खराब हो गया है? क्या तुम्हें बनारस का रास्ता भी नहीं पता? तुम इस रास्ते क्यों आ रहे हो? यहाँ से चले जाओ।" सक्का (इंद्र), मानो उसने सुना ही न हो, उनके पास आकर पूछने लगा कि उसने क्या कहा। तब वह चिल्लाया, "अरे, बहरे बूढ़े ब्राह्मण, तुम इस रास्ते क्यों आ रहे हो? वहाँ जाओ।" तब सक्का (इंद्र) ने कहा, "तुम इतना क्यों चिल्ला रहे हो? यहाँ मुझे धुआँ और आग दिखाई दे रही है, और चावल का दलिया पक रहा है। ब्राह्मणों के स्वागत का कोई अवसर होगा। जब ब्राह्मणों को भोजन कराया जा रहा होगा, मैं भी थोड़ा खा लूँगा।" आप मुझे क्यों भगा रहे हैं (*11)?" "यहाँ ब्राह्मणों का कोई मनोरंजन नहीं है। आप चले जाइए।" "तो फिर आप इतने क्रोधित क्यों हैं? जब आप भोजन कर लेंगे, तो मैं थोड़ा सा ले लूँगी।" उन्होंने कहा, "मैं आपको उबले हुए चावल का एक टुकड़ा भी नहीं दूँगा। यह थोड़ा सा भोजन केवल मुझे जीवित रखने के लिए पर्याप्त है, और यह भी मैंने भीख माँगकर प्राप्त किया है। आप जाकर अपना भोजन कहीं और ढूँढ़ लें"—और यह उन्होंने अपनी पत्नी से चावल माँगने के संदर्भ में कहा—और उन्होंने यह श्लोक बोला:यह कहकर वह स्वयं ब्राह्मण का वेश धारण करके उसके पास आया और चिल्लाया, "हे! बनारस का रास्ता कहाँ है?" तब मच्छरिकोसिया ने कहा, "क्या तुम्हारा दिमाग खराब हो गया है? क्या तुम्हें बनारस का रास्ता भी नहीं पता? तुम इस रास्ते क्यों आ रहे हो? यहाँ से चले जाओ।" सक्का (इंद्र), मानो उसने सुना ही न हो, उसके पास आकर पूछने लगा कि उसने क्या कहा। तब वह चिल्लाया, "अरे, बहरे बूढ़े ब्राह्मण, तुम इस रास्ते क्यों आ रहे हो? वहाँ जाओ।" तब सक्का (इंद्र) ने कहा, "तुम इतना क्यों चिल्ला रहे हो? यहाँ मुझे धुआँ और आग दिखाई दे रही है, और चावल की दलिया पक रही है। ब्राह्मणों के भोज का कोई अवसर होगा। जब ब्राह्मणों को भोजन कराया जाएगा, मैं भी थोड़ा लूँगा। मुझे क्यों भगा रहे हो?" "यहाँ ब्राह्मणों का कोई भोज नहीं है। तुम चले जाओ।" "तो फिर तुम इतने क्रोधित क्यों हो?" जब तुम खाना खा लोगी, तो मैं थोड़ा सा ले लूँगा। उसने कहा, "मैं तुम्हें उबले हुए चावल का एक टुकड़ा भी नहीं दूँगा। यह थोड़ा सा भोजन मुझे बस जीवित रखने के लिए ही काफी है, और यह भी मैंने भीख माँगकर ही प्राप्त किया है। तुम जाओ और अपना भोजन कहीं और ढूँढ़ लो।" - और यह बात उसने अपनी पत्नी से चावल माँगने के संदर्भ में कही - और उसने यह छंद बोला:यह कहकर वह स्वयं ब्राह्मण का वेश धारण करके उसके पास आया और चिल्लाया, "हे! बनारस का रास्ता कहाँ है?" तब मच्छरिकोसिया ने कहा, "क्या तुम्हारा दिमाग खराब हो गया है? क्या तुम्हें बनारस का रास्ता भी नहीं पता? तुम इस रास्ते क्यों आ रहे हो? यहाँ से चले जाओ।" सक्का (इंद्र), मानो उसने सुना ही न हो, उसके पास आकर पूछने लगा कि उसने क्या कहा। तब वह चिल्लाया, "अरे, बहरे बूढ़े ब्राह्मण, तुम इस रास्ते क्यों आ रहे हो? वहाँ जाओ।" तब सक्का (इंद्र) ने कहा, "तुम इतना क्यों चिल्ला रहे हो? यहाँ मुझे धुआँ और आग दिखाई दे रही है, और चावल की दलिया पक रही है। ब्राह्मणों के भोज का कोई अवसर होगा। जब ब्राह्मणों को भोजन कराया जाएगा, मैं भी थोड़ा लूँगा। मुझे क्यों भगा रहे हो?" "यहाँ ब्राह्मणों का कोई भोज नहीं है। तुम चले जाओ।" "तो फिर तुम इतने क्रोधित क्यों हो?" जब तुम खाना खा लोगी, तो मैं थोड़ा सा ले लूँगा। उसने कहा, "मैं तुम्हें उबले हुए चावल का एक टुकड़ा भी नहीं दूँगा। यह थोड़ा सा भोजन मुझे बस जीवित रखने के लिए ही काफी है, और यह भी मैंने भीख माँगकर ही प्राप्त किया है। तुम जाओ और अपना भोजन कहीं और ढूँढ़ लो।" - और यह बात उसने अपनी पत्नी से चावल माँगने के संदर्भ में कही - और उसने यह छंद बोला:

मैं किसी फेरीवाले से कुछ भी खरीद या बेच नहीं सकता।
मेरे पास देने या उधार देने के लिए कोई सामान नहीं है:
चावल की यह भिक्षा प्राप्त करना कठिन था।
यह हम दोनों के लिए पर्याप्त नहीं है।
यह सुनकर सक्का (इंद्र) ने कहा, "मैं भी मधुर स्वर में तुम्हारे लिए एक श्लोक दोहराऊंगा; सुनो," और यद्यपि उसने यह कहते हुए उसे रोकने का प्रयास किया, "मैं तुम्हारा श्लोक नहीं सुनना चाहता," फिर भी सक्का (इंद्र) ने कुछ श्लोक दोहरा दिए:

कम में से कम ही देना चाहिए, और सीमित साधनों से भी कम ही देना चाहिए।
बहुत कुछ देने से बहुत कुछ मिलता है; कुछ न देने का तो कोई प्रश्न ही नहीं उठता।
इसलिए मैं तुमसे कहता हूँ, कोसिया, जो तुम्हारे पास है, उसमें से दान करो:
अकेले भोजन न करो, अकेले भोजन करने वाले को कोई सुख नहीं मिलता।
दान के द्वारा आप दिव्य मार्ग पर अग्रसर हो सकते हैं।
उनकी बात सुनकर इंद्र ने कहा, "यह आपकी कृपा है, ब्राह्मण; जब दलिया पक जाएगा, तो आपको थोड़ा सा मिलेगा। कृपया बैठ जाइए।" इंद्र एक तरफ बैठ गए। उनके बैठते ही चंदा भी पास आकर उसी तरह बातचीत शुरू कर दी, हालांकि मच्छरिकोसिया उन्हें रोकने की कोशिश करते रहे, उन्होंने कुछ श्लोक बोले:

तुम्हारा बलिदान व्यर्थ है और तुम्हारे हृदय की लालसा भी व्यर्थ है।
क्या आपको खाना खाते समय मेहमान को थोड़ा सा हिस्सा देने में कंजूसी करनी चाहिए?
इसलिए मैं तुमसे कहता हूँ, कोसिया, जो तुम्हारे पास है, उसे दान करो, इत्यादि।

उनकी बात सुनकर कंजूस ने बड़ी अनिच्छा से कहा, "ठीक है, बैठ जाइए, आपको थोड़ा दलिया मिलेगा।" तो वह जाकर इंद्र के पास बैठ गया। फिर सूर्य भी उसी प्रकार पास आया और उसी तरह बातचीत शुरू करते हुए, हालांकि कंजूस ने उसे रोकने की कोशिश की, उसने कुछ श्लोक कहे:

तुम्हारा बलिदान सच्चा हो और तुम्हारे हृदय की लालसा व्यर्थ न हो।
आपको अपना भोजन अकेले नहीं खाना चाहिए, बल्कि अपने मेहमान को भी थोड़ा-थोड़ा देना चाहिए।
तो मैं तुम्हें बताता हूँ, कोसिया, इत्यादि।
उनकी बात सुनकर कंजूस ने बड़ी अनिच्छा से कहा, "ठीक है, बैठ जाओ, तुम्हें थोड़ा मिलेगा।" तो सूर्या चंदा के पास जाकर बैठ गया। फिर मताली भी उसी तरह पास आया और कंजूस के रोकने के बावजूद बातचीत शुरू करते हुए ये पंक्तियाँ बोलीं:

गया की धारा के उफान या झील को कौन उपहार अर्पित करता है जो उसे धोता है?
या फिर टिंबारू या डोना मंदिर, जहां तेज लहरें बहती हैं।
इस संदर्भ में, वह अपने हृदय के त्याग और लालसा का फल प्राप्त करता है।
यदि वह किसी मेहमान के साथ भोजन साझा करता है तो वह अलग बैठकर भोजन नहीं करता है।
तो मैं तुम्हें बताता हूँ, कोसिया, इत्यादि।
उनकी बातें सुनकर, मानो किसी पर्वत शिखर के आभास से अभिभूत होकर, उन्होंने अनिच्छा से कहा, "ठीक है, बैठ जाइए, आपको थोड़ा मिलेगा।" मताली आकर सूरिया के पास बैठ गए। फिर पंचसिखा भी उसी प्रकार पास आए और कंजूस के रोकने के बावजूद, बातचीत शुरू करते हुए कुछ पंक्तियाँ बोलीं:

जैसे मछली लालच से कांटे को निगल जाती है, वैसे ही मछली भी कांटे को निगल जाती है।
क्या वह व्यक्ति है जो मेहमान के आने पर अकेले ही भोजन करेगा?
तो मैं तुम्हें बताता हूँ, कोसिया, इत्यादि।
यह सुनकर मच्छरिकोसिया ने बड़ी पीड़ा से कराहते हुए कहा, "ठीक है, बैठ जाओ, तुम्हें थोड़ा मिलेगा।" तब पंचसिखा जाकर मतली के पास बैठ गया। और जैसे ही ये पाँचों ब्राह्मण बैठे, दलिया पक चुका था। फिर कोसिया ने चूल्हे से दलिया निकालकर ब्राह्मणों से अपने पत्ते लाने को कहा। वे बैठे ही रहे और हाथ फैलाकर हिमालय की एक लता के पत्ते ले आए। उन्हें देखकर कोसिया ने कहा, "मैं तुम्हें इन बड़े पत्तों में दलिया नहीं दे सकता: बबूल और इसी तरह के पेड़ों के पत्ते ले आओ।" उन्होंने ऐसे पत्ते इकट्ठा किए और हर पत्ता योद्धा की ढाल जितना बड़ा था। तब उसने चम्मच से सबको थोड़ा-थोड़ा दलिया खिलाया। जब तक उसने आखिरी व्यक्ति को परोसा, तब तक बर्तन में काफी दलिया बचा था। पाँचों ब्राह्मणों को परोसने के बाद वह स्वयं बर्तन पकड़े बैठ गया। उसी क्षण पंचसिखा उठा और अपना असली रूप बदलकर कुत्ते में परिवर्तित हो गया और उनके सामने आकर खड़ा हो गया और पेशाब करने लगा। प्रत्येक ब्राह्मण ने अपने दलिया को पत्ते से ढक दिया। कुत्ते के पेशाब की एक बूंद कोसिया के हाथ के पिछले हिस्से पर गिरी। ब्राह्मण अपने घड़ों में पानी भरकर दलिया में मिलाते हुए खाने का नाटक करने लगे। कोसिया ने कहा, "मुझे भी थोड़ा पानी दे दो और हाथ धोने के बाद मैं कुछ खा लूँगा।" उन्होंने कहा, "अपने लिए पानी ले आओ और हाथ धो लो।" कोसिया ने कहा, "मैंने तुम्हें दलिया दिया है; मुझे थोड़ा पानी दे दो।" "हम भिक्षावृत्ति का धंधा नहीं करते (*12)।" कोसिया ने कहा, "ठीक है, तो इस बर्तन की रखवाली करो और हाथ धोने के बाद मैं वापस आऊँगा," और वह नदी किनारे उतर गया। उसी क्षण कुत्ते ने बर्तन में पेशाब भर दिया। कोसिया ने उसे पेशाब करते हुए देखकर एक बड़ी छड़ी उठाई और उसके पास आकर उसे धमकाने लगा। अब वह कुत्ता एक जोशीले घोड़े में बदल गया और उसका पीछा करते हुए उसने कई रंग धारण किए। कभी वह काला, कभी सफेद, कभी सुनहरा, कभी धब्बेदार। कभी लंबा, कभी छोटा। इस प्रकार अनेक रूपों में वह मच्छरिकोसिया का पीछा करता रहा, जो मृत्यु के भय से भयभीत होकर ब्राह्मणों के पास आया, जबकि वे हवा में उड़कर स्थिर हो गए। उनकी अलौकिक शक्ति को देखकर उसने कहा:

हे श्रेष्ठ ब्राह्मणों, जो वायु में खड़े हैं,
तुम्हारा यह शिकारी कुत्ता इस तरह अजीबोगरीब ढंग से क्यों पहने हुए है?
एक ही व्यक्ति होते हुए भी उसके हजारों भिन्न रूप हैं।
और मुझे सच-सच बताओ, ब्राह्मणों, तुम कौन हो?
यह सुनकर स्वर्ग के राजा सक्का (इंद्र) ने कहा:

चंदा और सूर्या दोनों यहाँ हैं!
और मताली, जो स्वर्ग का सारथी है,
मैं सक्का (इंद्र) हूँ, तैंतीस देवदूतों का प्रधान देवदूत।
और पंचसिखा तुम्हारा पीछा कर रही है।

पंचसिखा की प्रसिद्धि का गुणगान करते हुए सक्का (इंद्र) ने यह श्लोक कहा:

तबला, ढोल और डफली बजाकर वे उसे नींद से जगाते हैं।
और जैसे ही वह जागता है, मधुर संगीत उसके हृदय को आनंद से भर देता है।
उनकी बात सुनकर कोसिया ने पूछा, "मनुष्य किन कर्मों से इस प्रकार की स्वर्गीय महिमा प्राप्त करते हैं?" "जो दान नहीं करते, जो दुष्ट और कंजूस हैं, वे स्वर्गलोक नहीं पहुँचते, बल्कि नरक में पुनर्जन्म लेते हैं।" और इसे दर्शाते हुए इंद्र ने कहा:

जो भी जन्म से कंजूस और अनुदार होते हैं,
या पुरोहितों और पवित्र ब्राह्मणों का तिरस्कार,
अब उनका पार्थिव शरीर त्याग दिया गया था,
मृत्यु द्वारा विलीन होकर नरक में रहो।
और यह दर्शाने के लिए कि धर्मपरायण लोग किस प्रकार देवदूतों के लोक को प्राप्त करते हैं, उन्होंने निम्नलिखित श्लोक बोलते हुए कहा:

जो सत्य के प्रति समर्पित है, वही स्वर्ग को जीतेगा।
दान दें और स्वयं को पाप से दूर रखें।
और, उनके शरीर को एक तरफ रख दिया गया
मृत्यु के क्षय से, स्वर्ग में निवास करो।
इन शब्दों के बाद सक्का (इंद्र) ने कहा, "कोसिया, हम दलिया के लिए तुम्हारे पास नहीं आए हैं, बल्कि तुम्हारे प्रति दया और करुणा की भावना से आए हैं," और उसे स्पष्ट करने के लिए उसने कहा:

आप, यद्यपि पूर्व जन्मों में हमारे समान थे,
कंजूस व्यक्ति क्रोध और पाप का पात्र होता है;
हम तुम्हारे ही लिए धरती पर आए हैं।
आपको पाप के विनाश से बचाने के लिए—नरक में पुनर्जन्म से बचाने के लिए।
यह सुनकर कोसिया ने सोचा, "ये लोग तो मेरे शुभचिंतक हैं; मुझे नरक से निकालकर स्वर्ग में स्थान देंगे।" और अत्यंत प्रसन्न होकर उसने कहा:

इस प्रकार तुम मेरा भला चाहते हो।
मैं भी आपकी सलाह का पालन करूंगा, जितना मुझे समझ में आया है।
अब से मैं कंजूसी के मार्ग को त्याग दूंगा, पाप कर्मों से दूर रहूंगा।
सभी का दान दो, यहाँ तक कि एक प्याला भी, बिना साझा किए (*13), पानी बहाओ।
इस प्रकार निरंतर दान देते रहने से, सक्का (इंद्र), मेरी संपत्ति शीघ्र ही कम हो जाएगी।
तब मैं पवित्र दीक्षा (तपस्या) लूंगा, और हर तरह की वासनाएँ (*14) भाग जाएँगी।
मच्छरिकोसिया को धर्म परिवर्तन कराने के बाद, इंद्र ने उन्हें दान के फल सिखाए और उन्हें आत्म-त्यागी बनाया। जब उन्होंने धर्म का उपदेश देकर उन्हें पाँचों नैतिक गुणों में स्थापित कर दिया, तो वे अपने साथ आए देवदूतों के साथ देव-नगर लौट गए। मच्छरिकोसिया भी बनारस नगर गए और राजा से अनुमति लेकर उनसे अपने खजाने को जितने भी पात्र मिलें, उनसे भरकर भिखारियों को देने को कहा। फिर वे हिमवत (हिमालय) से दाहिनी ओर चले और गंगा नदी और एक प्राकृतिक झील के बीच में पत्तों की कुटिया बनाकर तपस्वी बन गए और कंदों और जंगली बेरों का भोजन करने लगे।

वहाँ वे वृद्धावस्था तक रहे। उस समय इंद्र की चार पुत्रियाँ थीं - आशा, विश्वास, महिमा और सम्मान। वे अपने साथ कई सुगंधित मालाएँ लेकर अनोटत्ता झील पर आईं और जल में क्रीड़ा करने लगीं। क्रीड़ा करने के बाद वे मनोशिला पर्वत पर बैठ गईं। ठीक उसी समय ब्राह्मण तपस्वी नारद दिन की भीषण गर्मी से आराम करने के लिए तैंतीस देवताओं के महल में गए और नंद वन में चित्तकूट की छाया में एक निवास स्थान बनाया। धूप से बचने के लिए अपने हाथ में मूंगा वृक्ष का फूल लिए वे स्वर्ण गुफा में गए, जहाँ वे मनोशिला पर्वत की चोटी पर निवास करते थे। अप्सराओं ने उनके हाथ में वह फूल देखकर उनसे वह फूल माँग लिया।

मास्टर ने मामले को स्पष्ट करते हुए कहा:

गंधमादन की भव्य ऊँचाई में,
ये अप्सराएँ महान सक्का (इंद्र) की देखरेख में प्रसन्न होती हैं;

उनके लिए एक विश्वव्यापी ख्याति प्राप्त संत
वह हाथ में एक बड़ी शाखा लिए हुए आया।
यह शाखा, जिस पर इतने शुद्ध और मधुर फूल खिले हैं
इसे देवताओं और स्वर्गदूतों के लिए उपयुक्त माना जाता है:
न तो कोई दानव, न ही कोई नश्वर जन्म।
इस अमूल्य फूल पर दावा किया जा सकता है।
फिर आस्था, आशा, महिमा, सम्मान, ये सब
सोने जैसी चमड़ी वाली चार दासियाँ उठीं,
और, सभी अप्सराओं में असाधारण रूप से स्वीकार किया गया,
ब्राह्मण नारद ने संबोधित करते हुए कहा,
"हे ऋषि, हमें यह मूंगा फूल दीजिए,"
यदि फिर भी देना आपके बस में है,
हम सक्का (इंद्र) के स्वरूप स्वरूप आपका सम्मान करेंगे।
और तुम सब बातों में धन्य होगे।
जब नारद ने उनकी प्रार्थना सुनी,
उसने तुरंत ही एक भयंकर झगड़ा खड़ा कर दिया:
मुझे इसकी आवश्यकता नहीं है; आप जिसे अनुमति देते हैं
तुम्हारी रानी बनने के लिए मुझे डाल पर दावा करना होगा।"
उसकी बात सुनकर चारों अप्सराओं ने यह श्लोक बोला:

हे नारद, आप सर्वोच्च हैं।
आप किसे वरदान देंगे?
जिसे तुम ऐसा उपहार दोगे,
हममें से सर्वश्रेष्ठ की गिनती की जाएगी।
उनकी बातें सुनकर नारद ने उनसे कहा:

उचित व्यक्ति (*15), ऐसी सलाह सही नहीं है;
कौन सा ब्राह्मण विवाद इसे भड़काने की हिम्मत करेगा?
अपनी खोज को परियों के स्वामी के पास ले जाओ,
अगर आपको पता चल जाए कि कौन सबसे बुरा है और कौन सबसे अच्छा।
तब गुरु ने यह श्लोक कहा:

सौंदर्य के अभिमान और क्रोध से पागल होकर, धूर्त ऋषि द्वारा उत्तेजित होकर,

वे परियों के स्वामी सक्का (इंद्र) के पास जाते हैं, यह जानने के लिए कि उन सब में सबसे अच्छा कौन है।

जब वे यह सवाल पूछ रहे थे,

अपनी खोज में इतनी तल्लीन अप्सराओं ने सक्का (इंद्र) को आदरपूर्वक संबोधित करते हुए कहा, "तुम सब सौंदर्य में समान हो, फिर कौन विवाद करके अपनी शांति भंग करना चाहती हो?"

इस प्रकार उनके द्वारा संबोधित किए जाने पर उन्होंने कहा:

नारद, विश्वभ्रमणशील, पराक्रमी ऋषि,
सत्य की खोज करने वाला, सदा सत्य के प्रति समर्पित,
इस प्रकार गंधमादन की ऊँचाई पर हमसे बात की गई;
"हे आत्माओं के स्वामी, सक्का (इंद्र) के पास सीधे जाओ।"
अगर आपको यह जानना अच्छा लगे कि कौन पहले है और कौन आखिरी, तो आप खुशी से बता देंगे।
यह सुनकर इंद्र ने सोचा, "यदि मैं कहूँ कि मेरी इन चार पुत्रियों में से एक अन्य पुत्रियों से अधिक गुणी है, तो बाकी पुत्रियाँ क्रोधित हो जाएँगी। यह मेरे लिए निर्णय करने योग्य मामला नहीं है; मैं इन्हें हिमालय में रहने वाले तपस्वी कोसिया के पास भेजूँगा: वे इनके लिए इस

प्रश्न का निर्णय करेंगे।" अतः उन्होंने कहा, "मैं तुम्हारा निर्णय नहीं कर सकता। हिमालय में कोसिया नाम का एक तपस्वी है: मैं उसे अपने अमृत (देवताओं का पेय) का एक प्याला भेजूँगा। वह बिना किसी के साथ बाँटे कुछ भी नहीं खाता, और दान करते समय वह गुणी को ही देता है, जिससे वह विवेकपूर्ण प्रतीत होता है। तुममें से जो भी उसके हाथों से भोजन ग्रहण करेगी, वह तुममें श्रेष्ठ होगी।" और ऐसा कहकर उन्होंने इस श्लोक को दोहराया:

वह ऋषि जो विशाल जंगल में निवास करता है
बिना साझा किए किसी भी भोजन को नहीं छुऊंगा;
कोसिया निर्णय क्षमता के साथ उपहार प्रदान करता है,
जिसे वह देता है, उसमें पहला स्थान उसी का होता है।
अतः उसने मताली को बुलाया और उसे तपस्वी के पास भेजा, और उसे भेजते समय उसने निम्नलिखित श्लोक दोहराया:

हिमवत (हिमालय) की ढलानों पर जहाँ गंगा बहती है
दक्षिण दिशा में एक संत निवास करते हैं:
अमृत (देवताओं का पेय), मताली, संत के पास ले जाओ,
खाने-पीने के कारण उसकी हालत बिगड़ती जा रही है और वह कमजोर होता जा रहा है।
तब गुरु ने कहा:

देवदूत के आदेश पर मतली गए, वे हजार घोड़ों वाले रथ पर सवार हुए; वे अगोचर होकर शीघ्र ही आश्रम के पास पहुँचे और ऋषि को अमृतमय (दिव्य) भोजन अर्पित किया।

कोसिया ने उसे लिया और खड़े-खड़े ही कुछ पंक्तियाँ बोल दीं:

मैंने बलिदान की लौ उठाई (*16),
वह सूर्य जो सभी अंधकार को दूर भगाकर प्रशंसा की ओर ले जाता है,
सक्का (इंद्र) जो आध्यात्मिक जगत पर सर्वोच्च हैं, जो विद्यमान हैं--
और कौन?--मेरे हाथों में देवताओं का अमृत (पेय) रखा गया है।
वह मोती की तरह सफेद था, अतुलनीय।
सुगंधित, शुद्ध और अत्यंत सुंदर।
मैंने अपनी आँखों से पहले ऐसा कभी नहीं देखा था;
किस ईश्वर (देवदूत) ने मेरे हाथों में यह दिव्य भोजन रखा है?
तब मताली ने कहा:

हे महान ऋषि, मैं सक्का (इंद्र) द्वारा भेजा गया हूँ।
आपको दिव्य पोषण प्रदान करने की जल्दी में:
मेरी विनती है, इस उत्तम भोजन को बिना किसी भय के खाएं।
आप यहाँ मताली को देख सकते हैं, जो स्वर्ग का सारथी है।
इसे खाने से बारह बुराइयाँ नष्ट हो जाती हैं।
प्यास, भूख, असंतोष, थकान और दर्द
सर्दी, गर्मी, क्रोध, शत्रुता, विवाद, निंदा, आलस्य--
यह दिव्य सार आपको निगल जाएगा, बिना किसी अनिच्छा के।
यह सुनकर कोसिया ने यह स्पष्ट करने के लिए कि उसने प्रतिज्ञा ली है, यह श्लोक कहा:

मुझे लगा कि अकेले खाना खाना गलत है, इसलिए मैंने एक दिन प्रतिज्ञा ली।
किसी भी भोजन को न छूना, जब तक कि मैं उसका कुछ हिस्सा किसी और को न दे दूं।
अकेले भोजन करना कभी भी नेक मन वाले पुरुषों द्वारा स्वीकार्य नहीं होता।
जो दूसरों के साथ सुख साझा नहीं करता, उसे सुख नहीं मिल सकता।
और जब मताली ने उनसे पूछा, "हे प्रभु, आपने दूसरों को हिस्सा दिए बिना भोजन करने में क्या बुराई पाई कि आपने यह प्रतिज्ञा ली?" तो उन्होंने उत्तर दिया:

जो भी व्यभिचार करता है या स्त्री जाति के साथ दुराचार करता है, वह हत्या का दोषी है।

जो पवित्र पुरुषों को कोसते और अपमानित करते हैं या मित्र आत्माओं को धोखा देते हैं,
और कंजूस, सबसे बुरे तो ये हैं—काश मैं कभी भी उनके साथ न गिना जाऊं।
मेरे द्वारा साझा न किया गया पानी की एक बूंद भी कभी स्पर्श नहीं करेगी।
मेरे उपहार पुरुषों और महिलाओं दोनों पर समान रूप से प्रवाहित होते रहेंगे।
ऋषि-मुनि उन सभी की प्रशंसा करेंगे जो अपनी संपत्ति दान में देंगे।
इस संसार में सभी उदार लोग निर्दयी मार्गों से दूर रहें।
सभी द्वारा अनुमोदित, वे सदा अच्छे और सच्चे व्यक्ति माने जाएंगे।
यह सुनकर मताली उनके सामने प्रत्यक्ष रूप में प्रकट हुईं। उसी क्षण ये चार अप्सराएँ दिशाओं के चारों ओर खड़ी थीं। पूर्व में महिमा, दक्षिण में आशा, पश्चिम में विश्वास और उत्तर में सम्मान।

गुरु ने मामले को स्पष्ट करते हुए कहा:

सुनहरे रंग की चार अप्सराएँ, आशा, गौरव, विश्वास और सम्मान नाम से, इंद्र के कहने पर पृथ्वी की ओर भेजी गईं, और कोसिया की कुटिया की ओर उनके कदम बढ़े।

लौ की तरह चमकती हुई आकृति वाली दासियाँ पृथ्वी के चारों दिशाओं में आईं; मताली (अब एक देवदूत) के समक्ष, ऋषि ने इस प्रकार संबोधित करते हुए अत्यंत प्रसन्नता का अनुभव किया।

"तुम कौन हो, अप्सरा, भोर के तारे के समान?"
क्या यह पूर्वी आकाश को दूर तक रोशन कर रहा है?
सोने के वस्त्रों से सजी आपकी आकृति (*17)
हे स्वर्ग की कन्या, मुझे अपना नाम बताओ।
मैं गौरव हूं, मनुष्य का सम्मानित मित्र हूं।
निष्पाप आत्मा रक्षा करने के लिए तत्पर रहती है:
इस भोजन पर दावा करने के लिए, देखो! मैं यहाँ हूँ;
हे महान ऋषि, मेरी यही प्रार्थना है कि आप मेरी प्रार्थना स्वीकार करें।
मैं जिसे चाहूँ उसे आनंद प्रदान करता हूँ
और उसके दिल की सारी इच्छाएं पूरी कर दे;
हे महायाजक, मेरा नाम महिमा है, यह जान लो।
मुझे अपना दिव्य भोजन प्रदान करो।
यह सुनकर कोसिया ने कहा:

पुरुष कुशल, गुणी, बुद्धिमान हो सकते हैं,
अपनी सारी बुद्धि का उपयोग करके उत्कृष्ट प्रदर्शन करना,
लेकिन आपके बिना वे कभी सफल नहीं हो सकते;
इसके लिए मैं तुम्हारे इस बुरे कर्म को दोषी ठहराता हूँ।
एक और आलसी, लालची, देखो,
चाहे वह नीच जाति का हो और बदसूरत ही क्यों न हो:
आपकी देखभाल से धन्य और अतिरिक्त रूप से समृद्ध
वह कुलीन परिवार में जन्मे एक व्यक्ति को अपना सेवक बना लेता है।
हे महिमा, मैं तुम्हें झूठा और मूर्ख मानता हूँ।
मूर्खों को लुभाने और बुद्धिमानों को नीचा दिखाने में लापरवाह;
वास्तव में बैठने या पानी के बर्तन पर आपका कोई दावा नहीं है।
यह भोजन बिल्कुल भी स्वादिष्ट नहीं है। चले जाओ, मुझे तुम पसंद नहीं हो।
तो क्या वह एकदम से नजरों से ओझल हो गई? फिर होप से बात करते हुए उसने कहा:

तुम कौन हो, हे सुंदर लड़की, जिसके दांत इतने शुद्ध और सफेद हैं?
चमकीले सोने की अंगूठियों और चमकदार कंगन से सजी हुई,
पानी से चमकते वस्त्र में लिपटा हुआ और अपने सिर पर पहने हुए

कुसा के गुच्छे से खिलाई गई लाल लौ जैसी एक टहनी?
जैसे कोई जंगली हिरणी शिकारी के तीर से बाल-बाल बच जाती है,
तुम चारों ओर ऐसे बेसुध आँखों से देख रहे थे जैसे कोई प्राणी स्तब्ध हो।
हे कोमल निगाहों वाली दासी, यहाँ तुम्हारा कौन सा साथी है?
क्या तुम निर्भय होकर एकांत वनक्षेत्र में विचरण करते हो?
फिर उसने यह छंद बोला:

यहां मेरा कोई साथी नहीं है; मैं सक्का (इंद्र) के स्वर्गलोक से आया हूँ।
मासक्कासारा ने पुकारा, मैं देवदूतों की संतान हूँ, आता हूँ:
दिव्य भोजन प्राप्त करने के लिए अब आपको आशा दिखाई देती है;
हे परम पूज्य, सुनिए और मुझे यह वरदान प्रदान कीजिए।
यह सुनकर कोसिया ने कहा, "वे मुझसे कहते हैं कि जिसे आप प्रसन्न करते हैं, उसे आप आशा की पूर्ति करके आशा प्रदान करते हैं, और जिसे आप प्रसन्न नहीं करते, उसे आप आशा प्रदान नहीं करते। इस स्थिति में सफलता आपके माध्यम से उसे प्राप्त नहीं होती, बल्कि आप उसका विनाश करते हैं।" और उदाहरण देते हुए उन्होंने कहा:

व्यापारी आशा के बल पर दूर-दूर तक खजाने की खोज करते हैं।
और समुद्र की लहरों पर सवार होकर यात्रा करना:
कभी-कभी वे वहां डूब जाते हैं और फिर कभी ऊपर नहीं उठते।
या फिर वे अपनी खोई हुई संपत्ति से बचने के लिए खेद व्यक्त करते हैं।
किसान उम्मीद के साथ अपने खेतों की जुताई और खेती करते हैं।
वे बीज बोते हैं और अपनी पूरी कुशलता से श्रम करते हैं;
लेकिन अगर कोई महामारी या सूखा मिट्टी को प्रभावित करे तो
उनकी सारी मेहनत का उन्हें कोई फल नहीं मिलेगा।
आशा से प्रेरित होकर, सुख-सुविधा पसंद करने वाले लोग हिम्मत रखें।
और अपने स्वामी के लिए एक मर्दाना भूमिका निभाएं।
चारों ओर से शत्रुओं के अत्याचारों से घिरे वे गिर पड़े
और अपने स्वामी के लिए लड़ते हुए वे अपनी जान तक गंवा देते हैं।
अपने परिवार के लिए अनाज भंडार और धन का त्याग करना,
आशा के माध्यम से स्वर्गीय आनंद को प्राप्त करने की आकांक्षा रखते हुए,
वे लंबे समय तक कठोर तपस्या करते हैं।
और बुरे मार्गों से दुख की अवस्था में पहुँच जाते हैं।
मानव जाति को धोखा देने वाले, तुम्हारा प्रयास व्यर्थ है।
इस वरदान के लिए आपकी व्यर्थ लालसा को रोकें,
आपको बैठने या पानी के बर्तन पर कोई दावा करने की आवश्यकता नहीं है:
स्वादिष्ट भोजन तो दूर की बात है। चले जाओ, मुझे तुम पसंद नहीं हो।
अस्वीकार किए जाने पर वह भी तुरंत ही दृष्टि से ओझल हो गई। फिर फेथ से बात करते हुए उसने यह छंद कहा:

वैभवशाली वस्त्रों से सजी प्रसिद्ध अप्सरा,
अशुभ पश्चिम दिशा की ओर खड़े होकर,
आपका रूप स्वर्ण वस्त्रों से सुशोभित है,
हे सम्मानित दासी, अपना नाम बताइए।
फिर उसने एक श्लोक दोहराया:

मेरा नाम फेथ है, मनुष्य की सम्मानित मित्र।
निष्पाप आत्मा रक्षा करने के लिए तत्पर रहती है:
इस भोजन पर दावा करने के लिए, देखो! मैं यहाँ हूँ;
हे महान ऋषि, मेरी यही प्रार्थना है कि आप मेरी प्रार्थना स्वीकार करें।
तब कोसिया ने कहा, "वे मनुष्य जो पहले एक की और फिर दूसरे की बातों पर विश्वास करके यह या वह करते हैं, वे वह काम अधिक बार करते हैं जो उन्हें नहीं करना चाहिए, और वास्तव में यह सब तुम्हारे कारण ही होता है," और उन्होंने इन छंदों को दोहराया:

आस्था के बल पर कभी-कभी लोग स्वेच्छा से दान देते हैं।
आत्मसंयम, संयम और परहेज का प्रदर्शन करें:
कभी-कभी फिर भी वे आपकी कृपा से ही गिर पड़ते हैं।
इसके अलावा निंदा करना, झूठ बोलना, धोखा देना और चोरी करना भी शामिल है।
जिनकी पत्नियाँ पवित्र, वफादार और उच्च कोटि की हों,
एक व्यक्ति सतर्क और समझदार हो सकता है,
ऐसे में उसकी भावनाओं पर अच्छा नियंत्रण रखना संभव हो सकता है।
फिर भी वह किसी वेश्या पर अपना पूरा भरोसा रख सकता है।
हे आस्था, तेरे कारण ही व्यभिचार हर जगह फैला हुआ है।
अच्छाई को त्यागकर (*18) तुम पापी जीवन जीते हो।
आपको बैठने या पानी के बर्तन पर कोई दावा करने की आवश्यकता नहीं है:
बहुत कम स्वादिष्ट भोजन। चले जाओ, मुझे तुम पसंद नहीं हो।
वह भी तुरंत ही दृष्टि से ओझल हो गई। लेकिन उत्तर दिशा में खड़ी कोसिया, ऑनर से बात करते हुए, इन दो पंक्तियों को दोहराती रही:

जैसे घृणा भरी रात के किनारे पर भोर की किरण चमकती है,
इस प्रकार तुम्हारी सुंदरता मेरी आंखों के सामने प्रकट हुई;
हे अत्यंत सुंदर रूप वाली दिव्य अप्सरा,
कृपया अपना नाम और अपना परिचय बताएं।
जैसे किसी कोमल पौधे (*19) की तरह जिसकी जड़ों को पोषण मिलता है
उस मिट्टी पर जिस पर विनाशकारी लपटें फैल चुकी हैं,
ग्रीष्म ऋतु की हवाओं से इसके लाल पत्तों की बहुतायत झड़ जाती है,
तुम मुझे इतनी शर्मिंदगी भरी नजरों से क्यों देख रहे हो?
बोलने की तीव्र इच्छा होते हुए भी, वहाँ मौन खड़े रहना?
फिर उसने यह छंद कहा:

मुझे गर्व है, मनुष्य का प्रिय मित्र होने का।
जो धर्मी मनुष्यों की सहायता करते हैं;
देखो, मैं इस भोजन पर अपना दावा करने आया हूँ।
फिर भी मैं अपनी इच्छा को व्यक्त करने का साहस मुश्किल से ही कर पाता हूँ;
किसी महिला के लिए मुकदमा करना शर्मनाक माना जाता है।
यह सुनकर तपस्वी ने दो छंद दोहराए:

आपको भीख मांगने और मुकदमा करने की कोई जरूरत नहीं है।
आपको जो भी अधिकार और हक है, उसे प्राप्त करें:
मैं तुम्हें वह वरदान देता हूँ जिसकी तुमने कभी कामना भी नहीं की थी।
वह भोजन स्वीकार करें जिसे आप खुशी-खुशी खाना चाहते थे।
हे स्वर्ण वस्त्रधारी अप्सरा, कृपा करो, मैं निवेदन करता हूँ।
आज अपनी कोठरी में दावत करने के लिए:
सर्वप्रथम आपको दुर्लभ और चुनिंदा व्यंजनों से सम्मानित करते हुए,
मैं भी इस स्वादिष्ट भोजन को साझा करना चाहूंगा।
इसके बाद दिव्य ज्ञान से प्रेरित कुछ छंद आते हैं:

इस प्रकार, हे गौरवशाली अप्सरा, सम्मान ने उसके आदेश पर ऐसा किया।
कोसिया के घर में उनका अतिथि के रूप में स्वागत किया गया:
उसमें फल और बारहमासी धाराएँ अधिक हैं,
और इसके परिसर में अनेक संत पाए जाते हैं।
यहां घने समूह में फूलदार झाड़ियाँ (*21) दिखाई देती हैं,
आम, पीपल, ब्रेडफ्रूट, जूडास ट्री;
यहां साल और चमकीले गुलाब-सेब के फूल मैदान की शोभा बढ़ाते हैं।

वहां अंजीर और बरगद के पेड़ अपनी पवित्र छाया प्रदान करते हैं।
यहां अनेकों सुगंधित फूल हवा को महकाते हैं,
यहां हमें मटर और सेम, पैनिक और चावल मिलते हैं:
हर जगह केले के भरपूर गुच्छे दिखाई दे रहे हैं।
और बांस के सरकंडे घने जाल में उगते हैं।
उत्तर दिशा की ओर, चिकने और समतल किनारे से घिरा हुआ,
और सबसे शुद्ध धाराओं से पोषित, एक पवित्र तालाब देखें।
वहाँ प्रसन्न मछलियाँ (*22) शांति से अपनी इच्छा से खेलती हैं,
और भरपूर भोजन के बीच वे तृप्त होकर आनंद लेते हैं।
वहाँ सुखी पक्षी शांतिपूर्वक प्रचुर भोजन का आनंद लेते हैं।
हंस, बगुले, ओस्प्रे (मछली बाज), यहां तक कि दुर्लभ पंखों वाले मोर भी।
वहां कोयल और तीतर के साथ लाल हंस भी मौजूद हैं।
यहां शेर, बाघ और जंगली सूअर अपनी प्यास बुझाने के लिए आते हैं।
भालू, लकड़बग्घे और भेड़िये अपने लिए पानी पीने की जगह बनाने के आदी हैं।
यहां भैंस, गैंडा और गयाल भी मौजूद हैं।
हिरण, बारहसिंगा, सूअरों के झुंड और लाल हिरण तथा अन्य हिरणों के साथ,
और खरगोश जैसे कानों वाली बिल्लियाँ भारी संख्या में दिखाई देती हैं।
पर्वत की ढलानें चमकीले रंगों से ढकी हुई हैं और विभिन्न रंगों के फूलों से सराबोर हैं।
और प्रत्येक वनक्षेत्र में गूंजने वाले पक्षियों के गीत की प्रतिध्वनि सुनाई देती है।
इस प्रकार भगवान बुद्ध ने कोसिया के आश्रम की प्रशंसा की। और अब देवी सम्मान के प्रवेश के तरीके को दर्शाने के लिए उन्होंने कहा:

वह सुंदर स्त्री एक शाखा पर झुकी हुई थी, जो पूरी तरह से हरे पत्तों से ढकी हुई थी।
बिजली की तरह अचानक एक गरजता हुआ बादल उस दृश्य पर आ गिरा।
उसके लिए एक सुरुचिपूर्ण सोफा (*23) रखा गया था, जिसके सिरहाने पर समृद्ध पर्दे लगे थे।
ये सभी सुगंधित कुसा घास से बने हैं, जिन पर हिरण की खाल बिछाई गई है।
और इस प्रकार, हे स्वर्गिक अप्सरा, सम्मान से पवित्र संन्यासी ने कहा:
"आपके आनंद के लिए पलंग तैयार है; कृपया बैठ जाइए।"
तब तपस्वी ने झरने से शुद्ध जल लिया।
ताजा तोड़े गए पत्तों को जल्दी से लाया,
और यह जानते हुए कि उसकी अंतरात्मा क्या चाहती है
उसने उसे वह अमृतमय (दिव्य) भोजन सहर्ष प्रदान किया।
जैसे ही उसने अपने हाथों में स्वागत उपहार को दबाया,
इस प्रकार प्रसन्न हुई अप्सरा ने संत से कहा:
"मेरी आराधना करो और तुमने ही मुझे विजय दिलाई है।"
देखो! अब मैं एक बार फिर अपने जन्मस्थान स्वर्ग की तलाश करूंगा।
नौकरानी प्रसिद्धि के घमंड में चूर हो गई।
कोसिया के आशीर्वाद से इंद्र वापस आ गए।
"और देखो," वह चिल्लाई, "हजार आँखों वाले देवता (देवदूत) को।"
देवताओं का अमृत (पेय) यहाँ है—मुझे ही पुरस्कार प्रदान करो।
तब सक्का (इंद्र) और उनके देवदूतों के समूह ने भेंट चढ़ाई।
उस असाधारण दिव्य कन्या को उचित सम्मान।
और जैसे ही वह अपने नए सिंहासन पर बैठी,
उनकी उपस्थिति में देवता (देवदूत) और मनुष्य श्रद्धापूर्वक विराजमान हो जाते थे।
इस प्रकार उनका सम्मान करते हुए सक्का (इंद्र) के मन में यह विचार आया, "कोसिया ने दूसरों को अमृत देने से इनकार करके केवल इसी को क्यों दिया?" इसका कारण जानने के लिए उन्होंने मताली को पुनः भेजा।

विषय को स्पष्ट करते हुए गुरु ने इस श्लोक को दोहराया:

अतः सक्का (इंद्र), तैंतीस देवताओं के स्वामी,

एक बार फिर मताली को संबोधित करते हुए,
उन्होंने कहा, "जाओ और संत से स्पष्टीकरण मांगो।"
देवताओं के पेय (अमृत) को सम्मान क्यों मिलना चाहिए?
उनके वचन का पालन करते हुए मतली, वेजयंत (*24) नामक रथ पर सवार होकर वहाँ से चले गए।

गुरु ने इस मामले को समझाते हुए कहा:

तब मताली ने हवा में यात्रा करने के लिए एक रथ रवाना किया।
सभी साज-सज्जा के साथ, भव्यता में अद्भुत और सुंदर,
इसका स्तंभ सोने का बना है, उत्तम रूप से शुद्ध किए गए सोने का, और इसका पूरा ढांचा निर्मित है।
अलंकरण विस्तृत है और उस पर सोने की परत चढ़ी हुई है।
सोने से बने मोरों की आकृतियाँ काफी संख्या में चित्रित थीं।
घोड़े, गाय, हाथी, बाघ और तेंदुए भी।
यहां हिरण और बारहसिंगे ऐसे दिखाई देते हैं मानो लड़ाई के लिए तैयार हों।
यहां कीमती पत्थरों से उकेरी गई नीलकंठ चिड़ियों और अन्य पक्षियों की उड़ती हुई मूर्तियां हैं।
उन्होंने उसमें सुनहरे रंग के एक हजार शाही घोड़े जोत दिए।
प्रत्येक हाथी युवा हाथी की तरह बलवान था, जिसे देखना एक शानदार दृश्य था;
उनके स्तन सुनहरे जाल से ढके हुए थे, और उन पर फूलों की मालाएं सजी हुई थीं।
ढीले निशान (*25) के साथ, मात्र एक शब्द पर, हवा की तरह तेज़ वे दौड़े।
मतली के रूप में यह भव्य रथ एक छलांग के साथ ऊपर चढ़ गया।
दसों दिशाओं में आकाश उस ध्वनि से गूंज उठा:
और जब वह हवा में यात्रा कर रहा था, तो उसने दुनिया को हिलाकर रख दिया।
और आकाश, समुद्र और धरती, अपनी सारी चट्टानों और जंगलों के साथ कांप उठे।
जल्द ही वह आश्रम पहुँच गया और कहना चाहता था
उस पवित्र व्यक्ति के प्रति उचित सम्मान दिखाते हुए उन्होंने अपना एक कंधा खुला छोड़ दिया।
और उस ब्राह्मण ऋषि से बात करते हुए, जो एक बुद्धिमान और विद्वान व्यक्ति थे,
पवित्र परंपराओं में अच्छी तरह से प्रशिक्षित, मताली ने इस प्रकार शुरुआत की:
हे कोसिया, अब स्वर्ग के राजा इंद्र के वचन सुनो।
वह जो कुछ भी जानने के लिए उत्सुक है, उसके बारे में मैं यह संदेश लेकर आया हूँ!
"हालांकि होप एंड फेथ एंड ग्लोरी के दावों को आप शायद न पहचानें,
मैं निवेदन करता हूँ, सम्मान को केवल आपके हाथों ही पुरस्कार क्यों मिलना चाहिए?
उनकी बातें सुनकर तपस्वी ने यह श्लोक कहा:

हे मताली, मेरी महिमा हो, तुम आंशिक रूप से दुष्ट प्रतीत होते हो।
हे देवताओं (देवदूतों) के सारथी, फेथ एक धूर्त दासी साबित होती है।
आशा हमेशा एक धोखेबाज होती है जो धोखा देने के अपने वादे से प्यार करती है।
पवित्र सद्गुणों के मार्ग में ही सम्मान दृढ़ता से स्थापित होता है।
और अब उसके सद्गुणों की प्रशंसा करते हुए उसने कहा:

जो लड़कियां अभी भी अपने घरों में रहती हैं, उनकी हमेशा अच्छी तरह से रक्षा की जाती है।
वे महिलाएं जो अब अपनी युवावस्था पार कर चुकी हैं, और वे जो अभी भी अपने पतियों के साथ रहती हैं,
सभी के हृदय में शारीरिक वासना उत्पन्न होनी चाहिए।
ऑनर की आवाज सुनकर वे अपने विचार को रोक देते हैं और पापी वासना मर जाती है।
जहां युद्ध के अग्रभाग में बाण और भाले तेजी से और बेरोकटोक आगे बढ़ रहे हों,
और हार में जब साथी गिर जाते हैं या पलटकर भाग जाते हैं,
ऑनर की आवाज सुनकर वे अपनी जान की कीमत पर भी अपनी उड़ान रोक देते हैं।
(*26)और घबराए हुए वे एक बार फिर संघर्ष को फिर से शुरू कर देते हैं।
जिस प्रकार किनारा समुद्र की लहरों के तेज प्रवाह को रोक देता है,
इसलिए सम्मान भी अक्सर दुष्ट लोगों के मार्ग को नियंत्रित करता है।

तब, मताली, इंद्र के पास शीघ्र लौटकर सब कुछ स्पष्ट कर दो।
समस्त विश्व के संत सम्मान के नाम का आदर करते हैं।
यह सुनकर मताली ने यह श्लोक दोहराया:

कोसिया, यह किसने तुम्हें यह सुझाव दिया था?
क्या यह महान इंद्र (देवदूतों के राजा), ब्रह्मा (प्रधान देवदूत), या प्रजापति (*27) हो सकते हैं?
हे महान ऋषि, यह सम्मान निश्चित रूप से इंद्र की कृपा से ही प्राप्त हुआ है।
और देवदूतों की दुनिया में वह मूल्य के मामले में सबसे आगे है।
जब वह बोल ही रहा था कि उसी क्षण कोसिया का पुनर्जन्म हो गया। तब मताली ने उससे कहा, "कोसिया, तुम्हारा जीवन चक्र (*28) समाप्त हो रहा है; तुम्हारा दान-पुण्य (*29) समाप्त हो गया है। मनुष्यलोक से तुम्हारा क्या लेना-देना? अब हम देवदूतों के लोक में चलेंगे," और उसे वहाँ ले जाने का विचार करके उसने यह श्लोक कहा:

हे संत, अब आओ और तुरंत उस रथ पर सवार हो जाओ जो मुझे अत्यंत प्रिय है।
और मैं तुम्हें उस स्वर्ग में ले चलता हूँ जहाँ तैंतीस राज करते हैं।
इंद्र तुम्हारे लिए बहुत तरस रहे हैं, तुम इंद्र के ही समान हो।
आज तुम इंद्र के साथ संगति करने का मार्ग पा लोगे।
जब मताली अभी बोल ही रहे थे कि कोसिया माता-पिता के हस्तक्षेप के बिना ही देवताओं (देवदूतों) के बीच प्रकट हुए (*30) और दिव्य रथ पर सवार होकर खड़े हो गए। तब मताली उन्हें इंद्र के समक्ष ले गए। इंद्र ने उन्हें देखकर प्रसन्नता व्यक्त की और अपनी पुत्री सम्मान को उनकी मुख्य पत्नी बनाकर उन्हें दे दिया तथा उन्हें शासन करने की असीम शक्ति प्रदान की।

परिस्थितियों को देखकर गुरु ने कहा, "यह कुछ महानतम प्राणियों का पुण्य है जो इस प्रकार शुद्ध हुआ है," और उन्होंने अंतिम श्लोक दोहराया:

इस प्रकार, पवित्र पुरुषों के कर्मों से ही सुखद परिणाम प्राप्त होते हैं।
और पुण्य कर्मों का फल सदा बना रहता है।
जिसने भी सम्मान के लिए दिए गए उस अमृतमय (दिव्य) भोजन को देखा,
सीधे-सीधे स्वर्ग के स्वामी इंद्र के साथ संगति करने के लिए चले गए।

गुरु ने अपने प्रवचन का समापन इन शब्दों से किया, "केवल अभी ही नहीं, भिक्षुओं, बल्कि पुराने समय में भी मैंने इस कंजूस व्यक्ति को परिवर्तित किया था जो एक पक्का कंजूस था," और ऐसा कहते हुए उन्होंने जन्म का वर्णन इस प्रकार किया: "उस समय उप्पलावन्ना अप्सरा सम्मान थीं, एक उदार भिक्षु कोसिया थे, अनुराद्ध पंचसिखा थे, आनंद मतली, कश्यप सूर्य, मोग्गल्याना चंदा, सारिपुत्र नारद, और मैं स्वयं सक्का (इंद्र) था।"

फुटनोट:

(1) इल्लिसा-जातक क्रमांक 78 की तुलना करें।

(2)जाट. सं. 483

(3) सरनिया, जाट. सं. 224

(4)समग्रति, जाट। नं.413, नं. 36, और संग्रहा, जाट। नहीं। 222

(5) स्पष्टतः एक कहावत है जो 'बेकार संपत्ति' को दर्शाती है।

(6)अनुसेत्थी यहाँ स्पष्ट रूप से लॉर्ड हाई ट्रेजरर के अधीनस्थ किसी अधिकारी को दर्शाता है।

(7)मधुरा के लिए हमें शायद मधु, शहद पढ़ना चाहिए, जो पाठ के अगले पृष्ठ पर दलिया की सामग्री में से एक के रूप में आता है।

(8)अच्चरा वजन या क्षमता का माप होना चाहिए। क्या यह अच्चेरा (मराठी) आधा शेर के समान हो सकता है?

(9) सक्का (इंद्र) का महल।

(10) सक्का (इंद्र) का न्याय कक्ष।

(11) निच्चुभाती जाट. सं. 302

(12) भिक्षा के आदान-प्रदान के लिए कोई भी व्यवस्था निषिद्ध थी।

(13)दत्व पढ़ने के लिए 'दत्व, यानी अदत्व।

(14) यथोधिका, प्रत्येक अपने-अपने स्थान पर। जातक क्रमांक 381 और 437 देखें।

(15)सुगत्ते। यद्यपि चारों को संबोधित करते हुए, नारद एक अप्सरा को अलग करते हैं।

(16) उदग्गिहुत्त की तुलना उदायुध से करें, ऊपर उठाए हुए हथियार से।

(17)वेल्ली, जाट. सं. 402 और 405, संभवतः पोशाक का कोई भाग है। समवेल्ली, सं. 306 से तुलना करें, जिसे विद्वान ने कच्चा बताया है। देखें कुल्लवग्ग, x. 16

(18)रिंचति, जातक नं. 146

(19)इपोमोआ.

(21) कई वृक्ष और पौधे जो केवल वानस्पतिक नामों से ही ज्ञात हैं, उन्हें छोड़ दिया गया है।

(22) अनेक मछलियों के नाम।

(23) कोच्च के लिए विनय ग्रंथों को देखें

(24) सक्का (इंद्र) का रथ। जाट. 202, क्रमांक 254, क्रमांक 355, क्रमांक 103 देखें। अन्यत्र यह सक्का (इंद्र) के महल का नाम है, जैसा कि क्रमांक 386 में है।

(25)asamgita, ie nissanga

(26) विद्वान इसे इस प्रकार समझेंगे: "और अपने बचाए हुए स्वामी के चारों ओर इकट्ठा होकर एक बार फिर संघर्ष को नवप्रवर्तित करें।"

(27) वही तीन देवता (देवदूत) जाट. 568 में आते हैं। यहाँ प्रजापति ब्रह्मा से स्पष्ट रूप से भिन्न हैं।

(28) जातक 106

(29) दानधम्म की तुलना देयधम्म से करें, जो बौद्ध शिलालेखों में धार्मिक दान के लिए प्रयुक्त सामान्य शब्द है।

(30) ओपपतिका एक ऐसा प्राणी है जो माता-पिता के हस्तक्षेप के बिना और मानो अकारण ही अस्तित्व में आता है और संयोग से प्रकट होता प्रतीत होता है, लेकिन वास्तव में कहीं और मृत्यु प्राप्त कर चुके प्राणी के कर्मों के कारण।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **कुनाला-जातक**
स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----||-536-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 536
कुणाला-जातक (*1)

"यह उस घटना की रिपोर्ट और प्रसिद्धि है।" यह कहानी गुरु ने कुणाला झील के किनारे रहते हुए सुनाई थी, जिसमें पाँच सौ भिक्षुओं का जिक्र था जो असंतोष से व्याकुल थे। कहानी क्रमानुसार इस प्रकार है: शाक्य (बुद्ध का वंश) और कोलिया जनजातियों ने कपिलवस्तु (बुद्ध के पिता शुद्धोदन का राज्य) और कोलिया शहरों के बीच बहने वाली रोहिणी नदी को एक ही बांध से नियंत्रित कर रखा था और उसी के सहारे अपनी फसलें उगाते थे। जेठमूल (*2) माह में जब फसलें मुरझाने लगीं, तो दोनों शहरों के निवासी मजदूर इकट्ठा हुए। तब कोलिया के लोगों ने कहा, "यदि दोनों ओर से पानी निकाला जाए, तो भी यह हमारे और आपके लिए पर्याप्त नहीं होगा। परन्तु हमारी फसलें एक बार पानी देने से ही फल-फूलेंगी; तो हमें पानी दीजिए।" कपिलवस्तु के लोगों ने कहा, "जब आप अपने भंडारों को अनाज से भर लेंगे, तब हममें लाल सोना, पन्ना और तांबे के सिक्के लेकर, टोकरियाँ और बोरियाँ भरकर आपके दरवाज़ों पर झपटने की हिम्मत नहीं होगी। हमारी फसलें भी एक बार पानी देने से ही फल-फूल जाएँगी; हमें पानी दीजिए।" उन्होंने कहा, "हम नहीं देंगे।" बाकी लोगों ने कहा, "हम भी नहीं देंगे।" बात इतनी बढ़ गई कि उनमें से एक उठा और दूसरे को घूंसा मारा, फिर उसने तीसरे को मारा और इस तरह एक-दूसरे पर वार करते हुए और उनके शाही परिवारों के वंश पर गंदी टिप्पणी करते हुए उन्होंने हंगामा और बढ़ा दिया। कोलिया के मज़दूरों ने कहा, "अपने कपिलवस्तु के लोगों को यहाँ से भगाओ, जो कुत्तों, सियार और ऐसे ही जानवरों की तरह अपनी ही बहनों के साथ रहते हैं। उनके हाथी और घोड़े, उनकी ढालें और भाले हमारे सामने क्या काम आएँगे?" शाक्य मजदूरों ने उत्तर दिया, "नहीं, हे अभागे कुष्ठ रोगियों (*3)! अपने बच्चों के साथ यहाँ से चले जाओ। हे दरिद्र और कुटिल प्राणियों, जो जंगली जानवरों की तरह खोखले बेर के पेड़ (कोली) में अपना जीवन यापन करते हैं। उनके हाथी, घोड़े, भाले और ढालें हमारे विरुद्ध क्या कार्य करेंगी?" अतः वे गए और ऐसे कार्यों के लिए नियुक्त सलाहकारों को यह बात बताई, और उन्होंने अपने-अपने कबीलों के राजकुमारों को इसकी सूचना दी। तब शाक्यों ने कहा, "हम उन्हें दिखाएंगे कि अपनी बहनों के साथ सहवास करने वाले पुरुष कितने बलवान और शक्तिशाली होते हैं," और वे युद्ध के लिए तैयार होकर शीघ्रता से आगे बढ़े। और कोलियों ने कहा, "हम उन्हें दिखाएंगे कि बेर के खोखले पेड़ में रहने वाले कितने बलवान और शक्तिशाली होते हैं," और वे भी युद्ध के लिए तैयार होकर शीघ्रता से आगे बढ़े। लेकिन अन्य शिक्षक कहानी इस प्रकार सुनाते हैं, "जब शाक्यों और कोलियाओं की दासियाँ नदी से पानी लाने आईं और अपने सिर पर रखे कपड़े के कुंडल ज़मीन पर फेंककर बैठ गईं और मजे से बातें करने लगीं, तो एक स्त्री ने दूसरी स्त्री का कपड़ा यह सोचकर ले लिया कि वह उसका अपना है; और जब इस बात पर झगड़ा हुआ, और दोनों ने कपड़े के कुंडल पर अपना दावा किया, तो धीरे-धीरे दोनों शहरों के लोग, दास और मजदूर, सेवक, मुखिया, सलाहकार और वायसराय,वे सब युद्ध के लिए तैयार होकर तेज़ी से आगे बढ़े। लेकिन कई टीकाओं में मिलने और अधिक तर्कसंगत होने के कारण पहले संस्करण को दूसरे की तुलना में स्वीकार किया जाना चाहिए। अब शाम का समय था जब वे युद्ध के लिए तैयार होकर तेज़ी से आगे बढ़ रहे थे। उस समय भगवान बुद्ध श्रावस्ती नगर में रह रहे थे, और भोर में संसार का चिंतन करते हुए उन्होंने उन्हें युद्ध के लिए निकलते देखा, और उन्हें देखकर उन्हें आश्चर्य हुआ कि क्या उनके वहाँ जाने से झगड़ा समाप्त हो जाएगा, और उन्होंने मन बना लिया और सोचा, "मैं वहाँ जाऊँगा और इस झगड़े को समाप्त करने के लिए तीन जन्म कथाएँ सुनाऊँगा, और उसके बाद झगड़ा समाप्त हो जाएगा।" फिर दो जन्म कथाएँ सुनाकर, मिलन के आशीर्वादों को समझाते हुए, मैं उन्हें अत्तदंड (*4) सूत्र का उपदेश दूँगा और मेरे उपदेश सुनने के बाद दोनों नगरों के लोग मेरे समक्ष ढाई सौ युवकों को लाएँगे, और मैं उन्हें शिष्यों के पवित्र संघ में शामिल करूँगा और वहाँ एक विशाल सभा होगी।" इस प्रकार अपने कक्ष में अंतिम संस्कार करने के बाद, वे श्रावस्ती नगर में भिक्षा मांगने के लिए चक्कर लगाने गए, और लौटकर, भोजन करने के बाद, शाम को वे अपने सुगंधित कक्ष से बाहर निकले और किसी से एक शब्द भी कहे बिना, अपना कुंड और वस्त्र लेकर अकेले ही दो सेनाओं के बीच हवा में पालथी मारकर बैठ गए। और यह देखकर कि यह उन्हें चौंकाने और अंधकार उत्पन्न करने का अवसर है, वे वहाँ अपने बालों से (गहरे नीले) (*5) किरणें उत्सर्जित करते हुए बैठ गए। फिर जब उनके हृदय व्याकुल थे, तो उन्होंने स्वयं को प्रकट किया और छह रंगों की किरणें उत्सर्जित कीं। कपिलवस्तु के लोगों ने भगवान बुद्ध को देखकर सोचा, "हमारे गुरु, हमारे महान सपूत, आ गए हैं।" क्या उसने हम पर डाले गए युद्ध के दायित्व को देखा होगा? "अब जब गुरुजी आ गए हैं, तो हमारे लिए शत्रु के किसी भी व्यक्ति के विरुद्ध हथियार उठाना असंभव है," और उन्होंने अपने हथियार फेंक दिए और कहा, "कोलियों को हमें मार डालने दो या जिंदा जला देने दो।" कोलियों ने ठीक वैसा ही किया। फिर भगवान बुद्ध अवतरित हुए और रेत के बिस्तर पर एक रमणीय स्थान पर स्थापित भव्य बुद्ध सिंहासन पर विराजमान हुए, और वे बुद्ध के अतुलनीय वैभव से चमक उठे। राजाओं ने भी भगवान बुद्ध को प्रणाम किया और अपने-अपने स्थान ग्रहण कर लिए। तब गुरुजी, यद्यपि वे यह भलीभांति जानते थे, ने पूछा, "हे महाराजो, तुम यहाँ क्यों आए हो?" "हे परम पूज्य," उन्होंने उत्तर दिया, "हम न तो इस नदी को देखने आए हैं, न ही आनंद लेने, बल्कि युद्ध छेड़ने आए हैं।" "झगड़ा किस बात पर है, महाराज?" "जल के बारे में।" "जल का क्या मूल्य है?" "बहुत कम, परम पूज्य।" "पृथ्वी का क्या मूल्य है?" "यह अमूल्य है।" "योद्धाओं के क्या मूल्य हैं?" "वे भी अमूल्य हैं।" "तुम्हें कुछ तुच्छ जल के कारण उच्च पदस्थ सरदारों को नष्ट करने की इच्छा क्यों है?" "सचमुच, इस झगड़े में कोई समाधान नहीं है, लेकिन महाराज, एक वृक्ष-परी और एक काले शेर के बीच हुए झगड़े के कारण यह द्वेष उत्पन्न हो गया है।"जो इस वर्तमान युग तक पहुँच चुका है," और इन शब्दों के साथ उन्होंने उन्हें फंदना (*6) जन्म के बारे में बताया। फिर उन्होंने कहा, "एक दूसरे का अंधाधुंध अनुसरण (*7) नहीं होना चाहिए। हिमालय के एक क्षेत्र में, जो तीन हजार लीग (x 4.23 किमी) तक फैला हुआ है, चौपायों का एक समूह, एक खरगोश के कहने पर एक दूसरे का अनुसरण करते हुए, सभी एक विशाल समुद्र में जा गिरे। इसलिए एक के बाद एक ऐसा नहीं होना चाहिए," और ऐसा कहकर उन्होंने दद्दभा (*8) जन्म की कथा सुनाई। इसके अलावा उन्होंने कहा, "कभी-कभी कमजोर लोग बलवानों की कमजोरियाँ देख लेते हैं, तो कभी-कभी बलवान लोग कमजोरों की कमजोरियाँ देख लेते हैं, और एक बार एक बटेर, एक मुर्गी ने एक राज हाथी को मार डाला था," और उन्होंने

लतुकीका (*9) जन्म की कथा सुनाई। इस प्रकार झगड़े को शांत करने के लिए उन्होंने तीन जन्म कथाएँ सुनाईं, और एकता के प्रभावों को समझाने के लिए उन्होंने दो जन्म कथाएँ सुनाईं। "जो लोग एकता में एक साथ रहते हैं, उनके लिए किसी को भी आक्रमण का कोई अवसर नहीं मिलता," और ऐसा कहकर उन्होंने रुक्खधम्म (*10) जन्म की कथा सुनाई। उन्होंने यह भी कहा, "जो लोग एकता में थे, उनके विरुद्ध आक्रमण का कोई रास्ता नहीं मिल सकता था, लेकिन जब वे आपस में झगड़ते थे, तो एक शिकारी उनका विनाश कर उनके साथ चला जाता था: वास्तव में झगड़े में कोई संतोष नहीं है," और इन शब्दों के साथ उन्होंने वट्टक जन्म (*11) की कथा सुनाई। इस प्रकार इन पाँच जन्म कथाओं को सुनाने के बाद, उन्होंने अपनी बात समाप्त की। अत्तदंड सूत्र का पाठ करते हुए, राजाओं ने विश्वास करते हुए कहा, "यदि गुरुदेव न आते, तो हम एक दूसरे को मार डालते और रक्त की नदियाँ बहा देते। गुरुदेव की कृपा से ही हम जीवित हैं। यदि गुरुदेव ने गृहस्थ जीवन अपनाया होता, तो चार महान द्वीप-महाद्वीपों का साम्राज्य, साथ ही दो हजार छोटे द्वीप, उनके हाथों में आ जाते और उनके एक हजार से अधिक पुत्र होते। इसके अलावा, उनके साथ योद्धा सरदारों का एक दल भी होता। परन्तु पहले ही इस महिमा का उल्लेख किया जा चुका है, इसलिए उन्होंने सांसारिक जीवन त्याग दिया और पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया।" अब भी उन्हें योद्धा सरदारों के दल के साथ विचरण करने दो।" इस प्रकार दोनों राज्यों ने उन्हें ढाई सौ राजकुमार भेंट किए। भगवान बुद्ध ने उन्हें भिक्षु दीक्षा देने के बाद एक विशाल वन में शरण ली। अगले दिन से वे उनके साथ दोनों नगरों में भिक्षा मांगने के लिए चक्कर लगाने लगे, कभी कपिलवस्तु में तो कभी कोलिया में, और दोनों नगरों के लोग उनका बहुत सम्मान करते थे। इन पुरुषों में, जिन्होंने अपनी इच्छा से नहीं बल्कि गुरु के प्रति आदर के कारण दीक्षा ली थी, आध्यात्मिक असंतोष उत्पन्न हो गया। और उनकी पूर्व पत्नियों ने उनके असंतोष को और बढ़ाने के लिए उन्हें इस प्रकार के संदेश भेजे, जिससे वे और भी असंतुष्ट हो गए। भगवान बुद्ध ने अंतर्दृष्टि से उनकी असंतुष्टि को समझा और सोचा, "ये भिक्षु, मेरे जैसे बुद्ध के साथ रहते हुए भी असंतुष्ट हैं। मुझे आश्चर्य है कि किस प्रकार का उपदेश उनके लिए लाभदायक होगा"; और उन्होंने कुणाल के धार्मिक प्रवचन के बारे में सोचा। तब उनके मन में यह विचार आया,"मैं इन भाइयों को हिमालय ले जाऊँगा और कुणाल कथा के माध्यम से स्त्री जाति से जुड़े पापों को समझाकर और उनकी असंतुष्टि दूर करके, उन्हें पवित्रता का पहला चरण प्रदान करूँगा।" अतः सुबह वे अपने अंतर्वस्त्र और भिक्षापात्र तथा वस्त्र लेकर कपिलवस्तु में परिक्रमा करने गए, और लौटकर दोपहर का भोजन करने के बाद, उन्होंने इन पाँच सौ भाइयों को संबोधित करते हुए पूछा, "क्या आपने हिमालय के रमणीय क्षेत्र को पहले कभी देखा है?" उन्होंने कहा, "नहीं, महाराज?" "क्या आप हिमालय की तीर्थयात्रा पर जाएँगे?" "महाराज, हमारे पास कोई अलौकिक शक्तियाँ नहीं हैं; हम कैसे जाएँगे?" "परन्तु यदि कोई आपको अपने साथ ले जाए, तो क्या आप जाएँगे?" "जी महाराज।" गुरु ने अपनी चमत्कारिक शक्ति से उन सभी को अपने साथ हवा में उठा लिया और हिमालय में पहुंचा दिया। आकाश में खड़े होकर उन्होंने हिमालय के रमणीय क्षेत्र में स्थित विभिन्न पर्वतों, स्वर्ण पर्वत, रत्न पर्वत, लाल पर्वत, काला पर्वत, पठार पर्वत, क्रिस्टल पर्वत, पांच महान नदियों और झीलों, कन्नामुंडका, रथकारा, सिहाप्पपाता, छद्दंता, तियाग्गला, अनोटत्ता और कुणाला, कुल सात झीलों को दिखाया। हिमालय एक विशाल क्षेत्र है, जिसकी ऊंचाई पांच सौ मील (4.23 किमी) और चौड़ाई तीन हजार लीग (4.23 किमी) है। अपनी अपार शक्ति से उन्होंने उन्हें इस स्थान का यह मनमोहक भाग दिखाया, और वहाँ बने हुए निवास स्थान, चौपाये जानवर, शेरों, बाघों, हाथियों आदि के झुंड दिखाए—पवित्र बाड़े और अन्य उद्यान, फूलदार और फलदार वृक्ष, सभी प्रकार के पक्षियों के झुंड, जल और भूमि के पौधे, हिमालय के पूर्व में एक स्वर्णिम पठार, पश्चिम में एक लाल पठार। इन मनमोहक क्षेत्रों को देखते ही इन भाइयों की अपनी पूर्व पत्नियों के लिए तीव्र लालसा समाप्त हो गई। फिर गुरु अपने इन भाइयों के साथ हिमालय के पश्चिम में स्थित एक पथरीले पठार पर, जो साठ मील (x 4.23 किमी) चौड़ा था, लाल घाटी में, जो तीन मील (x 4.23 किमी) लंबी थी, सात मील (x 4.23 किमी) में फैले एक साल के वृक्ष के नीचे, जो युगों तक फैला हुआ था, उतरे। गुरु, अपने इन भाइयों के साथ, छह रंगों की किरणें बिखेरते हुए, सागर की गहराइयों को मथते हुए और सूर्य के समान प्रज्वलित होते हुए, अपने आसन पर विराजमान हुए और शहद के समान मधुर स्वर में अपने भाइयों को संबोधित करते हुए बोले: "भाइयों, मुझसे किसी ऐसे चमत्कार के बारे में पूछिए जो आपने इस हिमालय में पहले कभी नहीं देखा हो।" उसी क्षण दो चित्तीदार कोयल अपने मुँह में दोनों सिरों से एक छड़ी पकड़े हुए, उसके मध्य में अपने स्वामी को विदा कर बैठीं। आठ कोयल आगे, आठ पीछे, आठ दाईं ओर, आठ बाईं ओर, आठ नीचे और आठ ऊपर, इस प्रकार अपने स्वामी की छाया में उड़ती हुई उनका साथ दे रही थीं। इन भाइयों ने पक्षियों के इस झुंड को देखकर गुरु से पूछा, "हे प्रभु, इन पक्षियों का क्या अर्थ है?" गुरु ने कहा, "भाइयों,"यह हमारे परिवार की एक प्राचीन परंपरा है, जिसे मैंने स्थापित किया है; पुराने समय में वे इसी प्रकार मेरा मार्गदर्शन करते थे। उस समय इन पक्षियों का एक विशाल समूह था। साढ़े तीन हज़ार मादा पक्षी मेरा मार्गदर्शन करते थे। धीरे-धीरे झुंड कम होता गया और अब ऐसा दिखता है जैसा आप देख रहे हैं।" "महाराज, वे किस प्रकार के जंगल में आपका मार्गदर्शन करते थे?" तब गुरु ने कहा, "अच्छा, सुनो भाइयों," और याद करते हुए उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई और इस प्रकार उन्हें शिक्षा दी।

यह उस क्षेत्र की रिपोर्ट और प्रसिद्धि है: एक ऐसा क्षेत्र जिसकी मिट्टी से हर तरह की जड़ी-बूटियाँ उगती हैं, जो फूलों के कई गुच्छों से ढका हुआ है, जहाँ हाथी, गायल, भैंस, हिरण, याक, चित्तीदार मृग, गैंडा, बारहसिंगा, शेर, बाघ, तेंदुआ, भालू, भेड़िया, लकड़बग्घा, ऊदबिलाव (*12), कदली मृग, जंगली बिल्ली, लंबे कान वाला खरगोश विचरण करते हैं, जहाँ अनगिनत विभिन्न प्रकार के हाथियों के झुंड निवास करते हैं, और जहाँ विभिन्न प्रकार के हिरण (*13) आते-जाते रहते हैं, और जहाँ घोड़े के मुख वाले यक्ष, परियाँ, जिन्न और राक्षस रहते हैं, जो घने वृक्षों से ढका हुआ है जिनके शीर्ष फूलों से खिले हुए हैं, डंठल वाले और ऊँचे खड़े हैं, और बिना गूदे वाले (*14) हैं, जहाँ सैकड़ों पक्षियों की खुशी से भरी चीखें गूंजती हैं, जिनमें ओस्प्रे (मछली बाज), तीतर, मोर, फ़ीज़ेंट और भारतीय कोयल शामिल हैं। (*15),

सैकड़ों खनिज पदार्थों, काजल, आर्सेनिक, पीले ऑर्पिमेंट, सिंदूर, सोने और चांदी से सजा और ढका हुआ—ऐसे ही रमणीय वन में कुणाल पक्षी रहता था: वह अत्यंत चमकीला और चमकीले पंखों से ढका हुआ था। इस कुणाल पक्षी की सेवा में तीन हजार पांच सौ मादा पक्षी थीं। तभी दो पक्षियों ने अपने मुंह में एक छड़ी पकड़कर कुणाल पक्षी को अपने बीच बिठाया और उड़ गए, क्योंकि उन्हें डर था कि लंबी दूरी तय करने में थकान के कारण वह अपनी जगह से हिलकर गिर न जाए। पांच सौ युवा पक्षी नीचे उड़ रहे थे, क्योंकि उन्होंने सोचा, "यदि यह कुणाल पक्षी अपने ठिकाने से गिर जाए, तो हम उसे अपने पंखों में पकड़ लेंगे।" अन्य पांच सौ पक्षी उसके ऊपर उड़ रहे थे, क्योंकि उन्हें डर था कि कहीं गर्मी से कुणाल झुलस न जाए। पांच सौ पक्षी उसके दोनों ओर उड़ रहे थे, ताकि ठंड या गर्मी, घास या धूल, हवा या ओस उसके पास न आ सके। उसके आगे पाँच सौ पक्षी उड़ते हैं, अन्यथा चरवाहों, पशुपालकों, घास काटने वालों, लकड़ी इकट्ठा करने वालों या वनपालों को कुनाला पर लाठी या टूटे मिट्टी के बर्तनों से, मुट्ठी या पत्थर से, डंडे या चाकू या कंकड़ से प्रहार करना चाहिए, अन्यथा कुनाला झाड़ी या लता या पेड़ से, खंभे या चट्टान से या किसी शक्तिशाली पक्षी से टकरा जाएगा। पाँच सौ पक्षी उसके पीछे उड़ते हैं, कोमल, दयालु शब्दों में, मधुर स्वर में उससे बात करते हैं, अन्यथा कुनाला वहाँ बैठे-बैठे ऊब जाएगा। पाँच सौ पक्षी इधर-उधर उड़ते हैं, विभिन्न प्रकार के पेड़ों से तरह-तरह के फल लाते हैं, अन्यथा कुनाला भूख से व्याकुल हो जाएगा। फिर पक्षी कुनाला को उसकी संतुष्टि के लिए एक बगीचे से दूसरे बगीचे, एक नदी के किनारे से दूसरे नदी के किनारे, एक पर्वत शिखर से दूसरे पर्वत शिखर, एक आम के बाग से दूसरे आम के बाग, एक सेब के बाग से दूसरे सेब के बाग, एक फल के बाग से दूसरे फल के बाग, एक नारियल के बागान से दूसरे नारियल के बागान तक तेजी से ले जाते हैं। अतः कुनाला प्रतिदिन इन पक्षियों के साथ चलते हुए उन्हें इस प्रकार फटकारता है: "नष्ट हो जाओ, तुम नीच प्राणियों, हाँ, पूरी तरह नष्ट हो जाओ, तुम चोर, बेईमान प्राणियों, तुम निर्दयी, चंचल और कृतघ्न हो, हवा की तरह जहाँ चाहो वहाँ चले जाओ।"

इन शब्दों के बाद गुरु ने कहा, "निःसंदेह, भाइयों, जब मैं पशु रूप में था, तब भी मैं स्त्रियों की कृतघ्नता, प्रलोभन, दुष्टता और अनैतिकता को भली-भांति जानता था, और उस समय तो मैं उनके वश में होने के बजाय उन्हें अपने नियंत्रण में रखता था।" और इन शब्दों से जब उन्होंने इन भाइयों की आध्यात्मिक असंतुष्टि दूर कर दी, तो गुरु चुप हो गए। उसी क्षण दो काली कोयल इस स्थान पर आईं, अपने स्वामी को डंडे पर ऊँचा उठाकर, जबकि चार-चार कोयलें उसके नीचे और चारों ओर उड़ रही थीं। उन्हें देखकर भाइयों ने गुरु से उनके बारे में पूछा और उन्होंने कहा, "भाइयों, पुराने समय में मेरा एक मित्र था, एक शाही कोयल, जिसका नाम पुन्नमुख था, और उसके परिवार में यही परंपरा थी।" और भाइयों के प्रश्न के उत्तर में, ठीक पहले की तरह, उन्होंने कहा:

इसी हिमालय पर्वतमाला के पूर्वी भाग में, कोमल और शांत पर्वतीय ढलानों से निकलने वाली हरी-भरी धाराएँ बहती हैं; एक सुगंधित, मनमोहक, उज्ज्वल स्थान पर, कमलों की सुंदरता से खिले हुए, नीले, सफेद और सौ पत्तों वाले कमल, सफेद लिली और स्वर्ग के वृक्ष से युक्त, सभी प्रकार के वृक्षों (*16) और पुष्पयुक्त झाड़ियों और लताओं से सुशोभित, हंसों, बत्तखों और हंसों की गर्जना से गूंजते हुए, भिक्षुओं और तपस्वियों के समूहों द्वारा बसे हुए, और जादुई या अलौकिक शक्तियों से युक्त लोगों द्वारा आबाद, और उच्च देवदूतों, राक्षसों, भूतों, दानवों, स्वर्गीय संगीतकारों, परियों और शक्तिशाली सर्पों से आबाद—वास्तव में ऐसे ही मनमोहक वन-वनस्पति में राजसी कोयल पुन्नमुख निवास करती थी। उसकी आवाज बहुत मधुर थी, और उसकी खिलखिलाती आँखें आनंद से मदहोश किसी व्यक्ति की आँखों के समान थीं। पुन्नामुख नाम की इस कोयल के समूह में तीन हज़ार पाँच सौ मादा पक्षी चल रही थीं। तब दो पक्षियों ने अपने मुँह में एक छड़ी पकड़ी और पुन्नामुख को उसके बीच में बिठाकर, थकान के डर से हवा में उड़ गईं। (और पहले जैसा ही)। (*17) तब पुन्नामुख, दिन में इन पक्षियों के साथ, उनकी प्रशंसा करते हुए बोला, "शाबाश, मेरी बहनों! तुम्हारा यह कार्य उच्च कुल की स्त्रियों को शोभा देता है, क्योंकि तुम अपने स्वामी की सेवा कर रही हो।" तब सचमुच पुन्नामुख नाम की कोयल उस स्थान के पास आई जहाँ कुणाला बैठा था, और कुणाला की सेवा में बैठी स्त्रियों ने उसे देखा, और जब वह अभी दूर ही था, वे पुन्नामुख के पास आईं और उससे बोलीं: "मित्र पुन्नामुख, कुणाला एक उग्र पक्षी है और उसकी ज़बान कठोर है। शायद तुम्हारी मदद से हम उससे मीठी बातें सुन लें।" "शायद, देवियों," उसने कहा। ऐसा कहकर वह कुनाला के पास आया और विनम्रतापूर्वक अभिवादन करने के बाद एक तरफ आदरपूर्वक बैठ गया और कुनाला से कहा, "हे मित्र कुनाला, तुम इन उच्च कुल की स्त्रियों के साथ इतना बुरा व्यवहार क्यों करते हो, जबकि वे स्वयं सुसंस्कृत हैं? हे मित्र कुनाला, जो स्त्रियाँ स्वयं शिष्ट हैं, उनसे भी मधुरता से बात करनी चाहिए, तो फिर शिष्ट स्त्रियों से तो और भी अधिक।" इतना कहकर कुनाला ने पुन्नमुख को इस प्रकार अपशब्द कहे, "नष्ट हो जा, दुष्ट, जी हाँ, पूरी तरह नष्ट हो जा। तेरे जैसा कौन मिलेगा जो स्त्रियों की प्रार्थनाओं से पिघल जाए (*18)?" इस प्रकार फटकार सुनकर कोयल पुन्नमुख मुड़ गई। फिर कुछ ही समय बाद पुन्नमुख को भयंकर रोग हो गया और उसे रक्तस्राव होने लगा, जिससे वह मृत्यु के निकट पहुँच गया। तब कोयल पुन्नमुख की सेवा में उपस्थित पक्षियों के मन में यह विचार आया: "यह कोयल बीमार है; शायद इसे रोग से मुक्ति मिल जाए।" इसलिए उसे अकेला छोड़कर वे कुनाला नामक पक्षी के पास आ गए। कुनाला ने दूर से इन पक्षियों को आते देखा और उन्हें देखकर उनसे कहा, "हे दुष्टो, तुम्हारा स्वामी कहाँ है?" उन्होंने कहा, "मित्र कुनाला, पुन्नामुख बीमार है: शायद वह अपनी बीमारी से ठीक हो जाए।"जब उन्होंने ऐसा कहा, तो कुनाला पक्षी ने उन्हें श्राप देते हुए कहा, "नष्ट हो जाओ, तुम दुष्टों, जी हाँ, पूरी तरह नष्ट हो जाओ, तुम चोर, बेईमान, लापरवाह, चंचल प्राणी हो, तुम पर की गई दया के लिए कृतघ्न हो, हवा की तरह जहाँ चाहो उड़ जाते हो।" ऐसा कहकर वह कोयल पुन्नमुख के पास आया और उससे कहा, "हे! मित्र पुन्नमुख।" "हे! मित्र कुनाला," उसने उत्तर दिया। तब कुनाला पक्षी ने कोयल पुन्नमुख

को अपने पंखों और चोंच से पकड़ लिया और उसे उठाकर उसे तरह-तरह की औषधियाँ पिलाईं। इससे कोयल की बीमारी ठीक हो गई। और जब पुन्नमुख ठीक हो गया, तो पक्षी लौट आए और कुनाला ने कुछ दिनों तक पुन्नमुख को जंगली फल खाने को दिए, और जब वह ठीक हो गया, तो उसने कहा, "अब मित्र, तुम फिर से ठीक हो गए हो; अपने साथी पक्षियों के साथ रहो, और मैं अपने घर लौट जाता हूँ।" तब पुन्नमुख ने उससे कहा, "जब मैं बहुत बीमार था, तब वे मुझे छोड़कर उड़ गए थे।" मुझे इन दुष्टों की कोई आवश्यकता नहीं है।" यह सुनकर उस महान प्राणी ने कहा, "अच्छा, मित्र, मैं तुम्हें स्त्रियों की दुष्टता के बारे में बताऊंगा," और वह पुन्नमुख को लेकर हिमालय की ढलान पर स्थित लाल घाटी में ले गया और सात मील (4.23 किमी) चौड़ी साल की एक चिनार की चट्टान पर बैठ गया, जबकि पुन्नमुख अपने अनुयायियों के साथ एक तरफ बैठ गया। पूरे हिमालय में एक दिव्य घोषणा हुई, "आज हिमालय में लाल चिनार की चट्टान पर बैठे पक्षियों के राजा कुणाल, बुद्ध के सभी आकर्षण के साथ धर्म का उपदेश देंगे: उनकी बात सुनो।" एक दूसरे को यह घोषणा करने से, छह कामावकार लोकों के देवताओं (देवदूतों) को इसके बारे में पता चला और वे अधिकतर एकत्रित हो गए: जंगल में कई देवता, सर्प, गरुड़ और गिद्धों ने भी इस तथ्य की घोषणा की। उस समय गिद्धों के राजा आनंद, दस हजार अनुयायियों के साथ, वहाँ उपस्थित हुए। गिद्ध शिखर पर गिद्ध रहते थे। शोर सुनकर उन्होंने सोचा, "मैं धर्म का उपदेश सुनूंगा," और अपने अनुयायियों के साथ आकर एक तरफ बैठ गए। हिमालय क्षेत्र में रहने वाले पांच अलौकिक शक्तियों से युक्त तपस्वी नारद, अपने दस हजार तपस्वियों के साथ, इस दिव्य घोषणा को सुनकर, सोचे, "मेरे मित्र कुणाल, कहते हैं, स्त्रियों के दोषों के बारे में बोलेंगे: मुझे भी उनका प्रवचन सुनना चाहिए," और एक हजार तपस्वियों के साथ वे अपनी अलौकिक शक्ति से वहां गए और एक तरफ अलग बैठ गए। वहां बुद्धों के उपदेश सुनने के लिए एकत्रित होने वाली विशाल सभा जैसी भीड़ थी। तब उस महान सत्ता ने, अपने पूर्व जन्मों को याद रखने वाले के ज्ञान से, पुन्नमुख को प्रत्यक्ष साक्षी बनाकर, अपने पूर्व जन्म में देखी गई एक घटना का वर्णन किया, जो स्त्रियों के दोषों से संबंधित थी। गुरु ने बात स्पष्ट करते हुए कहा: तब पक्षी कुणाल ने हाल ही में रोग से ठीक हुई कोयल पुन्नमुख को इस प्रकार संबोधित किया: "मित्र पुन्नमुख, मैंने कान्हा को देखा है,वह स्त्री जिसके दो माता-पिता थे (*19) और पाँच पति थे (*20), और जिसका स्नेह छठे पुरुष, एक सिरविहीन (*21), अपंग बौने पर था।" यहाँ भी हमारे पास एक और श्लोक है:

प्राचीन कथा कान्हा में कहा गया है,
पाँच राजकुमारों से एक अकेली दासी का विवाह हुआ था,
फिर भी वह और अधिक की लालसा से तृप्त नहीं हुई
और एक कुबड़ा बौना के साथ वेश्यावृत्ति करने लगी।
"मैंने देखा है, मित्र पुन्नमुख, सच्चतपवी नामक एक महिला तपस्वी का, जो श्मशान में रहती थी और अपना चौथा भोजन भी त्याग देती थी। उसने एक सुनार के साथ पाप किया। मैंने यह भी देखा है, मित्र पुन्नमुख, वेनतेय्या की पत्नी काकाती (*22) का, जो समुद्र के बीच में रहती थी और फिर भी नटकुवेरा के साथ पाप किया। मैंने देखा है, मित्र पुन्नमुख, सुनहरे बालों वाली कुरंगवी (*23) का, जो एलकमारा से प्रेम करती थी, फिर भी चालंगकुमार और धनंतवासी के साथ पाप किया। मुझे यह भी ज्ञात है कि ब्रह्मदत्त की माता (*24) ने कोसल के राजा को त्यागकर पंचलचंद के साथ पाप किया। ये और अन्य स्त्रियाँ पथभ्रष्ट हुईं, और किसी को भी स्त्रियों पर भरोसा नहीं करना चाहिए और न ही उनकी प्रशंसा करनी चाहिए। जैसे पृथ्वी समस्त संसार के प्रति निष्पक्ष है, सभी के लिए धन धारण करती है, सभी प्रकार और परिस्थितियों के मनुष्यों (अच्छे और बुरे) के लिए घर है, सर्वस्थायी, अविचल, अचल है, वैसे ही महिलाओं के साथ ऐसा ही होता है (बुरे अर्थ में)। एक पुरुष को उन पर भरोसा नहीं करना चाहिए।

जैसे शेर कच्चे मांस और खून पर भोजन करता है,
अपने पाँच (*25) भयंकर पंजों से भोजन के लिए ललचाता है,
दूसरों को चोट पहुँचाने में ही उसे सबसे अधिक आनंद मिलता है—
वैसी ही हैं स्त्रियाँ। हे मनुष्य, इनसे सावधान रहो।
हे मित्र पुन्नमुख, सचमुच, ये प्राणी मात्र वेश्याएँ, देह व्यापार करने वाली या गली में घूमने वाली औरतें नहीं हैं, बल्कि ये वेश्याएँ नहीं बल्कि हत्यारिनें हैं। मेरा तात्पर्य इन वेश्याओं, देह व्यापार करने वाली और गली में घूमने वाली औरतों (*26) से है। ये गुंथे हुए बालों वाले लुटेरों के समान हैं, विषैले पेय के समान हैं, अपनी ही प्रशंसा करने वाले व्यापारियों के समान हैं, हिरण के सींग के समान टेढ़ी हैं, साँपों के समान दुष्ट जीभ वाली हैं, ढके हुए गड्ढे के समान हैं, नरक के समान अतृप्त हैं, राक्षसी के समान तृप्त न होने वाली हैं, सर्वतृप्त यम के समान हैं, ज्वाला के समान सब कुछ भस्म करने वाली हैं, नदी के समान अपने सामने सब कुछ बहा ले जाने वाली हैं, हवा के समान जहाँ चाहे बहने वाली हैं, नेहरू पर्वत (*27) के समान अविभेदकारी हैं, विषैले वृक्ष के समान बारहमासी फल देने वाली हैं। यहाँ एक और श्लोक भी आता है:

जैसे विषैला पेय या लुटेरा गिर पड़ा हो, हिरण के सींग की तरह टेढ़ा,
सर्प की तरह दुष्ट जीभ वाले (*28) हैं वे, व्यापारी की तरह डींग मारने वाले,
वे ढके हुए गड्ढे की तरह हत्यारे हैं, नरक के अतृप्त पेट की तरह,
लालची जिन्न की तरह या उस मौत की तरह जो सबको अपने साथ ले जाती है।

वे ज्वाला की तरह भस्म करने वाले हैं, हवा या बाढ़ की तरह शक्तिशाली,
नेरू के सुनहरे शिखर की तरह जो निश्चित रूप से अच्छे और बुरे को भ्रमित करता है (*29),
विषैले वृक्ष की तरह हानिकारक, वे पांच गुना विनाश लाते हैं
, घरेलू सामान पर, धन और हर कीमती चीज को बर्बाद करने वाले।

कहते हैं कि एक समय की बात है, काशी के राजा ब्रह्मदत्त ने अपनी सेना के बल पर कोसल राज्य पर कब्जा कर लिया, उसके राजा की हत्या कर दी और उसकी गर्भवती रानी को बनारस ले गए और उससे विवाह कर लिया। कुछ समय बाद रानी ने एक पुत्री को जन्म दिया। राजा की अपनी कोई संतान न थी, इसलिए वह बहुत प्रसन्न हुए और बोले, "हे सुंदरी, मुझसे कोई वरदान मांगो।" रानी ने वरदान स्वीकार कर लिया, लेकिन अपना चुनाव गुप्त रखा। इस प्रकार उस राजकुमारी का नाम कान्हा रखा गया। जब वह बड़ी हुई, तो उसकी माता ने कहा, "प्रिय पुत्री, तुम्हारे पिता ने मुझे वरदान दिया था, जिसे मैंने स्वीकार तो कर लिया, लेकिन अपना चुनाव गुप्त रखा। अब तुम जो चाहो चुन लो।" स्त्री-प्रियता के आवेश में आकर उसने माता से कहा, "मुझे और कुछ नहीं चाहिए; उन्हें मेरे लिए पति चुनने हेतु एक सभा आयोजित करने को कहिए।" माता ने यह बात राजा को बताई। राजा ने कहा, "जो चाहे, उसे मिल जाए," और उन्होंने पति चुनने हेतु एक सभा का आयोजन करवाया। महल के प्रांगण में बहुत से पुरुष अपने वैभवशाली वस्त्रों में सजे-धजे एकत्र हुए। कान्हा, जो हाथ में फूलों की टोकरी लिए ऊपरी जालीदार खिड़की से बाहर देख रही थी, उनमें से किसी को भी पसंद नहीं कर पाई। तभी राजा पांडु के कुल के अज्जुन, नकुल, भीमसेन, युधिष्ठिल और सहदेव, ये पाँचों पांडु के पुत्र, तक्षशिला में विश्वप्रसिद्ध गुरु से कलाओं की शिक्षा प्राप्त करने के बाद, स्थानीय रीति-रिवाजों को जानने के उद्देश्य से यात्रा करते हुए बनारस पहुँचे। नगर में हलचल सुनकर और जब लोगों ने उनसे पूछा कि यह सब क्या है, तो वे पाँचों एक पंक्ति में खड़े हो गए, मानो सोने की कई मूर्तियाँ हों। कान्हा ने उन्हें देखते ही उन पाँचों पर मोहित हो गई और उनके सिर पर फूलों की माला डालकर कहा, "प्रिय माता, मैं इन पाँचों पुरुषों को चुनती हूँ।" रानी ने यह बात राजा को बताई। राजा ने उसे चुनाव का विकल्प दिया था, इसलिए उसने यह नहीं कहा, "तुम ऐसा नहीं कर सकती," बल्कि वह बहुत नाराज़ हुआ। हालाँकि, जब उसने उनके वंश और उनके पुत्रों के बारे में पूछा, तो उसे पता चला कि वे राजा पांडु के पुत्र हैं। उसने उनका बहुत सम्मान किया और अपनी पुत्री का विवाह उनसे करवा दिया। अपने प्रेम के बल पर उसने अपने सात मंजिला महल में इन पाँचों राजकुमारों का दिल जीत लिया। अब उसके पास एक कुबड़ा लंगड़ा सेवक था, और जब उसने प्रेम के बल पर पाँचों राजकुमारों का दिल जीत लिया, तो जैसे ही वे महल से चले गए, उसने अवसर पाकर और कामवासना से प्रेरित होकर उस कुबड़े दास के साथ पाप किया। उससे बात करते हुए उसने कहा, "तुम्हारे जैसा प्रिय मुझे कोई नहीं; मैं इन राजकुमारों को मार डालूँगी और तुम्हारे पैरों को उनके गले के खून से मढ़ दूँगी।" और जब वह राजभाई में सबसे बड़े के साथ होती, तो वह कहती, "तुम मुझे उन चारों से अधिक प्रिय हो। तुम्हारे लिए मैं अपना प्राण भी बलिदान कर दूँगी।"मेरे पिता की मृत्यु के बाद मैं राज्य केवल तुम्हें ही दूंगी।" लेकिन जब वह दूसरों के साथ होती, तो उसका व्यवहार बिल्कुल वैसा ही होता। वे उससे बहुत प्रसन्न थे, यह सोचकर कि, "वह हमसे प्रेम करती है और इसी कारण शासन करने की शक्ति हमारी होगी।" एक दिन वह बीमार पड़ गई, और उसके चारों ओर इकट्ठा होकर, एक व्यक्ति उसका सिर छू रहा था, और बाकी सभी उसका हाथ या पैर थामे बैठे थे, जबकि कुबड़ा राजकुमार उसके चरणों में बैठा था। अपने सबसे बड़े भाई, राजकुमार अज्जुना, जो उसका सिर छू रहा था, को उसने अपने सिर से इशारा किया, जिसका अर्थ था, "तुम्हारे सिवा मुझे कोई प्रिय नहीं है: जब तक मैं जीवित रहूंगी, तुम्हारे लिए ही जीवित रहूंगी और मेरे पिता की मृत्यु के बाद मैं राज्य तुम्हें ही दूंगी," और इस प्रकार उसने उसका दिल जीत लिया। दूसरों को भी उसने हाथ या पैर से इसी तरह का इशारा किया। लेकिन कुबड़ा राजकुमार को उसने अपनी जीभ से इशारा किया, जिसका अर्थ था, "केवल तुम ही मुझे प्रिय हो: तुम्हारे लिए ही मैं जीवित रहूंगी।" वे सभी, उसके द्वारा पहले कही गई बातों के कारण, समझ गए थे कि उसका क्या अर्थ है। यह संकेत। लेकिन जबकि बाकी सभी ने अपने लिए दिए गए संकेत को पहचान लिया, राजकुमार अजजूना ने जब हाथ, पैर या जीभ की हरकतें देखीं, तो सोचा, "जैसा मेरे साथ हुआ, वैसा ही दूसरों के साथ भी हुआ, इस संकेत से कोई न कोई संकेत जरूर दिया जा रहा है, और इस कुबड़ वाले व्यक्ति के साथ कोई न कोई घनिष्ठता जरूर है"; इसलिए अपने भाइयों के साथ बाहर जाकर उसने पूछा, "क्या तुमने पाँच पतियों वाली महिला को मेरे लिए सिर से संकेत करते देखा?" "हाँ, हमने देखा।" "क्या तुम इसका अर्थ जानते हो?" "हम नहीं जानते।" "इसका अर्थ ऐसा था: क्या तुम जानते हो कि हाथ या पैर से दिए गए संकेत का क्या अर्थ था?" "हाँ, हम जानते हैं।" "उसी तरह उसने मुझे भी एक संकेत दिया।" क्या तुम उस कुबड़ी को जीभ हिलाकर दिए गए इशारे का मतलब जानते हो? "हम नहीं जानते।" तब उसने उनसे कहा, "उसने उसके साथ भी पाप किया है।" जब उन्होंने उसकी बात पर विश्वास नहीं किया, तो उसने कुबड़ी को बुलवाया और उससे पूछा, और उसने उसे सब कुछ बता दिया। जब उन्होंने उसकी बात सुनी, तो उन सबका उसके प्रति प्रेम टूट गया। "अरे! सच में," उन्होंने कहा, "औरतें बुरी और दुष्ट होती हैं। हम जैसे कुलीन और सौभाग्यशाली पुरुषों को छोड़कर, वह इस घिनौने, नफरत करने लायक, कुबड़ी के साथ चली जाती है।" भला कौन बुद्धिमान ऐसी निर्लज्ज और दुष्ट स्त्री की संगति में आनंद पाएगा? इस प्रकार अनेक बार स्त्री-पुरुषों की निंदा करते हुए पाँचों राजकुमारों ने सोचा, "हम वैवाहिक जीवन से तंग आ चुके हैं," और वे हिमालय में शरण लेने चले गए। कसीना की रस्म पूरी करने के बाद, अंत में उन्हें उनके कर्मों का फल मिला। पक्षी-राजा कुणाल राजकुमार अज्जुन थे, और इसी कारण वे स्वयं द्वारा देखी गई किसी भी बात का वर्णन करते समय "मैंने देखा" शब्दों से शुरू करते थे। पुरानी घटनाओं का वर्णन करते समय भी वे इन्हीं शब्दों का प्रयोग करते थे, और यहाँ पहली

परिचयात्मक कहानी में वर्णित एक घटना का विवरण दिया गया है।लेकिन जब वह दूसरों के साथ होती, तो उसका व्यवहार बिल्कुल वैसा ही होता। वे उससे बहुत प्रसन्न थे, यह सोचकर कि, "वह हमसे स्नेह करती है और इसी कारण शासन करने की शक्ति हमारी होगी।" एक दिन वह बीमार पड़ गई, और उसके चारों ओर इकट्ठा होकर, एक व्यक्ति उसका सिर छू रहा था, और बाकी सभी उसका हाथ या पैर थामे बैठे थे, जबकि कुबड़ा राजकुमार उसके चरणों में बैठा था। अपने सबसे बड़े भाई, राजकुमार अज्जुना, जो उसका सिर छू रहा था, को उसने अपने सिर से एक संकेत दिया, जिसका अर्थ था, "तुम्हारे सिवा मुझे कोई प्रिय नहीं है: जब तक मैं जीवित रहूँगी, तुम्हारे लिए ही जीवित रहूँगी और अपने पिता की मृत्यु के बाद मैं राज्य तुम्हें सौंप दूँगी," और इस प्रकार उसने उसका दिल जीत लिया। दूसरों को भी उसने हाथ या पैर से इसी तरह के संकेत दिए। लेकिन कुबड़ा राजकुमार को उसने अपनी जीभ से एक संकेत दिया, जिसका अर्थ था, "केवल तुम ही मुझे प्रिय हो: तुम्हारे लिए ही मैं जीवित रहूँगी।" उसके द्वारा पहले कही गई बातों के कारण, वे सभी इस संकेत का अर्थ समझ गए थे। लेकिन बाकी सभी ने इस संकेत को पहचान लिया। राजकुमार अजजूना ने जब हाथ, पैर या जीभ की हरकतें देखीं, तो उसने सोचा, "जैसा मेरे साथ हुआ, वैसा ही दूसरों के साथ भी हुआ होगा। इस इशारे से कोई संकेत जरूर दिया जा रहा होगा, और इस कुबड़ वाले आदमी से कोई न कोई घनिष्ठ संबंध जरूर होगा।" इसलिए वह अपने भाइयों के साथ बाहर गया और पूछा, "क्या तुमने पाँच पतियों वाली उस स्त्री को मेरे लिए सिर से इशारा करते देखा?" "हाँ, हमने देखा।" "क्या तुम उसका अर्थ जानते हो?" "हम नहीं जानते।" "उसका अर्थ ऐसा था: क्या तुम जानते हो कि हाथ या पैर से दिए गए उस इशारे का क्या मतलब था?" "हाँ, हम जानते हैं।" "उसी तरह उसने मुझे भी इशारा किया।" क्या तुम उस कुबड़ी को जीभ हिलाकर दिए गए इशारे का मतलब जानते हो? "हम नहीं जानते।" तब उसने उनसे कहा, "उसने उसके साथ भी पाप किया है।" जब उन्होंने उसकी बात पर विश्वास नहीं किया, तो उसने कुबड़ी को बुलवाया और उससे पूछा, और उसने उसे सब कुछ बता दिया। जब उन्होंने उसकी बात सुनी, तो उन सबका उसके प्रति प्रेम टूट गया। "अरे! सच में," उन्होंने कहा, "औरतें बुरी और दुष्ट होती हैं। हम जैसे कुलीन और सौभाग्यशाली पुरुषों को छोड़कर, वह इस घिनौने, नफरत करने लायक, कुबड़ी के साथ चली जाती है।" भला कौन बुद्धिमान ऐसी निर्लज्ज और दुष्ट स्त्री की संगति में आनंद पाएगा? इस प्रकार अनेक बार स्त्री-पुरुषों की निंदा करते हुए पाँचों राजकुमारों ने सोचा, "हम वैवाहिक जीवन से तंग आ चुके हैं," और वे हिमालय में शरण लेने चले गए। कसीना की रस्म पूरी करने के बाद, अंत में उन्हें उनके कर्मों का फल मिला। पक्षी-राजा कुणाल राजकुमार अज्जुन थे, और इसी कारण वे स्वयं द्वारा देखी गई किसी भी बात का वर्णन करते समय "मैंने देखा" शब्दों से शुरू करते थे। पुरानी घटनाओं का वर्णन करते समय भी वे इन्हीं शब्दों का प्रयोग करते थे, और यहाँ पहली परिचयात्मक कहानी में वर्णित एक घटना का विवरण दिया गया है।लेकिन जब वह दूसरों के साथ होती, तो उसका व्यवहार बिल्कुल वैसा ही होता। वे उससे बहुत प्रसन्न थे, यह सोचकर कि, "वह हमसे स्नेह करती है और इसी कारण शासन करने की शक्ति हमारी होगी।" एक दिन वह बीमार पड़ गई, और उसके चारों ओर इकट्ठा होकर, एक व्यक्ति उसका सिर छू रहा था, और बाकी सभी उसका हाथ या पैर थामे बैठे थे, जबकि कुबड़ा राजकुमार उसके चरणों में बैठा था। अपने सबसे बड़े भाई, राजकुमार अज्जुना, जो उसका सिर छू रहा था, को उसने अपने सिर से एक संकेत दिया, जिसका अर्थ था, "तुम्हारे सिवा मुझे कोई प्रिय नहीं है: जब तक मैं जीवित रहूँगी, तुम्हारे लिए ही जीवित रहूँगी और अपने पिता की मृत्यु के बाद मैं राज्य तुम्हें सौंप दूँगी," और इस प्रकार उसने उसका दिल जीत लिया। दूसरों को भी उसने हाथ या पैर से इसी तरह के संकेत दिए। लेकिन कुबड़ा राजकुमार को उसने अपनी जीभ से एक संकेत दिया, जिसका अर्थ था, "केवल तुम ही मुझे प्रिय हो: तुम्हारे लिए ही मैं जीवित रहूँगी।" उसके द्वारा पहले कही गई बातों के कारण, वे सभी इस संकेत का अर्थ समझ गए थे। लेकिन बाकी सभी ने इस संकेत को पहचान लिया। राजकुमार अजजूना ने जब हाथ, पैर या जीभ की हरकतें देखीं, तो उसने सोचा, "जैसा मेरे साथ हुआ, वैसा ही दूसरों के साथ भी हुआ होगा। इस इशारे से कोई संकेत जरूर दिया जा रहा होगा, और इस कुबड़ वाले आदमी से कोई न कोई घनिष्ठ संबंध जरूर होगा।" इसलिए वह अपने भाइयों के साथ बाहर गया और पूछा, "क्या तुमने पाँच पतियों वाली उस स्त्री को मेरे लिए सिर से इशारा करते देखा?" "हाँ, हमने देखा।" "क्या तुम उसका अर्थ जानते हो?" "हम नहीं जानते।" "उसका अर्थ ऐसा था: क्या तुम जानते हो कि हाथ या पैर से दिए गए उस इशारे का क्या मतलब था?" "हाँ, हम जानते हैं।" "उसी तरह उसने मुझे भी इशारा किया।" क्या तुम उस कुबड़ी को जीभ हिलाकर दिए गए इशारे का मतलब जानते हो? "हम नहीं जानते।" तब उसने उनसे कहा, "उसने उसके साथ भी पाप किया है।" जब उन्होंने उसकी बात पर विश्वास नहीं किया, तो उसने कुबड़ी को बुलवाया और उससे पूछा, और उसने उसे सब कुछ बता दिया। जब उन्होंने उसकी बात सुनी, तो उन सबका उसके प्रति प्रेम टूट गया। "अरे! सच में," उन्होंने कहा, "औरतें बुरी और दुष्ट होती हैं। हम जैसे कुलीन और सौभाग्यशाली पुरुषों को छोड़कर, वह इस घिनौने, नफरत करने लायक, कुबड़ी के साथ चली जाती है।" भला कौन बुद्धिमान ऐसी निर्लज्ज और दुष्ट स्त्री की संगति में आनंद पाएगा? इस प्रकार अनेक बार स्त्री-पुरुषों की निंदा करते हुए पाँचों राजकुमारों ने सोचा, "हम वैवाहिक जीवन से तंग आ चुके हैं," और वे हिमालय में शरण लेने चले गए। कसीना की रस्म पूरी करने के बाद, अंत में उन्हें उनके कर्मों का फल मिला। पक्षी-राजा कुणाल राजकुमार अज्जुन थे, और इसी कारण वे स्वयं द्वारा देखी गई किसी भी बात का वर्णन करते समय "मैंने देखा" शब्दों से शुरू करते थे। पुरानी घटनाओं का वर्णन करते समय भी वे इन्हीं शब्दों का प्रयोग करते थे, और यहाँ पहली परिचयात्मक कहानी में वर्णित एक घटना का विवरण दिया गया है।यह सोचते हुए कि, "वह हमसे स्नेह करती है और इसी कारण शासन करने की शक्ति हमारी होगी।" एक दिन वह बीमार पड़ गई, और सब उसके चारों ओर इकट्ठा हो गए। एक व्यक्ति उसका सिर छू रहा था, और बाकी सब उसका हाथ या पैर थामे बैठे थे, जबकि कुबड़ा राजकुमार उसके चरणों में बैठा था। अपने सबसे बड़े भाई, राजकुमार अज्जुना, जो उसका सिर छू रहा था, को उसने अपने सिर से इशारा किया, जिसका अर्थ था, "तुम्हारे सिवा मुझे कोई प्रिय नहीं: जब तक मैं जीवित रहूँगी, तुम्हारे लिए ही जीवित रहूँगी और अपने पिता की मृत्यु के बाद मैं राज्य तुम्हें सौंप दूँगी।" इस प्रकार उसने

अज्जुना का दिल जीत लिया। बाकी सभी को भी उसने हाथ या पैर से इसी तरह का इशारा किया। लेकिन कुबड़ा राजकुमार को उसने अपनी जीभ से इशारा किया, जिसका अर्थ था, "केवल तुम ही मुझे प्रिय हो: तुम्हारे लिए ही मैं जीवित रहूँगी।" उसके पहले कहे गए शब्दों के कारण, वे सभी इस इशारे का अर्थ समझ गए थे। लेकिन जबकि बाकी सभी ने अपने लिए दिए गए संकेत को पहचान लिया, राजकुमार अजजूना ने जब हाथ, पैर या जीभ की हरकतें देखीं, तो सोचा, "जैसा मेरे साथ हुआ, वैसा ही दूसरों के साथ भी हुआ, इस संकेत से कोई न कोई इशारा जरूर दिया जा रहा है, और इस कुबड़ वाले से कोई न कोई घनिष्ठ संबंध जरूर है"; इसलिए वह अपने भाइयों के साथ बाहर गया और पूछा, "क्या तुमने पाँच पतियों वाली स्त्री को मेरे लिए सिर हिलाकर संकेत करते देखा?" "हाँ, हमने देखा।" "क्या तुम इसका अर्थ जानते हो?" "हम नहीं जानते।" "इसका अर्थ ऐसा था: क्या तुम जानते हो कि हाथ या पैर से दिए गए संकेत का क्या अर्थ था?" "हाँ, हम जानते हैं।" "उसने मुझे भी उसी तरह संकेत दिया। क्या तुम जानते हो कि उसने कुबड़ वाले को जीभ हिलाकर जो संकेत दिया, उसका क्या अर्थ था?" "हम नहीं जानते।" तब उसने उनसे कहा, "उसने उसके साथ भी पाप किया है।" और जब उन्होंने उसकी बात पर विश्वास नहीं किया, तो उसने कुबड़ वाले को बुलवाया और उससे पूछा, और उसने उसे सब कुछ बता दिया। जब उन्होंने उसकी बातें सुनीं, तो उन सभी का उसके प्रति प्रेम टूट गया। "अरे! सच में," उन्होंने कहा, "स्त्री जाति दुष्ट और दुष्ट है। हम जैसे कुलीन और सौभाग्यशाली पुरुषों को छोड़कर, वह इस घिनौने, घृणित और कुबड़ा पुरुष के साथ क्यों चली जाती है? भला कौन समझदार स्त्री ऐसी निर्लज्ज और दुष्ट स्त्री की संगति में आनंद पाएगा?" इस प्रकार अनेक प्रकार से स्त्रियों की निंदा करते हुए पाँचों राजकुमारों ने सोचा, "हमारा वैवाहिक जीवन भोग-विलास से भर गया है," और वे हिमालय में शरण लेने चले गए। कसीना की रस्म पूरी करने के बाद, अंत में उन्हें उनके कर्मों का फल मिला। पक्षी-राजा कुणाल राजकुमार अज्जुन थे, और इसी कारण वे अपने द्वारा देखी गई किसी भी बात का वर्णन करते समय "मैंने देखा" शब्दों से शुरू करते थे। पुरानी घटनाओं का वर्णन करते समय भी वे इन्हीं शब्दों का प्रयोग करते थे, और यहाँ पहली परिचयात्मक कहानी में वर्णित एक घटना का वर्णन दिया गया है।यह सोचते हुए कि, "वह हमसे स्नेह करती है और इसी कारण शासन करने की शक्ति हमारी होगी।" एक दिन वह बीमार पड़ गई, और सब उसके चारों ओर इकट्ठा हो गए। एक व्यक्ति उसका सिर छू रहा था, और बाकी सब उसका हाथ या पैर थामे बैठे थे, जबकि कुबड़ा राजकुमार उसके चरणों में बैठा था। अपने सबसे बड़े भाई, राजकुमार अज्जुना, जो उसका सिर छू रहा था, को उसने अपने सिर से इशारा किया, जिसका अर्थ था, "तुम्हारे सिवा मुझे कोई प्रिय नहीं: जब तक मैं जीवित रहूँगी, तुम्हारे लिए ही जीवित रहूँगी और अपने पिता की मृत्यु के बाद मैं राज्य तुम्हें सौंप दूँगी।" इस प्रकार उसने अज्जुना का दिल जीत लिया। बाकी सभी को भी उसने हाथ या पैर से इसी तरह का इशारा किया। लेकिन कुबड़ा राजकुमार को उसने अपनी जीभ से इशारा किया, जिसका अर्थ था, "केवल तुम ही मुझे प्रिय हो: तुम्हारे लिए ही मैं जीवित रहूँगी।" उसके पहले कहे गए शब्दों के कारण, वे सभी इस इशारे का अर्थ समझ गए थे। लेकिन जबकि बाकी सभी ने अपने लिए दिए गए संकेत को पहचान लिया, राजकुमार अजजूना ने जब हाथ, पैर या जीभ की हरकतें देखीं, तो सोचा, "जैसा मेरे साथ हुआ, वैसा ही दूसरों के साथ भी हुआ, इस संकेत से कोई न कोई इशारा जरूर दिया जा रहा है, और इस कुबड़ वाले से कोई न कोई घनिष्ठ संबंध जरूर है"; इसलिए वह अपने भाइयों के साथ बाहर गया और पूछा, "क्या तुमने पाँच पतियों वाली स्त्री को मेरे लिए सिर हिलाकर संकेत करते देखा?" "हाँ, हमने देखा।" "क्या तुम इसका अर्थ जानते हो?" "हम नहीं जानते।" "इसका अर्थ ऐसा था: क्या तुम जानते हो कि हाथ या पैर से दिए गए संकेत का क्या अर्थ था?" "हाँ, हम जानते हैं।" "उसने मुझे भी उसी तरह संकेत दिया। क्या तुम जानते हो कि उसने कुबड़ वाले को जीभ हिलाकर जो संकेत दिया, उसका क्या अर्थ था?" "हम नहीं जानते।" तब उसने उनसे कहा, "उसने उसके साथ भी पाप किया है।" और जब उन्होंने उसकी बात पर विश्वास नहीं किया, तो उसने कुबड़ वाले को बुलवाया और उससे पूछा, और उसने उसे सब कुछ बता दिया। जब उन्होंने उसकी बातें सुनीं, तो उन सभी का उसके प्रति प्रेम टूट गया। "अरे! सच में," उन्होंने कहा, "स्त्री जाति दुष्ट और दुष्ट है। हम जैसे कुलीन और सौभाग्यशाली पुरुषों को छोड़कर, वह इस घिनौने, घृणित और कुबड़ा पुरुष के साथ क्यों चली जाती है? भला कौन समझदार स्त्री ऐसी निर्लज्ज और दुष्ट स्त्री की संगति में आनंद पाएगा?" इस प्रकार अनेक प्रकार से स्त्रियों की निंदा करते हुए पाँचों राजकुमारों ने सोचा, "हमारा वैवाहिक जीवन भोग-विलास से भर गया है," और वे हिमालय में शरण लेने चले गए। कसीना की रस्म पूरी करने के बाद, अंत में उन्हें उनके कर्मों का फल मिला। पक्षी-राजा कुणाल राजकुमार अज्जुन थे, और इसी कारण वे अपने द्वारा देखी गई किसी भी बात का वर्णन करते समय "मैंने देखा" शब्दों से शुरू करते थे। पुरानी घटनाओं का वर्णन करते समय भी वे इन्हीं शब्दों का प्रयोग करते थे, और यहाँ पहली परिचयात्मक कहानी में वर्णित एक घटना का वर्णन दिया गया है।कुबड़ा राजकुमार उसके चरणों में बैठा था। उसके सिर को छू रहे सबसे बड़े भाई, राजकुमार अज्जुना को उसने सिर से इशारा किया, जिसका अर्थ था, "तुम्हारे सिवा मुझे कोई प्रिय नहीं: जब तक मैं जीवित रहूँगी, तुम्हारे लिए ही जीवित रहूँगी और अपने पिता की मृत्यु के बाद मैं तुम्हें ही राज्य सौंप दूँगी।" इस प्रकार उसने अज्जुना का दिल जीत लिया। उसने हाथ या पैर से भी इसी तरह के इशारे किए। लेकिन कुबड़ा राजकुमार को उसने जीभ से इशारा किया, जिसका अर्थ था, "तुम ही मुझे प्रिय हो: तुम्हारे लिए ही मैं जीवित रहूँगी।" उसके पहले कहे गए शब्दों के कारण, सभी इस इशारे का अर्थ समझ गए थे। लेकिन जबकि बाकी सभी ने अपने लिए किए गए इशारे को पहचान लिया, राजकुमार अज्जुना ने जब हाथ, पैर या जीभ की हरकतें देखीं, तो सोचा, "मेरे मामले की तरह, दूसरों के मामले की तरह, इस इशारे से कोई संकेत अवश्य दिया गया है, और इस कुबड़े राजकुमार के साथ कोई घनिष्ठ संबंध अवश्य है।" तो अपने भाइयों के साथ बाहर जाकर उसने पूछा, "क्या तुमने पाँच पतियों वाली उस स्त्री को मुझे सिर हिलाकर इशारा करते देखा?" "हाँ, हमने देखा।" "क्या तुम उसका अर्थ जानते हो?" "हम नहीं जानते।" "उसका अर्थ ऐसा था: क्या तुम जानते हो कि हाथ या पैर से किए गए उस इशारे का क्या अर्थ था?" "हाँ, हम जानते हैं।" "उसने मुझे भी उसी तरह इशारा किया। क्या तुम जानते हो कि उसने कुबड़ा को जीभ हिलाकर जो इशारा किया उसका क्या अर्थ था?" "हम नहीं

जानते।" तब उसने उनसे कहा, "उसने उसके साथ भी पाप किया है।" और जब उन्होंने उसकी बात पर विश्वास नहीं किया, तो उसने कुबड़ा को बुलवाया और उससे पूछा, और उसने उसे सब कुछ बता दिया। जब उन्होंने उसकी बात सुनी, तो उन सभी का उसके प्रति प्रेम टूट गया। "अरे! ज़रूर," उन्होंने कहा, "स्त्री जाति दुष्ट और दुष्ट है। हम जैसे कुलीन और सौभाग्यशाली पुरुषों को छोड़कर, वह इस घिनौने, घृणित, कुबड़ा पुरुष के साथ क्यों चली जाती है? भला कौन समझदार स्त्री ऐसी निर्लज्ज और दुष्ट स्त्री की संगति में आनंद पाएगा?" इस प्रकार अनेक प्रकार से स्त्रियों की निंदा करते हुए पाँचों राजकुमारों ने सोचा, "विवाह जीवन से हमारा मन भर गया है," और वे हिमालय में शरण लेने चले गए। कसीना की रस्म पूरी करने के बाद, अंत में उन्हें उनके कर्मों का फल मिला। पक्षी-राजा कुणाल राजकुमार अज्जुन थे, और इसी कारण वे अपने द्वारा देखी गई किसी भी बात का वर्णन करते समय "मैंने देखा" शब्दों से शुरू करते थे। पुरानी घटनाओं का वर्णन करते समय भी वे इन्हीं शब्दों का प्रयोग करते थे, और यहाँ पहली परिचयात्मक कहानी में वर्णित एक घटना का वर्णन दिया गया है।कुबड़ा राजकुमार उसके चरणों में बैठा था। उसके सिर को छू रहे सबसे बड़े भाई, राजकुमार अज्जुना को उसने सिर से इशारा किया, जिसका अर्थ था, "तुम्हारे सिवा मुझे कोई प्रिय नहीं: जब तक मैं जीवित रहूँगी, तुम्हारे लिए ही जीवित रहूँगी और अपने पिता की मृत्यु के बाद मैं तुम्हें ही राज्य सौंप दूँगी।" इस प्रकार उसने अज्जुना का दिल जीत लिया। उसने हाथ या पैर से भी इसी तरह के इशारे किए। लेकिन कुबड़ा राजकुमार को उसने जीभ से इशारा किया, जिसका अर्थ था, "तुम ही मुझे प्रिय हो: तुम्हारे लिए ही मैं जीवित रहूँगी।" उसके पहले कहे गए शब्दों के कारण, सभी इस इशारे का अर्थ समझ गए थे। लेकिन जबकि बाकी सभी ने अपने लिए किए गए इशारे को पहचान लिया, राजकुमार अज्जुना ने जब हाथ, पैर या जीभ की हरकतें देखीं, तो सोचा, "मेरे मामले की तरह, दूसरों के मामले की तरह, इस इशारे से कोई संकेत अवश्य दिया गया है, और इस कुबड़े राजकुमार के साथ कोई घनिष्ठ संबंध अवश्य है।" तो अपने भाइयों के साथ बाहर जाकर उसने पूछा, "क्या तुमने पाँच पतियों वाली उस स्त्री को मुझे सिर हिलाकर इशारा करते देखा?" "हाँ, हमने देखा।" "क्या तुम उसका अर्थ जानते हो?" "हम नहीं जानते।" "उसका अर्थ ऐसा था: क्या तुम जानते हो कि हाथ या पैर से किए गए उस इशारे का क्या अर्थ था?" "हाँ, हम जानते हैं।" "उसने मुझे भी उसी तरह इशारा किया। क्या तुम जानते हो कि उसने कुबड़ा को जीभ हिलाकर जो इशारा किया उसका क्या अर्थ था?" "हम नहीं जानते।" तब उसने उनसे कहा, "उसने उसके साथ भी पाप किया है।" और जब उन्होंने उसकी बात पर विश्वास नहीं किया, तो उसने कुबड़ा को बुलवाया और उससे पूछा, और उसने उसे सब कुछ बता दिया। जब उन्होंने उसकी बात सुनी, तो उन सभी का उसके प्रति प्रेम टूट गया। "अरे! ज़रूर," उन्होंने कहा, "स्त्री जाति दुष्ट और दुष्ट है। हम जैसे कुलीन और सौभाग्यशाली पुरुषों को छोड़कर, वह इस घिनौने, घृणित, कुबड़ा पुरुष के साथ क्यों चली जाती है? भला कौन समझदार स्त्री ऐसी निर्लज्ज और दुष्ट स्त्री की संगति में आनंद पाएगा?" इस प्रकार अनेक प्रकार से स्त्रियों की निंदा करते हुए पाँचों राजकुमारों ने सोचा, "विवाह जीवन से हमारा मन भर गया है," और वे हिमालय में शरण लेने चले गए। कसीना की रस्म पूरी करने के बाद, अंत में उन्हें उनके कर्मों का फल मिला। पक्षी-राजा कुणाल राजकुमार अज्जुन थे, और इसी कारण वे अपने द्वारा देखी गई किसी भी बात का वर्णन करते समय "मैंने देखा" शब्दों से शुरू करते थे। पुरानी घटनाओं का वर्णन करते समय भी वे इन्हीं शब्दों का प्रयोग करते थे, और यहाँ पहली परिचयात्मक कहानी में वर्णित एक घटना का वर्णन दिया गया है।लेकिन कुबड़ा को उसने अपनी जीभ से इशारा किया, जिसका अर्थ था, "तुम ही मुझे प्रिय हो: तुम्हारे लिए ही मैं जीवित रहूंगी।" उसके पहले कहे गए शब्दों के कारण, वे सभी इस इशारे का अर्थ समझ गए थे। लेकिन जहाँ बाकी सभी ने अपने लिए किए गए इशारे को पहचान लिया, वहीं राजकुमार अजजूना ने जब हाथ, पैर या जीभ की हरकत देखी, तो सोचा, "जैसा मेरे साथ हुआ, वैसा ही दूसरों के साथ भी हुआ, इस इशारे से कोई संकेत जरूर दिया जा रहा है, और इस कुबड़ा से कोई घनिष्ठ संबंध जरूर है।" इसलिए वह अपने भाइयों के साथ बाहर गया और पूछा, "क्या तुमने पाँच पतियों वाली स्त्री को मेरे लिए सिर से इशारा करते देखा?" "हाँ, हमने देखा।" "क्या तुम इसका अर्थ जानते हो?" "हम नहीं जानते।" "इसका अर्थ ऐसा था: क्या तुम जानते हो कि हाथ या पैर से किए गए इशारे का क्या अर्थ था?" "हाँ, हम जानते हैं।" "उसी तरह उसने मुझे भी इशारा किया। क्या तुम जानते हो कि उसने कुबड़ा को जीभ से जो इशारा किया, उसका क्या अर्थ था?" "हमें नहीं पता।" तब उसने उनसे कहा, "उसने उसके साथ भी पाप किया है।" जब उन्होंने उसकी बात पर विश्वास नहीं किया, तो उसने कुबड़ा राजकुमार को बुलवाया और उससे पूछा, और उसने उसे सब कुछ बता दिया। जब उन्होंने उसकी बात सुनी, तो उन सभी का उसके प्रति प्रेम टूट गया। "अरे! सच में," उन्होंने कहा, "स्त्री जाति दुष्ट और दुष्ट है। हम जैसे कुलीन और सौभाग्यशाली पुरुषों को छोड़कर, वह इस घिनौने, घृणित, कुबड़ा राजकुमार के साथ चली गई। भला कौन समझदार स्त्री ऐसी निर्लज्ज और दुष्ट स्त्री की संगति में आनंद पाएगा?" इस प्रकार अनेक प्रकार से स्त्रियों की निंदा करते हुए पाँचों राजकुमारों ने सोचा, "हमने वैवाहिक जीवन से तंग आ चुके हैं," और वे हिमालय में शरण लेने चले गए, और कसीना संस्कार से गुजरने के बाद, अंत में उन्हें उनके कर्मों का फल मिला। पक्षी-राजा कुणाल राजकुमार अज्जुन था, और इसी कारण वह अपने द्वारा देखी गई किसी भी बात का वर्णन करते समय "मैंने देखा" शब्दों से शुरू करता था। पुराने समय में देखी गई अन्य चीजों का वर्णन करते समय उन्होंने उन्हीं शब्दों का प्रयोग किया, और यहाँ पहली परिचयात्मक कहानी में दी गई एक घटना की व्याख्या दी गई है।लेकिन कुबड़ा को उसने अपनी जीभ से इशारा किया, जिसका अर्थ था, "तुम ही मुझे प्रिय हो: तुम्हारे लिए ही मैं जीवित रहूंगी।" उसके पहले कहे गए शब्दों के कारण, वे सभी इस इशारे का अर्थ समझ गए थे। लेकिन जहाँ बाकी सभी ने अपने लिए किए गए इशारे को पहचान लिया, वहीं राजकुमार अजजूना ने जब हाथ, पैर या जीभ की हरकत देखी, तो सोचा, "जैसा मेरे साथ हुआ, वैसा ही दूसरों के साथ भी हुआ, इस इशारे से कोई संकेत जरूर दिया जा रहा है, और इस कुबड़ा से कोई घनिष्ठ संबंध जरूर है।" इसलिए वह अपने भाइयों के साथ बाहर गया और पूछा, "क्या तुमने पाँच पतियों वाली स्त्री को मेरे लिए सिर से इशारा करते देखा?" "हाँ, हमने देखा।" "क्या तुम इसका अर्थ जानते हो?" "हम नहीं जानते।" "इसका अर्थ ऐसा था: क्या तुम जानते हो कि हाथ या पैर से किए गए इशारे

का क्या अर्थ था?" "हाँ, हम जानते हैं।" "उसी तरह उसने मुझे भी इशारा किया। क्या तुम जानते हो कि उसने कुबड़ा को जीभ से जो इशारा किया, उसका क्या अर्थ था?" "हमें नहीं पता।" तब उसने उनसे कहा, "उसने उसके साथ भी पाप किया है।" जब उन्होंने उसकी बात पर विश्वास नहीं किया, तो उसने कुबड़ा राजकुमार को बुलवाया और उससे पूछा, और उसने उसे सब कुछ बता दिया। जब उन्होंने उसकी बात सुनी, तो उन सभी का उसके प्रति प्रेम टूट गया। "अरे! सच में," उन्होंने कहा, "स्त्री जाति दुष्ट और दुष्ट है। हम जैसे कुलीन और सौभाग्यशाली पुरुषों को छोड़कर, वह इस घिनौने, घृणित, कुबड़ा राजकुमार के साथ चली गई। भला कौन समझदार स्त्री ऐसी निर्लज्ज और दुष्ट स्त्री की संगति में आनंद पाएगा?" इस प्रकार अनेक प्रकार से स्त्रियों की निंदा करते हुए पाँचों राजकुमारों ने सोचा, "हमने वैवाहिक जीवन से तंग आ चुके हैं," और वे हिमालय में शरण लेने चले गए, और कसीना संस्कार से गुजरने के बाद, अंत में उन्हें उनके कर्मों का फल मिला। पक्षी-राजा कुणाल राजकुमार अज्जुन था, और इसी कारण वह अपने द्वारा देखी गई किसी भी बात का वर्णन करते समय "मैंने देखा" शब्दों से शुरू करता था। पुराने समय में देखी गई अन्य चीजों का वर्णन करते समय उन्होंने उन्हीं शब्दों का प्रयोग किया, और यहाँ पहली परिचयात्मक कहानी में दी गई एक घटना की व्याख्या दी गई है।"उसी तरह उसने मुझे भी एक संकेत दिया। क्या तुम जानते हो कि उसने अपनी जीभ हिलाकर कुबड़ा को क्या संकेत दिया था?" "हम नहीं जानते।" तब उसने उनसे कहा, "उसने उसके साथ भी पाप किया है।" और जब उन्होंने उसकी बात पर विश्वास नहीं किया, तो उसने कुबड़ा को बुलवाया और उससे पूछा, और उसने उसे सब कुछ बता दिया। जब उन्होंने उसकी बात सुनी, तो उन सभी का उसके प्रति प्रेम टूट गया। "अरे! सच में," उन्होंने कहा, "औरतें बुरी और दुष्ट होती हैं। हम जैसे कुलीन और सौभाग्यशाली पुरुषों को छोड़कर, वह इस घिनौने, नफरत करने लायक, कुबड़ा आदमी के साथ चली जाती है।" भला कौन बुद्धिमान ऐसी निर्लज्ज और दुष्ट स्त्री की संगति में आनंद पाएगा? इस प्रकार अनेक बार स्त्री-पुरुषों की निंदा करते हुए पाँचों राजकुमारों ने सोचा, "हम वैवाहिक जीवन से तंग आ चुके हैं," और वे हिमालय में शरण लेने चले गए। कसीना की रस्म पूरी करने के बाद, अंत में उन्हें उनके कर्मों का फल मिला। पक्षी-राजा कुणाल राजकुमार अज्जुन थे, और इसी कारण वे स्वयं द्वारा देखी गई किसी भी बात का वर्णन करते समय "मैंने देखा" शब्दों से शुरू करते थे। पुरानी घटनाओं का वर्णन करते समय भी वे इन्हीं शब्दों का प्रयोग करते थे, और यहाँ पहली परिचयात्मक कहानी में वर्णित एक घटना का विवरण दिया गया है।"उसी तरह उसने मुझे भी एक संकेत दिया। क्या तुम जानते हो कि उसने अपनी जीभ हिलाकर कुबड़ा को क्या संकेत दिया था?" "हम नहीं जानते।" तब उसने उनसे कहा, "उसने उसके साथ भी पाप किया है।" और जब उन्होंने उसकी बात पर विश्वास नहीं किया, तो उसने कुबड़ा को बुलवाया और उससे पूछा, और उसने उसे सब कुछ बता दिया। जब उन्होंने उसकी बात सुनी, तो उन सभी का उसके प्रति प्रेम टूट गया। "अरे! सच में," उन्होंने कहा, "औरतें बुरी और दुष्ट होती हैं। हम जैसे कुलीन और सौभाग्यशाली पुरुषों को छोड़कर, वह इस घिनौने, नफरत करने लायक, कुबड़ा आदमी के साथ चली जाती है।" भला कौन बुद्धिमान ऐसी निर्लज्ज और दुष्ट स्त्री की संगति में आनंद पाएगा? इस प्रकार अनेक बार स्त्री-पुरुषों की निंदा करते हुए पाँचों राजकुमारों ने सोचा, "हम वैवाहिक जीवन से तंग आ चुके हैं," और वे हिमालय में शरण लेने चले गए। कसीना की रस्म पूरी करने के बाद, अंत में उन्हें उनके कर्मों का फल मिला। पक्षी-राजा कुणाल राजकुमार अज्जुन थे, और इसी कारण वे स्वयं द्वारा देखी गई किसी भी बात का वर्णन करते समय "मैंने देखा" शब्दों से शुरू करते थे। पुरानी घटनाओं का वर्णन करते समय भी वे इन्हीं शब्दों का प्रयोग करते थे, और यहाँ पहली परिचयात्मक कहानी में वर्णित एक घटना का विवरण दिया गया है।

कहते हैं, एक समय की बात है, सच्चतपवी नाम की एक श्वेत (*31) नन ने बनारस के पास एक कब्रिस्तान में पत्तों की एक कुटिया बनवाई थी। वहाँ रहते हुए वह पाँच में से चार समय का भोजन त्याग देती थी और पूरे शहर में उसकी प्रसिद्धि चाँद या सूर्य की तरह फैल गई थी। बनारस के निवासी, यदि छींकते या लड़खड़ाते तो कहते, "सच्चतपवी की जय हो।" अब एक त्योहार के पहले दिन, कुछ सुनारों ने एक जगह पर तंबू लगाया जहाँ भीड़ जमा थी। वे मछली, मांस, शराब, इत्र, मालाएँ आदि लेकर शराब पीने लगे। तभी एक सुनार, जो शराब का आदी था, उल्टी करते हुए बोला, "सच्चतपवी की जय हो।" उनमें से एक बुद्धिमान व्यक्ति ने कहा, "अरे! अंधे मूर्ख, तुम एक कमजोर दिमाग वाली स्त्री का सम्मान कर रहे हो—अरे! तुम मूर्ख हो।" तो उसने उत्तर दिया, "मित्र, ऐसा मत बोलो, और न ही ऐसा कर्म करो जो नरक की ओर ले जाए।" तब उस ज्ञानी पुरुष ने कहा, "अरे मूर्ख, चुप रहो। मुझसे एक हजार सिक्कों की शर्त लगाओ और आज से सातवें दिन, ठीक इसी स्थान पर, मैं तुम्हारे हाथों में सच्चतपवी को सुंदर वस्त्रों में सजे-धजे और शराब के नशे में चूर करके सौंप दूँगा और मैं भी उसके साथ शराब पीऊँगा: क्योंकि स्त्रियाँ इतनी चंचल होती हैं।" उसने कहा, "तुम ऐसा नहीं कर पाओगे," और एक हजार सिक्कों की शर्त ले ली। उसने यह बात दूसरे सुनारों को बताई, और अगली सुबह, तपस्वी का वेश धारण करके, वह ज्ञानी पुरुष श्मशान में गया, और उसके निवास स्थान से कुछ ही दूरी पर सूर्य की आराधना कर रही थी। भिक्षा मांगने जाते समय उसने उसे देखा और सोचा, "यह अवश्य ही कोई चमत्कारिक शक्तियों वाला तपस्वी होगा। मैं श्मशान के एक तरफ रहती हूँ, लेकिन वह बीच में: उसका हृदय पवित्र शांति से भरा होगा। मैं उसे प्रणाम करूँगी।" इसलिए वह उसके पास गई और उसे प्रणाम किया, लेकिन उसने न तो उसकी ओर देखा और न ही कुछ बोला। अगले दिन भी उन्होंने वैसा ही व्यवहार किया। लेकिन तीसरे दिन जब उसने उन्हें प्रणाम किया, तो उन्होंने नज़रें नीचे करके कहा, "चली जाओ।" चौथे दिन उन्होंने उससे नरमी से बात की और कहा, "भीख मांगते-मांगते थक नहीं गई हो?" उसने सोचा, "मुझे तो अच्छा अभिवादन मिला है," और प्रसन्न होकर चली गई। पाँचवें दिन उसे और भी नरम अभिवादन मिला और कुछ देर बैठने के बाद उसने उन्हें प्रणाम किया और अपने रास्ते चली गई। लेकिन छठे दिन वह आई और जब वे वहाँ बैठे थे, तो उसने उन्हें प्रणाम किया। उन्होंने कहा, "बहन, आज बनारस में ये इतना शोर-शराबा किस बात का है?" उसने उत्तर दिया, "हे प्रभु, क्या

आप नहीं जानते कि शहर में कोई उत्सव मनाया जा रहा है और ये वहाँ मौज-मस्ती करने वालों की आवाज़ है?" अनजान होने का नाटक करते हुए उन्होंने कहा, "हाँ, मुझे तो यही शोर सुनाई दे रहा है।" फिर उन्होंने पूछा, "बहन, तुम कितने भोजन नहीं करती हो?" "चार, प्रभु, और आप कितने भोजन नहीं करते?" "सात, बहन," लेकिन यह बात उसने झूठ बोली, क्योंकि वह दिन-रात खाता रहता था। फिर उसने पूछा,"आपको धार्मिक व्रत लिए कितने वर्ष हो गए?" जब उसने कहा, "बारह, और आपको संन्यास लिए कितने वर्ष हो गए?" तो उसने उत्तर दिया, "यह छठा वर्ष है।" फिर उसने पूछा, "बहन, क्या आपको पवित्र शांति प्राप्त हो गई है?" "नहीं, महोदय। क्या आपको हो गई है?" "हमें भी नहीं," उसने कहा। "बहन, हमें न तो इंद्रिय सुख का आनंद मिलता है, न ही त्याग का सुख। नरक की गर्मी से हमें क्या लेना-देना? आइए हम भाग्य के मार्ग पर चलें: मैं गृहस्थ बनूंगा, और चूंकि मेरे पास मेरी माता का खजाना है, इसलिए मुझे कोई हानि नहीं होगी।" उसकी बात सुनकर, अस्थिरता की चाहत में, उसके मन में उसके लिए प्रेम जागृत हुआ और उसने कहा, "मुझे भी, महोदय, आध्यात्मिक असंतोष है: यदि आप मुझे अस्वीकार नहीं करते हैं, तो मैं भी आपके साथ गृहस्थी बसाऊंगी।" तब उसने उससे कहा, "मैं तुम्हें अस्वीकार नहीं करूंगा: तुम मेरी पत्नी बनोगी।" फिर वह उसे नगर ले आया और उसके साथ सहवास करने लगा। और उसके साथ शराबखाने में जाकर उसने खुद भी खूब शराब पी और उसे नशे में धुत अपने दोस्तों के हवाले कर दिया। इस तरह उस दूसरे व्यक्ति ने हज़ार सिक्कों की शर्त हार दी, और सुनार से उसे कई पुत्र और पुत्रियाँ प्राप्त हुईं। उस समय कुनाला सुनार था (*32) और कहानी सुनाते हुए उसने "मैंने देखा" शब्दों से शुरुआत की।

दूसरी कथा अतीत की एक कहानी है, जिसका विस्तृत वर्णन काकाती (*33) जन्म कथा के चौथे खंड में मिलता है। उस समय कुणाल गरुड़ थे, और यही कारण है कि उन्होंने अपने द्वारा देखे गए दृश्य का वर्णन करते हुए "मैंने देखा" शब्दों से शुरुआत की। तीसरी कथा में, एक समय ब्रह्मदत्त ने कोसल के राजा को मारकर उसके राज्य पर कब्जा कर लिया। उसकी गर्भवती रानी को अपने साथ ले जाकर वह बनारस लौट आया, और यद्यपि वह उसकी स्थिति जानता था, फिर भी उसने उसे अपनी रानी बना लिया। जब उसका प्रसव हुआ, तो उसने सोने की मूर्ति के समान एक पुत्र को जन्म दिया। रानी ने सोचा, "जब वह बड़ा होगा, तो बनारस का राजा कहेगा, 'वह मेरे शत्रु का पुत्र है: वह मेरे लिए क्या है?' और उसे मार डालेगा। नहीं, मेरे पुत्र को शत्रु के हाथों मरने न दो।" इसलिए उसने उसकी दाई से कहा, "हे प्रिय, इस बच्चे को मोटे कपड़े से ढक दो और जाकर उसे श्मशान भूमि में रख दो।" दाई ने ऐसा ही किया और स्नान करने के बाद घर लौट गई। कोसल के राजा भी मृत्यु के बाद उस बालक के संरक्षक देवदूत के रूप में पुनर्जन्म लेकर आए। उनकी दिव्य शक्ति से उस स्थान पर अपनी बकरियों की देखभाल कर रहे एक चरवाहे की बकरी ने उस बच्चे को देखकर उससे स्नेह कर लिया और उसे दूध पिलाने के बाद थोड़ी देर के लिए इधर-उधर भटकती रही, फिर दो-तीन या चार बार वापस आकर उसे दूध पिलाया। चरवाहे ने बकरी को ऐसा करते देखा तो वह उस स्थान पर आया और बच्चे को देखकर उससे स्नेह कर बैठा और उसे अपनी पत्नी के पास ले आया। उसकी पत्नी निःसंतान थी और इसलिए उसके पास बच्चे को पिलाने के लिए दूध नहीं था। इसलिए बकरी उसे दूध पिलाती रही। उस दिन से प्रतिदिन दो-तीन बकरियां मरने लगीं। चरवाहे ने सोचा, "अगर हम इसी तरह इस बच्चे की देखभाल करते रहे तो हमारी सारी बकरियां मर जाएंगी। यह हमारे लिए क्या है?" फिर उसने उसे एक मिट्टी के बर्तन में लिटाया, उसे दूसरे बर्तन से ढक दिया, और उसके पूरे चेहरे पर, बिना कोई जगह छोड़े, सेम के आटे से लेप कर उसे नदी में फेंक दिया। बच्चा नदी के बहाव के साथ बहता चला गया और राजा के महल के पास नदी के निचले किनारे पर एक निम्न जाति के कबाड़साजे ने उसे पाया, जो अपनी पत्नी के साथ वहाँ चेहरा धो रहा था। वह जल्दी से दौड़ा, बर्तन को पानी से बाहर निकाला और किनारे पर रख दिया। "यह क्या है?" उसने सोचा, और बर्तन को खोलकर बच्चे को पाया। उसकी पत्नी भी निःसंतान थी और उसे भी उससे स्नेह हो गया। इसलिए वह उसे घर ले आई और उसकी देखभाल करने लगी। जब वह सात या आठ साल का था, तो उसके माता-पिता उसे अपने साथ महल ले जाते थे। जब वह सोलह साल का हुआ, तो लड़का अक्सर महल में पुरानी चीजें ठीक करने जाता था। और राजा और रानी की पत्नी की एक बेटी हुई जिसका नाम कुरंगवी था, जो असाधारण रूप से सुंदर थी। उसे देखते ही वह उस युवक के प्यार में पड़ गई, और किसी और की परवाह न करते हुए वह लगातार उसके काम करने की जगह पर जाने लगी। बार-बार एक-दूसरे को देखने से वे दोनों एक-दूसरे के प्रति आकर्षित हो गए।राजमहल परिसर में गुप्त रूप से गुप्त संबंध स्थापित किए गए। कुछ समय बाद सेवकों ने राजा को इसकी सूचना दी। क्रोधित होकर राजा ने अपने सलाहकारों को बुलाया और कहा, "इस नीच जाति के व्यक्ति ने अमुक अपराध किया है: विचार करो कि इसके साथ क्या किया जाना चाहिए।" सलाहकारों ने उत्तर दिया, "इसका अपराध गंभीर है; सभी प्रकार की सजा देने के बाद हमें इसे मृत्युदंड देना होगा।" इसी क्षण बालक के पिता (कोसल के राजा), जो उसके संरक्षक देवदूत बन गए थे, ने युवक की माता के शरीर पर अधिकार कर लिया और दिव्य शक्ति के प्रभाव में आकर राजा के पास आकर बोली, "महाराज, यह युवक नीच जाति का नहीं है। यह कोसल के राजा से मेरा पुत्र है। मैंने अपने पुत्र के मृत होने का दावा करके आपसे झूठ बोला था। यह जानते हुए कि वह आपके शत्रु का पुत्र है, मैंने उसे एक दाई को सौंप दिया और श्मशान भूमि में छोड़ दिया। फिर एक बकरी चराने वाला उसकी देखभाल करता रहा, लेकिन जब उसकी सारी बकरियाँ मरने लगीं, तो उसने उसे नदी में फेंक दिया। नदी के बहाव के साथ बहकर वह यहाँ आ गया, जहाँ उसे हमारे महल में पुराने कबाड़ की मरम्मत करने वाले नीच जाति के व्यक्ति ने पाया और उसका पालन-पोषण किया। यदि आपको मुझ पर विश्वास नहीं है, तो इन सभी लोगों को बुलाकर उनसे पूछताछ कर लीजिए।" राजा ने सभी को बुलाया, सबसे पहले दाई को। पूछताछ करने पर जब उसे पता चला कि सब कुछ वैसा ही है जैसा उसने बताया था, तो वह यह जानकर प्रसन्न हुआ कि युवक कुलीन कुल का है। उसने उसे स्नान करने और उत्तम वस्त्र पहनने का निर्देश दिया और अपनी पुत्री का विवाह उससे कर दिया। बकरियों की मृत्यु का कारण बनने के कारण, लोगों ने उसका नाम

इलाकामारा (बकरी की कमजोरी) रख दिया। फिर राजा ने उसे एक वाहन और सेना दी और यह कहते हुए विदा किया, "जाओ और अपने पिता के राज्य पर अधिकार कर लो।" अतः वह कुरंगवी के साथ चल पड़ा और सिंहासन पर विराजमान हो गया। तब बनारस के राजा ने सोचा, "यह तो बिलकुल अशिक्षित है," और उसे कलाओं की शिक्षा देने के लिए उसने चालंगकुमार को उसका शिक्षक बनाकर भेजा। चालंगकुमार को अपना शिक्षक स्वीकार करके राजा ने उसे सेनापति का पद प्रदान किया। कुछ समय बाद कुरंगवी ने चालंगकुमार के साथ दुर्व्यवहार किया। सेनापति का एक सेवक था जिसका नाम धनन्तेवासी था। उसने अपने हाथों से कुरंगवी को वस्त्र और अन्य आभूषण भिजवाए, और कुरंगवी ने भी उसके साथ कुटिलता की। दुष्ट स्त्रियाँ इतनी दुष्ट और अनैतिक होती हैं कि मैं उनकी प्रशंसा नहीं करता। यह बात उस महान पुरुष ने अतीत की एक कहानी सुनाते हुए सिखाई, क्योंकि उस समय वे चालंगकुमार थे, और इसलिए उन्होंने जो घटना बताई वह उन्होंने स्वयं देखी थी।उस स्त्री ने युवक की माता के शरीर पर अधिकार कर लिया और दिव्य शक्ति के प्रभाव में आकर राजा के पास आकर बोली, "महाराज, यह युवक नीच जाति का नहीं है। यह कोसल के राजा से मेरा पुत्र है। मैंने आपसे झूठ बोला था जब मैंने कहा था कि मेरा बेटा मर गया है। मैं जानती थी कि वह आपके शत्रु का पुत्र है, इसलिए मैंने उसे एक दाई को सौंप दिया और श्मशान में छोड़ दिया। फिर एक बकरी चराने वाला उसकी देखभाल करता रहा, लेकिन जब उसकी सारी बकरियाँ मरने लगीं, तो उसने उसे नदी में फेंक दिया। नदी के बहाव से बहकर वह यहाँ आ गया और हमारे महल में पुराने कबाड़ की मरम्मत करने वाले नीच जाति के व्यक्ति को मिला, जिसने उसे पाला-पोसा। यदि आपको मेरी बात पर विश्वास नहीं है, तो इन सभी लोगों को बुलाकर उनसे पूछताछ कर लीजिए।" राजा ने सभी को बुलाया, सबसे पहले दाई को। पूछताछ करने पर जब उसे पता चला कि सब कुछ वैसा ही है जैसा उसने बताया था, तो वह यह जानकर प्रसन्न हुआ कि युवक कुलीन कुल का है। उसने उसे स्नान करने और उत्तम वस्त्र पहनने का निर्देश दिया और अपनी पुत्री का विवाह उससे कर दिया। बकरियों की मृत्यु का कारण बनने के कारण, लोगों ने उसका नाम इलाकामारा (बकरी की कमजोरी) रख दिया। फिर राजा ने उसे एक वाहन और सेना दी और यह कहते हुए विदा किया, "जाओ और अपने पिता के राज्य पर अधिकार कर लो।" अतः वह कुरंगवी के साथ चल पड़ा और सिंहासन पर विराजमान हो गया। तब बनारस के राजा ने सोचा, "यह तो बिलकुल अशिक्षित है," और उसे कलाओं की शिक्षा देने के लिए उसने चालंगकुमार को उसका शिक्षक बनाकर भेजा। चालंगकुमार को अपना शिक्षक स्वीकार करके राजा ने उसे सेनापति का पद प्रदान किया। कुछ समय बाद कुरंगवी ने चालंगकुमार के साथ दुर्व्यवहार किया। सेनापति का एक सेवक था जिसका नाम धनन्तेवासी था। उसने अपने हाथों से कुरंगवी को वस्त्र और अन्य आभूषण भिजवाए, और कुरंगवी ने भी उसके साथ कुटिलता की। दुष्ट स्त्रियाँ इतनी दुष्ट और अनैतिक होती हैं कि मैं उनकी प्रशंसा नहीं करता। यह बात उस महान पुरुष ने अतीत की एक कहानी सुनाते हुए सिखाई, क्योंकि उस समय वे चालंगकुमार थे, और इसलिए उन्होंने जो घटना बताई वह उन्होंने स्वयं देखी थी।उस स्त्री ने युवक की माता के शरीर पर अधिकार कर लिया और दिव्य शक्ति के प्रभाव में आकर राजा के पास आकर बोली, "महाराज, यह युवक नीच जाति का नहीं है। यह कोसल के राजा से मेरा पुत्र है। मैंने आपसे झूठ बोला था जब मैंने कहा था कि मेरा बेटा मर गया है। मैं जानती थी कि वह आपके शत्रु का पुत्र है, इसलिए मैंने उसे एक दाई को सौंप दिया और श्मशान में छोड़ दिया। फिर एक बकरी चराने वाला उसकी देखभाल करता रहा, लेकिन जब उसकी सारी बकरियाँ मरने लगीं, तो उसने उसे नदी में फेंक दिया। नदी के बहाव से बहकर वह यहाँ आ गया और हमारे महल में पुराने कबाड़ की मरम्मत करने वाले नीच जाति के व्यक्ति को मिला, जिसने उसे पाला-पोसा। यदि आपको मेरी बात पर विश्वास नहीं है, तो इन सभी लोगों को बुलाकर उनसे पूछताछ कर लीजिए।" राजा ने सभी को बुलाया, सबसे पहले दाई को। पूछताछ करने पर जब उसे पता चला कि सब कुछ वैसा ही है जैसा उसने बताया था, तो वह यह जानकर प्रसन्न हुआ कि युवक कुलीन कुल का है। उसने उसे स्नान करने और उत्तम वस्त्र पहनने का निर्देश दिया और अपनी पुत्री का विवाह उससे कर दिया। बकरियों की मृत्यु का कारण बनने के कारण, लोगों ने उसका नाम इलाकामारा (बकरी की कमजोरी) रख दिया। फिर राजा ने उसे एक वाहन और सेना दी और यह कहते हुए विदा किया, "जाओ और अपने पिता के राज्य पर अधिकार कर लो।" अतः वह कुरंगवी के साथ चल पड़ा और सिंहासन पर विराजमान हो गया। तब बनारस के राजा ने सोचा, "यह तो बिलकुल अशिक्षित है," और उसे कलाओं की शिक्षा देने के लिए उसने चालंगकुमार को उसका शिक्षक बनाकर भेजा। चालंगकुमार को अपना शिक्षक स्वीकार करके राजा ने उसे सेनापति का पद प्रदान किया। कुछ समय बाद कुरंगवी ने चालंगकुमार के साथ दुर्व्यवहार किया। सेनापति का एक सेवक था जिसका नाम धनन्तेवासी था। उसने अपने हाथों से कुरंगवी को वस्त्र और अन्य आभूषण भिजवाए, और कुरंगवी ने भी उसके साथ कुटिलता की। दुष्ट स्त्रियाँ इतनी दुष्ट और अनैतिक होती हैं कि मैं उनकी प्रशंसा नहीं करता। यह बात उस महान पुरुष ने अतीत की एक कहानी सुनाते हुए सिखाई, क्योंकि उस समय वे चालंगकुमार थे, और इसलिए उन्होंने जो घटना बताई वह उन्होंने स्वयं देखी थी।बकरियों की मृत्यु का कारण बनने के कारण लोगों ने उसका नाम इलाकामारा (बकरी की कमजोरी) रख दिया। तब राजा ने उसे एक वाहन और सेना दी और यह कहकर विदा किया, "जाओ और अपने पिता के राज्य पर अधिकार कर लो।" अतः वह कुरंगवी के साथ चल पड़ा और सिंहासन पर विराजमान हो गया। तब बनारस के राजा ने सोचा, "यह तो बिलकुल अनपढ़ है," और उसे कलाओं की शिक्षा देने के लिए उसने चालंगकुमार को उसका गुरु बनाकर भेजा। उसे गुरु मानकर राजा ने उसे सेनापति का पद दे दिया। कुछ समय बाद कुरंगवी ने उसके साथ दुराचार किया। सेनापति का एक सेवक था जिसका नाम धनंतवासी था, और उसने अपने हाथों से कुरंगवी को वस्त्र और अन्य आभूषण भेजे, और कुरंगवी ने उसके साथ भी दुराचार किया। दुष्ट स्त्रियाँ इतनी दुष्ट और अनैतिक होती हैं कि मैं उनकी प्रशंसा नहीं करता। यह बात उस महान सत्ता ने अतीत की एक कहानी सुनाते हुए सिखाई, क्योंकि उस समय वे चालंगकुमार थे, और इसलिए उन्होंने जो घटना सुनाई वह उन्होंने स्वयं अपनी आँखों से देखी थी।बकरियों की मृत्यु का कारण बनने के कारण लोगों ने उसका नाम इलाकामारा (बकरी की कमजोरी) रख दिया। तब राजा ने

उसे एक वाहन और सेना दी और यह कहकर विदा किया, "जाओ और अपने पिता के राज्य पर अधिकार कर लो।" अतः वह कुरंगवी के साथ चल पड़ा और सिंहासन पर विराजमान हो गया। तब बनारस के राजा ने सोचा, "यह तो बिलकुल अनपढ़ है," और उसे कलाओं की शिक्षा देने के लिए उसने चालंगकुमार को उसका गुरु बनाकर भेजा। उसे गुरु मानकर राजा ने उसे सेनापति का पद दे दिया। कुछ समय बाद कुरंगवी ने उसके साथ दुराचार किया। सेनापति का एक सेवक था जिसका नाम धनंतवासी था, और उसने अपने हाथों से कुरंगवी को वस्त्र और अन्य आभूषण भेजे, और कुरंगवी ने उसके साथ भी दुराचार किया। दुष्ट स्त्रियाँ इतनी दुष्ट और अनैतिक होती हैं कि मैं उनकी प्रशंसा नहीं करता। यह बात उस महान सत्ता ने अतीत की एक कहानी सुनाते हुए सिखाई, क्योंकि उस समय वे चालंगकुमार थे, और इसलिए उन्होंने जो घटना सुनाई वह उन्होंने स्वयं अपनी आँखों से देखी थी।

पांचवीं कथा के अनुसार, एक समय की बात है, कोसल के एक राजा ने बनारस राज्य पर कब्जा कर लिया और अपनी रानी को, जो उस समय गर्भवती थी, अपनी पत्नी बना लिया और फिर अपने नगर लौट गया। कुछ समय बाद रानी ने एक पुत्र को जन्म दिया। राजा की अपनी कोई संतान नहीं थी, इसलिए उसने पुत्र को बहुत प्यार किया और उसे हर प्रकार की शिक्षा दी। जब पुत्र वयस्क हुआ, तो उसने उसे अपने पिता के राज्य का कार्यभार संभालने के लिए विदा कर दिया। पुत्र गया और वहाँ शासन करने लगा। तब पुत्र की माता ने अपने पुत्र को देखने की तीव्र इच्छा व्यक्त करते हुए कोसल के राजा से विदा ली और एक बड़े दल के साथ बनारस के लिए रवाना हुई और दोनों राज्यों के बीच स्थित एक नगर में रहने लगी। उस नगर में पंचलचंद नामक एक सुंदर ब्राह्मण युवक रहता था। पंचलचंद उसके लिए एक उपहार लाया। उसे देखते ही वह उससे प्रेम करने लगी और उसके साथ अनैतिक संबंध बनाने लगी। कुछ दिन वहाँ बिताने के बाद, वह बनारस गई और अपने पुत्र से मिली। वापस लौटने पर उसने उसी नगर में अपना निवास स्थान बनाया और अपने प्रेमी के साथ अनेक दिन व्यभिचार करने के बाद वह कोसल नगर चली गई। इसके तुरंत बाद, अपने पुत्र से मिलने का कोई बहाना बनाकर, उसने राजा से विदा ली और आने-जाने में उसी नगर में दो सप्ताह तक अपने प्रेमी के साथ दुराचार करती रही। हे संपुन्नमुख, स्त्रियाँ कितनी दुष्ट और कपटी होती हैं! और अतीत की यह कहानी सुनाते हुए उसने इन शब्दों से आरंभ किया, "इस कथा का भी यही अर्थ है।" इसके बाद, धर्म का प्रचार करते हुए, उसने अनेक तरीकों से कहा, "मित्र संपुन्नमुख, चार वस्तुएँ ऐसी हैं जो कुछ परिस्थितियों में हानिकारक सिद्ध होती हैं—मैं कहता हूँ, इन्हें पड़ोसी के घर में नहीं रखना चाहिए—एक बैल, एक गाय, एक रथ, एक पत्नी। एक बुद्धिमान व्यक्ति अपने घर को इन चारों वस्तुओं से मुक्त रखेगा।"

पड़ोसियों को बैल, गाय या रथ उधार न दें,
न ही किसी मित्र के घर पत्नी को सौंपें:
वे कौशल की कमी के कारण रथ तोड़ देते हैं, और
अत्यधिक दौड़ाने के कारण बैल को मार डालते हैं।
गाय का दूध जरूरत से ज्यादा दुहा जाता है। कुछ ही समय बाद,
रिश्तेदार के घर में पत्नी की तबीयत खराब हो जाती है।
हे पुन्नमुख, छह ऐसी बातें हैं जो कुछ परिस्थितियों में हानिकारक सिद्ध होती हैं—बिना डोरी वाला धनुष, किसी रिश्तेदार के परिवार में रहने वाली पत्नी, जहाज (*34), टूटी धुरी वाला रथ, अनुपस्थित मित्र, दुष्ट साथी—ये सभी कुछ परिस्थितियों में हानिकारक सिद्ध होते हैं। हे पुन्नमुख, वास्तव में आठ कारणों से एक स्त्री अपने पति से घृणा करती है: गरीबी के कारण, बीमारी के कारण, बुढ़ापे के कारण, नशे के कारण, मूर्खता के कारण, लापरवाही के कारण, हर तरह के काम में व्यस्त रहने के कारण, और अपनी पत्नी के प्रति अपने सभी कर्तव्यों की उपेक्षा करने के कारण—वास्तव में, इन्हीं आठ कारणों से एक स्त्री अपने स्वामी से घृणा करती है। यहाँ यह श्लोक भी आता है:

यदि पति गरीब, बीमार, बूढ़ा, शराबी या लापरवाह विचारों वाला हो,
सुस्त हो या अपने व्यवसाय की चिंताओं से परेशान हो,
या अप्रिय पाया जाए - तो ऐसी पत्नी ऐसे पति को कुछ भी नहीं समझती।
वास्तव में, नौ आधारों पर एक स्त्री दोषी होती है: यदि वह पार्कों, उद्यानों और नदी तटों पर जाना पसंद करती है, परिवार या अजनबियों के घरों में जाना पसंद करती है, सज्जनों द्वारा पहने जाने वाले वस्त्रों का प्रयोग करती है, यदि वह शराब पीती है, इधर-उधर देखती रहती है या अपने दरवाजे के सामने खड़ी रहती है—मैं कहता हूँ, इन नौ आधारों पर एक स्त्री दोषी होती है। इसके अतिरिक्त, यहाँ निम्नलिखित श्लोक भी आता है:

एक महिला, जिसने स्मार्ट कपड़े की बनियान पहनी हुई है, शराब पी रही है, संभवतः
बगीचे, पार्क, नदी किनारे, किसी मित्र या अजनबी के घर घूम रही है।
उसके दरवाजे के सामने खड़े होकर, व्यर्थ दृष्टि से इधर-उधर घूरते हुए,
नौ ऐसे तरीकों से भ्रष्ट होकर शीघ्र ही सद्गुण के मार्ग से भटक जाता है।

सचमुच, मित्र पुन्नमुख, एक स्त्री चालीस अलग-अलग तरीकों से एक पुरुष की भरपाई करती है (*35)। वह खुद को समेटती है, झुकती है, उछल-कूद करती है, शरमाती है, अपनी उंगलियों के सिरों को आपस में दबाती है, एक पैर दूसरे पर रखती है, छड़ी से ज़मीन खरोंचती है, अपने लड़के को ऊपर-नीचे नचाती है, खेलती है और लड़के से खेलवाती है, चूमती है और उससे चुमवाती है, खाती है और उसे खिलाती है, कुछ देती है या कुछ मांगती है, जो कुछ भी होता है उसकी नकल करती है, ऊँची या नीची आवाज़ में बोलती है, कभी अस्पष्ट बोलती है, कभी स्पष्ट, नृत्य, गीत और संगीत से, आँसुओं या नखरे से, या अपने अलंकरण से उसे आकर्षित करती है, हँसती है या घूरती है, अपनी पोशाक हिलाती है या अपनी कमरबंद सरकाती है, अपनी टांग दिखाती है या ढकती है, अपने स्तन, बगल, नाभि दिखाती है, अपनी आँखें बंद करती है, अपनी भौंहें उठाती है, अपने होंठ दबाती है, अपनी जीभ बाहर निकालती है, अपने कपड़े ढीले करती है या कसती है, अपने सिर के आभूषण ढीले करती है या कसती है। सचमुच, इन चालीस तरीकों से वह पुरुष को संतुष्ट करती है। हे मित्र पुन्नमुख, एक दुष्ट स्त्री की पहचान पच्चीस अलग-अलग तरीकों से होती है: वह अपने पति के घर से अनुपस्थित रहने की प्रशंसा करती है, उसके लौटने पर प्रसन्न नहीं होती, उसकी आलोचना करती है, उसकी प्रशंसा में मौन रहती है, उसके हित के लिए नहीं बल्कि उसे हानि पहुँचाने के लिए कार्य करती है, उसके हित में जो भी करना चाहिए वह करती है और जो करना चाहिए उससे विमुख रहती है, वह कपड़े पहने ही बिस्तर पर जाती है और उससे मुँह फेरकर लेटती है, वह करवटें बदलती रहती है, बहुत शोर मचाती है, लंबी आहें भरती है, उसे दर्द होता है, उसे बार-बार शौच जाना पड़ता है, वह विकृत व्यवहार करती है, किसी अजनबी की आवाज सुनकर ध्यान से सुनती है, वह अपने पति की संपत्ति को बर्बाद करती है, वह पड़ोसियों के साथ घनिष्ठ संबंध रखती है, वह बाहर घूमती है, वह गलियों में भटकती है, वह व्यभिचार की दोषी है, अपने पति की अवहेलना करते हुए उसके मन में बुरे विचार होते हैं। हे मित्र पुन्नमुख, इन पच्चीस तरीकों से ही दुष्ट स्त्री की पहचान होती है। इसके अतिरिक्त, यहाँ यह कथन भी मिलता है:

वह अपने पति की अनुपस्थिति को स्वीकार नहीं करती और न ही उसके जाने पर शोक मनाती है,
न ही उसके लौटने की आशा से प्रसन्न होती है।
वह कभी भी अपने पति की प्रशंसा में कुछ नहीं कहती।
ये वे लक्षण हैं जो दुष्ट स्त्री के तौर-तरीकों को निश्चित रूप से दर्शाते हैं।
अनुशासनहीन होकर, वह अपने स्वामी के विरुद्ध कोई शरारत रचेगी,
उसकी रुचि की उपेक्षा करके वह काम करेगी जो उसे नहीं करना चाहिए,
मुँह फेरे वह उसके बगल में पूरी तरह से सजी-धजी लेटी रहेगी,
ऐसे ही संकेतों से उसकी दुष्टता निश्चित रूप से स्वीकार की जाती है।
बेचैन होकर वह करवटें बदलती रहती है और एक पल भी स्थिर नहीं रहती (*36),
या लंबी आह भरती है और कराहती है, बीमार होने का नाटक करती है,
मानो प्रकृति की पुकार पर वह बिस्तर से कई बार उठेगी,
ऐसे संकेतों से कोई व्यक्ति उसकी दुष्टता को पहचान सकता है।
वह अपने सभी कार्यों में कुटिल है, वह वह काम करती है जिससे उसे बचना चाहिए,
और अजनबी की बात सुनती है, भले ही वह उससे कृपा की भीख मांगे, वह
अपने पति की संपत्ति किसी और प्रेम को पाने के लिए बेधड़क खर्च कर देती है,
ऐसे संकेतों से उसकी दुष्टता सबके सामने स्पष्ट हो जाती है।
उसके स्वामी ने जो धन-दौलत बड़ी मेहनत से जमा की थी,
जो सामान बड़ी तकलीफ से इकट्ठा किया था, देखो, वो उसे तेजी से लुटा रही है।
पड़ोसियों के साथ उसकी बहुत ज्यादा घनिष्ठता हो जाएगी,
और ऐसे संकेतों से स्त्रियों की दुष्टता का अंदाजा लगाया जा सकता है।
बाहर कदम रखते ही देखो वह कैसे सड़कों पर चलती है,
और अपने स्वामी के साथ घोर अनादर का व्यवहार करती है:
व्यभिचार से भी पीछे नहीं हटती, हृदय और मन से भ्रष्ट है—
ऐसे ही संकेतों से हम पाते हैं कि सभी स्त्रियाँ कितनी दुष्ट हैं।
अक्सर वह अपने ही दरवाजे पर सारी मर्यादाओं को धता बताकर,
निर्लज्जतापूर्वक राहगीरों के सामने अपने आप को उजागर कर देती है।
इस बीच वह व्याकुल मन से चारों ओर देखती है—
ऐसे ही संकेतों से स्त्रियों की दुष्टता का पता चलता है।
जैसे पेड़ों के झुरमुट लकड़ी से बने होते हैं, जैसे नदियाँ घुमावदार रास्तों से बहती हैं,
वैसे ही, उन्हें अवसर दो, सभी गलत रास्ते पर चली जाएँगी।
हाँ, उन्हें अवसर और गोपनीयता प्रदान करें,

और हर एक स्त्री सदाचार के मार्ग से भटक जाएगी:
इस प्रकार सभी व्यभिचारी स्त्रियाँ सिद्ध होंगी, यदि समय और स्थान अनुकूल हों,
और यहाँ तक कि कुबड़ा बौना भी पाप करेगा, यदि अन्य प्रेमी असफल हो जाएँ।
पुरुषों की प्रसन्नता के लिए सेवा करने वाली स्त्रियों पर किसी को भी संदेह नहीं करना चाहिए,
वे हृदय से दुर्बल और वासना में बेलगाम होती हैं।
उन्हें सुख की स्त्रियाँ कहना उचित ही है, वे सबसे नीच होती हैं, और
आम लोगों के लिए किसी स्नानघर के समान होती हैं।
इसके अलावा उन्होंने कहा: एक समय की बात है, बनारस में कंदारी नाम का एक राजा रहता था, जो बहुत सुंदर था। उसके सलाहकार प्रतिदिन उसके लिए एक हजार डिब्बे इत्र लाते थे, और इस इत्र से वे महल को सजाते-संवारते थे। फिर वे उन डिब्बों को तोड़कर सुगंधित लकड़ियाँ बनाते थे और उनसे खाना पकाते थे। उसकी पत्नी का नाम किन्नरा था, जो बहुत सुंदर थी, और उसका पुजारी पंचालचंद भी उसी उम्र का और बहुत बुद्धिमान था। राजा के महल के पास की दीवार में एक गुलाब-सेब का पेड़ था, जिसकी शाखाएँ दीवार पर लटकती थीं, और उसकी छाया में एक बदसूरत, कुरूप लंगड़ा रहता था। एक दिन रानी किन्नरा ने अपनी खिड़की से बाहर देखते हुए उसे देखा और उस पर मोहित हो गई। रात में, अपने आकर्षण से राजा का दिल जीतने के बाद, जैसे ही वह सो जाता, वह चुपके से उठती और सोने के बर्तन में तरह-तरह के स्वादिष्ट व्यंजन रखकर, उसे कमर पर रखकर, कपड़े की रस्सी के सहारे खिड़की से नीचे उतरती, और गुलाब-एप्पल के पेड़ पर चढ़कर उसकी एक शाखा से नीचे उतरकर उस अपाहिज को स्वादिष्ट व्यंजन खिलाती और उसके साथ सुख भोगती, फिर उसी रास्ते से महल में वापस जाती और पूरे शरीर पर इत्र लगाकर राजा के पास लेट जाती। इस तरह वह लगातार उस अपाहिज के साथ दुराचार करती रहती और राजा को इसकी भनक तक नहीं लगती थी। एक दिन राजा शहर का चक्कर लगाने के बाद अपने महल में प्रवेश कर रहा था, तभी उसने उस दयनीय अपाहिज को गुलाब-एप्पल के पेड़ की छाया में पड़ा देखा और अपने पुजारी से कहा, "ज़रा इस भूत जैसे आदमी को देखो।" "जी महाराज?" "क्या यह संभव है, मेरे मित्र, कि कोई भी वासना से प्रेरित स्त्री ऐसे घृणित प्राणी के पास आए?" उसकी बात सुनकर लंगड़ा व्यक्ति गर्व से फूल गया और सोचने लगा, "इस राजा ने क्या कहा? मुझे लगता है कि इसे अपनी रानी के मुझसे मिलने आने की कोई खबर नहीं है।" और उसने अपने हाथ जोड़कर गुलाब-सेब के पेड़ की ओर इशारा करते हुए कहा, "हे मेरे स्वामी, इस वृक्ष के रक्षक, आपके सिवा किसी को इसके बारे में पता नहीं है।" पुजारी ने उसकी इस हरकत को देखकर सोचा, "सचमुच राजा की मुख्य पत्नी इसी वृक्ष की सहायता से आती है और उसके साथ दुराचार करती है।" इसलिए उसने राजा से कहा, "महाराज, रात में जब आप रानी के संपर्क में आते हैं तो क्या होता है?"

“मुझे और कुछ नज़र नहीं आता,” उसने कहा, “सिवाय इसके कि दोपहर के समय उसका शरीर ठंडा पड़ गया है।” “महाराज, अन्य स्त्रियों के साथ जो भी हो, आपकी रानी किन्नरा उसके साथ दुराचार करती है।” “यह क्या कह रहे हो, मेरे मित्र? क्या इतनी सुंदर स्त्री इस घिनौने प्राणी के साथ आनंद उठाएगी?” “तो महाराज, इसे परख कर देखिए।” “ठीक है,” राजा ने कहा, और रात के भोजन के बाद वह उसके साथ लेट गया, ताकि इसकी परीक्षा ले सके। सोने के सामान्य समय पर, उसने सोने का नाटक किया, और उसने पहले की तरह ही व्यवहार किया। राजा उसके पीछे-पीछे गुलाब-सेब के पेड़ की छाया में खड़ा हो गया। लंगड़ा रानी पर क्रोधित था और बोला, “तुम आने में बहुत देर कर चुकी हो,” और अपने हाथ से उसके कान में जंजीर मार दी। तब उसने कहा, “प्रभु क्रोधित न हों; मैं राजा के सोने का इंतज़ार कर रही थी,” और ऐसा कहकर उसने मानो घर में एक पत्नी का फर्ज निभाया। लेकिन जब उसने उसे मारा, तो शेर के सिर के समान बना कान का आभूषण उसके कान से गिरकर राजा के चरणों में जा गिरा। राजा ने सोचा, "मेरे लिए यही सबसे अच्छा होगा," और वह उसे अपने साथ ले गया। अपने प्रेमी के साथ दुराचार करने के बाद वह पहले की तरह लौट आई और राजा के पास लेट गई। राजा ने उसके प्रस्ताव को ठुकरा दिया और अगले दिन आदेश दिया, "रानी किन्नरा को मेरे दिए हुए सभी आभूषण पहनकर आना चाहिए।" उसने कहा, "मेरा शेर के सिर वाला आभूषण सुनार के पास है," और आने से इनकार कर दिया। जब दूसरा संदेश भेजा गया, तो वह केवल एक कान का आभूषण पहनकर आई। राजा ने पूछा, "तुम्हारा कान का आभूषण कहाँ है?" "सुनार के पास।" उसने सुनार को बुलवाया और कहा, "आप इस महिला को उसका कान का आभूषण क्यों नहीं दे रहे हैं?" "महाराज, मेरे पास नहीं है।" राजा क्रोधित हो गया और बोला, "हे दुष्ट, नीच स्त्री! तेरा सुनार मेरे जैसा ही पुरुष होना चाहिए।" ऐसा कहते हुए उसने कान की बाली उसके सामने फेंक दी और पुजारी से कहा, "मित्र, तुमने सही कहा; जाओ और उसका सिर कटवा दो।" उसने उसे महल के एक कोने में बंद कर दिया और राजा के पास आकर बोला, "महाराज, रानी किन्नरा पर क्रोधित न हों: सभी स्त्रियाँ एक समान होती हैं। यदि आप देखना चाहते हैं कि स्त्रियाँ कितनी अनैतिक होती हैं, तो मैं आपको उनकी दुष्टता और छल दिखा दूँगा। आइए, हम वेश बदलकर देश चलें।" राजा तुरंत मान गया और अपना राज्य अपनी माता को सौंपकर अपने पुजारी के साथ यात्रा पर निकल पड़ा। जब वे एक मील (4.23 किमी) की यात्रा करके मुख्य सड़क के किनारे बैठे, तो एक धनी व्यक्ति, जो अपने पुत्र के लिए विवाह समारोह आयोजित कर रहा था, ने दुल्हन को एक बड़ी गाड़ी में बिठाया और उसके साथ एक बड़ा दल चल रहा था। यह देखकर पुजारी ने कहा, "अगर आप चाहें तो इस लड़की को अपने साथ दुराचार करने के लिए मजबूर कर सकते हैं।" "क्या कहते हो मेरे दोस्त? इस बड़े अंगरक्षक दल के साथ यह असंभव है।"“तो फिर इसे देखिए, महाराज?” और आगे बढ़कर उसने मुख्य सड़क से कुछ दूर एक तंबू के आकार का पर्दा लगाया और राजा को उसके अंदर बिठाकर स्वयं सड़क के किनारे बैठकर रोने लगा। तब उस सज्जन ने यह देखकर पूछा, “मित्र, आप क्यों रो रहे हैं?” उसने कहा, “मेरी

पत्नी गर्भवती थी और मैं उसे उसके घर ले जाने के लिए यात्रा पर निकला था, लेकिन रास्ते में ही उसे प्रसव पीड़ा होने लगी और वह पर्दों के अंदर कष्ट में है। उसके साथ कोई स्त्री नहीं है और मैं उसके पास नहीं जा सकता। मुझे नहीं पता कि क्या होगा।” “उसके साथ एक स्त्री होनी चाहिए: रोइए मत, यहाँ बहुत सी स्त्रियाँ हैं; उनमें से कोई न कोई उसके पास जाएगी।” “तो फिर इस लड़की को आने दीजिए; यह लड़की के लिए शुभ संकेत होगा।” उसने सोचा, “वह जो कह रहा है वह सच है: यह मेरी बहू के लिए शुभ होगा।” उसे अनेक पुत्र और पुत्रियाँ प्राप्त होंगी," और वह उसे वहाँ ले गया। तंबू के भीतर जाते ही उसे राजा से पहली नज़र में ही प्रेम हो गया और उसने उसके साथ दुराचार किया, और राजा ने उसे अपनी मुहरबंद अंगूठी दे दी। जब काम पूरा हो गया और वह तंबू से बाहर आई तो लोगों ने उससे पूछा, "उसने किसे जन्म दिया है?" "एक लड़का जो सोने के रंग का है?" तो वह सज्जन उसे लेकर चला गया। पुजारी राजा के पास आया और बोला, "महाराज, आपने देखा है कि एक युवती भी इतनी दुष्ट है। अन्य स्त्रियाँ कितनी अधिक दुष्ट होंगी?" "महोदय, क्या आपने उसे कुछ दिया?" "हाँ, मैंने उसे अपनी अंगूठी दी।" "मैं उसे इसे रखने नहीं दूँगा।" और वह जल्दी से उनके पीछे गया और रथ को पकड़ लिया, और जब उन्होंने पूछा, "इसका क्या मतलब है?" तो उसने कहा, "यह लड़की मेरी ब्राह्मण पत्नी द्वारा तकिये पर रखी गई अंगूठी लेकर चली गई है: अंगूठी लौटा दो, महोदया।" अंगूठी देते हुए उसने ब्राह्मण के हाथ पर खरोंच मारते हुए कहा, "ले लो, बदमाश।" इस प्रकार ब्राह्मण ने कई तरीकों से राजा को दिखाया कि कई अन्य स्त्रियाँ भी दुराचार की दोषी हैं, और कहा, "यहाँ बस इतना ही काफी है; अब हम कहीं और चलते हैं, महाराज।" राजा पूरे भारत में घूमे, और उन्होंने कहा, "सभी स्त्रियाँ एक जैसी होती हैं। वे हमारे लिए क्या हैं? चलो वापस चलते हैं।" तो वे सीधे बनारस अपने घर चले गए। पुजारी ने कहा, "महाराज, सभी स्त्रियों का यही हाल है; उनका स्वभाव इतना दुष्ट है।" "रानी किन्नरा को क्षमा कर दो।" अपने पुजारी की प्रार्थना पर उसने उसे क्षमा कर दिया, परन्तु उसे महल से निकाल दिया। और जब उसने उसे निकाल दिया, तो उसने दूसरी रानी चुनी, और लंगड़ी को भगा दिया तथा गुलाब-बाँह की शाखा को काटने का आदेश दिया। उस समय कुणाल पंचालचंद था। अतः अपने आँखों देखे हुए प्रसंग को उदाहरण के रूप में बताते हुए उसने यह श्लोक कहा:"मित्र, तुम क्यों रो रहे हो?" उसने कहा, "मेरी पत्नी गर्भवती थी और मैं उसे उसके घर ले जाने के लिए यात्रा पर निकला था, लेकिन रास्ते में ही उसे प्रसव पीड़ा होने लगी और वह तम्बू के अंदर कष्ट में है। उसके साथ कोई स्त्री नहीं है और मैं उसके पास नहीं जा सकता। मुझे नहीं पता कि क्या होगा।" "उसके साथ एक स्त्री होनी चाहिए: रोओ मत, यहाँ बहुत सी स्त्रियाँ हैं; उनमें से कोई न कोई उसके पास जाएगी।" "तो फिर इस लड़की को आने दो; यह लड़की के लिए शुभ संकेत होगा।" उसने सोचा, "वह जो कह रहा है वह सच है: यह मेरी बहू के लिए शुभ होगा। उसे अनेक पुत्र और पुत्रियों का आशीर्वाद मिलेगा," और वह उसे वहाँ ले आया। तम्बू के अंदर जाते ही उसे राजा से पहली नज़र में ही प्रेम हो गया और उसने उसके साथ अनुचित व्यवहार किया, और राजा ने उसे अपनी मुहरबंद अंगूठी दे दी। जब यह सब हो गया और वह तम्बू से बाहर आई तो लोगों ने उससे पूछा, "उसने किसे जन्म दिया है?" "एक लड़का, सुनहरे रंग का?" तो वह सज्जन उसे लेकर चले गए। पुजारी राजा के पास आया और बोला, “महाराज, आपने देखा है कि एक युवती भी इतनी दुष्ट है। अन्य स्त्रियाँ कितनी दुष्ट होंगी? कृपया बताइए, क्या आपने उसे कुछ दिया?” “हाँ, मैंने उसे अपनी अंगूठी दी।” “मैं उसे इसे रखने नहीं दूँगा।” और वह जल्दी से उनके पीछे गया और रथ को पकड़ लिया, और जब उन्होंने पूछा, “इसका क्या अर्थ है?” तो उसने कहा, “यह लड़की मेरी ब्राह्मण पत्नी द्वारा तकिये पर रखी गई अंगूठी लेकर चली गई है: अंगूठी लौटा दो, महोदया।” अंगूठी देते समय उसने ब्राह्मण के हाथ पर खरोंच मारते हुए कहा, “ले लो, बदमाश।” इस प्रकार ब्राह्मण ने कई तरीकों से राजा को दिखाया कि कई अन्य स्त्रियाँ भी दुराचार की दोषी हैं, और कहा, “यहाँ बस करो; अब हम कहीं और चलते हैं, महाराज।” राजा पूरे भारत में घूमे, और उन्होंने कहा, “सभी स्त्रियाँ एक जैसी होती हैं। वे हमारे लिए क्या हैं? चलो वापस चलते हैं।” तो वे सीधे बनारस अपने घर चले गए। पुजारी ने कहा, "हे महाराज, सभी स्त्रियों का यही हाल होता है; उनका स्वभाव इतना दुष्ट होता है। रानी किन्नरा को क्षमा कर दीजिए।" पुजारी की प्रार्थना पर उन्होंने किन्नरा को क्षमा कर दिया, परन्तु उसे महल से निकाल दिया। उसे निकालने के बाद उन्होंने दूसरी रानी चुनी, और लंगड़ी को भगा दिया तथा गुलाब-बाँह की शाखा को काटने का आदेश दिया। उस समय कुणाल पंचालचंद थे। अतः अपने आँखों देखे हुए प्रसंग को उदाहरण के रूप में बताते हुए उन्होंने यह श्लोक कहा:"मित्र, तुम क्यों रो रहे हो?" उसने कहा, "मेरी पत्नी गर्भवती थी और मैं उसे उसके घर ले जाने के लिए यात्रा पर निकला था, लेकिन रास्ते में ही उसे प्रसव पीड़ा होने लगी और वह तम्बू के अंदर कष्ट में है। उसके साथ कोई स्त्री नहीं है और मैं उसके पास नहीं जा सकता। मुझे नहीं पता कि क्या होगा।" "उसके साथ एक स्त्री होनी चाहिए: रोओ मत, यहाँ बहुत सी स्त्रियाँ हैं; उनमें से कोई न कोई उसके पास जाएगी।" "तो फिर इस लड़की को आने दो; यह लड़की के लिए शुभ संकेत होगा।" उसने सोचा, "वह जो कह रहा है वह सच है: यह मेरी बहू के लिए शुभ होगा। उसे अनेक पुत्र और पुत्रियों का आशीर्वाद मिलेगा," और वह उसे वहाँ ले आया। तम्बू के अंदर जाते ही उसे राजा से पहली नज़र में ही प्रेम हो गया और उसने उसके साथ अनुचित व्यवहार किया, और राजा ने उसे अपनी मुहरबंद अंगूठी दे दी। जब यह सब हो गया और वह तम्बू से बाहर आई तो लोगों ने उससे पूछा, "उसने किसे जन्म दिया है?" "एक लड़का, सुनहरे रंग का?" तो वह सज्जन उसे लेकर चले गए। पुजारी राजा के पास आया और बोला, “महाराज, आपने देखा है कि एक युवती भी इतनी दुष्ट है। अन्य स्त्रियाँ कितनी दुष्ट होंगी? कृपया बताइए, क्या आपने उसे कुछ दिया?” “हाँ, मैंने उसे अपनी अंगूठी दी।” “मैं उसे इसे रखने नहीं दूँगा।” और वह जल्दी से उनके पीछे गया और रथ को पकड़ लिया, और जब उन्होंने पूछा, “इसका क्या अर्थ है?” तो उसने कहा, “यह लड़की मेरी ब्राह्मण पत्नी द्वारा तकिये पर रखी गई अंगूठी लेकर चली गई है: अंगूठी लौटा दो, महोदया।” अंगूठी देते समय उसने ब्राह्मण के हाथ पर खरोंच मारते हुए कहा, “ले लो, बदमाश।” इस प्रकार ब्राह्मण ने कई तरीकों से राजा को दिखाया कि कई अन्य स्त्रियाँ भी दुराचार की दोषी हैं, और कहा, “यहाँ बस करो; अब हम कहीं और चलते हैं, महाराज।” राजा पूरे भारत में घूमे, और उन्होंने कहा, “सभी स्त्रियाँ एक जैसी होती हैं। वे हमारे लिए क्या हैं? चलो वापस चलते हैं।” तो वे सीधे बनारस अपने घर

चले गए। पुजारी ने कहा, "हे महाराज, सभी स्त्रियों का यही हाल होता है; उनका स्वभाव इतना दुष्ट होता है। रानी किन्नरा को क्षमा कर दीजिए।" पुजारी की प्रार्थना पर उन्होंने किन्नरा को क्षमा कर दिया, परन्तु उसे महल से निकाल दिया। उसे निकालने के बाद उन्होंने दूसरी रानी चुनी, और लंगड़ी को भगा दिया तथा गुलाब-बाँह की शाखा को काटने का आदेश दिया। उस समय कुणाल पंचालचंद थे। अतः अपने आँखों देखे हुए प्रसंग को उदाहरण के रूप में बताते हुए उन्होंने यह श्लोक कहा:"अच्छा, तो इस लड़की को आने दो; यह लड़की के लिए शुभ संकेत होगा।" उसने सोचा, "वह जो कह रहा है वह सच है: यह मेरी बहू के लिए शुभ होगा। उसे कई पुत्र और पुत्रियाँ प्राप्त होंगी," और वह उसे वहाँ ले आया। तंबू के अंदर जाते ही उसे राजा से पहली नज़र में ही प्रेम हो गया और उसने उसके साथ दुराचार किया, और राजा ने उसे अपनी मुहरबंद अंगूठी दे दी। जब काम पूरा हो गया और वह तंबू से बाहर आई तो लोगों ने उससे पूछा, "उसने किसे जन्म दिया है?" "सोने के रंग का एक लड़का?" तो वह सज्जन उसे लेकर चला गया। पुजारी राजा के पास आया और बोला, "महाराज, आपने देखा है कि एक युवती भी इतनी दुष्ट है। अन्य स्त्रियाँ कितनी अधिक दुष्ट होंगी?" "महोदय, क्या आपने उसे कुछ दिया?" "हाँ, मैंने उसे अपनी अंगूठी दी।" "मैं उसे इसे रखने नहीं दूँगा।" और वह जल्दी से उनके पीछे गया और रथ को पकड़ लिया, और जब उन्होंने पूछा, "इसका क्या मतलब है?" तो उसने कहा, "यह लड़की मेरी ब्राह्मण पत्नी द्वारा तकिये पर रखी गई अंगूठी लेकर चली गई है: अंगूठी लौटा दो, महोदया।" अंगूठी देते हुए उसने ब्राह्मण के हाथ पर खरोंच मारते हुए कहा, "ले लो, बदमाश।" इस प्रकार ब्राह्मण ने कई तरीकों से राजा को दिखाया कि कई अन्य स्त्रियाँ भी दुराचार की दोषी हैं, और कहा, "यहाँ बस इतना ही काफी है; अब हम कहीं और चलते हैं, महाराज।" राजा पूरे भारत में घूमे, और उन्होंने कहा, "सभी स्त्रियाँ एक जैसी होती हैं। वे हमारे लिए क्या हैं? चलो वापस चलते हैं।" तो वे सीधे बनारस अपने घर चले गए। पुजारी ने कहा, "महाराज, सभी स्त्रियों का यही हाल है; उनका स्वभाव इतना दुष्ट है।" "रानी किन्नरा को क्षमा कर दो।" अपने पुजारी की प्रार्थना पर उसने उसे क्षमा कर दिया, परन्तु उसे महल से निकाल दिया। और जब उसने उसे निकाल दिया, तो उसने दूसरी रानी चुनी, और लंगड़ी को भगा दिया तथा गुलाब-बाँह की शाखा को काटने का आदेश दिया। उस समय कुणाल पंचालचंद था। अतः अपने आँखों देखे हुए प्रसंग को उदाहरण के रूप में बताते हुए उसने यह श्लोक कहा:"अच्छा, तो इस लड़की को आने दो; यह लड़की के लिए शुभ संकेत होगा।" उसने सोचा, "वह जो कह रहा है वह सच है: यह मेरी बहू के लिए शुभ होगा। उसे कई पुत्र और पुत्रियाँ प्राप्त होंगी," और वह उसे वहाँ ले आया। तंबू के अंदर जाते ही उसे राजा से पहली नज़र में ही प्रेम हो गया और उसने उसके साथ दुराचार किया, और राजा ने उसे अपनी मुहरबंद अंगूठी दे दी। जब काम पूरा हो गया और वह तंबू से बाहर आई तो लोगों ने उससे पूछा, "उसने किसे जन्म दिया है?" "सोने के रंग का एक लड़का?" तो वह सज्जन उसे लेकर चला गया। पुजारी राजा के पास आया और बोला, "महाराज, आपने देखा है कि एक युवती भी इतनी दुष्ट है। अन्य स्त्रियाँ कितनी अधिक दुष्ट होंगी?" "महोदय, क्या आपने उसे कुछ दिया?" "हाँ, मैंने उसे अपनी अंगूठी दी।" "मैं उसे इसे रखने नहीं दूँगा।" और वह जल्दी से उनके पीछे गया और रथ को पकड़ लिया, और जब उन्होंने पूछा, "इसका क्या मतलब है?" तो उसने कहा, "यह लड़की मेरी ब्राह्मण पत्नी द्वारा तकिये पर रखी गई अंगूठी लेकर चली गई है: अंगूठी लौटा दो, महोदया।" अंगूठी देते हुए उसने ब्राह्मण के हाथ पर खरोंच मारते हुए कहा, "ले लो, बदमाश।" इस प्रकार ब्राह्मण ने कई तरीकों से राजा को दिखाया कि कई अन्य स्त्रियाँ भी दुराचार की दोषी हैं, और कहा, "यहाँ बस इतना ही काफी है; अब हम कहीं और चलते हैं, महाराज।" राजा पूरे भारत में घूमे, और उन्होंने कहा, "सभी स्त्रियाँ एक जैसी होती हैं। वे हमारे लिए क्या हैं? चलो वापस चलते हैं।" तो वे सीधे बनारस अपने घर चले गए। पुजारी ने कहा, "महाराज, सभी स्त्रियों का यही हाल है; उनका स्वभाव इतना दुष्ट है।" "रानी किन्नरा को क्षमा कर दो।" अपने पुजारी की प्रार्थना पर उसने उसे क्षमा कर दिया, परन्तु उसे महल से निकाल दिया। और जब उसने उसे निकाल दिया, तो उसने दूसरी रानी चुनी, और लंगड़ी को भगा दिया तथा गुलाब-बाँह की शाखा को काटने का आदेश दिया। उस समय कुणाल पंचालचंद था। अतः अपने आँखों देखे हुए प्रसंग को उदाहरण के रूप में बताते हुए उसने यह श्लोक कहा:"इसका क्या अर्थ है?" उसने कहा, "यह लड़की मेरी ब्राह्मण पत्नी द्वारा तकिये पर रखी अंगूठी लेकर चली गई है: हे महिला, अंगूठी लौटा दो।" अंगूठी लौटाते हुए उसने ब्राह्मण के हाथ पर खरोंच मार दी और बोली, "ले लो, बदमाश।" इस प्रकार ब्राह्मण ने कई तरीकों से राजा को दिखाया कि कई अन्य स्त्रियाँ भी दुराचार की दोषी हैं, और कहा, "यहाँ बस इतना ही काफी है; महाराज, अब हम कहीं और चलते हैं।" राजा पूरे भारत में घूमे, और उन्होंने कहा, "सभी स्त्रियाँ एक जैसी होती हैं। वे हमारे लिए क्या हैं? हमें वापस लौटना चाहिए।" इसलिए वे सीधे बनारस लौट गए। पुजारी ने कहा, "महाराज, सभी स्त्रियों का यही स्वभाव है; उनका स्वभाव इतना दुष्ट है। रानी किन्नरा को क्षमा कर दीजिए।" पुजारी की प्रार्थना पर उन्होंने उसे क्षमा कर दिया, लेकिन उसे महल से निकाल दिया। और जब उन्होंने उसे वहाँ से निकाल दिया, तो उन्होंने दूसरी रानी को चुना, और लंगड़ी को भगा दिया और गुलाब-बहुल की शाखा को काटने का आदेश दिया। उस समय कुणाला पंचालचंद थे। अतः उन्होंने अपने द्वारा प्रत्यक्ष रूप से देखी गई घटना का वर्णन करते हुए, उदाहरण के रूप में यह श्लोक कहा:"इसका क्या अर्थ है?" उसने कहा, "यह लड़की मेरी ब्राह्मण पत्नी द्वारा तकिये पर रखी अंगूठी लेकर चली गई है: हे महिला, अंगूठी लौटा दो।" अंगूठी लौटाते हुए उसने ब्राह्मण के हाथ पर खरोंच मार दी और बोली, "ले लो, बदमाश।" इस प्रकार ब्राह्मण ने कई तरीकों से राजा को दिखाया कि कई अन्य स्त्रियाँ भी दुराचार की दोषी हैं, और कहा, "यहाँ बस इतना ही काफी है; महाराज, अब हम कहीं और चलते हैं।" राजा पूरे भारत में घूमे, और उन्होंने कहा, "सभी स्त्रियाँ एक जैसी होती हैं। वे हमारे लिए क्या हैं? हमें वापस लौटना चाहिए।" इसलिए वे सीधे बनारस लौट गए। पुजारी ने कहा, "महाराज, सभी स्त्रियों का यही स्वभाव है; उनका स्वभाव इतना दुष्ट है। रानी किन्नरा को क्षमा कर दीजिए।" पुजारी की प्रार्थना पर उन्होंने उसे क्षमा कर दिया, लेकिन उसे महल से निकाल दिया। और जब उन्होंने उसे वहाँ से निकाल दिया, तो उन्होंने दूसरी रानी को चुना, और लंगड़ी को भगा दिया और

गुलाब-बहुल की शाखा को काटने का आदेश दिया। उस समय कुणाला पंचालचंद थे। अतः उन्होंने अपने द्वारा प्रत्यक्ष रूप से देखी गई घटना का वर्णन करते हुए, उदाहरण के रूप में यह श्लोक कहा:

कंदारी और किन्नरा की कथा से इतना स्पष्ट होता है कि
सभी स्त्रियाँ अपने घर में आनंद नहीं पा पातीं।
इस प्रकार एक पत्नी अपने पति को, चाहे वह कितना भी बलवान और शक्तिशाली क्यों न हो, त्याग देती है
और किसी भी अन्य पुरुष के साथ, चाहे वह लंगड़ा ही क्यों न हो, गलत राह पर चल पड़ती है।

एक और कहानी यह है: एक समय की बात है, बनारस के राजा बाका ने अपने राज्य पर विधिपूर्वक शासन किया। उस समय बनारस के पूर्वी द्वार के पास रहने वाले एक गरीब व्यक्ति की एक पुत्री थी जिसका नाम पंचपा (*37) था। कहा जाता है कि पिछले जन्म में वह एक गरीब व्यक्ति की पुत्री के रूप में मिट्टी गूंथ रही थी और दीवार पर प्लास्टर कर रही थी। तभी एक पच्चेकबुद्ध ने सोचा, "इस पहाड़ी गुफा को साफ-सुथरा बनाने के लिए मुझे मिट्टी कहाँ से मिलेगी? यह मुझे बनारस में मिल जाएगी।" इसलिए अपना लबादा ओढ़कर और हाथ में कटोरा लेकर वह शहर में गया और उस स्त्री से कुछ दूरी पर खड़ा हो गया। वह क्रोधित थी और उसे देखकर सोचने लगी, "अपने दुष्ट हृदय में वह भीख के साथ-साथ मिट्टी भी माँग रहा है।" पच्चेकबुद्ध बिना हिले-डुले वहीं खड़ा रहा। जब उसने देखा कि वह हिल नहीं रहा है, तो उसका मन बदल गया, और उसे फिर से देखकर उसने कहा, "पुजारी, आपके पास मिट्टी नहीं है," और उसने मिट्टी का एक बड़ा टुकड़ा लिया और उसे उसके कटोरे में डाल दिया, और उस मिट्टी से उसने अपनी गुफा को साफ-सुथरा कर दिया। और उस मिट्टी के टुकड़े के इनाम के तौर पर, उसका शरीर छूने में कोमल हो गया, लेकिन उसके क्रोधित रूप के कारण उसके हाथ, पैर, मुंह, आंखें और नाक बेहद बदसूरत हो गए, और इसलिए लोग उसे पंचपापा (पांच दोष) के नाम से जानने लगे। अब बनारस का राजा एक बार रात में शहर में घूम रहा था और इस जगह पर आया, और वह गांव की लड़कियों के साथ खेल रही थी, और राजा को न पहचानकर उसने उसका हाथ पकड़ लिया। उसके स्पर्श के परिणामस्वरूप राजा ने अपना सारा नियंत्रण खो दिया, और मानो उसे किसी दिव्य स्पर्श का अनुभव हुआ हो, और वासना से भर कर उसने उसका हाथ पकड़ लिया, हालांकि वह देखने में बेहद बदसूरत थी, और पूछा कि वह किसकी बेटी है। जब उसने उत्तर दिया, "द्वार के पास रहने वाले की बेटी," (*38) और उसने सुना कि वह अविवाहित है, तो उसने कहा, "मैं तुम्हारा पति बनूँगा: जाओ और अपने माता-पिता से सहमति ले लो।" वह अपने माता-पिता के पास गई और बोली, "एक आदमी मुझसे शादी करना चाहता है।" उनके सहमत होने पर, और यह कहने पर कि, "वह भी एक गरीब, दयनीय प्राणी होगा, अगर वह आप जैसी स्त्री से शादी करना चाहता है," वह आई और उसे बताया कि उसके माता-पिता सहमत हो गए हैं। इसलिए वह उसी घर में उसके साथ रहने लगा, और सुबह-सुबह अपने महल की ओर चल पड़ा। उस दिन से राजा लगातार भेस बदलकर वहाँ आता था, और किसी दूसरी स्त्री की ओर देखता भी नहीं था। अब एक दिन उसके पिता को खूनी दस्त हो गए। उनकी बीमारी का इलाज दूध, घी (स्पष्ट मक्खन), शहद और चीनी से बनी चावल की दलिया की निरंतर आपूर्ति थी, और यह उनकी गरीबी के कारण वे प्राप्त नहीं कर सके। तब माँ ने बेटी से कहा, "मेरी प्यारी, क्या तुम्हारा पति हमारे लिए कुछ चावल की दलिया ला सकता है?" “प्यारी माँ,” उसने कहा, “मेरे पति तो हमसे भी ज़्यादा गरीब होंगे; लेकिन अगर ऐसा है भी, तो मैं उनसे पूछ लूँगी: चिंता मत करो।” इतना कहकर, उसके लौटने के समय के आसपास, वह मानो बहुत दुखी होकर बैठ गई। जब राजा आया तो उसने पूछा कि वह इतनी उदास क्यों है, और बात सुनकर उसने कहा, “मेरी प्यारी,मुझे यह शक्तिशाली औषधि कहाँ से मिलेगी?” और उसने सोचा, “मैं इस तरह बार-बार यहाँ नहीं आ सकता; आने-जाने में होने वाले जोखिम पर विचार करना चाहिए; लेकिन अगर मैं उसे दरबार में ले जाऊँ, उसकी कोमल स्पर्श क्षमता से अनजान रहते हुए, तो वे मेरा मज़ाक उड़ाएँगे और कहेंगे, “हमारे राजा एक प्रेतनी के साथ लौटे हैं।” लेकिन अगर मैं पूरे शहर को उसके स्पर्श से अवगत करा दूँ, तो मैं अपने ऊपर होने वाले सभी आरोपों से बच जाऊँगा।” इसलिए उसने उससे कहा, “मेरी प्रिय, परेशान मत हो: मैं तुम्हारे पिता के लिए चावल का दलिया लाता हूँ,” और ऐसा कहकर, उसके साथ आनंद लेने के बाद वह अपने महल लौट गया। अगले दिन उसने उसके लिए चावल का दलिया उबलवाया, और कुछ पत्ते लेकर उनसे दो टोकरियाँ बनाईं, एक में उसने दलिया रखा, और दूसरी में एक रत्नजड़ित मुकुट रखकर उन्हें बंद कर दिया। और रात को वह आया और बोला, “मेरी प्रिय, हम गरीब हैं: मैंने इसे बड़ी मुश्किल से प्राप्त किया है।” तुम्हें अपने पिता से कहना है, "आज इस टोकरी से चावल का दलिया खाओ, और कल उस टोकरी से।" उसने वैसा ही किया। उसके पिता ने थोड़ा सा दलिया खाकर ही तृप्त हो गए, क्योंकि यह बहुत पौष्टिक था। बचा हुआ दलिया उसने अपनी माँ को दे दिया और खुद भी खा लिया। तीनों बहुत प्रसन्न हुए और रत्नजड़ित मुकुट वाली टोकरी उन्होंने अगले दिन के लिए रख दी। राजा अपने महल पहुँचकर अपना चेहरा धोकर बोला, "मेरा मुकुट लाओ।" उनके यह कहने पर कि "हमें यह नहीं मिल रहा है," उसने कहा, "पूरे शहर में खोजो।" उन्होंने खोजा, लेकिन फिर भी नहीं मिला। "तो फिर," उसने कहा, "शहर के बाहर गरीबों के घरों में खोजो, सबसे पहले पत्तों से भरी टोकरियों में।" उन्होंने खोजा और एक घर में रत्नजड़ित मुकुट मिला। "इस स्त्री के माता-पिता चोर हैं," चिल्लाते हुए उन्होंने उन्हें बाँधकर राजा के पास लाया। तब उसके पिता ने कहा, "महाराज, हम चोर नहीं हैं; एक आदमी हमारे लिए यह रत्न लाया था।" "वह कौन था?" राजा ने पूछा। “मेरे दामाद,” उसने उत्तर दिया। जब उससे पूछा गया कि वह कहाँ है, तो उसने कहा, “मेरी बेटी जानती है।” फिर उसने उससे बात की। “मेरी प्यारी,” उसने कहा, “तुम जानती हो कि तुम्हारा पति कौन है।” “मैं नहीं जानती।” “अगर ऐसा है, तो हम बर्बाद हो गए।” “प्रिय पिता, वह अंधेरा होने पर आता है और उजाला होने से पहले चला जाता है, इसलिए मैं उसका चेहरा नहीं जानती, लेकिन मैं उसे उसके हाथ के स्पर्श से पहचान सकती हूँ।” उसके पिता ने यह बात राजा के

अधिकारियों को बताई, और उन्होंने राजा को बता दी। राजा ने पूरी बात से अनभिज्ञ होने का नाटक करते हुए कहा, "ठीक है, उस स्त्री को महल के प्रांगण में एक तंबू के पर्दे में रख दो और पर्दे में एक आदमी के हाथ जितना बड़ा छेद कर दो और नागरिकों को इकट्ठा करो, और चोर को उसके हाथ के स्पर्श से पहचानो।" अधिकारियों ने वैसा ही किया जैसा उसने उनसे कहा था। उसके पास जाकर और उसे देखकर वे घृणा से भर गए, और कहा,"वह एक प्रेत है," और घृणा के मारे उन्होंने उसे छूने की हिम्मत नहीं की। लेकिन वे उसे महल के प्रांगण में एक पर्दे के पीछे ले आए और सभी नागरिकों को इकट्ठा किया। जैसे ही कोई व्यक्ति उस छेद से अपना हाथ बाहर निकालता, वह उसका हाथ पकड़कर कहती, "यह वह आदमी नहीं है।" लोग उसके दिव्य स्पर्श से इतने मोहित हो गए कि वे उससे अलग नहीं हो सके। उन्होंने सोचा, "यदि वह दंड के योग्य है, भले ही हमें उसे लाठी से मारना पड़े, फिर भी हम उसके लिए कोई भी दासतापूर्ण कार्य करने को तैयार हैं, और उसे अपनी विवाहित पत्नी के रूप में घर ले जाएंगे।" तब राजा के आदमियों ने उन्हें पीटा और भगा दिया, और वे सभी, वायसराय से शुरू होकर, पागलों की तरह व्यवहार करने लगे। तब राजा ने कहा, "क्या मैं ही वह आदमी हो सकता हूँ?" और अपना हाथ आगे बढ़ाया। उस स्त्री ने उसका हाथ पकड़कर जोर से चिल्लाया, "मैंने चोर को पकड़ लिया है।" राजा ने अपने आदमियों से पूछा, "जब उसने तुम्हारा हाथ पकड़ा, तो तुमने क्या सोचा?" उन्होंने राजा को सब कुछ स्पष्ट-स्पष्ट बता दिया। तब राजा ने कहा, "इसीलिए मैंने उन्हें उसे अपने घर लाने के लिए कहा था। यदि उन्हें उसके स्पर्श के बारे में कुछ भी पता न होता, तो वे मेरा तिरस्कार करते। अब जब तुम सबने मुझसे सच्चाई जान ली है, तो बताओ कि वह किसके घर में पत्नी के रूप में रहेगी?" उन्होंने कहा, "महाराज, आपके घर में।" तब, विधिपूर्वक जल छिड़काव के साथ, राजा ने उसे अपनी मुख्य पत्नी के रूप में स्वीकार किया और उसके माता-पिता को अपार शक्ति प्रदान की। तब से अपने मोह में डूबे राजा ने न तो उसके बारे में कोई पूछताछ की और न ही किसी अन्य स्त्री की ओर देखा। अन्य रानियों ने उसके रहस्य को जानने का प्रयास किया। एक दिन उसने सपने में कुछ संकेत देखा कि वह दो राजाओं की मुख्य रानी होगी, और उसने अपना सपना राजा को बताया। राजा ने स्वप्न व्याख्याकारों को बुलाया और पूछा, "उसने जो सपना देखा है उसका क्या अर्थ है?" अब उन्हें दूसरी स्त्रियों से रिश्वत मिल गई थी, और उन्होंने कहा, "रानी का एकदम सफेद हाथी की पीठ पर बैठना आपकी मृत्यु का संकेत है, और हाथी की पीठ पर सवार होकर चंद्रमा को छूना इस बात का संकेत है कि वह आपके विरुद्ध किसी शत्रु राजा को लाएगी।" "तो फिर क्या किया जाए?" उसने पूछा। "महाराज, आप उसे मार नहीं सकते, बल्कि आपको उसे एक जहाज पर बिठाकर नदी में बहा देना चाहिए।" राजा ने रात में उसे भोजन, वस्त्र और आभूषणों के साथ जहाज पर बिठाया और नदी में बहा दिया। जैसे-जैसे वह नदी के साथ बहती हुई जहाज में जा रही थी, उसका सामना राजा पवारिया से हुआ, जो नदी में आनंद ले रहा था। उसके सेनापति ने उसे देखकर कहा, "यह जहाज मेरा है।" राजा ने कहा, "इसका माल मेरा है," और जब जहाज उनके पास पहुँचा और उन्होंने उस स्त्री को देखा तो उसने कहा, "तुम कौन हो, जो बिल्कुल प्रेत जैसी दिखती हो?" उसने मुस्कुराते हुए कहा कि वह राजा बाका की मुख्य पत्नी है, और उसने उसे अपनी पूरी कहानी सुनाई।और वह पूरे भारत में पंचपपा के नाम से प्रसिद्ध थी। तब राजा ने उसका हाथ पकड़कर उसे जहाज से बाहर निकाला, और हाथ पकड़ते ही उसके स्पर्श से वह वासना से भर उठा, और अपनी अन्य पत्नियों को स्त्री कहलाने के योग्य नहीं समझा, और उसे मुख्य रानी का पद दिया, और वह उसे अपने प्राणों के समान प्रिय थी। बाका ने यह सब सुनकर कहा, "मैं उसे अपनी रानी नहीं बनने दूँगा," और सेना जुटाकर नदी के दूसरी ओर एक बंदरगाह में डेरा डाला, और यह संदेश भेजा कि पावरिया या तो अपनी पत्नी को सौंप दे या युद्ध करे। उसका प्रतिद्वंद्वी युद्ध के लिए तैयार था, लेकिन दोनों राजाओं के सलाहकारों ने कहा, "एक स्त्री के लिए मरने की कोई आवश्यकता नहीं है। उसके पहले पति होने के नाते वह बाका की है, लेकिन उसके द्वारा उसे जहाज से बचाने के कारण वह पावरिया की है। इसलिए उसे सात-सात दिनों के लिए बारी-बारी से दोनों के घर में रहने दिया जाए।" काफी विचार-विमर्श के बाद उन्होंने दोनों राजाओं को इस विचार के लिए राजी कर लिया, और वे दोनों अत्यंत प्रसन्न हुए। उन्होंने नदी के दोनों किनारों पर नगर बसाए और वहाँ निवास करने लगे। उस स्त्री ने दोनों राजाओं की प्रधान पत्नी का पद स्वीकार कर लिया, और वे दोनों उस पर मोहित हो गए। वह उनमें से एक के घर में सात दिन रही, फिर एक नाव से दूसरे के घर चली गई। नदी के मध्य में उसने नाव चलाने वाले नाविक, जो एक लंगड़ा और गंजा बूढ़ा व्यक्ति था, के साथ दुर्व्यवहार किया। उस समय पक्षियों का राजा कुनाला, बाका था, और उसने इस घटना को अपनी आँखों से देखी हुई घटना के रूप में वर्णित किया, और इसे समझाने के लिए उसने इस श्लोक को दोहराया:और वे दोनों उस पर मोहित हो गए थे। वह उनमें से एक के घर में सात दिन रही, फिर एक जहाज से दूसरे के घर चली गई, और जब वह नदी के बीच में थी, तो उसने जहाज के नाविक, एक लंगड़े और गंजे बूढ़े आदमी के साथ दुर्व्यवहार किया। उस समय पक्षियों का राजा कुनाला बाका था, और इसलिए उसने इसे अपनी आँखों से देखी हुई घटना के रूप में बताया, और इसे समझाने के लिए उसने इस श्लोक को दोहराया:और वे दोनों उस पर मोहित हो गए थे। वह उनमें से एक के घर में सात दिन रही, फिर एक जहाज से दूसरे के घर चली गई, और जब वह नदी के बीच में थी, तो उसने जहाज के नाविक, एक लंगड़े और गंजे बूढ़े आदमी के साथ दुर्व्यवहार किया। उस समय पक्षियों का राजा कुनाला बाका था, और इसलिए उसने इसे अपनी आँखों से देखी हुई घटना के रूप में बताया, और इसे समझाने के लिए उसने इस श्लोक को दोहराया:

पवारिका और बका की पत्नी भी,
(दो ऐसे राजा जिनकी वासना की कोई सीमा नहीं थी)
अपने समर्पित पति के दास के साथ पाप करती है;
वह किस नीच दुष्ट के साथ दुराचार नहीं करेगी?

एक और कहानी: एक समय की बात है, ब्रह्मदत्त की पत्नी, पिंगियानी, ने अपनी खिड़की खोली और बाहर देखा तो उसे एक दूल्हा दिखाई दिया। जब राजा सो गए, तो वह खिड़की से नीचे उतर गई और उसके साथ दुराचार किया। फिर वह वापस महल में चढ़ गई और इत्र लगाकर राजा के साथ लेट गई। एक दिन राजा ने सोचा, "मुझे आश्चर्य है कि आधी रात को रानी का शरीर हमेशा ठंडा क्यों रहता है: मुझे इसकी जांच करनी चाहिए।" तो एक दिन उसने सोने का नाटक किया और उठकर उसके पीछे गया और उसे एक दूल्हे के साथ दुराचार करते हुए देखा। वह वापस अपने कमरे में गया और देखा कि व्यभिचार करने के बाद वह भी आकर पलंग पर लेट गई। अगले दिन राजा ने अपने मंत्रियों के सामने उसे बुलाया और उसके दुराचार का खुलासा करते हुए कहा, "सभी स्त्रियाँ एक समान पापी हैं।" उसने उसका अपराध क्षमा कर दिया, हालाँकि इसके लिए उसे मृत्युदंड, कारावास, अंग-भंग या चीर-फाड़ की सजा मिलनी चाहिए थी, लेकिन उसने उसे उच्च पद से हटा दिया और किसी और को अपनी रानी बना लिया। उस समय कुणाल राजा ब्रह्मदत्त थे, और इसीलिए उन्होंने यह कहानी इस प्रकार सुनाई जैसे उन्होंने इसे स्वयं अपनी आँखों से देखा हो, और उदाहरण के तौर पर उन्होंने इस श्लोक को दोहराया:

सुंदर पिंगियानी ब्रह्मदत्त की प्रिय पत्नी थी
, जो पृथ्वी के सर्वविजयी स्वामी थे,
फिर भी उसने अपने समर्पित पति के दास के साथ पाप किया,
और व्यभिचार के कारण राजा और बेईमानी दोनों को खो दिया।
पुरानी कहानियों में महिलाओं के पापों का वर्णन करने के बाद, एक और तरीके से, उनके कुकर्मों के बारे में बात करते हुए, उन्होंने कहा:

स्त्रियाँ बेचारी, कमजोर प्राणी हैं, कृतघ्न और धोखेबाज हैं।
अगर कोई पुरुष उन पर मोहित न हो तो वह उनकी बातों पर विश्वास नहीं करेगा।
वे कर्तव्य की पुकार या कृतज्ञता की निवेदन पर जरा भी ध्यान नहीं देते,
माता-पिता के प्रेम और भाईचारे के बंधनों के प्रति असंवेदनशील रहते हैं,
न्याय के हर नियम का उल्लंघन करते हुए, वे निर्लज्जतापूर्वक
अपने सभी कार्यों में अपने हृदय की इच्छा का पालन करते हैं।
चाहे वे उसके साथ कितने ही समय तक रहें, चाहे वह कितना ही दयालु और प्रेममय हो, चाहे
उसका हृदय कितना ही कोमल हो और वह उनके लिए जीवन के समान प्रिय हो,
संकट और संकट के समय में वे उसे छोड़ ही देंगे और छोड़ना ही पड़ेगा,
क्योंकि मैं महिलाओं पर कभी भरोसा नहीं कर सकता।
कितनी बार स्त्री का मन चंचल बंदर की तरह पाया जाता है,
या किसी पेड़ की छाया की तरह जो ऊँचाई (*39) या गहराई पर पड़ती है,
स्त्री के हृदय में बसा उद्देश्य भी कितना परिवर्तनशील होता है,
जैसे पहिए का टायर बिना रुके या आराम किए तेज़ी से घूमता है।
जब भी वे सोच-समझकर चारों ओर देखते हैं और
किसी धनी व्यक्ति को अपने वश में करने और उसे अपना शिकार बनाने का रास्ता पाते हैं, तो
वे ऐसे भोले-भाले लोगों को मीठी-मीठी बातों से अपने वश में कर लेते हैं,
ठीक वैसे ही जैसे कंबोडियाई घुड़सवार जड़ी-बूटियों से सबसे उग्र घोड़े को भी वश में कर लेता है।

लेकिन अगर वे सावधानीपूर्वक चारों ओर देखने के बावजूद उसकी संपत्ति पर कब्जा करने और उसे अपना शिकार बनाने का रास्ता नहीं देख पाते ,
तो वे उसे भगा देते हैं, मानो वह सबसे दूर के किनारे पर पहुँच गया हो
और उस नौका को छोड़ देता है जिसकी उसे फिर कभी आवश्यकता नहीं होगी।
भयंकर भस्म कर देने वाली ज्वाला की तरह वे उसे अपने आलिंगन में जकड़ लेते हैं,
या फिर बाढ़ की धारा की तरह उसे बहा ले जाते हैं;
वे उस व्यक्ति को भी उतना ही लुभाते हैं जितना कि उससे जिसे वे प्यार करते हैं,
ठीक वैसे ही जैसे कोई जहाज पास और दूर के किनारों को समान रूप से गले लगाता है।
वे एक या दो लोगों से संबंधित नहीं हैं, वे खुले बाड़े की तरह हैं,
जैसे कोई जाल से हवा पकड़ सकता है, जैसे महिलाएं अपना दबदबा बनाए रखती हैं।
नदी, सड़क, या पीने के पानी का शेड (*40), सभा भवन या सराय की तरह,
वैसे ही सभी के लिए महिलाएं स्वतंत्र हैं, कोई सीमा उनके पाप की जाँच नहीं करती।

वे काले सर्प के सिर की तरह गिरे हुए हैं, आग की तरह भूखे हैं,
गायों की तरह उत्तम घास चुनने वाले, वे तीव्र इच्छाओं के प्रेमी हैं।
हाथी, काले सर्प और घी से जलने वाली ज्वाला से,
राजा नियुक्त पुरुष और स्त्री से हमें दूर रहना चाहिए।
जो भी सावधान रहेगा, इन सभी को अपना सबसे बड़ा शत्रु मानेगा।
वास्तव में, इनके स्वभाव को जानना अत्यंत कठिन है।
जो महिलाएं बहुत चतुर हों या देखने में बहुत सुंदर हों,
और जिनकी कई पुरुष प्रशंसा करते हों—उन सभी से बचना चाहिए:
पड़ोसी की पत्नी और वह जो किसी धनी पुरुष को अपना जीवनसाथी बनाना चाहती हो,
इस तरह की पांचों महिलाओं से किसी भी पुरुष को संबंध नहीं बनाना चाहिए।
जब उन्होंने ऐसा कहा तो लोगों ने उस महान व्यक्ति की प्रशंसा करते हुए कहा, "वाह, बहुत खूब!" और इन उदाहरणों में स्त्रियों के दोषों का वर्णन करने के बाद वे चुप हो गए। उन्हें सुनकर गिद्ध राजा आनंद ने कहा, "मेरे मित्र कुणाल, मैं भी अपने ज्ञान के बल पर स्त्रियों के दोषों का वर्णन करूँगा," और उन्होंने उनका वर्णन करना शुरू कर दिया। भगवान बुद्ध ने उदाहरण देते हुए कहा: "तब, सचमुच, गिद्ध राजा आनंद ने कुणाल पक्षी के कथन के आरंभ, मध्य और अंत को चिह्नित करते हुए, इस समय ये श्लोक कहे:

भले ही इस दुनिया में सोने के गहनों से परिपूर्ण पुरुष को
स्त्री का स्नेह प्राप्त हो,
फिर भी अवसर मिलने पर वह उसे अपमानित भी कर सकती है।
सावधान रहो, अन्यथा तुम ऐसी दुष्ट स्त्रियों के हाथों में पड़ जाओगे।
वह मर्दाना जोश (*41) दिखा सकता है, सांसारिक कलंक से मुक्त हो सकता है,
उसका प्रेमी शायद आकर्षण और प्रेममय हो,
मुसीबत और संकट के समय में वाह उसे छोड़ ही देगी, और उसे छोड़ना ही पड़ेगा,
लेकिन स्त्री जाति होने के नाते मैं कभी उस पर भरोसा नहीं कर सकती।
उसे इस बात पर भरोसा नहीं करना चाहिए कि "मुझे लगता है कि वह मुझे पसंद करती है,"
और न ही उसे इस बात पर भरोसा करना चाहिए कि उसके सामने उसकी आँखों से अक्सर आँसू बहते हैं;
वे उस आदमी को भी उतना ही लुभाती हैं जितना कि उस आदमी को जिसे वे प्यार करती हैं,
ठीक वैसे ही जैसे एक जहाज पास और दूर के किनारों को समान रूप से गले लगाता है।
बहुत पहले पत्तों और शाखाओं से बिखरे हुए कूड़ेदान पर भरोसा मत करो (*42),
अपने पूर्व मित्र पर भरोसा मत करो, जो संयोगवश अब शत्रु बन गया है,
किसी राजा पर भरोसा मत करो क्योंकि तुम सोचते हो, "वह कभी मेरा साथी था,
किसी महिला पर भरोसा मत करो, भले ही उसने तुम्हें दस बच्चे दिए हों।
स्त्रियाँ सब सुख-सुविधाओं की चाहने वाली और वासना में बेलगाम होती हैं,
नैतिक नियमों का उल्लंघन करने वाली होती हैं: ऐसी स्त्रियों पर भरोसा न करें।
पत्नी अपने पति के सामने असीम प्रेम का दिखावा कर सकती है;
उस पर भरोसा न करें: आम स्त्रियाँ किसी भी फिसलन स्थल की तरह होती हैं।
अंग-भंग करने या जान से मारने को तैयार, वे किसी भी चीज़ से पीछे नहीं हटते,
और गला काटने के बाद उसका खून भी पी जाते हैं:
कोई भी व्यक्ति उन पर अपना प्रेम न जताए, वे नीच वासनाओं के प्राणी हैं,
कामुक और किसी गंगा के घाट की तरह साधारण।
वे अपनी वाणी में असत्य और सत्य में कोई भेद नहीं करते,
जैसे गायें उत्तम घास चुनती हैं, वैसे ही वे धनी प्रेमियों की तलाश करते हैं।
एक आदमी को वे अपनी नज़रों और मुस्कान से लुभाते हैं, दूसरे को अपनी चाल से,
कुछ को वे अजीब वेश बदलकर आकर्षित करते हैं (*43), दूसरों को मीठी बातों से।
बेईमान, क्रूर और कठोर हृदय वाली, जिनके शब्द चीनी की तरह मीठे होते हैं,
वे अपने विवाहित पतियों को धोखा देने के लिए हर संभव तरीका जानती हैं।
निःसंदेह सभी स्त्रियाँ अपवित्र हैं, उनकी शर्म की कोई सीमा नहीं है,
वे आवेशित और निर्भीक हैं, ज्वाला की तरह सब कुछ भस्म कर देती हैं।
स्त्रियाँ इस प्रकार निर्मित नहीं होतीं कि किसी पुरुष से प्रेम करें और किसी से घृणा करें;

वे उस पुरुष को भी उतना ही लुभाती हैं जिससे वे घृणा करती हैं, जितना कि उस पुरुष को जिसे वे प्यार करती हैं,
ठीक वैसे ही जैसे एक जहाज पास और दूर के किनारों को समान रूप से गले लगाता है।
यह महिलाओं के प्रति प्रेम या घृणा का मामला नहीं है, बल्कि
वे सोने के लिए पुरुष को ऐसे गले लगाती हैं जैसे परजीवी पेड़ को।
एक आदमी शव जला सकता है या मंदिरों से सूखे फूल भी इकट्ठा कर सकता है (*44),
घोड़े या हाथी का रखवाला बन सकता है, या बैलों की देखभाल कर सकता है,
फिर भी ऐसी नीची जातियों की औरतें पैसे के लिए दौड़ेंगी।
कुलीन कुल में जन्मे व्यक्ति को वे गरीब के समान ही छोड़ देते हैं, जैसे कि वह कोई नीच और बहिष्कृत व्यक्ति हो;
ऐसे व्यक्ति को वे सड़ते हुए मांस के समान मानते हैं; यदि वह अमीर हो, तो वे उसे तुरंत कहीं और भेज देते हैं।
इस प्रकार, गिद्धों के राजा आनंद ने अपने ज्ञान के अनुसार ही स्त्री-पुरुषों के दुर्गुणों का वर्णन किया और फिर मौन धारण किया। नारद ने भी उनकी बातें सुनकर, अपने ज्ञान के अनुसार ही, उनके दुर्गुणों का वर्णन किया। इसका स्पष्टीकरण देते हुए गुरु ने कहा: "तब नारद ने गिद्धों के राजा आनंद की बातों का आरंभ, मध्य और अंत सुनकर, इस बिंदु पर इन श्लोकों को दोहराया:

चार चीजें कभी संतुष्ट नहीं कर सकतीं—मेरी इन बातों को ध्यान से सुनो—
सागर, राजा, ब्राह्मण, स्त्री जाति, हे पक्षियों के राजा, ये चारों।
पृथ्वी पर बहने वाली सभी धाराएँ जो अपना घर पाती हैं, वे सागर को नहीं भर सकतीं,
यद्यपि सभी धाराएँ उसके जल में मिल सकती हैं, फिर भी कुछ कमी रह जाती है।
एक ब्राह्मण (*45) अपने वेदों और अपनी पौराणिक परंपरा का अध्ययन करता है,
फिर भी उसे पवित्र ज्ञान की कमी है और वह अधिक से अधिक की लालसा रखता है।
एक राजा विजय द्वारा संसार, उसके पर्वतों, समुद्रों और सब कुछ पर अधिकार कर लेता है,
उसमें छिपे अनंत खजाने उसे अपनी ओर आकर्षित कर सकते हैं,
फिर भी वह समुद्र पार के संसारों के लिए आहें भरता है, क्योंकि वह इसे बहुत छोटा मानता है।
एक महिला के आठ पति हो सकते हैं, जो उसकी इच्छा के प्रति आज्ञाकारी हों,
सभी वीर नायक हों, प्रेम के कर्तव्यों को पूरा करने में सक्षम हों,
फिर भी वह नौवें पति के प्रति अपना प्रेम रखती है, क्योंकि उसे अभी भी कुछ कमी महसूस होती है।
स्त्रियाँ ज्वाला की तरह अपने शिकार को भस्म कर देती हैं,
स्त्रियाँ बाढ़ की तरह सब कुछ बहा ले जाती हैं,
स्त्रियाँ काँटों की तरह चुभती हैं,
स्त्रियाँ अक्सर सोने के लालच में भटक जाती हैं।
वह आदमी जो जाल से हवा को पकड़ सकता है,
या अकेले ही समुद्र से पानी निकाल सकता है,
एक हाथ से ताली बजा सकता है, जिसने कभी हिम्मत करके
अपने विचारों को किसी सुंदर स्त्री की ओर बढ़ने दिया हो।
महिलाओं के साथ, चतुर दुष्ट महिलाओं के साथ, सत्य निश्चित रूप से एक दुर्लभ पाया जाता है,
उनके तरीके समुद्र में मछलियों की तरह ही पेचीदा होते हैं (*46)।
मीठी बातें करने वाले, संतुष्ट न कर पाने वाले, नदियों की तरह जिन्हें भरना मुश्किल होता है,
वे नीचे-नीचे डूबते जाते हैं: जो महिलाएं उन्हें जानती हैं उन्हें उनसे दूर ही भाग जाना चाहिए।
वे स्त्री-द्वेषियों को बहकाकर सबसे पवित्र व्यक्ति को भी पतन की ओर ले जाती हैं,
वे नीचे की ओर डूबती जाती हैं: जो स्त्री-पुरुषों को जानते हैं उन्हें सबसे दूर भाग जाना चाहिए।
और वे जिसकी भी सेवा सोने या लालसा के लिए करते हैं,
उसे धधकती आग में डाले गए ईंधन की तरह जला देते हैं।
जब नारद ने इस प्रकार स्त्रियों के दुर्गुणों पर प्रहार किया, तो उस महान प्राणी ने विशेष उदाहरणों के माध्यम से एक बार फिर उनके बुरे गुणों की व्याख्या की।

इसे दर्शाने के लिए गुरु ने कहा, "तो सचमुच कुणाला पक्षी ने नारद के वचनों की शुरुआत, मध्य और अंत को जानने के बाद, उस समय इन श्लोकों को दोहराया:

एक बुद्धिमान व्यक्ति भी तेज तलवार से लैस पिशाच शत्रु से बात करने का साहस कर सकता है ,

वह भयंकर सांप पर हमला कर सकता है, लेकिन
उसे कभी भी किसी स्त्री के साथ अकेले में बात करने का साहस नहीं करना चाहिए।
स्त्री के आकर्षण से पुरुष की बुद्धि पराजित हो जाती है;
वाणी, मुस्कान, नृत्य और गीत ही उनके एकमात्र हथियार हैं:
वे अस्थिर आत्माओं को सताती हैं, जैसे पहले
दुष्ट राक्षसों ने गोबलिन द्वीप में व्यापारियों को मार डाला था।
शराब और मांस के आदी, व्यक्ति
अपनी भूख या वासना को नियंत्रित करने की व्यर्थ कोशिश करता है,
जैसे गहरे समुद्र के किसी पौराणिक राक्षस की तरह,
वे किसी व्यक्ति की सारी संपत्ति अपने पेट में गड़ा देते हैं।
कामवासना के पांच गुना साम्राज्य पर उनका अधिकार है,
उनका बढ़ता हुआ अहंकार अनियंत्रित है जिसे कोई रोक नहीं सकता:
जैसे नदियाँ सभी सागर में अपना मार्ग खोज लेती हैं,
वैसे ही लापरवाह आत्माएँ स्त्रियों का शिकार बन जाती हैं।
जिस पुरुष में ये स्त्रियाँ आनंदित होती हैं,
अपने लोभ या कामुक इच्छा से प्रेरित होकर,
हाँ, ऐसे ही तीव्र वासना से प्रज्वलित होकर,
वे उसे आग में ईंधन की तरह भस्म कर देती हैं।
यदि वे किसी अमीर व्यक्ति को जानते हैं, तो वे उस पर टूट पड़ते हैं
और उसे, उसकी सारी संपत्ति समेत, उठा ले जाते हैं।
इस प्रकार वासना से भरे हुए वे अपने हथियार उसके चारों ओर इस प्रकार फैलाते हैं,
जैसे लताएँ किसी जंगल के साल के पेड़ से चिपक जाती हैं।
विम्बा (*48) फल लाल होंठ (*49) की तरह, इतना चमकीला और रंगीन,
वे मनुष्य के विरुद्ध कई रणनीति आजमाते हैं,
कभी हँसी से हमला करते हैं, कभी मुस्कान से,
जैसे संवर (*50), कई प्रलोभनों का स्वामी।
सोने और गहनों से सजी महिलाएं,
पति के परिवार द्वारा उचित सम्मान के साथ स्वीकार की जाती हैं,
हालांकि उनके स्वामी की इच्छा के पाप से सख्ती से सावधान रहती हैं,
उसके जैसे ही राक्षस का पेट भीतर पहुँचाया जाता है (*51)।
एक आदमी बहुत प्रसिद्ध और बुद्धिमान हो सकता है,
सभी लोगों की नज़रों में आदरणीय और सम्मानित हो सकता है, फिर भी स्त्री के प्रभाव में आकर
वह राहु (ग्रहण) (*52) की बुरी शक्ति से ग्रहण लगे चंद्रमा से
अधिक चमक नहीं पाएगा ।
क्रोधित शत्रु द्वारा शत्रु पर किया गया प्रतिशोध,
या जैसा अत्याचारी अपने पीड़ितों के साथ करते हैं,
हाँ, इससे भी बदतर भाग्य उन सभी पर छाया रहता है
जो अपनी वासना के कारण स्त्री के प्रभाव में आकर गिर पड़ते हैं।
किसी व्यक्ति को खरोंचने या बाल खींचने,
पीटने, लकड़ी की छड़ियों से पीटने, घूंसे मारने या लात मारने की धमकी दी जाती है,
फिर भी वह स्त्री किसी नीच कुल के प्रेमी के पास जाती है,
उसमें उसी तरह आनंद लेती है जैसे सड़े हुए मांस में मक्खियाँ उड़ती हैं।
राजमार्गों और शाही महल में महिलाओं से दूर रहो,
शाही शहर में हो या छोटे कस्बे में,
एक अंतर्दृष्टि वाला व्यक्ति खुश होगा,
नामुची द्वारा बिछाए गए इस जाल से बचता है (*53)।
जो अच्छे तपस्वी नियम को शिथिल करता है,
नीच और घृणित आचरण करने के लिए, बेचारा मूर्ख,

स्वर्ग को नरक से बदल देगा, उनके समान
जो दोषरहित रत्न को दोषयुक्त रत्न से बदल देते हैं। (*54)
वह इस दुनिया और अगली दुनिया में तिरस्कृत है
, और दुष्ट स्त्रियों द्वारा जानबूझकर नाराज होकर,
लापरवाही से ठोकर खाता हुआ, बार-बार गिरता हुआ जाता है,
जैसे कोई दुष्ट गधा रथ समेत बेकाबू होकर दौड़ता है।
अब लोहे के भालों के रेशम-कपास के उपवन में (*55),
अब पतापना में वह गायब हो जाता है,
अब किसी क्रूर रूप में विचरण करते हुए देखा जाता है,
प्रेतलोक में जहाँ से वह कभी नहीं निकल सकता।
नंदना (*56) में प्रेम का स्वर्गीय खेल और क्रीड़ा,
पृथ्वी पर सम्राट का सर्वव्यापी प्रभुत्व,
स्त्री के कारण खो जाता है, और उसके कारण हाय!
सभी लापरवाह आत्माएं दुख की अवस्था में चली जाती हैं।
स्वर्गिक क्रीड़ा और खेल-कूद को प्राप्त करना कठिन नहीं है,
न ही पृथ्वी पर विश्वव्यापी सम्राट का प्रभुत्व,
इनसे सुनहरे घरों में अप्सराएँ भी जीत ली जाती हैं,
जिन्होंने बहुत पहले ही वासना से मुक्ति पा ली थी।
इंद्रियों के लोक से पुनर्जन्म लेकर
साकार जगत में प्रवेश करना, उच्चतर शक्तियों से परिपूर्ण होना,
अर्हतों (बुद्ध के समान प्रबुद्ध) के लोक में पुनर्जन्म द्वारा ही संभव है,
उन लोगों द्वारा जिन्होंने कामवासना में लिप्त होकर कर्म किए हैं।
वह आनंद जो सभी प्रकार के दर्द से परे है,
अविचल, बिना शर्त, अनंत,
वह उन शुद्ध आत्माओं द्वारा प्राप्त किया जाता है, जो अब निर्वाण में हैं और
जिन्होंने बहुत पहले ही कामवासना से विरक्त हो चुके हैं।
इस प्रकार, परमपिता बुद्ध ने उन्हें शाश्वत निर्वाण की प्राप्ति कराकर अपना उपदेश समाप्त किया। हिमालय में स्थित कल्पित बौने, शक्तिशाली सर्प और अन्य सभी, तथा आकाश में विराजमान देवदूत, सभी ने तालियाँ बजाते हुए कहा, "वाह! बुद्ध के समान ही मधुरता से कहा है!" आनंद (गिद्धों का राजा), नारद (ब्राह्मण देवदूत), पुन्नामुख (राजा कोयल), सभी अपने-अपने अनुयायियों के साथ अपने-अपने स्थानों पर लौट गए, और परमपिता बुद्ध भी अपने निवास स्थान पर चले गए। परन्तु अन्य समय-समय पर लौटकर परमपिता बुद्ध से उपदेश ग्रहण करते रहे और उनकी सलाह का पालन करते हुए स्वर्ग के मार्ग पर अग्रसर हुए।

गुरु ने यहाँ अपना पाठ समाप्त किया और जन्म की पहचान करते हुए अंतिम श्लोक को दोहराया:

उदयी राजसी कोयल थी, आनंद गिद्ध राजा,
अच्छा सारिपुत्र नारद, कुणाल मैं जो गाता हूं।
इस प्रकार आपको इस जन्म को समझना चाहिए।

ये भिक्षु जब आए तो गुरु की अलौकिक शक्ति से आए और अपनी शक्ति से लौट गए। गुरु ने उन्हें घने वन में समाधि की अवस्था प्राप्त करने का तरीका बताया और उसी दिन उन्होंने अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) प्राप्त कर लिया। वहाँ देवदूतों की एक विशाल सभा थी, इसलिए भगवान बुद्ध ने उन्हें महासमयसूत्र (एक विशाल समूह को दिया जाने वाला उपदेश) सुनाया।

फुटनोट:

(1)जाट देखें. संख्या 74, रुक्खधम्म-जातक

(2) मई और जून.

(3) गौतम (बुद्ध) के परिवार के विवरण के लिए बुद्धघोष के दृष्टांतों के अध्याय XXVI के रोजर्स के अनुवाद की तुलना करें।

(4)सुट्टा-निपाता, IV. 15, पृ. 173.

(5)nilaramsim vissajjetva.

(6)जाट. संख्या 475.

(7)परपत्ती, जाट. 77

(8)जाट. संख्या 322.

(9)जाट. संख्या 357.

(10)जाट. संख्या 74.

(11) क्रमांक 33 सम्मोदमन-जातक, जिसे पाठ में वट्टक-जातक कहा जाता है।

(12)उदरक्का. रूप के लिए मार्जाराका, एक बिल्ली की तुलना करें।

(13) पाठ में निर्दिष्ट।

(14)अमज्जा. इस शब्द के लिए तैत्तिरीय संहिता, VII की तुलना करें। 5. 12, 2.

(15) तीन पक्षियों के नाम छोड़े गए हैं, परभूत, सेलवाका, भीमकारा।

(16) यहाँ अनुवाद में वृक्षों आदि की एक लंबी सूची छोड़ दी गई है, जो अधिकतर, यदि बिल्कुल भी, लैटिन में उनके वानस्पतिक समकक्षों द्वारा ज्ञात हैं।

(17) इसके बाद एक लंबा अंश दिया गया है जो पहले ही दिया जा चुका है।

(18) विद्वान इस अंश को इस प्रकार समझते हैं। शायद इसका अनुवाद इस प्रकार किया जा सकता है, "तुम्हारे द्वारा वर्णित यह (पूर्ण उदाहरण) कौन है, तुम तो जोरू के गुलाम प्राणी हो?"

(19)अर्थात कोसल और काशी के राजा, वास्तविक और कथित पिता।

(20)पांचों पतियों के नाम दिए गए हैं: अज्जुन, नकुल, भीमसेन, युधिथिला, सहदेव।

(21) मतलब, "सिर उसके शरीर में कुचला हुआ।"

(22)जाट. संख्या 327.

(23)टॉनी की कथा सरित सागर, II की तुलना करें। 491-492.

(24)माता ओहाय कोसलराजनम् पढ़ना।

(25) शेर का मुख पाँचवाँ पंजा है।

(26)विद्वान गमानियो को वेसियो के समकक्ष मानते हैं।

(27)जाट. खंड संख्या 379, नेरु जातक. नेरु पर्वत की तरह, सभी वस्तुओं पर एक समान सुनहरा रंग प्रतिबिंबित होता है।

(28) दुज्जिव्हा के लिए दुज्जिव्हा "दोहरी जीभ वाला" पढ़ा जाता है।

(29) नवसमकटा शायद ही सही हो। टीका में नेरु निब्बिसेकरा को विशेषण दिया गया है। एक पाठ नवसमगटा देता है, जिसका अर्थ है जहाज की तरह तेज गति से चलना।

(30)स्वयंवर एक राजकुमारी द्वारा कई दूल्हों में से सार्वजनिक रूप से पति का चुनाव करने की प्रक्रिया थी। महाभारत में हमें पांचाल के राजा की पुत्री द्रौपदी के स्वयंवर का वर्णन मिलता है, जो बाद में पांचों पांडु राजकुमारों की सर्वसम्मत पत्नी बनीं।

(31)शेतसामणि। जैन धर्म में श्वेत वस्त्रधारी तपस्वियों का एक संप्रदाय है जिसे श्वेतांबर कहा जाता है।

(32) तुलपुट्टो पढ़ना.

(33) क्रमांक 327

(34) ऐसा लगता है कि अन्य संज्ञाओं की तरह इसके लिए भी कुछ योग्यता विशेषण की आवश्यकता है।

(35)accavadati.

(36) कुमकुमी, कुमकुमियजाता नहीं पाया जाता। विद्वान कहते हैं कोलाहलं करोति।

(37)बुद्धघोष के दृष्टांतों की तुलना करें, अध्याय XIX. स्पर्श की कहानी।

(38) द्वारवासी, जिसका अर्थ शायद किसी गरीब इलाके का निवासी हो। द्वारगामा, शहर के द्वार के बाहर का गाँव, एक उपनगर।

(39)कन्ना, जाहिरा तौर पर स्कट स्कन्ना, लेकिन किसी ने उम्मीद की होगी कि परिसर पक्कन्ना होगा।

(40) पापा, सड़क किनारे स्थित एक झोपड़ी जहाँ यात्रियों को पानी उपलब्ध कराया जाता है। जाट. सं. 302

(41)उत्थाहाका. देखें धम्मपद 280, अनुत्थाहनो,

(42) इस डर से कि कहीं उसमें कोई साँप न छिपा हो।

(43) टीकाकार इस उदाहरण के रूप में नलिनिका की कहानी, क्रमांक 526 का उल्लेख करता है।

(44)पुप्पचड्डुक, एक निम्न जाति का आदमी जो मंदिरों से सूखे फूल हटाता है, थेरा-गाथा, वी. 620, मिलिंद के प्रश्न, वी. 4, खंड II.

(45) प्रपत्र अधियनम के लिए संख्या की तुलना करें। 24, खदियानम, नं.143, अनुमोदियानम, नं. 505, परिभुंजियाना.

(46)ये पंक्तियाँ पहले आती हैं.

(48)मोमोर्डिका मोनाडेल्फ़ा.

(49)विम्बोष्ठ.

(50)संवर, एक राक्षस का नाम।

(51)नहीं. 436, समुग्गा-जातक।

(52) राहु, एक टाइटन जिसे चंद्रमा को निगलने और ग्रहण का कारण बनने वाला माना जाता है।

(53) मृत्यु, रोग और पुनर्जन्म के दुष्ट देवता मारा का एक नाम

(54)चेदागामीमानी.

(55) समकिच्च-जातक की तुलना करें

(56) नंदन, इंद्र के स्वर्ग में एक उद्यान।

स्रोत *: एच.टी. फ्रांसिस द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित*

पिछला <<<<-----ll-537-ll----->>>> अगला

जातक क्रमांक 537
महा-सुतसोमा-जातक (*1)

"सुंदर स्वादों के स्वामी," इत्यादि। यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए वरिष्ठ भिक्षु अंगुलिमाला (*2) के बारे में सुनाई (जिन्होंने गृहस्थ जीवन में सैकड़ों लोगों की हत्या की थी और अंगुलियों की माला धारण करके घूमते थे)। उनके जन्म और भिक्षु बनने की प्रक्रिया का पूर्ण वर्णन अंगुलिमाला-सूत्र में मिलता है। सत्य के एक कर्म से उन्होंने एक प्रसूति से पीड़ित महिला का जीवन बचाया, जिसके बाद उन्हें सहजता से भोजन प्राप्त होने लगा और वैराग्य (ध्यान) का अभ्यास करके उन्होंने अर्हतत्व (बुद्ध के समान ज्ञान) प्राप्त किया और अस्सी महान भिक्षुओं में से एक के रूप में पहचाने गए। उस समय सत्य के हॉल में यह विषय शुरू हुआ और कहा गया, "हे भगवान बुद्ध ने कितना बड़ा चमत्कार किया है कि उन्होंने शांतिपूर्वक और बिना किसी हिंसा का प्रयोग किए अंगुलिमाला जैसे क्रूर और रक्तरंजित लुटेरे को परिवर्तित और विनम्र बना दिया: हे बुद्ध वास्तव में महान कार्य करते हैं!" सुगंधित कक्ष में बैठे गुरु ने अपनी दिव्य श्रवण शक्ति से कही गई बातों को ग्रहण किया और यह जानते हुए कि आज उनका आगमन अत्यंत उपयोगी होगा और एक महान शिक्षा का विवेचन होगा, बुद्ध की अतुलनीय कृपा से वे सत्य के हॉल में गए और वहाँ अपने लिए आरक्षित आसन पर बैठकर उन्होंने पूछा कि वे किस विषय पर चर्चा कर रहे हैं; और जब उन्होंने उन्हें विषय बताया तो उन्होंने कहा, "हे भिक्षुओं, अब जब मैंने सर्वोच्च ज्ञान प्राप्त कर लिया है, तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि मैंने उसका धर्मांतरण कर दिया है। मैंने उसे अपने पिछले जन्म में भी, जब मेरा ज्ञान सीमित था, तब भी वश में किया था," और इन शब्दों के साथ उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

बहुत समय पहले, कुरु राज्य के इंद्रप्रस्थ नगर में कोरव्य नामक एक राजा ने धर्मपरायण शासन किया। उनकी प्रमुख रानी के पुत्र के रूप में एक बोधिसत्व का जन्म हुआ, और सोमा रस के प्रति उनके प्रेम के कारण उनका नाम सुतसोमा रखा गया। जब वे वयस्क हुए, तो उनके पिता ने उन्हें विश्वप्रसिद्ध गुरु से शिक्षा प्राप्त करने के लिए तक्षशिला भेज दिया। गुरु की फीस लेकर वे वहाँ के लिए रवाना हुए। बनारस में भी, काशी के राजा के पुत्र राजकुमार ब्रह्मदत्त को उनके पिता ने इसी उद्देश्य से भेजा था और वे भी उसी मार्ग पर चल पड़े। यात्रा के दौरान सुतसोमा विश्राम करने के लिए नगर द्वार के पास एक हॉल में एक बेंच पर बैठ गए। राजकुमार ब्रह्मदत्त भी आए और उनके साथ उसी बेंच पर बैठ गए। सौहार्दपूर्ण अभिवादन के बाद सुतसोमा ने उनसे पूछा, "मित्र, आप अपनी यात्रा से थक गए हैं। आप कहाँ से आए हैं?" उनके यह कहने पर कि "बनारस से," उन्होंने पूछा कि वे किसके पुत्र हैं। "ब्रह्मदत्त के पुत्र।" "और आपका नाम क्या है?" "राजकुमार ब्रह्मदत्त।" "आप किसलिए आए हैं?" उन्होंने उत्तर दिया, "कलाओं का प्रशिक्षण लेने।" तब राजकुमार ब्रह्मदत्त ने कहा, "आप भी यात्रा से थक गए हैं," और उनसे भी उसी प्रकार प्रश्न किया। सुतसोमा ने उन्हें अपने बारे में सब कुछ बताया। दोनों ने सोचा, "हम दो राजकुमार एक ही गुरु से कलाओं का प्रशिक्षण लेने जा रहे हैं," और दोनों में मित्रता हो गई। फिर नगर में प्रवेश करके वे गुरु के घर गए और उन्हें प्रणाम किया। अपने बारे में बताने के बाद उन्होंने कहा कि वे कलाओं का प्रशिक्षण लेने आए हैं। गुरु ने उनकी बात सहर्ष स्वीकार कर ली। उन्हें शिक्षा शुल्क देकर उन्होंने अपनी पढ़ाई शुरू की। केवल वे ही नहीं, बल्कि उस समय भारत में मौजूद एक सौ एक अन्य राजकुमारों ने भी गुरु से शिक्षा प्राप्त की। सुतासोमा, जो वरिष्ठ शिष्य थे, शीघ्र ही अध्यापन में निपुण हो गए। उन्होंने अन्य शिष्यों से मिले बिना ही सोचा, "यह मेरा मित्र है," और केवल राजकुमार ब्रह्मदत्त के पास गए। वे उनके निजी शिक्षक (*4) बन गए और शीघ्र ही उन्हें शिक्षा प्रदान करने लगे, जबकि अन्य शिष्यों ने धीरे-धीरे ही ज्ञान प्राप्त किया। उन्होंने भी लगन से अध्ययन करने के बाद अपने गुरु को विदाई दी और सुतासोमा के साथ प्रस्थान किया। तब सुतासोमा ने उनके सामने खड़े होकर उन्हें विदा करते हुए कहा, "अपने-अपने पिताओं को अपनी विद्वता का प्रमाण देने के बाद तुम सब अपने-अपने राज्य में स्थापित हो जाओगे। स्थापित होने पर मेरी आज्ञाओं का पालन करना।" "गुरुजी, वे क्या हैं?" "अमावस्या और पूर्णिमा (*5) के दिन उपोसथ व्रत रखना और किसी भी प्राणी का वध न करना।" वे सहर्ष सहमत हो गए। बोधिसत्व ने अपने प्रत्यक्ष दर्शन से भविष्यवाणी की शक्ति से जान लिया था कि भविष्य में बनारस के राजकुमार के लिए बड़ा खतरा उत्पन्न होगा, इसलिए उचित परामर्श के बाद उन्होंने उन्हें विदा कर दिया।और वे सब अपने-अपने देशों में लौट गए, और अपने पिताओं के सामने अपनी विद्वत्ता का प्रदर्शन करने के बाद अपने-अपने राज्यों के उत्तराधिकारी बने। इस बात को बताने और यह दर्शाने के लिए कि वे सुतासोमा की सलाह का पालन कर रहे हैं, उन्होंने उपहार सहित सुतासोमा को पत्र भेजे। महापुरुष ने स्थिति का पता चलने पर उनके पत्रों का उत्तर दिया और उनसे आस्था में दृढ़ रहने का आग्रह किया। उनमें से एक, बनारस का राजा, बिना मांस के अपना चावल का भोजन कभी नहीं खाता था, और किसी विशेष दिन वे उसका मांस निकालकर एक

तरफ रख देते थे। एक दिन जब मांस इस प्रकार रखा हुआ था, रसोइए की लापरवाही से राजा के महल के अच्छे नस्ल के कुत्तों ने उसे खा लिया। रसोइए को मांस नहीं मिला, तो उसने मुट्ठी भर सिक्के लिए और चारों ओर घूमकर मांस प्राप्त करने में असफल रहा और कहा, "यदि मैं बिना मांस के भोजन परोसूँ, तो मैं मर जाऊँगा। मैं क्या करूँ?" लेकिन यह सोचकर कि "अभी भी कोई उपाय है," वह देर शाम एक कब्रिस्तान में गया जहाँ शव रखे जाते थे और अभी-अभी मरे हुए एक व्यक्ति की जांघ से कुछ मांस लेकर उसे अच्छी तरह भूनकर भोजन के रूप में परोसा। जैसे ही मांस का एक टुकड़ा राजा की जीभ के सिरे पर रखा गया, उसके स्वाद की सात हज़ार नसों में झनझनाहट दौड़ गई और पूरे शरीर में हलचल मच गई। ऐसा क्यों हुआ? क्योंकि उसने पहले भी यह भोजन खाया था। कहा जाता है कि इससे ठीक पहले वाले जन्म में यक्ष (राक्षस) के रूप में उसने बहुत सारा मानव मांस खाया था, इसलिए यह उसे अच्छा लगा (*6)। राजा ने सोचा, "अगर मैं इसे चुपचाप खा लूँगा, तो वह मुझे नहीं बताएगा कि यह कौन सा मांस है," इसलिए थूकते हुए उसने एक टुकड़ा ज़मीन पर गिरा दिया। जब रसोइए ने कहा, "महाराज, आप इसे खा सकते हैं; इसमें कोई खराबी नहीं है," तो उसने अपने सभी सेवकों को पीछे हटने का आदेश दिया और कहा, "मुझे पता है कि यह ठीक है, लेकिन यह कौन सा मांस है?" "वही जो महाराज ने पहले खाया है।" "क्या पहले कभी इस मांस का स्वाद ऐसा नहीं था?" "आज तो यह अच्छी तरह से पका है, महाराज।" "क्या आपने इसे पहले भी ठीक इसी तरह पकाया था?" फिर उसे चुप देखकर राजा ने कहा, "या तो मुझे सच बताओ, नहीं तो तुम मर जाओगे।" इसलिए उसने क्षतिपूर्ति का आश्वासन मांगते हुए पूरी सच्चाई बता दी। राजा ने कहा, "इस बारे में एक शब्द भी मत कहो। तुम्हें सामान्य भुना हुआ मांस खाना है और मानव मांस केवल मेरे लिए पकाना है।" "महाराज, यह तो वाकई एक कठिन मामला है।" "डरिए मत: कोई कठिनाई नहीं है।" "मुझे यह लगातार कहाँ से मिलेगा?" "क्या जेल में बहुत सारे लोग नहीं हैं?" तब से उसने इस सुझाव पर अमल करना शुरू कर दिया। कुछ समय बाद, जब कैदी उसे नहीं मिले, तो उसने कहा, "अब मैं क्या करूँ?" राजा ने कहा, "सड़क पर एक हजार सिक्कों का एक गट्ठा फेंक दो और जो भी उसे उठाए उसे चोर की तरह पकड़कर मार डालो।" उसने ऐसा ही किया। कुछ समय बाद,पैसे के पैकेट को देखे बिना भी जब उसे कोई प्राणी नहीं मिला, तो उसने कहा, "अब मैं क्या करूँ?" "जब रात के पहरेदार ढोल बजाते हैं, तब शहर लोगों से भरा होता है। तब किसी घर की दीवार के दरार (*7) में या चौराहे पर खड़े होकर, किसी आदमी को मार गिराओ और उसका कुछ मांस ले जाओ।" उस दिन से वह कुछ चर्बीदार मांस लेकर आने लगा और कई जगहों पर लाशें मिलने लगीं। रोने की आवाज़ सुनाई दी, "मैंने अपने पिता को खो दिया है, मैंने अपनी माँ को खो दिया है, या भाई या बहन को।" शहर के लोग घबरा गए और कहने लगे, "ज़रूर किसी शेर या बाघ या राक्षस ने इन लोगों को खा लिया होगा।" लाशों की जाँच करने पर उन्हें एक गहरा घाव दिखाई दिया और उन्होंने कहा, "ज़रूर कोई आदमी ही इनका मांस खा रहा होगा!" लोग महल के प्रांगण में इकट्ठा हुए और शिकायत की। राजा ने पूछा, "क्या बात है, मेरे मित्रों?" उन्होंने कहा, "महाराज, इस शहर में कोई आदमखोर डाकू है: उसे पकड़वा दीजिए।" "मुझे कैसे पता चलेगा कि वह कौन है? क्या मुझे शहर की रखवाली करनी होगी?" लोगों ने कहा, "राजा को शहर की कोई परवाह नहीं है: हम सेनापति कलाहत्थी को इसकी सूचना देंगे।" उन्होंने उससे कहा, "आपको इस डाकू को ढूंढना होगा।" उसने उत्तर दिया, "सात दिन प्रतीक्षा करो, मैं डाकू को ढूंढकर तुम्हारे हवाले कर दूंगा।" लोगों को विदा करते हुए उसने अपने अधिकारियों को आदेश दिया, "मेरे मित्रों, लोग कहते हैं कि इस शहर में एक आदमखोर डाकू है। तुम अलग-अलग जगहों पर घात लगाकर उसे पकड़ लो।" उन्होंने कहा, "ठीक है," और उस दिन से उन्होंने पूरे शहर को घेर लिया। अब रसोइया एक घर की दीवार में बने छेद में छिपा हुआ था और उसने एक औरत को मार डाला और अपनी टोकरी में मांस के टुकड़े भरने लगा। इसलिए अधिकारियों ने उसे पकड़ लिया और उसकी बांहें पीछे बांधकर जोर से चिल्लाए, "हमने आदमखोर डाकू को पकड़ लिया है।" लोगों की भीड़ उनके चारों ओर जमा हो गई। फिर उसे बुरी तरह पीटकर और मांस से भरी टोकरी उसके गले में बांधकर वे उसे सेनापति के सामने ले आए। उसे देखकर सेनापति ने सोचा, "क्या यह आदमी खुद यह मांस खाता है, या इसे दूसरे मांस में मिलाकर बेचता है, या किसी और के कहने पर लोगों को मारता है?" और इस मामले की छानबीन करते हुए उसने पहला श्लोक कहा:शवों की जांच करने पर उन्हें एक गहरा घाव दिखाई दिया और वे बोले, "यह तो किसी नरभक्षी का काम होगा!" लोग महल के प्रांगण में एकत्रित हुए और शिकायत दर्ज कराई। राजा ने पूछा, "क्या बात है, मेरे मित्रों?" उन्होंने कहा, "महाराज, इस शहर में कोई नरभक्षी डाकू है: उसे पकड़वा दीजिए।" राजा ने पूछा, "मुझे कैसे पता चलेगा कि वह कौन है? क्या मुझे शहर की रखवाली करनी होगी?" लोगों ने कहा, "राजा को शहर की कोई परवाह नहीं है: हम इसकी सूचना सेनापति कलाहत्थी को देंगे।" उन्होंने कलाहत्थी को बताया और कहा, "आपको इस डाकू की तलाश करनी होगी।" राजा ने उत्तर दिया, "सात दिन प्रतीक्षा कीजिए, मैं डाकू को ढूंढकर आप लोगों के हवाले कर दूंगा।" लोगों को विदा करते हुए उन्होंने अपने अधिकारियों को आदेश दिया, "मेरे मित्रों, लोग कहते हैं कि इस शहर में एक नरभक्षी डाकू है।" तुम अलग-अलग जगहों पर घात लगाकर उसे पकड़ो।" उन्होंने कहा, "ठीक है," और उस दिन से उन्होंने पूरे शहर को घेर लिया। रसोइया एक घर की दीवार में बने छेद में छिपा हुआ था और उसने एक औरत को मार डाला और अपनी टोकरी में मांस के टुकड़े भरने लगा। इसलिए अधिकारियों ने उसे पकड़ लिया और उसकी पिटाई की, और उसके हाथ पीछे बांधकर जोर से चिल्लाए, "हमने आदमखोर लुटेरे को पकड़ लिया है।" लोगों की भीड़ उनके चारों ओर जमा हो गई। फिर उसे बुरी तरह पीटकर और मांस से भरी टोकरी उसकी गर्दन पर बांधकर वे उसे सेनापति के सामने ले आए। उसे देखकर सेनापति ने सोचा, "क्या यह आदमी खुद यह मांस खाता है या इसे दूसरे मांस में मिलाकर बेचता है, या किसी और के कहने पर लोगों को मारता है?" और इस मामले की जांच करते हुए उसने पहला छंद कहा:शवों की जांच करने पर उन्हें एक गहरा घाव दिखाई दिया और वे बोले, "यह तो किसी नरभक्षी का काम होगा!" लोग महल के प्रांगण में एकत्रित हुए और शिकायत दर्ज कराई। राजा ने पूछा, "क्या बात है, मेरे मित्रों?" उन्होंने कहा, "महाराज, इस शहर में कोई नरभक्षी डाकू है: उसे पकड़वा दीजिए।" राजा ने पूछा, "मुझे कैसे पता चलेगा कि वह कौन है? क्या मुझे शहर की

रखवाली करनी होगी?" लोगों ने कहा, "राजा को शहर की कोई परवाह नहीं है: हम इसकी सूचना सेनापति कलाहत्थी को देंगे।" उन्होंने कलाहत्थी को बताया और कहा, "आपको इस डाकू की तलाश करनी होगी।" राजा ने उत्तर दिया, "सात दिन प्रतीक्षा कीजिए, मैं डाकू को ढूंढकर आप लोगों के हवाले कर दूंगा।" लोगों को विदा करते हुए उन्होंने अपने अधिकारियों को आदेश दिया, "मेरे मित्रों, लोग कहते हैं कि इस शहर में एक नरभक्षी डाकू है।" तुम अलग-अलग जगहों पर घात लगाकर उसे पकड़ो।" उन्होंने कहा, "ठीक है," और उस दिन से उन्होंने पूरे शहर को घेर लिया। रसोइया एक घर की दीवार में बने छेद में छिपा हुआ था और उसने एक औरत को मार डाला और अपनी टोकरी में मांस के टुकड़े भरने लगा। इसलिए अधिकारियों ने उसे पकड़ लिया और उसकी पिटाई की, और उसके हाथ पीछे बांधकर जोर से चिल्लाए, "हमने आदमखोर लुटेरे को पकड़ लिया है।" लोगों की भीड़ उनके चारों ओर जमा हो गई। फिर उसे बुरी तरह पीटकर और मांस से भरी टोकरी उसकी गर्दन पर बांधकर वे उसे सेनापति के सामने ले आए। उसे देखकर सेनापति ने सोचा, "क्या यह आदमी खुद यह मांस खाता है या इसे दूसरे मांस में मिलाकर बेचता है, या किसी और के कहने पर लोगों को मारता है?" और इस मामले की जांच करते हुए उसने पहला छंद कहा:लोगों की भीड़ उनके चारों ओर जमा हो गई। फिर उसे बुरी तरह पीटकर और मांस से भरी टोकरी उसके गले में बांधकर वे उसे सेनापति के सामने ले आए। उसे देखकर सेनापति ने सोचा, "क्या यह आदमी खुद यह मांस खाता है, या इसे दूसरे मांस में मिलाकर बेचता है, या किसी और के कहने पर लोगों को मारता है?" और इस मामले की छानबीन करते हुए उसने पहला श्लोक कहा:लोगों की भीड़ उनके चारों ओर जमा हो गई। फिर उसे बुरी तरह पीटकर और मांस से भरी टोकरी उसके गले में बांधकर वे उसे सेनापति के सामने ले आए। उसे देखकर सेनापति ने सोचा, "क्या यह आदमी खुद यह मांस खाता है, या इसे दूसरे मांस में मिलाकर बेचता है, या किसी और के कहने पर लोगों को मारता है?" और इस मामले की छानबीन करते हुए उसने पहला श्लोक कहा:

बेहतरीन स्वादों के उस्ताद, गंभीर जरूरत क्या है?
किसने आपको यह घिनौना काम करने के लिए उकसाया है?
क्या तुम्हें खाने के लिए भोजन चाहिए या धन कमाने के लिए?
क्या ये गुमराह दुष्ट लोग थे जिन्होंने इन पुरुषों और महिलाओं की हत्या की?
आगे आने वाले श्लोक स्पष्ट रूप से संबंधित हैं और इन्हें शास्त्र के संदर्भ के अनुसार अलग-अलग वक्ताओं द्वारा उच्चारित समझा जाना चाहिए:

न तो पत्नी के लिए, न बच्चे के लिए, न दोस्तों के लिए, न परिवार के लिए, न धन-दौलत के लिए।
और न ही मैंने इस महिला की हत्या अपने लिए की;
हे मेरे दयालु स्वामी, इस देश के सम्राट,
मानव मांस खाता है: मैंने उसके आदेश पर पाप किया।
यदि इस प्रकार अपने स्वामी के लालच को संतुष्ट करने के लिए रिश्वत ली जाए
तुम इस घिनौने कृत्य के दोषी हो।
आइए, भोर होते ही राजा की खोज करें।
और उसके चेहरे पर आरोप लगा दिया।
हे कालाहत्थी, आदरणीय प्रभु,
तो मैं आपके वचन के अनुसार ही करूंगा।
मैं सुबह तड़के राजा की तलाश करूंगा।
और उसके चेहरे पर यह आरोप लगा दिया।
अतः सेनापति ने उसे कसकर बांधकर लिटा दिया, और भोर होते ही उसने अपने अधिकारियों से सलाह ली। जब वे सब एकमत हुए, तो उसने हर दिशा में पहरेदार तैनात कर दिए। शहर पर पूरी तरह नियंत्रण पाने के बाद, उसने मांस से भरी टोकरी रसोइए के गले में बांध दी और उसे लेकर महल चला गया। पूरे शहर में अफरा-तफरी मच गई। राजा ने कल सुबह नाश्ता तो कर लिया था, लेकिन रात का खाना नहीं खाया था और पूरी रात बैठे-बैठे ही बिताई थी, हर पल रसोइए के आने की प्रतीक्षा कर रहा था। उसने सोचा, "आज भी कोई रसोइया नहीं आया, और शहर में इतना शोरगुल है। आखिर ये सब क्या हो रहा है?" खिड़की से बाहर देखते हुए उसने उस आदमी को घसीटते हुए देखा, जैसा कि बताया गया था। यह सोचकर कि सब कुछ पता चल गया है, उसने हिम्मत जुटाई और अपने सिंहासन पर बैठ गया। तभी कलाहत्ती पास आया और उससे प्रश्न किए, और राजा ने उन्हें उत्तर दिए।

मास्टर ने मामले को स्पष्ट करते हुए कहा:

अब सूर्योदय हो चुका था और दिन की शुरुआत ही हुई थी, तभी काला अपने रसोइए के साथ दरबार की ओर चल पड़ा, और राजा के पास आकर उसने कुछ इस तरह के शब्द कहे।

"महाराज, क्या यह सच है कि इस रसोइए को सड़क पर भेज दिया गया है?"

और वे पुरुष और महिलाएं जिन्हें आपके लिए मांस उपलब्ध कराने के लिए मारा गया?
"काला, यह सच है; यह मेरे अनुरोध पर किया गया था।"
तो फिर मेरे कहने पर उसने जो किया उसके लिए उसे क्यों दोषी ठहराया जाए?
यह सुनकर सेनापति ने सोचा, "यह स्वयं अपने मुख से ही स्वीकार कर रहा है; ओह, यह दुष्ट! इतने समय से यह मनुष्यों का मांस खा रहा है: मैं इसे रोकूंगा," और उसने कहा, "महाराज, ऐसा मत कीजिए; मनुष्यों का मांस मत खाइए।" "कलाहत्थी, आप क्या कह रहे हैं? मैं इसे नहीं छोड़ सकता।" "महाराज, यदि आप इसे नहीं छोड़ेंगे, तो आप स्वयं और अपने राज्य दोनों को नष्ट कर देंगे।" "भले ही मेरा राज्य नष्ट हो जाए, मैं इसे नहीं छोड़ सकता।" तब सेनापति ने उसे समझाने के लिए एक उदाहरण के रूप में एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, समुद्र में छह विशालकाय मछलियाँ थीं। उनमें आनंद, तिमांडा और अज्जोहारा थे - ये तीनों पाँच सौ मील (4.23 किमी) लंबी थीं - तितिमिति, मिंगला और तिमिरपिंगला - ये एक हजार मील (4.23 किमी) लंबी थीं - और ये सभी चट्टानी सेवल (*8) नामक जलीय शैवाल खाती थीं। इनमें से आनंद समुद्र के एक किनारे पर रहता था और बहुत सी मछलियाँ उसे देखने आती थीं। एक दिन उन्होंने सोचा, "दो पैरों और चार पैरों वाले जीवों में राजा होते हैं, लेकिन हमारा कोई राजा नहीं है: हम इस मछली को अपना राजा बनाएंगे।" और सभी ने एकमत होकर आनंद को अपना राजा बना लिया, और उस दिन से मछलियाँ शाम और सुबह उसे प्रणाम करने आने लगीं। अब एक दिन आनंद एक पर्वत पर चट्टानी सेवल खा रहा था और अनजाने में उसने एक मछली को सेवल समझकर खा लिया। उसका मांस उसे स्वादिष्ट लगा, और यह सोचकर कि आखिर यह इतना मीठा क्या हो सकता है, उसने उसे अपने मुँह से निकाला और देखा कि वह मछली का एक टुकड़ा है। उसने सोचा, "इतने लंबे समय तक अज्ञानता में मैंने इसे कभी नहीं खाया: शाम और सुबह जब मछलियाँ मुझे प्रणाम करने आती हैं, तो मैं उनमें से एक या दो को खा जाऊँगा, क्योंकि अगर मैं उन्हें खाते हुए देखकर यह बात ज़ाहिर कर दूँ, तो एक भी मछली मेरे पास नहीं आएगी, बल्कि सब भाग जाएँगी।" इसलिए छिपकर उसने पीछे से आती हुई मछलियों पर हमला किया और उन्हें खा गया। जैसे-जैसे मछलियों की संख्या कम होती गई, वे सोचने लगीं, "हमारे जैसे जीवों पर यह खतरा किस ओर से आ रहा है?" तभी उनमें से एक ऋषि ने सोचा, "मैं आनंद के इस काम से संतुष्ट नहीं हूँ: मैं पता लगाऊँगा कि वह क्या कर रहा है," और जब मछलियाँ आनंद को प्रणाम करने आईं, तो ऋषि आनंद के कान के लोब में छिप गए। आनंद ने मछलियों को विदा करके पीछे रह गई मछलियों को खा लिया। बुद्धिमान मछली ने यह देखकर बाकी मछलियों को सूचना दी और वे सब घबराकर भाग गईं। उस दिन से आनंद मछली के स्वाद की लालसा में अन्य सभी प्रकार के भोजन को त्यागने लगा। भूख से बीमार होकर उसने सोचा, "वे आखिर कहाँ चली गईं?" और उनकी तलाश करते हुए उसने एक पर्वत देखा और सोचा, "मुझे लगता है कि मछलियाँ मुझसे डरकर इस पर्वत के पास रह रही हैं। मैं इसे घेर लूँगा और इस पर नज़र रखूँगा।" इस प्रकार उसने अपने सिर और पूंछ से पर्वत को चारों ओर से घेर लिया और सोचा, "अगर वे यहाँ रहती हैं, तो वे भागने की कोशिश करेंगी।" तभी उसकी नज़र अपनी पूंछ पर पड़ी जो पर्वत के चारों ओर लिपटी हुई थी, और उसने सोचा, "यह मछली पर्वत के पास रहती है और मुझसे बचने की कोशिश कर रही है।" क्रोध में आकर उसने अपनी ही पूंछ को पकड़ लिया, जो पचास मील (4.23 किमी) लंबी थी, और यह सोचकर कि उसने एक मछली पकड़ ली है, उसने उसे चबाने की आवाज़ के साथ निगल लिया, असहनीय दर्द से तड़पते हुए। खून की गंध से मछलियाँ इकट्ठा हो गईं और आनंद की पूंछ से थोड़ा-थोड़ा मांस खींचकर उसके सिर तक पहुँचने लगीं। इतने बड़े मृत शरीर के कारण वह मुड़ नहीं सका और वहीं उसकी मृत्यु हो गई।और वहाँ हड्डियों का एक पहाड़ जितना बड़ा ढेर था। अंतरिक्ष में यात्रा कर रहे पवित्र तपस्वियों, पुरुष और स्त्री, ने उसे देखा और लोगों को इसके बारे में बताया। और पूरे भारत के निवासी इसके बारे में जान गए। उदाहरण के तौर पर, कालाहत्ती ने यह कहानी सुनाई और कहा:

आनंद ने सारी मछलियाँ खा लीं और जब उसके साथी भाग गए,
उसने अपनी ही पूंछ को लालच से तब तक खाया जब तक उसकी मृत्यु नहीं हो गई।
भोग-विलास का गुलाम किसी और सुख को नहीं जानता।
बेचारा लापरवाह मूर्ख, आने वाले कष्टों के प्रति कितना अंधा है वह!
उसके बच्चे, दोस्त और परिवार बर्बाद हो जाएंगे, वह नीचा पड़ेगा।
फिर वह मुड़कर स्वयं को विदारक कर लेता है, राक्षसी लालच का शिकार बन जाता है।
हे राजा, मैं आपसे निवेदन करता हूँ कि मेरी इन बातों को ध्यानपूर्वक सुनें।
मनुष्यों का मांस मत खाओ; अपने घृणित उद्देश्य को त्याग दो।
अन्यथा शायद आपको भी उस मछली की तरह ही भयानक भाग्य का सामना करना पड़े।
और हे मनुष्यों के स्वामी, अपने राज्य को उजाड़ छोड़ दो।
यह सुनकर राजा ने कहा, "कलाहत्थी, मैं भी तुम्हारी तरह एक उदाहरण जानता हूँ," और उदाहरण के तौर पर उसने मानव मांस के प्रति अपने लालच की एक पुरानी कहानी सुनाई और कहा:

सुजाता के बेटे और वारिस ने कुछ गुलाब-सेबों के लिए जोर-जोर से रोना शुरू कर दिया।
उन दोनों के बिछड़ने से लड़का इतना दुखी हुआ कि वह लेट गया और उसकी मृत्यु हो गई।
तो, काला, मैं, जिसने अब लंबे समय से सर्वोत्तम व्यंजनों का आनंद लिया है,
अगर यह नश्वर शरीर विफल हो जाता है, तो मुझे लगता है कि जीवन परवाह करना बंद कर देगा।
कहते हैं कि एक समय की बात है, बनारस में सुजाता नाम का एक जमींदार अपने उद्यान में रहता था और हिमालय से नमक और सिरका लेने आए पाँच सौ तपस्वियों की सेवा करता था। उनके घर में हमेशा भोजन तैयार रहता था, लेकिन ये तपस्वी कभी-कभी भिक्षा मांगने के लिए देश में तीर्थयात्रा पर जाते थे और खाने के लिए बड़े-बड़े गुलाब-मुर्गे के टुकड़े लाते थे। जब वे अपने लाए हुए गुलाब-मुर्गे खा रहे थे, तब सुजाता ने सोचा, "आज तीसरा या चौथा दिन है कि ये साधु यहाँ नहीं आए हैं। आखिर कहाँ चले गए होंगे?" इसलिए अपने छोटे बेटे का हाथ पकड़कर वह उनके पास भोजन करते समय गया। उसी समय एक नवोदित साधु बड़ों को कुल्ला करने के लिए पानी दे रहा था और थोड़ा सा गुलाब-मुर्गे खा रहा था। सुजाता ने तपस्वियों को प्रणाम किया और जब वे बैठ गए तो उन्होंने पूछा, "आदरणीय साधुओं, आप क्या खा रहे हैं?" "बड़े-बड़े गुलाब-मुर्गे के टुकड़े, साहब।" यह सुनकर लड़के को प्यास लगी, इसलिए तपस्वियों के समूह के नेता ने उसे एक छोटा टुकड़ा दिया। लड़के ने उसे खाया और उसके कोमल स्वाद से इतना मोहित हो गया कि वह बार-बार उनसे एक और टुकड़ा माँगता रहा। धर्म का उपदेश सुन रहे उस सज्जन ने कहा, "रो मत; घर पहुँचकर तुम्हें एक टुकड़ा खाने को मिलेगा," इस प्रकार उन्होंने लड़के को यह कहकर बहलाया कि कहीं उसके रोने से साधु थक न जाएँ। लड़के को दिलासा देकर उन्होंने तपस्वियों के समूह से विदा ली और घर लौट गए। घर पहुँचते ही लड़का लगातार "मुझे एक टुकड़ा दो" चिल्लाता रहा। तपस्वियों ने भी कहा, "हम यहाँ बहुत समय से रुके हैं," और हिमालय के लिए रवाना हो गए। पार्क में लड़का न पाकर तपस्वियों ने उसे आम, गुलाब सेब, केले और अन्य फलों के टुकड़ों का एक उपहार भेजा, जो सभी पिसी हुई चीनी में मिलाए गए थे। जैसे ही यह मिश्रण उसकी जीभ के सिरे पर रखा गया, इसने घातक जहर का काम किया। सात दिनों तक उसने कुछ नहीं खाया और फिर उसकी मृत्यु हो गई। राजा ने यह कहानी उदाहरण के तौर पर सुनाई। तब कालहत्थी ने सोचा, "यह राजा तो बड़ा पेटू है: मैं उसे और उदाहरण सुनाऊँगा," और उसने कहा, "महाराज, ऐसा करना बंद कर दीजिए।" "यह असंभव है," उसने कहा। "यदि आप ऐसा करना बंद नहीं करेंगे, तो धीरे-धीरे आप अपने परिवार से विमुख हो जाएँगे और आपका राजसी वैभव छिन जाएगा।" एक समय की बात है, इसी बनारस में एक ब्राह्मण परिवार था जो पाँच नैतिक नियमों का पालन करता था। इस परिवार में एक इकलौता पुत्र था, जो अपने माता-पिता का प्रिय और लाडला था, एक बुद्धिमान बालक और तीनों वेदों का ज्ञाता था। वह अपने ही हमउम्र युवकों के एक समूह के साथ घूमता था। समूह के अन्य सदस्य मछली, मांस और इसी तरह का भोजन खाते और शराब पीते थे। वह बालक न तो मांस खाता था और न ही शराब पीता था। उनके मन में यह विचार आया, "यह बालक शराब न पीकर अपने मन पर ध्यान नहीं देता: चलो इसे शराब पिलाने की कोई योजना बनाते हैं।"जब वे सब एकत्रित हुए, तो उन्होंने कहा, "मेरे मित्र, चलो एक उत्सव मनाते हैं।" उसने कहा, "तुम लोग शराब पीते हो, लेकिन मैं नहीं।" तुम मेरे बिना चले जाओ।" "मित्र, हम तुम्हारे लिए थोड़ा दूध पीने को लाते हैं।" उसने सहमति जताते हुए कहा, "ठीक है।" बदमाश बगीचे में गए और एक पत्ते के प्याले में थोड़ी सी मादक शराब बाँधकर उसे कमल के पत्तों के बीच रख दिया। जब वे पीने लगे तो उन्होंने लड़के को थोड़ा दूध दिया। एक बदमाश चिल्लाया, "हमें थोड़ा कमल का रस लाओ," और जब उसे वह लाया गया, तो उसने कमल में रखे पत्ते के प्याले के तल में एक छेद किया और उसे अपने मुँह से लगाकर चूस लिया। बाकी बदमाशों ने भी थोड़ा-थोड़ा रस मंगवाया और पी लिया। लड़के ने पूछा कि यह क्या है और उसने कमल का रस समझकर कुछ तेज़ शराब पी ली। फिर उन्होंने उसे भुना हुआ मांस दिया और उसने वह भी खा लिया। और जब बार-बार शराब पीने से वह नशे में चूर हो गया, तो उन्होंने उससे कहा, "यह कमल का रस नहीं है: यह मादक शराब है।" "इतने लंबे समय तक," उसने कहा, "मुझे कभी पता ही नहीं चला कि मीठा स्वाद क्या होता है।" "मुझे और तेज़ शराब लाओ!" वे शराब लाए और उसे एक बार फिर पिलाई, क्योंकि वह बहुत प्यासा था। फिर जब उसने और माँगी, तो उन्होंने कहा कि सब खत्म हो गई है। उसने कहा, "आओ, मैं कहता हूँ! मुझे और लाओ," और उन्हें अपनी अंगूठी दे दी। दिन भर उनके साथ शराब पीने के बाद, अब वह पूरी तरह नशे में था और उसकी आँखें लाल थीं, वह काँप रहा था और बड़बड़ा रहा था, फिर वह घर गया और लेट गया। तब उसके पिता को पता चला कि उसने शराब पी थी, जब शराब का असर खत्म हो गया, तो उन्होंने उससे कहा, "मेरे बेटे, तुमने ब्राह्मण परिवार का सदस्य होकर तेज़ शराब पीकर बहुत बड़ी गलती की है: फिर कभी ऐसा मत करना।" "प्रिय पिताजी, मेरा अपराध क्या है?" "तेज़ शराब पीना।" "आप क्या कहते हैं, पिताजी?" मैंने अपने पूरे जीवन में कभी इतनी मीठी चीज नहीं खाई।" ब्राह्मण ने बार-बार उससे विनती की कि वह इसे छोड़ दे। "मैं ऐसा नहीं कर सकता," उसने कहा। तब ब्राह्मण ने सोचा, "अगर ऐसा हुआ तो हमारी पारिवारिक परंपरा नष्ट हो जाएगी और हमारी संपत्ति भी नष्ट हो जाएगी," और उसने यह श्लोक दोहराया:उन्होंने उससे कहा, "यह कमल का रस नहीं है, यह तो शराब है।" उसने कहा, "इतने लंबे समय तक मुझे मीठा स्वाद पता ही नहीं था। मुझे और शराब लाओ!" वे शराब लाए और उसे एक बार फिर पिलाई, क्योंकि वह बहुत प्यासा था। फिर जब उसने और माँगी, तो उन्होंने कहा कि सब खत्म हो गया है। उसने कहा, "आओ, मुझे और लाओ!" और उन्हें अपनी अंगूठी दे दी। दिन भर उनके साथ शराब पीने के बाद, अब वह पूरी तरह नशे में था और उसकी आँखें लाल थीं, वह काँप रहा था और बड़बड़ा रहा था। फिर वह घर गया और लेट गया। जब शराब का असर खत्म हो गया, तो उसके पिता को पता चला कि उसने शराब पी है और उन्होंने उससे कहा, "बेटा, तुमने ब्राह्मण परिवार का सदस्य होकर शराब पीकर बहुत बड़ी गलती की है: फिर कभी ऐसा मत करना।" "पिताजी, मेरा गुनाह क्या है?" "शराब पीना।" "क्या कहते हो पिताजी? मैंने अपने पूरे जीवन में कभी इतनी मीठी चीज नहीं चखी।" ब्राह्मण ने बार-बार उससे शराब छोड़ने की विनती की।

“मैं यह नहीं कर सकता,” उसने कहा। फिर ब्राह्मण ने सोचा, “यदि ऐसा है, तो हमारी पारिवारिक परंपरा नष्ट हो जाएगी और हमारी संपत्ति भी नष्ट हो जाएगी,” और उसने यह श्लोक दोहराया:उन्होंने उससे कहा, "यह कमल का रस नहीं है, यह तो शराब है।" उसने कहा, "इतने लंबे समय तक मुझे मीठा स्वाद पता ही नहीं था। मुझे और शराब लाओ!" वे शराब लाए और उसे एक बार फिर पिलाई, क्योंकि वह बहुत प्यासा था। फिर जब उसने और माँगी, तो उन्होंने कहा कि सब खत्म हो गया है। उसने कहा, "आओ, मुझे और लाओ!" और उन्हें अपनी अंगूठी दे दी। दिन भर उनके साथ शराब पीने के बाद, अब वह पूरी तरह नशे में था और उसकी आँखें लाल थीं, वह काँप रहा था और बड़बड़ा रहा था। फिर वह घर गया और लेट गया। जब शराब का असर खत्म हो गया, तो उसके पिता को पता चला कि उसने शराब पी है और उन्होंने उससे कहा, "बेटा, तुमने ब्राह्मण परिवार का सदस्य होकर शराब पीकर बहुत बड़ी गलती की है: फिर कभी ऐसा मत करना।" "पिताजी, मेरा गुनाह क्या है?" "शराब पीना।" "क्या कहते हो पिताजी? मैंने अपने पूरे जीवन में कभी इतनी मीठी चीज नहीं चखी।" ब्राह्मण ने बार-बार उससे शराब छोड़ने की विनती की। “मैं यह नहीं कर सकता,” उसने कहा। फिर ब्राह्मण ने सोचा, “यदि ऐसा है, तो हमारी पारिवारिक परंपरा नष्ट हो जाएगी और हमारी संपत्ति भी नष्ट हो जाएगी,” और उसने यह श्लोक दोहराया:

एक ब्राह्मण वंश का वंशज, जो एक सुंदर लड़का भी था।
तुम्हें वह शापित पदार्थ नहीं पीना चाहिए जिसका सेवन कोई ब्राह्मण नहीं कर सकता।
और इन शब्दों के बाद उन्होंने कहा, "मेरे प्यारे बेटे, इससे दूर रहो, नहीं तो मैं तुम्हें अपने घर से निकाल दूंगा और अपने राज्य से निर्वासित कर दूंगा।" लड़के ने कहा, "फिर भी, मैं शराब नहीं छोड़ सकता," और उसने दो पंक्तियाँ दोहराईं:

चूंकि, पिताजी, आप मुझे इस बेहतरीन स्वाद से सहर्ष वंचित करना चाहते हैं,
इसे पाने के लिए, यह जहां भी मिले, मैं कितनी भी दूर जाऊंगा।
मैं शीघ्र ही यहाँ से विदा हो जाऊँगा और तुम्हारे साथ फिर कभी नहीं रहूँगा।
फिलहाल तो मुझे देखकर ही तुम्हें घृणा होती है, ऐसा मुझे लगता है।
इसके अलावा उन्होंने कहा, "मैं शराब पीने से परहेज नहीं करूंगा: जो चाहो करो।" तब ब्राह्मण ने कहा, "ठीक है, जैसे तुम हमें छोड़ रहे हो, वैसे ही हम भी तुम्हें छोड़ देंगे," और इस श्लोक को दोहराया:

हमें यकीन है कि हमें कुछ और बेटे मिल जाएंगे जो हमारी संपत्ति के उत्तराधिकारी बनेंगे और हम उन पर दावा कर सकेंगे।
जाओ, बदमाश, जहाँ हम तुम्हारा शापित नाम फिर कभी न सुन सकें।
फिर उसने अपने पुत्र को दरबार में ले जाकर उसे उत्तराधिकार से वंचित कर दिया और घर से निकाल दिया। बाद में वह युवक, जो एक गरीब और निर्धन व्यक्ति था, मोटे वस्त्र पहनकर और हाथ में भिक्षापात्र लेकर भीख माँगने लगा और एक दीवार के सहारे लेटकर उसकी मृत्यु हो गई। इस घटना को राजा को सबक सिखाने के लिए कालहत्थी ने बताया, "हे महाराज, यदि आप हमारी बात नहीं मानेंगे, तो वे आपको राज्य से निर्वासित कर देंगे," और ऐसा कहकर उसने यह श्लोक कहा:

अतः हे मनुष्यों के राजा, मेरी आज्ञा का पालन करते हुए ध्यानपूर्वक सुनो।
या फिर उस शराबी युवक की तरह तुम्हें भी देश से निकाल दिया जाएगा?
कलाहत्थी द्वारा दिए गए उदाहरण के बावजूद भी राजा अपनी इस आदत से बाज नहीं आया और एक और कहानी सुनाते हुए उसने कहा:

ऐसा कहा जाता है कि सुजाता, सिद्ध संतों (*9) की शिष्या थीं।
एक दिव्य कन्या के प्रति प्रेम के कारण भोजन और पेय से परहेज किया।
जैसे घास के तिनके पर पड़ी ओस की बूंद से लेकर समुद्र के पानी तक,
क्या मानवीय प्रेम की तुलना किसी दैवीय सत्ता के प्रति प्रेम से की जा सकती है?
तो, काला, मैं, जिसने अब लंबे समय से सर्वोत्तम व्यंजनों का आनंद लिया है,
अगर यह नश्वर शरीर विफल हो जाता है, तो मुझे लगता है कि जीवन परवाह करना बंद कर देगा।
यह कहानी बिल्कुल वैसी ही है जैसी पहले बताई जा चुकी है।

कहते हैं कि सुजाता ने जब देखा कि बड़े गुलाब-सेब के टुकड़े खाने के बाद तपस्वी वापस नहीं लौटे, तो उन्होंने सोचा, "पता नहीं ये वापस क्यों नहीं आ रहे। अगर कहीं चले गए हैं, तो मैं पता लगाऊंगा; नहीं तो मैं इनका उपदेश सुनूंगा।" इसलिए वे उद्यान गए और समूह के नेता द्वारा दिए गए धर्म के उपदेश सुने। सूर्यास्त के समय, यद्यपि उन्हें विदा किया जा चुका था, उन्होंने कहा, "मैं आज यहीं रुकूंगा," और संतों के समूह को प्रणाम करके वे अपने पत्तों के बने आश्रम में चले गए और लेट गए। रात में स्वर्ग के राजा सक्का (इंद्र), देवदूतों के एक दल और अपनी दासियों के साथ तपस्वियों के समूह को प्रणाम करने आए, और पूरा आश्रम प्रकाश से जगमगा उठा। सुजाता को आश्चर्य हुआ कि यह क्या हो रहा है, इसलिए वह उठ खड़ी हुई और अपने पत्तों से बने झोपड़े की एक दरार से झाँककर देखा कि

सक्का (इंद्र) अप्सराओं के एक समूह के साथ मंडली को प्रणाम करने आए हैं। उन्हें देखते ही सुजाता का मन आवेश से भर उठा। सक्का (इंद्र) एक आसन पर बैठ गए और धर्म पर प्रवचन सुनने के बाद अपने घर लौट गए। अगले दिन ज़मींदार ने तपस्वियों को प्रणाम किया और पूछा, "आदरणीय महोदय, रात में आपको प्रणाम करने कौन आया था?" "सक्का (इंद्र), महोदय।" "और उनके चारों ओर कौन बैठी थीं?" "वे अप्सराएँ कहलाती हैं।" तपस्वियों के समूह को प्रणाम करके वह घर चले गए और वहाँ पहुँचते ही मूर्खतापूर्ण ढंग से "मुझे एक अप्सरा दो" चिल्लाने लगे। उनके आसपास खड़े उनके रिश्तेदार सोचने लगे कि कहीं उन पर किसी बुरी आत्मा का साया तो नहीं है, और उन्होंने उंगलियाँ चटकाईं। उन्होंने कहा, "मैं उंगलियों के चटकने की बात नहीं कर रहा हूँ, बल्कि स्वर्गीय अप्सराओं (*10) की बात कर रहा हूँ।" और जब वे सज-धज कर उनके पास एक पत्नी या यहाँ तक कि एक शाही नर्तकी और वेश्या को लाए और कहा, "यह एक अप्सरा है," तो उन्होंने कहा, "यह अप्सरा नहीं है, यह एक स्त्री है," और अपनी मूर्खतापूर्ण चीख जारी रखी, "मुझे एक अप्सरा दो," और बिना कुछ खाए-पिए उनकी मृत्यु हो गई। यह सुनकर कलाहत्थी ने कहा, "यह राजा बहुत लालची है: मैं इसे सुधार दूँगा।" और उन्होंने कहा, "स्वर्ग में चहचहाने वाले सुनहरे हंस भी अपने परिवार का मांस खाने से मर गए," और इसे समझाने के लिए उन्होंने दो श्लोक दोहराए:

ठीक वैसे ही जैसे ये धतरत्थ हंस हवा में उड़ते हैं
वे सभी इसलिए मर गए क्योंकि वे अत्यंत अप्राकृतिक भोजन पर जीवित थे।
हे मनुष्यों के राजा, मेरी बातों को ध्यान से सुनो।
इस गैरकानूनी भोजन को खाने के लिए, वे आपको भी भगा देंगे।

कहते हैं, एक समय की बात है, चित्तकुटा पर्वत पर स्थित स्वर्ण गुफा में नब्बे हजार हंस रहते थे। बरसात के चार महीनों तक वे बाहर नहीं निकलते थे। अगर वे बाहर निकलते, तो उनके पंख पानी से भर जाते और वे लंबी उड़ान नहीं भर पाते और समुद्र में गिर जाते। इसलिए वे बाहर नहीं निकलते थे। लेकिन बरसात का मौसम नजदीक आने पर वे एक प्राकृतिक झील से जंगली धान इकट्ठा करते और अपनी गुफा को उससे भरकर चावल खाते थे। गुफा में प्रवेश करते ही, गुफा के प्रवेश द्वार पर रथ के पहिये जितना बड़ा एक उन्नानाभी मकड़ी हर महीने जाला बुनती थी, जिसका हर धागा गाय की लगाम (रस्सी) जितना मोटा होता था। हंस एक छोटे हंस को दो भाग भोजन देते थे, यह सोचकर कि वह जाला तोड़ देगा। जब आसमान साफ होता, तो वह छोटा हंस उनके आगे आकर जाला काट देता और बाकी सभी हंस उसी तरह भाग जाते। एक बार बरसात का मौसम पांच महीने तक चला और हंसों का भोजन कम पड़ गया। उन्होंने आपस में सलाह मशवरा किया और कहा, "अगर हमें जीना है तो अंडे लेने ही होंगे।" पहले उन्होंने अंडे खाए, फिर हंस के बच्चे और उसके बाद बूढ़े हंस। पाँच महीने बाद बारिश रुक गई, मकड़ी ने पाँच जाले बुन लिए थे, और अपने परिवार के सदस्यों का मांस खाने से हंस कमज़ोर हो गए थे। जिस जवान हंस को दुगुना भोजन मिला था, उसने जालों पर प्रहार करके चार जाल तोड़ दिए, लेकिन पाँचवाँ नहीं तोड़ सका और वहीं अटक गया। इसलिए मकड़ी ने उसका सिर काट दिया और उसका खून पी लिया। पहले एक, फिर दूसरा आया और जाले पर प्रहार किया, और मकड़ी ने कहा, "देखो, एक और उसी जगह अटक गया है," और उन सभी का खून चूस लिया, और कहते हैं कि उसी समय धतरत्था हंसों का परिवार विलुप्त हो गया। राजा एक और उदाहरण देने के लिए उत्सुक थे, लेकिन नागरिकों ने उठकर कहा, "महाराज, आप क्या करने वाले हैं? अब जब आपने नरभक्षी दुष्ट को पकड़ लिया है, तो आप आगे कैसे बढ़ेंगे? यदि वह अपना अपराध नहीं छोड़ता है, तो उसे उसके राज्य से निकाल दें।" और उन्होंने राजा को एक शब्द भी नहीं बोलने दिया। जनता की बातें सुनकर राजा भयभीत हो गए और कुछ नहीं कह सके। एक बार फिर सेनापति ने उनसे कहा, "महाराज, क्या आपके लिए अपना अपराध छोड़ना संभव होगा?" राजा ने कहा, "असंभव।" तब सेनापति ने अपने सभी पुत्रों और पुत्रियों को, जो पूरी शान-शौकत से सजे हुए थे, एक तरफ खड़ा कर दिया और कहा, "महाराज, अपने परिवार के इस घेरे, सलाहकारों के इस समूह और अपने शाही वैभव को देखिए: आप निराश न हों, बल्कि मनुष्य का मांस खाना छोड़ दें।" राजा ने कहा, "यह सब मुझे मनुष्य के मांस से अधिक प्रिय नहीं है।" "तो महाराज, इस नगर और राज्य से चले जाइए।" "कलाहत्थी," उसने कहा, "मुझे अपना राज्य नहीं चाहिए; मैं जाने के लिए तैयार हूँ, लेकिन मुझ पर एक कृपा कीजिए; मुझे मेरी तलवार और मेरा रसोइया दे दीजिए।" तो उन्होंने उसे एक तलवार, मनुष्य का मांस पकाने का एक बर्तन और एक टोकरी दे दी।और उसके रसोइए को साथ लेकर उन्होंने उसे राज्य से निष्कासित कर दिया। अपने रसोइए को लेकर वह शहर से निकलकर एक जंगल में गया और बरगद के पेड़ की तलहटी में रहने लगा। वह जंगल से होकर जाने वाली सड़क पर अपना ठिकाना बनाता और आदमियों को मारकर उनके शव रसोइए को दे देता। रसोइए मांस पकाकर परोसता और दोनों इसी तरह अपना जीवन यापन करते। जब वह तेज़ी से आगे बढ़ता और चिल्लाता, "देखो, मैं आदरणीय डाकू!" तो कोई भी उसका सामना नहीं कर पाता और सब ज़मीन पर गिर पड़ते। वह जिसे भी पकड़ता, एड़ी ऊपर करके या नीचे करके, उसे अपने रसोइए को दे देता। एक दिन उसे जंगल में कोई आदमी नहीं मिला। जब वह लौटा तो रसोइए ने पूछा, "महाराज, यह क्या है?" उसने उसे बर्तन अंगीठी पर रखने को कहा। "लेकिन मांस कहाँ है महाराज?" "अरे! मैं कुछ मांस ढूँढ़ लूँगा," उसने कहा। रसोइए ने सोचा, "मैं तो गया काम से," और कांपते हुए उसने आग जलाई और बर्तन अंगीठी पर रख दिया। तभी आदमखोर ने तलवार के एक ही वार से उसे मार डाला और उसका मांस पकाकर खा गया। उसके बाद से वह बिलकुल अकेला हो गया और उसे अपना खाना खुद ही पकाना पड़ता था। पूरे भारत में यह अफवाह फैल गई, "आदमखोर राहगीरों की हत्या करता है।" उसी समय एक धनी ब्राह्मण, जो पाँच सौ गाड़ियों का व्यापार करता था, पूर्व से पश्चिम की ओर यात्रा कर रहा था और उसने सोचा, "ये लोग कहते हैं कि ये आदमखोर लुटेरा रास्ते में लोगों की हत्या करता है। पैसे देकर मैं जंगल

से होकर निकल जाऊंगा।" तो उसने जंगल के प्रवेश द्वार पर रहने वाले लोगों को एक हजार सिक्के दिए और उनसे उसे सुरक्षित जंगल से पार कराने का अनुरोध किया और उनके साथ आगे बढ़ गया। उसने अपने पूरे काफिले को अपने आगे खड़ा किया, और स्नान करके, अभिषेक करके और उत्तम वस्त्र पहनकर, सफेद बैलों द्वारा खींची जाने वाली एक आरामदायक गाड़ी में बैठ गया, और अपने काफिले के साथ सबसे पीछे चल रहा था। आदमखोर एक पेड़ पर चढ़कर मनुष्यों की तलाश में था, लेकिन यद्यपि उसे काफिले के बाकी लोगों में से किसी को खाने की भूख नहीं थी, ब्राह्मण को देखते ही उसके मुंह में उसे खाने की तीव्र इच्छा जाग उठी। जब ब्राह्मण उसके पास आया, तो उसने अपना नाम पुकारते हुए कहा, "देखो, मैं हूँ, आदमखोर डाकू," और अपनी तलवार लहराते हुए, मानो किसी की आँखों में रेत भर रहा हो, वह उन पर झपटा और कोई भी उसका सामना नहीं कर सका, बल्कि सभी जमीन पर गिर पड़े। उसने ब्राह्मण को उसकी आरामदायक गाड़ी में बैठे हुए पैर से पकड़कर, सिर नीचे की ओर करके, उसकी पीठ पर पटक दिया और उसके सिर को अपनी एड़ियों से टकराते हुए उसे उठाकर ले गया। उठ खड़े हुए लोग एक-दूसरे से चिल्लाए, "अरे! मेरे साथी, उठो! हमें ब्राह्मण के हाथों से एक हजार सिक्के मिले हैं। हममें से कौन है जो मनुष्य जैसा दिखता है? चलो, हम सब, बलवान हो या दुर्बल, थोड़ी देर के लिए उसका पीछा करें।" उन्होंने उसका पीछा किया और आदमखोर रुक गया और पीछे मुड़कर देखा।किसी को न देखकर वह धीरे-धीरे आगे बढ़ता रहा। उसी क्षण एक साहसी व्यक्ति पूरी गति से दौड़ता हुआ उसके पास आ पहुँचा। उसे देखकर डाकू बाड़ फांदकर बबूल के एक टुकड़े (*11) पर पैर रख बैठा, जिससे उसके पैर के तलवे में चोट लग गई और वह लंगड़ाते हुए खून से लथपथ चलने लगा। तब उसका पीछा करने वाले ने यह देखकर कहा, "मैंने उसे घायल कर दिया है: तुम मेरे पीछे आओ, मैं उसे पकड़ लूँगा।" उन्होंने उसकी कमजोरी देखकर उसका पीछा करना शुरू कर दिया। जब डाकू ने देखा कि उसका पीछा किया जा रहा है, तो उसने ब्राह्मण को छोड़ दिया और अपनी जान बचाई। ब्राह्मण के अंगरक्षकों ने उसे पकड़ते ही सोचा, "इस डाकू से हमारा क्या लेना-देना है?" और वापस मुड़ गए। लेकिन नरभक्षी अपने बरगद के पेड़ की तलहटी में जाकर, शाखाओं के बीच लेट गया और वृक्ष की आत्मा से प्रार्थना करते हुए बोला, "हे वृक्ष की अप्सरा, यदि आप सात दिनों के भीतर मेरा घाव भर दें, तो मैं आपके तने को भारत के एक सौ एक राजकुमारों के गले के रक्त से स्नान कराऊंगा, और वृक्ष को चारों ओर से उनके अंतर्वस्त्रों से लटकाकर पाँच प्रकार के मीठे मांस का बलिदान चढ़ाऊंगा।" अब, कुछ भी न खाने-पीने के कारण उसका शरीर क्षीण हो गया, और सात दिनों के भीतर उसका घाव भर गया। उसने पहचान लिया कि उसका उपचार वृक्ष की अप्सरा की कृपा से हुआ है, और कुछ दिनों में उसने मनुष्य का मांस खाकर अपनी शक्ति वापस पा ली और सोचा, "आत्मा ने मेरी बहुत सहायता की है। मैं अपनी प्रतिज्ञा पूरी करूंगा।" अपनी तलवार लेकर वह तेजी से वृक्ष की तलहटी से आगे बढ़ा और राजाओं को लाने के इरादे से चल पड़ा। अब, एक यक्ष (राक्षस), जो पिछले जन्म में उसका साथी था और उसके साथ मिलकर मनुष्य का मांस खाता था, ने उसे देख लिया। यह जानते हुए कि वह पिछले जन्म में उसका मित्र था, उसने उससे पूछा, "क्या तुम मुझे पहचान नहीं रहे, मित्र?" यक्ष ने कहा, "नहीं।" तब उसने उसे अपने पिछले जन्म के एक किस्से के बारे में बताया। नरभक्षी ने उसे पहचान लिया और स्नेहपूर्वक अभिवादन किया। जब उससे पूछा गया कि उसका पुनर्जन्म कहाँ हुआ है, तो उसने अपने जन्मस्थान के बारे में बताया और यह भी बताया कि उसे उसके राज्य से कैसे निकाला गया था और अब वह कहाँ रह रहा है। उसने यह भी बताया कि वह एक छर्रे से घायल हो गया था और अब वह वृक्ष-परी से किए अपने वादे को पूरा करने के लिए एक अभियान पर जा रहा है। उसने कहा, "मुझे तुम्हारी मदद से इस मुश्किल से पार पाना है: हम साथ चलेंगे, मेरे मित्र।" "मैं नहीं जा सकता, लेकिन मैं आपकी एक सेवा कर सकता हूँ। मुझे एक ऐसा मंत्र अवश्य आता है जिसके शब्द अमूल्य हैं। यह शक्ति, फुर्ती और प्रतिष्ठा में वृद्धि सुनिश्चित करता है। यह मंत्र सीख लीजिए।" वह तुरंत मान गया, और जिन्न ने उसे मंत्र दिया और चला गया। नरभक्षी ने मंत्र को कंठस्थ कर लिया, और उस समय से वह हवा की तरह तेज और बहुत साहसी हो गया। सात दिनों के भीतर उसने एक सौ एक राजाओं को पार्कों और अन्य स्थानों की ओर जाते हुए पाया और हवा की गति से उन पर झपट पड़ा।अपना नाम पुकारते हुए, उछल-कूद करते हुए और चिल्लाते हुए उसने उन्हें बहुत डरा दिया। फिर उसने उनके पैर पकड़कर उन्हें सिर नीचे की ओर झुकाए रखा और एड़ियों से उनके सिर पर प्रहार करते हुए उन्हें हवा की गति से उड़ा ले गया। इसके बाद उसने उनकी हथेलियों में छेद किए और उन्हें एक रस्सी से बरगद के पेड़ पर लटका दिया। हवा उनके पैरों की उंगलियों के ठीक ज़मीन को छूते ही उन पर प्रहार करती थी, जिससे वे पेड़ पर ऐसे लटके हुए थे जैसे टोकरी में मुरझाए फूलों की मालाएँ घूम रही हों। लेकिन उसने सोचा, "सुतासोमा मेरे निजी गुरु थे: भारत को पूरी तरह से उजाड़ न होने दें," और उसे नहीं लाया। पेड़ को भेंट चढ़ाने के विचार से उसने आग जलाई और एक डंडा तेज करते हुए बैठ गया। यह देखकर वृक्ष-अप्सरा ने सोचा, "वह मुझे बलि चढ़ाने की तैयारी कर रहा है, लेकिन मैंने उसके घाव को ठीक नहीं किया: अब वह एक बड़ा नरसंहार करेगा। क्या किया जाए? मैं उसे रोक नहीं पाऊँगी।" इसलिए वह गई और चारों महान राजाओं को यह बात बताई और उनसे उसे रोकने का अनुरोध किया। जब उन्होंने कहा कि वे ऐसा नहीं कर सकते, तो वह इंद्र के पास गईं और उन्हें पूरी कहानी सुनाई और उनसे उसे रोकने का अनुरोध किया। उन्होंने कहा, "मैं यह नहीं कर सकता, लेकिन मैं आपको एक ऐसे व्यक्ति के बारे में बताता हूँ जो यह कर सकता है।" उसने पूछा, "वह कौन है?" उन्होंने उत्तर दिया, "मनुष्यों और देवदूतों के लोक में, उनके अलावा कोई और नहीं है, लेकिन कुरु राज्य के इंद्रप्रस्थ नगर में कुरु के राजकुमार सुतसोमा हैं। वे इस व्यक्ति को वश में करेंगे और उसे विनम्र बनाएंगे, इन राजाओं के जीवन की रक्षा करेंगे, उसे मानव मांस खाने की बीमारी से मुक्त करेंगे और पूरे भारत पर अमृत की वर्षा करेंगे। यदि आप राजाओं के जीवन की रक्षा के लिए उत्सुक हैं, तो उनसे कहें कि पहले सुतसोमा को लाएँ और फिर वृक्ष को उनका बलिदान अर्पित करें।" "ठीक है," वृक्ष-आत्मा ने कहा और एक तपस्वी का वेश धारण करके तेजी से उस नरभक्षी के पास पहुँच गई। कदमों की आहट सुनकर उसने सोचा, "क्या कोई राजा बच निकला है?" ऊपर देखकर उसने सोचा, "तपस्वी निश्चय ही क्षत्रिय होते हैं। यदि मैं इसे पकड़ लूँ, तो मैं एक सौ एक राजाओं की पूर्ण संख्या प्राप्त कर

लूँगा और अपना यज्ञ (*12) अर्पित करूँगा।" वह उठा और हाथ में तलवार लिए तपस्वी का पीछा करने लगा, परन्तु तीन मील (4.23 किमी) तक पीछा करने के बावजूद वह उसे पकड़ नहीं सका, और उसके शरीर से पसीने की धाराएँ बहने लगीं। उसने सोचा, "मैं एक समय में पूरी गति से दौड़ते हुए हाथी, घोड़े या रथ का पीछा करके उसे पकड़ लेता था, परन्तु आज अपनी पूरी शक्ति से दौड़ने के बावजूद मैं इस तपस्वी को नहीं पकड़ पा रहा हूँ जो अपनी स्वाभाविक गति से चल रहा है। इसका कारण क्या हो सकता है?" फिर यह सोचकर, "तपस्वी आज्ञा मानने के अभ्यस्त होते हैं: यदि मैं उसे रुकने के लिए कहूँ और वह रुक जाए, तो मैं उसे पकड़ लूँगा," उसने पुकारा, "रुको, हे पूज्यवर।" "मैं खड़ा हूँ," उसने उत्तर दिया, "तुम भी खड़े होने का प्रयास करो।" फिर उन्होंने कहा, "अरे! तपस्वी तो अपनी जान बचाने के लिए भी झूठ नहीं बोलते, परन्तु तुम झूठ बोलते हो," और उन्होंने इस श्लोक को दोहराया:फिर उसने उनके पैर पकड़कर उन्हें सिर नीचे की ओर झुकाए रखा और एड़ियों से उनके सिर पर प्रहार करते हुए उन्हें हवा की गति से उड़ा ले गया। इसके बाद उसने उनकी हथेलियों में छेद किए और उन्हें एक रस्सी से बरगद के पेड़ पर लटका दिया। हवा के झोंके से उनके पैर की उंगलियां ज़मीन को छूते ही टकराने लगीं और वे पेड़ पर ऐसे लटके रहे जैसे टोकरी में मुरझाए फूलों की मालाएं घूम रही हों। लेकिन उसने सोचा, "सुतासोमा मेरे निजी गुरु थे: भारत को पूरी तरह उजाड़ न होने दें," और वह उन्हें नहीं लाया। पेड़ को भेंट चढ़ाने के विचार से उसने आग जलाई और एक डंडा तेज करते हुए बैठ गया। यह देखकर वृक्ष-परी ने सोचा, "वह मुझे बलि चढ़ाने की तैयारी कर रहा है, लेकिन मैंने उसके घाव को ठीक नहीं किया: अब वह एक बड़ा नरसंहार करेगा। क्या किया जाए? मैं उसे रोक नहीं पाऊंगी।" इसलिए वह गई और उसने चारों महान राजाओं को यह बात बताई और उनसे उसे रोकने का अनुरोध किया। जब उन्होंने कहा कि वे ऐसा नहीं कर सकते, तो वह इंद्र के पास गईं और उन्हें पूरी कहानी सुनाई और उनसे उसे रोकने का अनुरोध किया। उन्होंने कहा, "मैं यह नहीं कर सकता, लेकिन मैं आपको एक ऐसे व्यक्ति के बारे में बताता हूँ जो यह कर सकता है।" उसने पूछा, "वह कौन है?" उन्होंने उत्तर दिया, "मनुष्यों और देवदूतों के लोक में, उनके अलावा कोई और नहीं है, लेकिन कुरु राज्य के इंद्रप्रस्थ नगर में कुरु के राजकुमार सुतसोमा हैं। वे इस व्यक्ति को वश में करेंगे और उसे विनम्र बनाएंगे, इन राजाओं के जीवन की रक्षा करेंगे, उसे मानव मांस खाने की बीमारी से मुक्त करेंगे और पूरे भारत पर अमृत की वर्षा करेंगे। यदि आप राजाओं के जीवन की रक्षा के लिए उत्सुक हैं, तो उनसे कहें कि पहले सुतसोमा को लाएँ और फिर वृक्ष को उनका बलिदान अर्पित करें।" "ठीक है," वृक्ष-आत्मा ने कहा और एक तपस्वी का वेश धारण करके तेजी से उस नरभक्षी के पास पहुँच गई। कदमों की आहट सुनकर उसने सोचा, "क्या कोई राजा बच निकला है?" ऊपर देखकर उसने सोचा, "तपस्वी निश्चय ही क्षत्रिय होते हैं। यदि मैं इसे पकड़ लूँ, तो मैं एक सौ एक राजाओं की पूर्ण संख्या प्राप्त कर लूँगा और अपना यज्ञ (*12) अर्पित करूँगा।" वह उठा और हाथ में तलवार लिए तपस्वी का पीछा करने लगा, परन्तु तीन मील (4.23 किमी) तक पीछा करने के बावजूद वह उसे पकड़ नहीं सका, और उसके शरीर से पसीने की धाराएँ बहने लगीं। उसने सोचा, "मैं एक समय में पूरी गति से दौड़ते हुए हाथी, घोड़े या रथ का पीछा करके उसे पकड़ लेता था, परन्तु आज अपनी पूरी शक्ति से दौड़ने के बावजूद मैं इस तपस्वी को नहीं पकड़ पा रहा हूँ जो अपनी स्वाभाविक गति से चल रहा है। इसका कारण क्या हो सकता है?" फिर यह सोचकर, "तपस्वी आज्ञा मानने के अभ्यस्त होते हैं: यदि मैं उसे रुकने के लिए कहूँ और वह रुक जाए, तो मैं उसे पकड़ लूँगा," उसने पुकारा, "रुको, हे पूज्यवर।" "मैं खड़ा हूँ," उसने उत्तर दिया, "तुम भी खड़े होने का प्रयास करो।" फिर उन्होंने कहा, "अरे! तपस्वी तो अपनी जान बचाने के लिए भी झूठ नहीं बोलते, परन्तु तुम झूठ बोलते हो," और उन्होंने इस श्लोक को दोहराया:फिर उसने उनके पैर पकड़कर उन्हें सिर नीचे की ओर झुकाए रखा और एड़ियों से उनके सिर पर प्रहार करते हुए उन्हें हवा की गति से उड़ा ले गया। इसके बाद उसने उनकी हथेलियों में छेद किए और उन्हें एक रस्सी से बरगद के पेड़ पर लटका दिया। हवा के झोंके से उनके पैर की उंगलियां ज़मीन को छूते ही टकराने लगीं और वे पेड़ पर ऐसे लटके रहे जैसे टोकरी में मुरझाए फूलों की मालाएं घूम रही हों। लेकिन उसने सोचा, "सुतासोमा मेरे निजी गुरु थे: भारत को पूरी तरह उजाड़ न होने दें," और वह उन्हें नहीं लाया। पेड़ को भेंट चढ़ाने के विचार से उसने आग जलाई और एक डंडा तेज करते हुए बैठ गया। यह देखकर वृक्ष-परी ने सोचा, "वह मुझे बलि चढ़ाने की तैयारी कर रहा है, लेकिन मैंने उसके घाव को ठीक नहीं किया: अब वह एक बड़ा नरसंहार करेगा। क्या किया जाए? मैं उसे रोक नहीं पाऊंगी।" इसलिए वह गई और उसने चारों महान राजाओं को यह बात बताई और उनसे उसे रोकने का अनुरोध किया। जब उन्होंने कहा कि वे ऐसा नहीं कर सकते, तो वह इंद्र के पास गईं और उन्हें पूरी कहानी सुनाई और उनसे उसे रोकने का अनुरोध किया। उन्होंने कहा, "मैं यह नहीं कर सकता, लेकिन मैं आपको एक ऐसे व्यक्ति के बारे में बताता हूँ जो यह कर सकता है।" उसने पूछा, "वह कौन है?" उन्होंने उत्तर दिया, "मनुष्यों और देवदूतों के लोक में, उनके अलावा कोई और नहीं है, लेकिन कुरु राज्य के इंद्रप्रस्थ नगर में कुरु के राजकुमार सुतसोमा हैं। वे इस व्यक्ति को वश में करेंगे और उसे विनम्र बनाएंगे, इन राजाओं के जीवन की रक्षा करेंगे, उसे मानव मांस खाने की बीमारी से मुक्त करेंगे और पूरे भारत पर अमृत की वर्षा करेंगे। यदि आप राजाओं के जीवन की रक्षा के लिए उत्सुक हैं, तो उनसे कहें कि पहले सुतसोमा को लाएँ और फिर वृक्ष को उनका बलिदान अर्पित करें।" "ठीक है," वृक्ष-आत्मा ने कहा और एक तपस्वी का वेश धारण करके तेजी से उस नरभक्षी के पास पहुँच गई। कदमों की आहट सुनकर उसने सोचा, "क्या कोई राजा बच निकला है?" ऊपर देखकर उसने सोचा, "तपस्वी निश्चय ही क्षत्रिय होते हैं। यदि मैं इसे पकड़ लूँ, तो मैं एक सौ एक राजाओं की पूर्ण संख्या प्राप्त कर लूँगा और अपना यज्ञ (*12) अर्पित करूँगा।" वह उठा और हाथ में तलवार लिए तपस्वी का पीछा करने लगा, परन्तु तीन मील (4.23 किमी) तक पीछा करने के बावजूद वह उसे पकड़ नहीं सका, और उसके शरीर से पसीने की धाराएँ बहने लगीं। उसने सोचा, "मैं एक समय में पूरी गति से दौड़ते हुए हाथी, घोड़े या रथ का पीछा करके उसे पकड़ लेता था, परन्तु आज अपनी पूरी शक्ति से दौड़ने के बावजूद मैं इस तपस्वी को नहीं पकड़ पा रहा हूँ जो अपनी स्वाभाविक गति से चल रहा है। इसका कारण क्या हो सकता है?" फिर यह सोचकर, "तपस्वी आज्ञा मानने के अभ्यस्त होते हैं: यदि मैं उसे रुकने के लिए कहूँ और वह रुक

जाए, तो मैं उसे पकड़ लूँगा," उसने पुकारा, "रुको, हे पूज्यवर।" "मैं खड़ा हूँ," उसने उत्तर दिया, "तुम भी खड़े होने का प्रयास करो।" फिर उन्होंने कहा, "अरे! तपस्वी तो अपनी जान बचाने के लिए भी झूठ नहीं बोलते, परन्तु तुम झूठ बोलते हो," और उन्होंने इस श्लोक को दोहराया:इसके बाद उसने उनके हाथों की हथेलियों में छेद किए और उन्हें एक रस्सी से बरगद के पेड़ पर लटका दिया। हवा के झोंके से उनके पैर ज़मीन को छूते ही झटकने लगे और वे पेड़ पर ऐसे लटके रहे जैसे टोकरी में मुरझाए फूलों की मालाएँ घूम रही हों। लेकिन उसने सोचा, "सुतासोमा मेरे निजी गुरु थे: भारत को पूरी तरह उजाड़ न होने दें," और उसे नहीं लाया। पेड़ को भेंट चढ़ाने के विचार से उसने आग जलाई और एक डंडा तेज़ करने के लिए बैठ गया। यह देखकर वृक्ष-अप्सरा ने सोचा, "वह मुझे बलि चढ़ाने की तैयारी कर रहा है, लेकिन मैंने उसके घाव को ठीक नहीं किया: अब वह एक बड़ा नरसंहार करेगा। क्या किया जाए? मैं उसे रोक नहीं पाऊँगी।" इसलिए वह गई और चारों महान राजाओं को यह बात बताई और उनसे उसे रोकने का अनुरोध किया। जब उन्होंने कहा कि वे ऐसा नहीं कर सकते, तो वह सक्का (इंद्र) के पास गई और उन्हें पूरी कहानी सुनाई और उनसे उसे रोकने का अनुरोध किया। उन्होंने कहा, "मैं ऐसा नहीं कर सकता, लेकिन मैं तुम्हें एक ऐसे व्यक्ति के बारे में बताता हूँ जो ऐसा कर सकता है।" उसने कहा, "वह कौन है?" “मनुष्यों और देवताओं (देवदूतों) के संसार में,” उसने उत्तर दिया, “और कोई नहीं है, सिवाय कुरु राज्य के इंद्रप्रस्थ नगर में कुरु के राजकुमार सुतसोमा के। वह इस व्यक्ति को वश में करेगा और उसे विनम्र बनाएगा, इन राजाओं के जीवन की रक्षा करेगा, उसे मानव मांस खाने की बीमारी से मुक्त करेगा और पूरे भारत पर अमृत की वर्षा करेगा। यदि आप राजाओं के जीवन की रक्षा के लिए उत्सुक हैं, तो उससे कहें कि पहले सुतसोमा को लाए और फिर वृक्ष को उसका बलिदान अर्पित करे।” “ठीक है,” वृक्ष-आत्मा ने कहा और एक तपस्वी का वेश धारण करके शीघ्रता से उस नरभक्षी के निकट पहुँच गया। पदचिन्हों की आहट सुनकर उसने सोचा, “क्या कोई राजा बच निकला है?” ऊपर देखकर उसे देखकर उसने सोचा, “तपस्वी निश्चित रूप से क्षत्रिय होते हैं। यदि मैं उसे पकड़ लूँ, तो मैं एक सौ एक राजाओं की पूरी संख्या पूरी कर लूँगा और अपना बलिदान अर्पित करूँगा (*12)।” वह उठा और हाथ में तलवार लिए तपस्वी का पीछा करने लगा, परन्तु तीन मील (4.23 किमी) तक पीछा करने के बावजूद वह उसे पकड़ नहीं सका, और उसके शरीर से पसीने की धाराएँ बहने लगीं। उसने सोचा, "एक समय था जब मैं पूरी गति से दौड़ते हुए हाथी, घोड़े या रथ का पीछा करके उसे पकड़ लेता था, परन्तु आज अपनी पूरी शक्ति से दौड़ने के बावजूद मैं इस तपस्वी को नहीं पकड़ पा रहा हूँ जो अपनी स्वाभाविक गति से चल रहा है। इसका कारण क्या हो सकता है?" फिर यह सोचकर, "तपस्वी आज्ञा मानने के आदी होते हैं: यदि मैं उसे रुकने के लिए कहूँ और वह रुक जाए, तो मैं उसे पकड़ लूँगा," वह पुकारा, "रुको, हे पूज्यवर।" "मैं खड़ा हूँ," उसने उत्तर दिया, "तुम भी खड़े होने का प्रयास करो।" फिर उसने कहा, "अरे! तपस्वी तो अपनी जान बचाने के लिए भी झूठ नहीं बोलते, परन्तु तुम झूठ बोल रहे हो," और उसने यह श्लोक दोहराया:इसके बाद उसने उनके हाथों की हथेलियों में छेद किए और उन्हें एक रस्सी से बरगद के पेड़ पर लटका दिया। हवा के झोंके से उनके पैर ज़मीन को छूते ही झटकने लगे और वे पेड़ पर ऐसे लटके रहे जैसे टोकरी में मुरझाए फूलों की मालाएँ घूम रही हों। लेकिन उसने सोचा, "सुतासोमा मेरे निजी गुरु थे: भारत को पूरी तरह उजाड़ न होने दें," और उसे नहीं लाया। पेड़ को भेंट चढ़ाने के विचार से उसने आग जलाई और एक डंडा तेज़ करने के लिए बैठ गया। यह देखकर वृक्ष-अप्सरा ने सोचा, "वह मुझे बलि चढ़ाने की तैयारी कर रहा है, लेकिन मैंने उसके घाव को ठीक नहीं किया: अब वह एक बड़ा नरसंहार करेगा। क्या किया जाए? मैं उसे रोक नहीं पाऊँगी।" इसलिए वह गई और चारों महान राजाओं को यह बात बताई और उनसे उसे रोकने का अनुरोध किया। जब उन्होंने कहा कि वे ऐसा नहीं कर सकते, तो वह सक्का (इंद्र) के पास गई और उन्हें पूरी कहानी सुनाई और उनसे उसे रोकने का अनुरोध किया। उन्होंने कहा, "मैं ऐसा नहीं कर सकता, लेकिन मैं तुम्हें एक ऐसे व्यक्ति के बारे में बताता हूँ जो ऐसा कर सकता है।" उसने कहा, "वह कौन है?" “मनुष्यों और देवताओं (देवदूतों) के संसार में,” उसने उत्तर दिया, “और कोई नहीं है, सिवाय कुरु राज्य के इंद्रप्रस्थ नगर में कुरु के राजकुमार सुतसोमा के। वह इस व्यक्ति को वश में करेगा और उसे विनम्र बनाएगा, इन राजाओं के जीवन की रक्षा करेगा, उसे मानव मांस खाने की बीमारी से मुक्त करेगा और पूरे भारत पर अमृत की वर्षा करेगा। यदि आप राजाओं के जीवन की रक्षा के लिए उत्सुक हैं, तो उससे कहें कि पहले सुतसोमा को लाए और फिर वृक्ष को उसका बलिदान अर्पित करे।” “ठीक है,” वृक्ष-आत्मा ने कहा और एक तपस्वी का वेश धारण करके शीघ्रता से उस नरभक्षी के निकट पहुँच गया। पदचिन्हों की आहट सुनकर उसने सोचा, “क्या कोई राजा बच निकला है?” ऊपर देखकर उसे देखकर उसने सोचा, “तपस्वी निश्चित रूप से क्षत्रिय होते हैं। यदि मैं उसे पकड़ लूँ, तो मैं एक सौ एक राजाओं की पूरी संख्या पूरी कर लूँगा और अपना बलिदान अर्पित करूँगा (*12)।” वह उठा और हाथ में तलवार लिए तपस्वी का पीछा करने लगा, परन्तु तीन मील (4.23 किमी) तक पीछा करने के बावजूद वह उसे पकड़ नहीं सका, और उसके शरीर से पसीने की धाराएँ बहने लगीं। उसने सोचा, "एक समय था जब मैं पूरी गति से दौड़ते हुए हाथी, घोड़े या रथ का पीछा करके उसे पकड़ लेता था, परन्तु आज अपनी पूरी शक्ति से दौड़ने के बावजूद मैं इस तपस्वी को नहीं पकड़ पा रहा हूँ जो अपनी स्वाभाविक गति से चल रहा है। इसका कारण क्या हो सकता है?" फिर यह सोचकर, "तपस्वी आज्ञा मानने के आदी होते हैं: यदि मैं उसे रुकने के लिए कहूँ और वह रुक जाए, तो मैं उसे पकड़ लूँगा," वह पुकारा, "रुको, हे पूज्यवर।" "मैं खड़ा हूँ," उसने उत्तर दिया, "तुम भी खड़े होने का प्रयास करो।" फिर उसने कहा, "अरे! तपस्वी तो अपनी जान बचाने के लिए भी झूठ नहीं बोलते, परन्तु तुम झूठ बोल रहे हो," और उसने यह श्लोक दोहराया:और उसे नहीं लाया। वृक्ष को बलि चढ़ाने के विचार से उसने अग्नि प्रज्वलित की और बैठकर एक डंडा तराशने लगा। यह देखकर वृक्ष-परी ने सोचा, “वह मुझे बलि चढ़ाने की तैयारी कर रहा है, लेकिन मैंने उसके घाव को नहीं भरा: अब वह एक बड़ा नरसंहार करेगा। क्या किया जाए? मैं उसे रोक नहीं पाऊंगी।” इसलिए वह गई और चारों महान राजाओं को यह बात बताई और उनसे उसे रोकने का अनुरोध किया। जब उन्होंने कहा कि वे ऐसा नहीं कर सकते, तो वह सक्का (इंद्र) के पास गई और उन्हें पूरी कहानी सुनाई और उनसे उसे रोकने का अनुरोध किया। उन्होंने कहा, “मैं ऐसा

नहीं कर सकता, लेकिन मैं तुम्हें एक ऐसे व्यक्ति के बारे में बताता हूँ जो ऐसा कर सकता है।" उसने पूछा, "वह कौन है?" उन्होंने उत्तर दिया, "मनुष्यों और देवताओं (देवदूतों) के संसार में, उनके अलावा कोई और नहीं है, लेकिन कुरु राज्य के इंद्रप्रस्थ नगर में कुरु का राजकुमार सुतसोमा है। वह इस व्यक्ति को वश में करेगा और उसे विनम्र बनाएगा और इन राजाओं के जीवन की रक्षा करेगा, और उसे मानव मांस खाने की बीमारी से मुक्त करेगा और पूरे भारत पर अमृत की वर्षा करेगा।" यदि तुम राजाओं के जीवन को बचाना चाहते हो, तो उससे कहो कि पहले सूतसोमा को लाए और फिर वृक्ष को अपना बलिदान अर्पित करे।" "ठीक है," वृक्ष-आत्मा ने कहा और तपस्वी का वेश धारण करके तेज़ी से उस नरभक्षी के पास पहुँचा। पदचाप सुनकर उसने सोचा, "क्या कोई राजा बच निकला है?" ऊपर देखकर उसे देखकर उसने सोचा, "तपस्वी तो क्षत्रिय ही होते हैं। यदि मैं उसे पकड़ लूँ, तो मैं एक सौ एक राजाओं की पूरी संख्या पूरी कर लूँगा और अपना बलिदान अर्पित करूँगा (*12)।" वह उठा और तलवार हाथ में लेकर तपस्वी का पीछा किया, परन्तु तीन मील (4.23 किमी) तक पीछा करने के बावजूद वह उसे पकड़ नहीं सका, और उसके शरीर से पसीने की धाराएँ बहने लगीं। उसने सोचा, "मैं एक समय में पूरी गति से दौड़ते हुए हाथी, घोड़े या रथ का पीछा करके उसे पकड़ लेता था, परन्तु आज अपनी पूरी शक्ति से दौड़ने के बावजूद मैं इस तपस्वी को नहीं पकड़ पा रहा हूँ जो अपनी स्वाभाविक गति से चल रहा है।" इसका कारण क्या हो सकता है?" फिर सोचते हुए, "तपस्वी आज्ञा मानने के आदी होते हैं: अगर मैं उसे खड़े होने के लिए कहूँ और वह खड़ा हो जाए, तो मैं उसे पकड़ लूँगा," उसने पुकार कर कहा, "खड़े हो जाइए, हे पूज्यवर।" "मैं खड़ा हूँ," उसने उत्तर दिया, "आप भी खड़े होने का प्रयास कीजिए।" फिर उसने कहा, "अरे! तपस्वी तो अपनी जान बचाने के लिए भी झूठ नहीं बोलते, लेकिन आप झूठ बोल रहे हैं," और उसने इस श्लोक को दोहराया:और उसे नहीं लाया। वृक्ष को बलि चढ़ाने के विचार से उसने अग्नि प्रज्वलित की और बैठकर एक डंडा तराशने लगा। यह देखकर वृक्ष-परी ने सोचा, "वह मुझे बलि चढ़ाने की तैयारी कर रहा है, लेकिन मैंने उसके घाव को नहीं भरा: अब वह एक बड़ा नरसंहार करेगा। क्या किया जाए? मैं उसे रोक नहीं पाऊंगी।" इसलिए वह गई और चारों महान राजाओं को यह बात बताई और उनसे उसे रोकने का अनुरोध किया। जब उन्होंने कहा कि वे ऐसा नहीं कर सकते, तो वह सक्का (इंद्र) के पास गई और उन्हें पूरी कहानी सुनाई और उनसे उसे रोकने का अनुरोध किया। उन्होंने कहा, "मैं ऐसा नहीं कर सकता, लेकिन मैं तुम्हें एक ऐसे व्यक्ति के बारे में बताता हूँ जो ऐसा कर सकता है।" उसने पूछा, "वह कौन है?" उन्होंने उत्तर दिया, "मनुष्यों और देवताओं (देवदूतों) के संसार में, उनके अलावा कोई और नहीं है, लेकिन कुरु राज्य के इंद्रप्रस्थ नगर में कुरु का राजकुमार सुतसोमा है। वह इस व्यक्ति को वश में करेगा और उसे विनम्र बनाएगा और इन राजाओं के जीवन की रक्षा करेगा, और उसे मानव मांस खाने की बीमारी से मुक्त करेगा और पूरे भारत पर अमृत की वर्षा करेगा।" यदि तुम राजाओं के जीवन को बचाना चाहते हो, तो उससे कहो कि पहले सूतसोमा को लाए और फिर वृक्ष को अपना बलिदान अर्पित करे।" "ठीक है," वृक्ष-आत्मा ने कहा और तपस्वी का वेश धारण करके तेज़ी से उस नरभक्षी के पास पहुँचा। पदचाप सुनकर उसने सोचा, "क्या कोई राजा बच निकला है?" ऊपर देखकर उसे देखकर उसने सोचा, "तपस्वी तो क्षत्रिय ही होते हैं। यदि मैं उसे पकड़ लूँ, तो मैं एक सौ एक राजाओं की पूरी संख्या पूरी कर लूँगा और अपना बलिदान अर्पित करूँगा (*12)।" वह उठा और तलवार हाथ में लेकर तपस्वी का पीछा किया, परन्तु तीन मील (4.23 किमी) तक पीछा करने के बावजूद वह उसे पकड़ नहीं सका, और उसके शरीर से पसीने की धाराएँ बहने लगीं। उसने सोचा, "मैं एक समय में पूरी गति से दौड़ते हुए हाथी, घोड़े या रथ का पीछा करके उसे पकड़ लेता था, परन्तु आज अपनी पूरी शक्ति से दौड़ने के बावजूद मैं इस तपस्वी को नहीं पकड़ पा रहा हूँ जो अपनी स्वाभाविक गति से चल रहा है।" इसका कारण क्या हो सकता है?" फिर सोचते हुए, "तपस्वी आज्ञा मानने के आदी होते हैं: अगर मैं उसे खड़े होने के लिए कहूँ और वह खड़ा हो जाए, तो मैं उसे पकड़ लूँगा," उसने पुकार कर कहा, "खड़े हो जाइए, हे पूज्यवर।" "मैं खड़ा हूँ," उसने उत्तर दिया, "आप भी खड़े होने का प्रयास कीजिए।" फिर उसने कहा, "अरे! तपस्वी तो अपनी जान बचाने के लिए भी झूठ नहीं बोलते, लेकिन आप झूठ बोल रहे हैं," और उसने इस श्लोक को दोहराया:"और कोई नहीं है, लेकिन कुरु राज्य के इंद्रप्रस्थ नगर में कुरु का राजकुमार सुतसोमा है। वह इस व्यक्ति को वश में करेगा और उसे विनम्र बनाएगा, इन राजाओं के जीवन की रक्षा करेगा, उसे मानव मांस खाने की बीमारी से मुक्त करेगा और पूरे भारत पर अमृत की वर्षा करेगा। यदि आप राजाओं के जीवन की रक्षा के लिए उत्सुक हैं, तो उससे कहें कि पहले सुतसोमा को लाए और फिर वृक्ष को उसका बलिदान अर्पित करे।" "ठीक है," वृक्ष-आत्मा ने कहा और एक तपस्वी का वेश धारण करके तेजी से गया और नरभक्षी के पास पहुंचा। कदमों की आहट सुनकर उसने सोचा, "क्या कोई राजा बच निकला है?" ऊपर देखकर उसे देखकर उसने सोचा, "तपस्वी निश्चित रूप से क्षत्रिय होते हैं। यदि मैं उसे पकड़ लूं, तो मैं एक सौ एक राजाओं की पूरी संख्या पूरी कर लूंगा और अपना बलिदान अर्पित करूंगा (*12)।" वह उठा और हाथ में तलवार लिए तपस्वी का पीछा करने लगा, परन्तु तीन मील (4.23 किमी) तक पीछा करने के बावजूद वह उसे पकड़ नहीं सका, और उसके शरीर से पसीने की धाराएँ बहने लगीं। उसने सोचा, "एक समय था जब मैं पूरी गति से दौड़ते हुए हाथी, घोड़े या रथ का पीछा करके उसे पकड़ लेता था, परन्तु आज अपनी पूरी शक्ति से दौड़ने के बावजूद मैं इस तपस्वी को नहीं पकड़ पा रहा हूँ जो अपनी स्वाभाविक गति से चल रहा है। इसका कारण क्या हो सकता है?" फिर यह सोचकर, "तपस्वी आज्ञा मानने के आदी होते हैं: यदि मैं उसे रुकने के लिए कहूँ और वह रुक जाए, तो मैं उसे पकड़ लूँगा," वह पुकारा, "रुको, हे पूज्यवर।" "मैं खड़ा हूँ," उसने उत्तर दिया, "तुम भी खड़े होने का प्रयास करो।" फिर उसने कहा, "अरे! तपस्वी तो अपनी जान बचाने के लिए भी झूठ नहीं बोलते, परन्तु तुम झूठ बोल रहे हो," और उसने यह श्लोक दोहराया:"और कोई नहीं है, लेकिन कुरु राज्य के इंद्रप्रस्थ नगर में कुरु का राजकुमार सुतसोमा है। वह इस व्यक्ति को वश में करेगा और उसे विनम्र बनाएगा, इन राजाओं के जीवन की रक्षा करेगा, उसे मानव मांस खाने की बीमारी से मुक्त करेगा और पूरे भारत पर अमृत की वर्षा करेगा। यदि आप राजाओं के जीवन की रक्षा के लिए उत्सुक हैं, तो उससे कहें कि पहले सुतसोमा को लाए और फिर वृक्ष को उसका बलिदान अर्पित करे।" "ठीक

है," वृक्ष-आत्मा ने कहा और एक तपस्वी का वेश धारण करके तेजी से गया और नरभक्षी के पास पहुंचा। कदमों की आहट सुनकर उसने सोचा, "क्या कोई राजा बच निकला है?" ऊपर देखकर उसे देखकर उसने सोचा, "तपस्वी निश्चित रूप से क्षत्रिय होते हैं। यदि मैं उसे पकड़ लूं, तो मैं एक सौ एक राजाओं की पूरी संख्या पूरी कर लूंगा और अपना बलिदान अर्पित करूंगा (*12)।" वह उठा और हाथ में तलवार लिए तपस्वी का पीछा करने लगा, परन्तु तीन मील (4.23 किमी) तक पीछा करने के बावजूद वह उसे पकड़ नहीं सका, और उसके शरीर से पसीने की धाराएँ बहने लगीं। उसने सोचा, "एक समय था जब मैं पूरी गति से दौड़ते हुए हाथी, घोड़े या रथ का पीछा करके उसे पकड़ लेता था, परन्तु आज अपनी पूरी शक्ति से दौड़ने के बावजूद मैं इस तपस्वी को नहीं पकड़ पा रहा हूँ जो अपनी स्वाभाविक गति से चल रहा है। इसका कारण क्या हो सकता है?" फिर यह सोचकर, "तपस्वी आज्ञा मानने के आदी होते हैं: यदि मैं उसे रुकने के लिए कहूँ और वह रुक जाए, तो मैं उसे पकड़ लूँगा," वह पुकारा, "रुको, हे पूज्यवर।" "मैं खड़ा हूँ," उसने उत्तर दिया, "तुम भी खड़े होने का प्रयास करो।" फिर उसने कहा, "अरे! तपस्वी तो अपनी जान बचाने के लिए भी झूठ नहीं बोलते, परन्तु तुम झूठ बोल रहे हो," और उसने यह श्लोक दोहराया:उसने उत्तर दिया, "क्या तुम भी खड़े होने का प्रयास करते हो?" फिर उसने कहा, "अरे! तपस्वी तो अपनी जान बचाने के लिए भी झूठ नहीं बोलते, परन्तु तुम झूठ बोलते हो," और उसने इस श्लोक को दोहराया:उसने उत्तर दिया, "क्या तुम भी खड़े होने का प्रयास करते हो?" फिर उसने कहा, "अरे! तपस्वी तो अपनी जान बचाने के लिए भी झूठ नहीं बोलते, परन्तु तुम झूठ बोलते हो," और उसने इस श्लोक को दोहराया:

हालांकि मैं तुम्हें खड़े होने के लिए कहता हूं, फिर भी तुम आगे की ओर उड़ते हो।
और "देखो! मैं खड़ा हूँ" चिल्लाते हुए, मुझे लगता है कि तुम झूठ बोल रहे हो:
यह अनुचित है; हे पुजारी, यह तलवार आपको ही धारण करनी होगी।
बगुले के पंख से सुसज्जित एक हानिरहित शाफ्ट होना (*13)।
तब अप्सरा ने दो छंद कहे:

मैं धर्मपरायणता में समर्पित हूँ।
न ही मैं अपना नाम या परिवार बदलूं।
यहां लुटेरे क्षण भर के लिए ही ठहरते हैं।
जल्द ही उन्हें नरक की पीड़ाओं का सामना करना पड़ेगा।
यहां साहसी और बंदी बनो, महान सुतासोमा लाओ
और उसके बलिदान से ही तुम स्वर्ग प्राप्त करोगे, हे राजा।
इन शब्दों के साथ अप्सरा ने तपस्वी का वेश उतार दिया और अपने असली रूप में प्रकट हो गई, आकाश में सूर्य के समान चमकती हुई। नरभक्षी ने उसकी बातें सुनकर और उसका रूप देखकर पूछा कि वह कौन है। जब उसने उत्तर दिया कि वह इस वृक्ष की आत्मा के रूप में पुनर्जीवित हुई है, तो वह प्रसन्न हुआ और यह सोचकर, "मैंने अपने संरक्षक देवता के दर्शन कर लिए हैं," उसने कहा, "हे स्वर्ग के स्वामी, सुतासोमा के कारण विचलित न हों, बल्कि एक बार फिर अपने वृक्ष में प्रवेश करें।" आत्मा उसकी आँखों के सामने वृक्ष में प्रवेश कर गई। उसी क्षण सूर्य अस्त हो गया और चंद्रमा उदय हो गया। वेदों और उनके सहायक ग्रंथों में पारंगत तथा आकाशीय पिंडों की गतिविधियों से भलीभांति परिचित नरभक्षी ने आकाश की ओर देखकर सोचा, "कल फुस्सा नक्षत्र होगा; सुतसोमा उद्यान में स्नान करने आएगा और तब मैं उस पर हाथ रखूंगा। परन्तु चूंकि उसके चारों ओर कड़ी सुरक्षा होगी और समस्त भारत के निवासी तीन मील (4.23 किमी) के दायरे में उसकी रक्षा के लिए आएंगे, इसलिए पहले पहर में, सुरक्षाकर्मियों के तैनात होने से पहले, मैं मिगाचिरा उद्यान में जाकर राजकुंड में उतरूंगा और वहां खड़ा हो जाऊंगा।" अतः वह कमल के पत्ते से अपना सिर ढककर तालाब में उतर गया और वहां खड़ा हो गया। उसकी इस महान महिमा के कारण मछलियां, कछुए और अन्य जीव पीछे हट गए और बड़ी संख्या में जल के किनारे तैरने लगे। यह पूछा जा सकता है कि उसकी यह महिमा कहां से आई? उसके पूर्व जन्म की भक्ति से। क्योंकि जिस समय कश्यप बुद्ध थे, उन्होंने टिकट के आधार पर दूध का वितरण शुरू किया था। इसी कारण वह अत्यंत शक्तिशाली हो गया, और उसने भिक्षुओं की सभा से ठंड से बचने के लिए आग जलाने हेतु एक कक्ष बनवाया, तथा आग, लकड़ी और लकड़ी काटने के लिए कुल्हाड़ी का प्रबंध किया। इसके फलस्वरूप वह प्रसिद्ध हो गया। अब जब वह भोर होते-होते उद्यान में चला गया, तो उन्होंने चारों ओर तीन मील (4.23 किमी) की दूरी तक पहरा नियुक्त किया, और राजा सुतसोमा सुबह नाश्ते के बाद, उत्तम साज-सज्जा वाले हाथी पर सवार होकर, चार भुजाओं की पूर्ण सेना के साथ, शहर से शीघ्रतापूर्वक निकल पड़ा। उसी क्षण तक्षशिला से नंदा नामक एक ब्राह्मण, अपने साथ सौ सिक्कों के मूल्य के चार श्लोक लेकर, एक सौ बीस मील (4.23 किमी) की यात्रा करके शहर पहुँचा, और एक उपनगर में रहने लगा। सूर्योदय के समय शहर में प्रवेश करते ही उसने राजा को पूर्वी द्वार से निकलते देखा, और हाथ उठाकर उसने पुकारा, "राजा की जय हो!" राजा दूरदर्शी थे, इसलिए वे घोड़े पर सवार होकर जा रहे थे, तभी उन्होंने एक ऊंचे स्थान पर खड़े ब्राह्मण का फैला हुआ हाथ देखा। हाथी पर सवार होकर राजा उनके पास आए और इस प्रकार बोले:

मैं जानना चाहता हूँ कि आपका जन्म किस क्षेत्र में और क्यों हुआ?
हे ब्राह्मण, यहाँ आकर कहो;

यह कहते हुए, आज मैं आपको यह अनुमति देता हूँ
आपकी प्रार्थना, चाहे वह कुछ भी हो।
तब ब्राह्मण ने उसे उत्तर दिया:

हे महान राजा, आपके लिए चार श्लोक।
समुद्र जितना गहरा है, उतना ही महत्वपूर्ण है।
मैं इन्हें यहाँ लाया हूँ; इन्हें ध्यान से सुनो।
वे अपने सबसे महत्वपूर्ण रहस्य बताते हैं।
"महाराज," उन्होंने कहा, "बुद्ध कश्यप द्वारा मुझे सिखाए गए ये चार श्लोक प्रत्येक सौ सिक्कों के बराबर हैं, और यह सुनकर कि आपको सोम रस का अर्पण (*14) प्रिय है, मैं आपको सिखाने आया हूँ।" राजा अत्यंत प्रसन्न हुए और बोले, "गुरुजी, आपने अच्छा कार्य किया है, परन्तु मेरे लिए पीछे हटना संभव नहीं है। आज, क्योंकि यह फुस्सा युति है, मेरे सिर धोने का दिन है: जब मैं लौटूँगा तो आपकी बात सुनूँगा। मुझसे असंतुष्ट न हों।" और ये कहकर उन्होंने अपने सलाहकारों से कहा, "जाओ और किसी ब्राह्मण के घर में एक पलंग तैयार करो और छायादार भोजन कक्ष की व्यवस्था करो," और वे अपने उद्यान में चले गए। यह उद्यान अठारह भुजाओं जितनी ऊँची दीवार से घिरा हुआ था और चारों ओर एक-दूसरे से सटकर खड़े हाथियों द्वारा सुरक्षित था। फिर घोड़े, फिर रथ, और अंत में धनुर्धर और अन्य पैदल सैनिक—वहाँ लाई गई सेना एक विशाल अशांत सागर के समान थी। राजा ने अपने भारी आभूषण उतार दिए, दाढ़ी बनवा ली और शैम्पू कर लिया, फिर पूरे वैभव के साथ कमल के सरोवर में स्नान किया। जल से बाहर आकर वे स्नान वस्त्र पहने खड़े हो गए, और उन्हें सुगंधित मालाएँ पहनाई गईं। नरभक्षी ने सोचा, "जब राजा पूरी तरह से वस्त्र पहने होंगे, तो वे भारी होंगे। मैं उन्हें तभी पकड़ूंगा जब वे हल्के होंगे।" इसलिए वे बिजली की गति से चिल्लाते, उछलते-कूदते और अपने सिर के ऊपर तलवार घुमाते हुए अपना नाम पुकारते हुए बोले, "हे! मैं हूँ, नरभक्षी डाकू!" और उन्होंने अपनी उंगली माथे पर रखी (*15) और जल से बाहर निकल आए। जैसे ही उन्होंने उनकी पुकार सुनी, हाथी सवार अपने हाथियों के साथ, घुड़सवार अपने घोड़ों के साथ और रथ चालक अपने रथों के साथ जमीन पर गिर पड़े, और सभी ने अपने हथियार गिरा दिए और पेट के बल लेट गए। नरभक्षी ने सुतासोमा को पकड़ लिया और उसे सीधा खड़ा रखा। बाकी राजाओं को उसने पैर से पकड़कर सिर नीचे की ओर झुका दिया और उनके सिर को अपनी एड़ियों से टकराते हुए उन्हें अपने साथ ले गया, लेकिन बोधिसत्व के पास पहुँचकर वह नीचे झुका और उन्हें उठाकर अपने कंधों पर बिठा लिया। यह सोचकर कि द्वार से होकर जाना एक घुमावदार रास्ता होगा, वह अपने सामने वाली दीवार पर अठारह भुजाओं जितनी ऊँची दीवार को फांदकर आगे बढ़ा और मदमस्त हाथियों के सिर को रौंदता चला गया, मानो उन पर पर्वत शिखर हों। फिर वह घोड़ों की पीठ पर चला - जो हवा की तरह तेज और अनमोल थे - उन्हें भी नीचे गिरा दिया। फिर जब उसने शानदार रथों के आगे के भाग पर कदम रखा, तो वह मानो किसी लट्टू को घुमा रहा हो (*16) या मानो गहरे हरे फलक (*17) के पौधे या बरगद के पत्तों को कुचल रहा हो, और एक ही झटके में उसने तीन मील (x 4.23 किमी) की दूरी तय कर ली। फिर यह सोचकर कि क्या कोई सुतासोमा को बचाने के लिए आ रहा है, उसने देखा और किसी को न देखकर धीरे-धीरे आगे बढ़ गया। सुतासोमा के बालों से उस पर गिरती बूंदों को देखकर उसने सोचा,"ऐसा कोई भी व्यक्ति नहीं है जो मृत्यु के भय से मुक्त होकर जी रहा हो: मुझे लगता है कि सुतासोमा भी इसी भय से रो रहा है," और उसने कहा:

परंपराओं में पारंगत पुरुष, जिनमें उच्च विचार उत्पन्न होते हैं,
ऐसे लोग कभी नहीं रोते, वे विद्वान और बुद्धिमान होते हैं;
सभी को इसमें शरण और ठहरने का स्थान मिलता है।
इस प्रकार ऋषि-मुनि दुःख को दूर भगा सकते हैं।
क्या यह आपका परिवार, पत्नी, बच्चा, या शायद आप स्वयं हैं?
आपके अनाज के भंडार, आपका सोना और चांदी का खजाना--
सुतासोमा, तुम्हारे आंसू किस वजह से बहे?
हे कुरु देव, आपका उत्तर हमें अवश्य पता होना चाहिए।
सुतासोमा ने कहा:

नहीं, मैं अपने लिए आंसू नहीं बहा रही हूँ।
न ही मेरी पत्नी या बच्चे के लिए, न मेरे राज्य के लिए और न ही मेरी संपत्ति के लिए।
मैं प्राचीन संतों के बताए मार्ग का अनुसरण करता हूँ।
और एक अधूरे वादे के लिए मैं रोता हूँ।
मैंने एक ब्राह्मण को वचन दिया था।
मैंने अपने राज्य में किस समय शक्ति के साथ शासन किया;
मैं उस वचन को सहर्ष निभाऊंगा और फिर,
मेरी इज्जत बच गई, मैं फिर से आपके पास लौट आऊंगा।

तब आदमखोर ने कहा:

अगर कोई भी हो तो मैं विश्वास नहीं करूंगा।
सौभाग्यवश मृत्यु के मुंह से मुक्त हो गया,
वह उसे उसके शत्रु के हवाले करने के लिए वापस लौटेगा;
अगर मैं तुम्हें जाने दूं, तो तुम भी ऐसा नहीं करोगे।
अगर आप खूंखार आदमखोर से बचकर आएँ तो,
मीठी कामनाओं से भरी, आपके शाही घर के लिए,
प्रिय, जीवन अपने समस्त आकर्षणों के साथ तुम्हें पुनः प्राप्त हो जाए।
आखिर तुम मेरे पास वापस क्यों आओगे?
यह सुनकर उस महान सत्ता ने निडर शेर की तरह कहा:

यदि निर्दोष हो तो मनुष्य मृत्यु को प्राथमिकता देगा।
किसी अपमानजनक टिप्पणी से घिरे जीवन के लिए;
क्या उसे अपनी जान बचाने के लिए झूठ बोलना चाहिए?
यह उसे नरक की पीड़ाओं से नहीं बचा पाएगा।
(*18) हवा किसी ऊंचे पहाड़ को जल्दी हिला सकती है,
या फिर सूर्य और चंद्रमा आकाश से पृथ्वी पर गिर पड़ें,
हाँ, हे प्रभु, नदियाँ ऊपर की ओर बह सकती हैं।
इससे पहले कि मैं झूठ का एक भी शब्द बोलने का दोषी हो जाऊं।
हालांकि उसने ऐसा कहा, फिर भी नरभक्षी ने उस पर विश्वास नहीं किया। तब बोधिसत्व ने सोचा, "वह मुझ पर विश्वास नहीं करता; मैं शपथ लेकर उसे विश्वास दिलाऊंगा," और कहा, "हे नरभक्षी, मुझे अपनी पीठ से नीचे उतार दो और मैं शपथ लेकर तुम्हें विश्वास दिला दूंगा।" इन शब्दों के बाद नरभक्षी ने उसे नीचे उतार दिया और जमीन पर रख दिया, और शपथ लेते हुए उसने कहा:

देखो! जैसे ही मैं इस भाले और तलवार को छूता हूँ
मैं आपको अपना दृढ़ वचन देता हूँ।
मुझे रिहा कर दो और मैं कर्ज मुक्त हो जाऊंगा।
मेरी इज्जत बच गई, मैं तुम्हें लौटाता हूँ।
तब नरभक्षी ने सोचा, "यह सुतसोमा क्षत्रिय नियमों का उल्लंघन करने की सजा के तहत शपथ लेता है। मुझे इससे क्या चाहिए? खैर, मैं भी एक क्षत्रिय राजा हूँ। मैं अपनी भुजा से रक्त निकालकर वृक्ष की आत्मा को अर्पित करूँगा। यह तो बहुत ही कायर है।" और उसने कहा:

आपने एक ब्राह्मण से जो प्रतिज्ञा की थी,
आपने अपने राज्य में किस समय शक्ति के साथ शासन किया?
मैं आपसे अनुरोध करता हूं कि आप उस वचन का पालन करें और फिर,
आपकी प्रतिष्ठा बच गई, मेरे पास वापस लौट आइए।
तब उस महान सत्ता ने कहा, "मेरे मित्र, चिंता मत करो। जब मैं सौ सिक्कों के बराबर मूल्य वाले चारों श्लोक सुन लूँगा और धर्म के उपदेशक को भेंट चढ़ा दूँगा, तब मैं भोर होते ही लौट आऊँगा।" और फिर उसने यह श्लोक कहा:

मैंने एक बार एक ब्राह्मण से प्रतिज्ञा की थी,
मैंने अपने राज्य में किस समय शक्ति के साथ शासन किया,
मैं पहले उस वचन का पालन करूंगा और फिर,
मेरी इज्जत बच गई, मैं फिर से आपके पास लौट आऊंगा।
तब नरभक्षी ने कहा, "तुमने क्षत्रिय रीति-रिवाजों का उल्लंघन करने की शपथ ली है। ध्यान रहे कि तुम उसी के अनुसार कार्य करो।" "मेरे नरभक्षी मित्र," उसने कहा, "तुम मुझे बचपन से जानते हो: मैंने कभी मजाक में भी झूठ नहीं बोला, और अब जब मैं सिंहासन पर विराजमान हूँ और सही-गलत जानता हूँ, तो मैं झूठ क्यों बोलूँ? मुझ पर भरोसा रखो, मैं तुम्हारे लिए भेंट अर्पित करूँगा।" उसकी बात पर विश्वास करके उसने कहा, "ठीक है, महाराज, आप जाइए, और यदि आप वापस नहीं आते हैं, तो कोई भेंट नहीं हो सकती और आत्मा आपके बिना इसके लिए सहमत नहीं है: मेरी भेंट के मार्ग में कोई बाधा न डालें," और उसने उस महान प्राणी को जाने दिया। जैसे चंद्रमा राहु (ग्रहण) के चंगुल से बच निकलता है और एक युवा हाथी की शक्ति से वह शीघ्र ही नगर पहुँच गया। और उसके सैनिकों ने सोचा,

"राजा सुतासोमा बुद्धिमान और धर्म के मधुर उपदेशक हैं। यदि वे उससे एक-दो शब्द कह लें तो वह आदमखोर को परिवर्तित कर देगा और शेर के मुँह से भागते हुए उग्र हाथी की तरह लौट आएगा।" और यह सोचकर कि "लोग हमें धिक्कारेंगे और कहेंगे, 'अपने राजा को आदमखोर के हवाले करने के बाद क्या तुम हमारे पास वापस आ रहे हो?'" वे शहर की दीवारों के बाहर डेरा डाले रहे, और जब उन्होंने उसे दूर से आते देखा तो वे उससे मिलने के लिए बाहर गए और मैत्रीपूर्ण अभिवादन करते हुए पूछा, "महाराज, क्या आप उस आदमखोर से बुरी तरह तंग नहीं आ गए थे?" "उस आदमखोर ने," उसने कहा, "ऐसा कुछ किया है जो मेरे माता-पिता ने कभी नहीं किया।" "इतना क्रूर और हिंसक प्राणी होने के बावजूद, मेरे धर्म के उपदेश सुनने के बाद उसने मुझे जाने दिया।" फिर उन्होंने राजा को सजाया-संवारा और हाथी पर बिठाकर नगर में ले गए। उन्हें देखकर नगरवासी प्रसन्न हुए, और धर्म के प्रति उनकी लगन के कारण, वे अपने माता-पिता से मिलने नहीं गए, बल्कि यह सोचकर कि "समय आने पर उनसे मिल लूँगा," वे अपने महल में प्रवेश कर अपने सिंहासन पर बैठ गए। फिर उन्होंने ब्राह्मण को बुलाया और उसे मुंडवाने का आदेश दिया। जब उसके बाल और दाढ़ी मुंडवा लिए गए, उसे नहलाया गया, अभिषेक किया गया और उत्तम वस्त्र पहनाए गए, तो वे उसे राजा के पास ले आए। जब ब्राह्मण को प्रस्तुत किया गया, तो सूतसोमा ने स्वयं स्नान किया और अपना भोजन ब्राह्मण को देने का आदेश दिया, और भोजन करने के बाद उन्होंने स्वयं भोजन किया। फिर उन्होंने ब्राह्मण को एक कीमती सिंहासन पर बैठाया और उनके प्रति आदर दिखाने के लिए सुगंधित मालाएँ और इसी प्रकार की वस्तुएँ भेंट कीं, और स्वयं एक नीची चौकी पर बैठकर उनसे प्रार्थना की, " "गुरुजी, हम उन छंदों को सुनना चाहते हैं जो आप हमारे लिए लाए हैं।"

इस पर प्रकाश डालते हुए गुरु ने कहा:

खूंखार नरभक्षी के चंगुल से छूटकर वह उड़ जाता है।
अपने ब्राह्मण मित्र से वह चिल्लाता है, "हम खुशी-खुशी ऐसा करेंगे।"
"सौ-सौ के मूल्य वाले छंद सुनो,"
यदि आप हमें पढ़ाने की कृपा करें तो यह हमारे भले के लिए होगा।
जब बोधिसत्व ने उनसे निवेदन किया, तो ब्राह्मण ने अपने हाथों को इत्र से धोकर, एक थैली से एक सुंदर पुस्तक निकाली और उसे दोनों हाथों में लेकर कहा: "हे महाराज, मेरी चार श्लोक सुनिए, प्रत्येक श्लोक सौ सिक्कों के बराबर मूल्यवान है; ये मुझे कश्यप बुद्ध द्वारा सिखाए गए हैं, और ये कामवासना, अहंकार और इसी प्रकार के दुर्गुणों का नाश करते हैं, और मनुष्य को इच्छाओं का निवारण, इंद्रियों का संहार, यहाँ तक कि शाश्वत शक्तिशाली निर्वाण, कामवासना का नाश, जन्म-मृत्यु के चक्र का टूटना और आसक्ति का जड़ से उखाड़ फेंकते हैं।" और इन शब्दों के साथ, अपनी पुस्तक की ओर देखते हुए, उन्होंने इन श्लोकों को दोहराया:

हे सुतासोमा, एक बार संतों के साथ एकांतवास करो।
और कभी भी बुरे पुरुषों से शादी मत करो, और तुम्हें शांति मिलेगी।
पवित्र पुरुषों का साथ होना निश्चित है, क्योंकि मित्र तो ऐसे ही होते हैं।
पवित्र पुरुषों से सच्ची शिक्षा सीखें और प्रतिदिन बेहतर विकास करें।
जैसे-जैसे राजपरिवार की रंगी हुई गाड़ियाँ धुंधली होकर फीकी पड़ने लगती हैं,
इसी प्रकार हमारे कमजोर शरीर भी शीघ्र ही कमजोर हो जाते हैं और तेजी से क्षय होने लगते हैं।
लेकिन पवित्र पुरुषों का विश्वास अटल रहता है और कभी पुराना नहीं होता।
अच्छे लोग युगों-युगों तक अच्छे लोगों को इसका प्रचार करते रहेंगे।
हमारे ऊपर आकाश दूर तक फैला हुआ है, नीचे धरती दूर तक फैली हुई है।
और असीम सागर के पार दूर-दूर तक फैली हुई भूमियाँ हैं, यह हम जानते हैं।
लेकिन इन सबसे भी कहीं अधिक महान और व्यापक पहुंच वाला।
क्या यह शिक्षा अच्छी है या बुरी, चाहे वह संत प्रचार करें या पापी?
इस प्रकार ब्राह्मण ने उन्हें वे चार श्लोक सिखाए, जिनमें से प्रत्येक का मूल्य सौ सिक्कों के बराबर था, ठीक वैसे ही जैसे उन्हें कश्यप बुद्ध ने सिखाए थे, और फिर मौन रहे। उन्हें सुनकर महानुभाव प्रसन्न हुए और बोले, "मेरी यात्रा व्यर्थ नहीं गई," और यह सोचते हुए कि, "ये श्लोक केवल किसी शिष्य या संत के शब्द नहीं हैं, न ही किसी कवि की रचना, बल्कि असीम ज्ञानी व्यक्ति द्वारा कहे गए हैं; मुझे आश्चर्य है कि इनका मूल्य क्या है। यदि कोई सात अनमोल वस्तुओं से भरकर ब्रह्मलोक (देवदूतों का लोक) तक फैला हुआ पूरा संसार भी दे दे, तो भी इन श्लोकों का पर्याप्त प्रतिफल नहीं होगा। निश्चय ही मैं उन्हें कुरु राज्य में स्थित सात मील (4.23 किमी) के इंद्रप्रस्थ नगर का शासन प्रदान कर सकता हूँ, जो तीन सौ मील (4.23 किमी) में फैला हुआ है। निःसंदेह राजा बनना उनका नियति है।" लेकिन अपनी उस शक्ति के बल पर, जिससे वह किसी व्यक्ति के रूप-रंग से उसका भविष्य जान सकता था, उसने उसमें ऐसे कोई संकेत नहीं पाए। फिर उसने सेनापति और ऐसे ही अन्य पदों के बारे में सोचा, पर उसे यह भी नहीं लगा कि वह किसी गाँव का मुखिया बनने के योग्य है। इसके बाद, धन प्राप्ति के विषय में विचार करते हुए और एक करोड़ (10 मिलियन) धन से शुरुआत करते हुए, उसने पाया कि उसे चार हज़ार सिक्के मिलने वाले हैं। उसे इतनी ही राशि से सम्मानित करने के लिए उसने उसे एक-एक हज़ार सिक्कों से भरे चार थैले दिए और उससे पूछा, "गुरुजी, जब आप अन्य राजकुमारों को ये श्लोक सिखाते हैं, तो आपको कितना मिलता है?" "प्रत्येक के लिए सौ,

महाराज," उसने कहा, "तो इनका मूल्य केवल सौ सिक्के ही है।" उस महान सत्ता ने कहा, "गुरुजी, आप उन वस्तुओं के अमूल्य मूल्य से अनभिज्ञ हैं जिन्हें आप बेचते हैं। अब से इन्हें एक हज़ार सिक्कों के बराबर ही समझें," और ऐसा कहकर उसने यह श्लोक दोहराया:

इनकी कीमत केवल सैकड़ों में नहीं, बल्कि हजारों में है।
तो यहाँ के ब्राह्मण चार हजार लोगों को ले जाओ और जल्दी से उनके साथ चले जाओ।
फिर उन्होंने उसे एक आरामदायक रथ भेंट किया और अपने आदमियों को आदेश देते हुए कहा, "इस ब्राह्मण को उसके घर तक सुरक्षित पहुँचा दो," और इस प्रकार उसे विदा कर दिया। उसी क्षण तालियों की गड़गड़ाहट सुनाई दी और "वाह वाह! राजा सुतसोमा ने इन श्लोकों का बहुत सम्मान किया है, सौ सिक्कों के मूल्य वाले श्लोक को हजार सिक्कों के बराबर समझा है।" की आवाजें सुनाई दीं। राजा के माता-पिता ने शोर सुनकर पूछा कि इसका क्या अर्थ है, और सच्चाई जानने पर, धन की लालसा के कारण वे राजा से क्रोधित हो गए, लेकिन ब्राह्मण को विदा करने के बाद वह उनके पास गया और उन्हें प्रणाम किया। तब उसके पिता ने कहा, "मेरे पुत्र, तुम एक कुख्यात लुटेरे के हाथों से बच निकले हो," और उसे देखकर प्रसन्न होने के बजाय, धन के लालच में उन्होंने पूछा, "क्या यह सच है कि तुमने चार श्लोक सुनने के लिए चार हजार सिक्के दिए?" और जब उसने यह स्वीकार किया, तो उसके पिता ने यह श्लोक दोहराया:

प्रत्येक श्लोक का मूल्य अस्सी सिक्के हो सकता है।
या फिर इनका मूल्य सौ तक भी पहुंच सकता है।
लेकिन, सुतासोमा, आपको स्वयं ही इसका स्वामित्व प्राप्त करना होगा।
हजार के बराबर अर्थ रखने वाला एक श्लोक अज्ञात है।
तब उस महान सत्ता ने उन्हें चीजों को एक अलग नजरिए से देखने के लिए प्रेरित करते हुए कहा, "प्रिय पिता, मुझे धन में वृद्धि की नहीं, बल्कि ज्ञान में वृद्धि की इच्छा है," और उन्होंने ये श्लोक कहे:

पवित्र परंपराओं में वृद्धि मेरी सबसे बड़ी इच्छा है
और संतों की मित्रता की आकांक्षा रखो;
कोई भी नदी सागर के खालीपन को नहीं भर सकती।
इसलिए मैं अच्छे शब्दों को आत्मसात करता हूँ, फिर भी मेरी भूख तृप्त नहीं होती।
जैसे-जैसे लकड़ी और घास के लिए आग की लपटें अनियंत्रित रूप से भड़कती हैं,
और समुद्र, जो धाराओं से पोषित होते हैं, निश्चित रूप से और अधिक की लालसा रखते हैं।
हे प्रभुओं के पराक्रमी स्वामी, ऋषि भी ऐसा ही करते हैं।
उत्सुक लोग अच्छे शब्दों को ध्यान से सुनते हैं।
अगर मैंने कभी अपने ही गुलाम के मुंह से यह सुना हो
यदि गहन अर्थ से परिपूर्ण छंद सुने जाएं,
मैं उनके शब्दों को उचित सम्मान के साथ स्वीकार करूंगा।
अच्छी और सच्ची शिक्षाओं से भी असंतुष्ट।
इतना कहने के बाद उसने कहा, "सिर्फ पैसों के लिए मुझे दोष मत दो। मैं यहाँ शपथ लेकर आया हूँ कि सत्य जानने के बाद लौट जाऊँगा। अब मैं इस राक्षस के पास वापस जा रहा हूँ; क्या तुम शासन करने की यह शक्ति स्वीकार करते हो?" और उसे यह शक्ति सौंपते हुए उसने यह छंद कहा:

यह राज्य सोने के सारे खजाने समेत तुम्हारा है।
राजकीय शोभा और असीम आनंद और प्रसन्नता के अलंकृत वस्त्र।
दोष क्यों दूं, क्या मुझे इंद्रिय सुखों से दूर भाग जाना चाहिए?
और आदमखोर के हाथों मरना?
इस क्षण राजा के पिता का हृदय प्रचंड हो उठा और उन्होंने कहा, "हे मेरे प्रिय सुतासोमा, यह क्या कह रहे हो? मैं चारों भुजाओं वाली पूरी सेना लेकर आऊंगा (*19) और डाकू को पकड़ लूंगा," और उन्होंने इस श्लोक को दोहराया:

हमारी रक्षा के लिए, देखो! वीर सैनिक आ रहे हैं।
कुछ लोग हाथियों पर सवार थे, कुछ रथों पर।
ये पैदल सैनिक हैं, ये धनुष से लैस घुड़सवार हैं--
हमारी सेना को संगठित करो और हमें अपने शत्रु को मार गिराने दो।
तब उसके माता-पिता, जिनकी आँखों में आँसू भरे थे, उससे विनती करते हुए बोले, "मत जाओ, मेरे बेटे, नहीं, तुम नहीं जा सकते।" सोलह हज़ार नर्तकियाँ और उसके साथी विलाप करते हुए बोले, "हमें असहाय छोड़कर आप कहाँ जा रहे हैं, महाराज?" और पूरे शहर में

कोई भी अपने भावों को रोक नहीं सका और सब कहने लगे, "वे कहते हैं कि वह आदमखोर को वचन देकर आया है, और अब जब उसने सौ-सौ सिक्कों के चार श्लोक सुन लिए हैं और धर्म के उपदेशक को उचित सम्मान दिया है और अपने माता-पिता को विदाई दी है, तो वह एक बार फिर लुटेरे के पास लौट जाएगा।" और पूरा शहर स्तब्ध रह गया। अपने माता-पिता की बात सुनकर उसने यह श्लोक दोहराया:

हमारे नरभक्षी शत्रु का यह कृत्य आश्चर्यजनक है।
मुझे जिंदा पकड़कर छोड़ देना।
उनके अतीत के मैत्रीपूर्ण कार्यों को याद करते हुए
मैं अपनी ली गई शपथ का उल्लंघन कैसे कर सकता हूँ?
अपने माता-पिता को दिलासा देते हुए उन्होंने कहा, "प्रिय पिता और माता, मेरे बारे में चिंता न करें: मैंने एक नेक काम किया है, और छह इंद्रियों की इच्छाओं पर नियंत्रण (*20) कोई कठिन बात नहीं है," और अपने माता-पिता को विदाई देते हुए उन्होंने बाकी लोगों को सलाह दी और इस तरह चले गए।

मास्टर ने मामले को स्पष्ट करते हुए कहा:

माता-पिता को विदाई देते हुए उन्होंने कुछ उपयोगी सलाह भी दी।
उन्होंने नगरवासियों और सैनिकों को सीधी सलाह दी।
फिर अपने वचन के अनुरूप झूठ बोलने से इनकार कर दिया।
और वह आदमखोर की ओर वापस चला गया।
तब नरभक्षी ने सोचा, "यदि मेरा मित्र सुतासोमा लौटना चाहता है, तो उसे लौटने दो, अन्यथा नहीं, और मेरी वृक्ष-आत्मा जो चाहे करे, और मैं इन राजकुमारों को मृत्युदंड दूंगा और उनके मांस का पांच मीठे पदार्थों के साथ अर्पण करूंगा।" अतः उसने एक चिता खड़ी की और आग प्रज्वलित की, यह सोचकर कि वह कोयले के लाल होने तक प्रतीक्षा करेगा, और जब वह बैठकर अपनी सीख को तेज कर रहा था, सुतासोमा लौट आया। तब नरभक्षी उसे देखकर प्रसन्न हुआ और पूछा, "मेरे मित्र, क्या तुम जाकर अपना काम पूरा कर चुके हो?" महान प्राणी ने कहा, "जी महाराज, मैंने कश्यप बुद्ध द्वारा ब्राह्मण को सिखाए गए श्लोक सुने हैं, और मैंने सत्य के उपदेशक को उचित सम्मान दिया है, और इसलिए मैं अपना कर्तव्य पूरा करके लौट आया हूं।" इसे समझाने के लिए, उसने यह श्लोक दोहराया:

मैंने एक बार एक ब्राह्मण की दुर्दशा पर अपनी बात रखी थी।
मैंने अपने राज्य में किस समय शक्ति के साथ शासन किया,
और अब जब मैंने अपना वादा निभा दिया है
और मैंने अपनी प्रतिष्ठा बचा ली है, मैं लौट आया हूँ, मेरे स्वामी।
तो मुझे मार डालो और अपने वृक्ष-आत्मा को अर्पित कर दो।
या फिर अपनी घिनौनी वासना को शांत करने के लिए मनुष्य के मांस का सेवन करो।
यह सुनकर नरभक्षी ने सोचा, "इस राजा को ज़रा भी डर नहीं है; यह तो मृत्यु के सारे भय को दूर करते हुए बोल रहा है। मुझे आश्चर्य है कि यह शक्ति कहाँ से आती है। इसके अलावा और कुछ नहीं हो सकता। वह कहता है, 'मैंने कश्यप बुद्ध द्वारा सिखाए गए श्लोक सुने हैं।' यह अलौकिक शक्ति उन्हीं से आनी चाहिए। मैं उसे ये श्लोक मेरे सामने बुलवाऊँगा, और इस तरह मैं भी सारे भय से मुक्त हो जाऊँगा।" और ऐसा निश्चय करके उसने यह श्लोक दोहराया:

आग से अभी भी धुआं निकल रहा है: हालांकि मैं थोड़ी देर कर रहा हूँ,
मुझे अपने शिकार को खाने का अधिकार नहीं खोना चाहिए।
अंगारों पर मांस भूनने पर वह अच्छी तरह से भुन जाता है;
ये शब्द सौ टुकड़ों के बराबर हैं, आओ, बताओ।
यह विचार सुनकर उस महान सत्ता ने कहा, "यह नरभक्षी पापी है: मैं इसे कुछ फटकार लगाऊंगा और अपने शब्दों से इसे लज्जित करूंगा।"

हे नरभक्षी, तू एक दुष्ट प्राणी है।
शारीरिक वासना के कारण अपने सिंहासन से गिर पड़े;
ये छंद मेरे लिए सही होने की घोषणा करते हैं,
लेकिन मैं यह पूछना चाहता हूँ कि सही और गलत में सहमति कैसे हो सकती है?
दुष्ट लुटेरे के लिए, जिसके हाथ हिंसा से रंगे हुए हैं,

सत्य या सही का स्रोत कहाँ से आता है? पवित्र परंपरा से क्या लाभ होता है?
इन शब्दों में संबोधित किए जाने पर भी नरभक्षी क्रोधित नहीं हुआ। ऐसा क्यों था? यह उस महान सत्ता में विद्यमान दान की अपार शक्ति के कारण था। इसलिए उसने कहा, "हे मित्र सुतासोमा, क्या केवल मैं ही अधर्मी हूँ?" और उसने इस श्लोक को दोहराया:

वह आदमी जो किसी जानवर का शिकार करके उसका स्वादिष्ट मांस बनाता है,
और जो किसी मनुष्य को मारता है, वह अपने साथी का मांस खाता है।
मृत्यु के बाद दोनों ही मामलों में दोषी पाए जाने वालों की गिनती लगभग एक जैसी ही होती है:
तो फिर बुराई के लिए सिर्फ मुझे ही क्यों दोषी ठहराया जाए?
यह सुनकर उस महान सत्ता ने उसकी गलत धारणा का खंडन करते हुए यह श्लोक दोहराया:

पांच पंजों वाले जीवों में से एक योद्धा राजकुमार पांचों सचेत पंजों को खा सकता है।
हे राजा, तुम दुष्ट हो, क्योंकि तुम वर्जित मांस खाते हो।
इस फटकार को सुनकर, जब उसे बचने का कोई और रास्ता नहीं दिखा, तो उसने अपने अपराध को छिपाने की कोशिश की और इस छंद को दोहराया:

क्या तुम खूंखार आदमखोर से बचकर आए हो?
आपके शाही घर के लिए मीठी लालसाओं से भरा हुआ,
और फिर एक बार फिर दुश्मन के हवाले अपनी जान कर दो?
आप वाकई खगोलीय परंपरा में काफी पारंगत हैं!
तब उस महान प्राणी ने कहा, "मित्र, मुझ जैसे व्यक्ति को क्षत्रिय (योद्धाओं) की परंपरा का भली-भांति ज्ञान होना चाहिए। मैं इसे भली-भांति जानता हूँ, परन्तु मैं अपने कर्मों को उसके अनुरूप नहीं रखता," और उन्होंने यह श्लोक कहा:

क्षत्रिय शिक्षा में पारंगत सभी (*21)
नरक में अधिकतर लोग शापित जीवन जीने के लिए अभिशप्त होते हैं।
इसलिए मुझे क्षत्रिय परंपरा से घृणा है।
और मैं अपने वचन का पालन करते हुए यहाँ लौट आया:
हे भयानक स्वामी, अपना बलिदान चढ़ाओ और मुझे खा जाओ।
आदमखोर ने कहा:

आलीशान महल, विशाल एकड़ भूमि, घोड़े और गायें,
इत्र, कीमती वस्त्र और कई रखैलें,
हे सर्वशक्तिमान प्रभु, आप इन सभी को धारण करते हैं।
सच में, आपको इसमें कौन सा आशीर्वाद दिखाई देता है?
बोधिसत्व ने कहा:

इस दुनिया की सारी मिठाइयों में से जो मुझे मिल सकती हैं
सत्य के आनंद से बढ़कर कोई और आनंद मुझे नहीं दिखता:
ब्राह्मण और पुरोहित जो सत्य में निवास करते हैं,
जन्म, मृत्यु, पलायन, दूसरी ओर पहुंचना।
इस प्रकार उस महान सत्ता ने उसे सत्य के आशीर्वाद के बारे में बताया। तब नरभक्षी ने खिले हुए कमल या पूर्णिमा के चंद्रमा के समान तेजस्वी उनके चेहरे को देखकर सोचा, "यह सुतसोमा मुझे अंगारों का ढेर तैयार करते और सींक तेज करते हुए देख रहा है, फिर भी जरा भी भयभीत नहीं है। क्या यही इन सौ सिक्कों के बराबर जादुई शक्ति है या यह किसी अन्य सत्य से उत्पन्न होती है? मैं उनसे पूछूंगा।" और प्रश्न के रूप में उन्होंने इस श्लोक को दोहराया:

क्या तुम खूंखार आदमखोर से बचकर आए हो?
आपके राजसी घर के लिए मीठी लालसाओं से भरा हुआ,
और फिर एक बार फिर अपने दुश्मन से मिलने लौटना?
हे राजकुमार, आपको मृत्यु का भय तो बिल्कुल भी नहीं हो सकता।
अपने वचन का पालन करो और सांसारिक वासनाओं का त्याग करो।
उस महान सत्ता ने उत्तर देते हुए कहा:

मैंने अनगिनत सद्गुणों का दावा किया है,
मेरी उदार भेंटें प्रसिद्धि के लिए जानी जाती हैं।
मैंने परलोक के लिए एक रास्ता साफ रखा है:
जो आस्था में स्थिर रहता है, वह मृत्यु से भयभीत क्यों होता है?
मैंने अनगिनत सद्गुणों का दावा किया है,
मेरी उदार भेंटें प्रसिद्धि के लिए जानी जाती हैं।
मुझे कोई पछतावा नहीं है, मैं स्वर्ग की ओर अपना रास्ता चुनूंगा।
इसलिए बलिदान करो और फिर अपने शिकार को खा जाओ।
मैंने अपने माता-पिता को अत्यंत स्नेह और स्नेह से संजोकर रखा है।
मेरे नियम को अत्यंत निष्पक्ष होने के कारण प्रशंसा मिलती है।
मैंने परलोक के लिए एक रास्ता साफ रखा है:
जो आस्था में स्थिर रहता है, वह मृत्यु से भयभीत क्यों होता है?
मैंने अपने माता-पिता को अत्यंत स्नेह और स्नेह से संजोकर रखा है।
मेरे नियम को अत्यंत निष्पक्ष होने के कारण प्रशंसा मिलती है।
मुझे कोई पछतावा नहीं है, मैं स्वर्ग की ओर अपना रास्ता चुनूंगा।
इसलिए बलिदान करो और फिर अपने शिकार को खा जाओ।
मेरे द्वारा की गई सेवा के लिए, दोस्तों और परिवार को धन्यवाद।
मेरा शासन न्यायसंगत था और मुझे सभी की प्रशंसा प्राप्त हुई।
मुझे कोई पछतावा नहीं है, मैं स्वर्ग की ओर अपना रास्ता चुनूंगा।
इसलिए बलिदान करो और फिर अपने शिकार को खा जाओ।
मैंने कई बार बहुत से लोगों को उपहार दिए, जिनकी मैंने आपूर्ति की थी।
जी हां, पुरोहित और ब्राह्मण पूरी तरह संतुष्ट थे।
मैंने परलोक के लिए एक रास्ता साफ रखा है:
जो आस्था में स्थिर रहता है, वह मृत्यु से भयभीत क्यों होता है?
मैंने कई बार बहुत से लोगों को उपहार दिए, जिनकी मैंने आपूर्ति की थी।
जी हां, पुरोहित और ब्राह्मण पूरी तरह संतुष्ट थे।
मुझे कोई पछतावा नहीं है, मैं स्वर्ग की ओर अपना रास्ता चुनूंगा।
इसलिए बलिदान करो और फिर अपने शिकार को खा जाओ।
यह सुनकर नरभक्षी ने सोचा, "यह राजा सुतासोमा तो अच्छा और बुद्धिमान है: अगर मैं इसे खा लूँ, तो मेरी खोपड़ी सात टुकड़ों में फट जाएगी, या धरती अपना मुँह खोलकर मुझे निगल जाएगी," और भयभीत होकर उसने कहा, "मेरे मित्र, तुम उस तरह के मनुष्य नहीं हो जिसे मैं खाऊँ," और उसने यह छंद दोहराया:

वह जानबूझकर जहर का प्याला पी लेता था।
या फिर भयंकर और क्रूर आग उगलने वाला सर्प, उठा ले,
हाँ, उसके सिर के सात टुकड़े हो जाएँगे।
जो झूठ नहीं बोल सकता, उसे खाने की हिम्मत कौन करता है?
इस प्रकार उन्होंने परमपिता को संबोधित करते हुए कहा, "आप मानो एक घातक विष हैं; आपको कौन ग्रहण करेगा?" और उन श्लोकों को सुनने के लिए उत्सुक होकर उन्होंने उनसे उन्हें सुनाने की विनती की। जब पवित्र वस्तुओं के प्रति उचित आदर प्रकट करने के लिए परमपिता ने यह कहकर उनकी प्रार्थना अस्वीकार कर दी कि वे इतने निर्दोष नैतिक श्लोकों के योग्य नहीं हैं, तो उन्होंने कहा, "पूरे भारत में ऐसा कोई ऋषि नहीं है, क्योंकि जब वे मेरे हाथों से मुक्त हुए तो वे गए और इन श्लोकों को सुना, और धर्म के उपदेशक को उचित आदर देने के बाद वे अपने माथे पर मृत्यु लिखी हुई लेकर वापस आए। ये श्लोक अत्यंत उत्कृष्ट हैं।" और उन्हें सुनने की और भी अधिक आदरपूर्ण इच्छा से भरकर उन्होंने परमपिता से विनती की और इस श्लोक को दोहराया:

सत्य को सुनकर मनुष्य शीघ्र ही अच्छे और बुरे में अंतर कर पाता है;
शायद इन शब्दों को सुनकर मेरा हृदय सत्य के आनंद से भर जाए।
तब उस महान प्राणी ने सोचा, "अब नरभक्षी सुनने के लिए उत्सुक है: मैं उसे ये श्लोक प्रकट करूँगा," और उसने कहा, "अच्छा, मेरे मित्र, ध्यान से सुनो," और उसका ध्यान आकर्षित करके उसने ठीक उसी प्रकार इन श्लोकों की स्तुति की, जैसे उसे ब्राह्मण नंदा ने

सिखाए थे, जबकि छहों लोकों के देवता (देवदूत) एक साथ जोर से चिल्ला उठे, और स्वर्ग में देवदूतों ने तालियाँ बजाईं, और इस प्रकार उस महान प्राणी ने नरभक्षी को सत्य का उपदेश दिया।

हे सुतासोमा, एक बार संतों के साथ एकात्म हो जाओ (*22)।
इन श्लोकों को महान सत्ता द्वारा इतनी कुशलता से प्रस्तुत किए जाने और स्वयं उनके ज्ञान के कारण, नरभक्षी ने सोचा, "ये श्लोक मानो असीम ज्ञान से परिपूर्ण बुद्ध के वचन हैं," और उसका संपूर्ण शरीर पाँच प्रकार के आनंद से भर उठा, और उसे बोधिसत्व के प्रति कोमल दया का भाव हुआ और उसने उन्हें एक ऐसे पिता के समान माना जो उन्हें राजसी श्वेत छत्रछाया प्रदान करने के लिए तत्पर था। और उसने सोचा, "मुझे सुतासोमा को देने के लिए पीले सोने की कोई भेंट नहीं दिखती, परन्तु प्रत्येक श्लोक के लिए मैं उन्हें एक वरदान दूंगा," और उसने यह श्लोक कहा:

अर्थ से परिपूर्ण और स्पष्ट लहजे में
हे राजकुमार, आपके महान शब्द मेरे कानों तक पहुँचते हैं।
मैं हृदय से इतना प्रसन्न हूँ कि आनंदित हूँ।
मेरे प्रिय मित्र, आपके लिए चार वरदान हैं, जिनमें से आप अपनी पसंद का चुनाव कर सकते हैं।
तब उस महान सत्ता ने उसे फटकारा और कहा, "तुम मुझे क्या वरदान दोगे?" और उसने यह श्लोक दोहराया:

अपनी नश्वर अवस्था में, जो सीखने में विफल रहती है,
या अच्छाई और बुराई में, स्वर्ग और नरक में अंतर कर सकूँ,
शारीरिक इच्छाओं का गुलाम, वह कैसे
क्या आप जैसे नीच व्यक्ति को मनुष्य के लिए किसी वरदान का ज्ञान है?
मान लीजिए मैं कहूँ "मुझे यह वरदान दीजिए" और फिर
आपको अपना वादा वापस लेना चाहिए।
जो बुद्धिमान है वह जानबूझकर जोखिम क्यों उठाएगा?
तो क्या झगड़े का खतरा इतना कम है, महोदय?
तब आदमखोर ने कहा, "वह मुझ पर विश्वास नहीं करता; मैं उसे विश्वास दिलाऊंगा," और उसने यह छंद दोहराया:

किसी को भी वरदान देने का दावा नहीं करना चाहिए और फिर
उसने जो वादा किया था, झूठे आदमी, उसे वापस ले लो:
मेरे मित्र, इन वरदानों में से सभी निडर लोग ही चुनते हैं;
मैं यह बात मान लूंगा, भले ही इसके बदले मुझे अपना जीवन ही खोना पड़े।
तब उस महान सत्ता ने सोचा, "इसने तो बड़े साहस से बात की है और यह मेरी बात मानेगा; मैं इसका प्रस्ताव स्वीकार करता हूँ। लेकिन अगर मैं पहली ही वरदान के रूप में यह चुन लूँ कि वह मनुष्य का मांस न खाए, तो वह बहुत दुखी होगा। मैं पहले तीन और वरदान चुनूँगा, और उसके बाद यह चुनूँगा," और उसने कहा:

जो किसी संत के साथ आमने-सामने रहता है (*23) वह हमेशा संत से सहमत होता है,
इसी प्रकार एक ऋषि अपने साथी ऋषि को प्रसन्न करने में हमेशा तत्पर रहता है:
इसलिए मैं आपसे सौ वर्ष तक स्वस्थ और सुरक्षित रहने का अनुरोध करता हूँ:
यह उन सभी वरदानों में से पहला है जो मैं सहर्ष आपसे प्राप्त करना चाहता हूँ।
यह सुनकर नरभक्षी ने सोचा, "यह आदमी, जिसे मैंने सत्ता से बेदखल कर दिया है, अब मेरे लिए लंबी उम्र की कामना कर रहा है, उस कुख्यात लुटेरे के लिए जो इंसानी मांस का भूखा है और उसे नुकसान पहुंचाना चाहता है। आह! यह तो मेरा शुभचिंतक है।" और वह मन ही मन खुश हुआ, यह जाने बिना कि यह वरदान उसे धोखा देकर उसके भले के लिए चुना गया था, और वरदान देते हुए उसने यह श्लोक कहा:

जो व्यक्ति किसी संत के आमने-सामने रहता है, वह संत से सहमत होता है।
इसी प्रकार एक ऋषि अपने साथी ऋषि को प्रसन्न करने में हमेशा तत्पर रहता है:
आप मुझे पचास वर्षों तक सुरक्षित और स्वस्थ देखना चाहेंगे:
देखो! तुम्हारी प्रार्थना पर मैं तुम्हें यह पहला वरदान सहर्ष प्रदान करता हूँ।
तब बोधिसत्व ने कहा:

ये योद्धा सरदार तुम्हारे हाथों में बंदी हैं,

अनुष्ठानिक जल छिड़काव द्वारा अनेक देशों में राजाओं के रूप में सम्मानित,
पृथ्वी के इन शक्तिशाली स्वामियों को तुम्हें नहीं खाना चाहिए:
इसके लिए मैं दूसरी विनती करता हूँ।
इस प्रकार उसने दूसरा वरदान चुनकर सौ से अधिक क्षत्रियों के लिए जीवन का वरदान प्राप्त किया, और नरभक्षी ने उसे वरदान देते हुए कहा:

ये योद्धा सरदार मेरे हाथों में बंदी हैं,
अनुष्ठानिक जल छिड़काव द्वारा अनेक देशों में राजाओं के रूप में सम्मानित,
मैं इन शक्तिशाली स्वामियों को नहीं खाऊंगा, कसम खाता हूँ:
आपकी प्रार्थना के फलस्वरूप यह दूसरा वरदान भी प्रदान कर दूं।
क्या इन राजाओं ने उनकी बातें सुनीं? उन्होंने पूरी बात नहीं सुनी। क्योंकि जब नरभक्षी ने आग जलाई, तो धुएँ और लपटों से पेड़ को किसी भी तरह की क्षति के डर से वह उससे एक कदम पीछे हट गया, और महान सत्ता आग और पेड़ के बीच में बैठकर उससे बातें कर रही थी, और इसलिए इन राजाओं ने उनकी पूरी बात नहीं सुनी, बल्कि आंशिक रूप से ही सुनी, और उन्होंने एक-दूसरे को दिलासा देते हुए कहा, "डरो मत: अब सुतासोमा नरभक्षी को परिवर्तित कर देगा," और इसी क्षण महान सत्ता ने यह श्लोक कहा:

तुमने सौ से अधिक राजाओं को बंदी बना रखा है।
सभी को हाथों से बांधकर लटका दिया गया था और वे दर्द से रो रहे थे।
फिर प्रत्येक को उसके अपने-अपने राज्य में वापस लौटा दो:
यह तीसरा वरदान है जो मैं आपसे प्राप्त करना चाहता हूँ।
इस प्रकार, भगवान ने अपने तीसरे विकल्प में इन क्षत्रियों को उनके अपने-अपने राज्य में वापस भेजने का निर्णय लिया। ऐसा क्यों? क्योंकि राक्षस, यदि वह उन्हें न खाता, तो उनकी शत्रुता के भय से या तो उन सभी को गुलाम बनाकर जंगल में रहने के लिए मजबूर कर देता, या उन्हें मार डालता और उनके शवों को प्रदर्शित कर देता, या उन्हें सीमावर्ती देश में ले जाकर गुलामों के रूप में बेच देता; इसलिए उन्होंने वरदान के रूप में उन्हें उनके अपने-अपने राज्यों में वापस भेजने का निर्णय लिया, और नरभक्षी ने उनकी प्रार्थना स्वीकार करते हुए यह श्लोक कहा:

मैंने सौ से अधिक राजाओं को बंदी बना रखा है।
सभी को हाथों से बांधकर लटका दिया गया था और वे दर्द से रो रहे थे।
मैं उन सभी को उनके मूल स्थानों पर पुनः स्थापित कर दूंगा:
यह तीसरा वरदान भी तुम्हें मुझसे प्राप्त होगा।
अब अपना चौथा विकल्प चुनते हुए बोधिसत्व ने यह श्लोक कहा:

तुम्हारा क्षेत्र विचलित और भयभीत है।
गुफाओं में बहुत से लोग उन्हें आपकी नजरों से छिपाकर रखते हैं।
हे राजा, मनुष्य का मांस खाने से परहेज़ करो।
यह चौथा वरदान है जो मैं आपसे प्राप्त करना चाहता हूँ।
जब उसने ऐसा कहा, तो नरभक्षी ने ताली बजाई और हंसते हुए कहा, "मित्र सुतासोमा, यह तुम वास्तव में क्या कह रहे हो? मैं तुम्हें यह वरदान कैसे दे सकता हूँ? यदि तुम कोई और वरदान पाने के लिए उत्सुक हो, तो कुछ और चुन लो," और उसने यह श्लोक कहा:

मुझे तो यह खाना बहुत पसंद आया;
इसी कारण से मैं जंगल में छिप गया था।
तो फिर मैं ऐसे सुखों से कैसे दूर रहूँ?
महोदय, अपने चौथे वरदान के लिए कृपया पुनः चयन करें।
तब उस महान सत्ता ने कहा, "क्योंकि तुम मनुष्य के शरीर से प्रेम करते हो, इसलिए कहते हो, 'मैं इससे परहेज नहीं कर सकता।' वास्तव में जो व्यक्ति सुखदायक होने के कारण बुराई करता है, वह मूर्ख है," और उसने इस श्लोक को दोहराया:

(*24) आप जैसे राजा को अपनी इच्छा नहीं लेनी चाहिए
न ही सुख-सुविधाओं के लिए अपने प्राणों का बलिदान करे।
जीवन अपने उच्चतम अर्थों में, सर्वश्रेष्ठ उपहार है, इसे प्राप्त करें
और भविष्य के सुख तुम अपने पुण्य कर्मों से प्राप्त करोगे।

जब उस महान प्राणी ने ये शब्द कहे, तो नरभक्षी भय से व्याकुल हो गया और सोचने लगा, "मैं न तो सुतासोमा के निर्णय का खंडन कर सकता हूँ और न ही मानव मांस से परहेज कर सकता हूँ। आख़िर मैं क्या करूँ?" और आँखों में आँसू भरकर उसने ये पंक्तियाँ दोहराईं:

मुझे पुरुष का शरीर पसंद है: तुम्हें भी यह जानना चाहिए।
हे महान सुतासोमा, ऐसा ही है।
मैं इससे कभी परहेज नहीं कर सकता।
महोदय, किसी और बात पर विचार करें और फिर से चुनाव करें।
तब बोधिसत्व ने कहा:

जो कोई भी अपनी इच्छा के अनुसार कार्य करेगा
और सुख-सुविधाओं के लिए अपने जीवन का भी बलिदान कर देते हैं।
वह शराबी की तरह जहर का प्याला खाली कर देगा।
और इस प्रकार आगे चलकर उसे अंतहीन पीड़ा सहनी पड़ती है।
जो जानबूझकर यहाँ के सुख से दूर रहेगा,
कर्तव्य के कठिन मार्ग का अनुसरण करना,
जैसे कोई पीड़ा में डूबा हुआ व्यक्ति उपचार के प्याले को खाली कर देता है,
इस प्रकार वह परलोक में परमानंद की अनुभूति करता है।
इस प्रकार बोलने के बाद, नरभक्षी ने अत्यंत शोक करते हुए इस छंद को दोहराया:

हमारी इंद्रियों से उत्पन्न होने वाले पांच प्रकार के आनंद
और प्यारे माता-पिता को भी त्याग देना,
इसी कारण मैं इस जंगल में रहने आया हूँ;
तो फिर मैं आपकी मांगी हुई वरदान कैसे दे सकता हूँ?
तब उस महान सत्ता ने यह श्लोक कहा:

ऋषि-मुनि कभी भी वाणी में कपट नहीं दिखाते।
हम जानते हैं कि अच्छे लोग अपने वादे के पक्के होते हैं:
"मित्र, कोई वरदान चुन लो," तुमने मुझसे यही कहा था;
अब आप इसके जवाब में जो कहेंगे, वह शायद ही सहमत होगा।
एक बार फिर, रोते हुए, उस आदमखोर ने यह छंद बोला:

दोष, बदनामी और लज्जा का मिलाजुला रूप,
दुराचार, वासना और हर प्रकार के पाप
मैंने मनुष्य का मांस खाने के लिए ये सब किया:
तो फिर मैं आपको यह वरदान क्यों प्रदान करूं?
तब उस महान सत्ता ने कहा:

किसी को भी वरदान देने का दावा नहीं करना चाहिए और फिर
उसने जो वादा किया था, झूठे आदमी, उसे वापस ले लो:
मेरे मित्र, इन वरदानों में से सभी निडर लोग ही चुनते हैं;
मैं यह बात मान लूंगा, भले ही इसके बदले मुझे अपना जीवन ही खोना पड़े।
जब उसने नरभक्षी द्वारा वरदान देने का साहस जुटाने के लिए पहली बार कहे गए श्लोक की ओर इशारा किया, तो उसने यह श्लोक कहा:

अच्छे लोग जीवन त्याग देंगे, लेकिन सही को कभी नहीं।
अपने ही विरोध के बावजूद भी वे अपने वचन के प्रति सच्चे रहे;
यदि आप, श्रेष्ठ राजा, कोई वरदान देने का वादा करें,
अपने काम को परिपूर्ण करें और इसे जल्द ही सही ढंग से होते हुए देखें (*25)।
जिसने अपने किसी अंग को बचाने के लिए बहुमूल्य खजाना दे दिया
बचाने के लिए वह अपना अंग, अपनी जान तक कुर्बान कर देगा।

हाँ, धन-दौलत, शरीर-कलियाँ, जीवन और सब कुछ त्याग दूँगा,
केवल अधिकार और उसके दावों को याद रखना।
इस प्रकार उस महान सत्ता ने इन साधनों द्वारा नरभक्षी को सत्य में स्थापित किया, और अब उसे सम्मान के योग्य ठहराने के लिए उसने यह श्लोक कहा:

जिसके मुख से सत्य सिद्ध हो सके,
हां, सभी अच्छे पुरुष अपने संदेह दूर करेंगे।
वह वास्तव में एक शरणस्थल है, एक विश्रामस्थल है, एक ठिकाना है;
बुद्धिमान व्यक्ति का उसके प्रति प्रेम कभी कम नहीं होना चाहिए।
इन श्लोकों को दोहराने के बाद उन्होंने कहा, "मेरे नरभक्षी मित्र, यह उचित नहीं है कि तुम इतने श्रेष्ठ गुरु के वचनों का उल्लंघन करो। जब तुम छोटे थे, तब मैं भी तुम्हारा निजी गुरु था और मैंने तुम्हें बहुत शिक्षा दी थी। अब बुद्ध के सामर्थ्य से मैंने तुम्हें सौ-सौ सिक्कों के मूल्य के श्लोक सुनाए हैं: इसलिए तुम्हें मेरी बात माननी चाहिए।" यह सुनकर नरभक्षी ने सोचा, "सुतासोमा मेरे गुरु और विद्वान थे, और मैंने उन्हें वरदान चुनने का विकल्प दिया था। मैं क्या करूँ? किसी भी व्यक्ति के जीवन में मृत्यु निश्चित है। मैं मनुष्य का मांस नहीं खाऊँगा, बल्कि उन्हें उनका वरदान दूँगा।" आँखों से आँसू बहते हुए वह उठा और राजा सुतासोमा के चरणों में गिर पड़ा, और वरदान देते हुए उसने यह श्लोक दोहराया:

मुझे यह भोजन मीठा और स्वादिष्ट लगा।
इसी कारण से मैं जंगल में छिप गया था;
लेकिन अगर आप मुझसे यह काम करने को कहें,
हे मेरे मित्र और राजा, मैं तुम्हें यह वरदान प्रदान करता हूँ।
तब उस महान सत्ता ने कहा, "ऐसा ही हो, मित्र; नैतिक आचरण में दृढ़ निश्चयी व्यक्ति के लिए तो मृत्यु भी वरदान है। हे प्रभु, मैं आपका यह वरदान स्वीकार करता हूँ। आज से ही आप आध्यात्मिक मार्गदर्शक के मार्ग पर स्थापित हो चुके हैं, और इस कारण मैं आपसे यह विनती करता हूँ; यदि आप मुझसे प्रेम रखते हैं, तो हे प्रभु, पाँच नैतिक नियमों को स्वीकार कीजिए।" "बहुत अच्छा," उसने उत्तर दिया, "हे मित्र, मुझे ये नैतिक नियम सिखाइए।" "तो फिर मुझसे सीखिए, हे प्रभु।" अतः उसने पाँच विश्रामों से उस महान सत्ता को प्रणाम किया और एक अलग स्थान पर बैठ गया, और उस महान सत्ता ने उसे नैतिक नियमों में स्थापित कर दिया। उस क्षण पृथ्वी पर निवास करने वाले देवता एकत्रित हुए और बोले, "अविची नरक के निवासियों से लेकर निराकार लोकों के सर्वोच्च देवताओं में से कोई भी ऐसा नहीं है जो महापुरुष के प्रति स्नेह उत्पन्न करके इस नरभक्षी को मानव मांस खाने से रोक सके। हे! सुतसोमा ने चमत्कार कर दिखाया है!" और उन्होंने जयजयकार की, जिससे जंगल उनकी तेज आवाजों से गूंज उठा। इस शोर को सुनकर चारों महाराजों ने भी जयजयकार की और एक सर्वव्यापी गर्जना हुई जो ब्रह्मा लोक (प्रधान देवदूतों) तक पहुँच गई। वृक्ष पर लटके राजाओं ने भी जयजयकार की यह आवाज सुनी और अपने निवास स्थान पर खड़ी वृक्ष अप्सरा ने भी जयजयकार की। इस प्रकार देवदूतों की आवाज सुनाई दी, परन्तु उनका रूप अदृश्य था। राजाओं ने जयजयकार सुनकर सोचा, "सुतसोमा के कारण ही हमारा जीवन बचा है: सुतसोमा ने नरभक्षी को परिवर्तित करके चमत्कार कर दिखाया है (*27)," और उन्होंने बोधिसत्व की स्तुति की। नरभक्षी ने महापुरुष के चरणों में प्रणाम करने के बाद अलग खड़े हो गए। तब महापुरुष ने उनसे कहा, "मित्र, इन योद्धा राजकुमारों को छोड़ दो।" उन्होंने सोचा, "मैं इनका शत्रु हूँ; यदि मैं इन्हें छोड़ दूँ, तो ये कहेंगे, 'इसे पकड़ो, यह हमारा शत्रु है,' और मुझे हानि पहुँचाएँगे, परन्तु यदि मैं अपना प्राण भी खो दूँ, तो भी मैं उस नैतिक नियम का उल्लंघन नहीं कर सकता जिसे मैंने सुतासोमा से ग्रहण किया है: मैं उनके साथ जाऊँगा और इन्हें छोड़ दूँगा और इस प्रकार मुझे सुरक्षा प्राप्त होगी।" तब बोधिसत्व को प्रणाम करते हुए उन्होंने कहा, "सुतासोमा, हम साथ चलेंगे और योद्धा राजकुमारों को छोड़ देंगे," और उन्होंने इस श्लोक को दोहराया:

आप ही मेरे शिक्षक और मेरे मित्र हैं, एक ही व्यक्ति में।
देखिए, महोदय, आपने जो पूछा था, मैंने वह कर दिया है:
क्या आप बदले में वही करेंगे जो मैंने आपसे पूछा है?
और हम सीधे जाकर इन राजकुमारों को मुक्त करा देंगे।
तब बोधिसत्व ने उससे कहा:

मैं ही आपका शिक्षक और आपका मित्र हूँ, एक ही व्यक्ति में।
और आपने सचमुच मेरी विनती का जवाब दे दिया है, महोदय:
मैं भी वही करूंगा जो आपने मुझसे करने को कहा है।
और हम सीधे जाकर इन राजकुमारों को मुक्त करा देंगे।
और उनके पास आकर उसने कहा

इस पेड़ पर लटके तुम्हारे आंसू तेजी से बह रहे हैं
उस राक्षस की वजह से जिसने तुम्हारे साथ इतना अन्याय किया है,
फिर भी हम आपसे एक वादा सहर्ष स्वीकार करेंगे।
इस राजा पर कभी हाथ न लगाना।
तब उन्होंने उत्तर दिया:

इस पेड़ पर लटका हुआ, दर्द से रो रहा है
हम उस राक्षस से घृणा करते हैं जिसने हम पर अत्याचार किया है।
लेकिन क्या हम सभी एक पक्का वादा करेंगे?
अगर हम जीवित रहना चाहते हैं, तो उसे नुकसान न पहुंचाएं।
तब बोधिसत्व ने कहा, "ठीक है, मुझे यह वादा दो," और उन्होंने इस श्लोक को दोहराया:

जिस प्रकार स्नेही माता-पिता अपने बच्चों के प्रति स्नेह रखते हैं,
दयालु और कोमल प्रेम का प्रदर्शन,
ऐसा पिता भी हमेशा साबित हो सके
और आप उसे बच्चों की तरह प्यार करें।
वे भी इससे सहमत होकर इस छंद को दोहराते हुए बोले:

जिस प्रकार स्नेही माता-पिता अपने बच्चों के प्रति स्नेह रखते हैं,
दयालु और कोमल प्रेम का प्रदर्शन,
ऐसा पिता भी हमेशा साबित हो सके
और हम उसे बच्चों की तरह अत्यंत प्रेम करें।

इस प्रकार उस महान प्राणी ने उनसे वचन लिया और नरभक्षी को बुलाकर कहा, "आओ और इन राजकुमारों को मुक्त करो।" नरभक्षी ने अपनी तलवार उठाई और एक राजा के बंधन काट दिए। चूंकि वह राजा सात दिनों से उपवास कर रहा था और पीड़ा से पागल हो गया था, इसलिए बंधन कटते ही वह जमीन पर गिर पड़ा। यह देखकर उस महान प्राणी का दिल दया से भर गया और उसने कहा, "मेरे नरभक्षी मित्र, इन्हें इस तरह मत काटो।" उसने दोनों हाथों से एक राजा को मजबूती से पकड़कर अपने सीने से लगा लिया और कहा, "अब इसके बंधन काट दो।" तब उस नरभक्षी ने अपनी तलवार से बंधन काट दिए और उस महान प्राणी ने, जो अपार शक्ति से संपन्न था, उसे अपने सीने पर लिटा दिया और अपने पुत्र की तरह कोमलता से उसे जमीन पर सीधा लिटा दिया। इस प्रकार उसने उन सबको ज़मीन पर लिटा दिया, और उनके घावों को धोने के बाद उसने धीरे से उनके हाथों से रस्सियाँ खींच दीं, जैसे किसी बच्चे के कान से धागा निकाला जाता है, और जमे हुए खून को धोकर घावों को हानिरहित बना दिया। फिर उसने नरभक्षी से कहा, "मेरे मित्र, पेड़ की कुछ छाल पत्थर पर कूटकर मेरे पास ले आओ।" और जब वह उसे ले आया, तो उसने सत्य का कार्य किया और उनकी हथेलियों को रगड़ा, और उसी क्षण उनके घाव ठीक हो गए। नरभक्षी ने कुछ छिले हुए चावल लिए और उन्हें रोगनिरोधक के रूप में पकाया, और उन दोनों ने मिलकर उसे सौ से अधिक योद्धा राजकुमारों को रोगनिरोधक के रूप में पीने के लिए दिया, और इस प्रकार वे सभी संतुष्ट हो गए और सूर्य अस्त हो गया। अगले दिन भोर में, दोपहर में और शाम को भी वे उन्हें चावल का पानी पीने के लिए देते रहे, लेकिन तीसरे दिन उन्होंने उन्हें उबले हुए चावल का दलिया दिया, और इसी तरह तब तक देते रहे जब तक वे स्वस्थ नहीं हो गए। तब उस महान प्राणी ने उनसे पूछा कि क्या वे घर लौटने के लिए पर्याप्त बलवान हैं, और जब उन्होंने उत्तर दिया कि वे यात्रा करने में सक्षम हैं, तो उसने कहा, "आओ, मेरे नरभक्षी मित्र, चलो अपने राज्य के लिए प्रस्थान करें।" लेकिन रोते हुए वह उस महान प्राणी के चरणों में गिर पड़ा और बोला, "हे मेरे मित्र, क्या आप इन राजाओं को लेकर चले जाएँगे, लेकिन मैं यहीं जड़ों और जंगली बेरों पर जीवन व्यतीत करता रहूँगा।" "यहाँ क्या करोगे, मेरे मित्र? तुम्हारा राज्य तो रमणीय है: जाओ और बनारस पर राज करो।" "मित्र, यह क्या कह रहे हो? मेरे लिए वहाँ जाना असंभव है: उस शहर के सभी निवासी मेरे शत्रु हैं। वे मेरा अपमान करेंगे और कहेंगे, 'इस व्यक्ति ने मेरी माँ या मेरे पिता को खा लिया; "इस लुटेरे को पकड़ो," और वे मुझे मिट्टी के एक ढेले से मार डालेंगे, लेकिन अगर आपने मुझे नैतिक नियम में दृढ़ता से स्थापित कर दिया है, तो मैं किसी और को नहीं मार सकता, अपनी जान बचाने के लिए भी नहीं। मैं नहीं जाऊंगा। मानव मांस न खाने के कारण मैं कब तक जीवित रहूंगा? और अब मैं तुम्हें फिर कभी नहीं देखूंगा," और वह रोते हुए बोला, "क्या तुम जा रहे हो?" और उस महान सत्ता ने उसकी पीठ थपथपाई और कहा, "मेरे मित्र, मेरा नाम सुतासोमा है: मैंने इससे पहले तुम्हारे जैसे ही एक क्रूर दुष्ट को वश में किया है,और यदि तुम मुझसे पूछो कि बनारस में तुम्हें क्या कहानी सुनानी है, तो मैं या तो तुम्हें वहाँ स्थापित करूँगा, या अपने राज्य को विभाजित करके उसका आधा भाग तुम्हें सौंप दूँगा।" "तुम्हारे नगर में भी मेरे शत्रु हैं," उसने कहा। सुतासोमा ने सोचा, "मेरे वचन का पालन करके इस व्यक्ति ने एक कठिन कार्य पूरा कर लिया है: किसी न किसी प्रकार मुझे उसे उसकी पूर्व गौरवशाली स्थिति में स्थापित करना ही होगा," और उसे लुभाने के लिए उसने उसके नगर की महान महिमा का गुणगान किया और कहा:

आपने कभी हर प्रकार के जानवरों और पक्षियों का मांस साझा किया था।
कुशल रसोइयों द्वारा तैयार किया गया यह व्यंजन वास्तव में एक सुरुचिपूर्ण भोजन था।
इंद्र को अमृतमय (दिव्य) भोजन का स्वाद चखने से जो आनंद प्राप्त हुआ, वैसा आनंद इससे भी प्राप्त हुआ।
इस जंगल में अकेले आनंद लेने के लिए सब कुछ क्यों छोड़ दें?
पतली कमर वाली ये कुलीन महिलाएं, भव्य रूप से सजी हुई,
आपके आसपास पहले, भीड़भाड़ वाली कंपनी, दबाव में,
जब आप, इंद्र की तरह अपने देवताओं (देवदूतों) के बीच प्रसन्नतापूर्वक आगे बढ़े—
उन्हें इस जंगल में अकेले आनंद लेने के लिए क्यों छोड़ दिया जाए?
हे राजा, एक समय आप विशाल पलंग के बीच में आराम से लेटे हुए थे।
आपके चारों ओर ऊनी चादरों का ढेर लगा हुआ है,
और तुम्हारे सिर के नीचे लाल तकिया और साफ-सुथरी सफेद चादरें--
इसे ऐसे ही क्यों छोड़ दें, इस जंगल में अकेले ही आनंद लेने के लिए?
वहां अक्सर आधी रात को ढोल की थाप सुनाई देती थी।
और मानवीय ध्वनियों से परे की ध्वनियाँ (*28) कानों पर पड़तीं,
संगीत और गीत का सामंजस्यपूर्ण संयोजन, प्रसन्नतापूर्ण वातावरण को प्रेरित करता है--
इस जंगल में अकेले आनंद लेने के लिए सब कुछ क्यों छोड़ दें?
आपके पास एक मनमोहक उद्यान है जिसमें बहुतायत से फूल खिलते हैं।
मिगासिरा, जो अपने पार्क और शहर के लिए भी प्रसिद्ध है,
वहाँ असंख्य घोड़े, हाथी और रथ खड़े थे--
उन सबको छोड़कर अकेले इस जंगल में आनंद लेने के लिए क्यों छोड़ दिया जाए?
उस महान प्राणी ने सोचा, "संयोगवश, यह व्यक्ति बहुत पहले खाए गए स्वादिष्ट भोजन की याद करके मेरे साथ आने के लिए उत्सुक होगा," और इसलिए उसने पहले उसे भोजन का लालच दिया, फिर उसकी भावनाओं को जगाया, तीसरे स्थान पर बिस्तर का विचार, चौथे स्थान पर गीत, नृत्य और संगीत, पांचवें स्थान पर एक उद्यान और शहर की याद दिलाकर—इन सभी विचारों से उसने उसे लुभाते हुए कहा, "आओ, महाराज, मैं तुम्हारे साथ बनारस चलूँगा और तुम्हें वहाँ अच्छी तरह स्थापित करूँगा और उसके बाद अपने राज्य लौट आऊँगा; लेकिन यदि हम बनारस राज्य प्राप्त करने में असफल रहे, तो मैं तुम्हें अपने राज्य का आधा भाग दे दूँगा। वनवास से तुम्हारा क्या लेना-देना? बस वही करो जो मैं कहता हूँ।" सुतासोमा की बातें सुनकर वह नरभक्षी उसके साथ जाने के लिए उत्सुक हो गया और सोचने लगा, "सुतासोमा मेरी भलाई के लिए चिंतित है और दयालु है। उसने पहले मुझे सद्गुणों में स्थापित किया और अब कहता है कि वह मुझे मेरी पुरानी महिमा लौटा देगा, और वह ऐसा करने में सक्षम होगा। मुझे उसके साथ चलना चाहिए। जंगल से मेरा क्या लेना-देना है?" और मन ही मन प्रसन्न होकर वह अपने पुण्य कर्मों के कारण सुतासोमा की प्रशंसा करने के लिए उत्सुक हो गया और उसने कहा, "मित्र सुतासोमा, एक गुणी मित्र से मिलने से बेहतर कुछ नहीं है, एक दुष्ट मित्र से मिलने से बुरा कुछ नहीं है," और उसने ये पंक्तियाँ दोहराईं:

महीने के कृष्ण पक्ष में चंद्रमा दिन-प्रतिदिन घटता जाता है,
इसलिए, हे राजा, दुष्टों से मित्रता करना क्षय की तरह क्षीण हो जाएगा;
इस प्रकार मेरी मुलाकात उस रसोइए से हुई, जो सबसे नीच किस्म का आदमी था।
मैंने बुरे कर्म किए, जिनके लिए मुझे समय आने पर नरक में जाना पड़ेगा।
जैसे महीने के साफ आधे भाग में चंद्रमा दिन-प्रतिदिन बढ़ता जाता है,
अतः, हे राजा, अच्छे लोगों के साथ मित्रता कभी क्षीण नहीं होगी।
अतः, हे सुतासोमा, मैं तुम्हारे साथ रहता हूँ, तुम्हें यह अवश्य ही पता होना चाहिए।
धर्मपरायण कर्म करने के बाद सभी सुखी स्वर्ग में जाएंगे।
जैसे शुष्क भूमि पर बाढ़ का भारी जल बह जाता है
ये सदा क्षणभंगुर और अस्थाई होते हैं।
हे राजा, दुष्टों का संघ भी ऐसा ही होता है।
सूखी जमीन पर पानी की तरह, एक क्षणभंगुर चीज।
लेकिन जब बाढ़ का भारी पानी समुद्र पर बहता है
लंबे समय तक टिकने वाले तत्व हमेशा से ही पाए जाते रहे हैं।
हे राजा, अच्छे पुरुषों का संघ भी ऐसा ही होता है।
समुद्र के पानी की तरह, यह भी एक चिरस्थायी चीज है।

कोई भी क्षणभंगुर वस्तु अच्छाई का संयोजन नहीं है।
जब तक जीवन में ऐसा भाईचारा कायम रहेगा,
लेकिन बुरे लोगों का गठबंधन जल्द ही टूट जाता है।
सद्गुण के मार्ग से बुरे लोग बहुत भटक जाते हैं।
इस प्रकार उस नरभक्षी ने सात श्लोकों में उस महान सत्ता की स्तुति की। लेकिन वह नरभक्षी और उन राजाओं को लेकर एक सीमावर्ती गाँव में गया। गाँव वालों ने उस महान सत्ता को देखकर शहर जाकर सूचना दी। राजा के मंत्री सेना लेकर आए और उस महान सत्ता के साथ उसे ले गए। इस दल के साथ वह बनारस राज्य में पहुँचा। रास्ते में गाँव के लोग उपहार लेकर उसके पीछे-पीछे चले और एक विशाल दल उसके साथ बनारस पहुँचा। उस समय नरभक्षी का पुत्र राजा था और कलाहत्ती सेनापति था। शहर के लोगों ने राजा को सूचना देते हुए कहा, "हे महाराज, हमें पता चला है कि सुतासोमा ने नरभक्षी को वश में कर लिया है और वह उसे अपने साथ यहाँ लाया है। हम उसे शहर में प्रवेश नहीं करने देंगे।" उन्होंने तुरंत शहर के द्वार बंद कर दिए और हथियार लेकर खड़े हो गए। जब उस महान प्राणी को पता चला कि द्वार बंद है, तो उसने नरभक्षी और सौ से अधिक राजाओं को वहीं छोड़ दिया और अपने कुछ सलाहकारों के साथ आकर पुकारा, "मैं राजा सुतसोमा हूँ, द्वार खोलो।" अधिकारी जाकर राजा को यह बात बता गए और राजा ने उन्हें तुरंत द्वार खोलने का आदेश दिया। इस प्रकार महान प्राणी नगर में प्रवेश कर गया। राजा और कालाहत्ती उससे मिलने बाहर आए और उसे अपने साथ महल के शिखर पर ले गए। महान प्राणी राजसिंहासन पर विराजमान होकर नरभक्षी की मुख्य पत्नी और अपने शेष सलाहकारों को बुलाया और कालाहत्ती से कहा, "कालाहत्ती, तुम राजा को नगर में प्रवेश क्यों नहीं करने दे रहे हो?" कालाहत्ती ने उत्तर दिया, "वह दुष्ट राजा, जब इस नगर में राजा के रूप में शासन कर रहा था, उसने अनेक पुरुषों को खा डाला और क्षत्रियों के लिए निषिद्ध कार्य किए और पूरे भारत को तहस-नहस कर दिया: यही कारण है कि हम ऐसा कर रहे हैं।" “यह मत समझो,” उसने उत्तर दिया, “कि वह अब इस तरह व्यवहार करेगा। मैंने उसका परिवर्तन कर दिया है और उसे नैतिक नियमों में स्थापित कर दिया है। वह अपनी जान बचाने के लिए भी किसी को हानि नहीं पहुँचाएगा: तुम्हें उससे कोई खतरा नहीं है; इस तरह व्यवहार मत करो। वास्तव में बच्चों को अपने माता-पिता की देखभाल करनी चाहिए: जो अपने माता-पिता का स्नेह करते हैं वे स्वर्ग जाते हैं, बाकी नरक जाते हैं।” इस प्रकार उसने राजा के पुत्र को संबोधित किया, जब वह उसके पास एक नीची चौकी पर बैठा था। और उसने सेनापति को उपदेश देते हुए कहा, “कलाहत्थी, तुम राजा के मित्र और अनुयायी हो, और उसने तुम्हें महान शक्ति प्रदान की है; तुम्हें भी राजा के हित में कार्य करना चाहिए।” और रानी को संबोधित करते हुए उसने कहा, “हे रानी, तुम एक कुलीन वंश से आई हो और राजा से प्रधान पत्नी का पद प्राप्त किया है और उससे कई पुत्र और पुत्रियों की संतान पाई है; तुम्हें भी राजा के हित में कार्य करना चाहिए।” और, इस विषय को समाप्त करते हुए, धर्म का उपदेश देते हुए उसने कहा:

किसी भी राजा को उस पर विजय प्राप्त नहीं करनी चाहिए जो निश्चित रूप से अक्षुण्ण (*29) होना चाहिए,
किसी भी मित्र को विश्वासघात करके दूसरे मित्र पर विजय प्राप्त नहीं करनी चाहिए;
मेरी राय में, जो स्त्री अपने स्वामी से भयभीत रहती है, वह सच्ची पत्नी नहीं है।
और न ही वे बच्चे जो बूढ़े पिता का पालन-पोषण नहीं करते।
कोई भी सभागृह ऐसा नहीं होता जिसमें बुद्धिमान लोग उपस्थित न हों।
और वे लोग बुद्धिमान नहीं हैं जो सत्य का प्रचार दूर-दूर तक नहीं करते।
बुद्धिमान वे हैं जो कामवासना, घृणा और त्रुटि का त्याग कर बैठते हैं।
और सत्य का प्रचार दूर-दूर तक मनुष्यों तक करने में कभी असफल न हों।
मूर्खों के बीच बैठा ऋषि यदि मौन रहे तो कोई उसे तुरंत बुद्धिमान नहीं समझ पाता।
वह बोलता है और निर्वाण के सभी शिक्षक उसे पहचान लेते हैं।
सत्य का प्रचार करो, सत्य की महिमा करो और ऋषियों का ध्वज ऊंचा उठाओ।
संतों का प्रतीक उनकी महान वाणी है, सत्य ही उनका ध्वज है।
सत्य के उनके प्रवचन को सुनकर राजा और सेनापति अत्यंत प्रसन्न हुए और बोले, “चलो, हम महान राजा को यहाँ लाते हैं।” ढोल बजाकर नगर में घोषणा करने के बाद उन्होंने नगरवासियों को बुलाया और कहा, “डरो मत; लोगों का कहना है कि राजा धर्म में स्थापित हो गए हैं: चलो, हम उन्हें यहाँ लाते हैं।” अतः बड़ी संख्या में लोग और उनके नेतृत्व में महापुरुष राजा के साथ गए और उन्हें प्रणाम किया। उन्होंने नाई बुलाए और जब उनके बाल और दाढ़ी काट दिए गए, उन्होंने स्नान कर लिया और बड़े वस्त्र पहन लिए, तो उन्होंने उन्हें कीमती पत्थरों के ढेर पर बिठाया, उनका अभिषेक किया और फिर उन्हें नगर में ले गए। नरभक्षी राजा ने सौ से अधिक क्षत्रियों और महापुरुष राजा को बड़ा आदर दिया, और यह खबर पूरे भारत में फैल गई कि मनुष्यों के स्वामी सुतसोमा ने नरभक्षी राजा को परिवर्तित कर सिंहासन पर पुनः स्थापित कर दिया है। इंद्रप्रस्थ नगरवासियों ने राजा को वापस बुलाने के लिए संदेश भेजा। महान पुरुष वहाँ केवल एक माह रुके और राजा को संबोधित करते हुए कहा, "मित्र, हम जा रहे हैं; ध्यान रखना कि तुम अच्छे कार्यों में तत्पर रहो और नगर के द्वार तथा अपने महल के द्वार पर पाँच भिक्षागृह बनवाओ तथा दस राजसी गुणों का पालन करो और बुरे मार्गों से विमुख रहो।" सौ से अधिक राजसी नगरों से एक विशाल सेना एकत्रित हुई और इस दल के साथ वे बनारस से आगे बढ़े। नरभक्षी भी उनके साथ जा रहा था

और रास्ते में बीच में रुक गया। महान पुरुष ने जिनके पास घोड़े नहीं थे, उन्हें सवारी के लिए घोड़े दिए और फिर उन सभी को विदा कर दिया। उन्होंने उनसे मैत्रीपूर्ण अभिवादन किया और उचित अभिवादन और आलिंगन के बाद वे सभी अपने-अपने लोगों के पास लौट गए। महान पुरुष भी इंद्रप्रस्थ पहुँचकर बड़े वैभव के साथ नगर में प्रवेश किया, जिसे उसके निवासियों ने मानो देवताओं (देवदूतों) के नगर की तरह सजाया था। अपने माता-पिता को प्रणाम करने और उन्हें देखकर अपनी प्रसन्नता व्यक्त करने के बाद वे महल के शिखर पर चढ़ गए। अपने राज्य में न्यायपूर्ण शासन करते हुए उनके मन में यह विचार आया, "वृक्ष-आत्मा ने मेरी बहुत सहायता की; मैं सुनिश्चित करूँगा कि इसे धार्मिक भेंट चढ़ाई जाए।" अतः उन्होंने बरगद के वृक्ष के पास एक विशाल झील बनवाई और वहाँ कई परिवारों को बसाकर एक गाँव की स्थापना की। यह गाँव बढ़कर अस्सी हज़ार दुकानों वाला एक बड़ा गाँव बन गया। वृक्ष की शाखाओं के सबसे दूर के छोर से शुरू करते हुए उन्होंने वृक्ष की जड़ों के चारों ओर की भूमि को समतल किया और उसके चारों ओर मेहराबों और फाटकों से सुसज्जित एक बाड़ (*30) लगाई; इस प्रकार वृक्ष की आत्मा को प्रसन्न किया गया। और गाँव के उस स्थान पर बसे होने के कारण जहाँ राक्षस का धर्म परिवर्तन हुआ था, वह स्थान बढ़कर कम्मासदम्मा नगर बन गया। और सभी राजाओं ने, ईश्वर की सलाह का पालन करते हुए, दान-पुण्य आदि जैसे अच्छे कर्म किए और स्वर्ग की प्राप्ति की।

गुरु ने यहाँ अपना धार्मिक उपदेश समाप्त करते हुए कहा, "हे भिक्षुओं, केवल अब ही नहीं, मैं अंगुलिमाला का धर्मांतरण कर रहा हूँ; पूर्व में भी मैंने उसका धर्मांतरण किया था और उसने मेरे जन्म को पहचाना था।" "उस समय नरभक्षी राजा अंगुलिमाला था, कालाहत्ती सारिपुत्र था, ब्राह्मण नंदा आनंद था, वृक्ष-आत्मा कश्यप था, सक्का (इंद्र) अनुरुद्ध था, शेष राजा बुद्ध के अनुयायी थे, राजा के पिता और माता महान राजा के परिवार के सदस्य थे, और कहा जाता है कि राजा सुतसोमा मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1) सुतसोमा, जाट की कहानी। क्रमांक 513, जयाद्दिसा-जातक, और कैरिया-पिटक, III। 12

(2) अंगुलिमाल की कहानी के लिए अंगुलिमालसुत्तम (मज्झिमा निकाय, संख्या 86, खंड II. pt. I. पृष्ठ 97) देखें

(3)पादेसनानम्। देखें शिक्षासमुच्चय, स्व प्रदेशिका, 1. स्थानीय, प्रांतीय, 2. सीमित, जैसे प्रदेशिकायनम, महाव्युत्पत्ति।

(4)पित्तियाचरिया। यह शब्द जाट. 100 में आता है, और दोनों अंशों में इसका अर्थ सहायक शिक्षक प्रतीत होता है, जो गुरु के शिक्षण का पूरक होता है।

(5) पक्खदिवास, यानी दो प्रमुख पाक्षिक उपवास दिवसों के लिए, जाट. 292, 342 और 97 देखें।

(6) जातक कथाओं में यक्ष नामक राक्षसों का उल्लेख बार-बार मानव मांस खाने के रूप में मिलता है। नरभक्षण के केवल वही मामले मिलते हैं जिनमें मनुष्य या तो यक्ष (राक्षस) द्वारा पाले-पोसे गए हों या पिछले जन्म में यक्ष रहे हों, जैसा कि इस कथा में वर्णित है।

(7)घरासंधि के साथ, घर की दीवार में छेद, तुलना करें मनु, 9. 276.

(8) जलीय पौधा वैलिसनेरिया.

(9)भवित्त के लिए धम्म संगानी की तुलना करें

(10) पाली में यहाँ शब्द 'अच्चरा' के दो अर्थों पर एक खेल है, एक स्वर्गीय अप्सरा और उंगलियों का चटकना।

(11) इस वाक्य की संरचना बहुत स्पष्ट नहीं है, भले ही कोई खानुम को धानुम, जाट 88 के रूप में कर्ता कारक मान ले। शायद खानुम पिट्थिपडेना निक्खामी का अर्थ है, उसने दूसरे पैर के ऊपरी हिस्से को रगड़कर किरच को निकाल दिया।

(12) चूंकि सुतासोमा पीछे छूट गई थी, एक और पीड़ित अभी भी संख्या पूरी करना चाहता था।

(13) एक तीर पर बगुले का पंख लगा हुआ था।

(14)सुता। शब्द के दोहरे अर्थ, रस और पवित्र साहित्य पर एक खेल।

(15) बोधिसत्व के प्रति श्रद्धा के प्रतीक के रूप में।

(16)बलरामायण, अधिनियम IX की तुलना करें। श्लोक 51, भ्रमरकाभ्रमं भ्रम्यते रथः।

(17) फलक, मेसुवा रॉक्सबर्गी पौधा, या यह कमल के बीज-फली हो सकते हैं। जाट.304 और जाट. 68 में, हमें फलकत्थरसायना मिलता है, जो फलक के पत्तों का बिस्तर है।

(18)ये आयतें पहले भी आ चुकी हैं।

(19) हाथी, घुड़सवार सेना, रथ और पैदल सेना।

(20) जातक, 234 देखें

(21)क्षत्रिय शिक्षा में यह माना जाता है कि मनुष्य अपने हितों की पूर्ति के लिए बुराई करने में न्यायसंगत है।

(22) यहाँ पहले से दिए गए चार छंदों का अनुसरण किया जाता है

(23) सक्खी। टीकाकार इसका अनुवाद "मित्र" करता है, जाहिरा तौर पर v.1. सखी से।

(24) ये आयतें दोहराई जाती हैं

(25) अवकरोही यहाँ और जाट. 280 में, का अर्थ "भुगतान करना, पूरा करना" होना चाहिए, लेकिन जाट. 495 और 500 में अवकरेय का अर्थ "भुगतान न करना" प्रतीत होता है। क्या यह संभव है कि दत्वना अवकरेय के स्थान पर हमें दत्व न अवकरेय पढ़ना चाहिए?

(27) अर्थ स्पष्ट है, लेकिन damento की संरचना अनियमित है।

(28) निप्पुरिसा। यह शब्द संगीत पर लागू होता है और इसका अर्थ है "मानव नहीं," "मनुष्यों द्वारा निर्मित नहीं," बल्कि गंधर्वों द्वारा, या स्वर्गीय संगीतकारों द्वारा।

(29) टीकाकार इसे किसी पुरुष का पिता या माता बताता है।

(30)वेदिका। इस शब्द पर सेनार्ट के महावस्तु, I, और विनय ग्रंथों, III. 104 और 162 में चर्चा की गई है।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दाक निकाय >> जातक >> **मुगा-पक्खा-जातक**
स्रोत *: ई.बी. कोवेल और डब्ल्यू.एच.डी. राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----II-538-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 538
मुगा-पक्खा जातक (*1)

“बुद्धि का प्रदर्शन न करो,” इत्यादि। यह कथा गुरु ने जाटवन में महान त्याग के विषय में सुनाई थी। एक दिन सत्य के हॉल में बैठे भिक्षु भगवान बुद्ध के महान त्याग की प्रशंसा में चर्चा कर रहे थे। जब गुरु आए और उन्होंने भिक्षुओं से पूछा कि वे किस विषय पर चर्चा कर रहे हैं, तो यह सुनकर उन्होंने कहा, “नहीं, भिक्षुओं, अपने राज्य को त्यागने के बाद संसार का यह त्याग कोई आश्चर्य की बात नहीं थी, क्योंकि जब मैंने सभी सिद्धियों का पूर्ण अभ्यास कर लिया था; क्योंकि इससे पहले, जब मेरी बुद्धि अभी अपरिपक्व थी और मैं अभी भी सिद्धियों को प्राप्त कर रहा था, तब मैंने अपना राज्य त्याग दिया और संसार का त्याग कर दिया।” और उनके अनुरोध पर उन्होंने उन्हें अतीत की एक कथा सुनाई।

एक समय की बात है, बनारस में काशिराज राजा न्यायपूर्वक शासन कर रहे थे। उनकी सोलह हजार पत्नियाँ थीं, परन्तु उनमें से किसी ने भी पुत्र या पुत्री को जन्म नहीं दिया। कुश जातक (*2) के अनुसार, नगरवासी एकत्रित हुए और कहने लगे, “हमारे राजा के पास वंश को आगे बढ़ाने के लिए कोई पुत्र नहीं है”; और उन्होंने राजा से पुत्र प्राप्ति के लिए प्रार्थना करने का अनुरोध किया। राजा ने अपनी सोलह

हजार पत्नियों को पुत्र प्राप्ति के लिए प्रार्थना करने का आदेश दिया; परन्तु यद्यपि उन्होंने चंद्रमा और अन्य देवताओं की पूजा की और प्रार्थना की, फिर भी उन्हें पुत्र प्राप्ति नहीं हुई। अब उनकी प्रमुख रानी चंदादेवी, जो मददास के राजा की पुत्री थीं, पुण्य कर्मों में लीन थीं, इसलिए उन्होंने उनसे भी पुत्र प्राप्ति के लिए प्रार्थना करने का अनुरोध किया। अतः पूर्णिमा के दिन उन्होंने उपोसथ व्रत ग्रहण किया और एक छोटी सी पलंग पर लेटकर अपने पुण्यमय जीवन के चिंतन में उन्होंने सत्य की प्रतिज्ञा की, “यदि मैंने कभी भी आज्ञाओं का उल्लंघन नहीं किया है, तो मेरी इस प्रतिज्ञा की सत्यता से मुझे पुत्र प्राप्ति हो।” उनकी भक्ति की शक्ति से इंद्र का जीवन प्रज्वलित हो गया। सक्का (इंद्र) ने कारण का पता लगाकर कहा, "चंदादेवी पुत्र की कामना करती हैं, मैं उन्हें पुत्र प्रदान करूँगा।" इस प्रकार, जब वे एक उपयुक्त पुत्र की खोज कर रहे थे, तब उनकी दृष्टि बोधिसत्व पर पड़ी। बोधिसत्व ने बनारस में बीस वर्ष शासन करने के बाद उषाद नरक में पुनर्जन्म लिया था, जहाँ उन्होंने अस्सी हजार वर्षों तक कष्ट भोगा था, और फिर तैंतीस देवदूतों के लोक में जन्म लिया था। वहाँ अपने निर्धारित समय तक रहने के बाद, वे उस लोक से विदा हो गए और उच्चतर देवदूतों के लोक में जाने की इच्छा रखते थे। सक्का (इंद्र) उनके पास गए और बोले, "मित्र, यदि तुम मनुष्यलोक में जन्म लेते हो, तो तुम सभी गुणों का पूर्ण अभ्यास करोगे और मानवजाति को लाभ होगा। अब काशिराज की यह प्रमुख रानी चंदा पुत्र की कामना कर रही है, तुम उसके गर्भ में जन्म लो।" उन्होंने सहमति दी और पाँच सौ देवताओं के साथ आए, और स्वयं रानी के गर्भ में ही उत्पन्न हुए, जबकि अन्य देवता राजा के मंत्रियों की पत्नियों के गर्भ में उत्पन्न हुए। रानी का गर्भ हीरे से भरा हुआ प्रतीत हो रहा था; जब उन्हें इसका एहसास हुआ, तो उन्होंने राजा को बताया, जिन्होंने अजन्मे बच्चे की सुरक्षा के लिए हर संभव उपाय किए; और अंत में उन्होंने एक शुभ लक्षणों वाले पुत्र को जन्म दिया। उसी दिन मंत्रियों के घरों में पाँच सौ युवा रईसों का जन्म हुआ। उस समय राजा अपने शाही आसन पर अपने मंत्रियों से घिरे बैठे थे, तभी यह घोषणा हुई, "हे महाराज, आपके घर पुत्र का जन्म हुआ है"; यह सुनकर उनके मन में पितृ प्रेम जागृत हुआ, और उनकी त्वचा को भेदते हुए उनकी हड्डियों तक पहुँच गया; उनके भीतर आनंद का संचार हुआ और उनका हृदय प्रसन्न हो गया। उन्होंने अपने मंत्रियों से पूछा, "क्या आप मेरे पुत्र के जन्म से प्रसन्न हैं?" "महाराज, आप क्या कह रहे हैं?" उन्होंने उत्तर दिया, "हम पहले असहाय थे, अब हमें सहायता मिली है, हमें स्वामी प्राप्त हुआ है।" राजा ने अपने मुख्य सेनापति को आदेश दिया, "मेरे पुत्र के लिए सेवकों का एक दल तैयार किया जाना चाहिए।"पता लगाओ कि आज मंत्रियों के घरों में कितने युवा कुलीन पैदा हुए हैं।" उसने पाँच सौ को देखा और जाकर राजा को बताया। राजा ने पाँच सौ युवा कुलीनों के लिए शाही वस्त्र भेजे, और पाँच सौ दाइयाँ भी भेजीं। इसके अलावा, उसने बोधिसत्व के लिए चौंसठ दाइयाँ भेजीं, जो सभी बहुत लंबी होने के दोषों से मुक्त थीं, उनके स्तन लटके हुए नहीं थे, और मीठे दूध से भरे हुए थे। यदि कोई बच्चा बहुत लंबी दाई की गोद में बैठकर दूध पीता है, तो उसकी गर्दन बहुत लंबी हो जाएगी; यदि वह बहुत छोटी दाई की गोद में बैठता है, तो उसकी कंधे की हड्डी दब जाएगी; यदि दाई बहुत पतली हो, तो बच्चे की जांघों में दर्द होगा; यदि बहुत मोटी हो, तो बच्चा धनुषाकार टांगों वाला हो जाएगा (*3); बहुत काली दाई का शरीर बहुत ठंडा होता है, बहुत गोरी दाई का बहुत गर्म; लटके हुए स्तनों वाली दाई का दूध पीने वाले बच्चों की नाक की नोक चपटी हो जाती है; कुछ कुछ दाइयों का दूध खट्टा होता है, कुछ का कड़वा, (और पहले जैसा ही)। इसलिए, इन सभी दोषों से बचने के लिए, उन्होंने चौंसठ ऐसी दाइयाँ उपलब्ध कराईं जिनका दूध मीठा था और उनमें ये दोष नहीं थे; और बोधिसत्व को पूर्ण आदर देने के बाद, उन्होंने रानी को वरदान भी दिया। रानी ने वरदान स्वीकार कर लिया और उसे अपने मन में संजो कर रखा। बालक का नामकरण करते समय, उन्होंने विभिन्न लक्षणों को पढ़ने वाले ब्राह्मणों को पूर्ण आदर दिया और पूछा कि क्या कोई खतरा मंडरा रहा है। उन्होंने बालक के लक्षणों की उत्कृष्टता देखकर उत्तर दिया, "हे राजा, राजकुमार में भविष्य के सौभाग्य के सभी लक्षण हैं, वह न केवल एक महाद्वीप पर बल्कि चारों महाद्वीपों पर शासन करने में सक्षम है, कोई खतरा दिखाई नहीं देता।" राजा प्रसन्न होकर बालक का नाम तेमियाकुमारो रखा, क्योंकि उसके जन्म के दिन काशी राज्य में भारी वर्षा हुई थी और वह भीगकर पैदा हुआ था।बच्चे का नामकरण करते समय, उन्होंने विभिन्न लक्षणों को पढ़ने वाले ब्राह्मणों का बहुत सम्मान किया और पूछा कि क्या कोई खतरा मंडरा रहा है। लक्षणों की उत्कृष्टता देखकर, उन्होंने उत्तर दिया, "हे महाराज, राजकुमार में भविष्य के सौभाग्य के सभी लक्षण हैं; वह न केवल एक महाद्वीप पर बल्कि चारों महाद्वीपों पर शासन करने में सक्षम है; कोई खतरा दिखाई नहीं देता।" राजा प्रसन्न हुए और जब उन्होंने लड़के का नाम निर्धारित किया, तो उन्होंने उसका नाम तेमियाकुमारो रखा, क्योंकि उसके जन्म के दिन काशी राज्य में हर जगह बारिश हुई थी और वह भीगा हुआ पैदा हुआ था।बच्चे का नामकरण करते समय, उन्होंने विभिन्न लक्षणों को पढ़ने वाले ब्राह्मणों का बहुत सम्मान किया और पूछा कि क्या कोई खतरा मंडरा रहा है। लक्षणों की उत्कृष्टता देखकर, उन्होंने उत्तर दिया, "हे महाराज, राजकुमार में भविष्य के सौभाग्य के सभी लक्षण हैं; वह न केवल एक महाद्वीप पर बल्कि चारों महाद्वीपों पर शासन करने में सक्षम है; कोई खतरा दिखाई नहीं देता।" राजा प्रसन्न हुए और जब उन्होंने लड़के का नाम निर्धारित किया, तो उन्होंने उसका नाम तेमियाकुमारो रखा, क्योंकि उसके जन्म के दिन काशी राज्य में हर जगह बारिश हुई थी और वह भीगा हुआ पैदा हुआ था।

जब वह एक महीने का था, तो उसे सजा-संवारकर राजा के पास लाया गया। राजा ने अपने प्यारे बच्चे को देखकर उसे गले लगाया और अपनी गोद में बिठाकर उसके साथ खेलने लगा। उसी समय चार डाकुओं को उसके सामने लाया गया; उनमें से एक को उसने कांटों से जड़े कोड़ों की एक हजार मार की सजा सुनाई, दूसरे को जंजीरों में जकड़कर कैद करने की, तीसरे को भाले से घायल करने की और चौथे को सूली पर चढ़ाने की सजा दी। बोधिसत्व अपने पिता के शब्दों को सुनकर भयभीत हो गया और मन ही मन सोचने लगा, "अरे! मेरे पिता राजा होने के कारण एक ऐसे जघन्य अपराध के दोषी हो रहे हैं जो मनुष्यों को नरक में ले जाता है।" अगले दिन उसे एक सफेद छतरी के नीचे एक आलीशान पलंग पर लिटाया गया। थोड़ी देर की नींद के बाद जब वह जागा, तो उसने आंखें खोलकर सफेद छतरी

और राजसी वैभव देखा, जिससे उसका भय और भी बढ़ गया; और वह सोचने लगा, "मैं इस महल में कहाँ से आ गया हूँ?" अपने पिछले जन्मों की यादों से उसे याद आया कि वह एक बार देवताओं (देवदूतों) के लोक से आया था और उसके बाद उसने नरक में कष्ट सहा था, और फिर वह उसी नगर का राजा था। जब वह मन ही मन सोच रहा था, "मैं बीस वर्षों तक राजा रहा और फिर मैंने उस्सादा नरक में अस्सी हजार वर्षों तक कष्ट सहा, और अब मैं फिर से इस लुटेरों के घर में जन्म ले रहा हूँ, और मेरे पिता ने, जब चार लुटेरों को उनके सामने लाया गया, तो ऐसा क्रूर भाषण दिया जिससे नरक में जाना ही होगा; यदि मैं राजा बनता हूँ तो मुझे फिर से नरक में जन्म लेना होगा और वहाँ भीषण पीड़ा सहनी होगी," तो वह अत्यंत भयभीत हो गया, उसका सुनहरा शरीर हाथ से कुचले हुए कमल की तरह पीला और मुरझा गया, और वह सोचने लगा कि वह लुटेरों के उस घर से कैसे बच निकले। फिर छतरी में रहने वाली एक देवी, जो पिछले जन्म में उसकी माता थी, ने उसे दिलासा देते हुए कहा, "डरो मत, मेरे बच्चे तेमिया; यदि तुम सचमुच भागना चाहते हो, तो अपंग होने का नाटक करो, भले ही तुम वास्तव में अपंग न हो; बहरे न होते हुए भी बहरे होने का नाटक करो, और गूंगे न होते हुए भी गूंगे होने का नाटक करो। इन लक्षणों को अपनाकर बुद्धि का कोई संकेत मत दिखाओ।" इस प्रकार उसने पहला श्लोक कहा।

"मेरे बच्चे, बुद्धि का प्रदर्शन मत करो, सबकी नजरों में मूर्ख बनो।"
सबकी घृणा का पात्र बनकर संतुष्ट रहो, इसी प्रकार अंततः तुम्हें पुरस्कार प्राप्त होगा।"
उसके शब्दों से सांत्वना पाकर उसने दूसरा छंद बोला।

"हे देवी, मैं आपकी इच्छा का पालन करूंगा, आप जो भी मुझे आदेश दें वही सर्वोत्तम है।"
माँ, तुम मेरी भलाई चाहती हो, तुम बस मुझे सुखी देखना चाहती हो।"
और इसलिए उन्होंने इन तीन गुणों का अभ्यास किया। राजा ने अपने पुत्र का दुख दूर करने के लिए पाँच सौ युवा सरदारों को उसके पास बुलवाया; बच्चे दूध के लिए रोने लगे, लेकिन बोधिसत्व नरक के भय से राजा के पास यह सोचकर रोए नहीं कि प्यास से मरना राज्य करने से बेहतर है। दाईयों ने यह बात रानी चंदा को बताई और उन्होंने राजा को बताई; राजा ने शकुन और संकेतों के ज्ञाता ब्राह्मणों को बुलवाया और उनसे सलाह ली। उन्होंने उत्तर दिया, "महाराज, आपको उचित समय बीत जाने के बाद ही राजकुमार को दूध पिलाना चाहिए; तब वह रोएगा और उत्सुकता से स्तन पकड़कर अपनी इच्छा से दूध पिएगा।" इसलिए उन्होंने उचित समय बीत जाने के बाद ही उसे दूध पिलाया, कभी-कभी तो एक बार दूध नहीं पिलाया, और कभी-कभी पूरे दिन दूध नहीं पिलाया। लेकिन नरक के भय से ग्रस्त होकर, प्यासा होने के बावजूद, वह दूध के लिए नहीं रोया। तब माँ या दाईयों ने उसे दूध पिलाया, हालाँकि वह रोया नहीं, और कहा, "लड़का भूखा है।" दूसरे बच्चे दूध न मिलने पर रोने लगे, लेकिन वह न तो रोया, न सोया, न अपने हाथ-पैर मोड़े, और न ही उसने कोई आवाज़ सुनी। तब उसकी नर्सों ने सोचा, "विकलांगों के हाथ-पैर तो उसके जैसे नहीं होते, गूंगों के जबड़े उसके जैसे नहीं होते, बहरों के कान उसके जैसे नहीं होते; इसके पीछे कोई कारण तो होगा, चलो इसकी जाँच करते हैं।" इसलिए उन्होंने उसे दूध पिलाने का निश्चय किया और पूरे एक दिन तक उसे दूध नहीं दिया; प्यास से तड़पने के बावजूद उसने दूध के लिए कोई आवाज़ नहीं निकाली। तब उसकी माँ ने कहा, "मेरा बच्चा भूखा है, उसे दूध दो।" और उसने उन्हें दूध पिलाने के लिए मजबूर किया। इस तरह उसे बीच-बीच में दूध पिलाते हुए उन्होंने एक साल तक उसे परखा, लेकिन उसकी कमजोरी का पता नहीं चल पाया। फिर उन्होंने कहा, "दूसरे बच्चों को केक और स्वादिष्ट भोजन पसंद हैं, चलो उसे भी वही खिलाते हैं।" उन्होंने पाँच सौ बच्चों को उसके पास बिठाया और तरह-तरह के स्वादिष्ट भोजन लाकर उसके पास रख दिए, और उन्हें अपनी पसंद का भोजन लेने को कहकर वे खुद छिप गए। दूसरे बच्चे आपस में झगड़ते और एक-दूसरे को मारते रहे और केक छीनकर खा गए, लेकिन बोधिसत्व ने मन ही मन कहा, "हे तेमिया, अगर तुम नरक में जाना चाहते हो तो केक और उत्तम भोजन खा लो," और इसलिए नरक के भय से उन्होंने उनकी ओर देखा तक नहीं। इस प्रकार, भले ही उन्होंने पूरे एक साल तक उन्हें केक और उत्तम भोजन से आज़माया, फिर भी उन्हें उनकी कमजोरी का पता नहीं चला। फिर उन्होंने कहा, "बच्चों को तरह-तरह के फल पसंद होते हैं," और वे तरह-तरह के फल लाए और उन्हें आज़माया; दूसरे बच्चे उनके लिए आपस में लड़े और उन्हें खा गए, लेकिन उन्होंने उनकी ओर देखा तक नहीं, और इस तरह पूरे एक साल तक उन्होंने उन्हें तरह-तरह के फलों से आज़माया। फिर उन्होंने कहा, "दूसरे बच्चों को खिलौने पसंद होते हैं"; इसलिए उन्होंने सोने और हाथियों की दूसरी मूर्तियाँ उनके पास रख दीं; बाकी बच्चों ने उन्हें लूट की तरह छीन लिया, लेकिन बोधिसत्व ने उनकी ओर देखा तक नहीं।और इस प्रकार पूरे एक वर्ष तक उन्होंने उसे खिलौनों से आज़माया। फिर उन्होंने कहा, "चार साल के बच्चों के लिए एक विशेष भोजन होता है, हम उसे इससे आज़माएंगे"; इसलिए वे तरह-तरह का भोजन लाए; अन्य बच्चों ने उसे तोड़-तोड़ कर खाया; लेकिन बोधिसत्व ने मन ही मन कहा, "हे तेमिया, पिछले जन्मों में जब तुम्हें भोजन नहीं मिला, उसका कोई हिसाब नहीं है," और नरक के भय से उन्होंने उनकी ओर देखा तक नहीं; अंत में उनकी माँ ने, जिनका हृदय लगभग फट चुका था, उन्हें अपने हाथों से भोजन कराया। फिर उन्होंने कहा, "पाँच साल के बच्चे आग से डरते हैं, हम उसे इससे आज़माएंगे"; इसलिए, कई दरवाजों वाला एक बड़ा घर बनवाकर और उसे ताड़ के पत्तों से ढककर, उन्होंने उसे अन्य बच्चों से घेरकर बीच में बिठा दिया और उसमें आग लगा दी। अन्य बच्चे चीखते हुए भाग गए, लेकिन बोधिसत्व ने मन ही मन कहा कि यह नरक की यातना से बेहतर है, और पूरी तरह उदासीन होकर स्थिर रहे, और जब आग उनके पास आई तो वे उन्हें वहाँ से ले गए। फिर उन्होंने कहा, "छह साल के बच्चे जंगली हाथी से डरते हैं"; इसलिए उन्होंने एक प्रशिक्षित हाथी को प्रशिक्षित करवाया, और जब उन्होंने बोधिसत्व को अन्य बच्चों के साथ महल के प्रांगण में बैठाया, तो उन्होंने उसे छोड़ दिया। वह चिंघाड़ता हुआ

और अपनी सूंड से ज़मीन पर प्रहार करता हुआ आया और दहशत फैला दी; अन्य बच्चे अपनी जान के डर से इधर-उधर भाग गए, लेकिन बोधिसत्व नरक के भय से वहीं बैठे रहे, और प्रशिक्षित जानवर ने उन्हें उठाया और ऊपर-नीचे किया, और उन्हें चोट पहुँचाए बिना चला गया। जब वे सात साल के थे, और अपने साथियों से घिरे बैठे थे, तो उन्होंने कुछ दाँत निकाले हुए और मुँह बाँधे हुए साँपों को छोड़ दिया; अन्य बच्चे चीखते हुए भाग गए, लेकिन बोधिसत्व नरक के भय को याद करके स्थिर रहे और बोले, "भयंकर साँप के मुँह से मरना बेहतर है"; फिर सर्पों ने उसके पूरे शरीर को घेर लिया और उसके सिर पर अपने फन फैला दिए, फिर भी वह गतिहीन रहा। इस प्रकार, बार-बार कोशिश करने के बावजूद भी वे उसकी कमजोरी का पता नहीं लगा सके। तब उन्होंने कहा, "लड़कों को सामाजिक समारोह पसंद होते हैं"; इसलिए, उसे महल के प्रांगण में पाँच सौ लड़कों के साथ बिठाकर, उन्होंने नृत्यकला करने वाले कलाकारों का एक समूह इकट्ठा करवाया; अन्य लड़कों ने नृत्यकला करने वाले कलाकारों को देखकर "वाह!" चिल्लाया और ज़ोर से हँसे, लेकिन बोधिसत्व ने मन ही मन सोचा कि यदि वह नरक में जन्म लेता तो उसे कभी हँसी या आनंद नहीं मिलता, इसलिए वह नरक के बारे में सोचते हुए गतिहीन रहा और उसने नृत्य की ओर देखा तक नहीं। इस प्रकार बार-बार कोशिश करने पर भी उन्हें उसकी कोई कमजोरी नहीं मिली। तब उन्होंने कहा, "हम तलवार से उसकी परीक्षा लेंगे"; इसलिए उन्होंने उसे महल के प्रांगण में अन्य लड़कों के साथ बिठा दिया, और जब वे खेल रहे थे, तभी एक आदमी उन पर झपटा, हाथ में क्रिस्टल जैसी तलवार लहराते हुए, चिल्लाता और उछलता हुआ बोला, "काशी के राजा का यह शैतान का बच्चा कहाँ है? मैं इसका सिर काट डालूँगा।"बाकी लोग उसे देखकर डर से चीखते हुए भाग गए, लेकिन बोधिसत्व नरक के भय के कारण बेहोशी की हालत में बैठे रहे। उस आदमी ने तलवार से उसका सिर रगड़ा और उसे काटने की धमकी दी, फिर भी वह डरा नहीं सका और अंत में चला गया। इस प्रकार, बार-बार कोशिश करने के बावजूद, वे उसकी कमजोरी का पता नहीं लगा सके। जब वह दस साल का था, तो यह जांचने के लिए कि क्या वह सचमुच बहरा है, उन्होंने पलंग के चारों ओर एक पर्दा लटका दिया और चारों तरफ छेद कर दिए और उसके नीचे शंख रख दिए, बिना उसे दिखाए। अचानक उन्होंने शंख बजाए, एक तेज आवाज हुई; लेकिन मंत्री, चारों तरफ खड़े होकर और पर्दे के छेदों से देखते हुए, पूरे दिन उसमें विचारों की कोई उलझन, हाथ-पैर की कोई हलचल या यहाँ तक कि एक भी झटका नहीं देख सके। इसलिए एक साल बीतने के बाद, उन्होंने एक और साल तक ढोल बजाकर उसकी कोशिश की; लेकिन फिर भी, बार-बार कोशिश करने के बावजूद, वे उसकी कमजोरी का पता नहीं लगा सके। तब उन्होंने कहा, "हम उसकी कोशिश करेंगे।" "दीपक के साथ"; इसलिए रात के समय यह देखने के लिए कि क्या वह अंधेरे में हाथ-पैर हिलाता है, उन्होंने कुछ बर्तनों में दीपक जलाए, और बाकी सभी दीपक बुझाकर उन्हें कुछ देर के लिए अंधेरे में रख दिया, और फिर अचानक बर्तनों में रखे दीपकों को उठाकर एक साथ आग लगा दी, और उसके व्यवहार को देखा; लेकिन इस तरह पूरे एक साल तक बार-बार कोशिश करने के बावजूद, उन्होंने उसे एक बार भी हिलते हुए नहीं देखा। फिर, उन्होंने कहा, "हम उसे गुड़ से आजमाएंगे"; इसलिए उन्होंने उसके पूरे शरीर पर गुड़ मल दिया और उसे मक्खियों से भरी जगह पर लिटा दिया और मक्खियों को भगा दिया; मक्खियों ने उसके पूरे शरीर को ढक लिया और उसे ऐसे काटा जैसे सुई चुभो रही हों, लेकिन वह बिल्कुल उदासीन होकर स्थिर रहा; इस तरह उन्होंने एक साल तक उसकी कोशिश की, लेकिन उन्हें उसमें कोई कमजोरी नहीं मिली। फिर जब वह चौदह साल का हुआ, तो उन्होंने कहा, "यह युवक अब बड़ा हो गया है, साफ चीजों से प्यार करता है और गंदी चीजों से घृणा करता है, हम उसे गंदी चीजों से आजमाएंगे"; इसलिए उस समय से उन्हें स्नान करने, मुँह धोने या शरीर के किसी भी प्रकार के शुद्धिकरण करने की अनुमति नहीं दी गई, यहाँ तक कि उनकी दयनीय स्थिति हो गई और वे एक रिहा कैदी की तरह दिखने लगे। जब वे मक्खियों से ढके हुए लेटे थे, तो लोग उनके चारों ओर आकर उनका अपमान करते हुए कहने लगे, "हे तेमिया, अब तुम बड़े हो गए हो, तुम्हारी सेवा कौन करेगा? क्या तुम्हें शर्म नहीं आती? तुम यहाँ क्यों लेटे हो? उठो और स्वयं को शुद्ध करो।" लेकिन वे गुथा नरक की यातनाओं को याद करते हुए चुपचाप अपनी दयनीय स्थिति में लेटे रहे; और यद्यपि उन्होंने एक वर्ष तक बार-बार उनकी परीक्षा ली, फिर भी उन्हें उनमें कोई कमजोरी नहीं मिली। तब उन्होंने उनके बिस्तर के नीचे आग के बर्तन रख दिए और कहा, "जब वे गर्मी से व्याकुल होंगे, तो शायद वे दर्द सहन न कर पाएंगे और तड़पने के कुछ लक्षण दिखाएंगे"; उनके शरीर पर फोड़े निकलते हुए प्रतीत हुए, लेकिन बोधिसत्व ने स्वयं को अनदेखा करते हुए कहा, "अविची नरक की आग सौ मील (4.23 किमी) तक फैलती है, यह गर्मी सौ गुना है।""उससे हज़ार गुना बेहतर," यह कहकर वह स्थिर रहा। तब उसके माता-पिता ने दुखी मन से उन आदमियों को वापस बुलाया और उसे आग से बाहर निकाला, और उससे विनती करते हुए कहा, "हे राजकुमार तेमिया, हम जानते हैं कि तुम जन्म से अपंग नहीं हो, क्योंकि अपंगों के पैर, चेहरा या कान तुम्हारे जैसे नहीं होते; हमने बहुत प्रार्थनाओं के बाद तुम्हें अपने बच्चे के रूप में पाया है, अब हमें नष्ट मत करो, बल्कि हमें जंबूद्वीप (भारत) के सभी राजाओं के अभिशाप से बचाओ"; लेकिन, उनकी इतनी विनती के बावजूद, वह स्थिर पड़ा रहा, मानो उसने उनकी बात सुनी ही न हो। तब उसके माता-पिता रोते हुए चले गए; और कभी-कभी उसके पिता या उसकी माता अकेले वापस आकर उससे विनती करते; और इस प्रकार उन्होंने पूरे एक वर्ष तक बार-बार उसकी परीक्षा ली, लेकिन उन्हें उसमें कोई कमजोरी नहीं मिली। फिर जब वह सोलह वर्ष का हुआ, तो उन्होंने सोचा, "चाहे कोई अपंग हो या बहरा-गूंगा, फिर भी ऐसा कोई नहीं है, जो बड़ा होकर सुखदायक चीजों में आनंद न ले और अरुचिकर चीजों से घृणा न करे; यह सब स्वाभाविक है और सही समय पर होता है, जैसे फूल खिलना। हम उसके सामने नाटक करवाएंगे और इस तरह उसकी परीक्षा लेंगे। इसलिए उन्होंने कुछ ऐसी स्त्रीयों को बुलाया जो अत्यंत सुंदर और देवदूतों की पुत्रियों के समान थीं, और उन्होंने वादा किया कि उनमें से जो भी राजकुमार को हंसा सकेगी या उसे पापपूर्ण विचारों में उलझा सकेगी, वही उसकी मुख्य रानी बनेगी। फिर उन्होंने राजकुमार को सुगंधित जल से स्नान कराया और उसे देवदूतों के पुत्रों के समान सजाया-संवारा, और उसे देवदूतों के निवास स्थान जैसे शाही कक्षों में तैयार किए गए शाही पलंग पर लिटाया। उसके भीतरी कक्ष को सुगंधित मालाओं, फूलों की मालाओं, धूप, मलहम, मादक

पेय आदि की मिश्रित सुगंध से भरकर वे एकांतवास में चली गईं। इस बीच, स्त्रियाँ उसके चारों ओर जमा हो गईं और नाच-गाना और तरह-तरह के मीठे शब्दों से उसे प्रसन्न करने का भरसक प्रयास किया; लेकिन उसने अपनी पूर्ण बुद्धि से उन्हें देखा और इस भय से अपनी साँसें रोक लीं कि कहीं वे उसके शरीर को न छू लें, जिससे उसका शरीर बिल्कुल अकड़ गया। जब वे उसे छू नहीं सकीं, तो उन्होंने उसके माता-पिता से कहा, "उसका शरीर बिल्कुल अकड़ गया है, वह पुरुष नहीं है, बल्कि उसे मरना होगा।" "एक जिन्न बनो।" इस प्रकार, हालांकि उसके माता-पिता ने बार-बार उसकी परीक्षा ली, फिर भी उसमें कोई कमजोरी नहीं पाई। इस प्रकार, हालांकि उन्होंने सोलह वर्षों तक सोलह बड़ी परीक्षाओं और कई छोटी परीक्षाओं से उसकी परीक्षा ली, फिर भी वे उसमें कोई कमजोरी नहीं ढूंढ पाए। तब राजा, बहुत नाराज होकर, ज्योतिषियों को बुलाया और कहा, "राजकुमार के जन्म के समय आपने कहा था कि उसमें सौभाग्य और शुभ लक्षण हैं, उसके सामने कोई बाधा नहीं है; लेकिन वह अपंग, बहरा और गूंगा पैदा हुआ है; आपके शब्द तथ्यों से मेल नहीं खाते।" "महाराज," उन्होंने उत्तर दिया, "आपके गुरुओं से कुछ भी छिपा नहीं है, लेकिन हम जानते थे कि यदि हम आपको बताते कि इतनी शाही प्रार्थनाओं का बच्चा पूरी तरह से दुर्भाग्यशाली होगा, तो आप कितने दुखी होंगे; इसलिए हमने यह नहीं कहा।" "अब क्या किया जाए?" "हे राजा, यदि यह राजकुमार इसी घर में रहता है,तीन खतरे मंडरा रहे हैं, अर्थात् आपका जीवन, आपकी राजसत्ता या रानी; इसलिए बेहतर होगा कि कुछ अशुभ घोड़ों को एक अशुभ रथ में जोतकर, उसे उसमें बिठाकर पश्चिमी द्वार से ले जाया जाए और श्मशान में दफना दिया जाए। राजा, इन खतरों से भयभीत होकर, मान गए। जब रानी चंदादेवी ने यह खबर सुनी तो वह राजा के पास आईं, "हे स्वामी, आपने मुझे वरदान दिया था और मैंने उसे अभी तक स्वीकार नहीं किया है, कृपया अब मुझे दे दीजिए।" "ले लीजिए, रानी।" "राज्य मेरे पुत्र को दे दीजिए।" "मैं नहीं दे सकती, रानी; आपका पुत्र तो पूरी तरह से अशुभ है।" "तो यदि आप उसके जीवन के बदले नहीं देंगी, तो उसे सात वर्षों के लिए दे दीजिए।" "मैं नहीं दे सकती, रानी।" "तो उसे छह वर्षों के लिए, पांच, चार, तीन, दो, एक वर्ष के लिए दे दीजिए।" "इसे उसे सात महीने, छह, पाँच, चार, तीन, दो महीने, एक महीने, आधे महीने के लिए दे दो।" "मैं नहीं दे सकता, हे रानी।" "तो इसे उसे सात दिनों के लिए दे दो।" "ठीक है," राजा ने कहा, "अपनी इच्छा पूरी करो।" तो उसने अपने बेटे को सजाया-संवारा, और शहर को रंग-बिरंगे ढंग से सजाकर, ढोल की थाप पर यह घोषणा की गई, "यह राजकुमार तेमिया का राज्य है," और उसे हाथी पर बिठाकर, उसके सिर पर सफेद छत्र थामे हुए, विजयपूर्वक शहर के चारों ओर घुमाया गया। जब वह लौटा और अपने शाही पलंग पर लेटा, तो उसने पूरी रात उससे विनती की, "हे मेरे बच्चे, राजकुमार तेमिया, तुम्हारे कारण सोलह वर्षों से मैं रोई हूँ और सोई नहीं हूँ: और मेरी आँखें सूख गई हैं, और मेरा हृदय दुःख से छलनी है; मैं जानती हूँ कि आप सचमुच अपंग या बहरे-गूंगा नहीं हैं, मुझे पूरी तरह से बेसहारा मत बनाइए।" इस प्रकार वह पाँच दिनों तक प्रतिदिन उनसे विनती करती रही। छठे दिन राजा ने सारथी सुनंदा को बुलाया और उससे कहा, "कल सुबह जल्दी कुछ अशुभ घोड़ों को एक अशुभ रथ में जोतकर, राजकुमार को उसमें बिठाकर, पश्चिमी द्वार से बाहर ले जाओ और श्मशान में चारों ओर से एक गड्ढा खोदो; उसे उसमें फेंक दो, और फावड़े के पिछले हिस्से से उसका सिर फोड़कर उसे मार डालो, फिर उस पर धूल बिखेर दो और ऊपर मिट्टी का ढेर बना दो, और स्वयं स्नान करके यहाँ आ जाओ।" उस छठी रात रानी ने राजकुमार से विनती की, "हे मेरे बालक, काशी के राजा ने आदेश दिया है कि तुम्हें कल श्मशान में दफनाया जाए, कल तुम निश्चित रूप से मर जाओगे, मेरे पुत्र।" जब बोधिसत्व ने यह सुना, तो उन्होंने मन ही मन सोचा, "हे तेमिया, तुम्हारी सोलह वर्षों की मेहनत पूरी हो गई है," और वे प्रसन्न हुए; परन्तु उनकी माता का हृदय मानो दो टुकड़ों में बँट गया था। फिर भी वे उनसे बात नहीं करना चाहते थे, अन्यथा उनकी इच्छा पूरी नहीं होती। उस रात के अंत में, सुबह तड़के, सारथी सुनंदा ने रथ को जोता और उसे द्वार पर खड़ा किया, और राजशय कक्ष में प्रवेश करते हुए कहा, "हे रानी, क्रोधित न हों, यह राजा का आदेश है।" ऐसा कहकर,जब रानी अपने पुत्र को गले लगाए लेटी थी, तभी बोधिसत्व ने अपने हाथ के पिछले हिस्से से उसे धक्का देकर दूर कर दिया और राजकुमार को फूलों के गुच्छे की तरह उठाकर महल से नीचे आ गया। रानी अपने कमरे में सीना पीटते हुए और ज़ोर-ज़ोर से विलाप करते रह गई। तब बोधिसत्व ने उसकी ओर देखा और सोचा, "यदि मैं नहीं बोलूंगा तो वह हृदयविहीन होकर मर जाएगी," यद्यपि वह बोलना चाहता था, उसने सोचा, "यदि मैं बोलूंगा तो सोलह वर्षों का मेरा प्रयास व्यर्थ हो जाएगा; परन्तु यदि मैं नहीं बोलूंगा तो मैं स्वयं और अपने माता-पिता का उद्धार करूंगा।" तब सारथी ने उसे रथ में बिठाया और यह कहते हुए, "मैं रथ को पश्चिमी द्वार तक ले जाऊंगा," वह रथ को पूर्वी द्वार तक ले गया और पहिया दहलीज से टकरा गया। बोधिसत्व ने यह ध्वनि सुनकर कहा, "मेरी इच्छा पूरी हो गई है," और वह हृदय से और भी प्रसन्न हो गया। जब रथ नगर से बाहर निकला, तो देवताओं (देवदूतों) की शक्ति से वह तीन मील (4.23 किमी) की दूरी तय कर गया, और वहाँ एक जंगल का अंत सारथी को श्मशान घाट जैसा प्रतीत हुआ; इसलिए इसे उपयुक्त स्थान समझकर, उसने रथ को सड़क से हटाकर किनारे पर रोक दिया और नीचे उतरकर बोधिसत्व के सभी आभूषण उतारकर एक गठरी बना ली और उसे नीचे रख दिया, फिर एक फावड़ा लेकर गड्ढा खोदने लगा। तब बोधिसत्व ने सोचा, "यह मेरे कर्मों का समय है; सोलह वर्षों से मैंने न तो हाथ हिलाए हैं और न ही पैर, क्या वे मेरे वश में हैं?" इसलिए वह उठा और अपने दाहिने हाथ को बाएं हाथ से, बाएं हाथ को दाहिने हाथ से और पैरों को दोनों हाथों से रगड़ा, और रथ से नीचे उतरने का निश्चय किया। जैसे ही उसका पैर नीचे पड़ा, हवा से भरी चमड़े की थैली की तरह धरती ऊपर उठी और रथ के पिछले हिस्से को छू गई; जब वह नीचे उतरा और कई बार आगे-पीछे चला, तो उसे लगा कि वह इस तरह एक दिन में सौ मील (4.23 किमी) की दूरी तय कर सकता है। तब उसने सोचा, "यदि सारथी मुझसे भिड़ जाए, तो क्या मुझमें उससे लड़ने की शक्ति होगी?" इसलिए उसने रथ के पिछले हिस्से को पकड़ लिया और उसे बच्चों के खिलौने वाली गाड़ी की तरह उठा लिया और मन ही मन कहा कि वह उससे लड़ सकता है; और जैसे ही उसे इसका एहसास हुआ, उसके मन में खुद को सजाने की इच्छा जागृत हुई। उसी क्षण सक्का (इंद्र) का महल गर्म हो गया। सक्का (इंद्र) ने कारण जानकर कहा, "राजकुमार तेमिया की इच्छा पूरी हो गई है, वह सजाना चाहता

है, उसे मनुष्य के श्रृंगार से क्या लेना-देना है?" और उसने विश्वकर्मा को दिव्य आभूषण लेकर जाने और काशी के राजा के पुत्र को सजाने का आदेश दिया। इसलिए वह गया और राजकुमार को दस हजार वस्त्रों से लपेटकर सक्का (इंद्र) की तरह दिव्य और मनुष्य के आभूषणों से सजाया। राजकुमार, देवताओं (देवदूतों) के राजा के समस्त शौर्य से परिपूर्ण होकर, उस गड्ढे के पास गया जहाँ सारथी खुदाई कर रहा था, और किनारे पर खड़े होकर उसने तीसरा श्लोक बोला:और राजकुमार को फूलों के गुच्छे की तरह उठाकर महल से नीचे आ गईं। रानी अपने कमरे में सीना पीटते हुए और ज़ोर-ज़ोर से विलाप करते रह गईं। तब बोधिसत्व ने उनकी ओर देखा और सोचा, "यदि मैं नहीं बोलूंगा तो वह हृदयविहीन होकर मर जाएगी," लेकिन यद्यपि वे बोलना चाहते थे, उन्होंने सोचा, "यदि मैं बोलूंगा तो सोलह वर्षों का मेरा परिश्रम व्यर्थ हो जाएगा; परन्तु यदि मैं नहीं बोलूंगा तो मैं स्वयं और अपने माता-पिता का उद्धार करूंगा।" तब सारथी ने उन्हें रथ में बिठाया और यह कहते हुए, "मैं रथ को पश्चिमी द्वार तक ले जाऊंगा," वह रथ को पूर्वी द्वार तक ले गया, और पहिया दहलीज से टकरा गया। बोधिसत्व ने यह ध्वनि सुनकर कहा, "मेरी इच्छा पूरी हो गई है," और वे और भी प्रसन्न हो गए। जब रथ नगर से बाहर निकला, तो देवताओं (देवदूतों) की शक्ति से वह तीन मील (4.23 किमी) की दूरी तय कर गया, और वहाँ एक जंगल का अंत सारथी को श्मशान घाट जैसा प्रतीत हुआ; इसलिए इसे उपयुक्त स्थान समझकर, उसने रथ को सड़क से हटाकर किनारे पर रोक दिया और नीचे उतरकर बोधिसत्व के सभी आभूषण उतारकर एक गठरी बना ली और उसे नीचे रख दिया, फिर एक फावड़ा लेकर गड्ढा खोदने लगा। तब बोधिसत्व ने सोचा, "यह मेरे कर्मों का समय है; सोलह वर्षों से मैंने न तो हाथ हिलाए हैं और न ही पैर, क्या वे मेरे वश में हैं?" इसलिए वह उठा और अपने दाहिने हाथ को बाएं हाथ से, बाएं हाथ को दाहिने हाथ से और पैरों को दोनों हाथों से रगड़ा, और रथ से नीचे उतरने का निश्चय किया। जैसे ही उसका पैर नीचे पड़ा, हवा से भरी चमड़े की थैली की तरह धरती ऊपर उठी और रथ के पिछले हिस्से को छू गई; जब वह नीचे उतरा और कई बार आगे-पीछे चला, तो उसे लगा कि वह इस तरह एक दिन में सौ मील (4.23 किमी) की दूरी तय कर सकता है। तब उसने सोचा, "यदि सारथी मुझसे भिड़ जाए, तो क्या मुझमें उससे लड़ने की शक्ति होगी?" इसलिए उसने रथ के पिछले हिस्से को पकड़ लिया और उसे बच्चों के खिलौने वाली गाड़ी की तरह उठा लिया और मन ही मन कहा कि वह उससे लड़ सकता है; और जैसे ही उसे इसका एहसास हुआ, उसके मन में खुद को सजाने की इच्छा जागृत हुई। उसी क्षण सक्का (इंद्र) का महल गर्म हो गया। सक्का (इंद्र) ने कारण जानकर कहा, "राजकुमार तेमिया की इच्छा पूरी हो गई है, वह सजाना चाहता है, उसे मनुष्य के श्रृंगार से क्या लेना-देना है?" और उसने विश्वकर्मा को दिव्य आभूषण लेकर जाने और काशी के राजा के पुत्र को सजाने का आदेश दिया। इसलिए वह गया और राजकुमार को दस हजार वस्त्रों से लपेटकर सक्का (इंद्र) की तरह दिव्य और मनुष्य के आभूषणों से सजाया। राजकुमार, देवताओं (देवदूतों) के राजा के समस्त शौर्य से परिपूर्ण होकर, उस गड्ढे के पास गया जहाँ सारथी खुदाई कर रहा था, और किनारे पर खड़े होकर उसने तीसरा श्लोक बोला:और राजकुमार को फूलों के गुच्छे की तरह उठाकर महल से नीचे आ गईं। रानी अपने कमरे में सीना पीटते हुए और ज़ोर-ज़ोर से विलाप करते रह गईं। तब बोधिसत्व ने उनकी ओर देखा और सोचा, "यदि मैं नहीं बोलूंगा तो वह हृदयविहीन होकर मर जाएगी," लेकिन यद्यपि वे बोलना चाहते थे, उन्होंने सोचा, "यदि मैं बोलूंगा तो सोलह वर्षों का मेरा परिश्रम व्यर्थ हो जाएगा; परन्तु यदि मैं नहीं बोलूंगा तो मैं स्वयं और अपने माता-पिता का उद्धार करूंगा।" तब सारथी ने उन्हें रथ में बिठाया और यह कहते हुए, "मैं रथ को पश्चिमी द्वार तक ले जाऊंगा," वह रथ को पूर्वी द्वार तक ले गया, और पहिया दहलीज से टकरा गया। बोधिसत्व ने यह ध्वनि सुनकर कहा, "मेरी इच्छा पूरी हो गई है," और वे और भी प्रसन्न हो गए। जब रथ नगर से बाहर निकला, तो देवताओं (देवदूतों) की शक्ति से वह तीन मील (4.23 किमी) की दूरी तय कर गया, और वहाँ एक जंगल का अंत सारथी को श्मशान घाट जैसा प्रतीत हुआ; इसलिए इसे उपयुक्त स्थान समझकर, उसने रथ को सड़क से हटाकर किनारे पर रोक दिया और नीचे उतरकर बोधिसत्व के सभी आभूषण उतारकर एक गठरी बना ली और उसे नीचे रख दिया, फिर एक फावड़ा लेकर गड्ढा खोदने लगा। तब बोधिसत्व ने सोचा, "यह मेरे कर्मों का समय है; सोलह वर्षों से मैंने न तो हाथ हिलाए हैं और न ही पैर, क्या वे मेरे वश में हैं?" इसलिए वह उठा और अपने दाहिने हाथ को बाएं हाथ से, बाएं हाथ को दाहिने हाथ से और पैरों को दोनों हाथों से रगड़ा, और रथ से नीचे उतरने का निश्चय किया। जैसे ही उसका पैर नीचे पड़ा, हवा से भरी चमड़े की थैली की तरह धरती ऊपर उठी और रथ के पिछले हिस्से को छू गई; जब वह नीचे उतरा और कई बार आगे-पीछे चला, तो उसे लगा कि वह इस तरह एक दिन में सौ मील (4.23 किमी) की दूरी तय कर सकता है। तब उसने सोचा, "यदि सारथी मुझसे भिड़ जाए, तो क्या मुझमें उससे लड़ने की शक्ति होगी?" इसलिए उसने रथ के पिछले हिस्से को पकड़ लिया और उसे बच्चों के खिलौने वाली गाड़ी की तरह उठा लिया और मन ही मन कहा कि वह उससे लड़ सकता है; और जैसे ही उसे इसका एहसास हुआ, उसके मन में खुद को सजाने की इच्छा जागृत हुई। उसी क्षण सक्का (इंद्र) का महल गर्म हो गया। सक्का (इंद्र) ने कारण जानकर कहा, "राजकुमार तेमिया की इच्छा पूरी हो गई है, वह सजाना चाहता है, उसे मनुष्य के श्रृंगार से क्या लेना-देना है?" और उसने विश्वकर्मा को दिव्य आभूषण लेकर जाने और काशी के राजा के पुत्र को सजाने का आदेश दिया। इसलिए वह गया और राजकुमार को दस हजार वस्त्रों से लपेटकर सक्का (इंद्र) की तरह दिव्य और मनुष्य के आभूषणों से सजाया। राजकुमार, देवताओं (देवदूतों) के राजा के समस्त शौर्य से परिपूर्ण होकर, उस गड्ढे के पास गया जहाँ सारथी खुदाई कर रहा था, और किनारे पर खड़े होकर उसने तीसरा श्लोक बोला:तब बोधिसत्व ने उसकी ओर देखा और सोचा, "यदि मैं नहीं बोलूंगा तो वह हृदय विदारक होकर मर जाएगी," परन्तु यद्यपि वह बोलना चाहता था, उसने सोचा, "यदि मैं बोलूंगा तो सोलह वर्षों का मेरा परिश्रम व्यर्थ हो जाएगा; परन्तु यदि मैं नहीं बोलूंगा तो मैं स्वयं और अपने माता-पिता का उद्धार करूंगा।" तब सारथी ने उसे रथ में बिठाया और यह कहते हुए, "मैं रथ को पश्चिमी द्वार तक ले जाऊंगा," वह उसे पूर्वी द्वार तक ले गया, और पहिया दहलीज से टकराया। बोधिसत्व ने यह ध्वनि सुनकर कहा, "मेरी इच्छा पूरी हो गई है," और वह और भी प्रसन्न हो गया। जब रथ नगर से बाहर निकला, तो वह देवताओं

(देवदूतों) की शक्ति से तीन कुंड (x 4.23 किमी) की दूरी तय कर गया, और वहाँ सारथी को एक जंगल का अंत ऐसा दिखाई दिया मानो वह कोई कब्रिस्तान हो; इसलिए, इसे उपयुक्त स्थान समझकर, उसने रथ को सड़क से किनारे मोड़ दिया और सड़क के किनारे रोककर नीचे उतरा। उसने बोधिसत्व के सभी आभूषण उतारकर एक गठरी बनाई और नीचे रख दी। फिर उसने एक फावड़ा लेकर गड्ढा खोदना शुरू किया। तब बोधिसत्व ने सोचा, "यह मेरे परिश्रम का समय है; सोलह वर्षों से मैंने न तो हाथ हिलाए हैं, न पैर, क्या वे मेरे वश में हैं?" इसलिए वह उठा और अपने दाहिने हाथ को बाएं हाथ से, बाएं हाथ को दाहिने हाथ से और पैरों को दोनों हाथों से रगड़ा और रथ से नीचे उतरने का निश्चय किया। जैसे ही उसका पैर नीचे पड़ा, धरती हवा से भरे चमड़े के थैले की तरह ऊपर उठी और रथ के पिछले हिस्से को छू गई। जब वह नीचे उतर गया और कई बार आगे-पीछे चला, तो उसने महसूस किया कि उसमें एक दिन में इस तरह सौ मील (4.23 किमी) चलने की शक्ति है। तब उसने सोचा, "यदि सारथी मुझसे भिड़ जाए, तो क्या मुझमें उससे लड़ने की शक्ति होगी?" अत: उसने रथ के पिछले भाग को पकड़ लिया और उसे ऐसे उठा लिया मानो वह बच्चों का खिलौना रथ हो, और मन ही मन कहा कि वह उससे मुकाबला करने की शक्ति रखता है; और जैसे ही उसे इसका आभास हुआ, उसके मन में स्वयं को सजाने-संवारने की इच्छा जागृत हुई। उसी क्षण सक्का (इंद्र) का महल गर्म हो गया। सक्का (इंद्र) ने कारण जानकर कहा, "राजकुमार तेमिया की इच्छा पूरी हो गई है, वह सजाना चाहता है, उसे मनुष्य के श्रृंगार से क्या लेना-देना है?" और उसने विश्वकर्मा को दिव्य आभूषण लेकर जाने और काशी के राजा के पुत्र को सजाने का आदेश दिया। अत: विश्वकर्मा गया और उसने राजकुमार को दस हजार वस्त्रों से लपेट दिया और उसे सक्का (इंद्र) की तरह दिव्य और मनुष्य के आभूषणों से सजाया। राजकुमार, देवदूतों के राजा के समस्त शौर्य से परिपूर्ण होकर, उस गड्ढे के पास गया जिसे सारथी खोद रहा था, और किनारे पर खड़े होकर उसने तीसरा श्लोक बोला:तब बोधिसत्व ने उसकी ओर देखा और सोचा, "यदि मैं नहीं बोलूंगा तो वह हृदय विदारक होकर मर जाएगी," परन्तु यद्यपि वह बोलना चाहता था, उसने सोचा, "यदि मैं बोलूंगा तो सोलह वर्षों का मेरा परिश्रम व्यर्थ हो जाएगा; परन्तु यदि मैं नहीं बोलूंगा तो मैं स्वयं और अपने माता-पिता का उद्धार करूंगा।" तब सारथी ने उसे रथ में बिठाया और यह कहते हुए, "मैं रथ को पश्चिमी द्वार तक ले जाऊंगा," वह उसे पूर्वी द्वार तक ले गया, और पहिया दहलीज से टकराया। बोधिसत्व ने यह ध्वनि सुनकर कहा, "मेरी इच्छा पूरी हो गई है," और वह और भी प्रसन्न हो गया। जब रथ नगर से बाहर निकला, तो वह देवताओं (देवदूतों) की शक्ति से तीन कुंड (x 4.23 किमी) की दूरी तय कर गया, और वहाँ सारथी को एक जंगल का अंत ऐसा दिखाई दिया मानो वह कोई कब्रिस्तान हो; इसलिए, इसे उपयुक्त स्थान समझकर, उसने रथ को सड़क से किनारे मोड़ दिया और सड़क के किनारे रोककर नीचे उतरा। उसने बोधिसत्व के सभी आभूषण उतारकर एक गठरी बनाई और नीचे रख दी। फिर उसने एक फावड़ा लेकर गड्ढा खोदना शुरू किया। तब बोधिसत्व ने सोचा, "यह मेरे परिश्रम का समय है; सोलह वर्षों से मैंने न तो हाथ हिलाए हैं, न पैर, क्या वे मेरे वश में हैं?" इसलिए वह उठा और अपने दाहिने हाथ को बाएं हाथ से, बाएं हाथ को दाहिने हाथ से और पैरों को दोनों हाथों से रगड़ा और रथ से नीचे उतरने का निश्चय किया। जैसे ही उसका पैर नीचे पड़ा, धरती हवा से भरे चमड़े के थैले की तरह ऊपर उठी और रथ के पिछले हिस्से को छू गई। जब वह नीचे उतर गया और कई बार आगे-पीछे चला, तो उसने महसूस किया कि उसमें एक दिन में इस तरह सौ मील (4.23 किमी) चलने की शक्ति है। तब उसने सोचा, "यदि सारथी मुझसे भिड़ जाए, तो क्या मुझमें उससे लड़ने की शक्ति होगी?" अत: उसने रथ के पिछले भाग को पकड़ लिया और उसे ऐसे उठा लिया मानो वह बच्चों का खिलौना रथ हो, और मन ही मन कहा कि वह उससे मुकाबला करने की शक्ति रखता है; और जैसे ही उसे इसका आभास हुआ, उसके मन में स्वयं को सजाने-संवारने की इच्छा जागृत हुई। उसी क्षण सक्का (इंद्र) का महल गर्म हो गया। सक्का (इंद्र) ने कारण जानकर कहा, "राजकुमार तेमिया की इच्छा पूरी हो गई है, वह सजाना चाहता है, उसे मनुष्य के श्रृंगार से क्या लेना-देना है?" और उसने विश्वकर्मा को दिव्य आभूषण लेकर जाने और काशी के राजा के पुत्र को सजाने का आदेश दिया। अत: विश्वकर्मा गया और उसने राजकुमार को दस हजार वस्त्रों से लपेट दिया और उसे सक्का (इंद्र) की तरह दिव्य और मनुष्य के आभूषणों से सजाया। राजकुमार, देवदूतों के राजा के समस्त शौर्य से परिपूर्ण होकर, उस गड्ढे के पास गया जिसे सारथी खोद रहा था, और किनारे पर खड़े होकर उसने तीसरा श्लोक बोला:मैं स्वयं और अपने माता-पिता का उद्धार (*7) करूँगा।" तब सारथी ने उन्हें रथ में बिठाया और यह कहते हुए, "मैं रथ को पश्चिमी द्वार तक ले जाऊँगा," वह रथ को पूर्वी द्वार तक ले गया, और पहिया दहलीज से टकराया। बोधिसत्व ने यह ध्वनि सुनकर कहा, "मेरी इच्छा पूरी हो गई है," और वे और भी प्रसन्न हो गए। जब रथ नगर से बाहर निकला, तो वह देवताओं (देवदूतों) की शक्ति से तीन कुंड (x 4.23 किमी) की दूरी तय कर गया, और वहाँ सारथी को एक जंगल का अंत ऐसा दिखाई दिया मानो वह कोई कब्रिस्तान हो; इसलिए इसे उपयुक्त स्थान समझकर, उसने रथ को सड़क से मोड़ दिया, और सड़क के किनारे रोककर नीचे उतरा और बोधिसत्व के सभी आभूषण उतारकर एक गठरी में बाँध दिए और नीचे रख दिए, और फिर एक फावड़ा लेकर एक गड्ढा खोदने लगा। तब बोधिसत्व ने सोचा, "यही मेरे परिश्रम का समय है; सोलह वर्षों से मैंने न तो हाथ हिलाए हैं और न ही पैर, क्या वे मेरे वश में हैं या नहीं? तब वह उठा और अपने दाहिने हाथ को बाएं हाथ से, बाएं हाथ को दाहिने हाथ से और पैरों को दोनों हाथों से रगड़ा और रथ से उतरने का निश्चय किया। जैसे ही उसका पैर नीचे पड़ा, धरती हवा से भरे चमड़े के थैले की तरह ऊपर उठी और रथ के पिछले हिस्से को छू गई; जब वह उतर गया और कई बार आगे-पीछे चला, तो उसने महसूस किया कि वह इस तरह एक दिन में सौ मील (4.23 किमी) की दूरी तय कर सकता है। तब उसने सोचा, "यदि सारथी मुझसे भिड़ जाए, तो क्या मुझमें उससे लड़ने की शक्ति होगी?" तब उसने रथ के पिछले हिस्से को पकड़ लिया और उसे बच्चों के खिलौने की गाड़ी की तरह उठा लिया और मन ही मन कहा कि उसमें उससे लड़ने की शक्ति है; और जैसे ही उसे इसका एहसास हुआ, उसके मन में खुद को सजाने की इच्छा जागी। उसी क्षण सक्का (इंद्र) का महल गर्म हो गया। सक्का (इंद्र) ने कारण जानकर कहा, "राजकुमार तेमिया की इच्छा पूरी हो गई है।" जब उसका लक्ष्य पूरा हो गया, तो वह सजना-संवरना चाहता है, उसे मानवीय अलंकरण से क्या लेना-देना है?

और उसने विश्वकर्मा को दिव्य आभूषण लेकर काशी के राजा के पुत्र को सजाने का आदेश दिया। अतः विश्वकर्मा गया और उसने राजकुमार को दस हजार वस्त्रों से लपेटकर उसे सक्का (इंद्र) के समान दिव्य और मानवीय आभूषणों से सजाया। राजकुमार, देवदूतों के राजा के समस्त शौर्य से परिपूर्ण होकर, उस गड्ढे के पास गया जिसे सारथी खोद रहा था, और किनारे पर खड़े होकर उसने तीसरा श्लोक बोला:मैं स्वयं और अपने माता-पिता का उद्धार (*7) करूँगा।" तब सारथी ने उन्हें रथ में बिठाया और यह कहते हुए, "मैं रथ को पश्चिमी द्वार तक ले जाऊँगा," वह रथ को पूर्वी द्वार तक ले गया, और पहिया दहलीज से टकराया। बोधिसत्व ने यह ध्वनि सुनकर कहा, "मेरी इच्छा पूरी हो गई है," और वे और भी प्रसन्न हो गए। जब रथ नगर से बाहर निकला, तो वह देवताओं (देवदूतों) की शक्ति से तीन कुंड (x 4.23 किमी) की दूरी तय कर गया, और वहाँ सारथी को एक जंगल का अंत ऐसा दिखाई दिया मानो वह कोई कब्रिस्तान हो; इसलिए इसे उपयुक्त स्थान समझकर, उसने रथ को सड़क से मोड़ दिया, और सड़क के किनारे रोककर नीचे उतरा और बोधिसत्व के सभी आभूषण उतारकर एक गठरी में बाँध दिए और नीचे रख दिए, और फिर एक फावड़ा लेकर एक गड्ढा खोदने लगा। तब बोधिसत्व ने सोचा, "यही मेरे परिश्रम का समय है; सोलह वर्षों से मैंने न तो हाथ हिलाए हैं और न ही पैर, क्या वे मेरे वश में हैं या नहीं? तब वह उठा और अपने दाहिने हाथ को बाएं हाथ से, बाएं हाथ को दाहिने हाथ से और पैरों को दोनों हाथों से रगड़ा और रथ से उतरने का निश्चय किया। जैसे ही उसका पैर नीचे पड़ा, धरती हवा से भरे चमड़े के थैले की तरह ऊपर उठी और रथ के पिछले हिस्से को छू गई; जब वह उतर गया और कई बार आगे-पीछे चला, तो उसने महसूस किया कि वह इस तरह एक दिन में सौ मील (4.23 किमी) की दूरी तय कर सकता है। तब उसने सोचा, "यदि सारथी मुझसे भिड़ जाए, तो क्या मुझमें उससे लड़ने की शक्ति होगी?" तब उसने रथ के पिछले हिस्से को पकड़ लिया और उसे बच्चों के खिलौने की गाड़ी की तरह उठा लिया और मन ही मन कहा कि उसमें उससे लड़ने की शक्ति है; और जैसे ही उसे इसका एहसास हुआ, उसके मन में खुद को सजाने की इच्छा जागी। उसी क्षण सक्का (इंद्र) का महल गर्म हो गया। सक्का (इंद्र) ने कारण जानकर कहा, "राजकुमार तेमिया की इच्छा पूरी हो गई है।" जब उसका लक्ष्य पूरा हो गया, तो वह सजना-संवरना चाहता है, उसे मानवीय अलंकरण से क्या लेना-देना है? और उसने विश्वकर्मा को दिव्य आभूषण लेकर काशी के राजा के पुत्र को सजाने का आदेश दिया। अतः विश्वकर्मा गया और उसने राजकुमार को दस हजार वस्त्रों से लपेटकर उसे सक्का (इंद्र) के समान दिव्य और मानवीय आभूषणों से सजाया। राजकुमार, देवदूतों के राजा के समस्त शौर्य से परिपूर्ण होकर, उस गड्ढे के पास गया जिसे सारथी खोद रहा था, और किनारे पर खड़े होकर उसने तीसरा श्लोक बोला:वहाँ एक जंगल का अंत सारथी को श्मशान घाट जैसा प्रतीत हुआ; इसलिए इसे उपयुक्त स्थान समझकर उसने रथ को सड़क से हटाकर सड़क के किनारे रोक दिया और नीचे उतरकर बोधिसत्व के सभी आभूषण उतारकर एक गठरी बना ली और उसे नीचे रख दिया, फिर एक फावड़ा लेकर गड्ढा खोदने लगा। तब बोधिसत्व ने सोचा, "यह मेरे परिश्रम का समय है; सोलह वर्षों से मैंने न तो हाथ हिलाए हैं, न पैर, क्या वे मेरे वश में हैं?" इसलिए वह उठे और अपने दाहिने हाथ को बाएं हाथ से, बाएं हाथ को दाहिने हाथ से और पैरों को दोनों हाथों से रगड़ा और रथ से नीचे उतरने का निश्चय किया। जैसे ही उनका पैर नीचे पड़ा, धरती हवा से भरे चमड़े के थैले की तरह ऊपर उठी और रथ के पिछले हिस्से को छू गई; जब वह नीचे उतर गए और कई बार आगे-पीछे चले, तो उन्हें लगा कि उनमें एक दिन में इस प्रकार सौ मील (4.23 किमी) चलने की शक्ति है। फिर उसने सोचा, "यदि सारथी मुझसे भिड़ जाए, तो क्या मुझमें उससे लड़ने की शक्ति होगी?" इसलिए उसने रथ के पिछले हिस्से को पकड़ लिया और उसे बच्चों के खिलौने वाली गाड़ी की तरह उठा लिया, और मन ही मन कहा कि वह उससे लड़ सकता है; और जैसे ही उसे इसका एहसास हुआ, उसके मन में खुद को सजाने की इच्छा जागृत हुई। उसी क्षण सक्का (इंद्र) का महल गर्म हो गया। सक्का (इंद्र) ने कारण जानकर कहा, "राजकुमार तेमिया की इच्छा पूरी हो गई है, वह सजाना चाहता है, उसे मनुष्य के श्रृंगार से क्या लेना-देना है?" और उसने विश्वकर्मा को दिव्य आभूषण लेकर जाने और काशी के राजा के पुत्र को सजाने का आदेश दिया। इसलिए वह गया और राजकुमार को दस हजार वस्त्रों से लपेटकर सक्का (इंद्र) की तरह दिव्य और मनुष्य के आभूषणों से सजाया। राजकुमार, देवदूतों के राजा के सभी शौर्य से ओतप्रोत होकर, उस गड्ढे के पास गया जिसे सारथी खोद रहा था, और किनारे पर खड़े होकर उसने तीसरा श्लोक बोला:वहाँ एक जंगल का अंत सारथी को श्मशान घाट जैसा प्रतीत हुआ; इसलिए इसे उपयुक्त स्थान समझकर उसने रथ को सड़क से हटाकर सड़क के किनारे रोक दिया और नीचे उतरकर बोधिसत्व के सभी आभूषण उतारकर एक गठरी बना ली और उसे नीचे रख दिया, फिर एक फावड़ा लेकर गड्ढा खोदने लगा। तब बोधिसत्व ने सोचा, "यह मेरे परिश्रम का समय है; सोलह वर्षों से मैंने न तो हाथ हिलाए हैं, न पैर, क्या वे मेरे वश में हैं?" इसलिए वह उठे और अपने दाहिने हाथ को बाएं हाथ से, बाएं हाथ को दाहिने हाथ से और पैरों को दोनों हाथों से रगड़ा और रथ से नीचे उतरने का निश्चय किया। जैसे ही उनका पैर नीचे पड़ा, धरती हवा से भरे चमड़े के थैले की तरह ऊपर उठी और रथ के पिछले हिस्से को छू गई; जब वह नीचे उतर गए और कई बार आगे-पीछे चले, तो उन्हें लगा कि उनमें एक दिन में इस प्रकार सौ मील (4.23 किमी) चलने की शक्ति है। फिर उसने सोचा, "यदि सारथी मुझसे भिड़ जाए, तो क्या मुझमें उससे लड़ने की शक्ति होगी?" इसलिए उसने रथ के पिछले हिस्से को पकड़ लिया और उसे बच्चों के खिलौने वाली गाड़ी की तरह उठा लिया, और मन ही मन कहा कि वह उससे लड़ सकता है; और जैसे ही उसे इसका एहसास हुआ, उसके मन में खुद को सजाने की इच्छा जागृत हुई। उसी क्षण सक्का (इंद्र) का महल गर्म हो गया। सक्का (इंद्र) ने कारण जानकर कहा, "राजकुमार तेमिया की इच्छा पूरी हो गई है, वह सजाना चाहता है, उसे मनुष्य के श्रृंगार से क्या लेना-देना है?" और उसने विश्वकर्मा को दिव्य आभूषण लेकर जाने और काशी के राजा के पुत्र को सजाने का आदेश दिया। इसलिए वह गया और राजकुमार को दस हजार वस्त्रों से लपेटकर सक्का (इंद्र) की तरह दिव्य और मनुष्य के आभूषणों से सजाया। राजकुमार, देवदूतों के राजा के सभी शौर्य से ओतप्रोत होकर, उस गड्ढे के पास गया जिसे सारथी खोद रहा था, और किनारे पर खड़े होकर उसने तीसरा श्लोक बोला:क्या मुझमें उससे मुकाबला करने की शक्ति है?" इसलिए उसने रथ के पिछले हिस्से को पकड़

लिया और उसे बच्चों के खिलौने वाली गाड़ी की तरह उठा लिया, और मन ही मन कहा कि उसमें उससे मुकाबला करने की शक्ति है; और जैसे ही उसे इसका एहसास हुआ, उसके मन में खुद को सजाने-संवारने की इच्छा जागृत हुई। उसी क्षण सक्का (इंद्र) का महल गर्म हो गया। सक्का (इंद्र) ने कारण जानकर कहा, "राजकुमार तेमिया की इच्छा पूरी हो गई है, वह सजाना चाहता है, उसे मनुष्य के श्रृंगार से क्या लेना-देना है?" और उसने विश्वकर्मा को दिव्य आभूषण लेकर जाने और काशी के राजा के पुत्र को सजाने का आदेश दिया। इसलिए वह गया और राजकुमार को दस हजार वस्त्रों से लपेटकर सक्का (इंद्र) की तरह दिव्य और मनुष्य के आभूषणों से सजाया। राजकुमार, देवदूतों के राजा के सभी शौर्य से ओतप्रोत होकर, उस गड्ढे के पास गया जिसे सारथी खोद रहा था, और किनारे पर खड़े होकर उसने तीसरा श्लोक बोला:क्या मुझमें उससे मुकाबला करने की शक्ति है?" इसलिए उसने रथ के पिछले हिस्से को पकड़ लिया और उसे बच्चों के खिलौने वाली गाड़ी की तरह उठा लिया, और मन ही मन कहा कि उसमें उससे मुकाबला करने की शक्ति है; और जैसे ही उसे इसका एहसास हुआ, उसके मन में खुद को सजाने-संवारने की इच्छा जागृत हुई। उसी क्षण सक्का (इंद्र) का महल गर्म हो गया। सक्का (इंद्र) ने कारण जानकर कहा, "राजकुमार तेमिया की इच्छा पूरी हो गई है, वह सजाना चाहता है, उसे मनुष्य के श्रृंगार से क्या लेना-देना है?" और उसने विश्वकर्मा को दिव्य आभूषण लेकर जाने और काशी के राजा के पुत्र को सजाने का आदेश दिया। इसलिए वह गया और राजकुमार को दस हजार वस्त्रों से लपेटकर सक्का (इंद्र) की तरह दिव्य और मनुष्य के आभूषणों से सजाया। राजकुमार, देवदूतों के राजा के सभी शौर्य से ओतप्रोत होकर, उस गड्ढे के पास गया जिसे सारथी खोद रहा था, और किनारे पर खड़े होकर उसने तीसरा श्लोक बोला:

"हे सारथी, इतनी जल्दी में क्यों हो? और किसलिए तुम वह गड्ढा खोद रहे हो?"
मेरे सवाल का ईमानदारी से जवाब दो, तुम इससे क्या करना चाहते हो?
सारथी बिना ऊपर देखे गड्ढा खोदता रहा और उसने चौथा श्लोक बोला:

"हमारे राजा ने अपने इकलौते बेटे को अपंग और गूंगा पाया है, बिलकुल मूर्ख।"
और मुझे यह गड्ढा खोदने और उसे लोगों की नजरों से दूर दफनाने के लिए भेजा गया है।"
बोधिसत्व ने उत्तर दिया:

मैं न तो बहरा हूँ, न गूंगा, मेरे मित्र, न ही अपंग हूँ, न ही लंगड़ा हूँ;
यदि तुम मुझे इस जंगल में दफनाओगे, तो तुम पर बहुत बड़ा अपराध लगेगा।
मेरी इन भुजाओं और पैरों को देखो, और मेरी आवाज और मैं जो कहता हूँ उसे सुनो;
यदि तुम मुझे इस जंगल में दफनाओगे, तो आज तुम पर बहुत बड़ा अपराध लगेगा।"
तब सारथी ने कहा, "यह कौन है? जब से मैं यहाँ आया हूँ, तब से ही यह ऐसा हो गया है जैसा यह खुद को बताता है।" इसलिए उसने गड्ढा खोदना बंद कर दिया और ऊपर देखा; और उसकी अद्भुत सुंदरता को देखकर, और यह न जानते हुए कि वह कोई देवता (देवदूत) है या मनुष्य, उसने यह श्लोक कहा:

"क्या आप कोई दिव्य संगीतकार हैं या कोई देवता (देवदूत), या आप ही सक्का (इंद्र), सभी के स्वामी हैं?"
आप कौन हैं? आप किसके पुत्र हैं? जब हम आपको पुकारेंगे तो आपका क्या नाम रखेंगे?
तब बोधिसत्व ने स्वयं को प्रकट करते हुए और धर्म का उपदेश देते हुए बोलना शुरू किया।

मैं न तो कोई दिव्य संगीतकार हूँ, न ही कोई देवदूत, न ही सक्का (इंद्र), सभी का स्वामी (*8);
मैं काशी के राजा का पुत्र हूँ जिसे तुम निर्दयता से दफना दोगे।
मैं उसी राजा का पुत्र हूँ जिसके शासन में तुम सेवा करते हो और फलते-फूलते हो।
यदि तुम आज मुझे यहाँ जिंदा दफनाओगे तो तुम्हें बहुत बड़ा अपराध बोध होगा।
यदि मैं किसी पेड़ के नीचे बैठकर आराम करता हूँ जबकि वह अपनी छाया और आश्रय प्रदान करता है (*9),
मैं एक भी शाखा नहीं तोड़ूंगा, केवल पापी ही अपने मित्रों को हानि पहुंचाता है।
आश्रय देने वाला वृक्ष—वह राजा है—; मैं उस वृक्ष की फैली हुई शाखा हूँ;
और तुम, हे यात्री, हे सारथी, जो इसकी छाया में बैठकर विश्राम करते हो;
यदि तुम मुझे इस जंगल में दफनाओगे, तो तुम्हारे सिर पर भारी अपराध का बोझ पड़ेगा।"
लेकिन बोधिसत्व के ऐसा कहने पर भी उस व्यक्ति ने विश्वास नहीं किया। तब बोधिसत्व ने उसे समझाने का निश्चय किया और अपने मित्रों के सम्मान में दस गाथाओं का पाठ करते हुए उन्होंने अपने स्वर और देवताओं (देवदूतों) की स्तुति से वनों को गुंजायमान कर दिया।

जो अपने मित्रों के प्रति वफादार रहता है, वह दूर-दूर तक भटक सकता है।

बहुत से लोग खुशी-खुशी उसकी सेवा करेंगे, उसे भोजन की व्यवस्था की जाएगी।
वह चाहे शहर में हो या कस्बे में, जिस भी इलाके में घूमता है,
जो अपने मित्रों के प्रति वफादार रहता है, उसे सम्मान और प्रसिद्धि प्राप्त होती है।
कोई लुटेरा उसे चोट पहुंचाने की हिम्मत नहीं करता, कोई योद्धा उसका तिरस्कार नहीं करता;
जो अपने मित्रों के प्रति वफादार रहता है, वह सभी शत्रुओं से बच जाता है।
घर लौटने पर सबका स्वागत हुआ, कोई चिंता उसके हृदय को क्षीण नहीं कर रही थी।
जो अपने मित्रों के प्रति वफादार होता है, वही समस्त परिवार में सर्वश्रेष्ठ होता है।
वह सम्मान देता भी है और सम्मान प्राप्त भी करता है; वह सम्मान लेता भी है और देता भी है;
जो अपने मित्रों के प्रति वफादार रहता है, उसे सभी से भरपूर प्रतिफल प्राप्त होता है।
जो व्यक्ति दूसरों को उचित सम्मान देता है, वही दूसरों द्वारा सम्मानित होता है।
जो अपने मित्रों के प्रति वफादार रहता है, वह स्वयं प्रसिद्धि और प्रशंसा प्राप्त करता है।
वह अग्नि की तरह प्रज्वलित होता है और दिव्य प्रकाश बिखेरता है।
जो अपने मित्रों के प्रति वफादार रहता है, वह नई चमक के साथ दमक उठेगा।
उसके बैलों की संख्या निश्चित रूप से बढ़ती है, उसकी संतान कभी न रुकने वाली वृद्धि करती है।
जो अपने मित्रों के प्रति वफादार रहता है, वह निश्चय ही अपने कर्मों का फल पाता है।
यदि वह किसी पर्वत की चोटी से, या किसी पेड़ से, या किसी गुफा से गिर जाए,
जो अपने मित्रों के प्रति वफादार रहता है, उसे निश्चित रूप से विश्राम स्थान मिल जाता है।
बरगद का पेड़ हवा का सामना करते हुए, अपनी जड़ों से घिरी शाखाओं से घिरा हुआ है।
जो अपने मित्रों के प्रति वफादार रहता है, वह शत्रुओं के सारे क्रोध को विफल कर देता है।
यद्यपि सुनंदा ने इस प्रकार प्रवचन दिया, फिर भी वह उसे पहचान नहीं पाई और न ही पूछा कि वह कौन है; परन्तु जैसे ही वह रथ के पास पहुँची, रथ और राजकुमार द्वारा धारण किए गए आभूषणों को देखने से पहले ही, उसने उसे देखते ही पहचान लिया और उसके चरणों में गिरकर हाथ जोड़कर यह श्लोक बोला:

"आइए, मैं आपको वापस आपके उचित घर ले चलूँगा, हे राजकुमार;
सिंहासन पर बैठो और राजा की तरह व्यवहार करो, इस जंगल में क्यों भटक रहे हो?
उस महान सत्ता ने उत्तर दिया:

मुझे न तो सिंहासन चाहिए, न ही धन-दौलत, मुझे न ही दोस्त चाहिए, न ही परिवार।
क्योंकि मैंने केवल बुरे कर्मों से ही वह सिंहासन प्राप्त किया है।"
सारथी ने कहा:

"हे राजकुमार, आपके स्वागत के लिए एक लबालब भरा प्याला तैयार किया जाएगा।"
और आपके माता-पिता अपनी खुशी में मुझे बहुत सारे उपहार देंगे।
राजपरिवार की पत्नियां, सभी राजकुमार, वैश्य (व्यापारी) और ब्राह्मण (पुजारी) दोनों,
मुझे किसी भी उत्कृष्ट उपहार से, चाहे वह अपने पूर्ण अर्थ में हो, कोई असुविधा नहीं होगी।
हाथी और रथ पर सवार होने वाले, पैदल सैनिक, शाही अंगरक्षक,
जब तुम घर लौट आओगे, तो मुझे अवश्य ही इनाम देना।
ग्रामीण और शहरी लोग हर्षोल्लासपूर्वक एकत्रित होंगे।
और जब वे अपने राजकुमार को लौटते हुए देखेंगे तो मुझे उपहार देंगे।
उस महान सत्ता ने कहा:

"माता-पिता की वजह से, शहर और कस्बे की वजह से मैं दुखी रह गया।"
राजकुमारों ने मुझे मेरे हाल पर छोड़ दिया, मेरा अपना कोई घर नहीं है।
मेरी मां ने मुझे जाने की छुट्टी दे दी, मेरे पिता ने मेरी इच्छा छोड़ दी।
इस एकांत वन में ही मैंने तपस्वी की प्रतिज्ञा ली थी।
जब उस महान सत्ता ने अपने गुणों को याद किया, तो उनके मन में आनंद का संचार हुआ और उन्होंने समाधि की अवस्था में विजयगान गाया।

"जो लोग जल्दी नहीं करते, उनके दिल की चाहत भी सफलता दिलाती है।"

हे सारथी, जान लो कि आज मैंने पूर्ण पवित्रता प्राप्त कर ली है।
जो लोग जल्दबाजी नहीं करते, वे भी सर्वोच्च लक्ष्य प्राप्त कर लेते हैं;
मैं पूर्ण पवित्रता से परिपूर्ण होकर जाता हूँ, परिपूर्ण और किसी से भयभीत नहीं।
सारथी ने उत्तर दिया:

"आपके शब्द, मेरे स्वामी, मधुर हैं, आपकी वाणी खुली और स्पष्ट है;
जब तुमने माता-पिता को पास ही देखा था, तब तुम चुप क्यों रहे?
उस महान सत्ता ने कहा:

मैं जोड़ों की कमी के कारण अपंग नहीं हूँ, न ही कानों की कमी के कारण बहरा हूँ।
मैं बोलने में असमर्थ होने के कारण गूंगा नहीं हूँ, जैसा कि अब स्पष्ट रूप से प्रतीत होता है।
मुझे अच्छी तरह याद है कि एक पुराने जन्म में मैंने राजा की भूमिका निभाई थी।
लेकिन जब मैं उस संपत्ति से गिरा तो मैंने खुद को नरक में पाया।
मैंने उस सिंहासन पर बैठकर लगभग बीस वर्ष विलासितापूर्ण जीवन व्यतीत किए।
लेकिन नरक में अस्सी हजार साल बिताने से उस अपराध का प्रायश्चित हो गया।
राजसी ठाठ-बाठ के मेरे पूर्व अनुभव ने मेरे पूरे दिल को भय से भर दिया था;
मैं वहां से चुप हो गया, हालांकि मैंने अपने माता-पिता को पास ही देखा था।
मेरे पिता ने मुझे अपनी गोद में बिठा लिया, लेकिन उनके स्नेहपूर्ण खेल के बीच ही,
मैंने उसके कठोर आदेश सुने, "इस बदमाश को तुरंत मार डालो,"
मैंने उसे टुकड़े-टुकड़े होते देखा, जाओ, उस दुष्ट को बिना देरी किए सूली पर चढ़ा दो।"
ऐसी धमकियाँ सुनकर मैं अपंग और गूंगा बनने की कोशिश ही कर सकता हूँ,
और स्वेच्छा से एक मूर्ख की तरह बेबस होकर गंदगी में लोटपोट हो रहा है।
यह जानते हुए कि जीवन बहुत छोटा है और दुखों से भरा है,
इसके लिए कौन दूसरे के खिलाफ अपना क्रोध भड़कने देगा?
कौन इसके लिए किसी दूसरे पर अपना प्रतिशोध बरसने देगा?
सत्य को समझने की शक्ति के अभाव और सही के प्रति अंधता के कारण (*12)?"
तब सुनंदा ने सोचा, "यह राजकुमार अपने सारे राजसी वैभव को सड़ते हुए मांस की तरह त्यागकर, अडिग होकर वन में प्रवेश कर गया है, और तपस्वी बनने के अपने संकल्प में अडिग है। इस दयनीय जीवन से मेरा क्या लेना-देना? मैं भी उसके साथ तपस्वी बन जाऊँगा"; इस प्रकार उसने यह श्लोक कहा:

मैं भी तुम्हारे साथ तपस्वी जीवन जीना पसंद करूंगा;
मुझे बुलाओ, हे राजकुमार, क्योंकि मैं तुम्हारे जैसा ही बनना चाहता हूँ।
जब ऐसा अनुरोध किया गया, तो उस महान प्राणी ने सोचा, "यदि मैं उसे तुरंत तपस्वी जीवन में प्रवेश दे दूं, तो मेरे माता-पिता यहाँ नहीं आ पाएंगे और इस प्रकार उन्हें हानि होगी, और घोड़े, रथ और आभूषण नष्ट हो जाएंगे, और मुझ पर कलंक लगेगा, क्योंकि लोग कहेंगे, 'वह तो भूत है, क्या उसने सारथी को खा लिया है?'" अतः स्वयं को कलंक से बचाने और अपने माता-पिता के कल्याण की व्यवस्था करने की इच्छा से, उन्होंने घोड़े, रथ और आभूषण उसे सौंप दिए और यह श्लोक कहा:

"पहले रथ को बहाल करो, अब तुम स्वतंत्र व्यक्ति नहीं हो।"
वे कहते हैं, "पहले अपने कर्ज चुकाओ, फिर तपस्वी की प्रतिज्ञा लो।"
सारथी ने मन ही मन सोचा, "अगर मैं शहर चला जाऊं और वह इस बीच कहीं और चला जाए तो उसके माता-पिता मेरी खबर सुनकर उसे देखने मेरे साथ वापस आ जाएंगे; और अगर वे उसे वहां नहीं पाएंगे तो मुझे दंडित करेंगे; इसलिए मैं उसे अपनी स्थिति बताऊंगा और उससे यहीं रहने का वादा लूंगा"; इस प्रकार उसने दो छंद बोले:

"चूंकि मैंने आपका अनुरोध पूरा कर दिया है, राजकुमार, मैं आपसे निवेदन करता हूँ,
कृपया मेरी बात मानें।
जब तक मैं राजा को न ले आऊं, तब तक यहीं रुको, कृपा के साथ यहीं रहो।
वह तुम्हारा चेहरा देखकर प्रसन्न होगा।
उस महान सत्ता ने उत्तर दिया:

"ठीक है, जैसा आप कहते हैं, सारथी;"
मुझे भी अपने पिता को यहाँ देखकर खुशी होगी।
जाओ और मेरे पूरे परिवार को सलाम करो, और ले जाओ
मेरे माता-पिता के लिए एक विशेष संदेश।"
उस व्यक्ति ने आदेशों का पालन किया:

उन्होंने अपने पैर जोड़े और सभी उचित सम्मानों का निर्वहन किया।
अपने गुरु के आदेशानुसार उसने यात्रा शुरू की।
उसी क्षण चंदादेवी ने अपनी जाली खोली और जब वह यह सोच रही थी कि क्या उसके बेटे के बारे में कोई खबर है और उस सड़क की ओर देख रही थी जिससे सारथी लौटता, तो उसने उसे अकेले आते देखा और फूट-फूटकर रोने लगी।

गुरु ने इसका वर्णन इस प्रकार किया है:

"खाली रथ और अकेले सारथी को देखकर,
मां की आंखें आंसुओं से भरी थीं, उसका हृदय भय से व्याकुल था:
"रथवान वापस आता है, मेरा बेटा मारा गया है;
वह वहाँ लेटा हुआ है, मिट्टी फिर से मिट्टी में मिल गई है।
अफसोस! हमारे सबसे कट्टर दुश्मन शायद खुश हो जाएं!
अपने हत्यारे को सुरक्षित वापस आते हुए देखकर।
गूंगा, अपंग, मान लो, क्या वह एक बार भी नहीं रो सकता?
क्या वह जमीन पर असहाय होकर संघर्ष कर रहा था?
क्या उसके हाथ-पैर तुम्हें दूर नहीं धकेल सकते थे?
हालांकि वह गूंगा और अपंग था, फिर भी वह जमीन पर पड़ा था?
सारथी ने कहा:

"मेरी बात के लिए मुझे क्षमा करने का वादा करो, महोदया।"
और मैं तुम्हें वह सब बताऊंगा जो मैंने देखा और सुना।
रानी ने उत्तर दिया:

"मैं अपने हर शब्द के लिए क्षमा का वादा करता हूँ;"
आपने जो कुछ भी देखा या सुना है, मुझे विस्तार से बताएं।
तब सारथी बोला:

वह अपंग नहीं है, वह बहरा नहीं है, उसकी वाणी स्पष्ट और निर्बाध है;
राजपरिवार के भय के कारण वह घर पर काल्पनिक भूमिकाएँ निभाता था।
उन्हें अच्छी तरह याद है कि एक पुराने जन्म में उन्होंने राजा की भूमिका निभाई थी।
लेकिन जब वह उस संपत्ति से गिर गया तो उसने खुद को नरक में पाया।
उन्होंने उस सिंहासन पर लगभग बीस वर्ष विलासितापूर्ण जीवन व्यतीत किए।
लेकिन नरक में अस्सी हजार साल बिताने से उस अपराध का प्रायश्चित हो गया।
राजसी जीवन का उनका पूर्व अनुभव उनके पूरे हृदय को भय से भर देता था;
इसलिए वह चुप रहा, जबकि उसने अपने माता-पिता को पास ही देखा था।
उसके सभी अंग बिल्कुल स्वस्थ थे, वह बेदाग लंबा और चौड़ा था।
उनकी वाणी स्पष्ट है, उनकी बुद्धि अभी भी अक्षुण्ण है, वे मोक्ष (निर्वाण) के मार्ग पर विचरण कर रहे हैं।
यदि आप अपने बेटे को देखना चाहते हैं, तो तुरंत मेरे साथ आइए।
आप राजकुमार तेमिया को एकदम शांत और स्वतंत्र देखेंगे।
लेकिन जब राजकुमार ने सारथी को विदा कर दिया, तो उन्होंने संन्यासी बनने की इच्छा व्यक्त की। उनकी इच्छा जानकर, सक्का (इंद्र) ने विश्वकर्मा को यह कहते हुए भेजा, "राजकुमार तेमिया संन्यासी बनना चाहते हैं, जाइए और उनके लिए पत्तों की एक कुटिया और संन्यासी के लिए आवश्यक वस्तुएँ तैयार कीजिए।" विश्वकर्मा ने तुरंत कार्य किया और तीन कुंड (4.23 किमी) के एक वनक्षेत्र में रात्रि और दिन के लिए अलग-अलग कमरों वाली एक कुटिया, एक तालाब, एक गड्ढा और फलदार वृक्षों से सुसज्जित एक आश्रम बनाया।

उन्होंने संन्यासी के लिए सभी आवश्यक वस्तुएँ तैयार कीं और फिर अपने स्थान पर लौट आए। जब बोधिसत्व ने इसे देखा, तो वे जान गए कि यह सक्का (इंद्र) का उपहार है। अतः वह कुटिया में प्रवेश करके अपने वस्त्र उतारकर लाल छाल के वस्त्र, ऊपरी और निचले दोनों, धारण कर लिए, काले हिरण की खाल को एक कंधे पर डाल लिया, अपनी जटाएँ बाँध लीं और कंधे पर एक डंडा और हाथ में एक लाठी लेकर कुटिया से बाहर निकल गया। फिर वह तपस्वी के पूर्ण वस्त्र धारण किए हुए बार-बार इधर-उधर चलने लगा और विजयपूर्वक "हे आनंद, हे आनंद" का उद्घोष करते हुए कुटिया में लौट आया; और फटी हुई चटाई (*13) पर बैठकर उसने पाँच पारलौकिक इंद्रियों का अनुभव किया। फिर शाम को बाहर जाकर पास के एक करा (*14) वृक्ष से कुछ पत्ते तोड़कर, उसने उन्हें सक्का (इंद्र) द्वारा दिए गए एक पात्र में बिना नमक, छाछ या मसाले के पानी में भिगोया और उन्हें अमृत (देवताओं का पेय) मानकर खाया, और फिर, चारों परिपूर्ण अवस्थाओं पर चिंतन करते हुए, उसने वहीं निवास करने का संकल्प लिया।

इसी बीच, काशी के राजा ने सुनंदा की बातें सुनकर अपने सेनापति को बुलाया और उसे यात्रा की तैयारी करने का आदेश देते हुए कहा:

"घोड़ों को रथों से जोतकर, हाथियों की कमरबंद बांधकर आओ;
शंख और ढोल की ध्वनि दूर-दूर तक गूंजे, और ढोल की तेज आवाज सुनाई दे।
कर्कश ढोल की गूंज हवा में गूंजने दो, खड़खड़ाते ढोल मधुर प्रतिध्वनि उत्पन्न करने दो,
इस पूरे शहर से कहो कि मेरे पीछे आओ, मैं अपने बेटे से एक बार फिर मिलने जा रहा हूँ।
राजमहल की महिलाएं, हर राजकुमार, वैश्य और ब्राह्मण, सभी लोग,
सभी ने अपने रथों के घोड़ों को जोत लिया है, मैं अपने बेटे का स्वागत करने जा रहा हूँ।
हाथी सवारों, शाही अंगरक्षकों, घुड़सवारों और पैदल सैनिकों में से प्रत्येक को,
सभी लोग एक समान रूप से जाने की तैयारी करें, मैं अपने बेटे का स्वागत करने जा रहा हूँ।
ग्रामीण और शहरी लोग हर गली में भीड़ के रूप में इकट्ठा हों,
सभी लोग एक समान रूप से जाने की तैयारी करें, मैं एक बार फिर अपने बेटे से मिलने जा रहा हूँ।
इस प्रकार आदेश मिलने पर रथ चालकों ने घोड़ों को जोता और रथों को महल के द्वार तक लाकर राजा को सूचना दी।

गुरु ने इसका वर्णन इस प्रकार किया है:

"महल के द्वार पर सर्वश्रेष्ठ नस्ल के सिंधी घोड़े जुते हुए खड़े थे;
रथ चालक यह खबर लेकर आए, "महाराज, दल आपकी उपस्थिति की प्रतीक्षा कर रहा है।"
राजा ने कहा:

"सभी अनाड़ी घोड़ों को बाहर छोड़ दो, हमारे काफिले में कोई कमजोर घोड़ा नहीं होना चाहिए।"
(उन्होंने सारथी से कहा, "ध्यान रखना, उस तरह के घोड़े मत लाना।")
राजसभा के यही आदेश थे, और रथ चालकों ने उनका पालन किया।
जब राजा अपने पुत्र के पास गए, तो उन्होंने चारों जातियों, अठारह संघों और अपनी पूरी सेना को एकत्रित किया, और इस सभा को आयोजित करने में तीन दिन लगे। चौथे दिन, जुलूस में ले जाने योग्य सभी सामान लेकर वे अपने आश्रम की ओर बढ़े, जहाँ उनके पुत्र ने उनका स्वागत किया और उन्होंने भी उन्हें उचित अभिवादन दिया।

गुरु ने इसका वर्णन इस प्रकार किया है:

"तब उनका शाही रथ तैयार हुआ, राजा बिना देरी किए उसमें सवार हो गए और अपनी पत्नियों से चिल्लाकर बोले—"मेरे साथ चलो!"

याकस्टेल पंखे और पगड़ी शिखा के साथ, और शाही सफेद धूप की छाया के साथ, वह बेहतरीन सोने से सजे शाही रथ (*16) में सवार हुए।

तब राजा अपने सारथी के साथ तुरंत रवाना हुए और शीघ्र ही उस स्थान पर पहुँच गए जहाँ तेमिया शांतिपूर्वक निवास कर रहा था।

जब तेमिया ने उसे पूरी तरह तेजस्वी और तेजस्वी रूप में आते देखा, जो योद्धाओं के दल से घिरा हुआ था, तो उसने कहा:

"पिताजी, आशा है आप कुशल मंगल होंगे, आपके पास आपको सुनाने के लिए कोई अच्छी खबर होगी।"
मुझे उम्मीद है कि सभी शाही रानियां, मेरी माताएं भी, स्वस्थ होंगी।
"हां, मैं ठीक हूँ, मेरे बेटे, मुझे तुम्हें एक अच्छी खबर सुनानी है।"
और सभी राजसी रानियाँ, आपकी माताएँ, सभी स्वस्थ हैं।"

मुझे उम्मीद है कि आप कोई भी तेज पेय नहीं पीते, सभी प्रकार की शराब से दूर रहें।
क्या तुम्हारा मन सदा धर्मपरायण कर्मों और दान के प्रति सच्चा रहता है?
"हाँ, मैं कभी भी तेज शराब को हाथ नहीं लगाता, मैं हर तरह की शराब से परहेज करता हूँ।"
मेरा मन सदा धर्मपरायण कर्मों और दान-पुण्य के प्रति निष्ठावान रहता है।
मुझे उम्मीद है कि घोड़े और हाथी स्वस्थ और स्वस्थ होंगे।
कोई दर्दनाक शारीरिक बीमारी नहीं, कोई कमजोरी नहीं, कोई समस्या नहीं?
"हाँ, हाथी ठीक हैं, घोड़े भी स्वस्थ और मजबूत हैं।"
कोई दर्दनाक शारीरिक बीमारी नहीं, कोई कमजोरी नहीं, कोई समस्या नहीं।"
"सीमावर्ती क्षेत्र, केंद्रीय भाग के रूप में, पूरी तरह से आबादी वाला और शांतिपूर्ण है।"
खजाने और खजाने तो पूरी तरह भरे हुए हैं—बताइए, इनका क्या होगा?
अब आपका स्वागत है, महाराज, आपका स्वागत है!
वे एक पलंग बिछा दें, ताकि उस पर राजा बैठ सकें।
महान सत्ता के प्रति सम्मान के कारण राजा सोफे पर नहीं बैठता था (*17)।

उस महान सत्ता ने कहा, "यदि वह अपने राजसी सिंहासन पर न बैठे, तो उसके लिए पत्तों का पलंग बिछा दिया जाए," इस प्रकार उन्होंने एक श्लोक कहा:

"तुम्हारे लिए बिछाई गई इन पत्तों की पलंग पर बैठो, क्योंकि यह उचित है।"
वे इस स्थान से पानी लेकर आपके पैरों को अच्छी तरह धोएंगे।
राजा ने आदरपूर्वक पत्तों के आसन को भी स्वीकार नहीं किया, बल्कि जमीन पर बैठ गए। तब बोधिसत्व पत्तों की कुटिया में प्रवेश कर गए, और एक कर पत्ता (*18) निकालकर राजा को आमंत्रित करते हुए एक श्लोक बोला:

"मेरे पास नमक नहीं है; मैं केवल इसी पत्ते पर जीवित रहता हूँ, हे राजा।"
आप यहां मेरे मेहमान बनकर आए हैं, कृपया मेरे द्वारा लाया गया भोजन स्वीकार करें।
राजा ने उत्तर दिया:

मुझे पत्ते नहीं चाहिए, वो मेरा भोजन नहीं है; मुझे शुद्ध पहाड़ी चावल का एक कटोरा दो।
सूप को स्वादिष्ट बनाने के लिए मांस के हल्के स्वाद के साथ पकाया गया (*19)।"
उसी क्षण राजसी महिलाओं से घिरी हुई रानी चंदादेवी आईं और अपने प्रिय पुत्र के चरणों को भिक्षापूर्वक प्रणाम करने के बाद, आँसुओं से भरी आँखों से एक तरफ बैठ गईं। राजा ने उनसे कहा, "हे देवी, देखो तुम्हारे पुत्र का भोजन क्या है," और कुछ पत्ते उनके हाथ में दिए तथा अन्य महिलाओं को भी थोड़े दिए, जिन्होंने उन्हें लेकर कहा, "हे मेरे स्वामी, क्या आप सचमुच ऐसा भोजन करते हैं? आप तो बड़ी कठिनाई सहते हैं," और बैठ गईं। तब राजा ने कहा, "हे मेरे पुत्र, यह मुझे अद्भुत प्रतीत होता है," और उन्होंने एक श्लोक कहा:

मुझे तो यह बहुत ही अजीब लगता है कि आपने मुझे इस तरह अकेला छोड़ दिया।
तुम इतने घटिया भोजन पर जीते हो और फिर भी तुम्हारा रंग नहीं उतरा है।"
राजकुमार ने इस प्रकार उत्तर दिया:

"यहाँ बिछे पत्तों के इस बिस्तर पर मैं सचमुच अकेला लेटा हूँ।"
यह एक आरामदायक बिस्तर है और इसलिए मेरा रंग नहीं फीका पड़ा है;
तलवारों से घिरे हुए, कोई क्रूर पहरेदार सख्ती से खड़े होकर देख नहीं रहे हैं।
यह एक आरामदायक बिस्तर है और इसलिए मेरा रंग नहीं फीका पड़ा है;
मैं न तो बीते समय का शोक मनाता हूँ और न ही भविष्य के लिए रोता हूँ।
मैं वर्तमान को उसी रूप में स्वीकार करता हूँ जैसा वह आता है, और इसलिए मेरे रंग स्थिर रहते हैं।
निराशाजनक अतीत या भविष्य की किसी अनिश्चित आवश्यकता के बारे में शोक मनाते हुए,
इससे एक युवक की ऊर्जा उसी तरह सूख जाती है जैसे किसी ताज़ी हरी नरकट को काटने से सूख जाती है।
राजा ने मन ही मन सोचा, "मैं उसे राजा नियुक्त करूँगा और अपने साथ ले जाऊँगा"; इसलिए उसने ये छंद कहे और उसे राज्य में भागीदार बनने के लिए आमंत्रित किया:

मेरे हाथी, मेरे रथ, घुड़सवार और पैदल सेना,
और हे प्रिय पुत्र, मैं अपने सभी सुंदर महल तुम्हें देता हूँ।

मैं अपनी रानी के सभी आवास, उनकी सारी शान-शौकत और गौरव सहित, अर्पित करता हूँ।
तुम ही हमारे एकमात्र राजा होगे, तुम्हारे सिवा कोई और नहीं होगा।
नृत्य और गायन में निपुण और हर मनोदशा के लिए प्रशिक्षित सुंदर महिलाएं
जब आपकी आत्मा को शांति और आनंद से भर दिया जाए, तो इस जंगल में क्यों रुके रहना?
तुम्हारे शत्रुओं की पुत्रियाँ गर्व से तुम्हारी सेवा करने के लिए आएंगी;
जब वे तुम्हें पुत्र उत्पन्न कर दें, तब जाकर संन्यासी बन जाना।
हे मेरे प्रथम पुत्र और मेरे उत्तराधिकारी, अपने युग के प्रथम वैभव में आओ।
अपने राज्य का भरपूर आनंद लें, आप इस आश्रम में क्या करते हैं?
बोधिसत्व ने कहा:

नहीं, युवक को संसार छोड़कर उसकी व्यर्थताओं से दूर भाग जाना चाहिए।
तपस्वी का जीवन युवाओं के लिए सबसे उपयुक्त होता है, यही सलाह सभी बुद्धिमान लोग देते हैं।
नहीं, उस युवक को संसार छोड़कर एकांतवासी और अकेला ही चले जाने दो;
मैं संन्यासी का जीवन अपनाऊंगा, मुझे न तो वैभव की जरूरत है और न ही सिंहासन की।
मैं उस लड़के को देखता हूँ, जो मासूमियत से "पिताजी", "माताजी" चिल्लाता है।
उनका भी एक बेटा होता है, और फिर वह भी बूढ़ा होकर मर जाता है।
इस प्रकार, अपनी युवावस्था में वह युवती कोमल और देखने में सुंदर हो जाती है।
लेकिन वह जल्द ही हरे बांस के पेड़ की तरह मृत्यु के हाथों कटकर नष्ट हो जाती है।
सभी पुरुष और महिलाएं, चाहे वे कितने भी युवा क्यों न हों, शीघ्र ही मर जाते हैं, जो वास्तव में
क्या वह काल्पनिक यौवन से धोखा खाकर नश्वर जीवन पर भरोसा करेगा?
जैसे-जैसे रात ढलकर सुबह होती है, जीवन का दायरा भी सिमटता जाता है;
जैसे सूखते पानी में मछली का क्या अर्थ होता है, वैसे ही मनुष्य की यौवन का क्या अर्थ है?
हमारी यह दुनिया दर्द से घायल सी है, जिस पर हमेशा किसी की नजर रहती है।
वे उद्देश्यपूर्ण ढंग से आगे बढ़ते हैं, तो ताज या सिंहासन की बात क्यों करें?
"कौन इस दुनिया पर इतनी तीव्रता से प्रहार करता है? कौन चुपचाप देखता रहता है?"
और कौन इस प्रकार जानबूझकर पतन की ओर जाता है? मुझे इस रहस्य का हल बताओ।
इस संसार पर मृत्यु का ही अधिकार है, बुढ़ापा ही हमारे द्वार पर पहरा देता है।
और ये रातें ही हैं जो बीत जाती हैं और देर-सवेर अपना उद्देश्य पूरा कर लेती हैं।
जैसे कोई महिला दिन भर करघे पर बैठकर बुनाई करती रहती है,
उसका काम धीरे-धीरे कम होता जा रहा है, इसलिए हम अपना जीवन व्यर्थ ही बर्बाद कर रहे हैं।
जैसे-जैसे नदी का प्रवाह तेज होता जाता है, बिना पीछे मुड़े,
अतः मनुष्य का जीवन निरंतर आगे बढ़ता रहा;
और जैसे-जैसे नदी अपने किनारों से उखड़े हुए पेड़ों को बहा ले जाती है,
तो क्या हम बुढ़ापे और मृत्यु के कारण विनाश की ओर धकेल दिए गए हैं?
महान सत्ता के प्रवचन सुनते हुए राजा को घर में बिताए जीवन से घृणा होने लगी और वह संसार को त्यागने के लिए तरसने लगा; और उसने कहा, "मैं शहर वापस नहीं जाऊंगा, मैं यहीं तपस्वी बन जाऊंगा; यदि मेरा पुत्र शहर जाएगा तो मैं उसे सफेद छत्र दूंगा," - इसलिए उसकी परीक्षा लेने के लिए उसने उसे एक बार फिर अपना राज्य संभालने के लिए आमंत्रित किया।

मेरे हाथी, मेरे रथ, घुड़सवार और पैदल सेना,
और हे प्रिय पुत्र, मैं अपने सभी सुंदर महल तुम्हें देता हूँ।
मैं अपनी रानी के सभी आवास, उनकी सारी शान-शौकत और गौरव सहित, अर्पित करता हूँ।
तुम ही हमारे एकमात्र राजा होगे, तुम्हारे सिवा कोई और नहीं होगा।
नृत्य और गायन में निपुण और हर मनोदशा के लिए प्रशिक्षित सुंदर महिलाएं
यह जंगल आपकी आत्मा को शांति और आनंद से भर देगा, तो फिर यहाँ क्यों रुके रहना?
तुम्हारे शत्रुओं की पुत्रियाँ गर्व से तुम्हारी सेवा करने के लिए आएंगी;
जब वे तुम्हें पुत्र उत्पन्न कर दें, तब जाकर संन्यासी बन जाना।
मेरे खजाने और मेरे कोष, पैदल सैनिक और घुड़सवार सेना,
और हे प्रिय पुत्र, मैं अपने सभी सुंदर महल तुम्हें देता हूँ।

दासों की टुकड़ियाँ आपकी सेवा में तत्पर रहेंगी, और रानियाँ आपको गले लगाने के लिए तैयार रहेंगी।
अपने सिंहासन का आनंद लें, आपको अच्छी सेहत मिले, इस वीरान जगह पर क्यों समय बर्बाद कर रहे हैं?
लेकिन उस महान सत्ता ने यह दिखाकर जवाब दिया कि उसे राज्य की कितनी कम इच्छा थी।

"धन की खोज क्यों करें, वह तो टिकेगा नहीं; पत्नी को क्यों आकर्षित करें, वह तो जल्द ही मर जाएगी।"
जवानी के बारे में क्यों सोचना, यह तो जल्द ही बीत जाएगी; और बुढ़ापा हमेशा करीब खड़ा रहेगा।
जीवन में कौन-कौन से सुख मिल सकते हैं? सुंदरता, खेल, धन-दौलत या शाही व्यवहार?
मेरे लिए पत्नी या बच्चे का क्या महत्व है? मैं हर बंधन से मुक्त हो चुका हूँ।
यह बात मैं जानता हूँ, मैं जहाँ भी जाता हूँ, भाग्य मुझे देखता रहता है और कभी सोता नहीं है;
जो मृत्यु के शिकंजे को महसूस करता है, उसके लिए धन या सुख का क्या लाभ? (*20)
आज जो करना है वो कर लो, कल की धूप की गारंटी कौन दे सकता है?
मृत्यु एक ऐसी महानायक है जो किसी को भी अपनी गारंटी नहीं देती।
चोर हमारी दौलत चुराने के लिए घात लगाए बैठे रहते हैं, मैं हर बंधन से मुक्त हो गया हूँ;
वापस जाओ और अपना ताज वापस ले लो; मुझे राजा के राज्य से क्या लेना-देना है?
महापुरुष का प्रवचन और उसका व्यावहारिक उपदेश समाप्त हुआ, और जब उन्होंने इसे सुना तो न केवल राजा और रानी चंदा बल्कि सोलह हजार राजपत्नियों ने भी तपस्वी जीवन अपनाने की इच्छा व्यक्त की। राजा ने ढोल बजाकर नगर में यह घोषणा करवाई कि जो भी उनके पुत्र के साथ तपस्वी बनना चाहते हैं, वे ऐसा कर सकते हैं; उन्होंने अपने खजाने के द्वार खुलवा दिए और एक सोने की थाली पर शिलालेख लिखवाकर उसे एक बड़े बांस के खंभे पर स्थापित करवाया, जिसमें लिखा था कि उनके खजाने के कलश कुछ निश्चित स्थानों पर रखे जाएंगे और जो चाहें उन्हें ले सकते हैं। नगरवासी भी अपने घरों के द्वार खुले छोड़कर, मानो कोई खुला बाजार हो, राजा के चारों ओर उमड़ पड़े। राजा और सभी ने महापुरुष के समक्ष एक साथ तपस्वी जीवन की प्रतिज्ञा ली। सक्का (इंद्र) द्वारा निर्मित एक आश्रम तीन मील (4.23 किमी) तक फैला हुआ था। महापुरुष शाखाओं और पत्तों से बनी झोपड़ियों से होकर गुजरे और उन्होंने बीच वाली झोपड़ियों को स्त्रियों के लिए नियुक्त किया क्योंकि वे स्वभाव से संकोची थीं, जबकि बाहरी झोपड़ियों को पुरुषों के लिए नियुक्त किया। व्रत के दिन वे सब जमीन पर खड़े रहे और विश्वकर्मा द्वारा सृजित वृक्षों के फल एकत्र करके खाए तथा तपस्वी जीवन के नियमों का पालन किया। परम पुरुष, जो प्रत्येक के मन को भलीभांति जानते थे, चाहे वे कामवासना, द्वेष या क्रूरता के विचारों में लिप्त हों, आकाश में बैठ गए और प्रत्येक को विधि का उपदेश दिया, और जैसे-जैसे वे सुनते गए, उनकी इंद्रियां और उपलब्धियां शीघ्र ही विकसित होती गईं।

पड़ोसी राजा को जब पता चला कि काशिराज संन्यासी बन गए हैं, तो उसने बनारस में अपना शासन स्थापित करने का निश्चय किया। वह शहर में दाखिल हुआ और उसे सुशोभित देखकर महल में गया। वहाँ सात प्रकार के कीमती पत्थर देखकर उसे लगा कि इस सारी संपत्ति के साथ किसी प्रकार का खतरा जरूर मंडरा रहा है। उसने कुछ शराबी दोस्तों को बुलवाया और उनसे पूछा कि राजा किस द्वार से निकले हैं। उन्होंने बताया, "पूर्वी द्वार से।" तो वह स्वयं उसी द्वार से निकले और नदी के किनारे-किनारे चलने लगे। महानुभाव को उनके आने का आभास हो गया और वे उनसे मिलने गए, आकाश में बैठकर उन्हें विधि का उपदेश दिया। तब आक्रमणकारी ने अपने सभी साथियों के साथ संन्यास की प्रतिज्ञा ली; और यही बात एक अन्य राजा के साथ भी हुई। इस प्रकार तीन राज्य त्याग दिए गए; हाथी और घोड़े जंगलों में बेकाबू होकर भटकने के लिए छोड़ दिए गए, रथ जंगलों में टुकड़े-टुकड़े कर दिए गए, और खजानों का धन, रेत के समान गिनकर, आश्रम में बिखेर दिया गया। वहाँ के सभी निवासियों ने आठ प्रकार की परमानंदमयी ध्यान विधियाँ प्राप्त कीं; और अपने जीवन के अंत में ब्रह्मलोक (परमलोक) के लिए नियत हुए। जी हाँ, हाथी और घोड़े जैसे जानवर भी ऋषियों के दर्शन से शांत होकर अंततः देवदूतों के छह लोकों में पुनर्जन्म लेकर गए।

गुरु ने अपना उपदेश समाप्त करते हुए कहा, "न केवल अभी बल्कि पहले भी मैंने एक राज्य छोड़कर संन्यासी का जीवन व्यतीत किया था।" फिर उन्होंने अपने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "छतरी में बैठी देवी उप्पलावन्ना थीं, सारथी सारिपुत्र थे, माता-पिता राजपरिवार थे, दरबार बुद्ध की सभा थी, और ज्ञानी मुगपक्खा मैं स्वयं था (*21)।"

सीलोन द्वीप पर आने के बाद, मंगना के निवासी वरिष्ठ भिक्षु खुद्दकतिस्सा, वरिष्ठ भिक्षु महावंसक, कटकन्धकारा (*22) में रहने वाले वरिष्ठ भिक्षु फुस्सदेव, उपरिमंदकमला के निवासी वरिष्ठ भिक्षु महारक्षित, भग्गरी के निवासी वरिष्ठ भिक्षु महातिस्सा, वामत्तपभरा के निवासी वरिष्ठ भिक्षु महाशिव, कलवेला के निवासी वरिष्ठ भिक्षु महामलियादेव, इन सभी वरिष्ठ भिक्षुओं को कुद्दलक जन्म (*23), मुगपक्खा जन्म (*24), अयोगरा जन्म (*25), और हत्थिपला जन्म (*26) की सभा में बाद में आने वाले भिक्षु कहा जाता है। इसके अलावा, मद्धा के निवासी वरिष्ठ भिक्षु महानगा और वरिष्ठ भिक्षु मलियमकदेव ने परिनिर्वाण के दिन टिप्पणी की, "महोदय, मुगपक्खा

जन्म की सभा आज विलुप्त हो गई है।" "किस कारण से?" "उस समय मुझे मादक पेय की बुरी लत लग गई थी, और जब मैं अपने साथ शराब पीने वालों को नहीं ला सका, तो मैंने संसार का त्याग कर संन्यासी बनने का निर्णय सबसे अंत में लिया।"

फुटनोट:

(1) बहरे अपंग की कहानी।

(2) संख्या 531

(3)खालमकापाडो?

(4) एक और पाठ है, "दूध।"

(7) प्रो. कोवेल द्वारा अनुवादित "मैं अपने पिता और माता के साथ-साथ स्वयं की भी मृत्यु का कारण बनूंगा"

(8)पेटवत्थु

(9)जाट. 340 , पेटवत्थु.

(12) विजय की चार पंक्तियाँ यहाँ दोहराई गई हैं।

(13)कत्थथराके, अथारो एक "गलीचा" है।

(14)कैंथियम पार्विफ्लोरम.

(16)उपधिरथम्: विद्वान्। सुवन्नापादुकारथम् अरुयहंतु, इमे तयो पदे पुट्टस्सा तत्थ' एव अभिषेककरनत्थय पञ्च राजकाकुधभंडानि गन्हासा ति।

(17) पढ़ें: pallamke na nisidi

(18) वृक्ष कैंथियम पार्विफ्लोरम का पत्ता।

(19)सं. 299.

(21) यहाँ एक बाद में जोड़ा गया भाग बताता है कि कैसे कुछ पुजारी इस जन्म में तपस्वी जीवन अपनाने में दूसरों से बाद में थे, देखें जाट. IV. 490.

(22)देखें सू. 190.

(23)सं. 70,

(24) संख्या 538

(25)सं. 510.

(26) संख्या 509

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **महाजनक-जातक**
स्रोत *: ई.बी. कोवेल और डब्ल्यू.एच.डी. राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

जातक क्रमांक 539
महाजनक-जातक

“प्रयास करने वाले तुम कौन हो?” इत्यादि। यह कथा गुरुजी ने जेतवन मठ में रहते हुए महान त्याग के विषय में सुनाई थी। एक दिन भिक्षु (भाई) सत्य के हॉल में बैठकर तथागत (बुद्ध) के महान त्याग पर चर्चा कर रहे थे। गुरुजी आए और उन्होंने देखा कि वे इसी विषय पर चर्चा कर रहे हैं; इसलिए उन्होंने कहा, “तथागत (बुद्ध) ने यह पहली बार नहीं किया है, उन्होंने पहले भी यह किया था।” और इसके साथ ही उन्होंने अतीत की एक कथा सुनाई।

बहुत समय पहले, विदेह राज्य के मिथिला में महाजनक नामक एक राजा रहता था। उसके दो पुत्र थे, अरित्तजनक और पोलजनक; उसने बड़े पुत्र को उपसराय और छोटे पुत्र को सेनापति बनाया। बाद में, जब महाजनक की मृत्यु हो गई, तो अरित्तजनक राजा बनकर अपने भाई को उपसराय बना दिया। एक दिन एक दास राजा के पास गया और उसे बताया कि उपसराय उसे मारना चाहता है। राजा ने बार-बार वही कहानी सुनकर संदेह किया और पोलजनक को जंजीरों में बांधकर महल से कुछ ही दूरी पर स्थित एक घर में पहरेदारों के साथ कैद करवा दिया। राजकुमार ने दृढ़ निश्चय से कहा, "यदि मैं अपने भाई का शत्रु हूँ, तो मेरी जंजीरें न खोली जाएँ और न ही दरवाजा खोला जाए; अन्यथा, मेरी जंजीरें खोल दी जाएँ और दरवाजा खोल दिया जाए।" यह कहते ही जंजीरें टूट गईं और दरवाजा खुल गया। वह निकल पड़ा और सीमावर्ती गाँव में जाकर वहीं बस गया। गाँव वालों ने उसे पहचान लिया और उसकी सेवा करने लगे, जिससे राजा उसे गिरफ्तार नहीं कर सका। कुछ समय बाद वह सीमावर्ती क्षेत्र का स्वामी बन गया और उसके पास अब एक बड़ा अनुयायी दल था। उसने मन ही मन सोचा, "अगर मैं पहले अपने भाई का शत्रु नहीं था, तो अब मैं उसका शत्रु अवश्य हूँ।" और वह एक विशाल सेना लेकर मिथिला गया और शहर के बाहरी इलाके में डेरा डाला। गाँव वालों ने सुना कि राजकुमार पोलाजनका आ गया है, और उनमें से अधिकांश अपने हाथियों और अन्य सवारी पशुओं के साथ उसके पास पहुँच गए, और अन्य शहरों के निवासी भी उनके साथ इकट्ठा हो गए। उसने अपने भाई को संदेश भेजा, "मैं पहले तुम्हारा शत्रु नहीं था, लेकिन अब मैं तुम्हारा शत्रु अवश्य हूँ; या तो राजसी छत्र मुझे सौंप दो या युद्ध करो।" जब राजा युद्ध करने गया, तो उसने अपनी प्रमुख रानी को विदाई दी। “हे देवी,” उसने कहा, “युद्ध में विजय और पराजय का पूर्वानुमान नहीं लगाया जा सकता। यदि मेरी मृत्यु हो जाए, तो गर्भ में पल रहे बच्चे की सावधानीपूर्वक रक्षा करना।” इतना कहकर वह चला गया; और कुछ ही समय बाद पोलाजनका के सैनिकों ने युद्ध में उसे मार डाला। राजा की मृत्यु की खबर से पूरे शहर में अफरा-तफरी मच गई। रानी को जब पता चला कि राजा मर गया है, तो उसने जल्दी से अपना सोना और कीमती खजाना एक टोकरी में रखा और उसके ऊपर एक कपड़ा बिछाकर कुछ भुने हुए चावल फैला दिए; फिर उसने कुछ गंदे कपड़े पहनकर और अपना रूप बदलकर टोकरी को अपने सिर पर रखा और दिन के एक असामान्य समय पर बाहर निकल गई, और किसी ने उसे पहचाना नहीं। वह उत्तरी द्वार से निकली; लेकिन उसे रास्ता नहीं पता था, क्योंकि वह पहले कभी कहीं नहीं गई थी और दिशाओं का भी उसे ज्ञान नहीं था; इसलिए, चूंकि उसने केवल कालचम्पा नामक एक शहर के बारे में सुना था, वह बैठ गई और लोगों से पूछने लगी कि क्या कोई कालचम्पा शहर जा रहा है। अब उसके गर्भ में कोई साधारण बच्चा नहीं था, बल्कि वह परम सिद्धियों को प्राप्त करने के बाद पुनर्जन्म लिया हुआ महान प्राणी था, और उसकी महिमा से सक्का (इंद्र) का सारा संसार कांप उठा। सक्का (इंद्र) सोचने लगा कि इसका कारण क्या हो सकता है।और उसने सोचा कि उसके गर्भ में किसी महान गुणी प्राणी का जन्म हुआ होगा, और उसे जाकर उसे देखना चाहिए; इसलिए उसने एक ढका हुआ रथ बनाया और उसमें पलंग बिछाया और उस घर के द्वार पर खड़ा हो गया जहाँ वह बैठी थी, मानो कोई बूढ़ा व्यक्ति रथ चला रहा हो, और उसने पूछा कि क्या कोई कालचम्पा जाना चाहता है। "मैं वहाँ जाना चाहती हूँ, पिताजी।" "तो इस रथ में चढ़िए, देवी, और बैठ जाइए।" "पिताजी, मैं गर्भवती हूँ, और मैं चढ़ नहीं सकती; मैं पीछे-पीछे आऊँगी, लेकिन मुझे मेरी टोकरी के लिए जगह दीजिए।" "क्या कह रही हो, माँ? मेरे जैसा रथ चलाना तो कोई नहीं जानता; डरिए मत, बस चढ़ जाइए और बैठ जाइए।" अपनी दिव्य शक्ति से उसने धरती को ऊपर उठाया जैसे ही वह चढ़ रही थी, और उसे रथ के पिछले हिस्से से छू लिया। वह चढ़ गई और पलंग पर लेट गई, और उसे पता चल गया कि यह कोई देवता (देवदूत) होगा। जैसे ही वह दिव्य पलंग पर लेटी, वह सो गई। तीस मील (4.23 किमी) की दूरी तय करने के बाद, सक्का (इंद्र) एक नदी के पास पहुँचे और उन्होंने माँ को जगाते हुए कहा, "माँ, नीचे उतरकर नदी में स्नान करो; पलंग के सिरहाने पर एक चादर है, उसे ओढ़ लो; और रथ में खाने के लिए एक रोटी है, उसे खा लो।" माँ ने ऐसा ही किया और फिर लेट गईं। शाम को जब वे चंपा पहुँचीं और द्वार, मीनार और दीवारों को देखा, तो उन्होंने पूछा कि यह कौन सा शहर है। उन्होंने उत्तर दिया, "माँ, चंपा शहर।" "पिताजी, आप क्या कह रहे हैं? क्या हमारे शहर से चंपा की दूरी साठ मील (4.23 किमी) नहीं है?" "हाँ, माँ, लेकिन मुझे सीधा रास्ता पता है।" तब उन्होंने माँ को दक्षिणी द्वार से नीचे उतारा; "माँ, मेरा गाँव आगे है, क्या तुम शहर में प्रवेश करो?" इतना कहकर सक्का (इंद्र) आगे बढ़े और गायब होकर अपने स्थान पर चले गए।उसने ऐसा ही किया और फिर लेट गई। शाम को जब वह चम्पा पहुँची और उसने द्वार, मीनार और दीवारें देखीं, तो उसने पूछा कि यह कौन सा शहर है। उसने उत्तर दिया, "चम्पा शहर, माँ।" "आप क्या कहते हैं, पिताजी? क्या हमारे शहर से चम्पा की दूरी साठ मील (4.23 किमी) नहीं है?" "हाँ, माँ, लेकिन मुझे सीधा रास्ता पता है।" तब उसने उसे दक्षिणी द्वार से नीचे उतारा; "माँ, मेरा गाँव आगे है, क्या तुम शहर में प्रवेश करोगी?" ऐसा कहकर

सक्का (इंद्र) आगे बढ़ गया और गायब होकर अपने स्थान पर चला गया।उसने ऐसा ही किया और फिर लेट गई। शाम को जब वह चम्पा पहुँची और उसने द्वार, मीनार और दीवारें देखीं, तो उसने पूछा कि यह कौन सा शहर है। उसने उत्तर दिया, "चम्पा शहर, माँ।" "आप क्या कहते हैं, पिताजी? क्या हमारे शहर से चम्पा की दूरी साठ मील (4.23 किमी) नहीं है?" "हाँ, माँ, लेकिन मुझे सीधा रास्ता पता है।" तब उसने उसे दक्षिणी द्वार से नीचे उतारा; "माँ, मेरा गाँव आगे है, क्या तुम शहर में प्रवेश करोगी?" ऐसा कहकर सक्का (इंद्र) आगे बढ़ गया और गायब होकर अपने स्थान पर चला गया।

रानी एक विशेष कक्ष में बैठ गईं। उसी समय चंपा में रहने वाला एक ब्राह्मण, जो भजन गाता था, अपने पाँच सौ शिष्यों के साथ स्नान करने जा रहा था। उसने देखा कि रानी वहाँ अत्यंत सुंदर और आकर्षक रूप से बैठी हैं। गर्भ में पल रहे शिशु के कारण, उन्हें देखते ही उनके मन में उनके लिए एक छोटी बहन जैसा स्नेह उत्पन्न हो गया। अपने शिष्यों को बाहर रोककर वह अकेले कक्ष में गए और रानी से पूछा, "बहन, आप किस गाँव में रहती हैं?" रानी ने कहा, "मैं मिथिला के राजा अरित्तजनक की प्रधान रानी हूँ। उन्होंने पूछा, 'आप यहाँ क्यों आई हैं?' रानी ने कहा, "राजा को पोलजनक ने मार डाला है, और मैं भयवश अपने अजन्मे बच्चे को बचाने के लिए यहाँ आई हूँ।' 'क्या इस शहर में आपका कोई रिश्तेदार है?' रानी ने कहा, 'कोई नहीं है, पिता जी।' 'चिंता मत कीजिए; मैं एक महान कुल का उत्तरी ब्राह्मण हूँ, दूर-दूर तक प्रसिद्ध शिक्षक हूँ। मैं आपकी देखभाल अपनी बहन की तरह करूँगा। मुझे अपना भाई कहिए और मेरे पैर थामकर जोर से रोइए।" वह ज़ोर-ज़ोर से रोने लगी और उनके चरणों में गिर पड़ी, और दोनों ने एक-दूसरे को सांत्वना दी। उनके शिष्य दौड़ते हुए आए और उनसे पूछा कि यह सब क्या है। उन्होंने कहा, "यह मेरी सबसे छोटी बहन है, जिसका जन्म उस समय हुआ जब मैं दूर था।" "हे गुरु, शोक न करें, अब आपने उसे आखिरकार देख लिया है।" उन्होंने एक भव्य रथ मंगवाया और उसे उसमें बैठाकर अपने घर भेज दिया, और उनसे कहा कि वे उनकी पत्नी को बता दें कि यह उनकी बहन है और उसे सब कुछ करना है। उनकी ब्राह्मण पत्नी ने उसे गर्म पानी से नहलाया और उसके लिए पलंग तैयार किया और उसे लिटा दिया। ब्राह्मण ने स्नान किया और घर लौट आए; और भोजन के समय उन्होंने उनसे अपनी बहन को बुलाने के लिए कहा और उसके साथ भोजन किया, और घर में उसकी देखभाल की। कुछ समय बाद उसने एक पुत्र को जन्म दिया, और उन्होंने उसका नाम उसके दादा के नाम पर राजकुमार महाजनक रखा। जैसे-जैसे वह बड़ा हुआ और लड़कों के साथ खेलता था, जब वे अपने शुद्ध क्षत्रिय जन्म का दावा करके उसे चिढ़ाते थे, तो वह अपनी श्रेष्ठ शक्ति और साहस से उन्हें करारा प्रहार करता था। जब वे जोर से चिल्लाते और उनसे पूछा जाता कि उन्हें किसने मारा है, तो वे जवाब देते, "विधवा के बेटे ने।" राजकुमार ने सोचा, "ये हमेशा मुझे विधवा का बेटा कहते हैं, मैं अपनी माँ से इसके बारे में पूछूंगा"; इसलिए एक दिन उसने अपनी माँ से पूछा, "माँ, मैं किसका बेटा हूँ?" माँ ने उसे धोखा देते हुए कहा कि ब्राह्मण उसका पिता है। जब उसने एक और दिन उन्हें पीटा और उन्होंने उसे विधवा का बेटा कहा, तो उसने जवाब दिया कि ब्राह्मण उसका पिता है; और जब उन्होंने पलटकर पूछा, "ब्राह्मण से तुम्हारा क्या लेना-देना है?" तो उसने सोचा, "ये लड़के मुझसे कहते हैं 'ब्राह्मण से तुम्हारा क्या लेना-देना है?' मेरी माँ मुझे यह बात नहीं समझाएगी, वह अपनी इज्जत के लिए मुझे सच नहीं बताएगी, चलो, मैं उससे सच उगलवाऊंगा।" इसलिए जब वह उसका दूध पी रहा था, तो उसने उसका स्तन काट लिया और उससे कहा, "मुझे बताओ कि मेरा पिता कौन है, अगर तुम नहीं बताओगी तो मैं तुम्हारा स्तन काट दूंगा।" माँ उसे धोखा देने में असमर्थ रही, इसलिए उसने कहा,"मेरे बच्चे, तुम मिथिला के राजा अरित्तजनक के पुत्र हो; तुम्हारे पिता को पोलजनक ने मार डाला था, और मैं तुम्हें बचाने के लिए इस नगर में आई थी, और ब्राह्मण ने मुझे अपनी बहन की तरह माना और मेरी देखभाल की।" उस समय से, विधवा का पुत्र कहे जाने पर उसे क्रोध नहीं आता था; और सोलह वर्ष की आयु से पहले ही उसने तीनों वेद और सभी विद्याएँ सीख ली थीं; और सोलह वर्ष की आयु तक वह बहुत सुंदर हो गया था। तब उसने मन ही मन सोचा, "मैं अपने पिता का राज्य छीन लूँगा"; इसलिए उसने अपनी माता से पूछा, "क्या तुम्हारे पास धन है? यदि नहीं, तो मैं व्यापार करके धन कमाऊँगा और अपने पिता का राज्य छीन लूँगा।" "पुत्र, मैं खाली हाथ नहीं आई हूँ, मेरे पास राज्य प्राप्त करने के लिए पर्याप्त मोती, रत्न और हीरे हैं - इन्हें ले लो और सिंहासन पर कब्जा कर लो; व्यापार मत करो।" "माँ," उसने कहा, "मुझे वह धन दे दो, लेकिन मैं उसका आधा ही लूँगा और सुवन्नाभूमि (संभवतः थाईलैंड) जाकर वहाँ से अपार धन प्राप्त करूँगा और फिर राज्य पर कब्ज़ा कर लूँगा।" उसने माँ से आधा धन लाने को कहा और अपना सारा सामान इकट्ठा करके कुछ व्यापारियों के साथ सुवन्नाभूमि जाने वाले एक जहाज़ पर रख दिया और अपनी माँ को विदाई देते हुए कहा कि वह उस देश के लिए रवाना हो रहा है। "मेरे बेटे," माँ ने कहा, "समुद्र में सफलता की संभावना कम है और खतरे बहुत हैं, मत जाओ, तुम्हारे पास राज्य पर कब्ज़ा करने के लिए पर्याप्त धन है।" लेकिन उसने अपनी माँ से कहा कि वह जाएगा, इसलिए उसने विदाई ली और जहाज़ पर सवार हो गया। उसी दिन पोलजनक के शरीर में एक बीमारी फैल गई और वह अपने बिस्तर से उठ नहीं सका। सात कारवां अपने पशुओं (*1) के साथ जहाज़ पर सवार थे; सात दिनों में जहाज ने सात सौ लीग (4.23 किमी) की दूरी तय की, लेकिन अपनी यात्रा में अत्यधिक उग्रता के कारण वह टिक नहीं सका: उसके तख्ते टूट गए, पानी का स्तर बढ़ता गया, और जहाज समुद्र के बीचोंबीच डूबने लगा जबकि चालक दल रोते-बिलखते और अपने-अपने देवताओं (देवदूतों) का आह्वान करते रहे। लेकिन उस महान सत्ता ने न तो रोया, न शोक मनाया और न ही किसी देवता का आह्वान किया, बल्कि यह जानते हुए कि जहाज का अंत निश्चित है, उसने कुछ चीनी और घी (स्पष्ट मक्खन) को मला, और पेट भरकर भोजन करने के बाद, उसने अपने दो साफ वस्त्रों पर तेल लगाया और उन्हें कसकर अपने चारों ओर लपेट लिया और मस्तूल से टेक लगाकर खड़ा हो गया। जब जहाज डूबा तो मस्तूल सीधा खड़ा रहा। जहाज पर सवार भीड़ मछलियों और कछुओं का भोजन बन गई, और चारों ओर का पानी खून के रंग का हो गया; लेकिन महापुरुष, मस्तूल पर खड़े होकर, मिथिला की दिशा का पता लगाकर, मस्तूल के शीर्ष से ऊपर की ओर उड़े

और अपनी शक्ति से मछलियों और कछुओं को पार करते हुए जहाज से 140 भुजाओं की दूरी पर गिरे। उसी दिन पोलाजनक का निधन हो गया। उसके बाद महापुरुष ने रत्नजड़ित लहरों को पार किया, मानो सोने के ढेर की तरह अपना मार्ग बनाते हुए, उन्होंने एक सप्ताह को एक दिन की तरह गुजार दिया।और जब उसने फिर से तट देखा तो उसने खारे पानी से अपना मुँह धोया (*2) और उपवास रखा। उस समय, विश्व के चार रक्षकों ने मणिमेखला नामक देवदूतों की एक पुत्री को समुद्र का रक्षक नियुक्त किया था। उन्होंने उससे कहा, "जिन प्राणियों में माता के प्रति आदर जैसे गुण होते हैं, वे समुद्र में गिरने के योग्य नहीं होते; ऐसे प्राणियों का ध्यान रखना।" लेकिन उन सात दिनों तक उसने समुद्र की ओर नहीं देखा था, क्योंकि कहा जाता है कि दिव्य सुख के आनंद में उसकी स्मृति कमजोर हो गई थी, और कुछ लोग तो यह भी कहते हैं कि वह किसी दिव्य सभा में उपस्थित होने गई थी। अंत में, उसने देखा और मन ही मन कहा, "यह सातवाँ दिन है जब मैंने समुद्र की ओर नहीं देखा है, वहाँ कौन आ रहा है?" जब उसने उस महान प्राणी को देखा तो उसने मन ही मन सोचा, "यदि राजकुमार महाजनक समुद्र में मर गए होते तो मैं दिव्य सभा में प्रवेश कर जाती!" (*3) अत: एक अलंकृत रूप धारण करके वह बोधिसत्व से कुछ ही दूरी पर हवा में खड़ी हो गई और उनकी शक्तियों का परीक्षण करते हुए पहले श्लोक का उच्चारण किया।

"तुम कौन हो, जो यहाँ समुद्र के बीचोंबीच, धरती से दूर, पूरी ताकत से संघर्ष कर रहे हो?"
वह कौन सा मित्र है जिस पर आप सबसे अधिक भरोसा करते हैं और जो आपकी मदद करने के लिए हमेशा तैयार रहता है?
बोधिसत्व ने उत्तर दिया, "सागर में यह मेरा सातवां दिन है, मैंने अपने अलावा किसी दूसरे प्राणी को नहीं देखा है, कौन हो सकता है जो मुझसे बात कर रहा है?" इसलिए, आकाश की ओर देखते हुए, उन्होंने दूसरा श्लोक कहा:

"संसार में अपने कर्तव्य को जानते हुए, हे देवी, जब तक मैं कर सकता हूँ, कड़ी मेहनत करनी चाहिए।"
यहां समुद्र के बीचोंबीच, धरती से दूर, मैं एक पुरुष की तरह अपनी पूरी कोशिश करता हूं।"
अच्छी शिक्षा सुनने की इच्छा से उसने उससे तीसरा श्लोक कहा:

"यहाँ इस गहरे और असीम वीरान इलाके में जहाँ किनारा कहीं भी दिखाई नहीं देता,
तुम्हारे सारे प्रयास व्यर्थ हैं, तुम्हें यहीं समुद्र के बीचोंबीच मरना होगा।"
बोधिसत्व ने उत्तर दिया, "तुम ऐसा क्यों कहते हो? यदि मैं अपने सर्वोत्तम प्रयासों के बावजूद मर जाऊं, तो भी मैं दोष से बच जाऊंगा," और उन्होंने एक श्लोक कहा:

जो व्यक्ति अपनी क्षमता के अनुसार सब कुछ करता है, वह अपने परिवार के प्रति अपराधबोध से मुक्त होता है।
स्वर्ग के स्वामी ने भी उन्हें निर्दोष घोषित कर दिया और उन्हें कोई पछतावा नहीं हुआ।
तब देवी ने एक श्लोक बोला:

"ऐसे प्रयासों का क्या फायदा, जहाँ व्यर्थ परिश्रम ही एकमात्र लाभ हो?"
जहां जीतने पर कोई इनाम नहीं मिलता, और सारी पीड़ा के बदले सिर्फ मौत मिलती है?
तब बोधिसत्व ने उसकी विवेकहीनता को दर्शाने के लिए ये श्लोक कहे:

जो यह सोचता है कि जीतने के लिए कुछ नहीं है और जब तक संभव हो तब तक युद्ध नहीं करेगा,
चाहे नुकसान कितना भी हुआ हो, दोष उसी का हो या उसके कमजोर दिल का ही नतीजा था।
इस संसार में मनुष्य अपनी योजनाएँ बनाते हैं और अपना काम वैसे ही करते हैं जैसे उन्हें सर्वोत्तम लगता है।
योजनाएँ सफल हो सकती हैं या असफल भी हो सकती हैं, बाकी सब कुछ अज्ञात भविष्य ही तय करता है।
हे देवी, क्या आप नहीं देखतीं? आज यहाँ हमारे अपने कर्म ही निर्णायक हैं;
बाकी सब डूब गए, मैं बच गया, और तुम मेरे साथ खड़े हो।
इसलिए मैं समुद्र को पार करके तट तक पहुंचने के लिए हमेशा अपनी पूरी कोशिश करूंगा;
जब तक मुझमें शक्ति बनी रहेगी, मैं कड़ी मेहनत करता रहूंगा।
और तब तक हार नहीं मानूंगा जब तक मैं और प्रयास करने में सक्षम न रहूं।"
देवी ने उनके सशक्त शब्दों को सुनकर प्रशंसा में एक श्लोक कहा:

"तुम जो इस भयंकर, असीम सागर के बीच बहादुरी से लड़ते रहते हो।"
और न ही वह निर्धारित कार्य से पीछे हटता है, बल्कि कर्तव्य की पुकार पर प्रयासरत रहता है।
जहां तुम्हारा मन चाहे वहां जाओ, न तो कोई बाधा आने दो और न ही कोई रुकावट।

फिर उसने उससे पूछा कि वह उसे कहाँ ले जाए, और उसके उत्तर "मिथिला नगर" पर, उसने उसे माला की तरह ऊपर उछाला और दोनों बाहों में थामकर उसे अपनी गोद में लिटा लिया, मानो वह उसका प्रिय बच्चा हो, और हवा में उछल पड़ी। सात दिनों तक बोधिसत्व सोता रहा, उसका शरीर नमक की फुहार से भीगा हुआ था और दिव्य स्पर्श से रोमांचित था। फिर वह उसे मिथिला ले आई और उसे आम के बाग में एक अनुष्ठानिक पत्थर पर दाहिनी ओर लिटा दिया, और उसे बाग की देवियों की देखरेख में छोड़कर अपने निवास स्थान पर चली गई। अब पोलाजनक का कोई पुत्र नहीं था: उसकी केवल एक ही पुत्री थी, बुद्धिमान और विद्वान, जिसका नाम शिवलीदेवी था। मृत्युशय्या पर उनसे पूछा गया था, "हे राजा, जब आप देवदूत बन जाएँगे, तो हम राज्य किसे सौंपेंगे?" और उसने कहा, "इसे उसे दो जो राजकुमारी, मेरी पुत्री सिवली को प्रसन्न कर सके, या जो जानता हो कि चौकोर पलंग का सिरहाना कौन सा है, या जो उस धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ा सके जिसे हज़ार पुरुषों की शक्ति की आवश्यकता होती है, या जो सोलह महान खजाने निकाल सके।" "हे राजा, हमें खजानों की सूची बताइए।" तब राजा ने उसे दोहराया:

"उगते सूरज का खजाना, उसके अस्त होते सूरज का खजाना,"
बाहर का खजाना, भीतर का खजाना, और वह खजाना जो न तो बाहर है और न ही भीतर,
चढ़ाई पर, उतरने पर, चार साल के स्तंभ, योजन चक्र,
दांतों का सिरा, पूंछ का सिरा, केबुका, पेड़ों के सिरे,
ये सोलह अनमोल खजाने हैं, और ये वहीं रहते हैं जहाँ ये पाए जाते हैं।
"वह धनुष जो हजारों पुरुषों को, बिस्तर को, और महिला के दिल को प्रसन्न करने का काम सौंपता है।"
इन खजानों के अलावा, राजा ने अन्य खजानों की भी एक सूची दोहराई। उनकी मृत्यु के बाद मंत्रियों ने उनका अंतिम संस्कार किया और सातवें दिन वे सब एकत्रित होकर विचार-विमर्श करने लगे: "राजा ने कहा था कि राज्य उसे दिया जाएगा जो उनकी पुत्री को प्रसन्न कर सके, परन्तु कौन उन्हें प्रसन्न कर पाएगा?" उन्होंने कहा, "सेनापति राजा का प्रिय है," इसलिए उन्होंने उसे आदेश भेजा। वह तुरंत राजद्वार पर आया और राजकुमारी को बताया कि वह वहाँ खड़ा है। राजकुमारी, उसके आने का कारण जानते हुए और यह परखने के इरादे से कि क्या उसमें राजसी छत्र धारण करने की बुद्धि है, उसे आने का आदेश दिया। आदेश सुनकर और उसे प्रसन्न करने की इच्छा से, वह सीढ़ियों के नीचे से तेजी से दौड़ा और उसके पास खड़ा हो गया। फिर उसकी परीक्षा लेने के लिए, राजकुमारी ने कहा, "जल्दी से समतल जमीन पर दौड़ो।" वह आगे की ओर उछला, यह सोचकर कि वह राजकुमारी को प्रसन्न कर रहा है। राजकुमारी ने उससे कहा, "यहाँ आओ।" वह पूरी गति से आया। राजकुमारी ने उसकी बुद्धिहीनता देखी और कहा, "आओ और मेरे पैर मल दो।" उसे प्रसन्न करने के लिए, वह बैठ गया और उसके पैर मल दिए। फिर उसने अपने पैर से उसकी छाती पर वार किया और उसे पीठ के बल गिरा दिया, और उसने अपनी दासियों को इशारा किया, "इस अंधे और बेसुध मूर्ख को मारो और उसका गला पकड़कर उसे बाहर फेंक दो"; और उन्होंने वैसा ही किया। "तो, सेनापति?" उन्होंने कहा; उसने उत्तर दिया, "कोई बात नहीं, वह इंसान नहीं है।" फिर कोषाध्यक्ष गया, लेकिन उसने उसे भी उसी तरह शर्मिंदा किया। इसी तरह कैशियर, छाता रखने वाला, तलवार चलाने वाला: उसने उन सभी को शर्मिंदा किया। फिर लॉटरी ने विचार-विमर्श किया और कहा, "कोई भी राजकुमारी को प्रसन्न नहीं कर सकता: उसे उसे दे दो जो उस धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ा सके जिसे हजार पुरुषों की शक्ति की आवश्यकता होती है।" लेकिन कोई भी उस पर प्रत्यंचा नहीं चढ़ा सका। फिर उन्होंने कहा, "उसे उसे दे दो जो जानता हो कि चौकोर पलंग का सिरहाना कौन सा है।" लेकिन कोई भी नहीं जानता था। "तो उसे उसे दे दो जो सोलह महान खजाने निकाल सके।" लेकिन कोई भी उन्हें नहीं निकाल सका। फिर उन्होंने आपस में सलाह की, "राजा के बिना राज्य की रक्षा नहीं की जा सकती; क्या किया जाए?" तब कुल पुरोहित ने उनसे कहा, "चिंता मत करो; हमें उत्सव रथ भेजना ही होगा, उत्सव रथ से जो राजा प्राप्त होगा, वह समस्त भारत पर शासन करने में सक्षम होगा।" अतः वे सहमत हो गए, और नगर को सजाकर, उत्सव रथ में कमल के रंग के चार घोड़े जोतकर, उन पर चादर बिछाकर और राजसी पाँच ध्वज लगाकर, उन्होंने रथ को चार समूहों (हाथी, घुड़सवार, रथ और पैदल सैनिक) की सेना से घेर लिया। अब, जिस रथ में सवार होता है, उसके आगे वाद्ययंत्र बजाए जाते हैं, और जिसके पीछे कोई सवार नहीं होता, उसके पीछे वाद्ययंत्र बजाए जाते हैं; अतः कुल पुरोहित ने उनसे वाद्ययंत्र पीछे बजाने का आदेश दिया, और रथ की पट्टा और चाबुक पर सोने का रस छिड़ककर, रथ को उस व्यक्ति के पास जाने का आदेश दिया, जो राज्य पर शासन करने के योग्य हो।रथ महल के चारों ओर घूमा और ढोल-नगाड़े वाली सड़क पर आगे बढ़ा। सेनापति और अन्य राजकीय अधिकारियों को लगा कि रथ उनकी ओर आ रहा है, लेकिन वह उन सभी के घरों के पास से गुजरा और शहर का चक्कर लगाकर पूर्वी द्वार से बाहर निकलकर उद्यान की ओर चला गया। जब उन्होंने रथ को इतनी तेज़ी से जाते देखा, तो उन्होंने उसे रोकने का सोचा; लेकिन जब कुलपुजारी ने कहा, "इसे मत रोको; इसे सौ मील (4.23 किमी) तक जाने दो," तो रथ उद्यान में प्रवेश कर गया और अनुष्ठानिक पत्थर के चारों ओर घूमकर रुक गया, मानो सवार होने के लिए तैयार हो। कुलपुजारी ने बोधिसत्व को वहाँ लेटे हुए देखा और मंत्रियों से कहा, "महोदय, मैं किसी को पत्थर पर लेटा हुआ देख रहा हूँ; हम नहीं जानते कि वह श्वेत छत्र के योग्य ज्ञान रखता है या नहीं; यदि वह पवित्र गुणों वाला प्राणी है तो वह हमारी ओर नहीं देखेगा, लेकिन यदि वह अपशगुन का प्राणी है तो वह घबराकर उठ खड़ा होगा और कांपते हुए हमारी ओर देखेगा; तब सभी वाद्ययंत्र बजाओ।" फिर उन्होंने सैकड़ों वाद्ययंत्र बजाए, ऐसा लगा जैसे समुद्र का शोर हो। उस शोर से महान सत्ता जाग उठीं और अपना सिर ढककर चारों ओर देखा तो उन्हें वह विशाल समूह दिखाई दिया; यह समझकर कि यह वही सफेद छतरी है जो उनके पास आई है, उन्होंने फिर से अपना सिर ढक लिया और करवट लेकर बाईं ओर लेट गए। कुलपुजारी ने उनके पैर ढके और निशान देखकर कहा,

"एक महाद्वीप की तो बात ही छोड़िए, वह चारों महाद्वीपों पर शासन कर सकते हैं," इसलिए उन्होंने वाद्ययंत्रों को फिर से बजाने का आदेश दिया।

बोधिसत्व ने अपना चेहरा ढकने वाला वस्त्र हटा दिया और मुड़कर अपनी दाहिनी ओर लेट गए तथा भीड़ की ओर देखने लगे। कुलपुजारी ने लोगों को सांत्वना दी, हाथ जोड़कर नीचे झुके और कहा, "उठिए, मेरे स्वामी, राज्य आपका है।" उन्होंने उत्तर दिया, "राजा कहाँ हैं?"

"वह मर गया है।" "क्या उसका कोई पुत्र या भाई नहीं है?" "कोई नहीं, महाराज।" "ठीक है, मैं राज्य संभाल लूँगा"; यह कहकर वह उठा और पत्थर की पटिया पर पालथी मारकर बैठ गया। फिर उन्होंने वहीं उसका राज्याभिषेक किया और उसे राजा महाजनक कहा जाने लगा। इसके बाद वह रथ पर सवार हुआ और राजसी वैभव के साथ नगर में प्रवेश करके महल में गया और सेनापति और अन्य अधिकारियों के लिए अलग-अलग स्थान निर्धारित करके चबूतरे पर विराजमान हुआ। अब राजकुमारी ने राजा के पहले व्यवहार से ही उसकी परीक्षा लेने की इच्छा से एक दूत को उसके पास भेजा और कहा, "राजा के पास जाओ और उनसे कहो, 'राजकुमारी सिवली तुम्हें बुला रही हैं, जल्दी जाओ।' बुद्धिमान राजा ने मानो उसकी बात अनसुनी कर दी और महल का वर्णन जारी रखा, "यह ऐसा और ऐसा ही अच्छा होगा।" राजा का ध्यान आकर्षित करने में असमर्थ होकर वह चला गया और राजकुमारी से कहा, "महाराज ने आपकी बात सुनी, लेकिन वह केवल महल का वर्णन करते रहे और आपकी बिल्कुल भी परवाह नहीं की।" राजकुमारी ने मन ही मन सोचा, "वह जरूर एक महान आत्मा वाला व्यक्ति होगा," और दूसरा और तीसरा दूत भेजा। अंत में राजा अपनी इच्छा से, अपनी सामान्य गति से, शेर की तरह जम्हाई लेते हुए महल में चढ़ गया। जैसे ही वह पास आया, राजकुमारी उसके राजसी रूप के सामने स्थिर नहीं रह सकी; और पास आकर उसने उसे सहारा देने के लिए अपना हाथ दिया। राजा ने उसका हाथ पकड़ लिया और चबूतरे पर चढ़ गया, और सफेद छतरी के नीचे शाही पलंग पर बैठकर उसने मंत्रियों से पूछा, "जब राजा की मृत्यु हुई, तो क्या उसने कुछ छोड़ा था?" क्या आपके पास कोई निर्देश हैं?" तब उन्होंने उसे बताया कि राज्य उसे दिया जाएगा जो राजकुमारी सिवली को प्रसन्न कर सके। "जब मैं पास आया तो राजकुमारी सिवली ने मुझे सहारा देने के लिए अपना हाथ दिया; अतः मैं उसे प्रसन्न करने में सफल रहा; मुझे कुछ और बताओ।" "उसने कहा कि राज्य उसे दिया जाएगा जो यह तय कर सके कि चौकोर पलंग का सिरहाना कौन सा है।" राजा ने उत्तर दिया, "यह बताना कठिन है, लेकिन एक युक्ति से इसका पता लगाया जा सकता है," इसलिए उसने अपने सिर से एक सोने की सुई निकाली और राजकुमारी के हाथ में देते हुए कहा, "इसे इसकी जगह पर रख दो।" उसने उसे लिया और पलंग के सिरहाना में रख दिया। इसी प्रकार कहावत में भी कहा गया है, "उसने उसे तलवार दी (*4)।" उस संकेत से वह जान गया कि सिरहाना कौन सा है, और मानो उसने यह पहले कभी नहीं सुना हो, उसने पूछा कि वे क्या कह रहे हैं, और जब उन्होंने इसे दोहराया, तो उसने उत्तर दिया, "यह जानना कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि सिरहाना कौन सा है"; और ऐसा कहते हुए, उसने पूछा कि क्या कोई और परीक्षा है। "महाराज, उसने हमें आदेश दिया है कि राज्य उसे दिया जाए जो उस धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ा सके जिसे चलाने के लिए हजार पुरुषों की शक्ति की आवश्यकता होती है।" जब वे उसके आदेश पर उसे ले आए, तो उसने पलंग पर बैठे-बैठे ही उस पर प्रत्यंचा चढ़ा दी, मानो वह कपास की कलकल करने वाला किसी स्त्री का धनुष हो (*5)। "मुझे कुछ और बताओ," उसने कहा। "उसने हमें आदेश दिया कि हम राज्य उसे सौंप दें जो सोलह महान खजाने निकाल सके।""क्या कोई सूची है?" और उन्होंने पहले बताई गई सूची को दोहराया। जैसे-जैसे वह सुनता गया, अर्थ उसके लिए आकाश में चंद्रमा की तरह स्पष्ट होता गया। "आज समय नहीं है, हम खजाना कल ले लेंगे।" अगले दिन उसने मंत्रियों को इकट्ठा किया और उनसे पूछा, "क्या आपके राजा ने पच्चेक-बुद्धों को भोजन कराया था?" जब उन्होंने सकारात्मक उत्तर दिया, तो उसने मन ही मन सोचा, "यह सूर्य नहीं हो सकता, लेकिन पच्चेक-बुद्धों को सूर्य के समान होने के कारण सूर्य कहा जाता है; "खजाना वहीं होना चाहिए जहाँ वह उनसे मिलने जाया करता था।" फिर उसने उनसे पूछा, "जब पच्चेक-बुद्ध आए, तो वह उनसे कहाँ मिलने जाया करता था?" उन्होंने उसे फलाँ जगह बताई; इसलिए उसने उनसे उस जगह को खोदकर वहाँ से खजाना निकालने को कहा, और उन्होंने ऐसा ही किया। "जब वह उनके जाने के बाद उनके पीछे गया, तो उसने कहाँ खड़े होकर उन्हें विदाई दी?" उन्होंने उसे बताया, और उसने उनसे वहाँ से खजाना निकालने को कहा, और उन्होंने ऐसा ही किया। उन सभी ने हजारों जयकारे लगाए और अपने दिल की खुशी और प्रसन्नता व्यक्त करते हुए कहा, "जब वे पहले सूर्योदय के बारे में सुनते थे, तो वे सूर्योदय की दिशा में खुदाई करते हुए इधर-उधर भटकते थे, और जब वे सूर्यास्त के बारे में सुनते थे, तो वे सूर्यास्त की दिशा में खुदाई करते हुए जाते थे, लेकिन असली धन तो यहाँ है, असली चमत्कार तो यहीं है।" जब उन्होंने कहा, "अंदर का खजाना," तो उसने महल के बड़े द्वार के भीतर की दहलीज से खजाना निकाला; "बाहर का खजाना," - उसने बाहर की दहलीज से खजाना निकाला; "न तो भीतर का खजाना," - उसने "न ही भीतर का खजाना," - "और बाहर भी नहीं,"— उसने दहलीज के नीचे से खजाना निकाला; "चढ़ने के समय,"—उसने उस स्थान से खजाना निकाला जहाँ शाही हाथी पर चढ़ने के लिए सोने की सीढ़ी लगाई गई थी; "उतरने के समय,"—उसने उस स्थान से खजाना निकाला जहाँ शाही हाथी के कंधों से लोग उतरे थे; "चार बड़े साल के खंभे,"—शाही पलंग के चार बड़े पैर थे, जो साल की लकड़ी से बने थे, जहाँ दरबारी जमीन पर प्रणाम करते थे, और उनके नीचे से उसने खजाने से भरे चार घड़े निकाले; "एक योजन के चारों ओर,"—अब योजन रथ का जुआ होता है, इसलिए उसने जुए की लंबाई के बराबर शाही पलंग के चारों ओर खुदाई की और वहाँ से खजाने के घड़े निकाले; "दांतों के अंत में खजाना,"—उस स्थान पर जहाँ शाही हाथी खड़ा था, उसने "उसके दो दांतों" के सामने से दो खजाने निकाले; "उसकी पूंछ के अंत में,"—उस स्थान पर जहाँ शाही

घोड़ा खड़ा था वह खड़ा हुआ और अपनी पूंछ के विपरीत दिशा से घड़े निकाल लाया; "केबुका में"; अब पानी को केबुका कहा जाता है; इसलिए उसने शाही झील का पानी निकलवाया और वहाँ एक खजाना प्रकट किया; "पेड़ों के सिरों पर खजाना," - उसने शाही बगीचे में बड़े साल के पेड़ों के नीचे दोपहर में पड़ने वाली छाया के घेरे के भीतर दफन खजाने के घड़े निकाले।इस प्रकार सोलह खजाने निकालकर राजा ने पूछा कि क्या और कुछ है, तो लोगों ने उत्तर दिया "नहीं"। लोग प्रसन्न हुए। राजा ने कहा, "मैं इस धन को दान के मुख में अर्पित करूँगा"; अतः उसने नगर के मध्य में और चारों द्वारों पर पाँच भिक्षागृह बनवाए और दान का व्यापक वितरण किया। फिर उसने अपनी माता और कालचम्पा के ब्राह्मण को बुलवाया और उनका भव्य आदर किया।

अपने शासनकाल के आरंभिक दिनों में, अरित्तजनक के पुत्र राजा महाजनक ने विदेह के समस्त राज्यों पर शासन किया। "लोग कहते हैं कि राजा बुद्धिमान हैं, हम उनसे मिलने जाएँगे," इसलिए सारा नगर उनसे मिलने के लिए उत्सुक था और विभिन्न स्थानों से लोग उपहार लेकर आए; उन्होंने नगर में एक भव्य उत्सव का आयोजन किया, महल की दीवारों को अपने हाथों के आभापत्रों से मढ़ दिया (*6), इत्र और फूलों की मालाएँ टांगीं, भुने हुए अनाज, फूल, इत्र और धूप फेंककर वातावरण को अंधकारमय कर दिया और खाने-पीने की हर तरह की व्यवस्था कर दी। राजा को भेंट अर्पित करने के लिए वे चारों ओर एकत्रित होकर खड़े हो गए, और कठोर एवं नरम भोजन, तथा सभी प्रकार के पेय और फल लाए, जबकि राजा के मंत्रियों का समूह एक तरफ, ब्राह्मणों का समूह दूसरी तरफ, धनी व्यापारी और अन्य लोग, तथा सबसे सुंदर नर्तकियाँ बैठी थीं; उत्सव गीतों में निपुण ब्राह्मण स्तुतिगान गायकों ने अपने हर्षोल्लास भरे गीत ऊँची आवाज़ में गाए, सैकड़ों वाद्ययंत्र बजाए गए, राजा का महल एक विशाल ध्वनि से भर गया मानो वह युगंधर सागर के केंद्र में हो (*7);-- उनकी दृष्टि जहाँ भी जाती, वह स्थान काँप उठता। श्वेत छत्र के नीचे बैठे बोधिसत्व ने सक्का (इंद्र) की महिमा के समान भव्य वैभव देखा और उन्हें विशाल सागर में अपने संघर्ष याद आए; "साहस धारण करना ही उचित है, यदि मैंने विशाल सागर में साहस न दिखाया होता, तो क्या मैं कभी इस महिमा को प्राप्त कर पाता?" यह याद आते ही उनके मन में आनंद उमड़ आया और वे विजयघोष कर उठे (*8)। इसके बाद उन्होंने दस राजसी कर्तव्यों का पालन किया और धर्मपूर्वक शासन किया तथा पच्चेक-बुद्धों की सेवा की। समय बीतने पर रानी शिवली ने एक पुत्र को जन्म दिया जो सभी शुभ लक्षणों से परिपूर्ण था और उन्होंने उसका नाम दिघावु-कुमार रखा। जब वह बड़ा हुआ तो उसके पिता ने उसे वायसराय बना दिया। एक दिन जब माली राजा के लिए तरह-तरह के फल और फूल लाया, तो राजा उन्हें देखकर प्रसन्न हुआ और उसने राजा को सम्मान का पाठ पढ़ाया और कहा कि वह बगीचे को सजाए और स्वयं दर्शन करने आएगा। माली ने राजा को यह सूचना दी और वह अपने शाही हाथी पर सवार होकर अपने सेवकों से घिरा हुआ बगीचे के द्वार से अंदर आया। द्वार के पास ही दो चमकीले हरे आम के पेड़ थे, एक पर फल नहीं थे, जबकि दूसरा बहुत मीठे फलों से लदा हुआ था। चूंकि राजा ने फल नहीं खाए थे, इसलिए किसी ने भी उन्हें तोड़ने का साहस नहीं किया। राजा ने अपने हाथी पर सवार होकर एक फल तोड़ा और खा लिया। जैसे ही आम उसकी जीभ के अंतिम छोर को छूआ, मानो एक दिव्य स्वाद उत्पन्न हुआ और उसने मन ही मन सोचा, "वापस आकर मैं कई और आम खाऊंगा।" लेकिन जब एक बार यह पता चला कि राजा ने पेड़ का पहला फल खा लिया है, तो वायसराय से लेकर हाथी के रखवालों तक सभी लोग इकट्ठा हो गए और कुछ फल खाए, और जिन्होंने फल नहीं खाए थे उन्होंने लाठियों से शाखाओं को तोड़ दिया और पत्तों को नोच डाला, यहाँ तक कि वह पेड़ पूरी तरह से टूट-फूट गया, जबकि दूसरा पेड़ रत्नों के पहाड़ की तरह सुंदर खड़ा रहा।जब राजा बाग से बाहर आए, तो उन्होंने उसे देखा और अपने मंत्रियों से उसके बारे में पूछा। मंत्रियों ने उत्तर दिया, "भीड़ ने देखा कि महाराज ने पहला फल खा लिया है और उन्होंने उसे लूट लिया है। लेकिन इस दूसरे पेड़ का एक पत्ता भी नहीं झड़ा है और न ही इसका रंग बदला है।" "इसका रंग इसलिए नहीं झड़ा क्योंकि इस पर फल नहीं लगे थे।" राजा बहुत भावुक हो गए, "यह पेड़ बिना फल के भी हरा-भरा है, जबकि इसका साथी फल के कारण टूट-फूट गया है। यह राज्य फलदार पेड़ के समान है, लेकिन तपस्वी जीवन बंजर पेड़ के समान है; भय तो संपत्ति के मालिक को होता है, न कि उसके पास कुछ भी न होने को। मैं फलदार पेड़ के समान होने के बजाय बंजर पेड़ के समान होऊंगा, अपनी सारी शान-शौकत छोड़कर, संसार का त्याग कर तपस्वी बन जाऊंगा।" यह दृढ़ निश्चय करके, वह नगर में प्रवेश किया और महल के द्वार पर खड़े होकर अपने सेनापति को बुलवाया और उससे कहा, "हे सेनापति, आज से मेरे चेहरे को केवल एक सेवक ही देखे जो मेरा भोजन लाए और दूसरा जो मुझे पानी और टूथब्रश दे, और मेरे पुराने मुख्य न्यायाधीशों को अपने साथ ले जाकर उनकी सहायता से मेरे राज्य का शासन चलाए: मैं अब से महल के शीर्ष पर एक बौद्ध भिक्षु का जीवन व्यतीत करूँगा।" ऐसा कहकर वह अकेले ही महल के शीर्ष पर चला गया और एक बौद्ध भिक्षु के रूप में रहने लगा। समय बीतने पर लोग प्रांगण में एकत्रित हुए और जब उन्होंने बोधिसत्व को नहीं देखा तो उन्होंने कहा, "यह हमारे पुराने राजा जैसा नहीं है," और उन्होंने दो श्लोक दोहराए:और उन्होंने दो छंद दोहराए:और उन्होंने दो छंद दोहराए:

"हमारे राजा, समस्त पृथ्वी के स्वामी, अब पहले जैसे नहीं रहे।"
आज वह किसी भी आनंदमय गीत पर ध्यान नहीं देता और न ही नर्तकों को देखने की परवाह करता है;
हिरण, बगीचा और हंस उसकी खोई हुई नजर को आकर्षित करने में असफल रहते हैं।
वह चुपचाप, स्तब्ध होकर बैठा रहता है और राज्य की चिंताओं को अपने ऊपर से गुजरने देता है।
उन्होंने बटलर और सेवक से पूछा, "क्या राजा कभी आपसे बात करते हैं?" उन्होंने उत्तर दिया, "कभी नहीं।" फिर उन्होंने बताया कि कैसे राजा, ध्यान (मौन और विचारों में वैराग्य) में लीन होकर, सभी इच्छाओं से विरक्त होकर, अपने पुराने मित्रों, पच्चेक-बुद्धों को याद

कर रहे थे, और मन ही मन कह रहे थे, "मुझे उन प्राणियों का निवास स्थान कौन दिखाएगा जो सभी आसक्तियों से मुक्त और सभी गुणों से परिपूर्ण हैं?" और उन्होंने अपने गहन भावों को तीन श्लोकों में व्यक्त किया:

"सभी की नजरों से छिपा हुआ, आनंद में लीन, सभी बंधनों और नश्वर भय से मुक्त,"
किसके सुंदर उद्यान में, वृद्ध और युवा, एक साथ वे दिव्य द्रष्टा निवास करते हैं?
उन्होंने सभी इच्छाओं को त्याग दिया है, मैं उन सुखी और गौरवशाली संतों को आशीर्वाद देता हूँ।
एक ऐसी दुनिया के बीच जहाँ भावनाओं को त्याग दिया गया है, वे शांति और भावहीनता से विचरण करते हैं।
वे सब मृत्यु के जाल और छल-कपट से बच निकले हैं।
सभी बंधनों से मुक्त होकर वे अपनी इच्छा से विचरण करते हैं, हे मुझे कौन बताएगा कि वे कहाँ हैं?
महल में इस प्रकार तपस्वी जीवन व्यतीत करते हुए चार माह बीत गए, और अंततः उनका मन संसार त्यागने की ओर दृढ़ हो गया: उनका अपना घर उन्हें संसार के विभिन्न रूपों के बीच स्थित नरकों में से एक प्रतीत हुआ (*9), और तीनों लोक-पद्धतियाँ (*10) उन्हें आग की लपटों में घिरी हुई दिखाई दीं। इसी मनोस्थिति में वे मिथिला का वर्णन करने लगे, और सोचने लगे, "वह समय कब आएगा जब मैं इस मिथिला को, जो इंद्र के महल की तरह सुशोभित है, छोड़कर हिमवत (हिमालय) जा सकूँ और वहाँ तपस्वी का वस्त्र धारण कर सकूँ?"

मैं इस मिथिला को कब छोड़ूंगा, चाहे वह कितना भी विशाल और शानदार क्यों न हो?
वास्तुकारों द्वारा नियमों और रेखाओं को इस तरह से व्यवस्थित किया गया है कि वे देखने में सुंदर लगें।
दीवारों, फाटकों और बुर्जों से घिरा हुआ, चारों ओर सड़कों से घिरा हुआ,
घोड़ों, गायों और रथों से भरी भीड़ के साथ, तालाबों और उद्यानों को सजाया गया था,
विदेह की सुप्रसिद्ध राजधानी, अपने शूरवीरों और योद्धाओं की सेनाओं से रंगीन,
बाघ की खाल से बने वस्त्र पहने, झंडे लहराते और हथियार फहराते हुए,
इसके ब्राह्मण काशी वस्त्र पहने हुए, चंदन से सुगंधित और रत्नों से सजे हुए हैं।
इसके महल और उनकी सभी रानियाँ राजसी वस्त्रों और मुकुटों से सजी हुई!
मैं कब उन्हें छोड़कर आगे बढ़ूंगा, तपस्वी के एकांत आनंद को प्राप्त करने के लिए?
अपने चिथड़े और पानी का घड़ा लिए, वह सुखी जीवन कब शुरू होगा?
मैं कब जंगलों में घूमूंगा और उनके स्वादिष्ट फल खाऊंगा?
एकांत में अपने हृदय को उसी प्रकार लयबद्ध करना जैसे कोई सात तारों वाले वीणा को लयबद्ध करता है (*12),
वर्तमान या भविष्य के लाभ की आशा से अपनी आत्मा को मुक्त करते हुए,
जैसे मोची(*13) अपने जूते को आकार देता है
खुरदुरे सिरों को काट देता है और इसे सादा छोड़ देता है(*14)
उनका जन्म ऐसे समय में हुआ था जब मनुष्य 10,000 वर्ष की आयु तक जीवित रहते थे; इसलिए 7,000 वर्षों तक शासन करने के बाद, अपने जीवन के शेष 3,000 वर्ष रहते हुए ही वे संन्यासी बन गए। संन्यासी जीवन अपनाने के बाद भी वे आम के वृक्ष को देखने के चार महीने बाद तक एक घर में ही रहे; लेकिन यह सोचकर कि महल से संन्यासी का घर बेहतर होगा, उन्होंने चुपके से अपने सेवक को बाजार से कुछ पीले वस्त्र और एक मिट्टी का पात्र लाने का आदेश दिया। फिर उन्होंने एक नाई को बुलवाया और उससे अपने बाल और दाढ़ी कटवाई; उन्होंने एक पीला वस्त्र भीतरी वस्त्र के रूप में, दूसरा ऊपर का वस्त्र के रूप में और तीसरा अपने कंधे पर लपेट लिया, तथा अपने पात्र को एक थैली में रखकर कंधे पर लटका लिया; फिर अपनी छड़ी लेकर वे पच्चेक-बुद्ध के विजयी कदमों से ऊपरी मंजिल पर कई बार आगे-पीछे चले। उस दिन वह वहीं ठहरे रहे, परन्तु अगले दिन सूर्योदय होते ही वे नीचे उतरने लगे। रानी सिवली ने सात सौ प्रिय रखेलों को बुलवाया और उनसे कहा, “राजा को देखे हुए बहुत समय हो गया है, पूरे चार महीने हो गए हैं, आज हम उनसे मिलेंगे, तुम सब सज-धज कर, अपनी सुंदरता और आकर्षण का प्रदर्शन कर, और उन्हें वासना के जाल में फंसाने का प्रयास करो।” सभी सजी-धजी रखेलों के साथ रानी राजा से मिलने महल गईं; परन्तु यद्यपि उन्होंने राजा को नीचे आते देखा, पर उन्हें पहचान नहीं पाईं, और यह सोचकर कि कोई पच्चेक-बुद्ध राजा को उपदेश देने आए हैं, उन्होंने प्रणाम किया और एक तरफ खड़ी हो गईं; और बोधिसत्व महल से नीचे उतरे। लेकिन जब रानी महल में चढ़ी और उसने राजा के मधुमक्खी के रंग के बालों को राजसी पलंग पर पड़ा देखा, और उसके कक्ष की वस्तुओं को भी उसी पलंग पर पड़ा देखा, तो वह चिल्लाई, "वह कोई पच्चेक-बुद्ध नहीं थे, वह तो हमारे प्रिय स्वामी ही होंगे, हम उनसे वापस आने की विनती करेंगे।" अतः वह ऊपरी मंजिल से नीचे उतरकर महल के प्रांगण में पहुँची, और वहाँ की सभी रानियों ने अपने बाल खोलकर अपनी पीठ पर गिरा लिए और अपने हाथों से अपनी छाती पीटते हुए राजा के पीछे-पीछे विलाप करते हुए बोलीं, "हे महान राजा, आप ऐसा क्यों कर रहे हैं?" सारा शहर व्याकुल हो गया, और सभी लोग राजा के पीछे-पीछे रोते हुए चले, "लोग कहते हैं कि हमारे राजा तपस्वी बन गए हैं, हमें ऐसा न्यायप्रिय शासक फिर कभी कैसे मिलेगा?"

फिर गुरु ने स्त्रियों के रोने का वर्णन करते हुए और राजा के उन सबको छोड़कर चले जाने का वर्णन करते हुए ये छंद कहे:

वहाँ सात सौ रानियाँ खड़ी थीं, अपनी भुजाएँ फैलाकर पीड़ा और विनती कर रही थीं।
अपने सभी आभूषणों से सजे हुए, उन्होंने पूछा, "महान राजा, आप हमें इस तरह क्यों छोड़ रहे हैं?"
लेकिन उन सात सौ सुंदर, कोमल और दयालु रानियों को छोड़कर, महान राजा
उन्होंने दृढ़ संकल्प के साथ, बिना डगमगाए, अपनी प्रतिज्ञा के मार्गदर्शन का पालन किया।
शाही वैभव और राज्य के पुराने प्रतीक, उद्घाटन प्याले (*15) को छोड़कर,
वह आज अपना मिट्टी का घड़ा लेकर एक नए करियर की शुरुआत करने जा रहा है।"
सिसकती हुई शिवली ने राजा को रोकने में असमर्थ पाकर, एक नए उपाय के रूप में सेनापति को बुलवाया और उनसे राजा के सामने, उस दिशा में स्थित पुराने घरों और खंडहरों के बीच आग जलाने और घास-पत्ते इकट्ठा करके विभिन्न स्थानों पर घना धुआँ करने का अनुरोध किया। उन्होंने ऐसा ही किया। फिर वह राजा के पास गईं और उनके चरणों में गिरकर दो छंदों में उन्हें बताया कि मिथिला आग की लपटों में घिरी हुई है।

भयंकर आग भड़क उठी है, भंडार और खजाने जल रहे हैं।
चांदी, सोना, रत्न, सीप और मोती, ये सभी बारी-बारी से उपभोग किए जाते हैं;
कीमती वस्त्र, हाथी दांत, तांबा, चमड़ा, सब कुछ एक ही निर्दयी भाग्य का सामना करता है;
"हे राजा, वापस लौट आओ और बहुत देर होने से पहले अपनी संपत्ति बचा लो।"
बोधिसत्व ने उत्तर दिया, "हे रानी, तुम क्या कह रही हो? जिनके पास धन है, उनकी संपत्ति जलाई जा सकती है, लेकिन मेरे पास कुछ भी नहीं है।"

"जिनके पास अपना कुछ भी नहीं है, वे बिना किसी चिंता या आह के जी सकते हैं।"
मिथिला के महल जल सकते हैं, लेकिन मेरी कोई भी चीज उससे नहीं जलेगी (*16)।"
ऐसा कहकर वह उत्तरी द्वार से बाहर चले गए, और उनकी रानियाँ भी बाहर चली गईं। रानी सिवली ने उनसे पूछा कि गाँव कैसे नष्ट हो रहे हैं और भूमि कैसे उजाड़ रही है; तो उन्होंने उन्हें दिखाया कि कैसे सशस्त्र पुरुष इधर-उधर भाग रहे हैं और विभिन्न दिशाओं में लूटपाट कर रहे हैं, जबकि अन्य, लाल लाख से सने हुए, घायल या मृत अवस्था में तख्तों पर ले जाए जा रहे हैं। लोगों ने चिल्लाकर कहा, "हे राजा, जब आप राज्य की रक्षा कर रहे हैं, तब वे आपकी प्रजा को लूट रहे हैं और मार रहे हैं।" तब रानी ने राजा से वापस लौटने की विनती करते हुए एक श्लोक दोहराया:

"जंगली वनवासी भूमि को उजाड़ देते हैं, लौटते हैं और हम सभी को बचाते हैं;
"अपने उस राज्य को, जिसे तुमने त्याग दिया है, निराशाजनक विनाश में गिरने न दो।"
राजा ने सोचा, "जब तक मैं शासन कर रहा हूँ, कोई लुटेरा राज्य को लूटने के लिए विद्रोह नहीं कर सकता, यह अवश्य ही शिवलीदेवी का आविष्कार होगा," इसलिए उसने शिवलीदेवी की बात न समझते हुए इन श्लोकों को दोहराया:

"जिनके पास अपना कुछ नहीं है, वे बिना किसी चिंता या आह के जी सकते हैं।"
राज्य भले ही उजाड़ पड़ा हो, लेकिन इससे मेरी किसी चीज को कोई नुकसान नहीं होगा।
जिनके पास अपना कुछ भी नहीं है, वे बिना किसी चिंता या आह के जी सकते हैं।
आभासर देवता की तरह परम आनंद में मग्न होकर (*17)
उसके ऐसा कहने के बाद भी लोग उसके पीछे-पीछे चलते रहे। तब उसने मन ही मन कहा, "ये लौटना नहीं चाहते, मैं इन्हें वापस भेज दूँगा।" इसलिए लगभग आधा मील चलने के बाद वह वापस मुड़ा और मुख्य मार्ग पर खड़े होकर अपने मंत्रियों से पूछा, "यह किसका राज्य है?" "आपका, हे राजा।" "तो जो भी इस रेखा को पार करे, उसे दंडित करो," ऐसा कहकर उसने अपनी छड़ी से एक रेखा खींच दी। कोई भी उस रेखा को पार नहीं कर सका; और उस रेखा के पीछे खड़े लोग ज़ोर-ज़ोर से रोने लगे। रानी भी उस रेखा को पार नहीं कर सकी और राजा को अपनी ओर पीठ करके आगे बढ़ते देख वह अपने दुःख को रोक नहीं पाई और अपना सीना पीटते हुए, गिरकर ज़बरदस्ती रेखा पार कर गई। लोग चिल्लाए, "रेखा रक्षकों ने रेखा तोड़ दी है," और वे रानी के पीछे-पीछे चल दिए। महान पुरुष उत्तरी हिमवत (हिमालय) की ओर चल पड़ा। रानी भी उसके साथ गई, अपने साथ पूरी सेना और सवारी के लिए जानवर भी ले गई। लोगों को रोकने में असमर्थ राजा साठ मील (4.23 किमी) की यात्रा पर आगे बढ़ गया। उस समय, नारद नामक एक तपस्वी, जो हिमालय में स्थित स्वर्ण गुफा में रहते थे, पाँचों अलौकिक शक्तियों से परिपूर्ण थे। सात दिनों तक समाधि में रहने के बाद, वे समाधि से उठे और विजयोन्माद से चिल्ला रहे थे, "हे आनंद, हे आनंद!" और अपनी दिव्य दृष्टि से यह देखने के लिए भारत में खोज करते हुए कि क्या कोई इस आनंद की तलाश में है, उन्होंने महाजनक को देखा, जो संभावित बुद्ध थे। उन्होंने सोचा, "राजा ने महान त्याग किया है, लेकिन वे रानी सिवली के नेतृत्व में उनका अनुसरण करने वाले लोगों को वापस नहीं रोक सकते, वे उनके मार्ग में बाधा डाल सकते हैं, और मैं उन्हें उनके संकल्प को और अधिक दृढ़ करने के लिए एक सलाह दूंगा"; इसलिए अपनी दिव्य शक्ति से वे राजा के सामने हवा में खड़े हो गए और उनके संकल्प को मजबूत करने के लिए इस प्रकार बोले:

"यह सारा शोरगुल और कोलाहल किस कारण से है, मानो किसी गांव में छुट्टी का माहौल हो?"
यह भीड़ यहाँ क्यों इकट्ठी हुई है? क्या तपस्वी कृपया इसका उत्तर देंगे?
राजा ने उत्तर दिया:

मैंने सीमा पार कर ली है और सांसारिक जीवन को त्याग दिया है।
इसी वजह से ये सारे लोग यहाँ आए हैं;
मैं उन्हें प्रसन्न मन से विदा करता हूँ:
आपको तो सब पता है, फिर मुझसे क्यों पूछ रहे हो?
फिर तपस्वी ने अपने संकल्प की पुष्टि करने के लिए एक श्लोक दोहराया:

"यह मत सोचो कि तुम इस शरीर के साथ अभी भी कष्ट में हो, तब तक पार कर चुके हो;"
अभी भी कई दुश्मन सामने हैं, आपने अभी तक अपनी जीत हासिल नहीं की है।"
उस महान सत्ता ने कहा:

न तो ज्ञात सुख और न ही अज्ञात सुख मेरी समर्पित आत्मा को झुकाने की शक्ति रखते हैं।
"कौन सा दुश्मन मुझे मेरे रास्ते से रोक सकता है जब मैं अंत की ओर बढ़ता रहूं?"
फिर उन्होंने बाधाओं का वर्णन करते हुए एक श्लोक दोहराया:

"नींद, आलस्य, सुख की ओर मुड़े हुए भटकते विचार, अत्यधिक भोजन, असंतुष्ट मन--"
शरीर इन अंतरंग मेहमानों को अपने साथ लाता है, आपको अनेक बाधाओं का सामना करना पड़ेगा।"
तब उस महान सत्ता ने इस श्लोक में उनकी प्रशंसा की:

"बुद्धिमान ब्राह्मण, आपके चेतावनी भरे शब्द हैं, इसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूं, अजनबी।"
कृपया मेरे प्रश्न का उत्तर दें; आप कौन हैं, बताइए, और आपका नाम क्या है?
नारद ने उत्तर दिया:

"जान लो मैं नाम से नारद हूँ, एक कश्यप (*18); मेरा स्वर्गिक विश्राम"
मैं बस आपको यह बताने के लिए निकला था कि बुद्धिमानों की संगति करना सबसे अच्छा है।
चारों सिद्धियों का अभ्यास करें, इस अभ्यास में आपको सर्वोच्च आनंद मिलेगा;
जिस भी चीज की आपको अभी भी कमी है, उसे धैर्य और शांत भाव से पूरा करें;
अहंकार के उच्च विचार हों, अहंकार के निम्न विचार हों, न यह, न वह, ये सब ऋषि को शोभा नहीं देता;
अपने तीर्थयात्रा के रक्षक के रूप में सद्गुण, ज्ञान और कानून को अपनाएं।
फिर नारद आकाश से होते हुए अपने निवास स्थान पर लौट गए। उनके जाने के बाद, मिगाजिना नामक एक अन्य तपस्वी, जो अभी-अभी समाधि से उठे थे, ने उस महान सत्ता को देखा और उन्हें सलाह देने का निश्चय किया ताकि वे लोगों को विदा कर दें; इसलिए वे उनके ऊपर आकाश में प्रकट हुए और इस प्रकार बोले:

घोड़े और हाथी, और वे जो शहर या गाँव में रहते हैं,
हे जनक, आपने उन सबको छोड़ दिया है: मिट्टी का कटोरा आपको अच्छी तरह संतुष्ट करता है।
कहो, क्या तुम्हारी प्रजा या तुम्हारे मित्र, तुम्हारे मंत्री या तुम्हारे प्रिय रिश्तेदार हैं?
क्या विश्वासघात से आपका दिल इतना आहत हुआ है कि आपने यहाँ शरण लेने का फैसला किया है?
बोधिसत्व ने उत्तर दिया:

"हे द्रष्टा, कभी भी, किसी भी समय, किसी भी स्थान पर, किसी भी बहाने से,
क्या मैंने किसी मित्र के साथ कोई गलत काम किया है और न ही किसी मित्र ने मेरे साथ कोई गलत काम किया है?
मैंने संसार को पीड़ा से त्रस्त, दुख और पाप से अंधकारमय देखा;
मैंने इसके पीड़ितों को बांधकर मारते हुए देखा, जो असहाय रूप से इसके चंगुल में फंसे हुए थे;
मैंने स्वयं को चेतावनी दी और यहीं से तपस्वी जीवन की शुरुआत हुई।
और अधिक जानने की इच्छा से तपस्वी ने उससे पूछा:

"कोई भी व्यक्ति तब तक तपस्वी जीवन का चुनाव नहीं करता जब तक कि कोई शिक्षक उसे मार्ग न दिखाए।"

अभ्यास से या सिद्धांत से: आपका पवित्र गुरु कौन था, बताइए।
उस महान सत्ता ने उत्तर दिया:

"हे द्रष्टा, मैंने आज तक कभी ऐसे शब्द नहीं सुने जिन्होंने मेरे हृदय को स्पर्श किया हो।"
ब्राह्मण या तपस्वी के मुख से, मुझसे तपस्वी का मार्ग चुनने के लिए कहा जा रहा है।"
फिर उन्होंने उसे विस्तार से बताया कि उन्होंने सांसारिक जीवन क्यों त्याग दिया था:

"गर्मी के एक दिन मैं अपने शाही उद्यान में पूरे गर्व के साथ घूम रहा था,"
चारों ओर गीतों और मधुर वाद्ययंत्रों की गूंज सुनाई दे रही थी।
और वहाँ मैंने एक आम का पेड़ देखा, जो दीवार के पास जड़ पकड़ चुका था।
यह पूरी तरह से टूटा-फूटा और उन असभ्य भीड़ द्वारा लूटा हुआ खड़ा था जो इसके फलों की तलाश में आई थी।
चौंककर मैंने अपने शाही परिधान छोड़ दिए और उत्सुकता भरी नजरों से देखने के लिए रुक गया।
इस फलदार वृक्ष के विपरीत, पास ही में एक बंजर वृक्ष उग रहा था।
फलदार वृक्ष वहाँ उदास खड़ा था, उसके सारे पत्ते झड़ गए थे, उसकी शाखाएँ नंगी थीं।
वह बंजर वृक्ष हरा-भरा और मजबूत खड़ा था, उसकी पत्तियां हवा में लहरा रही थीं।
हम राजा उस फलदार वृक्ष के समान हैं, जिसके अनेक शत्रु हमें गिराने के लिए तत्पर रहते हैं।
और हमसे उस सुखद फल को छीन लेते हैं जो हम थोड़े समय के लिए दिखाते हैं।
हाथी को उसके दांत के लिए और पैंथर को उसकी खाल के लिए मार दिया जाता है।
अंत में बेघर और दोस्तविहीन हो जाने पर धनी लोग अपनी दौलत को ही अपनी कमजोरी पाते हैं;
वे दो वृक्ष मेरे शिक्षक थे, उन्हीं से मैंने अपना पाठ सीखा।
राजा की बात सुनकर मिगाजिना ने उन्हें गंभीर होने के लिए प्रोत्साहित किया और अपने निवास स्थान पर लौट गया।

जब वह चला गया, तो रानी सिवली राजा के चरणों में गिर पड़ी और बोली,

रथों में सवार हों या हाथियों पर, पैदल सैनिक हों या घुड़सवार, सभी एक साथ हों,
आपकी प्रजा एक साथ विलाप करती है, "हमारे राजा हमें छोड़कर चले गए हैं!"
हे प्रभु, सर्वप्रथम उनके दुखी हृदयों को सांत्वना दीजिए और उनके स्थान पर अपने पुत्र को शासक के रूप में ताज पहनाइए;
फिर, यदि आप चाहें, तो संसार को त्यागकर तीर्थयात्री के एकाकी मार्ग पर चलें।"
बोधिसत्व ने उत्तर दिया:

मैंने अपनी सारी प्रजा, मित्र, रिश्तेदार, घर और जन्मभूमि सब कुछ पीछे छोड़ दिया है;
लेकिन विदेह वंश के कुलीन, दिघावु ने कमान संभालने के लिए प्रशिक्षित किया था।
हे मिथिला की रानी, भयभीत न हों, वे आपका हाथ थामने के लिए निकट ही उपस्थित रहेंगे।
रानी ने कहा, "हे राजा, आप तो तपस्वी बन गए हैं, मैं क्या करूँ?" तब उन्होंने उससे कहा, "मैं तुम्हें सलाह देता हूँ, मेरी बात मानो";
इसलिए उन्होंने उससे इस प्रकार कहा:

"यदि तुम मेरे पुत्र को शासन करना सिखाओगे, तो वह विचार, वचन और कर्म से पापी होगा,"
तुम्हारा अंत बुरा ही होगा—यही तुम्हारा भाग्य तय है;
ज्ञानी लोग कहते हैं कि दान में प्राप्त भिखारी का हिस्सा ही हमारी एकमात्र आवश्यकता है।
इस प्रकार उसने उसे सलाह दी, और वे दोनों बातें करते-करते सूर्यास्त हो गया।

रानी ने एक उपयुक्त स्थान पर डेरा डाला, जबकि राजा एक पेड़ की जड़ में जाकर रात वहीं बिताई और अगले दिन स्नान करने के बाद अपने रास्ते पर चल दिए। रानी ने सेना को पीछे आने का आदेश दिया और उनके पीछे-पीछे चलीं। भिक्षा मांगने के समय वे थुना नामक नगर में पहुँचे। उस समय नगर में एक व्यक्ति कसाईखाने से मांस का एक बड़ा टुकड़ा खरीदकर उसे कोयलों पर भूनकर ठंडा होने के लिए एक तख्ते पर रख रहा था; लेकिन जब वह किसी और काम में व्यस्त था, तो एक कुत्ता उसे लेकर भाग गया। वह व्यक्ति नगर के दक्षिणी द्वार तक उसका पीछा करता रहा, लेकिन थककर वहीं रुक गया। राजा और रानी अलग-अलग कुत्ते के आगे आ रहे थे, जिसे देखकर कुत्ता घबराकर मांस गिरा कर भाग गया। महान सत्ता ने यह देखा और सोचा, "उसने इसे गिरा दिया और अनदेखा करके चला गया, असली मालिक अज्ञात है, इससे अच्छा मांस का कोई दूसरा उपहार नहीं है: मैं इसे खाऊंगा।" इसलिए उसने अपनी मिट्टी की थाली निकाली और मांस उठाकर उसे पोंछा, फिर थाली में रखकर एक सुखद स्थान पर गया जहाँ पानी था और उसे खा लिया। रानी ने मन ही मन सोचा, "यदि राजा राज्य के योग्य होता तो वह कुत्ते का धूल भरा बचा हुआ मांस नहीं खाता; वह वास्तव में मेरा पति नहीं है"; और

उसने ऊँचे स्वर में कहा, "हे महान राजा, क्या आप ऐसा घिनौना टुकड़ा खा रहे हैं?" उसने उत्तर दिया, "यह तुम्हारी अपनी अंधता है जो तुम्हें इस मांस के टुकड़े का विशेष महत्व देखने से रोक रही है"; इसलिए उसने उस स्थान की सावधानीपूर्वक जाँच की जहाँ वह गिरा था, और उसे अमृत (देवताओं का पेय) मानकर खाया, फिर अपना मुँह, हाथ और पैर धोए।

तब रानी ने निंदा भरे शब्दों में उसे संबोधित किया:

"भोजन का समय आ जाए तो उपवास रखने पर व्यक्ति की मृत्यु हो जाएगी।"
फिर भी, इस सब के बावजूद, एक नेक आत्मा को इस तरह के घिनौने भोजन का स्वाद चखना पसंद नहीं आएगा;
तुमने जो किया वह उचित नहीं है, तुम पर शर्म है, हे राजा, मैं कहता हूँ, तुम पर शर्म है;
कुत्ते का बचा हुआ खाना खाकर तुमने बहुत ही घिनौना काम किया है।
उस महान सत्ता ने उत्तर दिया:

"मेरे विचार से, गृहस्वामी या कुत्ते का बचा हुआ भोजन वर्जित भोजन नहीं है।"
"यदि भोजन वैध साधनों से प्राप्त किया गया हो, तो वह सभी भोजन शुद्ध और वैध है, महारानी।"
बातें करते-करते वे नगरद्वार पर पहुँचे। वहाँ कुछ लड़के खेल रहे थे और एक लड़की एक छोटी सी सूप की टोकरी में रेत छान रही थी। उसके एक हाथ में एक कंगन था और दूसरे में दो; ये दोनों कंगन आपस में खनक रहे थे, तीसरा कंगन शांत था। राजा ने यह सब देखा और मन ही मन सोचा, "शिवाली मेरा पीछा करती रहती है; पत्नी तपस्वी की कमजोरी होती है, और लोग मुझे दोष देते हैं और कहते हैं कि सांसारिक जीवन त्यागने के बाद भी मैं अपनी पत्नी को नहीं छोड़ सकता; यदि यह लड़की बुद्धिमान है, तो वह शिवाली को बता पाएगी कि उसे वापस क्यों लौट जाना चाहिए और मुझे क्यों छोड़ देना चाहिए। मैं उसकी कहानी सुनूंगा और शिवाली को विदा कर दूंगा।" इसलिए उसने उससे कहा:

"अपनी माँ की देखरेख में दुबकी हुई, बच्ची, तुम्हारे ऊपर ये गहने बंधे हुए हैं,"
एक हाथ इतना संगीतमय क्यों है जबकि दूसरा कभी कोई आवाज नहीं निकालता?
लड़की ने जवाब दिया:

"वैरागी, मैं इस हाथ में एक के बजाय दो कंगन पहनता हूँ।"
उनकी आवाज उनके संपर्क से आती है, यह उस पल से तय होता है जब यह किया जाता है।
लेकिन मेरे दूसरे हाथ पर ध्यान दीजिए: उस पर एक ही कंगन था।
वह अपनी जगह पर स्थिर रहता है और कोई आवाज नहीं करता, शांत रहता है क्योंकि वहां कोई और नहीं होता।
दूसरा झनझनाता है और कर्कश ध्वनि उत्पन्न करता है, जो अकेला होता है वह कर्कश ध्वनि उत्पन्न नहीं कर सकता;
क्या आप खुश रहेंगे? अकेले रहिए; अकेले रहने वाले ही खुश रहते हैं।
लड़की की बातें सुनकर उसने इस विचार को अपनाया और रानी को संबोधित किया:

"सुनो वो क्या कहती है; ये नौकरानी मुझे शर्म से चूर कर देगी।"
यदि मैं आपकी विनती मान लूँ, तो दोष दूसरे पर ही आएगा।
यहां दो रास्ते हैं: क्या आप एक रास्ता चुनेंगे, या दूसरा रास्ता मैं स्वयं चुनूंगा;
अब से मुझे पति मत कहना, तुम मेरी पत्नी नहीं हो: अलविदा।"
रानी ने उसकी बात सुनकर उससे दाहिनी ओर का बेहतर रास्ता लेने को कहा, जबकि उसने बायां रास्ता चुना; लेकिन थोड़ी दूर जाने के बाद, अपने दुख को रोक न पाने के कारण, वह फिर उसके पास आई, और वह और राजा एक साथ शहर में प्रवेश कर गए।

इस बात को समझाते हुए गुरु ने कहा: "ये शब्द कहते हुए वे थुना नगर में प्रवेश कर गए।"

उनके प्रवेश करने के बाद, बोधिसत्व भिक्षा मांगने के लिए आगे बढ़े और एक बाणकार के घर के द्वार पर पहुँचे, जबकि सिवली एक तरफ खड़े थे। उस समय बाणकार ने कोयले के बर्तन में एक बाण को गर्म किया था और उसे खट्टी चावल की दलिया से गीला किया था, और एक आँख बंद करके दूसरी आँख से बाण को सीधा कर रहा था। बोधिसत्व ने सोचा, "यदि यह व्यक्ति बुद्धिमान है, तो वह घटना का स्पष्टीकरण दे सकेगा, मैं उससे पूछूंगा"; इसलिए वे उसके पास गए।

गुरु ने एक श्लोक में घटी घटना का वर्णन किया:

"वह एक तीर बनाने वाले के घर भिक्षा मांगने आया; वह आदमी एक आंख बंद करके खड़ा था।"
और दूसरी तरफ से उसने हाथ में मौजूद तीर को आकार देने की कोशिश की।

तब उस महान सत्ता ने उससे कहा:

"एक आंख को सबसे करीब रखें और दूसरी आंख को बगल में रखकर देखें, क्या यह सही है?"
मैं आपसे अनुरोध करता हूं, कृपया अपने दृष्टिकोण को स्पष्ट करें; क्या आपको लगता है कि इससे आपकी दृष्टि में सुधार होता है?
उसने जवाब दिया:

"दोनों आंखों का विस्तृत क्षितिज केवल दृश्य को विचलित करने का काम करता है;
लेकिन अगर आपको एक भी लाइन मिल जाए, तो आपका लक्ष्य तय हो जाता है, आपकी दृष्टि सही हो जाती है।
यह दूसरी चीज है जो घड़े बनाती है, जो अकेली होती है वह घड़े नहीं बना सकती;
क्या आप खुश रहेंगे? अकेले रहिए; अकेले रहने वाले ही खुश रहते हैं।
इन सलाहों के बाद वह चुप हो गया। महान प्राणी अपने भ्रमण पर आगे बढ़ा और विभिन्न प्रकार का भोजन एकत्र करके नगर से बाहर निकल गया और पानी से सुसज्जित एक सुखद स्थान पर बैठ गया; और अपना सारा काम निपटाने के बाद उसने अपना कटोरा अपने थैले में रख दिया और सिवली को संबोधित किया:

"तुम तीर बनाने वाले की बात सुनो: उस लड़की की तरह, वह मेरे सिर को शर्म से दबा देगा।"
यदि मैं आपकी विनती मान लूँ, तो दोष दूसरे पर ही आएगा।
यहां दो रास्ते हैं: क्या आप एक रास्ता चुनेंगे, या दूसरा रास्ता मैं स्वयं चुनूंगा;
अब से मुझे पति मत कहना, तुम मेरी पत्नी नहीं हो: अलविदा।"
इस भाषण के बाद भी वह उनके पीछे-पीछे चलती रही; लेकिन वह राजा को वापस लौटने के लिए राजी नहीं कर सकी, और लोग उसके पीछे-पीछे चल दिए। अब पास ही एक जंगल था और महाजन ने पेड़ों का एक घना इलाका देखा। वह रानी को वापस लौटवाना चाहते थे, और उन्होंने सड़क के पास कुछ मुंजा घास देखी; इसलिए उन्होंने उसकी एक टहनी काट ली और उससे कहा, "देखो, शिवली, यह टहनी फिर से नहीं जुड़ सकती, इसलिए हमारा संबंध फिर कभी नहीं जुड़ सकता"; और उन्होंने यह आधा श्लोक दोहराया; "एक पूर्ण विकसित मुंजा घास की तरह, हे शिवली, अकेले रहो।" जब उसने यह सुना, तो उसने कहा, "अब से मेरा राजा महाजनक से कोई संबंध नहीं होगा"; और अपने दुःख को नियंत्रित न कर पाने के कारण, उसने अपने दोनों हाथों से अपनी छाती पीटी और सड़क पर बेहोश होकर गिर पड़ी। बोधिसत्व ने उसे बेहोश देखकर, अपने पदचिह्नों को सावधानीपूर्वक मिटाते हुए जंगल में प्रवेश किया। उनके मंत्री आए और उसके शरीर पर पानी छिड़का और उसके हाथों और पैरों को मल दिया, और अंत में उसे होश आ गया। उसने पूछा, "राजा कहाँ हैं?" उन्होंने कहा, "क्या तुम नहीं जानती?" वह चिल्लाई, "उन्हें ढूँढ़ो!" लेकिन वे इधर-उधर दौड़े, फिर भी उन्हें राजा नहीं मिले। इसलिए उसने बहुत रोया और जहाँ राजा खड़े थे, वहाँ एक स्तूप बनवाकर, फूल और इत्र से पूजा की और लौट आई। बोधिसत्व हिमवत (हिमालय) में प्रवेश कर गए और सात दिनों के भीतर उन्होंने सभी ज्ञान और सिद्धियाँ प्राप्त कर लीं और फिर कभी मनुष्यलोक नहीं लौटे। रानी ने उन स्थानों पर भी स्तूप बनवाए जहाँ राजा ने बाण बनाने वाले से, कन्या से, मांस खाया था, मिगजिना और नारद से, और फूल और इत्र से पूजा की; फिर सेना से घिरी हुई वह मिथिला में प्रवेश कर गई और आम के बाग में अपने पुत्र का राज्याभिषेक करवाया और उसे सेना के साथ नगर में प्रवेश कराया। लेकिन उन्होंने स्वयं एक ऋषि का तपस्वी जीवन अपनाकर उस उद्यान में निवास किया और रहस्यमय ध्यान की प्राप्ति के लिए पूर्वानुमेय अनुष्ठानों का अभ्यास किया, अंततः उन्होंने समाधि प्राप्त कर ली और ब्रह्मा (प्रधान देवदूत) लोक में जन्म लेने के लिए नियत हो गईं।

गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त करते हुए कहा, "तथागत (बुद्ध) ने यह पहली बार नहीं किया है; उन्होंने पहले भी ऐसा किया था।" ऐसा कहकर उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "उस समय समुद्र देवी उप्पलावन्ना थीं, नारद सारिपुत्र थे, मिगजिन मोग्गल्याना थे, कन्या राजकुमारी खेमा थीं, बाण निर्माता आनंद थे, शिवली राहुल की माता थीं, राजकुमार दिघावु राहुल थे, माता-पिता राजपरिवार के सदस्य थे, और मैं स्वयं राजा महाजनक था।"

फुटनोट:

(1)सत्तजमघसत्थानी (सं. 283)। पाठ -सतनी का अर्थ होगा "700 पैर," यानी 350 पुरुष (?).

(2) लोनोडकेना पढ़ना

(3)"ना, या यह एक प्रश्न है?"

(4)तो कथासरित्सागर में नाग-स्त्री नायक को तलवार और घोड़ा देती है।

(6)हत्थत्थरादिहि, पिस्तापंकांगुला

(7) यह मेरु के चारों ओर चट्टान के सात संकेंद्रित वृत्तों के बीच स्थित समुद्रों में से एक है।

(10) कमलोक, रूपब्रह्मलोक और अरूपब्रह्मलोक।

(11) एक लंबा विवरण, पुनरावृत्तियों से भरा हुआ, यहाँ बहुत संक्षिप्त किया गया है।

(12)महावग्ग, खंड 1, 16 देखें।

(13) रथकारो शब्द का प्रयोग "लकड़ी के जूते" का सुझाव दे सकता है, लेकिन बुद्ध ने इन्हें वर्जित किया था, देखें महावग्ग, श्लोक 6।

(15) राजा के राज्याभिषेक में प्रयुक्त स्वर्ण कलशों के लिए देखें रामय. II. 15, कथासरित. XV. 77.

(16)ये पंक्तियाँ विभिन्न आकृतियों में लौकिक प्रतीत होती हैं, धम्मपद, 200; महाभ. बारहवीं. 9917, 529, 664एस1.

(17)स्वर्गीय प्राणी, "प्रकाशमान," प्रधान देवदूत

(18)नारद को कभी-कभी मुनि काच्यप का पुत्र कहा जाता है; विष्णु पुराण

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **साम-जातक**
स्रोत : ई.बी. कोवेल और डब्ल्यू.एच.डी. राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।

पिछला <<<<-----||-540-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 540
समा-जातक

“जिन्होंने, जैसा कि मैंने भरा,” इत्यादि। यह कथा गुरु ने जेतवन मठ में एक ऐसे भिक्षु के बारे में सुनाई, जो अपनी माता का भरण-पोषण करता था। कहते हैं कि श्रावस्ती नगर में एक धनी व्यापारी था, जिसकी संपत्ति अठारह करोड़ (10 मिलियन) थी; उसका एक पुत्र था जो अपने माता-पिता का प्रिय और प्रियतम था। एक दिन वह युवक घर की छत पर गया और खिड़की खोलकर सड़क पर नीचे देखा; और जब उसने देखा कि बड़ी भीड़ अपने हाथों में इत्र और मालाएँ लिए जेतवन मठ की ओर धर्मोपदेश सुनने जा रही है, तो उसने कहा कि वह भी जाएगा। अतः उसने इत्र और मालाएँ मंगवाईं, और मठ गया, और सभा में वस्त्र, औषधियाँ, पेय पदार्थ आदि वितरित करके तथा भगवान बुद्ध को इत्र और मालाएँ अर्पित करके, वह एक तरफ बैठ गया। धर्म मार्ग के बारे में सुनकर, इच्छा के बुरे परिणामों और संन्यासी जीवन अपनाने से मिलने वाले आशीर्वादों को जानकर, जब सभा समाप्त हुई तो उन्होंने भगवान बुद्ध से दीक्षा मांगी, लेकिन उन्हें बताया गया कि तथागत (बुद्ध) माता-पिता की अनुमति के बिना किसी को दीक्षा नहीं देते; इसलिए वे चले गए और एक सप्ताह तक बिना भोजन किए रहे, और अंततः अपने माता-पिता की सहमति प्राप्त करके वापस लौटे और दीक्षा के लिए विनती की। गुरु ने एक भिक्षु को भेजा जिसने उन्हें दीक्षा दी; और दीक्षा प्राप्त करने के बाद उन्होंने बहुत सम्मान और लाभ प्राप्त किया; उन्होंने अपने गुरुओं और प्रशिक्षकों का स्नेह जीता, और शिष्यत्व के पूर्ण पवित्र आदेश प्राप्त करके उन्होंने पांच वर्षों में धर्म मार्ग में महारत हासिल कर ली। तब उन्होंने मन ही मन सोचा, "मैं यहाँ विचलित होकर रह रहा हूँ, यह मेरे लिए उपयुक्त नहीं है," और वे रहस्यवादी अंतर्दृष्टि के लक्ष्य तक पहुँचने के लिए उत्सुक हो गए; अपने गुरु से ध्यान की शिक्षा प्राप्त करने के बाद, वह एक सीमावर्ती गाँव में चले गए और जंगल में रहने लगे। वहाँ उन्होंने आध्यात्मिक ज्ञान की साधना में लगन लगाई, लेकिन बारह वर्षों तक अथक परिश्रम और प्रयास करने के बावजूद उन्हें कोई विशेष ज्ञान प्राप्त नहीं हुआ। समय बीतने के साथ-साथ उनके माता-पिता भी गरीब होते चले गए, क्योंकि जो लोग उनकी ज़मीन किराए पर देते थे या उनके लिए व्यापार करते थे, उन्हें जब पता चला कि परिवार में कोई पुत्र या भाई नहीं है जो भुगतान ले सके, तो वे जो कुछ भी हाथ लगा, उसे लेकर भाग गए। घर के नौकर और मजदूर भी सोना-सिक्का लेकर भाग गए, जिससे अंत में दोनों की हालत बहुत खराब हो गई और उनके पास पानी डालने के लिए एक घड़ा भी नहीं बचा। अंत में उन्होंने अपनी संपत्ति बेच दी और बेघर होकर घोर विपत्ति में भिक्षा मांगने के लिए फटे-पुराने कपड़ों में भटकने लगे और हाथों में टूटे हुए मिट्टी के बर्तन लिए घूम रहे थे। उसी समय जेतवन मठ से एक भिक्षु उनके घर आए। उन्होंने आतिथ्य सत्कार के कर्तव्यों का पालन किया और चुपचाप बैठे हुए सबसे पहले पूछा कि वे कहाँ से आए हैं; और यह जानकर कि वे जेतवन मठ से आए हैं, उन्होंने गुरु और प्रमुख शिष्यों के स्वास्थ्य के बारे में पूछा और

फिर उनके माता-पिता के बारे में जानकारी मांगी, "मुझे बताइए, महोदय,श्रावस्ती नगर के फलां व्यापारी परिवार के कल्याण के बारे में पूछो। "हे मित्र, उस परिवार का हालचाल मत पूछो।" "क्यों नहीं, महोदय?" "कहते हैं कि उस परिवार में एक पुत्र था, परन्तु वह धर्म मार्ग पर चलकर संन्यासी बन गया, और उसके सांसारिक जीवन त्यागने के बाद से वह परिवार बर्बाद हो गया है; और इस समय वे दोनों वृद्ध अत्यंत दयनीय अवस्था में हैं और भिक्षा मांगते हैं।" दूसरे की बात सुनकर वह विचलित हुए बिना नहीं रह सका, और उसकी आँखों में आँसू भर आए और वह रोने लगा। जब दूसरे ने उससे पूछा कि वह क्यों रो रहा है, तो उसने उत्तर दिया, "हे महोदय, वे मेरे अपने माता-पिता हैं, मैं उनका पुत्र हूँ।" "हे मित्र, तुम्हारे कारण तुम्हारे माता-पिता बर्बाद हो गए हैं, क्या तुम जाकर उनकी देखभाल करोगे?" उसने मन ही मन सोचा, "बारह वर्षों से मैंने परिश्रम किया है, परन्तु न तो मार्ग प्राप्त कर सका हूँ और न ही फल: मैं अयोग्य हूँ; संन्यासी जीवन से मेरा क्या लेना-देना है?" मैं गृहस्थ बनूंगा और अपने माता-पिता का सहारा बनूंगा, अपनी सारी संपत्ति दान कर दूंगा, और इस प्रकार अंततः स्वर्ग के लिए नियत हो जाऊंगा।" ऐसा निश्चय करके उन्होंने जंगल में अपना निवास स्थान वरिष्ठ भिक्षु को सौंप दिया, और अगले दिन प्रस्थान किया और क्रमिक रूप से श्रावस्ती शहर से कुछ ही दूरी पर स्थित जेतवन मठ के पीछे वाले मठ तक पहुंचे। वहां उन्हें दो रास्ते मिले, एक जेतवन मठ की ओर जाता था, दूसरा श्रावस्ती शहर की ओर। वहां खड़े होकर उन्होंने सोचा, "क्या मैं पहले अपने माता-पिता के दर्शन करूं या बुद्ध के?" फिर उन्होंने मन ही मन कहा, "पुराने दिनों में मैंने अपने माता-पिता के दर्शन लंबे समय तक किए थे, अब से मुझे बुद्ध के दर्शन का अवसर शायद ही कभी मिलेगा; मैं आज पूर्णतः प्रबुद्ध व्यक्ति के दर्शन करूँगा और विधि का पाठ सुनूँगा, और फिर कल सुबह अपने माता-पिता से मिलूँगा।" इस प्रकार वह श्रावस्ती नगरी जाने का मार्ग छोड़कर शाम को जेतवन मठ पहुँच गया। उसी दिन भोर होते ही, गुरु ने संसार को देखते हुए इस युवक की क्षमताओं को पहचान लिया, और जब वे उससे मिलने आए तो उन्होंने मतिपोसक-सूत्र (*1) में माता-पिता के गुणों की प्रशंसा की। जब वे वरिष्ठों की सभा के अंत में खड़े होकर सुन रहे थे, तो उन्होंने सोचा, "यदि मैं गृहस्थ बन जाऊँ तो मैं अपने माता-पिता का भरण-पोषण कर सकता हूँ; परन्तु गुरु यह भी कहते हैं, "एक तपस्वी पुत्र सहायक हो सकता है"; मैं गुरु के दर्शन किए बिना ही चला गया था, और इस अपूर्ण दीक्षा में मैं असफल रहा; अब मैं गृहस्थ बने बिना, संन्यासी रहते हुए अपने माता-पिता का भरण-पोषण करूँगा।" इसलिए उन्होंने अपना टिकट और टिकट के साथ भोजन और दलिया लिया और बारह वर्षों तक वन में एकांतवास करने के बाद उन्हें ऐसा लगा मानो उन्होंने कोई पाप कर दिया हो जिसके लिए उन्हें निष्कासन का सामना करना पड़े। सुबह वे श्रावस्ती नगर गए और मन ही मन सोचने लगे, "पहले दलिया लूँ या अपने माता-पिता से मिलूँ?" उन्होंने सोचा कि निर्धनता में उनके घर खाली हाथ जाना उचित नहीं होगा; इसलिए उन्होंने पहले दलिया लिया और फिर उनके पुराने घर के द्वार पर गए।जब उसने देखा कि वे शोरबा में दिए गए भिक्षादान के बाद सामने वाली दीवार के पास बैठे हैं, तो वह अचानक दुःख से भर उठा और उसकी आँखों में आँसू भर आए। उन्होंने उसे देखा तो सही, पर पहचान नहीं पाए; तब उसकी माँ ने सोचा कि कोई भिक्षा माँगने आया है, और उससे कहा, "हमारे पास तुम्हें देने के लिए कुछ नहीं है, कृपया आगे बढ़ो।" जब उसने उसकी बात सुनी, तो उसने अपने हृदय में भरे दुःख को दबा लिया और पहले की तरह ही आँसुओं से भरी आँखों से खड़ा रहा, और जब उसे दूसरी और तीसरी बार भी कहा गया, तब भी वह खड़ा ही रहा। अंत में पिता ने माँ से कहा, "उसके पास जाओ; क्या यह तुम्हारा बेटा है (*2)?" वह उठी और उसके पास गई और उसे पहचानकर उसके चरणों में गिर पड़ी और विलाप करने लगी, और पिता भी उसके साथ रोने लगा, और दुःख का एक ज़ोरदार विस्फोट हुआ। अपने माता-पिता को देखकर वह खुद को संभाल नहीं पाया और फूट-फूट कर रोने लगा; फिर, अपने भावों को काबू में करके उसने कहा, "दुःख मत करो, मैं तुम्हारा सहारा बनूँगा"; तो उन्हें दिलासा देकर और दलिया पिलाकर एक तरफ बिठाकर, वह फिर गया और उनसे भोजन की भीख माँगकर उन्हें दिया, फिर अपने लिए भीख माँगने गया और भोजन समाप्त करके थोड़ी दूर पर रहने लगा। उस दिन से वह इसी प्रकार अपने माता-पिता की देखभाल करता रहा; वह अपने लिए प्राप्त होने वाली सारी भीख उन्हें दे देता था, यहाँ तक कि पखवाड़े भर के वितरण में मिलने वाली भी, और वह अपने लिए भीख लेने के लिए अलग से जाता और उसे खाता; और बरसात के मौसम के लिए जो भी भोजन उसे मिलता, वह उन्हें दे देता, जबकि उनके पुराने वस्त्र लेकर दरवाजे बंद करके उन्हें रंगता और स्वयं पहनता था: परन्तु उसे भीख मिलने के दिन कम ही आते थे और भीख न मिलने के दिन अनेक थे, और उसके भीतरी और बाहरी वस्त्र बहुत खुरदुरे हो गए थे। अपने माता-पिता की देखभाल करते-करते वह धीरे-धीरे बहुत पीला और दुबला हो गया और उसके मित्रों और निकट संबंधियों ने उससे कहा, "तुम्हारा रंग पहले तो चमकीला हुआ करता था, लेकिन अब तुम बहुत पीले पड़ गए हो, क्या तुम्हें कोई बीमारी हो गई है?" उन्होंने उत्तर दिया, "मुझे कोई बीमारी नहीं हुई है, बस एक बाधा आ गई है," और उन्होंने उन्हें पूरी कहानी सुनाई। "महोदय," उन्होंने कहा, "गुरुजी हमें भक्तों की भेंट को व्यर्थ करने की अनुमति नहीं देते, आप भक्तों की भेंट को आम लोगों को देकर गैरकानूनी काम कर रहे हैं।" यह सुनकर वे लज्जित होकर चले गए। लेकिन इससे संतुष्ट न होकर वे गुरुजी के पास गए और कहा, "महोदय, फलां व्यक्ति ने भक्तों की भेंट को व्यर्थ कर दिया और उसे आम लोगों को खिलाने में इस्तेमाल किया।" गुरुजी ने उस सन्यासी युवक को बुलवाया और उससे कहा, "क्या यह सच है कि तुम, एक तपस्वी होकर, भक्तों की भेंट लेकर आम लोगों का भरण-पोषण करते हो?" उसने स्वीकार किया कि यह सच है। तब गुरुजी ने उसके कार्य की प्रशंसा करते हुए और अपने एक पुराने कार्य के बारे में बताते हुए कहा, "जब तुम आम लोगों का भरण-पोषण करते हो तो किसका करते हो?" "अपने माता-पिता का," उसने उत्तर दिया। तब गुरुजी,उन्हें और अधिक प्रोत्साहित करने के लिए उन्होंने तीन बार कहा, "शाबाश, शाबाश"; "तुम उस मार्ग पर चल रहे हो जिस पर मैं तुमसे पहले चल चुका हूँ: पुराने समय में, भिक्षा माँगते हुए मैंने अपने माता-पिता का भरण-पोषण किया था।" तपस्वी इससे उत्साहित हो गया। भिक्षुओं के अनुरोध पर, गुरु ने अपने पूर्व कार्यों को बताने के लिए उन्हें पुराने समय की एक कथा सुनाई।

बहुत समय पहले, बनारस से कुछ ही दूरी पर, नदी के निकटवर्ती किनारे पर, शिकारियों का एक गाँव था, और दूसरा गाँव नदी के दूसरी ओर था; प्रत्येक गाँव में पाँच सौ परिवार रहते थे। अब इन दोनों गाँवों में दो शिकारी सरदार रहते थे जो घनिष्ठ मित्र थे; और उन्होंने अपने यौवनकाल में यह प्रतिज्ञा की थी कि यदि उनमें से एक को पुत्री और दूसरे को पुत्र हो, तो वे दोनों का विवाह करा देंगे। समय बीतने पर निकटवर्ती गाँव के सरदार को पुत्र और दूरवर्ती गाँव के सरदार को पुत्री हुई; पहले सरदार का नाम दुकुलका रखा गया क्योंकि जन्म के समय उसे उत्तम वस्त्र में लपेटकर लाया गया था (*3), जबकि दूसरी का नाम परिका रखा गया क्योंकि वह नदी के दूसरी ओर पैदा हुई थी। दोनों देखने में सुंदर और सुनहरे रंग के थे; और यद्यपि वे शिकारियों के गाँव में पैदा हुए थे, उन्होंने कभी किसी भी जीवित प्राणी को नुकसान नहीं पहुँचाया। जब दुकुलका सोलह वर्ष का हुआ, तो उसके माता-पिता ने उससे कहा, "हे पुत्र, हम तुम्हारे लिए एक दुल्हन लाएँगे"; लेकिन ब्रह्मलोक से नव-प्रवेशित उस शुद्ध प्राणी ने अपने दोनों कान बंद कर लिए और कहा, "मैं घर में नहीं रहना चाहता, ऐसी बात मत करो"; और यद्यपि उन्होंने तीन बार यही बात दोहराई, फिर भी उसने इस संबंध में कोई इच्छा नहीं जताई। परिका ने भी, जब उसके माता-पिता ने उससे कहा, "हमारे मित्र का पुत्र सुंदर और स्वर्ण-रंग का है, हम तुम्हें उससे विदा करने जा रहे हैं," तो उसने भी यही उत्तर दिया और अपने कान बंद कर लिए, क्योंकि वह भी ब्रह्मलोक से आई थी। दुकुलक ने उसे गुप्त रूप से संदेश भेजा, "यदि तुम अपने पति के साथ पत्नी के रूप में रहना चाहती हो, तो किसी दूसरे परिवार में चली जाओ, क्योंकि मेरी ऐसी कोई इच्छा नहीं है," और उसने भी उसे ऐसा ही संदेश भेजा। लेकिन चाहे वे कितने भी अनिच्छुक क्यों न हों, माता-पिता ने विवाह संपन्न कर दिया। परन्तु वे दोनों प्रधान देवदूत ब्रह्म की तरह अलग-अलग रहे, कामवासना के सागर में नहीं उतरे। दुकुलक ने कभी मछली या हिरण का वध नहीं किया, यहाँ तक कि उसके पास लाई गई मछली भी उसने कभी नहीं बेची। अंत में उनके माता-पिता ने उनसे कहा, "यद्यपि तुम शिकारी परिवार में जन्मे हो, फिर भी तुम्हें घर में रहना और किसी भी जीवित प्राणी को मारना पसंद नहीं है; तुम क्या करोगे?" उन्होंने उत्तर दिया, "यदि आप मुझे अनुमति देंगे, तो मैं आज ही संन्यासी बन जाऊँगा।" उन्होंने तुरंत दोनों को अनुमति दे दी। उन्हें विदाई देकर वे गंगा के किनारे-किनारे चलते हुए हिमवत (हिमालय) क्षेत्र में प्रवेश कर गए, जहाँ मिगासम्मत नदी पर्वत से नीचे बहकर गंगा में मिलती है; फिर गंगा को छोड़कर वे मिगासम्मत के किनारे-किनारे ऊपर की ओर चले गए। उसी क्षण इंद्र का महल अत्यधिक गर्म हो गया। कारण जानकर सक्का (इंद्र) ने विश्वकर्मा को आदेश दिया, "हे विश्वकर्मा, दो महान प्राणियों ने सांसारिक जीवन त्यागकर हिमवत (हिमालय) में प्रवेश किया है, हमें उनके लिए एक निवास स्थान खोजना होगा, जाओ और मिगासम्मता नदी से एक चौथाई मील दूर उनके लिए पत्तों की एक कुटिया बनाओ और तपस्वी जीवन की सभी आवश्यक वस्तुएँ उपलब्ध कराओ और यहाँ वापस आओ।" अतः वह गया और मुगपक्ष जन्म (*4) में वर्णित अनुसार सब कुछ तैयार किया।और सभी अप्रिय शोर मचाने वाले जानवरों को भगाकर और पास में एक पगडंडी बनाकर वह अपने घर लौट आया। उन्होंने पगडंडी देखी और उस पर चलकर आश्रम तक पहुँचे। जब दुकुलक आश्रम में गए और वहाँ एक तपस्वी के जीवन की सभी आवश्यक वस्तुएँ देखीं, तो उन्होंने कहा, "यह हमें सक्का (इंद्र) का उपहार है"; इसलिए उन्होंने अपना बाहरी वस्त्र उतारकर लाल छाल का वस्त्र धारण किया और अपने कंधे पर एक काला हिरण का खाल डाला और अपने बालों को एक गाँठ में बाँधकर एक तपस्वी का वेश धारण किया, और परिका को दीक्षा देकर, वे उसके साथ वहाँ रहने लगे, और इंद्रिय सुख के संसार से संबंधित सभी परोपकारी भावों का अभ्यास किया (*5)। उनके परोपकारी भावों के प्रभाव से सभी पक्षियों और जानवरों ने एक-दूसरे के प्रति केवल दयालु भाव रखे, उनमें से किसी ने भी दूसरे को हानि नहीं पहुँचाई। परी जल और भोजन लाती है, आश्रम की सफाई करती है और सारे काम करती है। वे दोनों तरह-तरह के फल इकट्ठा करके खाते हैं और फिर अपने-अपने पत्तों से बने घरों में जाकर तपस्वी जीवन के नियमों का पालन करते हैं। सक्का (इंद्र) उनकी जरूरतों का ख्याल रखते हैं। एक दिन उन्होंने देखा कि उन पर कोई खतरा मंडरा रहा है, "उनकी दृष्टि चली जाएगी।" इसलिए वे दुकुलका के पास गए; और एक तरफ बैठकर उन्हें प्रणाम करने के बाद बोले, "हे प्रभु, मुझे आप पर एक खतरा दिखाई दे रहा है, आपको अपना ख्याल रखने के लिए एक पुत्र की आवश्यकता है: संसार के मार्ग पर चलें।" "हे सक्का (इंद्र), आप ऐसी बात क्यों कह रहे हैं? जब हम घर में रहते थे तब भी हम शारीरिक संबंध से विमुख रहते थे; क्या अब जब हम जंगल में आकर तपस्वी जीवन जी रहे हैं, तब भी हम ऐसा कर सकते हैं?" "ठीक है, अगर तुम मेरी बात नहीं मानोगे, तो उचित समय पर परी की नाभि को अपने हाथ से स्पर्श करो।" उन्होंने ऐसा करने का वादा किया। और सक्का (इंद्र) ने उन्हें प्रणाम करने के बाद अपने निवास स्थान पर लौट गए। उस महान प्राणी ने परी को यह बात बताई, और उचित समय पर उन्होंने अपने हाथ से उनकी नाभि को छुआ। तब बोधिसत्व स्वर्गलोक से अवतरित होकर उनके गर्भ में प्रवेश कर गए और वहीं गर्भ धारण किया। दसवें महीने के अंत में उन्होंने सुनहरे रंग के पुत्र को जन्म दिया, और उन्होंने उसका नाम सुवन्नासमा रखा। (अब दूसरे पर्वत पर किन्नरी अप्सराओं ने परी का पालन-पोषण किया था।) माता-पिता ने शिशु को नहलाया और उसे पत्तों के ढेर में रखकर विभिन्न प्रकार के फल एकत्र करने चले गए। उनके जाने के बाद किन्नरों ने शिशु को अपनी गुफाओं में ले जाकर नहलाया, और पर्वत की चोटी पर जाकर उसे विभिन्न फूलों से सजाया, और पीले रंग के ऑर्पिमेंट, लाल आर्सेनिक और अन्य रंगों से उसके विश्वास के चिह्न बनाए, और फिर उसे वापस कुटिया में उसके पलंग पर ले आए; और जब परी घर लौटीं तो उन्होंने शिशु को दूध पिलाया। जैसे-जैसे वह बड़ा होता गया, वे उसे बहुत प्यार करते रहे, और जब वह लगभग सोलह वर्ष का हुआ, तो वे उसे झोपड़ी में छोड़कर जंगल से जड़ें और फल लाने के लिए बाहर जाया करते थे। बोधिसत्व ने सोचा,"एक दिन कोई न कोई खतरा जरूर आएगा"; वह उनके जाने के रास्ते पर नजर रखता था। एक दिन शाम को वे जड़-फल इकट्ठा करके घर लौट रहे थे, तभी आश्रम से कुछ ही दूर एक घना बादल छा गया। उन्होंने एक पेड़ की जड़ों में

शरण ली और चींटियों के टीले पर खड़े हो गए; उस टीले में एक सांप रहता था। उनके शरीर से पानी टपक रहा था, जिसकी गंध पसीने की गंध सांप की नाक तक पहुँच गई, और क्रोधित होकर उसने अपनी साँस छोड़ी और उन्हें वहीं पर मार दिया, जिससे वे दोनों अंधे हो गए और एक-दूसरे को देख नहीं पा रहे थे। दुकुलका ने पाली को पुकारा, “मेरी आँखें चली गई हैं, मैं तुम्हें देख नहीं सकता”; और पाली ने भी यही शिकायत की। “हमारे पास जीवन नहीं बचा है,” उन्होंने कहा, और वे शोक मनाते हुए इधर-उधर भटकने लगे, उन्हें रास्ता नहीं मिल रहा था। “हमने पहले कौन सा पाप किया होगा?” उन्होंने सोचा। पहले वे एक चिकित्सक के परिवार में पैदा हुए थे, और चिकित्सक ने एक धनी व्यक्ति का आँखों की बीमारी का इलाज किया था, लेकिन रोगी ने उन्हें कोई शुल्क नहीं दिया था; क्रोधित होकर उसने अपनी पत्नी से कहा, "हम क्या करें?" पत्नी भी क्रोधित थी और बोली, "हमें उसका पैसा नहीं चाहिए; कुछ दवा बनाओ और उसे औषधि का नाम दो और उससे उसकी एक आँख फोड़ दो।" वह मान गया और उसने उसकी सलाह मानी, और इस पाप के कारण उन दोनों की दोनों आँखें अंधी हो गईं।

तब उस महान प्राणी ने सोचा, "अन्य दिनों में मेरे माता-पिता हमेशा इसी समय लौट आते थे, मुझे नहीं पता कि उनके साथ क्या हुआ है, मैं जाकर उनसे मिलूंगा"; इसलिए वह उनसे मिलने गया और एक आवाज़ निकाली। उन्होंने आवाज़ पहचान ली और जवाब में एक आवाज़ करते हुए, लड़के के प्रति अपने स्नेह से कहा, "हे समा, यहाँ खतरा है, पास मत आओ।" तब उसने उन्हें एक लंबा डंडा दिया और उसका सिरा पकड़ने को कहा, और उन्होंने उसे पकड़कर उसके पास आ गए। तब उसने उनसे पूछा, "तुम्हारी दृष्टि कैसे चली गई?" "बारिश के समय हमने एक पेड़ की जड़ों में शरण ली और चींटियों के टीले पर खड़े हो गए, और इससे हम अंधे हो गए।" यह सुनकर वह समझ गया कि क्या हुआ था। "वहाँ ज़रूर कोई साँप रहा होगा, और उसने गुस्से में आकर ज़हरीली साँस छोड़ी होगी"; और जब उसने उनकी ओर देखा तो वह रोया भी और हँसा भी। तब उन्होंने उससे पूछा कि वह क्यों रो रहा है और हँस रहा है। “तुम्हारी आँखों की रोशनी इतनी कम उम्र में चली गई, इस बात पर मुझे रोना आया, लेकिन यह सोचकर मुझे खुशी हुई कि अब मैं तुम्हारी देखभाल करूँगा; दुखी मत हो, मैं तुम्हारी देखभाल करूँगा।” फिर वह उन्हें वापस आश्रम ले गया और उसने दिन और रात के कमरों, बाड़ों और सभी अलग-अलग कमरों को अलग करने के लिए चारों ओर रस्सियाँ बाँध दीं; और उस दिन से उसने उन्हें अंदर ही रहने के लिए कहा, जबकि वह स्वयं जंगल की जड़ें और फल इकट्ठा करता, और सुबह उनके कमरों की सफाई करता, और मिगासममाता नदी से पानी लाता, और उनके लिए भोजन और नहाने का पानी और दाँत साफ करने के लिए ब्रश तैयार करता, और उन्हें तरह-तरह के मीठे फल देता, और उनके मुँह धोने के बाद वह स्वयं भोजन करता। भोजन करने के बाद उसने अपने माता-पिता को प्रणाम किया और हिरणों के झुंड से घिरा हुआ फल इकट्ठा करने के लिए जंगल में चला गया। पर्वत में किन्नरों के एक समूह के साथ फल इकट्ठा करने के बाद वह शाम को लौटा, और एक बर्तन में पानी गर्म करके उन्हें स्नान करने और पैर धोने की अनुमति दी। फिर वह टूटे हुए मिट्टी के बर्तन में गर्म कोयले भरकर लाया और उनके अंगों को भाप दी। उनके बैठने पर उसने उन्हें तरह-तरह के फल दिए और अंत में अपना भोजन स्वयं खाया और बचा हुआ भोजन अलग रख दिया। इस प्रकार उसने अपने माता-पिता की देखभाल की।

उस समय बनारस में पिलियाक्खा नामक एक राजा का शासन था। हिरण के मांस की अत्यधिक लालसा के कारण उसने राज्य अपनी माता को सौंप दिया और पाँचों प्रकार के शस्त्रों से सुसज्जित होकर हिमवत (हिमालय) क्षेत्र में आया। वहाँ वह हिरणों का शिकार करता और उनका मांस खाता हुआ मिगासम्मता नदी तक पहुँचा और अंत में उस स्थान पर पहुँचा जहाँ साम (एक प्रकार का जानवर) जल भरने आता था। वहाँ हिरणों के पदचिह्न देखकर उसने रत्नों के रंग की शाखाओं से अपना आश्रय बनाया और धनुष पर विषैला बाण लगाकर घात लगाकर बैठ गया। संध्या में उस महान प्राणी ने अपने फल एकत्र करके आश्रम में रखे और अपने माता-पिता को प्रणाम करते हुए कहा, "मैं स्नान करके जल लेने जाता हूँ।" उसने अपना घड़ा लिया और अपने हिरणों के समूह से घिरा हुआ, झुंड में से दो हिरणों को अलग किया और घड़ा उनकी पीठ पर रखकर, हाथ से उनका मार्गदर्शन करते हुए स्नान स्थल की ओर चल पड़ा। अपने आश्रय में छिपे राजा ने उसे आते देखा और मन ही मन कहा, "यहाँ भटकते-भरे मैंने आज तक कोई मनुष्य नहीं देखा; क्या वह कोई देवता (देवदूत) है या नाग? अब अगर मैं ऊपर जाकर उससे पूछूँ, तो यदि वह देवता (देवदूत) है तो वह स्वर्ग में उड़ जाएगा, और यदि वह नाग है तो वह पृथ्वी में समा जाएगा। लेकिन मैं हमेशा हिमवत (हिमालय) में नहीं रहूँगा, और एक दिन मैं बनारस लौटूँगा, और मेरे मंत्री मुझसे पूछेंगे कि क्या मैंने हिमवत (हिमालय) में अपने शिकार के दौरान कोई नया चमत्कार नहीं देखा। यदि मैं उन्हें बताऊँ कि मैंने फलाँ-फलाँ प्राणी देखा है, और वे मुझसे उसका नाम पूछें, तो यदि मुझे उत्तर देना पड़े कि मुझे नहीं पता, तो वे मुझे दोष देंगे; इसलिए मैं उसे घायल कर दूँगा और उसे अपंग कर दूँगा, और फिर उससे पूछूँगा।" इसी बीच जानवर पहले नीचे गए और पानी पीकर स्नान-स्थान से ऊपर आ गए; फिर बोधिसत्व एक परम ज्ञाता की तरह धीरे-धीरे जल में उतर गए, मानो वे नियमों के पूर्ण ज्ञाता हों। वे पूर्ण शांति प्राप्त करने के उद्देश्य से अपने वस्त्र धारण कर लिए, हिरण की खाल को एक कंधे पर डाल लिया और जल-कलश उठाकर उसे भरकर अपने बाएं कंधे पर रख लिया। इसी क्षण राजा ने तीर चलाने का समय देखकर विषैला बाण चलाया और बोधिसत्व के दाहिनी ओर घायल हो गए, तथा बाण बाईं ओर से निकल गया। हिरणों का झुंड उन्हें घायल देखकर भयभीत होकर भाग गया, परन्तु सुवन्नासमा घायल होते हुए भी यथासंभव जल-कलश को संभाले रहे और होश में आकर धीरे-धीरे जल से बाहर आ गए। उन्होंने रेत खोदकर एक तरफ ढेर कर दी और अपने माता-पिता की कुटिया की ओर सिर करके, चांदी की थाली के समान रंग की रेत पर एक सुनहरी प्रतिमा की तरह लेट गए।

फिर उन्होंने सारी परिस्थितियों पर विचार किया। "हिमवत (हिमालय) के इस क्षेत्र में मेरा कोई शत्रु नहीं है, और न ही मेरी किसी से कोई दुश्मनी है।" ये शब्द कहते ही उसके मुँह से खून बहने लगा और राजा को देखे बिना ही उसने ये श्लोक उसे संबोधित किया:

"जब मैं अपना घड़ा भर रहा था, तभी घात लगाकर उसने मुझे घायल कर दिया।"
ब्राह्मण या क्षत्रिय, वैश्य, मेरा अज्ञात हमलावर कौन हो सकता है?"
फिर उसने अपने शरीर को भोजन के रूप में व्यर्थ बताने के लिए एक और छंद जोड़ा:

"तुम मेरे मांस को भोजन के लिए नहीं ले सकते, तुम मेरी खाल का उपयोग नहीं कर सकते।"
तुम मुझे अपने लक्ष्य के लायक क्यों समझते हो; तुम्हें इससे क्या लाभ होने की उम्मीद थी?
और फिर एक और व्यक्ति ने उससे उसका नाम पूछा, (पहले की तरह ही)।

"तुम कौन हो, बताओ, तुम किसके पुत्र हो? और मैं तुम्हें किस नाम से पुकारूँ?"
आप वहां घात लगाकर क्यों बैठे हैं? मेरे सवालों का सच-सच जवाब दीजिए।
जब राजा ने यह सुना, तो उसने मन ही मन सोचा, "यद्यपि वह मेरे विषैले तीर से घायल होकर गिर पड़ा है, फिर भी वह न तो मेरा अपमान करता है और न ही मुझे दोष देता है; वह मुझसे कोमल शब्दों में बात करता है मानो मेरे हृदय को शांत कर रहा हो, मैं उसके पास जाऊँगा"; अतः वह गया और उसके निकट खड़ा होकर बोला:

मैं कासिस वंश का स्वामी हूँ, मेरा नाम राजा पिलियाक्खा है; और यहाँ,
देह की लालसा में अपना सिंहासन छोड़कर, मैं जंगल के हिरणों का शिकार करने के लिए भटकता हूँ।
मैं तीरंदाजी में निपुण हूँ, मेरा हृदय दृढ़ है और मैं आसानी से नहीं बदलता;
एक बार अगर कोई नाग मेरी सीमा में आ गया तो वह मेरे तीर से बच नहीं सकता।"
इस प्रकार अपनी खूबियों की प्रशंसा करते हुए, उसने दूसरे व्यक्ति से उसका नाम और परिवार के बारे में पूछा:

"पर तुम कौन हो? तुम किसके पुत्र हो? तुम्हारा नाम क्या है? अपना नाम बताओ;"
अपने पिता का नाम और परिवार बताइए, अपने पिता और अपने परिवार के बारे में बताइए।
उस महान प्राणी ने सोचा, "अगर मैं उससे कहूँ कि मैं देवताओं (देवदूतों) या किन्नरों में से हूँ, या मैं क्षत्रिय या इसी तरह की जाति का हूँ, तो वह मुझ पर विश्वास कर लेगा; लेकिन सच ही बोलना चाहिए," इसलिए उसने कहा:

"जब मैं जीवित था, लोग मुझे समा कहकर पुकारते थे; मैं एक बहिष्कृत शिकारी का बेटा हूँ।"
लेकिन यहाँ तुम मुझे दयनीय हालत में जमीन पर पड़ा हुआ देख रहे हो।
तुम्हारे उस विषैले बाण से घायल होकर, मैं किसी हिरण की तरह असहाय पड़ा हूँ।
तुम्हारी घातक कुशलता का शिकार, मेरे खून में लथपथ मैं यहाँ पड़ा हूँ।
तुम्हारे लिंग ने मेरे शरीर को भेद दिया है, मैं हर सांस के साथ खून की उल्टी कर रही हूँ।
फिर भी, कमजोर और दुर्बल होकर, मैं आपसे पूछता हूँ, आप अपने घात से मेरी मृत्यु क्यों चाहते हैं?
तुम मेरे मांस को भोजन के लिए नहीं ले सकते, तुम मेरी खाल का उपयोग नहीं कर सकते;
तुम मुझे अपना लक्ष्य क्यों नहीं बना सके? तुम्हें इससे क्या लाभ होने की उम्मीद थी?
जब राजा ने यह सुना, तो उसने असली सच्चाई नहीं बताई, बल्कि एक झूठी कहानी गढ़कर कहा:

"एक हिरण मेरी सीमा के भीतर आ गया था, मैंने सोचा कि वही मेरा इनाम होगा।"
लेकिन तुम्हें देखकर वह डर के मारे भाग गया, इसलिए मेरे मन में तुम्हारे लिए कोई क्रोधित विचार नहीं आया।
तब उस महान प्राणी ने उत्तर दिया, "हे राजा, आप क्या कहते हैं? इस समस्त हिमवत (हिमालय) में एक भी हिरण ऐसा नहीं है जो मुझे देखकर भाग जाए।"

"जबसे मेरे सोचने-समझने के शुरुआती साल शुरू हुए, जहाँ तक मेरी याददाश्त जाती है,
कोई भी शांत हिरण या शिकारी जानवर डर के मारे मेरे रास्ते से भागने की कोशिश नहीं करता।
जब से मैंने छाल से बनी अपनी पोशाक पहनी और अपने बचपन के दिनों को पीछे छोड़ दिया
न तो कोई शांत हिरण और न ही कोई शिकारी जानवर मुझे अपने रास्ते से गुजरते हुए देखकर भागा है।
नहीं, ये भयानक जिन्न मेरे मित्र हैं, जो मेरे साथ इस जंगल की छाया में घूमते हैं।
तो फिर, जैसा कि आप कहते हैं, मुझे देखकर यह हिरण डरकर क्यों भाग गया?

जब राजा ने उसकी बात सुनी, तो उसने मन ही मन सोचा, "मैंने इस निर्दोष प्राणी को चोट पहुँचाई है और झूठ बोला है, अब मैं सच कबूल करता हूँ।" इसलिए उसने कहा:

"समा, तुम्हें वहां किसी हिरण ने नहीं देखा, मैं बेवजह झूठ क्यों बोलूं?"
मैं क्रोध और लालच से अभिभूत था और मैंने वह तीर चलाया, वह मैं ही था।"
फिर उसने दोबारा सोचा, "सुवन्नासमा इस जंगल में अकेले नहीं रह रहे होंगे, उनके रिश्तेदार ज़रूर यहीं रहते होंगे; मैं उनसे उनके बारे में पूछूंगा।" इस प्रकार उसने एक श्लोक कहा:

"दोस्त, तुम आज सुबह कहाँ से आए? तुम्हें अपना पानी का घड़ा लाने के लिए किसने कहा?"
और इसे नदी के किनारे से भरें और इस भार को इतनी दूर तक वापस ले जाएं?
यह सुनकर उसे तीव्र पीड़ा हुई और उसके मुंह से खून बहने लगा, तभी उसने एक छंद कहा:

"मेरे माता-पिता उस जंगल में रहते हैं, वे अंधे हैं और मेरी देखभाल पर निर्भर हैं।"
मैं उन्हीं के लिए नदी किनारे पानी भरने आया हूँ।
फिर उन्होंने उनकी दयनीय स्थिति पर शोक व्यक्त करते हुए आगे कहा:

"उनका जीवन एक टिमटिमाती चिंगारी मात्र है (*6), उनका भोजन अधिक से अधिक एक सप्ताह की आपूर्ति है,
जो पानी मैं लाया हूँ, उसके बिना वे अंधे, कमजोर और असहाय होकर मर जाएंगे।
मैं मृत्यु के दर्द के बारे में नहीं सोचता, वह तो सभी का सामान्य भाग्य है;
मेरे पिता का चेहरा फिर कभी न देख पाना—यही बात मेरे दिल को दहला देती है (*7)।
बहुत लंबा, दुखद और थका देने वाला समय, मेरी माँ वहाँ अपने कष्टों को सहन करेगी।
आधी रात को और भोर में उसके आँसू नदी की तरह बहेंगे (*8)।
बहुत लंबा, दुखद और थका देने वाला समय, मेरे पिता वहां अपने कष्टों को सहेंगे।
आधी रात को और सुबह तड़के उसके आंसू नदी की तरह बहेंगे।
वे जंगल में भटकते हुए अपने देर से आने वाले बेटे की शिकायत करेंगे।
अब भी मेरे कदमों की आहट सुनने या मेरे सुखदायक स्पर्श को महसूस करने की उम्मीद थी—व्यर्थ।
यह विचार एक दूसरे तीर की तरह है जो पहले से भी अधिक गहराई तक प्रवेश करता है।
अफसोस! मैं यहाँ मरणासन्न अवस्था में पड़ा हूँ, और मेरी नियति है कि मैं उनका चेहरा फिर कभी नहीं देख पाऊँगा।
राजा ने उसके रोने की आवाज़ सुनकर मन ही मन सोचा, "यह व्यक्ति अपनी अत्यधिक भक्ति और कर्तव्यनिष्ठा से अपने माता-पिता का सहारा रहा है, और अब अपने सारे दुख के बीच भी वह केवल उन्हीं के बारे में सोच रहा है। मैंने ऐसे पवित्र व्यक्ति के साथ अन्याय किया है, मैं उसे कैसे सांत्वना दे सकता हूँ? जब मैं नरक में जाऊँगा तो मेरा राज्य मेरे किस काम आएगा? मैं उसके माता-पिता की रक्षा करूँगा जैसे उसने उनकी की थी; इस प्रकार उसकी मृत्यु उनके लिए प्रतिकार होगी।" फिर उसने निम्नलिखित छंदों में अपना संकल्प व्यक्त किया:

हे शुभ मुख वाले समा, निराशा को अपने मन पर हावी न होने दें।
देखो, मैं स्वयं तुम्हारे माता-पिता की इस अकेले दुख की घड़ी में उनकी सेवा करूंगा।
मुझे धनुष चलाने का अच्छा अभ्यास है, मेरा वादा पुख्ता है।
मैं तुम्हारी जगह काम करूंगा और जंगल में तुम्हारे माता-पिता की देखभाल करूंगा।
मैं हिरणों के बचे हुए भोजन, जड़ों और फलों की तलाश करूंगा ताकि उनकी जरूरतों को पूरा किया जा सके;
मैं स्वयं उन दोनों की सेवा करूंगा, सचमुच उनका घरेलू दास बनकर।
वे किस जंगल में हैं? हे समा, मुझे बताओ, क्योंकि मैंने मन्नत मानी है।
मैं उनकी रक्षा और समर्थन करूंगा, जैसा कि आपने अब तक किया है।"
उस महान प्राणी ने उत्तर दिया, "यह अच्छा है, हे राजा, तो आप उनका समर्थन करें," और फिर उन्होंने उसे रास्ता दिखाया:

"जहां मेरा सिर पड़ा है, वहां पेड़ों के बीच से होकर दो सौ धनुष की लंबाई का एक रास्ता गुजरता है।"
यह आपको मेरे माता-पिता की झोपड़ी तक ले जाएगा, जाइए, अगर आप चाहें तो वहां उनकी देखभाल कीजिए।
इस प्रकार मार्ग दिखाकर और अपने माता-पिता के प्रति प्रेम में धैर्यपूर्वक अपार पीड़ा सहन करके, उन्होंने आदरपूर्वक हाथ जोड़कर अंतिम निवेदन किया कि वे उनकी देखभाल करेंगे।

"हे काशी राजा, आपको सम्मान मिले, क्योंकि आप इस प्रकार अपने मार्ग पर आगे बढ़ रहे हैं।"

हे मेरे माता-पिता असहाय और अंधे हैं, मैं आपसे विनती करता हूँ कि आप उन दोनों की रक्षा और देखभाल करें।
हे काशी राजा, आपको मेरा प्रणाम। मैं सादर हाथ जोड़ता हूँ।
मेरी ओर से मेरे माता-पिता को वह संदेश पहुंचा देना जो मैंने तुम्हें दिया है।
राजा ने यह दायित्व स्वीकार कर लिया, और इस प्रकार अपना अंतिम संदेश देने के बाद, महान सत्ता अचेत हो गई। इसका स्पष्टीकरण देते हुए गुरु ने कहा:

जब शुभ मुख वाले समा ने राजा से ये शब्द कहे,
तीर के जहर से बेहोश होकर वह ऐसे अचेत पड़ा था मानो मर गया हो।
अब तक जब तक उसने ये शब्द कहे थे, तब तक वह हाँफते हुए बोल रहा था; लेकिन यहाँ उसकी वाणी रुक गई, क्योंकि उसके शरीर, हृदय, विचार और प्राण शक्तियाँ विष के तीव्र प्रभाव से एक-एक करके प्रभावित होने लगीं (*9), उसका मुँह और आँखें बंद हो गईं, उसके हाथ-पैर अकड़ गए और उसका पूरा शरीर खून से लथपथ हो गया। राजा ने कहा, "अभी तक तो वह मुझसे बात कर रहा था, अचानक उसकी साँसें क्यों रुक गईं? ये क्रियाएँ अब बंद हो गई हैं, उसका शरीर अकड़ गया है, निश्चय ही समा मर गया है"; और अपने दुःख को नियंत्रित न कर पाने के कारण उसने अपने सिर पर हाथ पटका और ज़ोर-ज़ोर से विलाप करने लगा।

यहां गुरु ने बात को और स्पष्ट करने के लिए ये श्लोक कहे:

राजा ने बड़े दुख से विलाप किया, "जब तक यह विपत्ति नहीं आई थी, तब तक मुझे पता ही नहीं था कि मैं कभी बूढ़ा होऊंगा या मर जाऊंगा, अब मुझे यह बात अच्छी तरह से पता चल गई है, हाय! बहुत अच्छी तरह से।"

अब मुझे समझ आ गया है कि सभी मनुष्य नश्वर हैं; क्योंकि समा को भी मरना पड़ा था।
जिसने अंतिम व्यक्ति को, उसकी मृत्यु की पीड़ा में भी, अच्छी सलाह दी;
नरक ही मेरा निश्चित और अटल अंत है, वह मृत संत वहां मौन पड़ा है;
हर गांव में, मैं जिनसे भी मिलता हूं, वे एक स्वर में मेरे अपराध का बखान करते हैं।
लेकिन इस सुनसान, निर्जन जंगल में मेरा नाम जानने वाला कौन होगा?
इस वीरान सन्नाटे में मुझे मेरी शर्मिंदगी की याद कौन दिलाएगा?
उस समय, गंधमादन पर्वत पर रहने वाली बहुसोदरी नामक देवियों की पुत्री, जो इससे पहले अपने सातवें जन्म में उस महान प्राणी की माता रह चुकी थी, एक माँ के स्नेह से लगातार उसका स्मरण कर रही थी; परन्तु उस दिन अपने दिव्य आनंद में डूबी होने के कारण उसे उसकी याद नहीं आई; और उसकी सहेलियों ने बस इतना कहा कि वह देवियों की सभा में गई है (और इसलिए चुप रही)। ठीक उसी क्षण जब वह अचेत हुआ, अचानक उसका स्मरण करते हुए उसने मन ही मन कहा, "मेरे पुत्र का क्या हुआ?" और फिर उसने देखा कि राजा पिलियाक्खा ने मिगासम्मत नदी के किनारे उसे विषैले बाण से घायल कर दिया था और वह एक रेतीले टीले पर पड़ा था, जबकि राजा जोर-जोर से विलाप कर रहा था। "यदि मैं उसके पास न जाऊँ, तो मेरा पुत्र सुवन्नसमा वहीं मर जाएगा और राजा का हृदय टूट जाएगा, और समा के माता-पिता भूख और प्यास से मर जाएँगे। परन्तु यदि मैं वहाँ जाऊँ, तो राजा जल का घड़ा लेकर उसके माता-पिता के पास जाएगा, और उनकी बातें सुनकर उन्हें उनके पुत्र के पास ले जाएगा, और मैं और वे मिलकर एक दृढ़ प्रार्थना करेंगे जिससे समा के शरीर में व्याप्त विष का प्रभाव समाप्त हो जाएगा, और तब मेरा पुत्र जीवित हो जाएगा और उसके माता-पिता को दृष्टि प्राप्त हो जाएगी, और राजा समा का उपदेश सुनकर दान-पुण्य करेगा और स्वर्ग का मार्ग प्रशस्त करेगा; अतः मैं तुरंत वहाँ जाऊँगी।" ऐसा करके वह गई, और आकाश में अदृश्य होकर, मिगासम्मता नदी के किनारे खड़ी होकर, उसने राजा से विचार-विमर्श किया।

यहां गुरु ने बात को और स्पष्ट करने के लिए ये श्लोक कहे:

"गंधम पर्वत पर दृष्टि से छिपी हुई देवी,
उस पर दया करके मैंने ये छंद उसके कानों में कहे;
"तुमने एक दुष्ट कर्म किया है, तुम पर इसका भारी दोष है।"
माता-पिता और पुत्र सभी निर्दोष थे, तुम्हारे एक तीर ने तीनों को मार डाला;
आओ, मैं तुम्हें बताता हूँ कि अपने अपराधबोध से मुक्ति और विश्राम कैसे प्राप्त करें;
जंगल में अंधे जोड़े की देखभाल करो, इससे तुम्हारी पापी आत्मा को आशीर्वाद मिलेगा।"
जब उसने उसकी बातें सुनीं, तो उसे उसकी बात पर विश्वास हो गया कि यदि वह जाकर माता-पिता की सहायता करेगा, तो उसे स्वर्ग प्राप्त होगा; अतः उसने निश्चय किया, "राज्य से मेरा क्या लेना-देना? मैं जाकर उनकी सेवा में अपना जीवन समर्पित करूँगा।" बहुत रोने के बाद उसने अपने दुःख पर विजय प्राप्त की, और यह सोचकर कि समा वास्तव में मर गया है, उसने उसके शरीर को सभी प्रकार के

फूलों से आदर दिया और उस पर जल छिड़का, और तीन बार उसके चारों ओर घूमकर, अपना दाहिना भाग उसकी ओर करके, चारों दिशाओं में आदर किया। फिर उसने कलश उठाया, अपना मुख दक्षिण की ओर किया और भारी मन से अपने मार्ग पर चल पड़ा।

यहां गुरु ने व्याख्या का यह श्लोक जोड़ा:

दुर्भाग्यवश उस युवक के लिए शोक मनाते हुए, राजा ने फूट-फूटकर आंसू बहाए और फिर पानी का घड़ा उठाकर अपना चेहरा दक्षिण दिशा की ओर कर लिया।

स्वभाव से बलवान राजा ने जल का घड़ा उठाया और दृढ़ निश्चय के साथ आश्रम की ओर बढ़े और अंततः बुद्धिमान दुकुला की कुटिया के द्वार पर पहुँच गए। कुटिया में बैठे बुद्धिमान दुकुला ने पास आते कदमों की आहट सुनी और संशय में सोचते हुए ये दो पंक्तियाँ कहीं:

"ये किसके कदमों की आहट है जो मैं सुन रहा हूँ? कोई इस रास्ते से आ रहा है।"
यह समा के कदमों की आवाज नहीं है, आप कौन हैं, कृपया मुझे बताएं, महोदय, मैं आपसे निवेदन करता हूं।
जब राजा ने उसकी बात सुनी, तो उसने मन ही मन सोचा, "अगर मैं उन्हें बता दूं कि मैंने उनके बेटे को मार डाला है और अपने शाही स्वरूप को प्रकट न करूं, तो वे क्रोधित हो जाएंगे और मुझसे कठोर भाषा में बात करेंगे, और तब मेरा क्रोध उनके विरुद्ध भड़क उठेगा और मैं उनके साथ कोई अत्याचार करूंगा, और यह पाप होगा; लेकिन ऐसा कोई नहीं है जो राजा के बारे में सुनकर भयभीत न हो, इसलिए मैं अपने आप को उनके सामने प्रकट कर दूंगा"; अतः उसने घड़ा उस स्थान पर रख दिया जहाँ पानी का घड़ा रखा जाना चाहिए था, और झोपड़ी के द्वार पर खड़े होकर बोला:

मैं कासिस वंश का स्वामी हूँ, मेरा नाम राजा पिलियाक्खा है; और यहाँ,
देह की लालसा में अपना सिंहासन छोड़कर, मैं जंगल के हिरणों का शिकार करने के लिए भटकता हूँ।
मैं तीरंदाजी में निपुण हूँ, मेरा हृदय दृढ़ है और मैं आसानी से नहीं बदलता;
एक बार अगर कोई नाग मेरी सीमा में आ गया तो वह मेरे तीर से बच नहीं सकता।"
उस बुद्धिमान व्यक्ति ने उसे मैत्रीपूर्ण अभिवादन किया और उत्तर दिया (*10):

"स्वागत है, हे राजा, एक सुखद संयोग ने आपको इस मार्ग पर ला खड़ा किया है।"
आप कितने महान और गौरवशाली हैं: कृपया बताइए, आपका काम क्या है?
तिंडूक और पियाल के पत्ते, और कसुमरी मिठाई, यद्यपि थोड़ी-थोड़ी हैं, फिर भी हे राजा, हमारे पास जो सबसे अच्छा है, वही लो और खाओ।

और पहाड़ी पर छिपी एक गुफा से निकलता यह ठंडा पानी,
हे महान सम्राट, इसे ग्रहण करो, यदि तुम्हारी इच्छा हो तो पी लो।
जब राजा ने उसका स्वागत सुना तो उसने मन ही मन सोचा, "उसे सीधे यह कहना उचित नहीं होगा कि मैंने अभी-अभी उसके बेटे को मार डाला है; मैं उससे ऐसे बात करना शुरू करूँगा जैसे मुझे इसके बारे में कुछ पता ही न हो और फिर उसे बताऊँगा"; इसलिए उसने उससे कहा

"एक अंधा आदमी जंगल में कैसे भटक सकता है? ये फल तुम्हारे दरवाजे तक कौन लाया?"
जिसने इतनी विविध वस्तुओं का संग्रह किया, उसकी नजरें तो बहुत तेज रही होंगी।
बूढ़े व्यक्ति ने राजा को यह समझाने के लिए दो छंद दोहराए कि उसने और उसकी पत्नी ने फल नहीं तोड़े थे, बल्कि उनका बेटा उन्हें फल लाकर दिया था:

"हमारा बेटा समा उम्र में छोटा है, ज्यादा लंबा नहीं है लेकिन देखने में सुंदर है।"
उसके सिर पर मुकुट की तरह लंबे काले बाल स्वाभाविक रूप से कुत्ते की पूंछ (*11) की तरह घुंघराले होते हैं।
वह फल लेकर आया और फिर हमारा पानी का घड़ा भरने के लिए तेजी से चला गया;
वह अभी यहीं वापस आ जाएगा, नदी का रास्ता ज्यादा दूर नहीं है।"
राजा ने उत्तर दिया:

"समा, तुम्हारा वह कर्तव्यनिष्ठ पुत्र,
जिसे आप इतना सुंदर, इतना अच्छा बताते हैं,
मैंने उसे मार डाला है:
उसके काले घुंघराले बाल वहीं पड़े हैं।

खून से लथपथ।"
पास ही परिका की पत्तों की झोपड़ी थी, और जब वह वहाँ बैठी थी तो उसने राजा की आवाज सुनी, और यह जानने के लिए उत्सुक होकर बाहर गई कि क्या हुआ था, और रस्सी की सहायता से दुकुला के पास जाकर उसने कहा:

"मुझे बताओ, दुकुला, यह कौन है जो कह रहा है कि समा की हत्या कर दी गई है?"
"हमारी समा की हत्या कर दी गई," - ऐसी बुरी खबर सुनकर मेरा दिल मानो दो टुकड़ों में बंट गया।
जैसे आंधी के झटके से पेड़ से टूटकर गिर पड़ी हुई कोमल युवा पेपुल की कोंपल,
हमारे समा की हत्या कर दी गई, यह खबर सुनकर मेरा दिल पीड़ा से छलनी हो गया है।
बूढ़े व्यक्ति ने उसे सलाह दी:

"यह काशी भूमि का राजा है, उसके क्रूर धनुष ने उसे मार डाला है, मुझे पता है।"
नदी किनारे हमारा समा है, लेकिन हमें रुककर उसे शाप नहीं देना चाहिए।"
परिका ने उत्तर दिया:

"हमारा प्यारा बेटा, हमारी जिंदगी का एकमात्र सहारा, जिसके लिए हमने इतने लंबे समय तक तरसा और इंतजार किया,"
मैं उस व्यक्ति के प्रति अपने गुस्से को कैसे नियंत्रित करूँ जिसने यह अन्याय किया है?
बूढ़े व्यक्ति ने हैरानी से कहा:

"एक प्यारा बेटा, हमारी जिंदगी का एकमात्र सहारा, जिसकी हमें लंबे समय से चाह थी और जिसका हम लंबे समय से इंतजार कर रहे थे!"
लेकिन सभी बुद्धिमान लोग हमें गलत काम करने वाले के प्रति क्रोध करने से मना करते हैं।
तब वे दोनों अपने सीने पीटते हुए विलाप करने लगे और बोधिसत्व के गुणों की प्रशंसा करने लगे। तब राजा ने उन्हें सांत्वना देने का प्रयास किया:

"मैं आपसे विनती करता हूँ कि अपनी प्रिय समा के दुर्भाग्यपूर्ण भाग्य पर अधिक मत रोइए;
देखो, मैं तुम दोनों की सेवा करूंगा, पूरी तरह से निराश होकर शोक मत मनाओ;
मुझे धनुष चलाने का अच्छा अभ्यास है, मेरा वादा पुख्ता है।
देखो, मैं तुम दोनों की सेवा करूंगा और इस सुनसान जंगल में तुम्हारी देखभाल करूंगा।
मैं हिरण के बचे हुए हिस्से, और तुम्हारी सभी जरूरतों के लिए जड़ें और फल ढूंढूंगा;
देखो, मैं तुम दोनों की सेवा करूंगा, मैं सचमुच तुम्हारा घरेलू दास हूं।
उन्होंने उससे विरोध जताया:

"हे मनुष्यों के राजा, यह उचित नहीं है, यह बिल्कुल अनुचित होगा।"
आप हमारे स्वामी और सच्चे राजा हैं: हम आपके चरणों में नमन करते हैं।"
यह सुनकर राजा प्रसन्न हुआ। उसने सोचा, "यह तो अद्भुत बात है, मुझ जैसे पापी के विरुद्ध भी कोई कठोर शब्द नहीं बोलता, बल्कि मेरा स्नेहपूर्वक स्वागत करता है"; और उसने यह श्लोक कहा:

"हे वनपालों, इस बात की घोषणा करो, यह स्वागत सच्ची श्रद्धा है;"
अब से आप मेरे पिता हैं, और आप मेरे लिए माता समान हैं।
उन्होंने आदरपूर्वक हाथ उठाकर प्रार्थना की, "हमें आपसे किसी भी प्रकार की सेवा की आवश्यकता नहीं है, कृपया हमें अपने हाथ का सिरा आगे बढ़ाकर मार्गदर्शन करें; और हमें हमारी समाधि दिखाएँ," और उन्होंने दोहे कहे:

"हे काशी-राजा, आप अपने राज्य की समृद्धि के स्वामी हैं, आपकी जय हो!"
हमें उस स्थान पर ले चलो जहाँ हमारा प्रिय पुत्र समा लेटा हुआ था।
वहाँ उसके पैरों पर गिर पड़े, उसके चेहरे, आँखों, हर अंग को छूते हुए (*12),
हम मृत्यु के आने की प्रतीक्षा करेंगे, जब तक हम उसके निकट हैं तब तक धैर्य रखेंगे।"
जब वे इस प्रकार बातें कर रहे थे, तभी सूर्य अस्त हो गया। तब राजा ने सोचा, "यदि मैं उन्हें अभी वहाँ ले जाऊँ, तो वे यह दृश्य देखकर टूट जाएँगे; और यदि मेरे कारण तीन व्यक्ति इस प्रकार मर गए, तो मैं निश्चित रूप से नरक में जाऊँगा, इसलिए मैं उन्हें वहाँ नहीं जाने दूँगा"; अतः उसने ये पंक्तियाँ कहीं:

"एक ऐसा क्षेत्र जो शिकारी जानवरों से भरा हुआ है, मानो दुनिया की सबसे चरम सीमा हो।"
वहीं पर समा इस प्रकार स्थित है मानो चंद्रमा जमीन पर गिर गया हो।
शिकारी जानवरों से भरा एक क्षेत्र, मानो दुनिया की सबसे चरम सीमा हो।
वहीं पर समा इस प्रकार लेटी है मानो सूर्य जमीन पर गिर पड़ा हो।
दुनिया के सबसे दूर छोर पर वह धूल से ढका और खून से सना हुआ पड़ा है;
"अपनी कुटिया में ही रहना बेहतर है, जंगल के खतरों को न आजमाएं।"
उन्होंने अपनी निर्भीकता दिखाने के लिए इस छंद में उत्तर दिया:

जंगली जीवों को जो चाहे करने दो, हजारों-लाखों की संख्या में, उन्हें झुंड बनाकर हमला करने दो।
हमें जंगली जानवरों से कोई डर नहीं है, वे हमें किसी भी तरह का नुकसान नहीं पहुंचा सकते।
अत: राजा उन्हें रोकने में असमर्थ होकर, उनका हाथ पकड़कर उन्हें वहाँ ले गया।

जब उसने उन्हें पास बुलाया, तो उसने उनसे कहा, "यह तुम्हारा बेटा है।" तब उसके पिता ने उसका सिर अपनी छाती से लगा लिया और उसकी माँ ने उसके पैर अपने हाथों में ले लिए, और वे बैठ कर शोक मनाने लगे।

विषय को स्पष्ट करने के लिए गुरु ने ये श्लोक कहे (*13):

धूल से ढके और हृदय में गहरे घाव लिए, अपने माता-पिता को इस प्रकार लेटे हुए देखकर, मानो कोई सूर्य या चंद्रमा आकाश से पृथ्वी पर गिर पड़ा हो, माता-पिता ने अपने हाथ ऊपर उठा लिए और कड़वी चीखों के साथ विलाप करने लगे।

"हे समा, क्या तुम गहरी नींद में सो रही हो? क्या तुम क्रोधित हो? या क्या हम तुम्हें भूल गए हैं?"
या फिर, क्या किसी बात ने आपके मन को परेशान कर दिया है कि आप चुपचाप लेटे हुए हैं और कोई जवाब नहीं दे रहे हैं?
अब हमारे उलझे बालों को कौन संवारेगा और धूल-मिट्टी कौन साफ करेगा?
जब समा नहीं रहेगी, तो उस बेचारे नेत्रहीन दंपति के पास रहने का एकमात्र सहारा क्या होगा?
अब हमारे लिए फर्श कौन साफ करेगा, या हमें गर्म या ठंडा पानी कौन लाएगा?
"जब हम असहाय, अंधे और बूढ़े होकर बैठे हैं, तो हमारे लिए जंगल की जड़ें और फल कौन लाएगा?"
बहुत देर तक रोने के बाद माँ ने अपने सीने पर हाथ मारा और अपने दुख पर गहराई से विचार करते हुए मन ही मन कहा, "यह सब मेरे बेटे के लिए मात्र शोक है, वह जहर के प्रभाव से बेहोश हो गया है, मैं उससे जहर निकालने के लिए सत्य की प्रतिज्ञा करूंगी"; अतः उसने सत्य का कार्य किया और निम्नलिखित छंदों को दोहराया:

"यदि यह सच है कि पुराने समय में समा हमेशा सदाचारी जीवन जीती थी,
तब शायद उसकी नसों में मौजूद यह जहर अपनी भयावह शक्ति खो दे और हानिरहित हो जाए।
यदि पुराने दिनों में वह सच बोलता था और दिन-रात अपने माता-पिता की सेवा करता था,
तब शायद उसकी नसों में मौजूद यह जहर पराजित होकर धीरे-धीरे खत्म हो जाए।
हमने और उनके पिता ने अतीत में जो भी पुण्य अर्जित किया है,
यह विष की शक्ति पर विजय प्राप्त करे और हमारा प्रिय पुत्र न मरे (*14)।"
जब उसकी माँ ने इस प्रकार गंभीर दावा किया, तो समा वहीं लेटे-लेटे करवट बदल ली। फिर उसके पिता ने भी उन्हीं शब्दों में गंभीर दावा किया; और जब वह अभी बोल ही रहे थे, समा घूमकर दूसरी तरफ लेट गया (*15)।

तब देवी ने अपना दृढ़ निश्चय व्यक्त किया। गुरु ने स्पष्टीकरण देते हुए निम्नलिखित श्लोक कहे:

"गंधमदन पर्वत पर दृष्टि से छिपी हुई देवी"
समा की दया से प्रेरित होकर, सत्य का एक गंभीर कार्य किया;
"इस गंधमद पर्वत पर मैंने अपना जीवन लंबे समय तक अकेले ही व्यतीत किया है।"
घने जंगलों में, जहाँ हर पेड़ की अपनी एक अलग सुगंध होती है,
और पृथ्वी पर रहने वाला कोई भी प्राणी मेरे दिल के सबसे करीब नहीं है।
चूंकि यह सच है, इसलिए उसके शरीर से विष की सारी शक्ति समाप्त हो जाए।
इस प्रकार दया से प्रेरित होकर उन सभी ने बारी-बारी से अपनी गंभीर गवाही दी।
देखो, उनकी दृष्टि में समा उछल पड़ी, पहले की तरह ही युवा, सुंदर और बलवान।

इस प्रकार, महानुभाव का घाव से ठीक होना, उनके माता-पिता की दृष्टि का पुनः प्राप्ति और भोर का दिखना, ये चारों चमत्कार देवी की अलौकिक शक्ति से एक ही क्षण में आश्रम में घटित हुए। माता-पिता यह देखकर अत्यंत प्रसन्न हुए कि उनकी दृष्टि पुनः प्राप्त हो गई है और समा स्वस्थ हो गए हैं। तब समा ने ये श्लोक कहे:

"मैं तुम्हारा समा हूँ, सुरक्षित और स्वस्थ, मुझे अपने सामने देखो और आनंदित हो जाओ।"
अपने आंसू पोंछ लो और अब और मत रोओ, बल्कि प्रसन्न स्वर में मेरा अभिवादन करो।
आपका भी स्वागत है, हे पराक्रमी राजा, आपकी आज्ञाओं पर भाग्य की कृपा बनी रहे;
आप हमारे सम्राट हैं: हमें बताइए कि आप हमसे क्या चाहते हैं।
हम अपने मेहमानों के लिए तिन्दुकास, पियाल्स, मधुकास जैसे अपने सर्वोत्तम फल लाते हैं।
स्वाद में शहद के समान मीठे फल, जो भी आपको सबसे अच्छा लगे, खाइए।
हे कृपालु प्रभु, यह ठंडा पानी पहाड़ी की गुफाओं से लाया गया है।
पहाड़ी झरने का पानी प्यास बुझाने का सबसे अच्छा तरीका है, अगर आपको प्यास लगी है तो जी भरकर पी लें।
इस चमत्कार को देखकर राजा भी आश्चर्यचकित रह गया:

मैं असमंजस और अचंभित हूँ, मुझे समझ नहीं आ रहा कि किस तरफ जाऊं।
एक घंटे पहले मैंने तुम्हें मृत देखा था, जो अब यहाँ जीवित और स्वस्थ खड़ा है!
समा ने मन ही मन सोचा, "इस राजा ने मुझे मृत समझा, मैं उसे अपने जीवित होने का स्पष्टीकरण दूंगा"; इसलिए उसने कहा:

"एक ऐसा व्यक्ति जो अपनी सभी शक्तियों से परिपूर्ण हो, जिसके मन में एक भी विचार या भावना न भटकी हो,"
क्योंकि बेहोशी ने उनका खेल रोक दिया है, जिस जीवित व्यक्ति को वे मृत समझ रहे हैं, वह अब मृत है।"
फिर राजा को पूरे मामले का वास्तविक अर्थ समझाने की इच्छा से, उसने उसे विधि सिखाने के लिए दो श्लोक और जोड़े:

"वे मनुष्य जो धर्म के मार्ग का अनुसरण करते हैं और संकट में पड़े अपने माता-पिता की सेवा करते हैं,
देवता (देवदूत) उनकी भक्ति को देखते हैं और उनकी बीमारियों को ठीक करने के लिए आते हैं।
वे मनुष्य जो धर्म के मार्ग का अनुसरण करते हैं
और संकट में फंसे अपने माता-पिता की सेवा करें।
इस संसार में देवता (देवदूत) प्रशंसा करते हैं
उनके कर्मों का फल उन्हें स्वर्ग में मिलेगा।
यह सुनकर राजा मन ही मन सोचने लगा, "यह तो अद्भुत चमत्कार है: जो अपने माता-पिता का स्नेह करता है, उसके बीमार होने पर देवता (देवदूत) भी उसे ठीक कर देते हैं; यह समा तो अत्यंत महिमामय है"; फिर उसने कहा:

मैं दिन-प्रतिदिन और अधिक असमंजस में हूँ, मुझे समझ नहीं आ रहा कि किस दिशा में जाऊं।
समा, मैं सहायता के लिए आपके पास आता हूँ, समा, आप ही मेरी शरण बनो।
तब उस महान सत्ता ने कहा, "हे राजा, यदि तुम देवताओं (देवदूतों) के लोक में पहुँचकर वहाँ दिव्य सुख का अनुभव करना चाहते हो, तो तुम्हें इन दस कर्तव्यों का पालन करना होगा," और उन्होंने इनके विषय में ये श्लोक कहे:

"हे योद्धा राजा, सर्वप्रथम अपने माता-पिता के प्रति अपने कर्तव्य का पालन करो;"
इस जीवन में पूर्ण किया गया कर्तव्य आप परलोक में लेकर जाएँगे (*17)।
हे योद्धा राजा, अपने बच्चों और अपनी पत्नी के प्रति अपने कर्तव्य का पालन करो;
इस जीवन में अपने कर्तव्य पूर्ण करने के बाद, आप उन्हें परलोक ले जाएंगे।
अपने मित्रों और मंत्रियों के प्रति कर्तव्य, अपने विभिन्न हथियारों से लैस आपके सैनिकों के प्रति,
कस्बों और गांवों तक, तुम्हारा राज्य अपनी सभी प्रजा सहित,
हे राजा, तपस्वियों, ब्राह्मण संतों, पक्षियों और पशुओं के प्रति कर्तव्य।
इस जीवन में अपने कर्तव्य पूर्ण करने के बाद, आप उन्हें परलोक ले जाएंगे।
कर्तव्य पूर्ण करने से सुख मिलता है, जी हाँ, इंद्र, ब्रह्मा, उनके समस्त समूह को।
कर्तव्य का पालन करके ही उन्होंने अपना सुख प्राप्त किया: किसी भी कीमत पर कर्तव्य का पालन करना चाहिए।"
इस प्रकार, महान सत्ता ने उन्हें राजा के दस कर्तव्यों का उपदेश देने के बाद, उन्हें कुछ और शिक्षाएँ दीं और पाँच नियम सिखाए। राजा ने सिर झुकाकर उपदेश स्वीकार किया और आदरपूर्वक विदा लेकर बनारस चले गए। वहाँ उन्होंने अनेक दान दिए और अनेक पुण्य कर्म

किए, तथा अपने दरबारियों के साथ स्वर्गलोक चले गए। बोधिसत्व भी अपने माता-पिता सहित, अलौकिक शक्तियों और समाधि की विभिन्न अवस्थाओं को प्राप्त करके ब्रह्मलोक चले गए।

पाठ के बाद, गुरु ने कहा, "हे भिक्षुओं, बुद्धिमानों में अपने माता-पिता का सहारा देना एक प्राचीन परंपरा है।" फिर उन्होंने सत्यों की व्याख्या की (जिसके बाद भिक्षु ने प्रथम मार्ग का फल (सम्मोहन) प्राप्त किया) और जन्म का वर्णन किया: "उस समय राजा आनंद थे, देवी उप्पलावन्ना थीं, इंद्र अनुरुद्ध थे, पिता कश्यप थे, माता भद्दकपिलानी थीं और सुवन्नासमा मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(1)प्रश्न ब्राह्मण-संयुक्त, II. 9.

(2) को के स्थान पर खो पढ़ना। प्रो. कोवेल, गच्चा को छोड़कर, अनुवाद करते हैं: "यह कौन है जो तुम्हारे अपने बेटे के समान है?"

(3)दुकुला.

(4) विश्वकर्मा अन्य जन्मों में भी इस कर्तव्य का पालन करते हैं: देखें क्रमांक 303

(5)ब्रह्मलोक के विपरीत।

(6) विद्वान ने usa को "भोजन" या ushma के रूप में समझाया है। विद्वान ने इसे एक विकल्प के रूप में भी दिया है। हालाँकि, पाली में यह शब्द usma या usuma के रूप में आता है।

(7) यह श्लोक दो बार कहा गया है।

(8) शाब्दिक रूप से वे केवल नदी की तरह सूखेंगे।

(9)उपत्तितभवंगा पढ़ें?

(10)चार छंदों को दोहराते हुए।

(11) देखें. हितोप, II. 135. "सम्मान प्राप्त करने के बावजूद, एक बुरा आदमी हमेशा अपनी स्वाभाविक आदत पर लौट आता है; जैसे कुत्ते की पूंछ, जो तमाम दवाओं और मलहमों के बाद भी मुड़ी हुई रहती है।" मैंने सुनाग्गा- पढ़ा।

(12) विद्वान भुजा को भुंजति से जोड़ते प्रतीत होते हैं। लेकिन क्या इन शब्दों का अर्थ "हमारे चेहरे, बांहों और आंखों पर प्रहार करना" हो सकता है? सुम्ह, सुम्भ का अर्थ है "मारना"। देखें "चोट पहुँचाना"। पाठ में अनुवाद स्पष्ट रूप से सही है; "उसका" न कि "हमारा": लेकिन संसुम्भमन के अर्थ का संकेत देने के लिए विद्वान के नोट "वत्तेन्टा" के अलावा और कुछ नहीं है।

(13) छोड़े गए छंद, पुनरावृत्तियों से भरे हुए।

(14)आठ छंदों को तीन में संकुचित किया गया।

(15) गद्य कथा अक्सर पद्य में दोहराई जाती है, इसलिए उसे छोड़ दिया जाता है।

(17)देखें, महावग्ग, I. 281.

अंतर्वस्तु

○ 1.3पाली संस्करण (देवनागरी, संस्कृत/हिन्दी लिपि)
स्रोत *: ई.बी. कोवेल और डब्ल्यू.एच.डी. राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-541-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 541 (*1)
निमि-जातक।
"देखो ये सफेद बाल," इत्यादि। यह कहानी गुरु ने मिथिला के पास मखदेव के आम के उद्यान में रहते हुए एक मुस्कान के बारे में सुनाई थी। एक दिन शाम को, गुरु अपने कई भिक्षुओं के साथ इस आम के उद्यान में टहल रहे थे, तभी उनकी नज़र एक सुंदर स्थान पर पड़ी। अपने अतीत के बारे में बताने की इच्छा से उन्होंने अपने चेहरे पर मुस्कान बिखेरी। जब पूज्य आनंद ने उनसे पूछा कि वे क्यों मुस्कुरा रहे हैं, तो उन्होंने उत्तर दिया, "आनंद, इस स्थान पर मैं एक बार राजा मखदेव के समय में गहन ध्यान में लीन था।" फिर उनके अनुरोध पर वे एक आसन पर बैठ गए और अतीत की एक कहानी सुनाई।

एक समय की बात है, विदेह राज्य में, और मिथिला नगर में, मखदेव नाम का एक राजा था (*2)। चौरासी हजार वर्षों तक उसने युवावस्था में अपनी इच्छा का पालन किया, चौरासी हजार वर्षों तक वह वायसराय रहा, चौरासी हजार वर्षों तक वह राजा रहा।

अब उसने अपने नाई से कहा कि जब भी उसके सिर पर सफेद बाल दिखाई दें, तो उसे तुरंत सूचित करे। कुछ समय बाद जब नाई ने सफेद बाल देखे और उसे बताया, तो उसने नाई से उन्हें चिमटे से खींचकर अपने हाथ पर रखने को कहा। मृत्यु को अपने माथे पर मंडराते देख, उसने सोचा, "अब मेरे लिए संसार छोड़ने का समय आ गया है।" इसलिए उसने नाई को एक गाँव चुनने की छूट दी और अपने बड़े बेटे को बुलवाकर उसे शासन संभालने को कहा, क्योंकि वह स्वयं संसार त्यागने वाला था। "क्यों, महाराज?" उसने पूछा। राजा ने उत्तर दिया:

"देखो, मेरे सिर पर ये सफेद बाल दिखाई दे रहे हैं।"
साल दर साल अपने जीवन के कुछ पलों को जी भर कर जी लो:
  वे ईश्वर के दूत हैं, जो हमें याद दिलाते हैं
संसार का त्याग करने का समय निकट आ गया है।
इन शब्दों के साथ उन्होंने विधिपूर्वक जल छिड़काव करके अपने पुत्र को राजा बनाया और उसे इस प्रकार कार्य करने के निर्देश देकर नगर छोड़ दिया; और एक भाई का जीवन अपनाकर चौरासी हजार वर्षों तक उन्होंने चारों श्रेष्ठों का पालन-पोषण किया और फिर ब्रह्मा के स्वर्ग (प्रधान देवदूतों के स्वर्ग) में उनका पुनर्जन्म हुआ।

उनके पुत्र ने भी उसी प्रकार संसार का त्याग कर ब्रह्मा के स्वर्ग (प्रधान देवदूतों के स्वर्ग) में देह त्याग दी। उनके पुत्र ने भी ऐसा ही किया; और इसी प्रकार एक के बाद एक, चौरासी हजार से दो कम राजकुमारों तक—जिनके सिर में एक भी सफेद बाल दिखाई दिया, वे इस आम के उद्यान में तपस्वी बन गए, और चारों देवताओं का पालन-पोषण करके ब्रह्मा के स्वर्ग में जन्म लिया। इस वंश में सबसे पहले जन्म लेने वाले राजा मखदेव, ब्रह्मा के स्वर्ग (प्रधान देवदूतों के स्वर्ग) में खड़े होकर अपने परिवार की स्थिति पर दृष्टि डाली और यह देखकर प्रसन्न हुए कि चौरासी हजार से दो कम राजकुमारों ने संसार का त्याग कर दिया है। उन्होंने सोचा, "क्या अब निर्वाण होगा या नहीं?" यह देखकर कि निर्वाण नहीं होगा, उन्होंने निश्चय किया कि वे स्वयं ही अपने वंश को पूर्ण करेंगे। तदनुसार, वे वहाँ से आए और मिथिला नगर में राजा की पत्नी के गर्भ में गर्भ धारण किया। उनके नामकरण दिवस पर, ज्योतिषियों ने उनके चिह्नों को देखकर कहा, "महाराज, यह राजकुमार आपके परिवार को पूर्ण करने के लिए पैदा हुआ है। आपके संन्यासियों का यह परिवार अब और आगे नहीं बढ़ पाएगा।" यह सुनकर राजा ने कहा, "यह बालक मेरे परिवार को रथ के पहिये के घेरे की तरह पूर्ण करने के लिए पैदा हुआ है!" इसलिए उन्होंने उसका नाम नेमी (*3)-कुमार, या राजकुमार घेरा रखा।

बचपन से ही वह बालक दान-पुण्य, सद्गुणों और व्रत के पालन में लीन था। फिर, हमेशा की तरह, उसके पिता ने उसके बाल सफेद होते देखे, अपने नाई को एक गाँव दे दिया, उसे राजा बना दिया, स्वयं आम के उद्यान में संन्यासी बन गए और ब्रह्मा के स्वर्ग (देवदूतों के स्वर्ग) के लिए नियत हो गए। राजा निमि ने दान-पुण्य के प्रति अपनी श्रद्धा में पाँच भिक्षागृह बनवाए, एक नगर के चारों द्वारों पर और एक नगर के मध्य में, और उनमें भरपूर दान दिया: प्रत्येक भिक्षागृह में उन्होंने एक लाख सिक्के, अर्थात् प्रतिदिन पाँच लाख सिक्के वितरित किए; उन्होंने निरंतर पाँच नियमों का पालन किया; चंद्र दिवसों (*4) पर उन्होंने व्रत रखा; उन्होंने लोगों को दान-पुण्य और अच्छे कार्यों

के लिए प्रोत्साहित किया; उन्होंने स्वर्ग का मार्ग दिखाया, उन्हें मृत्यु के भय से भयभीत किया और धर्म के मार्ग का उपदेश दिया। उनके उपदेशों का पालन करते हुए, दान देते हुए और भलाई करते हुए, वे एक-एक करके परलोक चले गए और देवदूतों के लोक में जन्म लिया: वह लोक भर गया, नरक मानो खाली हो गया। फिर तैंतीस के स्वर्ग में, देवदूतों का समूह सुधम्म नामक दिव्य सभा कक्ष में एकत्रित हुआ और जोर से पुकारने लगा—"हमारे गुरु, राजा निमि को प्रणाम! उनके द्वारा, बुद्ध के ज्ञान से, हमने इस अनंत दिव्य आनंद को प्राप्त किया है!" इस प्रकार उन्होंने उस महान सत्ता के गुणों का गुणगान किया। मनुष्यों के लोक में भी वह स्तुतिगान ऐसे फैल गया, जैसे तेल गहरे समुद्र की सतह पर फैल जाता है।

गुरु ने उपस्थित भिक्षुओं को निम्नलिखित शब्दों में यह बात समझाई:

"यह दुनिया में एक चमत्कार था कि अच्छे राजा निमी के दिनों में कितने अच्छे, योग्य और बुद्धिमान पुरुष उत्पन्न हुए।"

अपने शत्रुओं पर विजय प्राप्त करने वाले विदेह के राजा ने दान दिया; और दान देते समय उसके मन में यह विचार आया:

"पवित्र जीवन या दान देना, इनमें से कौन अधिक फलदायी है? कौन जानता है (*5)?"
उसी क्षण इंद्र का सिंहासन गर्म हो गया। इंद्र ने कारण समझकर देखा कि वह वहीं कुछ सोच रहे हैं। उन्होंने कहा, "मैं इस समस्या का समाधान करूंगा।" वे तुरंत इधर-उधर गए और महल को प्रकाश से जगमगा दिया। फिर वे अपने कक्ष में प्रवेश कर, वहीं चमकते हुए खड़े रहे और राजा के अनुरोध पर सब कुछ स्पष्ट कर दिया।

इसे समझाने के लिए गुरु ने कहा:

"देवताओं (देवदूतों) के शक्तिशाली सम्राट, हजार आंखों वाले,
वह उसके विचार को समझता है; उसके प्रकाश के सामने अंधेरा उड़ जाता है।
महान निमी ने वासवा से बात की, और उसके पूरे शरीर में सिहरन दौड़ गई:

"तुम कौन हो? या तो कोई अर्धदेव हो या फिर सक्का (इंद्र) का ही स्वरूप हो।"
क्योंकि मैंने ऐसी महिमा न कभी देखी है और न सुनी है जैसी मैं देख रहा हूँ।"
तब वासावा ने निमी से बात की, यह जानते हुए कि उसका शरीर कांप रहा था:

मैं सक्का (इंद्र), देवताओं (देवदूतों) का राजा हूँ; मैं आपसे मिलने आया हूँ;
हे राजा, जो चाहो मांग लो, और भय से कांपना मत।
फिर निमी ने वासावा से बात की और यह निमंत्रण दिया:

"हे सर्वशक्तिमान स्वामी, मेरे लिए इस प्रश्न का उत्तर दीजिए:
पवित्र जीवन जीना या दान देना, इनमें से कौन सा अधिक फलदायी होगा?
तब वासवा ने निमी से बात करते हुए उसके प्रश्न का उत्तर दिया और उसे, जो नहीं जानता था, पवित्र जीवन का फल बताया:

"वह जन्म से क्षत्रिय हैं, जो तीसरे दर्जे में पवित्र जीवन जीते हैं।"
एक देवता (देवदूत), मध्य में; और पहला पूर्ण पवित्रता लाता है।"
किसी भी चैरिटी संस्था के लिए इन राज्यों में जीत हासिल करना आसान नहीं है।
सांसारिक जीवन त्याग चुके संन्यासी तपस्या के द्वारा ही विजय प्राप्त करते हैं।
इन श्लोकों के माध्यम से उन्होंने पवित्र जीवन की महान फलदायकता को समझाया, और फिर अन्य श्लोकों का पाठ किया, जिनमें उन राजाओं के नाम लिए गए जो अतीत में महान दान देकर इंद्रियों के दायरे से बाहर निकलने में असमर्थ रहे थे।

"दुदीपा, सागर, सेला, मुकलिंडा, भागिरसा,
उसिनारा और अट्ठाका, अस्सका, और पुथुज्जना,
जी हाँ, राजाओं और ब्राह्मणों, क्षत्रिय सरदारों, अनेकों ने।
उनके तमाम बलिदानों के बावजूद, पेटा की दुनिया से परे कोई नहीं आया।"
इस प्रकार यह समझाते हुए कि दान-पुण्य की तुलना में पवित्र जीवन कितना अधिक फलदायी है, उन्होंने उन तपस्वियों का वर्णन किया जिन्होंने पवित्र जीवन के द्वारा पेटा लोक को पार करके ब्रह्मा के स्वर्ग (प्रधान देवदूतों के स्वर्ग) में जन्म लिया था, और कहा:

"ये पवित्र संन्यासी जिन्होंने सांसारिक जीवन त्याग दिया था,

सात ऋषि, जो इस दुनिया से विदा हो गए: यमहानु,
सोमयागा, मनोजवा, समुद्दा,
माघ, और भरत, और कलिकरा:
चार अन्य: कश्यप, अंगिरसा,
अकित्ती, किसावच्चा, इनके अलावा ये सब।
अब तक उन्होंने परंपरा के अनुसार पवित्र जीवन के महान फल का वर्णन किया था; लेकिन अब वे आगे बढ़े और उन्होंने स्वयं जो देखा था उसका वर्णन किया:

"सिडा उत्तर में एक नदी है, जो नौगम्य (*6) और गहरी है:
इसके बारे में, नरकटों की आग की तरह, सुनहरे ऊंचे पहाड़ चमकते हैं,
लताओं से लथपथ और सुगंधित पौधों से सजी नदी और पहाड़ियाँ भी।
एक समय की बात है, वहाँ दस हजार संन्यासी रहते थे।
मैं महान हूं, जिसने संयम और आत्म-नियंत्रण का व्रत रखा।
दान देना: एकांत में तब देखभाल की गई (*7) प्रत्येक दृढ़ आत्मा।
जाति हो या न हो, मैं ईमानदार व्यक्ति की जरूरत पड़ने पर उसकी सेवा करूंगा।
प्रत्येक मनुष्य अपने कर्मों और कार्यों से बंधा हुआ है।
धर्मपरायणता के अलावा, सभी जातियाँ निश्चित रूप से नरक में जाएंगी:
सभी जातियां धर्मपरायण होने और अच्छे कर्म करने पर शुद्ध हो जाती हैं।
इसके बाद उन्होंने कहा, "परन्तु, हे महाराज, यद्यपि पवित्र जीवन दान-पुण्य से कहीं अधिक फलदायी है, फिर भी ये दोनों ही महान पुरुषों के विचार हैं: आप दोनों में सजग रहें, दान दें और सद्‌गुणों का पालन करें।" यह सलाह देकर वे अपने स्थान पर चले गए।

तब देवदूतों के समूह ने कहा: "महाराज, हमने आपको कुछ समय से नहीं देखा; आप कहाँ थे?" "महोदय, मिथिला के राजा निमि के मन में एक शंका उत्पन्न हुई, और मैं उस प्रश्न का समाधान करने और उन्हें संदेह से मुक्त करने के लिए गया था।" और फिर उन्होंने उस घटना का काव्यात्मक वर्णन किया:

"यहाँ उपस्थित सभी महोदय, मेरी बात ध्यान से सुनें:
धर्मी पुरुषों में जाति और गुणों में बहुत भिन्नता होती है।
वहाँ राजा निमी हैं, बुद्धिमान और अच्छे, जिन्होंने बेहतर पक्ष को चुना--
विदेह के राजा ने अपने शत्रुओं पर विजय प्राप्त की और बड़े-बड़े उपहार दिए।
और जब उसने ये उदार उपहार दिए, तो यह संदेह उत्पन्न हुआ:
कौन सा अधिक फलदायी है—पवित्र जीवन या दान देना? कौन जानता है?
इसलिए उन्होंने बिना किसी चूक के राजा के गुणों का वर्णन किया। इससे देवताओं के मन में उस राजा को देखने की तीव्र इच्छा जागी; और उन्होंने कहा, "महाराज, राजा निमि हमारे गुरु हैं; उनके उपदेशों का पालन करके, उनके द्वारा किए गए प्रयासों से, हमने देवत्व का आनंद प्राप्त किया है। हम उन्हें देखना चाहते हैं—महाराज, उन्हें बुलवाइए और हमें दर्शन दीजिए!" सक्का (इंद्र) ने सहमति दी और मतली को भेजा: "मित्र मतली, मेरे राजसी रथ को जोतकर मिथिला जाओ, राजा निमि को दिव्य रथ में बिठाकर यहाँ ले आओ।" मतली ने आज्ञा का पालन किया और प्रस्थान किया। जब सक्का (इंद्र) देवताओं (देवदूतों) से बात कर रहे थे, मतली को आदेश दे रहे थे और अपना रथ भेज रहे थे, तब मनुष्यों की समझ के अनुसार एक महीना बीत चुका था। यह पूर्णिमा का पवित्र दिन था: राजा निमि पूर्वी खिड़की खोलकर ऊपरी मंजिल पर अपने दरबारियों से घिरे हुए, सद्‌गुणों का चिंतन कर रहे थे; और जैसे ही पूर्व में चंद्रमा का चक्र उदय हुआ, यह रथ प्रकट हुआ। लोगों ने अपना रात्रि भोज कर लिया था और अपने दरवाजों पर आराम से बैठकर आपस में बातें कर रहे थे। "अरे वाह, आज तो दो चाँद हैं!" वे चिल्लाए। जब वे बातें कर रहे थे, तो रथ उनकी नज़र में आ गया। "नहीं, यह चाँद नहीं है," उन्होंने कहा, "बल्कि एक रथ है!" कुछ देर बाद मताली के एक हज़ार घोड़ों का दल और सक्का (इंद्र) का रथ प्रकट हुआ, और वे सोचने लगे कि यह किसके लिए होगा? आह, उनका राजा धर्मात्मा था; उसके लिए ही सक्का (इंद्र) का दिव्य रथ भेजा गया होगा; सक्का (इंद्र) उनके राजा से मिलना चाहता होगा। इसलिए वे प्रसन्न होकर चिल्लाए:

"दुनिया में एक ऐसा अजूबा, जो मन को आनंद से कंपकंपा दे।"
"महिमामय विदेह के लिए दिव्य रथ दर्शन के लिए प्रकट होता है!"
लोगों के लगातार बातें करते रहने के बीच, हवा की तरह तेज गति से मताली आया, जिसने रथ को मोड़ा और खिड़की की चौखट के पास रोक दिया, और राजा को अंदर आने के लिए कहा।

इस बात को समझाते हुए गुरु ने कहा:

"शक्तिशाली मताली, सारथी"
अब स्वर्ग से विदेह के राजा को बुलाया गया है।
जो मिथिला में रहता था: "आओ, हे महाराज,
हे जगत के स्वामी, इस रथ पर सवार होकर:
इंद्र और सभी देवता (देवदूत), तैंतीस,
आपसे सुधम्म हॉल में मुलाकात होगी।
राजा ने सोचा, "मैं देवताओं (देवदूतों) का निवास स्थान देखूंगा, जिसे मैंने पहले कभी नहीं देखा; और मैं मताली पर दया दिखाऊंगा," इसलिए उसने अपनी स्त्रियों और सभी लोगों को संबोधित करते हुए कहा—"मैं जल्द ही लौट आऊंगा: तुम सावधान रहना, भलाई करना और दान देना।" फिर वह रथ में सवार हो गया।

गुरु ने इसे समझाने के लिए कहा (*8):

तब विदेह का राजा पूरी तेजी से उठा।
और वह रथ की ओर गया और उसमें बैठ गया।
जब वह उसमें था, तब मताली ने इस प्रकार कहा:
"हे महाराज, मैं आपको किस मार्ग से ले जाऊं?"
दुष्ट कहाँ रहते हैं, और भले लोग कहाँ रहते हैं?
इस पर राजा ने सोचा—"मैंने इन दोनों जगहों को पहले कभी नहीं देखा है, और मैं दोनों को देखना चाहूंगा।" उसने उत्तर दिया:

"मटाली, दिव्य सारथी, मैं दोनों स्थानों को देखूंगा:
दोनों ही स्थान ऐसे हैं जहाँ धर्मी लोग निवास करते हैं, और जहाँ दुष्ट लोग रहते हैं।
मताली ने सोचते हुए कहा, "दोनों को एक साथ नहीं देखा जा सकता; मैं उससे प्रश्न पूछूंगी," और फिर एक श्लोक सुनाया:

"हे महान सम्राट, हे महान राजा—आप सबसे पहले कौन सा स्थान देखना चाहेंगे?"
वह स्थान जहाँ धर्मी लोग निवास करते हैं, या जहाँ दुष्ट लोग रहते हैं?
तब राजा ने यह सोचकर कि वह किसी भी हालत में स्वर्ग जाएगा ही, और वह नरक देखना भी चुन सकता है (*9), अगला श्लोक पढ़ा:

"मैं पापी मनुष्यों का स्थान देखना चाहता हूँ; कृपया मुझे नरक में जाने दो;"
जहां वे लोग निवास करते हैं जिन्होंने कभी क्रूरतापूर्ण कार्य किए थे और जहां दुष्ट लोग रहते हैं।"
फिर उसने उसे वेतरानी (*10), नरक की नदी दिखाई।

इसे समझाने के लिए गुरु ने कहा;

"मातलि ने राजा वेतरणी को दिखाया,
एक दुर्गंधयुक्त नदी, जो संक्षारक खारे पानी से भरी हुई है।
गर्म, चारों ओर आग की जलती हुई लपटों से ढका हुआ।
वेतरानी में प्राणियों को इतनी पीड़ा में देखकर राजा भयभीत हो गया और उसने मताली से पूछा कि उन्होंने क्या पाप किए हैं। मताली ने उसे बताया।

गुरु ने इसका स्पष्टीकरण इस प्रकार दिया:

"तब निमी ने जब लोगों को गिरते देखा, तो
मताली ने पूछा, इस भीषण नदी-बाढ़ में
"इसे देखकर मुझे भय लग रहा है, सारथी।"
मुझे बताओ, इन मनुष्यों ने क्या पाप किया है?
"किसे नदी में फेंका जाता है?" उसने उत्तर दिया।
पाप किस प्रकार पकता है और फल देता है, इसका वर्णन करते हुए:
"जीवन के संसार में जो स्वयं बलवान हैं,"
फिर भी कमजोरों को दुख पहुंचाओ, उन पर अत्याचार करो, पाप करो।

ये क्रूर प्राणी पाप के लिए जीते थे, और वे
उन्हें वेतरानी नदी में फेंक दिया जाता है।
इस प्रकार मताली ने राजा के प्रश्न का उत्तर दिया। जब राजा ने वेतरानी नामक नरक को देखा, तो उसने उस स्थान को लुप्त कर दिया और रथ को आगे बढ़ाते हुए उसे वह स्थान दिखाया जहाँ कुत्तों और अन्य जानवरों द्वारा जानवरों को नोचा जाता है। उसने राजा के प्रश्न का उत्तर इस प्रकार दिया।

गुरु ने इसका स्पष्टीकरण इस प्रकार दिया:

"काले कुत्ते और चित्तीदार गिद्ध, कौवों के झुंड"
बेहद भयानक, उन पर हमला करो। जब मैं देखता हूँ,
मुझे डर सता रहा है। बताओ, मताली,
हे सारथी, इन्होंने क्या पाप किया है?
"कौवे किसका शिकार करते हैं?" मताली ने उत्तर दिया।
पाप किस प्रकार पकता है और फल देता है, इसका वर्णन करते हुए:
ये देहाती लोग हैं, कंजूस हैं, गंदी ज़बान वाले हैं।
ब्राह्मणों और तपस्वियों को, जो कष्ट पहुंचाते हैं;
ये क्रूर प्राणी पाप के लिए जीते थे, और वे
क्या यहाँ जो कौवे दिख रहे हैं वे शिकार हैं?
उनके बाकी सवालों के जवाब भी इसी तरह दिए जाते हैं।

उनके शरीर आग की लपटों में जल रहे थे, वे नीचे गिर पड़े थे।
गरम चूर्णों से कूटा हुआ: जब मैं देखता हूँ,
मुझे डर सता रहा है। बताओ, मताली,
हे सारथी, इन्होंने क्या पाप किए हैं?
वहाँ कौन पड़े हैं जिन्हें लाल-गरम टुकड़ों से पीटा गया है?
तब सारथी मतली ने उत्तर दिया,
पाप किस प्रकार पकता है और फल देता है, इसका वर्णन करते हुए:
"ये लोग इस संसार में पापी मनुष्य थे,"
जिन्होंने निर्दोषों को दुख पहुंचाया और सताया,
वे दोनों पुरुष और महिलाएं, पापी थे।
ये क्रूर प्राणी पाप के लिए जीते थे, और वे
अब वहीं पड़े रहो, उन लाल-गरम टुकड़ों से पीटे हुए।
"अन्य लोग अंगारों के गड्ढे में संघर्ष कर रहे हैं,"
दहाड़ते हुए, उनके शरीर झुलस गए: जब मैं देखता हूँ,
मुझे डर सता रहा है: बताओ, मताली,
हे सारथी, इन्होंने क्या पाप किया है?
"वहाँ आग के गड्ढे में कौन संघर्ष कर रहा है?"
तब सारथी मतली ने उत्तर दिया,
पाप किस प्रकार पकता है और फल देता है, इसका वर्णन करते हुए:
ये वे लोग हैं जो लोगों की भीड़ के सामने
गवाह को रिश्वत दी और कर्ज चुकाने से इनकार कर दिया;
और इस प्रकार लोगों का विनाश करते हुए, हे शक्तिशाली राजा,
इन क्रूर प्राणियों ने पाप किया, और उन्होंने
अब वहीं कोयले के गड्ढे में तड़पते हुए पड़े रहो।"
धधकती और जलती हुई, सब एक ही अग्नि का गोला।
मुझे लोहे का एक विशाल और बड़ा कड़ाहा दिखाई देता है:
इसे देखते ही मुझे भय लगने लगता है।
मताली, मुझे बताओ, हे दिव्य सारथी--
इन मनुष्यों ने ऐसा कौन सा पाप किया कि वे यहाँ सिर के बल गिरे

उन्हें लोहे के कड़ाहे में फेंक दिया जाता है?
तब सारथी मतली ने उत्तर दिया,
पाप किस प्रकार पकता है और फल देता है, इसका वर्णन करते हुए:
"जिस किसी ने भी ब्राह्मण या तपस्वी को दुख पहुंचाया हो,
पापी पुरुषों के लिए, और वह एक गुणी पुरुष है।
वे क्रूर प्राणी पाप के लिए जीते थे, और वे
अब सीधे लोहे के कटोरे में गिर जाओ।"
उन्होंने उनकी गर्दन मरोड़कर उन्हें पानी में फेंक दिया।
कड़ाही को उबलते पानी से भर देना!
मुझे डर सता रहा है: बताओ, मताली,
उन मनुष्यों ने कौन सा पाप किया है?
क्या वे बुरी तरह से घायल सिर के साथ वहीं पड़े रहते हैं?
तब सारथी मतली ने उत्तर दिया,
पाप किस प्रकार पकता है और फल देता है, इसका वर्णन करते हुए:
ये वे दुष्ट लोग हैं जो दुनिया में
हे महामहिम राजा, तुमने पक्षियों को पकड़ा और उन्हें नष्ट कर दिया;
और इस प्रकार, अन्य जीवों को नष्ट करते हुए, वे
इन क्रूर कृत्यों से पाप उत्पन्न हुआ।
और वे वहाँ पड़े हैं, उनकी गर्दनें मरोड़ी हुई हैं।"
"वहाँ एक नदी बहती है, गहरी, जिसके किनारे उथले हैं।"
आसान पहुंच: ये रहे पुरुष।
गर्मी से झुलस जाओ, और पियो: लेकिन जैसे ही वे पीते हैं,
पानी भूसे में बदल जाता है (*11); जिसे देखकर,
मुझे डर सता रहा है। बताओ, मताली,
उन मनुष्यों ने कौन सा पाप किया है?
क्या वे पानी पीते ही भूसे में बदल जाते हैं?
तब सारथी मतली ने उत्तर दिया,
पाप किस प्रकार पकता है और फल देता है, इसका वर्णन करते हुए:
"ये वे लोग हैं जिन्होंने अच्छे अनाज को भूसे के साथ मिलाया था।"
और उसने इसे एक बेईमान खरीदार को बेच दिया;
अतः अब वह गर्मी से झुलसकर प्यास से बेहाल हो गया है।
जैसे ही वे पानी पीते हैं, वह भूसे में बदल जाता है।
वे नुकीले कांटों, भालों और तीरों से छेद करते हैं।
दोनों ओर जोर-जोर से रोने वाले वे लोग:
मुझे डर सता रहा है: बताओ, मताली,
उन मनुष्यों ने कौन सा पाप किया है?
क्या वे भाले से छलनी होकर वहाँ पड़े हैं?
तब सारथी मतली ने उत्तर दिया,
पाप किस प्रकार पकता है और फल देता है, इसका वर्णन करते हुए:
ये लोग इस संसार में दुष्ट पुरुष थे।
जिन्होंने दूसरों की चीज़ें लेकर अपना जीवन यापन किया--
बकरियां, भेड़ें, गायें, बैल, अनाज, खजाना, चांदी, सोना:
ये क्रूर प्राणी पाप के लिए जीते थे, और वे
अब वहां भाले से छलनी होकर पड़े हुए हैं।
"ये लोग कौन हैं जिन्हें मैंने गर्दन से जकड़ा हुआ देखा है?"
कुछ टुकड़े-टुकड़े हो गए, कुछ पूरी तरह से छलनी हो गए:
मुझे डर सता रहा है: बताओ, मताली,
उन मनुष्यों ने कौन सा पाप किया है?

क्या वे वहां छोटे-छोटे टुकड़ों में फटे पड़े हैं?
तब सारथी मतली ने उत्तर दिया,

पाप किस प्रकार पकता है और फल देता है, इसका वर्णन करते हुए:
मछुआरे और कसाई, जंगली सूअर के शिकारी,
मवेशियों, बैलों और बकरियों के हत्यारे, जिन्होंने हत्या की
और शवों को वधशाला में रख दिया।
ये क्रूर प्राणी पाप के लिए जीते थे, और वे
वे वहां छोटे-छोटे टुकड़ों में फटे पड़े हैं।"
"गंदगी और गोबर की झील, दुर्गंधयुक्त,
बुरी गंध से अपवित्र, जहाँ भूखे लोग
इसमें जो कुछ भी है उसे खा लो! जब मैं ऐसा देखूंगा,
मुझे डर सता रहा है: बताओ, मताली,
उन मनुष्यों ने कौन सा पाप किया है?
वहाँ मैं किसे गंदगी और मैल खाते हुए देख रहा हूँ?
तब सारथी मतली ने उत्तर दिया,
पाप किस प्रकार पकता है और फल देता है, इसका वर्णन करते हुए:
"ये द्वेषपूर्ण व्यक्ति (*12) हैं, जो हानि पहुँचाने के लिए
कुछ अन्य लोगों के साथ रहते थे और उनके दोस्तों को नुकसान पहुंचाते थे:
ये क्रूर प्राणी पाप के लिए जीते थे, और अब,
बेचारे मूर्ख, उन्हें खाने के लिए गोबर और गंदगी ही मिलती है।"
"झील खून से भरी हुई है, और दुर्गंधयुक्त है।"
दुर्गंधयुक्त, अपवित्र, जहाँ गर्मी से झुलसा हुआ हो
पुरुष इसका पेय पीते हैं! जिसे देखकर मुझे लगता है,
मुझे डर सता रहा है; बताओ, मताली,
उन मनुष्यों ने कौन सा पाप किया है?
क्या अब उन्हें उस रक्त का अंश पीना होगा?
तब सारथी मतली ने उत्तर दिया,
पाप किस प्रकार पकता है और फल देता है, इसका वर्णन करते हुए:
"जिन्होंने किसी माता या पिता की हत्या की है,"
जिनका उन्हें आदर करना चाहिए; बहिष्कृत करना
ये क्रूर प्राणी पाप के लिए जीते थे, और वे
क्या वे लोग हैं जो रक्त का अंश पीते हैं?
"देखो, वह जीभ, कांटे से छेदी हुई, ढाल की तरह"
सौ चुभन भरी बातों में फँसे हुए; और वे कौन हैं?
जो जमीन पर मछली की तरह उछलने के लिए संघर्ष करते हैं,
और जब मैं उसे देखता हूँ तो वह एक भयंकर, बदसूरत सींक की तरह लगता है।
मुझे डर सता रहा है: बताओ, मताली,
उन मनुष्यों ने कौन सा पाप किया है?
मुझे वहां कौन दिख रहा है जो फंदा निगल रहा है?
तब सारथी मतली ने उत्तर दिया,
पाप किस प्रकार पकता है और फल देता है, इसका वर्णन करते हुए:
ये वे लोग हैं जो बाज़ार में मौजूद हैं।
लाभ के लालच में वे मोलभाव करते हैं और चीजों को सस्ता कर देते हैं।
बेईमानी का अभ्यास किया है, और इसे छिपाकर रखा है।
जैसे कोई मछली को कांटे में फंसाता है: लेकिन बेईमानों के लिए
उसके सभी कर्मों के कारण कोई सुरक्षा नहीं है:
ये क्रूर प्राणी पाप के लिए जीते थे, और वे

वे वहां लेटे हुए कांटा निगल रहे हैं।"
"झुकी हुई और टूटी हुई महिलाएं, अपनी बाहें फैला रही थीं।"
और विलाप करते हुए, दयनीय अवस्था में, रक्त के धब्बों से लथपथ,
जैसे मवेशी अस्तबल में खड़े हों, वैसे ही कमर तक पानी में खड़े रहें।
मिट्टी में धंसा हुआ, ऊपरी तना आग की लपटों में घिरा हुआ!
मुझे डर सता रहा है: बताओ, मताली,
उन महिलाओं ने कौन सा पाप किया है?
अब वे सब धरती में दफन हो चुके हैं।
कमर तक पानी में डूबा हुआ, धड़ का ऊपरी हिस्सा आग की लपटों से घिरा हुआ?
तब सारथी मतली ने उत्तर दिया,
पाप किस प्रकार पकता है और फल देता है, इसका वर्णन करते हुए:
वे जब संसार में थे तब कुलीन कुल के थे।
उन्होंने अपवित्र जीवन व्यतीत किया, दुष्ट कर्म किए।
वे गद्दार थीं, अपने पतियों को छोड़कर चली गईं, और इसके अलावा
उन्होंने अपनी वासना को संतुष्ट करने के लिए अन्य कार्य भी किए;
उन्होंने अपना पूरा जीवन प्रेम-प्रसंग में बिताया; इसलिए अब
"तेज रोशनी में खड़े रहो, कमर तक धरती में धंसे हुए।"
वे लोगों को पैरों से क्यों पकड़ते हैं?
और उन्हें सीधे नरक में फेंक दें (*13)?
मुझे डर सता रहा है: बताओ, मताली,
उन लोगों ने कौन सा पाप किया है?
कि उन्हें सीधे नरक में धकेल दिया जाता है?
तब सारथी मतली ने उत्तर दिया,
पाप किस प्रकार पकता है और फल देता है, इसका वर्णन करते हुए:
संसार में इन लोगों ने बुराई की, बहकाया।
दूसरे की पत्नी ने उसकी सबसे कीमती चीज चुरा ली।
तो अब उन्हें सीधे नरक में फेंक दिया गया है।
वे अनगिनत वर्षों तक कष्ट भोगते हैं।
नरक में पापी के लिए कोई सुरक्षा नहीं है।
लेकिन वह हमेशा अपने कर्मों के परिणाम भुगतता रहता है।
ये क्रूर प्राणी पाप के लिए जीते थे, और वे
अब उन्हें सीधे नरक में फेंक दिया गया है।"
इन शब्दों के साथ, सारथी मताली ने उस नरक को भी गायब कर दिया और रथ को आगे बढ़ाते हुए उसे गलत विश्वासियों के लिए यातना का नरक दिखाया। अनुरोध करने पर उसने उसे उसका अर्थ समझाया।

मैंने अनेक और विविध कारण देखे हैं
इन नरकों में सबसे भयानक है उन्हें देखना।
मुझे डर सता रहा है: बताओ, मताली,
उन मनुष्यों ने कौन सा पाप किया है?
उन्हें यह असहनीय पीड़ा क्यों सहनी पड़ती है?
इतना तीखा, इतना क्रूर, इतना असहनीय?
तब सारथी मतली ने उत्तर दिया,
पाप किस प्रकार पकता है और फल देता है, इसका वर्णन करते हुए:
"दुनिया में दुष्ट और पथभ्रष्ट विश्वासी कौन थे?"
जिन्होंने झूठे भ्रम में अपना विश्वास रखा,
उन्होंने दूसरों को भी अपने गलत विश्वासों में शामिल कर लिया।
वे अपनी गलत धारणाओं से पाप उत्पन्न करते हैं।
इसलिए इस अत्यधिक पीड़ा को सहना ही होगा।

इतना तीखा, इतना क्रूर, इतना असहनीय।"
अब स्वर्ग में देवता (देवदूत) सुधम्म हॉल में राजा के आने की प्रतीक्षा कर रहे थे। इंद्र ने सोचा, "मातली को आने में बहुत समय लगेगा।" उन्हें इसका कारण समझ में आया, इसलिए उन्होंने कहा, "मातली मार्गदर्शक बनकर राजा को सभी नरक दिखा रहे हैं और बता रहे हैं कि किस पाप के कारण उन्हें किस नरक में जाना पड़ा। इसलिए उन्होंने एक युवा देवदूत को शीघ्रता से बुलाया और उससे कहा, "जाओ, मातली से कहो कि राजा को जल्दी यहाँ ले आए। वह राजा निमि का जीवन व्यर्थ कर रहे हैं; उन्हें सभी नरकों का चक्कर नहीं लगाना चाहिए।" युवा देवदूत शीघ्रता से गए और अपना संदेश दिया। जब मातली ने यह सुना, तो उन्होंने कहा, "हमें देर नहीं करनी चाहिए।" फिर उन्होंने राजा को एक ही पल में चारों दिशाओं के सभी महान नरक दिखाते हुए एक श्लोक सुनाया:

"हे महामहिम सम्राट, अब आपने वह स्थान देख लिया है।"
पापियों का, और जहाँ क्रूर पुरुषों को भेजा जाता है,
और दुष्ट लोग कहाँ जाते हैं: हे महाराज,
आओ, हम स्वर्ग के राजा के पास शीघ्रता से चलें।
यह कहकर राजा ने रथ को स्वर्ग की ओर मोड़ दिया। स्वर्ग की ओर जाते हुए राजा ने आकाश में देवी बिरानी का महल देखा, जिसके शिखर रत्नों और सोने से जड़े थे, अत्यंत भव्यता से सजा हुआ था, जिसमें कमलों से ढका एक उद्यान और एक झील थी, और चारों ओर उस स्थान के अनुरूप वृक्ष थे। वहाँ सामने की ओर एक गुंबददार कक्ष में देवी एक दीवान पर विराजमान थीं, और उनके साथ एक हजार अप्सराएँ थीं, जो एक खुली खिड़की से बाहर देख रही थीं। राजा ने मताली से पूछा कि वह कौन हैं, और मताली ने उन्हें इसका उत्तर दिया।

"पांच शिखरों वाले इस महल को देखें:
वहाँ, मालाओं से सजा हुआ, एक सोफा पड़ा है।
एक अत्यंत शक्तिशाली महिला, जो पदभार ग्रहण करती है
हर प्रकार की भव्यता और अद्भुत शक्ति।
इसे देखकर मुझे आनंद आता है, सारथी।
लेकिन मताली, मुझे बताओ, उसने कौन-कौन से अच्छे काम किए हैं?
वह इस स्वर्गिक महल में खुश है।
तब सारथी मतली ने उत्तर दिया,
अच्छे फल पकने और फल देने की प्रक्रिया का वर्णन:
"क्या आपने कभी बिरानी की दुनिया में आपके बारे में सुना है?"
एक ब्राह्मण का घर में जन्मा दास, जिसे एक बार प्राप्त हुआ था
सही समय पर आए एक अतिथि ने उनका स्वागत किया।
जैसे एक माँ अपने बेटे की देखभाल करती है; और इसलिए अब,
उदार और पवित्र, इस हवेली में सुखी जीवन व्यतीत करता है।"
ये कहकर मताली रथ को आगे ले गया और उसे देवदूत सोनादिन्ना के सात स्वर्णमय महल दिखाए। जब दूसरे ने उन्हें और देवदूत की महिमा को देखा, तो उसने स्पष्टीकरण मांगा, जो मताली ने दिया।

"वहाँ सात महल हैं, जो निर्मल और उज्ज्वल चमक रहे हैं।"
जहां एक शक्तिशाली, भव्य वस्त्रधारी प्राणी निवास करता है,
जो अपनी पत्नियों के साथ उनमें निवास करता है। आनंद।
इसे देखकर मेरा मन भावुक हो जाता है: बताओ, मताली,
इस मनुष्य ने ऐसा क्या अच्छा कार्य किया कि वह
क्या वह इस स्वर्गिक महल में सुखी रूप से रहता है?
तब सारथी मतली ने उत्तर दिया,
यह बताते हुए कि फल कितने अच्छे से पकते हैं और फल देते हैं:
"यह कभी सोनादिन्ना थी, जिसने दिया था।"
शाही उदारता से, और संन्यासियों के लिए
सात आश्रम: उनकी सभी जरूरतों को पूरा करने की लालसा थी
उन्होंने निष्ठापूर्वक व्यवस्था की। वे भोजन लाए।
लेटने के लिए बिस्तर, पहनने के लिए कपड़े और रोशनी।
ईमानदार जीवन जीने वाले उन पुरुषों से संतुष्ट,

वह एक दिन का उपवास रखता था, और हर पखवाड़े में भी उपवास रखता था।
आठवां, चौदहवां और पंद्रहवां दिन;
उदार, संयमित, वह पवित्र मार्गों पर चला (*14),
अतः अब वह आनंद के इस महल में निवास करता है।
इस प्रकार उसने सोनादिन्ना के कार्यों का वर्णन किया; फिर अपने रथ को आगे बढ़ाते हुए उसने एक क्रिस्टल से निर्मित महल दिखाया: उसकी ऊँचाई पच्चीस लीग (4.23 किमी) थी, उसमें सात कीमती धातुओं से बने सैकड़ों स्तंभ और सैकड़ों शिखर थे, वह जालीदार संरचनाओं और छोटी घंटियों से सजा हुआ था, सोने और चांदी का एक ध्वज लहरा रहा था, उसके बगल में कई चमकीले फूलों से भरा एक उद्यान और उपवन था, जिसमें लिली की एक सुंदर झील थी, और वहाँ गायन और संगीत में निपुण अप्सराएँ बहुतायत में थीं। तब राजा ने यह देखकर अप्सराओं के कार्यों के बारे में पूछा, और दूसरी ने उसे बताया।

"क्रिस्टल से बना वह महल, चमकता हुआ,
शिखरों की ऊंचाई बढ़ने के साथ,
खाने-पीने की भरपूर व्यवस्था और भीड़ के साथ
नृत्य और गायन में निपुण सुंदर महिलाओं में से!
मुझे खुशी का अनुभव होता है: बताओ, मताली,
इन महिलाओं ने कितना अच्छा काम किया कि अब वे स्वर्ग में हैं!
वे इस आनंदमय महल में निवास करते हैं?
तब सारथी मतली ने उत्तर दिया,
अच्छे फल पकने और फल देने की प्रक्रिया का वर्णन:
"ये महिलाएं हमेशा पवित्र मार्गों पर चलती रहीं।"
निष्ठावान ननें पवित्र दिनों का पालन करती थीं।
उदार, संयमित और सतर्क, हृदय से शांत,
अब आप उस महल में खुश रहें जिसे आपने देखा है।
उसने रथ को आगे बढ़ाया और रत्नों से जड़ा एक महल दिखाया: वह एक समतल स्थान पर ऊँचा, रत्नों के पर्वत के समान चमकीला, दिव्य संगीत बजाने और गाने वाले देवदूतों से भरा हुआ था। यह देखकर राजा ने पूछा कि इन देवदूतों के क्या कार्य थे, और दूसरे ने उत्तर दिया।

"रत्नों से बना महल, चमकता हुआ,
सममित, संतुलित, देखने में सुंदर।
जहां चारों ओर सबसे दिव्य धुनें हैं,
गीत, नृत्य, ढोल और तबला की गूंज सुनाई देती है:
मैंने इससे पहले इतना सुंदर दृश्य कभी नहीं देखा।
मैंने इससे मधुर ध्वनि कभी नहीं सुनी, कसम से!
मुझे खुशी का अनुभव होता है: बताओ, मताली,
अब मुझे समझ में आ रहा है कि इन मनुष्यों ने क्या अच्छा काम किया था।
क्या आप इस आनंदमय स्वर्गिक महल में खुश हैं?
तब सारथी मतली ने उत्तर दिया,
अच्छे फल पकने और फल देने की प्रक्रिया का वर्णन:
"ये लोग मनुष्यों की दुनिया में साधारण भाई थे:
पार्क और कुएँ उपलब्ध कराए गए हों, या पानी लाया गया हो।
कुएँ के पास बने शेड में, शांत संत भोजन करते थे।
कपड़े, भोजन, पेय पदार्थ और बिस्तर, हर जरूरत का सामान मिल गया।
इन ईमानदार और नेक पुरुषों से संतुष्ट होकर,
जो उपवास का दिन रखता था, और प्रत्येक पखवाड़े में
आठवां, चौदहवां और पंद्रहवां दिन;
उदार और संयमित, वे पवित्र मार्ग पर चलते थे।
और अब इस आनंदमय महल में निवास करो।"

इस प्रकार इन व्यक्तियों के कर्मों का वर्णन करने के बाद, वह आगे बढ़ा और उसे एक और क्रिस्टल महल दिखाया: जिसमें कई शिखर थे, चारों ओर तरह-तरह के फूल और सुंदर वृक्ष थे, जिनमें विभिन्न प्रकार के पक्षियों के गीत गूंज रहे थे, और जिसके किनारे शुद्ध जल की एक नदी बह रही थी, जो अप्सराओं के समूह से घिरे एक गुणी व्यक्ति का निवास स्थान बन गई थी। यह देखकर राजा ने उसके कर्मों के बारे में पूछा; और दूसरे ने उसे बताया।

"क्रिस्टल से बना वह महल, चमकता हुआ,
इसकी चोटियाँ ऊँचाई में ऊपर उठ गईं,
खाने-पीने की भरपूर व्यवस्था और भीड़ के साथ
नृत्य और गायन में निपुण सुंदर महिलाओं में से,
और नदियाँ, जिनके किनारे अनेक फूल और वृक्ष हैं—
मुझे खुशी का अनुभव होता है: बताओ, मताली,
इस नश्वर प्राणी ने अपने जीवन में ऐसा क्या अच्छा कार्य किया कि वह
क्या वह इस स्वर्गिक महल में आनंदित होता है?
तब सारथी मतली ने उत्तर दिया,
अच्छे फल पकने और फल देने की प्रक्रिया का वर्णन:
"किम्बिला में वह एक गृहस्थ था,"
उदार, उद्यान और कुएँ दिए, और निष्ठापूर्वक
पानी लाया गया, और शांत संतों ने भोजन किया।
कपड़े, भोजन, पेय पदार्थ और बिस्तर, हर जरूरत का सामान मिल गया।
इन ईमानदार और नेक पुरुषों से संतुष्ट होकर,
वह एक दिन का उपवास रखता था, और हर पखवाड़े में भी उपवास रखता था।
आठवां, चौदहवां और पंद्रहवां दिन;
उदार, संयमी, वह पवित्र मार्ग पर चलता था।
और अब वह आनंद के इस महल में निवास करता है।"
इस प्रकार उसने उस व्यक्ति के कार्यों का वर्णन किया और आगे बढ़ गया। फिर उसने एक और क्रिस्टल का महल दिखाया: यह पिछले महल से भी अधिक फल, फूल और वृक्षों के झुंडों से घिरा हुआ था। इसे देखकर राजा ने पूछा कि उस भाग्यशाली व्यक्ति के क्या कर्म थे, और दूसरे ने उसे बताया।

"रत्नों से निर्मित वह महल, जगमगाता हुआ,
इसकी चोटियाँ ऊँचाई में ऊपर उठ गईं,
खाने-पीने की भरपूर व्यवस्था और भीड़ के साथ
नृत्य और गायन में निपुण सुंदर महिलाओं में से,
और नदियाँ, जिनके किनारे अनेक वृक्ष और फूल लगे हुए हैं,
शाही और हाथी के पेड़, और आम, साल,
गुलाब सेब मीठा, और टिंडूक, पियाल छाया,
और बाग के सभी फलदार वृक्ष—
मुझे खुशी का अनुभव होता है: बताओ, मताली,
इस नश्वर प्राणी ने अपने जीवन में ऐसा क्या अच्छा कार्य किया कि वह
क्या वह इस स्वर्गिक महल में आनंदित होता है?
तब सारथी मतली ने उत्तर दिया,
अच्छे फल पकने और फल देने की प्रक्रिया का वर्णन:
"मिथिला में वह एक गृहस्थ था।"
उदार, उद्यान और कुएँ दिए, और निष्ठापूर्वक
पानी लाया गया, और शांत संतों ने भोजन किया।
उन्हें कपड़े, भोजन, पेय पदार्थ और बिस्तर मिल गए, उनकी सभी जरूरतें पूरी हो गईं।
इन ईमानदार और नेक पुरुषों से संतुष्ट होकर,
वह एक दिन का उपवास रखता था, और हर पखवाड़े में भी उपवास रखता था।
आठवां, चौदहवां और पंद्रहवां दिन;

उदार, संयमी, वह पवित्र मार्ग पर चलता था।
और अब वह आनंद के इस महल में निवास करता है।"
इस प्रकार उसने उस व्यक्ति के कार्यों का भी वर्णन किया और आगे बढ़ गया। फिर उसने पहले महल की तरह ही रत्नों से सुसज्जित एक और महल दिखाया और राजा के अनुरोध पर वहाँ रहने वाले एक देवता (देवदूत) के कार्यों के बारे में बताया।

"रत्नों से बना महल, चमकता हुआ,
सममित, संतुलित, देखने में सुंदर।
जहां चारों ओर सबसे दिव्य धुनें हैं,
गीत, नृत्य, ढोल और तबला की गूंज सुनाई देती है:
मैंने इससे पहले इतना सुंदर दृश्य कभी नहीं देखा।
मैंने इससे मधुर ध्वनि कभी नहीं सुनी, कसम से!
मुझे खुशी का अनुभव होता है: बताओ, मताली,
इन मनुष्यों ने क्या अच्छा काम किया, जिन्हें अब मैं देख रहा हूँ
क्या आप इस आनंदमय स्वर्गिक महल में खुश हैं?
तब सारथी मतली ने उत्तर दिया,
अच्छे फल पकने और फल देने की प्रक्रिया का वर्णन:
वह एक समय बनारस का गृहस्थ था।
उदार, उद्यान और कुएँ दिए, और निष्ठापूर्वक
पानी लाया गया, और शांत संतों ने भोजन किया।
उन्हें कपड़े, भोजन, पेय पदार्थ और बिस्तर मिल गए, उनकी सभी जरूरतें पूरी हो गईं।
इन ईमानदार और नेक पुरुषों से संतुष्ट होकर,
वह एक दिन का उपवास रखता था, और हर पखवाड़े में भी उपवास रखता था।
आठवां, चौदहवां और पंद्रहवां दिन;
उदार, संयमी, वह पवित्र मार्ग पर चलता था।
और अब वह आनंद के इस महल में निवास करता है।"
फिर आगे बढ़ते हुए, उसने सोने का एक महल दिखाया, जो अपनी पूरी शक्ति में सूर्य के समान था, और राजा के अनुरोध पर उसने उसे वहां रहने वाले देवता (देवदूत) के कारनामों के बारे में बताया।

"आग की लपटों से बने उस महल को देखो,"
सूर्य की तरह लाल, जबकि वह और ऊपर उठता है!
मुझे खुशी का अनुभव होता है: बताओ, मताली,
इस नश्वर प्राणी ने अपने जीवन में ऐसा क्या अच्छा कार्य किया कि वह
क्या वह इस स्वर्गिक महल में आनंदित होता है?
तब सारथी मतली ने उत्तर दिया,
अच्छे फल पकने और फल देने की प्रक्रिया का वर्णन:
वह एक समय श्रावस्ती शहर में रहने वाला एक गृहस्थ था।
उदार, उद्यान और कुएँ दिए, और निष्ठापूर्वक
पानी लाया गया, और शांत संतों ने भोजन किया।
उन्हें कपड़े, भोजन, पेय पदार्थ और बिस्तर मिल गए, उनकी सभी जरूरतें पूरी हो गईं।
इन ईमानदार और नेक पुरुषों से संतुष्ट होकर,
वह एक दिन का उपवास रखता था, और हर पखवाड़े में भी उपवास रखता था।
आठवां, चौदहवां और पंद्रहवां दिन;
उदार, संयमी, वह पवित्र मार्ग पर चलता था।
और अब वह आनंद के इस महल में निवास करता है।"
जब उसने इन आठ महलों का वर्णन किया, तो देवताओं के राजा सक्का (इंद्र) ने सोचा कि मताली को आने में बहुत समय लग रहा है, इसलिए उसने एक और तेज देवदूत को संदेश के साथ भेजा। मताली ने संदेश सुनकर समझा कि अब और देर नहीं करनी चाहिए; इसलिए उसने पलक झपकते ही कई महल दिखाए और राजा को उनमें रहने वालों के कर्मों का वर्णन किया।

"हवा में कई धधकते महल दिखाई दे रहे हैं,"

बादलों के बीच बिजली की चमक!
मुझे खुशी का अनुभव होता है: बताओ, मताली,
इन मनुष्यों ने क्या अच्छा काम किया, जिन्हें अब मैं देख रहा हूँ
क्या तुम वहां स्वर्गिक महल में आनंद मना रहे हो?
तब सारथी मतली ने उत्तर दिया,
अच्छे फल पकने और फल देने की प्रक्रिया का वर्णन:
"अच्छा जीवन जीने वाला, सुशिक्षित, आस्था से परिपूर्ण,"
उन्होंने गुरु की शिक्षाओं के अनुसार कार्य किया;
असीम ज्ञानी (बुद्ध) द्वारा बताए गए जीवन जीने से
वे उन घरों में आए थे जिन्हें आप अब देख रहे हैं।"
इस प्रकार आकाश में बने इन महलों को दिखाने के बाद, वह इन शब्दों के साथ सक्का (इंद्र) के समक्ष आने के लिए चल पड़ा:

"तुमने आकाश में अच्छे और बुरे लोगों के स्थान देखे हैं;
अब हम देवताओं (देवदूतों) के सम्राट के पास चलें।
ये कहते हुए वह आगे बढ़ा और उसे वे सात पहाड़ियाँ दिखाईं जो सिनेरू के चारों ओर एक घेरा बनाती हैं; यह समझाने के लिए कि राजा ने इन्हें देखकर मताली से क्या प्रश्न किया, गुरु ने कहा:

"राजा दिव्य रथ में सवार होकर अपने मार्ग पर यात्रा कर रहे थे।"
हजारों घोड़ों द्वारा खींचे जाने पर, उसने दूर स्थित पर्वत चोटियों को देखा।
सिदा सागर में, उसने पूछा, "मुझे बताओ ये कौन सी पहाड़ियाँ हैं।"
निमी के इस प्रश्न पर देवदूत मताली ने उत्तर दिया:

"शक्तिशाली पहाड़ियाँ सुदस्सरा, काराविका, इसाधारा,
युगंधार, नेमिन्धर, विनताका, अस्सकन्ना।
ये पहाड़ियाँ सिदंतारा में हैं, इसलिए वे वहीं स्थित हैं।
जिसे आप, हे पराक्रमी राजा, आकाश में ऊँचा उठते हुए देखते हैं।
इस प्रकार उसने चार महान राजाओं का स्वर्ग दिखाया और आगे बढ़ता रहा, यहाँ तक कि वह तैंतीस देवताओं के स्वर्ग के विशाल चित्तकूट द्वार के चारों ओर स्थित इंद्र की मूर्तियों को भी दिखा सका। यह देखकर राजा ने प्रश्न किया और दूसरे ने उत्तर दिया।

"यह जगह इतनी सुंदर, भव्य और सजी-धजी है,"
मानो इंद्र की मूर्तियों से घिरा हुआ हो
बाघों द्वारा संरक्षित—जैसा कि मैं इस दृश्य को देख रहा हूँ,
मुझे खुशी का अनुभव होता है: बताओ, मताली,
मैं जो देख रहा हूँ उसका नाम क्या है?
तब सारथी मतली ने उत्तर दिया,
अच्छे फल पकने और फल देने की प्रक्रिया का वर्णन:
"यह स्थान चित्तकुटा है जिसे आप देख रहे हैं।"
स्वर्ग के राजा के स्थान का प्रवेश द्वार,
खूबसूरत पहाड़ों का प्रवेश द्वार:
विस्तृत, अलंकृत और व्यवस्थित
इंद्र की मूर्तियों के साथ, जैसे बाघों द्वारा पहरा दिया जाता है।
हे बुद्धिमान राजा, प्रवेश करो! इस निर्मल स्थान में प्रवेश करो।
इन शब्दों के साथ मताली राजा को भीतर ले गया; ऐसा कहा जाता है--

"स्वर्गीय रथ में यात्रा करते हुए,
हजार घोड़ों द्वारा खींचा गया, शक्तिशाली राजा
मैंने वह स्थान देखा जहाँ सभी देवता (देवदूत) एकत्रित होते हैं।
और जब वह रथ में स्थिर खड़े होकर आगे बढ़ रहा था, तो उसने सुधम्मा में देवताओं (देवदूतों) के जमावड़े का स्थान देखा और मताली से प्रश्न किया, जिसने उत्तर दिया।

"जैसे शरद ऋतु में आकाश पूरी तरह नीला होता है,"
और नज़ारे के लिहाज़ से वह रत्नजड़ित हवेली भी वैसी ही है।
मुझे खुशी का अनुभव होता है: बताओ, मताली,
यह कौन सी हवेली है जो अब मुझे दिखाई दे रही है?
तब सारथी मतली ने उत्तर दिया,
अच्छे फल पकने और फल देने की प्रक्रिया का वर्णन:
"यह सुधम्म है, जहाँ देवता (देवदूत) एकत्रित होते हैं।"
सुंदर स्तंभों द्वारा समर्थित, बारीक ढंग से निर्मित,
आठ भुजाओं वाला, दुर्लभ रत्नों और आभूषणों से निर्मित,
जहां तैंतीस लोग अपने मुखिया के साथ निवास करते हैं,
भगवान इंद्र, सुख के बारे में सोचते हुए
हे देवताओं (देवदूतों) और मनुष्यों: इस सुंदर स्थान में प्रवेश करो।
हे महान सम्राट, जहाँ देवता (देवदूत) निवास करते हैं!
देवता (देवदूत) उनके आगमन की प्रतीक्षा में बैठे रहे; और जब उन्हें राजा के आने का आभास हुआ, तो वे दिव्य पुष्प और सुगंध लेकर महान चित्तकूट द्वार तक उनका स्वागत करने गए; और उन्हें पुष्प और सुगंध भेंट करके सुधम्म हॉल में ले आए। राजा रथ से उतरकर देवताओं (देवदूतों) के हॉल में प्रवेश किया, और देवताओं (देवदूतों) ने उन्हें आसन प्रदान किया, सक्का (इंद्र) को भी वैसा ही आसन दिया और सभी सुख-सुविधाओं का सत्कार किया।

इसकी व्याख्या करते हुए गुरु ने कहा (*15):

"देवताओं (देवदूतों) ने राजा को आते देखा: और फिर, अपने अतिथि का स्वागत करने के लिए,
रोते हुए बोला—"स्वागत है, महान सम्राट, जिनसे मिलकर हमें बहुत खुशी हुई!"
हे राजा! हम आपसे अनुरोध करते हैं कि आप देवताओं (देवदूतों) के राजा के पास बैठें।
और सक्का (इंद्र) ने मिथिला नगर के राजा वेदेह का स्वागत किया।
जी हां, वासावा ने उन्हें सभी सुखों का प्रस्ताव दिया और उनसे बैठने का अनुरोध किया।
"विश्व के शासकों के बीच, हमारे देश में आपका स्वागत है:
हे राजा, उन देवताओं (देवदूतों) के साथ निवास करो, जिनके पास सभी इच्छाओं की पूर्ति का अधिकार है।
अमर सुखों का आनंद लें, जहाँ 33 का स्थान है।"
इस प्रकार सक्का (इंद्र) ने उसे दिव्य सुखों की पेशकश की; और राजा ने अस्वीकार करते हुए उत्तर दिया (*16):

"जैसे जब कोई रथ दिया जाता है, या जब मांग पर सामान दिया जाता है,"
किसी दूसरे के हाथों से प्राप्त आनंद का अनुभव करना भी ऐसा ही है।
मुझे दूसरों के हाथों से मिले आशीर्वाद की परवाह नहीं है।
जब मैं अपने कर्मों के आधार पर खड़ा होता हूँ, तो मेरी संपत्ति मेरी ही होती है और केवल मेरी ही होती है।
मैं जाकर मनुष्यों का बहुत भला करूंगा, पूरे देश में दान दूंगा।
सद्‌गुणों का पालन करेंगे, संयम और आत्म-नियंत्रण का अभ्यास करेंगे:
जो इस प्रकार कार्य करता है वह सुखी रहता है और उसे पश्चाताप का कोई भय नहीं होता।
इस प्रकार उस महान सत्ता ने मधुर ध्वनि में देवताओं (देवदूतों) को उपदेश दिया; और उपदेश देते हुए वे सात दिन तक मनुष्यों की समझ के अनुसार रहे और देवताओं (देवदूतों) की संगति को आनंदित किया। और देवताओं (देवदूतों) के बीच खड़े होकर उन्होंने मताली के गुणों का वर्णन किया।

"मटाली नामक सारथी एक अत्यंत दयालु व्यक्ति है।"
उन्होंने मुझे स्पष्ट रूप से वे स्थान दिखाए जहाँ अच्छे लोग रहते हैं और जहाँ बुरे लोग रहते हैं।
तब राजा ने सक्का (इंद्र) से विदा लेते हुए कहा कि वे मनुष्यलोक जाना चाहते हैं। तब सक्का (इंद्र) ने कहा, "मित्र मताली, राजा निमि को तुरंत मिथिला ले चलो।" उन्होंने रथ तैयार किया; राजा ने देवदूतों के समूह से मैत्रीपूर्ण अभिवादन किया, उनसे विदा ली और रथ में सवार हो गए। मताली रथ को पूर्व दिशा में मिथिला की ओर ले गए। वहाँ रथ को देखकर भीड़ प्रसन्न हुई कि उनके राजा लौट रहे हैं। मताली ने मिथिला नगर का दाहिनी ओर चक्कर लगाया और उसी खिड़की पर राजा को उतारा, विदा ली और अपने स्थान पर लौट गए। बड़ी संख्या में लोग राजा के चारों ओर जमा हो गए और उनसे पूछा कि देवदूतों का लोक कैसा है। राजा ने देवदूतों और उनके राजा

सक्का (इंद्र) के सुख का वर्णन करते हुए उन्हें दान देने और अच्छे कार्य करने के लिए प्रोत्साहित किया, क्योंकि ऐसा करने से उन्हें उस दिव्य स्थान में जन्म मिलेगा।

बाद में, जब उनके नाई को एक सफेद बाल मिला और उसने उन्हें बताया, तो उन्होंने नाई से उस सफेद बाल को अलग रखने को कहा; फिर उन्होंने नाई को एक गाँव दे दिया, और संसार का त्याग करने की इच्छा से अपने पुत्र को उसके स्थान पर राजा बना दिया। जब उनसे पूछा गया कि उन्होंने संसार का त्याग क्यों किया, तो उन्होंने यह श्लोक सुनाया, "देखो, ये सफेद बाल"; और पूर्व राजाओं की तरह उन्होंने भी संसार का त्याग कर उसी आम के बाग में निवास किया, चार गुणों का विकास किया, और ब्रह्मा के स्वर्ग (प्रधान देवदूतों के स्वर्ग) में जाने के लिए नियत हुए।

गुरु ने अंतिम श्लोक में संसार के त्याग का ही वर्णन किया है।

"मिथिला के राजा निमी ने ऐसा कहा,
और एक महान बलिदान देने के बाद,
मैंने आत्मसंयम के मार्ग पर चलना शुरू कर दिया है।
और उनके पुत्र, जिनका नाम कालरा जनक था, ने भी संसार का त्याग कर अपने वंश का अंत कर दिया।

जब गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने कहा—"तो, भिक्षुओं, यह पहली बार नहीं है जब तथागत (बुद्ध) ने सांसारिक जीवन त्यागा है; उन्होंने पहले भी ऐसा किया था।" फिर उन्होंने जन्म का वर्णन किया: "उस समय, अनुरुद्ध सक्का (इंद्र) थे, आनंद मातली थे, चौरासी राजा बुद्ध के अनुयायी थे, और राजा निमि मैं स्वयं था।"

फुटनोट:

(2) क्रमांक 9 देखें

(3) नीचे, निमी.

(4)pakkhadivasesu.

(5) विद्वान का कहना है कि यह संदेह उन्हें रात में हुआ और वे निर्णय नहीं कर सके।

(6) विद्वान ने कहा, "क्योंकि पानी इतना नाजुक है कि मोर का पंख भी नहीं तैरेगा, बल्कि नीचे डूब जाएगा।"

(7) विद्वान रचना को पूरा करने के लिए उपत्थहिम जोड़ता है। वह यह समझाने के लिए एक लंबी उबाऊ कहानी जोड़ता है कि यह कैसे हुआ।

(8) निम्नलिखित प्रकरण का समग्र स्वरूप स्पष्ट है।

(9) नरक का वर्णन

(10) विद्वान इस क्षेत्र की भयावहता का लंबा वर्णन देता है।

(11)"और सब जल उठता है": विद्वान.

(12)करणिका: "करणकारक."

(13) "दम धधकते अंगारों से भरा एक खाई": विद्वान।

(14) देखें 320, 202

(15)सं. 225

(16)सं. 225 , 257.

पिछला <<<<-----||-541-||----->>>> अगला

पाली संस्करण (रोमन, अंग्रेजी)
(tipitaka.org से)

[541] 4. निमिजातकवन्ना

अच्चेरन्वत लोकस्मि नति इदं सत्था मिथिलां उपनिस्साय माघदेवाम्बवने विहारन्तो सितापटुकम्मं अरब कथेसि। एकादिवसंहि सत्था सयानहसामये संबाहुलेहि भिक्खुहि सद्धिं तस्मि अम्बवने कारिकां कारमाणो एकं रमणीयं भूमिप्पदेसं दिस्व अत्तनो पुब्बाकार्यं कथेतुकामो हुत्वा सीतापत्तुकम्मं कत्वा अयस्माता आनंदत्थेरेण सीतापत्तुकम्मकारणं पुत्थो "आनंद, अयं भूमिपदेसो पुब्बे माया मघदेवराजकाले झनकीधं किआंतेन अज्झावुथपुब्बो'ति वत्वा तेन याचितो पन्नत्तसने निसीदित्वा अतीतं अहारी।

अतिते विदेहरथे मिथिलानगरे मघदेवो नाम राजा रज्जन करेसि। तो चतुरास्तिवस्सासहसानि कुमारकिधं किधि, चतुरास्तिवस्सासहसानि उपराजजं करेसि, चतुरसतिवाससाहस्सानि रज्जनं कारेंटो " यदा मे सम्मा कप्पाका, सिरस्मिं पलितानि पस्सेयसि, तदा मे अरोसेयसि'ति आहा। अपराभागे कप्पको पालितानि दिस्वा राननो अरोसेसि। राजा पालितं सुवनासांडासेना उद्धरापेत्वा हत्थतले पतिथपेत्वा पलितं ओलोकेत्वा मक्कुराजेना अगनत्वा नालते लग्गं विया मरणं सम्पासमानो "इदानी मे पब्बजिटकालो"ति कप्पकस्सा गमवरं दत्वा जेत्थपुत्तं पक्कोसपेतवा" ताता, रज्जन पतिच्चा, अहं पब्बाजिस्सामि"ति वट्वा" किं करना देवाति वुट्टे -

"उत्तममंगरुहा मयहं, इमे जाता वयोहारा;

पतुभूता देवदूता, पब्बज्जासमायो ममा'ति। –

वत्वा पुत्तं रज्जे अभिसिंचित्वा "तत्, त्वमपि एवरुपं पालितं दिस्वव पब्बजेयसि'ति तं ओवदित्वा नगरा निक्खमित्वा अंबवने इसिपबज्जं पब्बजित्वा चतुरासितिवस्ससहसानि चत्तारो ब्रह्मविहारे भवेत्वा ब्रह्मलोके निब्बति। पुत्तोपिस्सा एतेनेवा उपायेन पब्बजित्वा ब्रह्मलोकपरायणो अहोसि। तथा तस्स पुत्तो, तथा तस्स पुत्तोति एवं द्वीहि उनानि चतुरासितिखट्टियसहसानि सीसे पलितं दिस्वव इमस्मि अम्बवने पब्बजित्वा चत्तरो ब्रह्मविहारे भवेत् ब्रह्मलोके निब्बतिंसु.

तेसां सब्बापथमं निब्बत्तो माघदेवराज ब्रह्मलोके थितोवा अत्तनो वंशं ओलोकेनतो द्वीही उनानि चतुरासीतिखट्टियासाहस्सानि पब्बजितनि दिस्वा तुथमानसो हुत्वा "इतो नु खो परं पवत्तिसति, न पवत्तिससति ओलोकेंटो अप्पवत्तनभवं नात्वा "मम वंसं अहमेव घटेस्सामि"ति सिंतेत्वा ततो कैवित्व मिथिलानगरे रणनो अग्गमहेसिया कुच्चिमहि पतिसंधिम् गनहित्वा दशमासच्चयेन मातु कुच्चितो निक्खमि। राजा तस्स नामग्गहनादिवसे नेमित्तके ब्राह्मणे पक्कोसपेत्व पुच्चि। ते तस्स लक्खानि ओलोकेत्वा "महाराजा, अयं कुमारो तुम्हाकं वंशं घटेनतो उप्पन्नो। तुम्हाकान्हि वांसो पब्बजितावंसो, इमास्सा परतो नागामिस्साति'ति वादिन्सु। तं सुत्वा राजा "अयं कुमारो रथचक्कनेमि विया मम वंशं घटेनतो जातो, तस्मा तस्स निमिकुमारो'ति नामं करिस्सामि'ति सिंतेत्वा' निमिकुमारो"तिस्सा नामं आकाशी.

तो दाहरकालतो पठया दाने सिले उपोसथकम्मे च अभिरतो अहोसि। अथस्सा पिता पुरिमानयेनेव पलितं दिस्व कप्पकस्सा गमवरं दत्वा पुत्तस्सा रज्जं निय्यदेत्वा अम्बवने पब्बजित्वा ब्रह्मलोकपरायणो अहोसि। निमिरजा पण दानज्झासयताय कटुसु नगरद्वारेसु नगरमज्जे चति पंचसु ठानेसु पंच दानसलयो करापेत्वा महादानं पवत्तेसि। एकेकाय दानसलाय सतासहस्सं सतासहस्सं कत्वा देवासिकं पंच पंच कहापानसत्साहसानि परिच्चजी, निच्चं पंच सिलनि रक्खी, पक्खदिवासेसु उपोसाथं समाधियि, महाजनमपि दनादिसु पुन्नेसु समादपेसि, सग्गमग्गं अचिक्खित्वा निर्याभयेन तज्जेत्व धम्मं देसेसि। तस्स ओवदे थिता मनुस्सा दानादिनि पुन्नानि कत्वा ततो काटा देवलोके निब्बतिंसु, देवलोको पारिपुरी, निरायो तुच्चो विया अहोसी। तदा तवतिंसभावने देवसंघ सुधम्मयं देवासाभायं सन्निपतित्व "अहो, वात महकं अकारियो निमिराज, तं निस्साय मायां इमं बुद्धाननेपि अपरिच्छिंदनीयं दिब्बासम्पत्तिं अनुभवमा'ति त्वा महासत्तस्सा गुणे वाणयिन्सु। मनुस्सालोकेपि महासमुद्दपिथे असित्तेतेलम् विया महासत्तस्सा गुणकथा पत्थरि। सत्थ तमत्थं अविभूतं कत्वा भिक्खुसंघस्स कथेंटो अहा -

"अच्चेरं वात लोकस्मि, उपज्जन्ति विकक्खना;

यदा अहु निमिराज, पण्डितो कुसलत्थिको।

422 .

"राजा सब्बविदेहानां, अदा दानं अरिंदमो;

तस्स तं ददातो दानं, संकप्पो उदपज्जथा;

दानं वा ब्रह्मचर्यं वा, कतमं सु महप्फला'न्ति।

तथा यदा **अहु** ति भिक्खवे, यदा पण्डितो अत्तनो च परेसान्च कुसलत्थिको निमिराज अहोसि, तदा देवमनुस्सा " अच्चेरं वात, भो, इवरूपपि नाम अनुप्पन्ने बुद्धानाने महाजनस्सा बुद्धकिकचं साधयमना लोकस्मि विकक्खना उप्पजंति एवम् तस्स गुणकथं कथेसुन्ति अथो। "यथा अहु"तिपि पठो।" तस्सत्थो – यथा अहु निमिराज पण्डितो कुसलत्थिकोयेव, तथारूपा महाजनस्सा बुद्धकिच्चन साधयमाना उपप्पजंति विकक्खना। यं तेसं उप्पन्नं, तं अच्चेरं वात लोकस्मिन्ति। इति सत्था संयमेव अच्चैरियाजातो एवमः। **सब्बविदेहन** न्ति सब्बविदेहरथवासिनं। **कतमं सु** ति एतेसु दविसु कतमं नु खो महाप्फलन्ति अथो।

तो किरा पन्नरसिउपोसथदिवास उपोसथिको हुत्वा सब्बाभरणनि ओमुञ्चित्वा सिरिसायनपिथे निपन्नोवा द्वे यम निद्दं ओक्कमित्वा पच्चिमयामे पबुद्धो पल्लकं अभुजित्व "अहं" महाजनस्सा अपरिमाणं दानमपि देमि, सिलमपि रक्खामि, दानस्सा नु खो महन्तं फलं, उदाहु ब्रह्मचर्यस्सा'ति सिन्तेत्वा अत्तनो कण्खं चिंदितुं नासक्खि। तस्मिं खाने सक्कस्सा भवनं उन्हाकारं दस्सेसि। सक्को अवज्जेनतो तं तथा वितक्केंतं दिस्वा " कनखमस्सा चिंदिस्सामि'ति एककोवा सिघं आगंत्वा सकलनिवासनं एकोभासं कत्वा सिरिगभं पविसित्वा ओभासं फरित्वा आकाशे तत्त्व तेन पुत्थो ब्याकासी। तमत्थं पकासेन्टो सत्था अहा -

423 .

"तस्सा संकप्पमनन्या, मघावा देवकुंजरो;

सहस्सनेत्तो पतुराहु, वन्नेन विहानं तमम्।

424 .

"सलोमहत्थो मनुजिंदो, वासवं अवचा निमि;

देवता नुसी गन्धब्बो, अदु सक्को पुरिन्ददो।

425 .

"ना च मे तदिसो वनो, दित्थो वा यदि वा सुतो;

अचिक्खा मे त्वं भद्दन्ते, कथं जनेमु तं मयां।

426 .

"सलोमहत्थं न्त्वाना, वासवो अवचा निमिं;

सक्कोहमस्मि देविन्दो, आगतोस्मि तावंतिके;

अलोमहंथो मनुजिंदा, पुच्च पन्हां यमिच्छसि।

427 .

"तो च तेन कटोकासो, वासवं अवचा निमि;

पुच्चामि तं महाराज, सब्बभूतानमिस्सर;

'दानं वा ब्रह्मचर्यं वा, कतमांसु महप्फलम्'।

428 .

"तो पुत्थो नरदेवेन, वासवो अवचा निमिं;

विपाकं ब्रह्मचर्यस्स, जनं अक्खासिजानतो।

429 .

"हिनेण ब्रह्मचर्येण, खत्तिये उपपज्जति;

मज्झिमेन च देवतां, उत्तमेना विसुज्जति।

430 .

"न हेते सुलभा काया, यकायोगेन केनसी;

ये काये उपपज्जन्ति, अनागारा तपस्सिनो'ति।

तत्थ **सलोमहठो** ति भिक्खवे, सो निमिराज ओभासं दिस्व आकाशं ओलोकेनतो तं दिब्बाभरणपपतिमन्दितं दिस्ववा भयेन लोमहठो हुत्वा "**देवता नुसि गंधब्बो**" तिआदिना पुच्ची। **अलोमहत्थो** ति निब्भयो अहथथलोमो हुत्वा पुच्च, महाराजति। **वासवं अवचा** ति तुथमानसो हुत्वा सक्कं अवोका। **जनं अक्खासिजानतो** ति भिक्खवे, सो सक्को अतिते अत्ताना पक्कक्खतो दिट्ठपुब्बं ब्रह्मचर्यस्स विपकं जानंतो तस्स अजानतो अक्खासी।
हिनेना तिदिसु पुथुतिथायतेन मेथुनवीरतिमत्तं सिलं हीनं नाम, तेन खट्टियकुले उपपज्जति। झानस्स उपाकर्मत्तं मज्झिमं नाम, तेन देवतां उपपज्जति। अट्ठसमापत्तिनिबत्तनं पण उत्तमं नाम, तेन ब्रह्मलोके निब्बत्तति, तं बहिरका निब्बान्ति कथेंति। तेनाहा "विसुज्जति"ति। इमस्मिं पण बुद्धसासने परिशुद्धसिलस्स भिक्खुनो अनंतारं देवनिकायं पत्थेनतस्सा ब्रह्मक्रियाचेतना हिनतया हीनं नाम, तेन यथापत्थिते देवलोके निब्बत्तति। परिशुद्धसिलस्स भिक्खुनो अट्ठसमापत्तिनिबत्तनं मज्झिमं नाम, तेन ब्रह्मलोके निब्बत्तति। परिशुद्धसिलस्स विपश्यनां वद्धहेत्वा अरहट्टुप्पति उत्तमं नाम, तेन विसुज्जति। इति सक्को "महाराजा, दानतो सतगुणेन सहस्सगुणेन सतसहसगुणेन ब्रह्मकार्यवासोवा महाप्फालो'ति वनेति। **काया** ति ब्रह्मघटा। **याचयौगेना** ति याचनयुत्तकेण यान्यायुत्तकेण वती उभयत्थापि दयाकससेवेतम् नामम्। **तपस्सिनो** ति तपनिसिताका।

इमाया गाथाय ब्रह्मचैर्यवसस्सेव महफलाभवं दीपेत्वा इदानी ये अतिते महादानं दत्वा कामवचरं अतिक्कमितुं नासक्खिन्सु, ते राजनो दस्सेंतो अहा -

431 .

"दुदीपो सागरो सेलो, मुजाकिंडो भगीरसो;

उसिंडारो कसापो सीए, असाको सीए पुथुज्जनो।

432 .

"एते कैन्ने च राजनो, खटिया ब्राह्मण बाहु;

पुथुयान्नं यजित्वान, पेटत्तं नतिवत्तिसु'न्ति।

तस्सत्थो - महाराज, पुब्बे बरनसियां दुदीपो नाम राजा दानं दत्वा मरणचक्केन छिन्नो कामवाचर्येव निब्बति। तथा सागरादयो अट्ठाति एते च अण्णे च बहु राजनो सेवा खट्टिय ब्राह्मण च पुथुयानं यजित्वान अनेकप्पाकारं दानं दत्वा कामवचरभूमिसंखतं पेटत्तं नातिवत्तिन्सुति अथो। कामवकारदेवता हि रूपादिनो किलेसवत्थुस्सा कारण परं पच्चासिनातो कपनतया "पेटा"ति वुक्कन्ति। वुट्टमपि चेताम् -

"ये अदुतीय न रमन्ति एकिका, विवेकजं ये न लभन्ति पीतिम्;

किंचापि ते इंदासमानभोगा, ते वे पराधीनसुखा वरका'ति।

एवमपि दानफलतो ब्रह्मकार्यफलस्सेव महन्तभावं दस्सेत्वा इदानि ब्रह्मचैर्यवसेन पेटभवनं अतिक्कमित्वा ब्रह्मलोके निब्बत्ततापसे दस्सेन्तो अहा -

433 .

"अथ यिमे अवत्तिन्सु, अंगारा तपस्सिनो;

सत्तिसयो यामहानु, सोमयामो मनोजावो।

434 .

"समुद्दो माघो भारतो च, इसी कलपुरक्खतो;

अंगिरसो कस्सपो च, किसावच्चो अकत्ती चा"ति।

तत्थ **अवत्तिन्सु** ति कामवचरं अतिक्कमिन्सु। **तपस्सिनो** ति सिलातापञ्चेव समापत्तितपञ्च निस्सिता। **सत्तिसयो** ति यामहानुादयो सत्त भतारोवा संधायः। अंगिरसादिहि चतुहि सद्धिं एकादसेते अवत्तिन्सु अतिक्कमिन्सुति अथो।

एवं तव सुतवसनेव दानफलतो ब्रह्मचैर्यवससेव महप्फलतं वनेत्वा इदानि अत्ताना दिट्ठपुब्बं अहरंतो अहा -

435 .

"उत्तरेण नादि सीदा, गंभीरा दुरतिक्कमा;

नादग्गिवना जोतंति, सदा कांचनपब्बता।

436 .

"परुढकच्छ तगार, रुढ़कच्छ वन नागा;

तत्रासुं दशसहस्सा, पोराणा इसयो शुद्ध।

437 .

"अहं सेठोस्मि दानेन, संयमेन दमेन च;

अनुत्तरं वातं कत्वा, पकिराचारी समाहिते।

438 .

"जातिमंतं अजक्कन्च, अहं उजुगतं नरं;

अतिवेलं नमस्सिस्सं, कम्मबंधु हि मनावा।

439 .

"सब्बे वना अधम्मत्था, पतन्ति निरयं अधो;

सब्बे वना विसुज्जन्ति, चरित्र्वा धम्ममुत्तमा'न्ति।

तथा उत्तरेण **ति** महाराज, अतिते उत्तरहिमवंते द्विन्नं सुवन्नपब्बतानं अंतरे पवत्ता सीदा नाम नदी गंभीरा नवाहिपि दुरतिक्कमा अहोसि। कौन सा कारण? सा हि अतिसुखुमोदका, सुखुमत्ता उदकस्सा अन्तमसो मोरापिन्च-मत्तमपि तत्थ पतितं नं सन्तहति, ओसीदित्वा हेट्ठलमेव गच्छति। तेनेवा सा सीदा नाम अहोसी। ते पना तस्सा तिरेसु कांचनपब्बता सदा नादग्गिवना हुत्वा जोतंति ओभासन्ति। **परुढकच्छ तगरा** ति तस्स पना नदिया तीरे कच्छ परुधतगारा अहेसुम तगरगन्धसुगन्धिनो। **रुढाकच्चा वाना नागा** ती ये तत्थ अण्णेपि पब्बता, तेसाम्पि अंतरे कच्च रुधावना एहेसुं, पुप्फाफलुपगारुक्खासंचन्नति अथो। **तत्रसु** न्ति तस्मिं एवम् रमणीये भूमिभागे दससहस्सा इसयो

एहेसुं। ते सब्बेपि अभिनासमापत्तिलाभिनोवा। तेसु भिक्खाचारवेलाय केचि उत्तरकुरुं गच्छन्ति, केचि महाजम्बूदीपे जम्बुफलम् आहारन्ति, केचि हिमवन्तयेव मधुरफलाफलनि अहारित्वा खादन्ति, केचि जम्बूदीपतले तं तं नागरं गच्छन्ति। एकोपि रसतन्हाभिभूतो नत्थि, झानासुखनेव वित्तिनामेंटि। तदा एको तपसो आकाशेन बाराणासिं गन्त्वा सुनीवत्थो सुपारुतो पिण्डया कैरान्तो पुरोहितस्स गेहद्वारं पापुनि। तो तस्स उपासमे पसीदित्वा एंटोनिवेसनं अनेत्वा भोजन्वा कटिपाहं पतिजग्गन्तो विसासे उप्पन्ने "भंते, तुम्हें कुहिं वसथा"ति पुच्चि। "असुकत्थाने नामवुसो"ति। "किं पना तुम्हें एककोवा तथा वसथ, उदाहु अण्णेपि अत्थि"ति? "किं वदेसि, आवुसो, तस्मिं पदे दससहस्सा इसायो वसंती, सब्बेवा अभिनासमापत्तिलाभिनो"ति। तस्स तेसं गुणं सुत्वा पब्बज्जय चित्तं नामि। अथ नं सो अहा - "भंते, ममपि तत्थ नेत्वा पब्बजेथा'ति। "आवुसो, त्वं राजपुरिसो, न तं सक्का पब्बाजेतु'न्ति। "तेन हि, भंते, अज्जाहं राजनं आपुच्चिसामि, तुम्हें स्वेपि आगच्छेयथा"ति। सो अधिवाससि ।

इतारोपि भुत्तपत्रसो राजनं उपसंकमित्वा "इच्छामहं, देवा, पब्बजितु"न्ति आहा। "किं करण पब्बजिस्ससि'ति? "कामेसु दोसं नेक्खम्मे च अनिसंसं दिस्वती।" "तेना ही पब्बाजाही, पब्बाजीतोपि मां दस्सेयसी"ति। तो "साधु"ति संपतिचित्व अत्तनो गेहं गन्त्वा पुत्तदारं अनुसासीत्व सब्बं सपतेयं दस्सेत्व अत्तनो पब्बजीतपरिक्खारं गहेत्वा तपसस्सा अगमणमग्गं ओलोकेंटोवा निसिडी. तपसोपि तथेव अकासेनागन्त्वा अन्तोनगरं पविसीत्व तस्स गेहं पविसी। तो तं सक्कच्चं परिविसीत्वा भंते, मया कथं कट्ब'न्ति अहा। तो तं बहिनगरं नेत्वा हत्थे आदया अत्तनो अनुभावेन तत्थ नेत्वा पब्बाजेत्वा पुनादिवसे तं तत्थेव थपेत्वा भट्टं अहरित्व दत्वा कसिनपरिकमं अचिक्खि। तो कतिपहेनेव अभिनासमापत्तियो निब्बत्तेत्वा संयमेव पिण्डया चरति।

तो अपराभागे " अहं रणनो अत्तनं दस्सेतुं पतिन्नं अदासीं, दस्सेस्सामस्सा अत्तन"न्ति सिंतेत्वा तपसे वंदित्वा अकासेना बाराणसीं गन्त्वा भिक्खं चरंतो राजद्वारं पापुनि। राजा तं दिस्व संजनित्वा एंटोनिवेसनं पवेसेत्व सक्करं कत्वा भंते, कुहिं वसथा"ति पुच्चि। "उत्तरहिमवन्तपदेसे कञ्चनपब्बतान्तरे पवत्तया सिदानदिया तीरे, महाराज"ति। "किं पना, भंते, एककोवा तत्थ वसथ, उदाहु अण्णेपि अत्थि"ति। "किं वदेसि, महाराज, तथा दशसहस्सा इसयो वसंती, सब्बेव अभिनासमापत्तिलाभिनो"ति? राजा तेसं गुणं सुत्वा सब्बेसं भिक्खं दातुकामो अहोसि। अथ नं राजा अहा - "भन्ते, अहं तेसंं इसिनं भिक्खं दातुकामोऽहि, किं करोमिति?" "महाराज, ते इसायो जिव्हाविन्येयारसे अगिद्धा, न सक्का इधानेतु"न्ति। "भंते, तुम्हें निस्साय ते भोजेस्सामि, उपायं मे अचिक्खा'ति। "तेन ही, महाराज, ससे तेसं दानं दातुकामोसि, इतो निक्खमित्वा सिदानादितिरे वसंतो तेसं दानं देहि"ति।

तो "साधु"ति संपतिचित्वा सब्बुपकरणानि गाहापेत्वा चतुरंगिनिया सेनाय सद्धिं निक्खमित्वा अत्तनो रजजसिमं पापुनि।" अथ नं तपसो अत्तनो अनुभावेन सद्धिं सेनाय सिदानादितिरं नेत्वा नदीतिरे खंडावरं करापेत्वा अकासेना अत्तनो वासनात्थानं गन्त्वा पुनादिवसे पच्चागामी। अथ नं राजा सक्कच्चं भोजन्वा "स्वे, भंते, दससहस्से इसयो आदया इधेव अगाच्छता"ति आहा। तो "साधु"ति संपतिचित्वा गन्त्वा पुनादिवसे भिक्खाचारवेलाय तेसंं इसिनं अरोसेसि" मारिसा, बरणसिराजा 'तुम्हाकं भिक्खं दशमीति' आगन्त्वा सिदानादितिरे निसिन्नो स्वे वो निमंतेति, तस्सानुकम्पाय खंडावरं गन्त्वा भिक्खं गंहत्था'ति। ते "साधु'ति संपतिचित्वा अकासेना गन्त्वा खंडवारस्स अविदुरे ओटरिंसु। राजा ते दिसवा पक्कुग्गमणं कत्वा खंडवारं पवेसेत्वा पणनत्तसनेसु निसिडापेट्वा इसिगनं पणितेनहारेण संतप्पेत्वा तेसां इरियापथे पसन्नो स्वतानायपि निमन्तेसि। एतेनुपायेन दासन्नं तपससाहस्सानां दासवस्सासहसानि दानं अदासि। ददन्तो च तस्मिनयेव पदे नगरं मपेत्वा सस्साकम्मं करेसि। न खो पना, महाराज, तदा सो राजा आन्नो अहोसि, अथा खो **अहं सेठोस्मि दानेना,** अहमेव हि तदा दानेना सेठो हुत्वा तं महादानं दत्वा इमं पेटालोकं अतिक्कमित्वा ब्रह्मलोके निब्बत्तितुं नासक्खिः। मया दिन्नं पना दानं भुंजित्वा सब्बेव ते तपसा कामवचरं अतिक्कमित्वा ब्रह्मलोके निब्बत्ता, इमिनापेटं वेदितब्बां "ब्रह्मचैर्यवासोवा महप्पलो"ति।
एवं दानेन अत्तनो सेठभावं पकासेत्व इतरेहि तीहि पदेहि तेसं इसिनां गुणं पकासेति। तथा **संयमेना** ति सिलेना। **दमेना** ति इंद्रियादमेना। **अनुत्तारा** नति एतेहि गुणेहि निरंतरं उत्तमं वतं समाधानं चरित्र्वा। **पकिराचारि** ति गानं पकिरीत्वा पतिक्खीपित्वा पहाय एककारिके, एकिभावं गतेति अथो। **समाहिते** ति उपचारप्पनासमाधिहि समाहितचित्ते। एवररूपे अहं तपस्सिनो उपतःहंति दस्सेति। **अहं उजुगत** नति अहं, महाराज, तेसां दशसहस्नानं इसिनां अंतरे कायवंकादीनं आभावेन उजुगतं एकमपि नरं हिनजक्को वा होतु जातिसंपनो वा, जातिम् अविचारेत्व तेसं गुनेसु पसन्मनसो हुत्वा सब्बमेव अतिलं नमस्सिस्सं, निक्ककालमेव नमस्सीसन्ति वदति। कौन सा कारण? **कम्मबन्धु हि मानवावा** ति, सत्ता हि नामते कम्मबंधु कम्मपतिसारणा, तेनेव कारणेन सब्बे वनाति वेदितब्बा।

एवांचा पना वत्वा "किंचापि, महाराज, दानतो ब्रह्मचर्यमेव महफ्फलं, द्वेपि पनेते महापुरिसवितक्कव, तस्मा दविसुपि अप्पमत्तोवा हुत्वा दनानचा देहि, सिलाञ्च रक्खाहि" तं ओवदित्वा सकात्थानमेव गतो। तमत्थं पकासेन्टो सत्था अहा -

440 .

"इदं वत्वान् मघावा, देवराज सुजमपति;

वेदेहमनुससित्वा, सग्गकायं अपक्कमी'ति।

तत्थ **अपक्कमि** ति पक्कमि, सुधम्मदेवसभायं निस्न्नामेव अत्तनं दस्सेसिति अथो।

अथ नं देवगण अहंसु "महाराजा, ननु न पन्नयित्था, कुहिं गतत्था"ति? "मारिसा मिथिलायं निमिराणनो एक कंखा उप्पज्जि, तस्स पन्हं कठेत्व तं राजनं निक्कंखं कट्वा अगतोमहि'ति वत्वा पुना तं कारणं' गाथाय कथेतुं अहा -

441 .

"इमं भोन्तो निसामेथा, यावंतेत्था समागता;

धम्मिकाणं मनुस्नानं, वाणं उच्चवचं बहुम्।

442 .

"यथा अयं निमिराज, पण्डितो कुसलत्थिको;

राजा सब्बविदेहानां, अदा दानं अरिंदमो।

443 .

"तस्सा तं ददातो दानं, संकप्पो उदपज्जथा;

दानं वा ब्रह्मचर्यं वा, कतमं सु महप्फला'न्ति।

तत्थ **इमा** नति धम्मिकाणं कल्याणं धम्मनां मनुस्नानं मया वुच्चमानं सिलवसेन उच्चं दानवसेन अवचं बहुं इमं वनं निसामेथा सुनाथाति अथो. **यथा अय** न्ति अयं निमिराज यथा अतिविय पण्डितोति।

इति सो अपरिहापेत्वा रणनो वनं कथेसि। तं सुत्वा देवसंघ राजनं दथुकामा हुत्वा "अम्हकं निमिरजा अकारियो, तस्सोवदे थत्वा तं निस्साय अम्हेहि अयं दिब्बासंपत्ति लद्धा, मयं दथुकामम्हा, तं पक्कोसापेहि, महाराज'ति वडिंसु। सक्को "साधु"ति संपतिचित्वा मतलिं पक्कोसपेत्वा"सम्मा मतलि, वेजयन्तरथं योजेत्वा मिथिलां गन्त्वा निमिराजनं दिब्बयने अरोपेत्व अनेहि"ति आहा। तो "साधु'ति सम्पतिच्छित्वा रथं योजेत्वा पयासि।' सक्कस्सा पण देवेहि सद्धिं कथेंतस्सा मतलिं अनापेंतस्सा च रथं योजेन्तास्सा च मनुस्सागणनाया मासो अतिक्कनतो। इति निमिराणो पुननमयं उपोसथिकस्सा पचिनसिहापंजरं विवर्तित्वा महताले निसिदित्वा अमाक्कगणपरिवुतस्सा सिलं पक्कवेक्खनतस्सा पचिनलोकधातुतो उग्गच्छेनतेन चंडमंडलेन सद्धिन्येव सो रथो पन्नयति। मनुषसा भुट्टसयामासा घरद्वारेसु निसिडित्वा सुखकथं कथेंता "अज्ज दवे चंदा उग्गता"अहंसु। अथ नेसं सल्लपंतननिवे रथो पकतो अहोसि। महाजनो" नायं, कैंडो, रथो"ति वत्वा अनुक्कमेन सिंधवसाहसयुत्ते मतलिसांगहाके वेजयंतराथे च पकते जाते" कस्सा नु खो इदं दिबबयानं अगाच्छति"ति सिंतेत्वा "ना कसासी" अण्णास्सा, अम्हाकं राजा धम्मिको, साक्केन वेजयन्तरथो पेसिटो भविस्सति, अम्हाकं राणोनोवा अनुच्चविको'ति तुथप्पाहाथो गथमहा -

444 .

"अब्भूतो वात लोकस्मिः, उप्पज्जि लोमहंसनो;

दिब्बो रथो पतुराहु, वेदेहस्सा यस्स्सिनो'ति।

तथा **अब्भूतो** ति अब्भूतपुब्बो। अच्चैरियोति ते विम्हयवसेनेवमहंसु।

तस्स पना महाजनस्सा एवं कथेन्टससेवा मतलि वातवेगेना अगन्त्वा रथं निवत्तेत्व सिहापंजरौम्मारे पच्चभागेन थपेत्वा आरोहणसज्जं कत्वा आरोहणत्थाय राजनं निमन्तेसि ।तमत्थं पकासेन्टो सत्था अहा -

445 .

"देवापुत्टो महिद्धिको, मातलि देवसारथि;

निमंतयित्थ राजनं, वेदेहं मिथिलग्गहं।

446 .

"एहिमां रथमारुयः, राजसेठ दिसम्पति;

देवा दस्सानकामा ते, तावतिंसा सैनदका;

सरमना हि ते देवा, सुधम्मयं समाचरे'ति।

तत्थ **मिथिलग्गहा** नति मिथिलायां पतिहिततेघं, चतुहि वा संगहवत्थुहि मिथिलायां संगहाकं। **समच्चरे** ति तवेव गुणकथं कथेंता निसिन्नति।

तं सुत्वा राजा " आदिथपुब्बं देवलोकाञ्च पसिस्सामि, मतलिस्सा च मे संगहो काटो भविस्सति, गच्छिसामि'ति सिन्तेत्वा अन्तेपुरञ्च महाजनञ्च अमान्तेत्वा' अहं नसीरसेवा अगामिस्सामि, तुम्हें अप्पमत्ता दानादिनि पुनानि करोथा'ति वत्वा रथं अभिरुहि। तमत्थं पकासेन्टो सत्था अहा -

447 .

"ततो राजा तरमाणो, वेदेहो मिथिलाग्गहो;

असना वुथहित्वाना, पमुखो रथमारुहि।

448 .

" अभिरूढं रथं दिब्बं, मातलि एतदब्रवि;

केन तां नेमि मग्गेना, राजसेठ दिसम्पति;

येन वा पपकम्मंता, पुनाकम्मा च ये नारा"ति।

तथा **पमुखो** ति उत्तमो, अभिमुखो वा, महाजनस्सा पिथिं दत्वा अरुधोति अथो। **येना वा** ती येना मग्गेना गन्त्वा यत्थ पापाकम्मंता वसंती, तं ठानं सक्का दथुं, येना वा गन्त्वा ये पुन्नकम्मा नारा वसंती, तेसां ठानं सक्का दथुं, एतेसु दविसु केना मग्गेना तां नेमि। इदं सो सक्केन अनानत्तोपि अत्तनो दुतविसेसादासनत्थं अहा।

अथ नं राजा "माया द्वे ठानानि अदित्थपुब्बानि, द्वेपि पसिस्सामि"ति चिंत्वा अहा -

449 .

"उभयेनेव मां नेहि, मातलि देवसारथि;

येन वा पपकम्मंता, पुनाकम्मा च ये नारा"ति।

ततो मातलि " द्वेपि एकपाहारेनेव न सक्का दस्सेतुं, पुच्चिसामि न"न्ति पुच्चन्तो पुना गथमः -

450 .

" केन तं पथमं नेमि, राजसेठ दिसम्पति;

येन वा पपकम्मंता, पुनाकम्मा च ये नारा"ति।

निरयाकण्डं

ततो राजा " अहं अवस्सं देवलोकं गमिस्सामि, निरयं तव पसिस्सामि" चिन्तेत्वा अनंतरं गतामह -

451 .

"निराये तव पासामि, अवासे पापकम्मिनं;

न्हानानि लुद्दकम्मनं, दुस्सीलानांच य गति'ति।

तथा **या गति** ति या एतेसं निब्बति, तन्च पसामिति।

अथस्सा वेतरनिं नदीं तव दस्सेसि। तमत्थं पकासेन्टो सत्था अहा -

452 .

"दस्सेसि मतलि रणनो, दुग्गं वेतरनिं नादिं;

कुथितं खरसंयुत्तं, तत्तं अग्गिसिखुपमा'न्ति।

तत्थ **वेतरनि** नति भिक्खवे, मातलि राणो कथं सुत्वा निरायाभिमुखं रथं पेसेट्वा कम्मपच्चये उतुना समुत्थितं वेतरनिं नदीं तव दस्सेसि। तत्थ निरयपाला जलितानि असिसत्तितोमराभिंदिवलमुग्गरादिनि अवुधानि गहेत्वा नेरायिकासत्ते पहरन्ति विज्झन्ति विहेथेन्ति। ते तं दुक्खं असहंता वेतरनीयं पतन्ति। सा उपरि भिंडीवलप्पमनाहि सकान्तकाहि वेट्टलताहि संचन्न। ते तत्थ बहुनि वाससहसानि पचिंसु। तेसु पज्जलंतेसु खुरधातिखिनेसु कंतकेसु खंडखंडिका होन्ति। तेसं हेत्था तल्लक्खनधप्पमनानि पज्जलितयसुलानि उत्थाहन्ति। नेरायिकसत्ता बहुं अद्धानं वित्तिनामेत्वा वेत्तालताहि गतित्वा सुलेसु पतित्वा विद्धासिररा सुलेसु अवुणितमच्चा विया सिरं पक्कन्ति। तानि सुलानिपि पज्जलन्ति, नेरायिकासत्तपि पज्जलन्ति। सुलाणं हेत्था उदकापित्थे जलितानि खुराधारसादिसानि तिखिनानि अयोपोक्खरापट्टनि होन्ति। ते सुलेहि गतित्व अयपोक्खरापत्तेसु पतित्व सिरं दुक्खवेदनं अनुभवन्ति। ततो खरोडके पतन्ति, उदकं पज्जलति, नेरायिकासत्तपि पज्जलन्ति, धूमोपि उत्थाहति। उदकस्सा पण हेत्था नदीतलं खुराधारहि संचन्नं। ते "हेत्था नु खो किदिसा"न्ति उदाके निमुज्जित्वा खुरधरासु खंडाखंडिका होन्ति। ते तं महादुक्खं अधिवासेतुं असक्कोंता महंतं भेरवं विरावंता विकारन्ति। कदाचि अनुसोतं वुयहंति, कदाचि पतिसोतं। अथा ने तीरे सीता निरयपाला उसुस्सत्तितोमरादिनी उक्खीपित्वा मच्छे विया विज्झन्ति। ते दुक्खवेदनाप्पत्त महावीरवं रवन्ति। अथ ने पज्जलितेहि अयबासीसेहि उद्धारित्वा परिकद्धित्वा पज्जलितायपथवीयं निपज्जपेत्वा तेसं मुखे तत्तं अयोगुढहं पक्खिपन्ति।

इति निमिराजा वेतरनीयं महादुक्खपिदिते नेरायिकासत्ते दिस्वा भितात्सितो संकम्पितहदायो हुत्वा "किं नमेते सत्त पापकम्मं अकांशु"ति मतलिं पुच्चि। सोपिस्सा बयाकासी. तमत्थं पाकसेन्टो अहा -

453 .

"निमि हवे मतलिज्जभासथ, दिस्व जनं पतमानं विदुग्गे;

भयंहि मां विंदति सुता दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथी;

इमे नु मक्का किमाकांसु पापं, येमे जना वेतरनिं पतन्ति।

454 .

"तस्सा पुठो वियाकासि, मातलि देवसारथि;

विपाकं पापकम्मनं, जनं अक्खासिजानतो।

455 .

"ये दुब्बले बलवंता जीवलोके, हिं शांति रोसेन्ति सुपापधम्म;

ते लुड्डकम्मा पसावेत्व पापं, तेमे जना वेतरनिं पतन्ति'ति।

तथा **विंदति** अहं अत्तानो अनिसारो हुत्वा भयसंतको विया जातो। **दिस्वा** ति पतमानं दिसवा । **जन** नति भिक्खवे, सो मतलि सयं जानन्तो तस्स अजानतो अक्खासी। **दुब्बले** ती शरीरबलभोगबलानाबलविरहिते। **बलवंता** ति तेहि बलेहि समन्नागता। **हिंसान्ति** ति पणिप्पहरादिहि किलामेंटि। **रोसेन्ति** ति नानप्पकारेहि अक्कोसावत्थुहि अक्कोसंति घण्टेन्ति। **पसावेत्वा** ति जनेत्वा, कत्वति अत्थो।

एवं मातलि तस्स पन्हं ब्याकारित्वा राणा वेतरनिराय दिट्ठे तं पदेसं अंतरधापेत्वा पुरतो रथं पेसेत्वा सुनखाधि खादान्थानां दस्सेत्वा तं दिस्व भीतेन रन्ना पन्हां पुठो ब्याकासी। तमत्थं पकासेन्टो सत्था अहा -

456 .

"सम च सोना सबला च गिज्जा, काकोलसंघ अदन्ति भेरवा;

भयंहि मां विंदति सुता दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथी;

इमे नु मक्का किम्माकांसु पापं, येमे जेन काकोलसंघ अदन्ति।

457 .

"तस्सा पुठो वियाकासि, मातलि देवसारथि;

विपाकं पापकम्मनं, जनं अक्खासिजानतो।

458 .

"ये केसीमे मैकचारिनो कादरिया, परिभासाका समानब्राह्मणं;

हिं शांति रोसेन्ति सुपाधम्म, ते लुड्डकम्मा पसावेत्व पापं;

तेमे जेन काकोलसंघा अदन्ति'ति।

इतो परेसु पन्हेसु सेवा ब्याकरानेसु च एसेवा नयो। तथा **समां** ति रत्तवन्ना। **सोना** ति सुनखा. **सबला च** ति कबरवन्ना च, सेतकादपितलोहितवन्ना चति एवं पञ्चवन्नासुनाखे दस्सेति। ते किरा महाहत्थिपमना जलितयापथवीयं नेरायिकासत्ते मिगे विया अनुबंधित्वा पिण्डिकमंससेसु दणसित्वा तेसं तिगावुतप्पमण शरीरं जलितयापथवीयम् पतेत्वा महरावं रवंतानां द्वीहि पुरीमापदेहि उरं अक्कमित्वा अथिहिमेव सेसेत्वा मानसं लुन्चित्वा खादन्ति। **गिज्झा** ती महाभांडसाकट्टप्पमना लोहटुंडा गिज्झा। एते तेसं कणायसदिसेहि तुंदेहि अथिनि भिंडित्वा अथिमिंजं खदन्ति। **काकोलसंघ** ति लोहतुण्डकाकागना। ते अतिविय भयनका दिट्ठे दित्थे खदन्ति। **येमे जेन** ती ये इमे नेरायिकासत्ते काकोलसंघ खदन्ति, इमे नु मक्का कि नाम पापं अकांसुति पुच्ची। **मैकचारिनो** ति अणनेसां अदायका। **कादरिया** ति पारे दंतेपि पतिसेधका तद्धमच्चरिनो। **समानब्राह्मणां** न्ति समितबहितपापानम्।

459 .

"सजोतिभूत पथविं कामन्ति, तत्तेहि खंडेहि च पोथयन्ति;

भयंहि मां विंदति सुता दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथी;

इमे नु मक्का किमाकांसु पापं, येमे जना खंडहता सयन्ति।

460 .

"तस्सा पुठो वियाकासि, मातलि देवसारथि;

विपाकं पापकम्मनं, जनं अक्खासिजानतो।

461 .

"ये जीवलोकस्मि सुपापधम्मिनो, नाराणच नारीच अपापधम्मम्;

हिं शांति रोसेन्ति सुपाधम्म, ते लुड्डकम्मा पसावेत्व पापं;

तेमे जना खंडहता सयन्ति"ति।

तथा **सजोतिभूता** ति पज्जलितशरीरा। **पथवि** न्ति पज्जलितं नवयोजनाबहालं अयपथविम्। **कामंती** ति अक्कमन्ति. **खंडेहि च पोथयन्ति** ति निरयपाला अनुबन्धित्वा तलप्पमनेहि जलितायक्कन्धेहि जंघादिसु पहारित्वा पतेत्वा तेहेव खंडेहि पोथयन्ति, कुन्नविकुणं करोन्ति। **सुपापधम्मिनो** ति अत्तना सुथु पापधम्म हुत्वा। **अपापादम्म** न्ति सिलाचरादिसम्पन्नं, निरापराधं वा।
462 .

"अंगारकासुं अपरे फुणन्ति, नारा रुदंता परिदधगत्ता;

भयंहि मां विंदति सुता दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथी;

इमे नु मक्का किं मकांसु पापं, येमे जना अंगारकासुं फुन्ति।

463 .

"तस्सा पुठो वियाकासि, मातलि देवसारथि;

विपाकं पापकम्मनं, जनं अक्खासिजानतो।

464 .

"ये केचि पुगया धनस्सा हेतु, सक्खिं करित्वा इणं जपयन्ति;

ते जपयित्वा जानतां जानिंदा, ते लुद्दकम्मा पसावेत्व पापं;

तेमे जना अंगारकासुं फुअन्ति'ति।

तथा **अंगारकासु** न्ति सम्मा मातलि, के नामेते अपरे वाजं अपविसंतियो गावो विया संपरिवारेत्व निरयपालेहि जलितायगुसेहि पोथियामाना अंगारकासुं पतन्ति। तत्र च नेसं याव कटिप्पमना निमुग्गानं महतिहि अयापच्छि आदया उपरिअंगारे ओकिरन्ति, अथ ने अंगारे संपतिच्छितुम असक्कोंता रोदंता दड्ढागट्टा फुअन्ति विधुन्ति, कम्बलेण वा अत्तनो सिसे अंगारे फुअन्ति ओकिरान्तिति अथो। **पुगया धनस्सा** ति ओकासे सति दानं वा दस्सामा, पूजां वा पवत्तेस्सामा, विहारं वा करिस्सामति संकधित्वा थपितस्सा पुगसंतकासा धनस्सा हेतु। **जपयन्ति** तं धनं यथारुचि खदित्वा गणजेठकाणं लांजं दत्वा "असुकाठने एत्तकं वैयाकरणं गतं, असुकाठने अम्हेहि एत्तकं दिन्न'न्ति कुत्साक्खिं करित्वा तं इणं जपयंति विनासेंति।
465 .

"सजोतिभूत जलिता पदित्ता, पदिस्सति महति लोहकुम्भी;

भयंहि मां विंदति सुता दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथी;

इमे नु मक्का किमाकांसु पापं, येमे जना अवंसीरा लोहकुम्भिं पतन्ति।

466 .

"तस्सा पुठो वियाकासि, मातलि देवसारथि;

विपाकं पापकम्मनं, जनं अक्खासिजानतो।

467 .

"ये सिलवन्तं समानं ब्राह्मणं वा, हिंसान्ति रोसेन्ति सुपापधम्म;

ते लुड्डकम्मा पसावेत्व पापं, तेमे जना अवंसीरा लोहकुम्भि पतन्ति'ति।

तत्थ **पदित्ता** तिदित्ता. **महति** ति पब्बतप्पमना कप्पेण संहितलोहरसेण संपुन्ना। **अवंसीरा** ति भयाणकेहि निरयपलेहि उद्धापदे अधोसिरे कत्वा खिपियामाना तं लोहकुम्भिं पतन्ति। **सिलवंता** न्ति सिलाकारागुणसम्पन्नं।
468 .

"लुण्कान्ति गिवं अथ वेथयित्वा, उन्होदकास्मि पकिलेदयित्वा;

भयंहि मां विंदति सुता दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथी;

इमे नु मक्का किमाकांसु पापं, येमे जाना लुत्तसिरा सयान्ति।

469 .

"तस्सा पुठो वियाकासि, मातलि देवसारथि;

विपाकं पापकम्मनं, जनं अक्खासिजानतो।

470 .

"ये जीवलोकस्मि सुपाधम्मिनो, पक्खि गहेत्वाना विहेथयन्ति ते;

विहेथयित्वा सकुणं जानिंदा, ते लुद्दकम्मा पसावेत्व पापं;

तेमे जना लुत्तसिरा सया"न्ति।

तत्था **लुन्कांति** ति उप्पेन्ति. **अथ वेथयित्वा** ति जलितलोहयोतेहि अधोमुखं वेथयित्वा। **उन्होदकास्मि** न्ति कप्पेन संहितलोहौदाकास्मि:। **पकिलेदयित्वा** ति तेमेत्वा खिपित्वा। इदं वुट्टं होति - सम्मा मतलि, येसं इमे निरयपाला जलितलोहयोतेहि गिवं वेथेत्वा तिगावुतप्पमणं शरीरं ओनामेत्व तं गिवं संपरिवत्कम् लुञ्चित्वा जलितयादंडेहि आदया एकस्मिं जलितलोहरसे पक्खिपित्वा तुतहहत्था होन्ति, तया च गिवया लुन्चिताय पुना सीसेना सद्धिं गिव उप्पज्जतियेव। किं नमते कम्मं करिंसु? एते हि मे दिस्व भयं उपज्जति. **पक्खि गहेत्वाना विहेथयन्ति** ति महाराज, ये जीवलोकस्मिं सकुणे गहेत्वा पक्खे लुन्चित्वा गिवं वेठेत्वा जीविताक्खयं पपेत्वा खदंति वा विक्किन्ति वा, ते इमे लुत्तसिरा सयंतीति.

471 .

"पहुततोया अनिगाधकुला, नदी अयं संदति सुप्पतित्था;

घम्मभितत्त मनुजा पिवन्ति, पिटान्च तेसं भूसा होति पानी।

472 .

"भयंहि मां विंदति सुता दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथी;

इमे नु मक्का किमाकंसु पापं, पिटानचा तेसं भुसा होति पानी।

473 .

"तस्सा पुठो वियाकासि, मातलि देवसारथि;

विपाकं पापकम्मनं, जनं अक्खासिजानतो।

474 .

"ये शुद्धधानं पलसेन मिसं, अशुद्धकम्मा कायिनो ददन्ति;

घम्मभितत्तन पिपासितानं, पितांच तेसं भूसा होति पाणि'ति।

तत्थ **अनिगाधकुला** ति अगमभिरातिरा। **सुप्पतित्था** ति शोभनेहि तित्थेहि उपेता। **भूसा होति** ति विहिभुसं संपज्जति। **पाणि** ति पणियं। तस्मिं किरा पदेसे पहुतासलीला रमणीय नादि संदति, नेरायिकासत्ता अग्गिसंतापेण तत्त पिपासं संधारेतुं असक्कोंता बह पग्गयहा जलीतलोहपथविं मद्दंता तम् नदीं ओटरन्ति, तंखाणिनेव तीरा पज्जलन्ति, पणियं भूसपलासभवं आपज्जित्वा पज्जलति। ते पिपासां संधारेतुं असक्कोंता तं जलितं भूसपालसं खादन्ति। तं तेसं सकलासिरं झपेत्वा अधोभागेन निक्खमति। ते तं दुक्खं अधिवासेतुं

असक्कोंता बाहा पग्गयः कांदन्ति। **शुद्धधान्न** न्ति विहिआदिसत्तविधं परिशुद्धधान्नं। **पलासेन मिस्सा** नति पलासेना वा भुसेना वा वलुकामत्तिकादिहि वा मिस्साकम कटवा। **अशुद्धकम्मा** ति किलिट्ठकायवाचिमनोकम्मा। **कयिनो** ति "शुद्धधान्नं दशमी"ति कैयिकास्सा हत्थतो मूलं गहेत्व तथरूपं अशुद्धधनां ददन्ति।
475 .

"उसुहि सत्तिहि च तोमरेहि, दुभयानि पस्सनि तुदन्ति कन्दताम्;

भयंहि मां विंदति सुता दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथी;

इमे नु मक्का किमाकांसु पापं, येमे जना सतिहता सयन्ति।

476 .

"तस्सा पुठो वियाकासि, मातलि देवसारथि;

विपाकं पापकम्मनं, जनं अक्खासिजानतो।

477 .

"ये जीवलोकस्मि असाधुकम्मिनो, आदिन्नमादाय करोन्ति जीविकाम्;

धन्नं धनं राजतं जटारूपं, अजेकञ्चपि पसुं महिंसं;

ते लुड्डकम्मा पसावेत्व पापं, तेमे जना सतिहता सयान्ति'ति।

तत्थ **दुभयानि** ति उभयानि। **तुदन्ति** ति विज्जन्ति। **कन्दता** न्ति कन्दन्तानां। फरुसा निरयपाला अरण्ये लुदा मिगं विया संपरिवारेत्वा उसुअधिहि नानावुधेहि द्वे पासानि तुदन्ति, शरीरं चिददावचिद्दं पुराणापन्नं विया ख्याति। **आदिन्नामादायति** परसंतकं सविन्नाकाविन्नाकं संधिच्चेदादि सेवा वा वांचनाय च गहेत्वा जीवकं कप्पेन्ति।
478 .

"गिवय बधा किसा इमे पुनेके, अण्णे विकान्ता बिलाकाता सयन्ति;

भयंहि मां विंदति सुता दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथी;

इमे नु मक्का किमाकांसु पापं, येमे जना बिलाकाता सयन्ति।

479 .

"तस्सा पुठो वियाकासि, मातलि देवसारथि;

विपाकं पापकम्मनं, जनं अक्खासिजानतो।

480 .

"ओरभिका सुकारिका च मचिका, पसुं महिंसाचा अजेकंका;

हन्त्वाना सुनेसु पसारयिन्सु, ते लुड्डकम्मा पसावेत्व पापं;

तेमे जना बिलाकाता सयन्ति'ति।

तत्था **गिवय बद्ध** ति महन्तेहि जलितलोहायोतेहि गिवय बंधित्वा अकाधित्व अयपथवीयं पतेत्वा नानावुधेहि कोट्टियामाने दिस्व पुच्चि। **अन्ने विकान्ता** ती अन्ने पण खण्डखण्डिकां चिन्ना। **बिलाकाता** ति जलितेसु अयफलाकेसु थपेत्वा मानसं विया पोत्थनिया कोटितेत्वा पुंजकता हुत्वा सयन्ति। **मच्छिका** ति मच्छघातका. **पसु** न्ति गाविं. **सुनेसु पसारयिन्सु** ति मानसं विक्किनित्वा जीविकाकप्पनत्थं सुनापनेसु थापेसुं।

481 .

"रहदो अयं मुत्तकारिसपुरो, दुग्गंधरूपो असुचि पूति वति;

खुदापरेता मनुजा अदन्ति, भयंहि मां विंदति सुता दिस्वा;

पुच्चामि तं मातलि देवसारथि, इमे नु मक्का किमाकांसु पापं;

येमे जना मुत्तकारिसभक्खा ।

482 .

"तस्सा पुठो वियाकासि, मातलि देवसारथि;

विपाकं पापकम्मनं, जनं अक्खासि जानतो।

483 .

"ये केचिमे करणिका विरोसाका, परेसं हिंसा सदा निविथा;

ते लुद्दकम्मा पसावेत्व पापं, मित्तद्दुनो मिढमदन्ति बला'ति;

तत्थ **खुदापरेता मनुजा अदन्ति** ती एते नेरायिका सत्ता चटकेन फूटहा खुदं सहितं असक्कोंता पक्कुथितां धूमायंतं पज्जलंतं कप्पेन संहितं पुराणमीढं पिंडं पिंडं कत्वा अदन्ति खादन्ति। **करणिका** ति करणकारका। **विरोसाका** ति मित्तसुहज्जनमपि विहेथका। **मित्तद्दुणो** ती ये तेसन्नेव गेहे खदित्वा भुञ्जित्वा पन्नत्तसने निसीदित्वा सयित्वा पुना मासकहापनं नाम आहारपेंती, लांजं गहन्ति, ते मित्तदुसाका बाला एवरूपं मिधं खादन्ति, महाराजति।

484 .

"रहदो अयं लोहितापुब्बापुरो, दुग्गंधरूपो असुचि पुति वति;

घम्मभितत्त मनुजा पिवन्ति, भयंहि मां विंदति सुता दिस्वा;

पुच्चामि तं मातलि देवसारथि, इमे नु मक्का किमाकांसु पापं;

येमे जना लोहितापुब्बभक्खा।

485 .

"तस्सा पुठो वियाकासि, मातलि देवसारथि;

विपाकं पापकम्मनं, जनं अक्खासिजानतो।

486 .

"ये मातरं वा पितरं वा जीवलोके, पारजिका अरहन्ते हनन्ति;

ते लुड्डकम्मा पसावेत्व पापं, तेमे जना लोहितापुब्बाभक्खा'ति।

तत्थ **घम्मभितत्ता** ति संतापेण पीडिता। **पराजिका** ति परजिता जाराजिणे मातापित्रो घटेत्वा गिहिभयेव पराजिकं पत्त। **अरहंते** ति पूजाविसेस्सा अनुच्चविके। **हनंती** ति दुक्काराकारके मातापितो मारेन्ति। अपिका अरहंते'ति पदेन बुद्धसावकेपि संगनहति।

अपारस्मिम्पि उस्सदानिरये निरयपाल नेरायिकाणं तलप्पमणेन जलितायाबसीसेना जिव्हाम् विज्जित्वा अकाधित्व ते सत्ते जलितायपथवीयं पतेत्वा उपाभचम्मं विया पथरित्वा संकुसतेन हनन्ति । ते थले खित्तमच्च विया फंदन्ति, तन्च दुक्खं सहितुं असक्कोंता रोदंता परिदेवंता मुखेन खेदं मुन्कन्ति। तस्मिं राजा मतलिना दासिते अहा -

487 .

"जीव च पस्सा बासीसेन विद्धं, विहतं यथा संकुसतेन चम्मं;

फंदन्ति मच्छव थलामहि खित्ता, मुनकन्ति खेदं रुदमाना किमते।

488 .

"भयंहि मां विंदति सुता दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथी;

इमे नू मक्का किमाकांसु पापं, येमे जना वङ्कघास्ता सयन्ति'ति।

489 .

"तस्सा पुठो वियाकासि, मातलि देवसारथि;

विपाकं पापकम्मनं, जनं अक्खासिजानतो।

490 .

"ये केचि संधानगता मनुस्सा, अघेन अघघं कायं हापयन्ति;

कुएँन कुट्टं धनलोभहेतु, चन्नं यथा वरिचरण वधाय।

491 .

"न हि कूटकारिस्सा भवन्ति तना, सकेहि कम्मेहि पुरक्खतस्स;

ते लुद्दकम्मा पसावेत्व पापं, तेमे जना वङ्काघस्ता सयन्ति'ति।

तथा **किमते** ति किंकारणा एते। **वङ्काघस्ता** ति गिलिताबाशिसा। **संधानगता** ति संधानं मरियादं गता, अग्घापनकत्थाने स्थितति अथो। **अग्घेन अग्घा** न्ति तं अघघं लांजं गहेत्वा हत्थियासादीनं वा जतरूपराजतादीनं वा तेसं तेसंं सविनानाकाविनाकाणां अघघं हापेंती. **काया** नति तं हपेंटा कायिकाणं कायं हपेन्ति, सते दतब्बे पणनासां दपेन्ति, इतरं तेहि सद्धिं विभाजित्वा गन्हन्ति। **कुएँन कुन्ती तुलाकुतादिसु** तं तं कुत्तम्। **धनलोभहेतु** ति धनलोभेन एतं कुटकम्मं करोन्ति। **चन्नं यथा वरिचरण वधाय ति** तं पण कम्मं करोन्तपि मधुरवाचय तथा कटभवं पतिच्चन्नं कत्वा यथा वरिचरण मच्छं वधाय उपगच्छन्त बैसिसं अमीसेन पतिच्चन्नं कत्वा तां वधेन्ति, एवम् पतिच्चन्नं कत्वा तं कम्मं करोंती। **न हि कुट्टकारिस्सा** ति पतिच्चन्नं मम कम्मं, न तं कोचि जानाति मन्नमानस्स हि कुत्तकारिस्स तना नाम न होन्ति। सो तेहि कम्मेहि पुरक्खतो पतितहं न लभाति।

492 .

"नारी इमा संपरिभिन्नगट्टा, पग्गयहा कंदंती भुजे दुजक्का;

सम्मक्खिता लोहितापुब्बलित्ता, गावो यथा अघातेन विकान्ता;

ता भूमिभागस्मि सदा निखता, खंडातिवत्तन्ति सजोतिभूता।

493 .

"भयंहि मां विंदति सुता दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथी;

इमा नु नारियो किमाकांसु पापं, या भूमिभागस्मि सदा निखता;

खंडातिवत्तन्ति सजोतिभूता।

494 .

"तस्सा पुठो वियाकासि, मातलि देवसारथि;

विपाकं पापकम्मनं, जनं अक्खासिजानतो।

495 .

"कोलिथियायो इधा जीवलोके, अशुद्धकम्मा असतम् अचरुम्;

ता दित्तरूपा पति विप्पाहाय, अन्नं अचारुं रतिखिधाहेतु;

ता जीवलोकस्मिं रामापयित्वा, खंडातिवत्तन्ति सजोतिभूत'ति।

तथा नारी ति इत्थियो. **संपरिभिन्नगट्टा** ति सुत्तु समंततो भिन्नासिरा। **दुजक्का** ति दुज्जतिका विरूपा जेगुच्चा। **अघाताने** ति गावघाटठाणे। **विकान्ता** ति चिन्नसीसा गावो विया पुब्बालोहितालित्ता हुत्वा। **सदा निखता** ति निच्चं जलितयापथवीयं कटिमट्टं पवेसेत्वा निखणित्वा थपित्वा विया शीता। **खंडातिवत्तन्ति** ति सम्मा मतलि, ता नारियो एते पब्बतक्कंधा अतिक्कमन्ति। तसं किरा एवं कटिप्पमानं पविसीत्वा हितकाले पुरत्तिमया दिसाय जलितयापब्बतो समुत्थहित्वा असनि विया विरावंतो आगन्त्वा शरीरारं सण्हकारणि विया पिसंतो गच्छति. तस्मिं अतित्तिव पछिमपस्से थिथे पुना च तसं शरीरं पातु भवति। ता दुक्खं अधिवासेतुं असक्कोन्तियो बाहा पग्गयः कान्दन्ति। सेसदिसासु वुथितेसु जलितपब्बतेसुपि एसेवा नयो। द्वे पब्बता समुथया उच्छुघटिकां विया पियेन्ति, लोहितं पक्कुथितां संदति। कदाचि तयो पब्बता समुथया पियेन्ति। कदाचि चत्तारो पब्बता समुथया तसं शरीरं पियेन्ति। तेनाहा "खंडहतिवत्तन्ति"।
कोलिथियायो ति कुले पतिथिता कुलधितरो। **असतं अचारु** न्ति असन्नतकम्मं करिण्सु। **दित्तारूपा** ति शतरूपा धुत्तजातिका हुत्वा। **पति विपहया** ति अत्तनो पतिं पजाहित्वा। **अचारु** न्ति अगमंसु। **रतिखिधाहेतु** ति कामरतिहेतु सेवा खिदाहेतु च। **रामापयित्वा** ति परपुरीसेहि सद्धिमं अत्तानो चित्तं रामापयित्वा इधा उपपन्ना। अथ तसं शरीरं इमे खंडातिवत्तन्ति सजोतिभूति।
496 .

"पड़े गहेत्वा किस्सा इमे पुनेके, अवंसीरा नरके पत्यन्ति;

भयंहि मां विंदति सुता दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथी;

इमे नु मक्का किमाकांसु पापं, येमे जना अवंसीरा नरके पत्यन्ति।

497 .

"तस्सा पुठो वियाकासि, मातलि देवसारथि;

विपाकं पापकम्मनं, जनं अक्खासिजानतो।

498 .

"ये जीवलोकस्मि असाधुक्कम्मिनो, परसा दारणि अतिक्कमन्ति;

ते तदिसा उत्तमभांडथेना, तेमे जना अवंसीरा नरके पत्यन्ति।

499 .

"ते वासपुगानि बहुनि तत्थ, निरयेसु दुक्खं वेदानां वेद्यन्ति;

न हि पापकारिस्सा भवन्ति तना, सकेहि कम्मेहि पुरक्खतस्सा;

ते लुद्दकम्मा पसावेत्व पापं, तेमे जना अवंसीरा नरके पत्यन्ति'ति।

तत्थ **नरके** ती जलितांगरापुणे महावते। ते किरा वाजं अपविसंतियो गावो विया निरयपलेहि नानावुधानि गहेत्वा विज्जीमान पोथियामाना यदा तं नरकं उपगच्छन्ति, अथा ते निरयपाल उद्धनपादे कट्वा तथा पतयन्ति खिप्यन्ति। एवं ते पतियामाने दिस्व पुच्चन्तो एवमाः। **उत्तमभंडाथेना** ति मनुस्सेहि पियायितस्स वरभांडस्स थेनका।

इवांचा पना वत्वा मतलिसांगहाको तं निरयं अंतरधापेत्वा रथं पुरतो पेसेट्वा मिच्चादिथिकाणं पच्चनत्थानां निरयं दस्सेसि। तेन पुत्थो कसा वियाकासी।

500 .

"उच्चवाचमे विविधा उपक्कमा, निरयेसु डिस्संति सुघोरारूपा;

भयंहि मां विंदति सुता दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथी;

इमे नु मक्का किमाकांसु पापं, येमे जना अधिमत्ता दुक्खा तिब्बा;

खरा कटुका वेदना वेद्यन्ति।

501 .

"तस्सा पुठो वियाकासि, मातलि देवसारथि;

विपाकं पापकम्मनं, जनं अक्खासिजानतो।

502 .

"ये जीवलोकस्मिं सुपापदिथिनो, विशासकम्मानि करोन्ति मोहा;

पराञ्च दिथिसु समादपेंती, ते पापदिथिं पसावेत्व पापं;

तेमे जना अधिमत्ता दुक्खा तिब्बा, खारा कटुका वेदाना वेदयन्ति'।

तथा **उच्चावचामे** ति उच्च अवचा इमे, खुद्दाका च महंता बिल्ली अथो। **उपक्कमा** ति करणप्पयोगा। **सुपापदिथिनो** ति "नत्थि दिन्न"न्तिआदिकाय दासवत्थुकाय मिच्चादिठिया सुत्थु पापदिथिनो। **विस्सासकम्मानि** ति तय दिठिया विसासेन तन्निसिता हुत्वा नानाविधानि पापकम्मानि करोन्ति। **तेमे** ति ते इमे जना एवरुपं दुक्खं अनुभवन्ति।

इति रणनो मिच्छदिथिकानं पक्कननिरायं असिक्खि। देवलोकेपि देवगणा रणनो अगमनमग्गं ओलोकायमाना सुधम्मयं देवसाभायं निसिदिंसुयेव। सक्कोपि "किं नु खो, मातलि, चिरायति उपधारेंतो तम् कारणं नात्वा" मातलि, अत्तनो दुतविसेसं दस्सेतुं 'महाराजा, असुकाम्मं कत्वा असुकानिराय नम: पचंति'ति निरये दस्सेंतो विकारति, निमिराणो पना अप्पमेव आयु ख्येथा, निरयदस्सणं नस्सा परियंतं गच्चेय्यति एकं महाजवं देवपुत्तं पसेसि " त्वं 'सिघं' राजनं गहेत्वा अगाच्छतु'ति मतलिस्सा वदेही'ति। तो "साधु'ति संपतिचित्वा जवेण गन्त्वा अरोसेसि।' मातलि, तस्सा वचनं सुत्वा "न सक्का सिरयितु"न्ति रणनो एकपाहारेनेव कैटुसु दिसासु बाहु निराये दस्सेत्वा गतमहा -

503 .

"विद्तानि ते महाराज, आवासं पापकम्मिनाम्;

न्हानानि लुद्दकम्मनं, दुस्सीलानांच या गति;

उय्याहि दानी राजिसि, देवराजस्सा संतिके'ति।

तस्सत्थो - महाराज, इमं पापकम्मिनं सत्तनं आवासं दिव्वा लुद्दकम्मनांच ठानानि तय विदितानी। दुस्सिलानंच या गति निब्बति, सपि ते विदिता। इदानि देवराजस्सा संतिके दिब्बासम्पत्तिं दस्सानत्थं उय्याहि गच्छहि, महाराजति।

निरायकाण्डं निहितम्।

सग्गकण्डं

एवञ्च पना वत्वा मतलि देवलोकाभिमुखं रथं पसेसि। राजा देवलोकं गच्छन्तो द्वादशयोजनिकां मणिमयं पंचथुपिकां सब्बालंकारापटिमांदिताम् उय्यनापोक्खरनिसम्पन्नं कप्परुक्खपरिवुतम् बिराणिया देवधिताय आकाशस्थकविमानं दिस्व, तन्च देवधीतरं

अंतोकुतागारे सयानपिथे निस्सिन्नं अच्चरासहस्सपरिवुताम् मणिसिहपञ्जरं विवर्तित्वा ओलोकेंतिं दिव्वा मतलिं पुच्चन्तो गथमः। इटारोपिसा बयाकासी.

504 .

"पंचथुपं असंतुष्टं विमानं, मलपिंडधा सयानस्सा मज्झे;

तत्थच्चति नारी महानुभव, उच्चवाचं इधि विकुब्बमना।

505 .

"वित्ति हि मां विंदति सुता दिस्व, पुच्छमि तं मातलि देवसारथी;

अयं नु नारी किमाकासी साधुं, या मोदति सग्गपत्ता विमाने।

506 .

"तस्सा पुठो वियाकासि, मातलि देवसारथि;

विपाकं पुन्नकम्मनं, जनं अक्खासिजानतो।

507 .

"यदि ते सुता बिरानी जीवलोके, अमयदासि अहु ब्राह्मणस्स;

स पत्तकालं अतिथिं विदित्वा, मतव पुत्तं सकिमाभिनंदि;

संयम सविभाग च, स विमानस्मि मोदति'।

तत्थ **पंचथुप** न्ति पंचहि कुटागारेहि समन्नागतम्। **मलापिन्धा** ति मलादिहि सब्बाभरणेहि पतिमन्दिततति अथो। **तत्थच्चति** तस्मिन विमाने अच्छति। **उच्चवाचं इधि विकुब्बमना** ती नानाप्पाकारं देविद्धिं दशयमना। **दिस्वा** ति एतं दिस्वा थितां मम् वित्ती विंदति पतिलाभाति, वितिसंतको विया होमि तुथिय अतिभूतत्तति अथो। **अमयदासि** ति गेहदासीय कुच्चिमि जतदासि। **अहु ब्राह्मणस्स** ति सा किरा कस्सपादसबलस्स काले एकस्स ब्राह्मणस्स दासी अहोसी। **स पत्तकाल** न्ति तेन ब्राह्मणेन अट्ठ शालकभट्टनि संघस्स परिच्चत्तनि एहेसुं। तो गेहं गन्त्वा "स्वे पत्थया एकेकस्सा भिक्खुस्सा एकेकं कहापनघनकं कट्वा अट्ठा सालकभट्टनि संपदेय्यासी"ति ब्राह्मणी आहा। स"सामि, भिक्खु नाम धुत्तो, नाहं सक्खिसस्मि'ति पतिक्खिपि। धितारोपिस्सा पटिक्खिपिंसु। तो दासिं " सक्खिस्ससि अम्मा'ति आहा । सा " सक्खिसामि अय्या'ति संपतिचित्व सक्कक्कं यागुखज्जकभट्टदिनी संपदेत्वा सलकं लभित्वा अगतं पट्टकालं अतिथिं विदित्वा हरितगोमायुपलित्ते कटपुप्पुपहारे सुपन्नत्तसने निसिदापेत्वा यथा नाम विप्पवसा अगतं पुत्तं माता साकिं अभिनंदति, तथा निक्ककालं अभिनंदति, सक्कक्कम परिविसति, अत्तनो सैंटाकैम्पी कोई बात नहीं. **संयम साविभागा च** ती सा सिलावती अहोसि चागावती च, तस्मा तेना सिलेना सेवा कागेना च इमास्मि विमान मोदति। अथ वा **संयमा** ति इन्द्रियदमना।

एवांचा पना वत्वा मतलि पुरतो रथं पेसेट्वा सोनादिन्नादेवपुत्तस्स सत्त कनकविमनानि दस्सेसि। तो तानि च तस्सा च सिरिसम्पतिं दिस्व तेन कटकम्मं पुच्चि। इटारोपिसा बयाकासी.

508 .

"दद्दल्लमना आभेंति, विमान सत्ता निम्मिता;

तत्थ यक्खो महिद्धिको, सब्बाभरणभूसितो;

समंता अनुपरियति, नारिगणपुरक्खतो।

509 .

"वित्ति हि मां विंदति सुता दिस्व, पुच्छमि तं मातलि देवसारथी;

अयं नु मको किमाकासी साधुं, यो मोदति सग्गापत्तो विमाने।

510 .

"तस्सा पुठो वियाकासि, मातलि देवसारथि;

विपाकं पुन्नकम्मनं, जनं अक्खासिजानतो।

511 .

"सोनादिन्नो गहपति, एसा दानपति आहु;

एसा पब्बाजितुद्दिसा, विहारे सत्त करै।

512 .

"सक्कक्कं ते उपत्थसि, भिक्खवो तत्थ वासिके;

अच्छादनञ्च भत्तञ्च,

सेनासनं पदीपियं;अदासि उजुभूतेसु, विप्पसन्नेन चेतसा।

513 .

"चतुद्दसिं पञ्चदसिं, या च पक्खस्सा अट्ठमि;

पातिहारियपक्खाञ्च, अष्टांगसुसमागतम्।

514 .

"उपोसाथं उपवासि, सदा सिलेसु संवुतो;

संयम संविभागा च, सो विमानस्मि मोदति"।

तत्थ **दद्दल्लमना** ति जलमना। **आभेन्ति** ति तरुणासूरियो विया ओभासन्ति। **तथा** ति तेसु पतिपतिया ऋतहित्सु सत्तसु विमानसु। **यक्खो** ती एको देवापुट्टो। **सोनादिन्नो** ति महाराज, अयं पुब्बे कस्सापादसबालास्सा काले काशीरथे अन्नतरस्मि निगमे सोनादिन्नो नामा गहपति दानपति अहोसी। तो पब्बाजिते उदिस्सा सत्ता विहारकुटियो करेत्व तत्थ वासिके भिक्खु बिल्ली पकायेहि सक्कक्कं उपथसि, उपोसथंका उपवासि, निक्कम सिलेसु च सवुतो अहोसी। तो ततो चवित्व इधुपापन्नो मोददतिति अथो। एत्था च **पतिहारियपक्खा** नति इदं पना अट्ठामिउपोसथस्स पक्कुग्गमनानुगमनवसेन सत्तमिनावमियो, चतुद्दसीपन्नरसीनं पक्कुग्गमनानुगमनवसेना तेरसिपपतिपदे च संध्या वुट्टं।

एवं सोनादिन्नस्सा कटकम्मं कथेत्वा पुरतो रथं पेसत्वा फलिकाविमानं दस्सेसि। तं उब्बेधातो पञ्चविसतियोजनं अनेकसतेहि सत्तरतनमयथंभेहि समन्नागतं, अनेकसताकुतागारपतिमन्दितं, किंकिनिकाजलापरिखित्तम्, समुस्सितसुवन्नराजतममयधजं, नानापुप्पविचित्तौय्यनवनविभूषितं, रमणीयपोक्खराणिसमन्नागतं, नक्कागीतवादादिसु चेकाहि अच्चराहि संपरिकिनन। तं दिस्व राजा तसं आचारणं कटकम्मं पुच्चि, इतारोपिस्सा बयाकासि।

515 .

"पभासति मिदं ब्यमहं, फलिकासु सुनिमितं;

नारिवरगणाकिनं, कूटागरावरोचितं;

उपेतं अन्नपनेहि, नक्कागितेहि चुभयं।

516 .

"वित्ति हि मां विंदति सुता दिस्व, पुच्छमि तं मातलि देवसारथी;

इमे नु मच्चा किमाकांसु साधुं, या मोदारे सग्गपत्ता विमाने।

517 .

"तस्सा पुठो वियाकासि, मातलि देवसारथि;

विपाकं पुन्नकम्मनं, जनं अक्खासिजानतो।

518 .

"या कासि नारियो इधा जीवलोके, सिलवंतियो उपासिका;

दाने रता निक्कं पसनचित्त, सच्चे सीता उपोसथे अप्पमत्ता;

संयम संविभागा च, ता विमानस्मि मोदारे'ति।

तत्थ **ब्यम्हा** नति विमानं, पसादोति वुट्टं होति। **फलिकासु** ति फलिकाभित्तिसु। **नारिवारागणाकिन्न** न्ति वरानारिगणेहि अकिन्नं। **कूटागरावरोचि** न्ति वरकुतागारेहि ओचितं समोचितं, वधितन्ति अथो। **उभय** नति उभयेहि। **''या काचि''** ती इदं किंचपि अनियामेत्वा वुट्टं, ता पना कस्सापबुद्धसासने बरणासियां उपासिका हुत्वा गणबंधनेन एतानि वुट्टप्पाकरानि पुनानि कत्वा तं दिब्बासम्पत्तिं पत्तति वेदितब्बा।

अथस्सा सो पुरतो रथं पेसेत्वा एकं रमणीयं मणिविमानं दस्सेसि। तं समे भूमिभागे पतिहितं उब्बेधसम्पन्नं मणिपब्बतो विया ओभासमानं तिट्ठति, दिब्बगीतावादितनिन्नदितं बहुहि देवपुत्तेहि संपरिकिननं। तं दिस्व राजा तेसं देवपुत्तनं कटकम्मं पुच्चि, इतारोपिस्सा बयाकासी।

519 .

"पभासति मिदं ब्यामहं, वेसूरीयसु निम्मितं;

उपेतं भूमिभागेहि, विभत्तं भगसो मितां।

520 .

"आडांबरा मुदिंगा च, नक्कागीता सुवादिता;

दिब्बा सदा निच्चरन्ति, सवनिया मनोरमा।

521 .

"नाहं इवंगतं जातु, एवांसुरुचिरं शुद्ध;

सद्दां समभिजानामि, दिट्ठं वा यदि वा सुतम्।

522 .

"वित्ति हि मां विंदति सुता दिस्व, पुच्छमि तं मातलि देवसारथी;

इमे नु मक्का किमाकांसु साधुं, ये मोदारे सग्गपत्ता विमाने।

523 .

"तस्सा पुठो वियाकासि, मातलि देवसारथि;

विपाकं पुन्नकम्मनं, जनं अक्खासिजानतो।

524 .

"ये केचि मक्का इधा जीवलोके, सिलवंता उपासका;

अरामे उद्पाणे च, पापा संकमनानि च;

अरहंते सतीभूते, सक्कक्कं पतिपादयुम्।

525 .

"चिवरं पिण्डपताञ्च, पचायं सयानासनं;

अदंसु उजुभूतेसु, विप्पसन्नेन चेतसा।

526 .

"चतुद्दसिं पञ्चदसिं, या च पक्खस्सा अठ्ठमि;

पातिहारियपक्खाञ्च, अष्टांगसुसमागतम्।

527 .

"उपोसाथं उपवसुं, सदा सिलेसु संवुता;

संयम साविभागा च, ते विमानस्मि मोदारे'ति।

तत्थ **वेसूरीयसु** ति वेसूरीयभित्तिसु। **भूमिभागेहि** ति रमणीयेहि भूमिभागेहि उपेतम्। **अंडंबरा मुदिंगा चा** ति एते द्वे एत्था वज्जन्ति। **नक्कागिता सुवादिता** ति नानाप्पाकरणि नक्कानि सेवा गीतानि च अपरेसमपि तुरीयानां सुवादितानि चेत्थ पवत्तन्ति। **एवांगत** न्ति एवम् मनोरमभवं गतम्। **''ये केचि''** ती इदम्पि कामं अनिमेत्वा वुट्टं, ते पना कस्सापबुद्धकाले बाराणशिवसिनो उपासका हुत्वा गणबंधनेन एतानि पुनानि कट्वा तं संपत्तिं पत्तति वेदितब्बा. तत्थ **पतिपादयु** न्ति पतिपादयिन्सु, तेसं अडंसुति अथो। **पकाय** नति गिलानपच्चयं। **अदंसु** ति एवं नानप्पाकारकं दानं अदंसुति।

इतिस्सा सो तेसं कटकम्मं अचिक्खित्वा पुरतो रथं पेसेट्वा अपरमपि फलिकाविमानं दस्सेसि। तं अनेकुतागारापटिमनदितम्, नानाकुसुमसांचन्नदिब्बतरुणवनपतितिराय, विविधविहंगमनिन्नदितया निम्मलसलिलय नादिया परिक्खित्तम्, अच्चरागणपरिवुत्सेकस्सा पुन्नवतो निवासभूतं। तं दिस्व राजा तस्स कटकम्मं पुच्चि, इतारोपिस्सा बयाकासी।

528 .

"पभासति मिदं ब्यमहं, फलिकासु सुनिमितं;

नारिवरगणाकिन्नं, कूटागरावरोचितं।

529 .

" उपेतं अन्नपनेहि, नक्कागितेहि चुभयं;

नज्जो चनुपरियति, नानापुप्पदुमायुता।

530 .

"वित्ति हि मां विंदति सुता दिस्व, पुच्छमि तं मातलि देवसारथी;

अयं नु मको किम्कासि साधुं, यो मोदति सग्गापत्तो विमाने।

531 .

"तस्सा पुठो वियाकासि, मातलि देवसारथि;

विपाकं पुन्नकम्मनं, जनं अक्खासिजानतो।

532 .

"मिथिलायां गहपति, एसा दानपति आहु;

अरामे उद्पाणे च, पापा संकमनानि च;

अरहंते सतीभूते, सक्कक्कं पतिपादायि।

533 .

"चिवरं पिण्डपताञ्च, पचायं सयानासनं;

अदासि उजुभूतेसु, विप्पसन्नेन चेतसा।

534 .

"चतुद्दसिं पञ्चदसिं, या च पक्खस्सा अट्ठमि;

पातिहारियपक्खाञ्च, अष्टांगसुसमागतम्।

535 .

"उपोसाथं उपवासि, सदा सिलेसु संवुतो;

संयम संविभागा च, सो विमानस्मि मोदति"।

तत्थ **नज्जो** ति वचनविपल्लसो, एका नदी तं विमानं परिक्खिपित्वा गताति अथो। **नानापुप्पादुमायुता** ति सा नदी नानापुप्पेहि दुमेहि अयुता। **मिथिलाय** नति एसा महाराज, कस्सपबुद्धकाले मिथिलानगरे एको गहपति दानपति अहोसी। तो एतानि आरामरोपनादिनि पुनानि कत्वा इमं संपत्तिं पत्तोति।

एवमस्सा तेन कटकम्मं अचिक्खित्वा पुरतो रथं पेसेट्वा अपरमपि फलिकाविमानं दस्सेसि। तं पुरिमविमानतो अतिरेकाया नानापुप्फफलसंचन्नय तरुणवनाघटाय समानागतम्। तं दिस्व राजा तय संपत्तिया समन्नागतस्स देवपुत्तस्स कतकम्मं पुच्चि, इतारोपिस्सा बयाकासी।

536 .

"पभासति मिदं ब्यमहं, फलिकासु सुनिमितं;

नारिवरगणाकिन्नं, कूटागरावरोचितं।

537 .

" उपेतं अन्नपनेहि, नक्कागितेहि चुभयं;

नज्जो चनुपरियति, नानापुप्पदुमायुता।

538 .

"राजायताना कपित्था च, अम्बा शाला च जंबुयो;

तिंदुका च पियाला च, दुमा निकफला बाहु।

539 .

"वित्ति हि मां विंदति सुता दिस्व, पुच्छमि तं मातलि देवसारथी;

अयं नु मको किमाकासी साधुं, यो मोदति सग्गापत्तो विमाने।

540 .

"तस्सा पुठो वियाकासि, मातलि देवसारथि;

विपाकं पुन्नकम्मनं, जनं अक्खासिजानतो।

541 .

"मिथिलायां गहपति, एसा दानपति आहु;

अरामे उद्पाणे च, पापा संकमनानि च;

अरहंते सतीभूते, सक्कक्कं पतिपादायि।

542 .

"चिवरं पिण्डपताञ्च, पचायं सयानासनं;

अदासि उजुभूतेसु, विप्पसन्नेन चेतसा।

543 .

"चतुद्दसिं पञ्चदसिं, या च पक्खस्सा अठ्ठमि;

पातिहारियपक्खाञ्च, अष्टांगसुसमागतम्।

544 .

"उपोसाथं उपवासि, सदा सिलेसु संवुतो;

संयम संविभागा च, सो विमानस्मि मोदति"।

तथा **मिथिलाय** नति एसा, महाराज, कस्सपबुद्धकाले विदेहरथे मिथिलानगरे एको गहपति दानपति अहोसी। तो एतानि पुन्नानि कत्वा इमं संपत्तिं पत्तोति।

एवमस्सा तेन कटकम्मं अचिक्खित्वा पुरतो रथं पेसेत्वा पुरीमासादिसामेव अपरमपि वेसूरीयविमानं दस्सेत्व तत्थ सम्पत्तिं अनुभवंतस्सा देवपुत्तस्सा कटकम्मम पुठो अचिक्खि।

545 .

"पभासति मिदं ब्यामहं, वेसूरीयसु निम्मितं;

उपेतं भूमिभागेहि, विभत्तं भगसो मितां।

546 .

"आडांबरा मुदिंगा च, नक्कागीता सुवादिता;

दिब्या सदा निच्चरन्ति, सवनिया मनोरमा।

547 .

"नाहं इवंगतं जातु, एवांसुरुचिरं शुद्ध;

सद्दां समभिजानामि, दिट्ठं वा यदि वा सुतम्।

548 .

"वित्ति हि मां विंदति सुता दिस्व, पुच्छमि तं मातलि देवसारथी;

अयं नु मको किमाकासी साधुं, यो मोदति सग्गापत्तो विमाने।

549 .

"तस्सा पुठो वियाकासि, मातलि देवसारथि;

विपाकं पुन्नकम्मनं, जनं अक्खासिजानतो।

550 .

"बाराणसियां गहपति, एसा दानपति आहु;

अरामे उद्पाणे च, पापा संकमनानि च;

अरहंते सतीभूते, सक्कक्कं पतिपादायि।

551 .

"चिवरं पिण्डपताञ्च, पचायं सयानासनं;

अदासि उजुभूतेसु, विप्पसन्नेन चेतसा।

552 .

"चतुद्दसिं पञ्चदसिं, या च पक्खस्सा अट्ठमि;

पातिहारियपक्खाञ्च, अष्टांगसुसमागतम्।

553 .

"उपोसाथं उपवासि, सदा सिलेसु संवुतो;

संयम संविभागा च, सो विमानस्मि मोदति"।

अथस्सा पुरतो रथं पेसेत्वा बालसूर्यसन्निभं कनकविमानं दस्सेत्व तत्थ निवासिनो देवपुत्तस्सा संपत्तिं पुथो अचिक्खि।

554 .

"यथा उदयमादिको, होति लोहितको मह;

तथुपमं इदं ब्यमहं, जतरूपस्स निम्मितं।

555 .

"वित्ति हि मां विंदति सुता दिस्व, पुच्छमि तं मातलि देवसारथी;

अयं नु मको किमाकासी साधुं, यो मोदति सग्गापत्तो विमाने।

556 .

"तस्सा पुठो वियाकासि, मातलि देवसारथि;

विपाकं पुन्नकम्मनं, जनं अक्खासिजानतो।

557 .

"सावत्थियं गहपति, एसा दानपति आहु;

अरामे उद्पाणे च, पापा संकमनानि च;

अरहंते सतीभूते, सक्कक्कं पतिपादायि।

558 .

"चिवरं पिण्डपताञ्च, पचायं सयानासनं;

अदासि उजुभूतेसु, विप्पसन्नेन चेतसा।

559 .

"चतुद्दसिं पञ्चदसिं, या च पक्खस्सा अठ्ठमि;

पातिहारियपक्खाञ्च, अष्टांगसुसमागतम्।

560 .

"उपोसाथं उपवासि, सदा सिलेसु संवुतो;

संयम संविभागा च, सो विमानस्मि मोदति"।

तत्थ **उदयमादिक्को** ति उग्गच्छन्तो आदिको। **सावत्थिया** न्ति कस्सपबुद्धकाले सावत्थिनगारे एको गहपति दानपति अहोसि। तो एतानि पुन्नानि कत्वा इमं संपत्तिं पत्तोति।

एवं तेन इमेसं अठ्ठन्नं विमानं कथितकाले साक्को देवराजा "मातलि, अतिविय सिरायति" अपरमपि जवनादेवपुत्तं पसेसि। तो वेजेना गंटवा अरोसेसी। तो तस्स वचनं सुत्वा "न सक्का इदानि सिरयितु"न्ति कैटुसु दिसासु एकप्पाहारेनेव बहुनि विमाननि दस्सेसि। रन्ना च तत्थ संपत्तिं अनुभावन्तानं देवपुत्तनं कटकम्मं पुत्थो असिंक्खि।

561 .

" वेहयासामे बाहुका, जातरूपस्सा निम्मिता;

दद्दल्लमना आभेंति, विज्जुवबभघनन्तरे।

562 .

"वित्ति हि मां विंदति सुता दिस्व, पुच्छमि तं मातलि देवसारथी;

इमे नु मक्का किमाकांसु साधुं, ये मोदारे सग्गपत्ता विमाने।

563 .

"तस्सा पुठो वियाकासि, मातलि देवसारथि;

विपाकं पुन्नकम्मनं, जनं अक्खासिजानतो।

564 .

"सद्धया सुनिविथया, सद्धम्मे सुप्पवेदिते;

अकांसु सत्थु वचनं, सम्मासंबुद्धसासने;

तेसं एतानि ठानानि, यानि त्वं राजा पाससि'ति।

तथा **वेहयासामे** ति वेहयासा इमे आकाश्येव सन्हिता। आकाशस्थकविमना इमेति वदति। **विज्जुवभभघनन्तरे** ति घनवलाहकांतरे जलमना विज्जु विया। **सुनिविथया** ति मग्गेन अगतत्ता सुप्पतिथिताय। इदं वुत्तं होति - महाराज, एते शुद्ध निय्यनिके कस्सपबुद्धसासने पब्बजित्वा परिशुद्धशिला समानधम्मं करोंता सोतापत्तिफलं सच्चिकत्व अरहतं निब्बत्तेतुं असक्कोंता ततो काटा इमेसु कनकविमानेसु उप्पन्ना। एतेसं कस्सपबुद्धसावकानं तानि ठानानि, यानि त्वं, महाराज, पस्ससिति।

एवमस्सा अकासथकविमाननि दस्सेत्वा सक्कस्सा संतिकां गमनत्थाय उसहं करोन्तो अहा -

565 .

"विद्तानि ते महाराज, आवासं पापकम्मिनाम्;

अथो कल्याणकम्मनं, ठानानि विदितानि ते;

उय्याहि दानी राजिसि, देवराजस्सा संतिके'ति।

तत्थ **अवास** नति महाराज, तया पथममेव नेरयिकाणं आवासं दिव पापकम्मनां थननानि विदितनि, इदानि पण अकाशथकविमाननि पसंतेना अथो कल्याणकम्मनं थनानि विदितानि, इदानि देवराजस्सा संतिके संपत्तिं दथुं उय्याहि गच्छहिती।

एवञ्च पना वत्वा पुरतो रथं पेसेट्वा सिनेरुं परिवारेत्व थिते सत्त परिभंदपब्बते दस्सेसि। ते दिस्वा रन्ना मतलिस्सा पुत्थभवं अविकारान्तो सत्था अहा -

566 .

"सहस्सयुत्तं हयवहिं, दिब्बयानमधिथितो;

ययामानो महाराज, अद्दा सिदान्तरे नागे;

डिसवानामन्तयी सुताम्, इमे के नाम पब्बता'ति।

तत्थ **हयवहि** न्ति हयेहि वाहियामानं। **दिब्बयानामाधीतितो** ति दिब्बयाने थितो हुत्वा। **अड्डा** ति अड्डा. **सीदान्तरे** ति सीदामहासमुद्दस्स अन्तरे। तस्मिं किरा महासमुद्दे उदकं सुखुमं, मोरापिंचमत्तमपि पक्खितं पतितहातुं न सक्कोति सिदतेव, तस्मा सो "सिदामहासमुद्दो"ति वुकाति। तस्सा अंतरे. **नगे** ती पबेट. **के नामा** ती के नाम नामेना इमे पब्बताति.

एवं निमिराण्णा पुत्थो मातलि देवापुट्टो अहा -

568 .

"सुदास्सणो कराविको, ईसाधारो युगन्धरो;

नेमिन्धारो विनताको, अस्सकाणो गिरि ब्रहा।

569 .

"एते सिदान्तरे नागा, अनुपुब्बसमुग्गता;

महाराजनमावसा, यानि त्वं राजा पाससि'ति।

तत्थ **सुदस्सणो** ति अयं, महाराज, एतेसं सब्बबहिरो सुदस्सणो पब्बतो नामा, तदनंतरे कराविको नाम, सो सुदस्सणतो उच्चतारो। उभिन्नंपि पण तेसं अंतरे एकोपि सीदंतरामहासमुद्दो। कराविकस्स अनंतरे इसाधारो नाम, सो कराविकतो उच्चतरो। तेसाम्पि अन्तरे एको सीदन्तरामहासमुद्दो। इषाधरस्स अनन्तरे युगन्धारो नाम, सो इषाधरतो उच्चतरो। तेसाम्पि अन्तरे एको सीदन्तरामहासमुद्दो। युगन्धरस्सा अनन्तरे नेमिन्धरो नाम, सो युगन्धरतो उच्चतरो। तेसाम्पि अन्तरे एको सीदन्तरामहासमुद्दो। नेमिन्धरस्सा अनन्तरे विनताको नाम, सो नेमिन्धरतो उच्चतरो। तेसाम्पि अन्तरे एको सीदन्तरामहासमुद्दो। विनतकस्सा अनन्तरे अस्सकाणो नाम, सो विनतकतो उच्चतरो। तेसाम्पि अन्तरे एको सीदन्तरामहासमुद्दो। **अनुपुब्बसमुग्गता** ति एते सिदंतरामहासमुद्दे सत्ता पब्बता अनुपतिपतिया समुग्गता सोपानसदिसा हुत्वा स्थिति। **यानि** ति ये त्वं, महाराज, इमे पब्बते पस्ससि, एते चतुन्नं महाराजनं अवसति।

एवमस्सा चतुमहाराजिकादेवलोकं दस्सेत्वा पुरतो रथं पेसेत्वा तावतिंसभवनस्सा चित्तकूटद्वारकोठकम् परिवारेत्वा इण्डपतिमा दस्सेसि। तं दिसवा राजा पुच्ची, इतारोपिसा ब्याकासी।

570 .

"अनेकरुपं रुचिरं, नानाचित्रं पकासति;

अकिन्नं इंदसदिसेहि, ब्याग्घेहेव सुरक्खितं।

571 .

"वित्ति हि मां विंदति सुता दिस्व, पुच्छमि तं मातलि देवसारथी;

इमं नु द्वारं किमभान्नमाहु, मनोरमं दिसाति दुरतोवा।

572 .

"तस्सा पुठो वियाकासि, मातलि देवसारथि;

विपाकं पुन्नकम्मनं, जनं अक्खासिजानतो।

573 .

"चित्रकूटोऽति यं आहु, देवराजपवेसनम्;

सुदस्सानस्स गिरीनो, द्वारन्हेतं पकासति।

574 .

"अनेकरुपं रुचिरं, नानाचित्रं पकासति;

अकिन्नं इन्दसदिसेहि, ब्याग्घेहेव सुरक्खितं;

पविसेतेन राजिसि, अराजं भूमिमक्कमा'ति।

तथा **अनेकरूपा** न्ति अनेकजातिकाम्। **नानाचित्र** न्ति नानारत्नचित्रम्। **पकासति ति** किं नाम एतं पन्नयति। **अकिन्न** न्ति संपरिपुणं। **ब्याग्घेहेव सुरक्खिता** नति यथा नाम ब्याग्घे वा सीहेहि वा महावनं, एवं इन्दसदिशेव सुरक्खितम्। तासांच पना इंदपतिमानं अरक्खनत्थाय थपितभावो एकाकनिपते **कुलवकजाताके** (जा. 1.1.31) वुत्तानयेन गहेतब्बो। **किंमभन्नमहु** ति किन्नम वदन्ति। **पवेसां** न्ति निक्खमानप्पवेसनत्थाय निम्मितं। **सुदस्सानस्सा** ति सोभनादासनस्सा सिनेरुगिरिनो। **द्वारं हेत न्ति** एतं सिनेरुमत्थके पतितिहितस्स

दाससहस्सयोजनिकास्सा देवनगरस्स द्वारं पकासति, द्वारकोठको पन्नयति अथो। **पविसेतेना** ति एतेन द्वारेण देवनगरं पविसा। **अराजं भूमिमक्कमा** ति अराजं सुवन्नराजतमनिमयं नानापुप्फेहि समाकिनं दिब्बभूमिं दिब्बयानेन अक्कमा, महाराजति।

एवञ्च पना वत्वा मतलि राजनं देवानगरं पवेसेसि। तेन वुट्टं -

575 .

"सहस्सयुत्तं हयवहिं, दिब्बयानमधिथितो;

ययामानो महाराज, अद्दा देवसभं इदा'अन्ति।

तो दिब्बयाने थितोवा गच्चन्तो सुधम्मदेवसभं दिस्व मतलिं पुच्चि, सोपिस्सा असिक्खि।

576 .

"यथा सारदे आकाशे, नीलोभासो पदिस्सति;

तथुपमं इदं ब्यमहं, वेसूरीयसु निम्मितं।

577 .

"वित्ति हि मां विंदति सुता दिस्व, पुच्छमि तं मातलि देवसारथी;

इमं नु ब्यामहं किमभान्नमाहु, मनोरमं दिसाति दुरतोवा।

578 .

"तस्सा पुठो वियाकासि, मातलि देवसारथि;

विपाकं पुन्नकम्मनं, जनं अक्खासिजानतो।

579 .

"'सुधम्मा' इति यं आहु, पास्सा डिसटे सभा;

वेसूरीयरुचिरा चित्र, धारयंती सुनिम्मिता।

580 .

"अथांसा सुकता थम्भा, सब्बे वेसूरीयमाया;

यत्थ देवा तवतिंसा, सब्बे इन्दपुरोहिता।

581 .

"अत्थं देवमनुस्सानं, चिंतायंता समाचरे;

पविसेतेन राजिसि, देवानां अनुमोदनन्ति।

तथा **इदा** निपातमत्तं, देवसभं अडसति अथो। **पाससा** ति पासा एसा. **वेशुरिया रुचिरा** ती रुचिरावेसूरिया। **चित्र** ति नानारत्नविचित्र। **धारयन्ति** ति इमं सभं एते अट्ठहंसादिभेदा सुकता थम्भा धारयन्ति। **इंदपुरोहिता** ति इंदं पुरोहितं शुद्धेचरितं कत्वा परिवारेत्वा हितं देवमनुस्सनं अत्थं चिंतायंता अचंति। **पविसेतेना** ति इमिना मग्गेन यत्था देवा अन्नमन्नं अनुमोदंता अचंति, तं ठानं देवानां अनुमोदनं पविसा।

देवापि खो तस्सगमनमग्गं ओलोकेंटव निसिदिंसु। ते "राजा अगतो'ति सुत्वा दिब्बगंधवसापुप्हत्था याव चित्तकुटद्वारकोठका पतिमग्गं गन्त्वा महासत्तं दिब्बगंधमालादि पूज्यन्ता सुधम्मदेवसभं अनैयिन्सु। राजा रथ ओटरित्वा देवसभाहं पविसी। देवा आसनेन निमंतयिन्सु। सक्कोपि आसनेन सेवा कामेहि च निमन्तेसि। तमत्थं पकासेन्टो सत्था अहा -

582 .

"तं देव पतिनन्दिन्सु, दिस्व राजनमगतम्;

स्वागतं ते महाराज, अथो ते अदुरगतं;

निसिदा दानी राजिसि, देवराजस्सा संतिके।

583 .

"सक्कोपि पतिनंदित्था, वेदेहं मिथिलग्गहं;

निमन्तयित्थ कामेहि, आसनेन च वसावो।

584 .

"साधु खोसि अनुप्पत्तो, आवासं वसवत्तिनं;

वासा देवेसु राजिसि, सब्बाकामसमसिद्धिसु;

तवतिंसेसु देवेसु, भुञ्ज कामे अमानुसे'ति।

तत्थ **पतिनंदिंसु** ति संपियायिन्सु, हत्थातुथव हुत्वा संपतिचिंसु। **सब्बाकामसमिद्धिसु** ति सब्बेसं कामनां समिद्धियुतेसु।

एवं सक्केन दिब्बाकामेहि सेवा आसनेन च निमंतितो राजा पतिक्खिपंतो अहा -

585 .

"यथा यचितकं यानं, यथा याचितकं धनं;

एवं सम्पदामेवेतं, यं परतो दानपच्चय।

586 .

"न चाहमेतमिच्छामि, यं परतो दानपच्चया;

सयंकातानि पुन्नानि, तम मे अवेनिकं धनं।

587 .

"सोहं गन्त्वा मनुस्सेसु, काहामि कुसलं बहुम्;

दानेन समाचर्याय, संयमेन दमेन च;

यं कत्वा सुखितो होति, न च पच्चानुतापति'ति।

तत्थ **यं परतो दानापच्चया** ति यं परतो तस्स परसा दानापच्चया तेन दिन्नत्ता लब्भाति, तं यचितकसादिसं होति, तस्मा नहं एतं इच्छामि। **सयांकातानि** ति यानि पना मया अत्ताना कतानि पुनानि, तमेव मम परेहि असाधारणत्ता अवेनिकं धनं अनुगमियाधनं। **समाचर्याय** ति तीहि द्वारेहि समाचर्याय। **संयमेन** ति सिलरक्खानेन। **दमेना** ति इंद्रियादमेना।

एवं महासत्तो देवानां मधुरसद्देन धम्मं देसेसि। धम्मं देसन्तोयेव मनुस्सगणनाय सत्त दिवसानि तत्त्वा देवगणं कोसेत्वे देवगणमज्जे थितोवा मतलिसा गुनां कथेंटो अहा -

588 .

"बहुपकारो नो भवं, मातलि देवसारथी;

यो मे कल्याणकम्मनं, पापानां पतिदासयि'ति।

तथा **यो मे कल्याणकम्मनं, पापानां पतिदासयि** ति यो एसा मयहं कल्याणकम्मन देवानांच पापनि ठानानि दस्सेसिति अथो।

सग्गकांडं निहितं।

अथ राजा सक्कं अमांतेत्वा "इच्छामहं, महाराज, मनुस्सलोकं गन्तु"न्ति आहा। सक्को " तेन हि, सम्मा मतलि, निमिराजनं तत्थेव मिथिलां नेहि'ति आहा। तो "साधु"ति सम्पतिच्छित्वा रथं उपथपेसि। राजा देवगणेहि सद्धिमं सम्मोदित्वा देवे निवत्तपेत्व रथं अभिरुहि। मातलि रथं पेसेन्टो पचिनादिसाभागेन मिथिलां पापुनि। महाजनो दिब्बरथं दिस्व' राजा नो अगतो'ति पमुदितो अहोसि। मातलि मिथिलां पादक्खिनं कत्वा तस्मिन्येव सिहपञ्जरे महासत्तं ओतरेत्व "गच्छमहं, महाराज"ति आपुच्छित्वा सकथनामेव गतो। महाजनोपि राजनं परिवारेत्व "किदिसो, देवा, देवलोको"ति पुच्चि। राजा देवतानच सक्कस्सा च देवराननो संपत्तिं वन्नेत्वा "तुम्हेपि दानादिनि पुनानि करोथा, एवं तस्मि देवलोके निब्बतिसथा"ति महाजनस्सा धम्मं देसेसि।

तो अपराभागे कप्पकेण पलितस्सा जाताभावे अरोकिते पलितं सुवन्नसंदासेना उद्धरापेत्वा हत्थे थापेत्वा कप्पकस्सा गमवरं दत्वा पब्बजितुकामो हुत्वा पुत्तस्स रज्जां पेटीचापेसी. तेना च कस्मा, देवा, पब्बाजिस्ससि'ति वुट्टे -

"उत्तममंगरुहा मयहं, इमे जाता वयोहारा;

पहुभूता देवदूता, पब्बज्जासमायो ममा'ति। —

गाथां वत्वा पुरीमराजनो विया पब्बजित्वा तस्मिनयेव अम्बवने विहारन्तो चत्तारो ब्रह्मविहारे भवेत्वा ब्रह्मलोकुपगो अहोसि। तस्सेवं पब्बजिताभवं अविकारोंतो सत्थ ओसनागतमहा -

589 .

"इदं वत्वा निमिराज, वेदेहो मिथिलग्गहो;

पुथुयान्नं यजित्वान, संयमं अज्झुपागमि'ति।

तत्थ **इदं वत्वा** ति "उत्तममंगरुहा मयहा'न्ति इमां गथं वत्वा। **पुथुयान्नं यजित्वाना** ति महादानं दत्वा। **संयमं अज्झुपागामी** ति सिलसंयम उपगतो।

पुत्तो पनास्सा काराजनको नाम तं वंशं उपचिंदि।

सत्था इमं धम्मदेसनं अहारित्वा' न, भिक्खवे, इदानेव, पुब्बेपि तथागतो महाभिनिक्खमानं निक्खन्तोयेव"ति वट्वा जातकं समोधनेसि " तदा सक्को अनुरुद्धो अहोसि, मातलि आनंदो, चतुरासिति खत्तियसहसानि बुद्धपरिसा, निमिराज पण अहमेव सम्मासंबुद्धो अहोसिं'न्ति।

निमिजातकवन्ना चतुत्था।

---

[541] 4. निमिजातकवन्नना

चूमेरं वत लोकस्मिन्ति इदं सत्था मिथिलां उपनिस्साय माघदेवअम्बवने विहरन्तो सितपतटुकम्मं अर्भ कथेसि। एकदिवसहि सत्था सायंषसमये सम्भुलेहि भिक्खुहि सद्धिं तस्मिं अम्बवने चारिकं चरमाणो एकं रमानीयं भूमिप्पदेसं दिस्वा अत्तनो पुब्बचरियां कत्थेतुकामो हुत्वा सितपातुकम्मं कत्वा अस्मता अंडथेरेन सितपातुकम्मकारं पुत्थो " आनंद, अयं भूमिप्पदेसो पुब्बे माया माघदेवराजकाले झांकीळहं कीळन्तेन अज्जवुत्थपुब्बो"ति वत्वा तेन याचितो पञ्चत्तसने निसीदित्वा अतीतं अहरि।

अस्ते विदेहर्थे मिथिलंकारे मेघदेवो नाम राजा रजं करेसि। सो चतुरासिटिवस्ससहसानि कुमारकीळहं कीळि, चतुरासिटिवस्ससहस्सानि उपराजजं करेसि, चतुरासिटिवस्ससहसानि रजजं करेन्तो "यदा मे सम्म कप्पक, सिरस्मिं पलितानि पपेयसि, तदा मे अरोचेयासी"ति अह। अपरभागे कप्पको पलितानि दिस्वा रञ्जो अरोचेसि। राजा पलितं सुवन्नसंदासेन उद्धरापेत्वा हत्थतले पतित्थापेत्वा पलितं ओलोकेत्वा मच्छचुराजेण आगन्त्वा नलाते लग्गं वि मरणं संपसस्मानो " इदानी मे पब्बजितकालो"ति कप्पकस गमवरं दत्वा जेट्ठपुत्तं पकोसपेत्वा "तात, राजदजं पतिच्छ, अहं पब्बजीसामी"ति वत्वा "किं कारण देवा"ति वुत्ते -

"उत्तमङ्गुरुहा म्यहं, इमे द वयोहरा।

पातुभूता देवदूता, पब्बज्जासमयो मम"ति॥ —

वत्वा पुत्तं रजदजे अभिसिंचित्वा "तात, त्वमपि एवरूपं पलितं दिसवव पब्जेयसी"ति तं ओवदित्वा नगरा निखमित्वा अंबवने इसिपब्बजं पब्बजित्वा चतुरासिटिवस्ससहस्सानि चत्तारो ब्रह्मविहारे भवेत्वा ब्रह्मलोके निब्बति। पुत्तोपिस्स एतेनेव मयेन पब्बजित्वा ब्रह्मलोकपरायणो अहोसि। तथा तस्स पुत्तो, तथा तस्स पुत्तोति एवं द्वीहि ऊनानि चतुरासीतिखत्तियसहस्सानि सीसे पलितं दिस्वाव इमस्मिं अंबवने पब्बजित्वा चत्तारो ब्रह्मविहारे भवेत्वा ब्रह्मलोके निब्बिंसत्तु।

तेसं सब्बप्तमं निब्बत्तो मेघदेवराजा ब्रह्मलोके थितोव अट्टनो वंसं ओलोकेंतो द्वीहि ओनानि चतुरासीतिखट्टियसहसनि पब्बजितानि दिस्वा तुत्थमानसो हुत्वा "इतो नु खो परं पवत्तिस्सति, न पवत्तिस्स्ति"ति ओलोकेंतो अप्पवत्तनभावं नत्वा "मम वंसं अहमेव" घटेस्सामि"ति चिन्तेत्वा ततो चित्वा मिथिलकांगे रञ्जन्यो अग्गमहेसिया कुच्छिम्हि पतिसंधिं गणित्वा दशमासच्चयेन मातु कुच्छितो निक्कमि। राजा तस्स नामगघनदैसे नेमित्तके ब्राह्मणे पकोकोसापेत्वा पुच्छि। ते तस्स लक्षणानि ओलोकेत्वा "महाराज, अयं कुमारो तुम्हाकं वंशं घटेनतो उप्प संज्ञाओ। तुम्हाक्ञ्हि वंसो पब्बजितवंसो, इमस्स परतो नागमिस्सति"ति वदिंसु। तं सुत्व राजा" अयं कुमारो रथच त्रकनेमि विय मम वंसं घटेनतो जातो, तस्मा तस्स 'निमिकुमारोऽति नामं करिसामि"ति चिन्तेत्वा "निमिकुमारो"तिस्स नामं अकासि।

सो दहरकलतो पट्ठय दाने सीले उपोस्थकम्मे च अभिरतो अहोसि। अथस पिता पुरिमनयेनेव पलितं दिस्वा कप्पकस गमवरं दत्वा पुत्तस्स रजदजं नियादेत्वा अंबवने पब्बजित्वा ब्रह्मलोकपरायणो अहोसि। निमिराजा पण दंज्जसयताय चतुसु नगरद्वारेसु नगरमझे चाति पञ्च दंसलायो करापेत्वा महादानं पवत्तेसि। एकेकाय दंसलाय सत्सहस्सं सत्सहस्सं कत्वा देवसिकं पञ्च पञ्च कहापंसत्सहस्सानि परिच्छदचि, निचदचं पञ्च सीलनि राखी, पक्खदिवससु उपोस्थं समदियि, मजामपि दानादिसु पण्डनेसु समादपेसि, सग्गमग्गं अचिंक्खित्वा निर्यभयेन तजदजेत्वा धम्मं देसेसि। तस्स ओवादे थिता मनुष्सा दानादिनि पुञ्जानि कत्वा ततो चुता देवलोके निब्बत्तिंसु, देवलोको परिपूरि, निर्योतुष्टो विय अहोसि। तदा तावतिंसभवने देवसङ्घा सुधम्मयं देवसभायं स ज्ञानपतित्व "अहो, वत अम्हाकं आचार्यो निमिराजा, तं निस्साय मयं इमं बुद्धदन्नेनपि अपरिच्छिंदनीयं दिब्बसम्पत्तिं अनुभवमा"ति वत्वा महासत्तस्स गुणे वन्यायंसु। मनुस्सलोकेपि महासमुद्दपिट्ठे असित्ततेलं विय महासत्तस्स गुणकथा स्टोनरि। सत्था तमथं अविभूतं कत्वा भिक्खुसङ्घस्स कथेंतो अह -

420.

"अच्छेरं वत लोकस्मिं, उप्पज्ज़न्ति विचक्खना।

यदा अहु निराजमिया, पण्डितो कुसलथिको॥

422.

"राजा सब्बिदेहं, अदा दानं अरिन्दमो।"

तस्स तं ददतो दानं, सङ्कप्पो उदपज्जज्थ।

दानं वा ब्रह्मचर्यं वा, कतमं सु महप्फल"न्ति॥

तत्थ यदा आहुति भिक्खवे, यदा पंडितो अत्तनो च परेसञ्च कुसलथटिको निमिराज अहोसि, तदा देवमनुस्सा " अच्छेरं वत, भो, एवरूपापि नाम अनुप्प साइने बुद्धान्ने बौद्धस्स बुद्धकिचाचं साधयमना लोकस्मिं विचखना उपप्पज्जन्ति"ति एव तस्स गुणकथं कथेसुन्ति अथो। "यथा अहु"तिपि पाठो। तस्सत्थो - यथा अहु निमिजा पण्डितो कुसलथिकोयेव, तथारूपा महास्स्स बुद्धकिचं साधयमना उप्जदजन्ति विचखना। यं तेसं उप्प सत्यं, तं अच्छेरं वत लोकस्मिन्ति। इति सत्था संयमेव अचरियजातो एवमः। सब्बविदेहहन्ति सब्बविदेहर्त्तवासिनं। कतमं सुति एतेसु दविसु कतमं नु खो महप्फलन्ति अथो।

सो किर प साइनरसीउपोस्थदिवसे उपोस्थिको हुत्वा सब्बाभरणानि ओमुञ्चित्वा सिरिसयनपिट्ठे निप सयानोव द्वे यामे निद्दं ओक्रममित्वा पछिमायामे पबुद्धो पल्लङ्कं अभुजित्वा "अहं समाजस्स अपरिमणं दानमपि देमि, सीलमपि रक्खामि, दानस्स नु खो महंतं फलं, उदाहु ब्रह्मचर्यस्स'ति चिन्तेत्वा अत्तनो कङ्खं छिन्दितुं नासक्खि। तस्मिं खने सक्रक्स भवनं उन्हाकारं दस्सेसि। सक्राको अवजज्जेनतो तं तथा विटब्रेकेंटं दिस्वा "कङखमस्स चिन्नदिस्सामी"ति एककोव सीघं आगन्त्वा सकलनिवेसनं एकतोभासं कत्वा सिरिगभं पविसीत्वा ओभासं भरित्वा आकासे तत्वा तेन पुत्थो ब्याकासि। तमथं पकसेन्तो सत्था अह -

4.25.

"तस्स सङ्कप्पमञ्जाय, मघवा देवकुंजरो।

सहस्सनेत्तो पतुरहु, वन्नेन विहानं तमं॥

4.

"सलोमहत्तो मनुजिंदो, वासवं अवचा निमि।"

देवता नुसि गन्धब्बो, अदु त्राटक सको पुरिन्ददो॥

425.

"न च मे तदिसो वन्नो, दित्थो वा इफ वा सुतो।

अचिक्ख मे त्वं भद्दन्ते, कथं जानेमु तं मयं॥

4.

"सलोमहत्तं ञत्वान, वस्वो अवचा निमिं।

सट्रकोहमस्मि देविन्दो, आगतोस्मि त्वन्तिके।

अलोमहत्तो मनुजिन्द, पुच्छ पञ्चं यमिच्छसि॥

4.

"सो च तेन कटोकासो, वासवं अवचा निमि।

पुच्छमि तं महाराज, सब्बभूतानमिस्सर।

'दानं वा ब्रह्मचर्यं वा, कतमांसु महप्फलं'॥

4

"सो पुत्थो नरदेवेन, वस्वो अवचा निमिं।

विपाकं ब्रह्मचार्य, जानं अक्खासिजानतो॥

4

"हीनेन ब्रह्मचरियेन, खत्तये उपपज्जति।"

मज्झिमेन च देवतां, उत्तमेन विसुज्जति॥

430.

"न हेते सहजा काया, याचयोगेन केन्चि।

ये काये उपपज्जन्ति, अनागारा तपस्सिनो"ति॥

तत्थ सलोमहट्ठोति भिक्खवे, सो निमिराजा ओभासं दिस्वा आकासं ओलोकेंतो तं दिब्बाभरणपतिमण्डितं दिस्वाव भयेन लोमहट्ठो "देवता नुसि हु गन्धब्बो"तिआदिना पुच्छि। अलोमहत्थोति निब्भयो अहत्थलोमो हुत्वा पुच्छ, महाराजाति। वासवं अवचाति तुत्थमानसो हुत्वा सद्दकं अवोच। जानं अक्खासिजानतोति भिक्खवे, सो सक्कको अस्ते अत्तना पच्चचकतो दिट्ठपुब्बं ब्रह्मचर्य विपाकं जानंतो तस्स अजानतो अक्खासी।

हीनेनातिआदिसु पुथुतिथायत्ने मेथुनविरातिमत्तं सीलं हीनानं नाम, तेन खट्टियकुले उपपजदजति। जानस्स उपचारमत्तं मज्झिमं नाम, तेन देवतां उपपज्जति। अट्ठसमापत्तिनिब्बत्तनं पन उत्तमं नाम, तेन ब्रह्मलोके निब्बत्तति, तं बहिरका निब्बान्ति कथेंन्ति। तेनाः "विसुज्झति"ति। इमस्मिं पन बुद्धसासने परिसुद्धसीलस भिक्खुनो अञ्जन्तरं देवनिकायं पत्थेनतस्स ब्रह्मचर्यचेतना सत्याय हीनं नाम, तेन यथापथिते देवलोके निब्बत्तति। परिसुद्धसिलस्स भिक्खुनो अट्ठसमापत्तिनिब्बत्तनं मज्झिमं नाम, तेन ब्रह्मलोके निब्बत्तति। परिसुद्धसिलस्स विपस्सनं वन्नजेत्वा अरहत्तुपत्ति उत्तमं नाम, तेन विसुज्झतिति। इति सतारको "महाराज, दंतो सतगुणेन सहस्सगुणेन सत्सहसगुणेन ब्रह्मचर्यवासोव महप्फलो"ति वन्नेति। कायाति ब्रह्मघात। याचयोगेनाति याचनयुत्तकेन यञ्जयुत्तकेन वती उभयत्थापि दक्षवेतं नामं। तपस्सिनोति तपनिस्सित्का।

इमाय गाथाय ब्रह्मचर्यवासस्सेव महफलभावं दीपेत्वा इदानि ये अस्ते महादानं दत्व कामावचरं अतिक्रममितुं नासखिंसु, ते राजानो दस्सेंतो अह -

4

"दुदीपो सागरो सेलो, मुजकिंडो भागिरसो।"

उसिन्द्रो कस्सपो च, असको च पुथुज्जनो॥

44वीं.

"एते चञ्चे च राजानो, क्षत्रिय ब्राह्मण बहु।"

पुथुयञ्चं यजित्वान, पेत्तत्तं नातिवत्तिसुऽन्ति॥

तस्सत्थो - महाराज, पुब्बे बारांसियं दुदीपो नाम राजा दानं दत्वा मर्नच ब्रेकेन छिन्नो कामावचरेयेव निब्बति। तथा सागरादयो अट्ठाति एते च अञ्जने च बहु राजानो चेव खत्तिया ब्राह्मणा च पुथुयञ्जं यजित्वान अनेकापकारं दानं दत्त्वा कामावचरभूमिसङ्खातं पेटत्तं नातिवित्सुति अथो। कामावचरदेवता हि रूपादिनो किलेसवथुसस कारण परं पच्चासीसनतो कपांताय "पेटा"ति वुच्चचन्ति। वुट्टमपि चेतनं -

"ये अदुत्या न रमन्ति एकिका, विवेकजं ये न लभन्ति पीतिं।

किञ्चादपि ते इन्दस्मानभोगा, ते वे पराधीनसुखा वरका"ति॥

एम्पि दानफलतो ब्रह्मचर्यफलासेव महन्तभावं दस्सेत्वा इदानि ब्रह्मचर्यवसेन पेतभवनं अति त्रिकमित्वा ब्रह्मलोके निब्बत्ततापसे दस्सेन्तो अह -

4

"अथ यिमे अवत्तिन्सु, अनागारा तपस्सिनो।"

सत्तिसयो यामहनु, सोमयामो मनवो॥

4

"समुद्दो माघो भरतो च, इसि कालपुरक्खतो।"

अङ्गीरसो कस्सपो च, किसवच्छो अकति चा"ति॥

तत् अवत्तिनसुति कामावचरं अतिगतिंसु। तपस्सिनोति सीलतपञ्चेव समापत्तितपञ्च निस्सीता। सत्तिसयोति यम्हानुदयो सत्त भतरोव सन्ध्याः। अङ्गीरसादिहि चतुहि सद्धिं एकादसेते अवत्तिंसु अति लैक्टामिंसुति अथो।

एवं तव सुतवसेनेव दानफलतो ब्रह्मचर्यवसस्सेव महप्फलतं वन्नेत्वा इदानि अत्तना दिट्ठपुब्बं आहारन्तो अह -

4.

"उत्तरेन नदी सीडा, गहराई दुरति ट्रैकमा।

नळग्गिवन्ना जोतन्ति, सदा कंचनपब्बता॥

4 .

"परोळहकच्छ तगरा, रुळहकच्छ वना नागा।

तत्रासुं दससहस्स, पोराना इसयो पूरे॥

4

"अहं सेट्ठोस्मि दानेन, संयमेन दमेण च।

अनुत्तरं वतं कत्वा, पकिरचारी सम्मिलिते॥

40

"जातिमन्तं अजचदचञ्च, अहं उजुगतं नरं।

अतिवेलं नमस्सिसं, कम्मबन्धु हि मानवा॥

4.

"सब्बे वन्ना अधम्मत्था, पतन्ति निरयं अधो।

सब्बे वन्ना विसुज्जन्ति, चरित्वा धम्ममुत्तम"न्ति॥

तथा उत्तरेणति महाराज, अस्ते उत्तरहिमवन्ते द्वि न्याजं सुवन्नपब्बतनं अंतरे पवत्ता सीदा नाम नदी नावाहिपी दुरतिकालकमा अहोसि। कौन सा कारण? सा हि अतिसुखुमोदका, सुखुमत्ता उदकस अंतमसो मोरपञ्च-मत्तमपि तथा पतितं नं संथाति, ओमादित्वा हेत्थतलमेव गच्छति। तेनेव सा सीदा नाम अहोसि। ते पन तस्सा तीरेसु कांचनपब्बता सदा नळगिवन्ना हुत्वा जोतन्ति ओभासन्ति। पुरुळहकच्छ तगरति तस्सा पन नादिया तीरे कच्छा पुरुळहतगरा अहेसुं तगरगंधसुगंधिनो। रुळहकच्छ वाना नागाति ये तत् अञ्जनेपि पब्बता, तेसम्पि अंतरे कच्छ रुळहवना अहेसूं, पुप्फफलूपगुरुक्षासञ्च साइनाति अत्थो। तत्रासुन्ति तस्मिं एवं रमणीये भूमिभागे दससहस्स इसयो अहेसुं। ते सब्बेपि अभिज्ञानसमापत्तिलाभिनोव। तेसु भिक्खाचारवेलाय केचि उत्तरकुरुं गच्छन्ति, केचि महाजम्बूदीपे जम्बुफलं अहरन्ति, केचि हिमवन्तयेव मधुरफलानि अहित्वा भोजन्ति, केचि जम्बूदीप्तले तं तं नगरं गच्छन्ति। एकोपि रसतन्हाभिभूतो नत्थि, झानसुखेनेव वीतिनामेन्ति। तदा एको तापसो आकासेन बाराणसिं गन्त्वा सुनिवत्थो सुपारुतो पिण्डाय चरन्तो पुरोहितस्स गेहद्वारं पापुनि। सो तस्स उपसमे पसीदित एनेवा अंतोनिवेसनं त्वा भोजनेत्वा कतिपहं पतिजगन्तो विस्सासे उप्प संज्ञाए "भन्ते, आपार कुहिं वस्था"ति पुच्छि। असुकाट्ठाने नामवुसो'ति। "किं पन हर एककोव तथा वसथ, उदाहु अञ्चेपि अथि"ति? "किं वदेसि, आवुसो, तस्मिं पदेसे दशसहस्स इसयो वसन्ति, सब्बेव अभिज्ञानसमापत्तिलाभिनो"ति। तस्स तेसं गुणं सुत्वा पब्बज्जाय चित्तं नमि। अथ नं सो अह - "भंते, ममपि तथ नेत्वा पब्बजेथा"ति। "अवुसो, तवं राजपुरिसो, न तं सक्राका पब्बजेतु"न्ति। "तेन हि, भन्ते, अजदजाहं राजानं अपुच्छिस्सामि, अराम स्वेपि आगच्छेयथा"ति। सो अधिवाससि.

इतरोपि भूतपातरासो राजनं उपसङ्कमित्वा "इच्छामहं, देव, पज्जितु"न्ति अह। "पब्ज्जिससी" का कारण क्या है? "कामेसु दोसं नेखम्मे च अनिसं दिस्वति।" "तेन हि पब्बजाहि, पब्बजितोपि मन दस्सेयसी"ति। सो "साधु"ति सम्पतिच्छित्वा अत्तनो गेहं गन्त्वा पुत्तदारं अनुसासित्वा सब्बं सपतेयं दस्सेत्वा अत्तनो पब्बजितपरिखारं गहेत्वा तपस्सस आगमनमग्गं ओलोकेन्तोव निसीदि। तपसोपि तथेव आकासेनागन्त्वा अन्तोनगरं पविसीत्व तस्स गेहं पविसी। सो तं सचित्रचं चं परिविसित्वा "भन्ते, मया कथं कैटब्ब"न्ति अह। सो तं बहिनगरं नेत्वा हत्थे आद्य अत्तनो अनुभावेन तत् नेत्वा पब्बजेत्वा पुनादैसे तं तत्थेव ओकेत्वा भट्टं अहारित्वा दत्वा कसिनपरिकमं अचिक्खि। सो कटिपाहनेव अभिज्ञानसमापत्तियो निब्बतेत्वा संयमेव पिंडाय चरति।

सो अपरभागे "अहं रञ्जनो अत्तानं दस्सेतुं पतिञ्जन अदासिं, दस्सेस्सामस्स अत्तान"न्ति चिन्तेत्वा तापसे वंदित्वा आकासेन बाराणसिं गन्त्वा भिक्खं चरन्तो राजद्वारं पापुनि। राजा तं दिस्वा संजानित्वा अंतोनिवेसनं पवेसेत्वा स चक्रं कत्वा "भन्ते, कुहिन वस्था"ति पुच्छि। "उत्तरहिमवन्तपदेसे कञ्चनपब्बतन्तरे पवत्तय सीदानदिया तीरे, महाराजा"ति। "किं पन, भन्ते, एककोव तथा वस्थ, उदाहु अञ्जेपि अथि"ति। "किं वदेसि, महाराज, तथा दशसहस्स इसयो वसन्ति, सब्बेव अभिज्ञानसमापत्तिलाभिनो"ति? राजा तेसं गुणं सुत्वा सब्बेसं भिक्खं दातुकामो अहोसि। अथ नं राजा अह - "भन्ते, अहं तेसंइसेनं भिक्खं दातुकामोहि, किं करोमोति?" "महाराज, ते इसयो जिव्हाविञ्जनीयरसे अगिद्धा, न सफ्राका इधानेतु"न्ति। "भन्ते, हार निस्साय ते भोजेस्सामि, उपायं मे अचिक्खथा"ति। "तेन हि, महाराज, सचे तेसं दानं दातुकामोसि, इतो निकमित्वा सीदानदीतीरे वसंतो तेसं दानं देहि"ति।

सो "साधु"ति सम्पतिच्छित्वा स ब्झपकानानि गहापेत्वा चतुर्ङ्गिनीय सेनाय सद्धिं निक्खमित्वा अत्तनो रजदजसीमं पापुनि। अथ नं तापसो अत्तनो अनुभावेन सद्धिं सेनाय सीदानदीतिरं नेत्वा नदीतीरे खंडावारं करापेत्वा आकासेन अत्तनो वसनत्थानं गन्त्वा पुनदिवसे पच्चचागमि। अथ नं राजा सच्चरचं भोजनेत्व " स्वे, भंते, दशहस्से इसयो आदय इधेव आगच्छथा"ति अह। सो "साधु"ति सम्पतिच्छित्वा गन्त्वा पुनदायसे भिक्खाचारवेलाय तेसंयकेनं अरोचेसि "मारिसा, बाराणसिराजा 'तुम्हाकं भिक्खं दशमी'ति अगन्त्वा सीदानदितिरे निसि साइनो स्वे वो निमंतेति, तस्सानुकम्पाय खंडावारं गन्त्वा भिक्खं गंहथा"ति। ते "साधु"ति सम्पतिच्छित्वा आकासेन गन्त्वा खन्धावारस्स अविदूरे ओतारिंसु। राजा ते दिसवा पच्चचुग्मनं कत्वा खंडावारं पवेसेत्वा पञ्जन्तासनेसु निसीदापेत्वा इसिगं पणितेनहारेण सन्तप्पेत्वा तेसं इरियपथे पस साइनो स्वातनयपि निमन्तेसि। एतेनुपायेन दससत्साहस्सनि दानं अदासि। ददन्तो च तस्मिनयेव पदेसे नगरं मापेत्वा सस्कम्मं करेसि। न खो पन, महाराज, तदा सो राजा अंजनो अहोसि, अथ खो अहं सेत्थोस्मि दानेन, अहमेव हि तदा दानेन सेत्थो हुत्वा तं महादानं दत्वा इमं पेटलोकं अति त्रिकमित्वा ब्रह्मलोके निब्बत्तितुं नासखिन। मया दी साइनाणं पन दानं भुञ्जित्वा सब्बेव ते तपसा कामावचरं अति तृक्तमित्वा ब्रह्मलोके निब्ता, इमिनापेटं वेदितब्बं "ब्रह्मचर्यवासोव महप्फलो"ति।

एवं दानेन अत्तनो सेत्थभावं पाकसेत्वा इतरेहि तेहि पदेहि ते संशयेनं गुणं पकासेति। तथा संयमेनाति सीलेन। दमेनाति इन्द्रियदमेन। अनुत्तरन्ति एतेहि गुणेहि कृष्णं उत्तमं वतं समादानं चरित्वा। पकिरचारीति गणं पकिरीत्वा पतिक्खिपित्वा पहाय एकचारिके, एकीभावं गतेति अथो। समग्रेति उपचारप्पनासमाधिहि समग्रचित्ते। एवरूपे अहं तपस्सिनो उपत्थहिन्ति दस्सेति। अहं उजुगतन्ति अहं, महाराज, तेसं दशसहासनं एकेनं अंतरे कायवङकादीनं अभावेन उजुगतं एकम्पि नरं हीनजच्चो हो वातु जातिसम्प नयनो वा, जातिं अविचारेत्व तेसं गुणेसु पस साइनमानसो हुत्वा सब्बमेव अतिलवेलं नमस्सिसं, निच्चमकालमेव नमस्सिसन्ति वदति। कौन सा कारण? कम्म बंध्दु हि मानवति, सत्या हि नामेते कम्म बंध्दु कम्मपतिस्रणा, तेनेव कारणेन सब्बे वन्नाति वेदितब्बा।

एवञ्च पन वत्वा "किञ्चदापि, महाराज, दन्तो ब्रह्मचर्यमेव महप्फलं, द्वेपि पनेते महापुरिसवित् त्रकाव, तस्मा द्वीसुपि अप्पमत्तोव हुत्वा दञ्च देहि, सीलनदच रक्खाहि"ति तं ओवदित्वा सकत्थानमेव गतो। तमत्थं पकसेन्तो सत्था अह -

440.

"इदं वत्वान् मेघवा, देवराजा सुजम्पति।

वेदेहमनुससित्वा, सग्गकायं अपफ्राकामी"ति॥

तत्थ अपतर्कमीति पचित्रमी, सुधम्मदेवसभायं निसि नारामेव अत्तनं दस्सेसीति अथो।

अथ नं देवगण अहंसु "महाराज, ननु न पञ्चयित्थ, कुहिन गतथा"ति? "मारिसा मिथिलायं निमिरञ्चो एका कङ्खा उप्पजजि, तस्स पञ्हं कथेत्वा तं राजानं निक्रमकखं कत्वा आगतोम्हि"ति वत्वा पुन तं कारणं पौराणिकाय कथेतुं अह -

4

"इमं भोन्तो निसामेथे, यवन्तेत्थ समागता।

धम्मिकानं मनुस्सानं, वन्नं उच्छवाचं बहुम्॥

4

"यथा अयं निमिराजा, पण्डितो कुसलथिको।

राजा सब्बविदेहं, अदा दानं अरिंदमो॥

4

"तस्स तं ददतो दानं, सङ्कप्पो उदपजदज्थ।

दानं वा ब्रह्मचर्यं वा, कतमं सु महप्फल"न्ति॥

तत्थ इमन्ति धम्मिकानं कल्याणधम्मनं मनुस्सानं मया वुचदचमानं सीलवसेन उचदचं दानवसेन अवचं बहुं इमं वन्नं निसामेथ सुनथाति अथो। यथा अयन्ति अयं निमिरजा यथा अतिविय पण्डितोति।

इति सो अपरिहापेत्वा रञ्जनो वन्नं कथेसि। तं सुत्वा देवसङ्घा राजानं दत्थुकामा हुत्वा "अम्हाकं निमिरजा आचार्यो, तस्सोवादे तत्व तं निस्साय अम्हेहि अयं दिब्बसंपत्ति लद्धा, मयं दट्ठुकामम्हा, तं पककोसापेहि, महाराजा"ति वदिंसु। सक्रोको "साधु"ति सम्पतिच्छित्वा मतलिं पफ्रकोसापेत्वा "सम् मतलि, वेजयन्तरथं योजेत्वा मिथिलां गन्त्वा निमिराजं दिब्बयाने आरोपेत्वा अनेहि"ति अह। सो "साधु"ति सम्पतिच्छित्वा रथं योगेत्व पसि। सक्राक्स पन देवेहि सद्धिं कथेन्टस्स मतलिं अनापेन्टस्स च रथं योगेनतस्स च मनुस्सगणनाय मासो अतित्रक्तकन्तो। इति निमिरनधनो पुन्नमायं उपोस्थिकस्स पाचीनसिहपञ्जरं विवरित्वा महतले निसिदित्वा अमचचगणपरिवुत्स्स सीलं पच्च्डचवेखन्तस्स्स पाचीनलोकधातुतो उग्गच्छन्तेन चाण्डामण्डलेन सद्धिनयेव सो रथो पञ्चनयति। मनुषा भुत्तसयमसा घरद्वारेसु निसीदित्वा सुखकथं कथेंता "अज्ज द्वे चंदा उग्गता"ति अहंसु। अथ नेसं सल्लल्पनतनदंजेव रथो पाकतो अहोसि। माजो "नायं, चंदो, रथो"ति वत्वा अणुकमेन सिन्धवसहस्सुते मटालिसङ्गाहके वेजयन्तरथे च पाकते जाते "कस्स नु खो इदं दिब्बयानं आगच्छति"ति चिन्तेत्वा "नकस्चि अंडनासस, अम्हाकं राजा धम्मिको, सक्राकेन वेजयन्तरथो पेसिटो भाविस्ति, अम्हाकं राञ्जनोव अनुच्छविको'ति तुट्ठप्पहत्थो गातः -

444.

"अब्भुतो वत लोकस्मिं, उप्पजजि लोमहंसनो।"

दिब्बो रथो पतुरहु, वेदेहस्स यससिनो"ति॥

तथा अब्भुतोति अभूतपुब्बो। अच्छरियोति ते विम्हयवसेनेवमहंसु।

तस् पन महास्स एवं कथेंन्तस्सेव मतलि वातवेगेन आगन्त्वा रथं निवत्तेत्वा सीहपञ्जरउम्मारे पच्चभागेन ओमेकेत्वा आरोहणसज्जं कत्वा आरोहणथय राजानं निमन्तेसि। तमथं पकसेन्तो सत्था अह -

4

"देवपुतत्तो महीधिचो, मातलि देवसारथि।"

निमन्तयित्थ राजानं, वेदेहं मिथिलग्गहं॥

444.

"एहिमं रथमारुयः, राजसेट्ठ दिसम्पति।"

देवा दस्सनकामा ते, तावतिंसा सिन्दका।

सरमाणा हि ते देवा, सुधम्मयं समाचरे"ति॥

तत्थ मिथिलगघन्ति मिथिलायां पतित्थितगेहं, चतुहि वा सङ्गहवत्थुहि मिथिलायां सङ्गाहकं। समच्छरेति तवेव गुणकथं कथेंता निसिन्दनाति।

तं सुत्वा राजा" आदित्थपुब्बं देवलोकाञ्च पस्सीसामि, मतालिस्स च मे सङ्गहो कटो भविष्यसति, गच्छिसामि"ति चिन्तेत्वा अन्तेपुरन्दच राजजञ्च अमान्तेत्वा "अहं नचिस्नाव आगमिस्सामि, मार अप्पमत्ता दानादिनि पुञ्जानानि करोथा"ति त्व्वा रथं अभिरुहि। तमथं पकसेन्तो सत्था अह -

44.

"ततो राजा तरमानो, वेदेहो मिथिलग्गहो।

आसना वुट्ठहित्वान, पमुखो रथमारुहि॥

4.

"अभिरूळहं रथं दिब्बं, मातलि एतद्ब्रवि।"

केन टैन नेमि मग्गेन, राजसेट्ठ दिसम्पति।

येन वा पापकमन्ता, पुञ्चकम्मा च ये नरा"ति॥

तथा पमुखोति उत्तमो, अभिमुखो वा, महोजोसस पिट्ठिं दत्वा अरूळधोति अथो। येन वती येन मग्गेन गन्त्वा यथा पापकमन्ता वसन्ति, तं थानं सफ्राका दट्ठुं, येन वा गन्त्वा ये पुञ्चकम्मा नरा वसन्ति, तेसं ठानं सफ्राका दत्थुं, एतेसु दविसु केन मग्गेन तं नेमि। इदं सो सक्राकेन अनानत्तोपि अत्तनो दुतविसेसदस्सनथं अह।

अथ नं राजा "माया दवे थानानि आदित्थपुब्बानि, द्वेपि पस्सिस्सामि"ति चिंतात्वा अह -

4

"उभयेनेव मन नेहि, मातलि देवसारथि।

येन वा पापकमन्ता, पुञ्चकम्मा च ये नरा"ति॥

ततो मातलि "द्वेपि एकपहारेनेव न सफ्राका दस्सेतुं, पुच्छिस्सामि न'न्ति पुच्छन्तो पुन गथाः -

4

"केन तं पथमं नेमि, राजसेट्ठ दिसम्पति।"

येन वा पापकमन्ता, पुञ्चकम्मा च ये नरा"ति॥

निराकण्डं

ततो राजा "अहं अवसं देवलोकं गमिस्सामि, निरयं तव पस्सिस्सामि"ति चिन्तेत्वा अनंतरं गातः -

4.

"निरये तव पस्सामि, आवासे पापकम्मिनं।

ठानानि लुद्दकम्मानं, दुसिलानञ्च या गति"ति॥

तत्थ या गतिति या एतेसं निब्बति, तंदच पसमामिति।

अथस्स वेतरनिं नदीं तव दस्सेसि। तमथं पकसेन्तो सत्था अह -

4

"दस्सेसि मातलि रञ्जो, दुग्गं वेतरनिं नादिं।

कुथितं खरसंयुत्तं, तत्तं अग्गिसीकूपम्"न्ति॥

तत्थ वेतरनिंति भिक्खवे, मातलि रञ्जनो कथं सुत्व निरयाभिमुखं रथं पेसेत्वा कम्मपच्छदचये उतुना समुत्थितं वेतरनिं नदीं तव दस्सेसि। तत् निरयपाला जलितानि असिस्टत्तितोमरभिन्दिवालमुग्गरादिनि अवुधानि गहेत्वा नेर्यिकसत्ते पहिरन्ति विज्झन्ति विहेथेन्ति। ते तं दुक्खं अशंता वेतरण्यं पतन्ति। सा उपरि भिन्दिवलप्पमनाहि सकान्तकाहि वेत्तलताहि सञ्छ संज्ञा। ते तत्थ बहुनि वस्ससहस्सनि पच्चिंसु। तेसु पज्जलन्तेसु खुरधारातिखिनेसु कांतकेसु खंडखंडिका होन्ति। तेसं हेत्था तलक्खान्धप्पमनानि पज्जलितअयसूलानि उत्त्थन्ति। नेरायिकसत्ता बहुं अधानं वीतिनामेत्वा वेत्तलताहि गळित्वा सुलेसु पतित्वा विद्धसेरिरा सुलेसु अवुनितमच्चा विय चिरं पच्चचन्ति। तानि सुलानिपि पज्जलन्ति, नेर्यिकसत्तपि पज्जलन्ति। सुलानं हेत्था उदकपिट्ठे जलितानि कुर्धारासदिसानि तिखिनानि अयोपोखर्पत्तानि होन्ति। ते सुलेहि गळित्वा अयपोखरपत्तेसु पतित्वा चिरं दुक्खवेदनं अनुभवन्ति। ततो खारोदके पतन्ति, उदकं पज्जल्ति, नेरायिकसत्तापि पजजलन्ति, धूमोपि उत्त्थहति। उदकस्स पन हेत्था नदीतलं कुर्धाराहि सञ्छ संज्ञां। ते "हेत्था नु खो किदिस"न्ति उदके निमुज्जित्वा कुर्धारासु खंडखंडिका होन्ति। ते तं महादुःखं अधिवासेतुं अस त्रैकोन्ता महन्तं भेरवं विरवंता विचरन्ति। कदाचि अनुसोतं वुयहन्ति, कदाचि पतिसोतं। अथ ने तीरे थिता निरयपला उसुसत्तितोमरादिनि उखिपित्वा मच्छे विय विज्झन्ति। ते दुक्खेदान्नप्पत्ता महावीरवं रवन्ति। अथ ने पज्जलितहि अयबळिसेहि उद्धरित्वा परिकन्नित्वा पज्जलितयपथवियं निपजज्जपेत्वा तेसं मुखे तत्तं अयोगुळहं पक्खिपन्ति।

इति निमिराजा वेतरनीयं महादुक्खपिळिते नेर्यिकसत्ते दिस्वा भीतत्सितो सङ्कम्पितहदयो हुत्वा "किं नामेते सत्य पापकम्मं अकांसु"ति मतलिं पुच्छि। सोपिस बयाकासी। तमत्थं पकासेनतो आह -

4

"निमी हवे मतलिमज्झाभासथ, दिस्वा जनं पत्मानं विदुग्गे।

भयंहि मं विन्दति सुत दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथि।

इमे नु मचदा किमकांसु पापं, येमे जना वेतरनिं पतन्ति॥

444.

"तस्स पुत्थो व्याकासि, मातलि देवसारथि।

विपाकं पापकम्मानं, जानं अक्खासिजानतो॥

45.

"ये डुब्बले बलवंता जीवलोके, हिं शांति रोसेन्ति सुपपदम्मा।"

ते लुद्दकम्मा पसवेत्व पापं, तेमे जना वेतरनिं पतन्ति"ति॥

तत्थ विन्दतीति अहं अत्तनो अनिस्सारो हुत्वा भयसंतको विय जातो। दिस्वति पत्मानं दिस्वा। जानन्ति भिक्खवे, सो मतलि सयं जानन्तो तस्स अजानतो अक्खासी। दुब्बलेति शरीरबलभोगबलानाबलविरहिते। बलवंतति तेहि बलेहि सम नारायणागता। हिंसान्तीति पाणिप्परादिहि किल्मेन्ति। रोसेन्तिति नानप्पकारेहि लैक्ट एकोसवथुहि एकोसन्ति घटेन्ति। पस्वेत्वति जनेत्वा, कत्वति अथो।

एवं मतलि तस्स पंघं ब्याकरित्वा रञ्जनया वेतरनिनिरये दित्थे तं पदेसं अंतधापेत्वा पुर्तो रथं पेसेत्वा सुनखाधिहि खादनत्थानं दस्सेत्वा तं दिस्वा भीतेन रञ्जञ्च पञ्चं पुत्थो ब्याकासि। तमथं पकसेन्तो सत्था अह -

40

"सामा च सोना सबला च गिज्झा, कलोसङ्घा अदन्ति भेरवा।

भयंहि मं विन्दति सुत दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथि।

इमे नु मच्छचा किन्मकंसु पापं, येमे जने कलोलसाङ्घा अदन्ति॥

4

"तस्स पुत्थो व्याकासि, मातलि देवसारथि।

विपाकं पापकम्मानं, जानं अक्खासिजानतो॥

4वीं.

"ये केचिमेस्मातिनो कादारिया, परिभास्का समन्ब्राह्मणां।

हिं शांति रोसेन्ति सुपापदम्मा, ते लुद्दकम्मा पसवेत्व पापं।

तेमे जने कलोलसाङ्घा अदन्ति"ति॥

इतो परेसु पंघेसु चेव ब्याकानेसु च एसेव नयो। तत् समाति रत्तवन्ना। सोनाति सुनखा। सबला चाति कवरवन्ना च, सेत्काळपीतलोहितवन्ना चाति एवं पञ्चवन्नसुनखे दस्सेति। ते किर महाहत्थिपमना जलितअयपथवियं नेर्यिकसत्ते मिगे विय अनुबन्धित्वा पिण्डिकमंसेसु दंसित्वा तेसं तिगावुत्प्पमानं सरीरं जलितअयपथवियं सतात्वा महरावं रवन्तानं द्वीहि पुरिमपादेहि उरं अक्रामित्वा अट्ठिमेव सेसेत्वा मंसं लुञ्चित्वा खान्ति। गिज्झति महाभंडसकटप्पमना लोहटुंडा गिज्झा। एते तेसं कन्यादिसेहि तुंदेहि अट्ठिनी भिन्दित्वा अत्थिमिञ्जं खादन्ति। कालकोलसङ्घाटी लोहटुंडकाकगना। ते अतिविय भयानक दिट्ठे दित्थे खादन्ति। येमे जनेति ये इमे नेर्यिकसत्ते काकोलसाङ्घा खादन्ति, इमे नु मच्छदा किं नाम पापं अकंसुति पुच्छि। मच्छरिनोति अञ्जेसं अदैका। कादारियाति परे दंतेपि पतिसेधका तद्धमच्छरिनो। समब्राह्मणन्ति समितबाहितपापनं।

4 50.

"सजोतिभूता पथविं कामन्ति, तत्तेहि खंडेहि च पोथयन्ति।

भयंहि मं विन्दति सुत दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथि।

इमे नु मचदाचा किमकंसु पापं, येमे जना खंडहता सयन्ति॥

4.

"तस्स पुत्थो व्याकासि, मातलि देवसारथि।

विपाकं पापकम्मानं, जानं अक्खासिजानतो॥

4

"ये जीवलोकस्मि सुपापधम्मिनो, नृञ्च नारिञ्च अपापधम्मं।

हिं शांति रोसेन्ति सुपापदम्मा, ते लुद्दकम्मा पसवेत्व पापं।

तेमे जना खंडहता स्यन्ति"ति॥

तथा सजोतिभूताति पज्जलितशरीरा। पथविन्ति पज्जलितं नवयोजनाभलं अयपथविं। कामन्तिति अकामन्ति। खंडेहि च पोथयन्ति निरायपाला अनुबंधित्वा तलप्पमनेहि जलितअयखखंडेहि जङ्घादिसु पहरित्वा सहतत्वा तेहेव खंडेहि पोथयन्ति, चुन्नविचुन्नं करोन्ति। सुपापधम्मिनोति अत्तना सुत्थु पापधम्मा हुत्वा। अपापधम्मन्ति सीलचारादिसंप नासिकं, निरापराधं वा।

4

"अंगारकासुं अपरे फुन्न्ति, नरा रुदंता परिदन्नगत्ता।"

भयंहि मं विन्दति सुत दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथि।

इमे नु मचदा किं मकंसु पापं, येमे जना अङ्गारकासुं फुन्ति॥

466.

"तस्स पुत्थो व्याकासि, मातलि देवसारथि।

विपाकं पापकम्मानं, जानं अक्खासिजानतो॥

4

"ये केचि पुगाय धनसए, सखिं कारित्वा इणं जपयन्ति।

ते जपयित्वा जनतं जनिंद, ते लुद्दकम्मा पस्वेत्व पापं।

तेमे जना अङ्गारकासुं फुअन्ति"ति॥

तथा अंगारकासुंति सम्म मातलि, के नामेते अपरे वजं अपविसंतियो गावो विय सम्पूरेत्वा निरयपलेहि जलितअयगुळेहि पोथियमाना अंगारकासुं पतन्ति। तत्र च नेसं याव कतिप्पमना निमुग्गानं महतिहि अयपच्छिहि आद्य उपरीअंगरे ओकिरन्ति, अथ ने अंगारे सम्पतिचितुं असक्राकोन्टा रोदंता दन्नगता फुन्ति विधुन्ति, कम्मबलेन वा अट्टनो सीसे अङ्गारे फुन्ति ओकिरान्तिति अथो। पुगाय धनस्सति ओकासे सति दानं वा दशसम, पूजं वा पवत्तेस्साम, विहारं वा करिष्माति संकन्नित्वा योगितस्स पुगसन्तकस धनस्स। जपयन्तिति तं धनं यथारुचि खादित्वा गंजेट्ठकानं लञ्जजं दत्वा "असुकट्ठाने एत्तकं वयकरणं गतं, असुकट्ठाने अम्हेहि एत्तकं दी दर्शन"न्ति कोटसुखिं कारित्वा तं इणं जपयन्ति विनाशेन्ति।

4.

"सजोतिभूता जलिता पदित्ता, पडिसस्ति महति लोहकुंभी।"

भयंहि मं विन्दति सुत दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथि।

इमे नु मचदाचा किमकांसु पापं, येमे जना अवंसिरा लोहकुंभिं पतन्ति॥

4.

"तस्स पुत्थो व्याकासि, मातलि देवसारथि।

विपाकं पापकम्मानं, जानं अक्खासिजानतो॥

4

"ये सीलवन्तं समानं ब्राह्मणं वा, हिंसान्ति रोसेन्ति सूपापधम्मा।

ते लुद्दकम्मा पसवेत्व पापं, तेमे जना अवंसिरा लोहकुंभिं पतन्ति"ति॥

तथा पदित्तातिआदित्ता। महतीति पब्बतप्पमना कप्पेन संतितलोहरसेन सम्पुन्ना। अवंसिरति भयानकहि निरयपलेहि उद्धनपादे अधोसिरे कत्वा किपियमना तं लोहकुंभिं पतन्ति। सीलवन्तन्ति सीलआचारगुणसंप नासिकं।

चार सौ

"लुञ्चन्ति गीवं अथ वेथयित्वा, अन्होधोदकस्मिं पकिलेदयित्वा।

भयंहि मं विन्दति सुत दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथि।

इमे नु मचदाचा किमकंसु पापं, येमे जना लुत्तसिरा सयन्ति॥

46.

"तस्स पुत्थो व्याकासि, मातलि देवसारथि।

विपाकं पापकम्मानं, जानं अक्खासिजानतो॥

400

"ये जीवलोकस्मि सुपापधम्मिनो, पक्खी गहेत्वान विहेथयन्ति ते।

विहेथयित्वा सकुणं जनिंद, ते लुद्दकम्मा पस्वेत्व पापं।

तेमे जना लुत्तसिरा सय"न्ति॥

तत्थ लुञ्चन्तिति उप्पातेन्ति। अथ वेथयित्वति जलितलोहयोत्तेहि अधोमुखं वेथयित्वा। उंधोदकस्मिन्ति कप्पेन सन्थितलोहौदकस्मिं। पाकिलेदयित्वति तेमेत्वा खिपित्वा। इदं वुत्तं होति - सम्म मतलि, येसं इमे निरयपाला जलितलोहयोतेहि गीवं वेथेत्वा तिगावुतप्पमनं शरीरं ओनामेत्वा तं गीवं संपरिवत्कं लुञ्चित्वा जलितअयदन्देही आद्य एकस्मिं जलितलोहरसे पक्खिपित्वा तुत्थहत्था होन्ति, तय च गिवे लुञ्चित्वा पुन सीसेन सद्धिं गीवा उप्पजदजत्येव। किं नामेते कम्मं करिंसु? एते हि मे दिस्वाभयं उप्पजदजतिति। पक्खी गहेत्वान् विहेथयन्ति महाराज, ये जीवलोकस्मिं सकुने गहेत्वा पक्खे लुञ्चित्वा गीवं वेथेत्वा सजीवखयं पपेत्वा भोजन्ति वा वि त्रैकिन्ति वा, ते इमे लुत्तसिरा सयन्तिति।

450.

"पहुतोतोया अनिगाधकोला, नदी अयं सन्दति सुप्पतिथा।"

घम्माभित्ता मनुजा पिवन्ति, पीतञ्च तेसं भुस होति पाणि॥

4.

"भयंहि मं विन्दति सुत दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथि।

इमे नु मचदाचा किमकंसु पापं, पीतंडच तेसं भुस होति पानी॥

4.

"तस्स पुत्थो व्याकासि, मातलि देवसारथि।

विपाकं पापकम्मानं, जानं अक्खासिजानतो॥

4.

"ये शुद्धधनं पलासेन मिस्सं, असुद्धकम्मा कयिनो ददन्ति।

घम्माभित्तन पिपासितानं, पितञ्च तेसं भुस होति पानी"ति॥

तत्थ अनिगाधकोलति अगमभिर्तीरा। सुप्पतिथाति शोभनेहि तिथेहि उपेता। भुसासति विहिभुसं संपजजति। पानीति पानीयं। तस्मिं किर पदेसे पहुत्सलिला रमणीय नदी सन्दति, नेरायिक्ससत्ता अग्गिसन्तापेन तत्ता पिपासं संधारेतुं अस त्राकोन्टा बाहा पग्गयः जललोहपथविं मद्दन्ता तं नादिं ओतरन्ति, तङ्खन्नदनेव तीरा पज्जलन्ति, पानीयं भुसपलासभावं अपज्जित्वा पज्जल्ति। ते पिपासं संधारेतुं असत्रकोन्ता तं जलितं भुस्पलासं खादन्ति। तं तेसं सकल शरीरेरं झपेत्वा अधोभागेन निक्खमति। ते तं दुक्खं अधिवासेतुं असत्रकोन्ता बाहा पग्गयः कन्दन्ति। सुद्धधाञ्जन्ति वीहिआदिसत्तविधं परिशुद्धधनं। पलासेन मिस्संति पलासेन वा भुसेन वा वालुकामट्टिकादिहि वा मिस्सकं कत्वा। असुद्धकम्माति किलिट्ठकायवचीमनोकम्मा। कायिनोति "शुद्धधन्नं दशमी"ति कायिकस्स हत्थतो मूलं गहेत्वा तथारूपं अशुद्धधन्न ददन्ति।

450.

"उसुहि सत्तीहि च तोमरेहि, दुभयानि पस्सानि तुदन्ति कन्दतं।

भयंहि मं विन्दति सुत दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथि।

इमे नु मचदाचा किमकंसु पापं, येमे जना सत्तिहता सयन्ति॥

46.

"तस्स पुत्थो व्याकासि, मातलि देवसारथि।

विपाकं पापकम्मानं, जानं अक्खासिजानतो॥

477.

"ये जीवलोकस्मिं असाधुकम्मिनो, आदि सत्यनामदाय करोन्ति जीविकं।

धन्नं धनं रजतं जातरूपं, अजेळकञ्चापि पसुं महिंसं।

ते लुद्दकम्मा पसवेत्व पापं, तेमे जना सत्तिहता सयन्ति"ति॥

तत् दुभयनिति उभयानि। तुदन्ति विज्जन्ति। कन्दतन्ति कन्दन्तानं। फ़रुसा निरयपाला अरञ्जे लुड्डा मिगं विय सम्पुरेत्वा उसुअधिहि नानावुधेहि द्वे पस्सानि तुदन्ति, शरीरं चिद्दवछिद्दं पुराणपन्नं विय खायति। आदि संज्ञामादायतिपरसंतकं सविञ्जानकाविञ्जानकं सन्धिच्छेदादिहि चेव वञ्चनाय च गहेत्वा जीविकं कप्पेन्ति।

4.

"गिवय बधा किस्स इमे पुनेके, अञ्जने विकंता बिलकता सयन्ति।

भयंहि मं विन्दति सुत दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथि।

इमे नु मचदाचा किमकंसु पापं, येमे जना बिल्कटा सयन्ति॥

4.

"तस्स पुत्थो व्याकासि, मातलि देवसारथि।

विपाकं पापकम्मानं, जानं अक्खासिजानतो॥

4.

"ओरभिका सुकरिका च मच्छिका, पसुं महिंसदच अजेळकञ्च।

हन्त्वान सुनेसु पसारयिन्सु, ते लुद्दकम्मा पस्वेत्व पापं।

तेमे जना बिलकता सायन्ति"ति॥

तत् गीवाय बद्दति महान्तेहि जलितलोहयोतेहि गीवाय बंधित्वा आकन्नित्वा अयपथवियं सीतत्व नानावुधेहि कोट्टियमाने दिस्वा पुच्छि। अञ्जे विकंताति अञ्जे पण खंडखंडिकं छिन्नना। बिल्कति जलितेसु अयफलकेसु ओकेटत्वा मनसं विय पोथनिया कोट्टत्वा पुंजक्ता हुत्वा सयन्ति। मच्छिकाति मच्छघातका। पसुन्ति गाविं। सुनेसु पसारयिनसुति मनसं विकिनित्वा जीविककप्पनथं सुनापनेसु योगेसूं।

4

"रहदो अयं मुत्तकरिस्पुरो, दुग्गन्धरूपो असुचि पूति वति।

स्वयंपरेता मनुजा अदन्ति, भयंहि मं विन्दति सुत दिस्वा।

पुच्छमि तं मातलि देवसारथि, इमे नु मच्छ किमकांसु पापं।

येमे जना मुत्तकरिसभक्खा॥

4.

"तस्स पुत्थो व्याकासि, मातलि देवसारथि।

विपाकं पापकम्मानं, जानं अक्खासि जानतो॥

4.

"ये केचिमे कारणिका विरोस्का, परेसं हिंसाय सदा निवित्था।

ते लुद्दकम्मा पसवेत्व पापं, मित्तद्दुनो मळहम्दन्ति बाला"ति।

तत्थ खयअपरेता मनुजा अदन्तिति एते नेर्यिका सत्ता चटकेन फुत्था खुदं सहितुं असट्रैकोन्टा पक्कुथितं धूमयन्तं पज्जलन्तं कप्पेन संथितं पुराणमीळहं पिण्डं पिण्डं कत्वा अदन्ति खादन्ति। कारणकारक। विरोसकाति मित्तसुहज्जनमपि विहेथका। मित्तद्दुनोति ये तेस्ञ्जनेव गेहे खादित्वा भुञ्जित्वा पञ्चत्तसने निसीदित्वा सयित्वा पुन मासखापणं नाम अहारापेन्ति, लञ्जं गहन्ति, ते मित्तदुस्का बाला एवरूपं मिळहं खादन्ति, महारति।

4 सप्ताह.

"रहदो अयं लोहितपुब्बपूरो, दुग्गन्धरूपो असुचि पूति वति।

घम्माभित्ता मनुजा पिवन्ति, भयंहि मं विन्दति सुत दिस्वा।

पुच्छमि तं मातलि देवसारथि, इमे नु मच्छ किमकांसु पापं।

येमे जना लोहितपुब्बक्खा॥

4.

"तस्स पुत्थो व्याकासि, मातलि देवसारथि।

विपाकं पापकम्मानं, जानं अक्खासिजानतो॥

466

"ये मातरं वा पितरं वा जीवलोके, पारजिका अरहन्ते हनन्ति।

ते लुद्दकम्मा पसवेत्व पापं, तेमे जना लोहितपुब्बभक्खा"ति॥

तत्थ घम्माभितत्तति सन्तापेन पीळिता। पारजिकाति पराजय जराजिणे मातापितरो घटेत्वा गिहिभावयेव पराजिकं पतन। अरहंतेति पूजाविसस्स अनुच्छविके। हनन्तीति दुकराकारके मातापितरो मारेन्ति। अपिच "अरहन्ते"ति पदेन बुद्धसावकेपि सङ्गन्हाति।

अप्परसमिम्पि उस्सदनिरये निरयपला नेरायिकानं तलप्पमनेन जलितअयबळिसेन जिव्हं विज्जित्वा आक्कनित्वा ते सत्ते जलितययपथवियं सत्त्वा उषभचम्मं विय पत्थरित्वा सङकुसतेन हनन्ति। ते थले हितमच्चा वि फंदन्ति, तंदच दुक्खं सहितुं असक्रोकोंता रोदंता परिदेवन्ता मुखेन खेलं मुञ्चन्ति। तस्मिन राजा मतलिना दाससिते आह -

4.

"जिव्ह च पस्स बळिसेन विद्धं, विहतं यथा सङकुसतेन चम्मं।

फंदन्ति मचाव थलम्हि खित्ता, मुञ्चन्ति खेलं रुदमाना किमेते॥

4.

"भयंहि मं विन्दति सुत दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथि।

इमे नु मच्छचा किमकांसु पापं, येमे जना वङ्कघस्ता सयन्ति"ति॥

4 सप्ताह

"तस्स पुत्थो व्याकासि, मातलि देवसारथि।

विपाकं पापकम्मानं, जानं अक्खासिजानतो॥

4

"ये केचि सन्धानगता मनुषा, अघेन अघं कायं हापयन्ति।

कूटेन कूटं धनलोभेतु, च प्रयोगं यथा वारिचरं वधाय॥

4

"न हि कूटकारिस्स भवन्ति ताना, सकेहि कम्मेहि पुरखत्स्स।

ते लुद्दकम्मा पसवेत्व पापं, तेमे जना वङ्कघस्ता सयन्ति"ति॥

तत् किमेतेति किंकराना एते। वङ्कघस्ताति गिलित्बळिसा। सन्धानगताति सन्धानं मरियादं गता, अघपनकट्ठथ थैनेति अथो। अग्घेन अघ्ति तं तं अघघं लन्दजं गहेत्वा हत्थीअस्सादिनं वा जातरूपराजतादिनं वा तेसं तेसं सविञ्चनकाविञ्चन्दनाकानं अघघं हापेन्ति। कयन्ति तं हापेन्ता कायिकानं कयं हापेन्ति, सते दातब्बे पन्नसं दापेन्ति, इतरं तेहि सद्धिं विभजित्वा गहन्ति। कूटेन कूटन्ति तुलाकूटादिसु तं तं कूटनं। धनलोभेतुति धनलोबेन एतं कुटकम्मं करोन्ति। च संज्ञां यथा वारिचरं वधायति तं पन कम्मं करोन्तपि मधुरवाचय तथा कतभावं पतिच्छ संज्ञां कत्वा यथा वारिचरं मच्छं वधाय उपगच्छनता बसीसं अमीसेन पतिच्छ संज्ञां कत्वा तं वधेन्ति, एवं पतिच्छ संज्ञां कत्वा तं कम्मं करोन्ति। न हि कूटकारिस्सति पतिच्छ सान्निध्यं मम कमं, न तं कोचि जानाति मञ्जमानस्स हि कूटकारिस्स तना नाम न होन्ति। सो तेहि कम्मेहि पुरखतो पतित्थं न लभाति।

4

"नारी इमा संपरिभि संज्ञागत्ता, पग्गयः कन्दन्ति भुजे दुजच्चा।"

सम्मक्खिता लोहितपुब्बलित्ता, गावो यथा प्रभावणे विकास।

ता भूमिभागस्मिं सदा निखाता, खंधातिवतन्ति सजोतिभूता॥

4.

"भयंहि मं विन्दति सुत दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथि।

इमा नु नारीओमकांसु पापं, या भूमिभागस्मिं सदा निखाता।

खंडातीवत्तन्ति सजोतिभूता॥

4.

"तस्स पुत्थो व्याकासि, मातलि देवसारथि।

विपाकं पापकम्मानं, जानं अक्खासिजानतो॥

44 वीडियो.

"कोलिथियायो इध जीवलोके, असुद्धकम्मा असतं आचारुं।

ता दित्तरूपा पति विप्पय, अञ्चं आचार्यं रतिखिड्डहेतु।

ता जीवलोकस्मिं रामपयित्वा, खंडातिवतन्ति सजोतिभूता"ति॥

तत् नारीति इथियो। सम्परिभि प्रयोगगत्ताति सुत्थु समन्ततो भि प्रयोग शरीरा। दुजच्चाति दुजदस्तका विरूपा जेगुच्चा। अस्त्रनेति गावघटत्थाने। विकंताति छी संज्ञासीसा गावो विय पुब्बलोहितलित्ता हुत्वा। सदा निखताति निचदचं जलितयपथवियं कटिमत्तं पवेसेत्वा निखनित्वा थपिता विय थिता। खण्डातिवतत्तन्तीति सम्म मतलि, ता नारियो एते पब्बतखन्धा अति रकमन्ति। तासं किर एवं कटिप्प्मनं पविसीत्वा थितकाले पुरथिमय दिसाय जलितअयपब्बतो समुत्थित्वा असनि विय विरवंतो आगन्त्वा शरीरं संहककरणि विय पिसंतो गच्छति। तस्मिन अतिवत्तित्वा पछिमपस्से थिते पुन: च तासं शरीरं पातु भवति। ता दुक्खं अधिवासेतुं असत्रकोन्तियो बाहा पग्गयः कन्दन्ति। सेसादिसासु वुड्डितेसु जलितपब्बतेसुपि एसेव नयो। द्वे पब्बता समुत्थाय उच्छुघटिकं विय पेन्ति, लोहितं पक्कुथितं सन्दति। कदाचि तैयो पब्बता समुत्थाय पेन्ति। कदाचि चत्तारो पब्बता समुत्थाय तासं शरीरं पेन्ति। तेनाः "खण्डातिवतन्ति"ति।

कोलिथियायोति कुले पतिट्ठिता कुलधीत्रो। असतं आचारुन्ति असञ्जन्तकम्मं करिन्सु। दित्तरूपाति सत्रूपा धुत्तजातिका हुत्वा। पति विप्पयति अत्तनो पतिं पजहित्वा। अचरुन्ति अगमंसु। रतिखिड्डहेतुति कामरतिहेतु चेव खिड्डहेतु च। रामपयित्वति परपुरिसेहि सद्धिं अत्तनो चित्तं रामपयित्वा इध उपपन्न। अथ तासं शरीरं इमे खंडातिवतन्ति सजोतिभूति।

4

"पदे गहेत्वा किस्स इमे पुनेके, अवंसिरा नरके पतयन्ति।

भयंहि मं विन्दति सुत दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथि।

इमे नु मच्छचा किमकंसु पापं, येमे जना अवंसिरा नरके पतयन्ति॥

4.

"तस्स पुत्थो व्याकासि, मातलि देवसारथि।

विपाकं पापकम्मानं, जानं अक्खासिजानतो॥

4.

"ये जीवलोकस्मिं असाधुकम्मिनो, परस्स दाराणि अतिचक्रमन्ति।

ते तदिसा उत्तमभंडथेना, तेमे जना अवंसिरा नरके पतयन्ति॥

4.

"ते वस्सपूगानि बहुनि तथा, निर्येसु दुक्खं वेदनं वेदयन्ति।

न हि पापकारिस्स भवन्ति ताना, सकेहि कम्मेहि पुरखतस्स।

ते लुद्दकम्मा पसवेत्व पापं, तेमे जना अवंसिरा नरके पतयन्ति"ति॥

तत् नरकेति जलितङ्गारपुन्ने महावते। ते किर वजं अपविसंतियो गावो विय निरयपालेहि नानावुधानि गहेत्वा विज्जियमाना पोथियमाना यदा तं हेलं उपगच्छन्ति, अथ ते निरयपाला उद्धनपादे कत्वा तथा पतयन्ति खिपन्ति। एवं ते पातियमाने दिस्वा पुच्छन्तो एवमः। उत्तमाभण्डेथेनति मनुस्सेहि पियायित्स्स् वरभण्डस्स थेनका।

एवेंदच पन वत्वा मतलिसङगाहको तं निरयं अंतधापेत्वा रथं पुतो पेसेत्वा मिच्चादिट्ठिकानं पच्चनत्थानं निरयं दस्सेसि। तेन पुत्थो चस्स वियाकासि।

.

"उच्चाचावचामे विविध उपात्रकमा, निरयेसु दिसंति सुघोररूपा।"

भयंहि मं विन्दति सुत दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथि।

इमे नु मचदा किमकांसु पापं, येमे जना अदमत्ता दुक्खा तिब्बा।

कटुका वेदना वेदयन्ति॥

50.

"तस्स पुत्थो व्याकासि, मातलि देवसारथि।

विपाकं पापकम्मानं, जानं अक्खासिजानतो॥

52.

"ये जीवलोकस्मिं सुपापदिट्ठिनो, विस्सास्कम्मानि करोन्ति मोहा।

पञ्च दिट्ठिसु समादपेन्ति, ते पापदिट्ठिं पस्वेत्व पापं।

तेमे जना अधिमत्ता दुक्खा तिब्बा, खर कटुका वेदना वेदयन्ति"ति॥

तत् उच्चचावचामेति उच्छचा अवचा इमे, कुद्दका च महंत चाति अथो। उपखंडकमति कारणप्पयोगा। सुपापदिट्ठिनोति "नत्थि दि प्रयोग"न्तिआदिकाय दसवत्थुकाय मिचादिट्ठिया सुत्थु पापदिट्ठिनो। विस्सासकम्मानिति तय दिट्ठिया विस्सासेन त संज्ञासिता हुत्वा नानाविधानि पापकम्मानि करोन्ति। तेमेति ते इमे जना एवरूपं दुक्खं अनुभवन्ति।

इति राञ्चो मिच्छदिट्ठिकानं पच्च्चन्निरयं अचिक्खि। देवलोकेपि देवगण रञ्चो आगमनमग्गं ओलोक्यमाना सुधम्मयं देवसभयं निसिदिनसुयेव। सतारकोपि "किं नु खो, मातलि, चिरायति"ति उपधारेन्तो तं कारणं ञत्वा "मातलि, अत्तनो दूतविसेसं दस्सेतुं 'महाराज, असुककम्मं कत्वा असुकनिरये नाम पच्चन्ति'ति निराये दस्सेन्तो विचारति, निमिरनदनो पन अप्पमेव आयु खियेथ, निर्यादस्सोणं नास्स परियन्तं गच्छेया"ति एकं महजवं देवपुत्तं पेसेसि "त्वं 'सीघं राजानं गहेत्वा आगच्छतू'ति मलिस्स वदेही"ति। सो "साधु"ति सम्पतिच्छित्वा जवेन गन्त्वा अरोचेसि। मतलि, तस्स वचनं सुत्वा "न सक्रोका चिरायितु"न्ति रञ्जनो एकपहारेणेव चतुसु दिसासु बहु निरये दस्सेत्वा गातः -

500.

"विदितानि ते महाराज, आवासं पापकम्मिनं।

ठानानि लुद्दकम्मानं, दुसिलानञ्च या गति।

उयाहि दानि कांतिसि, देवराजस्स शांतिके"ति॥

तस्सत्थो - महाराज, इमं पापकम्मिनं सत्यानं आवासं दिस्वा लुद्दकम्मनंदच थानानि तया विदितानि। दुस्सिलानञ्च या गति निब्बति, सापि ते विदिता। इदानि देवराजस्स शांतिके दिब्बसंपत्तिं दशसनथं उयाहि गच्छहि, महाराजाति।

निरयकन्दं निश्चितं।

सग्गकण्डं

एवञ्च पन वत्वा मातलि देवलोकाभिमुखं रथं पेसेसि। राजलोक देवकं गच्छन्तो द्वादसयोजनिकं मणिमायं पञ्चत्तूपिकं सब्बाळङ्कारपतिमण्डितं उयानपोखरणिसम्प दर्शनं कप्परुखपरिवुतं बिरण्य देवधीताय आकाशत्थकविमानं दिस्वा, तंदच देवधीतरं अन्तोकूटागरे स्यनपिट्ठे निसि दर्शनं अच्छरासहस्सपरिवुतं मनसिहपञ्जरं विवरित्वा ओलोकेन्तिं दिस्वा मतलिं पुच्छन्तो गातः। इट्रोपिस बयाकासी।

5

"पञ्चत्तूपं दिस्स्तिदं विमानं, मंगलापिळंधा सयांस्स माज्झे।"

तत्थच्छति नारी महानुभावा, उच्छदावचं इद्धि विकुब्बमाना॥

पांच-पांच.

"वित्ती हि मं विन्दति सुत दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथि।"

अय नुं नारी किमकासि साधुं, या मोदति सग्गपत्ता विमानते॥

5

"तस्स पुत्थो व्याकासि, मातलि देवसारथि।

विपाकं पुञ्जकम्मानं, जानं अक्खासिजानतो॥

57.

"यदि ते सुता बिराणी जीवलोके, आमायदासी अहु ब्राह्मणस्स।

स पत्तकालं अतिथिं विदित्वा, माताव पुत्तं सकिमाभिनन्दि।

संयमा संविभागा च, सा विमानस्मि मोदति"ति॥

तत्थ पञ्चत्तुपन्ति पञ्चहि कुटागारेहि सम सत्यागत्। मंगलपिळन्धति मंगलदिहि सब्बाभरणेहि पतिमण्डितााति अथो। तत्थच्छतीति तस्मिं विमान्ते अच्छति। उच्छदावचं इद्धि विकुब्बमानति नानप्पकारं देविद्धिं दशस्यामना। दिसवति एतं दिशव थितं मन वित्ति विन्दति पाटिलभति, वित्तसन्तको विय होमि तुत्थिया अतिभूततति अथो। आमायदासीति गेहदसिया कुच्छिमहि जतदासि। आहु ब्राह्मणस्सति सा किर कस्सपदसबलस काले एकस्स ब्राह्मणस्स दासी अहोसि। स पत्तकालन्ति तेन ब्राह्मणेन अट्ठ सालकभट्टानि संघस्स परिच्चत्तानि अहेसुं। सो गेहं गन्त्वा "स्वे पत्थय एकेकस भिक्खुस एकेकं कहापंघनकं कत्वा अट्ठ सलाकभट्टानि सम्पादेयसी"ति ब्राह्मणिं अह। सा" सामि, भिक्खु नाम धुत्तो, नहं सक्खिसामि"ति पतिक्खिपि। धीतरोपिस्स पतिक्खिपिंसु। सो दासिं " सखिस्ससि अम्मा"ति आह। सा "सक्खिसामि अयय"ति सम्पतिच्छित्वा सप्तचचं यागुखजजकभत्तादिनि सम्पादेत्वा सलकं लभित्वा आगतं पत्तकालं अतिथिं विदित्वा हरितगोमायुपलित्ते कतपुप्फुपहारे सुपञ्चत्तसने निसीदापेट्वा यथा नाम विप्पवासा आगतं पुत्तं माता साकिं अभिनन्दति, तथा निच्चदच्चलं अभिनन्दति, सचित्रचं चं परिविसति, अत्तनो सन्तकम्पि किञ्चदचि देति। संयमा संविभाग चाति सा सीलवती अहोसि चागवती च, तस्मा तेन सीलेन चेव चागेन च इमस्मिं एरतेते मोदति। अथ वा संयमति इन्द्रियदमना।

एवेंदच पन वत्वा मतलि पुरतो रथं पेसेत्वा सोणदि नारायणदेवपुत्तस्स सत्त कनकविमाननि दस्सेसि। सो तानि च तस्स च सिरिसमपत्तिं दिस्वा तेन कटकमं पुच्छि। इट्रोपिस बयाकासी।

5

" दद्दल्लमना आभेन्ति, विमान सत्त निम्मिता।

तत्थ यक्खो महिद्धिको, सब्बाभरणभूसितो।

समन्ता अनुप्रियति, नारीगणपुरोखतो॥

50वीं.

"वित्ती हि मं विन्दति सुत दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथि।"

अय नुं मचछो किमकासि साधुं, यो मोदति सग्गपत्तो विमानते॥

51.

"तस्स पुत्थो व्याकासि, मातलि देवसारथि।

विपाकं पुञ्जकम्मानं, जानं अक्खासिजानतो॥

511.

"सोनदि नासिको गहपति, एस दानपति आहु।

एस पब्बजितुद्दिस्स, विहारे सत्त कार्यि॥

511.

"सत्रकाचचं ते उपत्थसि, भिक्खवो तत्थ वसिके।"

अच्छादन्नच भत्तनदच, सेनासनं पदीपियं।

अदासि उजुभुतेसु, विप्पस नारायणेन चेतसा॥

5.25.

"चतुद्दसिं पञ्चदसिं, या च पक्खस्स अट्ठमी।

पतिहरियापकञ्च, अट्ठङ्गसुसमागतं॥

544.

" उपोस्थं उपवसी, सदा सीलेसु संवुतो।

संयमा संविभागा च, सो विमानस्मि मोददि॥

तत्थ दद्दललमनाति जलमाना। एभेन्तिति युवासूर्यो वय ओभासन्ति। तथाति तेसु पतिपतिया थितेसु सत्तसु विमानेसु। यखोति एको देवपुत्तो। सोणदि साइनोति महाराज, अयं पुब्बे कस्सपादसबलस काले कासिरथे अञ्जन्तरस्मिं निगमे सोणदि साइनो नाम गहपति दानपति अहोसि। सो पब्बजिते उद्दिस् सत्त विहारकुटियो कैरेत्वा तथा वासिके भिक्खु चतुहि पच्चचयेहि सत्क्रमकच्छं उपत्थसि, उपोस्थानच उपवसि, निचदचं सीलेसु च संवु अहोसि। सो ततो चित्वा इधुपप संज्ञाओ मोदतीति अथो। एत्थ च पतिहारियपक्खन्ति इदं पन अट्ठमीउपोस्थस्स पच्च्चुग्गमनानुगमनवसेन सत्तमिनवमियो, चातुद्दसिप नयनरसीनं पच्चुग्गमनुगमनवसेन तेरसीपतिपदे च संधाय वुत्तं।

एवं सोणदि नासासस कतकम्मं कथेत्वा पुरतो रथं पेसेट्वा फलिकविमानं दस्सेसि। तं उब्बेधतो पञ्चवीसतियोजनं अनेकसतेहि सत्तरतनमयथंभेहि सम सत्यागतं, अनेकसत्गुणागारपतिमण्डितं, किङ्किनिकजालापरिखित्तं, समुस्सितसुवन्नरजतमयधजं, नानापुफविचित्तौयन्नवनविभूसितं, रमण्यपोखरानिज्म सोयागतं, नच्चदचगीतवादितादिसु चेकाहि अच्छरहि संपरिकिन्नं। तं दिस्वा राजा तासं अचरनं कतकम्मं पुच्छि, इट्रोपिस ब्याकसि।

51.

"पभासति मिदं ब्यम्हं, फलिकासु सुनिम्मितं।

नारीवर्गाकिन्नं, कूटागर्वरोचितं।

उपेतं अ नासापनेहि, नचदचगीतेहि छुभयं॥

5

"वित्ती हि मं विन्दति सुत दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथि।"

इमे नु मच्चचा किमकंसु साधुं, या मोदरे सग्गपत्ता विमानते॥

51.

"तस्स पुत्थो व्याकासि, मातलि देवसारथि।

विपाकं पुञ्जकम्मानं, जानं अक्खासिजानतो॥

511.

"या काचि नारियो इध जीवलोके, सीलवंतियो उपासिका।

दान राता निच्च्वं पस संज्ञाचित्ता, सच्देचे थिता उपोस्थे अप्पमत्ता।

संयमा संविभागा च, ता विमानस्मि मोदरे"ति॥

तथा बम्ह्न्ति विमानं, पासदोति वुत्तं होति। फलिकासुति फलिकाभित्तसु। नारीवर्गाकिन्न्ति अन्यरिगणेहि अकिन्नं। कूटागर्वरोचितन्ति वरकूटागरेहि ओचितं समोचितं, वन्नितन्ति अथो। उभयन्ति उभयेहि। "या काची"ति इदं किञ्चादपि अनोमेत्वा वुत्तं, ता पन कस्पबुद्धसासने बारांसियं उपासिका हुत्वा गणबंधनेन एतानि वुत्तप्पकाराणि पुंजनानि कत्वा तं दिब्बसम्पत्तिं रूपति वेदितब्बा।

अथस्स सो पुरतो रथं पेसेत्वा एकं रमणियं मणिविमानं दस्सेसि। तं समे भूमिभागे पतिट्ठितं उब्बेधसम्प संज्ञां मणिपब्बतो विय ओभास्मानं तिट्ठति, दिब्बगीतवादितनि नासादितं बहुहि देवपुत्तेहि संपरिकिनं। तं दिस्वा राजा तेसं देवपुतानां कतकम्मं पुच्छि, इतरोपिस ब्याकसि।

511.

"पभासति मिदं ब्यम्हं, वेळुरियासु निम्मितं।

उपेतं भूमिभागेहि, विभत्तं भगसो मितं॥

520.

"आअम्बरा मुदिंगा च, नच्चगीता सुवादिता।"

डिब्बा सदा निच्छरन्ति, सवनिया मनोरमा॥

520.

"नहं एवगतं जातु, एवसुरुचिरं संपूर्ण।

सद्दं समाभिजानामि, दिट्ठं वा यदि वा सुतं॥

522.

"वित्ती हि मं विन्दति सुत दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथि।"

इमे नू मच्छचा किमकंसु साधुं, ये मोदरे सग्गपत्ता विमानते॥

5.25.

"तस्स पुत्थो व्याकासि, मातलि देवसारथि।

विपाकं पुञ्जकम्मानं, जानं अक्खासिजानतो॥

5.

"ये केचि मचदाचा इध जीवलोके, सीलवंता उपासका।

आरामे उद्पाने च, पापा सङकमनानि च।

सचित्रचं अरहंते सीतिभूते, सचित्रचं अरहंते पतिपदायुं॥

522.

"चिवरं पिण्डपातञ्च, पच्चचयं सयनासनं।

अदंसु उजुभुतेसु, विप्पस नारायणेन चेतसा॥

5 2000.

"चतुद्दसिं पञ्चदसिं, या च पक्खस्स अट्ठमी।

पतिहरियापकञ्च, अट्ठङ्गसुसमागतं॥

5

" उपोस्थं उपवसुं, सदा सीलेसु संवुता।

संयमा संविभागा च, ते विमानस्मि मोदरे"ति॥

तत्थ वेळुरियासुति वेळुरियाभितिसु। भूमिभागेहिति रमणीयेहि भूमिभागेहि उपेतं। आम्बरा मुडिङ्गा चाति एते द्वे एत्थ वज्जन्ति। नचदचगीता सुवादितातिति नानप्पकाराणि नचचानि चैव गीतानि च अपरेसम्पि तुरियनं सुवादितानि चेत्थ पवत्तन्ति। एवंगतन्ति एवं मनोरमभावं गतं। "ये केचि"ति इदम्पि कामं अनोमेत्वा वुत्तं, ते पन कस्पबुद्धकाले बरणसिवासिनों उपासका हुत्वा गणबंधनेन एतानि पुंजनानि कत्वा तं सागरं पत्रति वेदितब्बू। तत् पतिपदायुन्ति पतिपदायिन्सु, तेसं अदंसुति अथो। पचचयन्ति गिलानपच्चयं। अदंसूति एवं नानप्पकारकं दानं अदंसूति।

इतिस्स सो तेसं कतकम्मं अचिक्खित्वा पुरतो रथं पेसेट्वा अपरमपि फलिकविमानं दस्सेसि। तं अनेककूटागारपतिमण्डितं, नानाकुसुमसञ्च संज्ञादिब्बतरुणवनपतिमण्डितितरय, विविधविहंगमनि नारायणादित्य निम्मलसलिलय नादिया परिक्खित्तं, अचरगणपरिवुतस्सेकस पुञ्जनवतो निवासभूतं। तं दिस्वा राजा तस्स कतकम्मं पुच्छि, इट्रोपिस ब्याकासि।

5

"पभासति मिदं ब्यम्हं, फलिकासु सुनिम्मितं।

नारीवर्गाकिन्नं, कूटागर्वरोचितं॥

5

" उपेतं अ अज्ञानानेहि, नचदचगीतेहि दुभयं।

नज्दजो चानुपरियति, नानापुप्फदुमायुता॥

530.

"वित्ती हि मं विन्दति सुत दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथि।"

अय नुं मचछो किंमकासि साधुं, यो मोदति सग्गपत्तो विमानते॥

5 सप्ताह

"तस्स पुत्थो व्याकासि, मातलि देवसारथि।

विपाकं पुञ्जकम्मानं, जानं अक्खासिजानतो॥

5वीं शताब्दी.

"मिथिलायं गहपति, एस दानपति आहु।

आरामे उद्पाने च, पापा सङ्कमनानि च।

सचित्रचं अरहंते सीतिभूते, सचित्रचं पतिपादयि॥

5.

"चिवरं पिण्डपातञ्च, पच्चचयं सयनासनं।

अदासि उजुभुतेसु, विप्पस नारायणेन चेतसा॥

5

"चतुद्दसिं पञ्चदसिं, या च पक्खस्स अट्ठमी।

पतिहरियापकञ्च, अट्ठङ्गसुसमागतं॥

5.

" उपोस्थं उपवसी, सदा सीलेसु संवुतो।

संयमा संविभागा च, सो विमानस्मि मोदति॥

तत्थ नज्जोति वचनविपलसो, एका नदी तं विमानं परिक्खिपित्वा गतति अथो। नानापुप्फदुमायुताति सा नदी नानापुप्फेहि दुमेहि आयुता। मिथिलायन्ति एस महाराज, कस्पबुद्धकाले मिथिलानगरे एको गहपति दानपति अहोसि। सो एतानि आरामोपनादिनि पुञ्जानि कत्वा इमं असंयमं पत्तोति।

एवमस्स तेन कतकम्मं अचिक्खित्वा पुर्तो रथं पेसेत्वा अपरमपि फलिकविमानं दस्सेसि। तं पुरीमविमानतो अतिरेकाय नानापुप्फफलसञ्च नारायनय युवावनघटाय सम प्रयोगगतं। तं दिस्वा राजा तये गद्दाय सम नासागतस्स देवपुत्तस्स कतकम्मं पुच्चि, इतरोपिस्स ब्याकासि।

5

"पभासति मिदं ब्यम्हं, फलिकासु सुनिम्मितं।

नारीवर्गाकिन्नं, कूटागर्वरोचितं॥

5

" उपेतं अ अज्ञानानेहि, नचदचगीतेहि दुभयं।

नज्दजो चानुपरियति, नानापुप्फदुमायुता॥

5वीं.

"राजायतना कपित्था च, अम्बा साला च जम्बुयो।

तिन्दुका च पियाला च, दुमा नीचफला बहु॥

5.

"वित्ती हि मं विन्दति सुत दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथि।"

अय नुं मचछो किमकासि साधुं, यो मोदति सग्गपत्तो विमानते॥

5-4.

"तस्स पुत्थो व्याकासि, मातलि देवसारथि।

विपाकं पुञ्जकम्मानं, जानं अक्खासिजानतो॥

5

"मिथिलायं गहपति, एस दानपति आहु।

आरामे उद्पाने च, पापा सङकमनानि च।

सचित्रचं अरहंते सीतिभूते, सचित्रचं पतिपादयि॥

5

"चिवरं पिण्डपातञ्च, पच्चचयं सयनासनं।

अदासि उजुभुतेसु, विप्पस नारायणेन चेतसा॥

5

"चतुद्दसिं पञ्चदसिं, या च पक्खस्स अट्ठमी।

पतिहरियापकञ्च, अट्ठङ्गसुसमागतं॥

5.

" उपोस्थं उपवसी, सदा सीलेसु संवुतो।

संयमा संविभागा च, सो विमानस्मि मोदति॥

तथा मिथिलायन्ति एस, महाराज, कस्सपबुद्धकाले विदेहेरत्थे मिथिलनगरे एको गहपति दानपति अहोसि। सो एतानि पुञ्जानि कत्वा इमं अधिकारं पत्तोति।

एवमस्स तेन कतकम्मं अचिक्खित्वा पुरतो रथं पेसेट्वा पुरिम्सदिसमेव अपरमपि वेळुरियाविमानं दस्सेत्वा तत्थ देवतां अनुभवन्तसस देवपुत्तस्स कतकमं पुत्थो अचिखि।

544.

"पभासति मिदं ब्यम्हं, वेळुरियासु निम्मितं।

उपेतं भूमिभागेहि, विभत्तं भगसो मितं॥

5

"आअम्बरा मुदिंगा च, नच्चगीता सुवादिता।"

दिब्या सदा निच्छरन्ति, सवनिया मनोरमा॥

5.

"नहं एवगतं जातु, एवसुरुचिरं संपूर्ण।

सद्दं समाभिजानामि, दिट्ठं वा यदि वा सुतं॥

5

"वित्ती हि मं विन्दति सुत दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथि।"

अय नुं मचछो किमकासि साधुं, यो मोदति सग्गपत्तो विमानते॥

5

"तस्स पुत्थो व्याकासि, मातलि देवसारथि।

विपाकं पुञ्जकम्मानं, जानं अक्खासिजानतो॥

5

"बारांसियं गहपति, एस दानपति आहु।

आरामे उद्पाने च, पापा सङ्कमनानि च।

सचित्रचं अरहंते सीतिभूते, सचित्रचं पतिपादयि॥

5.55.

"चिवरं पिण्डपातञ्च, पच्चचयं सयनासनं।

अदासि उजुभुतेसु, विप्पस नारायणेन चेतसा॥

5

"चतुद्दसिं पञ्चदसिं, या च पक्खस्स अट्ठमी।

पतिहरियापकञ्च, अट्ठङ्गसुसमागतं॥

5

" उपोस्थं उपवसी, सदा सीलेसु संवुतो।

संयमा संविभागा च, सो विमानस्मि मोदति॥

अथस्स पुरतो रथं पेसेत्वा बालसूरियस नायगिभं कनकविमानं दस्सेत्वा तथा निवासिनो देवपुत्तसस्स् महत्वं पुत्थो अचिक्खि।

554.

"यथा उदयमादिच्चो, होति लोहितको महा।"

तथुपमं इदं बम्हं, जातरूपस्स निम्मितं॥

54.

"वित्ती हि मं विन्दति सुत दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथि।"

अय नुं मचछो किमकासि साधुं, यो मोदति सग्गपत्तो विमानते॥

5.

"तस्स पुत्थो व्याकासि, मातलि देवसारथि।

विपाकं पुञ्जकम्मानं, जानं अक्खासिजानतो॥

5

" सावथ्यं गहपति, एस दानपति आहु।

आरामे उद्पाने च, पापा सङकमनानि च।

सचित्रचं अरहंते सीतिभूते, सचित्रचं पतिपादयि॥

5.

"चिवरं पिण्डपातञ्च, पच्चचयं सयनासनं।

अदासि उजुभुतेसु, विप्पस नारायणेन चेतसा॥

559.

"चतुद्दसिं पञ्चदसिं, या च पक्खस्स अट्ठमी।

पतिहरियापकञ्च, अट्ठङ्गसुसमागतं॥

5- ...

" उपोस्थं उपवसी, सदा सीलेसु संवुतो।

संयमा संविभागा च, सो विमानस्मि मोदति॥

तत्थ उदयमादिच्छोति उग्गच्छन्तो आदिचच्छो। सावत्थिन्ति कस्सपबुद्धकाले सावथिंगरे एको गहपति दानपति अहोसि। सो एतानि पुञ्जानि कत्वा इमं अधिकारं पत्तोति।

एवं तेन इमेसं अट्ठ साइनं हवाईं हवाईं प्रसारितान् काले काले सको देवराजा "मातलि, अतिविय चिरायति"ति अपरमपि जवनदेवपुत्तं पेसेसि। सो वेगेन गन्त्वा अरोचेसि। सो तस्स वचनं सुत्वा "न सका इदानि चिरायितु"न्ति चतुसु दिसासु एकप्पाहारेणेव बहुनि इतानि दस्सेसि। रंजना च तथा परमात्मनं अनुभवन्तानं देवपुतानं कतकम्मं पुत्थो अचिक्खि।

5 सप्ताह.

" वेहायसामे बहुका, जातरूपस्स निम्मिता।"

दद्दलल्लमना आभेन्ति, विजजुवबभघनन्तरे॥

5

"वित्ती हि मं विन्दति सुत दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथि।"

इमे नू मच्छचा किमकंसु साधुं, ये मोदरे सग्गपत्ता विमानते॥

5वीं शताब्दी.

"तस्स पुत्थो व्याकासि, मातलि देवसारथि।

विपाकं पुञ्जकम्मानं, जानं अक्खासिजानतो॥

5

"सद्धाय सुनिविट्ठाय, सद्धम्मे सुप्पवेदिते।

अकांसु सत्थु वचनं, सम्मासंबुद्धसासने।

तेसं एतानि थानानि, अर्थात त्वं राज पस्सी"ति॥

तत् वेहयसमेति वेहयसा इमे आकाशयेव संतिता। आकाशस्थकविमान इमेति वदति। विज्जुवब्भघ्नन्तरेति घनवल्हकन्तरे जलमाना विज्जु विय। सुनिविट्ठयाति मग्गेन् आगत्ता सुप्पतिट्ठिताय। इदं वुत्तं होति - महाराज, एते पूरे नियैनिके कस्पबुद्धसासने पब्बजित्वा परिसुद्धसिला समंधम्मं करोन्टा सोतापत्तिफलं सच्चिकत्व अरहत्तं निब्बेतुं असकोन्ता ततो चुता इमेसु कनकविमानेसु उप्प सयामा। एतेसं कस्सपबुद्धसावकानं तानि थानानि, अर्थात त्वं, महाराज, पस्सेति।

एवमस्स अकासत्थकविमाननानि दस्सेत्वा सस्कस सन्तिकं गणमथय उस्साहं करोन्तो अह -

5.

"विदितानि ते महाराज, आवासं पापकम्मिनं।

अथो कल्याणकम्मानं, थानानि विदितानि ते।

उयाहि दानि कांतिसि, देवराजस्स शांतिके"ति॥

तत्थ आवासन्ति महाराज, तय पथममेव नेरायिकानं आवासं दिस्वा पापकम्मानं थानानि विदितानि, इदानि पन अकासत्थ्कविमाननि पसंतेन अथोकम्मानं थानानि विदितानि, इदानि देवराजस्स संतिके श्रीं दत्थुं उयाहि गच्छहिती।

एवेंदच पन वत्वा पुरतो रथं पेसेत्वा सिनेरुं परिवारत्व थिते सत्त परिभाण्डपब्बते दस्सेसि। ते दिस्वा रंजना मैटलिस पुत्थभावं अविक्रोन्तो सत्था अह -

5.

" सहस्स्युत्तं हयवाहिं, दिब्ब्यानमधिट्ठितो।

ययमानो महाराजा, अद्दा सीदन्तरे नगे।

दिस्वानामन्त्यै सुतं, इमे के नाम पब्बता"ति॥

तत् हयवाहिन्ति हयेहि वाह्यमानं। दिब्बायानमधिट्ठितोति दिब्बायाणे थितो हुत्वा। अद्दति अद्दस। सीदन्तरेति सीदामहासमुद्दस्सन् अन्तरे। तस्मिं किर महासमुद्दे उदकं सुखुमं, मोरपञ्चमत्तमपि पखित्तं पतित्थतुं न सद्दकोति सीदतेव, तस्मा सो "सीदामहासमुद्दो"ति वुच्चदचति। तस्स अंतरे. नगेति पब्बते। के नामति के नाम नामेन इमे पब्बतति।

एवं निमिरञ्जा पुत्थो मातलि देवपुत्तो आह -

5.

"सुदस्सनो कर्विको, ईसाधरो युगन्धरो।

नेमिन्धरो विनतको, असस्कन्नो गिरी ब्रहा॥

56.

"एते सीदांत्रे नागा, अनुपुब्बसमुग्गता।"

महाराजानमावासा, अर्थात त्वं राज पस्सी"ति॥

तत्थ सुदस्सनोति अयं, महाराज, एतेसं सब्बाहिरो सुदस्सणो पब्बतो नाम, तदनन्तरे कर्विको नाम, सो सुदस्सन्तो उच्चचतरो। उभि साइनाजम्पि पन तेसं अंतरे एकोपि सीदन्तरमहासमुद्दो। कर्विकस्स अनंत्रे ईसधरो नाम, सो कर्विकतो उच्चचत्रो। तेसम्पि अन्तके एको

सीदन्तरामहासुद्दो। इशधरस्स अनंत्रे युगंधरो नाम, सो इशधरतो उच्चचत्रो। तेसम्पि अन्तके एको सीदन्तरामहासुद्दो। युगांधरस अनंत्रे नेमिन्धरो नाम, सो युगान्धरतो उच्चतरो। तेसम्पि अन्तके एको सीदन्तरामहासुद्दो। नेमिन्धरस अनंत्रे विनतको नाम, सो नेमिन्धरतो उच्चचत्रो। तेसम्पि अन्तके एको सीदन्तरामहासुद्दो। विनायकस्स अनंत्रे असस्कन्नो नाम, सो विनायकतो उच्चचत्रो। तेसम्पि अन्तके एको सीदन्तरामहासुद्दो। अनुपुब्बसमुग्गताति एते सीदन्तरामहासमुद्दे सत्त पब्बता अनुपतिपतिया समुग्गता सोपानसदिसा हुत्वा थिता। अर्थात ये त्वं, महाराज, इमे पब्बते पस्सासि, एते चतुन्नं महाराजानं आवासति।

एवमस्स चातुम्हारिकदेवलोकं दस्सेत्वा पुरतो रथं पेसेत्वा तावतिंसभवनस्स चित्तकोटोद्वारकोथकं परिवारेत्वा थिता इंदपतिमा दस्सेसि। तं दिस्वा राजा पुच्छि, इट्रोपिस्स ब्याकासि।

500

"अनेकरूपं रुचिरं, नानाचित्रं पकासति।

अकिन्नं इन्दसदिसेहि, ब्यघघेव सुखितं॥

5.

"वित्ती हि मं विन्दति सुत दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथि।"

इमं नु द्वारं किमभंजनमाहु, मनोरमं दिस्सति दूरतोव॥

5.

"तस्स पुत्थो व्याकासि, मातलि देवसारथि।

विपाकं पुञ्जकम्मानं, जानं अक्खासिजानतो॥

5.

"चित्रकूटोऽति यं आहु, देवराजपवेसनं।

सुदास्सनस्स गिरिनो, द्वारञ्हेतं पकासति॥

5.

"अनेकरूपं रुचिरं, नानाचित्रं पकासति।

अकिन्नं इंदसदिसेहि, ब्यघघेव सुखितं।

पविसेतेन कांतिसि, अर्जन भूमिमक्रोकामा"ति॥

तथा अनेकरूपन्ति अनेकजातिकं। नानाचित्रन्ति नानारत्नचित्रं। पकासतीति किं नाम एतं पञ्चयति। अकिन्नन्ति सम्परिपुन्नं। बग्घेहेव सुखितन्ति यथा नाम बग्घेहि वा सीहेहि वा महावन्, एवं इन्दसदिसेहेव सुखितं। तस्नदच पन इंदपतिमानं अरखणथय ऑपितभावो एक्कनिपते कुलावकजातके (जा० 1..31) वुत्तनयेन घेटब्बो। किंमभंजन्माहुति किं प्रयोगं वदन्ति। पवेसनन्ति निक्कमनपवेसनथय निम्मितं। सुदस्संस्सति शोभनदस्संस्स सिनेरुगिरिनो। द्वारं हेतन्ति एतं सिनेरुमत्थके पतिट्ठित्स्स दसहस्सयोजनिकस्स देवनगरस्स द्वारं पकासति, द्वारकोट्ठको पञ्ञायति अथो। पविसेतेनाति एतेन द्वारेण देवनगरं पविस। जं भूमिम त्रिकमाति अरजं सुवन्न अरजत्मनिमयं नानापुप्फेहि समाकिन्नं दिब्बभूमिं दिब्बयानेन अलंकृत, महाराजाति।

एवञ्च पन वत्वा मतलि राजानं देवनगरं पवेसेसि। तेन वुट्टं -

550.

" सहस्स्युत्तं हयवाहिं, दिब्ब्यानमधिट्ठितो।

यायमानो महाराजा, अद्दा देवसभं इद"न्ति॥

सो दिब्बयने थितोव गच्छन्तो सुधम्मदेवसभं दिस्वा मतलिं पुच्छि, सोपिस्स अचिक्खि।

56.

"यथा सर्दे आकासे, नीलोभासो पदिस्स्ति।"

तथुपमं इदं ब्यम्हं, वेळुरियासु निम्मितं॥

577.

"वित्ती हि मं विन्दति सुत दिस्वा, पुच्छमि तं मातलि देवसारथि।"

इमं नु ब्यमहं किमभंजनमाहु, मनोरमं दिस्सति दूरतोव॥

500

"तस्स पुत्थो व्याकासि, मातलि देवसारथि।

विपाकं पुञ्जकम्मानं, जानं अक्खासिजानतो॥

5.

"'सुधम्मा' इति यं आहु, पपेसा दिस्सते सभा।

वेळुरियारुचिरा चित्रा, धारयन्ति सुनिम्मिता॥

5.

"अट्ठंसा सुकता थम्भा, सब्बे वेलुरियामाया।

यथा देवा तावतिंसा, सब्बे इन्दपुरोहिता॥

5

"अथं देवमनुस्सानं, चिन्तयंता समाचरे।

पविसेतेन राकांसि, देवानं मोहनन्ति॥

तत्थ इदन्ति निपातमत्तं, देवसभं अद्दसति अथो। पस्सेसाति पास एसा। वेळुरिया रुचिराति रुचिरवेळुरिया। चित्राति नानारत्नविचित्रा। धारयन्तिति इमं सभं एते अत्थत्सादिभेदा सुकता थम्भा धारयन्ति। इंदपुरोहिताति इंदं पुरोहितं पूर्णचारिकं कत्वा परिवारेत्व थिता देवमनुस्सानं अथं चिन्तयंता अच्छन्ति। पविसेतेनाति इमिना मग्गेन यथा देवा अञ्जनमञ्जं मंउरता अच्छन्ति, तं ठाणं देवानं मोहरं पविस।

देवापि खो तस्सागमनमग्गं ओलोकेंताव निसिदिंसु। ते "राजा आगतो"ति सुत्वा दिब्बगन्धवासपुप्फहत्था यव चित्तमग्गं गन्त्वा महासत्तं दिब्बगन्धमालादिहि पूजयन्ता सुधम्मदेवसभं अनायंसु। राजा रथा ओतारित्वा देवसभां पविसी। देवा अरासेन निमन्तयिन्सु। सत्कोपि आसनेन चेव कामेहि च निमन्तेसि। तमथं पकसेन्तो सत्था अह -

5.

"तं देवा पतिनन्दिंसु, दिस्वा राजानमगतं।

स्वागतं ते महाराज, अथो ते अदुरागतं।

निसिद दानि कांतिसि, देवराजस्स शांतिके॥

5वीं वर्षगांठ।

"सत्रकोपि पतिन्नदित्थ, वेदेहं मिथिलग्गहं।

निमन्तयित्थ कामेहि, आसनेन च वस्वो॥

5 प्रतिशत.

" साधु खोसि अनुप्पत्तो, आवासं वस्वत्तिनं।

वस देवेसु कांतिसि, सब्बकामसमिद्धिसु।

तावतिंसेसु देवेसु, भुञ्ज कामे अमानुसे"ति॥

तत्थ पतिनन्दिनसुति सम्पियियिन्सु, हत्थतुत्थैव हुत्वा सम्पतिचिंसु। सब्बकामसमिद्धिसुति सब्बेसं कामानं समिद्धियुत्तेसु।

एव स त्रैकेन दिब्बकामेहि चेव आसनेन च निमन्तितो राजा पतिक्खिपन्तो अह -

5वीं सदी.

"यथा याचितकं यानं, यथा याचितकं धनं।

एवं सम्पदमेवेतं, यं परतो दानपच्चया॥

5वीं शताब्दी.

"न इच्छामेतमिच्छामि, यं परतो दानपच्चया।

संयक्तानि पुञ्जानि, तं मे आवेनिकं धनं॥

5

"सोहं गन्त्वा मनुस्सेसु, काहामि कुसलं बहुम्।

दानेन समाचरियै, संयमेन दमेण च।

यं कत्वा सुखितो होति, न च पच्छनुत्प्पति"ति॥

तत् यं परतो दानपचचयति यं परतो तस्स परस्स दानपचचया तेन दीन सत्यं लब्भति, तं यचित्कसदिसंति हो, तस्मा नाहं एतं इच्छामि। सयंकतानीति अर्थात पन मया अत्तना कतानि पुंजनानि, तमेव मम परेहि एकांत आवेनिकं धनं अनुगमियधनं। समचरियायति तेहि द्वारेहि समचरियाय। संयमेनाति सीलरखणेन। दमेनाति इन्द्रियदमेन।

एवं महासत्तो देवानां मधुरसद्देन धम्मं देसेसि। धम्मं देसेनतोयेव मनुसस्गणनाय सत्त दयानि तत्वा देवगणं कोसेत्वा देवगणमझे थितोव मालिस्स गुणं कथेंन्तो अह -

5

"बहूपकारो नो भवं, मातलि देवसारथि।"

यो मे कल्याणकम्मानं, पापानं पतिदस्सी"ति॥

तत्थ यो कल्याण मेकम्मानं, पापानं पतिदस्य्यति यो एस म्यहं कल्याणकम्मानं देवान्नदच थानानि पापकम्मानं नेरायिकानंदच पापानि थानानि दस्सेसीति अथो।

सग्गकांडं निश्चितं।

अथ राजा सचित्रकं अम्नतेत्वा "इच्छामहं, महाराज, मनुस्स्लोकं गन्तु"न्ति अह। सचित्रको "तेन हि, सम्म मतलि, निमिरजां तत्थेव मिथिलां नेही"ति अह। सो "साधु"ति सम्पतिच्छित्वा रथं उपत्थापसि। राजा देवगणेहि सद्धिं सम्मोदित्वा देवे निवत्तपेत्वा रथं अभिरुहि। मातलि रथं पेसेनतो पाचिनदिसाभागेन मिथिलां पापुनि। माजमो दिब्बरथं दिस्वा "राजा नो आगतो"ति पमुदितो अहोसि। मातलि मिथिलां पद्दखिनं कत्वा तस्मिनयेव सीहपञ्जरे महासत्तं ओटरेत्वा "गच्छामहं, महाराजा"ति आपुच्छित्वा सकत्थानमेव गतो। महाजनोपि राजानं परिवारेत्व "किदिसो, देव, देवलोको"ति पुच्छि। राजा देवतानदच सक्रक्स च देवाराञ्चो राजां वन्नेत्वा "तुम्हेपि दानादिनि पुञ्जनि करोथ, एवं तस्मिं देवलोके निब्बत्तिस्सथा"ति महाजनस्स धम्मं देसेसि।

सो अपरभागे कप्पकेन पलितस्स जातभावे अरोचिते पलितं सुवन्नसंदासेन उद्धरापेट्वा हत्थे ओकेतेत्वा कप्पकस गमवरं दत्वा पब्बजीतुकामो हुत्वा पुत्तस्स राजजं पतिचापेसि। तेन च " कस्मा, देव, पब्बजिससी"ति वुत्ते -

"उत्तमङ्गुरुहा म्यहं, इमे द वयोहरा।

पाहुभूता देवदूता, पब्बज्जासमयो मम"ति॥ —

गथं वत्वा पुरीमराजनो विय पब्बजित्वा तस्मिनयेव अम्बवने विहरन्तो चत्तारो ब्रह्मविहारे भवेत्वा ब्रह्मलोकोपगो अहोसि। तस्सेवं पब्बजितभावं अविक्रोन्तो सत्था ओसंगथमः -

5 प्रतिशत

"इदं वत्वा निमिराजा, वेदेहो मिथिलग्गहो।

पुथुयञ्चं यजित्वान, संयमं अज्झुपागमी"ति॥

तत्थ इदं वत्वति "उत्तमङगुरुहा मयह"न्ति इमं गथं वत्वा। पुथुयञ्चं यजित्वानाति महादानं दत्वा। संयमं अज्झुपागमिति सीलसंयमं उपगतो।

पुत्तो पनस्स काळराजनको नाम तं वसं उपचिंदि।

सत्था इमं धम्मदेसनं अहारित्वा "न, भिक्खवे, इदानेव, पुब्बेपि तथागतो महाभिनिखमनं निखंतोयेवा"ति वत्वा जातकं समोधनसि "तदा सत्को अनुरुद्धो अहोसि, मतलि आनंदो, चतुरासीति खत्तियसहस्सनि बुद्धपरिसा, निमिराजा पन अहमेवमाससम्बुद्धो अहोसि"न्ति।

निमिजातकवन्ना चतुत्था।

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **द-खंडाला-जातक**
***स्रोत**: ई.बी. कोवेल और डब्ल्यू.एच.डी. राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-542-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 542
खंडाहाला जातक

"पुप्पवती में एक समय राज करता था," गुरु ने गिज्जकुट पर्वत पर रहते हुए देवदत्त के विषय में यह कथा सुनाई। इसका सार समुदाय में फूट डालने के पाप से संबंधित खंड में निहित है; इसे देवदत्त के आचरण का पूर्ण अध्ययन करके ही समझा जा सकता है, उनके संन्यासी बनने से लेकर राजा बिम्बिसार की हत्या तक। बिम्बिसार की हत्या करने के तुरंत बाद, देवदत्त राजा बिम्बिसार के पुत्र, राजा अजातशत्रु के पास गए और उनसे कहा, "हे राजा, आपकी इच्छा पूरी हो गई है, परन्तु मेरी अभी तक पूरी नहीं हुई है।" राजा ने उत्तर दिया, "तुम्हारी इच्छा क्या है?" "मैं दशबल (बुद्ध) की हत्या करवाना चाहता हूँ और फिर स्वयं बुद्ध बनना चाहता हूँ।" "अच्छा, तो हमें क्या करना चाहिए?" "हमें कुछ धनुर्धारियों को एकत्रित करना होगा।" राजा मान गया और उसने पाँच सौ धनुर्धारियों को इकट्ठा किया, जो सभी बिजली की गति से तीर चलाने में सक्षम थे। इनमें से उसने इक्कीस (130) को चुना और उन्हें देवदत्त की सेवा में भेजा और उन्हें अपने आदेशों का पालन करने को कहा। उसने उनमें से प्रमुख को बुलाया और उससे कहा, "मेरे मित्र, तपस्वी गौतम (बुद्ध) गिज्जकूट पर्वत पर निवास करते हैं: वे दिन में एक निश्चित समय पर अपने विश्राम स्थल पर आते-जाते हैं; तुम वहाँ जाओ और उन्हें विषैले बाण से

घायल करो, और उन्हें मारकर इस मार्ग से वापस आ जाओ।" फिर उसने दो धनुर्धारियों को उस मार्ग से भेजा और उनसे कहा, "तुम्हें अपने मार्ग से एक व्यक्ति मिलता है, उसे मार डालो और इस मार्ग से वापस आ जाओ।" फिर उसने चार धनुर्धारियों को उसी निर्देश के साथ उस मार्ग से भेजा, और उसके बाद इसी प्रकार अट्ठाईस और सोलह को भेजा। यदि तुम पूछो कि उसने ऐसा क्यों किया, तो उसने यह अपनी दुष्टता को छिपाने के लिए किया। इसलिए धनुर्धारियों के इस श्रेष्ठ व्यक्ति ने अपनी तलवार बाईं ओर और बाण पेटी पीठ पर बाँध ली, और मेढ़े के सींग से बना धनुष लेकर तथागत (बुद्ध) के पास गया; परन्तु जब उसने उन्हें घायल करने के लिए धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ा दी, बाण लगा दिया और प्रत्यंचा खींची, तो वह उसे छोड़ नहीं सका। उसका पूरा शरीर अकड़ गया, मानो कुचल गया हो, और वह मृत्यु के भय से भयभीत खड़ा रहा। जब गुरु ने उसे देखा, तो उन्होंने कोमल स्वर में कहा, "डरो मत, इधर आओ।" उसने तुरंत अपने शस्त्र फेंक दिए और भगवान बुद्ध के चरणों में सिर रखकर कहा, "हे प्रभु, पाप ने मुझे एक बच्चे, मूर्ख या पापी की तरह वश में कर लिया है; मैं आपके गुणों को नहीं जानता था, और मैं उस अंधे बूढ़े देवदत्त के आदेश पर आपका प्राण लेने आया था: कृपया मुझे क्षमा करें।" उसे क्षमा मिल गई और वह एक तरफ बैठ गया। तब गुरु ने उन्हें धम्म (निर्वाण की ओर ले जाने वाले सत्य) का ज्ञान कराया और उन्हें प्रथम श्रेणी का मोक्ष (सोतपान-धारा विजेता) प्राप्त कराया। फिर उन्होंने उन्हें देवदत्त द्वारा बताए गए मार्ग के अलावा किसी अन्य मार्ग से लौटने को कहा; और स्वयं अपने गुप्त मार्ग से नीचे उतरकर एक वृक्ष के नीचे बैठ गए। जब पहला धनुर्धारी नहीं लौटा, तो बाकी दो धनुर्धारी उससे मिलने के लिए उसी रास्ते से आए और यह देखकर आश्चर्यचकित हुए कि उसे इतनी देर क्यों हो गई, अंततः उन्होंने बुद्ध को देखा और उनके पास गए।और उन्हें प्रणाम करने के बाद, वे उनके एक ओर बैठ गए। फिर उन्होंने उन्हें भी धम्म (निर्वाण की ओर ले जाने वाले सत्य) का ज्ञान दिया और उन्हें प्रथम श्रेणी का मोक्ष (सोतपना-प्रमुख) प्राप्त कराया, और उन्हें देवदत्त द्वारा बताए गए मार्ग के अलावा किसी अन्य मार्ग से लौटने को कहा। इसी प्रकार, जब अन्य लोग आए और एक-एक करके बैठ गए, तो उन्होंने उन्हें भी प्रथम श्रेणी का मोक्ष (सोतपना-प्रमुख) प्राप्त कराया और उन्हें दूसरे मार्ग से विदा कर दिया। तब सबसे पहले लौटने वाला धनुर्धारी देवदत्त के पास गया और उनसे कहा, "गुरुजी, मैं उस असीम ज्ञानी को मार नहीं सका, वह सर्वशक्तिमान, अलौकिक शक्तियों वाले भगवान बुद्ध हैं।" इस प्रकार उन सभी ने यह पहचान लिया कि उन्होंने असीम ज्ञानी (बुद्ध) के माध्यम से ही अपने जीवन की रक्षा की है, और उन्होंने उनके अधीन तपस्वी जीवन को अपनाया और अर्हत (बुद्ध के समान प्रबुद्ध) बन गए। यह घटना भिक्षु संघ की सभा में फैल गई, और एक दिन वे सत्य के हॉल में इस पर चर्चा करने लगे; "भाइयों, क्या आपने सुना है कि देवदत्त ने भगवान बुद्ध के प्रति अपनी शत्रुता में कई लोगों की जान लेने की कोशिश की, और कैसे उन सभी ने गुरु की कृपा से अपनी जान बचाई?" तभी गुरु आए और पूछा, "भाइयों, आप यहाँ बैठे-बैठे किस बारे में बात कर रहे हैं?" और जब उन्होंने बताया, "यह पहली बार नहीं है," तो उन्होंने कहा; "उसने इससे पहले भी मेरे प्रति अपनी शत्रुता में कई लोगों की जान लेने की कोशिश की थी"; और उन्होंने उन्हें अतीत की एक कहानी सुनाई।उसने कहा, "इससे पहले भी उसने मेरे प्रति अपनी शत्रुता के कारण कई लोगों की जान लेने की कोशिश की थी"; और उसने उन्हें अतीत की एक कहानी सुनाई।उसने कहा, "इससे पहले भी उसने मेरे प्रति अपनी शत्रुता के कारण कई लोगों की जान लेने की कोशिश की थी"; और उसने उन्हें अतीत की एक कहानी सुनाई।

पुराने समय में इस बनारस को पुप्पवती कहा जाता था। वहाँ राजा वासवत्ती के पुत्र एकराज का शासन था और उनके पुत्र चंदकुमार वायसराय थे। खंडाहल नामक एक ब्राह्मण कुलपुजारी थे। वे राजा को सांसारिक और आध्यात्मिक मामलों में सलाह देते थे और राजा उनकी बुद्धिमत्ता से बहुत प्रभावित थे, इसलिए उन्होंने उन्हें न्यायाधीश बना दिया। लेकिन वे रिश्वतखोर थे, इसलिए रिश्वत लेकर असली मालिकों को बेदखल कर गलत मालिकों को कब्जा दे देते थे। एक दिन एक व्यक्ति, जो अपना मुकदमा हार गया था, न्यायलय से जोर-जोर से शिकायत करते हुए बाहर आया और जब उसने चंदकुमार को राजा से मिलने जाते देखा, तो वह उनके चरणों में गिर पड़ा। राजकुमार ने उससे पूछा, "महाराज, खंडाहल न्याय करते समय याचिकाकर्ताओं को लूटता है: मैंने रिश्वत देने के बावजूद अपना मुकदमा हार गया हूँ।" राजकुमार ने उसे शांत रहने को कहा और उसे अदालत में ले जाकर विवादित संपत्ति का स्वामी बना दिया। जनता ने तालियाँ बजाकर उसका उत्साहवर्धन किया। जब राजा ने यह सुना और कारण पूछा, तो उन्होंने उत्तर दिया, "चंदकुमार ने उस मुकदमे का सही फैसला किया है जिसका फैसला खंडाहल ने गलत किया था; इसीलिए इतना शोर मचा था।" जब राजकुमार आया और उसने प्रणाम किया, तो राजा ने उससे कहा, "मेरे पुत्र, लोग कहते हैं कि तुमने अभी-अभी एक मामले का फैसला किया है।" "जी महाराज।" उन्होंने राजकुमार को न्यायाधीश का पद दिया और उसे आदेश दिया कि वह आगे से सभी मुकदमों का फैसला करे। खंडाहल की आमदनी घटने लगी और उसी समय से उसके मन में राजकुमार के प्रति द्वेष पैदा हो गया और वह उसमें कोई न कोई दोष ढूंढने लगा। अब राजा को धार्मिक (धार्मिक) समझ बहुत कम थी; एक दिन भोर में, नींद से जागते ही उन्होंने तैंतीस देवताओं (देवदूतों) का स्वर्ग देखा, जिसका अलंकृत बरामदा, सात कीमती वस्तुओं से बनी दीवारें, साठ योजन का विस्तार, एक हजार योजन की ऊँचाई वाली स्वर्णमयी गलियाँ, वेजयंत और अन्य महलों से सुशोभित, नंदन और अन्य वनों तथा नंदा और अन्य झीलों की समस्त महिमा से युक्त और हर जगह दिव्य प्राणियों से भरा हुआ था। उन्हें उसमें प्रवेश करने की तीव्र इच्छा हुई और उन्होंने सोचा, "जब गुरु खंडाहल आएंगे, तो मैं उनसे देवताओं (देवदूतों) के लोक का मार्ग पूछूंगा और उनके बताए मार्ग से प्रवेश करूंगा।" खंडाहल भोर में महल में आए और

राजा से पूछा कि क्या उनकी रात सुखमयी गुजरी। तब राजा ने उन्हें बैठने का आदेश दिया और अपना प्रश्न पूछा। गुरु ने इस प्रकार वर्णन किया है:

पुप्पवती में एक समय एक दुष्ट राजा का राज था, जिसे अपनी जरूरत के समय
उसने अपने दुष्ट पुजारी खंडाहाला से पूछा, जो नाम का ब्राह्मण था लेकिन कर्मों में नहीं;
आप एक ऐसे द्रष्टा हैं जिन्हें, कहते हैं, समस्त पवित्र ज्ञान प्राप्त हो चुका है।
मुझे वह मार्ग बताओ जिसके यात्री अपने अच्छे कर्मों के फलस्वरूप स्वर्ग तक पहुंचते हैं।
अब यह एक ऐसा प्रश्न था जिसे सर्वज्ञानी बुद्ध या उनके शिष्यों की अनुपलब्धता में किसी बोधिसत्व से ही पूछा जाना चाहिए था, परन्तु राजा ने इसे खंडाहल से पूछा; ठीक वैसे ही जैसे कोई व्यक्ति जो सात दिनों से रास्ता भटका हो, वह किसी ऐसे व्यक्ति से मार्गदर्शन मांगे जो दो सप्ताह से रास्ता भटका हो। उसने मन ही मन सोचा, "अब समय आ गया है कि मैं अपने शत्रु को मार डालूँ, अब मैं चंदकुमार को मार डालूँगा और अपनी इच्छा पूरी करूँगा।" अतः उसने राजा से कहा:

"अत्यधिक दान देकर, उन लोगों को नष्ट कर दो जो मृत्यु के योग्य नहीं हैं।"
इस प्रकार असाधारण योग्यता वाले पुरुष अंततः जीत हासिल करते हैं और स्वर्ग के आनंद को प्राप्त करते हैं।
राजा ने पूछा:

"वे अनेक उपहार क्या हैं? और कौन है जिसे मारे जाने से बचाया जाना चाहिए?"
मैं उपहार दूंगा, पीड़ितों को मारूंगा, बशर्ते तुम अपना मतलब स्पष्ट कर दो।
फिर उन्होंने अपने कहने का अर्थ समझाया:

"तुम्हारे बेटों, तुम्हारी रानियों को बलि का बकरा बनाया जाना चाहिए, तुम्हारे व्यापारी राजकुमारों का भी पतन होना चाहिए।"
आपके सर्वोत्तम बैल, आपके सर्वोत्तम घोड़े, हाँ, चारों प्रकार के शिकार।
और इस प्रकार, जब उनसे स्वर्ग का मार्ग पूछा गया, तो उन्होंने उत्तर में नरक का मार्ग बताया।

उन्होंने मन ही मन कहा, "अगर मैं चंदकुमार को अकेले ले जाऊँगा तो वे सोचेंगे कि मैंने उससे दुश्मनी के कारण ऐसा किया है"; इसलिए उन्होंने उसे कई लोगों के साथ रखा। जब यह बात फैली तो राजमहल की महिलाओं ने अफवाह सुनकर दहशत फैला दी और तुरंत जोर से चिल्ला उठीं। इसका स्पष्टीकरण देते हुए गुरु ने एक श्लोक सुनाया:

शाही परिवार की महिलाओं ने यह खबर सुनी: "राजकुमारों और रानियों का अंत निश्चित है," वे रो पड़ीं।
और अचानक भय की एक कर्कश चीख चारों ओर से आकाश की ओर गूंज उठी।
पूरा राजपरिवार उस तरह व्याकुल था जैसे संसार के अंत में हवा से हिलते साल के पेड़ों का झुरमुट; यहाँ तक कि ब्राह्मण ने भी राजा से पूछा कि क्या उसके लिए यज्ञ करना संभव है। "हे गुरु, आपका क्या तात्पर्य है? यदि मैं यज्ञ करूँ तो मैं देवदूतों के लोक में चला जाऊँगा।" "हे राजा, जो डरपोक और दृढ़ निश्चयी नहीं होते, वे यह यज्ञ नहीं कर सकते। आप इन सबको यहाँ एकत्रित कीजिए, मैं यज्ञकुंड में यज्ञ करूँगा।" अतः राजा पर्याप्त सेना लेकर नगर से बाहर गया और एक समतल तल वाला यज्ञकुंड खुदवाने और उसके चारों ओर बाड़ लगाने का आदेश दिया; क्योंकि प्राचीन ब्राह्मणों ने इस बाड़ को बनवाने का आग्रह किया था, अन्यथा कोई धर्मात्मा तपस्वी या ब्राह्मण आकर यज्ञ को रोक सकता था।

राजा ने एक घोषणा भी करवाई, "मैं अपने पुत्रों, पुत्रियों और पत्नियों की बलि देकर देवताओं (देवदूतों) के लोक में जाऊंगा, तुम जाकर उन्हें यह सूचना दो और उन सबको यहाँ ले आओ"; और उसने तुरंत अपने पुत्रों को लाने का आदेश दिया।

"चंदा और सूर्या (*1) को मेरी इच्छा के बारे में चेतावनी दो, फिर भद्दासेना को भी।"
इसके बाद सूरा और वामागोत्ता का नंबर आएगा, उन सबको मरना होगा: मेरा इरादा अटल है।"
अतः वे सबसे पहले चंदकुमार के पास गए और बोले, "हे राजकुमार, तुम्हारे पिता तुम्हें मारकर स्वर्ग जाना चाहते हैं; उन्होंने हमें तुम्हें पकड़ने के लिए भेजा है।" "किसके आदेश पर उन्होंने मुझे पकड़ने का आदेश दिया है?" "खंडाहल के आदेश पर।" "क्या वे केवल मुझे ही पकड़ना चाहते हैं या मेरे साथ दूसरों को भी?" "तुम्हारे साथ दूसरों को भी, क्योंकि वे चार प्रकार के बलिदान चढ़ाना चाहते हैं।" उन्होंने मन ही मन सोचा, "उनकी दूसरों से कोई दुश्मनी नहीं है, परन्तु वे केवल मुझसे ही शत्रुता के कारण अनेकों को मृत्युदंड देना चाहते हैं, क्योंकि मैं उनके अन्यायपूर्ण निर्णय से उन्हें लूटपाट करने से रोकता हूँ; मेरा कर्तव्य है कि मैं अपने पिता से मिलूँ और उनसे बाकी सभी को छुड़ा लूँ।" अतः उन्होंने उनसे कहा, "मेरे पिता के आदेश का पालन करो।" वे उन्हें महल के प्रांगण में ले गए और उन्हें अकेले बिठा दिया, फिर वे अन्य तीन (*2) को लाए और उन्हें पास बिठाकर राजा को सूचित किया। तब राजा ने उनसे अपनी पुत्रियों को लाने और उन्हें भी दूसरों के पास बिठाने को कहा।

"उपसेनी और कोकिला, मुदिता, नंदा, प्रत्येक बारी-बारी से,
राजकुमारियों को उनके विनाश के बारे में बता दो, उन सबको मरना ही होगा: मेरा इरादा अटल है।"
अत: वे गए और उन्हें रोते-बिलखते हुए लाए और उनके भाइयों के पास रख दिया। तब राजा ने अपनी पत्नियों को पकड़ने का आदेश देने के लिए एक श्लोक पढ़ा:

"विजया को बताओ, सबसे पहले मेरी रानियों, सुनंदा, केसिनी, बारी-बारी से।"
अपनी सारी सुंदरता और आकर्षण के बावजूद, उन सबको मरना ही होगा: मेरा इरादा अटल है।"
फिर वे उन्हें भी जोर-जोर से विलाप करते हुए लाए और राजकुमारों के पास रख दिया। तब राजा ने एक श्लोक पढ़ा और उन्हें अपने चारों व्यापारियों को पकड़ने का आदेश दिया:

"पुन्नामुख और भद्दिया, सिंगला, वड्डा, प्रत्येक बारी-बारी से,
मेरे व्यापारियों तक मेरा आदेश पहुंचा दो, उन सबको मरना होगा: मेरा इरादा अटल है।"
राजा के अधिकारी गए और उन्हें ले आए। जब राजा के पुत्रों और पत्नियों को लाया गया तो नागरिकों ने एक शब्द भी नहीं कहा; परन्तु व्यापारियों का परिवार बहुत फैला हुआ था, और जब उन्हें पकड़ा गया तो पूरे शहर में हलचल मच गई। उन्होंने बलि दिए जाने का ज़ोरदार विरोध किया और अपने रिश्तेदारों के साथ राजा के समक्ष उपस्थित हुए। तब व्यापारियों ने अपने परिवार से घिरे हुए राजा से अपने जीवन को बख्शने की विनती की। इसका स्पष्टीकरण देते हुए गुरु ने कहा:

व्यापारियों ने तीखा विरोध जताया।
अपने बेटों और पत्नियों से घिरे हुए,
"सिर्फ़ बालों की चोटी रहने दो, सिर मुंडवा लो।"
हमें अपना गुलाम बना लो, लेकिन हमारी जान बख्श दो।"
फिर भी, उनकी विनती के बावजूद, उन्हें दया नहीं मिली। अंततः राजा के अधिकारियों ने बाकी लोगों को पीछे हटने के लिए मजबूर किया और व्यापारियों को राजकुमारों के पास खड़ा कर दिया।

तब राजा ने हाथियों और अन्य जानवरों को लाने का आदेश दिया:

"मेरे सभी हाथियों को यहाँ लाओ, जो अतुलनीय शक्ति और उच्च मूल्य के हैं।"
मेरे सबसे अच्छे घोड़े और खच्चर, उन सभी को बलिदान कर दिया जाए;
मेरे बैल, झुंड के सरदार, एक उत्कृष्ट भेंट होंगे;
और सभी पुरोहितों को तदनुसार उनके उपहार प्राप्त होंगे।
कल के उदय के प्रकाश के विरुद्ध बलिदान के लिए तैयार हो जाओ;
और राजकुमारों से कहो कि वे जी भरकर दावत करें, अपने जीवन की इस आखिरी रात का आनंद लें।"
राजा के माता-पिता अभी जीवित थे, इसलिए कुछ लोग उनके पास गए और उन्हें उनके पुत्र के प्रस्तावित बलिदान के बारे में बताया। शोक में व्याकुल होकर वे अपने हृदय को थामकर राजा के सामने रोते हुए बोले, "हे पुत्र, क्या यह सच है कि तुम ऐसा बलिदान देने जा रहे हो?"

शिक्षक ने इसका वर्णन इस प्रकार किया:

"मां ने अपना शाही घर छोड़ दिया, 'मेरे बेटे, इस भयानक चीज का क्या मतलब है?'"
क्या तुम्हारे इस क्रूर बलिदान के लिए तुम्हारे चारों बेटों को मौत के घाट उतारना होगा?
राजा ने उत्तर दिया:

"जब मैं चंदा को खो दूंगी तो मैं सब कुछ खो दूंगी; लेकिन उसे और उन्हें मैं छोड़ दूंगी।"
क्योंकि इस महान बलिदान के द्वारा ही मुझे स्वर्गिक जीवन प्राप्त होगा।
उनकी मां ने कहा:

"मेरे बच्चे, अपने बेटों की बलि देना कभी भी स्वर्ग के सुख की ओर नहीं ले जा सकता।"
ऐसी झूठी बातों पर ध्यान मत दो; नरक और अंधकार का मार्ग यही है।
सिद्ध सिद्ध मार्ग अपनाओ: अपनी सारी संपत्ति दान में दे दो।
और पृथ्वी पर किसी भी जीवित प्राणी को हानि न पहुँचाओ—यही स्वर्ग का निश्चित मार्ग है।

राजा ने उत्तर दिया:

मुझे अपने गुरु के शब्दों का पालन करना होगा, मेरे पुत्रों को तो निश्चित रूप से मार डाला जाएगा।
इनसे बिछड़ना वाकई बहुत मुश्किल है, लेकिन इसके बदले मुझे स्वर्ग ही मिलेगा।
इसलिए माँ अपने शब्दों से उसे समझाने में असफल होकर चली गई। फिर पिता को खबर मिली और वह विरोध करने आया।

शिक्षक ने घटना का वर्णन किया:

पिता वासवत्ती आए: "अजीब खबर सुनकर मेरी आत्मा भयभीत हो गई!"
क्या आपके इस घिनौने अनुष्ठान को पूरा करने के लिए आपके चारों बेटों को मौत के घाट उतारना ही होगा?
वही संवाद दोहराया जाता है और बूढ़ा राजा, अपने बेटे को मनाने में असमर्थ होकर, विदाई के शब्दों के रूप में ये दोहराते हुए चला जाता है:

अपनी क्षमता के अनुसार सब कुछ दें और कभी भी अपनी मर्जी से किसी भी जीवित प्राणी को हानि न पहुंचाएं;
और अपने बेटों को अंगरक्षक बनाकर तुम धरती को हर बुराई से बचाते हो।"
तब चंदकुमार ने मन ही मन सोचा, "मेरे अकेले कारण इतने सारे लोगों पर यह सारा दुख आ पड़ा है, मैं अपने पिता से विनती करूंगा और इन सबको मृत्यु के कष्ट से मुक्ति दिलाऊंगा"; इसलिए उसने अपने पिता से इस प्रकार कहा:

"हमें खंडाहाला के गुलाम बनने दो, लेकिन हमारी जान बख्श दो और हमें मारो मत।"
अगर उसकी यही इच्छा रही तो हम उसके घोड़ों और हाथियों को जंजीरों में बांधकर रखेंगे।
हमें खंडाहाला के गुलाम बनने दो, लेकिन हमारी जान बख्श दो और हमें मार मत डालो।
हम उसके अस्तबल और बाड़े साफ करेंगे, और अगर उसकी यही इच्छा हो तो जंजीरों में बंधकर भी काम करेंगे।
आप जिसे चाहें हमें गुलाम बना सकते हैं, हम आपके हाथों में गुलामों के समान हैं;
या फिर हमें अपने राज्य से निर्वासित कर दो ताकि हम परदेसियों में भीख मांगकर अपना पेट पालें।"
राजा ने उनकी चीखें सुनीं और उसका हृदय टूट गया; उसकी आँखों में आँसू भर आए और उसने उन सभी को मुक्त करने का आदेश दिया: "कोई भी मेरे पुत्रों को नहीं मारेगा, मुझे देवदूतों की दुनिया की कोई आवश्यकता नहीं है।"

"उनकी जान बचाने की ये दयनीय गुहारें मेरा दिल तोड़ देती हैं, जाओ उन्हें मुक्त करो।"
राजकुमारों को रिहा कर दो, उन्हें जाने दो: अब मुझे और बलिदान नहीं करना है।"
राजा की बात सुनकर उन्होंने राजकुमारों से लेकर पक्षियों तक सभी को मुक्त कर दिया। खंडाहल यज्ञगृह में व्यस्त था, तभी एक व्यक्ति ने उससे कहा, "हे दुष्ट खंडाहल, राजा ने राजकुमारों को मुक्त कर दिया है; क्या तुम जाकर अपने ही पुत्रों को मार डालोगे और उनके गले के रक्त से बलि चढ़ाओगे?" "राजा क्या कर रहा था?" वह चिल्लाया और जल्दी से दौड़कर उससे बोला:

मैंने तुम्हें पहले ही चेतावनी दी थी कि यह बलिदान कठिन और मुश्किल साबित होगा;
जब यह अनुष्ठान इतनी अच्छी तरह से शुरू हो चुका है तो इसे रोकने के लिए हस्तक्षेप क्यों किया जाए?
जो लोग इस प्रकार की भेंट चढ़ाते हैं, वे स्वर्ग जाने के एक निश्चित मार्ग से होकर गुजरते हैं;
या फिर वे लोग जो दूसरों को ऐसा करते देखकर दिल से इसकी सराहना करते हैं।"
क्रोधित ब्राह्मण के शब्दों को सुनकर, अंधे राजा ने धर्म पर ध्यान केंद्रित करते हुए अपने पुत्रों को वापस लाने का आदेश दिया। तब चंदकुमार ने अपने पिता से तर्क किया:

"हमारे जन्म के समय ब्राह्मण ने हमारे मार्ग पर व्यर्थ ही आशीर्वाद क्यों दिए?"
जब यह हमारी नियति थी कि हम आपके क्रोध के निर्दोष शिकार बनकर मरें?
जब हम अभी बच्चे थे, इतने छोटे थे कि इस आघात को महसूस नहीं कर सकते थे, तब आपने हमें क्यों बख्श दिया?
हमें आज ही मरना है, क्योंकि हम जवानी के सुखों को जान चुके हैं।
कल्पना कीजिए कि हम कवच पहने हुए घोड़े या हाथी पर सवार होकर युद्ध के मैदान में जा रहे हैं।
और फिर यहाँ बलि के रूप में मारे गए पीड़ितों के रूप में—क्या यह सही हो सकता है?
किसी विद्रोही सरदार के खिलाफ लड़ाई में या किसी जंगल में, जैसे कि मैं
जिनकी सेवा करने की आदत थी, अब तुम उन्हें बिना किसी कारण या वजह के मार रहे हो।
उन जंगली पक्षियों को देखो जो पेड़ों के बीच घोंसला बनाते हैं और दिन भर गाते रहते हैं।
वे अपने बच्चों से प्यार करते हैं और उनकी अच्छी तरह देखभाल करते हैं—और क्या आप अपने बच्चों को मार डालेंगे?

और यह भी मत सोचो कि मेरे जाने के बाद तुम्हारा वह कपटी ब्राह्मण मित्र तुम्हारी जान बख्शेगा;
हे राजा, अब आपकी बारी आएगी: मैं अकेला नहीं मरूंगा।
राजा इन ब्राह्मणों को गाँव देते हैं, उत्तम नगर उनके उपहार होते हैं।
वे प्रत्येक परिवार का भरण-पोषण करते हैं और एक बड़ी विरासत अर्जित करते हैं;
और हे महाराज, ये वही सहायक हैं जिन्हें वे सबसे आसानी से धोखा देते हैं;
मेरी बात मानो, ब्राह्मण संप्रदाय हमेशा अविश्वासी और कृतघ्न होते हैं (*3)।"
अपने बेटे की फटकार सुनकर राजा ने हैरानी से कहा:

"उनकी जान बचाने की ये दयनीय गुहारें मेरा दिल तोड़ देती हैं, जाओ उन्हें मुक्त करो।"
राजकुमारों और बाकी सबको रिहा कर दो, अब मुझे और बलिदान नहीं देना है।"
खंडाहला पहले की तरह फिर से दौड़कर आया और अपने पुराने विरोध को दोहराया; और राजकुमार ने फिर से अपने पिता से तर्क किया:

"यदि अपने पुत्रों का बलिदान करने वाले, मरने के बाद, सभी महिमामंडित होते हैं,
तब ब्राह्मण अपनी भेंट चढ़ाए; राजा मार्गदर्शक के रूप में उसका अनुसरण करे।
यदि पुत्रों का बलिदान करने वाले मरने के बाद सीधे स्वर्ग जाते हैं,
ब्राह्मण स्वयं को और अपने पूरे परिवार को अर्पण क्यों नहीं करता?
नहीं, बल्कि जो लोग ऐसे बलिदानों की बलि देते हैं, वे सब नरक में जाएंगे।
और जो लोग इस कृत्य को स्वीकार करने का साहस करेंगे, वे भी अंत में नष्ट हो जाएंगे।
जब राजकुमार ने ये शब्द कहते हुए पाया कि वह अपने पिता को मना नहीं सकता, तो वह राजा के चारों ओर खड़े लोगों की ओर मुड़ा और उनसे इस प्रकार कहा:

"यहाँ मौजूद माता-पिता चुपचाप देखते हुए कैसे खड़े रह सकते हैं, और कोई भी..."
अपने बच्चों से इतना प्यार करने के कारण, क्या राजा को अपने बेटे की हत्या करने से रोका जा सकता है?
मुझे राजा का कल्याण पसंद है, मुझे आपके दिलों में खुशी देखना अच्छा लगता है।
और क्या तुममें से कोई भी विरोध की आवाज उठाने वाला नहीं मिला?
लेकिन किसी ने एक शब्द भी नहीं कहा। तब राजकुमार ने अपनी पत्नियों से कहा कि वे जाकर राजा से दया दिखाने की विनती करें:

"हे कुलीन महिलाओं, जाओ, अपनी प्रार्थनाओं के साथ राजा से विनती करो, उसके पुजारी से विनती करो,"
अपने उन निर्दोष पुत्रों को बख्शने के लिए, जो युद्ध की सबसे कठिन परीक्षा में सिद्ध हो चुके थे;
राजा से विनती करो, पुजारी से विनती करो, कि इन निर्दोष पुत्रों को बख्श दिया जाए।
जिनके नाम विश्व भर में प्रसिद्ध हैं, जो उनके देश और समय की शान हैं।"
वे राजा के पास गए और उससे दया दिखाने की विनती की; लेकिन राजा ने उनकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया। तब राजकुमार ने स्वयं को असहाय महसूस करते हुए विलाप करना शुरू कर दिया:

"काश, मेरा जन्म दरबारों के एकांत में हुआ होता,"
किसी मोची, सफाईकर्मी या समाज से बहिष्कृत व्यक्ति की छत के नीचे,
मुझे अपने जीवन के अंतिम दिन शांति से बिताने चाहिए थे।
न ही वह राजा की इच्छा का शिकार होकर मरा।
फिर उसने कहा:

"जाओ, तुम सब औरतें एक समूह में, खांदहला के पतन से पहले नीचे झुक जाओ,"
और उससे कहो कि तुमने उसका कोई नुकसान नहीं किया है, तुम पूरी तरह निर्दोष हो।"
ये शिक्षक के शब्द हैं:

"जब सेला अपने भाइयों को राजा द्वारा सजा सुनाए जाते हुए देखती है तो वह जोर-जोर से विलाप करती है।"
"लोग कहते हैं कि मेरे पिता स्वर्ग की कामना करते हैं, और यही वास्तव में उनका बलिदान है।"
लेकिन राजा ने उसकी ओर भी कोई ध्यान नहीं दिया। तब राजकुमार के पुत्र वासुला ने अपने पिता का दु:ख देखकर कहा, "मैं अपने दादा से विनती करूँगा, मैं उनसे अपने पिता का जीवनदान करवाऊँगा," और वह राजा के चरणों में गिरकर रोने लगा।

शिक्षक ने इसका वर्णन इस प्रकार किया:

फिर वासुला अनिश्चित कदमों से इधर-उधर सिंहासन की ओर बढ़ी।
"हे पिता, हम बच्चों पर दया करो, हमें असहाय और अकेला मत छोड़ो।"
राजा ने उसका विलाप सुना, और उसका हृदय मानो दो टुकड़ों में बंट गया, उसने आँखों में आँसू लिए लड़के को गले लगाया और उससे कहा, "हिम्मत रखो, मेरे बच्चे, मैं तुम्हारे पिता को तुम्हें सौंप दूँगा," और उसने अपने आदेश दिए:

"ये रहे तुम्हारे पिता, वासुला; तुम्हारे शब्द मुझ पर हावी हो गए हैं, वे स्वतंत्र हैं।"
राजकुमारों को रिहा कर दो, उन्हें जाने दो, अब मुझे और बलिदान नहीं देना है।"
फिर से खंडाहला ने अपने पुराने विरोध के साथ मोर्चा संभाला, और एक बार फिर राजा ने आँख बंद करके उसकी बातों पर विश्वास कर लिया और अपने बेटों को वापस पकड़ने का आदेश दे दिया।

तब खंडाहल ने मन ही मन सोचा, "यह दयालु राजा अब अपने पुत्रों को पकड़ता है और अब उन्हें छोड़ देता है; अब वह अपने बच्चों के कहने पर उन्हें फिर से छोड़ देगा; मैं उसे यज्ञकुंड में ले जाऊंगा।" अतः उसने उसे वहाँ जाने के लिए प्रेरित करने हेतु एक श्लोक दोहराया:

"बलिदान तैयार कर लिया गया है, सबसे कीमती खजाने दे दिए गए हैं:
हे राजा, इसे अर्पित करो और स्वर्ग के सर्वश्रेष्ठ आनंदों को प्राप्त करो।
जब वे बोधिसत्व को यज्ञकुंड में ले गए तो राजसी महिलाएं एक समूह में बाहर निकल गईं।

शिक्षक ने इसका वर्णन इस प्रकार किया है:

"राजकुमार चंदा की सात सौ रानियाँ, अपनी युवावस्था की पूरी चमक में दमक रही थीं,
बिखरे बालों और रोती आंखों के साथ, वह नायक के पीछे-पीछे उसकी मृत्यु की ओर चल पड़ी;
और अन्य महिलाएं स्वर्ग से आई हुई आत्माओं की तरह समूह में शामिल हो गईं।
बिखरे बालों और नम आंखों के साथ, वह नायक के पीछे-पीछे चल रही थी।
तब वे सब जोर-जोर से रोने लगे:

"कान की बालियों, अगरबत्ती, चंदन के साथ, महंगी काशी रेशम में,"
वहाँ चंदा, सूर्या (*4) को बलिदान के लिए ले जाया जा रहा है।
अपनी मां के दिल को पीड़ा से छलनी करते हुए, नागरिकों को उदासी से भरते हुए,
देखो चंदा, सूर्या को वहाँ क्रूरतापूर्वक उनकी मौत की ओर ले जाया जा रहा है।
काशी के सफेद वस्त्रों में लिपटे और सबसे उत्तम सुगंधों से स्नान और सुगंधित,
देखो चंदा, वहां सूर्या को राजा के आदेश पर बलि के रूप में ले जाया जा रहा है।
जो लोग कभी हाथियों पर सवार होते थे, वे हर किसी के लिए एक शानदार दृश्य थे।
देखो, हमारी चंदा, सूर्या वहाँ पैदल चलकर मरने जा रही है।
जो लोग रथों, खच्चरों या सोने से सजे घोड़ों पर सवार होने के आदी थे,
वहाँ हमारे चंदा, सूर्या (*5) को देखो, रात होने से पहले मरने के लिए पैदल ही परिश्रम कर रहे हैं।"
जब रानियाँ इस प्रकार शोक मना रही थीं, तब अधिकारी बोधिसत्व को शहर से बाहर ले गए। पूरा शहर बड़े उत्साह के साथ उनके साथ निकला। लेकिन जब इतने सारे लोग निकले, तो द्वार इतने चौड़े नहीं थे कि उन्हें निकलने की जगह मिल सके; और ब्राह्मण को आशंका हुई कि कहीं कुछ हो न जाए, इसलिए उसने द्वार बंद करने का आदेश दिया। इस प्रकार लोगों को निकलने का कोई रास्ता नहीं मिला; लेकिन भीतरी द्वार के पास एक बगीचा था, और वे वहाँ एकत्रित होकर राजकुमार के भाग्य पर ज़ोर-ज़ोर से शोक मनाने लगे; और उनकी आवाज़ सुनकर आकाश में पक्षियों का एक बड़ा समूह इकट्ठा हो गया। नागरिकों ने सामूहिक विलाप किया और इस प्रकार पक्षियों को संबोधित किया:

"पक्षियों, क्या तुम मांस खाना चाहोगे? तो पुप्पावती के पूर्वी द्वार की ओर उड़ जाओ।"
वहां पागल राजा घृणा से अंधा होकर अपने चार बहादुर बेटों की बलि दे रहा है।
हे पक्षियों, क्या तुम मांस का भोज करना चाहते हो? तो पुप्पावती के पूर्वी द्वार की ओर उड़ जाओ।
वहाँ पागल राजा अपनी अंधी नफरत में चार बेटियों की बलि दे रहा है (*6)।"
इस प्रकार सभी लोग बगीचे में शोक मनाते रहे। फिर वे बोधिसत्व के घर गए, जुलूस में उसके चारों ओर घूमते हुए और रानियों के कमरों, मीनारों और बगीचों, उपवनों और झीलों और हाथियों के अस्तबलों को देखते हुए विलाप करते रहे (*7)।

"निरंतर गांव एकांत वन की ओर मुड़ जाते हैं;
यदि एक बार हमारे राजकुमारों ने अपना रक्त बहा दिया, तो हमारी राजधानी भी उजाड़ हो जाएगी।
शहर से बाहर निकलने का कोई रास्ता न मिलने पर, वे शहर की दीवारों के भीतर शोक मनाते हुए भटकते रहे।

इसी बीच बोधिसत्व को यज्ञकुंड में ले जाया गया। तब उनकी माता, रानी गौतमी, राजा के चरणों में गिर पड़ीं और आँसू बहाते हुए उनसे अपने पुत्र के जीवन को बख्शने की विनती करने लगीं।

मैं अपने शोक में पागल हो जाऊँगा, धूल से ढका हुआ, क्षत-विक्षत, उदास।
यदि मेरे पुत्र चंदा (*8) की मृत्यु हो गई, तो शोक मनाते-करते मेरी सांसें रुक जाएंगी।"
जब राजा से कोई जवाब नहीं मिला, तो उसने राजकुमार की चारों पत्नियों को गले लगाया और उनसे कहा, "मेरा बेटा आपसे नाराज़ होकर चला गया होगा, आप उसे वापस लौटने के लिए क्यों नहीं मनातीं?"

"आप लोग खड़े-खड़े एक-दूसरे से प्रेमपूर्वक बातें क्यों नहीं करते?"
और एक-दूसरे का हाथ थामे खुशी से उसके चारों ओर नाचें।
जब तक उसका दुख दूर न हो जाए और वह आपके आदेश पर ठीक न हो जाए,
भला कौन तुम्हारे जैसा नृत्य कर सकता है, चाहे सारी धरती छान मारी जाए?
फिर जब उसे कोई और उपाय नहीं सूझा तो उसने शाही महिलाओं के साथ शोक मनाना बंद कर दिया और खंडाहला को कोसना शुरू कर दिया।

"अब हे क्रूर पुजारी, तेरी माता को इस सारी कड़वी पीड़ा का अनुभव हो।"
जब मैं अपनी प्यारी चंदा को मरते हुए देखता हूँ तो मेरा दिल टूट जाता है (*9)।
अब हे क्रूर पुजारी, तेरी पत्नी को सारी पीड़ा सहनी पड़े।
जब मैं अपने प्यारे सूर्या को मरते हुए देखता हूँ तो मेरी आत्मा दहक उठती है;
हे क्रूर पुजारी, आज वह अपने बेटों और पति को मरते हुए देखे।
दुनिया के गौरव और शान को भी वे निर्दोष शेर जैसे दिल वाले लोग मार डालेंगे।"
तब बोधिसत्व ने यज्ञकुंड में अपने पिता से विनती की (*10):

कुछ स्त्रियाँ पुत्रों की कामना करती हैं और उनके लिए प्रार्थना करती हैं तथा स्वर्ग को भेंट और उपहार अर्पित करती हैं।
वे बेटों और पोतों के लिए भी तरसते हैं, लेकिन उनके घरों को खुशियों से भरने के लिए कोई नहीं दिया जाता;
हे प्रभु, प्रार्थना के उत्तर में दी गई इस क्षमा के बावजूद हमें इस प्रकार निर्दयतापूर्वक मत मारो।
और न ही हमारी माँ की तमाम देखभाल के बावजूद हमें कोई बलिदान चढ़ाओ।"
जब उसे अपने पिता से कोई जवाब नहीं मिला, तो वह अपनी माँ के चरणों में विलाप करने गिर पड़ा:

"तुमने अपने बेटे की कोमलता से देखभाल की है, लेकिन अब तुम्हारे हिस्से में जो आया है वह बहुत कठिन है।"
मैं आपके पवित्र चरणों में नमन करता हूँ: मेरे पिता पर सभी आशीर्वाद हों।
मुझे अपने पैर एक बार फिर चूमने दो, मुझे गले लगाओ, माँ, इससे पहले कि हम अलग हो जाएं।
यह एक लंबी यात्रा है जो मैं तय कर रहा हूँ, और यह तुम्हारे दिल के लिए एक गहरा दुख है।"
तब उसकी माँ ने विलाप करते हुए अपने गीत गाए:

"मेरे प्रिय पुत्र, अपने सिर पर कमल के पत्तों का मुकुट बांध लो।"
चंपक के फूलों से आपकी मर्दाना सुंदरता और भी निखरती है।
अंतिम बार अपने आप को उन सभी अनमोल और दुर्लभ मलहमों से अभिषेक करें।
पुराने जमाने में राजा के दरबार में होने वाले उत्सवों में आप वही पहना करते थे।
मेरे बेटे, आखिरी बार चमकीले काशी रेशम के सुंदर वस्त्र पहन लो।
और वे गहने और मोती पहनें जो आपको उत्सव के दिन पहनने चाहिए।
तब उनकी प्रमुख रानी, चंदा, उनके चरणों में गिर पड़ी और घोर विलाप करने लगी:

"यह भूमि का स्वामी, यह संप्रभु राजा, जिसकी इच्छा उसके समस्त राज्य में पूरी होती है,"
अपने देश की सारी संपत्ति का इकलौता वारिस होने के बावजूद, उसे अपने बेटे से कोई स्नेह नहीं है।
जब राजा ने उसकी बात सुनी तो उसने उत्तर दिया:

"मेरे पुत्र प्रिय हैं, मैं स्वयं प्रिय हूं, और आप, मेरी रानियां, भी प्रिय हैं;"
मैं अपने बेटे की बलि इसलिए देता हूँ क्योंकि मैं स्वर्ग जाना चाहता हूँ, नरक नहीं।
चंदा ने हैरानी से कहा:

"हे राजा, दया करके पहले मुझे मार डालो, न कि पीड़ा से मेरा हृदय चीर दो।"
आपका बेटा दोनों गुणों से परिपूर्ण है, वह हर मायने में संपूर्ण है।
हम दोनों को एक साथ ढेर पर मार डालो, और मुझे वहीं जाने दो जहाँ चंदा जाती है:
आपको असीम पुण्य प्राप्त होगा, दो आत्माएं स्वर्ग की शांति में प्रवेश करेंगी।
राजा ने उत्तर दिया:

समय से पहले मृत्यु की कामना मत करो; तुम्हारे पास वीर साले हैं;
"वे तुम्हें सांत्वना देंगे, हे बड़ी-बड़ी आँखों वाली, उस प्यारे राजकुमार के लिए जिसे तुमने अब खो दिया है।"
फिर उसने अपने हाथों से अपनी छाती पीटी, और जहर पीने की धमकी दी, और अंत में वह जोर-जोर से रोने लगी:

इस राजा के आसपास कोई मित्र या सलाहकार नहीं हैं।
कौन हिम्मत कर सकता है उसे ऐसा न करने की चेतावनी देने की?
उसके पास एक भी वफादार सेवक नहीं है।
कौन हिम्मत कर सकता है उसे अपने बेटे की हत्या न करने के लिए मनाने की?
उनके अन्य पुत्रों में भी उतनी ही बहादुरी झलकती है।
उन्हें अर्पित कर चंदा को मुक्त कर दिया जाए।
मुझे टुकड़ों में काट दो, मुझे बलि चढ़ा दो, लेकिन मेरे सबसे बड़े बेटे, मेरे योद्धा को बख्श दो।
वह व्यक्ति जिसका संसार आदर करता था, युद्ध में शेर जैसा साहस रखने वाला।"
इस प्रकार अपने मन को शोक में डुबो देने और कोई सांत्वना न मिलने पर, वह बोधिसत्व के पास गई और उनके पास खड़ी होकर रोने लगी, जब तक कि उन्होंने उससे कहा, "हे चंदा, अपने जीवनकाल में मैंने तुम्हें सामाजिक समारोहों में अनेक प्रकार के मोती और रत्न भेंट किए हैं; अब आज मैं तुम्हें अपने शरीर का यह अंतिम आभूषण देता हूँ; कृपया इसे स्वीकार करो।"

चंदा फूट-फूटकर रोने लगी और उसने निम्नलिखित पंक्तियाँ बोलीं:

"कभी उनके कंधे फूलों से जगमगाते थे, जो उनके मुकुट की तरह लटकते थे।"
आज वह क्रूर, तेज, चमकीली तलवार उन पर अपनी काली छाया फैला रही है।
जल्द ही तलवार उस निर्दोष शाही गर्दन पर आ गिरेगी।
आह! मेरे दिल को लोहे के बंधनों से बांधना होगा, नहीं तो यह टूटने के अलावा और क्या कर सकता है?
अगरबत्ती और चंदन से सजे वस्त्र पहने, कीमती रेशम और कई अंगूठियां पहने हुए,
हे चंदा-सूर्या, राजा के लिए उचित बलिदान के रूप में चिता पर जाओ।
अगरूम के साथ, चंदन के साथ, रेशमी वस्त्रों और कीमती रत्नों के साथ,
हे चंदा-सूर्या, उस चिता पर जाओ, जो महान राजा का योग्य बलिदान है।
भेंट के लिए स्नान किया हुआ, रेशम और रत्नों से सजी हुई, आने वाले प्रहार की प्रतीक्षा में,
जाओ, चंदा-सूर्या, उस ढेर की ओर, जहाँ लोगों के दिलों को पीड़ा से भर दिया जाएगा।
जब वह इस प्रकार शोक मना रही थी, तब यज्ञगृह में सभी तैयारियाँ पूरी हो चुकी थीं। वे राजकुमार को लाए और उसकी गर्दन आगे की ओर झुकाकर उसे उचित स्थान पर बिठा दिया। खंडाहाला ने सोने का कटोरा पास रखा और तलवार लेकर खड़ा हो गया, और बोला, "मैं इसकी गर्दन काट दूँगा।" जब रानी काना ने यह देखा, तो उसने मन ही मन कहा, "मेरे पास कोई और सहारा नहीं है, मैं अपने स्वामी को सत्य की अपनी पूरी शक्ति से आशीर्वाद दूँगी," और उसने हाथ जोड़कर सभा के बीच चलते हुए सत्य की दृढ़तापूर्वक घोषणा की।

शिक्षक ने इसका वर्णन इस प्रकार किया:

"जब अनुष्ठान के लिए सब कुछ तैयार हो जाता है और चंदा बैठकर प्रहार की प्रतीक्षा करती है,
पंचाल राजा की पुत्री सभा में उपस्थित सभी उच्च वर्ग और निम्न वर्ग के लोगों के बीच से गुजरी:
"यहाँ ब्राह्मण अपने छल से एक घृणित उद्देश्य की पूर्ति कर रहा है,
इसलिए, आशा है कि मेरे प्रिय प्रभु मुझे कुछ ही समय में पुनः प्राप्त कर लेंगे।
इस स्थान पर मौजूद सभी आत्माएं—भूत, जिन्न, परियां—मेरी बात सुनें।

मेरी आज्ञा का निष्ठापूर्वक पालन करो और मुझे मेरे स्वामी से मिला दो।
हे इस स्थान को सुशोभित करने वाले सभी देवताओं (देवदूतों), मैं आपके चरणों में नतमस्तक होता हूँ।
मेरी बेबसी में मेरी रक्षा करो, मेरी पुकार पर दया करो।"
देवताओं (देवदूतों) के राजा सक्का (इंद्र) ने उसकी चीख सुनकर और जो कुछ हुआ था उसे देखकर लोहे का एक धधकता हुआ गोला उठाया और राजा को डराकर सभा को तितर-बितर कर दिया।

शिक्षक ने दृश्य का वर्णन किया है:

"एक दिव्य प्राणी ने पुकार सुनी और सही की मदद करने के लिए पृथ्वी पर आया।"
धधकते लोहे के पिंड को घुमाते हुए, अत्याचारी के हृदय में भय भर दिया,
"हे अत्याचारी, मुझे जानो कि मैं कौन हूँ; मेरे हथियार पर ध्यान दो,"
अपने निर्दोष बड़े बेटे को, जो युद्धक्षेत्र का शेर है, हानि न पहुँचाओ।
पृथ्वी पर ऐसा अपराध कहाँ देखा गया है, जिसमें तुम्हारे पुत्रों और उनकी पत्नियों को वध के लिए सौंप दिया गया हो?
आपके सभी श्रेष्ठ नागरिकों के साथ, जो मेरे सर्वोच्च स्वर्ग को भरने के योग्य हैं?
तब अत्याचारी और उसके मंत्री ने निर्दोष पीड़ितों को मुक्त कर दिया, और सारी भीड़ ने लाठी-पत्थर उठा लिए, और उन्मादपूर्ण उल्लास में आकर खंडाहाला को उसकी क्रूरता का तुरंत बदला लेने पर मजबूर कर दिया।

जब उन्होंने मंत्री की हत्या कर दी, तो विशाल भीड़ ने राजा को स्वयं मार डालने का प्रयास किया; परन्तु इंद्र ने उन्हें आलिंगन में ले लिया और उन्हें ऐसा करने से रोक दिया। पर्ची ने निर्णय किया कि वे राजा को बख्श देंगे, "पर हम उन्हें इस नगर में शासन या निवास नहीं देंगे, हम उन्हें बहिष्कृत कर देंगे और इस नगर से बाहर उनका निवास स्थान तय करेंगे।" अतः उन्होंने राजा के राज वस्त्र उतार दिए और उन्हें पीले वस्त्र पहनाए, उनके सिर पर पीला कपड़ा डाला और उन्हें बहिष्कृत करके एक बहिष्कृत बस्ती में भेज दिया। और जिन लोगों ने किसी भी प्रकार से यज्ञ में सहायता की थी या उसका समर्थन किया था, वे सभी अपने हिस्से के रूप में नरक में गए।

शिक्षक ने यह श्लोक कहा:

"जिन लोगों ने ऐसा घिनौना काम किया, वे सीधे नरक में गए, कोई भी वहां से लौट नहीं सका।"
जिस किसी पर भी इस प्रकार के कलंक का जरा सा भी निशान हो, उसे स्वर्ग में परलोक ही प्राप्त होगा।
महान लोगों ने दुष्टता के उन दो राक्षसों को दृष्टि से ओझल करवाकर राज्याभिषेक की सामग्री लाई और राजकुमार चंदा का राजा के रूप में अभिषेक किया।

जब सभी कैदियों को रिहा कर दिया गया, तो एक विशाल सभा एकत्रित हुई।
भव्य धूमधाम और उत्सव के साथ चंदा को राजा के रूप में अभिषेक किया गया;
देवताओं (देवदूतों) और मनुष्यों की एक विशाल सभा ने कपड़े और झंडे लहराए और उनकी स्तुति में गीत गाए।
समृद्धि, शांति और सुखद दिनों के एक नए और खुशहाल शासनकाल की शुरुआत।
पुरुष, महिलाएं, देवी-देवता (देवदूत) सभी एक महान उत्सव में शामिल हुए।
हर घर में सुख और शांति का माहौल छा गया और हर कैदी को रिहा कर दिया गया।
बोधिसत्व ने अपने पिता की सभी ज़रूरतों का ध्यान रखा, लेकिन उन्हें नगर में प्रवेश करने की अनुमति नहीं थी। जब उनका सारा भत्ता समाप्त हो जाता था, तो वे बोधिसत्व के पास जाया करते थे, जब बोधिसत्व सार्वजनिक उद्यानों या अन्य सार्वजनिक कार्यक्रमों में मनोरंजन के लिए जाते थे। ऐसे समय में वे अपने पुत्र को प्रणाम करने के लिए हाथ नहीं जोड़ते थे, क्योंकि वे मन ही मन कहते थे, "मैं ही सच्चा राजा हूँ," बल्कि वे उन्हें संबोधित करते थे, "हे गुरु, दीर्घायु हों।" जब उनसे पूछा जाता था कि उन्हें क्या चाहिए, तो वे बता देते थे, और बोधिसत्व उन्हें वह राशि देने का आदेश देते थे।

जब गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त किया, तो उन्होंने आगे कहा, "भाइयों (भिक्षुओं), यह पहली बार नहीं है कि देवदत्त ने केवल मेरे कारण अनेक लोगों को मारने का प्रयास किया है; उसने पहले भी ऐसा ही किया था।" फिर उन्होंने जन्म का विवरण दिया: "उस समय देवदत्त खंडाहल थे, महामाया (बुद्ध की दिवंगत माता) रानी गौतमी थीं, राहुल की माता (बुद्ध की पत्नी) चंदा थीं, राहुल (बुद्ध के पुत्र) वासुला थे, उप्पलावन्न सेला थे, वाम वंश के कश्यप सूर थे, मोग्गल्याण चंदसेना थे, सारिपुत्र राजकुमार सूरिया थे और मैं स्वयं चंदराज था।"

फुटनोट:

(1) विद्वान आगे कहते हैं कि ये रानी गौतम के पुत्र थे, लेकिन शायद चंदा-सूरिया केवल एक ही नाम है; आगे देखें। अंतिम सारांश में दो राजकुमारों का विशेष रूप से उल्लेख और पहचान की गई है।

(2) क्या यह "चार" नहीं होना चाहिए?

(3) फिर वह छह छंदों को दोहराता है, "आइए हम खंडाहाला के गुलाम बनें," ..(और पहले जैसा ही)

(4) यह देखना दिलचस्प है कि गद्य में केवल एक ही राजकुमार है, लेकिन छंदों में दो राजकुमार प्रतीत होते हैं।

(5)चार रानियों, गृहस्थों, हाथियों, घोड़ों, बैलों और चार प्रकार के बलिदानों के पूर्ण बलिदान के बारे में छह श्लोक यहाँ छोड़ दिए गए हैं।

(6) यहां 15 छंदों को छोड़ दिया गया है, वे केवल दोहराते हैं

(7)इस श्लोक को चंदा के स्थान पर सूरिया नाम से दोहराया गया है।

(8)सं. 285

(9) छूटी हुई पंक्तियाँ दोहराई गईं

(10)तस्सु.

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **भूरिदत्त-जातक**
***स्रोत**: ई.बी. कोवेल और डब्ल्यू.एच.डी. राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----॥-543-॥----->>>> अगला

जातक क्रमांक 543
भूरिदत्त-जातक

"जो भी रत्न हों," इत्यादि। यह कथा गुरुजी ने श्रावस्ती नगर में रहते हुए कुछ गृहस्थ भिक्षुओं के बारे में सुनाई, जो व्रत रखते थे। कहा जाता है कि एक व्रत के दिन वे सुबह जल्दी उठे, व्रत धारण किया, दान दिया और भोजन के बाद अपने हाथों में इत्र और मालाएँ लेकर जेतवन मठ गए, और धर्ममार्ग का उपदेश सुनने के समय एक तरफ बैठ गए। गुरुजी सत्य के हॉल में आकर, सजे हुए बुद्ध-आसन पर बैठ गए और भिक्षुओं की सभा को देखने लगे। तथागत (बुद्ध) भिक्षुओं या अन्य लोगों में से उन लोगों से बात करना पसंद करते हैं, जिनके संदर्भ में कोई धार्मिक प्रवचन होता है; इसलिए उस अवसर पर, क्योंकि वे जानते थे कि इन गृहस्थ भिक्षुओं के संबंध में पूर्व शिक्षकों के बारे में एक धार्मिक प्रवचन होगा, उनसे बातचीत करते समय उन्होंने उनसे पूछा, "हे गृहस्थ भिक्षुओं, क्या आप व्रत रखते हैं?" उनके सकारात्मक उत्तर देने पर उन्होंने कहा, "हे गृहस्थ भाइयों, यह उचित और सराहनीय है; परन्तु इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं कि आप, जिनके पास मुझ जैसा बुद्ध गुरु है, व्रत रखते हैं। प्राचीन काल के ऋषि, जिनके पास कोई गुरु नहीं था, उन्होंने भी महान यश का त्याग कर व्रत रखा था।" और ऐसा कहकर उन्होंने उनके अनुरोध पर अतीत की एक पुरानी कथा सुनाई।

एक समय की बात है, ब्रह्मदत्त बनारस में राज्याभिषेक कर रहे थे, उन्होंने अपने पुत्र को वायसराय बनाया था; परन्तु जब उन्होंने अपने पुत्र की अपार ख्याति देखी, तो उन्हें संदेह हुआ कि कहीं वह भी राज्य पर कब्जा न कर लें। अतः उन्होंने अपने पुत्र से कहा, "तुम यहाँ से चले जाओ और जहाँ चाहो वहाँ निवास करो, और मेरी मृत्यु के बाद वंशानुगत राज्य ग्रहण कर लेना।" राजकुमार ने आज्ञा का पालन किया और अपने पिता को प्रणाम करके यमुना नदी की ओर प्रस्थान किया। उन्होंने नदी और समुद्र के बीच पत्तों की एक कुटिया बनाई और वहीं रहने लगे, जड़ और फल खाकर अपना जीवन यापन करने लगे। उसी समय, समुद्र के नीचे नागलोक में रहने वाली एक युवती, जिसका पति मर चुका था और जिसने अपने कामुक आवेगों के कारण अन्य नागों को उनके पतियों के साथ सुखी देखकर नागलोक छोड़ दिया था, समुद्र तट पर भटक रही थी। तभी उसने राजकुमार के पदचिह्न देखे और उनका अनुसरण करते हुए पत्तों की कुटिया देखी। संयोगवश, राजकुमार विभिन्न प्रकार के फलों की खोज में बाहर गए हुए थे। वह कुटिया में दाखिल हुई और लकड़ी का पलंग और बाकी फर्नीचर देखकर मन ही मन सोचने लगी, "यह किसी तपस्वी का निवास स्थान है। मैं इसकी परीक्षा लूंगी कि यह

आस्थावान तपस्वी है या नहीं। यदि यह आस्थावान तपस्वी है और आत्म-त्यागी है, तो यह मेरे सजे हुए पलंग को स्वीकार नहीं करेगा; लेकिन यदि यह हृदय से सुखप्रिय है और आस्थावान तपस्वी नहीं है, तो यह मेरे पलंग पर लेटेगा; तब मैं इसे अपना पति बना लूंगी और यहीं निवास करूंगी।" अतः वह नागलोक लौट गई और दिव्य फूल और सुगंधित पदार्थ एकत्र करके फूलों का पलंग सजाया। फूलों की आहुति देकर और सुगंधित पाउडर छिड़ककर कुटिया को सजाकर वह नागलोक चली गई। जब राजकुमार शाम को लौटा और कुटिया में दाखिल हुआ, और उसने जो कुछ किया था, उसे देखकर उसने कहा, "यह पलंग किसने सजाया है?" जब उसने तरह-तरह के फल खाए, तो वह बोला, "ओह, ये मीठी सुगंध वाले फूल, ये बिस्तर कितना सुंदर सजाया गया है!" और प्रसन्नता से भर उठा, क्योंकि वह हृदय से सच्चा तपस्वी नहीं था, इसलिए वह फूलों के बिस्तर पर लेट गया और गहरी नींद सो गया। अगले दिन वह सूर्योदय के समय उठा और अपनी कुटिया से पत्तों की सफाई किए बिना ही फल इकट्ठा करने चला गया। उसी क्षण नाग स्त्री आई और मुरझाए हुए फूलों को देखकर तुरंत समझ गई, "यह व्यक्ति सुख का प्रेमी है, आस्थावान तपस्वी नहीं; मैं इसे पकड़ लूंगी"; इसलिए उसने पुराने फूल ले लिए और नए फूल लाकर एक नया बिस्तर बिछाया, कुटिया को पत्तों से सजाया और ढके हुए रास्ते में फूल आदि बिखेर दिए और फिर नागलोक लौट गई। उसने उस रात भी उसी फूलों के बिस्तर पर विश्राम किया और अगले दिन मन ही मन सोचा, "इस कुटिया को कौन सजा रहा है?" इसलिए वह फल इकट्ठा करने नहीं निकला, बल्कि कुटिया से कुछ दूर छिपा रहा। नाग स्त्री, इत्र और फूल इकट्ठा करके, आश्रम के रास्ते पर आई। नाग की अपार सुंदरता को देखकर राजकुमार तुरंत उससे प्रेम करने लगा, औरबिना किसी को दिखाई दिए, वह उस झोपड़ी में दाखिल हुआ जब वह पलंग तैयार कर रही थी और उससे पूछा कि वह कौन है। "हे स्वामी, मैं एक नाग स्त्री हूँ।" "क्या तुम्हारा कोई पति है?" "मैं विधवा हूँ, मेरा कोई पति नहीं है; और तुम कहाँ रहती हो?" "मैं बनारस के राजा का पुत्र ब्रह्मदत्तकुमार हूँ; लेकिन तुम नागों का निवास छोड़कर क्यों भटक रही हो?" "हे स्वामी, मैंने अन्य नाग स्त्रियों को पतियों के साथ सुखी देखकर कामुक भावनाओं से असंतुष्ट होकर यहाँ से चली आई और पति की तलाश में भटक रही हूँ।" "मैं भी आस्था से संन्यासी नहीं हूँ, लेकिन मैं यहाँ रहने आई हूँ क्योंकि मेरे पिता ने मुझे घर से निकाल दिया था; चिंता मत करो, मैं तुम्हारा पति बनूँगा और हम यहाँ सद्भाव से रहेंगे।" उसने तुरंत सहमति दे दी; और तब से वे वहाँ सद्भाव से साथ रहने लगे। अपनी जादुई शक्ति से उसने एक आलीशान घर बनवाया और एक कीमती पलंग लाकर बिस्तर बिछाया। तब से वह न तो जड़ वाली सब्जियां खाता था और न ही फल, बल्कि दिव्य मांस और पेय का सेवन करता था। कुछ समय बाद वह गर्भवती हुई और उसने एक पुत्र को जन्म दिया, जिसका नाम सागर-ब्रह्मदत्त रखा गया। जब बच्चा चलने-फिरने लायक हुआ, तो उसने एक पुत्री को जन्म दिया, और क्योंकि वह समुद्र तट पर पैदा हुई थी, इसलिए उसका नाम समुद्दजा रखा गया। बनारस में रहने वाला एक वनपाल उस स्थान पर आया, और प्रणाम करने पर उसने राजकुमार को पहचान लिया। कुछ दिन वहाँ रहने के बाद उसने कहा, "महाराज, मैं राजा के परिवार को बता दूँगा कि आप यहाँ रह रहे हैं," और वह तदनुसार शहर चला गया। उसी समय राजा का निधन हो गया, और मंत्रियों ने उसे दफना देने के बाद सातवें दिन एकत्रित होकर विचार-विमर्श किया, "राजा के बिना राज्य नहीं चल सकता; हमें नहीं पता कि राजकुमार कहाँ रहता है और न ही पता है कि वह जीवित है या मृत, हम उत्सव रथ भेजेंगे और इस प्रकार एक राजा प्राप्त करेंगे।" उसी समय वनपाल शहर आया, और समाचार सुनकर मंत्रियों के पास गया और उन्हें बताया कि वहाँ आने से पहले वह तीन-चार दिन राजकुमार के पास ही रहा था। मंत्रियों ने उनका आदर किया और उनके मार्गदर्शन में वहाँ गए, और सौहार्दपूर्ण अभिवादन के बाद राजकुमार को बताया कि राजा की मृत्यु हो गई है और उनसे राज्य संभालने का अनुरोध किया। राजकुमार ने मन ही मन सोचा, "मैं नाग स्त्री का विचार जानूँगा"; इसलिए वह उनके पास गए और बोले, "देवी, मेरे पिता की मृत्यु हो गई है और उनके मंत्री मुझे राजसी छत्रछाया देने आए हैं; आइए हम चलें और हम दोनों बारह योजन के क्षेत्र में बनारस पर शासन करेंगे, और आप सोलह हजार रानियों में प्रमुख होंगी।" "महाराज, मैं नहीं जा सकती।" "क्यों?" "हमारे पास घातक विष है और हम छोटी-छोटी बातों पर आसानी से क्रोधित हो जाते हैं; और सौतन का क्रोध एक गंभीर बात है; यदि मैं कुछ देख या सुन लूँ और उस पर क्रोधित दृष्टि डालूँ, तो वह पल भर में भूसे की तरह बिखर जाएगा; इसलिए मैं नहीं जा सकती।" राजकुमार ने अगले दिन उनसे फिर पूछा; और तब उन्होंने कहा, "मैं स्वयं किसी भी कीमत पर नहीं जाऊँगी।"लेकिन ये मेरे पुत्र युवा नाग नहीं हैं; क्योंकि ये तुम्हारे बच्चे हैं, इसलिए मनुष्य जाति के हैं; यदि तुम मुझसे प्रेम करते हो, तो इनकी रक्षा करना। लेकिन क्योंकि ये जलीय स्वभाव के हैं और इसलिए नाज़ुक हैं, यदि ये सड़क मार्ग से जाएँगे और हवा और धूप का भार सहन करेंगे तो मर जाएँगे; इसलिए मैं एक नाव खोखली करके उसमें पानी भर दूँगा, और तुम उन्हें पानी में खेलने देना और जब तुम उन्हें शहर ले आओ, तो महल परिसर में एक झील तैयार करवाना। इस तरह उन्हें कोई कष्ट नहीं होगा।" ये कहकर, राजकुमार को प्रणाम करके और उनके चारों ओर आदरपूर्वक परिक्रमा करके, उन्होंने अपने पुत्रों को गले लगाया और उन्हें अपनी छाती से लगा लिया, उनके सिर चूमे और उन्हें राजकुमार को सौंप दिया, और बहुत आँसू बहाते हुए और सिसकते हुए तुरंत नागलोक चली गईं। राजकुमार भी दुःख से व्याकुल होकर, आँखों में आँसू भरकर घर से बाहर निकले और आँखें पोंछकर मंत्रियों के पास गए, जिन्होंने कहा, "महाराज, चलिए अपने नगर चलते हैं।" उन्होंने उन्हें एक नाव खोखली करके उसे एक गाड़ी पर रखकर पानी से भरने का आदेश दिया। "पानी की सतह पर विभिन्न रंगों और सुगंधों के फूल बिखेर दो, क्योंकि मेरे पुत्रों का स्वभाव जलीय है और वे वहाँ आनंदपूर्वक खेलते हुए बहेंगे"; और मंत्रियों ने ऐसा ही किया। जब राजा बनारस पहुँचे तो उन्होंने सजे-धजे नगर में प्रवेश किया और सोलह हजार नर्तकियों, अपने मंत्रियों और अन्य अधिकारियों से घिरे हुए चबूतरे पर बैठ गए; और सात दिनों तक एक भव्य भोज आयोजित करने के बाद, उन्होंने अपने पुत्रों के लिए एक झील तैयार करवाई, जहाँ वे वे लगातार खेलते-कूदते रहते थे। लेकिन एक दिन जब झील में पानी छोड़ा गया, तो एक कछुआ उसमें घुस गया, और बाहर निकलने का कोई रास्ता न देखकर वह पानी की सतह पर तैरने लगा; और जब लड़के खेल रहे थे, तो वह पानी से बाहर निकला और अपना सिर बाहर निकालकर उन्हें देखा और फिर पानी में डूब

गया। जब उन्होंने उसे देखा तो वे डर गए और अपने पिता के पास दौड़े और उनसे कहा, "हे पिता, एक यक्ष (राक्षस) ने हमें झील में डरा दिया है।" राजा ने कुछ आदमियों को उसे पकड़ने का आदेश दिया, और उन्होंने जाल फेंककर कछुए को पकड़ लिया और राजा को इसके बारे में बताया। जब राजकुमारों ने उसे देखा, तो वे चिल्लाए, "हे पिता, यह एक राक्षस है।" राजा अपने बेटों के प्रेम के कारण कछुए पर क्रोधित हो गए, और सेवकों को उसे दंडित करने का आदेश दिया। कुछ ने कहा, "यह राजा का शत्रु है, इसे ओखली और मूसल से पीसकर चूर-चूर कर देना चाहिए," दूसरों ने कहा, "चलो इसे तीन बार पकाकर खा लें," दूसरों ने कहा, "इसे गर्म कोयलों पर सेंकें," दूसरों ने कहा, "इसे... "इसे एक बर्तन में पकाकर खाया जाए"; लेकिन एक मंत्री, जो पानी से डरता था, बोला, "इसे यमुना के भंवर में फेंक देना चाहिए, यह वहाँ पूरी तरह नष्ट हो जाएगा, इसके लिए ऐसा कोई दंड नहीं है।" कछुए ने उसकी बात सुनकर अपना सिर बाहर निकाला और बोला, "मित्र, मैंने ऐसा कौन सा पाप किया है कि तुम मेरे लिए ऐसे दंड की बात कर रहे हो? बाकी दंड तो मैं सह सकता हूँ।"लेकिन यह आखिरी वाला तो हद से ज्यादा क्रूर है, इसका जिक्र तक मत करो।" जब राजा ने उसकी बात सुनी, तो उसने कहा, "इसी को कार्रवाई में लाना है," इसलिए उसने उसे यमुना के भंवर में फेंकने का आदेश दिया; वहाँ उसे एक धारा मिली जो नागों के निवास स्थान की ओर जाती थी, और वह उसी धारा से उनके स्थान पर चला गया। उस समय नाग राजा धतरत्थ (*1) के कुछ युवा पुत्र उस धारा में खेल रहे थे, और जब उन्होंने उसे देखा तो वे चिल्लाए, "उस दास को पकड़ो।" कछुए ने सोचा, "मैं बनारस के राजा के हाथों से बचकर इन क्रूर नागों के हाथों में आ गया हूँ; मैं कैसे बच निकलूँ?" फिर उसने एक योजना सोची, और एक झूठी कहानी बनाकर उसने उनसे कहा, "तुम लोग जो राजा धतरत्थ के दरबारी हो, इस तरह क्यों बोल रहे हो? मैं चित्तकुला नाम का एक कछुआ हूँ, और मैं बनारस के राजा का दूत बनकर धतरत्थ के पास आया हूँ; "हमारे राजा ने मुझे भेजा है क्योंकि वे अपनी पुत्री का विवाह राजा धतरत्थ से करना चाहते हैं, मुझे उनसे मिलवाइए," और वे प्रसन्न होकर उसे ले गए और राजा के पास जाकर सारी बात समझाई। राजा ने उन्हें उसे लाने का आदेश दिया; परन्तु उसे देखकर अप्रसन्न हुए और बोले, "ऐसे तुच्छ शरीर वाले दूत नहीं बन सकते।" यह सुनकर कछुए ने अपने गुणों का बखान करते हुए उत्तर दिया, "राजा को ताड़ के वृक्ष जितने ऊँचे दूतों की क्या आवश्यकता है? छोटा शरीर हो या बड़ा, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता, असली बात तो यह है कि जहाँ भेजा जाए वहाँ कार्य को पूरा करने की क्षमता हो। हे महाराज, हमारे राजा के पास अनेक दूत हैं; मनुष्य अपना काम सूखी भूमि पर करते हैं, पक्षी हवा में और मैं जल में, क्योंकि मैं चित्तकुला नामक राजा का प्रिय हूँ और मेरा एक विशेष पद है, मेरा उपहास मत करो।" तब राजा धतरत्थ ने उससे पूछा कि उसे राजा ने क्यों भेजा है, और उसने उत्तर दिया, "राजा ने मुझसे कहा कि उसने जंबुद्वीप (भारत) के सभी राजाओं से मित्रता कर ली है, और अब वह नाग राजा धतरत्थ से मित्रता करने के लिए अपनी पुत्री समुद्दजा को देना चाहता है; ये कहकर उसने मुझे भेजा, और तुम भी देर न करो, तुरंत मेरे साथ एक दल भेजो और दिन तय करके लड़की को ले आओ।" राजा बहुत प्रसन्न हुआ और उसने उसका बहुत सम्मान किया और उसके साथ चार नाग युवकों को भेजा, और उनसे कहा कि राजा की बात सुनकर एक दिन तय कर लें और फिर लौट आएं। वे कछुए को अपने साथ लेकर नागों के निवास से चले गए। कछुए ने यमुना और बनारस के बीच एक कमल-कुंड देखा, और किसी चतुराई से भागने की इच्छा से उसने कहा, "हे नाग युवकों, हमारे राजा, उनकी रानी और पुत्र ने मुझे राजा के महल जाते समय पानी से निकलते हुए देखा था, और उन्होंने मुझसे कुछ कमल और कमल की जड़ें मांगी थीं; मैं उनके लिए कुछ इकट्ठा कर लूंगा; मुझे यहीं जाने दो, और अगर तुम मुझे न देखो, तो राजा के पास चले जाना, मैं तुमसे वहीं मिलूंगा।" उन्होंने उस पर विश्वास किया और उसे जाने दिया, और वह छिप गया; और बाकी लोग, क्योंकि वे उसे देख नहीं पाए, उन्होंने सोचा कि वह राजा के पास चला गया होगा।और वे युवकों के वेश में महल की ओर चल पड़े। राजा ने उनका आदरपूर्वक स्वागत किया और उनसे पूछा कि वे कहाँ से आए हैं। "महाराज, धतरत्थ से।" "किसलिए?" "हे महाराज, हम उनके दूत हैं; धतरत्थ आपकी कुशलक्षेम पूछते हैं और आपकी हर इच्छा पूरी करेंगे; और वे आपसे निवेदन करते हैं कि आप हमें अपनी पुत्री समुद्दजा को उनकी रानी के रूप में दे दें।" इसे समझाने के लिए उन्होंने पहला श्लोक दोहराया:

धतरत्था के महल में जो भी गहने संग्रहित हों,
ये सब आपके हैं, उनका शाही वरदान; हमें अपनी पुत्री हमारे स्वामी के लिए दे दीजिए।"
जब राजा ने यह सुना तो उसने दूसरे श्लोक में उत्तर दिया:

"आज तक ऐसा कोई व्यक्ति नहीं देखा गया जिसने अपनी बेटी का विवाह नाग राजा से किया हो।"
ऐसे मुकाबले बिल्कुल अनुपयुक्त थे, हम ऐसी बात सोच भी कैसे सकते थे?
युवकों ने उत्तर दिया, "यदि धतरत्था के साथ गठबंधन आपको इतना अनुचित लगता है, तो आपने अपने सेवक कछुए चित्तकुला को हमारे राजा के पास अपनी पुत्री समुद्दजा को देने की पेशकश करने के लिए क्यों भेजा? ऐसा संदेश भेजने के बाद अब आप हमारे राजा का अपमान कर रहे हैं, तो हम जानते हैं कि आपके साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए।" ऐसा कहकर उन्होंने धमकी भरे लहजे में दो श्लोक कहे:

"हे राजा, यदि तुम अपना प्राण बलिदान कर दो, तो तुम्हारा सिंहासन और राज्य क्या हैं?"
क्रोधित नाग के सामने समस्त नश्वर वैभव मिट जाता है;
तुम एक बेचारे नश्वर प्राणी हो जो वहाँ खड़े हो, और अपने अहंकार (आत्मप्रेम) के कारण बर्बाद हो गए।
वह राजा वरुण के शाही पुत्र यमुना को तिरस्कार भरी दृष्टि से देखेगा (*2)।"

फिर राजा ने दो छंद दोहराए:

मैं तुम्हारे उस राजा, धतरत्था, जो व्यापक रूप से प्रसिद्ध है, का अपमान नहीं करता।
वह कई नागों का राजा है, वह अधिकार से राजसी मुकुट धारण करता है;
लेकिन चाहे वह कितना भी महान और श्रेष्ठ क्यों न हो, वह विदेह के क्षत्रिय वंश से आया था।
मेरी बेटी का वंश शुद्ध है, उसे मेरी संतान का सपना भी नहीं देखना चाहिए।
हालांकि नागा युवकों की इच्छा थी कि वे उसे अपनी सांसों के झोंके से वहीं मार डालें, फिर भी उन्होंने सोचा कि चूंकि उन्हें विवाह का दिन तय करने के लिए भेजा गया था, इसलिए उस व्यक्ति को मरा हुआ छोड़कर चले जाना उचित नहीं होगा; इसलिए वे तुरंत आंखों से ओझल हो गए और बोले, "हम चले जाएंगे और राजा को बता देंगे।" उनके राजा ने उनसे पूछा कि क्या वे राजकुमारी को लाए हैं। वे क्रोधित होकर बोले, "हे राजा, आप हमें बिना कारण इधर-उधर क्यों भेज रहे हैं? यदि आप हमें मारना चाहते हैं, तो हमें यहीं मार डालिए। यह आपका अपमान और मानहानि करता है, और अपने जन्म के अहंकार में अपनी बेटी को सर्वोच्च स्थान पर बिठाता है।" इस प्रकार कही और अनकही बातों को दोहराते हुए उन्होंने राजा के क्रोध को भड़का दिया। राजा ने उन्हें अपनी सेना को इकट्ठा करने का आदेश देते हुए कहा:

"असतारस और कंबालास (*3), सभी नागाओं को बुलाओ;
उन्हें बनारस की ओर जाने दो, लेकिन किसी को भी, चाहे वह बड़ा हो या छोटा, कोई नुकसान न पहुंचाओ।
तब नागों ने उत्तर दिया, "यदि किसी को हानि नहीं पहुँचानी है, तो यदि हम वहाँ जाएँ तो हम क्या करेंगे?" उसने दो श्लोकों में उन्हें बताया कि उन्हें क्या करना है और वह स्वयं क्या करेगा:

पानी की टंकियों और महलों के ऊपर, सार्वजनिक सड़कों और पेड़ों की चोटियों पर,
प्रवेश द्वारों के ऊपर मालाओं के रूप में सजी हुई लटकनें हवा में लहराती रहें;
मैं श्वेत शरीर और श्वेत हुड पहनकर पूरे शहर को हथियारों से लैस कर दूंगा।
और अपनी घेराबंदी की रेखाओं को और करीब लाते हुए, प्रत्येक काशी के हृदय में भय भर दूं।"
नागों ने ऐसा ही किया। शिक्षक ने जो कुछ हुआ उसका वर्णन इस प्रकार किया:

चारों ओर सांपों को देखकर, महिलाएं कांपती हुई भीड़ में जमा हो गईं।
और जैसे ही राक्षस भय से अपने फन फुलाते हैं, वे चीखते और विलाप करते हैं;
बनारस शहर इन हिंसक आक्रमणकारी गिरोहों के सामने नतमस्तक हो गया।
सभी ने हाथ उठाकर विनती और प्रार्थना की, "उसे वह बेटी दे दो जिसकी वह मांग कर रहा है।"
जब राजा पलंग पर लेटे थे, तब उन्होंने अपनी पत्नियों और नागरिकों के विलाप सुने। चारों युवकों की धमकियों से मृत्यु के भय से वे तीन बार बोले, "मैं धतरत्थ को अपनी पुत्री समुद्दजा दे दूंगा।" यह सुनकर सभी नाग राजा एक मील (4.23 किमी) दूर चले गए और वहाँ अपना डेरा डालकर देवताओं (देवदूतों) का एक भव्य नगर बनाया तथा एक भेंट भेजकर कहा, "जैसा वह कहता है, अपनी पुत्री भेज दे।" राजा ने भेंट प्राप्त कर उसे लाने वालों को यह कहकर विदा किया, "तुम लोग जाओ, मैं अपनी पुत्री को अपने मंत्रियों के हाथों भेज दूंगा।" फिर उन्होंने अपनी पुत्री को बुलवाया और उसे छत पर ले जाकर एक खिड़की खोली और उससे कहा, "पुत्री, इस सजे-धजे नगर को देखो; कहते हैं कि तुम वहाँ के एक राजा की मुख्य रानी बनोगी। नगर दूर नहीं है, जब तुम्हें घर की याद आए तो तुम वापस आ सकती हो, लेकिन अभी तुम्हें वहाँ जाना होगा।" फिर उसने परिचारकों से राजकुमारी का सिर धुलवाया और उसे हर तरह के आभूषणों से सजाया, उसे एक रथ में बिठाया और अपने मंत्रियों की देखरेख में विदा किया। नाग राजा उससे मिलने आए और उसका भव्य आदर किया। मंत्री नगर में गए और राजकुमारी को सौंप कर बहुत सारा धन लेकर लौट आए। राजकुमारी को महल में ले जाया गया और दिव्य रूप से सजे पलंग पर लिटाया गया; और नाग कन्याओं ने कुबड़ी और अन्य विकृत आकृतियाँ धारण करके उसकी सेवा की, मानो वे मानव परिचारिकाएँ हों। जैसे ही वह दिव्य पलंग पर लेटी, उसे एक दिव्य कोमल स्पर्श का अनुभव हुआ और वह सो गई। धतरत्थ ने राजकुमारी को ग्रहण करने के बाद अपने समस्त दल के साथ तुरंत गायब होकर नाग लोक में प्रवेश किया। जब राजकुमारी जागी और उसने सुशोभित स्वर्गीय पलंग, सोने और रत्नों से जड़े महल आदि, उद्यान, तालाब और नागलोक को देखा, जो स्वयं देवताओं (देवदूतों) के एक सुशोभित नगर के समान था, तो उसने कुबड़ा और अन्य परिचारिकाओं से पूछा, "यह नगर कितना भव्य रूप से सुशोभित है, यह हमारे नगर जैसा नहीं है; यह किसका है?" "हे देवी, यह आपके स्वामी का है, यह कम गुणों वाले लोगों को नहीं मिलता, आपने इसे अपने महान गुणों के कारण प्राप्त किया है।" तब धतरत्थ ने नाग नगर में, जो पाँच सौ योजन में फैला हुआ था, ढोल बजाने का आदेश दिया और यह घोषणा की कि जो कोई भी समुद्दजा के सामने अपने सर्प स्वरूप का कोई भी संकेत प्रकट करेगा, उसे दंडित किया जाएगा; इसलिए किसी ने भी उसके सामने सर्प के रूप में प्रकट होने का साहस नहीं किया। अतः वह इस विचार के साथ उसके साथ स्नेहपूर्वक और सद्भाव से रहने लगी कि यह मनुष्यों का लोक है (*4)।

II.

समय बीतने पर धतरत्थ की रानी गर्भवती हुई और उसने एक पुत्र को जन्म दिया। उसके सुंदर रूप के कारण उन्होंने उसका नाम सुदस्सन रखा। फिर उसने एक और पुत्र को जन्म दिया, जिसका नाम दत्ता रखा गया, जो एक बोधिसत्व था। फिर उसने एक और पुत्र को जन्म दिया, जिसका नाम सुभागा रखा गया, और चौथे पुत्र को अरित्था नाम दिया गया। इन चारों पुत्रों को जन्म देने के बावजूद, वह यह नहीं जानती थी कि यह नागों का लोक है। लेकिन एक दिन उन्होंने अरित्था से कहा, "तुम्हारी माता एक स्त्री है, नाग नहीं।" अरित्था ने मन ही मन कहा, "मैं इसे सिद्ध करूँगा।" इसलिए एक दिन अपनी माता का दूध पीते हुए उसने सर्प का रूप धारण कर लिया और अपनी पूंछ से उसके पैर के पिछले हिस्से पर प्रहार किया। जब उसकी माता ने उसका सर्प रूप देखा, तो वह भय से चीख उठी और उसे जमीन पर पटक दिया, और अपने नाखून से उसकी आंख पर प्रहार किया जिससे खून बहने लगा। राजकुमारी की चीख सुनकर राजा ने पूछा कि वह क्यों चिल्लाई। जब उसे अरित्था की करतूत का पता चला, तो वह धमकी देते हुए बोला, "इस दास को पकड़ो और मार डालो।" राजकुमारी, राजा के क्रोधी स्वभाव को जानते हुए, अपने पुत्र के प्रति प्रेम से बोली, "हे स्वामी, मैंने अपने पुत्र की आँख पर प्रहार किया है, कृपया उसे क्षमा कर दीजिए।" यह सुनकर राजा ने कहा, "मैं क्या करूँ?" और उसे क्षमा कर दिया। उसी दिन राजकुमारी को पता चला कि यह नागों का जीवन-यातना था, और तब से अरित्था को हमेशा कनारित्था (या एक आँख वाला अरित्था) कहा जाने लगा।

अब चारों राजकुमार समझदार हो गए। तब उनके पिता ने उन्हें सौ योजन वर्ग का एक-एक राज्य दिया; वे महान वैभवशाली थे और प्रत्येक की सेवा में सोलह हजार नाग कन्याएँ विराजमान थीं। अब उनके पिता का राज्य केवल सौ योजन वर्ग का था और तीनों पुत्र हर महीने अपने माता-पिता से मिलने जाते थे। परन्तु बोधिसत्व हर पखवाड़े जाते थे और नागलोक में उठे किसी प्रश्न का उत्तर देते थे और फिर अपने पिता के साथ महान राजा विरुपाक्खा (*5) से मिलने जाते थे, जहाँ वे उनसे उस प्रश्न पर चर्चा करते थे। एक दिन जब विरुपाक्खा नाग सभा के साथ देवताओं (देवदूतों) के लोक में गए और वहाँ सक्का (इंद्र) की सेवा में बैठे थे, तब देवताओं (देवदूतों) के बीच एक प्रश्न उठा जिसका उत्तर कोई नहीं दे सका, परन्तु महान सिंहासन पर विराजमान उस महान सत्ता ने उसका उत्तर दिया। तब देवताओं (देवदूतों) के राजा ने उन्हें दिव्य फूलों और फलों से सम्मानित किया और उनसे कहा, "हे दत्ता, आप पृथ्वी के समान विशाल बुद्धि से संपन्न हैं; अब से आपको भूरिदत्त कहा जाए," और उन्होंने उन्हें यह नाम दिया।

उस समय से वह सक्का (इंद्र) को प्रणाम करने जाया करता था, और जब वह उनके दरबार की अत्यंत मनमोहक भव्यता और अप्सराओं को देखता, तो उसे स्वर्गलोक की याद आती, "इस मेंढक खाने वाले नाग-स्वरूप से मेरा क्या लेना-देना? मैं नागलोक लौट जाऊंगा और व्रत रखूंगा तथा उन नियमों का पालन करूंगा जिनसे देवदूतों में जन्म प्राप्त होता है।" इन्हीं विचारों के साथ नागलोक लौटते समय उसने अपने माता-पिता से कहा, "हे मेरे पिता और माता, मैं व्रत रखूंगा।" "हे पुत्र, अवश्य रखो; परन्तु व्रत रखते समय बाहर मत जाना, बल्कि नागलोक के इस एक खाली महल में ही रखना, क्योंकि बाहर नागों का भय है।" उसने स्वीकार कर लिया; अतः उसने खाली महल के उद्यानों और बगीचों में ही व्रत रखा। लेकिन नाग कन्याएँ अपने वाद्ययंत्रों के साथ उसकी सेवा करती रहीं, और उसने मन ही मन सोचा, "यदि मैं यहाँ रहूँगा तो मेरा व्रत कभी पूरा नहीं होगा, मैं मनुष्यों के निवास स्थान पर जाकर व्रत रखूँगा।" इसलिए बाधा के भय से उसने अपने माता-पिता को बताए बिना अपनी पत्नी से कहा, "हे देवी, यदि मैं मनुष्यों के निवास स्थान पर जाऊँ तो यमुना के किनारे एक बरगद का वृक्ष है, मैं पास ही एक चींटी के टीले की चोटी पर अपने शरीर को समेट लूँगा और व्रत के चारों भागों (*6) के साथ व्रत रखूँगा, और वहाँ लेटकर व्रत रखूँगा; और जब मैं वहाँ रात भर विश्राम कर लूँ और व्रत रख लूँ तो आपकी दस स्त्रियाँ हर सुबह वाद्ययंत्रों के साथ आएँ, और मुझे इत्र और फूलों से सजाकर गीत और नृत्य करते हुए नागों के निवास स्थान पर वापस ले जाएँ।" इन शब्दों के साथ वह गया और चींटियों के टीले के ऊपर अपना शरीर समेट लिया, और ज़ोर से कहते हुए, "जो चाहे मेरी खाल, मांस, हड्डियाँ या खून ले ले," उसने चार भागों वाले उपवास का व्रत लिया और लेट गया, केवल सिर और पूंछ वाले शरीर को धारण करके, और उपवास रखा। भोर होते ही नाग कन्याएँ आईं, और जैसा उन्हें आदेश दिया गया था, उन्होंने उसे नागों के निवास स्थान पर ले गईं; और जब वह इस प्रकार उपवास रख रहा था, तब तक एक लंबा समय बीत गया (*7)।

III.

उस समय बनारस के द्वार के पास एक गाँव में रहने वाला एक ब्राह्मण (*8) अपने पुत्र सोमदत्त के साथ जंगल में जाकर फंदे, जाल और खूंटे गाड़कर जंगली जानवरों का शिकार करता था और उनका मांस डंडे पर लादकर बेचता था, जिससे उसकी आजीविका चलती थी। एक दिन वह एक छोटी छिपकली भी नहीं पकड़ पाया, और उसने अपने पुत्र से कहा, "अगर हम खाली हाथ घर लौटेंगे तो तुम्हारी माँ क्रोधित हो जाएँगी, चलो कुछ तो पकड़ लें"; अतः वह उस चींटी के टीले की ओर गया जहाँ बोधिसत्व लेटे हुए थे, और यमुना में पानी पीने जा रहे हिरण के पदचिह्नों को देखकर उसने कहा, "पुत्र, यह हिरणों का निवास स्थान है, तुम वापस जाकर प्रतीक्षा करो, मैं पानी पीने आए किसी हिरण को घायल कर देता हूँ"; अतः वह अपना धनुष लेकर एक वृक्ष के नीचे हिरण की प्रतीक्षा करने लगा। शाम के समय एक हिरण पानी पीने आया, उसने उसे घायल कर दिया; लेकिन वह तुरंत नहीं गिरा, बल्कि तीर के बल से प्रेरित होकर खून बहते हुए भाग गया। पिता और पुत्र उसका पीछा करते हुए उस स्थान तक पहुँचे जहाँ वह गिरा था, उसका मांस उठाया और जंगल से निकलकर

सूर्यास्त के समय उस बरगद के पेड़ पर पहुँचे। "यह सही समय नहीं है, हम आगे नहीं जा सकते, हम यहीं रुकेंगे," ऐसा कहकर उन्होंने मांस को एक तरफ रख दिया और पेड़ पर चढ़कर शाखाओं के बीच लेट गए। ब्राह्मण भोर में जागा और हिरण की आवाज सुनने के लिए उत्सुक था, तभी नाग कन्याएँ आईं और बोधिसत्व के लिए पुष्पमय पलंग तैयार किया। उन्होंने अपना सर्प शरीर त्याग दिया और सभी प्रकार के आभूषणों से सजे दिव्य शरीर को धारण करके एक सक्का (इंद्र) के रूप में अपने पुष्पमय पलंग पर विराजमान हो गए।

नाग कन्याओं ने उन्हें इत्र और मालाओं से सम्मानित किया, अपने दिव्य वाद्ययंत्र बजाए और नृत्य-गीत प्रस्तुत किए। जब ब्राह्मण ने यह आवाज़ सुनी तो उसने कहा, "यह कौन है? मैं पता लगाता हूँ"; और उसने अपने पुत्र को पुकारा, परन्तु पुकारने पर भी वह नहीं जागा। "उसे सोने दो, वह थका हुआ है, मैं स्वयं अकेला जाता हूँ"; अतः वह वृक्ष से नीचे उतरा और पास पहुँचा, परन्तु नाग कन्याओं ने उसे देखकर अपने सभी वाद्ययंत्रों सहित पृथ्वी में समाहित हो गईं और नागों के निवास स्थान पर चली गईं, और बोधिसत्व अकेले रह गए। ब्राह्मण ने पास खड़े होकर उनसे इन दो श्लोकों में प्रश्न किया:

"यह लाल आंखों वाला युवक कौन है, जो यहां दिखाई दे रहा है?"
उसके कंधे चौड़े थे और उनके बीच पर्याप्त जगह थी।
और ये दस लड़कियां जो उसकी रक्षा करती हैं, वे क्या हैं?
सुंदर वस्त्रों से सजी, सोने के कंगन पहने हुए!
इस हरे-भरे जंगल के बीच तुम कौन हो?
क्या यह आग की तरह चमकदार है जिसे अभी-अभी घी से सजाया गया हो?
क्या आप सक्का (इंद्र) हैं या यक्ष (राक्षस), मान लीजिए?
या फिर कोई प्रख्यात नाग राजकुमार, जिसका प्रभाव बहुत अधिक हो?
जब उस महान प्राणी ने उसकी बात सुनी तो उसने सोचा, "अगर मैं कहूँ कि मैं सक्कों (इंद्रों) में से एक हूँ तो वह मुझ पर विश्वास कर लेगा, क्योंकि वह एक ब्राह्मण है; लेकिन मुझे आज केवल सच ही बोलना है," इसलिए उसने अपने नाग जन्म की कहानी इस प्रकार सुनाई:

"मैं शक्ति में महान, विषैली श्वास से अजेय नाग हूं।"
एक समृद्ध भूमि, जहाँ सभी पुत्र मौजूद हैं, मेरे क्रोधित डंक से मृत्यु हो सकती है;
जैसा कि मैं दावा करता हूं, मेरी मां समुद्रुद्दजा, धतरत्था हैं,
मैं सुदस्सन का सबसे छोटा भाई हूँ, और मेरा नाम भूरिदत्ता है।"
लेकिन जब उस महान प्राणी ने यह कहा, तो उसने सोचा, "यह ब्राह्मण क्रूर और निर्दयी है, यह मुझे किसी सपेरे के हाथों धोखा दे सकता है, और इस प्रकार मेरे व्रत में बाधा डाल सकता है; क्या होगा यदि मैं इसे नाग राज्य ले जाऊं और वहां इसका बहुत सम्मान करूं, और इस प्रकार बिना किसी रुकावट के अपना व्रत जारी रखूं?" इसलिए उसने उससे कहा, "हे ब्राह्मण, मैं तुम्हारा बहुत सम्मान करूंगा, नागों के रमणीय निवास पर आओ, चलो तुरंत वहां चलते हैं।" "मेरे स्वामी, मेरा एक पुत्र है, यदि वह भी साथ आए तो मैं भी चलूंगा।" बोधिसत्व ने उत्तर दिया, "जाओ, ब्राह्मण, और उसे ले आओ," और उसने उसे अपने जीवन के बारे में इस प्रकार बताया:

"झील भयानक और अंधेरी है, अंतहीन तूफान इसके पानी को उछालते रहते हैं।"
वह मेरा घर है: वहां मेरी सभी प्रजा मेरी बात सुनती है और कोई भी मेरी प्रार्थना का विरोध नहीं करता;
गहरे नीले रंग की लहरों के नीचे डूब जाओ, मोर और बगुले पुकार रहे हैं,
गोता लगाएँ और वहाँ नियमों का पालन करने वालों के लिए संचित आनंद का अनुभव करें।"
ब्राह्मण (पुजारी) ने जाकर अपने पुत्र को यह बात बताई और उसे ले आया, और उस महान सत्ता ने उन दोनों को लेकर यमुना के किनारे जाकर वहाँ खड़े होकर कहा:

"हे ब्राह्मण, अपने पुत्र सहित, भयभीत न हों; मेरी बात मानें, आप जीवित रहेंगे।"
मैं अपने घर में सम्मानित और प्रसन्न हूं, और मुझे वे सभी सुख प्राप्त हैं जो मैं दे सकता हूं।
ऐसा कहकर उस महान सत्ता ने अपनी शक्ति से पिता और पुत्र को नागों के निवास स्थान पर पहुँचाया, जहाँ उन्हें दिव्य सुख प्राप्त हुआ; उन्होंने उन्हें दिव्य समृद्धि प्रदान की और उनमें से प्रत्येक को चार सौ नाग कन्याएँ दीं, और उन्होंने अपार समृद्धि का आनंद लिया। बोधिसत्व ने लगन से अपना उपवास जारी रखा, और प्रत्येक पखवाड़े वे अपने माता-पिता को प्रणाम करने और धर्म पर प्रवचन देने जाते; फिर ब्राह्मण के पास जाकर उन्होंने उनके स्वास्थ्य के बारे में पूछा और उनसे कहा, "आप जो चाहें बताएँ, बिना किसी असंतोष के आनंद लें"; और सोमदत्त को भी स्नेहपूर्वक प्रणाम करने के बाद वे अपने घर चले गए। नाग लोक में एक वर्ष रहने के बाद, ब्राह्मण अपने पूर्व कर्मों के अभाव के कारण असंतुष्ट होने लगा और मनुष्यलोक में लौटने की लालसा करने लगा; नागों का निवास स्थान उसे नरक के समान, सजा हुआ महल जेल के समान, और आभूषणों से सजी नाग कन्याएँ यक्ष कन्याओं के समान प्रतीत हुईं। उसने मन ही

मन सोचा, "मैं असंतुष्ट हूँ, मैं सोमदत्त के विचार जानूँगा"; तो वह उसके पास गया और बोला, "क्या तुम असंतुष्ट नहीं हो, मेरे पुत्र?" "मैं असंतुष्ट क्यों होऊँ? हमें ऐसी कोई भावना नहीं रखनी चाहिए। क्या आप असंतुष्ट हैं, पिताजी?" "हाँ, मेरे पुत्र?" "क्यों?" "क्योंकि मैं तुम्हारी माता और तुम्हारे भाई-बहनों को नहीं देख पा रहा हूँ; आओ, मेरे पुत्र, हम चलें।" उसने उत्तर दिया कि वह नहीं जाएगा, लेकिन पिता के बार-बार आग्रह करने पर वह अंततः मान गया। ब्राह्मण ने सोचा, "मैंने अपने पुत्र की सहमति तो प्राप्त कर ली है, लेकिन अगर मैं भूरिदत्त को बता दूँ कि मैं असंतुष्ट हूँ, तो वह मुझ पर और अधिक सम्मान बरसाएगा, और मैं नहीं जा पाऊँगा। मेरा उद्देश्य केवल एक ही तरीके से पूरा हो सकता है। मैं उसकी समृद्धि का वर्णन करूँगा और फिर उससे पूछूँगा, "तुम यह सारी शान-शौकत छोड़कर मनुष्यों के लोक में व्रत रखने क्यों जा रहे हो?" जब वह उत्तर देगा, "स्वर्ग प्राप्ति के लिए," तो मैं उससे कहूँगा, "हम जैसे लोगों की तुलना में तो कहीं अधिक उचित है, जिन्होंने जीवित प्राणियों का वध करके अपना जीवन यापन किया है।" मैं भी मनुष्यों के संसार में जाऊँगा, अपने परिवार से मिलूँगा, और फिर संसार को छोड़कर तपस्वियों के धार्मिक मार्ग का अनुसरण करूँगा," और तब वह मुझे जाने देगा।" ऐसा निश्चय करके, एक दिन जब दूसरा व्यक्ति उसके पास आया और उससे पूछा कि क्या वह असंतुष्ट है, तो उसने उसे आश्वासन दिया कि ऐसी कोई कमी नहीं है जिसे वह पूरा कर सके, और अपने जाने के इरादे का कोई ज़िक्र किए बिना, पहले तो उसने केवल दूसरे की समृद्धि का वर्णन निम्नलिखित छंदों में किया:

चारों ओर की जमीन को समतल कर दो, जिस पर टैगारा के फूल सफेद पड़ गए हों।
लाल रंग से रंगे कीड़ों के झुंड, फर्श के लिए सबसे चमकीली हरियाली,
प्रत्येक जंगल में पवित्र तीर्थस्थल और हंसों से भरी झीलें जो आंखों को मंत्रमुग्ध कर देती हैं,
गिरे हुए कमल के पत्ते सतह पर कालीन की तरह बिखरे पड़े हैं,
हजार स्तंभों वाले महल जिनमें ऐसे हॉल हैं जहाँ स्वर्ग की अप्सराएँ नृत्य करती हैं,
उनके सभी स्तंभ रत्नों से जड़े हुए हैं, जिनके कोण सूर्य की रोशनी में चमकते हैं;--
आपने अपने गुणों के बल पर एक शानदार घर जीता है।
जब हर नई इच्छा का पता चलते ही सारी इच्छाएं पूरी हो जाती हैं;
तुम महान सक्का (इंद्र) के महलों से ईर्ष्या क्यों नहीं करते? उनके सबसे भव्य दरबार तुम्हारे दरबारों के सामने क्या हैं?
आपके महल और भी भव्य हैं और और भी अधिक चमकदार वैभव से जगमगाते हैं।"
उस महान प्राणी ने उत्तर दिया, "ऐसा मत कहो, ब्राह्मण; सक्का (इंद्र) की तुलना में हमारी महिमा मेरु पर्वत के सामने एक सरसों के दाने के समान प्रतीत होती है, हम तो उनके सेवकों के भी बराबर नहीं हैं," और उन्होंने एक श्लोक दोहराया:

हमारी सर्वोच्च सोच भी इसकी कल्पना नहीं कर सकती।
सक्का (इंद्र) के सिंहासन के चारों ओर शाही वैभव,
या उनके दरबार में चार रीजेंट (*9),
प्रत्येक अपने-अपने निर्धारित क्षेत्र में।
जब उसने उसे अपने शब्दों को दोहराते हुए सुना, "तुम्हारा यह महल सक्का (इंद्र) का महल है," तो उसने कहा, "यह मेरे मन में है, और वेजयंत (*10) प्राप्त करने की मेरी इच्छा के कारण ही मैं उपवास का पालन करता हूँ," - फिर उसने एक श्लोक दोहराया, जिसमें उसने अपनी हार्दिक इच्छा का वर्णन किया:

मुझे परम अमर संतों के घर की तीव्र लालसा है।
इसलिए मैं उस चींटी के टीले की चोटी पर निरंतर उपवास रखता हूँ।
यह सुनकर ब्राह्मण ने मन ही मन सोचा, "अब मुझे अपना अवसर मिल गया है," और प्रसन्नता से भर कर उसने दो श्लोक दोहराते हुए प्रस्थान की अनुमति मांगी:

"जब मैं अपने बेटे के साथ उस जंगल के खुले मैदान में गया था, तो मैंने भी हिरणों की तलाश की थी।"
घर पर मेरे जिन दोस्तों को मैं छोड़ आया हूँ, उन्हें नहीं पता कि मैं जीवित हूँ या मर गया हूँ;
हे भूरिदत्त, हमें चलने दो, हे काशी वंश के गौरवशाली स्वामी।
चलिए, हम यहाँ से प्रस्थान करें और अपने परिवारों से उनके पैतृक स्थान पर एक बार फिर मिलें।
बोधिसत्व ने उत्तर दिया:

"मेरी यही इच्छा है कि आप हमारे साथ रहें और यहाँ सुखद समय बिताएँ;"
मनुष्यों की इस उच्चतर दुनिया में आपको हमारे जैसी शांतिपूर्ण जगह कहाँ मिलेगी?
लेकिन क्या आप कुछ समय के लिए कहीं और ठहरकर भी हमारे सुखों का आनंद लेना चाहेंगे?
तो अब मैं आपसे विदा लेता हूँ, जाइए, अपने दोस्तों से मिलिए और जितना चाहें उतना खुश रहिए।

और मन ही मन सोचते हुए, "यदि वह मेरे द्वारा यह सुख प्राप्त कर लेता है, तो वह निश्चित रूप से किसी और को नहीं बताएगा, मैं उसे अपना वह रत्न दूंगा जो सभी इच्छाओं को पूरा करता है," उसने उसे वह रत्न दे दिया और कहा:

"इस दिव्य रत्न को धारण करने वाला व्यक्ति अपने बच्चों और अपने खेत को देखता है;
"हे ब्राह्मण, इसे ले लो और चले जाओ, इसे ले जाने वाले को कभी कोई हानि नहीं होती।"
ब्राह्मण ने उत्तर दिया:

"मैं आपकी बातों को अच्छी तरह समझता हूँ, जैसा कि आप देख सकते हैं, मैं बूढ़ा हो गया हूँ।"
मैं तपस्वी जीवन अपना लूंगा, अब मेरे लिए जीवन के सुखों का क्या महत्व है?
बोधिसत्व ने कहा:

"यदि तुम असफल हो जाओ और अपना वचन तोड़ दो तो जीवन के सामान्य सुखों को एक बार फिर से तलाश लो।"
और फिर आकर मुझे ढूंढो, मैं तुम्हें भरपूर भंडार दूंगा।"
ब्राह्मण ने उत्तर दिया:

"हे भूरिदत्त, मैं आपके द्वारा दिए गए प्रस्ताव को कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार करता हूँ;
अगर कभी ऐसी स्थिति आई तो मैं आपकी सहायता मांगने के लिए वापस आऊंगा।
उस महान प्राणी ने देखा कि उसकी वहाँ रहने की कोई इच्छा नहीं है, इसलिए उसने कुछ युवा नागों को उसे मनुष्यलोक में ले जाने का आदेश दिया। गुरु ने जो कुछ हुआ उसका वर्णन इस प्रकार किया:

तब भूरिदत्त ने अपने चार युवा नागों को आदेश दिया, 'जाओ,
इस ब्राह्मण को अपने संरक्षण में लें और उसे वहां ले जाएं जहां वह जाना चाहता है।"
चारों सेवकों ने ये शब्द सुने और तुरंत ही अपने स्वामी के आदेश का पालन किया गया:
वे ब्राह्मण को उस स्थान पर लाए और उसे वहीं छोड़कर अकेले लौट गए।
फिर ब्राह्मण चलते-चलते अपने पुत्र सोमदत्त से बोला, "सोमदत्त, हमने यहाँ एक हिरण और वहाँ एक सूअर को घायल कर दिया है।" रास्ते में एक झील देखकर वह बोला, "सोमदत्त, चलो स्नान करते हैं।" तो दोनों ने अपने दिव्य आभूषण और वस्त्र उतार दिए और उन्हें एक गठरी में लपेटकर किनारे पर रख दिया और स्नान किया। उसी क्षण आभूषण गायब हो गए और नागलोक में लौट गए, और उनके पुराने पीले वस्त्र उनके शरीर पर लिपट गए, और उनके धनुष, बाण और भाले पहले जैसे हो गए। सोमदत्त विलाप करते हुए बोला, "पिताजी, हम बर्बाद हो गए।" लेकिन उसके पिता ने उसे दिलासा देते हुए कहा, "चिंता मत करो; जब तक हिरण हैं, हम जंगल में हिरण मारकर जीविका कमा लेंगे।" सोमदत्त की माता ने उनके आने की खबर सुनी और उनसे मिलने जाकर उन्हें घर ले आई और उन्हें भोजन और पेय से तृप्त किया। जब ब्राह्मण ने भोजन कर लिया और सो गया, तो उसने अपने पुत्र से पूछा, "तुम इतने समय से कहाँ थे?" "हे माता, नाग राजा भूरिदत्त हमें नागलोक ले गए थे, और अब हम असंतुष्ट होकर वापस आ गए हैं।" "क्या तुम कोई रत्न लाए हो?" "नहीं, माता।" "उन्होंने तुम्हें कोई रत्न क्यों नहीं दिया?" "माता, भूरिदत्त ने मेरे पिता को एक ऐसा रत्न दिया था जो सभी मनोकामनाएं पूरी करता है, लेकिन उन्होंने उसे स्वीकार नहीं किया।" "किस कारण से?" "वे कहते हैं कि वे संन्यासी बनने जा रहे हैं।" "क्या, मुझे इतने लंबे समय तक बच्चों का बोझ उठाने और नागलोक में रहने के बाद, अब वे संन्यासी बनने जा रहे हैं?" क्रोध में आकर उसने चावल तलने वाले चम्मच से उसकी पीठ पर प्रहार किया और उसे डांटते हुए कहा, "हे दुष्ट ब्राह्मण, तुमने संन्यासी बनने की बात कहकर उस कीमती रत्न को क्यों ठुकरा दिया, और यहाँ आकर संन्यासी बनने की प्रतिज्ञा क्यों नहीं ली?" मेरे घर से सीधे चले जाओ।" लेकिन उसने उससे कहा, "हे महिला, क्रोधित मत हो, जब तक जंगल में हिरण हैं, मैं तुम्हारा और तुम्हारे बच्चों का भरण-पोषण करूँगा।" इसलिए अगले दिन वह अपने बेटे के साथ जंगल में गया और वहाँ पहले की तरह ही जीविका चलाता रहा (*11)।

IV.

उस समय, हिमालय के विशाल दक्षिणी महासागर क्षेत्र में स्थित हिमवत पर्वत पर रेशम-कपास के वृक्ष में रहने वाला एक गरूला पक्षी अपने पंखों की फड़फड़ाहट से जल को ऊपर उठाता हुआ नाग क्षेत्र पर झपटा और एक नाग राजा का सिर पकड़ लिया। परन्तु यह वह समय था जब गरूला नागों को पकड़ना नहीं जानते थे; उन्होंने यह विधि पांडारा जातक (*12) में सीखी थी। अतः उसने नाग का सिर तो पकड़ा, पर जल को बिखेरे बिना उसे लटकाए हिमवत पर्वत की चोटी तक ले गया। काशी का एक वृद्ध ब्राह्मण, जो हिमवत पर्वत में तपस्वी जीवन व्यतीत कर रहा था, पत्तों से बनी अपनी कुटिया में रहता था। उसकी कुटिया के अंत में एक विशाल बरगद का वृक्ष था, और वह दिन के समय उसकी जड़ में अपना निवास स्थान बनाता था। गरूला नाग को बरगद की चोटी तक ले गया, और नाग ने नीचे लटकते हुए बचने के प्रयास में अपनी पूंछ एक शाखा से लपेट ली। गरुड़ को इस बात का पता नहीं था, इसलिए वह अपनी अपार शक्ति से आकाश में उड़ गया और बरगद के पेड़ को जड़ समेत उठा ले गया (*13)। फिर वह नाग को रेशम-कपास के पेड़ के पास ले गया

और अपनी चोंच से उस पर प्रहार करके उसका पेट चीर दिया। उसने उसकी चर्बी खाकर उसके शरीर को समुद्र के बीचोंबीच फेंक दिया। बरगद का पेड़ गिरते ही ज़ोरदार आवाज़ करने लगा। पक्षी यह सोचकर नीचे देखने लगा कि यह कैसी आवाज़ है। पेड़ को देखकर उसने मन ही मन सोचा, "मैं इसे कहाँ से उठाकर लाया हूँ?" और यह पहचानते हुए कि यह वही बरगद का पेड़ है जो साधु के ढके हुए मार्ग के अंत में था, उसने सोचा, "यह पेड़ उनके लिए बहुत उपयोगी था, क्या इसका कोई बुरा परिणाम होगा? मैं उनसे पूछकर जानूँगा।" इसलिए वह एक युवा शिष्य के वेश में उनके पास गया; उस समय साधु मिट्टी को समतल कर रहे थे। गरुड़ों के राजा ने उन्हें प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। उन्होंने ऐसा दिखाया मानो उन्हें स्वयं इस बात का ज्ञान न हो, कि उस स्थान पर पहले क्या उगता था। उन्होंने उत्तर दिया, “एक गरुला नाग को अपने भोजन के लिए ले जा रहा था, नाग ने बचने के लिए अपनी पूंछ बरगद के पेड़ की एक शाखा से लपेट ली; लेकिन पक्षी ने अपनी प्रबल शक्ति से ऊपर की ओर छलांग लगाई और उड़ गया, जिससे पेड़ उखड़ गया; यह वही स्थान है जहाँ से वह उखड़ा है।” “पक्षी को क्या दोष लगा?” “यदि उसने अनजाने में ऐसा किया, तो यह केवल अज्ञानता थी, पाप नहीं।” “नाग का क्या हुआ?” “उसने पेड़ को नुकसान पहुँचाने के इरादे से नहीं पकड़ा था, इसलिए उसे भी कोई दोष नहीं है।” गरुला तपस्वी से प्रसन्न हुआ और बोला, “मेरे मित्र, मैं गरुलाओं का राजा हूँ, और मुझे आपके प्रश्न के उत्तर से प्रसन्नता हुई है। अब आप यहाँ जंगल में रहते हैं और मुझे अमूल्य आलमबायना मंत्र आता है। मैं इसे आपके पाठ के शुल्क के रूप में आपको देता हूँ, कृपया इसे स्वीकार करें।” “मुझे मंत्रों के बारे में पर्याप्त जानकारी है, आप जा सकते हैं।” लेकिन वह उस पर दबाव डालता रहा और अंततः उसे इसे स्वीकार करने के लिए राजी कर लिया, इसलिए उसने उसे मंत्र दिया और उसे औषधीय जड़ी-बूटियों के बारे में समझाया और चला गया।

उस समय बनारस में एक गरीब ब्राह्मण गहरे कर्ज में डूब गया था और अपने लेनदारों के दबाव में आकर उसने मन ही मन कहा, "यहाँ क्यों रहूँ? मुझे यकीन है कि जंगल में जाकर मर जाना बेहतर होगा।" इसलिए वह अपना घर छोड़कर कई यात्राएँ करते हुए उस आश्रम में पहुँचा। उसने आश्रम में प्रवेश किया और अपने कर्तव्यों का लगन से पालन करके उस तपस्वी को प्रसन्न किया। तपस्वी ने मन ही मन कहा, "यह ब्राह्मण तो मेरा बहुत भला कर रहा है, मैं इसे वह दिव्य मंत्र दूँगा जो गरुड़ों के राजा ने मुझे दिया था।" तब उसने उससे कहा, "हे ब्राह्मण, मैं आलमबायन मंत्र जानता हूँ, मैं तुम्हें यह मंत्र दूँगा, क्या तुम इसे स्वीकार करोगे?" दूसरे ने उत्तर दिया, "शांति, मेरे मित्र, मुझे किसी मंत्र की आवश्यकता नहीं है," लेकिन दूसरे ने बार-बार आग्रह किया और अंततः उसे मना लिया; तब उसने उसे मंत्र दे दिया और उसे इसके लिए आवश्यक सरल बातें समझाईं और इसके उपयोग की पूरी विधि बताई।

ब्राह्मण ने मन ही मन कहा, "मुझे जीविका का साधन मिल गया है"; अतः कुछ दिन वहाँ रहने के बाद, उसने गठिया का बहाना बनाया और तपस्वी से क्षमा माँगकर उनसे सम्मानपूर्वक विदा ली और वन से प्रस्थान किया। वह कई चरणों से होते हुए यमुना नदी के तट पर पहुँचा, जहाँ से वह मुख्य मार्ग पर मंत्र का जाप करते हुए आगे बढ़ा। ठीक उसी समय भूरिदत्त की सेवा में तपे हुए एक हजार नाग युवक उस रत्न को लिए हुए थे जो सभी मनोकामनाएँ पूरी करता है। वे नागलोक से निकलकर एक रेतीले टीले पर रुक गए थे और रात भर उसकी चमक में जल में खेलने के बाद, सुबह होते ही उन्होंने अपने सभी आभूषण पहन लिए और रत्न की चमक कम करते हुए (*14) बैठ कर उसकी रक्षा करने लगे। ब्राह्मण मंत्र जपते हुए उस स्थान पर पहुँच गया। मंत्र सुनकर वे भयभीत हो गए, कहीं वे गरुड़ राजा न आ जाएँ, और रत्न लेने के लिए रुके बिना ही धरती में समा गए और नागलोक भाग गए। ब्राह्मण ने रत्न देखकर कहा, "मेरा मंत्र तुरंत सफल हो गया है"; और उसने प्रसन्नतापूर्वक रत्न उठाया और अपने रास्ते चला गया। उसी समय, एक बहिष्कृत ब्राह्मण अपने पुत्र सोमदत्त के साथ हिरण का शिकार करने के लिए जंगल में प्रवेश कर रहा था। जब उसने दूसरे के हाथ में रत्न देखा, तो उसने अपने पुत्र से कहा, "क्या यह वही रत्न नहीं है जो भूरिदत्त ने हमें दिया था?" "हाँ," उसके पुत्र ने कहा, "यह वही है।" "अच्छा, मैं उसे इसके बुरे गुणों के बारे में बताकर उसे धोखा दूंगा और रत्न अपने लिए ले लूँगा।" "हे पिता, जब भूरिदत्त ने आपको रत्न दिया था तब आपने उसे रखा नहीं था: यह ब्राह्मण निश्चित रूप से आपको धोखा देगा, इस बारे में चुप रहें।" "रहने दो, मेरे पुत्र; तुम देखोगे कि कौन सबसे अच्छा धोखा दे सकता है, वह या मैं।" इसलिए वह आलमबायना के पास गया और उससे बात की:

"तुम्हें यह अनमोल रत्न कहाँ से मिला, जो सौभाग्य लाता है और देखने में भी सुंदर है?"
लेकिन क्या इसमें कुछ ऐसे संकेत और निशान हैं, जिनसे मैं इसे पहचान सकूँ?
आलमबायना ने निम्नलिखित श्लोक में उत्तर दिया:

"आज सुबह जब मैं टहल रहा था तो मैंने उस रत्न को वहीं पड़ा हुआ देखा।"
उसके हजार लाल आंखों वाले रक्षक सब भाग गए और उसे वहीं छोड़कर चले गए ताकि वह मेरा शिकार बन सके।"
उस बहिष्कृत व्यक्ति के पुत्र ने, उसे धोखा देने की इच्छा से, तीन छंदों में उसे उस रत्न के बुरे गुणों के बारे में बताया, ताकि वह उसे स्वयं प्राप्त कर सके:

"ध्यानपूर्वक देखभाल की गई, अच्छी तरह से सम्मानित की गई, और सावधानीपूर्वक पहनी या रखी गई।"
यह अपने मालिक को सभी अच्छी चीजें प्रदान करता है, चाहे उसकी इच्छाएं कितनी भी बड़ी क्यों न हों;
लेकिन अगर वह इसका अनादर करता है और इसे लापरवाही से पहनता या रखता है,

उसे इसे पाकर बहुत पछतावा होगा, इससे उसे केवल दुख ही मिलेगा।
इसके बाद अगर आपके पास करने को कुछ नहीं है, तो क्या आपके पास ऐसी वस्तु को संभालने का कौशल नहीं है?
इसे मुझे दे दो और बदले में सौ पाउंड पीला सोना ले लो।"
तब आलमबायना ने उत्तर में एक श्लोक कहा:

"मैं अपने इस अनमोल रत्न को नहीं बेचूंगा, चाहे इसके बदले में गायें या गहने ही क्यों न दिए जाएं।"
इसके निशान और चिह्नों को मैं भली-भांति जानता हूँ, और इसे मुझसे कभी खरीदा नहीं जा सकता।"
ब्राह्मण ने कहा:

यदि गायें या रत्न भी आपसे वह रत्न न खरीदें जो आप पहनते हैं,
आप इसे कितने में बेचेंगे? कृपया मुझे सही-सही जवाब दें।
अलाम्बायाना ने उत्तर दिया:

जो मुझे बता सके कि पराक्रमी नाग अपने अभिमान में कहाँ पाया जाता है,
मैं उसे यह रत्न दूंगा, जिसकी किरणें चारों ओर फैलती हैं।
ब्राह्मण ने कहा:

"क्या यह गरुड़ राजा है, जो आज ब्राह्मण के वेश में आया है?"
क्या वह भोजन की तलाश में नाग को अपना शिकार बनाना चाहता था?
अलाम्बायाना ने उत्तर दिया:

"मैं कोई पक्षी-राजा नहीं हूँ, न ही कोई गरुड़ पक्षी कभी मेरी दृष्टि में आया है।"
मैं एक ब्राह्मण डॉक्टर हूं, दोस्त, और सांप और सांप के काटने का इलाज करना मेरा पेशा है।"
ब्राह्मण ने कहा:

"तुम्हारे पास कौन सी विशेष शक्ति है, या क्या तुमने कोई सूक्ष्म कौशल सीखा है?"
जिससे आपको उन साँपों को संभालने की यह प्रतिरक्षा मिलती है जिनके दाँत जानलेवा हो सकते हैं?
उन्होंने उत्तर देते हुए अपनी शक्ति का वर्णन इस प्रकार किया:

"जंगल में रहने वाले साधु कोसिया ने लंबी और कष्टदायी तपस्या को भलीभांति संपन्न किया।"
और अंत में एक गारुला ने उसे सर्प-मंत्र के बारे में बताया।
वह परम पवित्र ऋषि, जो एकांत पर्वत शिखर पर एकांतवास में रहते थे,
मैंने पूरी लगन से सेवा की और दिन-रात अथक परिश्रम किया;
और अंत में, मेरी वर्षों की निष्ठापूर्ण सेवा के प्रतिफल के रूप में।
मेरे परम पूज्य गुरु ने मुझे स्वर्गिक रहस्य प्रकट किया।
इस सर्वशक्तिमान मंत्र पर भरोसा रखते हुए, मैं सबसे भयंकर सांपों से भी नहीं डरता;
मैं उनके सबसे घातक डंकों का प्रतिकार करता हूँ, मैं आलमबायना द्रष्टा हूँ।"
उसकी बात सुनकर, उस बहिष्कृत ब्राह्मण ने मन ही मन सोचा, "यह आलमबायना नाग को दिखाने वाले को रत्नों का मोती देने को तैयार है; मैं उसे भूरिदत्त दिखाऊंगा और इस प्रकार रत्न प्राप्त कर लूंगा"; इसलिए उसने अपने पुत्र से परामर्श करते हुए यह श्लोक कहा:

"चलो इस अनमोल रत्न को सुरक्षित कर लें, मेरे बेटे; आओ, सोमदत्ता, जल्दी करें।"
और न ही हमें अपना भाग्य उस मूर्ख (*15) की तरह खोना चाहिए जिसने अपनी छड़ी से अपने भोजन का बर्तन तोड़ दिया था।"
सोमदत्ता ने उत्तर दिया:

"जब तुम उस अजनबी के रास्ते में आए, तो उसने तुम्हें उचित सम्मान के बारे में समझाया।"
और क्या अब तुम उसकी इस सौहार्दपूर्ण स्वागत का बदला चुकाने के लिए उसे लूट लोगे?
यदि आपको धन चाहिए तो पहले की तरह भूरिदत्त से ही मांग करें;
उससे मांगो, वह खुशी-खुशी तुम्हारे दिल की हर इच्छा पूरी कर देगा, और उससे भी अधिक देगा।"
ब्राह्मण ने कहा:

जो कुछ सौभाग्य से प्राप्त हुआ है, वह कटोरे या हाथ में पहले से ही मौजूद है।

इसे तुरंत खा लो और कोई सवाल मत पूछो, अन्यथा तुम्हें दिया गया इनाम खोना पड़ेगा।
सोमदत्ता ने उत्तर दिया:

धरती उसके लिए तड़प रही है, अंत में नरक की सबसे भयंकर आग उस गद्दार का इंतजार कर रही है।
या फिर, भयंकर भूख से व्याकुल होकर, वह व्यक्ति जो अपने मित्र को धोखा देता है, एक जीवित मृत्यु की कामना करता है।
भूरिदत्त से पूछो, यदि तुम धन चाहते हो तो वह तुम्हें तुम्हारी मनोकामना पूरी कर देगा;
लेकिन अगर तुम पाप करोगे, तो मुझे डर है कि तुम्हारा पाप तुम्हें जल्द ही पकड़ लेगा।"
ब्राह्मण ने कहा:

लेकिन, एक महंगे बलिदान के माध्यम से ब्राह्मण पाप कर सकते हैं और फिर भी पवित्र हो सकते हैं;
हम महान बलिदान देंगे और इस प्रकार शुद्ध होकर पाप से बच जाएंगे।"
सोमदत्ता ने कहा:

"अपनी अपशब्द बंद करो, मैं नहीं रुकूंगा, इसी क्षण मैं जा रहा हूँ।"
मैं तुम्हारे इस तुच्छ हृदय के दर्द में तुम्हारा साथ एक कदम भी नहीं दूंगा।"
ऐसा कहकर, उस ज्ञानी युवक ने अपने पिता की सलाह को ठुकराते हुए, ऊँची आवाज़ में कहा, जिससे आस-पास के देवता भी चौंक गए, "मैं ऐसे पापी के साथ नहीं जाऊँगा," और अपने पिता के देखते ही भाग गया; और हिमवत (हिमालय) की गहराइयों में जाकर, वहाँ एक तपस्वी बन गया, और अपनी इंद्रियों और उपलब्धियों का अभ्यास करके और रहस्यमय ध्यान में सिद्धि प्राप्त करके, उसने ब्रह्मलोक में जन्म लिया। गुरु ने इसे निम्नलिखित श्लोक में समझाया है:

"इस प्रकार, महान सोमदत्त ने अपने पिता को वहीं खड़े-खड़े फटकारा।"
उस स्थान की आत्माओं को चौंकाते हुए, वह मुड़ा और जंगल से तेजी से निकल गया।
उस बहिष्कृत ब्राह्मण ने मन ही मन सोचा, "सोमदत्त अपने घर के सिवा और कहाँ जाएगा?" और जब उसने देखा कि आलमबायना थोड़ा नाराज़ है, तो उसने उससे कहा, "चिंता मत करो, आलमबायना, मैं तुम्हें भूरिदत्त से मिलवा दूँगा।" अतः वह उसे लेकर उस स्थान पर गया जहाँ नागराज व्रत रखता था; और जब उसने भूरिदत्त को चींटियों के टीले पर फनों को सिकोड़कर लेटे हुए देखा, तो वह थोड़ी दूरी पर खड़ा हो गया और हाथ बढ़ाकर दो श्लोक बोले:

"इस सर्प-राजक को वहीं पकड़ लो जहां वह लेटा है और फिर उस अनमोल रत्न को छीन लो।"
उसके सिर पर एक मुकुट की तरह चमकता हुआ, लेडीबर्ड की तरह चमकदार रंग का एक मुकुट है।
चींटियों के टीले पर देखो! वह बिना किसी भय के लेटा हुआ है।
वहां रुई के ढेर की तरह फैल जाओ, उसे पकड़ लो इससे पहले कि उसे पता चले कि तुम पास हो।"
उस महान प्राणी ने अपनी आँखें खोलीं और उस बहिष्कृत को देखकर सोचा, "मैं इस व्यक्ति को अपने नाग घर ले गया और उसे खूब समृद्धि दी, लेकिन इसने मेरे दिए हुए रत्न को स्वीकार नहीं किया और अब यह एक सपेरे के साथ यहाँ आया है। लेकिन अगर मैं उसके विश्वासघात के लिए उससे क्रोधित होता, तो मेरे नैतिक चरित्र को ठेस पहुँचती। अब मेरा सर्वप्रथम कर्तव्य है कि मैं व्रत के चारों चरणों का पालन करूँ, जो अक्षुण्ण रहना चाहिए; इसलिए चाहे आलमबायना मुझे टुकड़ों में काट दे, पका दे या सींक पर टांग दे, मुझे किसी भी हालत में उससे क्रोधित नहीं होना चाहिए।" इस प्रकार अपनी आँखें बंद करके और संकल्प के सर्वोच्च आदर्श का पालन करते हुए, उन्होंने अपना सिर अपने फनों के बीच रख लिया और पूर्णतः गतिहीन होकर लेट गए (*16)।

वी

तब उस बहिष्कृत ब्राह्मण ने कहा, "हे आलमबायना, इस नाग को पकड़ो और मुझे यह रत्न दो।" आलमबायना नाग को देखकर प्रसन्न हो गया और रत्न की जरा भी परवाह न करते हुए उसे उसके हाथ में फेंक दिया और कहा, "ले लो, ब्राह्मण"; लेकिन रत्न उसके हाथ से फिसल गया और गिरते ही जमीन में समा गया और नागलोक में खो गया। ब्राह्मण ने खुद को तीन चीजों से वंचित पाया - अनमोल रत्न, भूरिदत्त की मित्रता और उसका पुत्र - और जोर-जोर से विलाप करते हुए अपने घर चला गया, "मैंने सब कुछ खो दिया, मैं अपने पुत्र की बात नहीं मानूंगा।" लेकिन आलमबायना ने पहले अपने शरीर पर दिव्य औषधि लगाई और थोड़ा सा भोजन करके स्वयं को मजबूत किया, फिर दिव्य मंत्र का उच्चारण किया और बोधिसत्व के पास जाकर उनकी पूंछ पकड़ ली, और उन्हें कसकर पकड़े हुए उनका मुंह खोला और स्वयं एक औषधि खाकर उसमें थूक दिया। शुद्ध स्वभाव वाले नाग राजा ने नैतिक नियमों का उल्लंघन करने के भय से अपने भीतर क्रोध की भावना को नहीं आने दिया, और यद्यपि उन्होंने अपनी आँखें खोलीं, फिर भी पूरी तरह नहीं खोलीं (*17)। नाग को जादुई औषधि पिलाने के बाद, उन्होंने उसकी पूंछ पकड़कर उसका सिर नीचे की ओर झुकाया और उसे हिलाकर निगला हुआ भोजन उगलवा दिया। फिर उन्होंने उसे जमीन पर पूरी लंबाई में फैला दिया। इसके बाद, उन्होंने उसे तकिए की तरह हाथों से दबाकर उसकी

हड्डियों को चूर-चूर कर दिया, और फिर उसकी पूंछ पकड़कर उसे ऐसे पीटा जैसे कोई कपड़ा पीट रहा हो। इतना दर्द सहने के बावजूद भी उस महान प्राणी को क्रोध नहीं आया।

शिक्षक ने इसका वर्णन निम्नलिखित श्लोक में किया है:

"जादुई शक्ति वाली औषधियों के बल पर और दुष्टतापूर्ण कौशल से मंत्रों का जाप करके,"
उसने उसे निर्भयतापूर्वक पकड़ लिया और अपने वश में कर लिया और उसे अपनी इच्छा के अधीन कर लिया।
इस प्रकार महापुरुष को असहाय बनाकर, उसने लताओं से भरी एक टोकरी तैयार की और उसे उसमें फेंक दिया; पहले तो उसका विशाल शरीर उसमें नहीं जा रहा था, लेकिन एड़ियों से लात मारकर उसने उसे जबरदस्ती अंदर डाल दिया। फिर, एक गाँव में जाकर, उसने टोकरी को गाँव के बीचोंबीच रख दिया और ज़ोर से चिल्लाया, "जो भी नाग नृत्य देखना चाहता है, वह यहाँ आ जाए"; और सभी ग्रामीण उसके चारों ओर जमा हो गए। फिर उसने नाग राजा को बाहर आने के लिए बुलाया, और महापुरुष ने सोचा, "आज भीड़ को प्रसन्न करने और नृत्य करने में ही मेरी भलाई है; शायद उसे खूब धन मिल जाए और वह प्रसन्न होकर मुझे जाने दे; वह मुझसे जो भी करवाए, मैं वह करूँगा।" इसलिए जब आलमबायना ने उसे टोकरी से बाहर निकाला और उसे फूलने के लिए कहा, तो उसने अपना पूरा आकार धारण कर लिया; और जब उसने उसे छोटा, गोल या टीले की तरह ढेर होने (*18) के लिए कहा, या एक, दो, तीन, चार, पाँच, दस, बीस या सौ तक कोई भी संख्या में फन धारण करने के लिए कहा, या ऊँचा या नीचा होने के लिए कहा, या अपने शरीर को दृश्यमान या अदृश्य करने के लिए कहा, या नीला, पीला, लाल, सफेद या गुलाबी होने के लिए कहा, या पानी निकालने के लिए कहा, या पानी और धुआँ निकालने के लिए कहा, तो उसने आदेशानुसार ये सभी रूप धारण कर लिए और अपनी नृत्य प्रतिभा का प्रदर्शन किया। इसे देखने वाला कोई भी व्यक्ति अपने आँसू नहीं रोक सका और लोग सोने के सिक्के, सोना, वस्त्र, आभूषण आदि लेकर आए, जिससे उसे अकेले उस गाँव में ही एक लाख सिक्के प्राप्त हुए।

पहले तो, जब उसने उस महान प्राणी को पकड़ लिया था, तो उसका इरादा उसे तब छोड़ने का था जब उसे एक हजार सिक्के मिल जाएँ; लेकिन जब उसने इतनी कमाई कर ली, तो उसने कहा, "मैंने एक छोटे से गाँव में इतना सारा धन कमा लिया है, शहर में तो मेरा कितना बड़ा धन होगा!" इसलिए, अपने परिवार को वहाँ बसाने के बाद, उसने रत्नों से लदी एक टोकरी बनवाई, और उस महान प्राणी को उसमें डालकर, एक आलीशान रथ पर सवार होकर अपने दल के साथ चल पड़ा। रास्ते में आने वाले हर गाँव और कस्बे में उसने उसे नचाया, और अंत में वे बनारस पहुँचे। उसने नागराज को शहद और भुना हुआ अनाज दिया, और उसके खाने के लिए मेंढक मारे; लेकिन उसने भोजन नहीं लिया, क्योंकि उसे अपनी कैद से मुक्त न होने का डर था (*19); लेकिन फिर भी उसने भोजन नहीं लिया, तो दूसरे ने उसे अपने करतब दिखाने के लिए मजबूर किया, और शहर के द्वार पर स्थित चार गाँवों से शुरुआत की, जहाँ उसने एक महीना बिताया। फिर पंद्रहवें दिन उपवास के दिन उसने राजा को बताया कि वह उस दिन नाग के नृत्य कौशल का प्रदर्शन करेगा। परिणामस्वरूप राजा ने ढोल बजाकर घोषणा की और एक बड़ी भीड़ इकट्ठा की, और महल के प्रांगण में मचान की परतें खड़ी की गईं (*20)।

VI.

लेकिन जिस दिन बोधिसत्व को आलम्बना ने पकड़ लिया, उस दिन उस महान प्राणी की माता ने स्वप्न में देखा कि लाल आँखों वाला एक काला आदमी तलवार से उसकी बांह काट रहा है और खून से लथपथ उसे ले जा रहा है। वह भय से उछल पड़ी, लेकिन अपनी दाहिनी बांह को छूकर उसने महसूस किया कि यह केवल एक स्वप्न था। तब उसने मन ही मन सोचा, "मैंने एक बुरा और भयानक स्वप्न देखा है; यह मेरे चारों पुत्रों, राजा धतरत्थ या मुझ पर आने वाली किसी विपत्ति का संकेत है।" लेकिन तभी उसका ध्यान विशेष रूप से बोधिसत्व पर केंद्रित हो गया: "अब बाकी सब नागलोक में रह रहे हैं, लेकिन वह नियमों का पालन करने और व्रत रखने की प्रतिज्ञा लेकर मनुष्यलोक में चला गया है; इसलिए मुझे आश्चर्य है कि कहीं कोई सपेरा या गरुला उसे पकड़ तो नहीं रहा है।" वह उसके बारे में बार-बार सोचती रही, और अंत में पखवाड़े भर बाद वह पूरी तरह से निराश हो गई और बोली, "मेरा पुत्र मेरे बिना पूरा पखवाड़ा भी नहीं जी सका, अवश्य ही उसके साथ कोई विपत्ति आ गई होगी।" एक महीना बीत जाने के बाद भी उसकी आँखों से आँसू लगातार बहते रहे, वह अपने दुख में डूबी हुई थी और उस रास्ते को देखती रहती थी जिससे वह वापस आएगा, और लगातार कहती रहती थी, "ज़रूर अब वह घर आ रहा होगा, ज़रूर अब वह घर आ रहा होगा।" तभी उसका बड़ा बेटा सुदस्सना एक महीने की अनुपस्थिति के बाद अपने माता-पिता से मिलने अपने साथ कई सेवकों को लेकर आया। उसने अपने सेवकों को बाहर ही छोड़ दिया और महल में प्रवेश किया। अपनी माँ को प्रणाम करने के बाद वह एक तरफ खड़ा हो गया; लेकिन माँ ने उससे कुछ नहीं कहा, वह भूरिदत्त के लिए शोक मनाती रही। उसने मन ही मन सोचा, "जब भी मैं लौटा हूँ, मेरी माँ हमेशा प्रसन्न हुई हैं और मेरा गर्मजोशी से स्वागत किया है, लेकिन आज वह बहुत दुखी हैं; इसका क्या कारण हो सकता है?" इसलिए उसने अपनी माँ से पूछा:

"आप मुझे पूरी सफलता के साथ आते हुए देखते हैं, मेरी हर इच्छा पूरी हुई है;
फिर भी आपमें खुशी के कोई लक्षण नहीं दिखते, और आपका पूरा चेहरा उदास है।

कमल के फूल की तरह काला, जिसे बेरहमी से तोड़ दिया गया हो और जो हाथ में ही मुरझाकर गिर जाता है;
क्या विदेश से लौटने पर आप मेरा यही स्वागत करते हैं?
उसके ये शब्द सुनकर भी वह चुप रही। तब सुदस्साना ने सोचा, "क्या किसी ने उसका अपमान या मानहानि की है?" इसलिए उसने उससे प्रश्न पूछते हुए एक और श्लोक कहा:

क्या किसी ने तुम्हें डांटा है या तुम किसी गुप्त पीड़ा से व्याकुल हो?
तो क्या इसलिए जब तुम मुझे दोबारा देखते हो तब भी तुम्हारा चेहरा उदास रहता है?
उसने इस प्रकार उत्तर दिया:

"मेरे बेटे, ठीक एक महीने पहले इसी दिन मैंने एक बुरा सपना देखा था;
एक आदमी आया और उसने मेरी बांह काट दी जब मैं अपने बिस्तर पर सो रहा था।
और वह खून बहते हुए अंग को ले गया, मेरे आँसू भी उसके हाथ को रोक नहीं सके।
उस क्रूर दृश्य को देखने के बाद से मेरे हृदय में घोर भय का भाव व्याप्त है।
दिन हो या रात, मुझे एक पल की भी शांति या खुशी नहीं मिली है।
यह कहते हुए वह फूट-फूटकर विलाप करने लगी, "मुझे मेरा प्यारा बेटा, तुम्हारा सबसे छोटा भाई कहीं नहीं दिख रहा; उसके साथ कोई बुरी घटना घट गई होगी," और वह चिल्लाई:

"वह व्यक्ति जिसकी सेवा करने में सुंदर युवतियां गर्व महसूस करती थीं,"
उनके सुनहरे जालों से सजे बाल, हाय! भूरिदत्ता अब नहीं रहे;
जिसकी रक्षा बलवान सैनिक अपनी खींची हुई तलवारों के साथ एक वीर दल के साथ करते थे,
कनिकारा के फूलों की तरह चमक रहा है, अफसोस! मैं उसे व्यर्थ ही ढूंढ रहा हूँ!
मुझे तुम्हारे भाई का पता लगाना होगा और यह जानना होगा कि वह कहाँ रहने लगा है।
अपनी तपस्वी प्रतिज्ञा पूरी करते हुए, और यह जानने की कोशिश करते हुए कि सब ठीक है या नहीं।"
ये शब्द कहकर वह अपने साथ-साथ उसके सेवकों के समूह के साथ रवाना हो गई।

भूरिदत्ता की पत्नियाँ उसे चींटियों के टीले पर न पाकर चिंतित नहीं हुईं, क्योंकि उन्होंने सोचा कि वह निश्चित रूप से अपनी माँ के घर गया होगा; लेकिन जब उन्होंने सुना कि उनकी माँ अपने बेटे को न पाकर रोती हुई आ रही हैं, तो वे उनसे मिलने गईं और उनके चरणों में गिरकर जोर-जोर से रोने लगीं, "हे देवी, आज एक महीना हो गया जब हमने आखिरी बार आपके बेटे को देखा था।"

शिक्षक ने इसका वर्णन इस प्रकार किया:

भूरिदत्त की पत्नियों ने वहाँ उसकी माँ को पास आते देखा।
और उन्होंने अपने हाथ फैलाकर अत्यंत कड़वी आवाज में रोना शुरू कर दिया;
"भूरिदत्ता, आपका बेटा, एक महीने पहले यहाँ से चला गया, हमें नहीं पता कहाँ गया।"
वह जीवित है या मृत, हम अपनी निराशा में यह नहीं बता सकते।
मां सड़क के बीचोंबीच अपनी बहुओं के साथ रोने लगी और फिर उनके साथ महल में चली गई, और वहां अपने बेटे के बिस्तर को देखकर उसका दुख फूट पड़ा।

"जैसे कोई अकेला पक्षी जिसका बच्चा मारा गया हो, जब वह अपना खाली घोंसला देखता है,
इसलिए, जब मैं भूरिदत्ता को व्यर्थ में ढूंढता हूँ, तो मेरा हृदय दुःख से भर जाता है।
मेरे हृदय की गहराई में उनके लिए मेरा शोक तीव्र और निरंतर ज्वाला बनकर जल रहा है।
ठीक उसी तरह जैसे एक लोहार भट्टी को अपने साथ हर जगह ले जाता है जहाँ उसे जाना होता है।
जब वह इस तरह रो रही थी, भूरिदत्ता का घर मानो समुद्र की खोखली गर्जना जैसी एक निरंतर ध्वनि से भर गया था। कोई भी विचलित हुए बिना नहीं रह सका, और पूरा वातावरण प्रलय के तूफान से घिरे साल के जंगल जैसा प्रतीत हो रहा था।

शिक्षक ने इसका वर्णन इस प्रकार किया:

"तूफान में गिरे हुए साल के पेड़ों की तरह, जिनकी शाखाएँ टूट गई हों, जड़ें उखड़ गई हों,"
इसलिए माता, पत्नियां और बच्चे उस एकांत निवास स्थान में उदास पड़े रहे।

अपने माता-पिता से मिलने आए भाई अरित्था और सुभागा ने भी शोर सुना और भूरिदत्ता के बैठक कक्ष में प्रवेश किया और अपनी मां को सांत्वना देने की कोशिश की।

शिक्षक ने इसका वर्णन इस प्रकार किया:

"तब अरित्था और सुभागा, सहायता और सांत्वना देने के लिए उत्सुक होकर आते हैं,
भूरिदत्ता के घर में उठती हुई भीषण मातम की आवाज़ें सुनकर;
"माँ, शांत हो जाओ, तुम्हारा रोना-धोना बंद हो जाए, यही सभी जीवित प्राणियों का भाग्य है।"
ये सब जन्म-जन्मांतर तक अवश्य ही गुजरते हैं: सभी बातों में नियम बदलो, शोक मत करो।
समुद्दजा ने उत्तर दिया:

"मेरे बेटे, मैं यह बहुत अच्छी तरह जानता हूँ, यही सभी जीवित प्राणियों का भाग्य है।"
लेकिन अब मुझे कोई सामान्य हानि नहीं हुई है, इस तरह दुखी होकर मैं शोक करने के अलावा और कुछ नहीं कर सकता;
सचमुच, अगर मैं उसे न देखूँ, जो मेरा अनमोल रत्न और मेरी आत्मा का आनंद है,
मेरे भूरिदत्ता, मैं आज रात ही अपने इस कष्टमय जीवन का अंत कर दूंगा।
उसके बेटों ने उत्तर दिया:

"शोक मत करो, प्यारी माँ, अपना शोक शांत करो, हम अपने भाई को वापस लाएंगे;"
हम चारों ओर फैली विशाल पृथ्वी पर उसके पदचिह्नों का अनुसरण करेंगे।
पहाड़ियों और घाटियों को पार करते हुए, गांवों, कस्बों और शहरों से होते हुए, जब तक वह मिल न जाए,
हम आपको दस दिनों के भीतर उसे सुरक्षित वापस लाने का वादा करते हैं।"
तब सुदस्सन ने सोचा, "यदि हम तीनों एक ही दिशा में जाएँगे तो बहुत विलंब होगा: हमें तीन अलग-अलग स्थानों पर जाना होगा, एक देवताओं के लोक में, एक हिमवत (हिमालय) में और एक मनुष्यों के लोक में। परन्तु यदि कनारित्त मनुष्यों के लोक में गया तो वह उस गाँव या नगर को आग लगा देगा जहाँ उसे भूरिदत्त दिखाई देगा, क्योंकि वह क्रूर स्वभाव का है, उसे वहाँ भेजना उचित नहीं होगा।" अतः उसने उससे कहा, "तुम देवताओं के लोक में जाओ; यदि देवताओं (देवदूतों) ने उसे अपने लोक में धर्म का मार्ग सिखाने के लिए भेजा है, तो तुम उसे वहाँ से ले आओ।" परन्तु उसने सुभाग से कहा, "तुम हिमवत (हिमालय) जाओ और पाँचों नदियों में भूरिदत्त को खोजकर वापस आओ।" लेकिन जब उन्होंने स्वयं मनुष्यों के संसार में जाने का निश्चय किया, तो उन्होंने सोचा, "यदि मैं एक युवक के रूप में जाऊँगा तो लोग मेरा अपमान करेंगे; मुझे एक तपस्वी के रूप में जाना चाहिए, क्योंकि तपस्वी मनुष्यों को प्रिय और स्वागत योग्य होते हैं।" अतः उन्होंने तपस्वी का वेश धारण किया और अपनी माता को विदाई देने के बाद चल पड़े।

बोधिसत्व की एक बहन थी, जिसका नाम अच्चिमुखी था और जो उनसे बहुत प्रेम करती थी। जब उसने सुभगा को जाते हुए देखा, तो उसने उनसे कहा, "भाई, मैं बहुत दुखी हूँ, मैं आपके साथ चलूँगी।" "बहन," उन्होंने उत्तर दिया, "तुम मेरे साथ नहीं जा सकतीं, क्योंकि मैंने तपस्वी का वेश धारण कर लिया है।" "मैं एक छोटी मेंढक बन जाऊँगी और तुम्हारी जटाओं में चली जाऊँगी।" सुभगा के सहमत होने पर, वह एक छोटी मेंढक बन गई और उनकी जटाओं में लेट गई। सुभगा ने शुरू से ही उन्हें खोजने का निश्चय कर लिया था, इसलिए उन्होंने अपनी पत्नी से पूछा कि उन्होंने व्रत कहाँ रखा था और सबसे पहले वहीं गए। जब उन्होंने वहाँ उस स्थान पर रक्त देखा जहाँ अलंबना ने बोधिसत्व को पकड़ा था और जहाँ अलंबना ने लताएँ रखी थीं, तो उन्हें विश्वास हो गया कि बोधिसत्व को किसी सपेरे ने पकड़ा है। व्यथित होकर और आँखों में आँसू भरकर, वे अलंबना के पदचिह्नों का अनुसरण करने लगे। जब वह उस गाँव में आया जहाँ उसने पहली बार नृत्य का प्रदर्शन किया था, तो उसने लोगों से पूछा कि क्या किसी सपेरे ने वहाँ फलाँ-फलाँ साँप के साथ अपने करतब दिखाए थे? “हाँ, आलमबाना ने एक महीने पहले ये करतब दिखाए थे।” “क्या उसे इससे कुछ लाभ हुआ?” “हाँ, उसे इसी एक जगह पर एक लाख सिक्के मिले।” “अब वह कहाँ गया है?” “फलाँ गाँव।” वह चल पड़ा और जाते-जाते रास्ता पूछता हुआ अंत में महल के द्वार पर पहुँचा। ठीक उसी समय आलमबाना वहाँ पहुँच गया, स्नान और अभिषेक किया हुआ, उत्तम वस्त्र का चोगा पहने हुए (*24), और अपने सेवक से रत्नजड़ित टोकरी उठवा रहा था। एक बड़ी भीड़ जमा हो गई, राजा के लिए एक आसन लगाया गया, और उसने महल के भीतर रहते हुए ही संदेश भेजा, “मैं आ रहा हूँ, उसे नागों के राजा को नचाने दो।” फिर आलमबाना ने रत्नजड़ित टोकरी को एक बहुरंगी कालीन पर रखा, और इशारा करते हुए कहा, “यहाँ आओ, हे नाग-राजा।” उस समय सुदस्सन भीड़ के किनारे पर खड़े थे, जबकि महान प्राणी ने अपना सिर बाहर निकालकर चारों ओर लोगों को देखा। नाग दो कारणों से भीड़ को देखते हैं: यह देखने के लिए कि कोई गरुल या अभिनेता आस-पास तो नहीं है; यदि वे किसी गरुल को देखते हैं, तो वे भयवश नृत्य नहीं करते; यदि किसी अभिनेता को देखते हैं, तो वे लज्जावश नृत्य नहीं करते। देखते-देखते महान प्राणी ने भीड़ के दूसरे भाग में अपने भाई को देखा, और अपनी आँखों में भरे आँसुओं को रोकते हुए, वे टोकरी से बाहर निकले और अपने भाई के पास गए। उन्हें आते देख भीड़ भयवश पीछे हट गई और सुदस्सन अकेले रह गए; इसलिए वे उनके पास गए और अपना सिर उनके चरणों में रखकर रोने लगे; सुदस्सन भी रोने

लगे। अंत में महान प्राणी का रोना बंद हुआ और वे टोकरी में चले गए। आलम्बना ने मन ही मन कहा, "इस नाग ने तपस्वी को काट लिया होगा, मुझे उसे सांत्वना देनी चाहिए"; इसलिए वे उनके पास गए और बोले:

"यह मेरे हाथ से फिसल गया और पूरी ताकत से तुम्हारे पैर को जकड़ लिया।"
क्या इसने गलती से आपको काट लिया? घबराइए मत, इसके काटने से कोई नुकसान नहीं होता।
सुदस्सन उनसे कुछ बात करना चाहता था, इसलिए उसने उत्तर दिया:

"तुम्हारा यह सांप मुझे नुकसान नहीं पहुंचा सकता।"
मुझे पता है, मैं उसका मुकाबला कर सकता हूँ;
आप जहां चाहें खोज लें, आपको कुछ नहीं मिलेगा।
जो मुझ जैसे सांप को भी वश में कर सके।
अलम्बाना को पता नहीं था कि वह कौन है, इसलिए उसने गुस्से से जवाब दिया:

"ब्राह्मण के वेश में यह बदमाश आज मुझे चुनौती दे रहा है।"
सभा में उपस्थित सभी लोग मेरी बात सुनें और हम दोनों को निष्पक्ष मौका दें।"
तब सुदस्सना ने उत्तर में एक श्लोक कहा:

"मेंढक मेरा चैंपियन होगा, और तुम्हारा चैंपियन सांप हो सकता है।"
दांव पर पांच हजार सिक्के रखे जाएं, और हम अपनी ताकत दिखाएं।"
अलम्बाना ने उत्तर दिया:

मैं साधनों से संपन्न व्यक्ति हूं, और तुम एक दिवालिया मसखरे हो;
आपकी तरफ से कौन ज़मानत देगा, और जमा राशि कहां से मिलेगी?
यह मेरी जमानत है, यह वह हिस्सा है जो मुझे शर्त हारने की स्थिति में मिलेगा;
पांच हजार सिक्के मेरी शक्तियों को प्रदर्शित करेंगे, आपकी चुनौती पूरी हो गई है।"
सदासना ने उसकी बात सुनी और कहा, "ठीक है, चलो हम पाँच हज़ार सिक्कों के लिए अपनी शक्ति दिखाते हैं"; और वह निडर होकर राजमहल में गया और अपने ससुर राजा के पास जाकर उसने यह श्लोक कहा:

"हे महान सम्राट, मेरी बात सुनो, सौभाग्य कभी भी तुम्हारे कदमों को न छोड़े।"
क्या आप मेरी ओर से ज़मानत देंगे? दांव पर पाँच हज़ार सिक्के हैं।
राजा ने मन ही मन सोचा, "यह तपस्वी इतनी बड़ी रकम मांग रहा है, इसका क्या मतलब हो सकता है?" इसलिए उसने उत्तर दिया:

"क्या यह तुम्हारे पिता द्वारा छोड़ा गया कोई कर्ज है या यह सब तुम्हारा अपना है?"
आप मुझसे इस तरह का अभूतपूर्व ऋण मांगने आए हैं?
सुदासाना ने दो श्लोक दोहराए:

"अलंबना मुझे अपने सांप से पीटता था;
मैं अपने मेंढक से उसके ब्राह्मण होने के अभिमान को चूर-चूर कर दूंगा।
हे राजा, अपने समस्त अनुयायियों के साथ प्रकट होइए।
और देखो, यहाँ उसकी कैसी पिटाई होने वाली है।"
राजा मान गया और तपस्वी के साथ बाहर चला गया। जब आलमबाना ने उसे देखा, तो उसने सोचा, "इस तपस्वी ने राजा को अपने पक्ष में कर लिया है, यह राजपरिवार का कोई मित्र अवश्य होगा"; इसलिए वह डर गया और यह कहते हुए उसके पीछे चलने लगा:

मैं आपको नीचा नहीं दिखाना चाहता, मैं बिल्कुल भी घमंड नहीं करूंगा;
लेकिन तुम इस सांप से बहुत ज्यादा नफरत करते हो, और तुम्हारा अहंकार टूट सकता है।"
सुदस्सन ने दो श्लोक कहे:

मैं आपको अपमानित करने का प्रयास नहीं कर रहा हूँ,
एक ब्राह्मण, या आपके कौशल को तुच्छ समझना;
लेकिन किस कारण से भीड़ को इस प्रकार राजी किया जाए?
क्या ये ऐसे हानिरहित सांप हैं जो मार नहीं सकते?

अगर लोग आपकी असली कीमत को उतनी ही अच्छी तरह जान पाते जितना मैं स्पष्ट रूप से देख सकता हूँ,
सोने की बात क्यों करें?—थोड़ा सा भोजन ही आपके लाभ की सीमा होगी।"
अलम्बाना क्रोधित हो गया और बोला:

"हे गधे की खाल में लिपटे तपस्वी, बिना कंघी किए और देखने में गंदे,"
तुम मेरे इस सांप का अपमान करने की हिम्मत करते हो और कहते हो कि यह काट नहीं सकता;
पास आकर देखें और इसके कार्यों को आजमाएं, यदि आवश्यक हो तो अनुभव से सीखें;
मैं आपको यकीन दिलाता हूं कि इसका हानिरहित डंक आपको धूल का ढेर बना देगा।"
तब सुदस्सन ने उनका उपहास करते हुए एक श्लोक कहा:

"हो सकता है कि कोई चूहा या पानी का सांप काट ले।"
और यदि तुम उसे क्रोधित करो तो उसका विष वहीं छोड़ दो;
लेकिन आपका लाल सिर वाला सांप बिल्कुल हानिरहित है।
यह काटेगा नहीं, चाहे कितना भी थूक दे।
अलम्बाना ने दो छंदों में उत्तर दिया:

मुझे उन पवित्र संतों ने बताया है जिन्होंने निरंतर तपस्या की थी,
जो लोग इस जीवन में दान करते हैं, वे मरने के बाद स्वर्ग जाएंगे;
मैं आपको सलाह देता हूं कि यदि आपके पास कुछ भी देने के लिए है तो तुरंत दान कर दें।
यह सांप तुम्हें चूर-चूर कर देगा, तुम्हारे पास जीने के लिए बहुत कम समय बचा है।"
सुदस्सना ने कहा:

मैंने भी पवित्र संतों से सुना है कि दान देने वाले स्वर्ग जाएंगे;
जब तक आपके पास दान करने योग्य कुछ भी हो, तब तक दान कर दें।
यह मेरी कोई साधारण सांप नहीं है, यह तुम्हें अपनी शेखी बघारने वाली आवाज कम करने पर मजबूर कर देगी;
नाग राजा की पुत्री, और मेरी सौतेली बहन,
अच्चिमुखी, उसके मुख से ज्वालाएं निकलती हैं; उसका जहर सबसे घातक ज्ञात जहरों में से एक है।"
फिर उसने भीड़ के बीच में उसे पुकारा, "हे अच्चिमुखी, मेरी जटाओं से बाहर आओ और मेरे हाथ पर खड़ी हो जाओ"; और उसने अपना हाथ आगे बढ़ाया; और जब उसने उसकी आवाज़ सुनी तो वह उसके बालों में लेटी हुई ही मेंढक की तरह तीन बार चिल्लाई, और फिर बाहर आकर उसके कंधे पर बैठ गई, और उछलकर उसके हाथ की हथेली पर विष की तीन बूँदें गिरा दीं और फिर उसकी जटाओं में वापस चली गई। सुदस्सन विष को पकड़े खड़ा रहा और तीन बार चिल्लाया, "यह देश नष्ट हो जाएगा, यह देश पूरी तरह से नष्ट हो जाएगा"; उसकी आवाज़ बारह मील (4.23 किमी) तक फैले पूरे बनारस में गूँज उठी। राजा ने पूछा कि इसे कौन नष्ट करेगा। "हे राजा, मुझे कोई ऐसी जगह नहीं दिखती जहाँ मैं यह विष गिरा सकूँ।" "यह धरती ही काफी बड़ी है, इसे वहीं गिरा दो।" "यह संभव नहीं है," उसने उत्तर दिया, और उसने एक श्लोक दोहराया:

"यदि मैं इसे जमीन पर गिरा दूं, तो हे राजा, मेरी बात सुनो,"
घास, लताएँ और जड़ी-बूटियाँ सूखकर नष्ट हो जाएँगी।
"तो फिर, इसे आकाश में फेंक दो।" "यह भी संभव नहीं है," उसने कहा, और उसने एक छंद दोहराया:

"हे राजा, यदि मैं आपकी आज्ञा मानकर उसे आकाश में फेंक दूं,"
सात लंबे साल बीतने तक न तो आसमान से बारिश होगी और न ही बर्फ गिरेगी।
"तो इसे पानी में फेंक दो।" "यह संभव नहीं है," उसने कहा, और उसने एक पंक्ति दोहराई:

"यदि यह पानी में गिर जाए, तो हे राजा, मेरी बात सुनो,"
मछलियाँ और कछुए मर जाएँगे और समुद्र में रहने वाले सभी जीव-जंतु भी मर जाएँगे।"
तब राजा ने कहा, "मैं पूरी तरह से असमंजस में हूँ, क्या आप हमें इस भूमि को नष्ट होने से बचाने का कोई उपाय बता सकते हैं?" "हे राजा, यहाँ एक के बाद एक तीन गड्ढे खुदवाएँ।" राजा ने वैसा ही किया। सुदस्सन ने बीच वाले गड्ढे को औषधियों से, दूसरे को गोबर से और तीसरे को दिव्य औषधियों से भर दिया; फिर उसने विष की बूँदें बीच वाले गड्ढे में गिरा दीं। एक ज्वाला फूट पड़ी, जिससे गड्ढा धुएँ से भर गया; यह ज्वाला फैलकर गोबर वाले गड्ढे में जा पहुँची, फिर दोबारा फूटकर दिव्य औषधियों से भरे गड्ढे में जा पहुँची और उन सबको भस्म कर दिया, और फिर स्वयं बुझ गई। आलमबायन उस गड्ढे के पास खड़ा था, और विष की गर्मी उसे लगी, उसकी त्वचा का रंग

तुरंत उड़ गया और वह एक सफेद कुष्ठ रोगी बन गया। भयभीत होकर उसने तीन बार कहा, "मैं नागराज को मुक्त करूँगा।" उसकी यह बात सुनकर बोधिसत्व रत्नजड़ित टोकरी से बाहर आए, और सभी प्रकार के आभूषणों से सुशोभित रूप धारण करके, वे इंद्र के साक्षात वैभव के साथ खड़े हो गए। सुदस्सन और अच्चिमुखी भी वहीं खड़े थे। तब सुदस्सन ने राजा से कहा, "क्या आप नहीं जानते कि ये किसके बच्चे हैं?" "मैं नहीं जानता।" "आप हमें नहीं जानते, लेकिन आप यह जानते हैं कि काशी के राजा ने अपनी पुत्री समुद्दजा को धतरत्थ को दे दिया था।" "मैं अच्छी तरह जानता हूँ, क्योंकि वह मेरी सबसे छोटी बहन थी।" "हम उसके पुत्र हैं, और आप हमारे मामा हैं।" तब राजा ने उन्हें गले लगाया, उनके सिर चूमे और रोए, और उन्हें महल में ले गए और उनका बहुत सम्मान किया। भूरिदत्त के प्रति पूरी दया दिखाते हुए उन्होंने उससे पूछा कि अलंबना ने उसे कैसे पकड़ा, जबकि उसके पास इतना भयानक विष था। सुदस्सन ने पूरी कहानी सुनाई और फिर कहा, "हे महाराज, एक राजा को अपने राज्य पर इस प्रकार शासन करना चाहिए," और उन्होंने अपने मामा को धर्म का मार्ग सिखाया। फिर उन्होंने कहा, "हे मामा, हमारी माता भूरिदत्त को देखने की लालसा में बहुत कमजोर हो रही हैं, हम उनसे और अधिक समय तक दूर नहीं रह सकते।" "ठीक है, आप जा सकते हैं; लेकिन मैं भी अपनी बहन को देखना चाहता हूँ; मैं उसे कैसे देखूँ?" "हे चाचा जी, हमारे दादाजी, काशी के राजा कहाँ हैं?" "वे मेरी बहन के बिना नहीं रह सके, इसलिए उन्होंने अपना राज्य त्याग दिया और संन्यासी बन गए, और अब वे फलाँ-फलाँ जंगल में रह रहे हैं।" "चाचा जी, मेरी माँ आपसे और मेरे दादाजी से मिलने के लिए तरस रही हैं; हम उन्हें लेकर अपने दादाजी के आश्रम जाएँगे, और फिर आप भी उनसे मिल पाएँगे।" इस प्रकार उन्होंने एक दिन तय किया और महल से प्रस्थान किया; और राजा, अपनी बहन के पुत्रों से विदा होकर रोते हुए लौट आए; और वे पृथ्वी में समाहित होकर नागलोक चले गए (*25)।

सातवीं।

जब महापुरुष उनके बीच आए, तो पूरा शहर एक समान विलाप से भर गया। वे स्वयं टोकरी में एक महीने रहने से थक गए थे और बीमार पड़ गए; उनसे मिलने आने वाले नागों की कोई सीमा नहीं थी, और वे उनसे बात करते-करते थक गए। इसी बीच, कनारित्थ, जो देवदूतों के लोक में गए थे और वहाँ महापुरुष को नहीं पाया, सबसे पहले वापस लौटे; इसलिए उन्हें महापुरुष के बीमार निवास का द्वारपाल बना दिया गया, क्योंकि उनका मानना था कि वे भावुक हैं और नागों की भीड़ को दूर रख सकते हैं। सुभागा ने भी पूरे हिमवत (हिमालय) और उसके बाद विशाल सागर और अन्य नदियों की खोज करने के बाद, अपनी यात्रा के दौरान यमुना की खोज में आए। लेकिन जब उस बहिष्कृत ब्राह्मण ने देखा कि आलमबाना कुष्ठ रोगी हो गया है, तो उसने मन ही मन सोचा, "वह भूरिदत्त को परेशान करने के कारण कुष्ठ रोगी हो गया है; अब मैंने भी रत्न के लालच में आकर उसे धोखा दिया है, जबकि वह मेरा सहायक था, आलमबाना के हाथों, और इस अपराध का फल मुझे भुगतना पड़ेगा। इससे पहले कि ऐसा हो, मैं यमुना नदी में जाकर पवित्र स्नानागार में अपने पाप को धो डालूँगा।" अतः वह यह कहते हुए जल में उतर गया कि वह अपने विश्वासघात के पाप को धो डालेगा। उसी क्षण सुभागा वहाँ आया और उसकी बातें सुनकर मन ही मन बोला, "इस दुष्ट ने एक रत्न के लालच में मेरे भाई को, जिसने उसे धनवान बनने का ऐसा साधन दिया था, आलमबाना के हाथों धोखा दिया; मैं उसका जीवन नहीं बख्शूँगा।" अतः उसने अपनी पूंछ उसके पैरों में लपेटकर उसे पानी में घसीट लिया और उसे नीचे दबाए रखा; फिर जब उसकी साँसें रुक गईं तो उसने उसे थोड़ी देर के लिए शांत रहने दिया, और जब दूसरे ने अपना सिर ऊपर उठाया तो उसने उसे फिर से पानी में घसीट लिया और नीचे दबाए रखा; उसने यह बात कई बार दोहराई, अंत में उस बहिष्कृत ब्राह्मण ने अपना सिर उठाया और कहा:

मैं यहाँ पायगा की पवित्र बाढ़ में इस पवित्र स्थान पर स्नान कर रहा हूँ;
मेरे अंग पवित्र बूंदों से भीगे हुए हैं, कौन सा क्रूर राक्षस मेरा खून चाहता है?
सुभागा ने उन्हें निम्नलिखित श्लोक में उत्तर दिया:

"लोग कहते हैं कि प्राचीन काल में वह व्यक्ति इस क्रोधी और अभिमानी काशी के पास आया था,"
और उसने उसे अपनी शक्तिशाली कुंडलियों से लपेट लिया, उस यशस्वी सर्प-राजा ने।
मैं ही उनका पुत्र हूँ, जो अब तुम्हें धारण किए हुए हूँ: मेरा नाम सुभागा, ब्राह्मण है।
ब्राह्मण ने सोचा, "भूरिदत्त का भाई मेरी जान नहीं बख्शेगा, लेकिन अगर मैं उसके माता-पिता की प्रशंसा करके उसे दया भाव से भर दूं और फिर अपनी जान की भीख मांगूं तो क्या होगा?" इसलिए उसने यह श्लोक पढ़ा:

"कासी के वंशज (*27) शाही वंश दिव्य,
आपकी माता उसी प्रतिष्ठित वंश से हैं।
तुम सबसे नीच ब्राह्मण के गुलाम को भी नहीं छोड़ोगे।
निर्मम लहर के नीचे डूबकर मर जाना।"
सुभागा ने सोचा, "यह दुष्ट ब्राह्मण मुझे धोखा देकर मुझे जाने के लिए मनाना चाहता है, लेकिन मैं उसे उसकी जान नहीं दूंगा"; इसलिए उसने उसे उसके पुराने कर्मों की याद दिलाते हुए उत्तर दिया:

"एक प्यासा हिरण पानी पीने के लिए पास आया—तुम्हारे वृक्ष-द्वार से तुम्हारा तीर नीचे की ओर गिरा:
भय और पीड़ा में आपका शिकार भाग गया, एक ऐसी प्रेरणा से प्रेरित होकर जो उसकी अपनी नहीं थी;
घने जंगल में तुमने उसे गिरते देखा और उसे अपनी लाठी पर लादकर ले गए।
जहां बरगद की शाखाएँ घनी होकर मुख्य तने के चारों ओर गुच्छों में उगती थीं;
तोते शाखाओं पर खेल रहे थे, कोकिल का मधुर गीत गूंज रहा था।
नीचे फैली हरी घास का मैदान मानो विश्राम के लिए आमंत्रित कर रहा हो;
लेकिन वहाँ तुम्हारी क्रूर दृष्टि ने मेरे भाई को देखा, जो शाखाओं के बीच में था
गर्मी के मौसम में रंग-बिरंगे परिधानों में सजे-धजे वह अपने अनुयायियों के साथ शोभायमान थे।
उसने आनंद में तुम्हें कोई हानि नहीं पहुंचाई, परन्तु तुमने द्वेषवश उसकी हत्या कर दी।
एक निर्दोष पीड़ित, देखो आज वही अपराध तुम्हारे सिर पर लौट आया है।
मैं तुम्हारी जान एक घंटे भी नहीं बख्शूंगा, तुम्हें मेरे किए का पूरा बदला चुकाना होगा।"
तब ब्राह्मण ने सोचा, "वह मुझे मेरी जान नहीं देगा, लेकिन मुझे भागने की पूरी कोशिश करनी चाहिए"; इसलिए उसने निम्नलिखित श्लोक कहा:

अध्ययन, प्रार्थना करना, पवित्र अग्नि में आहुति देना,
ये तीन बातें ब्राह्मण के जीवन को मनुष्यों के क्रोध से सुरक्षित रखती हैं।
यह सुनकर सुभागा झिझकने लगा और मन ही मन सोचने लगा, "मैं उसे नागलोक ले जाकर अपने भाइयों से इस बारे में पूछूंगा"; इसलिए उसने दो श्लोक दोहराए:

"यमुना की पवित्र धारा के नीचे, जो सुदूर हिमालय की तलहटी तक फैली हुई है,
नागों की राजधानी के गहरे हिस्से में धतरत्थ का सिंहासन स्थित है;
वहाँ मेरे सभी वीर भाई निवास करते हैं, मैं आपकी विनती उन्हीं के समक्ष प्रस्तुत करूँगा।
और जैसा उनका फैसला होगा, वैसा ही तुम्हारा अंतिम फैसला होगा।"
फिर उसने उसकी गर्दन पकड़ ली और उसे जोर-जोर से गाली-गलौज करते हुए हिलाया और उसे महान सत्ता के महल के द्वार तक ले गया (*28)।

आठवीं।

द्वारपाल बने कनारित्थ वहाँ बैठे थे, और जब उन्होंने देखा कि दूसरे को इतनी बेरहमी से घसीटा जा रहा है, तो वे उनके पास गए और बोले, "सुभागा, उसे चोट मत पहुँचाओ; सभी ब्राह्मण ब्रह्मा के पुत्र हैं; यदि उन्हें पता चला कि हम उनके पुत्र को चोट पहुँचा रहे हैं, तो वे क्रोधित हो जाएँगे और हमारे समस्त नागलोक को नष्ट कर देंगे। संसार में ब्राह्मण सर्वोच्च स्थान पर हैं और उनका बहुत सम्मान है; आप उनके सम्मान को नहीं जानते, पर मैं जानता हूँ।" क्योंकि कहते हैं कि कनारित्थ ने इससे ठीक पहले जन्म में यज्ञ करने वाले ब्राह्मण के रूप में जन्म लिया था, इसलिए उन्होंने इतनी दृढ़ता से बात की। इसके अलावा, अपने पूर्व अनुभवों से यज्ञ परंपरा में निपुण होने के कारण, उन्होंने सुभागा और नाग सभा से कहा, "आओ, मैं तुम्हें यज्ञ करने वाले ब्राह्मणों के चरित्र का वर्णन करता हूँ," और उन्होंने आगे कहा:

वेद और यज्ञ, ये दोनों ही अत्यंत मूल्यवान और गरिमामयी वस्तुएँ हैं।
चाहे वे कितने भी तुच्छ क्यों न हों, ब्राह्मणों के अधिकार के रूप में उन पर अधिकार है;
यह उनका बड़ा सम्मान है और जो व्यक्ति अपने तिरस्कार से उनका अपमान करता है,
वह अपनी संपत्ति खो देता है और धर्म के मार्ग से भटक जाता है, और अपराधबोध से ग्रस्त और दुखी जीवन जीता है।"
तब कनारित्थ ने सुभाग से पूछा कि क्या वह जानता है कि संसार किसने बनाया है; और जब सुभाग ने अपनी अज्ञानता स्वीकार की, तो उसने यह श्लोक सुनाकर यह दर्शाया कि संसार का सृजन ब्रह्मा ने किया था, जो ब्राह्मणों के दादा थे।

उन्होंने ब्राह्मणों को अध्ययन और आदेश के लिए बनाया।
उन्होंने क्षत्रियों को बनाया; वैश्य भूमि जोतते हैं;
सुद्दास ने अपने सेवकों को बाकी लोगों की आज्ञा मानने के लिए बाध्य किया;
इस प्रकार, शुरू से ही सब कुछ प्रभु के आदेशानुसार चलता रहा।
फिर उन्होंने कहा, "इन ब्राह्मणों के पास महान शक्तियां हैं, और जो इन्हें प्रसन्न करता है और इन्हें उपहार देता है, उसका कोई पुनर्जन्म नहीं होता, बल्कि वह सीधे देवदूतों के लोक में जाता है"; और उन्होंने इन श्लोकों को दोहराया:

"कुबेर, सोम, वरुण, प्राचीन काल के,
धाता, विधाता, और सूर्य और चंद्रमा,
उन्होंने कई बार बलिदान अर्पित किए।
और उन्होंने अपने ब्राह्मण पुरोहितों को हर प्रकार का वरदान दिया।
उस विशालकाय अज्जुन ने भी इतना कष्ट पहुंचाया था।
जिसके विशाल शरीर के चारों ओर कभी हजारों भुजाएँ फैली हुई थीं,
प्रत्येक जोड़ी अपने-अपने धमकी भरे धनुष के साथ,
पवित्र अग्नि पर उचित भेंटें अर्पित की गईं।
फिर उन्होंने ब्राह्मणों की महिमा का वर्णन किया और बताया कि उन्हें ही सर्वोत्तम उपहार दिए जाने चाहिए।

"वह प्राचीन राजा जिसने उन्हें इतना बढ़िया भोज दिया था
प्राचीन कथाओं के अनुसार, अंततः वह एक देवता (देवदूत) बन गया।
राजा मुजालिंडा लंबे समय तक अग्नि की पूजा करते रहे।
उसने जितना घी डाला, उससे उसकी प्यास बुझाई;
और अंत में उसे वह पुरस्कार मिला जो उसने अर्जित किया था।
उसे स्वर्ग का वह मार्ग मिल गया जिसकी वह तलाश कर रहा था।
उन्होंने इस पाठ को समझाने के लिए इन छंदों को भी दोहराया:

दुजिपा कुल मिलाकर एक हजार वर्ष तक जीवित रहे।
उनके आह्वान पर असंख्य रथ और सेनाएँ हाजिर हो जाती थीं;
लेकिन अंततः उन्होंने एक तपस्वी का जीवन जी लिया।
और वह अपने आश्रम से स्वर्ग की ओर चल पड़ा।
सगर सारी पृथ्वी विजय रथ में,
और उन्होंने एक स्वर्ण बलि स्तंभ स्थापित किया;
उससे अधिक श्रद्धापूर्वक अग्नि की पूजा कोई नहीं करता था।
और वह भी देवता के पद तक पहुंचा।
अंगा, काशी के स्वामी, द्वारा दिए गए दूध और दही
अपनी लंबी भेंटों में इतनी उदारता से अर्पित करते हुए,
उनकी बाढ़ से गंगा सागर में तब्दील हो गई।
अंततः वह सक्का (इंद्र) के दरबार में पहुंचा।
स्वर्ग लोक में महान सक्का (इंद्र) का सेनापति,
सोमा-अर्पण के द्वारा ही सम्मान प्राप्त हुआ;
जो अब अमर शक्तियों का संयोजन करता है
वह हम जैसे ही पाप से सने नश्वर लोगों में से एक था।
ब्रह्मा, महान सृष्टिकर्ता, जिन्होंने सृष्टि की रचना की।
उनकी वेदी के प्रांगण में स्थित पर्वतीय स्थलचिह्न,
जिसकी आज्ञा का पालन करते हुए गंगा ने अपने मार्ग का मार्ग तय किया।
उन्होंने बलिदान के द्वारा ही अपना महान पुरस्कार प्राप्त किया।
फिर उसने उससे कहा, "भाई, क्या तुम जानते हो कि यह समुद्र खारा और पीने लायक नहीं कैसे हो गया?" "मैं नहीं जानता, अरित्था।"
"तुम तो सिर्फ ब्राह्मणों को चोट पहुँचाना जानते हो, मेरी बात सुनो।" फिर उसने एक श्लोक दोहराया:

"एक संन्यासी छात्र, जो प्रार्थना और मंत्रों में पारंगत है,"
मैंने सुना है कि एक बार वह किनारे पर खड़ा था;
उसने समुद्र को छुआ, और फिर समुद्र ने उसे निगल लिया।
और उस दिन के बाद से इसे पीना असंभव हो गया है।"
"ये सभी ब्राह्मण ऐसे ही हैं"; और उन्होंने एक और श्लोक कहा:

"जब सक्का (इंद्र) ने पहली बार अपना राजसिंहासन ग्रहण किया,
ब्राह्मणों के प्रति उनकी विशेष कृपा स्पष्ट रूप से दिखाई देती थी;

पूरब, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, उन्होंने अपनी रस्म का प्रचार किया।
और अंततः उन्हें अपना स्वयं का वेद मिल गया।"
इस प्रकार अरित्थ ने ब्राह्मणों, उनके यज्ञों और वेदों का वर्णन किया।

जब नागों ने उनकी बातें सुनीं, तो वे बोधिसत्व के बीमार बिस्तर पर उनसे मिलने आए और आपस में कहने लगे, "यह तो अतीत की कोई कथा सुना रहा है," और ऐसा प्रतीत हुआ कि वे झूठी शिक्षा को स्वीकार करने के खतरे में हैं। बोधिसत्व ने बिस्तर पर लेटे-लेटे यह सब सुना और नागों ने उन्हें इसके बारे में बताया; तब बोधिसत्व ने सोचा, "अरित्थ झूठी कथा सुना रहा है, मैं उसके प्रवचन को रोककर सभा में सही विचार रखूंगा।" अतः वे उठे, स्नान किया, अपने सभी आभूषण पहने और मंच पर बैठकर सभी नागों को एकत्रित किया। फिर उन्होंने अरित्थ को बुलवाया और उससे कहा, "अरित्थ, तुमने ब्राह्मणों और वेदों का वर्णन करते समय झूठ बोला है, क्योंकि वेदों की इन सभी विधि-विधानों द्वारा बलि देना उचित नहीं माना जाता और इससे स्वर्ग नहीं मिलता, देखो तुम्हारे शब्दों में कितना असत्य है"; अतः उन्होंने विभिन्न प्रकार के बलिदानों का वर्णन करने वाली इन गाथाओं को दोहराया:

"वेदों का यह अध्ययन ज्ञानी व्यक्ति का परिश्रम है।"
वह प्रलोभन जो पीड़ितों को लुभाता है और उन्हें भ्रष्ट कर देता है;
एक ऐसा मृगतृष्णा जो लापरवाह नजरों को आकर्षित करने के लिए बना था,
लेकिन समझदार व्यक्ति इसे सुरक्षित रूप से अनदेखा करके आगे बढ़ जाता है।
वेदों में उद्धार करने की कोई गुप्त शक्ति नहीं है।
गद्दार, कायर या बेईमान;
हालांकि, पिछले कई वर्षों से आग की अच्छी देखभाल की जा रही थी,
अंततः अपने दुष्ट स्वामी को निराश छोड़कर चला जाता है।
यद्यपि पृथ्वी के सभी वृक्षों को एक विशाल ढेर में जमा कर दिया गया था
आग के अतृप्त बच्चे को संतुष्ट करने के लिए,
फिर भी क्या यह और अधिक पाने की लालसा रखेगा, क्या यह अब भी अतृप्त रहेगा?
एक नागा भला अपना पेट कैसे भर सकता है?
दूध में लगातार बदलाव होते रहते हैं, इसलिए जहां दूध रखा गया हो, वहां बदलाव होना स्वाभाविक है।
मक्खन और दही प्राकृतिक रूप से बनते हुए दिखाई देते हैं;
और परिवर्तन की वही प्यास आग में भी व्याप्त है।
एक बार जागृत होने पर यह और भी ऊँचाई पर चढ़ता चला जाता है।
सूखी या नई लकड़ी में आग नहीं भड़कती।
आग को प्रकट होने से पहले प्रयास की आवश्यकता होती है;
यदि सूखी ताजी लकड़ी स्वयं जल सकती,
प्रत्येक जंगल में बारी-बारी से स्वतःस्फूर्त रूप से आग लग जाती थी।
अगर वह योग्यता के आधार पर जीत जाता है तो आग को और हवा कौन देगा?
लकड़ी और भूसे का ढेर, गुण एक ही है।
जब रसोइये आग जलाते हैं या लोहार अपना काम करते हैं
या फिर वे लोग जो मृतकों के शवों को जलाते हैं।
लेकिन कोई भी नहीं, चाहे वह कितनी भी लगन से प्रार्थना करे
या फिर आग को और भड़काने के लिए चारों ओर ईंधन का ढेर लगा देता है।
क्या वह अपने अभिनय से कोई पुण्य कमाता है?
आग से उठने वाले धुएं के गुबार के बावजूद, वह जल्द ही बुझ जाती है।
यदि अग्नि वह सम्मानित प्राणी होती जैसा आप सोचते हैं,
क्या वह इस प्रकार कूड़े और दुर्गंध के साथ रहना चाहेगा?
सड़े हुए मांस को घृणित आनंद के साथ खाते हुए,
जहां लोग दहशत के मारे उस दृश्य से तेजी से भाग जाते हैं?
कुछ लोग शिखर वाली ज्वाला को देवता (देवदूत) के रूप में पूजते हैं।
बर्बर लोग जल को वह उच्च नाम देते हैं;
लेकिन दोनों ही अपने रास्ते से भटक गए हैं:
इनमें से कोई भी देवता (देवदूत) कहलाने योग्य नहीं है।

आग की पूजा करना, जो सभी कामों में सबसे आम और थकाऊ काम है,
हर पुकार के प्रति संवेदनहीन, अंधे और बहरे,
और फिर स्वयं पापमय जीवन जीने लगता है।
कोई यह सपना कैसे देख सकता है कि स्वर्ग जैसी कोई चीज जीत सकती है?
इन ब्राह्मणों को अपनी आजीविका के लिए जिन चीजों की आवश्यकता होती है, वे सभी
और इसलिए वे हमें बताते हैं कि ब्रह्मा अग्नि की पूजा करते हैं;
जिसने सब कुछ योजनाबद्ध किया है, वह अजन्मा क्यों ऐसा करे?
क्या वह स्वयं अपने हाथों से बनाई गई रचना की पूजा करता है?
उनकी अपनी शिक्षाएँ और नियम, बेतुके और व्यर्थ।
हमारे पूर्वजों ने धन और शक्ति प्राप्त करने की कल्पना की थी;
उन्होंने ब्राह्मणों को अध्ययन और नेतृत्व के लिए बनाया।
उन्होंने क्षत्रियों को बनाया; वैश्य भूमि जोतते हैं;
सुद्दास ने अपने सेवकों को बाकी लोगों की आज्ञा मानने के लिए बाध्य किया;
इस प्रकार, शुरू से ही सब कुछ उनके उच्च आदेश पर चलता रहा।
हम इन नियमों को अपनी आंखों के सामने लागू होते हुए देखते हैं।
ब्राह्मणों के अलावा कोई और यज्ञ नहीं करता।
केवल क्षत्रिय ही शासन करते हैं।
वैश्य लोग हल चलाते हैं, शुद्धों को आज्ञा माननी पड़ती है।
ये लालची झूठे लोग छल फैलाते हैं।
और मूर्ख लोग उन्हीं मनगढ़ंत कहानियों पर विश्वास कर लेते हैं जिन्हें वे दोहराते हैं;
जिसकी आंखें हैं वह इस घिनौने दृश्य को देख सकता है;
ब्रह्मा (प्रधान देवदूत) अपने प्राणियों का सुधार क्यों नहीं करते?
यदि उसकी व्यापक शक्ति को कोई सीमा नहीं रोक सकती,
वह आशीर्वाद देने के लिए अपना हाथ इतनी कम बार क्यों बढ़ाते हैं?
उसके सभी प्राणी पीड़ा भोगने के लिए अभिशप्त क्यों हैं?
वह सभी को सुख क्यों नहीं देता?
धोखाधड़ी, झूठ और अज्ञानता का प्रचलन क्यों है?
झूठ की जीत क्यों होती है, जबकि सत्य और न्याय विफल हो जाते हैं?
मैं तुम्हारे ब्रह्मा को अन्यायियों में से एक मानता हूँ।
किसने ऐसी दुनिया बनाई जिसमें बुराई को पनाह दी जाती है?
वे पुरुष शुद्ध माने जाते हैं जो केवल हत्या करते हैं।
मेंढक, केंचुए, मधुमक्खियाँ, साँप या कीड़े-मकोड़े, जो भी उन्हें पसंद हो।
ये तुम्हारी बर्बर प्रथाएं हैं जिनसे मुझे घृणा है।
जैसे कंबोजा (*30) भीड़ अनुकरण कर सकती है।
यदि हत्या करने वाले को निर्दोष माना जाए
और यदि पीड़ित को सुरक्षित स्वर्ग भेज दिया जाए,
ब्राह्मणों को मारने दो—तो सब ठीक हो जाएगा—
और वे लोग जो उनकी कही बातों को सुनते हैं।
हमें कोई भी मवेशी मरने की गुहार करता हुआ नहीं दिख रहा है।
ताकि उन्हें एक नया और बेहतर जीवन प्राप्त हो सके।
बल्कि वे अनिच्छा से अपनी मृत्यु की ओर बढ़ते हैं।
और व्यर्थ संघर्षों में वे अपनी अंतिम सांस भी दे देते हैं।
इस पद, पीड़ित और आघात को छिपाने के लिए
ब्राह्मणों ने अपने सर्वोत्तम विचारों को खुलकर व्यक्त किया;
"यह पद प्रचुरता की गाय के समान होगा"
आपके दिल की सभी इच्छाओं को पूरा करना;
लेकिन अगर पीड़ित के चारों ओर लकड़ी इस प्रकार फैल जाए
जैसा उन्होंने कहा था, वह खजाने से भरा हुआ था।

हमारे लिए चांदी, सोने और रत्नों से परिपूर्ण,
स्वर्ग के अनभिज्ञ आनंदों की प्रचुरता के साथ,
वे केवल अपने लिए ही पेशकश करते।
और उन्होंने धनाढ्यों को अपने पास ही रखा।
ये क्रूर धोखेबाज, जितने अज्ञानी हैं उतने ही नीच भी हैं।
वे सरल लोगों को धोखा देने के लिए लंबी-लंबी धोखाधड़ी की साजिशें रचते हैं,
अपनी संपत्ति भेंट करो, नाखून, दाढ़ी और बाल काट लो।
और तुम्हें अपने हृदय की सबसे प्रिय प्रार्थना प्राप्त होगी।"
प्रस्ताव देने वाला, अपनी इच्छानुसार सरलता से,
वह अपना पर्स लेकर आता है, लोग जल्दी से उसके चारों ओर जमा हो जाते हैं।
उल्लू के चारों ओर मंडराने वाले कौवों की तरह, शरारत करने पर तुले हुए,
और अंत में उसे दिवालिया और पूरी तरह से कंगाल छोड़ दें।
वह ठोस सिक्का जो पहले उसके पास था,
ऐसे वादों के बदले में जिनका कोई परीक्षण नहीं कर सकता।
जैसे लालची अजनबी (*31) जिन्हें शासन करने वालों ने भेजा है
किसानों की कमाई को जब्त करने के लिए,
ये जहां कहीं भी बुरी नजर से घात लगाकर घूमते हैं, वहां लूटपाट करते हैं।
कोई कानून उन्हें दोषी नहीं ठहराता, फिर भी उन्हें मौत की सजा मिलनी चाहिए।
पुजारियों को ब्यूटेआ की एक शाखा पकड़नी होगी
प्राचीन काल से चली आ रही पवित्र रस्म के एक भाग के रूप में;
इसे इंद्र की दाहिनी भुजा कहा जाता है; लेकिन यदि ऐसा होता तो,
क्या इंद्र अपने राक्षस शत्रु पर विजय प्राप्त कर पाएंगे?
इंद्र की अपनी भुजा ही उसे बेहतर सहायता प्रदान कर सकती है।
यह कोई व्यर्थ का दिखावा नहीं था जिसने इतने सारे लोगों को भयभीत कर दिया था।
"प्रत्येक पर्वत श्रृंखला जिसकी रक्षा अब कोई राज्य करता है
यह कभी प्राचीन यज्ञशाला (अग्नि-पूजा वेदी स्थल) में एक ढेर हुआ करता था।
और धैर्यवान हाथों वाले धर्मनिष्ठ उपासक
किसी महान स्वामी के आदेश पर टीला बनाया गया था।
इसलिए ब्राह्मण कहते हैं, यह बहुत बुरा है, यह व्यर्थ का घमंड है।
पहाड़ों को बहुत ऊँचा उठाने के लिए अन्य कीमत चुकानी पड़ती है;
और ईंटों के ढेर में, चाहे आप कितनी भी खोजबीन कर लें, उसमें ये सब कुछ है
टाइल की खुदाई करने वाले मजदूरों के दर्द के लिए लोहे की कोई नसें नहीं हैं।
प्राचीन काल में सुप्रसिद्ध एक संत,
किंवदंती के अनुसार, वह समुद्र तट पर प्रार्थना कर रहा था;
वह वहीं डूब गया और चूंकि यही नियति उस पर आ पड़ी
समुद्र की लहरों का पानी पीने योग्य नहीं रहा है।
नदियों ने अपने विद्वानों को इच्छानुसार डुबो दिया है।
सैकड़ों की संख्या में और उन्होंने अपने जल को स्थिर रखा है;
उनकी धाराएँ बहती रहती हैं और उनका स्वाद कभी खराब नहीं होता।
यह अभिशाप केवल समुद्र पर ही क्यों पड़े?
और वे खारे पानी की धाराएँ जो धरती पर बहती हैं
किसी अभिशाप से उत्पन्न न हों, बल्कि स्वयं खोदने वाले के हाथ को धारण करें।
आरंभ में न तो महिलाएं थीं और न ही पुरुष;
सबसे पहले मन ने ही मानव जाति को प्रकाश में लाया, और फिर,
हालांकि दौड़ में सभी ने बराबर की शुरुआत की थी,
(*32) उनकी विभिन्न असफलताओं के कारण उन्हें जल्द ही स्थान बदलना पड़ा;
अतीत में योग्यता की कोई कमी नहीं थी।
लेकिन वर्तमान दोष जिन्होंने उन्हें पहला या आखिरी बनाया।

एक चतुर निम्न जाति का लड़का अपनी बुद्धि का प्रयोग करेगा,
और भजन पढ़ो, न ही उसके सिर का मुकुट फटा हुआ पाओ;
ब्राह्मणों ने वेदों का निर्माण अपने ही नुकसान पर किया।
जब दूसरों ने वह ज्ञान प्राप्त कर लिया जो उन्होंने खो दिया था।
इस प्रकार वाक्यों का निर्माण और स्मरण रटने के द्वारा किया जाता है।
ऐसे मीट्रिक रूपों में जिन्हें आसानी से भुलाया नहीं जा सकता,
अस्पष्टता मूर्ख मन को लुभाती है।
वे बिना सोचे-समझे हर बात को मान लेते हैं।
ब्राह्मण हिंसक शिकारी जानवरों की तरह नहीं होते।
ये बाघ नहीं, बल्कि जंगल के शेर हैं;
वे गायों और बैलों से काफी मिलते-जुलते हैं।
बाहर से अलग दिखने के बावजूद, वे अंदर से उतने ही नीरस हैं।
यदि विजयी राजा युद्ध करना बंद कर दे
और अपने मित्रों के साथ शांति से रहो और सही मार्ग का अनुसरण करो।
अपने हृदय में उमड़ने वाली उन भावनाओं पर विजय प्राप्त करते हुए,
उनकी प्रजा कितनी सुखमयी होगी!
ब्राह्मणों का वेद, क्षत्रियों की नीति,
दोनों ही मनमाने और भ्रामक हों।
वे अंधे होकर सड़क पर अपना रास्ता टटोलते हुए आगे बढ़ते हैं।
किसी भीषण बाढ़ के कारण पानी बह गया।
ब्राह्मण की वेद में, क्षत्रिय की नीति में,
एक गुप्त अर्थ जिसे हम दोनों समझ सकते हैं;
क्योंकि अंततः हानि, लाभ, गौरव और शर्म सब कुछ संभव है।
चारों जातियों को एक समान स्पर्श करो, सभी के साथ एक जैसा व्यवहार करो।
गृहस्थों के रूप में आजीविका अर्जित करने के लिए
सभी कार्यों को वैध और अच्छा मानो।
तो आज के हमारे इस पतित युग में ब्राह्मणों का क्या होगा?
किसी भी तरह से जीविका कमा लेंगे।
गृहस्थ लाभ के लालच से प्रेरित होता है।
वह अंधाधुंध अनुसरण करता है, आनंद के मार्ग में खिंचा चला जाता है।
हर तरह का धंधा आजमाने वाला, कपटी और मूर्ख।
हाय! ज्ञान के नियमों से कितना दूर गिर गया!

इस प्रकार, महान पुरुष ने उनके तर्कों का खंडन करते हुए अपनी शिक्षा स्थापित की, और जब नागों की सभा ने उनका प्रवचन सुना तो वे आनंद से भर गए। महान पुरुष ने निर्वासित ब्राह्मण को नागलोक से मुक्त कराया और उसे एक भी अपमानजनक शब्द से आहत नहीं किया। सागर-ब्रह्मदत्त ने भी नियत दिन को बीतने नहीं दिया, बल्कि अपनी पूरी सेना के साथ अपने पिता के निवास स्थान पर चले गए। महान पुरुष ने ढोल बजाकर यह घोषणा की कि वे अपने मामा और दादा से मिलने जा रहे हैं, और यमुना नदी पार करके सबसे पहले बड़े धूमधाम और वैभव के साथ उस आश्रम में गए, और उनके शेष भाई और उनके माता-पिता बाद में आए। उस समय सागर-ब्रह्मदत्त ने महान पुरुष को पहचान न कर, जब वे अपने विशाल सेवकों के समूह के साथ आ रहे थे, तो अपने पिता से पूछा:

ये ढोल किसके हैं? ये ढोल किसके हैं?
शंख, और वे वाद्ययंत्र, जिनकी आवाज़
हवा में गहरी संगीतमय गूंज उठती है
और क्या इससे सम्राट का हृदय प्रसन्न होता है?
यह युवक कौन है जो तीर-कोश और धनुष से लैस होकर वहाँ मार्च कर रहा है?
क्या उसने अपने सिर पर बिजली की तरह चमकता हुआ सोने का मुकुट पहन रखा है?
वह कौन है जो वहां आ रहा है, जिसकी युवावस्था की सहजता चमक रही है?
क्या यह बबूल की उस लकड़ी की तरह है जो लोहार की भट्टी में स्थिर प्रकाश से चमकती है?
जिसकी सुनहरी रंग की चमकीली छतरी दोपहर की तेज धूप में भी सूरज को मात दे देती है।

क्या उसके बगल में एक मक्खी-फड़फड़ाने वाला यंत्र बड़े करीने से लटका हुआ है, जो किसी भी समय हरकत के लिए तैयार है?
सुनहरी छड़ियों पर मोर की पूंछें उसके चेहरे के पास लहराती हुई देखें, रंगों का मिश्रण (*34)
उसके माथे पर चमकीली बालियां इस प्रकार सुशोभित हैं जैसे आकाश में बिजली की लपटें उठती हैं।
किस नायक की वो लंबी, चौड़ी आंखें हैं, भौंहों के बीच ऊन का वो गुच्छा है?
वे दांत कलियों या सीपियों की तरह सफेद थे, उनकी पंक्ति इतनी निर्दोष और इतनी समरूप थी।
वे लाख से रंगे हाथ, वे प्यारे होंठ, वह स्वर्ग में सूर्य की तरह चमकता है;
जैसे कोई लंबा साल का पेड़, फूलों से लथपथ, किसी पर्वत शिखर पर अकेला खड़ा हो,
अपने सभी राक्षस शत्रुओं को पराजित करने के बाद, इंद्र विजय वस्त्रों में सजे हुए हैं।
वह कौन है जो हमारी नजरों के सामने अचानक प्रकट होता है, अपने आवरण को हटाकर अपना निशान छोड़ता है,
उसके हाथ में जड़ा हुआ रत्नजड़ित हैंडल और समृद्ध कारीगरी वैभव से जगमगा रही थी।
अब वह अपने सोने के जूते उतारता है, जो विभिन्न प्रकार के धागों से अलंकृत हैं,
और, श्रद्धापूर्वक झुककर, ऋषि के सिर पर सम्मान अर्पित करता है?
इस प्रकार अपने पुत्र सागर-ब्रह्मदत्त द्वारा पूछे जाने पर, अलौकिक ज्ञान और शक्ति से परिपूर्ण तपस्वी ने उत्तर दिया, "हे मेरे पुत्र, ये राजा धतरत्थ के पुत्र हैं, तुम्हारी बहन के नाग पुत्र हैं"; और उन्होंने इस गाथा को दोहराया:

"ये सभी धतरत्थ के पुत्र हैं, जो शक्ति में गौरवशाली और प्रसिद्धि में महान हैं।"
वे सभी समुद्दजा का आदर करते हैं और उन्हें सर्वमान्य माता मानते हैं।"
जब वे इस प्रकार बातें कर रहे थे, नागों का समूह आया और तपस्वी के चरणों को प्रणाम करके एक तरफ बैठ गया। समुद्दजा ने भी अपने पिता को प्रणाम किया और फिर रोते हुए नागों के साथ नागलोक लौट गईं। सागर-ब्रह्मदत्त कुछ दिनों तक वहाँ रहे और फिर बनारस चले गए, और समुद्दजा नागलोक में परास्त हो गईं। बोधिसत्व ने जीवन भर नियमों का पालन किया और व्रत के सभी कर्तव्यों को पूरा किया, और अंत में नागों के समूह के साथ स्वर्ग के सिंहासन भरने के लिए चले गए।

पाठ के बाद गुरु ने कहा, "इस प्रकार, बुद्ध के जन्म से पहले के समय के धर्मनिष्ठ शिष्यों, ज्ञानी पुरुषों ने नाग राज्य की महिमा का त्याग कर उपवास के कर्तव्यों का कड़ाई से पालन किया"; और फिर उन्होंने अपने जन्म का वर्णन किया: "उस समय महान राजा का परिवार मेरे पिता और माता थे, देवदत्त बहिष्कृत ब्राह्मण थे, आनंद सोमदत्त थे, उप्पलावन्न अच्चिमुखी थे, सारिपुत्र सुदस्सन थे, मोग्गल्याना सुभागा थे, सुनक्खत्त कनारित्थ थे, और मैं स्वयं भूरिदत्त था।"

फुटनोट:

(1) नाग राजा.

(2)वरुण को नाग राजा कहा जाता है

(3)नागा जनजातियों के नाम।

(4) "नागारा-खण्डं निश्चितम्।"

(5) विरुक्खा के लिए अनुमान।

(6) क्रमांक 390 में चतुरंगसमन्नगतं ब्रह्मचरियवासं वसिम पढ़ा गया है, जिसका अर्थ है "ईर्ष्या, नशे, इच्छा और क्रोध से मुक्त"। (परन्तु देखें मजज. निक. I. 77) उपोसथ व्रत के संबंध में नहीं पाया गया; क्रमांक 318 में इसके आठ विभाजन मान्यता प्राप्त हैं। चतुरोसथ जातक, क्रमांक 441, इस विषय पर प्रकाश डालता; परन्तु उचित स्थान पर केवल इसका नाम ही उल्लेखित है।

(7)"उपोसथ-खण्डं निट्ठितम्।"

(8) उसे बाद में आलमबायना कहा जाता है।

(9)चार लोकपाल।

(10) सक्का (इंद्र) का स्वर्ग।

(11)"वनप्पवेसन-खण्डं निट्ठितम्।"

(12)जाट. 518.

(13)बीडी समुलो, "जड़ें और सब कुछ,"

(14)या "उनके बीच अपनी शान लाने का कारण।"

(15) हितोपाद. IV., कहानी 8.

(16)"सिला-खंडम निट्ठितम."

(17) क्या उनकी पूरी निगाह अपराधी को अंधा कर देती?

(18)Bs. vappito, vappo से? पाठ vippito पढ़ता है.

(19) खाने से होने वाले अपराध के कारण।

(20) किलान-खण्डं निट्ठितं

(23) ओसैपिसांति (sqrtavacap) पढ़ें।

(24) मत्तसतकम पढ़ें

(25)नागर-पवेसन-खंडं निश्चितम्।

(27) पाठ में कामसस्सा लिखा है, "काशी के राजा का दूसरा नाम" (स्कोल.)।

(28) "महासत्तास्स परियेसन-खण्डं निट्ठितम्।"

(30) कम्बोज उत्तर-पश्चिमी जनजाति थे जिनके बारे में माना जाता है कि उन्होंने अपने मूल आर्य रीति-रिवाज खो दिए थे और बर्बर हो गए थे, देखें मनु, X. 44.

(31)ए-कसिया.

(32) वोसग्गविभंगम का अर्थ "व्यवसाय का अंतर" हो सकता है।

(34) उसकी मूंछें? या इसे शाब्दिक रूप से लिया जाना चाहिए?

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **महानारदकस्सप-जातक**
स्रोत *: ई.बी. कोवेल और डब्ल्यू.एच.डी. राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-544-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 544
महानारदकश्यप-जातक

"विदेहों का एक राजा था," इत्यादि। यह कथा गुरु ने लत्थिवना आनंद उद्यान के मठ में रहते हुए उरुवेला-कश्यप के धर्मांतरण के संबंध में सुनाई थी। अब, जिस गुरु ने धर्ममार्ग के गौरवशाली शासन की शुरुआत की, उन्होंने उरुवेला-कश्यप और अन्य तपस्वियों का धर्मांतरण करने के बाद, पहले तपस्वी रहे एक हजार भिक्षुओं से घिरे हुए, लत्थिवना मठ के आनंद उद्यान में मगध के राजा को प्रतिज्ञा देने के लिए राजी करने के उद्देश्य से आए (*1); और उस समय, जब एक लाख बारह हजार अनुयायियों के साथ आए मगध के राजा ने बुद्ध को प्रणाम करने के बाद विराजमान हो गए, तो उनके अनुयायियों ब्राह्मणों और गृहस्थों के बीच विवाद उत्पन्न हुआ, "क्या उरुवेला-

कश्यप ने स्वयं को महान समना के आध्यात्मिक मार्गदर्शन में रखा है, या महान समना ने स्वयं को उरुवेला-कश्यप के आध्यात्मिक मार्गदर्शन में रखा है?" तब भगवान बुद्ध ने मन में सोचा, "मैं उन्हें दिखाऊंगा कि कश्यप ने स्वयं को मेरे आध्यात्मिक मार्गदर्शन में समर्पित कर दिया है," और उन्होंने यह श्लोक कहा:

"हे उरुवेला निवासी, तुमने ऐसा क्या देखा कि तुम, जो अपनी तपस्या के लिए प्रसिद्ध हो (*2), तुमने अपनी पवित्र अग्नि का त्याग कर दिया? मैं तुमसे, कश्यप, यह प्रश्न पूछता हूँ, तुम्हारा अग्नि यज्ञ क्यों त्याग दिया गया?"

तब बुद्ध के अर्थ को समझने वाले वरिष्ठ भिक्षु ने इस श्लोक में उत्तर दिया:

"बलिदान केवल रूपों, ध्वनियों, स्वादों, इंद्रिय सुखों और स्त्रियों की बात करते हैं; और यह जानते हुए कि ये सभी चीजें भौतिक अस्तित्व के तत्वों में पाई जाती हैं, इसलिए ये सब अशुद्ध हैं, मैंने बलिदानों या चढ़ावों में कोई आनंद नहीं लिया।"

और यह दिखाने के लिए कि वह एक शिष्य है, उसने बुद्ध के चरणों में अपना सिर रखकर कहा, "भगवान बुद्ध मेरे गुरु हैं और मैं उनका शिष्य हूँ।" ऐसा कहकर वह सात बार हवा में उठा, एक ताड़ के पेड़ की ऊँचाई तक, दो ताड़ के पेड़ों की ऊँचाई तक, और इसी तरह सात ताड़ के पेड़ों की ऊँचाई तक, और फिर नीचे आकर भगवान बुद्ध को प्रणाम करके एक तरफ बैठ गया। जब सभी लोगों ने वह चमत्कार देखा, तो उन्होंने गुरु की महिमा का गुणगान करते हुए कहा, "हे बुद्ध की शक्ति महान है; अपने दृढ़ विश्वास से भरे होने के बावजूद, और स्वयं को संत मानते हुए भी, उरुवेला-कश्यप ने भ्रम के बंधनों को तोड़ दिया और तथागत (बुद्ध) द्वारा परिवर्तित हो गया।" गुरु ने कहा, "यह आश्चर्य की बात नहीं है कि मैंने, जिसने अब अनंत ज्ञान प्राप्त कर लिया है, उसे परिवर्तित कर दिया; प्राचीन काल में जब मैं नारद नामक ब्रह्मा था और अभी भी वासना के अधीन था, तब मैंने इस व्यक्ति के भ्रम के बंधनों को तोड़ दिया और उसे विनम्र बना दिया"; और ऐसा कहकर उन्होंने श्रोताओं के अनुरोध पर निम्नलिखित कहा:

प्राचीन काल में, विदेह राज्य के मिथिला में अंगती नामक एक धर्मात्मा राजा शासन करता था। उसकी मुख्य रानी के गर्भ में रुजा नाम की एक सुंदर और दयालु पुत्री का जन्म हुआ, जो अत्यंत गुणवान थी और जिसने एक लाख युगों तक प्रार्थना की थी। उसकी अन्य सोलह हजार पत्नियाँ बांझ थीं। यह पुत्री उसे अत्यंत प्रिय और आकर्षक हो गई। वह प्रतिदिन उसे विभिन्न प्रकार के फूलों और सुंदर वस्त्रों से भरी पच्चीस टोकरियाँ भेजता था और उनसे उसे सजाने का अनुरोध करता था; और वह उसे हर पखवाड़े एक हजार वस्तुएँ भेजता था और उससे दान करने का अनुरोध करता था क्योंकि भोजन और पेय की प्रचुरता थी। उसके तीन मंत्री थे, विजया, सुनामा और अलता; और एक दिन जब चौथे महीने की पूर्णिमा का पर्व आया, और नगर और महल देवताओं (देवदूतों) के नगर की तरह सजाए गए थे, तब उन्होंने विधिवत स्नान किया, तेल लगाया और सभी प्रकार के आभूषण पहने। जब वे अपने मंत्रियों के साथ एक खुली खिड़की के पास चबूतरे पर खड़े थे और उन्होंने साफ आकाश में गोल चंद्रमा को ऊपर उठते देखा, तो उन्होंने अपने मंत्रियों से पूछा, "यह साफ रात कितनी सुहावनी है, हम किस मनोरंजन से अपना मनोरंजन करें?"

शिक्षक ने इस प्रकार मामले को समझाया:

"विदेह वंश में अंगती नाम का एक क्षत्रिय राजा था, जिसके पास कई रथ थे, वह धनी था और उसकी सेना विशाल थी। एक दिन वर्षा ऋतु के चौथे महीने की पूर्णिमा की पंद्रहवीं रात को, पहले पहर के समाप्त होने से पहले, उसने अपने मंत्रियों, विजया, सुनामा और सेनापति अलाटका को इकट्ठा किया। ये सभी बुद्धिमान, पुत्रों के पिता, हमेशा मुस्कुराते हुए और अनुभवी थे। विदेह राजा ने उनसे पूछा, "तुममें से प्रत्येक अपनी इच्छा व्यक्त करो। आज चौथे महीने की पूर्णिमा है, चारों ओर चाँदनी है; आज रात हम क्या मनोरंजन करेंगे?"

राजा द्वारा पूछे जाने पर, प्रत्येक ने अपने मन की इच्छा के अनुसार उत्तर दिया।

शिक्षक ने इस प्रकार मामले को समझाया:

तब सेनापति अलाता ने राजा से कहा, “आइए हम एक वीर सेना एकत्रित करें; असंख्य सैनिकों के साथ युद्ध में उतरें; जो अब तक स्वतंत्र रहे हैं, उन्हें अपने अधीन कर लें; मेरा यही मत है, आइए हम उस पर विजय प्राप्त करें जो अब तक अजेय है।” अलाता की बात सुनकर सुनामा ने कहा, “हे राजा, आपके सभी शत्रु यहाँ एकत्रित हैं, उन्होंने अपनी शक्ति त्याग दी है और विनम्रता से व्यवहार कर रहे हैं; आज मुख्य उत्सव है; युद्ध मुझे प्रसन्न नहीं करता। तो वे हमारे लिए मांस, पेय और सभी प्रकार का भोजन लाएँ: हे राजा, आप नृत्य, गीत और संगीत का आनंद लें।” सुनामा की बात सुनकर विजया ने कहा, “हे महान राजा, सभी सुख-सुविधाएँ सदा आपके साथ हैं; इन्हें प्राप्त करना कठिन नहीं है, ताकि आप अपनी सभी इच्छाओं को पूरा कर सकें: परन्तु यदि ये सदा प्राप्त भी हों, तो भी यह संकल्प मुझे स्वीकार्य नहीं है।” आइए हम किसी समना या ब्राह्मण की प्रतीक्षा करें जो पवित्र परंपरा में पारंगत हो, जो आज हमारे मनोकामना के विषय में हमारे

संदेह को दूर कर सके (*3)।" विजया के वचन सुनकर राजा अंगती ने कहा, "विजया का यह कथन मुझे भी प्रसन्न करता है। आइए हम किसी समना या ब्राह्मण की प्रतीक्षा करें जो पवित्र परंपरा में पारंगत हो, जो आज हमारे मनोकामना के विषय में हमारे संदेह को दूर कर सके। क्या आप सब इस संकल्प का पालन करेंगे; हम किस गुरु की प्रतीक्षा करेंगे? आज पवित्र ग्रंथ और उसके अर्थ में पारंगत कौन हमारे मनोकामना के विषय में हमारे संदेह को दूर करेगा?" विदेह के वचन सुनकर अलत ने उत्तर दिया, "हिरण-जग में एक नग्न तपस्वी है, जिसे सभी बुद्धिमान मानते हैं, गुण, कश्यप वंश का, प्रसिद्ध, विविध प्रवचन देने वाला और शिष्यों का एक बड़ा समूह है; "हे राजा, उसकी प्रतीक्षा करो, वह हमारे संदेह को दूर करेगा।" अलाता की बात सुनकर राजा ने अपने सारथी को आदेश दिया, "हम हिरण-जंगल जाएंगे, यहाँ जुते हुए रथ को लाओ।"

फिर उन्होंने हाथीदांत और चांदी की सजावट से बने उनके रथ को जोता, जिसका साजो-सामान चमकीला और साफ-सुथरा था, मानो निर्मल रात (*4) की तरह सफेद और बेदाग था। उसमें चार सिंधी घोड़े जोते गए, जो कमल के समान सफेद, हवा के समान तेज, सुप्रशिक्षित और सोने के मुकुट पहने हुए थे। सफेद छत्र, सफेद रथ, सफेद घोड़े और सफेद पंखा भी सफेद था। विदेह राजा अपने सलाहकारों के साथ जब निकले तो वे चंद्रमा के समान चमक रहे थे। भाले और तलवारों से लैस कई बुद्धिमान और बलवान पुरुष घोड़ों पर सवार होकर वीर राजा के पीछे-पीछे चल रहे थे। मानो पल भर में दूरी तय करके रथ से उतरकर विदेह अपने मंत्रियों के साथ पैदल गुना की ओर बढ़े; और राजा ने वहां पहले से एकत्रित ब्राह्मणों और धनी पुरुषों को भी हटाने का आदेश नहीं दिया, हालांकि उन्होंने उनके लिए कोई जगह नहीं छोड़ी थी।

उस मिश्रित सभा से घिरे हुए राजा एक तरफ बैठ गए और अभिवादन किया।

शिक्षक ने इस प्रकार मामले को समझाया:

फिर राजा एक नरम गद्दे पर एक तरफ बैठ गए, जो गिलहरी की कोमल, रंग-बिरंगी खालों से ढका था और उस पर एक नरम तकिया रखा था। राजा ने बैठते ही मित्रता और शिष्टाचार के साथ उनसे पूछा, "क्या आपकी शारीरिक आवश्यकताएँ पूरी हैं? क्या आपकी प्राण शक्ति क्षीण तो नहीं हो रही? क्या आपका जीवन सुखमय है? क्या आपको भिक्षा मिलती है? क्या आपके चलने-फिरने में कोई बाधा नहीं है? क्या आपकी दृष्टि ठीक है?" गुना ने अपने कर्तव्यों के प्रति सजग विदेह को विनम्रतापूर्वक उत्तर दिया, "मेरी सभी आवश्यकताएँ पूरी हैं, और ऊपर बताई गई दोनों बातें मेरी इच्छा के अनुरूप हैं। आप भी, क्या आपके पड़ोसी आप पर भारी तो नहीं पड़ते? क्या आपका स्वास्थ्य उतना अच्छा है जितना आपको चाहिए? क्या आपका रथ आपको सुचारू रूप से चला सकता है?" क्या आपको शरीर को प्रभावित करने वाली कोई बीमारी नहीं है? राजा ने इस सौहार्दपूर्ण अभिवादन को सुनकर विधि का ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा से उनसे विधि के अर्थ और पाठ तथा सही आचरण के नियमों के बारे में पूछा। "हे कश्यप, मनुष्य को अपने माता-पिता, गुरु, पत्नी और बच्चों के प्रति विधि का पालन कैसे करना चाहिए? उसे वृद्धों, सामनों और ब्राह्मणों के प्रति कैसा व्यवहार करना चाहिए? उसे अपनी सेना और देश के लोगों के साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए? उसे विधि का पालन करके अंततः स्वर्ग कैसे प्राप्त करना चाहिए? और कुछ लोग अधर्म के कारण नरक में कैसे गिर जाते हैं?"

असीम ज्ञान से परिपूर्ण बुद्धों, शिष्यों या ऋषियों में से किसी श्रेष्ठ व्यक्ति के अभाव में, राजा ने अपने सभी उचित शाही प्रश्न एक निर्धन, नग्न भिक्षु से पूछे जो कुछ नहीं जानता था और एक बच्चे की तरह अंधा था; और जब उससे प्रश्न पूछे गए, तो उसने उचित उत्तर देने के बजाय अवसर का लाभ उठाते हुए "हे राजा, सुनो" कहा और अपनी ही झूठी शिक्षा का प्रचार किया, ठीक वैसे ही जैसे कोई चलते हुए बैल को लात मारता है या दूसरे के भोजन पात्र में कूड़ा फेंकता है।

शिक्षक ने इस प्रकार मामले को समझाया:

विदेह राजा की बातें सुनकर कश्यप ने उत्तर दिया, "हे राजा, सुनिए, यह एक सत्य और अचूक कथन है। विधि का पालन करने से कोई फल नहीं मिलता, न अच्छा न बुरा; हे राजा, कोई दूसरा लोक नहीं है, भला वहाँ से कौन लौटकर आया है? कोई पूर्वज नहीं हैं, तो पिता-माता कैसे हो सकते हैं? कोई गुरु नहीं है, जो वश में नहीं हो सकता उसे कौन वश में करेगा? सभी प्राणी समान हैं, कोई ऐसा नहीं है जिसे सम्मान देना या ग्रहण करना चाहिए; बल या साहस जैसी कोई चीज नहीं है, तो शक्ति या वीरता कैसे हो सकती है?"

सभी प्राणियों का भाग्य पहले से ही निर्धारित है, ठीक वैसे ही जैसे रस्सी जहाज के पीछे-पीछे चलती है। हर इंसान को वही मिलता है जो उसे मिलना तय है, तो फिर देने का क्या फायदा? हे राजा, देने में कोई लाभ नहीं, देने वाला असहाय और कमजोर होता है; दान मूर्ख देते हैं और बुद्धिमान स्वीकार करते हैं; कमजोर मूर्ख जो खुद को बुद्धिमान समझते हैं, वे समझदारों को दान देते हैं।

इस प्रकार दान देने की निरर्थकता का वर्णन करने के बाद, उन्होंने परलोक में पाप के परिणामों को उत्पन्न करने की शक्तिहीनता का वर्णन किया:

सात ऐसे तत्व हैं जो अविनाशी और अहानिकारक हैं: अग्नि, पृथ्वी, जल, वायु, सुख, दुःख और आत्मा। इन सातों में से कोई भी ऐसा नहीं है जो इन्हें नष्ट या विभाजित कर सके, और न ही ये कभी नष्ट हो सकते हैं; हथियार भी इन तत्वों के बीच हानिरहित रूप से चल जाते हैं। जो व्यक्ति तेज तलवार से किसी का सिर काट देता है, वह इन तत्वों को विभाजित नहीं करता: तो फिर बुराई करने का क्या परिणाम होगा? सभी प्राणी चौरासी महायुगों से गुजरकर शुद्ध होते हैं; उस अवधि के आने तक संयमी व्यक्ति भी शुद्ध नहीं होता। उस अवधि के आने तक, चाहे उन्होंने कितना भी सद्गुणों का पालन किया हो, वे शुद्ध नहीं होते, और चाहे वे कितने ही पाप करें, वे उस सीमा को पार नहीं कर पाते। हम चौरासी महायुगों के माध्यम से एक-एक करके शुद्ध होते हैं: हम अपने भाग्य से आगे नहीं जा सकते, ठीक वैसे ही जैसे समुद्र अपने तट से आगे नहीं जा सकता।

इस प्रकार विनाश के पैरोकार ने किसी भी मिसाल का हवाला दिए बिना अपनी उग्रता से अपनी शिक्षा को लागू किया (*5)

कश्यप की बातें सुनकर अलत ने उत्तर दिया, "आपकी बात मुझे भी सही लगती है। मुझे भी अपना पिछला जन्म याद है। मैं एक नगर में पिंगला नाम का गौ-हत्यारा शिकारी था। मैंने समृद्ध बनारस में अनेक पाप किए, अनेक प्राणियों को मारा, भैंसें, सूअर और बकरियाँ। उस जन्म के बाद, मेरा जन्म एक सेनापति के समृद्ध परिवार में हुआ; सचमुच पाप का कोई बुरा फल नहीं होता, मुझे नरक में नहीं जाना पड़ा।"

वहाँ बीजाका नाम का एक दास था, जो फटे-पुराने वस्त्र पहने हुए था और व्रत रखे हुए था। वह गुना की बातें सुनने आया था। जब उसने कश्यप के वचन और अलता का उत्तर सुना, तो उसने गहरी आहें भरीं और फूट-फूटकर रोने लगा। विदेह के राजा ने उससे पूछा, "तुम क्यों रो रहे हो? तुमने क्या देखा या सुना है? तुम अपना दुख क्यों प्रकट कर रहे हो?"

बीजाका ने उत्तर दिया, "मुझे कोई पीड़ा नहीं है: हे राजा, मेरी बात सुनिए। मुझे भी अपना पिछला जन्म याद है, जो सुखमय था; मैं साकेत नगर में भावसेत्थी नाम का एक व्यक्ति था, जो सद्गुणों का पालन करता था, पवित्र था, दान देता था और ब्राह्मणों और धनी पुरुषों द्वारा सम्मानित था; और मुझे अपने द्वारा किए गए किसी भी बुरे कर्म का स्मरण नहीं है। लेकिन जब मैं उस जीवन से निकला, तो मेरा जन्म एक निर्धन वेश्या के गर्भ में हुआ और मेरा जन्म एक दुखमय जीवन में हुआ। परन्तु दुखमय होकर भी मैं शांत मन रखता हूँ और अपने भोजन का आधा भाग जिसे भी चाहिए उसे दे देता हूँ। मैं चौदहवें और पंद्रहवें दिन उपवास करता हूँ और कभी भी किसी जीव को हानि नहीं पहुँचाता और चोरी से दूर रहता हूँ। परन्तु मेरे सभी अच्छे कर्म फलदायी नहीं होते; जैसा कि अलत कहते हैं, मुझे लगता है कि सद्गुण व्यर्थ है। मैं जीवन में एक अकुशल पासा खेलने वाले की तरह हारता हूँ; अलत एक कुशल पासा खेलने वाले की तरह जीतते हैं; मुझे स्वर्ग जाने का कोई द्वार नहीं दिखता; इसीलिए जब मैंने यह सुना तो मैं रोया। कश्यप ने जो कहा।

बीजाका की बातें सुनकर राजा अंगती ने कहा, "स्वर्ग का कोई द्वार नहीं है; केवल भाग्य के भरोसे रहो। चाहे सुख हो या दुख, यह सब भाग्य पर निर्भर है: अंततः सभी को जन्म-जन्म के चक्र से मुक्ति मिलेगी; भविष्य की चिंता मत करो। मैं भी पिछले जन्मों में सौभाग्यशाली रहा और ब्राह्मणों और धनी पुरुषों की सेवा करता रहा, परन्तु जब मैं विधानों का पालन कर रहा था, तब मुझे स्वयं कोई सुख नहीं मिला।"

इतना कहकर उन्होंने विदा ली: "हे पूज्य कश्यप, इतने समय तक मैं उदासीन रहा, परन्तु अब अंततः मुझे एक गुरु मिल गया है, और अब से आपके उपदेशों का अनुसरण करते हुए मैं केवल सुख में ही आनंद लूंगा, और सद्गुणों पर प्रवचन सुनना भी मुझे नहीं रोक पाएगा। आप जहाँ हैं वहीं ठहरिए, मैं अब प्रस्थान करता हूँ; आशा है भविष्य में फिर मिलेंगे।"

इतना कहकर विदेह का राजा अपने घर चला गया।

जब राजा पहली बार गुना से मिलने गए, तो उन्होंने आदरपूर्वक उनका अभिवादन किया और फिर अपना प्रश्न पूछा; लेकिन जब वे चले गए, तो उन्होंने कोई अभिवादन नहीं किया: क्योंकि गुना अपने नाम के अनुरूप नहीं थे, अपनी अयोग्यता (*6) के कारण, उन्हें कोई अभिवादन नहीं मिला, और न ही उन्हें कोई भिक्षा मिली। इसलिए जब रात बीत गई और अगला दिन आ गया, तो राजा ने अपने मंत्रियों को इकट्ठा किया और उनसे कहा, "आनंद के सभी तत्व तैयार करो, अब से मैं केवल सुख की खोज में लगा रहूंगा, मेरे सामने कोई अन्य कार्य नहीं उठाया जाएगा, फलां व्यक्ति न्याय प्रशासन संभाले," और उन्होंने तदनुसार स्वयं को सुख में लीन कर लिया।

शिक्षक ने इस प्रकार मामले को समझाया:

जब रात से दिन हुआ तो अंगती ने अपने मंत्रियों को बुलाया और उनसे कहा, "चंदाका महल में मेरे लिए हमेशा सुख-सुविधाओं की व्यवस्था रखें; कोई भी सार्वजनिक या गुप्त मामलों से संबंधित संदेश लेकर न आए। विजया, सुनामा और सेनापति अलाटका, जो तीनों ही विधि के ज्ञाता हैं, इन मामलों का निर्णय करें।" यह सुनकर राजा ने केवल सुख-सुविधाओं के बारे में सोचा और ब्राह्मणों और धनी लोगों की संगति में समय बिताना बंद कर दिया।

चौदहवीं रात को राजा की प्रिय पुत्री, जिसका नाम रुजा था, ने अपनी धाय माँ से कहा, "मुझे जल्दी से मेरे आभूषण पहना दो, मेरी सहेलियों को मेरी सेवा करने दो; कल पंद्रहवाँ पवित्र दिन है, मैं राजमहल में जाऊँगी।" वे उसके लिए एक माला, कीमती चंदन, रत्न, सीप, मोती और बहुमूल्य वस्तुएँ तथा विभिन्न रंगों के वस्त्र लाए; और जब वह सोने की कुर्सी पर बैठी, तो उसकी कई परिचारिकाएँ उसे घेरकर, उसकी सुंदरता को निखारते हुए, उसे सजाती रहीं।

फिर अपने समूह के बीच, सभी प्रकार के आभूषणों से जगमगाती हुई, रुजा ने चंदाका महल में ऐसे प्रवेश किया जैसे बिजली बादल में प्रवेश करती है। राजा के पास पहुँचकर और उन्हें पूरे आदर के साथ प्रणाम करके (*7), वह सोने से जड़ी कुर्सी पर एक तरफ बैठ गई।

जब राजा ने उसे अपने समूह से घिरा हुआ देखा, मानो स्वर्ग की अप्सराओं का कोई समूह उससे मिलने आया हो, तो उसने उससे कहा: "क्या तुम महल परिसर में बने तालाब में आनंद ले रही हो? क्या वे हमेशा तुम्हारे लिए तरह-तरह के स्वादिष्ट भोजन लाते हैं? क्या तुम और तुम्हारी सहेलियाँ लगातार तरह-तरह की मालाएँ इकट्ठा करके अपने लिए गुच्छे बनाती रहती हो, खेल-खेल में? क्या तुम्हें किसी चीज की कमी है? तो उन्हें लाने दो, हे उतावली (*8) जो चाहो मांग लो, चाहे वह चाँद जितना मुश्किल से मिले।"

उनके शब्द सुनकर रूजा ने अपने पिता को उत्तर दिया:

"हे राजा, मेरे स्वामी की उपस्थिति में मेरी हर इच्छा पूरी हो जाती है। कल पंद्रहवाँ पवित्र दिन है, मेरे लिए एक हजार सिक्के लाओ, ताकि मैं उन सभी को भिक्षुओं को दान कर सकूँ।"

रुजा की बातें सुनकर राजा अंगती ने उत्तर दिया:

"तुमने बहुत धन व्यर्थ ही बर्बाद कर दिया है। तुम व्रत रखते हो और न खाते हो, न पीते हो; व्रत रखने का यह कर्तव्य तुम्हें नियति से मिला है, इससे कोई पुण्य नहीं मिलता। (*9) हे रुजा, जब तक तुम हमारे साथ रहते हो, भोजन त्याग मत करो; इस संसार के सिवा कोई दूसरा संसार नहीं है, व्यर्थ में क्यों कष्ट सह रहे हो?"

तब अपनी सुंदरता से दमकती रुजा ने जब उसकी बातें सुनीं, तो भूतकाल और भविष्यकाल के नियम को भलीभांति जानते हुए उसने उत्तर दिया: "मैंने अतीत में सुना है और अपनी आँखों से देखा है कि जो बच्चों का अनुसरण करता है, वह स्वयं बच्चा बन जाता है। मूर्खों की संगति में रहने वाला मूर्ख गहरे कुकर्म में डूब जाता है। अलता और बीजाका का धोखा खाना उचित है; परन्तु आप तो विद्वान, बुद्धिमान और कुशल राजा हैं; आप बच्चों के योग्य ऐसे नीच सिद्धांत में कैसे पड़ गए? यदि मनुष्य मात्र जन्म-मृत्यु के चक्र से शुद्ध हो जाता है, तो गुण का तपस्या भी व्यर्थ है; जैसे पतंगा जलती हुई मोमबत्ती की ओर उड़ता है, वैसे ही मूर्ख ने नग्न भिक्षु का जीवन अपना लिया है। यह मानकर कि अंत में सभी जन्म-जन्म के द्वारा शुद्ध हो जाएँगे, अपनी घोर अज्ञानता में अनेक लोग अपने कर्मों को भ्रष्ट कर लेते हैं; और पूर्व पापों के फल में फँसकर वे मछली की तरह काँटे से निकलना कठिन पाते हैं।"

हे राजा, मैं आपके मामले में एक दृष्टांत सुनाता हूँ; बुद्धिमान लोग कभी-कभी दृष्टांतों से ही सत्य सीखते हैं। जैसे व्यापारियों का जहाज़, ज़रूरत से ज़्यादा माल लादने के कारण, समुद्र में डूब जाता है, वैसे ही मनुष्य, थोड़ा-थोड़ा करके पाप जमा करता हुआ, नरक में डूबता चला जाता है। हे राजा, अलाता का वर्तमान भार वह नहीं है जो वह अभी जमा कर रहा है; क्योंकि जो वह अभी जहाज़ पर लाद रहा है, वह आगे चलकर नरक में डूब जाएगा। पहले अलाता के कर्म धर्मपरायण थे, और उन्हीं के फलस्वरूप वह इस समृद्धि का आनंद ले रहा है। उसका वह पुण्य अब व्यर्थ हो रहा है, क्योंकि वह पूरी तरह से बुराई में लिप्त है; सीधा मार्ग छोड़कर वह टेढ़े-मेढ़े रास्ते पर बेतहाशा दौड़ रहा है।

जैसे तराजू को तौल-घर (*10) में ठीक से लटकाने पर वजन डालने पर उसका सिरा ऊपर की ओर झूलता है, वैसे ही मनुष्य भी अपने भाग्य को अंत में ऊपर उठाता है यदि वह थोड़ा-थोड़ा करके पुण्य के हर टुकड़े को इकट्ठा करता है, जैसे वह दास बीजाका पुण्य पर ध्यान केंद्रित करता है और स्वर्ग के बारे में बहुत अधिक सोचता है।

दास बीजक को अब जो दुःख भोगना पड़ रहा है, उसमें उसे अपने पूर्व कर्मों का फल भोगना पड़ रहा है। नैतिक सद्गुणों के प्रति समर्पित होने के कारण वह पाप मिट रहा है, परन्तु उसे कश्यप के कुटिल मार्गों पर न चलना चाहिए।

फिर उसने पाप करने की बुराई और योग्य मित्रों का अनुसरण करने के अच्छे परिणामों को दर्शाना शुरू किया (*11):

राजा जिस भी मित्र का सम्मान करता है, चाहे वह अच्छा हो या बुरा, सद्गुणों में लिप्त हो या गुणों में, राजा उसके वश में हो जाता है। जैसा मित्र वह अपने लिए चुनता है और जिसका अनुसरण करता है, वैसा ही वह स्वयं बन जाता है; यही घनिष्ठता की शक्ति है। निरंतर संपर्क में रहने वाला व्यक्ति अपने साथी को प्रभावित करता है, एक घनिष्ठ मित्र अपने साथी को, ठीक वैसे ही जैसे विषैला तीर एक साफ

तीरदान को अपवित्र कर देता है। बुद्धिमान को दुष्टों का मित्र नहीं बनना चाहिए, क्योंकि इससे दूषित होने का भय रहता है। यदि कोई व्यक्ति दुर्गंधयुक्त मछली को कुश घास के गट्ठे से बांध दे, तो घास में दुर्गंध आ जाएगी, मूर्ख के साथ घनिष्ठता का यही हाल है; परन्तु यदि कोई व्यक्ति लोबान को साधारण पत्ते में बांध दे, तो उसमें सुगंध आ जाएगी, बुद्धिमान के साथ घनिष्ठता का यही हाल है। इसलिए, अपने कर्मों की परिपक्वता को फलों की टोकरी की परिपक्वता के समान जानते हुए, बुद्धिमान को दुष्टों का अनुसरण नहीं करना चाहिए, बल्कि भले लोगों का अनुसरण करना चाहिए, क्योंकि दुष्ट नरक की ओर ले जाते हैं, जबकि भले लोग हमें स्वर्ग की ओर ले जाते हैं।

राजकुमारी ने इन छह श्लोकों में धर्मपरायणता पर प्रवचन देने के बाद अपने पिछले जन्मों में झेले गए दुःखों का वर्णन किया:

मुझे भी अपने सात जन्म याद हैं, और इस जीवन से विदा होने पर मुझे सात और जन्म लेने होंगे। हे राजा, मेरा सातवाँ पिछला जन्म मगध के राजगृह नगर में एक लोहार के पुत्र के रूप में हुआ था। मेरा एक दुष्ट साथी था और मैंने बहुत बुरे कर्म किए; हम अमर समझकर दूसरे पुरुषों की पत्नियों को भ्रष्ट करते फिरते थे। वे कर्म राख से ढकी आग की तरह जमा रहे। अन्य कर्मों के फलस्वरूप मेरा जन्म वंश देश में कोसंबी के एक व्यापारी परिवार में हुआ, जो महान, समृद्ध और धनी था। मैं इकलौता पुत्र था, जिसका पालन-पोषण और सम्मान निरंतर होता रहा। वहाँ मैंने एक मित्र का अनुसरण किया जो अच्छे कर्मों में समर्पित, बुद्धिमान और पवित्र ज्ञान से परिपूर्ण था, और उसने मुझे अच्छे गुणों का ज्ञान दिया। मैंने कई चौदहवीं और पंद्रहवीं रातों तक उपवास किया; और वह कर्म जल में रखे खजाने की तरह जमा रहा। परन्तु मगध में किए गए बुरे कर्मों का फल अंततः विषैले जहर की तरह मुझ पर आ पड़ा। हे राजा, मैं वहाँ से बहुत समय के लिए रोरुवा नरक में चला गया। मैंने अपने कर्मों का फल भुगता; याद करके आज भी दुख होता है। वहाँ कई वर्षों तक कष्टदायी जीवन बिताने के बाद, मैं भेन्नाकाटा में एक बधिया बकरी बन गया। मैं धनवानों के बेटों को अपनी पीठ पर और गाड़ियों में ढोता था; यह दूसरे पुरुषों की पत्नियों के पीछे भागने का नियतिपूर्ण परिणाम था।

उसके बाद जंगल में एक बंदर के गर्भ में मेरा जन्म हुआ; और मेरे जन्म के दिन उन्होंने मुझे झुंड के सरदार को दिखाया, जिसने कहा, "मेरे बेटे को मेरे पास लाओ," और मेरे चीखने के बावजूद उसने मेरे अंडकोषों को अपने दांतों से पकड़कर काट डाला। उसने इसे कविता में वर्णित किया।

"हे राजा, इस जन्म के बाद, मेरा जन्म एक विशाल जंगल में बंदर के रूप में हुआ; झुंड के क्रूर सरदार ने मुझे अपंग कर दिया: यह दूसरे पुरुषों की पत्नियों के पीछे जाने का नियत परिणाम था।"

फिर उन्होंने अन्य जन्मों का वर्णन करना शुरू किया:

हे राजा, मेरा अगला जन्म दसन्ना वंश में एक बैल के रूप में हुआ, नपुंसक लेकिन फुर्तीला और सुंदर दिखने वाला, और मैंने लंबे समय तक रथ खींचा: यह अन्य पुरुषों की पत्नियों के पीछे भागने का घातक परिणाम था। उस जन्म के बाद मेरा जन्म वज्जी वंश (*12) में एक परिवार में हुआ, लेकिन मैं न तो पुरुष थी और न ही स्त्री, क्योंकि पुरुष के रूप में जन्म लेना बहुत कठिन है;—यह अन्य पुरुषों की पत्नियों के पीछे भागने का घातक परिणाम था। हे राजा, इसके बाद मेरा जन्म नंदन वन में हुआ, तैंतीस देवताओं के स्वर्ग में एक सुंदर रंग की अप्सरा के रूप में, विभिन्न रंगों के वस्त्रों और आभूषणों से सजी और रत्नजड़ित बालियाँ पहने हुए, नृत्य और गायन में निपुण, सक्का (इंद्र) के दरबार में परिचारिका के रूप में। वहाँ रहते हुए मुझे ये सभी जन्म और साथ ही वे सात भविष्य के जन्म भी याद आए जो मुझे यहाँ से जाने पर अनुभव करने होंगे। कोसंबी में मैंने जो अच्छा कर्म किया था, उसका फल मुझे मिल रहा है, और इस जन्म के बाद मैं या तो देवताओं (देवदूतों) के बीच ही जन्म लूँगी या मनुष्यों के बीच। हे राजा, सात जन्मों तक मेरा आदर और पूजा होगी, परन्तु छठे जन्म तक मैं अपने स्त्रीत्व से मुक्त नहीं हो पाऊँगी। परन्तु हे राजा, मेरा सातवाँ जन्म होगा, देवताओं (देवदूतों) के एक समृद्ध पुत्र के रूप में, अंत में मैं एक दिव्य शरीर में पुरुष देवता के रूप में जन्म लूँगी। आज भी नंदन में स्वर्ग के वृक्ष से मालाएँ एकत्रित की जा रही हैं, और जावा नामक देवताओं (देवदूतों) का एक पुत्र मेरे लिए माला ढूँढ़ रहा है। मेरे वर्तमान जीवन के ये सोलह वर्ष स्वर्ग में एक क्षण के समान हैं - सौ नश्वर शरद ऋतुएँ स्वर्ग के एक दिन और रात के समान हैं। इस प्रकार हमारे कर्म असंख्य जन्मों में भी हमारा पीछा करते हैं, चाहे अच्छा हो या बुरा, कोई भी कर्म व्यर्थ नहीं जाता।

फिर उन्होंने सर्वोच्च कानून की शिक्षा दी:

जो जन्म-जन्मांतर तक निरंतर उत्थान की इच्छा रखता है, वह दूसरे की पत्नी से उसी प्रकार विमुख रहे जैसे धुले हुए पैर वाला मनुष्य कीचड़ से विमुख रहता है। जो जन्म-जन्मांतर तक निरंतर उत्थान की इच्छा रखता है, वह भगवान की उपासना उसी प्रकार करे जैसे उनके सेवक इंद्र की उपासना करते हैं। जो स्वर्गिक सुख, स्वर्गिक जीवन, यश और सुख की कामना रखता है, वह पापों से विमुख रहे और त्रिविध विधि का पालन करे। तन, वाणी और मन से सजग और बुद्धिमान होकर, वह अपने सर्वोपरि हित का अनुसरण करे, चाहे वह स्त्री हो या पुरुष। संसार में यशस्वी जन्म लेकर समस्त सुखों में पले-बढ़े सभी प्राणी निःसंदेह पूर्वकाल में सदाचारी जीवन व्यतीत

करते थे; समस्त प्राणी अपने-अपने कर्मों का फल भोगते हैं। हे राजा, क्या आप यह सोचते हैं कि किस कारण आपने अपनी इन पत्नियों को स्वर्ग की अप्सराओं के समान, सुंदर ढंग से सजी-धजी और सोने के जालों से सुसज्जित रखा है?

इस प्रकार उसने अपने पिता को सलाह दी। शिक्षक ने इस प्रकार मामला समझाया:

"इस प्रकार कन्या रुजा ने अपने पिता को प्रसन्न किया, उसने भ्रमित व्यक्ति को सही मार्ग दिखाया और श्रद्धापूर्वक उसे धर्म का उपदेश दिया।"

सुबह से ही रात भर अपने पिता को धर्म का उपदेश देते हुए उसने उनसे कहा, "हे राजा, किसी झूठे विश्वासी की बातों पर ध्यान न दें, बल्कि मुझ जैसे किसी अच्छे मित्र (*13) की बातों को सुनें, जो आपको बताता है कि यह संसार है और दूसरा संसार है, और हर अच्छे या बुरे कर्म का फल निश्चित होता है, इसलिए गलत मार्ग पर न चलें।" फिर भी वह अपने पिता को उनकी झूठी शिक्षा से मुक्त नहीं कर सकी: वे केवल उसकी मीठी बातों से प्रसन्न हुए, क्योंकि सभी माता-पिता स्वाभाविक रूप से अपने प्रिय बच्चों की बातें सुनना पसंद करते हैं, लेकिन वे अपने पुराने विचारों को नहीं छोड़ते। इसी प्रकार शहर में हलचल मच गई, "राजा की पुत्री रूजा धर्म का उपदेश देकर गलत विचारों को दूर करने का प्रयास कर रही है," और लोग प्रसन्न हुए, "बुद्धिमान राजकुमारी आज उन्हें झूठी शिक्षा से मुक्त कर देगी और नागरिकों के लिए समृद्धि का द्वार खोलेगी।" यद्यपि वह अपने पिता को समझा नहीं सकी, फिर भी उसने हिम्मत नहीं हारी। उसने ठान लिया कि किसी न किसी तरह वह अपने पिता को सच्ची खुशी दिलाएगी। उसने अपने हाथ जोड़कर सिर पर रखे और दसों दिशाओं में प्रणाम करने के बाद, उसने आराधना करते हुए कहा, "इस संसार में धर्मात्मा समन और ब्राह्मण हैं जो संसार का पालन-पोषण करते हैं, प्रधान देवता हैं, महामहिम ब्रह्मा हैं, वे आएं और मेरे पिता को उनके गलत विश्वास को त्यागने के लिए प्रेरित करें; और यदि वे स्वयं ऐसा करने में असमर्थ हों, तो वे मेरी शक्ति और सद्गुण से आएं और इस गलत विश्वास को दूर करके समस्त संसार का कल्याण करें।" उस समय के महामहिम ब्रह्मा नारद नामक बोधिसत्व थे; और बोधिसत्व अपनी दया, करुणा और शासन करने की शक्ति से समय-समय पर संसार पर दृष्टि डालते हैं ताकि धर्मात्मा और दुष्ट प्राणियों को देख सकें। उस दिन जब वह संसार पर नज़र गड़ाए हुए थे, तब उन्होंने राजकुमारी को अपने पिता को गलत विश्वास से मुक्त कराने की इच्छा से प्रधान देवताओं की आराधना करते देखा, और उन्होंने मन ही मन सोचा, "मेरे सिवा कोई और गलत शिक्षा को दूर नहीं कर सकता। मुझे आज ही आना चाहिए और राजकुमारी पर दया करके राजा और उनकी प्रजा को सुख देना चाहिए। मैं किस वेश में जाऊँ? तपस्वी मनुष्यों को प्रिय और आदरणीय होते हैं और उनके वचन ग्रहण करने योग्य माने जाते हैं; मैं तपस्वी का वेश धारण करूँगा।" अतः उन्होंने एक आकर्षक मानव रूप धारण किया, जिनका रंग स्वर्णमय था, बाल उलझे हुए थे और उनमें एक सुनहरी सुई चुभी हुई थी। और उसने बाहर और भीतर से लाल रंग का फटा हुआ वस्त्र पहना, और एक कंधे पर चांदी से बनी और सोने के तारों से सजी काली मृग की खाल लटका रखी थी, और मोतियों की माला से लटका हुआ सोने का भिक्षापात्र ले रखा था, और अपने कंधों पर तीन स्थानों से मुड़ा हुआ सोने का भार ढोने वाला डंडा (*14) लाद रखा था, और मोतियों की माला से बंधा हुआ मूंगे का पानी का घड़ा उठा रखा था, वह इस वस्त्र के साथ आकाश में चंद्रमा की तरह चमकते हुए चला गया।चंदा महल की छत पर प्रवेश करने के बाद वह राजा के सामने आकाश में खड़ा हो गया।

शिक्षक ने इसे इस प्रकार समझाया:

"तब नारद (प्रधान देवदूतों के लोक से) मनुष्यों के पास आए और जंबूद्वीप (भारत) का अवलोकन करते हुए उन्होंने राजा अंगती को देखा। तब वे राजा के सामने महल में खड़े हो गए, और रुजा ने उन्हें देखकर आए हुए दिव्य ऋषि को प्रणाम किया।"

तब ब्रह्मा की महिमा से आहत होकर राजा अपने सिंहासन पर नहीं रह सका, बल्कि नीचे उतरकर जमीन पर खड़ा हो गया और उससे उसके आने का कारण, नाम और परिवार के बारे में पूछा।

गुरु ने इसे इस प्रकार समझाया:

तब राजा भयभीत होकर अपने सिंहासन से नीचे उतर आए और नारद से इस प्रकार प्रश्न पूछते हुए बोले, "हे दिव्य स्वरूप वाले, रात्रि को प्रकाशित करने वाले चंद्रमा के समान, आप कहाँ से आए हैं? कृपया मुझे अपना नाम और परिवार बताइए, मनुष्य जगत में लोग आपको किस नाम से पुकारते हैं?"

तब उसने मन ही मन सोचा, "यह राजा दूसरे लोक में विश्वास नहीं करता, मैं उसे दूसरे लोक के बारे में बताऊंगा," इसलिए उसने एक श्लोक कहा:

"मैं देवताओं (देवदूतों) से चंद्रमा की तरह रात को रोशन करते हुए आया हूँ, जैसा कि आपने पूछा है, मैं आपको अपना नाम और परिवार बताता हूँ: वे मुझे नारद और कश्यप के नाम से जानते हैं।"

तब राजा ने मन ही मन सोचा, "समय आने पर मैं उससे दूसरे लोक के बारे में पूछूंगा; मैं अभी उससे इस चमत्कार का उद्देश्य पूछूंगा।"

"हे नारद, जिस तरह से आप इस अद्भुत ढंग से जाते और खड़े होते हैं, मैं आपसे पूछता हूँ, इसका क्या अर्थ है; यह चमत्कार किस कारण से हुआ है?"

नारद ने उत्तर दिया:

सत्य, धर्मपरायणता, आत्मसंयम और उदारता, ये पुराने दिनों में मेरे प्रसिद्ध गुण थे; इन्हीं गुणों का लगन से पालन करके मैं जहाँ भी जाना चाहता हूँ, वहाँ सहजता से पहुँच जाता हूँ।

जब वह इस प्रकार बोल रहा था, तब भी राजा, अपनी बुरी शिक्षाओं की कट्टरता के कारण किसी अन्य संसार में विश्वास करने में असमर्थ होकर, विस्मय से बोला, "क्या अच्छे कर्मों का कोई प्रतिफल होता है?" और एक श्लोक दोहराया:

"जब आप अच्छे कर्मों से प्राप्त होने वाली शक्ति के बारे में बात करते हैं तो आप आश्चर्य व्यक्त करते हैं; यदि ये बातें वैसी ही हैं जैसा आप कहते हैं, हे नारद, तो इस प्रश्न का उत्तर सत्य-सत्य दीजिए।"

नारद ने उत्तर दिया:

"हे राजा, मुझसे पूछिए; यह आपका काम है; आपके मन में जो भी शंका है, मैं निश्चित रूप से तर्क, बुद्धि और प्रमाणों के द्वारा उसका समाधान कर दूंगा।"

राजा ने कहा:

"हे नारद, मैं आपसे यह प्रश्न पूछता हूँ; मेरे प्रश्न का गलत उत्तर न दें; क्या वास्तव में देवता (देवदूत) या पूर्वज होते हैं, क्या लोगों के कहने के अनुसार कोई दूसरा लोक है?"

नारद ने उत्तर दिया:

"स्वयं देवता (देवदूत) और पूर्वज मौजूद हैं, जैसा कि लोग कहते हैं, एक दूसरा संसार भी है; लेकिन मनुष्य लालची और सुख-भोग में लिप्त होने के कारण अपने भ्रम में उस दूसरे संसार के बारे में नहीं जानते।"

यह सुनकर राजा हँस पड़ा और उसने एक श्लोक कहा:

"यदि आप वास्तव में मानते हैं, नारद, कि परलोक में मृतकों के लिए एक निवास स्थान है, तो मुझे यहाँ पाँच सौ सिक्के दें, और मैं आपको परलोक में एक हजार सिक्के दूंगा।"

तब उस महान सत्ता ने सभा के बीच में ही उसे फटकारते हुए उत्तर दिया:

"अगर मुझे पता होता कि तुम गुणी और उदार हो, तो मैं तुम्हें पाँच सौ रुपये दे देता; लेकिन अगर तुम निर्दयी नरक में रह रहे हो, तो परलोक में तुमसे हज़ार रुपये कौन माँगेगा? यहाँ जब कोई व्यक्ति सद्गुण से विमुख, पाप प्रेमी, आलसी और क्रूर होता है, तो बुद्धिमान लोग उसे ऋण नहीं देते: ऐसे ऋणी से कोई प्रतिफल नहीं मिलता। जब लोग जानते हैं कि दूसरा व्यक्ति कुशल, सक्रिय, गुणी और उदार है, तो वे उसे अपने द्वारा दिए गए लाभों का लालच देकर उधार लेने के लिए आमंत्रित करते हैं; जब वह अपना काम पूरा कर लेता है, तो वह उधार ली गई राशि लौटा देता है।"

इस प्रकार फटकार प्राप्त करने पर राजा उत्तर देने के लिए तैयार नहीं था।

लोग प्रसन्न होकर चिल्लाए, "हे राजकुमारी, आप चमत्कारिक शक्ति से परिपूर्ण हैं, आप आज राजा को उनकी झूठी शिक्षाओं से मुक्त करेंगी," और सारा शहर उत्साह से भर गया। फिर उस महान सत्ता की शक्ति से मिथिला के सात मील (4.23 किमी) के दायरे में कोई भी ऐसा व्यक्ति नहीं बचा जिसने उनके धार्मिक उपदेश न सुने हों। तब उस महान सत्ता ने सोचा, "इस राजा ने अपनी झूठी शिक्षाओं को बहुत दृढ़ता से पकड़ रखा है; मैं उसे नरक के भय से डराकर उन्हें त्यागने पर मजबूर करूँगा, और फिर मैं उसे देवताओं (देवदूतों) के स्वर्ग से सांत्वना दूँगा"; इसलिए उन्होंने उससे कहा, "हे राजा, यदि तुम इन शिक्षाओं को नहीं त्यागोगे, तो तुम अनंत यातनाओं वाले नरक में जाओगे," और उन्होंने विभिन्न नरकों का वर्णन करना शुरू किया।

"जब तुम यहाँ से जाओगे तो देखोगे कि कौवों के झुंड तुम्हें घसीट रहे हैं और तुम्हें खा रहे हैं, जैसे तुम नरक में हो, और कौवे, गिद्ध और बाज तुम्हें नोच रहे हों, तुम्हारा शरीर फटा हुआ और खून टपक रहा हो: परलोक में कौन तुम्हें हज़ार टुकड़ों में तड़पाएगा?"

कौवे के नरक का वर्णन करने के बाद, उन्होंने कहा, "यदि तुम वहाँ नहीं रहोगे, तो तुम तीन मंडलों के बीच स्थित नरक में रहोगे," और उन्होंने उसका वर्णन करने के लिए एक छंद कहा:

"वहाँ घोर अंधकार है, न चाँद है न सूरज, एक ऐसा नरक जो हमेशा क्रोधित और भयानक रहता है; इसे न रात कहा जा सकता है न दिन: ऐसी जगह में पैसा ढूँढ़ते हुए कौन भटकेगा?"

फिर उस मध्यवर्ती नरक का पूर्ण वर्णन करने के बाद, उन्होंने कहा, "हे राजा, यदि तुम अपनी झूठी शिक्षाओं का त्याग नहीं करोगे, तो तुम्हें न केवल यह बल्कि अन्य यातनाएँ भी सहनी पड़ेंगी," और उन्होंने एक श्लोक कहा:

"विशालकाय आकार के दो कुत्ते सबाला और समा, जो शक्तिशाली और बलवान हैं, अपने लोहे के दांतों से उसे खा जाते हैं जिसे यहां से भगा दिया जाता है और वह दूसरे लोक में चला जाता है।"

इसके बाद के नरकों पर भी यही नियम लागू होता है; इसलिए इन सभी लोकों और उनके रक्षकों का वर्णन विभिन्न गाथाओं के एक सारगर्भित, सामान्य रूप से लिखित संस्करण में किया जाना चाहिए, जैसा कि पूर्ववर्ती वृत्तांत में किया गया है।

"जब वह इस प्रकार यातना के क्रूर जानवरों द्वारा नोचा जा रहा है, उसका शरीर फटा हुआ है और खून टपक रहा है, तो परलोक में कौन उसे हजार टुकड़ों में तड़पाएगा?"

तीरों और तेज भालों से कलुपकलाओं ने शत्रु बनकर उस व्यक्ति पर प्रहार किया और उसे नरक में घायल कर दिया जिसने पहले बुराई की थी।

जब वह नरक में इस प्रकार पेट और बगल में बुरी तरह घायल होकर भटक रहा होगा, उसकी आंतें क्षत-विक्षत हो चुकी होंगी, उसका शरीर फटा हुआ होगा और खून टपक रहा होगा, तो परलोक में कौन उससे हजार टुकड़े मांगेगा?

आकाश से भाले, तीर, बरछी, नुकीले कांटे और तरह-तरह के हथियार बरसते हैं, जलते हुए अंगारों की तरह लपटें गिरती हैं, क्रूर मनुष्य पर पत्थर के गोले बरसते हैं।

नरक में असहनीय गर्म हवा चलती है, वहाँ क्षणिक सुख भी नहीं मिलता; बीमार, बिना किसी आश्रय के इधर-उधर भटकता हुआ, परलोक में कौन उससे हज़ार टुकड़े मांगेगा?

रथों में जकड़े हुए, धधकती भूमि पर कदम रखते हुए, कोड़ों और लाठियों से धकेले जाते हुए, परलोक में कौन उससे हजार टुकड़े छीनने की हिम्मत करेगा?

जब वह नुकीले रेज़रों से जड़े एक भयानक धधकते पहाड़ पर चढ़ता है, उसका शरीर घावों से भरा हुआ और खून से लथपथ है, तो परलोक में कौन उससे हज़ार टुकड़े मांगेगा?

जब वह जलते हुए कोयलों के एक भयानक, धधकते ढेर पर पहाड़ की तरह चढ़ता है, उसका शरीर पूरी तरह से जला हुआ है, वह दयनीय स्थिति में है और रो रहा है, तो परलोक में कौन उससे हजार टुकड़े मांगेगा?

वहाँ बादलों के ढेर जैसी ऊँची झाड़ियाँ हैं, जो काँटों से भरी हैं, जिनमें लोहे के नुकीले कांटे लगे हैं जो पुरुषों का खून चूसते हैं, और जो पुरुष दूसरों की पत्नियों के पीछे जाते हैं उन्हें यम के सेवकों द्वारा हाथों में भाले लिए हुए आगे बढ़ाया जाता है।

जब वह खून से लथपथ, घावों और चोटों से ग्रस्त, दर्द से कराहते हुए, गहरी गर्म आहें भरते हुए, अपने पूर्व अपराधों का प्रायश्चित करते हुए, उस भयानक रेशम-कपास के पेड़ पर चढ़ता है, तो उससे उसका पुराना कर्ज कौन मांगेगा?

बादलों के ढेर जैसे ऊंचे जंगल हैं, जिन पर तलवारों जैसे पत्ते लगे हैं, और लोहे के चाकुओं से लैस हैं जो मनुष्यों का खून पीते हैं; जब वह लोहे के पत्तों वाले पेड़ पर चढ़ता है, तेज तलवारों से कटा हुआ, उसका शरीर घावों से भरा और खून टपक रहा है, तो परलोक में कौन उससे हजार टुकड़े मांगेगा?

जब वह लोहे के पत्तों के उस नरक से बचकर वेतरानी नदी में गिर जाएगा, तो उससे उसका पुराना कर्ज कौन मांगेगा?

वेतरानी नदी बहती रहती है, क्रूर (*15) उबलते पानी से भरी और लोहे के कमलों और नुकीले पत्तों से ढकी हुई; जैसे ही वह खून से लथपथ और कटे हुए अंगों के साथ वेतरानी की धारा में तेजी से बहता है, जहाँ आराम करने के लिए कुछ भी नहीं है, कौन उससे उसका कर्ज मांगेगा?

जब राजा ने उस महान सत्ता से नरक का यह वर्णन सुना, तो वह व्याकुल होकर और शरण की तलाश में, उससे इस प्रकार बोला:

"मैं काँप रहा हूँ जैसे कोई पेड़ काटा जा रहा हो; मेरा मन व्याकुल है, मुझे समझ नहीं आ रहा कि मैं किस ओर मुड़ूँ; मैं भय से व्याकुल हूँ, मेरा डर बहुत गहरा है, जब मैं आपके द्वारा उच्चारित इन छंदों को सुनता हूँ। जैसे जलती हुई वस्तु को पानी में डुबोया जाता है, या तूफानी सागर में किसी द्वीप की तरह, या अंधेरे में किसी दीपक की तरह, आप ही मेरी शरण हैं, हे ऋषि।"

हे ऋषि, मुझे पवित्र ग्रंथ और उसका अर्थ सिखाइए; निश्चय ही अतीत पूर्णतः पापमय रहा है; हे नारद, मुझे पवित्रता का मार्ग सिखाइए, ताकि मैं नरक में न गिरूँ।

तब उस महान सत्ता ने उसे पवित्रता का मार्ग सिखाने के लिए, धर्म का अनुसरण करने वाले विभिन्न पूर्व राजाओं के उदाहरण देकर उसे यह बात बताई:

धतरत्थ वेस्समित्त और अत्तका, यमतग्गी और उसिन्नारा और राजा शिवी, ये और अन्य राजा, ब्राह्मणों और समनों की लगन से सेवा करते हुए, सभी इंद्र के स्वर्ग में गए; हे राजा, आप अधर्म से बचकर धर्म का पालन करें। उन्हें अपने महल में हाथों में भोजन लेकर यह घोषणा करने दें, "कौन भूखा या प्यासा है? किसे माला या मरहम चाहिए? कौन नंगा आदमी विभिन्न रत्नों से सजे वस्त्र पहनेगा? कौन अपनी यात्रा के लिए छाता और कोमल जूते ले जाएगा?" उन्हें अपने नगर में सुबह-शाम जोर से यह घोषणा करने दें। बूढ़े आदमी, बूढ़े बैल और घोड़े को काम में न लगाएं: प्रत्येक को उचित सम्मान दें; जब वह बलवान था, उसने अपने कर्तव्य का निर्वाह किया।

इस प्रकार, महान सत्ता ने राजा को उदारता और अच्छे आचरण के विषय में उपदेश देने के बाद, यह देखकर कि राजा रथ से तुलना किए जाने पर प्रसन्न होगा, उसे हर इच्छा को पूरा करने वाले रथ के रूपक के तहत कानून का उपदेश देना शुरू किया।

"तुम्हारा शरीर रथ कहलाता है, जो तेज गति से चलता है और सारथी के रूप में मन से सुसज्जित है: सभी चोटों से परहेज इसका धुरी है, उदारता इसका आवरण है, पैरों से सावधानीपूर्वक चलना पहिये की परिधि है, हाथों से सावधानीपूर्वक संचालन रथ का किनारा है; पेट पर सतर्कता पहिये का नाम है, जीभ पर सतर्कता पहिये की खड़खड़ाहट को रोकना है। इसके सभी अंग सत्यपरक वाणी से परिपूर्ण हैं, निंदा के अभाव से यह सुदृढ़ रूप से जुड़ा हुआ है, इसका ढांचा मैत्रीपूर्ण शब्दों से परिपूर्ण है और सुविचारित वाणी से सुगठित है; विश्वास और संपत्ति की इच्छा के अभाव से सुगठित है, विनम्रता के आदरपूर्ण अभिवादन को रथ के ध्रुव के रूप में, कोमलता और नम्रता के स्तंभ को, आत्म-संयम की रस्सी को, पांच नैतिक नियमों के अनुसार, क्रोध के अभाव की कुंजी (?) को, और धर्म के सफेद छाते को, उचित ऋतुओं के पूर्ण ज्ञान से संचालित, तीन छड़ियों (*17) को अपने आश्वस्त मन में तैयार रखते हुए।" आत्मविश्वास, नम्र वाणी को बंधन मानकर, और अहंकार से मुक्त होकर, अनासक्त विचारों के सहारे, ज्ञान का अनुसरण करते हुए, और धूल से मुक्त होकर, ध्यान को अपना चाबुक और दृढ़ता को अपनी लगाम बनाओ; मन अपने सभी प्रशिक्षित घोड़ों के साथ आत्म-संयम के मार्ग पर चलता है, इच्छा और वासना एक बुरा मार्ग है, परन्तु आत्म-संयम सीधा मार्ग है। जैसे घोड़ा रूप, ध्वनि और गंध के पीछे दौड़ता है, वैसे ही बुद्धि चाबुक चलाती है और आत्मा सारथी। यदि कोई अपने रथ के साथ चलता है, यदि वह इस शांति और दृढ़ता को समर्पित करता है, तो वह सभी इच्छाओं को प्राप्त करेगा, हे राजा, वह कभी नरक में नहीं जाएगा।

अतः, हे राजा, मैंने आपको सुख के उस मार्ग का विभिन्न तरीकों से वर्णन किया है, जिसके बारे में मैंने नारद से प्रार्थना की थी कि वह मुझे बताए ताकि मैं नरक में न गिरूँ (*18)।"

इस प्रकार उन्हें विधि का ज्ञान देकर, उनकी झूठी शिक्षाओं को दूर करके और उन्हें नैतिक नियमों में स्थापित करके, उन्होंने उन्हें आदेश दिया कि अब से वे बुरे मित्रों से दूर रहें, गुणी मित्रों का अनुसरण करें और अपने चलने-फिरने पर ध्यान दें; फिर उन्होंने राजकुमारी के गुणों की प्रशंसा की और राजमहल तथा राजपत्नियों को प्रोत्साहित किया, और फिर उनकी उपस्थिति में बड़े वैभव के साथ ब्रह्मा के लोक (परम स्वर्ग) में प्रवेश कर गए।

गुरु ने अपना पाठ समाप्त करते हुए कहा, "हे भिक्षुओं, न केवल अभी, बल्कि पहले भी मैंने उरुवेला-कश्यप को परिवर्तित किया और उसे जकड़े हुए गलत विश्वास के जाल को काटा"; ऐसा कहते हुए उन्होंने जन्म का उल्लेख किया और अंत में ये श्लोक कहे:

"देवदत्त अलता थे, भद्दाजी सुनामा थे, सारिपुत्र विजय थे, मोगल्लना बीजक थे, लिच्छवी राजकुमार सुनक्खलता नग्न तपस्वी गुण थे; आनंद राजा को परिवर्तित करने वाले रुजा थे, और उरुवेला-कश्यप झूठी शिक्षाओं को धारण करने वाले राजा थे, और बोधिसत्व महान ब्रह्मा (प्रधान देवदूत) थे; इस प्रकार आप जन्म की कथा को समझते हैं।"

फुटनोट:

(1) उसने वेलुवाना मनोरंजन उद्यान को बिरादरी, महाव, संख्या 22 को दे दिया।

(2)या शायद "आप, एक तपस्वी और एक शिक्षक।"

(3)ise.

(4)डोसिना.

(5)? nippadesato.

(6)गुणो अत्तानो अगुणताया शब्दों पर एक नाटक है।

(7)विनय रतम् का प्रयोग क्रिया-विशेषण रूप में लगता है।

(8) विद्वान कुड्डुमन.उखी को महिलाओं द्वारा चेहरे के लिए इस्तेमाल किए जाने वाले सरसों के लेप (सासापाकुड्डेना..सासापाकाक्केना) के संदर्भ में बताते हैं।

(9) यहाँ बीजक का उल्लेख करते हुए एक दोहा छोड़ दिया गया है, "बी. कश्यप की बात सुनकर रोया।" स्पष्टतः वे इस स्थान से संबंधित नहीं हैं।

(10) अस्पष्ट.

(11)सं. 435

(12)वे मगध के सामने गंगा के उत्तरी तट पर रहते हैं।

(13) अच्छा मित्र बौद्ध धर्म का एक समरूप केंद्र है।

(14) गर्दन और कंधों के लिए उपयुक्त?

(15)खरा का अर्थ "ठोस" हो सकता है।

(16)silesito?

(17) तपस्वी ने तिदंडम ले रखा था, तीन छड़ियों का एक बंडल, संदर्भ अस्पष्ट है।

(18) अस्पष्ट.

तिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **विधुरपंडित-जातक**
स्रोत *: ई.बी. कोवेल और डब्ल्यू.एच.डी. राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-545-||----->>>> अगला

जातक क्रमांक 545
विधुरापंडित-जातक

“तुम पीले, दुबले-पतले और दुर्बल हो,” इत्यादि। गुरु ने जेतवन मठ में रहते हुए, ज्ञान की पूर्णता के विषय में यह कथा सुनाई। एक दिन भिक्षुओं ने सत्य कक्ष में चर्चा करते हुए कहा, “महोदय, गुरु के पास महान और व्यापक ज्ञान है, वे तत्पर और बुद्धिमान हैं, वे तीक्ष्ण बुद्धि वाले हैं और अपने विरोधियों के तर्कों को कुचलने में सक्षम हैं, वे अपनी बुद्धि की शक्ति से क्षत्रिय ऋषियों द्वारा पूछे गए कठिन प्रश्नों को उलट देते हैं और उन्हें मौन कर देते हैं, और उन्हें तीन शरणों और नैतिक नियमों में स्थापित करके, उन्हें अमरता के मार्ग पर अग्रसर करते हैं।” गुरु आए और पूछा कि भिक्षु किस विषय पर चर्चा कर रहे हैं; और यह सुनकर उन्होंने कहा, “हे भाइयों, यह आश्चर्य की बात नहीं है कि तथागत (बुद्ध), जिन्होंने ज्ञान की पूर्णता प्राप्त कर ली थी, अपने विरोधियों के तर्कों को विफल कर क्षत्रियों और अन्य को परिवर्तित कर दें। क्योंकि पूर्वकाल में, जब वे सर्वोच्च ज्ञान की खोज में थे, तब वे बुद्धिमान थे और अपने विरोधियों के तर्कों को कुचलने में सक्षम थे। जी हाँ, विदुरकुमार के समय में, साठ मील (4.23 किमी) ऊँचे काले पर्वत के शिखर पर, मैंने अपनी बुद्धि के बल पर यक्ष (राक्षस) सेनापति पुन्नक को परिवर्तित किया और उसे मौन कर दिया तथा उससे अपना प्राण त्यागने को विवश किया”; और ऐसा कहकर उन्होंने अतीत की एक कथा सुनाई।

बहुत समय पहले कुरु राज्य के इंद्रप्रस्थ नगर में धनंजय-कोरब्बा नामक राजा शासन करते थे। उनका एक मंत्री था जिसका नाम विधुरापंडित था, जो उन्हें सांसारिक और आध्यात्मिक मामलों के विषय में उपदेश देता था। अपनी मधुर वाणी और धर्मोपदेश देने की अपार क्षमता के कारण वे जंबूद्वीप (भारत) के सभी राजाओं को अपने मधुर प्रवचनों से इस प्रकार मोहित कर लेते थे जैसे हाथी अपने प्रिय वीणा से मोहित हो जाते हैं। वे उन्हें अपने-अपने राज्यों में जाने नहीं देते थे, बल्कि उसी नगर में वैभवपूर्वक निवास करते हुए बुद्ध के समान पूर्ण शक्ति से लोगों को धर्म का उपदेश देते थे। बनारस में चार धनी ब्राह्मण गृहस्थ मित्र थे। उन्होंने कर्मों के कष्टों को देखकर हिमालय में जाकर तपस्वी जीवन व्यतीत किया और आध्यात्मिक साधना में लीन होकर वहाँ दीर्घकालीन वनों की जड़ों और फलों का सेवन करते हुए रहे। फिर नमक और मसाले की प्राप्ति के लिए वे अंग राज्य के कालचम्पा नगर में भिक्षा मांगने आए। वहाँ उनके चार मित्र गृहस्थ उनके व्यवहार से प्रसन्न होकर उनका आदरपूर्वक स्वागत किया और उनके भिक्षापात्र ग्रहण करके अपने-अपने घर में उन्हें उत्तम भोजन कराया। उनका वचन लेकर उन्होंने अपने बगीचे में उनके लिए आवास की व्यवस्था की। इस प्रकार चारों तपस्वियों ने गृहस्थों के घरों में भोजन किया और दिन व्यतीत करने के लिए चले गए। एक तैंतीस देवताओं के स्वर्ग, दूसरा नागों के लोक, तीसरा सुपन्नों के लोक और चौथा कोरव्य राजा के मिगाचिरा उद्यान में चला गया। अब, जिसने अपना दिन देवदूतों के लोक में बिताया, उसने सक्का (इंद्र) की महिमा देखकर अपने सेवक को उसका पूर्ण वर्णन किया, और इसी प्रकार जिसने अपना दिन नाग और सुपन्न लोक में बिताया, और इसी प्रकार जिसने अपना दिन कोरव्य राजा धनंजय के उद्यान में बिताया; प्रत्येक ने अपने-अपने राजा की महिमा का पूर्ण वर्णन किया। अतः इन चारों सेवकों ने इन स्वर्गिक लोकों की कामना की, और दान और अन्य पुण्य कर्म करने के बाद, अपने जीवन के अंत में, एक का जन्म सक्का (इंद्र) के रूप में हुआ, दूसरे का जन्म नाग लोक में पत्नी और बच्चे के साथ हुआ, तीसरे का जन्म सिंबली झील के महल में सुपन्न राजा के रूप में हुआ, और चौथे का जन्म राजा धनंजय की मुख्य रानी से हुआ; जबकि चारों तपस्वी ब्रह्म लोक (प्रधान देवदूतों) में जन्मे। कोरव्य राजकुमार बड़ा हुआ, और अपने पिता की मृत्यु के बाद उसने उनका राज्य संभाला और धर्मपरायणता से शासन किया, परन्तु वह जुए में अपनी कुशलता के लिए प्रसिद्ध था। उन्होंने विधुरापंडित के उपदेश सुने, दान दिया, नैतिक नियमों का पालन किया और उपवास रखा। एक दिन जब उन्होंने उपवास रखा, तो वे ध्यान लगाने के लिए उद्यान में गए और एक सुखद स्थान पर बैठकर तपस्वी के कर्तव्यों का पालन किया। सक्का (इंद्र) ने भी उपवास रखने का निश्चय किया, तो उन्होंने पाया कि देवदूतों के लोक में बाधाएँ हैं, इसलिए वे मनुष्यों के लोक में उसी उद्यान में गए और...एक सुखद स्थान पर बैठकर, उन्होंने तपस्वी के कर्तव्यों का पालन किया। नागों के राजा वरुण ने भी उपवास करने का निश्चय किया था, लेकिन उन्होंने नागलोक में बाधाएँ देखीं, इसलिए वे उसी उद्यान में गए और एक सुखद स्थान पर बैठकर तपस्वी के कर्तव्यों का पालन किया। सुपन्न राजा ने भी उपवास करने का निश्चय किया था, लेकिन उन्होंने सुपन्नलोक में बाधाएँ देखीं, इसलिए वे उसी उद्यान में गए और एक सुखद स्थान पर बैठकर तपस्वी के कर्तव्यों का पालन किया। फिर ये चारों, संध्याकाल में अपने-अपने स्थानों से उठकर, राजसी झील के किनारे खड़े होकर, एक साथ आए और एक-दूसरे को देखा, और अपने पुराने स्नेह से भर कर, उन्होंने अपनी पूर्व मित्रता को जागृत किया और एक-दूसरे का अभिवादन करते हुए बैठ गए। सक्का (इंद्र) राजसी आसन पर बैठ गए, और अन्य सभी अपनी-अपनी गरिमा के अनुसार बैठ गए। तब सक्का (इंद्र) ने उनसे कहा, "हम चारों राजा हैं, अब हममें से प्रत्येक का सर्वोत्कृष्ट गुण क्या है?" तब नागराज वरुण ने उत्तर दिया, "मेरा सद्गुण तुम तीनों से श्रेष्ठ है," और जब उन्होंने पूछा कि क्यों, तो उन्होंने कहा, "यह सुपन्न राजा हमारा शत्रु है, चाहे हम जन्म से पहले हों या जन्म के बाद, फिर भी जब मैं उसे अपने वंश का इतना विनाशकारी शत्रु देखता हूँ तो मुझे कभी क्रोध नहीं आता; इसलिए मेरा सद्गुण श्रेष्ठ है"; और फिर उन्होंने चतुपोसथ जातक का पहला श्लोक कहा।

"वह नेक इंसान जो क्रोध के पात्र व्यक्ति के प्रति क्रोध नहीं रखता और जो कभी अपने भीतर क्रोध उत्पन्न नहीं होने देता, जो क्रोधित होने पर भी उसे प्रकट नहीं होने देता, उसे ही वास्तव में तपस्वी कहते हैं।"

"ये मेरे गुण हैं; इसलिए मेरा सद्गुण श्रेष्ठ है।"

यह सुनकर सुपन्ना राजा ने कहा, "यह नाग मेरा मुख्य भोजन है; लेकिन चूंकि मैं इतना भोजन सामने देखकर भी अपनी भूख सहन करता हूँ और भोजन के लिए कोई बुराई नहीं करता, इसलिए मेरा सद्‌गुण श्रेष्ठ है," और उन्होंने यह श्लोक कहा:

"जो भूख को सहते हुए भी पेट को सिकोड़ता है, जो संयमी संन्यासी नियमों के अनुसार खाता-पीता है और भोजन के लिए कोई बुराई नहीं करता, उसे ही वास्तव में तपस्वी कहते हैं।"

तब देवताओं (देवदूतों) के राजा सक्का (इंद्र) ने कहा, "मैंने अनेक प्रकार की स्वर्गीय महिमा, सुख के सभी तात्कालिक स्रोतों को त्यागकर मनुष्य जगत में अपने सद्‌गुणों को बनाए रखने के लिए आया हूँ, अतः मेरे सद्‌गुण श्रेष्ठ हैं"; और उन्होंने यह श्लोक कहा:

"खेल-कूद और सुख-सुविधाओं का त्याग करके, वह संसार में कोई झूठ नहीं बोलता, वह सभी बाहरी आडंबर और शारीरिक इच्छाओं से विमुख रहता है, ऐसे व्यक्ति को ही वास्तव में तपस्वी कहते हैं।"

इस प्रकार सक्का (इंद्र) ने अपने सद्‌गुण का वर्णन किया।

तब राजा धनंजय ने कहा, "मैंने आज अपना दरबार और सोलह हजार नर्तकियों वाला हरम त्याग दिया है, और मैं एक बगीचे में तपस्वी के कर्तव्यों का पालन करता हूँ; इसलिए मेरा सद्‌गुण श्रेष्ठ है"; और उन्होंने यह श्लोक जोड़ा:

जो पूर्ण ज्ञान के साथ अपनी सभी निजी वस्तुओं और कामवासना की सभी क्रियाओं का त्याग कर देते हैं, जो आत्मसंयमित, दृढ़ निश्चयी, निस्वार्थ और इच्छा से मुक्त होते हैं, उन्हें ही वास्तव में तपस्वी कहा जाता है।

इस प्रकार उन सभी ने अपने-अपने गुणों को श्रेष्ठ बताया और फिर धनंजय से पूछा, "हे महाराज, क्या आपके दरबार में कोई ऐसा बुद्धिमान व्यक्ति है जो इस शंका का समाधान कर सके?" धनंजय ने कहा, "जी हाँ, हे राजाओं, मेरे पास विदुर-पंडित हैं, जो अतुलनीय उत्तरदायित्व का पद संभालते हैं और सभ्य एवं धार्मिक मार्ग का उपदेश देते हैं, वे हमारी शंका का समाधान करेंगे, हम उनके पास जाएँगे।" धनंजय तुरंत सहमत हो गए। अतः वे सभी उद्यान से बाहर निकले और धार्मिक सभा भवन की ओर बढ़े, तथा भवन को सजाने का आदेश देकर उन्होंने बोधिसत्व को एक ऊँचे आसन पर बैठाया और उन्हें मैत्रीपूर्ण अभिवादन करते हुए एक तरफ बैठ गए और बोले, "हे ज्ञानी! हमारे मन में एक शंका उत्पन्न हुई है, क्या आप उसका समाधान करेंगे?"

"हे परम बुद्धिमान मंत्री जी, हम आपसे विनती करते हैं: हमारी बातों में विवाद उत्पन्न हो गया है, क्या आप आज हमारी उलझनों पर विचार करके उनका समाधान करेंगे, क्या आप आज हमें अपने संदेह से मुक्ति दिला सकते हैं?"

उनकी बातें सुनकर उस बुद्धिमान व्यक्ति ने उत्तर दिया, "हे राजाओं, मैं कैसे जानूँ कि आपने अपने वाद-विवाद में जो छंद कहे हैं, वे आपके सद्‌गुण के विषय में अच्छे हैं या बुरे?" और उसने यह छंद जोड़ा:

वे बुद्धिमान पुरुष जो वास्तविक स्थिति को जानते हैं और उचित समय पर बुद्धिमानी से बोलते हैं, वे चाहे कितने भी बुद्धिमान क्यों न हों, उन श्लोकों का अर्थ कैसे समझा सकते हैं जो उन्हें सुनाए ही नहीं गए हैं? नाग राजा कैसे बोलते हैं, विनता के पुत्र गरुला कैसे बोलते हैं? गंधर्वों के राजा क्या कहते हैं? या कुरुओं के सबसे श्रेष्ठ राजा कैसे बोलते हैं?

तब उन्होंने उससे यह श्लोक कहा:

नाग राजा संयम का उपदेश देते हैं, विनता के पुत्र गरुला सौम्यता का, गंधर्वों के राजा शारीरिक वासना से परहेज का, और कुरुओं के सबसे श्रेष्ठ राजा धार्मिक (धार्मिक) पूर्णता में सभी बाधाओं से मुक्ति का उपदेश देते हैं।

तब उस महान सत्ता ने उनकी बातें सुनकर यह श्लोक कहा:

"ये सभी बातें सही ढंग से कही गई हैं, इनमें से कुछ भी गलत नहीं है; और जिसमें ये बातें पहिये के केंद्र में तीलियों की तरह ठीक से फिट बैठती हैं, वही इन चार गुणों से संपन्न होता है, जिसे वास्तव में तपस्वी कहा जाता है।"

इस प्रकार उस महान सत्ता ने उन सभी के गुणों को एक समान बताया। तब उन चारों ने यह सुनकर अत्यंत प्रसन्नता व्यक्त की और उनकी स्तुति में यह श्लोक कहा:

"आप सर्वश्रेष्ठ हैं, आप अतुलनीय हैं, आप बुद्धिमान हैं, धर्मी मार्ग के रक्षक और ज्ञाता हैं: अपनी बुद्धि से समस्या को समझकर, आप अपनी कुशलता से संदेहों को उसी प्रकार तराशते हैं जैसे हाथीदांत का कारीगर अपनी आरी से हाथीदांत को तराशता है।"

इस प्रकार चारों उनके प्रश्न के उत्तर से प्रसन्न हुए। तब इंद्र ने उन्हें रेशमी वस्त्र, गरुला ने सोने की माला, नागराज वरुण ने रत्न और धनंजय ने हजार गायें आदि भेंट कीं; तब धनंजय ने उनसे इस श्लोक में कहा:

"मैं तुम्हें एक हजार गायें, एक बैल और एक हाथी, और ये दस रथ जो उत्तम नस्ल के घोड़ों द्वारा खींचे जाते हैं, और सोलह उत्कृष्ट गाँव देता हूँ, क्योंकि मैं इस प्रश्न के तुम्हारे समाधान से पूरी तरह प्रसन्न हूँ।"

फिर इंद्र और अन्य सभी ने महान सत्ता को पूर्ण आदर देकर अपने-अपने निवास स्थान की ओर प्रस्थान किया। यहीं पर चार वक्त के उपवास का यह भाग समाप्त होता है।

II.

नाग राजा की रानी विमला थीं; जब उन्होंने देखा कि उनके गले में कोई रत्नजड़ित आभूषण नहीं है, तो उन्होंने उनसे पूछा कि वह कहाँ है। उन्होंने उत्तर दिया, "ब्राह्मण चंदा के पुत्र विदुर-पंडित का उपदेश सुनकर मुझे प्रसन्नता हुई और मैंने उन्हें वह रत्न भेंट किया। केवल मैंने ही नहीं, बल्कि इंद्र ने भी उन्हें रेशमी वस्त्र भेंट किया, सुपन्ना राजा ने उन्हें सोने की माला दी, और धनंजय राजा ने एक हजार बैल और अन्य कई वस्तुएँ भेंट कीं।" "मुझे लगता है कि वे विधि-विद्या में निपुण हैं।" "देवी, आप क्या कह रही हैं? ऐसा लगता है मानो जंबूद्वीप (भारत) में बुद्ध प्रकट हुए हों! जंबूद्वीप (भारत) के सौ राजा उनके मधुर शब्दों से मोहित होकर अपने राज्यों में नहीं लौटते, बल्कि अपने प्रिय वीणा की ध्वनि से मोहित जंगली हाथियों की तरह वहीं ठहर जाते हैं, यही उनकी वाक्पटुता का सार है!" जब उसने उनकी महानता का वर्णन सुना तो उसके मन में उनके प्रवचन सुनने की तीव्र इच्छा जागी और उसने मन ही मन सोचा, "यदि मैं राजा से कहूँ कि मैं उनके प्रवचन सुनने के लिए तरस रही हूँ और उन्हें यहाँ बुलाने का अनुरोध करूँ, तो वे उन्हें मेरे पास नहीं लाएँगे; यदि मैं बीमार होने का बहाना करूँ और एक बीमार स्त्री की तरह अपनी इच्छा व्यक्त करूँ तो क्या होगा?" इसलिए उसने अपनी सेविकाओं को इशारा किया और बिस्तर पर लेट गई। जब राजा उससे मिलने आए और उसे वहाँ नहीं पाया तो उन्होंने सेविकाओं से पूछा कि विमला कहाँ है। उन्होंने उत्तर दिया कि वह बीमार है, और जब वे उससे मिलने गए तो वे उसके बिस्तर के किनारे बैठ गए और एक श्लोक का पाठ करते हुए उसके शरीर को सहलाने लगे।

"पीली, दुबली-पतली और कमजोर, तुम्हारा रंग और रूप पहले ऐसा नहीं था, हे विमला, मेरे प्रश्न का उत्तर दो, यह शरीर का दर्द क्या है जो तुम्हें सता रहा है?"

उसने उसे निम्नलिखित शब्दों में बताया:

"स्त्रियों में एक स्नेह होता है, उसे लालसा कहते हैं, हे राजा; हे नागों के सम्राट, मैं विदुर का हृदय बिना छल के यहाँ लाने की कामना करती हूँ।"

उसने उसे उत्तर दिया:

"तुम्हें चाँद, सूरज या हवा की बहुत याद आती है; विदुर के दर्शन मात्र ही मुश्किल से हो पाते हैं: कौन उन्हें यहाँ ला पाएगा?"

जब उसने उसकी बातें सुनीं, तो वह चिल्लाई, "अगर मुझे यह नहीं मिला तो मैं मर जाऊंगी," इसलिए वह अपने पलंग पर घूम गई और अपनी पीठ दिखाते हुए अपने वस्त्र के किनारे से अपना चेहरा ढक लिया। नाग राजा अपने कक्ष में गया और अपने पलंग पर बैठ गया और सोचने लगा कि विमला विदुर का हृदय पाने के लिए कितनी दृढ़ है; "अगर उसे उसका हृदय नहीं मिला तो वह मर जाएगी; मैं उसके लिए इसे कैसे प्राप्त कर सकता हूँ?" तभी उसकी पुत्री इरंदती, एक नाग राजकुमारी, अपने पिता को प्रणाम करने के लिए पूरी सुंदरता और आभूषणों के साथ आई और उन्हें प्रणाम करके एक तरफ खड़ी हो गई। उसने देखा कि उसकी शांति भंग है, और उसने उससे कहा, "आप बहुत व्याकुल हैं, इसका क्या कारण है?"

"हे पिता, आप इतने चिंतित क्यों हैं? आपका चेहरा हाथ से तोड़े गए कमल के समान क्यों है? आप क्यों दुखी हैं? हे राजा, चले जाइए! शत्रुओं पर विजय पाने वाले, शोक न कीजिए।"

अपनी पुत्री की बातें सुनकर नाग राजा ने उत्तर दिया:

"हे इरंदती, तेरी माता विदुर का हृदय चाहती है, विदुर के दर्शन मात्र से ही वह प्रसन्न हो जाता है, उसे यहाँ कौन ला सकेगा?"

तब उसने उससे कहा, "पुत्री, मेरे दरबार में कोई ऐसा नहीं है जो विदुर को यहाँ ला सके; तुम अपनी माता को जीवनदान दो और किसी ऐसे पति की तलाश करो जो विदुर को यहाँ ला सके।"

इसलिए उसने आधे श्लोक के साथ उसे विदा कर दिया, जिससे उसकी बेटी के प्रति अनुचित विचारों का संकेत मिलता है:

"तुम एक ऐसे पति की तलाश करो, जो विदुर को यहाँ लाए।" और जब उसने अपने पिता के ये शब्द सुने, तो वह रात में चली गई और अपनी तीव्र इच्छाओं को पूरा करने लगी।

चलते-चलते उसने हिमालय के सभी रंग, सुगंध या स्वाद वाले फूलों को इकट्ठा किया, और पूरे पर्वत को एक अनमोल रत्न की तरह सजाकर उस पर फूलों का पलंग बिछाया, और एक मधुर नृत्य करने के बाद एक मधुर गीत गाया।

"कौन सा गंधर्व या राक्षस, कौन सा नाग, कौन सा किंपुरासा या मनुष्य, या कौन सा ऋषि, जो सभी इच्छाओं को पूरा करने में सक्षम हो, पूरी रात मेरा पति बनेगा?"

उस समय महान राजा वेसवना के भतीजे, पुन्नका नामक यक्ष (राक्षस) सेनापति, तीन मील (4.23 किमी) लंबे जादुई सिंध घोड़े पर सवार होकर, काले पर्वत की लाल आर्सेनिक सतह पर तेजी से यक्षों के एक समूह की ओर बढ़ रहे थे, तभी उन्होंने उस स्त्री का गीत सुना। पिछले जन्म में सुनी हुई उस स्त्री की आवाज उनके शरीर और नसों को भेदते हुए उनकी हड्डियों तक समा गई; और उससे मोहित होकर, वे अपने सिंध घोड़े पर बैठे-बैठे ही वापस मुड़े और उन्हें सांत्वना देते हुए कहा, "हे देवी, मैं अपने ज्ञान, पवित्रता और शांति से आपको विदुर का हृदय दिला सकता हूँ, आप चिंता न करें," और उन्होंने यह श्लोक जोड़ा:

"निराश हो जाओ, मैं तुम्हारा पति बनूंगा, मैं तुम्हारा पति बनूंगा, हे निर्दोष आंखों वाली: वास्तव में मेरा ज्ञान ऐसा है, निश्चिंत हो जाओ, तुम मेरी पत्नी बनोगी।"

तब इरंदती ने अपने पिछले जन्म के प्रेम प्रसंग के पुराने अनुभव से प्रेरित होकर उत्तर दिया, "चलो, मेरे पिता के पास चलते हैं, वह तुम्हें इस मामले के बारे में समझा देंगे।"

चमकीले वस्त्रों से सजी, मालाओं से ढकी और चंदन से अभिषेक की हुई, उसने यक्ष (राक्षस) का हाथ पकड़ा और अपने पिता के समक्ष चली गई।

और पुन्नका उसे वापस लाकर उसके पिता नाग राजा के पास गया और उससे अपनी पत्नी के रूप में उसे मांगा।

"हे नागों के सरदार, मेरी बात सुनो, अपनी पुत्री के लिए उचित भेंट स्वीकार करो; मैं इरंदती मांगता हूँ: उसे मुझे सौंप दो। सौ हाथी, सौ घोड़े, सौ खच्चर और रथ, सौ पूरी तरह से रत्नों से भरी हुई गाड़ियाँ, हे नाग राजा, ये सब ले लो और मुझे अपनी पुत्री इरंदती दे दो।"

तब नाग राजा ने उत्तर दिया:

"जब तक मैं अपने रिश्तेदारों, दोस्तों और परिचितों से सलाह न ले लूं, तब तक प्रतीक्षा करें; बिना सलाह लिए किया गया कोई भी काम बाद में पछतावे का कारण बनता है।"

तब नाग राजा अपने महल में प्रवेश करके अपनी पत्नी से सलाह मशवरा करते हुए बोले, "यह पुन्नका यक्ष (राक्षस) मुझसे इरंदती मांग रहा है; क्या हम उसे बहुत धन के बदले में दे दें?"

विमला ने उत्तर दिया:

"हमारे इरंदती को धन या खजाने से नहीं जीता जा सकता; यदि वह अपने गुणों के बल पर ऋषि का हृदय यहाँ ले आए, तो राजकुमारी को उसी धन से जीता जा सकता है, हमें और किसी खजाने की आवश्यकता नहीं है।"

तब नाग वरुण अपने महल से बाहर निकले और पुन्नक से परामर्श करके उसे इस प्रकार संबोधित किया:

"हमारी इरंदती को धन या खजाने से नहीं जीता जा सकता; यदि आप अपनी योग्यता के बल पर इसे प्राप्त करते हैं और ऋषि का हृदय यहाँ लाते हैं, तो राजकुमारी उस धन से ही जीत ली जाएगी, हमें और किसी खजाने की आवश्यकता नहीं है।"

पुन्नका ने उत्तर दिया:

"जिसे कुछ लोग ऋषि कहते हैं, दूसरे उसे मूर्ख कहते हैं; हे नाग, क्योंकि वे इस विषय पर अलग-अलग राय रखते हैं, मुझे बताओ कि तुम किसे ऋषि कहते हो?"

नाग राजा ने उत्तर दिया:

"यदि आपने कोरव्य राजा धनंजय के मंत्री विदुर के बारे में सुना हो, तो उस ऋषि को यहाँ लाएँ और इरंदती को अपनी वैध पत्नी बनाएँ।"

वरुण के ये शब्द सुनकर यक्ष (राक्षस) अत्यंत प्रसन्न होकर उछल पड़ा; और उसने तुरंत अपने सेवक से कहा, "मेरे उत्तम नस्ल के घोड़े को तैयार करके यहाँ लाओ।"

सोने के कान, माणिक के खुर और पिघले हुए सोने का कवच पहने हुए, वह व्यक्ति सिंध के घोड़े को इस प्रकार काठी पहनाकर लाया; और पुन्नका उस पर सवार होकर आकाश से होते हुए वेसवना के पास गया और उसे अपने साहसिक कार्य के बारे में बताया, इस प्रकार नाग जगत का वर्णन किया गया है; इसका वर्णन इस प्रकार है:

"पुन्नक अपने घोड़े पर सवार होकर, जो देवताओं (देवदूतों) को ले जाने के लिए उपयुक्त एक बलवान घोड़ा था, स्वयं समृद्ध रूप से सुसज्जित होकर और अपनी दाढ़ी और बालों को संवारकर आकाश में चला गया।"

नाग कन्या इरंदती को पाने की लालसा से व्याकुल पुन्नका, तेजस्वी राजा वेसवना कुबेर के पास जाकर इस प्रकार उनसे बोला:

"वहाँ भोगवती नामक महल है जिसे स्वर्ण घर कहा जाता है, जो नाग राज्य की राजधानी है और इसके स्वर्ण नगर में निर्मित है।"

होंठ और गर्दन की आकृति वाले निगरानी बुर्ज, जिनमें माणिक और बिल्ली की आंख जैसे रत्न जड़े हैं, संगमरमर से बने और सोने से समृद्ध महल, और सोने से जड़े रत्नों से ढके हुए महल।

आम, तिलक-पेड़ और गुलाब-सेब, सत्तपन्ना, मुकलिंडा और केतका, पियाका, उद्दालका और सहस, और ऊपर खिले फूलों के साथ सिंदुवारित्स,

चंपक, नागमलिका, भगिनीमाला और बेर के पेड़, ये सभी अलग-अलग प्रकार के पेड़ अपनी शाखाओं को झुकाकर नाग महल की सुंदरता में चार चांद लगाते हैं।

वहाँ बहुमूल्य पत्थरों से बना एक विशाल खजूर का पेड़ है जिस पर सुनहरे फूल खिलते हैं जो कभी मुरझाते नहीं हैं, और वहाँ नाग राजा वरुण निवास करते हैं, जो जादुई शक्तियों से संपन्न हैं और अलौकिक जन्म से उत्पन्न हुए हैं।

वहाँ उसकी रानी विमला निवास करती है, जिसका शरीर सुनहरी लता के समान है, वह युवा कला के पौधे की तरह लंबी है, और उसके स्तन निम्बा फलों के समान हैं, जो देखने में सुंदर हैं।

गोरी त्वचा वाली और लाख के रंग से रंगी हुई, किसी सुरक्षित स्थान पर खिलते हुए कनिकारा वृक्ष की तरह, देवलोक में रहने वाली अप्सरा की तरह, घने बादल से चमकती बिजली की तरह।

व्याकुल और एक विचित्र लालसा से भरी हुई, वह विदुर का हृदय पाने की इच्छा रखती है। "मैं इसे उन्हें दे दूंगी, हे राजा, वे इसके बदले मुझे इरंदति देंगे।"

वेसवना की अनुमति के बिना जाने की हिम्मत न होने के कारण, उसने उन्हें सूचित करने के लिए इन श्लोकों को दोहराया। लेकिन वेसवना ने उसकी बात नहीं सुनी, क्योंकि वे देवताओं के दो पुत्रों (देवदूतों) के बीच एक महल को लेकर हुए विवाद को सुलझाने में व्यस्त थे। पुन्नका यह जानते हुए कि उसकी बात नहीं सुनी गई, विवाद में विजयी हुए दो व्यक्तियों में से एक के पास ही रुका रहा। विवाद का निपटारा करने के बाद, वेसवना ने पराजित व्यक्ति के बारे में कोई विचार नहीं किया, बल्कि दूसरे से कहा, "जाओ और अपने महल में निवास करो।" "जाओ" कहते ही, पुन्नका ने देवताओं के कुछ पुत्रों (देवदूतों) को साक्षी बनाकर बुलाया और कहा, "देखो, मुझे मेरे मामा ने भेजा है," और तुरंत अपना घोड़ा लाने का आदेश दिया और उस पर सवार होकर चल पड़ा।

शिक्षक ने जो कुछ हुआ उसका वर्णन इस प्रकार किया:

पुन्नक ने प्राणियों के तेजस्वी स्वामी वेसवना कुबेर को विदाई देते हुए, वहाँ खड़े अपने सेवक को आदेश दिया, “मेरे उत्तम नस्ल के घोड़े को यहाँ लाओ।” सोने के कानों, माणिक के खुरों और पिघले हुए सोने के कवच से सुसज्जित उस घोड़े पर सवार होकर पुन्नक आकाश में विचरण करने चला गया। पुन्नक, देवदूत को ले जाने वाले उस घोड़े पर सवार होकर, जो सुशोभित था और जिसकी दाढ़ी-मूंछें सुव्यवस्थित थीं, अंतरिक्ष में चला गया।

हवा में उड़ते हुए उसने सोचा, "विदुर-पंडित के पास बहुत सारे सेवक हैं और उन्हें बलपूर्वक नहीं पकड़ा जा सकता, परन्तु धनंजय कोरव्य जुए में अपनी कुशलता के लिए प्रसिद्ध है। मैं उसे जुए में परास्त कर विदुर-पंडित को पकड़ लूँगा। अब उसके घर में बहुत सारे रत्न हैं: वह मामूली रकम के लिए नहीं खेलेगा; मुझे एक कीमती रत्न लाना होगा, राजा साधारण रत्न स्वीकार नहीं करेगा। अब राजगृह नगर के पास वेपुल्ला पर्वत पर सर्वशक्तिमान सम्राट का एक अनमोल रत्न है; मैं उसे ले लूँगा और राजा को जुए के लिए लुभाकर उसे परास्त कर लूँगा।" उसने ऐसा ही किया।

शिक्षक ने पूरी कहानी बताई:

वह अंग के दूर स्थित रमणीय राजग्रह नगर में गया, जो खाद्य पदार्थों से समृद्ध और भोजन-पेय पदार्थों से भरपूर था। यह नगर इंद्र की राजधानी मसाक्कासर के समान था, जो मोरों और बगुले के स्वरों से गूंजता था, सुंदर दरबारों से परिपूर्ण था और हर प्रकार के पक्षियों से आबाद था, ठीक वैसे ही जैसे हिमवत पर्वत फूलों से ढका होता है। इसलिए पुन्नक ने किंपुरिसों से आबाद चट्टानों के ढेर वाले वेपुल्ला पर्वत पर चढ़कर उस तेजस्वी रत्न की खोज की और अंत में उसे पर्वत के मध्य में पाया।

जब उसने उस शानदार बहुमूल्य रत्न को इस प्रकार प्रकाश बिखेरते हुए, अपनी सुंदरता से इतनी भव्यता से जगमगाते हुए, आकाश में बिजली की तरह चमकते हुए देखा, तो उसने तुरंत उस अनमोल रत्न, लापिस लाजुली को उठा लिया, और अपने असाधारण घोड़े पर सवार होकर, स्वयं भी उत्कृष्ट सौंदर्य से परिपूर्ण, आकाश में अंतरिक्ष में तेजी से आगे बढ़ा।

वह इंद्रप्रस्थ नगर गया और कुरुओं के दरबार में उतरा; निर्भीक यक्ष (राक्षस) ने वहां एकत्रित सौ योद्धाओं को बुलाया।

"कौन हमसे राजाओं का पुरस्कार छीनना चाहता है? या योग्यता की प्रतियोगिता में हम किसे परास्त करेंगे? हम कौन सा असाधारण रत्न जीतेंगे? या हमारा सबसे उत्तम खजाना कौन जीतेगा?"

इस प्रकार उसने चार पंक्तियों में कोरव्य की प्रशंसा की। तब राजा ने मन ही मन सोचा, "मैंने पहले कभी ऐसा वीर नहीं देखा जिसने ऐसे शब्द कहे हों; यह कौन हो सकता है?" और उसने उससे इस श्लोक में पूछा:

"तुम्हारा जन्मस्थान किस राज्य में है? ये किसी कोरव्य के शब्द नहीं हैं: तुम अपने रूप और स्वरूप में हम सब से श्रेष्ठ हो; मुझे अपना नाम और परिवार बताओ।"

दूसरे विचार में उसने कहा, "यह राजा मेरा नाम पूछता है: अभी तो मैं सेवक पुन्नका हूँ; लेकिन अगर मैं उसे बताऊँ कि मैं पुन्नका हूँ, तो वह कहेगा, 'यह तो सेवक है, मुझसे इतनी निर्भीकता से क्यों बात करता है?' और वह मेरा तिरस्कार करेगा; मैं उसे अपने पिछले जन्म का नाम बता दूँगा।" इस प्रकार उसने एक श्लोक कहा:

"हे राजा, मेरा नाम कच्चायना है; लोग मुझे एक प्रतिष्ठित व्यक्ति कहते हैं; मेरा परिवार और मित्र अंगा में हैं; मैं यहाँ मनोरंजन के लिए आया हूँ।"

तब राजा ने उससे पूछा, "खेल में हारने पर तुम क्या दोगे? तुम्हारे पास क्या है?" और उसने यह छंद कहा:

"उस युवक के पास कौन से रत्न हैं, जिन्हें उसे हराने वाला जुआरी जीत सकता है? एक राजा के पास अनेक रत्न होते हैं, तुम जैसे गरीब आदमी भला उन्हें कैसे चुनौती दे सकते हो?"

तब पुन्नका ने उत्तर दिया:

"यह मेरा एक आकर्षक रत्न है, यह एक शानदार रत्न है जो धन लाता है; और जो जुआरी मुझे हराएगा, उसे यह असाधारण घोड़ा मिलेगा जो सभी शत्रुओं को परेशान करता है।"

जब राजा ने उसकी बात सुनी, तो उसने उत्तर दिया

"हे युवक, एक रत्न से क्या लाभ होगा? और एक उत्तम नस्ल के घोड़े से क्या फायदा? एक राजा के पास अनेक बहुमूल्य रत्न होते हैं, और कई असाधारण घोड़े हवा की तरह तेज होते हैं।"

III.

जब उसने राजा का भाषण सुना, तो उसने कहा, "हे राजा, आप ऐसा क्यों कहते हैं? एक घोड़ा है, और हज़ार-हज़ार घोड़े भी हैं; एक रत्न है, और हज़ार रत्न भी हैं; परन्तु सारे घोड़े मिलकर भी इसके बराबर नहीं हैं; इसकी गति देखिए।" ऐसा कहकर वह घोड़े पर सवार हुआ और उसे दीवार के ऊपर से सरपट दौड़ाया, और सात मील (4.23 किमी) लंबी नगर की दीवार मानो गर्दन से गर्दन टकराते घोड़ों से घिरी हुई थी, और फिर कुछ समय बाद न तो घोड़ा और न ही यक्ष (राक्षस) दिखाई देने लगा, और उसके पेट पर बंधी लाल कपड़े की एक पट्टी मानो पूरी दीवार पर फैल गई हो। फिर वह घोड़े से उतरा, और उसे घोड़े की गति देखकर बताया कि अब वह उसे कुछ नया दिखाने को कह रहा है: और देखो, उसने घोड़े को नगर के बगीचे में पानी की सतह पर सरपट दौड़ाया, और घोड़ा बिना खुर गीले किए कूद गया; फिर उसने उसे कमल के पत्तों पर चलाया, और जब उसने ताली बजाई और अपना हाथ फैलाया तो घोड़ा आकर उसकी हथेली पर खड़ा हो गया। तब उसने कहा, "हे राजा, यह वास्तव में एक अनमोल घोड़ा है।" "हाँ, हे युवक, यह वास्तव में अनमोल है।" "अच्छा, इस अनमोल घोड़े को थोड़ी देर के लिए एक तरफ रख दो, अब इस अनमोल रत्न की शक्ति देखो।"

"हे पुरुषों में श्रेष्ठ, मेरे इस असाधारण रत्न को देखो; इसमें स्त्रियों के शरीर और पुरुषों के शरीर हैं; इसमें पशुओं के शरीर हैं और पक्षियों के शरीर हैं, नाग राजाओं और सुपन्नों के शरीर हैं, सभी इस रत्न में सृजित हैं।"

"हाथियों की सेना, रथों की सेना, घोड़े, पैदल सैनिक और झंडे, इस रत्न में निर्मित इस संपूर्ण सेना को देखें; हाथी सवार, राजा के अंगरक्षक, रथों से लड़ने वाले योद्धा, पैदल लड़ने वाले योद्धा और युद्ध में एकत्रित सैनिक, इस रत्न में निर्मित सभी को देखें।"

"इस रत्न में निर्मित नगर को देखो, जो मजबूत नींवों, अनेक द्वारों और दीवारों से सुसज्जित है, और जिसमें कई रमणीय स्थान हैं जहाँ चारों सड़कें मिलती हैं। स्तंभ और खाइयाँ, सलाखें और बोल्ट, पहरेदार मीनारें और द्वार, सब कुछ इस रत्न में निर्मित है।"

"द्वारों के नीचे सड़कों पर पक्षियों के विभिन्न झुंड देखें, हंस, बगुले, मोर, लाल हंस और ओस्प्रे (मछली बाज); कोयल, चित्तीदार पक्षी, मोर, जीवजीवक, हर प्रकार के पक्षी एक साथ एकत्रित होकर रत्न की रचना करते हुए दिखाई देते हैं।"

"भव्य दीवारों वाले एक अद्भुत शहर को देखो, जो आश्चर्य से रोंगटे खड़े कर देता है, लहराते झंडों से मनमोहक, और जिसकी रेत सोने जैसी है, नियमित रूप से खंडों में विभाजित आश्रमों को देखो, और विभिन्न घरों और उनके आंगनों को देखो, जिनके बीच सड़कें और संकरी गलियां हैं।"

"देखो, शराबखाने और सराय, कसाईखाने और रसोइयों की दुकानें, और वेश्याएं और व्यभिचारी, ये सब रत्न में ही बने हैं। माला बुनने वाले, धोबी, ज्योतिषी, कपड़ा व्यापारी, सोने का काम करने वाले, जौहरी—देखो, ये सब रत्न में ही बने हैं।"

"इस रत्न में निर्मित ढोल, तबला, शंख, डफ और डफ तथा सभी प्रकार के झांझ देखें।"

"झांझ और वीणा, नृत्य और गीत का बेहतरीन प्रदर्शन, संगीत वाद्ययंत्र और घंटे, ये सब गहने में रचे गए हैं।"

"यहां कूदने वाले और पहलवान भी हैं, और बाज़ीगरों, शाही कवियों और नाइयों का एक अद्भुत दृश्य इस रत्न में रचा गया है।"

"यहां पुरुषों और महिलाओं की भीड़ जमा है, इस रत्न में निर्मित सीटों की कई परतों को देखें।"

"भीड़ में पहलवानों को अपनी दोहरी भुजाओं से प्रहार करते हुए देखो, प्रहार करने वालों और प्रहार सहने वालों को देखो, जो रत्न में निर्मित हैं।"

"पहाड़ों की ढलानों पर विभिन्न प्रकार के हिरणों, शेरों, बाघों, जंगली सूअरों, भालुओं, भेड़ियों और लकड़बग्घों के झुंड देखें; गैंडे, गयाल, भैंस, लाल हिरण, रुरु, मृग, जंगली सूअर, निमका और हॉग, चित्तीदार कदली-हिरण, बिल्लियाँ, खरगोश, सभी प्रकार के बहुत सारे जानवर, रत्न में निर्मित हैं।"

"सुनहरी रेत से पक्की, स्वच्छ जलधाराओं से भरी और मछलियों की प्रचुरता वाली नदियाँ यहाँ पाई जाती हैं; मगरमच्छ, समुद्री राक्षस, डॉल्फ़िन, कछुए, पथिन, पावुसा, वलज और मुंजरोहित भी यहाँ मौजूद हैं।"

"देखो, इस रत्न में सभी प्रकार के पेड़ बने हुए हैं, जो विभिन्न पक्षियों से भरे हुए हैं, और एक जंगल है जिसकी शाखाएँ नीलमणि से बनी हैं।"

चारों दिशाओं में फैली हुई झीलों को भी देखो, जो अनेक पक्षियों से भरी हैं और चौड़ी पपड़ियों वाली मछलियों से भरपूर हैं। पृथ्वी को समुद्र से घिरा हुआ देखो, जो हर जगह जल से भरा है और अनेक वृक्षों से आच्छादित है, ये सब रत्न में सृजित हैं।

"देखो, सामने विदेह, पीछे गोयनीय, कुरु और जंबूद्वीप (भारत) सभी इस रत्न में निर्मित हैं।"

"सूर्य और चंद्रमा को देखो, जो चारों ओर चमक रहे हैं, जैसे वे रत्न में निर्मित माउंट सिनेरू के चारों ओर घूम रहे हैं।"

"सिनरू और हिमवत (हिमालय) और चमत्कारी समुद्र और रत्न में निर्मित दुनिया के चार रक्षकों को देखो।"

"इस रत्न में निर्मित पार्कों और जंगलों, चट्टानों और पहाड़ों को देखें, जो देखने में मनमोहक हैं और विचित्र राक्षसों से भरे हुए हैं।"

"इंद्र के उद्यान फारुसाका, चित्तलता, मिसाका, और नंदना, और उनके महल वेजयंत, सभी को गहना में निर्मित देखा गया है।

"इंद्र का महल सुधम्म, तैंतीस का स्वर्ग, पूर्ण रूप से खिले हुए दिव्य वृक्ष परिच्छत्त और इंद्र का हाथी एरवन, ये सभी रत्न में निर्मित हैं। यहाँ देवताओं की कन्याएँ (देवदूत) आकाश में बिजली की तरह उड़ती हुई, नंदन में विचरण करती हुई, ये सभी रत्न में निर्मित हैं।"

"देखो, स्वर्ग की अप्सराएँ स्वर्ग के पुत्रों को मोहित कर रही हैं, और स्वर्ग के पुत्र इधर-उधर भटक रहे हैं, ये सब रत्न में सृजित हैं।"

"देखो, इस रत्न में नीलमणि से ढके एक हजार से अधिक महल हैं, जो सभी चमकीले रंगों से सजे हैं। और इस रत्न में तावतिंसा, यम, तुषिता और परानिमित्त लोक के प्राणी भी विराजमान हैं। देखो, यहाँ पारदर्शी जल से भरी निर्मल झीलें हैं, जो दिव्य मूंगा वृक्षों, कमलों और जलमुर्गियों से ढकी हैं।"

इस रत्न में दस सफेद रेखाएँ और दस सुंदर गहरे नीले रंग की रेखाएँ हैं; इक्कीस भूरी और चौदह पीली। बीस सुनहरी रेखाएँ, बीस चाँदी की और तीस लाल रंग की दिखाई देती हैं। सोलह काली हैं, पच्चीस मजीठ के रंग की हैं, ये बंधुका के फूलों के साथ मिश्रित हैं और नीले कमलों से सजी हुई हैं।

"हे राजा, पुरुषों में श्रेष्ठ, इस उज्ज्वल, ज्वाला के समान रत्न को देखो, जो अपने सभी भागों में परिपूर्ण है, यह जीतने वाले के लिए नियत पुरस्कार है।"

IV.

पुन्नका ने ऐसा कहकर आगे कहा, “हे महाराज, यदि आप मुझे बाजी में हरा दें तो मैं आपको यह अनमोल रत्न भेंट करूँगा, पर आप मुझे क्या देंगे?” “मेरे शरीर और सफेद छत्र को छोड़कर, जो कुछ मेरे पास है, वही इनाम होगा।” “तो महाराज, देर न करें—मैं बहुत दूर से आया हूँ—खेल कक्ष तैयार करें।” तब राजा ने अपने मंत्रियों को आदेश दिया और उन्होंने तुरंत हॉल तैयार किया और राजा के लिए उत्तम रेशे के कपड़े का कालीन और अन्य राजाओं के लिए कुर्सियाँ तैयार कीं, और पुन्नका के लिए एक उपयुक्त आसन नियुक्त करके राजा से कहा कि समय आ गया है। तब पुन्नका ने एक श्लोक में राजा को संबोधित किया:

"हे राजा, अपने निर्धारित लक्ष्य की ओर बढ़ो, तुम्हारे पास ऐसा कोई अनमोल रत्न नहीं है: चलो हम निष्पक्ष व्यवहार और हिंसा के अभाव से विजय प्राप्त करें, और जब तुम जीत जाओ तो अपनी हिस्सेदारी चुका दो।"

तब राजा ने उत्तर दिया, "हे युवक, राजा होने के नाते मुझसे भयभीत मत हो; हमारी पराजय या पराजय निष्पक्ष व्यवहार और हिंसा के अभाव से ही होगी।" तब पुन्नक ने एक श्लोक कहा, मानो अन्य राजाओं को साक्षी बनाकर यह प्रकट किया हो कि विजय केवल निष्पक्ष व्यवहार से ही प्राप्त की जा सकती है।

"हे उच्च पंचाल और सुरसेना, हे मच्छों और मद्दों, केकाकों सहित, -ये सभी देखें कि यह प्रतियोगिता कपट रहित है, कोई भी हमारी सभा में हस्तक्षेप नहीं करेगा।"

फिर सौ राजाओं के साथ राजा पुन्नक को लेकर खेल के मैदान में गए और सभी उपयुक्त सीटों पर बैठ गए। उन्होंने सोने के पासे चांदी के तख्ते पर रखे। तब पुन्नक ने जल्दी से कहा, "हे राजा, पासे खेलने में चौबीस मौके होते हैं, इन्हें मलिका, सवता, बहुला, शांति, भद्रा आदि कहते हैं। आपको जो पसंद हो, चुन लीजिए।" राजा मान गए और उन्होंने बहुला चुना, पुन्नक ने सवता चुना। तब राजा ने कहा, "हे युवक, क्या तुम पहले पासा फेंकोगे?" पुन्नक ने कहा, "हे राजा, पहला मौका मेरा नहीं है, आप ही फेंकिए।" राजा मान गए। अब, इससे एक जन्म पहले, उनकी माता उनकी संरक्षक देवी थीं और उनकी शक्ति से राजा खेल में जीतते थे। माता पास ही खड़ी थीं, और राजा ने देवी को याद करते हुए खेल का गीत गाया और अपने हाथ में पासे घुमाकर हवा में उछाल दिए। पुन्नक की शक्ति से पासे इस प्रकार गिरे कि राजा हार गए। राजा ने अपनी कुशल बाजी से पहचान लिया कि पासे उसके विरुद्ध गिर रहे हैं। उसने उन्हें हवा में ही पकड़कर आपस में मिला दिया और फिर से हवा में उछाला, लेकिन उसने पाया कि वे फिर से उसके विरुद्ध गिर रहे हैं और उसने उन्हें वैसे ही पकड़ लिया। तब

पुन्नका ने मन ही मन सोचा, "यह राजा, मेरे जैसे यक्ष (राक्षस) के साथ खेलते हुए भी, गिरते हुए पासों को आपस में मिला देता है और फिर उन्हें उठा लेता है, इसका कारण क्या हो सकता है?" तब, संरक्षक देवी की शक्ति को पहचानकर, उसने क्रोधित होकर अपनी आँखें चौड़ी कर लीं और उसे देखा। वह भयभीत होकर भाग गई और कांपते हुए चक्कवाला पर्वत की चोटी पर शरण ली। राजा ने जब तीसरी बार पासे उछाले, तो यद्यपि वह जानता था कि वे उसके विरुद्ध गिरेंगे, पुन्नका की शक्ति के कारण वह अपना हाथ बढ़ाकर उन्हें पकड़ नहीं सका और वे राजा के विरुद्ध गिरे। तब पुन्नका ने पासे उछाले और वे उसके पक्ष में गिरे। फिर जब उसे पता चला कि वह जीत गया है, तो उसने ज़ोर से ताली बजाई और तीन बार कहा, "मैं जीत गया, मैं जीत गया," और उस आवाज़ से सारा जंबुद्वीप (भारत) रोमांचित हो गया। शिक्षक ने इस घटना का वर्णन इस प्रकार किया:

कुरुओं के राजा और यक्ष (राक्षस) पुन्नक खेल के नशे में चूर होकर मैदान में उतरे; राजा ने हारने वाली बाज़ी खेली और यक्ष (राक्षस) पुन्नक ने जीतने वाली बाज़ी। राजाओं और प्रत्यक्षदर्शियों की उपस्थिति में दोनों के बीच प्रतियोगिता हुई, जिसमें यक्ष (राक्षस) ने सबसे शक्तिशाली व्यक्ति को भी हरा दिया और वहाँ ज़ोरदार शोर मच गया।

राजा अपनी हार से नाराज थे, और पुन्नका ने उन्हें सांत्वना देने के लिए एक श्लोक दोहराया:

"हे राजा, विजय और पराजय दोनों ही संघर्षरत पक्षों में से किसी एक की होती है; हे राजा, आपने महान पुरस्कार खो दिया है; पराजित होकर, अब इसकी कीमत चुकाइए।"

फिर उसने उससे निम्नलिखित श्लोक को लेने के लिए कहा:

"हे कच्चना, पृथ्वी पर मेरे पास जो भी रत्न हैं, उनमें से सर्वश्रेष्ठ धन ले लो और जहाँ चाहो वहाँ जाओ।"

पुन्नका ने उत्तर दिया:

"हाथी, बैल, घोड़े, रत्न और बालियां, पृथ्वी पर जो भी रत्न हैं, उनमें मंत्री विदुर सर्वश्रेष्ठ हैं, मैंने उन्हें अपने वश में कर लिया है, उन्हें मेरे पास लौटा दो।"

राजा ने कहा:

"वह मेरा सेवक है, मेरी शरण और सहायता है, मेरा आश्रय है, मेरा किला और मेरा रक्षक है; मेरे उस सेवक की तुलना धन से नहीं की जा सकती; मेरा वह सेवक मेरे जीवन के समान है।"

पुन्नका ने उत्तर दिया:

"तुम्हारे और मेरे बीच एक लंबी बहस होगी, चलो हम उसके पास जाकर उससे पूछें कि वह क्या चाहता है, उसे हमारे बीच इस मामले का फैसला करने दो, फिर जो भी वह तय करे वही हम दोनों का फैसला होगा।"

राजा ने उत्तर दिया:

"सचमुच तुम सत्य कहते हो; हे युवक, तुम कोई अन्याय नहीं करते, चलो हम तुरंत जाकर उससे पूछें: इस तरह हम दोनों संतुष्ट हो जाएंगे।"

ऐसा कहकर राजा सौ राजाओं को लेकर पुन्नका प्रसन्नतापूर्वक न्यायलय की ओर चल पड़ा; और ऋषि अपने आसन से उठकर राजा को प्रणाम करके एक तरफ बैठ गए। तब पुन्नका ने उस महान पुरुष को संबोधित करते हुए कहा, "हे ज्ञानी, आप न्याय में दृढ़ हैं, आप जीवन के बदले भी झूठ नहीं बोलेंगे; आपकी प्रसिद्धि की गूंज पूरे विश्व में फैली हुई है। मैं आज जान लूंगा कि आप वास्तव में न्याय में दृढ़ हैं या नहीं," और ऐसा कहकर उसने एक श्लोक कहा:

"क्या देवताओं (देवदूतों) ने सचमुच आपको कुरुओं के बीच न्यायप्रिय सलाहकार विदुर के रूप में नियुक्त किया है? क्या आप राजा के दास हैं या रिश्तेदार? विदुर, संसार में आपका क्या महत्व है?"

तब उस महान प्राणी ने मन ही मन सोचा, "यह व्यक्ति मुझसे यह प्रश्न पूछता है; लेकिन मैं उसे यह नहीं बता सकता कि मैं राजा का रिश्तेदार हूँ या राजा से श्रेष्ठ हूँ या राजा के लिए कुछ भी नहीं हूँ।"

इस संसार में सत्य के साक्षात कोई रक्षक नहीं; सत्य ही बोलना चाहिए।" इसलिए उसने दो श्लोक कहे जिससे यह स्पष्ट हो गया कि वह राजा का न तो कोई रिश्तेदार था और न ही उसका कोई उच्च अधिकारी, बल्कि उसके चार दासों में से एक था:

कुछ अपनी माँ की संतान होते हैं, कुछ पैसे देकर गुलाम बनाए जाते हैं, कुछ अपनी इच्छा से गुलाम बनते हैं, और कुछ डर के मारे गुलाम बन जाते हैं। मनुष्य में गुलामों के ये चार प्रकार हैं। मैं सचमुच जन्म से ही गुलाम हूँ: मेरा सुख और दुख राजा की देन है, मैं राजा का गुलाम हूँ, भले ही मैं किसी और के पास जाऊँ, वह मुझे हक़दार के तौर पर तुम्हें दे देगा, हे नौजवान।

यह सुनकर पुन्नका अत्यंत प्रसन्न हुआ और उसने ताली बजाते हुए कहा:

"आज यह मेरी दूसरी जीत है; आपके मंत्री ने पूछे जाने पर आपके प्रश्न का उत्तर दे दिया है; सचमुच सर्वश्रेष्ठ राजा भी अन्यायी होता है; यह निर्णय सही ढंग से लिया गया है, लेकिन आप इसे मुझे नहीं दे रहे हैं।"

यह सुनकर राजा उस महान व्यक्ति पर क्रोधित हो गया और बोला, "मुझ जैसे सम्मान देने वाले को भी तुम महत्व नहीं देते, तुम इस युवक को महत्व देते हो जो तुम्हारी नजरों में आ गया है"; फिर पुन्नका की ओर मुड़कर और यह कहते हुए, "यदि वह दास है तो उसे ले जाओ और चले जाओ," उसने निम्नलिखित श्लोक कहा:

"यदि उसने हमारे प्रश्न का उत्तर इस प्रकार दिया है, 'मैं दास हूँ, रिश्तेदार नहीं,' तो हे कच्चना, इस अनमोल खजाने को ले लो, इसे ले लो और जहाँ चाहो वहाँ चले जाओ।"

लेकिन जब राजा ने ऐसा कहा, तो उसने सोचा, "यह युवक ऋषि को अपने साथ ले जाएगा और जहाँ चाहेगा वहाँ चला जाएगा; उसके जाने के बाद मुझे धार्मिक विषयों पर मीठी-मीठी बातें सुनना मुश्किल हो जाएगा; क्या होगा यदि मैं उसे उसके उचित स्थान पर बिठाकर गृहस्थ जीवन से संबंधित कोई प्रश्न पूछूँ?" इसलिए उसने उससे कहा, "हे ऋषि, आपके जाने के बाद मुझे धार्मिक विषयों पर मीठी-मीठी बातें सुनना मुश्किल हो जाएगा; क्या आप एक सुशोभित मंच पर बैठकर, अपने उचित स्थान पर आकर, गृहस्थ जीवन से संबंधित एक प्रश्न का उत्तर देंगे?" ऋषि मान गए, और एक सुशोभित मंच पर बैठकर उन्होंने राजा द्वारा पूछे गए प्रश्न का उत्तर दिया; और प्रश्न यह था:

"हे विदुर, जो अपने घर में गृहस्थ जीवन व्यतीत करता है, उसका जीवन सुखमय कैसे होगा? उसे अपने लोगों के बीच कृपा कैसे प्राप्त होगी? वह दुखों से कैसे मुक्त होगा? और सत्य का वचन बोलने वाला वह युवक परलोक में जाकर सभी दुःखों से कैसे बच पाएगा?" तब ज्ञान और अंतर्दृष्टि से परिपूर्ण, वास्तविक लक्ष्य को जानने वाले और निरंतर आगे बढ़ने वाले, समस्त शिक्षाओं के ज्ञाता विदुर ने ये शब्द कहे:

उसे किसी और के साथ पत्नी साझा नहीं करनी चाहिए; उसे अकेले में उत्तम भोजन नहीं करना चाहिए; उसे व्यर्थ की बातों में नहीं पड़ना चाहिए, क्योंकि इससे ज्ञान नहीं बढ़ता। गुणी, अपने कर्तव्यों के प्रति निष्ठावान, लापरवाह नहीं, शीघ्र विवेकशील, विनम्र, कठोर हृदय नहीं, दयालु, स्नेही, सौम्य, मित्र बनाने में कुशल, दान देने के लिए तत्पर, ऋतु के अनुसार व्यवस्था करने में समझदार, उसे भिक्षुओं और ब्राह्मणों को भोजन और पेय से निरंतर संतुष्ट करना चाहिए। उसे धर्म की लालसा रखनी चाहिए और पवित्र ग्रंथों का स्तंभ बनना चाहिए, हमेशा प्रश्न पूछने के लिए तत्पर रहना चाहिए और गुणी विद्वानों का आदरपूर्वक ध्यान रखना चाहिए। इस प्रकार गृहस्थ जीवन जीने वाले व्यक्ति का जीवन समृद्ध होगा, उसे अपने लोगों के बीच स्नेह प्राप्त होगा; वह दुखों से मुक्त होगा; और इस प्रकार सत्य बोलने वाला युवक परलोक में जाकर सभी दुखों से मुक्त होगा।

इस प्रकार गृहस्थ जीवन से संबंधित प्रश्न का उत्तर देने के बाद, उस महान सत्ता ने अपने आसन से नीचे उतरकर राजा को प्रणाम किया। राजा ने भी उन्हें पूर्ण आदर दिया और सौ राजाओं से घिरे हुए अपने निवास स्थान पर चले गए।

जब वह महान प्राणी लौटा, तो पुन्नका ने उससे कहा:

"चलो, मैं अब चलता हूँ; तुम्हें राजा ने मुझे सौंपा है; केवल इस कर्तव्य का पालन करो—यही प्राचीन नियम है।"

ऋषि विदुर ने उत्तर दिया:

"मैं यह जानता हूँ, हे युवक; मैं तुम्हारे द्वारा जीता गया था; राजा ने मुझे तुम्हें सौंप दिया था; मुझे तीन दिनों के लिए अपने घर में ठहरने दो, जबकि मैं अपने बेटों को सलाह देता हूँ।"

जब पुन्नक ने यह सुना, तो उसने मन ही मन सोचा, "ऋषि ने सत्य कहा है; इससे मुझे बहुत लाभ होगा; यदि उन्होंने मुझे सात दिन या यहाँ तक कि पखवाड़े भर के लिए वहाँ ठहरने की अनुमति माँगी होती, तो मैं तुरंत सहमत हो जाता"; इस प्रकार उसने उत्तर दिया:

"यह लाभ मुझे भी मिले, चलो हम वहां तीन दिन रहें; महोदय, अपने घर में जो भी आवश्यक हो, वह करें; आज ही अपने बेटों और पत्नी को निर्देश दें, ताकि आपके जाने के बाद वे सुखी रहें।"

इतना कहकर पुन्नका उस महान प्राणी के साथ उसके घर चला गया।

शिक्षक ने घटना का वर्णन इस प्रकार किया:

"खुशी से सहमत होते हुए और उत्सुकता से विधुरा के साथ यक्ष (राक्षस) चला गया; और श्रेष्ठ संतों ने हाथियों और उत्तम नस्ल के घोड़ों के साथ उसका अपने घर में स्वागत किया।"

अब उस महान सत्ता के तीन ऋतुओं के लिए तीन महल थे, उनमें से एक का नाम कोंचा, दूसरे का नाम मयूरा और तीसरे का नाम पियाकेत था; उनके बारे में यह श्लोक कहा गया था:

"वह कोंचा, मयूरा और पियाकेत गए, जो देखने में अत्यंत रमणीय थे और वहां भोजन की प्रचुरता थी, ठीक वैसे ही जैसे इंद्र का अपना महल मसाक्कासर था।"

उनके आगमन के बाद, उन्होंने भव्य महल की सातवीं मंजिल पर एक विश्राम कक्ष और एक ऊँचा चबूतरा बनवाया। उन्होंने राजसी पलंग बिछाया और खाने-पीने की सभी प्रकार की उत्तम साज-सज्जा करवाई। फिर उन्होंने पुन्नाका को देवताओं की पुत्रियों के समान पाँच सौ स्त्री भेंट की और कहा, "इन्हें अपनी सेविकाएँ बनाइए, यहाँ निश्चिंत रहिए।" इसके बाद वे अपने निवास स्थान पर चले गए। उनके जाने के बाद, इन स्त्रियों ने अपने-अपने वाद्ययंत्र लिए और पुन्नाका की सेवा में विभिन्न प्रकार के नृत्य प्रस्तुत किए।

शिक्षक ने इसका वर्णन इस प्रकार किया है:

"देवताओं (देवदूतों) के बीच अप्सराओं की तरह सजी ये स्त्रियाँ नाचती-गाती हैं और उनसे बात करती हैं, बारी-बारी से हर एक स्त्री उनसे बेहतर होती जाती है।"

कानून के रक्षक ने उसे भोजन, पेय और सुंदर स्त्रियाँ प्रदान करने के बाद, केवल उसके सर्वोत्तम हित को ध्यान में रखते हुए, उसे उसकी पत्नी के समक्ष प्रस्तुत किया।

फिर उसने अपनी पत्नी से कहा, जो चंदन और सुगंधित इत्र से सजी हुई थी और शुद्ध सोने के आभूषण की तरह खड़ी थी, "आओ, सुनो, महिला; अपने बेटों को यहाँ बुलाओ, हे तांबे के रंग की आँखों वाली सुंदर स्त्री।"

अनुज्जा ने अपने पति की बातें सुनकर अपनी बहू से, जो गोरी आंखों वाली और तांबे जैसे नाखूनों वाली थी, कहा, "हे सेता, जो अपने कंगन कवच की तरह पहनती हो और नीली कमल के समान हो, जाओ, मेरे बेटों को यहाँ बुलाओ।"

अपनी सहमति जताकर और महल के एक कोने से दूसरे कोने तक जाकर उसने सभी मित्रों और पुत्र-पुत्रियों को इकट्ठा किया और कहा, "तुम्हारे पिता तुम्हें एक सलाह देना चाहते हैं, यह उनका तुम्हारा अंतिम दर्शन होगा।" जब युवा राजकुमार धम्मपाल-कुमार ने यह सुना तो वह रोने लगा और अपने छोटे भाइयों से घिरा हुआ अपने पिता के सामने गया। जब पिता ने उन्हें देखा, तो वे अपनी शांति बनाए रखने में असमर्थ हो गए और आँसुओं से भरी आँखों से उन्हें गले लगाया, उनके सिर चूमे और अपने बड़े पुत्र को एक क्षण के लिए अपने हृदय से लगा लिया। फिर, उसे अपनी गोद से उठाकर राजकक्ष से बाहर जाकर, वे ऊँचे चबूतरे पर बने पलंग के बीच में बैठ गए और अपने हजार पुत्रों को संबोधित किया।

शिक्षक ने इसका वर्णन इस प्रकार किया है:

जब उनके पुत्र पास आए, तो विधि के रक्षक ने बिना कांपे उनके माथे चूमे और उनसे ये शब्द कहे, “राजा ने मुझे इस युवक को सौंप दिया है। मैं उसके अधीन हूँ, परन्तु आज मैं अपनी इच्छा का पालन करने के लिए स्वतंत्र था। अब वह मुझे ले जाएगा और जहाँ चाहेगा जाएगा, और मैं तुम्हें सलाह देने आया हूँ, क्योंकि यदि मैंने तुम्हें मोक्ष (निर्वाण) न दिया होता तो मैं कैसे जाता? यदि कुरुक्षेत्र में रहने वाला राजा जनसंध तुमसे अत्यंत गंभीरता से पूछे, “प्राचीन काल में भी तुम किसे प्राचीन मानते हो? क्या तुम्हारे पिता ने सर्वप्रथम शिक्षा दी

थी?” और यदि वह फिर कहे, “तुम सब मेरे समतुल्य हो, तुममें से कौन राजा से बढ़कर नहीं है?” तो क्या तुम आदरपूर्वक प्रणाम करके उसे उत्तर दोगे, “ऐसा मत कहो, हे महाराज, यह विधि नहीं है; नीच कुल का सियार राजसी बाघ के समतुल्य कैसे हो सकता है?”

उनके इस प्रवचन को सुनकर पुत्र-पुत्रियाँ, सभी रिश्तेदार, मित्र, सेवक और आम लोग अपनी शांति बनाए रखने में असमर्थ हो गए और जोर से चिल्ला उठे; और उस महान सत्ता ने उन्हें सांत्वना दी।

वी

फिर उन सभी रिश्तेदारों के पास आकर और उन्हें चुप देखकर उन्होंने कहा, "बच्चों, शोक मत करो, सभी भौतिक वस्तुएँ क्षणभंगुर हैं, सम्मान का अंत दुर्भाग्य में होता है; फिर भी मैं तुम्हें सम्मान प्राप्त करने का एक उपाय बताता हूँ, अर्थात् राजा का दरबार; इसे ध्यानपूर्वक सुनो।" फिर बुद्ध की जादुई शक्ति से उन्होंने उन्हें राज दरबार में प्रवेश कराया।

शिक्षक ने इसका वर्णन इस प्रकार किया:

तब विदुर ने अपने मित्रों, शत्रुओं, परिवार और घनिष्ठ मित्रों को सभी चीजों से विरक्त मन और इच्छा से संबोधित करते हुए कहा, “आओ, प्रियजनों, बैठो और मेरी बात सुनो, मैं तुम्हें राजसी जीवन के बारे में बताता हूँ, कि कैसे राजा के दरबार में प्रवेश करने वाला व्यक्ति सम्मान प्राप्त कर सकता है। राजा के दरबार में प्रवेश करने पर वह अज्ञात रहते हुए सम्मान प्राप्त नहीं करता, न ही कोई कायर, मूर्ख या लापरवाह व्यक्ति सम्मान प्राप्त करता है। जब राजा उसके नैतिक गुणों, उसकी बुद्धिमत्ता और उसके हृदय की पवित्रता को जान लेता है, तब वह उस पर भरोसा करना सीखता है और उससे अपने रहस्य नहीं छुपाता।”

जब उसे कोई काम करने के लिए कहा जाए, तो एक सुव्यवस्थित तराजू की तरह, जो समतल और संतुलित हो, उसे संकोच नहीं करना चाहिए; यदि वह तराजू की तरह हर बोझ उठाने के लिए तैयार है, तो वह राजा के दरबार में निवास कर सकता है।

दिन हो या रात, बुद्धिमान व्यक्ति को राजा के कार्य में कभी संकोच नहीं करना चाहिए; ऐसा व्यक्ति ही राजा के दरबार में निवास कर सकता है। जो बुद्धिमान व्यक्ति राजा के कार्य में दिन हो या रात, हर कार्य को पूर्णतः संपन्न करता है, वही राजा के दरबार में निवास करने योग्य है।

जो राजा के लिए बने और सुसज्जित मार्ग को देखकर भी, सलाह दिए जाने पर भी, उस पर चलने से परहेज करता है, वही राजा के दरबार में रहने योग्य है। उसे किसी भी हालत में राजा के समान सुखों का आनंद नहीं लेना चाहिए, उसे हर बात में राजा का अनुसरण करना चाहिए; ऐसा व्यक्ति ही राजा के दरबार में रहने योग्य है। उसे राजा के समान वस्त्र, मालाएँ या इत्र नहीं लगाना चाहिए; उसे राजा के समान आभूषण नहीं पहनने चाहिए और न ही राजा की तरह बोलना चाहिए; उसे हमेशा अलग वस्त्र धारण करने चाहिए; ऐसा व्यक्ति ही राजा के दरबार में रहने योग्य है। यदि राजा अपने मंत्रियों के साथ क्रीड़ा करे या अपनी पत्नियों से घिरा हो, तो मंत्री को राजसी महिलाओं के बारे में कोई संकेत नहीं देना चाहिए। जो अहंकारी नहीं है, कमजोर नहीं है, जो बुद्धिमान है और अपनी इंद्रियों को वश में रखता है, जो अंतर्दृष्टि और दृढ़ संकल्प से युक्त है, ऐसा व्यक्ति ही राजा के दरबार में रहने योग्य है।

राजा की पत्नियों के साथ क्रीड़ा न करे और न ही उनसे एकांत में बात करे; राजा के खजाने से धन न ले; ऐसा व्यक्ति राजा के दरबार में रह सकता है। नींद को अधिक महत्व न दे, अत्यधिक शराब न पिए, और न ही राजा के जंगल में हिरण का शिकार करे; ऐसा व्यक्ति राजा के दरबार में रह सकता है। राजा की कुर्सी, पलंग, आसन, हाथी या रथ पर न बैठे; अपने आप को विशेषाधिकार प्राप्त व्यक्ति समझकर, ऐसा व्यक्ति राजा के दरबार में रह सकता है। बुद्धिमानी से राजा से न तो बहुत दूर रहे और न ही बहुत पास, और राजा के सामने तैयार रहे, ताकि वह अपने स्वामी को कुछ सुना सके। राजा को सामान्य व्यक्ति न समझें; राजा को किसी और के साथ नहीं जोड़ा जाना चाहिए; राजा आसानी से क्रोधित हो जाते हैं, जैसे जौ के रेशे से आँख को चोट पहुँचती है। बुद्धिमान व्यक्ति, अपने आप को सम्मानित समझते हुए, कभी भी संशयपूर्ण राजा से कठोर भाषा में बात करने का साहस न करे। यदि उसे अवसर मिले, तो वह उसका लाभ उठाए; लेकिन राजाओं पर भरोसा न करे। उसे आग की तरह सतर्क रहना चाहिए, ऐसा व्यक्ति राजा के दरबार में रह सकता है। यदि शासक अपने पुत्र या भाई को अपने राज्य में कुछ गाँव या कस्बे या कुछ लोगों को अपने आश्रित के रूप में उपहार में देता है, तो उसे चुपचाप प्रतीक्षा करनी चाहिए, न कि उसे बुद्धिमान या मूर्ख कहना चाहिए।

यदि राजा अपने हाथी-चालक, अंगरक्षक, रथ-सैनिक या पैदल सैनिक के पराक्रम की कहानियाँ सुनकर उनका वेतन बढ़ा दे, तो उसे इसमें बाधा नहीं डालनी चाहिए; ऐसा व्यक्ति राजा के दरबार में रह सकता है। बुद्धिमान व्यक्ति अपने पेट को धनुष के समान छोटा रखेगा, परन्तु वह बाँस के समान लचीला होगा; उसे राजा का विरोध नहीं करना चाहिए, इसलिए वह राजा के दरबार में रह सकता है। उसे अपने पेट को धनुष के समान छोटा रखना चाहिए और मछली के समान अपनी जीभ को नियंत्रित रखना चाहिए; उसे संयमी, साहसी और बुद्धिमान होना चाहिए; ऐसा व्यक्ति राजा के दरबार में रह सकता है।

उसे अपनी शक्ति खोने के डर से किसी स्त्री के पास बार-बार नहीं जाना चाहिए; मूर्ख व्यक्ति खांसी, अस्थमा, शारीरिक पीड़ा और बचकानेपन का शिकार होता है। उसे बहुत ज्यादा नहीं हंसना चाहिए, न ही हमेशा चुप रहना चाहिए; उसे उचित समय आने पर संक्षिप्त और संयमित भाषण देना चाहिए। क्रोध न करने वाला, जल्दी नाराज न होने वाला, सत्यवादी, विनम्र, निंदा न करने वाला, उसे मूर्खतापूर्ण बातें नहीं बोलनी चाहिए; ऐसा व्यक्ति राजा के दरबार में निवास कर सकता है।

प्रशिक्षित, शिक्षित, आत्मसंयमी, व्यापार में अनुभवी, संयमी, सौम्य, सावधान, पवित्र और कुशल, ऐसा व्यक्ति राजा के दरबार में निवास कर सकता है। बड़ों के प्रति विनम्र व्यवहार, आज्ञाकारी, आदरपूर्ण, दयालु और सहृदय, ऐसा व्यक्ति राजा के दरबार में निवास कर सकता है। उसे किसी विदेशी राजा द्वारा हस्तक्षेप करने के लिए भेजे गए जासूस से दूर रहना चाहिए; उसे केवल अपने स्वामी की ही शरण लेनी चाहिए और किसी अन्य राजा की पूजा नहीं करनी चाहिए।

जो व्यक्ति गुणी और विद्वान भिक्षुओं और ब्राह्मणों का आदर करे, उनकी सेवा करे, वह राजा के दरबार में निवास कर सकता है। जो व्यक्ति गुणी और विद्वान भिक्षुओं और ब्राह्मणों को भोजन और पेय पदार्थ से तृप्त करे, वह राजा के दरबार में निवास कर सकता है। जो व्यक्ति गुणी और विद्वान भिक्षुओं और ब्राह्मणों के निकट आकर उनकी सेवा करे, और इसी से अपना वास्तविक भला चाहे।

उसे भिक्षुओं या ब्राह्मणों को पहले से दिए गए किसी भी दान से वंचित करने का प्रयास नहीं करना चाहिए, और न ही भिक्षुओं को भिक्षा देते समय किसी प्रकार से बाधा डालनी चाहिए। जो धर्मात्मा हो, बुद्धिमान हो, व्यापारिक व्यवस्थाओं में निपुण हो, और समय-समय पर सही-सही ज्ञान रखता हो, वह राजा के दरबार में निवास कर सकता है। जो व्यापार में ऊर्जावान हो, सावधान और कुशल हो, और अपने कार्यों को सफलतापूर्वक संचालित करने में सक्षम हो, वह राजा के दरबार में निवास कर सकता है।

खलिहान, घर, पशुओं और खेत का बार-बार निरीक्षण करते हुए, उसे अनाज को सावधानीपूर्वक नापकर अपने भंडारों में रखना चाहिए और घर में खाना पकाने के लिए भी सावधानीपूर्वक नापकर रखना चाहिए। (उसे) ऐसे पुत्र या भाई को नियुक्त या पदोन्नत नहीं करना चाहिए जो सद्‌गुणों में दृढ़ न हो; ऐसे बच्चे अपने शरीर के सच्चे सदस्य नहीं होते, उन्हें मृत के समान माना जाना चाहिए; उसे उन्हें वस्त्र और भोजन उपलब्ध कराना चाहिए और उन्हें भोजन ग्रहण करते समय बैठाकर रखना चाहिए। उसे उच्च पदों पर ऐसे सेवकों और प्रतिनिधियों को नियुक्त करना चाहिए जो सद्‌गुणों में दृढ़ हों, व्यापार में कुशल हों और आपात स्थिति में कार्य करने में सक्षम हों।

जो गुणी, लोभ रहित और अपने राजा के प्रति समर्पित हो, कभी उससे विदा न हो और उसका हित चाहता हो, ऐसा व्यक्ति राजा के दरबार में निवास कर सकता है। जो राजा की इच्छा को जानता हो, उसके विचारों का पालन करता हो और उसका कोई भी कार्य राजा के विरुद्ध न हो, ऐसा व्यक्ति राजा के दरबार में निवास कर सकता है। वह राजा को इत्र लगाएगा और स्नान कराएगा, उसके पैर धोते समय अपना सिर झुकाएगा; पराजित होने पर क्रोधित नहीं होगा; ऐसा व्यक्ति राजा के दरबार में निवास कर सकता है।

वह जल से भरे घड़े को प्रणाम करेगा, या कौवे को आदरपूर्वक नमस्कार करेगा; हाँ, वह सभी याचिकाकर्ताओं को दान देगा और सदा बुद्धिमान और श्रेष्ठ रहेगा; वह अपना पलंग, अपना वस्त्र, अपना रथ, अपना घर, अपना निवास स्थान सब कुछ दान कर देगा और सभी प्राणियों पर बादलों की तरह आशीर्वाद बरसाएगा। हे महोदय, यही राजा के दरबार में रहने का तरीका है; इसी प्रकार मनुष्य को व्यवहार करना चाहिए और राजा की कृपा प्राप्त करनी चाहिए तथा उसके शासकों से सम्मान अर्जित करना चाहिए।

VI.

तीन दिन बीत गए और वह इसी तरह अपने बेटों, पत्नियों, मित्रों और अन्य लोगों से बातें करता रहा। फिर, समय पूरा हो जाने पर, सुबह तड़के, स्वादिष्ट भोजन करने के बाद, उसने कहा, "मैं राजा से विदा लेकर उस युवक के साथ चलता हूँ"; इस प्रकार वह अपने रिश्तेदारों के समूह से घिरा हुआ राजा के महल में गया और राजा को प्रणाम करके एक तरफ खड़ा हो गया, और उसने अपनी बुद्धिमत्तापूर्ण और व्यावहारिक सलाह दी।

शिक्षक ने इसका वर्णन इस प्रकार किया है:

अपने परिवार के सदस्यों को इस प्रकार सलाह देने के बाद, ज्ञानी व्यक्ति अपने मित्रों से घिरे हुए राजा के पास गए। राजा के चरणों को सिर झुकाकर प्रणाम करने और सम्मानपूर्वक आदर करने के बाद, विदुर ने हाथ जोड़कर राजा से कहा, “यह युवक मुझे अपनी इच्छा के अनुसार काम में लेना चाहता है, इसलिए मुझे अपने साथ ले जा रहा है; मैं अपने परिवार के हित में बोल रहा हूँ, हे शत्रु-विजेता, मेरी बात सुनो। क्या आप मेरे पुत्रों और मेरे घर में जो भी संपत्ति है, उसकी देखभाल करेंगे, ताकि मेरे जाने के बाद मेरे सगे-संबंधी नष्ट न हो जाएँ? जैसे पृथ्वी काँपती है तो उस पर जो कुछ भी है वह काँपता है, और जैसे पृथ्वी स्थिर रहती है तो सब कुछ स्थिर रहता है, वैसे ही मैं देखता हूँ कि मेरे पतन के साथ मेरा परिवार भी नष्ट हो जाएगा; यही मेरी गलती थी।”

जब राजा ने यह सुना, तो उसने कहा, "हे ऋषि, आपका जाना मुझे अच्छा नहीं लगता; आप मत जाइए; मैं किसी बहाने से उस युवक को बुलवाऊंगा, फिर हम उसे मार डालेंगे और मामले को दबा देंगे"; और इसके उदाहरण के रूप में उसने एक श्लोक दोहराया:

"तुम नहीं जा सकते, यही मेरा संकल्प है; इस कटिया को परास्त करके मार डालने के बाद, तुम यहीं रहो, यही मुझे सर्वोत्तम लगता है; हे अपार ज्ञान से परिपूर्ण, तुम यहाँ से मत जाओ।"

जब उस महान सत्ता ने यह सुना तो उन्होंने कहा, "ऐसा इरादा तुम्हारे योग्य नहीं है," और फिर उन्होंने आगे कहा,

"अधर्म पर अपना ध्यान मत लगाओ, सांसारिक और आध्यात्मिक भलाई के प्रति समर्पित रहो; ऐसे नीच और पापी कर्म पर धिक्कार है, जिसे करने के बाद मनुष्य नरक में जाता है।"

यह न्याय नहीं है, यह उचित कार्य नहीं है; हे मनुष्यों के स्वामी, एक राजा एक गरीब दास के समान सर्वोच्च सत्ता रखता है, जो उसे मारने या जलाने के लिए उकसाता है या स्वयं अपने कर्मों से उसे मार डालता है; मुझे उस पर कोई क्रोध नहीं है और मैं वहां से चला जाता हूँ।

ऐसा कहकर उस महान व्यक्ति ने आदरपूर्वक राजा को प्रणाम किया और राजा की पत्नियों और उनके अधिकारियों का हौसला बढ़ाया; फिर वे महल से बाहर चले गए, जबकि वे अपना धैर्य बनाए रखने में असमर्थ होकर फूट-फूट कर रोने लगे; और नगर के सभी निवासी चिल्लाए, "ऋषि उस युवक के साथ जा रहे हैं, आइए, हम उन्हें जाते हुए देखेंगे," और उन्होंने राजा के दरबार में उन्हें देखा। फिर उन्होंने भी आपस में कहा, "दुःख मत करो, सभी भौतिक चीजें क्षणभंगुर हैं, दान और अन्य अच्छे कार्यों में तत्पर रहो," और फिर वे लौटकर अपने-अपने घर चले गए।

शिक्षक ने इसका वर्णन इस प्रकार किया है:

अपने सबसे बड़े बेटे को गले लगाने और अपने दिल में उमड़ रहे दर्द को काबू में करने के बाद, आँसुओं से भरी आँखों से वह महल में दाखिल हुआ।

अब महल में एक हजार बेटे, एक हजार बेटियां, एक हजार पत्नियां और सात सौ शाही नर्तकियां और वेश्याएं थीं, और इन सबके साथ-साथ अन्य नौकर, परिचारक, रिश्तेदार और दोस्त भी इधर-उधर गिरे पड़े थे, जिससे महल एक साल के जंगल की तरह लग रहा था जिसके पेड़ उस भयंकर हवा के प्रकोप से बिखरे पड़े थे जो दुनिया के अंत की सूचना देती है।

शिक्षक ने इसका वर्णन इस प्रकार किया है:

"विधुरा के पुत्र और पत्नियां महल में ऐसे गिरे पड़े हैं जैसे हवा से हिलकर चकनाचूर हो गए साल के पेड़।"

विदुर के महल में एक हजार पत्नियां और सात सौ दासियां बाहें फैलाकर विलाप कर रही थीं। हरम की महिलाएं, राजकुमारियां, वैश्य और ब्राह्मण विदुर के महल में बाहें फैलाकर विलाप कर रहे थे। हाथी-चालक, अंगरक्षक सैनिक, रथ-सवार और पैदल सैनिक विदुर के महल में बाहें फैलाकर विलाप कर रहे थे। देश और नगरों के लोग एकत्रित होकर विदुर के महल में बाहें फैलाकर विलाप कर रहे थे।

उस महान प्राणी ने विशाल सभा को सांत्वना देने और शेष सभी कार्य संपन्न करने के बाद, हरम की महिलाओं को प्रोत्साहित करने और आवश्यक सभी बातों को समझाने के बाद, पुन्नका के पास जाकर उसे सूचित किया कि उसने वह सब कुछ कर दिया है जो किया जाना था।

शिक्षक ने इसका वर्णन इस प्रकार किया है:

घर के सभी कार्य संपन्न करने और अपने मित्रों, सलाहकारों, साथियों, पत्नियों, पुत्रों और रिश्तेदारों सहित सभी लोगों को निर्देश देने के बाद, घर के बाहर के उन कार्यों की व्यवस्था करने के बाद जिन पर ध्यान देने की आवश्यकता थी, और उन्हें घर में मौजूद भंडार, खजाने और चुकाए जाने वाले ऋणों के बारे में सूचित करने के बाद, उन्होंने पुन्नका से कहा, "तुम मेरे घर में तीन दिन रह चुके हो, मैंने अपने घर में सभी आवश्यक कार्य कर दिए हैं, मैंने अपने पुत्रों और पत्नियों को निर्देश दे दिए हैं, अब हम तुम्हारी इच्छा के अनुसार कार्य करें, हे कच्चाना।"

पुन्नका ने उत्तर दिया:

"हे अपनी इच्छा के साक्षी, यदि आपने अपने पुत्रों, अपनी पत्नियों और अपने आश्रितों को निर्देश दे दिए हैं, तो अफसोस! आप यहाँ ऐसे खड़े हैं जैसे पार जाने वाले हों: आपके सामने एक लंबी यात्रा है। निडर होकर अपने महान घोड़े की पूंछ पकड़ लें, जीवितों के संसार का यह आपका अंतिम दर्शन है।"

तब उस महान सत्ता ने उससे कहा:

"मैं किससे डरूं, जब मैंने शरीर, वाणी या विचार से उसे कोई हानि नहीं पहुंचाई है, जिससे मुझे कोई दुर्भाग्य प्राप्त हो सके?"

तब उस महान प्राणी ने निडर शेर की तरह ऊँची आवाज़ में कहा, "यह मेरा वस्त्र है - मेरी अनुमति के बिना इसे मत उतारो"; और फिर, अपने पूर्ण संकल्प से प्रेरित होकर, और अपने वस्त्रों को कसकर धारण करके, उसने घोड़े की पूंछ को सुलझाया और दोनों हाथों से उसे मजबूती से पकड़कर, अपने दोनों पैरों से घोड़े की जांघों को दबाया और उससे कहा,

"मैंने पूंछ पकड़ ली है, हे युवक, तुम आगे बढ़ो जैसा चाहो।" उसी क्षण पुन्नका ने बुद्धिवान घोड़े को संकेत दिया और वह ऋषि को लेकर आकाश में उड़ गया।

शिक्षक ने इसका वर्णन इस प्रकार किया है:

"विदुर को ले जा रहा अश्वराज आकाश में चला गया और पेड़ों की शाखाओं या चट्टानों के संपर्क में आए बिना शीघ्र ही काले पर्वत पर पहुँच गया।"

जब पुन्नका उस महान आत्मा को अपने साथ लेकर चले गए, तो ऋषि के पुत्र और अन्य दर्शक पुन्नका के निवास स्थान पर गए; लेकिन जब उन्हें वह महान आत्मा नहीं मिली, तो वे जोर-जोर से रोने लगे और ऐसे गिर पड़े मानो उनके पैर काट दिए गए हों।

जब उन्होंने उस महान प्राणी को देखा और सुना, जो बिना किसी कारण के आकाश में चला गया, और जब उन्होंने विलाप किया, तो वे सभी अपने नागरिकों के साथ विलाप करते हुए राजा के द्वार पर गए। राजा ने रोने की तेज़ आवाज़ सुनकर अपनी खिड़की खोली और उनसे पूछा कि वे क्यों शोक मना रहे हैं। उन्होंने उत्तर दिया, "हे महाराज, वह कोई ब्राह्मण युवक नहीं था, बल्कि एक यक्ष (राक्षस) था जो ब्राह्मण के वेश में आया था और ऋषि को ले गया था; उसके बिना हमारा जीवन नहीं है; यदि वह सातवें दिन तक नहीं लौटा, तो हम सैकड़ों, हाँ, हजारों गाड़ियों में लकड़ी इकट्ठा करेंगे और सब आग में प्रवेश कर जाएँगे।"

जब राजा ने उनकी बातें सुनीं, तो उन्होंने उत्तर दिया, "ऋषि अपनी मधुर वाणी से शीघ्र ही युवक को अपने धार्मिक प्रवचनों से बहला लेंगे और उसे अपने चरणों में गिरा देंगे, और शीघ्र ही लौटकर तुम्हारे आँसुओं से भीगे चेहरों पर मुस्कान लाएँगे, शोक मत करो"; और उन्होंने एक श्लोक दोहराया:

"वह द्रष्टा बुद्धिमान, विद्वान और कुशल है; वह शीघ्र ही स्वयं को मुक्त कर लेगा; भयभीत न हों, वह वापस आएगा।"

इसी बीच, पुन्नाका ने उस महान प्राणी को काले पर्वत की चोटी पर स्थापित करने के बाद मन ही मन सोचा, "जब तक यह व्यक्ति जीवित रहेगा, मेरे लिए समृद्धि की कोई संभावना नहीं है; मैं इसे मार डालूंगा, और इसके हृदय का मांस लेकर नागलोक जाऊंगा और उसे विमला को दे दूंगा, और इस प्रकार उसकी पुत्री इरंदती को प्राप्त करके मैं देवदूतों के लोक में आसीन हो जाऊंगा।"

शिक्षक ने इसका वर्णन इस प्रकार किया है:

जब वह वहां पहुंचा तो उसने मन ही मन सोचा, "बुद्धिमान प्राणी विभिन्न स्तरों में मौजूद होते हैं; मुझे उसके जीवन का कोई उपयोग नहीं है, मैं उसे मार डालूंगा और उसका दिल निकाल लूंगा।"

फिर उसने सोचा, "क्या होगा अगर मैं उसे अपने हाथों मारे बिना, उसे किसी भयानक रूप में दिखाकर उसका नाश कर दूं?" अतः एक भयानक राक्षस का रूप धारण करके वह उसके पास गया और उसे नीचे गिरा दिया, और उसे अपने मुँह में पकड़कर ऐसा दिखाया मानो उसे निगलने ही वाला हो; परन्तु उस विशालकाय प्राणी का एक बाल भी नहीं उठा। फिर वह एक शेर और एक क्रोधित हाथी के रूप में आया, और उसने अपने दाँतों और सूंडों से उस पर हमला करने की धमकी दी; और जब दूसरे ने फिर भी कोई भय नहीं दिखाया, तो उसने एक विशाल सर्प का रूप धारण किया जो एक बड़ी नाद के समान था, और फुफकारते हुए और अपने शरीर को उसके चारों ओर लपेटते हुए उसके सिर को अपने फन से ढक लिया, परन्तु दूसरे ने भय का कोई संकेत नहीं दिखाया। फिर उसने कहा, "जैसे वह पर्वत की चोटी पर खड़ा होकर नीचे गिरता है, मैं उसे गिरने से टुकड़े-टुकड़े कर दूंगा," - अतः उसने एक प्रचंड हवा चलाई; परन्तु उसके एक बाल का सिरा भी नहीं हिला। फिर उसने उसे पर्वत की चोटी पर बिठा दिया और स्वयं हाथी का रूप धारण करके पर्वत को जंगली खजूर

के पेड़ की तरह हिलाने लगा, परन्तु तब भी उसके सिर का एक बाल भी अपनी जगह से नहीं हिला। फिर उसने कहा, "मैं किसी भयानक ध्वनि से उसके हृदय को भय से फाड़ दूँगा"; अतः वह पर्वत के भीतर प्रवेश कर गया और एक प्रचंड गर्जना करते हुए आकाश और पृथ्वी को एक ही ध्वनि से भर दिया; परन्तु फिर भी उस महान सत्ता ने कोई भय नहीं जताया; क्योंकि वह जानता था कि जो यक्ष, शेर, हाथी और नाग का रूप धारण करके आया था, जिसने हवा और वर्षा से पर्वत को हिला दिया था, और जो पर्वत में प्रवेश करके इतनी गर्जना कर चुका था, वह केवल एक मनुष्य ही था, और कुछ नहीं। तब यक्ष ने मन ही मन सोचा, "मैं उसे बाहरी आक्रमणों से नहीं मार पाऊँगा, मैं उसे केवल अपने हाथों से ही नष्ट करूँगा।" अतः उसने उस महान प्राणी को पर्वत की चोटी पर स्थापित किया और स्वयं पर्वत की तलहटी में जाकर पर्वत के केंद्र से इस प्रकार ऊपर उठा जैसे किसी छिद्रित रत्न में सफेद धागा पिरो रहा हो, और गर्जना करते हुए उसने उस महान प्राणी को हिंसक रूप से पकड़ लिया और उसे चारों ओर घुमाया, और उसका सिर नीचे की ओर आकाश में फेंक दिया जहाँ उसे पकड़ने के लिए कुछ भी नहीं था। इसका वर्णन इस प्रकार किया गया है:

वहाँ जाकर और पर्वत के भीतर प्रवेश करके दुष्ट मन वाले कटियाना ने उसे सिर नीचे करके संसार के खुले विस्तार में लटका दिया। जब वह वहाँ नरक के भयानक कगार पर लटका हुआ था, जिसे देखना और पार करना अत्यंत कठिन था, तब कर्म में श्रेष्ठ पुन्नक ने निडर होकर उससे कहा: "तुम स्वभाव से बुरे हो, यद्यपि तुम क्षण भर के लिए एक उदात्त रूप में दिखाई देते हो, तुम संयमित होने का वेश धारण किए हुए भी पूर्णतः कामुक हो, तुम एक क्रूर और राक्षसी कर्म कर रहे हो, तुम्हारे स्वभाव में कुछ भी अच्छा नहीं है। मुझे मारने का तुम्हारा क्या कारण है, जब तुम मुझे इस कगार से नीचे फेंकते हुए देखना चाहते हो? तुम्हारा रूप तुम्हें किसी अलौकिक शक्ति के रूप में दर्शाता है, मुझे बताओ कि तुम किस प्रकार के देवदूत हो।"

पुन्नका ने उत्तर दिया:

"आपने संयोगवश यक्ष (राक्षस) पुन्नका के बारे में सुना होगा, वह राजा कुबेर का मंत्री है। वरुण नाम का एक पृथ्वी-शासक नाग है, जो शक्तिशाली, पवित्र और सौंदर्य एवं बल से परिपूर्ण है; मैं उसकी छोटी बहन, इरंदती नामक नाग कन्या को पाने की इच्छा रखता हूँ; उस सुंदर स्त्री के प्रेम में मैंने आपको मारने का निश्चय कर लिया है, हे ऋषि।"

उस महान प्राणी ने सोचा, "यह संसार एक गलतफहमी के कारण बर्बाद हो रहा है, नाग कन्या का प्रेमी मेरी मृत्यु क्यों चाहेगा? मैं इस मामले की पूरी सच्चाई जानूंगा," इसलिए उन्होंने एक श्लोक कहा:

"हे यक्ष (राक्षस), धोखे में मत पड़ो; बहुत से लोग गलतफहमी के कारण नष्ट हो जाते हैं; उस सुंदर कन्या के प्रति तुम्हारे प्रेम का मेरी मृत्यु से क्या संबंध है? आओ, हमें पूरी बात सुनाओ।"

तब पुन्नका ने उससे कहा, "उस शक्तिशाली नाग की पुत्री के प्रति अपने प्रेम में मैंने उसके परिवार से परामर्श किया, और जब मैंने उसका हाथ मांगा तो मेरे ससुर ने मुझसे कहा कि वे जानते हैं कि मैं एक नेक भावना से प्रेरित हूँ। "हम तुम्हें सुंदर शरीर और आँखों वाली, सुंदर मुस्कान वाली और चंदन से सुगंधित अंगों वाली वह कन्या देंगे, यदि तुम मुझे निष्पक्ष युद्ध में जीता हुआ ऋषि का हृदय ला कर दो; कन्या को इसी पुरस्कार से जीता जा सकता है, इसके अलावा हम कोई और भेंट नहीं मांगते। इसलिए मैं भ्रमित नहीं हूँ, सुनो, हे कर्म करने वाले; मुझे कुछ भी गलत नहीं लगा है; नाग मुझे निष्पक्ष युद्ध में जीते हुए तुम्हारे हृदय के बदले नाग कन्या इरंदती देंगे। इसी कारण मैं तुम्हें मारना चाहता हूँ, इसी तरह मुझे तुम्हारी मृत्यु की आवश्यकता है। यदि मैं तुम्हें यहाँ से नरक में फेंक दूँ तो मैं तुम्हें मार डालूँगा और तुम्हारा हृदय ले लूँगा।"

जब उस महान पुरुष ने यह सुना तो उन्होंने सोचा, "विमला को मेरे हृदय की कोई आवश्यकता नहीं है। वरुण ने धर्म पर प्रवचन सुनने और मुझे अपना रत्न भेंट करने के बाद घर जाकर धर्ममार्ग के विषय में मेरी शिक्षा की शक्ति का वर्णन किया होगा, और विमला को मेरे वचन सुनने की तीव्र इच्छा हुई होगी। पुन्नक को वरुण ने किसी गलतफहमी के कारण आदेश दिया होगा, और इसी गलतफहमी से प्रभावित होकर उसने यह सारी विपत्ति उत्पन्न की है। अब एक ऋषि के रूप में मेरा गुण परम सत्यों को प्रकाश में लाने और उनका पता लगाने की मेरी क्षमता में निहित है। यदि पुन्नक मुझे मार डाले तो इससे क्या लाभ होगा? आओ, मैं उससे कहूँगा, 'युवक, मैं अच्छे पुरुषों द्वारा अनुसरण किए जाने वाले धर्ममार्ग को जानता हूँ; मेरे मरने से पहले, मुझे पर्वत की चोटी पर बिठा दो और मुझसे अच्छे पुरुषों के धर्ममार्ग के बारे में सुनो; और उसके बाद जो चाहो करो'; और अच्छे पुरुषों के धर्ममार्ग के बारे में बताने के बाद मैं उसे अपना प्राण लेने दूँगा।" इस प्रकार उन्होंने सिर झुकाए हुए यह श्लोक कहा:

"हे कटियाना, अगर तुम्हें मेरे दिल की जरूरत है तो मुझे थाम लो; मैं आज तुम्हें भले आदमी के सारे नियम बता दूँगा।"

तब पुन्नका ने सोचा, "यह धार्मिक मार्ग न तो देवताओं (देवदूतों) को बताया गया होगा और न ही मनुष्यों को; मैं उन्हें ऊपर उठाऊंगा और भले लोगों का धार्मिक मार्ग सुनूंगा"; इसलिए उन्होंने उस महान प्राणी को उठाया और पर्वत की चोटी पर स्थापित कर दिया।

शिक्षक ने इसका वर्णन इस प्रकार किया है:

पुन्नका ने कुरुओं में से सर्वश्रेष्ठ अच्छे कर्म करने वाले को शीघ्रता से पर्वत की चोटी पर बिठाकर, उच्च ज्ञान के गुरु से, जो एक पीपल के पेड़ को देखते हुए बैठे थे, पूछा, "मैं तुम्हें खाई से ऊपर लाया हूँ, मुझे आज तुम्हारे हृदय की आवश्यकता है, इसलिए आज मुझे अच्छे मनुष्य के सभी नियम बताओ।"

उस महान सत्ता ने कहा:

"तुमने मुझे खाई में गिरने से बचाया है; यदि तुम्हें मेरे दिल की जरूरत है, तो मैं आज तुम्हें अच्छे आदमी के सभी नियम बता दूंगा।"

तब उस महान प्राणी ने कहा, "मेरा शरीर मैला है, मैं स्नान करूंगा।" यक्ष (राक्षस) मान गया, इसलिए वह कुछ पानी लाया, और जब वह स्नान कर रहा था, तो उसने उस महान प्राणी को कुछ दिव्य वस्त्र और इत्र दिए, (पहले की तरह) और जब वह सज-धज कर तैयार हो गया, तो उसने उसे कुछ दिव्य भोजन दिया। जब उसने भोजन कर लिया, तो उस महान प्राणी ने काले पर्वत की चोटी को अलंकरणों से ढक दिया, और एक भव्य रूप से सजा हुआ आसन तैयार किया, और उस पर बैठकर एक श्लोक का उच्चारण किया, जिसमें बुद्ध की विजयपूर्ण महारत के साथ अच्छे व्यक्ति के कर्तव्य का वर्णन किया गया था।

"हे युवक, उस मार्ग का अनुसरण करो जिस पर पहले से ही लोग चल चुके हैं; अपने गंदे हाथों को दूर रखो, अपने मित्रों के प्रति कभी विश्वासघात मत करो, और अपवित्र स्त्रियों के प्रभाव में मत पड़ो।"

यक्ष (राक्षस) इन चार नियमों को इतनी संक्षिप्तता से समझने में असमर्थ होकर विस्तार से पूछने लगा:

"जो रास्ता पहले ही तय हो चुका हो, उस पर कोई कैसे चल सकता है? गीले हाथ को कोई कैसे जला सकता है? व्यभिचारी स्त्री कौन है? अपने मित्र के साथ विश्वासघात कौन करता है? कृपया मुझे इसका अर्थ समझाएँ।"

उस महान सत्ता ने उत्तर दिया:

"जो व्यक्ति अजनबी बनकर आए और पहले कभी न देखा हो, उसे बैठने के लिए भी आमंत्रित करता है, उसे अपने कार्यों का अनुसरण करना चाहिए; बुद्धिमान लोग उसे उस मार्ग का अनुसरण करने वाला कहते हैं जिस पर पहले से ही लोग चल चुके हैं।"

जिस किसी के घर में कोई व्यक्ति एक रात भी ठहरता है और वहाँ भोजन-पानी ग्रहण करता है, उसे उसके विरुद्ध अपने मन में कोई बुरा विचार नहीं रखना चाहिए; जो अपने मित्र के साथ विश्वासघात करता है, वह निर्दोष हाथ जलाता है। जो व्यक्ति उस वृक्ष की शाखा नहीं तोड़ता जिसकी छाया में वह बैठता या लेटता है, वह दुष्ट अपने मित्र के साथ विश्वासघात करता है। यदि कोई व्यक्ति अपनी चुनी हुई स्त्री को धन-संपत्ति से भरी यह धरती दे दे, तब भी अवसर मिलने पर वह उसका तिरस्कार करेगी; उसे व्यभिचारी स्त्रियों के वश में नहीं आना चाहिए। इस प्रकार जो व्यक्ति पहले से ही पार किए गए मार्ग पर चलता है, वह गीले हाथ जलाता है; यही व्यभिचारी स्त्री है; यही वह है जो अपने मित्र के साथ विश्वासघात करती है; ऐसा व्यक्ति धर्मी है, अधर्म को त्याग दो।

इस प्रकार उस महान सत्ता ने बुद्ध के विजयपूर्ण प्रभुत्व के साथ यक्ष (राक्षस) को एक अच्छे मनुष्य के चार कर्तव्य बताए, और जब पुन्नक ने उन्हें सुना तो उसने सोचा, "इन चार कथनों में ऋषि केवल अपने जीवन की ही माँग कर रहे हैं; क्योंकि उन्होंने वास्तव में मेरा स्वागत किया, यद्यपि मैं पहले अज्ञात था; मैं उनके घर में तीन दिन रहा और उनसे बहुत सम्मान प्राप्त किया; मैं उनके साथ यह अन्याय एक स्त्री के कारण कर रहा हूँ; मैं अपने मित्रों के प्रति हर तरह से विश्वासघाती हूँ; यदि मैं ऋषि को हानि पहुँचाऊँगा, तो मैं एक अच्छे मनुष्य के कर्तव्य का पालन नहीं करूँगा; मुझे नाग कन्या की क्या आवश्यकता है? मैं उन्हें इंद्रप्रस्थ ले जाऊँगा और वहाँ के निवासियों के रोते हुए चेहरों को प्रसन्न करूँगा और उन्हें वहाँ के सभा भवन में बैठाऊँगा।" फिर उन्होंने ज़ोर से कहा:

"मैं तीन दिन आपके घर में रहा, मुझे भोजन और पेय पदार्थ परोसे गए, आप मेरे मित्र थे, मैं आपको जाने देता हूँ, हे परम बुद्धिमान ऋषि, आप अपनी इच्छा से अपने घर जा सकते हैं। हाँ, नाग जाति से संबंधित सब कुछ नष्ट हो जाए, मुझे नाग कन्या से बहुत हो गया है; आपके अपने ही सुविचारित शब्दों से, हे ऋषि, आप आज मेरे द्वारा दी जाने वाली धमकी से मुक्त हो गए हैं।"

उस महान प्राणी ने उत्तर दिया, "हे युवक, मुझे मेरे घर मत भेजो, बल्कि मुझे नागलोक ले चलो," और उन्होंने यह श्लोक कहा:

"आओ, यक्ष (राक्षस), मुझे अपने ससुर के पास ले चलो, और मेरे साथ सर्वोत्तम व्यवहार करो; मैं उन्हें एक ऐसा शाही नाग महल दिखाऊंगा जो उन्होंने पहले कभी नहीं देखा होगा।"

पुन्नका ने कहा:

"बुद्धिमान व्यक्ति को उस चीज़ की ओर नहीं देखना चाहिए जो मनुष्य के कल्याण के लिए न हो; तो फिर, हे परम बुद्धि के द्रष्टा, आप अपने शत्रुओं के बीच क्यों जाना चाहते हैं?"

उस महान सत्ता ने उत्तर दिया:

"सचमुच मैं सब कुछ जानता हूँ; बुद्धिमान व्यक्ति को इस पर ध्यान नहीं देना चाहिए; लेकिन मैंने कभी कोई बुराई नहीं की है, इसलिए मुझे मृत्यु के आने का भय नहीं है।"

"और तो और, धर्म के मार्ग पर मेरे प्रवचन से आप जैसे क्रूर प्राणी का भी मन बदल गया और आप नरम पड़ गए, और अब आप कहते हैं, 'नाग कन्या से मेरा मन भर गया है, आप अपने घर चले जाइए'; अब नाग राजा का मन बदलना मेरा कर्तव्य है, तो मुझे वहाँ ले चलिए।" यह सुनकर पुन्नका ने सहमति जताते हुए कहा:

"आओ, मेरे साथ उस अद्वितीय वैभवशाली संसार को देखो जहाँ नाग राजा, नलिनी में राजा वेसवना की तरह नृत्य और गीत के बीच निवास करते हैं। नाग कन्याओं की टोलियों से परिपूर्ण, दिन-रात उनके क्रीड़ाओं में मग्न, मालाओं से लदी और फूलों से सुशोभित, यह आकाश में बिजली की तरह चमकता है। भोजन और पेय से, नृत्य और गीत से और संगीत वाद्ययंत्रों से परिपूर्ण; भव्य वस्त्रों से सजी कन्याओं से परिपूर्ण, यह वस्त्रों और आभूषणों से जगमगाता है।"

तब पुन्नक ने कुरुओं में श्रेष्ठ कर्म करने वाले ऋषि को अपने पीछे आसन पर बैठाया और उस विशिष्ट ऋषि को नाग राजा के महल में ले गए। जब वे उस अद्वितीय वैभवशाली स्थान पर पहुँचे, तो ऋषि पुन्नक के पीछे खड़े हो गए; और नाग राजा ने उनके बीच सामंजस्य देखकर अपने दामाद को उसी प्रकार संबोधित किया जैसे उन्होंने पहले किया था।

"तुम पहले मनुष्य जगत में ऋषि के हृदय की खोज में गए थे; क्या तुम अद्वितीय ज्ञान वाले ऋषि को लेकर सफलतापूर्वक यहाँ लौट आए हो?"

पुन्नका ने उत्तर दिया:

"जिसकी तुम कामना करते हो, वह आ गया है; वह कर्तव्यनिष्ठा से मेरा रक्षक है, जिसे मैंने धार्मिक साधनों से प्राप्त किया है; उसे देखो जब वह तुम्हारे सामने बोलता है; अच्छे लोगों से मेलजोल सुख लाता है।"

नाग राजा ने उस महान प्राणी को देखकर एक श्लोक का उच्चारण किया:

"यह नश्वर प्राणी, मुझे देखकर, जिसे उसने पहले कभी नहीं देखा था और मृत्यु के भय से व्याकुल होकर, अपने डर के मारे मुझसे बात नहीं करता; यह एक बुद्धिमान व्यक्ति के समान नहीं है।"

इस प्रकार, जब नाग राजा इस विचार को मन में संजो रहा था, तब उस महान प्राणी ने उससे यह बात कही, यद्यपि उसने प्रत्यक्ष रूप से यह नहीं कहा था कि वह उसका सम्मान नहीं करेगा, क्योंकि उस महान प्राणी को अपने असीम ज्ञान से सभी प्राणियों के साथ सर्वोत्तम व्यवहार करने का तरीका पता था।

"हे नाग, मैं भयभीत नहीं हूँ, न ही मुझे मृत्यु का भय सताता है; पीड़ित को अपने जल्लाद से बात नहीं करनी चाहिए, न ही जल्लाद को अपने पीड़ित से बात करने के लिए कहना चाहिए।"

तब नाग राजा ने उस महान सत्ता की स्तुति में एक श्लोक का उच्चारण किया:

"जैसा कि आपने कहा, हे ऋषि, आप सत्य कहते हैं; पीड़ित को अपने जल्लाद को संबोधित नहीं करना चाहिए और न ही जल्लाद को अपने पीड़ित से उसे संबोधित करने के लिए कहना चाहिए।"

तब उस महान प्राणी ने नाग राजा से विनम्रतापूर्वक कहा:

"आपकी यह शान, वैभव, शक्ति और नाग वंश नश्वर हैं; हे नागराज, मैं आपसे यह प्रश्न पूछता हूँ कि आपने यह महल कैसे प्राप्त किया? क्या यह बिना किसी कारण के प्राप्त हुआ या किसी पूर्व स्थिति के फलस्वरूप? क्या यह आपने स्वयं बनाया या देवताओं (देवदूतों) द्वारा प्रदत्त? हे नागराज, मुझे यह समझाइए कि आपने यह महल कैसे जीता।"

नाग राजा ने उत्तर दिया:

"यह बिना किसी कारण के प्राप्त नहीं हुआ, न ही यह किसी पूर्व स्थिति का विकास था; न तो यह मेरे द्वारा बनाया गया था और न ही देवताओं (देवदूतों) द्वारा दिया गया था; मेरा यह महल मेरे अपने पुण्य कर्मों से प्राप्त हुआ है।"

उस महान सत्ता ने उत्तर दिया:

"यह कौन सी पवित्र प्रतिज्ञा थी, कौन सी धार्मिक साधना थी? यह किस अच्छे कर्म का फल था, यह वैभव, महिमा, शक्ति, तुम्हारा नाग जन्म और यह महान महल, हे नाग?"

नाग राजा ने उत्तर दिया:

"पुरुषों के संसार में मैं और मेरी पत्नी दोनों ही आस्थावान और उदार थे; मेरा घर एक भोजगृह में बदल दिया गया था, और वहाँ पुरोहितों और ब्राह्मणों का स्वागत किया जाता था। मैंने वहाँ मालाएँ, इत्र, मलहम, दीपक, पलंग, विश्राम स्थल, वस्त्र, बिस्तर, भोजन और पेय पदार्थ निःशुल्क दान किए। यही मेरी प्रतिज्ञा और पवित्रता का अभ्यास था, और यही उस अच्छे आचरण का फल है, यही वैभव, महिमा, नाग जन्म और यह भव्य महल, हे ऋषि।"

उस महान सत्ता ने कहा:

"यदि तुमने इस प्रकार यह महल प्राप्त कर लिया है, तो तुम पवित्र कर्मों और पुनर्जन्म के फल के बारे में जानते हो; इसलिए पूरी लगन से सद्गुणों का अभ्यास करो ताकि तुम फिर से महल में जन्म ले सको।"

नाग राजा ने उत्तर दिया:

"हे पवित्र पुरुष, यहाँ कोई पुजारी या ब्राह्मण नहीं हैं जिन्हें हम भोजन और पेय दे सकें; कृपया मुझे यह बताइए, मैं फिर से महल में कैसे रह सकता हूँ?"

उस महान सत्ता ने कहा:

"यहाँ नागों का जन्म हुआ है, उनके पुत्र, पत्नियाँ और आश्रित हैं; उनके प्रति कभी भी, न तो वचन से और न ही कर्म से कोई पाप करो। हे नाग, तुम भी वचन और कर्म से निर्मल रहो, तभी तुम जीवन भर यहाँ एक महल में निवास करोगे और फिर देवदूतों के लोक में प्रस्थान करोगे।"

नाग राजा ने महान संत के धार्मिक प्रवचन सुनकर मन ही मन सोचा, "ऋषि अधिक समय तक अपने घर से दूर नहीं रह सकते; मैं उन्हें विमला से मिलवाऊंगा और उन्हें उनके अच्छे वचन सुनाऊंगा, जिससे उनकी तीव्र इच्छा शांत होगी, और मैं राजा धनंजय को प्रसन्न करूंगा, तब ऋषि को घर भेजना उचित होगा"; इसलिए उन्होंने कहा:

"निश्चित रूप से, श्रेष्ठ राजा आपकी अनुपस्थिति में शोक मना रहा है, जिसका आप घनिष्ठ सेवक हैं; एक बार आपको पाकर, भले ही अब वह व्यथित और बीमार हो, वह व्यक्ति फिर से सुख प्राप्त कर लेगा।"

उस महान सत्ता ने नाग की प्रशंसा की:

"आप सचमुच अच्छे लोगों के पवित्र शब्द कह रहे हैं, जो सही शिक्षा का एक असाधारण उदाहरण है; जीवन के ऐसे संकटों में मुझ जैसे लोगों का चरित्र प्रकट होता है।"

तब नाग राजा और भी प्रसन्न होकर एक श्लोक बोला:

"क्या तुम्हें निःसंदेह अगवा किया गया? क्या उसने तुम्हें खेल में हराया? वह कहता है कि उसने तुम्हें ईमानदारी से जीता - तुम उसके अधिकार में कैसे आए?"

उस महान सत्ता ने उत्तर दिया:

पुन्नका ने पासे के खेल में मेरे स्वामी और राजा को हरा दिया; हारने के बाद उसने मुझे दूसरे को सौंप दिया; इस प्रकार मेरी जीत न्यायसंगत तरीके से हुई, न कि अन्याय से।

ऋषि के इन महान शब्दों को सुनकर महान नाग अत्यंत प्रसन्न हुए और उन्होंने महान ज्ञान के स्वामी का हाथ पकड़कर उनकी पत्नी के समक्ष जाकर कहा, "हे विमला, जिनके कारण तुम्हारा चेहरा पीला पड़ गया और तुम्हारी आँखों में भोजन का स्वाद फीका पड़ गया, वह सूर्य, जिनके हृदय के कारण तुम पर यह विपत्ति आई है, उनकी बातें ध्यान से सुनो, तुम उन्हें फिर कभी नहीं देख पाओगी।"

विमला ने जब महान ज्ञान के स्वामी को देखा, तो उसने आदरपूर्वक अपने हाथों की दस उंगलियां जोड़ लीं और इस प्रकार पूर्ण आनंद से परिपूर्ण मन से श्रेष्ठ कुरुओं को संबोधित किया।

"यह नश्वर प्राणी, मुझे देखकर, जिसे उसने पहले कभी नहीं देखा था और मृत्यु के भय से व्याकुल होकर, अपने डर के मारे मुझसे बात नहीं करता; यह एक बुद्धिमान व्यक्ति के समान नहीं है।"

"हे नागी, मैं भयभीत नहीं हूँ, न ही मुझे मृत्यु का भय सताता है; पीड़ित को अपने जल्लाद से बात नहीं करनी चाहिए, न ही जल्लाद को अपने पीड़ित से बात करने के लिए कहना चाहिए।"

इस प्रकार नाग कन्या ने ऋषि से वही प्रश्न पूछा जो नाग वरुण ने उनसे पहले पूछा था; और ऋषि ने अपने उत्तर से उसे उसी प्रकार संतुष्ट किया जैसे उन्होंने पहले वरुण को संतुष्ट किया था।

ऋषि ने देखा कि नाग राजा और नाग कन्या दोनों उनके उत्तरों से प्रसन्न हैं, और वे भयभीत हुए बिना वरुण से बोले, "हे नाग, भयभीत मत हो; यह शरीर तुम्हारे लिए जो भी उपयोगी हो, और जो भी यह अपने हृदय और शरीर से कर सकता है, मैं स्वयं तुम्हारी इच्छा के अनुसार उसे पूरा करूंगा।"

नाग राजा ने उत्तर दिया:

"ऋषियों का सार उनका ज्ञान है, आज हम आपके ज्ञान से प्रसन्न हैं; वह व्यक्ति जिसका नाम पूर्णता का प्रतीक है, आज अपनी दुल्हन को ले जाए और आज आपको कुरुओं का स्वामी बनाए।"

इस प्रकार कहने के बाद, वरुण ने इरंदति को पुन्नक को सौंप दिया और पुन्नक ने प्रसन्नतापूर्वक उस महान सत्ता के समक्ष अपने हृदय की अभिव्यक्ति कर दी।

इस प्रकार उस महान सत्ता ने इस विषय का वर्णन किया है:

नाग कन्या इरंदती को पाकर पुन्नका अत्यंत प्रसन्न और आनंदित हो उठा। उसने पूर्ण आनंद से भरे स्वर में कुरुओं में श्रेष्ठ विदुर को संबोधित करते हुए कहा, "आपने मुझे पत्नी प्रदान की है, हे विदुर, मैं आपका कर्तव्य निभाऊंगा; मैं यह रत्न-वृक्ष आपको अर्पित करता हूं और आज ही आपको कुरुओं का स्वामी बना दूंगा।"

फिर उस महान सत्ता ने एक और श्लोक में उसकी प्रशंसा की:

"आपकी प्रिय पत्नी के साथ आपकी मित्रता दीर्घायु हो, और प्रसन्नता से मुझे यह रत्न भेंट करें और मुझे इंद्रप्रस्थ ले चलें।" तब पुन्नक ने श्रेष्ठ कर्मशील कुरुओं को अपने सामने आसन पर बिठाया और परम ज्ञान के स्वामी पुन्नक को इंद्रप्रस्थ ले गए। मनुष्य का मन जितनी तीव्र गति से चल सकता है, पुन्नक की गति उससे भी कहीं अधिक तीव्र थी; और पुन्नक श्रेष्ठ कुरुओं को इंद्रप्रस्थ ले गए।

तब उसने उससे कहा: "अपने सामने इंद्रप्रस्थ नगर और उसके रमणीय आमों के बागों और क्षेत्रों को देखो; मेरी पत्नी है, और तुम्हें अपना घर मिल गया है।"

उसी दिन सुबह राजा ने एक सपना देखा, जो इस प्रकार था: राजा के महल के द्वार पर एक विशाल वृक्ष खड़ा था, जिसका तना ज्ञान का प्रतीक था, शाखाएँ गुणों के समान थीं, और फल गाय के पाँच पवित्र उत्पादों के समान थे। वृक्ष पर अलंकृत साज-सज्जा वाले हाथी और घोड़े सवार थे; और बड़ी संख्या में लोग हाथ जोड़कर श्रद्धापूर्वक उसकी पूजा कर रहे थे। तभी एक काले रंग का व्यक्ति, जो लाल वस्त्र पहने हुए था, लाल फूलों की बालियाँ धारण किए हुए था, और हाथ में हथियार लिए हुए था, आया और लोगों के आग्रह के बावजूद वृक्ष को जड़ से काट डाला, उसे घसीटकर ले गया और चला गया। फिर वापस आकर उसे उसी स्थान पर दोबारा लगा दिया और चला गया। तब राजा ने स्वप्न को समझकर मन ही मन कहा, "ऋषि विदुर ही उस विशाल वृक्ष के समान हैं; वह युवक, जिसने ऋषि को उठाया था,

उस व्यक्ति के समान है जिसने लोगों के आग्रह के बावजूद वृक्ष को जड़ से काट डाला था; और निश्चय ही वह लौटकर आएंगे और उन्हें सत्यमहल के द्वार पर स्थापित करके चले जाएंगे। हम आज फिर से ऋषि के दर्शन करेंगे।" अतः उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक पूरे नगर को सजाने और सत्यमहल को तैयार करवाने तथा रत्नों से सजे मंडप में एक मंच बनवाने का आदेश दिया; और स्वयं सौ राजाओं, उनके सलाहकारों, अनेक नागरिकों और देशवासियों से घिरे हुए उन्होंने सबको यह कहकर सांत्वना दी, "भयभीत न हों, आप आज फिर से ऋषि के दर्शन करेंगे"; और वे स्वयं सत्यमहल में ऋषि के लौटने की प्रतीक्षा में विराजमान हो गए। तब पुन्नक ऋषि को नीचे लाए और उन्हें सत्यमहल के द्वार पर सभा के मध्य में स्थापित किया, और फिर इरंदति के साथ अपने स्वर्गलोक चले गए।

शिक्षक ने इसका वर्णन इस प्रकार किया है:

"कुलीन वंश के पुन्नक ने कुरु वंश के श्रेष्ठ पुन्नक को धार्मिक सभा के बीच में बिठाकर, अपने उत्तम घोड़े पर सवार होकर आकाश में विचरण किया। जब राजा ने उन्हें देखा, तो प्रसन्नता से भर उठे और उन्हें बाहों में भर लिया, और बिना किसी भय के उन्हें सभा के बीच में अपने सामने सिंहासन पर बैठा दिया।"

फिर उनसे सौहार्दपूर्ण अभिवादन करने के बाद उन्होंने स्नेहपूर्वक उनका स्वागत किया और एक श्लोक कहा:

"आप हमें एक सुसज्जित रथ की तरह मार्गदर्शित करते हैं, कुरु आपको देखकर प्रसन्न होते हैं; मुझे उत्तर दीजिए और बताइए, वह युवक आपको क्यों जाने दिया?"

उस महान सत्ता ने उत्तर दिया:

"हे महान राजा, जिसे आप युवक कहते हैं, वह कोई साधारण व्यक्ति नहीं है, हे वीरों में श्रेष्ठ; यदि आपने यक्ष (राक्षस) पुन्नक के बारे में सुना हो, तो वह राजा कुबेर का मंत्री था। वरुण नाम का एक नाग राजा है, जो शक्तिशाली, बलवान और उदात्त व्यक्तित्व वाला है। पुन्नक उसकी छोटी पुत्री, नाग कन्या इरंदती से प्रेम करता है। उसने अपनी प्रेमिका के लिए मेरी मृत्यु की योजना बनाई, इस प्रकार उसने अपनी पत्नी को प्राप्त किया और मुझे जाने की अनुमति मिल गई तथा रत्न प्राप्त हो गया।"

नागराज मेरे द्वारा मनुष्य के चारों लक्ष्यों से संबंधित प्रश्न के उत्तर से प्रसन्न होकर मुझे एक रत्न भेंट करके सम्मानित किया। जब वह नागलोक लौटे, तो उनकी रानी विमला ने उनसे रत्न के बारे में पूछा। उन्होंने धर्ममार्ग के विषय में मेरे शिक्षण कौशल का वर्णन किया, और विमला, ऐसा प्रवचन सुनने की इच्छा से, मेरे हृदय के लिए तरसने का नाटक करने लगीं। नागराज, उनकी वास्तविक इच्छा को न समझकर, अपनी पुत्री इरंदती से बोले, "तुम्हारी माता विदुर के हृदय के लिए तरस रही हैं, एक ऐसे कुलीन व्यक्ति को खोजो जो उनके लिए वह हृदय ला सके।" जब वह किसी ऐसे व्यक्ति की तलाश कर रही थीं, तो उनकी नज़र यक्ष (राक्षस) पुन्नका पर पड़ी, जो वेसवना की बहन का पुत्र था। और यह जानकर कि पुन्नका उनसे प्रेम करता है, उन्होंने उसे अपने पिता के पास भेज दिया, जिन्होंने उससे कहा, "यदि तुम विदुर का हृदय मेरे लिए ला सको, तो वह तुम्हें मिल जाएगी।" अतः वह वेपुल्ला पर्वत से वह रत्न लाकर, जो किसी सर्वशक्तिमान सम्राट का हो सकता था, मेरे साथ जुए में बैठा और मुझे अपने खेल में जीत कर वहीं रुक गया। तीन दिन तक मैं अपने घर में रहा। फिर उसने मुझे अपने घोड़े की पूंछ पकड़ने के लिए मजबूर किया और मुझे हिमवत (हिमालय) के पेड़ों और पहाड़ों से टकराया, लेकिन वह मुझे मार नहीं सका। फिर वह हवाओं के सातवें क्षेत्र में बवंडर पर सवार होकर आगे बढ़ा और मुझे साठ मील (4.23 किमी) ऊंचे काले पर्वत की चोटी पर रख दिया; वहां उसने शेर और अन्य रूपों में मुझ पर हमला किया, लेकिन वह मुझे मार नहीं सका। तब अंत में उसके अनुरोध पर मैंने उसे बताया कि मुझे कैसे मारा जा सकता है। फिर मैंने उसे अच्छे आदमी के कर्तव्यों के बारे में बताया, और जब उसने उन्हें सुना तो वह बहुत प्रसन्न हुआ और मुझे यहां लाना चाहता था। तब मैं उसे लेकर नागलोक गया और मैंने राजा और विमला को धर्म का मार्ग बताया, और सारा दरबार बहुत प्रसन्न हुआ; और मेरे वहां छह दिन रहने के बाद राजा ने इरंदती को पुन्नक को दे दिया। उसे पाकर वह बहुत प्रसन्न हुआ और मुझे उपहार के रूप में कई रत्न भेंट किए। फिर राजा के आदेश पर उसने मुझे अपने द्वारा बनाए गए एक जादुई घोड़े पर सवार किया। अपनी इच्छा से, वह मुझे यहाँ लाया और मुझे दरबार के बीचोंबीच बिठा दिया, और फिर इरंदती के साथ अपने नगर चला गया। इस प्रकार, हे राजा, उस सुंदर कन्या के लिए, जिससे वह प्रेम करता था, उसने मेरी मृत्यु की योजना बनाई और इस प्रकार मेरे द्वारा उसने अपनी पत्नी को प्राप्त किया। जब राजा ने धर्म मार्ग पर मेरा प्रवचन सुना, तो वह प्रसन्न हुआ और मुझे जाने दिया। मुझे पुन्नक से यह रत्न प्राप्त हुआ जो सभी इच्छाओं को पूरा करता है और जो सर्वशक्तिशाली सम्राट के योग्य है; इसे स्वीकार करो, हे महाराज," और ऐसा कहकर उसने रत्न राजा को दे दिया। फिर राजा ने सुबह नागरिकों को अपना स्वप्न बताने की इच्छा से उन्हें इस प्रकार घटनाक्रम समझाया:

मेरे द्वार के सामने एक वृक्ष उगा था, उसका तना ज्ञान था और शाखाएँ नैतिक सद्गुण; वह प्राकृतिक और विकसित हर रूप में परिपक्व हुआ, उसके फल गाय के पाँचों उत्पाद थे, और वह हाथियों और मवेशियों से आच्छादित था। लेकिन जब वह नृत्य, गीत और वाद्ययंत्रों

की गूँज से गूंज रहा था, तभी एक आदमी आया और उसे जड़ से काटकर ले गया; फिर वह हमारे इस महल में आया, इस वृक्ष को अपना सम्मान दें।

जो भी मेरे माध्यम से आनंदित हैं, वे आज अपने कार्यों से इसे प्रकट करें; भरपूर मात्रा में उपहार लाएँ और इस वृक्ष को अपना सम्मान अर्पित करें।

मेरे राज्य में जितने भी बंदी हों, उन सबको उनकी गुलामी से मुक्त कर दो; जिस प्रकार इस वृक्ष को उसकी गुलामी से मुक्त किया गया है, उसी प्रकार दूसरों को भी बंधन से मुक्त करो।

वे इस महीने को छुट्टी में बिताएँ, अपने हल टांग दें; वे ब्राह्मणों को मांस और चावल का भोज दें; वे एकांत में शराब पिएँ, और फिर भी पूर्ण संयमी प्रतीत हों, उनके प्याले छलक रहे हों। वे राजमार्ग पर अपने मित्रों को आमंत्रित करें, और राज्य में कड़ी निगरानी रखें ताकि कोई भी अपने पड़ोसी को नुकसान न पहुँचाए, इस वृक्ष को अपना सम्मान दें।

जब उसने ऐसा कहा,

रानियों, राजकुमारों, वैश्यों और ब्राह्मणों ने ऋषि के लिए बहुत सारा भोजन और पेय पदार्थ लाया।

"हाथियों पर सवार, अंगरक्षक, रथों पर सवार, पैदल सैनिक, ऋषि के लिए बहुत सारा भोजन और पेय लेकर आए। देश और शहर के लोग भीड़ में इकट्ठा होकर ऋषि के लिए बहुत सारा भोजन और पेय लेकर आए। विशाल सभा ऋषि को देखकर आनंद से भर उठी; ऋषि के आने पर विजयोत्सव के रूप में वस्त्र लहराए गए।"

एक महीने बाद उत्सव समाप्त हो गया: महान सत्ता ने अपने कर्तव्यों का पालन करते हुए, विशाल सभा को धर्म का मार्ग सिखाया, राजा को सलाह दी और इस प्रकार अपना जीवनकाल पूरा किया और स्वर्ग के लिए नियत हो गए। उनके उपदेशों का पालन करते हुए और अपने राजा का अनुसरण करते हुए, कुरा राज्य के सभी निवासियों ने दान दिया और अच्छे कर्म किए और अपने जीवन के अंत में स्वर्ग चले गए।

गुरु ने अपना प्रवचन समाप्त करते हुए कहा, "केवल अभी ही नहीं, बल्कि पहले भी बुद्ध ने पूर्ण ज्ञान प्राप्त करके साधनों को लक्ष्य के अनुरूप ढालने में निपुणता दिखाई थी। फिर उन्होंने जन्म का वर्णन करते हुए कहा: "उस समय ऋषि के माता-पिता राजपरिवार (बहुदेव के माता-पिता, जिन्होंने कपिलवस्तु राज्य पर शासन किया) थे, सबसे बड़ी रानी राहुल की माता (बहुदेव की पत्नी) थीं, सबसे बड़ा पुत्र राहुल (बहुदेव का पुत्र) था, नाग राजा वरुण सारिपुत्र थे, गरुल राजा मोग्गल्याण थे, सक्का (इंद्र) अनुरुद्ध थे, राजा धनंजय आनंद थे और ज्ञानी विदुर मैं स्वयं था।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **द-महा-उम्मग्गा-जातक**
स्रोत *: ई.बी. कोवेल और डब्ल्यू.एच.डी. राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----II-546-II----->>>> अगला

जातक क्रमांक 546
महा-उम्मग्ग-जातक

"पांचाल के राजा ब्रह्मदत्त," आदि। गुरु (बुद्ध), जेतवन मठ में रहते हुए, ज्ञान की पूर्णता के बारे में यह बताया। एक दिन भिक्षुओं ने सत्य के हॉल में बैठकर बुद्ध की ज्ञान की पूर्णता का वर्णन किया: "भाइयों, असीम ज्ञान से परिपूर्ण बुद्ध, जिनकी बुद्धि विशाल, तत्पर, तीव्र, तीक्ष्ण और भ्रामक शिक्षाओं को कुचलने वाली है, ने अपने ज्ञान की शक्ति से ब्राह्मण कुटदंत और अन्य, तपस्वी सबिया और अन्य, चोर अंगुलिमाला (पहले जैसा ही), यक्ष अलावक (पहले जैसा ही), देवता सक्का (इंद्र) और अन्य, और ब्राह्मण बका (पहले जैसा ही) को परिवर्तित किया, उन्हें विनम्र बनाया, और उनमें से बहुतों को तपस्वी के रूप में दीक्षित किया और उन्हें मोक्ष के मार्ग की सफलता में स्थापित किया।" शिक्षक उनके पास आए और पूछा कि वे किस बारे में बात कर रहे हैं, और जब उन्होंने उन्हें बताया, तो उन्होंने उत्तर

दिया, "बुद्ध न केवल अब असीम रूप से ज्ञानी हैं, बल्कि अतीत में भी, जब उनका ज्ञान पूरी तरह से परिपक्व नहीं हुआ था, तब भी वे ज्ञान और बुद्धि की खोज में लगे हुए थे, और वे सर्वज्ञान से परिपूर्ण थे," और फिर उन्होंने अतीत की एक कहानी सुनाई।

पुराने समय में, मिथिला में वेदेह नामक एक राजा राज करता था, और उसके चार ऋषि थे जो उसे धर्ममार्ग का उपदेश देते थे: सेनाक, पुक्कुश, कविन्द और देविन्द। जब बोधिसत्व अपनी माता के गर्भ में थे, तब राजा ने भोर में यह स्वप्न देखा: राजमहल के चारों कोनों में दीवार के बराबर ऊँचे अग्नि के चार स्तंभ प्रज्वलित हुए, और उनके बीच में जुगनू के आकार की एक ज्वाला उठी, और उसी क्षण वह अचानक अग्नि के चारों स्तंभों से भी बड़ी होकर ब्रह्मालोक (प्रधान देवदूतों) जितनी ऊँची उठी और पूरे संसार को प्रकाशित कर दिया; यहाँ तक कि जमीन पर पड़ा सरसों का एक दाना भी स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहा था। मनुष्य और देवदूतों के संसार ने पुष्पमालाओं और धूप से उसकी पूजा की; बहुत से लोग इस ज्वाला से गुजरे, लेकिन उनकी त्वचा का एक बाल भी नहीं झुलसा। यह दृश्य देखकर राजा भयभीत हो गया और सोचने लगा कि आगे क्या होगा, और भोर की प्रतीक्षा करने लगा। सुबह जब चारों ज्ञानी पुरुष आए तो उन्होंने उससे पूछा कि क्या वह अच्छी तरह सोया था। उसने उत्तर दिया, "मैं कैसे अच्छी तरह सो सकता हूँ, जब मैंने ऐसा सपना देखा है?" तब पंडित सेनाक ने उत्तर दिया, "हे महाराज, भयभीत न हों, यह एक शुभ सपना है, आप समृद्ध होंगे।" और जब उनसे व्याख्या करने को कहा गया, तो उन्होंने आगे कहा, "हे महाराज, एक पाँचवें ऋषि का जन्म होगा जो हम चारों से श्रेष्ठ होंगे; हम चारों अग्नि के चार स्तंभों के समान हैं, परन्तु हमारे बीच से मानो अग्नि का पाँचवाँ स्तंभ उदय होगा, जो अद्वितीय होगा और देवताओं (देवदूतों) या मनुष्यों के संसार में अतुलनीय पद को ग्रहण करेगा।" "वह इस समय कहाँ है?" "हे महाराज, वह या तो शरीर धारण करेगा या अपनी माता के गर्भ से बाहर आएगा"; इस प्रकार उन्होंने अपने ज्ञान से वह बताया जो उन्होंने अपनी दिव्य दृष्टि से देखा था और राजा ने उस समय से उनके शब्दों को याद रखा। अब मिथिला के चारों द्वारों पर चार बाजार नगर थे, जिन्हें पूर्वी नगर, दक्षिणी नगर, पश्चिमी नगर और उत्तरी नगर कहा जाता था। पूर्वी नगर में सिरिवद्धक नामक एक धनी व्यक्ति रहता था, और उसकी पत्नी का नाम सुमनादेवी था। जिस दिन राजा ने दर्शन देखा, उसी दिन तैंतीसवें स्वर्ग से महापुरुष आया और सुमनादेवी के गर्भ में धारण किया; और उस स्वर्ग से हज़ार अन्य देवदूत आए और उस गाँव के विभिन्न धनी व्यापारियों के परिवारों में गर्भ धारण किया, और दसवें महीने के अंत में सुमनादेवी ने स्वर्ण रंग के एक शिशु को जन्म दिया। उसी क्षण इंद्र ने मानव जगत पर दृष्टि डालते हुए महापुरुष का जन्म देखा; और मन ही मन यह कहते हुए कि वह देवदूतों और मनुष्यों के जगत में यह घोषणा करेगा कि बुद्ध के इस अंकुर का जन्म हुआ है, वह शिशु के जन्म के समय प्रत्यक्ष रूप में प्रकट हुआ और उसके हाथ में एक औषधीय जड़ी बूटी का टुकड़ा रखा, और फिर अपने जीवन में लौट गया। महापुरुष ने उसे अपनी बंद मुट्ठी में मजबूती से थाम लिया; और जब वह अपनी माता के गर्भ से आया तो उसे जरा भी पीड़ा नहीं हुई।लेकिन वह पवित्र जलपात्र से पानी की तरह आसानी से बेहोश हो गया। जब उसकी माँ ने उसके हाथ में औषधीय जड़ी बूटी का टुकड़ा देखा, तो उसने उससे कहा, "मेरे बच्चे, यह क्या है जो तुमने पकड़ा है?" उसने उत्तर दिया, "यह एक औषधीय पौधा है, माँ," और उसने उसे उसके हाथ में रख दिया और उससे कहा कि इसे ले लो और उन सभी को दे दो जो किसी भी बीमारी से पीड़ित हैं। प्रसन्नता से भर कर उसने यह बात व्यापारी सिरिवद्धक को बताई, जो सात वर्षों से सिरदर्द से पीड़ित था। प्रसन्नता से उसने मन ही मन कहा, "यह बच्चा अपनी माँ के गर्भ से औषधीय पौधा लिए हुए निकला और जन्म लेते ही अपनी माँ से बात करने लगा; इतने असाधारण गुण वाले व्यक्ति द्वारा दी गई औषधि का बहुत महत्व होगा"; इसलिए उसने उसे चक्की पर घिसा और थोड़ा सा अपने माथे पर लगाया, और सात वर्षों से चला आ रहा उसका सिरदर्द कमल के पत्ते से पानी की तरह तुरंत गायब हो गया। प्रसन्नता से झूमते हुए उसने कहा, "यह तो अद्भुत प्रभाव वाली औषधि है"; यह खबर चारों ओर फैल गई कि महान पुरुष अपने हाथ में औषधि लेकर पैदा हुए हैं, और सभी बीमार व्यापारी के घर उमड़ पड़े और औषधि मांगने लगे। उन्होंने थोड़ी सी औषधि चक्की पर पीसकर पानी में मिलाकर सभी को थोड़ी-थोड़ी दी, और जैसे ही प्रभावित शरीर को वह दिव्य औषधि छूती, सभी रोग ठीक हो जाते, और प्रसन्न रोगी व्यापारी सिरिवद्धक के घर में औषधि के अद्भुत गुणों का बखान करते हुए चले गए। बच्चे का नामकरण करते समय व्यापारी ने मन ही मन सोचा, "मेरे बच्चे का नाम उसके पूर्वजों में से किसी एक के नाम पर रखने की आवश्यकता नहीं है; उसका नाम औषधि के नाम पर ही रखा जाए," इसलिए उसने उसका नाम ओषध कुमार रखा। फिर उसने दोबारा सोचा, "मेरा पुत्र महान गुणों से परिपूर्ण है, वह अकेला पैदा नहीं होगा, उसके साथ ही कई अन्य बच्चे भी पैदा होंगे।" जब उसने पूछताछ करके जाना कि उसके साथ हजारों अन्य लड़के भी पैदा हुए हैं, तो उसने उन सभी के लिए दाईयाँ भेजीं और उन्हें कपड़े दिए। उसने यह निश्चय किया कि वे उसके पुत्र के सेवक होंगे और उसने उनके लिए एक उत्सव मनाया। उसने लड़कों को सजाया-संवारा और उन्हें प्रतिदिन उसकी सेवा में बुलाया। महान प्राणी उनके साथ खेलते-खेलते बड़ा हुआ और जब वह सात वर्ष का हुआ तो वह सोने की मूर्ति के समान सुंदर हो गया। जब वह गाँव में उनके साथ खेल रहा था, तो कुछ हाथी और अन्य जानवर वहाँ से गुजरे और उनके खेल में बाधा डाली। कभी-कभी बच्चे बारिश और गर्मी से परेशान हो जाते थे। एक दिन जब वे खेल रहे थे, अचानक तेज बारिश शुरू हो गई। जब हाथी के समान बलवान महान प्राणी ने इसे देखा, तो वह एक घर में भाग गया। अन्य बच्चे उसके पीछे भागे और एक-दूसरे के पैरों पर गिर पड़े, जिससे उनके घुटनों और अन्य अंगों में चोट लग गई। फिर उसने मन ही मन सोचा, "यहाँ खेलने के लिए एक हॉल बनाया जाना चाहिए, हम इस तरह नहीं खेलेंगे," और उसने लड़कों से कहा, "चलो यहाँ एक हॉल बनाते हैं जहाँ हम हवा, तेज धूप या बारिश के समय खड़े हो सकें, बैठ सकें या लेट सकें।"तुममें से हर एक अपना-अपना पैसा लेकर आए।" हज़ारों लड़कों ने

वैसा ही किया और उस महान सत्ता ने एक कुशल बढ़ई को बुलवाया और उसे पैसा देकर उस जगह पर एक हॉल बनाने को कहा। उसने पैसा लिया, ज़मीन समतल की, खंभे गाड़े और नापने की रेखा खींची, लेकिन वह उस महान सत्ता की बात नहीं समझ पाया; इसलिए उसने बढ़ई को बताया कि उसे रेखा कैसे खींचनी है ताकि वह ठीक से काम कर सके। बढ़ई ने जवाब दिया, "मैंने इसे अपने व्यावहारिक अनुभव के अनुसार खींचा है, मैं इसे किसी और तरीके से नहीं कर सकता।" "अगर तुम्हें इतना भी नहीं पता तो तुम हमारा पैसा लेकर हॉल कैसे बना सकते हो?" "रेखा लो, मैं नापकर तुम्हें दिखाऊंगा," उसने बढ़ई से रेखा पकड़वाई और खुद योजना निकाली, और वह ऐसी लग रही थी मानो विश्वकर्मा ने बनाई हो। फिर उसने बढ़ई से कहा, "क्या तुम इस तरह योजना बना पाओगे?" "मैं नहीं बना पाऊंगा, महोदय।" "क्या तुम मेरे निर्देशों के अनुसार बना पाओगे?" "मैं बना पाऊंगा, महोदय।" फिर उस महान व्यक्ति ने हॉल को इस प्रकार व्यवस्थित किया कि एक भाग में आम अजनबियों के लिए जगह थी, दूसरे में दरिद्रों के लिए आवास, तीसरे में दरिद्र महिलाओं के लिए प्रसव कक्ष, चौथे में विदेशी बौद्ध पुजारियों और ब्राह्मणों के लिए आवास, चौथे में अन्य प्रकार के पुरुषों के लिए आवास, और चौथे में विदेशी व्यापारियों के लिए अपना माल रखने की जगह थी, और इन सभी कमरों के दरवाजे बाहर की ओर खुलते थे। वहाँ उसने खेल-कूद के लिए एक सार्वजनिक स्थान, एक न्यायलय और धार्मिक सभाओं के लिए एक हॉल भी बनवाया। जब काम पूरा हो गया तो उसने चित्रकारों को बुलाया और स्वयं उनकी परीक्षा लेकर उन्हें सुंदर चित्र बनाने का काम सौंपा, जिससे हॉल एक सुंदर हॉल जैसा बन गया। इंद्र का स्वर्गिक महल सुधम्म था। फिर भी उन्हें लगा कि महल अभी पूरा नहीं हुआ है, "मुझे एक तालाब भी बनवाना चाहिए," इसलिए उन्होंने एक वास्तुकार को बुलाने के लिए जमीन खुदवाने का आदेश दिया और उससे विचार-विमर्श करने और उसे धन देने के बाद, उन्होंने उससे एक हजार मोड़ों वाला और सौ स्नान घाटों वाला तालाब बनवाया। तालाब पांच प्रकार के कमलों से ढका हुआ था और स्वर्गिक उद्यान नंदन के तालाब की तरह सुंदर था। इसके किनारे उन्होंने विभिन्न प्रकार के वृक्ष लगाए और नंदन के समान एक उद्यान बनवाया। और इस महल के पास उन्होंने भिक्षुओं, बौद्धों और ब्राह्मणों, अजनबियों और आसपास के गांवों के लोगों के लिए सार्वजनिक रूप से भिक्षा वितरण की व्यवस्था की।"यदि आपको इतनी भी जानकारी नहीं है तो आप हमारा पैसा लेकर हॉल कैसे बना सकते हैं?" "रेखा लो, मैं नापकर तुम्हें दिखाऊंगा," उसने बढ़ई से रेखा पकड़वाई और खुद योजना निकाली, और वह ऐसी लग रही थी मानो विश्वकर्मा ने बनाई हो। फिर उसने बढ़ई से कहा, "क्या तुम इस तरह योजना बना पाओगे?" "मैं नहीं बना पाऊंगा, महोदय।" "क्या तुम मेरे निर्देशों के अनुसार बना पाओगे?" "मैं बना पाऊंगा, महोदय।" फिर उस महान व्यक्ति ने हॉल को इस प्रकार व्यवस्थित किया कि एक भाग में आम अजनबियों के लिए जगह थी, दूसरे में दरिद्रों के लिए आवास, तीसरे में दरिद्र महिलाओं के लिए प्रसव कक्ष, चौथे में विदेशी बौद्ध पुजारियों और ब्राह्मणों के लिए आवास, चौथे में अन्य प्रकार के पुरुषों के लिए आवास, और चौथे में विदेशी व्यापारियों के लिए अपना माल रखने की जगह थी, और इन सभी कमरों के दरवाजे बाहर की ओर खुलते थे। वहाँ उसने खेल-कूद के लिए एक सार्वजनिक स्थान, एक न्यायलय और धार्मिक सभाओं के लिए एक हॉल भी बनवाया। जब काम पूरा हो गया तो उसने चित्रकारों को बुलाया और स्वयं उनकी परीक्षा लेकर उन्हें सुंदर चित्र बनाने का काम सौंपा, जिससे हॉल एक सुंदर हॉल जैसा बन गया। इंद्र का स्वर्गिक महल सुधम्म था। फिर भी उन्हें लगा कि महल अभी पूरा नहीं हुआ है, "मुझे एक तालाब भी बनवाना चाहिए," इसलिए उन्होंने एक वास्तुकार को बुलाने के लिए जमीन खुदवाने का आदेश दिया और उससे विचार-विमर्श करने और उसे धन देने के बाद, उन्होंने उससे एक हजार मोड़ों वाला और सौ स्नान घाटों वाला तालाब बनवाया। तालाब पांच प्रकार के कमलों से ढका हुआ था और स्वर्गिक उद्यान नंदन के तालाब की तरह सुंदर था। इसके किनारे उन्होंने विभिन्न प्रकार के वृक्ष लगाए और नंदन के समान एक उद्यान बनवाया। और इस महल के पास उन्होंने भिक्षुओं, बौद्धों और ब्राह्मणों, अजनबियों और आसपास के गांवों के लोगों के लिए सार्वजनिक रूप से भिक्षा वितरण की व्यवस्था की।"यदि आपको इतनी भी जानकारी नहीं है तो आप हमारा पैसा लेकर हॉल कैसे बना सकते हैं?" "रेखा लो, मैं नापकर तुम्हें दिखाऊंगा," उसने बढ़ई से रेखा पकड़वाई और खुद योजना निकाली, और वह ऐसी लग रही थी मानो विश्वकर्मा ने बनाई हो। फिर उसने बढ़ई से कहा, "क्या तुम इस तरह योजना बना पाओगे?" "मैं नहीं बना पाऊंगा, महोदय।" "क्या तुम मेरे निर्देशों के अनुसार बना पाओगे?" "मैं बना पाऊंगा, महोदय।" फिर उस महान व्यक्ति ने हॉल को इस प्रकार व्यवस्थित किया कि एक भाग में आम अजनबियों के लिए जगह थी, दूसरे में दरिद्रों के लिए आवास, तीसरे में दरिद्र महिलाओं के लिए प्रसव कक्ष, चौथे में विदेशी बौद्ध पुजारियों और ब्राह्मणों के लिए आवास, चौथे में अन्य प्रकार के पुरुषों के लिए आवास, और चौथे में विदेशी व्यापारियों के लिए अपना माल रखने की जगह थी, और इन सभी कमरों के दरवाजे बाहर की ओर खुलते थे। वहाँ उसने खेल-कूद के लिए एक सार्वजनिक स्थान, एक न्यायलय और धार्मिक सभाओं के लिए एक हॉल भी बनवाया। जब काम पूरा हो गया तो उसने चित्रकारों को बुलाया और स्वयं उनकी परीक्षा लेकर उन्हें सुंदर चित्र बनाने का काम सौंपा, जिससे हॉल एक सुंदर हॉल जैसा बन गया। इंद्र का स्वर्गिक महल सुधम्म था। फिर भी उन्हें लगा कि महल अभी पूरा नहीं हुआ है, "मुझे एक तालाब भी बनवाना चाहिए," इसलिए उन्होंने एक वास्तुकार को बुलाने के लिए जमीन खुदवाने का आदेश दिया और उससे विचार-विमर्श करने और उसे धन देने के बाद, उन्होंने उससे एक हजार मोड़ों वाला और सौ स्नान घाटों वाला तालाब बनवाया। तालाब पांच प्रकार के कमलों से ढका हुआ था और स्वर्गिक उद्यान नंदन के तालाब की तरह सुंदर था। इसके किनारे उन्होंने विभिन्न प्रकार के वृक्ष लगाए और नंदन के समान एक उद्यान बनवाया। और इस महल के पास उन्होंने भिक्षुओं, बौद्धों और ब्राह्मणों, अजनबियों और आसपास के गांवों के लोगों के लिए सार्वजनिक रूप से भिक्षा वितरण की व्यवस्था की।इस प्रकार वह महल इंद्र के स्वर्गिक महल सुधम्म के समान बन गया। फिर भी उन्हें लगा कि महल अभी पूर्ण नहीं हुआ है, "मुझे एक तालाब भी बनवाना चाहिए," इसलिए उन्होंने एक वास्तुकार के लिए भूमि खुदवाने का आदेश दिया और उससे विचार-विमर्श करने और उसे धन देने के बाद, उन्होंने उससे एक हजार मोड़ों वाला और सौ स्नान घाटों वाला तालाब बनवाया। जल पांच प्रकार के कमलों से ढका हुआ

था और स्वर्गिक उद्यान नंदन के तालाब के समान सुंदर था। इसके किनारे उन्होंने विभिन्न प्रकार के वृक्ष लगाए और नंदन के समान एक उद्यान बनवाया। और इस महल के पास उन्होंने बौद्धों और ब्राह्मणों, अजनबियों और आसपास के गांवों के लोगों सहित सभी संतों के लिए सार्वजनिक रूप से भिक्षा वितरण की व्यवस्था की।इस प्रकार वह महल इंद्र के स्वर्गिक महल सुधम्म के समान बन गया। फिर भी उन्हें लगा कि महल अभी पूर्ण नहीं हुआ है, "मुझे एक तालाब भी बनवाना चाहिए," इसलिए उन्होंने एक वास्तुकार के लिए भूमि खुदवाने का आदेश दिया और उससे विचार-विमर्श करने और उसे धन देने के बाद, उन्होंने उससे एक हजार मोड़ों वाला और सौ स्नान घाटों वाला तालाब बनवाया। जल पांच प्रकार के कमलों से ढका हुआ था और स्वर्गिक उद्यान नंदन के तालाब के समान सुंदर था। इसके किनारे उन्होंने विभिन्न प्रकार के वृक्ष लगाए और नंदन के समान एक उद्यान बनवाया। और इस महल के पास उन्होंने बौद्धों और ब्राह्मणों, अजनबियों और आसपास के गांवों के लोगों सहित सभी संतों के लिए सार्वजनिक रूप से भिक्षा वितरण की व्यवस्था की।

उनके इन कार्यों की चर्चा हर जगह फैल गई और भीड़ उस स्थान पर उमड़ पड़ी, और वह महान व्यक्ति हॉल में बैठकर वहां आए सभी याचिकाकर्ताओं की अच्छी या बुरी परिस्थितियों के सही और गलत पर चर्चा करते और प्रत्येक पर अपना निर्णय देते थे, और यह उस सुखद समय के समान हो गया जब कोई बुद्ध संसार में प्रकट होते हैं।

उस समय, जब सात वर्ष बीत चुके थे, राजा वेदेह को याद आया कि चार ऋषियों ने कहा था कि एक पाँचवाँ ऋषि जन्म लेगा जो ज्ञान में उनसे भी श्रेष्ठ होगा। उन्होंने मन ही मन पूछा, "वह अब कहाँ है?" और उन्होंने अपने चार सलाहकारों को नगर के चारों द्वारों पर भेजा और उनसे उसका पता लगाने को कहा। जब वे अन्य तीन द्वारों से निकले तो उन्हें उस महान व्यक्ति का कोई निशान नहीं मिला, लेकिन जब वे पूर्वी द्वार से निकले तो उन्होंने महल और उसकी विभिन्न इमारतें देखीं और उन्हें तुरंत विश्वास हो गया कि केवल एक बुद्धिमान व्यक्ति ही इस महल का निर्माण कर सकता था या करवा सकता था। उन्होंने लोगों से पूछा, "इस महल का निर्माण किस वास्तुकार ने किया?" लोगों ने उत्तर दिया, "यह महल किसी वास्तुकार ने अपनी शक्ति से नहीं बनवाया, बल्कि व्यापारी सिरिवड्ढा के पुत्र महोसाधा पंडित के निर्देश पर बनवाया गया है।" "उनकी आयु कितनी है?" "उन्होंने अभी-अभी सात वर्ष पूरे किए हैं।" सलाहकार ने उस दिन से लेकर अब तक की सभी घटनाओं पर विचार किया जिस दिन राजा ने स्वप्न देखा था और उसने मन ही मन कहा, "यह व्यक्ति राजा के स्वप्न की पूर्ति करता है।" उसने एक दूत को राजा के पास यह संदेश देकर भेजा: "पूर्वी बाज़ार नगर में रहने वाले व्यापारी सिरिवड्ढा के सात वर्षीय पुत्र महोषधा ने ऐसा महल, तालाब और उद्यान बनवाया है, क्या मैं उसे आपके समक्ष लाऊं या नहीं?" यह सुनकर राजा अत्यंत प्रसन्न हुए और सेनाक को बुलवाया। उन्होंने सेनाक को सारी बात समझाकर पूछा कि क्या उन्हें इस ऋषि को बुलवाना चाहिए। लेकिन सेनाक, उपाधि से ईर्ष्या करते हुए, बोले, "हे राजा, केवल महल और ऐसी चीजें बनवाने मात्र से कोई व्यक्ति ऋषि नहीं कहलाता; ये चीजें तो कोई भी बनवा सकता है, यह तो मामूली बात है।" राजा ने यह सुनकर मन ही मन सोचा, "इसके पीछे कोई गुप्त कारण अवश्य होगा," और चुप रहे। फिर उन्होंने दूत को यह आदेश देकर वापस भेज दिया कि सलाहकार कुछ समय तक वहीं रुकें और ऋषि की अच्छी तरह से जांच-पड़ताल करें। पार्षद वहीं रुका रहा और उसने ऋषि के कार्यों की सावधानीपूर्वक जांच की, और यह जांच या परीक्षण के मामलों की श्रृंखला है:

1. "**मांस का टुकड़ा** ।" एक दिन जब भगवान खेल-कूद के लिए जा रहे थे, तभी एक बाज़ कसाईखाने की पटिया से मांस का एक टुकड़ा उठाकर हवा में उड़ गया। कुछ लड़कों ने उसे देखकर उसे गिराने का निश्चय किया और उसका पीछा करने लगे। बाज़ अलग-अलग दिशाओं में उड़ने लगा और वे ऊपर देखते हुए उसके पीछे-पीछे पत्थर और अन्य वस्तुएँ फेंकते-फेंकते थक गए। तब ऋषि ने उनसे कहा, "मैं इसे गिरा दूँगा।" उन्होंने उनसे ऐसा करने की विनती की। उन्होंने उन्हें देखने के लिए कहा; और फिर स्वयं ऊपर देखते हुए हवा की गति से दौड़े और बाज़ की परछाई पर चलकर ज़ोर से ताली बजाई। उनकी उस ज़ोरदार आवाज़ से मानो बाज़ का पेट आर-पार हो गया और डर के मारे उसने मांस गिरा दिया। भगवान ने परछाई को देखकर जान लिया कि मांस गिर गया है और ज़मीन पर गिरने से पहले ही उसे हवा में पकड़ लिया। इस चमत्कार को देखकर लोग ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने और ताली बजाने लगे। मंत्री ने यह सुनकर राजा को एक संदेश भेजा कि ऋषि ने किस प्रकार पक्षी से मांस छुड़वा दिया। राजा ने यह सुनकर सेनाक से पूछा कि क्या उसे दरबार में बुलाया जाए। सेनाक ने सोचा, "उसके आने से मेरी सारी यश-विजय नष्ट हो जाएगी और राजा मेरा नामोनिशान मिटा देगा, मुझे उसे यहाँ नहीं आने देना चाहिए"; इसलिए ईर्ष्यावश उसने कहा, "वह इतना बड़ा ऋषि नहीं है, यह तो बस एक छोटी सी बात है"; और राजा निष्पक्ष होकर संदेश भेजा कि मंत्री जहाँ है वहीं उसकी परीक्षा ले।

2. "**मवेशी** ।" यवमज्जक गाँव में रहने वाले एक व्यक्ति ने दूसरे गाँव से कुछ मवेशी खरीदे और उन्हें घर ले आया। अगले दिन वह उन्हें चराने के लिए एक मैदान में ले गया और एक मवेशी की पीठ पर सवार हो गया। थककर वह नीचे उतरा और ज़मीन पर बैठ गया और सो गया। इसी बीच एक चोर आया और मवेशियों को उठाकर ले गया। जब वह जागा तो उसने अपने मवेशी नहीं देखे, लेकिन चारों ओर देखने पर उसे चोर भागता हुआ दिखाई दिया। वह उछलकर चिल्लाया, "तुम मेरे मवेशियों को कहाँ ले जा रहे हो?" "ये मेरे मवेशी हैं, और मैं इन्हें अपनी मनचाही जगह ले जा रहा हूँ।" झगड़ा सुनकर वहाँ बड़ी भीड़ जमा हो गई। जब ऋषि ने हॉल के द्वार से गुजरते हुए शोर सुना, तो उन्होंने उन दोनों को बुलवाया। उनका व्यवहार देखकर वे तुरंत समझ गए कि चोर कौन है और असली मालिक कौन। लेकिन हालांकि उन्हें पूरा यकीन था, फिर भी उन्होंने उनसे पूछा कि वे किस बात पर झगड़ रहे हैं। मालिक ने कहा, "मैंने ये मवेशी फलां गांव के एक व्यक्ति से खरीदे थे और उन्हें घर लाकर घास के मैदान में छोड़ दिया था। इस चोर ने देखा कि मैं ध्यान नहीं दे रहा हूँ और

आकर उन्हें ले गया। चारों ओर देखने पर मुझे वह दिखाई दिया और मैंने उसका पीछा करके उसे पकड़ लिया। फलां गांव के लोग जानते हैं कि मैंने मवेशी खरीदे और ले गया हूँ।" चोर ने जवाब दिया, "यह आदमी झूठ बोल रहा है, ये मेरे घर में ही पैदा हुए थे।" ऋषि ने कहा, "मैं तुम्हारे मामले का निष्पक्ष फैसला करूंगा; क्या तुम मेरे फैसले का पालन करोगे?" और उन्होंने ऐसा करने का वादा किया। फिर लोगों का दिल जीतने के बारे में सोचते हुए उन्होंने पहले चोर से पूछा, "तुमने इन मवेशियों को क्या खिलाया है और क्या पिलाया है?" "इन्हें चावल की दलिया पिलाई गई है और तिल का आटा और राजमा खिलाया गया है।" फिर उन्होंने असली मालिक से पूछा, जिसने कहा, "महाराज, मुझ जैसे गरीब आदमी को चावल की दलिया और बाकी चीजें कैसे मिल सकती हैं? मैंने तो इन्हें घास खिलाई है।" पंडित ने सभा बुलाई और खसखस के बीज मंगवाकर उन्हें ओखली में पीसकर पानी से गीला करके पशुओं को खिलाया। पशुओं ने केवल घास ही उगली। उन्होंने सभा को यह बात समझाई और फिर चोर से पूछा, "क्या तुम चोर हो?" चोर ने स्वीकार किया कि वह चोर था। पंडित ने उससे कहा, "तो अब से ऐसा पाप मत करना।" परन्तु बोधिसत्व के सेवकों ने उस व्यक्ति को उठाकर उसके हाथ-पैर काट दिए और उसे असहाय कर दिया। तब ऋषि ने उसे उपदेश देते हुए कहा, "यह कष्ट तुम्हें केवल इसी जन्म में आया है, परन्तु भविष्य में तुम्हें विभिन्न नरकों में घोर पीड़ा सहनी पड़ेगी, इसलिए अब से ऐसे कर्म त्याग दो।" उन्होंने उसे पंच आज्ञाओं का उपदेश दिया। मंत्री ने घटना का विवरण राजा को भेजा। राजा ने सेनाक से पूछा, परन्तु सेनाक ने प्रतीक्षा करने को कहा, "यह तो केवल पशुओं का मामला है और कोई भी इसका निर्णय कर सकता है।" राजा ने निष्पक्ष होकर वही आदेश भेजा। (यह बात आगे आने वाले सभी मामलों में समझी जानी चाहिए; हम सूची के अनुसार प्रत्येक मामले को क्रम से प्रस्तुत करेंगे।)

3. "**धागे का हार** ।" एक गरीब औरत ने अलग-अलग रंगों के कई धागों को एक साथ बांधकर एक हार बनाया था, जिसे उसने अपने गले से उतारकर अपने कपड़ों पर रख लिया और पंडित द्वारा बनवाए गए तालाब में नहाने चली गई। एक युवती ने उसे देखकर उस हार को पाने की इच्छा की, उसने हार उठा लिया और माँ से कहा, "माँ, यह बहुत सुंदर हार है, इसे बनाने में कितना खर्च आया होगा? मैं भी अपने लिए ऐसा ही एक हार बनाऊँगी। क्या मैं इसे अपने गले में पहनकर इसका आकार देख सकती हूँ?" माँ ने उसे अनुमति दे दी और उसने हार अपने गले में पहनकर भाग गई। यह देखकर बड़ी उम्र की औरत जल्दी से पानी से बाहर आई और अपने कपड़े पहनकर उसके पीछे भागी और उसका कपड़ा पकड़कर चिल्लाई, "तुम मेरे बनाए हुए हार को लेकर भाग रही हो।"

दूसरी ने उत्तर दिया, "मैं तुम्हारा कुछ नहीं ले रही, यह तो वह हार है जो मैं अपने गले में पहनती हूँ"; यह सुनकर वहाँ बड़ी भीड़ जमा हो गई। ऋषि लड़कों के साथ खेल रहे थे, तभी उन्होंने उन्हें सभागार के द्वार से गुजरते हुए झगड़ते सुना और पूछा कि शोर किस बात का है। जब उन्हें झगड़े का कारण पता चला, तो उन्होंने दोनों को बुलवाया और चोरनी के शांत स्वभाव से तुरंत पहचान लिया कि कौन है, और उनसे पूछा कि क्या वे उनके निर्णय का पालन करेंगी। दोनों के सहमत होने पर, उन्होंने चोरनी से पूछा, "तुम इस हार में कौन सा इत्र लगाती हो?" उसने उत्तर दिया, "मैं हमेशा इसे सब्बसंहारक से सुगंधित करती हूँ।" तब उन्होंने दूसरी से पूछा, जिसने उत्तर दिया, "मुझ जैसी गरीब औरत को सब्बसंहारक कहाँ से मिलेगा? मैं तो हमेशा इसे पियांगु के फूलों से बने इत्र से सुगंधित करती हूँ।" तब ऋषि ने पानी का एक पात्र मंगवाया और उसमें हार डाल दिया। फिर उन्होंने एक इत्र विक्रेता को बुलवाया और उसे पात्र को सूंघकर यह पता लगाने को कहा कि उसमें से क्या सुगंध आ रही है। उन्होंने पियांगू फूल की गंध को सीधे पहचान लिया और उस श्लोक का उद्धरण दिया जो पहले ही पहली पुस्तक में दिया जा चुका है:

"यह कोई सर्वभक्षी नहीं है; केवल कंगू में ही गंध होती है।"
उस दुष्ट स्त्री ने झूठ बोला; सच तो उस बुद्धिमान व्यक्ति ने बताया।
उस महान सत्ता ने वहां मौजूद सभी लोगों को सारी परिस्थितियाँ बताईं और उनमें से प्रत्येक से बारी-बारी से पूछा, "क्या तुम चोर हो? क्या तुम चोर नहीं हो?" और दोषी को कबूल करवा लिया, और उसी क्षण से उनकी बुद्धिमत्ता लोगों को ज्ञात हो गई।

4. "**सूती धागा।** " एक स्त्री जो कपास के खेतों की रखवाली करती थी, एक दिन देख रही थी। उसने कुछ साफ कपास ली और उससे महीन धागा कातकर एक गोला बनाया और उसे अपनी गोद में रख लिया। घर जाते समय उसने मन ही मन सोचा, "मैं महान ऋषि के सरोवर में स्नान करूंगी," इसलिए उसने गोले को अपने वस्त्र पर रखा और स्नान करने के लिए सरोवर में उतर गई। एक दूसरी स्त्री ने उसे देखा और उसे पाने की लालसा से उसे उठा लिया और बोली, "यह धागे का सुंदर गोला है; मैं पूछती हूँ, क्या तुमने इसे स्वयं बनाया है?" तो उसने हल्के से उंगलियां चटकाईं और उसे अपनी गोद में रख लिया, मानो उसे और करीब से देख रही हो, और उसे लेकर चली गई। (यह कहानी पहले की तरह पूरी बताई जानी है।) ऋषि ने चोर से पूछा, "जब तुमने गोला बनाया था तो उसमें क्या डाला था?" उसने उत्तर दिया, "एक कपास का बीज।" फिर उन्होंने दूसरी से पूछा, और उसने उत्तर दिया, "एक तिम्बारू का बीज।" जब भीड़ ने सबकी बात सुन ली, तो उसने रुई के गोले को खोला और उसके अंदर से एक तिम्बारू का बीज निकाला, जिससे चोरनी को अपना गुनाह कबूल करना पड़ा। बड़ी संख्या में लोग बेहद प्रसन्न हुए और मामले के निपटारे के तरीके पर तालियाँ बजाकर खुशी जाहिर की।

5. "**पुत्र** ।" एक स्त्री अपने पुत्र को लेकर ऋषि के तालाब में चेहरा धोने गई। पुत्र को नहलाने के बाद उसने उसे अपने वस्त्रों में लपेट लिया और स्वयं चेहरा धोकर नहाने चली गई। उसी क्षण एक स्त्री ने बच्चे को देखा और उसे खाने की इच्छा से उसने स्त्री का वस्त्र पकड़ लिया और कहा, "हे मित्र, यह कितना सुंदर बच्चा है, क्या यह तुम्हारा पुत्र है?" फिर उसने माँ से दूध पिलाने की अनुमति माँगी और माँ की सहमति मिलने पर उसने बच्चे को गोद में लेकर कुछ देर खेला और फिर उसे लेकर भागने की कोशिश की। स्त्री उसके पीछे दौड़ी

और उसे पकड़कर चिल्लाई, "मेरे बच्चे को कहाँ ले जा रही हो?" स्त्री ने उत्तर दिया, "बच्चे को क्यों छू रही हो? यह मेरा है।" वे झगड़ती हुई सभाघर के द्वार से गुजरीं और शोर सुनकर ऋषि ने उन्हें बुलवाया और पूछा कि क्या बात है। जब उन्होंने पूरी कहानी सुनी, यद्यपि वे उसकी लाल, बिना पलक झपकाए आँखों से तुरंत समझ गए थे कि उनमें से एक स्त्री है, फिर भी उन्होंने उनसे पूछा कि क्या वे उनके निर्णय का पालन करेंगी। उनके ऐसा करने का वादा करने पर, ऋषि ने एक रेखा खींची और बच्चे को रेखा के बीच में लिटा दिया और जिन्न से बच्चे को हाथों से और माँ को पैरों से पकड़ने को कहा। फिर उन्होंने उनसे कहा, "इसे पकड़ो और खींचो; बच्चा उसी का है जो इसे खींचकर ला सकती है।" दोनों ने खींचा, और बच्चा दर्द से कराह उठा और ज़ोर से रोया। तब माँ, जिसका हृदय मानो फटने वाला था, ने बच्चे को छोड़ दिया और रोने लगी। ऋषि ने उन दोनों से पूछा, "क्या बच्चे के प्रति माँ का हृदय कोमल है या उस स्त्री का जो माँ नहीं है?" उन्होंने उत्तर दिया, "माँ का हृदय।" "क्या वह माँ है जिसने बच्चे को थामे रखा या वह जिसने उसे छोड़ दिया?" उन्होंने उत्तर दिया, "वह जिसने उसे छोड़ दिया।" "क्या तुम जानते हो कि वह कौन है जिसने बच्चे को चुराया है?" "हम नहीं जानते, हे ऋषि।" "वह एक जिन्न है, उसने उसे खाने के लिए पकड़ा है।" जब उन्होंने पूछा कि उसे कैसे पता चला, तो उसने उत्तर दिया, "मैंने उसे उसकी बिना पलक झपकाए लाल आँखों से, उसकी परछाई न बनने से, उसकी निर्भीकता और निर्दयता से पहचाना।" फिर उसने उससे पूछा कि वह क्या है, और उसने स्वीकार किया कि वह एक जिन्न है। "तुमने बच्चे को क्यों पकड़ा?" "उसे खाने के लिए।" "अंधे मूर्ख," उसने कहा, "तुमने पुराने समय में पाप किया था और इसलिए तुम जिन्न के रूप में पैदा हुई थी; और अब भी तुम पाप करती जा रही हो, अंधे मूर्ख।" फिर उसने उसे प्रोत्साहित किया और उसे पाँच नियमों में स्थापित किया और उसे विदा कर दिया; और माँ ने उसे आशीर्वाद दिया, और यह कहते हुए, "हे मेरे स्वामी, आपकी आयु दीर्घायु हो," अपने बेटे को लेकर चली गई।

6. **"काली गेंद**एक आदमी था जिसका नाम गोलाकला था। उसके छोटे कद के कारण उसे गोला और काले रंग के कारण काला नाम मिला था। वह एक घर में सात साल तक काम करता रहा और उसकी एक पत्नी हुई, जिसका नाम दिघताला था। एक दिन उसने उससे कहा, "पत्नी, कुछ मिठाई और खाना बनाओ, हम तुम्हारे माता-पिता से मिलने चलते हैं।" पहले तो उसने मना कर दिया और कहा, "मुझे माता-पिता से क्या लेना-देना है?" लेकिन तीसरी बार कहने पर वह मान गया और कुछ केक बनाने को तैयार हो गया। कुछ खाने-पीने का सामान और एक उपहार लेकर वह उसके साथ यात्रा पर निकल पड़ा। रास्ते में उसे एक छोटी सी नदी मिली जो ज्यादा गहरी नहीं थी, लेकिन पानी से डरने के कारण वे उसे पार करने की हिम्मत नहीं कर पाए और किनारे पर खड़े हो गए। तभी दिघपित्थी नाम का एक गरीब आदमी नदी के किनारे चलते हुए वहाँ आया। उसे देखकर उन्होंने पूछा कि नदी गहरी है या उथली। यह देखकर कि वे पानी से डरते हैं, उसने बताया कि नदी बहुत गहरी है और उसमें बहुत सी खतरनाक मछलियाँ हैं। "तो फिर तुम कैसे जाओगे?" "क्या मैं इसे पार कर सकता हूँ?" "यहाँ रहने वाले मगरमच्छों और राक्षसों से मेरी दोस्ती हो गई है, इसलिए वे मुझे नुकसान नहीं पहुँचाते।" "हमें अपने साथ ले चलो," उन्होंने कहा। जब वह मान गया, तो उन्होंने उसे कुछ खाने-पीने का सामान दिया; और जब उसने अपना भोजन समाप्त कर लिया, तो उसने उनसे पूछा कि वह पहले किसे पार ले जाए। "पहले अपनी बहन को ले जाओ और फिर मुझे," गोलाकला ने कहा। तब उस आदमी ने उसे अपने कंधों पर बिठाया और खाने-पीने का सामान और उपहार लेकर नदी में उतर गया। थोड़ी दूर जाकर वह झुककर चलने लगा। गोलाकला, जब किनारे पर खड़ा था, तो मन ही मन सोचने लगा, "यह नदी ज़रूर बहुत गहरी होगी; अगर दिघापित्थी जैसे आदमी के लिए भी यह इतनी कठिन है, तो मेरे लिए तो यह पार करना नामुमकिन होगा।" जब दूसरे ने स्त्री को नदी के बीच में पहुँचा दिया, तो उसने उससे कहा, "देवी, मैं तुम्हारा ख्याल रखूँगा, और तुम सुंदर वस्त्रों, आभूषणों, नौकरों और नौकरानियों के साथ शान से रहोगी; यह बेचारा बौना तुम्हारे लिए क्या करेगा?" सुनो, मैं क्या कहता हूँ। उसने उसकी बात सुनी और अपने पति से प्रेम करना छोड़ दिया, और अजनबी पर मोहित होकर उसने सहमति जताते हुए कहा, "यदि तुम मुझे नहीं छोड़ोगे, तो मैं तुम्हारी बात मान लूँगी।" जब वे दूसरे किनारे पर पहुँचे, तो उन्होंने मनोरंजन किया और गोलाकला को वहीं रुकने के लिए कहकर छोड़ दिया। जब वह वहीं खड़ा देखता रहा, तो उन्होंने मांस और पेय खा-पी कर चले गए। जब उसने यह देखा, तो वह चिल्लाया, "उन्होंने दोस्ती कर ली है और मुझे यहाँ छोड़कर भाग रहे हैं।" वह इधर-उधर भागता रहा और थोड़ा पानी में चला गया, फिर डर के मारे वापस आ गया, और फिर उनके व्यवहार पर क्रोधित होकर उसने एक हताश छलांग लगाई और कहा, "मुझे जीने दो या मरने दो," और जब वह पूरी तरह से पानी में पहुँच गया, तो उसने पाया कि पानी कितना उथला है। इसलिए उसने पानी पार किया और उसका पीछा करते हुए चिल्लाया, "अरे दुष्ट चोर,"मेरी पत्नी को कहाँ ले जा रहे हो?" दूसरे ने उत्तर दिया, "वह तुम्हारी पत्नी कैसे है? वह तो मेरी है"; और उसने उसे गर्दन से पकड़कर घुमाया और फेंक दिया। दूसरे ने दिघताला का हाथ पकड़कर चिल्लाया, "रुको, कहाँ जा रहे हो? तुम मेरी पत्नी हो जिसे मैंने सात साल घर में काम करके पाया है"; और इस प्रकार बहस करते हुए वह हॉल के पास आ गया। वहाँ एक बड़ी भीड़ जमा हो गई। महापुरुष ने पूछा कि यह शोर किस बात का है, और उन्हें बुलवाकर और सबकी बात सुनकर पूछा कि क्या वे उसके निर्णय का पालन करेंगे। दोनों के सहमत होने पर, उसने दिघपित्थी को बुलवाया और उसका नाम पूछा। फिर उसने उसकी पत्नी का नाम पूछा, लेकिन वह उसका नाम न जानते हुए कोई दूसरा नाम बता बैठा।

फिर उन्होंने उससे उसके माता-पिता के नाम पूछे और उसने बता दिए, लेकिन जब उन्होंने उससे उसकी पत्नी के माता-पिता के नाम पूछे तो वह न जानते हुए कुछ और नाम बता बैठा। ऋषि ने उसकी कहानी समझ ली और उसे वहाँ से हटवा दिया। फिर उन्होंने दूसरे को बुलवाया और उसी तरह सबसे सबके नाम पूछे। वह सच्चाई जानता था, इसलिए उसने सही-सही नाम बताए। फिर उन्होंने उसे भी हटवा दिया और दिघताला को बुलवाया और उससे उसका नाम पूछा, उसने बता दिया। फिर उन्होंने उससे उसके पति का नाम पूछा और वह न

जानते हुए गलत नाम बता बैठी। फिर उन्होंने उससे उसके माता-पिता के नाम पूछे और उसने सही-सही बताए, लेकिन जब उन्होंने उससे उसके पति के माता-पिता के नाम पूछे तो वह बेतरतीब ढंग से बोलती रही और गलत नाम बता दिए। फिर ऋषि ने बाकी दो को बुलवाया और लोगों से पूछा, "क्या इस स्त्री की कहानी दिघपित्थी या गोलकला से मेल खाती है?" उन्होंने उत्तर दिया, "गोलकला से।" फिर उन्होंने अपना फैसला सुनाया, "यह आदमी उसका पति है, दूसरा चोर है"; और जब उन्होंने उससे पूछताछ की तो उसने कबूल कर लिया कि उसने चोर का काम किया था।

7. "**रथ** ।" एक व्यक्ति रथ में बैठा था, वह अपना चेहरा धोने के लिए नीचे उतरा। उसी समय सक्का (इंद्र) विचार कर रहे थे और जब उन्होंने ऋषि को देखा तो उन्होंने निश्चय किया कि वे बुद्ध के भ्रूण स्वरूप महोषधा की शक्ति और ज्ञान का प्रचार करेंगे। अतः वे मनुष्य के रूप में नीचे उतरे और रथ के पीछे-पीछे चलने लगे। रथ में बैठे व्यक्ति ने पूछा, "आप क्यों आए हैं?" उन्होंने उत्तर दिया, "आपकी सेवा करने।" व्यक्ति मान गया और मूत्र त्याग के लिए रथ से उतरकर एक तरफ चला गया। तुरंत ही सक्का (इंद्र) रथ में सवार होकर तेजी से चल दिए। रथ का स्वामी अपना काम पूरा करके लौटा; और जब उसने सक्का (इंद्र) को रथ लेकर तेजी से जाते देखा, तो वह तेजी से उनके पीछे दौड़ा और चिल्लाया, "रुको, रुको, मेरा रथ कहाँ ले जा रहे हो?" सक्का (इंद्र) ने उत्तर दिया, "तुम्हारा रथ कोई और होगा, यह मेरा है।" इस प्रकार वाद-विवाद करते हुए वे सभागार के द्वार पर पहुँचे। ऋषि ने पूछा, "यह क्या है?" और उन्होंने उसे बुलवाया: जब वह आया, तो उसकी निर्भीकता और उसकी न झपकती आँखों से ऋषि जान गए कि यह सक्का (इंद्र) है और दूसरा उसका स्वामी है। फिर भी उन्होंने झगड़े का कारण पूछा और उनसे कहा, "क्या तुम मेरे निर्णय का पालन करोगे?" उन्होंने कहा, "हाँ।" उन्होंने आगे कहा, "मैं रथ चलवाऊँगा, और तुम दोनों को पीछे से पकड़कर रखना होगा: स्वामी नहीं छोड़ेगा, दूसरा छोड़ देगा।" फिर उन्होंने एक व्यक्ति को रथ चलाने को कहा, और उसने ऐसा किया, बाकी लोग पीछे से पकड़े रहे। स्वामी थोड़ी दूर गया, फिर आगे दौड़ने में असमर्थ होकर उसने छोड़ दिया, लेकिन सक्का (इंद्र) रथ के साथ दौड़ते रहे। जब उन्होंने रथ को वापस बुलाया, तो ऋषि ने लोगों से कहा: "यह व्यक्ति थोड़ी दूर दौड़ा और छोड़ दिया; दूसरा रथ के साथ दौड़ा और वापस आ गया, फिर भी उसके शरीर पर पसीने की एक बूँद भी नहीं है, न ही वह हाँफ रहा है, वह निर्भीक है, उसकी आँखें नहीं झपकतीं, यह सक्का (इंद्र) है, देवताओं (देवदूतों) का राजा।" फिर उसने पूछा, "क्या आप देवताओं (देवदूतों) के राजा हैं?" "हाँ।" "आप यहाँ क्यों आए हैं?" "हे ऋषि, अपनी बुद्धिमत्ता का प्रचार करने!" "तो फिर," उसने कहा, "ऐसा दोबारा मत करना।" तब सक्का (इंद्र) ने हवा में स्थिर खड़े होकर अपनी शक्ति का प्रदर्शन किया और ऋषि की प्रशंसा करते हुए कहा, "यह तो बुद्धिमत्तापूर्ण निर्णय है!" फिर वह अपने स्थान पर चला गया। तब मंत्री बिना बुलाए राजा के पास गया और बोला, "हे महान राजा, रथ प्रश्न का इस प्रकार हल हुआ: और यहाँ तक कि सक्का (इंद्र) भी उनके द्वारा पराजित हो गया; आप मनुष्यों में श्रेष्ठता क्यों नहीं पहचानते?" राजा ने सेनाक से पूछा, "सेनक, क्या तुम क्या कहते हो, क्या हम ऋषि को यहाँ बुलाएँ?" सेनाक ने उत्तर दिया, "केवल यही ऋषि की पहचान नहीं है। कुछ समय प्रतीक्षा करो: मैं उनकी परीक्षा लेकर पता लगाऊँगा।"

8. "**खंभा** ।" एक दिन, ऋषि की परीक्षा लेने के उद्देश्य से, वे एक बबूल का खंभा लाए, और उसमें से लगभग एक बित्ता काटकर, उसे एक खराद कारीगर से अच्छी तरह चिकना करवाया, और उसे पूर्वी बाज़ार नगर भेज दिया, साथ में यह संदेश भी भेजा: "बाज़ार नगर के लोग ज्ञान के लिए प्रसिद्ध हैं। वे पता लगाएँ कि इस खंभे का शीर्ष कौन सा है और जड़ कौन सी है। यदि वे पता नहीं लगा पाए, तो एक हज़ार सिक्कों का जुर्माना है।" लोग इकट्ठा हुए, लेकिन पता नहीं लगा सके, और उन्होंने अपने प्रबंधक से कहा, "शायद ऋषि महोसाधा को पता हो; उन्हें बुलवाकर पूछिए।" प्रबंधक ने ऋषि को उनके खेल के मैदान से बुलवाया, और उन्हें सारी बात बताई कि वे पता नहीं लगा पाए, लेकिन शायद वे पता लगा सकें। ऋषि ने मन ही मन सोचा, "राजा को यह जानने से कुछ लाभ नहीं होगा कि शीर्ष कौन सा है और जड़ कौन सी है; निस्संदेह यह मेरी परीक्षा लेने के लिए भेजा गया है।" उन्होंने कहा, "इसे यहाँ लाओ, मेरे मित्रों, मैं पता लगाऊँगा।" उसे हाथ में लेकर, उन्होंने जान लिया कि शीर्ष कौन सा है और जड़ कौन सी है; फिर भी, लोगों को प्रसन्न करने के लिए, उन्होंने पानी का एक घड़ा मंगवाया और छड़ी के मध्य में एक डोरी बाँधी, और डोरी के सिरे से पकड़कर उसे पानी की सतह पर लटका दिया। जड़ भारी होने के कारण पहले डूब गई। तब उन्होंने लोगों से पूछा, "क्या पेड़ की जड़ भारी होती है या उसका ऊपरी भाग?" "जड़, महाराज!" "देखो, यह भाग पहले डूबता है, और इसलिए यही जड़ है।" इस संकेत से उन्होंने जड़ को ऊपरी भाग से अलग किया। लोगों ने जड़ और ऊपरी भाग में अंतर बताकर उसे राजा के पास वापस भेज दिया। राजा प्रसन्न हुए और पूछा, यह किसने पता लगाया? उन्होंने कहा, "ऋषि महोषधा, जो अग्रभागी सिरिवद्धि के पुत्र हैं।" "सेनक, क्या हम उन्हें बुलवाएँ?" उन्होंने पूछा। "प्रभु, महाराज," उन्होंने उत्तर दिया, "चलिए, हम उनसे दूसरे तरीके से जाँच करते हैं।"

9. "**सिर।** " एक दिन दो सिर लाए गए, एक स्त्री का और एक पुरुष का; इन्हें पहचान के लिए भेजा गया, और पहचान न होने पर एक हजार सिक्कों का जुर्माना लगाया गया। गाँव वाले निर्णय नहीं कर पाए और उन्होंने ईश्वर से पूछा। उन्होंने देखते ही पहचान लिया, क्योंकि कहते हैं कि पुरुष के सिर की जोड़ियाँ सीधी होती हैं और स्त्री के सिर की जोड़ियाँ टेढ़ी होती हैं। इसी संकेत से उन्होंने बता दिया कि कौन सा सिर किसका है; और उन्हें राजा के पास वापस भेज दिया गया। बाकी कहानी पहले जैसी ही है।

10. "**सांप** ।" एक दिन एक नर और एक मादा सांप को लाया गया और ग्रामीणों के पास भेजा गया ताकि वे तय कर सकें कि कौन सा नर है और कौन सा मादा। उन्होंने एक ऋषि से पूछा, और उन्होंने देखते ही पहचान लिया; क्योंकि नर सांप की पूंछ मोटी होती है, मादा की पतली; नर सांप का सिर मोटा होता है, मादा का लंबा; नर की आंखें बड़ी होती हैं, मादा की छोटी; नर का सिर गोल होता है, मादा का छोटा। इन लक्षणों से उन्होंने नर और मादा में अंतर किया। बाकी सब पहले जैसा ही है।

11. "**मुर्गा** ।" एक दिन पूर्वी बाज़ार कस्बे के लोगों को यह संदेश भेजा गया: "हमें एक सफेद बैल भेजो, जिसके पैरों में सींग हों, सिर पर कूबड़ हो, और जो नियमित रूप से तीन बार बांग देता हो; अन्यथा एक हजार सिक्कों का जुर्माना है।" एक भी न जानते हुए, उन्होंने एक ज्ञानी व्यक्ति से पूछा। उन्होंने कहा: "राजा चाहते हैं कि आप उन्हें एक मुर्गा भेजें। इस प्राणी के पैरों में सींग होते हैं; सिर पर कूबड़ होता है; और यह नियमित रूप से तीन बार बांग देता है। तो उन्हें वैसा ही मुर्गा भेजो जैसा उन्होंने बताया है।" उन्होंने एक मुर्गा भेज दिया।
12. "**रत्न** ।" जो रत्न इंद्र ने राजा कुश को दिया था, वह अष्टकोणीय था। उसका धागा टूट गया था और कोई भी पुराने धागे को निकालकर नया धागा नहीं लगा पा रहा था। एक दिन ग्रामीणों ने यह रत्न भेजा और साथ में निर्देश दिया कि पुराना धागा निकालकर नया लगा दें; लेकिन वे न तो यह कर पाए और न ही वह, और अपनी परेशानी बताते हुए उन्होंने ऋषि को बताया। उन्होंने उनसे कहा कि वे भयभीत न हों और शहद का एक टुकड़ा मांगा। उन्होंने शहद से रत्न के दोनों छिद्रों को भर दिया और ऊन का एक धागा मोड़कर उसके सिरे पर भी शहद लगा दिया। उन्होंने उसे छिद्र में थोड़ा अंदर तक डाला और चींटियों के आने-जाने वाली जगह पर रख दिया। शहद की गंध से चींटियां अपने बिल से बाहर आईं और पुराने धागे को खाकर ऊन के धागे के सिरे को काटकर दूसरे सिरे से खींच लिया। जब उन्होंने देखा कि धागा आर-पार हो गया है, तो उन्होंने उनसे कहा कि इसे राजा को भेंट करें। राजा यह सुनकर प्रसन्न हुए कि धागा कैसे लगाया गया था।
13. "**बछड़े का जन्म** ।" शाही बैल को कुछ महीनों तक खूब खिलाया-पिलाया गया, जिससे उसका पेट फूल गया। उसके सींग धोए गए, तेल से अभिषेक किया गया और हल्दी से स्नान कराया गया। फिर उसे पूर्वी बाज़ार नगर भेजा गया और यह संदेश दिया गया: "तुम ज्ञान के लिए प्रसिद्ध हो। राजा का शाही बैल, गर्भवती है; उसे सौंप दो और बछड़े के साथ वापस भेज दो, अन्यथा एक हजार सिक्कों का जुर्माना है।" गाँव वाले असमंजस में पड़ गए और ऋषि से प्रार्थना की; जिन्होंने एक प्रश्न का उत्तर दूसरे से देना उचित समझा और पूछा, "क्या तुम्हें कोई ऐसा साहसी व्यक्ति मिल सकता है जो राजा से बात कर सके?" उन्होंने उत्तर दिया, "यह कोई कठिन काम नहीं है।" अतः उन्होंने उसे बुलाया, और उस महान सत्ता ने कहा—"हे मेरे सज्जन, अपने बाल कंधों पर खोलकर महल के द्वार पर जाओ और विलाप करते हुए पीड़ा से रोते रहो। राजा के सिवा किसी को उत्तर मत देना, केवल विलाप करना; और यदि राजा तुम्हें बुलाकर विलाप का कारण पूछे, तो कहना, "सात दिनों से मेरा पुत्र प्रसव पीड़ा से पीड़ित है और जन्म नहीं दे पा रहा है; हे मेरी सहायता करो! मुझे बताओ कि मैं उसे कैसे जन्म दे सकूँ!" तब राजा कहेगा, "यह कैसी मूर्खता है! यह असंभव है; पुरुष बच्चे पैदा नहीं करते।" तब तुम्हें कहना, "यदि यह सच है, तो पूर्वी बाज़ार नगर के लोग आपके शाही बैल को बछड़ा कैसे दे सकते हैं?" जैसा उससे कहा गया, उसने वैसा ही किया। राजा ने पूछा कि यह व्यंग्य किसने सोचा था; और यह सुनकर कि यह ऋषि महोषध ने सोचा था, वह प्रसन्न हुआ।
14. "**उबले हुए चावल** ।" एक और दिन, ऋषि की परीक्षा लेने के लिए, यह संदेश भेजा गया: "पूर्वी बाज़ार नगर के लोगों को आठ शर्तों के तहत पके हुए उबले हुए चावल हमें भेजने होंगे, और ये शर्तें हैं - चावल के बिना, पानी के बिना, बर्तन के बिना, चूल्हे के बिना, आग के बिना, लकड़ी के बिना, और किसी स्त्री या पुरुष द्वारा सड़क के रास्ते से न ले जाए जाएं। यदि वे ऐसा नहीं कर सकते, तो एक हजार सिक्कों का जुर्माना है।" लोग व्याकुल होकर ऋषि के पास गए; जिन्होंने कहा, "चिंता मत करो, कुछ टूटे हुए चावल लो, क्योंकि वह चावल नहीं है; बर्फ लो, क्योंकि वह पानी नहीं है; एक मिट्टी का कटोरा लो, जो बर्तन नहीं है; लकड़ी के कुछ टुकड़े काटो, जो चूल्हा नहीं हैं; उचित आग के बजाय रगड़कर आग जलाओ; लकड़ी के बजाय पत्ते लो; अपने खट्टे चावल पकाओ, उसे एक नए बर्तन में डालो, अच्छी तरह दबाओ, उसे एक हिजड़े के सिर पर रखो, जो न तो पुरुष है और न ही स्त्री, मुख्य सड़क छोड़कर एक पगडंडी पर जाओ, और उसे राजा के पास ले जाओ।" उन्होंने ऐसा ही किया; और जब राजा को पता चला कि इस प्रश्न का समाधान किसने किया है, तो वह प्रसन्न हुआ।
15. "**रेत** ..." एक दिन, ऋषि की परीक्षा लेने के लिए, उन्होंने ग्रामीणों को यह संदेश भेजा: "राजा झूले पर आनंद लेना चाहते हैं, और पुरानी रस्सी टूट गई है; आपको रेत की रस्सी बनानी होगी, अन्यथा एक हजार सिक्कों का जुर्माना देना होगा।" वे समझ नहीं पा रहे थे कि क्या करें, और उन्होंने ऋषि से प्रार्थना की, जिन्होंने देखा कि यह एक प्रतिप्रश्न का अवसर है। उन्होंने लोगों को आश्वस्त किया; और दो-तीन चतुर वक्ताओं को बुलवाकर उन्हें राजा से यह कहने को कहा: "महाराज, ग्रामीणों को नहीं पता कि रेत की रस्सी मोटी होनी चाहिए या पतली; उन्हें पुरानी रस्सी का एक टुकड़ा भेजें, जो एक बित्ता या चार उंगलियों जितना लंबा हो; वे इसे देखेंगे और उसी आकार की रस्सी बना लेंगे।" यदि राजा उत्तर दें, "मेरे घर में कभी रेत की रस्सी नहीं थी," तो उन्हें उत्तर देना था, "यदि महाराज रेत की रस्सी नहीं बना सकते, तो ग्रामीण कैसे बना सकते हैं?" उन्होंने ऐसा ही किया; और राजा यह सुनकर प्रसन्न हुए कि ऋषि ने इस प्रतिप्रश्न के बारे में सोचा था।
16. "**तालाब** ।" एक और दिन, संदेश आया: "राजा उसके साथ पानी में खेलना चाहता है; आपको मुझे पांचों प्रकार की कमलों से ढका हुआ एक नया तालाब भेजना होगा, अन्यथा एक हजार सिक्कों का जुर्माना है।" उन्होंने यह बात ऋषि को बताई, जिन्होंने समझ लिया कि उन्हें एक जवाबी टिप्पणी की आवश्यकता है। उसने कई वाक्पटु पुरुषों को बुलवाया और उनसे कहा: "जाओ और पानी में तब तक खेलो जब तक तुम्हारी आँखें लाल न हो जाएँ, गीले बालों और गीले कपड़ों में, पूरे शरीर पर कीचड़ लगे हुए, हाथों में रस्सियाँ, लाठियाँ और पत्थर लिए महल के द्वार पर जाओ; राजा को अपने आने की सूचना भेजो, और जब तुम्हें अंदर आने दिया जाए तो उनसे कहो, महाराज, जैसा कि महाराज ने पूर्वी बाज़ार नगर के लोगों को आपके लिए एक तालाब भेजने का आदेश दिया था, हम आपकी पसंद के अनुसार एक बड़ा तालाब लाए थे; लेकिन जंगल में रहने की आदी होने के कारण, जैसे ही उसने शहर को उसकी दीवारों, खाईयों और पहरेदार मीनारों के साथ देखा, वह डर गई और रस्सियाँ तोड़कर जंगल में भाग गई: हमने उस पर पत्थर फेंके और लाठियों से पीटा

लेकिन उसे वापस नहीं ला सके। तो हमें वह पुराना तालाब दे दो जिसके बारे में कहा जाता है कि महाराज जंगल से लाए थे, और हम उन्हें एक साथ जोड़कर दूसरा तालाब वापस ले आएंगे। राजा कहेंगे, मैंने कभी जंगल से कोई तालाब नहीं मंगवाया, और न ही कभी वहाँ कोई तालाब भेजा जिसे जोड़कर लाया जाए।" एक और! फिर आपको कहना होगा, "अगर ऐसा है, तो ग्रामीण आपको टैंक कैसे भेज सकते हैं?" उन्होंने ऐसा ही किया; और राजा यह सुनकर प्रसन्न हुए कि ऋषि ने इस बारे में सोचा था।

17. "**पार्क।**" एक दिन फिर राजा ने संदेश भेजा: "मैं पार्क में खेलना चाहता हूँ, और मेरा पार्क पुराना हो गया है। पूर्वी बाज़ार नगर के लोगों को मुझे पेड़ों और फूलों से भरा एक नया पार्क भेजना होगा।" ऋषि ने पहले की तरह उन्हें आश्वस्त किया और अपने आदमियों को उसी तरह बात करने के लिए भेजा जैसा ऊपर बताया गया था।

18.तब राजा प्रसन्न हुए और सेनाक से बोले, "सेनाक, क्या हम ऋषि को बुलवाएँ?" परन्तु सेनाक, राजा की समृद्धि से ईर्ष्या करते हुए बोले, "केवल समृद्धि ही ऋषि की पहचान नहीं होती; प्रतीक्षा कीजिए।" यह सुनकर राजा ने मन ही मन सोचा, "ऋषि महोषधा तो बचपन से ही बुद्धिमान थे और मुझे बहुत प्रिय हैं। इन सभी रहस्यमयी परीक्षाओं और व्यंग्य-प्रवचनों में उन्होंने बुद्ध के समान उत्तर दिए हैं। फिर भी सेनाक जैसा बुद्धिमान व्यक्ति मुझे अपने पास बुलाने नहीं दे रहा। सेनाक की मुझे क्या परवाह? मैं उसे यहाँ लाऊँगा।" अतः वे अपने शाही घोड़े पर सवार होकर अपने दल-भाँति गाँव के लिए निकल पड़े। परन्तु जाते-जाते घोड़े का पैर एक गड्ढे में पड़ गया और उसकी टांग टूट गई; अतः राजा उस स्थान से वापस नगर लौट आए। तब सेनाक राजा के समक्ष उपस्थित हुए और बोले, "महाराज, क्या आप ऋषि को वापस लाने के लिए पूर्वी बाजार नगर गए थे?" "जी महाराज," राजा ने कहा। सेनाक ने कहा, "महाराज, आपने मुझे महत्वहीन समझा है। मैंने आपसे कुछ समय प्रतीक्षा करने का अनुरोध किया था; लेकिन आप जल्दी में चले गए और आते ही आपके शाही घोड़े की टांग टूट गई।" राजा को इस पर कोई जवाब नहीं मिला। एक दिन फिर उन्होंने सेनाक से पूछा, "क्या हम ऋषि को बुलवाएँ, सेनाक?" "यदि ऐसा है, महाराज, तो आप स्वयं न जाइए, बल्कि एक दूत भेजिए और कहिए, हे ऋषि! जब मैं आपको लेने जा रहा था, तो मेरे घोड़े की टांग टूट गई: हमें एक बेहतर और उत्तम घोड़ा भेजिए। यदि वह पहला विकल्प चुनेगा तो स्वयं आएगा, यदि दूसरा, तो वह अपने पिता को भेजेगा। तब उसकी परीक्षा लेना मुश्किल होगा।" राजा ने यह संदेश लेकर एक दूत भेजा। ऋषि ने यह सुनकर समझ लिया कि राजा स्वयं और अपने पिता से मिलना चाहते हैं। अतः वह अपने पिता के पास गया और उन्हें प्रणाम करते हुए बोला, "पिताजी, राजा आपसे और मुझसे मिलना चाहते हैं। आप पहले एक हजार व्यापारियों के साथ जाइए; और जब आप जाइए, तो खाली हाथ मत जाइए, बल्कि चंदन की एक पेटी में ताजा घी भरकर ले जाइए। राजा आपसे स्नेहपूर्वक बात करेंगे और आपको गृहस्थ आसन देंगे; आप उसे ग्रहण करके बैठ जाइए। जब आप बैठ जाएँगे, मैं आऊँगा; राजा मुझसे भी स्नेहपूर्वक बात करेंगे और मुझे भी ऐसा ही आसन देंगे। तब मैं आपकी ओर देखूँगा; आप संकेत समझकर अपने आसन से उठकर कहेंगे, हे ज्ञानवान पुत्र महोसाधा, इस आसन पर बैठ जाइए। तब प्रश्न हल होने के लिए तैयार हो जाएगा।" उसने ऐसा ही किया। महल के द्वार पर पहुँचकर उसने राजा को अपने आगमन की सूचना दी, और राजा के निमंत्रण पर वह अंदर गया, राजा को प्रणाम किया और एक तरफ खड़ा हो गया। राजा ने उससे स्नेहपूर्वक बात की और पूछा कि उसका ज्ञानवान पुत्र महोसाधा कहाँ है। "मेरे पीछे आ रहा हूँ, महाराज।" राजा को उसके आने की खबर सुनकर प्रसन्नता हुई और उसने पिता को उपयुक्त स्थान पर बैठने के लिए कहा। उसने एक स्थान ढूँढ़ा और वहाँ बैठ गया। इसी बीच, महान सत्ता ने अपने पूरे वैभव को धारण किया और हज़ार युवकों के साथ एक भव्य रथ पर सवार होकर आई। जैसे ही वह नगर में प्रवेश किया, उसने एक खाई के किनारे एक गधा देखा।और उन्होंने कुछ बलवान पुरुषों को गधे का मुँह बाँधने का आदेश दिया ताकि वह शोर न करे, उसे एक थैले में डालकर अपने कंधों पर उठा लें। उन्होंने वैसा ही किया; बोधिसत्व अपने विशाल दल के साथ नगर में प्रवेश कर गए। लोग उनकी प्रशंसा करते-करते थक नहीं रहे थे। वे चिल्लाए, "यह तो ज्ञानी महोषद हैं, व्यापारी सिरिवद्धक के पुत्र; कहते हैं कि यही वह हैं जो जन्म से ही हाथ में पुण्य की जड़ी बूटी लिए हुए थे; यही वह हैं जिन्होंने अपने सामने रखी अनेकों समस्याओं के उत्तर जान लिए थे।" महल के समक्ष पहुँचकर उन्होंने अपने आने की सूचना भेजी। राजा यह सुनकर प्रसन्न हुए और बोले, "मेरे पुत्र ज्ञानी महोषद को शीघ्र आने दीजिए।" अतः वे अपने सेवकों के साथ महल में प्रवेश कर राजा को प्रणाम करके एक तरफ खड़े हो गए। राजा उन्हें देखकर प्रसन्न हुए और उनसे मधुरता से बात की, और उन्हें बैठने के लिए उपयुक्त स्थान ढूँढ़ने को कहा। उन्होंने अपने पिता की ओर देखा, और उनके पिता ने यह संकेत समझकर अपनी कुर्सी से उठकर उन्हें बैठने के लिए आमंत्रित किया, जिस पर वे बैठ गए। यह देखकर वहाँ मौजूद मूर्ख लोग, सेनाक, पुक्कुसा, कविंदा, देविंदा और अन्य, उसे वहाँ बैठे देखकर ताली बजाने लगे और ज़ोर से हँसने लगे और चिल्लाए, "यह वही अंधा मूर्ख है जिसे लोग बुद्धिमान कहते हैं! इसने अपने पिता को सिंहासन से उठा दिया है और स्वयं वहाँ बैठा है! इसे बुद्धिमान कहना उचित नहीं है।" राजा भी निराश हो गया। तब उस महान सत्ता ने कहा, "हे महाराज! क्या आप दुखी हैं?" "जी हे महाराज, मैं दुखी हूँ। आपके बारे में सुनकर मुझे प्रसन्नता हुई थी, परन्तु आपको देखकर प्रसन्नता नहीं हुई।" "क्यों?" "क्योंकि आपने अपने पिता को सिंहासन से उठा दिया है और स्वयं वहाँ बैठे हैं।" "क्या, महाराज! क्या आप सोचते हैं कि हर मामले में पिता पुत्रों से श्रेष्ठ होता है?" "जी महाराज।" "क्या आपने मुझे बेहतर घोड़ा या अधिक उत्तम घोड़ा लाने के लिए संदेश नहीं भेजा था?" ऐसा कहकर वह उठा और उन युवकों की ओर देखकर बोला, "जो गधा तुम लाए हो उसे अंदर लाओ।" उस गधे को राजा के सामने रखकर उसने पूछा, "महाराज, इस गधे की कीमत क्या है?" राजा ने कहा, "यदि यह उपयोगी है, तो इसकी कीमत आठ रुपये है।" "पर यदि इससे एक शुद्ध नस्ल की सिंधी घोड़ी से खच्चर का बच्चा पैदा हो, तो उसकी कीमत क्या होगी?" "वह अनमोल होगा।" "महाराज, आप ऐसा क्यों कहते हैं? क्या आपने अभी-अभी यह नहीं कहा कि हर मामले में पिता, पुत्रों से श्रेष्ठ होता है? आपके अपने ही कथन के अनुसार गधा खच्चर के बच्चे से अधिक मूल्यवान है। क्या आपके बुद्धिमानों ने यह न जानकर मुझ पर ताली नहीं बजाई और हँसे नहीं? आपके बुद्धिमानों की यह कैसी

बुद्धिमत्ता है! आपने उन्हें कहाँ से प्राप्त किया?" और उन चारों के प्रति तिरस्कार व्यक्त करते हुए उसने राजा को प्रथम पुस्तक के इस श्लोक में संबोधित किया:जो जन्म से ही अपने हाथ में पुण्य की जड़ी बूटी लिए हुए था; वही है जिसने अपनी परीक्षा लेने वाली अनेक समस्याओं के उत्तर जाने। महल के समक्ष पहुँचकर उसने अपने आने की सूचना भेजी। राजा यह सुनकर प्रसन्न हुआ और बोला, "मेरे पुत्र, ज्ञानी महोषद, शीघ्र अंदर आएँ।" अतः वह अपने सेवकों के साथ महल में प्रवेश किया और राजा को प्रणाम करके एक तरफ खड़ा हो गया। राजा उसे देखकर प्रसन्न हुआ और उससे मधुरता से बात की, और उसे बैठने के लिए उपयुक्त स्थान ढूँढ़ने को कहा। उसने अपने पिता की ओर देखा, और उसके पिता ने यह संकेत समझकर अपनी कुर्सी से उठकर उसे बैठने के लिए आमंत्रित किया, जिस पर वह बैठ गया। इस पर वहाँ उपस्थित मूर्ख पुरुष, सेनाक, पुक्कुसा, कविन्द, देविन्द और अन्य, उसे वहाँ बैठे देखकर तालियाँ बजाने लगे और ज़ोर से हँसने लगे और चिल्लाए, "यह वही अंधा मूर्ख है जिसे ज्ञानी कहते हैं! इसने अपने पिता को कुर्सी से उठवा दिया है, और स्वयं वहाँ बैठा है! इसे ज्ञानी कहना उचित नहीं है।" राजा भी निराश हो गया। तब उस महान सत्ता ने कहा, "हे मेरे स्वामी! क्या तुम दुखी हो?" "जी, महाराज, मैं दुखी हूँ। आपके बारे में सुनकर मुझे खुशी हुई थी, लेकिन आपको देखकर मुझे खुशी नहीं हुई।" "क्यों?" "क्योंकि आपने अपने पिता को उनकी गद्दी से उठाकर खुद वहाँ बैठा दिया है।" "क्या, महाराज! क्या आप सोचते हैं कि हर हाल में पिता पुत्रों से श्रेष्ठ होता है?" "जी, महाराज।" "क्या आपने मुझे बेहतर घोड़ा या अधिक उत्तम घोड़ा लाने के लिए संदेश नहीं भेजा था?" ऐसा कहकर वह उठे और युवकों की ओर देखकर बोले, "जो गधा लाए हो, उसे अंदर लाओ।" उस गधे को राजा के सामने रखकर उन्होंने पूछा, "महाराज, इस गधे की कीमत क्या है?" राजा ने कहा, "यदि यह उपयोगी है, तो इसकी कीमत आठ रुपये है।" "लेकिन यदि इससे एक शुद्ध नस्ल की सिंधी घोड़ी से खच्चर का बच्चा पैदा हो, तो उसकी कीमत क्या होगी?" "यह अनमोल होगा।" "ऐसा क्यों कहते हैं, महाराज? क्या आपने अभी-अभी यह नहीं कहा कि हर हाल में पिता पुत्रों से श्रेष्ठ होता है?" तुम्हारे ही कहे अनुसार गधे का मूल्य खच्चर के बच्चे से अधिक है। क्या तुम्हारे बुद्धिमानों ने यह न जानने पर मेरा मज़ाक नहीं उड़ाया? तुम्हारे बुद्धिमानों की यह कैसी बुद्धिमत्ता है! तुमने इन्हें कहाँ से प्राप्त किया? और उन चारों के प्रति तिरस्कार व्यक्त करते हुए उसने प्रथम पुस्तक के इस श्लोक में राजा को संबोधित किया:जो जन्म से ही अपने हाथ में पुण्य की जड़ी बूटी लिए हुए था; वही है जिसने अपनी परीक्षा लेने वाली अनेक समस्याओं के उत्तर जाने। महल के समक्ष पहुँचकर उसने अपने आने की सूचना भेजी। राजा यह सुनकर प्रसन्न हुआ और बोला, "मेरे पुत्र, ज्ञानी महोषद, शीघ्र अंदर आएँ।" अतः वह अपने सेवकों के साथ महल में प्रवेश किया और राजा को प्रणाम करके एक तरफ खड़ा हो गया। राजा उसे देखकर प्रसन्न हुआ और उससे मधुरता से बात की, और उसे बैठने के लिए उपयुक्त स्थान ढूँढ़ने को कहा। उसने अपने पिता की ओर देखा, और उसके पिता ने यह संकेत समझकर अपनी कुर्सी से उठकर उसे बैठने के लिए आमंत्रित किया, जिस पर वह बैठ गया। इस पर वहाँ उपस्थित मूर्ख पुरुष, सेनाक, पुक्कुसा, कविन्द, देविन्द और अन्य, उसे वहाँ बैठे देखकर तालियाँ बजाने लगे और ज़ोर से हँसने लगे और चिल्लाए, "यह वही अंधा मूर्ख है जिसे ज्ञानी कहते हैं! इसने अपने पिता को कुर्सी से उठवा दिया है, और स्वयं वहाँ बैठा है! इसे ज्ञानी कहना उचित नहीं है।" राजा भी निराश हो गया। तब उस महान सत्ता ने कहा, "हे मेरे स्वामी! क्या तुम दुखी हो?" "जी, महाराज, मैं दुखी हूँ। आपके बारे में सुनकर मुझे खुशी हुई थी, लेकिन आपको देखकर मुझे खुशी नहीं हुई।" "क्यों?" "क्योंकि आपने अपने पिता को उनकी गद्दी से उठाकर खुद वहाँ बैठा दिया है।" "क्या, महाराज! क्या आप सोचते हैं कि हर हाल में पिता पुत्रों से श्रेष्ठ होता है?" "जी, महाराज।" "क्या आपने मुझे बेहतर घोड़ा या अधिक उत्तम घोड़ा लाने के लिए संदेश नहीं भेजा था?" ऐसा कहकर वह उठे और युवकों की ओर देखकर बोले, "जो गधा लाए हो, उसे अंदर लाओ।" उस गधे को राजा के सामने रखकर उन्होंने पूछा, "महाराज, इस गधे की कीमत क्या है?" राजा ने कहा, "यदि यह उपयोगी है, तो इसकी कीमत आठ रुपये है।" "लेकिन यदि इससे एक शुद्ध नस्ल की सिंधी घोड़ी से खच्चर का बच्चा पैदा हो, तो उसकी कीमत क्या होगी?" "यह अनमोल होगा।" "ऐसा क्यों कहते हैं, महाराज? क्या आपने अभी-अभी यह नहीं कहा कि हर हाल में पिता पुत्रों से श्रेष्ठ होता है?" तुम्हारे ही कहे अनुसार गधे का मूल्य खच्चर के बच्चे से अधिक है। क्या तुम्हारे बुद्धिमानों ने यह न जानने पर मेरा मज़ाक नहीं उड़ाया? तुम्हारे बुद्धिमानों की यह कैसी बुद्धिमत्ता है! तुमने इन्हें कहाँ से प्राप्त किया? और उन चारों के प्रति तिरस्कार व्यक्त करते हुए उसने प्रथम पुस्तक के इस श्लोक में राजा को संबोधित किया:"यह वही अंधा मूर्ख है जिसे लोग बुद्धिमान कहते हैं! इसने अपने पिता को सिंहासन से उठा दिया है और स्वयं वहाँ बैठा है! इसे बुद्धिमान कहना उचित नहीं है।" राजा भी निराश हो गया। तब उस महान सत्ता ने कहा, "हे महाराज! क्या आप दुखी हैं?" "जी हे महाराज, मैं दुखी हूँ। आपके बारे में सुनकर मुझे प्रसन्नता हुई थी, परन्तु आपको देखकर प्रसन्नता नहीं हुई।" "क्यों?" "क्योंकि आपने अपने पिता को सिंहासन से उठा दिया है और स्वयं वहाँ बैठ गए हैं।" "क्या, महाराज! क्या आप सोचते हैं कि हर मामले में पिता पुत्रों से श्रेष्ठ होता है?" "जी महाराज।" "क्या आपने मुझे बेहतर घोड़ा या उत्तम घोड़ा लाने का संदेश नहीं भेजा था?" ऐसा कहकर वह उठा और युवकों की ओर देखकर बोला, "जो गधा तुम लाए हो उसे अंदर लाओ।" उस गधे को राजा के सामने रखकर उसने पूछा, "महाराज, इस गधे का क्या मूल्य है?" राजा ने कहा, "यदि यह उपयोगी है, तो इसका मूल्य आठ रुपये है।" "पर यदि वह एक शुद्ध नस्ल की सिंधी घोड़ी से खच्चर का बच्चा पैदा करे, तो उसकी कीमत क्या होगी?" "वह अनमोल होगा।" "महाराज, आप ऐसा क्यों कहते हैं? क्या आपने अभी-अभी यह नहीं कहा कि हर मामले में पिता, पुत्रों से श्रेष्ठ होता है? आपके अपने ही कथन के अनुसार गधा खच्चर के बच्चे से अधिक मूल्यवान है। क्या आपके बुद्धिमानों ने यह न जानने पर मेरे ऊपर ताली नहीं बजाई और हँसे नहीं? आपके बुद्धिमानों की यह कैसी बुद्धिमत्ता है! आपने उन्हें कहाँ से प्राप्त किया?" और उन चारों के प्रति तिरस्कार व्यक्त करते हुए उन्होंने प्रथम पुस्तक के इस श्लोक में राजा को संबोधित किया:"यह वही अंधा मूर्ख है जिसे लोग बुद्धिमान कहते हैं! इसने अपने पिता को सिंहासन से उठा दिया है और स्वयं वहाँ बैठा है! इसे बुद्धिमान कहना उचित नहीं है।" राजा भी निराश हो गया। तब उस महान सत्ता ने कहा, "हे महाराज! क्या आप दुखी हैं?" "जी हे महाराज, मैं दुखी हूँ।

आपके बारे में सुनकर मुझे प्रसन्नता हुई थी, परन्तु आपको देखकर प्रसन्नता नहीं हुई।" "क्यों?" "क्योंकि आपने अपने पिता को सिंहासन से उठा दिया है और स्वयं वहाँ बैठ गए हैं।" "क्या, महाराज! क्या आप सोचते हैं कि हर मामले में पिता पुत्रों से श्रेष्ठ होता है?" "जी महाराज।" "क्या आपने मुझे बेहतर घोड़ा या उत्तम घोड़ा लाने का संदेश नहीं भेजा था?" ऐसा कहकर वह उठा और युवकों की ओर देखकर बोला, "जो गधा तुम लाए हो उसे अंदर लाओ।" उस गधे को राजा के सामने रखकर उसने पूछा, "महाराज, इस गधे का क्या मूल्य है?" राजा ने कहा, "यदि यह उपयोगी है, तो इसका मूल्य आठ रुपये है।" "पर यदि वह एक शुद्ध नस्ल की सिंधी घोड़ी से खच्चर का बच्चा पैदा करे, तो उसकी कीमत क्या होगी?" "वह अनमोल होगा।" "महाराज, आप ऐसा क्यों कहते हैं? क्या आपने अभी-अभी यह नहीं कहा कि हर मामले में पिता, पुत्रों से श्रेष्ठ होता है? आपके अपने ही कथन के अनुसार गधा खच्चर के बच्चे से अधिक मूल्यवान है। क्या आपके बुद्धिमानों ने यह न जानने पर मेरे ऊपर ताली नहीं बजाई और हँसे नहीं? आपके बुद्धिमानों की यह कैसी बुद्धिमत्ता है! आपने उन्हें कहाँ से प्राप्त किया?" और उन चारों के प्रति तिरस्कार व्यक्त करते हुए उन्होंने प्रथम पुस्तक के इस श्लोक में राजा को संबोधित किया:"ये तुम्हें कहाँ से मिले?" और उन चारों के प्रति तिरस्कार व्यक्त करते हुए उसने प्रथम पुस्तक के इस श्लोक में राजा को संबोधित किया:"ये तुम्हें कहाँ से मिले?" और उन चारों के प्रति तिरस्कार व्यक्त करते हुए उसने प्रथम पुस्तक के इस श्लोक में राजा को संबोधित किया:
"हे श्रेष्ठ राजा, क्या आप यह मानते हैं कि पिता हमेशा पुत्र से श्रेष्ठ होता है?"
तो क्या गधा खच्चर से श्रेष्ठ है; गधा खच्चर का जनक है।
यह कहने के बाद, उसने आगे कहा, "महाराज, यदि पिता पुत्र से श्रेष्ठ है, तो मेरे पिता को अपनी सेवा में ले लीजिए; यदि पुत्र पिता से श्रेष्ठ है, तो मुझे ले लीजिए।" राजा प्रसन्न हुआ; और समस्त सभा ने हज़ार बार तालियाँ बजाकर और प्रशंसा करते हुए कहा—"बुद्धिमान व्यक्ति ने प्रश्न का सही हल निकाल लिया है!" उंगलियाँ चटकाने और हज़ार दुपट्टे लहराने की आवाज़ गूंजी; चारों निराश हो गए।

अब माता-पिता के महत्व को बोधिसत्व से बेहतर कोई नहीं जानता। यदि कोई उनसे पूछे कि उन्होंने ऐसा क्यों किया, तो उनका जवाब यह था कि उन्होंने अपने पिता का अपमान करने के लिए ऐसा नहीं किया, बल्कि जब राजा ने संदेश भेजा, "बेहतर घोड़ा भेजो या अधिक उत्कृष्ट घोड़ा भेजो," तो उन्होंने ऐसा उस समस्या को हल करने, अपनी बुद्धिमत्ता को मान्यता दिलाने और चारों ऋषियों की चमक फीकी करने के लिए किया।

राजा प्रसन्न हुए; और सुगंधित जल से भरा सोने का कलश लेकर व्यापारी के हाथ पर जल डालते हुए बोले, "पूर्वी बाज़ार नगर को राजा की ओर से उपहार स्वरूप आनंदित कीजिए। अन्य व्यापारी इसके अधीन रहें।" यह कहकर उन्होंने बोधिसत्व की माता को सभी प्रकार के आभूषण भेजे। गधे के प्रश्न के बोधिसत्व द्वारा हल किए जाने से प्रसन्न होकर राजा ने बोधिसत्व को अपना पुत्र बनाने की इच्छा व्यक्त की और पिता से कहा, "हे महाराज, मुझे इस महान पुरुष को अपना पुत्र बना दीजिए।" बोधिसत्व ने उत्तर दिया, "महाराज, यह अभी बहुत छोटा है; अभी इसके मुँह से दूध की गंध आती है; परन्तु जब यह बड़ा होगा, तब यह आपके साथ रहेगा।" राजा ने कहा, "हे महाराज, अब से आपको इस बालक से अपना लगाव त्याग देना होगा; आज से यह मेरा पुत्र है। मैं अपने पुत्र का पालन-पोषण कर सकता हूँ, इसलिए आप जाइए।" फिर उन्होंने उसे विदा कर दिया। उन्होंने राजा के प्रति सम्मान व्यक्त किया, उनके पुत्र को गले लगाया, उसे बाहों में भरकर उसके सिर पर चुंबन किया और उसे अच्छी सलाह दी। पुत्र ने भी अपने पिता को विदाई दी, उनसे चिंता न करने की विनती की और उन्हें विदा कर दिया।

तब राजा ने ऋषि से पूछा कि क्या वे महल के अंदर भोजन करेंगे या बाहर। ऋषि ने सोचा कि इतने सारे सेवकों के साथ महल के बाहर भोजन करना ही बेहतर होगा, इसलिए उन्होंने यही उत्तर दिया। तब राजा ने उन्हें एक उपयुक्त घर दिया और हजार युवकों सहित सभी के भरण-पोषण का प्रबंध करते हुए उन्हें सभी आवश्यक वस्तुएँ प्रदान कीं। उस समय से ऋषि राजा की सेवा में लग गए।

19. अब राजा ने ऋषि की परीक्षा लेने की इच्छा की। उस समय दक्षिणी द्वार के पास एक झील के किनारे स्थित ताड़ के पेड़ पर कौवे के घोंसले में एक कीमती रत्न था, और उस रत्न का प्रतिबिंब झील में दिखाई देता था। लोगों ने राजा को बताया कि झील में एक रत्न है। राजा ने सेनाक को बुलवाया और कहा, "लोग कहते हैं कि झील में एक रत्न है; हम उसे कैसे प्राप्त करें?" सेनाक ने कहा, "सबसे अच्छा तरीका है कि झील का पानी निकाल दिया जाए।" राजा ने उसे ऐसा करने का आदेश दिया; और उसने कई लोगों को इकट्ठा किया, और पानी और कीचड़ निकाला, और तल की मिट्टी खोदी—पर उसे कोई रत्न नहीं दिखाई दिया। लेकिन जब झील फिर से भर गई, तो रत्न का प्रतिबिंब फिर से दिखाई दिया। सेनाक ने फिर से वही किया, और उसे कोई रत्न नहीं मिला। तब राजा ने ऋषि को बुलवाया और कहा, "झील में एक रत्न दिखाई दिया है। सेनाक ने सारा पानी और मिट्टी निकाल दी है और ज़मीन खोद दी है, लेकिन वह नहीं मिला। लेकिन जैसे ही झील भरती है, वह फिर से प्रकट हो जाता है। क्या आप उसे ढूंढ सकते हैं?" ऋषि ने उत्तर दिया, "महाराज, यह कोई कठिन कार्य नहीं है, मैं उसे आपके लिए ढूंढ लाऊंगा।" राजा इस वचन से प्रसन्न हुए और अपने साथ बहुत से लोगों को लेकर ऋषि के ज्ञान की शक्ति देखने के लिए झील पर गए। महान ऋषि किनारे पर खड़े होकर देखने लगे। उन्होंने देखा कि रत्न झील में नहीं, बल्कि पेड़ पर होना चाहिए। उन्होंने ज़ोर से कहा, "महाराज, झील में कोई रत्न नहीं है।" "क्या! क्या वह पानी में दिखाई नहीं दे रहा?" तब उन्होंने पानी की एक बाल्टी मंगवाई और कहा, "अब महाराज, देखिए—क्या यह रत्न बाल्टी और झील दोनों में दिखाई नहीं दे रहा?" "तो फिर

रत्न कहाँ है?” "महाराज, झील और बाल्टी दोनों में जो प्रतिबिंब दिखाई दे रहा है, वही असली रत्न है, लेकिन रत्न तो इस ताड़ के पेड़ पर कौवे के घोंसले में है: एक आदमी को भेजकर उसे नीचे भिजवाइए।" राजा ने वैसा ही किया: वह आदमी रत्न को नीचे ले आया, और ऋषि ने उसे राजा के हाथ में रख दिया। सभी लोगों ने ऋषि की प्रशंसा की और सेनाक का उपहास किया—"एक कीमती रत्न पेड़ पर कौवे के घोंसले में है, और सेनाक बलवान पुरुषों से झील खुदवाता है! निश्चय ही एक बुद्धिमान व्यक्ति को महोषधा के समान होना चाहिए।" इस प्रकार उन्होंने महान ऋषि की प्रशंसा की; और राजा उनसे प्रसन्न होकर उन्हें अपने गले से मोतियों की माला भेंट की, और हजार बालकों को मोतियों की मालाएँ दीं, और उन्हें और उनके सेवकों के समूह को बिना किसी औपचारिकता के उनकी सेवा करने का अधिकार प्रदान किया।

एक दिन राजा ऋषि के साथ उद्यान में गए; तभी मेहराबदार द्वार के ऊपर रहने वाले एक गिरगिट ने राजा को आते देखा और नीचे आकर ज़मीन पर लेट गया। यह देखकर राजा ने पूछा, "हे महाराज, यह क्या कर रहा है?" "महाराज, आपका आदर कर रहा है।" "यदि ऐसा है, तो इसकी सेवा व्यर्थ न जाए; इसे कुछ दान दीजिए।" "महाराज, दान इसके किसी काम का नहीं; इसे तो बस कुछ खाने को चाहिए।" "और यह क्या खाता है?" "मांस, महाराज।" "इसे कितना मिलना चाहिए?" "एक छोटे सिक्के के बराबर, महाराज।" "एक छोटे सिक्के के बराबर तो राजा का दान कुछ भी नहीं है," राजा ने कहा, और उन्होंने एक आदमी को आदेश देकर भेजा कि वह गिरगिट के लिए नियमित रूप से आधा आना के बराबर मांस लाए और उसे दे। इसके बाद ऐसा ही किया गया। लेकिन एक उपवास के दिन, जब कोई पशु वध नहीं किया जाता, तो उस आदमी को मांस नहीं मिला; इसलिए उसने आधे आना के सिक्के में छेद किया, उसे धागे में पिरोया और गिरगिट के गले में बाँध दिया। इससे गिरगिट को बहुत गर्व हुआ। उस दिन राजा फिर उद्यान में गया; परन्तु गिरगिट ने राजा को पास आते देख, धन के घमंड में राजा के बराबर हो गया और मन ही मन सोचने लगा—"हे वेदेह, तुम भले ही बहुत धनी हो, पर मैं भी हूँ।" इसलिए वह नीचे नहीं उतरा, बल्कि मेहराब पर ही लेटा रहा और अपना सिर सहलाता रहा। यह देखकर राजा ने कहा, "हे महाराज, यह प्राणी आज हमेशा की तरह नीचे नहीं उतरा; क्या कारण है?" और उसने पहला श्लोक सुनाया:

"गिरगिट मेहराब पर नहीं चढ़ता था: समझाओ, महोसाधा।"
गिरगिट इतना अड़ियल क्यों हो गया है?

ऋषि ने समझा कि उस व्यक्ति को इस उपवास के दिन, जब किसी जानवर को मारा नहीं जा रहा था, मांस नहीं मिल पा रहा होगा, और वह प्राणी अपने गले में लटके सिक्के के कारण घमंडी हो गया होगा; इसलिए उन्होंने यह श्लोक पढ़ा:

गिरगिट को वह मिल गया है जो उसे पहले कभी नहीं मिला था, आधा आना का सिक्का; इसलिए
वह मिथिला के स्वामी वेदेह से घृणा करता है।

राजा ने उस व्यक्ति को बुलवाया और उससे पूछताछ की, और उसने सारी बात सच-सच बता दी। तब राजा उस ऋषि से पहले से भी अधिक प्रसन्न हुआ, जो (ऐसा प्रतीत होता था) बिना कोई प्रश्न पूछे, बुद्ध के समान सर्वोच्च ज्ञान से गिरगिट के रहस्य को भलीभांति जानता था; इसलिए उसने उसे चारों द्वारों से प्राप्त राजस्व दे दिया। गिरगिट से क्रोधित होकर उसने दान बंद करने का विचार किया, लेकिन ऋषि ने उसे बताया कि यह उचित नहीं है और उसे ऐसा करने से रोक दिया।

मिथिला में रहने वाला एक बालक पिंगुत्तरा तक्षशिला आया और एक प्रसिद्ध गुरु के अधीन अध्ययन करने लगा। उसने शीघ्र ही अपनी शिक्षा पूरी कर ली। फिर लगन से अध्ययन करने के बाद उसने गुरु से विदा लेकर जाने का निश्चय किया। परन्तु गुरु के परिवार में यह रिवाज था कि यदि कोई पुत्री विवाह योग्य हो तो उसे सबसे बड़े शिष्य को दे दिया जाता था। गुरु की पुत्री अप्सरा के समान सुंदर थी, इसलिए उन्होंने कहा, "पुत्र, मैं अपनी पुत्री तुझे दे रहा हूँ और तू उसे अपने साथ ले जा।" यह बालक दुर्भाग्यशाली था, परन्तु वह कन्या अत्यंत भाग्यशाली थी। जब उसने उसे देखा तो उसे उससे कोई लगाव नहीं हुआ; परन्तु यद्यपि उसने ऐसा कहा, फिर भी गुरु के वचन का अनादर न करते हुए वह मान गया और ब्राह्मण ने पुत्री का विवाह उससे कर दिया। रात्रि हुई और वह सजी हुई पलंग पर लेट गया; जैसे ही वह पलंग पर आई, वह कराहते हुए उठा और ज़मीन पर लेट गया। वह उठी और उसके बगल में लेट गई, फिर वह उठा और दोबारा लेट गया। जब वह दोबारा बिस्तर पर आई तो वह उठ खड़ा हुआ—क्योंकि दुर्भाग्य और सौभाग्य का मेल नहीं होता। इसलिए लड़की बिस्तर पर ही रही और वह ज़मीन पर पड़ा रहा। इस तरह उन्होंने सात दिन बिताए। फिर उसने अपने गुरु से विदा ली और उसे अपने साथ लेकर चला गया। रास्ते में उन दोनों के बीच एक भी बातचीत नहीं हुई। दोनों दुखी होकर मिथिला पहुँचे। कस्बे से कुछ दूर पिंगुत्तरा ने फलों से लदा एक अंजीर का पेड़ देखा और भूख से चढ़कर कुछ अंजीर खा लिए। लड़की भी भूखी थी, वह पेड़ के नीचे आई और बोली—"मेरे लिए भी कुछ फल नीचे गिरा दो।" "क्या!" उसने कहा, "क्या तुम्हारे हाथ-पैर नहीं हैं? खुद चढ़कर ले लो।" वह भी चढ़कर खाने लगी। जैसे ही उसने देखा कि वह चढ़ गई है, वह जल्दी से नीचे आया और पेड़ के चारों ओर कांटे जमा कर दिए और मन ही मन कहने लगा—"आखिरकार मैंने इस बेचारी औरत से छुटकारा पा लिया।" वह नीचे नहीं उतर सकी और जहाँ बैठी थी वहीं बैठी रही। अब राजा, जो जंगल में समय बिता रहे थे, शाम के समय अपने हाथी पर सवार होकर शहर लौट रहे थे, तभी उनकी नज़र उस स्त्री पर पड़ी और वे उससे मोहित हो गए। उन्होंने यह पूछने के लिए संदेश भेजा कि क्या उसका कोई पति है। उसने उत्तर दिया, "हाँ, मेरा एक पति है, जिसे मेरे परिवार ने मुझे सौंपा था; लेकिन वह चला गया है और मुझे यहाँ अकेला छोड़ गया है।" दरबारी ने यह बात राजा को

बताई, जिस पर राजा ने कहा, "खजाना तो राजमहल का है।" उसे नीचे उतारा गया और हाथी पर बिठाकर महल ले जाया गया, जहाँ रानी के रूप में उस पर आशीर्वाद का जल छिड़का गया। वह राजा की प्रियतम थी; और उसका नाम उदुम्बरा या अंजीर की रानी रखा गया क्योंकि राजा ने उसे पहली बार अंजीर के पेड़ पर देखा था।

इसके एक दिन बाद, नगर द्वार के पास रहने वालों को राजा के उद्यान में घूमने जाने के लिए सड़क साफ़ करनी पड़ी; और पिंगुत्तरा, जिसे अपनी आजीविका कमानी थी, ने अपने कपड़े समेटे और कुदाल से सड़क साफ़ करने का काम शुरू कर दिया। सड़क साफ़ होने से पहले ही राजा और रानी उदुम्बरा रथ में सवार होकर आ गए; और रानी ने उस बेचारे को सड़क साफ़ करते देख अपनी खुशी नहीं रोक पाई और उसे वहाँ देखकर मुस्कुरा दी। राजा को उसकी मुस्कान देखकर गुस्सा आया और उसने पूछा कि उसने ऐसा क्यों किया। रानी ने कहा, "महाराज, वह सड़क साफ़ करने वाला मेरा पूर्व पति है, जिसने मुझे अंजीर के पेड़ पर चढ़ाया और फिर उसके चारों ओर कांटे जमा कर दिए और मुझे वहीं छोड़ दिया; जब मैंने उसे देखा तो मैं अपनी किस्मत पर विजय महसूस करने से खुद को रोक नहीं पाई और उस बेचारे को वहाँ देखकर मुस्कुरा दी।" राजा ने कहा, "झूठ बोल रही हो, तुम किसी और पर हँसी हो, और मैं तुम्हें मार डालूँगा!" और उसने अपनी तलवार निकाल ली। रानी घबरा गई और बोली, "महाराज, कृपया अपने बुद्धिमानों से पूछिए!" राजा ने सेनाका से पूछा कि क्या वह उसकी बात पर विश्वास करता है। सेनाका ने कहा, "नहीं, महाराज, मैं विश्वास नहीं करता, क्योंकि भला कोई ऐसी स्त्री को, जिसे एक बार पा लेने के बाद, छोड़ दे?" यह सुनकर वह पहले से भी अधिक भयभीत हो गई। लेकिन राजा ने सोचा, "सेनाका को इसके बारे में क्या पता है? मैं ऋषि से पूछूंगा"; और उन्होंने यह श्लोक सुनाते हुए उनसे पूछा:

"यदि कोई स्त्री सदाचारी और सुंदर हो,
और कोई पुरुष उसे न चाहे—क्या तुम इस पर विश्वास करते हो महोसाधा?
ऋषि ने उत्तर दिया:

"हे राजा, मुझे इस पर पूरा विश्वास है: वह व्यक्ति एक अभागा और बदनसीब होगा;
सौभाग्य और दुर्भाग्य कभी एक साथ नहीं मिल सकते।
इन शब्दों से राजा का क्रोध शांत हुआ, उनका हृदय प्रसन्न हुआ और उन्होंने कहा, "हे ज्ञानी! यदि आप यहाँ न होते, तो मैं उस मूर्ख सेनाक की बातों पर विश्वास कर लेता और इस अनमोल स्त्री को खो देता: आपने मेरी रानी की रक्षा की है।" उन्होंने ऋषि को एक हजार सिक्के भेंट किए। तब रानी ने राजा से आदरपूर्वक कहा, "महाराज, इस ज्ञानी व्यक्ति के कारण ही मेरा जीवन बचा है; मुझे यह वरदान दीजिए कि मैं उन्हें अपने सबसे छोटे भाई के समान मान सकूँ।" "जी, मेरी रानी, मैं सहमत हूँ, वरदान दिया जाता है।" "तो, महाराज, आज से मैं अपने भाई के बिना कोई भी उत्तम भोजन नहीं खाऊँगी, आज से हर मौसम में मेरा द्वार उनके लिए मीठे व्यंजन भेजने के लिए खुला रहेगा - यही वरदान मैं चाहती हूँ।" "यह वरदान भी आपको मिलेगा, मेरी रानी," राजा ने कहा। यहीं पर सौभाग्य और दुर्भाग्य का प्रश्न समाप्त होता है।

एक दिन, राजा नाश्ते के बाद लंबी सैर पर टहल रहे थे, तभी उन्होंने एक दरवाजे से एक बकरी और कुत्ते को आपस में दोस्ती करते देखा। यह बकरी हाथियों के अस्तबल के पास फेंकी गई घास को उनके हाथ लगने से पहले ही खा लेती थी; हाथी के रखवाले उसे पीट-पीटकर भगा देते थे; और जब वह मिमियाते हुए भाग रही थी, तो एक आदमी तेजी से उसके पीछे भागा और उसकी पीठ पर डंडे से वार किया। दर्द से कराहती हुई बकरी महल की बड़ी दीवार के पास एक बेंच पर लेट गई। वहीं एक कुत्ता था जो जीवन भर शाही रसोई की हड्डियों, खाल और कचरे पर पला-बढ़ा था। उसी दिन रसोइए ने खाना तैयार कर परोसा और जब वह अपने शरीर से पसीना पोंछ रहा था, तभी कुत्ते को मांस और मछली की गंध सहन नहीं हुई और वह रसोई में घुस गया, ढक्कन हटाकर मांस खाने लगा। लेकिन बर्तनों की आवाज सुनकर रसोइए दौड़ा और कुत्ते को देखा: उसने दरवाजे पर दस्तक दी और डंडों और पत्थरों से उसे पीटा। कुत्ते ने मुंह से मांस गिरा दिया और भौंकते हुए भाग गया; रसोइए ने उसे भागते देख उसका पीछा किया और छड़ी से उसकी पीठ पर ज़ोर से मारा। कुत्ता अपनी पीठ झुकाकर और एक पैर उठाकर उस जगह पहुंचा जहां बकरी लेटी थी। तब बकरी बोली, "दोस्त, तुम अपनी पीठ क्यों झुका रहे हो? क्या तुम्हें पेट दर्द हो रहा है?" कुत्ते ने जवाब दिया, "तुम भी अपनी पीठ झुका रहे हो, क्या तुम्हें पेट दर्द हो रहा है?" उसने अपनी कहानी सुनाई। तब बकरी बोली, "अच्छा, क्या तुम फिर कभी रसोई में जा पाओगे?" "नहीं, यह मेरी जान के बराबर है। क्या तुम फिर कभी अस्तबल में जा पाओगे?" "तुम्हारे जितना नहीं, यह मेरी जान के बराबर है।" खैर, वे सोचने लगे कि वे कैसे गुज़ारा करेंगे। तब बकरी बोली, "अगर हम साथ रह सकें तो मेरे पास एक उपाय है।" "बताओ।" "अच्छा, महोदय, आपको अस्तबल जाना होगा; हाथी के रखवाले आपकी ओर ध्यान नहीं देंगे, क्योंकि वे सोचते हैं कि यह घास नहीं खाता; और आपको मेरे लिए घास लानी होगी। मैं रसोई में जाता हूँ, और रसोइया मेरी ओर ध्यान नहीं देगा, यह सोचकर कि मैं मांस नहीं खाता, इसलिए मैं आपके लिए मांस ला दूँगा।" "यह तो बढ़िया योजना है," दूसरे ने कहा, और उन्होंने सौदा कर लिया: कुत्ता अस्तबल गया और अपने दाँतों में घास का एक गट्ठा लेकर आया और उसे दीवार के पास रख दिया; दूसरा रसोई में गया और अपने मुँह में मांस का एक बड़ा टुकड़ा लेकर उसी जगह पर आ गया। कुत्ते ने मांस खाया और बकरी ने घास; और इस तरह इस चतुराई भरे तरीके से वे दीवार के पास सद्भाव से एक साथ रहने लगे। जब राजा ने उनकी मित्रता देखी तो उसने सोचा—"मैंने ऐसा पहले कभी नहीं देखा। यहाँ दो जन्मजात शत्रु मित्रता से रह रहे हैं। मैं इसे अपने बुद्धिमानों

के सामने प्रश्न के रूप में रखूँगा; जो इसे नहीं समझ पाएँगे उन्हें मैं राज्य से निकाल दूँगा, और यदि कोई इसका उत्तर दे देगा तो मैं उसे अतुलनीय ऋषि से मिलवाऊँगा और उसका पूरा सम्मान करूँगा। आज समय नहीं है; लेकिन कल जब वे मुझसे मिलने आएँगे तो मैं उनसे यह प्रश्न पूछूँगा।"इसलिए अगले दिन जब ज्ञानी पुरुष उससे मिलने आए, तो उसने अपना प्रश्न इन शब्दों में पूछा:

"दो जन्मजात शत्रु, जो दुनिया में पहले कभी एक-दूसरे के सात कदम के करीब भी नहीं आ सकते थे, अब मित्र बन गए हैं और अविभाज्य हैं। इसका कारण क्या है?"

इसके बाद उन्होंने एक और छंद जोड़ा:

"यदि आज दोपहर से पहले तुम इस प्रश्न का उत्तर नहीं दे सके, तो मैं तुम सबको देश निकाला दे दूंगा। मुझे अज्ञानी लोगों की कोई आवश्यकता नहीं है।"

अब सेनाक पहले आसन पर और ऋषि अंतिम आसन पर बैठे थे; ऋषि मन ही मन सोच रहे थे, "यह राजा इतना मंदबुद्धि है कि स्वयं इस प्रश्न का उत्तर नहीं दे सकता, उसने कुछ तो देखा होगा। यदि मुझे एक दिन का समय मिल जाए तो मैं इस पहेली को हल कर दूंगा। सेनाक इसे एक दिन के लिए टालने का कोई न कोई उपाय जरूर ढूंढ लेगा।" अन्य चार ऋषि कुछ भी नहीं देख पा रहे थे, मानो वे किसी अंधेरे कमरे में हों: सेनाक ने बोधिसत्व की ओर देखा कि वे क्या करेंगे, बोधिसत्व ने सेनाक को देखा। महोसाधा के हावभाव से सेनाक ने उनकी मनस्थिति का अंदाजा लगा लिया; उन्होंने देखा कि यह ऋषि भी प्रश्न को नहीं समझ पा रहे हैं, वे आज इसका उत्तर नहीं दे सकते, बल्कि एक दिन का समय चाहते हैं; वे उनकी यह इच्छा पूरी करेंगे। इसलिए वे जोर से हँसे और आश्वस्त करते हुए बोले, "क्या, महाराज, यदि हम आपके प्रश्न का उत्तर नहीं दे पाए तो आप हम सबको निर्वासित कर देंगे?" "जी महाराज।" "अरे, आप जानते हैं कि यह एक जटिल प्रश्न है, और हम इसे हल नहीं कर सकते; कृपया थोड़ा इंतजार कीजिए। भीड़ में जटिल प्रश्न का हल नहीं निकाला जा सकता। हम इस पर विचार करेंगे, और फिर आपको समझाएंगे। तो हमें एक मौका दीजिए।" उन्होंने महान सत्ता पर भरोसा करते हुए ऐसा कहा, और फिर ये दो श्लोक पढ़े:

"भीड़ में, जहाँ लोगों का शोरगुल होता है, हमारा मन भटक जाता है, हमारे विचार एकाग्र नहीं हो पाते और हम प्रश्न का हल नहीं निकाल पाते। परन्तु अकेले में, शांत मन से, वे अलग जाकर इस विषय पर विचार करेंगे, एकांत में दृढ़ता से इसका समाधान निकालेंगे, हे मनुष्यों के स्वामी।"

राजा, हालांकि उनकी बातों से नाराज़ था, फिर भी उन्हें धमकाते हुए बोला, "ठीक है, सोच-विचार करके मुझे बताओ; अगर नहीं बताया तो मैं तुम्हें देश निकाला दे दूंगा।" चारों ज्ञानी पुरुष महल से चले गए, और सेनाक ने दूसरों से कहा, "मित्रों, राजा ने जो प्रश्न पूछा है वह बहुत ही नाजुक है; अगर हम इसका हल नहीं निकाल पाए तो हमारे लिए बहुत बड़ा खतरा है। इसलिए अच्छा भोजन करो और ध्यान से सोचो।" इसके बाद वे सब अपने-अपने घर चले गए। ऋषि उठे और रानी उदंबरा को ढूंढने लगे, और उनसे पूछा, "हे रानी, राजा आज और कल ज्यादातर कहाँ थे?" "महाराज, वे लंबी पगडंडी पर इधर-उधर टहल रहे थे और खिड़की से बाहर देख रहे थे।" "अहा," बोधिसत्व ने सोचा, "उन्होंने वहाँ कुछ तो देखा होगा।" तो वे उस जगह गए और बाहर देखा तो उन्हें बकरी और कुत्ते की हरकतें दिखाई दीं। "राजा का प्रश्न हल हो गया!" उन्होंने निष्कर्ष निकाला, और घर चले गए। बाकी तीनों को कुछ पता नहीं चला, और वे सेनाक के पास आए, जिन्होंने पूछा, "क्या तुम्हें प्रश्न का उत्तर मिल गया?" "नहीं, गुरुजी।" "अगर ऐसा हुआ तो राजा तुम्हें देश निकाला दे देंगे, और तुम क्या करोगे?" "लेकिन तुमने तो इसका हल निकाल लिया है?" "बिल्कुल नहीं, मैंने नहीं।" "अगर तुम इसका हल नहीं निकाल पाए, तो हम कैसे निकालेंगे? हमने राजा के सामने शेरों की तरह दहाड़ लगाई थी और कहा था, चलो सोचते हैं और हल निकाल लेते हैं; और अब अगर हम नहीं निकाल पाए, तो वह क्रोधित हो जाएंगे। हम क्या करें?" "यह प्रश्न हमारे हल करने के लिए नहीं है: निःसंदेह ऋषि ने इसका सौ तरीकों से हल निकाल लिया होगा।" "तो चलो उनके पास चलते हैं।" तो वे चारों बोधिसत्व के द्वार पर आए और अपने आने की सूचना दी, और अंदर आकर उनसे विनम्रता से बात की; फिर एक तरफ खड़े होकर उन्होंने महान सत्ता से पूछा, "महोदय, क्या आपने प्रश्न का हल निकाल लिया है?" "अगर मैंने नहीं निकाला, तो कौन निकालेगा? बेशक मैंने निकाला है।" "तो हमें भी बता दीजिए।" उन्होंने मन ही मन सोचा, "अगर मैं उन्हें नहीं बताऊंगा, तो राजा उन्हें देश निकाला दे देंगे और मुझे सात अनमोल वस्तुएँ देकर सम्मानित करेंगे। लेकिन इन मूर्खों को नष्ट न होने दें - मैं उन्हें बताऊंगा।" अतः उसने उन्हें नीची सीटों पर बिठाया और प्रणाम करने के लिए हाथ ऊपर उठाने को कहा। राजा ने वास्तव में क्या देखा था, यह बताए बिना उसने चार श्लोक रचे और उन्हें पाली भाषा में एक-एक श्लोक सिखाया, ताकि राजा के कहने पर वे उसे सुना सकें। फिर उसने उन्हें विदा कर दिया। अगले दिन वे राजा से मिलने गए और जहाँ बैठने को कहा गया था, वहाँ बैठ गए। राजा ने सेनाक से पूछा, "क्या तुमने प्रश्न का उत्तर दे दिया है, सेनाक?" "महाराज, यदि मैं नहीं जानता तो कौन जान सकता है?" "तो मुझे बताओ।" "सुनिए, महाराज," और उसने सिखाए गए श्लोक को सुनाया।

"युवा भिखारी और युवा राजकुमार भेड़ का मांस पसंद करते हैं और उसमें आनंद लेते हैं; वे कुत्ते का मांस नहीं खाते। फिर भी भेड़ और कुत्ते के बीच मित्रता हो सकती है।"

सेनाक ने श्लोक का पाठ तो किया, पर उसे उसका अर्थ नहीं पता था; परन्तु राजा को पता था क्योंकि उसने वह दृश्य देखा था। "सेनाक ने अर्थ जान लिया है," उसने सोचा; और फिर पुक्कुसा की ओर मुड़कर उससे पूछा। "क्या? क्या मैं बुद्धिमान नहीं हूँ?" पुक्कुसा ने पूछा, और उसने वही श्लोक सुनाया जो उसे सिखाया गया था।

"वे घोड़े की पीठ को ढकने के लिए बकरी की खाल उतार लेते हैं, लेकिन कुत्ते की खाल का इस्तेमाल नहीं करते: फिर भी भेड़ और कुत्ते के बीच दोस्ती हो सकती है।"

वह भी इस मामले को नहीं समझ पाया, लेकिन राजा को लगा कि वह समझ गया है क्योंकि उसने वह चीज़ देखी थी। फिर उसने कविंदा से पूछा और उसने भी अपनी कविता सुनाई:

"मेढ़े सींगों वाले मेढ़े के पास सींग होते हैं, कुत्ते के पास बिल्कुल नहीं होते; एक घास खाता है, दूसरा मांस: फिर भी मेढ़े और कुत्ते के बीच दोस्ती हो सकती है।"

"उसे भी पता चल गया है," राजा ने सोचा और देविंदा की ओर मुड़ गया; जिसने दूसरों के साथ मिलकर अपनी सिखाई हुई पंक्ति का पाठ किया।

"भेड़ घास और पत्ते दोनों खाती है, कुत्ता न तो घास खाता है और न ही पत्ते; कुत्ता खरगोश या बिल्ली को खा जाएगा: फिर भी भेड़ और कुत्ते के बीच दोस्ती हो सकती है।"

इसके बाद राजा ने ऋषि से पूछा, "मेरे पुत्र, क्या तुम यह प्रश्न समझते हो?" "महाराज, अविची से भवग्ग तक, निम्नतम नरक से उच्चतम स्वर्ग तक, इसे और कौन समझ सकता है?" "तो मुझे बताइए।" "सुनिए, महाराज"; और उन्होंने इन दो श्लोकों का पाठ करके इस तथ्य के बारे में अपना ज्ञान स्पष्ट किया:

"चार पैरों पर आठ आधे पैर और आठ खुरों वाला मेढ़ा, बिना किसी की नज़र में आए, दूसरे के लिए मांस लाता है, और दूसरा उसके लिए घास लाता है। विदेह के मुखिया, मनुष्यों के स्वामी ने अपनी छत से भोंक-भौं और भरपेट मेढ़े के बीच भोजन के आदान-प्रदान को देखा।"

राजा को यह ज्ञात नहीं था कि अन्य लोगों को बोधिसत्व के माध्यम से ज्ञान प्राप्त हुआ था, इसलिए वह यह सोचकर प्रसन्न हुआ कि सभी पाँचों ने अपनी-अपनी बुद्धि से पहेली का हल निकाल लिया है, और उसने यह श्लोक पढ़ा:

"मेरे घर में इतने बुद्धिमान पुरुषों का होना मेरे लिए बहुत बड़ा लाभ है। उन्होंने गहन और सूक्ष्म विषय को अपने उत्कृष्ट शब्दों से समझ लिया है, ये चतुर पुरुष!"

इसलिए उन्होंने उनसे कहा, "एक अच्छा काम दूसरे अच्छे काम को जन्म देता है," और अगले छंद में उन्होंने अपनी बात दोहराई:

"मैं प्रत्येक को एक रथ और एक मादा खच्चर देता हूँ, प्रत्येक को एक समृद्ध गाँव देता हूँ, जो बहुत ही उत्तम है; ये सब मैं सभी बुद्धिमान पुरुषों को देता हूँ, जो उनके महान भाषण से प्रसन्न हैं।"

यह सब उसने दे दिया। बारहवीं पुस्तक में बकरी का प्रश्न यहीं समाप्त होता है।

लेकिन रानी उदुंबरा जानती थीं कि बाकी लोगों को इस प्रश्न का ज्ञान ऋषि से ही मिला था; और उन्होंने सोचा, "राजा ने तो पाँचों को एक ही इनाम दे दिया, जैसे कोई मटर और सेम में फर्क न करता हो। मेरे भाई को तो विशेष इनाम मिलना चाहिए था।" इसलिए वह गईं और राजा से पूछा, "महाराज, आपके लिए इस पहेली का हल किसने निकाला?" "पाँच ज्ञानी पुरुषों ने, महोदया।" "लेकिन महाराज, उन चारों को यह ज्ञान किससे मिला?" "मुझे नहीं पता, महोदया।" "महाराज, उन्हें क्या पता! यह तो ऋषि ने बताया था—जिन्होंने चाहा कि ये मूर्ख उनके कारण बर्बाद न हों, और उन्हें यह प्रश्न बताया। फिर आप सबको एक ही इनाम दे रहे हैं। यह ठीक नहीं है; आपको ऋषि के लिए अलग से पुरस्कार देना चाहिए।" राजा इस बात से प्रसन्न हुए कि ऋषि ने यह नहीं बताया कि उन्हें यह ज्ञान उनसे मिला था, और उन्हें बहुत बड़ा इनाम देने की इच्छा से उन्होंने सोचा, "कोई बात नहीं: मैं अपने बेटे से दूसरा प्रश्न पूछूंगा, और जब वह उत्तर देगा, तो मैं उसे बड़ा इनाम दूंगा।" इस बारे में सोचते हुए उन्हें गरीब और अमीर के प्रश्न का विचार आया।

एक दिन जब पाँचों ज्ञानी पुरुष उनसे मिलने आए और आराम से बैठ गए, तो राजा ने कहा, "सेनाका, मैं एक प्रश्न पूछना चाहता हूँ।" "जी महाराज, पूछिए।" तब उन्होंने 'गरीब और अमीर का प्रश्न' नामक श्लोक का पहला छंद सुनाया।

"बुद्धिमान और धनहीन, या धनी और बुद्धिहीन—मैं तुमसे यह प्रश्न पूछता हूँ, सेनाका: इन दोनों में से बुद्धिमान व्यक्ति किसे बेहतर मानते हैं?"

यह प्रश्न सेनाका के परिवार में पीढ़ी दर पीढ़ी चला आ रहा था, इसलिए उसने तुरंत उत्तर दिया:

"हे राजा, सचमुच, बुद्धिमान और मूर्ख, शिक्षित और अशिक्षित, सभी धनी लोगों की सेवा करते हैं, चाहे वे उच्च कुल के हों और धनी व्यक्ति निम्न कुल का। यह देखकर मैं कहता हूँ: बुद्धिमान व्यक्ति विनम्र होता है, और धनी व्यक्ति श्रेष्ठ होता है।"

राजा ने यह उत्तर सुना; फिर अन्य तीनों से पूछे बिना, उन्होंने पास बैठे ऋषि महोसाधा से कहा:

"हे महान ज्ञानवान महोसाधा, जो धर्म के समस्त मार्ग को जानते हैं, मैं आपसे भी यही पूछता हूँ: धनवान मूर्ख या कम धन-संपत्ति वाला बुद्धिमान, इन दोनों में से चतुर लोग किसे बेहतर मानते हैं?"

तब उस महान सत्ता ने उत्तर दिया, "हे राजा, सुनो:

मूर्ख व्यक्ति यह सोचकर पाप करता है कि “इस संसार में मैं श्रेष्ठ हूँ”; वह इस संसार की ओर देखता है, परलोक की ओर नहीं, और दोनों में ही उसे हानि उठानी पड़ती है। यह देखकर मैं कहता हूँ: धनवान मूर्ख से बुद्धिमान श्रेष्ठ है।

यह सुनकर राजा ने सेनाक की ओर देखा और कहा, "देखो, महोसाधा तो कहता है कि बुद्धिमान ही श्रेष्ठ होता है।" सेनाक ने कहा, "महाराज, महोसाधा तो बच्चा है; अभी भी उसके मुँह से दूध की गंध आती है। वह क्या जान सकता है?" और उसने यह श्लोक सुनाया:

विज्ञान से धन नहीं मिलता, न ही परिवार या सुंदरता से। उस मूर्ख गोरिमांडा को देखो, वह खूब तरक्की कर रहा है, क्योंकि भाग्य उस पर मेहरबान है। यह देखकर मैं कहता हूँ: बुद्धिमान कंजूस होता है, धनवान बेहतर होता है।

यह सुनकर राजा ने कहा, "अब क्या हुआ, मेरे पुत्र महोसाधा?" उसने उत्तर दिया, "हे स्वामी, सेनाक को क्या पता? वह चावल के ढेर में बैठे कौवे के समान है, दूध पीने की कोशिश कर रहे कुत्ते के समान है: वह स्वयं को तो देखता है, पर उस डंडे को नहीं देखता जो उसके सिर पर गिरने ही वाला है। सुनिए, मेरे स्वामी," और उसने यह श्लोक सुनाया:

"कम बुद्धि वाला व्यक्ति धनवान होने पर मदहोश हो जाता है; विपत्ति आने पर वह स्तब्ध रह जाता है; चाहे भाग्य अच्छा हो या बुरा, वह चिलचिलाती धूप में मछली की तरह तड़पने लगता है। यह देखकर मैं कहता हूँ: बुद्धिमान व्यक्ति धनी मूर्ख से श्रेष्ठ है।"

“तो फिर, महाराज!” यह सुनकर राजा ने कहा। सेनाक ने कहा, “महाराज, इसे क्या पता? मनुष्यों की तो बात ही छोड़िए, पक्षी तो फलदार सुंदर वृक्ष की ओर आकर्षित होते हैं,” और उसने यह श्लोक सुनाया:

"जैसे जंगल में पक्षी चारों ओर से मीठे फल वाले वृक्ष पर इकट्ठा होते हैं, वैसे ही धनवान व्यक्ति जिसके पास खजाना और दौलत है, उसके लाभ के लिए भीड़ उमड़ पड़ती है। यह देखकर मैं कहता हूँ: बुद्धिमान मितव्ययी होता है, धनवान बेहतर होता है।"

“तो, मेरे पुत्र, अब क्या?” राजा ने पूछा। ऋषि ने उत्तर दिया, “उस तोंद वाले को क्या पता? सुनो, मेरे स्वामी,” और उन्होंने यह श्लोक सुनाया:

"शक्तिशाली मूर्ख के लिए हिंसा से धन कमाना अच्छा नहीं है; चाहे वह कितना भी जोर से दहाड़े, मूर्ख को सीधे नरक में घसीट लिया जाता है। यह देखकर मैं कहता हूँ: बुद्धिमान धनी मूर्ख से श्रेष्ठ है।"

फिर राजा ने पूछा, "तो, सेनाका?" जिस पर सेनाका ने उत्तर दिया:

"गंगा में गिरने वाली सभी धाराएँ अपना नाम और प्रकार खो देती हैं। समुद्र में गिरने वाली गंगा का कोई भेद नहीं रह जाता। इसलिए संसार धन-दौलत के प्रति समर्पित है। यह देखकर मैं कहता हूँ: बुद्धिमान तुच्छ होता है, धनी श्रेष्ठ होता है।"

फिर राजा ने कहा, "अच्छा, ऋषि?" और उन्होंने कुछ छंदों में उत्तर दिया, "सुनिए, राजा!"

"जिस विशाल सागर की उसने बात की, जिसमें अनगिनत नदियाँ बहती रहती हैं, वह सागर जो लगातार तट से टकराता रहता है, फिर भी उसे पार नहीं कर सकता, चाहे वह कितना भी विशाल सागर क्यों न हो। मूर्ख की वाक्पटुता भी ऐसी ही है: उसकी समृद्धि बुद्धिमान से कहीं अधिक है। यह देखकर मैं कहता हूँ: बुद्धिमान समृद्ध मूर्ख से श्रेष्ठ है।"

"तो, सेनाक?" राजा ने कहा। "सुनो, हे राजा!" उसने कहा और यह श्लोक सुनाया:

"उच्च पद पर बैठा धनी व्यक्ति भले ही आत्म-संयम से रहित हो, लेकिन यदि वह दूसरों से कुछ कहता है, तो उसके परिवार में उसकी बात का महत्व होता है; परन्तु धनहीन व्यक्ति के लिए बुद्धिमत्ता का ऐसा प्रभाव नहीं होता। यह देखकर मैं कहता हूँ: बुद्धिमान शिष्ट होता है, धनी श्रेष्ठ होता है।"

“तो, मेरे पुत्र?” राजा ने फिर कहा। “सुनो, महाराज! उस मूर्ख सेनाका को क्या पता?” और उसने यह श्लोक सुनाया:

"दूसरों के हित में या अपने हित में मूर्ख और कम बुद्धि वाला व्यक्ति झूठ बोलता है; वह सभा में लज्जित होता है, और परलोक में विपत्ति में जाता है। यह देखकर मैं कहता हूँ: धनी मूर्ख से बुद्धिमान श्रेष्ठ है।"

तब सेनाका ने एक श्लोक का पाठ किया:

"यदि कोई व्यक्ति बहुत बुद्धिमान हो, पर यदि उसके पास चावल या अनाज न हो और वह निर्धन हो, तो यदि वह कुछ कहे, तो उसके परिवार में उसकी बात का कोई महत्व नहीं होता, और ज्ञान से समृद्धि नहीं मिलती। इसलिए मैं कहता हूँ: बुद्धिमान भी तुच्छ होता है, धनी श्रेष्ठ होता है।"

फिर राजा ने कहा, "इस बारे में तुम्हारा क्या कहना है, मेरे पुत्र?" ऋषि ने उत्तर दिया, "सेनाका को क्या पता? वह इस लोक को देखता है, परलोक को नहीं," और उन्होंने यह श्लोक सुनाया:

"महान बुद्धिमान व्यक्ति न तो अपने लिए और न ही दूसरों के लिए झूठ बोलता है; वह सभा में सम्मानित होता है और आगे चलकर सुख की ओर जाता है। यह देखकर मैं कहता हूँ: बुद्धिमान मूर्ख धनी से श्रेष्ठ है।"

तब सेनाका ने एक श्लोक का पाठ किया:

"अमीर परिवारों में हाथी, गाय, घोड़े, रत्नजड़ित बालियां, स्त्रियां पाई जाती हैं; ये सब बिना किसी अलौकिक शक्ति के अमीर आदमी के आनंद के लिए हैं। यह देखकर मैं कहता हूं: बुद्धिमान तुच्छ होता है, अमीर बेहतर होता है।"

ऋषि ने कहा, "वह क्या जानता है?" और बात को समझाते हुए उन्होंने यह श्लोक सुनाया:

"मूर्ख, जो बिना सोचे-समझे काम करता है और मूर्खतापूर्ण बातें बोलता है, जो नासमझ होता है, भाग्य उसे उसी प्रकार त्याग देता है जैसे सांप अपनी पुरानी केंचुल उतार फेंकता है। यह देखकर मैं कहता हूँ: धनवान मूर्ख से बुद्धिमान श्रेष्ठ होता है।"

तब राजा ने पूछा, "अब क्या?" तब सेनाक ने कहा, "हे प्रभु, यह छोटा लड़का क्या जान सकता है? सुनो!" और उसने यह श्लोक सुनाया, यह सोचकर कि वह ऋषि को चुप करा देगा:

"हे पूज्यवर, हम पाँच ज्ञानी पुरुष हैं, जो आदरपूर्वक आपकी सेवा में तत्पर हैं; और आप हमारे स्वामी और स्वामी हैं, जैसे सक्का (इंद्र), समस्त प्राणियों के स्वामी, देवदूतों के राजा। यह देखकर मैं कहता हूँ: ज्ञानी तुच्छ होता है, धनी श्रेष्ठ होता है।"

जब राजा ने यह सुना तो उन्होंने सोचा, "सेनाका के बारे में तो यह बात बड़ी चतुराई से कही गई है; मुझे आश्चर्य है कि क्या मेरा पुत्र इसका खंडन कर पाएगा और कुछ और कह पाएगा।" इसलिए उन्होंने उससे पूछा, "हे ज्ञानी महोदय, अब क्या?" परन्तु सेनाका के इस तर्क का खंडन बोधिसत्व के सिवा कोई नहीं कर सका; अतः उस महान सत्ता ने यह कहकर खंडन किया, "हे महाराज, इस मूर्ख को क्या पता? यह तो केवल स्वयं को ही देखता है और ज्ञान की श्रेष्ठता को नहीं जानता। सुनिए, महाराज," और उन्होंने यह श्लोक सुनाया:

"इस प्रकार के प्रश्नों के उत्तर में धनवान मूर्ख तो बुद्धिमान व्यक्ति का गुलाम ही होता है; जब बुद्धिमान व्यक्ति चतुराई से उनका हल निकाल लेता है, तब मूर्ख भ्रमित हो जाता है। यह देखकर मैं कहता हूँ: धनवान मूर्ख से बुद्धिमान श्रेष्ठ होता है।"

मानो उसने सिनेरू पर्वत के चरणों से सुनहरी रेत पर चाँद निकाला हो, मानो उसने आकाश में पूर्णिमा का चाँद लाया हो, वैसे ही वह इस तर्क पर अड़ा रहा, वैसे ही उस महान सत्ता ने अपनी बुद्धिमत्ता का प्रदर्शन किया। तब राजा ने सेनाका से कहा, "अच्छा, सेनाका, अगर तुम कर सकते हो तो कर लो!" परन्तु जैसे किसी ने अपने भंडार का सारा अनाज खत्म कर दिया हो, वह चुपचाप बैठा रहा, व्याकुल, दुखी।

यदि वह कोई और तर्क दे पाता, तो हजार श्लोकों से भी यह जन्म पूरा नहीं हो पाता। परन्तु जब उसे कोई उत्तर नहीं मिला, तो उस महान सत्ता ने ज्ञान की प्रशंसा में यह श्लोक जारी रखा, मानो वह एक गहरी बाढ़ उंडेल रहा हो:

"सचमुच, ज्ञान को अच्छे लोगों द्वारा महत्व दिया जाता है; धन को इसलिए प्रिय माना जाता है क्योंकि मनुष्य भोग-विलास में लिप्त रहते हैं। बुद्धों का ज्ञान अतुलनीय है, और धन कभी भी ज्ञान से श्रेष्ठ नहीं हो सकता।"

यह सुनकर राजा उस महान प्राणी द्वारा प्रश्न के समाधान से इतना प्रसन्न हुआ कि उसने उस पर धन की भारी वर्षा की और एक श्लोक का पाठ किया:

"मैंने जो भी पूछा, उन्होंने मुझे उत्तर दिया, हे महोसाधा, धर्म के एकमात्र उपदेशक। एक हजार गायें, एक बैल और एक हाथी, दस रथ जो उत्तम नस्ल के घोड़ों द्वारा खींचे जाते हैं, और सोलह उत्तम गाँव, ये सब मैं आपको भेंट करता हूँ, आपके प्रश्न के उत्तर से प्रसन्न होकर।"

यहां अमीर और गरीब का प्रश्न (पुस्तक XX) समाप्त होता है।

उस दिन से बोधिसत्व का वैभव चरम पर था, और रानी उदंबरा ही सब कुछ संभालती थीं। जब वे सोलह वर्ष के हुए, तो रानी ने सोचा, "मेरा छोटा भाई बड़ा हो गया है, और उसका वैभव भी बहुत है; हमें उसके लिए एक पत्नी ढूंढनी चाहिए।" उन्होंने राजा से यह कहा, और राजा प्रसन्न हुए। उन्होंने कहा, "बहुत अच्छा, उसे बता दो।" रानी ने राजा को बताया, और राजा मान गए। रानी ने कहा, "तो चलो, हम तुम्हारे लिए एक दुल्हन ढूंढते हैं, मेरे पुत्र।" बोधिसत्व ने सोचा, "अगर वे मेरे लिए पत्नी चुन लें तो भी मैं संतुष्ट नहीं होऊंगा; मैं अपने लिए खुद ही ढूंढ लूंगा।" और उन्होंने कहा, "महोदया, कुछ दिनों तक राजा को मत बताना, मैं अपनी पसंद की पत्नी ढूंढने जाता हूं, और फिर आपको बताता हूं।" रानी ने उत्तर दिया, "ऐसा ही करो, मेरे पुत्र।" उन्होंने रानी से विदा ली, और अपने घर जाकर अपने साथियों को सूचना दी। फिर उन्होंने किसी तरह एक दर्जी से वस्त्र प्राप्त किए, और अकेले उत्तरी द्वार से उत्तर नगर की ओर निकल गए। उस स्थान पर एक बूढ़ा और जर्जर व्यापारी परिवार रहता था, और उस परिवार में एक बेटी थी, अमारा, जो सुंदर, बुद्धिमान और सौभाग्यशाली थी। उस सुबह तड़के, वह अपने पिता के खेत जोतने के लिए निकली थी, ताकि उन्हें अपने द्वारा पकाया हुआ चावल का दलिया दे सके, और संयोग से वह उसी रास्ते से जा रही थी। जब उस महान प्राणी ने उसे आते देखा तो उसने सोचा, "यह स्त्री सौभाग्यशाली है! यदि यह अविवाहित है तो यह मेरी पत्नी होनी चाहिए।" उसने भी जब उसे देखा तो सोचा, "यदि मैं ऐसे पुरुष के घर में रह सकूँ, तो मैं अपने परिवार को फिर से बसा सकती हूँ।" उस महान प्राणी ने सोचा, "वह विवाहित है या नहीं, मुझे नहीं पता: मैं उससे हाथ के इशारे से पूछूँगा, और यदि वह बुद्धिमान है तो वह समझ जाएगी।" इसलिए दूर खड़े होकर उसने अपनी मुट्ठी भींच ली। वह समझ गई कि वह उससे पूछ रहा है कि क्या उसका पति है, और उसने अपना हाथ फैला दिया। तब वह उसके पास गया और उसका नाम पूछा। उसने कहा, "मेरा नाम वह है जो न है, न था, और न कभी होगा।" "महोदया, इस संसार में कुछ भी अमर नहीं है, और आपका नाम अमर, अमर होना चाहिए।" "जी हाँ, स्वामी।" "महोदया, आप यह दलिया किसके लिए ले जा रही हैं?" "पुराने समय के देवता (देवदूत) के लिए।" "पुराने समय के देवता माता-पिता होते हैं, और निस्संदेह आपका मतलब आपके पिता से है।" "हाँ, स्वामी।" "आपके पिता क्या करते हैं?" "वे एक से दो बनाते हैं।" अब, एक से दो बनाना ही हल चलाना है। "वे हल चला रहे हैं, महोदया।" "जी हाँ, स्वामी।" "और आपके पिता कहाँ हल चला रहे हैं?" "जहाँ जाने वाले फिर कभी नहीं आते।" "वह स्थान जहाँ से जाने वाले फिर कभी नहीं आते, वह कब्रिस्तान है: वे कब्रिस्तान के पास हल चला रहे हैं।" "जी हाँ, स्वामी।" "क्या आप आज फिर आएंगी, महोदया?" "अगर मैं आऊँगी तो नहीं आऊँगी, अगर मैं नहीं आऊँगी तो आऊँगी।" "मुझे लगता है, महोदया, आपके पिता नदी के किनारे हल चला रहे हैं, और अगर बाढ़ आई तो आप नहीं आएंगी, अगर नहीं आई तो आप आएंगी।" इस बातचीत के बाद,अमारा नाम की महिला ने उन्हें दलिया पीने के लिए दिया। भगवान ने मना करना उचित न समझते हुए कहा कि वे थोड़ा सा लेना चाहेंगे। फिर उन्होंने दलिया का घड़ा नीचे रख दिया; और भगवान ने सोचा, "अगर वह पहले घड़ा धोए बिना और मुझे हाथ धोने के लिए पानी दिए बिना मुझे दलिया देंगी, तो मैं उन्हें छोड़कर चला जाऊंगा।" लेकिन उन्होंने घड़े में से पानी निकाला और उन्हें हाथ धोने के लिए दिया, घड़ा खाली ही ज़मीन पर रख दिया, उनके हाथों में नहीं, घड़े में दलिया को हिलाया और घड़े में भर दिया। लेकिन उसमें चावल बहुत कम थे, और भगवान ने कहा, "हे महोदया, इसमें तो चावल बहुत कम हैं!" "हमारे पास पानी नहीं था, स्वामी।" "आपका मतलब है कि जब आपके खेत में फसल उग रही थी, तब आपको पानी नहीं मिला?" "हाँ, स्वामी।" तो उन्होंने अपने पिता के लिए थोड़ा दलिया रख लिया और थोड़ा सा बोधिसत्व को दे दिया। उन्होंने दलिया पिया, कुल्ला किया और कहा, "महोदया, मैं आपके घर जाऊंगा; कृपया मुझे रास्ता दिखाइए।" उन्होंने प्रथम ग्रंथ में दिए गए एक श्लोक का पाठ करके ऐसा किया:

"केक और दलिया के रास्ते, और फूल से लदे दो पत्तों वाले पेड़ के रास्ते, जिस हाथ से मैं खाता हूँ, उसी हाथ से मैं तुम्हें जाने के लिए कहता हूँ, न कि उस रास्ते से जिससे मैं नहीं खाता: वही बाज़ार-नगर का रास्ता है, वह गुप्त मार्ग जिसे तुम्हें खोजना होगा।"

गुप्त मार्ग का प्रश्न यहीं समाप्त होता है।

वह बताए गए रास्ते से घर पहुँचा; और अमारा की माँ ने उसे देखकर बैठने के लिए कहा। "क्या मैं आपको थोड़ा दलिया दूँ, स्वामी?" उसने पूछा। "धन्यवाद, माँ—बहन अमारा ने मुझे थोड़ा सा दिया है।" वह तुरंत समझ गई कि वह उसकी बेटी के कहने पर आया होगा।

जब उस महान व्यक्ति ने उनकी गरीबी देखी, तो कहा, "माँ, मैं एक दर्जी हूँ: क्या आपके पास कुछ सिलने के लिए है?" "जी, स्वामी जी, लेकिन कोई भुगतान नहीं।" "भुगतान की कोई आवश्यकता नहीं है, माँ; कपड़े ले आइए, मैं उन्हें सिल दूँगा।" वह उनके लिए कुछ पुराने कपड़े ले आई, और जैसे-जैसे वह कपड़े लाती गई, बोधिसत्व उन्हें सिलते गए। आप जानते हैं, ज्ञानी व्यक्ति का व्यवसाय हमेशा अच्छा चलता है। फिर उन्होंने कहा, "जाओ, गली के लोगों को बताओ।" उसने गाँव में यह बात फैला दी; और एक ही दिन में बोधिसत्व ने अपने सिलाई के काम से एक हजार सिक्के कमा लिए। उस बूढ़ी औरत ने उनके लिए दोपहर का भोजन पकाया, और शाम को पूछा कि उसे कितना पकाना चाहिए। "माँ, इस घर में रहने वाले सभी लोगों के लिए पर्याप्त।" उसने कुछ करी और मसालों (मिठाइयों) के साथ चावल पकाया।

शाम को अमारा जंगल से लौटी, उसके सिर पर लकड़ियों का गट्ठा और कमर पर पत्ते थे। उसने लकड़ियाँ सामने के दरवाजे के सामने फेंक दीं और पीछे के दरवाजे से अंदर आ गई। उसके पिता बाद में लौटे। भगवान ने स्वादिष्ट भोजन किया; लड़की ने अपने खाने से पहले अपने माता-पिता को भोजन परोसा, उनके और बोधिसत्व के पैर धोए। कई दिनों तक वे वहीं रहकर उसकी देखभाल करते रहे। फिर एक दिन उसकी परीक्षा लेने के लिए उन्होंने कहा, "मेरी प्यारी अमारा, आधा माप चावल लो और उससे मेरे लिए दलिया, एक केक और उबले हुए चावल बनाओ।" वह तुरंत मान गई; और उसने चावल छीले; बड़े दानों से उसने दलिया बनाया, मध्यम दानों को उबाला और छोटे दानों से केक बनाया, उसमें उचित मसाले (मिठाइयाँ) मिलाईं। उसने दलिया और मसाले (मिठाइयाँ) भगवान को दिए; जैसे ही उन्होंने उसका एक निवाला लिया, उन्हें उसका उत्तम स्वाद महसूस हुआ: फिर भी उसकी परीक्षा लेने के लिए उन्होंने कहा, "महोदया, अगर आपको खाना बनाना नहीं आता तो आपने मेरे चावल क्यों खराब कर दिए?" और उसने उसे ज़मीन पर थूक दिया। लेकिन वह नाराज़ नहीं हुई; उसने उसे केक देते हुए कहा, "अगर दलिया अच्छा नहीं है तो केक खा लो।" उसने उसके साथ भी ऐसा ही किया, और उबले हुए चावल को फिर से ठुकराते हुए कहा, "अगर तुम्हें खाना बनाना नहीं आता तो तुमने मेरी संपत्ति क्यों बर्बाद की?" मानो गुस्से में आकर उसने तीनों को एक साथ मिलाया और उसके सिर से नीचे तक पूरे शरीर पर मल दिया, और उसे दरवाजे पर बैठने को कहा। "बहुत अच्छा, मालिक," उसने बिना किसी गुस्से के कहा और बैठ गई। यह देखकर कि उसमें ज़रा भी घमंड नहीं है, उसने कहा, "इधर आओ, मालकिन।" पहले ही शब्द पर वह आ गई।

जब महान पुरुष आए, तो वे अपने साथ एक हजार रुपये और पान की थैली में एक वस्त्र लाए थे। उन्होंने वह वस्त्र निकालकर उसके हाथों में देते हुए कहा, "महोदया, अपनी सहेलियों के साथ स्नान कीजिए और इसे पहनकर मेरे पास आइए।" उसने वैसा ही किया। ऋषि ने उसके माता-पिता को अपने द्वारा लाए या कमाए गए सारे पैसे दे दिए, उन्हें सांत्वना दी और उसे अपने साथ शहर ले गए। वहाँ उसकी परीक्षा लेने के लिए उन्होंने उसे द्वारपाल के घर में बैठाया और द्वारपाल की पत्नी को अपनी योजना बताकर अपने घर चले गए। फिर उन्होंने अपने कुछ आदमियों को बुलवाया और कहा, "मैंने फलाँ घर में एक स्त्री को छोड़ा है; तुम अपने साथ एक हजार सिक्के ले जाओ और उसकी परीक्षा लो।" उन्होंने उन्हें पैसे दिए और भेज दिए। उन्होंने वैसा ही किया जैसा उन्हें कहा गया था। उसने यह कहते हुए इनकार कर दिया, "यह मेरे स्वामी के चरणों की धूल के बराबर भी नहीं है।" आदमी वापस आए और परिणाम बताया। उन्होंने उन्हें फिर से भेजा, और तीसरी बार भी; और चौथी बार उन्होंने उन्हें उसे जबरदस्ती घसीटकर ले जाने को कहा। उन्होंने ऐसा ही किया, और जब उसने उस महान हस्ती को उसके पूरे वैभव में देखा, तो वह उसे पहचान नहीं पाई, बल्कि उसे देखते हुए मुस्कुराई और साथ ही रो भी पड़ी। उसने उससे पूछा कि उसने ऐसा क्यों किया। उसने उत्तर दिया, "गुरुजी, आपकी महिमा देखकर मैं मुस्कुराई और सोचा कि यह महिमा आपको बिना किसी कारण के नहीं मिली है, बल्कि पिछले जन्म में किसी अच्छे कर्म के फल स्वरूप मिली है: देखिए, अच्छाई का फल! मैंने सोचा और मुस्कुराई। लेकिन यह सोचकर मैं रो पड़ी कि अब आप उस संपत्ति के विरुद्ध पाप करेंगे जिसकी देखभाल और देखरेख कोई और करता है, और नरक में जाएँगे: इसी बात पर मुझे दया आई और मैं रो पड़ी।" इस परीक्षा के बाद उसने उसकी पवित्रता जान ली और उसे उसी स्थान पर वापस भेज दिया। दर्जी का वेश धारण करके वह उसके पास वापस गया और वहीं रात बिताई।

अगली सुबह वह महल गए और रानी उदंबरा को सारी बात बताई; रानी ने राजा को सूचित किया और अमारा को तरह-तरह के आभूषणों से सजाकर, एक भव्य रथ में बिठाकर, बड़े सम्मान के साथ उन्हें महापुरुष के महल में ले गईं और एक भव्य उत्सव मनाया। राजा ने बोधिसत्व को एक हजार सिक्कों के बराबर उपहार भेजा: नगर के सभी लोगों ने, द्वारपालों से लेकर आगे तक, उपहार भेजे। देवी अमारा ने राजा द्वारा भेजे गए उपहारों को दो हिस्सों में बाँटकर एक हिस्सा राजा को वापस भेज दिया; इसी तरह उन्होंने नागरिकों द्वारा भेजे गए सभी उपहारों को भी बाँटकर आधा-आधा लौटा दिया, इस प्रकार उन्होंने लोगों का दिल जीत लिया। उस समय से महापुरुष उनके साथ सुखपूर्वक रहने लगे और राजा को सांसारिक और आध्यात्मिक विषयों का ज्ञान देते रहे।

एक दिन सेनाक ने अपने पास आए तीन अन्य लोगों से कहा, ‘‘मित्रों, हम इस साधारण व्यक्ति के पुत्र महोसाधा के लिए पर्याप्त नहीं हैं; और अब उसने अपने से भी अधिक चतुर पत्नी ढूंढ ली है। क्या हम उसके और राजा के बीच दरार पैदा करने का कोई उपाय ढूंढ सकते

हैं?" "हमें क्या पता, गुरुजी—आपको ही निर्णय लेना होगा।" "कोई बात नहीं, एक उपाय है। मैं राजचिह्न से रत्न चुरा लूँगा; तुम, पुक्कुसा, उसका सोने का हार ले लो; तुम, कविंदा, उसका ऊनी वस्त्र ले लो; तुम, देविंदा, उसकी सोने की चप्पल ले लो।" उन चारों ने ये काम करने का उपाय ढूंढ लिया। फिर सेनाक ने कहा, "अब हमें उन्हें बिना उसकी जानकारी के उसके घर में ले जाना होगा।" इसलिए सेनाक ने रत्न को खजूर के एक बर्तन में रखा और एक दासी के द्वारा भेज दिया, और कहा, "यदि कोई और इस खजूर के बर्तन को लेना चाहे, तो मना कर दे, लेकिन बर्तन समेत महोसाधा के घर वालों को दे दे।" वह उसे लेकर ऋषि के घर गई और इधर-उधर घूमते हुए रोने लगी, "क्या आपके पास खजूर नहीं हैं?" लेकिन द्वार पर खड़ी अमारा ने यह देखा: उसने गौर किया कि लड़की कहीं और नहीं जा रही है, ज़रूर कोई बात होगी; इसलिए उसने अपने नौकरों को इशारा करके बुलाया और लड़की से कहा, "इधर आओ, लड़की, मैं खजूर ले आती हूँ।" जब वह आई, तो मालकिन ने अपने नौकरों को बुलाया, लेकिन किसी ने जवाब नहीं दिया, इसलिए उसने लड़की को उन्हें लाने के लिए भेज दिया। जब वह गई हुई थी, अमारा ने बर्तन में हाथ डाला और रत्न पा लिया। जब लड़की लौटी तो अमारा ने उससे पूछा, "तुम किसकी नौकरानी हो, लड़की?" "पंडित सेनाक की दासी।" फिर उसने उसका नाम और उसकी माँ का नाम पूछा और कहा, "ठीक है, मुझे कुछ खजूर दे दो।" "अगर आपको चाहिए, माँ, तो ले लो, बर्तन समेत—मुझे कोई भुगतान नहीं चाहिए।" "तो जाओ," अमारा ने कहा और उसे विदा कर दिया। फिर उसने एक पत्ते पर लिखा, "अमुक महीने के अमुक दिन गुरु सेनाक ने राजा के मुकुट से एक रत्न अमुक कन्या के हाथों उपहार स्वरूप भेजा।" पुक्कुसा ने चमेली के फूलों के डिब्बे में छिपाकर सोने का हार भेजा; कविंदा ने सब्जियों की टोकरी में वस्त्र भेजा; देविंदा ने भूसे के गट्ठे में सोने की चप्पल भेजी। उसने उन सभी को प्राप्त किया और नाम समेत एक पत्ते पर लिख लिया, जिसे उसने महान सत्ता को बताकर रख दिया। फिर वे चारों पुरुष महल में गए और बोले, "हे महाराज! क्या आप अपना रत्नजड़ित मुकुट नहीं पहनेंगे?" "हाँ, मैं पहनूँगा—लाओ," राजा ने कहा। लेकिन उन्हें न तो रत्न मिला और न ही अन्य वस्तुएँ। तब उन चारों ने कहा, "हे महाराज, आपके आभूषण महोसाधा के घर में हैं, और वह उनका उपयोग करता है: वह साधारण व्यक्ति का पुत्र आपका शत्रु है!" इस प्रकार उन्होंने राजा पर कलंक लगाया। फिर उसके शुभचिंतकों ने जाकर महोसाधा को बताया; और उसने कहा, "मैं राजा के पास जाकर पता लगाऊंगा।" वह राजा से मिलने गया, जो क्रोधित था और बोला, "मैं इसे नहीं जानता! यह यहाँ क्या चाहता है?" उसने उसे मिलने की अनुमति नहीं दी। जब ऋषि को पता चला कि राजा क्रोधित है, तो वह घर लौट गया।राजा ने उसे पकड़ने के लिए दूत भेजे; शुभचिंतकों से सुनकर ऋषि ने अमारा को संकेत दिया कि अब उसके जाने का समय आ गया है। इसलिए वह भेस बदलकर दक्षिण नगर भाग गया, जहाँ उसने एक कुम्हार के घर में कुम्हार का काम किया। पूरे नगर में उसके भाग जाने की खबर फैल गई। सेनाका और अन्य तीन ने जब उसके जाने की सूचना सुनी, तो उन्होंने एक-एक करके सभी को बिना बताए अमारा को पत्र भेजे, जिसमें लिखा था: "कोई बात नहीं: क्या हम बुद्धिमान नहीं हैं?" अमारा ने चारों पत्र ले लिए और प्रत्येक को उत्तर दिया कि वे सही समय पर आएँ। जब वे आए, तो अमारा ने उन्हें तरकश से दाढ़ी मुंडवा दी और उन्हें खुले मैदान में फेंक दिया, उन्हें घावों से तड़पाया और चटाई में लपेटकर राजा को संदेश भेज दिया। उन्हें और चारों कीमती वस्तुओं को साथ लेकर वह राजा के प्रांगण में गई और वहाँ राजा को प्रणाम करते हुए बोली, "हे महाराज, ज्ञानी महोषद चोर नहीं हैं; ये रहे चोर। सेनाक ने रत्न चुराया, पुक्कुसा ने सोने का हार चुराया, देविन्द ने सोने की चप्पल चुराई: फलाँ महीने के फलाँ दिन फलाँ दासी के हाथों ये चारों वस्तुएँ भेंट के रूप में भेजी गई थीं। इस पत्ते को देखिए। जो आपका है, उसे ले लीजिए और चोरों को बाहर निकाल दीजिए।" इस प्रकार इन चारों को अपशब्द कहते हुए वह घर लौट गई। परन्तु राजा इस बात से व्याकुल था, और चूँकि बोधिसत्व जा चुके थे और कोई अन्य ज्ञानी पुरुष उपस्थित नहीं था, इसलिए उसने कुछ नहीं कहा, परन्तु उन्हें स्नान करके घर जाने को कहा।

राजमहल में निवास करने वाली देवी को बोधिसत्व के प्रवचन की आवाज सुनाई नहीं दी, तो उन्हें आश्चर्य हुआ कि इसका कारण क्या हो सकता है। कारण का पता चलने पर उन्होंने ऋषि को वापस लाने का निश्चय किया। रात में वे छत्र के एक छिद्र से प्रकट हुईं और राजा से चार प्रश्न पूछे, जो 'देवी के प्रश्न' (चौथे खंड) में "वह हाथों और पैरों से प्रहार करता है" से शुरू होने वाले श्लोकों में मिलते हैं। राजा उत्तर नहीं दे सके और उन्होंने ऐसा कहा, लेकिन अपने ज्ञानियों से पूछने का प्रस्ताव रखा और एक दिन का समय मांगा। अगले दिन उन्होंने उन्हें बुलाने के लिए संदेश भेजा, लेकिन उन्होंने उत्तर दिया, "हम अपने सिर मुंडवाए हुए चेहरे के साथ सड़क पर दिखने में शर्म महसूस करते हैं।" इसलिए उन्होंने उन्हें सिर पर पहनने के लिए चार टोपियां भेजीं। (कहा जाता है कि इन टोपियों की उत्पत्ति यहीं से हुई है।) तब वे आए और जहाँ उन्हें बैठने के लिए कहा गया था, वहाँ बैठ गए। राजा ने कहा, "सेनाका, कल रात मेरे छत्र में निवास करने वाली देवी ने मुझसे चार प्रश्न पूछे, जिनका उत्तर मैं नहीं दे सका, लेकिन मैंने कहा कि मैं अपने ज्ञानियों से पूछूंगा। कृपया मेरे लिए उनका उत्तर दीजिए।" और फिर उन्होंने पहला श्लोक सुनाया:

"वह हाथों और पैरों से प्रहार करता है, और चेहरे पर घूंसे मारता है; फिर भी, हे राजा, वह प्रिय है, और पति से भी अधिक प्रिय हो जाता है।"

सेनाका हकलाते हुए जो भी पहले आया, वही बोल पड़ा, "कैसे वार करता है, किसे वार करता है," और उसे कुछ भी समझ नहीं आया; बाकी सब चुप थे। राजा बहुत दुखी था। जब रात में देवी ने उससे फिर पूछा कि क्या उसे पहेली का हल मिल गया है, तो उसने कहा, "मैंने अपने चार बुद्धिमानों से पूछा, और वे भी नहीं बता सके।" देवी ने उत्तर दिया, "वे क्या जानते हैं? बुद्धिमान महोषधा के सिवा कोई इसे हल नहीं कर सकता। यदि तुम उसे बुलवाकर इन प्रश्नों का हल नहीं करवाओगे, तो मैं इस अग्नि-तलवार से तुम्हारा सिर काट दूंगी।"

उसे इतना डराने के बाद देवी ने आगे कहा, "हे राजा, जब तुम्हें आग चाहिए हो तो जुगनू मत फूँको, और जब तुम्हें दूध चाहिए हो तो सींग से दुह मत निकालो।" फिर उसने पाँचवें ग्रंथ का जुगनू वाला प्रश्न दोहराया।

जब प्रकाश बुझ जाता है, तो रात में आग की तलाश में जाने वाला कोई भी व्यक्ति जुगनू को आग समझ सकता है? यदि वह उस पर गोबर और घास बिखेर दे, तो यह एक मूर्खतापूर्ण विचार है; वह उसे जला नहीं सकता। इसी प्रकार, यदि कोई जानवर गाय के सींग से दूध दुहे जहाँ से दूध नहीं निकलता, तो उसे कोई लाभ नहीं मिलता। मनुष्य अनेक तरीकों से लाभ प्राप्त करते हैं, शत्रुओं को दंडित करके और मित्रों के प्रति दया दिखाकर। सेना के प्रमुखों को अपने पक्ष में करके और मित्रों की सलाह से, पृथ्वी के स्वामी पृथ्वी और उसकी संपूर्ण संपत्ति पर अधिकार कर लेते हैं।

"वे तुम्हारी तरह नहीं हैं, जो जुगनू को आग समझकर उस पर फूंक मारते हो: तुम उस व्यक्ति की तरह हो जो पास में आग देखकर जुगनू पर फूंक मारता है, उस व्यक्ति की तरह हो जो तराजू को गिराकर हाथ से तौलता है, उस व्यक्ति की तरह हो जो दूध पाने के लिए सींग से दूध दुहता है, जब तुम सेनाक और उनके जैसे लोगों से गहरे प्रश्न पूछते हो। उन्हें क्या पता? वे जुगनू के समान हैं, महाषोद एक प्रचंड अग्नि के समान ज्ञान से प्रज्वलित हैं। यदि तुम इस प्रश्न का उत्तर नहीं खोजोगे, तो तुम मरे हुए होगे।" इस प्रकार राजा को भयभीत करके वह गायब हो गई।

इस कारण राजा, मृत्यु भय से व्याकुल होकर, अगले दिन अपने चार दरबारियों को रथों पर सवार होकर नगर के चारों द्वारों से होते हुए भेजने का आदेश दिया, और उन्हें आदेश दिया कि वे जहाँ कहीं भी उनके पुत्र, ज्ञानी महोसाधा को पाएँ, उनका पूर्ण आदर करें और उन्हें शीघ्र वापस ले आएँ। इनमें से तीन दरबारियों को ऋषि नहीं मिले; परन्तु चौथा दरबारी जो दक्षिणी द्वार से गया, उसने दक्षिण नगर में उस महान व्यक्ति को पाया, जो मिट्टी लाकर और अपने स्वामी का चाक घुमाकर, मिट्टी से सना हुआ, भूसे के गट्ठे पर बैठा, थोड़े से सूप में डूबे हुए चावल के गोले खा रहा था। अब उसने ऐसा इसलिए किया: उसने सोचा कि राजा को उस पर सत्ता हथियाने का संदेह हो सकता है, परन्तु यदि उसे पता चलता कि वह कुम्हार का काम करके जीविका चला रहा है, तो यह संदेह दूर हो जाएगा। जब राजा ने दरबारी को देखा, तो वह समझ गया कि वह अपने लिए आया है; उन्हें समझ आ गया था कि उनकी समृद्धि फिर से लौट आएगी और उन्हें देवी अमरा द्वारा तैयार किया गया हर तरह का उत्तम भोजन मिलेगा। इसलिए उन्होंने अपने हाथ में पकड़ी चावल की लोई गिरा दी, खड़े हुए और अपना मुँह धोया। उसी क्षण दरबारी वहाँ आ गया: यह सेनाक के गुट का सदस्य था, इसलिए उसने उससे अशिष्टता से कहा: "हे ज्ञानी गुरु, सेनाक ने जो कहा वह उपयोगी जानकारी थी। आपकी समृद्धि चली गई, आपका सारा ज्ञान व्यर्थ हो गया; और अब आप मिट्टी से सने हुए पुआल के गट्ठे पर बैठे हैं और इस तरह भोजन कर रहे हैं!" और उन्होंने भूरी-पन्हा या ज्ञान का प्रश्न, दसवें खंड से यह श्लोक सुनाया:

"क्या यह सच है, जैसा कि लोग कहते हैं, कि आप गहन ज्ञान वाले व्यक्ति हैं? इतनी समृद्धि, चतुराई और बुद्धिमत्ता आपके किसी काम नहीं आती, क्योंकि इस तरह आप महत्वहीन हो जाते हैं, जबकि आप बस थोड़ा सा सूप पीते हैं।"

तब उस महान सत्ता ने कहा, "अंधे मूर्ख! अपनी बुद्धि की शक्ति से जब मैं चाहूँगा, तब उस समृद्धि को बहाल करूँगा"; और उन्होंने कुछ श्लोक पढ़े।

मैं कष्ट सहकर कल्याण को परिपक्व करता हूँ, मैं उचित और अपूर्व समयों में भेद करता हूँ, अपनी इच्छा से छिपता हूँ; मैं लाभ के द्वार खोलता हूँ; इसलिए मैं उबले हुए चावल से संतुष्ट हूँ। जब मुझे प्रयास का समय दिखाई देता है, अपनी योजनाओं से लाभ को परिपक्व करते हुए, मैं शेर की तरह वीरतापूर्वक व्यवहार करूँगा, और उस महान शक्ति से तुम मुझे फिर देखोगे।

तब दरबारी ने कहा, "हे महाराज, छत्र में निवास करने वाले देवता ने राजा से एक प्रश्न पूछा है, और राजा ने चारों ज्ञानी पुरुषों से पूछा, लेकिन उनमें से कोई भी इसका उत्तर नहीं दे सका! इसलिए राजा ने मुझे आपके पास भेजा है।" "तो फिर," महान पुरुष ने कहा, "क्या तुम ज्ञान की शक्ति नहीं देखते? ऐसे समय में समृद्धि किसी काम की नहीं, केवल ज्ञानी व्यक्ति ही काम आता है।" इस प्रकार उन्होंने ज्ञान की प्रशंसा की। तब दरबारी ने महान पुरुष को राजा द्वारा दिए गए हजार सिक्के और वस्त्र सौंप दिए, ताकि वे उसे स्नान कराकर तुरंत वस्त्र पहना सकें। कुम्हार यह सोचकर भयभीत हो गया कि ऋषि महोसाधा उसका कारीगर था, लेकिन महान पुरुष ने उसे दिलासा देते हुए कहा, "भयभीत न हों, मेरे स्वामी, आपने मेरी बहुत सहायता की है।" तब उन्होंने उसे हजार सिक्के दिए; और मिट्टी के दाग लगे हुए ही रथ पर सवार होकर नगर चले गए। दरबारी ने राजा को अपने आगमन की सूचना दी। "हे पुत्र, आपने ऋषि को कहाँ पाया?" "महाराज, वह दक्षिण नगर में कुम्हार का काम करके अपनी जीविका कमाता था; परन्तु जैसे ही उसे पता चला कि आपने उसे बुलवाया है, वह बिना नहाए, शरीर पर कीचड़ लगे हुए ही आ गया।" राजा ने सोचा, "यदि वह मेरा शत्रु होता तो वह शान-शौकत और सेवकों के दल के साथ आता; वह मेरा शत्रु नहीं है।" तब उसने आदेश दिया कि उसे अपने घर ले जाया जाए, नहलाया जाए, सजाया जाए और उचित शान-शौकत के साथ वापस आने को कहा जाए। ऐसा ही किया गया। वह लौटा, अंदर आया, राजा को प्रणाम किया और एक तरफ खड़ा हो गया। राजा ने उससे स्नेहपूर्वक बात की, फिर उसकी परीक्षा लेने के लिए यह श्लोक कहा:

कुछ लोग धनवान होने के कारण पाप नहीं करते, परन्तु कुछ लोग कलंक के भय से पाप नहीं करते। यदि तुम्हारा मन बहुत धन की इच्छा रखता, तो तुम भी ऐसा कर सकते थे। तुम मुझे हानि क्यों नहीं पहुँचाते?

बोधिसत्व ने कहा:

बुद्धिमान लोग धन के सुख के लिए पाप कर्म नहीं करते। भले ही वे दुर्भाग्य से पीड़ित हों और उनकी आर्थिक स्थिति खराब हो जाए, वे मित्रता या शत्रुता के कारण अपने अधिकार का त्याग नहीं करते।

राजा ने फिर से इस श्लोक का पाठ किया, जो एक क्षत्रिय का रहस्यमय कथन है:

जो कोई भी व्यक्ति किसी भी कारण से, चाहे छोटा हो या बड़ा, अपने आप को नीची स्थिति से ऊपर उठाता है, वह उसके बाद धार्मिकता के मार्ग पर चलता है।

और उस महान सत्ता ने वृक्ष के उदाहरण के साथ इस श्लोक का पाठ किया:

"जिस वृक्ष की छाया में मनुष्य को बैठकर विश्राम करना चाहिए, उसकी शाखा काटना विश्वासघात है। हम झूठे मित्रों से घृणा करते हैं।"

फिर उसने आगे कहा, "महाराज, यदि किसी पेड़ की इस्तेमाल की हुई शाखा को काटना विश्वासघात है, तो किसी मनुष्य की हत्या करने वाले के बारे में हम क्या कहेंगे? महाराज, आपने मेरे पिता को अपार धन दिया है और मुझ पर कृपा की है: मैं आपके साथ विश्वासघात कैसे कर सकता हूँ?" इस प्रकार अपनी पूरी निष्ठा प्रदर्शित करते हुए उसने राजा को उनके दोष के लिए फटकारा।

जब कोई व्यक्ति किसी को सही मार्ग बताता है या उसके संदेह दूर करता है, तो दूसरा व्यक्ति उसका रक्षक और शरणस्थल बन जाता है; और एक बुद्धिमान व्यक्ति इस मित्रता को नष्ट नहीं करेगा।

फिर राजा को संबोधित करते हुए उन्होंने ये दो छंद कहे:

"मैं आलसी, कामुक और उदासीन व्यक्ति से घृणा करता हूँ।"
झूठा तपस्वी एक दुष्ट तपस्वी होता है।
एक दुष्ट राजा बिना सुने ही किसी मामले का फैसला कर देगा;
ऋषि का क्रोध कभी भी उचित नहीं ठहराया जा सकता।
योद्धा राजकुमार गहन विचार-विमर्श के बाद सुविचारित निर्णय देता है।
जब राजा सही निर्णय लेते हैं, तो उनकी प्रसिद्धि सदा अमर रहती है।
जब उन्होंने ऐसा कहा, तो राजा ने उस महान सत्ता को फैले हुए सफेद छाते के नीचे राजसिंहासन पर बैठाया, और स्वयं एक नीची चौकी पर बैठकर बोले: "हे ज्ञानी, सफेद छाते में निवास करने वाली देवी ने मुझसे चार प्रश्न पूछे। मैंने चारों ज्ञानी पुरुषों से परामर्श किया, लेकिन वे उनका उत्तर नहीं दे सके: हे मेरे पुत्र, मेरे प्रश्नों का उत्तर दीजिए!" "हे महाराज, चाहे वह छाते की देवी हों, या वे चारों महान राजा हों, या जो भी हों; जो भी प्रश्न पूछे, मैं उसका उत्तर दूंगा।" इस प्रकार राजा ने देवी के समान ही प्रश्न पूछा और कहा:

वह हाथों और पैरों से प्रहार करता है, वह चेहरे पर घूंसे मारता है; और हे राजा, वह पति से भी अधिक प्रिय है।

जब उस महान प्राणी ने प्रश्न सुना, तो उसका अर्थ इतना स्पष्ट हो गया मानो आकाश में चंद्रमा उदय हो गया हो। “सुनो, हे राजा!” उन्होंने कहा, “जब कोई बच्चा अपनी माँ की गोद में खुशी-खुशी खेलता है और हाथों-पैरों से अपनी माँ को पीटता है, उसके बाल खींचता है, मुट्ठी से उसके चेहरे पर मारता है, तो माँ कहती है, नन्हे बदमाश, मुझे क्यों पीट रहे हो? और प्रेम से वह उसे अपने सीने से लगा लेती है, अपने स्नेह को रोक नहीं पाती, और उसे चूमती है; और ऐसे समय में वह उसे अपने पिता से भी अधिक प्रिय होता है।” इस प्रकार उन्होंने इस प्रश्न को स्पष्ट किया, मानो उन्होंने आकाश में सूर्य को उदय कर दिया हो; और यह सुनकर देवी ने राजमहल के छिद्र से अपने शरीर का आधा भाग प्रकट किया और मधुर स्वर में कहा, “प्रश्न का हल हो गया!” फिर उन्होंने उस महान प्राणी को दिव्य सुगंधों और फूलों से भरा एक कीमती डिब्बा भेंट किया और अंतर्धान हो गईं। राजा ने भी उन्हें फूल आदि भेंट किए और दूसरा श्लोक सुनाते हुए उनसे दूसरा प्रश्न पूछा:

वह उसकी जमकर निंदा करती है, फिर भी उसे अपने पास रखना चाहती है: और हे राजा, वह पति से भी अधिक प्रिय है।

महान सत्ता ने कहा, "महाराज, सात वर्ष का बच्चा, जो अब अपनी माँ की आज्ञा मान सकता है, जब उसे खेत या बाज़ार जाने के लिए कहा जाता है, तो वह कहता है, यदि आप मुझे यह या वह मिठाई देंगी तो मैं चला जाऊँगा; माँ कहती है, लो मेरे बेटे, और उसे मिठाई दे

देती है; फिर वह मिठाई खाकर कहता है, हाँ, आप घर की ठंडी छाँव में बैठिए और मैं आपके काम से बाहर जाऊँ! वह मुँह बनाता है, या इशारों से उसका मज़ाक उड़ाता है, और नहीं जाता। माँ क्रोधित हो जाती है, एक छड़ी उठाती है और चिल्लाती है--तुम जो मैं देती हूँ उसे खा लेते हो और फिर खेत में मेरे लिए कुछ नहीं करते! वह उसे डरा देती है, वह पूरी गति से भाग जाता है; वह उसका पीछा नहीं कर पाती और चिल्लाती है--निकल जाओ, चोर तुम्हें टुकड़े-टुकड़े कर दें! इस प्रकार वह उसे जितना चाहे उतना बुरा-भला कहती है; लेकिन जो उसके मुँह से निकलता है वह उसे बिल्कुल नहीं चाहती, और इसलिए वह चाहती है कि वह उसके पास रहे। वह पूरे दिन खेलता रहता है, और शाम को घर आने की हिम्मत न करके वह माँ के घर चला जाता है।" कोई रिश्तेदार। माँ उसके आने का इंतज़ार करते हुए सड़क पर देखती रहती है, लेकिन वह नहीं आता, और यह सोचकर कि वह लौटने की हिम्मत नहीं करेगा, उसका हृदय पीड़ा से भर जाता है; आँखों से आँसू बहते हुए वह अपने परिवार के घरों में उसे ढूँढती है, और जब उसे अपना बेटा दिखता है तो वह उसे गले लगाती है, चूमती है और दोनों बाहों से कसकर पकड़ लेती है, और पहले से कहीं अधिक प्रेम करती है, रोते हुए पूछती है, क्या तुमने मेरी बात गंभीरता से ली? इस प्रकार, महाराज, एक माँ क्रोध के क्षण में अपने बेटे से और भी अधिक प्रेम करती है। इस प्रकार उसने दूसरे प्रश्न का उत्तर दिया: देवी ने उसे पहले की तरह ही भेंट चढ़ाई और राजा ने भी। फिर राजा ने उससे एक अन्य श्लोक में तीसरा प्रश्न पूछा:

वह बिना कारण के उसका अपमान करती है और बिना वजह उसे फटकारती है; फिर भी, हे राजा, वह पति से भी अधिक प्रिय है।

महान सत्ता ने कहा, "महाराज, जब दो प्रेमी एकांत में प्रेम का आनंद लेते हैं, और उनमें से एक दूसरे से कहता है, 'तुम्हें मेरी परवाह नहीं है, मुझे पता है तुम्हारा दिल कहीं और है!' यह सब झूठ और निराधार है, वे एक दूसरे को कोसते और फटकारते हैं, तब वे एक दूसरे के और भी प्रिय हो जाते हैं। यही प्रश्न का अर्थ है।" देवी ने पहले की तरह ही भेंट चढ़ाई, और राजा ने भी; फिर राजा ने उनसे चौथा श्लोक सुनाते हुए एक और प्रश्न पूछा।

"भोजन-पानी, वस्त्र और आवास तो सभी अच्छे लोग अपने साथ ले जाते हैं; फिर भी, हे राजा, वे पति से भी अधिक प्रिय होते हैं।"

उन्होंने उत्तर दिया, “महाराज, यह प्रश्न धर्मात्मा ब्राह्मण भिक्षुओं के विषय में है। जो परिवार इस लोक और परलोक में विश्वास रखते हैं, वे उन्हें दान देते हैं और दान देने में प्रसन्न होते हैं। जब वे ऐसे ब्राह्मणों को दान ग्रहण करते और खाते हुए देखते हैं, और सोचते हैं, “ये तो हमसे ही भीख मांगने आए थे, हमारा ही भोजन खा रहे हैं,” तो उनके मन में इनके प्रति स्नेह बढ़ जाता है। इस प्रकार वे सचमुच दान ग्रहण करते हैं और दान को अपने कंधे पर धारण करके प्रिय हो जाते हैं।” इस प्रश्न का उत्तर मिलने पर देवी ने पहले की तरह ही भेंट देकर अपनी स्वीकृति व्यक्त की और सात अनमोल वस्तुओं से भरा एक कीमती संदूक महापुरुष के चरणों में रखकर उनसे इसे स्वीकार करने की प्रार्थना की। राजा भी प्रसन्न हुए और उन्हें सेनापति बना दिया। इसके बाद महापुरुष की महिमा महान हो गई। यहीं पर देवी का प्रश्न समाप्त होता है।

फिर उन चारों ने कहा, "यह साधारण सा आदमी तो बड़ा हो गया है: अब हम क्या करें?" सेनाका ने उनसे कहा, "ठीक है, मुझे एक योजना सूझी है। चलो उस आदमी के पास चलते हैं और उससे पूछते हैं, किसी को भी राज़ बताना उचित नहीं है? अगर वह कहे, किसी को नहीं, तो हम राजा के सामने उसकी शिकायत करेंगे और कहेंगे कि वह देशद्रोही है।" तो वे चारों उस ज्ञानी व्यक्ति के घर गए, उसे प्रणाम किया और कहा, "ज्ञानी महोदय, हम आपसे एक प्रश्न पूछना चाहते हैं।" "पूछो," उन्होंने कहा। सेनाका ने पूछा, "ज्ञानी महोदय, मनुष्य को किसमें दृढ़ रहना चाहिए?" "सत्य में।" "यह हो जाने के बाद, आगे क्या करना चाहिए?" "उसे धन कमाना चाहिए।" "उसके बाद क्या?" "उसे अच्छी सलाह सीखनी चाहिए।" "उसके बाद क्या?" "उसे अपना राज़ किसी को नहीं बताना चाहिए।" "धन्यवाद, महोदय," उन्होंने कहा और प्रसन्न होकर चले गए, यह सोचते हुए, "आज हम उस आदमी को वापस देखेंगे!" फिर वे राजा के समक्ष उपस्थित हुए और उनसे कहा, "महाराज, यह व्यक्ति आपका गद्दार है!"

राजा ने उत्तर दिया, "मुझे आप पर विश्वास नहीं है, वह कभी मेरे साथ विश्वासघात नहीं करेगा।" "मान लीजिए महाराज, क्योंकि यह सच है! लेकिन यदि आपको विश्वास नहीं है, तो उससे पूछिए कि रहस्य किसे बताया जाना चाहिए; यदि वह विश्वासघाती नहीं है, तो वह कहेगा, फलां व्यक्ति को; लेकिन यदि वह विश्वासघाती है तो वह कहेगा, रहस्य किसी को नहीं बताया जाना चाहिए; जब आपकी इच्छा पूरी हो जाए, तब आप बोल सकते हैं। तब हम पर विश्वास कीजिए, और संदेह करना छोड़ दीजिए।" तदनुसार, एक दिन जब सभी एक साथ बैठे थे, तो उन्होंने 'ज्ञानी व्यक्ति का प्रश्न' पुस्तक के XX भाग का पहला श्लोक सुनाया।

"पांचों ज्ञानी पुरुष अब एक साथ हैं, और मेरे मन में एक प्रश्न उठता है: सुनो। किसे कोई रहस्य प्रकट किया जाना चाहिए, चाहे वह अच्छा हो या बुरा?"

यह सुनकर सेनाका ने राजा को अपने पक्ष में लाने के इरादे से इस श्लोक को दोहराया:

"हे पृथ्वी के स्वामी, अपने मन की बात कहिए! आप हमारे सहारा हैं और हमारे बोझ उठाते हैं। पांच बुद्धिमान पुरुष आपकी इच्छा और अभिलाषा को समझेंगे और फिर बोलेंगे, हे मनुष्यों के स्वामी!"

तब राजा ने अपनी मानवीय दुर्बलता के बावजूद यह श्लोक पढ़ा:

यदि कोई स्त्री सदाचारी, वफादार, अपने पति की इच्छा और मर्जी के प्रति आज्ञाकारी और स्नेही हो, तो पत्नी को अच्छा हो या बुरा, कोई भी रहस्य बता देना चाहिए।

"अब राजा मेरे पक्ष में है!" सेनाक ने सोचा और प्रसन्न होकर उसने एक श्लोक दोहराया, जिसमें उसने अपने आचरण का स्पष्टीकरण दिया।

"जो व्यक्ति संकट में पड़े बीमार व्यक्ति की रक्षा करता है और उसका आश्रय और सहारा बनता है, वह अपने मित्र को कोई रहस्य बता सकता है, चाहे वह अच्छा हो या बुरा।"

तब राजा ने पुक्कुसा से पूछा, "पुक्कुसा, तुम्हें क्या लगता है? किसे कोई रहस्य बताना चाहिए?" और पुक्कुसा ने यह श्लोक सुनाया:

"चाहे भाई बूढ़ा हो या जवान या बीच की उम्र का, यदि वह गुणी और भरोसेमंद हो, तो ऐसे भाई को कोई भी रहस्य बताया जा सकता है, चाहे वह अच्छा हो या बुरा।"

इसके बाद राजा ने कविंदा से पूछा, और उसने यह श्लोक सुनाया:

"जब कोई पुत्र अपने पिता के हृदय के प्रति आज्ञाकारी होता है, एक सच्चा पुत्र, महान बुद्धि वाला पुत्र, तो उस पुत्र को कोई भी रहस्य प्रकट किया जा सकता है, चाहे वह अच्छा हो या बुरा।"

फिर राजा ने देविन्द से पूछा, जिसने यह श्लोक सुनाया:

"हे मनुष्यों के स्वामी! यदि कोई माता अपने पुत्र को स्नेहपूर्वक पालती है, तो वह अपनी माता को कोई भी रहस्य बता सकता है, चाहे वह अच्छा हो या बुरा।"

उनसे पूछने के बाद राजा ने पूछा, "हे विद्वान, आप इस बारे में क्या सोचते हैं?" और उन्होंने यह श्लोक सुनाया:

"रहस्य को गुप्त रखना अच्छा है, रहस्य को प्रकट करना प्रशंसनीय नहीं है। समझदार व्यक्ति को इसे तब तक अपने तक ही रखना चाहिए जब तक यह पूरा न हो जाए; लेकिन इसके पूरा होने के बाद वह जब चाहे बोल सकता है।"

जब ऋषि ने यह कहा तो राजा अप्रसन्न हो गए। फिर राजा ने सेनाक की ओर देखा और सेनाक ने राजा की ओर। बोधिसत्व ने यह देखा और समझ गए कि इन चारों ने पहले भी राजा के सामने उनकी निंदा की थी, और यह प्रश्न उनकी परीक्षा लेने के लिए पूछा गया होगा। अब जब वे बात कर रहे थे, सूर्य अस्त हो चुका था और दीपक जल रहे थे। उन्होंने सोचा, "राजाओं के मार्ग कितने कठिन होते हैं, आगे क्या होगा कोई नहीं बता सकता; मुझे शीघ्र ही यहाँ से निकलना चाहिए।" अतः वे अपने आसन से उठे, राजा को प्रणाम किया और यह सोचते हुए चले गए, "इन चारों में से एक ने कहा कि यह बात किसी मित्र को बतानी चाहिए, एक ने भाई को, एक ने पुत्र को, एक ने माता को: उन्होंने कुछ किया या देखा होगा; या मुझे लगता है कि उन्होंने दूसरों से सुना होगा कि उन्होंने क्या देखा है। अच्छा, अच्छा, मैं आज पता लगा लूँगा।" उनके मन में यही विचार था। अन्य दिनों में, ये चारों महल से बाहर आकर महल के द्वार पर रखे एक कुंड पर बैठते और घर जाने से पहले अपनी योजनाओं पर चर्चा करते थे। इसलिए ऋषि ने सोचा कि यदि वह उस कुंड के नीचे छिप जाए तो शायद उन्हें उनके रहस्य पता चल जाएँ। उन्होंने कुंड को उठाया, उसके नीचे एक चटाई बिछवाई और अंदर घुस गए। उन्होंने अपने साथियों को निर्देश दिया कि जब चारों बुद्धिमान अपनी चर्चा समाप्त करके चले जाएँ तो उन्हें बुला लाएँ। साथियों ने वादा किया और चले गए। इसी बीच सेनाक राजा से कह रहा था, "महाराज, आप हम पर विश्वास नहीं करते, अब आप क्या सोचते हैं?" राजा ने बिना जाँच-पड़ताल किए इन षड्यंत्रकारियों की बात मान ली और भयभीत होकर पूछा, "हे बुद्धिमान सेनाक, अब हम क्या करें?" "महाराज, बिना किसी को बताए, उसे मार डालो।" "हे सेनाक, मेरे हितों की परवाह सिर्फ तुम्हें है। अपने साथियों को साथ लेकर द्वार पर प्रतीक्षा करो, और सुबह जब वह मुझसे मिलने आए, तो तलवार से उसका सिर काट दो।" ऐसा कहकर उन्होंने अपनी कीमती तलवार उन्हें दे दी। "बहुत खूब, महाराज, डरिए मत, हम उसे मार डालेंगे।" वे यह कहते हुए बाहर निकले, "हमने अपने शत्रु की पीठ देख ली!" और चरनी पर बैठ गए। तब सेनाका ने कहा, "मित्रों, इसे कौन मारेगा?" बाकी लोगों ने कहा, "आप, हमारे गुरुजी," और यह ज़िम्मेदारी उन्हें सौंप दी। तब सेनाका ने कहा, "मित्रों, आपने कहा था कि फलां व्यक्ति को एक रहस्य बताया जाना चाहिए: क्या यह कुछ ऐसा था जो आपने किया था, या देखा था, या सुना था?" "छोड़िए, गुरुजी: जब आपने कहा कि एक रहस्य किसी मित्र को बताया जा सकता है, तो क्या यह कुछ ऐसा था जो

आपने किया था?" "इससे आपको क्या लेना-देना?" उन्होंने पूछा। "कृपया हमें बताइए, गुरुजी," उन्होंने दोहराया। उन्होंने कहा, "यदि राजा को यह रहस्य पता चल गया, तो मेरी जान चली जाएगी।" "डरिए मत, गुरुजी, यहाँ कोई नहीं है जो आपका रहस्य उजागर करेगा, हमें बताइए, गुरुजी।" तब, चरनी पर थपथपाते हुए, सेनाका ने कहा, "क्या होगा यदि वह देहाती इस चरनी के नीचे हो!" "हे गुरुजी! अपनी सारी शान-शौकत के बावजूद वह इस तरह की जगह पर नहीं आएगा! वह अपनी समृद्धि के नशे में चूर हो गया होगा। आइए, हमें बताइए।" सेनाका ने अपना रहस्य बताया और कहा,"क्या तुम इस शहर में फलां वेश्या को जानते हो?" "जी हां, गुरुजी।" "क्या वह अब कहीं दिखाई देती है?" "नहीं, गुरुजी।" "साल के जंगल में मैंने उसके साथ संबंध बनाया और बाद में उसके गहने लेने के लिए उसे मार डाला। मैंने उन गहनों को एक गठरी में बांधकर अपने घर ले गया और उन्हें फलां मंजिल के फलां कमरे में हाथी के दांत पर लटका दिया: लेकिन जब तक वह उड़ नहीं जाता, मैं उनका उपयोग नहीं कर सकता। मैंने यह अपराध अपने एक मित्र को बताया है और उसने किसी को नहीं बताया; इसीलिए मैंने कहा था कि एक रहस्य मित्र को बताया जा सकता है।" ऋषि ने सेनाक का यह रहस्य सुना और उसे याद रखा। तब पुक्कुसा ने अपना रहस्य बताया। "मेरी जांघ पर कुष्ठ रोग का एक धब्बा है। सुबह मेरा छोटा भाई उसे धोता है, उस पर मरहम लगाता है और पट्टी बांधता है, और किसी को नहीं बताता। जब राजा का हृदय कोमल होता है, तो वह पुकारता है, 'इधर आओ, पुक्कुसा', और अक्सर अपना सिर मेरी जांघ पर रख देता है। लेकिन अगर उसे पता चल जाए तो वह मुझे मार डालेगा। मेरे छोटे भाई के सिवा कोई नहीं जानता; और इसीलिए मैंने कहा था, भाई को रहस्य बताया जा सकता है।" कविंदा ने अपना रहस्य बताया। "जहाँ तक मेरी बात है, कृष्ण पक्ष के व्रत के दिन नरदेव नाम का एक जिन्न मुझ पर हावी हो जाता है, और मैं पागल कुत्ते की तरह भौंकता हूँ। मैंने अपने बेटे को यह बात बताई; और जब वह मुझे जिन्न के वश में देखता है, तो मुझे घर के अंदर बंद कर देता है, और फिर दरवाजा बंद करके मुझे छोड़ देता है, और मेरी आवाज़ों को छिपाने के लिए लोगों का एक समूह इकट्ठा करता है। इसीलिए मैंने कहा था कि बेटे को रहस्य बताया जा सकता है।" तब उन तीनों ने देविंदा से पूछा, और उसने अपना रहस्य बताया। मैं राजा के रत्नों का निरीक्षक हूँ; और मैंने एक अद्भुत शुभ रत्न चुराया, जो सक्का (इंद्र) ने राजा कुश को उपहार में दिया था, और उसे अपनी माँ को दे दिया। जब मैं दरबार जाता हूँ तो वह बिना किसी को बताए मुझे वह रत्न सौंप देती है; और उस रत्न के कारण महल में प्रवेश करते ही मुझमें सौभाग्य की भावना व्याप्त हो जाती है। राजा आप सभी से पहले मुझसे बात करते हैं, और मुझे प्रतिदिन आठ रुपये, सोलह रुपये, बत्तीस रुपये या चौंसठ रुपये खर्च करने के लिए देते हैं। यदि राजा को पता चल जाए कि मैंने वह रत्न छिपा रखा है तो मैं मर जाऊँगा! इसीलिए मैंने कहा था कि एक रहस्य माँ को बताया जा सकता है।मेरे छोटे भाई के सिवा कोई नहीं जानता; और इसीलिए मैंने कहा था, "भाई को रहस्य बताया जा सकता है।" कविंदा ने अपना रहस्य बताया। "जहाँ तक मेरी बात है, कृष्ण पक्ष के व्रत के दिन नरदेव नाम का एक जिन्न मुझ पर हावी हो जाता है, और मैं पागल कुत्ते की तरह भौंकता हूँ। मैंने अपने बेटे को यह बात बताई; और जब वह मुझे जिन्न के वश में देखता है, तो मुझे घर के अंदर बंद कर देता है, और फिर दरवाजा बंद करके मुझे वहीं छोड़ देता है, और मेरी आवाज़ों को छिपाने के लिए लोगों का एक समूह इकट्ठा कर लेता है। इसीलिए मैंने कहा था कि बेटे को रहस्य बताया जा सकता है।" तब उन तीनों ने देविंदा से पूछा, और उसने अपना रहस्य बताया। "मैं राजा के रत्नों का निरीक्षक हूँ; और मैंने एक अद्भुत शुभ रत्न चुराया, जो शक्का (इंद्र) ने राजा कुश को उपहार में दिया था, और उसे अपनी माँ को दे दिया। जब मैं दरबार जाता हूँ तो वह बिना किसी को बताए मुझे वह रत्न सौंप देती है; और उस रत्न के कारण महल में प्रवेश करते ही मुझ पर सौभाग्य की आत्मा का साया छा जाता है।" राजा तुम सब से पहले मुझसे बात करता है और मुझे हर दिन आठ रुपये, सोलह रुपये, बत्तीस रुपये या चौंसठ रुपये खर्च करने के लिए देता है। अगर राजा को पता चल गया कि मैंने वह रत्न छिपा रखा है तो मैं मर जाऊंगा! इसीलिए मैंने कहा था कि एक रहस्य माँ को बताया जा सकता है।मेरे छोटे भाई के सिवा कोई नहीं जानता; और इसीलिए मैंने कहा था, "भाई को रहस्य बताया जा सकता है।" कविंदा ने अपना रहस्य बताया। "जहाँ तक मेरी बात है, कृष्ण पक्ष के व्रत के दिन नरदेव नाम का एक जिन्न मुझ पर हावी हो जाता है, और मैं पागल कुत्ते की तरह भौंकता हूँ। मैंने अपने बेटे को यह बात बताई; और जब वह मुझे जिन्न के वश में देखता है, तो मुझे घर के अंदर बंद कर देता है, और फिर दरवाजा बंद करके मुझे वहीं छोड़ देता है, और मेरी आवाज़ों को छिपाने के लिए लोगों का एक समूह इकट्ठा कर लेता है। इसीलिए मैंने कहा था कि बेटे को रहस्य बताया जा सकता है।" तब उन तीनों ने देविंदा से पूछा, और उसने अपना रहस्य बताया। "मैं राजा के रत्नों का निरीक्षक हूँ; और मैंने एक अद्भुत शुभ रत्न चुराया, जो शक्का (इंद्र) ने राजा कुश को उपहार में दिया था, और उसे अपनी माँ को दे दिया। जब मैं दरबार जाता हूँ तो वह बिना किसी को बताए मुझे वह रत्न सौंप देती है; और उस रत्न के कारण महल में प्रवेश करते ही मुझ पर सौभाग्य की आत्मा का साया छा जाता है।" राजा तुम सब से पहले मुझसे बात करता है और मुझे हर दिन आठ रुपये, सोलह रुपये, बत्तीस रुपये या चौंसठ रुपये खर्च करने के लिए देता है। अगर राजा को पता चल गया कि मैंने वह रत्न छिपा रखा है तो मैं मर जाऊंगा! इसीलिए मैंने कहा था कि एक रहस्य माँ को बताया जा सकता है।

उस महान सत्ता ने उनके सभी रहस्यों को ध्यानपूर्वक नोट कर लिया; लेकिन उन्होंने अपने रहस्यों को इस प्रकार उजागर किया मानो उन्होंने अपने पेट फाड़कर आंतें बाहर निकाल दी हों, फिर वे आसन से उठे और यह कहते हुए चले गए, "जल्दी आना मत भूलना, हम उस देहाती को मार डालेंगे।"

उनके जाने के बाद ऋषि के सेवक आए और कुंड को ऊपर उठाकर उस महान व्यक्ति को घर ले गए। उन्होंने स्नान किया, वस्त्र बदले और भोजन किया; और यह जानते हुए कि उनकी बहन रानी उदुंबरी उस दिन महल से उन्हें संदेश भेजेंगी, उन्होंने एक भरोसेमंद व्यक्ति

को निगरानी के लिए तैनात किया और उससे कहा कि महल से आने वाले किसी भी व्यक्ति को तुरंत अंदर आने की सूचना दे। फिर वे अपने पलंग पर लेट गए।

उस समय राजा भी अपने पलंग पर लेटे हुए ऋषि के गुणों को याद कर रहे थे। "ऋषि महोषधा ने सात वर्ष की आयु से ही मेरी सेवा की है और कभी मेरा कोई अन्याय नहीं किया। जब देवी ने मुझसे प्रश्न पूछे, तो ऋषि के बिना मैं मृत समान होता। प्रतिशोधी शत्रुओं की बातों को मानना, उन्हें तलवार देना और एक असाधारण ऋषि को मारने के लिए कहना, यह मैं कभी नहीं कर सकता था। कल के बाद मैं उन्हें फिर कभी नहीं देख पाऊंगा!" वे व्याकुल थे, उनके शरीर से पसीना बह रहा था, शोक से उनका हृदय अशांत था। रानी उदंबरी, जो उनके साथ पलंग पर बैठी थीं, उन्हें इस अवस्था में देखकर पूछा, "क्या मैंने आपके विरुद्ध कोई अपराध किया है? या किसी अन्य बात से मेरे स्वामी को दुःख हुआ है?" और उन्होंने यह श्लोक दोहराया:

"हे महाराज, आप क्यों परेशान हैं? हमें तो मनुष्यों के स्वामी की वाणी सुनाई नहीं दे रही! आप इस तरह नीचे क्यों देख रहे हैं? हे स्वामी, मेरी ओर से कोई अपराध नहीं है।"

फिर राजा ने एक श्लोक दोहराया:

उन्होंने कहा, "बुद्धिमान महोसाधा को मार डालना चाहिए"; और मैंने सबसे बुद्धिमान को मृत्युदंड दिया है। इस पर विचार करते हुए मैं नीचे देख रहा हूँ। हे मेरी रानी, आपमें कोई दोष नहीं है।

यह सुनकर रानी को गहरा दुख हुआ; और उसने सोचा, "राजा को सांत्वना देने का एक उपाय मेरे पास है: जब वह सो जाएंगे, मैं अपने भाई को संदेश भेजूंगी।" फिर उसने राजा से कहा, "महाराज, आपके ही प्रयासों से उस देहाती के पुत्र को इतनी शक्ति मिली; आपने ही उसे सेनापति बनाया था। अब लोग कहते हैं कि वह आपका शत्रु बन गया है। कोई भी शत्रु तुच्छ नहीं होता; उसे मारना ही होगा, इसलिए शोक न करें।" इस प्रकार उसने राजा को सांत्वना दी; उनका शोक शांत हुआ और वे सो गए। फिर रानी उठी और अपने कक्ष में जाकर उसने एक पत्र लिखा, "महोसाधा, चारों ज्ञानी पुरुषों ने आपकी निंदा की है; राजा क्रोधित हैं, और उन्होंने कल आपको द्वार पर ही मार डालने का आदेश दिया है। कल सुबह महल मत आना; या यदि आना ही है, तो शहर पर अधिकार करने की शक्ति के साथ आना।" उसने पत्र को मिठाई के अंदर रखा, धागे से बांधा, एक नए बर्तन में रखा, उसमें सुगंध लगाई, उसे बंद किया और एक दासी को देते हुए कहा, "यह मिठाई लो और मेरे भाई को दे दो।" दासी ने वैसा ही किया। आपको आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि वह रात में कैसे निकल गई; क्योंकि राजा ने रानी को पहले ही यह वरदान दे दिया था, इसलिए किसी ने उसे रोका नहीं। बोधिसत्व ने उपहार ग्रहण किया और उस स्त्री को विदा किया, जो लौटकर आई और बताया कि उसने उपहार पहुंचा दिया है। तब रानी राजा के पास जाकर लेट गई। बोधिसत्व ने मिठाई खोली, पत्र पढ़ा, उसे समझा और विचार करने के बाद कि क्या करना चाहिए, विश्राम करने चले गए।

सुबह तड़के, अन्य चार ज्ञानी पुरुष तलवार लिए द्वार पर खड़े थे, लेकिन ऋषि को न देखकर वे नीचे देखने लगे और राजा के पास चले गए। राजा ने कहा, "क्या वह देहाती मारा गया?" उन्होंने उत्तर दिया, "महाराज, हमने उसे नहीं देखा।" सूर्योदय के समय उस महान पुरुष ने पूरे शहर को अपने अधिकार में ले लिया, जगह-जगह पहरेदार तैनात किए, और पुरुषों के एक विशाल समूह और भव्यता से सुसज्जित रथ में महल के द्वार पर आए। राजा एक खुली खिड़की से बाहर देख रहे थे। तब उस महान पुरुष ने अपने रथ से उतरकर उन्हें प्रणाम किया; और राजा ने सोचा, "यदि वह मेरा शत्रु होता, तो वह मुझे प्रणाम नहीं करता।" तब राजा ने उन्हें बुलवाया और अपने सिंहासन पर बैठ गए। उस महान पुरुष ने अंदर आकर एक तरफ बैठ गए: चारों ज्ञानी पुरुष भी वहीं बैठ गए। तब राजा ने ऐसा दिखाया जैसे उन्हें कुछ पता ही न हो और कहा, "मेरे पुत्र, कल तुम हमें छोड़कर चले गए थे और अब तुम फिर आ गए हो; तुम मेरे साथ इतना लापरवाह व्यवहार क्यों कर रहे हो?" और उन्होंने यह श्लोक दोहराया:

"शाम को तुम गए थे, अब तुम आ गए हो। तुमने क्या सुना? तुम्हारे मन में किस बात का भय था? हे परम बुद्धिमान, तुम्हें किसने आज्ञा दी? आओ, हम वचन सुनने के लिए उत्सुक हैं: मुझे बताओ।"

उस महान प्राणी ने उत्तर दिया, "महाराज, आपने चार ज्ञानियों की बात सुनी और मेरी मृत्यु का आदेश दिया, इसीलिए मैं नहीं आया," और उसे फटकारते हुए इस श्लोक को दोहराया:

"बुद्धिमान महोसाधा को मार डालना चाहिए": यदि तुमने यह बात कल रात चुपके से अपनी पत्नी को बताई थी, तो तुम्हारा रहस्य उजागर हो गया और मैंने इसे सुन लिया।"

जब राजा ने यह सुना तो उसने क्रोधित होकर अपनी पत्नी की ओर देखा, यह सोचते हुए कि उसने तुरंत ही इसकी सूचना भेज दी होगी। यह देखकर उस महान सत्ता ने कहा, "हे स्वामी, आप रानी से क्यों क्रोधित हैं? मैं भूतकाल, वर्तमानकाल और भविष्यकाल सब जानता

हूँ। मान लीजिए कि रानी ने आपका रहस्य बता दिया: मुझे सेनाक, पुक्कुसा और बाकी सब के रहस्य किसने बताए? लेकिन मैं उनके सभी रहस्य जानता हूँ"; और उसने सेनाक का रहस्य इस श्लोक में बताया:

"सेनाका ने साल के बाग में जो पापपूर्ण और दुष्ट कर्म किया था, उसने अपने एक मित्र को गुप्त रूप से बताया था, वह रहस्य उजागर हो गया है और मैंने उसे सुन लिया है।"

सेनाका को देखकर राजा ने पूछा, "क्या यह सच है?" "महाराज, यह सच है," उसने उत्तर दिया, और राजा ने उसे जेल में डालने का आदेश दिया। तब ऋषि ने पुक्कुसा का रहस्य इस श्लोक में बताया:

"हे मनुष्यों के राजा, पुक्कुसा नामक व्यक्ति में एक ऐसा रोग है जिसे राजा का स्पर्श भी उचित नहीं है; उसने यह बात अपने भाई को गुप्त रूप से बताई थी। वह रहस्य उजागर हो गया है और मैंने उसे सुन लिया है।"

राजा ने उसे देखकर पूछा, "क्या यह सच है?" "जी हां, महाराज," उसने कहा; और राजा ने उसे भी कारावास में भेज दिया। तब ऋषि ने कविंदा का रहस्य इस श्लोक में बताया:

"नरदेव के वश में आया हुआ वह व्यक्ति दुष्ट स्वभाव का है और रोगग्रस्त है। उसने यह बात अपने बेटे को गुप्त रूप से बताई थी: यह रहस्य उजागर हो गया है और मैंने इसे सुन लिया है।"

"क्या यह सच है, कविंदा?" राजा ने पूछा; और उसने उत्तर दिया, "यह सच है।" तब राजा ने उसे भी कारावास में भेज दिया। ऋषि ने अब इस श्लोक में देविंदा का रहस्य बताया:

"वह आठ फलकों वाला अनमोल रत्न, जो सक्का (इंद्र) ने तुम्हारे दादाजी को दिया था, अब देविन्दा के पास है, और उसने यह बात अपनी माँ को गुप्त रूप से बताई थी। वह रहस्य उजागर हो गया है और मैंने उसे सुन लिया है।"

"क्या यह सच है, देविंदा?" राजा ने पूछा; और उसने उत्तर दिया, "हाँ, यह सच है।" इसलिए उसने उसे भी कारावास में डाल दिया। इस प्रकार बोधिसत्व की हत्या की साजिश रचने वाले सभी लोग एक साथ कैद में थे। बोधिसत्व ने कहा, "इसीलिए मैं कहता हूँ कि मनुष्य को अपना रहस्य किसी को नहीं बताना चाहिए; जिन्होंने रहस्य बताने की बात कही, वे सब पूरी तरह से बर्बाद हो गए।" और उन्होंने उच्चतर शिक्षा का प्रचार करते हुए ये श्लोक सुनाए:

किसी रहस्य को गुप्त रखना हमेशा अच्छा होता है, और उसे प्रकट करना उचित नहीं है। जब कोई काम पूरा न हो तो बुद्धिमान व्यक्ति को उसे अपने तक ही रखना चाहिए; जब उसका लक्ष्य पूरा हो जाए तो वह जो चाहे कह सकता है। किसी गुप्त बात को प्रकट नहीं करना चाहिए, बल्कि उसे खजाने की तरह संभाल कर रखना चाहिए; क्योंकि बुद्धिमान व्यक्ति के लिए गुप्त बात प्रकट करना उचित नहीं है। बुद्धिमान व्यक्ति किसी स्त्री को, शत्रु को, स्वार्थ से बहकाए जाने वाले व्यक्ति को, या स्नेह के कारण कोई रहस्य नहीं बताता। जो व्यक्ति किसी अज्ञात रहस्य को प्रकट करता है, विश्वास टूटने के डर से उसे दूसरे का गुलाम बनकर रहना पड़ता है। जितने अधिक लोग किसी व्यक्ति के रहस्य को जानते हैं, उतनी ही उसकी चिंताएँ होती हैं; इसलिए किसी को भी रहस्य प्रकट नहीं करना चाहिए। दिन में अकेले में बात करो; रात में दबे स्वर में कहो; क्योंकि सुनने वाले शब्द सुन लेते हैं, इसलिए शब्द जल्दी ही बाहर आ जाते हैं।

जब राजा ने महानुभावों को बोलते सुना तो वह क्रोधित हो गया और सोचने लगा, "ये लोग, जो स्वयं अपने राजा के साथ विश्वासघात कर चुके हैं, अब मुझे भी विश्वासघाती बता रहे हैं!" तब उसने कहा, "इन्हें नगर से बाहर निकाल दो और इनके सिर सूली पर चढ़ा दो या फोड़ दो!" इसलिए उनके हाथ पीछे बांध दिए गए और हर गली के कोने पर उन्हें सौ-सौ कोड़े मारे गए। लेकिन जब उन्हें घसीटा जा रहा था, तब ऋषि ने कहा, "महाराज, ये आपके वरिष्ठ मंत्री हैं, इनकी गलती माफ कर दीजिए!" राजा मान गया और उन्हें अपना दास बना लिया। फिर उसने उन्हें तुरंत मुक्त कर दिया। तब राजा ने कहा, "ठीक है, ये मेरे राज्य में नहीं रहेंगे," और उन्हें निर्वासित करने का आदेश दिया। लेकिन ऋषि ने उनसे उनके घोर पाप के लिए क्षमा मांगी और उन्हें शांत किया और उनके पद बहाल करने के लिए राजी किया। राजा ऋषि से बहुत प्रसन्न हुआ: यदि शत्रुओं के प्रति उनकी यह दया थी, तो दूसरों के प्रति उनकी दया कैसी होगी! तब से वे चारों ज्ञानी पुरुष, जैसे कि सांपों के दांत निकाल दिए गए हों और उनका जहर निकल गया हो, एक शब्द भी नहीं बोल सके, ऐसा हमें बताया जाता है।

यहां पांच बुद्धिमान पुरुषों का प्रश्न और मानहानि की कहानी समाप्त होती है।

इसके बाद वह राजा को सांसारिक और आध्यात्मिक विषयों में उपदेश देने लगे; और उन्होंने सोचा, "मैं वास्तव में राजा का सफेद छाता हूँ; मैं ही राज्य का संचालन करता हूँ: इसलिए मुझे सतर्क रहना चाहिए।" उन्होंने नगर के लिए एक विशाल प्राचीर बनवाई। प्राचीर के

साथ-साथ द्वारों पर पहरेदार मीनारें बनवाई गईं, और पहरेदार मीनारों के बीच उन्होंने तीन खाईयाँ खुदवाईं—एक जल खाई, एक मिट्टी की खाई और एक सूखी खाई। नगर के भीतर उन्होंने सभी पुराने भवनों का जीर्णोद्धार करवाया: बड़े-बड़े तटबंध खोदे गए और जल भंडार बनाए गए; सभी भंडारगृह अनाज से भर दिए गए। सभी विशेष पुजारियों को हिमवत (हिमालय) से मिट्टी और खाने योग्य कमल के बीज लाने पड़ते थे। जलमार्गों की सफाई की गई, और नगर के बाहर स्थित पुराने भवनों का भी जीर्णोद्धार किया गया। यह भविष्य के खतरों से बचाव के लिए किया गया था। विभिन्न स्थानों से आने वाले व्यापारियों से पूछा जाता था कि वे कहाँ से आए हैं; और उनके उत्तर देने पर उनसे पूछा जाता था कि उनके राजा को क्या पसंद है; यह बताने पर उनके साथ सौहार्दपूर्ण व्यवहार किया जाता था। फिर उसने एक सौ एक सैनिकों को बुलवाया और उनसे कहा, "मेरे सैनिकों, ये उपहार एक सौ एक राजनगरों में ले जाओ और उन्हें उनके संबंधित राजाओं को देकर उन्हें प्रसन्न करो; वहाँ उनकी सेवा में रहो, उनकी गतिविधियों और योजनाओं को सुनो और मुझे संदेश भेजो। मैं तुम्हारी पत्नियों और बच्चों की देखभाल करूँगा।" उसने कुछ के लिए बालियाँ, कुछ के लिए सोने की चप्पलें और कुछ के लिए सोने के हार भेजे, जिन पर अक्षर खुदे हुए थे, जिन्हें उसने अपने उद्देश्य के अनुसार प्रकट होने के लिए नियुक्त किया था। सैनिक इधर-उधर गए और राजाओं को ये उपहार देते हुए कहा कि वे उनकी सेवा में रहने आए हैं। जब उनसे पूछा गया कि वे कहाँ से आए हैं, तो उन्होंने उस स्थान के अलावा अन्य स्थानों के नाम बताए जहाँ से वे वास्तव में आए थे। उनका प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया, वे वहाँ सेवा में रहे और विश्वासयोग्य साबित हुए।

एकाबला राज्य में शंखपाल नाम का एक राजा था, जो शस्त्र एकत्र कर सेना तैयार कर रहा था। उसके पास आए एक व्यक्ति ने ऋषि को संदेश भेजा, "यहाँ यही खबर है, पर उसका इरादा क्या है, यह मुझे नहीं पता; किसी को भेजकर सच्चाई का पता लगाइए।" तब उस महान ऋषि ने एक तोते को बुलाया और कहा, "मित्र, जाकर पता लगाओ कि राजा शंखपाल एकाबला में क्या कर रहा है, फिर पूरे भारत में यात्रा करके मुझे खबर लाओ।" उन्होंने उसे शहद और अनाज खिलाया, मीठा पानी पिलाया, पंखों के जोड़ों पर सौ-हजार गुना शुद्ध तेल लगाया, पूर्वी खिड़की के पास खड़े होकर उसे छोड़ दिया। तोता उस व्यक्ति के पास गया और सच्चाई का पता लगाया। भारत से लौटते समय वह कम्पिला राज्य के उत्तरा पंचाल नगर में पहुँचा। वहाँ चूलानी-ब्रह्मदत्त नाम का एक राजा शासन कर रहा था, जिसका आध्यात्मिक और सांसारिक सलाहकार एक बुद्धिमान और विद्वान ब्राह्मण केवत्त था। एक सुबह ब्राह्मण भोर में जागा और दीपक की रोशनी में अपने भव्य कक्ष को निहारते हुए उसकी शान-शौकत को देखकर सोचने लगा, "यह वैभव किसका है? केवल चुलानी-ब्रह्मदत्त का। ऐसा वैभव प्रदान करने वाला राजा पूरे भारत का सर्वोपरि राजा होना चाहिए और मैं उसका प्रधान पुरोहित बनूंगा।" इसलिए वह सुबह-सुबह राजा के पास गया और जब राजा ने उससे पूछा कि क्या वह अच्छी तरह सोया है, तो उसने कहा, "महाराज, मुझे कुछ कहना है।" "बताइए, गुरुजी।" "महाराज, यह रहस्य नगर में नहीं बताया जा सकता, चलिए उद्यान में चलते हैं।" "ठीक है, गुरुजी।" राजा उसके साथ उद्यान में गया और सेवकों को बाहर छोड़कर पहरा बिठा दिया। राजा भी ब्राह्मण के साथ उद्यान में प्रवेश कर राजसी आसन पर बैठ गया। यह देखकर तोते ने सोचा कि कुछ तो गड़बड़ है; "आज मुझे कुछ ऐसा पता चलेगा जो मेरे बुद्धिमान गुरु को अवश्य बताया जाएगा।" तो वह उड़कर उद्यान में आया और राजसी साल के वृक्ष की पत्तियों के बीच बैठ गया। राजा ने कहा, "शिक्षक, बोलिए।" उसने कहा, "महाराज, मेरी बात ध्यान से सुनिए; यह योजना केवल चार कानों के लिए है। महाराज, यदि आप मेरी सलाह मानेंगे, तो मैं आपको पूरे भारत का प्रधान राजा बना दूंगा।" राजा ने उत्सुकता से उसकी बात सुनी और प्रसन्न होकर उत्तर दिया, "मेरे गुरु, बताइए, मैं ऐसा ही करूंगा।" "मेरे स्वामी, आइए हम एक सेना तैयार करें और पहले एक छोटे शहर को घेर लें। फिर मैं पिछले द्वार से शहर में प्रवेश करूँगा और राजा से कहूँगा, महाराज, आपके लड़ने का कोई लाभ नहीं है: बस हमारे साथ खड़े हो जाइए; आप अपना राज्य रख सकते हैं, लेकिन यदि आप हमारी शक्तिशाली सेना से लड़ेंगे, तो आप पूरी तरह से पराजित हो जाएँगे। यदि वह मेरी सलाह मानता है, तो हम उसका स्वागत करेंगे; यदि नहीं, तो हम उससे लड़ेंगे और उसे मार डालेंगे, और दो सेनाओं के साथ जाकर एक और शहर पर कब्जा कर लेंगे, और फिर एक और, और इस तरह हम पूरे भारत पर प्रभुत्व प्राप्त करेंगे और विजय का प्याला पिएँगे। फिर हम एक सौ एक राजाओं को अपने शहर में लाएँगे, और पार्क में एक शराबखाना बनाएँगे, और उन्हें वहाँ बैठाएँगे, और उन्हें विषैला पेय पिलाएँगे।"और इसलिए उन सबको मार डालो और गंगा में फेंक दो। इस प्रकार हमें एक सौ एक राजधानियाँ प्राप्त हो जाएँगी, और तुम समस्त भारत के प्रधान राजा बन जाओगे।" "बहुत खूब, मेरे गुरु," उसने कहा, "मैं ऐसा ही करूँगा।" "महाराज, यह योजना केवल चार वर्षों के लिए है, इसके बारे में किसी और को पता नहीं चलना चाहिए। देर न करें, तुरंत कार्य शुरू करें।" राजा इस सलाह से प्रसन्न हुए और उन्होंने ऐसा करने का निश्चय किया। तोते ने, जिसने उनकी सारी बातचीत सुन ली थी, केवट्टा के सिर पर गोबर का एक गोला ऐसे गिरा दिया मानो वह किसी टहनी से गिरा हो। "यह क्या है?" वह मुँह खोलकर ऊपर देखते हुए चिल्लाया: जिस पर पक्षी ने उसके मुँह में एक और गोला गिरा दिया और चिल्लाते हुए उड़ गया, "क्री क्री! हे केवट्टा, तुम सोचते हो कि तुम्हारी योजना केवल चार वर्षों के लिए है, लेकिन अब यह छह वर्षों के लिए है; समय आने पर यह आठ वर्षों तक और सैकड़ों वर्षों तक चलेगा!" "पकड़ो उसे, पकड़ो उसे!" वे चिल्लाए; लेकिन वह हवा की तरह तेज उड़कर मिथिला पहुंचा और उस ज्ञानी व्यक्ति के घर में प्रवेश कर गया। तोते की यह आदत थी: यदि किसी स्थान से कोई खबर केवल ऋषि के कानों तक ही सीमित होती, तो वह उनके कंधे पर बैठ जाता; यदि रानी अमरा को भी उसे सुनना होता, तो वह उनकी गोद में बैठ जाता; यदि सभी को सुनना होता, तो वह जमीन पर बैठ जाता। इस बार वह कंधे पर बैठा, और यह देखकर सभी लोग पीछे हट गए, क्योंकि वे इसे गुप्त समझ रहे थे। ऋषि उसे सबसे ऊपरी मंजिल पर ले गए और उससे पूछा, "मेरे प्रिय, तुमने क्या देखा, क्या सुना?" उसने कहा, "मेरे स्वामी, मैंने पूरे भारत के किसी अन्य राजा में ऐसा कोई खतरा नहीं देखा; लेकिन केवल उत्तरा पंचाल

नगर में चुलानी-ब्रह्मदत्त के पुजारी केवट्टा ने अपने राजा को उद्यान में ले जाकर उनके चारों कानों के लिए एक योजना बताई: "मैं डालियों के बीच बैठा था और मैंने उसके मुँह में गोबर का एक गोला गिरा दिया, और देखो मैं यहाँ हूँ!" फिर उसने ऋषि को वह सब बताया जो उसने देखा और सुना था। "क्या राजा मान गए?" ऋषि ने पूछा। "हाँ, मान गए," तोते ने कहा। इसलिए ऋषि ने पक्षी की उचित देखभाल की और उसे मुलायम गद्दी से सजे अपने सोने के पिंजरे में रख दिया। उन्होंने मन ही मन सोचा, "मुझे लगता है कि केवट्टा नहीं जानता कि मैं बुद्धिमान महोषद हूँ। मैं उसे अपनी योजना पूरी नहीं करने दूँगा।" फिर उन्होंने नगर में रहने वाले सभी गरीब लोगों को बाहर निकाल दिया, और राज्य के सभी हिस्सों, ग्रामीण इलाकों और उपनगरीय गाँवों से धनी परिवारों को लाकर नगर में बसाया, और बड़ी मात्रा में अनाज इकट्ठा किया ।ऊपर की ओर देखते हुए, उसका मुँह चौड़ा खुला हुआ था: तभी पक्षी ने एक और तोता अपने मुँह में डाला और चिल्लाते हुए उड़ गया, "क्री क्री! हे केवट्टा, तुम सोचते हो कि तुम्हारी योजना केवल चार कानों के लिए है, लेकिन अब यह छह कानों के लिए है; समय आने पर यह आठ कानों के लिए और सैकड़ों कानों के लिए होगी!" "पकड़ो उसे, पकड़ो उसे!" वे चिल्लाए; लेकिन वह हवा की तरह तेज उड़कर मिथिला पहुँचा और उस ज्ञानी व्यक्ति के घर में प्रवेश कर गया। तोते की यह आदत थी: यदि किसी स्थान से कोई खबर केवल ऋषि के कानों के लिए होती, तो वह उनके कंधे पर बैठ जाता; यदि रानी अमरा को भी उसे सुनना होता, तो वह उनकी गोद में बैठ जाता; यदि सभा को भी उसे सुनना होता, तो वह जमीन पर बैठ जाता। इस बार वह कंधे पर बैठा, और यह देखकर सभा गुप्त जानकारी समझकर पीछे हट गई। ऋषि उसे सबसे ऊपरी मंजिल पर ले गए और उससे पूछा, "अच्छा, मेरे प्रिय, तुमने क्या देखा, क्या सुना?" उसने कहा, "हे प्रभु, पूरे भारत में मैंने किसी और राजा में कोई खतरा नहीं देखा; केवल उत्तरा पंचाल नगर में चुलानी-ब्रह्मदत्त के पुजारी केवत्त ने ही अपने राजा को उद्यान में ले जाकर उनके चारों कानों के लिए एक योजना बताई: मैं डालियों के बीच बैठा था और मैंने उसके मुँह में गोबर का एक गोला डाल दिया, और देखो मैं यहाँ हूँ!" फिर उसने ऋषि को वह सब बताया जो उसने देखा और सुना था। "क्या राजा मान गया?" ऋषि ने पूछा। "हाँ, मान गया," तोते ने कहा। इसलिए ऋषि ने पक्षी की उचित देखभाल की और उसे मुलायम गद्दी से सजे उसके सोने के पिंजरे में रख दिया। उन्होंने मन ही मन सोचा, "मुझे लगता है कि केवत्त नहीं जानता कि मैं बुद्धिमान महोषद हूँ। मैं उसे अपनी योजना पूरी नहीं करने दूँगा।" फिर उन्होंने नगर में रहने वाले सभी गरीब लोगों को बाहर निकाल दिया, और पूरे राज्य, ग्रामीण इलाकों और आसपास के गाँवों से धनी परिवारों को नगर में लाकर बसाया, और बड़ी मात्रा में अनाज इकट्ठा किया ।ऊपर की ओर देखते हुए, उसका मुँह चौड़ा खुला हुआ था: तभी पक्षी ने एक और तोता अपने मुँह में डाला और चिल्लाते हुए उड़ गया, "क्री क्री! हे केवट्टा, तुम सोचते हो कि तुम्हारी योजना केवल चार कानों के लिए है, लेकिन अब यह छह कानों के लिए है; समय आने पर यह आठ कानों के लिए और सैकड़ों कानों के लिए होगी!" "पकड़ो उसे, पकड़ो उसे!" वे चिल्लाए; लेकिन वह हवा की तरह तेज उड़कर मिथिला पहुँचा और उस ज्ञानी व्यक्ति के घर में प्रवेश कर गया। तोते की यह आदत थी: यदि किसी स्थान से कोई खबर केवल ऋषि के कानों के लिए होती, तो वह उनके कंधे पर बैठ जाता; यदि रानी अमरा को भी उसे सुनना होता, तो वह उनकी गोद में बैठ जाता; यदि सभा को भी उसे सुनना होता, तो वह जमीन पर बैठ जाता। इस बार वह कंधे पर बैठा, और यह देखकर सभा गुप्त जानकारी समझकर पीछे हट गई। ऋषि उसे सबसे ऊपरी मंजिल पर ले गए और उससे पूछा, "अच्छा, मेरे प्रिय, तुमने क्या देखा, क्या सुना?" उसने कहा, "हे प्रभु, पूरे भारत में मैंने किसी और राजा में कोई खतरा नहीं देखा; केवल उत्तरा पंचाल नगर में चुलानी-ब्रह्मदत्त के पुजारी केवत्त ने ही अपने राजा को उद्यान में ले जाकर उनके चारों कानों के लिए एक योजना बताई: मैं डालियों के बीच बैठा था और मैंने उसके मुँह में गोबर का एक गोला डाल दिया, और देखो मैं यहाँ हूँ!" फिर उसने ऋषि को वह सब बताया जो उसने देखा और सुना था। "क्या राजा मान गया?" ऋषि ने पूछा। "हाँ, मान गया," तोते ने कहा। इसलिए ऋषि ने पक्षी की उचित देखभाल की और उसे मुलायम गद्दी से सजे उसके सोने के पिंजरे में रख दिया। उन्होंने मन ही मन सोचा, "मुझे लगता है कि केवत्त नहीं जानता कि मैं बुद्धिमान महोषद हूँ। मैं उसे अपनी योजना पूरी नहीं करने दूँगा।" फिर उन्होंने नगर में रहने वाले सभी गरीब लोगों को बाहर निकाल दिया, और पूरे राज्य, ग्रामीण इलाकों और आसपास के गाँवों से धनी परिवारों को नगर में लाकर बसाया, और बड़ी मात्रा में अनाज इकट्ठा किया ।फिर उसने ऋषि को वह सब बताया जो उसने देखा और सुना था। ऋषि ने पूछा, "क्या राजा मान गए?" तोते ने कहा, "हाँ, मान गए।" ऋषि ने पक्षी की उचित देखभाल की और उसे मुलायम गद्दियों से सजे उसके सोने के पिंजरे में रख दिया। उन्होंने मन ही मन सोचा, "मुझे लगता है कि केवट्टा नहीं जानता कि मैं ज्ञानी महोषध हूँ। मैं उसे अपनी योजना पूरी नहीं करने दूँगा।" फिर उन्होंने शहर में रहने वाले सभी गरीब लोगों को बाहर निकाल दिया और राज्य के सभी हिस्सों, ग्रामीण इलाकों और आसपास के गाँवों से शक्तिशाली अमीर परिवारों को लाकर शहर में बसा दिया और बड़ी मात्रा में अनाज इकट्ठा किया ।फिर उसने ऋषि को वह सब बताया जो उसने देखा और सुना था। ऋषि ने पूछा, "क्या राजा मान गए?" तोते ने कहा, "हाँ, मान गए।" ऋषि ने पक्षी की उचित देखभाल की और उसे मुलायम गद्दियों से सजे उसके सोने के पिंजरे में रख दिया। उन्होंने मन ही मन सोचा, "मुझे लगता है कि केवट्टा नहीं जानता कि मैं ज्ञानी महोषध हूँ। मैं उसे अपनी योजना पूरी नहीं करने दूँगा।" फिर उन्होंने शहर में रहने वाले सभी गरीब लोगों को बाहर निकाल दिया और राज्य के सभी हिस्सों, ग्रामीण इलाकों और आसपास के गाँवों से शक्तिशाली अमीर परिवारों को लाकर शहर में बसा दिया और बड़ी मात्रा में अनाज इकट्ठा किया।

और चुलानी-ब्रह्मदत्त ने केवट्टा के सुझावानुसार कार्य किया: वह अपनी सेना लेकर एक नगर को घेर लिया। केवट्टा ने जैसा सुझाव दिया था, वैसे ही वह नगर में गया और राजा को मामले की व्याख्या करके उसे अपने पक्ष में कर लिया। फिर दोनों सेनाओं को मिलाकर चुलानी-ब्रह्मदत्त ने केवट्टा की सलाह का पालन करते हुए दूसरे राज्य की ओर प्रस्थान किया, और अंततः उसने वेदेह राजा को छोड़कर भारत के सभी राजाओं को अपने अधीन कर लिया। बोधिसत्व द्वारा भेजे गए सैनिक लगातार संदेश भेजते रहे, "ब्रह्मदत्त ने फलां-फलां

नगरों पर कब्जा कर लिया है, सावधान रहो": जिस पर उसने उत्तर दिया, "मैं यहाँ सावधान हूँ, तुम भी बिना लापरवाही किए सतर्क रहो।" सात वर्ष, सात महीने और सात दिनों में ब्रह्मदत्त ने वेदेह को छोड़कर पूरे भारत पर अधिकार कर लिया। तब उसने केवट्टा से कहा, "गुरुजी, आइए हम मिथिला में वेदेह के राज्य पर कब्जा कर लें!" "महाराज," उसने कहा, "हम उस नगर पर कभी अधिकार नहीं कर पाएंगे जहाँ बुद्धिमान महोसाधा रहते हैं: वे इस प्रकार के कौशल में परिपूर्ण हैं, धूर्तता में बहुत निपुण हैं।" फिर उन्होंने महापुरुष के गुणों का वर्णन ऐसे किया मानो उन्होंने चंद्रमा पर बैठकर उनका गुणगान किया हो। स्वयं धूर्तता में निपुण होने के कारण उन्होंने कहा, "मिथिला राज्य बहुत छोटा है, और समस्त भारत का राज्य हमारे लिए पर्याप्त है।" इस प्रकार उन्होंने राजा को सांत्वना दी; परन्तु अन्य राजकुमारों ने कहा, "नहीं, हम मिथिला राज्य पर विजय प्राप्त करेंगे और विजय का प्याला पिएंगे!" केवट्टा ने उन्हें रोकते हुए कहा होता, "वेदेह का राज्य लेने से क्या लाभ होगा? वह राजा तो पहले से ही हमारा है। वापस लौट आओ।" यही उनकी सलाह थी: उन्होंने उनकी बात मानी और वापस लौट गए। महापुरुष के दूतों ने उन्हें संदेश भेजा कि ब्रह्मदत्त एक सौ एक राजाओं के साथ मिथिला जा रहा था, तभी वह वापस लौट आया और अपने नगर चला गया। उन्होंने उत्तर में संदेश भेजा कि वे देखें कि वह क्या करता है।

अब ब्रह्मदत्त ने केवत्त से विचार-विमर्श किया कि आगे क्या किया जाए। विजय का प्याला पीने की आशा में उन्होंने उद्यान को सजाया और सेवकों को हजारों घड़ों में मदिरा रखने तथा हर प्रकार की मछली और मांस तैयार करने का आदेश दिया। यह खबर ऋषि के सेवकों ने भी उन्हें भेजी। अब उन्हें राजाओं को विष देने की योजना का पता नहीं था, परन्तु महापुरुष को तोते से पता चल गया था; उन्होंने तदनुसार उन्हें संदेश भेजा कि वे उन्हें इस उत्सव के लिए निर्धारित दिन बताएँ, और उन्होंने ऐसा ही किया। तब उन्होंने सोचा, "यह उचित नहीं है कि मुझ जैसे बुद्धिमान व्यक्ति के जीवित रहते इतने सारे राजाओं को मार डाला जाए। मैं उनकी सहायता करूँगा।" उसने अपने दस हजार जन्मजात योद्धाओं को बुलवाया और कहा, "मित्रों, मुझे पता चला है कि चूलानी-ब्रह्मदत्त एक दिन अपने उद्यान को सजाना चाहते हैं और एक सौ एक राजाओं के साथ मदिरापान करना चाहते हैं। तुम सब वहाँ जाओ और राजाओं के लिए रखी सीटों पर किसी के बैठने से पहले, चूलानी-ब्रह्मदत्त के बगल वाली सम्मान की सीट पर बैठ जाओ और कहो, 'यह हमारे राजा के लिए है।' जब वे पूछें कि तुम किसके आदमी हो, तो उन्हें बताना कि तुम राजा वेदेह के हो। वे बहुत शोर मचाएंगे और कहेंगे, 'क्या! हम सात साल, सात महीने और सात दिन से राज्यों को जीत रहे हैं, और हमने एक बार भी तुम्हारे राजा वेदेह को नहीं देखा! यह कैसा राजा है? जाओ उसके लिए अंत में एक सीट ढूंढो!' तब तुम उनसे झगड़ा करते हुए कहोगे, 'ब्रह्मदत्त के सिवा कोई राजा हमारे राजा से बड़ा नहीं है! अगर हम अपने राजा के लिए एक सीट भी नहीं दिलवा पाए, तो हम तुम्हें अभी खाने-पीने नहीं देंगे!' इसलिए चिल्लाते और उछलते-कूदते हुए, शोर मचाकर उन्हें डराओ, अपने बड़े-बड़े डंडों से सारे बर्तन तोड़ दो, खाना बिखेर दो।" और उसे खाने के लिए अनुपयुक्त बना दो, भीड़ में अपनी पूरी गति से घुस जाओ, और देवताओं (देवदूतों) के नगर पर आक्रमण करने वाले दानवों की तरह शोर मचाते हुए जोर से पुकारो, "हम मिथिला नगर के बुद्धिमान महोषध के सेवक हैं: पकड़ सको तो पकड़ लो! इस प्रकार उन्हें दिखाओ कि तुम वहाँ हो, और फिर मेरे पास लौट आओ।" उन्होंने आज्ञा मानने का वादा किया और विदा ली; और पाँचों शस्त्रों से लैस होकर चल पड़े। वे नंदनवन के समान सजे-धजे उद्यान में प्रवेश किया और उसकी भव्यता, एक सौ एक राजाओं के लिए सजी हुई वेदी, फैले हुए सफेद छत्र और बाकी सब कुछ देखा। उन्होंने महापुरुष के निर्देशानुसार सब कुछ किया और भीड़ में अफरा-तफरी मचाने के बाद मिथिला लौट आए।

राजा के आदमियों ने उसे सारी घटना बताई: ब्रह्मदत्त क्रोधित था क्योंकि राजकुमारों को विष देने की उसकी इतनी अच्छी योजना विफल हो गई थी; राजकुमार क्रोधित थे क्योंकि उन्हें विजय का प्याला नहीं मिला था; और सैनिक क्रोधित थे क्योंकि उन्हें मुफ्त में शराब पीने का मौका नहीं मिला था। इसलिए ब्रह्मदत्त ने राजकुमारों से कहा, "आओ, मित्रों, हम मिथिला चलें और राजा वेदेह का सिर तलवार से काट कर पैरों तले रौंद दें, फिर वापस आकर विजय का प्याला पिएं! जाओ अपनी सेनाओं को तैयार रहने को कहो।" फिर केवत्त से अलग जाकर उसने उसे इसके बारे में बताया, "देखो, हम उस शत्रु को पकड़ लेंगे जिसने हमारी इस अच्छी योजना को चुनौती दी है। एक सौ एक राजकुमारों और अठारह पूरी सेनाओं के साथ हम उस नगर पर आक्रमण करेंगे। आओ, मेरे गुरु!" लेकिन ब्राह्मण इतना बुद्धिमान था कि वह जानता था कि वे ऋषि महोषद को कभी नहीं पकड़ पाएंगे, बल्कि उन्हें केवल अपमान ही मिलेगा; राजा को मनाना होगा। तब उसने कहा: "महाराज! वेदेह के इस राजा में कोई सामर्थ्य नहीं है; शासन व्यवस्था ऋषि महोषद के हाथों में है, और वे अत्यंत शक्तिशाली हैं। उनकी रक्षा में, जैसे शेर अपनी मांद की रक्षा करता है, मिथिला पर कोई कब्जा नहीं कर सकता। हम केवल अपमानित होंगे: जाने का विचार भी न करें।" परन्तु राजा, सैनिक के अभिमान और साम्राज्य के नशे में चूर होकर, चिल्लाया, "यह क्या करेगा!" और एक सौ एक राजकुमारों और अठारह पूर्ण सेनाओं के साथ प्रस्थान कर गया। केवट्टा, उसे अपनी सलाह मानने के लिए राजी नहीं कर सका, और यह सोचकर कि उसे रोकना व्यर्थ है, उसके साथ चला गया।

लेकिन वे योद्धा एक ही रात में मिथिला पहुँच गए और ऋषि को सारी घटना बता दी। और जिन लोगों को उन्होंने पहले सेवा में भेजा था, उन्होंने उन्हें संदेश भेजा कि चुलानी-ब्रह्मदत्त एक सौ एक राजाओं के साथ राजा वेदेह पर कब्जा करने के लिए आ रहा है; उन्हें सतर्क रहना चाहिए। संदेश एक के बाद एक आते रहे: "आज वह फलाँ स्थान पर है, आज फलाँ स्थान पर है, आज वह नगर पहुँचेगा।" यह सुनकर ऋषि ने अपनी सतर्कता दोगुनी कर दी। और राजा वेदेह ने चारों ओर यह खबर सुनी कि ब्रह्मदत्त नगर पर कब्जा करने के लिए आ रहा है। अब ब्रह्मदत्त ने संध्याकाल में एक लाख मशालों की रोशनी से नगर को घेर लिया। उसने हाथियों, रथों और घोड़ों की बाड़ से नगर को घेर लिया और नियमित अंतराल पर सैनिकों की एक बड़ी टुकड़ी तैनात कर दी: वहाँ सैनिक खड़े होकर चिल्ला रहे थे, उंगलियां

चटका रहे थे, दहाड़ रहे थे, नाच रहे थे और जोर-जोर से रो रहे थे। मशालों की रोशनी और कवच की चमक से सात मील (4.23 किमी) में फैला पूरा मिथिला नगर प्रकाश की एक जगमगाहट में डूब गया था। हाथियों, घोड़ों, रथों और मनुष्यों के शोर से धरती तक दहक उठी थी। चारों ज्ञानी पुरुषों ने ध्वनि की लहरें सुनीं और यह न समझ पाने पर कि यह क्या है, राजा के पास जाकर कहा, "महाराज, बहुत शोर हो रहा है, और हम नहीं जानते कि यह क्या है: क्या राजा इसकी जाँच करेंगे?" यह सुनकर राजा ने सोचा, "निस्संदेह ब्रह्मदत्त आ गया है"; और उसने एक खिड़की खोली और बाहर देखा। जब उसने देखा कि वह सचमुच आ गया है, तो राजा भयभीत हो गया और उनसे कहा, "हम तो मर चुके हैं! कल वह हम सबको निःसंदेह मार डालेगा!" इसलिए वे आपस में बैठकर बातें करने लगे। लेकिन जब उस महान प्राणी ने देखा कि वह आ गया है, तो सिंह के समान निर्भीक होकर उसने पूरे नगर में पहरेदार तैनात कर दिए और फिर राजा का हौसला बढ़ाने के लिए महल में चला गया। राजा का अभिवादन करते हुए वह एक तरफ खड़ा हो गया। राजा उसे देखकर उत्साहित हुआ और सोचने लगा, "बुद्धिमान महोसाधा के सिवा कोई मुझे इस संकट से नहीं बचा सकता!" और उसने उससे इस प्रकार कहा:

"पांचाल का ब्रह्मदत्त अपनी पूरी सेना के साथ आया है; हे महोषद, पांचाल की यह सेना अनंत है! पीठों पर बोझ लादे हुए सैनिक, पैदल सैनिक, युद्ध में निपुण सैनिक, विनाश के लिए तैयार सैनिक, ढोल और शंखों की गूँज, यहाँ लोहे के हथियारों के उपयोग में निपुणता है, यहाँ ध्वज और कवचधारी योद्धा, सिद्ध योद्धा और वीर हैं! यहाँ दस ऋषि हैं, जो ज्ञान में बलिष्ठ और गुप्त योजनाओं में निपुण हैं, और ग्यारहवीं, राजा की माता, पांचाल की सेना को प्रोत्साहित कर रही हैं। यहाँ एक सौ एक योद्धा-राजकुमार उपस्थित हैं, जिनके राज्य उनसे छीन लिए गए हैं, पांचाल के सैनिकों द्वारा भयभीत और पराजित किए गए हैं। वे जो कहते हैं, राजा के लिए करते हैं; पांचाल के साथ वे निर्बाब से चलते हैं, उसकी शक्ति में हैं। राज नगर मिथिला इस सेना द्वारा तीन भागों में विभाजित होकर चारों ओर से घेर लिया गया है। मानो यह चारों ओर से तारों से घिरा हुआ है। हे महोषद, सोचो! मुक्ति कैसे मिलेगी?"

जब उस महान सत्ता ने यह सुना, तो उसने सोचा, "यह राजा अपने जीवन के लिए बहुत भयभीत है। बीमार का आश्रय चिकित्सक होता है, भूखे का भोजन, और प्यासे का पानी, परन्तु मैं ही उसका आश्रय हूँ। मैं ही उसे सांत्वना दूँगा।" फिर, लाल रंग के ऊंचे पहाड़ों पर दहाड़ते हुए शेर की तरह, उसने पुकारा, "महोदय, भयभीत न हों, बल्कि अपनी राजसत्ता का आनंद लें। जैसे मैं पत्थर से कौवे को या धनुष से बंदर को डराता हूँ, वैसे ही मैं उस विशाल सेना को तितर-बितर कर दूँगा, और उन्हें अपना एक लंगोट भी नहीं छोड़ूँगा।" और उसने यह श्लोक पढ़ा:

"अपने पैर फैलाओ, खाओ और आनंद मनाओ: ब्रह्मदत्त पांचाल की सेना छोड़कर भाग जाएगा।"

राजा को प्रोत्साहित करने के बाद, ज्ञानी पुरुष बाहर आया और उसने पूरे शहर में उत्सव के ढोल बजवाए और घोषणा की—"शांत रहो! डरो मत। मालाएँ, सुगंध और इत्र, भोजन और पेय पदार्थ जुटाओ और सात दिन का अवकाश मनाओ। लोग जहाँ चाहें रहें, खूब पिएं, गाएँ, नाचें और आनंद मनाएँ, चिल्लाएँ, जयकार करें और उंगलियाँ चटकाएँ: सब कुछ मेरे खर्चे पर। मैं ज्ञानी महोषधा हूँ: मेरी शक्ति देखो!" इस प्रकार उसने नगरवासियों को प्रोत्साहित किया। उन्होंने वैसा ही किया: और बाहर से लोगों ने गाने और संगीत की आवाज़ सुनी। लोग पिछले द्वार से अंदर आए। अब, शत्रु को छोड़कर, अजनबियों को देखते ही गिरफ्तार करना उनका रिवाज नहीं था; इसलिए प्रवेश द्वार बंद नहीं किया गया था। इसलिए इन लोगों ने लोगों को आनंद मनाते हुए देखा। और कुलानी-ब्रह्मदत्त ने नगर में शोर सुना और अपने दरबारियों से कहा, "देखो, हमने इस नगर को अठारह बड़ी सेनाओं से घेर लिया है, और लोग न तो भयभीत हैं और न ही चिंतित: बल्कि आनंद और प्रसन्नता से भरे हुए हैं, वे उंगलियां चटका रहे हैं, मौज-मस्ती कर रहे हैं, उछल-कूद कर रहे हैं और गा रहे हैं। इसका क्या अर्थ है?" तब विदेश सेवा के लिए भेजे गए लोगों ने झूठा दावा करते हुए कहा, "महाराज, हम किसी काम से पीछे से नगर में प्रवेश कर गए थे, और लोगों को मौज-मस्ती में मग्न देखकर हमने पूछा, जब भारत के सभी राजा आपके नगर को घेरे हुए हैं, तो आप इतने लापरवाह क्यों हैं?" उन्होंने उत्तर दिया, "जब हमारे राजा बालक थे, तब उनकी इच्छा थी कि जब भारत के सभी राजा नगर को घेर लें, तब वे उत्सव मनाएं; और अब उनकी यह इच्छा पूरी हो गई है: इसलिए उन्होंने एक घोषणा जारी करवाई, और स्वयं महल में उत्सव मना रहे हैं।" इससे राजा क्रोधित हो गए; और उसने अपनी सेना की एक टुकड़ी को इन आदेशों के साथ भेजा: "शहर में चारों ओर फैल जाओ, खाइयों को भर दो, दीवारों को तोड़ दो, द्वार-मीनारों को ध्वस्त कर दो, शहर में प्रवेश करो, लोगों के सिरों को कद्दू की तरह गाड़ी पर फेंक दो, और मुझे राजा वेदेह का सिर यहाँ लाओ।" तब सर्वांगीण हथियारों से लैस शक्तिशाली योद्धा द्वार तक पहुँचे, ऋषि के आदमियों ने उन पर जलते हुए बाण, कीचड़ की बौछार और पत्थर फेंककर उनकी सहायता की। जब वे खाई में दीवार को तोड़ने का प्रयास कर रहे थे, तब द्वार-मीनारों में मौजूद लोगों ने बाणों, भालों और बरछियों से उन पर कहर बरपाया। ऋषि के आदमियों ने हाथों के इशारों और संकेतों से ब्रह्मदत्त के आदमियों का उपहास और उपहास किया, और चिल्लाते हुए कहा, "अगर तुम हमें नहीं हरा सकते, तो खा लो!" और ताड़ी (बीयर) के कटोरे और मांस या मछली से लदी सीखें आगे बढ़ाते हुए, जिन्हें उन्होंने स्वयं खाया और पिया, और दीवारों पर चलने लगे। बाकी सभी असफल होकर कुलानी-ब्रह्मदत्त के पास लौट आए और बोले, "महाराज, जादूगर के सिवा कोई अंदर नहीं जा सका।" राजा चार-पाँच दिन तक इंतज़ार करते रहे, उन्हें समझ नहीं आ रहा था कि वे अपना मनचाहा काम कैसे लें। फिर उन्होंने केवत्त से पूछा, "गुरुजी, हम नगर पर कब्ज़ा नहीं कर सकते, कोई भी उसके पास नहीं पहुँच सकता! क्या करें?" "चिंता मत कीजिए महाराज। नगर में पानी बाहर से आता है, हम पानी की आपूर्ति रोक देंगे और इस तरह नगर पर कब्ज़ा कर लेंगे। वे पानी की कमी से

थक जाएँगे।"और द्वार खोल देंगे।" "यही योजना है," राजा ने कहा। इसके बाद, उन्होंने लोगों को पानी के पास जाने से रोक दिया। ज्ञानी व्यक्ति के जासूसों ने एक पत्ते पर लिखा और उसे एक तीर पर बाँध दिया, और इस प्रकार उन्हें संदेश भेजा। अब उन्होंने पहले ही आदेश दे दिया था कि जो कोई भी तीर पर बंधा हुआ पत्ता देखे, उसे उनके पास लाना है। एक व्यक्ति ने यह देखा और उसे ऋषि के पास ले गया, जिन्होंने संदेश पढ़ा। "यह नहीं जानता कि मैं ऋषि महोषध हूँ," उन्होंने सोचा। साठ भुजाओं की लंबाई के बाँस के डंडे लाकर, उन्होंने उन्हें दो भागों में चीर दिया, गांठें हटा दीं, और फिर से जोड़ दिया, चमड़े से ढक दिया और मिट्टी से लेप दिया। फिर उन्होंने हिमवत (हिमालय) से ऋषियों द्वारा लाई गई मिट्टी और लिली के बीज मंगवाए, उन्होंने तालाब के किनारे मिट्टी में बीज बोए, बाँस को उसके ऊपर रखा और उसे पानी से भर दिया। एक ही रात में वह उग आया और फूल गया, बाँस के ऊपर एक फ़ैदम (6 फीट) तक बढ़ गया। फिर उन्होंने उसे खींच लिया उसने उसे उठाया और अपने आदमियों को आदेश दिया कि वे उसे ब्रह्मदत्त के पास ले जाएं। उन्होंने डंठल को लपेटकर दीवार के ऊपर फेंक दिया और चिल्लाते हुए कहा, "हे ब्रह्मदत्त के सेवकों! भूख से मत मरो। लो, फूल पहनो और डंठल से अपना पेट भर लो!" उस ज्ञानी व्यक्ति के एक जासूस ने उसे उठाया और राजा के पास लाकर कहा, "देखिए, महाराज, इस लिली का डंठल: इतना लंबा डंठल पहले कभी नहीं देखा गया!" राजा ने कहा, "इसे नापो।" उन्होंने नापा और पाया कि यह साठ फीट के बजाय अस्सी फीट (6 फीट) लंबा है। राजा ने पूछा, "यह कहाँ उगा?" एक ने मनगढ़ंत कहानी सुनाई: "एक दिन, महाराज, मुझे थोड़ी सी ताड़ी पीने की प्यास लगी, तो मैं शहर के पिछले रास्ते से गया और मैंने लोगों के खेलने के लिए बने बड़े तालाब देखे। एक नाव में कई लोग फूल तोड़ रहे थे। यह वहीं तालाब के किनारे उगा था; लेकिन जो गहरे पानी में उगते हैं, वे सौ भुजाओं जितने ऊँचे होते हैं।" यह सुनकर राजा ने केवट्टा से कहा, "गुरुजी, हम पानी रोककर उन्हें नहीं पकड़ सकते; यह प्रयास छोड़ दीजिए।" "ठीक है," केवट्टा ने कहा, "तो हम उनका भोजन रोककर उन्हें पकड़ेंगे; नगरी को अपना भोजन बाहर से मिलता है।" "बहुत अच्छा, गुरुजी।" ऋषि ने पहले की तरह यह बात समझ ली और सोचा, "यह नहीं जानता कि मैं ऋषि महोसाधा हूँ!" उन्होंने प्राचीर पर मिट्टी बिछाई और उसमें धान बो दिया। अब बोधिसत्वों की इच्छाएँ हमेशा पूरी होती हैं: एक ही रात में धान उग आया और प्राचीर के ऊपर से निकल गया। यह देखकर ब्रह्मदत्त ने पूछा, "मित्र, प्राचीर के ऊपर यह हरा-भरा क्या है?" ऋषि के एक दूत ने, मानो राजा के मुख से शब्द पकड़ लिए हों, उत्तर दिया, "महाराज, किसान के पुत्र महोसाधा ने आने वाले खतरे को भांपते हुए, पूरे राज्य से अनाज इकट्ठा किया और अपने भंडार भर लिए, और बचा हुआ अनाज प्राचीर पर फेंक दिया।" इसमें कोई संदेह नहीं है कि गर्मी से गर्म और बारिश में भीगने वाला यह चावल वहां पौधों के रूप में विकसित हुआ।एक दिन मैं किसी काम से पीछे के रास्ते से अंदर गया और प्राचीर पर रखे चावल के ढेर में से मुट्ठी भर चावल उठाकर गली में गिरा दिए। इस पर लोग मुझ पर हँसे और बोले, "लगता है तुम्हें भूख लगी है! इसमें से कुछ चावल अपने वस्त्र के कोने में बाँध लो, घर ले जाओ, पकाओ और खा लो।" यह सुनकर राजा ने केवट्टा से कहा, "गुरुजी, चावल काटकर हम इस स्थान पर कब्जा नहीं कर सकते; यह तरीका सही नहीं है।" "तो महाराज, हम इसे बाहर से आने वाली लकड़ी की आपूर्ति काटकर जीतेंगे।" "ठीक है गुरुजी।" बोधिसत्व को पहले की तरह ही इसकी जानकारी मिल गई; और उन्होंने लकड़ी का एक ढेर बना दिया, जो चावल के ढेर से भी आगे की बात साबित करता था। लोग ब्रह्मदत्त के आदमियों पर हँसे और बोले, "अगर तुम्हें भूख लगी है, तो लो, खाना पकाने के लिए कुछ है," और ऐसा कहते हुए उन्होंने लकड़ी के बड़े-बड़े लट्ठे नीचे फेंक दिए। राजा ने पूछा, "प्राचीर के ऊपर दिखाई देने वाली यह लकड़ी क्या है?" जासूसों ने कहा, "किसान के बेटे ने आने वाले खतरे को भांपते हुए लकड़ियाँ इकट्ठा कीं और उन्हें घरों के पीछे बने शेडों में जमा कर दिया; जो लकड़ियाँ बच गईं उन्हें उसने किले की दीवार के किनारे ढेर कर दिया।" तब राजा ने केवट्टा से कहा, "गुरुजी, हम लकड़ियाँ काटकर उस स्थान पर कब्जा नहीं कर सकते; यह योजना अब बस करो।" "कोई बात नहीं, महाराज, मेरे पास एक और योजना है।" "वह योजना क्या है, गुरुजी? मुझे आपकी योजनाओं का कोई अंत नहीं दिखता। हम विदेह पर कब्जा नहीं कर सकते; चलिए अपने शहर वापस चलते हैं।" "महाराज, यदि यह कहा जाए कि चुलानी-ब्रह्मदत्त एक सौ एक राजकुमारों के साथ भी विदेह पर कब्जा नहीं कर सका, तो हम अपमानित होंगे। महोसाधा ही एकमात्र बुद्धिमान व्यक्ति नहीं है, मैं भी एक बुद्धिमान व्यक्ति हूँ: मैं एक रणनीति अपनाऊँगा।" "क्या रणनीति है, गुरुजी?" "हम विधि का युद्ध लड़ेंगे।" "इसका क्या अर्थ है?" "महाराज, कोई सेना नहीं लड़ेगी। दोनों राजाओं के दो ऋषि एक स्थान पर प्रकट होंगे, और उनमें से जो दूसरे को प्रणाम करेगा वह पराजित होगा।" महोसाधा को इस बात का ज्ञान नहीं है। मैं बड़ा हूँ और वह छोटा है, और जब वह मुझे देखेगा तो मुझे प्रणाम करेगा। इस प्रकार हम वेदेह पर विजय प्राप्त करेंगे, और यह हो जाने पर हम घर लौट आएंगे। इस प्रकार हमारा अपमान नहीं होगा। यही धर्मयुद्ध का अर्थ है।" लेकिन बोधिसत्व को यह रहस्य पहले की तरह ही पता चल गया। उन्होंने सोचा, "यदि मैं केवट्टा को इस प्रकार मुझ पर विजय प्राप्त करने दूँ, तो मैं ऋषि नहीं रहूँगा।" ब्रह्मदत्त ने कहा, "शानदार योजना": और उन्होंने एक पत्र लिखकर वेदेह को पीछे से भेजा, जिसमें लिखा था: "कल दोनों ऋषियों के बीच धर्मयुद्ध होगा; और जो लड़ने से इनकार करेगा, उसे पराजित माना जाएगा।" यह पत्र प्राप्त होने पर वेदेह ने ऋषि को बुलवाया और उन्हें बताया। उन्होंने उत्तर दिया, "अच्छा, महाराज: पश्चिमी द्वार के पास धर्मयुद्ध के लिए स्थान तैयार करने और वहाँ एकत्रित होने का संदेश भेजें।" इसलिए उन्होंने दूत को पत्र दिया, और अगले दिन उन्होंने केवट्टा की पराजय देखने के लिए धर्मयुद्ध का स्थान तैयार किया। लेकिन एक सौ एक राजकुमार, जो भविष्य में होने वाली घटनाओं से अनजान थे, केवट्टा को बचाने के लिए उसे घेर लिया।ये राजकुमार तैयार स्थान पर गए और पूर्व दिशा की ओर मुख करके खड़े हो गए, जहाँ ऋषि केवट्टा भी विराजमान थे। सुबह-सुबह बोधिसत्व ने सुगंधित जल से स्नान किया, एक लाख सिक्कों के मूल्य का काशी वस्त्र पहना और पूर्ण रूप से सुसज्जित होकर, भव्य नाश्ते के बाद अपने अनुयायियों के साथ महल के द्वार पर गए। प्रवेश करने की अनुमति मिलने पर उन्होंने राजा को प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। राजा ने कहा, "हे ऋषि महोसाधा, नमस्कार! मैं युद्ध स्थल जा रहा हूँ।" ऋषि ने पूछा, "महाराज, मैं केवट्टा को एक रत्न से परास्त करना चाहता हूँ; मुझे

अष्टकोणीय रत्न चाहिए।" ऋषि ने कहा, "ले लो, मेरे पुत्र।" उन्होंने रत्न लिया और विदा लेकर अपने सहपाठियों, अपने हजार योद्धाओं से घिरे हुए, नब्बे हजार सिक्कों के मूल्य के उत्तम नस्ल के घोड़ों द्वारा खींचे गए भव्य रथ में सवार हुए और दोपहर के भोजन के समय द्वार पर पहुँचे।

केवट्टा उनके आने की प्रतीक्षा में खड़ा था और "अब वह आ रहे हैं, अब वह आ रहे हैं" कहते हुए अपनी गर्दन को इतना लंबा कर रहा था कि मानो वह और लंबी हो गई हो, और धूप में पसीने से तरबतर था। महानुभाव अपने सेवकों के साथ, उमड़ते हुए सागर की तरह, जागृत सिंह की तरह, निर्भीक और शांत होकर, द्वार खुलवाकर नगर से बाहर आए; उत्तेजित सिंह की तरह अपने रथ से उतरकर वे आगे बढ़े। एक सौ एक राजकुमारों ने उनकी महिमा देखकर हजारों जयकारे लगाए, "देखो, श्रीवद्ध के पुत्र ऋषि महोषद आ गए हैं, जिनकी बुद्धि का साक्षात भारत में कोई सानी नहीं!" और वे सक्का (इंद्र) की तरह अपने देवदूतों के दल से घिरे हुए, अद्वितीय वैभव और वैभव में, हाथ में अनमोल रत्न लिए, केवट्टा के सामने खड़े थे। केवट्टा ने उन्हें देखते ही स्थिर रहने की शक्ति खो दी, बल्कि आगे बढ़कर उनसे मिलने गए और बोले, "ऋषि महोसाधा, हम दोनों ऋषि हैं, और यद्यपि मैं इतने समय से आपके निकट ही रह रहा हूँ, आपने मुझे आज तक कोई उपहार भी नहीं भेजा। ऐसा क्यों?" महान पुरुष ने कहा, "हे ज्ञानी, मैं आपके लिए एक उपयुक्त उपहार की तलाश में था, और आज मुझे यह रत्न मिला है। कृपया इसे स्वीकार करें; संसार में इसके जैसा कोई दूसरा रत्न नहीं है।" दूसरे ने रत्न को अपने हाथ में चमकता हुआ देखकर सोचा कि वह इसे भेंट करना चाहते हैं, और अपना हाथ बढ़ाते हुए कहा, "तो मुझे दे दीजिए।" महान पुरुष ने कहा, "ले लीजिए," और रत्न को उनके फैले हुए हाथ की उंगलियों के सिरों पर रख दिया। लेकिन ब्राह्मण अपनी उंगलियों में रत्न का भार नहीं संभाल सका, और वह फिसलकर बोधिसत्व के चरणों में गिर गया; ब्राह्मण उसे पाने के लालच में दूसरे के चरणों में झुक गया। तब उस महान पुरुष ने उसे उठने नहीं दिया, बल्कि एक हाथ से उसके कंधे और दूसरे हाथ से उसकी कमर पकड़कर चिल्लाया, "उठो गुरु, उठो, मैं तुमसे छोटा हूँ, तुम्हारा पोता बनने लायक छोटा; मुझे प्रणाम मत करो।" यह कहते हुए उसने बार-बार अपना चेहरा और माथा ज़मीन पर रगड़ा, जब तक कि वह खून से लथपथ नहीं हो गया। फिर उसने कहा, "अंधे मूर्ख, क्या तूने मुझसे प्रणाम पाने की कल्पना की थी?" और उसका गला पकड़कर उसे दूर फेंक दिया। वह बीस पाद (6 फीट) दूर गिरा; फिर उठा और भाग गया। तब उस महान पुरुष के आदमियों ने रत्न उठा लिया, लेकिन बोधिसत्व के शब्दों की गूंज, "उठो, उठो, मुझे प्रणाम मत करो!" भीड़ के शोर में भी गूंज उठी। सभी लोग एक स्वर में चिल्लाए, "ब्राह्मण केवट्टा ने ऋषि के चरणों में प्रणाम किया!" और सभी राजाओं, ब्रह्मदत्त और अन्य सभी ने केवट्टा को महापुरुष के चरणों में सिर झुकाए देखा। उन्होंने सोचा, "हमारे ऋषि ने महापुरुष को प्रणाम किया है; अब तो हम हार गए! वह हम सबका अंत कर देगा"; और वे सब अपने-अपने घोड़ों पर सवार होकर उत्तरा पंचाल की ओर भागने लगे। बोधिसत्व के सैनिकों ने उन्हें भागते देख फिर से शोर मचाना शुरू कर दिया, चिल्लाते हुए,"कुलानी-ब्रह्मदत्त अपने एक सौ एक राजकुमारों के साथ भाग रहा है!" यह सुनकर राजकुमार और भी भयभीत हो गए और दौड़कर विशाल सेना को तितर-बितर कर दिया; वहीं बोधिसत्व के सैनिक चिल्लाते-चिल्लाते और भी शोर मचाते रहे। महापुरुष अपने सेवकों के साथ नगर लौट गए; वहीं ब्रह्मदत्त की सेना तीन मील (4.23 किमी) तक पराजित होकर भागती रही। केवट्टा घोड़े पर सवार होकर सेना के पास आया, अपने माथे से खून पोंछते हुए, और चिल्लाया, "अरे, भागो मत! मैंने इस देहाती को प्रणाम नहीं किया! रुको, रुको!" लेकिन सेना नहीं रुकी और केवट्टा का उपहास करते हुए, उसका अपमान किया, "पापी पुरुष! दुष्ट ब्राह्मण! तू धर्मयुद्ध करेगा और फिर अपने पोते की उम्र के एक लड़के के सामने झुकेगा! क्या यह तेरे लिए बिल्कुल अनुचित नहीं है!" उन्होंने उसकी बात नहीं सुनी और आगे बढ़ते रहे। वह सेना में घुस गया और चिल्लाया, "अरे, तुम सब मेरी बात मानो, मैंने उसके सामने सिर नहीं झुकाया, उसने मुझे एक रत्न से धोखा दिया!" इस प्रकार, उसने किसी न किसी तरह राजकुमारों को मना लिया और उन्हें अपने ऊपर विश्वास दिलाकर बिखरी हुई सेना को एकजुट कर लिया।

यह सेना इतनी विशाल थी कि यदि उनमें से प्रत्येक व्यक्ति एक पत्थर या मुट्ठी भर मिट्टी लेकर खाई में फेंकता, तो खाई भर जाती और किले की दीवार जितनी ऊँची मिट्टी का ढेर बन जाता। परन्तु हम जानते हैं कि बोधिसत्वों की इच्छाएँ पूर्ण होती हैं; और उनमें से किसी ने भी शहर की ओर एक पत्थर या मुट्ठी भर मिट्टी नहीं फेंकी। वे सब अपने-अपने स्थान पर लौट गए। तब राजा ने केवट्टा से पूछा, "हे गुरु, हमें क्या करना चाहिए?" "हे स्वामी, किसी को भी पीछे से बाहर न आने दें और सभी रास्ते बंद कर दें। जो लोग बाहर नहीं आ पाएँगे, वे हतोत्साहित होकर द्वार खोल देंगे। इस प्रकार हम अपने शत्रुओं को पकड़ लेंगे।" ऋषि को पहले की तरह ही इस मामले की जानकारी दी गई और उन्होंने सोचा, "यदि वे यहाँ लंबे समय तक रहे तो हमें शांति नहीं मिलेगी; उनसे छुटकारा पाने का कोई उपाय खोजना होगा। मैं उन्हें भगाने की रणनीति बनाऊँगा।" अतः उन्होंने ऐसे मामलों में निपुण व्यक्ति की खोज की और अनुकेवट्टा नामक व्यक्ति को पाया। उन्होंने उससे कहा, "हे गुरु, मेरे पास एक बात है जिसे मैं चाहता हूँ कि आप पूरा करें।" "मैं क्या करूँ, हे विद्वान महोदय? मुझे बताइए।" "किले की प्राचीर पर खड़े हो जाओ, और जब हमारे सैनिक असावधान दिखें, तो तुरंत ब्रह्मदत्त के सैनिकों को रोटी, मछली, मांस और अन्य भोजन नीचे गिरा दो, और कहो, लो, यह और यह खाओ, निराश मत हो; कुछ दिन और यहीं रुकने की कोशिश करो; जल्द ही लोग पिंजरे में बंद मुर्गियों की तरह हो जाएंगे और अपने आप द्वार खोल देंगे, और तब तुम वेदेह और उस दुष्ट किसान के बेटे को पकड़ पाओगे। जब हमारे सैनिक यह सुनेंगे, तो वे तुम्हें कठोर फटकार लगाते हुए ब्रह्मदत्त की सेना के सामने हाथ-पैर बांध देंगे, और बांस से पीटने का नाटक करेंगे, और तुम्हें नीचे खींच लेंगे, और तुम्हारे बालों में पांच गांठें बांधकर तुम्हें ईंटों के चूर्ण से लेप देंगे, तुम्हारे ऊपर कनवेरा की माला डालेंगे, तुम्हें तब तक पीटेंगे जब तक तुम्हारी पीठ पर निशान न पड़ जाएं, तुम्हें प्राचीर पर ले जाएंगे, तुम्हें बांध देंगे,

और रस्सी से ब्रह्मदत्त के सैनिकों को नीचे गिरा देंगे, चिल्लाते हुए, जाओ, गद्दार! फिर तुम्हें ब्रह्मदत्त के सामने ले जाया जाएगा, और वह तुमसे तुम्हारा अपराध पूछेगा; आपको उससे कहना होगा, "हे महाराज, एक समय मैं बहुत सम्मानित था, लेकिन किसान के पुत्र ने मुझे मेरे राजा के समक्ष देशद्रोही बताकर मेरा सब कुछ लूट लिया। जिसने मुझे बर्बाद किया था, उसे मैं एक सिर छोटा करना चाहता था, और आपके सैनिकों की निराशा पर दया करके मैंने उन्हें भोजन और पानी दिया। इसके लिए, अपने हृदय में पुरानी दुश्मनी लिए उसने मुझ पर यह विनाश लाद दिया। हे महाराज, आपके अपने सैनिक सब जानते हैं।" इस प्रकार, किसी न किसी तरह आपको राजा का विश्वास जीतना होगा, और फिर उससे कहना होगा, "महाराज, अब आप मुझे पा चुके हैं, अब चिंता न करें। अब वेदेह और किसान का पुत्र मर चुके हैं! मैं इस शहर की दीवारों के मजबूत और कमजोर स्थानों को जानता हूँ। मैं जानता हूँ कि खाई में मगरमच्छ कहाँ हैं और कहाँ नहीं; शीघ्र ही मैं शहर को आपके हाथों में ले आऊँगा।" राजा आप पर विश्वास करेगा और आपका सम्मान करेगा, और सेना को आपके अधीन कर देगा। फिर आपको सेना को उन स्थानों पर ले जाना होगा जहाँ साँप और मगरमच्छ रहते हैं; मगरमच्छों के भय से सेना को आगे बढ़ाना होगा। नीचे जाने से इनकार कर देगा।तब आपको राजा से कहना होगा, "हे महाराज, आपकी सेना किसान के पुत्र द्वारा भ्रष्ट कर दी गई है; उनमें से एक भी ऐसा व्यक्ति नहीं है, यहाँ तक कि शिक्षक केवट्टा और राजकुमार भी, जिसे रिश्वत न दी गई हो। वे केवल आपकी रक्षा करते हुए घूमते हैं, वे सभी किसान के पुत्र के चेले हैं, और मैं अकेला ही आपका वफादार हूँ। यदि आप मुझ पर विश्वास न करें, तो राजाओं को पूरी वर्दी में आपके सामने आने का आदेश दें; फिर उनके वस्त्र, उनके आभूषण, उनकी तलवारें, जो सभी किसान के पुत्र द्वारा दिए गए हैं और जिन पर उसका नाम खुदा हुआ है, उनकी जाँच करें और स्वयं को आश्वस्त करें।" राजा ऐसा करेगा, और सुनिश्चित करेगा, और भयभीत होकर राजकुमारों को विदा कर देगा। तब वह आपसे पूछेगा कि क्या किया जाए? और आपको उत्तर देना होगा, "हे महाराज, किसान का पुत्र बहुत चालाक है, और यदि आप यहाँ कुछ दिन रुके तो वह पूरी सेना पर विजय प्राप्त कर लेगा और आपको बंदी बना लेगा। देर न करें, बल्कि आज रात मध्य पहर में ही घोड़े लेकर निकल पड़ें, ताकि हम शत्रु के हाथों न मरें।" राजा आपकी सलाह मान लेगा। और जब वह भाग जाए, तो तुम्हें लौटकर मेरे लोगों को बताना होगा।" इस पर अनुकेवट्टा ने उत्तर दिया, "अच्छा, महाराज, मैं आपकी बात मानूंगा।" "ठीक है, तो तुम्हें कुछ मार सहनी पड़ेगी।" "महाराज, मेरे शरीर के साथ जो चाहो करो, बस मेरी जान और मेरे अंगों को बख्श दो।"

अनुकेवट्टा के परिवार के प्रति पूर्ण सम्मान दिखाने के बाद, उसने अनुकेवट्टा के साथ इस प्रकार दुर्व्यवहार करवाया और उसे ब्रह्मदत्त के आदमियों के हवाले कर दिया। राजा ने उसकी परीक्षा ली, उस पर भरोसा किया, उसे सम्मानित किया और सेना का नेतृत्व उसे सौंप दिया; वह सेना को उन स्थानों पर ले गया जहाँ साँप और मगरमच्छ भरे हुए थे; और मगरमच्छों से भयभीत होकर और प्राचीरों पर खड़े सैनिकों द्वारा फेंके गए तीरों, भालों और बरछियों से घायल होकर, सैनिक वहीं मर गए, जिसके बाद कोई भी इतना साहसी नहीं था कि वहाँ जा सके। तब अनुकेवट्टा राजा के पास पहुँचा और उससे कहा, "हे महाराज, आपके लिए लड़ने वाला कोई भी सैनिक नहीं है: सभी को रिश्वत दी गई है। यदि आप मुझ पर विश्वास नहीं करते हैं, तो राजकुमारों को बुलवाएँ और उनके वस्त्रों और साजो-सामान पर लिखे शिलालेख देखें।" राजा ने ऐसा ही किया; और उनके सभी वस्त्रों और साजो-सामान पर शिलालेख देखकर, उसे यकीन हो गया कि वास्तव में उन्होंने रिश्वत ली थी। "गुरुजी," उसने कहा, "अब क्या किया जाए?" "महाराज, कुछ नहीं किया जा सकता; यदि आप देर करेंगे, तो किसान का पुत्र आपको पकड़ लेगा। महाराज, यदि शिक्षक केवट्टा माथे पर घाव लिए घूम रहा है, तो भी उसने रिश्वत ली है; उसने वह कीमती रत्न लिया और आपको तीन मील (4.23 किमी) तक पराजित कराया, फिर आपका विश्वास जीतकर आपको वापस ले आया। वह गद्दार है! मैं एक रात भी उसकी आज्ञा नहीं मानूंगा; आज रात मध्याह्न में ही आप भाग जाएं। मेरे सिवा आपका कोई मित्र नहीं है।" "तो, गुरुजी, आप मेरा घोड़ा और रथ तैयार कर दीजिए।" यह देखकर कि राजा निश्चित रूप से भागने पर आमादा है, उन्होंने उसे प्रोत्साहित किया और कहा कि वह किसी बात से न डरे; फिर वे बाहर गए और जासूसों को बताया कि राजा आज रात भागने वाला है, उन्हें सोने की चिंता नहीं करनी चाहिए। इसके बाद उन्होंने राजा के घोड़े को तैयार किया, लगाम इस प्रकार बांधी कि जितना अधिक वह खींचेगा, घोड़ा उतनी ही तेजी से दौड़ेगा; और आधी रात को उन्होंने कहा, "महाराज, आपका घोड़ा तैयार है; देखिए, समय आ गया है।" राजा घोड़े पर सवार हुए और भाग गए। अनुकेवत्ता भी घोड़े पर सवार हो गया, मानो उसके साथ जाने के लिए, लेकिन थोड़ी दूर जाकर वह वापस मुड़ गया; और राजा का घोड़ा, लगाम की व्यवस्था के अनुसार, राजा के कहने पर आगे बढ़ता रहा। फिर अनुकेवत्ता सेना के बीच आया और ऊँची आवाज़ में चिल्लाया, "कुलानी-ब्रह्मदत्ता भाग गया है!" जासूस और उनके सेवक भी चिल्ला उठे। शोर सुनकर अन्य राजकुमार भयभीत होकर सोचने लगे, "ऋषि महोषध ने द्वार खोलकर बाहर आ गए होंगे; हम सब मर जाएँगे!" अपने उपयोग और आनंद की सभी वस्तुओं पर एक नज़र डालते ही वे भाग गए। लोग और भी ज़ोर से चिल्लाए, "राजकुमार हार गए हैं!" शोर सुनकर द्वार और मीनारों पर खड़े सभी लोग चिल्लाए और तालियाँ बजाईं। तब भीतर और बाहर सारा शहर एक भयंकर गर्जना से गूंज उठा, मानो धरती फट गई हो या गहरा सागर टूट गया हो, जबकि उस विशाल सेना के असंख्य झुंड, जानलेवा आतंक में, बिना किसी शरण या बचाव के, जोर-जोर से चिल्ला रहे थे।"महोसाधा ने ब्रह्मदत्त को उसके सौ एक राजाओं सहित पकड़ लिया!" वे हार मानकर भाग गए, यहाँ तक कि अपने वस्त्र भी फेंक दिए। शिविर खाली था। चुलानी-ब्रह्मदत्त अपने सौ एक सरदारों के साथ अपने नगर में प्रवेश कर गया।

अगली सुबह, सैनिकों ने शहर के द्वार खोल दिए और अंदर चले गए। वहाँ मौजूद भारी मात्रा में माल देखकर उन्होंने महापुरुष को सूचना दी और पूछा कि उन्हें क्या करना चाहिए। महापुरुष ने कहा, "जो माल वे छोड़ गए हैं, वह हमारा है। राजकुमारों का माल हमारे राजा को दे दो, और केवट्टा और अन्य आम लोगों का माल मुझे ला दो; बाकी सब नागरिक ले लें।" कीमती गहने और मूल्यवान सामान निकालने में आधा महीना लगा, और बाकी सामान निकालने में चार महीने। महापुरुष ने अनुकेवट्टा को बहुत सम्मान दिया। उस दिन से मिथिला के नागरिकों के पास भरपूर सोना हो गया।

ब्रह्मदत्त और वे राजा उत्तरापंचल नगर में एक वर्ष से रह रहे थे; एक दिन केवट्टा ने दर्पण में अपना चेहरा देखते हुए अपने माथे पर निशान देखा और सोचा, "यह तो उस किसान के पुत्र का काम है: उसने मुझे उन सभी राजाओं के सामने हंसी का पात्र बना दिया!" उसे क्रोध आ गया। "मैं उसकी पीठ कैसे देख पाऊंगा?" उसने सोचा। "अरे, एक योजना है। हमारे राजा की पुत्री, पंचालचंडी, दिव्य अप्सरा के समान अत्यंत सुंदर है; मैं उसे राजा वेदेह को दिखाऊंगा। वह मछली की तरह कांटे में फंस जाएगा: मैं उसे और उसके साथ महोषद को पकड़ लूंगा, उन दोनों को मार डालूंगा और विजय का प्याला पीऊंगा!" इस संकल्प के साथ वह राजा के पास पहुंचा। "महाराज," उसने कहा, "मेरे पास एक विचार है।" "जी गुरु, आपके इस विचार ने मुझे एक बार कपड़े तक फाड़ दिए थे। अब आप क्या करेंगे? चुप रहो।" "महाराज, ऐसी योजना पहले कभी नहीं बनी।" "तो बोलिए।" "महाराज, हमें अकेले में रहना होगा।" "ठीक है।" ब्राह्मण उसे ऊपरी मंजिल पर ले गया और बोला, "महाराज! मैं राजा वेदेह को अपनी इच्छा से आकर्षित करके यहाँ लाऊँगा और मार डालूँगा।" "अच्छा उपाय है, गुरुजी, लेकिन हम उसकी इच्छा को कैसे जगाएँगे?" "महाराज, आपकी पुत्री पंचालचंडी अत्यंत सुंदर है; हम कवियों से उसके आकर्षण और गुणों का काव्य करवाएँगे और उन काव्यों को मिथिला में गवाएँगे। जब हम देखेंगे कि वह मन ही मन कह रहा है, 'यदि शक्तिशाली राजा वेदेह इस सुंदर कन्या को नहीं पा सकता, तो उसका राज्य उसके लिए क्या है?' और वह इस विचार के आकर्षण में फँस गया है, तब मैं जाकर एक दिन तय करूँगा; मेरे द्वारा तय किए गए दिन वह काँटे में फँसी मछली की तरह आएगा, और उसके साथ किसान का बेटा भी होगा; तब हम उन्हें मार डालेंगे।" यह सुनकर राजा प्रसन्न हुआ और सहमत हो गया: "अच्छा उपाय है, गुरुजी! हम ऐसा ही करेंगे।"

लेकिन राजा के पलंग की रखवाली करने वाले एक मैना पक्षी ने इस बात पर ध्यान दिया।

तब राजा ने प्रतिभाशाली कवियों को बुलवाया, उन्हें भरपूर धन दिया और अपनी पुत्री के बारे में बताते हुए उसकी सुंदरता पर कविता लिखने को कहा। उन्होंने अत्यंत मधुर गीत रचे और राजा को सुनाए। राजा ने उन्हें भरपूर पुरस्कार दिया। संगीतकारों ने कवियों से ये गीत सीखे और सार्वजनिक रूप से गाए, जिससे ये गीत दूर-दूर तक फैल गए। जब गीत दूर-दूर तक फैल गए, तो राजा ने गायकों को बुलवाया और कहा, "मेरे बच्चों, रात में कुछ पक्षियों के साथ वृक्षों पर चढ़ जाओ, वहाँ बैठकर गाओ और सुबह उनके गले में घंटियाँ बाँध दो, उन्हें उड़ने दो और फिर नीचे आने दो।" उसने ऐसा इसलिए किया ताकि संसार कहे कि स्वयं देवता (देवदूत) पाँचाल के राजा की पुत्री की सुंदरता का गुणगान करते हैं। फिर राजा ने इन कवियों को बुलवाया और उनसे कहा, "मेरे बच्चों, इस आशय की कविताएँ रचो कि ऐसी राजकुमारी पूरे भारत में मिथिला के राजा वेदेह के सिवा किसी राजा के लिए नहीं है, राजा की महिमा और कन्या की सुंदरता की प्रशंसा करते हुए।" उन्होंने ऐसा ही किया और इसकी सूचना दी; राजा ने उन्हें अच्छा भुगतान किया और मिथिला जाकर उसी तरह गाने को कहा। वे रास्ते में ये गीत गाते हुए मिथिला गए और वहाँ सार्वजनिक रूप से गाए। लोगों की भीड़ ने गीत सुने और ज़ोरदार तालियों के बीच उनका अच्छा भुगतान किया। रात में वे पेड़ों पर चढ़कर गाते और सुबह पक्षियों के गले में घंटियाँ बाँध देते, इससे पहले कि वे नीचे उतरें। लोगों ने हवा में घंटियों की आवाज़ सुनी और पूरे शहर में यह खबर फैल गई कि स्वयं देवता (देवदूत) राजा की पुत्री की सुंदरता का गुणगान कर रहे हैं। यह सुनकर राजा ने कवियों को बुलवाया और अपने महल में उनसे मुलाकात की। राजा को यह विश्वास दिलाया गया कि वे उन्हें राजा चुलानी की विलक्षण पुत्री भेंट करना चाहते हैं। इसलिए उन्होंने उन्हें अच्छा भुगतान किया और वे वापस आकर ब्रह्मदत्त को यह बात बताई। तब केवत्त ने उनसे कहा, "महाराज, अब मेरे जाने और दिन का प्रबंध करने का समय हो गया है।" "बहुत अच्छा, गुरुजी, आपको अपने साथ क्या ले जाना है?" "एक छोटा सा उपहार।" उन्होंने वह उपहार दे दिया। दूसरा व्यक्ति अपने साथ बड़ी संख्या में अनुयायियों को लेकर वेदेह के राज्य की ओर चल पड़ा। उसके आगमन की खबर फैलते ही सारा शहर शोरगुल मचाने लगा: "लोग कहते हैं कि राजा मणि और वेदेह मित्रता करेंगे; चुलानी अपनी पुत्री हमारे राजा को देगा, और लोग कहते हैं कि केवट्टा विवाह का दिन तय करने आ रहा है।" राजा वेदेह ने भी यह सुना; और उस महान सत्ता ने भी यह सुनकर सोचा, "मुझे उसका आना पसंद नहीं है; मुझे इसके बारे में पूरी जानकारी प्राप्त करनी होगी।" इसलिए उसने चुलानी के साथ रहने वाले जासूसों को संदेश भेजा। उन्होंने उत्तर दिया, "हमें यह बात पूरी तरह समझ नहीं आई। राजा और केवट्टा राजशय में बैठकर बातें कर रहे थे; लेकिन राजशय की रखवाली करने वाले मैना को इसकी जानकारी हो जाएगी।" यह सुनकर उस महान सत्ता ने सोचा: "ताकि हमारे शत्रुओं को कोई लाभ न मिले, मैं पूरे शहर को विभाजित कर दूंगा और उसे सजाऊंगा, और केवट्टा को इसे देखने नहीं दूंगा।" अतः उसने नगर के द्वार से महल तक और महल से अपने घर तक, सड़क के दोनों ओर जालीदार संरचना बनवाई और पूरी सड़क को चटाइयों से ढक दिया।शहर को चित्रों से सजाया गया था, ज़मीन पर फूल बिखेरे गए थे, जगह-जगह पानी से भरे घड़े रखे गए थे, झंडे और बैनर टांगे गए थे। जब केवट्टा शहर में दाखिल हुआ तो उसे ये सजावटें दिखाई नहीं दीं; उसने सोचा कि राजा ने उसके लिए ही इसे सजाया है, और वह समझ नहीं पाया कि ऐसा इसलिए किया गया था ताकि वह इसे देख न सके। जब वह राजा के सामने आया, तो उसने अपना उपहार भेंट किया

और विनम्रतापूर्वक अभिवादन करते हुए एक तरफ बैठ गया। फिर सम्मानपूर्वक स्वागत के बाद, उसने अपने आने का कारण बताने के लिए दो श्लोक पढ़े।

"एक राजा जो आपकी मित्रता चाहता है, वह आपको ये अनमोल वस्तुएँ भेजता है: अब उस स्थान से योग्य और मधुर वाणी वाले दूतों को आने दें; उन्हें ऐसे कोमल शब्द बोलने दें जो सुख प्रदान करें, और पांचाल और विदेह के लोग एक हो जाएँ।"

"महाराज," वह आगे बोले, "वे मेरी जगह किसी और को भेज सकते थे, लेकिन उन्होंने मुझे भेजा, क्योंकि उन्हें पूरा विश्वास था कि कोई और इस कहानी को मेरे जितना मधुरता से नहीं सुना सकता। जाइए, गुरुजी," उन्होंने कहा, "राजा को इस पर कृपा करने के लिए मनाइए और उन्हें अपने साथ वापस ले आइए। अब जाइए, महाराज, और आपको एक उत्तम और सुंदर राजकुमारी प्राप्त होगी, और हमारे राजा और आपके बीच मित्रता स्थापित होगी।" राजा इस प्रस्ताव से प्रसन्न हुए; उन्हें असाधारण सुंदरता वाली राजकुमारी प्राप्त होने का विचार आकर्षित कर गया, और उन्होंने उत्तर दिया, "गुरुजी, विधि युद्ध में आपके और बुद्धिमान महोसाधा के बीच विवाद हुआ था। अब जाइए और मेरे पुत्र से मिलिए; आप दोनों बुद्धिमानों को अपने मतभेद सुलझाने होंगे; और आपस में बात करने के बाद वापस आ जाइए।" केवट्टा ने ऋषि से मिलने जाने का वादा किया और वे चले गए।

उस दिन, उस महान व्यक्ति ने पापी व्यक्ति से बात न करने का निश्चय करके सुबह थोड़ा घी पिया; उन्होंने फर्श पर गीला गोबर छिड़का और खंभों पर तेल लगाया; एक संकरे पलंग को छोड़कर सभी कुर्सियाँ और आसन हटा दिए गए, जिस पर वे लेटे थे। उन्होंने अपने सेवकों को इस प्रकार आदेश दिया: "जब ब्राह्मण बात करना शुरू करे, तो कहना, 'ब्राह्मण, ऋषि से बात मत करो; उन्होंने आज घी का सेवन किया है।' और जब मैं उनसे बात करने का प्रयास करूँ, तो मुझे रोकते हुए कहना, 'हे स्वामी, आपने घी का सेवन किया है - बात मत करो।'" इन निर्देशों के बाद, महान व्यक्ति ने स्वयं को लाल वस्त्र से ढक लिया और सात द्वार-स्तंभों पर सेवकों को तैनात करने के बाद अपने पलंग पर लेट गए। केवट्टा पहले द्वार पर पहुँचकर पूछा, 'ज्ञानी व्यक्ति कहाँ है?' तब सेवकों ने उत्तर दिया, "ब्राह्मण, शोर मत करो; यदि तुम अंदर जाना चाहते हो, तो चुपचाप जाओ। आज ऋषि ने घी ग्रहण किया है, और वे शोर सहन नहीं कर सकते।" अन्य द्वारों पर भी उन्होंने यही बात कही। जब वे सातवें द्वार पर पहुँचे, तो वे ऋषि के समक्ष प्रवेश कर गए, और ऋषि ने बोलने का आभास दिया: परन्तु उन्होंने कहा, "महाराज, बात मत कीजिए; आपने घी की अधिक मात्रा ग्रहण की है—इस अभागे ब्राह्मण से क्यों बात करें?" अतः उन्होंने उन्हें रोक दिया। दूसरा अंदर आया, परन्तु बैठने की जगह नहीं मिली, न पलंग के पास खड़े होने की। वह गीले गोबर पर से होकर खड़ा हुआ। तब एक ने उसकी ओर देखा और अपनी आँखें मलीं, एक ने अपनी भौंहें उठाईं, एक ने अपनी कोहनी खुजलाई। यह देखकर वह क्रोधित हुआ और बोला, "महाराज, मैं जा रहा हूँ।" दूसरे ने कहा, "हा, अभागे ब्राह्मण, शोर मत करो! यदि तुमने शोर किया, तो मैं तुम्हारी हड्डियाँ तोड़ दूँगा!" भयभीत होकर उसने पीछे मुड़कर देखा, तभी एक अन्य ने उसे बांस की छड़ी से पीठ पर मारा, दूसरे ने उसका गला पकड़कर उसे धक्का दिया, तीसरे ने उसकी पीठ पर थप्पड़ मारे, जब तक कि वह डर के मारे, जैसे कोई हिरण पैंथर के मुंह से निकलता है, भाग गया और महल लौट आया।

अब राजा ने सोचा, "आज मेरा बेटा यह खबर सुनकर प्रसन्न होगा। दोनों बुद्धिमानों के बीच धर्म के विषय में कितनी चर्चा होगी! आज उनका मेल-मिलाप हो जाएगा और मुझे लाभ होगा।" इसलिए जब उसने केवट्टा को देखा, तो उसने एक श्लोक सुनाया और उनसे हुई उनकी बातचीत के बारे में पूछा।

"केवट्टा, महोसधा के साथ आपकी मुलाकात कैसी रही? कृपया मुझे बताएं। क्या महोसधा का मन बदल गया, क्या वह खुश हुआ?"

इस पर केवट्टा ने उत्तर दिया, "महाराज, आप उसे बुद्धिमान व्यक्ति समझते हैं, लेकिन उससे कम अच्छा कोई दूसरा व्यक्ति नहीं है," और उसने एक श्लोक सुनाया:

"वह स्वभाव से नीच व्यक्ति है, मनुष्यों का स्वामी! अप्रिय, हठी, दुष्ट स्वभाव का, गूंगे या बहरे के समान: उसने एक शब्द भी नहीं कहा।"

इससे राजा को अप्रसन्नता हुई, परन्तु उन्होंने कोई दोष नहीं पाया। उन्होंने केवट्टा और उनके सेवकों को उनकी सभी आवश्यक वस्तुएँ और रहने के लिए एक घर प्रदान किया और उन्हें विश्राम करने के लिए कहा। उन्हें विदा करने के बाद राजा ने मन ही मन सोचा, "मेरा पुत्र बुद्धिमान है और शिष्टाचार भली-भांति जानता है; फिर भी उसने इस व्यक्ति से शिष्टाचारपूर्वक बात नहीं की और उससे मिलना भी नहीं चाहा। निश्चय ही उसे भविष्य में किसी आशंका का कारण अवश्य दिखाई दिया होगा!" और उन्होंने स्वयं एक छंद की रचना की:

"यह संकल्प सचमुच समझना बहुत कठिन है; इस बलवान व्यक्ति ने एक स्पष्ट परिणाम का पूर्वाभास कर लिया है। इसलिए मेरा शरीर कांप रहा है: कौन अपना सब कुछ खोकर अपने शत्रु के हाथों में पड़ जाएगा?"

“निःसंदेह मेरे पुत्र ने ब्राह्मण के आगमन में कुछ बुराई देखी होगी। वह यहाँ किसी मित्रतापूर्ण उद्देश्य से नहीं आया होगा। वह मुझे अपनी इच्छा से आकर्षित करना चाहता होगा, और मुझे अपने नगर ले जाकर वहाँ बंदी बनाना चाहता होगा। ऋषि ने अवश्य ही आने वाले किसी खतरे को भांप लिया होगा।” जब वह इन विचारों पर घबराते हुए मन ही मन विचार कर रहे थे, तभी चार ज्ञानी पुरुष अंदर आए। राजा ने सेनाक से कहा, “सेनाक, क्या तुम सोचते हो कि मुझे उत्तरा पंचाल नगर जाकर राजा चुलानी की पुत्री से विवाह करना चाहिए?” सेनाक ने उत्तर दिया, “हे महाराज, यह आप क्या कह रहे हैं! जब भाग्य आपका साथ दे, तो उसे कौन दंड देकर भगाएगा? यदि आप वहाँ जाकर उससे विवाह करेंगे, तो पूरे भारत में चुलानी-ब्रह्मदत्त के सिवा आपका कोई सानी नहीं होगा, क्योंकि आपने प्रधान राजा की पुत्री से विवाह किया होगा। राजा जानता है कि अन्य राजकुमार उसके ही आदमी हैं, और केवल वेदेह ही उसके सानी है, इसलिए वह अपनी असाधारण पुत्री आपको देना चाहता है। जैसा वह कहता है वैसा ही करो, और हमें भी वस्त्र और आभूषण प्राप्त होंगे।” जब राजा ने दूसरों से पूछा, तो सबने एक ही बात कही। जब वे इस प्रकार बातचीत कर रहे थे, तभी ब्राह्मण केवट्टा अपने कमरे से राजा से विदा लेने और जाने के लिए निकला; और उसने कहा, "महाराज, मैं यहाँ और नहीं रुक सकता, मैं जाना चाहता हूँ, हे पुरुषों के राजकुमार!" राजा ने उसका आदर किया और उसे जाने दिया।

जब उस महान प्राणी को उसके जाने का समाचार मिला, तो उसने स्नान किया, वस्त्र बदले और राजा की सेवा में जाकर उसे प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गया। राजा ने सोचा, "मेरे पुत्र, हे बुद्धिमान महोसाधा, महान और बुद्धिमान हैं; वे भूत, वर्तमान और भविष्य जानते हैं; वे जानते होंगे कि मुझे जाना चाहिए या नहीं"; फिर भी, भावनाओं में बहकर वे अपने पहले संकल्प पर कायम नहीं रहे, बल्कि उन्होंने अपना प्रश्न एक श्लोक में पूछा:

"छहों ऋषि एक ही मत रखते हैं, और वे ज्ञान में सर्वोच्च ऋषि हैं। जाऊं या न जाऊं, यहीं रहूं—महोसाधा, मुझे भी अपना मत बताओ।"

इस पर ऋषि ने सोचा, "यह राजा अत्यधिक लालची है: अंधा और मूर्ख होकर इन चारों की बातें सुन रहा है। मैं उसे जाने की हानि बताकर उसे मनाऊंगा।" अतः उन्होंने चार श्लोक दोहराए:

"हे महाराज, क्या आप जानते हैं? शक्तिशाली और बलवान राजा चुलानी-ब्रह्मदत्त हैं, और वे चाहते हैं कि आप उन्हें मार डालें, जैसे शिकारी छल से हिरण को पकड़ता है। जैसे भोजन के लिए ललचाई मछली चारे में छिपे कांटे को नहीं पहचानती, या मनुष्य अपनी मृत्यु को नहीं पहचानता, वैसे ही हे राजा, इच्छाओं के लालच में डूबे हुए, आप चुलानी की पुत्री को नहीं पहचानते, हे मनुष्य, आप अपनी मृत्यु को नहीं पहचानते। पांचाल जाइए, और थोड़े ही समय में आप स्वयं को नष्ट कर लेंगे, जैसे सड़क पर फंसा हिरण बड़े खतरे में पड़ जाता है।"

इस कठोर फटकार से राजा क्रोधित हो गया। उसने सोचा, “यह आदमी मुझे अपना दास समझता है, यह भूल जाता है कि मैं एक राजा हूँ। यह जानता है कि प्रधान राजा ने मुझे अपनी पुत्री भेंट करने के लिए भेजा है, और शुभकामनाओं का एक शब्द भी नहीं कहता, बल्कि भविष्यवाणी करता है कि मुझे एक मूर्ख हिरण या काँटे में फँसी मछली या सड़क पर फँसे हिरण की तरह पकड़ा और मार डाला जाएगा!” और तुरंत ही उसने एक श्लोक पढ़ा:

"मैं मूर्ख था, मैं बहरा और गूंगा था, जो आपसे उच्च मामलों पर सलाह लेता था। आप अन्य पुरुषों की तरह बातें कैसे समझ सकते हैं, जब आप हल की पूंछ पकड़कर बड़े हुए हैं?"

इन अपमानजनक शब्दों के साथ, उसने कहा, "यह देहाती आदमी मेरी किस्मत में बाधा डाल रहा है! इसे भगाओ!" और उससे छुटकारा पाने के लिए उसने यह छंद बोला:

"इस आदमी की गर्दन पकड़ो और मेरे राज्य को इससे मुक्त कराओ, जो मुझे रत्न प्राप्त करने से रोकने की बात करता है।"

लेकिन राजा का क्रोध देखकर उसने सोचा, "यदि इस राजा के कहने पर कोई मुझे हाथ या गर्दन से पकड़ ले या मुझे छू ले, तो मैं मृत्यु तक अपमानित हो जाऊँगा; इसलिए मैं स्वयं चला जाऊँगा।" अतः उसने राजा को प्रणाम किया और अपने घर चला गया। राजा ने केवल क्रोध में कहा था, परन्तु बोधिसत्व के आदर में उसने किसी को भी अपने वचन का पालन करने का आदेश नहीं दिया। तब उस महान प्राणी ने सोचा, "यह राजा मूर्ख है, इसे अपने लाभ-हानि का ज्ञान नहीं है। यह प्रेम में डूबा हुआ है; और उस राजकुमारी को पाने के लिए दृढ़ संकल्पित है, यह आने वाले खतरे को नहीं देख रहा; यह अपने विनाश की ओर अग्रसर होगा। मुझे इसके वचनों को अपने मन में नहीं रखना चाहिए। यह मेरा महान सहायक है, और इसने मुझे बहुत सम्मान दिया है। मुझे इस पर विश्वास रखना चाहिए। परन्तु पहले मैं तोते को भेजकर तथ्य पता करूँगा, फिर मैं स्वयं जाऊँगा।" अतः उसने तोते को भेज दिया।

इस बात को समझाते हुए गुरु ने कहा:

फिर वह वेदेह के सामने से निकलकर अपने दूत, चतुर तोते मथारा से बोला, “आओ, मेरे हरे तोते, मेरी एक सेवा करो। पांचाल के राजा के पास एक मैना है जो उनके पलंग की रखवाली करता है; उससे सब कुछ पूछो, क्योंकि वह सब कुछ जानता है, राजा और कोसिया के सारे रहस्य जानता है।” चतुर तोते मथारा ने बात मानी और मैना पक्षी के पास गया। फिर इस चतुर तोते मथारा ने अपने सुंदर पिंजरे में बैठी मधुर आवाज वाली मैना से कहा, “क्या तुम अपने सुंदर पिंजरे में ठीक हो? क्या तुम खुश हो, हे वेस्सा (तोता)? क्या तुम्हें तुम्हारे सुंदर पिंजरे में भुने हुए मक्के दिए जाते हैं?” “मैं ठीक हूँ, महोदय, वास्तव में, मैं खुश हूँ, मुझे भुने हुए मक्के दिए जाते हैं, हे चतुर तोते। आप क्यों आए हैं, महोदय, और आपको क्यों भेजा गया है? मैंने आपको पहले कभी नहीं देखा या आपके बारे में नहीं सुना।”

यह सुनकर उसने सोचा: "अगर मैं कहूँ कि मैं मिथिला से आया हूँ, तो वो कभी मुझ पर विश्वास नहीं करेगी। रास्ते में मैंने शिवी राज्य में अरित्थपुरा नगर देखा; इसलिए मैं एक झूठी कहानी बनाऊँगा कि शिवी राजा ने मुझे यहाँ भेजा है," और उसने कहा--

"मैं राजा सिवी के महल में उनका बटलर था, और वहीं से उस धर्मात्मा राजा ने कैदियों को गुलामी से मुक्त किया।"

तब उस महिला ने उसे सोने के बर्तन में रखे हुए शहद वाले अनाज और शहद का पानी दिया और कहा, "महोदय, आप बहुत दूर से आए हैं: यहाँ क्या आया है?" उसने रहस्य जानने की इच्छा से एक कहानी गढ़ी और कहा,

"एक बार मुझे एक मधुर आवाज वाली मैना चिड़िया से शादी करनी पड़ी, और एक बाज ने मेरी आंखों के सामने उसे मार डाला।"

फिर उसने पूछा, "लेकिन बाज़ ने तुम्हारी पत्नी को कैसे मारा?" उसने उसे यह कहानी सुनाई। "सुनिए, महोदया। एक दिन हमारे राजा ने मुझे जल भोज में आमंत्रित किया। मैं और मेरी पत्नी उनके साथ गए और खूब मौज-मस्ती की। शाम को हम उनके साथ महल लौट आए। अपने पंख सुखाने के लिए, मैं और मेरी पत्नी एक खिड़की से उड़कर एक चोटी पर बैठ गए। उसी क्षण जब हम चोटी से उतर रहे थे, एक बाज़ हम पर झपटा। अपनी जान के डर से मैं तेज़ी से उड़ गया; लेकिन वह भारी थी और तेज़ी से नहीं उड़ सकती थी; इसलिए मेरी आँखों के सामने ही उसने उसे मार डाला और ले गया। राजा ने मुझे उसकी मृत्यु पर रोते हुए देखा और मुझसे कारण पूछा। जो कुछ हुआ था, उसे सुनकर उन्होंने कहा, "बस करो, मित्र, रोना बंद करो, बल्कि दूसरी पत्नी ढूंढो।" मैंने उत्तर दिया, "महाराज, मुझे किसी और दुष्ट और दुष्ट से विवाह करने की क्या आवश्यकता है? अकेले रहना ही बेहतर है।" उन्होंने कहा, "मित्र, मैं तुम्हारी पत्नी के समान एक गुणी पक्षी को जानता हूँ; राजा कुलानी का दरबारी उसी की तरह एक मैना है। जाओ और उसकी इच्छा पूछो, और उसे जवाब देने दो, और अगर वह तुम्हें पसंद करती है तो आकर मुझे बताओ; फिर मैं या मेरी रानी बड़े धूमधाम से जाकर उसे वापस ले आएंगे।" ये शब्द कहकर उसने मुझे भेजा, और इसीलिए मैं आया हूँ।" और उसने कहा:

"उसके प्रति प्रेम से परिपूर्ण होकर मैं तुम्हारे पास आया हूँ: यदि तुम मुझे अनुमति दो तो हम साथ रह सकते हैं।"

ये शब्द सुनकर वह अत्यंत प्रसन्न हुई; लेकिन अपनी भावनाओं को प्रकट किए बिना, उसने अनिच्छा से कहा:

"तोते को तोते से प्रेम करना चाहिए, और मैना को मैना से: तोते और मैना के बीच मिलन कैसे हो सकता है?"

यह सुनकर दूसरे ने सोचा, "वह मुझे अस्वीकार नहीं कर रही है; वह तो बस अपनी बड़ाई कर रही है। वास्तव में वह मुझसे प्यार करती है, इसमें कोई शक नहीं। मैं कुछ दृष्टांत सुनाकर उसे मुझ पर विश्वास दिलाऊंगा।" इसलिए उसने कहा—

"प्रेमी जिससे भी प्रेम करे, चाहे वह नीची जाति की चंदाली ही क्यों न हो, सब एक समान हैं: प्रेम में कोई भिन्नता नहीं होती।"

उन्होंने आगे कहा, "यह कहकर उन्होंने पुरुषों के जन्म में मौजूद अंतरों की सीमा को दर्शाया।"

"शिवि के राजा की माता का नाम जाम्बवती है, और वह वासुदेव कान्हा की प्रिय रानी थीं।"

शिवी की माता, जाम्बवती, चांडाल जाति की थीं और वे कन्हगण वंश के दस बंधुओं में सबसे बड़े वासुदेव की प्रिय रानी थीं। कथा के अनुसार, एक दिन वासुदेव द्वारवाटी (द्वारका) से निकलकर उद्यान में गए; रास्ते में उन्होंने एक अत्यंत सुंदर कन्या को देखा, जो अपने चांडाल गाँव से नगर की ओर किसी कार्य से जा रही थी। उन्हें उस पर प्रेम हो गया और उन्होंने उसका जन्म पूछा; यह जानकर कि वह चांडाल (निम्न जाति) है, वे व्यथित हो गए। यह जानकर कि वह अविवाहित है, वे तुरंत वापस लौट आए और उसे अपने घर ले आए, उसे बहुमूल्य वस्तुओं से सुशोभित किया और उसे अपनी प्रधान रानी बना लिया। जाम्बवती ने शिवी को जन्म दिया, जिसने अपने पिता की मृत्यु के बाद द्वारवाटी (द्वारका) पर शासन किया।

यह उदाहरण देने के बाद उन्होंने आगे कहा, "इस प्रकार उनके जैसा राजकुमार भी चांडाल स्त्री से संबंध बना सकता है; और हम, जो केवल पशु जगत के प्राणी हैं, क्या करें? यदि हम आपस में संबंध बनाना चाहें, तो और कुछ कहने की आवश्यकता नहीं है।" और उन्होंने एक और उदाहरण इस प्रकार दिया:

"राठवती नामक एक परी भी वच्छ से प्रेम करती थी, और वह मनुष्य उस जानवर से प्रेम करता था। प्रेम में कोई भिन्नता नहीं होती।"

"वच्छा उसी नाम के एक तपस्वी थे, और उनकी प्रेम कहानी कुछ इस प्रकार है। पुराने समय में, एक ब्राह्मण, जिसने वासनाओं की बुराई देखी थी, ने अपार धन त्याग कर तपस्वी जीवन व्यतीत किया और हिमवत (हिमालय) में अपने द्वारा बनाई गई पत्तों की कुटिया में रहने लगा। इस कुटिया से कुछ ही दूरी पर एक गुफा में कई परियां और एक मकड़ी रहती थी। यह मकड़ी अपना जाला बुनती थी और इन परियों के सिर फोड़कर उनका खून पीती थी। परियां कमजोर और डरपोक थीं, मकड़ी शक्तिशाली और बहुत जहरीली थी: वे उसका कुछ नहीं कर सकती थीं, इसलिए वे तपस्वी के पास आईं, उन्हें प्रणाम किया और बताया कि कैसे एक मकड़ी उन्हें मार रही है और उन्हें कोई उपाय नहीं दिख रहा है; इसलिए उन्होंने उनसे मकड़ी को मारकर उन्हें बचाने की विनती की। लेकिन तपस्वी ने उन्हें यह कहते हुए भगा दिया, "मुझ जैसे मनुष्य किसी का जीवन नहीं लेते!" इन परियों में से एक, राहवती नाम की अविवाहित स्त्री, उसे अच्छे वस्त्र पहनाकर तपस्वी के पास लाई और कहा, "उसे "आपकी दासी बन जाइए, और हमारे शत्रु को मार डालिए।" जब साधु ने उसे देखा तो उसे उससे प्रेम हो गया, और उसने उसे अपने साथ रख लिया, और गुफा के मुँह पर मकड़ी का इंतज़ार करने लगा, और जब वह भोजन के लिए बाहर आई तो उसने उसे गदा से मार डाला। इस प्रकार वह परी के साथ रहा और उससे पुत्र-पुत्रियों का पिता बना, और फिर उसकी मृत्यु हो गई। इस प्रकार परी ने उससे प्रेम किया।

इस उदाहरण का वर्णन करते हुए तोते ने कहा, "सन्यासी वच्छ, हालांकि एक मनुष्य थे, एक परी के साथ रहते थे, जो पशु जगत से संबंधित थी; हम ऐसा क्यों नहीं कर सकते, जबकि हम दोनों पक्षी हैं?"

जब उसने उसकी बात सुनी तो उसने कहा, "मेरे स्वामी, दिल हमेशा एक जैसा नहीं रहता: मुझे अपने प्रियतम से बिछड़ने का डर है।" लेकिन वह बुद्धिमान और स्त्रियों के आकर्षण से भलीभांति परिचित था, इसलिए उसने इस श्लोक से उसकी परीक्षा ली:

"सचमुच मैं जा रहा हूँ, हे मधुर स्वर वाली मायना। यह एक अस्वीकृति है; निस्संदेह तुम मुझे तुच्छ समझती हो।"

यह सुनकर उसे लगा मानो उसका हृदय टूट जाएगा; लेकिन उसके सामने उसने ऐसा दिखाया मानो वह नवजागृत प्रेम से प्रज्वलित हो रही हो, और डेढ़ श्लोक सुनाए:

"हे बुद्धिमान तोते मथारा, जल्दबाजी करने वालों को भाग्य का आशीर्वाद नहीं मिलता। यहीं ठहरो जब तक तुम राजा को न देख लो, ढोल की आवाज न सुन लो और हमारे राजा की शान-शौकत न देख लो।"

शाम होते ही उन्होंने साथ में आनंद लिया; और वे मित्रता, सुख और आनंद में डूबे रहे। तब तोते ने सोचा, "अब वह मुझसे रहस्य नहीं छिपाएगी; अब मुझे उससे पूछना ही होगा और जाना होगा।--मैना," उसने कहा। "क्या बात है, मेरे स्वामी?" "मैं आपसे कुछ पूछना चाहता हूँ; क्या मैं कहूँ?" "बताइए, मेरे स्वामी।" "कोई बात नहीं, आज त्योहार है; मैं किसी और दिन देख लूँगा।" "यदि यह त्योहार के लिए उपयुक्त है, तो कहिए, यदि नहीं, तो मेरे स्वामी, कुछ मत कहिए।" "हाँ, यह तो त्योहार के दिन के लिए उपयुक्त बात है।" "तो बोलिए।" "यदि आप सुनेंगे, तो मैं बोलूँगा।" फिर उसने डेढ़ छंदों में रहस्य पूछा:

"यह आवाज़ पूरे इलाके में इतनी ज़ोर से सुनाई दी—पांचाल के राजा की पुत्री, तारे के समान तेजस्वी—वह उसे विदेहों को सौंप देगा, और यही उनका विवाह होगा!"

यह सुनकर उसने कहा, "मेरे स्वामी! त्योहार के दिन आपने अत्यंत अशुभ बात कह दी!" "मैं कहता हूँ शुभ, आप कहती हैं अशुभ: इसका क्या अर्थ है?" "मैं आपको नहीं बता सकती, मेरे स्वामी।" "महोदया, जिस क्षण से आप मुझे वह रहस्य बताने से इनकार करती हैं जिसे आप जानती हैं, हमारा सुखद संबंध समाप्त हो जाता है।" उसके द्वारा विनती किए जाने पर उसने उत्तर दिया, "तो, मेरे स्वामी, सुनिए:-"

"हे मथरा, तुम्हारे शत्रुओं का भी वैसा विवाह न हो जैसा पांचाल और विदेह के राजाओं का होने वाला है।"

फिर उसने पूछा, "आप ऐसा क्यों पूछ रही हैं, महोदया?" उसने उत्तर दिया, "अब सुनिए, मैं आपको इसके नुकसान के बारे में बताऊंगी," और उसने एक और छंद दोहराया:

"पांचाल का शक्तिशाली राजा विदेह को अपनी ओर आकर्षित करेगा और फिर उसे मार डालेगा; वह उसकी मित्र नहीं रहेगी।"

तो उसने सारा रहस्य बुद्धिमान तोते को बता दिया; और बुद्धिमान तोते ने यह सुनकर केवट्टा की प्रशंसा की: "यह गुरु तो बुद्धि का धनी है; राजा को मारने की यह योजना अद्भुत है। लेकिन हमारे लिए इतनी बुरी बात क्या है? चुप रहना ही सबसे अच्छा है।" इस प्रकार उसने अपनी यात्रा का फल प्राप्त किया। और उसके साथ रात बिताने के बाद उसने कहा, "देवी, मैं सिवी देश जाऊंगा और राजा को बताऊंगा कि मुझे एक प्यारी पत्नी कैसे मिली"; और उसने इन शब्दों के साथ विदा ली:

"अब मुझे केवल सात रातों के लिए छुट्टी दीजिए, ताकि मैं सिवी के शक्तिशाली राजा को बता सकूँ कि मुझे एक मयनाह के साथ रहने की जगह कैसे मिली है।"

इस कारण, हालांकि वह उससे अलग होने को तैयार नहीं थी, फिर भी इनकार करने में असमर्थ होकर, उस महिला ने अगली पंक्ति का पाठ किया:

"अब मैं तुम्हें सात रातों के लिए छुट्टी देता हूँ; यदि सात रातों के बाद तुम मेरे पास नहीं लौटे, तो मैं स्वयं को कब्र में जाते हुए देखूँगा; जब तुम लौटोगे तब तक मैं मर चुका होऊँगा।"

दूसरे ने कहा, "हे देवी, ये आप क्या कह रही हैं! अगर सात दिन बाद भी मैं आपसे न मिलूँ, तो मैं कैसे जी पाऊँगा?" उसने ये बात अपने मुँह से तो कह दी, लेकिन मन ही मन सोचा, "जीऊँ या मरूँ, मुझे तुम्हारी क्या परवाह?" वह उठा और थोड़ी दूर शिवी देश की ओर उड़ने के बाद, मुड़कर मिथिला चला गया। फिर जब उस महान आत्मा ने उसे ऊपरी मंजिल पर ले जाकर उससे उसका हालचाल पूछा, तो वह उसके कंधे पर उतर गया और उसे सब कुछ बता दिया। दूसरे ने पहले की तरह ही उसका पूरा सम्मान किया।

गुरु ने इसे इस प्रकार समझाया:

और फिर बुद्धिमान तोते मथारा ने महोसाधा से कहा: "यह मयना की कहानी है।"

यह सुनकर उस महान प्राणी ने सोचा: "राजा जाएगा, मैं जाऊँगा या नहीं, और यदि वह गया तो उसका पूर्ण विनाश होगा। और यदि मैं उस राजा के प्रति द्वेष रखकर, जिसने मुझे इतना धन दिया, उसका भला न करूँ, तो मैं अपमानित होऊँगा। जब मुझ जैसा बुद्धिमान व्यक्ति मौजूद है, तो वह क्यों नष्ट हो? मैं राजा के सामने जाऊँगा और चुलानी से मिलूँगा; और मैं सब कुछ ठीक से व्यवस्थित करूँगा, और राजा वेदेह के निवास के लिए एक नगर बनवाऊँगा, और एक मील लंबा एक संकरा मार्ग, और आधा मील (4.23 किमी) लंबी एक विशाल सुरंग बनवाऊँगा; और मैं राजा चुलानी की पुत्री को नियुक्त करूँगा और उसे राजा की दासी बनाऊँगा; और जब हमारा नगर एक सौ एक राजाओं और उनकी एक लाख अठारह हजार की सेना से घिरा होगा, तब भी मैं अपने राजा को, जैसे चंद्रमा को राहु के चंगुल से बचाया जाता है, बचाऊँगा और उसे घर वापस लाऊँगा। उसकी वापसी मेरे हाथों में है।" जब उसने ऐसा सोचा, तो उसके शरीर में आनंद की लहर दौड़ गई, और इस आनंद के बल पर उसने यह इच्छा व्यक्त की:

"मनुष्य को हमेशा उसी के हित के लिए काम करना चाहिए जिसके घर में उसका पेट भरता है।"

इस प्रकार स्नान और अभिषेक करके वह बड़े ठाठ-बाठ से महल में गया और राजा को प्रणाम करके एक तरफ खड़ा हो गया। राजा ने पूछा, "महाराज, क्या आप उत्तरापंचल नगर जा रहे हैं?" राजा ने कहा, "जी हां, मेरे पुत्र; यदि मैं पंचलचंडी को प्राप्त नहीं कर सकता, तो मेरा राज्य मेरे लिए क्या है? मुझे मत छोड़ो, मेरे साथ चलो। वहां जाने से मुझे दो लाभ होंगे: मैं सबसे प्रिय स्त्री को प्राप्त करूंगा और राजा से मित्रता स्थापित करूंगा।" तब उस ज्ञानी व्यक्ति ने कहा, "ठीक है, महाराज, मैं आगे जाकर आपके लिए जीविका का प्रबंध करूंगा; जब मैं संदेश भेजूं तो आप आ जाना।" यह कहकर उसने दो श्लोक दोहराए:

"हे मनुष्यों के स्वामी, मैं सर्वप्रथम पांचाल के राजा के सुंदर नगर में जाकर, प्रतापी वेदेह के लिए आवास का निर्माण करूंगा। जब मैं प्रतापी वेदेह के लिए आवास का निर्माण कर लूँ, तो हे पराक्रमी योद्धा, मेरे संदेश भेजने पर अवश्य आना।"

यह सुनकर राजा प्रसन्न हुए कि उनका पुत्र उनका साथ नहीं छोड़ेगा, और बोले, "मेरे पुत्र, यदि तुम आगे जाओगे तो क्या चाहोगे?" "महाराज।" "जितने चाहो ले लो, मेरे पुत्र।" पुत्र ने आगे कहा, "महाराज, चारों कारागार खुलवा दीजिए, और डाकुओं को बांधने वाली जंजीरें तोड़ दीजिए, और इन्हें भी मेरे साथ भेज दीजिए।" "जैसा आप चाहें, मेरे पुत्र," उन्होंने उत्तर दिया। उस महान सत्ता ने कारागार खुलवाए, और ऐसे वीर योद्धाओं को प्रकट किया जो जहाँ कहीं भी भेजे जाने पर अपना कर्तव्य निभाने में सक्षम थे, और उनसे अपनी सेवा करने का अनुरोध किया; उन्होंने उन पर विशेष कृपा दिखाई, और अपने साथ अठारह टुकड़ियाँ ले गए, जिनमें राजमिस्त्री, लोहार, बढ़ई, चित्रकार, सभी कलाओं और शिल्पों में कुशल पुरुष, उनके तेज धार वाले कुल्हाड़े, फावड़े, कुदाल और कई अन्य औजार शामिल थे। इस प्रकार वह एक विशाल सेना के साथ शहर से बाहर निकल पड़े।

गुरु ने इसे इस श्लोक के माध्यम से समझाया:

"महोसाधा पांचाल के राजा के बड़े नगर की ओर आगे बढ़े, ताकि वेदेह के लिए आवास का निर्माण कर सकें।"

अपने मार्ग में, उस महान सत्ता ने प्रत्येक मील (4.23 किमी) के छोर पर एक गाँव बसाया और प्रत्येक गाँव का प्रभार एक दरबारी को सौंपते हुए ये निर्देश दिए: "राजा के पंचाल-चंडी के साथ लौटने पर, उनके शत्रुओं को रोकने और उन्हें शीघ्रता से मिथिला पहुँचाने के लिए हाथी, घोड़े और रथ तैयार रखें।" गंगा के तट पर पहुँचकर, उन्होंने आनंदकुमार को बुलाया और उनसे कहा, "आनंद, तीन सौ कारीगरों को लेकर ऊपरी गंगा जाओ, उत्तम लकड़ी प्राप्त करो, तीन सौ जहाज़ बनवाओ, उनसे नगर के लिए लकड़ी का भंडार कटवाओ, जहाज़ों को हल्की लकड़ी से भर दो और शीघ्र लौट आओ।" स्वयं एक जहाज़ में गंगा पार करके, उन्होंने अपने उतरने के स्थान से दूरियों को नापते हुए सोचा—"यह आधा मील (4.23 किमी) है, यहाँ बड़ी सुरंग होगी: इस स्थान पर हमारे राजा के रहने के लिए नगर होगा; इस स्थान से महल तक, एक मील लंबा, छोटा मार्ग होगा।" इस प्रकार उन्होंने स्थान निर्धारित किया; और फिर शहर में प्रवेश किया।

जब राजा कुलानी ने बोधिसत्व के आने की खबर सुनी, तो वे अत्यंत प्रसन्न हुए; क्योंकि उन्होंने सोचा, "अब मेरी मनोकामना पूरी होगी; अब जब वे आ गए हैं, तो वेदेह के आने में देर नहीं लगेगी: तब मैं उन दोनों को मार डालूंगा और पूरे भारत में एक राज्य स्थापित करूंगा।" सारा नगर उत्साह से भर गया: "लोग कहते हैं, ये वही बुद्धिमान महोषद हैं, जिन्होंने एक सौ एक राजाओं को कौवे की तरह पत्थर से डराकर भगा दिया!" महान पुरुष महल के द्वार की ओर बढ़े, जबकि नगरवासी उनकी सुंदरता को निहार रहे थे; फिर रथ से उतरकर उन्होंने राजा को संदेश भेजा। राजा ने कहा, "उन्हें आने दीजिए"; और वे अंदर आए, राजा को प्रणाम किया और एक तरफ बैठ गए। तब राजा ने उनसे विनम्रतापूर्वक पूछा, "मेरे पुत्र, राजा कब आएंगे?" "जब मैं उन्हें बुलवाऊंगा, महाराज।" "लेकिन फिर आप क्यों आए हैं?" "हमारे राजा के लिए एक निवास स्थान बनवाने, महाराज।" "अच्छा, मेरे पुत्र।" उन्होंने अंगरक्षकों के लिए भत्ता दिया, और महामहिम के प्रति सम्मान का भाव समझाया, उन्हें एक घर आवंटित किया और कहा: "मेरे पुत्र, जब तक तुम्हारा राजा न आ जाए, यहीं रहो, और आलसी मत बनो, बल्कि जो करना चाहिए वह करो।" लेकिन जैसे ही वह महल में दाखिल हुए, वे सीढ़ियों के नीचे खड़े होकर सोचने लगे, "यहाँ छोटी सुरंग का द्वार होना चाहिए"; और फिर उनके मन में यह बात आई, "राजा ने मुझे उनके लिए वह सब कुछ करने को कहा है जो करना आवश्यक है; मुझे ध्यान रखना होगा कि सुरंग खोदते समय यह सीढ़ी गिर न जाए।" इसलिए उन्होंने राजा से कहा, "महाराज, जैसे ही मैं अंदर आया, सीढ़ियों के नीचे खड़े होकर और नए काम को देखते हुए, मैंने बड़ी सीढ़ी में एक खामी देखी। यदि आपको अनुमति हो, तो मुझे बता दीजिए और मैं इसे ठीक कर दूंगा।" "अच्छा, मेरे पुत्र, ऐसा ही करो।" उन्होंने उस स्थान का ध्यानपूर्वक निरीक्षण किया, और निर्धारित किया कि सुरंग का निकास कहाँ होना चाहिए; फिर उसने सीढ़ी हटा दी, और मिट्टी को उस जगह गिरने से रोकने के लिए, उसने लकड़ी का एक चबूतरा बनाया, और इस तरह सीढ़ी को मजबूती से टिका दिया ताकि वह गिर न जाए। राजा ने अनजाने में ही इसे अपने प्रति सद्‌भावना से किया गया कार्य समझा। दूसरे ने वह दिन मरम्मत की देखरेख में बिताया, और अगले दिन उसने राजा से कहा, "महाराज, यदि मुझे पता चल जाए कि हमारे राजा कहाँ रहेंगे, तो मैं सब कुछ ठीक कर सकता हूँ और उसकी देखभाल कर सकता हूँ।" "बहुत अच्छा, बुद्धिमान महाराज: मेरे महल को छोड़कर, शहर में जहाँ चाहें उनके रहने के लिए जगह चुन लें।" "महाराज, हम अजनबी हैं, आपके कई चहेते हैं: यदि हम उनके घरों पर कब्जा कर लें, तो आपके सैनिक हमसे झगड़ा करेंगे। हम क्या करें?" "महाराज, उनकी बात न सुनें, बल्कि वह जगह चुनें जो आपको पसंद हो।" "महाराज, वे बार-बार शिकायतें लेकर आपके पास आएंगे, और यह आपको अच्छा नहीं लगेगा; लेकिन यदि आप चाहें, तो हमारे आदमियों को तब तक पहरा देने दें जब तक हम घरों पर कब्ज़ा न कर लें, और वे दरवाज़े से अंदर नहीं आ पाएंगे, बल्कि वापस चले जाएंगे। इस प्रकार आप और हम दोनों संतुष्ट रहेंगे।" राजा मान गए।उस महान सत्ता ने सीढ़ियों के ऊपर और नीचे, मुख्य द्वार पर, हर जगह अपने पहरेदार तैनात कर दिए और आदेश दिया कि कोई भी वहाँ से न गुज़रे। फिर उसने अपने आदमियों को महारानी माँ के घर जाने और उसे गिराने का नाटक करने का आदेश दिया। जब उन्होंने द्वारों और दीवारों से ईंटें और मिट्टी गिराना शुरू किया, तो महारानी माँ को खबर मिली और उन्होंने पूछा, "तुम लोग मेरा घर क्यों तोड़ रहे हो?" "ऋषि महोषधा इसे गिराकर अपने राजा के लिए एक महल बनाना चाहते हैं।" "अगर ऐसा है, तो तुम यहाँ रह सकती हो।" "हमारे राजा के सेवकों का दल बहुत बड़ा है; यह जगह ठीक नहीं है, और हम उनके लिए एक बड़ा घर बनाएंगे।" "तुम मुझे नहीं जानते: मैं महारानी माँ हूँ, और अब मैं अपने बेटे के पास जाकर इस बारे में देखूंगी।" "हम राजा के आदेश पर काम कर रहे हैं; अगर रोक सकते हो तो रोक लो!" वह क्रोधित हो गईं और बोलीं, "अब मैं देखूंगी कि तुम्हारे साथ क्या किया जाता है," और महल के द्वार की ओर चल पड़ीं; लेकिन उन्होंने उसे अंदर नहीं जाने दिया। "भाइयों, मैं राजा की माता हूँ!" "ओह, हम आपको जानते हैं; लेकिन राजा ने हमें किसी को भी अंदर न आने देने का आदेश दिया है। चले जाओ!" वह महल में प्रवेश नहीं कर सकी और अपने घर को देखती रही। तभी एक आदमी ने कहा, "तुम यहाँ क्या कर रही हो? यहाँ से चली जाओ!" उसने उसका गला पकड़कर उसे ज़मीन पर पटक दिया। उसने सोचा, "यह सचमुच राजा का आदेश होगा, अन्यथा वे ऐसा नहीं कर पाते: मैं ऋषि से मिलने जाऊँगी।" उसने उससे पूछा, "पुत्र महोसाधा, तुम मेरा घर क्यों गिरा रहे हो?" लेकिन उसने उससे कुछ नहीं कहा। तभी एक राहगीर ने कहा, "आपने क्या कहा, महोदया?" "मेरे पुत्र, ऋषि मेरा घर क्यों गिरा रहे हैं?" "राजा वेदेह के लिए एक घर बनाने के लिए।" "क्यों, मेरे पुत्र! इस पूरे शहर में क्या उन्हें रहने के लिए कोई और जगह नहीं मिल सकती? यह रिश्वत लो, एक लाख सिक्के, और उन्हें कहीं और घर बनाने दो।" "बहुत अच्छा, महोदया, हम

आपके घर को अकेला छोड़ देंगे; लेकिन किसी को मत बताना कि आपने यह रिश्वत दी है, कहीं ऐसा न हो कि कोई और अपने घरों को बख्शने के लिए हमें रिश्वत देने की कोशिश करे।" "मेरे बेटे! अगर किसी को पता चल गया कि महारानी को रिश्वत देने की ज़रूरत पड़ी, तो शर्म मेरी होगी! मैं किसी को नहीं बताऊंगी।" उस आदमी ने बात मान ली और एक लाख सिक्के लेकर उस घर से चला गया। फिर वह केवट्टा के घर गया; केवट्टा महल के द्वार पर गया और बाँस की लाठियों से अपनी पीठ छिलवाई, लेकिन अंदर न जा पाने पर उसने भी एक लाख सिक्के दे दिए। इस तरह, शहर के सभी हिस्सों में घरों पर कब्ज़ा करके और रिश्वतें लेकर, उन्होंने नौ करोड़ (10 मिलियन) सोने के सिक्के प्राप्त किए।"तुम मेरा घर क्यों तोड़ रहे हो?" "ऋषि महोषधा इसे गिराकर अपने राजा के लिए एक महल बनाना चाहते हैं।" "अगर ऐसा है, तो तुम यहीं रह सकती हो।" "हमारे राजा के सेवकों का दल बहुत बड़ा है; यह जगह ठीक नहीं है, हम उनके लिए एक बड़ा घर बनाएंगे।" "तुम मुझे नहीं जानते: मैं महारानी माँ हूँ, और अब मैं अपने बेटे के पास जाकर इस बारे में बात करूंगी।" "हम राजा के आदेश पर काम कर रहे हैं; अगर रोक सकते हो तो रोको!" वह क्रोधित हो गई और बोली, "अब मैं देखूंगी कि तुम्हारे साथ क्या किया जाए," और महल के द्वार की ओर बढ़ी; लेकिन उन्होंने उसे अंदर नहीं जाने दिया। "भाइयों, मैं राजा की माँ हूँ!" "ओह, हम तुम्हें जानते हैं; लेकिन राजा ने हमें किसी को भी अंदर न आने देने का आदेश दिया है। चले जाओ!" वह महल में प्रवेश नहीं कर पाई और अपने घर को देखती रही। तभी एक आदमी ने कहा, "तुम यहाँ क्या कर रही हो?" "यहाँ से जाओ!" उसने उसका गला पकड़कर उसे ज़मीन पर पटक दिया। उसने सोचा, "सचमुच यह राजा का आदेश होगा, वरना वे ऐसा नहीं कर पाते: मैं ऋषि से मिलने जाऊंगी।" उसने उससे पूछा, "पुत्र महोसाधा, तुम मेरा घर क्यों गिरा रहे हो?" लेकिन उसने उससे कुछ नहीं कहा। तभी एक राहगीर ने कहा, "क्या कहा, महोदया?" "मेरे पुत्र, ऋषि मेरा घर क्यों गिरा रहे हैं?" "राजा वेदेह के लिए एक घर बनाने के लिए।" "अरे, मेरे पुत्र! इस पूरे शहर में क्या उन्हें रहने के लिए कोई और जगह नहीं मिल रही? यह रिश्वत लो, एक लाख सिक्के, और उन्हें कहीं और घर बनाने दो।" "ठीक है, महोदया, हम आपके घर को छोड़ देंगे; लेकिन किसी को मत बताना कि आपने यह रिश्वत दी है, कहीं और भी अपने घर बख्शने के लिए हमें रिश्वत न दें।" "मेरे पुत्र! अगर यह बात फैल गई कि महारानी को रिश्वत देने की ज़रूरत पड़ी, तो शर्म मेरी होगी!" मैं किसी को नहीं बताऊंगा।" उस व्यक्ति ने सहमति जताई और एक लाख सिक्के लेकर उस घर से चला गया। फिर वह केवट्टा के घर गया; केवट्टा महल के द्वार पर गया और बाँस की लाठियों से अपनी पीठ छिलवाई, लेकिन प्रवेश न मिलने पर उसने भी एक लाख सिक्के दे दिए। इस प्रकार, शहर के सभी हिस्सों में घरों पर कब्जा करके और रिश्वत लेकर, उन्होंने नौ करोड़ (10 मिलियन) सोने के सिक्के प्राप्त किए।"तुम मेरा घर क्यों तोड़ रहे हो?" "ऋषि महोषधा इसे गिराकर अपने राजा के लिए एक महल बनाना चाहते हैं।" "अगर ऐसा है, तो तुम यहीं रह सकती हो।" "हमारे राजा के सेवकों का दल बहुत बड़ा है; यह जगह ठीक नहीं है, हम उनके लिए एक बड़ा घर बनाएंगे।" "तुम मुझे नहीं जानते: मैं महारानी माँ हूँ, और अब मैं अपने बेटे के पास जाकर इस बारे में बात करूंगी।" "हम राजा के आदेश पर काम कर रहे हैं; अगर रोक सकते हो तो रोको!" वह क्रोधित हो गई और बोली, "अब मैं देखूंगी कि तुम्हारे साथ क्या किया जाए," और महल के द्वार की ओर बढ़ी; लेकिन उन्होंने उसे अंदर नहीं जाने दिया। "भाइयों, मैं राजा की माँ हूँ!" "ओह, हम तुम्हें जानते हैं; लेकिन राजा ने हमें किसी को भी अंदर न आने देने का आदेश दिया है। चले जाओ!" वह महल में प्रवेश नहीं कर पाई और अपने घर को देखती रही। तभी एक आदमी ने कहा, "तुम यहाँ क्या कर रही हो?" "यहाँ से जाओ!" उसने उसका गला पकड़कर उसे ज़मीन पर पटक दिया। उसने सोचा, "सचमुच यह राजा का आदेश होगा, वरना वे ऐसा नहीं कर पाते: मैं ऋषि से मिलने जाऊंगी।" उसने उससे पूछा, "पुत्र महोसाधा, तुम मेरा घर क्यों गिरा रहे हो?" लेकिन उसने उससे कुछ नहीं कहा। तभी एक राहगीर ने कहा, "क्या कहा, महोदया?" "मेरे पुत्र, ऋषि मेरा घर क्यों गिरा रहे हैं?" "राजा वेदेह के लिए एक घर बनाने के लिए।" "अरे, मेरे पुत्र! इस पूरे शहर में क्या उन्हें रहने के लिए कोई और जगह नहीं मिल रही? यह रिश्वत लो, एक लाख सिक्के, और उन्हें कहीं और घर बनाने दो।" "ठीक है, महोदया, हम आपके घर को छोड़ देंगे; लेकिन किसी को मत बताना कि आपने यह रिश्वत दी है, कहीं और भी अपने घर बख्शने के लिए हमें रिश्वत न दें।" "मेरे पुत्र! अगर यह बात फैल गई कि महारानी को रिश्वत देने की ज़रूरत पड़ी, तो शर्म मेरी होगी!" मैं किसी को नहीं बताऊंगा।" उस व्यक्ति ने सहमति जताई और एक लाख सिक्के लेकर उस घर से चला गया। फिर वह केवट्टा के घर गया; केवट्टा महल के द्वार पर गया और बाँस की लाठियों से अपनी पीठ छिलवाई, लेकिन प्रवेश न मिलने पर उसने भी एक लाख सिक्के दे दिए। इस प्रकार, शहर के सभी हिस्सों में घरों पर कब्जा करके और रिश्वत लेकर, उन्होंने नौ करोड़ (10 मिलियन) सोने के सिक्के प्राप्त किए।हम आपको जानते हैं; लेकिन राजा ने हमें किसी को भी अंदर आने देने का आदेश नहीं दिया है। चले जाओ!" वह महल में प्रवेश नहीं कर सकी और अपने घर को देखती रही। तभी एक आदमी ने कहा, "तुम यहाँ क्या कर रही हो? यहाँ से चली जाओ!" उसने उसका गला पकड़कर उसे ज़मीन पर पटक दिया। उसने सोचा, "यह सचमुच राजा का आदेश होगा, नहीं तो वे ऐसा नहीं कर पाते: मैं ऋषि से मिलने जाऊंगी।" उसने उससे पूछा, "पुत्र महोसाधा, तुम मेरा घर क्यों गिरा रहे हो?" लेकिन वह उससे बात नहीं किया। तभी एक राहगीर ने कहा, "क्या कहा आपने, महोदया?" "मेरे पुत्र, ऋषि मेरा घर क्यों गिरा रहे हैं?" "राजा वेदेह के लिए एक घर बनाने के लिए।" "क्यों, मेरे पुत्र! इस पूरे शहर में क्या उन्हें रहने के लिए कोई और जगह नहीं मिल रही? यह रिश्वत लो, एक लाख सिक्के, और उन्हें कहीं और घर बनाने दो।" "ठीक है, महोदया, हम आपके घर को छोड़ देंगे; लेकिन किसी को मत बताना कि तुमने यह रिश्वत दी है, कहीं ऐसा न हो कि कोई और अपने घर बख्शने के लिए हमें रिश्वत देने की कोशिश करे। "मेरे बेटे! अगर किसी को पता चल गया कि महारानी को रिश्वत देनी पड़ी, तो शर्म मेरी होगी! मैं किसी को नहीं बताऊंगा।" उस आदमी ने बात मान ली और एक लाख सिक्के लेकर उस घर से निकल गया। फिर वह केवट्टा के घर गया; केवट्टा महल के द्वार पर गया और बाँस की लाठियों से अपनी पीठ छिलवाई, लेकिन अंदर न जा पाने पर उसने भी एक लाख सिक्के दे दिए। इस तरह, शहर के हर हिस्से में घरों पर कब्ज़ा करके और रिश्वतें लेकर उन्होंने नौ करोड़ (10 मिलियन) सोने

के सिक्के जमा कर लिए।हम आपको जानते हैं; लेकिन राजा ने हमें किसी को भी अंदर आने देने का आदेश नहीं दिया है। चले जाओ!" वह महल में प्रवेश नहीं कर सकी और अपने घर को देखती रही। तभी एक आदमी ने कहा, "तुम यहाँ क्या कर रही हो? यहाँ से चली जाओ!" उसने उसका गला पकड़कर उसे ज़मीन पर पटक दिया। उसने सोचा, "यह सचमुच राजा का आदेश होगा, नहीं तो वे ऐसा नहीं कर पाते: मैं ऋषि से मिलने जाऊंगी।" उसने उससे पूछा, "पुत्र महोसाधा, तुम मेरा घर क्यों गिरा रहे हो?" लेकिन वह उससे बात नहीं किया। तभी एक राहगीर ने कहा, "क्या कहा आपने, महोदया?" "मेरे पुत्र, ऋषि मेरा घर क्यों गिरा रहे हैं?" "राजा वेदेह के लिए एक घर बनाने के लिए।" "क्यों, मेरे पुत्र! इस पूरे शहर में क्या उन्हें रहने के लिए कोई और जगह नहीं मिल रही? यह रिश्वत लो, एक लाख सिक्के, और उन्हें कहीं और घर बनाने दो।" "ठीक है, महोदया, हम आपके घर को छोड़ देंगे; लेकिन किसी को मत बताना कि तुमने यह रिश्वत दी है, कहीं ऐसा न हो कि कोई और अपने घर बख्शने के लिए हमें रिश्वत देने की कोशिश करे। "मेरे बेटे! अगर किसी को पता चल गया कि महारानी को रिश्वत देनी पड़ी, तो शर्म मेरी होगी! मैं किसी को नहीं बताऊंगा।" उस आदमी ने बात मान ली और एक लाख सिक्के लेकर उस घर से निकल गया। फिर वह केवट्टा के घर गया; केवट्टा महल के द्वार पर गया और बाँस की लाठियों से अपनी पीठ छिलवाई, लेकिन अंदर न जा पाने पर उसने भी एक लाख सिक्के दे दिए। इस तरह, शहर के हर हिस्से में घरों पर कब्ज़ा करके और रिश्वतें लेकर उन्होंने नौ करोड़ (10 मिलियन) सोने के सिक्के जमा कर लिए।और रिश्वत लेकर उन्होंने नौ करोड़ (10 मिलियन) सोने के सिक्के प्राप्त किए।और रिश्वत लेकर उन्होंने नौ करोड़ (10 मिलियन) सोने के सिक्के प्राप्त किए।

इसके बाद वह महान पुरुष पूरे शहर में घूमे और महल लौट आए। राजा ने उनसे पूछा कि क्या उन्हें कोई जगह मिली? उन्होंने कहा, "महाराज, सब देने को तैयार हैं; लेकिन जैसे ही हम उस पर कब्ज़ा करते हैं, वे दुखी हो जाते हैं। हम किसी भी तरह की अप्रियता का कारण नहीं बनना चाहते। शहर के बाहर, लगभग एक मील दूर, शहर और गंगा के बीच एक जगह है जहाँ हम अपने राजा के लिए महल बना सकते हैं।" यह सुनकर राजा प्रसन्न हुए; क्योंकि उन्होंने सोचा, "शहर के अंदर लोगों से लड़ना खतरनाक है, वहाँ मित्र और शत्रु में अंतर करना असंभव है; लेकिन शहर के बाहर लड़ना आसान है, इसलिए शहर के बाहर ही मैं उन्हें मार डालूँगा।" फिर उन्होंने कहा, "अच्छा, मेरे पुत्र, तुमने जो जगह देखी है, वहीं महल बनाओ।" राजा ने कहा, "हम बनाएंगे, महाराज। लेकिन आपके लोग लकड़ी, जड़ी-बूटियाँ या ऐसी ही अन्य चीजों की तलाश में उस जगह पर न आएं जहाँ हम महल बना रहे हैं; यदि वे ऐसा करते हैं, तो निश्चित रूप से झगड़ा होगा, और यह हम दोनों में से किसी को भी अच्छा नहीं लगेगा।" "बहुत अच्छा, मेरे पुत्र, उस तरफ़ सभी का प्रवेश वर्जित कर दो।" "महाराज, हमारे हाथी पानी में खेलना पसंद करते हैं; यदि पानी गंदा हो जाए, और लोग शिकायत करें कि महोषधा के आने के बाद से हमें पीने के लिए साफ़ पानी नहीं मिल रहा है, तो आपको इसे सहन करना होगा।" राजा ने उत्तर दिया, "हाथियों को खेलने दो।" फिर उसने ढोल बजाकर घोषणा की: "जो कोई भी यहाँ से उस स्थान पर जाएगा जहाँ ऋषि महोषधा भवन बना रहे हैं, उस पर एक हज़ार सिक्कों का जुर्माना लगाया जाएगा।"

तब उस महान व्यक्ति ने राजा से विदा ली और अपने सेवकों के साथ नगर से बाहर निकलकर उस स्थान पर नगर निर्माण शुरू किया जिसे अलग रखा गया था। गंगा के दूसरी ओर उन्होंने गग्गली नामक एक गाँव बसाया; वहाँ उन्होंने अपने हाथियों, घोड़ों, रथों, गायों और बैलों को ठहराया। वे नगर निर्माण में जुट गए और प्रत्येक को उसका कार्य सौंप दिया। सभी कार्यों का वितरण करने के बाद, उन्होंने एक विशाल सुरंग का निर्माण शुरू किया; जिसका मुहाना गंगा के तट पर था। साठ हज़ार योद्धा उस विशाल सुरंग की खुदाई कर रहे थे: वे चमड़े के बोरों में मिट्टी भरकर नदी में डालते थे, और जब भी मिट्टी डाली जाती थी, हाथी उसे पैरों तले रौंद देते थे, जिससे गंगा का पानी मटमैला हो जाता था। नगरवासियों ने शिकायत की कि महोषध के आने के बाद से उन्हें पीने के लिए स्वच्छ जल नहीं मिल रहा है; नदी का पानी मटमैला हो गया है, और अब क्या किया जाए? तब उस ज्ञानी व्यक्ति के जासूसों ने उन्हें बताया कि महोषध के हाथी पानी में खेल रहे थे और कीचड़ को हिला रहे थे, जिसके कारण नदी का पानी मटमैला हो गया था। बोधिसत्वों की इच्छाएँ सदा पूर्ण होती हैं; इसलिए सुरंग में सभी जड़ें और पत्थर धरती में समा गए। छोटी सुरंग का प्रवेश द्वार उसी शहर में था; सात सौ आदमी छोटी सुरंग खोद रहे थे; वे चमड़े के बोरों में मिट्टी भरकर शहर में डालते थे, और हर बार मिट्टी डालने के बाद उसे पानी में मिलाकर दीवार बनाते थे और उसका उपयोग अन्य कार्यों में करते थे। बड़ी सुरंग का प्रवेश द्वार शहर में था: इसमें अठारह हाथ ऊँचा एक द्वार लगा था, जिसमें मशीनरी लगी थी, जिससे एक कील दबाने पर सभी बंद हो जाते थे। सुरंग के दोनों ओर ईंटें बनी थीं और प्लास्टर किया गया था; छत तख्तों से ढकी थी और सीमेंट से लेप करके सफेदी की गई थी। कुल मिलाकर अस्सी बड़े द्वार और चौंसठ छोटे द्वार थे, जो एक कील दबाने पर बंद और खुल जाते थे। दोनों ओर सैकड़ों दीपक-कोठर लगे थे, जिनमें मशीनरी लगी थी, जिससे एक को खोलने पर सभी खुल जाते थे, और एक को बंद करने पर सभी बंद हो जाते थे। दोनों ओर एक सौ एक योद्धाओं के लिए एक सौ एक कक्ष थे: प्रत्येक में विभिन्न रंगों का पलंग बिछा था, प्रत्येक में सफेद छायादार एक विशाल पलंग था, प्रत्येक में विशाल पलंग के पास एक सिंहासन था, प्रत्येक में एक अत्यंत सुंदर स्त्री की मूर्ति थी - उन्हें छुए बिना कोई यह नहीं बता सकता था कि वे मनुष्य नहीं हैं। इसके अलावा, दोनों ओर की सुरंग में, कुशल चित्रकारों ने सभी प्रकार के चित्र बनाए थे: इंद्र की महिमा, शिनेरु पर्वत के क्षेत्र, समुद्र और महासागर, चारों महाद्वीप, हिमवत (हिमालय), अनोत्तट्टा झील, लाल रंग का पर्वत, सूर्य और चंद्रमा, चार महान राजाओं का स्वर्ग, इंद्रियों के छह स्वर्ग और उनके विभाजन - ये सभी सुरंग में दिखाई देते थे। फर्श चांदी की थाली के समान सफेद रेत से ढका था, और छत पर खिले हुए कमल थे। दोनों ओर सभी

प्रकार के मंडप थे; जगह-जगह फूलों और सुगंधित कलियों की मालाएँ लटकी हुई थीं।इस प्रकार उन्होंने सुरंग को तब तक सजाया जब तक वह सुधम्म के दिव्य हॉल की तरह नहीं दिखने लगी।

अब उन तीन सौ कारीगरों ने तीन सौ जहाज़ बनाकर उनमें पहले से तैयार सामान लाद दिया और उन्हें नीचे लाकर ऋषि को बताया। ऋषि ने उन जहाज़ों को नगर में इस्तेमाल किया और उन्हें गुप्त स्थान पर रख दिया ताकि वे ऋषि के आदेश पर उन्हें बाहर निकाल सकें। नगर में जल-खाई, दीवार, द्वार और मीनार, राजकुमार और प्रजा के आवास, हाथी-बस्ती, तालाब, सब कुछ बनकर तैयार हो गया। इस प्रकार बड़ी सुरंग और छोटी सुरंग, और सारा नगर, चार महीनों में बनकर तैयार हो गया। चार महीने पूरे होने पर, ऋषि ने राजा को अपने पास आने के लिए एक दूत भेजा।

जब राजा ने यह संदेश सुना, तो वह प्रसन्न हुआ और एक बड़े दल के साथ रवाना हुआ।

गुरु ने कहा:

"तब राजा ने चार भागों में विभाजित सेना के साथ असंख्य रथों वाले समृद्ध नगर कामपिलिया की यात्रा के लिए प्रस्थान किया।"

उचित समय पर वह गंगा नदी पर पहुँच गया। तब उस महान शक्ति ने उसका स्वागत करने के लिए प्रस्थान किया और उसे अपने द्वारा निर्मित नगर में ले गए। राजा ने महल में प्रवेश किया, भव्य भोजन किया और थोड़ी देर विश्राम करने के बाद शाम को राजा कुलानी को अपने आगमन की सूचना देने के लिए एक दूत भेजा।

इस बात को समझाते हुए गुरु ने कहा:

"तब उसने वहाँ पहुँचकर ब्रह्मदत्त को संदेश भेजा: 'हे महामहिम, मैं आपके चरणों को प्रणाम करने आया हूँ। कृपया मुझे उस सुंदर, कृपालु स्त्री से विवाह करने का वरदान दें, जो अपनी दासियों से परिपूर्ण है।'"

कुलानी यह संदेश सुनकर बहुत प्रसन्न हुआ और सोचने लगा, "अब मेरा शत्रु कहाँ जाएगा? मैं उन दोनों के सिर फोड़ दूँगा और विजय का प्याला पी लूँगा!" लेकिन उसने दूत को केवल अपनी प्रसन्नता का ही वर्णन किया और उसका आदर करते हुए निम्नलिखित श्लोक सुनाया:

"स्वागत है वेदेह, आपका आगमन शुभ हो! शुभ मुहूर्त का पता लगाइए, और मैं आपको अपनी सुंदर पुत्री, अपनी दासियों के साथ, प्रदान करूँगी।"

दूत वापस वेदेह के पास गया और बोला, “महाराज कहते हैं: “इस शुभ अवसर के लिए उपयुक्त समय का पता लगाइए, और मैं आपको अपनी पुत्री दे दूंगा।” वेदेह ने उस व्यक्ति को यह कहकर वापस भेज दिया, “आज का दिन ही शुभ समय है!”

गुरु ने इसे इस प्रकार समझाया:

तब राजा वेदेह ने शुभ मुहूर्त पूछा; शुभ मुहूर्त मिलने पर उन्होंने ब्रह्मदत्त को संदेश भेजा: "मुझे वह सुंदर, आकर्षक और दासियों से परिपूर्ण स्त्री दे दो।" राजा चुलानी ने कहा: "मैं तुम्हें वह सुंदर, आकर्षक और दासियों से परिपूर्ण स्त्री दे देता हूँ।"

लेकिन "मैं उसे अभी, इसी वक्त भेजूँगा" कहकर उसने झूठ बोला: और उसने एक सौ एक राजाओं को आदेश दिया: "अपनी अठारह शक्तिशाली सेनाओं के साथ युद्ध के लिए तैयार हो जाओ, और आओ: हम अपने दोनों शत्रुओं के सिर काट देंगे, और विजय का प्याला पिएँगे!" और उसने अपनी माता रानी तलता, अपनी रानी नंदा, अपने पुत्र पंचालचंदा, अपनी पुत्री पंचालचंडी और स्त्रियों को महल में ठहराया, और स्वयं आ गया।

बोधिसत् ने राजा वेदेह के साथ आई विशाल सेना का बड़े ही आतिथ्य सत्कार से स्वागत किया: कुछ लोग मादक पेय पी रहे थे, कुछ मछली और मांस खा रहे थे, कुछ लंबी यात्रा से थके हुए थे; लेकिन राजा वेदेह, सेनाक और अन्य ज्ञानी पुरुषों के साथ अपने दरबारियों के बीच एक बड़े चबूतरे पर बैठे थे। लेकिन राजा चुलानी ने तीन अंतरालों पर चार पंक्तियों में शहर को घेर लिया और लाखों मशालें जला दीं, और वे सूर्योदय होते ही शहर पर कब्जा करने के लिए तैयार खड़े रहे। यह जानकर, महान सत्ता ने अपने तीन सौ योद्धाओं को आदेश दिया: "छोटी सुरंग से जाओ, और उस सुरंग से राजा की माता और पत्नी, उनके पुत्र और पुत्री को लाओ; उन्हें बड़ी सुरंग से ले जाओ, लेकिन उन्हें बड़ी सुरंग के द्वार से बाहर मत निकलने दो; जब तक हम न आएं, उन्हें सुरंग में सुरक्षित रखो, लेकिन जब हम आएं, तो उन्हें सुरंग से बाहर निकालो और उन्हें मुख्य प्रांगण में रखो।" ये आदेश प्राप्त करने के बाद, वे छोटी सुरंग से गए, और सीढ़ियों के नीचे बने चबूतरे को ऊपर धकेल दिया; उन्होंने सीढ़ियों के ऊपर और नीचे तथा छत पर तैनात पहरेदारों, कुबड़ों और वहाँ मौजूद सभी

लोगों को पकड़ लिया, उनके हाथ-पैर बाँध दिए, मुँह बंद कर दिए और उन्हें इधर-उधर छिपा दिया; राजा के लिए तैयार किया गया कुछ भोजन खाया, बाकी नष्ट कर दिया और छत पर चले गए। उस दिन रानी तलता, भविष्य की आशंकाओं से घिरी हुई, ने रानी नंदा और उनके पुत्र-पुत्री को अपने साथ एक पलंग पर सुलाया था। ये योद्धा कक्ष के द्वार पर खड़े होकर उन्हें पुकारने लगे। रानी बाहर आईं और बोलीं, "क्या बात है, मेरे बच्चों?" उन्होंने कहा, "महोदया, हमारे राजा ने वेदेह और महोषध को मार डाला है और पूरे भारत में एक राज्य स्थापित कर लिया है, और सौ एक राजकुमारों से घिरे हुए वे भव्यता से मजे कर रहे हैं: उन्होंने हमें आप चारों को भी उनके पास लाने के लिए भेजा है।" वे सीढ़ियों के नीचे आ गए। जब वे लोग उन्हें सुरंग में ले गए, तो उन्होंने कहा: "हम इतने समय से यहीं रह रहे हैं और इससे पहले कभी इस गली में नहीं आए!" उन आदमियों ने जवाब दिया, "इस गली में लोग रोज़ नहीं जाते; यह उत्सव की गली है, और क्योंकि आज उत्सव का दिन है, इसलिए राजा ने हमें आपको इसी रास्ते से लाने को कहा है।" और उन्होंने इस बात पर विश्वास कर लिया। फिर कुछ आदमी उन चारों को ले गए, बाकी महल लौट गए, खजाना तोड़कर अपनी मनचाही सभी कीमती चीजें ले गए। वे चारों बड़े सुरंग से आगे बढ़े, और उसे देवताओं (देवदूतों) के भव्य महल जैसा देखकर उन्होंने सोचा कि यह राजा के लिए बनाया गया होगा। फिर उन्हें नदी से कुछ ही दूरी पर एक जगह पर लाया गया, और सुरंग के अंदर एक सुंदर कक्ष में रखा गया: कुछ लोग उनकी निगरानी करते रहे, बाकी ने जाकर बोधिसत्व को उनके आने की सूचना दी।

बोधिसत्व ने मन ही मन सोचा, "अब मेरी मनोकामना पूरी होगी।" अत्यंत प्रसन्न होकर वे राजा के समक्ष गए और एक तरफ खड़े हो गए। राजा, इच्छा से व्याकुल होकर सोच रहे थे, "अब तो वह अपनी पुत्री को भेजेगा ही, अब, अब!" और उठकर उन्होंने खिड़की से बाहर देखा। शहर हजारों मशालों की रोशनी से जगमगा रहा था और चारों ओर एक विशाल सेना खड़ी थी! भय और संदेह से वे चिल्लाए, "यह क्या है?" और अपने विद्वान साथियों को एक श्लोक सुनाया।

"हाथी, घोड़े, रथ, पैदल सैनिक, कवचधारी सेना वहाँ खड़ी है, मशालें प्रकाश से जगमगा रही हैं; हे बुद्धिमानों, इनका क्या अर्थ है?"

इस पर सेनाका ने उत्तर दिया, "महाराज, चिंता न करें: बहुत सारी मशालें जल रही हैं; मुझे लगता है राजा अपनी पुत्री को आपके पास ला रहे हैं।" और पुक्कुसा ने कहा, "निस्संदेह वह आपके आगमन पर सम्मान दिखाना चाहते हैं, इसीलिए वे अपने साथ एक अंगरक्षक लाए हैं।" उन्होंने राजा को जो मनचाहा कहा। लेकिन राजा ने आदेश के शब्द सुने—"यहाँ एक टुकड़ी तैनात करो, वहाँ एक अंगरक्षक तैनात करो, सतर्क रहो!" और उन्होंने सैनिकों को हथियारबंद देखा; जिससे वे अत्यंत भयभीत हो गए, और ईश्वर से कुछ सुनने की लालसा में उन्होंने एक और श्लोक पढ़ा:

"हाथी, घोड़े, रथ, पैदल सैनिक, कवचधारी सेना वहाँ खड़ी है, मशालें प्रकाश से जगमगा रही हैं: वे क्या करेंगे, हे विद्वान?"

तब उस महान प्राणी ने सोचा, "मैं पहले इस अंधे मूर्ख को थोड़ी देर के लिए डराऊंगा, फिर मैं अपनी शक्ति दिखाऊंगा और उसे दिलासा दूंगा।" इसलिए उसने कहा,

"महाराज, शक्तिशाली कुलानिया आपको देख रहा है, ब्रह्मदत्त गद्दार है: वह सुबह आपको मार डालेगा।"

यह सुनकर सब भयभीत हो गए: राजा का गला सूख गया, थूकना बंद हो गया, उसका शरीर जलने लगा; भयभीत होकर और सिसकते हुए उसने दो श्लोक पढ़े:

"मेरा दिल धड़क रहा है, मेरा मुंह सूख रहा है, मुझे आराम नहीं मिल रहा है, मैं आग में झुलसे हुए और फिर धूप में रखे गए व्यक्ति की तरह हूं। जैसे लोहार की आग भीतर ही जलती है और बाहर दिखाई नहीं देती, वैसे ही मेरा दिल भीतर ही जल रहा है और बाहर दिखाई नहीं देता।"

जब उस महान सत्ता ने यह विलाप सुना, तो उसने सोचा, "इस अंधे मूर्ख ने पहले भी मेरी बात नहीं मानी; मैं इसे और भी अधिक दंड दूंगा," और उसने कहा:

"हे योद्धा, तुम लापरवाह हो, सलाह नहीं मानते, नासमझ हो; अब अपने चतुर सलाहकारों को ही तुम्हें बचाने दो। जो राजा अपने सुख-सुविधाओं में लिप्त होकर बुद्धिमान और निष्ठावान सलाहकार की सलाह नहीं मानता, वह जाल में फंसे हिरण के समान है। जैसे मछली चारा के लालच में अपने चारों ओर लिपटे मांस में छिपे कांटे को नहीं पहचानती, अपनी मृत्यु को नहीं जानती: वैसे ही हे राजा, तुम भी उस मछली की तरह कामवासना में लिप्त हो और कुलनेय्या की पुत्री को अपनी मृत्यु नहीं मानते। यदि तुम पांचाल जाओगे, (मैंने कहा,) तो तुम शीघ्र ही अपना सुख खो दोगे, जैसे राजमार्ग पर फंसा हिरण बड़ी मुसीबत में पड़ जाता है। हे स्वामी, एक दुष्ट व्यक्ति तुम्हारी गोद में सांप की तरह काटेगा; किसी भी बुद्धिमान व्यक्ति को उससे मित्रता नहीं करनी चाहिए; दुष्ट व्यक्ति की संगति अशुभ होती है। हे स्वामी, जो भी व्यक्ति गुणी और शिक्षित हो, वही बुद्धिमान व्यक्ति का मित्र होना चाहिए: अच्छे व्यक्ति की संगति सुखद होती है।"

फिर इस बात पर जोर देने के लिए कि किसी व्यक्ति के साथ ऐसा व्यवहार नहीं किया जाना चाहिए, उसने राजा द्वारा पहले कहे गए शब्दों को याद किया और आगे कहा--

"हे राजा, तू कितना मूर्ख है, बहरा और गूंगा, जिसने मुझमें ही सबसे अच्छी सलाह पर दोष निकाला, यह पूछते हुए कि मैं कैसे जान सकता हूँ कि दूसरे के लिए क्या अच्छा है, जबकि मैं हल चलाते हुए पला-बढ़ा हूँ? तूने कहा था, उस आदमी की गर्दन पकड़ कर उसे मेरे राज्य से बाहर निकाल दे, जो अपनी बातों से मुझे एक अनमोल वस्तु प्राप्त करने से रोकने की कोशिश करता है!"

इन दो श्लोकों का पाठ करने के बाद उसने कहा, "महाराज, मैं, एक साधारण ग्रामीण, कैसे जान सकता हूँ कि सेनाक और अन्य ज्ञानी पुरुषों की तरह क्या अच्छा है? यह मेरा काम नहीं है। मैं तो केवल ग्रामीण का काम जानता हूँ, लेकिन यह बात सेनाक और उनके जैसे लोगों को ज्ञात है; वे बुद्धिमान सज्जन हैं, और आज वे आपको चारों ओर से घेरने वाली अठारह शक्तिशाली सेनाओं से बचाएँ; और मैंने उनसे कहा कि वे मुझे गला पकड़कर फेंक दें। अब आप मुझसे क्यों पूछ रहे हैं?" इस प्रकार उन्होंने उसे निर्दयतापूर्वक फटकारा। जब राजा ने यह सुना, तो उसने सोचा, "ऋषि मेरे किए हुए पापों का वर्णन कर रहे हैं। उन्हें बहुत पहले ही आने वाले खतरे का ज्ञान हो गया था, इसीलिए वे मुझे इतनी कठोर चेतावनी दे रहे हैं। लेकिन उन्होंने इतना समय व्यर्थ नहीं बिताया होगा; निश्चित रूप से उन्होंने मेरी सुरक्षा का प्रबंध किया होगा।" इस प्रकार दूसरे से बात करते हुए, उन्होंने दो श्लोक पढ़े:

"महोसाधा, बुद्धिमान लोग अतीत को बार-बार याद नहीं दिलाते; तुम मुझे बंधे हुए घोड़े की तरह क्यों कोड़े मार रहे हो? यदि तुम्हें मुक्ति या सुरक्षा दिखाई दे, तो मुझे दिलासा दो: मेरे विरुद्ध अतीत को क्यों उछाल रहे हो?"

तब उस महान सत्ता ने सोचा, "यह राजा बहुत अंधा और मूर्ख है, और मनुष्यों के बीच अंतर नहीं जानता: मैं कुछ समय तक इसे यातना दूंगा, फिर इसे बचा लूंगा"; और उसने कहा--

"अब मनुष्यों के लिए कुछ करने का समय नहीं बचा है, यह बहुत कठिन और मुश्किल है: मैं तुम्हें बचा नहीं सकता, और तुम्हें स्वयं निर्णय लेना होगा। ऐसे हाथी हैं जो हवा में उड़ सकते हैं, जादुई, शानदार: जिनके पास ऐसे हाथी हैं वे उन्हें लेकर जा सकते हैं। ऐसे घोड़े भी हैं जो हवा में उड़ सकते हैं, जादुई, शानदार: जिनके पास ऐसे घोड़े हैं वे उन्हें लेकर जा सकते हैं। पक्षी भी हैं, और जिन्न भी हैं, जो ऐसा ही करते हैं। लेकिन अब मनुष्यों के लिए कुछ करने का समय नहीं बचा है, यह बहुत कठिन और मुश्किल है: मैं तुम्हें बचा नहीं सकता, और तुम्हें स्वयं निर्णय लेना होगा।"

यह सुनकर राजा चुपचाप बैठे रहे; परन्तु सेनाक ने सोचा, "राजा और हम सब के लिए ऋषि के सिवा कोई और सहायता नहीं है; परन्तु राजा इतना भयभीत हैं कि वे उन्हें उत्तर नहीं दे पाएंगे। तो मैं उनसे ही पूछूंगा।" और उन्होंने दो श्लोकों में उनसे पूछा:

"विशाल सागर में जब मनुष्य को किनारा दिखाई नहीं देता, तब भी जब उसे सहारा मिल जाता है तो वह आनंद से भर उठता है। उसी प्रकार, हे महोषधा, आप हमारे और राजा के लिए दृढ़ आधार हैं; आप हमारे सर्वश्रेष्ठ सलाहकार हैं; हमें कष्टों से मुक्ति दिलाइए।"

उस महान सत्ता ने इस श्लोक में उनसे यह कहा:

"पुरुषों के लिए अब कार्रवाई करना बहुत देर हो चुकी है, यह बहुत कठिन और मुश्किल है: मैं तुम्हें बचा नहीं सकता, और तुम्हें खुद फैसला करना होगा, सेनाका।"

राजा को कोई रास्ता नहीं सूझा और वह इतना भयभीत हो गया कि वह उस महान सत्ता से एक शब्द भी नहीं कह सका; लेकिन यह सोचकर कि शायद सेनाक के पास कोई योजना हो, उसने इस श्लोक में उससे पूछा:

"मेरी बात सुनो: तुम इस बड़े खतरे को देख रहे हो, और अब सेनाका, मैं तुमसे पूछता हूँ—तुम्हें क्या लगता है कि यहाँ क्या किया जाना चाहिए?"

सेनाका ने सोचते हुए कहा, "राजा योजना पूछे: अच्छी हो या बुरी, मैं उसे एक योजना बताऊँगा," और फिर एक श्लोक सुनाया:

"चलो हम दरवाजे में आग लगा दें, तलवार उठा लें, एक दूसरे को घायल कर दें, और जल्द ही हम मर जाएंगे: ब्रह्मदत्त हमें तड़प-तड़प कर मौत न दे।"

यह सुनकर राजा क्रोधित हो उठा; उसने सोचा, "यह तुम्हारे और तुम्हारे बच्चों की अंतिम संस्कार की चिता के लिए काफी होगा।" फिर उसने पुक्कुसा और बाकी लोगों से पूछा, जो अपनी-अपनी तरह मूर्खतापूर्ण बातें कर रहे थे; परंपरा के अनुसार, यह कहानी इस प्रकार है:

"यह बात सुनो: तुम इस बड़े खतरे को देख रहे हो। अब मैं पुक्कुसा से पूछता हूँ—तुम्हें क्या लगता है कि यहाँ क्या किया जाना चाहिए?" "हम विष खाकर मर जाएँ, और हम शीघ्र ही मर जाएँगे: ब्रह्मदत्त हमें तड़प-तड़प कर न मार डाले।" "अब मैं कविंदा से पूछता हूँ।" "हम फंदा लगाकर मर जाएँ, हम ऊँचाई से कूद जाएँ, ब्रह्मदत्त हमें तड़प-तड़प कर न मार डाले।" "अब मैं देविंदा से पूछता हूँ।" "हम दरवाजे में आग लगा दें, हम तलवार उठाएँ, हम एक-दूसरे को घायल कर दें, और हम शीघ्र ही मर जाएँगे: मैं हमें नहीं बचा सकता, लेकिन महोसाधा आसानी से ऐसा कर सकता है।"

देविंदा ने सोचा, "राजा क्या कर रहे हैं? यहाँ आग है, और वे जुगनू पर फूँक मार रहे हैं! महोषधा के सिवा कोई और हमें बचा नहीं सकता: फिर भी वे उसे छोड़कर हमसे पूछते हैं! हम इसके बारे में क्या जानते हैं?" ऐसा सोचते हुए, और कोई दूसरा उपाय न देखकर, उन्होंने सेनाक द्वारा प्रस्तावित योजना को दोहराया, और दो श्लोकों में उस महान सत्ता की स्तुति की।

"मेरा तात्पर्य यह है, महाराज: आइए हम सब उस ज्ञानी व्यक्ति से प्रार्थना करें; और यदि हमारे सभी प्रयासों के बावजूद महोसाधा हमें आसानी से नहीं बचा सकते, तो आइए हम सेनाक की सलाह का पालन करें।"

यह सुनकर राजा को बोधिसत्व के साथ किए गए अपने दुर्व्यवहार की याद आ गई, और उनसे बात करने में असमर्थ होने के कारण, उन्होंने उनके सामने इस प्रकार शोक व्यक्त किया:

जैसे कोई केले या रेशम के पेड़ में रस खोजता है, उसे कुछ नहीं मिलता; वैसे ही हम भी इस समस्या का हल ढूंढते-ढूंढते निराश हो गए हैं। हमारी स्थिति बहुत खराब है, जैसे हाथी ऐसी जगह पर हों जहाँ पानी न हो, निकम्मे और मूर्ख लोगों के बीच, जिन्हें कुछ नहीं पता। मेरा दिल धड़क रहा है, मेरा मुँह सूख रहा है, मुझे आराम नहीं मिल रहा, मैं आग में झुलसे हुए और फिर धूप में रखे हुए व्यक्ति की तरह हूँ। जैसे लोहार की आग अंदर ही अंदर जलती है और बाहर दिखाई नहीं देती, वैसे ही मेरा दिल अंदर ही अंदर जल रहा है और बाहर दिखाई नहीं दे रहा।

तब ऋषि ने सोचा, "राजा अत्यंत व्याकुल हैं: यदि मैं उन्हें सांत्वना न दूं, तो वे हृदयविहीन होकर मर जाएंगे।" अतः उन्होंने उन्हें सांत्वना दी।

गुरु ने इसे समझाते हुए कहा:

तब अच्छे गुणों को परखने वाले बुद्धिमान ऋषि महोषध ने वेदेह को दुखी देखकर उनसे कहा, "हे राजा, भयभीत न हों, हे रथों के स्वामी; मैं आपको राहु ग्रहण में फंसे चंद्रमा की तरह, राहु ग्रहण में फंसे सूर्य की तरह, कीचड़ में धंसे हाथी की तरह, टोकरी में बंद सांप की तरह, जाल में फंसी मछली की तरह मुक्त कर दूंगा; मैं आपको आपके रथों और आपकी सेना सहित मुक्त कर दूंगा; मैं पांचाल को पत्थर से डराकर भगा दूंगा, जैसे कौआ डर जाता है। ऐसे ज्ञान या सलाहकार का क्या लाभ जो संकट में होने पर आपको उससे मुक्त न कर सके?"

यह सुनकर उसे तसल्ली मिली: "अब मेरी जान सुरक्षित है!" उसने सोचा; बोधिसत्व के सिंहवत स्वर में बोलने पर सब प्रसन्न हो गए। तब सेनाक ने पूछा, "हे ज्ञानी, आप हम सबको कैसे बचाएंगे?" "एक सजी हुई सुरंग से," उसने कहा, "तैयार हो जाओ।" इतना कहकर उसने अपने आदमियों को सुरंग खोलने का आदेश दिया।

"आओ, पुरुषों, उठो और प्रवेश द्वार खोलो: वेदेह अपने दरबार के साथ सुरंग से होकर गुजरेगा।"

वे उठे और सुरंग का द्वार खोल दिया, और पूरी सुरंग देवताओं (देवदूतों) के अलंकृत हॉल की तरह प्रकाश की तेज रोशनी से जगमगा उठी। गुरु ने इसका स्पष्टीकरण देते हुए कहा:

"ज्ञानी व्यक्ति की आवाज सुनकर, उसके अनुयायियों ने सुरंग का दरवाजा और यांत्रिक बोल्ट खोल दिए।"

उन्होंने महान सत्ता को बताया कि द्वार खुल गया है, और उन्होंने राजा को आदेश दिया: "हे महाराज, समय हो गया है! चबूतरे से नीचे आ जाइए।" राजा नीचे आ गए, सेनाक ने अपना सिर का वस्त्र उतारा और अपना वस्त्र बाँधा। महान सत्ता ने उनसे पूछा कि उन्होंने क्या किया; उन्होंने उत्तर दिया, "हे ज्ञानी, जब कोई व्यक्ति सुरंग से गुजरता है, तो उसे अपनी पगड़ी उतारनी चाहिए और अपने वस्त्रों को कसकर लपेटना चाहिए।" दूसरे ने उत्तर दिया, "सेनाक, यह मत सोचो कि तुम्हें सुरंग में घुटनों के बल रेंगना होगा। यदि तुम हाथी पर जाना चाहते हो, तो अपने हाथी पर सवार हो जाओ: हमारी सुरंग विशाल है, अठारह हाथ ऊँची, चौड़े द्वार वाली; तुम जैसे चाहो वैसे सज-धज कर राजा के आगे चलो।" तब बोधिसत्व ने सेनाक को पहले भेजा और स्वयं अंत में गए, राजा बीच में थे, और इसका कारण यह था: सुरंग में खाने-पीने की चीजों का संसार था, और लोग सुरंग को निहारते हुए खा-पी रहे थे और कह रहे थे, "जल्दी मत जाओ, बल्कि

इस सजी हुई सुरंग को निहारो।" लेकिन वह महान प्राणी राजा को आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करते हुए पीछे-पीछे चलने लगा, जबकि राजा देवताओं (देवदूतों) के हॉल की तरह सजी हुई सुरंग को निहारता रहा।

गुरु ने इसे समझाते हुए कहा,

"सबसे आगे सेनाक, उसके पीछे महोषध और बीच में राजा वेदेह अपने दरबारियों के साथ चल रहे थे।"

अब जब राजा के आने का पता चला, तो लोग दूसरे राजा की माता और पत्नी, पुत्र और पुत्री को सुरंग से बाहर लाए और उन्हें विशाल प्रांगण में बिठा दिया; राजा भी बोधिसत्व के साथ सुरंग से बाहर आए। जब इन चारों ने राजा और ऋषि को देखा, तो वे भय से मरणासन्न हो गए और डर के मारे चीखने लगे—"निःसंदेह हम अपने शत्रुओं के हाथों में हैं! ये तो उस ज्ञानी पुरुष के सैनिक ही होंगे जो हमें पकड़ने आए हैं!" और राजा चुलानी, इस डर से कि कहीं वेदेह भाग न जाए—अब वह गंगा से लगभग एक मील दूर थे—शांत रात में उनकी चीख सुनकर कहना चाहते थे, "यह तो रानी नंदा की आवाज जैसी है!" लेकिन उन्हें डर था कि ऐसा सोचने पर उनका उपहास उड़ाया जाएगा, इसलिए उन्होंने कुछ नहीं कहा। उसी क्षण, उस महान सत्ता ने राजकुमारी पंचालचंडी को खजाने के ढेर पर बिठाया और विधिपूर्वक जल छिड़काव करते हुए कहा, "महाराज, यह वही है जिसके लिए आप आए हैं; इसे अपनी रानी बनाइए!" वे तीन सौ जहाज़ बाहर लाए; राजा विशाल प्रांगण से आया और एक भव्य रूप से सजे हुए जहाज पर सवार हो गया, और ये चारों भी उसके साथ सवार हो गए। गुरु ने इसका इस प्रकार स्पष्टीकरण दिया:

सुरंग से निकलकर वेदेह जहाज पर सवार हो गए, और जहाज पर पहुँचते ही महोसाधा ने उन्हें प्रोत्साहित करते हुए कहा, “हे स्वामी, ये आपके ससुर हैं, हे मनुष्यों के स्वामी, ये आपकी सास हैं: जैसा आप अपनी माता का सत्कार करते हैं, वैसा ही अपनी सास का सत्कार करें। जैसे वे सगे भाई हों, हे रथों के स्वामी, पंचलचंदा की रक्षा करें। पंचलचंदी एक राजसी राजकुमारी हैं, जिनके लिए बहुत प्रेम है; उनसे प्रेम करें, वे आपकी पत्नी हैं, हे रथों के स्वामी।”

राजा मान गए। लेकिन उस महान सत्ता ने महारानी के बारे में कुछ क्यों नहीं कहा? क्योंकि वह एक बूढ़ी औरत थीं। यह सब बोधिसत्व ने तट पर खड़े होकर कहा। तब राजा, बड़ी मुसीबत से मुक्त होकर, जहाज में आगे बढ़ने की इच्छा से बोले, "मेरे पुत्र, तुम तट पर खड़े होकर बोल रहे हो": और एक श्लोक सुनाया--

"जल्दी से नाव पर चढ़ो: तुम किनारे पर क्यों खड़े हो? हम खतरे और मुसीबत से बच गए हैं; अब, महोसाधा, चलो चलते हैं।"

उस महान प्राणी ने उत्तर दिया, "मेरे स्वामी, मेरा आपके साथ जाना उचित नहीं है," और उसने कहा,

"यह उचित नहीं है, महाराज, कि मैं, जो एक सेना का नेता हूँ, अपनी सेना को छोड़कर स्वयं आ जाऊँ। शहर में छूटी हुई इस पूरी सेना को मैं ब्रह्मदत्त की सहमति से वापस ले आऊँगा।"

"इन लोगों में से कुछ लंबी यात्रा के बाद थकान से सो रहे हैं, कुछ खा-पी रहे हैं और हमारे जाने से अनभिज्ञ हैं, कुछ बीमार हैं, जिन्होंने मेरे साथ चार महीने काम किया है, और मेरे कई सहायक भी हैं। मैं एक भी आदमी को पीछे छोड़कर नहीं जा सकता; नहीं, मैं लौटूँगा, और ब्रह्मदत्त की सहमति से उस पूरी सेना को बिना किसी लड़ाई के वापस ले आऊँगा। हे महाराज, आप बिना कहीं रुके पूरी गति से जाइए; मैंने मार्ग पर हाथियों और रथों की कतारें लगा दी हैं, ताकि आप थके हुए लोगों को पीछे छोड़ सकें और बाकी तरोताजा लोगों के साथ शीघ्र ही मिथिला लौट सकें।" फिर राजा ने एक श्लोक पढ़ा:

"एक छोटी सी सेना एक विशाल सेना के सामने कैसे जीत हासिल करेगी? कमजोर बलवानों के हाथों नष्ट हो जाएगा, हे बुद्धिमान!"

तब बोधिसत्व ने एक श्लोक का पाठ किया:

"सलाह से लैस एक छोटी सेना बिना सलाह वाली एक बड़ी सेना को जीत लेती है, एक राजा कई राजाओं पर विजय प्राप्त करता है, उगता सूरज अंधेरे को जीत लेता है।"

इन शब्दों के साथ, उस महान सत्ता ने राजा को प्रणाम किया और उन्हें विदा कर दिया। राजा को याद आया कि कैसे उन्हें शत्रुओं के हाथों से मुक्ति मिली थी और राजकुमारी को जीतकर उन्होंने अपने दिल की इच्छा पूरी कर ली थी। बोधिसत्व के गुणों के बारे में सोचते हुए, प्रसन्नता और आनंद से भरे भाव से उन्होंने सेनाक को उस ज्ञानी व्यक्ति के गुणों का वर्णन इस श्लोक में किया:

"हे सेनाक, सच्ची खुशी बुद्धिमानों के साथ रहने से मिलती है। जैसे पिंजरे से पक्षी और जाल से मछली मुक्त हो जाते हैं, वैसे ही महोषधा ने हमें तब मुक्त किया जब हम मेरे शत्रुओं के हाथों में थे।"

इस पर सेनाका ने एक और उत्तर देते हुए ऋषि की प्रशंसा की:

"फिर भी, महाराज, बुद्धिमानों में सुख होता है। जैसे पिंजरे से पक्षी और जाल से मछली निकल आती हैं, वैसे ही महोषधा ने हमें तब मुक्त किया जब हम अपने शत्रुओं के हाथों में थे।"

फिर वेदेह ने नदी पार की और एक मील (4.23 किमी) की दूरी पर उन्हें वह गाँव मिला जो बोधिसत्व ने तैयार किया था; वहाँ बोधिसत्व द्वारा नियुक्त लोगों ने हाथी और अन्य वाहन उपलब्ध कराए और उन्हें भोजन और पानी दिया। जब हाथी या घोड़े और वाहन थक गए तो उन्होंने उन्हें वापस भेज दिया और नए वाहन लेकर अगले गाँव की ओर चल दिए; इस प्रकार उन्होंने सौ मील (4.23 किमी) की यात्रा पूरी की और अगली सुबह वे मिथिला में थे।

लेकिन बोधिसत्व सुरंग के द्वार पर गए; और अपने कंधे पर टंगी तलवार को निकालकर सुरंग के द्वार पर रेत में गाड़ दिया; फिर वे सुरंग में प्रवेश कर शहर में गए, सुगंधित जल से स्नान किया, उत्तम भोजन किया और अपने बड़े पलंग पर विश्राम किया, यह सोचकर प्रसन्न हुए कि उनके हृदय की इच्छा पूरी हो गई है। रात समाप्त होने पर, राजा कुलानी ने सेना को आदेश दिया और शहर की ओर चल पड़े। गुरु ने इसका इस प्रकार वर्णन किया:

"शक्तिशाली चुलानिया ने पूरी रात निगरानी रखी और सूर्योदय के समय उपकारी के पास पहुंचा। अपने उत्तम हाथी पर सवार होकर, बलवान और साठ वर्ष के चुलानिया, पांचाल के शक्तिशाली राजा ने अपनी सेना को संबोधित किया; रत्नजड़ित कवच से सुसज्जित, हाथ में बाण लिए, उन्होंने अपने असंख्य सैनिकों को संबोधित किया।"

फिर उनका वर्णन उनके प्रकार के अनुसार करना—

"हाथियों पर सवार पुरुष, अंगरक्षक, रथ चालक, पैदल सैनिक, तीरंदाजी में कुशल पुरुष, धनुर्धर, सभी एक साथ एकत्रित हुए थे।"

अब राजा ने उन्हें वेदेह को जीवित पकड़ने का आदेश दिया:

साठ वर्ष के शक्तिशाली हाथी दांत भेजो, उन्हें वेदेह द्वारा भव्यता से निर्मित नगर को रौंद डालने दो। धनुष से चलाए गए बाण इधर-उधर बरसाओ, बछड़ों के दांतों के समान नुकीले, हड्डियों तक को भेदने वाले बाण। कवचधारी, अलंकृत शस्त्रों से सुसज्जित वीरों को हाथी का सामना करने के लिए तैयार होकर आगे आने दो। तेल में सने भाले, जिनकी नोकें अग्नि के समान चमक रही हैं, सौ तारों के नक्षत्र के समान जगमगा रहे हैं। ऐसे वीरों के आक्रमण के सामने, शक्तिशाली शस्त्रों से सुसज्जित, कवचधारी, जो कभी पीछे नहीं हटते, वेदेह कैसे बच पाएगा, चाहे वह पक्षी की तरह उड़ भी जाए? मेरे उनतीस हजार योद्धा, सभी चयनित पुरुष, जिनके समान मैंने कभी नहीं देखा, मेरी समस्त शक्तिशाली सेना।

"साठ वर्ष के विशाल दांत वाले हाथियों को देखो, जिन पर काठी सजी है, जिनकी पीठ पर तेजस्वी और सुंदर राजकुमार विराजमान हैं; वे अपनी पीठ पर ऐसे तेजस्वी हैं जैसे नंदन में देवता (देवदूत), शानदार आभूषणों, भव्य वस्त्रों और आलिंगनों से सुसज्जित: शेट-मछली के रंग की तलवारें, अच्छी तरह से तेल लगी हुई, चमकीली, बलवान पुरुषों द्वारा मजबूती से पकड़ी हुई, उत्तम रूप से निर्मित, बहुत तेज, चमकदार, बेदाग, तपी हुई इस्पात से बनी, मजबूत।"

शक्तिशाली योद्धाओं द्वारा समर्थित, जो बार-बार प्रहार करते हैं। सुनहरे अलंकृत वस्त्रों और रक्त लाल कमरबंदों में वे घने बादल में बिजली की तरह चमकते हैं। ध्वज लहराते कवचधारी वीर, तलवार और ढाल चलाने में कुशल, तलवार की मूठ को थामे हुए, निपुण सैनिक, हाथी की पीठ पर सवार शक्तिशाली योद्धा, इनके बीच घिरे होने पर तुम्हारे पास बचने का कोई रास्ता नहीं है; मुझे ऐसी कोई शक्ति नहीं दिखती जिससे तुम मिथिला पहुँच सको।

इस प्रकार उसने वेदेह को वहीं पकड़ने की सोचकर उसे धमकी दी; और अपने हाथी को चाबुक मारते हुए, सेना को पकड़ने, प्रहार करने और मार डालने का आदेश देते हुए, राजा चुलानी उपकारी नगर में बाढ़ की तरह आ पहुँचा।

तब उस महान प्राणी के जासूसों ने सोचा, "पता नहीं क्या होगा?" और अपने सेवकों के साथ उन्हें घेर लिया। ठीक उसी समय बोधिसत्व अपने पलंग से उठे, अपनी शारीरिक आवश्यकताओं का ध्यान रखा, और नाश्ते के बाद सज-धज कर, एक लाख सिक्कों के मूल्य का काशी वस्त्र पहना, एक कंधे पर लाल वस्त्र डाला, सात रत्नों से जड़ा अपना भेंट दंड धारण किया, पैरों में सोने की चप्पलें पहनीं, और किसी दिव्य अप्सरा की तरह यक्षपत्ती के पंखे से हवा करते हुए चबूतरे पर आए, और खिड़की खोलकर राजा चुलानी को दर्शन दिए, जैसे वे देवदूतों के राजा की शान से इधर-उधर विचरण कर रहे हों। राजा चुलानी उनकी सुंदरता देखकर विचलित हो गए, और उन्होंने तुरंत अपने हाथी को आगे बढ़ाया, यह सोचकर कि उन्हें अभी ले जाना चाहिए। ऋषि ने सोचा, "वे यहाँ इतनी जल्दी आ गए हैं, यह सोचकर

कि वेदेह को पकड़ लिया गया है; उन्हें नहीं पता कि उनके अपने बच्चे ले जाए गए हैं, और हमारे राजा चले गए हैं। मैं अपना चेहरा सोने के दर्पण की तरह दिखाऊंगा, और उनसे बात करूंगा।" खिड़की पर खड़े होकर उसने शहद जैसी मीठी आवाज में ये शब्द कहे:

"तुम इतनी जल्दी में अपना हाथी क्यों लेकर आए हो? तुम बड़े प्रसन्न होकर आए हो; तुम्हें लगता है कि तुम्हें जो चाहिए वो मिल गया है। उस धनुष को नीचे फेंक दो, उस तीर को रख दो, उस हीरे-जवाहरात और मूंगे से जड़े चमकदार कवच को उतार दो।"

जब उसने उस आदमी की आवाज सुनी, तो उसने सोचा, "यह देहाती आदमी मेरा मजाक उड़ा रहा है; आज मैं देखूंगा कि इसके साथ क्या किया जाता है"; फिर उसने उसे धमकी देते हुए कहा,

"आपकी शांत मुद्रा प्रसन्नता दर्शाती है, आप मुस्कुराते हुए बोलते हैं। मृत्यु के क्षण में ही ऐसी सुंदरता देखने को मिलती है।"

जब वे आपस में बातें कर रहे थे, तो सैनिकों ने उस महान व्यक्ति की सुंदरता पर ध्यान दिया; उन्होंने कहा, "हमारे राजा, बुद्धिमान महोषध से बात कर रहे हैं; यह किस बारे में हो सकता है? आइए हम उनकी बातें सुनें।" इसलिए वे राजा के पास आए। लेकिन जब राजा ने बोलना समाप्त कर दिया, तो ऋषि ने उत्तर दिया, "तुम नहीं जानते कि मैं बुद्धिमान महोषध हूँ। मैं तुम्हें मुझे मारने नहीं दूँगा। तुम्हारी योजना विफल हो गई है; जो तुमने और केवट्टा ने अपने मन में सोचा था, वह पूरा नहीं हुआ, बल्कि वही पूरा हुआ जो तुमने अपने मुख से कहा।" और उन्होंने इसे समझाते हुए कहा,

"हे राजा, तुम्हारी गर्जना व्यर्थ है! हे योद्धा, तुम्हारी योजना विफल हो गई है! राजा को पकड़ना तुम्हारे लिए उतना ही कठिन है जितना किसी तेज़ घोड़े को पकड़ना। हमारे राजा कल अपने दरबारियों और सेवकों के साथ गंगा पार कर गए। तुम उस कौवे की तरह होगे जो राजसी हंस का पीछा कर रहा हो।"

फिर, निर्भीक शेर की तरह, उन्होंने इन शब्दों में एक उदाहरण प्रस्तुत किया:

"रात के समय, सियार यहूदा वृक्ष को फूलते हुए देखकर, फूलों को मांस का ढेर समझकर झुंड बनाकर इकट्ठा हो जाते हैं, ये नीच जानवर। रात के पहर बीत जाने और सूर्योदय होने पर, वे यहूदा वृक्ष को फूलते हुए देखते हैं और अपनी इच्छा खो देते हैं, ये नीच जानवर। ठीक वैसे ही, हे राजा, आपने वेदेह को घेर लिया है, फिर भी आप अपनी इच्छा खो देंगे और चले जाएंगे, जैसे सियार यहूदा वृक्ष से चले गए थे।"

जब राजा ने उसके निर्भीक शब्द सुने, तो उसने सोचा, "यह देहाती तो बोलने में बहुत साहसी है: निःसंदेह वेदेह बच निकला होगा।" वह बहुत क्रोधित हुआ। उसने सोचा, "बहुत समय पहले, इस देहाती के कारण मेरे पास ओढ़ने के लिए एक चिथड़ा तक नहीं था; अब इसके कारण मेरा शत्रु, जो मेरे हाथों में था, बच निकला है। सचमुच इसने मुझे बहुत हानि पहुँचाई है, और मैं इससे दोनों का बदला लूँगा।" फिर उसने इस प्रकार आदेश दिया:

"उसके हाथ-पैर, कान-नाक काट डाल, क्योंकि उसने मेरे शत्रु वेदेह को मेरे हाथों से छुड़ाया; उसका मांस काटकर सींकों पर पका, क्योंकि उसने मेरे शत्रु वेदेह को मेरे हाथों से छुड़ाया। जैसे बैल की खाल जमीन पर फैला दी जाती है, या शेर या बाघ की खाल खूंटियों से ठोंक दी जाती है, वैसे ही मैं उसे खूंटियों से ठोंक कर कीलों में छेद दूंगा, क्योंकि उसने मेरे शत्रु वेदेह को मेरे हाथों से छुड़ाया।"

यह सुनकर महान प्राणी मुस्कुराया और सोचने लगा, "यह राजा नहीं जानता कि उसकी रानी और परिवार को मैंने मिथिला पहुँचाया है, इसीलिए वह मेरे बारे में ये सारे आदेश दे रहा है। लेकिन क्रोध में आकर वह मुझे तीर से घायल कर सकता है, या कुछ ऐसा कर सकता है जिससे उसे प्रसन्नता हो; इसलिए मैं उसे पीड़ा और दुख से भर दूँगा, और उसे उसके हाथी की पीठ पर बेहोश कर दूँगा, और साथ ही उसे इसके बारे में बता दूँगा।" फिर उसने कहा:

यदि तुम मेरे हाथ-पैर, कान-नाक काट दोगे, तो वेदेह पंचलचंद, पंचलचंडी, रानी नंदा, तुम्हारी पत्नी और बच्चों के साथ भी वैसा ही व्यवहार करेगा। यदि तुम मेरा मांस काटकर सींकों पर पकाओगे, तो वेदेह पंचलचंद, पंचलचंडी, रानी नंदा, तुम्हारी पत्नी और बच्चों का मांस भी वैसा ही पकाएगा। यदि तुम मुझे खूंटियों से बांधकर नुकीली कीलों से छेद दोगे, तो वेदेह पंचलचंद, पंचलचंडी, रानी नंदा, तुम्हारी पत्नी और बच्चों के साथ भी वैसा ही व्यवहार करेगा। वेदेह और मेरे बीच यही गुप्त समझौता हुआ है। जैसे चमड़े के कारीगरों द्वारा सावधानीपूर्वक बनाई गई सौ परतों की ढाल तीरों से बचाव करती है; वैसे ही मैं वेदेह के लिए सुख लाता हूँ और उसके कष्टों को दूर करता हूँ, और तुम्हारे कुटिल मार्गों को उसी प्रकार रोकता हूँ जैसे ढाल तीर को रोकती है।

यह सुनकर राजा ने सोचा, "यह गंवार देहाती क्या बकवास कर रहा है? जैसा मैंने उसके साथ किया, वैसा ही राजा वेदेह मेरे परिवार के साथ करेगा? उसे नहीं पता कि मैंने अपने परिवार की सुरक्षा के लिए कड़ी निगरानी रखी है, लेकिन वह तो बस तुरंत मौत के डर से मुझे धमका रहा है। मुझे उसकी बातों पर विश्वास नहीं है।"

उस महान सत्ता ने भविष्यवाणी की कि उन्हें लगता है कि वह डर के मारे बोल रहा है, और उन्होंने समझाने का निश्चय किया। इसलिए उन्होंने कहा

"आओ, महाराज, देखो तुम्हारे भीतरी कमरे खाली हैं: पत्नी, बच्चे, माता, हे योद्धा, उन्हें एक सुरंग से ले जाकर वेदेह के हवाले कर दिया गया है।"

तब राजा ने सोचा, "ऋषि बड़ी दृढ़ता से बोल रहे हैं। मैंने रात में गंगा के किनारे रानी नंदा की वाणी सुनी थी; ऋषि बहुत बुद्धिमान हैं, शायद वे सच कह रहे हैं!" उन्हें गहरा दुःख हुआ, परन्तु उन्होंने साहस जुटाकर अपने दुःख को छुपाते हुए एक दरबारी को पूछताछ के लिए भेजा और यह श्लोक सुनाया:

"आओ, मेरे भीतरी कमरों में प्रवेश करो और पता लगाओ कि उस आदमी के शब्द सत्य हैं या झूठ।"

दूत अपने सेवकों के साथ गया, और दरवाजा खोलकर अंदर प्रवेश किया; वहाँ उसने देखा कि हाथ-पैर बंधे हुए और मुँह में कपड़ा ठूंसा हुआ, खूंटियों से लटके हुए भीतरी कमरों के पहरेदार, बौने और कुबड़ वाले लोग थे; टूटे हुए बर्तन बिखरे पड़े थे, जिनमें भोजन और पेय पदार्थ थे; खजाने के दरवाजे टूटे हुए थे और खजाना लूटा हुआ था; शयनकक्ष के दरवाजे खुले थे और खुली खिड़कियों से कौवों का एक झुंड अंदर आ गया था; यह एक वीरान गाँव या लाशों के ढेर जैसा लग रहा था। उसने महल को इस दयनीय अवस्था में देखा; और उसने राजा को यह खबर देते हुए कहा,

"फिर भी, महाराज, जैसा कि महोसाधा ने कहा था: आपका आंतरिक महल खाली है, जैसे कौवों से आबाद एक जलतटीय गाँव।"

अपने चारों प्रियजनों के बिछड़ने के शोक से कांपते हुए राजा ने कहा, "यह दुःख मुझ पर इस देहाती के कारण आया है!" और जैसे किसी साँप को डंडे से चोट लगी हो, वैसे ही वह बोधिसत्व पर अत्यंत क्रोधित हुआ। जब महापुरुष ने उसका रूप देखा, तो उसने सोचा, "इस राजा का बहुत गौरव है; यदि वह कभी क्रोध में आकर कहे, 'मुझे फलां से क्या चाहिए?' तो वह एक योद्धा के अभिमान में आकर मुझे हानि पहुँचा सकता है। मान लो कि मैं रानी नंदा की सुंदरता का वर्णन उसके सामने इस तरह करूँ जैसे उसने उसे कभी देखा ही न हो; तब उसे रानी नंदा की याद आ जाएगी, और वह समझ जाएगा कि यदि वह मुझे मार डाले तो वह इस अनमोल स्त्री को कभी वापस नहीं पा सकेगा। तब अपनी पत्नी के प्रति प्रेम के कारण वह मुझे कोई हानि नहीं पहुँचाएगा।" अतः ऊपरी मंजिल पर सुरक्षा के लिए खड़े होकर, उसने अपने लाल वस्त्र के नीचे से अपना सुनहरा हाथ निकाला, और जिस मार्ग से रानी नंदा जा रही थी, उसकी ओर इशारा करते हुए, उसने रानी नंदा की सुंदरता का इस प्रकार वर्णन किया:

"इस ओर, महाराज," हर अंग से सुंदर स्त्री चली, उसके होंठ सोने की थालियों जैसे, उसकी आवाज़ जंगली हंस के संगीत जैसी। "इस ओर उसे लाया गया था, महाराज, हर अंग से सुंदर स्त्री, रेशमी वस्त्रों में लिपटी, सांवली, सुनहरे रंग की कमरबंद के साथ। उसके पैर लाल, देखने में सुंदर, सोने और रत्नों से सजी कमरबंद के साथ, कबूतर जैसी आँखों वाली, पतली, बिम्बा फल जैसे होंठों वाली, और पतली कमर वाली, उच्च कुल की, लता या बलिदान स्थल जैसी पतली कमर वाली, उसके बाल लंबे, काले और सिरे पर थोड़े घुंघराले, उच्च कुल के, हिरण के बच्चे जैसे, सर्दियों में आग की लौ जैसे। पहाड़ की दरारों में कम सरकंडों के नीचे छिपी नदी की तरह, नाक और जांघों से सुंदर, असाधारण, टिंडूक फल जैसे स्तनों वाली, न बहुत लंबे, न बहुत छोटे, न बाल रहित और न बहुत बाल वाले।"

जब उस महान सत्ता ने उसकी सुंदरता की इस प्रकार प्रशंसा की, तो राजा को ऐसा लगा मानो उसने उसे पहले कभी देखा ही न हो: उसके मन में तीव्र लालसा उत्पन्न हुई, और उस महान सत्ता ने इसे भांपते हुए एक श्लोक का पाठ किया:

"हे महाराज, आप नंदा की मृत्यु से प्रसन्न हैं: अब मैं और नंदा यमराज के समक्ष जाएंगे।"

इन सब बातों में उस महान पुरुष ने केवल नंदा की ही प्रशंसा की, और इसका कारण यह था: लोग कभी भी दूसरों से उतना प्रेम नहीं करते जितना अपनी प्रिय पत्नी से करते हैं; और उन्होंने केवल नंदा की ही प्रशंसा इसलिए की क्योंकि उनका मानना था कि यदि राजा उन्हें याद रखेंगे तो वे अपने बच्चों को भी याद रखेंगे। जब उस बुद्धिमान महान पुरुष ने मधुर स्वर में नंदा की प्रशंसा की, तो ऐसा लगा मानो रानी नंदा स्वयं राजा के समक्ष खड़ी हों। तब राजा ने सोचा: "महोसाधा के सिवा कोई और मेरी पत्नी को वापस नहीं ला सकता और मुझे नहीं दे सकता": जैसे ही उन्हें याद आया, वे शोक में डूब गए। इस पर उस महान पुरुष ने कहा, "हे महाराज, चिंता न करें: रानी, पुत्र और माता सब लौट आएंगे; मेरी वापसी ही एकमात्र शर्त है। हे महाराज, निश्चिंत हो जाइए!" इस प्रकार उन्होंने राजा को सांत्वना दी;

और राजा ने कहा, “मैंने अपने नगर की इतनी सावधानी से रक्षा की, मैंने उपकारी नगर को इतनी बड़ी सेना से घेर लिया, फिर भी इस बुद्धिमान व्यक्ति ने मेरे संरक्षित नगर से रानी, पुत्र और माता को निकालकर वेदेह के हवाले कर दिया! जब हम नगर को घेरे हुए थे, तब उसने किसी को भी पता चले बिना वेदेह को उसकी सेना और वाहन के साथ भेज दिया! क्या वह जादू जानता है, या आँखों को धोखा देने की कला जानता है?” और उसने उससे इस प्रकार प्रश्न किया:

"क्या तुम जादू-टोना सीखते हो, या तुमने मेरी आँखों पर जादू कर दिया है कि तुमने मेरे शत्रु वेदेह को मेरे हाथों से छुड़ा लिया?"

यह सुनकर उस महान प्राणी ने कहा: "महाराज, मैं जादू जानता हूँ, क्योंकि जिन बुद्धिमान पुरुषों ने जादू सीखा है, वे खतरे के समय स्वयं को और दूसरों को भी बचाते हैं।"

"हे महाराज, ज्ञानी पुरुष इस संसार में जादू सीखते हैं; वे स्वयं को उद्धार दिलाते हैं, ज्ञानी पुरुष सलाह से परिपूर्ण होते हैं। मेरे पास ऐसे युवक हैं जो बाधाओं को तोड़ने में निपुण हैं; जिस मार्ग से उन्होंने मुझे बनाया, उसी मार्ग से वेदेह मिथिला चला गया है।"

इससे संकेत मिला कि वह सजी हुई सुरंग से गया था; इसलिए राजा ने कहा, "यह भूमिगत मार्ग क्या है?" और इसे देखने की इच्छा व्यक्त की। महान सत्ता ने उसकी नज़र से समझ लिया कि वह यही देखना चाहता है, और उसे दिखाने की पेशकश की।

"हे राजा, आओ देखो, एक अच्छी तरह से बनी सुरंग, हाथियों या घोड़ों, रथों या पैदल सैनिकों के लिए पर्याप्त बड़ी, अच्छी तरह से प्रकाशित, एक अच्छी तरह से निर्मित सुरंग।"

फिर उन्होंने आगे कहा, “महाराज, मेरे ज्ञान से निर्मित इस सुरंग को देखिए: यह ऐसी चमकीली है मानो इसमें सूर्य और चंद्रमा उदय हो रहे हों, अस्सी बड़े दरवाजों और चौंसठ छोटे दरवाजों से सुशोभित, एक सौ एक शयनकक्षों और सैकड़ों दीपक-कुंडों से सुसज्जित; मेरे साथ आनंद और प्रसन्नता से आइए और अपने अंगरक्षकों के साथ उपकारी नगर में प्रवेश कीजिए।” इन शब्दों के साथ उन्होंने नगर का द्वार खुलवा दिया; और राजा एक सौ एक राजकुमारों के साथ अंदर आ गए। महापुरुष ऊपरी मंजिल से नीचे उतरे, राजा को प्रणाम किया और उन्हें उनके सेवकों के साथ सुरंग में ले गए। जब राजा ने इस सुरंग को देवताओं (देवदूतों) के सजे-धजे नगर के समान देखा, तो उन्होंने बोधिसत्व की स्तुति की।

"जिस वेदेह के घर या राज्य में आप जैसे बुद्धिमान पुरुष हों, महोसाध, उसके लिए यह कोई छोटी उपलब्धि नहीं है!"

तब उस महान सत्ता ने उन्हें एक सौ एक शयनकक्षों के बारे में समझाया: एक का द्वार खुलता तो सभी खुल जाते, और एक बंद होता तो सभी बंद हो जाते। राजा पहले सुरंग को देखते हुए अंदर गए, फिर ज्ञानी पुरुष उनके पीछे गए; सभी सैनिक भी सुरंग में प्रवेश कर गए। लेकिन जब ज्ञानी पुरुष को पता चला कि राजा सुरंग से बाहर आ गए हैं, तो उन्होंने एक हैंडल तक जाकर सुरंग का द्वार बंद कर दिया, जिससे बाकी लोग बाहर नहीं आ सके: तब अस्सी बड़े द्वार, चौंसठ छोटे द्वार, एक सौ एक शयनकक्षों के द्वार और सैकड़ों दीपक-कुंडों के द्वार सब एक साथ बंद हो गए; और पूरी सुरंग नरक के समान अंधेरी हो गई। सभी सैनिक भयभीत हो गए।

अब उस महान प्राणी ने वह तलवार उठाई, जिसे उसने कल सुरंग में प्रवेश करते समय छिपाया था: वह ज़मीन से अठारह भुजाओं की ऊँचाई पर उछला, नीचे उतरा और राजा की भुजा पकड़कर तलवार लहराई, और उसे डराते हुए चिल्लाया—"महाराज, भारत के सभी राज्य किसके हैं?" "आपके, हे ज्ञानी महाराज! मुझे छोड़ दीजिए!" राजा ने उत्तर दिया, "महोदय, भयभीत न हों। मैंने आपको मारने की इच्छा से तलवार नहीं उठाई, बल्कि अपनी बुद्धिमत्ता दिखाने के लिए उठाई है।" फिर उसने अपनी तलवार राजा को सौंप दी, और जब राजा ने उसे ले लिया, तो दूसरे ने कहा, "यदि आप मुझे मारना चाहते हैं, महाराज, तो मुझे इसी तलवार से अभी मार दीजिए; यदि आप मुझे छोड़ना चाहते हैं, तो छोड़ दीजिए।" "हे ज्ञानी महाराज," उसने उत्तर दिया, "मैं आपको सुरक्षा का आश्वासन देता हूँ, भयभीत न हों।" इस प्रकार तलवार पकड़े हुए, दोनों ने पूरी ईमानदारी से मित्रता स्थापित की। तब राजा ने बोधिसत्व से कहा, "हे ज्ञानी महाराज, आपकी बुद्धिमत्ता को देखते हुए, आप राज्य पर कब्ज़ा क्यों नहीं कर लेते?" "महाराज, अगर मैं चाहता तो आज ही भारत के सारे राज्य जीत लेता और सारे राजाओं को मार डालता; परन्तु बुद्धिमान का काम दूसरों को मारकर यश प्राप्त करना नहीं है।" "महाराज, बहुत से लोग संकट में हैं, बाहर निकलने में असमर्थ हैं; सुरंग का द्वार खोल दीजिए और उनकी जान बचा लीजिए।" उन्होंने द्वार खोल दिया: पूरी सुरंग प्रकाश से जगमगा उठी, लोगों को राहत मिली, सारे राजा अपने-अपने सेवकों के साथ बाहर आए और ऋषि के पास पहुँचे, जो राजा के साथ विशाल प्रांगण में खड़े थे। तब उन राजाओं ने कहा: "महाराज, आपने हमारी जान बचाई है; अगर द्वार थोड़ी देर और बंद रहता तो सब वहीं मर जाते।" "हे मेरे स्वामियों, यह पहली बार नहीं है जब मैंने आपकी जान बचाई है।" "कब, महाराज?" "क्या आपको याद है जब हमारे शहर को छोड़कर भारत के सारे राज्य जीत लिए गए थे, और जब आप विजय का प्याला पीने के लिए उत्तरा पंचाल के उद्यान में गए थे?" "जी महाराज।" “तब इस राजा ने केवट्टा के साथ मिलकर दुष्टतापूर्ण तरीके से भोजन और पेय में विष मिला दिया था और तुम्हारी हत्या करने की योजना बनाई थी; परन्तु मैं नहीं चाहता था कि तुम मेरे सामने इस तरह कष्ट सहो; इसलिए मैंने अपने आदमियों

को भेजा और उन्होंने सारे बर्तन तोड़ दिए, उनकी योजना को विफल कर दिया और तुम्हें जीवनदान दिया।" वे सब भयभीत होकर कुलानी से पूछने लगे, "क्या यह सच है, महाराज?" "जी हाँ, मैंने जो किया वह केवट्टा की सलाह पर ही किया; ऋषि सत्य कहते हैं।" तब वे सब उस महान पुरुष को गले लगाकर बोले, "हे ज्ञानी, आप हम सबके मोक्षदाता (निर्वाण) हैं, आपने हमारे जीवन को बचाया है।" सबने आदरपूर्वक उन्हें आभूषण भेंट किए। ऋषि ने राजा से कहा, "भयभीत न हों, महाराज; गलती एक दुष्ट मित्र के साथ संगति में थी। राजाओं से क्षमा मांगिए।" राजा ने कहा, "मैंने यह काम एक बुरे आदमी के कारण किया था: यह मेरी गलती थी; मुझे क्षमा कीजिए, मैं फिर कभी ऐसा नहीं करूंगा।" उन्हें क्षमा मिल गई; उन्होंने एक-दूसरे के सामने अपनी गलतियों को स्वीकार किया और मित्र बन गए। तब राजा ने हर प्रकार के भोजन, इत्र और मालाओं की प्रचुर मात्रा में मंगवाई, और वे सब सात दिनों तक सुरंग में आनंद लेते रहे।और उसने नगर में प्रवेश किया और उस महान सत्ता का बहुत सम्मान किया; और एक सौ एक राजकुमारों से घिरे राजा ने एक विशाल सिंहासन पर विराजमान होकर ऋषि को अपने दरबार में रखने की इच्छा से कहा,

"सहयोग करो, सम्मान करो, भोजन और वेतन का दुगुना भत्ता दो और अन्य महान वरदान मैं देता हूँ; इच्छानुसार खाओ और आनंद लो: लेकिन वेदेह के पास वापस मत जाओ; वह तुम्हारे लिए क्या कर सकता है?"

लेकिन ऋषि ने इन शब्दों में अपनी बात समाप्त की:

"जब कोई लाभ के लिए अपने संरक्षक, अपने स्वामी को त्याग देता है, तो यह स्वयं के लिए और दूसरे के लिए भी कलंक है। जब तक वेदेह जीवित है, मैं किसी और का आदमी नहीं बन सकता; जब तक वेदेह रहता है, मैं किसी और के राज्य में नहीं रह सकता।"

तब राजा ने उससे कहा, "जी, जब आपके राजा देवत्व प्राप्त कर लें, तो मुझसे वादा कीजिए कि आप यहाँ आएंगे।" "यदि मैं जीवित रहा, तो अवश्य आऊंगा, महाराज।" इस प्रकार राजा ने सात दिनों तक उसका बहुत सम्मान किया, और उसके बाद जब वह विदा लेने गया, तो उसने एक श्लोक पढ़ा और उसे यह और वह देने का वादा किया:

"मैं तुम्हें एक हजार निक्खा सोना, काशी में अस्सी गाँव, चार सौ दासियाँ और सौ पत्नियाँ देता हूँ। अपनी सारी सेना लेकर शांति से जाओ, महोसाधा।"

और उसने उत्तर दिया: "महाराज, आप अपने परिवार की चिंता न करें। जब मेरे राजा अपने देश लौटे, तो मैंने उनसे कहा कि वे रानी नंदा को अपनी माता के समान और पंचलचंदा को अपने छोटे भाई के समान मानें, और मैंने आपकी पुत्री का विवाह उनसे जल छिड़काव की विधि से संपन्न कराया। मैं शीघ्र ही आपकी माता, पत्नी और पुत्र को वापस भेज दूँगा।" "अच्छा!" राजा ने कहा, और अपनी पुत्री के लिए दहेज, दास-दासियाँ, वस्त्र और आभूषण, सोना और कीमती धातु, सजे हुए हाथी, घोड़े और रथ दिए। फिर उन्होंने सेना को आदेश दिया:

"हाथियों और घोड़ों को दुगुनी मात्रा में भोजन दिया जाए, रथ चालकों और पैदल सैनिकों को भोजन और पेय से संतुष्ट किया जाए।"

इतना कहकर उन्होंने ऋषि को इन शब्दों के साथ विदा किया:

"जाइए, महाराज, हाथियों, घोड़ों, रथों और पैदल सैनिकों को साथ लेकर; राजा वेदेह आपको मिथिला वापस ले जाएं।"

इस प्रकार उन्होंने ऋषि को बड़े सम्मान के साथ विदा किया। एक सौ एक राजाओं ने भी उस महानुभाव का आदर किया और उन्हें बहुमूल्य उपहार दिए। उनके साथ सेवा कर रहे जासूसों ने ऋषि को घेर लिया। वे एक विशाल दल के साथ रवाना हुए; और रास्ते में उन्होंने उन गांवों से कर वसूलने के लिए लोगों को भेजा जो राजा चुलानी ने उन्हें सौंपे थे। फिर वे वेदेह राज्य पहुंचे।

सेनाक ने रास्ते में एक आदमी को तैनात किया था, ताकि वह देखे कि राजा चुलानी आते हैं या नहीं, और किसी के आने की सूचना उन्हें दे। उसने तीन मील (4.23 किमी) की दूरी पर महापुरुष को देखा और लौटकर बताया कि ऋषि एक विशाल दल के साथ लौट रहे हैं। यह खबर लेकर वह महल गया। राजा ने भी ऊपरी मंजिल की खिड़की से बाहर झाँकते हुए उस विशाल समूह को देखा और भयभीत हो गया। "महापुरुष का दल तो छोटा है, यह तो बहुत बड़ा है: क्या स्वयं चुलानी आए हैं?" उसने यह प्रश्न इस प्रकार पूछा:

"हाथी, घोड़े, रथ, पैदल सैनिक, एक विशाल सेना दिखाई दे रही है, चार भागों में बंटी हुई, देखने में भयानक; इसका क्या अर्थ है, सज्जनों?"

सेनाका ने उत्तर दिया:

"सबसे बड़ी खुशी तो वह है जो आप देख रहे हैं, महाराज: महोसाधा अपने पूरे दल के साथ सुरक्षित है।"

इस पर राजा ने कहा, "सेनाका, बुद्धिमान व्यक्ति की सेना तो छोटी है, यह तो बहुत बड़ी है।" "महाराज, राजा कुलानी इससे प्रसन्न हुए होंगे, इसीलिए उन्होंने यह सभा इसे सौंपी होगी।" राजा ने ढोल बजाकर पूरे शहर में घोषणा की:

"ज्ञानी व्यक्ति के आगमन के स्वागत के लिए शहर को सजाया जाए।"

नगरवासियों ने आज्ञा का पालन किया। वह ज्ञानी व्यक्ति नगर में प्रवेश करके राजा के महल में पहुँचा; तब राजा उठा, उसने उसे गले लगाया और अपने सिंहासन पर लौटकर उससे मधुरता से बातें कीं।

"जैसे चार आदमी एक शव को कब्रिस्तान में छोड़ देते हैं, वैसे ही हम तुम्हें कामपिलिया राज्य में छोड़कर लौट आए। लेकिन तुमने—किस रंग से, किस साधन से, या किस चतुराई से अपनी जान बचाई?"

उस महान सत्ता ने उत्तर दिया:

"वेदेह, मैंने एक उद्देश्य से दूसरे पर विजय प्राप्त की; हे योद्धा, मैंने योजना से भी बढ़कर योजना बनाई; और मैंने राजा को उसी प्रकार घेर लिया जैसे सागर भारत को घेरे रहता है।"

इससे राजा प्रसन्न हुए। फिर दूसरे ने उन्हें राजा कुलानी द्वारा दिए गए उपहार के बारे में बताया:

"मुझे एक हजार निक्खा सोना दिया गया, और काशी में अस्सी गाँव, चार सौ दासी औरतें, और सौ पत्नियाँ दी गईं, और मैं अपनी पूरी सेना के साथ सुरक्षित घर लौट आया हूँ।"

तब राजा अत्यंत प्रसन्न और आनंदित होकर उस महान सत्ता के गुणों की प्रशंसा में यह भक्तिपूर्ण भजन गाया:

"सच्ची खुशी बुद्धिमानों के साथ रहने से मिलती है। जैसे पिंजरे में बंद पक्षी और जाल में फंसी मछलियाँ आज़ाद हो जाती हैं, वैसे ही महोषधा ने हमें तब आज़ाद किया जब हम अपने शत्रुओं के चंगुल में थे।"

सेनाका ने उसे इस प्रकार उत्तर दिया:

"फिर भी, महाराज, बुद्धिमान व्यक्ति के साथ सुख होता है। जैसे पिंजरे से पक्षी और जाल से मछलियाँ मुक्त हो जाती हैं, वैसे ही महोषधा ने हमें तब मुक्त किया जब हम अपने शत्रुओं के हाथों में थे।"

तब राजा ने पूरे शहर में उत्सव का ढोल बजाना शुरू किया: "सात दिनों तक उत्सव मनाया जाए, और जो भी मेरे प्रति सद्भावना रखते हैं, वे इस ज्ञानी व्यक्ति का आदर और सेवा करें।" गुरु ने इसका इस प्रकार अर्थ समझाया:

"सभी प्रकार के वीणा, ढोल और तबले बजाएं, मगध के शंख गूंजें, ढोल हर्षोल्लास से बजें।"

आम तौर पर नगरवासी और ग्रामीण लोग, ऋषि का सम्मान करने के लिए उत्सुक होकर, घोषणा सुनकर बड़े हर्षोल्लास से झूम उठे। गुरु ने इसका स्पष्टीकरण इस प्रकार दिया:

"स्त्रियों और दासियों, वैश्य और ब्राह्मण पत्नियों ने ऋषि के लिए भरपूर भोजन और पेय पदार्थ लाए। हाथी चालक, जलरक्षक, सारथी, पैदल सैनिक, सभी ने ऐसा ही किया; और देश-गाँवों से एकत्रित सभी लोगों ने भी ऐसा ही किया। लोग ऋषि के लौटने से प्रसन्न थे, और उनके स्वागत में शॉल हवा में लहराए गए।"

उत्सव के अंत में, महान पुरुष महल में गए और बोले, "महाराज, राजा चुलानी की माता, पत्नी और पुत्र को तुरंत वापस भेज दिया जाए।" "बहुत अच्छा, मेरे पुत्र, उन्हें वापस भेज दो।" इस प्रकार उन्होंने उन तीनों का पूर्ण आदर किया और अपने साथ आए समूह का भी स्वागत किया; इस प्रकार उन्होंने उन तीनों को अपने विशेष सैनिकों के साथ वापस भेजा, और राजा द्वारा उन्हें दी गई सौ पत्नियों और चार सौ दासियों को रानी नंदा के साथ भेजा, और अपने साथ आए दल को भी भेजा। जब यह विशाल दल उत्तरा पंचाल नगर पहुँचा, तो राजा ने अपनी माता से पूछा, "क्या राजा वेदेह ने आपके साथ अच्छा व्यवहार किया, मेरी माता?" "मेरे पुत्र, तुम क्या कह रहे हो? उन्होंने मेरे साथ ऐसा व्यवहार किया मानो मैं कोई देवी हूँ।" तब उन्होंने बताया कि रानी नंदा के साथ माता जैसा और पंचालचंद के साथ छोटे भाई जैसा व्यवहार किया गया था। इससे राजा अत्यंत प्रसन्न हुए और उन्होंने एक बहुमूल्य उपहार भेजा; और तब से दोनों मित्रता और सौहार्दपूर्ण जीवन व्यतीत करने लगे।

पंचालचंडी राजा की बहुत प्रिय थीं; और दूसरे वर्ष में उन्होंने एक पुत्र को जन्म दिया। दसवें वर्ष में राजा वेदेह का देहांत हो गया। बोधिसत्व ने उनके लिए राजसी छत्र उठाया और उनके दादा, राजा चुलानी के पास जाने की अनुमति मांगी। बालक ने कहा, "हे महाराज, मुझे बचपन में मत छोड़िए; मैं आपका पिता तुल्य आदर करूंगा।" पंचालचंडी ने कहा, "हे महाराज, यदि आप चले गए तो हमारी रक्षा करने वाला कोई नहीं होगा; आप मत जाइए।" लेकिन उन्होंने उत्तर दिया, "मैंने वचन दिया है; मेरे पास जाने के अलावा कोई चारा नहीं है।" अतः जनता के विलाप के बीच वे अपने सेवकों के साथ उत्तरा पंचाल नगर में आ गए। उनके आगमन की सूचना पाकर राजा उनसे मिलने आए और भव्य समारोहों के साथ उन्हें नगर में प्रवेश कराया, उन्हें एक बड़ा घर दिया और पहले दिए गए अस्सी गांवों के अतिरिक्त एक और उपहार दिया; और उन्होंने उस राजा की सेवा की। उस समय भेरी नामक एक धर्मपरायण स्त्री महल में नियमित रूप से भोजन करती थीं; वह बुद्धिमान और विद्वान थीं, और उन्होंने इससे पहले कभी उस महान सत्ता को नहीं देखा था; रानी नंदा को खबर मिली थी कि ज्ञानी महोसाधा राजा की सेवा कर रहे हैं। राजा ने भी उन्हें पहले कभी नहीं देखा था, लेकिन उन्होंने सुना था कि भेरी नाम की एक धर्मपरायण स्त्री महल में भोजन करती हैं। रानी नंदा बोधिसात से बहुत नाराज़ थीं, क्योंकि उन्होंने उन्हें उनके पति के प्रेम से वंचित कर दिया था और उन्हें परेशान किया था। इसलिए उन्होंने अपनी पाँच भरोसेमंद स्त्रियों को बुलवाया और कहा, "इस ज्ञानी पुरुष की कोई गलती ढूंढो और राजा से उसका झगड़ा करवाने की कोशिश करो।" वे सब मिलकर उनके विरुद्ध कोई अवसर ढूंढने लगीं। एक दिन भोजन करने के बाद जब वह धर्मपरायण स्त्री जा रही थीं, तो उन्होंने राजा से मिलने जाते हुए बोधिसात को आँगन में देखा। उन्होंने रानी को प्रणाम किया और वहीं रुक गए। रानी ने सोचा, "ये तो ज्ञानी पुरुष हैं: मैं देखूंगी कि ये ज्ञानी हैं या नहीं।" इसलिए उन्होंने हाथ के इशारे से उनसे एक प्रश्न पूछा: बोधिसात की ओर देखते हुए उन्होंने अपना हाथ खोला। उनका इरादा यह जानने का था कि क्या राजा दूसरे देश से लाए गए इस ज्ञानी पुरुष का ठीक से ख्याल रखते हैं या नहीं। जब बोधिसात ने देखा कि वह इशारे से उनसे प्रश्न पूछ रही हैं, तो उन्होंने मुट्ठी भींचकर उत्तर दिया: उनका तात्पर्य था, "महामहिम, राजा मुझे एक प्रतिज्ञा पूरी करने के लिए यहाँ लाए हैं, और अब वे अपनी मुट्ठी कसकर बंद रखते हैं और मुझे कुछ नहीं देते।" वह समझ गईं; और अपना हाथ आगे बढ़ाकर उन्होंने अपना सिर सहलाया, मानो कह रही हों, "हे ज्ञानी, यदि आप अप्रसन्न हैं, तो आप मेरी तरह तपस्वी क्यों नहीं बन जाते?" इस पर महापुरुष ने अपना पेट सहलाया, मानो कह रहे हों, "महामहिम, मुझे बहुतों का भरण-पोषण करना है, और इसीलिए मैं तपस्वी नहीं बनता।" इस मौन प्रश्न के बाद वह अपने जीवन में लौट गईं, और महापुरुष ने उन्हें प्रणाम किया और राजा के पास चले गए। अब रानी की विश्वासपात्रियों ने यह सब एक खिड़की से देखा; और राजा के सामने आकर उन्होंने कहा, "महाराज, महोसाधा ने तपस्वी भेरी के साथ मिलकर आपके राज्य पर कब्जा करने की साजिश रची है, और वह आपका शत्रु है।" इस प्रकार उन्होंने उन पर निंदा की।"तुमने क्या सुना या देखा है?" राजा ने पूछा। उन्होंने कहा, "महाराज, जब तपस्वी भोजन के बाद बाहर जा रही थी, तो उसने महापुरुष को देखकर अपना हाथ खोला; मानो कोई कह रहा हो, "क्या तुम राजा को हथेली या खलिहान की तरह कुचलकर राज्य पर कब्जा नहीं कर सकते?" और महोसाधा ने मुट्ठी भींच ली, मानो कोई तलवार पकड़े हो, मानो कोई कह रहा हो, "कुछ ही दिनों में मैं उसका सिर काट दूंगा और उसे अपने वश में कर लूंगा।" उसने अपने सिर को हाथ से रगड़कर इशारा किया, "उसका सिर काट दो"; महापुरुष ने अपने पेट को रगड़कर इशारा किया, "मैं उसे दो टुकड़ों में काट दूंगा।" महाराज, सावधान रहें! महोसाधा को मृत्युदंड दिया जाना चाहिए।" यह सुनकर राजा ने सोचा, "मैं इस बुद्धिमान व्यक्ति को हानि नहीं पहुंचा सकता; मैं उस तपस्वी से प्रश्न करूँगा।" अगले दिन, भोजन के समय, वह आया और पूछा, "महोदया, क्या आपने बुद्धिमान महोसाधा को देखा है?" "जी महाराज, कल, जब मैं भोजन के बाद बाहर जा रही थी।" "क्या आप दोनों के बीच कोई बातचीत हुई?" "बातचीत? नहीं; लेकिन मैंने उनकी बुद्धिमत्ता के बारे में सुना था, और इसे परखने के लिए मैंने मूक संकेतों से, हाथ बंद करके, उनसे पूछा कि क्या राजा उनके प्रति उदार थे या कंजूस, क्या उन्होंने उनके साथ दयालुता का व्यवहार किया या नहीं। उन्होंने मुट्ठी बंद कर ली, जिसका अर्थ था कि उनके स्वामी ने उन्हें एक वादा पूरा करने के लिए यहाँ भेजा था, और अब उन्हें कुछ नहीं दे रहे थे। फिर मैंने अपना सिर खुजलाया, यह जानने के लिए कि यदि वे संतुष्ट नहीं थे तो उन्होंने तपस्वी क्यों नहीं बन गए; उसने अपने पेट पर हाथ फेरा, जिसका अर्थ था कि उसे बहुतों का पेट भरना था, बहुतों का पेट भरना था, इसलिए वह संन्यासी नहीं बना। "और क्या महोसाधा एक बुद्धिमान व्यक्ति हैं?" "जी हाँ, महाराज: सारी पृथ्वी पर उनके समान बुद्धिमान कोई नहीं है।" उसका वृत्तांत सुनकर राजा ने उसे विदा कर दिया। उसके जाने के बाद ऋषि राजा से मिलने आए; और राजा ने उनसे पूछा, "क्या आपने संन्यासी भेरी को देखा है?" "जी हाँ, महाराज, मैंने उन्हें कल जाते हुए देखा था, और उन्होंने मुझे मूक संकेतों से एक प्रश्न पूछा, और मैंने तुरंत उनका उत्तर दिया।" और उन्होंने वही कहानी सुनाई जो भेरी ने सुनाई थी। राजा ने उस दिन अपनी इच्छा के अनुसार उन्हें सेनापति का पद दिया और उन्हें पूर्ण प्रभार सौंप दिया। उनका यश महान था, राजा के बाद दूसरे स्थान पर। उन्होंने सोचा: "राजा ने मुझे अचानक ही अत्यधिक प्रसिद्धि दे दी है; राजा तो ऐसा तब भी करते हैं जब वे किसी को मारना चाहते हैं। मान लीजिए मैं राजा की परीक्षा लेकर देखूँ कि क्या वह मेरे प्रति सद्भावना रखते हैं या नहीं।" यह बात और कोई नहीं जान पाएगा; लेकिन तपस्वी भेरी ज्ञान से परिपूर्ण हैं, और वे कोई न कोई रास्ता ज़रूर निकाल लेंगी।" इसलिए वे कुछ फूल और सुगंध लेकर तपस्वी के पास गए और उन्हें प्रणाम करने के बाद बोले, "महोदया, आपने राजा को मेरे गुणों के बारे में बताया था, इसलिए राजा ने मुझे बहुत सारे शानदार उपहार दिए हैं; लेकिन क्या वे ऐसा ईमानदारी से कर रहे हैं या नहीं, यह मुझे नहीं पता। अच्छा होगा यदि आप मेरे लिए राजा के मन का पता लगा सकें।" उन्होंने ऐसा करने का वादा किया; और अगले दिन, जब वे महल जा रही थीं,जल-राक्षस दकाराक्षस का प्रश्न उसके मन में आया। तब उसे यह विचार आया: "मुझे जासूस की तरह नहीं बनना चाहिए, बल्कि प्रश्न पूछने का अवसर ढूँढ़ना चाहिए और यह पता लगाना चाहिए कि क्या राजा उस ज्ञानी व्यक्ति के प्रति सद्भावना रखते हैं।" अतः वह चली गई। भोजन के बाद वह चुपचाप बैठ गई, और राजा ने उसे प्रणाम करके एक तरफ बैठ गए। तब

उसने सोचा, "यदि राजा ऋषि के प्रति दुर्भावना रखते हैं, और प्रश्न पूछे जाने पर वे अनेक लोगों के सामने अपनी दुर्भावना प्रकट करते हैं, तो यह ठीक नहीं होगा; मैं उनसे एकांत में प्रश्न पूछूँगी।" उसने कहा, "महाराज, मैं आपसे एकांत में बात करना चाहती हूँ।" राजा ने अपने सेवकों को विदा कर दिया। उसने कहा, "मैं महाराज से एक प्रश्न पूछना चाहती हूँ।" "पूछिए, महोदया, और यदि मुझे उत्तर पता होगा तो मैं उत्तर दूँगा।" तब उसने दकाराक्षस के प्रश्न का पहला श्लोक सुनाया।

"यदि आप सात लोग समुद्र में यात्रा कर रहे हों, और मानव बलि की तलाश में कोई राक्षस जहाज पर कब्जा कर ले, तो आप उन्हें किस क्रम में सौंपेंगे और खुद को जल-राक्षस से बचाएंगे?"

राजा ने पूरी ईमानदारी से एक और छंद में उत्तर दिया:

"सबसे पहले मैं अपनी माँ को, फिर अपनी पत्नी को, फिर अपने भाई को, चौथे स्थान पर अपने मित्र को, पाँचवें स्थान पर अपने ब्राह्मण को, छठे स्थान पर स्वयं को त्याग दूँगा, लेकिन मैं महोसाधा को कभी नहीं त्यागूँगा।"

इस प्रकार तपस्वी ने महान सत्ता के प्रति राजा की सद्भावना का पता लगाया; परन्तु इससे उनके गुणों का प्रकटीकरण नहीं हुआ, इसलिए उन्होंने कुछ और सोचा: "एक बड़ी सभा में मैं इन अन्य लोगों के गुणों की प्रशंसा करूंगी, और राजा इसके बदले में ज्ञानी पुरुष के गुणों की प्रशंसा करेंगे; इस प्रकार ज्ञानी पुरुष के गुण आकाश में चमकते चंद्रमा के समान स्पष्ट हो जाएंगे।" अतः उन्होंने महल के सभी निवासियों को एकत्रित किया, और उनकी उपस्थिति में वही प्रश्न पूछा और वही उत्तर प्राप्त किया; फिर उन्होंने कहा, "महाराज, आप कहते हैं कि आप पहले अपनी माता को अर्पित करेंगे: परन्तु माता का बहुत गुण होता है, और आपकी माता अन्य माताओं के समान नहीं हैं, वे अत्यंत उपयोगी हैं।" और उन्होंने कुछ छंदों में उनके गुणों का वर्णन किया।

"उसने तुम्हारा पालन-पोषण किया, तुम्हें बड़ा किया, और लंबे समय तक तुम्हारे प्रति दयालु रही। जब चम्भी ने तुम्हें अपमानित किया, तो उसने बुद्धिमत्ता से तुम्हारा भला देखा और तुम्हारी जगह एक नकली को रखकर तुम्हें हानि से बचाया। ऐसी माँ, जिसने तुम्हें जीवन दिया, तुम्हारी अपनी माँ जिसने तुम्हें अपने गर्भ में धारण किया, भला तुम उसे जल-राक्षस के हवाले कैसे कर सकते हो?"

इस पर राजा ने उत्तर दिया, "मेरी माता के अनेक गुण हैं, और मैं उन पर अपने अधिकार को स्वीकार करता हूँ, परन्तु मेरे गुण तो उनसे भी कहीं अधिक हैं," और फिर उन्होंने कुछ छंदों में उनकी कमियों का वर्णन किया:

"एक युवती की तरह वह ऐसे गहने पहनती है जिनका उसे उपयोग नहीं करना चाहिए, वह द्वारपालों और पहरेदारों का समय से पहले उपहास करती है, बिना पूछे प्रतिद्वंद्वी राजाओं को संदेश भेजती है; और इन दोषों के लिए मैं उसे जल-राक्षस को सौंप देना चाहता हूँ।"

"ठीक है महाराज; फिर भी आपकी पत्नी में बहुत गुण हैं," और उसने अपने गुणों का वर्णन इस प्रकार किया:

वह स्त्रियों में श्रेष्ठ है, वह अत्यंत मधुर वाणी वाली, समर्पित, गुणी है, जो तुम्हारी परछाई की तरह तुमसे चिपकी रहती है, क्रोध न करने वाली, समझदार, बुद्धिमान है, जो तुम्हारा भला देखती है: भला तुम अपनी पत्नी को जल-राक्षस के हवाले क्यों करोगे?

उन्होंने उसकी कमियों का वर्णन किया:

अपनी कामुक मोहकता से उसने मुझे बुरी शक्तियों के वश में कर लिया है, और वह अपने बेटों के लिए वह सब मांगती है जो उसे नहीं मांगना चाहिए। आवेश में आकर मैं उसे अनेकों उपहार दे देता हूँ; मैं वह सब त्याग देता हूँ जिसे देना बहुत कठिन होता है, और बाद में मुझे घोर पश्चाताप होता है: उस गलती के लिए मैं अपनी पत्नी को जल-राक्षस को सौंप देना चाहता हूँ।

तपस्वी ने कहा, "ऐसा ही हो: लेकिन तुम्हारा छोटा भाई राजकुमार तिखिनमंती तुम्हारे लिए उपयोगी है; तुम उसे क्या दोष देना चाहते हो?"

"जिसने लोगों को समृद्धि दी, और जब तुम विदेश में रह रहे थे तब तुम्हें वापस घर ले आया, जिस पर अपार धन का कोई प्रभाव नहीं पड़ा, असाधारण धनुर्धर और वीर, तिखिनमंती: तुम किस दोष के लिए अपने भाई को जल-राक्षस के हवाले करोगे?"

राजा ने अपनी गलती का वर्णन किया:

वह सोचता है, "मैंने लोगों को समृद्धि दी, जब वह विदेश में रह रहा था तो मैं उसे वापस घर लाया, अपार धन का मुझ पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा, मैं एक असाधारण धनुर्धर और वीर हूँ, और सलाह देने में भी तेज हूँ, मेरे कारण ही वह राजा बना।" वह अब मेरी सेवा में नहीं आता, महोदया, जैसा वह पहले आता था; यही वह दोष है जिसके लिए मैं अपने भाई को जल-राक्षस को सौंप दूँगा।

तपस्वी ने कहा, "तुम्हारे भाई की गलती तो यही थी: लेकिन राजकुमार धनुशेख तुम्हारे प्रति प्रेम में समर्पित हैं और बहुत उपयोगी हैं"; और उन्होंने उनके गुणों का वर्णन किया।

"एक ही रात में तुम और धनुशेखव दोनों यहाँ पैदा हुए, दोनों को पंचाल कहा जाता था, मित्र और साथी: जीवन भर वह तुम्हारा अनुसरण करता रहा, तुम्हारा सुख-दुख उसका था, दिन-रात पूरी लगन और सावधानी से तुम्हारी सेवा करता रहा: भला तुम अपने मित्र को जल-राक्षस के हाथों क्यों सौंपोगे?"

तब राजा ने अपनी गलती का वर्णन किया:

"महोदया, जीवन भर वह मेरे साथ मौज-मस्ती करता रहा है, और आज भी उसी कारण से हद से ज़्यादा मनमानी करता है। अगर मैं अपनी पत्नी से चुपके से बात करता हूँ, तो वह बिना बुलाए और बिना बताए आ जाता है। उसे ज़रा सा भी मौका दे दो, वह बेशर्मी और बदतमीज़ी से पेश आता है। यही वह गलती है जिसके लिए मैं अपने दोस्त को जल-राक्षस को सौंप दूँगा।"

तपस्वी ने कहा, "उसकी गलती तो यही थी; लेकिन पुजारी आपके लिए बहुत उपयोगी है," और उसने उसके गुणों का वर्णन किया:

"वह चतुर है, सभी शकुनों और ध्वनियों को जानता है, संकेतों और सपनों में निपुण है, आने-जाने का ज्ञान रखता है, पृथ्वी, वायु और तारों में मौजूद सभी संकेतों को समझता है: भला जल-राक्षस के सामने ब्राह्मण का क्या दोष होगा?"

राजा ने अपनी गलती का स्पष्टीकरण दिया:

"भीड़ में भी वह मुझे खुली आँखों से घूरता है; इसलिए मैं इस सिकुड़ी हुई भौंहों वाले बदमाश को जल-राक्षस को सौंप दूँगा।"

तब तपस्वी ने कहा, "हे महाराज, आप कहते हैं कि आप जल-राक्षस को अपनी माता से आरंभ करते हुए ये पाँचों दे देंगे, और आप अपनी महान महिमा को ध्यान में रखे बिना बुद्धिमान महोषधा के लिए अपना प्राण दे देंगे: आपको उसमें क्या गुण दिखाई देता है?" और उसने ये श्लोक सुनाए:

"हे महाराज, आप अपने दरबारियों के बीच समुद्र से घिरे एक विशाल महाद्वीप में निवास करते हैं, जहाँ समुद्र ही आपकी रक्षा करने वाली दीवार है: पृथ्वी के स्वामी, एक शक्तिशाली साम्राज्य के स्वामी, विजयी, एकमात्र सम्राट, आपकी महिमा महान है। आपके पास सोलह हजार स्त्री हैं जो गहनों और आभूषणों से सजी हैं, सभी राष्ट्रों की स्त्रियाँ, दिव्य कन्याओं के समान तेजस्वी। इस प्रकार आपकी हर आवश्यकता पूरी होती है, हर इच्छा तृप्त होती है, आप सुख और आनंद में दीर्घ जीवन व्यतीत करते हैं। तो फिर किस कारण से आप ऋषि की रक्षा के लिए अपना बहुमूल्य प्राण बलिदान करते हैं?"

यह सुनकर उन्होंने उस बुद्धिमान व्यक्ति के गुणों की प्रशंसा में निम्नलिखित श्लोक पढ़े:

"महोदया, जब से महोसाधा मेरे पास आए हैं, मैंने इस दृढ़ पुरुष को कभी कोई छोटी सी भी गलती करते नहीं देखा। अगर मैं कभी उनसे पहले मर जाऊं, तो वे मेरे बेटों और पोतों को सुख देंगे। वे सब कुछ जानते हैं, अतीत और भविष्य। इस निष्पाप पुरुष को मैं जल-राक्षस के हवाले नहीं करूंगा।"

इस प्रकार इस जन्म का उचित अंत हुआ। तब तपस्वी ने सोचा: "ज्ञानी व्यक्ति के गुणों को प्रकट करना इतना ही काफी नहीं है; मैं उन्हें नगर के सभी लोगों को बताऊंगी, जैसे कोई समुद्र की सतह पर सुगंधित तेल छिड़कता है।" अतः राजा को अपने साथ लेकर वह महल से नीचे उतरी और महल के प्रांगण में एक आसन तैयार करके उन्हें वहाँ बैठाया; फिर लोगों को इकट्ठा करके उसने राजा से जल-राक्षस का प्रश्न फिर से शुरू से पूछा; और जब राजा ने ऊपर वर्णित अनुसार उत्तर दिया, तो उसने लोगों को इस प्रकार संबोधित किया:

"हे पंचाल गणो, चुलानी ने जो कहा है, उसे सुनो। ज्ञानी पुरुष की रक्षा के लिए वह अपना बहुमूल्य प्राण बलिदान कर देता है। अपनी माता, पत्नी, भाई, मित्र और स्वयं का प्राण भी पंचाल बलिदान करने को तैयार है। ज्ञान की शक्ति कितनी अद्‌भुत, कितनी चतुर और कितनी बुद्धिमान है, इस संसार में भलाई के लिए और परलोक में सुख के लिए।"

इसलिए, जैसे कोई खजाने के ढेर पर सबसे ऊँची चोटी रखता है, वैसे ही उसने महान सत्ता के गुणों के प्रदर्शन पर शिखर रखा।

जल-राक्षस का प्रश्न यहीं समाप्त होता है, और महान सुरंग की पूरी कहानी भी यहीं समाप्त होती है।

यह जन्म की पहचान है:

"उप्पलवन्नी भेरी थी, शुद्धोदन (बुद्ध के पिता और कपिलवस्तु के राजा) बुद्धिमान व्यक्ति के पिता थे, महामाया (बुद्ध की मृत जन्म देने वाली मां) उनकी मां थी, सुंदर बिंबा (बुद्ध की पत्नी) अमारा थी, आनंद तोता था, सारिपुत्र कुलानी था, महोषध दुनिया का स्वामी था: इस प्रकार जन्म को समझें। देवदत्त केवट्टा था, कुलनंदिका तलता थी, सुंदरी पंचालचंडी थी, यास्सिका रानी थी, अंबाथा कविंदा थी, पोट्टपाडा पुक्कुसा थी, पिलोतिका देविंदा थी, सक्का सेनाका थी, दित्थमंगलिका रानी उदुंबरा थी, कुंडली मयना पक्षी थी, और लालुदायि वेदेहा थी।"

टिपिटक >> सुत्त पिटक >> खुद्दक निकाय >> जातक >> **वेसंतरा-जातक**
***स्रोत**: ई.बी. कोवेल और डब्ल्यू.एच.डी. राउज़ द्वारा किए गए पुरातन अनुवाद से रूपांतरित।*

पिछला <<<<-----||-547-अंत ||

जातक क्रमांक 547
वेस्सन्तरा-जातक

"दस वरदान," इत्यादि। यह कहानी गुरु ने कपिलवस्तु (बुद्ध के पिता शुद्धोदन का राज्य) के पास बरगद के वन में रहते हुए, बारिश की बौछार के बारे में सुनाई थी।

जब परम पूज्य धर्मचक्र (निर्वाण/मोक्ष की ओर ले जाने वाला धर्ममार्ग) को घुमाते हुए गुरु बुद्ध उचित समय पर राजगृह नगर पहुँचे, जहाँ उन्होंने शीतकाल व्यतीत किया, और उनके साथ 20 हजार संत थे, तब उन्होंने कपिलवस्तु में प्रवेश किया। इस पर शाक्य (बुद्ध के वंश) के राजकुमार अपने वंश के मुखिया के दर्शन करने के लिए एकत्रित हुए। उन्होंने भगवान बुद्ध के निवास स्थान का निरीक्षण किया और कहा, "यह बरगद का वन कितना रमणीय है, इंद्र के योग्य है।" फिर उन्होंने इसकी सुरक्षा के लिए सभी आवश्यक व्यवस्थाएँ कीं; और सुगंधित फूलों के गुलदस्ते हाथों में लेकर उनका स्वागत करने के लिए तैयार होकर, उन्होंने सबसे पहले नगर के सभी छोटे लड़कों और लड़कियों को सर्वोत्तम वस्त्रों में भेजा, फिर राजकुमारों और राजकुमारियों को, और इन सभी ने स्वयं गुरु बुद्ध को सुगंधित फूलों और चूर्णों से आदर दिया, और भगवान बुद्ध को बरगद उद्यान तक ले गए; जहाँ भगवान बुद्ध ने 20 हजार संतों से घिरे हुए, अपने लिए निर्धारित स्थान पर विराजमान हुए। शाक्य वंश (बुद्ध का वंश) अभिमानी और हठी था; वे मन ही मन सोचते थे, "सिद्धार्थ हमसे छोटे हैं; वे हमारे छोटे भाई, हमारे भतीजे, हमारे पोते हैं," और उन्होंने छोटे राजकुमारों से कहा, "आप उन्हें प्रणाम कीजिए; हम आपके पीछे बैठेंगे।" जब वे वहाँ बिना प्रणाम किए बैठे रहे, तो भगवान बुद्ध ने उनके मन की मंशा को भांपते हुए मन में सोचा, "मेरा परिवार मुझे प्रणाम नहीं करता; अच्छा, मैं उन्हें ऐसा करने पर मजबूर करूँगा।" अतः उन्होंने अपने भीतर दिव्य शक्ति पर आधारित समाधि (सम्मोहन) की अवस्था उत्पन्न की, वायु में विलीन हो गए, और मानो अपने चरणों की धूल उनके सिर पर झाड़ते हुए, गाँठदार आम के वृक्ष के नीचे हुए दो चमत्कारों के समान एक चमत्कार किया। इस चमत्कार को देखकर राजा (शुद्धोदन, गौतम बुद्ध के पिता) ने कहा, "हे भगवान, आपके जन्म के दिन जब मैंने आपके चरणों को ब्राह्मण कालदेवल के सिर पर रखा हुआ देखा, जो आपको प्रणाम करने आए थे, तब मैंने भी आपको प्रणाम किया था, और यह पहली बार था। हल चलाने के उत्सव के दिन जब आप एक रसभरी के पेड़ की छाया में राजसी आसन पर बैठे थे, तब जब मैंने देखा कि पेड़ की छाया हिल नहीं रही है, तब मैंने आपके चरणों को प्रणाम किया था; और यह दूसरी बार था। और अब फिर से, मैं एक ऐसा चमत्कार देख रहा हूँ जो मैंने पहले कभी नहीं देखा, और आपके चरणों को प्रणाम कर रहा हूँ: यह तीसरी बार है।" लेकिन जब राजा ने इस प्रकार प्रणाम किया, तो एक भी शाक्यों शांत नहीं बैठ सका और संयम नहीं रख सका, सभी ने एक साथ प्रणाम किया।

भगवान बुद्ध ने अपने परिवार से श्रद्धापूर्वक प्रणाम करने के बाद आकाश से नीचे आकर निर्धारित आसन पर विराजमान हुए। उनके बैठते ही उनके परिवार के सभी सदस्य ज्ञानी हो गए और शांति से बैठ गए। तभी एक विशाल बादल उठा और मूसलाधार वर्षा हुई: लाल रंग की वर्षा ज़ोरदार आवाज़ के साथ बरसी। जो भी भीगना चाहते थे, वे भीग गए, परन्तु जो नहीं भीगना चाहते थे, उन पर एक बूँद भी नहीं गिरी। यह देखकर सभी चकित रह गए और एक दूसरे से कहने लगे, "देखो, यह कितना अद्‌भुत है! कितना चमत्कार है! बुद्धों की शक्ति को, जिनके परिवार पर ऐसी वर्षा हो रही है!" यह सुनकर बुद्ध ने कहा, "हे भिक्षुओं, यह पहली बार नहीं है कि मेरे परिवार पर इतनी मूसलाधार वर्षा हुई है।" फिर उनके अनुरोध पर उन्होंने अतीत की एक कथा सुनाई।

एक समय की बात है, शिवी राज्य के जेतुत्तरा नगर में शिवी नामक एक राजा का राज्य था। उनका एक पुत्र था जिसका नाम संजय था। जब पुत्र वयस्क हुआ, तो राजा ने राजा मद्दा की पुत्री फुसती को उनके पास लाया और राज्य उन्हें सौंप दिया, तथा फुसती को उनकी रानी बना दिया। संसार से उनका पूर्व संबंध इस प्रकार था: इस युग के इक्यावनवें युग में, विपस्सी (पूर्व में बुद्ध) नामक एक गुरु का जन्म हुआ। जब वे बंधुमती नगर के निकट खेमा के हिरण-जलाशय में रह रहे थे, तब एक राजा ने बंधुमा राजा को एक लाख सिक्कों के मूल्य का एक स्वर्ण पुष्पांजलि और बहुमूल्य चंदन भेजा। राजा की दो पुत्रियाँ थीं; और उन्हें यह उपहार देने की इच्छा से, उन्होंने चंदन बड़ी पुत्री को और स्वर्ण पुष्पांजलि छोटी पुत्री को दे दी। परन्तु दोनों ने इन उपहारों को अपने लिए उपयोग करने से इनकार कर दिया; गुरु को आदरपूर्वक अर्पित करने के इरादे से उन्होंने राजा से कहा, “हे पिता, हम दशबल (विपस्सी बुद्ध) को यह चंदन और यह स्वर्ण पुष्पांजलि अर्पित करते हैं।” राजा ने इस पर सहमति दे दी। अतः बड़ी राजकुमारी ने चंदन को पीसकर एक स्वर्ण पेटी में भर दिया; और छोटी बहन ने स्वर्ण पुष्पांजलि को स्वर्ण हार में बदलवाकर स्वर्ण पेटी में रख दिया। फिर वे दोनों हिरण-जग में स्थित आश्रम की ओर चल पड़ीं; और बड़ी बहन ने आदरपूर्वक दशबल (विपस्सी बुद्ध) के स्वर्ण शरीर पर चंदन का चूर्ण छिड़का, शेष चूर्ण उनकी कुटिया में बिखेर दिया, और यह प्रार्थना की: “हे प्रभु, भविष्य में मैं आप जैसे बुद्ध की माता बनूँ।” छोटी बहन ने आदरपूर्वक दशबल (विपस्सी बुद्ध) के स्वर्ण शरीर पर स्वर्ण पुष्पांजलि से बना स्वर्ण-स्त्री हार पहनाया, और प्रार्थना की, “हे प्रभु, जब तक मैं संतत्व प्राप्त न कर लूँ, यह आभूषण मेरे शरीर से कभी अलग न हो।” और प्रभु ने उनकी प्रार्थना स्वीकार कर ली।

इन दोनों ने अपने जीवन के अंत के बाद देवदूतों के लोक में जन्म लिया। बड़ी बहन, देवदूतों के लोक से मनुष्य लोक में और फिर वापस देवदूतों के लोक में जाकर, इक्यावनवें युग के अंत में रानी माया बनीं, जो वर्तमान बुद्ध (गौतम) की माता हैं। छोटी बहन भी इसी प्रकार देवदूतों के लोक से मनुष्य लोक में और फिर वापस मनुष्य लोक में आकर, दशाबल कश्यप के समय में राजा किकी की पुत्री बनीं; और गर्दन और कंधों पर हार के समान सुंदर आकृति के साथ जन्मीं, मानो किसी चित्रकार द्वारा चित्रित की गई हों, उनका नाम उराच्छदा रखा गया। जब वे सोलह वर्ष की थीं, तब उन्होंने गुरु का एक पवित्र वचन सुना और प्रथम मार्ग (सम्मोहन) का फल प्राप्त किया, और उसी दिन उन्होंने संतत्व प्राप्त किया, संघ में प्रवेश किया और निर्वाण प्राप्त किया।

राजा किकी की सात और बेटियाँ थीं, जिनके नाम इस प्रकार थे:

"समानी, समाना, पवित्र बहन गुट्टा, भिक्खुदासिका, और धम्म और सुधम्मा, और बहनों में से सातवीं संघदासी।"

बुद्ध के इस अवतार में, ये बहनें थीं--

"खेमा, उप्पलावन्ना, तीसरी थीं पताकारा,
गौतमा (बुद्ध की पालक माता और महामाया की बहन), धम्मदिन्ना,
और छठी थीं महामाया (बुद्ध की दिवंगत जन्म माता),
और बहनों के इस समूह में सातवीं थीं विशाखा।"

अब इनमें से फुसती सुधम्मा बनीं; जिन्होंने अच्छे कर्म किए और दान दिया, और बुद्ध विपस्सी को चंदन की भेंट चढ़ाने के फल से उनका शरीर उत्तम चंदन से आच्छादित हो गया। फिर मनुष्यों और देवताओं (देवदूतों) के लोकों के बीच विचरण करते हुए, अंततः वे देवताओं (देवदूतों) के राजा सक्का (इंद्र) की प्रधान रानी बनीं। जब उनका जीवनकाल समाप्त हो गया, और पाँचों प्रथागत चिन्ह दिखाई देने लगे, तो देवताओं (देवदूतों) के राजा सक्का (इंद्र) ने यह जानकर कि उनका समय समाप्त हो गया है, उन्हें भव्यतापूर्वक नंदनवन के उद्यान में ले गए; फिर जब वे एक अलंकृत आसन पर विराजमान हुईं, तो उनके बगल में बैठे हुए उन्होंने उनसे कहा: "प्रिय फुसती, मैं तुम्हें दस वरदान देता हूँ: चुन लो।" इन शब्दों के साथ, उन्होंने इस हजार श्लोकों वाले महान वेसंतरा जन्म का पहला श्लोक कहा:

"हे सुंदर देवी फुसती, मैं तुम्हें दस वरदान देता हूँ:
पृथ्वी पर जो कुछ भी तुम्हारी दृष्टि में अनमोल हो, उसे चुन लो।"
इस प्रकार महान वेसंतारा में उपदेश के द्वारा वह देवताओं (देवदूतों) के लोक में स्थापित हो गई।

लेकिन अपने पुनर्जन्म की परिस्थितियों से अनभिज्ञ होने के कारण वह बेहोश सी हो गई और उसने दूसरा श्लोक कहा:

हे देवदूतों के राजा, आपकी महिमा हो! मैंने ऐसा कौन सा पाप किया है
कि मुझे इस सुंदर स्थान से हवा के झोंके की तरह पेड़ गिराने के लिए भेज दिया गया है?
और इंद्र ने उसकी निराशा को भांपकर दो श्लोक कहे:

"प्रिय, क्या तुम अब भी वैसे ही हो जैसे पहले थे, और क्या तुमने कोई पाप नहीं किया है?
मैं इसलिए बोल रहा हूँ क्योंकि तुम्हारे सारे पुण्य अब समाप्त हो चुके हैं।"

अब तुम्हारा प्रस्थान निकट है, मृत्यु का समय नजदीक आ रहा है;
मैं तुम्हें दस वरदान देता हूँ, जिनमें से तुम्हें चुनना है; तो मरने से पहले चुन लो।
सक्का (इंद्र) के ये शब्द सुनकर और यह आश्वस्त होकर कि उसे मरना ही होगा, उसने वरदानों का चयन करते हुए कहा:

"सभी प्राणियों के स्वामी, राजा सक्का (इंद्र) ने मुझे वरदान दिया है:
मैं उन्हें आशीर्वाद देता हूँ: मेरी यही कामना है कि मेरा जीवन शिव के राज्य में हो।"

हे उदार ईश्वर, मुझे काली आँखें, हिरण के बच्चे जैसी काली पुतलियाँ और काली भौहें मिलें, और मेरा नाम फुसती हो: यही वरदान मैं चाहता हूँ।
मुझे एक ऐसा पुत्र चाहिए, जो राजाओं द्वारा पूजनीय हो, प्रसिद्ध हो, गौरवशाली हो, आकर्षक हो,
उदार हो, निस्वार्थ हो, और प्रार्थना को ध्यान से सुनने वाला हो।
और जब तक बच्चा मेरे गर्भ में है, तब तक मेरा शरीर ढीला न पड़े,
यह एक सुंदर ढंग से गढ़े गए धनुष की तरह पतला और आकर्षक बना रहे।
फिर भी, सक्का (इंद्र), मेरे स्तन दृढ़ रहें, और मेरे बाल सफेद न हों;
मेरा शरीर निष्कलंक रहे, मैं मृत्युदंड से ग्रस्त लोगों को मुक्त कर सकूँ।
बगुले की चीखों और मोरों की पुकार के बीच, सुंदर स्त्रियों की प्रतीक्षा में,
कवि और गायक हमारी प्रशंसा में गीत गाते हुए, शॉल हवा में लहराते हुए।
जब रंगे हुए दरवाजे पर दस्तक देते हुए नौकर ने जोर से पुकारा,
"भगवान राजा सिवी पर कृपा करें! भोजन के लिए आओ!" मैं उनकी घोषित रानी हूँ।"
सक्का (इंद्र) ने कहा:

"हे मेरी प्रिय देवी, जान लो कि ये वरदान जो मैंने तुम्हें दिए हैं,
शिवी राज्य में, हे सुंदरी, वे सभी दस वरदान पूर्ण होंगे।"
"देवताओं (देवदूतों) के राजा, महान सुजामपति,
जिन्हें वासव कहा जाता है, ने प्रसन्न होकर फुसती को वरदान दिया।"
जब उसने इस प्रकार अपने वरदान चुन लिए, तो उसने वह संसार त्याग दिया और राजा मद्दा की रानी के गर्भ में जन्म लिया; और जब वह पैदा हुई, तो उसका शरीर चंदन की सुगंध से महक रहा था, इसलिए उसके जन्म के दिन उसका नाम फुसती रखा गया। वह बड़ी संख्या में परिचारिकाओं के बीच पली-बढ़ी और सोलह वर्ष की आयु में वह सौंदर्य में सबसे अधिक प्रख्यात हो गई। उस समय शिवी राजा के पुत्र राजकुमार संजय को श्वेत छत्र दिया जाना था; राजकुमारी को उनकी दुल्हन बनने के लिए बुलाया गया और उसे सोलह हजार स्त्रियों की मुखिया बनाकर रानी बनाया गया; इसी कारण कहा जाता है--

"इसके बाद जन्मी राजकुमारी फुसती को
जेतुत्तरा नगर ले गया, और वहाँ शीघ्र ही उसका विवाह संजय से हो गया।"
संजय उससे बेहद प्रेम करता था। अब इंद्र को अंतर्दृष्टि से याद आया कि उसने फुसती को दिए अपने दस वरदानों में से नौ पूरे कर लिए थे। उसने सोचा, "पर एक वरदान अधूरा रह गया है, एक सुंदर पुत्र; मैं इसे उसके लिए पूरा करूंगा।" उस समय इंद्र तैंतीसवें स्वर्ग में थे और उनका समय पूरा हो चुका था; यह जानकर इंद्र उनके पास गए और बोले, "हे पूज्यवर, आपको मनुष्यलोक में प्रवेश करना होगा; बिना विलंब किए आपको शिवी राजा की रानी फुसती के गर्भ में जन्म लेना होगा।"

इन शब्दों के साथ, महापुरुष और पुनर्जन्म लेने वाले साठ हज़ार देवदूतों की सहमति लेकर, वह अपने स्थान पर चले गए। महापुरुष वहाँ अवतरित हुए और उनका पुनर्जन्म हुआ, और साठ हज़ार देवदूत साठ हज़ार दरबारी परिवारों में जन्म लिए। जब महापुरुष उनके गर्भ में थे, तब फुसती ने गर्भवती होकर छह भिक्षागृह बनवाने की इच्छा व्यक्त की, एक चारों द्वारों पर, एक नगर के मध्य में और एक उनके अपने द्वार पर; ताकि वह प्रतिदिन छह लाख भिक्षादान कर सकें। राजा को जब फुसती के बारे में पता चला, तो उन्होंने ज्योतिषियों से परामर्श लिया, जिन्होंने कहा, "महाराज, आपकी पत्नी के गर्भ में एक भिक्षादान-समृद्धि का जन्म हुआ है, जो भिक्षादान से कभी तृप्त नहीं होगी।" यह सुनकर वे प्रसन्न हुए और उन्होंने पहले बताए अनुसार भिक्षादान करने का नियम बना लिया।

बोधिसत्व के जन्म के समय से ही, राजा के राजस्व की कोई सीमा नहीं थी; राजा की अच्छाई के प्रभाव से, पूरे भारत के राजा उन्हें उपहार भेजते थे।

गर्भवती रानी अपने साथ दस महीने पूरे होने तक अपने विशाल दल के साथ रहीं, फिर उन्होंने शहर घूमने की इच्छा जताई। उन्होंने राजा को सूचना दी, जिन्होंने शहर को देवताओं (देवदूतों) के शहर की तरह सजाया। उन्होंने रानी को एक भव्य रथ में बिठाया और शहर में विधिपूर्वक जुलूस निकाला। जब वे वेस्सा क्षेत्र के मध्य में पहुँचे, तो रानी को प्रसव पीड़ा होने लगी। उन्होंने राजा को बताया, और राजा ने तुरंत एक प्रसव कक्ष बनवाया और रानी को वहाँ ले गए; और फिर उन्होंने एक पुत्र को जन्म दिया; इसी कारण कहा जाता है--

"उसने मुझे दस महीने अपने गर्भ में रखा; फिर जुलूस निकाला गया;
और फुसाती में वेस्सा स्ट्रीट में मुझे बिस्तर पर लाया गया।"
महान पुरुष अपनी माता के गर्भ से शुद्ध, खुली आँखों से प्रकट हुए और जन्म लेते ही उन्होंने अपनी माता की ओर हाथ बढ़ाते हुए कहा, "माँ, मैं कुछ भेंट करना चाहता हूँ; क्या आपके पास कुछ है?" माता ने उत्तर दिया, "हाँ, मेरे पुत्र, जो चाहो दे दो," और उनके बढ़े हुए हाथ में एक हजार सिक्कों से भरा थैला रख दिया। महान पुरुष ने जन्म लेते ही तीन बार बात की: उम्मागग जन्म में, इस जन्म में और अपने अंतिम जन्म में। उनके नामकरण दिवस पर, क्योंकि उनका जन्म वेस्सा गली में हुआ था, इसलिए उनका नाम वेसंतारा रखा गया; इसी कारण ऐसा कहा जाता है:

"मेरा नाम न तो मेरी माँ की तरफ से आया है और न ही मेरे पिता की तरफ से;
क्योंकि मेरा जन्म वेस्सा स्ट्रीट में हुआ था, इसलिए मेरा नाम वेसंतारा है।"
उनके जन्मदिन पर ही, एक उड़ने वाली मादा हाथी एक बच्चे को लेकर आई, जो शुभ माना जाता था, पूरी तरह सफेद था, और उसे शाही अस्तबल में छोड़ गई। चूंकि यह प्राणी महापुरुष की आवश्यकता पूरी करने आया था, इसलिए उसका नाम पक्काया रखा गया। राजा ने महापुरुष के लिए चार गुना साठ दाई नियुक्त कीं, जो न तो बहुत लंबी थीं और न ही बहुत छोटी, और हर तरह से दोषरहित थीं, और जिनका दूध मीठा था; उन्होंने उनके साथ जन्मे साठ हजार बच्चों के लिए भी दाई नियुक्त कीं, और इस प्रकार वे साठ हजार बच्चों के इस विशाल समूह से घिरे हुए बड़े हुए। राजा ने एक लाख सिक्कों से जड़ा एक राजकुमार का हार बनवाया और अपने बेटे को दिया; लेकिन चार या पांच साल की उम्र में ही उसने वह हार अपनी दाईयों को दे दिया, और जब उन्होंने उसे वापस देने की इच्छा जताई तो उसने उसे वापस नहीं लिया। उन्होंने यह बात राजा को बताई, जिस पर राजा ने कहा, "मेरे बेटे ने जो दिया है वह अच्छा दिया है; इसे ब्राह्मण का उपहार ही रहने दो," और दूसरा हार बनवाया। लेकिन राजकुमार ने अपनी बाल्यावस्था में ही इसे भी अपनी दाईयों को दे दिया, और ऐसा नौ बार हुआ।

जब वह आठ वर्ष का था, अपने पलंग पर लेटा हुआ, लड़का मन ही मन सोच रहा था: "मैं जो कुछ भी देता हूँ, वह बाहर से आता है, और इससे मुझे संतुष्टि नहीं मिलती; मैं अपना कुछ देना चाहता हूँ। यदि कोई मेरा हृदय मांगे, तो मैं अपना सीना चीरकर उसे निकाल कर दे दूँगा; यदि कोई मेरी आँखें मांगे, तो मैं अपनी आँखें निकाल कर दे दूँगा; यदि कोई मेरा मांस मांगे, तो मैं अपने शरीर का सारा मांस काटकर दे दूँगा।" और इस प्रकार उसने अपने पूरे अस्तित्व और हृदय की गहराई से सोचा; यह पृथ्वी, चालीस हजार क्वाड्रिलियन मील (x 4.23 किमी) विस्तार और दो लाख लीग (x 4.23 किमी) गहराई वाली, एक विशाल पागल हाथी की तरह गरजते हुए काँप उठी; पर्वतों का मुखिया सिनेरू गर्म भाप में एक छोटे पौधे की तरह झुक गया, और नाचता हुआ प्रतीत हुआ, और जेटुत्तरा शहर की ओर झुका हुआ खड़ा था; पृथ्वी के गरजने पर आकाश बिजली और बारिश से गरज उठा; दोमुँही बिजली चमकी; सागर में हलचल मच गई: देवताओं के राजा सक्का (इंद्र) ने ताली बजाई, महाब्रह्मा ने स्वीकृति का संकेत दिया, ब्रह्मा के लोक (प्रधान देवदूतों) में भी हलचल मच गई; इसी कारण यह भी कहा जाता है:

"जब मैं छोटा लड़का था, केवल आठ साल का,
अपनी छत पर बैठकर मैं दान और भेंट के बारे में सोचता था।"
अगर कोई मुझसे खून, शरीर, दिल या आंख मांगे,
या खून, शरीर, आंख या दिल मांगे, तो मैं उसे दे दूंगी, यही मेरी पुकार थी।
और अपने पूरे मन से मैंने ऐसे विचार किए कि "
अविचलित पृथ्वी भी पहाड़ों, जंगलों और पेड़ों के साथ कांप उठी।"
सोलह वर्ष की आयु तक बोधिसत्व ने सभी विद्याओं में पारंगत हो गए थे। तब उनके पिता ने उन्हें राजा बनाने की इच्छा से उनकी माता से परामर्श किया; राजा मद्दा के परिवार से उनकी चचेरी बहन मद्दी को सोलह हजार सेविकाओं के साथ लाया गया और उन्हें उनकी रानी बनाया गया तथा राज्याभिषेक के जल से उनका अभिषेक किया गया। राज्य प्राप्त करने के समय से ही उन्होंने बहुत दान दिया, प्रतिदिन छह लाख सिक्के दान करते थे।

कुछ समय बाद रानी मद्दी ने एक पुत्र को जन्म दिया, और उन्होंने उसे सोने के झूले में लिटाया, इसलिए उसका नाम राजकुमार जली रखा गया। जब वह चलने-फिरने लायक हुआ, तब रानी ने एक पुत्री को जन्म दिया, और उन्होंने उसे काले चमड़े में लिटाया, इसलिए उसका नाम कन्हाजिना रखा गया। हर महीने, भगवान अपने भव्य हाथी पर सवार होकर अपने छह भिक्षागृहों में छह बार दर्शन करने आते थे।

उस समय कलिंग राज्य में सूखा पड़ा था: अनाज नहीं उगा, भयंकर अकाल था, और लोग गुज़ारा करने में असमर्थ होकर लूटपाट करने लगे थे। अभाव से पीड़ित होकर लोग राजा के प्रांगण में एकत्रित हुए और उन्हें फटकारा। यह सुनकर राजा ने कहा, "क्या बात है, मेरे बच्चों?" उन्होंने बताया। राजा ने उत्तर दिया, "अच्छा, मेरे बच्चों, मैं वर्षा लाऊंगा," और उन्हें विदा कर दिया। उन्होंने पुण्य का वचन लिया और व्रत का पालन किया, लेकिन वे वर्षा नहीं ला सके; इसलिए उन्होंने नागरिकों को बुलाया और उनसे कहा, "मैंने पुण्य का वचन लिया था, और सात दिन व्रत का पालन किया, फिर भी मैं वर्षा नहीं ला सका: अब क्या किया जाए?" उन्होंने उत्तर दिया, "यदि आप वर्षा नहीं ला सकते, महाराज, तो जेतुत्तरा नगर में राजा संजय के पुत्र वेस्संतरा दान-पुण्य में लगे हुए हैं; उनके पास एक शानदार सफेद हाथी है, और वे जहाँ भी जाते हैं, वर्षा होती है; ब्राह्मणों को भेजकर उस हाथी को मंगवाएं और उसे यहाँ लाएं।" राजा मान गए; ब्राह्मणों को इकट्ठा करके उसने उनमें से आठ को चुना, उन्हें यात्रा के लिए भोजन सामग्री दी और कहा, "जाओ और वेसंतारा का हाथी ले आओ।" इस कार्य पर ब्राह्मण समय पर जेतुत्तरा नगर के लिए रवाना हुए; भिक्षागृह में उनका सत्कार हुआ; उन्होंने अपने शरीर पर धूल छिड़की और मिट्टी मली; और पूर्णिमा के दिन, राजा का हाथी मांगने के लिए वे पूर्वी द्वार पर उस समय गए जब राजा भिक्षागृह में आए थे। सुबह सवेरे, राजा भिक्षागृह जाने के इरादे से सोलह घड़े सुगंधित जल से स्नान करके अपना उपवास तोड़ा और अपने भव्य, अलंकृत हाथी पर सवार होकर पूर्वी द्वार की ओर चल पड़े। ब्राह्मणों को वहाँ कोई अवसर नहीं मिला और वे दक्षिणी द्वार पर एक टीले पर खड़े होकर पूर्वी द्वार पर राजा को भिक्षा देते हुए देखने लगे। जब राजा दक्षिणी द्वार पर आए, तो उन्होंने हाथ फैलाकर पुकारा, "महान वेसंतारा की जय हो!" जब उस महान सत्ता ने ब्राह्मणों को देखा, तो उसने हाथी को उस स्थान पर ले जाकर खड़ा कर दिया जहाँ वे खड़े थे, और उसकी पीठ पर बैठकर पहला श्लोक बोला:

"बालों से भरी बगलें, बालों से भरे सिर, दागदार दांत और सिर पर धूल के साथ,
हे ब्राह्मणों, अपने हाथों को फैलाकर, तुम किस चीज की लालसा करते हो?"
इस पर ब्राह्मणों ने उत्तर दिया:

"हे राजकुमार, क्या आपके लोगों के पास कोई अनमोल वस्तु है? हम
उस अद्वितीय और असाधारण हाथी की लालसा रखते हैं जिसके दांत किसी भी खंभे के समान हों।"
जब उस महान प्राणी ने यह सुना, तो उसने सोचा, "मैं अपने सिर से लेकर नीचे तक सब कुछ देने को तैयार हूँ, और वे जो मांग रहे हैं वह मेरे बस से बाहर की बात है; मैं उनकी इच्छा पूरी करूँगा"; और हाथी की पीठ से उसने उत्तर दिया:

मैं ब्राह्मणों की चाहत की वस्तु देता हूँ, और कभी वापस नहीं लेता;
यह उत्तम पशु, सवारी के लिए उपयुक्त, भयंकर दांतों वाला हाथी है।
और इस प्रकार सहमति देते हुए:

"राजा, जो अपनी प्रजा का रक्षक था, उसकी पीठ से उतरा,
और प्रसन्नतापूर्वक यज्ञ करते हुए ब्राह्मणों को उनकी कमी की वस्तुएँ प्रदान कीं।"
हाथी के चारों पैरों पर सजे आभूषण चार लाख रुपये के थे, दोनों तरफ के आभूषण दो लाख रुपये के, पेट के नीचे का कंबल एक लाख रुपये का, पीठ पर मोतियों, सोने और रत्नों के जाल थे, तीन जाल तीन लाख रुपये के, दोनों कानों में दो लाख रुपये के, पीठ पर एक लाख रुपये का गलीचा, माथे पर एक लाख रुपये का आभूषण, तीन लबादे तीन लाख रुपये के, छोटे कान के आभूषण दो लाख रुपये के, दोनों दांतों पर दो लाख रुपये के, सूंड पर सौभाग्य का आभूषण एक लाख रुपये का, पूंछ पर एक लाख रुपये का, इसके अलावा शरीर पर सजे अनमोल आभूषण 22 लाख रुपये के, चढ़ने की सीढ़ी एक लाख रुपये की, भोजन का पात्र एक लाख रुपये का, कुल मिलाकर 22 लाख रुपये के: इसके अलावा चंदोवे पर सजे छोटे-बड़े रत्न, मोतियों के हार में जड़े रत्न, डंडे में जड़े रत्न, गले में मोतियों का हार, माथे पर सजे रत्न। उसने सभी अनमोल गोले, हाथी भी अनमोल, हाथी समेत सात अनमोल वस्तुएँ ब्राह्मणों को दीं; इसके अतिरिक्त पाँच सौ सेवक, घोड़ों की देखभाल करने वाले और अस्तबल के कर्मचारी भी दिए: और उस दान के साथ ही भूकंप आया, और ऊपर बताए गए अन्य अपशकुन भी घटित हुए।

इसे समझाने के लिए गुरु ने कहा:

"तब भयंकर भय का अनुभव हुआ, रोंगटे खड़े हो गए;
जब विशाल हाथी को दिखाया गया तो धरती भय से कांप उठी।"
तब भयंकर भय का अनुभव हुआ, रोंगटे खड़े हो गए;
जब विशाल हाथी को लाया गया, तो शहर भय से कांप उठा।

"जब शिवी के समर्थक राजा द्वारा विशाल हाथी भेंट किया गया, तो पूरा शहर एक गूंजती हुई जोरदार गर्जना से भर गया। "

जेतुत्तरा नगर कांप उठा। कहा जाता है कि ब्राह्मणों ने दक्षिणी द्वार पर हाथी का स्वागत किया, उसकी पीठ पर सवार हुए और भीड़ के बीच से नगर के मध्य से गुजरे। भीड़ ने उन्हें देखकर कहा, "हे ब्राह्मणों, हमारे हाथी पर सवार होकर आप हमारा हाथी क्यों ले जा रहे हैं?" ब्राह्मणों ने उत्तर दिया, "महान राजा वेस्सन्तरा ने हमें हाथी दिया है: आप कौन हैं?" और इस प्रकार भीड़ को तिरस्कारपूर्ण इशारे करते हुए वे नगर से गुजरे और देवताओं की सहायता से उत्तरी द्वार से बाहर निकल गए। नगर के लोग बोधिसत्व से क्रोधित होकर जोर-जोर से निंदा करने लगे।

इसे समझाने के लिए गुरु ने कहा:

"उस भयानक और प्रचंड आवाज पर,
जब विशाल हाथी को भेजा गया तो धरती भय से कांप उठी।"
उस भयानक और प्रचंड आवाज को सुनकर,
जब विशाल हाथी को बुलाया गया तो पूरा शहर कांप उठा।

जब शिवी के समर्थक राजा ने विशाल हाथी भेंट किया, तो वह आवाज इतनी तेज और शक्तिशाली थी कि सब कुछ भयानक रूप से गूंज उठा।
इस उपहार से भयभीत होकर नागरिकों ने राजा से प्रार्थना की। इसलिए कहा जाता है:

"तब राजकुमार और ब्राह्मण, वैश्य और उगा, बड़े और छोटे, महावत और पैदल सैनिक, सारथी और सैनिक, सभी एक-एक करके,

देश के जमींदार और सभी सिवी लोग वहाँ से गुज़रे। हाथी को जाते देख राजा ने उनसे इस प्रकार कहा:

"महाराज, आपका राज्य बर्बाद हो गया है: आपका पुत्र वेसंतारा
हमारे उस हाथी को, जिसे हर कोई पूजता है, इस प्रकार क्यों त्याग दे?"
हम अपने रक्षक हाथी को क्यों दें, जिसके बड़े-बड़े दांत हैं, जो विशाल और सफेद है,
और जो हर लड़ाई में जीत-हार का सही स्थान चुनना जानता है?
रत्नों और याक की पूंछ के पंखे से सुसज्जित; जिसने सभी शत्रुओं को कुचल दिया;
लंबे दांतों वाला, उग्र, बर्फ से ढके केलासा पर्वत के समान सफेद;
अलंकृत वस्त्रों और सफेद छतरी के साथ, राजा की सवारी के योग्य,
आसन और सारथी के साथ, उसने यह अनमोल वस्तु भेंट कर दी है।
यह कहने के बाद उन्होंने फिर कहा:

जो कोई भी भोजन, पेय पदार्थ, वस्त्र, अग्नि और परिवहन का दान करता है,
वह एक उचित और उपयुक्त दान है, ब्राह्मणों के लिए वह उपयुक्त है।
हे संजय, अपने प्रजाजनों के मित्र, बताइए कि ऐसा क्यों किया गया?
हमारे ही वंश के राजकुमार, वेसंतारा, आपके पुत्र ने ऐसा क्यों किया?
सिवी के लोग अगर ऐसा करने से इनकार करते हैं,
तो मुझे लगता है कि लोग आपके बेटे और आपके खिलाफ कार्रवाई करेंगे।"
यह सुनकर राजा को संदेह हुआ कि वे वेसंतारा को मारना चाहते हैं; और उसने कहा:

"हाँ, मेरा देश न रहे, मेरा राज्य न रहे,
मैं किसी निर्दोष राजकुमार को उसके राज्य से निर्वासित नहीं करूँगा,
न ही जनता की आवाज़ मानूँगा: वह मेरा वास्तविक पुत्र है।"
हाँ, मेरा देश न रहे, मेरा राज्य न रहे,
मैं किसी निर्दोष राजकुमार को उसके राज्य से निर्वासित नहीं करूँगा,
और न ही जनता की बात मानूँगा: वह मेरा ही पुत्र है।
नहीं, मैं उसे कोई हानि नहीं पहुँचाऊँगा; वह अब भी अत्यंत नेक है;
और यह मेरे लिए शर्म की बात होगी, और इससे बहुत दुख होगा।
वेसंतारा, मेरे प्यारे पुत्र, मैं तलवार से उसे कैसे मार सकता हूँ?
सिवी के लोगों ने उत्तर दिया:

"वह न तो दंड का पात्र था, न तलवार का, न ही कारावास का,
बल्कि उसे राज्य से निर्वासित कर वामका के पर्वत पर निवास करने के लिए भेज दिया जाए।"
राजा ने कहा:

"जनता की इच्छा देखो! और मैं उस इच्छा का विरोध नहीं करता।
लेकिन जाने से पहले उसे एक सुखद रात यहीं रहने दो।"
इस एक रात के बाद, जब अगला दिन आएगा, तो
सभी लोग मिलकर आएं और उसे भगा दें।
वे केवल एक रात के लिए राजा के प्रस्ताव पर सहमत हो गए। फिर राजा ने उन्हें जाने दिया और अपने बेटे को संदेश भेजने के लिए एक दूत को नियुक्त किया, जो वेसंतारा के घर गया और उसे सारी घटना बताई।

इसे स्पष्ट करने के लिए, निम्नलिखित छंद कहे गए:

"उठो, साथियों, तुरंत यहाँ से चले जाओ, और राजकुमार को मेरा वचन बता दो।
सभी लोग, और नागरिक, क्रोधित होकर, एकमत से,
मेरे पुत्र, उगा और राजकुमार, वैश्य और ब्राह्मण भी,
महावत और रक्षक, सारथी और पैदल सैनिक, सभी
नागरिक, सभी ग्रामीण, सब यहाँ एक साथ दौड़ कर आए हैं।
इस एक रात के बाद, जब अगला दिन आएगा,
वे सब मिलकर तुम्हें निर्वासित कर देंगे।
सिवी के राजा द्वारा भेजा गया यह व्यक्ति अपने काम पर तेज़ी से आगे बढ़ा, एक सुगंधित और उत्तम वस्त्रों से सुसज्जित हाथी पर सवार होकर।

सिर पानी से भीगा हुआ, कानों में रत्नजड़ित बालियां, और वह उस प्यारे शहर की ओर चल पड़ा, जहाँ वह वेसंतारा का निवास स्थान था।

फिर उसने अपने देश में निवास करते हुए सुखी राजकुमार को देखा, जो देवताओं (देवदूतों) के राजा वासव के समान था; उसके चारों ओर दरबारी खड़े थे।

वह व्यक्ति जल्दी से वहाँ गया और राजकुमार से बोला— "महाराज, मैं बुरी खबर लाया हूँ: हे प्रभु, मुझ पर क्रोधित न हों!"

अत्यंत आदरपूर्वक, पीड़ा से रोते हुए, उसने राजा से कहा:

"आप मेरे स्वामी हैं, महाराज, और आप ही मुझे सब कुछ देते हैं:
मुझे अब आपको एक बुरी खबर सुनानी है: क्या आप मुझे कुछ सांत्वना देंगे?"
सभी लोग और नागरिक, क्रोधित होकर, एकमत से,
उगाह और राजकुमार, वैश्य और ब्राह्मण, सभी झुक गए हैं।
महावत और रक्षक, रथ चालक, पैदल सैनिक,
सभी नागरिक और ग्रामीण लोग अब एक साथ भाग गए हैं।
इस एक रात के बाद, जब अगला दिन आएगा, तो
सभी लोग झुंड बनाकर आएंगे और तुम्हें भगा देंगे।"
उस महान सत्ता ने कहा:

"लोग मुझसे नाराज़ क्यों हैं? मुझे तो कोई अपराध नज़र नहीं आता।
बताओ, भले आदमी, वे मुझे किस कारण से देश निकाला देना चाहते हैं?"
एजेंट ने कहा:

"उग्ग और वैश्य, सारथी और ब्राह्मण, महावत और रक्षक, सारथी और पैदल सैनिक, सभी वहां दौड़ते हैं,
सभी आपके दान देने से क्रोधित हैं, और इसलिए आपको निर्वासित करते हैं।"
यह सुनकर, उस महान सत्ता ने पूर्ण संतोष के साथ कहा:

मैं अपनी आंखें और दिल तक दे दूंगा: जो मेरा नहीं है, उसे क्यों न दूं,
या सोना या खजाना, कीमती पत्थर, या मोती, या उत्तम रत्न?
अगर कोई मुझसे कुछ मांगे तो मैं अपना हाथ, अपना दाहिना हाथ भी दे दूंगा,
एक पल भी संकोच नहीं करूंगा: उपहार देना ही मेरी खुशी है।
अब लोग मुझे देश निकाला दे दें, लोग मुझे मार डालें,
या मुझे सात बार काट डालें, क्योंकि मैं उपहार देना कभी बंद नहीं करूंगा।
यह सुनकर दूत ने फिर से बात की, न तो राजा का संदेश था और न ही जनता का, बल्कि अपने मन से निकला एक और आदेश था:

"यह सिवी लोगों की इच्छा है; उन्होंने मुझसे आपको यह बताने के लिए कहा है:
जहाँ कोंटिमारा नदी अरंजारा पहाड़ी से बहती थी,
वहीं से प्रस्थान करें, जहाँ निर्वासित लोग, महोदय, जाने के आदी हैं।"
हमें बताया जाता है कि उन्होंने यह बात किसी देवता की प्रेरणा से कही थी।

यह सुनकर बोधिसत्व ने उत्तर दिया, "ठीक है, मैं उसी मार्ग से जाऊँगा जिस मार्ग से अपराध करने वाले जाते हैं; परन्तु मुझे तो नागरिक किसी अपराध के लिए निर्वासित नहीं करते, वे मुझे हाथी के दान के कारण निर्वासित करते हैं। इस स्थिति में मैं सात सौ का महान दान देना चाहता हूँ, और मैं नागरिकों से इसके लिए एक दिन की मोहलत देने का अनुरोध करता हूँ। कल मैं अपना दान दूँगा, और परसों चला जाऊँगा।"

"इसलिए मैं भी उसी रास्ते से जाऊंगा जिस रास्ते से वे लोग जाते हैं जो अपराध करते हैं:
लेकिन पहले एक दान देने के लिए, मैं उनसे एक रात और एक दिन उधार देने की प्रार्थना करता हूं।"
"बहुत बढ़िया," एजेंट ने कहा, "मैं इसकी सूचना नागरिकों को दूंगा," और वह चला गया।

उस व्यक्ति के चले जाने पर, उस महान सत्ता ने अपने एक सेनापति को बुलाकर उससे कहा, "कल मैं सात सौ का उपहार देने वाला हूँ। तुम्हें सात सौ हाथी, उतनी ही संख्या में घोड़े, रथ, कन्याएँ, गायें, पुरुष दास और स्त्री दास तैयार रखने होंगे, और हर प्रकार का भोजन और पेय, यहाँ तक कि मादक पेय भी, जो कुछ भी देने योग्य हो, उपलब्ध कराना होगा।" इस प्रकार सात सौ के महान उपहार की व्यवस्था करने के बाद, उन्होंने अपने दरबारियों को विदा किया और अकेले मद्दी के निवास स्थान पर चले गए; वहाँ शाही पलंग पर बैठकर उन्होंने उसे संबोधित करना शुरू किया।

गुरु ने इसका वर्णन इस प्रकार किया:

इस प्रकार राजा ने मद्दी से कहा, "वह अत्यंत सुंदर स्त्री थी।"

"जो कुछ भी मैंने तुम्हें दिया है, चाहे वह सामान हो या अनाज, सावधान रहना,
चाहे वह सोना हो या खजाना, कीमती पत्थर और इसके अलावा भी बहुत कुछ,
तुम्हारे पिता का दहेज, इस सारे खजाने को छिपाने के लिए एक जगह ढूंढ लेना।"
तब मैडी ने राजा से कहा, वह राजकुमारी अत्यंत सुंदर है:

"हे मेरे स्वामी, इसे छिपाने के लिए मुझे जगह कहाँ मिलेगी? मुझे बताइए कहाँ?"
वेसंतारा ने कहा:

"उचित अनुपात में अपनी संपत्ति अच्छे काम करने वालों को दान के रूप में दें,
इसे रखने के लिए इससे बेहतर कोई जगह नहीं है, यह मैं अच्छी तरह जानता हूँ।"
वह मान गई, और इसके अलावा उसने उसे इस प्रकार प्रोत्साहित किया:

"हे मद्दी, अपने बेटों और अपने पति के माता-पिता दोनों के प्रति दयालु रहो,
अपने होने वाले पति की सेवा करो, बिना किसी अनिच्छा के।"
और अगर मेरे जाने के बाद कोई भी पुरुष तुम्हारा पति बनने की इच्छा न रखे, तो
तुम अपने लिए पति की तलाश कर लेना, लेकिन केवल इच्छा से ही कमजोर मत पड़ जाना।
तब मद्दी ने सोचा, "मुझे आश्चर्य क्यों हो रहा है कि वेसंतारा मुझसे ऐसी बात क्यों कह रहे हैं?" और उसने उनसे पूछा, "हे मेरे स्वामी, आप मुझसे ऐसी बात क्यों कह रहे हैं जो आपको नहीं कहनी चाहिए?" उस महान प्राणी ने उत्तर दिया, "हे देवी, हाथी के दान के कारण

शिवी के लोग मुझसे क्रोधित हैं और मुझे राज्य से निष्कासित कर रहे हैं: कल मुझे सात सौ हाथियों का दान देना है, और उसके अगले दिन मैं नगर से प्रस्थान करूँगा।" और उन्होंने कहा:

"कल मैं एक भयानक जंगल में जाऊंगा, जो शिकारी जानवरों से भरा हुआ है
: और क्या मैं उसमें जीवित रह पाऊंगा, कौन कह सकता है?"
फिर राजकुमारी मद्दी बोलीं, फिर उस सुंदर स्त्री ने बोलना शुरू किया:

"ऐसा नहीं है! यह एक दुष्ट शब्द है! इसे कहने की हिम्मत मत करो! हे
मेरे राजा, यह उचित और सही नहीं है कि आप अकेले यात्रा करें:
आप जिस भी यात्रा पर जाएंगे, मैं भी आपके साथ रहूंगा।"
मुझे तुम्हारे साथ मरने या तुमसे अलग जीने का विकल्प दो,
मृत्यु ही मेरा विकल्प है, जब तक कि मैं तुम्हारे साथ वहीं न रह सकूँ जहाँ तुम हो।
एक प्रचंड, भयंकर ज्वाला प्रज्वलित करो, जितनी भयंकर हो सकती है,
वहाँ मैं तुम्हारे बिना जीने की बजाय मरना पसंद करूँगा।
हाथी के ठीक पीछे अक्सर उसकी मादा पाई जाती है,
जो पहाड़ी दर्रों या जंगलों से होते हुए, ऊबड़-खाबड़ या समतल जमीन पर चलती है।
इसलिए मैं अपने बेटों के साथ आपका अनुसरण करूंगा, आप मुझे जहाँ भी ले जाएँ,
और न ही आप मुझे बोझ या भोजन कराने में मुश्किल पाएँगे।"
इन शब्दों के साथ ही उसने हिमालय क्षेत्र की प्रशंसा करना शुरू कर दिया, मानो उसने उसे स्वयं देखा हो:

जब तुम अपने प्यारे बेटों को देखोगे और
हरे-भरे जंगल के नीचे उनकी चहचहाहट सुनोगे, तो तुम भूल जाओगे कि तुम कभी राजा थे।
अपने प्यारे बेटों को खेलते हुए देखकर, और हरे-भरे जंगल के नीचे उनकी चहचहाहट सुनकर
, तुम भूल जाओगे कि तुम कभी राजा थे।
जब तुम अपने प्यारे बेटों को देखोगे और
हमारे सुंदर घर में उनकी मीठी-मीठी बातें सुनोगे, तो तुम भूल जाओगे कि तुम कभी राजा थे।
अपने प्यारे बेटों को खेलते हुए देखकर और हमारे सुंदर घर में उनकी चहचहाहट सुनकर
, तुम भूल जाओगे कि तुम कभी राजा थे।
अपने बेटों को चमकीले रंग के कपड़े पहने देखकर, उन्हें
हमारे सुंदर घर में फूल लाते हुए देखकर, आप भूल जाएंगे कि आप कभी राजा थे।
अपने बेटों को खिलखिलाते हुए खेलते देखकर, उन्हें
हमारे सुंदर घर में फूल लाते हुए देखकर, आप भूल जाएंगे कि आप कभी राजा थे।
जब तुम अपने नाचते हुए लड़कों को हमारे सुंदर घर में फूलों की माला लाते देखोगे
, तो तुम भूल जाओगे कि तुम कभी राजा थे।
जब तुम उन्हें नाचते-खेलते देखोगे, और
हमारे सुंदर घर में फूलों की माला लाते देखोगे, तो तुम भूल जाओगे कि तुम कभी राजा थे।
साठ वर्ष का हाथी, जो अकेले ही
जंगल में भटकता है, आपको यह भुला देगा कि आप कभी राजा थे।
साठ वर्ष का हाथी, शाम
और सुबह के समय घूमते हुए, आपको यह भुला देगा कि आप कभी राजा थे।
जब तुम उस हाथी को देखोगे जिसे उसके प्रजाजनों का झुंड लेकर आ रहा है,
साठ वर्ष के उस हाथी को, और उसकी चिंघाड़ सुनोगे,
तो उस आवाज को सुनकर तुम भूल जाओगे कि तुम कभी राजा थे।
वनभूमि के खुले मैदान, दहाड़ते जानवर और हर वो चीज जिसकी आप कामना करते हैं
, जब आप उसे देखेंगे तो आप भूल जाएंगे कि आप कभी राजा थे।
शाम को आने वाले हिरण, वसंत में खिलने वाले तरह-तरह के फूल,
नाचते हुए मेंढक—आप भूल जाएंगे कि आप कभी राजा थे।
जब तुम नदियों की गर्जना सुनोगे, परियों के गीत सुनोगे, तो
यकीन मानो, तुम यह बात पूरी तरह भूल जाओगे कि तुम कभी राजा थे।

जब तुम पर्वतीय गुफा में रहने वाले उल्लू की चीख सुनोगे, तो
यकीन मानो, तुम यह बात पूरी तरह भूल जाओगे कि तुम कभी राजा थे।
गैंडा और भैंस, जो जंगल में गड़गड़ाहट पैदा करते हैं,
शेर और बाघ—तुम भूल जाओगे कि तुम कभी राजा थे।
जब आप पहाड़ की चोटी पर मोर को
मोरनियों से पहले नाचते और उछलते हुए देखेंगे, तो आप भूल जाएंगे कि आप कभी राजा थे।
अंडे से निकले मोर को
मोरनियों के सामने नाचते और अपने खूबसूरत पंख फैलाते हुए देखकर, आप भूल जाएंगे कि आप कभी राजा थे।

बैंगनी गर्दन वाले मोर को मोरनियों के सामने नाचते और उछलते हुए देखकर आप भूल जाएंगे कि आप कभी राजा थे।
जब सर्दियों में तुम पेड़ों को फूलों से लदे देखोगे,
उनकी मीठी सुगंध को महसूस करोगे, तो तुम भूल जाओगे कि तुम कभी राजा थे।
जब सर्दियों में तुम देखोगे कि सभी पौधे खिल रहे हैं,
बिंबजला, कुटजा और कमल
अपनी सुगंध बिखेर रहे हैं, तब तुम भूल जाओगे कि तुम कभी राजा थे।
जब सर्दियों में तुम जंगल को फूलों से भरा देखोगे
और कमलों को खिलते देखोगे, तो तुम भूल जाओगे कि तुम कभी राजा थे।
इस प्रकार मद्दी ने इन छंदों में हिमवत (हिमालय) की स्तुति की, मानो वह वहीं निवास कर रही हो। यहीं हिमवत (हिमालय) की स्तुति समाप्त होती है।

अब रानी फुसती ने सोचा, "मेरे बेटे को कठोर आदेश दिया गया है: वह क्या करेगा? मैं जाकर पता लगाती हूँ।" वह एक ढकी हुई गाड़ी में सवार होकर गई और उनके कमरे के द्वार पर खड़ी होकर उनकी बातें सुनने लगी और फूट-फूटकर रोने लगी।

इसका वर्णन करते हुए गुरु ने कहा:

उसने राजकुमारी और उसके बेटे के बीच हुई बातचीत सुनी, फिर उसने उस महान और गौरवशाली रानी के लिए गहरे शोक का इजहार किया।

"ज़हर पीना बेहतर है, किसी चट्टान से कूद जाना बेहतर है,
या फिर अपने गले में फंदा डालकर मर जाना बेहतर है:
वे मेरे निर्दोष पुत्र वेसंतारा को क्यों निर्वासित कर रहे हैं?"
इतना अध्ययनशील और लोभ से मुक्त, सभी आने वालों को दान देने वाला,
अपने प्रतिद्वंद्वी राजाओं द्वारा सम्मानित, महान और गौरवशाली प्रसिद्धि वाला,
मेरे निर्दोष पुत्र वेसंतारा को क्यों निर्वासित कर रहे हैं?
उनके माता-पिता का समर्थन, जो बड़ों का सम्मान करते थे,
वे मेरे निर्दोष पुत्र वेसंतारा को क्यों निर्वासित कर रहे हैं?
राजा और रानी के प्रिय, अपने सभी मित्रों और परिवार के प्रिय,
अपने मित्रों, राज्य और उसमें रहने वाले सभी लोगों के प्रिय,
मेरे निर्दोष पुत्र वेसंतारा को क्यों निर्वासित कर रहे हैं?
इस भीषण शोक के बाद, उसने अपने बेटे और उसकी पत्नी को सांत्वना दी और राजा के सामने जाकर बोली:

"जैसे आम जमीन पर गिर जाते हैं, जैसे पैसा बर्बाद और खर्च हो जाता है,
वैसे ही तुम्हारा राज्य गिर जाएगा, यदि वे निर्दोषों को निर्वासित करेंगे।"
Like a wild goose with crippled wing, when all the water's gone,
Deserted byyour courtiers, you will live in pain alone.
मैं आपसे सच कहता हूँ, हे शक्तिशाली राजा: अपनी भलाई को व्यर्थ न जाने दें,
और न ही निर्दोष को निर्वासित करें, क्योंकि लोग रो रहे हैं।
यह सुनकर राजा ने उत्तर दिया:

"आपका बेटा, जनता का ध्वजवाहक, अगर मैं उसे निर्वासन में भेज दूं तो भी मुझे डर लगेगा, लेकिन
मैं अपने शाही कर्तव्य का पालन करूंगा, जो मुझे अपने जीवन से भी अधिक प्रिय है।"
यह सुनकर रानी शोक व्यक्त करते हुए बोलीं:

"एक समय था जब पुरुषों के समूह बड़े-बड़े झंडे लहराते हुए उनके साथ चलते थे,
मानो फूलों से भरे जंगल हों: आज वे अकेले जाते हैं।"
चमकीले पीले वस्त्र, गांधार
(कंधार सहित अफगानिस्तान और पाकिस्तान के निकट) बनाना,

एक समय था जब उसके चारों ओर रोशनी चमकती थी,
या लाल रंग की दमक उठती थी, जब वह चलता था: आज वह अकेला जाता है।
पुराने समय में वह रथ, हाथगाड़ी और हाथी से यात्रा करता था:
आज राजा वेसंतारा को पैदल ही रास्ते तय करने होंगे।
चंदन की सुगंध से महकते हुए, नृत्य और गीत से जागृत होकर, वह
खुरदरी खालें कैसे पहनता था, कुल्हाड़ी, घड़ा और थैला कैसे ढोता था?
वे पीले वस्त्र क्यों नहीं लाएंगे, चमड़े के वस्त्र क्यों नहीं,
और छाल के कपड़े क्यों नहीं, ताकि वह विशाल जंगलों में प्रवेश कर सके?
एक निर्वासित राजा छाल का वस्त्र कैसे पहन सकता है,
राजकुमारी मद्दी छाल और घास के वस्त्र कैसे धारण करेगी?
मद्दी, जो कभी बनारस के कपड़े (रेशम) और लिनेन पहनती थी,
और उत्तम कोडुम्बरा पहनती थी, वह अब छाल और घास कैसे धारण करेगी?
जो राजकुमारी हाथगाड़ी या रथ में बैठकर इधर-उधर जाती थी
, वह आज पैदल कैसे जा सकती है?
कोमल हाथों और पैरों से प्रसन्न होकर वह खड़ी थी:
सुंदर राजकुमारी कांपते हुए जंगल में कैसे जा सकती है?
कोमल हाथों और कोमल पैरों से वह सुखमय जीवन जीती थी:
उसके द्वारा पहनी जाने वाली सबसे अच्छी चप्पलें भी हाल ही में उसके पैरों को चुभने लगी थीं;
आज वह सुंदर स्त्री कैसे चल सकती है?
एक समय था जब वह हजारों दासियों के बीच मालाओं के साथ चलती थी:
अब वह सुंदर स्त्री अकेले जंगल के मैदानों में कैसे चल सकती है?
अगर कभी वह सियार की दहाड़ सुनती तो वह पूरी तरह से भयभीत हो जाती:
वह डरपोक सुंदर प्राणी अब जंगल के खुले मैदान में कैसे चल सकती है?
इंद्र के राजवंश की वह स्त्री जो कभी डरकर पीछे हट जाती थी,
किसी उल्लू की आवाज सुनकर कांपने लगती थी,
अब वह डरपोक सुंदर स्त्री जंगल के खुले मैदान में कैसे चल सकती है?
जैसे कोई पक्षी अपने घोंसले को खाली देखता है, सारे बच्चे मर चुके होते हैं,
वैसे ही जब मैं उस खाली जगह को देखूंगा तो लंबे समय तक पीड़ा से जलता रहूंगा।
जैसे कोई पक्षी अपने घोंसले को खाली देखता है, सारे बच्चे मर चुके होते हैं, वैसे ही
मैं भी दुबली-पतली होकर बड़ी हो जाऊंगी और अपने प्यारे बेटे को फिर कभी नहीं देख पाऊंगी।
जैसे कोई पक्षी अपने घोंसले को खाली और अपने सभी बच्चों को मरा हुआ देखकर विचलित हो जाता है, वैसे ही
मैं भी विचलित होकर इधर-उधर भागने लगूंगा, अगर मुझे अपने प्यारे बेटे की झलक फिर कभी न दिखे।
जैसे जब कोई चील अपना घोंसला खाली देखती है, अपने बच्चों को मरा हुआ पाती है,
वैसे ही जब मैं उस खाली जगह को देखता हूँ तो मुझे लंबे समय तक पीड़ा होती रहेगी।
जैसे जब कोई चील अपना घोंसला खाली देखती है, अपने बच्चे को मरा हुआ पाती है, वैसे ही
मैं भी दुबली-पतली, पीली पड़ जाऊंगी और अपने प्यारे बेटे को फिर कभी नहीं देख पाऊंगी।
जैसे कोई चील अपना घोंसला खाली और अपने बच्चे को मरा हुआ देखती है, वैसे ही
मैं भी व्याकुल होकर भाग जाऊंगी, अगर मुझे अपने प्यारे बेटे को फिर कभी देखने का मौका न मिले।
जैसे लाल हंस किसी ऐसे तालाब के किनारे बैठे हों जिसका पानी सूख गया हो, वैसे ही

मैं अपने प्यारे बेटे को फिर कभी न देख पाने के दर्द में लंबे समय तक जीवित रहूंगी।
जैसे तालाब से पानी सूख जाने पर किनारे पर लाल हंस होते हैं, वैसे ही
मैं भी दुबली-पतली होकर बड़ी हो जाऊंगी और अपने प्यारे बेटे को फिर कभी नहीं देख पाऊंगी।
जैसे लाल हंस किसी ऐसे तालाब के किनारे बैठ जाते हैं जिसमें से पानी सूख गया हो,
मैं भी विचलित होकर उड़ जाऊंगी, अगर मुझे अपने प्यारे बेटे की झलक फिर कभी न दिखे।
और यदि आप मेरे निर्दोष पुत्र को राज्य से निकाल देते हैं, तो
मेरी इतनी शिकायत के बावजूद, मुझे लगता है कि मेरा जीवन समाप्त हो गया है।"
इस मामले को समझाते हुए गुरु ने कहा:

"रानी को दर्द से विलाप करते हुए सुनकर, महल की सभी महिलाएं तुरंत एक साथ अपनी बाहें फैलाकर उनके शोक में शामिल होने के लिए चली गईं।"

और राजकुमार के महल में, चारों ओर स्त्रियाँ और बच्चे ऐसे पड़े थे जैसे पेड़ ज़मीन पर गिर पड़े हों।

और जब रात समाप्त हुई और अगले दिन सूर्योदय हुआ, तब राजा वेसंतारा ने अपने उपहार बांटना शुरू किया।

"भूखे को भोजन दो, जिन्हें पीने की आवश्यकता है उन्हें पेय दो, जिन्हें वस्त्र चाहिए उन्हें वस्त्र दो, प्रत्येक की इच्छा के अनुसार।"

"यहाँ से कोई भी प्रेमी निराश होकर वापस न जाए, सभी का सम्मान करें, और किसी को भी खाने-पीने की कमी न होने दें।"

और इसलिए वे खुशी और उल्लास से भरे हुए बड़ी संख्या में एकत्रित हो गए, क्योंकि सिवी के महान और सहायक राजा जाने की तैयारी कर रहे थे।

उन्होंने एक विशाल, फलों से लदे पेड़ को काट डाला, जब उन्होंने निर्दोष वेसंतारा को देश से निकाल दिया।

उन्होंने एक मनोकामना पूरी करने वाले वृक्ष को काट डाला, जिस पर हर वरदान मौजूद था, जब उन्होंने निर्दोष वेसंतारा को देश से निकाल दिया।

उन्होंने वरदानों से परिपूर्ण वृक्ष को काट डाला, जब उन्होंने निर्दोष वेसंतारा को देश से निर्वासित कर दिया।

उस दिन बूढ़े और जवान, और उन दोनों के बीच के सभी लोग रोए और विलाप किया, अपनी बाहें फैलाकर, जब राजा जाने की तैयारी कर रहा था, जिसने सिवी के राज्य का पालन-पोषण किया था।

उस दिन बुद्धिमान स्त्रियाँ, हिजड़े, राजा की पत्नियाँ रोईं और विलाप किया, अपनी बाहें फैलाकर, जब राजा जाने की तैयारी कर रहा था, जिसने सिवी के राज्य का पालन-पोषण किया था।

और उस दिन शहर की सभी स्त्रियाँ रोईं और विलाप किया, जब सिवी के महान और सहायक राजा जाने की तैयारी कर रहे थे।

ब्राह्मणों और तपस्वियों ने भी, और जरूरतमंदों ने भीख मांगते हुए, अपनी बाहें फैलाकर जोर से कहा, "यह एक दुष्ट कर्म है!"

जब राजा ने अपनी उदारता का प्रदर्शन किया, तब वह पूरे शहर के सामने उपस्थित रहा, और जनता के फैसले के अनुसार, उसे निर्वासन में भेज दिया गया।

उसने सात सौ हाथी दिए, जो सभी वैभवशाली ढंग से सजे हुए थे, सोने की कमरबंद से बंधे हुए थे, और सुनहरे चमकीले अलंकृत वस्त्रों से सजी हुई काठी थी।

प्रत्येक अपने-अपने महावत के साथ, हाथ में नुकीला हुक लिए हुए: देखो, अब राजा वेसंतारा को देश से निर्वासित कर दिया गया है!

उन्होंने सात सौ घोड़े भी दिए, चमकीले वस्त्रों से सजे हुए, सिंध के घोड़े, और सभी शुद्ध नस्ल के, तेज दौड़ने वाले।

प्रत्येक पर एक साहसी सहायक सवार है, जिसके हाथों में तलवार और धनुष है: देखो, अब राजा वेसंतारा को देश से निर्वासित कर दिया गया है!

सात सौ रथ आपस में जुड़े हुए, झंडे लहराते हुए, बाघ की खाल और पैंथर की खाल से सजे हुए, एक भव्य दृश्य।

प्रत्येक रथ बख्तरबंद रथ चालकों द्वारा संचालित है, सभी के हाथों में धनुष है: देखो, अब राजा वेसंतारा को देश से निर्वासित कर दिया गया है!

उसने सात सौ स्त्रियाँ भी दीं, जिनमें से प्रत्येक रथ पर खड़ी थी, ये स्त्रियाँ सोने की जंजीरों और आभूषणों से सजी हुई थीं।

सुंदर वस्त्रों और आभूषणों से सुसज्जित, पतली कमर और सुडौल शरीर के साथ, घुमावदार भौंहों, हंसमुख और चमकदार मुस्कान और आकर्षक कूल्हों के साथ: देखो, अब राजा वेसंतारा को देश से निर्वासित कर दिया गया है!

उसने सात सौ गायें भी दीं, साथ में चांदी के दूध के बर्तन भी: देखो, अब राजा वेसंतारा को देश से निर्वासित कर दिया गया है!

उसने सात सौ महिला दासियाँ दीं, उतने ही पुरुष भी, जिन्हें वह अपनी सेवा में रख सकता था: देखो, अब राजा वेसंतारा को देश से निर्वासित कर दिया गया है!

उसने गाड़ियाँ, घोड़े, औरतें, हाथी सब कुछ दिया, फिर भी, देखो अब राजा वेसंतारा को देश से निर्वासित कर दिया गया है!

यह एक अत्यंत भयानक घटना थी, जिससे रोंगटे खड़े हो गए, जब राजा वेसंतारा को देश से निर्वासित कर दिया गया!

अब एक देवता ने पूरे भारत के राजाओं को यह समाचार सुनाया कि वेस्संतरा उच्च कुल की कन्याओं और इसी प्रकार की अन्य कन्याओं का बड़ा दान दे रहे हैं। इसलिए क्षत्रिय दिव्य शक्ति से रथ में सवार होकर आए और प्राप्त कन्याओं आदि को लेकर लौट गए। इस प्रकार क्षत्रिय, ब्राह्मण, वेस्स और सुद्ध, सभी ने प्रस्थान करने से पहले उनके हाथों से उपहार ग्रहण किए। वे शाम ढलने तक उपहार बांट ही रहे थे कि अपने माता-पिता से मिलने और उसी रात प्रस्थान करने के लिए अपने निवास स्थान पर लौट गए। भव्य रथ में सवार होकर वे अपने माता-पिता के निवास स्थान की ओर चल पड़े और उनके साथ मद्दी भी अपने माता-पिता से विदा लेने के लिए गए। उस महान सत्ता ने अपने पिता का अभिवादन किया और उनके आने की सूचना दी।

इसे समझाने के लिए गुरु ने कहा:

"धर्मी राजा संजय को प्रणाम कहना: उनसे कहना
कि चूंकि उन्होंने मुझे निर्वासित कर दिया है, इसलिए मैं वामका पर्वत की ओर जा रहा हूँ।"
हे महापुरुष, भविष्य में जिन प्राणियों को जाना जाएगा, वे
अपनी अतृप्त इच्छाओं के साथ यमराज के घर जाएंगे।
मैंने अपने लोगों के साथ गलत किया, अपने हाथों से उदारतापूर्वक दान दिया,
इसलिए सभी लोगों के फैसले के अनुसार मुझे इस भूमि से निर्वासित कर दिया गया है।
अब मैं उस पाप का प्रायश्चित तेंदुए से भरे जंगल में करूंगा:
यदि तुम बाहरी आवरण में प्रवेश करोगे, तब भी मैं भलाई करूंगा।
ये चार श्लोक उस महान सत्ता ने अपने पिता को संबोधित किए; और फिर उसने अपनी माता की ओर मुड़कर इन शब्दों के साथ संसार छोड़ने की अनुमति मांगी:

"माँ, मैं तुमसे विदा लेता हूँ: मैं एक निर्वासित व्यक्ति हूँ।
मैंने अपने लोगों के साथ अन्याय किया, उदारतापूर्वक अपने हाथों से दान दिया, और
जनता के फैसले के अनुसार मुझे इस भूमि से निर्वासित किया जा रहा है।"
अब मैं उस पाप का प्रायश्चित तेंदुए से भरे जंगल में करूंगा:
यदि तुम बाहरी आवरण में प्रवेश करोगे, तब भी मैं भलाई करूंगा।
इसके जवाब में फुसाती ने कहा:

"मैं तुम्हें जाने की अनुमति देता हूँ, मेरे बेटे, और मेरा आशीर्वाद भी लो:
मैडी और लड़कों को पीछे छोड़ दो, क्योंकि वह तुम्हारे लिए ठीक नहीं है;
सुंदर गोल-मटोल अंग और पतली कमर, उसे तुम्हारे साथ जाने की क्या ज़रूरत है?"
वेसंतारा ने कहा:

"मैं किसी दासी को भी उसकी इच्छा के विरुद्ध नहीं ले जाऊंगा:

लेकिन यदि वह चाहती है, तो उसे आने दो; यदि नहीं, तो उसे यहीं रहने दो।"
अपने बेटे की बात सुनकर राजा ने उससे विनती करना शुरू कर दिया।

इस बात को समझाते हुए गुरु ने कहा:

फिर राजा ने अपनी बहू से कहना शुरू किया:
"मैं आपसे विनती करता हूँ कि चंदन की सुगंध से महके हुए अंगों पर धूल और गंदगी न लगने दें।"
" बनारस के उत्तम वस्त्रों के स्थान पर छाल के रेशों से बने लट्ठे मत पहनो;
हे राजकुमारी, मत जाओ! वन जीवन वास्तव में बहुत कठिन है।"
तब तेजस्वी और सुंदर राजकुमारी मद्दी से उसके ससुर ने कहा:
"मैं वेसंतारा के बिना रहना नहीं चाहती, मुझे कोई सौभाग्य प्राप्त नहीं होगा।"
तब सिवी के शक्तिशाली और सहायक राजा ने उससे फिर इस प्रकार कहा:

"आओ, मद्दी, सुनो, मैं तुम्हें जंगलों के कष्टों के बारे में बताता हूँ।
कीड़ों और मक्खियों, भृंगों और मधुमक्खियों के झुंड
उस जंगल के जीवन में तुम्हें डंक मारेंगे, जिससे तुम गंभीर रूप से बीमार हो जाओगे।"
नदी के किनारे रहने वाले लोग अन्य विपत्तियों के बारे में सुनते हैं जो उनका इंतजार कर रही हैं:
बोआ-कॉन्स्ट्रिक्टर (यह सच है कि यह विषरहित है, लेकिन शक्तिशाली और विशाल है)।
यदि कोई मनुष्य या कोई जानवर पास आएगा, तो वह उसे मजबूती से पकड़ लेगा,
और उसे कई तहों में लपेटकर अपने छिपने के स्थान पर घसीट ले जाएगा।
फिर कुछ अन्य खतरनाक जानवर भी होते हैं जिनके बाल काले और उलझे हुए होते हैं;
वे किसी आदमी को पकड़ने के लिए पेड़ों पर चढ़ सकते हैं: इस जानवर को भालू कहा जाता है।
सोतुम्बारा नदी के किनारे भैंस निवास करती है;
जो अपने बड़े नुकीले सींगों से जोरदार प्रहार कर सकती है।
इन विशाल गायों के झुंड को जंगल में विचरण करते देख,
कोई बेचारी गाय अपने बछड़े को ढूंढ रही हो, तो मैडी क्या करेगी?
जब पेड़ों पर बंदरों की भीड़ जमा होती है, तो वे
तुम्हारी अज्ञानता और उनके भद्दे रूप से डर जाएंगे, मैडी।
एक समय था जब सियार की दहाड़ तुम्हें बहुत डरा देती थी:
अब वामका पहाड़ी पर रहते हुए, मद्दी, तुम क्या करोगे?
आप ऐसी जगह क्यों जाएंगे? दोपहर के समय भी,
जब सभी पक्षी आराम करने के लिए शांत हो जाते हैं, तब भी जंगल की गर्जना जारी रहती है।
तब सुंदर मद्दी ने राजा से बात की और इस प्रकार उत्तर दिया:

"जहाँ तक इन भयानक चीजों का सवाल है, जिन्हें आपने दिखाने की कोशिश की है,
मैं उन सभी को खुशी-खुशी स्वीकार करता हूँ; मैंने जाने का निश्चय कर लिया है।"
पहाड़ियों और जंगलों की सारी घास के बीच से, सरकंडे के झुंडों के बीच से,
मैं अपने सीने के बल पर अपना रास्ता बनाऊंगा, और वास्तव में शिकायत नहीं करूंगा।
जो स्त्री अपने पति को सुखी रखना चाहती है, उसे अपने सभी कर्तव्यों का पालन करना चाहिए;
गोबर के गोले बनाने के लिए भी तैयार रहना चाहिए, उपवास के लिए भी तैयार रहना चाहिए।
उसे आग को ध्यान से संभालना होगा, पानी को साफ करना होगा,
लेकिन विधवापन भयानक है: हे महान सम्राट, मैं जाऊंगी।
सबसे तुच्छ बात भी उसे नाराज कर देती है; वह फिर भी बचे हुए भोजन से ही काम चलाती है:
क्योंकि विधवापन बहुत भयानक होता है—हे महान सम्राट, मैं जाऊंगी।
धूल में गिराकर दम घोंट दिया गया, बालों से बेरहमी से खींचा गया—
कोई भी उन्हें कितना भी नुकसान पहुंचा सकता है, सब बस खड़े होकर देखते रहते हैं।
हे विधवापन कितना भयानक है! हे महान सम्राट, मैं जाऊंगी।
पुरुष विधवा के पुत्रों को बेरहमी और घिनौने ढंग से नोचते हैं,
चाहे वे कितने भी सुंदर और आकर्षक क्यों न हों, जैसे कौवे उल्लू को चोंच मारते हैं।

हे विधवापन कितना भयानक है! हे महान सम्राट, मैं जाऊंगी।
धन-दौलत से भरे, चांदी से जगमगाते घर में भी,
भाई-भाई और दोस्त दोनों की ओर से कड़वी बातें कभी बंद नहीं होतीं।
हे विधवापन कितना भयानक है! हे महान सम्राट, मैं जाऊंगी।
जलहीन नदियाँ नंगी होती हैं, राजा विहीन राज्य
नंगा होता है। एक विधवा के दस भाई हों, फिर भी वह नंगी ही होती है।
हे विधवापन कितना भयानक है! हे महान सम्राट, मैं जाऊँगी।
ध्वज रथ का चिन्ह है, आग धुएँ से पहचानी जाती है,
राज्य राजाओं से, और विवाहित पत्नी अपने पति से।
हे विधवापन कितना भयानक है! हे महान सम्राट, मैं जाऊँगी।
जो पत्नी अपने पति के सुख-दुख में उसका साथ देती है, चाहे वह अमीर हो या गरीब,
उसकी प्रसिद्धि की प्रशंसा स्वयं देवता (देवदूत) करते हैं, संकट में वह सुरक्षित रहती है।
मैं अपने पति का अनुसरण करूंगी, पीला वस्त्र धारण करूंगी,
पृथ्वी की रानी बनने की मुझे कोई परवाह नहीं।
हे विधवापन कितना भयानक है! हे महान सम्राट, मैं जाऊंगी।
उन महिलाओं में बिल्कुल भी दिल नहीं होता, वे कठोर और भावनाहीन होती हैं,
जो अपने पतियों के कष्ट में होने पर कल्याणकारी योजनाओं का लाभ उठाना चाहती हैं।
जब सिवी भूमि के महान स्वामी को निर्वासन में भेजा जाएगा, तो
मैं उनके साथ जाऊँगा; क्योंकि वे ही समस्त आनंद और समस्त संतोष प्रदान करते हैं।"
तब पराक्रमी राजा ने सुंदर और तेजस्वी मद्दी से कहा:

"परन्तु अपने दोनों छोटे बेटों को यहीं छोड़ देना: हे शुभ देवी, वे वहाँ क्या करेंगे
? हम उनकी रक्षा करेंगे और उनका पूरा ध्यान रखेंगे।"
तब राजकुमारी मद्दी ने राजा को उत्तर दिया,
"मेरी जली और कन्हाजिना मेरे दिल के सबसे प्रिय हैं:
वे जंगल में मेरे साथ रहेंगे और मेरे दर्द को कम करेंगे।"
इस प्रकार दिए गए उत्तर ने सम्राट को महान बना दिया, इस प्रकार सिवी के समर्थक राजा ने कहा:
"अब तक उनका भोजन उत्तम चावल और अच्छी तरह से पका हुआ स्वादिष्ट भोजन रहा है:
यदि उन्हें जंगली पेड़ों के फल खाने पड़ें, तो बच्चे क्या करेंगे?"
अब तक वे चांदी की सजी हुई या सोने की थालियों में
खाना खाते थे; लेकिन अब बच्चे सूखी पत्तियों से क्या करेंगे?
अब तक वे बनारस के कपड़े (रेशम) या लिनन पहनते आए हैं:
अगर उन्हें घास या छाल से बने कपड़े पहनने पड़ें, तो बच्चे क्या करेंगे?
अब तक वे घोड़ों की गाड़ियों या पालकी (हाथ से चलने वाली गाड़ी) में सफर करते आए हैं।
जब उन्हें पैदल दौड़ना पड़ेगा, तो बच्चे क्या करेंगे?
अब तक वे छज्जेदार कक्ष में सुरक्षित रूप से सोते थे:
पेड़ों की जड़ों के नीचे लेटने पर बच्चे क्या करेंगे?
अब तक वे तकियों, कालीनों या कढ़ाईदार बिस्तरों पर आराम करते थे:
घास के बिस्तर पर लेटे हुए बच्चे क्या करेंगे?
अब तक इन पर मीठी खुशबू और इत्र छिड़का गया है:
जब ये सब धूल और गंदगी से ढक जाएंगे, तो बच्चे क्या करेंगे?
जब मोर के पंख और याक की पूंछ के पंखे अब तक उन्हें हवा देते रहे हैं,
कीड़े-मकोड़ों और मक्खियों से परेशान होकर बच्चे क्या करेंगे?
जब वे आपस में बातें कर रहे थे, भोर हो गई और भोर के बाद सूर्य उदय हुआ। वे महानुभाव के लिए चार सिंधी घोड़ों की जोड़ी वाला एक भव्य रथ लेकर आए और उसे द्वार पर खड़ा कर दिया। मद्दी ने अपने पति के माता-पिता को प्रणाम किया और अन्य महिलाओं से विदा लेकर अपने दो बेटों के साथ वेसंतारा के आगे गई और रथ में बैठ गई।

इस मामले को समझाते हुए गुरु ने कहा:

तब मद्दी ने राजा को उत्तर दिया, हे सुंदर और तेजस्वी स्त्री:

"हे मेरे स्वामी, हमारे लिए शोक न करें और न ही इतना परेशान हों:
बच्चे हमारे साथ हर जगह जाएंगे जहाँ हम जाएंगे।"
इन्हीं शब्दों के साथ मैडी चली गई, वह सुंदर और तेजस्वी महिला: मुख्य सड़क पर, और अपने दो बच्चों के साथ वह अपने रास्ते पर आगे बढ़ गई।

तब राजा वेसंतारा स्वयं, अपनी प्रतिज्ञा का पालन करते हुए, अपने माता-पिता दोनों को प्रणाम करते हैं और दाहिनी ओर परिक्रमा करते हैं।

फिर, चार घोड़ों की टीम द्वारा खींचे जा रहे तेज रथ पर सवार होकर, वह अपनी पत्नी और बच्चों को लेकर वामका की चोटी की ओर तेजी से चल पड़ा।

फिर राजा वेसंतारा को उस ओर ले गए जहाँ भारी भीड़ उमड़ी हुई थी, और चिल्लाए—"हम चलते हैं! मेरे परिवार पर ईश्वर की कृपा बनी रहे—आपका भला हो!"

भीड़ को संबोधित करते हुए, उस महान व्यक्ति ने उन्हें सावधान रहने, दान देने और अच्छे कर्म करने की सलाह दी। जब वह जा रहे थे, तो बोधिसत्व की माता ने कहा, "यदि मेरे पुत्र की दान देने की इच्छा हो, तो वह दे," और उनके लिए दोनों ओर दो रथ भेजे, जो आभूषणों से भरे हुए थे और सात अनमोल वस्तुओं से लदे हुए थे। उन्होंने रास्ते में मिले भिखारियों को अठारह उपहारों में अपना सब कुछ बाँट दिया, यहाँ तक कि अपने शरीर पर पहने हुए आभूषणों का समूह भी। जब वे शहर से दूर चले गए, तो उन्होंने मुड़कर उसे देखने की इच्छा की; तब उनकी इच्छा के अनुसार पृथ्वी रथ के आकार तक फट गई, और घूमकर रथ को शहर की ओर ले आई, और उन्होंने वह स्थान देखा जहाँ उनके माता-पिता रहते थे। इसके बाद भूकंप और अन्य चमत्कार हुए; इसी कारण कहा जाता है:

"जब वह शहर से आगे बढ़ा, तो उसने मुड़कर फिर देखा: और इसलिए, बरगद के पेड़ की तरह विशाल सिनेरू पर्वत कांप उठा।"

और देखते हुए उसने एक श्लोक बोला ताकि मद्दी भी देखे:

"देखो, मद्दी, देखो वह सुंदर जगह जहाँ से हम अभी आए हैं—
सिवी के राजा का निवास स्थान और हमारा पैतृक घर!"
तब उस महान पुरुष ने अपने समय में जन्मे साठ हज़ार दरबारियों और बाकी लोगों की ओर देखकर उन्हें वापस लौटने का आदेश दिया; और रथ चलाते हुए आगे बढ़ते हुए उन्होंने मद्दी से कहा, "हे देवी, ध्यान से देखो कि कहीं कोई वर तो पीछे नहीं आ रहा।" वह देखती रही। अब चार ब्राह्मण, जो सात सौ दान के समय उपस्थित नहीं हो पाए थे, शहर में आए थे; और यह देखकर कि दान का वितरण हो चुका है, उन्होंने पता लगाया कि राजकुमार चले गए हैं। उन्होंने पूछा, "क्या वह अपने साथ कुछ ले गए हैं?" "हाँ: एक रथ।" इसलिए उन्होंने घोड़े माँगने का निश्चय किया। मद्दी ने उन पुरुषों को आते देखा। "हे स्वामी, भिखारी!" उसने कहा; उस महान पुरुष ने रथ रोक दिया। वे आए और घोड़े माँगे: उस महान पुरुष ने उन्हें दे दिए।

इस बात को समझाते हुए गुरु ने कहा:

"तब चार ब्राह्मण उसके पास पहुँचे और घोड़ों के लिए विनती की: उसने तुरंत घोड़े दे दिए - प्रत्येक भिखारी को एक घोड़ा मिला।"

घोड़ों को हटा दिया गया, रथ का जुआ हवा में लटका रह गया; लेकिन ब्राह्मणों के जाते ही लाल हिरण के वेश में चार देवता (देवदूत) आए और उसे पकड़ लिया। उस महान सत्ता ने, जो उन्हें देवता (देवदूत) के रूप में जानती थी, यह श्लोक कहा:

"देखो, मैडी, कितनी अद्भुत चीज़ है—एक चमत्कार है, मैडी, देखो!
ये चतुर घोड़े, लाल हिरण के आकार में, मुझे आकर्षित कर रहे हैं!"
लेकिन जब वह ऊपर जा रहा था, तभी एक और ब्राह्मण आया और उसने रथ मांगा। उस महान सत्ता ने अपनी पत्नी और बच्चों को रथ से उतार दिया और उसे रथ दे दिया; और रथ देते ही देवता (देवदूत) गायब हो गए।

रथ के उपहार की व्याख्या करते हुए गुरु ने कहा:

"पांचवां व्यक्ति वहाँ आया और राजा से रथ माँगा: राजा ने उसे भी दे दिया, और उसे अपने पास रखने की कोई लालसा नहीं हुई।"

तब राजा वेसंतारा ने अपने लोगों को रथ से उतरने का आदेश दिया और रथ उस व्यक्ति को दे दिया जो इस कार्य के लिए आया था।

इसके बाद वे सब पैदल ही आगे बढ़ गए। तब उस महान सत्ता ने मद्दी से कहा:

"मद्दी, तुम कन्हाजिना को ले जाओ, क्योंकि वह हल्की और जवान है,
लेकिन जाली भारी लड़का है, इसलिए मैं उसे साथ ले आऊंगा।"
फिर उन्होंने दोनों बच्चों को उठाया और उन्हें अपनी कमर पर लादकर ले गए।

इस बात को समझाते हुए गुरु ने कहा:

"वह अपने बेटे को गोद में लिए हुए था और वह अपनी बेटी को, वे आगे बढ़ते गए, रास्ते में खुशी और पूर्ण संतोष के साथ बातें करते हुए।"

जब रास्ते में उन्हें कोई मिलने आता, तो वे वामका पहाड़ी का रास्ता पूछते और उन्हें पता चलता कि वह बहुत दूर है। इसलिए कहा जाता है:

"जब भी वे रास्ते में आने वाले यात्रियों से मिलते, तो वे उनसे उनके रास्ते का पता पूछते और यह भी पूछते कि वामका पर्वत कहाँ स्थित है।"

रास्ते में उन्हें देखकर सभी यात्री दर्द से रोने लगे और उन्हें उनके कठिन कार्य के बारे में बताया: "रास्ता लंबा है," वे कहते हैं।

सड़क के दोनों किनारों पर लगे पेड़ों पर तरह-तरह के फल देखकर बच्चे खुशी से रोने लगे। फिर ईश्वर की कृपा से पेड़ों ने अपने फल झुका दिए ताकि बच्चे उन तक पहुँच सकें, और उन्होंने सबसे पके फल चुनकर बच्चों को दे दिए। तब मद्दी चिल्लाई, "अद्भुत!" ऐसा कहा जाता है:

जब भी बच्चे ढलान पर फलों से लदे पेड़ देखते थे, तो वे फलों के लिए रोने लगते थे।

लेकिन जब उन्होंने बच्चों को रोते देखा, तो ऊंचे पेड़ शोक में झुक गए और अपनी शाखाओं को उनके हाथों के सामने झुका दिया, ताकि वे फल तोड़ सकें।

तब मैडी खुशी से जोर से चिल्लाई, "वह सुंदर और तेजस्वी महिला, इस चमत्कार को देखकर रोंगटे खड़े हो जाते हैं।"

यहां दिखाए गए चमत्कार को देखकर रोंगटे खड़े हो सकते हैं: राजा वेसंतारा की शक्ति से पेड़ स्वयं झुक जाते हैं!

जेतुत्तरा नगर से सुवन्नागिरितला नामक पर्वत पाँच मील (4.23 किमी) दूर है; वहाँ से कोन्तिमारा नदी पाँच मील (4.23 किमी) दूर है, और उससे भी पाँच मील (4.23 किमी) आगे अरंजरागिरि पर्वत है, फिर पाँच मील (4.23 किमी) आगे दुन्निवित्था नामक ब्राह्मण गाँव है, और वहाँ से दस मील (4.23 किमी) दूर उनके मामा का नगर है: इस प्रकार जेतुत्तरा से यात्रा तीस मील (4.23 किमी) की थी। देवताओं (देवदूतों) ने यात्रा को छोटा कर दिया, जिससे वे एक ही दिन में उनके मामा के नगर पहुँच गए। ऐसा कहा जाता है:

"यक्खाओं ने बच्चों की दुर्दशा पर दया करते हुए यात्रा को छोटा कर दिया, और इस प्रकार वे रात होने से पहले सेता राज्य पहुँच गए।"

वे नाश्ते के समय जेतुत्तरा से निकले और शाम को सेता राज्य और उसके चाचा के शहर पहुंचे।

इस बात को समझाते हुए गुरु ने कहा:

वे सेता की ओर चल पड़े, एक लंबी और महान यात्रा पर, एक ऐसा राज्य जो भोजन और पेय से समृद्ध, समृद्ध और शक्तिशाली था।

उनके चाचा के नगर में साठ हजार क्षत्रिय निवास करते थे। महापुरुष नगर में प्रवेश नहीं किए, बल्कि नगर के द्वार पर स्थित एक सभागार में बैठ गए। मद्दी ने महापुरुष के चरणों से धूल झाड़कर उन्हें मला; फिर वेसंतारा के आगमन की सूचना देने के उद्देश्य से वह सभागार से आगे बढ़ीं और उनके दर्शन के लिए खड़ी हो गईं। नगर में आने-जाने वाली स्त्रियों ने उन्हें देखा और उनके पास आ गईं।

इस बात को समझाते हुए गुरु ने कहा:

"उस शुभ महिला को वहाँ देखकर उसके चारों ओर स्त्रियाँ उमड़ पड़ीं। वह कोमल महिला! अब उसे पैदल ही चलना होगा।"

एक समय था जब वह कुलीन महिला पालकी (हाथ से चलने वाली गाड़ी) या रथ में सवार होती थी: अब मद्दी को पैदल ही जाना पड़ता है; जंगल ही उसका निवास स्थान है।

तब सभी लोगों ने जब देखा कि मद्दी, वेसंतारा और बच्चे इस अशोभनीय तरीके से आए हैं, तो वे राजा के पास गए और उन्हें सूचना दी; और साठ हजार राजकुमार रोते-बिलखते उनके पास आए।

इसे समझाने के लिए गुरु ने कहा:

उन्हें देखकर सेता राजकुमार विलाप और शोक करते हुए आए।
“हे स्वामी, आपको नमस्कार! हमें आशा है कि आप समृद्ध और कुशल होंगे,
और आपके पिता और उनके राज्य के बारे में आपके पास कोई शुभ समाचार होगा।”
हे महामहिम, आपकी सेना कहाँ है? और आपका राजसम्मंत्रित रथ कहाँ है?
बिना रथ, बिना घोड़े के आप इतनी दूर तक यात्रा कर चुके हैं:
क्या आप अपने शत्रुओं से पराजित हुए हैं कि यहाँ अकेले रह गए हैं?
तब उस महान सत्ता ने राजकुमारों को अपने आने का कारण बताया:

"धन्यवाद, महोदय; निश्चिंत रहें कि मैं समृद्ध और कुशल हूं;
और मुझे अपने पिता और उनके राज्य के बारे में अच्छी खबर सुनानी है।"
मैंने उद्धारक हाथी को दिया, जो नुकीले दांतों वाला, विशाल और सफेद था,
जो हर लड़ाई में अनुकूल स्थिति चुनने का ज्ञान रखता था;
उसके रत्न, और उसकी याक की पूंछ का पंखा; जिसने शत्रुओं को कुचल दिया,
लंबे दांतों वाला, उग्र, बर्फ से ढके केलासा पर्वत के समान सफेद;
सजावटी वस्त्रों और सफेद छतरी के साथ, राजा के लिए उपयुक्त सवारी करते हुए,
जोंक और सारथी के साथ: हाँ, मैंने यह अनमोल वस्तु दान कर दी।
इसलिए लोग क्रोधित हो गए, मेरे पिता को बुरा लगा:
इसलिए उन्होंने मुझे देश निकाला दे दिया, और अब मैं वामका पहाड़ी पर जा रहा हूँ।
मैं आपसे निवेदन करता हूँ कि मुझे रहने के लिए कोई जगह बताएँ।
राजकुमारों ने उत्तर दिया:

"अब आपका स्वागत है, हे शक्तिशाली राजा, और बिना किसी संदेह के:
यहाँ जो कुछ भी है, उसके स्वामी बनिए और अपनी इच्छानुसार उसका उपयोग कीजिए।"
जड़ी-बूटियाँ, जड़ें, शहद, मांस और चावल, सबसे सफेद और सर्वोत्तम गुणवत्ता वाले लें:
हे राजा, इनका भरपूर आनंद लें, और आप हमारे अतिथि होंगे।
वेसंतारा ने कहा:

"आपके द्वारा दिए गए उपहार मैं कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार करता हूँ।
लेकिन अब राजा ने मुझे निर्वासित कर दिया है; मैं वामका पहाड़ी जा रहा हूँ।
मैं आपसे निवेदन करता हूँ कि मुझे रहने के लिए कोई स्थान बताएँ।"
राजकुमारों ने कहा:

"हे शक्तिशाली राजा, सेता में यहीं ठहरिए, जब तक कि एक संदेश न भेजा जाए,
जिसमें सिवी देश के राजा को वह सब बताया जाए जो हमें पता चला है।"
फिर भीड़ में उसके पीछे-पीछे चलने वाले लोग,
सभी खुशी और आत्मविश्वास से भरे हुए थे: यह मैं आपको बताना चाहता हूँ।
उस महान सत्ता ने कहा:

"मैं नहीं चाहता कि तुम राजा को यह बताने के लिए संदेश भेजो कि मैं यहाँ हूँ:
इस मामले में वह राजा नहीं है: मुझे डर है कि उसके पास कोई शक्ति नहीं है।"
महल के लोग और नगरवासी सभी क्रोधित होकर इकट्ठा हो गए,
सभी इस बात से उत्सुक थे कि मेरे कारण वे राजा को नष्ट कर दें।

राजकुमारों ने कहा:

"यदि उस राज्य में इतनी भयानक घटना घटित हो जाए, तो
सेता लोगों से घिरे हुए यहीं रहो, और हमारे राजा बनो।"
यह राज्य समृद्ध और धनी है, यहाँ की जनता बलवान और महान है:
महोदय, कृपया हमारे साथ रहें और हमारे इस राज्य का शासन संभालें।
वेसंतारा ने कहा:

"हे सेता देश के पुत्रों, मेरी बात सुनो!
मैं निर्वासित होकर जा रहा हूँ, इसलिए यहाँ रुकने का मेरा कोई इरादा नहीं है, न ही यहाँ राज करने का।"
सिवी के सभी लोग यह जानकर बेहद नाराज होंगे
कि आपने मुझे राजा के रूप में अभिषेक किया है, जबकि मैं निर्वासित होकर जा रहा हूँ।
यदि आप ऐसा करते हैं, तो यह बहुत ही अप्रिय बात होगी,
सिवी लोगों से झगड़ा करना: मुझे झगड़ा करना पसंद नहीं है।
आपके द्वारा दिए गए उपहार मैं कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार करता हूँ।
परन्तु अब राजा ने मुझे निर्वासित कर दिया है: मैं वामका पर्वत जा रहा हूँ।
आपसे निवेदन है कि मुझे रहने के लिए कोई स्थान बताएँ।
इस प्रकार, इतने सारे अनुरोधों के बावजूद, उस महान सत्ता ने राज्य को स्वीकार करने से इनकार कर दिया। राजकुमारों ने उनका बहुत सम्मान किया; लेकिन वे नगर में प्रवेश नहीं करना चाहते थे; इसलिए उन्होंने उस कक्ष को सजाया-संवारा जहाँ वे ठहरे थे, और उसके चारों ओर एक बड़ा पलंग लगाकर चारों ओर कड़ी निगरानी रखी। एक दिन और एक रात वे उस कक्ष में पहरेदारों की निगरानी में रहे; और अगले दिन, सुबह तड़के, राजकुमारों द्वारा परोसे गए स्वादिष्ट भोजन के बाद, वे कक्ष से निकले, और साठ हज़ार क्षत्रिय उनके साथ पंद्रह मील (4.23 किमी) तक गए, फिर जंगल के प्रवेश द्वार पर खड़े होकर उन्होंने उनकी शेष पंद्रह मील (4.23 किमी) की यात्रा का वर्णन किया।

"हाँ, हम आपको बताएंगे कि कैसे संसार छोड़ने वाला राजा
अच्छा, अपनी पवित्र अग्नि के पास शांतिप्रिय और सर्वथा शांत हो सकता है।"
हे पराक्रमी राजा, वह पथरीला पर्वत गंधमादन है,
जहाँ आप अपने बच्चों और पत्नी के साथ रह सकते हैं।
सेता जनजाति के लोग, जिनके चेहरे आंसुओं से भीगे हुए हैं और आंखों से आंसू बह रहे हैं,
आपको उत्तर दिशा में सीधे जाने की सलाह देते हैं, जहां इसकी ऊंची चोटियां उठती हैं।
वहाँ आपको विपुल पर्वत दिखाई देगा (और आपके साथ आशीर्वाद हो),
जो अनेक वृक्षों से सुहावना है और नीचे ठंडी छाया प्रदान करता है।
जब तुम वहाँ पहुँचोगे, तो तुम्हें (तुम्हारे साथ एक आशीर्वाद के रूप में)
केतुमती नदी दिखाई देगी, जो एक गहरी नदी है और पहाड़ी से निकलती है।
मछलियों से भरा हुआ, एक सुरक्षित आश्रय स्थल, इसकी गहरी बाढ़ बहती है:
वहाँ तुम पानी पियोगे, वहाँ स्नान करोगे और अपने बच्चों के साथ खेलोगे।
और वहाँ, एक रमणीय पहाड़ी पर, ठंडी छाया में, आपको
शहद जैसे मीठे फलों से लदा हुआ एक भव्य बरगद का वृक्ष दिखाई देगा।
फिर आपको नालिका पर्वत दिखाई देगा, और वह एक प्रेतबाधित भूमि है:
क्योंकि वहां पक्षी एक साथ गाते हैं और कई वन परियां रहती हैं।
उत्तर की ओर और आगे बढ़ने पर मुकालिंडा झील है,
जिस पर नीले और सफेद रंग के लिली के फूल एक आवरण बनाते हैं।
फिर एक घना जंगल, बादल की तरह, जिसमें चलने के लिए घास का मैदान है,
फूलों और फलों से लदे पेड़, ऊपर घनी छाया,
प्रवेश करते हैं: एक शेर शिकार की तलाश में है जिससे वह अपना पेट भर सके।
जब जंगल फूलों से भरा होता है, तो वहां गीतों की बौछार सुनाई देती है,
कई चमकीले पंखों वाले पक्षियों की चहचहाहट इधर-उधर गूंजती है।
और यदि तुम उन पर्वतीय जलप्रपातों का अनुसरण करते हुए उनके उद्गम स्थल तक पहुँचोगे, तो
तुम्हें खिले हुए फूलों से ढकी एक झील मिलेगी।

मछलियों से भरा हुआ, एक सुरक्षित रिसॉर्ट, अंतहीन गहरा पानी,
चौकोर और शांत, मीठी सुगंध से भरपूर, अप्रिय गंध से रहित:
वहाँ उत्तर दिशा की ओर थोड़ा हटकर पत्तों से घिरी एक कोठरी बना लो,
और उस कोठरी से भोजन की तलाश में आगे बढ़ो।
इस प्रकार राजकुमारों ने उसे पंद्रह लीग (4.23 किमी) की यात्रा के बारे में बताया और उसे जाने दिया। लेकिन वेसंतारा में किसी भी प्रकार के खतरे से बचने और किसी भी शत्रु को कोई अवसर न देने के उद्देश्य से, उन्होंने अपने देश के एक बुद्धिमान और कुशल व्यक्ति को उसके आने-जाने पर नज़र रखने का निर्देश दिया; जिसे उन्होंने जंगल के प्रवेश द्वार पर छोड़ दिया और अपने शहर लौट गए।

वेसंतारा अपनी पत्नी और बच्चों के साथ गंधमादना के लिए रवाना हुए; उस दिन वहाँ कुछ दिन बिताने के बाद, उत्तर दिशा की ओर मुख करके वे विपुल पर्वत की तलहटी से होते हुए केतुमती नदी के किनारे विश्राम करने के लिए रुके, जहाँ उन्होंने वनपाल द्वारा उपलब्ध कराया गया भरपूर भोजन किया। वहाँ उन्होंने स्नान किया और पानी पिया, तथा अपने मार्गदर्शक को एक सोने की बाली भेंट की। शांत मन से उन्होंने नदी पार की और पर्वत पर समतल स्थान पर खड़े बरगद के वृक्ष के नीचे कुछ देर विश्राम करने के बाद, उसके फल खाकर वे उठे और नालिका नामक पहाड़ी की ओर चल पड़े। आगे बढ़ते हुए, वे मुचलिंडा झील के किनारे-किनारे उसके उत्तर-पूर्वी कोने तक पहुँचे; वहाँ से एक संकरे रास्ते से वे घने जंगल में प्रवेश कर गए और वहाँ से गुजरते हुए, पर्वत से निकलने वाली नदी के प्रवाह का अनुसरण करते हुए वे चौकोर झील तक पहुँचे।

इस समय, देवताओं के राजा सक्का (इंद्र) ने नीचे देखा और जो कुछ हुआ था उसे देखा। उन्होंने सोचा, "महान प्राणी हिमवत (हिमालय) में प्रवेश कर चुके हैं, और उन्हें रहने के लिए कोई स्थान चाहिए होगा।" इसलिए उन्होंने विश्वकर्मा को आदेश दिया: "कृपा करके जाओ और वामका पर्वत की घाटियों में एक रमणीय स्थान पर एक आश्रम बनाओ।" विश्वकर्मा गए और उन्होंने दो ढके हुए रास्तों वाले दो आश्रम बनाए, रात्रि और रात्रि के लिए कमरे बनाए; रास्तों के किनारे उन्होंने फूलों के वृक्षों की कतारें और केले के बाग लगाए और संन्यासियों के लिए सभी आवश्यक चीजें तैयार कीं। फिर उन्होंने एक शिलालेख लिखा, "जो कोई संन्यासी बनना चाहता है, ये उसके लिए हैं," और सभी अमानवीय प्राणियों और कर्कश आवाज वाले जानवरों और पक्षियों को भगाकर वे अपने स्थान पर चले गए।

जब उस महान पुरुष ने एक मार्ग देखा, तो उन्हें विश्वास हो गया कि यह किसी संन्यासी की बस्ती की ओर जाता होगा। उन्होंने मद्दी और दोनों बच्चों को आश्रम के प्रवेश द्वार पर छोड़ दिया और अंदर चले गए; शिलालेख देखकर उन्होंने पहचान लिया कि सक्का (इंद्र) की दृष्टि उन पर है। उन्होंने द्वार खोला और अंदर प्रवेश किया, अपने धनुष और तलवार को उतारकर, अपने वस्त्रों के साथ संन्यासी का वेश धारण किया, लाठी उठाई और ढके हुए मार्ग पर चलकर आगे-पीछे टहलते हुए पच्चेक बुद्ध की शांति के साथ अपनी पत्नी और बच्चों के पास पहुँचे। मद्दी उनके चरणों में गिर पड़ी और रोने लगी; फिर उनके साथ आश्रम में प्रवेश करके वह अपनी कुटिया में गई और संन्यासी का वेश धारण किया। इसके बाद उन्होंने अपने बच्चों को भी ऐसा ही करने को कहा। इस प्रकार चारों महान संन्यासी वामका पर्वत की एकांत भूमि में निवास करने लगे।

तब मद्दी ने महापुरुष से वरदान माँगा। "हे प्रभु, आप जंगली फल लाने के लिए बाहर जाने के बजाय यहीं बच्चों के साथ रहें; और मुझे जाने दें।" तब से वह जंगल से जंगली फल लाकर तीनों को खिलाने लगी। बोधिसत्व ने भी उससे वरदान माँगा। "मद्दी, अब हम संन्यासी हैं; और स्त्री पवित्रता की दुश्मन है। इसलिए अब से समय से पहले मेरे पास मत आना।" उसने स्वीकार कर लिया।

ईश्वर की करुणा से, यहाँ तक कि उनके सीमा क्षेत्र से तीन मील (4.23 किमी) के दायरे में रहने वाले सभी जंगली जानवर भी एक-दूसरे के प्रति दयालु हो गए। प्रतिदिन सुबह होते ही, मद्दी उठती, उनके लिए पीने का पानी और खाने का भोजन लाती, मुँह धोने के लिए पानी और टूथब्रश लाती, कुटिया की सफाई करती, दोनों बच्चों को उनके पिता के पास छोड़कर, टोकरी, फावड़ा और हुक लेकर जंगली जड़ों और फलों की ढुलाई के लिए जंगल जाती, जिनसे वह अपनी टोकरी भर लेती। शाम को लौटकर वह कुटिया में जंगली फल रखती, बच्चों को नहलाती; फिर चारों कुटिया के द्वार पर बैठकर फल खाते। इसके बाद मद्दी अपने दोनों बच्चों को लेकर अपनी कुटिया में चली जाती। इस प्रकार वे सात महीने तक पर्वत की गहराई में रहे।

उस समय, कलिंग राज्य में, दुन्निवित्था नामक ब्राह्मण गाँव में, जुजक नामक एक ब्राह्मण रहता था। उसने भिक्षा माँगकर सौ रुपये प्राप्त किए और उन्हें एक ब्राह्मण परिवार के पास जमा कर दिया, और अधिक धन कमाने के लिए निकल गया। उसके लंबे समय तक अनुपस्थित रहने के कारण, परिवार ने वह धन खर्च कर दिया; दूसरा परिवार वापस आया और उन्हें डाँटा, लेकिन वे धन लौटा नहीं सके, इसलिए उन्होंने अपनी पुत्री अमिततत्तापना को उसे दे दिया। वह पुत्री को अपने साथ कलिंग के दुन्निवित्था ले गया और वहाँ रहने लगा। अमिततत्तापना ब्राह्मण की अच्छी तरह से सेवा करती थी। कुछ अन्य युवा ब्राह्मणों ने उसकी कर्तव्यनिष्ठा देखकर अपनी पत्नियों को यह कहकर ताना मारा: "देखो, वह एक बूढ़े व्यक्ति की कितनी अच्छी तरह से सेवा करती है, जबकि तुम अपने युवा पतियों की परवाह नहीं

करती!" इससे पत्नियों ने उसे गाँव से निकालने का निश्चय कर लिया। इसलिए वे नदी किनारे और हर जगह भीड़ बनाकर उसका अपमान करती थीं।

इस बात को समझाते हुए गुरु ने कहा:

"एक बार कलिंग में, जुजाका नामक एक ब्राह्मण ने अपना जीवन व्यतीत किया, जिसकी पत्नी अमिततातापना नाम की एक बहुत ही युवा लड़की थी।"

जो महिलाएं पानी के घड़े लेकर नदी तक आई थीं, वे उस पर शर्म करने के लिए उमड़ पड़ीं और उसके नाम को बुरी तरह कोसने लगीं।

"तुम्हारी माँ सचमुच एक 'शत्रु' थी, तुम्हारे पिता भी एक 'शत्रु' थे,
जिन्होंने एक बूढ़े, थके-हारे आदमी को तुम्हारे जैसी जवान पत्नी से शादी करने की अनुमति दी।"
तुम्हारे लोगों ने एक गुप्त साजिश रची, एक बुरी, नीच, क्रूर योजना,
एक सुंदर युवती की शादी एक बूढ़े, थके-हारे आदमी से करवाने की।
तुम्हारा जीवन कितना घृणित होगा, तुम्हारी कम उम्र में ही,
एक बूढ़े पति से शादी करना; नहीं, मृत्यु कहीं बेहतर होगी।
मेरी प्यारी बच्ची, ऐसा लगता है कि तुम्हारे माता-पिता निर्दयी थे,
क्योंकि उन्हें इतनी सुंदर युवती के लिए कोई दूसरा पति नहीं मिल सका।
आपकी अग्नि-आहुति और आपकी नौवीं आहुति सब व्यर्थ हो गईं,
यदि किसी बूढ़े, थके-हारे आदमी के हाथों इतनी जवान पत्नी मिल गई।
आपने कभी न कभी किसी ब्राह्मण या तपस्वी का अपमान किया होगा,
किसी गुणी या विद्वान व्यक्ति का, किसी निर्मल संन्यासी का,
यदि किसी बूढ़े और कमजोर आदमी के हाथों आपकी जवान पत्नी का भंडाफोड़ हुआ हो।
भाले का वार दर्दनाक होता है, सांप का ज्वालामय डंक पीड़ादायक होता है:
लेकिन एक थका हुआ पति देखना कहीं अधिक कष्टदायक होता है।
एक बूढ़े पति के साथ न तो कोई खुशी हो सकती है, न कोई आनंद,
न कोई सुखद बातचीत: उसकी हंसी भी देखने में भद्दी लगती है।
जब पुरुष और महिलाएं, युवा आपस में बातचीत करते हैं, तो
वे हृदय में संजोए सभी कष्टों का अंत कर देते हैं।
तुम वो लड़की हो जिसे मर्द चाहते हैं, तुम जवान हो और सुंदर हो:
एक बूढ़ा आदमी तुम्हें कैसे खुशी दे सकता है? घर जाओ और वहीं इंतजार करो!
जब उसने उनका उपहास सुना, तो वह पानी का घड़ा लेकर रोते हुए घर चली गई। "तुम क्यों रो रही हो?" पति ने पूछा; और उसने इस छंद में उत्तर दिया:

"मैं घर पानी नहीं ला सकती, औरतें मेरा इतना मजाक उड़ाती हैं:
क्योंकि मेरे पति बहुत बूढ़े हैं, इसलिए जब मैं जाती हूं तो वे मेरा मजाक उड़ाती हैं।"
जुजाका ने कहा:

"तुम्हें घर से पानी लाने की ज़रूरत नहीं है, तुम्हें मेरी सेवा करने की ज़रूरत नहीं है:
नाराज़ मत हो, मेरी प्रियतमा: क्योंकि मैं खुद चला जाऊंगा।"
महिला ने कहा:

"क्या तुम पानी लाओगे? नहीं, बिलकुल नहीं! यह हमारा सामान्य तरीका नहीं है।
मैं तुम्हें साफ-साफ बता दूं, अगर तुम ऐसा करोगे, तो मैं तुम्हारे साथ नहीं रुकूंगा।"
जब तक आप इस तरह का काम करने के लिए कोई गुलाम या नौकरानी नहीं खरीदते,
मैं आपको साफ-साफ बता देती हूं कि मैं चली जाऊंगी और आपके साथ नहीं रहूंगी।"
जुजाका ने कहा:

"मैं गुलाम कैसे खरीद सकता हूँ? मेरे पास न कोई हुनर है, न अनाज, न धन-दौलत:
आइए, क्रोधित न हों, मेरी मालकिन: मैं आपका काम खुद कर लूँगा।"

महिला ने कहा:

"अब सुनो, मैं तुम्हें बताता हूँ कि मैंने उन्हें क्या कहते सुना है।
वामका पर्वत पर राजा वेसंतारा रहते हैं।"
हे पति, वेसंतारा जाओ और उससे एक दास मांगो;
राजकुमार तुम्हें तुम्हारी इच्छा अवश्य पूरी कर देगा।
जुजाका ने कहा:

मैं एक बूढ़ा, थका हुआ आदमी हूँ; रास्ता ऊबड़-खाबड़ और लंबा है;
लेकिन चिंता मत करो, रोओ मत—और मैं बिल्कुल भी मजबूत नहीं हूँ:
लेकिन गुस्सा मत करो, मेरी प्रियतमा: मैं काम खुद कर लूँगा।
महिला ने कहा:

"तुम उस सैनिक की तरह हो जो लड़ाई से पहले ही हार मान लेता है: लेकिन क्यों?
और क्या तुम कोशिश करने से पहले ही यह स्वीकार करते हो कि तुम हार चुके हो?"
जब तक आप इस तरह का काम करने के लिए कोई दासी या नौकरानी नहीं खरीदते,
मैं आपको साफ-साफ बता देती हूँ, मैं चली जाऊँगी, मैं आपके साथ नहीं रहूँगी।
यह आपके लिए बहुत अप्रिय और कष्टदायक होगा।
जब मैं किसी और की बाहों में खुश होऊंगी, तो तुम मुझे जल्द ही देखोगे,
मौसम के बदलाव या चंद्रमा के बदलाव के अनुसार रंग-बिरंगे वस्त्रों में सजी हुई।
और जैसे-जैसे आपके जीवन के अंतिम वर्षों में आप मेरी अनुपस्थिति पर शोक मनाएंगे,
आपकी झुर्रियां और आपके सफेद बाल और भी अधिक बढ़ते जाएंगे।
इस बात को समझाते हुए गुरु ने कहा:

और अब भय से ग्रस्त ब्राह्मण अपनी पत्नी की इच्छा के आगे झुक जाता है; तब अपने प्रेम से पीड़ित होकर, आपने उसे यह कहते हुए सुना होगा:

"मेरे लिए रास्ते का सामान लाओ: मेरे लिए कुछ शहद का केक बनाओ,
कुछ बन्नॉक भी तैयार करो, और जौ की रोटी को पकने के लिए रख दो।"
और फिर मैं अपने साथ दो बराबर दासों को लाऊंगा,
जो बिना थके दिन-रात तुम्हारी सेवा करेंगे।"
उसने जल्दी से राशन तैयार किया और उसे सूचित किया कि काम हो गया है। इस बीच उसने अपनी कुटिया की कमजोर जगहों की मरम्मत की, दरवाज़ा बंद किया, जंगल से लकड़ी लाई, घड़े में पानी भरा, सभी बर्तनों में पानी भरा और तपस्वी का वस्त्र पहनकर उससे कहा, "ध्यान रखना कि अनुचित समय पर बाहर मत जाना और मेरे लौटने तक सावधान रहना।" फिर जूते पहनकर उसने राशन का थैला कंधे पर रखा, अपनी पत्नी के चारों ओर दाहिनी ओर घूमा और नम आँखों से विदा हो गया।

इस बात को समझाते हुए गुरु ने कहा:

"यह हो जाने पर, ब्राह्मण अपने जूते पहनता है; फिर तुरंत उठकर, उसके चारों ओर दाहिनी ओर चलते हुए अपनी पत्नी को अलविदा कहता है।"

इसलिए वह पवित्र वस्त्र पहने, आँखों में आँसू लिए, धनी सिवी राजधानी की ओर एक दास की खोज में निकल पड़ा।

जब वह उस शहर में आया, तो उसने वहां मौजूद लोगों से पूछा कि वेसंतारा कहाँ है।

इस बात को समझाते हुए गुरु ने कहा:

"जब वह आगे बढ़ा, तो उसने आस-पास जमा लोगों से पूछा—
"बताइए, राजा वेसंतारा कहाँ हैं? राजकुमार कहाँ मिल सकते हैं?"
उसके चारों ओर एकत्रित लोगों ने उसे उत्तर दिया:
"तुम्हारे जैसे लोगों के कारण ही वह बर्बाद हो गया है; क्योंकि लगातार दान देने के कारण ही

उसे समस्त लोक से निकाल दिया गया है और वह वामका पर्वत में निवास करता है।"
तुम जैसे लोगों के कारण ही वह बर्बाद हुआ है; क्योंकि लगातार देते रहने के कारण
उसने अपनी पत्नी और बच्चों को खो दिया और अब वामका पहाड़ी पर रहता है।
"तो तुमने हमारे राजा को मार डाला, और अब फिर यहाँ आ गए हो! यहीं खड़े रहो!" और उन्होंने लाठियों, पत्थरों, लातों और घूंसे से उसे भगा दिया। लेकिन देवताओं (देवदूतों) ने उसे वामका पहाड़ी के सही रास्ते पर निर्देशित किया।

इस बात को समझाते हुए गुरु ने कहा:

"इसलिए, पत्नी द्वारा फटकारे जाने पर, वह लालच और वासना के प्रभाव में आकर, उस जंगल में अपनी गलती का प्रायश्चित करने गया जहाँ जंगली जानवर और तेंदु शिकार करते हैं।"

अपनी लाठी, भिक्षापात्र और बलि का चम्मच लेकर, वह उस जंगल में खोजबीन करने लगा जहाँ सभी वरदानों के दाता निवास करते थे।

जंगल में पहुँचते ही, भेड़िये उसके रास्ते में उमड़ पड़े: वह एक तरफ कूद गया, और भ्रमित होकर रास्ते से बहुत दूर भटक गया।

इस बेलगाम लोभ वाले ब्राह्मण ने जब स्वयं को भटका हुआ पाया, और वामका का मार्ग पूरी तरह खो गया, तो उसने ये पंक्तियाँ कहना शुरू किया।

"कौन मुझे वेसंतारा के बारे में बताएगा, वह सर्वविजयी राजकुमार,
भय के समय शांति देने वाला, महान और शक्तिशाली राजा?"
दूल्हों के आश्रय का स्थान, जैसे पृथ्वी सभी जीवित प्राणियों के लिए है,
कौन मुझे महान और शक्तिशाली राजा वेसंतारा के बारे में बताएगा?
कृपा चाहने वाले सभी लोग उसके पास वैसे ही जाते हैं जैसे नदियाँ समुद्र की ओर जाती हैं:
मुझे वेसंतारा, उस महान और शक्तिशाली राजा के बारे में कौन बताएगा?
एक शांत और सुखद झील की तरह, जिसका पानी ताजा और ठंडा है,
जिस पर लिली के फूल फैले हुए हैं, जिनकी लताएँ शांत तालाब को ढक लेती हैं:
कौन मुझे महान और शक्तिशाली राजा वेसंतारा के बारे में बताएगा?
जैसे सड़क पर एक विशाल अंजीर का पेड़ होता है, जो वहाँ उगकर
थके हुए यात्रियों को अपनी छाया में विश्राम देता है:
कौन मुझे वेसंतारा के बारे में बताएगा, वह महान और शक्तिशाली राजा?
बरगद, साल या आम के पेड़ की तरह, जो रास्ते में
थके हुए यात्रियों को अपनी छाया में आराम करने की जगह देता है:
कौन मुझे महान और शक्तिशाली राजा वेसंतारा के बारे में बताएगा?
मेरी शिकायत कौन सुनेगा, चारों ओर फैला जंगल?
मुझे खुशी है कि वह कहाँ मिल सकता है!
मेरी शिकायत कौन सुनेगा, इस घने जंगल में?
अगर कोई बता सके कि वह कहाँ मिल सकता है, तो यह बहुत बड़ी कृपा होगी।
अब पहरा देने के लिए तैनात व्यक्ति, जो वनपाल के रूप में जंगल में घूम रहा था, ने यह दुख भरी चीख सुनी; और उसने सोचा—

"यहाँ एक ब्राह्मण वेस्संतारा के निवास स्थान के बारे में पुकार रहा है; वह किसी अच्छे उद्देश्य से यहाँ नहीं आया होगा। वह निश्चित रूप से मद्दी या बच्चों को माँगेगा। खैर, मैं उसे मार डालूँगा।" यह कहकर वह उस व्यक्ति के पास पहुँचा और जैसे ही उसने अपना धनुष निकाला, उसे इन शब्दों से धमकाया—"ब्राह्मण, मैं तुम्हारी जान नहीं बख्शूँगा!"

इस बात को समझाते हुए गुरु ने कहा:

जंगल में भटक रहे शिकारी ने यह विलाप सुना और कहा:

"तुम्हारे जैसे लोगों के कारण ही वह बर्बाद हो गया है; क्योंकि लगातार दान देने के कारण ही
उसे समस्त लोक से निकाल दिया गया है और वह वामका पर्वत में निवास करता है।"
तुम जैसे लोगों के कारण ही वह बर्बाद हुआ है; क्योंकि लगातार देते रहने के कारण
उसने अपनी पत्नी और बच्चों को खो दिया और अब वामका पहाड़ी पर रहता है।

अगर तुम घर छोड़कर जंगलों में राजकुमार की तलाश में जाना चाहते हो, तो तुम सरासर निकम्मे मूर्ख हो, ठीक वैसे ही जैसे कोई सारस मछली की तलाश में जाता है।
इसलिए, मेरे वीर पुरुष, मैं तुम्हारे जीवन को नहीं बख्शूंगा; और इसलिए
जब मेरा तीर मेरे धनुष से निकलेगा, तो वह तुम्हारा रक्त पिएगा।
मैं तुम्हारा सिर फोड़ दूंगा, तुम्हारा दिल और जिगर निकाल लूंगा,
जैसे सड़क के पक्षियों को आत्माओं के लिए बलिदान किया जाता है, मैं तुम्हें बलिदान कर दूंगा।
मैं तुम्हारा मांस ले लूंगा, तुम्हारी चर्बी ले लूंगा, तुम्हारा दिल और दिमाग ले लूंगा,
और तुम्हारी मृत्यु होते ही तुम बलिदान हो जाओगे।
तुम एक स्वीकार्य बलिदान, एक बड़ी भेंट बनोगे;
और तब तुम राजा की पत्नी और बच्चों को नष्ट नहीं करोगे।"
ये शब्द सुनकर वह व्यक्ति बुरी तरह भयभीत हो गया और उसने झूठा जवाब दिया।

"राजदूत का कोई अंग नहीं छिना चाहिए, और कोई भी व्यक्ति उसकी हत्या नहीं कर सकता:
यह एक बहुत पुराना नियम है; इसलिए, यदि आप चाहें तो सुनिए।"
लोगों को अपने किए पर पछतावा है, उसके पिता उसे याद करते हैं,
उसकी माँ शोक से व्याकुल है—उसकी आँखें धुंधली होती जा रही हैं।
मैं उनका राजदूत बनकर वेसंतारा को लेकर आया हूँ:
मेरी बात सुनो, और मुझे बताओ कि क्या तुम जानते हो कि मुझे राजा कहाँ मिल सकता है।
तब उस व्यक्ति को यह सुनकर प्रसन्नता हुई कि वह वेसंतारा को लेने आया है; उसने अपने कुत्तों को बांधा और ब्राह्मण को नीचे बुलाया, और उसे टहनियों के ढेर पर बैठाकर यह श्लोक सुनाया:

"मैं दूत और राजकुमार से प्रेम करता हूँ: और मैं तुम्हें
स्वागत का उपहार देता हूँ—हिरण की टांग और शहद का घड़ा भी;
हमारे सहायक को कैसे ढूँढना है, मैं तुम्हें बताऊँगा कि क्या करना है।"
ऐसा कहकर उस व्यक्ति ने ब्राह्मण को भोजन दिया, जिसमें शहद से भरा एक लौकी और हिरण की भुनी हुई टांग शामिल थी, और उसे विदा करते हुए अपना दाहिना हाथ उठाकर उस स्थान की ओर इशारा किया जहाँ महान सत्ता निवास करती थी: और उसने कहा--

"हे ब्राह्मण, उस पथरीले पर्वत के ऊपर गंधमदन पर्वत है,
जहाँ आज भी राजा वेसंतारा अपनी पत्नी और बच्चों के साथ निवास करते हैं।"
ब्राह्मण के वस्त्र पहने, हुक और चम्मच लिए, तपस्वी के जटाधारी बालों के साथ,
वह चमड़ी से ढके हुए जमीन पर लेटा हुआ है और सावधानीपूर्वक अग्नि की देखभाल कर रहा है।
उधर देखो, पहाड़ की ढलान पर हरे-भरे, फलों से लदे पेड़,
जबकि गहरे रंग की पर्वत चोटियाँ ऊपर उठती हुई बादलों में छिप जाती हैं।
वहाँ झाड़ियाँ, लताएँ, होरौर, साल और कई अन्य पेड़
हवा में ऐसे झूमते हैं जैसे कोई नशे में धुत आदमी हो, जिन्हें कोई भी देख सकता है।
पेड़ों की कतारों के ऊपर ऊँचाई पर पक्षी एक साथ गाते हैं,
नज्जुहा, कोयल, उनके झुंड, एक पेड़ से दूसरे पेड़ पर जाते हैं।
पत्तों से भरी टहनियों के बीच भीड़ लगाकर वे अजनबी को आने के लिए कहते हैं,
अतिथि का स्वागत करते हैं, उन सभी को प्रसन्न करते हैं जो जंगल को अपना घर बनाते हैं,
जहाँ अब राजा वेसंतारा अपने बच्चों के साथ निवास करते हैं।
ब्राह्मण के वस्त्र पहने, हुक और चम्मच लिए, तपस्वी के जटाधारी बालों के साथ,
वह चमड़ी से ढके हुए जमीन पर लेटा है और बड़ी सावधानी से अग्नि की देखभाल कर रहा है।
इसके अलावा उन्होंने आश्रम की प्रशंसा करते हुए कहा:

"आम, गुलाब सेब, कटहल, साल, सभी प्रकार के चेरी बेर,
बो, गोल्डन टिंडूक, और भी बहुत कुछ, जिनमें बरगद भी शामिल है;
ढेरों अंजीर, सभी नीचे उग रहे हैं, सभी पके हुए, बेहद मीठे,
खजूर, स्वादिष्ट अंगूर और शहद, जितना आप खा सकते हैं उतना।

आम के कुछ पेड़ फूलों से लदे हैं, कुछ पर फल अभी-अभी लगे हैं,
कुछ फल पूरी तरह से पके और हरे हैं, जबकि कुछ अभी कच्चे हैं।
एक व्यक्ति पेड़ों के नीचे खड़ा होकर उन्हें उगते ही तोड़ सकता है:
पके और कच्चे दोनों प्रकार के फलों में सबसे उत्तम स्वाद, रंग और सुगंध दिखाई देती है।
उस महान और अद्भुत दृश्य को देखकर मेरी आंखों में आंसू आ जाते हैं,
मानो वह स्वर्ग हो जहां देवता (देवदूत) निवास करते हैं, आनंद का बगीचा हो।
उस ऊंचे जंगल में ताड़, खजूर और नारियल के पेड़ उगते हैं,
फूलों की मालाएं झंडों की तरह लहराती हैं,
हर रंग और रंग के फूल आकाश में तारों की तरह खिलते हैं।
आबनूस, एलोवेरा, तुरही के फूल और कई अन्य पेड़,
बबूल, बेर, मेवे और सब कुछ जितना घना हो सकता है उतना घना है।
पास ही में एक झील है जो नीले और सफेद लिली के फूलों से ढकी हुई है,
मानो देवताओं (देवदूतों) के बगीचे में हो, आनंद के बगीचे में।
और वहाँ कोयल अपने गीत से पहाड़ियों को गूंजने देती हैं,
फूलों के ऋतु में खिलने के नशे में चूर।
लिली के फूलों पर बूंद-बूंद करके शहद का रस गिरता देखो,
और दक्षिण और पश्चिम से बहती हुई ठंडी हवाओं को महसूस करो,
जब तक कि फूलों का पराग चारों ओर न फैल जाए।
झील के किनारे खूब सारे पके हुए चावल और बेर गिरते हैं,
जिन्हें मछलियाँ, केकड़े और कछुए बड़े चाव से खोजते हैं,
और फूलों से शहद दूध या घी की तरह टपकता है।
पेड़ों के बीच से अक्सर एक हल्की हवा बहती है, जहाँ हर तरह की सुगंध पाई जाती है,
और ऐसा लगता है कि यह हवा चारों ओर के जंगल को फूलों से मदहोश कर देती है।
सुगंधित फूलों के चारों ओर मधुमक्खियाँ भिनभिनाती हुई झुंड में उड़ती हैं,
वहाँ कई रंगों के पक्षी एक साथ उड़ते हैं, सभी और कुछ,
आनंद से कूकते और चहकते हुए, प्रत्येक अपने साथी के साथ आते हैं।
"ओह प्यारी चिकी, खुशमिजाज!" वे चहचहाते हैं और ट्वीट करते हैं--
ओह प्यारी, प्रिय, मेरी प्यारी छोटी सी मीठी!"
फूलों की मालाएँ ऐसे सजी हैं जैसे ध्वज फहराते हैं,
हर रंग और प्रकार के फूल खिले हैं, मीठी सुगंध हवा में तैर रही है,
जहाँ राजा वेसंतारा अपने बच्चों के साथ निवास करते हैं।
ब्राह्मणों के वस्त्र पहने, काँटे और चम्मच लिए, तपस्वी की जटाओं में
लिपटे, वे चमड़ी से ढके हुए जमीन पर लेटे हैं और बड़ी सावधानी से अग्नि की देखभाल कर रहे हैं।
इस प्रकार उस ग्रामीण ने उस स्थान का वर्णन किया जहाँ वेसंतारा रहता था; और जुजाका ने प्रसन्न होकर इस श्लोक में उसे प्रणाम किया:

"शहद में भीगी हुई जौ की रोटी का यह टुकड़ा
और अच्छी तरह से पके हुए शहद के केक के टुकड़े स्वीकार करो: मैं तुम्हें यह खाने के लिए देता हूँ।"
इस पर उस ग्रामीण ने उत्तर दिया:

"मैं आपका धन्यवाद करता हूँ, लेकिन मुझे कोई आवश्यकता नहीं है: आप अपना भंडार अपने पास रखें;
और मेरा भंडार ले लें; फिर हे ब्राह्मण, जहाँ चाहो वहाँ चले जाओ।"
सीधा आगे एक आश्रम की ओर जाने वाला मार्ग है,
जहाँ अच्चत नामक एक तपस्वी निवास करता है, जिसके दाँत काले हैं, सिर मैला है,
ब्राह्मणों के वस्त्र पहने, काँटे और चम्मच से तपस्वी के जटाधारी बाल हैं,
वह चमड़ी से ढका हुआ जमीन पर लेटकर बड़ी सावधानी से अग्नि की देखभाल करता है:
वहाँ जाओ, उससे मार्ग पूछो, और वह तुम्हें शीघ्रता से मार्ग दिखाएगा।
यह सुनकर ब्राह्मण चेता के चारों ओर दाहिनी ओर घूमा और अत्यंत प्रसन्न हृदय से अच्चता की खोज में चल पड़ा।

तब भारद्वाज चलते-चलते उस ऋषि के स्थान के निकट पहुँचे और उनसे इस प्रकार विनम्रतापूर्वक बात की:

"हे पवित्र पुरुष, मुझे विश्वास है कि आप समृद्ध और कुशल हैं,
आपके निवास स्थान में अनाज की भरपूर फसल और फल-सब्जियां प्रचुर मात्रा में हैं।"
क्या आप मक्खियों, मच्छरों और रेंगने वाले कीड़ों से बहुत परेशान हुए हैं,
या जंगली जानवरों से आपको कोई खतरा नहीं रहा है?
तपस्वी ने कहा:

"मैं आपको धन्यवाद देता हूँ, ब्राह्मण—हाँ, मैं समृद्ध और स्वस्थ हूँ,
मेरे निवास स्थान में खाने के लिए अनाज और भरपूर मात्रा में जड़ और फल हैं।"
मुझे मक्खियों, मच्छरों और रेंगने वाले कीड़ों से कोई परेशानी नहीं होती,
और जंगली शिकारी जानवरों से मुझे यहाँ कोई खतरा नहीं होता।
इस धरती पर मैंने जितने भी साल बिताए हैं,
उनमें से मेरी जानकारी में आज तक यहाँ कोई भी हानिकारक बीमारी नहीं पाई गई है।
हे ब्राह्मण, आपका स्वागत है! ईश्वर आपको इस मार्ग पर ले आए, इसके लिए ईश्वर आपको आशीर्वाद दें।
आइए, आशीर्वाद के साथ प्रवेश करें, और कृपया अपने चरण धो लें।
तिंडूक और पियाल के पत्ते, और कसुमारी की मिठाई,
और शहद जैसे फल, ब्राह्मण, मेरे पास जो सबसे अच्छे हैं, उन्हें ले लो और खाओ।
और हे श्रेष्ठ ब्राह्मण, पहाड़ी पर छिपी हुई इस गुफा से निकलने वाला यह शीतल जल,
यदि आपकी इच्छा हो तो इसे ग्रहण करें।
जुजाका ने कहा:

"आपकी भेंट और आहुति स्वीकार है, महोदय।
मैं संजय के पुत्र की तलाश में हूँ, जिसे
शिवी के लोगों ने एक बार बहुत दूर निर्वासित कर दिया था: यदि आप जानते हैं कि वह कहाँ रहता है, तो कृपया बताएँ।"
तपस्वी ने कहा:

"महाराज, आप सिवी के राजा को अच्छे इरादे से नहीं खोज रहे हैं:
मुझे लगता है कि आपकी असली इच्छा उनकी पत्नी पर टिकी है।"
" दासी के लिए कन्हाजिना, सेवक के लिए जली,
या यदि संभव हो तो तुम माँ को उसके बच्चों सहित ले आओ,
राजकुमार को यहाँ कोई सुख-सुविधा नहीं है, न धन है न भोजन, मेरे सेवक।"
यह सुनकर जुजाका ने कहा:

मैं किसी का बुरा नहीं चाहता, न ही किसी से कोई वरदान मांगने आया हूँ:
परन्तु अच्छे लोगों को देखना अच्छा लगता है, उनके साथ रहना सुखद होता है।
मैंने इस सम्राट को कभी नहीं देखा, जिसे उसकी प्रजा ने भगा दिया था;
मैं उससे मिलने आया हूँ; यदि आप जानते हैं कि वह कहाँ रहता है, तो कृपया बताएँ।
दूसरे ने उसकी बात मान ली। "अच्छा, मैं तुम्हें बताता हूँ; बस आज यहीं मेरे साथ रहो।" इसलिए उसने उसे जंगली फल और जड़ें खिलाकर उसका सत्कार किया; और अगले दिन, हाथ बढ़ाकर, उसने उसे रास्ता समझाया। (फिर वह ऊपर दिए गए श्लोक, पृष्ठ 274, "श्री ब्राह्मण--सावधानी से" का पाठ करता है और आगे कहता है:)

"उस सुंदर स्थान पर मिर्च के पेड़ की पत्तियाँ दिखाई देती हैं,
धूल कभी ऊपर नहीं उड़ती, घास हमेशा हरी रहती है।"
मोर की गर्दन जैसी घास, छूने में मुलायम रुई जैसी,
कभी चार इंच से ज्यादा नहीं बढ़ती, लेकिन हमेशा उतनी ही बढ़ती है जितनी ज़रूरी होती है।
कपित्था, आम, गुलाब सेब और पके अंजीर नीचे लटक रहे हैं;
उस सुंदर जंगल में वे सभी पेड़ उगते हैं जिनके फल खाने में अच्छे होते हैं।
वहाँ नीले रंग की तरह मीठी, स्वच्छ और सुगंधित धाराएँ बहती हैं,

जिनमें मछलियों के झुंड ऊपर-नीचे खेलते हुए जाते हैं।
एक रमणीय स्थान पर एक झील स्थित है, जिसमें नीले और सफेद रंग के लिली के फूल खिले हैं,
बिल्कुल पास में, जैसे स्वर्ग में आनंद का बगीचा हो।
उस झील में तीन प्रकार की लिली पाई जाती हैं, जो देखने में बेहद खूबसूरत लगती हैं, उनके
रंग अलग-अलग हैं: कुछ नीली हैं, कुछ गहरे लाल रंग की हैं, और कुछ सफेद हैं।
इस प्रकार उन्होंने लिली के फूलों से भरी चौकोर झील की प्रशंसा की, और फिर मुकालिंडा झील की प्रशंसा करते रहे:

"वहाँ के फूल लिनन की तरह कोमल हैं, वे नीले और सफेद लिली के फूल,
और अन्य जड़ी-बूटियाँ वहाँ उगती हैं: झील का नाम मुकालिंडा है।"
और वहाँ आपको असंख्य खिले हुए फूल दिखाई देंगे, जो
गर्मी और सर्दी दोनों में घुटने तक ऊँचे होते हैं।
रंग-बिरंगे फूल हमेशा हवा में अपनी सुगंध बिखेरते रहते हैं,
और आप उस सुगंध से आकर्षित होकर मधुमक्खियों की भिनभिनाहट सुन सकते हैं।
जल के किनारे चारों ओर कतार में
आबनूस, तुरही के फूल और ऊंचे कदंबा के पेड़ खड़े हैं।
छह पंखुड़ियों वाले और कई अन्य पेड़ जिन पर फूल खिले हुए हैं,
और झील के चारों ओर पत्तों के गुच्छे दिखाई देते हैं।
वहाँ हर आकार और प्रकार के पेड़ हैं, हर रंग के फूल हैं,
ऊँची-नीची सभी झाड़ियाँ और पौधे दूर-दूर तक फैले हुए हैं।
सफेद, नीले और लाल फूलों की मीठी सुगंध हवा में फैल जाती है,
जो उस कुटिया के चारों ओर उगते हैं जिसमें आग जलाई जाती है।
पानी के किनारे के चारों ओर कई पौधे और पेड़ उगते हैं,
जो मधुमक्खियों की भिनभिनाहट से गूंजते हुए कांपते हैं।
उस तट पर उगने वाले सभी सुंदर फूलों की सुगंध
एक या दो सप्ताह या उससे अधिक समय तक बनी रहेगी यदि आप उन्हें संभाल कर रखें।
इस झील में तीन प्रकार के लौकी उगते हैं, जो सभी अलग-अलग हैं, और कुछ के
फल पानी के घड़े जितने बड़े होते हैं, जबकि अन्य के फल ढोल जितने बड़े होते हैं।
सरसों, हरा लहसुन, तोड़ने के लिए नीले लिली और पूरी तरह खिले हुए फूल,
चमेली, मीठा चंदन, पेड़ों पर फैली विशाल लताएँ उगती हैं।
मीठी चमेली, कपास, नील और अनेक नामों वाले पौधे, जैसे कि
जलकुटी, तुरही का फूल, चारों ओर सुनहरी लौ की जीभों की तरह उगते हैं।
हाँ, पानी में या ज़मीन पर उगने वाले हर प्रकार के फूल,
देखो, वे इस सुंदर झील में और इसके आसपास खड़े हैं।
वहां मगरमच्छ और हर तरह के जलीय जीव रहते हैं,
लाल हिरण और अन्य जानवर पानी की तलाश में वहां जाते हैं।
हल्दी, कपूर, पैनिक-सीड, मुलेठी का पौधा और सभी
सबसे सुगंधित बीज और घासें बहुत लंबे डंठलों के साथ उगती हैं।
वहाँ शेर, बाघ, हाथी साथी की तलाश में हैं,
लाल और चित्तीदार हिरण, सियार, कुत्ते और हिरण के बच्चे तेज चाल से दौड़ रहे हैं।
याक, मृग, उड़ने वाली लोमड़ी, बड़े और छोटे बंदर,
भालू, बैल और अन्य शक्तिशाली जानवर झुंड में एक साथ आते हैं:
गैंडा, नेवला, गिलहरी, जंगली सूअर, कुत्ता, सियार, भैंस,
लोरिस, खरगोश, चित्तीदार पैंथर, भेड़िया और छिपकली, ये रहे:
मकड़ियां, सांप, रोएंदार जीव और हर तरह के पक्षी,
जो चहचहाते और चहकते हुए अपनी आवाजें चारों ओर बिखेरते हैं:
बाज़, वुडकॉक, बगुला, पाइपर, उल्लू, बांसुरी की आवाज़ वाला कोयल,
तीतर, हंस, ओस्प्रे (मछली बाज़), फ़ीज़ेंट पक्षी,
सारस और रेडबैक भी इसी राह पर चलते हैं।

वहाँ सुंदर रंगों वाले जीव अपने साथियों के लिए मधुर गीत गाते हैं,
सफेद गुच्छेदार, नीली गर्दन वाले, मोर के रंग के अपने सुंदर पंख फड़फड़ाते हैं।
मुझे उनके हज़ारों नामों को विस्तार से सुनाने की कोशिश क्यों करनी चाहिए?
हर तरह के पक्षी की कल्पना करो और उन्हें अपनी कविता में जोड़ो।
वहाँ एक मधुर समूह अपने हजारों गीत गाता है
और मुकालिंडा झील के चारों ओर के वातावरण को सुखद ध्वनि से भर देता है।
जंगल हाथियों, मृगों और हिरणों से भरा हुआ है,
जहाँ सभी पेड़ों से बड़ी-बड़ी लताएँ लटकती हुई दिखाई देती हैं।
वहाँ सरसों उगती है, गन्ना उगता है, कई प्रकार के चावल उगते हैं,
और फलियाँ और अन्य पौधे और जड़ी-बूटियाँ भी उगती हैं, जो सभी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होती हैं।
वहाँ से पगडंडी सीधे उसके निवास स्थान तक ले जाती है
जहाँ न भूख है, न प्यास है और न ही कोई अरुचि है,
जहाँ अब राजा वेसंतारा अपने बच्चों के साथ निवास करते हैं।
ब्राह्मण के वस्त्र पहने, हुक और चम्मच लिए, तपस्वी के जटाधारी बालों के साथ,
वह चमड़ी से ढके हुए जमीन पर लेटा है और बड़ी सावधानी से अग्नि की देखभाल कर रहा है।
यह सुनकर ब्राह्मण उसके चारों ओर से दाहिनी ओर चलकर
वेसंतारा की खोज में निकल पड़ा, उसका हृदय अत्यंत प्रसन्न था।
जुजाका, साधु अक्काता द्वारा बताए गए मार्ग पर आगे बढ़ा और चौकोर झील पर पहुँचा। उसने सोचा, "अब शाम ढल चुकी है। मद्दी अब तक जंगल से लौट आई होगी, और स्त्रियाँ तो हमेशा रास्ते में आती ही हैं। कल जब वह जंगल में चली जाएगी, तो मैं वेसंतारा के पास जाऊँगा और उससे बच्चों के बारे में पूछूँगा, और उसके लौटने से पहले ही मैं वहाँ से चला जाऊँगा।" इसलिए वह पास ही स्थित एक समतल पहाड़ी पर चढ़ गया और एक सुखद स्थान पर लेट गया। अगली सुबह भोर में, मद्दी ने एक सपना देखा, और उसका सपना कुछ इस प्रकार था: पीले वस्त्रों से ढके एक काले आदमी ने, जिसके दोनों कानों में लाल फूल थे, पत्तों की झोपड़ी में प्रवेश किया, मद्दी के बालों को पकड़कर उसे बाहर घसीटा, उसे पीछे की ओर जमीन पर पटक दिया, और उसकी चीखों के बीच उसकी दोनों आँखें निकाल लीं, दोनों भुजाएँ काट दीं, उसका सीना चीर दिया, और खून से लथपथ उसका दिल निकालकर ले गया। वह भयभीत होकर जाग उठी और सोचने लगी—"मैंने एक बुरा सपना देखा है; यहाँ मेरे सपने की व्याख्या करने के लिए वेसंतारा के सिवा कोई नहीं है, इसलिए मैं उससे ही पूछूँगी।" फिर वह महापुरुष की कुटिया में गई और उसने दरवाजा खटखटाया। "कौन है?" "मैं, महाराज, मद्दी।" "देवी, आप यहाँ असमय क्यों आ गई हैं और हमारा वादा क्यों तोड़ दिया है?" "महापुरुष, मैं इच्छा से नहीं आई हूँ; बल्कि मैंने एक बुरा सपना देखा है।" "तो मुझे बताओ, मद्दी।" उसने जैसा सपना देखा था, वैसा ही बताया: महापुरुष सपने का अर्थ समझ गया। "मेरे दान की पूर्णता पूरी होने वाली है," उसने सोचा: "आज एक वर मेरे बच्चों को माँगने आया है। मैं मद्दी को दिलासा दूँगा और उसे जाने दूँगा।" इसलिए उसने कहा, "तुम्हारा मन शायद बेचैन नींद या अपच से विचलित हो गया होगा; डरने की कोई बात नहीं।" इस छल से उसने उसे दिलासा दिया और उसे जाने दिया। और जब रात ढल गई, तो उसने वह सब किया जो करना आवश्यक था, बच्चों को गले लगाया और चूमा, और कहा, "कल रात मुझे एक बुरा सपना आया था; सावधान रहना, मेरे प्यारे बच्चों!" फिर उसने उन्हें उस महान शक्ति के हवाले कर दिया, उनसे उनकी देखभाल करने की विनती की, अपनी टोकरी और औजार लिए, अपने आंसू पोंछे, और फल और जड़ें लाने के लिए जंगल की ओर चल पड़ी।

लेकिन जुजाका ने सोचा कि अब वह चली गई होगी, इसलिए वह पहाड़ी से नीचे उतरकर आश्रम की ओर जाने वाले रास्ते पर चल पड़ा। और वह महान पुरुष अपनी कुटिया से बाहर आया और सोने की मूर्ति जैसी एक शिला पर बैठ गया। "अब तो वर आएगा!" वह एक शराबी की तरह, जो पानी के लिए तरस रहा हो, सोचने लगा और उस रास्ते को देखने लगा जिससे वह आएगा, उसके बच्चे उसके पैरों के पास खेल रहे थे। और जैसे ही उसने रास्ते पर नीचे देखा, उसने ब्राह्मण को आते हुए देखा; मानो सात महीनों से दिए गए अपने दान का बोझ उठाते हुए, वह खुशी से चिल्लाया—"ब्राह्मण, कृपया पास आइए!" और बालक जली को उसने यह श्लोक संबोधित किया:

"जाली, उठो और खड़ी हो जाओ: देखो, मेरे सामने एक ब्राह्मण है!
पुराने दिन फिर लौट आए हैं, और मुझे आनंद से भर देते हैं!"
यह सुनकर लड़का कहता है:

"जी हां, मेरे पिता, मैं उस ब्राह्मण को देख रहा हूँ जिसे आप देख रहे हैं;
वह मानो वरदान मांगने आया है; वह अवश्य ही हमारा अतिथि होगा।"
और इन शब्दों के साथ, उनका सम्मान करते हुए, लड़का अपनी सीट से उठा और ब्राह्मण से मिलने गया, और उनका सामान देने की पेशकश की। ब्राह्मण ने उसे देखा और सोचा, "यह ज़रूर वेस्सन्तारा का पुत्र जली होगा: मैं शुरू से ही इससे सख्ती से बात करूँगा।"

इसलिए उसने अपनी उंगलियाँ उसकी ओर इशारा करते हुए कहा—"चले जाओ, चले जाओ!" लड़के ने सोचा, "यह तो वाकई एक कठोर व्यक्ति है!" और उसके शरीर को देखकर उसने उसमें एक पुरुष के अठारह दोष देखे। लेकिन ब्राह्मण बोधिसत्व के पास आया और विनम्रतापूर्वक उनका अभिवादन करते हुए कहा, "

"हे पवित्र पुरुष, हमें विश्वास है कि आप समृद्ध और कुशल हैं,
आपके निवास स्थान में अनाज की भरपूर फसल हो और जड़ और फल भी प्रचुर मात्रा में हों।"
क्या आप मक्खियों, मच्छरों और रेंगने वाले कीड़ों से बहुत परेशान हुए हैं,
या जंगली जानवरों से आपको कोई खतरा नहीं रहा है?
बोधिसत्व ने विनम्रतापूर्वक उत्तर दिया।

"मैं आपको धन्यवाद देता हूँ, ब्राह्मण, और उत्तर देता हूँ: हम समृद्ध हैं और कुशल हैं,
हमारे पास अनाज इकट्ठा करने के लिए है और जहाँ हम रहते हैं वहाँ भरपूर मात्रा में जड़ें और फल हैं।"
मक्खियों, मच्छरों और रेंगने वाले कीड़ों से हमें कोई परेशानी नहीं होती,
और जंगली शिकारी जानवरों से हमें यहाँ सुरक्षा प्राप्त है।
सात महीने हम इस जंगल में सुखपूर्वक रहे हैं, और हमने
एक बार भी किसी ब्राह्मण को नहीं देखा, जैसा कि हम अब आपको देखते हैं, आप ईश्वर के समान हैं,
विल्वा-डंडा, माचिस की डिब्बी और जलपात्र लिए हुए।
हे ब्राह्मण, आपका स्वागत है! सौभाग्यवश आप इस मार्ग पर आए;
आइए, आशीर्वाद के साथ प्रवेश करें, और कृपया अपने चरण धो लें।
तिंडूक और पियाल के पत्ते, कसुमरी की मिठाई,
और शहद जैसे फल, ब्राह्मण, मेरे पास जो सबसे अच्छा है, उसे ले लो और खाओ।
और हे श्रेष्ठ ब्राह्मण, पहाड़ी पर छिपी इस गुफा से निकलने वाला यह शीतल जल,
यदि आपकी इच्छा हो तो इसे ग्रहण करें।
इन शब्दों के बाद, उस महान प्राणी ने सोचा: "यह ब्राह्मण बिना किसी कारण के इस विशाल वन में नहीं आया है; मैं उससे शीघ्र ही कारण पूछूंगा"; और उन्होंने यह श्लोक पढ़ा:

"अब मुझे बताओ कि इसका क्या कारण हो सकता है, वह वजह क्या हो सकती है,
जो तुम्हें इस विशाल जंगल में ले आई है? मैं तुमसे अनुरोध करता हूँ कि मुझे इसका कारण बताओ।"
जुजाका ने कहा:

"जैसे एक बड़ी बाढ़ कभी सूखती नहीं,
वैसे ही आप, जिनसे मैं विनती करने आया हूँ—कृपया मुझे अपने बच्चे दे दीजिए!"
यह सुनकर महान सत्ता अत्यंत प्रसन्न हुई और बोली, मानो कोई अपने फैले हुए हाथ में हजार सिक्कों से भरा पर्स रख रहा हो।

"मैं देता हूँ, वापस नहीं लेता: तुम उनके स्वामी रहोगे। लेकिन मेरी रानी
आज सुबह हमारे लिए भोजन लेने गई हैं; शाम को वह दिखाई देंगी।"
आज रात यहीं ठहरो: सुबह की रोशनी तुम्हें तुम्हारे रास्ते पर ले जाएगी।
वह उन्हें धोएगी, इत्र लगाएगी और फूलों की माला पहनाएगी।
आज रात यहीं ठहरिए: सुबह की रोशनी आपको आपके रास्ते पर ले जाएगी।
वे दोनों फूलों से सजे होंगे, मीठी खुशबू से महकेंगे;
उन्हें ले जाइए, और खाने के लिए खूब सारे फल और जड़ें ले जाइए।
जुजाका ने कहा:

"नहीं, हे सर्वशक्तिमान सम्राट, मैं जाऊंगा; मैं यहां रुकना नहीं चाहता:
मैं जाऊंगा, अन्यथा रास्ते में कोई बाधा मुझे रोक देगी।"
महिलाएं उदार दानदाता नहीं होतीं, वे हमेशा रोकने की कोशिश करती हैं,
वे तरह-तरह के चालाकी भरे मंत्र जानती हैं, और हमेशा असफल हो जाती हैं।
जो विश्वास से दान देता है, उसे अपनी माँ का चेहरा न देखने दो,
अन्यथा वह बाधाएँ उत्पन्न करेगी: हे राजा, मैं तेज़ गति से चलूँगा।

मुझे अपने बच्चे दे दो; उन्हें उनकी माँ का चेहरा न देखने दो:
क्योंकि जो विश्वास के साथ दान देता है, उसका पुण्य तेजी से बढ़ता है।
मुझे अपने बच्चे दे दो; उन्हें अपनी माँ का चेहरा न देखने दो:
जो मुझ जैसे को धन देता है, वह सीधे स्वर्ग की ओर जाता है।
वेसंतारा ने कहा:

"यदि आप मेरी पत्नी को नहीं देखना चाहते, तो वह एक वफादार पत्नी है!
जाली और कन्हाजिना को उनके दादा के पास जाकर देखने दीजिए।"
जब ये सुंदर, मधुर वाणी वाले बच्चे उसकी दृष्टि में आएंगे, तो
वह तुम्हें प्रचुर धन, आनंद और परम प्रसन्नता प्रदान करेगा।
जुजाका ने कहा:

मुझे अपने माल के नष्ट होने का डर है: हे राजकुमार, मैं आपसे विनती करता हूँ, मेरी बात सुनिए!
मुझे डर है कि राजा मुझे दंडित कर सकता है, मार सकता है या बेच सकता है;
धन और नौकरों के बिना, मेरी पत्नी मेरा कितना उपहास करेगी और मेरा मज़ाक उड़ाएगी!
वेसंतारा ने कहा:

जब ये सुंदर, मधुर वाणी वाले बच्चे उसकी दृष्टि में आएंगे, तो
सिवी जाति के पालक राजा, जो हमेशा सही का पक्ष लेते हैं,
तुम्हें प्रचुर धन-दौलत देंगे, जो सुख और आनंद से भरपूर होगी।
जुजाका ने कहा:

"नहीं, नहीं, मैं वह काम नहीं करूंगा जो आप सुझा रहे हैं:
मैं बच्चों को अपनी पत्नी के पास नौकरों की तरह सेवा के लिए ले जाऊंगा।"
ये कठोर शब्द सुनकर बच्चे झोपड़ी के पीछे दुबक गए और भागकर झाड़ियों के एक झुंड के पास छिप गए। वहाँ भी उन्हें लगा मानो जुजाका ने उन्हें पकड़ लिया हो: कांपते हुए वे कहीं स्थिर नहीं रह पा रहे थे, इधर-उधर भागते रहे, जब तक कि वे चौकोर झील के किनारे नहीं पहुँच गए; वहाँ उन्होंने छाल से बने वस्त्रों को कसकर अपने चारों ओर लपेट लिया और पानी में कूद पड़े, अपने सिर कमल के पत्तों के नीचे छिपाकर वहीं खड़े रहे।

इस बात को समझाते हुए गुरु ने कहा:

"इसलिए जाली और कन्हाजिना पीछा करने वाले व्यक्ति की आवाज सुनने के लिए गहरे संकट में इधर-उधर भागने लगे ।"
जब जुजाका ने बच्चों को न देखकर बोधिसत्व को फटकारा, तो उसने कहा, "हे वेसंतरा! अभी जब आपने मुझे बच्चे दिए, और जैसे ही मैंने आपको बताया कि मैं जेतुत्तरा नगर नहीं जाऊँगा, बल्कि बच्चों को अपनी पत्नी का सेवक बनाऊँगा, आपने उन्हें कोई संकेत दिया और उन्हें वहाँ मासूमियत से बैठे-बैठे भगा दिया! मेरे विचार से ऐसा झूठा संसार में कोई नहीं है।" महान बोधिसत्व व्याकुल हो गए। उन्होंने सोचा, "वे भाग गए हैं, इसमें कोई संदेह नहीं है," और जोर से कहा, "चिंता मत कीजिए, मैं उन्हें ले आता हूँ।" इसलिए वे उठे और कुटिया के पीछे गए; यह देखकर कि वे जंगल की ओर भाग गए होंगे, वे उनके पदचिह्नों का पीछा करते हुए झील के किनारे तक गए, और फिर पानी में उतरने के स्थान पर एक पदचिह्न देखकर वे समझ गए कि वे पानी में चले गए होंगे: इसलिए उन्होंने पुकारा, "जाली, मेरे बच्चे!" और ये दो श्लोक पढ़े:

"मेरे प्रिय पुत्र, यहाँ आओ, मेरी आदर्श स्थिति को पूरा करो;
अब आओ और मेरे हृदय को सांत्वना दो, और मेरी इच्छा का पालन करो।"
हे मेरे, अस्तित्व के सागर पर मुझे सुरक्षित पार कराने वाली मेरी नौका बनो,
जन्म और देवदूतों के संसारों से परे मैं पार जाऊंगा और मुक्त हो जाऊंगा।
"आओ, जली, मेरे बच्चे!" उन्होंने पुकारा; और उनकी आवाज़ सुनकर बालक ने सोचा, "ब्राह्मण मेरे साथ जो चाहे करे, मैं अपने पिता से झगड़ा नहीं करूँगा!" उसने अपना सिर उठाया, कमल के पत्तों को हटाया और पानी से बाहर आकर उस महान पुरुष के दाहिने पैर पर गिर पड़ा; टखने को गले लगाकर वह रोने लगा। तब उस महान पुरुष ने कहा, "मेरे बच्चे, तुम्हारी बहन कहाँ है?" उसने उत्तर दिया, "पिताजी, संकट के समय सभी प्राणी अपनी रक्षा स्वयं करते हैं।" उस महान पुरुष ने समझ लिया कि बच्चों ने आपस में कोई समझौता किया होगा, और उन्होंने दो श्लोक पढ़ते हुए पुकारा, "यहाँ आओ, कान्हा!"

"यहाँ आओ, मेरी प्रियतमा, मेरी परिपूर्ण अवस्था को पूरा करो,
अब आओ और मेरे हृदय को सांत्वना दो, और मेरी इच्छा का पालन करो।"
हे मेरे जहाज, जो मुझे अस्तित्व के सागर के पार सुरक्षित ले जाए,
मनुष्यों और देवताओं (देवदूतों) के संसारों से परे, मैं पार कर जाऊँगा और मुझे मुक्त कर देगा!
उसने मन ही मन सोचा, "मैं अपने पिता से झगड़ा नहीं करूँगी"; और पल भर में वह बाहर आई और अपने पिता के बाएँ पैर पर गिरकर उनकी टखने को पकड़ कर रोने लगी। उनके आँसू कमल के पत्ते जैसे लाल रंग के भगवान के चरणों पर गिरे; और उनके आँसू उनकी सुनहरी पीठों पर गिरे। तब भगवान ने अपने बच्चों को उठाया और उन्हें दिलासा देते हुए कहा, "मेरे पुत्र जली, क्या तुम नहीं जानते कि मैंने तुम्हें खुशी-खुशी विदा किया है? ऐसा करो जिससे मेरी इच्छा पूरी हो।" और उसी क्षण उन्होंने बच्चों का मूल्य लगा दिया, जैसे मवेशियों का मूल्य लगाया जाता है। अपने पुत्र से उन्होंने कहा, "पुत्र जली, यदि तुम मुक्त होना चाहते हो, तो ब्राह्मण को एक हजार सोने के सिक्के देने होंगे। परन्तु तुम्हारी बहन अत्यंत सुंदर है; यदि कोई नीच कुल का व्यक्ति ब्राह्मण को इतना दे दे उसे मुक्त कराने के लिए, तो वह उसके जन्मसिद्ध अधिकार का हनन करेगा। केवल राजा ही सौ-सौ की संख्या में सब कुछ दे सकता है; इसलिए यदि तुम्हारी बहन मुक्त होना चाहती है, तो वह ब्राह्मण को सौ-सौ पुरुष और सौ स्त्री दास, हाथी, घोड़े, बैल और सोने के सिक्के, प्रत्येक सौ-सौ की संख्या में दे।" इस प्रकार उन्होंने बच्चों का मूल्य निर्धारित किया, उन्हें सांत्वना दी और उन्हें आश्रम ले गए। फिर उन्होंने अपने जलपात्र में जल लिया और ब्राह्मण को पास बुलाकर जल उंडेलते हुए प्रार्थना की कि उन्हें अनंत ज्ञान प्राप्त हो। "मेरे पुत्र से सौ गुना, हजार गुना, लाख गुना भी प्रिय अनंत ज्ञान है!" उन्होंने पृथ्वी को कंपकंपाते हुए कहा और ब्राह्मण को अपने बच्चों का यह अनमोल उपहार दिया।

इस बात को समझाते हुए गुरु ने कहा:

"शिवि देश के पितृवत राजा ने तब अपने दोनों बच्चों को लिया
और ब्राह्मण को यह सबसे कीमती उपहार बिना किसी अनिच्छा के दिया।"
तब दहशत और भय का माहौल छा गया, और धरती कांप उठी,
जब राजा ने हाथ जोड़कर दोनों बच्चों को सौंप दिया;
तब दहशत और भय का माहौल छा गया, और धरती कांप उठी,
जब शिवी राजा ने अपने बच्चों को ब्राह्मण को बिना किसी अनिच्छा के सौंप दिया।
जब उस महान प्राणी ने उपहार दिया, तो वह बच्चों को देखते हुए प्रसन्न हुआ, यह सोचकर कि उसने कितना अच्छा उपहार दिया है। फिर जुजाका जंगल में गया और एक लता तोड़कर उससे लड़के का दाहिना हाथ लड़की के बाएं हाथ से बांध दिया और लता के सिरों से पीटते हुए उन्हें भगा दिया।

इस बात को समझाते हुए गुरु ने कहा:

"उस निर्दयी ब्राह्मण ने लता का एक टुकड़ा काट लिया; ऐसा करने के बाद,
उसने उस लता से उनके हाथ बांध दिए और बच्चों को घसीटते हुए ले गया।"
और फिर ब्राह्मण ने, हाथ में लाठी लिए, लता को कसकर पकड़े हुए,
उन्हें पीटा और उनके पिता के सामने उन्हें भगाते हुए आगे बढ़ने के लिए मजबूर किया।
जहां उसने उन्हें मारा, वहां उनकी त्वचा छिल गई, खून बहने लगा; चोट लगने पर वे एक दूसरे से पीठ सटाकर लड़खड़ा गए। लेकिन एक ऊबड़-खाबड़ जगह पर वह आदमी ठोकर खाकर गिर पड़ा: अपने कोमल हाथों से बच्चों ने हल्के बंधन को तोड़ दिया और रोते हुए उस महान सत्ता की ओर भाग गए।

इस बात को समझाते हुए गुरु ने कहा:

"इस प्रकार मुक्त हुए बच्चे ब्राह्मण से भाग जाते हैं;
लड़का अपने पिता के चेहरे को देखता है, उसकी आँखों में आँसू हैं।"
फिर हवा में उड़ते अंजीर के पत्ते की तरह वह छोटा लड़का कांप उठा,
अपने पिता के पैरों को गले लगाते हुए उसने अपनी बाहें उनके पैरों में डाल दीं और बोला
"पिताजी, क्या आप माताजी के अनुपस्थित रहने पर हमारा निपटारा कर देंगे?
हे भगवान, उनके आने तक हमें मत दीजिए! उनके लौटने तक, हे भगवान, यहीं रुकिए!"
और क्या तुम माताजी के अनुपस्थित रहने पर हमारा निपटारा कर दोगे?
अरे, उनके लौटने तक प्रतीक्षा करो, फिर चाहो तो हमें दे दो!
फिर ब्राह्मण हम दोनों को बेच दे, फिर ब्राह्मण हमें मार डाले!

उसका पैर विशाल है, उसके नाखून फटे हुए हैं, उसका मांस लटक रहा है,
लंबा निचला होंठ और टूटी हुई नाक, सब कुछ कांप रहा है, भूरे रंग का है।
तोंद निकला हुआ, कमर टूटी हुई, भद्दी तिरछी आँखों वाला,
धब्बों और झुर्रियों से भरा हुआ, पीले बालों वाला, खूनी रंग की दाढ़ी वाला।
पीला, ढीले जोड़ों वाला, क्रूर, विशालकाय, बकरियों की खाल से सजा हुआ,
एक टेढ़ा और अमानवीय प्राणी, एक अत्यंत भयानक दृश्य;
क्या वह एक इंसान है, या कोई भयानक नरभक्षी? और क्या तुम
इस जिन्न को जंगल में आकर तुमसे यह वरदान माँगते हुए चुपचाप देख सकते हो?
क्या तुम्हारा हृदय लोहे से जकड़ा हुआ पत्थर का टुकड़ा है, जो
इस लालची आदमी की परवाह नहीं करता, जिसे दया नहीं आती, जो
हमें बांधकर गायों की तरह भगा देता है? कम से कम मैं तो यही अपील करूंगा।
वह बहन कान्हा, जिसे अभी तक कोई परेशानी नहीं हुई है, यहीं रह सकती है,
अब वह झुंड से बिछड़े हुए हिरण के बच्चे की तरह रो रही है।
इस पर उस महान सत्ता ने एक शब्द भी उत्तर नहीं दिया। तब बालक ने अपने माता-पिता के निधन पर शोक व्यक्त करते हुए कहा:

"मुझे मृत्यु के दर्द की परवाह नहीं है, यह तो सबका भाग्य है:
अपनी माँ का चेहरा फिर कभी न देख पाना, यही बात मुझे सबसे ज्यादा भयभीत करती है।"
मुझे मृत्यु के दर्द की परवाह नहीं है, वह तो सबका भाग्य है:
अपने पिता का चेहरा फिर कभी न देख पाना, यही बात मुझे सबसे ज्यादा भयभीत करती है।
मेरे माता-पिता लंबे समय तक शोक मनाएंगे और विलाप करेंगे, वे लंबे समय तक अपने दुख को सहेंगे,
आधी रात और सुबह उनके आंसू नदी की तरह बहेंगे, वे
कन्हाजिना को फिर कभी नहीं देख पाएंगे, जिसे वे बहुत प्यार करते थे।
झील के चारों ओर झुके हुए गुलाब-सेब के पेड़ों के उन समूहों को,
और जंगल के सभी फलों को, हम आज त्याग देते हैं।
अंजीर का पेड़ और कटहल, चौड़ा बरगद और जंगल में उगने वाला हर पेड़,
हाँ! आज हम जंगल के सभी फलों का त्याग करते हैं।
वे वहां एक रमणीय उद्यान की तरह खड़े हैं, वहां ठंडी नदी बहती है,
वह स्थान जहां कभी हम खेला करते थे, आज हम उसे त्याग देते हैं।
जो फल हम कभी खाया करते थे, जो फूल हम पहना करते थे,
जो उस पहाड़ी पर उगते थे, आज हम उन्हें त्याग देते हैं।
और वे सभी प्यारे-प्यारे खिलौने जिनके साथ हम कभी वहां खेलते थे,
घोड़े, बैल, हाथी, आज हम उन सबको त्याग देते हैं।"
इन सब रोने-धोने के बावजूद, जुजाका आई और उसे उसकी बहन के साथ भगा ले गई।

इस बात को समझाते हुए गुरु ने कहा:

जब बच्चों को ले जाया जा रहा था, तो उन्होंने अपने पिता से कहा:

"हे पिता! हमारी माताजी के लिए शुभकामनाएं दीजिए और आपका दिन मंगलमय हो!
ये बैल, घोड़े, हाथी जिनके साथ हम खेला करते थे,
इन्हें माताजी को दे दीजिए, इससे उनका कुछ दुख कम हो जाएगा।"
ये बैल, घोड़े, हाथी जिनके साथ हम खेला करते थे,
जब वह उन्हें देखेगी, तो उसका दुख कुछ हद तक कम हो जाएगा।
अब अपने बच्चों के कारण उस महान पुरुष को बहुत पीड़ा हुई और उसका हृदय व्याकुल हो उठा; वह बुरी तरह कांपने लगा, मानो कोई हाथी शेर के चंगुल में फंस गया हो, मानो चंद्रमा राहु (ग्रहण) के जबड़ों में समा गया हो। सहन न कर पाने के कारण वह आँखों से आँसू बहाते हुए कुटिया में चला गया और फूट-फूटकर रोने लगा।

इस बात को समझाते हुए गुरु ने कहा:

"योद्धा राजकुमार वेसंतारा ने इस प्रकार अपना उपहार दिया और चला गया, और वहाँ उसकी हरी-भरी छाया में वह उदास होकर शोक मनाने लगा।"

आगे जो छंद दिए गए हैं, वे उस महान सत्ता के शोकगीत हैं।

"हे जब सुबह या शाम को मेरे बच्चे
भूख या प्यास से व्याकुल होकर भोजन के लिए रोते हैं, तो उनकी कमी कौन पूरी करेगा?"
उनके नन्हे-मुन्ने कांपते हुए पैर नंगे बदन सड़क पर कैसे चलेंगे
? कौन उनका हाथ पकड़कर उन्हें धीरे से आगे ले जाएगा?
मैं चुपचाप खड़ा था और अपने निर्दोष साथियों पर प्रहार कर रहा था, फिर भी उस ब्राह्मण को शर्म क्यों नहीं आई
? मैं तो उसे निर्लज्ज कहता हूँ!
जिस व्यक्ति में थोड़ी भी शर्म होगी, वह किसी दूसरे के साथ ऐसा व्यवहार नहीं करेगा, चाहे
वह मेरा गुलाम का नौकर ही क्यों न हो, और मैं कितना भी नीचा गिर गया होता।
मैं उसे देख नहीं सकती, लेकिन वह मेरे प्यारे बच्चों को डांटता और पीटता है,
जबकि मैं जाल में फंसी मछली की तरह असहाय यहाँ खड़ी हूँ।
बच्चों के प्रति स्नेह के कारण ये विचार उस महान पुरुष के मन में आए; ब्राह्मण द्वारा अपने बच्चों को बेरहमी से पीटने का दृश्य देखकर उनका दर्द कम नहीं हो रहा था। उन्होंने उस व्यक्ति का पीछा करके उसे मार डालने और बच्चों को वापस लाने का निश्चय किया। लेकिन उन्होंने सोचा, नहीं: यह एक गलती होगी; दान देना और फिर बच्चों के भारी कष्ट के कारण पछताना, यह धर्मात्माओं का मार्ग नहीं है। और अगले दो श्लोक इसी विषय पर प्रकाश डालते हैं।

"उसने अपनी तलवार अपने बाएं हाथ पर बांध ली, उसने अपने धनुष को सुसज्जित किया;
मैं अपने बच्चों को वापस लाऊंगा; उन्हें खोना बहुत बड़ा दुख है।"
लेकिन अगर मेरे बच्चे मर भी जाएं तो भी दुःख महसूस करना अनुचित है:
भला कौन भले लोगों के रीति-रिवाजों को जानता है, फिर भी बदले में दान मांगता है?
इसी बीच जुजाका बच्चों को पीटते हुए उन्हें आगे ले जा रहा था। तब लड़के ने विलाप करते हुए कहा:

"वह कहावत कितनी सच लगती है जो लोग अक्सर कहते हैं:
जिसकी अपनी माँ नहीं होती, वह बापहीन भी होता है।"
हमारे लिए जीवन का कोई महत्व नहीं है: हमें मरने दो; अब हम उसके गुलाम हैं,
इस क्रूर, लालची, हिंसक व्यक्ति के, जो हमें अपनी गाय की तरह हांकता है।
झील के चारों ओर झुके हुए गुलाब-सेब के पेड़ों के ये समूह,
और जंगल की सारी हरियाली, हे कान्हा, हम त्याग देते हैं।
अंजीर का वृक्ष, कटहल का वृक्ष, बरगद का वृक्ष, और हर वह वृक्ष जो उगता है,
हाँ, सभी प्रकार के फल, हे कान्हा, हम उन सभी का त्याग करते हैं।
वे वहाँ एक रमणीय उद्यान की तरह खड़े हैं, वहाँ शीतल नदी बहती है;
वह स्थान जहाँ कभी हम खेला करते थे, हे कान्हा, हम उसे त्याग देते हैं।
जो फल हम कभी खाया करते थे, जो फूल हम पहना करते थे,
जो उस पहाड़ी पर उगते हैं, हे कान्हा, हम उन्हें त्याग देते हैं।
और वे सभी प्यारे-प्यारे खिलौने जिनके साथ हम कभी वहाँ खेलते थे,
घोड़े, बैल, हाथी, हे कान्हा, हम उन सबको त्याग देते हैं।
ब्राह्मण फिर से एक ऊबड़-खाबड़ जगह पर गिर पड़ा: उसके हाथ से रस्सी छूट गई, और बच्चे घायल पक्षियों की तरह कांपते हुए बिना रुके अपने पिता के पास वापस भाग गए।

इस बात को समझाते हुए गुरु ने कहा:

"अब जाली और कन्हाजिना, इस प्रकार ब्राह्मण द्वारा ले जाए जाने पर, किसी तरह मुक्त हो गए, और फिर वे भागते चले गए।"

लेकिन जुजाका झट से उठा और रस्सी और लाठी हाथ में लिए उनके पीछे-पीछे गया, मानो दुनिया के अंत में आग उगल रहा हो; "तुम सचमुच भागने में बहुत चतुर हो," उसने कहा; और उसने उनके हाथ बांध दिए और उन्हें वापस ले आया।

इस बात को समझाते हुए गुरु ने कहा:

"और इस प्रकार ब्राह्मण ने अपनी रस्सी और अपना डंडा उठाया, और उन्हें पीटते हुए वापस ले आया, जबकि राजा को देखने के लिए विवश होना पड़ा।"

जब उन्हें ले जाया जा रहा था, कन्हाजिना पीछे मुड़ी और अपने पिता से विलाप करने लगी। इसका कारण बताते हुए गुरु ने कहा:

तब कन्हाजिना ने कहा, "हे मेरे पिता, कृपया देखिए—
यह ब्राह्मण मुझे ऐसे पीट रहा है जैसे मैं घर का ही गुलाम हूँ!"
ब्राह्मण तो सदाचारी जीवन जीने वाले पुरुष होते हैं: वह ब्राह्मण हो ही नहीं सकता। वह तो
ब्राह्मण के वेश में एक राक्षस है, जो हमें खाने के लिए ले जा रहा है।
क्या तुम रुककर हमें राक्षस का भोजन बनते देख सकते हो?
जब उनकी छोटी बेटी कांपते हुए विलाप करने लगी, तो उस महान आत्मा के मन में गहरा दुःख उत्पन्न हुआ: उनका हृदय प्रचंड हो उठा; उनकी नाक इतनी बड़ी नहीं थी कि वे गर्म सिसकियाँ भर सकें; उनकी आँखों से खून की बूँदों जैसे आँसू बहने लगे। तब उन्होंने सोचा: "यह सारा दर्द स्नेह से उत्पन्न हुआ है, किसी और कारण से नहीं; मुझे इस स्नेह को शांत करना होगा और स्थिर रहना होगा।" इस प्रकार अपने ज्ञान की शक्ति से उन्होंने उस तीव्र दुःख को दूर किया और हमेशा की तरह शांत बैठ गए।

जब वे अभी पहाड़ों के प्रवेश द्वार तक ही पहुँचे थे, तब भी लड़की विलाप करती रही:

"मेरे ये छोटे-छोटे पैर दर्द से कराह रहे हैं, जिस रास्ते पर हम चल रहे हैं वह कठिन है,
ब्राह्मण हमें आगे बढ़ाता जा रहा है, सूरज डूब रहा है।"
पहाड़ियों और जंगलों पर, और उनमें निवास करने वालों पर, हम पुकारते हैं,
हम सभी आत्माओं को आदरपूर्वक प्रणाम करते हैं।
इस झील में बसे हुए हैं; इसके पेड़-पौधे, जड़ें और लताएँ, और हम प्रार्थना करते हैं
कि हमारी माता स्वस्थ रहें: लेकिन ब्राह्मण हमें भगा देता है।
यदि वह हमारे पीछे आना चाहती है, तो उसे देर नहीं करनी चाहिए।
जिस रास्ते से हम जा रहे हैं, वह सीधा आश्रम की ओर जाता है;
और यदि वह इस रास्ते का अनुसरण करे, तो वह जल्द ही हमें पा लेगी।
हे जंगली फलों और जड़ों को इकट्ठा करने वाले, हे गुंथे हुए बालों वाले,
खाली आश्रम को देखकर तुम्हें बहुत निराशा होगी।
हमारी माँ अपनी खोज में बहुत देर तक लगी रही, उसे अवश्य ही बहुत बड़ा खजाना मिला होगा,
कौन जानता है कि एक क्रूर और लालची आदमी ने हमें बांध रखा है,
एक बहुत ही क्रूर आदमी, जो अब हमें मवेशियों की तरह इधर-उधर भगाता है।
आह, अगर हमारी माँ शाम को आई होती, और वे संयोग से मिल गए होते,
अगर उसने उसे शहद मिले फलों का भोजन कराया होता,
जब उसका भोजन तैयार हो जाता था, तब वह हमें बेरहमी से नहीं भगाता था:
वह हमें बेरहमी से भगाता था, और हमारे कदमों की आवाज गूंजती रहती थी!"
इसलिए बच्चे अपनी माँ के लिए पीड़ा में तड़पते हुए शोक मनाते थे।
अब जब राजा ने अपने प्रिय बच्चों को ब्राह्मण को सौंप दिया, तो पृथ्वी एक भयंकर शोर से गूंज उठी, जिसकी आवाज ब्रह्मा के स्वर्ग (प्रधान देवदूतों के स्वर्ग) तक भी पहुंची और हिमवत (हिमालय) में रहने वाले देवताओं के हृदयों को भेद गई। जब राजा ने बच्चों को ले जाते हुए उनके रोने की आवाज सुनी, तो उन्होंने मन ही मन सोचा, "यदि मद्दी सुबह जल्दी आश्रम आ गई और अपने बच्चों को नहीं देखा, तो वह वेसंतरा से इसके बारे में पूछेगी; जब उसे पता चलेगा कि उन्हें सौंप दिया गया है, तो उसकी तड़प बहुत बढ़ जाएगी; वह उनके पीछे दौड़ेगी और बड़ी मुसीबत में पड़ जाएगी। इसलिए उन्होंने तीन देवताओं (देवदूतों) को शेर, बाघ और तेंदुए का रूप धारण करने और उसका मार्ग अवरुद्ध करने का निर्देश दिया, ताकि वह सूर्यास्त तक, चाहे कितनी भी बार पूछे, वापस न लौट सके; वह केवल चांदनी रात में ही वापस लौट सके, और शेरों और अन्य जंगली जानवरों के हमलों से उसकी रक्षा की जा सके।"

इस बात को समझाते हुए गुरु ने कहा:

"एक शेर, एक बाघ और एक तेंदुआ, झाड़ियों के तीन प्राणी, जिन्होंने यह तेज आवाज सुनी, उन्होंने एक दूसरे से इस प्रकार कहा:

"राजकुमारी को भोजन की तलाश से शाम को वापस न लौटने दें, अन्यथा जंगली जानवर उसे हमारे वन राज्य में मार डालेंगे।"

यदि शुभ माता शेर, तेंदुए या बाघ को मार डालें, तो हे राजकुमार जली कहाँ होंगे? हे कन्हाजिना, आज आप माता-पिता और बच्चों दोनों की रक्षा कहाँ करेंगे?

वे मान गए और देवताओं (देवदूतों) के वचनों का पालन किया। शेर, बाघ और तेंदुआ बनकर वे उस रास्ते के पास लेट गए जिससे होकर उसे जाना था। अब मद्दी मन ही मन सोच रही थी, "कल रात मैंने एक बुरा सपना देखा; मैं अपने फल और जड़ें इकट्ठा करूँगी और सुबह जल्दी आश्रम पहुँच जाऊँगी।" काँपते हुए वह जड़ों और फलों की तलाश करने लगी: उसके हाथ से फावड़ा गिर गया, उसके कंधे से टोकरी गिर गई, उसकी दाहिनी आँख फड़कने लगी, फलदार पेड़ बंजर और बंजर पेड़ फलदार दिखाई देने लगे, उसे समझ नहीं आ रहा था कि वह सिर के बल खड़ी है या पैरों के बल। "आज इस अजीबोगरीब घटना का क्या अर्थ हो सकता है!" उसने सोचा और कहा--

"मेरा फावड़ा नीचे गिर गया, मेरी दाहिनी आंख में अब एक धड़कन महसूस हो रही है,
फलदार पेड़ निष्फल प्रतीत होते हैं, मेरे चारों ओर सब कुछ डगमगाता हुआ प्रतीत होता है!"
और जब वह शाम को दिन का काम खत्म करके जाने के लिए मुड़ी, तो सूर्यास्त के समय जंगली जानवरों ने उसके घर लौटने के रास्ते में बाधा डाली।

"मुझे लगता है कि आश्रम बहुत दूर है, सूरज ढल रहा है
और मुझे पता है कि उनके पास खाने के लिए सारा भोजन वही है जो मैं लाती हूँ।
और वहाँ मेरा राजकुमार पत्तों से घिरी झोपड़ी में बिल्कुल अकेला बैठा है,
भूखे बच्चों को दिलासा दे रहा है: और मैं वापस नहीं लौट रही हूँ।"
शाम के भोजन का समय हो गया है, ओह! मैं परेशान हूँ! बहुत देर हो गई है:
मेरे बच्चे पानी या दूध के लिए प्यासे हैं और मेरा इंतजार कर रहे हैं;
वे मुझसे मिलने आते हैं, बछड़ों की तरह अपनी माँ को ढूंढते हुए;
झील के ऊपर जंगली हंस के बच्चों की तरह—ओह, मैं कितना अभागा हूँ!
यही एकमात्र रास्ता है, जिसके चारों ओर तालाब और गड्ढे हैं:
और अब जब मैं घर की ओर जा रहा हूँ तो मुझे कोई दूसरा रास्ता दिखाई नहीं देता।
हे वनों के पराक्रमी सम्राटों, हे राजसी प्राणियों, मैं पुकारता हूँ,
अब धर्म में भाई बनो, और मुझे सुरक्षित जाने दो!
मैं एक निर्वासित राजकुमार की पत्नी हूँ, एक गौरवशाली राजकुमार की पत्नी;
जैसे सीता ने राम के लिए किया, वैसे ही मैं अपने पति की परवाह करती हूँ।
जब तुम शाम को घर लौटोगे, तो अपने बच्चों को देखोगे:
इसलिए जाली और कन्हाजिना को एक बार फिर मुझे सौंप दो!
यहां प्रचुर मात्रा में जड़ें और फल हैं, मेरे पास चबाने के लिए बहुत सारा भोजन है:
आधा मैं अब आपको अर्पित करता हूँ: हे मुझे सुरक्षित जाने दो!
हे मेरे पिता, हे राजा, और हे मेरी माता, हे रानी—मेरी पुकार सुनो!
अब धर्म में मेरे भाई बनो, और मुझे सुरक्षित जाने दो!
तब देवताओं (देवदूतों) ने समय देखकर यह समझा कि उसे जाने देने का समय आ गया है; और वे उठकर चले गए। गुरु ने इसका इस प्रकार स्पष्टीकरण दिया:

"जिन जानवरों ने उसे इस प्रकार अत्यंत पीड़ा के साथ विलाप करते सुना, उन्होंने मधुर और कोमल स्वर में कहा, और वे चले गए और उसे जाने दिया।"

जब जानवर चले गए, तो वह आश्रम लौट आई। अब पूर्णिमा की रात थी; और जब वह उस ढके हुए रास्ते के अंत तक पहुँची, जहाँ वह अपने बच्चों को देखने की आदी थी, और उन्हें वहाँ नहीं देखा, तो वह चिल्लाई:

"धूल से सने बच्चे, घर के पास ही, मुझसे यहाँ मिलने के आदी हो चुके हैं,
जैसे बछड़े अपनी माँ गाय को ढूंढते हैं, जैसे पक्षी झील के ऊपर उड़ते हैं।"
छोटे हिरणों की तरह, कान खड़े किए हुए, वे रास्ते में मुझसे मिलते हैं:
खुशी और उल्लास से वे उछलते-कूदते और खेलते हैं:
लेकिन जाली और कन्हाजिना को मैं आज नहीं देख पा रहा हूँ।

जैसे बकरी और शेरनी अपने बच्चों को छोड़कर, जैसे कोई चिड़िया अपना पिंजरा छोड़कर
भोजन की तलाश में जाती है, वैसे ही मैंने भी उनकी भूख मिटाने के लिए ऐसा किया है:
लेकिन जाली और कन्हाजिना को मैं आज नहीं देख सकता।
उनके निशान यहाँ हैं, घर के पास ही, पहाड़ी पर साँपों की तरह,
मिट्टी के छोटे-छोटे ढेर जो उन्होंने चारों ओर बनाए थे, अभी भी वहीं हैं:
लेकिन जाली और कन्हाजिना को मैं आज नहीं देख सकता।
सब कुछ धूल से ढका हुआ है, मेरे बच्चे मेरे पास दौड़कर आते थे,
कीचड़ से सने हुए, लेकिन अब वास्तव में मैं उनमें से किसी को भी नहीं देख सकता।
जैसे बच्चे अपनी माँ का स्वागत करने के लिए घर से भागते हैं, वैसे ही वे भी भाग गए;
जैसे मैं जंगल से लौटा था; आज मुझे वे दिखाई नहीं दे रहे हैं।
वे यहाँ खेल रहे थे, यहाँ यह पीला विल्वा फल गिरा:
लेकिन जाली और कन्हाजिना को मैं आज नहीं देख पा रहा हूँ।
मेरे ये स्तन दूध से भरे हैं, मेरा दिल भी टूट जाएगा:
लेकिन आज मैं जाली और कन्हाजिना को नहीं देख सकती।
वे मेरी कमर से लिपटे रहते थे, एक मेरी छाती से लटकता रहता था:
शाम के विश्राम के समय वे धूल से सने हुए मुझसे कैसे मिलते थे!
लेकिन आज मैं जाली और कन्हाजिना को नहीं देख पा रही हूँ।
एक समय यह आश्रम हमारा मिलन स्थल हुआ करता था:
लेकिन अब मुझे यहाँ कोई बच्चे नहीं दिखते, पूरी जगह घूमती रहती है।
मेरे बच्चे मर गए होंगे! यह जगह इतनी शांत हो गई है—
कौवे भी नहीं कांव-कांव कर रहे, पक्षी भी चुप हो गए हैं।
इस प्रकार शोक मनाते हुए वह उस महान व्यक्ति के पास आई और फलों की टोकरी नीचे रख दी। उसे चुपचाप बैठे हुए और उसके साथ कोई संतान न देखकर उसने कहा:

"तुम चुप क्यों हो? वो सपना फिर से मेरे मन में आ रहा है:
पक्षी और कौवे कोई आवाज नहीं कर रहे हैं, मेरे बच्चे मारे गए होंगे!"
हे महोदय, क्या उन्हें किसी जंगली जानवर ने अगवा कर लिया है?
या फिर वे घने सुनसान जंगल में भटक गए हैं?
क्या मीठी-मीठी बातें करने वाले सोते हैं? क्या वे अपने काम में सफल होते हैं?
क्या वे मौज-मस्ती या खेल-कूद में दूर-दूर तक भटक गए हैं?
मुझे उनके हाथ-पैर नहीं दिख रहे, उनके बाल नहीं दिख रहे:
क्या कोई पक्षी झपटा? या उन्हें कौन उड़ा ले गया?
इस पर उस महान सत्ता ने कोई उत्तर नहीं दिया। तब उसने पूछा, "मेरे स्वामी, आप मुझसे बात क्यों नहीं करते? मेरी क्या गलती है?" और कहा:

"यह तीर के घाव की तरह है, और उससे भी कहीं अधिक दर्दनाक है
(लेकिन आज मैं जाली और कन्हाजिना को नहीं देख सकता!)"
यह दूसरा घाव है जो तुमने मेरे दिल पर मारा है,
जिसे मैं और मेरे बच्चे नहीं देख सकते, जिसके बारे में तुम्हारे पास कहने के लिए कुछ नहीं है।
और इसलिए, हे राजकुमार! चूंकि आज रात आप कोई जवाब नहीं देंगे,
मुझे लगता है कि मेरे दिन सचमुच समाप्त हो गए हैं, और आप मुझे मरते हुए देखेंगे।
उस महान प्राणी ने सोचा कि कठोर शब्दों से वह बच्चों के दर्द को कम कर लेगा, और उसने यह श्लोक पढ़ा:

"ओ मद्दी, जन्म से ही राजकुमारी, जिसकी महिमा इतनी महान है,
तुम सुबह-सुबह भोजन करने गई थीं: इतनी देर से क्यों लौटीं?"
उसने उत्तर दिया:

"क्या तुमने शेर और बाघ की ज़ोरदार दहाड़ नहीं सुनी
, जब वे झील के किनारे अपनी प्यास बुझाने के लिए खड़े थे?"

जैसे ही मैं जंगल में चल रहा था, मुझे वह संकेत मिला जिसे मैं अच्छी तरह जानता था:
मेरा फावड़ा मेरे हाथ से गिर गया, और मेरी बांह से टोकरी गिर गई।
तब आहत और भयभीत होकर, मैंने एक-एक करके सभी दिशाओं की पूजा की,
प्रार्थना की कि इससे कुछ अच्छा ही हो, प्रार्थना में अपने हाथ फैलाए हुए:
और यह कि कोई शेर, तेंदुआ, लकड़बग्घा, भेड़िया या भालू
मेरी बेटी या मेरे बेटे को नोच न सके, परेशान न कर सके या नष्ट न कर सके।
एक शेर, एक बाघ और एक तेंदुआ, तीन खूंखार जानवर घात लगाकर बैठे थे
और मुझे घर लौटने के रास्ते से रोक रहे थे: इसीलिए मुझे देर हो गई।
सूर्योदय तक उस महान सत्ता ने उससे बस इतना ही कहा, जिसके बाद मद्दी ने लंबे समय तक विलाप किया।

मैंने अपने पति और अपने बच्चों की दिन-रात देखभाल की है,
जैसे एक शिष्य अपने गुरु की देखभाल करता है, जब वह सही करने की कोशिश करता है।
बकरियों की खाल से बने वस्त्रों में लिपटे हुए, मैं जंगल से जंगली जड़ें और फल लाया,
और हर दिन और हर रात आपकी सुविधा के लिए उनकी देखभाल की।
मैं तुम्हारे लिए पीले विल्वा फल लाया हूँ, मेरी नन्ही बच्ची और नन्हे बच्चे,
और साथ ही जंगल के कई पके हुए फल भी लाया हूँ, ताकि तुम खेल सको और खुश हो सको।
हे राजकुमार, इस सुनहरे पीले रंग की कमल की जड़ और कमल के डंठल को
अपने बच्चों के साथ मिलाओ और अपना हिस्सा भी खाओ।
अपनी प्रेमिका को सफेद लिली दो, जाली को नीली लिली दो,
और उन्हें मालाओं से सजे नृत्य करते देखो: हे सिवी, उन्हें बुलाओ!

हे महान सम्राट! जब कन्हाजिना मधुर स्वर में गाते हुए हमारे निवास स्थान में प्रवेश कर रहे हैं, तो कृपया ध्यान से सुनें ।
जब से हमें निर्वासित किया गया है, सुख और दुख हम सब मिलकर साझा करते आए हैं:
हे उत्तर दो! क्या तुमने मेरे कन्हाजिना और जली को देखा है?
मैंने कितने ही पवित्र ब्राह्मणों को नाराज किया होगा,
जो पवित्र जीवन जीते थे, गुणी थे और पवित्र परंपराओं से परिपूर्ण थे,
कि आज मैं जली और कन्हाजिना को देख भी नहीं सकता!
इस शोक पर उस महान सत्ता ने एक शब्द भी उत्तर नहीं दिया। जब उन्होंने कुछ नहीं कहा, तो वह कांपते हुए चाँदनी में अपने बच्चों को ढूंढने लगी; और जहाँ कहीं भी वे खेलते थे, गुलाब के पेड़ों के नीचे या कहीं और, वह उन्हें ढूंढती रही, रोती रही और कहती रही:

"झील के चारों ओर झुके हुए गुलाब-सेब के पेड़ों के ये समूह,
और जंगल के सभी फल--मेरे बच्चे यहाँ नहीं हैं!"
अंजीर का पेड़ और कटहल, चौड़ा बरगद, और जंगल में उगने वाला हर पेड़,
हाँ, जंगल के सभी फल—मेरे बच्चे यहाँ नहीं हैं!
वे वहां एक रमणीय उद्यान की तरह खड़े हैं, वहां ठंडी नदी बहती है,
वह स्थान जहां कभी वे खेला करते थे - लेकिन अब वे यहां नहीं हैं।
जो फल वे कभी खाया करते थे, जो फूल वे पहना करते थे,
जो उस पहाड़ी पर उगते हैं—वहाँ बच्चे नहीं हैं!
और वे सारे छोटे खिलौने जिनसे वे कभी खेलते थे, वे सब वहाँ हैं -
बैल, घोड़े, हाथी - बच्चे वहाँ नहीं हैं!
यहां कई खरगोश और उल्लू थे, काले और धब्बेदार हिरण थे,
जिनके साथ बच्चे खेला करते थे, लेकिन वे खुद यहां नहीं हैं!
अपने खूबसूरत पंखों वाले मोर, बगुले और हंस,
जिनके साथ बच्चे खेला करते थे, लेकिन वे खुद यहाँ नहीं हैं!
अपने प्रिय बच्चों को आश्रम में न पाकर, वह फूलों के एक झुंड में प्रवेश कर गई और उन्हें इधर-उधर ढूंढते हुए बोली:

"वन की वनस्पतियाँ, जो हर मौसम में खिलने वाले फूलों से भरी रहती हैं,
जहाँ कभी बच्चे खेला करते थे, लेकिन वे खुद यहाँ नहीं हैं!"
वे सुंदर झीलें जो लाल हंसों की पुकार सुनती हैं,

जहाँ सफेद कमल और नीले कमल खिलते हैं और मूंगे जैसे पेड़ उगते हैं,
जहाँ कभी बच्चे खेलते थे, लेकिन अब वहाँ कोई बच्चा नहीं है।"
लेकिन उसे कहीं भी बच्चे दिखाई नहीं दिए। फिर वह उस महान सत्ता के पास लौटी, जिसका चेहरा नीचे की ओर झुका हुआ था, और उससे बोली:

"तुमने जलाने के लिए लकड़ी नहीं काटी, आग नहीं जलाई,
और पहले की तरह पानी भी नहीं लाया: तुम यूं ही क्यों बैठे हो?"
जब मैं अपनी मांद में लौटता हूँ तो मेरी सारी मेहनत समाप्त हो जाती है,
लेकिन आज मुझे जली और कन्हाजिना दिखाई नहीं दे रहे हैं!
फिर भी वह महान सत्ता मौन बैठी रही; और उसकी चुप्पी से दुखी होकर, घायल पक्षी की तरह कांपते हुए, वह उन स्थानों पर फिर से गई जहाँ उसने पहले खोज की थी, और लौटकर बोली:

"हे मेरे पति, मुझे समझ नहीं आ रहा कि उनकी मृत्यु किसके कारण हुई है:
कौवे भी कांव-कांव नहीं कर रहे, पक्षी भी चुप हैं।"
फिर भी उस महान सत्ता ने एक शब्द भी नहीं कहा। और वह, अपने नन्हे-मुन्नों के लिए तड़पते हुए, तीसरी बार उन्हीं स्थानों पर हवा की तरह तेज़ी से खोजबीन करने लगी: एक ही रात में उसने उन्हें खोजते हुए पंद्रह मील (4.23 किमी) की दूरी तय की। फिर रात का अंत हुआ और सूर्योदय के समय वह फिर उस महान सत्ता के पास लौटी और उनके सामने शोक मनाते हुए खड़ी हो गई। गुरु ने इसका अर्थ इस प्रकार समझाया:

"जब वह खोज में हर जंगल और हर पहाड़ी को पार कर चुकी थी, तब
वह अपने पति के पास लौट आई और शोक में खड़ी रही।"
"पहाड़ों, जंगलों, गुफाओं में मुझे यह नहीं दिख रहा कि उनकी मृत्यु किसके कारण हुई है:
कौवे भी कांव-कांव नहीं कर रहे, पक्षी भी चुप हैं।"
फिर उच्च प्रतिष्ठा की धनी महिला, राजपरिवार की राजकुमारी मद्दी,
शोक मनाते हुए बाहें फैलाकर धरती पर गिर पड़ी।
“वह मर गई!” महान पुरुष ने सोचा और कांप उठा। “आह, मद्दी के मरने के लिए यह जगह ठीक नहीं है! अगर वह जेटुत्तरा नगर में मरी होती, तो बड़ा धूमधाम होता, दो राज्य हिल जाते। लेकिन मैं जंगल में अकेला हूँ, और मैं क्या कर सकता हूँ?” उस पर गहरा संकट छा गया; फिर थोड़ा संभलकर उसने अपनी क्षमता के अनुसार कुछ करने का निश्चय किया। उठकर उसने मद्दी के हृदय पर हाथ रखा और उसे अभी भी गर्म पाया: वह एक घड़े में पानी लाया और यद्यपि पिछले सात महीनों से उसने उसके शरीर को स्पर्श नहीं किया था, फिर भी अपनी पीड़ा में वह तपस्वी का कर्तव्य नहीं निभा सका, और आँखों में आँसू लिए उसने मद्दी का सिर उठाया और अपनी गोद में रख लिया, उस पर पानी छिड़का और बैठते हुए उसके चेहरे और छाती को छुआ। फिर थोड़ी देर बाद मद्दी को होश आया और वह घबराकर उठी और महान पुरुष को प्रणाम करते हुए पूछा, “मेरे स्वामी वेसंतरा, बच्चे कहाँ गए?” उन्होंने कहा, "मैंने इन्हें एक ब्राह्मण को दे दिया है।" गुरु ने इस प्रकार समझाया:

जब वह बेहोश होकर मरणासन्न रूप से गिर पड़ी तो उसने उस पर पानी छिड़का,
और जब उसे होश आया तो उसने कहा:-
उसने उससे पूछा, "मेरे प्रिय, यदि तुमने बच्चों को किसी ब्राह्मण को सौंप दिया था, तो तुमने मुझे सारी रात बिना कुछ कहे रोते रहने क्यों दिया?" उस महान प्राणी ने उत्तर दिया:

"मैंने तुरंत कुछ नहीं कहा, क्योंकि मैं तुम्हें दुख नहीं पहुँचाना चाहता था।
एक गरीब बूढ़ा ब्राह्मण भीख मांगने आया था, इसलिए
मैंने भिक्षा देने के बदले में बच्चों को दे दिया: डरो मत, हे मद्दी! फिर से सांस लो।"
हे मद्दी, ज्यादा शोक मत करो, बल्कि मेरी ओर देखो:
हम उन्हें फिर से जीवित वापस लाएंगे, और हम खुश होंगे।
अच्छे लोगों को मांगने पर हमेशा देना चाहिए, चाहे बेटे हों, पशु हों, धन हो या अनाज।
मैडी, खुश हो जाओ! बच्चों से बड़ा उपहार और कुछ नहीं हो सकता।
मद्दी ने जवाब दिया:

मुझे अत्यंत प्रसन्नता हो रही है! बच्चों से बड़ा कोई उपहार नहीं हो सकता।

देने से मन को शांति मिलती है; मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि ऐसा ही फिर से करें।
" हे सिवी भूमि के सर्वशक्तिमान पिता तुल्य राजा, आपने
स्वार्थी लोगों की दुनिया के बीच उदारतापूर्वक उपहार दिए।"
इस पर उस महान सत्ता ने उत्तर दिया, "मद्दी, तुम ऐसा क्यों कहती हो? यदि मैं अपने बच्चों को देकर अपने मन को शांति न दे पाता, तो ये चमत्कार मेरे साथ न घटित होते।" फिर उन्होंने मद्दी को पृथ्वी के सभी कंपन और अन्य घटनाओं के बारे में बताया। तब मद्दी प्रसन्न होकर इन चमत्कारों का वर्णन इन शब्दों में किया:

धरती कांप उठी, और वह ध्वनि उच्चतम आकाश को भर गई,
बिजली चमकी, गरज ने पहाड़ियों में गूंज पैदा कर दी!
तब नारद और पब्बत दोनों बहुत प्रसन्न हुए,
हाँ, इंद्र सहित सभी तैंतीस देवता (देवदूत) उस आवाज को सुनकर प्रसन्न हुए।
इस प्रकार राजपरिवार में जन्मी, उच्च कोटि की राजकुमारी मद्दी ने
उसके साथ हर्षोल्लास किया: "बच्चों से बड़ा उपहार और कोई नहीं हो सकता।"
इस प्रकार उस महान सत्ता ने अपने उपहार का वर्णन किया; और इस प्रकार मद्दी ने भी उस कहानी को दोहराते हुए कहा कि उन्होंने एक महान उपहार दिया है, और वह उसी उपहार में आनंदित होकर बैठी रही: इस अवसर पर गुरु ने "इस प्रकार मद्दी," इत्यादि श्लोक को दोहराया।

जब वे आपस में बातें कर रहे थे, तब सक्का (इंद्र) ने सोचा: "कल वेस्संतरा ने अपने बच्चों को जुजाक को दे दिया, और धरती कांप उठी। अब मान लो कि कोई दुष्ट प्राणी आकर राजा से अतुलनीय, गुणी मद्दी को मांग ले और उसे अपने साथ ले जाए, राजा को अकेला छोड़कर: वह असहाय और निर्धन रह जाएगा। तो फिर, मैं ब्राह्मण का रूप धारण करके मद्दी की भीख मांगूंगा। इस प्रकार मैं उसे पूर्णता की सर्वोच्च ऊंचाई तक पहुंचाऊंगा; मैं यह सुनिश्चित करूंगा कि उसे किसी और को न दिया जा सके और फिर मैं उसे वापस दे दूंगा।" इस प्रकार भोर होते ही सक्का (इंद्र) उसके पास गए। गुरु ने इसे इस प्रकार समझाया:

और जब रात समाप्त हुई, भोर होते ही,
ब्राह्मण रूप में सक्का (इंद्र) सबसे पहले उनके पास पहुंचे।
"हे पवित्र पुरुष, मुझे विश्वास है कि आप समृद्ध और कुशल हैं,
आपके निवास स्थान में अनाज की भरपूर फसल है, और जड़ और फल भी प्रचुर मात्रा में हैं।"
क्या आप मक्खियों, मच्छरों और रेंगने वाले कीड़ों से बहुत परेशान हुए हैं,
या जंगली जानवरों से आपको कोई खतरा नहीं रहा है?
उस महान सत्ता ने उत्तर दिया:

"धन्यवाद, ब्राह्मण—हाँ, मैं समृद्ध और स्वस्थ हूँ,
मेरे पास अनाज इकट्ठा करने के लिए है, और जहाँ मैं रहता हूँ वहाँ फल और जड़ें प्रचुर मात्रा में हैं।"
मुझे मक्खियों, मच्छरों और रेंगने वाले कीड़ों से कोई परेशानी नहीं होती,
और जंगली शिकारी जानवरों से मुझे यहाँ कोई खतरा नहीं होता।
मैं यहाँ सात दुख भरे महीने बिता चुका हूँ, और तुम, दूसरे ब्राह्मण, को
अपने हाथ में बकरी की लाठी लिए इस वनभूमि तक पहुँचते हुए पाया।
हे ब्राह्मण, आपका स्वागत है! सौभाग्य से आप इस मार्ग पर आए;
आइए, आशीर्वाद के साथ प्रवेश करें, और कृपया अपने चरण धो लें।
तिंडूक और पियाल के पत्ते, और कसुमारी की मिठाई,
और शहद जैसे फल, ब्राह्मण, मेरे पास जो सबसे अच्छा है, उसे ले लो और खाओ।
और हे श्रेष्ठ ब्राह्मण! पहाड़ी पर छिपी इस गुफा से निकलने वाला यह शीतल जल
, यदि आपकी इच्छा हो तो इसे ग्रहण करें।
जब वे आपस में सुखद बातचीत कर रहे थे, तब उसने उसके आने का कारण पूछा:

"और अब किस कारण या किस वजह से आप इस रास्ते पर आए?
आप इन घने जंगलों में क्यों खोज रहे थे? कृपया मुझे यह बताएं।"
तब सक्का (इंद्र) ने उत्तर दिया: "हे राजा, मैं बूढ़ा हो गया हूँ, परन्तु मैं आपकी पत्नी मद्दी को माँगने आया हूँ; कृपया उसे मुझे दे दीजिए," और उसने यह श्लोक दोहराया:

"जैसे एक बड़ी बाढ़ कभी सूखती नहीं और अपने आप में भरपूर होती है,
वैसे ही, जिनसे मैं विनती करने आया हूँ, कृपया मुझे अपनी पत्नी दे दीजिए, मैं आपसे विनती करता हूँ।"
इस पर उस महान सत्ता ने यह उत्तर नहीं दिया—"कल मैंने अपने बच्चों को एक ब्राह्मण को सौंप दिया, मैं मद्दी को तुम्हें कैसे सौंप सकता हूँ और जंगल में अकेला रह जाऊँ!" नहीं, ऐसा लगा मानो उसने अपने हाथ में हज़ार सिक्कों से भरा थैला रख लिया हो: उदासीन, अनासक्त, मन में किसी भी प्रकार की आसक्ति के बिना, उसने इस श्लोक से पर्वत को प्रतिध्वनित कर दिया:

"मैं थका हुआ हूँ, और इसे छुपाता भी नहीं हूँ: फिर भी अपनी अनिच्छा के बावजूद,
मैं देता हूँ, और पीछे नहीं हटता: क्योंकि उपहारों में मेरा हृदय आनंदित होता है।"
यह सुनकर, उसने तुरंत एक घड़े में पानी निकाला और उसे अपने हाथ पर डाला, और मद्दी को ब्राह्मण को सौंप दिया। उसी क्षण, पहले घटित हुए सभी शगुन फिर से दिखाई और सुनाई दिए। गुरु ने इसका इस प्रकार स्पष्टीकरण दिया:

"तब शिवी राज्य के राजा ने एक जल-कलश उठाया और मद्दी को लेकर सीधे ब्राह्मण के हाथ में सौंप दिया।"

तब दहशत और भय का माहौल छा गया, तब धरती कांप उठी, जब उसने मद्दी को अपने आगंतुक के लिए सौंप दिया।

मैडी के चेहरे पर कोई शिकन नहीं आई, वह रोई नहीं, बल्कि चुपचाप देखती रही, सोचती रही, कि इसका कारण वही सबसे अच्छी तरह जानता है।

"मैंने जाली और कन्हाजिना दोनों को किसी और को सौंप दिया,
और मद्दी को भी, जो मेरी समर्पित पत्नी थी, और यह सब ज्ञान की खातिर किया।"
मेरी निष्ठावान पत्नी मुझे नापसंद नहीं है, न ही मेरे बच्चे नापसंद हैं,
परन्तु मेरे विचार में पूर्ण ज्ञान कहीं अधिक प्रिय है।
तब उस महान सत्ता ने मद्दी के चेहरे की ओर देखा कि वह इस पर कैसी प्रतिक्रिया दे रही है; और उसने उनसे पूछा कि वे उसकी ओर क्यों देख रहे हैं, और शेरनी जैसी आवाज में इन शब्दों में जोर से पुकारी:

"मैं जन्म से ही उसकी पत्नी थी, वह अब भी मेरा स्वामी है:
वह जिसे चाहे उसे दे सकता है, बेच सकता है या मार सकता है।"
तब सक्का (इंद्र) ने उसके उत्कृष्ट संकल्प को देखकर उसकी प्रशंसा की; और गुरु ने इसका इस प्रकार स्पष्टीकरण दिया: "इसी कारण सक्का (इंद्र) ने, उसकी इच्छाओं के झुकाव को देखकर कहा: "मनुष्य और दैवीय, सभी बाधाओं पर विजय प्राप्त कर ली गई है।"

धरती कांप उठी, और उसकी आवाज़ उच्चतम आकाश में गूंज उठी, बिजली चमकी, गरज ने पहाड़ियों में गूंज पैदा कर दी।

अब नारद और पब्बत ने यह शक्तिशाली वाणी सुनी, जी हाँ, इस कठिन कार्य पर तैंतीस देवता (देवदूत) प्रसन्न हुए।

अच्छे लोगों की तरह करना, उनकी तरह देना मुश्किल है; बुरे लोग अच्छे लोगों के जीवन की नकल शायद ही कर पाते हैं।

और इसलिए, जब अच्छाई और बुराई पृथ्वी से मिट जाती हैं, तो बुरे लोग नीचे नरक में जन्म लेते हैं, और अच्छे लोग स्वर्ग में जन्म लेते हैं।

यह श्रेष्ठ वाहन है: पत्नी और संतान दोनों को दिया गया, इसलिए उसे अब और नीचे न उतरना चाहिए, बल्कि यह स्वर्ग में फलदायी हो।

जब इस प्रकार सक्का (इंद्र) ने अपनी स्वीकृति व्यक्त कर दी, तो उसने सोचा, "अब मुझे यहाँ और देर नहीं करनी चाहिए, बल्कि उसे वापस देकर चले जाना चाहिए"; और उसने कहा:

"महोदय, अब मैं आपको आपकी सुंदर और प्यारी पत्नी मैडी वापस देता हूँ,
एक उत्तम जोड़ी, और एक अत्यंत सामंजस्यपूर्ण जीवन के लिए उपयुक्त।"
जैसे पानी और सीप के बीच अटूट बंधन होता है,
वैसे ही आप और मैडी के बीच मन और हृदय का सामंजस्य है।
दोनों माता-पिता की ओर से समान वंश और परिवार के होने के कारण,
आप यहाँ एक वन आश्रम में एक साथ निवास करते हैं,
ताकि आप जहाँ भी वन में निवास करते हैं, वहाँ अच्छे कार्य करते रहें।
इतना कहकर उन्होंने एक वरदान देने की पेशकश की:

"मैं सक्का (इंद्र), देवताओं (देवदूतों) का राजा हूँ, यहाँ आपके दर्शन के लिए आया हूँ:
हे राजसी ऋषि, एक वरदान चुनिए, मैं आपको आठ वरदान देता हूँ।"
जैसे ही उन्होंने बोलना शुरू किया, वे सुबह के सूरज की तरह चमकते हुए हवा में ऊपर उठ गए। फिर बोधिसत्व ने अपने वरदानों का चयन करते हुए कहा:

"सक्का (इंद्र), जो समस्त पृथ्वी के स्वामी हैं, ने मुझे वरदान दिया है।"
हे मेरे पिता, कृपया मुझसे सुलह कर लें, मुझे जल्द ही वापस बुला लें
और मुझे मेरे राजसी सिंहासन पर बिठा दें: यही मेरी पहली वरदानी है।
मैं किसी भी व्यक्ति को मृत्युदंड न दूं, चाहे वह दोषी ही क्यों न हो:
दोषी ठहराए गए व्यक्ति को मैं मृत्यु से मुक्त कर दूं: यही दूसरा वरदान मैं चाहता हूं।
मेरी तीसरी वरन्तु है कि सभी लोग सहायता के लिए केवल मेरी ओर देखें, चाहे
वे युवा हों, वृद्ध हों या मध्यम आयु वर्ग के हों।
क्या मैं अपने पड़ोसी की पत्नी की तलाश न करूँ, अपनी पत्नी से संतुष्ट रहूँ,
और न ही किसी स्त्री की इच्छा के अधीन रहूँ: यही चौथा वरदान मैं चाहता हूँ।
हे इंद्र, मैं आपसे निवेदन करता हूँ कि मेरे प्रिय पुत्र को दीर्घायु प्रदान करें,
जो धर्म के मार्ग पर चलकर संसार को विजय प्राप्त करे: यह मेरा पाँचवाँ वरदान है जिसकी मैं कामना करता हूँ।
फिर हर रात के अंत में, दिन के उदय के समय,
दिव्य भोजन प्रकट हो: यही छठा वरदान है जिसकी मैं कामना करता हूँ।

मेरी सातवीं प्रार्थना है कि दान देने के साधन कभी कम न पड़ें, और मैं हमेशा हार्दिक प्रसन्नता और संतोष के साथ दान देता रहूँ।
अतः मुक्त होकर मुझे सीधे स्वर्ग में पहुंचा दिया जाए, ताकि मुझे
फिर कभी पृथ्वी पर जन्म न लेना पड़े: यही मेरी आठवीं वरदान है।
जब देवताओं (देवदूतों) के राजा सक्का (इंद्र) ने उनकी बात सुनी, तो उन्होंने कहा:

"जिस पिता से तुम प्यार करते हो, वह लंबे समय तक अपने बेटे को देखने की कामना करेगा।"
इस संबोधन के साथ, सक्का (इंद्र) अपने स्थान पर लौट गया। इसका स्पष्टीकरण देते हुए गुरु ने कहा:

"परमेश्वर, देवदूतों के राजा, सुजामपति ने कहा,
वरदान देने के बाद वह सीधे स्वर्ग लौट गए।"
अब बोधिसत्व और मद्दी उस आश्रम में सुखपूर्वक रहते थे जो सक्का (इंद्र) ने उन्हें दिया था; परन्तु जुजक अपने बच्चों के साथ साठ मील (4.23 किमी) की यात्रा पर निकल पड़ा। देवता बच्चों की रक्षा करते थे; सूर्यास्त के समय जुजक बच्चों को सरकंडों से बाँधकर जमीन पर लिटा देता था, परन्तु क्रूर और जंगली जानवरों के भय से वह स्वयं एक वृक्ष पर चढ़कर शाखाओं के बीच बैठ जाता था। तब एक देवता (देवदूत) वेसंतारा के रूप में और एक देवी मद्दी के रूप में बच्चों के पास आते; वे बच्चों को मुक्त करते, उनके हाथ-पैर साफ करते, उन्हें नहलाते और वस्त्र पहनाते, उन्हें भोजन देते और उन्हें एक दिव्य पलंग पर विश्राम कराते: फिर भोर होते ही वे उन्हें फिर से बाँध देते और गायब हो जाते। इस प्रकार देवताओं (देवदूतों) की सहायता से बच्चे बिना किसी क्षति के अपनी यात्रा पर लौट आए। जुजाका को भी देवताओं (देवदूतों) का मार्गदर्शन प्राप्त हुआ, और कलिंग राज्य जाने के इरादे से वह पंद्रह दिनों में जेतुत्तरा नगर पहुँच गया। उसी रात, शिवी राजा संजय ने एक स्वप्न देखा, और उनका स्वप्न इस प्रकार था: जब वह ऊँचे दरबार में बैठे थे, एक व्यक्ति आया और उनके हाथ में दो फूल दिए, जिन्हें उन्होंने एक-एक कान पर लटका लिया; और उनसे पराग उनके सीने पर गिर गया। जब वह सुबह उठे, तो उन्होंने अपने ब्राह्मणों से इसका अर्थ पूछा। उन्होंने कहा, "महाराज, आपके कुछ योद्धा, जो लंबे समय से अनुपस्थित थे, लौटेंगे।" इसलिए अगली सुबह, कई लज़ीज़ पकवानों का आनंद लेने के बाद, वह अपने दरबार में बैठे, और देवताओं ने उस ब्राह्मण को लाकर महल के प्रांगण में बिठा दिया। क्षण भर में राजा ने बच्चों को देखा, और कहा:

"यह किसका चेहरा है जो पीला चमक रहा है, सूखा हुआ मानो आग से झुलस गया हो,
किसी सोने के कंगन की तरह - मानो मशाल से झुलसकर पूरी तरह मुरझा गया हो?"
शरीर से एक जैसे, चेहरे पर एक जैसे निशान—ये बच्चे कौन हो सकते हैं?
जैसे जाली लड़का है, और कन्हाजिना लड़की।
वे दो छोटे शेर के शावकों की तरह हैं जो अपनी गुफा से नीचे उतरे हैं,
और एक दूसरे से मिलते-जुलते हैं: और खड़े होने पर वे सुनहरे प्रतीत होते हैं।"

तीन श्लोकों में उनकी इस प्रकार प्रशंसा करने के बाद राजा ने एक दरबारी को उनके पास भेजा और उसे निर्देश दिया कि उन्हें उसके पास ले आए। दरबारी शीघ्र ही उन्हें ले आया; और राजा ने ब्राह्मण से कहा:

"हे भारद्वाज, मुझे बताइए कि आप इन बच्चों को कहाँ से लाए हैं?"
जुजाका ने कहा:

"दो सप्ताह पहले किसी ने मुझे ये चीजें दी थीं, मैं उसके काम से बहुत खुश था।"
राजा ने कहा:

"तुमने किन मीठी बातों या सत्य के शब्दों से उसे विश्वास दिलाया?
ये बच्चे, जो सभी उपहारों में सर्वोच्च हैं, तुम्हें किससे प्राप्त हुए?"
जुजाका ने कहा:

"वनभूमि में रहने वाले राजा वेसंतारा ने
उन्हें दास के रूप में दिया, जो पृथ्वी की तरह सभी दावेदारों को स्वतंत्र रूप से दे देते हैं।"
यह राजा वेसंतारा ही थे जिन्होंने अपने लोगों को मुझे दास के रूप में दे दिया,
जिनके पास सभी चाहने वाले जाते हैं, जैसे सभी नदियाँ समुद्र की ओर बहती हैं।"
यह सुनकर दरबारियों ने वेसंतारा की आलोचना की:

"यदि वह घर पर होता, तो किसी भी अच्छे राजा द्वारा ऐसा करना अनुचित होता:
जब उसे जंगल में निर्वासित कर दिया गया था, तब वह अपने बच्चों को कैसे दे पाता?"
हे सभी सज्जनों, जो यहाँ एकत्रित हैं, मेरी बात सुनो,
राजा अपने बच्चों को किसी और के हाथों की सेवा में कैसे सौंप सकता है?
वह पुरुष या स्त्री दास, घोड़ा, खच्चर, रथ
या हाथी दे सकता है: लेकिन अपने ही बच्चों को कैसे दे सकता है?
लेकिन यह सुनकर लड़का अपने पिता के आरोप को सहन नहीं कर सका; बल्कि मानो उसने अपनी भुजा से उस पर्वत सिनेरू को उठा लिया हो जो हवा के झोंके से अभिभूत था, उसने यह श्लोक सुनाया:

"दादाजी, वह कैसे दे सकता है, जब उसके पास न तो कोई
गुलाम है, न पुरुष और न महिला, न हाथी, न घोड़ा, न खच्चर, न रथ?"
राजा ने कहा:

"बच्चों, मैं तुम्हारे पिता के उपहार की प्रशंसा करता हूँ: मैं निंदा का एक शब्द भी नहीं कहता।
लेकिन जब उन्होंने तुम्हें विदा किया तो उनके दिल में क्या हुआ होगा?"
लड़के ने उत्तर दिया:

"उसका दिल पूरी तरह से दुखों से भरा हुआ था, और उसमें भयंकर आग जल रही थी,
उसकी आंखें रोहिणी की तरह लाल थीं, और उनसे आंसू की बूँदें गिर रही थीं।"
फिर कान्हाजीना बोलीं और बोलीं:

"पिताजी, इस ब्राह्मण को देखिए—
यह अपने घर के गुलाम की तरह लताओं से मेरी पीठ पीटता है।
यह कोई ब्राह्मण नहीं है, प्रिय पिताजी! ब्राह्मण तो धर्मात्मा होते हैं;
यह तो ब्राह्मण के वेश में एक जिन्न है, जो हमें खाने के लिए भगा रहा है।
आप हमें इस क्रूरता के साथ भगाते हुए कैसे देख सकते हैं?"
जब राजा ने देखा कि ब्राह्मण उन्हें जाने नहीं दे रहा है, तो उसने एक श्लोक पढ़ा:

"तुम राजा और रानी की संतान हो, तुम्हारे माता-पिता राजसी हैं:
एक समय था जब तुम मेरी गोद में चढ़ते थे; अब तुम दूर क्यों खड़े हो?"
लड़के ने उत्तर दिया:

"हम एक राजा और रानी की संतान हैं, हमारे माता-पिता राजसी हैं,
लेकिन अब हम एक ब्राह्मण के गुलाम हैं, और इसलिए हम दूर खड़े रहते हैं।"
राजा ने कहा:

"मेरे प्यारे बच्चों, ऐसा मत बोलो; मेरा हृदय गर्मी से प्यासा है,
मेरा शरीर धधकती आग के समान है, यह आसन बेचैन है।"
मेरे प्यारे बच्चों, ऐसा मत बोलो; तुम मुझे बहुत दुखी करते हो।
आओ, मैं तुम्हें कीमत देकर खरीद लूँगी, तुम अब गुलाम नहीं रहोगे।
मुझे सच-सच बताओ, मैं ब्राह्मण को कीमत चुकाने के लिए तैयार हूँ—
तुम्हारे पिता ने तुम्हें विदा करते समय तुम्हारी क्या कीमत तय की थी?
लड़के ने उत्तर दिया:

"मेरी बहन को मुक्त कराने के लिए, उसने हाथियों और बाकी सभी चीजों के लिए सौ-सौ का मूल्य तय किया था, जो मेरी कीमत थी: एक हजार टुकड़े। "
राजा ने बच्चों की कीमत चुकाने को कहा।

"उठो, कोषाध्यक्ष, ब्राह्मण को तुरंत भुगतान करो, और कीमत बताओ:
सौ नर और मादा दास, और बाड़े से मवेशी,
सौ हाथी और बैल, एक हजार पाउंड सोना।"
कोषाध्यक्ष ने ब्राह्मण को तुरंत भुगतान कर दिया, और तुरंत ही कीमत बता दी गई:
सौ नर और मादा दास, और बाड़े से मवेशी,
सौ बैल और हाथी, और एक हजार पाउंड सोना।
इस पर उसने उसे सात मंजिला महल भेंट किया; ब्राह्मण का वैभव भव्य था! उसने अपना सारा खजाना एक तरफ रख दिया और अपने महल में जाकर अपने उत्तम पलंग पर लेट गया और उत्तम मांस खाने लगा।

फिर बच्चों को नहलाया गया, खाना खिलाया गया और कपड़े पहनाए गए; दादाजी ने एक बच्चे को अपनी गोद में उठाया, दादीजी ने दूसरे को। इसे समझाते हुए गुरु ने कहा:

"बच्चों को खरीदा गया, अच्छी तरह से धोया और कपड़े पहनाए गए, उन्हें खूब सजाया गया और खिलाया गया, और उन्हें उनके दादा-दादी की गोद में बिठाया गया," फिर राजा ने कहा:

"जाली, हमें विश्वास है कि तुम्हारे माता-पिता दोनों समृद्ध और सुखी हैं, उनके पास अनाज इकट्ठा करने के लिए है और जहां वे रहते हैं वहां भरपूर मात्रा में जड़ें और फल हैं।"

क्या वे मक्खियों, मच्छरों और रेंगने वाले कीड़ों से बहुत परेशान हुए हैं, और क्या उन्हें जंगली जानवरों से सुरक्षा प्राप्त है?

लड़के ने उत्तर दिया:

"हे महाराज, मैं आपका धन्यवाद करता हूँ और इस प्रकार उत्तर देता हूँ: मेरे माता-पिता दोनों स्वस्थ हैं,
उनके निवास स्थान पर अनाज इकट्ठा करने के लिए पर्याप्त अनाज और जड़ और फल प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं।"
मक्खियों, मच्छरों और रेंगने वाले कीड़ों से उन्हें कोई परेशानी नहीं होती,
और जंगली शिकारी जानवरों से उन्हें कोई खतरा नहीं होता।
वह जंगली कंद और मूली खोदती है, कैटमिंट और जड़ी-बूटियाँ खोजती है,
बेर, मेवे और विल्वा फल से वह हमेशा हमारे लिए भोजन ढूंढती है।
और जब वह जंगली फल और जड़ें लाती है, चाहे वे कुछ भी हों,
हम सब मिलकर रात को खाते हैं और दिन भर कड़ी मेहनत करते हैं।
हमारी माँ दुबली-पतली और पीली पड़ गई है, क्योंकि वह हमारे लिए भोजन की तलाश में भटकती रही है,
भीषण गर्मी और तेज हवाओं के संपर्क में आकर, उस जंगली जंगल में जहाँ जानवर घूमते रहते थे।
जैसे हाथ में पकड़ा हुआ कोमल कमल का फूल मुरझा जाता है:

जंगल की घाटियों में भटकने से उसके बाल पतले हो गए हैं।
उसकी बगलों में जमी हुई गंदगी है, उसके बाल जूड़े में बंधे हैं,
वह आग जलाती है, और जानवरों की खाल से बने वस्त्र पहने जमीन पर सोती है।
इस प्रकार अपनी माँ की कठिनाइयों का वर्णन करने के बाद, उसने अपने दादाजी से इन शब्दों में कहा:

"यह संसार का रिवाज है कि प्रत्येक पुरुष अपने पुत्र से प्रेम करता है;
परन्तु एक मामले में ऐसा प्रतीत होता है कि आपने ऐसा नहीं किया है।"
राजा ने अपनी गलती स्वीकार की:

"निर्दोषों को बर्बाद करना वास्तव में मेरा गलत कार्य था,
जब मैंने जनता की आवाज पर अपने बेटे को देश निकाला दे दिया।"
फिर मेरी सारी संपत्ति, मेरे पास जो कुछ भी है, वह सब
उसका हो जाए; और वेसंतारा आकर सिवी देश पर शासन करे।"
लड़के ने उत्तर दिया:

"मेरे कहने पर भी वह नहीं लौटेगा, सिवी देश का मुखिया:
तो तुम स्वयं जाओ और अपने बेटे को अपने हाथों से आशीर्वाद दो।"
तब सेनापति संजय ने अपने सेनापति से इस प्रकार कहा:

"मेरे घोड़े, रथ, हाथी और सैनिक तैयार होकर जाएं,
और लोगों को आने दें, सभी पुजारी वहां मौजूद रहें।"
साठ हजार योद्धा सरदार, हथियारों से लैस और खूबसूरती से सजे हुए,
नीले, भूरे या सफेद रंग के वस्त्रों में, रक्त लाल मुकुटों के साथ, वहां उपस्थित हों।
जैसे आत्माओं से भरी पहाड़ियाँ, जहाँ बहुतायत में पेड़ उगते हैं,
दिव्य पौधों से उज्ज्वल और मधुर होती हैं, वैसे ही यहाँ हवाएँ बहती हैं।
चौदह हजार हाथी लाओ, सभी सोने के अलंकृत वस्त्रों से सजे हुए,
भाले और हुक लिए हुए सारथी के साथ: उतने ही घोड़े भी लाओ।
सिंध के घोड़े, सभी उत्तम नस्ल के, और बहुत तेज गति से चलने वाले,
प्रत्येक पर एक बहादुर सहायक सवार है, जो तलवार और धनुष धारण किए हुए है।
चौदह हजार रथों को जोतकर अच्छी तरह सजाया जाए,
उनके पहिए लोहे की पट्टियों से अच्छी तरह से गढ़े जाएं और उन सभी पर सोने की जड़ाई की जाए।
उन्हें वहां झंडे, ढालें और कवच तैयार करने दो,
और साथ ही धनुष भी, वे योद्धा जो प्रहार करते हैं और कभी असफल नहीं होते।
इस प्रकार राजा ने अपनी सेना की संरचना का वर्णन किया; और उसने जेतुत्तरा से वामका पर्वत तक जाने वाली सड़क को आठ रॉड की चौड़ाई तक समतल करने और उसे इस प्रकार सजाने का आदेश दिया। उसने कहा:

चारों ओर लाजा के फूल और सुगंधित मालाएं बिखेर दो, और
जिस मार्ग से वह जाए उस पर पुण्य भेंटें चढ़ाओ।
प्रत्येक गाँव से सौ घड़े शराब लाएँ, उन लोगों के लिए जो चाहें,
और उन्हें उस सड़क के किनारे रख दें जिससे मेरा बेटा जाएगा।
वहाँ मांस और केक तैयार रखें, मछली से अच्छी तरह सजा हुआ सूप तैयार रखें,
और उन्हें उस सड़क के किनारे रख दें जिससे मेरा बेटा जाएगा।

मेरे बेटे के जाने वाले रास्ते के किनारे शराब, तेल, घी, दूध, बाजरा,
चावल और दही के अनेक व्यंजन रखे जाएं।
वहाँ रसोइये और मिठाई बनाने वाले हों, और गाने या बजाने वाले पुरुष हों,
नर्तक और कलाबाज हों, ढोल बजाने वाले हों, ताकि उदासी और चिंता दूर हो जाए।
वीणा से ध्वनि निकलती है, कर्कश ध्वनि वाले शंख से, और लोग
ढोल, तबला और हर प्रकार के ड्रम पर गुनगुनाते रहें।

इस प्रकार राजा ने सड़क की तैयारी का वर्णन किया।

लेकिन ब्राह्मण जुजाका ने अत्यधिक भोजन कर लिया और वह उसे पचा नहीं सका, इसलिए उसकी मौके पर ही मृत्यु हो गई। राजा ने उसके अंतिम संस्कार की व्यवस्था की: ढोल बजाकर पूरे शहर में घोषणा की गई, लेकिन कोई रिश्तेदार नहीं मिला, और उसकी संपत्ति फिर से राजा के पास चली गई।

सातवें दिन, सभी लोग एकत्रित हुए। राजा ने बड़े धूमधाम से जाली को मार्गदर्शक बनाकर प्रस्थान किया। गुरु ने इसका वर्णन इस प्रकार किया:

"तब उस विशाल जनसमूह ने, उस देश की सेना ने, वामका पहाड़ी की ओर प्रस्थान किया, और जली ने दल का नेतृत्व किया।"

साठ वर्ष के हाथी ने तुरही की आवाज निकाली, जब उसकी कमर की बेल्ट बांधी गई तो उस शक्तिशाली जानवर ने जोर से तुरही बजाई।

फिर रथों के पहिए जोर से खड़खड़ाए, फिर घोड़े जोर से हिनहिनाए, जैसे ही विशाल सेना आगे बढ़ी, धूल का बादल उठ खड़ा हुआ।

हर जरूरत पूरी होने पर सेना पूरे जोश के साथ आगे बढ़ी, और जाली ने वामका पहाड़ी की ओर सेना का मार्गदर्शन किया।

वे उस विशाल जंगल में प्रवेश कर गए, जो पक्षियों और पेड़ों से भरा हुआ था, जिसमें हर प्रकार के फूल और मनचाहे फल मौजूद थे।

जब जंगल फूलों से भरा होता है, तो वहां गीतों की बौछार सुनाई देती है, कई चमकीले पंखों वाले पक्षियों की चहचहाहट इधर-उधर गूंजती है।

वे दिन-रात चलते रहे और अपनी लंबी यात्रा के अंत तक पहुँच गए, और उस जिले में प्रवेश कर गए जहाँ वेसंतारा निवास करता था।

मुकालिंडा झील के किनारे, राजकुमार जली ने उन्हें एक शिविर लगाने का आदेश दिया: उन्होंने चौदह हजार रथों को उस मार्ग की ओर मुंह करके खड़ा किया जिससे वे आए थे, और शेरों, बाघों, गैंडों और अन्य जंगली जानवरों को दूर रखने के लिए जगह-जगह पहरेदार तैनात किए। हाथियों आदि का बहुत शोर था; यह सुनकर महान सत्ता भयभीत हो उठी और सोचने लगी—"क्या उन्होंने मेरे पिता को मार डाला है और मेरे पीछे यहाँ आए हैं!" मद्दी को अपने साथ लेकर वह एक पहाड़ी पर चढ़ गया और सेना का जायजा लिया। इसका स्पष्टीकरण देते हुए गुरु ने कहा:

वेसंतारा ने पास आती हुई इस सभा का शोर सुना; वह एक पहाड़ी पर चढ़ गया और भय से भर कर सेना को देखने लगा।

ओ सुनो, मैडी, जंगल गर्जना की आवाज़ से भरे हुए हैं,
घोड़ों के हिनहिनाने की आवाज़ सुनाई दे रही है, चारों ओर झंडे दिखाई दे रहे हैं।
क्या वे शिकारी हो सकते हैं, जो गड्ढों, शिकार के जालों या चाकुओं के साथ
जंगल में जंगली जानवरों का शिकार करते हैं और चिल्लाकर उनकी जान लेते हैं?
इसलिए हम, निर्दोष होते हुए भी, इस जंगली जंगल में निर्वासित होकर,
एक क्रूर मौत की उम्मीद करते हैं, क्योंकि अब हम दुश्मन के हाथों में पड़ गए हैं।"
ये शब्द सुनकर उसने सेना की ओर देखा और यह सोचकर कि यह उनकी अपनी सेना है, उसने उसे सांत्वना देने के लिए यह श्लोक सुनाया:

सब ठीक हो जाएगा: तुम्हारे शत्रु तुम्हें कोई नुकसान नहीं पहुंचा सकते,
ठीक वैसे ही जैसे आग की कोई लपट समुद्र को नहीं बुझा सकती।
तब उस महान प्राणी को तसल्ली हुई और वह मद्दी के साथ पहाड़ी से नीचे उतरकर अपनी कुटिया के सामने बैठ गया। गुरु ने उसे यह समझाया:

"तब राजा वेसंतारा इस कारण पर्वत से नीचे उतरे,
और अपनी पत्तों से ढकी कुटिया के सामने बैठ गए और अपने मन को शांत करने का आदेश दिया।"
उसी क्षण संजय ने अपनी रानी को बुलवाया और उससे कहा, "मेरी प्रिय फुसती, यदि हम सब एक साथ जाएँगे तो बहुत बड़ा झटका लगेगा, इसलिए मैं पहले अकेला जाता हूँ। जब तुम्हें लगे कि वे शांत और आश्वस्त हो गए हैं, तब तुम अपने साथ कुछ लोगों को लेकर आ सकती हो।" थोड़ी देर बाद उसने जली और कन्हाजिना को आने को कहा। उसने अपने रथ को उसी रास्ते की ओर मोड़ा जिससे वह

आया था, और यहाँ-वहाँ पहरा बिठाकर अपने सजे-धजे हाथी पर सवार होकर अपने पुत्र को खोजने चला गया। गुरु ने इसका इस प्रकार वर्णन किया:

"उसने अपनी सेना को इकट्ठा किया, अपने रथ को सड़क की ओर मोड़ा, और उस जंगल की खोज की जहाँ उसका बेटा एकांत में रह रहा था।"

अपने हाथी पर सवार होकर, अपने एक कंधे पर अपना वस्त्र डाले, अपने ऊपर उठे हाथों को जोड़ते हुए, वह अपने पुत्र को सिंहासन सौंपने के लिए चला गया।

फिर उसने सुंदर राजकुमार को देखा, जो निडर और दृढ़ इच्छाशक्ति वाला था, पत्तों से बनी अपनी झोपड़ी के सामने बैठा ध्यानमग्न था।

वेसंतारा और मद्दी तब अपने पिता का अभिवादन करने गए, जैसे ही उन्होंने उन्हें पास आते देखा, वे अपने बेटे को देखने के लिए उत्सुक हो गए। तब मद्दी ने प्रणाम किया, अपना सिर उनके चरणों में रख दिया, तब उन्होंने उन्हें गले लगाया; अपने हाथों से उन्हें प्यार से सहलाया।

फिर शोक में रोते और विलाप करते हुए राजा ने उनसे दयालुतापूर्वक बात की।

"मुझे आशा और विश्वास है, मेरे पुत्र, कि तुम समृद्ध और कुशल हो,
जहाँ तुम रहते हो वहाँ तुम्हें भरपूर अनाज और फल और जड़ वाली सब्जियां मिलें।"
क्या आप मक्खियों, मच्छरों और रेंगने वाले कीड़ों से बहुत परेशान हुए हैं,
और क्या आपको जंगली जानवरों से सुरक्षा मिली है?
उस महान प्राणी ने अपने पिता को उत्तर दिया:

"मेरे स्वामी, हमें जो जीवन जीना पड़ा वह एक दयनीय जीवन था;
हमें जैसे-तैसे गुजारा करना पड़ा, जो कुछ हम इकट्ठा कर पाते थे वही खाना पड़ता था।"
विपत्ति मनुष्य को उसी प्रकार तोड़ देती है, जैसे सारथी
घोड़े को वश में करता है: हे राजा, विपत्ति ने हमें यहाँ वश में कर लिया है।
लेकिन हमारे माता-पिता की अनुपस्थिति ने ही हमारे शरीर को दुबला-पतला बना दिया है
, हे राजा, हमें निर्वासित कर दिया है और हमें जंगलों में रहने के लिए मजबूर कर दिया है।"
इसके बाद उसने अपने बच्चों के बारे में पूछा।

लेकिन जली और कन्हाजिना, तुम्हारे अभागे वारिस, जिन्हें अब
एक क्रूर, निर्दयी ब्राह्मण किसी गाय की तरह हांक रहा है,
यदि आप इन शाही बच्चों के बारे में कुछ भी जानते हैं, तो कृपया बताएं,
जैसे एक चिकित्सक सांप के काटने से पीड़ित व्यक्ति को ठीक करने का प्रयास करता है।
The king said:

"जाली और कन्हाजिना, तुम्हारे दोनों बच्चे, अब बिक चुके हैं:
मैंने ब्राह्मण को पैसे दे दिए हैं: इसलिए निश्चिंत रहो, मेरे बेटे, डरने की कोई बात नहीं है।"
यह सुनकर उस महान प्राणी को सांत्वना मिली और उसने अपने पिता से प्रसन्नतापूर्वक बातें कीं।

"मुझे आशा है, प्रिय पिताजी, आप स्वस्थ होंगे, और अब आपको कोई परेशानी नहीं आएगी,
और मेरी माँ तब तक नहीं रोएगी जब तक उसकी आँखें दुखने न लगें।"
राजा ने उत्तर दिया:

"धन्यवाद, मेरे बेटे, मैं बिल्कुल ठीक हूँ, और अब कोई परेशानी नहीं है।
तुम्हारी माँ भी तब तक नहीं रोती जब तक उसकी आँखें दुखने न लगें।"
उस महान सत्ता ने कहा:

"मैं आशा करता हूँ कि राज्य में सब ठीक है, ग्रामीण इलाकों में शांति है,
सभी जानवर काम करने के लिए स्वस्थ हैं, और बारिश के बादल थमते नहीं हैं।"

राजा ने उत्तर दिया:

"ओह हाँ, राज्य में सब ठीक है, ग्रामीण इलाका शांत है,
सभी जानवर काम करने के लिए स्वस्थ हैं, बारिश के बादल थम नहीं रहे हैं।"
जब वे सब आपस में बातें कर रहे थे, तो रानी फुसाती को यह विश्वास हो गया कि वे सब चिंता से मुक्त हो गए होंगे, और वह अपने बेटे के पास एक बड़े समूह के साथ आईं।

गुरु ने इसे इस प्रकार समझाया:

"जब वे इस प्रकार आपस में बात कर रहे थे, तभी वहाँ मौजूद माँ को नंगे पैर दरवाजे की ओर आते हुए देखा गया, हालाँकि वह एक रानी थी।"

फिर वेसंतारा और मद्दी अपनी माँ से मिलने गईं, और मद्दी दौड़कर अपनी माँ के चरणों में सिर रख दिया।

दूर से बच्चों को सुरक्षित और स्वस्थ देखकर मैडी ने उन्हें रोते हुए देखा, जैसे छोटे बछड़े अपनी मालकिन को देखकर जोर से अभिवादन करते हैं।

और मैडी ने उन्हें सुरक्षित और स्वस्थ देखा: मानो वह किसी आवेश में हो, वह कांपते हुए दौड़ी और उन स्तनों को दूध से भरा हुआ महसूस किया जिनसे वे दूध पी रहे थे।

उस क्षण पहाड़ कांप उठे, धरती हिल गई, विशाल सागर व्याकुल हो उठा, पर्वतों के राजा सिनेरु झुक गए: देवताओं (देवदूतों) के छह निवास स्थान एक ही प्रचंड ध्वनि से गूंज उठे। देवताओं (देवदूतों) के राजा सक्का (इंद्र) ने देखा कि छह राजसी व्यक्ति और उनके सेवक जमीन पर बेहोश पड़े हैं, और उनमें से कोई भी उठकर दूसरों पर पानी नहीं छिड़क सकता; इसलिए उन्होंने वर्षा करने का निश्चय किया। उन्होंने ऐसा किया, जिससे जो भीगना चाहते थे वे भीग गए, और जो नहीं चाहते थे उन पर एक बूंद भी नहीं गिरी, बल्कि पानी कमल के पत्ते से बहने वाले पानी की तरह बह गया। वह वर्षा कमल के गुच्छे पर गिरने वाली वर्षा के समान थी। छह राजसी व्यक्ति होश में आ गए, और सभी लोग इस चमत्कार को देखकर आश्चर्यचकित रह गए कि कैसे वर्षा परिवार पर हुई और विशाल पृथ्वी कांप उठी। गुरु ने इसका इस प्रकार स्पष्टीकरण दिया:

"जब एक ही परिवार के रक्त के ये लोग मिले, तो एक जोरदार आवाज गूंजी, जिससे चारों ओर की पहाड़ियाँ गूंज उठीं और विशाल पृथ्वी कांप उठी।"

ईश्वर ने एक विशाल बादल भेजा जिससे उसने वर्षा की बौछार भेजी, जब राजा वेसंतारा अपने परिवार से फिर से मिले।

राजा, रानी, पुत्र, बहू और पोते, सभी वहाँ उपस्थित थे। जब वे मिले तो उनके रोंगटे खड़े हो गए। लोगों ने तालियाँ बजाईं और राजा से ज़ोर-ज़ोर से प्रार्थना की।

उन्होंने वेसंतारा और मद्दी, दोनों को एक साथ पुकारा:

"आप ही हमारे स्वामी, राजा और रानी बनें, और हमारी पुकार सुनें!"
तब उस महान सत्ता ने अपने पिता से कहा:

"तुम और जनता, देशवासियों और नगरवासियों ने मुझे निर्वासित कर दिया,
जब मैं अपने राजसी सिंहासन पर न्यायपूर्वक शासन कर रहा था।"
राजा ने अपने बेटे की नाराजगी को शांत करने के लिए उत्तर दिया:

"निर्दोषों को बर्बाद करना वास्तव में मेरा गलत कार्य था,
जब मैंने जनता की आवाज पर अपने बेटे को देश निकाला दे दिया।"
इस श्लोक का पाठ करने के बाद, उन्होंने अपने दुःख से मुक्ति पाने के लिए एक और श्लोक जोड़ा:

"पिता या माता के दर्द को दूर करने के लिए, या बहन के दर्द को कम करने के लिए,
एक आदमी को कभी भी अपना जीवन देने में संकोच नहीं करना चाहिए।"

बोधिसत्व, जो अपने राजत्व को पुनः प्राप्त करने के इच्छुक थे, लेकिन सम्मान प्राप्त करने के लिए इस बारे में ज्यादा कुछ नहीं कह रहे थे, अब सहमत हो गए; जिस पर उनके साठ हजार दरबारी, उनके जन्म के साथी, खुशी से चिल्ला उठे--

"हे महान राजा, अब धोने का समय आ गया है—धूल और गंदगी धो डालो!"
लेकिन उस महान सत्ता ने उत्तर दिया, "थोड़ा रुको।" फिर वे अपनी कुटिया में गए, और अपने संन्यासी वस्त्र उतारकर रख दिए। इसके बाद वे कुटिया से बाहर आए और बोले, "यह वह स्थान है जहाँ मैंने साढ़े नौ महीने तपस्या में बिताए हैं, जहाँ मैंने दान में पूर्णता प्राप्त की है, और जहाँ पृथ्वी कांप उठी थी।" उन्होंने कुटिया के चारों ओर तीन बार सही दिशा में परिक्रमा की और उसके सामने पाँचों बार प्रणाम किया। फिर उन्होंने उनके बाल और दाढ़ी संवारे और उन पर आशीर्वाद का जल उंडेला, और वे देवदूतों के राजा की तरह अपनी पूरी महिमा में चमक उठे। ऐसा कहा जाता है।

"तब राजा वेसंतारा ने धूल और गंदगी धो डाली।"

उनकी महिमा महान थी: जहाँ भी उन्होंने देखा, वह स्थान काँप उठा; शुभ शब्दों में निपुण लोगों ने उनका उच्चारण किया; उन्होंने हर प्रकार के वाद्य यंत्र उठा लिए; विशाल सागर पर गरज जैसी ध्वनि गूंजी; कीमती हाथी को उत्तम साज-सज्जा से सजाया गया, और राजकुमार की तलवार से सुसज्जित होकर वह उस पर सवार हुए, जबकि उनके साठ हजार दरबारी, उनके जन्म के साथी, भव्य समारोह में उनके चारों ओर जमा हो गए।

उन्होंने मद्दी से स्नान किया, उसे सजाया और आशीर्वाद के जल से अभिषेक किया, और जल डालते हुए वे जोर से बोले, "वेसंतारा आपकी रक्षा करे!" और अन्य शुभ संकेत वाले शब्द कहे। गुरु ने इसका इस प्रकार अर्थ समझाया:

"धुले हुए सिर और बड़े-बड़े वस्त्रों और राजसी आभूषणों के साथ, वह अपनी भयानक तलवार लिए अपने साथी हाथी पर सवार था।"

और फिर साठ हजार सरदार, जो देखने में अत्यंत सुंदर थे, उनके जन्म के साथी, अपने स्वामी के चारों ओर आए और उन्हें सम्मानपूर्वक श्रद्धांजलि अर्पित की।

फिर महिलाओं ने मद्दी को स्नान कराया और सबने मिलकर प्रार्थना की-- "वेसंतारा और संजय आप सबकी सदा रक्षा करें!"

इस प्रकार पुनः स्थापित होकर और अपने अतीत की परेशानियों को भूलकर, उन्होंने अपने सुखद स्वामी की भूमि में खूब आनंद मनाया।

इस प्रकार पुनः स्थापित होकर और अतीत को भूलकर, प्रसन्न और आनंदित होकर वह महिला अपने प्यारे बच्चों के साथ चली गई।

तो उसने प्रसन्नतापूर्वक अपने बच्चों से कहा:

"मैं दिन में केवल एक बार भोजन करता था, मैं जमीन पर सोता था,
यही तुम्हारे प्रति मेरे प्रेम की प्रतिज्ञा थी जब तक कि तुम मिल न जाओ।"
लेकिन अब मेरी प्रतिज्ञा पूरी हो गई है, और अब मैं फिर से विनती करता हूँ,
हमने जो भी अच्छा कार्य किया है, उसकी आप दोनों को सदा रक्षा करें,
और महान राजा संजय आप दोनों की सदा रक्षा करें।
मेरे पिता या मेरे द्वारा किए गए किसी भी अच्छे कार्य
के कारण, आप कभी बूढ़े नहीं होते, अमर हो जाते हैं।
रानी फुसती ने यह भी कहा, "अब से मेरी बहू को ये वस्त्र पहनाए जाएँ और ये आभूषण पहनाए जाएँ!" उसने ये वस्त्र बक्सों में भरकर उसे भेजे। गुरु ने इसका इस प्रकार स्पष्टीकरण दिया:

"मद्दी की सास ने उसे सूती, रेशमी, लिनेन और इतने महीन कपड़े के वस्त्र भेजे थे, जिनसे उसकी सुंदरता और भी निखर गई थी।"

मैडी को उसकी सास ने हार और कंगन, माथे का आभूषण, पैरों की चूड़ी और गहनों से सजी अंगूठियां भेजी थीं, जिनसे उसकी सुंदरता और भी निखर गई थी।

और जब राजकुमारी मेले से गुजरते हुए अपने आभूषणों का अवलोकन कर रही थी, तो वह ऐसे चमक उठी जैसे नंदना में सजी देवियाँ चमकती हैं।

सिर धुले, गहने पहने और बड़े-बड़े वस्त्र धारण किए हुए, वह तैंतीस के सामने किसी स्वर्गीय अप्सरा की तरह चमक रही थी।

जैसे जब सिट्टलता के बाग में हवा से केले का पेड़ लहराता है, तब सुंदर होठों वाली राजकुमारी उस पेड़ की तरह ही प्यारी लगती थी।

जैसे कोई चमकीले पंखों वाली चिड़िया हवा में उड़ती है, वैसे ही अपने प्यारे होंठों और सुंदरता से उसने सबको चकित कर दिया।

वे एक शानदार युवा हाथी लाए, जो शक्तिशाली और बलवान था, जिसे न तो भाला और न ही युद्ध का शोर डरा सकता था, जिसके दांत लंबे थे।

वह उस विशाल और बलवान हाथी पर सवार होती है, जिसे न तो भाला और न ही युद्ध का शोर डरा सकता था, जिसके दांत लंबे थे।

अतः वे दोनों बड़े धूमधाम से शिविर की ओर चल पड़े। राजा संजय और उनके असंख्य अनुयायियों ने पूरे एक महीने तक पर्वतीय और वनीय खेलों में आनंद लिया। उस दौरान, महापुरुष की कृपा से, उस विशाल वन में किसी भी जंगली जानवर या पक्षी ने कोई क्षति नहीं पहुँचाई। गुरु ने इसका स्पष्टीकरण इस प्रकार दिया:

वेसंतारा की महिमा की कसम, उस विशाल जंगल में, किसी भी जानवर या पक्षी ने दूसरे को कोई नुकसान नहीं पहुँचाया, सभी ने भलाई की।

और जब वह जाने लगा, तो सभी पक्षी, जानवर और जंगल के सभी प्राणी एकमत होकर उसके साथ चले गए; परन्तु जब वह जंगल से चला गया, तो सभी मधुर ध्वनियाँ शांत हो गईं।

एक महीने के उत्सव के बाद, संजय ने अपने सेनापति को बुलाया और कहा, "हम जंगल में बहुत समय बिता चुके हैं; क्या मेरे पुत्र की वापसी के लिए मार्ग तैयार है?" सेनापति ने उत्तर दिया, "जी, महाराज, अब जाने का समय हो गया है।" उन्होंने वेस्संतरा को संदेश भेजा और अपनी सेना के साथ, अपने पूरे दल के साथ, वामका पर्वत के मध्य से जेतुत्तरा नगर तक तैयार किए गए मार्ग पर चल पड़े। गुरु ने इसका स्पष्टीकरण इस प्रकार दिया:

"राजकीय मार्ग नवनिर्मित था, फूलों और झंडों से खूबसूरती से सजा हुआ था, जहाँ से वह जंगल के खुले मैदान में रहता था, वहाँ से लेकर जेटुत्तरा शहर तक।"

उसके साठ हजार साथी आसपास थे, और लड़के-लड़कियां, ब्राह्मण और वैश्य, सभी जेतुत्तरा नगर की ओर घर लौट रहे थे।

वहां कई हाथी के महावत, रथ चालक और पैदल सैनिक, साथ ही राजरक्षकों का पूरा दल जेतुत्तरा जा रहा था।

खोपड़ी या खाल पहने योद्धा, तलवारों से लैस कवचधारी पुरुष, राजकुमार की रक्षा के लिए जेतुत्तरा शहर की ओर आगे बढ़े।

राजा ने साठ लीग (4.23 किमी) की यह यात्रा दो महीने में पूरी की। फिर वे जेतुत्तरा में प्रवेश कर गए, जिसे उनके स्वागत के लिए सजाया गया था, और महल में चले गए। गुरु ने इसका स्पष्टीकरण इस प्रकार दिया:

फिर वे ऊँची दीवारों और मेहराबों वाले सुंदर शहर में प्रवेश कर गए, गीत और नृत्य के साथ, भोजन और पेय प्रचुर मात्रा में उपलब्ध थे।

सिवी भूमि में अपने उच्च ख्याति प्राप्त राजकुमार का स्वागत करने पर देश और शहर के लोग अत्यंत प्रसन्न थे।

सभी ने दानदाता के आने पर अपने रुमाल हवा में लहराए; अब ढोल की थाप से कैदियों की रिहाई की घोषणा की जा रही है।

अतः राजा वेसंतारा ने बिल्लियों सहित सभी प्राणियों को मुक्त कर दिया; और जिस दिन वे नगर में प्रवेश कर रहे थे, शाम को उन्होंने सोचा, "जब सूर्योदय होगा, तो मेरे लौटने की खबर सुनकर आने वाले सभी लोग आएंगे, और मैं उन्हें क्या भेंट करूँ?" उसी क्षण इंद्र का सिंहासन प्रचंड हो गया: उन्होंने विचार किया और कारण समझ गए। उन्होंने सात प्रकार के रत्नों की मूसलाधार वर्षा की, जिससे महल के आगे-पीछे के हिस्से कमर तक और पूरा नगर घुटनों तक रत्नों से भर गया। अगले दिन, उन्होंने विभिन्न परिवारों को अलग-अलग स्थान आवंटित किए और उन्हें रत्न चुनने के लिए कहा; शेष रत्नों को उन्होंने एकत्रित करवाकर अपने खजाने में रख दिया; और उनके खजाने में भविष्य में हमेशा बांटने के लिए पर्याप्त धन था। गुरु ने इसकी व्याख्या इस प्रकार की:

"जब वेसंतरा, सिवी के संरक्षक राजा, वापस लौटे, तो देवता (देवदूत) ने उस स्थान पर बहुमूल्य सोने की वर्षा की।"

अतः जब राजकुमार वेसंतारा ने अपने उदार दान दिए, तो अंततः उनकी मृत्यु हो गई और वे पूर्णतः बुद्धिमान होकर स्वर्ग सिधार गए।

जब गुरु ने वेसंतारा के हजार श्लोकों वाले इस प्रवचन को समाप्त किया, तो उन्होंने जन्म का वर्णन इस प्रकार किया: "उस समय, देवदत्त जुजक थे, चिंचा नाम की स्त्री अमितततापानी थीं, चन्ना चेतपुत्त थे, सारिपुत्र तपस्वी अच्चुत थे, अनुरुद्ध सक्का (इंद्र) थे, राजा शुद्धोदन (बुद्ध के पिता और कपिलवस्तु के राजा) राजा संजय थे, महामाया (बुद्ध की दिवंगत माता) फुसती थीं, राहुल की माता (बुद्ध की पत्नी) रानी मद्दी थीं, राहुल (बुद्ध के पुत्र) राजकुमार जली थे, उप्पलावन्ना कन्हाजिना थे, बुद्ध के अनुयायी शेष लोग थे, और राजा वेसंतारा मैं स्वयं था।"